GOVERNMENT OF INDIA
ARCHÆOLOGICAL SURVEY OF INDIA
CENTRAL ARCHÆOLOGICAL LIBRARY
ACCESSION NO. 48203
CALL No. R 491.2343 | Sha | Jha
D.G.A. 79.

प्रकाशक
रामनारायणलाल बेनीप्रसाद
इलाहाबाद

CENTRAL ARCHAEOLOGICAL
LIBRARY, NEW DELHI.
Acc. No. 48203
Date 8-3-1970
Call No. R 491.2343/Sha/Jha

६ म ४६७

मुद्रक
रामबाबू अग्रवाल
ज्ञानोदय प्रेस
इलाहाबाद

तृतीय संस्करण की भूमिका

'संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ' का दूसरा संस्करण जिस प्रकार संस्कृत-प्रेमी अध्येताओं एवं विद्यार्थियों को प्रिय हुआ और उसकी प्रतियाँ थोड़े ही वर्षों में समाप्त हो गयीं, उससे मुझे अपने श्रम के प्रति सन्तोष हुआ है। उसी उत्साह से प्रेरित होकर हमने प्रस्तुत तीसरे संस्करण को और भी अधिक उपयोगी बनाने का प्रयास किया है। फलतः इस नये संस्करण में पुराने संस्करण की अपेक्षा नये शब्द बढ़े हैं। शब्दों के कुछ नये अर्थ भी जुड़े हैं। विशिष्ट अर्थों के निदर्शन के लिए प्राचीन कवियों के प्रयोग उदाहृत किये गये हैं। इससे अर्थ को अवगत करने में अत्यन्त सरलता हो जाएगी।

परिशिष्ट में संस्कृत ग्रन्थकारों की सूची में कुछ और प्रमुख नामों का परिचय बढ़ा दिया गया है। कोश को अधिक से अधिक उपयोगी एवं प्रामाणिक बनाने का श्रम हमने अपनी ओर से किया है। हमारा यह श्रम सार्थक होगा यदि संस्कृत-अनुरागियों के सन्तोष में इससे वृद्धि हुई।

रामनवमी २०२४ वि०
प्रयाग

तारिणीश झा

द्वितीय संस्करण की भूमिका

भाषा की एकरूपता के लिये जिन विधानों की अपेक्षा होती है, उनमें कोश का महत्त्वपूर्ण स्थान है। लोकव्यवहार में शब्दों का परिवीक्षण, आप्त जनों द्वारा शब्दों का नवसर्जन और व्याकरण में शब्दों का व्युत्पत्ति-विज्ञान हमारे समक्ष शब्दों की जिस महत्त्वपूर्ण निधि को उपस्थित करता है, कोश उस शब्द-राशि को लेकर अर्थ और लिङ्ग सम्बन्धी उनकी एक मान्य व्यवस्था करता है। जिससे कि जनसामान्य उन शब्दों के प्रयोग में व्याकरण के नियम अथवा भाषा के अनुशासन का उल्लङ्घन न करें। कोश द्वारा उनके सामने अपनी भाषा के शब्द-भाण्डार का एक रूप रहता है और वे आवश्यकता पड़ने पर शब्दों का अर्थबोध करते हैं। कहा भी है—'शक्तिग्रहं व्याकरणोपमानकोशाप्तवाक्याद् व्यवहारतश्च' अर्थात् शब्दों के अर्थ का निश्चय व्याकरण, उपमान, कोश, आप्तवाक्य (आचार्य और महाकवि के प्रयोग) तथा लोक में अर्थों के व्यवहार की परम्परा देख कर किया जाता है।

संस्कृत भाषा के जिन वैयाकरणों एवं विद्वानों ने शब्दों का चयन किया है, वे भाषा-शास्त्र के पूर्ण विज्ञ तो थे ही, साथ ही साथ उनको लोक-व्यवहार का भी विस्तृत ज्ञान था। संस्कृत भाषा को सौष्ठव देने का महान् कार्य्य वैयाकरणकुलगुरु पाणिनि द्वारा हुआ। उनकी अष्टाध्यायी में जहाँ एक ओर ऐसे सूत्र हैं जिनसे सहस्रों शब्दों की सिद्धि होती है, वहाँ दूसरी ओर ऐसे सूत्र भी हैं जो केवल एक ही शब्द की सिद्धि के लिए लिखे गये हैं। पाणिनि ने प्रकृति, लोक-जीवन और पूर्व-साहित्य के सूक्ष्म पर्यवेक्षण के साथ शब्दों की गति, प्रकार और शक्ति को हृदयंगम कर जिन सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है उनसे संस्कृत का शब्दसागर संयमित सा हो गया। आज ढाई हजार वर्ष बीत गये, संस्कृत भाषा से ही भारत की प्रायः सभी साहित्यिक भाषायें अपने प्रादेशिक और स्थानीय कलेवरों को लेकर विकसित हुई परन्तु संस्कृत भाषा का मूल रूप संयमित रहा। इस महान् संयम के मूल में पाणिनीय-सूत्रों के सिद्धान्त की ध्रुव स्थिरता है।

संस्कृत भाषा के संयमन का मूलाधार उसके धातु, प्रकृति और प्रत्यय का विज्ञान है। संस्कृत का कोई ऐसा शब्द शेष नहीं है जिसकी मूल प्रकृति पाणिनि से लेकर भट्टोजिदीक्षित तक की परम्परा में निश्चित न कर ली गयी हो। शब्दों की मूल प्रकृति का धातुओं के रूप में और अर्थों के अनुसार शब्दों के स्वरूप का प्रत्ययों के रूप में संघटन कर महर्षि पाणिनि ने शब्दों को अमरता प्रदान की है। पाणिनि के प्रत्येक शब्द और उसके अर्थ का पूर्ण परिचय उसकी व्युत्पत्ति द्वारा मिलता है। व्युत्पत्ति का यह स्वरूप ही शब्द-विज्ञान की दृढ़ कसौटी है। व्युत्पत्ति को जाने बिना हम पतञ्जलि के 'एकः शब्दः सम्यग् ज्ञातः सुष्ठु प्रयुक्तः स्वर्गे लोके च कामधुग् भवति' इस महावाक्य को भी चरितार्थ नहीं कर सकते। प्रस्तुत कोश का संकलन

महर्षियों की महान् शब्द-साधना एवं परम्परा को जीवित रखने का एक लघु प्रयास है जिसमें संस्कृत का शब्द एवं अर्थ-विज्ञान समझाया गया है।

आज से तीस वर्ष पूर्व स्वनामधन्य पण्डित द्वारकाप्रसाद चतुर्वेदी जी ने 'संस्कृत-शब्दार्थ-कौस्तुभ' का संपादन किया था। संस्कृत के विशाल शब्दसमूह को संक्षिप्त सीमा में हिन्दी के माध्यम से उपस्थित कर उन्होंने एक बड़े अभाव की पूर्ति की थी। अतः संस्कृत-शब्दार्थ-कौस्तुभ का प्रथम संस्करण एक पीढ़ी से अधिक काल तक विद्वानों के लिए प्रामाणिक ग्रंथ रहा है।

'संस्कृत-शब्दार्थ-कौस्तुभ' के संशोधित एवं परिवर्द्धित द्वितीय संस्करण में मैंने महर्षियों के शब्द-विज्ञान को व्यक्त करने की चेष्टा करते हुए देश की भाषा-विषयक जिज्ञासा एवं आवश्यकता को ध्यान में रख कर संस्कृत भाषा के विशाल शब्द-भाण्डार को एक समन्वित रूप दिया है जिससे शब्दों और अर्थों की संगति और उनके उचित प्रयोग का निर्धारण हो। सुविधा के लिये पाणिनि के सभी धातुओं के पूर्ण अर्थ एवम् गण आदि निर्देशपूर्वक उनके लट्, लुट् और लुङ् लकार के प्रथम पुरुष एकवचन के रूप दे दिये गये हैं। धातु, प्रकृति, प्रत्यय और समास के स्पष्टीकरण से संस्कृत के शब्दार्थ-विज्ञान को समझने में पूर्ण सहायता मिलेगी। शब्दों के मूल रूप को जानने की जो जिज्ञासा बढ़ती जा रही है और प्रादेशिक भाषाओं को लेकर शब्द-विज्ञान के आधार पर उनके अध्ययन का जो क्रम आचार्यों एवं स्नातकों द्वारा आगे बढ़ाया जा रहा है उसमें यह कोष सहायक होगा। प्रस्तुत संस्करण में शब्दों की संख्या भी बहुत बढ़ गयी है और साठ हजार से अधिक शब्द आ गये हैं। किन्तु केवल मात्र परिवर्द्धन करने के नाम पर ही इसका आकार नहीं बढ़ाया गया है; प्रत्युत उपयोगिता और अल्प मूल्य ही को मानदंड मानकर प्रस्तुत संस्करण का यह आकार रखा गया है।

ग्रंथ के अंत में तीन उपयोगी परिशिष्ट दिये गये हैं। प्रथम परिशिष्ट में शास्त्रीय न्याय और उक्तियाँ हैं जिनका स्वच्छन्द प्रयोग साहित्य में हुआ है। द्वितीय परिशिष्ट में संस्कृत के कवियों और ग्रंथकारों का परिचय है। इस परिशिष्ट में महर्षि वाल्मीकि तथा द्वैपायन व्यास के बाद होने वाले प्रमुख कवियों एवम् आचार्यों का सामान्य परिचय है। तृतीय परिशिष्ट में संस्कृत साहित्य में प्रचलित भौगोलिक नामों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है।

कोष के संकलन में इस बात का भी ध्यान रखा गया है कि संस्कृत साहित्य के अन्तर्गत जितनी अन्तःकथायें हैं और उनसे सम्बन्धित जो प्रमुख पात्र हैं उनका परिचय दे दिया जाय।

इस कोष को परिसंस्कृत रूप देने में मुझे संस्कृत के सिद्धान्त ग्रन्थों के अतिरिक्त वाचस्पत्यम् कोष, संस्कृत-इंग्लिश डिक्शनरी (वामन शिवराम आप्टे), संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी (मोनियर विलियम्स) और बृहत्० आदि कोषों से विशेष सहायता मिली है। अतः मैं इन कोषों के विद्वान् सम्पादकों के प्रति आभारी हूँ। पुस्तक के प्रकाशक मेसर्स रामनारायण लाल बेनी प्रसाद के प्रबन्धकों ने जितनी लगन और शीघ्रता से इस पुस्तक का पुनः मुद्रण किया उसके लिए मैं कृतज्ञ हूँ। मैं कविवर श्री जयशंकर त्रिपाठी

को धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकता, जिन्होंने मुझे इस कोश-कार्य में निःस्वार्थ सहायता प्रदान की है।

श्रद्धेय पं० श्रीनारायण जी चतुर्वेदी की कृपा भी मुझे विस्मृत नहीं होगी जिन्होंने आरम्भ में मेरा कार्य देखकर प्रोत्साहन दिया है। चतुर्वेदी जी की यह सदैव इच्छा रही है कि पूज्य पिता स्वर्गीय द्वारकाप्रसाद जी चतुर्वेदी की निःस्वार्थ साहित्य-सेवा हिन्दी जगत् के लिए सदैव उपलब्ध हो। मैंने उनकी इस इच्छा को सफल करने का जो प्रयास किया है, उसकी मुझे प्रसन्नता है।

अन्त में 'करकृतमपराधं क्षन्तुमर्हन्ति सन्तः' इस अभ्यर्थना के साथ मेरा निवेदन है कि पाठक-गण अपने सुझाव देकर मुझे अनुगृहीत करेंगे।

रामनवमी, २०१४ वि०
प्रयाग

तारिणीश झा

PREFACE TO THE FIRST EDITION

OF late years great efforts have been made to raise the standard of education in our schools and universities, and the study of no subject has attracted so much attention as that of the Indian Vernaculars. The educated Public, as well as those responsible for our educational institutions, have been taking progressivei nterest in their teaching and development. Not long ago an academy has been instituted for the purpose of improving the Vernaculars with the moral and material blessings of the Government.

The classics, however, have not been so fortunate. Their studies are in comparative neglect. They have to yield their place to more utilitarian and modern subjects. The present-daytendency in education to subordinate what is purely or mostly cultural, to what is primarily utilitarian has thrown classics in shade.

Of all the classical languages *Sanskrit* has suffered most. Persian and Arabic are still popular with their admirers, for they (the admirers) have not yet decided to break off more or less completely from their past culture or ancient literature. They would not be satisfied with a second-hand and scrappy knowledge of their old literature through the translations by foreigners in foreign languages.

With the former champion of *Sanskrit* it is otherwise. A great many of those, who wield influence in the spheres of politics, education or social matters, even hesitate to do lip-service to that language in which the glories of their past are recorded. To them all old things of their country are only fit to be forgotten. Their neglect of *Sanskrit* has almost verged on hatred. They object even to that style of *Hindi*, which uses *Sanskrit* or words derived from it. And these very persons would gladly support the infusion of foreign words and derivatives into Hindi which might sound *Hebrew* and *Greek* to an average *Hindi*-speaking person !

Yet *Sanskrit* occupies a unique position—not only in the history and culture of *Aryavarta*—but also among the languages of the world.

Dr. Ogilvie and Wilson did not over-estimate the importance of *Sanskrit* when they said:

"*Sanskrit*, the ancient language of the Hindoos, has been termed the language of the languages and is even regarded as the key to all those termed 'Indo-European' including the Teutonic family, French, Italian, Spanish, Slavonian, Lithuanian, Greek, Latin and Celtic. It is found to bear such a striking resemblance both in its more important words and its grammatical forms to the Indo-European languages, as to lead to the conclusion that all must have sprung from a common source—some primitive language, now lost, of which they are all to be regarded as mere varieties."

It is very painful for these reasons to find that *Sanskrit* does not possess an Etymological and Explanatory dictionary worthy of its importance and status. And when we consider the circumstances prevailing among our intelligentsia, it is idle to hope that the study of *Sanskrit* would receive any very serious impetus for some time to come at any rate in these *Provinces*. However, it is our sacred duty to help the praiseworthy efforts of those who are still inclined to study *Sanskrit*. With this object in view, the present work was undertaken and his very simple compilation is placed before the public. There are two other valuable works on the subject—one by Dr. A. A. Macdonell and the other by the late Principal Vaman Shivaram Apte. But they could be of use to those only who know English.

The great work known as the great *Vachaspatya* is a standard work and is very useful for scholars. But until a well edited edition of the work comes out, it could not be of much help to even an average *Sanskrit* student.

There are three other works, *viz*., the *Padmachandra Kosha*, the *Chaturvedi Kosha* and the *Yugal Kosha*, which can help a *Sanskrit* reader, but they are too small for much practical use.

It is, therefore, hoped that the present work will answer the needs of those *Hindi* and *Sanskrit*-knowing students who are studying *Sanskrit* in a college or school or privately. It is designed to be an adequate guide to a knowledge of *Sanskrit* words. It contains as many explanations and details as were permitted by the limited space at the disposal of the compiler.

No doubt the work could be improved and enlarged, but there was a danger of defeating the very object of the compilation by such improvement. For an enlarged volume should have increased the price and thus it should have been out of reach of the *Sanskrit* students, who are the poorest students in this poor country. The compiler is doubtful the cost and price of the book—low as they are—are not already high for the *Sanskrit* students.

The compiler acknowledges with thanks the many works he has consulted in preparing this work. They are too numerous to be enumerated in a short preface. He must, however, acknowledge his special gratitude to the late Principal Pandit V. S. Apte for the help he has obtained from his monumental work.

If the work reaches those for whom it is meant, and if it helps them in their study of *Sanskrit*, the compiler would feel his labours amply repaid. In case the first edition is exhausted in a reasonable time, thus showing a real demand for the work, the compiler proposes to enlarge and improve the work.

DARAGANJ,
Allahabad, 23rd *July*, 1928.

C. D. P. S.

उपयोगी सूचनाएँ

संस्कृत शब्दार्थ-कौस्तुभ के प्रस्तुत संस्करण में जो क्रम रखा गया है उसका उल्लेख नीचे किया जा रहा है—

१—शब्दों की व्युत्पत्ति बड़े कोष्ठकों के अन्तर्गत है। कहीं-कहीं स्त्रीलिंग के रूप भी बड़े कोष्ठकों में रखे गये हैं।

२—समस्त या यौगिक शब्दों को उनके मूल शब्दों के साथ रखा गया है। पर कहीं-कहीं ऐसे शब्द मूल शब्दों के साथ नहीं भी आ सके हैं। वे शब्द वर्णक्रम से यथास्थान मिल जायँगे।

३—√ यह धातु का चिह्न है। अतः व्युत्पत्ति में इस चिह्नयुक्त शब्द के आगे जो प्रत्यय आये हैं उन्हें धातु में लगने वाले और इनसे भिन्न को संज्ञा में लगने वाले प्रत्यय समझना चाहिये।

४—सिद्धान्तकौमुदी में सभी धातु स्वरान्त दिये गये हैं। परन्तु उन स्वरवर्णों की इत्संज्ञा होकर लोप हो जाता है, फलस्वरूप धातु हलन्त बच जाते हैं। अतः इस कोष में धातु हलन्त करके ही रखे गये हैं।

५—इकारान्त धातु में इत्संज्ञा-लोप होने पर 'नुम्' हो जाता है जिससे उस धातु के अन्तिम वर्ण सदृश उसी वर्ग का पञ्चमाक्षर उसमें जुट जाता है, जैसे 'अकि' के स्थान में 'अङ्क्' और 'अचि' के स्थान में 'अञ्च्' आदि। प्रस्तुत कोष में 'अङ्क्', 'अञ्च्' आदि इसी रूप में इकारान्त धातु रखे गये हैं।

६—षकारादि धातु के 'ष' को 'स' आदेश हो जाता है। फलतः ऐसे धातु सकारादि हो जाते हैं, जैसे 'षो'—'सो', 'ष्टक्'—'स्तक्', 'ष्ठा',—'स्था' आदि। इस कोश में ऐसे धातु सकारादि करके रखे गये हैं। इसी तरह णकारादि धातुओं में 'ण' को 'न' हो जाता है, जैसे 'णी'—'नी', 'णु'—'नु' आदि। अतः ऐसे धातुओं को 'न' अक्षर में देखना चाहिये।

७—'ब', 'व' और 'श' 'स' अक्षरों के कुछ शब्द भिन्न-भिन्न कोशों में दोनों अक्षरों में मिलते हैं। अथवा 'व' के शब्द 'ब' में और 'ब' के शब्द 'व' में एवम् 'श' के शब्द 'स' में और 'स' के शब्द 'श' में देखे जाते हैं। प्रस्तुत कोष में ऐसे शब्द उसी प्रकार रखे गये हैं। जिनका जो रूप अधिक प्रयोग में आता है उसी रूप में उनको दिया गया है। ऐसे शब्दों की शुद्धता का निर्णय व्युत्पत्ति के आधार पर करना चाहिये। यदि व्युत्पत्ति में धातु का आदि अक्षर 'व' है तो उस शब्द का आदि अक्षर 'व' ही रहेगा, भले ही वह शब्द 'ब' अक्षर में मिलता हो।

८—'पृषो०', 'नि०' और 'बा०' ये तीनों पाणिनीय व्याकरण के संकेत हैं। इनके अर्थ है 'पृषोदर' आदि शब्दों की भाँति, 'निपात' (बिना किसी सूत्र-सिद्धान्त) से और 'बाहुलक' (जहाँ जैसी प्रवृत्ति देखी जाय वहाँ उस प्रकार से)। पाणिनि ने जिन शब्दों की सिद्धि अपने सूत्रों से नहीं देखी, उनके लिये उपर्युक्त तीन मार्ग बना डाले। इन संकेतों से किसी शब्द को सिद्ध करने के लिये वर्णों का आगम, व्यत्यय, लोप आदि आवश्यकतानुसार किये जाते हैं।

९—हिंदी में पञ्चमाक्षरों के स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग चल पड़ा है, परन्तु संस्कृत भाषा की यह शैली नहीं है। अतः कोष में मूल शब्द पञ्चमान्त ही दिये गये हैं।

प्रत्यय और आदेश

नीचे प्रत्ययों और आदेशों की सूची दी जा रही है जिसमें (१) 'डैश' चिह्न के आगे के शब्द आदेश हैं और शेष प्रत्यय। ये आदेश जिन प्रत्ययों के आगे दिखाये गये हैं उनके कतिपय वर्णों को नष्ट करके उनके स्थान में ये हो जाते हैं। व्युत्पत्ति में अधिकतर ऐसे प्रत्यय मात्र उल्लिखित हैं, आदेश नहीं। किन्तु उनके स्थान में ये आदेश अवश्य होंगे, यह पाठकों को ऊह कर लेना चाहिए। (२) बराबर चिह्न के बाद जो अक्षर या शब्द है, वही उन प्रत्ययों में से बच जाते हैं अर्थात् इत्संज्ञा-लोप होने के बाद उतना ही अंश उस प्रत्यय का बच जाता है। निम्नलिखित प्रत्ययों के अतिरिक्त भी कुछ प्रत्यय कोश में मिलेंगे। उनका भी इसी प्रकार अनुगम करना चाहिये।

टाप्=, डाप्= } आ
ङीप्=, ङीष्= } ई
ऊङ्= ऊ
फक्—, फ्—, फिञ्— } आयन्
ढक्—, ढञ्— } एय्
ख—ईन्
छ—ईय्
घ—इय्
ष्यञ् =
यक् =, यत् =, यञ् =, ष्य =, ष्यत् =, क्यप् =, ल्यप् } य
कन् =, कप् = } क
ठन् —, ठक् —, ठञ् — } इक
क्त =त
क्तवतु =तवत्
क्त्वा—त्वा

क्तिन्=, क्तिच्= } ति
णमुल्=अम्
क्वुन्—, ण्वुच्—, ण्वुल्—, ष्वुन्—, वुञ् —, वुन् — } अक
ल्यु —, ल्युट् —, युच् — } अन
णिङ् =, णिच् = } इ
अच् =, अण् =, अप् =, क =, खच् =, खश् =, खल् =, खञ् =, ट =, टक् =, ड =, ण =, श = } अ
षाकन्=आक

इनि =, घिनुण् =, णिनि = } इन्
इष्णुच् =, खिष्णुच्= } इष्णु
उण् =, डु = } उ
उकञ् =उक
नङ्, नन् } =न
क्वनिप्=वन्
क्वरप्=वर
झच्—, झिच्— } अन्त्
क्विप् =, क्विन् =, ण्वि =, विच् = } इन चारों प्रत्ययों का सर्वापहार-लोप हो जाता है; अर्थात् ये चारों बिलकुल उड़ जाते हैं।

संकेताक्षरों का विवरण

अ०=अदादिगणीय
अक०=अकर्मक
अत्या० स०=अत्यादि तत्पुरुष समास (प्रा० स० के अन्तर्गत)
अव्य०=अव्यय
अव्य० स०=अव्ययीभाव समास
आत्म०=आत्मनेपदी
उ०=उत्तररामचरितम्
उप० स०=उपपद समास
उपमि० स०=उपमित समास
उभ०=उभयपदी
क०=कण्ड्वादिगणीय
कर्म० स०=कर्मधारय समास
का०=कादम्बरी
कि०=किरातार्जुनीयम्
कु०=कुमारसम्भवम्
क्र्या०=क्र्यादिगणीय
गी०=गीतगोविन्दम्
च० त०=चतुर्थीतत्पुरुष समास
चु०=चुरादिगणीय
जु०=जुहोत्यादिगणीय
त०=तनादिगणीय
तु०=तुदादिगणीय
तृ० त०=तृतीयातत्पुरुष समास
द०=दशकुमारचरितम्
दि०=दिवादिगणीय
दे०=देखिये
द्व० स०=द्वन्द्व समास
द्विक०=द्विकर्मक
द्विगु स०=द्विगु समास
द्वि० त०=द्वितीयातत्पुरुष समास
न०=नपुंसकलिंग
न० त०=नञ्तत्पुरुष समास
न० ब०=नञ्बहुव्रीहि समास
नि०=निपातनात्
पर०=परस्मैपदी
पं०=पञ्चतन्त्रम्
पं० त०=पञ्चमीतत्पुरुष समास
पुं०=पुंल्लिंग
पृषो०=पृषोदरादित्वात्
प्र०=प्रतिमानाटकम्
प्रा० ब०=प्रादिबहुव्रीहि समास
प्रा० स०=प्रादितत्पुरुष समास
ब० स०=बहुव्रीहि समास
बा०=बाहुलकात्
भ्वा०=भ्वादिगणीय
मयू० स०=मयूरव्यंसकादि समास
मा०=मालविकाग्निमित्रम्
मे०=मेघदूतम्
र०=रघुवंशम्
रु०=रुधादिगणीय
वि०=विक्रमोर्वशीयम्
वि०=विशेषण
वे०=वेणीसंहारनाटकम्
श०=शकुन्तलानाटकम्
शक०=शकन्ध्वादित्वात्
ष० त०=षष्ठीतत्पुरुष समास
सक०=सकर्मक
स० त०=सप्तमीतत्पुरुष समास
सु०=सुभाषितरत्नावली
स्त्री०=स्त्रीलिंग
स्व०=स्वप्नवासवदत्तम्
स्वा०=स्वादिगणीय

॥ श्रीः ॥

संस्कृत-शब्दार्थ-कौस्तुभ

अ

अ—(पु०) [√अव्+ड] विष्णु। शिव। ब्रह्मा। वायु। वैश्वानर। विश्व। अमृत। देवनागरी और संस्कृत-परिवार की अन्य वर्णमालाओं का पहला अक्षर और स्वरवर्ण। (इसका उच्चारण-स्थान कंठ है। इसके १८ भेद होते हैं। प्रथम—ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत। तदुपरान्त—ह्रस्व-उदात्त, ह्रस्व-अनुदात्त, ह्रस्व-स्वरित, दीर्घ-उदात्त, दीर्घ-अनुदात्त, दीर्घ-स्वरित, प्लुत-उदात्त, प्लुत-अनुदात्त, प्लुत-स्वरित। ये ९ प्रकार हुए। फिर अनुनासिक और अननुनासिक भेद से—इन ९ के दुगने ९×२=१८ भेद हुए।) (अव्य०) 'अ' अक्षर निषेधार्थक 'नञ्' का प्रतिनिधि है। स्वर से आरंभ होने वाले शब्दों के पहले आने पर इसका रूप 'अन्' हो जाता है और व्यञ्जन के पहले आने पर 'अ' ही रहता है। नञ्—के अर्थ ६ हैं :—तत्सादृश्यमभावश्च, तदन्यत्वं तदल्पता। अप्राशस्त्यं विरोधश्च, नञर्थाः षट् प्रकीर्तिताः॥ (उदाहरण क्रम से) सादृश्य—अब्राह्मणः (यज्ञोपवीत आदि होने से) [ब्राह्मण के सदृश अर्थात् क्षत्रिय आदि] अभाव।—अपापम् (पापाभाव)। भिन्नता।—अघटः (घट से भिन्न पट आदि)। अल्पता—अनुदरा (पतली या छोटी कमर वाली)। अप्राशस्त्य भाव—अकालः (अप्रशस्त अर्थात् अशुभ या अनुचित काल)। विरोध—अनादरः (आदर का विरोधी अर्थात् तिरस्कार या अपमान)।

अऋणिन्—(वि०) [नास्ति ऋणं यस्य न० ब०] जिसने किसी से ऋण न लिया हो या जिसके ऊपर किसी का ऋण न हो, बेकर्ज (यहाँ 'ऋ' को व्यञ्जन मानने के कारण 'अन्' नहीं हुआ। स्वर मानने पर 'अनृणी' प्रयोग होता है।)

अंश्—चुरा० पर० सक० विभाजित करना, बाँटना, भाग करके बाँटना। पृथक् करना। अंशयति, अंशापयति।

अंश—(पु०) [√अंश्+अच्] भाग, हिस्सा बाँट। भाज्य। अङ्क। भिन्न की लकीर के ऊपर की संख्या। चौथा भाग। कला। सोलहवाँ हिस्सा। वृत्त की परिधि का ३६०वाँ हिस्सा। जिसे इकाई मान कर कोण या चाप का परिमाण बतलाया जाता है। कंधा। बारह आदित्यों में से एक।—**अंश (अंशांश)** (पु०) अंशावतार, एक हिस्से का हिस्सा।—**अंशि (अंशांशि)** (क्रि० वि०) भागशः, हिस्सेवार।—**अवतरण (अंशावतरण)**—(न० दे०) 'अंशावतार', किसी भाग का उद्धरण, महाभारत के आदि पर्व के ६४—६७ अध्यायों का नाम।—**अवतार (अंशावतार)**—(पु०) वह अवतार जिसमें ईश्वर या देव-विशेष की पूरी कला अवतीर्ण न हुई हो।

—कल्पना (स्त्री०)—**प्रकल्पना**—(स्त्री०) **—प्रदान**—(न०) किसी भाग का बँटवारा या देना।**—भाज—हर—हारिन्**—हिस्सा लेने या पाने वाला, उत्तराधिकारी, यथा—'पिण्डदोंऽशहरश्चैषां पूर्वाभावे परः परः'। (याज्ञ०)**—सवर्णन**—(न०) अङ्कशास्त्र की एक क्रिया-विशेष।**—स्वर**—(संगीत में) प्रधान स्वर।

अंशक—(वि०) [√अंश्+ण्वुल्] विभाजक, बाँटने वाला। हिस्सेदार। (पु०) दायाद। (न०) दिन। [अंश+कन् (स्वार्थे)] (पु०) हिस्सा। टुकड़ा। मेष आदि राशि का तीसवाँ भाग।

अंशन—(न०) [√अंश्+ल्युट्] भाग देने की क्रिया।

अंशयितृ—(वि०) [√अंश्+णिच्+तृच्] विभाजक, बाँटने वाला। (पु०) हिस्सेदार पत्तीवाला।

अंशल—(वि०) [अंश+लच्] बलवान्, दृढ़ शरीर वाला।

अंशिता—(स्त्री०) [अंशिन्+तल्] साझीदारी, हिस्सेदारी।

अंशिन्—(वि०) [√अंश्+णिनि] साझीदार, भाग पाने वाला। यथा—सर्वे वा स्युः समांशिनः। (याज्ञ०)

अंशु—(पु०) [√अंश+कु] किरण, रश्मि। चमक, दमक। नोक। (डोरे का) छोर। पोशाक। सजावट। रफ्तार, गति। परमाणु।**—जाल**—(न०) रश्मिसमुदाय।**—धर,—पति,—बाण,—भृत,—भर्तृ,—स्वामिन्,—हस्त**—(पु०) सूर्य। आदित्य।**—पट्ट**—(न०) एक प्रकार का रेशमी वस्त्र।**—मत्**—(वि०) [अंशु+मतुप्] चमकदार, चमकीला। नुकीला, नोकदार। (पु०) सूर्य। एक सूर्यवंशी राजा जो असमञ्जस का पुत्र और महाराज सगर का पौत्र था।**—मती**—(स्त्री०) [अंशुमत्—ङीप्] सालपर्णी या सरिवन नामक ओषधि। पूर्णमासी, पूर्णिमा। एक नदी (प्रायः यमुना)।**—मत्फला**—(स्त्री०) [अंशुमत् फलं यस्याः, ब० स०] केले का वृक्ष।**—माला**—(स्त्री०) प्रकाश की माला सूर्य या चन्द्र का मण्डल।**—मालिन्**—(पु०) सूर्य।

अंशुक—(न०) [अंशु+क] वस्त्र। महीन कपड़ा। महीन रेशमी मलमल। महीन सफेद वस्त्र। वह सिला कपड़ा जो सबके ऊपर या सबके नीचे पहना जाता है। तेजपात। आँच या रोशनी की मंद लौ या ज्योति।

अंशुल—(वि०) [अंशु√ला+क] चमकीला, दमकीला।—(पु०) चाणक्य का दूसरा नाम।

अंस्—(दे०) √अंश्।

अंस—(पु०) [√अम्+स] टुकड़ा। हिस्सा। कंधा। कंधे की हड्डी। अंसफलक।**—कूट**—(पु०) साँड़ के कंधों के बीच का ऊपर को उठा हुआ भाग। कूबड़, कुब्ब।**—त्र**—(न०) कंधों का कवच-विशेष।**—फलक**—(पु०) मेरुदण्ड का ऊपरी भाग।**—भार**—(पु०) कंधे पर का बोझ या जुआ।**—भारिक, —भारिन्**—(वि०) कंधे पर रख कर बोझ उठाये हुए अथवा कंधे पर जुआ रखे हुए।**—विवर्तिन्**—(वि०) कंधों की ओर मुड़ा हुआ।

अंसल—(वि० दे०) 'अंशल'।

अंस्य—(वि०) [अंस+यत्] कंधे का, अंस सम्बन्धी।

अंह्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। समीप जाना। आरंभ करना। अंहते। चुरा० पर० सक० भेजना। बोलना। अक० चमकना। अंहयति।

अंहति—ती—(स्त्री०) [√अंह्+अति] [अंहति—ङीप्] भेंट उपहार। दान, खैरात। बीमारी।

अंहस्—(न०) [√अंह्+असुन्] पाप। कष्ट। चिन्ता।**—पति, अंहस्पति**—(पु०)

चिन्ता या पाप का स्वामी। मलमास।—**पत्य**—(न०) चिन्ता या कष्ट के ऊपर विजय पाना।

अंह्रि—(पु०)[√अंह्+क्रि] पैर। पेड़ की जड़। चार की संख्या।—**प**–(पु०) पादप, जड़ से जल पीने वाला अर्थात् वृक्ष।—**स्कन्ध**—(पु०) एड़ी और घुटने के बीच का भाग।

अक्—भ्वा० पर० अक० घुमघुमौआ चाल चलना, सर्पाकार चलना। अकति।

अक—(न०) [न कम् न० त०] हर्ष का अभाव। पीड़ा। कष्ट। पाप।

अकच—(वि०) [नास्ति कचो यस्य] गंजा, जिसके सिर पर बाल न हों।—(पु०) केतु ग्रह का नाम।

अकच्छ—(वि०) [नास्ति कच्छो यस्य न० ब०] नंगा। लंपट।

अकटुक—(वि०) [न कटुक: न० त०] जो कड़वा न हो। जो थका न हो, अक्लांत।

अकण्टक—(वि०) [न० विद्यते कण्टको यत्र न० ब०] बिना काँटे का। निर्विघ्न। शत्रु-रहित।

अकण्ठ—(वि०) [नास्ति कण्ठो यस्य न० ब०] जिसके कण्ठ न हो। स्वरहीन। कर्कश।

अकत्थन—(वि०) [नास्ति कत्थनम् यस्मिन् न० ब०] दर्पहीन, जो घमंड न करे।

अकथित—(वि०) [न कथित न० त०] जो न कहा गया हो। अनुक्त, गौण कर्म (व्या०)।

अकनिष्ठ—(वि०) [न कनिष्ठो यस्मात् न० ब०] जिससे कोई छोटा न हो अर्थात् जो सबसे छोटा हो। [न कनिष्ठ: न० त०] जो कभी छोटा न हो। [अके=वेदनिन्दास्वे नास्ति निष्ठा यस्य ब० स०]—(पु०) गौतम बुद्ध का नाम।

अकन्या—(स्त्री०)[न कन्या न० त०] जिसका कन्यापन उतर चुका हो।

अकम्पन—(न०) [न कम्पनम् न० त०] न काँपना। [न विद्यते कम्पनम् यत्र न० ब०] (वि०) कंपरहित, स्थिर।—(पु०) रावण के दल का एक राक्षस।

अकम्पित—(वि०) [न कम्पित: न० त०] जो कँपा न हो। स्थिर।—(पु०) महावीर (अंतिम तीर्थंकर) के ग्यारह शिष्यों में से एक।

अकर—(वि०) [न विद्यते करो यस्य न० ब० लुंजा, जिसके हाथ न हो। अकर्मण्य, जो कुछ न करे। वह माल जिस पर चुंगी न लगे या वह व्यक्ति जिस पर कर न हो।

अकरण—न० [न करणम् न० त०] कुछ न करना, क्रिया का अभाव।

अकरणि—(स्त्री०) [न√कृ+अनि] असफलता। नैराश्य। अपूर्णता। इसका प्रयोग प्राय: किसी को शाप देने या किसी की अमंगल कामना करने में होता है।

अकरा—(स्त्री०) [न√कृ+अच्] आँवले का वृक्ष, आमलकी।

अकराल—(वि०) [न कराल: न० त०] जो भयावह न हो। सौम्य। सुन्दर।

अकरुण—(वि०) [नास्ति करुणा यस्य न० ब०] दयारहित। निठुर।

अकर्कश—(वि०) [न कर्कश: न० त०] जो कर्कश या कठोर न हो। नरम।

अकर्ण—(वि०) [नास्ति कर्णौ यस्य न० ब०] कर्णरहित, जिसके कान न हो। बहरा। (पु०) सर्प।

अकर्ण्य—(वि०) [न—कर्ण+यत्] जो कानों के योग्य न हो।

अकर्तन—(वि०) [√कृत्+युच्, न० त०] बौना, वामन। [√कृत्+ल्युट्, न० ब०] जो न काटे।

अकर्तृ—(वि०) [न कर्ता न० त०] जो कर्ता न हो, कर्म न करने वाला।—(पु०) कर्मों से निर्लिप्त पुरुष (सांख्य०)।

अकर्मक—(वि०) [नास्ति कर्म यस्य न० ब० कप्] (वह क्रिया) जिसके लिये कर्म की अपेक्षा न हो (व्या०) —(पु०) परमात्मा

अकर्मण्य—(वि०) [कर्मन्+यत् न० त०] कर्म के अयोग्य, निकम्मा। न करने योग्य, अनुचित।

अकर्मन्—(वि०) [न विद्यते कर्म यस्य न० ब०] सुस्त। जिसके पास करने को कुछ काम न हो अथवा जो कुछ भी काम न करता हो। अयोग्य। पतित। दुष्ट। न० [न कर्म न० त०] कार्याभाव। अनुचित कार्य, बुरा कर्म, पाप।—**अन्वित** (**अकर्मान्वित**)–(वि०) बेकाम, खाली, निठल्लू। अपराधी।—**कृत्**–(वि०) क्रिया से रहित। अनुचित काम करने वाला।—**भोग**–(पु०)-कर्मफल से मुक्त होने की स्वतंत्रता का सुखानुभव।

अकल—(वि०) [नास्ति कला=अवयवः यस्य न० ब०] जो भागों में विभक्त न हो। (पु०) परमात्मा।

अकल्क—(वि०) [नास्ति कल्को यस्य न० ब०] विशुद्ध, पवित्र। पापशून्य। (स्त्री०) चन्द्रमा की चाँदनी।—**ता**–(स्त्री०) ईमानदारी, शुद्धता।

अकल्प—(वि०) [नास्ति कल्पो यस्य न० ब०] अनियंत्रित, असंयत। निर्बल, अयोग्य। तुलनाशून्य, जिसकी तुलना न हो सके।

अकल्य—(वि०) [कलासु साधुः कला+यत् न० त०] अस्वस्थ, भला चंगा नहीं।

अकल्याण—(वि०) [नास्ति कल्याणम् यस्य न० ब०] मंगलरहित, अशुभ। (न०) [न कल्याणम् न० त०] अमंगल, अहित।

अकथ्य-वा—(वि०) [न कथ्यते=वर्ण्यते √कथ्+यत्—वा न० त०] जिसका वर्णन न किया जा सके, वर्णनातीत।

अकद्वारि—(वि०) [न कुत्सिता अरयो यस्य न० ब०] जिसके घृणित शत्रु न हों।

अकस्मात्—(अव्य०) [न कस्मात्] संयोग-वश, सहसा, अचानक, हठात्, आपसे आप, अकारण।

अकाण्ड—(वि०) [नास्ति काण्डो यस्मिन् न० ब०] बिना धड़ या तने का, अचानक या असमय होनेवाला। (क्रि० वि०) अकारण ही, अचानक।—**जात**–(वि०) सहसा उत्पन्न हुआ अथवा उत्पन्न किया हुआ।—**पात-जात**–(वि०) जन्मते ही मर जाने वाला।—**शूल**–(न०) वायुगोले का सहसा उठने वाला दर्द।

अकाम—(वि०) [नास्ति कामो यस्य न० ब०] बिना कामना का, कामनारहित। इच्छाशून्य। निःस्पृह। अबोध। अतर्कित। (पु०) [न कामः न० त०] कामना का अभाव।

अकामतः—(क्रि० वि०) [न—काम+तसिल्] बिना इरादा या इच्छा के, विवश होकर।

अकाय—(वि०) [न विद्यते कायो यस्य न० ब०] बिना शरीर का, पाञ्चभौतिक शरीर से रहित। (पु०) राहु का नाम। परमात्मा की एक उपाधि।

अकार—(पु०) [अ+कार] 'अ' अक्षर।

अकारण—(वि०) [नास्ति कारणम् यस्य न० ब०] निष्प्रयोजन, निरुद्देश्य, हेतुरहित, स्वेच्छाप्रसूत, अपने आप उत्पन्न। (क्रि० वि०) बिना कारण, बेमतलब।

अकार्य—(वि०) [न√कृ+ण्यत्] न करने योग्य, अनुचित। न० बुरा कर्म, अपराध, जुर्म।—**कारिन्**–(वि०) बुरा काम करने वाला, जो कर्तव्य न करे।

अकाल—(वि०) [नास्ति कालो यस्य न० ब०] जिसका समय नहीं हुआ है, असामयिक। (पु०) [न कालः न० त०] अनुपयुक्त समय, कुसमय।—**कुसुम**,—**पुष्प**–(न०) कुसमय का फूला हुआ फूल।—**कूष्मांड**–(पु०) कुसमय में फला हुआ कुम्हड़ा।—**ज**,—**जात**–

(वि०) कुसमय में उत्पन्न, कच्चा। **—जलदोदय —मेघोदय**—(पु०) कुसमय आकाश में बादलों का उमड़ना। पाला या कुहरा। **—मृत्यु**–(पु०) बेसमय की मौत, असामयिक मृत्यु। **—वेला**—(स्त्री०) कुसमय। **—सह**–(वि०) जो विलम्ब अथवा समय का नाश न सह सके, बेसब्र।

अकिञ्चन—(वि०) [नास्ति किंचन यस्य नपु० त० स०] जिसके पास कुछ न हो, निपट निर्धन, कंगाल, दरिद्र।

अकिञ्चिज्ज्ञ—(वि०) [न–किञ्चित्√ज्ञा+क] कुछ भी न जानने वाला, निपट अजान।

अकिञ्चित्कर—(वि०) [न–किञ्चित्√कृ+अच्] असमर्थ, जिसका किया कुछ भी न हो सके, तुच्छ।

अकीर्ति—(स्त्री०) [न–√कृत्+क्तिन्] अपयश, बदनामी।

अकुण्ठ—(वि०) [नास्ति कुण्ठा यस्य न० ब०] जो कुंठित या भोथरा न हो, तीक्ष्ण, चोखा, तीव्र, खरा, तेज। बिना रोका-टोका हुआ। निर्दिष्ट। अत्यधिक।

अकुतस्—(क्रि० वि०) [न—किम्+तसिल्] यह अकेला कहीं नहीं प्रयुक्त होता। इसका अर्थ है जो कहीं से न हो।

अकुतोभय—(वि०) [नास्ति कुतोऽपि भयं यस्य मयू० त० स०] निर्भय, जिसे किसी का भय न हो।

अकुप्य—(न०) [न—√गुप्+क्यप् न० त०] सुवर्ण। चाँदी। कम कीमती धातु नहीं।

अकुल—(वि०)[नास्ति कुलं यस्य न० ब०] कुलरहित, अकुलीन। (पु०) शिव।

अकुशल—(वि०) [न कुशलः न० त०] जो कुशल न हो, अनाड़ी। अशुभ, अभागा। (न०) विपत्ति, बुराई, अहित।

अकुह,—क (पु०) [नास्ति कुहः,—कः यस्मिन् न० ब०] जो ठग नहीं है, ईमानदार आदमी।

अकूपार—(पु०) [न—कूप√ऋ+अण्] समुद्र। सूर्य। बड़ा कछुआ, वह विशाल कछुआ जिसकी पीठ पर पृथ्वी टिकी हुई मानी जाती है। पत्थर, चट्टान।

अकूर्च—(वि०) [नास्ति कूर्चम् यस्य न० ब०] कपटशून्य, जिसके दाढ़ी न हो। (पु०) बुद्ध।

अकृच्छ्र—(वि०) [नास्ति कृच्छ्रं यस्य न० ब०] बिना क्लेश का, आसान। (न०) [न० त०] क्लेश या कठिनाई का अभाव।

अकृत—(वि०) [न√कृ+क्त] जो न किया गया हो। जिसके करने में भूल की गयी हो। अपूर्ण, अधूरा। जो रचा न गया हो। जिसने कोई काम न किया हो। अपक्व, कच्चा।—(स्त्री०) बेटी होने पर भी जो बेटी न मानी जाय और जो पुत्रों के समकक्ष मानी जाय। (न०) किसी कार्य को न करना। अभूतपूर्व कर्म। **अभ्यागम (अकृताभ्यागम)**—(पु०) अकृत कर्म के फल की प्राप्ति। **—अर्थ (अकृतार्थ)**–(वि०) असफल, अनुत्तीर्ण। **—अस्त्र (अकृतास्त्र)**–(वि०) जिसको हथियार चलाने का अभ्यास न हो। **—आत्मन् (अकृतात्मन्)**–(वि०) अज्ञानी, मूर्ख, परब्रह्म या परमात्मा के ज्ञान से रहित– **उद्वाह (अकृतोद्वाह)**–(वि०) अविवाहित। **—ज्ञ**–(वि०) जो कृतज्ञ न हो, जो किये हुए उपकार को न माने, कृतघ्न। अधम, नीच। **—धी,—बुद्धि**–(वि०) अज्ञ, अबोध, मूर्ख।

अकृतिन्—(वि०) [न—कृत+इनि] अकुशल, अनाड़ी। निकम्मा।

अकृष्ट—(वि०) [न√कृष्+क्त] अनजुता, जो न जोता गया हो। **—पच्य,—रोहिन्**–(न०) जो अनजुती जमीन में उत्पन्न हुआ हो।

अकृष्णकर्मन्—(वि०) [न कृष्णं कर्म यस्य न० ब०] जिसके कर्म बुरे नहीं हैं, निर्दोष, निर्मल।

अकेतन—(वि०) [न केतनं यस्य न० ब०] गृह-हीन, बे घर-बार का।

अकोट—(पु०) [न कोटः=कुटिलता यस्मिन् न० ब०] सुपाड़ी का वृक्ष।

अकोप—(पु०) [न कोपः न० त०] कोप का अभाव। [न० ब०] राजा दशरथ का एक मंत्री।

अकोविद—(वि०) [न कोविदः न० त०] जो जानकार न हो, मूढ़, अपण्डित।

अकौशल—(न०) [कुशलस्य भावः, कुशल +अण् न० त०] कुशलता का अभाव, अदक्षता।

अक्का—(स्त्री०) [√अक्+कन्] माता।

अक्त—(वि०) [√अञ्ज्+क्त] जोड़ा हुआ। गया हुआ। बाहर तक फैला हुआ। तैलादि की मालिश किया हुआ, अंजन लगा हुआ।

अक्ता—(स्त्री०)- [√ अञ्ज्+क्त] रात्रि।

अक्त्र—(न० [√अञ्ज्+त्र] वर्म, कवच।

अक्रम—(वि०) [नास्ति क्रमो यस्य न० ब०] क्रमरहित, बेसिलसिला। (पु०) [न क्रमः न० त०] क्रम का अभाव, गड़बड़ी। —**संन्यास**-(पु०) संन्यास का एक प्रकार (जो आश्रम-व्यवस्था के अनुसार धारण न किया गया हो)।

अक्रिय—(वि०) [नास्ति क्रिया यस्मिन् न० ब०] जिसमें क्रिया न हो, क्रियाशून्य।

अक्रूर—(वि०) [न क्रूरः न० त०] जो क्रूर या कठोर न हो, जो संगदिल न हो। (पु०) एक यादव का नाम, जो कृष्ण के चचा और हितैषी थे।

अक्रोध—(वि०) [नास्ति क्रोधो यस्य न० ब०] क्रोधशून्य, शान्त। (पु०) [न क्रोधः न० त०] क्रोध का न होना।

अक्लम—(वि०) [नास्ति क्लमो यस्य न० ब०] श्रम या थकावट से रहित। (पु०) [न क्लमः न० त०] श्रम या थकावट का न होना।

अक्लिका—(स्त्री०) नील का पौधा।

अक्लिन्न—(वि०) [न√क्लिद्+क्त] जो आर्द्र या गीला न हो।—**वर्त्मन्**-(पु०) आँख का एक रोग जिसमें पलकें चिपकती हैं।

अक्लिष्ट—(वि०) [न√क्लिश्+क्त] कष्ट-रहित, बिना क्लेश का। सुगम, सहज, आसान।

अक्ष्—भ्वा० पर० अक० पहुँचना। व्याप्त होना। घुसना। सक० एकत्र करना, जमा करना। अक्षति, अक्ष्णोति।

अक्ष—(पु०) [√अक्ष्+अच्] धुरी, किसी गोल वस्तु के बीचोंबीच पिरोयी हुई वह लोहे की छड़ या लकड़ी जिस पर वह गोल वस्तु घूमती है। गाड़ी, छकड़ा। पहिया। तराजू की डाँड़ी। एक कल्पित स्थिर रेखा जो पृथ्वी के भीतरी केन्द्र से होती हुई उसके आर-पार दोनों ध्रुवों पर निकली है और जिस पर पृथिवी घूमती हुई मानी जाती है। चौसर का पासा, चौसर। रुद्राक्ष। तौल-विशेष जो १६ माशे की होती है और जिसे कर्ष भी कहते हैं। बहेड़ा। सर्प। गरुड़। आत्मा। ज्ञान। मुकदमा, व्यवहार, मामला। जन्मान्ध। इन्द्रिय। तूतिया। सोहागा।—**अंश**,—भाग। (पु०) भूमध्यरेखा से उत्तर या दक्षिण का अंतर।—**अग्रकील**-(पु०) गाड़ी के पहिये में लगायी जाने वाली खूँटी। —**आवपन**-(न०) चौसर की बिछात या बोर्ड।—**आवाप**-पु०) जुआरी।—**कर्ण**— (पु०) समकोण त्रिभुज के सामने की बाहु। —**कुशल**,—**शौण्ड**-(वि०) जुआ खेलने में प्रवीण।—**कूट**-(पु०) आँख की पुतली। —**कोविद**,—**ज्ञ**।-(वि०) पासा या चौसर के खेल में निपुण या उसका ज्ञाता।—**ग्लह** (पु०) जुआ, पासे का खेल।—**ज**-(न०) ज्ञान, अवनति। वज्र। हीरा। (पु०)

विष्णु का नाम-विशेष ।—**तत्त्व**–(न०), —**विद्या**–(स्त्री०) जुआ खेलने की कला या विद्या ।—**दर्शक**,—**दृश्**–(पुं०) जुए का निर्णायक। जुए का व्यवस्थापक ।—**देविन्**–(पुं०) जुआरी ।—**द्यूत**–(न०) जुआ, चौसर, पासे का खेल । —**धूर्त**–(पुं०) जुआरी ।—**धूर्तिल**–(पुं०) गाड़ी के जुए में जुता हुआ साँड़ या बैल ।—**पटल**–(न०) न्यायालय । वह स्थान या कमरा, जहाँ अदालती कागजात रखे जाते हों ।—**पाट**–(पुं०) अखाड़ा ।—**पाटक**–(पुं०) आईन के ज्ञान में निपुण, न्यायाधीश ।—**पात**–(पुं०) पासे का फिकाव ।—**पाद**–(पुं०) सोलह पदार्थवादी न्यायशास्त्र के रचयिता गौतम ऋषि अथवा न्यायवादी ।—**भार**–(पुं०) गाड़ी भर बोझा ।—**माला** (स्त्री०) रुद्राक्ष की माला, वर्णमाला, वशिष्ठ की पत्नी, अरुंधती ।—**मालिन्**–(पुं०) रुद्राक्ष की माला धारण करने वाला, शिव का एक नाम ।—**राज**–(पुं०) वह जिसे जुआ खेलने का व्यसन हो अथवा पासों में प्रधान ।—**रेखा**–(स्त्री०) धुरी की रेखा ।—**वती**–(स्त्री०) चौसर या पासे का खेल ।—**वाट**–(पुं०) वह घर जिसमें जुआ होता हो, जुआड़खाना ।—**वाम**–(पुं०) जुए में कपट करने वाला ।—**वृत्त**–(पुं०) अक्षोपादर्शक वृत्त । (वि०) जुए का आदी, जुआ खेलते समय घटित होने वाला ।—**सूत्र**–(पुं०) रुद्राक्ष की माला; जनेऊ ।—**हृदय**–(न०) जुआ के खेल में पूर्ण निपुणता ।

अक्षणिक—(वि०) [न क्षणिकः न० त०] जो क्षणिक या अस्थायी न हो, दृढ़, स्थिर ।

अक्षत—(वि०) [न √क्षण्+क्त] जो चोटिल न हो। जो टूटा न हो। सम्पूर्ण। अविभक्त। (पुं०) शिव। कूटे हुए या पछोरे हुए चावल, जो धूप में सुखाये गये हों। (बहु०); सम्पूर्ण, अनाज। चावल जो जल से धोये हुए हों और पूजन में किसी देवता पर चढ़ाने को रखे जायँ। यव। (न०) अनाज किसी भी प्रकार का। हिजड़ा नपुंसक (यह पुंल्लिंग भी है) ।—**ता**–(स्त्री) [अक्षत—टाप्] क्वारी। धर्मशास्त्रानुसार वह पुनर्भू स्त्री जिसने पुनर्विवाह तक पुरुष से संसर्ग न किया हो। काँकड़ासिंगी ।—**योनि**–(स्त्री०) वह कन्या जिसका पुरुष से संसर्ग न हुआ हो, वह कन्या जिसका विवाह तो हो गया हो, परन्तु पुरुष के साथ संसर्ग न हुआ हो।

अक्षम—(वि०) [√क्षम्+अच् न० त०] क्षमता रहित, असमर्थ। [नास्ति क्षमा यस्य न० ब०] क्षमारहित। असहिष्णु।

अक्षमा—(स्त्री०) [√क्षम्+अङ न० त०] न सहना, ईर्ष्या। अधैर्य। क्रोध, रोष।

अक्षय—(वि०) [√क्षि+अच् न० ब०] जिसका नाश न हो, अविनाशी। कल्पान्त-स्थायी, कल्प के अन्त तक रहने वाला।—**तृतीया**–(स्त्री०) वैशाख शुक्ल तृतीया। आखातीज। सतयुग का आरम्भ दिवस।

अक्षया—(स्त्री०) [नास्ति क्षयः यस्याम् न० ब०] बहुत पुण्य बढ़ाने वाली तिथि—सोमवती अमावस्या, रविवार की सप्तमी, बुधवार की चतुर्थी; वैशाख-शुक्ल तृतीया।

अक्षय्य—(वि०) [√क्षि+यत् न० त०] कभी न चुकने वाला, अविनाशी, सदा बना रहने वाला। (न०) श्राद्ध के अंत में दिया जाने वाला घृत-मधु सहित जल; अक्षय धर्म। —**नवमी** (स्त्री०) कार्तिक-शुक्ला नवमी।

अक्षर—(वि०) [√क्षर्+अच् न० त०] अच्युत, स्थिर, नित्य, अविनाशी।—(पुं०) शिव, विष्णु।—(न०) अकारादिवर्ण, मनुष्य के मुख से निकली हुई ध्वनि को सूचित करने वाले सङ्केत। दस्तावेज, अविनाशी, आत्मा, ब्रह्म। जल। आकाश। परमानन्द, मोक्ष।—**अर्थ** (**अक्षरार्थ**)–(पुं०) शब्दार्थ, संकुचित

अर्थ । —**चञ्चु**,—**चुञ्चु**,—**चण**,—**चन**–(पुं०) लेखक (क्लर्क), नकलनवीस, प्रतिलिपि करने वाला । यही अर्थ **अक्षरजीविन्** अथवा **अक्षर-जीवक** अथवा **अक्षर-जीविक** का भी है ।—**च्युतक**–(न०) किसी अक्षर के जोड़ देने से किसी शब्द का भिन्न अर्थ करना, एक प्रकार का खेल ।—**छंदस्**,—**वृत्त**–(न०) किसी पद्य का एक पाद ।—**जननी**—**तूलिका**–(स्त्री०) नरकुल या सेंटे की कलम ।—**न्यास**–(वि०) लेख । अकारादि वर्ण । धर्म-ग्रन्थ । तंत्र की एक क्रिया जिसमें मंत्र के एक-एक अक्षर पढ़ कर हृदय, अंगुलि, कण्ठ आदि अंग स्पर्श किये जाते हैं । —**भूमिका**–(स्त्री०) पट्टी या काठ का तख्ता जिस पर लिखा जाय ।—**मुख**–(पुं०) विद्यार्थी । विद्वान् । 'अ' अक्षर । (वि०) अक्षर सीखने वाला ।—**मुष्टिका**–(स्त्री०) उँगलियों के संकेत द्वारा बोलना ।—**वर्जित**,—**शत्रु**–(पुं०) अपढ़, निरक्षर ।—**विन्यास**–(पुं०) वर्णविन्यास, हिज्जे, लिपि ।—**शिक्षा**–(स्त्री०) तांत्रिक-अक्षर-शिक्षा-विशेष ।—**संस्थान**–(न०) लेख । वर्णमाला ।—**समाम्नाय**–(पुं०) वर्णमाला ।

अक्षरक—(न०) [अक्षर+कन्] एक स्वर । कोई अक्षर ।

अक्षरशस्—(क्रि० वि०) [अक्षरम् अक्षरम् इति वीप्सायाम् अक्षर+शस्] अक्षर-अक्षर, शब्द ब शब्द, बिल्कुल, सम्पूर्णतया ।

अक्षान्ति—(स्त्री०) [√क्षम्+क्तिन् न० त०] असहिष्णुता, ईर्ष्या, डाह ।

अक्षार—(वि०) [नास्ति क्षारं यत्र न० ब०] जिसमें बनावटी नमकीनपन न हो । (पुं०) असली नमक ।

अक्षि—(न०) [√अश्+क्सि] नेत्र । दो की संख्या ।—**कम्प**–(पुं०) आँख झपकना ।—**कूट**,—**कूटक** —**गोल**–(पुं०)—**तारा**–(स्त्री०) आँख की पुतली ।—**गत**–(वि०) दृष्टिगोचर । उपस्थित वर्तमान, आँख में पड़ी हुई (किरकिरी), घृणित । द्वेष्य—**तर**(न०) आँख के समान निर्मल जल, परिष्कृत जल ।—**पक्ष्मन्**,—**लोमन्**–(न०) बरौनी, पलकों के किनारों के ऊपर के बाल ।—**पटल**–(न०) आँख के कोए पर की झिल्ली, इसी झिल्ली का रोग-विशेष ।—**विकूणित**,—**विकूशित** (न०) तिरछी चितवन, कटाक्ष ।

अक्षिक,—**अक्षीक**–(पुं०) [अक्षाय हितम् इत्यर्थे अक्ष+ठन्] रंजन वृक्ष, आल का पेड़ ।

अक्षीब,—(व) (न०) [अक्षि√बा+क] समुद्री नमक (पुं०) सहिजन का वृक्ष ।

अक्षीव—(ब) (वि०) [√क्षीव+क्त न० त०] जो मतवाला न हो । (पुं०) सहिजन का पेड़ । (न०) समुद्र-लवण ।

अक्षुण्ण— (वि०) [√क्षुद्+क्त न० त०] अभग्न; अनटूटा । अनाड़ी, अकुशल । जो परास्त न हुआ हो, जो जीता न गया हो, जो कुचला या कटा या पीटा न गया हो । असाधारण, गैरमामूली ।

अक्षुद्र—(वि०) [न क्षुद्रः न० त०] जो छोटा या तुच्छ न हो । (पुं०) शिव का एक नाम ।

अक्षेत्र—(वि०) [नास्ति क्षेत्रं यस्य न० ब०] बिना खेत वाला, बिना जोता बोया हुआ । (न०) [न क्षेत्रम् न० त०] बुरा या खराब खेत, ज्यामिति का अशुद्ध या खराब चित्र, मंदबुद्धि छात्र ।

अक्षोट—(पुं०) [√अक्ष+ओट] अखरोट ।

अक्षोभ—(पुं०) [√क्षुभ्+घञ् न० त०] क्षोभ का अभाव, शांति, हाथी बाँधने का खूँटा । (वि०) [न० ब०] जो क्षुब्ध या घबड़ाया न हो ।

अक्षोभ्य—(वि०) [क्षुभ+यत्, न० त०]

जिसमें क्षोभ न हो, अनुद्वेगी, शान्त। (पुं०) युद्ध, एक बड़ी संख्या।

अक्षौहिणी—(स्त्री०) [अक्ष√ऊह्+णिनि, ङीप्] पूरी चतुरंगिनी सेना, सेना का एक परिमाण; एक अक्षौहिणी में १०९३५० पैदल सिपाही, ६५६१० घोड़े, २१८७० रथ और २१८७० हाथी होते हैं।

अखण्ड—(वि०) [नास्ति खंडो यस्य न० ब०] जो टूटा न हो, सम्पूर्ण। अभग्न, अविच्छिन्न। **—द्वादशी**—(स्त्री०) मार्गशीर्ष शुक्ला द्वादशी।

अखण्डन—(न०) [न खंडनम् न० त०] खंडन न करना, न काटना, स्वीकार। (पुं०) काल, समय, परमात्मा।

अखण्डित—(वि०) [न खंडितः न० त०= न+खंड्+क्त] जिसके टुकड़े न हुए हों। विभाग-रहित, स्वीकृत। **—ऋतु**—(वि०) [न खंडितः ऋतुः यस्मिन् न० ब०] जिसमें ऋतु =मौसम का खंडन न हुआ हो। मौसमी फल-पुष्प उत्पन्न करने वाला।

अखर्व—(वि०) [न खर्वः न० त०] जो बौना न हो। जो छोटा न हो, बड़ा।

अखात—(वि०) [√खन्+क्त न० त०] बिना खोदा हुआ। (पुं०) (न०) बिना खोदा हुआ या स्वाभाविक जलाशय या झील या खाड़ी। किसी मन्दिर के सामने की पुष्करिणी।

अखाद्य—(वि०) [√खाद्+ण्यत् न० त०] न खाने योग्य, अभक्ष्य।

अखिल—(वि०) [√खिल+क न० त०] एक-एक कण करके न लिया जाने वाला, समग्र, समूचा। जोती जाने वाली जमीन, जो भूमि मरु या बेकार न हो। (क्रि० वि०) सम्पूर्णतः, पूर्ण रूप से।

अखेटिक—(पुं०) [√खिट+घिकन्, न० त०] साधारणतः वृक्ष। कुत्ता जिसको शिकार खेलना सिखलाया गया हो।

अखेदिन्—(वि०) [खेद+इनि, न० त०] शोक-रहित, जो थका न हो।

अख्याति—(स्त्री०) [√ख्या+क्तिन्, न० त०] बदनामी, अपकीर्ति। (वि०) [न ख्यातिः यस्य न० ब०] निन्द्य, बदनाम।

अग्—भ्वा० पर० अक० टेढ़ा-मेढ़ा या सर्प की तरह चलना। अगति।

अग—(पुं०) [√गम्+ड, न० त०] वृक्ष। पहाड़, सर्प, सूर्य, सात की संख्या। (वि०) चलने में असमर्थ, जिसके पास कोई न पहुँच सके। **—आत्मजा** (**अगात्मजा**)—(स्त्री०) पर्वत की कन्या, पार्वती देवी। **—ओकस्** (**अगौकस्**)—(पुं०) पर्वत पर बसने वाला। (वृक्षवासी पक्षी)। शरभ जन्तु जिसके आठ टाँगें बतलायी जाती हैं। शेर। सिंह। **—ज**—(न०) शिलाजीत।

अगच्छ—(वि०) [√गम+श, न० त०] अचल, जो चल न सके। (पुं०) वृक्ष।

अगणित—(वि०) [√गण्+क्त, न० त०] अनगिनत, बेहिसाब। **—प्रतियात**—(वि०) ध्यान न दिये जाने के कारण लौटा हुआ। **—लज्ज**—(वि०) लज्जा का खयाल न करने वाला।

अगति—(वि०) [नास्ति गतिः यस्य, न० ब०] उपाय-रहित, बिना उपाय का, अनव-बोध. [न गतिः, न० त०] गति का अभाव, पहुँच का न होना, उपाय का अभाव, बुरी गति।

अगतिक—(वि०)—[नास्ति गतिः यस्य, न० ब० कप्] जिसकी कहीं गति न हो, जिसका कहीं ठिकाना न हो, निराश्रित। **—गति**—(स्त्री०) आश्रयविहीन का आश्रय, अंतिम आश्रय (ईश्वर)।

अगद—(वि०) [नास्ति गदो यस्य, न० ब०] नीरोग, रोगरहित। (पुं०) [नास्ति गदो यस्मात् न० ब०] औषध। स्वास्थ्य। विषनाश करने का विज्ञान। **—तन्त्र**—(न०) आयुर्वेद का एक अंग-विशेष। इसमें साँप, बिच्छू

आदि के विष उतारने की दवाइयाँ लिखी हैं।—**वेद**–(पुं०) चिकित्सा-शास्त्र, आयुर्वेद।

अगदङ्कार—(पुं०) [अगद√कृ+अण्, मुम्] वैद्य, चिकित्सक।

अगम—(वि०)–(पुं०) [√गम्+अच्, न० त०] दे० 'अग'।

अगम्य—(वि०) [√गम्+यत्, न० त०] गमन के अयोग्य, जहाँ कोई न पहुँच सके। अज्ञेय, जानने के अयोग्य। विकट, कठिन। अपार, बहुत, अत्यन्त। अथाह, बहुत गहरा।

अगम्या—(स्त्री०) [√गम्+यत्—टाप्, न० त०] न गमन करने योग्य, मैथुन करने के अयोग्य स्त्री। चाण्डाली आदि।—**गमन**–(न०) न गमन करने योग्य स्त्री के साथ गमन करना।—**गामिन्**–(वि०) मैथुन न करने योग्य स्त्री के साथ गमन करने वाला।

अगरी—(स्त्री०) [नास्ति गरः यस्याः, न० ब०] देवताड़ वृक्ष। विषनाशक कोई भी वस्तु।

अगरु—(न०) [√गृ+उ, न० त०] अगर का पेड़ या लकड़ी।

अगस्ति—(पुं०) [अग√अस+ति] कुम्भज, एक ऋषि का नाम। एक नक्षत्र का नाम। एक वृक्ष का नाम।

अगस्त्य—(पुं०)–[अग√स्त्यै+क] दे० 'अगस्ति'।—**कूट** (पुं०) दक्षिण भारत के मदरास प्रान्त के एक पर्वत का नाम, जिससे ताम्रपर्णी नदी निकलती है।

अगाध—(वि०)–[√गाध्+घञ्, न० ब०] अथाह, बहुत गहरा। असीम, अपार, बहुत, अधिक। बोधागम्य, दुर्बोध। (पुं०) छेद, गड्ढा, स्वाहाकार की पाँच अग्नियों में से एक।—**जल**–(पुं०) ह्रद, तालाब। (वि०) अथाह जल वाला। (न०) अथाह जल।

अगार—(न०) [अगम् ऋच्छति इत्यर्थे अग √ऋ+अण्] घर, मकान।

अगिर—(पुं०) [√गॄ+क, न० त०] स्वर्ग, सूर्य, अग्नि, एक राक्षस।—**ओकस्** (**अगिरौकस्**)–(वि०) स्वर्ग में आवास करने वाला।

अगु—(वि०) [नास्ति गौः यस्य, न० ब०] गौ या किरण से रहित, निर्धन। (पुं०) अंधकार, राहु।

अगुण—(वि०) [नास्ति गुणः यस्य, न० ब०] निर्गुण, जिसमें कोई सद्गुण न हो। (पुं०) अपराध, बुराई।

अगुरु—(वि०) [न गुरुः, न० त०; नास्ति गुरुः यस्य, न० ब०] हलका, जो भारी न हो। (छन्दःशास्त्र में) छोटा। निगुरा। जिसका कोई गुरु न हो। (न०) (पुं०) अगर, सुगन्धित काष्ठ-विशेष।

अगूढ़—(वि०) [√गुह्+क्त, न० त०] जो छिपा न हो, प्रकट।—**गन्ध**–(न०) हींग।—**भाव**–(वि०) जिसका भाव=अर्थ गूढ़=छिपा हुआ न हो, सरल चित्त वाला।

अगृभीत—(वि०) [न गृभीतः=गृहीतः, न० त०] न पकड़ा हुआ, न जीता हुआ।

अगृह—(वि०) [नास्ति गृहं यस्य, न० ब०] गृहहीन, बे घरबार का। (पुं०) वानप्रस्थ, यति आदि, बिना घर वाला। (नट, बनजारा)।

अगोचर—(वि०) [नास्ति गोचरो यस्य, न० ब०, न गोचरः न० त०] इन्द्रियों के प्रत्यक्ष का अविषय, जिसका अनुभव इन्द्रियों को न हो, अप्रत्यक्ष, अप्रकट। (न०) ब्रह्म।

अग्नायी—(स्त्री०) [अग्नि+ऐङ्, ङीप्] अग्निदेव की स्त्री, स्वाहा। त्रेतायुग।

अग्नि—(पुं०) [√अङ्ग्+नि, नलोप] आग, हवन की आग, यह तीन प्रकार की मानी गई है।—**गार्हपत्य, आहवनीय** और **दक्षिण**। उदर के भीतर जो अग्नि खाद्य पदार्थों को पचाती है, उसको भी अग्नि कहते हैं और उसका नाम-विशेष है, 'जठराग्नि' या 'वैश्वानर'। पाँच तत्त्वों में से एक, जिसे 'तेज' कहते हैं। कफ, वात, पित्त में 'पित्त' को अग्नि माना है। सुवर्ण। तीन की संख्या। वैदिक

तीन प्रधान देवताओं (अग्नि, वायु और सूर्य) में एक अग्नि भी है। चित्रक, चीता (ओषध-विशेष)। भिलावाँ, नीबू। **—अ (आ) गार** (**अग्न्यगार, अग्न्यागार**)–(न०)**—आलय** (**अग्न्यालय**)–(पुं०)**—गृह**–(न०) अग्निदेव का मन्दिर, यज्ञाग्नि रखने का स्थान। **—अस्त्र** (**अग्न्यस्त्र**)–(न०) वह अस्त्र-विशेष जो मंत्र द्वारा चलाये जाने पर आग की वर्षा करता है। अग्नि-चालित अस्त्र (बंदूक, तमंचा आदि)। **—आधान** (**अग्न्याधान**)–(न०) अग्नि की यथा-विधि स्थापना। अग्निहोत्र। **—आहित** (**अग्न्याहित**)–(पुं०) जो अपने घर में सदा विधानपूर्वक अग्नि को रखता है, अग्निहोत्री। **—उत्पात** (**अग्न्युत्पात**)–(पुं०) अग्नि-सम्बन्धी उपद्रव, अग्नि-कांड, अग्नि द्वारा सूचित अशुभ चिह्न-विशेष, उल्कापात आदि। **—उत्सादिन्** (**अग्न्युत्सादिन्**)–(वि०) यज्ञाग्नि को बुझने देने वाला। **—उद्धार** (**अग्न्युद्धार**–(पुं०) दो अरणिकाष्ठों को रगड़ कर आग उत्पन्न करना। **—उपस्थान** (**अग्न्युपस्थान**)–(न०) अग्नि का पूजन या आराधन। वे मंत्र-विशेष जिनसे अग्नि का पूजन किया जाता है। **—कण, —स्तोक**–(पुं०) अंगारी, चिनगारी। **—कर्मन्**–(न०) अग्निहोत्र, होम, गरम लोहे से दागना, अग्नि का पूजन। **—कला**–(स्त्री०) अग्नि के दशविध अवयवों (वर्ण या मूर्ति) में से कोई। **—कारिका**–(स्त्री०) ऋग्वेद का 'अग्निदूत पुरोदधे' आदि मंत्र जिससे अग्न्याधान किया जाता है। **—कार्य**–(न०) अग्नि में आहुति आदि देना। **—काष्ठ**–(न०) अगर की लकड़ी, अरणी की लकड़ी। **—कीट**–(पुं०) समंदर नाम का कीड़ा। **—कुक्कुट**–(पुं०) जलता हुआ पयाल का पूला, लूक, लुकारी। **—कुण्ड**–(न०) एक विशेष प्रकार का गड्ढा जिसमें अग्नि प्रज्वलित करके हवन किया जाता है, वेदी। **—कुमार, —तनय, —सुत**–(पुं०) कार्त्तिकेय। आयुर्वेद के मतानुसार एक रस-विशेष। **—कुल**–(न०) क्षत्रियों का एक वंश जिसकी उत्पत्ति अग्निकुंड से मानी जाती है, प्रमार, परिहार, चालुक्य या सोलंकी और चौहान। **—केतु**–(पुं०) धूम, धूआँ। शिव का नाम। रावण की सेना का एक राक्षस। **—कोण** (पुं०), **—दिश**–(स्त्री०) पूर्व और दक्षिण का कोना जिसके देवता अग्नि हैं। **—क्रिया**–(स्त्री०) शव का अग्निदाह, मुर्दा जलाना, दागना। **—क्रीडा**–(स्त्री०) आतिशबाजी, रोशनी, दीपमालिका। **—गर्भ**–(वि०) जिसके भीतर आग हो। (पुं०) सूर्यकान्त मणि, सूर्यमुखी, शीशा।(–र्भा, स्त्री०) शमीवृक्ष। पृथ्वी का नाम। **—चक्र**–(न०) शरीर के भीतर के छः चक्रों में से एक (योग०)। **—चय**–(पुं०), **—चयन**–(न०), **—चिति, —चित्या**–(स्त्री०) दे० 'अग्न्याधान'। **—चित्**–(पुं०) अग्निहोत्री। **—ज, —जात**–(वि०) अग्नि से उत्पन्न। (पुं०) कार्त्तिकेय, विष्णु। (न०) सुवर्ण। **—जार, —ज्वाल**–(पुं०) गजपिप्पली का पेड़, समुद्रफल का पेड़। **—जिह्वा**–(स्त्री०) आग की लौ, अग्नि की जिह्वा जो सात मानी गयी हैं। उन सातों के भिन्न-भिन्न नाम हैं। (यथा कराली, धूमिनी, श्वेता, लोहिता, नीललोहिता, सुवर्णा, पद्मरागा)। **—तप्त**–(वि०)–चमकता हुआ या जलता हुआ। **—त्रय**–(न०), **—त्रेता**–(स्त्री०) तीन प्रकार की आग जिनका वर्णन अग्नि के अर्थ के अन्तर्गत किया जा चुका है। **—द**–(वि०) आग देने वाला, आग लगाने वाला, जठराग्नि को प्रदीप्त करने वाला। **—दातृ**–(पुं०) अन्तिम संस्कार अर्थात् दाहकर्म करने वाला। **—दीपन**–(वि०) जठराग्नि-प्रदीप्तिकारी, पाचन-शक्ति बढ़ाने वाला। **—दीप्ति, —वृद्धि**–(स्त्री०) पाचन-शक्ति की वृद्धि, अच्छी भूख। **—देवा**–(स्त्री०) कृत्तिका

नक्षत्र ।—**धान**–(न०) वह स्थान या पात्र जिसमें पवित्र आग रखी जाय। अग्निहोत्री का गृह।—**धारण**–(न०) अग्नि को घर में सदा रखना।—**परिक्रिया,—परिष्क्रिया**–(स्त्री०) अग्नि का पूजन, अग्निचर्या, होमादि करना।—**परिग्रह**–(पुं०) शास्त्रोक्त अग्नि को अखंड करने का व्रत।—**परिच्छद**–(पुं०) हवन के स्रुवा, आज्यस्थाली आदि पात्र।—**परिधान**–(न०) यज्ञाग्नि को परदे से घेरना।—**परीक्षा**–(स्त्री०) जलती हुई आग द्वारा परीक्षा या जांच जैसी कि जानकी जी की लंका में हुई थी।—**पर्वत**–(पुं०) ज्वालामुखी पहाड़।—**पुराण**–(न०) १८ पुराणों में से एक। इसको सर्वप्रथम अग्निदेव ने वशिष्ठ जी को सुनाया था; अतः वक्ता के नाम पर इसका नाम अग्निपुराण पड़ा।—**प्रणयन**–(पुं०) अग्निहोत्र की अग्नि का मंत्रपूर्वक संस्कार करना।—**प्रतिष्ठा**–(स्त्री०) अग्नि को विधानपूर्वक वेदी पर या कुण्ड में स्थापना, विशेषकर विवाह के समय।—**प्रवेश**–(पुं०)—**प्रवेशन**–(न०) आग में प्रवेश, किसी पतिव्रता का अपने पति के साथ चिता में बैठ कर सती होना—**प्रस्तर**–(पुं०) चकमक पत्थर, जिसको टकराने से आग उत्पन्न होती है।—**बाण**–(पुं०) वह बाण जिससे आग की लपट निकले।—**बाहु**–(पुं०) धुआँ—स्वायंभुव मनु का एक पुत्र।—**बीज**–(न०) सोना, 'र' अक्षर।—**भ**–(न०) कृत्तिका नक्षत्र का नाम, सुवर्ण।—**भु**–(न०) जल। सुवर्ण।—**भू**–(पुं०) अग्नि से उत्पन्न, कार्तिकेय का नाम।—**मणि**–(पुं०) सूर्यकान्त मणि, चकमक पत्थर।—**मंथ(मन्थ)**–(पुं०)—**मंथन (मन्थन)**–(न०) अरणी से रगड़ कर आग उत्पन्न करना, इस कार्य में प्रयुक्त मंत्र। गनियारी का पेड़।—**मान्द्य**–(न०) कब्जियत, हाजमे की खराबी।—**मारुति**–(पुं०) अगस्त्य ऋषि।—**मित्र**–(पुं०) शुंग-वंश का एक राजा, पुष्यमित्र का बेटा।—**मुख**–(पुं०) देवता, साधारणतया ब्राह्मण, प्रेत, अग्निहोत्री, चीते का पेड़, भिलावाँ, एक अग्निवर्धक चूर्ण, खटमल।—**मुखी**–(स्त्री०) रसोईघर, गायत्री, भिलावाँ।—**युग**–(न०) ज्योतिषशास्त्र के अनुसार पाँच-पाँच वर्ष के १२ युगों में से एक युग का नाम।—**रक्षण**–(न०) अग्नि को घर में बनाये रखना, बुझने न देना, राक्षस आदि से अग्नि की रक्षा करने का एक मंत्र।—**रज—रजस्**–(पुं०) इन्द्रगोप नामक कीड़ा, बीरबहूटी। अग्नि की शक्ति। सुवर्ण।—**रोहिणी**–(स्त्री०) रोगविशेष। इसमें अग्नि के समान झलकते हुए फफोले पड़ जाते हैं।—**लिङ्ग**–(पुं०) आग की लौ की रंगत और उसके झुकाव को देख शुभाशुभ बतलाने की विद्या।—**लोक**–(पुं०) वह लोक जिसमें अग्नि वास करते हैं। यह लोक मेरुपर्वत के शिखर के नीचे है।—**वंश**–(पुं०) दे० 'अग्निकुल'।—**वधू**–(स्त्री०) स्वाहा, जो दक्ष की पुत्री और अग्नि की स्त्री है।—**वर्ण**–(पुं०) इक्ष्वाकुवंशी एक राजा का नाम जो रघु का पौत्र था। (वि०) आग के रंग वाला।—**वर्धक**–(वि०) जठराग्नि को बढ़ाने वाला।—**वल्लभ**–(पुं०) साखू का पेड़। साल का गोंद। राल, धूप।—**वाह**–(पुं०) धुआँ, बकरा।—**वाहन**–(न०) बकरा।—**विद्**–(वि०) अग्निहोत्र जानने वाला। (पुं०) अग्निहोत्री।—**विद्या**–(स्त्री०) अग्निहोत्र, अग्नि की उपासना की विधि।—**विश्वरूप**–(न०) केतुतारों का एक भेद।—**विसर्प**–(पुं०) अर्बुद नामक रोग की जलन।—**वीर्य**–(न०) अग्नि की शक्ति या पराक्रम, सुवर्ण। (वि०) अग्नि जैसे तेज वाला।—**वेश**–(पुं०) आयुर्वेद के एक आचार्य।—**व्रत**–(पुं०) वेद की एक ऋचा का नाम।—**शरण**–(न०)—**शाला**–(स्त्री०)—**शाल**–(न०)

वह स्थान या गृह जहाँ पवित्र अग्नि रखी जाय।—**शर्मन्**–(पु०) एक ऋषि। (वि०) बहुत क्रोधी (व्यंग्य०)।—**शिख**–(पु०) दीपक। अग्निबाण। कुसुम या बर्रे का फूल। केसर। (न०) केसर। सोना। (स्त्री०) आग की ज्वाला या लपट। कलियारी पौधा।—**शेखर**–(पु०) केसर, कुसुम, सोना।—**ष्टुत्**–(पु०) एक प्रकार का यज्ञ जो एक दिन में पूरा होता है। यह अग्निष्टोम यज्ञ का ही संक्षेप है।—**ष्टुभ**–(पु०) एक प्रकार का यज्ञ। नकुला के गर्भ से उत्पन्न प्रजापति वैराज का पुत्र।—**ष्टोम**–(पु०) एक यज्ञ जो ज्योतिष्टोम नामक यज्ञ का रूपान्तर है और स्वर्ग की कामना से किया जाता है। यह यज्ञ पाँच दिन में समाप्त होता है।—**ष्वात्त**–(पु०) पितरों का एक गण या वर्ग, मरीचि के वंशज पितर, देवता और ब्राह्मणों के पितर।—**संभव**–(वि०) आग से उत्पन्न। (पु०) अरण्यकुसुम, सोना, भोजन का रस।—**संस्कार**–(पु०) तपाना। जलाना। शुद्धि के लिये अग्निस्पर्श-संस्कार का विधान। मृतक के शव को भस्म करने के लिये चिता पर अग्नि रखने की क्रिया, दाहकर्म। श्राद्ध में पिण्डवेदी पर आग की चिनगारी फिराने की रीति।—**सख-सहाय**–(पु०) पवन। जंगली कबूतर, धूआँ।—**साक्षिक**–(वि०) या (क्रि० वि०) अग्नि देवता के सामने संपादित, अग्नि को साक्षी करके किया हुआ।—**सात्** (क्रि० वि०) आग में जलाया हुआ, भस्म किया हुआ।—**सेवन**–(न०) आग तापना।—**स्तोम**–(पु०) दे० 'अग्निष्टोम'।—**होत्र**–(न०) एक यज्ञ, मंत्रपूर्वक अग्नि-स्थापन करके सायं प्रातः नियम से किया जाने वाला होम।—**होत्रिन्**–(वि०) अग्निहोत्र करने वाला।

अग्नीध्र—(पु०) [अग्नि √ इन्ध + रक्] ऋत्विक्-विशेष। इसका कार्य यज्ञ में अग्नि की रक्षा करना है। ब्रह्मा, स्वायंभुव मनु का एक पुत्र। [अग्नि√धृ+क] यज्ञ, होम।

अग्नीषोमीय—(न०) [अग्नीषोमौ देवते यस्य इत्यर्थेछ—ईय] अग्निसोम नामक यज्ञ की हवि, यज्ञ-विशेष। इस यज्ञ के देवता अग्नि और सोम माने गये हैं।

अग्र—(न०) [√अङ्ग्+रक्, न-लोप] आगे का भाग, ऊपर का भाग, सिरा, समूह, स्मृत्यनुसार भिक्षा का परिमाण, जो मोर के ४८ अंडों या सोलह माशे के बराबर होता है। (वि०) प्रथम। श्रेष्ठ। प्रधान।—**अनीक**,—**अणीक** (**अग्रानीक**, **अग्राणीक**)–(न०) सेना के आगे-आगे चलने वाले घुड़सवार सैनिकों की टोली।—**अशन** (**अग्राशन**)–(न०) भोजन का वह अंश जो देवता, गौ आदि के लिये पहले निकाल दिया जाय।—**आसन** (**अग्रासन**)—(न०) प्रधान बैठकी, सम्मान का आसन।—**कर**–(पु०) हाथ का अगला भाग, हाथी की सूँड़ की नोक, दाहिना हाथ, हाथ की अँगुली, पहली किरण।—**ग**–(पु०) नेता, मार्ग-दर्शक।—**गण्य**–(वि०) प्रधान, मुखिया, जिसकी गिनती प्रथम की जाय।—**ज**–(वि०) प्रथम उत्पन्न। (पु०) बड़ा भाई, ब्राह्मण।—**जा**–(स्त्री०) बड़ी बहन।—**जन्मन्**–(पु०) बड़ा भाई। ब्राह्मण। ब्रह्मा।—**जात**,—**जातक**–(पु०) प्रथम जन्मा हुआ, बड़ा भाई, ब्राह्मण।—**जाति**–(पु०) ब्राह्मण।—**जिह्वा**–(स्त्री०) जीभ की नोक।—**णी**–(वि०) आगे चलने वाला, श्रेष्ठ। (पु०) नेता, अगुआ। एक अग्नि।—**दानिन्**–(पु०) पतित ब्राह्मण जो मृतक-कर्म में दान लेता है।—**दूत**–(पु०) आगे जाने वाला दूत, हल्कारा।—**निरूपण**–(न०) भविष्य-कथन।—**पर्णी**–(स्त्री०) शतावर, केवाँच।—**पाणि**–(पु०) हाथ का अगला भाग, दाहिना हाथ।—**पाद**–(पु०) पैर का अगला

भाग या अँगुली।—पूजा–(स्त्री०) सर्वप्रथम पूजा, सर्वोत्कृष्ट सम्मान।—पेय–(न०) पान करने में पूर्ववर्तिता, किसी पेय वस्तु को पीने में सर्वप्रथमता या प्रधानत्व।—भाग–(पु०) प्रथम या श्रेष्ठ भाग। शेष भाग, नोक, छोर।—भागिन्–(वि०) प्रथम पाने वाला।—भूमि–(स्त्री०) आगे की भूमि, उद्देश्य, लक्ष्य।—महिषी–(स्त्री०) पटरानी।—मांस–(न०) हृदय के मध्य में स्थित पद्माकार मांस, फेफड़ा। एक प्रकार का रोग जिसमें पेट के ऊपर का मांस बढ़ जाता है।—यायिन्–(वि०) आगे चलने वाला, नेतृत्व करने वाला।—योधिन्-(पु०) सबसे आगे बढ़ कर लड़ने वाला, प्रमुख योद्धा।—लेख–(पु०) समाचार-पत्र का मुख्य (संपादकीय) लेख।—शाला–(स्त्री०) ओसारा।—सन्धानी–(स्त्री०) यमराज के दफ्तर का वह खाता जिसमें प्राणियों के पाप-पुण्य लिखे जाते हैं।—सन्ध्या–(स्त्री०) प्रातः सन्ध्या, प्रातःकाल।—सर–(वि०) आगे चलने वाला।—सारा–(स्त्री०) पौधे का फलरहित सिरा।—हर–(वि०) प्रथम देय (वस्तु)।—हस्त (पु०) अँगुली, हाथी की सूँड़ की नोक।—हायण–(पु०) वर्ष के आरम्भ का मास, अगहन का महीना।—हार-(पु०) राजा की ब्राह्मणों को दी हुई भूमि, ब्राह्मण को देने के लिये खेत की उपज से निकाला हुआ अन्न।

अग्रतस्—(क्रि० वि०) [अग्र+तस्] सामने, आगे, उपस्थिति में, प्रथम।—सर–(पु०) नेता। (वि०) आगे जाने वाला।

अग्रह—(वि०) [न ग्रहो यस्य, न० ब०] अविवाहित। (पु०) [न ग्रहः=विवाहः न० त०] स्त्री का न होना, विवाह का अभाव।

अग्रिम—(वि०) [अग्र+डिमच्] अगाऊ। पेशगी। श्रेष्ठ, उत्तम। (पु०) ज्येष्ठभ्राता।

अग्रिय—(वि०) [अग्र+घ] सबसे आगे वाला, श्रेष्ठ। (पु०) ज्येष्ठभ्राता, पहला फल।

अग्रीय—(वि०) [अग्र+छ] दे० 'अग्रिय'।

अग्रु—(स्त्री०) [√अग्+रु] अँगुली, नदी।

अग्रे—(क्रि० वि०) सामने। आगे (समय और स्थान सम्बन्धी)। उपस्थिति में। पीछे से। यथा 'एवमग्रे कथयति,' 'एवमग्रेऽपि श्रोतव्यम्,' सर्वप्रथम (अन्य की अपेक्षा) प्रथम।—ग–[अग्रे√गम्+ड] (वि०) आगे चलने वाला। (पु०) नेता।—गा—[अग्रे√गम्+विट्] दे० 'अग्रेग'।—गू–(वि०) [अग्रे√गम्+क्विप्+ऊङ्] दे० 'अग्रेग'।—दिधिषु–(पु०) [अग्रे-दिधि√सो+कु—उकार आने से स को ष] ब्राह्मण, क्षत्रिय अथवा वैश्य जाति का वह मनुष्य जो किसी विवाहिता स्त्री के साथ विवाह करता है।—दिधिषू–(स्त्री०) [अग्रे-दिधिषु—ऊङ्] वह स्त्री जिसका स्वयं तो विवाह हो गया हो, किन्तु उसकी बड़ी बहन अविवाहिता हो।—वण–(न०) वन की सीमा, वन का प्रान्त।—सर–(वि०) अग्रगामी, आगे चलने वाला।

अग्र्य—(वि०) [अग्र+यत्] सबसे आगे का, सर्वोत्कृष्ट, सर्वप्रथम। (पु०) बड़ा भाई।

अघ्—चुरा० परस्मै० अक० भूल करना, पाप करना, अनुचित करना। अघयति।

अघ—(न०) [√अघ्+अच्] पाप। दुष्कर्म, अपराध। व्यसन। अशौच, सूतक। दुःख, दुर्घटना, निन्दा। (पु०) बकासुर और पूतना का भाई जो कंस का प्रधान सेनाध्यक्ष था।—अह (अघाह)–(पु०) अशौचदिन, अपवित्र दिन।—आयुस् (अघायुस्)–(वि०) पापमय जीवन वाला।—नाशक,—नाशन–(वि०) पाप दूर करने वाला।—भोजिन्–(वि०) जो देव, पितर, अतिथि आदि के लिये खाना न बनाकर केवल अपने लिये बनावे और खावे।—मर्षण–

(वि०) पापनाशक। (न०) अश्वमेध-यज्ञ का अवभृथ-स्नान-मन्त्र। वैदिक संध्या के अन्तर्गत जलप्रक्षेप-रूप एक पापनाशिनी क्रिया। उस क्रिया में पढ़ा जाने वाला एक मंत्र। (पु०) उस मंत्र के ऋषि।—विष-(पु०) सर्प।—शंस-(पु०) दुष्ट-मनुष्य, यथा चोर आदि। —शंसिन्-(वि०) मुखबिर, दूसरे के पाप कर्म या जुर्म को (अधिकारीवर्ग को) सूचना देने वाला।

अघायु—(वि०) [अघ+क्यच+उ] पाप करने की इच्छा रखने वाला। पापकारी, हिंसानिरत।

अघृण—(वि०)–[नास्ति घृणा यस्य, न० ब०] दयारहित।

अघोर—(वि०)–[न घोरः, न० त०] जो भयानक न हो, सौम्य।—र-(पु०) शिव। —पथ—मार्ग-(पु०) शैव, शिवपंथी।—प्रमाण-(न०) भयङ्कर शपथ या परीक्षा।

अघोरा—(स्त्री०) भाद्रमास के कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी; इस तिथि को शिव जी की पूजा की जाती है। इसी से इसका नाम 'अघोरा' पड़ा है।

अघोष—(वि०) [नास्ति घोषः यस्य यत्र वा न० ब०] शब्दरहित। अल्प ध्वनि वाला। (पु०) एक वर्णसमूह (प्रत्येक वर्ग के प्रथम दो अक्षर और श, ष, स)।

अघोस्—(अव्य०) संबोधन का शब्द, यह दूर से पुकारने के समय नाम के पहले लगाया जाता है।

अघ्न्य—(पु०)–[√हन्+यक्, न० त०] (वि०) न मारने योग्य। (पु०) ब्रह्मा, बैल, पर्वत।—घ्न्या-(स्त्री०) गाय, घटा।

अघ्रेय—(न०) [√घ्रा+यत् न० त०] सूंघने के अयोग्य। (न०) मदिरा, शराब।

अङ्क्—भ्वा० आत्म० अङ्कते। चुरा० पर० अङ्कयति,–अक० सक०। टेढ़ामेढ़ा चलना, चिह्नित करना, निशान लगाना। गणना करना। कलङ्कित करना।

अङ्क—(पु०) [√अङ्क्+घञ् या अच्] गोद, कोड़। चिह्न, निशान। संख्या। पार्श्व, बगल। सामीप्य, पास। नाटक का एक भाग। काँटा या काँटेदार औजार। दस प्रकार के रूपकों में से एक। टेढ़ी रेखा, स्थान, अपराध, पर्वत, युद्ध का आभूषण। देह, दुःख, दफा, बार, लिखावट, कलंक, डिठौना, झुकाव, चित्रयुद्ध, नकली लड़ाई।—अवतार-(पु०) नाटक के किसी अंक के अन्त में अगले दूसरे अंक के अभिनय की सूचना या आभास। —कार-(पु०) बाजी आदि का निर्णायक। वह योद्धा जिसके हारने या जीतने से हार या जीत मान ली जाती थी। —गणित-(न०) संख्याओं का हिसाब, संख्याओं को जोड़ने - घटाने, गुणा-भाग आदि करने की विद्या।—तंत्र-(न०) अंकगणित या बीजगणित विद्या।—धारण –(न०) देह पर छाप लगवाना, गोदवाना। —परिवर्तन-(न०) करवट बदलना, बच्चे का गोद में इधर से उधर होना।—पालि, —पाली-(स्त्री०) आलिङ्गन। दाई, धाय। —पाश-(पु०) अङ्कगणित की एक विधि, अंकबंधन।—बन्ध-(पु०) झुक कर गोद का आकार बनाना। मस्तकहीन मनुष्य का चित्र अंकित करना।—भाज्-(वि०) गोद में बैठा हुआ। सहज में प्राप्त, बहुत निकट। —मुख या—आस्य-(न०) किसी नाटक का वह स्थल जिसमें उस नाटक के सब दृश्यों का सार दिया गया हो।—लोप-(पु०) संख्या का व्यवकलन=घटाना।—विद्या-(स्त्री०) गणितशास्त्र।

अङ्कति—(पु०) [√अञ्च्+अति] पवन। अग्नि। ब्रह्मा, अग्निहोत्री ब्राह्मण।

अङ्कन–(न०)[√अङ्क्+ल्युट्]चिह्न करना, गोदना, चिह्न बनाने का साधन, गिनती, लेख।

अङ्कुट—(पु०) ताली, कुंजी।

अङ्कुर—(पु०)[√अङ्क्+उरच्] अँखुआ नवोद्भिद्, डाभ, कनखा, नुकीले चौपड़े दाँत। (आलं०) प्रशाखा, पल्लव, जल। रक्त, केश, सूजन, घाव का भराव।

अङ्कुरित—(वि०)[अङ्कुर+इतच्] अँखुआ निकला हुआ, जमा हुआ।

अङ्कुश—(पु०) (न०) [√अङ्क्+उशच्] लोहे का काँटा, जिससे हाथी हाँका जाता है। रोक, थाम। **—ग्रह**–(पु०) महावत, हाथी चलाने वाला। **—दुर्धर**–(पु०) मतवाला हाथी। **—धारिन्**–(पु०) हाथी रखने वाला अथवा जिसके पास हाथी हो। **—मुद्रा**–(स्त्री०) अंगुलियों की अंकुशाकार मुद्रा।

अङ्कुशित—(वि०) [अङ्कुश+इतच्] अंकुश द्वारा बढ़ाया हुआ।

अङ्कूष—(दे०) 'अङ्कुश'।

अङ्कोट—अङ्कोठ-अङ्कोल–(पु०) [√अङ्क्+ओट, ठ, ल] पिश्ते का पेड़।

अङ्कोलिका—(स्त्री०) [अङ्क्+उल+क–टाप्] आलिङ्गन।

अङ्क्य (वि०) [√अङ्क्+ण्यत्] चिह्न करने योग्य। दागने योग्य। (पु०) [अङ्क+यत्] एक प्रकार का ढोल या मृदङ्ग। आदि।

अङ्ख्—चुरा० पर० अक० रेंगना, घुटनों के बल चलना। चिपटना। अङ्खयति।

अङ्ग्—भ्वा० पर० सक० अक० जाना। चारों ओर घूमना-फिरना। चिह्नित करना, दागना। गिनना, अङ्गति।

अङ्ग—[√अङ्ग्+अच्] सम्बोधनवाची अव्यय शब्द, जिसका अर्थ है—'बहुत अच्छा', 'श्रीमन्! बहुत ठीक', 'अवश्य' 'सत्य है', 'अङ्गीकार है'। किन्तु जब इसके पूर्व 'किं' जुड़ता है, तब इसका अर्थ होता है—'कितना कम'? या 'कितना अधिक', शीघ्रता, पुनः, सङ्गम, असूया, हर्ष। (न०) गात्र, अवयव। प्रतीक। उपाय। मन। छः की संख्या का वाचक। (पु०) एक देश तथा वहाँ के निवासियों का नाम। यह देश बिहार के भागलपुर नगर के आसपास है। वैद्यनाथ-देवघर से लेकर उड़ीसा स्थित भुवनेश्वर तक इसकी सीमा मानी गई है। **—अङ्गिभाव** **(अङ्गाङ्गिभाव)**–(पु०) किसी भी शरीरावयव का जो सम्बन्ध शरीर के साथ होता है, वह अङ्गअङ्गी भाव कहलाता है, गौणमुख्य भाव, उपकार्योपकारकभाव। **—अधिप,—अधीश** **(अङ्गाधिप)**, **(अङ्गाधीश)**–(पु०) अङ्ग-देश का राजा या अङ्गेश्वर कर्ण। लग्न का स्वामी ग्रह। **—कर्मन्**–(न०),**—क्रिया**–(स्त्री०) शरीर में उबटन आदि मलना, देह-संस्कार। **—ग्रह**–(पु०) शरीर की पीड़ा, अंगों का अकड़ जाना। **—ज-जनुस,—जात**–(वि०) शरीर से उत्पन्न या शरीर पर उत्पन्न, सुन्दर, विभूषित (पु०) पुत्र, लोम। कामदेव। नशे का व्यसन मद्यपान, व्याधि। सात्त्विक विकारों में से तीन—हाव, भाव और हेला (न०)। **—जा**–(स्त्री०) पुत्री। **—ज**–(न०) रक्त, लोहू। **—त्राण**–(न०) कवच, अंगरखा आदि। **—दा**–(स्त्री०) दक्षिण दिशा के हस्ती की भार्या। **—दान**–(न०) युद्ध में आत्मसमर्पण, (स्त्री का) देहसमर्पण। **—द्वीप**–(पु०) छः द्वीपों में से एक। **—न्यास**–(पु०) उपयुक्त मंत्रोच्चारण-पूर्वक हाथ से शरीर के भिन्न-भिन्न अंगों का स्पर्श। **—पालि**–(स्त्री०) आलिङ्गन। **—पालिका**–(स्त्री०) थाम। **—प्रत्यङ्ग**–(न०) शरीर के छोटे-बड़े सब अङ्ग। **—प्रायश्चित्त**–(न०) अशौच में देहशुद्धि के लिये किया जाने वाला दानरूप प्रायश्चित्त। **—भङ्ग**–(पु०) किसी शरीरावयव का नाश,

लकवा का रोग । अंगों का ऐंठना ।—**भंगिमन्**–(पुं०) अंग द्वारा भाव-प्रकाश । —**भंगी**–(स्त्री०) मोहक अंग-संचालन, अदा ।—**भू**–(पुं०) पुत्र । कामदेव ।—**मन्त्र** (पुं०) अंगन्यास का मंत्र ।—**मर्द**–(पुं०) शरीर दबानेवाला नौकर । शरीर दबाने की क्रिया ।—**मर्दक**—**मर्दिन्**–(पुं०) शरीर दबाने या मालिश करने वाला नौकर ।—**मर्ष**–(पुं०) गठिया रोग ।—**यज्ञ**—**याग**–(पुं०) किसी मुख्य यज्ञ के अन्तर्गत कोई गौण अप्रधान यज्ञ ।—**यष्टि**–(स्त्री०) पतली आकृति ।—**रक्त**–(पुं०) (न०) काम्पिल्ल देश में पाया जाने वाला गुण्डारोचनी नामक एक वृक्ष । इसका लाल चूर्ण होता है । (वि०) रक्ताक्त, लालोलाल ।—**रक्षक**–(पुं०) शरीर की रक्षा करने वाला भृत्य (बाडीगार्ड) ।—**रक्षणी**–(स्त्री०) अंगरखी, अंगा, कवच ।—**रस**–(पुं०) पत्ती, फल आदि का कूट कर निचोड़ा हुआ रस ।—**राग**–(पुं०) चन्दन आदि लेप, उबटन । उबटन लगाने की क्रिया ।—**विकल**–(वि०) अङ्ग-भङ्ग । लकवा मारा हुआ ।—**विकृति**–(स्त्री०) सूरत बदल जाना । देह में कोई विकार होना । मिरगी रोग ।—**विक्षेप**–(पुं०) शारीरिक अवयव का सिकोड़ना-फैलाना या उनको हिलाना-डुलाना, अंगों का मटकाना ।—**विद्या**–(स्त्री०) शरीर के चिह्नों को देखकर जीवन की शुभाशुभ घटनाओं को बतलाने की विद्या, सामुद्रिक विद्या । व्याकरण शास्त्र, जिससे ज्ञान की वृद्धि हो । बृहत्संहिता का ५१ वाँ अध्याय जिसमें इस विद्या का विस्तारपूर्वक वर्णन है ।—**विभ्रम**–(पुं०) एक रोग जिसमें रोगी अपने अंग को नहीं पहचानता ।—**वीर**–(पुं०) मुख्य या प्रधान शूर ।—**वैकृत**–(न०) अंगों की चेष्टा से हृदय का भाव बतलाने की क्रिया । सिर हिला कर स्वीकृति बतलाने की क्रिया । आँख मारना । शरीर की बदली हुई सूरत ।—**वैगुण्य**–(न०) किसी कार्य की अंगहीनता, श्राद्ध आदि में कर्म की न्यूनता या कुछ उलटा-पुलटा हो जाना ।—**शोष**–(पुं०) एक रोग जिसमें शरीर सूख जाता है, सूखा या सुखंडी ।—**संस्कार**–(पुं०)—**संस्क्रिया**–(स्त्री०) अङ्गों की शोभा बढ़ाने वाली क्रिया । देह को संवारना-सजाना ।—**संहति**–(स्त्री०) सुन्दर अङ्ग संस्थान या अङ्ग-विन्यास । अङ्गसौष्ठव, अङ्ग-प्रत्यङ्ग की श्रेष्ठता या परस्पर ऐक्य । शरीर, शरीर की दृढ़ता ।—**सङ्ग**–(पुं०) शारीरिक स्पर्श, संभोग ।—**सेवक**–(पुं०) निजी सेवा-टहल करने वाला नौकर ।—**हानि**–(स्त्री०) अंगविशेष की हानि । मुख्य कर्म के सहायक कर्म को न करना या ठीक तौर से न करना ।—**हार**–(पुं०) नृत्य । अंगों की नटकौशल ।—**हारि**–(पुं०) नटकौशल । रंगभूमि । नाचने का कमरा । नाचघर ।—**हीन**–(वि०) किसी अंग से रहित, विकलांग, लूला । साधनरहित (पूजन आदि) । (पुं०) कामदेव ।

अङ्गक—(न०) [अङ्ग+कन्] शरीर का अवयव । शरीर ।

अङ्गण—(न०) [√अङ्ग+ल्युट्, णत्व] दे० 'अङ्गन' ।

अङ्गति—(पुं०) [√अम्ब्+अति, कुत्व] सवारी, गाड़ी । अग्नि । ब्रह्मा । अग्निहोत्री ब्राह्मण ।

अङ्गद—(न०) [अङ्ग√दै+क] बाहुभूषण, बाजूबंद । (पुं०) बालि के पुत्र का नाम । उर्मिला की कोख से उत्पन्न लक्ष्मण के एक पुत्र का नाम ।

अङ्गन—(न०) [√अङ्ग+ल्युट्] आँगन, चौक । सवारी । चलना, टहलना । टहलने का स्थान ।

अङ्गना—(स्त्री०) [प्रशस्तम् अङ्गम् अस्ति अस्याः इत्यर्थे अङ्ग+न, टाप्] अच्छे अंगों

वाली स्त्री। स्त्रीमात्र। कलहप्रिया स्त्री। सार्व-भौम नामक दिग्गज की हथिनी। (ज्योतिष् में) कन्याराशि।—**जन**-(पुं०) स्त्रीजाति।—**प्रिय**-(वि०) स्त्रियों का प्रेमी। (पुं०) अशोक वृक्ष।

अङ्गस—(पुं०) [√अङ्ग्+असुन्] पक्षी।

अङ्गार—(पुं०) (न०) [√अङ्ग+आरन्] जलता हुआ या ठंढा कोयला। (पुं०) मङ्गल ग्रह। हिलावली नामक पौधा। एक राजकुमार। (न०) लाल रंग। (वि०) लाल।—**कारिन्**-(पुं०) बिक्री के लिये कोयला तैयार करने वाला।—**धानिका, धानी,—पात्री,—शकटी**-(स्त्री०) अँगीठी, बोरसी।—**पर्ण**-(पुं०) गंधर्वपति चित्ररथ।—**पुष्प**-(पुं०) हिंगोट का पेड़, इंगुदी।—**मञ्जरी,—मञ्जी**-(स्त्री०) लाल करंज का वृक्ष।—**मणि**-(पुं०) मूँगा।—**वल्लरी-वल्ली**-(स्त्री०) कितने ही पौधों का नाम है—गुञ्जा या घुँघची। करंज। भार्गी।

अङ्गारक—(पुं०) [अङ्गार+कन्] अंगारा। मङ्गलग्रह, भौमवार। चिनगारी। कुरंटक। भृंगराज। एक सौवीर-नरेश। एक असुर। एक रुद्र। (न०) ओषधियों के मेल से बना हुआ एक तापहारक तेल।—**मणि**-(पुं०) मूँगा।

अङ्गारकित—(वि०) [अङ्गारक इव आचरति, अङ्गार+क्विप+ततः कर्तरि क्तः] जलाया हुआ। भूना हुआ। तला हुआ।

अङ्गारिका—(स्त्री०) [अङ्गारो विद्यतेऽस्याः इत्यर्थे अङ्गार+ठन्, टाप्] अँगीठी। गन्ने का डंठल। किंशुक की कली।

अङ्गारिणी—(स्त्री०) [अङ्गार+इनि—ङीप्] छोटी अँगीठी। लता। अस्त सूर्य की लालिमा से रंजित दिशा।

अङ्गारित—(वि०) [अङ्गार इव आचरति, अङ्गार+क्विप्+ततः कर्तरि क्तः] जलाया हुआ। भूना हुआ। अधजला। (न०) (पुं०) पलाश की कली। (स्त्री०) अँगीठी। कलिका। एक लता। एक नदी।

अङ्गारीय—(वि०) [अङ्गार+छ—ईय] कोयला तैयार करने के काम में आने योग्य।

अङ्गिका—(स्त्री०) [√अङ्ग्+इनि+क, टाप्] चोली, अँगिया।

अङ्गिन्—(वि०) [अङ्ग+इनि] देहयुक्त, शरीरधारी। मुख्य। प्रधान। जिसमें उपभाग हों, अवयव-विशिष्ट।

अङ्गिर्—(पुं०) एक ऋषि जिन्होंने अथर्वा से विद्या प्राप्त कर सत्यवाह् को दी।

अङ्गिर, अङ्गिरस्—(पुं०) [√अङ्ग्+असि, इरागम] एक प्रजापति का नाम जिनकी गणना दस प्रजापतियों में है। एक वैदिक ऋषि। बहुवचन में अंगिरा के सन्तान। बृहस्पति का नाम। साठ संवत्सरों में से छठवें का नाम। कतीला (गोंद विशेष)। **अङ्गि-रसामयन** (न०) [अङ्गिरसाम्—अयन, अलुक्समास] सत्रयाग जहाँ सदा अन्न मिलता है।

अङ्गीकरण (न०) [अङ्ग+च्वि+√कृ+ल्युट्] दे० 'अङ्गीकार'।

अङ्गीकार—(पुं०) [अङ्ग+च्वि+√कृ+घञ्] स्वीकृति। प्रतिज्ञा।

अङ्गीकृत—(वि०) [अङ्ग+च्वि+√कृ+क्त] अङ्गीकार किया हुआ।

अङ्गीकृति—(स्त्री०) [अङ्ग+च्वि+√कृ+क्तिन्] दे० 'अङ्गीकार'।

अङ्गीय—(वि०) [अङ्ग+छ—ईय] अंग-देश-संबंधी, शरीर-संबंधी।

अङ्गु—(पुं०) [√अङ्ग्+उन्] हाथ।

अङ्गुरि-री—(स्त्री०) [√अङ्ग्+उलि, रलयोरैकत्वस्मरणात् रत्वम्।] उँगली।

अङ्गुरीय—(न०) [अङ्गुरि+छ—ईय] उँगली का एक गहना, अँगूठी

अङ्गुरीयक—(न०) [अङ्गुरि+छ—ईय+क] अँगूठी, मुँदरी।

अङ्गुल—(पु०) [√अङ्ग्+उल] उँगली, अँगूठा। वात्स्यायन मुनि। (न०) अंगुल भर का नाप, जो आठ यव के बराबर माना जाता है।

अङ्गुलि—(स्त्री०) [√अङ्ग्+उलि] उँगली जिनके नाम यथाक्रम अँगूठा, तर्जनी, मध्यमा, अनामिका और कनिष्ठिका हैं। हाथी की सूँड की नोक। नाप-विशेष।—**तोरण**-(न०) माथे पर चंदन का अर्ध-चन्द्राकार पुण्ड्र (तिलक)।—**त्र-त्राण**-(न०) दस्ताना जो धनुष चलाने वाले उँगलियों में पहना करते थे।—**निर्देश**-(पु०) किसी की ओर उँगली उठाना, निंदा।—**पर्वन्**-(न०) उँगली की पोर या गाँठ।—**मुख**-(न०) उँगली की नोक।—**मुद्रा**,—**मुद्रिका**-(स्त्री०) नाम खुदी हुई या सील मोहर सहित अँगूठी।—**मोटन**,—**स्फोटन**-(न०) अँगुली चटकाना, चुटकी।—**संज्ञा**-(स्त्री०) उँगली का इशारा या सङ्केत।—**संदेश**-उँगलियों के इशारे से मनोगत भावों को प्रदर्शित करना।—**सम्भूत**-(पु०) नख।

अङ्गुलिका—(स्त्री०) [अङ्गुलि+कन्, टाप्] (दे०) 'अङ्गुलि'। एक तरह की चींटी।

अङ्गुलीय,—**क** (न०) (दे०) 'अङ्गुरीय,—क'।

अङ्गुष्ठ—(पु०) [अङ्गु√स्था+क] अँगूठा।

अङ्गुष्ठमात्र—(वि०) [अङ्गुष्ठ+मात्रच्] अँगूठे के बराबर (नाप में)।

अङ्गुष्ठ्य—(पु०)[अङ्गुष्ठ+यत्] अँगूठे का नाखून या नख।

अङ्गूष—(पु०) [√अङ्ग्+ऊष] न्योला। तीर।

अङ्घ्—भ्वा० आत्म० सक० चलना। आरम्भ करना। शीघ्रता करना। डाटना, डपटना। अङ्घते।

अङ्घस्—(न०) [√अङ्घ्+असि] पाप।

अङ्घ्रि (**अंह्रि**)—[√अङ्घ्+क्रिन्] पैर। पेड़ की जड़। किसी श्लोक का चौथा चरण, चतुर्थ पाद।—**नामक**-(पु०) —**नामन्**-(न०) वृक्ष की जड़।—**प**-(पु०) वृक्ष।—**पर्णी**,—**वल्लिका**,—**वल्ली**-(स्त्री०) सिंहपुच्छी नामक पौधा।—**पान**-(वि०) पैर या पैर की उँगली (लड़कों की तरह) चूसने वाला।—**स्कन्ध**-(पु०) एड़ी।

अच्—भ्वा० उभ० सक० जाना। हिलना-डुलना। सम्मान करना। प्रार्थना करना, माँगना। अचति—ते।

अच्—(पु०) व्याकरण शास्त्र में 'अच्' स्वर की संज्ञा है।

अचक्र—(वि०) [नास्ति चक्रम् यस्य न० ब०] बिना पहिये का। व्यापाररहित। मंत्री तथा सेनापति रहित (राजा)।

अचक्षुस्—(वि०) [√चक्ष्+उसि, न० ब०] अंधा, नेत्रहीन। (न०) (न० त०) बुरी आँख, रोगिल नेत्र।

अचण्ड—(वि०) [न चण्डः न० त०] शान्त, जो क्रोधी स्वभाव का न हो।

अचण्डी—(वि०) (स्त्री०) [न० त०] सीधी गौ। शान्त स्त्री।

अचतुर—(वि०) [अविद्यमानानि चत्वारि यस्य न० ब०] चार संख्या से शून्य। [न चतुरः न० त०] अनिपुण, अनाड़ी।

अचर—(वि०) [√चर्+पच्, न० त०] अचल, स्थिर। (पु०) स्थावर प्राणी या पदार्थ। स्थिर राशि (वृष, सिंह, वृश्चिक और कुंभ)।

अचरम—(वि०) [न० त०] जो अंतिम न हो।

अचल—(वि०) [√चल्+अच्, न० त०] जिसमें गति न हो, स्थिर। सदा रहने वाला, ध्रुव। गमन या शक्ति-हीन। स्थावर, स्थायी।—(पुं०) पहाड़, चट्टान। कील, काँटा। सात सूचक संख्या। (न०) ब्रह्म।—**कन्यका,—जा,—जाता,—तनया,—दुहितृ,—सुता**-(स्त्री०) हिमालय की पुत्री, पार्वती।—**कीला**-(स्त्री०) पृथिवी।—**ज,—जात**-(वि०) पर्वत से उत्पन्न।—**त्विष्**-(पुं०) कोयल।—**द्विष्**-(पुं०) पर्वतशत्रु, इन्द्र का नाम जिन्होंने पर्वतों के पंख काट डाले थे।—**धृति**—(स्त्री०) गीत्यार्या नामक छन्द जिसके प्रत्येक पाद में सोलह अक्षर होते हैं।—**पति,—राज**-(पुं०) हिमालय पर्वत का नाम, पर्वतों का स्वामी।

अचला—(स्त्री०) [√चल+अच्, टाप्] पृथिवी।—**सप्तमी**-(स्त्री०) माघ-शुक्ला-सप्तमी।

अचापल,-ल्य—(वि०) [नास्ति चापलं-ल्यं यस्य न० ब०] चञ्चलतारहित, स्थिर। (न०) [न० त०] चंचलता का अभाव, स्थिरता।

अचित्—(वि०) [√चित्+क्विप् न० त०] (वैदिक) जिसमें समझदारी न हो। धर्म-विचार-शून्य, जड़।

अचित—(वि०) [न चित्=न० त०] (वैदिक) गया हुआ। अविचारित। एकत्र न किया हुआ, बिखरा हुआ।

अचित्त—(वि०) [नास्ति चित्तम् यस्य न० ब०] विचार से परे, जो समझ ही में न आवे। निर्बुद्धि, अज्ञान। जिसकी ओर ध्यान न दिया गया हो। न सोचा हुआ।

अचिन्तित—(वि०) [√चिन्त्+क्त, न० त०] जिसका चिंतन न किया गया हो। जो सोचा न गया हो। आकस्मिक, अप्रत्याशित। उपेक्षित।

अचिन्तनीय,-अचिन्त्य—(वि०) [√चिन्त्+अनीयर् न० त०,—√चिन्त्+यत् न० त०] जिसका चिंतन न हो सके। मन और बुद्धि के परे, कल्पनातीत। अतुल। आशा से अधिक। (पुं०) शिव।

अचिर—(अव्य०) [√चि+रक् न० त०] शीघ्र। हाल में। कुछ ही पहले। (वि०) क्षणस्थायी। हाल का।—**अंशु** (**अचिरांशु**),—**आभा** (**अचिराभा**),—**द्युतिः**—**प्रभा**,—**भास्-रोचिस्**—(स्त्री०) चपला, बिजली।

अचिरात्—[अचिरम् अतति इति विग्रहे अचिर√अत्+क्विप्] तुरन्त, शीघ्रता से। [**अचिरेण, अचिरस्य** भी इसी अर्थ में प्रयुक्त होते हैं।]

अचिष्णु—(वि०) [√अच्+इष्णु] सर्वत्र जाने वाला, सर्वव्यापी।

अचेतन—(त्रि०) [चित्+ल्यु न० त०] चेतनारहित, जड़। संज्ञा-शून्य, मूर्च्छित। ज्ञानहीन।

अचेतान—(वि०) [√चित्+शानच् न० त०] (दे०) 'अचेतन'।

अचेष्ट—(वि०) [नास्ति चेष्टा यस्य न० ब०] चेष्टा से रहित, बेहोश। प्रयत्नहीन।

अचैतन्य—(वि०) [चेतनस्य भावः इत्यर्थे चेतन+ष्यञ् न० ब०] चेतनारहित। ज्ञान-शून्य, जड़। (न०) [न० त०] चेतना का अभाव।

अच्छ—(वि०) [√छो+क न० त०] स्वच्छ, निर्मल।—(पुं०) स्फटिक। रीछ, भालू। (अव्य०) ओर, तरफ, सामने।—**उदक**(=**अच्छोद**)। (वि०) [अच्छम् उदकम् यस्य ब० स० उदकस्य उदभावः] साफ जल वाला। (न०) कादम्बरी में वर्णित हिमालय-पर्वत-स्थित एक झील का नाम।—**भल्ल**-(पुं०) रीछ, भालू।

अच्छन्दस्—(वि०) [नास्ति छन्दो यस्य न० ब०] वह जिसने वेदाध्ययन न किया हो अथवा वेदाध्ययन का अनधिकारी। जो पद्यमय न हो।

अच्छावाक—(पु०) [अच्छ√वच्+घञ् निपातस्य चेति दीर्घः] सोमयज्ञ कराने वालों में से एक ऋत्विज जो होता का सहवर्ती रहता है।

अच्छिद्र—(वि०) [√छिद्+रक् न० ब०] छिद्र-रहित। अभङ्ग, जो टूटा न हो। निर्दोष। त्रुटिरहित। (न०) निर्दोष कार्य। अक्षुण्ण अवस्था।

अच्छिन्न—(वि०) [√छिद्+क्त न० त०] जो कटा न हो, अखंडित। अविभक्त, लगातार चलने वाला।

अच्छेदिक—(वि०) [न छेदम् अर्हति इत्यर्थे छेद+ठन् न० त०] जो काटने या छेदने योग्य न हो।

अच्छोटन—(न०) शिकार, आखेट।

अच्युत—(वि०)[√च्यु+क्त न० त०] जो अपने स्वरूप, सामर्थ्य, स्थान से गिरा न हो, स्थिर, अविचल। (पु०) भगवान् विष्णु का नाम।—**अग्रज** (**अच्युताग्रज**)–(पु०) बलराम तथा इन्द्र का नाम।—**अङ्गज**, (**अच्युताङ्गज**) —**पुत्र**,—**आत्मज** (**अच्युतात्मज**)–(पु०) कामदेव, कृष्ण और रुक्मिणी के पुत्र का नाम।—**आवास**, (**अच्युतावास**)—**वास**–(पु०) वटवृक्ष, पीपल का वृक्ष।

अज्—भ्वा० पर० सक० जाना। हाँकना। फेंकना। अजति।

अज—(वि०) [न जायते इति√जन्+ड न० त०] जन्मरहित, अनन्त काल से वर्तमान। —(पु०) यह ब्रह्मा की उपाधि है। विष्णु तथा शिव का नाम। जीव। भेड़ा। बकरा। मेषराशि। अन्न-विशेष। चन्द्रमा अथवा कामदेव का नाम।—**अदनी** (**अजादनी**)–(स्त्री०) एक कटीली वनस्पति, धमासा।—**आविक** (**अजाविक**)–(न०) बकरे और भेड़े। छोटा पशु।—**अश्व** (**अजाश्व**)–(पु०) बकरे और घोड़े।—**एडक** (**अजैडक**)–(न०) बकरे और भेड़े।—**गर**–(पु०) एक बड़ा भारी सर्प जो बकरी, हिरन आदि को निगल जाता है। एक असुर।—**गरी**–(स्त्री०) एक पौधे का नाम। अजगरी वृत्ति, निरुद्यम या भगवान् के भरोसे रहने की वृत्ति। —**गल्लिका**–(स्त्री०) बकरे के गाल की भाँति एक रोग।—**जीव**,-**जीविक** –(पु०) बकरे पाल और बेचकर जीविका चलाने वाला।—**देवता**–(स्त्री०) अग्नि, पूर्वा-भाद्रपदा नक्षत्र। —**भक्ष**–(पु०) बबूर।—**पाद्**–(पु०) ग्यारह रुद्रों में से एक। पूर्वा-भाद्रपद नक्षत्र।—**मार** –(पु०) कसाई, बूचड़। एक प्रदेश का नाम जो इन दिनों अजमेर के नाम से प्रसिद्ध है। —**मीढ**–(पु०) अजमेर का दूसरा नाम। युधिष्ठिर की उपाधि।—**मुख**–(पु०) दक्ष-प्रजापति।—**मुखी**–(स्त्री०) एक राक्षसी जो अशोकवाटिका में सीताजी की निगरानी करती थी।—**मोदा**-**मोदिका**–(स्त्री०) यह एक अत्यन्त गुणकारी दवाई के पौधे का नाम है, अजवायन।—**लोमन्**–(पु०) अपामार्ग नामक पौधा, केवाँच।—**वीथी**–(स्त्री०) सूर्य, चंद्रादि के गमन के तीन मार्गों में से एक, छायापथ।—**शृङ्गी**–(स्त्री०) मेढ़ासिंगी।—**हा**–(स्त्री०) केवाँच।

अजकव—(पु०, न०) [वाति अरत्वेनाथ इति √वा+अधिकरणे कः; अजो विष्णुः, को ब्रह्मा, तयोः वः ष० त०] शिव जी के धनुष का नाम।

अजकाव—(पु० न०) [अजकौ=विष्णु-ब्रह्माणौ अवति इत्यर्थे अजक √अव+अण्] शिव-धनुष।

अजगव—(पु० न०) [√वा + कः, अजगः विष्णुः, तस्य वः ष० त०] शिव का धनुष।

अजगाव—(न० पु०) [अजगम् अवति इत्यर्थे अजग√अव+अण्] पिनाक, शिव जी का धनुष।

अजड—(वि०) [न जड: न० त०] जो जड अर्थात् मूर्ख न हो, चेतन।

अजथ्या—(स्त्री०) [अजानां समूह: इत्यर्थे अज+थ्यन्, टाप्] बकरों का समूह। पीली जूही।

अजन—(वि०) [न विद्यते जनो यत्र न० ब०] निर्जन (बियाबान), जहाँ एक भी जन न हो। (पु०) [जननम् जन:,स: नास्ति यस्य न० ब०] ब्रह्मा।—**योनिज**-(पु०) दक्ष-प्रजापति।

अजनि—(स्त्री०) [√अज+अनि] रास्ता, सड़क।

अजन्मन्—(वि०) [नास्ति जन्म यस्य न० ब०] जन्म-रहित, अनुत्पन्न। (पु०) मोक्ष। जीव की उपाधि।

अजन्य—(वि०) [√जन्+णिच्+यत् न० त०] उत्पन्न किये जाने या होने के अयोग्य। मनुष्य जाति के प्रतिकूल।—(न०) दैवी उत्पात, दैवी उपद्रव, भूचाल आदि।

अजप—(पुं०) [√जप+अच् न० त०] वह ब्राह्मण जो सन्ध्योपासन यथाविधि नहीं करता या उचित रूप से पाठ नहीं करता या धर्मविरोधी ग्रन्थ पढ़ता है। कुपाठक। (वि०) [अज√पा+क:] बकरे पालने वाला।

अजपा—(स्त्री०) [√जप्+अच्, टाप् न० त०] गायत्री। हंसनामक मन्त्र जिसका जप श्वास-प्रश्वास के साथ स्वयं होता जाता है।

अजम्भ—(वि०) [नास्ति जम्भ:=दन्त: अस्य न० ब०] दन्तरहित। (पु०) मेढक। सूर्य। बालक की वह अवस्था जब उसके दाँत नहीं निकले होते।

अजय—(वि०) [√जि+अच् न० ब०] जो जीता या सर न किया जा सके।—(पु०) [न० त०] पराजय, हार। [न० ब०] विष्णु, एक नद। (स्त्री०) भाँग।

अजय्य—(वि०) [√जि+यत् न० त०] अजेय, जो जीता न जा सके।

अजर—(वि० [नास्ति जरा यस्य न० ब०] जो बूढ़ा न हो, सदैव युवा। अविनाशी, जिसका कभी नाश न हो। (पु०) देवता। (न०) परब्रह्म।

अजर्य—(न०) [√जृ+यत् न० त०] मैत्री, दोस्ती।

अजस्र—(वि०) [√जस+र न० त०] सदा रहने वाला, अविच्छिन्न। (अव्य०) निरंतर, सतत।

अजहत्स्वार्था—(स्त्री०) [न जहत् स्वार्थो याम्, [न√हा+शतृ, द्वि ब० स०] लक्षणा-विशेष, इसमें लक्षक शब्द अपने वाच्यार्थ को न छोड़कर कुछ भिन्न अथवा अतिरिक्त अर्थ प्रकट करता है। इसका उपादान लक्षणा भी नाम है।

अजहल्लिङ्ग—(पुं०) [न जहत् लिङ्गम् यम्, न√हा+शतृ, द्वि० ब० स०] संज्ञाविशेष जो विशेषण की तरह व्यवहृत होने पर भी अपना लिङ्ग न बदले।

अजा—(स्त्री०) [√जन्+ड न० त०, टाप्] सांख्यदर्शनानुसार प्रकृति या माया। बकरी। —**गलस्तन**-(पु०) बकरी के गले के थन, इनकी उपमा किसी वस्तु की निरर्थकता सूचित करने में दी जाती है।—**जीव**, —**पालक**-(पु०) जिसकी जीविका बकरे-बकरियों से हो।

अजागर—(पु०) [√जागृ+णिच्+अच् न जागरो यस्मात् पं० ब० स०] भृंगराज नामक ओषधि। (वि०) [न जागरो यस्य न० ब०] न जागने वाला।

अजाजि-अाजाजी—(स्त्री०) [अजेन आज: =त्याग: यस्या: ब० स०] काला या सफेद जीरा।

अजात—(वि०) [√जन्+क्त, न० त०] अनुत्पन्न, जो अभी तक उत्पन्न न हुआ हो। —**अरि** (**अजातारि**),—**शत्रु**-(वि०) जिसका कोई शत्रु न हो। (पं०) युधिष्ठिर की

उपाधि। शिवजी तथा अग्नि की उपाधि। —ककुद्–(पुं०) छोटी उमर का बैल, जिसके कुब्ब न निकला हो, बछड़ा, बच्छा।—व्यञ्जन–(वि०) जिसके स्पष्ट चिह्न (दाढ़ी-मूँछ आदि) पहिचान के लिये न हों।—व्यवहार–(पुं०) नाबालिग, वह व्यक्ति जो अभी लोक-व्यवहार का अधिकारी या वयस्क न हुआ हो।

अजानि—(पुं०) [नास्ति जाया यस्य न० ब०, जायाया निङादेशः] जिसको स्त्री न हो, विधुर, रँडुआ।

अजानिक—(पुं०) [अजविक्रयादिना आनो जीवनम् अस्ति यस्य, अजान+ठन्] बकरे का व्यापारी।

अजानेय—(वि०) [अजेऽपि=विक्षेपेऽपि आनेयः=यथास्थान प्रापणीयः आरोहः येन, √अज् + अप्, आ√नी + यत्, ब० स०] कुलीन, उत्तम या उच्च कुल का। (पुं०) अच्छी जाति का घोड़ा।

अजि—(वि०) [√अज् + इन्] तेज चलने वाला।

अजित—(वि०) [√जि+क्त न० त०] जिसे कोई जीत न सका हो, अजेय। (पुं०) विष्णु, शिव तथा बुद्ध की उपाधि।

अजिन—(न०) [√अज्+इनच्] चीता, शेर, हाथी आदि का और विशेष कर काले हिरन का रोएँदार चमड़ा, जो आसन अथवा तपस्वियों के पहिनने के काम आता था। एक प्रकार का चमड़े का थैला या धौंकनी।—पत्रा-त्रिका-त्री–(पुं०) चमगादड़।—योनि–(पुं०) हिरन या बारहसिंहा।—वासिन्–(वि०) मृगचर्म धारण करने वाला।—सन्ध–(पुं०) मृगचर्म या लोम-निर्मित वस्त्र का व्यवसाय करने वाला।

अजिर—(वि०) [√अज् +किरच्] तेज, फुर्तीला। (न०) आँगन, चौक। शरीर। इन्द्रियगम्य कोई पदार्थ। पवन। मेढक।—अधिराज (अजिराधिराज)–(पुं०) (वैदिक) वेगवान् राजा। यमराज।—शोचिस्–(वि०) तेज रोशनी वाला।

अजिरा—(स्त्री०) [√अज+किरच्, स्त्रियां टाप्] एक नदी का नाम। दुर्गा का नाम।

अजिरीय—(वि०) [अजिर+छ—ईय] आँगन-संबंधी।

अजिह्म—(वि०) [√हा+मन् द्वित्वादि नि०, न० त०] सीधा। ईमानदार। (पुं०) मेढक। मछली।—ग–(वि०) सीधा जाने वाला। (पुं०) तीर, बाण।

अजिह्व—(वि०) [नास्ति जिह्वा यस्य, न० ब०] जीभ-रहित। (पुं०) मेढक।

अजीकव—(न०) [अज्या=शरक्षेपेण कम्=ब्रह्माणम् वाति=प्रीणाति, √वा+क] शिव जी का धनुष।

अजीगर्त—(पुं०) [अज्जं=गमनाय गर्तः यस्य, ब० स०] सर्प। उपनिषद् तथा पुराणों में वर्णित शुनःशेफ के पिता का नाम।

अजीर्ण—(वि०) [√जॄ+क्त, न० त०] न पचा हुआ। जो पुराना न हो।

अजीर्णि–(स्त्री०) [न√ जॄ+क्तिन् न० त०] अपच, मन्दाग्नि, बदहजमी। वीर्य, पराक्रम। पुरानेपन का अभाव।

अजीव—(वि०) [√जीव्+घञ् न० ब०] बिना जीवन का, मरा हुआ। (पुं०) [न० त०] मृत्यु, मौत।

अजीवनि—(स्त्री०) [√ जीव्+अनि न० त०] मृत्यु, (इसका व्यवहार प्रायः कोसने में होता है। यथा:—'अजीवनिस्ते शठ भूयात्।'—सिद्धान्त कौमुदी।

अजेय—(वि०) [√जी+यत् न० त०] जो जीता न जा सके, जीतने के अयोग्य।

अजैकपाद्,—द–(पुं०) [अजस्य एकः पाद

इव पादो यस्य उपमा ब०] पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र । रुद्र-विशेष की उपाधि ।

अजोष—(पु०) [√जुष+घञ् न० त०] प्रीति या प्रसन्नता का अभाव। (वि०) [न० ब०] जो प्रसन्न या संतुष्ट न हो ।

अज्जुका, अज्जूका—(स्त्री०) [अर्जयति या सा√अर्जि+अक, रकारस्य जत्वम्] (नाटकोक्ति में) वेश्या । बड़ी बहिन ।

अज्झल—(न०) ढाल । दहकता हुआ अंगारा।

अज्ञ—(वि०) [√ज्ञा+क न० त०] जड़ । अनगढ़ । ज्ञानशून्य । अनुभवशून्य ।

अज्ञात—(वि०) [√ज्ञा+क्त न० त०] अविदित, न जाना हुआ । अप्रकट । अप्रत्याशित ।

अज्ञान—(वि०) नास्ति ज्ञानम् यस्य न० ब०] ज्ञानशून्य, गँवार, मूर्ख । (न०) [न० त०] ज्ञान का अभाव । मिथ्या ज्ञान, अविद्या ।—प्रभव-(वि०) अज्ञान से उत्पन्न ।

अज्ञेय—(वि०)[√ज्ञा+यत् न० त०] जो जाना न जा सके, बोधागम्य ।

अज्मन्—(न०) [√अज्+मनिन्] मार्ग । युद्ध । (स्त्री०) गौ ।

अज्र—(वि०) [√अज्+र] (वैदिक) शीघ्रगामी । (पु०) क्षेत्र, मैदान ।

अञ्च्—भ्वा० उभ० सक० मोड़ना, झुकाना, यथा 'शिरोञ्चित्वा' (भट्टिकाव्य) । जाना । पूजन करना, सम्मान करना । याचना करना । भुनभुनाना, अस्पष्ट शब्द कहना, गुनगुनाना । प्रकाशित करना, खोलना । अञ्चति-ते ।

अञ्चति—(पु०) [√अञ्च्+अति] वायु ।

अञ्चल—(पु०, न०) [√अञ्च्+अलच्] किनारा, छोर ।

अञ्चित—(वि०)[अञ्च्+क्त]झुका या मुड़ा हुआ । टेढ़ा । घुँघराले (बाल) । सुंदर । गया हुआ । सिकोड़ा हुआ । गूँथा हुआ । सिला हुआ । व्यवस्थित । पूजित ।—पत्र-(न०) एक प्रकार का कमल जिसकी पत्तियाँ टेढ़ी या मुड़ी होती हैं ।—भ्रू-(स्त्री०) टेढ़ी, कमानसी भौं वाली स्त्री ।

अञ्ज्—रुधा० पर० सक० मिलाना । जाना । प्रकाशित करना । अनक्ति । **अञ्जन**—(न०) [√अञ्ज्+ल्युट्] काजल । सुरमा । स्याही । माया । रात्रि । पश्चिम दिशा । (पु०) पश्चिम दिशा का हस्ती । एक नाग । एक मिथिलानरेश । नील पर्वत । अग्नि । छिपकली । एक प्रकार का बगला । (न०) आँजना, लेपन, मिलाना, व्यक्त करना ।—केश-(वि०) जिसके बाल (अंजन के समान) बहुत काले हों । (पु०) दीपक ।—केशी-(स्त्री०) एक सुगन्धद्रव्य, जिसे स्त्रियाँ बालों में लगाती हैं । इसे हट्टविलासिनी कहते हैं ।—शलाका-(स्त्री०) आँजन या सुरमा लगाने की सलाई ।

अञ्जना—(स्त्री०) [√अञ्ज्+णिच्+युच्] हनुमान जी की माता का नाम । व्यंजना वृत्ति ।

अञ्जनाधिका—(स्त्री०) [√अञ्जनात् अधिका पं० त०] काजल से भी बढ़कर काला एक कीट-विशेष ।

अञ्जनावती—(स्त्री०) [अञ्जन+मतुप्, वत्वम् दीर्घत्व] सुप्रतीक नामक दिग्गज की हथिनी । इसका रंग बहुत काला है ।

अञ्जनी—(स्त्री०) [√अञ्ज्+ल्युट्, ङीप्] चंदन, कुंकुम आदि से अनुलिप्त स्त्री । हनुमान जी की माता । बिलनी । माया । कटुका वृक्ष । कालांजन वृक्ष ।

अञ्जलि—(पु०) [√अञ्ज्+अलि] जुड़े हुए दोनों हाथ, दोनों हथेलियों को जोड़कर या मिलाकर जो बीच में गड्ढा सा बनता है, उसे अंजलि कहते हैं । इस अंजलि में जितना आवे उतना एक नाप ।—कर्मन्-(न०) प्रणाम, सम्मानसूचक मुद्रा ।—कारिका-(स्त्री०) मिट्टी की गुड़िया जो नमस्कार करने की मुद्रा में बनाई गई हो । लाजवंती लता ।—पुट-(पु०, न०) दोनों हथेलियों को मिलाने से बना हुआ संपुट या गड्ढा ।

अञ्जलिका—(स्त्री०) [अञ्जलि+कन् टाप्] मूषिका, चुहिया। अर्जुन के एक बाण का नाम।

अञ्जस—(वि०)[√अञ्ज+असच्] जो टेढ़ा न हो, सीधा। ईमानदार, सच्चा।

अञ्जसा—(क्रि० वि०) [√अञ्ज+अण् (भावे) अञ्जम् गतिम् विलम्बम् वा स्यति, √सो+क्विप्] सिधाई से। सच्चाई से। उचित रीति से, ठीक तौर से। शीघ्रता से। —**कृत** (वि०) शीघ्रता से किया हुआ। उचित रीति से या न्याय-पूर्वक किया हुआ।

अञ्जसीन—(वि० [अञ्जस+ख] सीधा जाने वाला।

अञ्जि—(वि० [√अञ्ज+इन्] चमकदार। लेप लगाया हुआ। भेजने वाला। (पुं०) चंदन आदि का चिह्न, तिलक।

अञ्जिष्ठ, अञ्जिष्णु—(पं०) [√अञ्ज्+इष्ठन्—इष्णुच्] सूर्य।

अट्—भ्वा०पर० सक० जाना, घूमना-फिरना। अटति।

अटक—(वि०) [√अट्+ण्वुल्] भ्रमण करने वाला, भ्रमणशील।

अटन—(न०) [√अट+ल्युट] घूमना, भ्रमण। गमन।

अटनि, अटनी—(स्त्री०) [√अट्+अनि, वा ङीप्] धनुष का अग्रभाग जहाँ डोरी बाँधने के लिये गड्ढा बना होता है।

अटरुष—(पुं०) [अट√रुष+क] अडूसा, वासक वृक्ष।

अटल—(वि०) [न० त०] न टलने वाला, अचल। नित्य। स्थिर। दृढ़।

अटवि, अटवी—(स्त्री०) [√अट+अवि वा ङीप्] वन, जंगल।

अटविक—(पुं०) [अटवि+ठन्] वनरखा, वन में काम करने वाला।

अटा—(स्त्री०) [√अट+अङ टाप्] भ्रमण करने का अभ्यास (जैसा परिव्राजक किया करते हैं) भ्रमण, पर्यटन।

अटाटचा—(स्त्री०) [√अट+यङ+भावे अ, टाप्] बहुत घूमना, पर्यटन।

अट्ट—(पुं०) भ्वा० आत्म० सक०। मारना। लाँघना। अट्टते। चुरा० उभ० सक० अनादर करना। घटाना। अट्टयति-ते।

अट्ट—(वि०) [√अट्ट+अच्] उच्चस्वर-युक्त। निरंतर। ऊँचा। सूखा-रूखा। (पुं०) [अट्ट+घञ्] अटा, अटारी। क्षुद्र बुर्ज। आश्रय, आधार। आधार के लिये बनाया हुआ प्राकार, गुम्बज। हाट, बाजार, मंडी। प्रासाद, महल। (न०) भोज्य पदार्थ। भात। ['अट्टशूला जनपदाः' महाभारत।—'अट्टम् अन्नम् शूलम् विक्रेयं येषां ते' नीलकण्ठः।)] —**स्थली**–(स्त्री०) महलों से भरा हुआ नगर या देश।—**हसित**–(न०),—**हास**–(पुं०) जोर की हँसी, कहकहा, खिलखिलाना।—**हासक**–(पुं०) कुन्द पुष्प। (वि०) अट्टहास करने वाला।—**हासिन्**–(पं०) शिव जी का नाम। (वि०) अट्टहास करने वाला।

अट्टाल, अट्टालक—(पुं०) [अट्ट√अल+अच्, अट्ट√अल+ण्वुल्—अक] अटा, कोठा। दूसरी मंजिल। महल, प्रासाद।

अट्टालिका—(स्त्री०) [अट्टाल+क, टाप्—इत्व] प्रासाद, ऊँचा भवन।—**कार**–(पुं०) राज, थवई।

√अठ्—भ्वा० पर० सक० जाना। अठति।

√अड्—भ्वा० पर० सक० उद्यम करना। अडति। स्वा० पर० सक० (वैदिक) फैलाना। अड्णोति।

अड्ड्—भ्वा० पर० सक० आक्रमण करना। समाधान करना। अनुमान करना। अड्डति।

अड्डन—(न०) [अड्ड+ल्युट्] ढाल।

√अण्—भ्वा० पर० सक० शब्द करना।

साँस लेना । अणति । दिवा० आत्म० अक० जीना । अण्यते ।

अणक, अनक—(वि०) [√अण्+अच्, ततः कुत्सायां कः] बहुत छोटा । तुच्छ । तिरस्करणीय ।

अणव्य—(न०) [अणु+यत्] चीना आदि जैसे छोटे धान्य उत्पन्न करने वाला खेत ।

अणि, अणी—(पु०) (स्त्री०) [√अण+इन्] [अणि—ङीप्] सुई की नोक । पहिये की चाबी । सीमा । घर का कोना ।

अणिमन्—(पु०) [अणोर्भावः इत्यर्थे अणु +इमनिच्] सूक्ष्मता । आठ सिद्धियों में से एक जिससे योगी अणुरूप ग्रहण करके अदृश्य हो सकता है ।

अणीयस्—(वि०) [अणु+ईयसुन्] बहुत थोड़ा । बहुत छोटा ।

अणु—(वि०) [अण्+उन्] [स्त्री०—अण्वी] लेश, सूक्ष्म । परमाणु सम्बन्धी । (पु०) पदार्थ का सबसे छोटा इंद्रिय-ग्राह्य विभाग या मात्रा । ६० परमाणुओं का संघात । परमाणु, कण, जर्रा । मात्रा का चतुर्थांश (छंद) । एक मुहूर्त (४८ मिनट) का ५, ४६, ७५,०००वाँ भाग । संगीत में तीन ताल के काल का चतुर्थांश । सरसों, कंगनी जैसे धान्य । विष्णु का नाम । शिव का नाम ।—**अन्त** (**अण्वन्त**) —(पु०) बाल की खाल निकालने वाला प्रश्न ।—**भा**—(स्त्री०) विद्युत्, बिजली । **-मात्रिक**-(वि०) अतिक्षुद्र, अत्यन्त छोटा । जीव की संज्ञा—**रेणु**-(पुं०) त्रसरेणु, धूल-कण ।—**वाद**-(पु०) सिद्धान्त विशेष जिसमें जीव या आत्मा अणु माना गया है । यह वल्लभाचार्य का सिद्धान्त है । शास्त्रविशेष जिसमें पदार्थों के अणु नित्य माने गये हैं, वैशेषिक-दर्शन ।—**वीक्षण**-(न०) सूक्ष्म-दर्शक यंत्र, खुर्दबीन ।

अणुक—(वि०) [अणु+कन्] बहुत छोटा या सूक्ष्म ।

अणिष्ठ—(वि०) [अतिशयेन अणुः इत्यर्थे अणु+इष्ठन्] सूक्ष्मतर । सूक्ष्मतम । अति सूक्ष्म ।

अण्ड—(न०) [√अम्+ड] अंडकोश । ब्रह्मांड । वीर्य । कस्तूरी । अंडा । (पुं०) शिव ।—**कटाह**-(पुं०) (नु०) ब्रह्मांड ।—**कोटरपुष्पी**-(स्त्री०) नीलवुह्ना या अजांत्री नामक पौधा ।—**कोश**—**ष**—**वक**- (पु०) फोता, खुसिया ।—**ज**-(पुं०) पक्षी या अंडे से उत्पन्न होने वाले जीव यथा मछली, सर्प, छिपकली आदि । ब्रह्मा ।—**जा**-(स्त्री०) कस्तूरी ।—**धर**-(पु०) शिव ।—**वर्धन** (न०) —**वृद्धि**-(स्त्री०) फोता बढ़ने की बीमारी ।

अण्डाकार—**कृति**-(वि०) [ब० स०] अंडे की शक्ल का । **अण्डालु**:—(पुं०) [अण्ड +आलुच्] मछली ।

अण्डीर:—(पुं०) [अण्ड+ईरन्] जवान पुरुष । (वि०) बलवान् ।

√अत्—भ्वा० पर० सक० जाना । चलना । घूमना । सदैव चलना । (वैदिक) प्राप्त करना । बाँधना । अतति ।

अतट—(वि०) [नास्ति तटो यस्य न० ब०] तट या किनारे से रहित । खड़ी ढाल वाला । (पु०) खड़ी ढाल वाला पहाड़ या चट्टान । पहाड़ की चोटी । जमीन का निचला भाग, अतल ।—**प्रपात**-(पु०) सीधा गिरने वाला झरना ।

अतथा—(अव्य०) [न तथा न० त०] वैसा नहीं ।

अतथ्य—(वि०) [न तथ्यम् न० त०] जो तथ्य न हो, असत्य, अयथार्थ ।

अतदर्हम्—(अव्य०) [न तदर्हम् न० त०] अयोग्यता से । अनुचित रीति से । अवाञ्छित रूप से ।

अतद्गुण—(पु०) [न० ब०] अलङ्कार विशेष, किसी वर्णनीय पदार्थ के गुण ग्रहण करने की सम्भावना रहने पर भी जिसमें गुण ग्रहण नहीं

किया जा सकता, उसे अतद्गुण अलङ्कार कहते हैं।—**संविज्ञान**-(पुं०) बहुव्रीहि समास का वह भेद, जहाँ विशेष्य के अधीन होकर विशेषण का ज्ञान न हो।

अतन—(न०) [√अत्+ल्युट्] जाना। घूमना। (पुं०) [√अत्+ल्यु] भ्रमण करने वाला, राहचलत्।

अतन्त्र—(वि०) [न० ब०] बिना डोरी का। बिना तारों का (बाजा) असंयत। जो नियम के अधीन न हो। जो किसी के अधीन न हो।

अतन्द्र, अतन्द्रित, अतन्द्रिन्, अतन्द्रिल—(वि०) [न० ब०, न० त०, न० त०, न० त०] सतर्क, सावधान, जागरूक।

अतप—(वि० [न० ब०] जो तपा हुआ न हो, ठंढा।

अतपस्-अतपस्क—(वि०) [न० ब०] वह व्यक्ति जो अपना धार्मिक कृत्य नहीं करता या जो अपने धार्मिक कर्त्तव्यों से विमुख रहता है।

अतप्त—(वि० [न० त०] जो तपा या गरम न हो।—**तनु**-(वि०) जिसने तप्त मुद्रा न धारण की हो। बिना छाप का।

अतमस्—(वि०) [न० तमः यत्र न० ब०] अंधकार-रहित।

अतर्क—(वि०) [नास्ति तर्कः यस्मिन् न० ब०] युक्तिशून्य, तर्क के नियमों के विरुद्ध। (पुं०) जो तर्क के नियमों से अनभिज्ञ हो। [न० त०] तर्क का अभाव।

अतर्कित—(वि०) [न० त०] आकस्मिक। बे-सोचा-समझा, जो विचार में न आया हो। (क्रि० वि०) आकस्मिक रूप से।

अतर्क्य—(वि०) [√तर्क+यत्, न० त०] जिसके विषय में किसी प्रकार की विवेचना न हो सके। अचिन्त्य। अनिर्वचनीय।

अतल—(वि०) [न० ब०] जिसमें तरी या पेंदी न हो। (न०) [अस्य=भूखंडस्य तलम् न० त०] सात अधोलोकों अर्थात् पातालों में से दूसरा पाताल। (पुं०) [न० ब०] शिव जी का नाम।—**स्पृश्**,-**स्पर्श**-(वि०) तल-रहित, बहुत गहरा, जिसकी थाह न मिले।

अतस्—(अव्य०) [इदम्+तसिल्] इसकी अपेक्षा। इससे, या इस कारण से। ऐसा या इसलिये। इस शब्द के समानार्थवाची 'यत्', 'यस्मात्' और 'हि' हैं। इस स्थान से। इसके आगे। (समय और स्थान सम्बन्धी।) इसके समानार्थवाची हैं 'अतःपर' या 'अत ऊर्ध्वं'।—**अर्थं** (**अतोऽर्थम्**)—**निमित्त** (**अतो-निमित्तम्**)-इस कारण, अतएव, इस कारण से—**एव** (**अतएव**)-इसी कारण से।—**ऊर्ध्वं** (**अतऊर्ध्वम्**) -इसके आगे। पीछे से।—**परं** (**अतःपरम्**)-आगे। और आगे। इसके पीछे। इसके परे। इससे भी आगे।

अतस—(पुं०) [√अत्+असच्] पवन, हवा। आत्मा, जीव। पटसन का बना हुआ वस्त्र।

अतसी—(स्त्री०) [√अत्+असिच् ङीप्] अलसी। सन, पटसन।—**तैल**-(न०) अलसी का तेल।

अति—(अव्य०) [√अत्+इन्] यह एक उपसर्ग है जो विशेषणों और क्रियाविशेषणों के पहले लगाया जाता है। इसका अर्थ है—बहुत। बहुत अधिक। परिमाण से बहुत अधिक। उत्कर्ष, प्रकर्ष। प्रशंसा। क्रिया में जुड़ने पर यह उपसर्ग—ऊपर, परे का अर्थ बतलाता है। जब यह संज्ञा या सर्वनाम में जुड़ता है, तब इसका अर्थ होता है—परे। बढ़ कर, श्रेष्ठतर। प्रसिद्ध। प्रतिपन्न। उच्चतर। ऊपर।

अतिकथ—(वि०)[अतिक्रान्तः कथाम् अत्या० स०] अतिरंजित। अविश्वसनीय। कहने के अयोग्य। मृत, नष्ट। समाज के नियमों को न मानने वाला।

अतिकथा—स्त्री०)[अतिरंजिता कथा प्रा०

स०] बहुत बढ़ाकर कहा हुआ वृत्तान्त। व्यर्थ की या बेमतलब की बातचीत।

अतिकन्दक—(पुं०) [अतिरिक्तः कन्दः यस्य ब० स०] हस्तिकंद नामक पौधा।

अतिकर्षण—(न०) [अत्यन्त कर्षणम् प्रा० स०] प्रत्यधिक परिश्रम।

अतिकश—(वि०) अतिक्रान्तः कशाम् अत्या० स०] कोड़े को न मानने वाला। घोड़े की तरह हाथ में न आने वाला।

अतिकाय—(वि०)[अत्युत्कटः कायः यस्य ब० स०] दीर्घकाय। असाधारण डीलडौल का।

अतिकृच्छ्र—(वि०) [अत्युत्कटः कृच्छ्रः प्रा० स०] बहुत कठिन, बड़ा मुश्किल। (न०) (पुं०) असाधारण कठिनता। एक प्रायश्चित्त, जो १२ रात में पूर्ण होता है।

अतिकेशर—(पुं०) [अतिरिक्तानि केशराणि यस्य ब० स०] कुब्जक नामक पौधा।

अतिक्रम—(पुं०) [अति √क्रम्+घञ् ह्रस्वः] नियम या मर्यादा का उल्लंघन, विरुद्ध व्यवहार। अप्रतिष्ठा, असम्मान। चोट। विरोध। (काल का) व्यतीत हो जाना, बीत जाना। दमन करना। पराजित करना। छोड़ जाना, उपेक्षा करना। भूल जाना। जोर-शोर का आक्रमण। आधिक्य। दुष्प्रयोग। निर्धारण। स्थापना। आदेश। करसंस्थापन।

अतिक्रमण—(न०) [अति√क्रम्+ल्युट्] उल्लंघन, पार करना। बढ़ जाना। सीमा के बाहर जाना। समय को व्यतीत करना। आधिक्य। दोष, अपराध।

अतिक्रमणीय—(वि०) [अति√क्रम्+अनीयर्] अतिक्रमण करने योग्य, उल्लंघन करने योग्य। बचा देने के योग्य। छोड़ देने के योग्य।

अतिक्रान्त—(वि०) [अति√क्रम्+क्त] सीमा या मर्यादा का उल्लंघन किया हुआ। बढ़ा हुआ। बीता हुआ।

अतिक्रुद्ध—(वि०) [अत्यन्तः क्रुद्धः प्रा० स०] जो अत्यन्त क्रोध में आ गया हो, बहुत नाराज। (पुं०) तंत्रशास्त्र का एक मंत्र।

अतिक्रूर—(वि०) [अत्यन्तः क्रूरः प्रा० स०] बहुत निष्ठुर। (पुं०) तीस या तैंतीस अक्षरों का एक तंत्रोक्त मंत्र।

अतिक्षिप्त—(वि०) [प्रा० स०] अत्यंत दूर या सीमा से पार फेंका हुआ। (न०) नस आदि की मोच, मुरकन।

अतिखट्व—(वि०) [अतिक्रान्तः खट्वाम् अत्या० स०] शय्यारहित। शय्या की आवश्यकता को दूर कर देने योग्य।

अतिग—(वि०) [अति√गम्+ड] अत्यधिक। अपेक्षा कृत उत्कृष्ट।

अतिगण्ड—(वि०) [अति शयितः गण्डो यस्य ब० स०] जिसके कपोल (गाल) बड़े हों। (पुं०) एक तारा। एक योग। [प्रादि त० स०] बड़ा कपोल।

अतिगन्ध—(वि०)[अतिशयितो गन्धो यस्य ब० स०] बहुत या अत्युत्कट गंध वाला। (पुं०) गन्धक। भूतृण। चंपा का पेड़।

अतिगन्धालु—(पुं०) [प्रा० स०] पुत्रदात्री नामक लता।

अतिगव—(वि०) [अतिक्रान्तः गाम्=वाचम्, अत्या० स०] बड़ा भारी मूर्ख। अवर्णनीय, अकथनीय।

अतिगहन-गह्वर—(वि०) [प्रा० स०] बहुत गहरा। जिसमें प्रवेश करना बहुत कठिन हो।

अतिगुण—(वि०) [अत्युत्तमो गुणो यस्मिन् ब० स०] वह जिसमें सर्वोत्कृष्ट अथवा श्रेष्ठतर गुण हों। [गुणम् अतिक्रान्तः अत्या० स०] गुणशून्य, निकम्मा। (पुं०) [प्रा० स०] श्रेष्ठ गुण।

अतिगुरु—(वि०) [प्रा० स०] बहुत भारी। (पुं०) बहुत आदरणीय व्यक्ति, पिता आदि।

अतिगो—(स्त्री०) [प्रा० स०] श्रेष्ठ गौ, उत्तम गाय ।

अतिग्रह—(वि०) [अतिक्रान्तः ग्रहम् अत्या० स०] जो बोधगम्य न हो । [अति√ग्रह्+अच्] बहुत ग्रहण करने वाला या दूर तक पकड़ने वाला । (पुं० दे०) 'अतिग्राह' ।

अतिग्राह—(पु०) [अत्यन्तः ग्राहो यस्य ब० स०] इन्द्रियों के विषय स्पर्श रस आदि । सत्य-ज्ञान । श्रेष्ठ होने के लिये किया जाने वाला कर्म या क्रिया ।

अतिग्राह्य—(वि०) [प्रा० स०] नियंत्रण में रखने योग्य । (पु०) ज्योतिष्टोम यज्ञ में लगातार तीन बार किया जाने वाला तर्पण ।

अतिघ—(पु०) [अति √हन्+क] एक हथियार । क्रोध ।

अतिघ्नी—(स्त्री०) [अति√हन्+टक् ङीप्] ऐसी गहरी निद्रा या विस्मृति जिसमें अतीत की सारी अप्रिय बातें भूल जायं ।

अतिचमू—(वि०) [चमूम् अतिक्रान्तः अत्या० स०] सेनाओं पर विजय-प्राप्त या विजयी ।

अतिचर—(वि०) [अति√चर+अच्] बड़ा परिवर्तनशील । क्षणिक । रा–(स्त्री०) स्थल-पद्मिनी । पद्मिनी । पद्मचारिणीलता ।

अतिचरण—(न०) [अति√चर्+ल्युट्] अत्यधिक अभ्यास, अधिक काम करना ।

अतिचार—(पु०) [अतिशयेन चारः अति-क्रम्य वा चारः, अति√चर्+घञ्) उल्लं-घन । सद्गुण में अतिक्रमण करना । ग्रहों की शीघ्र गति, ग्रहों का भोगकाल समाप्त हुए बिना एक राशि से दूसरी राशि पर जाना ।

अतिचारिन्—(वि०) [अति√चर+णिनि] अतिक्रमण करने वाला, आगे निकल जाने वाला । (पु०) एक राशि का भोगकाल समाप्त हुए बिना दूसरी राशि में जाने वाले मंगल आदि पाँच ग्रह ।

अतिच्छत्र—(पु०), **अतिच्छत्रा**, **अति-च्छत्रका**—(स्त्री०) छाती नाम से प्रसिद्ध एक तृण । तालमखाना । सुल्फा ।

अतिच्छन्द-दस्—(वि०) [अतिक्रान्तः छन्दः छन्दम् वा अत्या० स०) सांसारिक इच्छाओं से रहित । वैदिक आचार को तोड़ने वाला ।

अतिजगती—(स्त्री०) [अतिक्रान्ता जगतीम् अत्या० स०] एक छन्द जिसके प्रत्येक पाद में १३ अक्षर होते हैं ।

अतिजन—(वि०) [अतिक्रान्तो जनम् अत्या० स०] जो आबाद न हो, निर्जन ।

अतिजव—(वि०) [अतिशयितो जवो यस्य ब० स०] बड़े वेग से चलने वाला ।

अतिजागर—(पु०) [अतिशयितो जागरो यस्य ब० स०] नीला बगला या नीलक पक्षी—जो सदा जागता रहता है । (वि०) जिसको नींद न आवे ।

अतिजात—(वि०) [अतिक्रान्तो जातम्—जातिम् जनकम् वा अत्या० स०] जो अपनी जाति या पिता से भी बढ़ा हुआ हो ।

अतिडीन—(न०) [प्रा० स०] पक्षियों की एक असाधारण उड़ान ।

अतितराम्, अतितमाम्—(अव्य०) [अति+तरप्, ततः आम् । अति+तमप्, ततः आम्] अधिक उन्नततर । बहुत अधिक ।

अतितीक्ष्ण—(वि०) [अतिशयेन तीक्ष्णः प्रा० स०] अत्यन्त कड़वा । बहुत तेज । (पु०) सहिजन का वृक्ष । मिर्चा ।

अतितीव्रा—(स्त्री०) [प्रा० स०] गाँड़दूब ।

अतिथि—(पु०) [अतति गच्छति न तिष्ठति इति√अत्+इथिन्] अभ्यागत, मेहमान । वह संन्यासी जो कहीं एक रात से अधिक न ठहरे । कुश के पुत्र, सुहोत्र । अग्नि । यज्ञ में सोम-सम्बन्धी कार्य करने वाला अनुचर । —क्रिया–(स्त्री०) आतिथ्य, मेहमानदारी । —देव–(वि०) जिसके लिये अतिथि देवता के समान हो, देव-बुद्धि से अतिथि का पूजन

करने वाला ।—**धर्म**–(पु०) अतिथि का सत्कार ।—**यज्ञ**–(पु०) पञ्चमहायज्ञों में से एक, नृयज्ञ, मेहमानदारी ।—**सत्कार**–(पु०)—**सत्क्रिया**, —**सपर्या**,—**सेवा**—(स्त्री०) मेहमान की आवभगत, अतिथि का आदर-सत्कार ।

अतिदान—(न०) [प्रा० स०] अत्यधिक दान । बड़ी उदारता ।

अतिदिष्ट—(वि०) [अति√दिश्+क्त] प्रभावित । आकृष्ट । मीमांसा-शास्त्र के अनुसार एक का धर्म दूसरे में आरोपित ।

अतिदीप्य—(पु०) [अतिशयेन दीप्यते इति अति√दीप्+यत्] रक्तचित्रक वृक्ष, लाल चीता का पेड़ ।

अतिदेश—(पु०) [अति√दिश+घञ्] अन्य वस्तु के धर्म का अन्य पर आरोपण । वह नियम जो अपने निर्दिष्ट विषय के अतिरिक्त और विषयों में भी काम दे । सादृश्य, उपमा । निष्कर्ष । आत्मसात् करना ।

अतिद्वय—(वि०) [द्वयम् अतिक्रान्तः अत्या० स०] अद्वितीय, जिसके समान दूसरा न हो । जो दो से बढ़कर हो ।

अतिधन्वन्—(पु०) [अतिरिक्त धनुर्यस्य ब० स०] बेजोड़ तीरंदाज या योद्धा । एक वैदिक आचार्य । (वि०) [अत्या० स०] वह जो मरुभूमि का अतिक्रमण कर गया हो ।

अतिधृति—(स्त्री०) [अतिक्रान्ता धृतिम्=अष्टादशाक्षरपादिका वृत्तिम् अत्या० स०] एक छन्द जिसके प्रत्येक पाद में १९ अक्षर होते हैं ।

अतिनिद्र—(वि०) [अतिशयिता निद्रा यस्य ब० स०] अत्यधिक निद्रालु, अत्यधिक सोने वाला । [निद्राम् अतिक्रान्तः अत्या० स०] बिना निद्रा का, निद्रा-रहित । (स्त्री०) अत्यधिक नींद ।

अतिनु-नौ—(वि०) [अतिक्रान्तो नावम् अत्या० स०] नाव से उतरा हुआ । नदी या समुद्र के तट पर उतरा हुआ ।

अतिपञ्चा—(स्त्री०) [पञ्च (वर्षाणि) अतिक्रान्ता अत्या० स०] पाँच वर्ष के ऊपर की लड़की ।

अतिपतन—(न०) [अति√पत्+ल्युट्] निर्दिष्ट सीमा के आगे उड़ जाना या निकल जाना । चूक जाना । छोड़ जाना । उल्लंघन करना, मर्यादा के बाहर जाना ।

अतिपत्ति—(स्त्री०) [अति√पद्+क्तिन्] असिद्धि, असफलता । सीमा के बाहर जाना ।

अतिपत्र—(पु०) [अत्या० स० या ब० स०] सागौन का वृक्ष ।

अतिपर—(वि०) [अतिक्रान्तः परान् अत्या० स०] वह व्यक्ति जिसने अपने शत्रुओं का नाश कर डाला हो । (पु०) [प्रा० स०] बड़ा या श्रेष्ठ शत्रु ।

अतिपरिचय—(पु०) [प्रा० स०] अत्यधिक मेल-मिलाप ।

अतिपात—(पु०) [अति√पत्+घञ्] गुजर जाना (समय का) । नष्ट हो जाना । चूक, भूल । उल्लंघन । घटना का घटित होना । दुर्व्यवहार । विरोध । विघ्न ।

अतिपातक—(न०) [अतिक्रान्तः अत्यन्तदुष्टत्वेन अन्यत् पातकम् अत्या० स०] नौ तरह के पापों में से तीन बड़े पाप जैसे—मातृगमन, कन्यागमन, पुत्रवधूगमन ।

अतिपातिन्—(वि०) [अति√पत्+णिच्+णिनि] चाल में बढ़ा हुआ, अपेक्षाकृत वेगवान् । भूल करने वाला ।

अतिपात्य—(वि०) [अति√पत्+णिच्+यत्] विलम्ब करने योग्य, स्थगित करने योग्य ।

अतिप्रबन्ध—(पु०) [अतिशयितः प्रबन्धः प्रा० स०] अत्यन्त, निरवच्छिन्नता, बिलकुल लगा होना ।

प्रतिप्रगे—(श्रव्य०) [श्रति प्रगोपतेऽस्मिन् काले इति श्रति—प्र√गै+के] बड़े तड़के, बड़े भोर ।

प्रतिप्रश्न—(पुं०) [श्रति√प्रच्छ्+नङ्] ऐसा प्रश्न जिसको सुन उद्वेग उत्पन्न हो, खिझाने वाला प्रश्न ।

प्रतिप्रसङ्ग—(पुं०) [प्रा० स०] प्रगाढ़ प्रेम ।

प्रतिप्रसक्ति—[प्रा० स०] प्रगाढ़ प्रेम । किसी काम में बहुत लग जाना । अत्यन्त उद्दण्डता । अतिव्याप्ति अर्थात् लक्ष्य के अतिरिक्त अन्य में भी लक्षण की प्रवृत्ति । घनिष्ठ संपर्क ।

प्रतिप्रौढा—(स्त्री०) [प्रा० स०] सयानी लड़की, जो विवाह योग्य हो गयी हो ।

प्रतिबल—(वि०) [अतिशयितं बलं यस्य ब० स०] बड़ा बलवान् या दृढ़ । (पुं०) एक विख्यात योद्धा ।

प्रतिबला—(स्त्री) [ब० स०] एक अस्त्रविद्या जिसे विश्वामित्र जी ने श्री रामचन्द्र जी को बतलाया था । एक औषध, पीतबला, कंगही ।

प्रतिबाला—(स्त्री०) [अतिकान्ता बालाम्=बाल्यावस्थाम् अत्या० स०] दो वर्ष की गौ ।

प्रतिब्रह्मचर्य—(न०) [अतिशयितम् ब्रह्मचर्यम् प्रा० स०] ब्रह्मचर्य व्रत का बहुत अधिक पालन, बहुत काल तक ब्रह्मचारी रहना । (वि०) [अत्या० स०] जिसने ब्रह्मचर्य तोड़ डाला हो ।

प्रतिभर, प्रतिभार—(पुं०) [प्रा० स०] बहुत अधिक बोझ । (पुं०) खच्चर ।

प्रतिभव—(पुं०) [अति√भू+अप्] बढ़ जाना, पराजित करना ।

प्रतिभाव—(पुं०) [अति√भू+णिच्+अच्] श्रेष्ठता, उत्कृष्टता ।

प्रतिभी—(स्त्री०) [अति√भी+क्विप्] विद्युत्, बिजली, इन्द्र के वज्र की कड़क या चमक ।

प्रतिभूमि—(स्त्री०) [प्रा० स०] आधिक्य । चरम सीमा पर पहुँचना, अत्युच्च स्थान पर आरोहण । विस्तृत भूमि ।

प्रतिमङ्गल्य—(वि०) [अतिमङ्गलाय हितम् इत्यर्थे अतिमङ्गल+यत्] मंगल या शुभ करने वाला । (पुं०) बिल्व वृक्ष ।

प्रतिमति—(स्त्री०)—**मान**–(पुं०) [प्रा० स०] अत्यन्त गर्व या अभिमान ।

प्रतिमर्त्य-मानुष—(वि०) [अत्या० स०] मनुष्य की शक्ति से परे । अमानुषिक, अलौकिक ।

प्रतिमात्र—(वि०) [अत्या० स०] मात्रा से अधिक, अत्यधिक ।

प्रतिमाय—(वि०) [अत्या० स०] सांसारिक माया से मुक्त, पूर्णमुक्त ।

प्रतिमुक्त—(वि०) [अतिशयेन मुक्तः प्रा० स०] जिसे मुक्ति मिल गई हो, निर्वाण-प्राप्त । निर्बीज, ऊसर ।

प्रतिमुक्त, प्रतिमुक्तक—(पुं०) माधवीलता । तिनिश वृक्ष । तिंदुक वृक्ष । ताल वृक्ष ।

प्रतिमुक्ति—(स्त्री०) [प्रा० स०] मोक्ष, आवागमन से सदा के लिये छुटकारा ।

प्रतिमोदा—(स्त्री०) [अतिशयितो मोदो यस्याः ब० स०] नवमल्लिका, नेवारी ।

प्रतिरंहस्—(वि०) [अतिशयितं रंहो यस्मिन् ब० स०] अत्यन्त फुर्तीला, बहुत तेज ।

प्रतिरथ—(पुं०) [अतिकान्तो रथं रथिनं वा अत्या० स०] ऐसा योद्धा जिसका कोई प्रतिद्वन्द्वी न हो और जो रथ में बैठकर लड़े ।

प्रतिरभस—(पुं०) [प्रा० स०] बड़ी रफ्तार, उद्दाम वेग । हठ, जिद् ।

प्रतिरसा—(स्त्री०) [अतिशयितो रसो यस्याः ब० स०] मूर्वा लता ।

प्रतिराजन्—(पुं०) [अत्या० स०] असाधारण या उत्तम राजा । वह व्यक्ति जो राजा से आगे बढ़ जाय ।

अतिरात्र—(पुं०) [अतिक्रान्तो रात्रिम् अत्या० स०, अच् समासान्तः] ज्योतिष्टोम यज्ञ का एक ऐच्छिक भाग। इस यज्ञ से संबद्ध एक मंत्र। चाक्षुष मनु का एक पुत्र।

अतिरिक्त—(वि०) [अति√रिच्+क्त] बढ़ा हुआ, नियत परिमाण से अधिक, फाजिल। भिन्न। सिवाय, अलावा।

अतिरुक—(स्त्री०) [ब० स०] अत्यन्त सुन्दरी स्त्री।

अतिरुच्—(पुं०) [रुक्=स्त्रीणाम् ऊरुदेशः। अतिक्रान्तः रुचम्, अत्या० स०] घुटना, टहना।

अतिरेक, अतीरेक—(पुं०) [अति√रिच्+घञ्] अतिशयता। सर्वोत्कृष्टता, सर्वश्रेष्ठत्व। अतिवृद्धि। अन्तर, भेद।

अतिरोमश, अतिलोमश—(वि०) [अतिशयित रोम, अतिरोमन्+श] बहुत रोंगटों वाला, बहुत बालों वाला। (पुं०) जंगली बकरा। बृहत्-काय बंदर।

अतिलङ्घन—(न०) [प्रा० स०] बहुत अधिक उपवास या लंघन। उल्लंघन, अतिक्रमण।

अतिलङ्घिन्—(वि०) [अति√लंघ+णिनि] भूल करने वाला, गलती करने वाला।

अतिवयस्—(वि०) [अतिशयितं वयः यस्य ब० स०] बहुत बूढ़ा, बड़ी उमर का।

अतिवर्णाश्रमिन्—(वि०) [अतिक्रान्तो वर्णान् आश्रमिणश्च अत्या० स०] जो ब्राह्मण आदि चारों वर्णों और ब्रह्मचर्य आदि चारों आश्रमों से परे हो, पञ्चमाश्रमी। वेदान्त-महावाक्य के श्रवणमात्र से आत्मा को ईश्वर समझने वाला।

अतिवर्तन—[√अति√वृत्+ल्युट्] क्षम्य अपराध, क्षमा करने योग्य क्षुद्र अपराध। दण्डवर्जित होना।

अतिवर्तिन्—(वि०) [अति√वृत्+णिनि] अतिक्रम करने वाला, नियम तोड़ कर चलने वाला।

अतिवाद—(वि०) [अति√वद्+घञ्] कुवाच्य-युक्त भाषा, गाली, भर्त्सना। अतिरंजना, डींग।

अतिवाह—(पुं०) [अति√वह+घञ्] सूक्ष्म शरीर का अन्य देह में जाना या ले जाना।

अतिवाहक—(पुं०) [अति√वह्+ण्वुल्] सूक्ष्म शरीर को देहान्तर-प्राप्ति में सहायक देवता।

अतिवाहन—(न०) [अति√वह्+णिच्+ल्युट्] बिताना। भेजना। बहुत अधिक परिश्रम करना।

अतिवाहिक—(वि०) [अतिवह+ठन्] वायु से भी तेज। (न०) लिंगशरीर या सूक्ष्म शरीर। (पुं०) पाताललोक-निवासी।

अतिवाहित—(वि०) [अति√वह्+णिच्+क्त] बिताया हुआ। दे० 'अतिवाहिक'।

अतिविकट—(वि०) [अतिशयेन विकटः प्रा० स०] बड़ा भयङ्कर (पुं०) दुष्ट हाथी।

अतिविषा—(स्त्री०) [अत्या० स०] अतीस नामक एक ओषधि जो जहरीली होती है।

अतिविस्तर—(पुं०) [प्रा० स०] बहुत अधिक फैलाव। दीर्घसूत्रता। प्रपंच। बहुत बकझक।

अतिवृत्ति—(स्त्री०) [अति√वृत्+क्तिन्] अतिक्रमण। उल्लंघन। अतिशयोक्ति। तेजी से निकलना (रक्त)।

अतिवृष्टि—(स्त्री०) [प्रा० स०] मूसलाधार वर्षा। (खेती को नुकसान पहुँचाने वाली) छः प्रकार की ईतियों में से एक।

अतिवेध—(पुं०) [प्रा० स०] अत्यन्त मेल या संपर्क। दशमी और एकादशी का परस्पर-संयोग।

प्रतिवेल—(वि०) [प्रतिक्रान्तो वेलाम्=मर्यादाम् कूलं वा प्रत्या० स०] किनारे के ऊपर उठा हुआ। मर्यादा का अतिक्रमण करने वाला। अत्यधिक। असीम।

प्रतिवेलम्—(क्रि० वि०) [अव्यय० स०], अत्यधिकतया। बे-समय से। अनृतु से।

प्रतिव्याप्ति—(स्त्री०) [अति+वि०+√आप+क्तिन्] किसी नियम या सिद्धान्त का अनुचित विस्तार। किसी कथन के अन्तर्गत उद्देश्य या लक्ष्य के अतिरिक्त अन्य विषय के आ जाने का दोष। नैयायिकों का एक दोष-विशेष। यदि किसी का लक्षण अथवा किसी शब्द की या वस्तु की परिभाषा की जाय और वह लक्षण या परिभाषा अपने मुख्य वाच्य को छोड़ कर दूसरे की बोधक हो तो वहाँ अतिव्याप्ति दोष माना जाता है।

प्रतिशय—(पु०) (वि०) [अति√शी+अच्] बहुत ज्यादा। श्रेष्ठ। (पु०) अधिकता। अतिरेक। श्रेष्ठता। किसी बात को बढ़ा-बढ़ा कर कहना, अतिरंजना। एक अर्थालङ्कार जिसमें किसी वस्तु का अतिरंजित वर्णन होता है।

प्रतिशयन—(वि०) [अति√शी+ल्यु] बड़ा। मुख्य। प्रचुर, बहुतसा (न०) [अति √शी+ल्युट्]। अधिकता। प्राचुर्य।

प्रतिशयालु—(वि०) [अति+√शी+आलुच्] बढ़ जाने की प्रवृत्ति रखने वाला।

प्रतिशायन—(न०) [अति√शी+ल्युट् नि० दीर्घ] अधिक होना। श्रेष्ठता।

प्रतिशायिन्—(वि०) [अति√शी+णिनि] आगे बढ़ जाने वाला। श्रेष्ठ। अत्यधिक।

प्रतिशेष—(पु०) [प्रा० स०] बचत, स्वल्प बचा हुआ अंश।

प्रतिश्रेयसि—(पु०) [श्रेयसीम् अतिक्रान्तः अत्या० स०] वह पुरुष जो सर्वोत्तम स्त्री से श्रेष्ठ हो।

प्रतिश्व—(वि०) [श्वानम् अतिक्रान्तः अत्या० स०] कुत्ते से बढ़ा हुआ। कुत्ते से निकृष्ट। —श्वा-(स्त्री०) दासत्व। सेवा।

प्रतिश्वन्—(पु०) [प्रा० स०] सर्वोत्तम कुत्ता।

प्रतिसक्ति—(स्त्री०) [अति√सञ्ज+क्तिन्] घनिष्ठता। अत्यधिक अनुराग।

प्रतिसन्धान—(न०) [अति-सम्√धा+ल्युट्] धोखा, दगा। चाल, कपट।

प्रतिसन्ध्या—(स्त्री०) [अत्यासन्ना सन्ध्या प्रा० स०] सूर्योदय के ठीक पहले और सूर्यास्त के ठीक बाद के समय का समीपवर्ती समय।

प्रतिसर—(वि०) [अति√सृ+अप्] आगे बढ़ा हुआ। नेता।

प्रतिसर्ग—(पु०) [अति√सृज+घञ्] देना (पुरस्कार रूप से)। अनुमति देना, आज्ञा देना। पृथक् करना, छुड़ाना (नौकरी से)।

प्रतिसर्जन—(न०) [अति√सृज्+ल्युट्] देना। मुक्ति, छुटकारा। वदान्यता, दानशीलता। वध। धोखा। वियोग।

प्रतिसर्पण—(न०) [अति√सृप्+ल्युट्] तीव्र गति। गर्भाशय में बच्चे का सरकना।

प्रतिसर्व—(वि०) [सर्वम् अतिक्रान्तः अत्या० स०] सर्वोपरि, सब के ऊपर। (पु०) परमात्मा, परब्रह्म।

प्रति (ती) सार—(पु०) [अति√सृ+णिच्+अच्] दस्तों की बीमारी। अतीसार रोग जिसमें मल बढ़ कर रोगी के उदराग्नि को मन्द कर देता है और शरीर के रसों के साथ बराबर निकलता है।

प्रति (ती) सारकिन्—(वि०) [अतिसार+इनि, कुक्] अतिसार रोग से पीड़ित।

प्रति (ती) सारिन्—[अतिसार+इनि] अतिसार रोग वाला।

प्रतिसौरभ—(वि०) [ब० स०] अत्यधिक सुगंध वाला। (पु०) आम।

अतिसौहित्य—(न०) [प्रा० स०] अत्यन्त तृप्ति । कस कर खाना ।

अतिस्नेह—(पुं०) [प्रा० स०] अत्यधिक अनुराग ।

अतिस्वर्श—(पुं०) [प्रा० स०] अर्द्धस्वर और स्वर की एक संज्ञा । उच्चारण में जीभ और तालु का अल्प स्पर्श (व्या०) । (वि०) कंजूस । कमीना ।

अतीत—(वि०) [अति√इण्+क्त] गत । बीता हुआ । मरा हुआ । निर्लेप । पृथक् । परे, पार गया हुआ ।

अतीन्द्रिय—(वि०) [अत्या० स०] जो इन्द्रियों के ज्ञान के बाहर हो, अप्रत्यक्ष, अगोचर । (पुं०) (सांख्यशास्त्र में) जीव या पुरुष । परमात्मा । (न०) (सांख्य-मतानुसार प्रधान या प्रकृति । (वेदान्त में) मन ।

अतीव—(अव्य०) [अत्येव—इव अवधारणे प्रा० स०)] अधिक, अतिशय, बहुत ।

अतुल—(वि०) [नास्ति तुला यस्य न० ब० असमान, अनुपम, उपमान-रहित । (पुं०) तिलक वृक्ष ।

अतुल्य—(वि०) [न तुलाम् अर्हति इत्यर्थे तुला+यत् न० त०] जिसकी तुलना या समता न हो । बेजोड़, अद्वितीय ।

अतुषार—(वि०) [न० त०] जो ठंढा न हो ।—**कर**-(पुं०) सूर्य ।

अतुतुजि—(वि०) [न√तुज्+कि द्वित्व-दीर्घ] न देने वाला । जो उदार न हो ।

अतूर्त—(वि०) [न√तुर्+क्त] जो रोका न गया हो । जो मारा न गया हो । (न०) आकाश ।

अतृणाद—(पुं०) [तृण√अद्+अण् न० त०] जो घास नहीं खाता है, हाल का जन्मा हुआ बछड़ा ।

अतृण्या—(स्त्री०) [न० त०] थोड़ी सी घास ।

अतृवित—(वि०) [√तृद्+क्विप् न० त०] स्थिर । कठोर ।

अतेजस्—(वि०) [नास्ति तेजो यस्मिन् न० ब०] धुँधला, जो चमकदार न हो । निर्बल, कमजोर । तुच्छ ।

अत्क—(पुं०) [√अत्+कन्)] पथिक । मुसाफिर । शरीर का अंग । जल । बिजली । पोशाक । कवच ।

अत्ता—(स्त्री०) [अतति=संबध्नाति√अत् +तक्] माता । बड़ी बहिन । सास ।

अत्ति, अत्तिका—(स्त्री०) [√अत्+क्तिन् —अत्ति, अत्ता+क इत्व—अत्तिका] बड़ी बहन आदि ।

अत्न, अत्नु—(पुं०) [√अत्+न—अत्न, √अत्+नु—अत्नु] हवा । सूर्य । पथिक ।

अत्यग्नि—(पुं०) [अत्या० स०] विकार उत्पन्न करने वाली तीक्ष्ण पाचन-शक्ति ।

अत्यग्निष्टोम—(पुं०) [अतिक्रान्तः अग्निष्टो-मम् अत्या० स०] ज्योतिष्टोम यज्ञ का ऐच्छिक दूसरा भाग ।

अत्यङ्कुश—(वि०) [अत्या० स०] जो वश में न रह सके, बेकाबू (हाथी) ।

अत्यन्त—(वि०) [अतिक्रान्तः अन्तम् अत्या० स०) बेहद । बहुत अधिक । सम्पूर्ण, नितान्त । अनन्त । सदा रहने वाला ।—**अभाव** (**अत्यन्ताभाव**)-(पुं०) किसी वस्तु का बिल्कुल न होना, सत्ता की नितान्त शून्यता । —**गत**-(वि०) सदैव के लिये गया हुआ, जो लौटकर न आवे ।—**गामिन्**-(वि०) बहुत चलने-फिरने वाला । बहुत तेज चलने वाला ।—**वासिन्**-(पुं०) वह जो सदा अपने शिक्षक के साथ छात्रावस्था में रहे ।—**संयोग**-(पुं०) अतिसामीप्य, अविच्छेद ।

अत्यन्तिक—(वि०) [अत्यन्तं गच्छति इत्यर्थे अत्यन्त+ठन्-इक] बहुत या बहुत तेज चलने वाला । बहुत समीपी । (न०) अति सामीप्य, बिल्कुल पास ।

अत्यन्तीन—(वि०) [अत्यन्त+ख—ईन]

बहुत अधिक चलने-फिरने वाला। बड़ी तेजी से चलने वाला।

अत्यय—(पु०) [अति√इ+अच्] बीत जाना। निकल जाना। अन्त। उपसंहार, समाप्ति। अनुपस्थिति। अदर्शन, लोप। मृत्यु, नाश। खतरा। दुःख। अपराध, दोष। अतिक्रमण। आक्रमण। श्रेणी।

अत्ययित—(वि०) [अत्यय+इतच्] बढ़ा हुआ, आगे निकला हुआ। उल्लंघन किया हुआ। अत्याचार किया हुआ।

अत्ययिन्—(वि०) [अत्यय+इनि] बढ़ा हुआ, आगे निकला हुआ।

अत्यर्थ—(वि०) [अत्या० स०] अत्यधिक बहुत ज्यादा। (क्रि० वि०) बहुत अधिकता से।

अत्यष्टि—(स्त्री०) [अत्या० स०] एक छन्द जिसके प्रत्येक पाद में सत्रह अक्षर होते हैं।

अत्यह्न—(वि०) [अत्या० स०] स्थितिकाल में एक दिन से अधिक।

अत्याकार—(पु०) [प्रा० स०] तिरस्कार। भर्त्सना, धिक्कार। बड़े डील-डौल वाला शरीर।

अत्याचार—(पु०) [प्रा० स०] अन्याय। दुराचार। आचार का अतिक्रमण। कोई ऐसा कार्य जो प्रथा में समर्थित न हो। उपद्रव। जुल्म, उत्पीडन।

अत्यादित्य—(वि०) [अत्या० स०] सूर्य की चमक को अपनी चमक से दबा देने वाला।

अत्याधान—(न०) [अति—आ√धा+ल्युट्] रखने की क्रिया (किसी पर)। धोखा। अतिक्रमण। होमाग्नि को सुरक्षित न रखना।

अत्यानन्दा—(स्त्री०) [प्रा० स०] वैद्यक के अनुसार योनि का एक भेद, वह योनि जो अत्यन्त मैथुन से भी संतुष्ट न हो। इसका दूसरा नाम 'रतिप्रीता' भी है। स्त्री-सहवास-सम्बन्धी आनन्दों के प्रति अस्वस्थ अनास्था।

अत्याय—(पु०) [अति√इ अथवा√अय +घञ्] अतिक्रमण, उल्लंघन। आधिक्य, ज्यादती। बहुत अधिक लाभ।

अत्यारूढ—(वि०) [अति-आ√रुह्+क्त] बहुत अधिक बढ़ा हुआ। (न०) दे० 'अत्यारूढि'।

अत्यारूढि—(स्त्री०) [अति-आ√रुह्+क्तिन्] अत्युच्च पद। अत्यधिक उन्नति या उत्कर्ष।

अत्याल—(पु०) [अति+आ√अल+अच्] रक्त चित्रक वृक्ष, लाल चिता।

अत्याश्रम—(पु०) [प्रा० स०] संन्यासाश्रम। (वि०) [अत्या० स०] संन्यासी। परमहंस। ब्रह्मचर्यादि आश्रम-धर्मों का पालन न करने वाला।

अत्याहित—(न०) [अति+आ√धा+क्त] बड़ी भारी विपत्ति। दुर्घटना। दुस्साहस या जोखों का काम। अरुचि।

अत्युक्ति—(स्त्री०) [अति√वच्+क्तिन्] बहुत बढ़ा कर कहा हुआ कथन। बढ़ा-चढ़ा कर कहने की शैली। एक अलंकार।

अत्युक्था—(स्त्री०) [उक्थ एकाक्षरपादिका वृत्तिः ताम् अतिक्रान्ता [अत्या० स०] एक छंद जिसके प्रत्येक पाद में दो-दो अक्षर होते हैं।

अत्युपध—(वि०) [उपधाम् अतिक्रान्तः अत्या० स०] विश्वस्त। परीक्षित।

अत्यूर्मि—(वि०) [ब० स०] जिसमें बड़ी लहरें उठती हों।

अत्यूह—(पु०) [अति√ऊह्+अच्] गम्भीर विचार या ध्यान। ठीक अथवा सच्चा तर्क-वितर्क। जलकुक्कुट, एक प्रकार का जल-पक्षी। मोर।

अत्र—(अव्य०) [इदम् या एतद्+त्रल्] यहाँ, इसमें।—**अन्तरे** (**अत्रान्तरे**)–[क्रि० वि०] इस बीच में, इस प्रसंग में।—**भवत्**–(वि०) श्लाघ्य। पूज्य। प्रशंसा करने योग्य। स्त्री के लिये 'अत्रभवती' का व्यवहार होता है।

अत्रत्य—(वि०) [अत्र भवः जातः, एतत्-स्थानसंबद्धो वा इत्यर्थे अत्र+त्यप्] यहाँ सम्बन्धी। इस स्थान से सम्बद्ध। यहाँ उत्पन्न हुआ। यहाँ प्राप्त। इस स्थान का, स्थानीय।

अत्रप—(वि०) [नास्ति त्रपा यस्य न० ब०] निर्लज्ज। दुश्शील। अप्रगल्भ, उद्धत।

अत्रपु—(वि०) [न० ब०] जिसमें रांगा न हो। [न० त०] रांगे का अभाव।

अत्रस्नु—(वि०) [न० त०] निर्भीक, निडर।

अत्रि—(पुं०) [√अद्+त्रिन्] एक ऋषि का नाम।—**ज**,—**जात**,—**दृग्ज**,—**नेत्र-प्रसूत**,—**प्रभव**,—**भव**-(पुं०) चन्द्रमा।

अथ—(अव्य०) [√अर्थ्+ड पृषो० रलोप] मंगल। आरम्भ। अधिकार। तदनन्तर, पीछे से। यदि और इसका प्रयोग किसी विषय की जिज्ञासा करने में तथा कोई प्रश्न आरम्भ करने में होता है। सम्पूर्णता नितान्तता। सन्देह, संशय। यथा "शब्दो नित्योऽथानित्यः।"—**अपि** (**अथापि**)-अपरञ्च। किञ्च। अपिच। पुनः।—**किं**—और क्या? हाँ, ठीक यही, ठीक ऐसा ही, निस्सन्देह।—**च**-अपिच। किञ्च। इसी प्रकार, ऐसे ही।—**वा**-या। अधिकतर। या क्यों। या कदाचित्। प्रथम कथन का संशोधन करते हुए।

अथर्वन्—(पुं०) [अथ√ऋ+वनिप्] यज्ञकर्त्ता-विशेष, जो अग्नि और सोम का पूजन करता है। ब्राह्मण (बहुवचन में)। अथर्वन् ऋषि के सन्तान। अथर्ववेद की ऋचाएँ। (पुं० न०) अथर्ववेद।—**निधि**,—**विद्**-(पुं०) अथर्ववेद पढ़ने का पात्र या अधिकारी। अथर्ववेद का ज्ञाता।—**भूत**-(पुं०) बारह महर्षियों का नाम जो अथर्वा हो गये हैं।—**वत्**-(अव्य०) अथर्वा या उनके वंशजों की भाँति।—**वेद**-(पुं०) चौथे या अन्तिम वेद का नाम।—**शिखा**-(स्त्री०) एक उपनिषद्।—**शिरस्**-(न०) एक प्रकार की ईंट। (पुं०) महापुरुष का नाम।

अथर्वण—(पुं०) [अथर्वन्+अच्, पृषो०] शिव का नाम।

अथर्वणि—(पुं०) [अथर्वन्+इन्] अथर्ववेद में निष्णात ब्राह्मण। अथवा अथर्ववेद में वर्णित कार्यों के कराने में निपुण व्यक्ति।

अथर्वाण—(न०) [अथर्वन्+अन्, पृषो० दीर्घ] अथर्ववेद की अनुष्ठानपद्धति।

अथर्वी—(स्त्री०) (वि०) [√थर्व्+अन्, पृषो० ङीप्, न० त०] न चलने वाली। भाले से छिदी हुई। आग से घिरी हुई। हिंसा न करने वाली।

अथवा—(अव्य०) [अथ√वा+क्विप्] पक्षान्तर-बोधक अव्यय, या, वा, किंवा।

अथो—(अव्य०) [√अर्थ्+डो पृषो० रलोप] दे० 'अथ'।

अद्—अदा० पर० सक० खाना, भक्षण करना। नष्ट करना। अत्ति।

अदंष्ट्र—(वि०) [नास्ति दंष्ट्रा यस्य न० ब०) दन्तरहित। (पुं०) सर्प जिसका विषदन्त उखाड़ लिया गया हो।

अदक्षिण—(वि०) [न० त०] बांया। [नास्ति दक्षिणा यस्मिन् न० ब०] वह कर्म जिसमें कर्म कराने वाले को दक्षिणा न मिले। बिना दक्षिणा का। [न० त०]निर्बल मन का, निर्बोध, मूढ़। सौष्ठवशून्य। नैपुण्य-रहित, चातुर्यविवर्जित। भद्दा। प्रतिकूल।

अदक्षिणीय—(वि०) [न दक्षिणाम् अर्हति इत्यर्थे दक्षिणा+छ—ईय, न० त०] जो दक्षिणा का अधिकारी न हो।

अदक्षिण्य—(वि०) [न दक्षिणाम् अर्हति इत्यर्थे दक्षिणा+यत्, न० त०] दे० 'अदक्षिणीय'।

अदग्ध—(वि०) [न० त०] न जला हुआ।

अदण्ड—(वि०) [न० ब०) दंड से मुक्त। [न० त०] दंड का अभाव।

अदण्डनीय—(वि०) (दे०) 'अदण्ड्य' ।

अदण्ड्य—(वि०) [न० त०] दण्ड देने के अयोग्य । दण्ड से मुक्त, सजा से बरी ।

अदत्—(वि०) [न० ब०] दन्तरहित, बिना दाँतों का ।

अदत्त—(वि०) [न० त०] बिना दिया हुआ । अन्याय-पूर्वक या अनुचित रीति से दिया हुआ । विवाह में न दिया हुआ । **त्ता**—(स्त्री०) अविवाहित लड़की । (न०) निष्फल दान ।—**आदायिन्** (**अदत्तादायिन्**)-(पु०) निष्फल दान का ग्रहण करने वाला । वह पुरुष जो बिना दी हुई वस्तु को उठा ले जाय, उठाईगीर, चोर ।—**दान**-(न०) चोरी । डकैती (जन०) ।—**पूर्वा**-(स्त्री०) जिसकी सगाई पहले न हुई हो । "अदत्तपूर्वेत्याशङ्क्यते" मालतीमाधव । अ० ४ ।

अदन—(वि०) [√अद्+अनन्] खाने योग्य ।

अदन्त—[नास्ति दन्तो यस्य न० ब०] बिना दाँतों वाला । जोंक । ['अत्' अन्ते यस्य ब० स०] जिसके अन्त में अत् अर्थात् अ हो ।

अदन्त्य—(वि०) [दन्त+यत्, न० त०] दाँत-सम्बन्धी नहीं, दाँतों के योग्य नहीं । दाँतों के लिये हानिकारक ।

अदभ्र—(वि०) [√दम्भ+रक् न० त०] कम नहीं, बहुत, अधिक, विपुल ।

अदम्य—(वि०) [√दम्+यत् न० त०] जो दबाया न जा सके । प्रबल ।

अदर्शन—(वि०) [√दृश+ल्युट् (भावे) न० ब०) अदृश्य, अनुपस्थित । (न०) [न० त०] दर्शन का अभाव । दिखाई न देना । (व्याकरण में) वर्णलोप ।

अदल—(वि०) [न० त०] बिना पत्ते का । बिना सेना का । (पु०) एक पौधा, हिज्जल । (स्त्री०) घृतकुमारी नामक ओषधि ।

अदस—(वि०) [न दस्यते=उत्क्षिप्यते अत्र नियंत्र, न√दस+क्विप्] दूर की वस्तु । 'तत्' । दूसरा, अन्य ।

अदातृ—(वि०) [न० त०] न देने वाला । अनुदार, कृपण । विवाह के लिये (कन्या) न देने वाला । जिसे चुकाना न हो ।

अदादि—(वि०) ['अद्' आदौ यस्य ब० स०] जिसके आरम्भ में अद् धातु हो, व्याकरण की रूढ़ि-विशेष ।

अदान—(वि०) [नास्ति दानं यस्य न० ब०] न देने वाला, कंजूस । (पु०) बिना मद-जल का हाथी । (न०) [न० त०] दान का अभाव ।

अदाय—(वि०) [नास्ति दायः यस्य न० ब०] जो भाग पाने का अधिकारी न हो ।

अदायाद—(वि०) [न० त०] जो उत्तराधिकारी होने का अधिकारी न हो । [न० ब०] उत्तराधिकारी-रहित । लावारिस ।

अदायिक—(वि०)— **अदायिकी**-(स्त्री०) [दायम् अर्हति इत्यर्थे दाय+ठक्—इक, न० ब०] वह वस्तु या सम्पत्ति जिसके पाने के उत्तराधिकारी ने अपना स्वत्व प्रदर्शित न किया हो, लावारिसी, जिसका कोई वारिस न हो । जो पुश्तैनी न हो ।

अदाह्य—(वि०) [√दह्+ण्यत् न० त०] न जलने वाला । जो चिता पर जलाने योग्य न हो । (पुं०) परमात्मा ।

अदिति—ती-(स्त्री०) [न√दा+डिति, वा ङीप्] पृथिवी । अदिति देवी जो आदित्यों की माता है; पुराणों में देवताओं की उत्पत्ति अदिति ही से बतलायी गयी है । वाणी । गौ । पुनर्वसु नक्षत्र । निर्धनता । गाय । (वि०) [√दो+क्तिन् न० ब०] बिना विभाग का, पूर्ण ।—**ज**,—**नन्दन**-(पु०) देवता ।

अदीन—(वि०) [√दी+क्त, न० त०] दीनतारहित । जो कायर न हो । न दबने वाला । तेजस्वी । उदार ।

अदीर्घ—(वि०) [न० त०] लंबा नहीं ।—**सूत्र**,—**सूत्रिन्**-(वि०) तेज, स्फूर्ति वाला । काम करने में विलम्ब न करने वाला ।

अदुर्ग—(वि०) [न० त०] जिसमें प्रवेश किया जा सके । [न० ब०] बिना किले-बंदी का, दुर्गरहित ।—**विषय**-(पुं०) ऐसा देश जिसमें रक्षा के लिये दुर्ग न हो, अरक्षित देश या राज्य ।

अदूर—(वि०) [न० त०) जो बहुत दूर न हो । समीपी (समय और स्थान सम्बन्धी) । (न०) सामीप्य । पड़ोस ।—**दर्शिन्**-(वि०) दूर तक न सोचने वाला, अविचारी ।—**भव**-(वि०) पास में ही स्थित ।

अदूरतः, **अदूरम्**, **अदूरात्**, **अदूरे**, **अदूरेण**—(अव्य०) [न० त०] (किसी स्थान या समय से) बहुत दूर नहीं ।

अदृश्—(वि०) [न० ब०] दृष्टिहीन, नेत्रहीन, अंधा ।

अदृश्य—(वि०) [न० त०] जो दिखाई न दे, जो देखा न जा सके, अगोचर । लुप्त, गायब । (पुं०) परमेश्वर ।

अदृष्ट—(वि०) [√दृश्+क्त न० त०] जो देखा न जाय, अनदेखा हुआ । जो जाना न गया हो । न देखा या न सोचा हुआ । अज्ञात । अविचारित । अस्वीकृत । आईन के विरुद्ध । (न०) प्रारब्ध, भाग्य, नसीब । पूर्व-जन्मार्जित पाप या पुण्य जो दुःख या सुख का कारण है । ऐसी विपत्ति या खतरा जिसका पहले कभी ध्यान भी न रहा हो (जैसे अग्निकाण्ड, जलप्लावन) ।—**अर्थ** (**अदृष्टार्थ**) (वि०) जिसका विषय इंद्रियगोचर न हो । आध्यात्मिक या गूढ़ अर्थ रखने वाला ।—**कर्मन्**-(वि०) अक्रियात्मक । अनुभवशून्य ।—**नर**,—**पुरुष**-(पुं०) ऐसी संधि जो बिना मध्यस्थ के दोनों दल आपस में मिल कर कर लें ।—**नर-संधि**-(पुं०) ऐसी संधि या प्रतिज्ञा जो किसी के साथ इसलिये की जाय कि वह किसी अन्य व्यक्ति से कोई कार्य सिद्ध करा देगा ।—**फल**-(वि०) जिसका परिणाम दृष्टिगत न हो । (न०) अच्छे-बुरे कर्मों का भावी फल या परिणाम ।

अदृष्टि—(स्त्री०) [न० त०] बुरी दृष्टि । (वि०) [न० ब०] अंधा ।

अदेय—(वि०) [न√दा+यत्] जो देने योग्य न हो या जो दिया न जा सके । (न०) वह जिसका दिया जाना या देना ठीक नहीं या आवश्यक नहीं; इस श्रेणी की वस्तु में स्त्री, पुत्र आदि हैं ।

अदेव—(वि०) [न० त०] देव के समान नहीं । अपवित्र । (पुं०) जो देवता न हो । राक्षस, दैत्य, असुर ।—**मातृक**-(वि०) जहाँ पर्याप्त वर्षा न होती हो, वर्षा के अभाव में तालाब आदि के जल से सींचा हुआ ।

अदेश—(पुं०) [न० त०] अनुपयुक्त स्थान । कुदेश, वर्जित देश ।—**काल**-(पुं०) कुदेश और कुसमय ।—**स्थ**-(वि०) कुठौर का ।

अदेश्य—(वि०) [न० त०] जो आज्ञा देने के योग्य न हो । न सूचित करने योग्य । न बताने योग्य ।

अदैन्य—(वि०) [न० ब०] दीनता या हीनता से रहित । (न०) [न० त०] दीनता का अभाव ।

अदैव—(वि०) [न० त०] देवताओं या उनके कार्यों से असंबद्ध । जो भाग्य या देवताओं द्वारा पूर्व-निर्धारित न हो ।

अदोष—(वि०) [नास्ति दोषो यस्मिन् न० ब०] निर्दोष, दोषरहित, त्रुटिरहित, निरपराध । रचना सम्बन्धी दोषों से वर्जित, (रचना के दोष जैसे अश्लीलता, ग्राम्यता आदि) ।

अदोह—(पं०) [न० ब०] वह समय जिसमें गौ का दुहना सम्भव नहीं । [न त०] न दुहना ।

अद्रुग—(पं०) [√अद्+गन्] यज्ञ की बलि, पुरोडाश ।

अद्धा—(अव्य०) [अध्यते अत्=सन्ततगमनम् ज्ञानम् वा दधाति इति√धा+क्विप्] सच-मुच, बेशक, निस्सन्देह, दरहकीकत। प्रत्यक्ष रूप से, स्पष्टतया।

अद्भुत—(वि०) [अतति इति अत् भाति इति√भा+डुतच्] विलक्षण, विचित्र। आश्चर्य-जनक, विस्मयकारक। अनोखा, अनूठा, अपूर्व, अलौकिक। (न०) काव्य के नौ रसों में से एक।—**आलय** (**अद्भुतालय**)-(पु०) जहाँ अद्भुत वस्तुओं का संग्रह हो, अजायबघर।—**धर्म**-(पु०) बौद्धों के नौ अंगों में से एक।—**सार**-(पु०) अद्भुत राल, सर्जरस, यक्ष-धूप।—**स्वन**-(पु०) आश्चर्यशब्द। महादेव का नाम।

अद्मनि—(पु०) [अत्ति सर्वान् इति विग्रहे √अद्+मनिन्] आग, अग्नि।

अद्मर—(वि०)[अत्तुम् शीलमस्य इति विग्रहे √अद्+क्मरच्] बहुत खाने वाला, भक्षण-शील।

अद्य—(वि०) [√अद्+यत्] खाने योग्य। (न०) भोज्य पदार्थ। (अव्य०) ['अस्मिन् अहनि' इत्यर्थे इदम् शब्दस्य निपातः सप्तम्यर्थे] आज, आज का दिन, वर्तमान दिवस।—**अपि** (**अद्यापि**)-(अव्य०) आज भी, आज तक। अब भी, अब तक।—**अवधि** (**अद्यावधि**) (अव्य०)-आज से। आज तक।—**पूर्व**-(न०) आज के पहिले। इससे पूर्व। आज से आगे।—**श्वीना**-(स्त्री०) [अद्य-श्वः परदिने वा प्रसोष्यते इति अद्य श्वस्+ख, टिलोपः] वह गर्भिणी स्त्री जो एक ही दो दिन में बच्चा जनने वाली हो, आसन्नप्रसवा।

अद्यतन—(वि०) [अद्य भवः इत्यर्थे अद्य+ट्यु, तुट् च] आज सम्बन्धी, आज का। आधुनिक।

अद्यत्वे—(अव्यय) [इदम् शब्दस्य इदानी-मित्यर्थे निपातः] आज-कल। इस समय।

अद्रव्य—(न०) [न० त०] वह वस्तु जो किसी भी काम की न हो, निकम्मी वस्तु। कुशिष्य। कुपात्र।

अद्रि—(पु०) [√अद्+क्रिन्] पर्वत। पत्थर। वज्र। वृक्ष। सूर्य। बादलों की घटा। बादल। मापविशेष। सात की संख्या। पृथु का एक पौत्र।—**ईश**, (**अद्रीश**),—**पति**,—**नाथ**-(पु०) पहाड़ों का राजा, हिमालय। कैलासपति महादेव।—**कन्या**-(स्त्री०) पार्वती।—**कर्णी**-(स्त्री०) अपराजिता नामक लता।—**कीला**-(स्त्री०) पृथिवी।—**तनया**,—**सुता**-(स्त्री०) पार्वती।—**ज**-(न०) गेरू मिट्टी, शिलाजीत।—**द्रोणि**,—**द्रोणी**-(स्त्री०) पहाड़ की घाटी। नदी जो पहाड़ से निकलती है।—**द्विष्**, —**भिद्**-(पु०) पर्वत-शत्रु या पर्वत को विदीर्ण करने वाला; यह इन्द्र की उपाधि है।—**पति**,—**राज**-(पु०) पहाड़ों का स्वामी, हिमालय।—**शय्य**-(पु०) शिव।—**शृङ्ग**-(न०)—**सानु**-(पु०, न०) पर्वत का शिखर, पहाड़ की चोटी।—**सार**-(पु०) पर्वत का साराश, लोहा।

अद्रोह—(पु०) [न० त०] विद्वेषशून्यता। विनम्रता।—**वृत्ति**-(स्त्री०) द्वेषरहित आचरण।

अद्वय—(वि०) [न० ब०] दो नहीं। बेजोड़, अद्वितीय, एकमात्र। (पु०) बुद्धदेव का नाम। (न०) [न० त०] अद्वितीयता। विजातीय और स्वगतभेद-शून्यता। सर्वोत्कृष्ट सत्य, ब्रह्म। ब्रह्म और विश्व की एकता। जीव और बाह्य पदार्थों की एकता।—**वादिन्**-(वि०) वेदान्ती। बौद्ध।

अद्वयाविन्—(वि०) [अद्वयम् अस्ति इत्यर्थे अद्वय+विनि, दीर्घ] दो (देव और पितृ-यान) मार्गों से रहित।

अद्वयु—(वि०) [न द्वयं द्विप्रकारः अस्ति अस्य इत्यर्थे द्वय+उ, न० त०] दो प्रकार से रहित। जो भीतर और बाहर से एकरूप हो।

अद्वार—(न०) [न० त०] द्वार नहीं, कोई भी निकलने का रास्ता जो नियमित रूप से दरवाजा न हो।

अद्वितीय—(वि०) [न द्वितीयः सदृशो यस्य न० ब०] बेजोड़, केवल, एकमात्र, जिसके समान दूसरा न हो। (न०) परमात्मा, ब्रह्म।

अद्वेष्य—(वि०) [√द्विष + ण्यत् न० त०] विरोध न करने योग्य।

अद्वेषस—(वि०) [√द्विष्+असुन् न० ब०] द्वेषरहित।

अद्वेष्टृ—(वि०) [न० त०] जो द्वेषी या शत्रु न हो, मित्र।

अद्वैत—(वि०) [द्विधा इतम्=भेदं गतम् द्वीतम्, तस्य भावः द्वैतम्, तन्नास्ति यस्य न० ब०] द्वितीय-शून्य। अपरिवर्तनशील। अनुपम, बेजोड़। एकाकी। (न०) [न० त०] ऐक्य (विशेष कर ब्रह्म और जीव का अथवा ब्रह्म और संसार का अथवा जीव और बाह्य पदार्थों का)। सर्वोत्कृष्ट या सर्वोपरि सत्य, ब्रह्म। —**वादिन्**–(वि०) वेदान्ती, ब्रह्म और जीव को एक मानने वाला।

अधन—(वि०) [न० त०] धनहीन। स्वतंत्र। धन-संपत्ति का अनधिकारी।

अधन्य—(वि०) [न० त०] अभागा, दुःखी। निंद्य। जो धान्यादि से भरा-पूरा न हो। जो उन्नति न कर रहा हो।

अधम—(वि०) [√अव्+अम बादेशः, अधोभवः अवस्+मः प्रत्ययलोपो वा] क्षुद्र, नीच। दुष्टातिदुष्ट, बहुत बुरा। —**अङ्ग** (अधमाङ्ग)–(न०) पैर, पाद। —**अर्ध** (अधमार्ध)–(न०) शरीर के नीचे का आधा अंग, नाभि के नीचे का अंग। —**ऋण**, (अधमर्ण), —**र्णिक** (अधमर्णिक)–(पु०) कर्जदार, कर्ज़दार (उत्तमर्ण का उलटा)। —**भृत**, **भृतक**–(पु०) कुली, मजदूर, साईस। (पु०) जार। यहाँ का एक अनिष्ट योग। परनिंदक कवि। **मा**—(स्त्री०) दुष्टा मलकिन, दुष्टा स्वामिनी।

अधर—(वि०) [न ध्रियते इति√धृ+अच् न० त०] नीचे का, निचला, तले का। नीच, अधम, दुष्ट, गुण में कम, अश्रेष्ठ। परास्त किया हुआ, पराभूत, चुप किया हुआ। (पु०) नीचे का ओठ। ओठ। (न०) शरीर का निचला भाग। धरती और आकाश के बीच का स्थान। पाताल। भाषण। उत्तर। —**उत्तर** (अधरोत्तर)–(वि०) निचला और ऊपर का। अच्छा-बुरा। उल्टा, पल्टा, अंडबंड, अस्तव्यस्त। समीप-दूर। —**ओष्ठ** (अधरो (रौ) ष्ठ–(पु०) नीचे का होठ। —**कण्ठ**–(पु०) गरदन के नीचे का भाग। —**पान**-(न०) होठ चूमना, अधर-चुम्बन। —**मधु**–(न०)—**रस**–(पु०)—**सुधा**– (स्त्री०) ओठ का अमृत, अधर-रस रूपी अमृत। —**सपत्न**–(वि०) जिसके शत्रु हार कर मौन हो गये हों। —**स्वस्तिक**–(न०) अधोबिन्दु।

अधरतस्—(अव्य०) [अधर+तसिल्] नीचे से।

अधरात्—(अव्य०) [अधर+ आति] नीचे। नीचे से। नीचे में। (दिशा, देश और काल के साथ इसका प्रयोग होता है।)

अधरेण—(अव्य०) [अधर+एनप्] नीचे। नीचे में। (यह भी दिशा, देश और काल के साथ प्रयुक्त होता है।)

अधरी√कृ—आगे निकल जाना, हरा देना, पराजित कर देना। अधरीकरोति।

अधरीण—(वि०) [अधर+ख—ईन] निचला। निन्दित, बदनाम।

अधरेद्युस्—(अव्य०) [अधर+एद्युस्] किसी पूर्व दिवस में, परसों, (बीता हुआ)।

अधर्म—(पु०) [न० त०] पाप। अन्याय। दुष्टता। अन्याय्य कर्म, निषिद्ध कर्म। न्याय में वर्णित २४ गुणों में से एक। एक प्रजापति का नाम। सूर्य के एक अनुचर का नाम।

(न०) उपाधिशून्य, ब्रह्म की उपाधि-विशेष। —आत्मन्, (अधर्मात्मन्), —चारिन्-(वि०) दुष्ट, पापी।—मंत्रयुद्ध-(न०) वह युद्ध जो दोनों पक्षों का पूर्ण नाश करने के लिये ही प्रारंभ किया गया हो।

अधर्मा—(स्त्री०) मूर्तिमती दुष्टता।

अधवा—(स्त्री०)[नास्ति धवः=पतिः यस्याः, न० ब०] रांड़, बेवा, जिसका पति मर गया हो।

अधस्—(अव्य०) [अधर+असि] नीचे। नीचे के लोक में। पाताल या नरक में।—**अंशुक (अधोंऽशुक)**-(न०) निचला कपड़ा यथा बनियाइन, नीमास्तीन आदि। धोती। कटिवस्त्र।—**अक्षज (अधोऽक्षज)**।—(पुं०) विष्णु का नाम।—**कर**-(पुं०) हाथ का निचला हिस्सा।—**करण**-(न०) पराभव, अधःपात।—**खनन**-(न०) गाड़ना, तोपना। —**गति**-(स्त्री०)— **गमन**-(न०)—**पात**-(पुं०) नीचे जाना, नीचे गिरना, नीचे उतरना। अवनति, ह्रास, दुर्गति।—**जन्तु**-(पुं०) चूहा, मूसा।— **चर**- (पुं०) चोर।—**जिह्विका**-(स्त्री०) अलि-जिह्वा, सुधास्रवा, तालु-जिह्वा, घण्टिका, छोटी जीभ जो तालु के नीचे रहती है।—**दिश्**-(स्त्री०) अधोबिन्दु। दक्षिण दिशा।—**दृष्टि**-(स्त्री०) नीचे को निगाह।—**प्रस्तर**-(पुं०) वह चटाई जिस पर वे लोग, जो मातमपुर्सी करने आते हैं, बिठाये जाते हैं।—**भाग**-(पुं०) नीचे का भाग।—**भुवन**-(न०)—**लोक**-(पुं०) पृथिवी के नीचे के लोक पातालादि। —**मुख**,—**वदन**-(वि०) नीचे की ओर मुख किये हुए।—**लम्ब**-(पुं०) सीसे का गोला, लम्बितरेखा, सीधी खड़ी रेखा।—**वायु**-(पुं०)—अपानवायु, उदराध्मान, पेट का फूलना। **बिन्दु**-(पुं०) पैर के नीचे का बिन्दु।—**स्वस्तिक**-(न०) अधोबिन्दु।

अधस्तन—(वि०) [अधस्+ट्यु, तुट् च] जो नीचे हो, निचला।

अधस्तमाम्, अधस्तराम्—(अव्य०) [अतिशयेन अधः इत्यर्थे अधस्+तमप्, तरप्—आमु] अत्यन्त अधोभाग में, बहुत नीचे।

अधस्तात्—(क्रि० वि०) [अधर+अस्ताति] नीचे की ओर। अंदर, भीतर।

अधामार्गव—(पुं०) [न धीयते इति अधाः, तादृशं मार्गम् वातीति अधा—मार्ग—√वा+क] अपामार्ग, चिड़चिड़ा।

अधारणक—(वि०) [न० ब०, स्वार्थे कन्] जो लाभदायक न हो।

अधि—(अव्य०) [न√धा+कि] यह क्रियाओं के साथ उपसर्ग की तरह आता है: ऊपर, ऊर्ध्व, अतीत, अधिक। प्रधान, मुख्य, विशेष।

अधिक—(वि०) [अधि+क] बहुत, ज्यादा, विशेष। अतिरिक्त, सिवा, फालतू, बचा हुआ, शेष। (न०) अलङ्कार-विशेष, जिसमें आधेय को आधार से अधिक वर्णन करते हैं।—**अङ्ग**,—(**अधिकाङ्ग**), **अङ्गिन्** (**अधिकाङ्गिन्**)-(वि०) नियत संख्या से अधिक अंगों वाला।—**अर्थ** (**अधिकार्थ**)-(वि०) अत्युक्त, अतिरंजित।—**ऋद्धि**, (**अधिकर्द्धि**)-(वि०) बहुल, प्रचुर। शुभ। सम्पन्न। सौभाग्यशाली।—**तर**-(वि०) [अधिक+तरप्] और अधिक, किसी की तुलना में अधिक बड़ा।—**तिथि**-(स्त्री०)—**दिन**-(न०)—**दिवस**-(पुं०) बढ़ी हुई तिथि।—**मास**-(पुं०) लौंद का महीना, मलमास।—**वाक्योक्ति**-(स्त्री०) अतिरंजना, किसी बात को बहुत बढ़ा-चढ़ा कर कहना।

अधिकता—(स्त्री०) [अधिक+तल्] बहुतायत, बढ़ती। विशेषता।

अधिकरण—(न०) [अधि√कृ+ल्युट्] आधार, आसरा, सहारा। सम्बन्ध। (व्याकरण में) कर्त्ता और कर्म द्वारा क्रिया का आधार,

व्याकरण विषयक सम्बन्ध। (दर्शन में) आधार-विषय, अधिष्ठान, मीमांसा और वेदान्त के अनुसार वह प्रकरण जिसमें किसी सिद्धान्त-विशेष की विवेचना की जाय और उसमें निम्न पाँच अवयव हों—विषय, संशय, पूर्वपक्ष, उत्तरपक्ष, निर्णय। यथा:—'विषयो संशयश्चैव पूर्वपक्षस्तथोत्तरम्। निर्णयश्चेति सिद्धान्तः शास्त्रेऽधिकरणं स्मृतम् ॥' —**भोजक**–(पु॰) न्यायाधीश, निर्णायक, न्यायकर्त्ता।—**मण्डप**–(पु॰) अदालत, न्यायालय।—**विचाल**–(पु॰) किसी वस्तु के गुण में ह्रास या वृद्धि करते जाना।—**सिद्धान्त**–(पु॰) वह सिद्धान्त जिसके सिद्ध होने से अन्य सिद्धान्त भी स्वयं सिद्ध हो जायँ।

अधिकरणिक—(पु॰) [अधिकरणम् आश्रयतया अस्ति यस्य इत्यर्थे अधिकरण+ठन्] न्यायाधीश। न्यायकर्त्ता। पर्यवेक्षक, वह जिसको देखरेख और प्रबन्ध का काम सौंपा गया हो।

अधिकरणिन्—(वि॰) [अधिकरण+इनि] निरीक्षक। अध्यक्ष।

अधिकरण्य—(न॰) [अधिकरण+यत्] अधिकार।

अधिकर्मन्—(न॰) [प्रा॰ स॰] निगरानी, निरीक्षण।—**कर**,—**कृत्**–(पु॰) मजदूर आदि के काम की देख-भाल करने वाला, मेठ।

अधिकर्मिक—(पु॰) [अधिकृत्य हट्टम् कर्मणे धनम् इति अधिकर्मन्+ठ] किसी बाजार का दरोगा, जिसका काम व्यापारियों से कर उगाहने का हो।

अधिकाम—(वि॰) [अधिकः कामो यस्य ब॰ स॰] उग्र आकांक्षाओं वाला, अतिप्रचण्ड। कामासक्त। कामोद्दीप्तिजनक।

अधिकार—(पु॰) [अधि√कृ+घञ्] कार्यभार, आधिपत्य, प्रभुत्व, इख्तियार। अधिकार-युक्त पद। शासन। प्रकरण, शीर्षक। कब्जा। योग्यता। ज्ञान। कर्म-विशेष की पात्रता। नाटक के प्रधान फल का प्रभुत्व या उसको प्राप्त करने की योग्यता। वह मुख्य नियम जिसका प्रभाव और नियमों पर भी हो (व्या॰)।—**विधि**–(स्त्री॰) मीमांसा की वह विधि या आज्ञा जिससे यह बोध हो कि किस फल के लिये कौन सा यज्ञानुष्ठान करना चाहिये।

अधिकारिन्—(वि॰) [अधिकार+इनि] अधिकारयुक्त, अधिकार-प्राप्त। पाने का हकदार, प्राप्त करने का अधिकारी। योग्य, योग्यता या क्षमता रखने वाला। उपयुक्त पात्र। (पु॰) अफ़सर, पदाधिकारी, दरोगा। स्वामी, मालिक, स्वत्वाधिकारी।

अधिकृत—(वि॰) [अधि√कृ+क्त] अधिकार या कब्जे में आया हुआ, हाथ में आया हुआ। (पु॰) अधिकारी, अध्यक्ष।

अधिकृति—(स्त्री॰) [अधि√कृ+क्तिन्] स्वत्व, हक़, मालकाना।

अधिकृत्य—(अव्य॰) [अधि√कृ+क्त्वा—ल्यप्] प्रधान विषय बनाकर। विषय में, बाबत। प्रमाण से, हवाले पर।

अधिक्रम—(पु॰), **अधिक्रमण**—(न॰) [अधि√क्रम्+घञ्, अधि√क्रम्+ल्युट्] चढ़ाई, आरोहण, चढ़ाव।

अधिक्षिप्त—(वि॰) [अधि√क्षिप्+क्त] अपमानित, तिरस्कृत। फेंका हुआ। नियत किया हुआ। भेजा हुआ।

अधिक्षेप—(पु॰) [अधि√क्षिप्+घञ्] कुवाच्य, गाली। आक्षेप। अपमान। व्यंग्य। बरखास्तगी, विसर्जन।

अधिगत—(वि॰) [अधि√गम्+क्त] प्राप्त, पाया हुआ। जाना हुआ, ज्ञात। पढ़ा हुआ।

अधिगन्तृ—(वि॰) [अधि√गम्+तृच्] प्राप्त करने वाला। सीखने वाला।

अधिगम—(पु॰) **अधिगमन**—(न॰) [अधि√गम्+घञ्, अधि√गम्+ल्युट्] प्राप्ति, पाना। ज्ञान। अध्ययन। लाभ, सम्पत्ति की

प्राप्ति। व्यापारिक सांस्थी। स्वीकृति। संगम। संसर्ग। आलाप।

अधिगवम्—(क्रि० वि०) [गवि इति अधि-गवम् विभक्त्यर्थे अव्य० स०] गाय में या गाय से प्राप्त।

अधिगुण—(वि०) [अधिका गुणा यस्य ब० स०] योग्य, उत्कृष्टगुण-विशिष्ट, गुणवान्। [अध्यारूढो गुणो यस्मिन् ब० स०] (कमान पर) भली भांति रोदा चढ़ाया हुआ (धनुष)।

अधिचरण—(न०)[प्रा० स०] किसी वस्तु के ऊपर टहलना या चलना।

अधिजनन—(न०) [प्रा० स०] उत्पत्ति।

अधिजिह्व—(पुं०) [अधिका जिह्वा यस्य ब० स०] सर्प।

अधिजिह्वा, अधिजिह्विका—[प्रा० स०] गले का कौवा। जिह्वा पर एक प्रकार की सूजन।

अधिज्य—(वि०) [अध्यारूढा ज्या यस्मिन्, अधिगत ज्या वा] (धनुष) जिसका चिल्ला चढ़ा हुआ हो, धनुष का रोदा ताने हुए।

अधित्यका—(स्त्री०) [अधि+त्यकन्] पहाड़ के ऊपर की समतल भूमि, ऊंचा पथरीला मैदान। उसका उलटा 'उपत्यका' है।

अधिदन्त—(पुं०) [अध्यारूढः दन्तः प्रा० स०] दांत के ऊपर निकलने वाला दांत।

अधिदेव (पुं०) **अधिदेवता**—(स्त्री०) [अधिकः देवः, अधिका देवता प्रा० स०] इष्टदेव, कुल-देव। पदार्थों के अधिष्ठाता देवता, रक्षक देवता।

अधिदैव, अधिदैवत—(न०) किसी वस्तु का अधिष्ठाता देवता। (पुं०) अन्तर्यामी पुरुष।

अधिदैविक—(वि०) [देव+ठक् दैविक ततः प्रा० स०] आध्यात्मिक।

अधिनाथ—(पुं०)[अधिकः नाथः प्रा० स०] परब्रह्म, परमात्मा, सर्वेश्वर।

अधिनाथ—(पुं०) [अधि+√नी+घञ्, अधि नीयते वायुना प्रा० स०] गन्ध, महक।

अधिनायक—(पुं०)[प्रा०स०]मुखिया, नेता। सर्वाधिकार-सम्पन्न शासक या अधिकारी।—**तन्त्र**—(न०) अधिनायक के अधीन चलने वाला शासन-प्रबंध। अधिनायक-शासित राज्य।

अधिनियम—(पुं०) [प्रा० स०] विधान-मंडल (अथवा राजा या प्रधान शासक द्वारा पारित या स्वीकृत विधि। [ऐक्ट]

अधिनिष्कासन—(न०) [प्रा० स०] विधि-विहित कार्यवाही द्वारा किसी को भूमि, मकान आदि से बाहर निकाल देना। [इविक्शन]

अधिप, अधिपति—(पुं०) [अधि√पा+क, अधि√पा+डति] मालिक, स्वामी। राजा, प्रभु, शासक। प्रधान।

अधिपत्नी—(स्त्री०)[प्रा० स०] (वैदिक) स्वामिनी, शासन करने वाली।

अधिपत्र—(न०) [प्रा० स०] वह पत्र जिसमें किसी को कोई काम करने का अधिकार, अनु-मति या आज्ञा दी जाय। लिखित आदेश-पत्र। किसी को पकड़ने या उसका माल जब्त करने की न्यायालय की लिखित आज्ञा।

अधिपुरुष, अधिपूरुष—(पुं०) [प्रा० स०] परमात्मा, परब्रह्म। किसी संस्था आदि का प्रमुख अधिकारी। अधिकार-प्राप्त व्यक्ति।

अधिप्रज—(वि०) [अधिका प्रजा यस्य ब० स०) बहु सन्तति वाला।

अधिभार—(पुं०) [प्रा० स०] कर या शुल्क आदि का वह अतिरिक्त भार जो विशेष परि-स्थिति में या विशेष कार्य के लिये किसी पर डाला जाय। निर्धारित परिमाण से अधिक कर, शुल्क आदि। [सरचार्ज]

अधिभूत—(न०) [भूतम्=प्राणिमात्रम् अधिकृत्य वर्तमानम् प्रा० स०] परमात्मा, परब्रह्म।

अधिमात्र—(वि०)[अधिका मात्रा यस्य ब० स०] नाप से अधिक, अत्यधिक, अपरिमित।

अधिमान—(पुं०) [प्रा० स०] किसी वस्तु,

देश, व्यक्ति आदि को औरों से अधिक महत्त्व या मान देना, तरजीह। [प्रेफरेंस]

अधिमांसक—(पुं०) [अधिको मांसो यत्र ब० स०, कप्] मसूड़ों के पृष्ठ भाग में होने वाला एक प्रकार का रोग।

अधिमास—(पुं०) [प्रा० स०] हर तीसरे वर्ष बढ़ने वाला चांद्र मास, मलमास।

अधियज्ञ—(पुं०) [अधिकृतः स्वामितया यज्ञो यस्य ब० स०] प्रधान यज्ञ, परमेश्वर।—'अधियज्ञोऽहमेवात्र देहे देहभृतां वर।' गीता।

अधियाचन—(न०) [प्रा० स०] किसी विशेष कार्य के लिये किसी से कोई चीज अधिकार-पूर्वक माँगना या कोई काम करने की (लिखित) माँग करना। किसी सभा के सदस्यों द्वारा सभा का अधिवेशन करने की लिखित माँग किया जाना। [रिक्विजिशन]

अधियोग—(पुं०) [अधि√युज्+घञ्] ग्रहों का एक योग जो यात्रा के लिये शुभ माना जाता है।

अधिरथ—(वि०) [अध्यारूढः रथम् रथिनम् वा] रथ पर सवार। (पुं०) सारथी, रथ हाँकने वाला। कर्ण के पिता का नाम।

अधिराज्, अधिराज—(पुं०) [अधि√राज्+क्विप्, अधि—राजन्+टच्] चक्रवर्ती, बादशाह, सम्राट्।

अधिराज्य, अधिराष्ट्र—(न०) [अधिकृतम् राज्यम् राष्ट्रम् वा यत्र] साम्राज्य, चक्रवर्ती राज्य। राष्ट्र, सम्राट् का ऐश्वर्य। एक देश का नाम।

अधिरूढ़—(वि०) [अधि√रुह्+क्त] सवार, चढ़ा हुआ। बढ़ा हुआ, उन्नत।

अधिरोह—(पुं०) [अधि√रुह्+घञ्] चढ़ना, चढ़ाव।

अधिरोहण—(न०) [अधि√रुह्+ल्युट्] चढ़ना, सवार होना। ऊपर उठना।

अधिरोहणी—(स्त्री०) [अधिरुह्यते अनया इति अधि√रुह्+ल्युट् ङीप्] नसैनी, सीढ़ी, जीना।

अधिरोहिन्—(वि०) [अधि√रुह्+णिनि] चढ़ा हुआ। सवार। ऊपर उठा हुआ।

अधिलोक—(अव्य०) [अव्य० स०] संसार में या संसार के विषय में। [अत्या० स०] सांसारिक, दुनियावी।

अधिवक्तृ—(पुं०) [प्रा० स०] किसी पक्ष का समर्थन करने वाला, वकील।

अधिवचन—(न०) [प्रा० स०] किसी के पक्ष में बोलना, वकालत। नाम, उपाधि।

अधिवास—(पुं०) [अधि√वस्+घञ्, अधि√वस्+णिच्+घञ्] निवासस्थल, रहने की जगह। हठ-पूर्वक तकादा, धरना। किसी यज्ञानुष्ठान के प्रारम्भ में किसी प्रतिमा की प्रतिष्ठा। क्रिया। चोगा, अंगा। अतर फुलेल या उबटन लगाना महासुगन्ध, खुशबू। मनु के अनुसार स्त्रियों के ६ दोषों में से एक। दूसरे के घर जाकर रहना, परगृहवास। अधिक ठहरना, अधिक देर तक रहना। एक देश, प्रान्त या राज्य से हट कर किसी दूसरे देश, प्रान्तादि में स्थायी रूप से बस जाना। (डोमिसाइल]

अधिवासन—(न०) [अधि√वस्+णिच्+ल्युट्] सुगन्धित पदार्थ से सुवासित करना। मूर्ति की प्रारम्भिक प्रतिष्ठा, देवता की किसी मूर्ति में उसकी प्रतिष्ठा करना।

अधिविन्ना—(स्त्री०) [अधि=उपरि विन्नम्=विवाहः अस्याः] पति-परित्यक्ता स्त्री, वह स्त्री जिसके पतिने दूसरा विवाह कर लिया हो।

अधिवेत्तृ—(पुं०) [अधि√विद्+तृच्] जिसने अपनी पहली पत्नी छोड़ दी हो, एक स्त्री के रहते दूसरा विवाह करने वाला।

अधिवेद—(पुं०) [अधि√विद्+घञ्] एक अतिरिक्त पत्नी करना।

अधिवेदन—(न०) [अधि√विद्+ल्युट्]

एक विवाहित स्त्री के रहते दूसरी स्त्री के साथ विवाह करना।

अधिवेशन—(न०) [अधि√विश्+ल्युट्] बैठक। जलसा।

अधिशय—(पुं०) [अधि√शी+अच्] योग, मिलाना।

अधिशस्त—(वि०) [अधि√शंस्+क्त] ख्यात (बुरे अर्थ में)।

अधिश्रय—(पुं०) [अधि√श्रि+अच्] आधार, पात्र। उबालना, गर्माना (आग पर रख कर)।

अधिश्रयण—(न०) [अधि√श्रि+ल्युट्] उबालना, गर्माना।

अधिश्रयणी—[अधि√श्रि+ल्युट्, ङीप्] तंदूर, अग्निकुण्ड, चूल्हा, अंगीठी।

अधिश्री—(वि०) [अधिका श्रीः यस्य ब० स०] अत्यधिक धनवान्। सर्वोत्कृष्ट, सर्वोपरि प्रभु या स्वामी।

अधिषवण—(न०) [अधि√सु+ल्युट्] सोमरस निकालना या निचोड़ना। सोमरस निकालने का पात्र या साधन।

अधिष्ठातृ—(पुं०) [अधि√स्था+तृच्] देखभाल करने वाला। नियामक। अध्यक्ष। मुखिया। ईश्वर।

अधिष्ठान—(न०) [अधि√स्था+ ल्युट्] समीप में होना, सन्निधि। आधार। कसबा, बस्ती, आवासस्थान। अधिकार। राजसत्ता, राज्याधिकार। भोक्ता और भोग (आत्मा-देह, इंद्रिय-विषय) का संयोग (सांख्य०) पहिया, चक्र। पूर्वदृष्टान्त, नजीर। निर्दिष्ट नियम। आशीर्वाद, मंगल कामना। भ्रान्ति या अध्यास का आधार (वेदान्त में)।

अधिष्ठित—[अधि√स्था+क्त] ठहरा हुआ। स्थापित। बसा हुआ। नियुक्त। निर्वाचित। रक्षित। अधिकार में किया हुआ। प्रभावान्वित। आतङ्कित।

अधिसूचना—(स्त्री०) [प्रा० स०] सरकार द्वारा प्रकाशित या सरकारी गजट में छपी हुई सूचना, अधिकृत सूचना। (नोटिफिकेशन)

अधीकार—दे० "अधिकार"।

अधीक्षक—(पुं०) [अधि√ईक्ष+ण्वुल्] किसी कार्यालय या विभाग का वह प्रधान अधिकारी जो अपने अधीन काम करने वाले समस्त कर्मचारियों की निगरानी करे। (सुपरिंटेंडेंट)।

अधीक्षण—(न०) [अधि√ईक्ष+ल्युट्] मातहत कर्मचारियों के कामकाज की देख-रेख करना। (सुपरिंटेंडेंस)।

अधीत—(वि०) [अधि√इङ+क्त] पढ़ा हुआ। (न०)—अध्ययन।—**विद्**—(वि०) जिसने अध्ययन पूरा कर लिया हो।

अधीति—(स्त्री०) [अधि√इङ+क्तिन्] अध्ययन, पाठ। [अधि√इक+क्तिन्] स्मृति।

अधीतिन्—(वि०) [अधीत+इनि] भली भाँति पढ़ा हुआ।

अधीन—(वि०) [अधिगतम् इनम्=प्रभुम् अत्या० स०] आश्रित, मातहत, वशीभूत। —**अधिकारिन्** (**अधीनाधिकारिन्**)—(पुं०) किसी बड़े या मुख्य अधिकारी के नीचे काम करने वाला अफसर, मातहत अफसर। (सबॉरडिनेट आफिसर)।—**न्यायालय**-(पुं०) वह छोटी अदालत जो किसी बड़ी अदालत (उच्च न्यायालय आदि) के मातहत या अधीन हो। (सबॉरडिनेट कोर्ट)

अधीयान—(वि०) [अधि√इङ+शानच्] छात्र, विद्यार्थी।

अधीर—(वि०) [न० त०] भीरु, डरपोक, कायर। घबड़ाया हुआ। उत्तेजित। चंचल, अस्थिर। बेसब्र, उतावला।

अधीरा—(स्त्री०) [न० त०] बिजली। मध्या और प्रौढ़ा नायिकाओं का एक भेद।

अधीवास—(पु०) [अधि√वस+घञ्, उपसर्गस्य दीर्घः] चोगा, लबादा।

अधीश—(पु०) [अधिकः ईशः प्रा० स०] स्वामी, मालिक। सरदार। राजा।

अधीश्वर—(पु०) [अधिकः ईश्वरः प्रा० स०] मालिक, स्वामी। भूपति, राजा। सार्वभौम नरेश।

अधीष्ट—(वि०) [अधि√इष्+क्त] अवैतनिक, सत्कारपूर्वक किसी पद पर नियुक्त, सविनय प्रार्थित। (न०) अवैतनिक पद या कार्य।

अधुना—(अव्य०) [अस्मिन् काले इत्यर्थे 'इदम्' शब्दस्य नि०] सम्प्रति, इस समय, अब, आजकल।

अधुनातन—(वि०) [अधुना+ट्युल्] आजकल का। आधुनिक, अर्वाचीन।

अधूमक—(पु०) [नास्ति धूमो यस्मिन् न० ब० कप्] जलती हुई आग जिसमें धुआँ न हो।

अधृति—(स्त्री०) [न० त०] धृति का अभाव, अधीरता। असुख। चंचलता, दृढ़ता का अभाव। घबड़ाहट, आतुरता।

अधृष्य—(वि०) [√धृष्+यत् (अर्हार्थे) न० त०] दुर्जय। जिसके समीप कोई न पहुँच सके। शर्मीला ? अभिमानी, गर्वीला।

अध्यक्ष—(वि०) [अधिगतम् मूलतया अक्षम् =इन्द्रियम् अत्या० स०] प्रत्यक्ष ज्ञान। [अर्श आदित्वात् अच्] प्रत्यक्ष ज्ञान का विषय, दृश्य, इन्द्रियगोचर, [अध्यक्ष्णोति= व्याप्नोति इति अधि√अक्ष+अच्] व्यापक विस्तृत। (पु०) [अधिगतः अक्षम्=व्यवहारम् अत्या० स०] देखरेख करने वाला। किसी विषय का अधिकारी। व्यवस्थापक। किसी सभा, समिति या संस्था का प्रधान। लोकसभा (केंद्रीय) या राज्य की विधान-सभा का स्थायी सभापति (प्रेसीडेंट, स्पीकर)।—पीठ–(न०) अध्यक्ष या प्रमुख के बैठने की कुरसी या आसन। (चेयर)

अध्यक्षर—(न०) [प्रा० स०] ओङ्कार।

अध्यग्नि—(अव्य०) अग्नौ अग्नेः समीपे वा इतिविग्रह् अव्य० स०] विवाह के समय हवन करने के अग्नि के समीप या ऊपर। (न०) स्त्रीधन, वह धन जो वर को अग्नि की साक्षी में वधू के माता-पिता देते हैं।

अध्यधि—(अव्य०) [अव्यय० स०] ऊपर, ऊँचे पर।

अध्यधिक्षेप—(पु०) [प्रा० स०] बुरी-बुरी गालियाँ, अत्यन्त कुत्सित कुवाच्य, उग्र भर्त्सना।

अध्यधीन—(वि०) [अधिकोऽधीनः प्रा० स०] नितान्त अधीन, निपट वशवर्ती। (पु०) बिका हुआ दास, जन्म का दास।

अध्याय—(पु०) [अधि√इङ+अच्] विद्या, अध्ययन। [अधि√इक्+अच्] स्मरणशक्ति।

अध्ययन—(न०) [अधि√इङ+ल्युट्] पढ़ना (विशेष कर वेदों का)। अर्थ-सहित अक्षरों को ग्रहण करना। ब्राह्मणों के शास्त्रविहित षट् कर्मों में से एक।

अध्यर्ध—(वि०)[अधिकम् अर्धम् यस्य ब० स०] वह जिसके पास अतिरिक्त आधा हो। डेढ़।

अध्यवसान—(न०) [अधि+अव√सो+ल्युट्] उद्योग। निश्चय। (प्रकृत और अप्रकृत की) इस प्रकार की पहचान जिससे यह बोध हो जाय कि एक दूसरे में सम्पूर्णतः लीन हो गया।

अध्यवसाय—(पु०) [अधि+अव√सो+घञ्] उद्योग। दृढ़ विचार, सङ्कल्प। बुद्धिसम्बन्धी व्यापार। किसी पदार्थ का ज्ञान होने के समय रजोगुण और तमोगुण की न्यूनता होने पर जो सत्वगुण का प्रादुर्भाव होता है, उसे अध्यवसाय कहते हैं। लगातार उद्योग,

अविश्रान्त परिश्रम। उत्साह। निश्चय। प्रतीति।

अध्यवसायिन्—(न०) [अध्यवसाय+इनि] लगातार उद्योग करने वाला। परिश्रमी। उत्साही।

अध्यशन—(न०) [प्रा० न०] अधिक भोजन। एक बार भर पेट खा लेने पर, उसके न पचते पचते पुनः खा लेना, अजीर्ण, अनपच।

अध्यात्म—(वि०) [आत्मनि देहे मनसि वा इति विभक्त्यर्थे अव्य० स०] आत्मा। देह। मन। "स्वभावोऽध्यात्म उच्यते" गीता के इस वाक्यानुसार स्वभाव को अध्यात्म कहते हैं। श्रीधर के मतानुसार प्रत्येक शरीर में परब्रह्म का जो सत्ता या अंश वर्तमान रहता है, वही अध्यात्म कहलाता है। (वि०) आत्मा-सम्बन्धी। **—ज्ञान**-(न०) आत्मा-अनात्मा का विवेक। **—विद्या**-(स्त्री०) अध्यात्मतत्त्व, जीव और ब्रह्म का स्वरूप बतलाने वाली विद्या।

अध्यादेश—(पुं०) [अधि+आ√दिश+घञ्] राज्य के अधिपति द्वारा जारी किया गया वह आधिकारिक आदेश जो किसी आकस्मिक या विशेष स्थिति में थोड़े समय तक लागू हो और जो उक्त स्थिति के न रहने पर वापस ले लिया जाय या आवश्यकता बनी रहने पर संसद् या विधान-सभा द्वारा अधिनियम के रूप में स्वीकृत कर लिया जाय। (आर्डिनेंस)

अध्यापक—(पुं०) [अधि√इङ+णिच्+ण्वुल्] शिक्षक, गुरु, उपाध्याय, पढ़ाने वाला। (विष्णुस्मृति के अनुसार अध्यापक के दो भेद हैं। एक आचार्य जो द्विज-बालक का उपनयन संस्कार कर उसे वेद पढ़ने का अधिकारी बनाता है और दूसरा उपाध्याय जो अपने छात्र को वृत्त्यर्थ कोई विद्या पढ़ा देता है।)

अध्यापन—(न०) [अधि√इङ+णिच्+ल्युट्] पढ़ाना, शिक्षा देना। ब्राह्मणों के षट् कर्तव्यों में से एक। (स्मृतिकारों के मतानुसार अध्यापन तीन प्रकार का है, धर्मार्थ पढ़ाना, शुल्क लेकर पढ़ाना, सेवा के बदले पढ़ाना।)

अध्यापना—(स्त्री०) [अधि√इङ+णिच्+युच्, टाप्] दे० 'अध्यापन'।

अध्यापयितृ—(पुं०) [अधि√इङ+णिच्+तृच्] शिक्षक, पढ़ाने वाला।

अध्याय—(पुं०) [अधि√इङ+घञ्] पाठ, अध्ययन। अध्ययन का उपयुक्त काल। प्रकरण, किसी ग्रन्थ का एक भाग। संस्कृत-कोशकारों ने 'अध्याय' के पर्यायवाची ये शब्द बतलाये हैं:—सर्गो वर्गः परिच्छेदोद्घाताध्यायाङ्कसंग्रहाः। उच्छ्वासः परिवर्तश्च पटलः काण्डमाननम्॥ स्थानं प्रकरणं चैव पर्वोल्लासाह्निकानि च। स्कन्धांशौ तु पुराणादौ प्रायशः परिकीर्तितौ॥

अध्यायिन्—(वि०) [अधि√इङ+णिनि] पढ़ने वाला, अध्ययनशील।

अध्यारूढ—(वि०) [अधि—आ√रुह्+क्त] चढ़ा हुआ, सवार। ऊपर उठा हुआ, उन्नति पर पहुँचा हुआ। ऊँचा, श्रेष्ठ। नीचा, अनुत्तम।

अध्यारोप—(पुं०) [अधि—आ√रुह्+णिच्—पुक्+घञ्] उठाना, ऊँचा करना। (वेदान्त मतानुसार) भ्रमवश एक वस्तु को दूसरी वस्तु समझना, यथा रस्सी को साँप समझना, मिथ्याज्ञान।

अध्यारोपण—(न०) [अधि+आ√रुह्+णिच्—पुक्+ल्युट्] उठाना। बोना (बीजों का)।

अध्यावाप—(पुं०) [अधि—आ√वप+घञ्] (बीजों को) बोने या बोने के लिए छितराने की क्रिया।

अध्यावाहनिक—(न०) [अधि—आ√वह्+ल्युट्, ततः स्वार्थे ठञ्—इक] छः प्रकार के उन स्त्री-धनों में से एक जिसे स्त्री ससुराल जाते समय अपने माता-पिता से पाती है।

"यत् पुनर्लभते नारी नीयमाना तु पैतृकात्। (गृहात्) अध्यावाहनिकम् नाम स्त्रीधनं परिकीर्तितम्"।

अध्यास—(पु॰) [अधि√आस्+घञ्] किसी पर बैठना। (किसी स्थान को) रोकना या छेकना। अध्यक्ष का काम करना। बैठकी, स्थान। आसन। (पु॰) [अधि√अस्+घञ्] मिथ्या ज्ञान, भ्रांत ज्ञान या प्रतीति (रस्सी में साँप, सीप में चाँदी का भ्रम)।

अध्यासन—(न॰) [अधि√आस्+ल्युट्] बैठना। अध्यक्षता करना। आसन। स्थान।

अध्याहरण—(न॰) [अधि—आ√हृ+ल्युट्] दे॰ 'अध्याहार'।

अध्याहार—(पु॰) [अधि—आ√हृ+घञ्] किसी वाक्य को पूरा करने के लिए उसमें छूटी हुई बात को मिला कर उस वाक्य को पूरा करना, वाक्य को पूरा करने के लिए उसमें ऊपर से कोई शब्द मिलाना या जोड़ना। तर्क-वितर्क, ऊहापोह, विचार, बहस।

अध्युषित—(वि॰) [अधि√वस्+क्त] निवसित, बसा हुआ।

अध्युष्ट—(वि॰) (अधि√उष+क्त) साढ़े तीन।

अध्युष्ट्र—(पु॰) [अधियुक्तः उष्ट्रः यस्मिन् ब॰ स॰] गाड़ी जिसमें ऊँट जुते हों, चौपहिया।

अध्यूढ—(वि॰) [अधि√वह्+क्त] ऊपर को उठा हुआ, उभरा हुआ। (पु॰) शिव।

अध्यूढा—(स्त्री॰) [अधि√वह्+क्त, टाप्] दे॰ 'अधिविन्ना'।

अध्यूहन—(न॰) [अधि√ऊह्+ल्युट्] (राख आदि की) परत डालना।

अध्येषण—(न॰) [अधि√इष्+ल्युट्] प्रार्थना, कोई कार्य कराने की प्रार्थना।

अध्येषणा—(स्त्री॰) [अधि√इष+युच्, टाप्] प्रार्थना, याचना।

अध्रुव—(वि॰) [न॰ त॰] सन्दिग्ध, संशयपूर्ण। अस्थायी, विनश्वर। पृथक्। अलग किये जाने वाला।

अध्वन्—(पु॰) [√अद्+क्वनिप् दकारस्य धकारः] मार्ग, रास्ता, सड़क। नक्षत्रों के घूमने का मार्ग। अन्तर, बीच, फासला। समय, काल, मूर्तिमान् काल। आकाश। वातावरण। विधि, उपाय, प्रक्रिया। आक्रमण। वायु। —ग–(पु॰) पथिक, राहगीर, मुसाफिर। ऊँट। खच्चर। सूर्य। —भोग्य–(पु॰) आम्रातक वृक्ष आमड़ा। —शल्यन्त–(पु॰) लम्बाई का एक मान। —गा–(स्त्री॰) गङ्गा। —जा-(स्त्री॰) स्वर्णपुष्पी वृक्ष, पीली चमेली। —निवेश–(पु॰) पड़ाव। —पति-(पु॰) सूर्य। —रथ-(पु॰) पालकी। गाड़ी। हलकारा। दूत।

अध्वनीन,—**अध्वन्य**–(वि॰) [अध्वानम् अलं गच्छति इति अध्वन्+खईन, अध्वन्+यत्] तेज चलने वाला। यात्रा करने योग्य। (पु॰) यात्री, पथिक।

अध्वर—(पु॰) [अध्वानं सत्पथं राति इति अध्वन्√रा+क] यज्ञ। सोमयाग। एक वसु। (न॰) आकाश या अन्तरिक्ष। (वि॰) [न ध्वरति कुटिलो न भवति इत्यर्थे√ध्वर+अच् न॰ त॰] अकुटिल। सावधान। व्यतिक्रम-रहित। टिकाऊ। —कल्पा–(स्त्री॰) काम्येष्टि यज्ञ। —काण्ड-(पु॰) शतपथ ब्राह्मण का एक खण्ड। —ग–(वि॰) अध्वर के काम में आने वाला। —मीमांसा–(स्त्री॰) जैमिनि-प्रणीत पूर्वमीमांसा का नाम।

अध्वर्यु—(पु॰) [अध्वर+क्यच्+यु] यज्ञ कराने वाला, ऋत्विक्। यजुर्वेद का जानने वाला, पुरोहित। यजुर्वेद। —वेद–(पु॰) यजुर्वेद।

अध्वान्त—(न॰) [न॰ त॰] ईषद् अंधकार। प्रदोषकाल, गोधूलिवेला। उषा काल।

अन्—अदा॰ पर॰ अक॰ अनिति। दिवा॰ आत्म॰ अक॰ श्वास लेना, प्राण धारण करना, जीना, अन्यते।

अन—(पुं०) [√अन्+अच्] श्वास ।

अनंश—(वि०) [नास्ति अंशो यस्य न० ब०] जिसका कोई भाग न हो । पैतृक सम्पत्ति में भाग न पाने वाला ।

अनंशुमत्फला—(स्त्री०) [न अंशुमत्फलं यस्याः न० ब०] कदलीवृक्ष, केले का पेड़ ।

अनकदुन्दुभ—(पुं०) श्रीकृष्ण के पितामह का नाम ।

अनकदुन्दुभि—(दे०) 'आनकदुन्दुभि ।'

अनक्ष—(वि०) [नास्ति अक्षम्=चक्रम् नेत्रादिकम् वा यस्य न० ब०] नेत्रहीन, दृष्टिरहित, अंधा । बिना चक्र आदि का ।

अनक्षर—(वि०) [न सन्ति अक्षराणि यस्य न० ब०] गूंगा, अनपढ़, उच्चारण करने के अयोग्य । (न०) गाली, कुवाच्य, भर्त्सना, डाट-डपट ।

अनक्षि—(न०) [अप्रशस्तम् मन्दम् अक्षि न० त०] मन्द नेत्र, खराब आँख ।

अनगार—(वि०) [न० ब०] गृह-रहित, बे-घर । (पुं०) भ्रमणकारी संन्यासी ।

अनग्नि—(वि०) [नास्ति अग्निः श्रौतः स्मार्तो वा अन्यो वा अस्य न० ब०] श्रौतस्मार्त-कर्महीन । अग्निहोत्ररहित । अधार्मिक । अपवित्र । वह जो अनग्नि रोग से पीड़ित हो, कब्जियत रोग वाला । अविवाहित, जिसका ब्याह न हुआ हो ।

अनग्निदग्ध—(वि०) [न अग्निना दग्धः न० त०] जो आग से जलाया गया न हो ।

अनघ—(वि०) [नास्ति अघम् यस्य न० ब०] पापरहित । निर्दोष । त्रुटि-रहित । सुन्दर, खूबसूरत । सुरक्षित । अनचोटिल, जिसके चोट न लगी हो, विशुद्ध, कलङ्क-रहित । (पुं०) सफेद सरसों या राई । विष्णु का नाम । शिव का नाम ।

अनङ्कुश—(वि०) [न० ब०] जो दबाव में न रहे, उद्दण्ड । कविस्वातंत्र्य का उपभोग करने वाला ।

अनङ्ग—(वि०) [नास्ति अङ्गम् यस्य न० ब०] शरीररहित, अशरीरी । (न०) आकाश । मन । एक प्रकार का अति सूक्ष्म वायवीय पदार्थ (ईथर) । (पुं०) कामदेव ।**—क्रीड़ा**-(स्त्री०) प्रेमालापमयी क्रीड़ा, विहार, प्रेमी और प्रेयसी का पारस्परिक प्रेमालापपूर्वक क्रीडन । मुक्तक वृत्त के दो भेदों में से एक । **—रंग**-(पुं०) कामशास्त्र का एक प्रसिद्ध ग्रंथ ।**—लेख**-(पुं०) प्रेमपत्र ।**—वती**-(वि० स्त्री०) कामिनी ।**—शत्रु,—असुहृत्**-(पुं०) शिवजी का नाम ।**—शेखर**-(पुं०) दंडक छंद का एक भेद ।

अनञ्जन—(वि०) [न० ब०] बिना सुर्मा का । बेदाग । निर्दोष । निर्विकार । निःसंबंध । (न०) आकाश, परब्रह्म । (पुं०) नारायण या विष्णु ।

अनडुह्—(पुं०) (अनड्वान्) [अनः शकटम् वहति, नि०] बैल, साँड़, वृषराशि, सूर्य (उपनि०) ।

अनडुही—अनड्वाही-(स्त्री०) [स्त्रियाम् ङीप्] गौ, गाय ।

अनणु—(वि०) [न० त०] जो सूक्ष्म न हो । (न०) मोटा अन्न ।

अनति—(अव्य०) [न अति न० त०] बहुत अधिक नहीं ।

अनतिरेक—(पुं०) [न० त०] अभेद ।

अनतिविलम्बिता—(स्त्री०) [न० त०] बहुत विलम्ब का अभाव, वक्ता का एक गुण, ३५ वाग्गुण हैं, उनमें से एक ।

अनद्धा—(अव्य०) [न० त०] सत्य नहीं । स्वच्छ नहीं । निश्चित नहीं ।**—पुरुष**-(पुं०) जो सच्चा आदमी न हो । जो देव, पितर, मनुष्यों का कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं करता ।

अनद्य—(पुं०) [न० त०] सफेद सरसों । (वि०) न खाने योग्य ।

अनद्यतन—(वि०) [न० त०] आज के दिन

से संबंध न रखने वाला। आज से पहले या पीछे का। (पुं०) अचलन से भिन्न काल।

अनधिक—(वि०) [न० त०] अधिक या अत्यधिक नहीं, असीम, पूर्ण।

अनधिकार—(पुं०) [न० त०] अधिकार, शक्ति, योग्यता, पात्रता आदि का अभाव। (वि०) [न० ब०] अधिकार-रहित।—**चर्चा**-(स्त्री०) बिना जाने-समझे या योग्यता के बाहर किसी विषय में बोलना, दखल देना।—**चेष्टा**-(स्त्री०) जिस बात या कार्य का अधिकार न हो वह करना।

अनधीन—(पुं०) [न० त०] बढ़ई जो रोजनदारी पर काम न कर स्वतंत्र अपने लिये ही काम करे। (वि०) स्वाधीन, स्वतंत्र कार्य करने वाला।

अनध्यक्ष—(वि०) [न० त०] जो देख न पड़े, अगोचर, अदृश्य। [न० ब०] अध्यक्ष या नियन्ता वर्जित।

अनध्याय—(पुं०) [न० त०] अध्ययन के लिये अनुपयुक्त समय या दिन, पढ़ने के लिये निषिद्ध काल या दिन, छुट्टी का दिन।

अनन—(न०) [√अन्+ल्युट्] श्वास लेना, प्राण धारण करना।

अननुभावुक—(वि०) [न० त०] धारण करने के अयोग्य, न समझने लायक।

अनन्त—(वि०) [नास्ति अन्तो यस्य न० ब०] अन्तरहित। निस्सीम। कभी समाप्त न होने वाला। (पुं०) विष्णु। विष्णु का शंख। कृष्ण। शिव। शेषनाग। लक्ष्मण। बलराम। वासुकि। बादल। अबरक। सिंदुवार नामक वृक्ष। श्रवण नक्षत्र। जैनों के एक तीर्थंकर। बाँह पर पहनने का एक गहना। अनंता—जो एक रेशम का डोरा होता है और जिसमें १४ गाँठें लगाकर अनंतचतुर्दशी के दिन दाहिनी बाँह पर बाँधा जाता है। (न०) आकाश। परब्रह्म।—**कर**-(वि०) बढ़ाकर असीम करने वाला, बहुत अधिक कर देने वाला।—**कायं**-(पुं०) वे वनस्पतियाँ जिनके खाने का जैन धर्म में निषेध है।—**चतुर्दशी**-(स्त्री०) भाद्र-शुक्ला चतुर्दशी।—**जित्**-(पुं०) वासुदेव। चौदहवें जैन अर्हत्।—**टङ्क**-(पुं०) एक राग जो मेघराग का पुत्र माना जाता है।—**तृतीया**-(स्त्री०) भाद्रपद शुक्ला तृतीया, मार्गशीर्ष शुक्ला तृतीया और वैशाख शुक्ला तृतीया।—**दृष्टि**-(पुं०) इन्द्र या शिव का नाम।—**देव**-(पुं०) शेषनाग, शेषशायी नारायण का नाम।—**पार**-(वि०) निस्सीम।—**मूल**-(पुं०) एक रक्तशोधक औषधि, सारिवा।—**रूप**-(वि०) संख्यातीत आकार प्रकार का, विष्णु भगवान् की उपाधि।—**विजय**-(पुं०) युधिष्ठिर के शङ्ख का नाम।—**व्रत**-(न०) अनंत चतुर्दशी व्रत।—**शीर्षा**-(स्त्री०) वासुकि नाग की पत्नी।

अनन्तर—(वि०) [नास्ति अन्तरम् व्यवधानम् यस्य न० ब०] अंतर-रहित। सटा या लगा हुआ। पास या पड़ोस का। अपने वर्ण से ठीक नीचे के वर्ण का। (न०) सामीप्य, लगा हुआ होना। ब्रह्म। (अव्य०) तुरंत बाद। पीछे, पश्चात्।—**ज**—(पुं०)—**जा**—(स्त्री०) क्षत्रिय या वैश्य माता के गर्भ तथा ब्राह्मण या क्षत्रिय पिता के वीर्य से उत्पन्न, छोटा या बड़ा भाई या बहिन, 'तरपरिया' भाई-बहिन।

अनन्तरीय—(वि०) [अनन्तर+छ—ईय] क्रम से एक के बाद दूसरा।

अनन्ता—(स्त्री०) [नास्ति अन्तोऽस्याः न० ब०] पृथिवी, एक की संख्या, पार्वती का नाम, कई पौधों के नाम जैसे दूर्वा, अनन्तमूल आदि।

अनन्य—(वि०) [न० ब०, न० त०] अन्य से सम्बन्ध न रखने वाला, एकनिष्ठ, एक ही में लीन, एकरूप, अमिल, एकमात्र, अद्वितीय, अविभक्त।—**गति**-(स्त्री०) एकमात्र सहारा। (वि०) दे० 'अनन्यगतिक'।—**गतिक**-(वि०) जिसको दूसरा उपाय या सहारा न हो।—

गुरु-(वि०) जिससे कोई बड़ा न हो।—चित्त, —चिन्त, —चेतस्, —मनस्, —मनस्क,—मानस,—हृदय-(वि०) एक ही ओर मन या ध्यान लगाने वाला।—ज, —जन्मन्-(पु०) कामदेव।—दृष्टि-(स्त्री०) एकटक देखते रहना।—देव-(वि०) जिसके ओर कोई देवता न हो। परमेश्वर का एक विशेषण।—परता-(स्त्री०) एकनिष्ठता, एक की भक्ति।—परायण-(वि०) जिसका और किसी के प्रति प्रेम न हो।—पूर्व-(पु०) जिसकी दूसरी स्त्री न हो।—पूर्वा-(स्त्री०) क्वारी, अविवाहिता।—भाज्-(वि०) जो अन्य किसी में अनुराग न रखती हो।—भाव-(पु०) एकनिष्ठ भक्ति या साधना।—विषय-(पु०) वह विषय जिसका किसी से सम्बन्ध न हो या जिस पर किसी अन्य की सत्ता न हो।—वृत्ति-(वि०) एक ही स्वभाव का, जिसकी आजीविका का अन्य कोई द्वार न हो, एकाग्रचित्त।—शासन-(वि०) जिस पर दूसरे की आज्ञा नहीं चलती, स्वतन्त्र।—सदृश-(वि०) जिसके समान दूसरा न हो, निरुपम।—साधारण,—सामान्य-(वि०) असाधारण, दूसरे में न मिलने वाला, जो एक ही में अनुरागवान् हो, एक ही से सम्बन्ध रखने वाला।

अनन्वय—(पु०) [नास्ति अन्वयो यत्र न० ब०] अन्वयशून्य। सम्बन्धरहित। अर्थालङ्कार विशेष जिसमें एक ही उपमान और एक ही उपमेय हो।

अनप—(वि०) [न सन्ति आधिक्येन आपः यत्र न० ब०] जिसमें अधिक जल न हो।

अनपकरण (न०), **अनपकर्मन्** (न०), **अनपक्रिया** (स्त्री०), [न० त०] नुकसान न पहुँचाना। रुपये न अदा करना (कानून)

अनपकार—(पु०) [न० त०] बुराई नहीं, भलाई। हित।

अनपकारिन्—(वि०) [न० त०] निर्दोष। अहित-शून्य।

अनपत्य—(वि०) [नास्ति अपत्यम् यस्य न० ब०] सन्तानहीन। जिसका कोई उत्तराधिकारी न हो।—दोष-(पु०) बाँझपन।

अनपत्रप—(वि०) [नास्ति अपत्रपा=लज्जा यस्य न० ब०] निर्लज्ज। बेहया। बेशर्म।

अनपभ्रंश—(पु०) [न० त०] ठीक-ठीक बना हुआ शब्द। शब्द जो विकृत रूप में न हो, अपने शुद्ध रूप में हो।

अनपर—(वि०) [नास्ति अपरः यस्य न० ब०] दूसरे से रहित। जिसका कोई अनुयायी न हो। अकेला। एकमात्र (ब्रह्म)।

अनपसर—(वि०) [नास्ति अपसरो यस्मिन् न० ब०] जिसमें से निकलने का कोई मार्ग न हो। अक्षम्य। अन्याय। (पु०) (न० त०] बलपूर्वक अधिकार करने वाला। जबरदस्ती कब्जा करने वाला। बरजोरी दखल करने वाला।

अनपाय—(वि०) [नास्ति अपायः नाशः यस्य न० ब०] अनश्वर। अविनाशी। (पु०) [न० त०] अनश्वरता। नित्यता। [न० ब०] शिव।

अनपायिन्—(वि०) [अनपाय+इनि] अविनाशी। दृढ़। मजबूत। स्थायी। क्षणभङ्गुर नहीं। अविकारी।—पद-(न०) स्थिर पद। मोक्ष।

अनपेक्ष—(वि०) [नास्ति अपेक्षा यस्य न० ब०] चाह या परवाह न रखने वाला। उदासीन। स्वतंत्र। पक्षपात-रहित। असङ्गत। (क्रि० वि०) स्वतन्त्रता से। मनमुखतारी। यथेच्छ। अनवधानता से।

अनपेक्षा—(स्त्री०) [न० त०] अपेक्षा का अभाव। निःस्पृहता। उपेक्षा।

अनपेक्षिन्—(वि०) [न० त०] दे० 'अनपेक्ष'।

48203

अनपेत—(वि०) [न अपेतः न० त०] दूर न निकला हुआ। जो व्यतीत न हुआ हो। जो विपथगामी न हो। जो पृथक् न हो। जो विहीन न हो। जो वर्जित न हो।

अनप्नस्—(वि०) [नास्ति अप्नः यस्य न० ब०] (वैदिक) रूपरहित। कर्महीन।

अनभिज्ञ—(वि०) [न अभिज्ञः न० त०] अज्ञ। अनजान। अपरिचित। अनभ्यस्त।

अनभिम्लान—(वि०) [न० त०] न कुम्हलाया हुआ।

अनभिशस्त—(वि०) [न० त०] (वैदिक) निरपराध।

अनभिसन्धान—(न०) [न० त०] संकल्प या इच्छा का अभाव।

अनभ्यावृत्ति—(स्त्री०) [न० त०] न दुहराना। बारबार आवृत्ति न करना।

अनभ्याश,—अनभ्यास—(वि०) [नास्ति अभ्यासः=नैकट्यम् यस्य न० ब०] समीप नहीं। दूर।

अनभ्र—(वि०) [न अभ्रो यत्र न० ब०] मेघविवर्जित।—**वृष्टि**-(स्त्री०) ऐसा लाभ या प्राप्ति जिसकी आशा या अनुमान पहले से न किया गया हो।

अनम—(पुं०) [न नमति अन्यान् न√नम् +अच्] ब्राह्मण (जो दूसरों को नमस्कार न करे)।

अनमितंपच—(वि०) [न० त०] बिना तौले न पकाने वाला। कृपण।

अनमित्र—(वि०) [नास्ति अमित्रम् यस्य न० ब०] जिसका कोई शत्रु न हो। (पुं०) एक अवध-नरेश।

अनमीव—(वि०) [नास्ति अमीवः =रोगः यस्य न० ब०] रोग-रहित। स्वस्थ।

अनम्बर—(वि०) [नास्ति अम्बरम् यस्य न० ब०] नंगा। जो कपड़े पहिने न हो। (पुं०) बौद्ध भिक्षुक।

अनम्र—(वि०) [न० त०] जो नम्र न हो। अविनीत। उजड्ड।

अनय—(पुं०) [नयो=नीतिः√नी +अच् न० त०] दुर्व्यवस्था। असदाचरण। अन्याय। दुर्नीति। [अयः =शुभावहो विधिः तदन्यः न० त०] विपत्ति। दुःख। दुर्भाग्य। जुआ खेलने वालों के दाहिनी ओर जाना।

अनरण्य—(पुं०) [अनम् जीवनपर्यन्तम् रणे साधुः इत्यर्थे यत्] एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा।

अनर्गल—(वि०) [नास्ति अर्गलम् यत्र न० ब०] अनियंत्रित। यथेच्छाचारी। बिना तालेकुंजी का। खुला हुआ।

अनर्घ—(वि०) [नास्ति अर्घो=मूल्यम् यस्य न० ब०] अमूल्य। बेशकीमती। (पुं०) [न० त०] अनुचित मूल्य। अयथार्थ मूल्य।

अनर्घ्य—(वि०) [न० त०)] अमूल्य। बड़ा प्रतिष्ठित।

अनर्थ—(वि०) [न० ब०] निकम्मा। किसी काम का नहीं। अभागा। दुःखी। हानिकारक। वाहियात। बेमतलब का। (पुं०) [न० त०] उलटा अर्थ। अर्थ का अभाव। अर्थ की हानि। मूल्य का न होना। नैराश्य-जनक घटना। विघ्न। अनिष्ट। खराबी। निकम्मी चीज। भय की प्राप्ति।—**कर**-(वि०)—**करी**-(स्त्री०) उपद्रवी। हानिकारी।—**दर्शिन्**-(वि०) अहित सोचने या चाहने वाला। अनुपयोगी या निकम्मी चीजों पर ध्यान देने वाला।—**नाशिन्**-(पुं०) शिव।—**निरनुबन्ध**-(पुं०) किसी कमजोर राजा को लड़ने के लिये उभाड़कर स्वयं अलग हो जाना।—**बुद्धि**-(वि०) जिसकी समझ बिलकुल गई-बीती हो।—**संशय**-(पुं०) वह कार्य जिसमें बहुत बड़े अनिष्ट की आशंका हो। वह संपत्ति जिसके लिये कोई खतरा न हो।

अनर्थक—(वि०) [न० ब० कप् समासान्तः] अनुपयोगी। अर्थ-रहित। तुच्छ। वाहियात।

जो लाभदायक नहीं है। अभागा। (न०) अर्थ-हीन या असंबद्ध वचन।

अनर्घ्य—(वि०) [अर्घ+यत् न० त०] दे० 'अनर्घक'।

अनर्ह—(वि०) [न० त०] अयोग्य। अनुपयुक्त। अनधिकारी। दंड या पुरस्कार के अयोग्य।

अनर्हता—(स्त्री०) [अर्ह+तल् न० त०] किसी कार्य, पद आदि के योग्य न होने का भाव। अयोग्यता। [(डिसक्वालिफिकेशन)।

अनर्हीकरण—(न०) [अर्ह√कृ+च्वि+ल्युट् न० त०] किसी को किसी कार्य, पद आदि के अयोग्य ठहराना।(डिसक्वालिफाई)।

अनल—(पुं०) [नास्ति अलम्=पर्याप्तिः यस्य बहुदाह्यदहनेऽपि तृप्तेरभावात् न० ब०] अग्नि। अग्निदेव। भोजन पचाने की शक्ति। पित्त। आठ वसुओं में से पञ्चम वसु। जीव। विष्णु। कृत्तिका नक्षत्र। पचासवाँ संवत्सर। चित्रक वृक्ष। भिलावाँ।—**घ्न**-(वि०) गर्मी या अग्नि-नाशक या दूर करने वाला।दीपन।पाचन शक्ति बढ़ाने वाला। —**प्रभा**-(स्त्री०) ज्योतिष्मती लता।—**प्रिया**-(स्त्री०) अग्नि की पत्नी स्वाहा।—**साद**-(पुं०) भूख का न लगना। कुपच रोग।

अनलस—(वि०) [न० त०] आलस्य-विवर्जित। फुर्तीला। अयोग्य। अनुपयुक्त।

अनलि—(पुं०) [अनति इति√अन्+क्विप् अन् अलिर्यत्र ब० स०] बक नामक वृक्ष (इसके पुष्पदलों से भौंरे जीवन धारण करते हैं)।

अनल्प—(वि०) [न० त०] थोड़ा नहीं। बहुत। उदार।

अनवकाश—(पुं०) [न० त०] अवकाश का अभाव। फुरसत का न होना। [न० ब०] जिसके लिये कोई गुंजाइश या मौका न हो। अप्रयोज्य।

अनवग्रह—(वि०)[न० ब०]अप्रतिरोधनीय। अनिवार्य। अति प्रबल। स्वच्छन्द।

अनवच्छिन्न—(वि०) [न० त०] निस्सीम। अमर्यादित। अविच्छिन्न। जो काटा गया न हो। जो अलहदा न किया गया हो। अत्यधिक। असंशोधित। जिसकी परिभाषा न दी हो। अलक्षित। लगातार।

अनवद्य—(वि०) [न० त०] निर्दोष। निष्कलङ्क। अभर्त्सनीय।—**अङ्ग**-**रूप**-(वि०) सुन्दर।—**अङ्गी**-(स्त्री०) वह स्त्री, जिसके शरीर की सुन्दरता में कोई त्रुटि या दोष न हो।

अनवधान—(वि०) [नास्ति अवधानम् यस्य न० ब०] असावधान। अमनस्क।

अनवधानता—(स्त्री०) [अनवधान+तल्] असावधानी। अमनस्कता।

अनवधि—(वि०) [न० ब०] निस्सीम। अवधि-रहित। अनन्त।

अनवनामित—(वि०) [अव√नम्+णिच् +क्त न० त०] जो झुकाया न गया हो।

अनवद्य—(वि०) [अवद्√+अच् न० त०] अपवाद या कलंक से रहित।

अनवम्—(वि०) [न अवमः न० त०] जो नीच या अश्रेष्ठ न हो। श्रेष्ठ। उन्नत।

अनवरत—(वि०)[अव√रम्+क्त न० ब०] निरन्तर। लगातार।

अनवरार्ध्य—(वि०) [अवरस्मिन् अर्धे भवः इत्यर्थे अवरार्ध+यत् न० ब०] मुख्य। श्रेष्ठ। सर्वोत्तम। समीचीन।

अनवलम्ब—(वि०) [न० ब०] निराश्रित। जिसका सहारा न हो। (पुं०) [न० त०] स्वतन्त्रता।

अनवलम्बन—(वि०) [न० ब०] अवलंबहीन। बे-सहारा। (न०)[न० त०]स्वतंत्रता।

अनवलोभन—(न०)सीमन्तोन्नयन के पीछे तीसरे मास में गर्भ का किया जाने वाला एक संस्कार।

अनवसर—(वि०) [न० ब०] बेमौका। असामयिक। जिसको काम काज से फुरसत न मिले। (पुं०) [न० त०] फुरसत का अभाव। कुसमय।

अनवसान—(वि०) [न० ब०] अंत-रहित। मृत्यु-रहित। जिसकी समाप्ति न हो।

अनवसित—(वि०) [न० त०] जो समाप्त न हुआ हो। अनिश्चित। जो अस्त न हुआ हो।

अनवस्कर—(वि०) [न० ब०] मैल से रहित। साफसुथरा।

अनवस्थ—(वि०) [न० त०] अदृढ़। अस्थिर।

अनवस्था—(स्त्री०) [न० त०] अस्थिरता। अस्थिर दशा। बुरा चाल-चलन। तर्कशैली का एक दोष। तर्क या कार्य-कारण की ऐसी परम्परा जिसका अंत न हो, न किसी निर्णय पर पहुँचे।

अनवस्थान—(वि०) [न० ब०] चंचल। अस्थायी। (पुं०) पवन। (न०) [न० त०] नश्वरता। चरित्र सम्बन्धी निर्बलता।

अनवस्थित—(वि०) [न० त०] अस्थिर। परिवर्तित। असंयत। अनियंत्रित।

अनवान—(अव्य०) [अवान=श्वासोच्छ्वास स यथा न स्यात् तथा न० त०] एक ही साँस में।

अनवाय—(वि०) [नास्ति अवायः=अवयवः यस्य न० ब०] बिना अवयव या भाग का।

अनवेक्षक—(वि०) [न० त०] असावधान। लापरवाह। निरपेक्ष।

अनवेक्षण—(न०) [न० त०] असावधानी। लापरवाही। [निरपेक्षता।]

अनशन—(न०) [न० त०] उपवास। न खाना। किसी विशेष संकल्प के साथ भोजन त्याग। उपवास।

अनश्वर—(वि०) [न० त०]—**अनश्वरी**—(स्त्री०)—अविनाशी। जो नष्ट न हो। जो नाश को प्राप्त न हो।

अनस्—(न०) [अनिति=शब्दायते इत्यर्थे √अन्+असुन्] गाड़ी। भोजन। भात। जन्म। उत्पत्ति। प्राणधारी। रसोईघर। जल। शोक।

अनसूय, अनसूयक—(वि०) [नास्ति असूया यस्य न० ब०] डाह या ईर्ष्या से रहित। (वि०) [न असूयकः न० त०] ईर्ष्या या द्वेष से रहित।

अनसूया—(स्त्री०) [न० त०] ईर्ष्या का अभाव। अत्रिमुनि की पत्नी का नाम। शकुंतला की एक सखी।

अनहन्—(न०) [अप्रशस्तम् अहः न० त०] बुरा दिन। अभागा दिन।

अनाकाल—(पुं०) [न० त०] कुसमय। बेवक्त। अकाल। कहत।—**भृत**–(पुं०) अन्न बिना प्राण जाने पर, अन्न के लिये अपने को दूसरे का दास बनाने वाला।

अनाकुल–(वि०) [न० त०] न घबड़ाया हुआ। शान्त। आत्मसंयत। स्थिर।

अनागत—(वि०) [न० त०] नहीं आया हुआ। अप्राप्त, भविष्यत्। अनजान। अज्ञान।—**अवेक्षण**–(न०) आगम देखना। आगे का ज्ञान।—**आबाध**–(पुं०) आने वाली विपत्ति।—**आर्तवा**–(स्त्री०) वह कन्या जिसका मासिक स्राव आरंभ न हुआ हो। अरजस्का।—**विधातृ**–(पुं०) वह जो भविष्य के लिये तैयारी करे। परिणामदर्शी, पंचतंत्र की कहानी के एक मत्स्य का नाम।

अनागन्धित—(वि०) [आगन्ध+इतच्, न० त०] न सूँघा हुआ, अस्पृष्ट।

अनागम—(पुं०) [आगमः न० त०] न पहुँचना। न आना, अप्राप्ति।

अनागस—(वि०) [नास्ति आगः यस्य न० ब०] निर्दोष। निरपराध, निष्कलङ्क।

अनाचार—(पुं०) [अप्रशस्तः आचारः न० त०] निन्दित आचार, शास्त्र-विहित आचारों के विरुद्ध आचरण, दुराचरण । बुराई ।

अनातप—(वि०) [नास्ति आतपो यत्र न० ब०] धूप-रहित । छायादार, जो उष्ण न हो । ठंडा । (पुं०) [न० त०] ।

अनातुर—(वि०) [न आतुरः न० त०] जो आतुर न हो । जो उद्विग्न न हो । अपरिश्रान्त । जो थका न हो ।

अनात्मक—(वि०)[नास्ति आत्मा स्थिरो यत्र न० ब०] अयथार्थ, क्षणिक, संसार का विशेषण (बौद्ध) ।

अनात्मन्—(वि०) [न० ब०] आत्मा-रहित, जो आत्मा से सम्बन्ध न रखे, वह जो संयमी न हो । जिसने अपने को वश में न किया हो । (पुं०) [अप्राशस्त्ये भेदार्थे च न० त०] आत्मा से भिन्न । जड़ पदार्थ । देहादि । **—ज्ञ,—वेदिन्**-(पुं०) अपने आपको न पहचानने वाला । मूर्ख ।**—सम्पन्न**-(वि०) मूर्ख ।

अनात्मनीन—(वि०) [आत्मन्+ख न० त०] जो अपने लिये हितकर न हो । निःस्वार्थ । स्वार्थ-रहित ।

अनात्मवत्—(वि०) [आत्मा वश्यत्वेन अस्ति यस्य इत्यर्थे आत्मन्+वतुप् न० त०] असंयत । अजितेन्द्रिय ।

अनात्म्य—(वि०) [आत्मनः इदम् आत्म्यम् =शरीरम् न० ब०] शरीर-रहित । (न०) (न० त०] अपने परिवार के प्रति स्नेह का अभाव ।

अनात्यन्तिक—(वि०) [न आत्यन्तिकः= नित्यः न० त०] अनित्य, अंतिम नहीं, सविराम ।

अनाथ—(वि०) [नास्ति नाथः यस्य न० ब०] नाथरहित । रक्षकवर्जित, गरीब, मातृपितृरहित । यतीम ।**—सभा**-(स्त्री०) मोहताजखाना । अनाथालय ।

अनादर—वि०)[न० ब०] निरपेक्ष, विचारशून्य । (पुं०)[विरोधार्थे न० त०]अप्रतिष्ठा । घृणा । असम्मान ।

अनादि—(वि०) [न० ब०] जिसका शुरू न हो, जिसका आरम्भ-काल अज्ञात हो, आदिरहित, सनातन ।**—अनन्त,—अन्त**-(वि०) अथ और इति रहित । आरम्भ और समाप्तिविवर्जित । सनातन । (पुं०) भगवान् विष्णु का नाम ।**—निधन**-(वि०) जिसका न आदि (आरम्भ) हो और न अन्त (समाप्ति)। सतत । सनातन ।**—मध्यान्त**-(वि०)जिसका न तो आरम्भ हो, न मध्य हो और न अन्त हो । सनातन ।**—सिद्ध**-(वि०) अनादिकाल से चला आने वाला ।

अनादीनव—(वि०) निर्दोष । निरपराध ।

अनाद्य—(वि०) [आदौ भवः इत्यर्थे आदि +यत् न० त०] अनादि । [√अद् (भक्षणे)+ण्यत् न० त०] अभक्ष्य । वह वस्तु जो खाने योग्य न हो ।

अनानुपूर्व्य—(न०) [न आनुपूर्व्यम् न० त०] नियत क्रम में न आना ।

अनापि—(वि०) [आप्यते इत्यर्थे√आप्+इन् आपि=आप्तः बन्धुश्च न० ब०] मित्र या बंधु से रहित ।

अनाप्त—(वि०) [न आप्तः न० त०]अप्राप्त, अयोग्य । अनिपुण । (पुं०) अनजान । अजनबी ।

अनाभयिन्—(वि०) [आबिभेति इत्यर्थे आ √भी+इनि आभयिन् न० त०] निर्भय । जिसे बिलकुल डर न हो । (वैदिक)

अनाभू—(वि०) [आभिमुख्येन भवति इत्यर्थे आ√भू+क्विप् न० त०] जो स्तुति न करे । जो सम्मुख न हो । (वैदिक)

अनामक—(वि०) [नास्ति नाम यस्य न० ब०] दे० 'अनामन्' ।

अनामन्—(वि०) [न० ब०] नामरहित । गुमनाम । अपकीर्ति । बदनाम । (पुं०)

लोंद मास, अधिक मास, हाथ की वह उँगली जिसमें अंगूठी पहनी जाती है । छिगुलिया के पास की अँगुली । (न०) [√अन्+अच् अनम्=जीवनम् अमयति=रुजति√अम्+अनि] अर्शरोग । बवासीर ।

अनामा, अनामिका—(स्त्री०) [ब्रह्मण: शिरश्छेदनसाधनतया ग्रहणायोग्यत्वात् नास्ति नाम ग्रहणयोग्यं यस्या न० ब०] कानी और बिचली उँगलियों के बीच की उँगली । छिगुनिया के पास वाली उँगली ।

अनामय—(वि०) [नास्ति आमयो यस्य न० ब०] तंदुरुस्त । स्वस्थ । (न०) (न० त०] तंदुरुस्ती । स्वास्थ्य । (पुं०) [न० ब०] विष्णु का नाम ।

अनायत्त—(वि०) [न आयत्त: न० त०] जो परतंत्र न हो । स्वतंत्र ।

अनायास—[न० त०] आयास—श्रम, कठिनाई का अभाव, आलस्य, लापरवाही । (वि०) [न० ब०] सरल । सहज । (अव्य०) आसानी से ।

अनारत—(वि०) [न० त०]अनवरत, नित्य, स्थायी । (न०)[न० त०] सतत । लगातार ।

अनारम्भ—(पुं०) [न० त०] अननुष्ठान । आरम्भ का अभाव ।

अनार्जव—(वि०) [न० त०] कुटिल, बेईमान, अधार्मिक । (न०) (न० त०] कुटिलता । जाल । फरेब । रोग ।

अनार्तव—(वि०) [ऋतौ भव: आर्तव: न० त०] असामयिक । बे-मौसम ।

अनार्तवा—(स्त्री०) [न० ब०] वह लड़की जिसको मासिक धर्म न होता हो ।

अनार्य—(वि०) [न० त०] दुर्जन, दुश्शील, अधम, असभ्य । (पुं०) जो आर्य न हो, वह देश जिसमें आर्य न बसते हों, शूद्र, म्लेच्छ ।

अनार्यक—(न०) [अनार्ये देशे भवम् इत्यर्थे अनार्य+क] अगुरु काठ । अगर की लकड़ी ।

अनार्ष—(वि०) [न आर्ष: न० त०] जो ऋषियों का प्रोक्त न हो । अवैदिक ।

अनालम्ब—(वि०) [नास्ति आलम्बो यस्य न० ब०] निराश्रित । बिना सहारे का ।—(पुं०) [न० त०]सहारे का अभाव । आधारशून्यता ।

अनालम्बी—(स्त्री०) [आ√लम्ब+टच् टित्वात् ङीप् न० त०] शिवजी की वीणा या सारंगी ।

अनालम्बुका, अनालम्भुका—(स्त्री०) [आ√लम्ब्,√लम्भ्+उकञ् न० त०] रजस्वला स्त्री ।

अनावर्तिन्—(वि०) [आ√वृत्+णिनि न० त०] फिर न होने वाला, फिर न लौटने वाला । जो एक ही बार दिया जाय या किया जाय (अनुदान, व्यय आदि) ।(नानरेकरिंग) ।

अनाविद्ध—(वि०) [न० त०] जो छेदा न गया हो । जो छिदा न हो ।

अनावृत्ति—(स्त्री०)[न० त०] फिर जन्म न होना । मोक्ष, अपरावर्तन । न लौटना ।

अनावृष्टि—(स्त्री०)[न० त०] सूखा । वर्षा का अभाव । खेती को नष्ट करने वाला एक उपद्रव ईति ।

अनाश—(वि०) [नास्ति आशा यस्य न० ब०) निराश । आशा-रहित ।

अनाशक—(पुं०) [आ सम्यक् यथेच्छम् आश: अशनम् आ√अश+घञ् न० त०] यथेच्छ भोग का अभाव । अपनी इच्छा के अनुसार भोग का न होना । 'तमेतं वेदानुवचनेन ब्राह्मणा विविदिषन्ति यज्ञेन दानेन तपसाऽनाशकेनेति' श्रुति: ।

अनाशकायन—(न०) [न नश्यति अनाशक: आत्मा तस्य अयनम् प्राप्त्युपाय:] आत्मा की प्राप्ति का उपाय । ब्रह्मचर्य ।

अनाश्रमिन्—(पुं०) [न० त०] वह जो चार

आश्रमों में से किसी भी आश्रम में न हो। जो आश्रमी न हो।

अनाश्रव—(वि०) [आ√श्रु+अच् न० त०] जो किसी का कहना न सुने या कहने पर कान न दे।

अनाश्वस्—(वि०) [न√अश+क्वसु नि०] न खाया हुआ।

अनास्था—(स्त्री०) [न आस्था न० त०] निरपेक्षता, अश्रद्धा, अनादर।

अनाबाध—(वि०) [नास्ति आबाधो यस्य न० ब०] क्लेश-रहित।

अनाहत—(न०) [आ√हन्+क्त (भावे) न० ब०] नया (कपड़ा)। कोरा कपड़ा तन्त्र-शास्त्रानुसार हृदयस्थित द्वादशदल कमल। मध्यमा वाक्। (वि०) [न आहतः न० त०] आघातरहित वस्तु।

अनाहार—(वि०) [न० ब०] भोजन-रहित। (पु०) [न० त०] उपवास। लंघन।

अनाहुति—(स्त्री०) [न० त०] हवन का अभाव, कोई हवन, जो हवन के नाम से कहलाने के अयोग्य हो, अनुचित बलि या अर्घ्य।

अनाहूत—(वि०) [न आहूतः न० त०] अनिमंत्रित। बिना बुलाया हुआ।—**उपजल्पिन्**-बिना कहे बोलने वाला या शेखी बघारने वाला।—**उपविष्ट**-(वि०) अनिमंत्रित आकर बैठा हुआ।

अनिकेत—(वि०) [नास्ति निकेतः नियमेन वासो यस्य न० ब०] गृह-हीन आवारा। जिसके घर न हो और बेमतलब इधर-उधर घूमा करे। (पु०) संन्यासी।

अनिगीर्ण—(वि०) [नि√गृ+क्त न० त०] जो निगला हुआ न हो। अभुक्त, अकथित, जो छिपा न हो। प्रकट। प्रत्यक्ष।

अनिच्छ, अनिच्छत्, अनिच्छु, अनिच्छुक—(वि०) [नास्ति इच्छा यस्य न० ब०—अनिच्छ, अनिच्छत् इत्यादौ न० त०] इच्छा न रखने वाला। अनभिलाषी। निराकांक्षी। जिसे चाह न हो।

अनित्य—(वि०) [न० त०] जो सनातन न हो, विनश्वर। विनाशी। नाशवान्, अस्थायी, अपव, असाधारण, अस्थिर। चञ्चल, सन्दिग्ध। संशयात्मक।—**दत्त,—दत्तक,—दत्रिम**-(पु०) पुत्र जो किसी दूसरे को कुछ दिनों के लिये दे दिया जाय।—**भाव**-(पु०) क्षणभंगुरता।—**सम**-(पु०) जाति या असत् उत्तर के २४ भेदों में से एक (न्याय)।

अनिद्र—(वि०) [नास्ति निद्रा यस्य न० ब०] निद्रारहित, जागता हुआ (आलं०) जागरूक, सावधान। सतर्क।

अनिन्द्रिय—(न०) [न० त०] कारण, इन्द्रियों में से कोई इन्द्रिय नहीं, मन।

अनिभृत—(वि०) [न निभृतः न० त०] सार्वजनिक। खुल्लमखुल्ला। अनछिपा हुआ, लज्जाहीन। बेहया, अस्थिर। जो दृढ़ न हो। चपल।—**सन्धि**-(पु०) किसी राजा की अत्यन्त उर्वरा भूमि को खरीद लेने के इच्छुक राजा को वह भूमि देकर की हुई संधि।

अनिमक—(पु०) [√अन्+इमन्-अनिमः =जीवनम् तेन कायति=शब्दायते प्रकाशते वा,√कै+क] मेढक, कोयल, मधुमक्षिका, भ्रमर, महुए का पेड़।

अनिमित्त—(वि०) [नास्ति निमित्तं यस्य न० ब०] अकारण। आधाररहित (न०) [न० त०] किसी उपयुक्त कारण या अवसर का अभाव, अपशकुन। बुरा शकुन।—**निराक्रिया**-(स्त्री०) बुरे शकुनों को पलट देने की क्रिया।

अनिमिष, अनिमेष—(वि०) [नास्ति निमिषः निमेषो वा यस्य न० ब०] जिसकी पलक न गिरे। स्थिर-दृष्टि, जागरूक, खुला हुआ। विकसित। (पु०) देवता, मछली [नि√मिष+क न० त०] महाकाल—

आचार्य-(पुं०) देवताओं के गुरु । बृहस्पति ।
—दृष्टि,—लोचन-(वि०) बिना पलक झपकाये देखने वाला ।

अनियत—(वि०) [न० त०] अनिश्चित, सन्दिग्ध, अनियमित, कारणशून्य, नश्वर ।
—आत्मन्-(वि०) जिसका मन वश में न हो ।—पुंस्का-(वि०) (स्त्री०) दुश्चारिणी स्त्री ।—वृत्ति-(वि०) वह जिसकी आमदनी या जीविका बँधी हुई न हो । अनियमित आय वाला ।

अनियन्त्रण—(वि०) [नास्ति नियन्त्रणम् यस्य न० ब०] असंयत । जो नियंत्रण में न रहे । उच्छृङ्खल ।

अनियन्त्रित—(पुं०) [न० त०] उच्छृङ्खल । नियमविरुद्ध, स्वच्छंद ।—शासन-(न०) एकतंत्र या निरंकुश राज्य ।

अनियम—(पुं०) [न० त०] नियम का अभाव, नियत आज्ञा का अभाव, सन्देह । अनुचित आचरण । अव्यवस्था ।

अनिर—(वि०) [ईरयितुम् शक्यते इति√ईर्+क पृषो० ह्रस्व न० त०] न चलाया जा सकने वाला ।

अनिरुक्त-(वि०) [न निरुक्तः न० त०] जो स्पष्ट न कहा गया हो । भली भाँति व्याख्या न किया हुआ । भली भाँति न समझाया हुआ ।

अनिरुद्ध—(वि०) [न निरुद्धः न० त०] अबाधित, मुक्त, अनियंत्रित, स्वेच्छाचारी, जो वश में न आ सके । (पुं०) भेदिया । जासूस । प्रद्युम्न के पुत्र का नाम जो श्री कृष्ण जी का पौत्र और ऊषा का पति था । पशु आदि के बाँधने की रस्सी । मन का अधिष्ठाता ।—पथ-(न०), बिना रुकावट का मार्ग, आकाश ।—भाविनी-(स्त्री०) अनिरुद्ध की स्त्री । ऊषा ।

अनिर्णय—(पुं०) [न० त०] अनिश्चितता । निर्णय का अभाव ।

अनिर्दश, अनिर्दशाह—(वि०) [न० ब०] मृत्यु अथवा जन्म के १० दिन के अशौच के भीतर का ।

अनिर्देश—(पुं०) [न० त०] किसी निश्चित नियम या आज्ञा का अभाव ।

अनिर्देश्य—(वि०) [निर्√दिश्+ण्यत् (शक्यार्थे) न० त०] वह जिसकी परिभाषा का वर्णन न हो सके । अवर्णनीय (न०) परब्रह्म ।

अनिर्धारित—(वि०) [न० त०] अनिश्चित ।

अनिर्भर—(वि०) [न० त०] अधिक नहीं । थोड़ा, हलका ।

अनिर्भेद—(पुं०) [न० त०] भेद न खोलना ।

अनिर्माल्या—(स्त्री०) [निर्√मल+ण्यत् टाप् न० त०] पृक्का नामक ओषधि ।

अनिर्लोडित-(वि०) [न० त०] जो भली भाँति सोचा गया न हो । बुरी तरह निर्णीत ।

अनिर्वचनीय—(वि०) [निर्√वच्+अनीयर् न० त०] निर्वचन के अयोग्य । जिसके लक्षण आदि न बताये जा सकें । वर्णन के अयोग्य । (न०) संसार ।

अनिर्वाण—(वि०) [न० त०] न बुझा हुआ । अनघुला । अप्रक्षालित ।

अनिर्विण्ण—(वि०) [न० त०] क्लेश-रहित । न थका हुआ । जो उत्साह-रहित न हुआ हो ।

अनिर्वृत्त-(वि०) [न० त०] बेचैन । दुखी ।

अनिर्वृति, अनिर्वृत्ति—(स्त्री०) [न० त०] बेचैनी । विकलता । चिन्ता । गरीबी । निर्धनता ।

अनिर्वेद—(पुं०) [न० त०], क्षोभ या विषाद का अभाव, स्वावलंबन, उत्साह । साहस ।

अनिर्वेश—(वि०) नास्ति निर्वेशो यस्य [न० ब०] बे-रोजगार, दुःखित । (पुं०) [न० त०] रोजी या भृत्यता का अभाव ।

अनिल—(पुं०) [अनिति अनेन इत्यर्थे √अन्+इलच्] वायु, पवन देव । एक उपदेवता । शरीरस्थ पवन । मानसिक भावों में से एक । आठ वसुओं में से पाँचवाँ वसु । स्वाती नक्षत्र । विष्णु । ४९ की संख्या । सागौन का वृक्ष । गठिया रोग या वातजन्य कोई रोग ।—**अयन**-(न०) पवनमार्ग ।—**अशन्**—**आशिन्**-(पुं०) साँप । (वि०) हवा पीकर रहने वाला ।—**आत्मज**-(पुं०) पवनपुत्र । भीम और हनुमान ।—**आमय**-(पुं०) वातरोग । अफरा ।—**कुमार**-(पुं०) हनुमान । भीम । देवताओं का एक वर्ग (जैन०) ।—**घ्नक**-(पुं०) बहेड़े का पेड़ ।—**पर्यय**,—**पर्याय**-(पुं०) आँख का एक रोग जिसमें पलकें सूख जाती हैं ।—**प्रकृति**-(वि०) वात की प्रकृति वाला । (पुं०) शनिग्रह ।—**सख**,—**सारथि**-(पुं०) अग्नि ।

अनिवर्तन—(वि०) [नास्ति निवर्तनम् यस्य न० ब०)] न लौटने वाला । स्थिर । न त्यागने योग्य ।

अनिवार—(वि०) [नास्ति निवार:=निवारणम् यस्य न० ब०] दे० 'अनिवार्य' ।

अनिवार्य-(वि०) [न० त०] जिसका निवारण न हो सके । न हटाने योग्य, अटल, अत्यावश्यक ।

अनिविशमान—(वि०) [निविशन्ते तिष्ठन्ति इति नि√विश्+शानच् न० त०] कभी न ठहरने वाला, विश्राम न लेने वाला, सदा चलने वाला ।

अनिश-(न०) [नास्ति निशा—चेष्टाव्याघात: अस्मिन् न० ब०] सतत । लगातार ।

अनिष्ट—(वि०), [√इष+क्त, विरोध न० त०] जो इष्ट न हो । अवांछित । अशुभ, बुरा, अभागा, पजद्वारा असम्मानित । (न०) अशुभ, अभाग्य । दुर्भाग्य । विपत्ति । असुविधा । हानि ।—**आपादन**-(न०)—**आप्ति**-(स्त्री०) अवांछित वस्तु की प्राप्ति । अवांछित घटना ।—**ग्रह**-(पुं०) पापग्रह । बुरेग्रह ।—**प्रसङ्ग**-(पुं०) दुर्घटना । अशुभ घटना । किसी बुरी वस्तु, युक्ति अथवा नियम का सम्बन्ध ।—**फल**-(न०) बुरा परिणाम ।—**शङ्का**-(स्त्री०) अशुभ का भय ।—**हेतु**-(पुं०) अपशकुन । बुरा शकुन ।

अनिष्पत्रम्—(अव्य०) [नि:सृतम् पत्रम् =पक्ष: यत्र तादृशम् न भवति] तीर का वह भाग जिसमें पर लगे रहते हैं, जिससे वह दूसरी ओर न निकले ।

अनिस्तीर्ण—(वि०) [न० त०] जिससे पिण्ड या पीछा न छूटा हो, अनुत्तरित । अखण्डित । जिसका खण्डन न हुआ हो ।—**अभियोग**-(पुं०) वह अभियुक्त या प्रतिवादी जिसने आरोप को असत्य प्रमाणित कर उससे छुटकारा नहीं पाया है ।

अनीक—(पुं० न०) [अनिति अनेन इति√अन्+ईकन्] सेना, समूह, पंक्ति, सैन्यपंक्ति, युद्ध, शकल, किनारा, —**स्थ**-(पुं०) सैनिक । योद्धा, पहरेदार, सन्तरी । महावत । हाथी का शिक्षक । मारूबाजा । ढोल या बिगुल, सङ्केत । चिह्न । निशानी ।

अनुक्रमणिका—(स्त्री०) [अनुक्रम्यते यथोत्तरम् परिपाट्या आरभ्यतेऽनया, अनु√क्रम्+ल्युट् स्त्रीत्वात् ङीप् स्वार्थे क प्रत्यय:] विषयसूची, परिपाटी बतलाने वाली । जिसमें किसी ग्रंथ में वर्णित विषयों का संक्षेप में पतेवार वर्णन हो । सूची, तालिका, कात्यायन के एक ग्रन्थ का नाम । इसमें मंत्रों के ऋषि, छन्द, देवता, और मंत्रों के विनियोगों का वर्णन है ।

अनुक्रमणी—(स्त्री०) [अनु√क्रम्+ल्युट् ङीप] दे० 'अनुक्रमणिका' ।

अनुक्रिया—(स्त्री०) [अनु√कृ+श टाप्] दे० 'अनुकरण' ।

अनुक्रोश—(पुं०) [अनु√क्रुश्+घञ्]

दया, रहम, कृपा। (वि०) [अनुगतः कोशम् गति० स०] जो एक कोस पर पहुँचा हो।

अनुक्षणम्—(अव्य०) [क्षणम् प्रति, अव्य० स०] प्रत्येक क्षण, सतत, बराबर।

अनुक्षत्तृ—(पु०) [अनुगतः क्षत्तारम् अत्या० स०] दरबान या सारथी का टहलुआ।

अनुक्षेत्र—(पु०) [क्षेत्रस्य अनुकूलम्, अव्य० स०] पुजारियों को दी जाने वाली वृत्ति या बंधान। (उड़ीसा के मंदिरों में यह बंधान बँधा हुआ है)।

अनुख्याति—(स्त्री०) [अनु√ख्या+क्तिन्] किसी गुप्त बात की सूचना देना या उसको प्रकट करना।

अनुग—(वि०) [अनु√गम्+ड] अनुगत, पीछे जाने वाला। (पुं०) अनुयायी, पिछलगुआ, आज्ञाकारी नौकर, साथी।

अनुगति—(स्त्री०) [अनु√गम्+क्तिन्] अनुगमन, पीछे चलना, नकल करना, अनुकरण करना।

अनुगम, अनुगमन—(पु०) (न०) [अनु√गम्+अप्] [अनु√गम्+ल्युट्] पीछे चलना, अधीन होना, सहायक होना, सहमरण, किसी स्त्री का अपने पति के पीछे मरना, अनुकरण करना, समीप जाना, अर्थबोध।

अनुगर्जित—(न०) [अनु√गर्ज+क्त] प्रतिगर्जन्, प्रतिध्वनि।

अनुगवीन—(पु०) [अनुगु—गोः पश्चात् पर्याप्तं यथा गच्छति सोऽनुगवीनः—अनुगु+ख—ईन] गोपाल, ग्वाला।

अनुगामिन्—[अनु√गम्+णिनि] अनुयायी, पीछे चलने वाला। (पुं०) नौकर, साथी।

अनुगिरम्—(अव्य०) [गिरेः समीपम् इति अव्य० स० टच्] पर्वत के पास।

अनुगुण—(वि०) [अनुकूलो गुणो यस्य ब० स०] समान गुण वाला, अनुकूल, अनुगत। (अव्य०)[अव्य० स०] गुण के अनुसार। (पु०) [प्रा० स०] अर्थालंकार का एक भेद, स्वाभाविक विशेषता।

अनुग्रह, अनुग्रहण—(पु०) (न०) [अनु√ग्रह्+अप्] [अनु√ग्रह्+ल्युट्] कृपा, दया, अनुकंपा, स्वीकारोक्ति, स्वीकृति, प्रधान सैन्यदल का पश्चात् भाग। रक्षक सैन्यदल। राज्य की कृपा से प्राप्त सहायता या सुभीता।

अनुग्रासक—(पुं०)[प्रा० सं०] कौर, निवाला।

अनुग्राह्य—(वि०) [अनु√ग्रह्+ण्यत्] कृपा करने योग्य, अनुग्रह का पात्र।

अनुचर—(पं०) [अनु√चर+ट) दास, सेवक, टहलुआ। (वि०) पीछे चलने वाला।

अनुचरी—(स्त्री०) [अनु√चर्+ट, टित्वात् ङीप्] टहलुनी, दासी।

अनुचारक—(पु०) [अनु√चर्+ण्वुल्] अनुचर, सेवक।

अनुचारिका—(स्त्री०) [अनु√चर+ण्वुल् टाप्] अनुचरी, दासी।

अनुचित—(वि०) [न उचितः न० त०] अयुक्त, नामुनासिब, असाधारण, अयोग्य।

अनुचिन्तन—(न०) [अनु√चिन्त्+ल्युट्] दे० 'अनुचिन्ता'।

अनुचिन्ता—(स्त्री०) [अनु√चिन्त्+अ, टाप्] विचार, ध्यान, अनुध्यान, उत्कण्ठापूर्वक स्मरण।

अनुच्छाद—(पु०) [अनु√छद्+णिच्+घञ्] अंगों के नीचे पहिना जाने वाला कपड़ा, नीमा।

अनुच्छित्ति, अनुच्छेद—(स्त्री०) (पुं०) [अनु√छिद्+क्तिन्] [अनु√छिद्+घञ्] कटकर अलग न होना, नाश न होना, किसी अधिनियम, विधान, नियमावली, संविदा आदि का वह विशिष्ट अंग या अंश जिसमें एक विषय और उसके प्रतिबंध आदि का उल्लेख हो [आर्टिकिल]। लेख आदि का वह अंश जिसमें कोई एक बात कही गई हो और

जिसकी पहली पंक्ति आरंभ में कुछ छोड़ कर लिखी गई हो [पराग्राफ] । अनाशकत्व, अनष्टत्व ।

अनुज, अनुजात—(वि०) [अनु=पश्चात् जायते इति विग्रहे अनु√जन्+ड] [अनु =पश्चात् जातः इति अनु√जन्+क्त] पीछे जन्मा हुआ, पिछला, छोटा । (पु०) छोटा भाई ।

अनुजन्मन्—(पु०) [अनु जन्म यस्य ब० न०] छोटा भाई ।

अनुजीविन्—(वि०) [अनुजीवितुम्=आश्रयितुम् शीलमस्य इति विग्रहे अनु√जीव्+णिनि] परावलम्बी, दूसरे पर (आजीविका के लिये) निर्भर । (पु०) नौकर, चाकर ।

अनुज्ञा, अनुज्ञान—(स्त्री०) (न०) [अनु√ज्ञा+अङ्] [अनु√ज्ञा+ल्युट्] अनुमति, आज्ञा, हुक्म ।

अनुज्ञापक—(पु०) [अनु√ज्ञा+णिच्+ण्वुल्] आज्ञा देने वाला, हुक्म देने वाला । [स्त्री० अनुज्ञापिका] ।

अनुज्ञापन—(न०) [अनु√ज्ञा+णिच्+ल्युट्] आज्ञा, हुक्म, अनुमति ।

अनुज्येष्ठम्—(अव्य०) [अव्य० स०] (वयः क्रम से) ज्येष्ठता या बड़ाई, बड़े-छोटे के लिहाज से ।

अनुतर्ष—(पु०) [अनु√तृष्+घञ्] प्यास, इच्छा, कामना, पानपात्र, मद्य ।

अनुतर्षण—(न०) [अनु√तृष+ल्युट्] दे० 'अनुतर्ष' ।

अनुताप—(पु०) [अनु√तप्+घञ्] पश्चात्ताप, कर्म करने के अनन्तर दुःख ।

अनुतिल—(अव्य०) [अव्य० स०] अति सूक्ष्मता से, तिल-तिल करके, तिल के बराबर ।

अनुत्क—(वि०) [न उत्कः न० त०]जो अत्यधिक उत्कण्ठित न हो, जो पश्चात्ताप न करे ।

अनुत्तम—(वि०)[न उत्तमो यस्मात् न० ब०] सर्वोत्कृष्ट, सर्वश्रेष्ठ, सबसे बढ़कर । (न० त०) जो उत्तम या उत्कृष्ट न हो ।

अनुत्तर—(वि०) [न उत्तर=उत्तमः यस्मात् न० ब०] बहुत अच्छा, सर्वोत्तम, प्रधान, दृढ़ । [न० त०] नीच, कमीना । [न० ब०] बिना उत्तर का, निरुत्तर ।

अनुत्तरङ्ग—(वि०)[न उद्गताः तरङ्गाः यस्मिन् न० ब०] जिसमें तरंगें लहराती नहीं, निश्चल ।

अनुत्तरा—(स्त्री०)[न० त०]दक्षिण दिशा ।

अनुत्थान—(न०) [न० त०] उत्थान या प्रयत्न का अभाव ।

अनुत्सूत्र—(वि०) [न उत्क्रान्तम् सूत्रम् यस्मिन् न० ब०] सूत्र के विरुद्ध नहीं ।

अनुत्सेक—(पु०) [न० त०] क्रोध या अभिमान का अभाव ।

अनुत्सेकिन्—(वि०) [अनुत्सेक+इनि] जो अभिमान से फूल कर कुप्पा न हो गया हो ।

अनुदक—(वि०) [नास्ति उदकम् यस्मिन् न० ब०] जलहीन, अल्प जल वाला, जिसे कोई पानी देने वाला न हो ।

अनुदर—(वि०) [नास्ति उदरम् यस्य न० ब०) जिसका मध्य भाग या कमर पतली हो । पतला-दुबला ।

अनुदर्शन—(न०) [प्रा० स०] पर्यवेक्षण, मुआयना ।

अनुदात्त—(वि०) [उच्चैरात्तः उच्चारितः उदात्तः न० त०] जो उदात्त स्वर से उच्चारणीय न हो । उदात्त स्वर से भिन्न स्वर ।

अनुदार—(वि० [न उदारः न० त०] जो उदार न हो, जो कुलीन न हो, जिसके उपयुक्त पत्नी हो ।

अनुदित—(पु०) [उत्√इण+क्त इयदर्थे न० त०] वह समय जिसमें थोड़ा-सा सूर्य उदय हो और कहीं-कहीं तारे भी दिखाई पड़ें । (वि०)[वद्√क्त+न० त०] न कहा हुआ, निंद्य ।

अनुदिनम्, अनुदिवसम्—[अव्य० स०] (अव्य०) नित्य, हररोज, दिनों दिन ।

अनुदेश—(पु०) [अनु√दिश्+घञ्] पीछे की ओर इशारा करना, एक नियम जो पहले नियम की सूचना देता है । क्रम-संख्या, कोई काम करने के लिये विशेष रूप से समझाना या आदेश देना । हिदायत । (इन्स्ट्रक्शन) ।

अनुद्धत—(वि०) [न० त०] जो उद्दण्ड या अभिमानी न हो ।

अनुद्भट—(वि०) [न० त०] जो वीर या साहसी न हो, कोमल स्वभाव वाला, जो उन्नत या बहुत ऊंचा न हो ।

अनुद्रुत—(वि०)[अनु√द्रु+क्त] पिछियाया हुआ, लौटाया हुआ, वापिस लाया हुआ, अनुगामी । (न०) (संगीत में) एक ताल मात्रा का चौथा भाग ।

अनुद्वाह—(पु०) [न० त०] अविवाहावस्था, अनूढावस्था, चिरकौमार्य ।

अनुद्विग्न—(न० त०] न घबड़ाया हुआ, आशंका, चिन्ता आदि से मुक्त ।

अनुधावन—(न०) [अनु√धाव+ल्युट्] पीछे दौड़ना, पीछा करना, पछियाना, किसी पदार्थ के बिल्कुल समीप-समीप दौड़ना, अनुसन्धान करना, पता लगाना, तहकीकात करना, अप्राप्त होने पर भी किसी मालकिन या स्वामिनी का पता लगाना । साफ करना, पवित्र करना ।

अनुध्या, अनुध्यान—(स्त्री०) (न०) [अनु √ध्यै+अङ] [अनु√ध्यै+ल्युट्] अनुचिन्तन, बार-बार सोचना, किसी विषय में तत्पर रहना, आसक्ति, कृपा करना, मङ्गलकामना ।

अनुनय—(पु०) [अनु√नी+अच्] विनय, सान्त्वना, प्रार्थना ।

अनुनाद—(पु०) [अनु√नद्+घञ्] शब्द, कोहल्ला, शोर, गुलगपाड़ा, प्रतिध्वनि, झाईं ।

अनुनायक—(वि०) [अनु√नी+ण्वुल] नायिका के साथ रहने वाली स्त्री—विनम्र, विनयशील, आज्ञाकारी ।

अनुनायिका—(स्त्री०) जैसे धात्री, दासी आदि । अनुनायिका ये होती हैं :—**सखी प्रव्रजिता दासी प्रेष्या धात्रेयिका तथा । अन्याश्च शिल्पकारिण्यो विज्ञेया ह्यनुनायिकाः ॥**

अनुनासिक—(पु०) [अनुगता नासाम् अत्या० स० तत्र उच्चार्यमाणार्थे ठ—इक] वर्गों के अंतिम अक्षर जिनका उच्चारण मुंह और नाक से होता है (ङ ञ ण न म) ।

अनुनिर्देश—(पु०) [अनुगतः निर्देशः प्रा० स०]किसी पूर्ववर्ती वचन या आज्ञा का संबंधसूचक दूसरा वचन या आज्ञा ।

अनुनीति—(स्त्री०) [अनु√नी+क्तिन्] दे० 'अनुनय' ।

अनुपकारिन्—(वि०) [न उपकारिन् न० त०]उपकार न करने वाला, कृतघ्न, निकम्मा ।

अनुपघात—(पु०) [न उपघातः न० त०] किसी जोखिम या बाधा का अभाव ।

अनुपतन—अनुपात—(न०) (पु०) [अनु √पत्+ल्युट्] [अनु√पत्+घञ्] गणित की त्रैराशिक क्रिया, त्रैराशिक गणित, पीछे गिरना, पीछा करना, एक अङ्क के साथ दूसरे अङ्क का सम्बन्ध ।

अनुपथ—(वि०) [पन्थानम् अनुगतः अत्या० स०] मार्ग का अनुसरण करने वाला, (क्रि० वि०) सड़क के साथ-साथ ।

अनुपद—(अव्य०) [पदस्य पश्चात् अव्य० स०] कदम-बकदम, शब्द-प्रतिशब्द । (वि०) [पदम् अनुगतः अत्या० स०] (किसी के) पीछे पीछे चलने वाला, प्रत्येक शब्द की व्याख्या करने वाला ।(भाष्य)(जैसे—अनुपदसूत्र ।

अनुपदवी—(स्त्री०) [अनुगता पदवी प्रा० स०] वह मार्ग जिसका अनुसरण एक के बाद दूसरे ने किया हो, मार्ग, सड़क ।

अनुपदिन्—(वि०) [अनुपदम् अन्वेष्टा

इत्यर्थे अनुपद+इनि] खोजने वाला, तलाश करने वाला, जिज्ञासु ।

अनुपदीना—(स्त्री०) [अनुपदस्य आयाम-तुल्यायाम: आयामे अव्य० स० अनुपदं कद्वा इत्यर्थे ख—ईन, टाप्] जूता, मोजा, खड़ाऊँ ।

अनुपध—(पुं०) [नास्ति उपधा यस्मिन् न० ब०] जिसमें उपधा या उपान्त्य शब्दांश का अभाव हो ।

अनुपधि—(वि०) [नास्ति उपधि: =छलम् यस्य न० ब०] प्रवञ्चना-रहित, छलवर्जित, बिना जालसाजी का ।

अनुपन्यास—(पुं०) [न उपन्यास: न० त०] वर्णन न करना, बयान न देना, सन्देह, प्रमाण या निश्चय का अभाव, असिद्धि ।

अनुपपत्ति—(स्त्री०) [न उपपत्ति: न० त०] उपपत्ति का अभाव, असङ्गति, असिद्धि, असम्पन्नता, असमर्थता ।

अनुपम—(वि०) [नास्ति उपमा यस्य न० ब०] उपमारहित, बेजोड़, सर्वोत्तम, सर्वोत्कृष्ट ।

अनुपमा—(स्त्री०) [नास्ति उपमा यस्या: न० ब०] नैऋत्य कोण के कुमुद गज की हथिनी ।

अनुपमित, अनुपमेय—(वि०) [उप√मा +क्त न० त०] [उप√मा+यत् न० त०] बेजोड़, जिसकी तुलना न हो सके ।

अनुपयोग—(वि०) [नास्ति उपयोग: यस्य न० ब०] बे मसरफ, बेकार । (पुं०) [न० त०] निरर्थकता, उपयोग में न आना (आहार आदि) ।

अनुपरत—(वि०) [उप√रम्+क्त न० त०] न हटा हुआ, जिसकी इच्छा-निवृत्ति न हुई हो, अबाधित, मृत नहीं ।

अनुपलब्धि—(स्त्री०) [उप√लभ+क्तिन् न० त०] अप्राप्ति, न मिलना, अस्वीकृति, जानकारी न होना ।—**सम**-(पुं०) जाति के चौबीस भेदों में से एक ।

अनुपलम्भ—(पुं०) [उप√लभ्+घञ् न० त०] बोध या प्रत्यय का अभाव ।

अनुपवीतिन्—(पुं०) [उपवीत+इनि न० त०] जो द्विज यज्ञोपवीत धारण न करे ।

अनुपशय—(पुं०) [न उपशय: न० त०] कोई वस्तु या अवस्था जो रोग की वृद्धि करे, रोगज्ञान के पाँच विधानों में से एक । इससे आहार-विहार के बुरे परिणाम से रोगी के रोग का ज्ञान प्राप्त किया जाता है ।

अनुपसंहारिन्—(पुं०) [उप—सम्√हृ+णिच्+णिनि न० त०] न्याय में एक प्रकार का हेत्वाभास (दुष्ट हेतु । ऐसा हेतु कि जिसमें अन्वय एवं व्यतिरेक का कोई दृष्टान्त न मिल सके ।)

अनुपसर्ग—(वि०) [नास्ति उपसर्गो यस्मिन् न० ब०] शब्दांश जिसमें उपसर्ग न हो, उपसर्ग-रहित ।

अनुपसेचन—(वि०) [नास्ति उपसेचनम् यस्य न० ब०] जिसके पास कोई चटनी, दही, अचार आदि न हो ।

अनुपस्कृत—(वि०) [न उपस्कृत: न० त०] जिसका संस्कार या परिष्कार न किया गया हो, जो सिखाया न गया हो ।

अनुपस्थानम्—(न०) गैरहाजिरी, अनुपस्थिति, समीप न होना, अविद्यमानता ।

अनुपस्थित—(वि०) [न० त०] गैरहाजिर, मौजूद नहीं, अविद्यमान ।

अनुपस्थिति—(स्त्री०) [न० त०] गैरहाजिरी, अविद्यमानता ।

अनुपहत—(वि०) [न० त०] चोटिल नहीं, अव्यवहृत, काम में न लाया हुआ, कोरा (जैसा कपड़ा) ।

अनुपाकृत—(वि०) [उप—आ√कृ+क्त न० त०] यज्ञ में मन्त्रों से पशु का पूजन आदि संस्कार उपाकरण कहलाता है उससे रहित ।

अनुपाख्य—(वि०) [नास्ति उपाख्या यस्य

न० त०] जो साफ-साफ देखा या पहचाना न जा सके।

अनुपातक—(न०) [अनुपातयति स्वानुरूपं नरकं गमयति इति अनु√पत्+णिच्+ण्वुल्] महापातक के समान पाप—जैसे चोरी, हत्या, व्यभिचार आदि। विष्णुस्मृति में इस श्रेणी में ३५ और मनुस्मृति में ३० प्रकार के पातकों को शामिल किया है।

अनुपान—(न०) [अनु भेषजेन सह पश्चात् वा पीयते इति अनु√पा+ल्युट्] वह पदार्थ जो किसी औषध के साथ या ऊपर से लिया जाय।

अनुपालन—(न०) [अनु√पाल्+ल्युट्] रखवाली, रक्षण, आज्ञापालन।

अनुपुरुष—(पु०) [अनुगतः अग्रम् पुरुषम् अत्या० स०] अनुयायी, पूर्वोक्त व्यक्ति।

अनुपूरक—(वि०) [अनु√पूर्+ण्वुल्] किसी के साथ मिलकर उसकी कमी पूरी करने वाला, छूट या कमी आदि पूरी करने के लिये बाद में बढ़ाया हुआ। (सप्लेमेंटरी)

अनुपूर्व—(वि०) [अनुगतः पूर्वम् अत्या० स०] यथाक्रम, सिलसिलेवार, सुविभक्त, सम-परिमित।—**ज**-(वि०) पीढ़ी दर पीढ़ी, साल ब साल।—**वत्सा**-(वि०) गौ जो नियमित रूप से बच्चे दे।—**शस्**-(क्रि० वि०) क्रमागत रीति से।

अनुपेत—(वि०) [न उपेतः न० त०] जो अभी गुरुकुल में प्रविष्ट न हुआ हो, जिसका उपनयन (यज्ञोपवीत) संस्कार न हुआ हो।

अनुप्त—(वि०) [√वप्+क्त न० त०] जो बोया न गया हो।

अनुप्रयोग—(पु०) [प्रा० स०] बार-बार दुहराना, अतिरिक्त प्रयोग।

अनुप्रवेश—(पु०) [प्रा० स०] दरवाजे के भीतर जाना, किसी के मन के भीतर घुसना, मन में स्थान करना।

अनुप्रसक्ति—(स्त्री०) [प्रा० स०] घनिष्ठ प्रेम, प्रगाढ़ अनुराग, (शब्दों का) अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध।

अनुप्रसादन—(न०) [अनु–प्र√सद्+णिच्+ल्युट्] दूसरे को सन्तुष्ट या प्रसन्न करने की क्रिया।

अनुप्राप्ति—(स्त्री०) [अनु–प्र√आप+क्तिन्] लाभ, पहुँच।

अनुप्रास—(पु०) [अनु–प्र√अस्+घञ्] एक अलङ्कार। इसमें किसी पद में एक ही अक्षर बार-बार प्रयुक्त होकर उस पद को अलङ्कृत करता है। वर्णावृत्ति, वर्णमैत्री, वर्ण-साम्य।

अनुप्लव—(पु०) [अनु√प्लु+अच्] अनुयायी, नौकर, सहायक।

अनुबद्ध—[अनु√बन्ध्+क्त] बँधा हुआ, लगा हुआ, जकड़ा हुआ, यथा-क्रम अनुगमन करने वाला, सम्बन्धयुक्त, सतत, लगातार।

अनुबन्ध—(पु०) [अनु√बन्ध+घञ्] बन्धान, सम्बन्ध, सिलसिला, परिणाम, फल, इरादा, उद्देश्य, कारण, व्याकरण में प्रकृति, प्रत्यय, आगम, आदेश आदि में कार्य के लिये जो वर्ण लगा दिये जाते हैं, वे भी अनुबन्ध कहे जाते हैं। माता-पिता का अनुवर्तन करने वाला पुत्र, भावी अशुभ परिणाम, वेदान्त में एक-एक विषय का अधिकरण, वात, कफ, पित्त में जो अप्रधान हो, लगाव, होने वाला शुभ या अशुभ, प्रकृति, प्यास, प्रारंभ, मार्ग, संतान।—**चतुष्टय**-(पु०) विषय, प्रयोजन, अधिकारी और सम्बन्ध—इन चार का समुदाय।

अनुबन्धन—(न०) [अनु√बन्ध+ल्युट्] लगाव, सम्बन्ध, क्रम।

अनुबन्धिन्—(वि०) [अनु√बन्ध+णिनि] लगाव रखने वाला, सम्बन्धी, परिणामस्वरूप, समृद्धिशाली, अबाधित।

अनुबन्धी—(स्त्री०) [अनुबध्यते अनया इति अनु√बन्ध्+घञ्, गौरा० ङीष्] हिचकी प्यास।

अनुबन्ध्य—(वि०) [अनु√बन्ध्+ण्यत्] मुख्य, प्रधान । मार डालने के लिये । बाँधने योग्य ।

अनुबल—(न०) [अनु=पश्चात् स्थितम् बलम् प्रा० स०] मुख्य सेना की रक्षा के लिये उसके पीछे स्थित सैन्यदल, सहायक सैन्यदल ।

अनुबोध—(पुं०) [अनु√बुध+णिच्+घञ्] स्मरण या बोध जो पीछे हो । गन्धोद्दीपन ।

अनुबोधन—(न०) [अनु√बुध+णिच्+ल्युट्] प्रबोधन । स्मरण । स्मरणशक्ति ।

अनुब्राह्मण—(न०) [सादृश्ये अव्य० स०] ब्राह्मण ग्रन्थ के सदृश ग्रन्थ ।

अनुभव—(पुं०) [अनु√भू+अप्] साक्षात् करने से या परीक्षा द्वारा प्राप्त ज्ञान, तजरबा । परिणाम । फल ।—**सिद्ध**–(वि०) अनुभव या तजरबा करके देखा हुआ, परीक्षा-सिद्ध ।

अनुभाव—(पुं०) [अनु√भू+णिच्+घञ्] राजसी चमकदमक । महिमा, बड़ाई, अधिकार । प्रभाव । सामर्थ्य । निश्चय । [अनु√भू+णिच्+अच्] हृदयस्थित भाव को प्रकाशित करने वाली कटाक्ष रोमाञ्चादि चेष्टा । काव्य में रस के चार अंगों में से एक, वे गुण और क्रियाएँ जिनसे रस का बोध हो सके । (अनुभाव के सात्त्विक, कायिक, मानसिक और आहार्य चार भेद माने जाते हैं । हाव भी इसी के अन्तर्गत है ।)

अनुभावक—(वि०) [अनु√भू+णिच्+ण्वुल्] अनुभव कराने वाला । बतलाने या समझाने वाला, निर्देशक ।

अनुभावन—(न०) [अनु√भू+णिच्+ल्युट्] चेष्टाओं द्वारा मानसिक भावों का निर्देश करना अर्थात् बतलाना ।

अनुभाषण—(न०) [अनु√भाष्+ल्युट्] किसी दावे या कथन को दुहरा कर खण्डन करना । खण्डन करने के लिये किसी दावे या कथन को दुहराना ।

अनुभूति—(स्त्री०) [अनु√भू+क्तिन्] अनुभव । परिज्ञान, पहचान । न्याय के अनुसार प्रत्यक्ष, अनुमिति, उपमिति और शब्दबोध द्वारा प्राप्त ज्ञान ।

अनुभोग—(पुं०) [अनु+भुज्+घञ्] वह भूमि जो किसी को किसी काम के बदले माफी में दी जाय, खिदमती, सुखभोग, विलास ।

अनुभ्रातृ—(पुं०) [अनुगतो भ्रातरम् अत्या० स०] छोटा भाई ।

अनुमत—(वि०) [अनु√मन्+क्त] सम्मत । स्वीकृत । प्रिय । कृपापात्र । (पुं०) अनुरागी, प्रामिक । (न०) स्वीकृति, रजामंदी । अनुमति, अनुज्ञा ।

अनुमति—(स्त्री०) [अनु√मन्+क्तिन्] आज्ञा, अनुज्ञा, हुक्म । स्वीकृति । पूर्णिमा जिसमें एक कला कम हो, चतुर्दशीयुक्त पूर्णिमा ।—**पत्र** (न०) प्रमाणपत्र जिसमें किसी काम की मंजूरी दी गई हो ।

अनुमत्त—(वि०) [अनु√मद्+क्त] हर्ष से उन्मत्त, खुशी के मारे आपे से बाहर ।

अनुमनन—(न०) [अनु√मन्+ल्युट्] स्वीकृति । अनुमति, आज्ञा, इजाजत । स्वतन्त्रता ।

अनुमन्त्रण—(न०) [अनु√मन्त्र+णिच्+ल्युट्] मंत्रों द्वारा आवाहन या प्रतिष्ठा ।

अनुमरण—(न०) [अनु√मृ+ल्युट्] पीछे मरना, किसी पहले मरे हुए के पीछे मरना । किसी विधवा का पीछे सती होना ।

अनुमा—(स्त्री०) [अनु√मा+अङ] अनुमिति, अनुमान ।

अनुमातृ—(वि०) [अनु√मा+तृच्] अनुमान करने वाला ।

अनुमान—(न०) [अनु√मि या √मा+ल्युट्] अटकल, अंदाजा । भावना, विचार । परिणाम, नतीजा । न्यायशास्त्रानुसार प्रमाण के चार भेदों में से एक । इससे प्रत्यक्ष साधनों द्वारा अप्रत्यक्ष साध्य का ज्ञान होता है ।

अनुमापक—(वि०) [अनु√मा+णिच्+ण्वुल्] अनुमान कराने वाला । अनुमान का आधार ।

अनुमास—(पु०) [मासम् अनुगतः अत्या० स०] आगे का महीना ।

अनुमासम्—(अव्य०) [अव्य० स०] प्रत्येक मास ।

अनुमित—(वि०) [अनु√मा या√मि+क्त] अनुमान किया हुआ ।

अनुमिति—(स्त्री०) [अनु√मा या√मि+क्तिन्] अनुमान, नव्य न्याय के अनुसार अनुभूति के चार भेदों में से एक। परामर्श से उत्पन्न ज्ञान, हेतु या तर्क से किसी वस्तु को जान लेना ।

अनुमित्सा—(स्त्री०) [अनुमातुम् इच्छा इति अनु√मा+सन्+अ] अनुमान करने की इच्छा ।

अनुमृता—(स्त्री०) [अनु√मृ+क्त, टाप्] वह स्त्री जो सती हुई हो ।

अनुमेय—[अनु√मा+यत्] अनुमान के योग्य ।

अनुमोद—(पु०) [अनु√मुद्+घञ्] सहानुभूतिजन्य प्रसन्नता, [अनु√मुद्+णिच् +घञ्] समर्थन । स्वीकृति ।

अनुमोदक—(वि०) [अनु√मुद्+णिच्+ण्वुल्] समर्थन करने वाला ।

अनुमोदन—(न०) [अनु√मुद्+णिच+ल्युट्] समर्थन, ताईद । स्वीकृति ।

अनुयाज—(पु०) [अनु √यज्+घञ्, कुत्वाभाव] अमावस्या और पौर्णमासी के अंग प्रयाज आदि पाँच याग ।

अनुयातृ—(वि०) [अनु√या+तृच्] (दे०) 'अनुयायिन्' ।

अनुयात्रम्—(अव्य०) [यात्रायाः पश्चात् इति अव्य० स०] यात्रा के पश्चात् ।[यात्रायाम् इति अव्य० स०] यात्रा में ।

अनुयात्रिक—(पु०) [अनुयात्रा=अनुगमनम् अस्ति अस्य इत्यर्थे अनुयात्रा+ठन्—इक] अनुचर, नौकर ।

अनुयान—(न०) [अनु√या+ल्युट्] अनुगमन, पीछे चलना ।

अनुयायिन्—(वि०) [अनु √या+णिनि] पीछे गमन करने वाला, अनुवर्ती । (पु०) अनुचर, नौकर । परिवर्ती घटना ।

अनुयुक्त—(वि०)[अनु√युज्+क्त] जिससे पूछ-ताछ की गई हो । परीक्षित । निंदित ।

अनुयोक्तृ—(पु०) [अनु√युज्+तृच] जिज्ञासु । परीक्षक । शिक्षक ।

अनुयोग—(पु०) [अनु √युज्+घञ्] प्रश्न । । खोज परीक्षा । भर्त्सना, डाँट-डपट, धिक्कार । याचना । उद्योग । ध्यान । टीका-टिप्पणी ।—**कृत्**–(पु०) प्रश्नकर्त्ता । उपदेशक, शिक्षक, गुरु ।

अनुयोजन—(न०) [अनु√युज्+ल्युट्] प्रश्न । खोज ।

अनुयोज्य—(वि०) [अनु√युज्+ण्यत्] जिससे प्रश्न किया जा सके । जिससे डाँट-फटकार के साथ पूछताछ की जा सके । (पुं०) सेवक ।

अनुरक्त—(वि०) [अनु√रञ्ज्+क्त] लाल, रंगीन । प्रसन्न । सन्तुष्ट । अनुरागवान्, प्रेमी ।

अनुरक्ति—(स्त्री०) [अनु√रञ्ज्+क्तिन्] प्रेम, अनुराग । भक्ति ।

अनुरञ्जक—(वि०) [अनु√रञ्ज्+ण्वुल्] प्रसन्न या संतुष्ट करने वाला, आह्लादकर ।

अनुरञ्जन—(न०) [अनु√रञ्ज्+ल्युट्] प्रसन्न या संतुष्ट करना ।

अनुरति—(स्त्री०) [अनु √रम्+क्तिन्] प्रेम, अनुराग ।

अनुरथ्या—(स्त्री०) [रथ्याम् अन्वायतं स्थिता इति अत्या० स०] पगडंडी, उपमार्ग ।

अनुरस—(पु०) [प्रा० स०] गौण रस (काव्य) । गौण स्वाद । प्रतिध्वनि ।

अनुरसित—(न०) [अनु√रस+क्त (भावे)] प्रतिध्वनि ।

अनुरहस—(वि०) [अनुगतं रहः अत्या० स० अच्] निर्जन स्थान में गया हुआ । (अव्य०) [अव्य० स०] एकान्त में ।

अनुराग—(पुं०) [अनु √रञ्ज्+घञ्] ललाई । भक्ति । प्रेम । स्वामिभक्ति ।

अनुरागिन्,—अनुरागवत्—(वि०) [अनुराग+इनि] [अनुराग+मतुप्] प्रेमपूर्ण ।

अनुरात्रम्—(अव्य) [अव्य० स०] रात्रि में । प्रत्येक रात्रि । एक रात के बाद दूसरी रात ।

अनुराधा—(स्त्री०) [अनुगता राधाम्=विशाखाम् अत्या० स०] २७ नक्षत्रों में से १७वाँ, यह सात तारों के मिलने से सर्पाकार है ।

अनुरूप—(वि०) [रूपस्य सादृश्ये योग्यत्वे वा अव्य० स०] अनुहार, तुल्य, सदृश, समान, सरीखा । योग्य, अनुकूल, उपयुक्त ।

अनुरूपतस्,—अनुरूपशस्— (क्रि० वि०) [अनुरूप+तस्] [अनुरूप+शस्] सादृश्य से, अनुहार से, अनुसार ।

अनुरोध—(पुं०)—**अनुरोधन**—(न०) [अनु√रुध्+घञ्] [अनु√रुध्+ल्युट्] अनुसरण । लिहाज । विचार । रुकावट, बाधा । आग्रह, दबाव । विनयपूर्वक किसी बात के लिये आग्रह । प्रार्थना ।

अनुरोधिन्,—अनुरोधक—(वि०) [अनु√रुध्+णिनि] [अनु√रुध्+ण्वुल्] अनुसरण करने वाला । अपेक्षा रखने वाला । विनयी, विनम्र ।

अनुलम्बन—(न०) [अनु√लम्ब+णिच्+ल्युट्] किसी कर्मचारी के अपराधी या दोषी होने का संदेह उत्पन्न होने पर उसे तब तक के लिये अपने पद से हटा देना जब तक उस सम्बन्ध में यथोचित छानबीन या जाँच न हो ले (सस्पेंशन) ।

अनुलाप—(पुं०) [अनु वारं वारम् लप्यते इति विग्रहे अनु√लप+घञ्] बारबार कथन, पुनरुक्ति, द्विरुक्ति । (न्याय०) पुनर्वाद, आम्रेडन ।

अनुलास,—अनुलास्य—(पुं०) मोर, मयूर ।

अनुलेप—(पुं०)—**अनुलेपन**—(न०) [अनु√लिप्+घञ्] [अनु√लिप्+ल्युट्] किसी तरल वस्तु की तह चढ़ाना, सुगन्धित वस्तुओं को शरीर में लगाना, उबटन करना । उबटन, लेप ।

अनुलोम—(वि०) [अत्या० स०] केश-सहित । क्रमबद्ध । नियमित । अनुकूल । (पुं०) वर्णसंकर जाति के वंशज । संगीत में स्वरों का उतार, अवरोह । (अव्य०) [अव्य० स०] क्रमानुसार । नियमित रूप से ।—**अर्थ**—(वि०) अनुकूल कथनवाला ।—**ज,—जन्मन्**—(वि०) यथाक्रम उत्पत्ति वाला, पिता की अपेक्षा हीनवर्णा माता की सन्तान, वर्णसङ्कर ।

अनुलोमा—(स्त्री०) [अत्या० स०] पति से हीन वर्ण की स्त्री ।

अनुल्बण—(वि०) [न उल्बणः न० त०] अत्यधिक नहीं । न अधिक न कम । अस्पष्ट, अव्यक्त ।

अनुवंश—(पुं०) [वंशम् अनुगतः अत्या० स०] परंपरागत वृत्तान्त । वंशावलीपत्र या वंशवृक्ष, वंशावलीपत्र ।

अनुवक्र—(वि०) [प्रा० स०] कुछ टेढ़ा ।

अनुवचन—(न०) [प्रा० स०] दुहराना । पाठ । शिक्षण । भाषण । अध्याय ।

अनुवत्सर—(पुं०) [प्रा० स०] ज्योतिष के अनुसार पाँच वर्षों के युग का चौथा वर्ष । (अव्य०) [अव्य० स०] प्रति वर्ष, हर साल ।

अनुवर्तन—(न०) [अनु √वृत्+ल्युट्] अनुगमन । आज्ञापालन । समर्थन । प्रसन्नता । कृतज्ञता । पसंदगी । परिणाम, फल । किसी पूर्ववर्ती सूत्र से पदों को ले आना ।

अनुवश—(वि०) [अत्या० स०] दूसरे का

वशवर्ती, दूसरे की इच्छा पर निर्भर, परवश। आज्ञाकारी ।

अनुवाक—(पुं०) [अनु उच्यते इति विग्रहे अनु√वच् घञ्] गानशून्य ऋचाओं का भेद । ऋग् और यजुस् का समूह । वेद का भाग । दुहराना ।

अनुवाक्या—(स्त्री०) [अनु√वच्+ण्यत्] वह मंत्र जिसे प्रशास्ता नाम से प्रसिद्ध ऋत्विक् देवता को बुलाने के लिये पढ़ता है । वैदिक स्तोत्र । वैदिक विधि ।

अनुवाचन—(न०) [अनु√वच्+णिच्+ल्युट्] अध्वर्यु के आदेशानुसार होता द्वारा ऋग्वेद के मंत्रों का पाठ । पढ़वाना, पाठ कराना । स्वयं बांचना या पढ़ना ।

अनुवाते—(अव्य०) [अव्य० स०] हवा का रुख, जिस ओर की हवा हो उस ओर । (पुं०) [अनुकूलो वातः प्रा० स०] वह वायु जो जाने वाले की ओर बह रही हो । शिष्य की ओर से गुरु की ओर बहने वाली वायु ।

अनुवाद—(पुं०) [अनु√वद्+घञ्] पुनरुक्ति । व्याख्या करने के लिये या उदाहरण देने के लिये अथवा पुष्ट करने के लिये किसी अंश का बार-बार पढ़ना । किसी ऐसे विषय का जिसका निरूपण हो चुका हो, व्याख्या रूप में या प्रमाण रूप में पुनः पुनः कथन, समर्थन । सूचना । अफवाह । भाषान्तर, उल्था, तर्जुमा ।

अनुवादक,—अनुवादिन्—(वि०) [अनु√वद्+ण्वुल्] [अनु√वद्+णिनि] उल्था करने वाला, भाषान्तर करने वाला । व्याख्या के साथ दुहराने वाला । समर्थन करने वाला । (पुं०) संगीत में स्वर का एक भेद ।

अनुवाद्य—(वि०) [अनु√वद्+ण्यत्] अनुवाद करने योग्य । व्याख्या करने योग्य । उदाहरणीय ।

अनुवारम्—(अव्य०)[अव्य० स०]बार-बार । समय-समय पर । अक्सर ।

अनुवास—(पुं०)-**अनुवासन**-(न०) [अनु√वस्+णिच्+घञ्] [अनु√वस्+णिच्+ल्युट् (भावे)] धूप आदि सुगंधित द्रव्यों से सुवासित करना, बसाना । स्नेहवस्ति—तैल पदार्थों का एनिमा करना, स्नेहयुक्त करना । (पुं०) [करणे ल्युट्] पिचकारी ।

अनुवासित—(वि०) [अनु√वस्+णिच्+क्त] बसाया हुआ, सुवासित, सुगन्धित ।

अनुवित्ति—(स्त्री०) [अनु√विद्+क्तिन्] प्राप्ति, उपलब्धि ।

अनुविद्ध—[अनु√व्यध्+क्त] छिदा हुआ, सुराख किया हुआ । फैला हुआ । छाया हुआ । ओतप्रोत, परिपूर्ण, व्याप्त । संमिश्रित, सम्बन्धयुक्त । जड़ा हुआ ।

अनुविधान—(न०) [अनु—वि√धा+ल्युट्] आज्ञापालन । आज्ञानुसार कार्य करना ।

अनुविधायिन्—(वि०) [अनु—वि√धा+णिनि)] आज्ञाकारी ।

अनुविनाश—(पुं०) [प्रा० स०] पीछे से विनाश ।

अनुविष्टम्भ—(पुं०) [प्रा० स०] परिणामस्वरूप बाधा में पड़ा हुआ । अन्त में रुद्ध ।

अनुवृत्त—[अनु√वृत्+क्त] आज्ञापालन या अनुवर्तन करने वाला । अबाधित, बिना रोका टोका हुआ । सतत । प्रविष्ट । व्याप्त । पालित ।

अनुवृत्ति—(स्त्री०) [अनु√वृत्+क्तिन्] स्वीकृति । आज्ञापालन । समर्थन । अनुसरण । सातत्य । निरवच्छिन्नता । आवृत्ति । वाक्यार्थ स्पष्ट करने के लिये पूर्ववर्ती वाक्य का कुछ अंश लेना ।

अनुवेलम्—(अव्य०) [अव्य० स०] कभी-कभी, समय-समय । सदैव ।

अनुवेश—(पुं०) **अनुवेशन**-(न०) [अनु विश्√ +घञ्] [अनु√विश्+ल्युट्] अनुसरण । पीछे प्रवेश करना । ज्येष्ठ के अविवाहित रहते कनिष्ठ भाई का विवाह ।

अनुव्यञ्जन—(न०) [प्रा० स०] गौण लक्षण या चिह्न ।

अनुव्याध—अनुवेध–(पु०) [अनु√व्यध्+घञ्] [अनु√विध+घञ्] चोट । छेदन, वेधन । संभोग । मिलन । रोक ।

अनुव्याहरण—(न०)—**अनुव्याहार**– (पु०) [अनु—वि०—आ√हृ+ल्युट्] [अनु—वि—आ√हृ+घञ्] पुनरुक्ति, पुनः पुनः उच्चारण । शाप ।

अनुव्रजन—(न०) —**अनुव्रज्या** —(स्त्री०) [अनु√व्रज्+ल्युट्] [अनु√व्रज्+क्यप्] घर आये हुए शिष्ट पुरुषों के जाने के समय कुछ दूर तक उनको पहुँचाने के लिये जाना, अनुगमन । पीछे जाना ।

अनुव्रत—(वि०) [अनुकूलं व्रतम्=कर्म यस्य ब० स०] निर्धारित कर्तव्य का समुचित रूप से पालन करने वाला । भक्त । अनुरक्त ।

अनुशतिक—(वि०) [शतेन क्रीतः इत्यर्थे शत+ठन्—इक] सौ के साथ या सौ में खरीदा हुआ ।

अनुशय—(पु०) [अनु√शी+अच्] पश्चात्ताप । दुःख । क्षोभ । भारी वैर, घोर शत्रुता । महाक्रोध । घृणा । घनिष्ठ सम्बन्ध । घनिष्ठ अनुराग । किसी वस्तु के खरीदने के बाद का क्षोभ । दुष्कर्मों का परिणाम । दान संबंधी विवादों का निर्णय ।

अनुशयान—(वि०) [अनु√शी+शानच्] पश्चात्ताप करने वाला । क्षुब्ध । दुःखी ।

अनुशयाना—(स्त्री०) [अनु√शी+शानच् टाप्] परकीया नायिका का एक भेद । वह जो अपने प्रिय के मिलने के स्थान के नष्ट होने पर दुःखी हो ।

अनुशयिन्—(पु०) [अनु√शी+इनि] वह जीव जो चंद्रलोक का भोग समाप्त होने पर पश्चात्ताप करता है और भूलोक में आने के लिये इच्छुक रहता है । (वि०) अनुरक्त । पश्चात्ताप करने वाला । अत्यधिक घृणोत्पादक । वैर या द्वेष रखने वाला ।

अनुशर—(पु०) [अनु√शृ+अच्] राक्षस ।

अनुशासक,— अनुशासिन्,— अनुशास्तृ—(वि०) [अनु√शास+ण्वुल्][अनु√शास्+णिनि] [अनु√शास+तृच्] शासन करने वाला । आज्ञा देने वाला । देश या राज्य का प्रबन्ध करने वाला । उपदेष्टा, शिक्षक ।

अनुशासन—(न०) [अनु√शास+ल्युट्] उपदेश, शिक्षा । आज्ञा, आदेश । व्याख्यान, विवरण । महाभारत का एक पर्व ।

अनुशिष्टि—(स्त्री०) [अनु√शास+क्तिन्] आदेश । शिक्षण । आज्ञा । विचारपूर्वक कर्तव्याकर्तव्य का निरूपण ।

अनुशीलन—(न०) [अनु√शील+ल्युट्] बार-बार देखना या विचारना या अभ्यास करना । नियमित अध्ययन ।

अनुशोक—(पु०)—**अनुशोचन**—(न०) [अनु√शुच्+घञ्] [अनु√शुच्+ल्युट् शोक, पछतावा । दुःख, खेद ।

अनुश्रव—(पु०) [अनुश्रूयते गुरुपरम्परया उच्चारणात् अनु अभ्यस्यते, श्रूयते एव न तु केनापि क्रियते वा इति अनु√श्रु+अप्] गुरुपरम्परा से उच्चारित, जो केवल सुना जाय, वेद ।

अनुषक्त—[अनु√सञ्ज्+क्त] सम्बन्धित । चिपका हुआ, सटा हुआ ।

अनुषङ्ग—(पु०) [अनु√सञ्ज्+घञ्] अति निकट सम्बन्ध या विद्यमानता । सम्बन्ध, मेल । एकी भाव, संहति । एक शब्द का दूसरे शब्द से सम्बन्ध । निश्चित परिणाम । दया, करुणा । प्रसङ्ग से एक वाक्य के आगे और वाक्य लगा लेना । (न्याय में) उपनयन के अर्थ को निगमन में ले जाकर घटाना । उत्कट इच्छा ।

अनुषञ्जिन्—(वि०) [अनु√सञ्ज्+णिनि] सम्बन्धयुक्त, सम्बन्धी । सटा हुआ, चिपका हुआ । व्याप्त ।

अनुषेक—(पुं०) [अनु√सिच्+घञ्] पानी से बार-बार तर करना । सींचना ।

अनुषेचन—(न०) [अनु√सिच्+ल्युट्] दे० 'अनुषेक' ।

अनुष्टुति—(स्त्री०) [अनु√स्तु+क्तिन्] स्तुति । प्रशंसा । (यथाक्रम) ।

अनुष्टुभ—(स्त्री०) [अनु√स्तुभ्+क्विप्-षत्व] प्रशंसा से पूर्ण वाणी । सरस्वती । चार पाद का एक छन्द । इसके प्रत्येक पाद में आठ अक्षर होते हैं ।

अनुष्ठातृ—अनुष्ठायिन्—(वि०) [अनु√स्था+तृच्] [अनु√स्था+णिनि] अनुष्ठान करने वाला । कार्य आरंभ करने वाला ।

अनुष्ठान—(न०) [अनु√स्था+ल्युट् षत्व] किसी क्रिया का प्रारम्भ । शास्त्रविहित किसी कर्म को नियमपूर्वक करना । पुरश्चरण ।

अनुष्ठापन—(न०) [अनु√स्था+ णिच् ल्युट्] कोई काम करवाना ।

अनुष्ठेय—(वि०' [अनु√स्था+यत्] अनुष्ठान के योग्य । करणीय ।

अनुष्ण—(वि०) [न उष्णः न० त०] जो गर्म न हो, ठंडा । सुस्त, काहिल । (न०) नीलकमल ।—**अशीत** (अनुष्णाशीत)-(वि०) जो न ठंडा हो और न गरम ।—**गु**-(पुं०) चंद्रमा ।—**वल्लिका**-(स्त्री०) नील दूर्वा ।

अनुष्यन्द—(पुं०) [अनु√स्यन्द्+घञ्] पिछला पहिया ।

अनुष्वध—(वि०) [स्वधाम् अनु, स्वधया सहितः] अन्न या भोजन सहित । (क्रि० वि०) भोजन के पश्चात् । किसी की इच्छा के अनुसार ।

अनुसन्धान—(न०) [अनु√सम्√धा+ल्युट्] खोज, तहकीकात, सूक्ष्म निरीक्षण या पर्यवेक्षण । परीक्षा, जाँच । चेष्टा, प्रयत्न । उपयुक्त सम्बन्ध ।

अनुसन्धि—(पुं०) [अनु√सम्√धा+कि] गुप्त मंत्रणा । गुप्त योजना ।

अनुसंहित—[अनु—सम्√धा+क्त] तहकीकात किया हुआ । खोज किया हुआ । जाँचा हुआ ।

अनुसंहितम्—(अव्य०) [अव्य० स०] (वेद में) संहिता के अनुसार ।

अनुसमय—(पुं०) [अनु—सम्√इ+ अच्] नियमित या उपयुक्त सम्बन्ध जैसा कि शब्दों का ।

अनुसमापन—(न०) [अनु—सम्√आप् +ल्युट्] नियमित समाप्ति ।

अनुसम्बन्ध—(वि०) [अनुगतः सम्बन्धम् अत्या० स०] सम्बन्धयुक्त ।

अनुसर—(पुं०) [अनु√सृ+अच्] अनुचर, नौकर । सहचर, साथी ।

अनुसरण—(न०) [अनु√सृ+ल्युट्] पीछे-पीछे चलना । पीछा करना । समर्थन । अनुकूल आचरण । अनुकरण ।

अनुसर्प—(पुं०) [अनु√सृप्+अच्] पेट के बल रेंगने वाले जन्तु । छिपकली, सर्प आदि ।

अनुसवनम्—(अव्य०) [अव्य० स०] यज्ञान्तर । प्रत्येक यज्ञ में । प्रतिक्षण ।

अनुसाम—(वि०) [अत्या० स०] अनुकूल । संतुष्ट किया हुआ ।

अनुसायम्—(न०) [अव्य० स०] प्रतिसन्ध्या, हर शाम ।

अनुसार—(पुं०) [अनु√सृ+घञ् (भावे)] अनुसरण, अनुक्रम । पद्धति, रीति-रस्म । निश्चित परिपाटी । प्राप्त या प्रतिष्ठित अधिकार । (वि०) [कर्तरि घञ्] अनुकूल । अनुरूप, मुताबिक ।

अनुसारक—अनुसारिन्—(वि०) [अनु√

सृ+ण्वुल्] [अनु√सृ+णिनि] अनुसरण करने वाला। खोज करने वाला। अनुरूप।

अनुसारणा—(स्त्री०) [अनु√सृ+णिच्+युच्] पीछे-पीछे जाना। पीछा करना।

अनुसूचक—(वि०) [अनु√सूच्+णिच्+ण्वुल्] बतलाने वाला, निर्देश करने वाला।

अनुसूचन—(न०) [अनु√सूच्+णिच्+ल्युट्] निर्देश, बतलाना। प्रकट करना।

अनुसूची—(स्त्री०) [अनु√सूच्+णिच्+इन्, ङीप्] खानापूरी। कोष्ठक या व्यवस्थित सूची के रूप में दी गयी वह नामावली जो प्रायः किसी विवरण, नियमावली आदि के परिशिष्ट की तरह दी जाय। (शेड्यूल)।

अनुसृति—(स्त्री०) [अनु√सृ+क्तिन्] पीछे, पीछे जाना, पीछे चलना। समर्थन।

अनुसेविन्—(वि०) [अनु√सेव+णिनि] सेवा करने वाला।

अनुसैन्य—(न०) [सैन्यम् अनुगतम् अत्या० स०] किसी सेना का पिछला भाग। मुख्य सेना का सहायक सैन्य दल।

अनुस्कन्दम्—(अव्य०) [अव्य० स०] यथा-क्रम से उत्तराधिकारी होना। क्रम से किसी वस्तु का मालिक होना, 'गेहं गेहमनुस्कन्दम्।' सिद्धान्तकौमुदी।

अनुस्तरण—(न०) [अनु√स्तृ+ल्युट्] चारों ओर से सीना या गाँठना। चारों ओर फैलाना या बिछाना।

अनुस्तरणी—(स्त्री०) [अनु√स्तृ+ल्युट्, ङीप्] गौ। वह गौ जो किसी के मृतक कर्म में उत्सर्ग की जाय।

अनुस्मरण—(न०) [अनु√स्मृ+ल्युट्] स्मरण, याददाश्त। बार-बार का स्मरण।

अनुस्मारक—(वि०) [अनु√स्मृ+णिच्+ण्वुल्] स्मरण दिलाने वाला (पत्र या व्यक्ति आदि)। (रिमाइंडर)।

अनुस्मृति—(स्त्री०) [अनु√स्मृ+क्तिन्] वह स्मृति या स्मरण जो प्रिय हो। अन्य वस्तुओं को त्याग कर एक ही वस्तु का ध्यान या चिंतन।

अनुस्यूत—(वि०) [अनु√सिव+क्त, ऊठ्] ग्रथित। बुना हुआ। खूब मिला हुआ। सिला हुआ। बँधा हुआ।

अनुस्वान—(पुं०) [अनु√स्वन्+घञ्] झाईं, प्रतिध्वनि, एक स्वर के समान दूसरा स्वर।

अनुस्वार—(पुं०) [अनु√स्वृ+घञ्] स्वर के बाद उच्चारण किया जाने वाला एक अनु-नासिक वर्ण। इसका चिह्न [ं] है, स्वर के ऊपर की बिंदी।

अनुहरण—(न०) **अनुहार**—(पुं०) [अनु√हृ+ल्युट्] [अनु√हृ+घञ्] नकल। समानता।

अनूक—(पुं०) (न०) [अनु√उच्+क, कुत्वम् नि०] मेरुदंड, रीढ़। मेहराब के बीच की ईंट। वेदी का पिछला हिस्सा। एक यज्ञ-पात्र। पूर्वजन्म। वंश। कुटुम्ब। स्वभाव।

अनूचान—(वि०) [अनु√वच्+कान नि०] साङ्गोपाङ्ग वेद पढ़ा हुआ विद्वान्। वेदों का अर्थ करने वाला। विनय-युक्त, सुशील। —**मानी**-(वि०) अपने को वेदार्थ का ज्ञाता समझने वाला।

अनूढ—(वि०) [√वह्+क्त न० त०] न ढोया हुआ, न ले जाया हुआ। क्वारा। अविवाहित। —**मान**-(वि०) लज्जाशील, लजवन्त, लजीला। —**भ्रातृ**-(पुं०) अविवाहित पुरुष का भाई।

अनूढा—(स्त्री०) [√वह्+क्त, टाप् न० त०] क्वारी, अविवाहिता। —**भ्रातृ**-(पुं०) अविवाहिता स्त्री का भाई। राजा की रखैल का भाई।

अनूदक—(न०) [उदकस्याभावः न० त०] जलाभाव। सूखा, अनावृष्टि।

अनूदित—(वि०) [अनु√वद्+क्त] पीछे कहा हुआ, उलथा किया हुआ, भाषांतरित।

अनूद्य—(वि०) [अनु√वद्+क्यप्] पीछे कहे जाने योग्य। अनुवाद करने योग्य।

अनूद्देश—(पुं०) [अनु—उत्√दिश+घञ्] एक अलङ्कार।

अनून—(वि०) [ऊन+क न० त०] जो हीन या घटिया न हो। अधिक। जिसे पूरा अधिकार हो। संपूर्ण, समग्र।

अनूप—(वि०) [अनुगता आपो यत्र ब० स० अच् आत उत्वम्] जल के पास का या जल की अधिकता वाला। दलदल वाला। (पुं०) जलप्राय या अधिक जल वाला स्थान या देश। एक देश का नाम। दलदल। तालाब। (नदी आदि का) किनारा। मेढ़क। तीतर की जाति का एक पक्षी। भैंसा। हाथी।—**ज**-(न०) नम, तर। अदरक, आदी।—**प्राय**-(वि०) दलदल वाला।

अनूरु—(वि०) [नास्ति ऊरू यस्य न० ब०] जंघारहित। (पुं०) सूर्य के सारथि अरुण देव। उषःकाल, भोर, तड़का।—**सारथि**-(पुं०) सूर्य।

अनूर्जित—(वि०) [न ऊर्जितः न० त०] अदृढ़। निर्बल। सामर्थ्यहीन। गर्वरहित।

अनूषर—(वि०) [न ऊषरः न० त०] जो लोना या ऊसर न हो।

अनृच्, अनृच—(वि०) [नास्ति ऋक् यस्य न० ब०] [न० ब० अच्] बिना ऋचा का। जो ऋग्वेद न पढ़ा हो या न जानता हो। यज्ञोपवीत न होने के कारण जिसे वेदाध्ययन का अधिकार न हो।

अनृचो माणवकः।

मुग्धबोध।

अनृजु—(वि०) [न ऋजुः न० त०] जो सीधा न हो, टेढ़ा। दुष्ट, बेईमान, बुरा।

अनृण—(वि०) [नास्ति ऋणम् यस्य न० ब०] जो कर्जदार न हो। जिसके ऊपर ऋषियों, देवों एवं पितरों का ऋण न हो।

अनृत—(वि०) [न ऋतम् यस्य न० ब०] झूठा। (न०) खेती। व्यापार। [न० त०] असत्य, झूठ।—**वदन**,—**भाषण**,—**व्याख्यान** (न०) झूठ बोलना, असत्य बोलना।—**वादिन्**—**वाच्**-(वि०) झूठा।—**व्रत**-(वि०) जो अपना व्रत झूठा सिद्ध करे। जो अपने वचन या प्रतिज्ञा का पालन न करे।

अनृतु—(पुं०) [न ऋतुः न० त०) अनुचित समय, बेठीक वक्त।—**कन्या**-(स्त्री०) लड़की जिसको रजस्वलाधर्म न हुआ हो।

अनेक—(वि०) [न एकः न० त०] एक नहीं, एक से अधिक, कई। भिन्न-भिन्न। वियुक्त। विभाजित।—**काम**-(वि०) बहुत सी इच्छाओं वाला।—**कालावधि**-(अव्य०) चिरकाल से।—**कृत्**-(पुं०) शिव।—**चर**-(वि०) झुंड बनाकर रहने वाला, समूह में रहने वाला।—**चित्त**-(वि०) जिसका मन चंचल हो।—**त्र**-(अव्य०) कई जगह।—**धा**-(अव्य०) कई प्रकार से।—**प**-(पुं०) हाथी।—**भार्य**-(वि०) जिसकी कई स्त्रियाँ हों।—**रूप**-(वि०) कई रूपों वाला। अस्थिर। (पुं०) परमेश्वर।—**लोचन**-(पुं०) शिव। इंद्र। विराट् पुरुष।—**वर्ण**-(न०) अज्ञात राशियाँ (बीजगणित)।—**विध**-(वि०) कई प्रकार का।—**शः**-(अव्य०) कई बार, बहुधा। अनेक प्रकार से। बहुत बड़ी संख्या में, बड़ी तादाद में। बड़े परिमाण में।

अनेकान्त—(वि०) [न एक एव अन्तः परिच्छेदो यस्य न० ब०] जो एक रूप से मापा या विचार किया नहीं जाता। अनिश्चित, जिसके विषय में कुछ निश्चय न हो। चञ्चल।—**वाद**-(पुं०) स्याद्वाद, आर्हतदर्शन, जैनदर्शन।—**वादिन्**-(पुं०) बौद्ध। जैन। सात पदार्थों को मानने वाले नास्तिकों का भेद।

अनेड—(वि०) [न एडः न० त०] मूर्ख आदमी। अनाड़ी आदमी।—**मूक**-(वि०) गूँगा बहरा। अंधा। बेईमान। दुष्ट।

अनेनस्—(वि०) [नास्ति एनः यस्य न० ब०] पापरहित । कलङ्कशून्य ।

अनेहस्—(हा) (पुं०) [न हन्यते इति विग्रहे √हन्+असु 'एह्' आदेश] समय, काल ।

अनैकान्त—(वि०) [एकान्त+अण् न० त०] अनिश्चित । चञ्चल, अस्थिर । परिवर्तनीय । नैमित्तिक ।

अनैकान्तिक—(वि०) [एकान्तं नियतं प्राप्नोति, एकान्त+ठक् न० त०] [स्त्री०—**अनैकान्तिकी**) चञ्चल, अस्थिर । न्याय में हेत्वाभास के पाँच प्रकारों में से एक; दुष्ट हेतु ।

अनैक्य—(न०) [एकस्य भावः इत्यर्थे एक+यत् न० त०] एकता का अभाव । बहुत्व । फूट, मतभेद । अव्यवस्था ।

अनैतिह्य—(न०) [न ऐतिह्यम् न० त०] परम्परा-प्राप्त उपदेश या प्रमाण का अभाव ।

अनो—(अव्य०) [न नो न० त०) नहीं, न ।

अनोकशायिन्—(पुं०) [अनोके=अगृहे शेते इति√शी+णिनि] घर में न सोने वाला, भिक्षुक ।

अनोकह—(पुं०) [अनसः=शकटस्य अकम्=गतिम् हन्ति इति√हन्+ड] वृक्ष ।

अनोंकृत—(वि०) [न ओंकृतः न० त०] ओं इस पवित्र अक्षर के साथ न किया हुआ ।

अनौचित्य—(न०) [उचित+ष्यञ् न० त०] अनुचित या नामुनासिब होना । अयोग्यता । अयुक्तता ।

अनौजस्य—(न०) [ओजस् ष्यञ् न० त०] साहस या बल का अभाव ।

अनौद्धत्य—(न०) [उद्धत+ष्यञ् न० त०] उच्छृङ्खलता या दर्प का अभाव । शील । विनम्रता । शान्ति ।

अनौरस—(वि०) [उरस+अण् न० त०] जो औरस—विवाहिता पत्नी से उत्पन्न—न हो, अवैध या गोद लिया हुआ (पुत्र) ।

√अन्त्—भ्वा० पर० सक० बाँधना । अन्तति ।

अन्त—(वि०) [√अम्+तन्] समीप । अखीर । सुन्दर । प्यारा । सब से नीचा । सब से गयाबीता । सब से छोटा (उम्र में) । (पुं०) [कभी कभी नपुंसक भी] छोर, सीमा, मर्यादा । किनारा । वस्त्र का आँचल । पड़ोस । सामीप्य । उपस्थिति समाप्ति । मृत्यु, नाश । (व्याकरण में) किसी शब्दका अन्तिम अक्षर या शब्दांश । समासान्त शब्द का अन्तिम शब्द, पिछला भाग या अवशेष भाग जैसे—निशान्त, वेदान्त । प्रकृति, अवस्था । प्रकार, जाति । स्वभाव, मिजाज । सारांश ।—**अवशायिन्**–(पुं०) चाण्डाल ।—**अवसायिन्**-(पुं०) नाई । चाण्डाल ।—**कर**, —**करण**, —**कारिन्**–(वि०) नाशक, मारक ।—**कर्मन्**–(न०) मृत्यु ।—**काल**–(पुं०)—**वेला**–(स्त्री०) मृत्यु का समय या मृत्यु की घड़ी ।—**ग**–(वि०) अन्त तक पहुँचा हुआ । भली भाँति परिचित । —**गति**,—**गामिन्**–(वि०) नष्ट होने वाला, नाशवान् ।—**गमन**–(न०) समाप्ति, पूर्णता । मृत्यु ।—**दीपक**–(न०) अलङ्कार-विशेष ।—**पाल**–(पुं०) आगे का संत्यदल । द्वारपाल ।—**लीन**–(वि०) छिपा हुआ ।—**लोप**–(पुं०) शब्द के अन्तिम अक्षर का अभाव ।—**वासिन्**–(**अन्तेवासिन्**)–(वि०) सीमा पर रहने वाला या समीप रहने वाला ।(पुं०) शिष्य जो सदा अपने शिक्षक के समीप रहकर विद्याध्ययन करता है । चाण्डाल जो गाँव के निकास पर रहता है । —**शय्या**–(स्त्री०)भूमि पर का बिछौना, मृत्यु-शय्या । कब्रगाह, श्मशान ।—**सत्क्रिया**–(स्त्री०)दाहकर्म ।—**सद्**-(पुं०) शिष्य, छात्र ।

अन्तक—(वि०) [अन्तं करोति इत्यर्थे अन्त+णिच्+ण्वुल्—अक] जिससे मौत हो, नाश करने वाला । (पुं०) काल । यमराज । ईश्वर । सन्निपात ज्वर का एक भेद । सीमा । मृत्यु ।

अन्ततः—(अव्य०) [अन्त+तस्] अन्त

से, अन्त में। सब से पीछे से। कुछ-कुछ, थोड़ा-थोड़ा। भीतर, अन्दर।

अन्तर्—(अव्य०) [√अन्+अरन् तुडागम] (धातु का एक उपसर्ग) बीचोबीच, मध्य में। अन्दर, में। —अग्नि–(अन्तरग्नि) (पु०) जठराग्नि, पेट के अंदर की आग जो भोजन पचाती है। —अङ्ग–(अन्तरङ्ग) (वि०) भीतरी, भीतर का। (न०) भीतरी अंग अर्थात् हृदय, मन। प्रगाढ़ मित्र। — आकाश–(अन्तराकाश) (पु०) ब्रह्म जो हृदय में वास करता है। —आकूत–(अन्तराकूत) (न०) गुप्त विचार, मन में छिपा हुआ इरादा। —आत्मन्–(अन्तरात्मन्) (पु०) आत्मा, जीव। हृदय। (बहुवचन में) आत्मा के भीतर रहने वाला परमात्मा। —आराम–(अन्तराराम) (वि०) मन में आनन्दानुभव करने वाला। —इन्द्रिय–(अन्तरिन्द्रिय) (न०) भीतर की इन्द्रिय, मन। —करण–(अन्तःकरण) (न०) हृदय। जीव। विचार और अनुभव का स्थान। विचार-शक्ति। मन, सत्यासत्य विवेक शक्ति। —कलह–(अन्तःकलह) (पु०) आपसी लड़ाई, गृहयुद्ध। —कुटिल–(अन्तःकुटिल) (वि०) मन का कपटी, कुटिल। (पु०) शङ्ख। —कोण–(अन्तःकोण) (पु०) भीतरी कोना। —कोप–(अन्तःकोप) (पु०) अदरूनी गुस्सा, भीतरी क्रोध। —गडु–(अन्तर्गडु) (वि०) निकम्मा, व्यर्थ, अनुपयोगी। —गत–(अन्तर्गत) (वि०) भीतर समाया हुआ। शामिल। गुप्त। —गति–(अन्तर्गति) (स्त्री०) भावना, मन की वृत्ति। —गर्भ–(अन्तर्गर्भ) (वि०) गर्भयुक्त। —गिरम्,—गिरि–(अन्तर्गिरम्, अन्तर्गिरि) (अव्य०) पहाड़ों में। —गुडवलय–(अन्तर्गुडवलय) (पु०) अन्तर्गुदावलय, मलद्वार आदि स्वाभाविक छिद्रों को खोलने मूँदनेवाली गोलाकार पेशी। —गूढ–(अन्तर्गूढ) (वि०) भीतर छिपा हुआ। —० विष–(अन्तर्गूढविष) (पु०) हृदय में छिपा हुआ विष। —गृह,—गेह,—भवन–(अन्तर्गृह, अन्तर्गेह, अन्तर्भवन) (न०) घर के भीतर का कोठा या कमरा, तहखाना। —ग्रस्त–(अन्तर्ग्रस्त) (वि०) जो किसी विपत्ति, अपराध या कठिनाई आदि में लिप्त या ग्रस्त हो गया हो। [इनवाल्व्ड]। —घण–(अन्तर्घण) (पु० न०), घर के द्वार के सामने का खुला हुआ स्थान। —ज्वर–(अन्तर्ज्वर) (वि०) शरीर में व्याप्त। —जठर–(अन्तर्जठर) (न०) पेट। —जानु–(अन्तर्जानु) (वि०) हाथों को घुटनों के बीच रखे हुये। —ताप–(अन्तस्ताप) (पु०) भीतरी ज्वर। —दहन–(न०)—दाह–(अन्तर्दहन, अन्तर्दाह) (पु०) भीतरी गर्मी। सूजन। —देशीय–(अन्तर्देशीय) (वि०) देश के भीतर होने या उसके भीतरी हिस्से से संबंध रखने वाला। —०जलपथ–(न०) देश के भीतर के जलमार्ग। —० वाणिज्य–(न० दे०) 'अन्तर्वाणिज्य'। —द्वार–(अन्तर्द्वार) (न०) घर का चोर दरवाजा। —धान–(अन्तर्धान) (न०) छिप जाना, लोप हो जाना। मुनि आदि का शरीर छोड़ना। —धि–(अन्तर्धि) (पु०) ढकना। छिपना। व्यवधान। —पट–(अन्तःपट) (न०) पर्दा, चिक। —परिधान–(अन्तःपरिधान) (न०) पोशाक के सबसे नीचे का वस्त्र। —पुर–(अन्तःपुर) (न०) जनानखाना। महल के भीतर का कमरा। महल के भीतर रहने वाली स्त्रियाँ। —पुरिक–(अन्तःपुरिक) (पु०) जनान खाने का दरोगा। —भाव–(अन्तर्भाव) (पु०) अंतर्गत होना। अभाव। तिरोभाव। आशय। अष्टकर्म (जैन०)। —भेद–(अन्तर्भेद) (पु०) भीतरी झगड़े, आपसी झगड़ा, टंटा। —मनस्–(अन्तर्मनस्) (वि०) उदास, उद्विग्न। —मातृका–(अन्तर्मातृका) (स्त्री०) भीतर शरीर के छह चक्रों की अक्षरावली। —मुख–(अन्तर्मुख) (वि०) भीतर की ओर मुख वाला। भीतर की ओर जाने वाला। —यामिन्–(अन्तर्यामिन्) (वि०)

दिल की बात जानने वाला।(पुं०) अंतःकरण में स्थित जीव की प्रेरणा करने वाला ईश्वर, आत्मा।—लापिका–(अन्तर्लापिका) (स्त्री०) वह पहेली जिसका उत्तर उसी के अक्षरों से निकलता हो।—लीन–(अन्तर्लीन) (वि०) भीतर छिपा हुआ।—वत्नी–(अन्तर्वत्नी) (स्त्री०) गर्भिणी स्त्री।—वस्त्र,—वासस्–(अन्तर्वस्त्र, अन्तर्वासस्) (न०) भीतर पहनने का कपड़ा। अंगे आदि के नीचे पहिनने का वस्त्र, बनियाइन आदि।—वाणि–(अन्तर्वाणि) (वि०) प्रकाण्ड विद्वान्।—वाणिज्य–(अन्तर्वाणिज्य) (न०) देश के भीतरी भागों में होने वाला व्यापार, आभ्यंतर व्यापार (इंटरनल ट्रेड)।—वेग–(अन्तर्वेग) (पुं०) अंदरूनी बुखार। भीतर की घबड़ाहट, आन्तरिक चिन्ता।—वेदि,—वेदी–(अन्तर्वेदि, अन्तर्वेदी) (स्त्री०) अन्तर्वेद, वह प्रदेश जो गंगा और यमुनानदी के बीच में है।—वेश्मन्–(अन्तर्वेश्मन्) (न०) घर के भीतर का कोठा, भीतर का कोठा।—वेश्मिक–(अन्तर्वेश्मिक) (पुं०) रनवास का प्रबन्धक।—शिला–(अन्तःशिला) (स्त्री०) एक नदी का नाम जो विन्ध्याचल पर्वत से निकलती है।—सत्त्वा–(अन्तःसत्त्वा) (स्त्री०) गर्भिणी स्त्री।—सन्ताप–(अन्तःसन्ताप) (पुं०) अंदरूनी दुःख, क्षोभ, खेद।—सलिल–(अन्तःसलिल) (वि०) पृथिवी के नीचे जल वाला। (न०) वह जल जो जमीन के नीचे बहता है।—सार–(अन्तःसार) (वि०) भारी, दृढ़।—स्वेद–(अन्तःस्वेद) (पुं०) (मतवाला) हाथी।—हास–(अन्तर्हास) (पुं०) खुल कर न हँसी जाने वाली हँसी, गूढ़ हास्य।—हित–(अन्तर्हित) (वि०) छिपा हुआ, गूढ़। अदृश्य, गायब।—० आत्मन्–(पुं०) शिव।—हृदय–(अन्तर्हृदय) (न०) हृदय के भीतर का स्थान।

अन्तर—(वि०) [अन्त√रा+क] भीतरी, भीतर का। समीप का। आत्मीय। प्रिय। समान। भिन्न, दूसरा। बाहरी। बाहर पहना जाने वाला। (न०) भीतर का भाग। छिद्र, सूराख। आत्मा। हृदय। मन। परमात्मा कालसन्धि। बीच का समय या स्थान। अवकाश का समय। कमरा। द्वार, जाने का रास्ता। (समय की) अवधि। मौका, अवसर। (दो वस्तुओं के बीच) अन्तर, फर्क। (गणित में) भिन्नता। शेष। विशेषता। प्रकार, किस्म। निर्बलता। असफलता। त्रुटि। दोष। जमानत। दायित्व-स्वीकृति। सर्वश्रेष्ठता। परिधान, वस्त्र। अभिप्राय, मतलब। प्रतिनिधि। अभाव। (अव्य०) दूर। भीतर।—अपत्या–(अन्तरापत्या) (स्त्री०) गर्भवती स्त्री।—चक्र–(न०) शरीर के भीतर के छः चक्र (तंत्र)। स्वजन-समूह। चिड़ियों की बोली के आधार पर शुभाशुभ जानने की विद्या। दिशा-विदिशा के बीच के अंतर का चतुर्थांश।—ज्ञ–(वि०) भीतर का हाल जानने वाला। दूरदर्शी। परिणामदर्शी।—दिशा (स्त्री०) दो दिशाओं के बीच की दिशा, विदिशा।—पुरुष,—पूरुष–(पुं०) जीव। आत्मा, वह देवता जो पुरुष के भीतर वास करता और उसके शुभाशुभ कर्मों का साक्षी बना रहता है।—प्रभव–(पुं०) वर्णसङ्कर जाति वालों में से एक।—स्थ,—स्थायिन्,—स्थित–(वि०) भीतर रहने वाला। बीच में स्थित।

अन्तरतस्—(अव्य०) [अन्तर+तसि] भीतर से, बीच से।

अन्तरतम—(वि०) [अन्तर+तमप्] अत्यन्त निकट। भीतरी। अत्यन्त विश्वस्त।

अन्तरा—(अव्य०) [अन्तरेति√इण+डा] निकट। मध्य। रहित। बिना।—अंस—(अन्तरांस) (पुं०) वक्षःस्थल, छाती।—भवदेह–(पुं०)—भवसत्त्व–(न०) जीव या बीच की

वह अवस्था जो मृत्यु और जन्म के बीच के काल में रहती है।—वेदि–(पुं०)—वेदी–(स्त्री०) बरंडा, दालान। द्वारमण्डप। दीवाल विशेष।—शृङ्गम्–(अव्य०) सींगों के बीच।

अन्तराय—(पुं०) [अन्तरम्=व्यवधानम् अयते इति अन्तर √अय्+अच्] विघ्न, अड़चन, ओट, मन की एकाग्रता में बाधक बातें (वेदांत), मुक्ति की प्राप्ति के प्रयत्न में लगे हुए व्यक्ति के मार्ग में बाधक होना।

अन्तराल—(न०) [अन्तरम्=मध्यसीमाम् आराति=गृह्णाति इति अन्तर–आ√रा+कः रस्य लत्वम्] मध्यवर्ती स्थान या काल, बीच।—राज्य–(न०) दो देशों की सीमाओं के बीच में पड़ने वाला वह स्वतंत्र राज्य जिसके कारण उन दोनों में प्रत्यक्ष संघर्ष की नौबत नहीं आने पाती।

अन्तरिक्ष,—अन्तरीक्ष–(न० [अन्तः स्वर्ग-पृथिव्योर्मध्ये ईक्ष्यते इति अन्तर√ईक्ष+घञ् पृषो० ह्रस्वः वा] पृथ्वी और स्वर्गलोक के बीच का स्थान, आकाश।—ग,—चर–(पुं०) पक्षी।—जल–(न०) ओस, हिम।

अन्तरित—(वि०) [अन्तर√इ+क्त या अन्तर+णिच्+क्त] बीच में गया हुआ, बीच में पड़ा हुआ। अन्दर घुसा हुआ, छिपा हुआ। ढका हुआ। पर्दे के भीतर का। दृष्टि के ओझल। रुकावट डाला हुआ, रुद्ध, भिन्न किया हुआ, पृथक् किया हुआ। गायब, लुप्त। नष्ट। छूटा हुआ।

अन्तरीप—(पुं०) [अन्तर्मध्ये गता आपोऽस्य ब० स० अच् आत ईत्वम्] भूमि का एक टुकड़ा जो किसी समुद्र या खाड़ी के भीतर तक चला गया हो, द्वीप।

अन्तरीय—(न०) [अन्तर+छ–ईय] नीचे पहनने का कपड़ा, धोती आदि। अंदर पहनने का वस्त्र, बनियाइन आदि।

अन्तरेण—(अव्य) [अन्तर √इण्+ण] बिना, छोड़कर, सिवाय। मध्य में, बीच में। हृदय से, मन से।

अन्तर्य—(वि०) [अन्तर्+यत्] भीतरी, अंदरूनी।

अन्ति—(अव्य०) [√अन्त+इ] समीप में, (नाटकों में) बड़ी बहन।

अन्तिक—(वि०) [अन्त्यते=संबध्यते सामी-प्येन इति √अन्त् + घञ् सोऽस्यास्तीति मत्वर्थीयः ठन्] नजदीकी, समीपी। अंत तक पहुँचने वाला। (न०) [स्वार्थे ठन्] सामीप्य, पड़ोस। उपस्थिति, मौजूदगी।

अन्तिका—(स्त्री०) [अन्त्यते=संबध्यते इति √अन्त् इ, स्वार्थे क, टाप्] बड़ी बहन। चूल्हा, अँगीठी। सातलाख्य या शातलाख्य नाम की ओषधि।

अन्तिम—(वि०) [अन्ते भवः इत्यर्थे अन्त+डिमच्] चरम, सबसे पीछे का, आखिरी।—अङ्क–(अन्तिमाङ्क) (पुं०) नव की संख्या।—अङ्गुलि–(अन्तिमाङ्गुलि) (स्त्री०) कनि-ष्ठिका, छगुनिया।—इत्थम्–(अन्तिमेत्थम्) (अव्य०) अंतिम चेतावनी, अंतिम रूप से यह सूचित कर देना है कि निर्धारित अवधि के भीतर कोई बात न की गई तो भयानक परिणाम होगा।

अन्ती—(स्त्री०) [√अन्त्+इ, ङीप्] चूल्हा, अँगीठी, अलाव।

अन्त्य—(वि०) [अन्त+यत्] अन्तिम, चरम। सबसे नीचा। सबसे बुरा। सबसे हल्का। दुष्ट। (पु०) मुस्ता नामक पौधा। चांडाल। शब्द का अंतिम अक्षर। अंतिम चांद्र मास, फाल्गुन। (न०) सौ नील की संख्या (१,००, ००,००,००,००,००,०००)। मीन राशि। रेवती नक्षत्र।—अवसायिन्–(अन्त्याव-सायिन्) (पुं०) नीच जाति का पुरुष, निम्न सात जातियाँ नीच मानी गयी हैं—'चाण्डालः श्वपचः क्षत्ता सूतो वैदेहकस्तथा। मागधा-योगवौ चैव सप्तैतेऽन्त्यावसायिनः॥'—आहुति,—इष्टि–(अन्त्याहुति, अन्त्येष्टि) —कर्मन्–(न०)—क्रिया–(स्त्री०) पूर्णाहुति,

मृतक का दाहादिरूप अंतिम संस्कार ।—ऋण –(अन्त्यर्ण) (न०) तीन ऋणों में से अन्तिम ऋण अर्थात् सन्तानोत्पत्ति ।—ज,—जन्मन् –(पु०) शूद्र । सात नीच जातियों में से एक, चाण्डाल । —जाति,—जातीय–(वि०) किसी नीच जाति का । (पु०) शूद्र । चाण्डाल । —पद,—मूल–(न०) वर्ग का सबसे बड़ा मूल (गणित) ।—भ–(न०) रेवती नक्षत्र । —युग–(न०) अन्तिम युग अर्थात् कलियुग । —योनि–(वि०) अत्यन्त नीच जाति का । —लोप–(पु०) किसी शब्द के अन्तिम अक्षर का लुप्त होना ।—वर्ण–(पु०)—वर्णा–(स्त्री०) नीच जाति का पुरुष या स्त्री ।

अन्त्यक—(पु०) [अन्त्य एवेति स्वार्थे कन्] सब से नीची जाति का मनुष्य ।

अन्त्या—(स्त्री०) [अन्त+यत्, टाप्] नीच जाति की स्त्री ।

अन्त्र—(न०) [अन्त्यते देहो बध्यते अनेन इति√अन्त्+ष्ट्रन्] आँत ।—कूज–(पुं०) —कूजन—विकूजन–(न०) आँत का बोलना, पेट की गुड़गुड़ाहट ।—वृद्धि–(स्त्री०) आँत का उतरना ।—शिला–(स्त्री०) विन्ध्याचल से निकलने वाली एक नदी का नाम ।—स्रज्–(स्त्री०) आँतों की माला जिसे नृसिंह भगवान् ने पहिना था ।—

अन्त्रंधमि–(स्त्री०) अजीर्ण, वायु के कारण पेट का फूलना ।

अन्द्—भ्वा० पर० सक० बाँधना, अन्दति ।

अन्दु,—अन्दू–(स्त्री०) [अन्द्यते=बध्यते-ऽनेन इति√अन्द्+कु, पक्षे ऊङ्] हथकड़ी, बेड़ी, हाथी के पैर में बाँधने की जंजीर । नूपुर ।

अन्ध्—चुरा० उभ० अक० अंधा बनना, अंधा हो जाना, अन्धयति–ते ।

अन्ध—(वि०) [√अन्ध्+अच्] अंधा, दृष्टिहीन (न०) अंधकार । जल । गँदला जल । अज्ञान । (पुं०) संन्यासी । उल्लू । चमगादड़ । एक काव्य दोष । राशिभेद ।—कार–(पुं०) अँधियारा ।—कूप–(पु०) कुआँ जिसका मुख घास-पात से ढका हो । एक नरक का नाम । अज्ञान ।—तमस—तामस–(न०) निबिड़ या घोर अन्धकार ।—तामिस्र–(पु०) निबिड़ अन्धकार । अज्ञान । २१ नरकों में से एक ।—धी–(वि०) मानसिक अंधा, नासमझ ।—परम्परा—(स्त्री०) बिना सोचे-समझे पुरानी रीति का अनुसरण, भेड़ियाधसान ।—पूतना–(स्त्री०) एक राक्षसी जो बालकों में रोग उत्पन्न करने वाली मानी जाती है ।—मूषिका–(स्त्री०) देवताड़ नामक पौधा ।—वर्त्मन्–(पुं०) वायु का सातवाँ परदा या लोक जहाँ सूर्य का प्रकाश नहीं जाता ।

अन्धक—(वि०) [अन्ध+कन्] अंधा । (पु०) एक असुर जो कश्यप और दिति का पुत्र था और जिसे शंकर ने मारा था । एक यदुवंशी जिससे यादवों की अंधक-शाखा चली ।—अरि–(अन्धकारि)—घातिन्—रिपु—शत्रु (पु०) अन्धक दैत्य को मारने वाले शिव ।—वर्त–(पु०) एक पहाड़ का नाम ।—वृष्णि–(पु०) (बहु०) अन्धक और वृष्णि के वंशवाले ।

अन्धस्—(न०) [अद्यते इति√अद्+असुन् नुम् धश्च] अन्न, भात ।

अन्धिका— [√अन्ध्+ण्वुल – अक, इत्व, टाप्] रात्रि । एक खेल, आँखमिचौनी । जुआ । एक नेत्ररोग । सिद्धा नामक ओषधि ।

अन्धु—(पुं०) [√अन्ध्+कु] कुआँ, कूप ।

अन्धुल—(पु०) [√अन्ध+उलच्] शिरीष का वृक्ष ।

अन्ध्र—(पुं०) [√अन्ध+र] एक जाति का तथा उस जाति के उस देश का नाम जिसमें वह बसती है । मगध का एक राजवंश । निम्न या वर्णसङ्कर जाति का मनुष्य ।—भृत्य–(पुं०) मगध का एक राजवंश जो अंध्रवंश के बाद चला ।

अन्न—(न०) [अनिति अनेन इति√अन+नन् या अद्यते इति√अद्+क्त] (साधारणतया) भोजन। भात। कच्चा धान्य, चना, जौ आदि। जल। पृथ्वी। विष्णु। सूर्य।—**अद्य**—(अन्नाद्य) (न०) उपयुक्त भोजन।—**आच्छादन**—(अन्नाच्छादन)—**वस्त्र**—(न०) भोजन और वस्त्र।—**काल**—(पु०) भोजन करने का समय।—**कूट**—(पु०) भात का एक बड़ा (पर्वतोपम) ढेर।—**कोष्ठक**—(पु०) भड़ेरी, कोठिला, बखार। पका खाद्य पदार्थ रखने की आलमारी। विष्णु। सूर्य।—**गन्धि**—(पु०) दस्तों को बीमारी। अतीसार-संग्रहणी।—**जल**—(न०) रोटी-पानी। स्थान विशेष में रहने का संयोग।—**दास**—(पु०) नौकर, चाकर। वह नौकर जो केवल भोजन पर काम करे।—**देवता**—(स्त्री०) अन्न के अधिष्ठातृ देवता।—**दोष**—(पु०) निषिद्ध अन्न खाने से उत्पन्न पाप।—**द्वेष**—(पु०) अन्न से अरुचि। अफरा रोग।—**पूर्णा**—(स्त्री०) दुर्गा का एक रूप।—**प्राश**—(पु०)—**प्राशन**—(न०) १६ संस्कारों में से एक विशेष संस्कार। इसमें नवजात बालक को प्रथम बार अन्न खिलाने की विधिवत् क्रिया सम्पादन की जाती है, चटावन।—**भुज्**—(वि०) अन्न खाने वाला। शिव जी की उपाधि।—**मल**—(न०) विष्ठा, मल, पाखाना। मदिरा।—**विकार**—(पु०) अन्न का रूपान्तर रस, रक्त, मांस आदि।—**व्यवहार**—(पु०) खान-पान संबन्धी नियम या प्रथा।—**शेष**—(पु०) जूठन। भूसी, चोकर आदि।—**संस्कार**—(पु०) देवादि के लिये अन्न का उत्सर्ग।—**सत्र**—(न०) वह संस्थान जहाँ साधु-फकीरों, गरीबों-अपाहिजों को भोजन दिया जाता है।

अन्नमय—(वि०) [अन्नस्य विकारः इत्यर्थे अन्न+मयट्] [स्त्री०—**अन्नमयी**] अन्न की बनी हुई वस्तु। (न०) अन्न का बाहुल्य। भोज्य पदार्थों की बहुतायत।—**कोश**—**कोष**—(पु०) स्थूल शरीर।

अन्य—(वि०) [√अन्+यः (उण्या०)] (अन्यत् न०) भिन्न, दूसरा। विलक्षण, असाधारण, यथा।—"अन्या जगद्धितमयी मनसः प्रवृत्तिः"—भामिनीविलास। साधारण, कोई। अतिरिक्त, नया।—**असाधारण**—(अन्यासाधारण) (वि०) जो दूसरों के लिये साधारण न हो, विचित्र, विलक्षण।—**उक्ति**—(अन्योक्ति) (स्त्री०) ऐसी उक्ति जो कथित वस्तु के अतिरिक्त औरों पर भी घटित हो सके। अर्थालंकार का एक भेद।—**उदर्य**—(अन्योदर्य) (वि०) सहोदर नहीं, दूसरे से उत्पन्न।—**ऊढा**—(अन्योढा) (स्त्री०) दूसरे को ब्याही हुई। दूसरे की पत्नी।—**कारुका**—(स्त्री०) मल का कीड़ा।—**क्षेत्र**—(न०) दूसरा खेत। दूसरा राज्य, विदेशी राज्य। दूसरे की स्त्री।—**ग**—**गामिन्**—(वि०) दूसरे के पास जाने वाला। व्यभिचारी, छिनरा, जार।—**गोत्र**—(वि०) दूसरे वंश का।—**चित्त**—(वि०) अन्यमनस्क, जिसका मन अन्यत्र लगा हो।—**ज**—**जात**—(वि०) दूसरे से उत्पन्न, दूसरी जाति का।—**जन्मन्** (न०) जन्मान्तर।—**दुर्वह**—(वि०) दूसरों द्वारा न ढोने या गठाने योग्य।—**नाभि** (वि०) दूसरे वंश या कुल का।—**पर**—(वि०) दूसरों के प्रति भक्तिमान्। दूसरों से अनुरक्त। अन्यविषयक।—**पुरुष**—(पु०) सर्वनाम का एक भेद, दूसरा आदमी।—**पुष्ट**—(पु०) **पुष्टा**—(स्त्री०)—**भृत**—(पु०)—**भृता**—(स्त्री०) दूसरों से पाली हुई, कोयल।—**पूर्वा**—(स्त्री०) कन्या जिसकी सगाई दूसरी जगह हो चुकी है।—**बीज**—०**समुद्भव**—०**समुत्पन्न**—(पु०) गोद लिया हुआ पुत्र, दत्तक पुत्र।—**भृत्**—(पु०) कौआ, काक।—**मनस्**—**मनस्क**—**मानस**—(वि०) जिसका चित्त कहीं और हो। असावधान।—**मातृज**—(पु०) सौतेला भाई।—**रूप**—(वि०) परिवर्तित, बदला हुआ।—

लिङ्ग—लिङ्गक-(वि०) दूसरे शब्द के लिङ्गानुसार ।—वाप-(पु०) कोयल ।—विवर्धित-(वि०) दूसरे के द्वारा पाला गया। (पु०) कोयल ।—शाख—शाखक- (पु०) अपनी शाखा या धर्म का त्याग करने वाला ब्राह्मण ।—संकान्त-(वि०) जिसने अन्य (स्त्री) से संबन्ध कर लिया है ।—संभूयक्रय-(पु०) पहले लगाये गये मूल्य पर थोक माल के न बिकने पर उस पर लगाया गया दूसरा मूल्य ।—संभोगदुःखिता-(स्त्री०) वह नायिका जो अपने पति में दूसरी स्त्री के साथ संभोग करने के चिह्नों को देख कर दुःखित हो ।

अन्यतम—(वि०) [अन्य+तमप्] बहुत में से एक ।

अन्यतर—(वि०) [अन्य+तरप्] दो में से एक ।

अन्यतरतस्—(अव्य०) दो तरह में से एक ।

अन्यतरेद्युस्—(अव्य०) [अन्यतर+एद्युस्, निपातनात् सिद्धिः] दो में से किसी एक दिन, एक दिन या दूसरे दिन ।

अन्यतस्—(अव्य०) [अन्य+तसिल्] दूसरे से । दूसरे आधार पर या दूसरे उद्देश्य से ।

अन्यतस्त्य—(पु०) [अन्यतस+त्यप्] शत्रु, प्रतिपक्षी ।—**अन्यत्र**-(अव्य०) [अन्य+त्रल्] दूसरी जगह, और कहीं । व्यतिरेक, बिना ।

अन्यथा—(अव्य०) [अन्य+थाल्] प्रकारान्तर, नहीं तो । मिथ्यापन से, झूठपन से । अशुद्धता से, भूल से ।—अनुपपत्ति-(अन्यथानुपपत्ति) (स्त्री०) किसी वस्तु के अभाव में दूसरे के अस्तित्व की असंभावना ।—भाव-(पु०) भिन्न रूप में होना । परिवर्तन, अदल-बदल ।—वादिन्-(वि०) प्रकारान्तर से बोलने वाला । मिथ्यावादी ।—वृत्ति-(वि०) परिवर्तित । उत्तेजित, उद्विग्न ।—वाहिन्-(वि०) बिना चुंगी या महसूल दिये माल ले जाने वाला ।—सिद्धि-(स्त्री०) (न्याय में) एक दोष जिसमें यथार्थ नहीं, प्रत्युत अन्य कोई कारण दिखला कर किसी विषय की सिद्धि की जाय ।—स्तोत्र-(न०) व्यंग ।

अन्यदा—(अव्य०) [अन्य+दा] दूसरे समय । दूसरे अवसर पर । अन्य किसी दशा में । एक बार । कभी एक बार । कभी-कभी ।

अन्यर्हि—(अव्य) [अन्य+र्हिल्] दूसरे समय ।

अन्यादृक्ष, —**अन्यादृश्**, —**अन्यादृश** —(वि०) [अन्य√दृश्+क्स, आत्व] [अन्य √दृश+क्विन्, आत्व] [अन्य√दृश्+कञ्, आत्व] अन्य प्रकार का । परिवर्तित । असाधारण, विलक्षण ।

अन्याय—(वि०) [न० ब०] विचार या औचित्य से रहित । अनुपयुक्त, बेठीक, (पु०) [न० त०] कोई अनुचित या न्यायविरुद्ध कार्य, जुल्म, अत्याचार ।

अन्यायिन्—(वि०) [अन्याय+इनि] अन्याय करने वाला । अनुचित, अयथार्थ ।

अन्याय्य—(वि०) [न न्याय्यः न० त०] अयथार्थ । न्याय-विरुद्ध । अनुचित । अप्रामाणिक ।

अन्यून—(वि०) [न न्यूनः न० त०] कम नहीं, अधिक । संपूर्ण, समूचा ।—अङ्ग-(वि०) जिसका कोई अङ्ग कम ज्यादा न हो ।

अन्येद्युस्—(अव्य) [अन्य+एद्युस् नि०] दूसरे दिन या अगले दिन । एक दिन । एक बार ।

अन्योन्य—(वि०) [अन्य कर्मव्यतीहारे (एक जातीयक्रियाकरणे) द्वित्वम् पूर्वपदे सुश्च] परस्पर, एक दूसरे को या पर । (न०) अर्थालंकार का एक भेद । (अव्य०) आपस में ।—अभाव-(अन्योन्याभाव) (पु०) अभाव का एक भेद, किसी एक पदार्थ का अन्य पदार्थ न होना ।—आश्रय-(अन्योन्याश्रय) (पु०) एक का दूसरे पर अवलंबित होना, परस्पर

कार्य-कारण-संबंध।—भेद-(पुं०) आपस का भेद, शत्रुता।—विभाग-(पुं०) पैतृक संपत्ति का आपस में बँटवारा —व्यतिकर, —संश्रय-(पुं०) पारस्परिक संबंध (कारण और कार्य का)।

अन्वक्ष—(वि०)[अनुगतम् अक्षम्=इन्द्रियम् अत्या० स०] दृश्य। प्रत्यक्ष। अनुभवगम्य। बाद का। (अव्य०) [अव्य० स०] सामने। पीछे।

अन्वच्—[अनु √अञ्च +क्विन्] (वि०) पीछा करने वाला। (अव्य) तदनन्तर, पीछे। अनुकूलता से।

अन्वय—(पुं०)[अनु√इण्+अच्]अनुगमन। सम्बन्ध, सङ्गति। व्याकरणानुसार वाक्य की शब्द-योजना। जाति, वंश। न्याय में कार्य और कारण का सम्बन्ध।—आगत-(अन्वयागत) (वि०) वंशपरंपरा से चला आता हुआ।—ज्ञ-(पुं०) वंशावली जानने वाला।—व्यतिरेक-(पुं०) निश्चयपूर्वक हाँ या ना सूचक कथित वाक्य। नियम और अपवाद।—व्याप्ति-(स्त्री०) स्वीकारोक्ति। जहाँ धूम वहाँ अग्नि—इस प्रकार की व्याप्ति।

अन्वर्थ—(वि०) [अनुगतः अर्थम् अत्या० स०] अर्थ के अनुसार। सार्थक, अर्थयुक्त।

अन्ववसर्ग—(पुं०) [अनु—अव√सृज्+घञ्] कामचारानुज्ञा, यथेच्छा आचरण की अनुमति।

अन्ववसित—(वि०) [अनु—अव√सो+क्त] सम्बन्धयुक्त, बँधा हुआ। जकड़ा हुआ।

अन्ववाय—(पुं०) [अनु—अव√अय्+घञ्] जाति, वंश, कुल।

अन्ववेक्षा—(स्त्री०) [अनु—अव√ईक्ष् + अङ—टाप्] सम्मान, आदर।

अन्वष्टका—(स्त्री०) [अनुगता अष्टकाम् अत्या० स०] साग्निकों के लिये एक मातृक श्राद्ध, जो अष्टका के अनन्तर पूस, माघ, फागुन और आश्विन की कृष्णा नवमी को किया जाता है।

अन्वष्टमदिशम्—(अव्य०) [अव्य० स०] उत्तर पश्चिम के कोण की ओर।

अन्वहम्—(अव्य०) [अव्य० स०] प्रति दिन, दिन दिन।

अन्वाख्यान—(न०) [अनुगतम् आख्यानम् प्रा०स०] पूर्वकथित विषय की पीछे से व्याख्या।

अन्वाचय—(पुं०)[अनु—आ√चि+अच्] मुख्य कार्य की सिद्धि के साथ-साथ अप्रधान (गौण) की भी सिद्धि। जैसे एक काम के लिये जाते हुए को, एक दूसरा वैसा ही साधारण काम बतला देना।

अन्वाजे—(अव्य०) [अनु—आ√जि+डे] दुर्बल की सहायता करना।

अन्वादिष्ट— [अनु—आ√ दिश्+क्त] पीछे वर्णित। पुनर्नियुक्त। गौण।

अन्वादेश—(पुं०) [अनु—आ√दिश् + घञ्] एक आज्ञा के बाद दूसरी आज्ञा। किसी कथन की द्विरुक्ति।

अन्वाधान—(न०) [अनु—आ√धा+ल्युट्] हवन की अग्नि पर समिधाओं को रखना।

अन्वाधि—(पुं०) [अनु—आ √धा+कि] अमानत, जो किसी अन्य पुरुष को इसलिये सौंपी जाय कि अन्त में वह उसे उसके न्यायानुमोदित अधिकारी को दे दे। दूसरी अमानत। सतत परिताप, पश्चात्ताप या पछतावा।

अन्वाधेय, अन्वाधेयक—(न०) [अनु—आ√धा+यत्] एक प्रकार का स्त्रीधन, जो स्त्री को विवाह के बाद पतिकुल या पितृकुल अथवा उसके अन्य कुटुम्बियों से प्राप्त होता है।

अन्वारब्ध—(वि०) [अनु—आ रभ्+क्त] पीछे पृष्ठ की ओर स्पर्श किया हुआ।

अन्वारम्भ (पुं०), **अन्वारम्भण**—(न०) अनु—आ√रभ्+घञ्, मुम्] [अनु—आ

√रभ्+ल्युट्] स्पर्श, किसी विशेष धर्म्मानुष्ठान के बाद यजमान का स्पर्श या पीठ ठोकना यह जताने को कि, उसका कृत्य सुफल हुआ।

अन्वारोहण—(न०) [अनु—आ√रुह्+ल्युट] किसी सती स्त्री का पति के शव के साथ या पीछे भस्म होने के लिये चिता पर चढ़ना।

अन्वासन—(न०) [अनु√आस+ल्युट्] सेवा, पूजा। एक के बैठने के बाद दूसरे का बैठना। दुःख, शोक। शिल्पगृह।

अन्वाहार्यक—(पुं०) (न०) [अनु—आ√हृ+ण्यत्] यज्ञ में पुरोहित को दिया जाने वाला भोजन या दक्षिणा। मृत पुरुष के उद्देश्य से प्रति अमावस्या के दिन किया जाने वाला मासिक श्राद्ध।—**पचन**-(पुं०) दक्षिणाग्नि, ऋग्वेद की विधि से स्थापित अग्नि।

अन्वाहित—(न०) [अनु—आ√धा+क्त] दे० 'अन्वाधेय'।

अन्वित—[अनु√इण्+क्त] युक्त, सम्बन्धप्राप्त। किसी पद्य के शब्द जो वाक्यरचना के नियमानुसार यथास्थान रखे गये हों। साधर्म्य के अनुसार भिन्न-भिन्न वस्तु जो एक श्रेणी में रखी हुई हों।

अन्वीक्षण—(न०) [अनु√ईक्ष्+ल्युट्] ध्यान से देखना। खोज।

अन्वीक्षणा—(स्त्री०) [अनु√ईक्ष्+णिच्+युच्] अनुसन्धान, खोज।

अन्वीप—(वि०) [अनुगता आपो यत्र ब० स०] जल के समीप का।

अन्वृचम्—(अव्य०) [अव्य० स०] एक ऋचा या मन्त्र के अनन्तर दूसरा।

अन्वेष, —अन्वेषण,—अन्वेषणा—(पुं०) (न०) (स्त्री०) [अनु√इष्+घञ्] [अनु√इष्+ल्युट्] [अनु √इष्+युच्] अनुसन्धान, खोज। 'रुग्णान्वेषणदक्षाणां द्विषां' र० १२.११.

अन्वेषक,—अन्वेषिन्, —अन्वेष्टृ–(वि०) [अनु√इष्+ण्वुल्] [अनु√इष्+णिनि] [अनु√इष्+तृच्] खोजने वाला, तलाश करने वाला।

अप्—(स्त्री०) [√आप+क्विप्, ह्रस्वः] [इसके बहुवचन ही में रूप होते हैं। आपः अपः, अद्भिः, अद्भ्यः, अपाम् और अप्सु; किन्तु वैदिक साहित्य में इसके रूप दोनों वचनों—एकवचन और बहुवचन में मिलते हैं।] जल, पानी।—**पति**–(पुं०) वरुण का नाम। समुद्र।

अप—(अव्य०) [न पातीति√पा+ड न० त०] जब यह किसी क्रिया में उपसर्ग के रूप में जोड़ा जाता है तब इसका अर्थ होता है—दूर, हट कर, विरोध, अस्वीकृति, खण्डन, वर्जन, कई स्थलों पर अप का अर्थ होता है—बुरा, अश्रेष्ठ, बिगड़ा हुआ, अशुद्ध, अयोग्य।

अपकरण—(न०) [अप√कृ+ल्युट्] अनुचित रीति से बर्तना। बुराई करना। अपमान करना। चिढ़ाना। दुर्व्यवहार करना। घायल करना।

अपकर्तृ—(वि०) [अप√कृ+तृच्] अपकार करने वाला, अनिष्टकर, अप्रीतिकर, (पुं०) शत्रु।

अपकर्मन्—(न०) [अपकृष्टम् कर्म प्रा० स०] दुष्कर्म, दुराचार, दुष्टाचरण। दुष्टता, अत्याचार, ज्यादती। कर्ज अदा करना, ऋण चुकाना, "दत्तस्यानपकर्म च।" (मनु०)

अपकर्ष—(पुं०) [अप√कृष्+घञ्] नीचे को खींचना। घटाव, कमी, उतार। निरादर, अपमान।

अपकर्षक—(वि०) [अप√कृष्+ण्वुल्] घटाने वाला। छोटा करने वाला। नीचे खींचने वाला; 'रसापकर्षका दोषाः' सा० द० ७

अपकर्षण—(न०) [अप√कृष्+ल्युट्] हटाना। खींच कर नीचे ले जाना। खींचकर

निकालना। कम करना। किसी को किसी स्थान से हटाकर स्वयं उस पर बैठना।

अपकार—(पु०) [अप√कृ+घञ्] अनिष्ट साधन। बुराई। नुकसान, हानि। अनभल, अहित। दुष्टता। अत्याचार। ओछा या नीच कर्म: 'उपकर्त्रारिणा सन्धिर्न मित्रेणापकारिणा' शि० व० २.३७—**र्थिन्**(अपकरार्थिन्) (वि०) अपकार चाहने वाला। विद्वेषकारी। अनिष्टप्रिय, दुराशय।—**शब्द**- (पु०) गालियाँ, कुवाच्य, अपमानकारक उक्ति।

अपकारक,—अपकारिन्-(वि०) [अप√कृ+ण्वुल्] [अप√कृ+णिनि] अपकार करने वाला। अनिष्टकर्त्ता, क्षति पहुँचाने वाला। विरोधी, द्वेषी।

अपकीर्ति—(स्त्री०) [अप√कृ+क्तिन्] अपयश, बदनामी।

अपकुश—(पु०) दन्तरोग विशेष।

अपकृत—(वि०) [अप√कृ+क्त] जिसका अपकार किया गया हो।

अपकृति—(स्त्री०) [अप√कृ+क्तिन्] दे० 'अपकार'।

अपकृष्ट—(वि०) [अप√कृष्+क्त] हटाया हुआ, खींच कर ले जाया हुआ। नीच, दुष्ट, क्षुद्र। (पं०) कौआ।

अपक्ति—(स्त्री०) [√पच+क्तिन् न० त०] कच्चापन। अजीर्ण।

अपक्रम—(पु०) [अप√क्रम्+घञ्, अवृद्धि] पलायन, भागना। (समय का) निकल जाना। (वि०) [अपगतः क्रमो यस्य ब० स०] अस्त-व्यस्त, गड़बड़।

अपक्रमण,—अपक्राम—(न०) (पं०) [अप √क्रम+ल्युट्] [अप√क्रम्+घञ्] पलायन। (सेना का) पीछे हट जाना। निकल-भागना, बचकर निकल जाना।

अपक्रिया—(स्त्री०) [अप√कृ+श] हानि, क्षति। अहित। द्रोह। दुष्कर्म। ऋणपरिशोध।

अपक्रोश—(पु०) [अप√क्रुश+घञ्] गाली, अपशब्द। निन्दा। तिरस्कार।

अपक्व—(वि०) [√पच्+क्त तस्य वः, न० त०] न पका हुआ, कच्चा। अनभ्यस्त। नहीं बढ़ा हुआ।

अपक्ष—(वि०) [नास्ति पक्षो यस्य न० ब०] बिना पंख का। उड़ने की शक्ति से हीन। जो किसी दल विशेष का न हो। जिसका कोई मित्र या अनुयायी न हो। विरुद्ध, उल्टा। —**पात**- (पु०) पक्षपात का न होना, पक्षपातरहित। न्याय, खरापन।—**पातिन्**- (वि०) जो किसी की तरफदारी न करे। खरा, न्यायी।

अपक्षय—(पु०) [अप√क्षि+अच्] नाश। अधःपात। ह्रास, क्षय।

अपक्षेप, अपक्षेपण—(पु०) (न०) [अप√क्षिप्+घञ्] [अप√क्षिप्+ल्युट्] फेंकना, पलटाना, गिराना, च्युत करना। प्रकाशादि का किसी पदार्थ से टकरा कर पलटना। (वैशेषिक दर्शनानुसार) आकुञ्चन, प्रसारण आदि पाँच प्रकार के कर्मों में से एक।

अपखंड—न० [प्रा० स०] किसी वस्तु का टूटा हुआ हिस्सा। अधूरा या अपूर्ण भाग। विनष्ट या लुप्त वस्तु का बचा हुआ अंश।

अपगत—(वि०) [अप√गम्+क्त] गया हुआ, बीता हुआ। भागा हुआ। तिरोहित। मृत। —**व्याधि**-(वि०) जिसे रोग से छुटकारा मिल गया हो।

अपगति—(स्त्री०) [अप√गम्+क्तिन्] अधोगति। कुगति। दुर्भाग्य।

अपगम, अपगमन—(पु०) (न०) [अप√गम्+अप्] [अप√गम्+ल्युट्] जाना। हट जाना 'पुराणपत्रापगमादनन्तरं' र० ३.७ गायब हो जाना। मृत्यु।

अपगर—(पु०) [अप√गृ+अप् (भावे)] धिक्कार, डाँट-डपट। गाली-गलौज। (वि०) [अप√गृ+अच् (कर्तरि)] गालियाँ देने-वाला या अप्रियवचन कहने वाला।

अपगर्जित—(वि०) [अप√गर्ज्+क्त] गर्जनाशून्य।

अपगुण—(पुं॰) [अपकृष्टो गुणः प्रा॰ स॰] दोष, अवगुण ।

अपगोपुर—(वि॰) [अपगतम् गोपुरम् यस्मात् ब॰ स॰] नगरद्वार से शून्य, जिसमें फाटक न हो ।

अपघन—(पुं॰) [अप √हन् + अप्, घनादेश] देह, शरीर । अवयव, शरीरावयव । (वि॰) [ब॰ स॰] मेघरहित ।

अपघात—(पुं॰) [अप√हन्+घञ्] हत्या, हिंसा । वञ्चना, धोखा । विश्वासघात ।

अपघातिन्—(वि॰) [अप√हन्+णिनि] विश्वासघाती । हिंसक, हत्या करने वाला ।

अपच—(पुं॰) [√पच्+अच् न॰ त॰] रसोई बनाने के अयोग्य अथवा जो अपने लिये रसोई न बनावे । गँवार रसोइया । एक प्रकार की गाली ।

अपचय—(पुं॰) [अप√चि+अच्] अवनति, ह्रास । खण्डन । नाश । ऐब । त्रुटि । दोष । असफलता ।

अपचरित—(न॰) [अप√चर्+क्त (भावे) दुष्कर्म । अपराध । मृत्यु । अभाव । प्रस्थान । —**प्रकृति**-(पुं॰) वह राजा जिसकी प्रजा अत्याचार से उद्विग्न हो ।

अपचायिन्—(वि॰) [अप√चाय्+णिनि] बड़ों के प्रति सम्मान प्रकट न करने वाला ।

अपचार—(पुं॰) [अप√चर्+घञ्] प्रस्थान । मृत्यु । अभाव । अपराध । दुष्कर्म । जुर्म ; 'राजन् प्रजासु ते कश्चिदपचारः प्रवर्तते' र॰ १५.४७ । अपथ्य ।

अपचारिन्—(वि॰) [अप√चर्+णिनि] दुष्कर्मी । बुरा । नीच । पृथक् होने वाला । अविश्वासी ।

अपचित—(वि॰) [अप√चाय्+क्त] सम्मानित, पूजित, [अप√चि+क्त] क्षीण । व्यय किया हुआ । दुबला-पतला ।

अपचिति—(स्त्री॰) [अप√चि+क्तिन्] हानि । अधःपात । नाश । व्यय । पाप का प्रायश्चित्त । समन्वय । क्षति-पूरण । [अप√चाय्+क्तिन्] सम्मान, पूजन, प्रतिष्ठाप्रदर्शन; 'विहितापचितिर्महीभुजा' शि. १६.६

अपच्छत्र—(वि॰) [अपगतम् छत्रम् यस्य ब॰ स॰] बिना छाते का, छाता रहित ।

अपच्छाय—(वि॰) [अपगता छाया यस्य ब॰ स॰] जिसकी छाया न हो । चमक रहित, धुँधला, (पुं॰) जिसकी छाया न हो, देवता ।

अपच्छेद, अपच्छेदन—(पुं॰) (न॰) [अप √छिद्+घञ्] [अप√छिद्+ल्युट्] काट डालना । हानि । बाधा ।

अपच्युत—(वि॰) [अप√च्यु+क्त] गिरा हुआ । गया हुआ । मृत । पिघल कर बहा हुआ ।

अपजय—(पुं॰) [अप√जि+अच्] हार, शिकस्त ।

अपजात—(पुं॰) [अप√जन्+क्त] बुरी सन्तान, सन्तान जो अपने माता पिता के गुणों के समान न हो । 'अपजातोऽधमाधमः' सुभा॰ ।

अपज्ञान—(न॰) [अप√ज्ञा+ल्युट्] अस्वीकृति । छिपाव, दुराव ।

अपञ्चीकृत—(न॰) [अपञ्च पञ्च कृतम् न॰ त॰] वह पदार्थ जो पाँच तत्वों से न बना हो या पाँच से पचीस न किया गया हो । पाँच सूचक शब्दादि ।

अपटान्तर—(वि॰) [नास्ति पटेन अन्तरम् यत्र न॰ ब॰] जो (पर्दे के जरिये) अलग न किया गया हो ।

अपटी—(स्त्री॰) [अल्पः पटः पटी न॰ त॰) कनात, कपड़े का एक विशेष प्रकार का पर्दा । पर्दा ।

अपटु—(वि॰) [न॰ त॰] अनिपुण, भोंदू । वक्तृत्व शक्ति में जो निपुण न हो । बीमार, रोगी ।

अपठ—(वि॰) [√पठ+अच् न॰ त॰] जो पढ़ न सके, जो पढ़ा न हो, अधम पाठक ।

अपण्डित—(वि०) [न० त०] जो विद्वान् या बुद्धिमान् न हो, मूर्ख । जिसमें चातुर्य, रुचि और दूसरों की सराहना करने का अभाव हो; "विभूषणं मौनमपण्डितानाम्" भर्तृ० २.७ ।

अपण्य—(वि०) [√पण्+यत् न० त०] जो बिक न सके ।

अपतर्पण—(न०) [अप√तृप्+ल्युट्] (बीमारी में) कड़ाका, लंघन । असन्तोष ।

अपति (पु०) [न० त०] जो पति या स्वामी न हो, (स्त्री०) [न० ब०] जिसका पति या स्वामी न हो ।

अपत्नीक—(वि०) [न० ब०] बिना स्त्री वाला, पत्नीरहित ।

अपत्य—(न०) [न पतन्ति पितरोऽनेन इति विग्रह√पत्+यत् न० त०] सन्तान, औलाद ।—**काम**-(वि०) पुत्र या पुत्री की इच्छा रखने वाला ।—**जीव**-(पु०) एक पौधा । **दा**-(स्त्री०) एक वृक्ष, गर्भदात्री ।—**पथ**-(पु०) योनि, भग ।—**विक्रयिन्**-(वि०) सन्तान बेचने वाला ।—**शत्रु**-(पु०) केकड़ा । साँप ।

अपत्र—(वि०) [न० ब०] बिना पत्तों का । पंखहीन । (पु०) बाँस का कल्ला । वह वृक्ष जिसके पत्ते गिर गये हों । वह पक्षी जिसे पंख न हों ।

अपत्रप—(वि०) [अपगता त्रपा यस्मात् ब० स०] निर्लज्ज, बेहया ।

अपत्रपण, अपत्रपा—(न०) (स्त्री०) [अप √त्रप्+ल्युट्] [अप√त्रप्+अङ] लज्जा, लाज । व्यग्रता ।

अपत्रपिष्णु—(वि०) [अप√त्रप्+इष्णुच्] शर्मीला, लजीला ।

अपत्रस्त—(वि०) [अप√त्रस्+क्त] भयभीत, डरा हुआ । भय से भगा हुआ, भय से रुका हुआ ।

अपथ—(वि०) [न० ब०] मार्गहीन, जहाँ अच्छे रास्ते न हों । (न०) [न० त०] कुपथ, गलत या बुरी राह । पथ का अभाव । प्रचलित धर्म या मत का विरोध । योनि ।—**गामिन्**-(वि०) बुरी राह पर चलने वाला, कुमार्गी; 'अपथे पदमर्पयन्ति श्रुतवन्तोऽपि रजोनिमीलिताः' र० ६.७४ । **अपथ्य**—(वि०) कुमार्ग पर चलने वाला । दुरुपयोग में लाया हुआ ।

अपथ्य—(वि०) [पथि हितम् इत्यर्थे पथिन् +यत् न० त०] अयोग्य, अनुचित । हानिकारी । जहरीला । अहितकर । जो गुणकारी न हो । खराब । (न०) प्रतिकूल आहार विहार ।—**कारिन्** (वि०) अपथ्य करने वाला । अपराधी ।

अपद—(वि०) [नास्ति पादः पदम् वा यस्य न० ब०] बिना पैर का । बिना ओहदे का । (पु०) रेंगने वाला जन्तु, सर्प आदि । आकाश, [न० त०] बुरा स्थान ।—**अन्तर**-(अपदान्तर) (वि०) समीपस्थ । अति निकट । (न०) सामीप्य, निकटता ।—**रुहा-रोहिणी** (स्त्री०) अन्य वृक्ष के सहारे जीने वाला वायवीय पौधा-विशेष ।

अपदक्षिण—(अव्य०) [अव्य० स०] बाईं ओर ।

अपदम—(वि०) [अपगतः दमो यस्य ब० स०] असंयमी । आत्म-नियंत्रण-रहित । जिसकी स्थिति बदलती रहती हो ।

अपदश—(वि०) [ब० स०] दस की संख्या से दूर ।

अपदान, अपदानक—(न०) [अप√दैप् +ल्युट्] [अपदान+कन् (स्वार्थ)] सदाचरण, विशुद्ध आचरण । महान् या उत्तम काम, सर्वोत्तम कर्म । सम्यक् पूर्ण किया हुआ कार्य ।

अपदार्थ—(पु०) [न पदार्थः न० त०] कुछ नहीं । वाक्य में जो शब्द प्रयुक्त हुए हों उनका अर्थ न होना, "अपदार्थोऽपि वाक्यार्थः समुल्लसति"

—काव्यप्रकाश ।

अपदिशम्—(अव्य०) [दिशयोर्मध्ये इति विग्रहे अव्य० स०] दो दिशाओं के बीच में।

अपदेवता—(स्त्री०) [अपकृष्टा देवता प्रा० स०] दुष्ट देव। ब्रह्मपिशाच आदि।

अपदेश—(पु०) [अप√दिश्+घञ्] बयान, कथन, वर्णन। बहाना, व्याज, मिस; 'रक्षापदेशान्मुनिहोमधेनोः' र० २.८। लक्ष्य, उद्देश्य। अपने स्वरूप को छिपाना, भेष बदलना। स्थान। अस्वीकृति। कीर्ति, नामवरी। छल, धोखा, दगाबाजी।

अपद्रव्य—(न०) [प्रा० स०] बुरी वस्तु।

अपद्वार—(न०) [प्रा० स०] बगल का दरवाजा, बगली द्वार।

अपधूम—(वि०) [अपगतः धूमो यस्य ब० स०] धूमरहित।

अपध्यान—(न०) [अपकृष्टम् ध्यानम् प्रा० स०]बुरा विचार, अनिष्टचिन्तन, मन ही मन कोसना।

अपध्वंस (पु०) [प्रा० स०] अधःपतन। अपमान। नाश।—**ज**-(पुं०)—**जा**-(स्त्री०) किसी वर्णसङ्कर, अधम और अछूत जाति का व्यक्ति।

अपध्वस्त—(वि०) [अप√ध्वंस्+क्त] शापित, कोसा हुआ। घृणित। जो अच्छी तरह कूटा पीसा गया हो। व्यक्त, त्यागा हुआ। पराजित। (पुं०) दुष्ट। अभागा। जिसमें सदसद्विवेक शक्ति रह ही न गयी हो।

अपनय—(पुं०) [अप√नी+अच्] हटाना, अलहदा करना। नष्ट करना। बुरी नीति, बुरा चालचलन। अपकार।

अपनयन—(न०) [अप√नी+ल्युट्] हटाना, अलहदा करना। चंगा करना। उऋण करना। भगा ले जाना।

अपनस—(वि०) [अपगता नासिका यस्य ब० स०] नकटा, नाक रहित।

अपनुत्ति (स्त्री०)—**अपनोद** (पुं०),—**अपनोदन** (न०),—[अप√नुद्+क्तिन्] [अप√नुद्+घञ्] [अप√नुद्+ल्युट्] हटाना, अलगाना, अलहदा करना। नष्ट करना। प्रायश्चित्त करना; 'पापानापनुत्तये' मनु० ११.२१५

अपपाठ—(पुं०) [अप√पठ्+घञ्] बुरी तरह पाठ करना। गलत पाठ करना पाठ में भूल करना।

अपपात्र—(वि०) [अपगतम् पात्रम् यस्य ब० स०] जिसे सब लोगों के व्यवहार में आने वाला पात्र न दिया जाय। वर्णच्युत।

अपपात्रित—(पुं०) [अपपात्र√क्विप्+क्त] किसी बड़े दुष्कर्म करने के कारण जाति से च्युत मनुष्य जो अपने सम्बन्धियों के साथ एक बरतन में खा-पी न सके।

अपपान—(न०) [अप√पा+ल्युट्], अपेय, न पीने योग्य पीने की वस्तु।

अपप्रजाता—(स्त्री०) [अपगतः प्रजातो यस्याः ब० स०] स्त्री, जिसका गर्भपात हो गया हो।

अपप्रदान—(न०) [अपकृष्टम् प्रदानम् प्रा० स०] घूस, रिश्वत।

अपभय, अपभी—(वि०) [अपगतम् भयम् यस्मात् ब० स०] [अपगता भीः यस्य ब० स०] डर से रहित, निर्भय। निःशङ्क।

अपभरणी—(स्त्री०) [प्रा० स०] अन्तिम तारापुञ्ज या नक्षत्र।

अपभाषण—(न०) [अप√भाष्+ल्युट्] निन्दा। गाली।

अपभ्रंश—(पुं०) [अप√भ्रंश्+घञ्] पतन, गिराव। बिगाड़, विकृति। शब्द का विकृत रूप। प्राकृत भाषाओं का परवर्ती रूप जिनसे उत्तर भारत की आधुनिक आर्य, भाषाओं की उत्पत्ति मानी जाती है।

अपम—(वि०) (वैदिक) [अपकृष्ट मीयते इति अप√मा+क (बाहुलकात्)] बहुत दूर का या बहुत पुराना। (पुं०) ग्रहण या अयन-मण्डल सम्बन्धी। क्रान्ति।

अपमर्द—(पुं०) [अप√मृद्+घञ्] धूल, गर्दा, जो बुहारा जाय।

अपमर्श—(पुं०) [अप√मृश्+घञ्] छूना। चरना।

अपमान—(पुं० न०) [अप√मन्+घञ् वा अप√मा+ल्युट्] निरादर, बेइज्जती। बदनामी; 'लभते बुद्ध्यवज्ञानमपमानञ्च पुष्कलम्' पं० १.६७।

अपमार्ग—(पुं०) [अपकृष्ट: मार्ग: प्रा० स०] पगडंडी, बगली रास्ता। बुरी राह।

अपमार्जन—(न०) [अप√मार्ज्+ल्युट्] धो कर साफ करना। पवित्र करना। हजामत बनवाना।

अपमित्यक—(न०) [अपमिति:=अपमान: तेन अकम्=दुःखम् यत्र ब० स०] ऋण, कर्ज।

अपमुख—(वि०) [अपकृष्टम् मुखम् यस्य ब० स०] बदशकल, बदसूरत, कुरूप।

अपमूर्धन्—(वि०) [अपगतो मूर्धा यस्य ब० स०] जिसके सिर न हो, लापरवाह।

अपमृत्यु—(पुं०) [अपकृष्टो मृत्यु: प्रा० स०] कुसमय की मौत, बिजली गिरने से, विष खाने से, साँप आदि के काटने से मरना।

अपमृषित—(वि०) [अप√मृष्+क्त] जो बोधगम्य न हो, जो समझ न पड़े। अस्पष्ट। असह्य। नापसंद;

अपयशस्—(न०) [अपकृष्टम् यश: प्रा० स०] बदनामी, अपकीर्ति; 'अपयशो यद्यस्ति किम्मृत्युना' भट्टि. २.५५।

अपयान—(न०) [अप√या+ल्युट्] भाग जाना। पीछे लौट जाना।

अपर—(वि०) [न पर: न० त० न परो यस्मात् ब० स०] जो पर या दूसरा न हो। पहले का, पूर्व का। पिछला। अन्य, दूसरा। जितना हो या हुआ हो, उससे और आगे या अधिक। अपकृष्ट, नीचा। (पुं०) हाथी का पिछला पैर। शत्रु। (न०) भविष्य। (अव्य०) पुन:। आगे।—**अग्नि, (अपराग्नि)**–(पुं०) दक्षिण और गार्हपत्याग्नि।—**अहन् (अपराह्ण)**–(पुं०) तीसरा पहर।—**इतरा, (अपरेतरा)**–(स्त्री०) पूर्व दिशा।—**काल**–(पुं०) पीछे का काल। पिछला समय।—**जन**–(पुं०) पाश्चात्य जन। पश्चिमी देशों के रहने वाले।—**दक्षिणम्**–(अव्य०) दक्षिण पश्चिम में।—**पक्ष**–(पुं०) कृष्णपक्ष। दूसरी ओर। उल्टी ओर। प्रतिवादी पक्ष।—**पर**–(वि०) कई एक। भिन्न-भिन्न, तरह-तरह के।—**पाणिनीय**–(पुं०) पाणिनि के शिष्य जो पश्चिम में रहते हैं।—**प्रणेय**–(वि०) सहज में दूसरे द्वारा प्रभावान्वित होने वाला।—**भाव**–(पुं०) भिन्न होने का भाव। भेद, अंतर।–**रात्रि (रात्र)**(पुं०) रात का पिछला पहर।—**परलोक**–(पुं०) स्वर्ग।—**वक्त्र** (न०) **वक्त्रा**–(स्त्री०) एक छंद।—**वश**–(वि०) परतंत्र।—**स्वस्तिक**–(न०) आकाश का पश्चिमी अन्तिम बिन्दु।—**हैमन**–(वि०) शीतकाल का पिछला भाग।

अपरता, अपरत्व—(स्त्री०, न०) [अपर+तल्] [अपर+त्वल्] दूसरापन। २४ गुणों में से एक गुण (वैशेषिक) निकटता। दूरी।

अपरत्र—(अव्य०) [अपर+त्रल्] अन्यत्र। दूसरी जगह।

अपरक्त—(वि०) [अप+रञ्ज्+क्त] बिना रंग का। खून रहित। असन्तुष्ट। विरक्त। जो अनुकूल न हो।

अपरति—(स्त्री०) [अप√रम्+क्तिन्] विच्छेद। असन्तोष। विराग।

अपरव—(पुं०) [अपकृष्टो रव: प्रा० स०] झगड़ा, विवाद (किसी सम्पत्ति के उपभोग के सम्बन्ध में)। अपकीर्ति, बदनामी।

अपरस्पर—(वि०) [अपरं च परं च इति विग्रहे द्व० स० पूर्वपदे सुडागम] एक के बाद दूसरा। अबाधित। लगातार। जो आपस का न हो।

अपरा—(स्त्री०) [अपर+टाप्] अध्यात्म-विद्या को छोड़ कर शेष संपूर्ण विद्या। लौकिक विद्या, वेद-वेदांगादि। पश्चिम दिशा। हाथी

के पीछे का धड़। गर्भाशय, झिल्ली। गर्भावस्था में रुका हुआ रजोधर्म।

अपराग—(वि०) [अपगतः रागो यस्मात् ब० स०] बिना रंग का। (पुं०) असन्तोष। शत्रुता; 'अपरागसमीरणेरितः' कि० २.५०।

अपराजित—(वि०) [न० त०] जो जीता न गया हो। जो हारा न हो। (पुं०) एक प्रकार का जहरीला कीड़ा। विष्णु। शिव।

अपराजिता—(स्त्री०) [न पराजिता न० त०] दुर्गा देवी जिनका पूजन दशहरा के दिन किया जाता है। शेफालिका, जयंती, विष्णुक्रांता, शंखिनी आदि पौधे। अयोध्या नगरी। एक वर्ण-वृत्त। उत्तर-पूर्व विदिशा। एक योगिनी।

अपराद्ध—(वि०) [अप√राध्+क्त] जिसने अपराध किया हो। जो निशाना चूक गया हो। दोषी। गलती करने वाला। अतिक्रांत, उल्लंघित। **—पृषत्क**-(पुं०) वह तीरंदाज जिसका तीर निशाने से गिर गया हो या निशाना चूक गया हो।

अपराद्धि—(स्त्री०) [अप√राध्+क्तिन्] अपराध, कसूर। पाप, दुष्कर्म।

अपराध—(पुं०) [अप√राध्+घञ् भावे] कसूर, जुर्म। पाप **—विज्ञान**-(न०) वह विज्ञान जिसमें अपराध करने के प्रेरक कारणों तथा निवारक उपायों का विवेचन हो। [क्रिमिनॉलॉजी]। **—स्वीकरण**-(न०) (पुरोहित इत्यादि के सामने) अपना अपराध या पाप स्वयं स्वीकार करना। वह कथन जिसमें अपना अपराध स्वीकार किया गया हो।

अपराधिन्—(वि०) [अपराध+इनि] अपराध करने वाला, दोषी।

अपरिग्रह—(वि०) [नास्ति परिग्रहो यस्य न० ब०] जिसके पास न तो कोई वस्तु हो और न कोई नौकर-चाकर। निपट मोहताज, निपट रंक। (पुं०) [न० त०] अस्वीकृति, नामंजूरी। अभाव, गरीबी।

अपरिच्छद—(वि०) [नास्ति परिच्छदो यस्य न० ब०] दरिद्र, गरीब, मोहताज।

अपरिच्छिन्न—(वि०) [परि√छिद्+क्त न० त०] सतत। अभेद्य। मिला हुआ। असीम, इयत्तारहित।

अपरिणय—(पुं०) [न० त०] अविवाहित अवस्था। चिर-कौमार्य।

अपरिणीता—(स्त्री०) [न० त०] अविवाहित लड़की।

अपरिपणितसन्धि—(पुं०) [न परिपणितः न० त० स चासौ सन्धिः कर्म० स०] केवल धोखे में रखने के लिये की जाने वाली एक प्रकार की कपट-संधि।

अपरिसंख्यान—(न०) [न० त०] अनंतता। असीमता। असंख्यत्व।

अपरीक्षित—(वि०) [न० त०] अनजाँचा हुआ। मूर्खतापूर्ण। अविचारित। जो सब प्रकार से सिद्ध या स्थापित न हुआ हो।

अपरुष्—[अप√रुष्+क्विप्] अक्रोधी; क्रोधशून्य 'अपरुषा परुषाक्षरमीरिता' र० ६.८।

अपरुष—(वि०) [न० त०] क्रोधशून्य। जो कठोर न हो।

अपरूप—(वि०) [अपकृष्टम् रूपम् यस्य ब० स०] बदशकल, कुरूप। बेढंग। अंगभंग।

अपरेद्युस्—(अव्य०) [अपर+एद्युस्] दूसरे दिन। अगले दिन।

अपरोक्ष—(वि०) [न० त०] जो परोक्ष न हो, प्रत्यक्ष। इंद्रियों द्वारा जाना जाने वाला। जो दूर न हो।

अपरोध—(पुं०) [अप√रुध्+घञ्] वर्जन, मनाही। रोक।

अपर्ण—(वि०) [नास्ति पर्णम् यस्मिन् न० ब०] पत्तारहित।

अपर्णा—(स्त्री०) [न पर्णान्यपि भोजनम् यस्याः न० ब०] पार्वती या दुर्गा देवी का एक नाम।

अपर्याप्त—(वि०) [परि√आप्+क्त न० त०] अयथेष्ट, जो काफी न हो। असीम, सीमारहित। अशक्त, असमर्थ, अयोग्य।

अपर्याप्ति—(स्त्री०) [परि√आप्+क्तिन्-न० त०] अपूर्णता, कमी, त्रुटि। अयोग्यता, अक्षमता।

अपर्याय—(वि०) [नास्ति पर्यायो यस्य न० ब०] क्रमरहित, बेसिलसिला। (पुं०) [परि-√इण्+घञ् न०त०] क्रम या विधि का अभाव।

अपर्युषित—(वि०) [परि√वस्+क्त न० त०] रात का रखा हुआ नहीं, बासी नहीं। ताजा, टटका।

अपर्वन्—(वि०) [नास्ति पर्व यस्मिन् न० ब०] जिसमें गाँठ न हो। बेजोड़ अथवा जिसमें जोड़ने की जगह न हो। बेसमय, अनऋतु। (न०) वह दिन जो पर्व वाला न हो।

अपल—(वि०) [नास्ति पलं यस्मिन् न० ब०] पलशून्य। बेमांस का। (न०) [अपकर्म लाति =गृह्णाति येन यस्मिन् वा इति विग्रहे अप√ला+क] आलपीन या कील। चार तोला से न्यून परिमाण।

अपलपन, अपलाप—(न०, पु०) [अप√लप्+ल्युट्] [अप्√लप्+घञ्] छिपाना। सत्य बात की जानकारी, विचार और भाव को छिपाना।—**वस्तु**-(पुं०) मिथ्याभाषण के लिये सजा।

अपलापिन्—(वि०) [अप√लप्+णिनि] इनकार करने वाला, मुकरने वाला। छिपाने वाला।

अपलाषिका, अपलासिका—(स्त्री०) [अप √लष् वा√लस्+ण्वुल स्त्रियाम् टाप्, इत्वम्] बड़ी प्यास।

अपलाषिन्, अपलाषुक—(वि०) [अप√लष्+णिनि] [अप√लष्+उकञ्] प्यासा। प्यास या अभिलाषा से युक्त।

अपवन—(वि०) [नास्ति पवनम् यत्र न० ब०] बिना आँधी-बतास के। पवन से रहित। (न०) [अपकृष्टम् वनम् प्रा० स०] नगर के समीप का बाग, उपवन। लताकुंज।

अपवरक, अपवरका (पुं० स्त्री०)—[अप √वृ+वुन्] भीतरी कमरा। रोशनदान, झरोखा; 'ततस्तस्मादपवरकात्' मु. १।

अपवरण—(न०) [अप√वृ+ल्युट्] पर्दा। चिक। कपड़ा।

अपवर्ग—(पुं०) [अप√वृज+घञ्] पूर्णता, किसी कार्य का पूर्ण होना या सुसम्पन्न होना। अपवाद, विशेष नियम। मोक्ष, निर्वाण। भेंट, पुरस्कार। दान। त्याग। फेंकना। छोड़ना (तीरों का)।

अपवर्जन—(न०) [अप√वृज्+ल्युट्] त्याग। (प्रतिज्ञा की) पूर्ति। उऋण होना। भेंट। दान। मोक्ष।

अपवर्तन—(न०) [अप√वृत्+ल्युट्] पलटाव, उलटफेर। वंचित करना। गणित में प्रसिद्ध भाज्य-भाजक दोनों को किसी एक तुल्यरूप अंक से बाँटना। संक्षिप्त करना।

अपवाद—(पुं०) [अप√वद्+घञ्] निन्दा, अपकीर्ति, कलङ्क। नियम विशेष जो व्यापक नियम के विरुद्ध हो। आज्ञा। निर्देश। खण्डन। प्रतिवाद। विश्वास। इतमीनान। प्रेम। सौहार्द। सद्भाव। आत्मीयता। वेदान्तशास्त्रानुसार अध्यारोप का निराकरण।

अपवादक—अपवादिन्—(वि०) [अप√वद्+ण्वुल] [अप√वद्+णिनि] निन्दक। बदनाम करने वाला। 'मृगयापवादिना माण्डव्येन' अभि०शा० २। विरोधी। किसी आज्ञा को हटाने वाला। बाहर करने वाला।

अपवारण—(न०) [अप√वृ+णिच्+ल्युट्] छिपाव, ढकाव। अन्तर्धान। रोक, व्यवधान। बीच में पड़कर आघात से बचाने वाली वस्तु।

अपवारित—(वि०) [अप√वृ+णिच्+क्त] ढका हुआ, छिपा हुआ। दूर किया हुआ, हटाया हुआ। तिरोहित, अन्तर्हित।

अपवारितम्—अपवारितकम्-(क्रि० वि०) [अप√वृ+णिच्+क्त, सामान्ये नपुंसकम्]

[अपवारित+कन् न०] छिपे हुए या गुप्त तौर तरीके ।

अपवाह—(पुं०) **अपवाहन**—(न०) कम करना । घटाना । [अप√वह्+णिच्+घञ्] [अप√वह्+णिच् +ल्युट्] दूर करना । हटाना ।

अपविघ्न—(वि०) [अपगताः विघ्नाः यस्मिन् ब० स०] अबाधित । बिना रोक टोक का ।

अपविद्ध—[अप√व्यध्+क्त] उलकाया हुआ या दूर फेंका हुआ । त्यक्त । अस्वीकृत किया हुआ । भूला हुआ । स्थानान्तर किया हुआ । छुड़ाया हुआ । रहित, हीन । नीच, क्षुद्र । (पुं०) हिन्दू धर्मशास्त्रानुसार बारह प्रकार के पुत्रों में से वह पुत्र जिसे उसके जनक-जननी ने त्याग दिया हो और अन्य किसी ने उसे गोद ले लिया हो; मनु ९.१७१; या० २.१३२

अपविद्या—(स्त्री०) [अपकृष्टा विद्या प्रा० स०] अज्ञता । आध्यात्मिक अज्ञान, अविद्या, माया; 'तत्त्वस्य संवित्तिरिवापविद्या' कि० १६.३२

अपवीण—(वि०) [अपकृष्टा वीणा वा अपगता वीणा यस्य ब० स०] बुरी वीणा रखने वाला या बिना वीणा का ।

अपवीणा—(स्त्री०) [अपकृष्टा वीणा प्रा० स०] बुरी वीणा ।

अपवृक्ति—(स्त्री०) [अप√वृज्+क्तिन्] समाप्ति, सम्पूर्णता ।

अपवृति—(स्त्री०) [अप√वृ+क्तिन्] दे० 'अपवरण' ।

अपवृत्ति—(स्त्री०) [अप√वृत्+क्तिन्] समाप्ति, अन्त ।

अपवेध—(पुं०) [अपकृष्टो वेधः प्रा० स०] गलत छेदना (मोती आदि का) । ठीक स्थान पर न बेधना ।

अपव्यय—(पुं०) [प्रा० स०] निरर्थक व्यय, फिजूलखर्ची ।

अपशकुन—(न०)[प्रा० स०] बुरा सगुन, असगुन ।

अपशङ्क—(वि०) [अपगता शङ्का यस्य ब० स०] निडर, निर्भय । अपशङ्कम् निर्भयता ।

अपशब्द—(पुं०) [अपकृष्टः शब्दः प्रा० स०] अशुद्ध शब्द, दूषित शब्द । असंबद्ध प्रलाप । गाली, कुवाच्य । पाद, गोज़, अपानवायु ।

अपशिरस्,— **अपशीर्ष**,— **अपशीर्षन्**— (वि०) [अपगतम् शिरः शीर्षम् वा यस्य ब० स०] सिर रहित । बेसिर का ।

अपशुच्—(वि०) [अपगता शुक् यस्य ब० स०] शोकरहित । (पुं०) जीवात्मा ।

अपशोक—(पुं०) [अपगतः शोको यस्मात् ब० स०] अशोकवृक्ष । (वि०) शोकरहित ।

अपश्चिम—(वि०) [नास्ति पश्चिमो यस्मात् न० ब० तथा न पश्चिमः न० त०] जिसके पीछे कोई न हो । प्रथम । पूर्व । उत्तम तथा अनुत्तम; 'प्रसीदतु महाराजो ममानेनापश्चिमेन प्रणयेन' वे० ६ । सब के आगे वाला । अति, अत्यन्त । 'अपश्चिमामिमां कष्टामापदं प्राप्तवत्यहम्' वा० ।

अपश्रय—(पुं०) [अपश्रीयते अस्मिन् इति अप√श्रि+अच्] तकिया, बालिश ।

अपश्री—(वि०) [अपगता श्रीर्यस्य ब० स०] गन्दा, सौन्दर्यरहित, बदसूरत ।

अपश्वास—(पुं०) [अप√श्वस्+घञ्, अपकृष्टः श्वासः प्रा० स०]अपान वायु; मन्दी सांस

अपष्ठ—(न०) [अप√स्था+क] अंकुश की नोक ।

अपष्ठु—(वि०) [अप√स्था+कु] विरुद्ध । प्रतिकूल । बांया । (अव्य०) विरुद्ध । शठाई से । निर्दोषता से । भली-भांति, ठीक-ठीक ।

अपष्ठुर—**अपष्ठुल**—(वि०) [अप√ स्था +कुरच्, कुलच्] उल्टा, विरुद्ध ।

अपसद—(वि०) [अपकृष्ट एव सीदति इति अप√सद्+अच्] जातिबहिष्कृत । अधम, नीच, अपकृष्ट, (पुं०) उच्च जाति के पुरुष

और नीच जाति की स्त्री से उत्पन्न संतान।
अपसर—(पुं०) [अप√सृ+अप्] अपसरण, हटना। पीछे लौटना। युक्तियुक्त कारण। उचित क्षमाप्रार्थना।
अपसरण—(न०) [अप√सृ+ल्युट्] चला जाना। लौट जाना (सेना का)। बच कर निकल जाना।
अपसर्जन—(न०) [अप√सृज+ल्युट्] त्याग। भेंट या दान। स्वर्गीय सुख, मोक्ष।
अपसर्प, अपसर्पक—(पुं०) [अप√सृप्+अच्] [अपसर्प+कन् (स्वार्थे)] जासूस, भेदिया; 'सोऽपसर्पैर्जजागार यथाकालं स्वपन्नपि' र० १७.५१।
अपसर्पण—(न०) [अप√सृप्+ल्युट्)] पीछे हटना या जाना। भेदिया की तरह भेद लेना, जासूसी करना।
अपसव्य—अपसव्यक—(वि०) [अपगत सव्यं यत्र ब० स०] दाहिना। उल्टा, विरुद्ध। जिसका यज्ञोपवीत दाहिने कंधे पर हो। (न०) यज्ञोपवीत को बाएँ कंधे से दाहिने कंधे पर करना। पितृतीर्थ।
अपसार—(पुं०) [अप√सृ+घञ्] बाहर जाना। पीछे लौटना। निकास, निकलने का रास्ता।
अपसारण—(न०) **अपसारणा**—(स्त्री०) [अप√सृ+णिच्+ल्युट्] [अप√सृ+णिच्+युच्] दूर हटाना। हँका देना। निकाल देना रास्ता देना। किसी स्थान, संस्था आदि से बलपूर्वक या नियम-भंग आदि के कारण हटा दिया जाना। (एक्सपल्शन)।
अपसिद्धान्त—(पुं०) [अपकृष्टः सिद्धान्तः प्रा० स०] गलत या भ्रमयुक्त निर्णय। एक निग्रह स्थान (न्या०)। विरुद्ध सिद्धांत (जैन)।
अपसृप्ति—(स्त्री०) [अप√सृप्+क्तिन्] दूर चला जाना।
अपस्कर—(पुं०) [अप√कृ+अप्, सुडागम] पहियों को छोड़ गाड़ी का अन्य भाग (न०) विष्ठा। योनि, भग। गुदा, मलद्वार।
अपस्कार—(पुं०) [अप√कृ+घञ्, सुडागम] घुटने के नीचे का भाग।
अपस्तम्ब,—स्तम्भ—(पुं०) [अप√स्तम्ब् वा√स्तम्भ्+अच्] सीने के पास का वह अंग जिसमें प्राणवायु रहती है।
अपस्नान—(न०) [अपकृष्टम् स्नानम् प्रा० स०] अशौचस्नान। अपवित्र स्नान। ऐसे जल में स्नान करना जिसमें कोई मनुष्य पहिले अपना शरीर धो चुका हो।
अपस्पश—(वि०) [अपगतः स्पशो यस्य ब० स०] जिसके पास जासूस न हो; 'शब्दविद्येव नो भाति राजनीतिरपस्पशा' शि० २.११२
अपस्पर्श—(वि०) [अपगतः स्पर्शो यस्य ब० स०] निश्चेतन, संज्ञाहीन। अनुभव-शक्तिहीन।
अपस्मार—(पुं०)**अपस्मृति**—(स्त्री०) मिरगी रोग। [अप√स्मृ√+घञ्] [अप√स्मृ+क्तिन्] स्मरण-शक्ति की हानि।
अपस्मारिन्—(वि०) [अप√स्मृ+णिनि] भुलक्कड़, भूल जाने वाला। मिर्गी के रोग वाला।
अपह—(वि०) [अप√हन्+ड] निवारण या नाश करने वाला (समासांत में—क्लेशापह)।
अपहत—(वि०) [अप√हन्+क्त] नष्ट या दूर किया हुआ। मारा हुआ।—**पाप्मन्** (वि०) जिसके समस्त पाप दूर हो गये हों। वेदान्त द्वारा जानने योग्य (आत्मा)
अपहति—(स्त्री०) [अप√हन्+क्तिन्] हटाना। नष्ट करना।
अपहनन—(न०) [अप√हन्+ल्युट्] निवारण करना। हटाना। प्रतिक्षेप करना। पीछे हटाना। मारना।
अपहरण—(न०) [अप√हृ+ल्युट्] छीन लेना। उठा ले जाना। चुराना। लूट लेना। छिपाना, गायब करना। महसूली माल को दूसरी चीजों में छिपा कर महसूल बचाना (कौ०)।

रुपया ऐंठने, स्वार्थ सिद्ध करने आदि के उद्देश्य से किसी बालक, बालिका या धनी व्यक्ति आदि को बलपूर्वक उठा कर ले जाना या गायब कर देना। (किडनैपिंग)।

अपहसित—(न०) **अपहास**—(पु०) [अप हस्+क्त (भावे)] [अप हस्+घञ् (भावे)] अकारण हँसी। मूर्खतापूर्ण हास। निरर्थक हास्य।

अपहस्त—(वि०) [अपसारणार्थो हस्तो यस्मिन् ब० स०] गलहस्त (गले में हाथ) देकर हटाया जाने वाला (आदमी)। (न०) फेंकना। ले जाना। चुराना। लूटना।

अपहस्तित—(वि०) [अपहस्त+इतच्] निरस्त, हटाया हुआ। गले में हाथ देकर निकाला हुआ। रद्दी किया हुआ। छोड़ा हुआ, त्यागा हुआ।

अपहानि—(स्त्री०) [अपकृष्टा हानिः प्रा० स०] त्याग, विच्छेद। अन्तर्धान। नाश।

अपहार—(पु०) [अप√हृ+घञ्] लूट। चोरी। छिपाव। दूसरे की संपत्ति का दुरुपयोग। हानि। क्षति।

अपहारक—(वि०) [अप√हृ+ण्वुल्] अपहरण करने वाला। छीनने वाला, बलात् हरने वाला। (पु०) चोर। डाकू।

अपहारिन्—(वि०) [अप√हृ+णिनि] दे० 'अपहारक'।

अपहृत—(वि०) [अप√हृ+क्त] छीना हुआ। लूटा हुआ। चुराया हुआ।

अपह्नव—(पु०) [अप√ह्नु+अप् (भावे)] छिपाव, दुराव। वाग्जाल से सत्य को छिपाना। बहाना, टालमटूल। स्नेह, प्रेम।

अपह्नुति—(स्त्री०) [अप√ह्नु+क्तिन् (भावे)] मुकरना। सत्य को छिपाना। एक अर्थालंकार इसमें उपमेय का निषेध कर के उपमान स्थापित किया जाता है; 'नेदं नभो मण्डलम्' सा० द० १०.।

अपह्रास—(पु०) [अप√ह्रस्+घञ्] घटाव, कमी।

अपांज्योतिस्—(न०) [ष० त० अलुक् स०] बिजली।

अपांनपात्—(पु०) [ष० त० अलुक् स०] सावित्री और अग्नि की उपाधि।

अपांनाथ,—निधि—पति—(पु०) [ष० त० अलुक् स०] जल के स्वामी, समुद्र। वरुण।

अपांपित्त—(न०) [ष० त० अलुक् स०] अग्नि। एक पौधा।

अपांयोनि—(पु०) [ष० त० अलुक् स०] समुद्र।

अपाक—(पु०) [√पच्+घञ् न० त०] अजीर्ण, अनपच। कच्चापन। अवयस्कता। **—ज**—(वि०) जो पक या पका कर तैयार न हो। प्राकृतिक। **—शाक**—(पु०) अदरक।

अपाकरण—(न०) [अप—आ√कृ+ल्युट्] निराकरण, हटाना, दूर करना। अस्वीकृति, नामंजूरी। अदायगी, (कर्ज आदि) चुकता करना। व्यवसाय-उत्तोलन, किसी कारबार को समेटना या उठा देना।

अपाकर्मन्—(न०) [अप—आ√कृ+मनिन्] अदायगी, चुकाना, परिशोध। कारबार उठाना।

अपाकृति—(स्त्री०) [अप—आ√कृ+क्तिन्] दे० 'अपाकरण'। भय या क्रोध से उत्पन्न उच्छ्वास।

अपाक्ष—(वि०) [अक्ष्णः प्रति इति विग्रहे अव्य० स० अच् तदनन्तर पुनः अच्] विद्यमान, प्रत्यक्ष, इन्द्रियग्राह्य, [अपगतम् अपकृष्टम् वा अक्षि यस्य ब० स०] नेत्रहीन। बुरे नेत्रों वाला।

अपाङ्क्त, —अपाङ्क्तेय, —अपाङ्क्त्य—(वि०) [सद्भिः सह भोजने पङ्क्तिम् अर्हति इत्यर्थे पङ्क्ति√अण्, पङ्क्ति+ढक्—एय, त्कि+यत् न० त०] जो सज्जनों या बिरादरी के साथ एक पंक्ति में बैठ कर न खा-पी सके, जातिबहिष्कृत।

अपाङ्ग,—अपाङ्गक—(पु०) [अपाङ्गति तिर्यक् चलति नेत्रम् यत्र इति विग्रहे अप√अङ्ग्+

घञ् (आधारे)] [अपाङ्ग+कन्] आँख की कोर; 'चलापाङ्गां दृष्टिम्' अभि० शा० १.२४। सम्प्रदाय-सूचक तिलक। (वि०) [अपगतम् अङ्गम् यस्य ब० स०] जिसका कोई अंग टूटा हो या न हो। पंगु। अंगहीन। (पु०) कामदेव।—दर्शन-(न०)—दृष्टि-(स्त्री०)—विलोकित-(न०)—वीक्षण—(न०) कनखियों से देखना, आँख मारना।

अपाची—(स्त्री०) [अप√अञ्च्+क्विन् स्त्रियाम् ङीप्] दक्षिण या पश्चिम दिशा।

अपाचीन—(वि०) [अपाच्याम् भवः इत्यर्थे अपाची+ख=ईन] पीछे को घूमा हुआ, पीछे को मुड़ा हुआ। अदृश्य, जो न देख पड़े। दक्षिण या पश्चिम का। सामने का। उल्टा।

अपाच्य—(वि०) [अपाची+यत्] दक्षिणी या पश्चिमी।

अपाटव—(न०) [पटु+अण् न० त०]। अपटुता, अनाड़ीपन। भद्दापन। रोग, अस्वस्थता। (वि०) [न० ब०] अकुशल, अनाड़ी। रोगी। भद्दा।

अपाणिनीय—(वि०) [न पाणिनीयः न० त०] पाणिनि के नियमों के विरुद्ध। वह जिसने पाणिनि का व्याकरण भली भाँति न पढ़ा हो।

अपात्र—(न०) [न० त०] कुपात्र, बुरा बरतन। अयोग्यपुरुष। दान देने के लिये अयोग्य व्यक्ति। निन्दित, दुराचारी।

अपात्रीकरण—(न०) [अपात्रम् अद्भक्षभोजनादायोग्यम् क्रियतेऽनेन इति अपात्र√कृ+च्विः ईत्वम् तदन्तात्+ल्युट्] अयोग्य बनाना। निन्दित धन लेना, झूठ बोलना आदि। नौ प्रकार के पापों में से एक।

अपादान—(न०) [अप=आ√दा+ल्युट्] हटाना, अलगाव, विभाग। व्याकरण में पाँचवाँ कारक।

अपाध्वन्—(पु०) [अपकृष्टः अध्वा प्रा० स०] बुरा मार्ग।

अपान—(पु०) [अपानयति=अधोनयति मूत्रादिकम् इति अप=आ√नी+ड वा अपानिति=अधोगच्छति इति अप√अन्+अच्] शरीर में नीचे रहने वाला पवन। पाँच प्राण वायुओं में से एक, यह गुदा मार्ग से निकलता है, (न०) गुदा।

अपानृत—(वि०) [अपगतम् अनृतम् यस्मात् ब० स०] सत्य। असत्य से मुक्त।

अपाप,—अपापिन्-(वि०) [नास्ति पापम् यस्य न० ब०] [न पापम् न० त०, अपाप+इनि] पापरहित, विशुद्ध, पवित्र, धर्मात्मा।

अपामार्ग—(पु०) [अपमृज्यते व्याधिरनेन इति अप√मृज्+घञ्, कुत्वदीर्घौ] चिचड़ा, अव्झाझारा।

अपामार्जन—(न०) [अप√मार्ज+ल्युट्] धोना, साफ करना। (रोग आदि को) दूर करना।

अपाय—(पु०) [अप√इण्+अच् (भावे)] प्रस्थान। वियोग, अलगाव। अदृश्यता। अविद्यमानता। सर्वनाश। हानि। चोट।

अपार—(वि०) [उत्तरोऽवधिः पारः, न० ब०] पार-रहित। असीम, सीमारहित। जो कभी चुके ही नहीं, बहुत। पहुँच के बाहर। जिसके पार कठिनता से हुआ जाय। जिससे पार पाना कठिन हो। (न०) नदी का दूसरा तट। एक तरह का मानसिक संतोष या तटस्थता। असहमति। असीम सागर।

अपार्ण—(वि०) [अप√अर्द्+क्त] दूरवर्ती। समीप का।

अपार्थ—अपार्थक-(वि०) [अपगतः अर्थः=अभिधेयः प्रयोजनं वा यस्मात् ब० स०] [अपार्थ+कन्] निरर्थक, अर्थहीन। बिना प्रयोजन का।

अपार्थिव—(वि०) [न पार्थिवः न० त०] जो पृथ्वी या मिट्टी संबंधी न हो या उससे उत्पन्न न हुआ हो।

अपावरण—(न०)—, **अपावृति**—(स्त्री०) [अप—आ√वृ+ल्युट्] [अप—आ√वृ+क्तिन्] घेरा। छिपाव, दुराव।

अपावर्तन,—(न०), **अपावृत्ति**—(स्त्री०) [अप—आ√वृत्+ल्युट्] [अप—आ√वृत्+क्तिन्] लौट जाना, पीछे चला जाना। भाग जाना। क्रान्ति।

अपाश्रय—(वि०) [अपगतः आश्रयो यस्य ब० स०] आश्रयहीन, निरवलम्ब। असहाय। (पु०) [अप—आ√श्रि+अच्] आश्रय, आश्रय-स्थल। चँदोवा। शामियाना। सिरहाना।

अपासङ्ग—(पु०) [अप—आ√सञ्ज्+घञ्] तरकस।

अपासन—(न०) [अप√अस्+ल्युट्] फेंक देना। त्याग देना। मार देना।

अपासरण—(न०) [अप—आ√सृ+ल्युट्]। दूर हटना। भागना।

अपासु—(वि०) [अपगताः असवः यस्य ब० स०] निर्जीव, मृत।

अपास्त—(वि०) [अप√अस्+क्त] हटाया हुआ। तिरस्कृत। पराजित।

अपि—(अव्य०) [√पा+इण्, आकारलोप न० त०] सम्भावना। प्रश्न। शङ्का। नहीं। समुच्चय। अनुज्ञा। अवधारण। भी। ही। निश्चय। ठीक।—**च**-(अव्य०)। और भी। —**तु**-(अव्य०) बल्कि। किन्तु।

अपिगीर्ण—(वि०) [अपि√गॄ+क्त] प्रशंसित। प्रसिद्ध। कथित, वर्णित।

अपिच्छिल—(वि०) [न पिच्छिलः न० त०] गँदला नहीं, स्वच्छ, साफ।

अपितृक—वि०) [नास्ति पिता यस्य न० ब०] पितारहित। पैतृक या पुश्तैनी नहीं, अपैतृक।

अपित्र्य—(वि०) [न पित्र्यम् न० त०] पैतृक नहीं।

अपिधान, **पिधान**-(न०) [अपि√धा+ल्युट्] ['वष्टि भागुरिरल्लोपमवाप्योरुप-सर्गयोः' इति कारिकया अकारस्य लोपः]। ढकना। छिपाना। ढक्कन। आच्छादन, आवरण।

अपिधि—(स्त्री०) [अपि√धा+कि] जब-तक तृप्ति न हो तबतक देना। छिपाव, दुराव।

अपिनद्ध—(वि०) [अपि√नह्+क्त]। ढका हुआ। बँधा हुआ। पहना हुआ।

अपिव्रत—(वि०) [अपि संसृष्टं व्रतम् कर्म भोजनं नियमो वा यस्य ब० स०] किसी धर्मानुष्ठान में भाग लेनेवाला रक्तसम्बन्ध से युक्त।

अपिहित,—**पिहित**-(वि०) [अपि√धा+क्त] [भागुरिमतेन अकारलोपः]। बंद, मुँदा हुआ। ढका हुआ, छिपा हुआ। [न पिहितः न० त०] जो छिपा या ढका न हो, स्पष्ट।

अपीच्य—(वि०) [अपि√च्यु+ड] अति सुन्दर। गुप्त, छिपा हुआ।

अपीति—(स्त्री०) [अपि√इण्+क्तिन्] प्रवेश। समीप-गमन। नाश, हानि। प्रलय।

अपीनस—(पु०) [अपि निश्चितम् ईयते गम्यते नासिका येन अपि√ई+क्विप्, अपि-नासिका ब० स० नासिकायाःनसादेशः] नाक की शुष्कता। घ्राणशक्ति की हानि। जुकाम।

अपुंस्का—(स्त्री०) [नास्ति पुमान् यस्याः न० ब०] बिना पति की स्त्री; 'नापुंस्कासीति मे मतिः' भट्टि० ५.७० ।

अपुच्छा—(स्त्री०) [नास्ति पुच्छम्=अग्रम् यस्याः न० ब०] चोटी रहित। शीशम का पेड़।

अपुत्र, **अपुत्रक**—(वि०) [नास्ति पुत्रो यस्य न० ब०] [न० ब० कप्] पुत्र या उत्तरा-धिकारी से रहित।

अपुत्रिका—(स्त्री०) [नास्ति पुत्रो यस्याः न० ब० कप्, टाप् इत्व] पुत्ररहित पिता की लड़की जिसके निज का भी कोई पुत्र न हो।

अपुनर्—(अव्य०) [न पुनः न० त०]। फिर नहीं। एक बार।—**अन्वय**-(वि०) (अपु-

नरन्वय) पुनः न लौटने वाला, मृत ।—आदान–(न०) (अपुनरादान) वापिस न लेना या पुनः न लेना ।—आवृत्ति–(स्त्री०) (अपुनरावृत्ति) । फिर न आना या लौटना, मोक्ष ।—भव–(पु०) पुनः जन्म न लेना, मोक्ष ।

अपुष्ट—(वि०) [न पुष्टः न० त०] । दुबला-पतला । धीमा, अप्रखर । कोमल (स्वर) । एक अर्थदोष ।

अपुष्प—(वि०) [न० ब०] पुष्पहीन ।—**फल,—फलद**–(पु०) बिना फूले फल देने वाला, गूलर आदि वृक्ष ।

अपूप—(पु०) [न पूयते विशीर्यते इति√पूय्+प न० त०] पुआ, मालपुआ, अंदरसा ।

अपूरणी—(स्त्री०) [न पूर्यते सर्वतः कण्टकावृततया दुरारोहत्वात् इति√पूर्+ल्युट् ङीप् न० त०] शाल्मली वृक्ष, सेमर का पेड़ ।

अपूर्ण—(वि०) [न पूर्णः न० त०] जो पूरा या भरा न हो । अधूरा । कम । असमाप्त ।

अपूर्व—(वि०) [सुन्दरतया कुत्सिततया वा नास्ति पूर्वम् =पूर्वभूतम् यस्य यस्मात् वा न० ब०] । जो या जैसा पहले न हुआ हो । अद्भुत; 'अपूर्वो दृश्यते वह्निः कामिन्याः स्तनमण्डले । दूरतो दहतीवाङ्गं हृदि लग्नस्तु शीतलः' शृं०ति० १७ । बे-जोड़ । अज्ञात । अपरिचित । पहला नहीं । (पु०) [नास्ति पूर्वम्—पूर्ववर्ती यस्य न० ब०] परमात्मा । न० [पूर्वम् न दृष्टम्] पाप-पुण्य, जिसके कारण पीछे सुख-दुःख की प्राप्ति होती है ।—**पति**–(स्त्री०) जिसके पहिले पति न रहा हो, क्वारी, अविवाहिता ।—**विधि**–(पु०) अन्य प्रमाणों से अप्राप्त अर्थ का विधान करना ।

अपृक्त—(वि०) [न० त०] । असंयुक्त । असंबद्ध ।

अपृथक्—(अव्य०) [न० त०] अलहदा से नहीं । साथ साथ । समष्टि रूप से ।

अपेक्षण,—(न०)—**अपेक्षा**–(स्त्री०) [अप √ईक्ष्+ल्युट्] [अप√ईक्ष्+अ] । आकांक्षा, चाह । आवश्यकता । कार्य और कारण का परस्पर सम्बन्ध । परवाह । ध्यान । प्रतिष्ठा, सम्मान । आशा ।—**बुद्धि**–(स्त्री०) 'यह एक है' 'यह एक है' इस प्रकार की अनेकों में रहने वाली बुद्धि, भेदबुद्धि । 'अनेकैकत्वबुद्धिर्या सापेक्षा बुद्धिरुच्यते' इति भाषापरिच्छेदः ।

अपेक्षणीय, **अपेक्षितव्य**, **अपेक्ष्य**—(वि०) [अप√ईक्ष्+अनीयर्] [अप√ईक्ष्+तव्यत्] [अप√ईक्ष्+ण्यत्] अपेक्षा करने योग्य । वाञ्छनीय ।

अपेक्षित—(न०) [अप√ईक्ष्+क्त (भावे)] ख्वाहिश । इच्छा । सम्मान । सम्बन्ध । (वि०) [अप√ईक्ष्+क्त (कर्मणि)] जिसकी चाह, प्रतीक्षा या आवश्यकता हो ।

अपेत—[अप√इण्+क्त] तिरोहित । गया हुआ; 'अपेतयुद्धाभिनिवेशसौम्य' शि० ३.१ । विरुद्ध । रहित । मुक्त ।—**कृत्य**–(वि०) कार्य या कर्म से रहित ।—राक्षसी–(स्त्री०) तुलसी का पौधा ।

अपोगण्ड—(पु०) [पुनाति, पवते वा इति √पू+डिच्, न पौगण्डः एकदेशोऽस्य न० ब०] किसी शरीरावयव की अधिकता अथवा स्वल्पता वाला । देह के किसी अङ्ग की कमी या बेशी वाला । सोलह वर्ष की अवस्था के नीचे नहीं अर्थात् ऊपर, बालिग, वयस्क । बालक, बच्चा । अत्यन्त भीरु, बड़ा डरपोक । (चेहरे की) सिकुड़न वाला ।

अपोढ—(वि०)[अप√वह्+क्त] । निरस्त, निकाला हुआ । बाधित ।

अपोदका—(स्त्री०) [अपगतम् उदकम् यस्याः ब० स०] पूति नामक शाक ।

अपोह—(पु०) [अप√ऊह्+घञ्] स्थानान्तरित करना । भगा देना । शङ्का या तर्क का

निराकरण । तर्क-वितर्क करना, बहस करना । उन सब विषयों का निराकरण जो विचारणीय विषय के बाहर हों ।

अपोहन—(न०) [अप√ऊह्+ल्युट्] दे० 'अपोह' ।

अपोहनीय, अपोह्य—(वि०) [अप√ऊह्+अनीयर्] [अप√ऊह्+ण्यत्] हटाने योग्य, दूर करने योग्य ।

अपौरुष, अपौरुषेय—(वि०) [नास्ति पौरुषम् यस्मिन् न० ब०] [न पौरुषेयः न० त०] । कायर, भीरु । अमानुषिक, अलौकिक । (न०) [न० त०] भीरुता, कायरता । अलौकिक या अमानुषिक शक्ति ।

अप्तोर्याम—(पु०) [अप्तोः शरीरस्य पावकत्वात् याम इव, अलुक् स०] । एक यज्ञ का नाम । सामवेद की एक ऋचा का नाम । जो उक्त यज्ञ की समाप्ति में पढ़ी जाती है । ज्योतिष्टोम यज्ञ का अन्तिम या सप्तम भाग ।

अप्नुय—(वि०) [अप्नुनि=देहे भवः इत्यर्थे अप्नु+यत् वेद टिलोपः] । किसी काम में लगा हुआ । शरीर के काम में स्थित ।

अप्पति—(पु०) [अपाम् पतिः ष० त०] वरुण । समुद्र ।

अप्यय—(पु०) [अपि√इण्+अच्] समीप-गमन, मिलन । (नदी में से) उड़ेलना, उलीचना । प्रवेश । अन्तर्धान, अदृष्ट होना । मोक्ष होना । नाश ।

अप्रकरण—(न०) [न प्रकरणम् न० त०] मुख्य विषय नहीं, वाहियात विषय ।

अप्रकाश—(वि०) [नास्ति प्रकाशो यस्मिन् न० ब०] । प्रकाश-रहित, चमक से शून्य । धुँधला । काला । स्वतःप्रकाशमान । तिरो-हित, छिपा हुआ । (पु०) [न० त०] प्रकाश का अभाव, अँधेरा ।

अप्रकृत—(वि०) [न० त०] अयथार्थ । बनावटी । अप्रधान, गौण । आकस्मिक । विषय से असंबद्ध, अप्रासङ्गिक । (न०) उप-मान ।

अप्रकृष्ट—(वि०) [न० त०] नीच, बुरा । (पु०) कौआ ।

अप्रगम—(वि०) [नास्ति प्रगमो यस्मात् न० ब०] इतनी तेजी से जाने वाला कि अन्य लोग पीछे न चल सकें ।

अप्रगल्भ—(वि०) [न० त०] असाहसी । शर्मीला, शीलवान् । (विलोम, धृष्ट), 'धृष्टः पार्श्वे वसति नियतं दूरतश्चाप्रगल्भः' हि० २.२६ अप्रौढ़ । निरुद्यम । ढीला, सुस्त ।

अप्रगुण—(वि०) [न प्रकृष्टः गुणो यस्य न० ब०] व्याकुल । प्रकृष्ट गुण से हीन ।

अप्रज—(वि०) [नास्ति प्रजा यस्य यस्मिन् वा न० ब०] सन्तान-रहित । जो (स्थान या घर) बसा न हो, जहाँ बस्ती न हो ।

अप्रजस्—(वि०) [नास्ति प्रजा यस्य न० ब० असिच् प्रत्ययः] सन्तति-हीन, जिसके कोई औलाद न हो ।

अप्रजाता—(स्त्री०) [नास्ति प्रजातो यस्याः न० ब०] बन्ध्या स्त्री ।

अप्रतिकर—(वि०) [प्रति√कृ+अच् न० त०] जो विपरीत न करे, विश्वस्त । (पु०) [प्रति√कृ+अप् (भावे) न० त०] विक्षेप का अभाव । घबड़ाहट का अभाव ।

अप्रतिकर्मन्—(वि०) [नास्ति प्रतिकर्म यस्य न० ब०] ऐसे कर्म करने वाला, जिसकी बराबरी अन्य कोई न कर सके । अनिवार्य । अति प्रबल । अप्रतिरोधनीय ।

अप्रतिकार,—अप्रतीकार-'(वि०) [नास्ति प्रतिकारो यस्य न० ब०] जिसका कोई उपाय या तदबीर न हो सके, लाइलाज, असाध्य । जिसका कोई बदला न दिया जा सके ।

अप्रतिघ—(वि०) [न० ब०] अभेद्य । अजेय । जो नष्ट न किया जा सके । जो हटाया न जा सके, जो दूर न किया जा सके । अक्रोधी, शान्त ।

अप्रतिद्वन्द्व—(वि०) [न० ब०] जिसका कोई प्रतिद्वन्द्वी न हो । अजेय । बेजोड़ ।

अप्रतिपक्ष—(वि०) [न० ब०] अप्रतियोगी, विपक्षीशून्य, शत्रुरहित। असदृश।

अप्रतिपण्य—(वि०) [न० ब०] जिसका विनिमय या विक्रय न हो सके।

अप्रतिपत्ति—(स्त्री०) [प्रतिपत्तेः अभावः न० त०] अस्वीकृति। उपेक्षा। समझदारी का अभाव। दृढ़विचारशून्यता। विह्वलता; 'अप्रतिपत्तिर्जडता स्यादिष्टानिष्टदर्शन-श्रुतिभिः' काद०। असफलता।

अप्रतिबन्ध—(वि०) [प्रतिबन्धस्य अभावः न० त०] रुकावट का न होना, स्वच्छन्दता। (वि०) [न० ब०] बे-रोक-टोक, स्वच्छंद। विवादरहित, बिना झगड़े का।

अप्रतिबल—(वि०) [न० ब०] अजयशक्ति-युक्त, वह मनुष्य जिसके समान बली दूसरा न हो।

अप्रतिभ—(वि०) [नास्ति प्रतिभा यस्य न० ब०] शीलवान्। प्रतिभाशून्य। उदास। स्फूर्ति रहित, सुस्त। मतिहीन, निर्बुद्धि।

अप्रतिभट—(वि०) [न० ब०] जिसका सामना करने वाला कोई न हो, बेजोड़। (पुं०) ऐसा योद्धा जिसके सामने कोई खड़ा न रह सके।

अप्रतिभाव्य—(वि०) [प्रति√भू+णिच्+यत् न० त०] (वह अपराध) जिसमें किसी के जामिन बनने या जमानत देने को तैयार होने पर भी अपराधी के अस्थायी रूप से रिहा किये जाने की गुंजाइश न हो। [नॉन बेलेबिल]।

अप्रतिम—(वि०) [न० ब०] जिसकी तुलना न हो सके, बेजोड़, असदृश।

अप्रतिरथ—(वि०) [न प्रतिपक्षो रथो रथान्तरम् यस्य न० ब०] ऐसा वीर योद्धा जिसके समान दूसरा वीर योद्धा न हो। बेजोड़ वीर योद्धा; 'दीप्यन्तिमप्रतिरथं तनयं निवेश्य' अभि० शा० ४.१९ (पुं०) विष्णु। (न०) [न प्रतिकूलो रथो यत्र न० ब०] युद्ध की यात्रा। युद्धार्थ यात्रा के लिये किया गया मङ्गलाचार। सामवेद का एक भाग।

अप्रतिरव—(वि०) [नास्ति प्रतिरवो यत्र न० ब०] विवादरहित, जिसके सम्बन्ध में कोई झगड़ा न हो।

अप्रतिरूप—(वि०) [न० ब०] जिसके समान रूप वाला कोई न हो। अद्वितीय। अनुपम, जिसकी तुलना न हो सके।—**कथा**-(स्त्री०) ऐसा वचन जिसका उत्तर न हो, उत्तरहीन वचन। ऐसा वचन जिसके विरुद्ध और न हो।

अप्रतिवीर्य—(वि०) [न० ब०] वह जिसके समान शौर्य या पराक्रम किसी अन्य में न हो, अथवा जिसके शौर्य या पराक्रम की समानता अन्य न कर सके।

अप्रतिशासन—(वि०) [न० ब०] जिसका शासन में दूसरा कोई प्रतिद्वन्द्वी न हो। एक ही शासन में रहने वाला।

अप्रतिष्ठ—(वि०) [नास्ति प्रतिष्ठा यस्य न० ब०] बे-इज्जत, बदनाम। अस्थायी, विनश्वर। जो लाभप्रद न हो, निकम्मा, व्यर्थ। अप-कीर्तिकर। (पुं०) एक नरक। परमात्मा।

अप्रतिष्ठान—(न०) [न० त०] प्रौढ़ता या दृढ़ता का अभाव।

अप्रतिहत—(वि०) [प्रति√हन्+क्त न० त०] जिसे कोई रोकने वाला न हो, अबाधित अजेय; 'जृम्भतामप्रतिहतप्रसरमार्यस्य क्रोध-ज्योतिः' वे० १। आघातरहित। बलवान्। जो हतोत्साह न हो।—**गति**-(वि०) जिसकी गति किसी प्रकार रोकी न जा सके।—**नेत्र**-(वि०) जिसके नेत्र निर्बल न हों। (पुं०) एक बौद्ध देवता।—**व्यूह**-(पुं०) वह अव्यवस्थित व्यूह जिसमें हाथी, घोड़े, रथ, सिपाही आदि एक दूसरे के पीछे हों (कौ०)।

अप्रतीक—(वि०) [न० ब०] अंगहीन। ब्रह्म का एक विशेषण।

अप्रतीत—(वि०) [न० त०] जो प्रसन्न या हर्षित न हो। अगम्य। विरोधरहित। अस्पष्ट (अर्थ वाला—एक शब्द दोष)।

अप्रत्ता—(स्त्री०) [प्र√दा+क्त न० त०] क्वारी लड़की, जिसका विवाह न हुआ हो या जिसका दान न किया गया हो।

अप्रत्यक्ष—(वि०) [न० त०] अदृष्ट, अगोचर। अज्ञात। अविद्यमान, अनुपस्थित।

अप्रत्यय—(वि०) [न० ब०] आत्मसन्दिग्ध, बेएतबार, जिसको किसी पर विश्वास न हो। ज्ञानशून्य। व्याकरण में प्रत्यय-रहित। (पु०) [न० त०] ज्ञान का अभाव। अविश्वास। आत्मसंशय। प्रत्यय नहीं।

अप्रत्याशित—(वि०) [न० त०] जिसकी आशा न रही हो। अनसोचा, आकस्मिक।

अप्रधान—(वि०) [न० त०] अमुख्य, गौण, अन्तर्वर्ती। (न०) मातहती की हालत, ताबेदारी, अधीनता। गौणकर्म।

अप्रधृष्य—(वि०) [न० त०] अजेय, जो जीता न जा सके।

अप्रभु—(वि०) [न० त०] जो स्वामी न हो। जो बलवान् न हो। जिसमें शासन करने की शक्ति न हो। असमर्थ।

अप्रमत्त—(वि०) [न० त०] जो प्रमादी या असावधान न हो। बुद्धिमान्। सतर्क।

अप्रमद—(वि०) [न० ब०] हर्ष या उत्सव से रहित। उदास।

अप्रमा—(स्त्री०) [न० त०] अयथार्थ ज्ञान, मिथ्या ज्ञान।

अप्रमाण—(वि०) [न० ब०] बिना सबूत का। असीम, अपरिमित। अप्रामाणिक। जो प्रमाण न माना जाय। अविश्वस्त। (न०) [न० त०] (ऐसी आज्ञा या नियम) जो किसी कार्य में प्रमाण मानकर ग्रहण न किया जाय। असङ्गति। अप्रासङ्गिकता।

अप्रमाद—(वि०) [न० ब०] सतर्क, सावधान। (पुं०) [न० त०] सावधानी, सतर्कता।

अप्रमेय—(वि०) [न० त०] जो नापा न जा सके, असीम। जो यथार्थ रूप से न जाना या समझा जा सके, जाँच के अयोग्य। (न०) ब्रह्म।

अप्रयाणि—(स्त्री०) [प्र√या+अनि न० त०] गमन न करना। उन्नति न करना। (इसका प्रयोग प्रायः किसी को शाप देने या अकोसने में होता है।); 'अप्रयाणिस्ते भूयात्'।

अप्रयुक्त—(वि०) [न० त०] अव्यवहृत, जिसका प्रयोग न किया गया हो या किया जा सके। गलत तरीके से काम में लाया गया। अप्रचलित (शब्द)।

अप्रवृत्ति—(स्त्री०) [न० त०] प्रवृत्ति का अभाव। क्रियाशून्यता। निश्चेष्टता। उत्तेजना का अभाव। कोष्टबद्धता।

अप्रसङ्ग—(पु०) [न० त०] अनुराग का अभाव। सम्बन्ध का अभाव। अनुपयुक्त समय या अवसर; 'अप्रसंगाभिधाने तु श्रोतुः श्रद्धा न जायते'।

अप्रसिद्ध—(वि०) [न० त०] जिसे अधिक लोग न जानते हों, अविख्यात। अज्ञात। असाधारण।

अप्रस्ताविक—(वि०) [न० त०] [स्त्री०—अप्रस्ताविकी] अप्रासङ्गिक, असङ्गत।

अप्रस्तुत—(वि०) [न० त०) असङ्गत, प्रसङ्ग-विरुद्ध। वाहियात, अर्थ-रहित। नैमित्तिक। विजातीय। बहिरङ्ग। अप्रधान। जो प्रस्तुत या विद्यमान न हो।—**प्रशंसा**-(स्त्री०) वह अर्थालङ्कार जिसमें अप्रस्तुत के कथन द्वारा प्रस्तुत का बोध कराया जाय।

अप्रहत—(वि०) [प्र√हन्+क्त न० त०] जो आहत न हो। अनजुती (भूमि)। कोरा (कपड़ा)।

अप्राकरणिक—(वि०) [न० त०] [स्त्री०—अप्राकरणिकी] जो प्रकरण या प्रसङ्ग के अनुसार न हो।

अप्राकृत—(वि०) [न० त०] जो प्राकृत या असंस्कृत न हो। जो असली न हो। अस्वाभाविक। असाधारण।

अप्राग्र्य—(वि०) [न० त०] जो प्रधान न हो, गौण। अधीन। निकृष्ट।

अप्राप्त—(वि०) [न० त०] जो मिला न हो। जो न पहुँचा हो। न आया हुआ। नियम जो लागू न हो।—**अवसर**–(अप्राप्तावसर), —**काल**–(वि०) अनवसर का, बेमौके का। अनऋतु का, कुसमय का।—**यौवन**–(वि०) जो युवा न हुआ हो।—**व्यवहार**,—**वयस्**–(वि०) नाबालिग, अल्पवयस्क।

अप्राप्ति—(स्त्री०) [न० त०] न मिलना, अलाभ। पूर्व नियम से प्रमाणित न होना। घटित न होना। अनुपपत्ति।—**सम**–(पुं०) जाति या असत् उत्तर के चौबीस भेदों में से एक (न्या०)।

अप्रामाणिक—(वि०) [न० त०] [स्त्री०—**अप्रामाणिकी**] जो प्रामाणिक न हो, ऊटपटांग। अविश्वसनीय। न मानने योग्य।

अप्रिय—(वि०) [न० त०] अरुचिकर, नापसंद; 'अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः, वा०। जो प्यारा न हो, जो मित्र न हो, (पुं०) शत्रु (न०) अरुचिकर काम, नापसंद काम। (स्त्री०) सींगी मछली।

अप्रीति—(स्त्री०) [न० त०] अरुचि, नापसंदगी। घृणा। अभक्ति। पराङ्मुखता।

अप्रोषित—(वि०) [न० त०] न गया हुआ। जो अनुपस्थित न हो।

अप्रौढ़—(वि०) [न० त०] जो प्रौढ़ अर्थात् दृढ़ न हो। जो पूरा बढ़ा हुआ न हो। नम्र। भीरु। अधृष्ट। अशक्त।

अप्रौढ़ा—(स्त्री०) [न० त०] अविवाहित लड़की, वह लड़की जिसका हाल ही में विवाह हुआ हो, किन्तु रजस्वला न हुई हो।

अप्लव—(वि०) [न० ब०] जिसके पास नाव न हो। जो तैरता न हो।

अप्लुत—(वि०) [न० त०] प्लुत का उलटा। जो तीन मात्राओं वाला स्वर या वर्ण न हो।

अप्सरस्, अप्सरा—(स्त्री०) [अद्भ्यः सरन्ति इति विग्रहे अप्√सृ+असुन्=अप्सरस्। अप्√सृ+अच्, टाप्=अप्सरा।] इन्द्र की सभा में नाचने वाली देवाङ्गना, जो गन्धर्वों की स्त्रियाँ कही जाती हैं। स्वर्गवेश्या। : "स्त्रियां बहुष्वप्सरसः" के अनुसार नित्य बहुवचनान्त 'अप्सरस्' शब्द है, किन्तु इसके अपवाद भी हैं:—नियमविघ्नकारिणी मेनका नाम अप्सराः प्रेषिता अभि० शा० १।—**पति**–(पुं०) इन्द्र।

अफल—(वि०) [न० ब०] फलरहित। जो उर्वर न हो। निरर्थक। बाँझ। (पुं०) झाबुक या झाऊ नामक वृक्ष। **आकांक्षिन्**–(अफलाकांक्षिन्),—**प्रेप्सु**–(वि०) ऐसा पुरुष जो अपने परिश्रम का पुरस्कार या पारिश्रमिक न चाहे, निःस्वार्थी। "अफलाकांक्षिभिर्यज्ञः क्रियते ब्रह्मवादिभिः।" महाभारत।

अफेन—(वि०) [नास्ति फेनं यस्य अप्रशस्तं फेनं वा यस्य इति विग्रहे न० ब०] बिना फेन का, फेनरहित। (न०) अफीम।

अबद्ध, अबद्धक—(वि०) [√बन्ध्+क्त, न० त०। अबद्धक 'स्वार्थे क'] बिना बंधा हुआ। स्वतन्त्र। बिना अर्थ का, निरर्थक, वाहियात; 'यावज्जीवमहम्मौनी, ब्रह्मचारी च मे पिता। माता तु मम वन्ध्यासीदपुत्रश्च पितामहः'।—**मुख**–(वि०) जो मुँह का अपवित्र हो, जो गाली-गलौज बका करे।

अबन्धु, अबान्धव—(वि०) [न० ब०] इष्ट-मित्र से रहित, अकेला।

अबन्ध्य—(वि०) [बन्धे (फलप्रतिबन्धे) साधुः इति विग्रहे बन्ध+यत् न० त०] जिसका फल या परिणाम न रुके, सफल।

अबल—(वि०) [न० ब०] निर्बल। कमजोर। अरक्षित। (पुं०) [नास्ति बलं यस्मात्] वरुण नामक वृक्ष।

अबला—(स्त्री०) [नास्ति बलं यस्या न० ब०] स्त्री, औरत।

अबाध—(वि०) [नास्ति बाधा यस्य न० ब०] बाधा-शून्य, अबाधित। पीड़ा रहित।—**व्यापार**-(पु०) वह व्यापार जिसमें संरक्षक कर आदि लगाकर बाधा न डाली जाय (फ्री ट्रेड)।

अबाधा—(स्त्री०) [बाधायाः अभावः न० त०] रोकटोक न होना। अखण्डन।

अबाल—(वि०) [न० बालः न० त०] लड़का नहीं, जवान। छोटा नहीं, पूरा (जैसे-पूर्णिमा का चन्द्र)।

अबाह्य—(वि०) [न० त०] बाहरी नहीं, भीतरी। पूर्ण रूप से परिचित। जिसमें बहिर्भाग न हो।

अबिन्धन—(पु०) [आप इन्धनं (दाह्याः) यस्य ब० स०] समुद्र के भीतर रहने वाला अग्नि, बड़वानल।

अबुद्ध—(वि०) [न० त०] बुद्धू, मूर्ख, बेवकूफ।

अबुद्धि—(स्त्री०) [न० त०] बुद्धि का अभाव। निर्बुद्धिता। अज्ञान, मूर्खता।—**पूर्व**, —**पूर्वक**-(वि०) बेसमझा-बूझा, अनजाना हुआ।—**पूर्वं**—(अबुद्धिपूर्वं)—**र्वकं**,—(अबुद्धिपूर्वकम्) (अव्य०) अज्ञातभाव से। अनजानेपन से।

अबुध, अबुध—(वि०) [न० त०] (√बुध्+क्विप्,—क, न० त०] निर्बोध, मूढ़। (पु०) मूर्ख व्यक्ति।

अबोध—(वि०) [नास्ति बोधो यस्य न० ब०] अज्ञानी, मूर्ख, (पु०) [बोधस्य अभावः न० त०] ज्ञान का अभाव; 'निसर्गदुर्बोधमबोधविक्लवाः क्व भूपतीनाञ्चरितं क्व जन्तवः' कि० १·६।—**गम्य**-(वि०) जो समझ में न आवे।

अब्ज—(वि०) [अद्भ्यः जायते इति अप्√जन्+ड] जल में या जल से उत्पन्न। (न०) कमल। सौ करोड़, अरब। (पु०) कपूर। शंख। चन्द्रमा। धन्वन्तरि।—**कर्णिका**-(स्त्री०) कमल का बीज-पुटक या छत्ता।—**ज**,—**भव**,—**भू**,—**योनि**- (पु०) ब्रह्मा के नाम।—**बान्धव**-(पु०) सूर्य।—**वाहन**-(पु०) शिव का नाम।

अब्जा—(स्त्री०) [अप्√जन्+ड, टाप्] सीप।

अब्जिनी—(स्त्री०) [अब्जानि सन्ति अस्मिन् देशे अब्जानां समूह इति वा विग्रहे अब्ज+इनि] कमल-लता। कमलों का समूह।—**पति**-(पु०) सूर्य।

अब्द—(पु०) [अपो ददाति इति विग्रहे अप्√दा+कः] बादल। वर्ष। एक पर्वत का नाम। मोथा।—**अर्द्ध**-(न०) आधा वर्ष। छः महीना।—**वाहन**-(पु०) शिव का नाम।—**शत**-(न०) शताब्दी, सदी, १०० वर्ष।—**सार**-(पु०) एक प्रकार का कपूर।

अब्धि—(पु०) [आपो धीयन्ते अत्र इति विग्रहे अप्√धा+किः] समुद्र। ताल, झील। सात और कभी दो चार की संख्या का सङ्केत।—**अग्नि**-(अब्ध्यग्नि) (पु०) बड़वानल।—**कफ**—**फेन**-(पु०) समुद्र का फेन।—**ज**-(पु०) चन्द्रमा। शंख। अश्विनीकुमार।—**जा**-(स्त्री०) वारुणी, मद्य। लक्ष्मी देवी।—**द्वीपा**-(स्त्री०) पृथिवी।—**नगरी**-(स्त्री०) द्वारकापुरी।—**नवनीतक**-(पु०) चन्द्रमा।—**मण्डूकी**-(स्त्री०) सीप।—**शयन**-(पु०) विष्णु भगवान्।—**सार**-(पु०) रत्न।

अब्रह्मचर्य—(वि०) [न० ब०] अपवित्र। जो ब्रह्मचारी न हो। (न०) [न० त०] ब्रह्मचर्य का अभाव। स्त्रीप्रसङ्ग।

अब्रह्मण्य—(वि०) [ब्रह्मन्+यत् न० ब०] ब्राह्मण के योग्य नहीं। ब्राह्मणों के प्रतिकूल। (न०) ब्राह्मण के अयोग्य कर्म।

अब्राह्मन्—(वि०) [न० ब०] ब्राह्मणों से भिन्न (न०) [न० त०] ...

अभक्ति—(स्त्री०) [न० त०] श्रद्धा या अनुराग का अभाव। अश्रद्धा।

अभक्ष्य—(वि०) [न० त०] न खाने योग्य, जिसका खाना निषिद्ध हो। (न०) वर्जित खाद्य पदार्थ।

अभग—(वि०) [न० ब०] अभागा। बदकिस्मत।

अभद्र—(वि०) [न० त०] अशुभ, बुरा। दुष्ट। (न०) बुराई। पाप। दुष्टता। दुःख।

अभय—(वि०) [न० ब०] भय से रहित, निडर। सुरक्षित। (न०) [न० त०] भय का अभाव; 'वैराग्यमेवाभयम्' (पुं०) [न० ब०] परमात्मा। शिव।—**डिण्डिम**—(पुं०) सुरक्षा का ढिंढोरा। सैनिक ढोल।—**दक्षिणा**-(स्त्री०) —**दान**,—**प्रदान**—(न०) किसी को भय से मुक्तकर देने की प्रतिज्ञा या वचन देना।

अभयङ्कर, अभयङ्कृत्—(वि०) [न० त०] भयङ्कर या भयावह नहीं, निर्भयप्रद। सुरक्षा करने वाला।

अभया—(स्त्री०) [न० ब०] हरीतकी, हर्र। दुर्गा का एक रूप।

अभव—(पुं०) [न० त०] अनस्तित्व। मोक्ष। नैसर्गिक सुख। समाप्ति या नाश।

अभव्य—(वि०) [न० त०] न होने वाला। अनुचित। अशुभ। अभागा, प्रारब्धहीन।

अभाग—(वि०) [न० ब०] जिसका (पैतृक) हिस्सा या पाँती न हो।। अविभक्त, बिना बँटा हुआ।

अभाव—(पुं०) [√भू+घञ्, न० त०] असत्ता। न होना, अनस्तित्व, नेस्ती। अविद्यमानता। नाश। मृत्यु। अदर्शन, यह पाँच प्रकार का होता है। (क) प्रागभाव, (ख) प्रध्वंसाभाव, (ग) अत्यन्ताभाव, (घ) अन्योन्याभाव, (ङ) संसर्गाभाव। त्रुटि, टोटा, घाटा।

अभावना—(स्त्री०) [न० त०] निर्णय करने की शक्ति अथवा यथार्थ ज्ञान की अनुपस्थिति। ध्यान का अभाव।

अभाषित—(वि०) [न० त०] अकथित, न कहा हुआ।—**पुंस्क**-(पुं०) शब्द विशेष जो न तो कभी पुंलिङ्ग और न नपुंसक लिङ्ग बन सके, जो सदा स्त्रीलिङ्ग ही बना रहे।

अभि—(अव्य०) [न भाति इति√भा+कि, न० त०] उपसर्ग विशेष जो संज्ञावाची और क्रियावाची शब्दों में लगाया जाता है। इसका अर्थ है—ओर, प्रति, तरफ। पक्ष में। पर, ऊपर (छिड़कना, बुरकना)। अधिक। अतिरिक्त। आरपार। जब यह उपसर्ग विशेषणों और ऐसे संज्ञावाची शब्दों में जो क्रिया से नहीं बने, लगाया जाता है, तब इसका अर्थ होता है—घनिष्ठता। अत्यन्तता। उत्कृष्टता। सामीप्य। सामने, प्रत्यक्ष। पृथक् पृथक्। एक के बाद एक।

अभिक, अभीक—(वि०) [अभिकामयते इति अभि+कन्] कामुक; 'सोऽधिकारमभिकः कुलोचितं काश्चन स्वयमवर्तयत्समाः' र० १६.४। प्रेमी।

अभिकथन—(न०) [अभि√कथ्+ल्युट्] किसी के संबंध में ऐसी बात कहना या ऐसा आरोप लगाना जिसके लिये कोई निश्चित प्रमाण न हो। इस प्रकार कही गई बात या अप्रमाणित आरोप। (एलेगेशन)

अभिकरण—(न०) [अभि√कृ+ल्युट्] किसी की ओर से उसके प्रतिनिधि या अभिकर्ता के रूप में कार्य करना। अभिकर्ता (एजेंट) के कार्य करने का स्थान। (एजेंसी)

अभिकर्तृ—(पुं०) [अभि√कृ+तृच्] किसी व्यापारी, व्यापारिक संस्था या राज्य की ओर से प्रतिनिधि रूप में काम करने वाला या कमीशन पर माल बेचने वाला व्यक्ति (एजेंट)।

अभिकांक्षा—(स्त्री०) [अभि√कांक्ष्√अङ्] अभिलाषा, आकांक्षा।

अभिकांक्षिन्—(वि०) [अभि√कांक्ष+णिनि] अभिलाषी, ख्वाहिशमंद।

अभिकाम—(वि०) [अभिवृद्धः कामो यस्य ब० स०] प्यार करने वाला, अनुरागी । अत्यन्त कामी । (पु०) [अभि√कम्+घञ्] स्नेह, प्रेम । ख्वाहिश, अभिलाषा ।

अभिक्रतु—(वि०) [आभिमुख्येन क्रतुः युद्ध-कर्म यस्य ब० स०] सामने होकर युद्ध करने वाला, बड़ा लड़ाकू ।

अभिक्रन्द—(पु०) [अभि√क्रन्द्+घञ्] चिल्लाहट ।

अभिक्रम—(पु०) [अभि√क्रम्+घञ्, अवृद्धि] आरम्भ । उद्योग, चढ़ाई, आक्रमण । चढ़ना । सवार होना ।

अभिक्रमण—(न०), **अभिक्रान्ति**—(स्त्री०) [अभि√क्रम+ल्युट्] [अभि√क्रन्+क्तिन्] समीप गमन । चढ़ाई ।

अभिक्रोश—(पु०) [अभि√क्रुश+घञ्] चिल्लाहट । पुकार । गाली । भर्त्सना, फटकार ।

अभिक्रोशक—(पु०) [अभि√क्रुश् + ण्वुल्] पुकारने वाला । गाली देने वाला ।

अभिख्या—(स्त्री०) [अभि√ख्या+अङ] चमक-दमक । सौन्दर्य । कान्ति; 'काप्यभिख्या तयोरासीत् व्रजतोः शुद्धवेषयोः' र० १.४६ । कथन । घोषणा । पुकार । सम्बोधन । नाम (उपाधि) । शब्द । समानार्थवाची शब्द । कीर्ति । गौरव । प्रसिद्धि । माहात्म्य ।

अभिख्यान—(न०) [अभि√ख्या+ल्युट्] कीर्ति । गौरव ।

अभिगम—(पु०), **अभिगमन**—(न०) [अभि√गम्+अप्] [अभि√गम्+ल्युट्] पास जाना; 'तवार्हतो नाभिगमेन तृप्तं०,र० ५.११ । संभोग ।

अभिगम्य—(वि०) [अभि√गम्+यत्] जाने योग्य । प्राप्ति के योग्य । आश्रय योग्य आमन्त्रित करना ।

अभिगर्जन, **अभिगर्जित**—(न०) [अभि√गर्ज्+ल्युट] [अभि√गर्ज्+क्त] भयानक दहाड़ । भयङ्कर गर्जना ।

अभिगामिन्—(वि०) [अभि√गम्+णिनि] पास जाने वाला । संभोग करने वाला ।

अभिगुप्ति—(स्त्री०) [अभि√गुप्+क्तिन्] रक्षण । संरक्षण ।

अभिगोप्तृ—(पु०) [अभि√गुप्+तृच्] रक्षक । अभिभावक ।

अभिगृहीत—(वि०) [अभि√ग्रह्+क्त] जिसका अभिग्रहण किया गया हो ।[एडाप्टेड]

अभिग्रह—(पु०) [अभि√ग्रह्+अप्] लूट खसोट । जबरदस्ती छीनना । आक्रमण, चढ़ाई । किसी काम के लिये किसी को ललकारना । शिकायत, फरियाद । अधिकार । शक्ति ।

अभिग्रहण—(न०) [अभि√ग्रह्+ल्युट्] लूट लेना । छीन लेना । चुन कर लेना । (दूसरे के पुत्र, नियम , प्रथा आदि को) अपना बना लेना या अपना कहकर स्वीकार करना । [एडाप्शन] ।

अभिघर्षण—(न०) [अभि√घृष्+ल्युट्] घिसन, रगड़ । प्रेतावेश, सिर पर भूत का चढ़ना ।

अभिघात—(पु०) [अभि√हन्+घञ्] चोट देना । मार । प्रहार । ताड़ना । आक्रमण, हमला । सम्पूर्णतः नाश, सर्वनाश । पूर्ण रूप से स्थानान्तरित करने की क्रिया ।

अभिघातक—(वि०) [अभि√हन्+ण्वुल्] [स्त्री०—**अभिघातिका**] अभिघात करने वाला ।

अभिघातिन्—(पु०) [अभि√हन्+णिनि] शत्रु, वैरी ।

अभिघार—(पु०) [अभि√घृ+णिच्+अच् (भावे)] घी । हवन में घी डालना । बघार ।

अभिघारण—(न०) [अभि√घृ+णिच्+ल्युट्] घी छिड़कने की क्रिया ।

अभिचर—(पु०) [अभि√चर्+अच्] अनुचर । नौकर ।

अभिचरण—(न०) [अभि√चर्+ल्युट्] किसी बुरे काम के लिये अनुष्ठान; जैसे शत्रु-नाश के लिये श्येन याग।

अभिचार—(पुं०) [अभि√चर्+घञ्] अनुष्ठान। मारण, उच्चाटन, विद्वेषण आदि के लिये अनुष्ठान।—**ज्वर**-(पुं०) ऐसे अनुष्ठान से उत्पन्न ज्वर।—**मन्त्र** (पुं०) ऐसे अनुष्ठान का मंत्र।—**यज्ञ**,—**होम** (पुं०) ऐसे अनुष्ठान की समाप्ति का हवन।

अभिचारक [स्त्री०—**अभिचारिका**], **अभिचारिन्** [स्त्री०—**अभिचारिणी**]—(वि०) [अभि√चर्+ण्वुल्] [अभि√चर्+णिनि] अभिचार करने वाला। अनुष्ठानकर्त्ता। जादूगर। तांत्रिक।

अभिजन—(पुं०) [अभि√जन्+घञ्, अवृद्धि] कुटुम्ब, कुनबा। जाति, वंश। उत्पत्ति, निकास। कुलीनता; 'स्तुत तन्माहात्म्यं यदभिजनतो यच्च गुणतः' माल० २.१३। जन्मस्थान, जन्मभूमि। कीर्ति प्रसिद्धि। खानदान का सरदार या मुखिया, कुलभूषण। अनुचर, परिचारक।

अभिजनवत्—(वि० [अभिजन+मतुप्] कुलीन वंश का, कुलीन।

अभिजय—(पुं०) [अभि√जि+अच्] विजय। पूरी-पूरी जीत।

अभिजात—(वि०) [अभि√जन्+क्त] अच्छे कुल में उत्पन्न, कुलीन। शिष्ट। विनम्र। मधुर। अनुकूल। योग्य, उचित, उपयुक्त। उत्तम। गुणवान्। सत्पात्र। सुंदर, रूपवान्। विद्वान्, पण्डित। प्रसिद्ध।

अभिजाति—(स्त्री०) [अभि√जन्+क्तिन्] कुलीन वंश में उत्पत्ति, कुलीनता।

अभिजिघ्रण—(न०) [अभि√घ्रा+ल्युट्, जिघ्र आदेश] स्नेह प्रदर्शन करने को सिर सूँघना।

अभिजित्—(पुं०) [अभि√जि+क्विप्] विष्णु का नाम। नक्षत्र विशेष, उत्तराषाढ़ा के अन्तिम १५ दण्ड तथा श्रवण के प्रथम चार दण्ड अभिजित् कहलाता है। दिन का आठवाँ मुहूर्त, दोपहर के पौने बारह बजे से लेकर साढ़े बारह बजे तक का समय। विजय मुहूर्त।

अभिज्ञ—(वि०) [अभि√ज्ञा+क] जानकार, विज्ञ। निपुण, कुशल।

अभिज्ञा—(स्त्री०) [अभि√ज्ञा+अङ्] प्रत्यभिज्ञा, पुनर्ज्ञान। प्राथमिक ज्ञान। स्मृति, पहचान। अस्तित्व-स्वीकृति, मान्यता। [रिकागनीशन]

अभिज्ञान—(न०) [अभि√ज्ञा+ल्युट्] प्रत्यभिज्ञा, पुनर्ज्ञान। स्मृति, पहचान। निशानी; 'तदभिज्ञानहेतोर्हि दत्तं तेन महात्मना' रा० चन्द्रमण्डल का काला दाग। किसी को देखकर या पहचान कर बतलाना कि यह अमुक व्यक्ति ही है। [आइडेंटिफिकेशन]।—**आभरण**-(न०) गहना जो किसी बात का स्मरण कराने के लिये उपस्थित किया जाय, परिचायक, सहिदानी।

अभिज्ञापक—(वि०) [अभि√ज्ञा+णिच्, पुक्+ण्वुल्] बताने वाला। सूचना देने या बताने वाला। रेडियो पर समाचार सुनाने या कार्यक्रम आदि बताने वाला। [एनाउंसर]।

अभितस्—(अव्य०) [अभि+तसिल्] समीप, निकट, पास। दोनों ओर, तरफ। अत्यंत समीप। निकट में, पास में। समक्ष, सामने, प्रत्यक्ष में। आगे पीछे। सब ओर से, चारों ओर, चौतरफा; 'परिजनो यथाव्यापारं राजानमभितः स्थितः' माल० १.७। नितान्त, निपट, पूर्णतः। फुर्ती से। तेजी से।

अभिताप—(पुं०) [अभि√तप्+घञ्] प्रचण्ड गर्मी (चाहे वह शारीरिक हो चाहे मानसिक)। क्षोभ, उद्वेग। पीड़ा, दुःख।

अभिताम्र—(वि०) [अभितः ताम्र प्रा० स०] बहुत लाल।

अभिदक्षिण—(अव्य०) [अभितः दक्षिणम् अव्य० स०] दाहिनी ओर या तरफ।

अभिदान—(न०) [अभि√दा+ल्युट्] किसी काम के लिये विभिन्न व्यक्तियों द्वारा दिया हुआ धन, चंदा । [सब्सक्रिप्शन] ।

अभिद्रव (पु०), **अभिद्रवण**—(न०) [अभि √द्रु+अप्] [अभि√द्रु+ल्युट्] आक्रमण, हमला ।

अभिद्रोह—(पु०) [अभि√द्रुह्+घञ्] बुराई । षड्यंत्र । हानि । निर्दयता । गाली, भर्त्सना ।

अभिधर्षण—(न०) [अभि√धृष्+ल्युट्] भूतावेश, भूत का शरीर में प्रवेश होना । अत्याचार ।

अभिधा—(स्त्री०) [अभि√धा+अङ्, टाप्] नाम, उपाधि । वाचक शब्द । शब्दों के वाच्यार्थ का बोधन करने वाली शक्ति । (मीमांसा) शाब्दी भावना ।

अभिधान—(न०) [अभि√धा+ल्युट्] कथन । निरूपण । नाम करण । भविष्यद्-कथन । निःसन्देह भाव से कथित वाक्य । नाम, उपाधि, पद । भाषण, संवाद । शब्दकोश । **—कोश** (पु०) **—माला**-(स्त्री०) शब्दकोश

अभिधायक—(वि०) [अभि√धा+ ण्वुल्] (अर्थ-विशेष का) वाचक । (स्त्री०)**—अभिधायिका**] सूचक । परिचायक । नाम रखने वाला ।

अभिधायिन्—(वि०) [अभि√धा+ णिनि] दे० 'अभिधायक' ।

अभिधावन—(न०) [अभि√धाव्+ल्युट्] आक्रमण । पीछा करना ।

अभिधेय—(वि०) [अभि√धा+यत्] वर्णन या निरूपण करने योग्य । नाम धरने योग्य, नाम वाला । (न०) अर्थ, भाव । तात्पर्य, अभिप्राय । निचोड़, निष्कर्ष । विवेच्य या आलोच्य विषय । प्रकरण । प्रसङ्ग । किसी शब्द का यथार्थ अर्थ ।

अभिध्या—(स्त्री०) [अभि√ध्यै+अङ्, टाप्] दूसरे की वस्तु पर मन डिगाना, पराई वस्तु की चाह । अभिलाषा, इच्छा । लालच । 'अभिध्योपदेशात्' ब्र० ।

अभिध्यान—(न०) [अभि√ध्यै+ल्युट्] इच्छा करना । लोभ करना । अभिलाषा, इच्छा । ध्यान । गम्भीर विचार ।

अभिनन्द—(पु०) [अभि√नन्द्+घञ्] हर्ष, प्रसन्नता । प्रशंसा, श्लाघा । बधाई । अभिलाषा, इच्छा । प्रोत्साहन । काम सुख । परमात्मा का एक नाम ।

अभिनन्दन—(न०) [अभि√नन्द्+ल्युट्] आनन्द । अभिवादन । वंदना । स्वागत । प्रशंसा । अनुमोदन । अभिलाषा, इच्छा । **—पत्र**-(न०) किसी बड़े आदमी के आगमन पर उसके सम्मान एवम् प्रशंसा में पढ़ा जाने वाला स्वागत-भाषण, मानपत्र । [एड्रेस ऑफ वेलकम]

अभिनन्दनीय, अभिनन्द्य—[अभि√नन्द् +अनीयर्] [अभि√नन्द्+ण्यत्] अभिनंदन करने योग्य ।

अभिनम्र—(वि०) [प्रा० स०] झुका हुआ, नवा हुआ ।

अभिनय—(पुं०) [अभि√नी+अच्] हृदय के भाव को प्रकट करने वाली क्रिया, स्वांग । नाटक का खेल ।

अभिनव—(वि०) [प्रा० स०] कोरा, बिल्कुल नया । ताजा, टटका । अनुभवशून्य ।**—यौवन,—वयस्क**-(वि०) (अवस्था में) बहुत छोटा, जवान ।

अभिनहन—(न०) [अभि√नह्+ल्युट्] (आँखों के ऊपर बाँधने की) पट्टी ।

अभिनिधन—(वि०) [अभिगतः निधनम् अत्या० स०] जिसका नाश निकट है । (न०) [प्रा० स०] सामवेद का एक मंत्र जिसका ऐसे अवसर पर जप करते हैं ।

अभिनियुक्त—(वि०) [अभि=नि√युज्+क्त] काम में लगा हुआ, मशगूल ।

अभिनिर्मुक्त—(वि०) [अभि=निर्√मुच् +क्त] छोड़ा हुआ, त्यागा हुआ । (न०)

सूर्यास्त के समय सोने के कारण छूटा हुआ काम।

अभिनिर्याण—(न०) [अभि—निर्√या +ल्युट्] कूच, प्रस्थान। चढ़ाई, किसी शत्रुसैन्य पर धावा।

अभिनिविष्ट—[अभि—नि√विश्+क्त] पैठा हुआ, धँसा हुआ, गड़ा हुआ। अनुप्रविष्ट; 'गुरुभिरभिनिविष्टं लोकपालानुभावैः' र० २.७५। लिप्त, मग्न। कृतसङ्कल्प, दृढ़प्रतिज्ञ। हठी, जिद्दी, आग्रही। एक ही ओर लगा हुआ, अनन्य मन से अनुरक्त।

अभिनिविष्टता—(स्त्री०) [अभिनिविष्ट + तल्] दृढ़ प्रतिज्ञा, सङ्कल्प। अपने स्वार्थ में (किसी बात की भी परवाह न कर) लिप्त हो जाना।

अभिनिवृत्ति—(स्त्री०) [अभि+नि√वृत् +क्तिन्] सम्पादन, सिद्धि। समाप्ति, पूर्णता।

अभिनिवेश—(पु०) [अभि—नि√विश्+ घञ्] अनुरक्ति, लीनता, एकाग्रचिन्तन। उत्सुकतापूर्ण अभिलाषा। दृढ़प्रतिज्ञा। (योगदर्शन में) पाँच क्लेशों में से अन्तिम क्लेश। मृत्यु-शङ्का।

अभिनिवेशिन्—(वि०) [अभि—नि√ विश्+णिनि] अनुरक्त, लिप्त, लीन। (मन को किसी ओर) लगाने या फेरने वाला। दृढ़प्रतिज्ञ, कृतसङ्कल्प।

अभिनिष्क्रमण—(न०) [अभि—निस्√ क्रम्+ल्युट्] बाहर का निकास, अग्रसर होना।

अभिनिष्टान—(पु०) [अभि—नि√स्तन् +घञ्] विसर्ग। अक्षरमात्र।

अभिनिष्पतन—(न०) [अभि—निस्√ पत् +ल्युट्] बाहर निकलना। युद्धार्थ द्रुतवेग से प्रयाण।

अभिनिष्पत्ति—(स्त्री०) [अभि—निस्√पद् +क्तिन्] समाप्ति, अन्त। पूर्णता। सिद्धि।

अभिनिह्नव—(पु०) [अभि—नि√ह्नु+ अप्] अस्वीकृति। प्रत्याख्यान। दुराव, छिपाव।

अभिनीत—(वि०)[अभि√नी+क्त]निकट लाया हुआ। अभिनय किया हुआ, (नाटक) खेला हुआ। पूर्णता को पहुँचाया हुआ, सर्वोत्कृष्ट। सुसज्जित। योग्य, उचित, उपयुक्त; 'अभिनीततरं वाक्यमित्युवाच युधिष्ठिरः' महा०। क्रुद्ध। दयालु, अनुकूल। प्रशान्त-चित्त, स्थिर-चित्त।

अभिनीति—(स्त्री०) [अभि√नी+क्तिन्] भावभङ्गी, हावभाव। कृपा, दयालुता। मैत्री। सन्तोष।

अभिनेतृ—(पु०) [स्त्री०—**अभिनेत्री**] [अभि√नी+तृच्] अभिनय करने वाला 'ऐक्टर'। नाटक आदि का पात्र।

अभिनेय,—अभिनेतव्य—(वि०) [अभि√ नी+यत् [अभि√नी+तव्यत्] अभिनय करने योग्य, खेलने योग्य, दृश्य काव्य।

अभिन्न—(वि०) [√भिद्+क्त, न० त०] जो भिन्न या कटा न हो, अपृथक्, एकमय। अपरिवर्तित।

अभिन्यास—(पु०) [अभि—नि√अस्+ घञ्] किसी परिकल्पना (प्लैन) के अनुसार गृह, उद्यान आदि का निर्माण, विस्तार आदि करना (ले-आउट)।

अभिपतन—(न०) [अभि√पत्+ल्युट्] समीप गमन। आक्रमण, चढ़ाई। प्रस्थान, कूच, रवानगी।

अभिपत्ति—(स्त्री०) [अभि√पद्+क्तिन्] समीपगमन। समीप खींचना। समाप्ति।

अभिपन्न—[अभि√पद्+क्त] समीप गया हुआ या आया हुआ। ओर या तरफ दौड़ा हुआ या गया हुआ। भागा हुआ, भगोड़ा। वश में किया हुआ, पकड़ा हुआ, गिरफ्तार किया हुआ। अभागा, बदकिस्मत, आपत्ति में फँसा हुआ। 'कालाभिपन्नाः सीदन्ति' रा०। स्वीकृत। अपराधी।

अभिपरिप्लुत—(वि०) [अभि—परि√प्लु+क्त] निमज्जित, डूबा हुआ, बूड़ा हुआ। हिला हुआ।

अभिपुष्टि—(स्त्री०) [अभि√पुष्+क्तिन्] किसी कथन, बयान, संवाद आदि की सत्यता पुनः स्वीकार कर उसे अधिक दृढ़ एवं विश्वसनीय बनाना। किसी पद पर किसी की नियुक्ति का स्थायी और दृढ़ बना दिया जाना।

अभिपूरण—(न०) [अभि√पूर्+ल्युट्] प्रश्वास के द्वारा परिपूर्ण करना।

अभिपूर्वम्—(अव्य०) [अव्य० स०] क्रमशः, अनुक्रम से।

अभिप्रणय—(पुं०) [अभि—प्र√नी+अच्] प्रेम। कृपा, अनुग्रह।

अभिप्रणयन—(न०) [अभि—प्र√नी+ल्युट्] पवित्र मंत्रों से संस्कार या प्रतिष्ठा करने की क्रिया।

अभिप्रणीत—(वि०) [अभि—प्र√नी+क्त] प्रतिष्ठा या संस्कार किया हुआ। लाया हुआ।

अभिप्रथन—(न०) [अभि√प्रथ्+ल्युट्] बिछाना, बखेरना या (आगे) बढ़ाना। ऊपर से डालना या ढकना।

अभिप्रदक्षिणम्—(अव्य०) [अव्य० स०] दाहिनी ओर।

अभिप्राय—(पुं०) [अभि—प्र√इण्+अच्] आशय, मतलब, तात्पर्य। प्रयोजन, उद्देश्य। विचार। अभिलाषा, इच्छा। सम्मति, राय। विश्वास। सम्बन्ध। हवाला।

अभिप्रेत—[अभि—प्र√इण्+क्त] इष्ट, अभिलषित, ईप्सित, चाहा हुआ सम्मत, स्वीकृत। प्रिय, अनुकूल।

अभिप्रोक्षण—(न०) [अभि—प्र√उक्ष्+ल्युट्] छिड़काव, छिड़कना।

अभिप्लव—(पुं०) [अभि√प्लु+अप्] उपद्रव, उत्पात। उतरा कर बहना। बाढ़। गवामयन यज्ञ का अंग रूप कर्म विशेष।

अभिप्लुत—[अभि√प्लु+क्त] दमन किया हुआ, अभिभूत। मग्न। आकुलित।

अभिबुद्धि—(स्त्री०) [प्रा० स०] बुद्धीन्द्रिय, ज्ञानेन्द्रिय। (यथा, आँख, जिह्वा, कान, नाक, त्वचा।)

अभिभव—(पुं०) [अभि√भू+अप्] हार। वश, काबू। तिरस्कार, अनादर। हीनता। दमन। आधिक्य। प्राबल्य। उभाड़। फैलाव, व्याप्ति, प्रसार; 'अधर्माभिभवात् कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियः' भग० १.४१।

अभिभवन—(न०) [अभि√भू+ल्युट्] दमन। संयम। (स्वयं) वशवर्ती होना।

अभिभावन—(न०) [अभि√भू+णिच्+ल्युट्] दमन करना। वशवर्ती बनाना। हराना। तिरस्कार करना।

अभिभावक, अभिभाविन्, अभिभावुक—(वि०) [अभि√भू+ण्वुल्] [अभि√भू+णिनि] [अभि√भू+उकञ्] दमन करने वाला। हराने वाला, पराजित करने वाला। आक्रमण करने वाला। तिरस्कार करने वाला। संरक्षक, 'गार्जियन'। सर्वोत्तम।

अभिभाषण—(न०) [अभि√भाष्+ल्युट्] व्याख्यान, भाषण।

अभिभूत—(वि०) [अभि√भू+क्त] कर्तव्य और अकर्तव्य के विचार से शून्य। पराजित। वश में किया हुआ। आक्रांत। पीड़ित।

अभिभूति—(स्त्री०) [अभि√भू+क्तिन्] सर्वोत्तमता। प्राबल्य। आधिक्य। पराजय। अपमान।

अभिमत—(वि०) [अभि√मन्+क्त] अभीष्ट, प्रिय, प्यारा। अनुकूल। वाञ्छनीय। सम्मत। स्वीकृत, माना हुआ। (न०) ख्वाहिश, अभिलाषा। राय। मनचाही बात।

अभि√मन्—इच्छा करना। लालच करना। स्वीकार करना। अनुमति देना। ख्याल करना।

अभिमनस्—(वि०) [अत्या० स०] अभिलाषी, इच्छुक । उत्सुक । आशावान् । उत्कण्ठितचित्त; 'भवतोऽभिमनाः समीहते सरुषः कर्तुमुपेत्य माननाम्' शि० १६.२ ।
अभि√मन्त्र् — (दे०) 'अभिमन्त्रण' ।
अभिमन्त्रण—(न०) [अभि√मन्त्र्+ल्युट्] मंत्र विशेषों को पढ़कर (किसी वस्तु को) पवित्र या संस्कारित करना। जादू-टोना करना। सम्बोधन करना । न्योता देना । उपदेश करना ।
अभिमन्थ—न्थ—(पु०) [अभि√मन्थ्+अच्, मन्थ इति पक्षे√मन्+श] आँख का एक रोग ।
अभिमर—(पु०) [अभि√मृ+घञ् (भावे)] नाश, हत्या । विश्वासघात (आपस ही के लोगों के साथ) । अपने ही लोगों से भय या शङ्का । बन्धन, कैद, बेड़ी । [अभि√मृ+अच् (आधारे)] युद्ध ।
अभिमर्द—(पु०) [अभि√मृद्+घञ्] रगड़, कुचलन । उजाड़ किया जाना (शत्रु द्वारा किसी देश का) । युद्ध, लड़ाई । मदिरा, शराब ।
अभिमर्दन—(न०) [अभि√मृद्+ल्युट्] पीसना । चूर-चूर करना । निचोड़ना । युद्ध ।
अभिमर्श—(पु०), **अभिमर्शन**—(न०),—**अभिमर्ष**-(पु०), **अभिमर्षण**-(न०) [अभि√मृश् (ष्) +घञ्] [अभि+मृश् (ष्)+ल्युट्] स्पर्श, संसर्ग । आक्रमण । अत्याचार । मैथुन, सम्भोग । बलात्कार ।
अभिमर्शक, **अभिमर्षक**, **अभिमर्शिन्**,—**अभिमर्षिन्**-(वि०) [अभि√मृश् (ष्) +ण्वुल्] [अभि√मृश् (ष्)+णिनि] अभिमर्श करने वाला ।
अभिमाद—(पु०) [अभि√मद्+घञ्] नशा, मद ।
अभिमान—(पु०) [अभि√मन्+घञ्] गर्व, घमण्ड, अहङ्कार, अपने को बड़ा भारी प्रतिष्ठित समझना, आत्मश्लाघा । व्यक्तित्व; 'सदाभिमानैकधना: हि मानिनः' शि० १.६७ । स्नेह, प्रेम । स्वाहिश, इच्छा । घाव, चोट । —**शालिन्**-(वि०) अभिमानी, अहङ्कारी ।—**शून्य**-(वि०) आत्माभिमान से रहित, विनम्र ।
अभिमानिन्(वि०) [अभि√मन्+ णिनि] अभिमानी, घमंडी, अपने को बहुत लगाने वाला ।
अभिमाय—(वि०) [अभिगतः मायाम् अत्या० स०] इतिकर्तव्यताविमूढ़, किसी काम का निर्णय न कर सकने वाला ।
अभिमुख—(वि०) [स्त्री०—**अभिमुखी**] । [अभिगतो मुखम् अत्या० स०] (किसी की) ओर मुख किये हुए। प्रवृत्त । उद्यत। (अव्य०) [अव्य० स०] ओर, सामने ।
अभि√मृद्—मल डालना, कुचलना । दबाना । किसी के विरुद्ध बोलना ।
अभियाचन—(न०) [अभि√याच्+ल्युट्] प्रार्थना, माँग ।
अभियाचना, **अभियाच्ञा**—(स्त्री०)–[अभि√याच्+युच्] [अभि√याच्+नङ्] प्रार्थना, माँगना । दृढ़ता के साथ या अधिकारपूर्वक याचना करना । (डिमांड) ।
अभियातृ, **अभियायिन्**-(वि०) [अभि√या+तृच्] [अभि√या+णिनि] निकट जाने वाला । आक्रमण करने वाला ।
अभियान—(न०) [अभि√या+ल्युट्] समीप जाना । (शत्रु पर) धावा बोलने की क्रिया, आक्रमण करने की क्रिया ।
अभियुक्त—[अभि√युज्+क्त] व्यस्त, किसी काम में लगा हुआ । भली भाँति अभिज्ञ, पारदर्शी, विशारद । विद्वान्, ज्ञानी । प्रतिवादी, जो किसी मुकदमे में फँसा हो । नियुक्त ।
अभि√युज्—नालिश करना । किसी काम के लिये प्रस्तुत या तैयार होना ।

अभियोक्तृ—(वि०) [स्त्री० अभियोक्त्री] अभि√युज्+तृच्] अभियोग उपस्थित करने वाला। (पु०) वादी, फरियादी। शत्रु, वैरी। आक्रमणकारी। झूठा दावा करने वाला।

अभियोग—(पु०) [अभि√युज्+घञ्] मनोनिवेश, लगन। उद्योग, अध्यवसाय; 'सन्तः स्वयं परहितेषु कृताभियोगाः' भर्तृ० २.७३। किसी बात की जानकारी प्राप्त करने या उसे सीखने के लिये उसमें मनोनिवेश। अपराध की योजना, नालिश, अर्जीदावा। चढ़ाई, आक्रमण।

अभियोगिन्—(वि०) [अभि√युज्+णिनि] मनोनिवेशित, संलग्न। आक्रमण करने वाला। दोषी ठहराने वाला। (पु०) मुद्दई, वादी।

अभियोजन—(न०) [अभि√युज+ल्युट्] किसी पर फौजदारी मामला चलाने का कार्य (विशेष पुलिस द्वारा)। (प्रासिक्यूशन)। **—कारिन्**–(पु०) (पुलिस की ओर से) न्यायालय के सामने रखे गये फौजदारी मामले का संचालन करने वाला। (प्रासिक्यूटर)।

अभि√रक्ष्—रक्षा करना। बचाना। सहायता करना।

अभिरक्षण—(न०), **अभिरक्षा** (स्त्री०) [अभि√रक्ष्+ल्युट्] [अभि√रक्ष्+अ] पूरा-पूरा बचाव। (किसी वस्तु या व्यक्ति का) किसी के पास या किसी की देख-रेख में सुरक्षित रूप से रखा जाना। (कस्टोडी)।

अभिरक्षक—(वि०) [अभि√रक्ष्+ण्वुल्] पूर्ण रूप से बचाने वाला। सुरक्षा की दृष्टि से किसी वस्तु या व्यक्ति को अपने अधिकार या संरक्षण में रखने वाला। (कस्टोडियन)।

अभिरति—(स्त्री०) [अभि√रम्+क्तिन्] आनन्द। हर्ष। सन्तोष। अनुराग। भक्ति

अभि√रम्—प्रसन्न होना।

अभिराम—(वि०) [अभि√रम्+घञ् (आधारे)] हर्षपूर्ण। मधुर। अनुकूल। सुंदर। मनोहर। रम्य। प्रिय; 'राम इत्यभिरामेण वपुषा तस्य चोदितः' र.१०.६७।

अभि√रुच्— चमकना। पसंद करना।

अभिरुचि—(स्त्री०) अभिलाषा, चाह, पसंदगी। प्रवृत्ति। मन की चाहना। उच्चाभिलाषा।

अभिरुचित—(पु०) [अभि√रुच्+क्त] प्यार किया हुआ। चाहा हुआ। आनन्दित।

अभिरुत—(न०) [अभि√रु+क्त (भावे)] आवाज। पुकार। शोरगुल।

अभिरूप—(वि०) [अभि√रूप्+अच्] सदृश। अनुसार मनोहर। हर्षपूर्ण। प्रिय। प्रेमपात्र। पण्डित। बुद्धिमान्। (पु०) चन्द्रमा। विष्णु। शिव। कामदेव। **—पति**–(पु०) मनोनुकूल पति या स्वामी। एक व्रत का नाम, जो परलोक में अच्छा पति पाने के लिये स्त्रियों द्वारा किया जाता है।

अभिलंघन—(न०) [अभि√लंघ्+ल्युट्] कूदकर आरपार चले जाने की क्रिया। लाँघ जाना, कूद जाना।

अभि√लष्—चाहना। लोभ करना। किसी बात के पीछे पड़ना।

अभिलषण—(न०) [अभि√लष्+ल्युट्] चाहना, इच्छा करना। ललचना।

अभिलषित—(वि०) [अभि√लष्+क्त (कर्मणि)] चाहा हुआ। वाञ्छित। (न०) [अभि√लष्+ (भावे)] इच्छा, चाह। प्रवृत्ति।

अभिलाप—(पु०) [अभि√लप्+घञ्] शब्द। भाषण, कथन। वर्णन। किसी व्रत या धर्म्मानुष्ठान का सङ्कल्प या प्रतिज्ञा।

अभिलाव—(पु०) [अभि√लू+घञ्] निराई, (खेत की) कटाई।

अभिलाष, अभिलास (कभी-कभी)—(पु०) [अभि√लष (स्)+घञ्] चाह, इच्छा लोभ। प्रिय से मिलने की इच्छा।

अभिलाषक, अभिलाषिन् अभिलाषुक—(वि०) [अभि√लष्+ण्वुल्] [अभि√लष्+णिनि] [अभि√लष+घञ्] इच्छुक, इच्छा करने वाला। लालची, लोभी; 'यदार्यमस्यामभिलाषि मे मनः' अभि० शा० १.२२।

अभिलिखित—(वि०) [अभि√लिख्+क्त] लिखा हुआ। खुदा हुआ। नियमित रूप से लिख कर सुरक्षित रखा हुआ। अभिलेख के रूप में लाया हुआ। (रेकार्डेड)।

अभिलेख—(पुं०) [अभि लिख्+घञ्] किसी तथ्य, विषय या कार्रवाई आदि के संबंध में नियमित रूप से लिखी हुई सब बातें। (रेकार्ड)। न्यायालय के कागज-पत्र, पंजी आदि में लिख कर सुरक्षित रूप से रखा गया गवाहों, वादी-प्रतिवादी आदि का वक्तव्य या न्यायाधीश का फैसला।—**न्यायालय**–(पुं०) राज्य के प्रधान अभिलेख-विभाग का वह न्यायालय जिसे लिपि संबंधी या ऐसी ही अन्य भूलें ठीक करने का अधिकार होता है। (कोर्ट ऑफ रिकार्ड)। —**पाल**–(पुं०) किसी न्यायालय, कार्यालय आदि के अभिलेखों की देख-भाल करने वाला कर्मचारी। (रिकार्डकीपर)।

अभिलीन—(वि०) [अभि√ली+क्त] संलग्न, चिपटा हुआ, सटा हुआ। आलिङ्गनबद्ध।

अभिलुलित—(वि०) [अभि√लुड्+क्त, डस्य लः] आन्दोलित, क्षुब्ध। खिलाड़ी। चञ्चल।

अभिलूता—(स्त्री)[प्रा० स०]मकड़ी विशेष।

अभिवदन—(न०) [अभि√वद्+ल्युट्] सम्बोधन। प्रणाम, सलाम।

अभिवन्दन—(न०) [अभि√वन्द्+ल्युट्] सम्मान पुरस्सर प्रणाम।

अभिवर्षण—(न०) [अभि√वृष्+ल्युट्] वर्षा, वृष्टि, जल की वर्षा।

अभिवाद (पुं०), **अभिवादन**—(न०) [अभि √वद्+घञ्=अप्रिय वचन। अभि√वद्+णिच्+घञ्] [अभि√वद्+णिच्+ल्युट्] सम्मान पुरस्सर प्रणाम। प्रणाम तीन प्रकार से होता है। प्रथम, प्रत्युत्थान। द्वितीय, पादोपसंग्रह। तृतीय, स्वगोत्र एवं स्वनाम का उच्चारण कर वंदना करना।

अभिवादक—(वि०) [स्त्री० **अभिवादिका**] [अभि√वद्+ण्वुल] प्रणाम करने वाला। विनम्र। सुशील। सम्मान सूचक।

अभिविधि—(पुं०) [अभि—वि√धा+कि] व्याप्ति, मर्यादा, यहाँ से या तक।

अभिविश्रुत—(वि०) [अभि—वि√श्रु+क्त] जगत्प्रसिद्ध, सर्वश्रेष्ठ।

अभि—वि√ईक्ष् देखना। निरीक्षण करना। पहचानना। खयाल करना।

अभिवृद्धि—(स्त्री०) [अभि√वृध+क्तिन्] उन्नति, बढ़ती। सफलता। समृद्धि।

अभिव्यक्त—(वि०) [अभि—वि√अञ्ज्+क्त] प्रत्यक्ष, प्रकट। स्पष्ट। स्वच्छ, साफ। कार्य रूप को प्राप्त।

अभिव्यक्ति—(स्त्री०) [अभि—वि√अञ्ज्+क्तिन्] व्यक्त, प्रकट होना। कारण का कार्य रूप में आविर्भाव। प्रकाशन।

अभिव्यञ्ज्—[अभि—वि√अञ्ज्,] प्रकाशित करना। स्पष्ट करना।

अभिव्यञ्जन—(न०) [अभि—वि√अञ्ज्+ल्युट्] दे० 'अभिव्यक्ति'।

अभिव्यादान—(न०) [अभि—वि—आ√दा+ल्युट्] शब्द की आवृत्ति, एक शब्द को बार-बार बोलना।

अभिव्याप—[अभि—वि√आप्] फैलाना। शामिल करना। मापना।

अभिव्यापक, अभिव्यापिन्—(वि०) [अभि—वि√आप्+ण्वुल्] [अभि—वि√आप्+णिन्] अच्छी तरह प्रचलित होने वाला। सम्मिलित, शामिल। सब ओर फैला हुआ।

अभिव्याप्ति—(स्त्री०) [अभि—वि√आप्+क्तिन्] सर्वव्यापकता। अन्तर्भुक्तता। सम्मिलित होना।

अभिव्याहरण—(न०), **अभिव्याहार**—(पु०) [अभि–वि–आ√हृ+ल्युट्] [अभि–वि–आ√हृ+घञ्] कथन। उच्चारण। नाम, संज्ञा।

अभिव्याहृ—[अभि–वि–आ√हृ] उच्चारण करना। वर्णन करना।

अभि√शंस्—उलहना देना। दोष लगाना। स्तुति करना। वर्णन करना।

अभिशंसक, अभिशंसिन्—(वि०) [अभि √शंस्+ण्वुल्] [अभि√शंस्+णिनि] दोषी ठहराने वाला। अपमान करने वाला। बदनाम करने वाला।

अभिशंसन—(न०) [अभि√शंस्+ल्युट्] आरोप, इलजाम। गाली। अपमान। उद्दण्डता।

अभिशंसा—(स्त्री०) [अभि√शंस्+अ] अदालत या पंचों द्वारा किसी व्यक्ति का अपराधी घोषित किया जाना। यह प्रख्यापित करना कि उस पर जो आरोप लगाया गया था वह प्रमाणित हो गया है। [कनविक्शन]।

अभिशंका—(स्त्री०)[प्रा० स०]सन्देह, शक। भय। चिन्ता।

अभि√शप्—शाप देना।

अभिशपन—(न०), **अभिशाप**—(पु०) [अभि√शप्+ल्युट्] [अभि√शप्+घञ्] अकोसा। शाप। संगीन इलजाम, बड़ा भारी दोष। अपवाद, निन्दा। —**ज्वर**–(पु०) ऐसा ज्वर जो कि अकोसने या शापवश चढ़ आया हो।

अभिशापन—(न०) [अभि√शप्+णिच् +ल्युट्] धिक्कारना, कोसना।

अभिशब्दित—(वि०) [अभि√शब्द्+क्त] घोषित। वर्णित। कथित।

अभिशस्त—[अभि√शंस्+क्त] बदनाम। तिरस्कृत; 'देवि केनाभिशस्तासि केन वासि विमानिता' वा०। गरियाया हुआ। चोटिल घायल। आक्रान्त। शापित। दुष्ट। पापी। न्यायालय में जिसका दोषी होना प्रमाणित हो गया हो। (कनविक्टेड)।

अभिशस्तक—(वि०) [अभिशस्त+कन्] झूठमूठ दोषी ठहराया हुआ, बदनाम किया हुआ। बदनाम।

अभिशस्ति—(स्त्री०) [अभि√शंस+क्तिन्] अकोसा। शाप। दुर्भाग्य, बदकिस्मती। बुराई। विपत्ति। भर्त्सना। बदनामी। अप्रतिष्ठा। याचना, माँग।

अभिशीत—(वि०)[प्रा० स०]ठंडा, शीतल।

अभिशोचन—(न०) [अभि√शुच्+ल्युट्] बड़ा भारी दुःख, पीड़ा या क्लेश।

अभिश्रवण—(न०) [अभि√श्रु+ल्युट्] श्राद्ध के समय ऋचाओं की पुनरावृत्ति।

अभिषङ्ग—(पु०) [अभि√सञ्ज्+घञ्] मिलन। एकीभाव, ऐक्य। पराजय; 'जाताभिषङ्गः नृपतिः' र० २.३०। लगा हुआ। आघात। धक्का। दुःख। अकस्मात् आई हुई विपत्ति। भूतपीड़ा, प्रेतावेश। शपथ। आलिङ्गन। सम्भोग। अकोसा, शाप। गाली। झूठा दोष। झूठी बदनामी। तिरस्कार, असम्मान।

अभि√षञ्ज्,–सञ्ज्—गले मिलना। साथ लगना। स्पर्श करना।

अभिषञ्जन—(न०) [अभि√षञ्ज्+ल्युट्] (दे०) 'अभिषङ्ग'

अभिषद्—(स्त्री०) [अभि√सद्+क्विप्] किसी व्यापारिक वस्तु के उत्पादन या पूर्ति आदि का एकाधिकार प्राप्त करने या किसी अन्य सामान्य उद्देश्य की सिद्धि के लिये स्थापित व्यापारियों की संस्था। लेख, कहानियाँ आदि प्राप्त कर निर्धारित पुरस्कार की शर्त पर उन्हें एक साथ कई समाचार-पत्रों, मासिकों आदि में प्रकाशित कराने वाली संस्था।

अभिषव—(पु०) [अभि√सु+अप्] सोमलता को दबा कर, उससे सोमरस निकालने की क्रिया। शराब खींचना। धर्मानुष्ठान करने में प्रवृत्त होने के पूर्व स्नान-मार्जन आदि की

क्रिया। स्नान। प्रक्षालन। भूत-स्नान। बलि-कर्म। यज्ञ का अंग।

अभिषवण—(न०) [अभि√सु+ल्युट्] स्नान। सोमरस निकालना।

अभिषिक्त—(अभि√सिच्+क्त] अभिषेक किया हुआ। भीगा हुआ, तर। राजतिलक किया हुआ, राजसिंहासन पर बैठा हुआ।

अभिषेक—(पु०) [अभि√सिच्+घञ्] जल से सिंचन। छिड़काव। ऊपर से जल छोड़कर स्नान; 'अत्राभिषेकाय तपोधनानां' र० १३.५१। राजतिलक, राजगद्दी राज्याभिषेक के लिये जल।

अभिषेचन—(न०) [अभि√सिच्+ल्युट्] छिड़काव। राज्याभिषेक।

अभिषेणन—(न०) [सेनया शत्रोः अभिमुखं यानम् इति अभि—सेना+णिच्+ल्युट्] सेना के साथ चढ़ाई करने को प्रस्थान करना। आक्रमण करना। शत्रु सैन्य से मुठभेड़ करना।

अभिष्टव—(पु०) [अभि√स्तु+अप्] प्रशंसा, विरुदावली, तारीफ।

अभिष्यन्द—(पु०) [अभि√स्यन्द्+घञ्] बहाव, स्राव। नेत्र रोग विशेष, आँख आना। अत्यधिक बढ़ती।

अभिष्वङ्ग—(पु०) [अभि√स्वञ्ज्+घञ्] संसर्ग। अत्यन्त अनुराग। प्रेम, स्नेह।

अभिसंश्रय—(पु०) [अभि—सम्√श्रि+अच्] शरण, पनाह।

अभिसंस्तव—(पु०) [अभि—सम्√स्तु+अप्] बड़ी भारी प्रशंसा या स्तुति।

अभिसंताप—(पु०) [अभि—सम्√तप्+घञ् (आधारे) युद्ध, लड़ाई, विग्रह। [भावे घञ्] ताप देना। तपना।

अभिसन्देह—(पु०) [अभि—सम्√दिह्+घञ्] जननेन्द्रिय। परिवर्तन, बदलौअल।

अभिसन्ध, अभिसन्धक—(पु०) [अस्या० न०] अभिसन्ध+कन्] धोखा देने वाला, छलिया। निन्दक, दोषदर्शी।

अभिसन्धा—(स्त्री०) [अभि—सम्√धा+अङ्] भाषण। घोषणा। शब्द। बयान। कथन। प्रतिज्ञा। धोखा। प्रवञ्चना।

अभिसन्धान—(न०) [अभि—सम्√धा+ल्युट्] भाषण। शब्द। विचारित घोषणा। प्रतिज्ञा। धोखा, दगाबाजी; 'पराभिसंधान-परं यद्यप्यस्य विचेष्टितं' र० १७.७६। लक्ष्य।

अभिसन्धि— [अभि—सम्√धा+कि] भाषण। विचारित घोषणा। प्रतिज्ञा। उद्देश्य। अभिप्राय। लक्ष्य। राय, मत, सम्मति। विश्वास। खास इकरारनामा, विशेष प्रतिज्ञा-पत्र। षड्यन्त्र।

अभिसमय—(पु०) [अभि—सम्√इण् अच्] (कानवेंशन्) परस्पर संबंध रखने वाले (डाक, तार आदि) कतिपय विषयों के संबंध में किया गया विभिन्न राज्यों का समझौता। युद्ध लिप्त देशों के सैनिक अधिकारियों का युद्धस्थान आदि संबंधी वह समझौता जो दोनों ओर के प्रतिनिधियों की बातचीत द्वारा किया जाय और जिसका पालन दोनों के लिये पक्की संधि के सदृश ही आवश्यक हो। इस तरह का समझौता करने के लिये होने वाला उक्त राज्यों के प्रतिनिधियों का सम्मेलन। कोई प्रथा या परिपाटी जो परंपरा से चल पड़ी हो और जो अलिखित होते हुए भी सब के लिये मान्य हो।

अभिसमवाय—(पु०) [अभि—सम्—अव √इण्+अच्] ऐक्य।

अभिसम्पराय—(पु०) [अभि—सम्—परा √इण्+अच्] भविष्यद्।

अभिसम्पात—(पु०) [अभि—सम्√पत्+घञ्] एकत्रित होना। सङ्गम। युद्ध, लड़ाई। शाप, अकोसा। पतन।

अभिसम्बन्ध—(पु०) [अभि—सम्√बन्ध्+घञ्] संसर्ग। मैथुन। सम्बन्ध, रिश्ता जोड़, सन्धि।

अभिसर—(पु०) [अभि√सृ+अच्] अनु-चर, अनुयायी। साथी, संगी। सहायक।

अभिसरण—(न०) [अभि√सृ+ल्युट्]

समीपगमन । प्रेमियों के मिलने के लिये संङ्केतस्थान पर जाना ।

अभिसर्ग—(पु०) [अभि√सृज्+घञ्] सृष्टि, संसार की रचना ।

अभिसर्जन—(न०) [अभि√सृज+ल्युट्] भेंट, दान । वध, हत्या ।

अभिसर्पण—(न०) [अभि√सृप्+ल्युट्] समीपगमन ।

अभिसान्त्व—(पु०)—**अभिसान्त्वन**—(न०) [अभि√सान्त्व्+घञ्] [अभि√सान्त्व्+ल्युट्] सान्त्वना, प्रबोध, ढाढ़स ।

अभिसायम्—(अव्य०) [अव्य० स०] सूर्यास्त के समय, सन्ध्या के लगभग ।

अभिसार—(पु०) [अभि√सृ+घञ्] प्रेमी-प्रेमिका का मिलने के लिये (सङ्केतस्थान पर) गमन । प्रेमी-प्रेमिका का सङ्केतस्थान या सङ्केत समय; 'रतिसुखसारे गतमभिसारे मदन-मनोहरवेशं' गीत० ५ । हमला, आक्रमण । शुद्धि-संस्कार ।

अभिसारिका—(स्त्री०) [अभि√सृ+ ण्वुल्] नायिका जो सङ्केतस्थान पर अपने प्यारे नायक से मिलने स्वयं जाय या उसे बुलावे । [संकेत स्थानानि:- क्षेत्रं वाटी भग्नदेवालयो दूतीगृहं वनं मालापं च श्मशानं च नद्यादीनान्तटी तथा]

अभिसारिन्—(वि०) [स्त्री० अभिसारिणी] [अभि√सृ+णिनि] भेंट करने को जाने वाला । आगे बढ़ने वाला । आक्रमणकारी । बड़े वेग से बाहर निकलने वाला ।

अभिसूचना—(स्त्री०) [प्रा० स०] कोई काम करने के लिये विशेष रूप से दी गई हिदायत या आदेश । (इंस्ट्रक्शन) ।

अभि√सृज्— बहा देना । खुला छोड़ना । बनाना । तैयार करना ।

अभिस्ताव—(पु०) [अभि√स्तु+घञ्] किसी के पक्ष में अनुकूल प्रभाव डालने के लिये या किसी की प्रशंसा में कुछ कहना या लिखना । (रेकमेंडेशन) । कोई सुझाव या सलाह देते हुए उसके पक्ष में अपना भाव प्रकट करना ।

अभिस्नेह—(पु०) [प्रा० स०] अनुराग, स्नेह, प्रेम । अभिलाषा ।

अभिस्फुरित—(वि०) [प्रा० स०] पूर्णरूप से फैला हुआ या बढ़ा हुआ, पूर्ण वृद्धि को प्राप्त (यथा पुष्प) ।

अभिस्रावण—(न०) [अभि√स्रु+णिच् +ल्युट्] पातालयंत्र (भभके) की सहायता से मद्य या अर्क चुवाने की क्रिया (डिस्टि-लेशन) ।

अभिस्रावणी—(स्त्री०) [अभि√स्रु+ णिच् +ल्युट्+ङीप्] शराब या अर्क चुवाने का यंत्र या भट्ठी ।

अभिहत—(वि०) [अभि√हन्+क्त] ठोंका हुआ । पीटा हुआ । मारा हुआ । घायल किया हुआ । रोका हुआ, रुद्ध । (अङ्कगणित) गुणा किया हुआ ।

अभिहति—(स्त्री०) [अभि√हन्+क्तिन्] मार । चोट । गुणा, जरब ।

अभि√हन्—ताड़न करना । चपेट लगाना । कष्ट देना । मारना । बजाना ।

अभिहरण—(न०) [अभि√हृ+ल्युट्] समीप लाना । लूटना । ऋण, किराये आदि की वसूली के लिये न्यायालय के आदेश से किसी की जायदाद, जमीन आदि जब्त कर लेना या नीलाम कर देना (डिस्ट्रेस) ।

अभिहव—(पु०) [अभि√ह्वे+अप्] आह्वान, आमंत्रण । बलिदान । यज्ञ ।

अभिहस्तांकन—(न०) [हस्तस्य अंकनम् ष० त० तस्य अभि इत्यनेन प्रा० स०]किसी भूमि, अधिकार आदि का लिख कर वैध रूप से हस्तान्तरण करना (असाइनमेंट) । किसी के लिये कोई हिस्सा, कार्य आदि निर्धारित करना ।

अभिहार—(पु०) [अभि√हृ+घञ्] ले

जाना। लूट लेना। चुरा लेना। आक्रमण, हमला। हथियार लगाना। हथियार लेना।

अभिहास—(पु॰) [अभि√हस्+घञ्] हँसी दिल्लगी, मजाक। विनोद।

अभिहित—(वि॰) [अभि√धा+क्त, हि आदेश] कथित, कहा हुआ। घोषित। वर्णित। सम्बोधित, बुलाया हुआ, पुकारा हुआ।

अभिहोम—(पु॰) [प्रा॰ स॰] अग्नि में घी की आहुतियाँ देने की क्रिया।

अभी—(वि॰) [नास्ति भीः यस्य न॰ ब॰] निडर, निर्भय।

अभीक—(वि॰) [अभि+कन् दीर्घ] (दे॰) 'अभिक'। [न॰ ब॰] निर्भय निडर।

अभीक्ष्ण—(वि॰) [अभि√क्ष्णु+ड, पृषो॰ दीर्घ] दुहराया हुआ। सतत, निरन्तर। अत्यधिक।

अभीक्ष्णम्—(अव्य॰) अक्सर, बहुधा, बार-बार। अविच्छिन्नता से। बहुत अधिक, अत्यन्त अधिकाई से।

अभीप्सित—(वि॰) [अभि√आप्+सन्+क्त (कर्मणि) अभीष्ट, वाञ्छित, चाहा हुआ। मनोनीत। अभिप्रेत, आशय के अनुकूल। (न॰) [भावे क्त] अभिलाषा, मनोरथ।

अभीरु—(वि॰) [√भी+क्रु न॰ त॰] भयरहित। (पु॰) शिव। भैरव।—**पत्री**—(स्त्री॰) शतमूली, सतावर।

अभीषु—(पु॰) [अभि√इष्+कु] लगाम। प्रकाश की किरण; 'प्रफुल्लतापिच्छनिभैर-भीषुभिः' शि॰ १.२२। अभिलाषा। अनुराग।

अभीष्ट—(वि॰) [अभि√इष् + क्त (कर्मणि)] अभिलषित, चाहा हुआ। प्रिय। (न॰) [भावे क्त] मनोरथ।

अभुग्न—(वि॰) [√भुज्+क्त न॰ त॰] जो टेढ़ा या मुड़ा या झुका हुआ न हो, सीधा, सतर। अच्छा, भला, रोगरहित।

अभुज—(वि॰) [नास्ति भुजा यस्य न॰ ब॰] भुजारहित, लुंजा।

अभुजिष्या—(स्त्री॰) [न भुजिष्या न॰ त॰] स्त्री, जो दासी या टहलनी न हो। स्वतंत्र स्त्री।

अभू—(पु॰) [√ भू+क्विप् न॰ त॰] जो पैदा न हुआ हो, भगवान् विष्णु का नाम।

अभूत—(वि॰) [√ भू+क्त न॰ त॰] जो हुआ न हो। अविद्यमान। मिथ्या। असाधारण।—**पूर्व**—(वि॰) जो पहले कभी नहीं था। बेजोड़। जो किसी पहले उदाहरण से समर्थित न हो।—**शत्रु**—(वि॰) जिसका कोई शत्रु न हो।

अभूति—(स्त्री॰) [√भू+क्तिन् न॰ त॰] अनस्तित्व। अत्यन्ताभाव। निर्धनता

अभूमि—(स्त्री॰) [न॰ त॰] अनुपयुक्त स्थान या पदार्थ। पृथिवी को छोड़ कर अन्य कोई भी पदार्थ।

अभृत,—अभृत्रिम—(वि॰) [√ भृ+क्त न॰ त॰] [√ भृ+क्त्रि मप् च न॰ त॰] जो भाड़े पर न हो, या जिसका भाड़ा न दिया गया हो। असमर्थित।

अभेद—(वि॰) [नास्ति भेदो यस्य न॰ ब॰] अविभक्त। समान, एकसा। (पु॰) [न॰ त॰] अन्तर या फर्क का अभाव। अतिसमानता। अवियोग, संयोग; 'इन्द्रुताम् सह वधूभिर-भेद' कि॰ ६.१२।

अभेद्य—(वि॰) [√भिद्+ण्यत् न॰ त॰] जो टुकड़े-टुकड़े न किया जा सके। जो बेधा न जा सके। (न॰) हीरा।

अभोज्य—(वि॰) [√भुज्+ण्यत् न॰ त॰] न खाने योग्य, वर्जित भोज्यपदार्थ।

अभ्यग्र—(वि॰) [अभिमुखम् अग्रं यस्य ब॰ स॰] समीप, निकट, पास। ताजा, टटका।

अभ्यङ्क—(वि॰) [अत्या॰ स॰] हाल ही में चिह्नित किया हुआ, नवीन चिह्नित।

अभ्यङ्ग—(पु॰) [अभि√अञ्ज्+घञ् कुत्व] लेपन। तेल-उबटन आदि की मालिश।

अभ्यञ्ज्, अभि√अञ्ज्—लेप करना । तेल आदि का मलना ।

अभ्यञ्जन—(न०) [अभि√अञ्ज्+ल्युट्] शरीर में मालिश करने का तेल या उबटन । आँख में लगाने का सुर्मा या अंजन । (दे०) 'अभ्यङ्ग' ।

अभ्यधिक—(वि०) [अभित: अधिक: इति प्रा० स०] अपेक्षाकृत अधिक, अत्यधिक । गुण या परिमाण में अपेक्षाकृत अधिक, उच्चतर । बड़ा, ऊँचा । असाधारण । मुख्य । अधिक; 'न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिक: कुतोऽन्य:' भग० ११.४३ ।

अभि-अनु√ज्ञा—अनुमति देना । मान लेना । पसंद करना । स्वीकार करना ।

अभ्यनुज्ञा—(स्त्री०), **अभ्यनुज्ञान** –(न०) [अभि–अनु√ज्ञा+अङ] [अभि–अनु √ज्ञा+ल्युट्] अनुमति, दी हुई आज्ञा । किसी दलील की स्वीकृति ।

अभ्यन्तर—(वि०) [अत्या० स०] भीतरी, आंतरिक । अंतरंग । परिचित । अतिसमीपी । (न०) [प्रा० स०] बीच । बीच का स्थान । अंत:करण ।

अभ्यन्तरक—(पुं०) [अभ्यन्तर+कन्] अन्तरङ्ग मित्र ।

अभ्यमन—(न०) [अभि√अम्+ल्युट्] आक्रमण । चोट । रोग ।

अभ्यमित, अभ्यान्त—(वि०) [अभि√अम्+क्त] रोगी, बीमार । घायल, चोटिल ।

अभ्यमित्र—(अव्य०) [अव्य० स०] शत्रु के विरुद्ध या शत्रु की ओर ।

अभ्यमित्रीण, अभ्यमित्रीय, अभ्यमित्र्य—(पुं०) [अभ्यमित्रम् अलंगामी इत्यर्थे अभ्यमित्र+ख=ईन] [अभ्यमित्र+छ–ईय] [अभ्यमित्र+यत्] योद्धा जो वीरता पूर्वक अपने शत्रु का सामना करता है ।

अभ्यय—(पुं०) [अभि√इण्+अच्] आगमन, पहुँच । (सूर्य के) अस्त होने की क्रिया ।

अभ्यर्चन—(न०), **अभ्यर्चा**—(स्त्री०) [अभि√अर्च्+ल्युट्] [अभि√अर्च्+अङ] पूजन । सजावट, शृङ्गार । सम्मान ।

अभ्यर्ण—(वि०) [अभि√अर्द्+क्त (कर्मणि)] समीप, निकट । (न०) [भावे क्त] सामीप्य ।

अभ्यर्थ्, अभि√अर्थ्—प्रार्थना करना, अरज करना ।

अभ्यर्थन—(न०), **अभ्यर्थना**—(स्त्री०) [अभि√अर्थ+ल्युट्] [अभि√अर्थ+णिच्+युच्] विनय, विनती । प्रार्थना । सम्मानार्थ आगे बढ़कर लेना, अगवानी ।

अभ्यर्थिन्—(वि०) [अभि√अर्थ+णिनि] माँगने वाला, याचना करने वाला । किसी परीक्षा में बैठने या नौकरी आदि के लिये आवेदन-पत्र देने वाला । (कैंडिडेट) ।

अभ्यर्ह्, अभि √अर्ह्—नमस्कार या प्रणाम करना । आदर करना । पूजा करना ।

अभ्यर्हणा—(स्त्री०) [अभि√अर्ह्+णिच्+युच्] पूजा । सम्मान, प्रतिष्ठा ।

अभ्यर्हित—(वि०) [अभि√अर्ह्+क्त] सम्मानित । पूजित । योग्य । उपयुक्त; 'अभ्यर्हिता बन्धुषु तुल्यरूपा वृत्तिविशेषेण तपोधनानाम्' कि० ३.११ । भव्य ।

अभ्यवकर्षण—(न०) [अभि–अव√कृष्+ल्युट्] खींच कर बाहर निकालना ।

अभ्यवकाश—(पुं०) [अभि–अव√काश्+घञ्] खुली हुई जगह ।

अभ्यवस्कन्द—(पुं०), **अभ्यवस्कन्दन** –(न०) [अभि–अव√स्कन्द्+घञ्] [अभि–अव√स्कन्द्+ल्युट्] वीरता पूर्वक शत्रु के सम्मुख होना । ऐसी चोट करना जिससे शत्रु बेकाम या निकम्मा हो जाय । आघात ।

अभ्यवहरण—(न०) [अभि–अव√हृ+ल्युट्] फेंक देना या गिरा देना । भोजन करना, खाना । गले के नीचे उतारना, निगलना ।

अभ्यवहार—(पु॰) [अभि—अव√हृ+घञ्] भोजन करना । भोजन ।

अभ्यवहार्य—[अभि—अव√हृ +ण्यत्] खाने योग्य । (न॰) भोज्य पदार्थ ।

अभ्यवहृ, अभि —अव√हृ—फेंकना । इकट्ठा करना । खाना । लाभ करना ।

अभ्यस्, अभि√अस्—अभ्यास करना, आदत डालना । कसरत करना ।

अभ्यसन—(न॰) [अभि√अस्+ल्युट्] दुहराना, पुनरावृत्ति । सतत-अध्ययन । किसी काम में तन्मयता ।

अभ्यसूयक—(वि॰) [स्त्री॰—**अभ्यसूयिका**] [अभि√असू+यक्+ण्वुल्] डाही, ईर्ष्यालु । निन्दक ।

अभ्यसूया—(स्त्री॰) [अभि√असु+यक्+अ, टाप्] डाह, ईर्ष्या । क्रोध ।

अभ्यस्त—(वि॰) [अभि√अस्+क्त] जिसका अभ्यास किया गया हो, बार-बार किया हुआ, मश्क किया हुआ; 'शैशवेऽभ्यस्तविद्यानाम्' र॰ १.८ । सीखा हुआ । पढ़ा हुआ । गुणा किया हुआ । अस्वीकृत ।

अभ्याकर्ष—(पु॰) [अभि—आ√कृष्+घञ्] (पहलवानों की तरह) हथेली से छाती ठोंक कर मानों कुश्ती लड़ने के लिये ललकारना ।

अभ्याकाङ्क्षित—(न॰) [अभि—आ√काङ्क्ष्+क्त] झूठा इलजाम, असत्य आरोप । मनोरथ, अभिलाषा ।

अभ्याख्यान—(न॰) [अभि√आ—ख्या+ल्युट्] झूठा इलजाम, असत्य दोषारोपण, अपवाद । गर्व को खर्व करने की क्रिया ।

अभ्यागत— [अभि—आ√गम्+क्त] सामने आया हुआ । घर आया हुआ, अतिथि बना हुआ । (पु॰) मेहमान, अतिथि ।

अभ्यागम—(पु॰) [अभि—आ√गम् + घञ्] समीप आना या जाना । आगमन । मुलाकात, भेंट । सामीप्य, पड़ोस । भिड़ना, हमला करना । युद्ध, लड़ाई । शत्रुता, बैर ।

अभ्यागमन—(न॰) [अभि॰ आ√गम्+ल्युट्] समीपागमन । आगमन । भेंट, मुलाकात ।

अभ्यागारिक—(पु॰) [अभ्यागारे तद्गतकर्मणि व्याप्तः इत्यर्थे अभ्यागार+ठन्] वह जो अपने कुटुम्ब के भरण-पोषण में यत्नशील या व्याकुल हो ।

अभ्याघात—(पु॰ [अभि—आ√हन् + क्त] हमला, आक्रमण । बाधा ।

अभ्यादा, अभि—आ√दा—लेना । पकड़ना । पहनना । एक के बोल चुकने पर बोलना ।

अभ्यादान—(न॰) [अभि—आ√दा+ल्युट्] सामने होकर लेना । आरंभ करना ।

अभ्याधान—(न॰) [अभि—आ√धा+ल्युट्] रखना, डालना (जैसे आग में ईंधन)

अभ्यापात—(पु॰) [अभि—आ√पत्+घञ्] विपत्ति । सङ्कट । बुराई ।

अभ्यामर्द—(पु॰)—**अभ्यामर्दन**-(न॰) [अभि—आ√मृद्+घञ्] [अभि—आ√मृद्+ल्युट्] युद्ध, लड़ाई । निचोड़ना ।

अभ्यारोह—(पु॰)—**अभ्यारोहण** - (न॰) [अभि—आ√रुह्+घञ्] [अभि—आ√रुह्+ल्युट्]चढ़ना, सवार होना । ऊपर की ओर जाना ।

अभ्यावृत्ति—(स्त्री॰) [अभि—आ√वृत्+क्तिन्] पुनरावृत्ति, बार-बार आवृत्ति ।

अभ्याश—(पु॰) [अभि√अश्+घञ्] समीप, नजदीक; 'वायसाभ्याशे समुपविष्ट' पं॰ (पु॰) आगमन । व्याप्ति । शीघ्र । लाभ । परिणाम । लाभ की आशा ।

अभ्यास—(पु॰) [अभि√अस् (क्षेपे) + घञ्] बार-बार किसी काम को करने की क्रिया । पूर्णता प्राप्त करने को बारंबार एक ही क्रिया का अवलम्बन । आदत, बान, टेव । रीति, पद्धति । कसरत, कवायद । पाठ, अध्य-

मन । समीप, पड़ोस । अभ्यस्त अंश (निरुक्त में) । (गणित में) गुणा । (संगीत में) एकतान सङ्गीत, अस्थाई या टेक ।—**योग**(पु०) एक अवलम्ब में चित्त को स्थापित कर देना, अभ्यास सहित समाधि ।

अभ्यासादन—(न०) [अभि—आ√सद्+णिच्+ल्युट्] शत्रु का सामना करना । शत्रु पर आक्रमण करना ।

अभ्याहनन—(न०) [अभि—आ√हन्+ल्युट्] मारना, चोटिल करना । घात करना । रोकना । (रास्ते में) बाधा डालना ।

अभ्याहार—(पुं०) [अभि—आ√हृ+घञ्] समीप लाना या किसी ओर लाना । ढोना । लूटना ।

अभ्युक्षण—(न०) [अभि√उक्ष्+ल्युट्] (जल) छिड़कना, तर करना; 'परस्पराभ्युक्षणतत्पराणाम्' र० १६.५७ । प्रोक्षण, मार्जन ।

अभ्युचित—(त्रि०) [उचितम् अभिगतः इति विग्रहे अत्या० स०] प्रथा के अनुरूप, प्रचलित ।

अभ्युच्चय—(पु०) [अभि—उद्√चि+अच्] उन्नति, बढ़ती । समृद्धिशालिता ।

अभ्युत्क्रोशन—(न०) [अभि—उद्√क्रुश्+ल्युट्] उच्चस्वर से चिल्लाना ।

अभ्युत्था, **अभि**—उद् √स्था—उठना । किसी के सम्मान में उठ कर खड़ा हो जाना ।

अभ्युत्थान—(न०) [अभि—उद्√स्था + ल्युट्] किसी के सम्मान के लिये आसन छोड़ कर खड़े होने की क्रिया । प्रस्थान, रवानगी । उदय । पदोन्नति । समृद्धि । मान ।

अभ्युत्पत्, **अभि**—उत्√पत्—किसी पर धावा बोलना । किसी पर कूदना ।

अभ्युत्पतन—(न०) [अभि—उत्√पत्+ल्युट्] उछाल, झपट । आक्रमण ।

अभ्युदय—(पु०) [अभि—उद्√इण्+अच्] उन्नति, वृद्धि । उदय, (किसी नक्षत्र का) निकलना । उत्सव । आरम्भ । इष्टलाभ । चूड़ाकरण संस्कार आदि के अवसर पर किया जाने वाला श्राद्ध, वृद्धि-श्राद्ध ।

अभ्युदाहरण—(न०) [अभि—उद्—आ√हृ+ल्युट्] किसी वस्तु का (उल्टा) उदाहरण ।

अभ्युदित—(वि०) [अभि—उत्√इण्+क्त] उदय हुआ । पदोन्नत । घटित । उत्सव आदि के रूप में मनाया हुआ । (पु०) वह ब्रह्मचारी जो सूर्योदय हो जाने के बाद भी सोया हो ।

अभ्युद्गम्, **अभि**—उत्√ गम्—पहुँचना । मिलना ।

अभ्युद्गति—(स्त्री०)—**अभ्युद्गम**—(पु०) —**अभ्युद्गमन**—(न०) [अभि—उद्√गम्+क्तिन्] [अभि—उद् √गम्+घञ्] [अभि—उत्√गम्+ल्युट्] किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति अथवा मेहमान का सम्मान करने ो आगे जाकर उसे लेने की क्रिया, अगवानी । उदय । निकास, उत्पत्ति ।

अभ्युद्यत—[अभि—उद्√यम्+क्त] उठा हुआ, ऊपर उठाया हुआ । तैयार किया हुआ । तैयार । आगे गया हुआ । उदय हुआ; 'कुलमभ्युद्यतनूतनेश्वरम्' र० ८.१५ । अयाचित दिया हुआ या लाया हुआ ।

अभ्युन्नत—(वि०) [अभि—उत√नम्+क्त] उठा हुआ । ऊँचा किया हुआ । ऊपर को निकला हुआ । अत्युच्च ।

अभ्युन्नति—(स्त्री०) [अभि—उद्√नम्+क्तिन्] अत्यन्त पदोन्नति और समृद्धि । शालीनता ।

अभ्युपगम—(पुं०) [अभि—उप√गम् + घञ्] समीप आगमन । आगमन । मंजूर करना, मान लेना । किसी बात को सत्य समझ कर मान लेना । (दोष को) अङ्गीकार करना । वचन, प्रतिज्ञा ।—**सिद्धान्त**—(पुं०) न्याय का एक सिद्धान्त, बिना परीक्षा किये

किसी ऐसी बात को मान कर, जिसका खण्डन करना है, फिर उसकी परीक्षा करने को अभ्युपगम सिद्धान्त कहते हैं । स्वीकृत प्रस्ताव या सर्वजनगृहीत मूलनीति ।

अभ्युपपत्ति—(स्त्री०) [अभि—उप√पद्+क्तिन्] सहायतार्थ समीप आने की क्रिया । अनुग्रह, कृपा । सान्त्वना, ढाढ़स । बचाव, रक्षा । इक़रारनामा, प्रतिज्ञापत्र । स्वीकृति । प्रतिज्ञा । स्त्री को गर्भवती करने की क्रिया ।

अभ्युपाय—(पुं०) [अभि—उप√इण् + अच्] प्रतिज्ञा, इकरार । उपाय, इलाज ।

अभ्युपायन—(न०) [अभि—उप√अय्+ल्युट्] घूस, रिश्वत । सम्मानप्रदर्शक भेंट ।

अभ्युपेत—(वि०) [अभि—उप√इण् + क्त] समीप आया हुआ । प्रतिज्ञात । स्वीकृत, अङ्गीकृत । —**अशुश्रूषा** (**अभ्युपेताशुश्रूषा**) हिन्दू कानून की १८ उपाधियों में से एक । स्वामी-सेवक की पारस्परिक प्रतिज्ञा का भंग ।

अभ्युष,—अभ्यूष,—अभ्योष-(पुं०)[अभि √उष्+क] [अभि√ऊष्+क] [अभि√उष्+घञ्] एक प्रकार की रोटी या चपाती ।

अभ्यूह—(पुं०) [अभि√ऊह्+अच्]तर्क, दलील । अनुमान, कल्पना । त्रुटि की पूर्ति । बुद्धि, समझ ।

अभ्र्—भ्वा० पर० सक०√जाना । इधर-उधर घूमना-फिरना । 'वनेष्वानभ्र निर्भयः' भट्टि० ४.११ । अभ्रति, अभ्रिष्यति, आभ्रीत् ।

अभ्र—(न०) [√अभ्र्+अच्] बादल । आकाश । अभ्रक । (गणित में) शून्य ।

अभ्रंकष—(वि०) [अभ्र√कष्+ खच्, मुमागम] बादलों को छूने वाला । बहुत ऊँचा । (पुं०) वायु । पर्वत ।

अभ्रंलिह—(वि०) [अभ्र√लिह्+खश्, मुमागम] बादलों का स्पर्श करनेवाला । (अर्थात् बहुत ऊँचा) । (पुं०) पवन ।

अभ्रक—(न०) [अभ्र+कन्] एक धातु, अबरक ।

अभ्रमु—(स्त्री०) [अभ्र√मा+उ] पूर्व दिशा के दिग्गज की हथिनी, इन्द्र के ऐरावत हाथी की हथिनी ।—**प्रिय,—वल्लभ**-(पुं०) ऐरावत हाथी ।

अभ्रि,—अभ्री-(स्त्री०) [√अभ्र्+इन्] [अभ्रि+ङीष्] लकड़ी की बनी, करही, जिससे नाव की सफाई की जाती है, काष्ठ कुदाल । कुदाली ।

अभ्रित—(वि०) [अभ्र+इतच्] बादल छाये हुए । बादलों से आच्छादित ।

अभ्रिय—(वि०) [अभ्र+घ—इय] बादल सम्बन्धी या बादलों से उत्पन्न ।

अभ्रेष—(पुं०) [√भ्रेष्+घञ् न० त०] औचित्य, न्याय, न्यायानमोदित होने का भाव ।

√अम्—चु० उभ० अक० पीड़ा होना । सक० पीड़ा देना । आमयति-ते, आमयिष्यति-ते, आमिमत्-त । भ्वा० पर० सक० जाना । ओर या तरफ जाना । सेवा करना । सम्मान करना । खाना । (अक०) शब्द करना । अमति, अमिष्यति, आमीत् ।

अम्—(अव्य०) [√अम्+क्विप्] जल्दी से, फुर्ती से । अल्प, थोड़ा ।

अम—(वि०) [√अम्+घञ्, अवृद्धि]कच्चा (फल) ।(पुं०) गमन । बीमारी । नौकर, अनुचर । दबाव, भार । बल । भय । प्राण वायु । अमित होने की अवस्था ।

अमङ्गल—(वि०) [नास्ति मंगलं यस्मात् इति विग्रहे ब० स०] अशुभ । बुरा । भाग्यहीन, बदकिस्मत । (पुं०) [न० त०] अकल्याण । दुर्भाग्य । एरण्ड, वृक्ष, अंडी का पेड़ ।

अमङ्गल्य—(वि०) [मङ्गल+यत् न० त०] दे० 'अमङ्गल' ।

अमण्ड—(वि० [न० ब०] बिना सजावट या आभूषण का। बिना फेन या मांड़ का।

अमत—(वि०) [√मन्+क्त, न० त०] असम्मत। अविज्ञात। अतर्कित। नापसंद। (पुं०) समय। बीमारी। मृत्यु। धूलि-कण। (न०) मत का अभाव।

अमति—(वि०) [न० ब०] बुरे दिल का। दुष्ट। चरित्रभ्रष्ट। (पुं०) चन्द्रमा। समय। (स्त्री०) अज्ञानता। [न० त०] ज्ञान सङ्कल्प या दीर्घदर्शिता का अभाव।—**पूर्व**-(वि०) सत्यासत्यविवेक-शक्ति-हीन। अनिच्छाकृत। अनभिप्रेत।

अमत्त—(वि०) [न० त०] जो नशे में न हो। सही दिमाग का। सावधान। विचारशील।

अमत्र—(न०) [√अम्+अत्रन्] बरतन, बासन। ताकत, शक्ति।

अमत्सर—(वि०) [न० ब०] जो ईर्ष्यालु या डाही न हो। उदार।

अमनस्, अमनस्क—(वि०) [न० ब०] [न० ब० कप्] जिसका मन ठीक-ठिकाने न हो। विवेकशक्ति से हीन। अनाविष्ट। अमनोयोगी। जिसका मन काबू में न हो। स्नेहशून्य।

अमनाक्—(अव्य०) [न० त०] स्वल्प नहीं। अधिकता से। बहुत अधिक।

अमनुष्य—(वि०) [न० ब०] अमानुषिक। जहाँ मनुष्यों की बस्ती न हो। (पुं०) [न० त०] मनुष्य नहीं। शैतान। राक्षस।

अमन्त्र, अमन्त्रक—(वि०) [न० ब०] [न० ब० कप्] वैदिक मंत्रों से रहित। वह कर्मानुष्ठान जिसमें वैदिक मंत्रों के पढ़ने की आवश्यकता न पड़े। वेद पढ़ने के अनधिकारी, (शूद्र, स्त्री आदि)। वेद को न जानने वाला। वह रोग-चिकित्सा जिसमें जादू टोना की क्रिया न हो।

अमन्द—(वि०) [न० त०] जो मंद या सुस्त न हो। क्रियाशील। प्रतिभावान्। उग्र। थोड़ा नहीं, बहुत। अत्यधिक। तीव्र। सुन्दर। कुशल।

अमम—(वि०) [न० ब०] ममतारहित। जिसमें स्वार्थ या सांसारिक वस्तुओं का अनुराग न हो; 'शरण्येष्वममश्चैव वृक्षमूलनिकेतनः' मनु०।

अममता (स्त्री०), **अममत्व**—(न०) [मम+तल् न० त०] [मम+त्व न० त०] स्वार्थ-रहित, अनासक्ति, उदासीनता।

अमर—(वि०) [√मृ+अच् न० त०] जो कभी मरे नहीं। अविनाशी। (पुं०) देवता। पारा। सोना। तैंतीस की संख्या। देवदार का एक भेद। स्नुही वृक्ष, सेहुड़। हड्डियों का ढेर।—**अङ्गना** (**अमराङ्गना**)-(स्त्री०) अप्सरा।—**अद्रि** (**अमराद्रि**)-(पुं०) देवताओं का पर्वत, सुमेरु पर्वत।—**अधिप** (**अमराधिप**),—**इन्द्र**, (**अमरेन्द्र**),—**ईश**, (**अमरेश**),—**ईश्वर**, (**अमरेश्वर**)—**पति**,—**भर्तृ**,—**राज**-(पुं०) देवताओं के राजा। इन्द्र। विष्णु। शिव।—**आचार्य** (**अमराचार्य**),—**इज्य** (**अमरेज्य**),—**गुरु**-(पुं०) देवताओं के गुरु—अर्थात् बृहस्पति।—**आपगा**, (**अमरापगा**)—**तटिनी**,—**सरित्** (स्त्री०) स्वर्ग की नदी, गङ्गा।—**आलय**, (**अमरालय**)-(पुं०) स्वर्ग।—**कण्टक**-(न०) अमरकण्टक पहाड़ जिससे नर्मदा नदी निकलती है।—**कोश**,—**कोष**-(पुं०) संस्कृत भाषा के एक प्रसिद्ध शब्दकोश का नाम, जो अमरसिंह-विरचित है।—**तरु**,—**दारु**(पुं०) स्वर्ग का एक वृक्ष, कल्पवृक्ष—**द्विज**—(पुं०) ब्राह्मण। जो किसी देवालय में पूजा करे अथवा देवालय का प्रबन्ध करे।—**पुर**-(न०) स्वर्ग।—**पुष्प**,-**पुष्पक**-(पुं०) कल्पवृक्ष। केतक। कास तृण।—**प्रख्य**, —**प्रभ**-(वि०) अमर के समान, अविनाशी के समान।—**रत्न**-(न०) स्फटिक पत्थर।—**लोक**-(पुं०) स्वर्ग।—**सिंह**-(पुं०) अमर कोश नामक प्रसिद्ध संस्कृत-कोश के रचयिता। यह जैन थे और कहा जाता है कि विक्रमादित्य के नौ रत्नों में से एक थे।

अमरता—(स्त्री०), **अमरत्व**—(न०) [अमर+तल्] [अमर+त्व] अविनश्वरता। देवत्व।

अमरा—(स्त्री०) [√मृ+अच् न० त० टाप्] अमरावती पुरी। नाभिसूत्र, नाभिनाल। गर्भाशय।

अमरावती—(स्त्री०) [अमर+मतुप्, दीर्घ] इन्द्र की पुरी का नाम।

अमरी—(स्त्री०) [अमर+ङीष्] देवता की स्त्री, देवी। इन्द्र की राजधानी। देवकन्या।

अमर्त्य—(वि०) [मृतिम् अर्हति इत्यर्थे मृति+यत् न० त०] अविनाशी, जो कभी मरे नहीं। (पु०) देवता।—**आपगा** (**अमर्त्यापगा**)-(स्त्री०) गङ्गा का नाम।

अमर्मन्—(न०) [न० त०] शरीर का मर्मस्थल नहीं।—**वेधिन्**-(वि०) मर्मस्थल को न बेधने वाला। कोमल, मुलायम।

अमर्याद—(वि०) [न० त०] सीमारहित। सीमा का उल्लंघन करने वाला। प्रतिष्ठारहित।

अमर्यादा—(स्त्री०) [न० त०] सीमा का उल्लंघन। आचरणहीनता। अप्रतिष्ठा।

अमर्ष—(वि० [√मृष्+घञ् न० ब०] दूसरे का उत्कर्ष न सहने वाला। (पु०) [√मृष्+घञ् न० त०] असहनशीलता। ईर्ष्या। ईर्ष्या से उत्पन्न क्रोध। क्रोध; 'पुत्रवधामर्षोद्दीपितेन गाण्डीविना' वे० ४। एक संचारी भाव।

अमर्षण, अमर्षित, अमर्षवत्, अमर्षिन्-(वि०) [मृष्+ल्युट् न० ब०] [√मृष्+क्त न० त०] [मर्ष+मतुप् न० त०] [मर्ष+इनि न० त०] अधैर्यवान्, असहनशील, जो क्षमा न करे। रूठा हुआ, रोषपरवश। प्रचण्ड, उग्र, दृढ़प्रतिज्ञ।

अमल—(वि०) [न० ब०] जिसमें मैल न हो, साफ-सुथरा। निष्कलंक, बेदाग। विशुद्ध, सच्चा। सफेद, चमकदार; 'कर्णावसक्तामलदन्तपत्रम्' कु० ७.२३।—(**ला**)-(स्त्री०) लक्ष्मी का नाम। नाला, नाभिसूत्र। आमला वृक्ष। (न०) अभ्रक। परब्रह्म। [न० त०] स्वच्छता।—**पतत्रिन्**-(पु०) जंगली हंस।—**रत्न**-(न०) **मणि**-(पु०) स्फटिक पत्थर।

अमलिन्—(वि०) [न० त०] स्वच्छ। बेदाग, निष्कलंक। पवित्र।

अमस—(पु०) [√अम्+असच्] रोग। मूढ़ता। मूर्ख। समय।

अमा—(वि०) [√मा+क्विप् न० त०] माप-रहित, जो नापा न जा सके। (अव्य०) [न मा न० त०] साथ। समीप, पास। (स्त्री०) [√मा+क, टाप् न० त०] अमावास्या तिथि। चन्द्र की १६ वीं कला। (पु०) [√मा+क्विप् न० त०] आत्मा, जीव।

अमांस—(वि०) [न० ब०] बिना मांस का, जो मांसल न हो। दुबला, पतला। (न०) [न० त०] मांस को छोड़ अन्य कोई भी वस्तु।

अमात्य—(पु०) [अमा=सह वसति इत्यर्थे अमा+त्यक्] दीवान, मंत्री।

अमात्र—(वि०) [न० ब०] मात्रारहित। जिसकी माप-तौल न हो। सम्पूर्ण या समूचा नहीं। अभौतिक। (पु०) परमात्मा।

अमानन—(न०), **अमानना**—(स्त्री०) [√मान्+ल्युट् न० त०] [√मान्+णिच्+युच् न० त०] तिरस्कार, अपमान, अवज्ञा।

अमानस्य—(न०) [मानसे साधु भवति इत्यर्थे मानस+यत् न० त०] पीड़ा, दर्द।

अमानिन्—(वि०) [मान+इनि न० त०] निरभिमान। विनयी, विनम्र।

अमानुष—(वि०) [स्त्री०—**अमानुषी**] [न० त०] मनुष्य सम्बन्धी नहीं, अमानवी। अलौकिक। पाशव। पैशाचिक।

अमानुष्य—(वि०) [न० त०] अमानुष, अलौकिक।

अमामसी, अमामासी—(स्त्री०) [अमा सह सूर्येण मा: मासो वा चन्द्रमा यस्या: गौरा० ङीष्] अमावास्या।

अमाय—(वि०) [नास्ति माया यस्य न० ब०] सच्चा । निष्कपट, निश्छल । [√मा+यत् न० त०] जो नापा न जा सके । (न०) ब्रह्म ।

अमाया—(स्त्री०) [न० त०] छल या कपट का अभाव । सच्चाई, ईमानदारी । वेदान्त दर्शन में "अमाया" से भ्रम के अभाव का बोध होता है । परमात्मा का ज्ञान ।

अमायिक, अमायिन्—(वि०) [माया+ठन्—इक न० त०] [माया+इनि न० त०] माया से रहित । निश्छल, निष्कपट । सच्चा, ईमानदार ।

अमावस्या, अमावास्या, अमावसी, अमावासी—(स्त्री०) [अमा—सह वसतः चन्द्रार्कौ यत्र इति अमा√वस्+यत्] [अमा√वस् ण्यत्] [अमा√वस्+अप्] [अमा√वस्+घञ्] अमावस, कृष्णपक्ष की अन्तिम तिथि, अंधेरे पाख का अन्तिम दिन ।

अमित (वि०) [√मा+क्त न० त०] अपरिमित, जिसका परिमाण न हो । बेहद, असीम 'अमितस्य हि दातारं भर्तारं का न पूजयेत्, रा० । अवज्ञा किया हुआ, तिरस्कृत । अज्ञात । अशिष्ट ।—**आभ**, (**अमिताभ**)—अतिकांतियुक्त ।(पुं०) बुद्ध का एक नाम ।—**क्रतु**–(वि०) अपरिमित साहस या बुद्धि वाला ।—**विक्रम**–(वि०) असीम शक्ति वाला । (पुं०) विष्णु का एक नाम ।

अमित्र—(पुं०) [√अम्+इत्र] शत्रु, बैरी ।

अमिन्—(वि०) [अम+इनि]बीमार, रोगी ।

अमिष—(न०) [√अम्+इषन्]सांसारिक भोग पदार्थ, विलास की वस्तु । ईमानदारी, सच्चाई । मांस ।

अमीव—(न०)[√अम्+वन् नि० ईडागम] कष्ट, क्लेश ।

अमीवा—(स्त्री०) [अमीव+टाप्] रोग, बीमारी । तकलीफ, कष्ट । भय ।

अमुक—(सर्वनामीय विशेषण [अदस्+अकच् उत्व-मत्व] फलां; ऐसा-ऐसा, जब किसी वस्तु विशेष या व्यक्ति विशेष का नाम लेना अभीष्ट नहीं होता और उसको निर्दिष्ट किये बिना काम भी नहीं चलता, तब उस वस्तु या व्यक्ति का नाम न लेकर उसके बजाय इस शब्द का प्रयोग किया जाता है ।

अमुक्त[–(वि०) [न० त०] जो मुक्त न हो, बंधन में पड़ा हुआ । जिसे मोक्ष न मिला हो । (न०) छुरा, कटारी आदि हथियार जो हाथ में रख कर काम में लाये जायें ।—**हस्त**–(वि०) कम-खर्च, कृपण ।

अमुक्ति—(स्त्री०) [न० त०] स्वतंत्रता या मोक्ष का अभाव, मोक्ष का न मिलना ।

अमुतः—(अव्य०) [अदस्+तसिल् उत्व-मत्व] वहाँ से । वहाँ । ऊपर से । परलोक में । अगले जन्म में ।

अमुत्र—(अव्य०) [अदस्+त्रल् उत्व-मत्व] वहाँ, उस स्थान में । दूसरे लोक में, परलोक में । अगले जन्म में; 'यावज्जीवं च तत्कुर्याद्येनामुत्र सुखं वसेत्' ।

अमुथा—(अव्य०) [अदस्+थाल् उत्व-मत्व] इस प्रकार, यों । उस प्रकार ।

अमुष्य—(सम्बन्ध कारक **अदस्**)—**कुल**–(न०) [ष० त० नि० अलुक्] प्रसिद्ध कुल या वंश ।—**पुत्र**–(पुं०)—**पुत्री**–(स्त्री०) अच्छे या प्रसिद्ध वंश में उत्पन्न पुत्र या पुत्री ।

अमूदृश, —**अमूदृश**, —**अमूदृक्ष**(वि०) [स्त्री०—**अमूदृशी, अमूदृक्षी**] [अदस् √दृश्+क्विन्] [अदस्√दृश+कञ्] [अदस् √दृश्+क्स] इस प्रकार का, इस जाति या प्रकार का ।

अमूर्त—(वि०) [मूर्ति+अच् न० त०] आकारशून्य, अशरीरी, शरीर-रहित । (पुं०) वायु । आकाश । काल । दिशा । आत्मा । शिव ।—**गुण**–(पुं०) वैशेषिकदर्शन में गुण को अशरीरी माना है, यथा धर्म-अधर्म ।

अमूर्ति—(वि०) [न० ब०] आकाररहित, जिसकी कोई शक्ल न हो । (पुं०) विष्णु । (स्त्री०) [न० त०] शक्ल या आकार का न होना ।

अमूल, अमूलक—(वि०) [न० त०] बेजड़, निर्मूल । असत्य, मिथ्या । प्रमाणशून्य, जिसका कोई प्रमाण या आधार न हो ।

अमूल्य—(वि०) [न० ब०] अनमोल, बेश-कीमती, बहुमूल्य ।

अमृणाल—(न०) [सादृश्ये न० त०] एक सुगन्धित घास, उशीर, खस ।

अमृत—(वि०) [न० त०] जो मृत न हो । अमर । अविनाशी । सुंदर । अभीष्ट, प्रिय । (पुं०) देवता । धन्वन्तरि । इंद्र । सूर्य । जीवात्मा । (न०) अमरत्व । वह वस्तु जिसके पीने से मुर्दा जी उठे और जीवित प्राणी अजर-अमर हो जाय, सुधा, आबेहयात । अति मधुर, हितकर वस्तु । जल । घी । सोमरस । दूध । यज्ञशेष । अन्न । भात । अयाचित भिक्षा; 'भैक्ष्यममृतं स्यादयाचितम्' मनु० । औषध । पारा । सोना । ब्रह्म । वाराही कंद । विष । वत्सनाभ नामक विष । वार-नक्षत्र के कुछ विशेष योग । चार की संख्या । कांति ।—अंशु (अमृतांशु),—कर,—दीधिति, —द्युति,—रश्मि– (पुं०) चन्द्रमा ।—अन्धस् (अमृतान्धस्),—अशन (अमृताशन),—आशिन् (अमृताशिन्)–(पुं०) जिसका भोजन अमृत हो, देवता ।—आहरण (अमृताहरण)–पुं०) गरुड़ का नाम ।—उत्पन्न, उद्भव (अमृतोत्पन्न) (अमृतोद्भव)–(न०) एक प्रकार का सुर्मा ।—कुण्ड–(न०) पात्र जिसमें अमृत हो ।—गर्भ–(पुं०) व्यक्तिगत आत्मा । पर-मात्मा । —तरंङ्गिणी–(स्त्री०) चाँदनी, जुन्हाई ।—द्रव–(वि०) अमृत बहाने या चुआने वाला । (पुं०) अमृत की धार ।—धारा–(स्त्री०) छन्दविशेष, इसमें चार चरण होते हैं और प्रथम पाद में २०, दूसरे में १२, तीसरे में १६ और चौथे में ८ अक्षर होते हैं । अमृत की धारा ।—प–(पुं०) देवता । विष्णु का नाम । शराब पीने वाला ।—फला—(स्त्री०) अंगूर, दाख । आँवला ।—बन्धु–(पुं०) देवता । चन्द्रमा ।—भुज्–(पुं०) अमर, देवता ।—भू–(वि०) जन्म मरण से मुक्त ।—मन्थन–(न०) अमृत निकालने के लिये समुद्र का मंथन ।—रस–(पुं०) अमृत । ब्रह्म ।—लता,—लतिका–(स्त्री०) गुडूच ।—सार–(पुं०) घी ।—सू,—सूति–(पुं०) चन्द्रमा ।—सोदर (पुं०) उच्चैः श्रवा घोड़ा ।

अमृतक—(न०) [अमृत+कन्] अमरत्व प्रदायक रस, अमृत ।

अमृतता— (स्त्री०) —**अमृतत्व**— (न०) [अमृत+तल्] [अमृत+त्व] अमरता । मोक्ष । ।

अमृता—(स्त्री०) [अमृत+टाप्] मदिरा । आमलकी । हरीतकी । गुडूच । तुलसी । इंद्र-वारुणी । दूर्वा आदि । शरीर की एक नाड़ी । एक सूर्य-रश्मि ।

अमृतेशय—(पुं०) [न० त० विभक्तेः अलुक्] विष्णु का नाम । (जल में सोने वाले) ।

अमृषा—(अव्य०) [न० त०] झुठाई से नहीं, सच्चाई से ।

अमृष्ट—(वि०) [√मृष+क्त न० त०] बिना मला हुआ । बिना साफ किया हुआ ।

अमेदस्क—(वि०) [न० ब० कप्] जिसके चर्बी न हो, दुर्बल, लटा, पतला ।

अमेधस्—(वि०) [न० ब० असिच्] मूर्ख, बुद्धिहीन ।

अमेध्य—(वि०) [न० त०] जो यज्ञ या हवन करने योग्य न हो, यज्ञ के अयोग्य; 'नामे-ध्यम् प्रक्षिपेदग्नौ' मनु० । अपवित्र, अशुद्ध । मैला, गंदा, अस्वच्छ । (न०) विष्ठा, मल । अपशकुन ।

अमेय—(वि०) [√मा+यत् न० त०] असीम, सीमारहित, अपार । अचिन्त्य, जो जाना न जा सके, अज्ञेय; 'अमेयोऽमितलो-कस्त्वम्' र० १०.१८ ।—आत्मन् (अमेया-त्मन्)–(पुं०) विष्णु का नाम ।

अमोघ—(वि०) [न० त०] अचूक, निशाने पर ठीक पहुँचने वाला । अव्यर्थ । (पुं०) विष्णु । शिव ।—**दण्ड**–(पुं०) जो दण्ड देने में कभी न चूके । शिव का नाम ।

√**अम्ब्**—भ्वा० पर० सक० जाना । अम्बति, अम्बिष्यति, आम्बीत् । भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना । अम्बते, अम्बिष्यते, आम्बिष्ट ।

अम्ब—(अव्य०) अच्छा, हाँ ।

अम्ब—(पुं०) [√अम्ब्+घञ् अच् वा] पिता । (न०) जल, पानी । नेत्र, आँख ।

अम्बक—(न०) [अम्बति शीघ्रं लक्ष्यस्थान-पर्यन्तं गच्छति इति विग्रहे √अम्ब्+ण्वुल्] नेत्र ।(पुं०)[√अम्ब्+घञ् ततः स्वार्थे कः] पिता ।

अम्बर—(न०) [√अम्ब (शब्द करना)+घञ्=अम्बः शब्दः तं राति धत्ते इति अम्ब√रा+क] अन्तरिक्ष, आकाश । कपड़ा, वस्त्र । पोशाक, परिच्छद । केसर । अभ्रक । सुगन्धित पदार्थ विशेष, अम्बरी ।—**ओकस्** (**अम्बरौकस्**)–(पुं०) स्वर्गवासी, देवता ।—**द**–(न०) कपास, रुई ।—**मणि**–(पुं०) सूर्य ।—**लेखिन्**–(वि०) आकाशस्पर्शी ।

अम्बरीष—(पुं०)(न०)[√अम्ब्+अरिष् नि० वा दीर्घः] कड़ाही । (पुं०) खेद, सन्ताप । युद्ध, लड़ाई । एक नरक । किसी जानवर का बच्चा, बछड़ा । सूर्य । विष्णु का नाम । शिव का नाम । एक राजा, यह महाराज मान्धाता के पुत्र और परम भागवत थे ।

अम्बष्ठ—(पुं०) [अम्ब√स्था+क] ब्राह्मण पिता और वैश्या माता की संतान । महावत । एक प्राचीन जनपद (लाहौर और उसके आस-पास का प्रदेश) और उसके निवासी । वैद्य ।

अम्बष्ठा—(स्त्री०) [अम्बष्ठ+टाप्] गणिका, यूथिका आदि कितने ही पौधों के नाम, (जूही, पाठा, पहाड़मूल, चुका अंबाड़ा आदि पौधे)

अम्बा—(स्त्री०) [अम्ब्यते स्नेहेन उपगम्यते इति विग्रहे √अम्ब् घञ् (कर्मणि), टाप्] (सम्बोधनकारक में 'अम्बे' वैदिक साहित्य में) माता । शिवपत्नी दुर्गा का नाम । राजा पाण्डु की माता का नाम ।

अम्बाडा, अम्बाला—(स्त्री०) [अम्बेति शब्दं लाति धत्ते इति अम्बा√ला+क, टाप्, डलयोः अभेदात् अम्बाडा इत्यपि] माता, मा ।

अम्बालिका—(स्त्री०) [अम्बाला+क, टाप्, इत्व] माता । पाढ़ा लता । राजा विचित्रवीर्य की रानी का नाम, जो काशिराज की सबसे छोटी कन्या थी ।

अम्बिका—(स्त्री०) [अम्बा+कन्, टाप्, इत्व] माता । पार्वती का नाम । राजा विचित्र-वीर्य की पटरानी का नाम, यह काशिराज की मझली बेटी थी ।—**पति**,—**भर्तृ**–(पुं०) शिव का नाम ।—**पुत्र**,—**सुत**–(पुं०) धृत-राष्ट्र का नाम ।

आम्बिकेय, आम्बिकेयक—(पुं०) [अम्बिका+ढ–एय] [आम्बिकेय+क] गणेश । कार्ति-केय । धृतराष्ट्र ।

अम्बु—(न०) [√अम्ब् (शब्द करना)+उण्] पानी । जल का भाग जो रक्त में रहता है । एक छंद । जन्मकुंडली में चौथा स्थान । चार की संख्या । रास्ना लता ।—**कण**–(पुं०) जल की बूंद ।—**कण्टक**–(पुं०) ग्राह, घड़ि-याल, मगर ।—**किरात**–(पुं०) घड़ियाल, मगर ।—**कीश**,—**कूर्म**–(पुं०) सूंस, शिशु-मार ।—**केशर**–(पुं०) नीबू का पेड़ ।—**क्रिया**–(स्त्री०) पितरों को जलदान, तर्पण ।—**ग**,—**चर**,—**चारिन्**–(वि०) जल में रहने वाले जीवजन्तु ।—**घन**–(पुं०) ओला ।—**चत्वर**–(न०) झील ।—**चामर**,—**ताल**–(पुं०) सिवार ।—**ज**–(वि०) जल में उत्पन्न । (पुं०) चन्द्रमा । कपूर । सारस पक्षी । शंख । (न०) कमल । इन्द्र का वज्र ।—**जन्मन्**–(न०) कमल । (पुं०) चन्द्रमा । शंख । सारस ।—**तस्कर**–(पुं०) जल का चोर, सूर्य ।—**द**–(वि०) जल देने वाला या जिससे

जल निकले। (पुं०) बादल।—चर-(पुं०) बादल, मेघ। अभ्रक।—धि-(पुं०) जल का कोई पात्र – जैसे घड़ा, कलसा आदि। समुद्र। चार की संख्या।—निधि-(पुं०) समुद्र।—प-(वि०) जल पीने वाला। (पुं०) समुद्र। वरुण।—पत्रा-(स्त्री०) नागरमोथा।—पात-(पुं०) धारा, जलप्रवाह। जलप्रपात।—प्रसाद-(पुं०) कतक, निर्मली का पेड़। (जिससे जल साफ होता है)।—भव-(न०) कमल।—भृत्-(पुं०) जलवाहक, बादल। समुद्र। अभ्रक।—मात्रज-(वि०) जो केवल जल ही में उत्पन्न हो। (पुं०) शंख।—मुच्-(पुं०) बादल; 'ध्वनितसूचितमम्बुमुचा-चयः' कि० ५.१२।—राज-(पुं०) समुद्र। वरुण।—राशि-(पुं०) समुद्र।—रुह-(न०) कमल। सारस।—रोहिणी-(स्त्री०) कमल।—वाची-(स्त्री०) आषाढ़ कृष्ण पक्ष के दशमी से त्रयोदशी तक के चार दिनों के लिये पृथ्वी के लिये प्रयुक्त होने वाला एक विशेषण (इस समय पृथिवी रजस्वला मानी जाती है और कृषि-कर्म बंद रहता है)।—वासिनी,—वासी-(स्त्री०) पाटला नामक पौधा।—वाह-(पुं०) बादल; भर्तुर्मित्रं प्रियमविधवे विद्धिमामम्बुवाहं' मे० ९९ झील। मोथा। १७ की संख्या।—वाहिन्-(वि०) पानी ढोने वाला। (पुं०) बादल। मोथा।—वाहिनी- (स्त्री०) कठेली या काठ का डोल, नाव का पानी उलीचने का बरतन। जल लाने वाली स्त्री।—विहार-(पुं०) जलक्रीडा।—वेतस-(पुं०) नरकुल जो जल में उत्पन्न होता है।—शायिन्-(पुं०) विष्णु, नारायण।—सरण- (न०) जल की धारा या जल का बहाव।—सर्पिणी-(स्त्री०) जोंक।—सेचनी—(स्त्री०) जल छिड़कने या उलीचने का पात्र।

अम्बुमत्—(वि०) [अम्बु+मतुप्] पनीला, जिसमें जल हो।

अम्बुमती—(स्त्री०) [अम्बुमत्+ङीप्] एक नदी का नाम।

अम्बूकृत—(वि०) [अनम्बु अम्बु कृतम् इति विग्रहे अम्बु+च्वि, ततः√कृ+क्त] ओंठ बंद करके गुनगुनाया हुआ। ऐसे बोला हुआ जिससे थूक उड़े।

√अम्भ्—भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना। अम्भते, अम्भिष्यते, आम्भिष्ट।

अम्भस्—(न०) [√अम्भ्+असुन्] जल। आकाश। लग्न से चौथी राशि। तेज। चार की संख्या। एक छंद। पितृ लोक। आध्यात्मिक तुष्टि (सां०)।—ज, (**अम्भोज**)-(वि०) पानी का। (पुं०) चन्द्रमा। सारस-पक्षी। (न०) कमल।—जन्मन्, (**अम्भोजन्मन्**)-(पुं०) ब्रह्मा की उपाधि। (न०) कमल।—द, (**अम्भोद**),—धर, (**अम्भोधर**)-(पुं०) बादल।—धि, (**अम्भोधि**)—निधि, (**अम्भोनिधि**),—राशि, (**अम्भोराशि**),-(पुं०) समुद्र।—रुह्, (**अम्भोरुह्**)-(न०)—रुह, (**अम्भोरुह**)-(न०) कमल। (पुं०) सारस।—सार, (**अम्भःसार**), मोती।—सू — (**अम्भः सू**)-(पुं०) धूआँ, भाप।

अम्भोजिनी—(स्त्री०) [अम्भोज (समूहार्थे वद्धति देशे वा)+इनि, ङीप्] कमलिनी। कमल के फूलों का समूह। स्थान जहाँ कमल के फूलों का बाहुल्य हो।

अम्मय—(वि०) [स्त्री०—**अम्मयी**] [अपां विकारः इत्यर्थे अप्+मयट्] जलीय या जल का बना हुआ।

अम्र—(पुं०) [अमति सौरभेण दूरं गच्छति इत्यर्थे √अम्+रन्] आम का फल या वृक्ष।

अम्ल—(वि०) [अम्+क्त=अम्त+अच्] खट्टा। (पुं०) [√अम्+क्ल] खट्टापन, खटाई। सिरका। तेजाब। अमलबेत। वमन। एक नीबू, चकोतरा। (न०) मट्ठा।—अक्त, (**अम्लाक्त**)-(वि०) खट्टा।—

उद्गार, (अम्लोद्गार)–(पुं०) खट्टी डकार। —केशर–(पुं०) चकोतरा या बीजपूरक का पेड़ ।—निम्बक–(पुं०) नीबू का पेड़ ।—पंचक–(न०) पाँच मुख्य खट्टे फल—जंबीरी नीबू, खट्टा अनार, इमली, नारंगी और अमलबेंत ।—फल–(पुं०) इमली का वृक्ष (न०) इमली फल ।—वृक्ष–(पुं०) इमली का पेड़ ।—सार–(पुं०) नीबू । चूक । अमलबेंत । हिंताल । काँजी । गंधक ।—हरिद्रा–(स्त्री०) आँबाहल्दी ।

अम्लक—(पुं०) [अल्पोऽम्लः इत्यर्थे अम्ल+कन्] लकुच वृक्ष, बड़हर ।

अम्लान—(वि०) [√म्लै+क्त न० त०] जो कुम्हलाया न हो, जो मुरझाया न हो । साफ, स्वच्छ; 'परार्थन्यासचादेषु कार्णोऽप्यम्लानदर्शनः'। बिना बादलों का । प्रफुल्ल, प्रसन्न ।

अम्लानि—(वि०) [√म्लै+क्तिन् न० ब०] सशक्त । मुरझाया नहीं । (स्त्री०) [न० त०] शक्ति । ताज़गी । हरियाली ।

अम्लानिन्—(वि०) [म्लान+इनि न० त०] साफ, स्वच्छ ।

अम्लिका, अम्लीका—(स्त्री०) [अम्ल+कन्, टाप्, इत्व] [अम्ल+ङीप्, ततः क, टाप्] मुँह का खट्टापन, खट्टी डकार । इमली का वृक्ष ।

अम्लिमन्—(पुं०) [अम्ल + इमनिच्] खट्टापन ।

√अय्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । अयते, अयिष्यते, आयिष्ट । (कभी-कभी यह परस्मैपदी भी होती है, विशेष कर "उद्" के संयोग से): 'उदयति हि शशाङ्कः' मु० १.५७ ।

अय—(पुं०) [एति सुखम् अनेन इति विग्रहे √इण्+अच्] गमन । पूर्वजन्म के शुभ कर्म । सौभाग्य । (खेलने का) पासा ।—अन्वित, (अयान्वित)–(वि०) भाग्यवान्, खुशकिस्मत ।

अयक्ष्म—(न०) [न० त०] सुस्वस्थता । रोग-मुक्त ।

अयज्ञ—(पुं०) [न० त०] बुरा यज्ञ, यज्ञ नहीं ।

अयज्ञिय—(वि०) [न० त०] यज्ञ के अयोग्य (जैसे उर्द) । यज्ञ करने के अयोग्य (जैसे अनुपवीत बालक) । अपवित्र । अधार्मिक ।

अयत्न—(वि०) [न० ब०] जिसमें यत्न न करना पड़े । (पुं०) [न० त०] यत्न का अभाव ।

अयथा—(अव्य०) [न० त०] जैसे होना चाहिये वैसे नहीं । अनुचित या गलत तरीके से ।—वत्–(अव्य०) गलती से, अनुचित रीति से ।—वृत्त–(वि०) बुरे या गलत ढंग से काम करने वाला ।—स्थित–(वि०) बे-तरतीब । अव्यवस्थित ।

अयथार्थानुभव—(पुं०) [अयथार्थ—अनुभव कर्म० स०] अनुचित या मिथ्या अनुभव, अन्य वस्तु में अन्य वस्तु का ज्ञान ।

अयन— (न०) [√अय्+ल्युट्] गमन । मार्ग, रास्ता । (सूर्य की) गति । (यह गति उत्तर या दक्षिण होती है ।) स्थान, आवासस्थल । व्यूह का मार्ग या द्वार । कुछ विशेष यज्ञ (गवामयन) । अंश । थन का वह भाग जिसमें दूध रहता है ।—अंश, (अयनांश)–(पुं०) अयन का भाग, विषुवत् रेखा से मेष राशि के आरंभ तक के अयन का भाग ।—अन्त, (अयनान्त)–(पुं०) दो अयनों का संधिकाल ।—वृत्त–(न०) ग्रहण रेखा ।—संक्रम (पुं०) संक्रान्ति—(स्त्री०) मकर और कर्क की संक्रान्ति, राशिचक्र से होकर गुज़रने का मार्ग ।

अयन्त्रित—(वि०) [न० त०] बेकाबू, जो वश में न हो । मनमानी करने वाला ।

अयमित—(वि०) [यम+क्विप् (ना० धा०) ततः+क्त न० त०] अनियंत्रित, बेकाबू । बिना सम्हाला हुआ । बिना सजाया हुआ ।

अयशस्—(न०) [न० त०] बदनामी। लांछन। (वि०) [न० ब०] बदनाम। कलंकित।—**कर**- (वि०) अपकीर्तिकारी। बदनामी करने वाला।

अयशस्य—(वि०) [यशस्+यत् न० त०] दे० 'अयशस्कर'।

अयस्—(न०) [√इण्+असुन्] लोहा। इस्पात। सुवर्ण; 'अभितप्तमयोऽपि मार्दवं भजते' र० ८.४३। कोई भी धातु। अगर की लकड़ी। (पु०) अग्नि, आग।—**अग्र**, (**अयोऽग्र**)—**अग्रक**, (**अयोऽग्रक**)-(न०) हथौड़ा। मूसल।—**काण्ड**-(पु०) लोहे का तीर। उत्तम लोहा। लोहे का ढेर।—**कान्त**-(पु०) चुम्बक पत्थर। मूल्यवान् पत्थर, मणि।—**कार**-(पु०) लुहार।—**किट्ट**, (**अयःकिट्ट**)-(न०) लोहे का मोर्चा, जंग।—**मल**,(**अयोमल**)-(न०) लोहे का मल।—**मुख**, (**अयोमुख**)-(वि०) जिसके मुँह या सिरे पर लोहा लगा हो। (पु०) लोहे की नोंक का तीर।—**शङ्कु**, (**अयःशङ्कु**)-(पु०) भाला। कील। परेग।—**शूल**, (**अयःशूल**) -(न०) लोहे का भाला। तीक्ष्ण उपाय।—**हृदय**, (**अयोहृदय**)-(वि०) जिसका हृदय लोहे की तरह कठोर हो, निष्ठुर।

अयस्मय, अयोमय—(वि०) [स्त्री०—**अयोमयी**] [अयस्+मयट्] लोहे या अन्य किसी धातु का बना हुआ।

अयाचित—(वि०) [न० त०] न माँगा हुआ, अप्रार्थित। (न०) बिना माँगी, भीख, अमृत नामक आहार, 'अमृतं स्यादयाचितम्' इति मनुः।—**वृत्ति**-(स्त्री०)—**व्रत**-(न०) बिना माँगे मिलने वाली भीख पर गुजर करने का व्रत।

अयाज्य—(वि०) [√यज्+ण्यत् न० त०] जात्य, पतित, वह व्यक्ति जिसको यज्ञ नहीं कराया जा सकता।

अयात—(वि०) [√या+क्त न० त०] नहीं गया हुआ।—**याम**-(वि०) जो वस्तु रात की रखी या बासी न हो, ताजी, टटकी।

अयाथार्थिक—(वि०)[स्त्री०—**अयाथार्थिकी**] -[यथार्थ+ठञ्—इक न० त०] असत्य, झूठा। अनुचित, ठीक नहीं। असली नहीं। असङ्गत। असंलग्न। युक्तिविरुद्ध।

अयाथार्थ्य—(न०) [यथार्थ+ष्यञ् न० त०] यथार्थता का अभाव। अवास्तविकता। असंगति।

अयान—(न०) [न० त०] न चलना, ठहरना। स्वभाव। [न० ब०]बिना सवारी का। पैदल।

अयानय—(न०) [अयश्च अनयश्च तयोः समाहारः] अच्छा और बुरा भाग्य।

अयि—(अव्य०) [√इण्+इन्] (किसी से प्यार से बोलते समय सम्बोधन करने का शब्द।) अरे, हो, ए, अरी; 'अयि सम्प्रति देहि दर्शनम्' कु० ४.२८।

अयुक्त—(वि०) [न० ब०] जो गाड़ी के जुए में जुता न हो या जिस पर जीन न कसी हो। जो मिला न हो, जुड़ा न हो। अभक्तिमान्। अधार्मिक। अमनस्क, असावधान। अनभ्यस्त। जो किसी काम में न लगा हो। अयोग्य। अनुपयुक्त। झूठा, असत्य। अविवाहित। आपद्ग्रस्त।

अयुग,—अयुगल-(वि०) [न० त०]अलग। अकेला। विषम।—**अर्चिस्** (**अयुगार्चिस्**) (**अयुगलार्चिस्**)-(पु०) अग्नि।—**नेत्र**—**नयन**-(पु०) शिव का नाम।—**शर**-(पु०) कामदेव का नाम।—**सप्ति**-(पु०) सात घोड़ों वाला, सूर्य।

अयुज्—(वि०) [न० त०] न मिला हुआ। विषम।—**इषु** (**अयुगिषु**), —**बाण** (**अयुग्बाण**),—**शर** (**अयुक्शर**)-(पु०) कामदेव का नाम। (कामदेव के पास ५ बाण बतलाये जाते हैं)—**अक्ष** (**अयुगक्ष**),—**नेत्र** (**अयुङ्नेत्र**),—**लोचन** (**अयुग्लोचन**),—**शक्ति** (**अयुक्शक्ति**)-(पु०) शिव का नाम।

अयुत—(वि०) [न० त०] जो मिला न हो, असंयुक्त, असंबद्ध । (न०) दस हजार की संख्या ।—**अध्यापक**) (**अयुताध्यापक**)-(पु०) एक अच्छा शिक्षक ।—**सिद्धि** -(स्त्री०) कोई-कोई वस्तुएँ या विचार अभिन्न हैं—इस बात को प्रमाणित करने की क्रिया ।

अये—(अव्य०) [√इण्+एच्] (यह क्रोध, आश्चर्य, विषाद द्योतक सम्बोधन वाची अव्यय है ।); 'अये देवपादपद्मोपजीविनोऽवस्थेयम्' मु० २ । (दे०) 'अयि' ।

अयोग—(पु०) [न० त०] अलगाव । अन्तराल, अवकाश । अयोग्यता । असंलग्नता । अनुचित मेल । विधुर, रँडुआ । हथौड़ा । अरुचि । नापसंदगी ।

अयोगव—(पु०) [स्त्री०—**अयोगवा, अयोगवी**] [अय इव कठिना गौर्वाणी यस्य ब० स० नि० अच्] शूद्र पिता और वैश्या माता से उत्पन्न वर्णसंकर संतान ।

अयोग्य—(वि०) [न० त०] जो योग्य न हो । अनुपयुक्त । बेकार । निकम्मा । अपात्र ।

अयोघन—(पु०) [अयांसि हन्यन्ते अनेन इति विग्रहे अयस्√हन्+अप् घनादेशश्च नि०] हथौड़ा ।

अयोध्य—(वि०) [√युध्+ण्यत् न० त०] जो युद्ध या आक्रमण करने योग्य न हो । अतिप्रबल; 'अचायोध्या महाबाहो अयोध्या प्रतिभाति नः' वा० ।

अयोध्या—(स्त्री०) [अयोध्य+टाप्] सूर्यवंशी राजाओं की राजधानी जो सरयू के तट पर बसी हुई है, साकेत ।

अयोनि—(वि०) [न० ब०] अजन्मा । नित्य । मौलिक । कोख से उत्पन्न नहीं । अवैध रूप से उत्पन्न । (पु०) ब्रह्मा । शिव । [न० त०] योनि नहीं ।—**ज,—जन्मन्**-(वि०) जो गर्भ से उत्पन्न न हुआ ।—**जा,—सम्भवा**-(स्त्री०) जनकदुहिता सीता ।

अयौगपद्य—(न०) [न० त०] समकालीनता का अभाव ।

अयौगिक–; (वि०) [स्त्री०—**अयौगिकी**] [न० त०] शब्दसाधनविधि से जिसकी उत्पत्ति न हो, रूढ़ । जिसका योग से सम्बन्ध न हो ।

अर—(पु०) [√ऋ+अच्] पहिये की नाभि और नेमि के बीच की लकड़ी, आरा । कोण । सिवार । चक्रवाक पक्षी । पित्तपापड़ा । (वि०) तेज । थोड़ा ।—**अन्तर** (**अरान्तर**) -(न०) (बहु०) आरों के बीच की खाली जगह ।—**घट्ट,—घट्टक**-(पु०) रहट, कुएँ से पानी निकालने का यंत्र । गहरा कूप ।

अरज, अरजस्, अरजस्क—(वि०) [न० ब०] धूलगर्दा से रहित, साफ । वासना से रहित ।

अरजस्का, अरजा —(स्त्री०) [न० ब०, कप्, टाप्] जिसको मासिक धर्म न हो । रजोधर्म होने के पूर्व की अवस्था की लड़की ।

अरज्जु—(वि०) [न० ब०] जिसमें रस्सी न हो । (न०) कारागृह, जेल ।

अरणि—(स्त्री० पु०)—**अरणी**-(स्त्री०) [ऋ+अनि] [अरणि+ङीप्] छेकुर (गनियार, अँगेथू) की लकड़ी जिसको रगड़ने से अग्नि निकलती है । यज्ञ के लिये आग इसकी लकड़ियों को रगड़ कर ही निकाली जाती थी । (पु०) सूर्य । अग्नि । चकमक पत्थर ।

अरण्य—(न० कभी-कभी पु० भी) [अर्यते शेषे वयसि यत्र इत्यर्थे√ऋ+अन्य] जंगल, वन । कायफल । संन्यासियों का एक भेद । कट्फल नामक वृक्ष ।—**अध्यक्ष** (**अरण्याध्यक्ष**)-(पु०) वन का निगरांकार, वन की देखरेख करने वाला (फारेस्टरेंजर) :—**अयन** (**अरण्यायन**), —**यान**-(न०) वनगमन । तपस्वी बनना ।— **ओकस्** (**अरण्यौकस्**),—**सद्**-(वि०) वनवासी; ; 'अंकलभ्यं ममतावदीदृशमपि स्नेहादरण्यौकसः' श० ४.५ । वानप्रस्थी या संन्यासी । —**चन्द्रिका**-(स्त्री०) (अन्व०) वन में चाँदनी ।(आलं०) वृथा का शृंगार ।—**नृपति**, —**राज्**, —**राज**—(पु०) सिंह ।

—पण्डित–(पुं०) वन का पण्डित। (आल०) मूर्ख मनुष्य।**—श्वन्**– (पुं०) भेड़िया।

अरण्यक—(न०) [अरण्य+कन्] वन, जंगल। एक पौधा।

अरण्यानि, अरण्यानी–(स्त्री०) [अरण्य +ङीष् आनुक् च] [ह्रस्वइकारान्तः प्रयोगः छान्दसः] बड़ा लम्बा-चौड़ा वन।

अरत—(वि०) [न० त०] विरक्त। अनासक्त। सुस्त, काहिल। असन्तुष्ट। विरुद्ध।—**त्रप**–(वि०) जो रमण करने में लजावे नहीं। (पुं०) कुत्ता (जो गली में कुतिया के साथ रमण करने में लज्जित नहीं होता।)

अरति—(वि०) [न० ब०] असन्तुष्ट। सुस्त। अशान्त। (स्त्री०) [न० त०] भोग-विलास का अभाव। कष्ट, पीड़ा। चिन्ता। शोक। विकलता, घबड़ाहट। असन्तोष। सुस्ती, काहिली। उदरव्याधि। क्रोध।

अरत्नि—(पुं० या० स्त्री०) [√ऋ+अत्नि –रत्नि=बद्धमुष्टिकरः स नास्ति यत्र] कुहनी। बाँह। कुहनी से छोटी उँगली के छोर तक की माप।

अरत्निक—(पुं०) [अरत्नि+कन्] (दे०) 'अरत्नि'।

अरम्–(अव्य०) [√अल्+अम्, रत्व] शीघ्रता। अत्यन्त। (दे०) 'अलम्'।

अरमण,—अरममाण–(वि०) [√रम्+णिच्+ल्यु] [√रम्+णिच्+शानच्] आनंद न देने वाला। अप्रसन्नताकारक। प्रतिकूल। नापसंद।

अरर—(न०)—**अररी**–(स्त्री०) [√ऋ+अरन्] [अरर+ङीप्] कपाट, किवाड़। गिलाफ। म्यान। ढक्कन। (पुं०) राँपी (चमार का एक औजार)।

अररे—(अव्य०) [अर√रा+के] अतिशीघ्रता अथवा घृणा व्यञ्जक सम्बोधनवाची अव्यय; 'अररे, महाराजम्प्रति कुतः अविद्या:' उत्त०।

अरविन्द—(न०) [अरान् चक्राङ्गानीव पत्राणि विन्दते इति अर√विद्+श नुम्] रक्तकमल या नीलकमल। (पुं०) सारस। ताँबा।**—अक्ष** (**अरविन्दाक्ष**)–(पुं०) कमलनयन, विष्णु का नाम।**—दलप्रभ**–(न०) ताँबा।**—नाभ,—नाभि**–(पुं०) विष्णु का नाम।**—सद्**(पुं०) ब्रह्मा का नाम।

अरविन्दिनी—(स्त्री०) [अरविन्द+इनि, ङीप्] कमलिनी या कमल-लता। कमल-पुष्पों का समूह। वह स्थान जहाँ कमलों का बाहुल्य हो।

अरस—(वि०) [न० ब०] रसहीन, नीरस, फीका। निस्तेज, मंद। निर्बल, बलहीन। अगुणकारी। (पुं०)[न० त०] रस का अभाव।

अरसिक—(वि०) [न० त०] रूखा, जो रसिक न हो। कविता के मर्म को न जानने वाला।

अराग, अरागिन्–(वि०) [न० ब०] [√रञ्ज्+घिनुण् न० त०] अनासक्त। उदासीन। स्थिर। पक्षपातशून्य।

अराजक—(वि०) [न० ब०] राजारहित, जहाँ राजा न हो।

अराजन्—(पुं०) [न० त०] राजा नहीं।—**पत्रित**–(वि०) (अधिकारी, कर्मचारी) जिसका नाम या जिसकी पदवृद्धि, स्थानांतरण, छुट्टी पर जाने आदि के सम्बन्ध में कोई सूचना सरकारी समाचार-पत्र में न छपती हो।(नॉन-गजेटेड)।**—भोगीन**–(वि०) राजा के काम लायक नहीं।**—स्थापित**–(वि०) जो राजा द्वारा प्रतिष्ठित न हो; आईन विरुद्ध।

अराति—(पुं०) [न राति ददाति सुखम् इत्यर्थे √रा+क्तिन् न० त०] शत्रु, वैरी। छः की संख्या। कुंडली में छठा स्थान। कामक्रोधादि षड्रिपु।**—भङ्ग**–(पुं०) शत्रुओं का नाश।

अराल—[√ऋ+क्विप् =अर्, अरम् आलाति इति अर्—आ √ला+क] (पुं०)

राल । मतवाला हाथी । बक हस्त । एक समुद्र । (वि०) टेढ़ा, मुड़ा हुआ ।—**केशी**-(स्त्री०) वह स्त्री जिसके घुँघराले बाल हों ।—**पक्ष्मन्**-(वि०) टेढ़ी-मेढ़ी बरौनियों वाला ।

अराला—(स्त्री०) [अराल+टाप्] वेश्या, रंडी ।

अरि—(पुं०) [√ऋ+इन्] शत्रु, वैरी । मनुष्य जाति के छः शत्रु=काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि जो मनुष्य के मन को व्याकुल किया करते हैं ।—'कामः क्रोधस्तथा लोभो मदमोहौ च मत्सरः ।' छः की संख्या । गाड़ी का कोई भाग । पहिया । जन्मकुंडली में लग्न से छठा स्थान । वायु । एक तरह का खदिर । स्वामी । धार्मिक व्यक्ति ।—**कर्षण**-(वि०) शत्रुजयी या शत्रु को अपने वश में करने वाला ।—**कुल**-(न०) बहुत से शत्रु, शत्रु-समुदाय । शत्रु ।—**घ्न**-(वि०) शत्रु का नाश करने वाला ।—**चिन्तन**-(न०),—**चिन्ता**-(स्त्री०) शत्रु के नाश का उपाय सोचना । वैदेशिक शासन विभाग ।—**नन्दन**-(वि०) शत्रु को प्रसन्नता या विजय दिलाने वाला ।—**निपात**-(पुं०) शत्रु का आक्रमण ।—**नुत**-(वि०) जिसकी शत्रु भी प्रशंसा करे ।—**प्रकृति**-(स्त्री०) युद्धसंलग्न राजा के शत्रुओं की स्थिति ।—**भद्र**-(पुं०) सबसे बड़ा या मुख्य शत्रु ।—**षडष्टक**-(न०) विवाह में वर्जनीय योग—वर और कन्या की अपनी-अपनी राशि से छठा और आठवाँ घर यदि शत्रु हो तो अशुभ है ।—**षड्वर्ग**-(पुं०) काम, क्रोध आदि छः शत्रु ।—**सूदन**,—**हन्**,—**हिंसक**-(पुं०) शत्रुहन्ता, शत्रु को मारने वाला ।

अरिक्थभाज्, अरिक्थीय—(वि०) [रिक्थ √भज्+ण्वि न० त०] [रिक्थ+छ—ईय न० त०] ऐसा व्यक्ति जो पैतृक सम्पत्ति पाने का अधिकारी न हो (हिजड़ा आदि होने के कारण) ।

अरित्र—(न०) [ऋच्छति अनेन इति √ऋ+इत्र] नाव का डाँड़ । वाहन ।

अरिन्दम—(वि०) [अरि√दम्+खच्, मुमागम] शत्रु को वश में करने वाला, विजयी ।

अरिष—(न०) [√रिष्+क न० त०] मूसलधार जल की वर्षा । [न० इयर्ति मलं यस्मात् इति √ऋ+किषन् न० त०] बवासीर, गुदा का रोग विशेष ।

अरिष्ट—(वि०) [√रिष् क्त न० त०] निरापद । अशुभ । (पुं०) गीध । कौवा । शत्रु । रीठा का वृक्ष । लहसुन । (न०) बुरी प्रारब्ध । बदकिस्मती । अनिष्टसूचक उत्पात । बुरे लक्षण या बुरे शकुन जो मौत आने के सूचक माने गये हैं । मरणकारक योग । सौभाग्य । हर्ष । सौरी, सूतिकागृह । मीठा । शराब ।—**गृह**-(न०) सौरी, सूतिकागृह ।—**मथन**-(पुं०) विष्णु या शिव का नाम ।—**शय्या**-(स्त्री०) पड़ा हुआ पलंग ।—**सूदन**,—**हन्**-(पुं०) अरिष्ट नामक दैत्य के मारने वाले विष्णु । (वि०) अशुभनाशक ।

अरिष्टताति—(पुं०) [अरिष्ट+तातिल्] शुभ बताना । (वि०) शुभ करने वाला ।

अरुचि—(स्त्री०) [न० ब०] अनिच्छा । घृणा, नफरत । सन्तोषजनक समाधान का अभाव । [न० त०] अग्निमान्द्य रोग ।

अरुचिर, अरुच्य—(वि०) [न० त०] जो मनोहर न हो । अशुभ, अमङ्गलक ।

अरुज्—(वि०) [√रुज्+क्विप् न० त०] रोगरहित । नीरोग ।

अरुज—(वि०) [√रुज्+क न० त०] दे० 'अरुज्' ।

अरुण—(पुं०) [स्त्री०—**अरुणा, अरुणी**] [√ऋ+उनन्] लाल रंग । उगते हुए सूर्य का रंग । सांध्य लालिमा । सूर्य । सूर्य का सारथि । माघ महीने का सूर्य । गुड़ । एक तरह का कुष्ठ रोग । एक छोटा विषैला जंतु । एक दैत्य । पुन्नाग वृक्ष । (न०) लाल रंग । सोना । केसर । सिंदूर । (स्त्री०) मजीठ ।

(वि०) [अरुण+अच्] लाल, रक्त । व्याकुल, घबड़ाया हुआ । गूंगा, मूक ।—अनुज (अरुणानुज),—अवरज (अरुणावरज)–(पुं०) अरुण देव के छोटे भाई गरुड़ का नाम ।—अर्चिस् (अरुणार्चिस्) –(पुं०) सूर्य ।—आत्मज (अरुणात्मज)–(पुं०) अरुण पुत्र—जटायु, शनि, सावर्णि मनु, कर्ण, सुग्रीव, यम और दोनों अश्विनीकुमारों के नाम ।—आत्मजा (अरुणात्मजा)—(स्त्री०) यमुना और तापती नदियों का नाम ।—ईक्षण (अरुणेक्षण)–(वि०) लाल नेत्र वाला ।—उदय (अरुणोदय)–(पुं०) भोर, प्रातःकाल ।—उपल (अरुणोपल)– (पुं०) लाल नामक रत्न, चुन्नी रत्न ।—कमल–(न०) लाल रंग का कमल ।—ज्योतिस्–(पुं०) शिव का नाम ।—प्रिय–(पुं०) सूर्य का नाम ।—प्रिया–(स्त्री०) सूर्य की पत्नी–। छाया । संज्ञा ।—लोचन–(पुं०) कबूतर, परेवा ।—सारथि–(पुं०) सूर्य ।

अरुणित, अरुणीकृत—(वि०) [अरुण+क्विप् (ना० धा०) +क्त] [अरुण+च्वि, ततः√कृ+क्त, ईत्व] लाल रंग का, लाल रंगा हुआ 'स्तनाङ्गरागारुणिताच्च कन्दुकात्' कु० ५.११ ।

अरुन्तुद—(वि०) [अरूंषि मर्माणि तुदति इति अरुस्√तुद्+खश् मुम् च] मर्म स्थलों को छेदने वाला । मर्मपीडक । लगने वाला । दाहकारक । उग्र प्रकृति वाला, तीक्ष्ण स्वभाव युक्त ।

अरुन्धती—(स्त्री०) [अव्युत्पन्न शब्द] वशिष्ठ की पत्नी का नाम । इस नाम का एक तारा, सप्तर्षि मण्डल में सबसे छोटा आठवाँ एक तारा, जो वशिष्ठ के समीप रहता है । अरुन्धती तारा के नाम से प्रसिद्ध है । यह तारा उन लोगों को नहीं दिखलाई पड़ता जिनकी मृत्यु अतिनिकट होती है ।—जानि, नाथ,—पति–(पुं०) वशिष्ठ का नाम ।

अरुष्, अरुष्ट—(वि०) [√रुष+क्विप् न० त०] [√रुष्+क्त न० त०] रूठा हुआ नहीं, शान्त ।

अरुष—(वि०) [√रुष्+क्विप् न० त०] क्रुद्ध नहीं, रूठा हुआ नहीं । चमकदार, चमकीला ।

अरुस्—[√ऋ+उसि] अकौआ, मदार । रक्त खदिर, लाल कत्था । (न०) मर्मस्थल । घाव । कष्ट ।—कर–(वि०) घायल या चोटिल करने वाला ।

अरूप—(वि०) [न० ब०] रूपरहित, आकार-शून्य । बदशक्ल, कुरूप । असमान, असदृश । (न०) सांख्यदर्शन का प्रधान और वेदान्त-दर्शन का ब्रह्म । [न० त०] भद्दी शक्ल ।—हार्य–(वि०) जो सौन्दर्य से आकर्षित या वश में न किया जा सके; 'अरूपहार्यम्मदनस्य निग्रहात्' कु० ५.५३ ।

अरूपक—(वि०) [न० ब०] बिना रूपक का, यथार्थ, अविकल । (पुं०) बौद्ध दर्शनानुसार योगियों की एक भूमि अथवा अवस्था, निर्बीजसमाधि ।

अरे—(अव्य०) [√ऋ+ए] एक सम्बोधनार्थक अव्यय, ए, ओ । जब कोई बड़ा किसी छोटे को सम्बोधन करता है, तब इसको प्रयोग किया जाता है । क्रोधावेश में "अरे" कहा जाता है । "अरे महाराजं प्रति कुतः क्षत्रियाः ।" उत्तररामचरित । यह अव्यय ईर्ष्याबोधक भी है ।

अरेपस्—(वि०) [नास्ति रेपः=पापं यस्य न० ब०] निष्पाप, निष्कलङ्क । स्वच्छ, निर्मल, पवित्र ।

अरेऽरे—(अव्य०) [अरे-अरे इति वीप्सायां द्वित्वम्] एक सम्बोधनार्थक अव्यय । इसका प्रयोग क्रोध की दशा में या किसी का तिरस्कार करने के लिये किया जाता है; 'अरेऽरे दुर्योधनप्रमुखाः कुरुबलसेनाप्रभवः', वे० ३ ।

अरोक—(वि०) [√रुच्+घञ् नि० कुत्व] धुंधला, बेचमक ।

अरोग—(वि०) [न० ब०] नीरोग, स्वस्थ, तंदुरुस्त । (पुं०) [न० त०] रोग का अभाव ।

अरोगिन्, अरोग्य—(वि०) [अरोग+इनि] [रोग+यत् न० त०] तंदुरुस्त, भला, चंगा।

अरोचक—(वि०) [स्त्री०—**अरोचिका**] [न० त०] जो चमकदार या चमकीला न हो। भूख मंद करने वाला। अरुचि पैदा करने वाला। (पु०) एक रोग जिसमें अन्न आदि का स्वाद मुँह में नहीं मिलता।

√**अर्क्**—चु० उभ० सक० गर्म करना। स्तुति करना। अर्कयति-ते अर्कयिष्यति-ते, आर्चिकत्-त।

अर्क—(पु०) [√अर्च्+घञ् कुत्व] प्रकाश की किरण। बिजली की चमक या कौंध। सूर्य। अग्नि। स्फटिक। ताँबा। रविवार। अर्कवृक्ष, मदार, अकौआ। इन्द्र का नाम। बारह की संख्या।—**अश्मन्** (**अर्काश्मन्**)—**उपल** (**अर्कोपल**) (पु०) सूर्यकान्त मणि।—**इन्दु-सङ्गम** (**अर्केन्दुसङ्गम**)।—(पु०) दर्श, अमावस्या। वह समय जब चन्द्र और सूर्य मिलते हैं।—**कान्ता**, (स्त्री०) सूर्यपत्नी।—**चन्दन** (न०) लाल चंदन।—**ज** (पु०) कर्ण, सुग्रीव और यम की उपाधि।—**जौ** देवताओं के चिकित्सक अश्विनीकुमार।—**तनय**-(पु०) सूर्यपुत्र—कर्ण, यम और शनि की उपाधि।—**तनया**-(स्त्री०) यमुना और तापती नदियों के नाम।—**त्विष्**-(स्त्री०) सूर्य का प्रकाश।—**दिन**-(न०), **वासर**-(पु०) रविवार।—**नन्दन**,—**पुत्र**,—**सुत**,—**सूनु**-(पु०) शनि, कर्ण तथा यम के नाम।—**बन्धु**,—**बान्धव**- (पु०) कमल।—**मण्डल**-(न०) सूर्य का घेरा।—**विवाह**-(पु०) मदार के पेड़ के साथ विवाह। [तीसरा विवाह करने के पूर्व लोग अर्क के पेड़ से विवाह करते हैं। यथा:—चतुर्थादि विवाहार्थं तृतीयेऽर्कं समुद्वहेत्। काश्यप।]—**व्रत**-(न०) सूर्य का एक व्रत। (यह माघ, शुक्ला सप्तमी को किया जाता है)। राजा का प्रजा से कर लेने में सूर्य के नियम का अनुसरण करना (सूर्य = महीने अपनी किरणों से पानी सोखता और बरसात में उसे कई गुना करके बरसा देता है, अर्थात् लोक की वृद्धि के लिये ही रस ग्रहण करता है)।

अर्गल (पु०) (न०) **अर्गला, अर्गली** (स्त्री०)—[√अर्ज्+कलच्] ब्योंड़ा, अगड़ी, किल्ली, सिटकिनी ये किवाड़ बंद करने के काठ के यंत्र हैं। लहर, तरंग। (स्त्री०) दुर्गा-पाठ के अन्तर्गत एक स्तोत्र।

अर्गलिका—(स्त्री०) [अल्पा अर्गला इत्यर्थे अर्गला+कन्, टाप्, इत्व] छोटा ब्योंड़ा जो किवाड़ों को बंद करने के लिये उनमें अटकाया जाता है, चटखनी।

√**अर्घ्**—भ्वा० पर० अक० दाम या मोल के योग्य होना। अर्घति, अर्घिष्यति, आर्घीत्। परीक्षका यत्र न सन्ति देशे, नार्घन्ति रत्नानि समुद्रजानि। सुभाषित।

अर्घ—(पु०) मूल्य, दाम। षोडशोपचारपूजन में से एक उपचार, इस उपचार में जल, दूध, कुशाग्र, दही, सरसों, चावल और यव मिला कर देवता को अर्पण करते हैं; 'कुटजकुसुमैः कल्पितार्घाय तस्मै' मे० ४ जलदान। हाथ धोने के लिये दिया गया जल। २५ मोतियों का समूह जिसका वजन एक धरण हो। अश्व। मधु।—**अर्ह** (**अर्घार्ह**)- (वि०) सम्मानसूचक भेंट करने योग्य।—**ईश** (**अर्घेश**)-(पु०) शिव का नाम।—**बला-बल**-(न०) उचित मूल्य। मूल्य में तारतम्य या उतार-चढ़ाव या मूल्य का कमबेशी होना।—**संख्यान**,—**संस्थापन**-(न०) दाम कूतने की क्रिया, कीमत लगाना। व्यापारिक वस्तुओं का मूल्य निर्धारित करना।

अर्घ्य—(वि०) [अर्घ+यत्] कीमती, मूल्य-वान्। [√अर्घ्+यत्] पूज्य। (न०) किसी देवता या प्रतिष्ठित व्यक्ति को सम्मान प्रदर्शक भेंट।

√**अर्च्**—भ्वा० उभ० सक० पूजा करना। शृङ्गार करना। प्रणाम करना। सम्मान पूर्वक स्वागत करना। (वैदिक साहित्य में) स्तुति

करना । अर्चति-ते अर्चिष्यति-ते आर्चीत्-आर्चिष्ट ।

अर्चक—(वि०) [√अर्च्+ण्वुल्] पूजा करने वाला । शृङ्गार करने वाला, सजाने वाला । (पु०) पुजारी ।

अर्चन—(न०) [√अर्च् +ल्युट्] पूजा, वंदना । आदर, सत्कार ।

अर्चनीय, अर्च्य—[√अर्च्+अनीयर्] [√अर्च्+ण्यत्] पूजनीय । मान्य ।

अर्चा—(स्त्री०) [√अर्च्+अ,टाप्] पूजा। शृङ्गार । पूजन करने की मूर्ति या प्रतिमा ।

अर्चि—(स्त्री०) [√अर्च्+इन्] किरण। चमक ।

अर्चिष्मत्—(पु०) [अर्चिस्+मतुप्] सूर्य । अग्नि । एक उपदेव । विष्णु । (वि०)चमक वाला । लपट वाला ।

अर्चिस्—(न०) [√अर्च्+इस्] आग का शोला या अंगारा । दीप्ति, आभा । किरण। (पु०) अग्नि ।

√अर्ज्—भ्वा० पर० सक० उपार्जन करना, कमाना । अर्जति, अर्जिष्यति, आर्जीत् ।

अर्जक—(न०)[स्त्री०—**अर्जिका**] [√अर्ज्+ण्वुल्] प्राप्त करने वाला, उपार्जन करने वाला । (पु०) बाबुई वृक्ष, जिसके सूतों से रस्सी बटी जाती है ।

अर्जन— (न०) [√अर्ज्+ल्युट्] प्राप्त करना, उपलब्धि, प्राप्ति; 'अर्थानामर्जने दुःखम्' पं० ।

अर्जुन—(वि०) [स्त्री०—**अर्जुना, अर्जुनी**] [अर्ज्+उनन्=अर्जुनः सः अस्ति अस्येत्यर्थे अच्] सफेद, स्वच्छ । चमकीला, दिन के प्रकाश की तरह । यथा—'पिशंगमौञ्जीयुजमर्जुनच्छविं ।)—शिशुपालवध । रुपहला । (पु०) सफेद रंग । मोर, मयूर । वृक्ष विशेष जिसकी छाल बड़ी गुणदायक है । महाराज युधिष्ठिर के छोटे भाई, इनका वृत्तान्त महाभारत में विस्तार से लिखा हुआ है । कार्तवीर्य राजा का नाम, जिसको परशुराम ने मारा था। इकलौता पुत्र । इंद्र । आँख का एक रोग । (न०) सोना । चाँदी । दूब ।—**उपम (अर्जुनोपम)**-(पु०) साखू का वृक्ष ।—**ध्वज**-(पु०) सफेद ध्वजा वाला, हनुमान का नाम ।

अर्जुनी—(स्त्री०) [अर्जुन+ङीप्] कुटनी । गौ । करतोया नदी का दूसरा नाम । अनिरुद्ध की पत्नी, उषा ।

अर्ण—(पु०) [√ऋ+न] अकार आदि वर्ण । साखू का पेड़ । (न०) जल । (वि०) गतिशील ।

अर्णव—(पु०) [अर्णांसि सन्ति अस्मिन् इति विग्रहे अर्णस्+व, सलोप] (फनों से युक्त) समुद्र । अंतरिक्ष । इंद्र । सूर्य । छंद । चार की संख्या । रत्न, मणि ।—**उद्भव (अर्णवोद्भव)** -(पु०) चंद्रमा । अग्निजार नामक पौधा । (न०) अमृत ।—**उद्भवा (अर्णवोद्भवा)**-(स्त्री०) लक्ष्मी ।—**मल**-(न०) समुद्र-फेन ।—**नेमि**-(स्त्री०)पृथ्वी ।—**पोत**-(पु०)**यान** -(न०) जहाज ।—**मन्दिर**-(पु०) वरुण । समुद्रवासी, विष्णु ।

अर्णस्—(न०) [√ऋ+असुन् नुट् च] जल ।—**द (अर्णोद)**-(पु०) बादल ।—**भव (अर्णोभव)**-(पु०) शंख ।

अर्णस्वत्—(पु०) [अर्णस्+मतुप्] समुद्र, सागर । (वि०) जिसमें बहुत जल हो ।

अर्तन—(न०) [√ऋत्+ल्युट्] धिक्कार, फटकार । निंदा ।

अर्ति—(स्त्री०) [√अर्द्+क्तिन्] पीड़ा, दुःख । धनुष का नोंक ।

अर्तिका—(स्त्री०) [√ऋत्+ण्वुल्] (नाट्य-साहित्य में) बड़ी बहिन ।

√अर्थ्—चु० आत्म० द्विक० माँगना, याचना करना । प्रार्थना करना, विनती करना । अभिलाषा करना । अर्थयते, अर्थयिष्यते, आर्तिथत ।

अर्थ—(पु॰) [√अर्थ+अच्] शब्द का अभिप्राय, मानी। मतलब। प्रयोजन। काम। मामला। हेतु, निमित्त। इन्द्रियों के विषय—शब्द, स्पर्श, रस, रूप, गंध। धन; 'अर्थो हि कन्या परकीय एव' श॰ ४.२१। पैसा कमाना जो जीवन के चार पुरुषार्थों में से एक माना गया है। उपयोग। लाभ। दिलचस्पी। स्वार्थ। इच्छा। गरज। प्रार्थना। दावा। वस्तुस्थिति। तरीका। मूल्य। निवारण। फल, परिणाम। धर्मपुत्र का एक नाम। कुंडली में लग्न से दूसरा स्थान। विष्णु। —अधिकार (अर्थाधिकार)–(पु॰) खजानची का ओहदा।—अधिकारिन् (अर्थाधिकारिन्)–(पु॰) खजानची, कोषाध्यक्ष।—अन्तर (अर्थान्तर) (न॰) भिन्न अर्थ या मानी। भिन्न उद्देश्य या हेतु। नया मामला, नयी परिस्थिति।—न्यास–(पु॰) (अर्थान्तर-न्यास) एक काव्यालङ्कार, जिसमें प्रकृत अर्थ की सिद्धि के लिये अन्य अर्थ लाना पड़ता है। अर्थालंकार का एक भेद। (न्याय दर्शन में) निग्रहस्थान।—अन्वित (अर्थान्वित)–(वि॰) धनी, सम्पत्ति वाला। सारगर्भ। महत्त्वपूर्ण।—अर्थिन् (अर्थार्थिन्)–(वि॰) वह जो धन प्राप्त करना चाहे या जो कोई अपना उद्देश्य सिद्ध करना चाहे।—अलङ्कार। (अर्थालङ्कार)–(पु॰) वह अलंकार, जिसमें अर्थ का चमत्कार दिखाया जाय।—आगम (अर्थागम)–(पु॰) आय, आमदनी, धन की प्राप्ति। किसी शब्द के अभिप्राय को सूचित करना।—आपत्ति (अर्थापत्ति)–(स्त्री॰) अर्थालङ्कार जिसमें एक बात के कहने से दूसरी बात की सिद्धि हो। मीमांसाशास्त्रानुसार एक प्रमाण, जिसमें एक बात कहने से दूसरी बात की सिद्धि अपने आप हो जाय।—उत्पत्ति (अर्थोत्पत्ति)–(स्त्री॰) धनोपार्जन, धनप्राप्ति।—उपक्षेपक (अर्थोपक्षेपक)–(पु॰) नाटक का आरम्भिक दृश्य विशेष। यथा—'अर्थोपक्षेपकाः पञ्च।'—साहित्यदर्पण।—उपमा (अर्थोपमा) (स्त्री॰) एक उपमा, जिसका सम्बन्ध शब्दार्थ या शब्द के भाव से रहता है।—उष्मन् (अर्थोष्मन्)–(पु॰) धन की गर्मी।—'अर्थोष्मणा विरहितः पुरुषः स एव।'—भागवत।—ओघ (अर्थौघ)–—राशि (=अर्थराशि)–(पु॰) खजाना या धन का ढेर।—कर; (वि॰) [स्त्री॰ अर्थकरी] जिससे पैसा मिले।—कर्मन्–(न॰) मुख्य कार्य।—काम–(वि॰) धनाकांक्षी। —किल्बिषिन्– (वि॰) रुपये-पैसे के मामले में बेईमानी करने वाला।—कृच्छ्र–(न॰) कठिन विषय। धन सम्बन्धी सङ्कट।—कृत–(वि॰) धनी बनाने वाला। उपयोगी, लाभकारी।—कृत्य–(न॰) धन का लाभ कराने वाला कोई कारबार।—गत–(वि॰) (शब्द के) अर्थ पर आश्रित।—गृह–(न॰) खजाना।—गौरव–(न॰) अर्थ की गम्भीरता। —घ्न–(वि॰) फिजूल खर्च, अपव्ययी।—जात–(वि॰) अर्थ से परिपूर्ण। (न॰) वस्तुओं का संग्रह, धन की बड़ी भारी रकम, बड़ी सम्पत्ति।—तत्त्व–(न॰) यथार्थ सत्य, असली बात। किसी वस्तु का यथार्थ कारण या स्वभाव।—द–(वि॰) धनप्रद। उपयोगी लाभदायी।—दण्ड–(पु॰) जुर्माने की सजा। —दर्शक–(पु॰) धन-सम्पत्ति-संबंधी मुकदमों का विचार करने वाला।—दूषण–(न॰) फ़िजूलखर्ची, अपव्यय। अन्याय पूर्वक किसी की सम्पत्ति छीन लेना या किसी का पावना (रुपया या धन) न देना। (किसी पद या शब्द के) अर्थ में दोष निकालना।—निबंधन–(वि॰) धन पर निर्भर।—पति–(पु॰) धन का अधिष्ठाता, राजा। कुबेर की उपाधि; 'किञ्चिद्विहस्यार्थपतिम् बभाषे' र॰२ २.४६।—पर,—लुब्ध–(वि॰) धन प्राप्ति के लिये तुला हुआ, लालची, लोभी। कृपण, व्ययकुण्ठ।—प्रबन्ध–(पु॰) आय-व्यय की व्यवस्था (फिनान्स)।—प्रयोग–(पु॰) ...

या सूद पर धन देना ।—बुद्धि- (वि०) स्वार्थी ।—लोभ-(पुं०) लालच ।—वाद -(पुं०) किसी उद्देश्य या अभिप्राय की घोषणा । प्रशंसा, स्तुति ।—विकरण-(न०) मतलब बदलना ।—विकल्प-(पुं०) सत्य से डिगने की क्रिया, सत्य बात को बदलने की क्रिया, अपलाप ।—वृद्धि-(स्त्री०) धन को जोड़ना ।—व्यय-(पुं०) खर्च ।—शास्त्र-(न०) सम्पत्ति शास्त्र, धन सम्बन्धी नीति को बताने वाला शास्त्र ।—शौच-(न०) रुपये के देन-लेन के मामले में सफाई या ईमानदारी ।—सम्बन्ध-(पुं०) किसी शब्द से उसके अर्थ का सम्बन्ध ।—सार-(पुं०) बहुत सा धन ।—सिद्धि-(स्त्री०) सफलता, मनोरथ का पूरा होना ।—हर-(वि०) उत्तराधिकार में धन प्राप्त करने वाला ।—हीन-(वि०) निर्धन । असफल ।

अर्थतः—(अव्य०) [अर्थ+तस्] अर्थ गौरव । दरहकीकत, सचमुच, यथार्थतः । धन प्राप्ति लाभ या फायदे के लिये । इस कारण से ।

अर्थना—(स्त्री०) [√अर्थ+युच्] प्रार्थना, विनय । दावा ।

अर्थवत्—(वि०) [अर्थ+मतुप्] धनी । गूढार्थ-प्रकाशक । जिसका अर्थ हो । किसी प्रयोजन का । सफल । उपयोगी ।

अर्थवत्ता—(स्त्री०) [अर्थवत्+तल्, टाप्] धन-सम्पत्ति, धन-दौलत ।

अर्थात्-(अव्य०) या, अथवा ।

अर्थिक—(पुं०) [अर्थयते इत्यर्थी याचकः कुत्सितार्थे कन्] चौकीदार । वैतालिक भाट । भिक्षुक, भिखारी, मंगता ।

अर्थित—(वि०) [√अर्थ+क्त (कर्मणि)] प्रार्थना किया हुआ, अभिलषित । (न०) [√अर्थ+क्त (भावे)] अभिलाषा, इच्छा । प्रार्थना ।

अर्थिता—(स्त्री०) **अर्थित्व**-(न०) [अर्थिन् +तल्, टाप्] [अर्थिन्+त्वल्] याचन, प्रार्थना । इच्छा, अभिलाषा ।

अर्थिन्—(वि०) [अर्थ+इनि (अस्त्यर्थे)] याचक, भिक्षुक, मंगता । सेवक । धनी । वादी । अभिलाषी, मनोरथ रखने वाला ।

अर्थ्य—(वि०) [√अर्थ+ण्यत् वा अर्थ+यत्] माँगने योग्य, प्रार्थनीय । योग्य, उचित । गूढार्थ प्रकाशक: "स्तुत्यं स्तुतिभिरर्थ्याभिरुपतस्थे सरस्वती" र० ४.६। धनी, धनवान् । पण्डित, बुद्धिमान् । (न०) लाल खड़िया, गेरू । शिलाजीत ।

अर्द्—भ्वा० पर० सक० जाना । माँगना । अर्दति, अर्दिष्यति, आर्दीत् । चु० उभ० सक० मारना, वध करना । अर्दयति-अर्दति-अर्दते, अर्दयिष्यति-अर्दिष्यति-ते, आर्दिदत्-आर्दीत्-आर्दिष्ट ।

अर्दन—(न०) [√अर्द्+ल्युट्] पीड़न । वध । याचना । जाना । (वि०) √अर्द+ल्यु] पीड़ा देने वाला । नष्ट करने वाला । बेचैनी से घूमने या चलने वाला ।

अर्दना—(स्त्री०) [√अर्द्+युच्] पीड़ा। वध ।

अर्ध,—अर्द्ध- (वि०) [√ ऋध् (बढ़ना)+घञ्] पूरे के दो बराबर भागों में से एक, आधा । जिसमें कुछ अंश अपना और कुछ दूसरों का हो, 'पूरा' का उलटा ।(पुं०) खंड, टुकड़ा । (न०) समानांश, एक जैसा भाग ।।—अंशिन् (अर्धांशिन्)-वि०) आधे का भागीदार ।—अर्ध (अर्धार्ध)- (पुं०, न०) आधे का आधा, चौथाई ।—अवभेदक (अर्धावभेदक)-(पुं०) आधे सिर की पीड़ा, आधासीसी ।—गङ्गा-(स्त्री०) कावेरी नदी का नाम । (कावेरी के स्नान करने से गङ्गा-स्नान का आधा फल प्राप्त हो जाता है) ।—उदय (अर्धोदय)-पुं०) एक पर्व जिसमें स्नान सूर्य-ग्रहण-स्नान का पुण्य देने वाला माना जाता है। (यह माघ की अमावस्या को श्रवण नक्षत्र और व्यतीपात योग पड़ने से होता है) ।— उरुक (अर्धोरुक)- (न०)

स्त्रियों के पहनने का एक अन्तर्वस्त्र, साया।—चन्द्र–(पु०) चन्द्रार्ध। अष्टमी का चन्द्रमा। आधे चन्द्रमा के आकार का नख का घाव। गरदनिया, गलहस्त। सानुनासिक चिह्न विशेष (ँ)। मोर के पंखों पर की चन्द्रिका। चन्द्राकार बाण।—चोलक–(पु०) अँगिया, बांह-कटी।—नारीश,—नारीश्वर–(पु०) महादेव का नाम, शिव पार्वती की मूर्ति विशेष, हरगौरी रूप शिव।—पञ्चाशत् (स्त्री०) २५ पचीस।—भाग–(पु०) आधा हिस्सा पाने का अधिकारी, साथी, साझीदार।—मागधी–(स्त्री०) प्राकृत का वह रूप जो पटना और मथुरा के बीच बोला जाता था।—माणव,—माणवक–(पु०) १२ लड़ियों का हार।—मात्रा–(स्त्री०) आधी मात्रा। व्यंजन वर्ण।—रथ–(पु०) किसी के साथ होकर लड़ने वाला रथारोही।—वैनाशिक–(पु०) कणाद के अनुयायी।—वैशस–(पु०) आधा वध, अधूरा वध (जैसे पति के नाश में पत्नी का भी आधा नाश हो जाता है)।—सीरिन्–(पु०) बटाईदार, परिश्रम के बदले आधी फसल लेने वाला कृषक।—हार—(पु०) ६४ (या ४०) लड़ियों का हार।

अर्धक—(वि०) [अर्ध+कन्] आधा।

अर्धिक—(वि०) [स्त्री०—**अर्धिकी**] [अर्धम् अर्हति इति विग्रहे अर्ध+ठन्] आधा नापने वाला। जो आधा हिस्सा पाने का हकदार हो। (पु०) वर्णसङ्कर, जिसकी परिभाषा पाराशर स्मृति में इस प्रकार है :—वैश्यकन्यासमुत्पन्नो ब्राह्मणेन तु संस्कृतः। अर्धिकः स तु विज्ञेयो भोज्यो विप्रैर्न संशयः॥

अर्धिन्—(वि०) [अर्ध+इनि] आधे हिस्से का हकदार।

अर्पण—(न०) [√ऋ+णिच्+ल्युट् पुक्, च] भेंट, नजर। त्याग। यथा—'स्वदेहार्पणनिष्क्रयेण।'—रघुवंश। वापिसी। छेदना।—'तीक्ष्णतुण्डार्पणैर्यथा'।

अर्पिस—(पु०) [√ऋ+णिच्+इसन् पुक् च] हृदय। हृदय का मांस।

अर्व्,-र्वं—भ्वा० पर० सक० एक ओर जाना। हनन करना, वध करना। अर्व (र्वं) ति, अर्वि (र्वि) ष्यति। आर्वी (र्वी) त्।

अर्वुद,-अर्बुद—(पु० न०) [√ अर्व् (र्वं) +क्विप्– उद् √इण्+ड] सूजन, गुमड़ा। दस करोड़ की संख्या। आबू पहाड़ का नाम। सर्प। बादल। एक दैत्य जिसे इन्द्र ने मारा था। मांस का ढेर।

अर्भ—(पु०) [√ऋ+भ] (दे०) 'अर्भक'।

अर्भक—(वि०) [अर्भ एव इत्यर्थे अर्भ+कन्] छोटा, सूक्ष्म, निर्बल, दुबला। मूढ़, मूर्ख। सदृश। बच्चों जैसा। (पु०) बच्चा। छौना। कुत्ता। मूर्ख आदमी।

अर्म—(पु०, न०) [√ऋ+मन्] आँख का एक रोग। गंतव्य देश। पुराना या आधा उजड़ा हुआ गाँव।

अर्य—(वि०) [√ऋ+यत्] सर्वोत्तम, सर्वश्रेष्ठ। प्रतिष्ठित। कुलीन। सच्चा। प्रियदयालु। (पु०) स्वामी। वैश्य।—वर्य–(पु०) प्रतिष्ठित वैश्य।

अर्या—(स्त्री०) [√ऋ+यत् टाप्] मालकिन। वैश्य, जाति की स्त्री।

अर्यमन्—(पु०) [अर्यं श्रेष्ठं मिमीते इति √मा+कनिन्] सूर्य। पितरों के मुखिया; 'पितृणामर्यमा चास्मि' भग० १.४६। मदार, आक, अकौआ। द्वादश आदित्यों में से एक। उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र का स्वामी देवता। परम प्रियमित्र, साथ खेलने वाला।

अर्यम्य—(पु०) [अर्यमन्+यत् (स्वार्थे)] सूर्य। प्राणोपम मित्र।

अर्याणी—(स्त्री०) [अर्य+ङीप्, आनुक्] वैश्य जाति की स्त्री, वैश्या, बनैनी। स्वामिनी।

√अर्व्—भ्वा० परा० सक० हिंसा करना। अर्वति, अर्विष्यति, आर्वीत्।

अर्वन्—(पु०) [√ऋ +वनिप्] घोड़ा। चन्द्रमा के १० घोड़ों में से एक। इन्द्र। माप विशेष जो गाय के कान के बराबर का होता है। —ती-(स्त्री०) घोड़ी। कुटनी। विद्याधरी।

अर्वाच्—(वि०) [अवरे काले देशे वाअञ्चति इति√अञ्च+क्विन् पृषो० अर्वादेश] इस ओर आते हुए। (किसी) ओर घूमा हुआ। इस ओर का। (समय या स्थान में) नीचे या पीछे का।—(अव्य०) इस ओर, इस तरफ। किसी बिन्दु विशेष से, किसी स्थान विशेष से। नीचे की ओर। पश्चात्, पीछे से। बीच में। समीप।—**कालिक**-(वि०) हाल का। आधुनिक।—**शत**-(वि०) सौ से नीचे का। —**स्रोतस्**-(वि०) व्यभिचारी, लम्पट।

अर्वाचीन-(वि०) [अर्वाक् काले भवः इत्यर्थे अर्वाच्+ख—ईन] जो पीछे उत्पन्न हुआ हो। इधर का। हाल का। आधुनिक। नया। कृपादृष्टि रखने वाला। उलटा।

अर्बुक—(पु०) [√अर्ब्+उकञ्] महाभारत कालीन एक जाति, जो दक्षिण में रहती थी और जिसे सहदेव ने जीता था।

अर्शस्—(न०) [√ऋ+असुन् शुक् च] बवासीर रोग।—**घ्न (अर्शोघ्न)**-(वि०) बवासीर रोग नाशक।

अर्शस—(वि०) [अर्शस्+अच् (अस्त्यर्थे)] बवासीर रोग से पीड़ित।

√अर्ह्—(भ्वा० पर० सक०) पूजा करना। अक० (किसी के) योग्य होना। अर्हति, अर्हिष्यति, आर्हीत्। (आत्म०) आर्ष प्रयोग। यथा—'रावणो नार्हते पूजां'—रामायण।

अर्ह—(वि०) [√अर्ह्+अच् (कर्मणि)] पूजनीय। मान्य। योग्य; 'तस्मान्नार्हा वयं हन्तुं धार्तराष्ट्रान् स्वबान्धवान्' भग० १.३७। उपयुक्त। मूल्यवान्। (पु०) इन्द्र। विष्णु।

अर्हण—(न०)—**अर्हणा**-(स्त्री०) [√ अर्ह्+ल्युट्] [√अर्ह्+युच्] पूजन। उपासना। सम्मान, प्रतिष्ठापूर्ण व्यवहार।

अर्हत्—(वि०) [√अर्ह्+शतृ] उपयुक्त। योग्य। आराधनीय, उपास्य। (पु०) बुद्ध। जैनियों के पूज्य देवता, तीर्थंकर।

अर्हन्त—(पु०) [√अर्ह्+झ (बा०), अन्त] जैन देवता। बौद्धभिक्षुक।

अर्ह्य—[√अर्ह् +ण्यत्] पूजनीय। माननीय। स्तुति योग्य। योग्य। अधिकारी।

√अल्—(भ्वा० पर० सक०) सजाना। रोकना, बचाना। (अक०) योग्य होना। अलति, अलिष्यति, आलीत्।

अलक—(पु०) [अल्+क्वुन्] घुँघराले बाल। जुल्फें। शरीर पर केसर का उबटन। उन्मत्त कुत्ता। (न०) व्यर्थ, निरर्थक।

अलका—(स्त्री०) [अलक+टाप्] ८ और १० बरस के भीतर की उम्र वाली लड़की। कुबेर की राजधानी का नाम।

अलक्त, अलक्तक-(पु०) [न रक्तो यस्मात् ब० स० रस्य लत्वम्] [अलक्त+कन्] कतिपय वृक्षों की लाल छाल या बकला। लालारस, लाख का रंग, महावर (जो स्त्रियाँ पैरों में लगाती हैं)।

अलक्षण—(वि०) [नास्ति लक्षणं यस्य न० ब०] जिसमें कोई चिह्न या निशान न हो। अप्रसिद्ध, जिसके लक्षण निर्दिष्ट न हों। अशुभ। (न०) [न० त०] अशुभ शकुन या चिह्न। बुरी परिभाषा।

अलक्षित—(वि०) [न० त०] अदृष्ट। अप्रकट। गुप्त; 'अलक्षिताभ्युत्पतनो नृपेण' र० २.२७।

अलक्ष्मी—(स्त्री०) [न० त०] दरिद्रता। अभागापन, दुर्दिष्ट।

अलक्ष्य—(वि०) [न० त०] अदृष्ट। अज्ञेय। चिह्नरहित। जिसका लक्षण न किया जा सके।—**गति**-(वि०) ऐसे चलना कि कोई देख न सके।—**लिङ्ग**-(वि०) वेश बदले हुए। नाम-पता छिपाये हुए।

अलगर्द—(पु०) [लगति स्पृशति इति क्विप् लग् अर्दयति इति√अर्द्+अच्, स्पृशन् सन् अर्दो न भवति] पानी का साँप।

अलघु—(वि०) [स्त्री०—**अलघ्वी**] [न० त०], जो हल्का न हो । भारी । जो छोटा न हो, लंबा । संगीन, गम्भीर । अत्यन्त प्रचण्ड, प्रबल । —उपल-(**अलघूपल**) (पु०) चट्टान ।

अलङ्करण—(न०) [अलम्√कृ+ल्युट्] सजावट, शृङ्गार । आभूषण, गहना ।—"पुरुषरत्नमलंकरणम् भुवः" ।—भर्तृहरिः ।

अलङ्करिष्णु—(वि०) [अलम्√ कृ+इष्णुच्] गहनों का शौकीन । सजावटी, सजाने में निपुण ।

अलङ्कर्मीण—(वि०) [अलम् समर्थः कर्मणे इत्यर्थे अलङ्कर्मन्+ख=ईन] काम करने में चतुर । दक्ष ।

अलङ्कार—(पु०) [अलम्√कृ+घञ्] सजावट, शृङ्गार । आभूषण, गहना । साहित्य शास्त्र का एक अंग । काव्य का गुण-दोष बताने वाला शास्त्र ।

अलङ्कारक—(पु०) [अलम्√कृ+ण्वुल्] सजाने वाला ।

अलङ्कृति—(स्त्री० [अलम्√कृ+क्तिन्,] अलंकार । सजावट ।

अलङ्क्रिया—(स्त्री०) [अलम् कृ+श, टाप्] दे० 'अलङ्कृति' ।

अलङ्घनीय—(वि०)[√लङ्घ्+अनीयर् न० त] जो लाँघा या पार न किया जा सके । अटल ।

अलज—(पु०) [अल√जन्+ड] एक तरह का पक्षी ।

अलञ्जर,—अलञ्जुर-(पु०) [अलम्√जृ+ अच्, पक्षे पृषो० उत्] घड़ा, मिट्टी का घड़ा ।

अलन्धन—(वि०) [अलं प्रभूतं धनम् अस्ति यस्य ब० स०] जिसके पास बहुत धन हो, धनाढ्य ।

अलम्—(अव्य०) [√अल्+अम् (बा०)] पर्याप्त, काफी, पूरा । बस, बहुत हो चुका; 'अलम्महीपाल ! तव श्रमेण' र० '२.३४ । भूषण । निवारण । सामर्थ्य । निषेध । निरर्थकता । अवधारण ।

अलम्पट—(वि०) जो लंपट या विषयी न हो, शुद्ध चरित्र वाला । (पु०) अंतःपुर, जनानखाना ।

अलम्पशु—(पु०) [अलम् यज्ञे निरर्थः पशुः] यज्ञ के लिये अयोग्य पशु । (वि०) [अलम् पशुभ्यः, च० त०] गौ आदि पशु रखने में समर्थ ।

अलम्पुरुषीण—(वि०) [अलम् पुरुषाय इति अलम्पुरुष+ख=ईन (स्वार्थे)] पुरुष होने योग्य, योग्य पुरुष ।

अलम्बुष—(पु०) [अलं पुष्णाति इति√पुष्+क पृषो० पस्य बः] वमन, छर्दि, कै । खुले हुए हाथ की हथेली । रावण के एक राक्षस सैनिक का नाम । एक राक्षस जिसे महाभारत के युद्ध में घटोत्कच ने मारा था ।

अलम्बुषा—(स्त्री०) [अलम्बुष+टाप्] मुंडी, गोरखमुण्डी । स्वर्ग की एक अप्सरा । दूसरे का आना रोकने के लिये खींची गयी लकीर । छुई-मुई, लजालू पौधा ।

अलम्बुसा—(स्त्री०) [?] एक देश का नाम ।

अलय—(वि०) [नास्ति लयो यस्य न ० ब०] गृहहीन, आवारा । जो कभी नाश को प्राप्त न हो, अविनश्वर । (पु०) [न० त०] नाश का अभाव, नित्यता । जन्म, उत्पत्ति ।

अलर्क—(पु०) [अलम् अर्क्यते अर्च्यते वा इति√ अर्क्+घञ् वा√अर्च्+घञ् शक० पररूपम्] पागल कुत्ता । सफेद मदार या अकौआ । एक राजा का नाम ।

अलले—(अव्य०) [दे० 'अररे' रस्य लः] पैशाची भाषा का शब्द जो नाटकों में बहुधा व्यवहृत होता है ।

अलवाल—(न०) [लवम् आलाति इति√ला+क न० त०] पेड़ की जड़ का खोड़आ या थाला, जिसमें जल भर दिया है ।

अलस्—(वि०) [√लस्+क्विप् न० त०] जो चमकीला न हो या जो चमके नहीं ।

अलस—(वि०) [न लसति व्याप्रियते इति√लस्+अच् न० त०] अक्रियाशील, जिसके शरीर में फुर्ती न हो, सुस्त, काहिल । श्रान्त, थका हुआ । मृदु, कोमल । मन्द; "श्रोणी भारादलसगमना" उ० मे० ८२, चेष्टाहीन । (पुं०) पैर की उंगलियों के चमड़े का सड़ना । (स्त्री०) हंसपदी लता ।

अलसक—(वि०) [अलस+कन्] अकर्मण्य, काहिल, सुस्त ।

अलात—(पुं०) (न०) [√ला+क्त न० त०] अधजला काठ या लकड़ी, जलता हुआ काठ या लकड़ी ।

अलाबु, अलाबू—(स्त्री०) [√लम्ब्+उ, णित् नलोप, वृद्धि] लौकी, तुम्बी, लाबू, तुमड़िया । (न०) तुमड़ी का बना बरतन । तुमड़ी का फल ।—**कट** (न०) तुमड़ी की रज ।

अलार—(न०) [√ऋ+यङ्, लुक्+अच् रस्य लः] दरवाजा ।

अलि—(पुं०) [अलति देशे, कूजिते, दंशिते वा समर्थो भवति इति√अल्+इन्] भौंरा । बिच्छू । काक, कौआ । कोयल । मदिरा ।—**कुल**-(न०) भौंरों का झुंड ।—**प्रिय**-(न०) कमल । ।—**विराव**,-(पुं०)—**रुत**-(न०) भौंरों का गुञ्जार ।

अलिक—(न०) [अल्यते भूष्यते इति√अल् +इकन्] मस्तक, माथा; 'अलिकेन च हेमकान्तिना, ।

अलिन्—(पुं०) [अल+इनि वा√अल्+इनि] बिच्छू । शहद की मक्खी ।

अलिनी—(स्त्री०) [अलिन्+ङीप्] शहद की मक्खियों का समुदाय ।

अलिङ्ग—(वि०) [न० ब०] जिसके कोई विशिष्ट चिह्न न हो, जिसके कोई चिह्न न हो । बुरे चिह्नों वाला । (व्याकरण में) जिसका कोई लिङ्ग न हो ।

अलिञ्जर—(पुं०) [अलनम् अलिः√अल् +इन् तं जरयति इति√जृ+अच् पृषो० मुम्] पानी का घड़ा ।

अलिन्द—(पुं०) [अल्यते भूष्यते इति√अल् +किन्दच्] घर के द्वार के सामने का चबूतरा या चौतरा ।

अलिपक—(पुं०) [√लिप्+वुन् (बा०) न० त०] कोयल । शहद की मक्खी । कुत्ता ।

अलीक—(वि०) [√अल्+कीकन्] अप्रिय । मिथ्या, मनगढ़ंत । अल्प, थोड़ा । (न०) ललाट । अप्रिय विषय । झूठ । स्वर्ग ।

अलीकिन्—(वि०) [अलीक+इनि] अरुचिकर, अप्रसन्नकर । झूठ ।

अलु—(पुं०) [√अल् +उन्] एक छोटा जलपात्र ।

अलूक्ष—(वि०) [न रूक्षः न० त० रस्य लः] रूखा नहीं । कोमल, नम्र ।

अले, अलेले–(अव्य०) [अरे, अरेरे इत्येव रस्य लः] अर्थशून्य शब्द जो नाटकों के उस दृश्य में जहाँ पिशाचों का संवाद होता है, प्रयुक्त किया जाता है ।

अलेपक—(वि०) [न० ब०, कप्] संबंध रहित (पुं०) परमात्मा । [√लिप्+ण्वुल् न० त०] लेपने वाला नहीं ।

अलोक—(वि०) [न० ब०] अदृश्य, जो देख न पड़े । जिसमें कोई आदमी भी न हो । ऐसा जीव जो मरने के बाद अन्य किसी लोक में न जाय । (पुं०) [न० त०] लोक नहीं । लोक का नाश या मनुष्यों का अभाव; 'रक्ष सर्वानिमान् लोकान् नालोकं कर्तुमर्हसि' ।—**सामान्य**–(वि०) असाधारण ।

अलोकन—(न०) [√लोक्+ल्युट्, न० त०] न देखना ।

अलोल—(वि०) [न० त०] स्थिर, टिका हुआ । दृढ़, मजबूत । अचञ्चल । जो प्यासा न हो । इच्छा से रहित, कामनाशून्य ।

अलोलुप—(वि०) [न० त०] कामनाशून्य । जो लालची न हो ।

अलोहित—(वि०) [न० त०] जो लाल न हो। रक्तशून्य। (न०) लाल कमल।

अलौकिक—(वि०) [स्त्री०—**अलौकिकी**] [न० त०] जो लोक में न मिलता हो, लोकोत्तर। अमानुषी। अतिप्रकृत। अद्भुत। विरल।

अल्प—(वि०) [√अल्+प] तुच्छ। थोड़ा, जरासा। विनाशी, थोड़े दिनों का। दुर्लभ। —**केशी**–(स्त्री०) भूतकेशी नामक पौधा। —**ज्ञ**–(वि०) थोड़ा जानने वाला। मूर्ख।—**तनु**–(वि०) ठिगना। दुर्बल, पतला। छोटी हड्डियों वाला।—**प्रसार**-(पु०) छोटी-सी आगलिक सेना या सहायता (कौ०)।—**प्राण**–(वि०) अल्पशक्ति वाला। श्वासरोगी। (पु०) प्रत्येक व्यंजन वर्ग का पहला, तीसरा और पाँचवाँ अक्षर तथा य, र, ल, व (व्या०)।—**वयस्**, —**विराम**–(वि०) छोटी उम्र का, कमसिन।—**विराम**–(पु०) अर्थ-बोध के लिये किसी शब्द के बाद थोड़ा ठहरना। इसका चिह्न। (,)।—**व्ययारंभ**–(वि०) थोड़े ही व्यय से बन जाने वाला (कौ०)।

अल्पक—(वि०) [स्त्री०—**अल्पिका**] [अल्प+कन्] कम, थोड़ा। क्षुद्र, घृणायोग्य।

अल्पम्पच—(पु०) [अल्प√पच्+खश्, मुम्] कंजूस, लोभी, लालची।

अल्पशः—(अव्य०) [अल्प+शस्] थोड़े अंश में, थोड़ा-थोड़ा करके।

अल्पिष्ठ—(वि०) [अल्प+इष्ठन्] सब से छोटा या कम।

अल्पीकरण—(न०) [अल्प+च्वि, ततः√कृ+ल्युट् ईत्व] छोटा करना। घटाना, कम करना।

अल्पीयस्—(वि०) [अल्प+ईयसुन्] अपेक्षाकृत कम या छोटा, बहुत छोटा या कम।

अल्ला—(स्त्री०) [अल्यते इति√अल्+क्विप्, अलं भूषार्थं लाति गृह्णाति इति√ला+क, ष० त०] माता। [अलतीति अल्, पर्याप्तः सन् लाति सर्वान् अत्ति गृह्णाति जानाति वा √ला+क] पराशक्ति, परमात्मदेवता। (सम्बोधनकारक में "**अल्ल**")।

√अव्—भ्वा० पर० क्रमशः सक० अक० बचाना; प्रसन्न करना इच्छा करना। कृपा करना। जाना। सुनना। माँगना। मारना। करना। लेना। तृप्त होना। फैलना। प्रवेश करना। होना। बढ़ना। अवति, अविष्यति, आवीत्।

अव—(अव्य०) [√अव्+अच्] दूर, फासले पर। नीचे। (जब यह किसी क्रिया में "उपसर्ग" होता है तब यह निम्न भाव प्रकट करता है:—अङ्कुश, विचार। फैलाव, विस्तार। अवज्ञा, अवहेलना। स्वल्पता। अवलम्ब। शोधन, शुद्धता, निर्मलता।

अवकट—(वि०) [अव+कटच्] नीचे की ओर मुख वाला। (न०) रोक।

अवकथन—(न०) [प्रा० स०] [प्रशंसा

अवकर—(पु०) [अवकीर्यते सम्मार्जन्यादिभिः इति अव√कॄ+अप्] धूल, बुहारन।

अवकर्त—(पु०) [अव√कृत्+घञ्] टुकड़ा, धज्जी, कतरन।

अवकर्तन—(न०) [अव√कृत्+ल्युट्] काटन, कतरन।

अवकर्षण—(न०) [अव√कृष्+ल्युट्] बाहर निकलने या खींचकर बाहर निकालने की क्रिया। बहिष्करण।

अवकलित—(वि०) [अव√कल्+क्त] देखा हुआ, अवलोकन किया हुआ। जाना हुआ। लिया हुआ, ग्रहण किया हुआ, प्राप्त।

अवकाश—(पु०) [अव√काश्+घञ्] अवसर, मौका। खाली वक्त, फुर्सत, छुट्टी। स्थान, जगह। शून्य जगह; 'अवकाशं किलो-दन्वान् रामायाभ्यर्थितोददौ, र० ४.५८। दूरी, अन्तर, फासला।—ग्रहण–, (न०) नौकरी,

सक्रिय सेवा, सार्वजनिक जीवन आदि से विश्राम लेना, पृथक् हो जाना निवृत्ति, विश्राम-ग्रहण (रिटायरमेंट)।

अवकीर्ण—(वि०) [अव√कॄ+क्त] बिखेरा हुआ। फैलाया हुआ। चूर किया हुआ। ध्वस्त। जिसका ब्रह्मचर्य व्रत भंग हो गया हो।—याग- (पु०) ब्रह्मचर्यव्रत भंग होने के प्रायश्चित्त रूप किया जाने वाला एक यज्ञ।

अवकीर्णिन्—(वि०) [अवकीर्ण+इनि]। ब्रह्मचर्य व्रत से च्युत हो जाने वाला। धर्मभ्रष्ट।

अवकुञ्चन—(न०) [अव√कुञ्च्+ल्युट्] सिकोड़ना। समेटना। मोड़ना। एक रोग।

अवकुट्टन—(न०) [अव√कुट्ट्+ल्युट् —अन] ठोकना।

अवकुठार— (पु०) [अव+कुठारच्] बदसूरत, असुन्दरता।

अवकुण्ठन—(न०) [अव√कुण्ठ्+ल्युट्] पाटना। घेरना। ढकना। परिवेष्टित करना। आकृष्ट करना।

अवकुण्ठित—(वि०) [अव√कुण्ठ्+क्त] ढका हुआ। घेरा हुआ। खिंचा हुआ।

अवकृष्ट—[अव√कृष्+क्त] नीचे गिराया हुआ। स्थानान्तरित किया हुआ। निकाला हुआ। अपकृष्ट, नीच। जातिबहिष्कृत। (पु०) नौकर जो नीच काम करता हो।

अवक्लृप्ति—(स्त्री०) [अव√क्लृप्+क्तिन्] सम्भावना। उपयुक्तता।

अवकेशिन्—(वि०) [अवनताः केशाः इति प्रा० स०, अवकेशाः सन्ति यस्य इत्यर्थे इनिः] अल्प या छोटे बालों वाला। [अवच्युतं कं मुखं यस्मात् प्रा० ब०—अवकम्=फलशून्य-ताम् ईशितुं शीलमस्य इति अवक√ईश् +णिनि] बंजर। (वृक्ष) जिसमें कोई फल न लगे।

अवकोकिल—(वि०) [अवकृष्टः कोकिलया इति प्राद० स०] कोयल द्वारा तिरस्कृत या अवहेलित।

अवक्र—(वि०) [न० त०] जो टेढ़ा न हो। (आलं०) ईमानदार, सच्चा।

अवक्रन्द—(पु०) [अव√क्रन्द्+घञ्] गर्जन। हिनहिनाना।

अवक्रन्दन—(न०) [अव√क्रन्द्+ल्युट्] जोर से रोने की क्रिया, चिल्लाकर रोना।

अवक्रम—(पु०) [अव√क्रम्+घञ्] उतार। ढाल, निचान।

अवक्रय—(पु०) [अव√क्री+अच्] मूल्य, कीमत। मजदूरी। भाड़ा, किराया। ठेका, इजारा, पट्टा। भाड़े पर उठाने की क्रिया। पट्टे पर देने की क्रिया। कर या राजस्व, राजग्राह्य द्रव्य।

अवक्रान्ति—(स्त्री० [अव√क्रम्+क्तिन्] उतार। समीप आगमन।

अवक्रिया—(स्त्री०) [अव√कृ+श, टाप्] छूट। चूक, भूल।

अवक्रोश—(पु०) [अव√क्रुश्+घञ्] बेसुरा कोलाहल। अकोसा, शाप। गाली झिड़की, फटकार।

अवक्लेद—(पु०) [अव√क्लिद्+घञ्] बूँद-बूँद टपकने की क्रिया। कचलोहू, घाव का पानी, पंछा।

अवक्लेश—(पु०) [अव√क्लिश्+घञ्] बूँद-बूँद टपकना, रसना। नमी अथवा सील का ढाल।

अवक्षय—(पु०) [अव√क्षि+अच्] नाश। सड़ाव, गलन। हानि।

अवक्षेप—पु०) [अव√क्षिप्+घञ्] दोषा-रोपण। आपत्ति।

अवक्षेपण—(न०) [अव√क्षिप्+ल्युट्] गिराव, अधःपात। तिरस्कार। घृणा। फट-कार, भर्त्सना। दोषारोपण। वशवर्तीकरण।

अवक्षेपणी—(स्त्री०) [अवक्षेपण+ङीप्] लगाम, रास।

अवखण्डन—(न०) [अव√खण्ड्+ल्युट्] विभक्त करने की क्रिया। नष्ट करने की क्रिया।

अवखात—(न०) [प्रा० स०] गहरा गड्ढा या खाई।

अवगणन—(न०) [अव√गण्+ल्युट्] अवज्ञा, तिरस्कार, अवहेलना । फटकार । दोषारोपण ।

अवगण्ड—(पुं०) [अत्या० स०] मुहासा या फुंसी जो चेहरे पर या गाल पर होती है ।

अवगति—(स्त्री) [अव√गम्+क्तिन्] ज्ञान । बोध । निश्चयात्मक ज्ञान । बुरी गति ।

अवगम, (पुं०) **अवगमन**—(न०) [अव√गम्+घञ्] [अव√गम्+ल्युट्] समीप गमन । ऊपर से नीचे उतरने की क्रिया । समझ, धारणा, ज्ञान ।

अवगाढ—(अव√ गाह्+क्त] बूड़ा हुआ घुसा हुआ, डूबा हुआ । ढीला । नीचा । गहरा । जमा हुआ । पक्का बना हुआ ।

अवगाह (पं०) **अवगाहन**—(न०) [अव√ गाह्+घञ्] [अव√ गाह्+ल्युट्] स्नान, निमज्जन । (आलं०) निष्णात होने की क्रिया, पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने की क्रिया ।

अवगीत—(वि०) [अव√ गा+क्त] बेसुरा गाया हुआ, बुरा गाया हुआ । अकोसा हुआ, धिक्कारा हुआ । दुष्ट, पापी । (न०) अनापवाद, निन्दा । अभिशाप ।

अवगुण—[प्रा० स०] गुण का विरोधी भाव । कोई खराब बात या बुरा गुण । दोष, ऐब, बुराई ।

अवगुण्ठन—(न०) [अव√ कुण्ठ्+ल्युट्] ढकने की क्रिया । छिपाने की क्रिया । पर्दा । घूंघट । बुर्का ।

अवगुण्ठनवत्—(वि०) [स्त्री०—**अवगुण्ठनवती**] [अवगुण्ठन+मतुप्] घूंघट से ढका हुआ ।

अवगुण्ठिका—(स्त्री०) [अव√ गुण्ठ्+ण्वुल्—अक] घूंघट । पर्दा ।

अवगुण्ठित—[अव√गुण्ठ्+क्त] ढका हुआ । घूंघट काढ़े हुए । छिपा हुआ ।

अवगूरण, **अवगोरण**—(न०) [अव√ गुर्+ल्युट्] [अव√गुर्+ल्युट्] मार डालने के उद्देश्य से हमला करने की क्रिया । हथियार से आक्रमण करने की क्रिया ।

अवगूहन—(न०) [अव√ गूह्+ल्युट्] छिपाव दुराव । आलिङ्गन करने की क्रिया ।

अवग्रह—(पुं०) [अव√ग्रह्+अप्] (व्याकरण में) सन्धिविच्छेद । लुप्त अकार जिसका चिह्न (ऽ) है । अनावृष्टि, सूखा, 'नभोनभस्ययो र्वृष्टिमवग्रह इवान्तरे' र० १२.२९ रुकावट । अड़चन, रोक, बाधा । गज समूह । हाथी का माथा । स्वभाव । प्रकृति । दण्ड, सजा । शाप, अकोसा ।

अवग्रहण—(न०) [अव√ग्रह्+ल्युट्] रुकावट, अड़चन । अपमान, अवहेला ।

अवग्राह—(पुं०) [अव√ग्रह्+घञ्] टूटना बिलगाव, अलगाव । अड़चन, रुकावट, रोक । शाप ।

अवघट्ट—(पुं०) [अव√घट्ट्+घञ्] भूमि का बिल, गुफा, गुहा । अनाज पीसने की चक्की । गड्डबड्ड करने की क्रिया, हिलाकर गड्डबड्ड करने की क्रिया ।

अवघर्षण—(न०) [अव√घृष्+ल्युट्] रगड़ना । मालिश करना । पीसने की क्रिया । (सूखा रङ्ग आदि) मलकर झाड़ने की क्रिया । (लगे रंग को) मलकर छुड़ाना ।

अवघात—(पुं०) [अव√हन्+घञ्] धान आदि का ताड़न । चोट, प्रहार । वध, हत्या । अपमृत्यु ।

अवघूर्णन—[अव√घूर्ण्+ल्युट्] घुमरी, चक्कर ।

अवघोषण, (न०) **अवघोषणा**—(स्त्री०) [अव√घुष्+ल्युट्] [अव√घुष्+युच्] ढिंढोरा । राजसूचना ।

अवघ्राण—(न०) [अव√घ्रा+क्त (भावे)] सूंघने की क्रिया ।

अवचन—[न० ब०] न बोलने वाला । चुप, खामोश, वाणी-रहित । (न०) [न० त०] वचन या कथन का अभाव । चुप्पी, मौन । फटकार, डाँट-डपट, झिड़की ।

अवचनीय—(वि०) [न० त०] जो कहा न जा सके। जो बोला न जा सके। अश्लील या भद्दी (बात या भाषा)। झिड़की के अयोग्य, भर्त्सना के योग्य नहीं।

अवचय, अवचाय—(पुं०) [अव√चि+अच्] [अव√चि+घञ्] सञ्चय। (जैसे फल, फूल आदि का)

अवचारण—(न०) [अव√चर्+णिच्+ल्युट्] किसी काम में लगाने की क्रिया। वरताव या जुगत का लगाना।

अव√चि—पूजा करना। आदर करना। इकट्ठा करना। चुनना। तोड़ना।

अवचूड, अवचूल—(पुं०) [अवनता चूडा अग्रं यस्य ब० स०] रथ का उछार। किसी झंडे की सजावट के लिये लटकाये हुए चौरीनुमा गुच्छे।

अव√चूर्ण्—चूर-चूर करना। पीसना।

अवचूर्णन—(न०) [अव√चूर्ण्+ल्युट्] पीसना, कूटना, पीस कर चूर्ण कर डालना। चूर्ण बुरकाना। विशेष कर कोई सूखी दवा किसी घाव पर बुरकाना।

अवचूलक—(न०) [अवनता चूडा यस्य तस्य लत्वम्, संज्ञायां कन्] मोर के पंख या गाय की पूँछ का बना हुआ चँवर, चौरी (जिससे मक्खियाँ उड़ायी जाती हैं)।

अव√च्छद्—ऊपर से ढाँकना। छिपाना।

अवच्छद, अवच्छाद—(पुं०) [अव√छद्+क] [अव√छद्+घञ्] ढक्कन, कोई वस्तु जिससे दूसरी वस्तु ढकी जा सके।

अव√च्छिद्—काट डालना। जुदा करना। फाड़ना। तोड़ना। बिचारना।

अवच्छिन्न—(वि०) [अव√छिद्+क्त] काट कर अलग किया हुआ। विभाजित, पृथक् किया हुआ। छुड़ाया हुआ। जिसका किसी अवच्छेदक पदार्थ से अवच्छेद किया गया हो। छेंका हुआ, घेरा हुआ। सम्हाला या संशोधित किया हुआ। निश्चित किया हुआ।

अवच्छुरित—(वि०) [अव√छुर्+क्त] मिश्रित, मिला हुआ। (न०) खिलखिलाहट, अट्टहास, ठहाका।

अवच्छेद—(पुं०) [अव√छिद्+घञ्] टुकड़ा, भाग। सीमा, हद। वियोग। विशेषता। निश्चय, निर्णय। लक्षण (जिससे कोई वस्तु निर्भ्रान्ति रूप से पहचानी जा सके)। सीमाबद्धकरण। परिभाषाकरण।

अवच्छेदक—(वि०) [अव√छिद्+ण्वुल्] भेदकारी, अलग करने वाला। विशेषण। गुण रूप शब्द। औरों से अलग करने वाला।

अवजय—(पुं०) [अव√जि+अच्] हार।

अवजिति—(स्त्री०) [अव√जि+क्तिन्] जय, विजय।

अवज्ञान—(न०) [अव√ज्ञा+ल्युट्] अवहेला, अपमान।

अवट—(पुं०) [√अव्+अटन्] छेद, रन्ध्र। गुफा। गड्ढा। कूप। खात। शरीर का कोई भी नीचा या दबा हुआ अवयव या भाग। नाडीव्रण। बाजीगर।—**कच्छप**-(पुं०) गड्ढे का कछुआ। (आला०) अनुभव शून्य व्यक्ति। वह जिसने संसार का कुछ भी ज्ञान-सम्पादन नहीं किया।

अवटि, अवटी—(स्त्री०) [√अव्+अटि, पक्षे ङीष्] छेद, रन्ध्र। कूप। नाडीव्रण आदि।

अवटीट—(वि०) [अवनता नासिका प्रा० स० नतार्थे नासाया: टीटादेश:, अर्शआदित्वात् अच्] चपटी नाक वाला।

अवटु—(पुं०) [न० त०] ब्रह्मचारी या बालक नहीं। [अव√टीक्+डु] भूमि का बिल। कूप। गरदन के पीछे का भाग। शरीर का दबा हुआ भाग। (स्त्री०) गरदन का उठा हुआ भाग। (न०) सुराख, छेद। खोह। दरार।

अवडीन—(न०)[अव√डी+क्त (भावे] । पक्षी की उड़ान। नीचे की ओर उड़ना।

अवतंस—(पुं० न०) [अव√तंस+घञ्] हार, गजरा, माला। कान की बाली, बाली-नुमा एक आभूषण। मस्तक पर पहिनने का गहना, मुकुट, ताज।

अवतंसक—(पुं०) [अव√तंस्+ण्वुल्] कान का आभूषण, कोई भी आभूषण।

अवतति—(स्त्री०) [अव√तन्+क्तिन्] फैलाव, पसार, बढ़ाव।

अवतप्त—[अव√तप्+क्त] गर्माया हुआ, गरम किया हुआ। प्रकाशित, उजागर।

अवतमस—(न०) [प्रा० स०] झुटपुटा, थोड़ा अन्धकार। अंधकार, अंधियाला।

अवतर—(पुं०) [अव√तृ+अप्] उतार, गिराव।

अवतरण—(न०) [अव√तृ+ल्युट्] स्नानार्थ पानी में उतरने की क्रिया। अवतार, प्रादुर्भाव, जन्म-ग्रहण। तारण। पार होना, उतरना। पवित्र स्थान जहाँ स्नान किया जा सके। अनुवाद। भूमिका। नकल। किसी के कहे हुए शब्दों, संदेह आदि को (उलटे विराम-चिह्नों के बीच) उद्धृत करना (कोटेशन)।—**चिह्न** (न०) अवतरित अंश के ठीक पहले तथा अंत में दिये जाने वाले उलटे विराम-चिह्न।—**पथ**-(पुं०) वायुयानों के लिये बना वह लंबा-सा पथ जिस पर उन्हें ऊपर उठने के पूर्व या नीचे उतरने के बाद कुछ दूर तक चलना पड़ता है (एअरस्ट्रिप, रनवे)।—**भूमि** (स्त्री०) हवाई जहाजों के लिये आकाश से नीचे उतरने का स्थान। (लैंडिंग-ग्राउंड)।

अवतरणिका—(स्त्री०) [अवतरणी+कन्, ह्रस्व, टाप्] ग्रन्थ की भूमिका, उपोद्घात।

अवतरणी—(स्त्री०) [अव√तृ+ल्युट्—ङीप्] दे० 'अवतरणिका'।

अवतर्पण—(न०) [अव√तृप्+ल्युट्] शान्त करने वाला उपाय।

अवताडन—(न०) [अव√तड्+णिच्+ल्युट्] कुचलना, रौंदना, 'नैसर्गिकी सुरभिणः कुसुमस्य सिद्धा मूर्ध्नि स्थितिर्न चरणैरवताडनानि' उत्त० १.१४। मारण, आघातकरण।

अवतान—(पुं०) [अव√तन्+घञ्] फैलाव। झुके हुए धनुष को सीधा करने की क्रिया। ढक्कन या पर्दा।

अवतार—(पुं०) [अव√तृ+घञ्] उतार। नीचे आना। किसी देवता का पृथिवी पर प्रादुर्भाव या जन्म लेना। घाट। स्नान करने का पवित्र स्थान। अनुवाद। तालाब। भूमिका। विष्णु के १० या २४ अवतारों में से कोई एक। किसी विषय को लक्ष्य बनाना। पार करना।

अवतारक—(वि०) [स्त्री०—**अवतारिका**] [अव√तृ+णिच्+ण्वुल्] प्रादुर्भाव करने वाला।

अवतारण—(न०) [अव√तृ+णिच्+ल्युट्] उतरवाने की क्रिया। अनुवाद। किसी भूत-प्रेत का आवेश। पूजन। भूमिका, उपोद्घात।

अवतीर्ण—[अव√तृ+क्त] उतरा हुआ, नीचे आया हुआ। स्नान किया हुआ। पार किया हुआ, गुजरा हुआ। अनूदित। अवतार के रूप में उत्पन्न।

अवतोका—(स्त्री०) [अवपतित तोकमस्याः इति प्रा० ब०] स्त्री या गौ जिसका कारण वश गर्भस्राव हो गया हो।

अवदंश—(पुं०) [अव√दंश्+घञ्] ऐसा भोज्य पदार्थ जिसके खाने से प्यास बढ़े, गजक, चाट। बलवर्धक पदार्थ।

अवदाघ—(पुं०) [अव√दह्+घञ्, ह्रस्व अः] उष्णता। गर्मी की ऋतु।

अवदात—(वि०) [अव√दै+क्त] खूबसूरत, सुन्दर। साफ, स्वच्छ; 'कुन्दावदाताः कलहंसमालाः' भट्टि० २.१८। पुण्यात्मा। पीला। (पुं०) सफेद या पीला रंग।

अवदान—(न०) [अव√दो+ल्युट्] पवित्र या शास्त्रविहित वृत्ति। सम्पादित कार्य। शूरता या गौरवपूर्ण कोई कार्य। टुकड़े-टुकड़े करने

की क्रिया। किसी अनोखी कहानी का कोई दृश्य। पराक्रम। वीरणमूल।

अवदारण—(न०) [अव√दृ+णिच+ल्युट्] चीरना, फाड़ना। विभाजित करना। खुदाई। टुकड़े-टुकड़े करने की क्रिया। कुदाल। खंती।

अवदाह—(पु०) [अव√दह्+घञ्] गर्मी, उष्णता, जलन।

अवदीर्ण—[अव√दृ+क्त] टूटा हुआ, भग्न। पिघला हुआ। हड़बड़ाया हुआ। घटका हुआ।

अवदोह—(पु०) [अव√दुह्+घञ्] दोहन, दुहना। दूध, पय।

अवद्य—(वि०) [√वद्+यत् न० त०] अधम, पापी। निन्द्य, गर्हित। त्याज्य।(न०) अपराध। दोष। पाप, दुष्टकर्म। कलंक। लज्जा।

अवद्योतन—(न०) [अव√द्युत्+ल्युट्] प्रकाश।

अवद्रंक—(पु०) बाजार। मेला।

अवधातृ—(पु०) [अव√धा+तृच्] वह व्यक्ति जो असली मालिक की अविद्यमानता में मकान आदि की निगरानी करे (केयरटेकर)।

अवधान—(न०) [अव√धा+ल्युट्] मनोयोग, ध्यान। किसी विषय में मन की एकाग्रता; 'शृण्वन्त जनाः अवधानात् क्रियामिमां कालिदासस्य' विक्र० १.२। चौकसापन। किसी व्यक्ति, वस्तु या कार्य की देखभाल करने या उस पर नजर रखने का कार्य।

अवधार—(पु०) [अव√धृ+णिच्+घञ्] ठीक-ठीक निश्चय। सीमा, इयत्ता।

अवधारण—(न०) [अव√धृ+णिच्+ल्युट्] निश्चय करना। हद बाँधना। शब्दार्थ की सीमा बाँधना। (शब्द विशेष पर) जोर देना।

अवधारणा—(स्त्री०) [अव√धृ+णिच्+युच्] दे० 'अवधारण'। मन में किसी धारणा, कल्पना या विचार का उदय होना, बनना या स्थिर होना (कॉनसेप्शन)।

अवधि—(स्त्री०) [अव√धा+कि] सीमा, हद्। पराकाष्ठा। निर्धारित समय, मियाद। नियुक्ति। किस्मत। पड़ोस। रन्ध्र। गढ़ा।

अव√धीर्—अवहेला करना, बेइज्जत करना।

अवधीरण—(न०) [अव√धीर्+णिच्+ल्युट्] अवज्ञापूर्वक बर्ताव करने की क्रिया।

अवधीरणा—(स्त्री०) [अव√धीर्+णिच्+युच्] बेइज्जती, असम्मान। हार।

अवधूक—(पु०) अविवाहित पुरुष।

अवधूत—[अव√धू√क्त] हिलाया हुआ। खारिज किया हुआ, अस्वीकृत। घृणा किया हुआ। अपमानित किया हुआ, नीचा दिखलाया हुआ। (पु०) त्यागी, संन्यासी।

अवधूनन—(न०) [अव√धू+ल्युट्]हिलाने की क्रिया। लहराने की क्रिया। घबड़ाहट। कँपकँपी।

अवध्य—(वि०) [न० त०] न मारने योग्य, मौत से बरी। पवित्र।

अवध्वंस—(पु०) [प्रा० स०] त्याग, उत्सर्ग। चूर्ण। असम्मान, भर्त्सना। बुरकाने की क्रिया।

अवन—(न०) [√अव्+ल्युट्] रक्षण, बचाव। प्रसन्न करना। इच्छा, कामना। हर्ष। सन्तोष।

अवनत—[अव√नम्+क्त] झुका हुआ। गिरा हुआ। पिछड़ा हुआ। हीन। अस्त होता हुआ। विनीत।

अवनति—(स्त्री०) [अव√नम्+क्तिन्] झुकाव। अस्त होने की क्रिया। प्रणाम, (धनुष की तरह) झुकने की क्रिया। नम्रता, शील।

अवनद्ध—[अव√नह्+क्त] बना हुआ। गढ़ा हुआ। बंधा हुआ। जुड़ा हुआ, (न०) ढोल, मृदंग।

अव√नम्—झुकना। प्रणाम करना। नीचे लटकना।

अवनम्र—(वि०) [प्रा० स०] झुका हुआ, नवा हुआ; 'पर्याप्तपुष्पस्तबकावनम्रा' कु० ३.५४।

अवनय, अवनाय—(पु०) [अव√नी+अच्] [अव√नी+घञ्] नीचे को ले जाने की क्रिया। नीचे उतारने की क्रिया। अधः-पात करने की क्रिया।

अव√नह्—बाँधना। आवृत करना।

अवनाट—(वि०) [नतं नासिकायाः इत्यर्थे अव+नाटच् ततः अस्त्यर्थे अच्] चपटी नाक वाला।

अवनाम—(पु०) [अव√नम्+घञ्] झुकाव। पैरों पर पड़ने की क्रिया।

अवनाह—(पु०) [अव√नह्+घञ्] बाँधना। लपेटना। पहिनना।

अवनि, अवनी—(स्त्री०) [√अव्+अनि, पक्षे ङीप्] भूमि, पृथ्वी। नदी।—**ईश**—(**अवनीश**)— **ईश्वर**— (**अवनीश्वर**)— **नाथ**,—**पति**,—**पाल**–(पु०) राजा, नरेश, भूपाल।—**चर**–(वि०) पृथिवी पर भ्रमण करने वाला। आवारा।—**तल**–(न०) जमीन की सतह, धरातल।—**मण्डल**–(न०) भूगोल।—**रुह्**–(पु०) वृक्ष, पेड़।

अवनेजन—(न०) [अव√निज्+ल्युट्] प्रक्षालन, मार्जन; 'न कुर्याद् गुरुपुत्रस्य पाद-योश्चावनेजनम्।' श्राद्ध की वेदी पर बिछे हुए कुशों पर जल सींचने का संस्कार। पाद्य, पैर धोने के लिये जल। धोने के लिये जल।

अवन्ति, अवन्ती-(स्त्री०) [√अव्+झि —अन्त पक्षे ङीप्] उज्जयिनी या उज्जैन का नामक। एक नदी का नाम। (पु० और बहु-वचन में) मालवा प्रदेश तथा उस देश के निवासियों का नाम।

अवन्तिका—(स्त्री०) [अवन्तिषु कायति प्रकाशते]। उज्जैन। उज्जैन की भाषा।

अवन्ध्य—(वि०) [न० त०] उर्वर, उपजाऊ, जो ऊसर न हो।

अवपतन—(न०) [अव√पत्+ल्युट्] नीचे गिरने की क्रिया। उतरने की क्रिया।

अवपाक—(वि०) [अवकृष्टः पाको यस्य ब० स०] बुरी तरह पकाया हुआ।

अवपात—(पु०) [अव√पत्+घञ्] नीचे गिरने की क्रिया, अधःपात। उतार। छिद्र। गड्ढा। विशेष कर वह गड्ढा जो हाथियों को पकड़ने के लिये खोदा जाता है।

अवपातन—(न०) [अव√पत्+णिच्+ल्युट्] ठोकर देकर गिराने की क्रिया, ठुक-राना। नीचे गिराना या फेंकना।

अवपात्र—(वि०) [अवरं भोजनायोग्यं पात्रं यस्य ब० स०] म्लेच्छ, किसी पात्र में जिसके खाने से वह पात्र दूसरों के उपयोग में आने योग्य न रह जाय।

अवपात्रित—(वि०) [अवपात्र+णिच्(ना० धा०)+क्त] अवपात्र किया हुआ। जातिभ्रष्ट, जाति-बिरादरी से खारिज।

अवपाशित—(वि०) [अवपाशः समन्तात् पाशः जातः अस्य इत्यर्थे तारकादित्वात् अव-पाश+इतच्] सब ओर से जाल में फँसा हुआ।

अवपीड—(पु०) [अव√पीड्+णिच्+घञ्] दबाव। एक प्रकार की दवाई जिसे सूँघने से छींकें आती हैं।

अवपीडन—(न०) [अव√पीड्+णिच्+ल्युट्] दबाने की क्रिया। छींक लाने वाली वस्तु।

अवपीडना—(स्त्री०) [अव√पीड्+णिच्+युच्] उत्पात। खण्डन, भञ्जन।

अव√बुध्—जागना। पहचानना। जानना।

अवबोध—(पु०) [अव√बुध्+घञ्] जागना, जाग उठना; यौ तु स्वप्नावबोधौ तौ भूतानाम्प्रलयोदयौ कु. २.८। ज्ञान। सूक्ष्म विवेचना। विवेक। उपदेश। जताना।

अवबोधक—(न०) [अव√बुध्+ण्वुल्] समझाने या जगाने वाला। (पुं०) सूर्य। भाट, बंदीजन। शिक्षक।

अवबोधन—[अव√बुध्+ल्युट्] बताना, जताना । ज्ञान । जगाना ।

अवभङ्ग—(पुं०) [अव√भञ्ज्+घञ्] नीचा दिखलाने की क्रिया । जीतने की क्रिया, परास्त करना ।

अवभात—(न०) करेव ।

अवभास—(पुं०) [अव√भास्+घञ्] चमक-दमक, प्रकाश । ज्ञान, प्रबोध । दर्शन, प्राकट्य । दैवज्ञान । स्थान । मिथ्या ज्ञान, भ्रम ।

अवभासक—(वि०) [अव√भास्+ण्वुल्] प्रकाशक । तेजोमय । (न०) परमात्मा, परब्रह्म ।

अवभुग्न—[अव√भुज्+क्त] झुका हुआ, मुड़ा हुआ, टेढ़ा ।

अवभृथ—(पुं०) [अव√भृ+क्थन्] यज्ञान्त स्नान । मार्जन के लिये जल । यज्ञानुष्ठान विशेष, जो प्रधान यज्ञ की त्रुटियों की शान्ति के अर्थ किया जाता है ।—**स्नान**-(न०) यज्ञ की पूर्णाहुति के बाद किया जाने वाला स्नान ।

अवभ्र—(पुं०) [?] बलपूर्वक या चुरा छिपा कर (किसी मनुष्य का) हरण, भगा ले जाने की क्रिया ।

अवभ्रट—(वि०) [नासिकाया नतम् इत्यर्थे अव भ्रटच् ततः अस्त्यर्थे अच्] चपटी नाक वाला ।

अवम—(वि०) [√अव्+अमच्] पापी । तिरस्करणीय । कमीना, अपकृष्ट । अगला । परमपनिष्ठ । सम्पूर्ण । अन्तिम (उम्र में) सब से छोटा । पाप । चांद्र और सौर दिन का अंतर । (पुं०) पितरों का एक वर्ग ।—**तिथि**-(स्त्री०) वह तिथि जिसका क्षय हो गया हो ।

अवमत—[अव√मन्+क्त] असम्मानित किया हुआ, अवमानित । निन्दित ।—**अङ्कुश** (**अवमताङ्कुश**) (पुं०) मदमत्त हाथी जो अङ्कुश को कुछ भी न माने; 'अन्वेतुकामोऽवमताङ्कुशग्रहः' शि० १२.१६ ।

अवमति—(स्त्री०) [अव√मन्+क्तिन्] अवमानना, अवज्ञा, अवहेलना । घृणा । विरक्ति ।

अवमर्द—(पुं०) [अव√मृद्+घञ्] कुचलन । बर्बादी, नाश । ज़ुल्म, अत्याचार ।

अवमर्श—(पुं०) [अव√मृश्+घञ्] स्पर्श । संसर्ग ।

अवमर्ष—(पुं०)[अव√मृष्+घञ्]विचार । अन्वेषण, खोज । किसी नाटक के ५ प्रधान भागों या सन्धियों (मुख, प्रतिमुख, गर्भ, अवमर्ष और निर्वहण) में से एक, विमर्श । —'यत्र मुख्यफलोपाय उद्भिन्नो गर्भतोऽधिकः । शापाद्यैः सान्तरायश्च सोऽवमर्ष इति स्मृतः ।।' —साहित्यदर्पण ३३६ । आक्रमण करने की क्रिया ।

अवमर्षण—(न०) [अव√मृष्+ल्युट्] असहिष्णुता, असहनशीलता । मिटाने की क्रिया । स्मृति से नष्ट कर देने की क्रिया ।

अवमान—(पुं०) [अव√मन् +घञ्] असम्मान, तिरस्कार, अवहेलना ।

अवमानन—(न०)—**अवमानना**—(स्त्री०) [अव√मन्+णिच्+ल्युट्] [अव√मन् +णिच्+युच्] असम्मान, बेइज्जती ।

अवमानिन्—(वि०) [अव√मन्+णिच्+णिनि]अपमान या तिरस्कार करने वाला; 'अपि आत्मगुणावमानिनि' श० ३ ।

अवमार्जन—(न०) [अव√मृज्+ल्युट्] धोना, प्रक्षालन करना । पोंछना । नाश करना ।

अव√मुच्—खुला छोड़ देना, खोल देना (घोड़े आदि को) । उतार देना (पोशाक आदि ।

अवमूर्धन्—(वि०) [अवनतः मूर्धा यस्य ब० स०]सिर झुकाये हुये ।—**शय**-(वि०) औंधा मुँह कर लेटा हुआ ।

अव√मृज्—घिसना, रगड़ना ।

अव√मृद्—पीसना, मल डालना ।

अवमोचन—(न०) [अव√मुच्+ल्युट्] मुक्तकरण, रिहा करने की क्रिया । स्वतंत्र करने की क्रिया । छोड़ देने की क्रिया । ढीला कर देने की क्रिया ।

अवयव—(पुं०) [अव√यु+अच्] शरीर का कोई अंग । अंश, भाग, हिस्सा । न्यायशास्त्रानुसार वाक्य का एक अंश, ऐसे अंश पाँच माने गये हैं [यथा प्रतिज्ञा । हेतु । उदाहरण । उपनय और निगमन ।] शरीर । —**रूपक**-(न०) एक तरह का रूपक जिसमें अंगों के गुणों का ही साकल्य दिखलाया जाता है ।

अवयवशः—(अव्य०) [अवयव+शस्] हिस्सा-हिस्सा करके, अलग-अलग ।

अवयविन्—(वि०) [अवयव+इनि] जिसके अवयव या अंग या अंश हों । (पुं०) कई अवयवों—अंगों से मिलकर बनी हुई वस्तु । देह । उपनय, निगमन आदि का संयोग (न्या०) ।

अवर—(वि०) [अव√रा+क] (अवस्था या उम्र में) छोटा ।(समय में) पिछला, बाद का, पिछाड़ी का । एक के बाद दूसरा । अपेक्षाकृत निचला, अपकृष्ट, हीन ; 'दूरेणह्यवरकर्म बुद्धियोगाद्धनञ्जय' भग २.४९ । गया-बीता, अधमाधम । (प्रथम का उलटा) अन्तिम । सब से कम (परिमाण में) । पाश्चात्य । (न०)हाथी की जाँघ का पिछला भाग ।—**अर्ध** (**अवरार्ध**)-(पुं०) कम से कम भाग,कम से कम । दो समान भागों में से पिछला आधा भाग । शरीर का पिछला भाग ।—**अवर** (**अवरावर**)-(पुं०) सब से नीच, सब से अपकृष्ट ।—**आगार** (**अवरागार**) (न०) संसद् या विधान-मंडल का निम्न-सदन—लोकसभा, प्रतिनिधिसभा, विधानसभा आदि (लोअर हाउस) ।—**उक्त** (**अवरोक्त**)-(वि०) जिसका अंत में उल्लेख हुआ हो ।—**ज**-(वि०) (उम्र में) अपेक्षाकृत छोटा । (पुं०) छोटा भाई ।—**जा**-(स्त्री०)छोटी बहन ।—**वर्ण**-(वि०) हीन जाति वाला । (पुं०) शूद्र । चतुर्थ या अन्तिम वर्ण ।—**वर्णक**,—**वर्णज**- (पुं०) शूद्र ।—**व्रत**—(पुं०) सूर्य ।—**शैल**- (पुं०) पश्चिम का पहाड़ जिसके पीछे सूर्य अस्त होता है, अस्ताचल ।

अवरतः—(अव्य०) [अवर+तसिल्] पीछे, पीछे की ओर, पीछे से ।

अवरति—(स्त्री०) [अव√रम्+क्तिन्] ठहराव, विश्राम । निवृत्ति ।

अवरिका—(स्त्री०) धनिया ।

अवरीण—(वि०)[अवर+ख=ईन] गिरा हुआ, अधःपतित । घृणित । निन्द्य ।

अवरुग्ण—(वि०) [अव√रुज्+क्त] टूटा हुआ । फटा हुआ । रोगी, बीमार ।

अवरुद्ध—(वि०) [अव√रुध्+क्त] रुका या रोका हुआ । प्रच्छन्न । घिरा हुआ । बंद ।

अवरुद्धा—(स्त्री०) (अवरुद्ध+टाप्] रखेली ।

अवरुद्धि—(स्त्री०) (अव√रुध्+क्तिन्] रोक, थाम । घेरा । उपलब्धि, प्राप्ति ।

अवरूढ—(वि०) [अव√रुह्+क्त] उतरा हुआ, आरूढ का उलटा । उखड़ा हुआ ।

अवरूप—(वि०)[ब० स०] बदशकल, बदसूरत, कुरूप । जिसका पतन हो गया हो ।

अवरोचक—(पुं०) [अव√रुच्+ण्वुल्] एक प्रकार का रोग जिसमें भूख जाती रहती है ।

अवरोध—(पुं०) [अव√रुध्+घञ्] रुकावट । समय । अन्तःपुर, जनानखाना । समष्टिरूप से किसी राजा की रानियाँ । यथा—'अवरोधे महत्यपि'—रामायण । घेरा, हाता । बंदीगृह, कटघरा । लेखनी, कलम । चौकीदार । नीचे जाना । किसी पौधे के मूल आदि से तंतुओं का निकलना ।

अवरोधक—(वि०) [अव√रुध्+ण्वुल्] रोकने वाला। घेरा डालने वाला। (पुं०) पहरे वाला, प्रहरी। (न०) प्रतिबन्ध। घेरा, हाता।

अवरोधन—(न०) [अव√रुध्+ल्युट्] घेरा। रुकावट। अड़चन। अन्तःपुर, जनानखाना। किसी चीज का भीतरी भाग।

अवरोधिक—(वि०) [अवरोध+ठन्—इक] बाधा डालने वाला। रुकावट डालने वाला। (पु०) जनानी ड्योढ़ी का दरबान; 'मधुस्नुरक्षाधिकृहोऽवरोधिका:' शि० १२.२०।

अवरोधिका—(स्त्री०) [अवरोधिक+टाप्] अन्तःपुरवासिनी महिला।

अवरोधिन्—(वि०)[अवरोध+इनि] अड़चन डालने वाला। रुकावट डालने वाला। घेरा डालने वाला।

अवरोप—(पु०) [अव√रुह्+णिच्, पुक्+घञ्] किसी आरोप या अभियोग से मुक्त करना या होना (डिसचार्ज)। (दे०) 'अवरोपण'।

अवरोपण—(न०) [अव√रुह्+णिच्, पुक्+ल्युट्] उखाड़ डालने की क्रिया। नीचे उतारने की क्रिया। ले जाने की क्रिया। वञ्चित करने की क्रिया। घटाना।

अवरोह—(पुं०)[अव√रुह्+घञ्] उतार, ऊपर से नीचे आना। संगीत में स्वरों के ऊपर से नीचे आने का क्रम। अर्थालंकार का एक भेद। किसी बेल का वृक्ष की जड़ से फुनगी तक लिपटना। मूल या शाखा से तंतुओं का निकलना। [अपादाने घञ्] स्वर्ग।

अवरोहण—(न०) [अव√रुह्+ल्युट्] उतार, गिराव, पतन। चढ़ाव।

अवर्ण—(वि०) [न० ब०] रंग-रहित। बुरा, कमीना। (पु०) [न० त०] बदनामी, कलङ्क, धब्बा। आरोप, इलजाम।

अवलक्ष—(वि०) [अव√लक्ष्+घञ्] सफेद रंग। (वि०) [अस्य अस्तीत्यर्थे अवलक्ष+अच्] सफेद, उज्ज्वल, इसी अर्थ में 'वलक्ष' भी आता है।

अवलग्न—वि०) [अव√लग्+क्त] चिपटा हुआ, सटा हुआ। छूआ हुआ। (पुं०) कमर, कटि। देह का मध्य भाग।

अवलम्ब—(पुं०) [अव√लम्ब् +घञ्] सहारा, आश्रय। छड़ी। परिशिष्ट। लंब (रेखा)।

अवलम्बन—(न०) [अव√लम्ब्+ल्युट्] सहारा लेना। अपनाना। अवलंब। छड़ी।

अवलिप्त—(वि०) [अव√लिप्+क्त] अभिमानी, क्रोधी। पोता हुआ। सना हुआ।

अवलीढ—(वि०)[अव√लिह्+क्त]खाया हुआ। चाटा हुआ। आस्वादित; 'नवयौवनावलीढावयवा:' दश०।

अवलीला—(स्त्री०) [अवरा लीला प्रा० स०]खेल कूद। अवहेला, तिरस्कार। आसानी।

अवलुञ्चन—(न०) [अव√लुञ्च्+ल्युट्] काट डालने की क्रिया। उखाड़ डालने की क्रिया। नोंच डालने की क्रिया। जड़ से उखाड़ डालने की क्रिया।

अवलुण्ठन—(न०) [अव√लुण्ठ्+ल्युट्] जमीन पर लुढ़कने या लोटने की क्रिया। लूट।

अव√लुप्—(किसी चीज पर) अचानक टूट पड़ना। खाना। लूटना।

अवलुम्पन—(न०) [अव√लुप्+ल्युट्, मुम्] (किसी पर) अचानक टूट पड़ना, झपट्टा मारना।

अवलेख—(पुं०) [अव√ लिख्+घञ्] तोड़ना। खरोंचना। छीलना।

अवलेखा—(स्त्री०) [अव√ लिख्+अ, टाप्] रगड़ना। किसी व्यक्ति को सुसज्जित करने की क्रिया। चित्रकारी।

अवलेप—(पुं०) [अव√लिप्+घञ्] अभिमान, क्रोध। जबरदस्ती। बरजोरी आक्रमण अपमान; 'ददृशे पवनावलेपजं सृजती बाष्पमिवाञ्जनाविलम्' र० ८.३५। पोतने की क्रिया। आभूषण। ऐक्य, सङ्ग।

अवलेपन—(न०) [अव√लिप्+ल्युट्] पोतने की क्रिया । सानना । तेल । उबटन । ऐंठ्य, मेल । अभिमान ।

अवलेह—(पु०) [अव√लिह्+घञ्] चाटने की क्रिया । (सोम जैसा) अर्क । चटनी । माजून ।

अवलेहन—(न०) [अव√लिह्+ल्युट्—अन] चाटना ।

अवलोक—(पु०) [अव√ लोक्+घञ्] देखना । नजर, दृष्टि ।

अवलोकन—(न०) [अव√लोक्+ल्युट्] देखने की क्रिया । जाँच-पड़ताल, निरीक्षण । दृष्टि, नेत्र । चितवन, दृष्टिपात ।

अवलोकित—(वि०) [अव√लोक्+क्त] देखा हुआ । अनुसंधान किया हुआ । निरीक्षण किया हुआ । (न०) चितवन ।

अवलोप—(पु०) [अव√लुप्+घञ्] काट कर अलग करना । नष्ट करना । दाँत काटना । चूमना ।

अवलोम—(वि०) [अवनद्ध लोम आनुकूल्यं यस्य ब० स०] जो किसी के अनुकूल हो । उपयुक्त ।

अववरक—(पु०) [अव√वृ+अप्+ततः संज्ञायां वुन्] छिद्र, रन्ध्र । खिड़की ।

अववाद—[अव√वद्+घञ्] भर्त्सना । विश्वास, भरोसा । अवहेलना, अपमान । समर्थन । बदनामी । आज्ञा ।

अवव्रश्च—(पुं०) [अव√व्रश्च्+अच्] लमाची, चिपटी, किरच ।

अवश—(वि०) [न० त०] स्वतंत्र, मुक्त । जो पालतू न हो । अवज्ञाकारी । स्वेच्छाचारी । जो किसी का वशवर्ती न हो । [नास्ति वशम् आयत्तं यस्य न० ब०] असंयमी, इंद्रियदास । परतंत्र, बेबस, लाचार; 'कार्यते ह्यवशः कर्म,' भग० ।

अवशंगम—(पु०) [वश√गम्+खच् न० त०] जो दूसरे के कहने में न हो । स्वेच्छाचारी ।

अवशातन—(न०) [प्रा० स०] नाशकरण, काट गिराने की क्रिया । मुरझाने की क्रिया, सूख जाने की क्रिया ।

अवशिष्ट—(वि०) [अव√शिष्+क्त] शेष, बाकी ।

अवशीन—(पु०) बिच्छू ।

अवशेष—(पु०) [अव√शिष्+घञ्] बचा हुआ, शेष, बाकी । समाप्ति ।

अवश्य—(वि०) [न० त०] जो वश में होने योग्य न हो । अशासनीय । अनिवार्य । आवश्यक ।—**पुत्र**-(पु०) ऐसा पुत्र जिसको पढ़ाना या अपने वश में रखना सम्भव न हो ।

अवश्यम्—(अव्य) [अव√श्यै+डम्] सर्वथा, जरूर, निस्सन्देह, निश्चय करके ।—**भाविन्**-(वि०) जरूर होने वाला, जो टल न सके ।

अवश्या—(स्त्री०) [अव√श्यै+क] कुहरा । पाला, ओस ।

अवश्याय—(पु०) [अव√श्यै+ण] कुहरा । ओस, पाला । तुषार । अभिमान, घमंड ।

अवश्रयण—(न०) [अव√श्रि+ल्युट्] किसी वस्तु को आग पर से उतारने की क्रिया ।

अवष्कयणी—(स्त्री०) [न० त०] बहुत दिनों के अंतर से बच्चा देने वाली गाय ।

अवष्टब्ध—[अव√स्तम्भ्+क्त] अवलम्बित । घिरा हुआ । ऊपर लटका हुआ । समीपवर्ती । रुका हुआ । झुका हुआ । बंधा हुआ । गसा हुआ ।

अवष्टम्भ—(पु०) [अव√स्तम्भ+घञ्] झुकने की क्रिया । सहारा । क्रोध । घमंड । खंभा । सुवर्ण । आरम्भ । ठहरने की क्रिया, रुक जाने की क्रिया । साहस । दृढ़ सङ्कल्प । लकवा । मूर्च्छा, अचेतना ।

अवष्टम्भन—(न०) [अव√स्तम्भ्+ल्युट्] सहारा लेने की क्रिया । सहारा देने की क्रिया । खंभा । जड़ीभूत करना । रुकना ।

अवष्टम्भमय—(वि०) [स्त्री० **अवष्टम्भमयी**] [अवष्टम्भ+मयट्] सुनहला, सोने का बना अथवा खंभे के बराबर ऊँचा ।

अवस—(पुं०) [√अव्+असच्] राजा। सूर्य। आक। आहार। उपाहार। रक्षण।
अवसक्त—[अव√सञ्ज्+क्त] संलग्न। (न०) सम्पर्क।
अवसक्थिका—(स्त्री०) [अवबद्धे सक्थिनी यस्मात् ब० स० कप्] बैठने की एक मुद्रा जिसमें पीठ और घुटनों को बाँधते हैं। इस प्रकार बाँधने का कपड़ा। उंचन।
अवसज्जन—(न०) [अव√सञ्ज्+ल्युट्—अन] आलिंगन। प्रेमालाप।
अवसण्डीन—(न०) [अव—सम्√डी+क्त] पक्षियों का गिरोह बाँध कर ऊपर से एक साथ नीचे की ओर उड़ते हुए आना।
अवसथ—(पुं०)[अव√सो+कथन्] घर। गाँव। पाठशाला, विद्यालय।
अवसथ्य—(पुं०) [अवसथ+यत्] विद्यालय, पाठशाला।
अवसन्न—[अव√सद्+क्त]सुस्त। उदास। अपना कार्य करने में असमर्थ। समाप्त। हारा हुआ (कानून)। नाशोन्मुख।
अवसर—(पुं०) [अव√सृ+अप्] मौका, समय। अवकाश। फुरसत। वर्ष। वृष्टि। उतार। निजी रूप से परामर्श लेने की क्रिया। एक अर्थालंकार।—**प्राप्त**-(वि०)नौकरी की अवधि या सेवाकाल समाप्त हो जाने पर कार्य से पृथक् होने वाला। जिसने नौकरी आदि से अवकाश ग्रहण कर लिया हो (रिटायर्ड)। —**वाद**-(पुं०) प्रत्येक सुअवसर से लाभ उठाने की प्रवृत्ति या नीति (अपारच्युनिज्म)। —**वादिन्**-(वि०) जो किसी स्थिर नीति पर दृढ़ न रह कर प्रत्येक उपयुक्त अवसर से पूरा-पूरा लाभ उठाने का प्रयत्न करे (अपॉरच्युनिस्ट)।
अवसर्ग—(पुं०) [अव√सृज्+घञ्] ढीलापन, छुड़ाव। स्वेच्छानुसार कार्य करने की अनुमति देने की क्रिया। स्वतंत्रता।
अवसर्प—(पुं०) [अव√सृप्+ अच्] जासूस, भेदिया, एलची।
अवसर्पण—(न०) [अव√सृप्+ल्युट्] नीचे उतरने की क्रिया। अधोगमन।
अवसाद—(पुं०) [अव√सद्+घञ्] सुस्ती, शिथिलता। उदासी; 'विपदेऽपि तादवसादकरी' कि० १८-२३। नाश, हानि। समाप्ति। थकावट। हार।
अवसादक—(वि०) [अव√सद्+णिच्+ण्वुल्] मूर्च्छित करने वाला। असफल करने वाला। उदास करने वाला। थकाने वाला।
अवसादन—(न०) [अव√सद्+णिच्+ल्युट्] अवनति। नाश। कार्य करने की अक्षमता। उत्पीड़न। समाप्ति। मरहम-पट्टी करना।
अवसान—(न०) [अव√सो+ल्युट्] रुकावट। समाप्ति। उपसंहार। मृत्यु। रोग। सीमा। विराम, ठहराव। विश्रामस्थान, आवासस्थान।
अवसाय—(पुं०) [अव√सो+घञ्] अन्त। शेष। सम्पूर्णता। संकल्प। निर्णय।
अवसित—(वि०)[अव√सो+क्त] समाप्त। पूर्ण। ज्ञात, जाना हुआ। निश्चित किया हुआ। एकत्र किया हुआ, जमा किया हुआ। नत्थी किया हुआ। बँधा हुआ।
अवसेक—(पुं०) [अव√सिच्+घञ्] छिड़काव, सिंचन। एक नेत्र-रोग।
अवसेचन—(न०) [अव√सिच्+ल्युट्] सींचने की क्रिया, पानी देने की क्रिया। रोगी के शरीर से पसीना निकालने की क्रिया। रक्त निकालने की क्रिया।
अवस्कन्द, (पुं०) **अवस्कन्दन**—(न०) [अव√स्कन्द्+घञ्] [अव√स्कन्द्+ल्युट्] आक्रमण, हमला। ऊपर से नीचे उतरने की क्रिया। शिविर, छावनी।
अवस्कन्दिन्—(वि०) [अव√स्कन्द्+णिनि] आक्रमण या बलात्कार करने वाला। गुंडा। उतरने वाला।
अवस्कर—(पुं०) [अव√कृ+अप्, सुट्] विष्ठा। गुह्याङ्ग। (यथा लिङ्ग, गुदा, योनि) बुहारन, बटोरन।

अवस्तरण—(न०)[अव√स्तृ+ल्युट्] बिछौना ।

अवस्तात्—(अव्य०) [अवरस्मिन् अवरस्मात् अवरम् इत्यर्थे अवर+अस्ताति, अव् आदेशः] नीचे, नीचे से, नीचे की ओर । तले ।

अवस्तार—(पु०) [अव√स्तृ+घञ्] पर्दा । कनात । चटाई ।

अवस्तु—(न०) [न० त०] तुच्छ वस्तु । असलियत नहीं, सारहीनता ।

अवस्था—(स्त्री०) [अव√स्था+अङ्] दशा, हालत । समय, काल । स्थिति । आयु । उम्र ।—**चतुष्टय**-(न०) मनुष्य जीवन की दशायें—[यथा—बाल्य, कौमार, यौवन, वार्धक्य ।]—**त्रय**-(न०) वेदान्तदर्शन के अनुसार मनुष्य की तीन दशाएं [यथा—जागरित, स्वप्न, सुषुप्ति ।]—**दशक**-(न०) प्रेमी की दस अवस्थाएँ—[यथा—अभिलाष, चिंता, स्मृति, गुणकथन, उद्वेग, संलाप, उन्माद, व्याधि, जड़ता, उन्माद ।]—**द्वय**-(न०) जीवन की दो दशाएँ (यथा—सुख और दुःख) ।—**षट्क**-(न०) यास्क के मत से कर्म की ६ अवस्थाएँ- [जन्म, स्थिति, वृद्धि, विपरिणमन (बदलना), अपक्षय, नाश ।]

अवस्थान—(न०) [अव√स्था+ल्युट्] ठहरना । रहना । रहने, ठहरने का स्थान । घर । मौका । ठहरने की अवधि । परिस्थिति ।

अवस्थायिन्—(वि०) [अव√स्था+णिनि] ठहरने वाला । बसने वाला । रहने वाला ।

अवस्थित—[अव√स्था+क्त] रहा हुआ । ठहरा हुआ । दृढ़ । अवलम्बित ।

अवस्थिति—(स्त्री०) [अव√स्था+क्तिन्] दे० 'अवस्थान' ।

अवस्पन्दन—(न०) [अव√स्पन्द्+णिच् +ल्युट्—अन] मारना ।

अवस्यन्दन—(न०) [अव√स्यन्द्+ल्युट्] रिसना, चूना, टपकना ।

अवस्यु—(वि०) [अवः रक्षणं तदिच्छति क्यच् उन्] रक्षण या अनुग्रह की इच्छा करने वाला ।

अवस्रंसन—(न०) [अव√स्रंस्+ल्युट्] नीचे गिरने की क्रिया, अधःपतन ।

अवहति—(स्त्री०) [अव√हन्+क्तिन्] कूटना । कुचलना ।

अवहनन—(न०) [अव√हन्+ल्युट्] छिलका निकालने के लिये धानों के कूटने की क्रिया । फेफड़े । 'वपा वसावहननम्' ।—याज्ञवल्क्य । अवहननम् = फुफ्फुस :—मिताक्षरा ।

अवहरण—(न०) [अव√हृ+ल्युट्] हरण या स्थानान्तरित करना । फेंक देने की क्रिया । चोरी, लूट । सपुर्दगी । कुछ काल के लिये युद्ध कार्य बंद कर देने की क्रिया । अस्थायी सन्धि ।

अवहस्त—(पु०) [अवरं हस्तस्य इति एक-दे० त०] हथेली की पीठ ।

अवहानि—(स्त्री०) [प्रा० स०] हानि, घाटा, नुकसान ।

अवहार—(पु०) [अव√हृ+ण] चोर । शार्क मछली या सूंस । अस्थायी सन्धि । आमंत्रण, बुलावा । स्वधर्मत्याग । फिर मोल ले लेने की क्रिया ।

अवहारक—(पु०) [अव√हृ+ण्वुल्] शार्क मछली या सूंस । (वि०) अवहरण करने वाला । युद्ध बंद करने वाला ।

अवहार्य—[अव√हृ+ण्यत्] ले जाने या स्थानान्तरित किये जाने योग्य । अर्थदण्डनीय । दण्डनीय । फिर मोल लेने योग्य ।

अवहालिका—(स्त्री०) [अव√हल्+ण्वुल्, टाप्, इत्व] दीवाल ।

अवहास—(पु०) [अव√हस्+घञ्] मुसक्यान । हँसी-दिल्लगी, उपहास; 'यच्चावहासार्थमसत्कृतोऽसि' भग० ११·४२ ।

अवहित—(वि०) [अव√ धा+क्त] एकाग्रचित्त । सावधान ।

अव (ब)हित्थ—(न०), **अव (ब) हित्था**—(स्त्री०) [न बहिः तिष्ठति इति√स्था+क पृषो०]मानसिक भाव का दुराव या गोपन ।

इसकी गणना 'संचारी' या व्यभिचारी भाव में है। आकारगुप्ति।
अवहेल, (पुं०) **अवहेला**—(स्त्री०) [अव√हेल्+क (घञर्थे)] [अव√हेल्+अ, टाप्] अवज्ञा, अपमान, तिरस्कार।
अवहेलन, (न०) **अवहेलना**—(स्त्री०) [अव√हेल्+ल्युट्] [अव√हेल्+युच्] दे० 'अवहेल'।
अवाक्—(अव्य०) [अव√अञ्च्+क्विन्] नीचे की ओर। दक्षिण की ओर।—**ज्ञान**,—(न०) अपमान।—**भव**-(वि०) दक्षिणी।—**मुख**-(वि०) [स्त्री०—**मुखी**] नीचे को ओर देखते हुए। सिर के बल।—**शिरस्**-(वि०) नीचे की ओर सिर लटकाये हुये।
अवाक्ष—(वि०) [अवनतानि अक्षाणि यस्य ब० स०] देख-भाल करने वाला, अभिभावक।
अवाग्र—(वि०) [अवनतम् अग्रम् यस्य ब० स०] झुका हुआ, प्रणाम करता हुआ।
अवाच्—(वि०) [नास्ति वाक् यस्य न० ब०] गूंगा, मूक। (न०) ब्रह्म। (वि०) [अव√अञ्च्+क्विन्] नीचे की ओर झुका हुआ। अपेक्षाकृत नीचा। सिर के बल। दक्षिणी।
अवाची—[अवाच्+ङीप्] दक्षिण दिशा। नीचे का लोक।
अवाचीन—(वि०) [अवाच्+ख—ईन] अधोमुख। अधोगत। दक्षिणी।
अवाच्य—(वि०) [√वच्+ण्यत्, न० त०] जो कहने योग्य न हो। बुरा। जो ठीक या स्पष्ट न हो। जो शब्दों द्वारा प्रकट न किया जा सके; 'अवाच्यं वदतो जिह्वा कथं न पतिता तव' वा।—**देश**, (पुं०) भग, योनि।
अवाञ्चित—(वि०) [अव√अञ्च्+क्त] झुका हुआ, नीचा।
अवान—(वि०) [अव√अन्+अच्] सूखा हुआ।
अवान्तर—(वि०) [अत्या० स०] मध्यवर्ती। अन्तर्गत, शामिल। गौण। फालतू।
अवापित—(वि०) [√वप्+णिच्+क्त, न० त०] न बोया हुआ।

अवाप्ति—(स्त्री०) [अव√आप्+क्तिन्] प्राप्ति, उपलब्धि।
अवाप्य—[अव√आप्+ण्यत्] प्राप्त करने योग्य।
अवार—(पुं० न०) [न वार्यते जलेन इति विग्रहे√वृ+ घञ्, न० त०] समीप का नदीतट, निकटवर्ती नदीतट। इस ओर।—**पार**-(पुं०) समुद्र।—**पारीण**-(वि०) [अवारपार+ख—ईन] समुद्र का या समुद्र से सम्बन्ध रखने वाला। नदी पार करने वाला।
अवारीण—(वि०) [अवार+ख—ईन] नदी पार करने वाला।
अवावट—(पुं०) किसी स्त्री का वह पुत्र जो उस स्त्री की जाति के किसी पुरुष के (पति को छोड़) वीर्य से उत्पन्न हुआ हो। द्वितीयेन तु यः पित्रा सवर्णायां प्रजायते। "अवावट" इति ख्यातः शूद्रधर्मा स जातितः॥
अवावन्—(पुं०) [√श्रोण्+क्वनिप्] चोर, चुराकर ले जाने वाला।
अवासस्—(वि०) [नास्ति वासो यस्य न० ब०] नंगा, जो कपड़े पहिने हुए न हो। (पुं०) दिगंबर जैन।
अवास्तव—(वि०) [स्त्री०—**अवास्तवी**]—[न० त०] जो असली न हो। निराधार। अलौकिक।
अवि—(पुं०) [√अव+इन्] स्वामी। मेघ। बकरा। आक। सूर्य। पर्वत। वायु। कंबल। दीवाल। चूहा। (स्त्री०) भेड़। रजस्वला स्त्री।—**दुग्ध**-(न०) भेड़ी का दूध।—**पट**(पुं०) भेड़ी का चाम। ऊनी वस्त्र।—**पाल**-(पुं०) गड़ेरिया।—**स्थल**-(न०) भेड़ों की जगह। एक नगर का नाम। "अविस्थलं वृकस्थलं माकन्दीं वारणावतम्"—महाभारत।
अविक—(पुं०) [अवि+कन्] भेड़ा. (न०) हीरा।
अविकट—(पुं०) [अवीनां संघातः इत्यर्थे अवि+कटच्] भेड़ों का गिरोह।—**उरण**-(अविकटोरण) (पुं०) एक प्रकार का राजकर जिसमें भेड़ें दी जाती हैं।

अविका—(स्त्री०) [अविक+टाप्] भेड़ी।

अविकत्थ—(वि०) [न० ब०] जो शेखी न मारता हो, जो अभिमान न करता हो।

अविकत्थन—(वि० [न० ब०] जो घमंडी न हो, जो अकड़बाज न हो।

अविकल—(वि०) [न० त०] समूचा, पूरा, सब, ज्यों का त्यों। व्यवस्थित। गड़बड़ नहीं। बे-चैन नहीं।

अविकल्प—(वि०) [न० ब०] विकल्प-रहित। निश्चित। अपरिवर्तनशील। (पुं०) [न० त०] सन्देह का अभाव।

अविकार—(वि०) [न० ब०] जिसमें विकार न हो, जो अपरिवर्तनशील हो। (पुं०) [न० त०] विकार का अभाव, अपरिवर्तनशीलता।

अविकृति—(स्त्री०) [न० त०] परिवर्तन का अभाव, विकार का अभाव। (सांख्य दर्शन में) प्रकृति जो इस संसार का कारण मानी जाती है; "मूलप्रकृतिरविकृतिः"।

अविक्रम—(वि०) [न० ब०] शक्तिहीन, निर्बल। (पुं०) [न० त०] भीरुता, कायरता।

अविक्रिय—(वि०) [नास्ति विक्रिया यस्मिन् न० ब०] अविकारी। (न०) ब्रह्म।

अविक्षत—(वि०) [न० त०] जिसकी क्षति न हुई हो। जो कम नहीं हुआ, समूचा।

अविगीत—(वि०) [न० त०] अनिन्दित।

अविगुण—(वि०) [न० त०] उपयुक्त।

अविग्न—(वि०) [√विज्+क्त, न० त०] फलदार वृक्ष।

अविग्रह—(वि०) [न० ब०] शरीर-रहित। (पुं०) (व्याकरण का) नित्य समास। परमात्मा।

अविघात—(वि०) [न० ब०] बाधारहित, बिना अड़चन का।

अविघ्न—(वि०) [न० ब०] बिना विघ्न-बाधा का। (न०) विघ्नबाधा का अभाव (यह शब्द नपुंसक है, हालाँ कि "विघ्न" पुँल्लिङ्ग है) "साधयाम्यहमविघ्नमस्तु ते"—रघुवंश। अविघ्न मस्तु ते स्थेयाः पितेव धुरि पुत्रिणां।—रघुवंश।

अविचार—(वि०) [न० ब०] विचार-शून्य, अविवेकी। (पुं०) [न० त०] अवि-वेक, ना-समझी। अन्याय, अनीति।

अविचारित—(वि०) [न० त०] बिना विचारा हुआ, जिसके विषय में विचार न किया गया हो।—**निर्णय** (पुं०) पक्षपात, पक्षपातपूर्ण सम्मति।

अविचारिन्—(वि०) [विचार+इनि, न० त०] उचित अनुचित का विचार न रखने वाला। लापरवाह, असावधान।

अविज्ञातृ—(वि०) [वि√ज्ञा+तृच्, न० त०] न जानने वाला, अज्ञ। (पुं०) परमात्मा।

अविडीन—(न०) [वि√डी+क्त, न० त०] पक्षियों की सीधी उड़ान।

अवितथ—(वि०) [न० त०] झूठा नहीं, सच्चा; 'अवितथमाह प्रियंवदा' श० ३। कार्य में परिणत किया हुआ, फलरहित नहीं। (न०) [न० त०] सचाई। (अव्य०) झुठाई से नहीं, सचाई के अनुसार।

अवित्यज—(पुं० न०) [वि√त्यज्+क (बा०) न० त०] पारा, पारद।

अविदूर—(वि०) [न० त०] दूर नहीं, समीप, निकट, पास। (न०) निकटता, सामीप्य। (अव्य०) (किसी स्थान से) दूर नहीं, (किसी स्थान के) निकट।

अविदूस, अविमरीस, अविसोढ—(न०) [अवि+दूसच्, मरीसच्, सोढच्] भेड़ी का दूध।

अविद्य—(वि०) [नास्ति विद्या यस्य न० ब०] अशिक्षित, अपढ़, मूर्ख।

अविद्या—(स्त्री०) [√विद्+क्यप्, न० त०] अज्ञानता, मूर्खता, शिक्षा का अभाव। आध्यात्मिक अज्ञान। माया।—**मय** (वि०) [अविद्या+मयट्] अविद्या से पूर्ण, महा-अज्ञानी।

अविधवा—(स्त्री०) [न० त०] जो विधवा न हो, स्त्री जिसका पति जीवित हो।

अविधा—(अव्य०) [?] सम्बोधनात्मक होने पर "सहायता करो, सहायता करो" कहने के लिये प्रयुक्त किया जाता है। [न० त०] प्रकार का अभाव ।

अविधेय—(वि०) [न० त०] जो अपने मान का या शत्रु का न हो। न करने योग्य। प्रतिकूल ।

अविनय—(वि०) [न० ब०] विनयहीन, धृष्ट, उद्दण्ड । (पुं०) विनय का अभाव, धृष्टता, ढिठाई, उद्दण्डता; 'अयमाचरत्यविनयं मुग्धासु तपस्विकन्यासु' श० १.२५ अपराध, जुर्म, दोष । अभिमान, अकड़ ।

अविनाभाव—(पुं०) [विना ऋते भावः स्थितिः न] अवियोग, अविच्छेद । ऐसा सम्बन्ध जो कभी छूट न सके (जैसे आग और धुएँ का)। सम्बन्ध, लगाव ।

अविनीत—(वि०[न० त०] जो नम्र न हो। दुर्दान्त । उद्दण्ड, गँवार ।

अविन्धन—(पुं०) बाड़वाग्नि । बिजली ।

अविपट—(पुं०) [अवि+पटच्] भेड़ों का विस्तार ।

अविभक्त—(वि०) [न० त०] अविभाजित, सम्मिलित । अभङ्ग, समूचा ।

अविभाग—(वि०) [न० ब०] जो बँटा हुआ न हो, अविभक्त । (पुं०) [न० त०] विभाग या खंड का अभाव ।

अविभाज्य—(वि०) [न० त०] जो बँट न सके । (न०) वे चीजें जो बटवारे के समय बाँटी नहीं जातीं । यथा—'वस्त्रं पात्रमलङ्कारं कृतान्नमुदकं स्त्रियः । योगक्षेमं प्रचारं च न विभाज्यं प्रचक्षते ॥'—मनु अ० ६ श्लो० २१६ ।

अविमुक्त (न०) [वि√मुच्+क्त, न० त०] (पंचकोशी सहित) काशी । (वि०) अमुक्त, बद्ध ।

अविरत—(वि०) [न० त०] निरन्तर, विराम शून्य 'मन्दोऽप्यविरतोद्योगः सदैव विजयी भवेत्' नीतिवचन । अनिवृत्त, लगा हुआ ।

अविरति—(वि०) [न० ब०] निरन्तर, सतत । (स्त्री०) [न० त०] सातत्य, निरन्तरता । असंयतता ।

अविरल—(वि०) [न० त०] घना, सघन। संसक्त । अव्यवहित । स्थूल, मोटा । (अव्य०) ध्यान से । निरन्तरता से ।

अविरोध—(पुं०) [न० त०] विरोध का अभाव, अनुकूलता । सुसङ्गति ।

अविलम्ब—(वि०) [न० ब०] विलंब या देर से रहित । (पुं०) [न० त०] विलम्ब का अभाव, शीघ्रता । (अव्य०)शीघ्रता से ।

अविलम्बित—(वि०) [न० त०] विलम्ब से रहित, शीघ्र । (अव्य०) शीघ्रता से ।

अविला—(स्त्री०) [√अव्+इलच्] भेड़ ।

अविवक्षित—(वि०) [√वच्+सन्+क्त, न० त०] जिसके विषय में इरादा न किया गया हो या जो अपना उद्दिष्ट न हो । जो बोलने या कहे जाने को न हो ।

अविविक्त—(वि०) [न० त०] जो भली भाँति विचारा न गया हो, अविचारित । भेदरहित ।

अविवेक—(वि०) [न० त०] अविचारी, नादान, विचारहीन । (पुं०) विचार का अभाव, नादानी, अज्ञान । जल्दबाजी, उतावलापन ।

अविशङ्क—(वि०) [न० त०]शंकारहित । निर्भय, निडर (अव्य०) बिना सन्देह या सङ्कोच के ।

अविशङ्का—(स्त्री०) [न० त०] भय का अभाव । सन्देह का अभाव । विश्वास, भरोसा ।

अविशङ्कित—(वि०)[न० त०] निःशङ्क । निडर । निस्सन्देह ।

अविशेष—(वि०) [न० त०] बिना किसी अन्तर या फर्क का, समान, बराबर, सदृश । (पुं०) [न० त०] अन्तर या भेद का अभाव,

समानता, सादृश्य। (न०) सूक्ष्म भूत (सांख्य)। —**सम**-(०पु) जाति के चौबीस भेदों में से एक (न्या०)।
अविष—(वि०) [न० त०] विषहीन, जो जहरीला न हो। (पु०) [√ अव्+टिषच्] समुद्र। राजा। (वि०) रक्षक।
अविषी—(स्त्री०) [√अव्+टिषच्, ङीप्] नदी। पृथिवी। स्वर्ग।
अविषय—(वि०) [न० ब०] अगोचर। अप्रतिपाद्य अनिर्वचनीय। विषयशून्य, (पुं०) [न० त०] अनुपस्थिति, अविद्यमानता। परे या पहुँच के बाहर होना।
अवी—(स्त्री०) [अवति आत्मानं लज्जया इत्यर्थे√अव+ई] रजस्वला स्त्री। बन-स्थी।
अवीचि—(वि०) [न० ब०] लहरों से हित। (पु०) नरक विशेष।
अवीर—(वि०) [न० त०] जो वीर न हो, कायर। [न० ब०] जिसके कोई पुत्र न हो।
अवीरा—(स्त्री०) [न० ब०, टाप्] वह स्त्री जिसके न कोई पुत्र हो और न पति ही हो।
अवृत्ति—(वि०) [न० त०] जिसका अस्तित्व न हो, जो हो ही न। जिसकी कोई जीविका न हो। (स्त्री०) [न० त०] वृत्ति का अभाव, जीविका का कोई वसीला न होना। स्थिति का अभाव।
अवृथा—(अव्य०) [न० त०] व्यर्थ नहीं, सफलतापूर्वक। —**अर्थ** (**अवृथार्थ**)-(वि०) सफल।
अवृष्टि—(स्त्री०) [न० त०] मेह का अभाव, अनावृष्टि, सूखा, अकाल।
अवेक्षक—(वि०) [अव√ईक्ष्+ण्वुल्] अवेक्षण या निरीक्षण करने वाला।
अवेक्षण—(न०) [अव√ईक्ष्+ल्युट्] किसी ओर देखना। पहरा देना, रखवाली करना। ध्यान, खबरदारी।
अवेक्षणीय—[अव√ईक्ष्+अनीयर्] देखने योग्य। निरीक्षण के योग्य। जाँच के योग्य, परीक्षा के योग्य।
अवेक्षा—(स्त्री०) [अव√ईक्ष्+अ, टाप्] दे० 'अवेक्षण'।
अवेद्य—(वि०) [√विद्+ण्यत्, न० त०] जो जानने योग्य नहीं, योग्य। जो प्राप्त न हो सके। (पु०) बछड़ा।
अवेल—(वि०) [नास्ति वेला यस्य न० ब०] असीम, जिसकी सीमा न हो। कुसमय का। (पु०) [√वेल्+घञ् न० त०] ज्ञान का दुराव।
अवेला—(स्त्री०) [न० त०] प्रतिकूल समय
अवैध—(वि०) स्त्री०—**अवैधी**-[न० त०] अनियमित, नियम या आर्डर के विरुद्ध। शास्त्रविरुद्ध। —**आचरण**—(**अवैधाचरण**) (न०) विधि या कानून के विरुद्ध किया जाने वाला व्यवहार या आचरण (इल्लीगल प्रैक्टिस)।
अवैमत्य—(न०) [न० त०] ऐक्य, एकता।
अवोक्षण—(न०) [अव√उक्ष्+ल्युट्] हाथ टेढ़ा कर पानी छिड़कना। —'उत्तानेनैव हस्तेन प्रोक्षणं परिकीर्तितम्। न्यञ्चताभ्युक्षणं प्रोक्तं तिरश्चावोक्षणं स्मृतम्॥'
अवोद—(पु०) [अव√उन्द्+घञ् नि० नलोप] छिड़काव, नम करने की क्रिया।
अव्य—(वि०) [अवि+यत् (भवार्थे)] भेड़ से उत्पन्न या भेड़ संबंधी।
अव्यक्त—(वि०) [वि०√ अञ्ज्+क्त, न० त०] अस्पष्ट। जो प्रत्यक्ष न हो, अगोचर। अज्ञेय; 'अव्यक्तोऽयमचिन्त्योऽयम्' भग० अचिन्त्य। अनुत्पन्न। (बीजगणित में)। अनवगत राशि (पु०) विष्णु का नाम। शिव का नाम। कामदेव। प्रधान, प्रकृति। मूर्ख। (न०) (वेदान्त दर्शन में)। ब्रह्म। आध्यात्मिक अज्ञानता। (सांख्य) सर्वकारण। जीव। (अव्य०) अस्पष्टता से। —**क्रिया**—(स्त्री०) बीजगणित की एक क्रिया। —**पद**-(वि०) वह पद जो तात्वादि प्रयत्नों से न बोला जा सके (जैसे-जीव जन्तुओं की बोली)। —**राग**-(पुं०) थोड़ा लाल, गुलाबी। —**राशि**-

(बीजगणित में) वह राशि जिसका मान निश्चित न हो।—लक्षण,—व्यक्त- (पुं०) शिव की उपाधि।

अव्यग्र—(वि०) [न० त०] जो घबड़ाया हुआ न हो। शान्त। दृढ़। जो किसी व्यापार में संलग्न न हो।

अव्यङ्ग—(वि०) [न० त०] जो टेढ़ा-मेढ़ा न हो, सीधा। जिसमें कुछ त्रुटि या कमी न हो, भली भाँति निर्मित। सम्पूर्ण।

अव्यञ्जन—(वि०) [न० त०] चिह्न-रहित। अस्पष्ट। (पुं०) ऐसा पशु जिसकी उम्र के विचार से सींग होने चाहिये, किन्तु सींग हों न।

अव्यथ—(वि०) [नास्ति व्यथा यस्य न० ब०] पीड़ा से मुक्त (पुं०) [न व्यथते (पद्भ्यां न चलति) इति√व्यथ्+अच्, न० त०] सर्प, साँप।

अव्यथिन्—(पुं०) [बहुचलनेऽपि न व्यथते इति√व्यथ्+इनि न० त०] घोड़ा।

अव्यथिष—(पुं०) [√व्यथ् +टिषच्, न० त०] सूर्य। समुद्र।

अव्यथिषी—(स्त्री०) [अव्यथिष+ङीप्] पृथ्वी। अर्धरात्रि।

अव्यभिचार—(पुं०) [न० त०] अविच्छेद, अविद्रोह, यथार्थता; 'अन्योन्यस्याव्यभिचारो भवेदामरणान्तिक।' वफादारी, नमक-हलाली।

अव्यभिचारिन्—(वि०) [न० त०] अनु-कूल। सब प्रकार से सत्य। धर्मात्मा, पवित्र। स्थायी। वफादार।

अव्यय—(वि०) [वि०√इण्+अच्, न० ब०] अपरिवर्तनशील, सदा एक रस रहने वाला। जो व्यय न किया गया हो। मितव्ययी या कंजूस। अक्षय; ; 'विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित्कर्तुमर्हति' भग० नित्य।(पुं०) विष्णु का नाम। शिव का नाम। (न०) ब्रह्म। व्याकरण का वह शब्द जिसका सब लिङ्गों, सब विभक्तियों और सब वचनों में समान रूप से प्रयोग हो।

अव्ययीभाव—(पुं०) [अनव्ययम् अव्ययम् भवति अनेन इति विग्रहे अव्यय+च्वि√भू +घञ् (करणे)] समास विशेष, वह समास प्रायः पूर्वपदप्रधान होता है, यह या तो विशेषण या क्रियाविशेषण होता है। अनष्टता, अनश्वरता। व्यय या खर्च का अभाव। (धनहीनता वश)

अव्यलीक—(वि०) [न० त०] झूठा नहीं, सच्चा। अनुकूल, प्रिय।

अव्यवधान—(वि०) [न० ब०] समीप का। अंतररहित। खुला हुआ। बेढका हुआ। असावधान। (न०) [न० त०]असावधानता, अमनोयोगिता। लगाव। सामीप्य।

अव्यवस्थ—(त्रि०) [नास्ति व्यवस्था यस्य न० ब] जो (एक स्थान पर) नियत न हो, हिलने-डुलने वाला। अचिरस्थायी। अनिय-मित।

अव्यवस्था—(स्त्री०) [न० त०] अनिय-मितता, निर्धारित नियम के विरुद्ध आचरण। किसी धार्मिक विषय पर या दीवानी मामले में दी हुई अनुचित सम्मति।

अव्यवस्थित—(वि०)[न० त०] व्यवस्था-हीन। शास्त्र-मर्यादा के विरुद्ध। चञ्चल, अस्थिर। क्रम में नहीं, विधिपूर्वक नहीं।

अव्यवहार्य—(त्रि०) [न० त०] व्यवहार के अयोग्य, जो काम में न लाया जा सके। जो अपनी जाति वालों के साथ खाने-पीने और उठने-बैठने का अधिकारी न हो, जाति-बहिष्कृत। जिस पर मुकदमा न चलाया जा सके।

अव्यवहित—(वि०) [न० त०] व्यवधान-रहित, साथ, लगा हुआ।

अव्याहृत—(वि०) [न० त०] अप्रकट। कारणरूप।(न०) वेदान्त में अप्रकट बीज रूप जगत्कारण अज्ञान। सांख्यदर्शन में प्रधान।—धर्म-(पुं०) वह स्वभाव जिसमें शुभ और अशुभ दोनों प्रकार के काम किये जा सकें (बौद्ध०)।

अव्याज—(पुं०) [न० त०]छल-कपट का अभाव। ईमानदारी। सादगी। (वि०) [न० ब०]बिना छल-कपट का। प्राकृतिक; 'इदं किलाव्याजमनोहरं वपुः' श० १.१८

अव्यापक—(वि०) [न० त०] जो व्यापी न हो, जो सब जगह न पाया जाय। परिच्छिन्न।

अव्यापार—(वि०)[न० त०] जिसका कोई व्यापार न हो, बिना व्यवसाय-धंधे का, बेकाम, निठल्ला। (पुं०) [न० त०] कार्य से निवृत्ति। ऐसा व्यापार जो न तो किया जाय और न समझ में आवे। निज का धंधा नहीं।

अव्याप्ति—(स्त्री०) [न० त०] व्याप्ति का अभाव। नव्य न्यायानुसार लक्ष्य पर लक्षण के न घटने का दोष। "लक्ष्यैकदेशे लक्षणस्यावर्तनमव्याप्तिः।"

अव्याप्य—(वि०) [वि०√आप्+ण्यत् न० त०] व्याप्तिरहित, जो सारी स्थिति के लिये लागू न हो।—**वृत्ति**-(स्त्री०) वह वृत्ति जो देश-काल की दृष्टि से सीमित हो, व्यापक न हो (जैसे-सुख-दुख, द्वेष-प्रीति आदि)।

अव्याहत—(वि०) [न० त०] व्याघात-रहित, बेरोकटोक का, अप्रतिरुद्ध। जो खण्डित न हो, अटूट।

अव्युत्पन्न—(वि०) [वि०—उत्√पद्+क्त, न० त०] अनभिज्ञ, अनाड़ी, अकुशल। व्याकरण के मतानुसार वह शब्द जिसकी व्युत्पत्ति अथवा सिद्धि न हो सके। (पुं०) व्याकरणज्ञानशून्य व्यक्ति।

अव्रत—(वि०)[न० ब०] जो निर्दिष्ट धर्म्मानुष्ठान या व्रतोपवास न करता हो।

√अश्—स्वा० आत्म० अक० फैलना, व्याप्त होना। अश्नुते, अशिष्यते—अक्ष्यते, आशिष्ट—आष्ट। क्र्या० पर० सक० खाना। अश्नाति, अशिष्यति, आशीत।

अशकुन—(न०) [न० त०] असगुन, बुरा शकुन।

अशक्ति—(स्त्री०) [न० त०] कमजोरी, निर्बलता। असमर्थता। अयोग्यता, अपात्रता। बुद्धि का बे-काम होना।

अशक्य—(वि०) [न० त०] जो न हो सके, असाध्य। जो काबू में न किया जा सके।

अशङ्क, अशङ्कित–(वि०) [नास्ति शङ्का यस्य न० ब०] [न शङ्कितः न० त०] निडर, निर्भय। जिसको किसी प्रकार का सन्देह न हो। निरापद।

अशन—(न०) [√अश्+ल्युट्] व्याप्ति, फैलाव। भोजन करने की क्रिया। चखना। भोजन। [√अश्+ल्यु] चित्रक वृक्ष। भिलावाँ।—**पर्णी**-(स्त्री०) पटसन।

अशना—(स्त्री०) [अशनम् इच्छति इत्यर्थे अशन+क्यच+क्विप्] भोजनेच्छा, भूख।

अशनाया—(स्त्री०) [अशनम् इच्छति इति अशन+क्यच् (ना० धा०)+स्त्रियां भावे अ, टाप्] भूख।

अशनायित, अशनायुक–(वि०) [अशन+क्यच्+क्त (कर्तरि) पक्षे उकञ्] भूखा।

अशनि—(पुं० स्त्री०) [√अश्+अनि] इन्द्र का वज्र। बिजली की कौंधा। फेंक कर मारने का अस्त्र, भाला, बरछी आदि। ऐसे अस्त्र की नोक। (पुं०) इन्द्र। अग्नि। बिजली से उत्पन्न अग्नि।

अशब्द—(वि०) [न० ब०] जो शब्दों में व्यक्त न हुआ है। मूक। शब्द रहित। अवैदिक। (न०) ब्रह्म। (सांख्य में) प्रधान।

अशरण—(वि०)[न० ब०]अनाथ, निराश्रय, बेपनाह।

अशरीर—(पुं०)[न० ब०] परमात्मा, ब्रह्म। कामदेव। संन्यासी। (वि०) शरीर रहित।

अशरीरिन्—(वि०)[शरीर+इनि, न० त०] शरीर-हीन। अपार्थिव।

अशास्त्र—(वि०) [न० ब०] धर्मशास्त्र के विरुद्ध। नास्तिक दर्शन वाला।

अशास्त्रीय—(वि०) [शास्त्र+छ—ईय, न० त०] शास्त्रविरुद्ध।

अशित—[√अश्+क्त] खाया हुआ। सन्तुष्ट। उपभुक्त।

अशितङ्गवीन—(वि०) [अशिताः तृप्ताः गावो यत्र] पूर्व में मवेशियों या पशुओं द्वारा चरा हुआ। पशुओं के चरने का स्थान, चरागाह।

अशितम्भव—(न०) खाने का पदार्थ।

अशित्र—(पु०) [√अश्+इत्र] चोर। चावल की बलि।

अशिर—(पु०) [न० ब० ?] अग्नि। सूर्य। हवा। एक राक्षस। (न०) हीरा।

अशिरस्—(वि०) [न० ब०] सिरहीन। (पुं०) बेसिर का धड़, कबन्ध।

अशिव—(वि०) [न० ब०] अमङ्गल, अमङ्गलकारी, अशुभ। अभागा, बदकिस्मत। (न०) [न० त०] अभाग्य, बदकिस्मती। उपद्रव।

अशिश्विका, अशिश्वी—(स्त्री०) [नास्ति शिशुः यस्याः न० ब० ङीप्, पक्षे स्वार्थे कः ह्रस्व, टाप्] निःसंतान स्त्री। बिना बच्चे की गाय।

अशिष्ट—(वि०) [न० त०] असाधु, दुःशील, अविनीत, उजड्ड, बेहूदा। शास्त्रसम्मत नहीं। किसी प्रामाणिक ग्रन्थ में न पाया जाने वाला।

अशीत—(वि०[न० त०] जो ठंढा न हो, गर्म, उष्ण।—**कर**,—**रश्मि**-(पु०) सूर्य।

अशीति—(स्त्री०)[दशानाम् अवयवः दशतिः, दशकम् अष्टगुणिता दशतिः नि०, अशीत्यादेशः] अस्सी, ८०।

अशीतिक—(वि०) [अशीति+कन्] अस्सी वर्ष का।

अशीर्षक—(वि०) [न० ब० कप्] दे० 'अशिरस्'।

अशुचि—(वि०) [न० ब०] जो साफ न हो, मैला, गंदा। अशुद्ध। काला। (स्त्री०) [न० त०] अपवित्रता। सूतक। अधःपात।

अशुद्ध—(वि०) [न० त०] अपवित्र, गलत।

अशुद्धि—(वि०) [न० ब०] अपवित्र। गंदा। दुष्ट। (स्त्री) [न० त०] अपवित्रता, गंदगी। गलती।

अशुभ—(वि०) [न० ब०] अमङ्गलकारी, अकल्याणकर। अपवित्र, गंदा। अभागा। (न०) [न० त०] अमङ्गल। पाप। अभाग्य, विपत्तिः 'मावै कुतस्त्वय्यशुभम्प्रजानाम्' र० ५.१३।

अशून्य—(वि०) [न० त०] जो खाली या रीता न हो। परिपूर्ण, पूर्ण किया हुआ।

अशृत—(वि०) [न० त०] बिना पकाया हुआ, कच्चा, अनपका।

अशेष—(वि०) [न० ब०] जिसमें कुछ भी न बचे, पूर्ण, समूचा, समस्त, परिपूर्ण।

अशेषम्,—**अशेषतः**-(अव्य०) [क्रि० वि० सामान्ये नपुंसकम्] [अशेष+तसि] सम्पूर्ण रूप से।

अशोक—(वि०) [न० ब०] शोकरहित। (पु०) एक पेड़ जिसकी पत्तियाँ लहरदार और सुंदर होती हैं और विशेषकर बंदनवार बाँधने में काम आती हैं। मौर्य वंश का एक यशस्वी सम्राट्। विष्णु। (न०) अशोक वृक्ष का फूल जो कामदेव के पाँच शरों में से एक माना जाता है। पारा, पारद।—**अरि** (**अशोकारि**)-(पु०) कदंब वृक्ष। —**अष्टमी** (**अशोकाष्टमी**)—(स्त्री०) चैत्र—कृष्णा अष्टमी। —**तरु**, —**नग**, —**वृक्ष**-(पु०) अशोक का पेड़।—**त्रिरात्र**-(पु० न०) तीन रात व्यापी व्रत या उत्सव-विशेष।—**पूर्णिमा** -(स्त्री०) फाल्गुन की पूर्णिमा।—**मञ्जरी**-(स्त्री०) एक छंद। अशोक का पुष्प।—**रोहिणी**—(स्त्री०) कटुकी। —**वाटिका**-(स्त्री०) अशोक की बाड़ी। वह बगीचा जहाँ रावण ने सीता को कैद कर रखा था।—**षष्ठी**-(स्त्री०) चैत्र-शुक्ला-षष्ठी।

अशोच्य—वि०) [न० त०] शोच करने या शोकान्वित होने के अयोग्य, जिसके लिए शोक करना उचित नहीं; 'अशोच्यानन्वशोचस्त्वम्' भग० २.११।

अशौच—(न०) [न० त०] अपवित्रता, गंदगी, मैलापन। जनन या मरण का सूतक।—

सङ्कुर–(पु॰) दो या अधिक अंगोचों का एक में मिल जाना।

अश्नीतपिबता—(स्त्री॰) [अश्नीत पिबत इत्युच्यते यस्यां निर्देशक्रियायां मयू॰ स॰] न्योता जिसमें आमंत्रित जन खिलाये-पिलाये जाते हैं।

अश्मक—(पु॰) [अश्म इव स्थिरः, इवार्थे कन्] एक ऋषि। एक प्राचीन जनपद, त्रिवाङ्कुर। वहाँ के निवासी।

अश्मन्—(पु॰) [अश्नुते व्याप्नोति संहन्ति अनेन वा इति√अश्+मनिन् (कर्तरि करणे वा)] पत्थर। चकमक पत्थर। बादल। कुलिश, वज्र। **—उत्थ (अश्मोत्थ)**–(न॰) शिलाजीत, राल। **—कुट्ट, —कुट्टक**–(वि॰) पत्थर पर कोड़ा हुई (कोई भी चीज़)। **—गर्भ—, —गर्भज**–(पु॰) (न॰), **—योनि**–(पु॰) पन्ना। **—ज**–(पु॰ न॰) गेरू। लोहा। **—जतु, —जतुक**–(न॰) राल। **—जाति**–(पु॰) पन्ना। **—दारण**–(पु॰) हथौड़ा जिससे पत्थर तोड़े जाते हैं। **—पुष्प**–(न॰) राल। **— भाल**–(न॰) पत्थर या लोहे का इमामदस्ता या खरल। **—सार**–(न॰ पु॰) लोहा। पुखराज, नीलमणि।

अश्मन्त—(न॰) [अश्मनः अन्तः अत्र शक॰ पररूपम्] अलाव, वह स्थान जहाँ आग जलाकर रखी जाय। क्षेत्र, मैदान। मृत्यु।

अश्मन्तक—(पु॰ न॰) [अश्मानम् अन्तयति इति अश्मन्√अन्त् + णिच् + ण्वुल्] अलाव, अग्नि-कुण्ड। —(पु॰) एक पौधे का नाम जिसके रेशों से ब्राह्मणों का कटिसूत्र बनाया जाता है।

अश्मरी—(स्त्री॰) [अश्मानं राति इति√रा+क, ङीप्] पथरी का रोग। **—घ्न, —भेदन**–(पु॰) वरुण वृक्ष।

अस्र—(न॰) [अश्नुते नेत्रं कण्ठं वा इति√अश्+रक्] आँसू। रक्त। **—प**–(वि॰) [अस्र√पा+क] खून पीने वाला। (पु॰) राक्षस।

अश्रवण—(वि॰) [न॰ ब॰] बहरा, जिसके कान न हों। (पु॰) सर्प, साँप।

अश्राद्धभोजिन्—(वि॰) [श्राद्ध√भुज्+णिनि न॰ त॰] जिसने श्राद्धान्न न खाने का व्रत धारण किया हो।

अश्रान्त—(वि॰) [न॰ त॰] जो थका हुआ न हो, अथक। लगातार, निरन्तर। (अव्य॰) लगातार या निरन्तर रीति से।

अश्रि, अश्री–(स्त्री॰) [√अश्+क्रि पक्षे ङीष्] कोना, कोण। किसी हथियार का वह किनारा जो पैना होता है। किसी भी वस्तु का पैना किनारा, 'वृत्रस्य हन्तुः कुलिशं कुण्ठिताश्रीव लक्ष्यते' कु॰ २.२०।

अश्रीक, अश्रील–(वि॰) [न॰ ब॰ कप्] [न श्रीः न॰ त॰ मत्वर्थे रः तस्य लः] जिसमें चमक या सौन्दर्य न हो। अभागा, जो समृद्धिशाली न हो।

अश्रु—(न॰) [अश्नुते व्याप्नोति नेत्रम् अदर्शनाय इति√अश्+क्रुन्] आँसू। **—उपहत (अश्रूपहत)** -(वि॰) आँसुओं से भरा हुआ। **—कला**–(स्त्री) आँसू की बूँद। **—परिप्लुत**–(वि॰) आँसुओं से तर, आँसुओं से नहाया हुआ। **—पात**–(पु॰) आँसुओं का बहना। **—मुख**–(वि॰) रुआँसा। एकाएक रो पड़ने वाला। **—लोचन, —नेत्र**–(वि॰) आँखों में आँसू भरे हुए।

अश्रुत—(वि॰) [√श्रु+क, न॰ त॰] जो सुना न गया हो, जो सुनाई न पड़े। [न॰ ब॰] मूर्ख, अशिक्षित।

अश्रेयस—(वि॰) [न॰ त॰] अपेक्षाकृत जो उत्कृष्ट न हो। अपकृष्टतर (न॰) उपद्रव। दुःख। अकल्याण।

अश्रौत—(वि॰) [न॰ त॰] वेदविरुद्ध।

अश्लील—(वि॰) [श्रियं लाति गृह्णाति इति √ला+क रस्य लत्वम्, न॰ त॰] अप्रिय। कुरूप। गँवारू, फूहर, भद्दा। कुवाच्य। (न॰) फूहर बोलचाल, बुरी गाली गलौज।

अश्लेषा—(स्त्री०)[पश्चोत्पन्न: शिशु: षाण्मास पित्रादिभि: न: श्लिष्यते आलिङ्ग्यते इति√ श्लिष्+घञ् न० त०] नवाँ नक्षत्र। अन-मिल, अनैक्य।—**ज**,—**भव**,—**भू**—(पुं०) केतुग्रह का नाम।

अश्व—(पुं०) [√अश्+क्वन्] घोड़ा। सात की संख्या। मानवीय जाति विशेष। (जिसमें घोड़े जितना बल होता है)।—**अजनी**, (**अश्वाजनी**)—(स्त्री०) चाबुक, कोड़ा।—**अधिक**,(**अश्वाधिक**)—(वि०) जो घुड़सवारों की सेना में बढ़ा हो। जिसके पास घोड़े अधिक हों।—**अध्यक्ष**, (**अश्वाध्यक्ष**)—(पुं०) घुड़सवारों की सेना का नायक या (कमाण्डर)।—**अनीक**, (**अश्वानीक**)—(न०) घुड़सवारों की सेना।—**अरि**, (**अश्वारि**)—(पुं०) भैंसा।—**आयुर्वेद**, (**अश्वायुर्वेद**)—(पुं०) अश्व-चिकित्साशास्त्र, सालहोत्र।—**आरोह**, (**अश्वारोह**)—(पुं०) घुड़सवार।—**उरस्**, (**अश्वोरस्**)—(वि०) घोड़े की तरह चौड़ा छाती वाला।—**कर्ण**, —**कर्णक**—(पुं०) शालवृक्ष का भेद। घोड़े का कान।—**कुटी**—(स्त्री०) अस्तबल।—**कुशल**,—**कोविद**—(वि०) घोड़ों को वश में करने की कला में कुशल।—**खरज**—(पुं०) खच्चर।—**खुर**—(पुं०) घोड़े का खुर। एक सुगंधित द्रव्य, नखी।—**खुरा**,—**खुरी**—(स्त्री०) अश्वगंधा।—**गन्धा**—(स्त्री०) असगंध।—**गोष्ठ**—(न०) अस्तबल।—**घास**—(पुं०) घोड़े का चारा।—**घ्न**—(पुं०) कनेर का वृक्ष।—**चक्र**—(न०) घोड़ों का समूह। एक तरफ का पहिया। घोड़े के चिह्नों से शुभाशुभ का विचार।—**चलनशाला**—(स्त्री०) घोड़े घुमाने का स्थान।—**चिकित्सक**,—**वैद्य**—(पुं०) सालहोत्री।—**चिकित्सा**—सालहोत्र।—**जघन**—(पुं०) पौराणिक अर्ध-घोटकाकृति अद्भुत मनुष्य।—**नाय**—(पुं०) घोड़ों का समूह। घोड़ों को चराने वाला।—**निबंधिक**,—**पाल**,—**पालक**,—**रक्ष**—(पुं०) घोड़े का साईस।—**बन्ध**—(पुं०) साईस।—**भा**—(स्त्री०) बिजली।—**महिषिका**—(स्त्री०) घोड़े और भैंसों की स्वाभाविक शत्रुता।—**मुख**—(वि०) घोड़े जैसा मुख या सिर वाला। (पुं०) किन्नर।—**मुखी**—(स्त्री०) किन्नरी।—**मेध**—(पुं०) एक प्रसिद्ध यज्ञ जिसमें घोड़े का बलिदान दिया जाता है।—**मेधिक**,—**मेधीय**—(वि०) [अश्वमेध+ठन्—इक] [अश्वमेध+छ—ईय] अश्वमेध यज्ञ के योग्य या उससे सम्बन्ध रखने वाला।—**युज्**—(स्त्री०) आश्विन की पूर्णिमा। अश्विनी नक्षत्र।—**योग**—(पुं०) घोड़े को रथ आदि में जोतना। घोड़े की तरह तेजी से पहुँचना।—**रथा**—(स्त्री०) गन्धमादन पर्वत के निकट बहने वाली एक नदी का नाम।—**रत्न**—(न०),—**राज**, (पुं०) सर्वोत्तम, घोड़ा, घोड़ों का राजा।—**लाला**—(स्त्री०) सर्प विशेष।—**वक्त्र**—(पुं०) किन्नर या गन्धर्व।—**वह**—(पुं०) घुड़सवार।—**वार**,—**वारक**—(पुं०) चाबुकसवार। साईस।—**वाह**,—**वाहक**—(पुं०) घुड़सवार।—**विद्**—(वि०) घोड़ों को पालने और उनको चाल आदि सिखाने की कला में कुशल। (पुं०) घोड़ों का सौदागर। राजा नल की उपाधि।—**वृष**—(पुं०) बीज का घोड़ा, बिना बधिया किया हुआ घोड़ा।—**शक्ति**—(स्त्री०) उतनी शक्ति जितनी प्रति सेकंड ५५० पौंड (=६।।। मन) वजन को एक फुट ऊपर उठाने के लिये आवश्यक होती है (हार्स-पावर)।—**शाला**—(स्त्री०) अस्तबल, तबेला।—**शाव**—(पुं०) घोड़ी का बछेड़ा।—**शास्त्र**—(न०) सालहोत्र विद्या।—**शृगालिका**—(स्त्री०) स्यार और घोड़े की स्वाभाविक दुश्मनी।—**साद**, —**सादिन्**—(पुं०) घुड़सवार।—**सारथ्य**—(न०) रथवानी, सारथीपन।—**स्थान**—(वि०) अस्तबल में उत्पन्न। (न०) अस्तबल, तबेला।—**हृदय**—(न०) घोड़े की इच्छा या इरादा। घुड़सवारी। घोड़े का चिकित्सा-शास्त्र।

अश्वक—(पु॰) [अश्व+कन् (संज्ञायाम्)] टट्टू, भाड़े का टट्टू। बुरा घोड़ा। साधारण घोड़ा।

अश्वकिनी—(स्त्री॰) [अश्वस्य क मुखं तत्सदृशाकारोऽस्तीति, इनि, ङीप्] अश्विनी नक्षत्र।

अश्वतर—(पु॰) [स्त्री॰—**अश्वतरी**] [तनुरश्वः इत्यर्थे अश्व+ष्टरच्] खच्चर।

अश्वत्थ—(पु॰) [न श्वः चिरं शाल्मलिवृक्षादिवत् तिष्ठति इति√स्था+क पृषो॰] पीपल का पेड़।

अश्वत्थामन्—(पु॰) [अश्वस्य इव स्थाम बलम् अस्य पृषो॰ स॰] यह द्रोण का पुत्र था। इसकी माता का नाम कृपी था। महाभारत के युद्ध में यह कौरवों की ओर से पाण्डवों से लड़ा था। महाभारत में निहत एक हाथी।

अश्वस्तन, अश्वस्तनिक—(वि॰) [श्वोभवः इत्यर्थे श्वस्+ट्युल् तुट् च न॰ त॰] [श्वस्तन+ठन्—इक न॰ त॰] आने वाले कल का नहीं, आज का। केवल एक दिन के व्यवहार के लिये अन्नादि संग्रह करने वाला। जिसके पास दूसरे दिन के लिये अन्नादि न रहे।

अश्विक—(वि॰) [अश्व+ठन्—इक] घोड़ों से खींचा जाने वाला।

अश्विन्—(पु॰) [अश्व+इनि (अस्त्यर्थे)] चाबुक, सवार।—(द्विवचन) देवताओं के वैद्यों का नाम।

अश्विनी—(स्त्री॰) [अश्व इव उत्तमाङ्गाकारोऽस्त्यस्य इत्यर्थे अश्व+इनि, ङीप्] २७ नक्षत्रों में प्रथम। विश्वकर्मा की पुत्री संज्ञा जो सूर्य की पत्नी मानी गयी है और जिसने घोड़ी बनकर सूर्य के साथ संभोग किया था।—**कुमार—पुत्र,—सुत**-(द्विवचन) (पु॰) सूर्यपत्नी अश्विनी से उत्पन्न दो पुत्र जो स्वर्ग के वैद्य माने जाते हैं।

अश्वीय—(वि॰) [अश्वानाम् इदम्, अश्वेभ्यः हितम्, अश्वानां समूहो वा इत्यर्थे अश्व+छ—ईय] घोड़ों का, घोड़ों से सम्बन्ध रखने वाला। घोड़ों के अनुकूल। (न॰) अश्वसमूह।

√**अष्**—[भ्वा॰ उभ॰ सक॰] जाना। लेना। (अक॰) चमकना। अषति-ते, अषिष्यति-ते, आषीत्-आषिष्ट।

अषडक्षीण—(वि॰) [न सन्ति षट् अक्षीणि यत्र न॰ ब॰ ततः+ख—ईन, णत्व] छः नेत्रों से न देखा हुआ। अर्थात् जिसे केवल दो पुरुषों ने जाना हो या जिस पर केवल दो पुरुषों ने विचार कर कुछ निश्चय किया हो। (न॰) गुप्त भेद। दो आदमियों के बीच की मंत्रणा।

अषाढ—(पु॰) [अषाढया युक्ता पौर्णमासी आषाढी सा अस्ति यत्र मासे अण् वा ह्रस्वः] अषाढ मास।

अष्टक—(वि॰) [अष्टन्+कन्] आठ भागों वाला। अठगुना। (न॰) आठ भागों से बनी हुई समूची कोई वस्तु। पाणिनि के सूत्रों के आठ अध्याय। ऋग्वेद का भाग विशेष। किन्हीं आठ वस्तुओं का एक समुदाय। आठ की संख्या। (पु॰) विश्वामित्र का एक पुत्र।

अष्टका—(स्त्री॰) [अश्नन्ति पितरोऽस्यां तिथौ इत्यर्थे√अश्+तकन्, टाप्] तीन तिथियों का समुदाय, ७मी, ८मी, ९मी। पौष, माघ और फागुन की। कृष्णाष्टमी। श्राद्ध जो उक्त तिथियों को किया जाता है।

अष्टन्—(वि॰) [त्रि॰√अश्+कनिन्, तुट् च] आठ की संख्या। (वि॰) आठ की संख्या से युक्त।—**अङ्ग, (अष्टाङ्ग)**-(वि॰) जिसके आठ अंग या भाग हों। (न॰) शरीर के वे आठ अंग जिनसे साष्टांग प्रणाम किया जाता है—घुटना, हाथ, पाँव, छाती, सिर, वचन, दृष्टि और बुद्धि।—॰**मार्ग**-(पं॰) बुद्ध द्वारा उपदिष्ट दुःखनिवृत्ति का आठ अंगों वाला मार्ग—सम्यग्दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यग्वाक्, सम्यक्-कर्म, सम्यक्-आजीव, सम्यग्व्यायाम, सम्यक्-स्मृति और सम्यक्-समाधि।—॰**योग**-(पु॰) योग के आठ अंग

—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि ।—०आयुर्वेद (**अष्टाङ्गायुर्वेद**))–(पुं०) आयुर्वेद के आठ अंग या विभाग—शल्य, शालाक्य, कायचिकित्सा, भूतविद्या, कौमारभृत्य, अगदतंत्र रसायनतंत्र और वाजीकरण ।—**कर्ण**–(वि०) आठ कानों वाला । (पुं०) ब्रह्मा ।—**कर्मन्**—**गतिक**–(पुं०) राजा जिसे ८ प्रकार के कर्तव्यों का पालन करना पड़ता है । वे आठ कर्म यह हैं —आदाने चविसर्गे च तथा प्रैषनिषेधयोः । पञ्चमे चार्थवचने व्यवहारस्य चेक्षणे । दण्डशुद्धयोः सदा रक्तस्तेनाष्टगतिको नृपः ॥—**कोण**-(पुं०) आठ पहलू या आठ कोना ।—**गुण**-(वि०) अठगुना । (न०) आठ प्रकार के गुण ये हैं:—दया सर्वभूतेषु, क्षान्तिः, अनसूया, शौचम्, अनायासः, मङ्गलम्, अकार्पण्यम्, अस्पृहा, चेति ॥—गौतम ।—**चत्वारिंशत्**–(स्त्री०) ४८, अड़तालीस ।—**त्रिंशत्**–(स्त्री०) ३८, अड़तीस ।—**त्रिक**-(न०) २४ की संख्या ।—**दल**–(न०) आठ दलों का कमल ।—**दिश्**-(स्त्री०) आठ दिशाएँ ।—०पाल, (**दिक्पाल**)–(पुं०) आठों दिशाओं के अधिष्ठाता । आठ दिक्पाल ये हैं:—इन्द्रो वह्निः पितृपतिः नैर्ऋतो वरुणो मरुत् । कुबेर ईशः पतयः पूर्वादीनां दिशां क्रमात् ॥—**द्रव्य**–(न०) यज्ञ की सामग्री के आठ द्रव्य—पीपल, गूलर, पाकड़, बरगद, तिल, सरसों, पायस और घृत ।—**धातु**–(पुं०) सोना, चाँदी, ताँबा, राँगा, सीसा, जस्ता, लोहा और पारा ।—**पद**–(पुं०) मकड़ी । शरभ । कील, काँटा । कैलास पर्वत । (न०) सुवर्ण । वस्त्र विशेष ।—**प्रकृति**-(स्त्री०) राज्य के आठ प्रधान कर्मचारी—सुमंत्र, पंडित, मंत्री, प्रधान, सचिव, अमात्य, प्राड्विवाक और प्रतिनिधि । अथवा आठ अंग—राजा, राष्ट्र, अमात्य, दुर्ग, बल (सेना), कोष, सामंत और प्रजा ।—**प्रधान**-(पुं०) आठ प्रकार के मंत्री—प्रधान, अमात्य, सचिव, मंत्री, धर्माध्यक्ष, न्यायशास्त्री, वैद्य और सेनापति ।—**मङ्गल**–(पुं०) घोड़ा जिसका मुख, पूँछ, अयाल, छाती और खुर सफेद हों । (न०) आठ माङ्गलिक द्रव्यों का समुदाय । वे आठ ये हैं :—मृगराजो वृषो नागः कलशो व्यजनं तथा । वैजयन्ती तथा भेरी दीप इत्यष्टमङ्गलम् । स्थानान्तरे—लोकेऽस्मिन्मङ्गलान्यष्टौ ब्राह्मणो गौर्हुताशनः । हिरण्यं सर्पिरादित्य आपो राजा तथाष्टमः ॥ —**मूर्ति**–(पुं०) शिव (पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, सूर्य, चंद्र और ऋत्विज—इन आठ मूर्तियों वाले) ।—**रत्न** (न०) आठ रत्न । —**रस**–(पुं०) नाट्य-शास्त्र के आठ रस । यथा —शृङ्गारहास्यकरुणरौद्रवीरभयानकाः । बीभत्साद्भुतसंज्ञौ चेत्यष्टौ नाट्ये रसाः स्मृताः॥ —**वर्ग**–(पुं०) आयुर्वेदोक्त आठ ओषधियों का समूह—जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, ऋद्धि और वृद्धि । नीतिशास्त्रानुसार राज्य के अंगभूत कृषि, बस्ती, दुर्ग, सेतु, हस्तिबंधन, खान, करग्रहण और सैन्य-संस्थापन का समूह ।—**विध**–(वि०) आठ प्रकार का ।—**विंशति**–(स्त्री०) २८, अट्ठाइस ।—**श्रवण**—**श्रवस्**-(पुं०) चार मुख और आठ कानों वाले ब्रह्मा ।—**सिद्धि**-(स्त्री०) योग-सिद्धि से मिलने वाली आठ सिद्धियाँ या अलौकिक शक्तियाँ—अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व और वशित्व ।

अष्टकृत्वस्—(अव्य०) [अष्टन्+कृत्वसुच्] आठ बार ।

अष्टतय—(वि०) [अष्टन्+तयप्] आठ भाग या आठ अवयव वाला । (न०) आठ का औसत ।

अष्टधा—(अव्य०) [अष्टन्+धा] आठ गुना । आठ बार । आठ प्रकार से । आठ भागों में; 'भिन्ना प्रकृतिरष्टधा' भग० ७.४ ।

अष्टम—(वि०) [अष्टानां पूरणः इत्यर्थे अष्टन्+डट् मट् च] आठवाँ । (पुं०) आठवाँ भाग ।

अष्टमक—(वि०) [अष्टम+कन्] आठवाँ। षोडशमष्टमकं हरेत । याज्ञवल्क्य ॥

अष्टमी—(स्त्री०) [अष्टम+ङीप्] चान्द्रमास का आठवाँ दिवस । पक्ष की आठवीं तिथि ।

अष्टमिका—(स्त्री०) [अष्टमी+कन्, ह्रस्व, टाप्] चार तोले की एक तौल ।

अष्टाकपाल—(पु०) [अष्टसु कपालेषु (मृत्पात्रेषु) संस्कृतः पुरोडाशः इत्यर्थे अण् तस्य लुक्] आठ मृत्तिका-पात्रों में शुद्ध किया हुआ चरु (घी आदि) ।

अष्टादशन्—(वि०) [अष्टाधिका, दश, अष्टौ च दश चेति वा] अठारह ।—**उपपुराण**—(**अष्टादशोपपुराण**) (न०) अठारह उपपुराण जिनके नाम ये हैं—'आद्यं सनत्कुमारोक्तं नारसिंहमतःपरम् । तृतीयं नारद प्रोक्तं कुमारेण तु भाषितम् । चतुर्थं शिवधर्माख्यं साक्षान्नन्दीशभाषितम् । दुर्वाससोक्तमाश्चर्यं नारदोक्तमतः परम् । कापिलं मानवं चैव तथैवोशनसेरितम् । ब्रह्माण्डं वारुणं चाथ कालिकाह्वयमेव च । माहेश्वरं तथा शाम्बं सौरं सर्वार्थसञ्चयम् । पराशरोक्तं प्रवरं तथा भागवतद्वयम् । इमष्टादश प्रोक्तं पुराणं कौर्मसंज्ञितम् । चतुर्धा संस्थितं पुण्यं संहितानां प्रभेदतः ।'—हेमाद्री—**पुराण** (न०) १८ पुराण जिनके नाम ये हैं:—ब्राह्म । पाद्म । विष्णु । शिव । भागवत । नारदीय । मार्कण्डेय । अग्नि । भविष्य । ब्रह्मवैवर्त । लिङ्ग । वराह । स्कन्द । वामन । कौर्म । मत्स्य । गरुड़ । ब्रह्माण्ड ।—**विद्या** (स्त्री०) १८ प्रकार की विद्याएं या कलाएं । यथा—'अंगानि वेदाश्चत्वारो मीमांसा न्यायविस्तरः । धर्मशास्त्रं पुराणं च विद्या ह्येताश्चतुर्दश । आयुर्वेदो धनुर्वेदो गान्धर्वश्चेति ते त्रयः । अर्थशास्त्रं चतुर्थं तु विद्या ह्यष्टादशैव तु ।'

अष्टावक्र—(पु०) [अष्टकृत्वः अष्टसु भागेषु वा वक्रः] आठ अंगों में टेढ़ा, कहोड़ का पुत्र एक प्रसिद्ध ऋषि ।

अष्टि—(स्त्री०) [√अस् (क्षेपणे)+क्तिन्, पृषो० षत्व] खेल का पासा । सोलह की संख्या । बीज । छिलका, छाल ।

अष्ट्रा—(स्त्री०) [अश्यते चाल्यते अनया इति √अश्+ष्ट्रन् (करणे)] पशुओं के हाँकने की छड़ी या चाबुक या अंकुश ।

अष्ठीला—(स्त्री०) [अष्ठि√ला+कः रस्य लः दीर्घः] कोई गोल वस्तु । गोल पत्थर या स्फटिक । छिलका, छाल । बीज का अनाज ।

अष्ठीवत्—(पु०) [नास्ति अतिशयितमस्थि यस्मिन् मतुप् पृषो० सिद्धि] घुटना ।

√अस्—अदा० पर० अक० होना । अस्ति, भविष्यति, अभूत् । दिवा० पर० सक० फेंकना । अस्यति, असिष्यति, आस्थत् । भ्वा० उभ० अक० चमकना सक० लेना । जाना । असति-ते, असिष्यति-ते, आसीत्-आसिष्ट ।

असंयत—(वि०) [न० त०] संयम-रहित । क्रमशून्य । जो नियम-बद्ध न हो ।

असंयम—(पु०) [न० त०] संयम का अभाव, रोक का न होना, (यह इन्द्रियों के विषय में प्रयुक्त होता है)

असंव्यवहित— (वि०) [संव्यव√धा+क्त, न० त०] व्यवधानरहित । अवकाश रहित ।

असंशय—(वि०) [न० ब०] संशयरहित । निश्चित ।

असंश्रव—(वि०) [न० ब०] जो सुनने के परे हो । जो सुनाई न पड़े ।

असंसृष्ट—(वि०) [न० त०] जो मिश्रित न हो । जो संलग्न न हो । बटवारा होने के बाद फिर जो शामिलात में न रहे ।

असंस्कृत—(वि०) [न० त०] बिना सुधारा हुआ, अपरिमार्जित । जिसका संस्कार न हुआ हो, बाल्य । व्याकरण के संस्कार से शून्य । (पं०) अपशब्द, बिगड़ा हुआ शब्द ।

असंस्तुत—(वि०) [न० त०] अज्ञात, अपरिचित; 'असंस्तुत इव परित्यक्तो बान्धवो जनः' कादं० । असाधारण, विलक्षण ।

असंस्थान—(न०) [न० त०] संयोग का अभाव । गड़बड़ी । अभाव, कमी ।

असंस्थित—(वि०) [न० त०] जो व्यवस्थित न हो, अनियमित । एकत्रित नहीं ।

असंस्थिति—(स्त्री०) [न० त०] गड़बड़ी, घालमेल ।

असंहत—(वि०) [न० त०] जो जुड़ा न हो, जो मिला न हो । बिखरा हुआ । (पु०) सांख्य दर्शन के अनुसार पुरुष या जीव ।

असकृत्—(अव्य०) [न० त०] एक बार नहीं, बारंबार, अक्सर ।—**समाधि** (पु०) बारंबार की समाधि या ध्यान ।—**गर्भवास** (पु०) बारंबार जन्म ।

असक्त—(वि०) [न० त०] जो किसी में फँसा न हो । फलाभिलाष से रहित । सांसारिक पदार्थों से विरक्त ।

असक्थ—(वि०) [नास्ति सक्थि यस्य न० ब०] जिसके जंघा न हो ।

असखि—(पु०) [न० त०] मित्रभिन्न, शत्रु ।

असगोत्र—(वि०) [न० त०] जो एक गोत्र ल का न ो

असङ्कुल—(वि०) [न० त०] जहाँ बहुत भीड़-भाड़ न हो । खुला हुआ । चौड़ा । (पु०) चौड़ा भाग ।

असङ्क्रान्तिमास—(पु०) [न० त०] वह महीना जिसमें संक्रांति न पड़े, अधिकमास, मलमास ।

असङ्ख्य—(वि०) [नास्ति संख्या यस्य न० ब०] गणना के परे । जिसकी गणना न हो सके ।

असङ्ख्यात—(वि०) [न० त०] अगणित, संख्यातीत । अनन्त संख्यावाला ।

असङ्ख्येय—(वि०) [न० त०] जिसकी संख्या या गणना न की जा सके । (पु०) शिव का नाम ।

असङ्ग—(वि०) [न० ब०] अननुरक्त, सांसारिक या लौकिक बंधनों से ुक्त । अन-वरुद्ध । अनमिल । अकेला । (पु०) वैराग्य । पुरुष या जीव ।

असङ्गत—(वि०) [न० त०] अयुक्त । सङ्ग-विवर्जित । विषम । गँवार, अशिष्ट ।

असङ्गति—(स्त्री०) [न० त०] मेल का न होना । असंबंध । बेसिलसिलापन । अनुप-युक्तता । एक काव्यालङ्कार इसमें कार्य-कारण के बीच देश-काल संबंधी अयथार्थता दिख-लाई जाती है ।

असङ्गम—(वि०) [न० ब०] जो मिला हुआ न हो । (पु० [न० त०] मेल या संबंध का अभाव । पार्थक्य, विछोह । असंलग्नता । असामंजस्य ।

असङ्गिन्—(वि०) [न० त०]जो मिला हुआ न हो । संसार से विरक्त ।

असंज्ञ—(वि०) [नास्ति संज्ञा यस्य न० ब०] बिना नाम का । संज्ञाहीन, मूर्च्छित ।

असंज्ञा—(स्त्री०) [न० त०] संज्ञा का अभाव । असामंजस्य, विरोध, झगड़ा, टंटा ।

असत्—(वि०) [√अस+शतृ, न० त०] अविद्यमान, जिसका अस्तित्व न हो । बुरा, खराब । दुष्ट । तिरोहित । गलत । अनुचित । मिथ्या, झूठा; 'नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः' भग० । (न०)अनस्तित्व, असत्ता । मिथ्या, झूठ ।—**अध्येतृ**- (वि०) असद-ध्येतृ शाखारण्ड ब्राह्मण जो अपने वेद की शाखा को छोड़ अन्य वेद की शाखा पढ़े । —''स्वशाखां यः परित्यज्य अन्यत्र कुरुते श्रमम् । शाखारण्डः स विज्ञेयो वर्जयेत्तं क्रियासु च ।'—**आगम** (**असदागम**) (पु०) धर्म-विरुद्ध शास्त्र । बुरा साधन । बेईमानी से (धन को) हथियाना ।— **आचार**, (**असदाचार**)–(वि०) बुरे आचरण वाला, दुष्ट । (पु०) धर्म, नीति के विरुद्ध आचरण । —**कर्मन्**, —**क्रिया**–(स्त्री०) बुरा काम । दुर्व्यवहार ।—**ग्रह**, —**ग्राह** (**असद्ग्रह-ग्राह**)–(पु०) बुरी चालबाजी । बुरी राय, पक्षपात । बच्चों जैसी अभिलाषा ।

—दृश (असद्दृश)—(वि०) बुरे नेत्रों वाला, बुरी दृष्टि वाला।—**परिग्रह**-(पुं०) बुरे मार्ग का ग्रहण।—**प्रतिग्रह** (पुं०) कुदान, बुरा दान, जैसे—तेल, तिल आदि का।
—**भाव (असद्भाव)**-(पुं०) अविद्यमानता, असत्ता। दुष्ट सम्मति, दुष्ट स्वभाव।—**वृत्ति (असद्वृत्ति)**-(स्त्री०) नीच कर्म या पेशा। दुष्टता।—**संसर्ग**-(पुं०) बुरी संगत।

असती—(स्त्री०) [सत्+ङीप् न० त०] जो सती या पतिव्रता न हो।

असत्ता—(स्त्री०) [असत्+तल् टाप्] अनस्तित्व। असत्यता। दुष्टता, बुराई।

असत्त्व—(वि०) [न० ब०] शक्तिहीन। सत्ता रहित। (न०) [न० त०] अनवस्थान। अवास्तविकता, असत्यता।

असत्य—(वि०) [न० त०] झूठा। कल्पित, अवास्तविक।—(पुं०) मिथ्यावादी, झूठ बोलने वाला।—(न०) झूठ, मिथ्या।—**सन्ध**-(वि०) अपने वचन को पूरा न करने वाला, झूठा, दगाबाज, धोखेबाज।

असदृश—(वि०) [स्त्री०—असदृशी] [न० त०] असमान, बेमेल। अयोग्य, अनुचित।

असद्यस्—(अव्य०) [न० त०] तुरन्त नहीं, देर करके, देरी से।

असन—[√अस् (क्षेपणे)+ल्युट्] फेंकना, छोड़ना, चलाना (बाण आदि)। (पुं०) पीतशाल नामक वृक्ष।—**पर्णी**-(स्त्री०) सातल नामक वृक्ष।

असन्दिग्ध—(वि०) [न० त०] सन्देहरहित, निस्सन्देह। स्पष्ट, साफ। विश्वस्त।

असन्धि—(वि०) [न० ब०] जो मिले या जुड़े (शब्द) न हों। जो बन्धन में न हो, स्वतंत्र। (पुं०) [न० त०]

असन्नद्ध—(वि०) [न० त०] जो हथियारों से सुसज्जित न हो। पण्डितम्मन्य।

असन्निकर्ष—(पुं०) [न० त०] निकट न होना। दूरी। समझ के बाहर।

असन्निवृत्ति—(स्त्री०) [न० त०] न लौटने की क्रिया; 'असन्निवृत्त्यै तदतीतमेव' श० ६.६।

असपिण्ड—(वि०) [न० त०] जो सपिण्ड न हो, जो अपने वंश या कुल का न हो, जो अपने हाथ का दिया पिंड पाने का अधिकारी न हो।

असभ्य—(वि०) [न० त०] गँवार, उजड्ड, नाशाइस्ता।

असम—(वि०) [न० त०] विषम। असमान, बेजोड़।—**सायक**-(पुं०) कामदेव की उपाधि, कामदेव के पास पाँच बाणों का होना माना गया है।—**नयन,—नेत्र,—लोचन**- (वि०) विषम-संख्यक नेत्रों वाले। शिव की उपाधि।

असमञ्जस—(वि०) [न० त०] अस्पष्ट। अबोधगम्य। अनुचित। असङ्गत। वाहियात, मूर्खतापूर्ण।

असमर्थ—(वि०) [न० त०] अशक्त, दुर्बल। अपेक्षित शक्ति या योग्यता न रखने वाला। अभीष्ट अर्थ व्यक्त न कर सकने वाला।—**समास**-(पुं०) अन्वय-दोष-युक्त समास ('अश्राद्धभोजी' और 'असूर्यम्पश्या' में 'अ' का अन्वय 'श्राद्ध' और 'सूर्य' के साथ न करके 'भोजी' और 'पश्या' के साथ करना होता है)।

असमर्थता—(स्त्री०) [असमर्थ+तल्, टाप्] असमर्थ होने का भाव।—**निवृत्तिवेतन**-(न०) रोग, दुर्घटना आदि के कारण किसी कर्मचारी के काम करने में स्थायी रूप से असमर्थ हो जाने पर भरण-पोषण के लिये मिलने वाली वृत्ति (इनवैलिडिटी पेंशन)।

असमवायिन्—(वि०) [न० त०] जो सम्बन्ध युक्त या परंपरागत न हो, आकस्मिक, पृथक् होने योग्य।—**कारण**-(न०) न्याय दर्शन के अनुसार वह कारण जो द्रव्य न हो, गुण या कर्म हो।

असमस्त—(वि०) [न० त०] असम्पूर्ण, थोड़ा सा, पूरा नहीं। (व्याकरण में) जो समा-

सान्त न हो । पृथक्, अलहदा, असम्बद्ध ।

असमाप्त—(वि०) [न० त] जो समाप्त न हो, अपूर्ण, अधूरा ।

असमीक्ष्य—(अव्य०) [सम्√ईक्ष्+क्त्वा—ल्यप् न० त०]—**कारिन्**–(वि०) बिना विचारे काम करने वाला ।

असम्पत्ति—(वि०) [न० ब०] गरीब, धनहीन । (स्त्री०) [न० त०] अनहीनता, गरीबी । दुर्भाग्य, बदकिस्मती । असफलता । असम्पूर्णता ।

असम्पूर्ण—(वि०) जो पूरा न हो, अधूरा । समूचा नहीं । थोड़ा-थोड़ा, कुछ-कुछ ।

असम्प्रज्ञात—(वि०) [न० त०] भलीभाँति न जाना हुआ ।—**समाधि**–(पुं०) वह समाधि जिसमें ज्ञाता, ज्ञेय, ज्ञान का भेद नहीं रह जाता, निर्विकल्प समाधि ।

असम्बद्ध—(वि०) [न० त०] जो परस्पर सम्बन्ध-युक्त न हो, बेमेल । बेहूदा, वाहियात, जिसका कुछ अर्थ न हो । अनुचित, गलत ।—**प्रलाप**–(पुं०) बेतुकी बकवास ।

असम्बन्ध—(वि०) [न० ब०] बेमेल, संबंध-रहित । [न० त०] संबंध का अभाव ।

असम्बाध—(वि०) [न० ब०] जो सङ्कीर्ण न हो, प्रशस्त, चौड़ा । जो मनुष्यों की भीड़-भाड़ से भरा न हो, एकान्त । खुला हुआ, जहाँ हरेक की पहुँच हो ।

असम्भव—(वि०) [न० त०]जो सम्भव न हो, जो हो न सके, नामुमकिन ।

असम्भव्य, असम्भाविन्–(वि०) [सम्√भू+यत् नि०, न० त०] [सम्√भू+णिनि न० त०] नामुमकिन, असम्भव । अबोधगम्य ।

असम्भावना—(स्त्री०)[न० त०] सम्भावना का अभाव, असंभवितव्यता, अनहोनापन ।

असम्भृत—(वि०) [न० त०] जो बनावटी उपायों से न लाया गया हो । जो बनावटी न हो, नैसर्गिक, अकृत्रिम; 'असम्भृतम्मण्डनमङ्गयष्टेः'' कु० १.३१। जो भलीभाँति पाला-पोसा न गया हो ।

असम्मत—(वि०) [न० त०] जो पसंद न हो, नापसंद । अनभिमत, विरुद्ध । (पुं०) बैरी, विरोधी (शत्रुदायैरसम्मतान्)—**आदायिन्** (**असम्मतादायिन्**)–(वि०) चोर ।

असम्मति—(स्त्री०) [न० त०] सम्मति का अभाव, विरुद्ध मत या राय । नापसंदगी, अरुचि ।

असम्मोह—(पुं०) [न० त०] मोह का या भ्रम का अभाव । दृढ़ता । शान्ति, चित्त की स्थिरता । वास्तविक ज्ञान ।।

असम्यच्—(वि०) [स्त्री०—**असमीची**] [न० त०] खराब, कुत्सित । अनुचित । अशुद्ध । असम्पूर्ण, अधूरा ।

असल—(न०) [√अस् (क्षेपणे)+कलच्] लोहा । किसी अस्त्र को छोड़ते समय पढ़ा जाने वाला मंत्र विशेष । हथियार ।

असवर्ण—(वि०) [न० त०] भिन्न जाति या वर्ण का ।

असह—(वि०)[न० ब०] असह्य, जो सहा न जाय, जो बरदाश्त न हो ।

असहन—(वि०) [न० ब०] असहिष्णु । ईर्ष्यालु, डाही । (पुं०) शत्रु, बैरी । (न०) [न० त०] असहनशीलता । असन्तोष ।

असहनीय,—असह्य–(वि०) [न० त०] जो सहन न किया जा सके ।

असहाय—(वि०) [न० ब०] अकेला, बिना साथी-संगी या सहायक का ।

असाक्षात्—(अव्य०) [न० त०]जो नेत्रों के सामने न हो, अप्रत्यक्ष, अगोचर ।

असाक्षिक—(वि०)[स्त्री०—**असाक्षिकी**] [न० ब०] जिसका कोई गवाह न हो ।

असाक्षिन्—(वि०) [न० त०] जो चश्मदीद गवाह न हो । जिसकी गवाही प्रमाण स्वरूप ग्रहण न की जाय । जो किसी प्रामाणिक पत्र को प्रामाणित करने का अधिकारी न हो ।

असाधनीय, असाध्य–(वि०) [न० त०] जो साध्य न हो, जिस पर वश न चले; 'असाध्यः

कुरुते कोपं प्राप्ते कालिंदी यथा' शि० २.८४ सिद्ध न होने योग्य। जो ठीक न हो।

असाधारण—(वि०) [न० त०] जो साधारण या आम न हो। असामान्य। अपूर्व, विलक्षण। (पुं०) न्याय में सपक्ष और विपक्ष। दोनों में न रहने वाला दुष्ट हेतु।

असाधु—(वि०) [न० त०] जो साधु न हो। अप्रिय। दुष्ट। असच्चरित्र। अपभ्रंश। अशुद्ध।

असाध्य—(वि०) [न० त०] जिसका साधन या सिद्धि न हो सके। अच्छा न होने वाला, लाइलाज (रोगी)। अशक्य, अतिकठिन।

असामयिक—(वि०) [स्त्री०—**असामयिकी**] [न० त०] बे अवसर का। बिना समय का, बेवक्त का।

असामान्य—(वि०) [न० त०] असाधारण, विलक्षण, अपूर्व। (न०) विलक्षण या विशेष सम्पत्ति।

असाम्प्रत—(वि०) [न० त०] अयोग्य। अनुचित। अयुक्त। कालान्तर का।

असाम्प्रतम्—(अव्य०) [न० त०] अनुचित रूप से। अयोग्यता से।

असार—(वि०) [न० ब०] सारहीन। व्यर्थ, निकम्मा। जो लाभदायक न हो। निर्बल, कमजोर। (पुं०) [न० त०] बेजरूरी हिस्सा, अनावश्यक अंश, रेंड़ी का पेड़। (न०) ऊद या अगर की लकड़ी।

असारता—(स्त्री०) [असार+तल्, टाप्] सारहीनता, निस्सारता, तत्त्वशून्यता। निरर्थकता, तुच्छता। मिथ्यात्व।

असाहस—(न०) [न० त०] वेग या प्रबलता का अभाव, सुशीलता।

असि—(पुं०) [√अस्+इन्] तलवार। छुरी जो जानवरों को हलाल करने के लिये इस्तेमाल की जाती है।—**गण्ड**—(पुं०) छोटा तकिया जो गालों के नीचे रखा जाता है।—**जीविन्**—(वि०) तलवार के कर्म से आजीविका करने वाला।—**दंष्ट्र**—**दंष्ट्रक**—(पुं०) मगर, घड़ियाल।—**दन्त**—(पुं०) मगर, घड़ियाल। नक्र।—**धारा**—(स्त्री०) तलवार की धार। —० **व्रत**—(न०) किसी के मतानुसार एक व्रत, जिसमें तलवार की धार पर खड़ा होना पड़ता है। अन्य मतानुसार युवती स्त्री के साथ सदैव रह कर भी उसके साथ मैथुन करने की इच्छा को रोकना।—(आल०) कोई भी असाध्य या असम्भव कार्य।—**धाव**,—**धावक**—(पुं०) सिकलीगर, हथियार साफ करने वाला।—**धेनु**,—**धेनुका**—(स्त्री०) छूरी, छुरा।—**पत्र**—(पुं०) ऊख, ईख, गन्ना। मुण्ड नामक तृण। (न०) तलवार की म्यान।—**पुच्छ**,—**पुच्छक**—(पुं०) सूंस। सकुची मछली।—**पुत्रिका**,—**पुत्री**—(स्त्री०) छुरी।—**मेद**—(पुं०) सड़ा हुआ खदिर। —**हत्य** (न०) छुरी या तलवार की लड़ाई। —**हेति**—(पुं०) तलवार चलाने वाला, तलवार-बहादुर।

असिक—(न०) [असि+कन्] निचले ओठ और ठुड्डी के बीच का भाग।

असिक्नी—(स्त्री०) [सिता केशादौ शुभ्रा वर्णो तद्भिन्ना अवद्धा, का देश: ङीप् न] अन्तःपुर की युवती परिचारिका या दासी। पंजाब की एक नदी (चिनाब)। दक्ष की पत्नी, रात्रि।

असित—(वि०) [न० त०] जो सफेद न हो। काला, नीला। (पुं०) काला या नीला रंग। शनि। देवल ऋषि। कृष्णपक्ष। अब वृक्ष। काला भौंर।—**अम्बुज** (**असिताम्बुज**), —**उत्पल** (**असितोत्पल**)—(न०) नील कमल।—**अचिस्** (**असितार्चिस्**)—(पुं०) अग्नि।—**अश्मन्** (**असिताश्मन्**),—**उपल** (**असितोपल**)—(पुं०) काला-नीला पत्थर।—**केशा**—(स्त्री०) काले बालों वाली —**गिरि**— **नग**— (पुं०) नीलपर्वत।—**ग्रीव**—(वि०) काली गर्दन वाला।

(पुं०) अग्नि ।—नयन-(वि०) काले नेत्रों वाला ।—पक्ष-(पुं०) अँधियारा पाख ।—फल—(न०) मीठा नारियल ।—मृग-(पुं०) काला हिरन, कृष्णमृग ।

असिता—(स्त्री०) [असित+टाप्] नील का पौधा । अंतःपुर की वह दासी जिसके बाल काले और अधिक हों । यमुना नदी ।

असिद्ध—(वि०) [न० त०] जो सिद्ध अर्थात् पूरा न हुआ हो । अधूरा, अपूर्ण । अप्रमाणित । कच्चा, अनपका । जिसका परिणाम कुछ न हो ।(पुं०) न्यायानुसार हेतु के तीन दोष, वे तीन दोष ये हैं—आश्रयासिद्ध, स्वरूपासिद्ध, व्याप्यत्वासिद्ध ।

असिद्धि—(स्त्री०) [न० त०] अपूर्णता । विफलता । साबित न होना । साधना की अपूर्णता । कच्चापन ।

असिर—(पुं०) [√अस्+किरच्] किरण । तीर । चटखनी ।

असु—(न०) [√अस्+उन्] (पुं०) प्राण । प्राण वायु । आध्यात्मिक जीवन । मृतात्माओं का जीवन । पल का छठा भाग । (न०) शोक, दुःख ।—भङ्ग-(पुं०) जीवन का नाश । जीवन की आशङ्का या भय ।—भृत्-(पुं०) जीवधारी, प्राणी ।—मत् (वि०) जीवित । (पुं०) प्राणी ।—सम-(वि०) प्राणोपम । (पुं०) पति । प्रेमी ।

असुख—(वि०) [न० ब०] दुःखी, शोकाकुल । (जिसका पाना) सहज नहीं, कठिन । (न०) [न० त०] दुःख, शोक, पीड़ा।

असुखिन्—(वि०) [न० त०] दुःखी, शोकाकुल ।

असुत—(वि०)[न० त०] बेऔलाद, जिसके कोई बाल-बच्चा न हो ।

असुर—(पुं०) [न सुरः न० त० तथा√अस्+उर] दैत्य, राक्षस, दानव । भूत, प्रेत । सूर्य । हाथी । राहु की उपाधि । बादल ।—अधिप (असुराधिप)—राज्, -राज- (पुं०) असुरों का राजा । प्रह्लाद के पौत्र राजा बलि की उपाधि ।—आचार्य—(असुराचार्य)-गुरु-(पुं०) शुक्राचार्य । शुक्रग्रह ।—आह्व-(असुराह्व)-(न०) टीन और ताँबे को मिला कर बनायी हुई धातु ।—द्विष्-(पुं०) असुरों के वैरी अर्थात् देवता ।—रिपु-सूदन-(पुं०) असुरों का नाश करने वाले, विष्णु भगवान् की उपाधि ।—हन्-(पुं०) (असुरों को मारने वाला) । अग्नि । इन्द्र । विष्णु ।

असुरा—(स्त्री०) [असुर+टाप्] रात्रि । राशिचक्र सम्बन्धी एक राशि । वेश्या ।

असुरी—(स्त्री०) [असुर+ङीप्] दानवी, राक्षसी, असुर की स्त्री ।

असुर्य—(वि०) [असुर+यत्] असुरों का, आसुरी ।

असुरसा—(स्त्री०) [न सुष्ठु रसो यस्याः न० ब०] पौधे का नाम, तुलसीवृक्ष की अनेक जातियाँ ।

असुलभ—(वि०) [न० त०] जो सहज में न मिल सके ।

असुसु—(पुं०) [असून् प्राणान् सुवति इति असु√सू+क्विप्] तीर, बाण ।

असुहृद्—(पुं०) [न० त०] शत्रु, वैरी ।

√असू०—कण्ड्वा० । उभ० सक० । डाह करना, ईर्ष्या करना । तिरस्कार करना । अक० अप्रसन्न होना, नाराज होना । असूयति-ते, असूयिष्यति-ते, आसूयीत्-आसूयिष्ट ।

असूत, असूतिक-(वि०) [न० त०] [न० ब० कप्] जिससे कुछ भी न हो, बाँझ ।

असूति—(स्त्री०) [न० त०] बाँझपन, बंजरपन । अड़चन । स्थानान्तरितकरण ।

असूयक—(वि०) [√असू+यक्+ण्वुल्] ईर्ष्यालु, डाही । असन्तुष्ट, अप्रसन्न ।

असूयन—(न०) [√असू+यक्+ल्युट्] निन्दा, अपवाद । ईर्ष्या, डाह ।

असूया—(स्त्री०)[√असू+यक्+अ, टाप्] डाह, ईर्ष्या, असहिष्णुता । निन्दा, अपवाद । क्रोध, रोष ।

असूयु—(पुं०) [√असू+यक् +उ] डाही, ईर्ष्यालु । अप्रसन्न ।

असूक्षण—(न०) [√सूक्ष्+ल्युट् न० त०] अनादर, अप्रतिष्ठा।

असूर्य—(वि०) [न० ब०] सूर्यरहित। **असूर्यम्पश्य**—(वि०) [सूर्य√दृश+खश्, मुम्, पश्य आदेश, न० त०] जो सूर्य को भी न देखे।

असूर्यम्पश्या—(स्त्री०)[असूर्यम्पश्य+टाप्] सती पतिव्रता स्त्री। राजप्रासाद की स्त्रियाँ, रनवास की रानियाँ, जिन्हें सूर्य तक के दर्शन मिलना दुर्लभ है।

असृज्—(न०) [√सृज्+क्विन्, न० त०] खून, रक्त, लोहू। मङ्गलग्रह। केसर।—**कर** (**असृक्कर**) (पु०) रस।—**धरा** (**असृग्धरा**) (स्त्री०) चर्म, चमड़ा।—**धारा** (**असृग्धारा**) (स्त्री०) लोहू की धार।—**प, पा** (**असृक्प, पा**) (पु०) राक्षस, रक्त पीने वाला।—**वहा**-(**असृग्वहा**) (स्त्री०) रक्तधमनी, नाड़ी।—**विमोक्षण**- (**असृग्विमोक्षण**) (न०)।—**श्राव,-स्राव**-(**असृक्श्राव-स्राव**) (पु०) रक्त का बहना।

असेचन, असेचनक-(वि०) [न सिच्यते तृप्यते मनोऽत्र इति विग्रहे√सिच्+ल्युट् न० त०] [असेचन+कन्] अत्यन्त प्रिय जिसे देखते-देखते कभी जी न भरे।

असौष्ठव—(वि०) [न० ब०] जिसमें सौंदर्य या मनोहरता का अभाव हो। बदसूरत विकलाङ्ग। (न०) [न० त०] निकम्मापन। गुणाभाव। विकलाङ्गता। बदसूरती।

अस्खलित—(वि०) [न० त०] जो हिले नहीं। स्थिर, स्थायी। जेनुटीला। सावधान।

अस्त—(वि) [√अस् (क्षेपणे)+क्त] फेंका हुआ। त्यागा हुआ। समाप्त। भेजा हुआ। डूबा हुआ। (न०) (सूर्य-चंद्र का) डूबना। अदृश्य होना। ह्रास। पतन। नाश। अंत। कुंडली में लग्न से सातवाँ स्थान।—**करुण**-(वि०) दयाहीन, निठुर।—**गमन**- (न०) डूबना। लोप। मृत्यु।—**धी**-(वि०) मूर्ख। —**व्यस्त**-(वि०) इधर-उधर, गड़बड़।—**संख्य**-(वि०) असंख्य।

अस्तक—(पु०) [अस्त+णिच्+ण्वुल्] मोक्ष।

अस्तमन—(न०) [√अम्+अप् (बा०) अस्तम्=अदर्शनस्य अनम्=गतिः] (सूर्य का) डूबना।

अस्तमय—(पु०) [अस्तम् इयते गम्यतेऽस्मिन् इति अस्तम् इण्+अच्] (सूर्य का) डूबना। नाश। अन्त। ह्रास। पतन। ग्रसित होना।

अस्ति—(अव्य०) [√अस्+श्तिप्] है, स्थिति, विद्यमानता, रहना।—**नास्ति**-(अव्य०) सन्दिग्ध, कुछ सही कुछ गलत।

अस्तित्व—(न०) [अस्ति+त्व] विद्यमानता, सत्ता।

अस्तिमत्—(वि०)[अस्ति+मतुप्] धनी।

अस्तु—(अव्य०) [√अस्+तुन्] जो हो। ऐसा हो। पीड़ा। असूया। बदनामी।

अस्तेय—(न०) [न० त०] चोरी न करना, अचौर्य।

अस्त्यान—(न०) [न० त०] भर्त्सना। कलङ्क, अपवाद। निन्दा।

अस्त्र—(न०) [√अस्+ष्ट्रन्] फेंककर चलाये जाने वाले हथियार, बरछी, भाला, बाण आदि।—**अगार,—आगार**-(**अस्त्रागार**) (न०) सिलहखाना, हथियारों का भण्डार।—**कण्टक**-(पु०)तीर, बाण।—**चिकित्सक**-(पु०) चीर-फाड़ या शल्यक्रिया करने वाला, जर्राह।—**चिकित्सा**-(स्त्री०) चीर-फाड़ का काम, जर्राही —**जीव,—जीविन्-धारिन्**-(पु०) सिपाही।—**निवारण**-(न०) अस्त्र के वार को रोकना। —**बन्ध**-(पु०) बाणों की अविराम वर्षा। —**मंत्र**-(पु०) किसी अस्त्र के छोड़ने या लौटाने के समय पढ़ा जाने वाला मंत्र विशेष। —**मार्ज,—मार्जक**-(पु०) अस्त्र साफ करने वाला। सिकलीगर।—**युद्ध**-(न०) हथि

शरों की लड़ाई ।—लाघव–(न०) अस्त्र चलाने का कौशल ।—विद्–(वि०) अस्त्र-विद्या का जानने वाला ।—विद्या–(स्त्री०) —शास्त्र– (न०)—वेद–(पुं०) अस्त्रविद्या, धनुर्वेद ।—वृष्टि–(स्त्री०) अस्त्रों की वर्षा । —शिक्षा– (स्त्री०) अस्त्र-संचालन की शिक्षा, सैनिक अभ्यास ।

अस्त्रिन्—(वि०) [अस्त्र+इनि] अस्त्रों से लड़ने वाला । धनुर्धर ।

अस्त्री—(स्त्री०) [न० त०] स्त्री नहीं । व्याकरण में पुल्लिंग और नपुंसकलिङ्ग ।

अस्थान—(वि०) [न० ब०] अति गहरा । (न०) [न० त०] बुरी या गलत जगह । अनुचित स्थान । अनुचित वस्तु । अनुचित अवसर, बेमौका ।

अस्थावर—(वि०) [न० त०] चर, हिलने-डुलने वाला, जो अचर न हो, जङ्गम ।

अस्थि—(न०) [√अस्+क्थिन्] हड्डी । फल का छिलका या गुठली ।—कृत्,—तेजस् —सम्भव,—सार,– स्नेह–(पुं०) गूदा ।—ज–(पुं०) गूदा । वज्र ।—तुण्ड–(पुं०) पक्षी, चिड़िया ।—धन्वन्–(पुं०) शिव का नाम ।—पञ्जर–(पुं०) हड्डियों का पिंजरा, ठठरी, कंकाल ।—प्रक्षेप–(पुं०) हड्डियों को गङ्गा या अन्य किसी तीर्थ के जल में डालने की क्रिया ।—भक्ष, भुक् (पुं०) हड्डी खाने वाला, कुत्ता ।—भङ्ग–(पुं०) हड्डी का टूट जाना ।—माला (स्त्री०) हड्डियों की माला । हड्डियों की पंक्ति ।—मालिन्–(पुं०) शिव का नाम ।—शेष– (वि०) जिसके शरीर में हड्डियाँ भर रह गई हों । बहुत दुबला ।—सञ्चय–(पुं०) शवदाह के बाद जली हुई हड्डियों को बटोरना । हड्डियों का ढेर ।—सन्धि–(पुं०) जोड़, अस्थि-संयोग, पर्व ।—समर्पण–(न०) हड्डियों का गङ्गा प्रवाह ।—स्थूण—(पुं०) शरीर ।

अस्थिति—(स्त्री०) [न० त०] स्थिति या दृढ़ता का अभाव । (आलं०) शिष्टता का अभाव, अच्छे चालचलन का अभाव ।

अस्थिर—(वि०) [न० त०] जो स्थायी या दृढ़ न हो, चञ्चल ।

अस्पर्शन—(न०) [न० त०] असंसर्ग, किसी वस्तु का स्पर्श बचाना ।

अस्पष्ट—(वि०) [न० त०] जो साफ (समझने या देखने योग्य) न हो; "अस्पष्ट-ब्रह्मलिङ्गानि वेदान्तवाक्यानि" सन्दिग्ध ।

अस्पृश्य—(वि०) [न० त०] जो छूने योग्य न हो, अछूत । अपवित्र ।

अस्फुट—(वि०) [न० त०] अस्पष्ट । सन्दिग्ध । (न०) सन्दिग्ध भाषण ।—फल–(न०) सन्दिग्ध या अस्पष्ट परिणाम ।

अस्मद्—(वि०) [√अस्+मदिक्] आत्म-वाची सर्वनाम, देहाभिमानी जीव, मैं, हम ।

अस्मदीय—(वि०) [अस्मद्+छ—ईय] हमारा, हम लोगों का ।

अस्मन्त— (न०) चूल्हा ।

अस्मार्त—(वि०) [न० त०] जो स्मरण के भीतर न हो, स्मरणातीत कालवाची । धर्मन विरुद्ध, धर्म शास्त्र अर्थात् स्मृतियों के विरुद्ध । जो स्मार्त्त-सम्प्रदाय का न हो ।

अस्मि—(अव्य०) [√ अस्+मिन्] मैं; 'आसंसुतेरस्मि जगत्सु जातः' कि० ३,६ ।

अस्मिता—(स्त्री०) [अस्मि इत्यस्य भावः तल्] अहङ्कार । योगशास्त्रानुसार पाँच प्रकार के क्लेशों में से एक । द्रष्टा और प्रदर्शनशक्ति को एक मानना अथवा पुरुष (आत्मा) और बुद्धि में अभेद मानना । सांख्य में इसे मोह और वेदान्त में इसे हृदय-ग्रन्थि कहते हैं ।

अस्मृति—(स्त्री०) [न० त०] स्मरण शक्ति का अभाव, विस्मृति, भुलक्कड़पन ।

अस्र—(पुं०) [√अस्+रन्] कोना, कोण । सिर के बाल (न०) आँसू । रक्त । खून । —कण्ठ–(पुं०) तीर ।—ज–(न०) मांस । —प–(पुं०) खून पीने वाला राक्षस ।—पा –(स्त्री०) जोंक ।—मातृका–(स्त्री०) अन्न-रस, अर्द्ध-जीर्ण भुक्तद्रव्य ।

अस्व—(वि०) [न० त०] जीवनोपाय विहीन, अकिञ्चन, निर्धन, गरीब। [न० त०] निज का नहीं।
अस्वतंत्र—(वि०) [न० त०] आश्रित, पराधीन। नम्र, वश्य।
अस्वप्न—(वि०) [न० ब०] जागता हुआ, अनिद्रित। (पु०) देवता।
अस्वर—(पु०) [न० त०]मन्द स्वर, धीमी आवाज। व्यञ्जन।
अस्वरम्—(अव्य०) जोर से नहीं धीमी आवाज में।
अस्वर्ग्य—(वि०) [न० त०] जिससे स्वर्ग की प्राप्ति न हो।
अस्वस्थ–[न० त०] बीमार, रोगी, भला चंगा नहीं।
अस्वाध्याय—(वि०) [न० ब०] जिसने वेदाध्ययन आरम्भ न किया हो। जिसका यज्ञोपवीत संस्कार न हुआ हो। (पु०) [न० त०] अध्ययन में पड़ने वाला व्यवधान या रुकावट या अवकाश।
अस्वामिन्—(पु०) [न० त०] जो किसी वस्तु का स्वामी या मालिक न हो। (वि०) [न० ब०] जिसका कोई स्वामी या दावागीर न हो।—**विक्रय**–(पु०) बिना मालिक की बिक्री।
अस्वैरिन्—(वि०)[न० त०]परतंत्र, पराधीन।
√**अह्**—स्वा० पर० अक० फैलना। अह्नोति, अहिष्यति, आहीत्।
अह—(अव्य०) [√अह्+घञ् पृषो० नलोप] प्रशंसा। वियोग। दृढ़ सङ्कल्प, अस्वीकृत। भेजना। पद्धति का त्याग। बोधक अव्यय।
अहंयु—(वि०) [अहंकारोऽस्त्यस्य इति अहम्+यु] अभिमानी। क्रोधी। स्वार्थी।
अहत—(वि०) [न० त०]जो हत या चोटिल न हो। बिना धुला हुआ, नवीन। बेदाग। स्वच्छ। जो हताश न हो। (पु०) कोरा या अनधुला वस्त्र।

अहन्—(न०)[न जहाति सर्वथा परिवर्तमानत्वात् इति √हा कनिन् न० त०] दिवस (जिसमें रात भी शामिल है)। दिवस-काल। (समास के अन्त में अहन् का अह या अह्न हो जाता है)।—**कर**, (**अहस्कर**)–(पु०) सूर्य।—**गण**, (**अहर्गण**)–(पु०) दिनों का समूह। तीस दिन का मास।—**दिवम्** (**अहर्दिवम्**)–(अव्य०) नित्य प्रति। प्रतिदिन, दिनों दिन।—**निशम्**, (**अहर्निशम्**)–(अव्य०) दिन-रात।—**पति**, (**अहःपति या अहर्पति**)– (पु०) सूर्य।——**बान्धव** (**अहर्बान्धव**), **मणि**, (**अहर्मणि**)–(पु०) सूर्य।—**मुख**, (**अहर्मुख**) (न०) दिन का आरम्भ सवेरा।—**रात्र**, (**अहोरात्र**)–(पु०) दिन और रात। दो सूर्योदयों के बीच का समय।—**शेष**, (**अहःशेष**)–(पु० न०)सायंकाल, सांझ, शाम।
अहम्-- (अ०य०)[√अह् +अम्] मैं। आत्म-सम्बन्धी अभिमान, घमंड, अहंकार।—**अग्रिका**, (**अहमग्रिका**)–(स्त्री०) श्रेष्ठता के लिये होड़, प्रतिद्वन्द्विता।—**अहमिका** (**अहमहमिका**)–(स्त्री०) [अहम् अहम् सन्त्योऽस्त्यस्य बोधायां दित्वम् ठन् न टिलोपः] प्रतिद्वन्द्विता, स्पर्द्धा, ईर्ष्या। अहङ्कार। सैनिक स्पर्द्धाकारिता; 'अहमहमिकया प्रणामलालसानाम्' का०।— **कार**- (पु०) अहङ्कार। आत्मश्लाघा। अभिमान। अंतःकरण की पाँच वृत्तियों में से एक (वेदांत, सांख्य०)।—**कारिन्**, (**अहङ्कारिन्**)–(वि०) घमंडी, अभिमानी। आत्माभिमानी, आत्मश्लाघी।—**कृति** (**अहंकृति**)–(स्त्री०) अहङ्कार, गर्व।—**पूर्व**–(वि०) प्रथम होने की अभिलाषा वाला।—**पूर्विका**, —**प्रथमिका**–(स्त्री०) स्पर्द्धा, प्रतिद्वन्द्विता। आत्मश्लाघा।—**भद्र**–(न०) अपने अस्तित्व को बहुत बड़ा समझना।—**भाव**–(पु०) अभिमान, अहङ्कार।—**मति**–(स्त्री०) अविद्या, अन्य में अन्य के धर्म को दिखाने वाला ज्ञान। श्लाघा, अभिमान।

अहरणीय— (वि०) [न० त०] जो चुराया न जा सके। जो स्थानान्तरित न किया जा सके। जो ले जाया न जा सके। दृढ़, स्थिर।

अहल्य—(वि०) [न० त०] अनजुता हुआ।

अहल्या—(स्त्री०) [अहल्य+टाप्] गौतम की पत्नी। (इसको पति के शाप से भगवान् श्रीरामचन्द्र जी ने मुक्त किया था)।—**जार**—(पु०) इन्द्र।—**नन्दन**—(पु०) शतानन्द ऋषि।

अहल्लिक—(पु०) [अहनि लीयते इति √ली +ड नि० ततः संज्ञायां कन्] शव, मुर्दा, मृतक शरीर। (वि०) (वैदिक) बहुत बोलने वाला।

अहह—(अव्य०) [अहं जहाति इति अहम् √हा+क० पृषो०] विस्मय, एवं खेद व्यञ्जक सम्बोधन; 'अहह कष्टमपण्डितता विधेः' भट्टि० २.९२।

अहार्य—(पु०) [√हृ+ण्यत् न० त०] पर्वत पहाड़। (वि० दे०) अहरणीय।

अहि—(पु०) [आहन्ति इति आ√हन्+डिन् टिलोप, ह्रस्व] सर्प, साँप। सूर्य। राहु-ग्रह। वृत्रासुर। धोखेबाज। मेघ, बादल। सीसा। भोगी। नीच। अश्लेषा नक्षत्र। दुष्ट मनुष्य। जल। पृथिवी। दुधार गौ। नाभि।—**कान्त**—(पु०) पवन, हवा।—**कोष**—(पु०) साँप की केंचुली।—**चक्र**—(न०) एक तान्त्रिक चक्र।—**छत्र**—(पु०) दक्षिण पञ्चाल जिसे अर्जुन ने जीत कर द्रोणाचार्य को गुरु-दक्षिणा में दे दिया था। एक वनस्पति जन्य विष।—**छत्रक**—(न०) कुकुरमुत्ता।—**छत्रा**—(स्त्री०) अहिच्छत्र देश की राजधानी। शर्करा। मेषशृंगी।—**जित्**—(पु०) श्रीकृष्ण का नाम। इन्द्र का नाम।—**तुण्डिक**—(पु०) साँप पकड़ने वाला, सँपेरा।—**द्विष्**,—**द्रुह्**,—**मार**,—**रिपु**,—**विद्विष्**—(पु०) गरुड़ का नाम। न्योला। मोर।—**नकुलिका**—(स्त्री) सर्प और न्योले की स्वाभाविक शत्रुता।—**निर्मोक**—(पु०) साँप की केंचुली।—**पति**—(पु०) सर्पराज, वासुकि। कोई भी बड़ा सर्प।—**पुत्रक**—(पु०) एक तरह का नाव जो सर्प के आकार का होता है।—**फेन**—(पु० न०) अफीम।—**भय**—(न०) किसी छिपे सर्प का भय। दगा या विश्वासघात का भय।—**भुज्**—(पु०) गरुड़ का नाम। मोर। न्योला नकुल।—**भृत्**—(पु०) शिव।

अहिंसा—(स्त्री०) [न० त०] किसी प्राणी को न मारना। मन, वचन, कर्म से किसी प्राणी को पीड़ा न देना। हैम नाम की घास।

अहिंस्र—(वि०) [न० त०] अहिंसक, जो हिंसा न करे।

अहिक—(पु०) अंधा सर्प।

अहित—(वि०) [न० त०] जो रखा न गया हो। अयोग्य। अहितकर। प्रतिकूल। विरोधी। (पु०) शत्रु, वैरी। (न०) हानि। नुकसान, क्षति।

अहिम—(वि०) [न० त०] जो ठंडा न हो, गर्म।—**अंशु**, (**अहिमांशु**)—**कर**,—**तेजस्**,—**द्युति**,—**रुचि** (पु०) सूर्य।

अहीन—(वि०) [न० त०] समूचा, सम्पूर्ण, अन्यून। बड़ा, जो छोटा न हो। जो किसी वस्तु से वञ्चित न हो। जो जातिच्युत या पतित न हो। (पु० न०) [अहोभिः साध्यते इति अहन्+ख—ईन] एक यज्ञ जो कई दिनों तक होता है।

अहीर—(पु०) [आभीरी —पृषो० साधुः] ग्वाला, अहीर।

अहीरणि—(पु०)[अहीन् ईरयति दूरी करोति इति अहि√ईर्+अनि] कुचलेड़, दुमुँहा साँप।

अहीभुव—(पु०) [अहिरिव भूयते इति अहि√भू+क, दीर्घ] शत्रु, वैरी।

अहु—(वि०) [√अह्+उन्] व्यापक।

अहुत—(वि०) [न० त०] जो हवन न किया गया हो। (पु०) ध्यान। स्तव। स्वाध्याय।

अहे—(अव्य०)[√अह्+ए] धिक्कार, खेद और वियोग सूचक अव्यय।

अहेतु—(वि०) [न० ब०] हेतु रहित। (पु०) [न० त०] हेतु का अभाव। अर्थालंकार का एक भेद।

अहेतुक, अहैतुक—(वि०) [न० ब०, कप्] [हेतु+ठञ्, न० त०] बिना कारण का। फल की इच्छा से रहित। बिना किसी तात्पर्य का।

अहो—(अव्य०) [√हा+डो, न० त०] एक अव्यय जो निम्न भावों का द्योतक है :—आश्चर्य, शोक, खेद, प्रशंसा, स्पर्द्धा, ईर्ष्या, सन्तोष, थकावट, सम्बोधन, तिरस्कार।

अहोबत—(अव्य०) [द्व० स०] दया; श्रम; खेद—इनका द्योतक।

अहोहे—(अव्य०) आश्चर्य।

अह्नाय—(अव्य०) [√ह्नै +घञ्, वृद्धि: पृषो० यस्य नत्वम्] तुरन्त, तेजी से, फुर्ती से; 'अह्नाय सा नियमजं क्लममुत्ससर्ज' कु० ५.८६।

अह्रय, अह्रयाण—(वि०) [√ह्री+अच्, न० त०] [√ह्री+शानच्, न० त०] निर्लज्ज। अभिमानी।

अंहि—(वि०) [√ह्न+कि, न० त०] मोटा। विपदी। बुद्धिमान्। (पु०) कवि।

अह्रीक—(वि०) [नास्ति ह्री: लज्जा यस्य न० ब०, कप्] निर्लज्ज। (पु००) बौद्ध भिक्षु।

अह्लुल—(वि०) [√ह्लल्+अच् न० त०] जो घबड़ाया हुआ न हो। (पु०) भिलावाँ, भल्लातक वृक्ष।

आ

आ—(अव्य०) [√आप्+क्विप् पृषो-पलोप] वर्ण माला का दूसरा अक्षर तथा स्वर, यह "अ" का दीर्घ रूप है। हाँ, अनुमति, सच-मुच। इसका प्रयोग अनुकंपा, दया, वाक्य, समुच्चय, थोड़ा, सीमा, व्याप्ति, अवधि से और तक के अर्थ में होता है। जब यह क्रिया अथवा सत्त्वावाचक शब्दों के पूर्व लगाया जाता है तब यह समीप, सम्मुख, चारों ओर से आदि अर्थ को बतलाता है। वैदिक भाषा में "आ" सप्तम्यन्त शब्द के पहले—में और आदि का अर्थ बतलाता है। (पु०) महादेव। (स्त्री०) लक्ष्मी।

आकत्थन—(न०) [आ√कत्थ्+ल्युट्] डींग, शेखी, बड़ाई।

आकत्य—(न०) [अकतस्य भाव: इत्यर्थे अकत+ष्यञ्] किसी वस्तु को अपवित्र कर डालने की क्रिया।

आकम्प—(पु०) **आकम्पन**—(न०) [आ √कम्प्+घञ्] [आ√कम्प्+ल्युट्] थोड़ा हिलना-डुलना। काँपना।

आकम्पित, आकम्प्र-(वि०) [आ√कम्प् +क्त] [आ√कम्प्+र] कम्पयुक्त, काँपता हुआ। आंदोलित।

आकर—(पु०) [आकिरन्ते धातवोऽत्र इति आ√कृ+अप्]खान [आकुर्वन्ति सर्वोभिन्न व्यवहारमत्र इति आ√कृ+घ] समूह: 'सृजति तावदशेषगुणाकरम्' भट्टि० २.६२। सर्वोत्कृष्ट, सर्वोत्तम।

आकरिक—(पु०) [आकर+ठञ्—इक]खान की निगरानी के लिये राजा द्वारा नियुक्त राज-पुरुष।

आकरिन्—(वि०) [आकर+इनि] खान से निकला हुआ, खनिज पदार्थ। कुलीन।

आकर्णन—(न०) [आ√कर्ण्+ल्युट्] सुनना, कान करना।

आकर्ष—(पु०) [आ√कृष्+घञ्]खिंचाव। दूर खींच ले जाना। (धनुष को) तानना। वशीकरण। पासे का खेल। पासा। चौपड़ की बिसात। ज्ञानेन्द्रिय। कसौटी।

आकर्षक—(वि०) [आ√कृष् +ण्वुल्] खींचने वाला, आकर्षण करने वाला। (पु०) चुम्बक पत्थर।

आकर्षण—(न०) [आ√कृष्+ल्युट्] खिंचाव। तंत्र शास्त्र का एक प्रयोग (जिसमें दूरस्थ व्यक्ति को मन्त्र खींचकर बुला लिया जाता है)।—**शक्ति** –(स्त्री०) किसी भौतिक पदार्थ की अन्य पदार्थ को अपनी ओर

की प्राकृतिक शक्ति, चुम्बक शक्ति

आकर्षणी—(स्त्री०) [आकर्षण+ङीप्] लग्गी, ऊँचाई से फलफूल-पत्ती तोड़ने की लंबी और नोक पर मुड़ी हुई लकड़ी विशेष। शरीर पर अंकित की जाने वाली एक तरह की मुद्रा। एक प्राचीन सिक्का।

आकर्षिक—(वि०) [स्त्री०—**आकर्षिकी**] [आकर्ष+ठन्—इक] चुम्बक या अयस्कान्त पत्थर।

आकर्षिन्—(वि०) [आ√कृष्+णिनि] खींचने वाला।

आकलन—(न०) [आ√कल्+ल्युट्] पकड़। गणना। गिनती। इच्छा। अभिलाषा। पूछ-ताछ। समझ-बूझ।

आकल्प—(पु०) [आ√कृप्+णिच्+घञ्] आभूषण। शृङ्गार, सजावट; 'आकल्पसारो रूपाजीवाजनः' दश०। पोशाक, परिच्छद। रोग, बीमारी।

आकल्पक—(पु०) [आ√कृप्+णिच्+ण्वुल्] खेद पूर्वक स्मरण। मूर्च्छा। हर्ष या प्रसन्नता। अन्धकार। गाँठ या जोड़। मोह।

आकष—(पु०) [आ√कष्+अच्] कसौटी।

आकषिक—(वि०) [आकष+ठन्—इक] (कसौटी पर) जाँच या परीक्षा करने वाला।

आकस्मिक—(वि०) [स्त्री०—**आकस्मिकी**] [अकस्मात् भवः इत्यर्थे+ठक्, टिलोप, आदिवृद्धि] अचानक होने वाला, आशातीत। कारणहीन।

आकस्मिकतानिधि—(स्त्री०) [आकस्मिक+तल् ततः ष त०] वह निधि या कोश जिसमें से अकस्मात् उपस्थित होने वाली आवश्यकता आदि के लिये रुपया व्यय किया जा सके (कंटिनजेंसी फंड)।

आकांक्षा—(स्त्री०) [आ√काङ्क्ष्+अ] वाक्य में अर्थपूर्ति के लिये पदविशेष की आवश्यकता। इच्छा, चाह। अभिप्राय, तात्पर्य। अनुसन्धान। अपेक्षा।

आकाय—(पु०) [आचीयते यस्मिन् इति आ√चि+घञ् कुत्व] निवासस्थान। चिता की अग्नि। चिता।

आकार—(पु०) [आ√कृ+घञ्] शक्ल, स्वरूप। डीलडौल, कद। बनावट, गठन। चेष्टा। संकेत।—**गुप्ति**–(स्त्री०) मन के भावों को छिपाना। बनावट।

आकारण, (न०) **आकारणा**–(स्त्री०) [आ√कृ+णिच्+ल्युट्] [आ√कृ+णिच्+युच्] बुलाना, आमंत्रण। ललकार, चुनौती।

आकाल—अव्य० [अव्य० स०] काल पर्यन्त। (पु०) [प्रा० स०] ठीक समय।

आकालिक—(वि०) (स्त्री०—**आकालिकी**] [अकाल+ठञ्] क्षणिक, शीघ्र नष्ट होने वाला। असामयिक, बे-मौसम।

आकाश—(पु० न०) [आकाशन्ते सूर्यादयोऽत्र इति आ√काश्+घञ्] पंच महाभूतों में से प्रथम जो शब्द गुण वाला माना जाता है, आसमान, गगन, व्योम। आकाश तत्त्व। शून्य स्थान। शून्य अवकाश। ब्रह्म। प्रकाश। छिद्र। अभ्रक।—**ईश (आकाशेश)**–(पु०) इन्द्र। (वि०) अनाथ जिसके पास आकाश को छोड़ अन्य कोई सम्पत्ति ही न हो।—**कक्षा**–(स्त्री०) क्षितिज।—**कल्प**–(पु०) ब्रह्म।—**कुसुम**,—**पुष्प**–(न०) आसमान का फूल, अनहोनी बात।—**ग**–(पु०) पक्षी।—**गा**–(स्त्री०) आकाशगंगा।—**चमस**–(पु०) चन्द्रमा।—**जननी**–(स्त्री०) बाण चलाने के लिये प्राचीर में बने हुए छिद्र।—**जल**–(न०) मेह। ओस।—**दीप**,—**प्रदीप**–(पु०) ऊँची बल्ली पर लटका कर जो दीपक कार्त्तिक मास में भगवान् लक्ष्मीनारायण की प्रसन्नता सम्पादनार्थ जलाया जाता है उसे आकाशदीप कहते हैं।—**निद्रा**–(स्त्री०),—**शयन**–(न०) खुली जगह में सोना।—**पथिक**–(पु०) सूर्य।—**भाषित**–(न०) किसी नाटक के अभिनय में कोई पात्र जब बिना किसी प्रश्नकर्त्ता के आकाश की ओर देखकर, आप ही आप प्रश्न करता

और आप ही उसका उत्तर देता है, तब ऐसे प्रश्नोत्तर को आकाशभाषित कहते हैं ।—**यान**–(न०) व्योमयान, हवाई जहाज ।—**रक्षिन्**–(पु०) राजप्रासाद की चारदीवारी पर का चौकीदार।—**वल्ली**–(स्त्री०) अमरबेल।—**वाणी**–(स्त्री०) देववाणी, वह वाणी जिसका बोलने वाला न देख पड़े ।—**स्फटिक**–(पु०) ओला ।

आकिञ्चन, आकिञ्चन्य–[अकिञ्चन+अण्] [अकिञ्चन+ष्यञ्] दरिद्रता, धनहीनता, गरीबी ।

आकीर्ण—[आ√कॄ+क्त] बिखरा हुआ, फैला हुआ, व्याप्त; 'आकीर्णमृषिपत्नीनामुटजद्वाररोधिभिः' र० १.५० ।

आकुञ्चन—(न०) [आ√कुञ्च्+ल्युट्] सिकोड़ना । फैले हुए को एकत्र करने की क्रिया । टेढ़ा होना । वैशेषिक मत के अनुसार पाँच कर्मों में से एक ।

आकुल—(वि०) [आ√कुल्+क] व्याप्त, सङ्कुल, भरा हुआ । व्यग्र, व्यस्त । उद्विग्न, क्षुब्ध । विह्वल, कातर, अस्वस्थ । (न०) आबाद जगह ।

आकुलित—(वि०) [आ√कुल्+क्त] आकुल । घेरा हुआ । पंकिल किया हुआ । दुःखी, व्यग्र, उद्विग्न, विह्वल ।

आकुञ्चित—(वि०) [आ√कुञ्च्+क्त] कुछ-कुछ सिकुड़ा हुआ । कुछ-कुछ सिमटा हुआ ।

आकूत—(न०) [आ√कू+क्त] आशय, अभिप्राय । भाव । आश्चर्य । इच्छा । प्रेरणा

आकृति—(स्त्री०) [आ√कृ+क्तिन्] बनावट, गठन । मूर्ति, रूप । चेहरा, मुख । चेष्टा । २२ अक्षरों का एक वर्णवृत्त ।—**छत्रा**–(स्त्री०) घोसा नाम की एक लता, घोषातकी ।

आकृष्टि—(स्त्री०) [आ√कृष्+क्तिन्] खिंचाव, आकर्षण । मध्याकर्षण । (धनुष को) तानना या झुकाना ।

आकेकर—(वि०) [आके अन्तिके कीर्यते इति √कृ+अप्, टाप् आकेकरा दृष्टिः सा अस्ति अस्येत्यर्थे] अधमुँदा; : 'निमीलदाकेकरलोलचक्षुषाम्' र० ८.५४ ।

आकोकेर—(पु०) [?] मकर राशि ।

आक्रन्द—(पु०) [आ√क्रन्द्+घञ्] रुदन, रोना, चीखना । बुलाना, आह्वान करना । शब्द । मित्र, त्राणकर्ता । भाई । घोर संग्राम । रोने का स्थान । कोई राजा जो अपने मित्र राजा को अन्य राजा की सहायता करने से रोके ।

आक्रन्दन—(न०) [आ√क्रन्द+ल्युट्] विलाप, रुदन । बुलाहट ।

आक्रन्दिक—(वि०) [आक्रन्द+ठञ् वा ठक्–इक] रोने का शब्द सुन रोने के स्थान पर जाने वाला ।

आक्रन्दित—[आ√क्रन्द्+क्त] गर्जता हुआ । फूट-फूटकर रोता हुआ । आह्वान किया हुआ । (न०) बिल्लाहट । गर्जन, दहाड़, नाद ।

आक्रम (पु०), **आक्रमण**–(न०) [आ√क्रम्+घञ्] [आ√क्रम्+ल्युट्] समीप आगमन । आक्रमण । घेरना । कब्जा करना । प्राप्त करना । पकड़ लेना । व्याप लेना । भारी बोझ से लाद देने की क्रिया ।

आक्रान्त—[आ√क्रम्+क्त] जिस पर हमला किया गया हो । पकड़ा हुआ । अधिकार में लिया हुआ । पराजित, हराया हुआ । ग्रसा हुआ, ग्रसित । प्राप्त । अधिकारभुक्त ।

आक्रान्ति—(स्त्री०) [आ√क्रम्+क्तिन्] कब्जा करना । चढ़ जाना । पराभूत करना । मार डालना । आरोहण । शक्ति, सामर्थ्य, बल ।

आक्रामक—(पु०) [आ√क्रम्+ण्वुल्] आक्रमण करने वाला, हल्ला करने वाला ।

आक्रीड (पु०), **आक्रीडन** (न०) [आ√क्रीड्+घञ्] [आ√क्रीड्+ल्युट्] खेल, दिलबहलाव । प्रमोद-कानन, क्रीडावन, लीलोद्यान ।

आक्रुष्ट—[आ√क्रुश्+क्त] तिरस्कृत, डाँटा-डपटा हुआ । कोसा हुआ, शापित ।

चिल्लाया हुआ । गर्जना किया हुआ । (न०) बुलावा । बुलाहट । प्रखर शब्द, गाली-गलौज भरी हुई वक्तृता या कथन ।

आक्रोश—(पु०), **आक्रोशन**–(न०) [आ √कुश्+घञ्] [आ√कुश्+ल्युट्] पुकार, चिल्लाहट । धिक्कार, भर्त्सना, गाली । शाप, अकोसा । शपथ, सौगंध ।

आक्लेद—(पु०)[आ√क्लिद्+घञ्] नमी, तरी, छिड़काव ।

आक्षद्यूतिक—(वि०) [स्त्री०—**आक्षद्यूतिकी**] [अक्षद्यूतेन निर्वृत्तम् इत्यर्थे अक्षद्यूत ठक्–इक, वृद्धि] जुए से समाप्त किया हुआ । जुए से उत्पन्न (विरोध या वैर आदि) ।

आक्षपण—(न०) [आ√क्षप्+ल्युट्] व्रत, उपवास ।

आक्षपाटिक—(पु०) [अक्षपटे नियुक्तः इत्यर्थे ठक्–इक] जुए खाने का प्रबन्ध-कर्ता, जुए की हार-जीत का निर्णायक । न्यायकर्ता, निर्णायक ।

आक्षपाद—(वि०)[स्त्री०—**आक्षपादी**] [अक्षपाद+अण्] अक्षपाद या गौतम का अनुयायी ।(पु०)न्यायशास्त्रवादी, नैयायिक ।

आक्षार—(पु०) [आ√क्षर्+णिच्+घञ्] आरोप, अपवाद, दोषारोप । (विशेष कर व्यभिचार का) ।

आक्षारण—(न०), **आक्षारणा**—(स्त्री०) [आ√क्षर्+णिच्+ल्युट्] [आ√ क्षर्+णिच्+युच्] (दे०) 'आक्षार' ।

आक्षारित—[आ√क्षर्+णिच्+क्त] कलङ्कित, बदनाम किया हुआ । दोषी, अपराधी ।

आक्षिक—(वि०) [स्त्री०—**आक्षिकी**] [अक्षैः दीव्यति जयति जितं वा इति अक्ष+ठक्] पासों से जुआ खेलने वाला । जुए से सम्बन्ध रखने वाला । (न०) जुए में प्राप्त धन । जुए में किया हुआ ऋण ।

आ√क्षिप्—फेंकना । टुकड़े-टुकड़े कर डालना । बीच में रोक लेना ।

आक्षिप्त—(वि०) [आ√ क्षिप्+क्त] फेंका हुआ । गिराया हुआ । निन्दित । अपवादित ।

आक्षिप्तिका—(स्त्री०) [आ√ क्षिप्+क्त, टाप्, क, इत्व] तान या राग विशेष जो किसी अभिनयपात्र द्वारा उस समय गाया जाय, जिस समय वह रंगमञ्च के समीप पहुँचे ।

आक्षीब—(वि०) [आ√क्षीब्+क्त, नि०] नशे में चूर, मत्त । (पु०) [आ√क्षीब्+णिच्+अच्] सहिजन का पेड़ ।

आक्षेप—(पु०)[आ√क्षिप्+घञ्] फेंकना । उछालना । खींचना; 'अंशुकाक्षेपविलज्जितानाम्' कु० १.१४ । कटूक्ति, धिक्कार, गाली, ताना । चित्त विक्षेप । प्रलोभन, प्ररोचन । चढ़ाना (जैसे रंग) । किसी ओर सङ्केत करना । (किसी शब्द का अर्थ) मान लेना । परिणाम निकाल लेना । अमानत, जमा, धरोहर । आपत्ति । ध्वनि । एक अलंकार (सा०) । एक वातरोग ।

आक्षेपक—(पु०) [आ√क्षिप्+ण्वुल्] फेंकने वाला । चित्त विक्षेपकारक । दोषी ठहराने वाला । शिकारी । एक वातरोग ।

आक्षेपण—(न०) [आ√क्षिप+ल्युट्] आक्षेप करना ।

आक्षोट, आक्षोड–(पु०) [आ√अक्ष्+ओट वा ओड ततः स्वार्थे अण्] अखरोट का वृक्ष ।

आखेटन—(न०) [आ√खेट्+ल्युट्] शिकार ।

आख, आखन-(पु०) [आ√खन्+ड] [आ√खन्+घ] खंती । कुदाली ।

आखण्डल—(पु०) [आखण्डयति भेदयति पर्वतान् इति आ√खण्ड्+डलच्, डस्य नेत्वम्] इन्द्र; 'आखण्डलः काममिदम्बभाषे' कु० ३·११ ।

आखनिक—(पु०) [आ√खन्+इकन्] बेलदार, खान खोदने वाला । चूहा । शूकर । चोर । कुदाल ।

आखर—(पुं०) [आ√खन्+डर] कुदाल। बेलदार, खान खोदने वाला।

आखात—(पुं० न०) [आ√खन्+ णिच् +क्त] झील, ऐसा जलाशय जो किसी मनुष्य का बनाया हुआ न हो।

आखान—(पुं०) [आ√खन्+घञ्] वह जो चारों ओर खोदे। कुदाल। बेलदार।

आखु—(पुं०) [आ√खन्+डु] चूहा। छछूँदर। चोर। शूकर। कुदाल। कंजूस; 'विभवेभवतिनैवास्ति न ददाति जुहोति न, तमाहुराखुः' ।—**उत्कर** (**आखूत्कर**)—(पुं०) वल्मीक, मृत्तिकाकूट।—**उत्थ** (**आखूत्थ**)—(न०) चूहों का समुदाय।—**ग,—पत्र,—रथ,—वाहन**—(पुं०) श्रीगणेश की उपाधि जिनका वाहन चूहा है।—**घात**—(पुं०) मुसहर, चूहड़ा।—**पाषाण**—(पुं०) चुम्बक पत्थर, संखिया।—**भुज,—भुक**—(पुं०) बिल्ला, बिलार।

आखेट—(पुं०) [आखिट्यन्ते त्रास्यन्ते प्राणिनः यत्र इति आ√खिट्+घञ्] शिकार, अहेर।—**शीर्षक**—(न०) चिकना फर्श या जमीन। खान। विवर। गुफा।

आखेटक—(न०) [आखेट+कन्] शिकार, मृगया। (वि०) [आ√खिट्+ण्वुल्] शिकार खेलने वाला। (पुं०) शिकारी।

आखोट—(पुं०) [आखः खनित्रम् इव उटानि पर्णानि अस्य ब० स०] अखरोट का वृक्ष।

आख्या—(स्त्री०) [आख्यायतेऽनया इति आ √ख्या+अङ] नाम, उपाधि।

आख्यात—[आ√ख्या+क्त] कथित, कहा हुआ। गिना हुआ। पढ़ा हुआ। जाना हुआ, ज्ञात। (व्याकरण में) साधन किया हुआ, धातुओं के रूप बनाये हुए। (न०) क्रिया।—'भावप्रधानमाख्यातम्।'—निरुक्त।

आख्याति—(स्त्री०) [आ√ख्या+क्तिन्] कथन। सूचना, विज्ञप्ति। नामवरी, कीर्ति। नाम।

आख्यान—(न०) [आ√ख्या+ल्युट्] कथन। घोषणा। विज्ञप्ति, सूचना। पूर्ववृत्तोक्ति। कहानी, किस्सा। उत्तर ('प्रश्नाख्यानयोः' पाणिनि अष्टाध्यायी।)।

आख्यानक—(न०) [आख्यान+कन्] किस्सा, छोटी कहानी, कथानक, उपाख्यान।

आख्यायक—(त्रि०) [आ√ख्या+ण्वुल्] कहने वाला। (पुं०)हल्कारा। राजकीय घोषणा करने वाला या उत्सवादि की व्यवस्था करने वाला।

आख्यायिका—(स्त्री०) [आख्यायक+टाप्, इत्व] एक प्रकार की गद्यमयी रचना, कहानी। [साहित्यज्ञों ने गद्य-रचना के दो भेद बतलाये हैं, अर्थात् कथा और आख्यायिका, बतलाये हैं, अर्थात् कथा और आख्यायिका, बाण के 'हर्षचरित' को ऐसे लोग 'आख्यायिका' मानते हैं और कादम्बरी को कथा। यद्यपि दण्डिन् के मतानुसार इन दोनों में भेद कुछ भी नहीं है।—'तत्कथाख्यायिकेत्येका जातिः संज्ञाद्वयाङ्किता।'—काव्यादर्श।

आख्यायिन्—(वि०) [आ√ख्या+णिनि] कहने वाला, बताने वाला।

आख्येय—[आ√ख्या+यत्] कहने योग्य, बतलाने योग्य, जताने योग्य।

आगति—(स्त्री०) [आ√गम्+क्तिन्] आगमन। प्राप्ति, उपलब्धि। प्रत्यावर्तन। उत्पत्ति।

आगन्तु—(वि०) [आ√गम्+तुन्] आया हुआ, पहुँचा हुआ। बाहर से आया हुआ, बाहरी। आकस्मिक। भूला-भटका, पथभ्रान्त। (पुं०) नवागत, अपरिचित, मेहमान।

आगन्तुक—(वि०) [स्त्री०—**आगन्तुका,—आगन्तुकी**] [आगन्तुक+कन्] अपनी इच्छा से आया हुआ, बिना बुलाये आया हुआ। भूला-भटका या घूमता-फिरता आया हुआ। आकस्मिक। प्रक्षिप्त। (पुं०) अनाहूत या अनधिकार प्रवेश करने वाला व्यक्ति। अपरिचित, मेहमान, अतिथि।

आगम—(पुं०) [आ√गम्+घञ्] आना, आगमन। उपलब्धि, प्राप्ति। जन्म, उत्पत्ति।

आचक्षुस्—(पुं०) [आ√चक्ष्+उसि (बा०)] विद्वान्, पण्डित ।

आचम—(पुं०) [आ√चम्+घञ्] कुल्ला, आचमन ।

आचमन—(न०) [आ√चम्+ल्युट्] जल से मुख साफ करने की क्रिया । किसी धर्मानुष्ठान के आरम्भ में दाहिने हाथ की हथेली में जल रखकर पीने की क्रिया ।

आचमनक—(न०) [आचमनस्य कं जलम् अत्र ब० स०] पीकदान ।

आचय—(पुं०) [आ√चि+अच्] चुनना । इकट्ठा करना । जमाव, भीड़ । ढेर, समूह ।

आचरण—(न०) [आ√चर्+ल्युट्] अनुष्ठान; 'अधीतिबोधाचरण प्रचारणैः' नैष० १.४ । व्यवहार, बर्ताव । चाल-चलन । चलन, प्रचलन पद्धति । स्मृति ।—**पञ्जी**-स्त्री०,—**पुस्तक**(न०) वह पुस्तक (पंजी) जिसमें कर्मचारी के आचरण, व्यहार, कर्त्तव्य-पालन इत्यादि से सम्बन्ध रखने वाली बातें समय-समय पर लिखी जाती हैं (कांडक्टबुक) ।

आचान्त—(वि०) [आ√चम्+क्त] आचमन या कुल्ला किये हुए । आचमन करने योग्य (जल) ।

आचाम—(पुं०) [आ√चम्+घञ्] आचमन, कुल्ली । जल या गर्म जल का उफान ।

आचार—(पुं०) [आ√चर्+घञ्] चाल-चलन, चरित्र, चाल-ढाल । रीति-रिवाज, चलन, पद्धति । सदाचार । शील ।—**पतित**, **भ्रष्ट**-(वि०) दुराचारी, अशिष्ट ।—**पूत**-(वि०) सदाचार के अनुष्ठान से पवित्र ।—**लाज**-(पुं० बहु०)खीलें जो राजा या किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति के ऊपर बरसायी जाती हैं—(उसके प्रति सम्मान-प्रदर्शनार्थ ।)—**वेदी**-(स्त्री०) आर्यावर्त्त देश का नाम ।

आचारिक—(वि०) [आचार+ठक्—इक] आचार सम्बन्धी । प्रामाणिक, पद्धति या नियम से समर्थित ।

आचारिन्—(वि०) [आचार+इनि] शुद्ध आचार वाला ।

आचार्य—(पुं०) [आ√चर्+ण्यत्] (साधारणतः) शिक्षक या गुरु । उपनयनसंस्कार के समय गायत्री मंत्र का उपदेश देने वाला । गुरु, वेद पढ़ाने वाला । जब यह किसी के नाम के पूर्व लगता है (यथा आचार्य वासुदेव) तब इसका अर्थ होता है, विद्वान्, पण्डित । अंगरेजी के "डाक्टर" शब्द का यह प्रायः समानार्थवाची शब्द भी है ।—**मिश्र**(वि०) माननीय, पूज्य ।

आचार्यक—(न०) [आचार्यस्य कर्म भावो वा इत्यर्थे आचार्य+वुञ्—अक] शिक्षा । पाठन, पढ़ाना । आध्यात्मिक गुरु का गुरुत्व । आचार्य का काम; 'लङ्कास्त्रीणाम् पुनश्चक्रे विलापाचार्यकं शरैः' र० १२.७८ ।

आचार्यानी—(स्त्री०) [आचार्य+ङीप्, आनुक्] आचार्य की पत्नी ।

आचित—[आ√चि+क्त] परिपूरित, भरा हुआ । लदा हुआ । ढका हुआ । बंधा हुआ । ओतप्रोत । सञ्चित, एकत्र किया हुआ ।(पुं०) गाड़ी भर बोझ (न० भी है) । दस गाड़ी भर की तौल, अर्थात् ८० हजार तोला ।

आचूषण—(न०) [आ√चूष् +ल्युट्] चूसना । चूस कर उगल देना । सिंघी लगाना ।

आच्छाद—(पुं०) [आ√छद्+णिच्+घञ्] वस्त्र, पहनावा ।

आच्छादन—(न०) [आ√छद्+णिच्+ल्युट्] ढकना । छिपाना । ढक्कन, खोल, गिलाफ, वस्त्र, पहनावा । छाजन, ठाट । लोप ।

आच्छुरित—(वि०) [आङ् छुर्+क्त मिश्रित । खुरचा हुआ । जलन पैदा करता हुआ ।(न०)नखों को एक दूसरे पर रगड़कर बाजे की तरह बजाने की क्रिया । अट्टहास ।

आच्छुरितक—(न०) [आच्छुरित+कन्] नाखून का खरोंचा, नखक्षत । अट्टहास । सशब्द हास ।

आच्छेद (पुं०), **आच्छेदन**–(न०) [आ√छिद्+घञ्] [आ√छिद्+ल्युट्] काटना, नश्तर लगाना । जरा-सा काटना ।

आच्छोटन—(न०) [आ–स्फुट् +ल्युट्, पृषो०] उँगलियाँ चटकाना ।

आच्छोदन—(न०) [आ√छिद्+ल्युट्, पृषो० इत ओत्] शिकार, आखेट, मृगया ।

आजक—(न०) [अजानां समूहः इत्यर्थे अज +वुञ्] बकरों का झुंड ।

आजगव—(न०) [अजगव+अण् (स्वार्थे)] शिव का धनुष ।

आजनन—(न०)[आ√जन्+ल्युट्] कुलीनता, उच्चवंशोद्भवता । प्रसिद्ध कुल या वंश ।

आजान–(पुं०) [आ√जन्+घञ्] उत्पत्ति, जन्म । जन्मस्थान । वंश । (अव्य०) [जन+अण्–जान, आ जान अव्य० स०] सृष्टिकाल से ।

आजानेय– (वि०) [स्त्री०—**आजानेयी**] [आजे विक्षेपेऽपि आनेयः अश्ववाहो यथास्थानमस्य इति विग्रहे ब० स०] अच्छी जाति का (जैसे घोड़ा) । निर्भीक, निर्भय ।—(पुं०) अच्छी जाति का घोड़ा ।

आजि—(पुं०) [√अज्+इण्] युद्ध, लड़ाई। रण-क्षेत्र; 'शस्त्राण्याजौ नयनसलिलं चापि तुल्यं मुमोच' वे० ३.६ ।

आजीव (पुं०), **आजीवन**–(न०) [आ√जीव्+घञ्] [आ√जीव्+ल्युट्] आजीविका, रोजी, पेशा । जीविका का उपाय । राजकर (कौ०) । उचित आय ।

आजीविका—[आ√जीव्+ अ +कन्, टाप्, अत इत्वम्] रोजी । रोजगार, धंधा ।

आजू, आजूर्—(स्त्री०) [आ√जु+क्विप्] [आ√ज्वर्+क्विप्, ऊठ्] बेगारी । नरकवास ।

आज्ञप्ति—(स्त्री०) [आ√ज्ञा+णिच्, पुक्, ह्रस्व+क्तिन्] आज्ञा, आदेश, हुक्म । दीवानी मुकदमे में न्यायालय द्वारा किसी के पक्ष में दिया गया निर्णय (डिक्री) । किसी उच्चाधिकारी या परिषद् आदि का वह आदेश जो किसी व्यवस्था आदि के सम्बन्ध में हो तथा जिसका मानना आवश्यक हो ।

आज्ञा—(स्त्री०) [आ√ज्ञा+अङ, टाप्] आदेश, हुक्म । अनुमति, इजाजत ।—**अनुग**, —**अनुगामिन्** ,—**अनुयायिन्**,—**अनुवर्तिन्**, —**अनुसारिन्**,—**सम्पादक**,—**वह**— (वि०) आज्ञाकारी, आज्ञा मानने वाला ।

आज्ञापन—(न०) [आ√ज्ञा+णिच्–पुक् ल्युट्] हुक्म देना । जताना ।

आज्य—(न०) [आ√ अञ्ज्+क्यप्, नलोप] घी ।—**पात्र**–(न०)—**स्थाली**– (स्त्री०) बर्तन जिसमें घी रखा जाय ।—**भुज्**–(पुं०) अग्नि का नाम । देवता ।

आञ्चन—(न०) [आ√अञ्च् +ल्युट्] शरीर से काँटे या तीर को थोड़ा-सा खींचकर निकालने की क्रिया ।

√**आञ्छ्**, भ्वा० पर० सक० लंबा करना, बढ़ाना । ठीक करना, बैठाना, (जैसे हड्डी का) आञ्छति, आञ्छिष्यति, आञ्छीत् ।

आञ्छन—(न०) [√आञ्छ्–ल्युट्] (हड्डी या टाँग को) बराबर या ठीक करना या बैठाना ।

आञ्जन—(न०) [अञ्जनी+अण्] अंजन। (पुं०) हनुमान; 'दाशरथिबलैरिवाञ्जनीलैः नलपरिगतप्रान्तैः' का० ।

आञ्जनेय—(पुं०)[अञ्जनी+ढक्–एय] हनुमान का नाम ।

आटविक—(पुं०) [अटव्यां चरति भवो वा इत्यर्थे अटवी+ठक्–इक] वनरखा, वनवासी । अग्रगन्ता, सेना का एक भेद ।

आचक्षुस्—(पुं०) [आ√चक्ष्+उसि (बा०)] विद्वान्, पण्डित ।

आचम—(पुं०) [आ√चम्+घञ्] कुल्ला, आचमन ।

आचमन—(न०) [आ√चम्+ल्युट्] जल से मुख साफ करने की क्रिया । किसी धर्मानुष्ठान के आरम्भ में दाहिने हाथ की हथेली में जल रखकर पीने की क्रिया ।

आचमनक—(न०) [आचमनस्य क जलम् अत्र ब० स०] पीकदान ।

आचय—(पुं०) [आ√चि+अच्] चुनना । इकट्ठा करना । जमाव, भीड़ । ढेर, समूह ।

आचरण—(न०) [आ√चर्+ल्युट्] अनुष्ठान; 'अचीतिबोधाचरण प्रचारणैः' नैष० १.४ । व्यवहार, बर्ताव । चाल-चलन । चलन, प्रचलन पद्धति । स्मृति ।—**पञ्जी**-स्त्री०,—**पुस्तक**(न०) वह पुस्तक (पंजी) जिसमें कर्मचारी के आचरण, व्यहार, कर्तव्य-पालन इत्यादि से सम्बन्ध रखने वाली बातें समय-समय पर लिखी जाती हैं (कांडक्टबुक) ।

आचान्त—(वि०) [आ√चम्+क्त] आचमन या कुल्ला किये हुए । आचमन करने योग्य (जल) ।

आचाम—(पुं०) [आ√चम्+घञ्] आचमन, कुल्ली । जल या गर्म जल का उफान ।

आचार—(पुं०) [आ√चर्+घञ्] चाल-चलन, चरित्र, चाल-ढाल । रीति-रिवाज, चलन, पद्धति । सदाचार । शील ।—**पतित, भ्रष्ट**-(वि०) दुराचारी, अशिष्ट ।—**पूत**-(वि०) सदाचार के अनुष्ठान से पवित्र ।—**लाज**-(पुं० बहु०)खीलें जो राजा या किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति के ऊपर बरसायी जाती हैं—(उसके प्रति सम्मान-प्रदर्शनार्थ ।)—**वेदी**-(स्त्री०) आर्यावर्त देश का नाम ।

आचारिक—(वि०) [आचार+ठञ्—इक] आचार सम्बन्धी । प्रामाणिक, पद्धति या नियम से समर्थित ।

आचारिन्—(वि०) [आचार+इनि] शुद्ध आचार वाला ।

आचार्य—(पुं०) [आ√चर्+ण्यत्] (साधारणतः) शिक्षक या गुरु । उपनयनसंस्कार के समय गायत्री मंत्र का उपदेश देने वाला । गुरु, वेद पढ़ाने वाला । जब यह किसी के नाम के पूर्व लगता है (यथा आचार्य वासुदेव) तब इसका अर्थ होता है, विद्वान्, पण्डित । अंगरेजी के "डाक्टर" शब्द का यह प्रायः समानार्थवाची शब्द भी है ।—**मिश्र**(वि०) माननीय, पूज्य ।

आचार्यक—(न०) [आचार्यस्य कर्म भावो वा इत्यर्थे आचार्य+वुञ्—अक] शिक्षा । पाठन, पढ़ाना । आध्यात्मिक गुरु का गुरुत्व । आचार्य का काम; 'लङ्कास्त्रीणाम् पुनश्चक्रे विलापाचार्यकं शरैः' र० १२.७८ ।

आचार्यानी—(स्त्री०) [आचार्य+ङीप्, आनुक्] आचार्य की पत्नी ।

आचित—[आ√चि+क्त] परिपूरित, भरा हुआ । लदा हुआ । ढका हुआ । बंधा हुआ । ओतप्रोत । सञ्चित, एकत्र किया हुआ । (पुं०) गाड़ी भर बोझ (न० भी है) । दस गाड़ी भर की तौल, अर्थात् ८० हजार तोला ।

आचूषण—(न०) [आ√चूष् +ल्युट्] चूसना । चूस कर उगल देना । सिंघी लगाना ।

आच्छाद—(पुं०) [आ√छद्+णिच्+घञ्] वस्त्र, पहनावा ।

आच्छादन—(न०) [आ√छद्+णिच्+ल्युट्] ढकना । छिपाना । ढक्कन, खोल, गिलाफ, वस्त्र, पहनावा । छाजन, ठाट । लोप ।

आच्छुरित—(वि०) [आङ् छुर्+क्त] मिश्रित । कुरेदा हुआ । बजता शब्द पैदा करता हुआ ।(न०)नखों को एक दूसरे पर रगड़कर बाजे की तरह बजाने की क्रिया । अट्टहास ।

आच्छुरितक—(न०) [आच्छुरित+कन्] नाखून का खरोंचा, नखक्षत । अट्टहास । सशब्द हास ।

आच्छेद (पुं०), **आच्छेदन**–(न०) [आ√छिद्+घञ्] [आ√छिद्+ल्युट्] काटना, नश्तर लगाना । जरा-सा काटना ।

आच्छोटन—(न०) [आ–स्फुट् +ल्युट्, पृषो०] उँगलियाँ चटकाना ।

आच्छोदन—(न०) [आ√छिद्+ल्युट्, पृषो० इत ओत्] शिकार, आखेट, मृगया ।

आजक—(न०) [अजानां समूहः इत्यर्थे अज+वुञ्] बकरों का झुंड ।

आजगव—(न०) [अजगव+अण् (स्वार्थे)] शिव का धनुष ।

आजनन—(न०)[आ√जन्+ल्युट्] कुलीनता, उच्चवंशोद्भवता । प्रसिद्ध कुल या वंश ।

आजान–(पुं०) [आ√जन्+घञ्] उत्पत्ति, जन्म । जन्मस्थान । वंश । (अव्य०) [जन+अण्–जान, आ जान अव्य० स०] सृष्टिकाल से ।

आजानेय– (वि०) [स्त्री०—**आजानेयी**] [आजे विक्षेपेऽपि आनेयः अश्ववाहो यथास्थानमस्य इति विग्रहे ब० स०] अच्छी जाति का (जैसे घोड़ा) । निर्भीक, निर्भय ।—(पुं०) अच्छी जाति का घोड़ा ।

आजि—(पुं०) [√अज्+इण्] युद्ध, लड़ाई। रण-क्षेत्र; 'अस्त्राण्याजौ नयनसलिलं चापि तुल्यं मुमोच' वे० ३.६ ।

आजीव (पुं०), **आजीवन**–(न०) [आ√जीव्+घञ्] [आ√जीव्+ल्युट्] आजीविका, रोजी, पेशा । जीविका का उपाय । राजकर (कौ०) । उचित आय ।

आजीविका—[आ√जीव्+ अ +कन्, टाप्, अत इत्वम्] रोजी । रोजगार, धंधा ।

आजू, आजूर—(स्त्री०) [आ√जु+क्विप्] [आ√ज्वर्+क्विप्, ऊठ्] बेगारी । नरकवास ।

आज्ञप्ति—(स्त्री०) [आ√ज्ञा+णिच्, पुक्, ह्रस्व+क्तिन्] आज्ञा, आदेश, हुक्म । दीवानी मुकदमे में न्यायालय द्वारा किसी के पक्ष में दिया गया निर्णय (डिक्री) । किसी उच्चाधिकारी या परिषद् आदि का वह आदेश जो किसी व्यवस्था आदि के सम्बन्ध में हो तथा जिसका मानना आवश्यक हो ।

आज्ञा—(स्त्री०) [आ√ज्ञा+अङ, टाप्] आदेश, हुक्म । अनुमति, इजाजत ।—**अनुग**, —**अनुगामिन्** ,—**अनुयायिन्**,—**अनुवर्तिन्**, —**अनुसारिन्**,—**सम्पादक**,—**वह**— (वि०) आज्ञाकारी, आज्ञा मानने वाला ।

आज्ञापन—(न०) [आ√ज्ञा+णिच्–पुक् ल्युट्] हुक्म देना । जताना ।

आज्य—(न०) [आ√ अञ्ज्+क्यप्, नलोप] घी ।—**पात्र**–(न०)—**स्थाली**– (स्त्री०) बर्तन जिसमें घी रखा जाय ।—**भुज्**–(पुं०) अग्नि का नाम । देवता ।

आञ्चन—(न०) [आ√अञ्च् +ल्युट्] शरीर से काँटे या तीर को थोड़ा-सा खींचकर निकालने की क्रिया ।

√**आञ्छ्**, भ्वा० पर० सक० लंबा करना, बढ़ाना । ठीक करना, बैठाना, (जैसे हड्डी का) आञ्छति, आञ्छिष्यति, आञ्छीत् ।

आञ्छन—(न०) [√आञ्छ्–ल्युट्] (हड्डी या टाँग को) बराबर या ठीक करना या बैठाना ।

आञ्जन—(न०) [अञ्जनी+अण्] अंजन। (पुं०) हनुमान; 'दाशरथिबलैरिवाञ्जननीलनलपरिगतप्रान्तैः' का० ।

आञ्जनेय—(पुं०)[अञ्जनी+ढक्–एय] हनुमान का नाम ।

आटविक—(पुं०) [अटव्यां चरति भवो वा इत्यर्थे अटवी+ठक्–इक] वनरक्षा, वनवासी । अग्रगन्ता, सेना का एक भेद ।

आटि—(पुं० स्त्री०) [आ√अट्+इण्] शरारि पक्षी। एकप्रकार की मछली। [इसका "आटी" भी रूप होता है। आटि+ङीष्।]

आटीकन—(न०) [आ√टीक्+ल्युट्] बछड़े की उछल-कूद।

आटीकर—(पुं०) [?] बैल, साँड़।

आटोप—(पुं०) [आ√तुप्+घञ्, पृषो० टत्वम्] अभिमान। आडंबर। सूजन। फैलाव। पेट में गुड़गुड़ाहट होना।

आडम्बर—(पुं०) [आ√डम्ब्+अरन्] अभिमान, मद, औद्धत्य। दिखावट। बाह्य उपाङ्ग। बिगुल या तुरही की आवाज, जो आक्रमण की सूचक हो। आरम्भ, शुरुआत। रोष, क्रोध। हर्ष, आनन्द। बादलों की गर्जन। हाथियों की चिंघार। लड़ाई में बजाया जाने वाला ढोल। युद्ध का कोलाहल या गर्जन-तर्जन।

आडम्बरिन्—(वि०) [आडम्बर+इनि] आडंबर करने वाला।

आढक—(पुं० न०) [आ√ढौक्+घञ् पृषो०]चार सेर का वजन या माप। द्रोण नामक तौल का चतुर्थांश।

आढ्य—(वि०) [आ√ध्यै+क पृषो०] धनी, धनवान्। सम्पन्न। विपुल।—**चर**-(पुं०) जो एक बार धनी हो।

आढ्यंकरण—(वि०) [आढ्य√कृ+ख्युन्, मुम्] धनवान् करने या बनाने वाला।

आणक—(वि०) [अणक+अण् (स्वार्थे)] नीच, ओछा। दुष्ट। (न०) मैथुन करने का आसन विशेष।

आणव—(वि०) [स्त्री०—**आणवी**] (अणु+अण् (स्वार्थे)] बहुत ही छोटा। (न०) [अणु+अण् (भावे)] बहुत ही छोटापन या अत्यन्त सूक्ष्मता।

आणि—(पुं० स्त्री०) [√अण्+इण्] गाड़ी की धुरी की कील। घुटने के ऊपर का भाग। सीमा, हद। तलवार की धार। कोना।

आण्ड—(वि०) [अण्ड+अण्] अण्डज। वे जीव जो अंडे से उत्पन्न होते हैं। (पुं०) हिरण्यगर्भ या ब्रह्मा की उपाधि। (न०) अंडों का ढेर। अण्डकोश की थैली।

आण्डीर—(वि०) [आण्ड+ईरच्] बहुत से अंडों वाला। बड़ा हुआ, पूर्णवय:प्राप्त। (जैसे साँड़)

आतङ्क—(पुं०) [आ√तङ्क्+घञ्] रोग। शारीरिक रोग। पीड़ा, मानसिक कष्ट। भय, डर। ढोल या तबले का शब्द।—**युद्ध**-(न०) प्रचारादि द्वारा ऐसा आतंक उत्पन्न करना जिसमें शत्रु-पक्ष का नैतिक साहस छिन्न-भिन्न हो जाय और बिना शस्त्रादि का प्रयोग किये ही उसे पराजित करने में आसानी हो। (वार आफ नर्व्स)।

आतञ्चन—(न०) [आ√तञ्च्+ल्युट्] दूध को जमाने के लिये जामन देना। जामन। प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना। भय। खतरा रफ्तार, गति।

आतत—(वि०) [आ√तन्+क्त] फैला हुआ। बिछा हुआ। छाया हुआ। बढ़ा हुआ। ताना हुआ (जैसे धनुष की प्रत्यंचा)

आततायिन्—(पुं०) [आततेन विस्तीर्णेन शस्त्रादिना अयितुं शीलमस्य इत्यर्थे आतत√अय्+णिनि] शस्त्र उठा कर किसी का वध करने को उद्यत। हत्यारा। दारुण अपराध करने वाला। महापापी; 'आततायिनमायान्तं हन्यादेवाविचारयन्' मनु०। शुक्र नीति में छ: प्रकार के आततायी बतलाये गये हैं। यथा— आग लगाने वाला, विष खिलाने वाला, शस्त्र हाथ में लिये किसी का वध करने को उद्यत, धन का चोर, खेत को हरने वाला और स्त्रीचोर। "अग्निदो गरदश्चैव शस्त्रोन्मत्तो धनापहः। क्षेत्रदारहरश्चैतान् षड् विद्यादाततायिनः॥"

आतप—(पुं०) [आ√तप+घञ्] सूर्य प्रखर आग की गर्मी, घाम । प्रकाश ।—उदक, (आतपोदक)-(न०) मृगतृष्णा ।—त्र,—त्रक-(न०) छाता, छत्र ।—लंघन-(न०) लपट का लगना, लू का लगना ।—वारण-(न०) छाता ।—शुष्क—(वि०) धूप में सूखा हुआ ।

आतपन—(पुं०) [आ√तप्+णिच्+ल्यु] शिव का नाम ।

आतर, आतार—(पुं०) [आ√तॄ+अप्] [आ√तॄ+घञ्] नाव की उतराई या पुल का महसूल, खेवा ।

आतर्पण—(न०) [आ√तृप्+ल्युट्] सन्तोष । प्रसन्नता । दीवाल पर सफेदी पोतना, फर्श लीपना ।

आतापि—(पुं०) [आ√तप्+इण्] एक असुर जिसे अगस्त्य ने चबा डाला था ।

आतापिन्, आतायिन्—(पुं०) [आ√तप् +णिनि] [आ√ताय्+णिनि] चील पक्षी ।

आतिथेय—(वि०) [स्त्री०-**आतिथेयी**] [अतिथि+ढञ्—एय] अतिथि के योग्य, अतिथि के लिये उपयुक्त; 'प्रत्युज्जगामातिथि-मातिथेयः' र० ५.२ । (न०) मेहमान-दारी, अतिथि का सत्कार, पहुनाई ।

आतिथ्य—(वि०) [अतिथि+ष्यञ्] पहुनई के योग्य । (न०) पहुनई, मेहमानदारी ।

आतिदेशिक—(वि०) [स्त्री०—**आति-देशिकी**] [अतिदेश+ठक्] (व्याकरण में) अतिदेश से सम्बन्ध रखने वाला ।

आतिरेक्य,, आतिरंक्य—(न०) [अतिरेक +ष्यञ्, पक्षे उभयपद-वृद्धि] विपुलता, अधिकाई । फालतूपन ।

आतिवाहिक—(वि०) [अतिवाह+ठक्] इस लोक से परलोक ले जाने का काम करने वाला । (पुं०) मृतात्मा को नियत स्थान में ले जाने वाला देव विशेष ।

आतिशय्य—(न०) [अतिशय+ष्यञ् (स्वार्थे)] आधिक्य, बहुतायत, ज्यादती ।

आतु—(पुं०) [√अत्+उण्] लकड़ी या लट्ठों का बेड़ा, धरनई या चौघड़ा ।

आतुर—(वि०) [आ√अत्+उरच्] चोटिल, घायल । रोगी, दुःखी । पीड़ित । शरीर या मन का रोगी । उत्सुक । अधीर, बेचैन; 'रावणावरजा तत्र राघवं मदनातुरा' र० १२.३२ । निर्बल, कमजोर ।—शाला-(स्त्री०) अस्पताल ।

आतोद्य, आतोद्यक—(न०) [आ√तुद्+ण्यत्] [आतोद्य+कन्] एक प्रकार का बाजा । नारद की वीणा ।

आत्त—(वि०) [आ√दा+क्त] लिया हुआ, प्राप्त । स्वीकार किया हुआ, माना हुआ । इकरार किया हुआ । आकर्षण किया हुआ । निकाला हुआ । खींचकर बाहर निकाला हुआ ।—गन्ध-(वि०) शत्रु ने जिसके अह-ङ्कार को दूर कर डाला हो, शत्रु से पराजित । सूँघा हुआ ।—गर्व-(वि०) नीचा दिखलाया हुआ, तिरस्कृत ।

आत्मक—(वि०) [आत्मन्+कन्] बना हुआ । ढंग या स्वभाव का ।

आत्मकीय, आत्मीय—(वि०) [आत्मक+छ—ईय] [आत्मन्+छ—ईय] अपना, अपने से सम्बन्ध रखने वाला ।

आत्मन्—(पुं०) [√अत्+मनिण्] आत्मा, जीव । परमात्मा । मन । बुद्धि । मननशक्ति । स्फूर्त्ति । मूर्त्ति । शक्ल । पुत्र । "आत्मा वै पुत्र-नामासि" । उद्योग । सूर्य । अग्नि । पवन । सार । विशेषता । स्वभाव । प्रकृति । पुरुष या समस्त शरीर ।—**अधीन, (आत्माधीन)**-(वि०) स्वावलम्बी, स्वतंत्र ।—**आधीन, (आत्माधीन)**-(पुं०) पुत्र । साला । विदूषक, मसखरा ।—**अनुगमन, (आत्मानुगमन)**-(न०) अपने पीछे चलना, स्वकीय अनुसरण ।—**अपहारक** [(**आत्मापहारक**)-(पुं०)

पाखंडी । बहुरूपिया ।—**आराम**, (**आत्माराम**)–(वि०) ज्ञान-प्राप्ति का प्रयासी, अध्यात्मविद्या का खोजी । अपने आत्मा में प्रसन्न रहने वाला ।—**आशिन्**, (**आत्माशिन्**)–(पु०) मछली जो अपने बच्चों को खा जाया करती है ।—**आश्रय**, (**आत्माश्रय**)–(पु०) आत्म-निर्भरता । सहज ज्ञान । (वि०) अपने ऊपर निर्भर रहने वाला ।—**उद्भव**,(**आत्मोद्भव**)–(पु०) पुत्र । कामदेव । —**उद्भवा**,(**आत्मोद्भवा**)–(स्त्री०) पुत्री । —**उपजीविन्**, (**आत्मोपजीविन्**)—(पु०) अपने परिश्रम से उपार्जित आय पर रहने वाला व्यक्ति । दिन में काम करने वाला मजदूर । अपनी पत्नी की कमाई खाने वाला । नाटक का पात्र ।—**कथा**–(स्त्री०) अपनी जीवन-कहानी । स्वलिखित जीवन-चरित । —**काम**–(वि०) आत्माभिमानी, अहङ्कारी । केवल ब्रह्म या परमात्मा की भक्ति करने वाला ।—**गुप्ति**–(स्त्री०) गुफा । माँद ।—**ग्राहिन्**– (वि०) स्वार्थी । लालची ।—**घात**–(पु०) आत्महत्या । धर्मविरोध ।—**घातिन्**—**घातक**–(वि०) आत्महत्या करने वाला । धर्मविरोधी ।—**घोष**–(पु०) मुर्गा, कुक्कुट । काक, कौवा ।—**ज**,—**जन्मन्**, —**जात**,—**प्रभव**,—**सम्भव**–(पु०) पुत्र । कामदेव ।—**जा**–(स्त्री०) पुत्री । तर्कशक्ति । समझने की शक्ति या समझ । बुद्धि । —**जय** – (पु०) अपने आपको जीतना, जितेन्द्रियत्व ।—**ज्ञ**,—**विद्**–(पु०) आत्मज्ञानी । ऋषि ।—**ज्ञान**–(न०) आत्मा और परमात्मा सम्बन्धी ज्ञान । सत्यज्ञान ।—**तत्त्व**–(न०) जीव आत्मा अथवा परमात्मा का स्वरूप या रहस्य ।—**त्याग**(पु०) आत्मोत्सर्ग, दूसरे की भलाई के लिये अपनी हानि करना । आत्मनाश, आत्मघात ।—**त्यागिन्**–(वि०) आत्महत्या करने वाला । स्वधर्मत्यागी ।—**त्राण**– (न०) आत्मरक्षा ।—**दर्श**–(पु०) दर्पण, आईना; 'प्रसादमात्मीयमिवात्मदर्शः' र० ७.६८ । —**दर्शन**–(न०) अपना दर्शन करना । आत्मज्ञान । सत्य ज्ञान ।—**द्रोहिन्**–(वि०) अपने ऊपर अत्याचार करने वाला । आत्मघाती ।—**धारणभूमि**– (स्त्री०) वह अधीन राज्य या भूमि जिसकी शासन-व्यवस्था वहीं की सेना और सम्पत्ति से हो जाय ।—**नित्य**–(वि०) अत्यन्त प्रिय ।— **निरीक्षण** —(न०) अपने को देखना-समझना व अपने भावों, वृत्तियों, त्रुटियों, दोषों को जानने-समझने का प्रयत्न ।—**निवेदन**–(न०) अपने आप को समर्पण करना, आत्मसमर्पण । —**निष्ठ**–(वि०) आत्मा में निष्ठा रखने वाला । सदैव आत्मविद्या की खोज में रहने वाला ।—**प्रशंसा**–(स्त्री०) अपने मुँह अपनी तारीफ करना ।—**बन्धु**,—**बान्धव**–(पु०) अपने नातेदार । [धर्मशास्त्र में नातेदारों के अन्तर्गत इतने लोगों की गणना है । आत्ममातुः स्वसुः पुत्रा आत्मपितुः स्वसुः सुताः । आत्ममातुलपुत्राश्च विज्ञेया ह्यात्मबान्धवाः ।। अर्थात् मौसी का पुत्र, बुआ का पुत्र और मामा का पुत्र ।]—**बोध**–(पु०) आत्मज्ञान । आध्यात्मिक ज्ञान । —**भू**, —**योनि**–(पु०) ब्रह्मा का नाम । विष्णु का नाम । शिव का नाम । कामदेव । पुत्र ।—**भू**–(स्त्री०) पुत्री । प्रतिभा । बुद्धि ।—**मात्रा**–(स्त्री०) परमात्मा का एक अंश ।—**मानिन्**-(वि०) आत्मसम्मान रखने वाला । अभिमानी ।—**याजिन्** (वि०) जो अपने लिये या अपने को बलि दे । सब में अपने को देखने वाला, आत्मदर्शी ।—**लाभ**–(पु०) जन्म, उत्पत्ति ।—**वञ्चक**–(वि०) अपने आपको धोखा देने वाला ।—**वध**–(पु०) अपने हाथों अपना वध, खुदकुशी, आत्मघात ।—**वश**–(वि०) जिसका अपने आप पर शासन हो । आत्मसंयमी ।—**विद्**–(पु०) बुद्धिमान पुरुष, ज्ञानी ।—**विद्या**–(स्त्री०)आध्यात्मिक विद्या । —**विस्मृति**–(स्त्री०) अपने को भूल जाना, सुध-बुध न रहना ।—**वीर**–(पु०) पुत्र ।पत्नी

का भाई, साला। (नाट्यशास्त्र में) विदूषक। —वृत्ति–(स्त्री०) हृदय की परिस्थिति; 'विस्माययन् विस्मितमात्मवृत्तौ' र० २.३३। —शक्ति–(स्त्री०) अपनी सामर्थ्य।—श्लाघा,—स्तुति–(स्त्री०) अपनी बड़ाई, शेखी, डींग।—संयम–(पु०) अपने मन, इंद्रियादि को वश में रखना, आत्मवशत्व।—समर्पण अपने को (पुलिस, शत्रुसेना आदि के हाथ) सौंप देना। हथियार डाल देना।—समुद्भव, सम्भव–(पु०) पुत्र। कामदेव। ब्रह्मा। विष्णु। शिव की उपाधि।—समुद्भवा—सम्भवा–(स्त्री०) पुत्री। बुद्धि।—सम्पन्न–(वि०) स्वस्थ। धीरचेता। बुद्धिमान्। प्रतिभाशाली।—हन्–(वि०) आत्मघाती। अपना भला न देखने वाला। धर्मविरोधी।—हनन–(न०)—हत्या–(स्त्री०) आत्मघात, खुद कुशी।—हित–(वि०) अपना लाभ, अपना फायदा।

आत्मना—(अव्य०) स्वयमर्थक रूप से उसका प्रयोग होता है। यथा—'अथ चास्तमिता त्वमात्मना।—रामायण।

आत्मनीन—(वि०) [आत्मन्+ख–ईन] निज से सम्बन्ध रखने वाला, निज का, अपना। आत्महितकर। (पु०) पुत्र। साला। विदूषक।

आत्मनेपद—(न०) [आत्मने आत्मार्थफलबोधनाय पदम् अलुक् स०] संस्कृत व्याकरण में धातु में लगने वाले दो तरह के प्रत्ययों में से एक। आत्मनेपद प्रत्यय के लगने से बनी हुई क्रिया।

आत्मम्भरि—[आत्मानं बिभर्ति इति विग्रहे आत्मन्√भृ+इन् मुम् नि०] जो अकेला अपने को पाले। जो बिना देवता, पितर और अतिथि को निवेदन किये भोजन करे; 'आत्मम्भरिस्त्वम् पिशितैर्नराणाम्' भट्टि० २.३३। पेटू, स्वार्थी।

आत्मवत्—(वि०) [आत्मन्+मतुप्] धृतात्मा, संयत, धीरचेता। बुद्धिमान्।

आत्मवत्ता—(स्त्री०) [आत्मवत्+तल्, टाप्] धीरता, धृतात्मता, आत्म-संयम। बुद्धिमत्ता।

आत्मसात्—(अव्य०) [आत्मन्+साति] अपने अधिकार में, अपने वश में।

आत्यन्तिक—(वि०) [स्त्री०—**आत्यन्तिकी**] [अत्यन्त+ठक्–इक, वृद्धि] लगातार, अविरत। अनन्त। स्थायी, अविनाशी। बहुत, अतिशय, सर्वाधिक। प्रधान। महान्। सम्पूर्ण, बिल्कुल।

आत्ययिक—(वि०) [स्त्री०—**आत्ययिकी**] [अत्यय+ठक्–इक, वृद्धि] नाशकारी। पीड़ाकारी, दुःखद। अमाङ्गलिक, अशुभ। जरूरी, अत्यन्त आवश्यक।

आत्रेय—(वि०) [अत्रि+ढक्–एय, वृद्धि] अत्रि-संबंधी। अत्रि से या उनके गोत्र में उत्पन्न। (पु०) अत्रि का पुत्र। अत्रि का वंशज।

आत्रेयिका—(स्त्री०) [आत्रेयी+कन्, टाप्, ह्रस्व] (दे०) 'आत्रेयी'।

आत्रेयी—(स्त्री०) [आत्रेय+ङीप्] अत्रि के वंश में उत्पन्न स्त्री। अत्रि की पत्नी। [न सन्ति त्रिदिनानि कर्मयोग्यानि यस्याः न० ब० ढञ् ततः स्वार्थे ढञ्–एय, वृद्धिः ङीप्] रजस्वला स्त्री।

आथर्वण—(वि०) [स्त्री०—**आथर्वणी**] [अथर्वन्+अण्] अथर्ववेद से निकला हुआ या अथर्ववेद का। (पु०) अथर्वण वेद को जानने वाला ब्राह्मण। अथर्वण वेद। अथर्ववेदोक्त कर्म कराने वाला पुरोहित।

आथर्वणिक—(पु०) [अथर्वन्+ठक्] अथर्वण वेद पढ़ा हुआ ब्राह्मण।

आदंश—(पु०) [आ√दंश्+घञ्] दाँत। काटने की क्रिया। काटने से पैदा हुआ घाव।

आदर—(पु०) [आ√दृ+अप्] सम्मान, प्रतिष्ठा, मान, इज्जत; 'न जातहार्देन न

विद्विषा दरः' कि० १.३३ । ध्यान, मनोयोग, मनोनिवेश । उत्सुकता, अभिलाषा । उद्योग प्रयत्न । आरम्भ, शुरुआत । प्रेम, अनुराग ।

आदरण—(न०) [आ√दृ+ल्युट्] आदर-सत्कार करना ।

आदर्श—(पु०) [आ√दृश्+घञ्] दर्पण, आईना । मूल ग्रन्थ जिससे नकल की जाय । नमूना, बानगी । प्रतिलिपि । टीका, भाष्य, व्याख्या ।

आदर्शक—(पु०) [आदर्श+कन्] दर्पण, आईना, शीशा ।

आदर्शन—(न०) [आ√दृश्+णिच्+ल्युट्] दिखावट दिखाने के लिये सजावट । दर्पण ।

आदहन—(न०) [आ√दह्+ल्युट्] जलन । चोट । हनन । तिरस्कार । श्मशान ।

आदान—(न०) [आ√दा+ल्युट्] ग्रहण, लेना; 'कुशाङ्कुरादानपरिक्षताङ्गुलिः' कु० ५.११ । अर्जन, प्राप्ति । (रोग का) लक्षण । बाँधना । अश्वसज्जा ।

आदायिन्—(वि०) [आ√दा+णिनि] लेने, पाने वाला । लेने का इच्छुक ।

आदि—(वि०) [आ√दा+कि] प्रथम, प्रारम्भिक । मुख्य, प्रधान । आदिकाल का । (पु०) आरम्भ । मूलकारण । परमेश्वर । सामीप्य । —**अन्त** (**आद्यन्त**)–(वि०) जिसका आरम्भ और समाप्ति हो, शुरू और आखीर वाला । (न०) आरम्भ और समाप्ति । —**कर**, —**कर्तृ**, —**कृत्**–(पु०) सृष्टिकर्त्ता, ब्रह्मा की एक उपाधि ।—**कवि**–(पु०) ब्रह्मा । वाल्मीकि ।—**काण्ड**–(न०) वाल्मीकि रामायण का प्रथम अर्थात् बालकाण्ड ।—**कारण**–(न०) सृष्टि का मूलकारण । (सांख्यवाले प्रकृति को और नैयायिक पुरुष को आदि कारण मानते हैं) । —**काव्य**–(न०) वाल्मीकि रामायण ।—**देव**–(पु०) नारायण या विष्णु । सूर्य । शिव ।—**दैत्य**– (पु०) हिरण्यकशिपु की उपाधि ।—**पर्वन्**–(न०) महाभारत के प्रथमपर्व का नाम ।—**पुराण**–(न०) ब्रह्मपुराण ।—**पुरुष**, —**पूरुष**–(पु०) विष्णु, नारायण ।—**बल**–(न०) जननशक्ति ।—**भव**—(पु०) ब्रह्मा की उपाधि । विष्णु का नाम । ज्येष्ठ भ्राता ।—**मूल**– (न०) आदिकारण ।—**रस**–(पु०) शृंगार (सा०) । —**राज**–(पु०) पृथु । मनु ।—**वराह**– (पु०) विष्णु भगवान् की उपाधि । –**शक्ति** (स्त्री०) महामाया । दुर्गा । –**सर्ग**-(पु०) प्रथम सृष्टि ।

आदितः—(अव्य०) [आदि+तसि] प्रथमतः, अव्वलन ।

आदितेय—(पु०) [अदित्याः अपत्यम् इत्यर्थे अदिति+ढक् एय, वृद्धि] अदिति का पुत्र । देवता ।

आदित्य—(पु०) [अदिति+ण्य] अदिति का पुत्र । देवता । द्वादश आदित्य । (जो ये माने जाते हैं—धाता, मित्र, अर्यमा, रुद्र, वरुण, सूर्य, भग, विवस्वान्, पूषा, सविता, त्वष्टा और विष्णु) । सूर्य । विष्णु का पाँचवाँ (वामन) अवतार ।—**मण्डल**–(न०) सूर्य का घेरा ।—**सूनु**–(पु०) सूर्यपुत्र । सुग्रीव का नाम । यम । शनिग्रह । कर्ण का नाम । सावर्णि नाम के मनु । वैवस्वत मनु ।

आदित्सु—(वि०) [आ√दा+सन्+उ] ग्रहणेच्छुक, लेने की इच्छा वाला ।

आदिन्—(वि०) [√अद् णिनि] खाने वाला ।

आदिष्ट—(वि०) [आ√दिश्+क्त] आदेश पाया हुआ । जिसको आज्ञा दी गई हो, आज्ञप्त ।

आदिष्टिन्—(पु०) [आदिष्ट+इनि] शिष्य । उत्तम ब्राह्मण ।

आदिम—(वि०) [आदि+डिमच्] प्रथम, आदिकालीन ।

आदीनव—(पु०) [आ√दी+क्त] आदीनस्य वानं आप्तिः इति विग्रहे आदीन√वा+क] दुर्भाग्य । क्लेश । अपराध ।

आदीपन—(न०) [आ√दीप्√णिच्+ल्युट्] आग में जलाना । भड़काना । किसी उत्सव के अवसर पर दीवाल की पुताई और फर्श की लिपाई ।

आदृत—[आ√दृ+क्त] सम्मानित, आदर किया हुआ ।

आदेय—(वि०) [आ√दा+यत्] ग्रहण करने योग्य । (पु०) वह लाभ जो बिना कठिनाई के प्राप्त हो, अच्छी तरह रखा जाय और शत्रु जिसे छीन न सके ।

आदेवन—(न०) [आ√दिव्+ल्युट्] जुआ । पासा । पासा खेलने का स्थान या बिसात ।

आदेश—(पु०) [आ√दिश्+घञ्] आज्ञा, हुक्म । निर्देश । विवरण । सलाह । भविष्यद्वाणी । व्याकरण में अक्षरपरिवर्तन; 'धातोः स्थान इवादेशः सुग्रीवं सन्यवेशयत्' र० १२.५।

आदेशिन्—(वि०) [आ√दिश्+णिनि] आज्ञा देने वाला, हुक्म देने वाला । उभाड़ने वाला, उकसाने वाला । (पु०) आज्ञा देने वाला, सेनापति । ज्योतिषी ।

आदेष्टृ—(वि०) [आ√दिश्+तृच्] आज्ञा देने वाला । यज्ञ कराने वाला ।

आद्य—(वि०) [आदौ भवः इत्यर्थे आदि+यत्] आदि का । प्रथम, पहला । प्रधान, मुख्य, अगुआ । (न०) आरम्भ । अनाज, भोज्य पदार्थ ।—**कवि**-(पु०) वाल्मीकि ।

आद्या—(स्त्री०) [आद्य+टाप्] दुर्गा की उपाधि । मास की प्रथम तिथि, प्रतिपदा ।

आद्यून—(वि०) [आ√दिव्+क्त, ऊठ्, नत्व] पेटू, भुक्खा । [आदिना ऊनः तृ० त०] आदि से रहित ।

आद्योत—(पु०) [आ√द्युत्+घञ्] प्रकाश चमक ।

आधमन—(न०) [आ√धा+कमनन्] अमानत, बंधक । बिक्री के माल की बनावटी चढ़ी हुई दर ।

आधमर्ण्य—(न०) [अधमर्ण+ष्यञ्] कर्जदारी ।

आधर्मिक—(वि०) [अधर्मं चरति इति विग्रहे अधर्म+ठञ्] बेईमान, अन्यायी ।

आधर्ष—(पु०) [आ√धृष्+घञ्] तिरस्कार । बरजोरी की हुई चोट ।

आधर्षण—(न०) [आ√धृष्+ल्युट्] सजा, दण्ड । खण्डन । चोटिल करना ।

आधर्षित—[आ√धृष्+क्त] चोटिल किया हुआ । बहस में हराया हुआ । सजायाफ्ता, दण्डित ।

आधान—(न०) [आ√धा+ल्युट्] रखना । ऊपर रखना । लेना, प्राप्त करना । फिर से लेना, वापिस लेना । हवन के अग्नि को स्थापित करना । बनाना । भीतर डालना । देना । पैदा करना । बंधक, धरोहर, अमानत ।

आधानिक—(पु०) [आधान+ठञ्] गर्भाधान संस्कार ।

आधार—(पु०) [आ√धृ+घञ्] आश्रय, आसरा, सहारा, अवलंब । व्याकरण में अधिकरण कारक । थाला, आलबाल । पात्र । नींव, बुनियाद, मूल । (योगशास्त्र में वर्णित) मूलाधार । बाँध । नहर ।

आधि—(पु०) [आ√धा+कि] मन की पीड़ा । शाप, अकोसा । विपत्ति; 'यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः' श० ४.१७ । बंधक, धरोहर । स्थान । आवासस्थान । धर्मचिंता । आशा ।—**पाल**-(पु०) धरोहर का रक्षा-प्रबंध करने वाला राजकर्मचारी ।—**भोग**- (पु०) धरोहर की चीज का उपयोग ।—**मन्यु** (पु०) ज्वर का ताप ।—**मोचन**-(न०) बंधक छुड़ाना ।—**व्याधि**-(पु०) मन और शरीर की पीड़ा

।—स्तेन-(पुं०) बंधक धरी हुई वस्तु का, बिना वस्तु के मालिक की अनुमति के भोग करने वाला ।

आधिकरणिक—(पुं०) [अधिकरणे नियुक्तः इत्यर्थे अधिकरण+ठक्–इक, वृद्धि] न्यायाधीश (जज) ।

आधिकारिक—(वि०) [स्त्री०—**आधिकारिकी**] [अधिकार+ठञ्] सर्वप्रधान, सर्वोत्कृष्ट । सरकारी दफ्तर सम्बन्धी ।

आधिक्य—(न०) [अधिक+ष्यञ्] बहुतायत, अधिकता, ज्यादती । सर्वोत्कृष्टता, सर्वोपरिता ।

आधिदैविक—(वि०) [स्त्री०—**आधिदैविकी**] [देवान् अग्निवायुवादीन् अधिकृत्य निर्वृत्तम् इत्यर्थे अधिदेव+ठञ्, द्विपदवृद्धि] देवताकृत । देवताओं द्वारा प्रेरित । यक्ष, देवता, भूत, प्रेत आदि द्वारा होने वाला । प्रारब्ध से उत्पन्न ।

आधिपत्य—(न०) [अधिपति+ष्यञ्]प्रभुत्व, स्वामित्व, अधिकार। राजा के कर्त्तव्य या राज्य, यथा—'पाण्डोः पुत्रं प्रकुरुष्वाधिपत्ये।' —महाभारत ।

आधिभौतिक—(वि०) [स्त्री०—**आधिभौतिकी**] [अधिभूत+ठञ्, द्विपदवृद्धि] व्याघ्र, सर्पादि जीवों द्वारा कृत (पीड़ा), जीव अथवा शरीर-धारियों द्वारा प्राप्त । पंचभूतों से संबद्ध या उनसे उत्पन्न ।

आधिराज्य—(न०) [अधिराज+ष्यञ्] राजकीय आधिपत्य । सर्वोपरि प्रभुत्व; ' बभौ भूयः कुमारत्वादाधिराज्यमवाप्य सः' र० १७.३० ।

आधिवेदनिक—(न०) [अधिवेदनाय विवाहोपरि विवाहाय हितम् इत्यर्थे अधिवेदन+ठक्–इक्, आदिवृद्धि] प्रथम स्त्री का धन जो पुरुष द्वारा दूसरी स्त्री से विवाह करने पर उसे दिया जाय, विष्णु स्मृति में लिखा है—'यच्च द्वितीयविवाहार्थिना पूर्वस्त्रियै पारितोषिकं धनं दत्तं तदाधिवेदनिकम्' ।

आधुत—(वि०) [आ√धु+क्त] कँपाया हुआ, हिलाया हुआ । चालित । क्षुब्ध ।

आधुनिक—(वि०) [स्त्री०—**आधुनिकी**] [अधुना भवः इत्यर्थे अधुना+ठञ्] अब का, हाल का, आजकल का । साम्प्रतिक, वर्त्तमान काल का, इदानीन्तन ।

आधूत—(वि०) [आ√धू+क्त] दे० 'आधुत' ।

आधोरण—(पुं०) [आ√धोर्+ल्यु] हाथी-सवार अथवा महावत ।

आध्मान—(न०) [आ√ध्मा+ल्युट्] धौंकनी से धौंकना । फूंकना । (आल०) बाड़ । शेखी, डींग । पेट का फूलना । जलंधर रोग ।

आध्यात्मिक—(वि०) [स्त्री०—**आध्यात्मिकी**] [अध्यात्म+ठञ्] आत्मासम्बन्धी । मन से उत्पन्न (दुःख, शोक) ।

आध्यान—(न०) [आ√ध्यै+ल्युट्] चिन्ता, फिक्र । शोकमय स्मृति । ध्यान ।

आध्यापक—(पुं०) [अध्यापक + अण् (स्वार्थे)] शिक्षक । दीक्षागुरु ।

आध्यासिक—(वि०) [स्त्री०—**आध्यासिकी**] [अध्यासेन कल्पितः इत्यर्थे अध्यास+ठक्] अध्यास से उत्पन्न ।

आध्वनिक—(वि०) [स्त्री०—**आध्वनिकी**] [अध्वनि व्यापृतः कुशलो वा इत्यर्थे अध्वन+ठक्] यात्री, यात्रा करने में चतुर । यात्रा करने वाला ।

आध्वर्यव—(वि०) [स्त्री०—**आध्वर्यवी**] [अध्वर्यु+अञ्] अध्वर्यु सम्बन्धी अथवा यजुर्वेद से सम्बन्ध रखने वाला । (न०) यज्ञ में अध्वर्यु का कार्य ।

आन—(पुं०) [आ√अन्+क्विप्, ततः अण्] श्वास लेना, वायु को भीतर खींचना । फूंकना ।

आनक—(पुं०) [√अन्+णिच्+ण्वुल्] नगाड़ा, बड़ा ढोल । गरजने वाला बादल ।

—दुन्दुभि–(पुं०) श्रीकृष्ण के पिता वसुदेव की उपाधि ।—दुन्दुभि,—दुन्दुभी–(स्त्री०) बड़ा ढोल, नगाड़ा ।

आनति–(स्त्री०) [आ√नम्+क्तिन्] झुकना । प्रणाम । सम्मान । आतिथ्य, अतिथि-सत्कार ।

आनद्ध—(वि०) [आ√नह्+क्त] बँधा हुआ, गसा हुआ । कोष्ठबद्ध । (पुं०) ढोल । पोशाक । बनाव-सिंगार, सजावट ।

आनन—(न०) [आ√अन्+ल्युट्] मुँह, चेहरा । अध्याय । परिच्छेद ।

आनन्तर्य—(न०) [अनन्तर+ष्यञ् (भावे)] व्यवधान-रहित होने का भाव । [ष्यञ् (स्वार्थे)] अनन्तर, समीप ।

आनन्त्य—(न०) [अनन्त+ष्यञ् (भावे स्वार्थे वा)] असीमत्व । अनन्तत्व । अमरत्व । ऊर्ध्वलोक, स्वर्ग ।

आनन्द—(पुं०) [आ√नन्द्+घञ्] हर्ष, सुख, प्रसन्नता । ईश्वर । ब्रह्मा । शिव का नाम ।—**कानन,**—**वन**–(न०) काशीपुरी ।—**पट**–(पुं०) नवोढ़ा का वस्त्र ।—**पूर्ण**–(वि०) परमानन्द से भरा हुआ । (पुं०) परब्रह्म ।—**प्रभव**–(पुं०) वीर्य, धातु । विश्व ।

आनन्दथु—(वि०) [आ√नन्द्+अथुच्] प्रसन्न, हर्षपूर्ण । (पुं०) प्रसन्नता, हर्ष ।

आनन्दन—(वि०) [आ√नन्द्+णिच्+ल्युट्] प्रसन्न करने वाला, आनन्दित करने वाला । (न०) [आ√नन्द्+णिच्+ल्युट्] प्रसन्न करना, आनन्दित करना । प्रणाम करना, नमस्कार करना । आते-जाते समय मित्रों का शिष्टोचित कुशल प्रश्नादि पूछ कर उपचार करना ।

आनन्दमय—(वि०) [आनन्द + मयट् (प्राचुर्ये)] आनंद से भरा हुआ, हर्षपूर्ण । (पुं०) परब्रह्म ।—**कोष**–(पुं०) शरीर के पाँच कोषों में से एक ।

आनन्दि—(पुं०) [आ √ नन्द् + इन्] प्रसन्नता, हर्ष । कौतूहल ।

आनन्दिन्—(वि०) [आनन्द+इनि] प्रसन्न हर्षित । [आ√नन्द्+णिच्+णिनि] प्रसन्न करने वाला ।

आनय—(पुं०) [आ√नी+अच्] उपनयन संस्कार । लाना ।

आनर्त—(पुं०) [आ√नृत्+घञ्] नाचघर, नृत्यशाला, रंगभूमि । युद्ध, लड़ाई । सौराष्ट्र देश का दूसरा नाम अर्थात् काठियावाड़ । सूर्यवंशी एक राजा का नाम, जो राजा शर्याति का पुत्र था । जल ।

आनर्थक्य—(न०) [अनर्थक + ष्यञ्] निरर्थकता, बेकारपन । अयोग्यता ।

आनाय—(पुं०) [आ √नी+घञ्] जाल ।

आनायिन्—(पुं०) [आनाय+इनि] मछुआ, धीवर, मल्लाह; 'आनायिभिस्तामपकृष्टनक्राम्' र० १६.५५ ।

आनाय्य—(पुं०) [आ√नी+ण्यत्, आया-देश नि०] दक्षिणाग्नि ।

आनाह—(पुं०) [आ√नह्+घञ्] बंधन । कोष्ठबद्धता, कब्जियत । (वस्त्र की) चौड़ाई या अर्ज ।

आनिल—(वि०) [स्त्री०—**आनिली**] [अनिल+अण्] वायु से उत्पन्न, वातल । (पुं०) हनुमान् । भीम । स्वाति नक्षत्र ।

आनिलि—(पुं०) [अनिल+इञ्] हनुमान् या भीम का नाम ।

आनील—(वि०) [प्रा० स०] कलौंहा, हलका नीला । (पुं०) काला घोड़ा ।

आनुकूलिक—(वि०) [स्त्री०—**आनुकूलिकी**] [अनुकूल+ठक्] उपयुक्त । सुविधाजनक । एकसा ।

आनुकूल्य—(न०) [अनुकूल+ष्यञ्] अनुकूलता; 'यत्रानुकूल्यं दम्पत्योस्त्रिवर्गस्तत्र वर्धते' । अनुग्रह, कृपा ।

आनुगत्य—(न०) [अनुगत+ष्यञ्] अनुगत होना । परिचय, जानपहचान । हेलमेल ।

आनुगुण्य—(न०) [अनुगुण+ष्यञ्] अनुकूलता, उपयुक्तता। समानता, बराबरी।

आनुग्रामिक—(वि०) [स्त्री०—**आनुग्रामिकी**] [अनुग्राम+ठञ्] ग्राम संबंधी, देहाती, ग्रामीण।

आनुनासिक्य—(न०) [अनुनासिक+ष्यञ्] अनुनासिकता।

आनुपदिक—(वि०) [स्त्री०—**आनुपदिकी**] [अनुपद+ठक्] पीछा करने वाला, अनुगमन करने वाला। अध्ययन करने वाला।

आनुपातिक—(वि०) [अनुपात+ठक्]अनुपात संबंधी।—**प्रतिनिधित्व**-(न०) विधान-सभा आदि के चुनाव की वह प्रणाली जिसके अनुसार सभी दलों को, उन्हें प्राप्त हुए कुल मतों के अनुपात से, प्रतिनिधित्व दिये जाने की व्यवस्था की जाती है (प्रपोरशनल रिप्रजेंटेशन)।

आनुपूर्व, **आनुपूर्व्य**—(न०),—**आनुपूर्वी**-(स्त्री०) [पूर्वमनुक्रम्य अनुपूर्वम् तस्य भावः इत्यर्थे अण्, ष्यञ्, ततो वा ङीप् यलोपः]। एक के बाद एक होना, सिलसिला। वर्णक्रम।

आनुपूर्वे—**आनुपूर्वेण**, —**आनुपूर्व्य**, —**आनुपूर्व्येण**—(अव्य०) एक के बाद दूसरा, यथाक्रम।

आनुमानिक—(वि०)[स्त्री०—**आनुमानिकी**] अनुमान+ठक्] अनुमान प्रमाण से सम्बन्ध रखने वाला। अनुमानलब्ध। अटकल-पच्चू (न०) सांख्य शास्त्र में कहा गया प्रधान।

आनुयात्रिक—(पु०) [अनुयात्रा+ठक्] अनुयायी, चाकर।

आनुरक्ति—(स्त्री०) [आ—अनु√रञ्ज्+क्तिन्] प्रीति, अनुराग।

आनुलोमिक—(वि०) [स्त्री०—**आनुलोमिकी**] [अनुलोम+ठक्] क्रमानुयायी, क्रम से काम करने वाला। अनुकूल।

आनुलोम्य—(न०) [अनुलोम+ष्यञ्] स्वाभाविक क्रम, ठीक क्रम। क्रमानुगत क्रम। अनुकूलता।

आनुवेश्य—(पु०) [अनुवेश+ष्यञ्] वह पड़ोसी जिसका घर अपने घर से दूसरा (प्रतिवेशी के बाद) हो, अपने घर के समीप ही रहने वाला पड़ोसी।

आनुश्रविक—(वि०) [गुरुपाठादनुश्रयते अनुश्रवो वेदः तत्र विहितः इत्यर्थे अनुश्रव+ठक्] जिसको परंपरा से सुनते चले आये हों। (पु०) वेद में विधान किया हुआ कर्मानुष्ठान।

आनुषङ्गिक—(वि०)[स्त्री०—**आनुषङ्गिकी**] [अनुषङ्ग+ठक् (तस्मात् आगतः इत्यर्थे)] साथ-साथ होने वाला; 'ननु लक्ष्मीः फलमानुषङ्गिकम्' कि० २.१६। अनिवार्य, आवश्यक। गौण। अनुरक्त। विषयक, सम्बन्धी। यथोचित, सुव्यवस्थित। संक्षाकार। अन्तर्मुक्त।

आनूप—(वि०) [स्त्री०—**आनूपी**] [अनूप+अण्] पानी वाला, दलदली, नम। दलदल में उत्पन्न हुआ। (पु०) वह जीव जिसे दलदल या जल में रहना पसंद हो (जैसे भैंसा, भैंस)।

आनृण्य—(न०)[अनृण+ष्यञ्] अऋणता, कर्ज से बेबाक होना।

आनृशंस,—**आनृशंस्य**-(वि०) [अनृशंस+अण् (स्वार्थे)] [अनृशंस+ष्यञ् (स्वार्थे)]जो क्रूर न हो। कृपालु, दयावान्, रहमदिल। [अनृशंस+अण् (भावे)] [अनृशंस+ष्यञ् (भावे)] रहमदिली, कृपालुता। कोमलता।

आनैपुण, **आनैपुण्य**—(न०) [अनिपुण+अण् (भावे)] [अनिपुण+ष्यञ् (भावे)] अकुशलता, मूढ़ता।

आन्त—(वि०) [स्त्री०—**आन्ती**] [अन्त+अण्] अन्तिम, अन्त का।

आन्तर—(वि०) [अन्तर्+अण्] भीतरी। गुप्त, छिपा हुआ। (न०) अभ्यन्तरीण स्वभाव।

आन्तरिक्ष, आन्तरीक्ष—(वि०) [अन्तरिक्ष+अण्] अंतरिक्ष संबंधी, आकाशीय । स्वर्गीय, नैसर्गिक । (न०) आकाश, आसमान । पृथिवी और आकाश के बीच का स्थान ।

आन्तर्गणिक—(वि०) [अन्तर्गण+ठक्—इक] शामिल, सम्मिलित ।

आन्तर्गेहिक—(वि०) [अन्तर्गेह+ठक्—इक] घर के भीतर होने वाला या उत्पन्न ।

आन्तिका—(स्त्री०) [अन्तिका+अण् (इवार्थे) टाप्] बड़ी बहन ।

√आन्दोल्—(चु० रा० उभ० सक०) झूलना, इधर-उधर डोलना । हिलना, काँपना । आन्दोलयति-ते ।

आन्दोल—(पु०) [आन्दोल्+णिच्+घञ्] झूलना, झूला । कँपकँपी ।

आन्दोलन—(न०) [आन्दोल्+णिच्+ल्युट्] झूलना । काँपना । प्रयत्न करना ।

आन्धस—(पु०) [अन्धस्+अण्] भात का माँड़ या माँड़ी ।

आन्धसिक—(पुं०) [अन्धोऽन्नं शिल्पमस्य इत्यर्थे अन्धस्+ठक्] रसोइया, पाचक ।

आन्ध्य—(न०) [अन्ध+ष्यञ्] अंधापन ।

आन्ध्र—(वि०) [आ√अन्ध+रन्] आन्ध्र देशीय, तिलंगाना देश का । (पुं०) तिलंगाना देश ।

आन्वयिक—(वि०) [स्त्री०—**आन्वयिकी**] [अन्वये प्रशस्तकुले भवः इत्यर्थे अन्वय+ठञ्] कुलीन, अच्छे कुल में उत्पन्न, अच्छी जाति का । सुव्यवस्थित, नियमित ।

आन्वाहिक—(वि०) [स्त्री०—**आन्वाहिकी** [अहनि अहनि इति अन्वहन् तत्र भवः इत्यर्थे अन्वह+ठञ्] नित्य होने वाला (कृत्य) । नित्य (कर्म) ।

आन्वीक्षिकी—(स्त्री०) [अनु वेदश्रवणानन्तरं ईक्षा परीक्षणम् अन्वीक्षा सा प्रयोजनम् अस्याः तत्र साधुः वा इत्यर्थे अन्वीक्षा—ठञ्, ङीप्] तर्कशास्त्र, न्याय दर्शन । आत्मविद्या ।

√आप्—(चु० स्वा० पर० सक०) प्राप्त करना, पाना । पहुँचना । (आगे गये हुए को पीछे जा कर) पकड़ लेना । व्याप्त होना, छेंक लेना । आपयति—आप्नोति, आपयिष्यति—आप्स्यति, आपिपत्—आपत्]

आप—(पु०) [√आप्+घञ्] आठ वस्तुओं में से एक । (न०) [अप्+अण्] जल समूह । जल-प्रवाह । जल ।—**गा**–(स्त्री०) नदी ।

आपकर—(वि०) [स्त्री०—**आपकरी**] [अपकर+अण् वा अञ्] अप्रीतिकर । उपद्रवकारी ।

आपक्व—(वि०) [आ√पच्+क्त] कम पका हुआ । (न०) कम पके हुए मटर आदि ।

आपगेय—(पु०) [आपगा+ढक्—एय] नदी-पुत्र, भीष्म की उपाधि ।

आपण—(पु०) [आ√पण्+घञ् नि०] दूकान । हाट । बाजार ।

आपणिक—(वि०) [स्त्री०—**आपणिकी**] [आपण+ठक्] बाजार सम्बन्धी । व्यापार सम्बन्धी, वाणिज्य सम्बन्धी । (पु०) दूकानदार, व्यापारी, व्यवसायी ।

आपतन—(न०) [आ√पत्+ल्युट्] आगमन । समीप आगमन । घटना । प्राप्ति । ज्ञान । स्वाभाविक परिणाम ।

आपतिक—(वि०) [स्त्री०—**आपतिकी**] [आ√पत्+इकन्] इत्तिफाकिया, अचानक दैवी । (पु०) बाज पक्षी ।

आपत्ति—(स्त्री०) [आ√पद्+क्तिन्] परिवर्तन । प्राप्ति । सङ्कट, आफत, विपत्ति । (दर्शन में) अनिष्ट प्रसङ्ग ।

आपद्—(स्त्री०) [आ√पद्+क्विप्] विपत्ति, सङ्कट; 'अविवेकः परमापदाम्पदम्' कि० २.३० ।—**काल**—(पुं०) सङ्कट का समय, कष्ट का समय ।—**गत**,—**ग्रस्त**,—

—प्राप्त–(वि०) विपत्ति में फँसा हुआ । अभागा, कमबख्त । —धर्म–(पु०) वे कृत्य जो साधारण समय में शास्त्रविरुद्ध होने पर भी विपत्ति-काल में किये जा सकते हैं।

आपदा—(स्त्री०)[आपद्+टाप्] विपत्ति, सङ्कट ।

आपनिक—(पु०)[आ√पन्+इकन्] पन्ना, नीलम, पुखराज । किरात ।

आपन्न—[आ√पद्+क्त]आपद्ग्रस्त । प्राप्त, उपलब्ध । गिरा हुआ ।—**सत्त्वा**–(स्त्री०) गर्भवती स्त्री; 'समम् आपन्नसत्त्वास्ता रेजुरापाण्डुरत्विषः' र० १०.५९ ।

आपमित्यक—(वि०) [अपमित्य+कक् (निर्वृत्तम् इत्यर्थे)] बदले में पाया हुआ ।

आपराह्णिक—(वि०) [स्त्री०—**आपराह्णिकी**] [अपराह्ण+ठञ्]दोपहर बाद का ।

आपस्—(न०) [√आप+असुन्] जल । पाप । कन्याराशि ।

आपस्तम्ब—(पु०) एक शाखाप्रवर्तक ऋषि ।

आपस्तम्भिनी—(स्त्री०) [आपस्√स्तम्भ्+णिनि] पानी को रोक लेने वाली लिमिनी नामक लता ।

आपाक—(पु०)[समन्तात् परिवेष्ट्य पच्यतेऽत्र इति विग्रहे आ√पच्+घञ्] आँवाँ, भट्ठी ।

आपात—(पु०) [आ√पत्+घञ्] भरोकर गिरना । आक्रमण । (सवारी से) उतरना। गिरना । पटकना । किसी घटना का अचानक होना । वर्तमान क्षण या काल । प्रथम दर्शन, पहली निगाह । अकस्मात् आयी हुई संकट की स्थिति, आकस्मिक आवश्यकता (इमर्जेंसी) । —**रमणीय**–(वि०) (केवल) तत्काल सुख देने वाला ।

आपाततः—(अव्य०) [आपात+तसि] पहली निगाह में । तत्क्षण, तुरंत । अकस्मात्, अचानक । अन्त को, आखिरकार ।

आपाद—(पु०) [आ√पद्+घञ्] प्राप्ति, उपलब्धि । पुरस्कार, इनाम ।

आपादन—(न०) [आ√पद्+णिच्+ल्युट्] पहुँचना । लाना ।

आपान, आपानक—(न०) [आ√पा+ल्युट्] [आपान+कन्] मद्यपों की मण्डली । भैरवी चक्र । इकट्ठा होकर शराब पीने का स्थान ।

आपालि—(पु०) [आ√पा+क्विप् तदर्थम् अलति इति विग्रहे √अल+इन्] जूँ, चीलर ।

आपीड—(पु०) [आ√पीड्+घञ् वा अच्] तंग करना । घायल करना ।दबाना, निचोड़ना । सिर पर पहनने की चीज—किरीट, माला आदि । एक विषम वृत्त ।

आपीत—(वि०) [प्रा० स०] थोड़ा पीला । (पुं०) सोनामाखी ।

आपीन—[आ–पीन प्रा० स०] मोटा । बलवान् । (पु०) [आ√प्याय्+क्त, पीभावः तस्य नत्वम्] कूप, कुआँ । (न०) स्तन के ऊपर की घुंडी । थन, ऐन ।

आपूपिक—(वि०) [स्त्री०—**आपूपिकी**] [अपूपः शिल्पम् अस्य इति विग्रहे अपूप+ठक्] अच्छे पुए बनाने वाला । पुआ खाने का आदी । (पुं०) रसोइया । नानबाई, हलवाई । (न०) पुओं का ढेर ।

आपूप्य—(पुं०) [अपूप+ञ्य] आटा । मैदा । बेसन । सत्तू ।

आपूर—(पु०) [आ√पूर्+घञ्] बहाव, धार । बाढ़ । पूर्ण करना, भरना ।

आपूरण—(न०) [आ√पूर्+ल्युट्] पूर्ण करना, भरना ।

आपूष—(न०) [आ√पूष्+घञ्] धातु विशेष, रांगा या टीन ।

आपृच्छा–(स्त्री०)[आ√प्रच्छ्+अङ]वार्तालाप । बिदाई, अन्तिम रवानगी । कौतूहल ।

आपोक्लिम—(न०) लग्न से तीसरी, छठी, नवीं और बारहवीं राशि ।

आपोऽशान—(पुं०) [आपसा अशेन अशानम् इति√अश्+आनच्] मंत्र विशेष जो भोजन करने के पूर्व और पीछे पढ़े जाते हैं । [भोजन के आरम्भ में पढ़ा जाने वाला मंत्र—'अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा'।—भोजनोपरान्त का मंत्र—अमृतापिधानमसि स्वाहा ।]

आप्त—(वि०) [√आप्+क्त] प्राप्त, पाया हुआ । पहुँचा हुआ । विश्वस्त । नियुक्त । प्रामाणिक । कुशल । पूर्ण । यथार्थ । घनिष्ठ । युक्ति-युक्त । यथार्थ ज्ञान रखने वाला । (पुं०) विश्वस्त पुरुष, इतमीनान का आदमी । संबंधी, रिश्तेदार । मित्र; 'निग्रहात्स्वसुराप्तानां वधाच्च धनदानुजः' र० १२.५२ । (न०) भाज्य फल, बाँट फल, लब्धि ।—**काम**–(वि०) पूर्णकाम, जिसकी सब कामनाएँ पूरी हो चुकी हों । —(पुं०) परमात्मा ।—**गर्भा**–(स्त्री०) गर्भवती स्त्री ।—**वचन**–(न०) विश्वस्त पुरुष के वचन ।—**वाच्**–(वि०) विश्वास करने योग्य, ऐसा पुरुष जिसके वचन प्रामाणिक माने जा सकें । (स्त्री०) प्रमाद आदि से शून्य वचन । वेद या श्रुति, स्मृति, इतिहास, पुराण ।—**श्रुति**–(स्त्री०) वेद, स्मृति आदि ।

आप्ति—(स्त्री०) [√आप+क्तिन्]प्राप्ति, उपलब्धि । पहुँच । योग्यता । सम्मान । समाप्ति, परिपूर्णता । संबंध । संयोग । भविष्यत् काल ।

आप्य—(वि०) [अप्+अण् ततः स्वार्थे ष्यञ्] जल सम्बन्धी । [√आप्+ण्यत्] प्राप्य ।

आप्यान—(आ √प्याय्+क्त] मोटा, तगड़ा । रोबीला । मजबूत । प्रसन्न, सन्तुष्ट । (न०) प्रीति । बाढ़, बढ़ती ।

आप्यायन—(न०), **आप्यायना**–(स्त्री०) [आ√प्याय्+ल्युट्] [आ√प्याय्+युच्] पूर्ण करने या मोटा करने की क्रिया । सन्तुष्ट करना, अघाना । आगे बढ़ना, उन्नति करना बढ़ाव, मोटापन । पौष्टिक दवाई ।

आप्रच्छन—(न०) [आ√प्रच्छ्+ल्युट्] विदा माँगना, गमन के समय जाने की अनुमति लेना । स्वागत करना । बधाई देना ।

आप्रपदीन—(वि०) [आप्रपदं पादाग्रान्तं प्राप्नोति इत्यर्थे आप्रपद+ख—इन] पैर तक लटकता हुआ (वस्त्र आदि) ।

आप्लव—(पुं०), **आप्लवन**–(न०) [आ√प्लु+अप्] [आ√प्लु+ल्युट्] स्नान, डुबकी, गोता । चारों ओर पानी का छिड़काव ।—**व्रतिन्** या **आप्लुतव्रतिन्**– (पुं०) वह जिसने ब्रह्मचर्याश्रम से निकल कर गृहस्थाश्रम में प्रवेश किया हो । स्नातक ।

आप्लाव—(पुं० [आ√प्लु+घञ्] स्नान मार्जन । जल की बाढ़ ।

आफूक—(न०) [ईषत् फूत्कार इव फेनोऽत्र पृषो०] अफीम ।

आबद्ध—[आ√बन्ध्+क्त] बँधा हुआ, जकड़ा हुआ । गढ़ा हुआ । बना हुआ । पाया हुआ । रुका हुआ । (न०) दृढ़ बंधन । प्रेम । आभूषण । (पुं०) जुआ ।

आबन्ध—(पुं०), **आबन्धन**–(न०) [आ+बन्ध्+घञ्] [आ√बन्ध्+ल्युट्] बंधन । बाँधने की रस्सी । जुए का बंधन । गहना । शृङ्गार । स्नेह, प्रेम ।

आबर्ह—(पुं०) [आ√बर्ह् +घञ्] चीर डालना या खींच लेना । मार डालना ।

आबाध—(पुं०) [आ√बाध्+घञ्] क्लेश कष्ट । छेड़छाड़ । हानि ।

आबाधा—(स्त्री०) [आ√बाध+अङ्, टाप्] चोट । पीड़ा । मानसिक क्लेश या सन्ताप ।

आबिल—(वि०) [आ√बिल्+क] मटीला, गँदला । मैला, गंदा । अपवित्र । काले रंग का, कलौंहा । धुँधला ।

आवुत—(पुं०) [√आप्+क्विप्, आप-मुत्तनोति इति उद्√तन्+ड] नाट्योक्ति में भगिनीपति (बहनोई) की संज्ञा।

आबोधन—(न०) [आ√बुध्+ल्युट् तथा +णिच्+ल्युट्] ज्ञान, समझ। शिक्षण।

आब्द—(वि०) [अब्दे मेघे भवः तस्येदम् इति वा अर्थे अब्द+अण्] बादल सम्बन्धी या बादल का।

आब्दिक—(वि०) [अब्द+ठञ्] वार्षिक, सालाना।

आभरण—(न०) [आ√भृ+ल्युट्] गहना, जेवर। शृङ्गार। पालन-पोषण की क्रिया।

आभा—(स्त्री०) (आ√भा+अङ] चमक-दमक, कान्ति; 'महत्सखाभम्' र० २.१०। रूप रंग, सौन्दर्य। सादृश्य, समानता। छाया, प्रतिबिम्ब।

आभाणक—(पुं०) [आ√भण्+ण्वुल्] कहावत, लोकोक्ति।

आभाष—(पुं०) [आ√भाष्+घञ्] सम्बोधन। उपोद्घात, भूमिका।

आभाषण—(न०) [आ√भाष्+ल्युट्] परस्पर कथोपकथन, बातचीत। संबोधन।

आभास—(पुं०) [आ√भास्+घञ्] प्रतीति। परछाईं। ग्रन्थादि के आरम्भ में संगति दिखाने का प्रस्ताव, अवतरणिका, भूमिका। चमक। समानता, सादृश्य। झलक। मिथ्याज्ञान। तात्पर्य, अभिप्राय।

आभासुर, आभास्वर—(वि०) [आ√भास् +घुरच्] [आ√भास्+वरच्] चमकीला, सुन्दर। (पुं०) चौंसठ देवगण का समूह।

आभिचारिक—(वि०)[स्त्री०)—**आभिचारिकी**]—[अभिचार+ठक्] अभिचार-सम्बन्धी। ऐन्द्रजालिक। अमानुषिक। शापित, अकोसा हुआ।

आभिजन (वि०) [(स्त्री०)—**आभिजनी**] [अभिजन+अण्] जन्म-सम्बन्धी। (न०) कुलीनता, सत्कुलोद्भवता।

आभिजात्य—(न०) [अभिजात+ष्यञ्] कुलीनता। पद। विद्वत्ता। सौन्दर्य।

आभिधा—(स्त्री०) [अभिधा+अण्(स्वार्थे)] शब्द, स्वर। नाम।

आभिधानिक—(वि०) [अभिधान+ठक्] जो किसी कोश में हो। (पुं०) कोषकार।

आभिमुख्य—(न०) [अभिमुख+ष्यञ्] (किसी की ओर) रुख होना। आमने-सामने होना। आनुकूल्य।

आभिरूपक—(पुं०), **आभिरूप्य**—(न०) [अभिरूपस्य भावः इत्यर्थे अभिरूप+वुञ्] [अभिरूप+ष्यञ्] सौन्दर्य, सुन्दरता।

आभिषेचनिक (वि०)—[स्त्री०—**आभिषेचनिकी**] [अभिषेचन+ठञ्] अभिषेक या राज-तिलक संबंधी; 'आभिषेचनिकं यत्ते रामार्थमुपकल्पितं' वा०।

आभिहारिक—(वि०) [स्त्री०—**आभिहारिकी**]-[अभिहार+ठक्] भेंट करने योग्य, चढ़ाने योग्य। (न०) भेंट, चढ़ावा।

आभीक्ष्ण्य—(न०) (अभीक्ष्ण+ष्यञ्]निरन्तर आवृत्ति, बार-बार होना।

आभीर—(पुं०) [आ सम्यक् भियं राति इति विग्रहे आभी√रा+क] अहीर। एक देश का नाम तथा उस देश के निवासी।—**पल्लि,-पल्लिका—पल्ली** (स्त्री०) अहीरों का गाँव।

आभीरी—(स्त्री०) [आभीर+ङीप्] अहीरिन।

आभील—(वि०) [आ समन्तात् भयं लाति इति विग्रहे आभी√ला+क] भयानक, भय-प्रद, डरानेवाला। (न०) चोट, शारीरिक पीड़ा।

आभुग्न—(वि०) [आ√भुज्+क्त] जरासा मुड़ा हुआ, थोड़ा टेढ़ा।

आभोग—(पुं०)[आ√भुज+घञ्]गोलाई, चक्कर। वृद्धि। सीमा, चौहद्दी। डीलडौल, आकार। लम्बाई-चौड़ाई। उद्योग। साँप का

फैला हुआ फल। भोगविलास। तृप्ति। भोजन। वरण का छत्र। पद्य में कवि का नामोल्लेख। वस्तु के परिचायक चिह्नों की विद्यमानता।

आभ्यन्तर—(वि०) [स्त्री०—**आभ्यन्तरी**] [अभ्यन्तर+अण्] भीतरी, अन्दर का।—**कोप**-(पुं०) मंत्री, पुरोहित, सेनापति आदि का विद्रोह।—**प्रयत्न**-(पुं०) स्पष्ट उच्चारण के लिये किया जाने वाला आन्तरिक (मुख के भीतरी भाग का) प्रयत्न।

आभ्यवहारिक—(वि०) [स्त्री० **आभ्यवहारिकी**] [अभ्यवहार+ठक्] खानेयोग्य।

आभ्यासिक—(वि०) [अभ्यास+ठक्] अभ्यास से उत्पन्न या अभ्यास का फल। समीपी, पड़ोस का।

आभ्युदयिक—(वि०) [स्त्री० **आभ्युदयिकी**] [अभ्युदय+ठक्] अभ्युदय-सम्बन्धी। शुभ कर्मों की वृद्धि के लिये करने के योग्य। उन्नत। (वि०) किसी मङ्गल कार्य में पितरों के उद्देश्य से किया गया श्राद्ध-कर्म।

आम्—(अव्य०) [√अम्+णिच्, बा० ह्रस्वाभाव, ततः क्विप्] स्वीकारोक्तिवाची अव्यय।

आम—(वि०) [आ ईषत् अम्यते पच्यते इति आ√अम्+घञ्] कच्चा, अनपका। अनपचा।—(पुं०) अजीर्ण रोग, अनपच। डंठल या भूसी से अलग किया हुआ अन्न।—**अन्न** (**आमान्न**)—कच्चा अन्न।—**आशय** (**आमाशय**)-(पुं०) पेट की वह थैली जिसमें खाया हुआ अन्न रहता है, मेदा।—**कुम्भ**-(पुं०) कच्चा घड़ा।—**गन्धि**-(न०) कच्चे मांस की या मुर्दे के जलने की गंध।—**ज्वर**-(पुं०) एक प्रकार का ज्वर।—**त्वच्**-(वि०) कोमल चाम का।—**रक्त**-(न०) दस्तों की बीमारी जिसमें आंव गिरे।—**रस**-(पुं०) आहार के पचने पर उससे बनने वाला रस। अर्धजीर्ण भुक्तद्रव्य।—**वात**-(पुं०) अजीर्ण, अनपच। कब्ज।—**शूल**-(पुं०) वायुगोले का दर्द, आंव मरोड़ का रोग।

आमञ्जु—(वि०) [प्रा० स०] मनोहर। प्यारा।

आमण्ड—(पुं०) [प्रा० स०] एरण्डवृक्ष, रेंडी का पेड़।

आमनस्य, आमानस्य-(न०) [अप्रशस्तं मनः मानसं वा यस्य ब० स०—अमनस् वा अमानस+ष्यञ्] पीड़ा, शोक।

आमन्त्रण—(न०), **आमन्त्रणा**—(स्त्री०) [आ√मन्त्र् णिच्+ल्युट्][आ√मन्त्र् + णिच्+युच्] बुलावा, न्योता। बिदाई। बधाई। अनुमति। वार्तालाप। सम्बोधन कारक।

आमन्द्र—(वि०) [आ√मन्द्+रक्] गम्भीर स्वरवाला, गुड़गुड़ाहट का; 'आमन्द्राणाम्फलमविकलं लप्स्यसे गर्जितानाम्' मे० ३४। (पुं०) [प्रा० स०] हल्का गम्भीर स्वर।

आमय—(पुं०) [आम√या+क वा आ√मी+अच्] रोग, बीमारी। क्षति, चोट। अजीर्ण। कुष्ठ नामक ओषधि।

आमयाविन्—(वि०) [आमय+विनि, दीर्घ] बीमार। कब्जियत वाला, जिसको अनपच का रोग हो।

आमरणान्त, आमरणान्तिक-(वि०) [स्त्री० **आमरणान्तिकी**] [आ-मरण प्रा० स०, आमरणे अन्तो यस्य ब० स०] [आमरणे अन्तः, स० त०, आमरणान्तं व्याप्नोति इत्यर्थे ठञ्] मृत्यु तक रहने वाला, यावज्जीवन रहने वाला।

आमर्द—(वि०) [आ√मृद्+घञ्] कुचलना, पीस डालना, रगड़ डालना।

आमर्श—(पुं०) [आ√मृश्+घञ्] स्पर्श, छूना। परामर्श, सलाह।

आमर्ष—(पुं०) [आ√मृष+घञ्] क्रोध, कोप, गुस्सा। अधीरता।

आमलक—(पु॰), **आमलकी**—(स्त्री॰) [आ √मल्+वुन्] [आमलक+ङीष्] आँवले का पेड़ । (न॰) आँवले का फल ।

आमात्य—(पु॰) [अमात्य+अण् (स्वार्थे)] दीवान, वज़ीर, मुसाहिब ।

आमिक्षा—(स्त्री॰) [आमिष्यते सिच्यते इति विग्रहे आ√मिष+सक्] फटे दूध का ठोस भाग, छेना ।

आमिष—(न॰) [आ√मिष्+क] माँस 'उपानयत् पिण्डमिवामिषस्य' र॰ २.५९। (आलं॰) शिकार, आखेट । भोग्य वस्तु । भोजन । चारा । उत्कोच, घूस । अभिलाषा, कामेच्छा । भोगविलास । प्रिय या मनोहर वस्तु । पत्र । जँभीरी नीबू ।

आमीलन—(न॰) [आ—मील्+ल्युट्] नेत्रों का बंद करना या मूंदना ।

आमुक्ति—(स्त्री॰) [आ√मुच्+क्तिन्] मोक्ष । पहनना, धारण करना (पोशाक या कवच ।

आमुख—(न॰) [आ√मुख+णिच्+अच्] आरम्भ । (नाट्य साहित्य में) प्रस्तावना । (अव्य॰) सामने, आगे ।

आमुष्मिक—(वि॰) [स्त्री॰—**आमुष्मिकी**]- [अमुष्मिन् भवः इत्यर्थे ठक्, सप्तम्या अलुक्, टिलोप] परलोक से सम्बन्ध रखने वाला । परलोक का ।

आमुष्यायण-(वि॰) [स्त्री॰—**आमुष्यायणी**] [अमुष्य ख्यातस्य अपत्यम् इत्यर्थे फक्—आयन, अलुक्]कुलीन् सत्कुलोद्भव । (पु॰) किसी प्रसिद्ध पुरुष का पुत्र ।

आमोचन—(न॰) [आ√मुच्+ल्युट्] खोल देना । छोड़ देना । गिराना । निकालना । उड़ेलना । बाँध रखना ।

आमोटन—(न॰) [आ√मुट्+ल्युट्] कुचलना, पीस डालना ।

आमोद—(पु॰) [आ√मुद् +णिच् + अच्] हर्ष, आनन्द, प्रसन्नता । सुगन्धि सुवास ।

आमोदन—(वि॰ [आ√मुद्+णिच्+ल्यु] प्रसन्नकारक, हर्षप्रद । (न॰) [आ√मुद्+णिच्+ल्युट्] प्रसन्नता या हर्ष देना । सुवासित करना, सौरभान्वित करना ।

आमोदिन्—(वि॰) [आ√मुद्+णिच्+णिनि] प्रसन्न करने वाला । सुवासित करने वाला ।

आमोष—(पु॰) [आ√मुष्+घञ्] चोरी । डाका ।

आमोषिन्—(पु॰) [आ√मुष्+णिनि] चोर ।

आम्नात—[आ√म्ना+क्त] विचारित । प्रघोत । स्मरण किया हुआ । परंपरा से प्राप्त । उल्लिखित ।

आम्नान—(न॰) [आ√म्ना+ल्युट्] अभ्यास । अध्ययन ।

आम्नाय—(पु॰) [आ √ म्ना+घञ्] (ब्राह्मण, उपनिषद् और आरण्यकों सहित) वेद; 'अधीती चतुर्ष्वाम्नायेषु' दश॰ । वंश-परम्परागत परिपाटी । कुल की रीति । विश्वासमूलक उपदेश । परामर्श, मंत्रणा या उपदेश ।

आम्बिकेय—(पु॰) [अम्बिका+ढक्—एय] धृतराष्ट्र और कार्तिकेय की उपाधि ।

आम्भसिक—(वि॰) [स्त्री॰—**आम्भसिकी**] [अम्भस्+ठक्] पनीला, रसीला । (पु॰) मत्स्य ।

आम्र—(पु॰) [√अम्+रन्, दीर्घ] आम का पेड़ । (न॰) आम का फल ।—**कूट**- (पु॰) एक पर्वत का नाम ।—**पेशी**- (स्त्री॰) अमावट, आम्र का रस जो जमा कर सुखा लिया जाता है ।—**वण**-(न॰) आम का कुञ्जवन, आम की उद्यानवीथिका ।

आम्रात—(पु॰) [आम्रं तद्रसम् आ ईषत् अतति याति इति विग्रहे आम्र—आ√अत्

+अन्] आमड़ा का पेड़ । (न०) आमड़ा का फल ।

आम्रातक—(पु०) [आम्रात+कन्] आमड़ा का वृक्ष । अमावट ।

आम्रेडन—(न०) [आ√म्रेड् +ल्युट्] पुनरावृत्ति, दुहराना, फेरना, आमुक्ता करना।

आम्रेडित—(न०) [आ√म्रेड्+क्त(भावे)] किसी शब्द या स्वर का बार-बार दुहराया जाना । व्याकरण की एक संज्ञा ।

आम्ल—(पु०), **आम्ला**—(स्त्री०) [आ सम्यक् अम्लो रसो यस्य ब० स०] [आम्ल —टाप्] इमली का पेड़ । (न०) खटाई, तुर्शी ।

आम्लिका, आम्लीका—(स्त्री०) [आम्ला+कन्, टाप्, ह्रस्व, पक्षे पृषो० दीर्घ] इमली का वृक्ष ।

आय—(पु०) [आ√इण्+अच् वा√अय् +घञ्] आगमन, आना । धनप्राप्ति, धनागम । आय, आमदनी, प्राप्ति । लाभ, फायदा, नफा । जनानखाने का रक्षक । जन्मकुंडली में ग्यारहवाँ स्थान ।—व्यय-(पु०) (द्विवचन) आमदनी-खर्च ।

आयःशूलिक—(वि०) [स्त्री०—**आयःशूलिकी**] [अयःशूल+ठक्] चतुर । कार्यतत्पर । अध्यवसायी ।(पु०) अपनी उद्देश्यसिद्धि के लिये जोरदार उपायों से काम लेने वाला पुरुष ।

आयत— (वि०) [आ√यम्+क्त] लंबा । विस्तृत । बड़ा । आनमित । मुड़ा हुआ । समकोण चतुर्भुज (ज्या०) ।—**अक्षि**, (आयताक्ष) —**ईक्षण** (आयतेक्षण)— **नेत्र**— **लोचन**-(वि०) बड़े नेत्रों वाला ।—**अपाङ्ग** (आयतापाङ्ग)-(वि०) जिसकी आँखों के कोने लंबे हों ।— **आयति** (आयतायति)-(स्त्री०)बहुत दिनों बाद आने वाला भविष्यत् काल ।—**च्छदा**-(स्त्री०) केले का पेड़, कदलीवृक्ष ।—**स्तू**-(पु०)भाट, स्तुतिवादक।

आयतन—(न०) [आ√यत् +ल्युट्] स्थान । निवासस्थान, घर । अग्निकुंड । देवालय, मन्दिर । घर बनाने का स्थान । बुखार । रोग का कारण ।

आयति—(स्त्री०) [आ√या+डति]लंबाई। विस्तार । भविष्यत् काल । भावी फल । राजश्री । प्रताप । महिमा । हाथ बढ़ाना । स्वीकृति । प्राप्ति । कर्म ।

आयतीगवम्—(अव्य०) [आयान्ति गावः यस्मिन् काले इति विग्रहे अव्य० स०] गौओं का घर लौटने का समय ।

आयत्त—[आ√यत्+क्त] अवलम्बित । पराधीन, परतंत्र । वशीभूत ।

आयत्ति—(स्त्री०) [आ√यत्+क्तिन्] परवशता, वश्यता । स्नेह । सामर्थ्य । सीमा । उपाय । प्रताप । महिमा । चरित्र की दृढ़ता ।

आयथातथ्य—(न०) [अयथातथ+ष्यञ्] जैसा होना चाहिये वैसा न होना । अयथार्थता । अयोग्यता । अनुपयुक्तता । अनौचित्य ।

आयमन—(न०) [आ√यम्+ल्युट्] लंबाई । विस्तार । संयम । बंधन । (धनुष को) तानना ।

आयल्लक—(पु०) [आयल्लिव लीयते अत्र इति विग्रहे√ली+ड (बा०) ततः संज्ञायां कन्] अधैर्य, अधीरज, उतावलापन । लालसा ।

आयस—(वि०) [अयस् +अण्] लोहे का बना, लोहा धातु का । (न ०) लोहा। लोहे की बनी कोई भी वस्तु । हथियार ।

आयसी—(स्त्री०) [आयस+ङीप्] कवच।

आयस्त—[आ√यस्+क्त] फेंका हुआ । पीड़ित । दुःखी । चोटिल । क्रुद्ध । तीक्ष्ण ।

आयात—(वि०) [आ√या+क्त] आया हुआ । देसावर से आया हुआ (माल) ।

आयान—(न०) [आ√या+ल्युट्] आगमन । स्वभाव, मिजाज ।

आयाम—(पुं०) [आ√यम्+घञ्]लंबाई । विस्तार । फैलाव । पसारना । संयम । दमन । बंद करना ।

आयामवत्—[आयाम+मतुप्] बढ़ा हुआ । लंबा ।

आयास—(पुं०) [आ√यस्+घञ्] उद्योग थकावट ।

आयासिन्—(वि०) [आयास+इनि] थका हुआ, श्रान्त । परिश्रम करने वाला । उद्योग करने वाला ।

आयु—(पुं० न०) [√इण्+उण्] दे० 'आयुस्' ।

आयुक्त—(वि०) [आ√युज्+क्त] नियुक्त । संयुक्त । (पुं०) मंत्री । किसी विशेष कार्य के लिये नियुक्त 'आयोग' का सदस्य जिसे विशेष अधिकार दिया गया हो (कमिश्नर) ।

आयुध—(पुं० न०) [आ√युध्+घञ्] अस्त्र, हथियार । हथियार तीन प्रकार के होते हैं । एक 'प्रहरण' जैसे तलवार । दूसरा 'हस्तमुक्त' जैसे चक्र, भाला, बरछी आदि । तीसरा 'यंत्रमुक्त' यथा तीर, बंदूक, तोप ।—**अगार,** (**आयुधागार**)—**आगार,** (**आयुधागार**) –(न०)हथियारों का भांडारगृह ।—**जीविन्** –(वि०) हथियार से जीवन निर्वाह करने वाला । (पुं०) योद्धा, सिपाही ।

आयुधिक—(वि०) [आयुध+ठञ्] आयुध सम्बन्धी । (पुं०) योद्धा, सिपाही ।

आयुधिन्, आयुधीय—(वि०) [आयुध+इनि] [आयुध+छ–ईय] हथियार धारण करने वाला अथवा हथियार से काम लेने वाला ।

आयुष्मत्—(वि०)[आयुस्+मतुप्]जीवित, जिन्दा । दीर्घजीवी । (पुं०) विष्कम्भ आदि योगों में से तीसरा योग ।

आयुष्य—(वि० [आयुस्+यत्] आयु बढ़ाने वाला । जीवन की रक्षा करने वाला, जीवनरक्षक । (न०) जीवनी शक्ति ।

आयुस्—(न०) [आ√इण्+उस्] जीवन । जीवन की अवधि; 'शतायुर्वै पुरुषः' वेद । जीवनी शक्ति । भोजन ।—**कर,** (**आयुष्कर**) –(वि०) उम्र बढ़ाने वाला ।—**द्रव्य,** (**आयुर्द्रव्य**)– (न०) घी ।—**वेद,**(**आयुर्वेद**) –(पुं०)चिकित्सा शास्त्र ।—**वैदिक,** (**आयुर्वैदिक**)—**वेदिन्,** (**आयुर्वेदिन्**)–(वि०) ओषधि सम्बन्धी । (पुं०) वैद्य, चिकित्सक ।—**शेष,** (**आयुःशेष**)–(पुं०) बचा हुआ जीवन । जीवन का अन्त । आयु का ह्रास ।—**स्तोम,** (**आयुष्टोम**) –(पुं०) यज्ञ जो दीर्घजीवन की प्राप्ति के लिये किया जाता है ।

आये—(अव्य०) [आ–अये, प्रा० स०] स्नेहव्यञ्जक सम्बोधनात्मक अव्यय ।

आयोग—(पुं०)[आ√युज्+घञ्] नियुक्ति । पुष्पोपहार । समुद्रतट या किनारा । काम । कार्यसंपादन । संबंध । कोई विशेष कार्य सम्पन्न करने के लिये नियुक्त व्यक्तियों का मंडल (कमीशन) ।

आयोगव—(पुं०) [स्त्री०—**आयोगवी**]– [अयोगव+अण्] वैश्या के गर्भ और शूद्र के वीर्य से उत्पन्न सन्तान, बढ़ई ।

आयोजन—(न०) [आ√युज्+ल्युट्] जोड़ना । ग्रहण करना । लेना । उद्योग । प्रयत्न ।

आयोधन—(न०) [आ√युध्+ल्युट्] युद्ध, लड़ाई । रणभूमि; 'आयोधनाग्रसरतां त्वयि वीर याते' र० ५.७१ ।

आर—(पुं० न०) [√ऋ+घञ्] पीतल । लौह विशेष । कोण, कोना । (पुं०) मङ्गल ग्रह । शनिग्रह ।—**कूट**–(पुं०न०) पीतल । पीतल का जेवर ।

आरक्ष—(पुं०) [आ√रक्ष्+अच्] रक्षा। सेना। गजकुंभसंधि। इस संधि के नीचे का भाग। (वि०) रक्षित।

आरक्षक, आरक्षिक—(पुं०) [आ√रक्ष्+ण्वुल्] [आरक्ष+ठञ्] चौकीदार, संतरी। देहाती न्यायाधीश। सिपाही।

आरक्षा—(स्त्री०) [आ√रक्ष्+अङ] दे० 'आरक्ष'।

आरट—(पुं०) [आ√रट्+अच्] नट। अभिनेता, नाटक का पात्र।

आरणि—(पुं०) [आ√ऋ+अनि] बवंडर। उल्टा बहाव।

आरण्य—(वि०) [स्त्री०—आरण्या, आरण्यी] [अरण्य+अण्] जंगली, जंगल में उत्पन्न।

आरण्यक—(वि०) [अरण्य+वुञ्] जंगली जंगल में उत्पन्न। (पुं०) वनरखा, जंगली मनुष्य। (न०) वेद के ब्राह्मणों के अन्तर्गत एक भाग जो या तो वन में बैठ कर रचे गये थे या जिनको वन में जाकर पढ़ना चाहिये।—[अरण्येऽनूच्यमानत्वात् आरण्यकम्। अरण्येऽध्ययनादेव आरण्यकमुदाहृतम्]

आरति—(स्त्री०) [आ√रम्+क्तिन्] विराम, रोक।

आरथ—(पुं०) [प्रा० स०] छोटी गाड़ी एक बैल या घोड़े द्वारा चलाई जाने वाली गाड़ी।

आरनाल—(न०) [आ√ऋ+अच्,√नल्+घञ्, आरो नालो गंधो यस्य ब० स०] माँड़, चावल का पसाव।

आरब्धि—(स्त्री०) [आ√रभ्+क्तिन्] आरम्भ, प्रारम्भ।

आरभट—(पुं०) [आ√रभ्+अट] उद्योगी पुरुष। उत्साही पुरुष। (पुं०) साहस। विश्वास।

आरभटी—(स्त्री०) [आ√रभ्+अटि+ङीप्] साहस। वह वृत्ति जो रौद्र, भयानक और वीर रसों के वर्णन में प्रयुक्त होती है। (न०) नृत्य की एक शैली।

आरम्भ—(पुं०) [आ√रभ्+घञ् मुम् च] आरम्भ, शुरुआत। भूमिका। कर्म, कार्य। शीघ्रता, तेजी। उद्योग, चेष्टा, प्रयत्न। दर्प। वध, हनन।

आरम्भण—(न०) [आ√रभ्+ल्युट्, मुम् च] पकड़ना, काबू में करना। पकड़, दस्ता, बेंट।

आरव, आराव—(पुं०) [आ√रु+अप्] [आ√रु+घञ्] आवाज। चिल्लाहट। गुर्राहट। भौंक (कुत्ते, भेड़िये आदि की बोली)।

आरस्य—(न०) [अरस+ष्यञ्] अस्वादिष्टता, स्वाद या जायके का अभाव।

आरा—(स्त्री०) [अ√ऋ+अच्, टाप्] लकड़ी चीरने का एक दाँतीदार औजार। चमड़ा सीने का सूजा। पहिये की गड़ारी और पुट्ठों के बीच की पटरी। चोड़िया बैठाने के लिये दीवार पर रखी जाने वाली लकड़ी या पत्थर की पटरी।

आरात्—(अव्य०) [आ√रा+आति(बा०)] समीप, पड़ोस में। दूर, फासले पर। दूर से। दूरी से।

आराति—(पुं०) [आ√रा+क्तिन्] शत्रु, वैरी।

आरातीय—(वि०) [आरात्+छ—ईय] समीपवर्ती, नजदीकी। दूरस्थ।

आरात्रिक—(न०) [अरात्र्यापि निर्वृत्तम् इत्यर्थे ठञ्] (भगवान् के विग्रह की) आरती करना।

आराधन—(न०) [आ√राध्+ल्युट्] प्रसन्नता। सन्तोष; 'आराधनाय लोकानाम् मुञ्चतो नास्ति मे व्यथा' उ० १.१२। पूजन। सेवा। शृङ्गार। प्रसन्न करने का उपाय। सम्मान, प्रतिष्ठा। पाचनक्रिया। सम्पन्नता। सफलता।

आराधना—(पु०) [आ√राध्+णिच्+युच्] पूजन । सेवा ।

आराधनी—(स्त्री०) [आराधन+ङीप्] पूजन । शृङ्गार । तुष्टिसाधन । प्रसादन (देवता का) ।

आराधयितृ—(वि०)[आ√राध्+णिच्+तृच्] पुजारी, पूजन करने वाला । विनम्र सेवक ।

आराम—(पु०) [आ√रम्+घञ्] हर्ष, प्रसन्नता । बाग, बगीचा ।

आरामिक—(पु०) [आराम+ठक्] माली ।

आरालिक—(पु०) [अरालं कुटिलं चरति इति विग्रहे अराल+ठक्] रसोइया ।

आरु—(पु०) [√ऋ+उण्] सूअर । कर्कट, केकड़ा ।

आरुक—(वि०) हानिकारक । (पु०) एक पौधा जो हिमालय पर उत्पन्न होता है और दवा के काम आता है ।

आरू—(वि०) [√ऋ+ऊ, णित्] भूरे या साँवले रंग का ।

आरूढ—(वि०) [आ√रुह्+क्त] सवार, चढ़ा हुआ । बैठा हुआ ।

आरूढि—(स्त्री०) [आ√रुह् + क्तिन्] चढ़ाव, आरोहण; 'प्रत्यारूढिर्भवति महतामप्यपभ्रंश निष्ठा' श० ४।

आरेक—(पु०) [आ√रिच्+घञ्] खाली करना । कुञ्चन, सिकुड़न । संदेह ।

आरेचित—(वि०) [आ√रिच्+क्त] खाली किया हुआ । कुञ्चित, सिकुड़ा हुआ ।

आरोग्य—(न०) [अरोग+ष्यञ्] रोग का अभाव । स्वास्थ्य, तंदुरुस्ती ।

आरोप—(पु०) [आ√रुह्+णिच्, पुक्+घञ्] संस्थापन । कल्पना । एक पदार्थ में दूसरे पदार्थ की कल्पना करना ।—**पत्र,—फलक**—(न०) (न्यायालय द्वारा तैयार किया हुआ) वह पत्र, जिसमें किसी व्यक्ति पर लगाये गये आरोपों का ब्यौरा दिया रहता है (चार्जशीट) ।

आरोपण—(न०) [आ√रुह्+णिच्, पुक्+ल्युट्] स्थापन । लगाना । मढ़ना । किसी पौधे को एक स्थान से हटाकर दूसरी जगह लगाना, रोपना । किसी वस्तु के गुण को दूसरी वस्तु में मान लेना । मिथ्या ज्ञान, भ्रम । धनुष पर रोदा चढ़ाना ।

आरोह—(पु०) [आ√रुह्+घञ्] सवार । चढ़ाई । (घोड़े की) सवारी । उठी हुई जगह, उत्थान, ऊँचाई । अहंकार, अभिमान । पहाड़ । ढेर । नितंब, चूतड़ । माप विशेष । खान ।

आरोहक—(पु०) [आ√रुह् + ण्वुल्] आरोहण करने वाला । (पु०) सवार । सारथि । वृक्ष ।

आरोहण—(न०)[आ√रुह्+ल्युट्] सवार होने की या ऊपर चढ़ने की क्रिया । घोड़े पर चढ़ना । जीना, सीढ़ी ।

आर्कि—(पु०) [अर्क+इञ्] अर्क का पुत्र अर्थात्—यम । शनिग्रह । राजा कर्ण ।सुग्रीव । वैवस्वत मनु ।

आर्क्ष—(वि०) [स्त्री०—**आर्क्षी**] [ऋक्ष+अण्] नाक्षत्रिक, तारका सम्बन्धी ।

आर्घा—(स्त्री०) [आ√अर्घ्+घञ्, टाप्] पीले रंग की शहद की मक्खी ।

आर्घ्य—(न०)[आर्घा+यत्] जंगली शहद ।

आर्च—(वि०) [स्त्री०—**आर्ची**] [ऋच्+ अण्] ऋचा या ऋग्वेद संबंधी । [अर्चा+ अण्] अर्चा करने वाला, पूजा करने वाला पुजारी ।

आर्चिक—(वि०) [ऋच्+ठञ्] ऋग्वेद सम्बन्धी । (न०) सामवेद की उपाधि ।

आर्चीक—(वि०) [ऋचीक+अण्] ऋचीक पर्वत पर वास करने वाला ।

आर्जव—(न०) [ऋजु+अण्] सिधाई, सीधापन। स्पष्टवादिता। ईमानदारी, सचाई। कुटिलता का अभाव।

आर्जुनि—(पुं०) [अर्जुन+इञ्] अर्जुनपुत्र, अभिमन्यु।

आर्त—(वि०) [आ√ऋ+क्त] अस्वस्थ। पीड़ित, कष्टप्राप्त।

आर्तव—(वि०) [स्त्री०—आर्तवा, आर्तवी] [ऋतु+अण्] ऋतु सम्बन्धी। मौसमी। ऋतु में उत्पन्न; 'अभिभूय विभूतिमार्तवीं' र० ८.३६। स्त्री-धर्म या मासिक स्राव संबंधी। (पुं०) वर्ष। (न०) रज जो स्त्रियों की योनि से प्रतिमास निकलता है। रजस्वला होने के पीछे कतिपय दिवस, जो गर्भाधान के लिये श्रेष्ठ होते हैं। पुष्प।

आर्तवी—(स्त्री) [आर्तव+ङीप्] घोड़ी।

आर्तवेयी—(स्त्री०) रजस्वला स्त्री।

आर्ति—(स्त्री०) [आ√ऋ+क्तिन्] दुःख, क्लेश, पीड़ा (शारीरिक या मानसिक)। मानसिक चिन्ता। बीमारी, रोग। धनुष की नोक। नाश, विनाश।

आर्त्विजीन—(वि०) [ऋत्विजं तत्कर्म अर्हति इत्यर्थे ऋत्विज+खञ्] ऋत्विज।

आर्त्विज्य—(न०) [ऋत्विज+ष्यञ्] ऋत्विज का पद या कर्म।

आर्थ—(वि०) [स्त्री०—आर्थी] [अर्थ+अण्] किसी वस्तु या पदार्थ से संबंध युक्त।

आर्थिक—(वि०) [स्त्री०)—आर्थिकी] अर्थ+ठक्] अर्थ संबंधी। बुद्धिमान्। वास्तविक। धनी।

आर्द्र—(वि०) [√अर्द्+रक्, दीर्घ] नम, तर, भींगा हुआ। रसीला। ताजा, टटका, नया। कोमल, मुलायम।—**काष्ठ**-(न०) हरी लकड़ी।—**पत्रक**-(न०) बाँस।—**शाक**-(पुं०) अदरक, आदी।

आर्द्रक—(न०) [आर्द्रायां भूमौ जातम् इत्यर्थे आर्द्रा+वुन्—अक] अदरक, आदी।

आर्द्रा—(स्त्री०) [आर्द्र +टाप्] नक्षत्र विशेष, छठा नक्षत्र।

आर्ध—(वि०) [अर्ध+अण्] आधा।

आर्धिक—(वि०) [स्त्री०—आर्धिकी] [अर्ध +ठक्—इक] आधे से संबंध रखने वाला। आधा बँटवाने वाला। (पुं०) वह जोता, जो खेत की आधी पैदावार ले लेने की शर्त पर खेत जोतता-बोता है। वैश्या का पुत्र, जिसे ब्राह्मण ने पाला-पोसा हो।

आर्य—(वि०) [√ऋ+ण्यत्] आर्य के योग्य। प्रतिष्ठित। उत्तम, समीचीन। सर्वोत्कृष्ट; ।—(पुं०) हिन्दुओं और ईरानियों का नाम। अपने धर्म और शास्त्र को मानने वाला व्यक्ति। प्रथम तीन वर्ण। [ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य।] प्रतिष्ठित व्यक्ति। सावर्ण मनु का एक पुत्र। कुलीनोचित आचरण का व्यक्ति। स्वामी, मालिक। गुरु, शिक्षक। मित्र। वैश्य। ससुर। बुद्धदेव।—**आवर्त** (**आर्यावर्त**)-(पुं०) आर्यों की निवास भूमि (मध्य और उत्तर भारत) जो पूर्व और पश्चिम में समुद्रों द्वारा और उत्तर दक्षिण में हिमालय और विन्ध्यगिरि द्वारा सीमाबद्ध है।—आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्राच्च पश्चिमात्। तयोरेवान्तरं गिर्योरार्यावर्तं विदुर्बुधाः ॥—मनुस्मृति।—**गृह्य**-(वि०) श्रेष्ठों द्वारा सम्मानित। श्रेष्ठ पुरुषों द्वारा उपगम्य। सम्मानित। ऋजु, सरल।—**देश**-(पुं०) आर्यों के रहने का देश।—**पुत्र**-(पुं०) प्रतिष्ठित जन का पुत्र, दीक्षा गुरु का पुत्र। बड़े भाई का पुत्र। सम्मान जनक संज्ञा, राजकुमार, पति आदि का संबोधन (ना०) ससुर का पुत्र (साला)।—**प्राय**-(वि०) आर्यों द्वारा आबाद, श्रेष्ठ जनों से परिपूर्ण।—**मिश्र**; (वि०) प्रतिष्ठित, सम्मानित, विख्यात; 'आर्यमिश्रान् विज्ञापयामि' विक्र० १। (पुं०) भद्रपुरुष। सम्मान-सम्बोधन।—**लिङ्गिन्**-(पुं०) धर्म-

भ्रष्ट, शठ, धूर्त, भण्ड ।—वृत्त- (वि) नेक, भला ।—वेश-(वि०) जो भली प्रकार परिच्छद (पोशाक) पहने हुए हो ।—सत्य-(न०) महान् सत्य, श्रेष्ठ सत्य ।—हृद्य-(वि०) श्रेष्ठों द्वारा पसंद किया हुआ ।

आर्यक—(पुं०)[आर्य+कन्] भद्रपुरुष । पितामह । मातामह ।

आर्यका, आर्यिका—(स्त्री०) [आर्या+कन्, ह्रस्वः, पक्षे इत्वम्] श्रेष्ठा स्त्री । एक नक्षत्र ।

आर्या—(स्त्री०) [आर्य+टाप्] पार्वती । एक छंद । सास । श्रेष्ठ स्त्री ।—**गीति**-(स्त्री०) आर्या छंद का एक भेद ।

आर्ष—(वि०) [स्त्री०—**आर्षी**] [ऋषि+अण्] केवल ऋषियों द्वारा प्रयुक्त होने वाला । ऋषियों का । वैदिक । पवित्र । (पुं०) ऋषिप्रोक्त आठ प्रकार के विवाहों में से एक, जिसमें कन्या के पिता को, वरपक्ष से एक या दो गौएँ दी जाती हैं । आदायार्षस्तु गोद्वयम् । याज्ञवल्क्य । (न०) ऋषिप्रणीतशास्त्र ।

आर्षभ्य—(पुं०) [ऋषभस्य प्रकृतिः इत्यर्थे ऋषभ+ञ्य] बछड़ा जो इतना बड़ा हो कि काम में लाया जा सके या साँड़ बना कर छोड़ा जा सके ।

आर्षेय—(वि०) [स्त्री०—**आर्षेयी**] [ऋषि+ढक्] ऋषि का, ऋषि संबंधी । योग्य । मान्य, प्रतिष्ठित ।

आर्हत—(वि०) [स्त्री०—**आर्हती**] [अर्हत्+अण्] जैन-सिद्धान्त-वादी । (पुं०) जैनी । (न०) जैनियों का सिद्धान्त ।

आर्हन्ती—(स्त्री०), **आर्हन्त्य** (न०) [अर्हत्+ष्यञ्, नुम्, ङीष्, यलोप] [अर्हत्+यञ्, नुम्] योग्यता ।

आल—(पुं० न०) [आ√अल्+अच्] मछली आदि के अंडे । पीतसंखिया । हरताल । छल । झंझट । गीलापन । आँसू । (वि०) बड़ा । विस्तृत । अधिक ।

आलगर्द—(पुं०) [अलगर्द+अण् (स्वार्थे)] पनिया साँप । डोंड़ ।

आलभन—(न०) [आ√लभ्+ल्युट्] पकड़ना । स्पर्श करना । मार डालना । पाना ।

आलम्ब—(पुं०) [आ√लम्ब्+घञ्] अवलम्ब, आश्रय । सहारा । लटकन ।

आलम्बन—(न०) [आ√लम्ब्+ल्युट्] अवलम्ब, आश्रय । सहारा । आधार । कारण, हेतु । रस का एक विभाग, जिसके अवलम्ब से रस की उत्पत्ति होती है । योगियों द्वारा किया जाने वाला एक प्रकार का मानसिक अभ्यास । पंचतन्मात्र (बौद्ध) ।

आलम्बिन्—(वि०) [आ√लम्ब्+णिनि] लटकता हुआ । सहारा लिये हुए । समर्थित । पहिने हुए, धारण किये हुए ।

आलम्भ—(पुं०), **आलम्भन**- (न०) [आ√लभ्+घञ् मुम् च] [आ√लभ्+ल्युट् मुम् च] पकड़ना । स्पर्श करना । चीरना, फाड़ना । यज्ञ में बलिदान के लिये पशु का वध करना । यथा "अश्वालम्भं गवालम्भम् ।"

आलय—(पुं० न०) [आ√ली+अच्] घर, गृह । आधार । स्थान, जगह । (अव्य०) [अव्य० स०] लयपर्यंत, मृत्यु तक । यथा—'पिबत भागवतं रसमालयम्' ।—**विज्ञान** -(न०) बौद्ध मत में लय पर्यंत रहने वाला विज्ञान, अहंकार का आधार ।

आलर्क—(वि०)[अलर्क+अण्]पागल कुत्ता सम्बन्धी या पागल कुत्ते के कारण होने वाला ।

आलवण्य—(न०) [अलवण+ष्यञ्]निरसता । स्वादहीनता । भद्दापन । कुरूपता ।

आलवाल—(न०) [आसमन्तात् जललवम् आलाति इति विग्रहे आ√ला+क] थाँवला, थाला ।

आलस—(वि०) [स्त्री०)—**आलसी**] [आ√ लस्+अच्] सुस्त, काहिल ।

आलस्य—(वि०) [अलस+ष्यञ् (स्वार्थे)] आलसी, सामर्थ्य होने पर भी आवश्यक कर्त्तव्य का पालन न करने वाला। अकर्मण्य। उदासीन। (न०) [अलस+ष्यञ् (भावे)] सुस्ती, काहिली। अकर्मण्यता। उदासीनता।

आलात—(न०) [अलात+अण् (स्वार्थे)] लकड़ी जिसका एक छोर जलता हो, लुआठी, लूक।

आलान—(न०) [आ√ली+ल्युट्] हाथी बाँधने का खंभा या खूंटा। हाथी के बाँधने का रस्सा। बेड़ी, जंजीर। बंधन।

आलानिक—(वि०) [आलान+ठञ्] हाथी बाँधने के खंभे का काम देने वाला।

आलाप—(पुं०) [आ√लप्+घञ्] वार्तालाप, बातचीत, कथोपकथन, सम्भाषण। वर्णन। तान। संगीत के सप्त स्वरों का साधन।

आलापन—(न०) [आ√लप्+णिच्+ल्युट्] वार्तालाप, कथोपकथन। स्वस्तिवाचन।

आलाबु, आलाबू—(स्त्री०) कुम्हड़ा, कोहँड़ा, कूष्माण्ड।

आलावर्त—(न०) [आलं पर्याप्तम् आवर्त्यते इति आल—आ √वृत्+णिच्+घञ्] कपड़े का बना पंखा।

आलि—(वि०) [आ√अल्+इन्] निकम्मा, सुस्त। ईमानदार, सच्चा। (पुं०) बिच्छू। भौंरा।

आलिङ्गन—(न०) [आ√लिङ्ग्+ल्युट्] चिपटना, गले लगाना, परिरम्भण।

आलिङ्गिन्—(वि०) [आ√लिङ्ग्+णिनि] आलिङ्गन करने वाला। (पुं०) एक प्रकार का बहुत छोटा ढोल।

आलिङ्ग्य—(वि०) [आ√लिङ्ग्+ण्यत्] आलिंगन करने योग्य। (पुं०) एक तरह का मृदंग।

आलिञ्जर—(पुं०) [अलिञ्जर+अण् (स्वार्थे)] मिट्टी का मटका या बड़ा घड़ा।

आलिन्द, आलिन्दक—(पुं०) [अलिन्द+अण् (स्वार्थे)] [आलिन्द+कन् (स्वार्थे)] चबूतरा, चौतरा।

आलिम्पन—(न०) [आ√लिप्+ल्युट् मुम् च] पुताई, लिपाई।

आली—(स्त्री०) [अलि+ङीष्] सखी। सहेली। कतार, पंक्ति। लकीर, रेखा। पुल, सेतु। बाँध।

आलीढ—(न०) [आ√लिह्+क्त] दाहिना घुटना मोड़ कर बैठना, बैठने का आसन विशेष; 'अतिष्ठदालीढविशेषशोभिना,' र० ३.५२।

आलु—(न०) [आ√लु+डु] घरोटी, बेड़ा। (पुं०) उल्लू, घुग्घू। आबनूस। काले आबनूस की लकड़ी। (स्त्री०) [आ√ला+डु] घड़ा।

आलुञ्चन—(न०) [आ√लुञ्च्+ल्युट्] नोंच कर उखाड़ना। चीर-फाड़ कर टुकड़े-टुकड़े कर डालना।

आलुल—(वि०) [आ√लुल्+क] हिलने-डुलने वाला। निर्बल।

आलेखन—(न०) [आ√लिख्+ल्युट्] लेख। चित्रण। खरोंचन। खसोटन।

आलेखनी—(स्त्री०) [आलेखन+ङीष्] कूंची। कलम।

आलेख्य—(वि०) [आ√लिख्+ण्यत्] लिखने, चित्रित करने योग्य। (न०) हाथ से बनायी हुई तसवीर। तसवीर, चित्र। लेख। —शेष-(वि०) सिवाय चित्र के जिसका कुछ भी न बचा हो अर्थात् मृत, मरा हुआ; 'आलेख्यशेषस्य पितुः' र० १४.१५।

आलेप—(पुं०) **आलेपन**—(न०) [आ√लिप् घञ्] [आ√लिप्+ल्युट्] उबटन, लेप। पलस्तर।

आलोक—(पुं०), **आलोकन**—(न०) [आ√लोक्+घञ्] [आ√लोक्+ल्युट्] चित-

चन, अवलोकन । दर्शन । प्रकाश । कान्ति । बधाई; 'ययावुदीरितालोक:' र० १७.२७। अध्याय ।—चित्रण-(न०) रासायनिक मसालों से तैयार किये गये विशेष पटल पर प्रकाश की प्रतिक्रिया होने से उतरने वाला चित्र ।

आलोचक—(वि०) [आ√लोच्+ण्वुल्] देखने वाला । जाँचने वाला । समीक्षक ।

आलोचन—(न०), **आलोचना**-(स्त्री०) [आ √ लोच+णिच्+ल्युट्] [आ√लोच्+णिच्+ युच्] देखना । गुण-दोष का विवेचन, परख । समीक्षा ।

आलोडन—(न०), **आलोडना**-(स्त्री०) [आ√लोड्+णिच्+ल्युट्] [आ√ लोड्+णिच्+युच्] मथना, बिलोना । मर्दन । छान-बीन, ऊहापोह करना ।

आलोल—(वि०) [प्रा० स०] जरा-जरा हिलता हुआ । काँपता हुआ । घूमता हुआ । हिलता हुआ, आन्दोलित ।

आवण्टन—(न०) [आ√वण्ट्+णिच् + ल्युट्] भूमि, सम्पत्ति आदि का हिस्सों में बाँटना । विभाजन । किसी के लिये भूमि आदि का कोई हिस्सा निर्धारित करना (एलाटमेंट) ।

आवनेय—(पु०) [अवनि+ढक्—एय] भूसुत, मङ्गलग्रह ।

आवन्त्य—(वि०) [अवन्ति+ञ्यङ्] अवन्ती (उज्जैन) से आया हुआ या अवन्ती से संबंध युक्त । (पु०) अवन्ती का राजा या निवासी । पतित ब्राह्मण की सन्तान ।

आवपन—(न०) [आ√वप्+ल्युट्] बीज बोने बखेरने या फेंकनेकी क्रिया । बीज बोना । मुंडन, हजामत । पात्र । भाँड़ा ।

आवरक—(न०) [आ√वृ+अप् ततः स्वार्थे वुन्] ढक्कन । पर्दा । घूंघट ।

आवरण—(न०) [आ√वृ+ल्युट्] ढाँकना । छिपाना । मूँदना । बंद करना । घेरना; 'सूर्ये तपत्यावरणाय दृष्टेः कल्पेत लोकस्य कथं तमिस्रा' र० ५.१३ । ढक्कन । पर्दा । रोक । अड़चन । घेरा, हाता । चारदीवारी । वस्त्र, कपड़ा । ढाल ।—पत्र- (न०) पुस्तक की जिल्द के रक्षार्थ उस पर चढ़ाया हुआ कागज जिस पर उसका नाम-दाम भी रहता है (कवर) ।—शक्ति-(स्त्री) अज्ञान, आत्मा व चैतन्य की दृष्टि पर परदा डालने वाली शक्ति ।

आवर्त—(पु०) [आ√वृत्+घञ्] घुमाव, चक्कर । बवंडर । भँवर । विचार, विवेचन । घुँघराले बाल । घनी बस्ती । लाजवर्द । सोना-मक्खी । चिन्ता । बादल जो पानी न बरसावे ।

आवर्तक—(पु०) [आवर्त+कन्] बादल विशेष । बवंडर । चक्कर, फेरा । घुँघराले बाल । चितन । योग के पाँच प्रकार के विघ्नों में से एक ।

आवर्तन—(न०) [आ√वृत्+ल्युट् या णिजन्तात् ल्युट्] घुमाव, चक्कर । आवर्तन, घूर्णन । (धातुओं का) गलाना । आवृत्ति । दही या दूध का मंथन । दोपहर (इसके बाद पदार्थों की छाया पश्चिम के बदले पूर्व की ओर पड़ने लगती है) ।

आवर्तनी—(स्त्री०) [आवर्तन+ङीप्] घरिया जिसमें रख कर सुनार लोग सोना-चाँदी गलाते हैं ।

आवलि, आवली—(स्त्री०) [आ√वल्+इन्, पक्षे ङीप्] रेखा, पंक्ति, श्रेणी, कतार ।

आवलित—(वि०) [आ√वल्+क्त] थोड़ा-सा मुड़ा हुआ ।

आवश्य—(न०) आवश्यकता । अनिवार्य कार्य या फल ।

आवश्यक—(वि०) [स्त्री०—**आवश्यकी**] [अवश्य+वुञ्] जरूरी, सापेक्ष । प्रयोजनीय जिसके बिना काम न चले । (न०) आवश्यकता । अनिवार्य परिणाम ।

आवसति—(स्त्री०) [प्रा० स०] रात्रिकाल में विश्राम करने का स्थान। आधी रात।

आवसथ—(पुं०) [आ√वस्+ अथच्] घर। गांव। छात्रालय। कुटी। एक व्रत।

आवसथ्य—(वि०) [आवसथ+ञ्य] घर वाला, घर के भीतर स्थित। (पुं०) अग्निहोत्र का अग्नि जो घर में रखा जाता है। (न०) छात्रावास। कुटी। मकान।

आवसित—(वि०) [आ-अव√सो+क्त] समाप्त, सम्पूर्ण। निर्णीत, निश्चित, निर्धारित। (न०) पका हुआ अनाज।

आवह—(वि०) [आ√वह्+अच्] वायु के सात स्कंधों में पहला, भूर्लोक और स्वर्लोक के मध्यवर्ती आकाश की वायु। अग्नि की ७ जीभों में से एक। (वि०) (समासांत में) जनक, उत्पादक (भयावह, क्लेशावह)।

आवाप—(पुं०) [आ√वप्+घञ्] बीज बोना। बखेरना। थाला। बरतन। अनाज। अनाज रखने का बर्तन। पेय पदार्थ विशेष। कंकण। ऊबड़-खाबड़ जमीन। शत्रुता-पूर्ण अभिप्राय। एक विशेष अग्नियज्ञ।

आवापक—(पुं०) [आवाप+कन्] कंकण, पहुंची। असमान भूमि। ऊबड़-खाबड़ भूमि।

आवापन—(न०) [आ√वप्+णिच्+ल्युट्] करघा।

आवाल—(न०) [आ√वल्+णिच्+अच्] थाला, खोड़ुआ।

आवास—(पुं०) [आ√वस्+घञ्] घर, मकान। आवासस्थल।

आवाहन—(न०) [आ√वह्+णिच्+ल्युट्] बुलावा, न्योता, आमंत्रण। देवता का आह्वान। अग्नि में आहुति देना।

आविक—(वि०) [स्त्री०—**आविकी**] [अवि+ठक्] भेड़ सम्बन्धी। ऊनी। (न०) ऊनी कपड़ा।

आविग्न—(वि०) [आ√विज्+क्त] दुःखी। विपद्ग्रस्त, मुसीबतजदा।

आविद्ध—[आ√व्यध्+क्त] छिदा हुआ, बिधा हुआ। टेढ़ा, झुका हुआ। जोर से फेंका हुआ। हताश। मूर्ख।

आविर्भाव—(पुं०) [आविस्√भू+घञ्] प्रकाश। प्राकट्य। उत्पत्ति। अवतार।

आविल—(वि०) दे० 'आविल'।

आविष्करण—(न०),—**आविष्कार**–(पुं०) [आविस√कृ+ल्युट्] [आविस्√कृ+घञ्] प्रकट करना, दिखाना। कोई अज्ञात बात खोज निकालना। नई चीज बनाना, ईजाद।

आविष्ट—(आ√विश्+क्त] प्रविष्ट, घुसा हुआ। ग्रस्त, भूत प्रेत द्वारा। भरा हुआ। वश में किया हुआ। सर्वग्रास किया हुआ। घेरा हुआ। रत

आविस्—(अव्य०) [आ√अव्+इसि] सामने, नेत्रों के आगे, खुल्लमखुल्ला, साफ तौर पर, स्पष्टतः।

आवी—(स्त्री०) [अवी+अण्+ङीप्] प्रसव-वेदना।

आवीत—(वि०) [आ√व्ये+क्त] पहना हुआ। प्रविष्ट। गया हुआ। ढका हुआ। उपनीत। (न०) अपसव्य, दाहिने कंधे पर जनेऊ रखने की क्रिया।

आवुक—(पुं०) [√अव् +उण्, ततः संज्ञायां कन्] (नाटक की भाषा में) पिता।

आवुत्त—(पुं०) दे० 'आवुत्त'।

आवृत–(स्त्री०) [आ√वृ+क्त] ढंका, छिपा, लपेटा हुआ। घेरा हुआ। बाधित। फैला हुआ। (पुं०) एक वर्णसंकर जाति।

आवृत्त—[आ√वृत्+क्त] घूमा हुआ, चक्कर खाया हुआ। लौटा हुआ। दुहराया हुआ। अभ्यस्त। पढ़ा हुआ, अधीत।

आवृत्ति—(स्त्री०) [आ√वृत्+क्तिन्] प्रत्यावर्तन, लौटना। पलटाव। (सेना का

पीछे) हटाव । परिक्रमा, चक्कर । घूमकर या चक्कर काट कर पुनः उसी स्थान पर आना जहाँ से रवाना हुआ हो । बारंबार जन्म और मरण, लौकिक जीवन । बार-बार किसी बात का अभ्यास। पुनरावृत्ति, दुहराना; 'आवृत्तिः सर्वशास्त्राणाम् बोधादपि गरीयसी'।

आवृष्टि—(स्त्री०) [आ√वृष्+क्तिन्] वर्षा, फुआर।

आवेग—(पु०) [आ√विज्+घञ्] बेचैनी, चिन्ता, उद्विग्नता, घबराहट, चित्तचाञ्चल्य। उतावली । एक संचारी भाव ।

आवेदन—(न०) [आ√विद्+णिच्+ ल्युट्] सूचना, इत्तिला । प्रतिस्मरण । अपनी दशा को सूचित करना, अर्जी । अर्जीदावा ।

आवेश—(पु०) [आ√विश्+घञ्] व्याप्ति, सञ्चार, प्रवेश । अनुरक्ति । अभिमान, अहङ्कार । चित्तचाञ्चल्य । क्रोध, रोष । भूतावेश, किसी प्रेत का किसी के शरीर पर अधिकार होना, भूत-प्रेत-बाधा । मृगी की मूर्च्छा ।

आवेशन—(न०) [आ√विश्+ल्युट्] प्रवेश । भूत-प्रेत की बाधा । क्रोध, रोष । कारखाना । घर । सूर्य या चंद्रमा का परिवेश ।

आवेशिक—(वि०) [स्त्री०—**आवेशिकी**] [आवेश + ठञ्] घर का । निज का । पुश्तैनी । (पु०) मेहमान, अतिथि, अभ्यागत ।

आवेष्टक—(पु०) [आ√वेष्ट्+णिच्+ ण्वुल्] दीवाल, घेरा, हाता ।

आवेष्टन—(न०) [आ√वेष्ट्+णिच्+ ल्युट्] लपेटना । ढकना । बेठन, खोल । लिफाफा । दीवाल, घेरा ।

आश—(वि०) [कर्मणि उपपदे कर्तरि√अश् +अण् उप० स० यथा—आश्रयाश] खानेवाला, भक्षक । (पु०) [√अश्+घञ्] भोजन ।

आशंसन—(न०) [आ√शंस्+ल्युट्] प्रतीक्षा । अभिलाषा । कथन । घोषणा ।

आशंसा—(स्त्री०) [आ√शंस्+अ] अभिलाषा । आशा; 'निदधे विजयाशंसां चापे सीतां च लक्ष्मणे' र० १२.४४ । भाषण । घोषणा ।

आशंसु—(वि०) [आ√शंस्+उ] अभिलाषी । आशावान् ।

आशङ्का—(स्त्री०) [आ√शङ्क्+अ] भय की संभावना । सन्देह, अनिश्चितता । अविश्वास ।

आशङ्कित–(वि०) [आशङ्का+इतच्]जिसको आशंका हो । आशंकायुक्त । (न०) [आ√ शङ्क्+क्त (भावे)] दे० 'आशङ्का' ।

आशय—(पु०) [आ√शी+अच्] शयन-गृह, विश्रामस्थल । आश्रय । शयन । रहने की जगह । घर । जानवर फँसाने का गड्ढा । पाप और पुण्य—सुख-दुःख के कारणरूप कर्मजन्य संस्कार (यो०) । कृपण व्यक्ति । आधार । आमाशय, पेट । अभिप्राय, तात्पर्य । मन, हृदय; 'अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः' भग० १०.२० । समृद्धि । खत्ती, बखारी । इच्छा । प्रारब्ध, भाग्य ।—**आश** (**आशयाश**)—(पु०) अग्नि ।

आशर—(पु०) [आ√शॄ+अच्] अग्नि । राक्षस, दैत्य । हवा ।

आशव—(न०) [आशु+अण्] तेजी, फुर्ती । आसव, अर्क ।

आशा—(स्त्री०) [आ समन्तात् अश्नुते इति आ√अश्+अच्, टाप्] किसी अप्राप्त वस्तु के प्राप्त करने की अभिलाषा और उसकी प्राप्ति का कुछ-कुछ निश्चय । अभिलाषा, इच्छा । मिथ्या अभिलाषा । दिशा ।—**अन्वित**, (**आशान्वित**)–(वि०) आशा से युक्त ।—**जनन**–(वि०) आशाकारक । —**गज**–(पु०) दिग्गज । —**तन्तु**–(पु०) बहुत कम आशा ।—**पाल**–(पु०) दिग्गज । —**पाश**–(पु०) अपूरणीय आशा का बंधन या फंदा ।—**पिशाचिका**–(स्त्री०) आशा-

राक्षसी, झूठी आशा। —बन्ध–(पु०) विश्वास। सान्त्वना, भरोसा। मकड़ी का जाला।—भङ्ग–(पु०) आशा का टूटना। —वसन–(वि०) दिगंबर, नग्न।—वह–(पु०) सूर्य। वृष्णि।—हीन–(वि०) हतोत्साह, उदास।

आशाढ—(पु०) [=आषाढ पृषो०]आषाढ का महीना।

आशास्य—[आ√शास्+ण्यत्] अभिलाषा करने योग्य। वर द्वारा प्राप्तव्य। (न०)आशा। इच्छा, अभिलाषा। आशीर्वाद। वरदान।

आशिञ्जित—(न०) [आ√शिञ्ज्+क्त] गहनों की झनकार। (वि०) झनकारता हुआ।

आशित—[आ√अश्+क्त] खाया हुआ। अघाया हुआ, तृप्त। (न०) भोजन।

आशितङ्गवीन—(वि०) [आशिता अशनेन तृप्ता गावो यत्र इति विग्रहे ब० स० ततः ख—ईन नि० मुम्] पशुओं द्वारा पहले चरा हुआ।

आशितम्भव—(वि०) [आशित√भू+खच्, मुम् उप० स०] अघाया, तृप्त हुआ। (न०) भोजन, भोज्य पदार्थ। तृप्ति। (पु० भी होता है।)

आशिर—(वि०) [आ√अश्+इरच्] पेटू, भोजनभट्ट। (पु०) अग्नि। सूर्य। दैत्य। राक्षस।

आशिस्—(स्त्री०) [आ√शास्+क्विप्, इत्व] आशीर्वाद, दुआ, मङ्गलकामना। प्रार्थना। अभिलाषा, कामना। सर्प का विषदन्त।—वाद, (आशीर्वाद)–(पु०)—वचन,(आशीर्वचन)–(न०) मङ्गल-कामना-सूचक वचन, दुआ, असीस। —विष, (आशीविष)–(पु०) सर्प, साँप।

आशी—(स्त्री०) [आ√शृ+क्विप्, पृषो०] सर्प का विषदन्त। विष, गरल। आशीर्वाद, दुआ।—विष–(पु०) सर्प। एक विशेष प्रकार का सर्प।

आशु—(वि०) [√अश् उण्] तेज, फुर्तीला। (पु० न०) चावल, जो वर्षाऋतु ही में पक जाते हैं, आउस धान।—कारिन्, —कृत्–(वि०) कोई भी काम हो, शीघ्र करने वाला।—कोपिन्–(वि०) चिड़चिड़ा, तुनुक मिजाज।—ग–(वि०) शीघ्रगामी। तेज, फुर्तीला। (पु०)हवा। सूर्य। तीर।—तोष–(पु०) शिव की उपाधि।—पत्र–(न०) शीघ्रतापूर्वक भेजा जाने वाला पत्र, वह पत्र जो पत्रालय (डाकघर) में पहुँचते ही हरकारे द्वारा तुरंत पाने वाले के पास भेज दिया जाय (एक्सप्रेस लेटर)।—व्रीहि–(पु०)चावल जो बरसात ही में पक जाते हैं, आउस धान।

आशुशुक्षणि—(पु०) [आ√शुष्+सन्+अनि] हवा। आग।

आशेकुटिन्—(पुं०) [आशेतेऽस्मिन् इति आ√शी+क्विप् स इव कुटति इति णिनि] पहाड़।

आशोषण—(न०) [प्रा० स०] सुखाना।

आशौच—(न०) [अशौच+अण्] अपवित्रता। (जनन-मरण के समय होने वाला सूतक।)

आश्चर्य—(वि०) [आ√चर्+ण्यत्, सुट्] अद्भुत, विस्मयकारी। असामान्य, अजीब। (न०) चमत्कार, जादू। विलक्षणता, विचित्रता। अद्भुत रस का स्थायी भाव।

आश्चोतन,—आश्च्योतन—(न०)[आ√श्चुत् (श्च्यु) त्+ल्युट्] निन्दावाद, प्रोक्षण। पलकों पर घी आदि लगाना।

आश्म—(वि०) [स्त्री०—आश्मी] [अश्मन्+अण्] पत्थर का बना हुआ, पथरीला।

आश्मन—(वि०)[स्त्री०—आश्मनी][अश्मन+अण्, टिलोपाभाव] पथरीला, पत्थर का बना हुआ। (पु०) पत्थर की बनी कोई वस्तु। सूर्य के सारथी अरुण का नाम।

आश्मिक—(वि०) [स्त्री०—**आश्मिकी**] [अश्मन्+ठञ्] पत्थर का बना । पत्थर ढोनेवाला या ले जाने वाला ।

आश्यान—(वि०) [आ√श्यै+क्त] कड़ा, जमा हुआ । कुछ-कुछ सूखा हुआ ।

आस्र—(न०) [अस्र+अण् (स्वार्थे)]आँसू ।

आश्रपण—(न०) [आ√श्रा+णिच्+ल्युट्] पाचन की या उबालने की क्रिया ।

आश्रम—(पु०) [आ√श्रम्+घञ्]साधुओं के रहने का स्थान, कुटी । गुफा । द्विज के जीवन की चार अवस्थाओं में से कोई एक । [चार अवस्थाएँ—**ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ, संन्यास** । क्षत्रिय और वैश्य को साधारणतः उक्त प्रथम तीन आश्रमों में प्रवेश करने का अधिकार है, किन्तु किसी-किसी धर्मशास्त्रकार के मतानुसार ये दोनों वर्ण चतुर्थ आश्रम में भी प्रवेश कर सकते हैं]। विद्यालय, पाठशाला । वन, उपवन ।—**गुरु** –(पु०) आचार्य, प्रधानाध्यापक ।—**धर्म**–(पु०) प्रत्येक आश्रम के कर्त्तव्य-कर्म । संन्यासाश्रम के कर्त्तव्य ।—**पद, मण्डल**–(न०) तपोवन ।—**भ्रष्ट** – (वि०) आश्रम-धर्म से पतित ।—**वासिन्**, —**आलय**, —**सद्**–(पु०) तपस्वी, संन्यासी ।

आश्रमिक, आश्रमिन् (वि०) [आश्रम+ठन्—इक] [आश्रम+इनि] चार आश्रमों में से किसी एक आश्रम का ।

आश्रय—(पु०) [आ√श्रि+अच्] आसरा, सहारा । आधार; 'तमाश्रयं दुष्प्रसहस्य तेजसः' र० ३.५८ । विश्रामस्थल । शरण, पनाह । भरोसा । घर । राजा के ६ गुणों में से एक । तरकस । अधिकार । स्वीकृति । सम्बन्ध । सङ्गति । अभ्यास । ग्रहण । पंच ज्ञानेन्द्रिय और मन (बौद्ध) । उद्देश्य (व्या०) ।

आश्रयाश—(पु०) [आश्रय√अश्+अण्] अग्नि ।

आश्रयण—(न०) [आ√श्रि+ल्युट्]सहारा लेने की क्रिया । स्वीकृत करना, पसन्द करना । पनाह, आश्रय ।

आश्रयिन्—(वि०) [आश्रय+इनि]आश्रय लेनेवाला । सम्बन्धयुक्त ।

आश्रव—(वि०) [आ√श्रु+अच्] आज्ञाकारी, आज्ञानुवर्ती । (पु०) सरिता, नदी । प्रतिज्ञा, वादा, प्रतिश्रुति । दोष, अपराध । अंगीकार । उबलते हुये चावल का फेन ।

आश्रि—(स्त्री०) आ–अश्रि प्रा० स०] तलवार की धार ।

आश्रित—[आ√श्रि+क्त]शरणागत । आसरे पर रहने वाला । (पु०) चाकर, नौकर ।

आश्रुत—[आ√श्रु+क्त] सुना हुआ । प्रतिज्ञात । स्वीकृत । (न०) इस प्रकार पुकारना जो सुन पड़े ।

आश्रुति–(स्त्री०) [आ√श्रु++क्तिन्]सुनना, श्रवण । स्वीकृति ।

आश्लेषा—(पु०) [आ√श्लिष्+घञ्] आलिङ्गन; 'कण्ठाश्लेषप्रणयिनि जने, मे० ३ चिपटाना, लिपटाना, गले लगाना । घनिष्ठ सम्बन्ध । सम्बन्ध ।

आश्लेषा—(स्त्री०) [आश्लेष+टाप्] नवाँ नक्षत्र ।

आश्व—(वि०) [स्त्री० आश्वी] [अश्व+अण्] घोड़े का, घोड़ा सम्बन्धी । (न०)बहुत से घोड़े, घोड़ों का समुदाय ।

आश्वत्थ—(वि०) [स्त्री० **आश्वत्थी**] [अश्वत्थ+अण्] पीपल का बना हुआ या पीपल का या पीपल सम्बन्धी । (न०) पीपल वृक्ष के फल ।

आश्वयुज—(वि०) [स्त्री० **आश्वयुजी**] [अश्वयुज्+अण्] अश्विनी नक्षत्र में उत्पन्न । आश्विन मास से सम्बन्ध रखने वाला । (पु०) आश्विन मास, क्वार का महीना ।

आश्वयुजी—(स्त्री०) [आश्वयुज+ङीप्] आश्विन मास की पूर्णमासी या पूर्णिमा ।

आश्वलक्षणिक—(पुं०) [अश्वलक्षण+ठक्] घोड़ों के नाल जड़ने वाला। अश्ववैद्य, सालहोत्री। साईस।

आश्वास—(पुं०) [आ√श्वस्+घञ्] स्वतंत्रतया साँस लेना। सान्त्वना। अभयदान। निवृत्ति, अवसान। किसी पुस्तक का परिच्छेद या काण्ड।

आश्वासन—(न०) [आ√श्वस्+णिच्+ल्युट्] दिलासा, तसल्ली, ढाढ़स, धीरज, आशाप्रदान।

आश्विक—(पुं०) [अश्व+ठञ्—इक] घुड़सवार।

आश्विन—(पुं०) [√अश+विनि, ततः अण्] व्याप्त। अश्वि-देवता-संबन्धी। (पुं०) क्वार का महीना। यज्ञीय कपाल-पात्र। अस्त्र।

आश्विनेय—[अश्विनी+ढक्—एय] (द्विवचन) दो अश्विनी-कुमार, ये दोनों देवताओं के चिकित्सक कहे जाते हैं।

आषाढ—(पुं०) [आषाढी पूर्णिमा अस्मिन् मासे इत्यर्थे अण्] असाढ़ का महीना। पलास का दण्ड।

आषाढा—(स्त्री०) [आषाढ+टाप्] २० वाँ और २१वाँ नक्षत्र, पूर्वाषाढा और उत्तराषाढा।

आषाढी—(स्त्री०) [आषाढ+ङीप्] आषाढ मास की पूर्णिमा या पूरनमासी।

आष्टम—(पुं०) [अष्टम+अण्] आठवाँ भाग या अंश।

आस्, आः—(अव्य०) [आ√अस्+क्विप् वा√आस्+क्विप्] स्मृति, क्रोध, पीड़ा, अपाकरण, खेद, शोक का द्योतक अव्यय।

√आस्—अ० आत्म० अक० सक० बैठना। लेटना, विश्राम करना। रहना, बसना। चुपचाप बैठना, बेकार बैठना। होना। जीवित रहना। अन्तर्गत होना। जाने देना, छोड़ देना। एक ओर रख देना। आस्ते, आसिष्यते, आसिष्ट।

आस—(पुं०, न०) [√आस्+घञ्] बैठक। कमान।—"स सासिः सासुसूः सासः।"—किरातार्जुनीय।

आसक्त—[आ√सञ्ज्+क्त] अनुरक्त, लीन, लिप्त। लुब्ध, मुग्ध मोहित, आशिक।

आसक्ति—(स्त्री०) [आ√सञ्ज्+क्तिन्] अनुरक्ति, लिप्तता। लगन। चाह, प्रेम, इश्क।

आसङ्ग—(पुं०) [आ√सञ्ज्+घञ्] अनुराग, अभिनिवेश। संगति, सोहबत, मिलन। बंधन।

आसङ्गिनी—(स्त्री०) [आसङ्ग+इनि—ङीप्] बवंडर, चक्रवात।

आसञ्जन—(न०) [आ√सञ्ज्+ल्युट्] बाँधना। लपेटना। (शरीर पर) धारण करना। फँस जाना। चिपट जाना। अनुराग। भक्ति।

आसत्ति—(स्त्री०) [आ√सद्+क्तिन्] संसर्ग, मेलमिलाप। घनिष्ठ ऐक्य। लाभ, फायदा। सामीप्य, निकटता। अर्थबोधार्थ बिना व्यवधान के परस्पर सम्बन्ध युक्त दो पदों या शब्दों का समीप रहना।

आसन—(न०) [√आस्+ल्युट्] बैठ जाना। बैठक, बैठकी, तिपाई। बैठने का ढंग विशेष, आसन विशेष। बैठ जाना या रुक जाना। मैथुन करने की कोई भी विशेष विधि। छः प्रकार की राजनीति में से एक, वे ये हैं :—'सन्धिर्ना विग्रहो यानमासनं द्वैधमाश्रयः।'—अमरकोष।—शत्रु के सामना करने पर भी किसी स्थान पर डटे रहना। हाथी का कंधा।

आसना—(स्त्री०) [√आस्+युच्] बैठक, तिपाई, टिकाव।

आसनी—(स्त्री०) [आसन+ङीप्] छोटी बैठकी।

आसन्दी—[आ√सद्+ट, नुम् नि० ङीप्] कोच, तकियादार लंबी बैंच जिस पर गद्दा मढ़ा हो।

आसन्न—[आ√सद्+क्त] समीपस्थ, निकट का। उपस्थित।—**काल**-(पु०) मृत्यु की घड़ी। (वि०) जिसकी मृत्यु समीप हो।—**परिचारक**-(पु०) व्यक्तिगत चाकर। शरीर-रक्षक।—**प्रसवा**-(स्त्री०) जिसे आजकल में ही बच्चा होने वाला हो।

आसम्बाध—(वि०) [आ समन्तात् सम्बाधा यत्र ब० स०] बंद किया हुआ। रोका हुआ। चारों ओर से घिरा हुआ।—'आसंबाधा भविष्यन्ति पन्थानः शरवृष्टिभिः'।—रामायण।

आसव—(पु०) [आ√सु+अप्] अर्क। काढ़ा। हर प्रकार का मद्य।

आसादन—(न०) [आ√सद्+णिच्+ल्युट्] रखना। तेज चलकर पकड़ लेना। उपलब्धि, प्राप्ति। आक्रमण।

आसार—(पु०) [आ√सृ+घञ्] मूसलधार वृष्टि; 'आसारसिक्तक्षितिबाष्पयोगात्' र० १३.२६; शत्रु को घेरना। आक्रमण, हमला, चढ़ाई। मित्र राजा का सैन्य। रसद, भोज्य-पदार्थ।

आसिक—(पु०) [असि+ठक्] तलवार-बहादुर, तलवारबंद सिपाही।

आसिधार—(न०) [असिधारा इव अस्ति अत्र इत्यर्थे अण्] तलवार की धार पर चलने की भाँति एक प्रकार का कठिन व्रत।

आसीन—[√आस्+शानच्, ईत्व] बैठा हुआ।—**पाठ्य**-(न) नृत्य के दस अंगों में से एक (ना०)।

आसुति—(स्त्री०) [आ√सु+क्तिन्] निःसरण, क्षरण, टपकाव, चुआव। क्वाथ, काढ़ा। प्रसव।

आसुर—(वि०) [स्त्री०—**आसुरी**] [असुर+अण्] असुरों का। असुर-सम्बन्धी। यज्ञ न करने वाला। (पु०) असुर। आठ प्रकार के विवाहों में से एक। इसमें वर अपने लिये वधू को, मूल्य देकर, वधू के पिता या अन्य किसी सम्बन्धी से खरीदता है।

आसुरी—(स्त्री०) [आसुर+ङीप्] शल्य चिकित्सा, जर्राही, चीर-फाड़ का इलाज। राक्षसी या असुर की स्त्री। राई।

आसूत्रित—(वि०) [आ√सूत्र+क्त] पुष्प माला बनाने या पहनने वाला। ओत-प्रोत, गुथा हुआ।

आसेक—(पु०) [आ√सिच्+घञ्] सिंचन, जल से सींचना, तर करना या भिगोना, उड़ेलना।

आसेचन—(न०) [आ√सिच्+ल्युट्] दे० 'आसेक'। (वि०) सुंदर। प्रिय।

आसेध—(पु०) [आ√सिध्+घञ्] गिरफ्तारी, हवालात, पकड़ रखना। गिरफ्तारी चार प्रकार की होती है यथा—'स्थानासेधः कालकृतः प्रवासात् कर्मणस्तथा'।—नारद।

आसेवन—(न०) **आसेवा**-(स्त्री०) [प्रा० स०] सतत सेवन। उत्साह युक्त अभ्यास। उत्साह पूर्वक किसी कर्म को बार-बार करने की प्रवृत्ति। पुनरावृत्ति।

आस्कन्द-(पु०) **आस्कन्दन**-(न०) [आ√स्कन्द्+घञ्] [आ√स्कन्द्+ल्युट्] आक्रमण, चढ़ाई, हमला। चढ़ना, सवार होना। धिक्कार, भर्त्सना। घोड़े की सरपट चाल। युद्ध, लड़ाई।

आस्कन्दित, आस्कन्दितक—(न०) [आ√स्कन्द्+क्त] [आस्कन्दित+कन्] घोड़े की सरपट चाल या तेज दुलकी।

आस्कन्दिन्—(वि०) [आ√स्कन्द्+णिनि] आक्रमण करने वाला। बहाने वाला। देने वाला। व्यय करने वाला। अपहरण करने वाला।

आस्तर—(पु०) [आ√स्तृ+अप्] चादर, चद्दर। कालीन। गलीचा। बिस्तर। चटाई। बिछावन।

आस्तरण—(न०) [आ√+स्तृ+ल्युट्] बिछौना। चादर। शय्या। गद्दा। गलीचा।

हाथी का झूल । दरी । यज्ञ में फैलाये हुए कुश ।

आस्तार—(पुं०) [आ√स्तृ+घञ्] बिछाना । ढाँकना । बखेरना ।

आस्तिक—(वि०) [स्त्री०—**आस्तिकी**] [अस्ति+ठक्] परलोक और ईश्वर में विश्वास रखने वाला । वेदों पर आस्था रखने वाला । (पुं०) पवित्र, सच्चा और विश्वासी व्यक्ति ।

आस्तिकता—(स्त्री०) **आस्तिकत्व, आस्तिक्य** —(न०) [आस्तिक+तल्, टाप्] [आस्तिक+त्वल्] [आस्तिक+ष्यञ्] ईश्वर और परलोक में विश्वास । वेद में विश्वास । सच्चाई । विश्वास । श्रद्धा । ईश्वर-भक्ति । धर्मानुराग ।

आस्तीक—(पुं०) [?] एक प्राचीन ऋषि का नाम । यह जरत्कारु के पुत्र थे । इन्हीं के बीच में पड़ने से महाराज जनमेजय ने सर्पयज्ञ बंद किया था ।

आस्था—(स्त्री०) [आ√स्था+अङ्] श्रद्धा, पूज्यबुद्धि । स्वीकारोक्ति, प्रतिज्ञा । सहारा, आश्रय, आधार । आशा, भरोसा । उद्योग, प्रयत्न । दशा, हालत, परिस्थिति । समारोह ।

आस्थान—(न०)[आ√+स्था+ल्युट्] स्थान, जगह । आधार, आधारस्थल । समारोह । श्रद्धा, पूज्यबुद्धि । सभा-भवन। दरबार। दर्शकों के बैठने के लिये विशाल भवन । विश्रामस्थान ।

आस्थित—(आ√स्था+क्त) निवास किया हुआ । ठहरा हुआ । पहुँचा हुआ । माना हुआ । बड़े प्रयत्न से किसी काम में संलग्न । घिरा हुआ । फैला हुआ । लब्ध ।

आस्पद—(न०) [आ√+पद्+घ, सुट्] स्थान, जगह । (अलं०) आवासस्थान । पद । मर्यादा । प्रताप । मामला । सहारा । लग्न से दसवाँ स्थान ।

आस्पन्दन—(न०) [आ√स्पन्द्+ल्युट्] सिसकन । काँपना । थरथराहट । धड़कन ।

आस्पर्धा—(स्त्री०) [प्रा० स०] स्पर्धा, बराबरी, होड़ ।

आस्फाल—(पुं०) [आ√स्फल् +णिच् +अच्] धीरे-धीरे चलाना या डुलाना । फट-फटाना । विशेष कर हाथी के कानों का फटफटाना ।

आस्फालन—(न०)[आ√स्फल्+णिच्+ल्युट्] रगड़ना । मलना । चलाना । दबाना । पछाड़ना । गर्व, अहङ्कार । फड़फड़ाना ।

आस्फोट—(पुं०) [आ√स्फुट्+अच्] मदार का पौधा । ताल ठोंकना ।

आस्फोटन—(न०) [आ√स्फुट्+ल्युट्] फटफटाना । थर-थर काँपना । फूँकना । फुलाना । सिकोड़ना । मूँदना । ताल ठोंकना ।

आस्फोटा—(स्त्री०) [आस्फोट+टाप्] नवमल्लिका का पौधा । चमेली की भिन्न-भिन्न जातियाँ ।

आस्माक, आस्माकीन—[स्त्री०—**आस्माकी**] [अस्मद्+अण्, अस्माक आदेश] [अस्मद्+खञ्, अस्माक आदेश] हमारा ।

आस्मारक—(न०)[प्रा० स०] वह रचना, कार्य, भवन इत्यादि जिसका लक्ष्य किसी की याद बनाये रखना हो (मेमोरियल) । कही हुई बात आदि का स्मरण दिलाने के लिये किसी अधिकारी के पास भेजा गया पत्रक ।

आस्य—(न०)[अस्यते ग्रासोऽत्र इति विग्रहे √अस्+ण्यत् (आधारे)] मुख, चेहरा । मुख का वह भाग जिससे वर्ण का उच्चारण किया जाता है । (वि०) मुख सम्बन्धी ।—**आसव, (आस्यासव)**–(पुं०) थूक, लखार । —**पत्र**–(न०) कमल ।—**लाङ्गल**–(पुं०) कुत्ता । शूकर ।—**लोमन्**–(न०) दाढ़ी ।

आस्यन्दन—(न०) [आ√स्यन्द्+ल्युट्] बहना, टपकना ।

आस्या—(स्त्री०)[√आस्+क्यप्] बैठना । निवास । निवास-स्थान । विश्रामावस्था ।

आस्र—(न०) [अस्र√अण् (स्वार्थे)] खून, लहू, रक्त ।

आस्रप—(पुं०) [अस्र√पा+क] रक्त पीने वाला, राक्षस।

आस्रव—(पुं०) [आ√स्रु+अप्] पीड़ा, कष्ट, दुःख। बहाव। निकास। अपराध। चुरते हुए चावल का फेन।

आस्राव—(पुं०) [आ√स्रु+घञ्] घाव। बहाव। थूक। पीड़ा, कष्ट।

आस्वाद—(पुं०) [आ√स्वद्+घञ्] चखना। खाना। सुस्वाद। रस; 'शातास्वादो विवृतजघनां को विहातुं समर्थः' मे० ४१।

आस्वादन—(न०) [आ√स्वद्+णिच्+ल्युट्] स्वाद लेना। चखना। खाना।

आह—(अव्य०) [आ√हन्+ड] भर्त्सना, उग्रता तथा प्रभुत्वसूचक अव्ययात्मक संबोधन।

आहत—[आ√हन्+क्त] पिटा हुआ, चोट खाया हुआ। कुचला हुआ। मरा हुआ। (अङ्कगणित में) गुणा किया हुआ। (पासा) फेंका हुआ। मिथ्या उच्चारित। (पुं०) ढोल। (न०) कोरा कपड़ा। बेहूदा कथन, असम्भव कथन।

आहक—(पुं०) नाक की बीमारी।

आहति—(स्त्री०) [आ√हन्+क्तिन्] आघात, प्रहार। वध। गुणन।

आहर—(वि०) [आ√हृ+अच्] इकट्ठा करनेवाला। लाने वाला। जाकर लाने वाला। लेने वाला। (पुं०) ग्रहण, पकड़। परिपूर्णता। बलिदान। निःश्वास।

आहरण—(न०) [आ√हृ+ल्युट्] छीनना, हर लेना। स्थानान्तरित करना, अपनयन। ग्रहण, लेना। विवाह में दिया जाने वाला दहेज। 'सत्त्वानुरूपाहरणी कृतश्रीः'। रघुवंश।

आहव—(पुं०) [आ√ह्वे+अप्] युद्ध, लड़ाई: 'हत्वा स्वजनमाहवे' भग० १.३१। ललकार, चुनौती। [आ√हु+अप्] यज्ञ। होम।

आहवन—(न०) [आ√हु+ल्युट्] यज्ञ। होम। हवि।

आहवनीय—[आ√हु+अनीयर्] हवन करने योग्य। (पुं०) गार्हपत्याग्नि से लिया हुआ अभिमंत्रित अग्नि, जो यज्ञ करने के लिये यज्ञ-मण्डप में पूर्व दिशा में स्थापित किया जाता है।

आहार—(पुं०) [आ√हृ+घञ्] लाना। हर लाना। भोजन करना। भोजन।—**पाक**-(पुं०) भोजन की पाचन-क्रिया।—**विज्ञान**-(न०) वह विज्ञान जिसमें खाद्य-पदार्थों के गुण-दोष, पोषण-तत्त्व, वर्गीकरण आदि का विचार किया गया हो।—**विरह**-(पुं०) फाँका, कड़ाका, लंघन।—**विहार**—(पुं०) भोजन, शयन, क्रीड़ा आदि।—**सम्भव**-(पुं०) खाये हुए पदार्थों का रस।

आहार्य—[आ√हृ+ण्यत्] ग्रहण करने, लेने, लाने, छीनने, खाने योग्य। कृत्रिम। ऊपरी। पूजा के योग्य। (न०) अनुभाव के चार प्रकारों में से एक, नायक-नायिका का एक दूसरे का भेष बनाना। अभिनय के चार प्रकारों में से एक। शस्त्रोपचार वाला रोग। (पुं०) एक तरह की पट्टी या बंध।

आहाव—(पुं०) [आ√ह्वे+घञ्] ढोरों को जल पिलाने के लिए कुएँ के पास का हौद। युद्ध, लड़ाई। आह्वान, आमंत्रण। याग।

आहिण्डन—(न०) [आ√हिण्ड्+ल्युट्] बेघर-द्वार के इधर-उधर भटकना, बेकार घूमना। आवारागर्दी।

आहिण्डिक—(पुं०) वर्णसङ्करविशेष, निषाद पिता और वैदेही माता से उत्पन्न।

आहित—(वि०) [आ√धा+क्त] स्थापित, रखा हुआ। जमा किया हुआ। अमानत रखा हुआ। टिकाया हुआ। किया हुआ। संस्कारित।—**अग्नि** (**आहिताग्नि**)-(पुं०) अग्निहोत्री।—**अंक** (**आहिताङ्क**)-(वि०) चिह्नित, धब्बादार।—**लक्षण**-(वि०) परिचायक चिह्न वाला।—**स्वन**-(वि०) शोर करने वाला।

आहितुण्डिक—(पुं०) [अहितुण्ड+ठक्] सँपेरा, मदारी; 'अहं खल्वाहितुण्डिको जीर्णविषो नाम' मु० २।

आहुति—(स्त्री०) [आ√हु+क्तिन्] होम, हवन। किसी देवता के उद्देश्य से उसका मन्त्र पढ़कर अग्नि में साकल्य डालना। साकल्य की वह मात्रा जो एक बार हवनकुण्ड में छोड़ी जाय। (स्त्री०) [आ√ह्वे+क्तिन्] आह्वान, आमंत्रण।

आहूत—(वि०) [आ√ह्वे+क्त] बुलाया हुआ।

आहेय—(वि०) [अहि+ढक्] सर्प सम्बन्धी। (न०) सर्प का विष।

आहो—(अव्य०) [आ√हन्+डो] सन्देह, विकल्प, प्रश्नव्यञ्जक अव्ययात्मक सम्बोधन। —**स्वित्**-(अव्य०) विकल्प। संदेह। जानने की अभिलाषा। प्रश्न।

आहोपुरुषिका—(स्त्री०) [अहमेव पुरुषः—शूरः—अहो-पुरुषः तस्य भावः वञ्, स्त्रीत्वात् टाप्] बड़ी भारी अहंमन्यता। शेखी, अपनी शक्ति का बखान।

आह्न—(न०) [अहन्+अण्] दिन-समूह, अनेक दिन। (वि०) दैनिक (कर्त्तव्य)।

आह्निक—(वि०) [स्त्री०—**आह्निकी**] [अह्ना साध्यम् इत्यर्थ अहन्+ठञ्] प्रति दिन का। दैनिक। (न०) नित्यकर्म।

आह्लाद-(पुं०) [आ√ह्लाद+घञ्] हर्ष, आनन्द, प्रसन्नता।

आह्व—(वि०) [आ√ह्वे+ड] बुलानेवाला

आह्वा—(स्त्री०) [आ√ह्वे+अङ, टाप्] पुकार, चिल्लाहट। नाम, संज्ञा। यथा "अमृताह्वः, शताह्वः।"

आह्वय—(पुं०) [आ√ह्वे+श (बा०)] नाम, संज्ञा। जुआ। जानवरों की लड़ाई से उत्पन्न हुआ मामला, मुकदमा।
"पणपूर्वकं पक्षिमेषादियोधनम् आह्वयः।"
—राघवानन्द।

आह्वयन—(न०) [आ√ह्वे+णिच्+ल्युट्] नाम, संज्ञा। नाम लेना।

आह्वान—(न०) [आ√ह्वे+ल्युट्) निमंत्रण, बुलावा, न्योता। अदालत की बुलाहट। किसी देवता का आह्वान। ललकार, चुनौती। नाम, संज्ञा।

आह्वाय—(पुं०)[आ√ह्वे+घञ्] अदालत का बुलावा। नाम, संज्ञा।

आह्वायक—(वि०) [आ√ह्वे+ण्वुल्] आह्वान करने वाला; 'आह्वायकान् भूमिपतेरयोध्याम्' भट्टि० २.४३। (पु०) हलकारा, डाकिया।

इ

इ—संस्कृत अथवा देवनागरी वर्णमाला में स्वर के अन्तर्गत तीसरा वर्ण, इसका स्थान तालुदेश और प्रयत्न विवृत है। (पु०) [अस्य विष्णोरपत्यम्, अ+इञ्] कामदेव का नाम। अव्य० [नञर्थकस्य इदम्, अ+इञ्] क्रोध, दया, भर्त्सना, आश्चर्य और सम्बोधनवाची अव्यय।

√इ—भ्वा० पर० सक० जाना। आना। पहुँचना। तेजी से या बारंबार जाना। अक० उपस्थित होना। दौड़ना। घूमना। अयति, एष्यति, ऐषीत्।

√इ (क्)—अ० पर० सक० स्मरण करना। (अधिपूर्वक एव कित्) अध्येति, अध्येष्यति, अध्यैषीत्।

इकटा—(स्त्री०) [√इ+कटन्—टाप्, गुणाभाव] घास-विशेष जिससे चटाई बुनी जाती है।

इकबाल—(पुं०) ज्योतिष में वर्षफल के सोलह योगों में से एक योग, सम्पत्ति।

इक्षव—(पुं०) गन्ना, ऊख।

इक्षु—(पुं०) [√इष्+क्सु] गन्ना, ऊख, पौंड़ा। कोकिला वृक्ष।—**काण्ड** (पुं०) ईख का डंठल। ईख। कास। मूंज।—**कुट्टक**-(पुं०) गन्ना एकत्रित करने वाला।—**गन्ध**-

(पुं०) छोटा गोखरू । कास ।—**गन्धा**-(स्त्री०) गोखरू । तालमखाना । कास । शुक्लभूमिकूष्मांड । —**गन्धिका**-(स्त्री०) भूमिकूष्मांड ।—**दा**-(स्त्री०) एक नदी का नाम ।—**नेत्र**- (न०) ईख की गाँठ पर की आँख । एक तरह की ईख ।—**पत्र**—(न०) ज्वार । बाजरा । —**पाक**-(पुं०) शीरा, गुड़, जूसी, चोटा, राब ।—**भक्षिका**-(स्त्री०) राब और चीनी का बना हुआ भोज्य पदार्थ। विशेष ।—**मती**, —**मालवी**,—**मालिनी**-(स्त्री०) पुराणोक्त नदी विशेष ।—**मेह**-(पुं०) प्रमेह विशेष; इसमें पेशाब के साथ मधु या शक्कर निकलती है, मधुमेह, इक्षु-प्रमेह ।—**रस**-(पुं०) गन्ने का रस या शीरा । —**वण**-(न०) गन्नों का वन या जंगल ।—**वल्लरी**,—**वल्ली**-(स्त्री०) पीले रंग की एक ईख । क्षीर-विदारी ।—**विकार**- (पुं०) चीनी । गुड़ । शीरा । राब ।—**शाकट**, —**शाकिन**-(न०) ईख बोने के योग्य खेत । —**समुद्र**-(पुं०) पुराणों के अनुसार वह समुद्र जो ईख के रस से भरा है ।—**सार** (पुं०) शीरा । चीनी । गुड़ ।

इक्षुर—(पुं०) [इक्षुम् इक्षुगन्धं राति इति इक्षु √ रा+क] गन्ना । गोखरू । तालमखाना ।

इक्ष्वाकु—(पुं०) [इक्षुम् इच्छाम् आकरोति इति इक्षु—आ√कृ+डु] सूर्यवंशी प्रथम राजा, इनके पिता का नाम वैवस्वत मनु था। महाराज इक्ष्वाकु का वंशज । कड़वी तूँबी, तितलौकी ।

इक्ष्वालिका—(स्त्री०) [इक्षुरिव अलति इति इक्षु√अल्+ण्वुल] काँस, काही ।

√**इख**√**इङ्ख्**—भ्वा० पर० सक० जाना । एखति, एखिष्यति, ऐखीत् । इंखति, इंखिष्यति ऐङ्खीत्]।

√**इ** (ङ) —अ० आत्म० सक० पढ़ना । (अधिपूर्वक एवं ङित्) अधीते, अध्येष्यते अध्यैष्ट-अध्यगीष्ट ।

इङ्ग्—भ्वा० पर० सक० जाना । इङ्गति, इङ्गिष्यति, ऐङ्गीत् ।

इङ्ग—(वि०) [√इङ्ग्+क) हिलने वाला । अद्भुत । (पुं०) [√इङ्ग्+घञ्] इशारा, संकेत । हावभाव द्वारा मानसिक भाव का बोतन ।

इङ्गन—(न) [√इङ्ग्+ ल्युट् वा णिजन्तात् ल्युट्] चलना । हिलना । ज्ञान । इशारा करना । हिलाना, डोलाना ।

इङ्गित—(न०) [√ इङ्ग्+क्त) अडकल, डोलन । मानसिक विचार । इशारा, संकेत, सैन ।—**कोविद**, —**ज्ञ**-(वि०) इशारेबाजी में कुशल । मनोभाव को प्रकाश करने वाला । हाव-भावों को जानने वाला ।

इङ्गुद—(पुं०), **इङ्गुदी**-(स्त्री०)[√ इङ्ग्+उ —इङ्गुः तं द्यति खण्डयति इति इङ्गु √दो+क] तापस-तरु । हिंगोट का वृक्ष । मालकँगनी ।

इङ्गुल—[√इङ्ग्+उलच्] दे० 'इङ्गुद' ।

इचिकिल—(पुं०) कच्चा तालाब । कीचड़ ।

इच्छल—(पुं०) एक छोटा पौधा जो जल के समीप उत्पन्न होता है, हिज्जल ।

इच्छा—(स्त्री०) [√इष्+श—टाप्] अभिलाषा, वाञ्छा, चाह । (अंकगणित में) प्रश्न । कठिन प्रश्न । रुचि । माल की माँग (डिमांड) । —**दान**-(न०) मुँहमाँगा दान ।—**निवृत्ति**-(स्त्री०) सांसारिक कामनाओं की ओर से उदासीनता, वासनाओं का त्याग ।—**पत्र**-(न०) मृत्यु के पहले लिखा गया वह पत्र या प्रलेख जिसमें कोई व्यक्ति यह इच्छा प्रकट करता है कि मेरी संपत्ति इस-इस प्रकार से इन-इन व्यक्तियों को दी जाय, मेरी दाह क्रिया इस स्थान पर इस ढंग से की जाय इत्यादि (विल) । —**फल**-(न०) किसी प्रश्न का उत्तर।—**रत**-(न०) मनचाहा खेल-कूद । —**वसु**-(पुं०) कुबेर का नाम ।—**संपद्** ; स्त्री०) मनकामना का पूरा होना ।

इज्य—(वि०) [√यज+क्यप्] पूज्य । (पु०) गुरु । देवगुरु बृहस्पति । नारायण, परमात्मा ।

इज्या—(स्त्री०) [इज्य+टाप्] यज्ञ; 'जगत्प्रकाशं तदशेषमिज्यया' र० ३.४८ दान । पुरस्कार । मूर्ति, प्रतिमा । कुट्टिनी । गौ ।—**शील**–(पु०) सदा यज्ञ करने वाला ।

इञ्चाक—(पु०) [चञ्चा दीर्घा अस्ति अस्य इत्यर्थे आकन्, पृषो० साधुः] जलवृश्चिक, पनबोछी ।

√इट्—भ्वा० पर० सक० जाना । एटति, एटिष्यति, ऐटीत् ।

इट—(पु०) [√इट्+क] एक प्रकार की घास । चटाई ।

इट्चर—(पु०) [इष्+क्विप्, इट्√चर्+घञ्] साँड़ या बारहसिंहा जो चरने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया जाय ।

इड्—(स्त्री०) [√इल्+क्विप्, लस्य डः] [वैदिक प्रयोग]इल् । बलि । प्रार्थना । धारा-प्रवाह वक्तृता । पृथिवी । भोजन । सामग्री । वर्षाऋतु । पञ्चप्रयाजों में से तीसरा प्रयाज । [इडो यजति] ब्रह्म ।

इड—(पु०) [√इल+क, लस्य डः] अग्नि का नाम ।

इडस्पति—(पु०) [छान्दस प्रयोग] विष्णु का नाम ।

इडा, इला—(स्त्री०) [√इल् + अच् वा लस्य डत्वम्]पृथिवी । वाणी । अन्न । गौ । (इला०) देवी का नाम, मनु की बेटी, यह बुध की स्त्री और राजा पुरूरवा की माता थी । स्वर्ग । एक नाड़ी जो रीढ़ की हड्डी से होकर मस्तक तक पहुँचती है । दुर्गा । अम्बिका । पार्वती । स्तुति । एक यज्ञपात्र । आहुति जो प्रयाजा और अनुयाजा के बीच दी जाती है । असोमपा नामक एक अप्रिय देवता । नव देवता । हवि ।

इडाचिका—(स्त्री०) [इडा√अच्+ण्वुल्–टाप्, इत्व] बरं, बरैया ।

इडिका—(स्त्री०) [इडा+क, इत्व] धरती, पृथिवी ।

इडिक्क–(पु०) [इडिक् इति कायति शब्दायते, इडिक्√कै+क] जंगली बकरा ।

√इ(ण्)—अ० पर० सक० जाना । एति, एष्यति, अगात् ।

इत—(वि०) [√इ+क्त] गत, गया हुआ । स्मरण किया हुआ । प्राप्त ।

इतर—(सर्वनाम) (वि०) [स्त्री०—**इतरा, इतरत्**] [इना कामेन तरः, तृ+अप्] दूसरा, अन्य, भिन्न । पामर । निम्न श्रेणी का ।

इतरतः—(अव्य०) [इतर+तसिल्]अन्यथा, नहीं तो ।

इतरत्र—(अव्य०) [इतर+त्रल्] अन्यत्र, भिन्न स्थान में ।

इतरथा—(अव्य०) [इतर+थाल्] अन्य प्रकार से, और तरह से । प्रतिकूलरीत्या, अन्यथा । कुटिल भाव से। दूसरी ओर ।

इतरेतर—(वि०) [इतरशब्दस्य द्वित्वम्] अन्योन्य, परस्पर, आपस में ।

इतरेद्युः—(अव्य०)[इतर+एद्युस्]अन्य-दिवस, दूसरे दिन ।

इतस्—(अव्य०) [इदम्+तसिल्] यहाँ से । यहाँ । इस ओर । इस संसार से । इस समय से ।—**ततः**–(अव्य०) इधर-उधर, इसमें-उसमें । 'इतो निषीदेति विसृष्टभूमिः' कु० ३.२

इति—(अव्य०) [√इ+क्तिन्] समाप्ति । हेतु । निदर्शन । निकटता । प्रत्यक्ष । अव-धारण। व्यवस्था । मान । परामर्श । शब्द के पदार्थ रूप को प्रकट करने वाला । वाक्य का अर्थप्रकाशक। प्रातिपदिकार्थ का द्योतक(इसके योग में प्रथमा विभक्ति होती है । कभी-कभी द्वितीया के साथ भी यह प्रयुक्त होता है) ।—**अर्थ**—(इत्यर्थ)–(पु०) सारांश ।—**आदि** (इत्यादि)—(अव्य०) इसी प्रकार और, वग़ैरह ।—**कथा**–(स्त्री०) वाहियात बात-चीत ।—**करणीय**–(वि०) किन्हीं नियमों के

अनुसार करने योग्य।—**कर्त्तव्यता**-(स्त्री०) अवश्य करने योग्य होना। काम करने का क्रम, जिसके अनुसार एक काम के अनन्तर दूसरा काम किया जाय।—**वृत्त**-(न०) पुरावृत्त, पुरानी कथा, कहानी।

इतिमात्र—(वि०) [इति+मात्रच्]केवल, इतना।

इतिह—(अव्य०) [इति एवं ह किल, द्व० स०] उपदेशपरंपरा। देर से सुना जाने वाला उपदेश। सुना-सुनाया अच्छा वचन।

इतिहास—(पुं०)[इतिह पारम्पर्योपदेश आस्ते-ऽस्मिन् इति विग्रहे इतिह√आस्+घञ्] पुस्तक जिसमें बीते हुए काल की प्रसिद्ध घट-नाओं और तत्कालीन प्रसिद्ध पुरुषों का वर्णन हो। वह ग्रन्थ जिसमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का उपदेश प्राचीन कथानकों से युक्त हो, तवारीख। [संस्कृत साहित्य में इतिहास ग्रन्थों में दो ही ग्रन्थों की गणना है—यथा श्रीमद्वाल्मीकि रामायण और महाभारत।

इत्थम्—(अव्य०) [इदम्+थमु]इस प्रकार, इस तरह, ऐसे।—**कारम्**-(अव्य०) इस प्रकार से, इस ढंग से।—**भूत**-(वि०) ऐसी दशा में प्राप्त। सच्ची, ज्यों की त्यों (जैसे कथा-कहानी)।—**विध**-(वि०) इस प्रकार का। ऐसे गुणों वाला।—**शाल**-(पुं०) ज्योतिष में वर्षफल के तीसरे योग का नाम।

इत्य—(वि०) [√इण्+क्यप्, तुक्]प्राप्य, पहुँचने योग्य। जाने योग्य।

इत्या—(स्त्री०) [इत्य+टाप्]गमन। डोली, पालकी।

इत्वर—(वि०) [स्त्री०—**इत्वरी**][√इण्+क्वरप्] यात्री। निष्ठुर। पामर, नीच। तिरस्कृत। निर्धन। (पुं०) हिजड़ा, नपुंसक।

इत्वरी—(स्त्री०)[इत्वर+ङीप्]अभिसा-रिका। व्यभिचारिणी, कुलटा स्त्री।

इदम्—(सर्वनाम०—वि०) [पुं०—**अयम्**। स्त्री०—**इयम्**। न०—**इदम्**] [√इन्द्+कमिन्] जो बतलाने वाले के निकट हो, यह।

इदानीम्—(अव्य०) [इदम्+दानीम्, इश् आदेश, धकारलोप] सम्प्रति, अब, इस समय, अभी।

इदानींतन—(वि०)[इदानीम्+तनप्] इस समय का, अभी का, आधुनिक। नवीन, नया।

इद्ध—(वि०) [√इन्ध्+क्त] प्रज्वलित। चमकता हुआ। साफ, निर्मल। आश्चर्यित। पालित (आदेश)। (न०) धूप, घाम। गर्मी। दीप्ति, चमक। आश्चर्य।

इध्म—(पुं० न०) [√इन्ध्+मक्]ईंधन। समिधा जो हवन में जलायी जाती है।—**जिह्व**-(पुं०) आग, अग्नि।—**प्रव्रश्चन**-(पुं०) कुल्हाड़ी।

इध्या—(स्त्री०) [√इन्ध्+क्यप्—टाप्, नलोप] प्रज्वलन करना, जलाना; प्रकाश करना।

इन—(वि०)[√इण्+नक्] योग्य। शक्ति-मान्। साहसी। (पुं०) प्रभु, स्वामी; 'न न महीनमहीनपराक्रमम्'२.९.५। राजा। सूर्य। हस्त नक्षत्र।

√इन्द्—भ्वा० पर० अक० ऐश्वर्य होना। इन्दति, इन्दिष्यति, ऐन्दीत्।

इन्दि (न्दी)—(स्त्री०) [√इन्द्+इन् वा ङीप्] लक्ष्मी।

इन्दिन्दिर—(पुं०) [√इन्द्+किरच् नि० साधुः] बड़ी मधुमक्षिका। भ्रमर, भौंरा।

इन्दिरा—(स्त्री०) [√इन्द्+ इर, टाप्] लक्ष्मी देवी, विष्णु-पत्नी।—**आलय(इन्दिरा-लय)**-(न०) लक्ष्मी का निवास-स्थल, नील-कमल।—**मन्दिर**-(पुं०) विष्णु भगवान् की उपाधि। (न०) नीलकमल।

इन्दीवर—(न०) [इन्द्या: लक्ष्म्याः वरं वरणीयं प्रियम् ष० त०] नील कमल। साधा-रण कमल। पद्मलता।

इन्दीवरिणी—(स्त्री०) [इन्दीवराणां समूहः इत्यर्थे इन्दीवर+इनि—ङीप्] नीलकमलों का समूह ।

इन्दीवार—(पु०) [इन्द्या वारो वरणम् अत्र, ब० स०] नील कमल ।

इन्दु—(पु०) [उनत्ति चन्द्रिकया भुवं क्लिन्नां करोति इति विग्रहे√उन्द्+उ आदेरिच्च] चन्द्रमा । एक की संख्या । कपूर । मृगशिरा नक्षत्र ।—**कमल**–(न०) सफेद कमल ।—**कला**–(स्त्री०) चन्द्रमा की कला । अमृता । गुडुची । सोमलता ।—**कलिका**–(स्त्री०) केतकी । चन्द्रकला ।—**कान्त**–(पु०) चन्द्रकान्त मणि । (यह मणि चन्द्रमा के सामने रखने से पसीजती है ।]—**कान्ता**–(स्त्री०) रात । केतकी ।—**क्षय**–(पु०) चन्द्रमा की क्षीणता । प्रतिपदा ।—**ज**,—**पुत्र**–(पु०) बुधग्रह ।—**जनक**–(पु०) समुद्र । अत्रि ऋषि ।—**जा**–(स्त्री) नर्मदा नदी ।—**दल** —(न०) कला, अर्धचन्द्र ।—**भा**–(स्त्री०) कुमुदिनी ।—**भृत्**,—**शेखर**, —**मौलि**–(पु०) शिव की उपाधि ।—**मणि**–(पु०) चन्द्रकान्तमणि ।—**मण्डल**–(न०) चन्द्रमा का घेरा ।—**रत्न**–(न०) मोती ।—**रेखा**,—**लेखा**–(स्त्री०)चन्द्रकला । अमृता । गुडूची । सोमलता ।—**लोहक**,—**लोह**–(न०)चाँदी । —**वदना**–(स्त्री०) चन्द्रमुखी । एक छन्द । —**वासर**–(पु०) सोमवार ।—**व्रत**–(न०) चान्द्रायण व्रत ।

इन्दुमती—(स्त्री०) [इन्दु+मतुप् , ङीप्] पूर्णिमा । अज की पत्नी और भोज की भगिनी का नाम ।

इन्दूर—(पु०) [√इन्दु+र, पृषो० ऊत्व] चूहा, मूसा ।

इन्द्र—(वि०) [√इन्द्+र] ऐश्वर्यवान् , विभूतिसम्पन्न । श्रेष्ठ, बड़ा । (पु०) देवताओं के राजा । मेघों के राजा, वृष्टि के राजा । स्वामी, प्रभु, शासक । वैदिक देवता विशेष, इसका वाहन ऐरावत हाथी और अस्त्र वज्र है । इसकी रानी का नाम शची और पुत्र का नाम जयन्त है । इसकी सभा का नाम 'सुधर्मा' है । इसकी राजधानी का नाम अमरावती है । वहीं 'नन्दन' नाम का उद्यान है, जिसमें पारिजात वृक्षों का प्राधान्य है और वहीं कल्पवृक्ष । है इसके घोड़े का नाम उच्चैःश्रवा है और सारथी का नाम मातलि है । यह ज्येष्ठा नक्षत्र और पूर्व दिशा का स्वामी है । दाहिनी आँख की पुतली । रात्रि । एक योग । कुटज वृक्ष । एक वनस्पतिजन्य विष । छप्पय छंद का एक भेद । १४ की संख्या । आत्मा । जंबुद्वीप का एक भाग ।—**अनुज** (इन्द्रानुज,—**अवरज** (इन्द्रावरज)–(पु०) विष्णु या नारायण की उपाधि ।—**अरि** (इन्द्रारि)–(पु०) दैत्य या दानव ।—**आयुध** (इन्द्रायुध)–(न०) इन्द्र का हथियार, इन्द्रधनुष ।—**कील**–(पु०) मन्दराचल पर्वत का नाम । चट्टान । (न०) इन्द्र की ध्वजा ।—**कुञ्जर**–(पु०) ऐरावत हाथी । —**कूट**–(पु०) पर्वत विशेष ।—**कोश**,—**कोष**,—**कोषक**–(पु०) कोच, सोफा । चबूतरा । खूँटी जो दीवाल में गाड़ी जाती है, नागदन्त ।—**गिरि**–(पु०) महेन्द्राचल ।—**गुरु**–(पु०) बृहस्पति ।—**गोप**,—**गोपक**–(पु०) बीरबहूटी नाम का एक कीड़ा ।—**चाप**,—**धनुस्**–(न०) सात रंगों का बना हुआ एक अर्धवृत्त जो वर्षाकाल में सूर्य के सामने की दिशा में कभी-कभी आकाश में देख पड़ता है ।—**छन्दस्**–(न०) एक हजार आठ लड़ियों का हार ।—**जाल**–(न०) एक अस्त्र जिसका प्रयोग अर्जुन ने किया था । माया-कर्म, जादूगरी, तिलस्म । —**जालिक**–(वि०) धोखेबाज, बनावटी, मायावी। (पु०) जादूगर, इन्द्रजाल करने वाला ।—**जित्**–(पु०) इन्द्र को जीतने वाला, मेघनाद (जो

रावण का पुत्र था और जिसे लक्ष्मण ने मारा था); 'तत्रेन्द्रजितमैन्द्रं योधमुख्य:' भा० ।—**विजयिन्**–(पुं०) लक्ष्मण ।—**तापन**–(पुं०) एक दानव ।—**तूल,—तूलक**–(न०) रुई का ढेर। हवा में उड़ने वाला सूत ।—**दारु**–(पुं०) देवदारु वृक्ष ।—**द्वीप**– (पुं०) जंबूद्वीप के नव खंडों में से एक ।—**नील,—नीलक**–(पुं०) मरकतमणि, पन्ना ।—**पत्नी**–(स्त्री०) शची देवी ।—**पर्णी—पुष्पी**–(स्त्री०) एक वनौषधि, कलियारी।—**पुरोहित**–(पुं०) बृहस्पति। —**प्रस्थ**–(न०) आधुनिक दिल्ली नगरी ।—**प्रहरण**–(न०) वज्र ।—**भेषज**–(न०) सोंठ ।—**मण्डल**–(न०) अभिजित् से अनुराधा तक के सात नक्षत्र ।—**मह**–(पुं०) इन्द्रोत्सव । वर्षाऋतु ।—**यव**–(न०) कुटज का बीज, इन्द्रजौ ।—**लुप्त,—लुप्तक**–(न०) सिर के बाल झड़ जाने का रोग, गंजापन ।—**लोक**–(पुं०) स्वर्ग ।—**वंशा,—वज्रा**–(स्त्री०) दो छन्दों के नाम।—**वधू**–(स्त्री०) बीरबहूटी । —**वल्लरी, —वल्ली**–(स्त्री०) पारिजात । —**व्रत**–(न०) राजा का प्रजा के समृद्धिसाधन में इंद्र का अनुसरण करना, जो जल बरसा कर संपूर्ण प्राणियों का पोषण करता है ।—**शत्रु**–(पुं०) इन्द्र का बैरी । वृत्रासुर; 'यथेन्द्रशत्रु: स्वरतोऽपराधात्' महा०। प्रह्लाद । (वि०) वह जिसका शत्रु इन्द्र हो । —**शलभ**–(पुं०) बीरबहूटी नाम का कीड़ा । —**सारथि**–(पुं०) मातलि, वायु ।—**सुत, —सूनु**–(पुं०) इन्द्र का पुत्र (क) जयन्त, (ख) अर्जुन । (ग) बालि । —**सेनानी**–(पुं०) कार्त्तिकेय की उपाधि ।

इन्द्रक—(न०) [इन्द्रस्य कं सुखमिव कं यत्र ब० स०] सभाभवन । बड़ा कमरा ।

इन्द्राणी—(स्त्री०) [इन्द्र+ङीष्, आनुक्] शची देवी । इन्द्रायन वृक्ष । बड़ी इलायची । बाईं आंख की पुतली । संभालु, सिन्धुवार वृक्ष, निर्गुण्डी ।

इन्द्रिय—(न०) [इन्द्र+घ—इय] बल, ज़ोर । शरीर के वे अवयव, जिनसे बाहरी विषयों का ज्ञान प्राप्त होता है। ये दो प्रकार के होते हैं; यथा कर्मेन्द्रिय और ज्ञानेन्द्रिय अथवा बुद्धीन्द्रिय (कर्मेन्द्रिय—हाथ, पाँव, वाणी, गुदा और उपस्थ । ज्ञानेन्द्रिय—आँख, कान, नाक, जीभ और त्वचा। कुछ दर्शन मन को भी इन्द्रिय मानते हैं) । शारीरिक शक्ति । वीर्य । पाँच की संख्या का सङ्केत ।—**अगोचर (इन्द्रियागोचर)**–(वि०) अज्ञेय । जो दिखलायी न दे ।—**अर्थ (इन्द्रियार्थ)** (पुं०) इन्द्रियों का विषय, विषय जिनका ज्ञान इन्द्रियों द्वारा हो [ये विषय हैं—रूप, शब्द, गन्ध, रस, स्पर्श।]—**आयतन (इन्द्रियायतन)**;–(न०) शरीर ।—**ग्राम—वर्ग**–(पुं०) इन्द्रियों का समूह; 'बलवानिन्द्रियग्रामो विद्वांसमपि कर्षति' हितो०—**ज्ञान**–(न०) सत्यासत्य-विवेकशक्ति । —**निग्रह**–(पुं०) इन्द्रियों का दमन ।—**वध**–(पुं०) अज्ञानता, अचेतनता, मूर्च्छा । –**विप्रतिपत्ति**–(स्त्री०) इन्द्रियों का उत्पथगमन ।—**स्वाप**–(पुं०) मूर्च्छा, अचेतना, बेहोशी ।

√इन्ध्—रु० आत्म० अक० चमकना । (सक०) जलाना। इन्धे, इन्धिष्यते, ऐन्धिष्ट ।

इन्ध—(पुं०) [√इन्ध+घञ्] ईंधन, जलाने की लकड़ी । परमेश्वर ।

इन्धन—(न०) [√इन्ध्+ल्युट्] जलाना । जलावन, ईंधन ।

√इन्व्—भ्वा० पर० सक० व्याप्त होना । इन्वति, इन्विष्यति, ऐन्वीत् ।

इभ—(पुं०) [√इण्+भ, कित्] हाथी । आठ की संख्या ।—**अरि (इभारि)**–(पुं०) शेर ।—**आनन (इभानन)**–(पुं०) गणेश जी का नाम, गजानन।—**निमीलिका**–(स्त्री०) चातुर्य, बुद्धिमत्ता। भाग ।—**पालक**–(पुं०) महावत ।—**पोटा**–(स्त्री०) हाथी की मादा छोटी सन्तान ।—**पोत**– (पुं०) हाथी का बच्चा ।—**युवति**–(स्त्री०) हथिनी ।

इभी—(स्त्री०) [इभ+ङीप्] हथिनी ।

इभ्य—(वि०) [इभ+यत्] धनी, धनवान् । (पुं०) राजा । महावत । शत्रु ।

इभ्यक—(वि०) [इभ्य+कन्] धनी, धनवान् ।

इभ्या—(स्त्री०) [इभ्य+टाप्] हथिनी । सलई का पेड़ ।

इयत्—(वि०) [इदम्+वतुप्] इतना, इतना बड़ा, इतने विस्तार का ।

इयत्ता—(स्त्री०), **इयत्त्व**—(न०) [इयत्+तल्, टाप्] [इयत्+त्वल्] सीमा । परिमाण, माप ।

इरण—(न०) [√ऋ+अण्, पृषो०] ऊसर भूमि, लुनई जमीन । बियाबान, उजाड़ ।

इरम्मद—(पुं०) [इरया जलेन माद्यति वर्धते इत्यर्थे इरा√मद्+खश्, ह्रस्व, मुम्] बिजली की कड़क या कौंधा, वह आग जो बिजली गिरने पर प्रकट होती है, वज्राग्नि । वाड़वानल ।

इरा—(स्त्री०) [√इण्+रक् वा इं कामं राति इत्यर्थे इ√रा+क] पृथिवी । वाणी । वाणी की अधिष्ठात्री देवी, सरस्वती । जल । भोज्य पदार्थ । मदिरा । —**ईश** (इरेश)–(पुं०) वरुण । विष्णु । गणेश । सम्राट् । ब्राह्मण । —**चर**–(न०) ओला, पत्थर जो बादल से बरसते हैं । —**ज**–(पुं०) कामदेव ।

इरावत्—(पुं०) [इरा+मतुप्] समुद्र, सागर । मेघ । एक पर्वत । अर्जुन का एक पुत्र ।

इरु—(पुं०) बीज ।

इरिण–(न०) [√ऋ+इन्, कित्] दे० 'इरण' ।

इर्वारु, इर्वालु—(वि०) [√उर्व्+आरु पृषो०] नाशक, हिंसक । (पुं० स्त्री०) ककड़ी, कर्कटी ।

√**इल्**—तु० पर० अक० सोना । सक० फेंकना । इलति, एलिष्यति, ऐलीत् । चु० उभ० सक० प्रेरित करना । एलयति-ते, इलयिष्यति, ऐलिलत्-त ।

इलविला—(स्त्री०) पुलस्त्य मुनि की स्त्री, कुबेर की माता ।

इला—(स्त्री०) [√इल्+क, टाप्] दे० 'इडा' । —**गोल**–(पुं०) (न०) पृथिवी, भूगोल । —**धर**–(पुं०) पहाड़ । —**वृत**–(न०) जंबूद्वीप के नौ वर्ष (भागों) में से एक ।

इलिका—(स्त्री०) [इला+कन्, इत्व] पृथिवी

इली—(स्त्री०) [√इल+इन्–ङीष्] छोटी तलवार, करवालिका ।

इल्वला—(पुं०) [√इल्+वल वा √इल्+क्विप्+वलच्] एक तरह की मछली । एक दैत्य ।

इल्वला, इल्वका–(स्त्री०) [इल्वल+टाप्] मृगशिरा नक्षत्र के शिर पर स्थित पाँच छुद्र तारे ।

इव—(अव्य०) [√इ+क्वन् (बा०)] जैसा; 'वागर्थाविव सम्पृक्तौ' र० १.१ । मानो । कुछ, थोड़ा । कुछ-कुछ । शायद, कदाचित् ।

√**इष्**—दि० पर० सक० जाना । इष्यति एषिष्यति, ऐषीत् । तु० पर० सक० चाहना । इच्छा करना । इच्छति, एषिष्यति, ऐषीत् । क्र्या० पर० अक० बार-बार (होना) । इष्णाति, एषिष्यति, ऐषीत् ।

इष—(पुं०) [√इष्+क्विप्–इट्+मन्] शक्तिशाली या बलवान् व्यक्ति । आश्विन मास । ('अनिमिषेऽनिमिषेक्षणमग्रतः' शि० ६.४६)

इषिका,— इषीका–(स्त्री०) [√इष्+वुन्] [इष्+ईकन्, ह्रस्व] नरकुल, सींक । बाण । कूँची । हाथी की आँख का ढेला ।

इषिर—(पुं०) [√इष्+किरच्] अग्नि । (वि०)–गमनशील ।

इषु—(पुं०) [√ईष्+उ, कित्, ह्रस्व] तीर । पाँच की संख्या का संकेत । —**अग्र**, —**अनीक** (इष्वग्र,—इष्वनीक)–(न०)

तीर की नोक।—असन,—अस्त्र (इष्वसन,—इष्वस्त्र)—(न०) कमान, धनुष।—आस (इष्वास)—(पुं०) धनुष। धनुर्धर। योद्धा।—कार,—कृत्—(पुं०) धनुष बनाने वाला।—धर,—भृत्—(पुं०) धनुर्धर।—विक्षेप—(पुं०) तीर छोड़ना।—प्रयोग।(पुं०) तीर चलाना।

इषुधि—(पुं०) [इषु√धा+कि] तरकस, तूणीर।

इष्ट—(वि०) [√इष् वा√यज्+क्त] अभिलषित, चाहा गया। प्रिय, प्यारा प्रेमपात्र। कृपापात्र। पूज्य, मान्य। यज्ञ किया हुआ। यज्ञ में पूजन किया हुआ। (पुं०) प्रेमी। पति। (न०) कामना, अभिलाषा, चाह। संस्कार। यज्ञादि कर्मानुष्ठान।—**अर्थ** (इष्टार्थ)—(पुं०) अभिलषित वस्तु।—**आपत्ति** (इष्टापत्ति)—अभिलषित कार्य का होना। प्रतिवादी के अनुकूल वादी का कथन या बयान यथा—'इष्टापत्तौ दोषान्तरमाह'।—**पूर्त** (इष्टापूर्त)—(न०) [समाहार द्व० स०, पूर्वपद-दीर्घ] यज्ञादि अनुष्ठान, कूप बावली खुदवाना, वृक्षादि रोपण करना, धर्मशाला आदि परोपकारी कार्य करना।—**देव** (पुं०),—**देवता**—(स्त्री०) आराध्य देव। कुलदेवता।

इष्टका—(स्त्री०) [√इष्+तकन्] ईंट।—**चित**—(वि०) ईंटों से बना हुआ।—**न्यास**—(पुं०) नींव रखना।—**पथ**—(पुं०) ईंटों की बनी सड़क।

इष्टा—(स्त्री०) [√यज+क्त] शमी वृक्ष, अँकुर का पेड़।

इष्टि—(स्त्री०) [√इष्+क्तिन्] अभिलाषा, कामना। प्रवृत्ति। व्याकरण में भाष्यकार की वह सम्मति, जिसके विषय में सूत्रकार ने कुछ न लिखा हो, सूत्र और वार्तिक से भिन्न व्याकरण का नियम विशेष। [√यज्+क्तिन्] यज्ञ, दर्शपौर्ण-मास यज्ञ का भेद।—**पच** (पुं०)—कंजूस।—**पशु**—(पुं०) बलिदान के लिये पशु।

इष्टिका—(स्त्री) [√ इष्+तिकन्—टाप्] ईंट।

इष्म—(पुं०) [√इष्+मक्] कामदेव। वसन्त ऋतु।

इष्य—(पुं० न०) [इष्+क्यप्] वसन्त ऋतु।

इस्—(अव्य) [ईं कामं स्यति √सो+क्विप्, नि० ओलोप] क्रोध, पीड़ा एवं शोक व्यञ्जक अव्ययात्मक सम्बोधन।

इह—(अव्य) [इदम्+ह, इ आदेश] यहाँ, इस स्थान में। इस समय, अब।—**अमुत्र**, (इहामुत्र)—(अव्य) इस लोक और परलोक में। यहाँ और वहाँ।—**लोक**—(पुं०) यह दुनिया या यह जन्म।—**स्थ**—(वि०) यहाँ खड़ा हुआ।

इहत्य—(वि०) [इह+त्यप्] यहाँ का, इस स्थान का। इस लोक का।

इहल—(पुं०) [इह भवं लाति√ला+क] चेदिदेश का नाम।

ई

ई—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का चौथा अक्षर। यह "इ" का दीर्घ रूप है। तालु इसका उच्चारण स्थान है। (पुं०) [√ई+क्विप्] कामदेव का नाम। (अव्य०) उदासी, पीड़ा, क्रोध, शोक, अनुकम्पा, सम्बोधन और विवेक व्यञ्जक अव्ययात्मक सम्बोधन।

√ई—अ० पर० सक० चाहना। जाना। अक० फैलना। एति, एष्यति, ऐषीत्।

√ईक्ष्—भ्वा० आत्म० सक० देखना, ताकना। जानना। आलोचना करना। घूरना। सम्मान करना। परवाह करना। सोचना, विचारना। खोजना। ढूँढना, अनुसन्धान करना। ईक्षते, ईक्षिष्यते, ऐक्षिष्ट।

ईक्षक—(पुं०) [√ईक्ष्+ण्वुल्] दर्शक, देखने वाला।

ईक्षण—(न०) [ईक्ष्+ल्युट्] देखना। दृष्टि, चितवन। नेत्र, आँख।

ईक्षणिक—(पु०) [ईक्षणं शुभाशुभदर्शनं शिल्पमस्य इत्यर्थे ईक्षण+ठन्] ज्योतिषी, भविष्यद्वक्ता।

ईक्षति—(पु०) [√ईक्ष्+श्तिप्] चितवन, दृष्टि।

ईक्षा—(स्त्री०) [√ईक्ष्+अ] चितवन, दृष्टि। विवेचना।

ईक्षिका—(स्त्री०) [√ईक्ष्+ण्वुल् वा ईक्षा+कन्—टाप्, इत्व] नेत्र। झलक।

ईक्षित—[√ ईक्ष्+क्त] देखा हुआ। विचारा हुआ। (न०) चितवन, निगाह। नेत्र, आँख; 'अभिमुखे मयि संहृतमीक्षितम्' श० २.११।

√ईङ्—दि० आत्म० सक० जाना। ईयते, एष्यते, ऐष्ट।

ईङ्ख्—भ्वा० पर० सक० जाना। ईङ्खति, ईङ्खिष्यति, ऐङ्खीत्।

√ईज्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। दोष लगाना, कलङ्क लगाना। ईजते, ईजिष्यते, एजिष्ट।

√ईड्—अ० आत्म० सक० स्तुति या प्रशंसा करना। ईट्टे, ईडिष्यते, ऐडिष्ट। चु० उभ० सक० ईडयति-ते, ईडयिष्यति-ते, ऐडिडत्-त।

ईडा—(स्त्री०) [√ईड्+अ] प्रशंसा, स्तुति, बड़ाई।

ईड्य—[√ईड्+ण्यत्] प्रशंसनीय, श्लाघनीय; 'भवन्तमीड्यम्भवतः पितेव' र० ५.३४।

ईति—(पु०) [ईयतेऽनया विग्रहे√ई+क्तिन्] आपत्ति। फसल सम्बन्धी उपद्रव। ऐसे उपद्रव ६ प्रकार के होते हैं। यथा,—अतिवृष्टि, अनावृष्टि, टिड्डियों का आगमन, चूहों का उपद्रव, तोतों का उपद्रव, राजाओं की चढ़ाई या उनका दौरा।—'अतिवृष्टिरनावृष्टिः शलभा मूषकाः शुकाः। प्रत्यासन्नाश्च राजानः षडेता ईतयः स्मृताः।' संक्रामक रोग। विदेशों में भ्रमण या यात्रा। दंगा, मारपीट।

ईदृक्ता—(स्त्री०) [ईदृश्+तल् टाप्] इस प्रकार का भाव, ऐसी हालत।

ईदृक्ष, ईदृश—(वि०) [स्त्री०—**ईदृक्षी, ईदृशी**] [अस्येव दर्शनम् अस्य इति विग्रहे इदम्√दृश्+क्स, इशादेश, दीर्घ] [इदम् √दृश्+कञ्, इशादेश, दीर्घ] [ईदृश में क्विन् प्रत्यय] इसका **ईदृश्** रूप भी होता है। ऐसा, इस प्रकार का, इसके सदृश, इसके बराबर, इस प्रकार के गुणों वाला।

ईप्सा—(स्त्री०) [आप्तुम् इच्छा इत्यर्थे √आप्+सन्, इत्व+अ, टाप्] अपेक्षा। चाह, अभिलाषा।

ईप्सित—(वि०) [√आप्+सन्+क्त] अभिलषित, चाहा हुआ। प्रिय, प्यारा। (न०) अभिलाषा, चाह।

ईप्सु—(वि०) [√आप्+सन्+उ] प्राप्ति की कामना करने वाला। किसी वस्तु की प्राप्ति के लिये परिश्रम करने वाला।

√ईर्—अ० आत्म० सक० जाना। अक० काँपना। ईर्ते, ईरिष्यते, ऐरिष्ट। चु० उभ० पक्षे भ्वा० पर० सक० फेंकना। ईरयति—ते, ईरयिष्यति—ते, ऐरिरत्—त। पक्षे ईरति, ईरिष्यति, ऐरीत्।

ईरण—(वि०) [√ईर्+ल्यु] क्षुब्ध या अस्थिर करने वाला। (पु०) वायु। (न०) आन्दोलन। गमन। कथन। प्रेषण। कष्टपूर्ण मलत्याग।

ईरिण—(वि०) [√ईर्+इनन्] ऊसर, उजाड़। (न०) उजाड़ स्थान, ऊसर जमीन; 'मुहूर्तमिव निःशब्दमासीदीरिणसन्निभम्' वा०।

√ईर्क्ष्य्—भ्वा० पर० सक० डाह करना। होड़ करना। ईर्क्ष्यति, ईर्क्ष्यिष्यति, ऐर्क्ष्यीत्।

ईर्म—(वि०) [√ईर्+मक्] बराबर चलने या भड़काने वाला। (न०) घाव। (पुं०) बाहु।

ईर्या—(स्त्री०) [√ईर्+ण्यत्, टाप्] इधर-उधर घूमना-फिरना, भिक्षु-व्रत।

ईर्वारु—(पुं० स्त्री०) [ईरु√ऋ+ उण (बा०)] ककड़ी।

ईर्षा,—ईर्ष्या–(स्त्री०)[ईर्ष्य्+घञ्, यलोप] [√ईर्ष्य्+अ] डाह, परोत्कर्ष-असहिष्णुता। दूसरे की बढ़ती देख जो जलन पैदा होती है उसे ईर्ष्या कहते हैं।

√ईर्ष्य्—भ्वा० पर० सक० डाह करना, दूसरे की बढ़ती न देख सकना। ईर्ष्यति, ईर्ष्यिष्यति, ऐर्ष्यीत्।

ईर्ष्य,—ईर्ष्यक,—ईर्ष्यु–(वि०) [√ईर्ष्य्+अच्] [√ईर्ष्य्+ण्वुल्] [√ईर्ष्य्+उण्] डाही, ईर्ष्यालु।

ईर्ष्यालु—(वि०) [ईर्ष्या√ला+डु] डाह करने वाला।

ईलि—(पुं०) [स्त्री०—**ईली**] [√ईड्+कि, डस्य लः] सोंटा। छोटी तलवार।

ईलित—(वि०) [√ईड्+क्त, डस्य लः] स्तुति किया हुआ।

√ईश्—अ० आत्म० अक० ऐश्वर्यवान् होना। समर्थ होना। सक० शासन करना। ईष्टे, ईशिष्यते, ऐशिष्ट।

ईश—(वि०) [√ईश्+क] ऐश्वर्ययुक्त। समर्थ। (पुं०) प्रभु, मालिक। पति। ग्यारह की संख्या। शिव का नाम।—**कोण**–(पुं०) ईशान दिशा, उत्तर और पूर्व की दिशाओं के बीच का कोना।—**नगरी,—पुरी**– (स्त्री०) काशीपुरी, बनारस नगर।—**सख**–(पुं०) कुबेर की उपाधि।

ईशा—(स्त्री०) [ईश+टाप्] दुर्गा का नाम। धनवती स्त्री।

ईशान—(पुं०) [√ईश्+शानच्] (वि०) ऐश्वर्ययुक्त। आधिपत्ययुक्त। शासक। प्रभु। शिव का नाम। विष्णु का नाम। सूर्य।

ईशानी—(स्त्री०) [ईशान+ ङीप्] दुर्गा देवी का नाम। शाल्मली वृक्ष।

ईशिता—(स्त्री०),—**ईशित्व**–(न०) [ईशितो भावः इत्यर्थे ईशिन्+तल्, टाप्] [ईशिन्+त्वल] उत्कृष्टता, महत्त्व। आठ सिद्धियों में से एक। [जिसको ईशिता की सिद्धि प्राप्त हो जाय, वह सब पर शासन कर सकता है।]

ईश्वर—(वि०) [स्त्री०—**ईश्वरा, ईश्वरी**] [√ईश्+वरच्]√ ऐश्वर्ययुक्त। समर्थ। शक्तिशाली। धनी। (पुं०) प्रभु, मालिक। राजा, शासक। धनी या बड़ा आदमी। यथा—'मा प्रयच्छेश्वरे धनम्'। पति। परमात्मा, परमेश्वर। शिव का नाम। विष्णु का नाम। कामदेव।—**निषेध**–(पुं०) ईश्वर के अस्तित्व को न मानना, नास्तिकता।—**पूजक**–(वि०) ईश्वर की पूजा करने वाला, ईश्वर में आस्था रखने वाला, ईश्वरभक्त।—**सद्मन्**–(न०) देवालय, मन्दिर।—**सभ**–(न०) राजदरबार, राजसभा।

ईश्वरा,—ईश्वरी–(स्त्री०)[ईश्वर+टाप्] [ईश्वर+ङीप्√दुर्गा। लक्ष्मी। कोई शक्ति। लिंगिनी, बन्ध्या ककोंटी, रुद्रजटा, नाकुली आदि पौधे।

√ईष्—भ्वा० आत्म० अक० सक० उड़ जाना। भाग जाना। देखना। देना। मार डालना। ईषते, ईषिष्यते, ऐषिष्ठ। पर० सक० सीला बीनना। ईषति, ईषिष्यति, ऐषीत्।

ईष—(पुं०) [√ईष्+क] आश्विन मास।

ईषत्—(अव्य०) [√ईष्+अति (बा०)] हल्का सा, थोड़ा सा।—**उष्ण** (**ईषदुष्ण**)–(वि०)गुनगुना।—**कर**–(वि०) थोड़ा करने वाला। सहज में होने वाला।—**जल** (**ईषज्जल**) (न०) उथला पानी।—**पाण्डु**–(वि०) हल्का सफ़ेद या पीला।—**पुरुष**–(पुं०) अधम या तिरस्कार करने योग्य मनुष्य।—**रक्त** (**ईषद्रक्त**)–(वि०) पिलौहाँ, लाल, नारंगी।—**लभ** (**ईषल्लभ**,), —**प्रलभ**–(वि०) थोड़े में मिलने वाला।—**स्पृष्ट**–(न०)

अर्ध स्वर (य, र, ल, व) ।—हास (ईष-द्धास)-(पु०) मुसक्यान, मुसकराहट ।
ईषा—(स्त्री०) [√ईष्+क, टाप्] गाड़ी का बम या हल का बाँस, हरिस ।
ईषिका—(स्त्री०) [ईषा+कन्] हाथी की आँख की पुतली । रंगसाज की कूँची । तीर । सींक ।
ईषिर—(पु०) [√ईष्+किरच्] अग्नि, आग ।
ईषीका—(स्त्री०) [√ईष्+क्वुन्, इत्व, दीर्घ] रंगसाज की कूँची । (सोने या चाँदी की) छड़ । ईंट । सलाका या डला ।
ईष्म,—ईष्व-(पु०) [√ईष्+मक्] [√ईष्+वन्] कामदेव । वसन्तऋतु ।
√ईह्—भ्वा० आत्म० सक० अक० इच्छा करना, अभिलाषा रखना । किसी वस्तु के पाने के लिये प्रयत्न करना । उद्योग करना । ईहते, ईहिष्यते, ऐहिष्ट ।
ईहा—(स्त्री०) [√ईह् + अ] ख्वाहिश, चाह । उद्योग, क्रियाशीलता ।—मृग-(पु०) भेड़िया । नाटक का एक परिच्छेद जिसमें चार दृश्य हों ।—वृक-(पु०) भेड़िया ।
ईहित—[√ईह्+क्त] चाहा हुआ, वांछित । चेष्टित । (न०) वाञ्छा, अभिलाषा, चाह । उद्योग, प्रयत्न । कर्म, कार्य ।

उ

उ—नागरी वर्णमाला का पाँचवाँ अक्षर, इसका उच्चारण ओष्ठ की सहायता से होता है। इसकी गणना मुख्य तीन स्वरों में है । ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत, सानुनासिक एवं निरनुनासिक—इस प्रकार इसके १८ भेद हैं । उ, को गुण करने से 'ओ' और वृद्धि करने से 'औ' होता है । (पु०) [√अत्+डु] शिव का नाम । ब्रह्मा का नाम । चन्द्रमा का बिम्ब । ओम् का दूसरा अक्षर । (अव्य०) पुकारना, कोप, अनुग्रह, आदेश, स्वीकृति, एवं प्रश्न-व्यञ्जक अव्ययात्मक सम्बोधन; "उमेति माता तपसो निषिद्धा पश्चादुमाख्यां सुमुखी जगाम, कु० १.२६ ।
उकनाह—(पु०) लाल और पीले रंग का घोड़ा ।
उकुण—(पु०) खटमल, खटकीरा ।
उक्त—[√वच्+क्त] कहा हुआ, कथित । बतलाया हुआ । सम्बोधित । वर्णित । (न०) वाणी, शब्दराशि ।—अनुक्त (उक्तानुक्त) -(वि०) कहा और अनकहा हुआ ।—उपसंहार (उक्तोपसंहार)-(पु०) संक्षिप्त वर्णन । सिंहावलोकन । सारांश ।—निर्वाह-(पु०) कथन का समर्थन ।—प्रत्युक्त-(न०) कथन और उत्तर, संवाद ।
उक्ति —(स्त्री०) [√वच्+क्तिन्] कथन, वचन । वाक्य । (मानसिक भाव) व्यक्त करने की शक्ति । यथा—'एकयोक्त्या पुष्पवन्तौ दिवाकरनिशाकरौ ।' —अमरकोष।
उक्थ—(न०) [√वच्+थक्] स्तोत्र । सामवेद का प्रधान अंग । महाव्रत नामक यज्ञ । प्राण । ऋषभक नामक औषधि ।
√उक्ष्—भ्वा० पर० सक० छिड़कना, तर करना । निकालना । छोड़ना । उक्षति, उक्षिष्यति, औक्षीत् ।
उक्षण—(न०) [√उक्ष्+ल्युट्] छिड़काव, प्रोक्षण या मार्जन ; 'वशिष्ठमन्त्रोक्षणजात्प्रभावात्' र० ५.२७ ।
उक्षतर—(पु०) [उक्षन्+ष्टरच्] छोटा बैल । बड़ा बैल ।
उक्षन्—(पु०) [√उक्ष्+कनिन्] बैल । सूर्य । अग्नि । सोम । मरुत् । अष्टवर्ग के अंतर्गत ऋषभ नामक औषधि ।
उक्षाल—(वि०) तेज । भयानक । ऊँचा, बड़ा । सर्वोत्तम । (पु०) बंदर, वानर ।
उक्षित—(वि०) [√ उक्ष्+क्त] सींचा हुआ ।
√उख्—भ्वा० पर० सक० जाना, ओखति, ओखिष्यति, औखीत् ।

उखा—(स्त्री०) [√उख्+क] बटलोई, देगची ।

उख्य—(वि०) [उखा+यत्] बटलोई में उबाला हुआ ।

उग्र—(पु०) [√उच्+रक्, ग आदेश] शिव या रुद्र का नाम । क्षत्रिय पिता और शूद्रा माता से उत्पन्न एक वर्णसंकर जाति । रौद्र रस । केरल देश । सहजन का पेड़ । वच्छनाग (वत्सनाग) विष । पूर्वा फाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा आदि पाँच नक्षत्रों का समूह । वायु । (वि०) निष्ठुर । हिंसक । भयानक । प्रचण्ड । तीक्ष्ण । उष्ण । परिश्रमी ।—**काण्ड**–(पु०) करेला ।—**गन्ध**–(पु०) चम्पा का वृक्ष । चमेली । लहसुन । हींग । (वि०) तेज महकवाला ।—**चण्डा**,—**चारिणी**–(स्त्री०) दुर्गा का नाम ।—**जाति**–(वि०) नीच जाति में उत्पन्न ।—**दर्शन**,—**रूप**–(वि०) भयानक शक्ल वाला ।—**धन्वन्**–(वि०) मजबूत धनुषधारी । (पु०) शिव का नाम । इन्द्र का नाम ।—**पुत्र**–(वि०) बड़े वंश में उत्पन्न । (पु०) कार्तिकेय ।—**शेखरा**–(स्त्री०) गङ्गा का नाम ।—**श्रवस्**–(पु०) रोमहर्षण का पुत्र । (वि०) सुनी बात को तुरन्त याद कर लेने वाला ।—**सेन**–(पु०) कंस के पिता का नाम ।

उग्रम्पश्य—(वि०) [उग्र√दृश्+खश्, मुम्] भयानक शक्ल वाला । भयानक ।

उङ्घ—भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना । गरजना । (सक०) माँगना । तगादा करना । अघते ओघ्यते, औघ्ट ।

उङ्ख्—भ्वा० पर० सक० जाना । उङ्खति, उङ्खिष्यति, औङ्खीत् ।

उच्—दि० पर० सक० जमा करना, इकट्ठा करना । (अक०) अनुरागी होना । प्रसन्न होना । उपयुक्त होना । आदी होना, अभ्यस्त होना । उच्यति, ओचिष्यति, औचीत् ।

उक्थ—(न०) [वच्+थक्] स्तुति करने का मंत्र । स्तोत्र ।

उक्थ्य—(वि०) [उक्थ+यत्] स्तुति करने योग्य ।

उचित—[√उच्+क्त] योग्य, ठीक, मुनासिब । सामान्य, साधारण । प्रथानुरूप, प्रचलित । अभ्यस्त, आदी । श्लाघ्य, प्रशंसनीय ।

उच्च—(वि०) [उत्क्षिप्य बाहू चीयते इति विग्रह उद्√चि+ड] ऊँचा, लंबा । बड़ा, श्रेष्ठ । कुलीन । तेज । जोरदार । शुभ ।—**आयुक्त**, (**उच्चायुक्त**)–(पु०) राष्ट्रमंडल के किसी एक देश का राजदूत जो मंडल के किसी अन्य देश में अपने देश का प्रतिनिधि बनकर रहे (हाई कमिश्नर) ।—**तरु**–(पु०) नारियल का वृक्ष ।—**ताल**–(पु०) मद्यशाला का सङ्गीत, नृत्य आदि ।—**नीच**–(वि०) ऊँचा-नीचा । उतार-चढ़ाव । विविध । बहुप्रकार ।—**न्यायालय**–(पु०) किसी प्रदेश या राज्य का प्रधान न्यायालय (हाईकोर्ट) ।—**ललाटा**,—**ललाटिका**–(स्त्री०) चौड़े माथे वाली स्त्री ।—**संश्रय**–(वि०) उच्चस्थानीय । (उच्चग्रह के लिये)

उच्चकैः—(अव्य०) [उच्चैस्+अकच्] अत्यन्त ऊँचा ।

उच्चक्षुस्—(वि०) [ब० स०] ऊपर देखने वाला । ऊपर की ओर निगाह किये हुए । अंधा, दृष्टिहीन ।

उच्चण्ड—(वि०) [प्रा० स०] भयानक, भयंकर । तेज, फुर्तीला । उच्च स्वर वाला । क्रुद्ध, कुपित ।

उच्चन्द्र—(पु०) [अत्या० स०] रात का अन्तिम पहर ।

उच्चय—(पु०) [उद्√चि+अच्] संग्रह, ढेर । समूह, समुदाय । स्त्री के दुपट्टे की ग्रन्थि । समृद्धि, अभ्युदय ।

उच्चरण—(न०) [उद्√चर्+ल्युट्] ऊपर या बाहर जाना । उच्चारण, कथन ।

उच्चल—(वि०) [उद्√चल+अच्] हिलने वाला। सरकने वाला। (न०) मन।

उच्चलन—(न०) [उद्√चल्+ल्युट्] निकलना। चला जाना।

उच्चलित—[उद्√चल्+क्त] चलने को तैयार। जाने को उद्यत। बाहर आया या ऊपर गया हुआ। फटका हुआ।

उच्चाटन—(न०) [उद्√चट्+णिच्+ल्युट्] हटाना। निकालना। बिछोह। उखाड़ना (वृक्ष का)। तांत्रिक षट् कर्मों में से एक। चित्त का न लगना।

उच्चार—(पुं०) [उद्√चर्+णिच्+घञ्] (शब्द को) बोलना। कहना। मल, विष्ठा। 'मातुरुच्चार एव सः।' विसर्जन, छोड़ना।

उच्चारण—(न०) [उद्√चर्+णिच्+ल्युट्] शब्द को मुँह से निकालना, बोलना। शब्द या उसके वर्णों को कहने का ढंग।—**स्थान**-(न०) मुँह का वह स्थान जिसके प्रयत्न से कोई विशेष ध्वनि निकले (कंठ, तालु, ओष्ठ, जिह्वा आदि)।

उच्चावच—(वि०) [उदक्=उत्कृष्टं च अवाक्=अपकृष्टं च इति विग्रहे मयू० स०] ऊँचा-नीचा। ऊबड़-खाबड़। छोटा-बड़ा। विविध, विभिन्न। विषम।

उच्चूड, उच्चूल—(पुं०) [उद्गता चूडा या चूला यस्य ब० स०] ध्वजा या उसका ऊपर का भाग। झंडे के सिरे पर की सजावट।

उच्चैः—(अव्य०) [उद्√चि+डैस्] ऊँचा, ऊपर। ऊपर की ओर। जोर की आवाज के साथ, बड़े शोर के साथ। बहुत अधिक, बहुतायत।—**घुष्ट**, (**उच्चैर्घुष्ट**)-(न०) शोरगुल, कोलाहल। उच्च स्वर से पढ़ी गयी घोषणा।—**वाद**, (**उच्चैर्वाद**)-(पुं०) प्रशंसा।—**शिरस्**-(वि०) जिसका सिर ऊँचा हो। उच्चाशय, उदारचेता।—**श्रवस्**,—**श्रवस**-(वि०) बड़े-बड़े कानों वाला। बहरा। (पुं०) इन्द्र के घोड़े का नाम।

उच्चैस्तमाम्—(अव्य०) [उच्चैस्√तमप्+आम्] अत्युच्च, बहुत ही अधिक ऊँचा। बड़े जोर से, अत्युच्च स्वर से।

उच्चैस्तरम्, उच्चैस्तराम्—(न०) [उच्चैस्+तर] [उच्चैस+तर+आम्] अत्युच्च स्वर का। बहुत अधिक लंबा या ऊँचा।

√उच्छ्—भ्वा०, तु० पर० सक० बांधना। समाप्त करना। छोड़ना। (प्रायेणार्य विपूर्वः) व्युच्छति, व्युच्छिष्यति, अव्युच्छीत्। (तु० न विपूर्वः)।

उच्छन्न—(वि०) [उद्√छद्+क्त] अनावृत। विनष्ट, नष्ट किया हुआ। लुप्त।

उच्छलत्—(वि०) [√उद्+शल्+शतृ] प्रकाशित, दीप्त। इधर-उधर डोलने वाला। गतिशील। उड़ जाने वाला या ऊपर उड़ने वाला। बहुत ऊँचा जाने वाला।

उच्छलन—(न०) [उद्√शल्+ल्युट्] ऊपर को जाना या सरकना।

उच्छादन—(न०) [उद्√छद्+णिच्+ल्युट्] ढकना। शरीर में तेल-फुलेल की मालिश करना।

उच्छासन—(वि०) [उद्गतः शासनात् ग० स०] नियम या आदेश के अनुसार न चलने वाला। अदम्य। निरंकुश।

उच्छास्त्र-(वि०) [उद्गतः शास्त्रात् ग०स०] शास्त्रविरुद्ध। धर्मशास्त्र का अतिक्रम करने वाला।

उच्छिख—(वि०) [उद्गता शिखा यस्य ब० स०] जिसकी शिखा ऊपर को उठी हो। जिसकी ज्वाला ऊपर की ओर जा रही हो, भभकता हुआ।

उच्छित्ति—(स्त्री०) [उद्√छिद्+क्तिन्] नाश।। मूलोच्छेदन, जड़ से नाश करना।

उच्छिन्न—[उद्√छिद्+क्त] मूलोच्छेद किया हुआ। नष्ट किया हुआ; 'उच्छिन्नाश्रय कातरेव कुलटा गोत्रान्तरं श्रीर्गता' मु० ६.५। नीच, हीन।—**सन्धि**-(पुं०) उर्वरा या

खनिज पदार्थों से पूर्ण भूमि देकर की जाने वाली संधि।

उच्छिरस्—(वि०) [ब० स०] गर्दन उठाये हुए। कुलीन। महान्; "मैनाकमजापि पितुरुच्छिरसोऽभिलाषं" कु० ३.७५।

उच्छिलीन्ध्र—(वि०) [ब० स०] कुकुरमुत्तों से परिपूर्ण। (न०) [प्रा० स०] कुकुरमुत्ता।

उच्छिष्ट—[उद्√शिष् +क्त] बचा हुआ। जूठा। छूटा हुआ। अस्वीकृत किया हुआ। त्यागा हुआ। बासी। (न०) जूठन।—मोदन-(न०) मोम।

उच्छीर्षक—(न०) [उत्थापितं शय्यात उत्तोल्य स्थापितं शीर्षं यस्मिन् इति विग्रहे ब० स० कप्] तकिया।

उच्छुष्क—(वि०) [प्रा० स०] सूखा हुआ। मुरझाया हुआ।

उच्छून—(वि०) [उद्√श्वि+क्त] फूला हुआ। सूजा हुआ। मोटा, ऊँचा।

उच्छृङ्खल—(वि०) [उद्गतः शृङ्खलातः ग० स०] बेलगाम का, जो वश या काबू में न हो। स्वेच्छाचारी। डाँवाडोल।

उच्छेद (पु०) **उच्छेदन**—(न०) [उद्√छिद्+घञ्] [उद्√छिद्+ल्युट्] उखाड़-पुखाड़। खण्डन। नाश। नश्तर लगाने की क्रिया।

उच्छेष—(पु०), **उच्छेषण**—(न०) [उद्√शिष्+घञ्] [उद्√शिष+ल्युट्] अवशिष्ट, बचा हुआ, शेष।

उच्छोषण—(वि०) [उद्√शुष्+णिच् ल्यु] सुखाने वाला। कुम्हलाने वाला। जलन करने वाला। (न०) [अत्र ल्युट्] सुखाना। रस ऊपर खींच लेना।

उच्छ्रय, उच्छ्राय-(पु०) [उद्√श्रि + अच्] [उद्√श्रि+घञ्] किसी ग्रह का उदय। (इमारत का) खड़ा करना। ऊँचाई। बाढ़। वृद्धि। अभिमान।

उच्छ्रयण—(न०) [उद्√श्रि+ल्युट्] उठान, ऊँचाई।

उच्छ्रित—[उद्√श्रि+क्त] उठा हुआ। ऊँचा किया हुआ। ऊपर गया हुआ। लंबा, बड़ा। उत्पन्न किया हुआ या उत्पन्न हुआ। समृद्धिशाली। अभिमानी। उदित।

उच्छ्वसन—(न०) [उद्√श्वस्+ल्युट्] साँस लेना। आह भरना।

उच्छ्वसित—[उद्√श्वस्+क्त] आह भरता हुआ; 'उत्कण्ठोच्छ्वसितहृदया' मे० १००। साँस लेता हुआ। तरोताजा। पूरा फूला हुआ। खुला हुआ। विश्राम लिये हुए। ढाढ़स बँधाया हुआ। (न०) साँस। प्राणवायु। साँस से फूलना। साँस भीतर खींचना। उभार। सिसकना। शरीरव्यापी पाँच प्राणवायु।

उच्छ्वास —[उद्√श्वस्+घञ्] ऊपर को खींची हुई साँस। उसाँस, आह। सान्त्वना, ढाढ़स। वायुरन्ध्र। ग्रन्थ का प्रकरण या अध्याय।

उच्छ्वासिन्—(वि०) [उच्छ्वास+इनि] साँस लेते हुए। उसाँस लेते हुए, आह भरते हुए। अदृश्य होते हुए। कुम्हलाते हुए।

उज्ज(य)यिनी-(स्त्री०) [प्रा० स०] विक्रमादित्य की राजधानी, आधुनिक उज्जैन नगरी।

उज्जासन—(न०) [उद्√जस्+णिच्+ल्युट्] मार डालना, मारण।

उज्जिहान—(वि०) [उद्√हा+शानच्] उठता हुआ। उदित होता हुआ। प्रस्थान करता हुआ; 'उज्जिहानस्य भानोः' मु० ४.२१।

उज्जृम्भ—(वि०) [ब० स०] फूला या खिला हुआ। खुला हुआ। (पु०) [प्रा० स०] खिलना, फूलना। विछोह, जुदाई।

उज्जिहीर्षा—(स्त्री०) [उद्√हृ+सन्, द्वित्वादि,+अ—टाप्] पकड़ने की इच्छा।

उज्जृम्भण—(न०), **उज्जृम्भा**-(स्त्री०) [उद्√जृम्भ्+ल्युट्] [उद्√जृम्भ+अ]

मुँह बाना । जँभाई लेना । फैलना । खिलना । फटना । क्षोभ ।

उज्ज्य—(वि०) [ब० स०] खुली हुई डोरी का धनुष रखने वाला ।

उज्ज्वल—(वि०) [उद्√ज्वल्+अच्] उजला । चमकीला । मनोहर, सुन्दर । खिला हुआ । बढ़ा हुआ । असंयमी । (पु०) प्रेम, अनुराग । (न०) सोना ।

उज्ज्वलन—(न०) [उद्√ज्वल्+ल्युट्] जलना । चमकना । दीप्ति । चमक । सोना ।

√उज्झ्—तु० पर० सक० छोड़ना । बाहर निकालना । उज्झति, उज्झिष्यति, औज्झीत् ।

उज्झन—(पु०) [उज्झ्+क्वुन्] त्याग । स्थानान्तरण ।

उज्झक—(न०) [√उज्झ्+ल्युट्] बादल । भक्त ।

√उञ्छ्—भ्वा, तु० पर० सक० खेत में सिल उठ जाने के बाद पड़े हुए अनाज के दाने बीनना, एकत्र करना । उञ्छति, उञ्छिष्यति, औञ्छीत् ।

उञ्छ—(पु०) [√उञ्छ्+घञ्] अनाज के दानों का संग्रह करने की क्रिया ।—**वृत्ति**, —**शील**-(वि०) खेत में छूटे हुए अनाज के कणों को बीनकर पेट भरने वाला ।

उञ्छन—[√उञ्छ्+ल्युट्] खेत में (लुनाई के बाद) या रास्ते में पड़े हुये अनाज के दानों को एकत्र करने की क्रिया ।

उट—(न०) [√उ+टक्] पत्र, पत्ता । घास, तृण ।—**ज**-(पु०) झोपड़ी, कुटी ।

√उठ्—भ्वा० पर० सक० आघात करना । ओठति, ओठिष्यति, औठीत् ।

√उड्-भ्वा० पर० सक० इकट्ठा करना । ओडति, ओडिष्यति, औडीत् ।

उडु—(स्त्री० न०) [उ√डी+डु] नक्षत्र, तारा । जल ।—**चक्र**-(न०) राशिचक्र ।—**प**-(पु०) एक तरह की नाव, भेला । एक तरह का पान पात्र । चन्द्रमा ।—**पति**,—**राज्** -(पु०) चन्द्रमा ।—**पथ**-(पु०) आकाश ।

उडुम्बर—(पु०) [उं शम्भुं वृणोति, उ√वृ+खच्, मुम्, उत्कृष्टः उम्बरः, प्रा० स०, दस्य डत्वम्] गूलर का पेड़ । घर की डयोढ़ी । हिजड़ा, नपुंसक । कोढ़ का भेद । (यह नपुंसक लिंग भी होता है) । (न०) गूलर का फल । ताँबा ।

उड्डयन—(न०) [उद्√डी+ल्युट्] उड़ान (पक्षियों की) ।

उड्डामर-(वि०) [प्रा० स०] मनोहर । समीचीन । सर्वोत्तम । भीम, भयानक ।

उड्डीन—(वि०) [उद्√डी०+क्त] उड़ा हुआ । उड़ता हुआ । (न०) उड़ान, चिड़ियों को क विशेष प्रकार की उड़ान ।

उड्डीयन—(न०) [उड्डः स इव आचरति, क्यङ् ,√उड्डीय+ल्युट्] उड़ान ।

उड्डीश—(पु०) [उद्√डी+क्विप् , उड्डी तस्य ईशः] शिव का नाम ।

उड्र—(पु०) [√उड्+रक्] उड़ीसा प्रान्त का प्राचीन नाम ।

उण्डेरक—(पु०) आटे का लड्डू, रोट ।

उत्—(अव्य०) [√उ+क्विप्] सन्देह, प्रश्न, विचार और प्रचण्डता सूचक अव्यय ।

उत—(अव्य०) [√उ+क्त] सन्देह, अनिश्चितता, अनुमान, अथवा, या, और, सङ्कृति सूचक अव्यय ।

उतथ्य—(पु०) अंगिरा के एक पुत्र का नाम जो बृहस्पति के ज्येष्ठ भ्राता थे ।—**अनुज**,-**अनुजन्मन्** , (उतथ्यानुज,—उतथ्यानुजन्मन्) (पु०) देवाचार्य बृहस्पति; 'तथ्यामुतथ्यानुजवज्जगाद' शि० २.६९ ।

उताहो—(अव्य) [उत च आहो च इति विग्रहे द्व० स०] । विकल्प । संदेह । प्रश्न । विचार ।

उत्क—(वि०) [उद्+क नि०] अभिलाषी, चाह रखने वाला । दुःखी, शोकान्वित । अनमनस्क ।

उत्कल्मुक—(वि०) [ब०स०] बिना बंगिया या कञ्चुकी धारण किये हुए।

उत्कट—(वि०) [उद्+कटच्] तीव्र। उग्र। प्रबल। विकट। नशे में चूर, मदमाता। श्रेष्ठ। विषम। (पु०) हाथी का मद। मदमाता हाथी। ईख। दालचीनी। घमंड। नशा। मूंज। तेजपत्ता।

उत्कण्ठ—(वि०) [ब० स०] ऊपर को गर्दन उठाये हुये, उद्ग्रीव। तत्पर। उत्सुक। (पु०) मैथुन करने का एक ढंग।

उत्कण्ठा—(स्त्री०) [उद्√कण्ठ्+अ, टाप्] प्रबल इच्छा, लालसा। व्याकुलता। प्रिय से मिलने की उत्सुकता। रतिक्रिया का एक आसन।

उत्कण्ठित—(वि०) [उद्√कण्ठ्+क्त] उत्सुक। चिन्तित। शोकान्वित। किसी प्यारे पुरुष या प्रियवस्तु के मिलने की प्रबल इच्छा से युक्त।

उत्कण्ठिता—(स्त्री०) [उत्कण्ठित+टाप्] सङ्केत स्थान पर प्यारे के न आने पर तर्क-वितर्क करने वाली नायिका, आठ प्रकार की नायिकाओं में से एक।

उत्कन्धर—(वि०) [उन्नता कन्धरा यस्य ब० स०] गर्दन उठाये हुए।

उत्कम्प—(वि० [ब० स०] काँपते हुए। (पु०) [प्रा० स०] कँपकपी।

उत्कम्पन—(न०) [प्रा० स०] कँपकपी, सिहरन।

उत्कर—(पु०) [उद्√कृ+अप्] ढेर, समूह। टाल, गोला। कूड़ा-कर्कट।

उत्करिका—(स्त्री०) गुड़, घी और दूध की बनी मिठाई।

उत्कर्कर—(पु०) [ब० स०] एक प्रकार का बाजा।

उत्कर्ण—(वि०) [ब० स०] जो कान खड़े किये हुए हो। सुनने को उत्सुक।

उत्कर्तन—(न०) [उद्√कृत्+ल्युट्] काटना। फाड़ना। उन्मूलन।

उत्कर्ष—(पु०) [उद्√कृष्+घञ्] उखाड़ना। ऊपर खींच लेना। उन्नति। प्रसिद्धि। समृद्धि। आधिक्य, अधिकाई। सर्वोत्कृष्टता। अहङ्कार। हर्ष।

उत्कर्षण—(न०) [उद् √कृष्+ल्युट्] ऊपर खींचना। उखाड़ लेना, उचेल लेना।

उत्कल—(पु०) [उद्√कल्+अच्] वर्तमान उड़ीसा। [उत्क: सन् लाति, उत्क√ला+ क] बहेलिया, चिड़ीमार। कुली।

उत्कलाप—(वि०) [ब० स०] पूँछ उठाये और फैलाये हुये।

उत्कलिका—(स्त्री०) [उद्√कल+वुन्] उत्कण्ठा। चिन्ता। विकलता। हेला, कामक्रीड़ा। कली। लहर।—**प्राय**-(न०) ऐसी गद्य-रचना जिसमें कर्णकटु अक्षरों और लंबे-लंबे समासों की भरमार हो। 'भवेदुत्कलिकाप्रायं समासाढ्यं दृढाक्षरम्'।

उत्कषण—(न०) [उद्√कष्+ल्युट्] फाड़ना। खींचना। जोतना, हल चलाना; 'सद्य: सीरोत्कषणसुरभि' मे० १६। मलना, रगड़ना।

उत्कार—(पु०) [उद्√कृ+घञ्] अनाज फटकना। अनाज की ढेरी लगाना। [उद्√कृ+अण्] अनाज बोने वाला।

उत्कारिका—(स्त्री०) पुलटिस।

उत्कास—(पु०), —**उत्कासन**-(न०),—**उत्कासिका**-(स्त्री०) [उत्क√कास्+ अण्] [उत्क√कास्+ल्युट्] [उत्क√कास्+ ण्वुल्] खखारना, खाँसना। गले का कफ साफ करना।

उत्किर—(वि०) [उद्√कृ+श] गुफना की तरह घुमाया हुआ। हवा में उड़ाया हुआ।

उत्कीर्ण—(वि०) [उद्√कृ+क्त] छितराया या ढेर किया हुआ। खुदा हुआ। छिदा हुआ।

उत्कीर्तन—(न०) [उद्√कृत्+ल्युट्] चिल्लाना। घोषणा करना। प्रशंसा या स्तुति करना।

उत्कुट—(न०) [ब० स०] उत्तान, लेटना, चित्त लेटना ।

उत्कुण—(पु०) [उद्√कुण्+क] खटमल । जूँ ।

उत्कुल—(वि०) [अत्या० स०] पतित, भ्रष्ट । अपने कुल को बदनाम करने वाला ।

उत्कूज—(पु०) [प्रा० स०] कोकिल की कूक ।

उत्कूट—(पु०) [ब० स०] छाता, छतरी ।

उत्कूर्दन—(न०) [उद्√कूर्द्+ल्युट्] उछाल, कुलाँच ।

उत्कूल—(वि०) [अत्या० स०] किनारे पर पहुँचने वाला । तट को लाँघकर बहने वाला ।

उत्कृष्ट—[उद्√कृष्+क्त] ऊपर उठाया हुआ । उन्नत । सर्वोत्तम । उत्तम । जोता हुआ, हल चलाया हुआ ।

उत्कोच—(पु०) [उद्√कुच्+घञ्] घूस, रिश्वत ।

उत्कोचक—(पु०) [उत्कोच+कन्] घूस । (वि०) [उद्+√ कुच्+ण्वुल्] घूसखोर, रिश्वती ।

उत्क्रम—(पु०) [उद्√क्रम+घञ्, अवृद्धि] ऊपर जाना, चढ़ना । क्रमोन्नति । बाहर जाना । प्रस्थान । क्रमभंग । नियमविरुद्धता, विरुद्धाचरण । उछाल, छलाँग ।

उत्क्रमण—(न०) [उद्√क्रम्+ल्युट्] ऊपर जाना, चढ़ना । बढ़ जाना । प्रस्थान । मृत्यु, जीव का शरीर से वियोग ।

उत्क्रान्ति—(स्त्री०) [उद्√क्रम्+क्तिन्] उछाल । बहिर्निष्क्रमण ।

उत्क्राम—(पु०) (उद्√क्रम्+घञ्] ऊपर या बाहर जाना । प्रस्थान । अतिक्रमण । विरुद्धता । नियम का भंगकरण ।

उत्क्रोश—(पु०) [उद्√क्रुश्+अच्] चिल्लपों, शोरगुल, कोलाहल । घोषणा, ढिंढोरा । कुररी ।

उत्क्लेद—(पु०) [उद्√क्लिद्+घञ्] तर होना, भीगना ।

उत्क्लेश—(पु०) [उद्√क्लिश्+घञ्] घबड़ाहट, अशान्ति, विकलता । विचारों की गड़बड़ी । रोग, बीमारी, विशेष कर समुद्री बीमारी ।

उत्क्षिप्त—(उद्√क्षिप्+क्त] उछाला हुआ, लुकाया हुआ । रोका हुआ या रुका हुआ । पकड़ा हुआ । ढाया हुआ, गिराया हुआ, उजाड़ा हुआ । दूर फेंका हुआ । (पु०) धतूरे का पौधा ।

उत्क्षिप्तिका—(स्त्री०) [उत्क्षिप्त+टाप्,कन्, इत्व] आभूषण विशेष जो कान के ऊपरी भाग में पहिना जाता है, बाला ।

उत्क्षेप—(पु०) [उद्√क्षिप्+घञ्] उछाल, लुकान । ऊपर उछाली जाने वाली वस्तु । प्रेषण, रवानगी । वमन । कनपटी के ऊपर का सिर का भाग ।

उत्क्षेपक—(वि०) [उद्√क्षिप्+ण्वुल्] फेंकने, उछालने, भेजने वाला । (पु०) कपड़ों का चोर ।

उत्क्षेपण—(न०) [उद्√क्षिप्+ल्युट्] उछाल, लुकान । वमन । रवानगी, प्रेषण । सूप । पंखा ।

उत्खचित—(वि०)[उद्√खच्+क्त] मिला कर गुँथा, बुना हुआ; 'कुसुमोत्खचितान् वलीभृतः' र. ८.५३ । जड़ा हुआ ।

उत्खला—(स्त्री०) [उद्√खल्+अच्—टाप्] मुरा नामक गंधद्रव्य ।

उत्खात—[उद्√खन्+क्त] खोदा हुआ । उखाड़ा हुआ । खींच कर बाहर निकाला हुआ । जड़ से उखाड़ा हुआ । नष्ट किया हुआ । (न०) छेद, बिल । गढ़ा । ऊबड़-खाबड़ जमीन ।—**केलि**-(स्त्री०) क्रीड़ा के लिये सींग या हाथी के दाँत से जमीन को खोदना ।

उत्खातिन्—(वि०) [उत्खात+इनि] जो

समतल न हो, ऊबड़-खाबड़ । नाश करने वाला ।

उत्त—(वि०) [√उन्द्+क्त] भीगा हुआ, नम, तर।

उत्तंस—(पुं०) [उद्√तंस्+अच्] शिखा, चोटी, सीसफूल । कान की बाली या झुमका ।

उत्तंसित—(वि०) [उत्तंस+इतच्] कानों में बाली पहिने हुए, चोटी पर रखे या पहिने हुए ।

उत्तट—(वि०) [अत्या० स०] तटों के ऊपर निकलकर बहने वाला (नद या नदी) ।

उत्तप्त--[उद्√तप्+क्त] जला हुआ । गर्म । सूखा, शुष्क । (न०) सूखा मांस ।

उत्तम—(वि०) [उद्+तमप्] सर्वोत्कृष्ट, सबसे अच्छा । मुख्य, प्रधान । सबसे बड़ा । (पुं०) विष्णु । ध्रुव का सौतेला भाई ।—**अङ्ग**, (**उत्तमाङ्ग**)- (न०) शिर, सिर।—**अर्ध**, (**उत्तमार्ध**)-(पुं०) सब से अच्छा आधा भाग । अन्तिम अर्धभाग।—**अह**, (**उत्तमाह**)-(पुं०) अन्तिम या पिछला दिवस । सुदिन, शुभ दिन ।—**ऋण**,-**ऋणिक** (**उत्तमर्ण**, **उत्तमर्णिक**)-(पुं०) महाजन, कर्ज देने वाला। (अधमर्ण—कर्ज-दार का उल्टा)—**पुरुष**,—**पूरुष**-(पुं०) बोलने वाले का सूचक सर्वनाम (मैं, हम) । परमेश्वर । सबसे अच्छा आदमी ।—**श्लोक**-(वि०) सर्वोत्कृष्ट- कीर्ति-सम्पन्न, आदर्श ।-**साहस**-(पुं०) (न०) सबसे अधिक जुर्माना या अर्थदण्ड, एक हजार (और किसी किसी के मतानुसार) अस्सी हजार पण का जुर्माना ।

उत्तमा—(स्त्री०) [उत्तम+टाप्] सबसे अच्छी स्त्री ।

उत्तमीय—(वि०) [उत्तम+छ—ईय] सब से ऊपर का, सर्वश्रेष्ठ । मुख्य, प्रधान ।

उत्तम्भ—(पुं०), **उत्तम्भन**-(न०) [उद्√स्तम्भ्+घञ्], [उद्√स्तम्भ्+ल्युट्] सहारा, टेक; 'भुवनोत्तम्भनस्तम्भान्, काद० । रोकना ।

उत्तर—(वि०) [उत्तीर्यते प्रकृताभियोगोऽनेन इति उद्√तृ+अप्] उत्तर दिशा का, उत्तर दिशा में उत्पन्न । उच्चतर, अपेक्षाकृत ऊँचा । पिछला, बाद का । अन्त का । बाँया । श्रेष्ठ (लोकोत्तर) । अतीत । अधिक—जैसे अष्टोत्तर शत—सौ से आठ अधिक । शक्तिशाली । पार करने या किया जाने वाला । (न०) दक्षिण की उलटी दिशा । जवाब । बदला । वाद का जवाब, बचाव । (पुं०) राजा विराट् का पुत्र । भविष्यत् काल । विष्णु । शिव । भविष्यत् काल ।—**अधर**, (**उत्तराधर**)-(वि०) उच्चतर-नीचतर ।— **अधिकार**, (**उत्तराधिकार**)—(पुं०)-**अधिकारिता**, (**उत्तराधिकारिता**)-(स्त्री०)—**अधिकारित्व**, (**उत्तराधिकारित्व**)-(न०) किसी के (मरने के) बाद उसकी संपत्ति पाने का हक, वरासत ।—**अधिकारिन्** (**उत्तराधिकारिन्**-(वि०) किसी के बाद उसकी संपत्ति पाने का हकदार, वारिस ।—**अयन**, (**उत्तरायण**)-(न०) उत्तरी मार्ग, वे छः मास जिनमें सूर्य की गति उत्तर की ओर झुकी हुई होती है, मकर से मिथुन तक के सूर्य का छः मास का समय ।—**अर्ध** (**उत्तरार्ध**)-(न०) शरीर का नाभि के ऊपर का आधा भाग । उत्तरी भाग । पूर्वार्ध का उल्टा ।—**अह**, (**उत्तराह**)-(पुं०) अगला दिन, आने वाला कल । —**आभास**, (**उत्तराभास**)-(पुं०) झूठा जवाब । बहाना । टालमटूल ।—**आशा**, (**उत्तराशा**)- (स्त्री०) उत्तर दिशा । —०**अधिपति**, —०**पति**, (**उत्तराशाधिपति**) (**उत्तराशापति**)-(पुं०) कुबेर । —**आषाढा**, (**उत्तराषाढा**)-(स्त्री०) २१ वाँ नक्षत्र ।—**आसङ्ग**, (**उत्तरासङ्ग**)-(पुं०) ऊपर पहनने का वस्त्र ।—**इतर**, (**उत्तरेतरा**)-(वि०) दक्षिण का ।—**इतरा**, (**उत्तरेतर**)-(स्त्री०) दक्षिण दिशा ।— **उत्तर**(**उत्तरोत्तर**)-(वि०) अधिक-अधिक । सदा बढ़ने वाला ।—(न०) जवाब का जवाब ।—**ओष्ठ**,

(उत्तरौष्ठ वा उत्तरोष्ठ)-(पुं०) ऊपर का ओंठ ।—काण्ड-(न०) (श्रीमद्वाल्मीकि) रामायण का सातवाँ काण्ड ।—काय-(पुं०) शरीर का ऊपरी भाग ।—काल-(पुं०) आगे आने वाला समय ।—कुरु-(पुं०) जंबुद्वीप का एक खंड,उत्तरकुरु का प्रदेश ।—कोश(स)-ल-(पुं०) अयोध्या के आस-पास का देश। —कोशला-(स्त्री०) अयोध्या नगरी ।—क्रिया-(स्त्री०) शवदाह के अनन्तर मृतक के निमित्त होनेवाला कर्म ।—च्छद-(पुं०) चादर, चद्दर । पलंगपोश ।—ज्योतिष-(पुं०) पश्चिम दिशा का एक देश ।—दायक-(वि०) जवाब देने वाला, जिम्मेदार । धृष्ट, ढीठ ।—दिश्-(स्त्री०) उत्तर दिशा ।—पक्ष-(पुं०) कृष्णपक्ष, अँधेरा पाख । पूर्वपक्ष का उल्टा, शास्त्रार्थ में वह सिद्धान्त जो विवाद-ग्रस्त विषय का खण्डन करे; 'प्रापयन् पवनव्या-धेगिरम् त्तरपक्षताम्' शि० २.१५ ।—पद-(न०) किसी यौगिक शब्द का अन्तिम शब्द ।—पाद-(पुं०) अर्जीदावे का दूसरा हिस्सा ।—प्रच्छद -(पुं०) रजाई, लिहाफ । तोशक ।—प्रत्युत्तर-(न०) वाद-प्रतिवाद, बहस । किसी मुकदमें में वकालत ।—फल्गुनी,—फाल्गुनी-(स्त्री०) १२वाँ नक्षत्र ।—भाद्र-पद,—भाद्रपदा-(स्त्री०) २६ वाँ नक्षत्र । —मीमांसा-(स्त्री०) वेदान्त दर्शन ।—वयस्,—वयस-(न०) बुढ़ापा ।—वस्त्र,—वासस्-(न०) ऊपर का वस्त्र, चुगा लबादा । —वादिन्-(पुं०) प्रतिवादी, मुद्दालेह, प्रति-पक्षी ।—साधक-(पुं०) सहायक । (वि०) योगांग को पूरा करने वाला । जवाब को साबित करने वाला ।

उत्तरङ्ग—(वि०) [ब० स०] ऊँची तरंगों वाला । अत्यन्त क्षुब्ध । (न०) [उत्तरम् अङ्गम् कर्म० स०, शाक० पररूप] चौखट के ऊपर की काठ की मेहराब ।

उत्तरतस्,—उत्तरात्-(अव्य०) [उत्तर+तस्] [उत्तर+आति] उत्तर से उत्तर दिशा तक । बाँई ओर । पीछे, बाद को ।

उत्तरत्र—(अव्य०) [उत्तर+त्रल्] पीछे से, बाद को । नीचे । अन्त में ।

उत्तरा—(स्त्री०) [उत्तर+टाप्] उत्तर दिशा । नक्षत्र विशेष । विराट की कन्या का नाम, जो अभिमन्यु को ब्याही गई थी ।

उत्तराहि—(अव्य०) [उत्तर+आहि] उत्तर दिशा की ओर ।

उत्तरीय,—उत्तरीयक-(न०) [उत्तर+छ—ईय], [उत्तरीय+कन्] ऊपर पहिनने का कपड़ा ।

उत्तरेण—(अव्य०) [उत्तर+एनप्] उत्तर की ओर, उत्तर दिशा की तरफ ।

उत्तरेद्युस्—(अव्य) [उत्तर+एद्युस्] अगले दिन के बाद, परसों, आने वाले कल के बाद ।

उत्तर्जन—(न०) [उच्चैः तर्जनम्, प्रा० स०] जोर की झाड़-फटकार । (वि०) [अत्या० स०] प्रचंड । भयंकर ।

उत्तान—(वि०) [उद्गतस्तानो विस्तारो यस्मात्, ब० स०] फैलाया हुआ । प्रसारित । चित पड़ा हुआ। सीधा । साफ दिल का । स्पष्ट वक्ता । उथला ।—पाद-(पुं०) एक पौरा-णिक राजा का नाम जिसका पुत्र भक्तशिरो-मणि ध्रुव था ।—पादज-(पुं०) ध्रुव का नाम ।— शय-(वि०) चित लेटा हुआ । (पुं०) स्तनंधय, दुधमुँहा बच्चा; 'कदा उत्तानशयः पुत्रकः जनयिष्यति मे हृदया-ह्लादम्' काद० ।

उत्ताप—(पुं०) [उद्√तप्+घञ्] बड़ी गर्मी, तपन । पीड़ा । कष्ट । घबड़ाहट । चिंता । उत्तेजना । शक्ति । प्रयास ।

उत्तार—(पुं०) [उद्√तॄ+घञ्] उतारा । ढुलाई, नाव पर लदे माल का उतारना । पिंड छूटना । वमन ।

उत्तारक—(पुं०) [उद्+तॄ+णिच्+ण्वुल्]

उद्धारक, तारने वाला। रक्षक, विपत्ति से छुड़ाने वाला।

उत्तारण—(न०) [उद्√तृ+णिच्+ल्युट्] नाव पर से तट पर उतारने की क्रिया। छुड़ाने की क्रिया। (पुं०) [उद्√तृ+णिच्+ल्युट्] विष्णु का नाम।

उत्ताल—(वि०) [प्रत्या० स०] बड़ा। मजबूत। उग्र। भयानक; 'उत्तालास्त इमे गभीरपयसः पुण्याः सरित्संगमाः' उत्त० २.३०। दुरूह, कठिन। ऊँचा, लंबा। (पुं०) लंगूर।

उत्तीर्ण—(वि०) [उद्√तृ+क्त] पार पहुँचा हुआ। जिसका उद्धार किया गया हो। कर्त्तव्य से युक्त। परीक्षा में पास। चतुर, अनुभवी।

उत्तुङ्ग—(वि०) [प्रा० स०] बहुत ऊँचा, अत्युन्नत।

उत्तुण्डित—(न०) खाल या मांस के भीतर घुसी काँटे की नोक।

उत्तुष—(पुं०) [ग० स०] भूसी निकाला हुआ अन्न। भुना हुआ अनाज।

उत्तेजक—(वि०) [उद्√तिज्+णिच्+ण्वुल्] उभाड़ने, बढ़ाने या उकसाने वाला। वेगों को तीव्र करने वाला।

उत्तेजन—(न०), **उत्तेजना**—(स्त्री०) [उद्√तिज्+णिच्+ल्युट्], [उद्√तिज्+णिच्+युच्] घबड़ाहट, विकलता। बढ़ावा, प्रोत्साहन। तेज करना। भड़काने वाला भाषण। प्रलोभन।

उत्तोरण—(वि०) [ब० स०] ऊँची या सीधी मेहराबों से सुसज्जित।

उत्तोलन—(न०) [उद्√तुल्+णिच्+ल्युट्] ऊपर उठाना। तौलना। —**यन्त्र**—(न०) रेल के डब्बे, भारी गाँठें आदि ऊपर उठाने वाला, सारस की चोंच जैसा, यन्त्र (क्रेन)।

उत्त्याग—(पुं०) [उद्√त्यज्+घञ्] छोड़ना, उत्सर्ग। उछाल। संसार से वैराग्य।

उत्त्रास—(पुं०) [प्रा० स०] बड़ा भारी भय या डर।

उत्थ—(वि०) [उद्√स्था+क] उत्पन्न हुआ, निकला। खड़ा हुआ, आगे आया हुआ।

उत्थान—(न०) [उद्√स्था+ल्युट्] उठने या खड़े होने की क्रिया। उदय। उत्पत्ति। समाधि से पुनरुत्थान। उद्योग, प्रयत्न, क्रियाशीलता। शक्ति, स्फूर्ति। हर्ष, आनन्द। युद्ध। सेना। आँगन। वह मण्डप जहाँ बलिदान किया जाय। सीमा, हद। सजग होना, जाग उठना। —**एकादशी**, (**उत्थानैकादशी**)—(स्त्री०) कार्तिक शुक्ला ११। इस दिन भगवान चार मास सो चुकने के बाद जागते हैं, इसको प्रबोधनी-एकादशी भी कहते हैं।

उत्थापन—(न०) [उद्+स्था+णिच्, पुक्+ल्युट्] उठाना, खड़ा करना। ऊँचा उठाना। भड़काना, उत्तेजित करना। जगाना। वमन करना। समाप्त करना। उत्पन्न करना। अभीष्ट राशि या उत्तर प्राप्त करना (गणित)।

उत्थित—[उद्√स्था+क्त] उठा हुआ। खड़ा हुआ। उत्पन्न। निकला हुआ। बढ़ा हुआ। मर्यादित, सीमाबद्ध। फैला हुआ, पसरा हुआ। —**अंगुलि**, (**उत्थितांगुलि**)—(पुं०) पसारा हुआ हाथ, खुला हुआ हाथ, फैलाया हुआ हाथ।

उत्थिति—(स्त्री०) [उद्√स्था+क्तिन्] उठान, ऊपर उठना, उन्नत होना।

उत्पक्ष्मन्—(वि०) [ब० स०] उलटे पलकों वाला।

उत्पत—(पुं०) [उद्√पत्+अच्] पक्षी, चिड़िया।

उत्पतन—(न०) [उद्√पत्+ल्युट्] ऊपर उड़ना। ऊपर उठना। कूदना। चढ़ना। उछलना। फेंकना। उछालना। उत्पत्ति।

उत्पताक—(वि०) [उत्तोलिता पताका यत्र ब० स०] झंडा उठाये हुए।

उत्पतिष्णु—(वि०) [उद्√ पत्+इष्णुच्] उड़ने वाला। ऊपर जाने वाला।

उत्पत्ति—(स्त्री०) [उद्√ पत्+क्तिन्] जन्म। उत्पादन। उत्पत्ति-स्थान, उद्गमस्थान। उदय होना। ऊपर चढ़ना। दृष्टिगोचर होना। लाभ, मुनाफा।—**व्यञ्जक**-(पुं०) दूसरा जन्म। [उपनयन-संस्कार दूसरा जन्म कहलाता है। क्योंकि 'द्विजन्मा' संज्ञा उपनयन संस्कार के बाद ही होती है।] द्विजन्मा का चिह्न।

उत्पथ—(पुं०) [प्रा० स०] असन्मार्ग खराब रास्ता। (वि०) [अत्या० स०] पथभ्रष्ट, भटका हुआ; 'उत्पथप्रतिपन्नस्य न्याय्यम्भवति शासनं, महा०।

उत्पन्न—[उद् √पद्+क्त] पैदा हुआ, निकला हुआ। उदय हुआ, उगा हुआ। प्राप्त किया हुआ।

उत्पल—(वि०) [उद्√पल्+अच्] कमल। नीलकमल। कुमुद। बिना साफ किये हुए अन्न की पीठी। पौधा। (वि०) मांसरहित, दुबला-पतला, लटा।—**अक्ष**, (उत्पलाक्ष), —**चक्षुस्**-(वि०) कमलनयन।—**पत्र**-(न०) कमल का पत्ता। स्त्री के नख की खरोंच से उत्पन्न घाव, नखक्षत। चंदन का तिलक। चौड़े फल का चाकू।

उत्पलिन्—(वि०) [उत्पल+इनि] बहु-कमल-पुष्प-सम्पन्न।

उत्पलिनी—(स्त्री०) [उत्पलिन् +ङीप्] कमल पुष्पों का ढेर। कमल का पौधा जिसमें कमल के फूल लगे हों। एक छंद।

उत्पवन—(न०) [उद्√पू+ल्युट्] निर्मल करना, शुद्ध करना। पानी छानना। साफ करने का यंत्र। कुश से अग्नि पर घी छिड़कना।

उत्पाट—(पुं०) [उद्√पट्+णिच्+घञ्] उखाड़ना, उचेलना। जड़-डाली सहित नष्ट करना। कान के भीतर का एक रोग।

उत्पाटन— (न०) [उद्√पट्+णिच्+ ल्युट्] जड़ से उखाड़ डालना, जड़-डाली सहित नष्ट कर डालना।

उत्पाटिका—(स्त्री०) [उद्√पट्+णिच्+ ण्वुल्—टाप्, इत्व] वृक्ष की छाल।

उत्पाटिन्—(वि०) [उद्√पट्+णिच्+ णिनि] उन्मूलन करने वाला, उखाड़ डालने वाला।

उत्पात—(पुं०) [उद्√पत्+घञ्] उछाल, कुलाँच। उड़ान। प्रतिक्षेप। उठान, उभाड़। अशुभसूचक शकुन। ग्रहण, भूकम्प आदि अशुभ-सूचक घटनाएँ।—**पवन**,—**वात**,— **वातालि**-(पुं०) बवंडर, तूफान।

उत्पाद—(वि०) [ब० स०] ऊपर को पैर किये हुये। (पुं०) [उद्√पद्+घञ्] उत्पत्ति, प्राकट्य, प्रादुर्भाव।—**शय**,— **शयन**- (पुं०) शिशु। टिट्टिभ पक्षी।

उत्पादक—(वि०) [स्त्री०—उत्पादिका] [उद्√पद्+णिच्- ण्वुल्] पैदा करने वाला। प्रभावोत्पादक। पूरा करने वाला। (पुं०) जनक, पिता। [ऊर्ध्वं स्थिताः पादा अस्य ब० स०, उत्पाद+कन्] शरभ नामक पशु (इसके पीठ पर भी पाँव होते हैं)। (न०) [उद्√ पद्+णिच्+ण्वुल्] उद्गम स्थान, कारण।

उत्पादन—(न०) [उद्√पद्+णिच् + ल्युट्] पैदा करना उपजाना।

उत्पादिन्—(वि०) [उद्√पद्+णिच्+ णिनि] उत्पन्न करने वाला।

उत्पादिका—(स्त्री०) [उद्√पद्+णिच्+ ण्वुल्, टाप्, इत्व] एक कीट, दीमक। जननी, माता, पैदा करने वाली।

उत्पाली—(स्त्री०) [उद्√ पल्+घञ्—ङीप्] तन्दुरुस्ती, स्वास्थ्य।

उत्पाव—(पुं०)[उत्√पू+घञ्] शुद्ध घृत।

उत्पिञ्जर,—**उत्पिञ्जल**- (वि०)[अत्या० स०] जो पिंजड़े में बन्द न हो। गड़-बड़। अत्यन्त घबड़ाया हुआ।

उत्पीड—(पुं०)[उद् √पीड्+घञ्] दबाव।

प्रबल या प्रचण्ड बहाव; 'नयनसलिलोत्पीड-रुद्धावकाशां' मे० ९१। फेन, झाग।

उत्पीडन—(न०) [उद्√पीड्+णिच्+ल्युट्] दबाना। सताना, ज़ुल्म करना।

उत्पुच्छ—(वि०) [ब० स०] पूँछ उठाये हुए।

उत्पुलक—(वि०) [ब० स०] रोमाञ्चित, जिसके रोंगटे खड़े हों। प्रसन्न, हर्षित।

उत्प्रवास—(पु०) [उद्-प्र√वस्+घञ्] एक देश छोड़कर अन्य देश में जा बसना (एमीग्रेशन)।

उत्प्रवासिन्—(वि०) [उत्प्रवास+इनि] एक देश छोड़कर अन्य देश में जा बसने वाला (एमीग्रेंट)।

उत्प्रभ—(वि०) [ब० स०] चमकीला, प्रकाशमान। (पु०) दहकती हुई आग।

उत्प्रसव—(पु०) [प्रा० स०] गर्भपात या गर्भस्राव।

उत्प्रास—(पु०), **उत्प्रासन**—(न०) [उद्-प्र√अस्+घञ्], [उद्-प्र√अस्+ल्युट्] ज़ोर से फेंकना। हँसी-मज़ाक। अट्टहास। उपहास, मज़ाक। ताना, व्यङ्ग।

उत्प्रेक्षण—(न०) [उद्-प्र√ईक्ष्+ल्युट्] चितवन, अवलोकन। ऊपर की ओर ताकना। अनुमान, कल्पना। तुलना।

उत्प्रेक्षा—(स्त्री०) [उद्-प्र√ईक्ष्+अ] अनुमान, कल्पना। असावधानी, उदासीनता। एक अर्थालङ्कार इसमें भेदज्ञानपूर्वक उपमेय में उपमान की प्रतीति होती है।

उत्प्लव—(पु०) [उद्√प्लु+अप्] उछाल, कुदान। फलांग, छलांग।

उत्प्लवन—(न०) [उद्√प्लु+ल्युट्] कूदना, उछलना। कुश से तेल, घी, आदि का ऊपर का मैल निकालना।

उत्प्लवा—(स्त्री०) [उद्√प्लु+अच्, टाप्] नाव, किश्ती।

उत्फल—(न०) [प्रा० स०) उत्तम फल।

उत्फाल—(पु०) [उद्√फल्+घञ्] उछाल। छलांग, फलांग। कूदने को उद्यत होने का एक ढंग।

उत्फुल्ल—(वि०) [उद्√फुल्+क्त] खिला हुआ। बिलकुल खुला हुआ, फैला हुआ। फूला हुआ। आकार में बढ़ा हुआ। उत्तान लेटा हुआ। (न०) योनि। एक रतिबंध।

उत्स—(पु०) [√उन्द्+स, कित्, नलोप] सोता, स्रोत। जल का स्थान।

उत्सङ्ग—(पु०) [उद्+सञ्ज्+घञ्] गोद, अङ्क। आलिङ्गन। सामीप्य, पड़ोस। सतह, तल; "दृषदो वासितोत्सङ्गाः" र० ४.७४। ढाल। नितंब के ऊपर का भाग। चोटी, शिखर। घर की छत। संपर्क।

उत्सङ्गित—(वि०) [उत्सङ्ग+इतच्] संपर्क में लाया हुआ। गोद में लिया हुआ, आलिंगित

उत्सञ्जन—(न०) [उद्√सञ्ज्+ल्युट्] उछाल या लुकान। ऊपर को उठाने की क्रिया।

उत्सन्न—[उद्√सद्+क्त] सड़ा हुआ। नष्ट किया हुआ। उजाड़ा हुआ। जड़ से उखाड़ा हुआ। त्यागा हुआ। अकोसा हुआ, शापित। अप्रचलित। लुप्त।

उत्सर्ग—(पु०) [उद्√सृज्+घञ्] त्याग। उड़ेलना, गिराना; 'तोयोत्सर्गद्रुततरगतिः' मे० १९। भेंट, अर्पण (करना) व्यय करना। छोड़ देना। [जैसे वृषोत्सर्ग में]। बलिदान। विष्ठा या मल का त्याग। (अध्ययन या किसी व्रत की) समाप्ति। साधारण नियम (अपवाद का उल्टा)। योनि, भग।

उत्सर्जन—(न०) [उद्√सृज्+ल्युट्] उत्सर्ग करना। दान करना। (वैदिक) अध्ययन को स्थगित करना। वैदिक अध्ययन बंद करने के उपलक्ष में एक गृहकर्म, यह वर्ष में दो बार अर्थात् पूस और श्रावण में किया जाता है।

उत्सर्प—(पुं०), **उत्सर्पण**—(न०) [उद्√सृप्+घञ्], [उद्√सृप्+ल्युट्] ऊपर जाना या ऊपर सरकना। फूलना। साँस लेना।

उत्सर्या—(स्त्री०) [उद्√सृ+यत्, टाप्] बैल के समागम के योग्य गाय, अलंग पर आयी हुई गाय।

उत्सव—(पुं०) [उद्√सू+अप्] मङ्गल-कार्य, उत्साह। आनन्द, हर्ष। ऊँचाई। क्रोध। इच्छा। ग्रंथ का खंड, भाग। कार्य-भार ग्रहण करना। कार्यारंभ। **—संकेत**—(बहुवचन पुं०) हिमालय में रहने वाली एक जंगली जाति के लोग। 'शरैरुत्सवसंकेतान्' रघु०।

उत्साद—(पुं०) [उद्√सद्+णिच्+घञ्] नाश। उजाड़।

उत्सादन—(न०) [उद्√सद्+णिच्+ल्युट्] नाश। सुगन्धि। घाव का भरना या उसका अच्छा होना। चढ़ना। ऊपर उठाना, ऊँचा करना। दो बार किसी खेत को अच्छी तरह जोतना।

उत्सारक—(पुं०) [उद्√सृ+णिच्+ण्वुल्] पहरेदार, चौकीदार। दरबान, द्वारपाल।

उत्सारण—(न०) [उद्√सृ+णिच्+ल्युट्] हटाना, दूर करना। अतिथि का सत्कार। (सवारी आदि से) उतरने में सहायता देना।

उत्साह—(पुं०) [उद्√सह्+घञ्] साहस, हिम्मत। उमङ्ग, उछाह, जोश, हौसला। दृढ़ अध्यवसाय। दृढ़ सङ्कल्प। शक्ति, सामर्थ्य। दृढ़ता। पराक्रम, बल। **—वर्धन**—(पुं०) वीर रस। (न०) वीरता। **—शक्ति**—(स्त्री०) दृढ़ता। उछाह। आक्रमण और युद्ध करने की शक्ति। **—सिद्धि**—(स्त्री०) उत्साहशक्ति से सिद्ध होने वाला कार्य।

उत्साहन—(न०) [उद्√सह्+णिच्+ल्युट्] उद्योग, प्रयत्न। अध्यवसाय। उत्साह-वृद्धि, हौसला बढ़ाना, उभाड़ना।

उत्सिक्त—[उद्√सिच्+क्त] छिड़का हुआ। अभिमानी। क्रोधी। जल की बाढ़ से बढ़ा हुआ। अत्यधिक। चंचल। विकल।

उत्सुक—(वि०) [उद्√सू+क्विप्+कन् ह्रस्व] अत्यन्त इच्छावान्, उत्कण्ठित, चाह से आकुल। बेचैन, उद्विग्न, व्याकुल। अनु-रक्त। शोकान्वित

उत्सूत्र—(वि०) [अत्या० स०] डोरी से न बँधा हुआ, ढीला, बंधनमुक्त। अनियमित, गड़बड़। व्याकरण के नियम के विरुद्ध।

उत्सूर—(पुं०) [अत्या० स०] सन्ध्याकाल, झुटपुटा।

उत्सेक—(पुं०) [उद्√सिच्+घञ्] छिड़-काव, उड़ेलना। उमड़न, बढ़ती, अत्य-धिकता। अभिमान, शेखी।

उत्सेकिन्—(वि०) [उत्सेक+इनि] प्लावित करने वाला। उमड़ा हुआ। अभिमानी। क्रोधी।

उत्सेचन—(न०) [उद्√सिच्+ल्युट्] जल का छिड़काव या जल को उछालने की क्रिया।

उत्सेध—(पुं०) [उद्√सिध्+घञ्] उच्च-स्थान, ऊँचा स्थान। मुटाई, मोटापन; 'पीनता; पयोधरोत्सेध विशीर्णसंहति' कु० ५.८। शरीर। (न०) हनन, मारण।

उत्स्मय—(पुं०) [उद्√स्मि+अच्] मुस-क्यान, मुस्कराहट।

उत्स्वन—(वि०) [ब० स०] उच्चरव-कारी, दीर्घ स्वर वाला। (पुं०) [प्रा० स०] उच्चरव, दीर्घस्वर।

उद्—(अव्य०) [√उ+क्विप्, तुक्] यह एक उपसर्ग है जो क्रियाओं और संज्ञाओं में लगाया जाता है, अर्थ होता है: ऊपर। बाहर। अलग, पृथक्। उपार्जन, लाभ। लोक-प्रसिद्धि। कौतूहल। चिन्ता। मुक्ति। अनु-पस्थिति। फुलाना। बढ़ाना। खोलना। मुख्यता, शक्ति।

उदक्—(अव्य०) [उद्√अञ्च्+क्विन्] उत्तर दिशा की ओर ।

उदक—(न०) [√उन्द्+क्वुन्, नलोप नि०] जल, पानी ।—अन्त, (उदकान्त)-(पु०) तट, किनारा । समुद्रतट ।—अर्थिन् (उदकार्थिन्)-(वि०) प्यासा ।—आधार (उदकाधार)-(पु०) कुण्ड । हौद ।—उदञ्चन (उदकोदञ्चन)-(पु०) लोटा । कलसा ।—उदर (उदकोदर)-(न०) जलंधर रोग ।—कर्मन्, —कार्य-(न०)—क्रिया-(स्त्री०)—दान-(न०) पितरों को तृप्ति के लिये जल से तर्पण ।—कुम्भ-(पु०) जल का घड़ा या कलसा ।—कृच्छ्र-(न०) एक व्रत जिसमें महीने भर केवल जौ के सत्तू और पानी पर रहना होता है ।—गाह-(पु०) स्नान ।—ग्रहण-(न०) पीने का जल ।—द, —दातृ—दायिन्-(वि०) जलदाता, जल देने वाला । तर्पण करने वाला । वंश वाला, उत्तराधिकारी ।—धर- (पु०) बादल ।—शान्ति-(स्त्री०) मार्जनक्रिया । रोग दूर करने के लिये अभिमंत्रित जल छिड़कना ।—हार-(पु०) पनभरा, कहार ।

उदकल,—उदकिल-(वि०)[उदक+लच्], [उदक+इलच्] पनीला, जिसमें पानी का भाग विशेष हो ।

उदकेचर—(पु०) [अलुक् स०] जलजन्तु, पानी में रहने वाला जीव-जन्तु ।

उदक्त—(वि०) [उद्√अञ्च्+क्त] ऊपर उठा हुआ ।

उदक्य—(वि०) [उदक+यत्] जल की अपेक्षा रखने वाला ।

उदक्या—(स्त्री०) [उदक्य—टाप्] रजस्वला स्त्री ।

उदग्र—(वि०)[उद्गतम् अग्रं यस्य ब० स०] ऊँचा, उन्नत, उठा हुआ । बाहर निकला हुआ या बाहर की ओर बढ़ा हुआ । बड़ा । चौड़ा । वयोवृद्ध । मुख्य । प्रसिद्ध । प्रबल; 'उदग्रदशनांशुभिः' शि० २.२१ । असह्य । भयानक, डरावना । उद्विग्न । परमानन्दित ।

उदङ्क—(पु०) [उद्√अञ्च्+घञ्] चमड़े की बनी (तेल या घी रखने की) कुप्पी या कुप्पा ।

उदच्,—उदञ्च्-(वि०) [(पु०)—उदङ्; (न०)—उदक्, (स्त्री०)—उदीची] [उद्√अञ्च्+क्विन्] ऊपर की ओर घूमा हुआ या जाता हुआ । ऊपर का । उत्तरी या उत्तर की ओर घूमा हुआ । पिछला ।—अद्रि (उदगद्रि)-(पु०) हिमालय पर्वत ।—अयन (उदगयन)-(न०) उत्तरायण ।—आवृत्ति (उदगावृत्ति)-(स्त्री०) उत्तर से लौटने की क्रिया ।—पथ (उदक्पथ)-(पु०) उत्तर का एक देश ।—प्रवण (उदक्प्रवण) -(वि०) उत्तर की ओर झुका हुआ या ढालुआ ।—मुख (उदङ्मुख)-(वि०) उत्तर की ओर मुख किये हुए ।

उदञ्चन-(न०)[उद्√अञ्च्+ल्युट्] डोल, बाल्टी जिससे कुएँ से जल निकाला जाय । चढ़ाव । ढक्कन । ऊपर फेंकना ।

उदञ्जलि—(वि०) [ब० स०] दोनों हाथों से सम्पुट-सा बनाये और उंगलियों को ऊपर किये हुए हाथों वाला ।

उदण्डपाल—(पु०) [अत्या० स०] मत्स्य । सर्प विशेष ।

उदन्—(न०) [उदकशब्दस्य उदनादेशः] जल, पानी । [अन्य शब्दों के साथ जब इसका योग किया जाता है, तब इसके 'न्' का लोप हो जाता है । [जैसे—उदधि]—कुम्भ-(पु०) घड़ा, कलसा ।—ज-(वि०) पानी का ।—धान-(पु०) पानी का घड़ा । बादल ।—धि-(पु०) समुद्र । घड़ा । बादल । —०कन्या-(स्त्री०) लक्ष्मी । द्वारकापुरी ।— —०मेखला—(स्त्री०) पृथ्वी ।—पात्र-(न०)—पात्री-(स्त्री०) जल भरने का बर्तन ।—पान-(पु० न०) कुएँ के समीप का हौद । कूप ।—पेष-(न०) लेई, चिपकाने की वस्तु ।—बिन्दु—(पु०) जल की

बूँद ।—**भार**–(पुं॰) जल ढोने वाला अर्थात् बादल ।—**मन्थ**–(पुं॰) यवागू या यव का विशेष रीति से बनाया हुआ जल, जो रोगी को पथ्य में दिया जाता है, जौ की माँडी ।—**मान**–(पुं॰ न॰) आढक का पचासवाँ भाग ।—**मेघ**–(पुं॰) वृष्टि करने वाला बादल ।—**वज्र**–(पुं॰) ओलों की वर्षा । फुहारा ।—**वास**–(पुं॰) जल में रहना या जल में खड़ा रहना ।—**वाह**–(वि॰) जल लाने वाला । (पुं॰) मेघ ।—**वाहन**–(न॰) जलपात्र ।—**शराव**–(पुं॰) जल से भरा घड़ा ।—**श्वित्**–(न॰) छाछ या मट्ठा जिसमें १ हिस्सा जल और २ हिस्सा मट्ठा हो ।—**हरण**–(पुं॰) पानी निकालने का पात्र ।

उदन्त—(पुं॰) [उद्गतोऽन्तो निर्णयो यस्मात् ब॰ स॰] समाचार, खबर; 'कान्तोदन्तः सुहृदुपनतः संगमात्किञ्चिदूनः' मे॰ १०० । साधु पुरुष ।

उदन्तक—(पुं॰) [उदन्त+कन्] समाचार, वृत्तांत ।

उदन्तिका—(स्त्री॰) [उद्√अन्त्+णिच् +ण्वुल्–टाप्, इत्व] सन्तोष, तृप्ति ।

उदन्य—(वि॰) [उदक+क्यच् नि॰ उदन् आदेश+क्विप्] प्यासा, तृषित ।

उदन्या—(स्त्री॰) [उदक+ क्यच् नि॰ उदन् आदेश+अङ–टाप्] प्यास, तृषा ।

उदन्वत्—(पुं॰) [उदक+मतुप्, उदन्भावः, मस्य वः] समुद्र, सागर ।

उदय—(पुं॰) [उद्√इ+अच्] उगना । उठना । आगमन (जैसे धनोदय) । उपज (जैसे फलोदय) । सृष्टि । उदयगिरि । उन्नति, अभ्युदय । परिणाम । पूर्णता । लाभ, नफा । आमदनी, आय । मालगुजारी । ब्याज, सूद । कान्ति, चमक ।—**अचल** (**उदयाचल**),—**अद्रि** (**उदयाद्रि**),—**गिरि**,—**पर्वत**,—**शैल**–(पुं॰) उदयाचल नामक पर्वत जो पूर्व दिशा में है ।—**प्रस्थ**–(पुं॰) उदयाचल की अधित्यका या पठार ।

उदयन—(न॰) [उद्√इ+ल्युट्] उगना, निकलना । ऊपर चढ़ना । परिणाम । (पुं॰) [उद्√इ+ल्यु] अगस्त्य का नाम । एक चन्द्रवंशी राजा का नाम, यह वत्सराज के नाम से प्रसिद्ध था और कौशाम्बी इसकी राजधानी थी । कुसुमाञ्जलिकार उदयनाचार्य ।

उदर—(न॰) [उद्√दृ+अप्] पेट । किसी वस्तु का भीतरी भाग, खोखलापन, पोलापन । जलोदर रोग के कारण पेट का बढ़ना । हनन, घात, हत्या ।—**आध्मान** (**उदराध्मान**)–(न॰) अफरा, अजीर्ण, आदि । पेट का फूलना ।—**आमय** (**उदरामय**)–(पुं॰) अतीसार, संग्रहणी, दस्तों की बीमारी ।—**आवर्त** (**उदरावर्त**)–(पुं॰) नाभि ।—**आवेष्ट** (**उदरावेष्ट**)–(पुं॰) फीता जैसा कीड़ा ।—**त्राण**–(न॰) कवच, बख्तर । पेटी, पेट पर बाँधने की पट्टी ।—**पिशाच**–(वि॰) बहुत खाने वाला, भोजनभट्ट ।—**सर्वस्व**–(पुं॰) भोजन-भट्ट या जिसे केवल पेट भरने ही की चिन्ता हो ।

उदरथि—(पुं॰) [उद्√ऋ + अथिन्] समुद्र । सूर्य ।

उदरम्भरि—(वि॰) [उदर√भृ+इन्, मुमागम] अपने पेट का भरण-पोषण करने वाला, स्वार्थी । भोजनभट्ट ।

उदरवत्, **उदरिक**, **उदरिल**—(वि॰) [उदर+मतुप्, वत्व], [उदर+ठन्–इक], [उदर+इलच्] बड़पिट्टू, बड़े पेट वाला, तोंदिल ।

उदरिन्—[उदर+इनि] बड़े पेट या तोंद वाला, मोटा ।

उदरिणी—(स्त्री॰) [उदरिन्+ङीप्] गर्भवती स्त्री ।

उदर्क—(पुं॰) [उद्√अर्क् वा√ अर्च्+घञ्] समाप्ति, अन्त, उपसंहार । परिणाम, फल, किसी कर्म का भावी परिणाम । आने वाला काल, भविष्यत् काल; 'किन्तु कल्याणोदर्कं भविष्यति' उत्त॰ ४ ।

उदर्चिस्—(वि०) [उद् ऊर्ध्वम् अर्चिः शिखा यस्य ब० स०] ऊपर की ओर ज्वाला या कांति विकीर्ण करने वाला। (पुं०) अग्नि। कामदेव। शिव।

उदलावणिक—(वि०) उदकीभूतं लवणम् उदलवणम् ततः ठक्—इक] नमकीन।

उदहार—(पुं०) [उदक√हृ+अण्, उप० स० उदादेश] बादल।

उदवसित—(न०) [उद्—अव√सि+क्त] घर, गृह।

उदश्रु—(वि०) [ब० स०] जो फूट-फूट कर रोता हो, जिसकी आँखों से अविरल अश्रुधारा प्रवाहित हो।

उदसन—(न०) [उद्√अस+ल्युट्] फेंकना। उठाना। बनाकर खड़ा करना। निकालना।

उदात्त—(वि०) [उद्—आ√दा+क्त] ऊँचा। कुलीन। उदार। प्रख्यात। प्रिय। ऊँचे स्वर से उच्चारण किया हुआ। (पुं०) दान। एक प्रकार का बाजा, ढोल। स्वर के तीन भेदों में से एक, ऊँचा स्वर। (न०) अलङ्कार विशेष, इसमें सम्भाव्य विभूति का वर्णन खूब बढ़ा-बढ़ाकर किया जाता है।

उदान—(पुं०) [उद्√अन्+घञ्] शरीरस्थ पाँच वायु में से एक, यह कण्ठ में रहती है, इसको वायु हृदय से कण्ठ और तालु तक तथा सिर से भ्रूमध्य तक मानी गयी है, डकार और छींक इसी से आती हैं। नाभि। बरुनी। एक सर्प।

उदायुध—(वि०) [ब० स०] हथियार उठाये हुए।

उदार—(वि०) [उद्—आ√रा+क] दाता, दानशील। महान्, श्रेष्ठ। ऊँचे दिल का, असङ्कीर्ण; 'उदारचरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम्' हितो०। ईमानदार, सच्चा। अच्छा, भला। वाग्मी। विशाल। कान्तियुक्त, चमकीला। बढ़िया पोशाक पहिनने वाला। सुन्दर, मनोहर। धीर।—**आत्मन्**, (**उदारात्मन्**), —**चेतस्**,—**मनस्**—(वि०) ऊँचे दिल वाला, महामना।—**दर्शन**—(वि०) देखने में भला लगने वाला।—**धी**—(वि०) प्रतिभाशाली। ऊँचे दिल वाला। (पुं०) विष्णु।

उदारता—(स्त्री०) [उदार+तल्, टाप्] दानशीलता, उदार स्वभाव।

उदास—(पुं०) [उद्√अस्+घञ्] ऊपर फेंकना। हटाना। [उद्√आस्+घञ्] उपेक्षा। तटस्थता। संन्यास। (वि०) [ब० स०] खिन्नचित्त, दुःखी।

उदासिन्—(वि०) [उद्√आस्+णिनि] तटस्थ। निरपेक्ष। विरक्त।

उदासीन—(वि०) [उद्√आस्+शानच्] तटस्थ, जो विरोधी पक्षों में से किसी की ओर न हो। अपरिचित। सामान्य रूप से सब से परिचित।

उदास्थित—(पुं०) [उद्—आ√स्था+क्त पर्यवेक्षक, दरोगा। द्वारपाल, दरबान। जासूस, भेदिया। व्रतभङ्ग यती।

उदाहरण—(न०) [उद्—आ√हृ+ल्युट्] वर्णन। कथन। निरूपण। पाठ करना। वार्तालाप आरम्भ करना। दृष्टान्त, मिसाल। (न्यायदर्शन) वाक्य के पाँच अवयवों में से तीसरा, इसमें साध्य के साथ साधर्म्य या वैधर्म्य होता है। अर्थान्तरन्यास अलङ्कार।

उदाहार—(पुं०) [उद्—आ√हृ+घञ्] दृष्टान्त, मिसाल। भाषण का आरम्भिक भाग।

उदित—[उद्√इ+क्त] उगा हुआ, ऊपर चढ़ा हुआ। ऊँचा, लंबा। बढ़ा हुआ। उत्पन्न हुआ, पैदा हुआ। [√+वद्+क्त] कथित, कहा हुआ।

उदीक्षण—(न०) [उद्√ईक्ष्+ल्युट्] खोज, तलाश। चितवन, अवलोकन।

उदीची—(स्त्री०) [उद्√अञ्च+क्विन्, ङीप्] उत्तर दिशा; 'तेनोदीचीं दिशमनुसरेः' मे० ५७।

उदीचीन—(वि०) [उदीची+ख—ईन] उत्तर दिशा सम्बन्धी । उत्तर की ओर झुका या मुड़ा हुआ । उत्तर का ।

उदीच्य—(वि०) [उदीची+यत्]उत्तर का, उत्तर का रहने वाला । (पुं०) सरस्वती नदी के उत्तर-पश्चिम वाला देश । (बहुवचन में) उक्त देश निवासी । (न०) एक प्रकार की सुगन्धित वस्तु ।

उदीप—(पुं०) [उद्गता आपो यतः ब०-स०] समा० अच्, ईत्व] बाढ़ । (वि०) जल-प्लावित ।

उदीरण—(न०) [उद्√ईर्+ल्युट्] कथन । उच्चारण । फेंकना । पठाना । बिदा करना ।

उदीर्ण—[उद्√ऋ+क्त] उदित, उगा हुआ । उत्पन्न । उठा हुआ । तना हुआ । खिला हुआ ।

उदुम्बर—(पुं०) [=उडुम्बर] गूलर का पेड़ ।

उदूखल—(न०) [ऊर्ध्वं खनति इति√खा+क, पृषो० नि०] उलूखल, ओखली ।

उदूढा—(स्त्री०) [उद्√वह्+क्त, टाप्] विवाहित स्त्री ।

उदेजय—(वि०) [उद्√एज्+णिच्+खश्] हिलाने वाला, कँपाने वाला । भयंकर: 'उदेजयान् भूतगणान् न्यषेधीत्' भट्टि० १.१५ ।

उद्गत—(वि०) [उद्√गम्+क्त] ऊपर आया हुआ । उठा हुआ । फेंका हुआ । वमन किया हुआ । उत्पन्न ।

उद्गति—(स्त्री०) [उद्√गम्+क्तिन्] उठान, उगना । चढ़ाव । निकास, उद्गमस्थान । वमन ।

उद्गन्धि—(वि०) [ब० स०, इत्व] खुशबूदार । उग्रगन्ध वाला ।

उद्गम—(पुं०) [उद्√गम्+घञ्] उदय, आविर्भाव । उत्पत्ति का स्थान, निकास । सीधे खड़े होना, जैसे रोमोद्गमः । बाहर जाना, प्रस्थान । उत्पत्ति । ऊँचाई । पौधे का अँखुआ । वमन, छाँट, उगलन ।

उद्गमन—(न०) [उद्√गम्+ल्युट्] उदय, आविर्भाव ।

उद्गमनीय—(वि०)[उद्√गम्+अनीयर्] ऊर्ध्व गमन के योग्य । (न०) धुले हुए कपड़े का जोड़ा ।

उद्गाढ—(वि०) [उद्√गाह्+क्त] गहरा, सघन । अत्यन्त, बहुत । (न०) अत्यन्त-अधिकता ।

उद्गातृ—(पुं०) [उद्√गै+तृच] यज्ञ में सामगान करने वाला ऋत्विज ।

उद्गार—(पुं०) [उद्√गॄ+घञ्] उबाल, उफान । वमन । थूक, खखार, डकार ।

उद्गारिन्—(वि०) [उद्√ गॄ+णिनि] डकार लेने या वमन करने वाला । ऊपर जाने वाला । बाहर निकालने वाला ।

उद्गिरण—(न०) [उद्√गॄ+ल्युट्] उगलना । वमन । थार, राल । डकार । उखाड़-पछाड़ ।

उद्गीति—(स्त्री०)[उद्√गै+क्तिन्] उच्च-स्वर का गान । सामगान । आर्याछन्द का एक भेद ।

उद्गीथ—(पुं०)[उद्√गै+थक्] सामगान । सामवेद का दूसरा भाग । ओंकार, परब्रह्म ।

उद्गीर्ण—(वि०)[उद्√गॄ+क्त] वमन किया हुआ । उगला हुआ । उड़ेला हुआ, बाहर निकला हुआ ।

उद्गूर्ण—(वि०) [उद्√गुर्+क्त] ऊपर उठाया हुआ । उत्तेजित । क्षुब्ध ।

उद्ग्रन्थ—(पुं०) [उद्√ग्रन्थ्+घञ्] अध्याय परिच्छेद ।

उद्ग्रन्थि—(वि०)[ब० स०] न बँधा हुआ । सांसारिक बंधनों से मुक्त । असंग ।

उद्ग्रह—(पुं०),**उद्ग्रहण**—(न०) [उद्√ग्रह्+घञ्] [उद्√ग्रह+ल्युट] उठाना, ऊपर करना । ऐसा कार्य जो धर्मानुष्ठान अथवा अन्य किसी अनुष्ठान से पूरा हो सके । डकार । अधिकारपूर्वक कर आदि वसूल करना, उगाहना (लेवी) ।

उद्ग्राह—(पु०) [उद्√ग्रह्+घञ्] उन्नयन, उठा लेना । प्रत्युत्तर । प्रतिवाद ।

उद्ग्राहणिका—(स्त्री०) [उद्√ग्रह्+णिच्+युच्—अन+टाप्+क, इत्व] वादी का जवाब, प्रतिवाद ।

उद्ग्राहित—[उद्√ग्रह् + णिच्+क्त] उठाया हुआ, ऊपर किया हुआ । ले जाया हुआ । सर्वोत्तम । रखा हुआ । बँधा हुआ । स्मरण किया हुआ ।

उद्ग्रीव—उद्ग्रीविन् (वि०) [उन्नता ग्रीवा यस्य ब० स०], [उन्नता ग्रीवा प्रा० स०, उद्ग्रीवा + इनि] गर्दन उठाए हुए ।

उद्घ—(पु०) [उद्√हन्+ड] उत्तमता । प्रसन्नता, हर्ष । अञ्जलि । अग्नि । आदर्श, नमूना । शरीरस्थित वायु विशेष ।

उद्घट्टन—(न०) **उद्घट्टना**–(स्त्री०) [उद्√घट्ट् + ल्युट्], [उद्√घट्ट्+युच्] खोलना । खंड । संघर्ष ।

उद्घन—(पु०) [उद्√हन्+अप्] वह लकड़ी जिस पर रखकर बढ़ई लकड़ी गढ़ता है, ठीहा । 'लौहोद्घनघनस्कन्धा ललितोपघना स्त्रियं' भट्टि० ७.६२ ।

उद्घर्षण—(न०) [उद्√घृष्+ल्युट्] रगड़ना । खुरचना । घोटना । सोंटा ।

उद्घाट—(पु०)[उद्√घट्+घञ्] खोलना । चुंगी की चौकी ।

उद्घाटक—(पु०) [उद्√घट् + णिच्+ण्वुल्] चाबी, कुंजी । कुएँ पर की रस्सी और डोल ।

उद्घाटन—(न०) [उद्√घट्+णिच्+ल्युट्] खोलना, उघारना । प्रकट करना, प्रकाशित करना । उठाना । चाबी, कुंजी । कुए की रस्सी और डोल, गिरी, चरखी ।

उद्घात—(पु०)[उद्√हन्+घञ्]आरम्भ । हुमाला । ताड़ना । प्रहार । झटका जो गाड़ी में बैठने पर लगता है । उठान । लाठी । हथियार । अध्याय ।

उद्घोष—(पु०)[उद्√घुष्+घञ्]घोषणा, ढिंढोरा । जनता में चलने वाली बात ।

उद्दंश—(पु०)[उद्√दंश्+अच्] खटमल । जूँ । मच्छड़ ।

उद्दण्ड—(वि०) [अत्या० स०] न दबने वाला, अक्खड़, प्रचंड ।—**पाल**–(पु०) दण्डविधानकर्ता या दण्ड देने वाला । मत्स्य विशेष । सर्प विशेष ।

उद्दन्तुर—(वि०) [प्रा० स०] बड़े दाँतों वाला या वह जिसके दाँत आगे निकले हों । ऊँचा । भयङ्कर ।

उद्दान—(न०) [उद्√दो–ल्युट्] बंधन; 'उद्दाने क्रियमाणेतु मत्स्यानां तत्र रज्जुभिः' महा० । पालतू बनाना, वश में करना । कटि, कमर । अग्निकुण्ड । बाड़वानल ।

उद्दान्त—(वि०) [उद्√दम्+क्त] वीर्यवान, प्रबल । विनीत ।

उद्दाम—(वि०) [उद्गतं दाम्नः ब० स०] बन्धन-रहित, मुक्त, स्वतंत्र । बलवान् शक्तिशाली । मद में चूर, नशे में चूर । भयानक । स्वेच्छाचारी । बड़ा, महान् । अत्यधिक । (पु०) वरुणदेव का नाम । यम ।

उद्दालक—(पु०) [उद्√दल+णिच्+ ण्वुल् कन्] एक ऋषि । लसोड़े का पेड़ । वनकोदो ।

उद्दित—(वि०) [उद्√दो+क्त] बंधनयुक्त, बँधा हुआ ।

उद्दिन—(न०) [प्रा० स०] दोपहर ।

उद्दिष्ट–(वि०) [उद्√दिश्+क्त] वर्णित, कथित । विशेष रूप से कहा हुआ । व्याख्या किया हुआ । सिखलाया हुआ ।

उद्दीप—(पु०) [उद्√दीप्+घञ्]प्रज्ज्वलित करना । उत्तेजित करना । गुग्गुल ।

उद्दीपक—(वि०) [उद्√दीप्+णिच् + ण्वुल्]प्रज्ज्वलित करने वाला । उत्तेजित करने वाला ।

उद्दीपन—(न०) [उद्+दीप्+णिच्+ल्युट्] उत्तेजित करने की क्रिया । उत्तेजित

करने वाला पदार्थ। अलङ्कार-शास्त्र के वे विभाव जो रस को उत्तेजित करते हैं। रोशनी करना, प्रकाश करना। देह को भस्म करना या जलाना।

उद्दीप्र—(वि०) [उद्√दीप्+रन्] दहकता हुआ, जलता हुआ।

उद्दृप्त—(वि०) [उ√दृप्+क्त] अभिमानी, घमंडी।

उद्देश—(न०) [उद्√दिश्+घञ्] वर्णन। सविशेष विवरण। उदाहरण। दृष्टान्त द्वारा प्रदर्शन। खोज, अनुसंधान। संक्षिप्त विवरण। निर्देशपत्र। शर्त, इकरार। हेतु, कारण। स्थान, जगह। मतलब, अभिप्राय।

उद्देशक—(पु०) [उद्√दिश् + ण्वुल्] उदाहरण। (अंकगणित में) प्रश्न। कठिन प्रश्न, कूट प्रश्न।

उद्देश्य—[उद्√दिश् + ण्यत्] स्पष्ट या इंगित किये जाने योग्य। लक्ष्य। इष्ट। (न०) अभिप्रेत अर्थ। वह वस्तु जिसको लक्ष्य में रख कर कोई बात कही जाय। वह वस्तु जो किसी कार्य में प्रवृत्त करे। विधेय का उल्टा, विशेष्य।

उद्द्योत—(पु०) [उद्√द्युत्+घञ्] चमक, ताव। ग्रन्थ का भाग। अध्याय, पर्व, काण्ड।

उद्द्राव—(पु०) पीछे हटना, भागना।

उद्धत—[उद्√हन्+क्त] उठा हुआ, उठाया हुआ; 'लाङ्गूलमुद्धतं धुन्वन्' भट्टि०, ६.७। अत्यधिक, बहुत अधिक। अहङ्कारी, घमंडी, बकवादी। मस्त। व्याकुल, उद्विग्न। विशाल, महान्। गँवार, बदतमीज।—मनस—मनस्क-(वि०) अभिमानी, अक्खड़। (पु०) राजा का पहलवान, राजमल्ल।

उद्धति—(स्त्री०) [उद्√हन्+क्तिन्] ऊँचाई। अभिमान, घमंड। गौरव। आघात। प्रहार।

उद्धम—(पु०) [उद्√ध्मा+श, धमादेश] बजाना, फूंकना। साँस लेना। दम फूलना।

उद्धरण—(न०) [उद्√हृ+ल्युट्] खींचना, उतारना। खींचकर निकालना। छुड़ाना। नामोनिशान मिटाना। ऊपर उठाना। वमन करना। मुक्ति, मोक्ष। ऋण से उऋण होना। किसी उक्ति या लेख का दूसरी जगह अविकल रखा जाना, अवतरण।

उद्धर्तृ, उद्धारक—(वि०) [उद्√हृ+तृच्] [उद्√हृ+ण्वुल्] ऊपर उठानेवाला, ऊंचा करने वाला। भागीदार, साझीदार।

उद्धर्ष—(वि०) [उद्गतः हर्षो यस्य यस्मिन् वा ब० स०] हर्षित, प्रसन्न। (पु०) [प्रा० स०] बड़ी भारी प्रसन्नता। किसी कार्य को प्रारम्भ करने का साहस। [ब० स०] त्योहार, पर्व।

उद्धर्षण—(न०) [उद्√हृष् + ल्युट्] उत्साहवर्द्धन, जान डालना। रोमाञ्च, शरीर के रोंगटों का खड़ा होना।

उद्धव—(पु०) [उद्√धू+अप्] यज्ञाग्नि। उत्सव, पर्व। एक यादव का नाम जो श्रीकृष्ण का मित्र था।

उद्धस्त—(वि०) [ब० स०] हाथ बढ़ाये या उठाये हुए।

उद्धान—(न०) [उद्√धा+ल्युट्] अग्निकुण्ड। उगाल, वमन।

उद्धान्त—(वि०) [उद्√धा+क्त (बा०)] उगला हुआ, वमन किया हुआ। (पु०) हाथी जिसका मद चूना बन्द हो गया हो।

उद्धार—(पु०) [उद्√हृ+घञ्] मुक्ति, छुटकारा, त्राण। ऊपर उठाना। सम्पत्ति का वह भाग, जो बराबर बाँटने के लिये अलग कर लिया जाय। युद्ध की लूट का ६वाँ भाग जो राजा का होता है। ऋण। सम्पत्ति की पुनः प्राप्ति। मोक्ष, नसर्गिक आनन्द।

उद्धारण—(न०) [उद्√धृ+णिच्+ल्युट्] निकालना। ऊपर उठाना। बचाना (किसी सङ्कट से) उबारना।

उद्धुर—(वि०) [उद्√धुर्+क] भारमुक्त। स्वतन्त्र। दृढ़। निडर। भारी। परिपूर्ण। गाढ़ा, सघन। योग्य।

उद्धत—[उद्√धू+क्त] हिला हुआ। गिरा हुआ। उठाया हुआ। ऊपर फैला हुआ। उन्नत।

उद्धूनन—(न०) [उद्√धू+णिच्, पुक्+ल्युट्] ऊपर फेंकना। ऊपर उठाना। हिलाना।

उद्धूपन—(न०) [उद्√धूप्+ल्युट्] धूप देना।

उद्धूलन—(न०) [उद्-धूलि+णिच्+ल्युट्] चूर्ण करना, पीसना, धूल या चूर्ण बुरकना।

उद्धूषण—(न०) [उद्√धृष्+ल्युट्] शरीर के रोंगटों का खड़ा होना।

उद्धृत—[उद्√हृ वा√धृ+ क्त] निकाला हुआ। ऊपर खींचा हुआ। जड़ से उखाड़ा हुआ, नष्ट किया हुआ। अन्य स्थान से ज्यों का त्यों लिया हुआ। वमन किया हुआ। अनावृत। (पु०) गाँव की प्राचीन घटनाओं के जानकार वृद्धजन।

उद्धृति—(स्त्री०) [उद्√हृ वा√धृ + क्तिन्] खींचना, खींचकर बाहर निकालना। किसी ग्रन्थ का कोई अंश उतार लेना। बचाना। छुड़ाना।

उद्ध्मान—(न०) [उद्√ध्मा+ल्युट्] अँगीठी, अलाव।

उद्ध्य—(पु०) [उद्√ उज्झ्+ क्यप् नि० साधुः] नद।

उद्बन्ध—(वि०) [प्रादि० स०] बंधन-मुक्त। ढीला। (पु०) [उद्√बन्ध्+ घञ्] दे० 'उद्बन्धन'।

उद्बन्धक—(पु०) [उद्√बन्ध+ण्वुल्] एक जाति जो धोबी का काम करती है।

उद्बन्धन—(न०) [उद्√बन्ध्+ल्युट्] लटकाना, टाँगना। स्वयं फाँसी लगा लेना।

उद्बल—(वि०) [ब० स०] मजबूत, ताकतवर।

उद्बाष्प(वि०) [ब० स०] आँसुओं से परिपूर्ण।

उद्बाहु—(वि० [ब० स०] बाहें उठाये हुए 'उद्बाहुरिव वामनः' र० १.३।

उद्बुद्ध—[उद्√बुध्+क्त] जागा हुआ। उत्तेजित। खुला हुआ। स्मरण कराया हुआ। स्मरण किया हुआ।

उद्बोध—(पु०) [उद्√बुध्+ घञ्] जागृति। स्मृति। याद करना।

उद्बोधक—(वि०) [उद्√बुध्+णिच्+ण्वुल्] बोध कराने वाला। याद कराने वाला। चेताने वाला, ख्याल कराने वाला। उद्दीप्त कराने वाला। (पु०) सूर्य का नाम।

उद्बोधन—(न०) [उद्√बुध्+णिच्+ल्युट्] जगाना। स्मरण दिलाना। मामूली डाँट-डपट के साथ समझाना, चेतावनी देना (एडमॉनिशन)

उद्भट—(वि०) [उद्√भट्+अच्] सर्वोत्तम। मुख्य। प्रबल। प्रचण्ड। (पु०) सूप। कछुआ, कच्छप।

उद्भव—(पु०) [उद्√भू+अप्] उत्पत्ति, सृष्टि, जन्म। उद्गमस्थान। विष्णु का नाम।

उद्भाव—(पु०) [उद्√भू+घञ्] उत्पत्ति प्रादुर्भाव। विशालता।

उद्भावन—(न०) [उद्√भू+णिच्+ल्युट्] उत्पादन। सोचना। कल्पना करना। उपेक्षा करना। कहना।

उद्भावयितृ— (वि०) [उद्√भू+णिच्+तृच्] ऊपर उठाने वाला। उत्पन्न करने वाला। कल्पना करने वाला।

उद्भास—(पु०) [उद्+भास्+घञ्] चमक, आभा, कान्ति, प्रभा।

उद्भासिन्, उद्भासुर—(वि०) [उद्√ भास+णिनि] [उद्√भास्+घुरच्] दीप्तिमान्। चमकीला।

उद्भिद—(वि०) [उद् √भिद्+क्विप्] धरती फोड़कर उगने या निकलने वाला। भेदक। तोड़ डालने वाला।—ज (उद्भिज्ज) (वि०) [उद्भिद्√ जन्+ड] उगने वाला। (न०) पेड़ पौधे, वनस्पति।

उद्भिद—(वि०) [उद्√भिद्+क] उगने या निकलने वाला। (पुं०) अंकुर, अँखुवा। पौधा। उत्स, झरना। —**विद्या**—(स्त्री०) वनस्पति-विज्ञान।

उद्भूत—[उद्√भू+क्त] उत्पन्न हुआ। पैदा किया हुआ। विशाल। इन्द्रियगोचर।

उद्भूति—(स्त्री०) [उद्√भू+क्तिन्] उत्पत्ति, पैदायश। समृद्धि, उन्नति; 'स्मरः शम्भुरतं ह्येष त्वत्कुलोद्भूतये' कु० ६.८२।

उद्भेद—(पुं०) **उद्भेदन**—(न०) [उद्√भिद्+घञ्], [उद्√भिद्+ल्युट्] बेधना। फोड़कर निकलना। दिखलाई पड़ना। प्रादुर्भाव। बाढ़। झरना। रोंगटों का खड़ा होना।

उद्भ्रम—(पुं०) [उद्√भ्रम्+घञ्] घूमना, चक्कर खाना। (तलवार को) घुमाना। खेद।

उद्भ्रमण—(न०) [उद्√भ्रम्+ल्युट्] घूमना-फिरना। उठना, निकलना।

उद्यत—[उद्√यम्+क्त] उठाया हुआ। निरन्तर उद्योगकारी, परिश्रमी। ताना हुआ। तत्पर, तुला हुआ। अनुशासित।

उद्यम—(पुं०) [उद्√यम्+घञ्, न वृद्धिः] उठाना, उन्नयन। सत्य उद्योग, अध्यवसाय। तत्परता, तैयारी। —**भृत**—(वि०) कठिन परिश्रम करने वाला।

उद्यमन—(न०) [उद्√यम्+णिच्+ल्युट्] उठाना। ऊपर फेंकना।

उद्यमिन्—(वि०) [उद्यम+इनि] परिश्रमी अध्यवसायी।

उद्यान—(न०) [उद्√या+ल्युट्] बहिर्गमन। उपवन, बाग, आनन्दवाटिका। प्रयोजन। —**पाल**,—**रक्षक**—(पुं०) माली।

उद्यानक—(न०) [उद्यान+कन्] बाग।

उद्यापन—(न०) [उद्√या+णिच्, पुक्+ल्युट्] आरंभ। व्रत आदि की समाप्ति।

उद्योग—(पुं०) [उद्√युज्+घञ्] प्रयत्न, प्रयास। उद्यम, कामकाज। श्रम, मिहनत।

उद्योगिन्—(वि०) [उद्√युज्+घिनुण्] क्रियाशील। अध्यवसायी। परिश्रमी।

उद्र—(पुं०) [√उन्द्+रक्] एक जलजंतु, ऊदबिलाव।

उद्रथ—(पुं०) [उद्गतो रथो यस्मात् ब० स०] रथ की धुरी की कील या पिन। मुर्गा।

उद्राव—(पुं०) [उद्√द्रु+घञ्] शोरगुल, हौहल्ला, कोलाहल।

उद्रिक्त—[उद्√रिच्+क्त] बढ़ा हुआ। अत्यधिक, विपुल। स्पष्ट, साफ।

उद्रुग्ण—(वि०) [उद्√रुज्+क्त] तोड़ना। नष्ट करना। उखाड़ना।

उद्रेक—(पुं०) [उद्√रिच्+घञ्] वृद्धि बढ़ती। अधिकता, विपुलता; 'ज्ञानोद्रेकाद्विघटिततमोग्रन्थयः सत्त्वनिष्ठा' वै० १.२३। एक अर्थालंकार।

उद्वत्सर—(पुं०) [उद्√वस्+सरन्] वर्ष, साल।

उद्वपन—(न०) [उद्√वप्+ल्युट्] भेंट। दान। उड़ेलना। उखाड़ना।

उद्वमन—(न०), **उद्वान्ति**—(स्त्री०) [उद्√वम्+ल्युट्], [उद्√वम्+क्तिन्] वमन, उबकाई।

उद्वर्त—(पुं०) [उद्+वृत्+घञ्] बचत। अधिकता। शरीर में तेल-फुलेल की मालिश या उबटन।

उद्वर्तन—(न०) [उद्√वृत्+ल्युट्] ऊपर जाना। निकलना। बाढ़ (पौधों की)। समृद्धि। करवटें लेना। उठ खड़े होना। पीसना। उबटन लगाना। तेल-फुलेल की मालिश।

उद्वर्धन—(न०) [उद्√वृध्+ल्युट्] उन्नति। छिपाकर या धीरे-धीरे हँसना।

उद्वह—(पुं०) [उद्√वह्+अच्] पुत्र। पवन के सप्त पथों में से चौथा। विवाह। उदान वायु। अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक।

उद्वहन—(न०) [उद्√वह्+ल्युट्]

विवाह। सहारा। ऊपर उठाना। ले जाना। सवारी करना।

उद्वहा—(स्त्री०) [उद्वह+टाप्] बेटी। पुत्री।

उद्वान—(वि०) [उद्√वन्+घञ्] उगला हुआ, ओका हुआ। (न०) वमन, उगाल। अँगीठी।

उद्वान्त—(वि०) [उद्√वम्+क्त] वमन किया हुआ, ओका हुआ। [उद्गतं वान्तं मदो यस्मात् ब० स०] मदरहित।

उद्वाप—(पुं०) [उद्√वप्+घञ्] उन्मूलन। बहिर्निक्षेप। हजामत, क्षौरकर्म।

उद्वास—(पुं०) [उद्√वस्+घञ्] देश-निकाला। त्याग। वध। यज्ञीय संस्कार विशेष।

उद्वासन—(न०) [उद्√वस्+णिच्+ल्युट्] निकालना, देश-निकाला देना। त्यागना। निकाल लेना या निकाल कर ले जाना (आग से)। वध करना। यज्ञ के पहले आसन बिछाना आदि।

उद्वाह—(पुं०) [उद्√वह्+घञ्]उठाना। संभालना। विवाह, परिणय।

उद्वाहन—(न०)[उद्√वह्+णिच्+ ल्युट्] ऊपर ले जाना। विवाह। एक बार जोते हुए खेत को जोतना। चिंता।

उद्वाहनी—(स्त्री०) [उद्वाहन+ङीप्] रस्सी, डोरी। कौड़ी।

उद्वाहिक—(वि०) [उद्वाह+ठन्+इक] विवाह सम्बन्धी।

उद्वाहिन्—(वि०) [उद्√वह्+णिनि] उठाने वाला। विवाह करने वाला।

उद्वाहिनी—(स्त्री०) [उद्वाहिन्+ङीप्] रस्सी, डोर।

उद्विग्न—(वि०) [उद्√विज्+क्त] दुःखी, सन्तप्त, शोकप्लुत, उदास।

उद्वीक्षण—(न०) [उद्–वि√ईक्ष्+ल्युट्] ऊपर की ओर देखना। दृष्टि, नेत्र।

उद्वीजन—(न०) [उद्√वीज्+ल्युट्] पंखा करना।

उद्बृंहण—(न०) [उद्√बृंह्+ल्युट्] बढ़ती, बाढ़।

उद्वृत्त—(वि०) [उद्√वृत्+क्त] उठा हुआ। ऊँचा किया हुआ। उमड़ कर बहा हुआ। उजड्ड; 'उद्वृत्तः क इव सुखावहः परेषाम्' शि० ८.१८।

उद्वेग—(पुं०) [उद्√विज्+घञ्] काँपना, थरथराना। घबड़ाहट, विकलता। भय। चिन्ता। आश्चर्य। (न०) सुपारी।

उद्वेजन—(न०) [उद्√विज्+ल्युट्] विकलता, व्याकुलता। पीडा, कष्ट, सन्ताप। खेद।

उद्वेदि—(वि०) [ब० स०] जहाँ की वेदी ऊँची हो अथवा उच्चस्थान से युक्त।

उद्वेप—(पुं०) [प्रा० स०] काँपना, थरथराना, अत्यधिक प्रकम्प।

उद्वेल—(वि०) [अत्या० स०] उमड़ कर बहने वाला। मर्यादा का अतिक्रमण करने वाला।

उद्वेल्लित—[उद्√वेल्ल्+क्त] काँपा हुआ। उछाला हुआ। (न०) हिलना-डुलना।

उद्वेष्टन—(वि०) [उद्गतं, वेष्टनात् प० स०] ढीला किया हुआ। खुला हुआ। मुक्त, बंधन- रहित। (न०) [उद्√वेष्ट्+ ल्युट्] चारों ओर से घेरने या ढकने की क्रिया। घेरा, हाता। पीठ या नितंब की पीड़ा।

उद्वोढृ—(पुं०) [उद्√वह्+तृच्] पति।

उधस्—(न०) [√उन्द्+असुन्] दूध देने वाले पशुओं का थन, लेवा।

√उन्द्—रुध० पर० सक० भिगोना, तर करना, नम करना। उनत्ति, उन्दिष्यति, औन्दीत्।

उन्दन—(न०) [√उन्द्+ल्युट्] नमी, तरी।

उन्दरु, उन्दुर, उन्दुरु, उन्दूर—(पुं०) [√उन्द्+अरु], [√उन्द्+उर], [√उन्द्+उरु], [√उन्द्+ऊर] चूहा।

उन्नत—(वि०) [उद्√नम्+क्त] उठा हुआ। ऊँचा। आगे बढ़ा हुआ। श्रेष्ठ। विद्या, कला आदि में आगे बढ़ा हुआ। सभ्य। ककुद् (डिल्ला) वाला। (पु०) अजगर। (न०) ऊँचाई।—**आनत**, (**उन्नतानत**) -(वि०) विषम, ऊँचा-नीचा।—**चरण**-(वि०) बेरोक बढ़ने और फैलने वाला। पिछले पैरों पर खड़ा।—**शिरस्**-(वि०) बड़ा अभिमानी।

उन्नति—(स्त्री०) [उद्√नम्+क्तिन्] ऊँचाई, चढ़ाव। वृद्धि। तरक्की। गरुड़ की पत्नी]—**ईश**, (**उन्नतीश**)-(पु०) गरुड़ का नाम।

उन्नतिमत्—(वि०) [उन्नति+मतुप्] उठा या निकला हुआ। उत्तुंग, ऊँचा।

उन्नद्ध—(वि०) [उद्√नह्+क्त] बढ़ा हुआ। लटकाया हुआ।

उन्नमन—(न०) [उद्√नम्+ल्युट्] ऊपर ले जाना, उठाना। उन्नति करना। अभ्युदय।

उन्नम्र-(वि०)[उद्√नम्+रन्] सीधा। ऊँचा; 'उन्नम्रताम्रपटमण्डपमण्डितं तत्' शि०५.२८

उन्नय, उन्नाय—(पु०) [उद्√नी+अच्] [उद्√नी+घञ्] ऊपर चढ़ना, ऊपर उठना। ऊँचाई, चढ़ाई। सादृश्य, समता। अटकल।

उन्नयन—(न०) [उद्√नी+ल्युट्] ऊपर उठाना। ऊपर खींचकर पानी निकालना। विचार। अटकल। अर्क रखने का बरतन। (वि०) [ब० स०] जिसकी आँखें ऊपर उठी हों।

उन्नस—(वि०) [उन्नता नासिका यस्य ब० स०] ऊँची नाक वाला।

उन्नाद—(पु०) [उद्√नद्+घञ्] चिल्लाहट। गुञ्जार, पक्षियों की चहक या कूजन। (मक्खियों की) भिनभिनाहट।

उन्नाभ—(वि०)[उन्नतानाभिः यस्य ब०स०] जिसकी नाभि उभरी हुई हो। तोंद वाला।

उन्नाह—(पु०)[उद्√नह्+घञ्] आगे की ओर निकलना। प्रचुरता। दर्प। काँजी, वह चावल के माँड़ से बनाया जाता है।

उन्निद्र—(वि०) [उद्गता निद्रा यस्मात् ब० स०] निद्रारहित, जागता हुआ। फैला हुआ, पूरा फूला हुआ।

उन्नीत—(वि०) [उद्√नी+क्त] ऊपर उठाया हुआ। अग्रिम कक्षा में चढ़ाया हुआ छात्र। (प्रमोटेड)

उन्नेतृ—(वि०) [उद्√नी+तृच्] ऊपर उठाने वाला, उन्नति कराने वाला। परिणाम की ओर ले जाने वाला। (पु०) सोलह प्रकार के यज्ञ कराने वालों में से एक।

उन्मज्जन—(न०) [उद्√मस्ज्+ल्युट्] पानी से बाहर निकलना।

उन्मत्त—(वि०) [उद्√मद्+क्त] मदमाता, नशे में चूर। पागल, सिड़ी। अकड़ा हुआ, फूला हुआ। वहमी, उनक्की, प्रेतावेशित। (पु०) धतूरा।—**कीर्त्ति**,—**वेश**-(पु०) शिव जी का नाम।—**गङ्ग**-(न०) वह प्रदेश जहाँ गङ्गा जी का हरहराना प्रबल रूप से होता है।—**दर्शन**,—**रूप**-(वि०) देखने में या शक्ल से पागल।—**प्रलपित**-(न०) पागल की बहक, मतवाले की बकवास। अर्थ-संगतिरहित बातें।—**लिङ्गिन्**-(वि०) पागल होने का बहाना करने वाला।

उन्मथन—(न०) [उद्√मथ्+ल्युट्] हिलाना-डुलाना। पटक देना। गिरा देना। मारण, वध।

उन्मद—(वि०) [उद्गतो मदो यस्य ब० स०] नशे में चूर। पागल। (पु०) [प्रा० स०] पागलपन। नशा।

उन्मदन—(वि०) [ब० स०]प्रेमासक्त, प्रेम में विह्वल।

उन्मदिष्णु—(वि०) [उद्√मद्+इष्णुच्] पागल। मदमाता, नशे में चूर।

उन्मनस्, उन्मनस्क—(वि०) [उत्कण्ठितं मनो यस्य ब० स०],[ब० स० कप्] उद्विग्न, विकल, व्याकुल, बेचैन। मित्र विछोह से संतप्त। उत्सुक, लालायित।

उन्मन्थ—(पु०)[उद्√मन्थ्+घञ्] विकलता । हत्या ।

उन्मन्थन—(न०) [उद्√मन्थ्+ल्युट्] हत्या । लकड़ी से पीटना । क्षोभ, उद्वेग ।

उन्मयूख—(वि०) [ब० स०] चमकीला, चमकदार ।

उन्मर्दन—(न०) [उद्√मृद्+ल्युट्] मलना, रगड़ना । शरीर में मलने का एक सुगंधित द्रव्य । हवा शुद्ध करना ।

उन्माथ—(पु०) [उद्√मथ्+घञ्]पीड़ा । क्षोभ । हत्या । जाल ।

उन्माद—(वि०) [उद्√मद्+घञ्]पागल, सिड़ी । डाँवाडोल । (पु०) पागलपन । बड़ी झाल या क्रोध । मानसिक रोग विशेष जिससे मन और बुद्धि का कार्यक्रम अस्तव्यस्त हो जाता है । रस के ३३ सञ्चारी भावों में से एक जिसमें वियोगादि के कारण चित्त ठिकाने नहीं रहता । खिलना, प्रस्फुटन । यथा—'उन्माद वीक्ष्य पद्मानाम्' ।—साहित्यदर्पण ।

उन्मादन—(वि०) [उद्√मद्+णिच् + ल्युट्] उन्मत्त करना । (पु०) कामदेव के पाँच बाणों में से एक ।

उन्मान—(न०) [उद्√मा+ल्युट्] तौल, नाप । मूल्य, कीमत ।

उन्मार्ग—(वि०) [उत्क्रान्तो मार्गम्, अत्या० स०] असन्मार्ग में जाने वाला, कुपथगामी (पु०) [प्रा० स०] कुपथ । निकृष्ट आचरण, बुरी चाल ।

उन्मार्जन—(न०) [उद्√मृज्+णिच् + ल्युट्] रगड़, मालिश । पोंछना । झाड़ना ।

उन्मिति—(स्त्री०[उद्√मा+क्तिन्] नाप । मूल्य ।

उन्मिश्र—(वि०) [प्रा० स०] मिश्रित, मिलावटी ।

उन्मिषित—(वि०) [उद्√मिष+क्त] खुला हुआ । खिला हुआ । (न०) दृष्टि, नजर, निगाह ।

उन्मील—(पु०), **उन्मीलन**—(न०) [उद्√मील्+घञ्], [उद्√मील्+ल्युट्] खुलना (आँख का) । खिलना । प्रकट । व्यक्त होना ।

उन्मुख—(वि०) [उद्गतं मुखं यस्य ब० स०] ऊपर मुँह किये, ऊपर को ताकता हुआ । उत्कण्ठा से देखता हुआ । उत्कण्ठित, उत्सुक । उद्यत, तैयार; 'तमरण्यसमाश्रयोन्मुखं' र० ८.१२ ।

उन्मुखर—(वि०) [प्रा० स०] कोलाहल मचाने वाला, शोर-गुल करने वाला ।

उन्मुद्र—(वि०) [उद्गता मुद्रा यस्मात् ब० स०] बिना मोहर या सील का । खुला हुआ । फूंककर बढ़ाया हुआ या फुलाया हुआ । तना हुआ, खींचकर बढ़ाया हुआ ।

उन्मूलन—(न०) [उद्√मूल्+ल्युट्] जड़ से उखाड़ना, समूल नष्ट करना ।

उन्मेदा—(स्त्री०) [प्रा० स०] मुटाई, मोटापन ।

उन्मेष—(पु०), **उन्मेषण**—(न०) [उद्√मिष्+घञ्], [उद्√मिष्+ल्युट्] खुलना (आँख का) । खिलना । स्फुरण । प्रकाश ।

उन्मोचन—(न०) [उद्√मुच्+ल्युट्] खोलने की क्रिया । ढीला करने की क्रिया ।

उप—(अव्य०) यह उपसर्ग जब किसी क्रिया या संज्ञावाची शब्द के पूर्व लगाया जाता है, तब वह निम्न अर्थों का बोधक होता है:—सामीप्य, सान्निध्य । शक्ति, योग्यता । व्याप्ति । उपदेश । मृत्यु, नाश । त्रुटि, दोष । प्रदान । क्रिया, उद्योग । आरम्भ । अध्ययन । सम्मान, पूजन । सादृश्य । वशित्व । अश्रेष्ठत्व ।

उपकण्ठ—(वि०) [उपगतः कण्ठम् अत्या० स०] समीप का, नजदीकी । (पु० न०) [प्रा० स०) सामीप्य । ग्राम की सीमा के भीतर का स्थान । घोड़े की सरपट चाल । (अव्य०) [अव्य० स०] गर्दन के ऊपर, गले के पास । पास में, पड़ोस में ।

उपकथा—(स्त्री०) [प्रा०स०] छोटी कहानी, गल्प ।

उपकनिष्ठिका—(स्त्री०) [अत्या० स०] कनिष्ठिका के पास की उँगली, अनामिका ।

उपकरण—(न०) [उप√कृ+ल्युट्] अनुग्रह । सामान, सामग्री । औज़ार, हथियार । यन्त्र । आजीविका का द्वार । जीवनोपयोगी कोई वस्तु । राजचिह्न (छत्र, दण्ड, चँवर आदि)

उपकर्णन—(न०) [उप√कर्ण्+ल्युट्] श्रवण, सुनना ।

उपकर्णिका—(स्त्री०) [उपकर्ण, अव्य० स० +कन्—टाप्, इत्व] अफवाह, जनश्रुति ।

उपकर्तृ—(वि०) [उप√कृ+तृच्] उपकार करने वाला ।

उपकल्पन—(न०), **उपकल्पना**—(स्त्री०) [उप√क्लृप्+णिच्+ल्युट्], [उप√क्लृप्+णिच्+युच्] तैयार करना । आयोजन बनाना । मिथ्या रचना । कोई बात सिद्ध करने के लिये पहले से ही कुछ मान लेना । जो बात प्रमाणित की जा सकती हो या जिसके सत्य होने की संभावना हो उसकी कल्पना पहले से कर लेना (हाइपाथेसिस) ।

उपकार—(पुं०) [उप√कृ+घञ्] परिचर्या । सहायता । अनुग्रह । आभूषण । बंदनवार ।

उपकारी—(स्त्री०) [उपकार—ङीप्] शाही खेमा । राजप्रासाद । सराय, धर्मशाला ।

उपकार्या—(स्त्री०) [उप√कृ+ण्यत्, टाप्] शाही खेमा । राजभवन । पांथशाला । समाधिस्थान ।

उपकुञ्चि—(पुं०), **उपकुञ्चिका**—(स्त्री०) [उप√कुञ्च्+कि] [उपकुञ्चि+कन्, टाप्] छोटी इलायची । स्याह जीरा ।

उपकुम्भ—(वि०) [अत्या० स०] समीप का । अकेला । (अव्य०) [अव्य० स०] घड़े के पास ।

उपकुर्वाण—(पुं०) [उप√कृ+शानच्] ब्रह्मचारी, जो गृहस्थ होने की इच्छा रखता हो ।

उपकुल्या—(स्त्री०) [उप√कुल्—अघ्न्यादि-निपातनात् साधुः] नहर, खाईं ।

उपकूप—(वि०) [अत्या० स०] कुएँ के समीप का । (न०) [प्रा० स०] छोटा कुआँ । (अव्य०) [अव्य० स०] कुएँ के समीप ।

उपकृति, उपक्रिया—(स्त्री०) [उप√कृ+क्तिन्], [उप√कृ+श] उपकार, भलाई । अनुग्रह, कृपा ।

उपक्रम—(पुं०) [उप√क्रम्+घञ्] आरम्भ । अनुष्ठान । रोगी की परिचर्या । ईमानदारी की परीक्षा । चिकित्सा, इलाज । सामीप्य । लेख या भाषण का उठान, प्रस्तावना ।

उपक्रमण—(न०) [उप√क्रम्+ल्युट्] समीपागमन । अनुष्ठान । आरम्भ । चिकित्सा ।

उपक्रमणिका—(स्त्री०) [उपक्रमण+ङीप् +कन्, टाप्, ह्रस्व] भूमिका, विषयसूची ।

उपक्रीडा—(स्त्री०) [अत्या० स०] चौगान, खेलने के लिये मैदान ।

उपक्रोश—(पुं०), **उपक्रोशन**—(न०) [उप √क्रुश्+घञ्], (उप√क्रुश्+ल्युट्] निंदा; 'प्राणैरुपक्रोशमलीमसैर्वा' र० २.५३ फटकार, डाँट-डपट, भर्त्सना ।

उपक्रोष्टृ—(वि०) [उप√क्रुश्+तृच्] निंदा करने वाला । (पुं०) (रेंकता हुआ) गधा ।

उपक्वण, उपक्वाण—(न०) [उप√क्वण् +अप्], [उप√क्वण्+घञ्] वीणा की झनकार ।

उपक्षय—(पुं०) [उप√क्षि+अच्] अवनति । कमी, ह्रास, घटती । व्यय ।

उपक्षेप—(पुं०) [उप√क्षिप्+घञ्] घुमाना । धमकी । आक्षेप । अभिनय के आरम्भ में अभिनय का संक्षिप्त वृत्तान्त-कथन । संकेत । चर्चा ।

उपक्षेपण—(न०) [उप√क्षिप्+ल्युट्] नीचे फेंकना या गिराना । दोषारोप करना । संकेत । शूद्र का खाद्य पदार्थ ब्राह्मण के घर में रखना ।

उपग—(वि०) [उप√गम्+ड] समीप आया हुआ । पीछे लगा हुआ । सम्मिलित । प्राप्त हुआ ।

उपगण—(पुं०) [प्रा० स०] छोटी या अन्तर्गत श्रेणी।

उपगत—(वि०) [उप√गम्+क्त] गया हुआ। समीप आया हुआ। घटित। प्राप्त। अनुभूत। प्रतिज्ञात।

उपगति—(स्त्री०) [उप√गम्+क्तिन्] समीपागमन। ज्ञान। परिचय। स्वीकृति। प्राप्ति।

उपगम—(पुं०), **उपगमन**—(न०) [उप√गम्+अप्], [उप√गम+ल्युट्] गमन। समीप गमन। ज्ञान। परिचय। प्राप्ति। समागम (स्त्री-पुरुष का)। सहिष्णुता। अनुभव। स्वीकृति। प्रतिज्ञा।

उपगिरम्, उपगिरि—(अव्य०) [अव्य० स०, टच्, पक्षे टच्न] पर्वत के समीप।

उपगिरि—(पुं०) [अत्या० स०] उत्तर दिशा में पर्वत के समीप अवस्थित एक प्रदेश का नाम।

उपगु—(अव्य०) [अव्य० स०] गौ के समीप। (पुं०) [अत्या० स०] ग्वाला, गोप।

उपगुरु—(पुं०) [प्रा० स०] सहायक शिक्षक।

उपगूढ—(वि०) [उप√गुह्+क्त] छिपा हुआ। आलिङ्गन किया हुआ।

उपगूहन—(न०) [उप√गुह्+ल्युट्] छिपाव, दुराव। आलिङ्गन। आश्चर्य, अचंभा।

उपग्रह—(पुं०) [उप√ग्रह्+अप्] कैद, पकड़, गिरफ्तारी। हार, पराजय। कैदी, बंदी। योग, सम्मेलन। अनुग्रह। प्रोत्साहन। छोटा ग्रह (राहु, केतु आदि)।

उपग्रहण—(न०) [उप√ग्रह्+ल्युट्] नजदीक से पकड़ना, गिरफ्तारी, बंदी बनाना। सहारा वेदाध्ययन।

उपग्राह—(पुं०) [उप√ग्रह्+णिच्+अच्] भेंट देना। [कर्मणि घञ्] भेंट।

उपग्राह्य—(न०) [उप√ग्रह्+ण्यत्] भेंट, नजराना।

उपघात—(पुं०) [उप√हन्+घञ्] प्रहार। तिरस्कार। नाश। स्पर्श। आक्रमण। रोग। पाप।

उपघोषण—(न०) [उप√घुष्+ल्युट्] प्रकटन, प्रकाशन। ढिंढोरा।

उपघ्न—(पुं०) [उप√हन्+क] सहारा। संरक्षण, पनाह: 'छेदादिवोपघ्नतरोर्व्रतत्यौ' र० १४.१।

उपचक्र—(पुं०) [प्रा० स०] लाल रंग का हंस विशेष।

उपचक्षुस्—(न०) [प्रा० स०] चश्मा, ऐनक।

उपचय—(पुं०) [उप√चि+अच्] संचय। वृद्धि, बढ़ती। ढेर। समृद्धि। कुण्डली में लग्न से तीसरा, छठा और ग्यारहवाँ स्थान।

उपचर—(पुं०) [उप√चर्+अच्] उपचार। चिकित्सा, इलाज।

उपचरण—(न०) [उप√चर्+ल्युट्] समीपगमन।

उपचाय्य—(पुं०) [उप√चि+ण्यत्] यज्ञाग्नि-विशेष। वेदी।

उपचार—(पुं०) [उप√चर्+घञ्] सेवा, परिचर्या। पूजन। सत्कार। विनम्रता। चापलूसी। नमस्कार करने का एक ढंग। दिखावटी रीतिरस्म। चिकित्सा, इलाज। व्यवस्था, प्रबन्ध। धर्मानुष्ठान। व्यवहार। घूस, रिश्वत। बहाना। प्रार्थना। विसर्ग के स्थान में स् और ष् का प्रयोग।

उपचित—(वि०) [उप√चि+क्त] इकट्ठा किया हुआ। बढ़ा हुआ। जला हुआ।

उपचिति—(स्त्री०) [उप√चि+क्तिन्] संग्रह। बढ़ती। उन्नति।

उपचूलन—(न०) [उप√चूल्+ल्युट्] गरमाने की क्रिया, जलाना।

उपच्छद—(पुं०) [उप√छद्+णिच्+घञ् ह्रस्व] ढक्कन। चादर। परदा।

उपच्छन्दन—(न०) [उप√छन्द+णिच्+ल्युट्] मीठी-मीठी बातें कहकर अपना काम निकालने की क्रिया। प्रलोभित करना। आमन्त्रण देना, न्योता।

उपजन—(पुं०) [उप√जन् +घञ] उत्पत्ति । वृद्धि । मूल । अलग से जोड़ी बढ़ाई हुई वस्तु । शरीर ।

उपजल्पन, उपजल्पित—(न०) [उप√जल्प्+ल्युट्] [उप√जल्प्+क्त (भावे)] वार्तालाप ।

उपजाति—(स्त्री०) [प्रत्या० स०] इंद्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा तथा इंद्रवंशा और वंशस्थ के मेल से बनने वाले वर्णवृत्त ।

उपजाप—(पुं०) [उप√जप्+घञ्] चुपचाप कान में कहना या बतलाना; 'उपजापसहान् विलङ्घयन् स विधाता नृपतीन्मदोद्धत-' कि० २.४७ । वैरी के मित्र के साथ सन्धि के गुपचुप पैगाम । राजकान्ति के लिये असन्तोष का बीज-वपन । विच्छेद, अलगाव ।

उपजापक—(वि०) [उप√जप्+ण्वुल्—अक] बहकाने वाला । कान भरने वाला । विश्वासघाती ।

उपजीवक, उपजीविन्—(पुं०) [उप√जीव्+ण्वुल्], [उप√जीव्+णिनि] दूसरे के आधार पर रहने वाला, परतंत्र, अनुचर ।

उपजीवन—(न०), **उपजीविका**—(स्त्री०) [उप√जीव्+ल्युट्], [उप√जीव्+क्वुन्] जीविका, रोज़ी । निर्वाह । जीविका का साधन, सम्पत्ति आदि ।

उपजीव्य—(वि०) [उप√जीव्+ण्यत्] जीविका देने वाला । संरक्षकता प्रदान करने वाला । लिखने के लिये सामग्री प्रदान करने वाला । 'सर्वेषां कविमुख्यानामुपजीव्यो भविष्यति ।' —महाभारत ।—(पुं०) संरक्षक । आधार या प्रमाण, जिससे कोई लेखक अपने लेख की सामग्री पावे ।

उपजोष—(पुं०), **उपजोषण**—(न०) [उप√जुष्+घञ्],[उप√जुष्+ल्युट्]स्नेह । भोगविलास ।

उपज्ञा—(स्त्री०) [उप√ज्ञा+अङ] वह ज्ञान जो स्वयं प्राप्त किया हो, परम्परा से प्राप्त न हुआ हो । ऐसे कार्य का अनुष्ठान जो पूर्व में कभी न किया गया हो ।

उपढौकन—(न०) [उप√ढौक्+ल्युट्] नजर, भेंट, उपहार ।

उपताप—(पुं०) [उप√तप्+घञ्] गर्मी, उष्णता । क्लेश, पीड़ा, शोक । सङ्कट, विपत्ति । रोग, बीमारी । शीघ्रता, हड़बड़ी ।

उपतापन—(न०) [उप√तप्+णिच्+ल्युट्] गर्माना । सन्तप्त करना, कष्ट देना ।

उपतापिन्—(वि०) [उपताप+इनि] गरमाता हुआ, गर्म, उष्ण । सन्तप्त, पीड़ित । बीमार ।

उपतिष्य— (न०) [प्रत्या० स०] अश्लेषा नक्षत्र का नाम । पुनर्वसु नक्षत्र का नाम ।

उपत्यका—(स्त्री०) [उप+त्यकन्] पर्वत के नीचे की भूमि, पहाड़ की तलहटी, पहाड़ की तराई ।

उपदंश—(पुं०) [उप√दंश्+घञ्] वह वस्तु जो प्यास या भूख को भड़कावे । डसना, डंक मारना । गर्मी की बीमारी, आतशक ।

उपदर्शक—(पुं०) [उप√दृश्+णिच् + ण्वुल्] मार्गदर्शक । द्वारपाल । [उप√दृश् +ण्वुल्] गवाह, साक्षी ।

उपदश—(वि०) [दशानां समीपे ये सन्ति इति विग्रहे ब० स०][बहुवचन] लगभग दस । नौ या ग्यारह ।

उपदा—(स्त्री०) [उप√दा+अङ] नजराना, भेंट । घूस, रिश्वत ।

उपदान, उपदानक—(न०) [उप√दा+ल्युट्] [उपदान+कन्] बलि, चढ़ावा । दान । रिश्वत ।

उपदिश्, उपदिशा—(स्त्री०) [प्रा० स०] उपदिशा, दिशाओं के कोण—ऐशानी । आग्नेयी । नैर्ऋती । वायवी ।

उपदेव—(पुं०)—**उपदेवता**— (स्त्री०) [प्रा० स०]छोटा देवता, निकृष्ट देवता ।

उपदेश—(पुं०) [उप√दिश्+घञ्]शिक्षा

नसीहत । दीक्षागुरुमन्त्र । सविशेष विवरण । ब्याज, बहाना, मिस । नेक सलाह ।

उपदेशक—(वि०) [उप√दिश्+ण्वुल्] उपदेश करने वाला । शिक्षा देने वाला, नसीहत देने वाला । (पुं०) शिक्षक । दीक्षागुरु ।

उपदेशन—(न०) [उप√दिश्+ल्युट्] शिक्षा, नसीहत, सीख ।

उपदेशिन्—(वि०) [उप√दिश्+णिनि] उपदेष्टा, नसीहत देने वाला ।

उपदेष्टृ—(पुं०) [उप√ दिश्+तृच्] शिक्षक, गुरु । दीक्षागुरु ।

उपदेह—(पुं०) [उप√दिह्+घञ्] मलहम । ढकना ।

उपदोह—(पुं०) [उप√दुह्+घञ्] गाय के स्तन के ऊपर की घुंडी । दोहनी, पात्र जिसमें दूध दुहा जाय ।

उपद्रव—(पुं०) [उप√द्रु+अप्] उत्पात । क्षति । सार्वजनिक संकट या आपत्ति (अतिवर्षण, विप्लव आदि) दंगा-फसाद, गड़बड़, बखेड़ा । एक रोग के बीच में होने वाला दूसरा गौण रोग । उपसर्ग ।

उपधर्म—(पुं०) [प्रा० स०] गौण धर्म या नियम ।

उपधा—(स्त्री०) [उप√धा+अङ्] छल, प्रवञ्चना, जाल, फरेब । सत्यता या ईमानदारी की परीक्षा । व्याकरण में अन्त्य वर्ण से पूर्व का वर्ण । उपाय; 'अपायोऽभिद्रुरा लोके कोपधा मरणादृते' शि० १६.५८ ।—**भृत**—(पुं०) वह नौकर जिसके ऊपर बेईमानी का इलजाम लगाया गया हो ।—**शुचि**—(वि०) परीक्षित, जाँचा हुआ ।

उपधातु—(पुं०) [प्रा० स०] निकृष्ट धातु अथवा प्रधान धातुओं के समान । वे ये हैं :— "सप्तोपधातवः स्वर्णं माक्षिकं तारमाक्षिकम् । तुत्थं कांस्यं च रीतिश्च सिन्दूरं च शिलाजतु ॥" शरीर के रस-रक्तादि सात धातुओं से बने हुए दूध, पसीना, चर्बी आदि । वे ये हैं :— स्तन्यं रजो वसा स्वेदो दन्ताः केशास्तथैव च । ओजस्यं सप्तधातूनां क्रमात्सप्तोपधातवः ॥

उपधान—(न०) [उप√धा+ल्युट्] जिस पर रखकर सहारा लिया जाय । तकिया । विशेषता । स्नेह । एक धार्मिक अनुष्ठान । सर्वोत्तम-गुण-विशिष्टता । विष, जहर ।

उपधानीय—(वि०) [उप√धा+अनीयर्] पास रखने योग्य । (न०) तकिया ।

उपधारण—(न०) [उप√धृ+णिच्+ल्युट्] सम्यक् चिंतन । चित्त को किसी एक विषय में लगाना । किसी ऊपर रखी या लगी हुई चीज को लग्गी में अटका कर खींच लेने की क्रिया ।

उपधि—(पुं०) [उप√धा+कि] जालसाजी, बेईमानी; "विजयाधिनः क्षितीशाः विदधति सोपधि सन्धिदूषणानि" कि० १.४५ ; सत्य का अपलाप, जान-बूझकर सत्य को छिपाना । भय । धमकी । पहिया या पहिये का स्थान विशेष ।

उपधिक—(पुं०) [उपधि+ठन्—इक] दगाबाज, धोखेबाज, प्रवञ्चक, छली, कपटी ।

उपधूपित—(वि०) [उप√धूप् + क्त] सुवासित । मरणासन्न । अत्यन्त पीड़ित । (न०) मृत्यु ।

उपधृति—(स्त्री०) [उप√धृ+क्तिन्] किरण । ग्रहण ।

उपध्मान—(पुं०) [उप √ध्मा+ ल्युट्] ओठ । (न०) फूँक ।

उपध्मानीय—(पुं०) [उप√ध्मा+अनीयर्] व्याकरणीय संज्ञा विशेष । 'प' और 'फ' से पहले आने वाला महाप्राण विसर्ग अर्थात् अर्धविसर्गसदृश एक चिह्न, ⌣⌢ ।

उपनक्षत्र—(न०) [प्रा० स०] सहकारी नक्षत्र, गौण नक्षत्र, ऐसे नक्षत्रों की संख्या ७२६ कही जाती है ।

उपनगर—(न०) [प्रा० स०] नगर का बाहरी भाग । शहर से सटी हुई या उसके बाहर पर की बस्ती, शाखानगर ।

उपनत—[उप√नम्+क्त] नम्र, झुका हुआ। शरणागत। उपस्थित। प्राप्त। घटित।

उपनति—(स्त्री०) [उप√नम्+क्तिन्] समीप आगमन। झुकाव। प्रणाम।

उपनय—(पु०) [उप√नी+अच्] समीप ले जाना। प्राप्ति, उपलब्धि। उपनयन संस्कार। न्याय में वाक्य के चौथे अवयव का नाम।

उपनयन—(न०) [उप√नी+ल्युट्] पास ले जाना। भेंट करने की क्रिया, चढ़ावा। यज्ञोपवीत संस्कार, व्रतबंध, जनेऊ।

उपनागरिका—(स्त्री०) [प्रा० स०] अलङ्कार में वृत्ति अनुप्रास का एक भेद; इसमें कर्णमधुर वर्णों का प्रयोग किया जाता है।

उपनाय—(पु०) **उपनायन**—(न०) [उप√नी+णिच्+घञ्] [उप√नी+णिच्+ल्युट्—अन] दे० 'उपनयन'।

उपनायक—(पु०) [प्रा० स०] नाटकों में या किसी साहित्य-ग्रन्थ में प्रधान नायक का साथी या सहकारी (जैसे, रामायण में लक्ष्मण)। उपपति, प्रेमी।

उपनायिका—(स्त्री०) [प्रा० स०] नाटकों में प्रधान नायिका की सखी या सहेली (जैसे, मालतीमाधव में मदयन्तिका)।

उपनाह—(पु०) [उप√नह्+घञ्] गठरी। घाव या फोड़े पर लगाने का मलहम या लेप। सितार की खूंटी।

उपनाहन—(न०) [उप√नह्+णिच्+ल्युट्] मलहम या लेप लगाने की क्रिया।

उपनिक्षेप—(पु०) [उप—नि √क्षिप्+घञ्] अमानत, धरोहर, [ऐसी धरोहर जिसकी संख्या, तौल आदि धरोहर रखने वाले को बतला कर दिखला दी जाय। मिताक्षराकार ने ऐसी धरोहर की यह परिभाषा दी है:—'उपनिक्षेपो नाम रूपसंख्याप्रदर्शनेन रक्षणार्थं परस्य हस्ते निहितं द्रव्यम्'।

उपनिधान—(न०) [उप—नि√धा+ल्युट्] समीप रखना। धरोहर रखना। धरोहर, अमानत।

उपनिधि—(पु०) [उप—नि√धा+कि] मोहर लगा कर और बंद करके रखी हुई अमानत, धरोहर, गिरवी रखी हुई वस्तु।

उपनिपात—(पु०) [उप—नि√पत्+घञ्] समीप आगमन। अचानक घटित घटना या आक्रमण।

उपनिपातिन्—(वि०) [उप—नि√पत्+णिनि] आ पड़ने वाला, टूट पड़ने वाला। हठात् आक्रमण करने वाला।

उपनिबन्धन—(न०) [उप—नि√बन्ध्+ल्युट्] किसी कार्य को सुसम्पन्न करने का साधन। बंधन। बस्ता, पुस्तक के ऊपर की जिल्द।

उपनिमन्त्रण—(न०) [उप—नि√मन्त्र्+णिच्+ल्युट्] बुलावा, आमंत्रण। प्रतिष्ठा, अभिषेक-संस्कार।

उपनियम—(पु०) [प्रा० स०] किसी नियम के अंतर्गत बना हुआ अन्य छोटा नियम (सबरूल)।

उपनिर्वाचन—(न०) [प्रा० स०] मृत्यु या अन्य कारण से विधान सभा, नगरपालिका आदि के किसी सदस्य का या किसी पदाधिकारी आदि का स्थान रिक्त हो जाने पर होने वाला चुनाव (बाई-इलेक्शन)।

उपनिवेश—(पु०) [उप—नि √विश्+घञ्] उपनगर। दूसरे देश से आये हुए लोगों की बस्ती। विजित देश, जिसमें विजेता राष्ट्र के लोग आकर बस गये हों (कॉलोनी)। —**पद**—(न०) उपनिवेशों का दरजा। उस प्रकार का स्वराज्य या स्वतंत्रता जो उन्हें प्राप्त है (डोमिनियन स्टेटस)।

उपनिवेशित—(वि०) [उप—नि√विश्+णिच्+क्त] उपनिवेश बनाया हुआ।

उपनिषद्—(स्त्री०) [उप—नि√ सद्+क्विप् अथवा √सद्+णिच्+क्विप्] वेद की शाखाओं के ब्राह्मणों के वे अन्तिम भाग जिनमें आत्मा और परमात्मा आदि का वर्णन

किया गया है। वेद के गूढार्थ-प्रकाशक ग्रन्थ। ब्रह्मविद्या, ब्रह्मसम्बन्धी सत्य ज्ञान। वेदान्त दर्शन। रहस्य, एकान्त। समीप या पड़ोस का भवन। समीप उपवेशन, ब्रह्मविद्या की प्राप्ति के लिये गुरु के निकट उपवेशन।

उपनिष्कर—(पुं०) [उप—निस्√कृ+अ] राजमार्ग, मुख्य मार्ग, प्रधान रास्ता।

उपनिष्क्रमण—(न०) [उप—निस् √क्रम्+ल्युट्] बाहर निकलना। नवजात शिशु को सब से प्रथम बाहर लाने के समय का संस्कार विशेष यह संस्कार चौथे मास में किया जाता है। मुख्यमार्ग।

उपनीत—(वि०) [उप√नी+क्त] पास लाया हुआ। जिसका उपनयन हुआ हो।

उपनृत्य—(न०) [ब० स०] नृत्यशाला या नाचने की जगह।

उपनेतृ—(वि०) [उप√नी+तृच्] पास ले जाने वाला। (पुं०) नेता का नायब या सहकारी। उपनयन संस्कार कराने वाला आचार्य।

उपन्यास—(पुं०) [उप—नि√अस्+घञ्] पास लाना। धरोहर, अमानत। प्रस्ताव। प्रमाण। वाक्य का उपक्रम। संधि का एक प्रकार। कल्पित और काफी लंबी कहानी (नावेल)।—सन्धि—(पुं०) मंगलकारी कार्य की इच्छा से की जाने वाली संधि।

उपपति—(पुं०)[प्रा० स०] जार, आशिक।

उपपत्ति—(स्त्री०) [उप√पद्+क्तिन्] प्राप्ति। सिद्धि। प्रतिपादन। हेतु द्वारा किसी पदार्थ की स्थिति का निश्चय। घटना। चरितार्थ होना। मेल मिलना। युक्ति, हेतु। प्रमाण। आधार, सहारा। औचित्य। अंत। साधन। स्वीकृति। समाधि।

उपपद—(न०) [प्रा० स०] पास या पीछे बोला गया या लगाया गया पद। उपाधि, शिक्षा-सम्बन्धी योग्यता-प्रदर्शक पदवी। प्रतिष्ठासूचक सम्बोधनवाची शब्द; जैसे "आर्य"। "शर्मन्"। —समास— (पुं०) कृदंत के साथ हुआ नाम (संज्ञा) का समास, जैसे "कुम्भकार"।

उपपन्न—(वि०) [उप√पद्+क्त] लब्ध, प्राप्त, पाया हुआ। योग्य, उपयुक्त, उचित। युक्तियुक्त, यथार्थ। पास आया हुआ, पहुँचा हुआ। शरणागत। सिद्ध किया हुआ। नीरोग किया हुआ।

उपपरीक्षण—(न०), **उपपरीक्षा**—(स्त्री०) [प्रा० स०] जाँचपड़ताल, अनुसन्धान।

उपपात—(पुं०) [उप√पत्+घञ्] इत्तिफाकिया घटना। विपत्ति, सङ्कट।

उपपातक—(न०) [प्रा० स०] छोटा पाप, याज्ञवल्क्य स्मृति में लिखा है।—महापातक-तुल्यानि पापान्युक्तानि यानि तु। तानि पातक- संज्ञानि तन्न्यूनमुपपातकम्॥

उपपादन—(न०) [उप√पद्+णिच्+ल्युट्] पूरा करना। सौंपना, हवाले करना। सिद्ध करना, युक्तिपूर्वक किसी विशेष को समझाना। परीक्षण।

उपपार्श्व—(न०) [अत्या० स० वा प्रा० स०] कंधा। पक्ष। बगल। छोटी पसली। विपक्ष।

उपपीडन—(न०) [उप√पीड्+णिच्+ल्युट्] दबाना। नष्ट करना, उजाड़ना। पीड़ित करना, घायल करना। पीड़ा, कष्ट।

उपपुर—(न०) [प्रा० स०] नगर के समीप की बस्ती, शाखानगर।

उपपुराण—(न०) [प्रा० स०] अठारह प्रधान पुराणों के अतिरिक्त अन्य छोटे पुराण, पुराणों के बाद बनाये गये पुराण। इनके नाम ये हैं;—सनत्कुमार। नारसिंह। नारदीय। शिव। दुर्वासा। कपिल। वामन। औशनस्। वरुण। कालिका। शाम्ब। नन्दा। सौर। पराशर। आदित्य। माहेश्वर। भार्गव। वासिष्ठ।

उपपुष्पिका—(स्त्री०) [अत्या० स०, संज्ञायां कन्, टाप्, इत्वम्] जमुहाई। हाँफना।

उपप्रदर्शन—(न०) [प्रा० स०] बतलाना, निर्देश करना ।

उपप्रदान—(न०) [प्रा० स०] सौंपना, हवाले करना । रिश्वत, घूस । राजस्व, खिराज ।

उपप्रलोभन—(न०) [प्रा० स०] फुसलाहट, लोभन, लालच । घूस, रिश्वत प्रलोभन ।

उपप्रेक्षण—(न०) [प्रा० स०] उपेक्षा, तिरस्कार ।

उपप्रैष—(पुं०) [प्रा० स०] निमंत्रण, बुलावा ।

उपप्लव—(पुं०) [उप√प्लु+अप्] विपत्ति, सङ्कट । अशुभ घटना । अत्याचार । भय, आतङ्क । अशुभसूचक दैवी उपद्रव । चन्द्र या सूर्य ग्रहण । उल्कापात । राहु उपग्रह का नाम । राज्यक्रान्ति । विघ्न, बाधा । शिव ।

उपप्लविन्—(वि०) [उपप्लव+इनि] सन्तप्त, पीड़ित । अत्याचार से सताया हुआ ।

उपबन्ध—(पुं०) [उप√बन्ध्+घञ्] संबंध । उपसर्ग । रति-क्रिया का आसन विशेष । किसी विधि, अधिनियम आदि के वे खंड या उपखंड जिनमें किसी बात की सम्भावना आदि को ध्यान में रखते हुए पहले से कोई प्रबन्ध या गुंजाइश रख दी जाय (प्रोविजन) । इस तरह रखी गई गुंजाइश या गुंजाइश रखने की क्रिया ।

उपबर्ह—(पुं०), **उपबर्हण**—(न०) [उप√बर्ह्+घञ्] [उप√बर्ह्+ल्युट्] दबाना । तकिया, बालिश ।

उपबहु—(वि०) [प्रा० स०] थोड़ा, कुछ ।

उपबाहु—(पुं०) [अत्या० स०] नीचे की बाँह ।

उपबृंहण—(न०) [उप√बृह्+ल्युट्] वृद्धि, बढ़ती ।

उपभंग—(पुं०) [उप√भञ्ज्+घञ्] भाग जाना, पीछे भागना ।

उपभाषा—(स्त्री०) [प्रा० स०] गौण, बोलचाल की भाषा ।

उपभृत्—(स्त्री०) [उप√भृ+क्विप्] यज्ञीय पात्र विशेष, यह बरगद की लकड़ी का बनाया जाता है ।

उपभोग—(पुं०) [उप√भुज्+घञ्] भोगना; 'न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति' भाग० । स्वाद लेना । व्यवहार, बरतना । विषय-सुख । स्त्रीसहवास । फलभोग ।

उपमंत्रण—(न०) [उप√मन्त्र्+ल्युट्] सम्बोधन करने, निमंत्रण देने और बुलाने की क्रिया ।

उपमन्थनी—(स्त्री०) [उप√मन्थ्+ल्युट्—ङीप्] आग उकसाने की एक लकड़ी ।

उपमर्द—(पुं०) [उप√मृद्+घञ्] रगड़ । निचोड़ । कुचलना । नाश । धिक्कार, भर्त्सना । भूसी अलगाना । किसी लगाये हुए दोष का प्रतिवाद या खण्डन ।

उपमा—(स्त्री०) [उप√मा+अङ—टाप्] समानता, सादृश्य, तुलना । पटतर, मिलान । एक अर्थालङ्कार जिसमें दो वस्तुओं में भेद रहते भी उनकी समानता दिखलाई जाती है ।

उपमातृ—(स्त्री०) [प्रा० स०] धाय, दूध पिलाने वाली दाई । बिल्कुल निकट का सम्बन्ध रखने वाली स्त्री । (वि०) [उप√मा+तृच्] उपमा देने वाला । (पुं०) चित्रकार ।

उपमान—(न०) [उप√मा+ल्युट्] वह वस्तु जिससे उपमा दी जाय । समानतासूचक वस्तु । न्याय में चार प्रमाणों में से एक ।

उपमिति—(स्त्री०) [उप√मा+क्तिन्] समानता, तुलना, सादृश्य । उपमा या सादृश्य से होने वाला ज्ञान ।

उपमेय—(वि०) [उप√मा+यत्] उपमा देने योग्य । (न०) वह वस्तु जिसकी किसी से तुलना की जाय । वर्ण्य, वर्णनीय ।

उपयन्तृ—(पुं०) [उप√यम्+तृच्] पतिः 'अयोपयन्तारमलं समाधिना' कु० ५.४५ ।

उपयन्त्र—(न०) [प्रा० स० या अत्या० स०] छोटा यंत्र या औजार । चीर-फाड़ के काम आने वाला एक विशेष यंत्र ।

उपयम—(पुं०) [उप√यम्+अप्] विवाह, परिणय ।
उपयमन—(न०) [उप√यम्+ ल्युट्] विवाह करना । रोकना, संयम करना । अग्निस्थापन ।
उपयष्टृ—(पुं०) [उप√यज्+तृच्] सोलह प्रकार के ऋत्विजों में से प्रतिप्रस्थाता नामक ऋत्विक् ।
उपयाचक—(वि०) [उप√याच्+ण्वुल्] माँगने वाला, मँगता, प्रार्थी, आवेदक ।
उपयाचन—(न०) (उप√याच्+ल्युट्] याचना, प्रार्थना, आवेदन ।
उपयाचित, उपयाचितक— (वि०) [उप √ याच्+क्त][उपयाचित+कन्] याचित, प्रार्थित । (न०) प्रार्थना, निवेदन । मनौती, मानता । किसी कार्य की सिद्धि के लिए देवी-देवता से प्रार्थना करना ।
उपयाज—(पुं०) [उप√यज्+घञ्] यज्ञांग याग विशेष, यह ११ प्रकार का होता है । यज्ञ का अतिरिक्त विधान ।
उपयान—(न०) [उप√या+ल्युट्] समीप जाना; 'हरोपयाने त्वरिता बभूव' कु० ७.२२।
उपयुक्त–(वि०) [उप√युज्+ क्त] उपयोग में लाया हुआ । प्रयुक्त । उचित, ठीक । योग्य । अनुकूल ।
उपयोग—(पुं०) [उप√युज्+घञ्] काम, व्यवहार, इस्तेमाल, प्रयोग । औषधोपचार या दवाइयों का बनाना । योग्यता, उपयुक्तता, औचित्य । सामीप्य ।—वाद–(पुं०) एक सिद्धान्त, जिसके अनुसार मनुष्य ऐसा कोई काम न करे जिससे किसी जीव को दुःख हो । अधिक से अधिक लोगों का अधिक से अधिक हितसाधन धर्म है—यह मत (यूटिलिटेरियनिज्म ।)
उपयोगिन्—(वि०) [उप√युज्+विनुण्] उपयुक्त । लाभजनक । अनुकूल । योग्य, ठीक । काम में आने वाला, कारामद ।
उपयोजन—(न०) [उप√युज्+णिच्+ल्युट्] उपयोग करना । घोड़ा जोतने का काम । (कोई वस्तु या धन) अधिकार में ले लेना या अपने प्रयोग में ले आना (ऐप्रोप्रियेशन) ।
उपरक्त—(वि०)[उप√रञ्ज्+क्त] विषयासक्त । पीड़ित, सन्तप्त । ग्रस्त । रंगीन, रंगा हुआ । (पुं०) राहु केतु ग्रस्त चन्द्र, सूर्य । राहु ।
उपरक्ष—(पुं०) [उप√रक्ष्+घञ्] अंगरक्षक । सेना का पहरेदार ।
उपरक्षण—(न०)[उप√रक्ष्+ल्युट्] पहरा, चौकी ।
उपरत—(वि०) [उप√रम्+क्त] हटा हुआ । रागरहित । निवृत्त । मरा हुआ ।—कर्मन्–(वि०) सांसारिक कामों पर भरोसा न करने वाला ।—स्पृह–(वि०) समस्त कामनाओं से शून्य, संसार से विरुद्ध ।
उपरति—(स्त्री०) [उप√रम्+क्तिन्] विरति, विषय से विराग । स्त्रीसम्भोग से अरुचि । उदासीनता । मृत्यु ।
उपरत्न—(न०) [प्रा० स०)] घटिया किस्म के रत्न (काच, कपूर, प्रस्तर, मुक्ता, शुक्ति, शंख इत्यादि) ।
उपरम, उपराम—(पुं०) [उप√रम्+घञ् नि० न वृद्धिः], [उप√रम्+घञ्] निवृत्ति । वैराग्य । मृत्यु । विश्रांति ।
उपरमण—(न०) (उप√रम्+ल्युट्] स्त्रीसम्भोग से विरति । विराम ।
उपरस—(पुं०) [प्रा० स०] वैद्यक में पारे के समान गुण करने वाले रस । गंधक, अभ्रक, मैनसिल, गेरू आदि । गौण भाव । थोड़ा-थोड़ा मालूम होने वाला अप्रधान स्वाद ।
उपराग—(पुं०) [उप√रञ्ज्+घञ्] सूर्य-चन्द्र का ग्रहण । राहु । ललाई । लाल रंग । रंग । विपत्ति, सङ्कट; 'मृणालिनी हैममिवोपरागं' र० १६.७ । धिक्कार, भर्त्सना । निकटस्थ वस्तु के प्रभाव से रंग-रूप बदलना (सांख्य०) ।

उपराम—(पुं०) [उप√रम्+घञ्] निवृत्ति। रोक। विश्रान्ति। मृत्यु।
उपराज—(पुं०) [प्रा० स०] राजा का नायब, राजप्रतिनिधि।
उपरि—(अव्य०) [ऊर्ध्व+रिल्, उप आदेश] ऊपर। उपरांत, बाद।—चर–(वि०) ऊपर चलने वाला। (पुं०) पक्षी। एक वस्तु।—भाग–(पुं०) ऊपरी हिस्सा।—भूमि–(स्त्री०) ऊपर की जमीन।
उपरितन—(वि०) [उपरि+ट्यु, तुट्] ऊपर का, ऊँचा।
उपरिष्टात्—(अव्य०) [ऊर्ध्व+रिष्टातिल्, उप आदेश] ऊपर। पीछे।
उपरीतक—(पुं०) [उप√री+क्त+कन्] रतिक्रिया का आसन या विधि विशेष। 'एक पादमुरौ कृत्वा द्वितीयं स्कन्धसंस्थितम्। नारीं कामयते कामी बन्धः स्यादुपरीतकः॥' [रतिमञ्जरी)
उपरूपक—(न०) [प्रा० स०] निम्न श्रेणी का या गौण रूपक (नाटक) जो १८ प्रकार का होता है।
उपरोध—(पुं०) [उप√रुध्+घञ्] रोक-टोक, बाधा, अड़चन। उत्पात, आफ़त। आड़, पर्दा, रोक। रक्षा। अनुग्रह।
उपरोधक—(वि०) [उप√रुध्+ण्वुल्] रोकने वाला। ढकने वाला। आड़ करने वाला। घेरने वाला। (न०) भीतर का कमरा।
उपरोधन—(न०) [उप√रुध्+ल्युट्] रोकटोक, बाधा, अड़चन।
उपल—(पुं०) [उप√ला+क वा उ√पल्+अच्] पत्थर। रत्न। ओला। बादल।
उपलक—(पुं०) [उपल+कन्] एक पत्थर।
उपलक्षण—(न०) [उप√लक्ष्+ल्युट्] देखना, लखना। बोधक चिह्न। पहचान। संकेत। शब्द की वह शक्ति जिससे निर्दिष्ट वस्तु के अतिरिक्त उस तरह की और वस्तुओं का भी बोध हो।
उपलब्धि—(स्त्री०) [उप√लभ्+क्तिन्] प्राप्ति। बोध, ज्ञान। अनुमान। बुद्धि। किसी पण्य वस्तु की वह संख्या या परिमाण जो बाजार में खरीदने या माँग की पूर्ति करने के लिये किसी समय प्राप्य हो (सप्लाई)।
उपलम्भ—(पुं०) [उप√लभ्+घञ्, नुम्] प्राप्ति, उपलब्धि। पहचान। खोज, तलाश।
उपला—(स्त्री०) [उप√ला+क, टाप्] बालू, रेत। साफ की हुई चीनी।
उपलालन—(न०) [उप√लल्+णिच्+ल्युट्] प्यार करना, दुलारना।
उपलालिका—(स्त्री०) [उप√लल्+ण्वुल्] प्यास।
उपलिङ्ग—(न०) [प्रा० स०] दुर्निमित्त, अपशकुन।
उपलिप्सा—(स्त्री०) [उप√लभ्+सन्+अ, टाप्] पाने की इच्छा।
उपलेप—(पुं०) [उप√लिप्+घञ्] लेप, मालिश, उबटन। लीपना, पोतना। रोक। सुन्न पड़ जाना।
उपलेपन—(न०) [उप√लिप्+ल्युट्] मालिश, लेप या उबटन करने की क्रिया। लेप, उबटन, मलहम।
उपवन—(न०) [प्रा० स०] बाग, उद्यान।
उपवर्ण—(पुं०), उपवर्णन–(न०) [उप√वर्ण्+घञ्] [उप√वर्ण्+ल्युट्] विस्तृत, ब्योरेवार वर्णन।
उपवर्तन—(न०) [उप√वृत्+ल्युट्] अखाड़ा, कसरत करने का स्थान। जिला या परगना। राज्य। दलदल।
उपवसथ—(पुं०) [उप√वस+अथ] ग्राम, गाँव। सोमयाग का पूर्वदिवस, इस दिन उपवास करते हैं।
उपवस्त—(न०) [उप√वस् (स्तम्भे)+क्त] उपवास, कड़ाका, व्रत।
उपवास—(पुं०) [उप√वस्+घञ्] व्रत,

उपोषण, निराहार रहना। यज्ञीय अग्नि का प्रज्वलित करना।

उपवाहन—(न०) [उप√वह्+णिच्+ल्युट्] पास ले जाना।

उपवाह्य—(पुं०), उपवाह्या-(स्त्री०) [उप√वह्+ण्यत्], [उपवाह्य+टाप्] राजा की सवारी में काम आने वाला वाहन—हाथी, रथ आदि। वाहन। (वि०) पास लाने योग्य। सवारी के काम आने वाला।

उपविद्या—(स्त्री०) [प्रा० स०] लौकिक विद्या, घटिया ज्ञान।

उपविधि—(पुं०) [प्रा० स०] किसी विधि के अंतर्गत बनाई गई छोटी विधि (बाई-ला)।

उपविष—(पुं०) [प्रा० स०] बनावटी जहर। घटिया जहर, मादक विष; यथा अफीम, धतूरा।

उपवीणयति—ना० धा० क्रि० उत्सव में किसी देवता के आगे वीणा बजाना।

उपवीत—(न०) [उप-वि√इ+क्त] जनेऊ। उपनयन संस्कार।

उपबृंहण—(न०) दे० 'उपबृंहण'।

उपवेद—(पुं०) [प्रा० स०] वे विद्याएँ जिनका मूल वेद में है। ये चार हैं। यथा धनुर्वेद, गन्धर्ववेद, आयुर्वेद, स्थापत्य। धनुर्वेद विद्या का मूल यजुर्वेद में, गन्धर्व विद्या का सामवेद में, आयुर्वेद विद्या का ऋग्वेद में और स्थापत्य विद्या का अथर्ववेद में है।

उपवेश—(पुं०), उपवेशन-(न०) [उप√विश्+घञ्] बैठना। किसी कार्य में संलग्न होना। मलत्याग। [उप√विश्+ल्युट्] दे० 'उपवेश'। सभा की बैठक होती रहना, बैठक होती रहने की स्थिति (सिटिंग)।

उपवैणव—(न०) [उपवेणु+अण्] दिन के तीन काल, प्रातः, मध्याह्न और सायम्; त्रिसन्ध्या।

उपव्याख्यान—(न०) [प्रा० स०] पीछे से लगायी या जोड़ी हुई व्याख्या या टीका।

उपव्याघ्र—(पुं०) [प्रा० स०] चित्रक, चीता।

उपशम—(पुं०) [उप√शम्+घञ्] निस्तब्ध हो जाना, शान्त हो जाना। विराम। अवसान। निवृत्ति। इन्द्रियनिग्रह। निवारण का उपाय। इलाज, चारा।

उपशमन—(न०) [उप√शम्+णिच्+ल्युट्] शांत करना। तुष्ट करना। निवारण। दबाना। घटाना। शूल-नाशक औषध।

उपशय—(वि०) [उप√शी+अच्] पास में सोना। ओषधि या पथ्य विशेष के प्रभाव से रोग का निदान। अनुकूल ओषधि या पथ्य द्वारा रोग का इलाज। घात में बैठना।

उपशल्य—(न०) [अत्या० स०] भाला। गाँव या नगर का सिवाना, डाँडा; 'ग्रामान्त; 'अथोपशल्ये रिपुमग्नशल्यः' र० १६.३७। पहाड़ के पास की जमीन।

उपशाखा—(स्त्री०) [प्रा० स०] छोटी डाली या छोटी शाखा।

उपशान्ति—(स्त्री०) [प्रा० स०] विराम। निवृत्ति। बुझाना। (जैसे भूख को या प्यास को) कम करना।

उपशाय—(पुं०) [उप√शी+घञ्] बारी-बारी से सोना।

उपशाल—(न०) [अत्या० स०] भवन के पास का छोटा घर। मकान के सामने का घेरा या हाता। अव्य० [अव्य० स०] घर के समीप या पास।

उपशास्त्र—(न०) [प्रा० स०] गौण शास्त्र या कोई छोटी कला।

उपशिक्षण—(न०), उपशिक्षा- (स्त्री०) [उप√शिक्ष् +ल्युट्], [उप√शिक्ष्+अ] अध्ययन-अध्यापन, पढ़ना-पढ़ाना।

उपशिष्य—(पुं०) [प्रा० स०] शिष्य का शिष्य, शागिर्द का शागिर्द; 'शिष्योपशिष्यैरुपगीयमानमवेहि तन्मण्डनमिश्रधाम'।

उपशोभन—(न०), उपशोभा-(स्त्री०)

[उप√शुभ्+ल्युट्], [उप√शुभ्+घ] शृंगार, सजावट ।

उपशोषण—(न०) [उप√शुष्+ल्युट् वा √शुष्+णिच्+ल्युट्] सूखना । सुखाना, शोषण करना । चूसना ।

उपश्रुति—(स्त्री०) [उप√श्रु+क्तिन्] सुनना । सुनाई देने की हद । स्वीकृति । वचन । रात में सुनाई देने वाली भविष्य सूचक देववाणी । भविष्य कथन ।

उपश्लेष—(पुं०), **उपश्लेषण**—(न०) [उप√श्लिष्+घञ्], [उप√श्लिष्+ल्युट्] संसर्ग । आलिङ्गन ।

उपश्लोकयति—ना० धा० क्रि० श्लोक बनाकर प्रशंसा करना ।

उपसंयम—(पुं०) [उप—सम्√यम्+अप्] दमन करना । बाँधना । प्रलय ।

उपसंयोग—(पुं०) [प्रा० स०] गौण सम्बन्ध । सुधार ।

उपसंरोह—(पुं०) [प्रा० स०] साथ-साथ उगना वा किसी के ऊपर उगना ।

उपसंवाद—(पुं०) [प्रा० स०] इकरारनामा, प्रतिज्ञापत्र ।

उपसंव्यान—(न०) [उप—सम्√व्ये+ल्युट्] कपड़े के भीतर पहिना जाने वाला कपड़ा, कुर्त्ता, बनियाइन आदि । अंतःपट ।

उपसंहरण—(न०) [उप—सम्√हृ+ल्युट्] वापिस ले लेना । छीन लेना । रोक रखना । छेंक देना । आक्रमण करना ।

उपसंहार—(पुं०) [उप—सम्√हृ+घञ्] मिला देना । वापिस लेना या रोक रखना । समारोह । समाप्त करना । लेख आदि के अंत में दिया जाने वाला खुलासा । सारांश । संक्षिप्तता । पूर्णता । नाश । आक्रमण ।

उपसंहारिन्—(वि०) [उप—सम्√हृ+णिनि] अन्तर्भाव करने वाला, मिला लेने वाला ।

उपसंक्षेप—(पुं०) [प्रा० स०] सार । संग्रह ।

उपसंख्यान—(न०) [उप—सम्√ख्या+ल्युट्] जोड़, जमा । अतिरिक्त योग या वृद्धि। यह शब्द प्रायः कात्यायन के वार्तिक के लिये प्रयुक्त होता है, जिसमें पाणिनि की छूटों की पूर्ति की गई है ।

उपसंग्रह—(पुं०), **उपसंग्रहण**—(न०) [उप—सम्√ग्रह्+अप्], [उप—सम्√ग्रह्+ल्युट्] आलम्बित रखना । किसी के खाने-पीने आदि की आवश्यकताओं का प्रबन्ध कर देना । प्रणाम के लिए चरणस्पर्श । अंगीकार-करण । विनम्र आवेदन । एकत्र करना, जमा करना । संयोग करना, मिलाना । ग्रहण करना । उपकरण ।

उपसत्ति—(स्त्री०) [उप√सद्+क्तिन्] संयोग, सम्बन्ध । सेवा, परिचर्या । दान ।

उपसद्—(पुं०) [उप√सद्+क] समीपगमन । दान ।

उपसदन—(न०) [उप√सद्+ल्युट्] समीप जाना, समीपवर्ती होना । गुरु के चरणों में बैठना, शिष्य बनना; 'तत्रोपसदनं चक्रे द्रोणस्येष्वस्त्रकर्मणि' महा० । पड़ोस । सेवा ।

उपसन्तान—(पुं०) [प्रा० स०] निकट सम्बन्ध । सन्तान ।

उपसन्धान—(न०) [उप—सम्√धा+ल्युट्] जोड़ना । बढ़ाना ।

उपसंन्यास—(पुं०) [उप—सम्—नि√अस्+घञ्] रख देना । त्याग देना, छोड़ देना ।

उपसमाधान—(न०) [उप—सम्—आ√धा+ल्युट्] जमा करना, ढेर करना ।

उपसम्पत्ति—(स्त्री०) [उप—सम्√पद्+क्तिन्] पहुँचना । अवस्थांतर में प्रवेश करना ।

उपसम्पन्न—(वि०) [उप—सम्√पद्+क्त] प्राप्त । आया हुआ, आगत । स्वत्वप्राप्त । बलि में मारा हुआ (पशु) । मृत । राँधा हुआ । (न०) मसाला, छौंक, बघार ।

उपसम्भाष—(पुं०), **उपसम्भाषा**—(स्त्री०) [उप—सम्√भाष्+घञ्], [उप—सम्√भाष्+अ, टाप्] बातचीत । मैत्रीपूर्ण अनुरोध ।

उपसर—(पुं०) [उप√सृ+अप्] समीप जाना । गौ का प्रथम गर्भ । "गवामुपसरः" ।

उपसरण—(न०) [उप√ सृ+ल्युट्] (किसी की ओर) जाना । शरणागत होना ।

उपसर्ग—(पुं०) [उप√सृज्+घञ्] भौतिक या दैविक उपद्रव । एक रोग के बीच में उत्पन्न दूसरा गौण रोग; 'क्षीणं हन्युश्चोपसर्गाः प्रभूताः' । विपत्ति, संकट । प्रेतबाधा । मृत्यु का पूर्व लक्षण । वह शब्द या प्रत्यय जो केवल किसी शब्द के पूर्व लगता है और उसमें किसी अर्थ की विशेषता करता है, जैसे अनु, उप, अव आदि ।

उपसर्जन—(न०) [उप√सृज्+ल्युट्] उड़ेलना । दैवी उत्पात । विसर्जन । ग्रहण । कोई व्यक्ति या वस्तु जो दूसरे के अधीन हो ।

उपसर्प—(पुं०), उपसर्पण–(न०) [उप√सृप् +घञ्], [उप√सृप्+ल्युट्] समीप जाना ।

उपसर्या—(स्त्री०) [उप√सृ+यत्, टाप्] गर्भ धारण करने योग्य ऋतुमती गाय ।

उपसुन्द—(पुं०) [प्रा० स०] निकुम्भ का पुत्र और सुन्द का भाई । एक असुर ।

उपसूर्यक—(न०) [अत्या० स०,+कन्] सूर्यमण्डल ।

उपसृष्ट—(वि०) [उप√सृज+क्त] मिला हुआ, जुड़ा हुआ । आवेष्टित । सन्तप्त । पीड़ित । ग्रस्त । उपसर्ग से युक्त । (पुं०) राहु-केतु-ग्रसित सूर्य या चन्द्र । (न०) स्त्रीमैथुन, स्त्रीसम्भोग ।

उपसेक—(पुं०), उपसेचन–(न०) [उप√सिच्+घञ्], [उप√सिच+ल्युट्] सींचना । उड़ेलना । छिड़कना । पानी से तर करना । गीली चीज, रस ।

उपसेचनी—(स्त्री०) [उपसेचन + ङीप्] चमची । कलछी ।

उपसेवन—(न०), उपसेवा–(स्त्री०) [उप√ सेव्+ल्युट्][उप√ सेव+अ, टाप्] पूजन, अर्चा । सेवा । (किसी वस्तु का) आदी होना, अभ्यस्त होना । इस्तेमाल करना । उपभोग करना (स्त्री का) ।

उपस्कर—(पुं०) [उप√कृ+अप्, सुट्] अंग अर्थात् जिसके बिना कोई वस्तु अधूरी रहे । मसाला । सामान, असबाब, उपकरण । गृहस्थी के लिए उपयोगी सामान जैसे बुहारी, सूप, चलनी आदि । आभूषण । कलङ्क, दोष ।

उपस्करण—(न०) [उप √कृ+ल्युट्, सुट्] वध, हत्या । संग्रह । परिवर्तन । संशोधन । त्रुटि । कलंक । भूषण । साज ।

उपस्कार—(पुं०) [उप√कृ+घञ्, सुट्] परिशिष्ट, न्यूनता-पूरक; 'साकांक्षमनुपस्कारं विष्वग्गति निराकुलं' कि० ११.३८ । सजावट । आभूषण । आघात, प्रहार । संग्रह ।

उपस्कृत—[उप√कृ+क्त,सुट्]तैयार किया हुआ, बनाया हुआ । संगृहीत । सजाया हुआ, भूषित किया हुआ । न्यूनता की पूर्ति किया हुआ । संशोधित किया हुआ ।

उपस्कृति—(स्त्री०) [उप√कृ+क्तिन्, सुट्] भूषण । परिशिष्ट ।

उपस्तम्भ—(पुं०), उपस्तम्भन–(न०) [उप √स्तम्भ्+घञ्], [उप√स्तम्भ्+ल्युट्] सहारा । उत्साह । सहायता । आधार ।

उपस्तरण—(न०) [उप√स्तृ +ल्युट्] फैलाना, बिखेरना । चादर । बिछौना, शय्या । कोई वस्तु जो बिछायी जाय ।

उपस्त्री—(स्त्री०) [प्रा० स०] रंडी ।

उपस्थ—(पुं०) [उप√स्था+क] गोद । मध्यभाग । गुदा । (न०) स्त्री की योनि । पुरुष का लिङ्ग । कूल्हा ।—निग्रह–(पुं०) इन्द्रिय-निग्रह, वंधेज; 'स्नानं मौनोपवासेज्या स्वाध्यायोपस्थनिग्रहाः' । —पत्र,—दल–(पुं०) पीपल का वृक्ष ।

उपस्थान—(न०) [उप√स्था+ल्युट्] निकट आना । सामने आना । अभ्यर्थना या पूजा के लिये निकट आना । रहने की जगह, डेरा, बासा । तीर्थ या देवालय । स्मृति, याद-

दाखत। देवता के सामने खड़ा होकर स्तुति या आराधना करना।
उपस्थापन—(न०) [उप√स्था+णिच्, पुक्+ल्युट्] पास रखना। तैयार करना। स्मृति को नया करना। याददास्त को ताजा करना। परिचर्या, सेवा। विधान-सभा आदि के सामने कोई प्रस्ताव विचारार्थ उपस्थित करना। किसी अधिकारी के सामने कोई विषय उसकी स्वीकृति प्राप्त करने के लिये रखना (प्रेजेंटेशन)।
उपस्थापक—(पुं०) [उप√स्था+ ण्वुल्] नौकर, भृत्य।
उपस्थिति—(वि०) [उप√स्था+क्तिन्] निकटता। विद्यमानता। प्राप्त करना। पूरा करना। स्मृति। सेवा।
उपस्नेह—(पु०) [उप√स्निह्+ घञ्] आर्द्र होना, गीला होना। उपलेप। स्नेह (चिकनाई) युक्त अन्न-रस।
उपस्पर्श—(पुं०), उपस्पर्शन –(न०) [उप√ स्पृश्+घञ्], [उप√स्पृश्+ल्युट्] स्पर्श करना, छूना। संसर्ग होना। स्नान। कुल्ला करना। मुँह साफ करना। आचमन करना।
उपस्मृति—(स्त्री०) [प्रा० स०] धर्मशास्त्र के छोटे ग्रन्थ। इनकी संख्या १८ है।
उपस्रवण—(न०) [उप√स्रु+ल्युट्] रजस्वला धर्म। बहाव।
उपस्वत्व—(न०) [प्रा० स०] राजस्व। लाभ, जो भूमि की आय से अथवा पूँजी से होता है।
उपस्वेद—(पुं०) [उप√स्विद्+ घञ्] पसीना। वाष्प। आर्द्रता, तरी।
उपहत—(वि०) [उप√हन्+क्त] आहत, घायल। हराया हुआ। नष्ट किया हुआ; 'कथमत्रापि दैवोपहता वयम्' मृ० २। धिक्कारित। बिगाड़ा हुआ। अपवित्र किया हुआ। —आत्मन् (उपहतात्मन्)–(वि०) घबड़ाया हुआ, उद्विग्न-चित्त।—दृश्–(वि०) चौंधियाया हुआ। अंधा।—धी–(वि०) मूढ़।
उपहतक—(वि०) [उपहत+कन्] अभागा, बदकिस्मत।
उपहति—(स्त्री०) [उप√हन्+ क्तिन्] प्रहार, चोट। वध, हत्या।
उपहत्या—(स्त्री०) [प्रा० स०] आँखों का चौंधियाना। चकाचौंध।
उपहरण—(न०) [उप√हृ+ल्युट्] लाना, जाकर लाना। ग्रहण करना, पकड़ना। नजर करना, भेंट देना। बलिपशु चढ़ाना। भोजन परोसना या बाँटना।
उपहसित—(वि०) [उप√हस्+क्त] चिढ़ाया हुआ, मजाक उड़ाया हुआ। (न०) कटाक्षयुक्त हँसी।
उपहस्तिका—(स्त्री०) [अत्या० स०,+ कन्, टाप्, इत्व] बटुआ जिसमें पान का सामान रहता है; 'उपहस्तिकायास्ताम्बूलं कर्पूरसहितमुद्धृत्य' दश०।
उपहार—(पुं०) [उप√हृ +घञ्] भेंट, सौगात। दान। नैवेद्य। दक्षिणा। सम्मान। लड़ाई का हर्जाना। मेहमानों को बाँटा हुआ भोजन।
उपहालक—(पुं०) कुन्तल देश का नाम।
उपहास—(पुं०) [उप√हस्+घञ्] हँसी, ठट्ठा, दिल्लगी। निन्दा, बुराई।—आस्पद (उपहासास्पद)–पात्र–(न०) हँसने, खिल्ली उड़ाने योग्य। उपहास्य।
उपहासक—(वि०) [उप√हस्+ण्वुल्] दूसरों की दिल्लगी उड़ाने वाला। (पुं०) मसखरा।
उपहास्य—(वि०) [उप√हस्+ण्यत्] उपहास के योग्य।
उपहित—(वि०) [उप√धा+क्त] ऊपर, नीचे या पास रखा हुआ। युक्त, सहित। उपाधियुक्त। दत्त। गृहीत। कुछ अच्छा।
उपहूति—(स्त्री०) [उप√ह्वे +क्तिन्] आह्वान, बुलौआ।

उपह्वर—(पुं०) [उप√ह्वृ+घ] सामीप्य। एकान्त स्थल। उतार।

उपह्वान—(न०) [उप√ह्वे+ल्युट्] बुलाना। मन्त्रों से आह्वान करना।

उपांशु—(अव्य०) [उपगता अंशवो यत्र ब० स०]मन्द स्वर से, धीमी आवाज से। चुपके चुपके। (पुं०) मंत्र जपने की एक विधि, ऐसे जपना जिससे अन्य कोई जाप्य मंत्र को सुन न सके।

उपाकरण—(न०) [उप—आ√कृ+ल्युट्] योजना, उपक्रम, तैयारी, अनुष्ठान। यज्ञ में वेदपाठ। यज्ञीय पशु का संस्कार विशेष।

उपाकर्मन्—(न०)[उप—आ√कृ+मनिन्] उपक्रम। आरम्भ। श्रावणी कर्म, श्रावणी पूर्णिमा को किया जाने वाला एक संस्कार।

उपाकृत—(वि०) [उप—आ√कृ+क्त] समीप लाया हुआ। बलिदान किया हुआ। आरम्भ किया हुआ।

उपाक्षम्–(अव्य०)[अक्ष्णः समीपे इति विग्रहे अव्य० स०] नेत्रों के सामने, विद्यमानता में।

उपाख्यान, उपाख्यानक—(न०) [उप—आ√ख्या+ल्युट्], [उपाख्यान+कन्] पुरानी कथा, पुराना वृत्तान्त। किसी कथा के अन्तर्गत कोई अन्य कथा।

उपागम—(पुं०) [उप—आ√गम्+अप्] समीप आगमन, पहुँचना। घटित होना। प्रतिज्ञा, इक़रार। स्वीकृति।

उपाग्र—(न०) [प्रा० स०] छोर के पास का भाग। गौण अवयव।

उपाग्रहण—(न०) [उप—आ√ग्रह+ल्युट्] संस्कारपूर्वक वेदाध्ययन का आरंभ करना। वेदाध्ययन का अधिकारी होने के पीछे वेदाध्ययन करना।

उपाङ्ग—(न०) [प्रा० स०] छोटा अंग। अंग का विभाग। पूरक, सहायक वस्तु। वेदांग के पूरक विषय—पुराण, न्याय, मीमांसा और धर्मशास्त्र। टीका। भालांकित पादुका-चिह्न। ढोल जैसा एक बाजा।

उपाचार—(पुं०) [उप—आ√चर्+घञ्] स्थान। पद्धति।

उपाजे—(अव्य०) (यह केवल कृ धातु के साथ ही व्यवहृत होता है) सहारे, सहारे से।

उपाञ्जन—(न०) [उप√अञ्ज्+ल्युट्] तेल मलना। लीपना। सफ़ेदी करना।

उपात्त—(वि०) [उप—आ√दा+क्त] लिया हुआ। लब्ध, प्राप्त। अधिकृत। अनुभूत। प्रयुक्त। उल्लिखित। आरब्ध। (पुं०) निर्मद हस्ती।—अस्त्र—(वि०) हथियारबंद।

उपात्यय—(पुं०) [उप—अति√इ+इन्] आज्ञा-उल्लंघन। मर्यादा भङ्ग करना।

उपादान—(न०) [उप—आ√दा+ल्युट्] ग्रहण करना, लेना, प्राप्त करना। वर्णन करना, बखान करना। सम्मिलित करना, शामिल करना। सांसारिक पदार्थों से इन्द्रियों को हटाना। कारण, हेतु। वे पदार्थ जिनसे कोई वस्तु बनी हो। सांख्य की चार आध्यात्मिक तुष्टियों में से एक।

उपाधि—(पुं०) [उप—आ√धा+कि] धोखा। भ्रम। वह जिसके संयोग से कोई पदार्थ और का और दिखलाई पड़े। विशेषता। प्रतिष्ठासूचक पद, पदवी। अपने कुटुम्ब के भरणपोषण में सावधान रहने वाले पुरुष की परिस्थिति। धर्मचिन्ता, कर्त्तव्य का विचार। उत्पात, उपद्रव।

उपाधिक—(वि०) [अत्या० स०] अत्यधिक, नियमित संख्या से अधिक, बेशी, अतिरिक्त।

उपाध्यक्ष—(पुं०) [प्रा० स०] किसी सभा, संस्था, विधान-सभा आदि का वह पदाधिकारी जो अध्यक्ष के सहायक रूप में या उसके अनुपस्थित रहने पर उसके स्थान पर काम करता है (डिप्टी चेयरमैन, डिप्टी स्पीकर)।

उपाध्याय—(पुं०) [उपेत्य अस्मात् अधीयते इति उप—अधि√इ+घञ्] अध्यापक, शिक्षक, गुरु। वेदवेदाङ्ग पढ़ाने वाला।

उपाध्याया, उपाध्यायी—(स्त्री०) [उपाध्याय+टाप्] पढ़ानेवाली अध्यापिका । [उपाध्याय+ङीप्] गुरु की पत्नी ।
उपाध्यायानी—(स्त्री०) [उपाध्याय+ङीप्, आनुक्] गुरु की पत्नी ।
उपानह्—(स्त्री०) [उप√नह्+क्विप्, दीर्घ] जूता ।
उपान्त—(पुं०) [प्रा० स०] किनारा, प्रांत, सिरा 'उपान्तयोर्निष्कुषितं विहङ्गै०' र० ७.५० । आँख की कोर । पड़ोस, सन्निकट । नितम्ब ।
उपान्तिक—(वि०) [प्रा० स०] समीपवर्ती, पड़ोस का । (न०) पड़ोस, पास, समीप ।
उपान्त्य—(वि०) [उपान्त+यत्] अन्तिम के पूर्व का एक । (पुं०) आँख की कोर । (न०) पड़ोस, समीप, निकट ।
उपाय—(पुं०) [उप√अय्+घञ्] साधन, युक्ति, तदबीर । युद्ध में शत्रु को धोखा देना । प्रारम्भ । उद्योग, प्रयत्न । शत्रु को परास्त करने की युक्ति । यथा—साम, दाम, भेद, दण्ड । उपागम । शृंगार के दो साधन । —चतुष्टय-(न०) शत्रु को वश में करने के चार उपाय । साम, दाम, भेद, दण्ड । ०ज्ञ-(वि०) इन चार साधनों का जानकार या इन साधनों का व्यवहार करने में चतुर ।—तुरीय—(पुं०) चौथा उपाय अर्थात् दण्ड ।
उपायन—(न०) [उप√अय्+ल्युट्] समीपगमन । शिष्य बनना । धर्मानुष्ठान में लगना । भेंट, चढ़ावा; 'तस्योपायनयोग्यानि वस्तूनि सरितांपतिः' कु० २.३७ ।
उपारम्भ—(पुं०) [उप–आ√रभ्+घञ्, नुम्] प्रारम्भ, आरम्भ ।
उपार्जन—(न०), उपार्जना—(स्त्री०) उप √अर्ज + ल्युट्] [उप √ अर्ज युच्] कमाना । पैदा करना । हासिल करना ।
उपार्ध—(वि०) [ब० स०] कम मूल्य का, घटिया ।

उपालम्भ—(पुं०), उपालम्भन–(न०) [उप–आ√लभ्+घञ्, नुम्], [उप–आ √लभ्+ल्युट्, नुम्] उलाहना, शिकायत । निन्दा । विलम्ब करना । स्थगित करना ।
उपावर्तन—(न०) [उप–आ√वृत्+ल्युट्] लौटा आना । लौट जाना । वापिस आना या जाना । चक्कर खाना, घूमना । समीप आना ।
उपावृत्त—(वि०) [उप–आ √ वृत् +क्त] लौटा हुआ । विरत । उचित । चक्कर खाया हुआ । लौटा हुआ । (पुं०) थकावट दूर करने के लिए लोटने वाला घोड़ा ।
उपाश्रय—(पुं०) [उप–आ√श्रि+अच्] सहायता प्राप्त करने का साधन, आधार, सहारा । मतवाला हाथी । विश्वास ।
उपासक—(पुं०) [उप√आस्+ण्वुल्] उपासना करने वाला । सेवक । भक्त । अनुयायी । शूद्र । भिक्षु से भिन्न बुद्ध का पूजक ।
उपासन—(न०), उपासना–(स्त्री०) [उप √आस्+ल्युट्], [उप√आस+युच्] सेवा, परिचर्या; 'उपासनामेत्य पितुः स्म रज्यते' नैष० १.३४ । सेवा में उपस्थित रहना । पूजन, सम्मान । ध्यान । गार्हपत्याग्नि ।
उपासन—[उप√अस्+ल्युट्] बाण या तीर चलाने का अभ्यास ।
उपासा—(स्त्री०) [उप√आस्+अ, टाप्] सेवा, परिचर्या । पूजन । ध्यान ।
उपास्तमन—(न०) [उप–अस्तमन प्रा० स०] सूर्यास्त ।
उपास्ति—(स्त्री०) [उप√आस्+क्तिन्] चाकरी, सेवा में उपस्थित रहना । पूजन, अर्चन ।
उपास्त्र—(न०) [प्रा० स०] गौण अस्त्र, छोटा हथियार ।
उपाहार—(पुं०) (प्रा० स०] हल्का जलपान ।
उपाहित—(वि०) [उप–आ√धा+क्त] स्थापित । आरोपित । सम्बन्धयुक्त । (पुं०) अग्निभय या अग्नि का किया हुआ सर्वनाश ।

उपेक्षा—(स्त्री०) [उप√ईक्ष्+अ, टाप्] लापरवाही, उदासीनता। विरक्ति, चित्त का हटना। घृणा, तिरस्कार।

उपेत—[उप√इ+क्त] समीप आया हुआ। उपस्थित। युक्त, सम्पन्न; 'पुत्रमेवं गुणोपेतं चक्रवर्तिनमाप्नुहि' श० १.१२।

उपेन्द्र—(पुं०) [प्रा० ब०] वामन या विष्णु भगवान्, इन्द्र का छोटा भाई।

उपेय—[उप√इ+यत्] समीप जाने योग्य। पाने योग्य, किसी उपाय से होने योग्य।

उपोढ—(वि०) [उप√वह्+क्त] संग्रह किया हुआ, जमा किया हुआ, राशीकृत। समीप लाया हुआ। युद्ध के लिये क्रमबद्ध किया हुआ। विवाहित।

उपोत्तम—(वि०) [अत्या० स०] अन्तिम से पूर्व का एक। (न०) अंतिम स्वर से संलग्न स्वर।

उपोद्घात—(पुं०) [उप—उद् √ हन् + घञ्] आरम्भ। भूमिका। उदाहरण। किसी के कथन के विपरीत युक्ति। अवसर। माध्यम, द्वारा, जरिया। पृथक्करण।

उपोत्पादन—(न०) [प्रा० स०] वह गौण उत्पादन (उत्पादित वस्तु) जो किसी अन्य मुख्य वस्तु का निर्माण करते समय अनायास तैयार हो जाय या की जाय (बाइप्राडक्ट)।

उपोद्बलक—(वि०) [उप—उद्√बल्+ण्वुल्] दृढ़ करने वाला, मजबूत बनाने वाला।

उपोषण, उपोषित—(न०) [उप√उष् + ल्युट्] [उप√उष्+क्त] उपवास, व्रत, फाँका, कड़ाका।

उप्ति—(स्त्री०)[√वप्+क्तिन्] बीज बोना।

√उब्ज्—तु० पर० सक० दबाना, वश में करना। सीधा करना। उब्जति, उब्जिष्यति, औब्जीत्।

√उभ्, √उम्भ्—तु० पर० सक० कैद करना। दो को मिलाना। परिपूर्ण करना। ढाँकना। उभति,—उम्भति, ओभिष्यति,—उम्भिष्यति, औभीत् —औम्भीत्।

उभ—(सर्वनाम) (वि०) [√उभ् + क] दोनों।

उभय—(सर्वनाम (वि०) [√ उभ्+अयट्] दोनों।—चर-(वि०) जल-थल दोनों जगह रहने वाला।—मुखी-(स्त्री०) गर्भवती।—विद्या-(स्त्री०) आध्यात्मिक ज्ञान और लौकिक ज्ञान।—वेतन-(वि०) दोनों ओर से वेतन पाने वाला, दगाबाज।—व्यञ्जन-(वि०) स्त्री और पुरुष दोनों के चिह्न रखने वाला।—सम्भव-(पुं०) दुविधा, भ्रम।

उभयतस्—(अव्य०) [उभय+तसिल्] दोनों ओर से, दोनों ओर। दोनों दशाओं में। दोनों प्रकार से।—दत्,—दन्त (उभयतोदत्), (उभयतोदन्त)-(वि०) दाँतों की दुहरी पंक्तियों वाला।—भागिन् (उभयतो भागिन्)-(पुं०) मित्र और अमित्र दोनों का एक साथ उपकार करने वाला राजा (कौ०)।—मुख (उभयतोमुख)-(वि०) दोनों ओर मुँह या दृष्टि वाला, दुमुँहा।—मुखी (उभयतोमुखी)-(स्त्री०) ब्याती हुई (गाय)।

उभयत्र—(अव्य०) [उभय+त्रल्] दोनों जगह। दोनों तरफ। दोनों दशाओं में।

उभयथा—(अव्य०) [उभय+थाल्] दोनों प्रकार से। दोनों दशाओं में।

उभयद्युस्, उभयेद्युस्—(अव्य०) [उभय +द्युस्] [उभय+एद्युस्] दोनों दिवस। दोनों पिछले दिनों।

उम्—(अव्य०) [√उभ्+डुम्] क्रोध, प्रश्न, प्रतिज्ञा, स्वीकारोक्ति, सच्चाई व्यञ्जक अव्यय विशेष।

उमा—(स्त्री०) [ओः शिवस्य मा लक्ष्मीरिव उं शिवं माति मिमीते वा, उ√मा+क, टाप्] शिव जी की पत्नी, जो हिमालय की पुत्री थीं। कान्ति। सौन्दर्य। यश, कीर्ति, निस्त-

स्वता, क्रान्ति। रात्रि। हल्दी। सन।—गुरु,—जनक-(पुं०) हिमालय पर्वत।—पति-(पुं०) शिव जी।—सुत-(पुं०) कार्तिकेय या गणेश जी।

उम्बर, उम्बुर (पुं०) [उम्√वृ+अच्, पृषो० साधुः] चौकट की ऊपर वाली लकड़ी।

√उर्—भ्वा० पर० सक० जाना। ओरति, ओरिष्यति, औरीत्।

उर—(पुं०) [√उर्+क] भेड़।

उरग—(पुं०) [उरस्√गम्+ड, सलोप] [स्त्री०—उरगी] साँप, सर्प। नाग। सीसा। अश्लेषा नक्षत्र। नागकेसर वृक्ष।—अशन (उरगाशन)-(पुं०) सर्पभक्षक, गरुड़। मोर। नेवला।—इन्द्र (उरगेन्द्र),—राज-(पुं०) वासुकि या शेष का नाम।—प्रतिसर-(वि०) परिणयार्थ्ज्ञलीयक के लिये सर्प रखने वाला।—भूषण-(पुं०) शिव।—सारचन्दन-(पुं० न०) एक प्रकार के चन्दन का काष्ठ।—स्थान-(पुं०) पाताल, जहाँ सर्प रहते हैं।

उरगा—(स्त्री०) [उरग+टाप्] एक नगरी का नाम।

उरङ्ग, उरङ्गम-(पुं०) [उरस्√गम्+ड, नि०] [उरस्√गम्+खच्, सलोप, मुम्] सर्प, साँप।

उरण—(पुं०) [√ऋ+क्यु, उत्व रपर] [स्त्री०—उरणी] मेढ़ा, मेष, भेड़ा; 'वृकीवोरणमासाद्य मृत्युरादाय गच्छति' महा०। एक दैत्य, जिसे इन्द्र ने मारा था।

उरणक—(पुं०)[उरण+कन्] मेघ। बादल।

उरणी—(स्त्री०) [उरण+ङीप्] भेड़ी, मेषी।

उरभ्र—(पुं०) [उरु उत्कटं भ्रमति इति उरु √भ्रम्+ड, पृषो० उलोप] भेड़, मेष।

उररी—(अव्य०) [√उर्+अरीक् (बा०)] स्वीकारोक्ति, प्रवेश और सम्मति-व्यञ्जक अव्यय।

उरस्—(पुं०) [√ऋ+असुन्, उत्व, रपर] छाती, वक्षःस्थल।—क्षत (उरःक्षत)-(न०) छाती का घाव।—ग्रह,—घात (उरोग्रह) (उरोघात)-(पुं०) फेफड़े का रोग।—छदस्, —त्राण (उरश्छदस्) (उरस्त्राण)-(न०) छाती की रक्षा के लिये कवच विशेष।—ज (उरोज),—भू (उरोभू), उरसिज, उरसिरुह-[सप्तम्या अलुक्] (पुं०) स्त्रियों की छाती, स्तन।—सूत्रिका (उरःसूत्रिका)-(स्त्री०) मोती का हार जो वक्षःस्थल पर पड़ा है।—स्थल (उरःस्थल)-(न०) छाती, वक्षःस्थल।

उरस्य—(वि०) [उरस्+यत्] औरस (सन्तान)। वक्षःस्थल का। सर्वोत्कृष्ट। (पुं०) पुत्र।

उरसिल, उरस्वत्-(वि०) [उरस्+इलच्] [उरस्+मतुप् मस्य वः] चौड़ी छाती वाला।

उरी—(अव्य०) [√उर्+ईक् (बा०)] दे० 'उररी'।

उरु—(वि०) [ऊर्णु+उण्, नुलोप, ह्रस्व] [स्त्री० उरु और उर्वी] विशाल, विस्तृत। लंबा। अत्यधिक, विपुल। बहुमूल्यवान्, बेशकीमती। महान्, श्रेष्ठ।—कीर्ति-(वि०) प्रसिद्ध, सुपरिचित।—क्रम-(पुं०) विष्णु भगवान् की उपाधि (वामनावतार की)।—गाय-(वि०) महान् लोगों से प्रशंसित।—मार्ग-(पुं०) लंबा मार्ग।—विक्रम-(वि०) पराक्रमी, बलवान्।—स्वन-(पुं०) अतिउच्च स्वर, गम्भीर रव।—हार-(पुं०) मूल्यवान् हार।

उररी—(अव्य०) [√उर्+उरीक्] दे० 'उररी'।

उर्णनाभ-(पुं०) [ऊर्णेव सूत्रं नाभौ गर्भेऽस्य ब० स०] मकड़ा।

उर्णा—(स्त्री०) [√ऊर्णु+ड, ह्रस्व] ऊन। दोनों भौंवों के बीच का केश-मण्डल।

√उर्व्—भ्वा० पर० सक० मारना। उर्वति। उर्विष्यति, और्वीत्।

उर्वट—(पुं०) [उरु√अट्+अच्] बछड़ा। वर्ष।

उर्वरा—(स्त्री०) [उरु√ऋ+अच्, टाप्] उपजाऊ भूमि। (सामान्यतः) भूमि।

उर्वशी—(स्त्री०) [उरून् महतोऽपि अश्नुते वशीकरोति इति उरु √ अश+क, ङीप्] विषम वासना, उत्कट अभिलाषा। इन्द्र-लोक की एक प्रसिद्ध अप्सरा।—रमण,—वल्लभ,—सहाय-(पुं०) पुरूरवा का नाम।

उर्वारु—(पुं०) [उरु√ऋ+उण्] एक प्रकार की ककड़ी। खरबूजा।

उर्वी—(स्त्री०) [√ऊर्णु+कु, नलोप, ह्रस्व ङीप्] भूमि। पृथ्वी; 'जुगोप गोरूपधरामिवोर्वीम्' र० २.३। मैदान।—ईश-(उर्वीश),—ईश्वर (उर्वीश्वर)—धव,—पति-(पुं०) राजा।—धर-(पुं०) पर्वत। शेषनाग।—भृत्-(पुं०) राजा। पहाड़।—रुह-(पुं०) वृक्ष, पेड़।

√उल्—भ्वा० पर० सक० देना। ओलति, ओलिष्यति, औलीत्।

उलप—(पुं०) [√वल+कपन्, संप्रसारण] बेल, लता। कोमल तृण।

उलूक—(पुं०) [√वल्+ऊक, संप्रसारण] उल्लू, घुग्घू। इन्द्र का नाम।

उलूखल—(न०) [ऊर्ध्वं खम् उलूखम्, पृषो० √ला+क] ओखली। खल। गूलर की लकड़ी का डंडा। गुग्गुल। कान का एक गहना।

उलूखलक—(न०) [उलूखल+कन्] खल, इमामदस्ता।

उलूखलिक—(वि०) [उलूखल+ठन्—इक] ऊखल में कूटा हुआ।

उलूत—(पुं०) [√वल्+ऊतच्] अजगर सर्प।

उलूपी—(स्त्री०) एक नाग-कुमारी का नाम, जो अर्जुन को ब्याही थी। इस के गर्भ से बभ्रुवाहन नामक एक वीर उत्पन्न हुआ था, जिसने युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ की दिग्विजय यात्रा में अर्जुन को परास्त किया था।

उल्का—(स्त्री०) [√उष्+क, नि० षस्य लः] प्रकाश, तेज। लुक, लुपाठा, आकाश से टूटकर गिरा हुआ तारा। मशाल। अग्नि।—धारिन्-(वि०) मशालची।—पात-(पुं०) आकाश से जलते पिंड का टूट कर गिरना।—मुख-(पुं०) प्रेतों का एक भेद। अगिया बैताल। गीदड़।

उल्कुषी—(स्त्री०) [उल्√कुष+क, ङीप्] उल्का। मशाल।

उल्ब, उल्व—(न०) [√उच्+ब (व) न्, चस्य लत्वम्] भग, योनि। गर्भाशय।

उल्बण, उल्वण—(वि०) [उद्√वण(वन)+अच्, पृषो० साधुः] गाढ़ा। अधिक, विपुल। दृढ़, मजबूत। प्रादुर्भूत। प्रत्यक्ष; 'तस्यासीदुल्बणो मार्गः' र० ४.३३।

उल्मुक—(पुं०) [√उष+मुक्, षस्य लः] अधजली लकड़ी। मशाल।

उल्लङ्घन—(न०) [उद्√लङ्घ+ल्युट्] लाँघना, डाँकना। अतिक्रमण। विरुद्धाचरण।

उल्लल—(वि०) [उद्√लल्+अच्] हिलने-डुलने वाला। घने बालों वाला।

उल्लसन—(न०) [उद्√लस्+ल्युट्] हर्ष। रोमाञ्च।

उल्लसित—(वि०) [उद्√लस्+क्त] चमकीला, दमकदार। प्रसन्न, आनन्दित।

उल्लाघ—(वि०) [उद्√लाघ्+क्त, नि० साधुः] रोग से मुक्त। निपुण, पटु। विशुद्ध। हर्षित, प्रसन्न।

उल्लाप—(पुं०) [उद्√लप्+घञ्] वाणी, शब्द। अपमानकारक शब्द, आक्षेपयुक्त भाषण; 'क्लीबोल्लापाः सोढाः' भ०। तार

स्वर से पुकारना या बुलाना। बीमारी या भावावेश के कारण परिवर्तित कण्ठस्वर। सङ्केत, इशारा।

उल्लाप्य—(न०) [उद्√लप्+णिच्+यत्] एक प्रकार का नाटक। एक तरह का गीत।

उल्लास—(पुं०) [उद्√लस्+घञ्] हर्ष, आनन्द। चमक, आभा, दीप्ति। एक अलंकार, जिसमें एक गुण या दोष से दूसरे के गुण या दोष दिखलाये जाते हैं; इसके चार भेद माने गये हैं। ग्रन्थ का एक भाग, पर्व, काण्ड।

उल्लासन—(न०) [उद्√लस्+णिच्+ल्युट्] दीप्ति, चमक, आभा। नचाना या कुदाना।

उल्लिङ्गित—(वि०) [उद्√लिङ्ग्+क्त] प्रसिद्ध, प्रख्यात, मशहूर। परिचित।

उल्लीढ—(वि०) [उद्√लिह्+क्त] चिकनाया हुआ। मला हुआ। रगड़ा हुआ।

उल्लुञ्चन—(न०) [उद्√लुञ्च्+ल्युट्] तोड़ना। बाल को खींचना या उखाड़ना।

उल्लुण्ठन—(न०), **उल्लुण्ठा**–(स्त्री०) [उद्√लुण्ठ्+ल्युट्] [उद्√लुण्ठ्+अ, टाप्] श्लेषवाक्य, व्यङ्गयवाक्य। व्यङ्ग्योक्ति।

उल्लेख—(पुं०) [उद्√लिख्+घञ्] वर्णन, चर्चा, जिक्र। लिखना, लेख। एक काव्यालङ्कार, इसमें एक ही वस्तु का अनेक रूपों में दिखलाई पड़ना वर्णन किया जाता है। खुरचना, छीलना।

उल्लेखन—(न०) [उद्√लिख्+ल्युट्] खुरचना, छीलना। खुदाई। वमन, छर्दि। वर्णन, चर्चा। लेख, चित्रण।

उल्लोच—(पुं०) [उद्√लोच+घञ्] राजछत्र। मण्डप। चन्द्रातप, चंदोवा। शामियाना।

उल्लोल—(पुं०) [उद्√लोड्+घञ्, डस्य लत्वम्] बड़ी लहर, महा-तरङ्ग।

उल्व, उल्वण–दे० "उल्ब, उल्बण"।

उशनस्—(पुं०) [√वश्+कनस्] शुक्र का नाम, शुक्र-ग्रह का अधिष्ठातृ-देवता; वैदिक साहित्य में इनको कवि की उपाधि प्राप्त है; इनके नाम से एक स्मृति भी है।

उशी—(स्त्री०) [√वश्+ई, संप्रसारण] इच्छा, अभिलाषा।

उशीर, उषीर–(पुं० न०) **उशीरक, उषीरक**–(न०) [√वश्+ईरन्, किन्, संप्रसारण] [√उष+कीरन्] [उशीर वा उषीर+कन्] खस, वीरणमूल।

√उष्—भ्वा० पर० सक० जलाना। दण्ड देना। मार डालना। ओषति, ओषिष्यति, औषीत्।

उष—(पुं०) [√उष्+क] भोर, तड़का। कामुक पुरुष। गुग्गुल। खारी मिट्टी। नोना नमक।

उषण—(न०) [√उष+क्युन्] काली मिर्च। अदरक, आदी। सोंठ। पिप्पलीमूल।

उषप—(पुं०) [√उष्+कपन्] अग्नि। सूर्य।

उषस्—(स्त्री०) [√उष्+असि] तड़का, भोर। प्रातःकाल का प्रकाश। प्रातः सायं सन्ध्याओं की अधिष्ठात्री देवी।—**बुध**-(**उषर्बुध**) (पुं०) अग्नि। चित्रक वृक्ष। बच्चा। (वि०) उषःकाल में उठने वाला।

उषसी—(स्त्री०) [उष√सी+क-ङीप्] दिन का अवसान, सायंकाल।

उषा—(स्त्री०) [√उष+क-टाप्] तड़का, भोर। प्रातःकालीन प्रकाश। झुट-पुटा। लुनियाही भूमि। बटलोई। बाणासुर की पुत्री का नाम।—**कल**-(पुं०) मुर्गा।—**पति**,—**रमण**-(पुं०) अनिरुद्ध का नाम।

उषित—(वि०) [√वस् वा√उष्+क्त] बसा हुआ। जला हुआ।

उष्ट्र—(पुं०) [√उष्+ष्ट्रन्, कित्] ऊँट। भैंसा। साँड़, वृष। बैलगाड़ी। [स्त्री०—**उष्ट्री**]।

उष्ट्रिका—(स्त्री०) [उष्ट्र+कन्, टाप्, इत्व] ऊँटनी। मिट्टी का बना ऊँट की शक्ल का मदिरापात्र।

उष्ण—(वि०) [√उष्+नक्] गरम। पैना, तीक्ष्ण। तासीर में गरम। तेज, फुर्तीला। हैजा सम्बन्धी। (पुं०) गर्मी, ताप। ग्रीष्मऋतु। सूर्यातप, घाम। (पुं०) प्याज। एक नरक। **—अंशु** (उष्णांशु)**—कर,—गु,—दीधिति,—रश्मि,—रुचि**—(पुं०) सूर्य। **—अभिगम** (उष्णाभिगम),**—आगम** (उष्णागम),**—उपगम** (उष्णोपगम)-(पुं०) ग्रीष्मऋतु। **—उदक** (उष्णोदक),-(न०) गर्म जल, ताता पानी। **—काल,—ग**-(पुं०) ग्रीष्मऋतु। **—वाष्प**-(पुं०) आँसू। गर्म भाफ। **—वारण**-(पुं०) (न०) छाता, छत्र; 'यदर्थमम्भोजमिवोष्णवारणम्' कु० ५.५।

उष्णक—(वि०) [उष्ण+कन्] तीक्ष्ण। क्रियाशील। ज्वर-पीड़ित। गरमी पहुँचाने वाला। झुका हुआ, प्रणत। (पुं०) ज्वर। ग्रीष्मऋतु, गर्मी का मौसम।

उष्णालु—(वि०) [उष्ण+आलुच्] गरमी न सह सकने वाला। गरमी से व्याकुल, घमाया हुआ।

उष्णिका—(स्त्री०) [अल्पमन्नम् इत्यर्थे अल्प+कन्, नि० उष्ण आदेश, टाप्, इत्व] माँड़।

उष्णिमन्—(पुं०) [उष्ण+इमनिच्] गर्मी।

उष्णीष—(पुं०) [उष्ण√ईष्+क, शक० पररूप] फेंटा, साफा। पगड़ी। मुकुट। पहचान का चिह्न।

उष्णीषिन्—(वि०) [उष्णीष+इनि] मुकुटधारी। (पुं०) शिव का नाम।

उष्म, उष्मक-(पुं०) [√उष्+मक्] [उष्म+कन्] गर्मी। ग्रीष्मऋतु। क्रोध। उत्सुकता, उत्कण्ठा। **—अन्वित** (उष्मान्वित)-(वि०) क्रुद्ध, क्रोध में भरा। **—भास्**-(पुं०) सूर्य। **—स्वेद**-(पुं०) भपारा, भाप से स्नान।

उष्मन्—(पुं०) [√उष्+मनिन्] गर्मी, गर्माहट। भाफ, वाष्प। ग्रीष्मऋतु। उत्सुकता। श्, ष्, स् और ह् ये अक्षर व्याकरण में उष्मन् माने गये हैं।

उस्र—(पुं०) [√वस्+रक्, संप्रसारण] किरण। साँड़। देवता।

उस्रा, उस्रि-(स्त्री०) [उस्र+टाप्] प्रातःकाल, भोर, तड़का। प्रकाश। गौ। **—क** (उस्रिक)-(पुं०) नाटा बैल।

√उह्,—भ्वा० पर० सक० पीड़ित करना। घायल करना। नाश करना। ओहति, ओहिष्यति, औहीत्।

उह, उहह-(अव्य०) बुलाने के अर्थ में प्रयोग किया जाने वाला अव्यय।

उह्र—(पुं०) [√वह्+रक्] साँड़।

ऊ

ऊ—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का छठा अक्षर। उच्चारण-स्थान ओंठ है। दो मात्राओं से दीर्घ और तीन मात्राओं से यह प्रयत्न होता है। अनुनासिक-भेद से इसके भी दो-दो भेद हैं। (पुं०) [√अव्+क्विप्, ऊठ्] शिव का नाम। चन्द्रमा। (अव्य०) [√वेञ्+क्विप्] आरम्भसूचक अव्यय। आह्वान, अनुकंपा और रक्षा-व्यञ्जक अव्यय।

ऊढ—(वि०) [√वह्+क्त] ढोया गया। लिया गया। विवाहित। (पुं०) विवाहित पुरुष।

ऊढा—(स्त्री०) [ऊढ—टाप्] लड़की जिसका विवाह हो चुका हो।

ऊढि—(स्त्री०) [√वह्+क्तिन्] विवाह, शादी।

ऊत—(वि०) [√वे+क्त] बुना हुआ। सीया हुआ।

ऊति—(स्त्री०) [√वे+क्तिन्] बुनना। सीना। [√अव्+क्तिन्, ऊठ्] रक्षण। सहायता। क्रीड़ा। कृपा। इच्छा।

ऊधस्—(न०) [√उन्द्+असुन्, ऊध आदेश] गौ या भैंस आदि का ऐन, वह थैली जिसमें दूध रहता है।

ऊधस्य—(न०) [ऊधस्+यत्] दूध, क्षीर; ऊधस्यमिच्छामि तवोपभोक्तुम्' र० २.६६।

√ऊन्—चु० पर० सक०, कम करना, घटाना, ऊनयति, ऊनयिष्यति, औननत्।

ऊन—(वि०) [√ऊन्+अच् वा √अव्+नक्, ऊट्] कम। अधूरा। (संख्या, आकार या अंश में) अपकृष्ट, घटिया। हीन। निर्बल।

ऊम्—(अव्य०) [√अव+मुक्] प्रश्न, क्रोध, भर्त्सना, गर्व, ईर्ष्या व्यञ्जक अव्यय।

√ऊय्—भ्वा० आत्म० सक० बुनना। सीना। ऊयते, ऊयिष्यते, औयिष्ट।

ऊररी—(अव्य०) [√ऊय्+ररीक्] विस्तार से। अंगीकार, हाँ।

ऊरव्य—(पुं०) [ऊरु + यत्] [स्त्री०—ऊरव्या] वैश्य, जिसकी उत्पत्ति वेद में ब्रह्मा की जंघा से बतलायी गयी है।

ऊरु—(पुं०) [√ऊर्णु+कु, नुलोप] जाँघ, रान।—**अष्ठीव** (**ऊर्वष्ठीव**)–(न०) जाँघ और घुटना।—**उद्भव** (**ऊरूद्भव**)–(वि०) जाँघ से निकला या उत्पन्न हुआ।—**ज**,—**जन्मन्**—**सम्भव**–(वि०) दे० 'ऊरूद्भव।' (पुं०) वैश्य।—**पर्वन्**–(पुं० न०) घुटना।—**फलक**–(न०) जाँघ की हड्डी, पुट्ठा या कूल्हे की हड्डी।

ऊरुदघ्न—(वि०) [ऊरु+दघ्नच्] घुटने तक या घुटने तक ऊँचा या घुटने के बराबर गहरा।

ऊरुद्वय—(वि०) [ऊरु+द्वयसच्] दे० 'ऊरुदघ्न'।

ऊरुमात्र—(वि०) [ऊरु+मात्रच्] दे० 'ऊरुदघ्न'।

ऊररी—(अव्य०) [√ऊय+ररीक्] दे० 'ऊररी'।

√ऊर्ज्—चु० उभ० अक० जीना। बलवान् होना। ऊर्जयति-ते, ऊर्जयिष्यति-ते, औजिजत्-त।

ऊर्ज्—(स्त्री०) [√ऊर्ज्+क्विप्] शक्ति, बल। रस। भोज्य पदार्थ।

ऊर्ज—(पुं०) [√ऊर्ज्+णिच्+अच्] कार्तिक मास का नाम। स्फूर्ति। बल, ताकत। उत्पन्न करने की शक्ति। जीवन। प्राण।

ऊर्जस्—(न०) [√ऊर्ज्+असुन्] बल, शक्ति। भोजन।

ऊर्जस्वत्—वि०) [ऊर्जस्+मतुप्] रसीला। जिसमें भोज्य पदार्थ का अंश अत्यधिक हो। शक्तिशाली, बलवान्।

ऊर्जस्वल—(वि०) [ऊर्जस्+वलच्] बलवान्। तेजस्वी। श्रेष्ठ।

ऊर्जस्विन्—(वि०) [ऊर्जस्+विन्] दे० 'ऊर्जस्वल'।

ऊर्जा—(स्त्री०) [√ऊर्ज्+ अ—टाप्] भोजन। शक्ति। उत्साह। बढ़ती या वृद्धि। दक्ष की एक कन्या।

ऊर्जित—(वि०) [√ऊर्ज् +क्त] बलवान्, शक्तिसम्पन्न। उत्कृष्ट, श्रेष्ठ। समृद्ध। तेजस्वी। गंभीर। (न०) शक्ति, बलवत्ता। पौरुष, फुर्ती।

ऊर्ण—(न०) [√ऊर्णु+ड] ऊन। [ऊर्णा+अच्] ऊनी कपड़ा।—**नाभ**,—**नाभि**,—**पट**–(पुं०) मकड़ा।—**म्रद**–(वि०) ऊन की तरह कोमल।

ऊर्णा—(स्त्री०) [ऊर्ण+टाप्] ऊन, पशम। भौंहों के मध्य का केशमण्डल।—**पिण्ड**–(पुं०) ऊन का गोला या पिंडी।

ऊर्णायु—(वि०) [ऊर्णा+युस्] ऊनी। (पुं०) मेष, भेड़ा। मकड़ी। ऊनी कंबल।

√ऊर्णु—अ० उभ० सक० ढाँकना। ऊर्णोति—ऊर्णुते, ऊर्णुविष्यति-ते,—ऊर्णविष्यति-ते, और्णावीत्— और्णुवीत्—और्णवीत्—और्णविष्ट।

ऊर्ध्व—(वि०) [उद्√हा+ड पृषो० ऊर् आदेश] सीधा । उठा हुआ । उच्च । खड़ा हुआ (बैठे हुए का उल्टा) । टूटा हुआ । (न०) ऊँचाई । ठीक ऊपर की दिशा । (अव्य०) ऊपर । ऊपर की ओर । आगे । बाद ।—**कच**,—**केश**-(वि०) खड़े बालों वाला । (पुं०) केतु का नाम ।—**कर्मन्**-(न०)-**क्रिया**-(स्त्री०) ऊपर की ओर की गति । उच्च स्थान प्राप्त करने के लिये किया गया कर्म । (पुं०) विष्णु का नाम ।—**काय**-(पुं० न०) शरीर का ऊपर का भाग ।—**ग**—**गामिन्**-(वि०) ऊपर की ओर जाने वाला । पुण्यात्मा ।—**गति**- (स्त्री०)—**गम**, (पुं०),—**गमन**-(न०) उच्चगति, ऊँची गति । चढ़ाई । स्वर्ग-गमन ।—**चरण**,—**पाद**-(वि०) जिसकी टाँगें ऊपर की ओर उठी हों, सिर के बल खड़ा । (पुं०) शरभ नामक एक पौराणिक जंतु ।—**जानु**,—**ज्ञ**,—**ज्ञु**-(वि०) उकडूं बैठा हुआ, घुटनों के बल बैठा हुआ । —**दृष्टि**,—**नेत्र**-(वि०) ऊपर देखने वाला । (अलं०) उच्चाभिलाषी ।—**दृष्टि**-(स्त्री०) योगदर्शन के अनुसार दृष्टि को भौंओं के मध्यभाग में टिकाने की क्रिया ।—**देह**—(पुं०) मृत्यु के बाद मिलने वाला शरीर ।—**पातन** -(न०) (जैसे पारे का) शोधना, परिष्कार । —**पात्र**-(न०) यज्ञीय पात्र ।—**मुख**-(वि०) ऊपर को मुख किये हुए ।—**मौहूर्तिक**-(वि०) कुछ देर बाद होने वाला ।—**रेतस्**-(वि०) अपने वीर्य को कभी न गिराने वाला, स्त्री-सम्भोग कभी न करने वाला । (पुं०) शिव । भीष्म ।—**लोक**-(पुं०) ऊपर का लोक, स्वर्ग ।—**वर्त्मन्**-(पुं०) अन्तरिक्ष ।—**वात**, —**वायु**-(पुं०) शरीर के ऊपरी भाग में रहने वाला पवन ।—**शायिन्**-(वि०) चित सोने वाला । (पुं०) शिव का नाम ।—**शोधन**-(न०) वमन करने की क्रिया ।—**श्वास**-(पुं०) ऊपर को चढ़ने वाली साँस । मृत्यु को प्राप्त होना ।—**स्थिति**-(स्त्री०) सीधे खड़ा होना । अश्व-शिक्षण । घोड़े की पीठ । उत्थान ।—**स्रोतस्**—दे० 'ऊर्ध्वरेतस्' ।

ऊर्मि—(पुं० स्त्री०) [√ऋ+मि, ऊर् आदेश] लहर, तरङ्ग; 'वेत्रवत्याश्चलोर्मि' मे० २४। धार, प्रवाह । प्रकाश । गति । वेग । कपड़े की शिकन । प्राण, चित्त और शरीर के ये छः क्लेश—भूख, प्यास, लोभ, मोह, सर्दी और गर्मी (न्या०) । ६ की संख्या । व्यक्त या प्रकट होना । इच्छा । पंक्ति, रेखा । दुःख । बेचैनी । चिन्ता ।—**मालिन्**—(पुं०) तरंगमालाओं से विभूषित । (पुं०) समुद्र ।

ऊर्मिका—(स्त्री०) [ऊर्मि + कन्—टाप्] तरङ्ग । अँगूठी । खेद, शोक (जो किसी वस्तु के खोने से उत्पन्न हो) । शहद की मक्खी या भौंरे का गुंजार । वस्त्र की शिकन ।

ऊर्मिला—(स्त्री०) लक्ष्मण की पत्नी ।

ऊर्व—(वि०) विस्तृत, विशाल । (पुं०) बड़वानल । और्व । ताल । समुद्र । पशुशाला । मेघ । पितरों का एक वर्ग ।

ऊर्वरा—(स्त्री०) [=उर्वरा, पृषो० साधुः] उपजाऊ भूमि ।

ऊलपिन्—(न०) सूंस, शिशुमार ।

√**ऊष्**—भ्वा० पर० अक० रोगी होना । ऊषति, ऊषिष्यति, औषीत् ।

ऊष—(पुं०) [√ऊष्+क] लुनही जमीन । क्षार । दरार । कान के भीतर का पोला भाग । मलयगिरि । प्रातःकाल ।

ऊषक—(न०) [ऊष+कन्] प्रभात, तड़का । भोर ।

ऊषण—(न०) **ऊषणा**—(स्त्री०) [√ऊष् +ल्युट्] [ऊषण+टाप्] काली मिर्च, अदरक, आदी ।

ऊषर—(वि०) [ऊष√रा+क] नमक या

सोना मिला हुआ, खारा। (पुं० न०) ऊसर भूखण्ड जो नुनहा हो।

ऊषवत्—[ऊष+मतुप्] दे० 'ऊषर'।

ऊष्म—(पुं०) [उष्+मक्] गर्मी। ग्रीष्मऋतु।

ऊष्मण, ऊष्मण्य—(वि०) [ऊष्म+न] [ऊष्मन्+यत्] गर्म।

ऊष्मन्—(पुं०) [√ऊष्+मनिन्] गर्मी। ग्रीष्मऋतु। भाप। उत्ताप, क्रोध। उग्रता। श्, ष्, स् और ह्। —**उपगम** (**ऊष्मोपगम**)–(पुं०) ग्रीष्मऋतु का आगमन। —**प**–(पुं०) अग्नि। पितृगण विशेष।

√ऊह्—भ्वा० आत्म० सक० सेट्० टोपना। चिह्नित करना। आलोचना करना। अनुमान करना, अटकल लगाना। समझना। पहचानना। आशा करना। बहस करना। विचार करना। ऊहते, ऊहिष्यते, औहिष्ट।

ऊह—(पुं०) [√ऊह्+घञ्] अनुमान, अटकल। परीक्षण और निश्चय-करण। समझ। युक्ति। अनुक्त पद की अध्याहार द्वारा पूर्ति। परिवर्तन। सुधार। —**अपोह** (**ऊहापोह**)—(पुं०) तर्क-वितर्क, सोच-विचार।

ऊहन—(न०) [√ऊह्+ल्युट्] परिवर्तन। सुधार। तर्क-वितर्क करना। विचारना।

ऊहनी—(स्त्री०) [ऊहन+ङीप्] झाड़, बुहारी।

ऊहवत्—(वि०) [ऊह+मतुप्–व] बुद्धिमान्। तीव्र।

ऊहा—(स्त्री०) [√ऊह्+अ, टाप्] अध्याहार, वाक्य में त्रुटि को पूरा करना।

ऊहिन्—(वि०) [ऊह+इनि] कौन और क्या की बहस कर अटकल लगाने वाला।

ऊहिनी—(स्त्री०) [√ऊह्+इन्–ङीप्] समूह, समुदाय। सेना, फौज।

ऋ

ऋ—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का सातवाँ वर्ण। यह भी एक स्वर है और इसका उच्चारण-स्थान मूर्द्धा है। ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत के अनुसार इसके तीन भेद हैं। इन भेदों में भी उदात्त, अनुदात्त और प्लुत के अनुसार प्रत्येक के तीन-तीन भेद हैं। फिर इन नौ भेदों में भी प्रत्येक के अनुनासिक और निरनुनासिक दो-दो भेद हैं। इस प्रकार सब मिलाकर ऋ के अठारह भेद हैं। (अव्य०) आह्वान, उपहास और निन्दाव्यञ्जक अव्यय विशेष। (स्त्री०) देवमाता, अदिति। उपहास। निंदा।

√ऋ—भ्वा०, जु०, स्वा० पर० सक० जाना। हिलाना। प्राप्त करना, पहुँचना। मिलना। उत्तेजित करना। घायल करना। आक्रमण करना। फेंकना। रोपना। रखना। लगाना। देना। हवाले करना, सौंपना। भ्वा० ऋच्छति, अरिष्यति, आर्षीत्। जु० इयर्ति, अरिष्यति, आरत्। स्वा० ऋणोति, अरिष्यति, आर्षीत्।

ऋक्ण—(वि०) [√व्रश्च्+क्त, पृषो० वलोप] आहत, क्षत। छिन्न, कटा हुआ।

ऋक्थ—(न०) [√ऋच्+थक्] सम्पत्ति। विशेषकर मरने पर छोड़ी हुई सम्पत्ति, सामान। सुवर्ण, सोना। —**ग्रहण**–(न०) सम्पत्ति का प्राप्त करना। —**ग्राह**–(पुं०) वारिस, उत्तराधिकारी। —**भाग**–(पुं०) बटवारा, बाँट। हिस्सा, भाग। पैतृक सम्पत्ति। —**भागिन्**, —**हर**, —**हारिन्**–(पुं०) दे० 'ऋक्थग्राह'।

ऋक्ष—(वि०) [√ऋष्+स, कित्] गंजा। (पुं०) रीछ, भालू। रैवतक पर्वत। (न० पुं०) नक्षत्र, तारा। राशि। राशिचक्र की एक राशि। —**चक्र**–(न०) राशिचक्र। —**ईश** (**ऋक्षेश**), —**नाथ**–(पुं०) चन्द्रमा। —**नेमि**–(पुं०) विष्णु का नाम। —**राज्**—**राज**–(पुं०) चन्द्रमा। जाम्बवान्, रीछों का राजा। —**हरीश्वर**–(पुं०) रीछों और लंगूरों का राजा।

ऋक्षा—(स्त्री०) [ऋक्ष+टाप्] उत्तर दिशा।

ऋक्षी—(स्त्री०) [ऋक्ष+ङीष्] मादा भालू।

ऋक्षर—(पुं०) [√ऋष्+क्सरन्] ऋत्विज। काँटा। वर्षा।

ऋक्षवत्—(पुं०) [ऋक्ष+मतुप्—व] नर्मदा नदी का समीपवर्ती एक पर्वत।

√ऋच्—तु० पर० सक० अक० प्रशंसा करना। ढकना, पर्दा डालना। चमकना। ऋचति, अर्चिष्यति, आर्चीत्।

ऋच्—(स्त्री०) [ऋच्यते स्तूयते अनया इत्यर्थे √ऋच्+क्विप्] ऋचा। ऋग्वेद का मन्त्र। ऋग्वेद। चमक, दमक। प्रशंसा। पूजन। **—विधान** (**ऋग्विधान**)—(न०) कतिपय वैदिक कर्मों का विधान, जो ऋग्वेद के मंत्रों को पढ़कर किये जाते हैं। **—वेद** (**ऋग्वेद**)—(पुं०) चार वेदों में से एक जो पहला और प्रधान माना जाता है। **—संहिता** (**ऋक्संहिता**)—(स्त्री०) ऋग्वेद के मंत्रों का संग्रह।

ऋचीक—(पुं०) [√ऋच्+ईकन्] भृगुवंशीय एक ऋषि। यह जमदग्नि के पिता थे।

ऋचीष—[√ऋच्+ईषन्] दे० 'ऋजीष'।

√ऋच्छ्—तु० पर० अक० कड़ा होना, सख्त होना। क्षमता का न रहना। सक० जाना। ऋच्छति, अर्च्छिष्यति आर्च्छीत्।

ऋच्छका—(स्त्री०) इच्छा, कामना।

ऋच्छरा—(स्त्री०) [√ऋच्छ्+अर, टाप्] वेश्या। बंधन।

√ऋज्—भ्वा० आत्म० सक० अक० जाना। प्राप्त करना। उपार्जन करना। खड़ा रहना या दृढ़ होना। स्वस्थ होना या मजबूत होना। अर्जते, अर्जिष्यते, आर्जिष्ट।

ऋजीष—(न०) [√अर्ज्+ईषन्, ऋजादेश] कड़ाही। एक नरक। नीरस सोमलता का चूर्ण। धन। सोमलता का रस।

ऋजु, ऋजुक—(वि०) [√ऋज्+कु, ऋजु+कन्] [स्त्री०—**ऋजु** या **ऋज्वी**] सीधा; 'उमां स पश्यति ऋजुनैव चक्षुषा' कु० ५.३२। ईमानदार। सच्चा। अनुकूल। सरल। हितकर। **—काय**—(वि०) सीधे शरीर वाला। (पुं०) कश्यप मुनि। **—ग**—(पुं०) व्यवहार में ईमानदार या सच्चा व्यक्ति। तीर, बाण। **—रोहित**— (न०) इन्द्र का लाल और सीधा धनुष।

ऋज्वी—(स्त्री०) [ऋजु+ङीप्] ईमानदार स्त्री। नक्षत्रपथ विशेष।

√ऋञ्ज्—भ्वा० आत्म० सक० भूनना। ऋञ्जते, ऋञ्जिष्यते, आर्ञ्जिष्ट।

√ऋण्—त० उभ० सक० जाना। ऋणोति-अर्णोति—ऋणुते, अर्णिष्यति— ते, आर्णीत —आर्णिष्ट।

ऋण—(न०) [√ऋ+क्त नि० णत्व] कर्ज, उधार। दुर्ग, किला। जल। भूमि। देव, ऋषि और पितरों के उद्देश्य से किया हुआ यथाक्रम यज्ञ। वेदाध्ययन और सन्तानोत्पत्ति नामक आवश्यक कर्तव्य कर्म। **—अन्तक** (**ऋणान्तक**)—(पुं०) मङ्गल ग्रह। **—अपनयन** (**ऋणापनयन**), **—अपनोदन** (**ऋणापनोदन**), **—अपाकरण** (**ऋणापाकरण**), **—दान**—(न०), **—मुक्ति**—(स्त्री०), **—मोक्ष** (पुं०), **—शोधन**—(न०) कर्ज की अदायगी, ऋणशोध, कर्ज चुकाना। **—आदान** (**ऋणादान**)—(न०) ऋण में दिये हुए रुपयों का वापिस मिलना। **—ऋण**— (**ऋणार्ण**) कर्ज के ऊपर कर्ज, एक कर्ज चुकाने को जो दूसरा कर्ज काढ़ा जाय। **—ग्रह**—(पुं०) कर्जा लेना। कर्ज लेने वाला व्यक्ति। **—दातृ**, **—दायिन्**—(वि०) कर्ज देने वाला। **—दास** (पुं०) कर्जा चुका देने के बदले कर्जा देने वाले का बना हुआ दास। **—मत्कुण**, **—मार्गण**—(पुं०) कर्ज की अदायगी की जमानत करने वाला, प्रतिभू। **—मुक्त**— (वि०) कर्ज से छुटकारा पाया हुआ। **—मुक्ति**—(स्त्री०)

कर्ज से छुटकारा पाना ।—लेख्य–(न०) दस्तावेज, ऋणपत्र ।—विद्युत्–(स्त्री०) विकर्षण करने वाली बिजली ।—स्थगन–(न०) बैंकों आदि द्वारा (उच्च न्यायालय के या सरकार के आदेश से) लोगों का पावना या ऋण चुकाना अस्थायी रूप से बन्द कर दिया जाना (मॉरेटोरियम) ।

ऋणिक—(पुं०) [ऋण + ष्ठन् – इक] कर्जदार, ऋणी ।

ऋणिन्—(वि०) [√ऋण+इनि] कर्जदार ।

ऋत—(वि०) [ऋ+क्त] उचित, ठीक । ईमानदार, सच्चा । पूजित, सम्मानित । (न०) सत्य । सृष्टि का आदि और धारक तत्त्व । ईश्वरीय नियम । ब्रह्म । कर्मफल । जल । यज्ञ । उञ्छवृत्ति । ब्राह्मण की उपजीव्यवृत्ति । अनुकूल वचन ।—उक्ति(ऋतोक्ति)–(स्त्री०) सत्य वचन ।—धामन्–(वि०) सच्चे या पवित्र स्वभाव वाला । (पुं०) विष्णु भगवान् का नाम ।—पर्ण–(पुं०) अयोध्या का एक राजा, जो राजा नल का मित्र था और पासा खेलने में बड़ा निपुण था ।—पेय (पुं०) एकाह यज्ञ जो छोटे-छोटे पापों को नष्ट करने के लिये किया जाता है ।

ऋतम्भरा—(स्त्री०) [ऋत√भृ + खच्, मुम्–टाप्] योगशास्त्रानुसार सत्य को धारण और पुष्ट करने वाली एक चित्तवृत्ति ।

ऋति—(स्त्री०) [√ऋ+क्तिन्] गति । स्पर्धा । निन्दा । मार्ग । मङ्गल, कल्याण ।

ऋतीया—(स्त्री०) [ऋत+ईयङ्–टाप्] धिक्कार, भर्त्सना । लज्जा ।

ऋतु—(पुं०) [√ऋ+तु, किद्] मौसम, वसन्तादि छः ऋतुएँ । अब्द-प्रवर्तक काल । रजोदर्शन । रजोदर्शन के उपरान्त का समय जो गर्भाधान के लिये उपयुक्त काल है; 'वरमृतुषु नैवाभिगमनम्' पं० १ । उपयुक्त या ठीक समय । प्रकाश, चमक । छः की संख्या का सङ्केत ।—अन्त (ऋत्वन्त)–(पुं०) ऋतुकाल की समाप्ति । स्त्री के रजोदर्शन से १६वीं रात्रि ।—काल,–समय–(पुं०),—वेला–(स्त्री०) रजोदर्शन के पीछे १६ रात्रि पर्यन्त गर्भाधान का उपयुक्त काल । ऋतु-मौसम का अवधि-काल ।—गण –(पुं०) ऋतुओं का समुदाय ।—गामिन् –(वि०) ऋतुकाल में स्त्री के पास जाने वाला ।—पर्ण–(पुं०) अयोध्या के इक्ष्वाकुवंशीय एक राजा का नाम ।—पर्याय (पुं०) —वृत्ति–(स्त्री०) मौसम का आना-जाना । —मुख–(न०) किसी ऋतु का प्रथम दिवस । —राज–(पुं०) ऋतुओं का राजा अर्थात् वसन्त ।—लिङ्ग–(न०) ऋतु का परिचायक चिह्न । रजःस्राव का लक्षण ।—विज्ञान–(न०) वायुमंडल में होने वाले परिवर्तनों का विज्ञान जिसके आधार पर वर्षा, तूफान का अनुमान किया जाता है (मीटियरालॉजी) । —विपर्यय–(पुं०) ऋतु के विपरीत बात होना (जैसे—जाड़े में वर्षा) ।—सन्धि–(पुं०) ऋतुओं का मिलान ।—सात्म्य–(न०) ऋतु के उपयुक्त आहार आदि ।—स्नाता–(स्त्री०) वह स्त्री० जो रजोदर्शन होने के बाद स्नान कर चुकी हो और सम्भोग के योग्य हो गयी हो; 'धर्मलोपभयाद्राज्ञीमृतुस्नातामनुस्मरन्' र० १.७६ ।—स्नान –(न०) रजोदर्शन के बाद का स्नान ।

ऋतुमती—(स्त्री०) [ऋतु+मतुप्+ङीप्] रजस्वला, मासिक धर्मयुक्ता ।

ऋते—(अव्य०) बिना, सिवाय; 'ऋतेऽपि त्वां न भविष्यन्ति सर्वे' भग० ११.३२ ।

ऋतेजा—(वि०) [ऋते जायते इति ऋते√जन्+विट्] यज्ञ के लिये उत्पन्न । नियमानुकूल ।

ऋत्विज्—(पुं०) [ऋतौ यजते इति ऋतु √यज्+क्विन्]यज्ञ करने वाला, साधारणतया प्रत्येक यज्ञ में चार ऋत्विज् हुआ करते हैं,

अर्थात् होतृ, उद्गातृ, अध्वर्यु, ब्रह्मन् । किन्तु बड़े यज्ञ में इनकी संख्या १६ होती है ।

ऋत्विय—(वि०) [ऋतु+घस्] ऋतु-काल-संबंधी । नियमानुसारी ।

ऋद्ध—(वि०) [√ऋध्+क्त] खुशहाल, धन-धान्य से संपन्न । वर्द्धमान, बढ़ने वाला । जमा किया हुआ । (पुं०) विष्णु भगवान् का नाम । (न०) बढ़ती । प्रत्यक्षीभूत प्रमाण ।

ऋद्धि—(स्त्री०) [√ऋध्+क्तिन्] बढ़ती, वृद्धि । सफलता । समृद्धि, धन-दौलत । परिमाण । अलौकिक शक्ति । पूर्णता । पार्वती । लक्ष्मी । पत्नी । दवा के काम आने वाली एक लता, प्राणदा ।

ऋद्धिमत्—(वि०) [ऋद्धि+मतुप्] धनाढ्य ।

√ऋध्—दि०, स्वा० पर० अक०, सक० फलना-फूलना, सफल मनोरथ होना । बढ़ना, बढ़ती होना । सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना । ऋध्यति,—ऋध्नोति, अर्धिष्यति, आर्धत्,—आर्धीत् ।

√ऋफ्, √ऋम्फ्—तु० पर० सक० देना । मारना । निन्दा करना । लड़ना । ऋफति,—ऋम्फति, अर्फिष्यति,—ऋम्फिष्यति, आर्फीत्,—आर्म्फीत् ।

ऋभु—(पुं०) [अरि स्वर्गे अदिती वा भवति इति ऋ√भू+डु] देवता । एक देवगण । देवों का एक अनुचर-वर्ग । तीन अर्धदेवों (ऋभु, वाज और विभ्वन्) में से पहला जिसके नाम से तीनों का द्योतन होता है ।

ऋभुक्ष—(पुं०) [ऋभवो देवाः क्षियन्ति वसन्ति अत्र इति ऋभु√क्षि+ड] इन्द्र का नाम । स्वर्ग । वज्र ।

ऋभुक्षिन्—(पुं०) [ऋभुक्ष+इनि] इन्द्र का नाम ।

ऋम्वन्—(वि०) पटु, दक्ष, निपुण ।

ऋल्लक—(पुं०) वाद्ययंत्र या बाजा बजाने वाला ।

√ऋश्—तौद० पर० सक० जाना । सोचना ।

ऋश्य—(पुं०) [√ऋश्+क्यप्] सफेद पैरों वाला बारहसिंघा । (न०) वध, हत्या ।—**केतन**,—**केतु**-(पुं०) प्रद्युम्न के पुत्र अनिरुद्ध का नाम । कामदेव का नाम ।

√ऋष्—तु० पर० सक०, अक० जाना । मार डालना । बहना । फिसलना । ऋषति, अर्षिष्यति, आर्षीत् ।

ऋषभ—(पुं०) [√ऋष्+अभक्, कित्] साँड़ । संगीत के सप्तस्वरों में से दूसरा । सुअर की पूँछ । मगर की पूँछ । जैनियों के मान्य अवतार विशेष । आठ प्रसिद्ध ओषधियों में से एक । (वि०) उत्तम, श्रेष्ठ (समासांत में—पुरुषर्षभ, भरतर्षभ इत्यादि) ।—**कूट**-(पुं०) एक पर्वत ।—**ध्वज**-(पुं०) शिव ।

ऋषभी—(स्त्री०) [ऋषभ+ङीष्] स्त्री जो पुरुष के रूप रंग की हो । गौ । विधवा स्त्री ।

ऋषि—(पुं०) [ऋषति गच्छति संसार पारम् इति √ऋष्+इन्, कित्] वैदिक-मंत्र-द्रष्टा । अनुष्ठानादि कर्म बतलाने वाले सूत्रों के रचयिता, गोत्र-प्रवर-प्रवर्तक । प्रकाश की किरण । मत्स्य-विशेष । ७ की संख्या । एक कल्पित वृक्ष ।—**ऋण**-(न०) मनुष्य का ऋषियों के प्रति कर्तव्य (वेद पढ़ने-पढ़ाने से इससे मुक्ति मिलती है) ।—**कुल्या**-(स्त्री०) एक नदी का नाम जिसका उल्लेख महाभारत के तीर्थयात्रा-पर्व में है ।—**तर्पण**-(न०) ऋषियों की तृप्ति के लिये जलदान ।—**पञ्चमी**-(स्त्री०) भाद्रमास की शुक्ला ५मी ।—**लोक**-(पुं०) एक लोक जो सत्यलोक के पास माना जाता है ।—**स्तोम**-(पुं०) ऋषियों की प्रशंसा । यज्ञ विशेष जो एक ही दिन में पूरा होता है ।

ऋषु—(पुं०) [√ऋष्+कु] (वि०) बड़ा । शक्तिशाली । चतुर । सूर्य-रश्मि । मशाल । प्रज्वलित अग्नि । ऋषि ।

ऋष्टि—(स्त्री०) [ऋष्+क्तिन्] दुधारा खाँड़ा। तलवार। भाला-बर्छी आदि कोई सा हथियार।

ऋष्य—(पुं०) [√ऋष्+क्यप्] एक तरह का हिरन। एक तरह का कोढ़।—अङ्क (ऋष्याङ्क)—केतन, —केतु—(पुं०) अनिरुद्ध का नाम।—मूक—(पुं०) एक पर्वत जो पंपासरोवर के निकट है।—शृङ्ग—(पुं०) विभाण्डक ऋषि के पुत्र का नाम।

ऋष्यक—(पुं०) [ऋष्य+कन्] चित्रित या सफेद पैरों वाला हिरन।

ऋष्व—(वि०) [√ऋष्+क्वन्] बड़ा। ऊँचा। अच्छा। देखने योग्य। (पुं०) इन्द्र और अग्नि का नाम।

ॠ

ॠ—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का आठवाँ वर्ण, इसका उच्चारण-स्थान मूर्द्धा है। (अव्य०)[√ऋ+क्विप्, (बा०)] भय, बचाव या रोक, भर्त्सना, धिक्कार, अनुकम्पा अथवा स्मृतिव्यञ्जक अव्यय विशेष। (पुं०) भैरव का नाम। एक दानव या दैत्य का नाम। (स्त्री०) दानव-माता। देव-माता।

√ॠ—क्र्या० परि० सक० जाना। ॠणाति, अरिष्यति—अरीष्यति, आरीत्।

ऌ

ऌ—(अव्य०) [√लृ+क्विप्, लुगभावः, लत्वम्] स्वरवर्ण का नवम अक्षर। इसका उच्चारण-स्थान दन्त है, यह वर्ण ह्रस्व, दीर्घ एवम् प्लुत के भेद से तीन, अनुनासिक तथा निरनुनासिक के भेद से दो और उदात्त, अनुदात्त एवम् स्वरित के भेद से फिर तीन प्रकार का होता है। (अव्य०) देवमाता। भूमि। पर्वत।

ॡ

ॡ—[√लृ+क्विप्, रस्य लः] स्वरवर्ण का दसवाँ अक्षर। इसका भी उच्चारण-स्थान दन्त है। यह दीर्घ एवम् प्लुत तथा अनुनासिक और निरनुनासिक भेद से दो-दो प्रकार का होता है। फिर उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित भेद से त्रिविध भी होता है, यद्यपि पाणिनि इस अक्षर को नहीं मानते हैं; किन्तु तन्त्र-शास्त्र और मुग्धबोध व्याकरण के अनुसार यह मान्य है। (अव्य०) देव-नारी। माता। नारी की आत्मा। (स्त्री०) दैत्य-स्त्री। दानव-माता। कामधेनु। (पुं०) महादेव।

ए

ए—संस्कृत वर्णमाला का नवाँ वर्ण। शिक्षा में इसे सन्ध्यक्षर माना है। इसका उच्चारण-स्थान कण्ठ और तालु है। संस्कृत में मात्रानुसार इसके दीर्घ और प्लुत दो ही भेद हैं। (पुं०) [√इ+विच्] विष्णु का नाम। (अव्य०) स्मरण, ईर्ष्या, दया, आह्वान, तिरस्कार अथवा धिक्कार-बोधक अव्यय विशेष।

एक—(सर्वनाम० वि०) [√इ+कन्] पहले अंक या इकाई से सूचित, दो का आधा। अकेला। जैसा दूसरा न हो, बेजोड़। वही। अपरिवर्तित। स्थिर। प्रधान। सत्य। ईषत्। कोई। एक भी। कोई या कुछ भी (एक न चलना, न सुनना)। जो मिलकर एक चीज, एक रूप हो गया हो, भेद-रहित। (पुं०) परमेश्वर। विष्णु। ऐलवंशीय एक राजा। अग्नि। सूर्य। देवराज। यम।—अक्ष (एकाक्ष)—(वि०) एक धुरी वाला। काना। (पुं०) काक। शिव।—अक्षर (एकाक्षर)—(पव०) एक अक्षर का। (न०) ओंकार।—अग्र (एकाग्र)—(वि०) एक ही ओर ध्यान लगाए हुए। ध्यानावस्थित। अचञ्चल।—अग्र्य (एकाग्र्य)—(वि०) एक ही ओर लगा हुआ। एकतान।—अङ्ग (एकाङ्ग)—(पुं०) शरीररक्षक। बुध या मङ्गल ग्रह।—अनुदिष्ट (एकानुदिष्ट)—(न०) एक पितृ

के उद्देश्य से किया हुआ मृत कर्म(श्राद्ध) । —अन्त (एकान्त)–(वि०) अकेला । अलग । एक ही वस्तु को लक्ष्य करने वाला । अत्यंत । निरपवाद । निश्चित । एक ही ओर लगा हुआ । (पुं०) निराला, सूना स्थान । तनहाई । —अन्तर (एकान्तर)–(वि०) एक के बाद आने या पड़ने वाला ।—अयन (एकायन)–(वि०) एक के गमन करने योग्य (पगडंडी) । एकाग्र । (न०) एकांत स्थान । मिलने की जगह । एकमात्र उद्देश्य । विचारों की एकता । नीतिशास्त्र । वेद की एक शाखा ।—अर्थ (एकार्थ)–(पुं०) एक ही वस्तु । एक ही अर्थ, समान अर्थ ।—अह (एकाह)–(पुं०) एक दिन की अवधि । एक ही दिन में पूरा होने वाला यज्ञ ।—आतपत्र (एकातपत्र)–(वि०) एकच्छत्र, चक्रवर्ती; 'एकातपत्रं जगतः प्रभुत्वम्' र० २.४७ ।—आदेश (एकादेश)–(पुं०) एक आज्ञा । दो या अधिक अक्षरों के स्थान पर एक अक्षर का प्रयोग ।—आवली (एकावली)–(स्त्री०) अर्थालंकार का एक भेद । एक छंद । मोतियों की एक हाथ लंबी माला (को०) ।—उदक (एकोदक)–(पुं०) एक ही पितर को जल देने वाला, सम्बन्धी, सगोत्री ।—उदर (एकोदर)–(पुं०) सगा भाई ।—उद्दिष्ट (एकोद्दिष्ट)–(न०) एक के उद्देश्य से किया हुआ श्राद्ध, वार्षिक श्राद्ध ।—ऊन (एकोन)–(वि०) एक कम ।—एक (एकैक)–(वि०) एकाकी, अकेला ।—एकशस् (एकैकशः)–(अव्य०) एक-एक करके, अलग-अलग ।—ओघ (एकौघ)–(पुं०) अविच्छिन्न प्रवाह ।—कर–(वि०) एक ही काम करने वाला । एक हाथ वाला । एक किरण वाला ।—कार्य–(वि०) मिलकर काम करने वाला, सहयोगी । (न०) एक ही काम, एक ही व्यवसाय ।—काल–(पुं०) एक समय, एक ही समय ।—कालिक,—कालीन–(वि०) एक ही बार होने वाला । समवयस्क ।—कुण्डल–(पुं०) कुबेर । बलभद्र । शेष ।—गुरु,—गुरुक–(वि०) एक ही गुरु वाले । (पुं०) गुरुभाई ।—चक्र–(वि०) एक पहिये वाला । एक ही नरेश द्वारा शासित । चक्रवर्ती । एक पहिए वाला । (पुं०) सूर्य का रथ । सूर्य ।—चक्रा–(स्त्री०) महाभारत में वर्णित एक प्राचीन नगरी ।—चत्वारिंशत्–(स्त्री०) ४१, इकतालीस ।—चर–(वि०) अकेला घूमने या रहने वाला । वह जिसके पास एक ही चाकर हो । बिना सहायता लिये रहने वाला ।—चारिन्–(वि०) अकेला ।—चारिणी–(स्त्री०) पतिव्रता स्त्री ।—चित्त–(वि०) केवल एक ही बात को सोचने वाला, एकाग्र । (न०) ऐकमत्य, एक राय ।—चेतस्,—मनस्–(वि०) दे० 'एकचित्त' ।—जन्मन्–(पुं०) राजा । शूद्र ।—जात–(वि०) एक ही माता-पिता से उत्पन्न ।—जाति–(पुं०) शूद्र ।—जातीय–(वि०) एक ही वंश या कुल का ।—ज्योतिस्–(पुं०) शिव ।—तन्त्र–(वि०) जिसमें सब शक्ति, अधिकार एक आदमी के हाथ में हो, एकहत्था (राज्य, शासन-प्रबन्ध) । एक व्यक्ति द्वारा, एक के प्रबन्ध से परिचालित ।—शासनप्रणाली–(स्त्री०) वह शासनप्रणाली जिसमें सब अधिकार राजा के ही हाथ में हो और उसके आदेशानुसार सब कार्य परिचालित होते हों, एकहत्थी हुकूमत ।—तान–(वि०) अत्यन्त दत्तचित्त ।—ताल–(पुं०) सम-स्वर । गान, नृत्य और वाद्य की सङ्गति, तौर्यत्रिक ।—तीर्थिन्–(वि०) एक ही तीर्थ में स्नान करने वाले, एक ही सम्प्रदाय के । (पुं०) सहपाठी, गुरुभाई ।—त्रिंशत्–(स्त्री०) ३१, इकतीस ।—दंष्ट्र,—दन्त–(पुं०) एक दाँत वाला अर्थात् गणेश ।—दण्डिन्–(पुं०) संन्यासी या भिक्षुक विशेष । (हारीतस्मृति में इनके चार भेद बतलाये गये हैं—कुटीचक,

बहूदक, हंस और परमहंस। ये उत्तरोत्तर श्रेष्ठतर माने गये हैं।)—दृश,—दृष्टि-(पुं०) काक। शिव जी। दार्शनिक। (वि०) काना।—देव-(पुं०) परब्रह्म।—देश-(पुं०) एक स्थान या जगह। एक भाग या अंश, एक तरफ।—धर्मन्,—धर्मिन्-(वि०) समान धर्म या गुण-स्वभाव वाला।—धुर,—धुरावह,—धुरीण-(वि०) केवल एक ही काम करने योग्य। एक ही जुए में जोते जाने योग्य।—नट-(पुं०) किसी अभिनय का मुख्य पात्र, सूत्रधार।—नवति-(स्त्री०) ९१, इक्यानवे।—पक्ष-(पुं०) एक दल, एक ओर।—पत्नी-(स्त्री०) सच्ची पत्नी, पतिव्रता पत्नी। सौत।—पदी-(स्त्री०) पगडंडी।—पदे-(अव्य०) सहसा, अचानक।—पाद-(पुं०) एक पैर, विष्णु और शिव का नाम। (वि०) लँगड़ा। एकटंगा।—पिङ्ग,—पिङ्गल-(पुं०) कुबेर का नाम।—पिण्ड-(वि०) सपिण्ड।—भार्य-(पुं०) केवल एक पत्नी रखने वाला।—भार्या-(स्त्री०) पतिव्रता स्त्री।—भाव-(वि०) सच्चा भक्त, ईमानदार।—यष्टि-(पुं०), यष्टिका-(स्त्री०) इकलड़ा मोतीहार।—योनि-(वि०) गर्भाशय सम्बन्धी एक ही वंश या जाति का।—रस-(वि०) जो सदा एक रूप में रहे, कभी बदले नहीं, अपरिणामी। जो मिल कर एक हो गया हो, एकदिल।—राज्,—राज-(पुं०) सम्राट्, बादशाह, एकछत्र राजा।—रात्र-(पुं०) केवल एक ही रात में समाप्त हो जाने वाला उत्सव विशेष।—रिक्थिन्-(पुं०) पैतृक संपत्ति का समान स्वत्वाधिकारी।—रूप-(वि०) समान आकृति वाला। एक ही रङ्ग-ढङ्ग का।—लिङ्ग-(पुं०) वह शब्द जो समान लिङ्गवाची हो। कुबेर का नाम।—वचन-(न०) एक संख्यावाची शब्द।—वर्ण-(वि०) एक जाति का।—वर्षिका-(स्त्री०) एक वर्ष की बछिया।—वाक्यता-(स्त्री०) सामञ्जस्य।—वारम्,—वारे-(अव्य०) केवल एक बार। तुरन्त, अचानक, सहसा। एक बार, एक मरतबा।—विंशति-(स्त्री०) इक्कीस, २१।—विलोचन-(वि०) एक आँख का, काना।—विषयिन्-(पुं०) प्रतिद्वन्द्वी।—वीर-(पुं०) महावीर, प्रसिद्ध योद्धा। एक वृक्ष जो वातव्याधि तथा पक्षाघात का नाश करता है।—वेणि,—वेणी-(स्त्री०) एक चोटी। (जब पतिव्रता स्त्रियाँ पति से अलग हो जाती हैं, तब वे केश-विन्यास न कर, सब केशों को जोड़-बटोर कर उन सबकी एक चोटी बना लेती हैं।)—शफ-(पुं०) एक सुम या खुर वाला जानवर, जैसे घोड़ा, गधा आदि।—शृङ्ग-(वि०) एक सींग वाला। (पुं०) गैंडा। विष्णु का नाम।—शेष-(पुं०) द्वन्द्व समास का एक भेद, जिसमें दो या तीन अथवा अधिक शब्दों का लोपकर एक ही शब्द रहे और वह उन सब शब्दों का अर्थ दे, जैसे पितरौ, यहाँ पितरौ का अर्थ माता और पिता दोनों है।—श्रुत-(वि०) एक बार सुना हुआ।—श्रुति-(स्त्री०) एकस्वरी, वेद पाठ करने का, कम विशेष, जिसमें उदात्तादि स्वरों का विचार नहीं किया जाता।—सप्तति-(स्त्री०) ७१, इकहत्तर।—सर्ग-(वि०) दत्तचित्त।—साक्षिक-(वि०) एक का देखा हुआ।—हायन-(वि०) एक वर्ष का पुराना या एक वर्ष की उम्र का।—हायनी-(स्त्री०) एक वर्ष की बछिया।

एकक—(वि०) [एक+कन्] अकेला। समान, सदृश।

एकजातीय—(वि०) [एक+जातीयर्] एक प्रकार का।

एकतम—(वि०) [एक+डतमच्] बहुतों में से एक। दूसरा, भिन्न।

एकतर—(वि०) [एक+डतरच्] दो में से एक। दूसरा, भिन्न। बहुतों में से एक।

एकतस्—(अव्य०) [एक+तसिल्] एक ओर से। एक ओर। अकेले। एक-एक करके।

एकत्र—(अव्य०) [एक+त्रल्] एक स्थान पर। साथ-साथ। एक-साथ।

एकदा—(अव्य०) [एक+दा] एक बार। एक ही बार, एक ही समय में।

एकधा—(अव्य०) [एक+धा] एक प्रकार। अकेले। तुरन्त, एक ही समय में। एक साथ।

एकल—(वि०) [एक√ला+क] अकेला। **—संक्रमणीयमत**-(न०) (आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली में) मतदाता द्वारा, किसी निर्वाचन-क्षेत्र से चुने जाने वाले अनेक सदस्यों में से किसी एक को इस शर्त के साथ दिया गया मत कि यदि निर्धारित संख्या में मत प्राप्त कर लेने के कारण, उसे इसकी आवश्यकता न रहे तो वह उसके बाद के अधिमान दिये गये उम्मेदवार के पक्ष में संक्रामित हो जायगा (सिंगिल ट्रांसफरेबल वोट)।

एकशस्—(अव्य०) [एक+शस्] एक-एक करके।

एकाकिन्—(वि०) [एक+आकिनच्] अकेला।

एकादशन्—(वि०) [एकेन अधिका दश इति विग्रहे मध्य० स०] (संख्यावाची विशेषण), ११, ग्यारह। **—द्वार**-(न०) शरीर के ११ छेद या दरवाजे। **—रुद्र**-(बहुवचन पुं०) ग्यारह रुद्र।

एकादश—(वि०) [एकादश परिमाणमस्य इत्यर्थे एकादशन्+डट्] [स्त्री०—**एकादशी**] ग्यारहवाँ।

एकादशी—(स्त्री०) [एकादश +ङीप्] चन्द्रमा के प्रत्येक पक्ष की ग्यारहवीं तिथि, विष्णुभक्तों के उपवास का दिवस। यह विष्णु सम्बन्धी उपवास-दिवस है।

एकीभाव—(पुं०) [एक+च्वि—√भू + घञ्] संमिश्रण, एकत्व, ऐक्य।

एकीय—(वि०) [एक+छ—ईय] एक का या एक से। एक का सहायक, एक पक्ष का।

√एज्—भ्वा० आत्म० अक० काँपना। एजते, एजिष्यते, ऐजिष्ट। भ्वा० पर० अक० चमकना। एजति, एजिष्यति, एजीत्।

एजक—(वि०) [√एज्+ण्वुल्] हिलता हुआ, काँपता हुआ। हिलने वाला, काँपनेवाला।

एजन—(न०) [√एज्+ल्युट्] कम्प, काँपना।

√एठ्—भ्वा० आत्म० सक० चिढ़ाना। सताना करना। एठते, एठिष्यते, ऐठिष्ट।

एड—(वि०) [√इल्+अच्, डलयोरैक्यम्] बहरा। (पुं०) एक तरह का भेड़ा। **—गज**-(पुं०) एक ओषधि, चक्रमर्दक। **—मूक**-(वि०) बहरा-गूँगा। दुष्ट।

एडक—(पुं०) [एड+कन्] भेड़ा। जङ्गली बकरा।

एडका—(स्त्री०) [एडक+टाप्] भेड़ी।

एण, एणक-(पुं०) [एति द्रुतं गच्छति इति √इ+ण] [एण+कन्] काला मृग। **—अजिन** (एणाजिन)-(न०) मृगचर्म। **—तिलक,—भृत्**-(पुं०) चन्द्रमा। **—दृश्**-(वि०) हिरन जैसे नेत्रोंवाला। (पुं०) मकर राशि।

एणी—(स्त्री०) [एण+ङीप्]काली हिरनी।

एत—(वि०) [आ√इ+क्त वा√इ +तन्] आया हुआ। [स्त्री०—**एता, एनी**] रंग-बिरंगा, चमकीला। (पुं०)हिरन, बारहसिंहा।

एतद्—(सर्वनाम वि०) [पुं० एषः। स्त्री० एषा। न० एतद्।] [√इ+अदि, तुक्] यह।

एतदीय—(वि०) [एतद्+छ—ईय] इसका, इससे सम्बन्ध-युक्त।

एतन—(पुं०) [आ√इ+तन] निःश्वास। एक मत्स्य।

एर्हि—(अव्य०) [इदम्+र्हिल् एत आदेश] अब, इस समय, वर्तमान समय में ।

एतादृश, एतादृश्–(वि०) [एतद्√दृश्+क्स] [एतद्√दृश्+क्विन्] [स्त्री०—**एतादृशी, एतादृक्षी**] ऐसा, इस तरह का ।

एतावत्—[एतद्+वतुप्]इतना । (अव्य०) इस प्रकार ।

√एध्—भ्वा० आत्म० अक० बढ़ना । आराम से रहना । समृद्धिशाली होना । (णिजन्त) बढ़ाना । बधाई देना । सम्मान करना । एधते, एधिष्यते, ऐधिष्ट ।

एध—(पुं०) [√इन्ध्+घञ्, निपातनात् साधुः] ईंधन, जलाने के लिये लकड़ी; 'स्फुलिङ्गावस्थया वह्निरेधापेक्ष इव स्थितः' श० ७.१६ ।

एधतु—(पुं०) [√एध्+चतु] मानव । अग्नि ।

एधस्—(न०) [√इन्ध्+असि] ईंधन ।

एधा—(स्त्री०) [√एध्+अ, टाप्] समृद्धि । हर्ष, आनन्द ।

एधित—(वि०) [√एध्+क्त] वृद्धि-युक्त, बढ़ा हुआ । पाला-पोसा हुआ; 'मृगशावैः सममेधितो जनः' श० २.१८ ।

एनस्—(न०) [एति गच्छति प्रायश्चित्तादिना इति√इ+असुन् नुडागम]पाप । अपराध, दोष । क्लेश । भर्त्सना, कलङ्क ।

एनस्वत्, एनस्विन्–(वि०) [एनस्+मतुप्, व आदेश] [एनस् विनि] दुष्ट । पापी ।

एनी—(स्त्री०) [एत—ङीप्, तस्य नः] अनेक वर्णों या रंगों वाली ।

एमन्—(पुं०) [√इ+मनिन्] रास्ता, मार्ग ।

एरका—(स्त्री०) [√इ+रक, टाप्] एक प्रकार की घास जिसमें गाँठें नहीं होती हैं ।

एरण्ड—(पुं०) [आ√ईर्+अण्डच्] रेंड का पेड़ ।

एर्वारुक—(पुं०) [आ√ईर्+क्विप्, एर्√वृ+उण् ततः कन्] खरबूजा, ककड़ी ।

एलक—(पुं०) [√एल्+ण्वुल्] मेढ़ा ।

एलवालु, एलवालुक–(न०) [एला√वल्+उण्, ह्रस्व] [एलावालु+कन्] कैथा की छाल जो सुगंधित होती है । एक रवादार द्रव्य ।

एलविल—दे० 'ऐलविल' ।

एला—(स्त्री०) [√इल+अच्—टाप्] इलायची का पौधा । इलायची के दाने ।

एलापर्णी—(स्त्री०) [एलायाः पर्णमिव पर्णमस्याः, ब० स०, ङीप्] लज्जावन्ती जाति का एक गुल्म ।

एलीका—(स्त्री०)[आ√ईल्+ईकन्–टाप्] छोटी इलायची ।

एव—(अव्य०) [√इ+वन्] सादृश्य, समानता । परिभव, तिरस्कार । निश्चय, ही ।

एवम्—(अव्य०) [√इ+वमु (बा०)] इस प्रकार । और । स्वीकार । प्रश्न । निश्चय ।—**अवस्थ** (एवमवस्थ)—(वि०) इस प्रकार अवस्थित, जो ऐसे टिका या जमा हो ।—**आदि,—आद्य**, (एवमादि), (एवमाद्य)—(वि०) ऐसे आरंभ वाला, जो इस प्रकार प्रारंभ हो ।—**कार** (एवङ्कार)—(अव्य०) इस प्रकार से ।—**गुण** (एवङ्गुण,),—(वि०) इस प्रकार के गुणों वाला ।—**प्रकार,—प्राय**–(वि०) इस तरह का । इस किस्म का ।—**भूत**–(वि०) इस प्रकार के गुणवाला, इस रकम का, ऐसा ।—**रूप** (एवंरूप)—(वि०) इस किस्म का, इस शक्ल का ।—**विध**, (एवंविध)—(वि०) इस प्रकार का, ऐसा ।

√एष्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । किसी ओर शीघ्रता से जाना । एषते, एषिष्यते, ऐषिष्ट ।

एषण—(पुं०) [√एष्+ल्युट्] लोहे का बाण ।—(न०) [√इष्+ल्युट्] इच्छा, कामना । खोज ।

एषणा—(स्त्री०) [√इष्+णिच्+युच्] इच्छा, अभिलाषा ।

एषणिका—(स्त्री०) [√इष्+ल्युट्+कन्, टाप्, इत्व] सुनार का काँटा (तौलने का) ।

एषणीय—(वि०) [√इष्+ अनीयर्] चाहने योग्य, स्पृहणीय ।

एषा—(स्त्री०) [√इष्+अ, टाप्] कामना, इच्छा ।

एषितृ—(वि०) [√इष् +तृच्] दे० 'एषिन्' ।

एषिन्—(वि०) [√इष्+णिनि] इच्छा करने वाला, कामना करने वाला ।

ऐ

ऐ—संस्कृत वर्णमाला या नागरी वर्णमाला का दसवाँ वर्ण, इसका उच्चारण कण्ठ और तालु से होता है । (पुं०) [आ√इ+विच्] शिव का नाम । (अव्य०) स्मरण, बुलावा तथा सम्बोधन-व्यञ्जक अव्यय ।

ऐकध्य—(न०) [एकधा+ध्यमञ् (धा-स्थाने)] समय या घटना विशेष का एकत्व ।

ऐकपत्य—(न०) [एकपति+ष्यञ्] सर्वोपरि प्रधानता, एकतंत्र शासन ।

ऐकपदिक—(वि०) [एकपद+ठञ् —इक] [स्त्री०—**ऐकपदिकी**] एक पद से सम्बन्ध रखनेवाला ।

ऐकपद्य—(न०) [एकपद+ष्यञ्] शब्दों का योग ।

ऐकमत्य—(न०) [एकमत+ष्यञ्] एक मत, एक आशय, एकवाक्यता ।

ऐकागारिक—(पुं०) [एकम् असहायम् अगारम् प्रयोजनम् अस्य इत्यर्थे एकागार+ठञ् —इक]चोर; 'केनचित् हस्तवतैकागारिकेण' दश० । एक घर का मालिक ।

ऐकाग्र्य—(न०) [एकाग्र+ष्यञ्] एक ही वस्तु पर ध्यान लगना, एकाग्रता ।

ऐकाङ्ग—(पुं०) [एकाङ्ग+अण्] शरीर-रक्षक दल का एक सिपाही ।

ऐकात्म्य—(न०) [एकात्मन्—ष्यञ्] एकता, ऐक्य । एकरूपता, समता । ब्रह्म के साथ एक होने का भाव ।

ऐकाधिकरण्य—(न०) [एकाधिकरण+ष्यञ्] एक ही विषय से संबद्ध होने की अवस्था, एककालिकत्व । समकालीन विद्यमानता ।

ऐकान्तिक—(वि०) [एकान्त+ठञ्—इक] सम्पूर्ण, बिल्कुल । निश्चित । अत्यन्त ।

ऐकान्यिक—(पुं०) [एकान्य+ठञ्—इक] वह शिष्य जो वेद पढ़ने में एक भूल करे ।

ऐकार्थ्य—(न०) [एकार्थ+ष्यञ्] उद्देश्य या प्रयोजन की एकता । अर्थसामञ्जस्य ।

ऐकाहिक—(वि०) [एकाह+ठञ्—इक] [स्त्री०—**ऐकाहिकी**] एक दिन में होने वाला, एक दिन का ।

ऐक्य—(न०) [एक+ष्यञ्] एकत्व, एका । समानता, सादृश्य । जोड़, योग ।

ऐक्षव—(वि०) [इक्षु+अण्] गन्ने का, गन्ने से बना हुआ, गन्ने से निकला हुआ । (न०) गुड़ । शक्कर । मदिरा विशेष ।

ऐक्षुक—(वि०) [इक्षु+ठञ्] गन्ने के लिये उपयुक्त । (पुं०) गन्ना ढोने वाला ।

ऐक्षुभारिक—(वि०)[इक्षुभार+ठञ्—इक] गन्ने का गट्ठर ढोने वाला ।

ऐक्ष्वाक—(वि०) [इक्ष्वाकु+अण्] इक्ष्वाकु का । (पुं०) दे० 'ऐक्ष्वाकु' ।

ऐक्ष्वाकु—(पुं०) [आर्ष प्रयोग] इक्ष्वाकु का वंशधर । इक्ष्वाकु के वंशधर का राज्य ।

ऐङ्गुद—(वि०) [इङ्गुदी+अण्] [स्त्री०—**ऐङ्गुदी**] हिंगोट वृक्ष से उत्पन्न । (न०) हिंगोट वृक्ष का फल ।

ऐच्छिक—(वि०) [इच्छा+ठन्] अपनी

इच्छा या मर्जी पर अवलंबित, इख्तियारी। वैकल्पिक। [स्त्री०—ऐच्छिकी]।

ऐडक—(वि०) [एडक+अण्] [स्त्री०—ऐडकी] भेड़ का। (पुं०) भेड़ की एक जाति।

ऐडविड—ऐलविल–(पुं०) [इडविडा+अण्, पक्षे डलयोरभेदः] कुबेर का नाम।

ऐण—(वि०) [एण+अण्] [स्त्री०—ऐणी] हिरन का (चर्म या ऊन)।

ऐणेय—(वि०) [एणी+ढञ्–एय] [स्त्री०—ऐणेयी] काले हिरन से उत्पन्न अथवा काले हिरन की किसी वस्तु से उत्पन्न। (पुं०) काला बारहसिंघा। (न०) एक रतिबन्ध।

ऐतदात्म्य—(न०) [एतदात्मन्+ष्यञ्] इस प्रकार का विशेष गुण या विशिष्टता।

ऐतरेय—(पुं०) [इतर+ढक्—एय] इतर ऋषि के वंशज। (वि०) [ऐतरेय+अण्] ऐतरेयकृत (ब्राह्मण या उपनिषद्) (न०) ऋग्वेद का एक ब्राह्मण। एक आरण्यक।

ऐतरेयिन्—(पुं०) [ऐतरेय+इनि] ऐतरेय ब्राह्मण का पढ़ने वाला।

ऐतिहासिक—(वि०) [इतिहास+ठक्—इक] इतिहास सम्बन्धी। (पुं०) इतिहास-लेखक। इतिहास जानने वाला व्यक्ति। [स्त्री०—ऐतिहासिकी]

ऐतिह्य—(न०) [इतिह+ष्य] परम्परागत उपदेश, पौराणिक वृत्तान्त।

ऐदम्पर्य—(न०) [इदम्पर+ष्य] मूलाधार, अभिप्राय, उद्देश्य, आशय।

ऐनस—(न०) [एनस+अण्] पाप।

ऐन्दव—(वि०) [इन्दु+अण्] चन्द्रमा सम्बन्धी। (पुं०) चान्द्र मास।

ऐन्द्र—(वि०) [इन्द्र+अण्] [स्त्री०—ऐन्द्री] इन्द्र सम्बन्धी। (पुं०) अर्जुन और बालि का नाम।

ऐन्द्रजालिक—(वि०) [इन्द्रजाल+ठक्—इक] इंद्रजाल, जादू या नजरबंदी का (काम)। बाजीगरी जानने वाला। (पुं०) बाजीगर, जादूगर। [स्त्री०—ऐन्द्रजालिकी]।

ऐन्द्रलुप्तिक—(वि०) [इन्द्रलुप्त+ठक्—इक] गंज के रोग से पीड़ित। गंजा, खल्वाट।

ऐन्द्रशिर—(पुं०) [इन्द्रशिर+अण्] हाथियों की एक जाति।

ऐन्द्रि—(पुं०) [इन्द्र+इञ्] इन्द्रपुत्र जयन्त, अर्जुन, बालि। काक।

ऐन्द्रिय, ऐन्द्रियक–(वि०) [इन्द्रिय+अण्] [इन्द्रिय+वुञ्—अक] इन्द्रियों से सम्बन्ध रखने वाला, विषयभोगी। विद्यमान, इन्द्रियगोचर।

ऐन्द्री—(स्त्री०) [इन्द्र+अण्—ङीप्] एक वैदिक मंत्र जिसमें इन्द्र की प्रार्थना है। पूर्व दिशा। विपत्ति, संकट। दुर्गादेवी की उपाधि। छोटी इलायची।

ऐन्धन—(वि०) [इन्धन+अण्] [स्त्री०—ऐन्धनी] ईंधन का। (पुं०) सूर्य का नाम।

ऐयत्य—(न०) [इयत्+ष्यञ्] परिमाण, संख्या।

ऐरावण—(पुं०) [इरया जलेन वनति शब्दायते इति इरा√वन्+अच्, ततः अण्] इन्द्र का हाथी।

ऐरावत—(पुं०) [इरा+मतुप्, मस्य वः—इरावान्=समुद्रः तत्र भवः स्वार्थे अण्] इन्द्र के हाथी का नाम। श्रेष्ठ हाथी। पातालवासी नागों के नेताओं में से एक नेता। पूर्व दिशा का दिग्गज। एक प्रकार का इन्द्रधनुष।

ऐरावती—(स्त्री०) [ऐरावत+ङीप्] ऐरावत हाथी की हथिनी। बिजली। पंजाब की रावी नदी का नाम, इरावती नदी।

ऐरेय—(न०) [इरा+ढ—एय] मद्य, शराब। मङ्गल ग्रह।

ऐल—(पुं०) [इला+अण्] इला और बुध से उत्पन्न पुरूरवा का नाम।

ऐलवालुक—(पुं०) [एलवालुक+अण्] एक सुगन्धि-द्रव्य का नाम ।

ऐलविल—(पुं०) [इलविला+अण्] कुबेर का नाम । मङ्गल ग्रह ।

ऐलेय—(पुं०) [इला+ढक्—एय] एक सुगन्धित-द्रव्य । मङ्गल ग्रह ।

ऐश—(वि०) [ईश+अण्] ईश—शिव से संबन्ध रखने वाला । ईश्वरीय । राजकीय । [स्त्री०—ऐशी]

ऐशान—(वि०) [ईशान+अण्] शिव-संबंधी । उत्तर-पूर्व-संबंधी ।

ऐशानी—(स्त्री०) [ऐशान+ङीप्] ईशान उपदिशा या कोण । दुर्गा का नाम ।

ऐश्वर—(वि०) [ईश्वर+अण्] [स्त्री०—ऐश्वरी] विशाल । शक्तिशाली । शिव का । राजकीय । ईश्वरीय ।

ऐश्वरी—(स्त्री०) [ऐश्वर+ङीप्] दुर्गा देवी का नाम ।

ऐश्वर्य—(न०) [ईश्वर+ ष्यञ्] प्रभुत्व, आधिपत्य । शक्ति, बल । शासन, अधिकार । राज्य । धन, सम्पत्ति, विभव । भगवान् की सर्वव्यापकता की शक्ति, सर्वव्यापकता ।

ऐषमस्—(अव्य०) [अस्मिन् वत्सरे इति नि० साधुः] इस वर्ष के भीतर, इस वर्ष में ।

ऐषमस्तन, ऐषमस्त्य—(वि०) [ऐषमस्+तनप्] [ऐषमस+त्यप्] वर्तमान वर्ष का, चालू साल का ।

ऐष्टिक—(वि०) [इष्टि+ठक्—इक] [स्त्री०—ऐष्टिकी] यज्ञीय, संस्कारात्मक, शिष्टाचार सम्बन्धी ।—पौर्तिक—(वि०) इष्टापूर्त (यज्ञ और धर्मादि) से सम्बन्ध युक्त ।

ऐहलौकिक—(वि०) [इहलोक+ठक्—इक] [स्त्री०—ऐहलौकिकी] इस लोक का, सांसारिक, दुनियावी ।

ऐहिक—(वि०) [इह+ठक्—इक] [स्त्री०—ऐहिकी] इस लोक का, सांसारिक । स्थानीय । (न०) (इस दुनिया का) धंधा, व्यवसाय ।

ओ

ओ—संस्कृत वर्णमाला या नागरी वर्णमाला का ग्यारहवाँ वर्ण । इसका उच्चारण ओष्ठ और कण्ठ से होता है । इसके उदात्त, अनुदात्त, स्वरित तथा सानुनासिक भेद होते हैं । (पुं०) [√उ+ विच्] ब्रह्मा का नाम । (अव्य०) ओह् का संक्षिप्त रूप । पुकारने, याद करने और दया प्रदर्शित करने के काम में प्रयुक्त होने वाला एक अव्यय ।

ओक—(पुं०) [√उच्+क, नि० चस्य कः] घर । शरण । पक्षी । शूद्र ।

ओकण, ओकणि—(पुं०) [√उ+विच्—ओ√कण्+अच्] [ओ√कण्+इन्] खटमल । जूँ ।

ओकस्—(न०) [उच्+असुन्] गृह । मकान । आश्रय, शरण ।

√ओख्—भ्वा० पर० अक० सक० सूख जाना । योग्य होना । पर्याप्त होना । शोभा बढ़ाना, सजाना । अस्वीकृत करना । रोकना । थाह करना । ओखति, ओखिष्यति, औखीत् ।

ओघ—(पुं०) [√उच्+घञ्, पृषो०] जल की बाढ़ । जल की धार, जल का प्रवाह; 'पुनरोघेन प्रयुज्यते नदी' कु० ४.४४। ढेर । समुदाय । सम्पूर्ण, समूचा । अविच्छिन्नता, सातत्य । परम्परागत उपदेश । एक प्रकार का नृत्य । द्रुतलय (संगीत)। कालतुष्टि (सांख्य०)।

ओङ्कार—(पुं०) [ओम्+कार] एक पवित्र पद जो वेदाध्ययन के पूर्व और अन्त में कहा जाता है । अव्ययात्मक रूप में इसका अर्थ होता है—सम्मानपूर्ण स्वीकृति, गम्भीर समर्थन, हाँ, बहुत अच्छा । मङ्गल । स्थानान्तरकरण । बचाव । ब्रह्म, प्रणव ।

√ओज्—चु० उभ० अक० बलवान् होना । योग्य होना । ओजयति-ते, ओजयिष्यति-ते, औजिजत्-त ।

ओज—(वि०) [√ओज्+अच्] विषम (पहला, तीसरा आदि) ।

ओजस्—(न०) [√उब्ज्+असुन्, बलोप, गुण] प्राणबल, सामर्थ्य, शक्ति । उत्पादन-शक्ति । चमक, दीप्ति । एक काव्यालंकार । जल । धातु जैसी आभा ।

ओजसीन, ओजस्य—(वि०) [ओजस्+ख –ईन] [ओजस्+यत्] दे० 'ओजस्वत्' ।

ओजस्वत्, ओजस्विन्—(वि०) [ओजस् +मतुप्] [ओजस्+विनि] ओज भरा । बलवीर्य-वाली ।

ओडिका, ओडी—(स्त्री०) [√उ+ड, ङीप् + क, ह्रस्व] [√उ + ड, ङीप्] नीवार, बिना बोये उत्पन्न होने वाला धान ।

ओड्र—(पुं०) [आ√उन्द् +रक्, दस्य डत्वम्] उड़ीसा प्रदेश और उड़ीसा-प्रदेश-वासी । (न०) जवाकुसुम ।

√ओण्– भ्वा० पर० सक० हटाना । ओणति, ओणिष्यति, औणीत् ।

ओत—(वि०) [आ√वे+क्त, सम्प्रसारण] बुना हुआ, सूत से एक ओर से दूसरे ओर तक सिला हुआ ।—**प्रोत**–(वि०) अन्त-र्व्याप्त, एक में एक बुना हुआ, गुथा हुआ, परस्पर लगा और उलझा हुआ । सब ओर फैला हुआ ।

ओतु—(पुं०) [अव्+तुन्, ऊठ्, गुण] बिलाव ।

ओदन—(पुं० न०) [उन्द्+युच्, नलोप] भात । भोज्य पदार्थ, भिगोया और दूध से राँधा हुआ अन्न ।

ओम्—(अव्य०) [√अव+मन्, तस्य अतो लोपः, ऊठ्, गुणः] दे० 'ओङ्कार' ।

ओरम्भ—(पुं०) [?] गहरी खरोंच ।

ओल—(वि०) [आ√उन्द्+क, पृषो०] भींगा, आर्द्र, नम, तर ।

√ओलण्ड्—चु० पर० सक० ऊपर की ओर फेंकना, उछालना । ओलण्डयति– ओल-ण्डति ।

ओल्ल—(वि०)[ओल–पृषो०] नम, तर । (पुं०) प्रतिभू, जामिन ।

ओष—(पुं०) [√उष+घञ्] जलन, दाह ।

ओषण—(पुं०) [√उष+ल्युट्] चरपरा-हट, तीक्ष्णता ।

ओषधि, ओषधी—(स्त्री०) [ओष√धा+ कि, पक्षे ङीष्] वनस्पति । जड़ी-बूटी । एक फसली पौधा ।—**ईश** (**ओषधीश**,),—**गर्भ**– —**नाथ**–(पुं०) चन्द्रमा ।—**ज**–(वि०) पौधों से उत्पन्न ।—**धर**,—**पति**–(पुं०) कपूर । वैद्य । हकीम । चन्द्रमा ।—**प्रस्थ**– (पुं०) हिमालय । हिमालयस्थ एक नगर; 'तत्प्रयातौषधिप्रस्थमस्थितये हिमवत्पुरम्' कु० ६.३३ ।

ओष्ठ—(पुं०) [√उष्+थन्]ओंठ, अधर । —**अधर** (**ओष्ठाधर**)–(न०) ऊपर और नीचे का ओंठ ।—**पुट**–(न०) ओंठों के खोलने से बनने वाला गड्ढा ।—**पुष्प**–(न०) बंधुक वृक्ष ।

ओष्ठ्य—(वि०) [ओष्ठ+यत्] ओंठ से सम्बद्ध । ओंठ पर उपस्थित । ओंठ से उच्चा-रित ।—**वर्ण**– (पुं० न०) ओंठों की सहायता से उच्चारित होने वाले वर्ण । अर्थात् उ, ऊ, प, फ, ब, भ, म ।

ओष्ण—(वि०) [ईषत् उष्णः ग० स०] गुनगुना, थोड़ा गरम ।

औ

औ—संस्कृत वर्णमाला का बारहवाँ वर्ण । इसका उच्चारणस्थान कण्ठ और ओष्ठ है । यह स्वर अ+ओ के मिलाने से बनता है । (अव्य०) [आ√अव्+क्विप्, ऊठ्] आह्वान, सम्बोधन, विरोध, और सङ्कल्प द्योतक एक अव्यय ।

औक्थ—(न०) [उक्थ+यञ्+अण्, यञो लुक्] उक्थ की संतान औक्थ्य, उसकी संतान ।

औक्थिक्य—(न०) [उक्थ+ठक्+ष्यञ्] सामवेद के उक्थ नामक अंग के पढ़ने की विधि ।

औक्ष, औक्षक—(न०) [उक्ष्णां समूहः इत्यर्थे उक्षन्+अण्, टिलोप] [उक्षन् + वुञ्–अक] बैलों की हेड़ या बैलों का झुंड ।

औख्य—(वि०) [उखा+ष्यञ्] बटलोई में रांधी हुई चीज ।

औग्र्य—(न०) [उग्र+ष्यञ्] उग्रता, भयानकता, निष्ठुरता ।

औघ—(पुं०) [ओघ+अण्] जल की बाढ़, प्लावन ।

औचिती (स्त्री०), **औचित्य**—(न०) [उचित + ष्यञ्–ङीष्, यलोप] [उचित+ष्यञ्] उचित होना । योग्यता, उपयुक्तता । सत्यत्व ।

औच्चैःश्रवस—(पुं०) [उच्चैःश्रवस् + अण्] इन्द्र के घोड़े का नाम ।

औजसिक—(वि०) [ओजस्+ठक्–इक] शक्तिशाली, बलवान् ।

औजस्य—(वि०) [ओजस्+ष्यञ्] शक्ति और बल के लिये लाभदायक । (न०) शक्ति, जीवन शक्ति ।

औज्ज्वल्य—(न०) [उज्ज्वल + ष्यञ्] उजलापन । चमक । कान्ति ।

औडुपिक—(वि०) [उडुप+ठक्] नाव से नदी पार करने वाला ।(पुं०) नाव का यात्री ।

औडुम्बर—[उडुम्बर +अञ्] दे० 'औदुम्बर' ।

औड्र—(पुं०) [ओड्र+अण्] उड़ीसा प्रान्त का रहने वाला या वहाँ का राजा ।

औत्कण्ठ्य—(न०) [उत्कण्ठा+ष्यञ् (स्वार्थे)] अभिलाषा । चिन्ता ।

औत्कर्ष्य—(न०) [उत्कर्ष + ष्यञ् (भावे)] सर्वश्रेष्ठता, उत्कृष्टता ।

औत्तमि—(पुं०) [उत्तम्+इञ्] मनुओं में से एक मनु का नाम ।

औत्तर—(वि०) [उत्तर+अण्] उत्तरी, उत्तर दिशा का ।

औत्तरेय—(पुं०)[उत्तरा+ढक्–एय] परीक्षित राजा का नाम, जिनका जन्म उत्तरा के गर्भ से हुआ था ।

औत्तानपाद, औत्तानपादि—(पुं०) [उत्तानपाद+अण्] [उत्तानपाद+इञ्] ध्रुव का नाम । ध्रुव नाम का सितारा जो सदा उत्तर दिशा में देख पड़ता है ।

औत्पत्तिक—(वि०) [उत्पत्ति+ठञ्–इक] प्राकृतिक, प्रकृति सम्बन्धी, सहज । एक ही समय में उत्पन्न ।

औत्पात—(वि०) [उत्पात+अण्] दे० 'औत्पातिक' ।

औत्पातिक—(वि०) [उत्पात+ठक् –इक] उत्पात संबंधी । अमाङ्गलिक । विपत्तिकारक । (न) अपशकुन । अमङ्गल ।

औत्स—(वि०) [उत्स+अण्] झरने से उत्पन्न या झरना संबंधी ।

औत्सङ्गिक—(वि०) [उत्सङ्ग + ठक्–इक] कूल्हे पर रखकर ढोया हुआ या कूल्हे पर रखा हुआ ।

औत्सर्गिक—(वि०) [उत्सर्ग+ठञ् –इक] सामान्य विधि के ल्य । त्याज्य, छोड़ने योग्य । प्राकृतिक, स्वाभाविक । औत्पत्तिक ।

औत्सुक्य—(न०)[उत्सुक+ष्यञ्] चिन्ता । बेचैनी, व्याकुलता । उत्कण्ठा, उत्सुकता ।

औदक—(वि०) [उदक+अण्] जलीय, जल से उत्पन्न होने वाला, जल सम्बन्धी ।

औदञ्चन—(वि०) [उदञ्चन+ अण्] बाल्टी या घड़े में रखा हुआ ।

औदनिक—(पुं०) [ओदन+ठञ्–इक] रसोइया ।

औदरिक—(वि०) [उदर+ठक्–इक] उदर सम्बन्धी, पेटू, भोजनभट्ट ।

औदर्य—(वि०) [उदर+यत्, ततः स्वार्थे अण्] गर्भस्थित। अन्तःप्रविष्ट।

औदश्वित—(न०) [उदश्वित्+अण्] माठा जिसमें बराबर का पानी मिला हो।

औदार्य—(न०) [उदार+ष्यञ्] उदारता। कुलीनता। बड़प्पन। अर्थसम्पत्ति; 'स सौष्ठवौदार्यविशेषशालिनीं विनिश्चितार्थामिति वाचमाददे'। कि० १.३।

औदासीन्य—(न०), **औदास्य**—(न०) [उदासीन+ष्यञ्] [उदास+ष्यञ्] उपेक्षा, उदासीनता। एकान्तता। वैराग्य।

औदुम्बर—(वि०) [उदुम्बर+अञ्] गूलर की लकड़ी का बना हुआ। (पु०) वह प्रदेश जहाँ गूलर के वृक्षों का आधिक्य हो। (न०) गूलर के वृक्ष की लकड़ी। गूलर के फल। ताँबा।

औदुम्बरी—(स्त्री०) [औदुम्बर+ङीप्] गूलर के वृक्ष की डाली।

औद्गात्र—(न०) [उद्गातृ+अञ्] उद्गाता का पद या कर्म।

औद्दालक—(न०) [उद्दाल+अण् ततः स्वार्थे कन्] दीमक आदि के बिल से प्राप्त होने वाला मधु जैसा एक पदार्थ जो कड़वा और कसैला होता है।

औद्देशिक—(वि०) [उद्देश+ठक्] [स्त्री०—**औद्देशिकी**] उद्देश-सम्बन्धी। निर्देश करने वाला।

औद्धत्य—(न०) [उद्धत+ष्यञ्] उद्दण्डता, अक्खड़पन, उजड्डपन। धृष्टता, ढिठाई।

औद्धारिक—(वि०)[उद्धार+ठञ्] [स्त्री० —**औद्धारिकी**] उद्धार के लिये दिया जाने वाला। बँटवारे के योग्य।

औद्भिद—(न०) [उद्भिद्+अण्] झरने का जल। सेंधा नमक।

औद्वाहिक—(वि०) [उद्वाह+ठञ्][स्त्री० —**औद्वाहिकी**] विवाह के समय मिला हुआ। विवाह-सम्बन्धी। (न०) स्त्री को विवाह के अवसर पर मिली हुई वस्तु।

औधस्य—(न०) [उधस्+ष्यञ्] थन से निकला हुआ दूध।

औन्नत्य—(न०) [उन्नत+ष्यञ्] ऊँचाई। उत्थान।

औपकर्णिक—(वि०) [उपकर्ण+ठक्] [स्त्री०—**औपकर्णिकी**] कान के समीप वाला।

औपकार्य—(न०), **औपकार्या**—(स्त्री०) [उपकार्य+अण्] [औपकार्य— टाप्] मकान। खेमा।

औपग्रस्तिक,—औपग्रहिक—(पु०) [उपग्रस्त +ठञ्] [उपग्रह+ठञ्] ग्रहण। राहुग्रस्त चन्द्र या सूर्य।

औपचारिक—(वि०) [उपचार+ठञ्] [स्त्री०—**औपचारिकी**]उपचार- सम्बन्धी। जो केवल कहने-सुनने के लिये हो, दिखाऊ। गौण, अप्रधान।

औपजानुक—(वि०)[उपजानु+ठक्][स्त्री० —**औपजानुकी**] घुटनों के समीप का।

औपदेशिक—(वि०) [उपदेश+ठञ्] [स्त्री०—**औपदेशिकी**] जो उपदेश से जीविका करता हो। जो पढ़ाकर अपना निर्वाह करता हो। उपदेश से प्राप्त।

औपधर्म्य—(न०) [उपधर्म+ष्यञ्] धर्म-विरोधी मत, मिथ्या सिद्धान्त। अपकृष्ट धर्म।

औपधिक—(वि०) [उपधि+ठञ्] [स्त्री० —**औपधिकी**] प्रपञ्ची, धोखेबाज, छली, कपटी।

औपधेय—(न०) [उपधि+ढञ्] रथ का पहिया, रथाङ्ग।

औपनायनिक—(वि०) [उपनयन+ठञ्] [स्त्री०—**औपनायनिकी**] उपनयन संबंधी।

औपनिधिक—(वि०) [उपनिधि+ठञ्] [स्त्री०—**औपनिधिकी**] धरोहर सम्बन्धी। (न०) धरोहर, अमानत रखक।

औपनिषद—(वि०) [उपनिषद्+अण्] [स्त्री०—**औपनिषदी**] उपनिषदों द्वारा

जानने योग्य। ब्रह्मविद्या सम्बन्धी। उपनिषदों पर अवलम्बित। उपनिषदों से निकला हुआ। (पुं०) ब्रह्म। उपनिषदों के सिद्धान्त का अनुयायी या मानने वाला व्यक्ति।

औपनीविक (वि०) [उपनीवि+ठक्] [स्त्री०—**औपनीविकी**] नीवि के पास का, धोती की गाँठ के पास लगा हुआ; 'औपनीविकमरुन्द्ध किल स्त्रीकरम्' शि० १०.६०।

औपपत्तिक—(वि०) [उपपत्ति+ठक्] [स्त्री० —**औपपत्तिकी**] तैयार। उपयुक्त। कल्पनात्मक।

औपमिक—(वि०) [उपमा+ठक्] [स्त्री० —**औपमिकी**] उपमा के योग्य, तुलना के योग्य। उपमा से प्रदर्शित।

औपम्य—(वि०)[उपमा+ष्यञ्] तुलना। समानता, सादृश्य; 'आत्मौपम्येन भूतेषु दयां कुर्वन्ति साधवः।'

औपयिक—(वि०) [उपाय+ठक्, ह्रस्व] [स्त्री०—**औपयिकी**] उपयुक्त, योग्य, उचित। प्रयोग द्वारा प्राप्त (पुं० न०) उपाय, प्रतीकार।

औपरिष्ट—(वि०) [उपरिष्ट+अण्] [स्त्री०—**औपरिष्टी**] ऊपर का।

औपरोधिक—(वि०)[उपरोध+ठक्] कृपा या अनुग्रह सम्बन्धी। रोक डालने वाला। (पुं०) पीलू वृक्ष की लकड़ी का डंडा।

औपल—(वि०) [उपल+अण्] [स्त्री०—**औपली**] पथरीला, पत्थर का।

औपवस्त—(न०)[उपवस्त+अण्] कड़ाका, उपवास।

औपवस्त्र—(न०) [उपवस्त+अण्] उपवासोपयुक्त भोजन, फलाहार। उपवास।

औपवास्य—(न०) [उपवास+ष्यञ्] उपवास।

औपवाह्य—(वि०) [उपवाह्य+अण्] सवारी करने योग्य। (पुं०) गजराज। राज-यान, शाही सवारी।

औपवेशिक—(वि०) [उपवेश+ठञ्] [स्त्री०—**औपवेशिकी**] सारा समय लगाकर सेवा वृत्ति द्वारा आजीविका उपार्जन करने वाला।

औपसंख्यानिक—(वि०) [उपसंख्यान+ठक्] [स्त्री०—**औपसंख्यानिकी**] न्यूनतापूरक। यौगिक।

औपसर्गिक—(वि०) [उपसर्ग+ठक्] [स्त्री०—**औपसर्गिकी**] उपसर्ग-सम्बन्धी। विपत्ति का सामना करने की योग्यता से सम्पन्न। भावी अमङ्गलसूचक। वातादि सन्निपात से उत्पन्न।

औपस्थिक—(वि०) [उपस्थ+ठक्] व्यभिचार से पेट पालने वाला।

औपस्थ्य—(न०) [उपस्थ+ष्यञ्] मैथुन, स्त्रीसहवास।

औपहारिक—(वि०) [उपहार+ठक्] [स्त्री०—**औपहारिकी**] भेंट या चढ़ावा सम्बन्धी।

औपाकरण—(न०) [उपाकरण+अण्] वेदाध्ययन का प्रारम्भ।

औपाधिक—(वि०)[उपाधि+ठञ्]सापेक्ष। उपाधि-सम्बन्धी।

औपाध्यायक—[उपाध्याय+वुञ्] [स्त्री० —**औपाध्यायकी**] अध्यापक से प्राप्त।

औपायनिक—(वि०) [उपायन+ठक्–इक] उपहार में मिला हुआ या दिया जाने वाला (कौ०)।

औपासन—(वि०) [उपासन+अण्] [स्त्री०—**औपासनी**] गृह्याग्नि सम्बन्धी। (पुं०) गृह्याग्नि।

औम्—(अव्य०) शूद्रों के उच्चारणार्थ प्रणव का रूप विशेष। (क्योंकि शूद्रों के लिए ओम् का उच्चारण वर्जित है।)

औरभ्र (वि०)—[उरभ्र+अण्] [स्त्री०–

औरभ्री] भेड़ से उत्पन्न या भेड़ सम्बन्धी। (न०) भेड़ का मांस। ऊनी वस्त्र। भेड़ों का झुंड। मोटा ऊनी कंबल।

औरभ्रक—(न०) [औरभ्र+कन्] भेड़ों का झुंड।

औरभ्रिक—(पुं०) [उरभ्र+ठञ्] गड़रिया, मेषपाल।

औरस—(वि०) [उरस्+अण्] [स्त्री०—**औरसी**] छाती से उत्पन्न, अपने वास्तविक पिता के वीर्य से उत्पन्न। वैध, जायज। (पुं०) विहित पुत्र।

औरसी—(स्त्री०) [औरस+ङीप्] विहित पुत्री।

औरस्य—[उरस्+यत्, ततः स्वार्थे अण्] दे० 'औरस'।

और्ण [स्त्री०—**और्णी**], **और्णक** [स्त्री०—**और्णकी**], **और्णिक** [स्त्री०—**और्णिकी**] (वि०) [ऊर्णा+अञ्] [और्ण+कन्] [ऊर्णा+ठञ्] ऊनी, ऊन से बनी।

और्ध्वकालिक—(वि०) [ऊर्ध्वकाल+ठञ्] [स्त्री०—**और्ध्वकालिकी**] आगे की, आगामी समय की।

और्ध्वदेह—(न०) [ऊर्ध्वदेह+अण्] प्रेत-क्रिया, दशगात्र, पिण्डदान कर्म।

और्ध्वदेहिक, और्ध्वदैहिक—(वि०) [ऊर्ध्व-देह+ठञ्, वैकल्पिक उत्तर-पद-वृद्धि] मृत पुरुष से सम्बन्ध युक्त, प्रेतकर्म सम्बन्धी। (न०) प्रेतकर्म, अन्त्येष्टिकर्म, मरने के बाद किये जाने वाले कर्म।

और्व—(वि०) [ऊर्वी+अण्] धरती से संबद्ध या उत्पन्न। [उरु+अण्] जंघा से उत्पन्न। [स्त्री०—**और्वी**] (पुं०) [उर्व-ऋषेः अपत्यम् इत्यर्थे उर्व+अण्] (पुं०) 'नमक' और 'भूगोल का भाग' अर्थों में उर्वी से एवं इतर अर्थों में और्व से अण् होता है। भृगु-वंशीय एक प्रसिद्ध ऋषि। बाड़वानल। नोना मिट्टी का नमक। पौराणिक भूगोल का दक्षिण भाग, जहाँ दैत्यों का निवास है। पञ्चप्रवर मुनियों में से एक।

औलूक—(न०) [उलूक+अञ्] उल्लुओं का झुंड।

औलूक्य—(पुं०) [उलूकऋषेः अपत्यम् इत्यर्थे उलूक+ष्यञ्] कणाद का नाम जो वैशेषिक दर्शन के प्रचारक थे।

औल्वण्य—(न०) [उल्वण+ष्यञ्] अधि-कता। अत्यधिक। विषमता। तीव्रता। अति तीक्ष्णता।

औशनस—(वि०) [उशनस्+अण्] [स्त्री० —**औशनसी**] उशना (शुक्राचार्य) सम्बन्धी या उशना से उत्पन्न अथवा उशना से अधीत। (न०) उशना कृत स्मृति या धर्मशास्त्र।

औशीनर—(पुं०) [उशीनर+अण्] उशी-नर के पुत्र शिवि प्रभृति।

औशीनरी—(स्त्री०) [औशीनर+ङीप्] पुरूरवा की रानी का नाम।

औशीर—(न०) [उशीर+अण्] पंखे या चंवर की डाँड़ी। शय्या; 'औशीरे कामचारः कृतोऽभूत्' दश०। आसन। खस पड़ा हुआ उबटन। खस की जड़। कुरसी।

औषण—(न०) [उषण+अण्] कड़वापन। काली मिर्च।

औषध—(न०) [ओषधि+अण्] दवा, ओषधि। जड़ी-बूटी। एक खनिज द्रव्य। (वि०) ओषधिजात, जड़ी-बूटी से बना हुआ।

औषधि, औषधी—(स्त्री०) [आ—ओषधि (धी) प्रा० स०] जड़ी-बूटी। काष्ठादि चिकित्सा के पदार्थ। बूटी जिससे अग्नि निकलता है, यथा—'विरमन्ति न ज्वलितु-मौषधयः।' —किरातार्जुनीय।

औषधीय—(वि०) [औषध+छ] दवा सम्बन्धी। जिसमें जड़ी-बूटी पड़ी हो।

औषर, औषरक—(न०) [ऊषर+अण्] [औषर+कन्] सेंधा नमक।

औषस—(वि०) [उषस्+अण्] [स्त्री०—**औषसी**] प्रातःकाल सम्बन्धी, सवेरे का ।

औषसी—(स्त्री०) [औषस–ङीप्] भोर ।

औषसिक, औषिक–(वि०) [उषस्+ठञ्] [उषा+ठञ्] [स्त्री०—**औषसिकी, औषिकी**] भोर का ।

औष्ट्र—(वि०) [उष्ट्र+अण्] [स्त्री०—**औष्ट्री**] ऊँट सम्बन्धी या ऊँट से उत्पन्न । ऊँटों के बाहुल्य से युक्त । (न०) ऊँटनी का दूध ।

औष्ट्रक—(न०) [उष्ट्र+वुञ्] ऊँटों का समुदाय ।

औष्ठ्य—(वि०) [ओष्ठ+यत्, ततः स्वार्थे अण्] ओंठ सम्बन्धी ।—**वर्ण**–(पुं०) ओंठ से उच्चारित होने वाले वर्ण अर्थात् प, फ, ब, भ, म ।

औष्ण्य—(न०) [उष्ण+अण्] गरमी, ताप, उष्णता ।

औष्ण्य, औष्म्य (न०) [उष्ण + ष्यञ्] [उष्मन् + ष्यञ्] दे० 'औष्ण्य' ।

क

क—संस्कृत अथवा नागरी वर्णमाला का प्रथम व्यञ्जन। इसका उच्चारणस्थान कण्ठ है। इसको स्पर्शवर्ण भी कहते हैं । ख, ग, घ, ङ इसके सवर्ण हैं । (पुं०) [√कच्+ड]ब्रह्म । विष्णु । कामदेव । अग्नि । पवन । यम । सूर्य । जीव । राजा । गाँठ या जोड़ । मोर, मयूर । पक्षियों का राजा । पक्षी । मन । शरीर । काल, समय । बादल, मेघ । शब्द, स्वर । बाल, केश । (न०) [√कै+ड] प्रसन्नता, हर्ष । जल । 'केशवं पतितं दृष्ट्वा पाण्डवाः हर्षनिर्भराः' । सिर ।

कंस—(पुं०) (न०) [√कम्+स] जल पीने का पात्र, गिलास । कटोरा । काँसा । परिमाण विशेष, जिसे आढ़क कहते हैं । (पुं०) उग्रसेन के पुत्र कंस का नाम। यह मथुरा का राजा था और बड़ा अत्याचारी था। इसे श्रीकृष्ण ने मथुरा ही में मारा था।—**अरि** (**कंसारि**),—**अराति** (**कंसाराति**) —**कृष्, –जित्, –द्विष्, –हन्**(वि०) कंस का मारने वाला, अर्थात् श्रीकृष्ण भगवान् ।—**अस्थि** (**कंसास्थि**)—(न०) काँसा ।—**कार**–(पुं०) एक वर्णसङ्कर जाति, कसेरा ।—'कंसकारशङ्खकारौ ब्राह्मणात्संबभूवतुः' ।—शब्दकल्पद्रुम ।

कंसक—(न०) [कंस+कन्] काँसा ।

√कक्—भ्वा० आत्म० सक० अक० चाहना, अभिलाषा करना । घमंड करना । चंचल होना । ककते, ककिष्यते, अककिष्ट ।

ककन्द—(न०) [√कक्+अन्दच्] सोना ।

ककुञ्जल—(पुं०) [कं जलं कूजयति याचते, क√कूज्+अलच् पृषो० नुम् ह्रस्वश्च] चातक पक्षी ।

ककुद्—(स्त्री०) [कं सुखं कौति सूचयति, क √कु+क्विप्, तुक्, तस्य दः] चोटी, शिखर । मुख्य, प्रधान । बैल के कंधे पर का डिल्ला । सींग । राजकीय चिह्न (जैसे—छत्र, चामर आदि); 'नृपतिककुदं दत्त्वा यूने सितातपवारणम् र० ३.७० ।—**स्थ** (**ककुत्स्थ**) —(पुं०)राजा पुरञ्जय की उपाधि, सूर्यवंशी राजा विशेष । यह इक्ष्वाकु के वंश में उत्पन्न हुए थे ।

ककुद—(पुं०, न०) [कस्य देहस्य सुखस्य वा कुं भूमिं ददाति, √दा+क] दे० 'ककुद्' ।

ककुद्मत्—(वि०) [ककुद्+मतुप्] चोटी या डिल्ले वाला ।—(पुं०) बैल । पर्वत । ऋषभ नामक औषधि ।

ककुद्मती—(स्त्री०) [ककुद्मत्+ङीप्]नितम्ब, चूतड़ । एक छंद ।

ककुद्मिन्—(वि०) [ककुद्+मिनि] दे० 'ककुद्मत्' । बैल । पहाड़ । रैवतक राजा का नाम । विष्णु ।

ककुद्मत्—(पुं०) [ककुद्+मतुप्–वत्व] डिल्ले वाला बैल या भैंसा ।

ककुन्दर—(न०) [कस्य शरीरस्य कुम् अव-यव विशेषं दृणाति, कु√दृ+खच्, मुम्] जघन कूप, नितम्बों का गड्ढा ।

ककुभ्—(स्त्री०) [क√स्कुभ्+क्विप्] दिशा । कान्ति । सौन्दर्य । चम्पा के फूलों की माला । धर्मशास्त्र । चोटी, शिखर ।

ककुभ—(पुं०) [कस्य वायोः कुः स्थानं भाति यस्मात्, क–कु√भा+क (पृषो०); वा कं वातं स्कुभ्नाति विस्तारयति, क√स्कुभ्+क] वीणा की झुकी हुई लकड़ी । (न०) कुटज वृक्ष का फूल ।

√कक्क– भ्वा० पर० अक० हँसना । कक्कति, कक्किष्यति, अकक्कीत् ।

कक्कुल—(पुं०) [√कक्कु+उलच्] बकुल वृक्ष, मौलसिरी का पेड़ ।

कक्कोल—(पुं०),—**कक्कोली**— (स्त्री०) [√कक् +क्विप्√ कुल्+ण; कक् वासो कोलस्येति कर्म० स०] [कक्कोल+ङीष्] शीतलचीनी, गन्धद्रव्य, वनकपूर ।

√कक्ख्—भ्वा० पर० अक० हँसना । कक्खति, कक्खिष्यति, अकक्खीत् ।

कक्खट—(वि०) [√कक्ख्+अटन्] सख्त, कड़ा । हँसने वाला ।

कक्खटी—(स्त्री०) [कक्खट+ङीष्] खड़िया मिट्टी ।

कक्ष—(पुं०) [√कष्+स] छिपने की जगह । छोर उस वस्त्र का जो सब वस्त्रों के नीचे पहिना जाता है या धोती का छोर । लता या बेल । घास या सूखी घास; 'यतस्तु कक्षस्तत एव वह्निः' र० ७.५५ । सूखे वृक्षों का वन । बगल, काँख । राजा का अन्तःपुर । जंगल का भीतरी भाग । भीत । भैंसा । फाटक । दलदल वाली जमीन । (न०) तारा । पाप । —**अग्नि** (**कक्षाग्नि**)—(पुं०) दावानल । —**अन्तर** (**कक्षान्तर**)–(न०) भीतर का या निज का कमरा ।—**अवेक्षक** (**कक्षा-वेक्षक**–(पुं०) जनानी ड्योढ़ी का दरोगा । राजकीय उद्यान का निरीक्षक । द्वारपाल । कवि । लम्पट । खिलाड़ी । अभिनयपात्र । प्रेमी ।—**धर**–(न०) कंधे का जोड़ ।—**प**–(पुं०) कछुआ ।—**पट**–(पुं०) लँगोट । —**पुट**–(पुं०) काँख, बगल ।—**शाय**–**शायु**–(पुं०) कुत्ता ।

कक्षा—(स्त्री०) [कक्ष+टाप्] कंछोरी । हाथी बाँधने की जंजीर या रस्सी । कमरबंद, इजारबंद । चहारदीवारी या दीवाल । कमर, मध्यभाग । आँगन, सहन । अहाता । घर के भीतर का कमरा या कोठा । अन्तःपुर । सादृश्य । उत्तरीय वस्त्र, दुपट्टा । आपत्ति, एतराज । प्रतिद्वन्द्विता, होड़ । काँसोटा (कमर-में बाँधने का वस्त्र विशेष)। पटका, कमरबंद । पहुँचा ।

कक्ष्या—(स्त्री०)[कक्ष+यत्–टाप्] हाथी या घोड़े का जेवरबन्द । स्त्री का कमरबंद या नारा । उत्तरीय वस्त्र, दुपट्टा । अंगे आदि की गोट, मगजी । अन्तःपुर का कमरा । दीवाल, अहाता । सादृश्य ।

√कख्—भ्वा० पर० अक० हँसना । कखति, कखिष्यति, अकखीत् ।

कख्या—(स्त्री०) [√कख्+यत् —टाप्] अहाता, घेरा, बड़े भवन का खण्ड ।

√कग्—भ्वा० पर० सक० छिपाना । कगति, कगिष्यति, अकगीत् ।

√कङ्क्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । कङ्कते, कङ्किष्यते, अकङ्किष्ट ।

कङ्क—(पुं०) [√कङ्क्+अच्] एक मांसा-हारी पक्षी, जिसके पंख बाण में लगाये जाते थे । बगले का एक भेद । आमों की जातियाँ । यमराज का नाम । क्षत्रिय । बनावटी ब्राह्मण । विराट के यहाँ अज्ञातवास की अवधि में युधिष्ठिर ने अपना नाम कङ्क ही रखा था ।—**पत्र**–(वि०) कंक पक्षी के पंखों से सम्पन्न । (पुं०) तीर, बाण ।—**पत्रिन्**–(पुं०) बाण ।—**मुख**–(पुं०) एक तरह का

चिमटा जिससे चुभा हुआ काँटा निकाला जा सकता है ।—वाय-(पुं०) कुत्ता ।

कङ्कट, कङ्कटक—(पुं०) [√कङ्क्+अटन्] [कङ्कट+कन्] कवच, बख्तर, अङ्कुश ।

कङ्कण—(पुं०, न०) [कम् इति कणति, कम् √कण्+अच्] कलाई में पहनने का एक आभूषण, कंगन । कड़ा । विवाहसूत्र, कौतुक-सूत्र । साधारणतः कोई भी आभूषण । चोटी, कलंगी । (पुं०) पानी की फुहार, यथा—नितम्बे हारालो नयनयुगले कङ्कणभरम्' ।—उद्भट ।

कङ्कणी, कङ्कणीका—(स्त्री०) [कङ्क√ कण्+अच्—ङीप्] [√कण्+पक (बुक्)—ईकन्, कङ्कण आदेश] घुँघरू । बजने वाला आभूषण ।

कङ्कत—(पुं०, न०) **कङ्कतिका—कङ्कती,**—(स्त्री०) [√कङ्क्+अतच्] कंघी, बाल झाड़ने की कंघी या कंघा ।

कङ्कर—(वि०) [कं सुखं किरति क्षिपति, कम् √कृ+अच्] कुत्सित, खराब । (न०) [कं जलं कीर्यते अत्र, कम्√कृ+अप्] मट्ठा । दस करोड़ की संख्या ।

कङ्काल—(पुं०, न०) [कं शिरं कालयति क्षिपति कम्√कल+णिच्+अच्] ठठरी, हड्डियों का ढाँचा, अस्थिपञ्जर ।—**मालिन्**-(पुं०) शिव का नाम ।—**शेष**-(वि०) जिसके शरीर में केवल हड्डियाँ ही रह गयी हों ।

कङ्कालय-(पुं०)[कङ्काल√या+क] शरीर ।

कङ्केल्ल, कङ्केल्लि-(पुं०) [√कङ्क्+एल्ल] [कङ्क्+एलि, पृषो०] अशोक वृक्ष ।

कङ्कोली—(स्त्री०) [√कङ्क्+ओलच् (बा०)—ङीप्] दे० 'कक्कोली' ।

कङ्गल—(पुं०) [कङ्ग√ला+क] हाथ ।

√कच्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना, चिल्लाना, शोर मचाना । कचति, कचिष्यति, अकचीत्—अकाचीत् । भ्वा० आत्म० सक० बाँधना, नत्थी करना । चमकाना । कचते, कचिष्यते, अकचिष्ट ।

कच—(पुं०) [√कच्+अच्] केश (विशेष कर सिर के) । सूखा घाव । बंधन । वस्त्र की गोट या संजाफ । बादल । बृहस्पति के पुत्र का नाम ।—**आचित (कचाचित)**-(वि०) खुले या बिखरे बालों वाला ।—**ग्रह**-(पुं०) बाल पकड़नेवाला ।—**माल**-(पुं०) धूम, धुआँ ।

कचङ्गन—(न०) [कचस्य जनरवस्य अङ्गनम् ष० त०, शक० पररूप] वह मण्डी जहाँ बिकने के लिये आये हुए माल पर कोई कर वसूल न किया जाय ।

कचङ्गल—(पुं०) [कच्यते रुध्यते वेलया, √कच्+अङ्गलच्] समुद्र ।

कचा—(स्त्री०) [कच्यते रुध्यते शृङ्खलादिभिः, √कच्+अच्—टाप्] हथिनी । शोभा । छड़ी ।

कचाकचि—(अव्य०) [कचेषु कचेषु गृहीत्वा प्रवृत्तं युद्धम् ब स०, इच् पूर्वपददीर्घ] एक दूसरे के बाल पकड़ कर खींचना और लड़ना ।

कचाकु—(वि०) [कच√अक्+उण्] दुष्ट । असह्य । दुष्प्राप्य । (पुं०) सर्प ।

कचाटुर—(पुं०) [कचवत् मेघ इव अटति शून्ये भ्रमति, कच√अट्+उरच्] जल-कुक्कुट ।

कच्चर—(वि०) [कुत्सितं चरति, कु√चर्+अच्] बुरा । मैला । दुष्ट, नीच ।

कच्चित्—(अव्य०) [√कच्+चिप्,√चि क्विप्, पृषो० मस्य दत्वम्; कच्च चिच्च इयोः समाहार द्व० स०] प्रश्न; 'कच्चिन्मृगाणा-मनघा प्रसूतिः' र० ५.७ । हर्ष, और मङ्गल व्यञ्जक अव्यय विशेष ।

कच्छ—(पुं० न०) [केन जलेन छ्यति दीप्यते छाद्यते वा, क√छो+क] किनारे की जमीन, कछार । दलदल । गोट, मगजी । नाव का एक हिस्सा । कछुए का शरीराङ्ग विशेष ।

—अन्त (कच्छान्त)–(पुं०) किसी नदी या झील का तट।**—प**–(पुं०) कछुआ।**—पी**–(स्त्री०) कछुवी। वीणा विशेष।**—भू**–(स्त्री०) दलदल।

कच्छटिका, कच्छाटिका, कच्छाटी—(स्त्री०) [कच्छ√घट्+अच्+कन्, इत्व शक० पररूप; पररूपाभावे 'कच्छाटिका', ङीपि कृते 'कच्छाटी'] अंगा की चुन्नट, धोती की लाँग।

कच्छा—(स्त्री०) [कच√छद्+णिच्+ड–टाप्] झींगुर, झिल्ली।

कच्छु, कच्छू–(स्त्री०) [√कष्+ऊ, छ आदेश ह्रस्व] [√कष्+ऊ, छ आदेश] खाज, खुजली।

कच्छुर—(वि०) [कच्छु+र, ह्रस्व] जिसे खुजली की बीमारी हो। [कु√छुर्+क, कदादेश] लंपट, व्यभिचारी।

कज्जल—(न०) [कु कुत्सितं जलं दूरी भवति अस्मात् ब० स०, कदादेश] काजल। सुर्मा। नीलकमल। [कु√जल्+णिच्+अच, ह्रस्व कदादेश] बादल। कामरूप के अंतर्गत एक पर्वत।**—ध्वज**–(पुं०) दीपक।**—रोचक**–(पुं०, न०) दीवट, दीपाधार।

√कञ्च्—भ्वा० आत्म० सक० बाँधना। चमकाना। कञ्चते, कञ्चिष्यते, अकञ्चिष्ट।

कञ्चार—(पुं०) [कम्√चर्+णिच्+अच्] सूर्य। मदार का पौधा।

कञ्चुक—(पुं०) [√कञ्च्+उकन्] कवच। सर्पचर्म, केंचुली। पोशाक, परिच्छद। चुस्त पोशाक। अंगिया, चोली। भूसी।

कञ्चुकालु—(पुं०) [कञ्चुक+आलुच्] सर्प, साँप।

कञ्चुकित—(वि०) [कञ्चुक+इतच्] कवच धारण किये हुए। पोशाक पहिने हुए।

कञ्चुकिन्—(वि०) [कञ्चुक+इनि] कवचधारी। (पुं०) जनानी ड्योढ़ी का रक्षवाला, अंतःपुराध्यक्ष। लम्पट, व्यभिचारी। सर्प। द्वारपाल। यव, जौ।

कञ्चुलिका, कञ्चुली–(स्त्री०) [√कञ्च्+उलच्–ङीप्+कन्, ह्रस्व, टाप्] [√कञ्च्+उलच्–ङीप्] चोली, अँगिया।

कञ्ज—(पुं०) [कम्√जन्+ड] बाल। ब्रह्मा का नाम। (न०) कमल। अमृत।**—नाभ**–(पुं०) विष्णु।

कञ्जक—(पुं०), **कञ्जकी**—(स्त्री०) [√कञ्ज: केश इव कायति कञ्ज√कै+क] [कञ्जक+ङीप्] मैना। कोयल।

कञ्जन—(पुं०) [कम्√जन्+अच्] कामदेव। मैना पक्षी।

कञ्जर, कञ्जार–(पुं०) [कम्√जृ+अच्] [कम्√जृ+अण्] सूर्य। हाथी। उदर, पेट। ब्रह्मा की उपाधि। मयूर। अगस्त्य मुनि।

कञ्जल—(पुं०) [कञ्जते पठितुं शक्नोति, √कञ्ज्+कलच्] मदन पक्षी, मैना।

√कट्—भ्वा० पर० सक० जाना। ढकना। (अक०) बरसना। कटति, कटिष्यति, अकटीत्। (जाने के अर्थ में) अकाटीत्।

कट—(पुं०) [√कट्+अच्] चटाई। कूल्हा। कूल्हा और कमर। हाथी की कनपटी; 'कण्डूयमानेन कटं कदाचित्' र० २.३७। घास विशेष। शव, लाश। शव-वाहन-शिविका। समाधि, मण्डप। पासा फेंकने का विशेष प्रकार। आधिक्य। तीर। रीति। श्मशान।**—अक्ष** (कटाक्ष)–(पुं०) तिरछी निगाह। आक्षेप।**—उदक** (कटोदक)–(न०) तर्पण का जल। हाथी का मद।**—कार**–(पुं०) वैश्य पिता और शूद्रा माता से उत्पन्न एक वर्णसङ्कर जाति। [शूद्रायां वैश्यतश्चौर्यात् कटकार इति स्मृतः—उशना।] (वि०) चटाई बनाने वाला।**—कोल**–(पुं०) उगालदान, पीकदान।**—खादक**–(पुं०)

स्यार, गीदड़ । काक । काँच का पात्र ।—घोष–(पुं०) गड़रियों का पुरवा । —पूतन–(पुं०)— पूतना–(स्त्री०) एक प्रकार के प्रेतात्मा ।— प्रू–(पुं०) शिव । क्षुद्र भूत या पिशाच । कीट, कीड़ा ।—प्रोथ–(पुं० न०) चूतड़, नितंब ।—मालिनी–(स्त्री०) मदिरा, शराब ।

कटक—(पुं०, न०) [√कट्+वुन्] पहुँची, कड़ा । मेखला, कमरबन्द । डोरी । जंजीर की कड़ी । चढ़ाई । सेंधा नमक । पर्वतपार्श्व । उपत्यका । सेना । राजधानी । घर, मकान । चक्र, पहिया । सोना ।

कटकिन्—(पुं०) पर्वत, पहाड़ ।

कटङ्कट—(पुं०) [कट√कट+अच् (बा०), मुम्] आग । सोना । गणेश । शिव । चित्रक वृक्ष ।

कटन—(न०) [कट√घन्+घञ्] मकान की छत, खपरैल या छप्पर ।

कटम्ब—(पुं०) [√कट्+अम्बच्] एक संगीत-वाद्य । बाण ।

कटाह—(पुं०) [कट–आ√हन् + ड] कड़ाह । कूप । कछुए की पीठ का कड़ा आवरण । सूप । टूटे हुए घड़े का टुकड़ा । भैंस का बच्चा जिसे सींग निकल रहे हों । राशि, ढेर । एक द्वीप । टीला, एक नरक ।

कटि, कटी—(स्त्री०) [कट+इन्] [कटि +ङीष्] कमर । नितम्ब । हाथी का गण्डस्थल ।—तट–(न०) कटिदेश, कमर । चूतड़ ।—त्र–(न०) धोती । कमरबन्द ।—प्रोथ–(पुं०) चूतड़ ।—बन्ध–(पुं०) कमरबंद । सरदी-गरमी की कमी-बेशी के विचार से किये गये पृथ्वी के विषुवत् रेखा के समानांतर पाँच विभागों में से एक ।—मालिका –(स्त्री०) स्त्रियों का इजारबन्द, नारा ।—रोहक–(पुं०) पीलवान ।—शीर्षक–(पुं०) कूल्हा ।—शृङ्खला–(स्त्री०) करधनी ।—सूत्र–(न०) कमरबन्द, इजारबन्द ।

कटिका—(स्त्री०) [कटि + कन्–टाप्] कूल्हा ।

कटीर—(पुं०, न०) [√कट्+ईरन्] गुफा । कूल्हा । कटि ।

कटीरक—(न०) [कटीर+कन्] दे० 'कटीर' ।

कटु—(वि०) [√कट्+उ] कड़ुआ, चरपरा । अप्रिय । बुरा लगने वाला । सुगंधित । दुर्गंधित । उग्र, तीक्ष्ण । उष्ण, गरम । (पुं०) कड़ुआपन । [स्त्री०—**कटु, कट्वी**] षट्रसों में से एक (छः प्रकार के रस ये हैं—मधुर, कटु, अम्ल, तिक्त, कषाय और लवण ।) (न०) अनुचित कर्म । धिक्कार, फटकार ।—कीट, कीटक–(पुं०) डाँस, मच्छर ।—क्वाण–(पुं०) टिट्टिभ पक्षी ।—ग्रन्थि–(न०) सोंठ ।—निष्पाव–(पुं०) वह अनाज जो जल की बाढ़ में डूबा न हो ।—मोद–(न०) ज्वरादिनाशक एक सुगंधित द्रव्य ।—रव–(पुं०) मेढ़क ।—विपाक–(वि०) पचने के बाद जिसका स्वाद कड़ुआ हो जाय । अम्लकारक ।—स्नेह–(पुं०) सफेद सरसों ।

कटुक—(वि०) [कटु+कन्] तीक्ष्ण, चरपरा । प्रचण्ड, तेज । अप्रीतिकर, अप्रिय । (पुं०) कड़ुआपन । परवल । कुटज वृक्ष । अर्क वृक्ष । राजसर्षप । अदरक । लहसुन ।—त्रय–(न०) मिर्च, सोंठ और पीपल ।—फल–(न०) कक्कोल, सीतलचीनी ।

कटुकता—(स्त्री०) [कटुक +तल्–टाप्] कड़ुआपन । अशिष्ट व्यवहार, अशिष्टता ।

कटुर—(न०) [√कट+उरन्] जल मिश्रित छाछ या माठा ।

कटोर—(न०) [√कट्+ओलच्, रस्य लत्वम्] मृण्मयपात्र, मिट्टी का बर्तन ।

कटोल—(पुं०) [√कट्+ओलच्] चरपरा स्वाद । निम्नवर्ण का पुरुष जैसे चाण्डाल ।

कट्टार—(पुं०) कटारी ।

√कठ्—भ्वा० पर० अक० कष्ट में रहना। कठति, कठिष्यति, अकाठीत्–अकठीत्।

कठ–(पुं०) [√कठ्+अच्] एक ऋषि का नाम, यह वैशम्पायन के शिष्य थे, यजुर्वेद की एक शाखा इन्हीं के नाम से प्रसिद्ध है। [कठ+अण्–लुक्] कठ-शाखा के पढ़ने वाले या जानने वाले।—**धूर्त**–(पुं०) कठशाखा में निष्णात ब्राह्मण।—**श्रोत्रिय**–(पुं०) यजुर्वेद की कठशाखा में पारङ्गत ब्राह्मण।

कठमर्द—(पुं०) [कठं कष्टजीवनं मृद्नाति, कठ√मृद्+अण्] शिव का नाम।

कठर—(वि०) [√कठ+अरन्] कड़ा, सख्त।

कठिका—(स्त्री०) [√कठ्+वुन् (बा०)] खड़िया।

कठिन—(वि०) [√कठ्+इनच्] कड़ा, सख्त। निष्ठुर-हृदय, संगदिल। नम्र न होने वाला। उग्र, प्रचण्ड। पीड़ाकारक। (पुं०) झाड़ी।—**पृष्ठ, पृष्ठक**–(पुं०) कछुवा।

कठिना—(स्त्री०) [कठिन+टाप्] मिश्री या बूरे की बनी मिठाई। मिट्टी की हँड़िया।

कठिनिका, कठिनी–(स्त्री०) [कठिन+ङीष्+कन्–टाप्, ह्रस्व] [कठिन+ङीष्] खड़िया मिट्टी। छगुनिया, कनिष्ठिका।

कठोर—(वि०) [√कठ+ओरन्] कड़ा, ठोस। निर्दयी, कठोर-हृदय; 'अपि कठोरयशः किल ते प्रियं' उत्त० ३.२७। पैना, तेज। पूरा, सम्पूर्ण। (आल०) पक्का। संस्कारित, साफ किया हुआ।

√कड्—भ्वा०, तु० पर० अक० प्रसन्न होना। कडति, कडिष्यति, अकाडीत्।

कड—(वि०) [√कड्+अच्] गूंगा। रूखा। अज्ञान, मूर्ख।

कडङ्कर, कडङ्गर—(पुं०) [कड√कृ वा √गृ+खच्, मुम्] तृण। भूसा। मूंग आदि के डंठल, तिनका।

कडङ्करीय, कडङ्गरीय–(वि०) [कडङ्कर, कडङ्गर+छ–ईय] तृण खाने वाला (गौ, भैंस आदि)।

कडत्र—(न०) [गड्यते सिच्यते जलादिकम् अत्र, √गड्+अत्रन्, गकारस्य ककारः] पात्र विशेष, एक प्रकार का बर्तन। नितम्ब। पत्नी।

कडन्दिका—(स्त्री०) [=कलन्दिका, डलयोरभेदः] विज्ञान। सर्वविद्या।

कडम्ब, कलम्ब–(पुं०) [√कड+अम्बच्] [√कड+अम्बच्, डस्य लः] बाण। कदंब। साग आदि का डंठल।

कडार—(वि०) [√गड्+आरन्, कडादेश] पिङ्गल वर्ण या भूरे रंग का। साँवला। क्रोधी। अहंकारी, घमंडी। (पुं०) साँवला या भूरा रंग। नौकर।

कडितुल—(पुं०) [कट्यां तुला तोलनं ग्रहणं यस्य, पृषो० टस्य डः] तलवार, खाँड़ा।

√कड्ड्—भ्वा० पर० अक० कठोर होना। कड्डति, कड्डिष्यति, अकड्डीत्।

√कण्—भ्वा० पर० अक० कराहना, सिसकना। छोटा होना। (सक०) जाना। कणति, कणिष्यति, अकाणीत्–अकणीत्। चु० पर० अक० आँख मूंदना। काणयति, काणयिष्यति, अचीकणत्–अचकाणत्।

कण—(पुं०) [√कण्+अच्] अनाज का एक दाना। चावल आदि का बहुत छोटा टुकड़ा। भिक्षा। रत्ती भर गर्द या धूल। पानी का बूँद या फुहार; 'कणवाही मालिनीतरङ्गाणाम्' श० ३.५। अनाज की बाल। आग का अङ्गारा।—**अद (कणाद)**,—**भक्ष**,—**भुज्**–(पुं०) अणुवाद अर्थात् वैशेषिक दर्शन के आविर्भावकर्त्ता का नाम।—**जीरक**–(न०) सफेद जीरा।—**भक्षक**–(पुं०) कणाद। एक पक्षी।—**लाभ**–(पुं०) भँवर।

कणप—(पुं०) [कण√पा+क] भाला या साँग; 'चापचक्रकणपकर्पणम्' दश०।

कणशः—(अव्य०) [कण+शस्] थोड़ा-थोड़ा, बूंद-बूंद, कण-कण ।

कणिक—(पुं०) [कण+कन्, इत्व] अनाज का दाना । अणु । अनाज की बाल । भुने हुए गेहुँओं का भोज्य-पदार्थ । शत्रु ।

कणिका—(स्त्री०) [कण+ठन्] अणु, छोटे से छोटा पदार्थ । जलबिन्दु । एक प्रकार का चावल । जीरा । अग्निमथ वृक्ष ।

कणिश—(पुं०, न०) [कण+इनि, कणिन् √शी+ड] अनाज की बाल ।

कणीक—(वि०) [√कण्+ईकन्] छोटा, नन्हा ।

कणे—(अव्य०) [√कण्+ए] कामना-पूर्ति-व्यञ्जक अव्यय ।

कणेर—(पुं०) [√कण्+एर] कर्णिकार या कनियार का पेड़ ।

कणेरा—(स्त्री०) [कणेर+टाप्] हथिनी । रंडी, वेश्या ।

कणेरु—(पुं०) [√कण्+एरु] कर्णिकार वृक्ष । (स्त्री०) दे० 'कणेरा' ।

कण्टक—(न०) [√कण्ट्+ण्वुल्] काँटा । डंक । (आलं०) शासन या राज्य का कण्टक रूप व्यक्ति । व्याधि । रोमाञ्च । नख । मन को दुखाने वाला भाषण।(पुं०)बाँस । कारखाना । —**अशन** (**कण्टकाशन**),—**भक्षक**, —**भुज्**–(पुं०) ऊँट ।—**उद्धरण** (**कण्टकोद्धरण**)–(न०) काँटा निकालना । (आल०)अप्रिय या उत्पातकारी व्यक्ति या वस्तु को दूर करना ।— **द्रुम**–(पुं०) काँटा, झाड़ी । शाल्मली वृक्ष ।—**मर्दन**–(न०) काँटों को कुचलना । उपद्रवों को शान्त करना ।—**विशोधन**–(न०) काँटा निकालना, दूर करना । विघ्न-बाधाओं को दूर करना । उपद्रवियों का दमन; 'कण्टकोद्धरणे नित्य-मातिष्ठेद्यत्नमुत्तमम्' मनु०।—**श्रेणी**–(स्त्री०) भटकटैया । साही ।

कण्टकार—(पुं०) [कण्टक√कृ+अण्] सेमल । एक तरह का बबूल ।

कण्टकारिका, कण्टकारी–(स्त्री०) [कण्टक √कृ+ण्वुल्–टाप्, इत्व] [कण्टकार+ङीप्] भटकटैया । सेमल ।

कण्टकित—(वि०) [कण्टक + इतच्] कँटीला । रोमाञ्चित ।

कण्टकिन्—(वि०)[कण्टक+इनि]कँटीला। दुःखदायी । (पुं०) मछली । काँटेदार पेड़ । खैर, बाँस, बेर या गोखरू का पेड़ ।—**फल**–(पुं०) कटहल का वृक्ष ।

कण्टकिल—(पुं०)[कण्टक+इलच्] कँटीला बाँस ।

√कण्ठ्— भ्वा० आत्म० अक० शोक करना । कण्ठते, कण्ठिष्यते, अकण्ठिष्ट । चु० उभ० अक० शोक करना । कण्ठयति-ते,–कण्ठति-ते ।

कण्ठ—(पुं०, न०) [√कण्+ठ]गला । गर्दन । स्वर, आवाज । पात्र का किनारा या गर्दन । सामीप्य, पड़ोस ।—**आभरण** (**कण्ठाभरण**-(न०) कंठा, पाटिया, तिलरी आदि गले का गहना ।—**कूणिका**–(स्त्री०) वीणा, सारंगी ।—**गत**–(वि०) गले में आया या अटका हुआ ।—**तट**–(पुं०, न०),—**तटी**–(स्त्री०) गर्दन की अगल-बगल का स्थान । —**नीडक**–(पुं०) चील ।—**नीलक**–(पुं०) मशाल, लुक्का, पलीता ।—**पाशक**– (पुं०) हाथी की गर्दन का रस्सा ।—**भूषा**–(स्त्री०) गले का जेवर, इसका संस्कृत पर्याय ग्रैवेय, ग्रैव, रुक्क और निष्क है ।—**मणि**-(पुं०) रत्न जो गले में पहिना जाय ।—**माला**–(स्त्री०) गले में पहनी जाने वाली माला । गले का एक रोग जिसमें लगातार बहुत से फोड़े निकलते हैं ।—**लता**–(स्त्री०) पट्टा । बागडोर । —**शोष**–(पुं०)गला सूखना ।—**स्थ**-(वि०) गले वाला । गले से उच्चारण किया जाने वाला ।

कण्ठतः—(अव्य०) [कण्ठ+तस्] गले से, स्पष्टतः, साफ-साफ।

कण्ठदघ्न—(वि०) [कण्ठ+दघ्नच्] गरदन तक।

कण्ठाल—(पु०) [√कण्ठ्+आलच्] नाव। बेलचा, कुदाली। युद्ध। ऊँट।

कण्ठाला—(स्त्री०) [कण्ठाल+टाप्] बर्तन जिसमें दही या दूध बिलोया जाय।

कण्ठिका—(स्त्री०) [कण्ठ+ठन्—टाप्] एकलरा हार या गुंज।

कण्ठी—(स्त्री०) [कण्ठ+ङीष्] गर्दन, गला। गुंज, गोफ। घोड़े की गर्दन में बाँधने की रस्सी।—**रव**–(पु०) शेर, सिंह। मदमाता हाथी। कबूतर। स्पष्ट घोषणा या उल्लेख।

कण्ठील—(पु०) [√कण्ठ्+ईलच्] ऊँट, उष्ट्र।

कण्ठेकाल—(पु०) [कण्ठे कालः विषपानजो नीलिमा यस्य, अलुक् स०] शिव जी का नाम।

कण्ठ्य—(वि०) [कण्ठ+यत्] गले से उत्पन्न। जिसका उच्चारण गले से हो।—**वर्ण**–(पु०) कण्ठ से उच्चरित होने वाले अक्षर। यथा अ, आ, क्, ख्, ग्, घ्, ङ और ह्।—**स्वर**–(पु०) अ और आ अक्षर।

√कण्ड्—भ्वा० आत्म० अक० गर्व करना। कण्डते, कण्डिष्यते, अकण्डिष्ट। (पर०) कण्डति, कण्डिष्यति, अकण्डीत्। चु० पर० सक० भेदन करना। कण्डयति — कण्डति।

कण्डन—(न०) [√कण्ड+ल्युट्] भूसी से अनाज को अलगाने की क्रिया। फटकना, पछोरना। भूसी।

कण्डनी—(स्त्री०) [√कण्ड्+ल्युट्—ङीप्] ओखली। मूसल।

कण्डरा—(स्त्री०) [√कण्ड+अरन्] नस।

कण्डिका—(स्त्री०) [√कण्ड्+ण्वुल्–टाप्] छोटे से छोटा विभाग। वेद का एकदेश। अध्याय, प्रपाठक प्रभृति के अंतर्गत ब्राह्मण-वाक्यसमूह को कण्डिका कहते हैं।

कण्डु—(पुं०, स्त्री०) [√कण्ड्+कु] खुजलाहट, खुजली, खाज।

√कण्डू—कण्ड्वा० उभ० खुजलाना, धीरे-धीरे मलना। कण्डूयति-ते।

कण्डू—(स्त्री०) [√कण्डू+यक्+क्विप्, अलोप, यलोप] खुजली, खाज; 'कपोलकण्डूः करिभिर्विनेतुं' कु० १.९।

कण्डूति—(स्त्री०) [√कण्डू+यक्+क्तिन्, अलोप, यलोप] खाज, खुजली।

कण्डूयन—(न०) [√कण्डू+यक्+ल्युट्] मलना, खुजलाना। (वि०) [√कण्डू+यक्+ल्यु] खुजली पैदा करने वाला।

कण्डूयनक—(वि०) [कण्डूयन+कन्] गुदगुदाने वाला, सुरसुरी पैदा करने वाला।

कण्डूया—(स्त्री०) [√कण्डू+यक्+अ–टाप्] खाज, खुजली।

कण्डूरा—(स्त्री०)[कण्डू√रा+क] केवाँच।

कण्डूल—(वि०) [कण्डू+लच्] खाज पैदा करने वाला। (पु०) ओल, जमींकंद आदि।

कण्डोल—(पु०) [√कण्ड्+ ओलच्] डलिया, टोकरी।

कण्डोष—(पु०) भाँझा, कीड़ा, कीट।

कण्व—(पु०) [√कण्+वन्] एक ऋषि का नाम जिन्होंने शकुन्तला का पालन किया था।—**दुहितृ**,—**सुता**–(स्त्री०) शकुन्तला।

कत, कतक—(पु०) [क√ तन् + ड], [√तक्+घ, कस्य जलस्य तकः हासः प्रकाशो वा अस्मात् ब० स०]निर्मली का वृक्ष जिसके फल से जल साफ किया जाता है। (न०) निर्मली वृक्ष का फल।

कतम—(सर्वनाम वि०) [√किम्+डतमच्] बहुतों में से कौन, कौनसा।

कतर—(सर्वनाम वि०) [किम्+डतरच्] दो में से कौन ।

कतवाल—(पुं०) [कस्य जलस्य तमाय शोषणाय अलति पर्याप्नोति, √ अल्+अच्] अग्नि, आग।

कति—(सर्वनाम वि०) [का संख्या परिमाणं येषाम्, किम्+डति] कितने । कुछ ।

कतिकृत्वः—(अव्य०) [कति+कृत्वसुच्] कितने बार, कितने दफा ।

कतिधा—(अव्य०) [कति+धा] कितने बार । कितने स्थानों पर । कितने भागों में।

कतिपय—(वि०) [कति+अय, पुक्] कुछ, थोड़े-से, कुछेक; 'कतिपयकुसुमोद्गमः कदम्बः' उत्त० ३.२० ।

कतिविध—(वि०) [कति विधा प्रकारोऽस्य ब० स०] कितने प्रकार के ।

कतिशस्—(अव्य०) [कति+शस्] कितना-कितना । एक दफे में कितना ।

√कत्थ्—भ्वा० आत्म० अक० सक० डींग हाँकना, शेखी बघारना । प्रशंसा करना । गाली देना । कत्थते, कत्थिष्यते, अकत्थिष्ट ।

कत्थन,–(न०) **कत्थना**—(स्त्री०) [कत्थ्+ल्युट्] [कत्थ+युच्] डींग ।

√कत्र्—चु० पर० अक० शिथिल होना । कत्रति–कत्रयति ।

कत्तवर—(न०) (कत्त√वृ+अप्) कंधा ।

√कथ्—चु० उभ० सक० कहना । वर्णन करना । वार्तालाप करना। निर्देश करना । निरूपण करना। सूचना देना । कथयति-ते, कथयिष्यति-ते, अचीकथत्-त, अचकथत्-त ।

कथक—(वि०) [√कथ्+ण्वुल्] कहने वाला । (पुं०) कथा कहने या पुराण बाँचने का पेशा करने वाला । नाटक की कथा का वर्णन करने वाला पात्र ।

कथन—(न०) [√कथ्+ल्युट्] कहना । वचन । वर्णन । उपन्यास का एक भेद ।

कथङ्कारम्—(अव्य०) [कथम्√कृ+ण्वुल्] किस प्रकार, कैसे ।

कथङ्कथिक—(वि०) [कथम् कथम् इति पृष्टत्वेन अस्ति अस्य, कथङ्कथ+ठन् (बा०)] पूछने वाला । जिज्ञासु ।

कथञ्चन—(अव्य०) [कथम्+चन] किसी प्रकार ।

कथञ्चित्—(अव्य०) [कथम्+चित्] किसी तरह । बड़ी मुश्किल से ।

कथन्ता—(स्त्री०) [कथम्+तल्] जिज्ञासा । पूछताछ ।

कथम्—(अव्य०) कैसे, किस प्रकार, किस तरह से । यह आश्चर्य-व्यञ्जक भी है ।—**प्रमाण**–(वि०) किस नाप का ।—**भूत**–(वि०) किस प्रकार का, कैसा ।—**रूप** (**कथंरूप**)–(वि०) किस सूरत-शकल का ।

कथा—(स्त्री०) [√कथ्+अङ्–टाप्] कहानी, किस्सा । कल्पित कहानी । वृत्तान्त-वर्णन । वार्तालाप, कथोपकथन । आख्यायिका के ढंग का गद्यमय निबन्ध ।—**अनुराग** (**कथानुराग**)–(पुं०) वार्तालाप करने में हर्षित होने वाला पुरुष ।—**अन्तर** (**कथान्तर**)–(न०) दूसरी कहानी । किसी कथा के अंतर्गत दूसरी गौण कथा ।—**आरम्भ** (**कथारम्भ**)-(पुं०) कहानी का प्रारम्भ ।—**उदय** (**कथोदय**)-(पुं०) कहानी का प्रारम्भ ।—**उद्घात** (**कथोद्घात**)–(पुं०) पाँच प्रकार की प्रस्तावनाओं में से दूसरी । किसी कहानी के वर्णन का आरम्भ ।—**उपाख्यान** (**कथोपाख्यान**)–(न०) कथा का वर्णन या निरूपण ।—**छल** (**कथाच्छल**)–(न०) कल्पित कहानी का रूप-रंग । मिथ्यावर्णन ।—**नायक**,—**पुरुष**–(पुं०) किसी कहानी का मुख्य पात्र ।—**पीठ**–(न०) किसी कहानी का प्रारम्भिक भाग ।—**प्रबन्ध**–(पुं०) कहानी, किस्सा ।—**प्रसङ्ग**—(पुं०) वार्तालाप, बातचीत का सिलसिला । विषवैद्य; 'कथाप्रसंगेन जनैरु-

दाहृतात्' कि० १.२४ ।—प्राण–(पुं०) नाटक का पात्र ।—मुख–(न०) कथापीठ, किसी कहानी का आरम्भिक अंश ।—योग–(पुं०) वार्तालाप का सिलसिला ।—वस्तु–(न०) कथा का मूल रूप ।—वार्ता–(स्त्री०) पुराणादि की कथाओं की चर्चा । अनेक प्रकार के प्रसंग । —विपर्यास–(पुं०) किसी कहानी का बदला हुआ ढंग ।—शेष—अवशेष (कथावशेष)–(वि०) जिसका केवल वृतान्त बच रहे अर्थात् मृत । मरा हुआ । (पुं०) कहानी का शेष अंश या बचा हुआ भाग ।

कथानक—(न०) [कथयति अत्र,√कथ्+आनक (बा०)] छोटी कहानी, जैसे—वैताल-पच्चीसी । कहानी का संक्षेप ।

कथित—(वि०) [√कथ्+क्त] कहा हुआ । वर्णित । निरूपित ।(न०)कथन । बातचीत । मदंग की बोली का एक भेद । (पुं०)विष्णु । —पद–(न०) पुनरुक्ति, दोहराव । (यह निबन्ध-रचना में रचना-सम्बन्धी एक दोष माना गया है ।)

√कद्—भ्वा० आत्म० अक० सक० रोना, आँसू बहाना । दुःखी होना । बुलाना । पुकारना । मार डालना । कदते, कदिष्यते, अकदिष्ट ।

कद्—(अव्य०) [समास में 'कु' के स्थान में यह आदेश होता है] यह 'कु' का पर्यायवाची है और बुराई, स्वल्पता, ह्रास, अनुपयोगिता, त्रुटिपूर्णता आदि भावों को प्रकट करता है । **अक्षर (कदक्षर)**–(न०) बुरा अक्षर । बुरी लिखावट ।—**अग्नि (कदग्नि)**–(पुं०)थोड़ी आग ।—**अध्वन् (कदध्वन्)**–(पुं०) बुरा मार्ग ।—**अन्न (कदन्न)**–(न०)मोटा अन्न—साँवा, कोदो आदि । बुरा भोजन ।—**अपत्य (कदपत्य)**–(न०) कपूत, बुरी संतान ।—**अभ्यास (कदभ्यास)**–(पुं०) बुरी आदत या बान, कुटेव ।—**अर्थ (कदर्थ)**–(वि०) निरर्थक, अर्थरहित ।—**अर्थना (कदर्थना)**–(स्त्री०) पीड़ा, अत्याचार ।—**अर्थित (कदर्थित)**–(वि०) तिरस्कृत, घृणित, तुच्छीकृत । अत्याचार-पीड़ित । चिढ़ाया हुआ । तुच्छ, कमीना । बद, दुष्ट ।—**अर्य (कदर्य)**–(पुं०) लोभी, लालची ।—०**भाव (कदर्यभाव)**—लोभ, लालच । कंजूसी । कृपणता ।
—**अश्व (कदश्व)**–(पुं०) दुष्ट घोड़ा ।
—**आकार (कदाकार)**–(वि०) भोंडा, बदशक्ल, अपरूप ।—**आचार (कदाचार)**–(वि०) दुष्ट, बुरे आचरणों वाला ।–(पुं०) बुरा चालचलन ।—**उष्ट्र (कदुष्ट्र)**–(पुं०) बुरा ऊँट ।—**उष्ण (कदुष्ण)**–(वि०) गुनगुना । (न०) गुनगुनापन ।—**रथ (कद्रथ)**–(पुं०) बुरा रथ या गाड़ी ।—**वद (कद्वद)**–(वि०) बुरी बात कहने वाला । अस्पष्ट बोलने वाला अथवा ठीक-ठीक बात न कहने वाला । दुष्ट; 'पीन जातं प्रियापाये कद्वदं हंसकोकिलं' भट्टि० ६.७५ ।

कद—(पुं०) [कं जलं ददाति, क√दा+क] मेघ । (वि०) जलदाता ।

कदक—(न०) [कदः मेघ इव कायति प्रकाशते, कद√कै+क] चँदवा । शामियाना ।

कदन—(न०) नाश, बरबादी । हत्या । युद्ध । पाप ।

कदम्ब, कदम्बक—(पुं०) [√कद् + अम्बच्] [कदम्ब+कन्] इस नाम से ख्यात एक सुंदर पेड़ जिसमें गोल पीले फूल लगते हैं । इसके बारे में कहा जाता है कि जब बादल गरजते हैं, तब इसमें कलियाँ लगती हैं । देवताडक तृण । हलदी । सरसों । दारुहल्दी । अश्व के पाँव का एक रोग । (न०) समूह; 'पृथुकदम्बकदम्बकराजितम्' कि० ५.९ ।—**अनिल**–(पुं०) कदम्ब के पुष्पों की सुवास से सुवासित पवन । वसन्त ऋतु ।—**वायु**–(पुं०) सुवासित पवन ।

कदर—[कं जलं दारयति नाशयति, क√दॄ

+अच्] जमा हुआ दूध, दही। (न०) समारोह। कदम्ब वृक्ष के फूल।

कदल, कदलक—(पुं०) [√कद्+कलन्] [कदल+कन्] केले का पेड़, कदली वृक्ष।

कदली—(स्त्री०) [कदल+ङीष्] केले का पेड़। मृग-विशेष। ध्वजा जो हाथी की पीठ पर लेकर आगे बढ़ाई जाती है। ध्वजा या झंडा।

कदा—(अव्य०) [कस्मिन् काले, किम्+दा] कब, किस समय।

कद्रु—(वि०) [√कद्+रु]भूरा या गेहुँवा। (पुं०) भूरा या गेहुँवा रंग। एक ऋषि। (स्त्री०) दे० 'कद्रू'।

कद्रू—(स्त्री०) [कद्रु+ङीष्] कश्यप ऋषि की पत्नी और नागों की माता। —**पुत्र**,—**सुत**-(पुं०) साँप। सर्प।

√कन्—भ्वा० पर० अक० चमकना। शोभित होना। (सक०) जाना। कनति, कनिष्यति, अकनीत्—अकानीत्।

कनक—(न०) [कनति दीप्यते, √कन्+वुन्] सोना।–(पुं०) पलास वृक्ष। धतूरे का वृक्ष। तिंदुक। —**अंगद** (कनकांगद)–(पुं०) सोने का बाजू। —**अचल** (कनकाचल),—**अद्रि** (कनकाद्रि),—**गिरि**,—**शैल** –(पुं०) सुमेरु पर्वत। —**आलुका** (कनकालुका)–(स्त्री०) सुवर्ण-कलस या सोने का फूलदान। —**आह्वय** (कनकाह्वय)–(पुं०) धतूरे का पौदा।– **कदली**–(स्त्री०)एक तरह का केला। —**कशिपु**–(पुं०)हिरण्यकशिपु नामक दैत्य। —**क्षार**–(पुं०) सुहागा। —**टङ्क**–(पुं०)सोने की कुल्हाड़ी। —**पत्र**–(न०) सोने का बना कान का एक गहना। —**पराग**–(पुं०) सोने की रज या धूल। —**रस**–(पुं०) हरताल। गला हुआ सोना। —**सूत्र**–(न०) सोने की गुंज, आभूषण-विशेष। —**स्थली**–(स्त्री०) सोने की खान।

कनकमय—(वि०) [कनक+मयट्] जो बिलकुल सोने का है।

कनखल—(न०) हरिद्वार के समीप का एक तीर्थ।

कनन—(वि०) [√कन्+युच्] काना, एक आँख का।

कनिष्ठ—(वि०) [अतिशयेन युवा अल्पो वा, युवन् वा अल्प+इष्ठन् ; कनादेश] सब से छोटा। सब से कम। उम्र में सब से छोटा।

कनिष्ठा—(स्त्री०) [कनिष्ठ+टाप्]छगुनिया, हाथ की सब से छोटी उँगली।

कनी—(स्त्री०) [√कन्+अच्–ङीष्] कन्या।

कनीचि—(स्त्री०) [√कन्+ईचि] फूलदार बेल। छकड़ा। गुंजा।

कनीन—(वि०) [√कन्+ईनन्] कमनीय, सुन्दर।

कनीनिका, कनीनी—[कनीन + कन्–टाप्, इत्व] [√कन्+ईन्–ङीष्] छगुनिया, हाथ की सब से छोटी उँगली। आँख की पुतली।

कनीयस्—(त्रि०) [अयम् अनयोः अतिशयेन युवा अल्पो वा, युवन् वा अल्प+ईयसुन् कनादेश] अपेक्षाकृत कम। अपेक्षाकृत छोटा। वय में अपेक्षाकृत छोटा।

कनेरा—(स्त्री०) रण्डी। वेश्या। हथिनी।

कन्तु—(पुं०) [√कम्+तु] काम। हृदय (जो विचार और अनुभव का स्थान है)। खत्ती या खौ जिसमें अनाज भरा जाता है, अन्न-भांडार।

कन्था—(स्त्री०) [√कम्+थन्–टाप्] गुदड़ी, कथरी। —**धारण**–(न०) कथरी पहनना। —**धारिन्**–(पुं०) योगी। भिक्षुक।

√कन्द्—भ्वा० पर० सक० बुलाना। (अक०) रोना। कन्दति, कन्दिष्यति, अकन्दीत्। (आत्म०) (अक०) विकल होना। कन्दते, कन्दिष्यते, अकन्दिष्ट।

कन्द—(पुं०, न०) [√कन्द्+णिच्+अच्] गाँठदार या गूदेदार जड़। सूरन। बादल।

लहसुन । कपूर । योनि का एक रोग । गाँठ । थोक । एक वर्णवृत्त ।—**मूल**–(न०) मूली । **सार**–(न०) इन्द्र का उद्यान । (पुं०) बादल ।

कन्दट—(न०) [√कन्द्+अटन्] सफेद कमल, कुमुदिनी ।

कन्दर—(पुं०, न०) [कम्√दृ+अच्] गुफा । (पुं०) अंकुश, आँकुस ।

कन्दरा—[कन्दर+टाप्]गुफा । घाटी ।—**आकर** (**कन्दराकर**)–(पुं०)पर्वत, पहाड़ ।

कन्दरी—(स्त्री०) [कन्दर+ङीप्] गुफा ।

कन्दर्प—(पुं०) [कं कुत्सितो दर्पो यस्मात् ब० स०] कामदेव । प्रेम ।—**कूप**–(पुं०)कुस या कुशा । योनि, भग ।—**ज्वर**–(पुं०) कामज्वर ।—**दहन**–(पुं०) शिव का नाम ।—**मुषल**,—**मुसल**–(पुं०) पुरुष की जननेन्द्रिय, लिङ्ग ।—**शृङ्खल**–(पुं०) एक रतिबन्ध ।

कन्दल—(पुं०, न०) [√कन्द्+अलच्] अँखुआ, अंकुर । लानत, मलामत, भर्त्सना । गाल अथवा गाल और कनपटी । अपशकुन । मधुर स्वर । केले का वृक्ष । (पुं०) सुवर्ण । युद्ध, लड़ाई । वादानुवाद, बहस । (न०) पुष्प-विशेष; 'विदलकन्दल-कम्पनलालिताः' शि० ६.३० ।

कन्दली—(स्त्री०)[कन्दल+ङीप्] केले का वृक्ष । एक जाति का हिरन । झंडा । कमलगट्टा या कमल का बीज ।—**कुसुम**–(न०) कुकुरमुत्ता ।

कन्दु—(पुं०,स्त्री०) [√स्कन्द्+उ, सलोप] बटलोई, पतीली । तंदूर, चूल्हा ।

कन्दुक—(पुं०, न०) [कम्√दा+डु+कन्] गेंद । गलतकिया । सुपारी । एक वर्णवृत्त ।—**लीला**–(स्त्री०) गेंद का खेल ।

कन्दोट—(पुं०) [√कन्द्+ओटन्] सफेद कमल का फूल । नील कमल ।

कन्धर—(पुं०) [कं शिरो जलं वा धारयति, +अच्] गरदन । बादल ।

कन्धरा—(स्त्री०) [कन्धर+टाप्]गरदन ।

कन्धि—(स्त्री०) [कं जलं शिरो वा धीयते-ऽस्मिन् , कम्√धा+कि]समुद्र । गरदन ।

कन्न—(न०) [√कद्+क्त] पाप । मूर्च्छा, बेहोशी ।

कन्यका—(स्त्री०) [कन्या+कन् , ह्रस्वता] लड़की । दस वर्ष की लड़की की संज्ञा । साहित्यालंकार में कई प्रकार की नायिकाओं में से एक, अविवाहिता लड़की, जो किसी पद्यमय काव्य की प्रधान नायिका हो । कन्याराशि ।—**छल**–(पुं०) बहकावा, झाँसा, फुसलाहट ।—**जन**–(पुं०) कुँवारी कन्या । अविवाहिता लड़की ।—**जात**–(पुं०)अविवाहिता लड़की से उत्पन्न पुत्र । कानीन ।

कन्यस—(पुं०)[कन्य√सो+क] सबसे छोटा भाई ।

कन्यसा–(स्त्री०)[कन्यस+टाप्]सबसे छोटी उँगली ।

कन्यसी—(स्त्री०) [कन्यस+ङीप्] सबसे छोटी बहन ।

कन्या—(स्त्री०) [√कन् + यक्–टाप्] अविवाहिता लड़की या पुत्री । दस वर्ष की उम्र की लड़की । क्वाँरी लड़की । साधारणतः कोई भी स्त्री । कन्या राशि । दुर्गा का नाम । बड़ी इलायची ।—**अन्तःपुर** (**कन्यान्तःपुर**)–(न०) जनानखाना, अन्तःपुर; 'सुरक्षितेऽपि कन्यान्तःपुरे कश्चित् प्रविशति' पं० १ ।—**अाट** (**कन्याट**)–(वि०) युवती लड़कियों की खोज में रहने वाला । (पुं०) लड़कियों के रहने का स्थान । वह पुरुष जो युवतियों का शिकार करे अथवा उनकी खोज में रहे ।—**कुब्ज**–(पुं०) कन्नौज नामक नगर ।—**गत**–(वि०) लड़की से संबंधित । कन्या राशि पर गया हुआ ।—**ग्रहण**–(न०) विवाह में कन्या को ग्रहण करना या लेना ।—**दान**–(न०) विवाह में कन्या को देना ।—**दोष**–(पुं०) कन्याओं के ऐब जैसे रोग, अङ्गन्यूनता आदि ।—**धन**–(न०) दहेज । यौतुक ।—**पति**–

(पुं०) दामाद, जामाता।—**पुत्र**–(पुं०) अविवाहिता लड़की से उत्पन्न लड़का जिसे कानीन कहते हैं।—**पुर**–(न०) जनानखाना।—**भर्तृ**–(पुं०) दामाद, जमाई। कार्तिकेय का नाम।—**रत्न**–(न०) अत्यन्त सुन्दरी कन्या।—**राशि**–(पुं०) छठी राशि।—**वेदिन्**–(पुं०) जमाई।—**शुल्क**–(न०) वह धन जो कन्या का मूल्य-स्वरूप कन्या के पिता को दिया जाता है।—**स्वयंवर**–(पुं०) क्वाँरी कन्या द्वारा अपने लिये पति का वरण करने का विधान।—**हरण**–(न०) कन्या को भगा ले जाना।

कन्याका, कन्यिका–(स्त्री०) [कन्या+कन्–टाप्] [कन्या+कन्–टाप्, इत्व] युवती लड़की। क्वाँरी लड़की।

कन्यामय—(वि०) [कन्या+मयट्] कन्या-स्वरूप, लड़की-जैसा; 'कन्यामये नेत्रशतैकलक्ष्ये' र० ६.११। कन्या-विशिष्ट, लड़कियों से भरा-पूरा। (न०) जनानखाना, अन्तःपुर, (जिसमें अधिक संख्या लड़कियों की ही हो)।

कपट—(पुं०) [के मूर्ध्नि अपि पट इव आच्छादकः] बनावटी व्यवहार, धोखा, छल।—**तापस**–पाखण्डी साधु, बना हुआ तपस्वी।—**पटु**–(वि०) धोखा देने में निपुण।—**प्रबन्ध**–(पुं०) कपटपूर्ण चाल।—**लेख्य**–(न०) जाली दस्तावेज या टीप।—**वचन**–(न०) धोखे की बात।—**वेश**–(वि०) बहुरूपिया, शकल बदले हुए।

कपटिक—(वि०) [कपट+ठन्–इक] छली, दगाबाज।

कपटिन्—(वि०) [कपट+इनि] छलिया। शठ।

कपर्द, कपर्दक–(पुं०) [√पर्द्+क्विप्, वलोप पर्, कस्य गंगाजलस्य परा पूरणेन दापयति शुष्यति, क–पर्√दैप्+क] [कपर्द+कन्] कौड़ी। जटा, विशेष कर शिव का जटाजूट।

कपर्दिका—(स्त्री०) [कपर्दक+टाप्, इत्व] कौड़ी।

कपर्दिन्—(पुं०) [कपर्द+इनि] शिव का नाम।

कपाट—(पुं०, न०) [कं वायुं मस्तकं वा पाटयति, क√पट्+णिच्+अण्] किवाड़। द्वार, दरवाजा।—**उद्घाटन (कपाटोद्घाटन)**–(न०) किवाड़ खोलना।—**घ्न**–(पुं०) [कपाट √हन्+टक्] सेंध फोड़ने वाला, चोर।

कपाल—(पुं०, न०) [कं मस्तकं पालयति, क √पालि+अण्] खोपड़ी। खप्पर। समारोह। भिक्षापात्र। प्याला या कटोरा। ढक्कन, ढकना।—**पाणि**,—**भृत्**,—**मालिन्**,—**शिरस्**–(पुं०) शिव की उपाधियाँ।—**मालिनी**–(स्त्री०) दुर्गादेवी का नाम।

कपालिका—(स्त्री०) [कपाल+कन्–टाप्, इत्व] खोपड़ी। घड़े का टुकड़ा। दाँत की पपड़ी। दुर्गा।

कपालिन्—(वि०) [कपाल+इनि] खोपड़ी रखने वाला। खोपड़ियों की माला पहनने वाला। (पुं०) शिव की उपाधि। नीच जाति का आदमी, जो ब्राह्मणी माता और धीवर पिता से उत्पन्न हुआ हो।

कपि—(पुं०) [√कम्प्+इ, नलोप] बंदर, लङ्गूर। हाथी। करंज का एक भेद। सूर्य। शिलारस। एक धूप।—**आस्य (कप्यास्य)**–सुगन्धित द्रव्य, धूप, धूना।—**इज्य (कपीज्य)**–(पुं०) श्रीरामचन्द्र और सुग्रीव की उपाधि।—**इन्द्र (कपीन्द्र)**–(पुं०) हनुमान की उपाधि। सुग्रीव की उपाधि। जाम्बवान की उपाधि।—**कच्छु**–(स्त्री०) केवाँच।—**केतन**,—**ध्वज**–(पुं०) अर्जुन का नाम।—**ज**,—**तैल**,—**नामन्**–(न०) शिलाजीत। लोबान।—**प्रभु**–(पुं०) श्रीरामचन्द्र की उपाधि।—**प्रिय**–(पुं०) आमड़ा। कैथ।—**रथ**–(पुं०) राम। अर्जुन।—**लता**–(स्त्री०)

केवाँच ।—लोमफला-(स्त्री०) केवाँच ।—लोह-(न०) पीतल ।

कपिञ्जल—(पुं०) [क√पिञ्ज्+कलच्] चातक पक्षी । तीतर पक्षी ।

कपित्थ—(पुं०) [कपिस्तिष्ठति अत्र तत्फलप्रियत्वात्, कपि√स्था+क—पृषो०] कैथा का पेड़ । (न०) कैथा का फल ।—**आस्य** (**कपित्थास्य**)—(पुं०) गोलाङ्गूल नामक वानर की एक जाति ।

कपिल—(वि०) [√कम्प्+इलच्, पादेश] भूरा, बादामी । (पुं०) एक महर्षि का नाम, जिन्होंने सगर राजा के ६० हजार पुत्रों को भस्म कर डाला था । इन्होंने सांख्यदर्शन का आविष्कार किया था । कुत्ता । लोबान । धूप । एक प्रकार की आग । भूरा रंग ।—**अश्व**, **कपिलाश्व**-(पुं०)इन्द्र ।—**द्युति**-(पुं०) सूर्य ।—**द्रुम**—(पुं०) एक वृक्ष जिसकी लकड़ी सुगंधित होती है ।—**धारा**-(स्त्री०) काशी के पास एक तीर्थस्थान । गंगा ।—**स्मृति**-(स्त्री०) कपिल-रचित सांख्य-सूत्र ।

कपिला—(स्त्री०) [कपिल+टाप्] भूरे रंग की गाय । एक प्रकार का सुगन्धित द्रव्य । लकड़ी का लट्ठा । जोंक ।

कपिश—(वि०) [कपिः कपिलवर्णोऽस्य अस्ति, कपि+श] भूरा, सुनहला । ललौहा । (पुं०) भूरा या सुनहला रंग । शिलाजीत या लोबान ।

कपिशा—(स्त्री०) [कपिश+टाप्] माधवी लता । एक नदी का नाम ।

कपिशित—(वि०) [कपिश+इतच्] सुनहला या भूरे रंग का ।

कपुच्छल—(न०), **कपुष्टिका**—(स्त्री०) [कस्य शिरसः पुच्छमिव लाति, क—पुच्छ√ला+क] [कस्य शिरसः पुष्टौ पोषणाय कायति, क—पुष्टि√कै+क—टाप्] चूड़ाकरण संस्कार । दोनों कनपटियों के ऊपर के केशगच्छ ।

कपूय—(वि०) [कुत्सितं पूयते, कु√पूय्+अच्, पृषो० उलोप] निकम्मा, हेय, नीच ।

कपोत—(पुं०) [को वातः पोत इव यस्य, ब० स०]कबूतर । पंडुक । चिड़िया ।—**अङ्घ्रि** (**कपोताङ्घ्रि**)-(पुं०) एक सुगन्धद्रव्य ।—**अञ्जन** (**कपोताञ्जन**)-(न०) सुर्मा ।—**अरि** (**कपोतारि**)- (पुं०) बाज पक्षी ।—**चरणा**-(स्त्री०) एक सुगन्धित द्रव्य ।—**पालिका**,—**पाली**-(स्त्री०) काबुक, कबूतरों का दरबा ।—**वङ्का**-(स्त्री०) ब्राह्मी लता ।—**वर्णी**-(स्त्री०) छोटी इलायची ।—**वृत्ति**-(स्त्री०) संचय न करने की वृत्ति ।—**व्रत**-(न०) दूसरों का अत्याचार सहन करना ।—**सार**-(न०) सुर्मा ।—**हस्त**-(पुं०) हाथ जोड़ने की एक विधि जो भय या प्रार्थना व्यञ्जक होती है ।

कपोतक—(पुं०) [कपोत+ कन्] छोटा कबूतर । (न०) सुर्मा ।

कपोल—(पुं०) [कप+ओलच्, पादेश] गाल ।—**कल्पित**-(वि०) मनगढ़ंत ।—**फलक**-(पुं०)चौड़े गाल ।—**भित्ति**-(स्त्री०) कनपटी और गाल ।—**राग**-(पुं०) गालों का गुलाबी रंग ।

कफ—(पुं०) [केन जलेन फलति, क√फल्+ड] एक गाढ़ी, लसीली चीज जो अक्सर खाँसने से बाहर आती है । श्लेष्मा, बलगम ।—**अरि** (**कफारि**)-(पुं०) सोंठ ।—**कूर्चिका**-(स्त्री०) थूक, लबार ।—**क्षय**-(पुं०) क्षय रोग ।—**घ्न**,—**नाशन**,—**हर**-(वि०) कफनाशक ।—**ज्वर**-(पुं०) कफ की वृद्धि या कफ के विकार से उत्पन्न हुआ ज्वर ।—**विरोधिन्**-(पुं०, न०) मिर्च ।

कफणि, कफोणि, कफोणी—(स्त्री०) [केन सुखेन फणति स्फुरति, क√फण् + इन्] [क√फण् वा√स्फुर्+इन्, पृषो० साधुः] [कफोणि+ङीप्] कुहनी ।

कफल—(वि०) [कफ+लच्] कफ प्रकृति का ।

कफिन्—(वि०) [कफ+इनि] [स्त्री०—कफिनी] कफ की वृद्धि से पीड़ित । (पुं०) हाथी ।

कबन्ध—(पुं०, न०) [कं मुखं बध्नाति, क√बन्ध+अण्] सिररहित धड़, (विशेष कर वह धड़ जिसमें प्राण बाकी हों; नृत्यत्कबन्धं समरे ददर्श र० ७.५१। (पुं०) पेट । बादल । धूमकेतु । राहु का नाम । जल । श्रीमद्वाल्मीकि रामायण में वर्णित एक राक्षस, जिसे श्रीरामचन्द्र ने मारा था ।

कबित्थ—(पुं०) [कपित्थ—पृषो० साधुः] कैथा का पेड़ ।

√कम्—भ्वा० आत्म० सक० चाहना । कामयते, कामयिष्यते—कमिष्यते, अचीकमत—अचकमत ।

कमठ—(पुं०) [√कम्+अठन्] कछुआ । बाँस । घड़ा ।—**पति**–(पुं०) कछुवों का राजा ।

कमठी—(स्त्री०) [कमठ+ङीष्] कछुई या छोटा कछुवा ।

कमण्डलु—(पुं०) [मण्डनं मण्डः कस्य जलस्य मण्डं लाति क—मण्ड√ला+कु] साधु संन्यासियों का दरियाई नारियल, तुँबी आदि का बना जलपात्र ।—**तरु**–(पुं०) पाकर का पेड़ ।—**धर**–(पुं०) शिव का नाम ।

कमन—(वि०) [√कम्+ल्यु] विषयी, लम्पट । सुन्दर, मनोहर । (पुं०) कामदेव । अशोक वृक्ष । ब्रह्मा का नाम ।

कमनीय—(वि०) [√कम्+अनीयर्] वाञ्छनीय । मनोहर, सुन्दर । प्रिय ।

कमर—(वि०) [√कम्+अर] कामासक्त । उत्सुक ।

कमल—(न०) [कं जलम् अलति भूषयति, कम्√अल्+अच्] पानी में होने वाला एक प्रसिद्ध पौधा और उसका फल, पद्म । जल । ताँबा । अर्क विशेष । सारस पक्षी । मूत्र-स्थली । (पुं०) मृगों का एक भेद । सारस ।—**अक्षी** (कमलाक्षी)–(स्त्री०) कमल जैसे नेत्रों वाली स्त्री ।—**आकर** (कमलाकर)–(पुं०) कमल समूह । कमल-परिपूर्ण सरोवर ।—**आलया** (कमलालया)–(स्त्री०) लक्ष्मी का नाम ।—**आसन** (कमलासन)–(पुं०) ब्रह्मा का नाम ।—**ईक्षण** (कमलेक्षण)–(वि०) कमल जैसे नेत्रों वाला ।—**उत्तर** (कमलोत्तर)–(न०) कुसुम्भ पुष्प ।—**खण्ड**–(न०) कमलसमूह ।—**ज**–(पुं०) ब्रह्मा की उपाधि । रोहिणी नक्षत्र ।—**जन्मन्**,—**भव**,—**योनि**,—**सम्भव**—(पुं०) ब्रह्मा की उपाधियाँ ।

कमलक—(न०) [कमल+कन्] छोटा कमल ।

कमला—(स्त्री०) [कमलं विद्यतेऽस्याः, कमल+अन्—टाप्] लक्ष्मी की उपाधि । सर्वोत्तम स्त्री ।—**पति**,—**सख**–(पुं०) विष्णु की उपाधि ।

कमलिनी—(स्त्री०) [कमल+इनि—ङीप्] कमल का पौधा । कमल-समूह । वह स्थान जहाँ कमलों का बाहुल्य हो ।

कमा—(स्त्री०) [√कम्+णिच्+अ—टाप्] सौन्दर्य, कमनीयता ।

कमितृ—(वि०) [स्त्री० कमित्री] [√कम्+तृच्] कामासक्त, कामुक ।

कम्प्—भ्वा० आत्म० अक० हिलना, काँपना, थरथराना । घूमना-फिरना । कम्पते, कम्पिष्यते, अकम्पिष्ट ।

कम्प—(पुं०), **कम्पा**–(स्त्री०) [√कम्प्+घञ्] [√कम्प्+अ—टाप्] थरथरी, कँपकँपी ।—**अन्वित** (कम्पान्वित)–(वि०) थरथराने वाला, आन्दोलित ।—**लक्ष्मन्**–(पुं०) वायु, पवन ।

कम्पन—(वि०) [√कम्प्+युच्] थरथराने वाला, काँपने वाला । (पुं० न०) शिशिर-

न्तु। (न०) [√कम्प्+ल्युट्] थरथरी, कंपकंपी। उच्चारण-विशेष, गिटकिरी।

कम्पाक—(पुं०) [कम्पया चलनेन कायति प्रकाशते, कम्पा√कै+क] वायु, पवन।

कम्प्र—(वि०) [√कम्प्+र] काँपने वाला, हिलने वाला; 'विचार कम्प्राणि मुखानि कं प्रति' नै० १.१४२।

√कम्ब्—भ्वा० पर० सक० जाना। कम्बति, कम्बिष्यति, अकम्बीत्।

कम्बर—(वि०) [√कम्ब्+अरन्] चित्र-विचित्र रंग का, रंग-बिरंगा। (पुं०) चित्र-विचित्र रंग।

कम्बल—(पुं०)[√कम्ब्+कलच्]ऊनी कंबल। गलत्था, गौ की गरदन के नीचे का लटकता हुआ मांसल चर्म। हुंगा। हिरन-विशेष। ऊनी वस्त्र जो ऊपर से पहना जाय। दीवाल। जल। **वाह्यक**–(न०) बहली जिस पर ऊनी पर्दा पड़ा हो।

कम्बलिका—(स्त्री०) [कम्बल+ई+कन्, ह्रस्व, टाप्] छोटा कंबल, कमली।—**वाह्यक**–(न०) कंबल के उचार की बैल-गाड़ी।

कम्बलिन्—(वि०) [कम्बल+इनि] कंबल से युक्त। (पुं०) बैल।

कम्बी (वी)—(स्त्री०) [√कम्+विन् (बा०)+ङीप्] कलछी या चमचा।

कम्बु—(वि०)[√कम्+उण् बुक] [स्त्री —**कम्बु, कम्बू**] चित्तीदार, धब्बादार, रंगबिरंगा। (पुं०, न०) शङ्ख। (पुं०) हाथी। गरदन। रंगबिरंगा रंग। शरीरस्थ एक रंग। कंकण, पहुँची। नलीनुमा हड्डी।—**कण्ठी**, —**ग्रीवा**–(स्त्री०) शंख जैसी गरदन वाली स्त्री।

कम्बोज—(पुं०) [√कम्ब्+ओज] एक प्राचीन जनपद जो अब अफगानिस्तान का भाग है। शंख। एक तरह का हाथी।

कम्र—(वि०)[√कम्+र]मनोहर, सुन्दर।

कर—(पुं०) [√कृ+ अप् वा√कृ+अच्] [स्त्री०—**करा** या **करी**] हाथ। किरण; 'अवलम्बनाय दिनभर्तुरभून्न पतिष्यतः करसहस्रमपि' शि० ९.६। हाथी की सूंड़। मालगुजारी, चुंगी, खिराज। ओला। २४ अंगुल का एक माप। हस्त नक्षत्र।—**अग्र** (**कराग्र**)–(न०) हाथ का अगला भाग। हाथी की सूंड़ की नोक।—**आघात** (**कराघात**)–(पुं०) हाथ का प्रहार या आघात।—**आरोट** (**करारोट**)–(पुं०) अंगूठी।—**आलम्ब** (**करालम्ब**)–(पुं०) हाथ का सहारा देना।—**आस्फोट**(**करास्फोट**)–(पुं०) छाती। हाथ का आघात। —**कण्टक**–(पुं०, न०) हाथ की उँगली का नाखून।—**कमल**,—**पङ्कज**,—**पद्म**–(न०) कमल जैसा हाथ, सुन्दर हाथ।—**कलश**– (पुं०, न०) हाथ की अंजलि।—**किसलय**–(पुं०, न०) कोमल कर। अँगुली।—**कोष**—(पुं०) हाथ की उँगली।—**ग्रह**–(पुं०)—**ग्रहण**–(न०) कर लगाना। पाणिग्रहण करना। विवाह।—**ग्राह**–(पुं०) पति। कर उगाहने वाला।—**ज**– (पुं०) हाथ की उँगली का नख। (न०) एक सुगन्धित द्रव्य।— **जाल**–(न०) प्रकाश की धारा।—**तल**– (पुं०) हथेली। —**ताल**–(पुं०)—**तालक**– (पुं०) ताली बजाना। करताल नाम का बाजा।—**तालिका**,—**ताली**–(स्त्री०) ताली। —**तोया**–(स्त्री०) पूर्व बंगाल की एक नदी का नाम।—**द**–(वि०) कर अदा करने वाला। कर या सहारा देने वाला।—**पत्र**–(न०) आरा, आरी।—**पत्रिका**–(स्त्री०) जलक्रीड़ा, जल में क्रीड़ा करते समय पानी को उछालना।—**पल्लव**–(पुं०) कोमल हस्त। उँगली।—**पालिका**–(स्त्री०) तलवार। फावड़ा, कुदाली।—**पीडन**-(न०) विवाह। —**पुट**–(न०) अंजलि।—**पृष्ठ**–(न०) हाथ की पीठ।—**बाल**,—**वाल**–(पुं०) तलवार।

उँगली का नख ।—भार–(पुं०) अत्यन्त अधिक कर ।—भू–(पुं०) उँगली का नख ।—भूषण–(न०) पहुँची । कड़ा ।—माल–(पुं०) धुआँ ।—मुक्त–(न०) फेंक कर वार करने का हथियार ।—रुह–(पुं०) नख, नाखून; 'अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलूनं कररुहैः' श० २.१० ।—वीर,—वीरक–(पुं०) तलवार. खाँड़ा । कब्रगाह । एक देश का नाम । कनेर ।—शाखा–(स्त्री०) उँगली ।—शीकर–(पुं०) हाथी की सूँड़ से फेंका हुआ जल ।—शूक– (पुं०) उँगली का नाखून ।—साद–(पुं०) किरणों के प्रकाश का मंदा पड़ जाना ।—सूत्र–(न०) सूत्र जो विवाह के समय कलाई पर बाँधा जाता है ।—स्थालिन्–(पुं०) शिव का नाम ।—स्वन–(पुं०) ताली बजाना ।

करक—(पुं०, न०) [√कृ वा √कॄ+वुन्] कमण्डलु । करवा । नारियल की खोपड़ीअनार । हाथ । महसूल । एक पक्षी । ओला, उपल ।—अम्भस् (करकाम्भस्)–(पुं०) नारियल का वृक्ष ।—आसार (करकासार)–(पुं०) ओलों की फुहार या वर्षा ।—ज-(पुं०) पानी ।—पात्रिका–(स्त्री०) एक चर्म-पात्र, मशक ।

करङ्क—(पुं०) [करस्य रङ्क इव ष० त०] हड्डियों की गठरी । खोपड़ी । नरेरी, नारियल का बना पात्र ।

करञ्ज—(पुं०) [क √रञ्ज्+णिच् +अण्] एक झाड़, कंजा जिसके फल आदि दवा के काम आते हैं ।

करट—(पुं०) [क √रट्+अच्] हाथी का गाल । कुसुम्भ । काक । नास्तिक । पतित ब्राह्मण ।

करटक—(पुं०) [करट+कन्] काक । चोरी की कला का विस्तार करने वाले कर्णीरथ का नाम । हितोपदेश और पञ्चतंत्र में वर्णित एक शृगाल का नाम ।

करटा—(स्त्री०) [√कृ+अटन्— टाप्] कठिनता से दूध देने वाली गाय ।

करटिन्—(पुं०) [करट+इनि] हाथी; 'विगलते धूयन्ते मदमलिनगण्डाः करटिनः' ।

करड्, करेड्—(पुं०) [√कॄ+अड्] [के जले वायौ वा रेटति, क √रेट्+कु] सारस पक्षी का भेद ।

करण—(न०) [√कृ+ल्युट्] करना । सम्पन्न करना । क्रिया । धार्मिक अनुष्ठान । व्यवसाय, व्यापार । इन्द्रिय; 'वपुषा करणोज्झितेन सा निपतन्ती पतिमप्यपातयत्' र० ८.३८ । शरीर । क्रिया का साधन । कारण, हेतु । दीप, दस्तावेज, लिखित प्रमाण । संगीत विद्या में ताली से ताल देना । ज्योतिष में दिन का एक विभाग ।—अधिप (करणाधिप)–(पुं०) जीव ।—ग्राम–(पुं०) इन्द्रियों की समष्टि ।—त्राण–(न०) सिर ।

करण्ड—(पुं०) [√कृ+अण्डन्] संदूकची या छोटी डलिया । शहद की मक्खी का छत्ता । तलवार । कारण्डव (जल) पक्षी ।

करण्डिका, करण्डी—(स्त्री०) [करण्ड+ङीप्, +कन्, टाप् ह्रस्व] [करण्ड+ङीप्] बाँस की पिटारी ।

करन्धय—(वि०) [कर √धे+खश्, मुम्] हाथ चूमते हुए ।

करभ—(पुं०) [√कृ+अभन् वा कर √भा +क] कलाई से लेकर उँगली के नख तक के हाथ का पृष्ठ भाग । सूँड़ । जवान हाथी । जवान ऊँट । ऊँट । एक सुगन्धि-द्रव्य ।—ऊरु (करभोरु)–(स्त्री०) हाथी की सूँड़ जैसी जंघाओं वाली स्त्री ।

करभक—(पुं०) [करभ +कन्] ऊँट ।

करभिन्—(पुं०) [करभ+इनि] हाथी ।

करम्ब, करम्बित—(वि०) [√कृ+अम्बच्] [करम्ब+इतच्] मिश्रित । मिला-जुला । जड़ा हुआ, बैठाया हुआ ।

करम्ब, करम्भ—(पुं०) [क √रम्भ्+घञ्]

आटा या अन्य भोज्य पदार्थ जिसमें दही मिला हो। कीचड़। यथा—करम्भवालुकातापान्- मनु।

करहाट—(पुं०) [कर√हट्+णिच्+अण्] एक देश। सम्भवतः सतारा जिले का आधुनिक कहाड़। कमल का डंठल या कमलनाल। कमल की जड़ से निकलने वाले रेशे। मदन वृक्ष, मैनफल।

कराल—(वि०) [कर–आ√ला+क] भयानक। फटा हुआ। चौड़ा खुला हुआ। बड़ा, लंबा, ऊँचा। असम, विषम। नुकीला।—(पुं०) राल मिला हुआ तेल। दाँतों का एक रोग। कस्तूरीमृग। काला बबूल।—**दंष्ट्र**–(वि०) भयानक दाढ़ों वाला।—**वदना**–(स्त्री०) काली। भयानक मुख वाली स्त्री।

करालिक—(पुं०) [कराणां करसदृशशाखानां आलिः श्रेणी यत्र, ब० स० कप्] वृक्ष। तलवार।

करिक—(पुं०) [कर+ठन्+इक] पैर का चिह्न।

करिका—(स्त्री० [करो विलेखनम् अस्ति अस्याः, कर+अच्+ङीप्+कन्–टाप्, ह्रस्व] खरोंच, नखाघात।

करिणी—(स्त्री०)[करिन्+ङीप्] हथिनी; 'कथमेत्य मतिविपर्ययं करिणी पङ्कमिवावसीदति' कि० २.६।

करिन्—(पुं०) [कर+इनि] हाथी। आठ की संख्या।—**इन्द्र** (**करीन्द्र**),—**ईश्वर** (**करीश्वर**),—**वर**–(पुं०) विशाल हाथी, गजराज। ऐरावत।—**कुम्भ**–(पुं०) हाथी के मस्तक का वह भाग जो ऊँचा उठा हुआ हो।—**गर्जित**–(न०) हाथी की चिंघाड़।—**दन्त**–(पुं०) हाथी का दाँत।—**प**–(पुं०) महावत।—**पोत**,—**शाव**,—**शावक**–(पुं०) हाथी का बच्चा।—**बंध**—(पुं०) हाथी का खूँटा।—**माचल**–(पुं०) सिंह।—**मुख**–(पुं०) गणेश।—**वैजयन्ती**–(स्त्री०) हाथी की पीठ पर रखा हुआ झंडा।—**स्कन्ध**–(वि०) हाथियों का समूह।

करीर—(पुं०) [कॄ+ईरन्]बाँस का अँखुआ। अँखुआ। करील नाम का कँटीला एक झाड़। जलकुम्भ।

करीष—(पुं० न०) [√कॄ+ईषन्] सूखा गोबर।—**अग्नि** (**करीषाग्नि**)–(पुं०) कंडे या करसी की आग।

करीषंकषा—(स्त्री०) [करीष√कष्+खच्, मुम्] प्रचण्ड पवन या आँधी।

करीषिणी—(स्त्री०)[करीष+इनि–ङीप्] सम्पत्ति की अधिष्ठात्री देवी।

करुण—(वि०)[√कॄ+उनन्]कोमल, करुणहृदय। दयापात्र, दया प्रदर्शित करने योग्य। दयोत्पादक। शोकान्वित। (पुं०) रहम, दया, अनुकम्पा। दुःख, शोक। परमेश्वर।—**मल्ली**–(स्त्री०) मल्लिका का पौधा।—**विप्रलम्भ** (पुं०) साहित्यालंकार में वियोग-जन्य प्रेम का भाव।

करुणा—(स्त्री०) [करुण–टाप्] अनुकम्पा, रहम, दया।—**आर्द्र** (**करुणार्द्र**)–(वि०)कोमल-हृदय।—**निधि**–(वि०) दया का भण्डार।—**पर**,—**मय**–(वि०) अत्यन्त दयालु।—**विमुख**–(वि०)निष्ठुर, सङ्गदिल।

करेट—(पुं०) [करे√अट्+अच्, अलुक् स०] उँगली का नख।

करेणु—(पुं०) [√कॄ+एणु] हाथी; 'करेणुरारोहयते निषादिनम्' शि० १२.५। कर्णिकार, कठचंपा या वनचंपा का पेड़।—**भू**,—**सुत**–(पुं०) हस्ति-विज्ञान के आविर्भावकर्त्ता, पालकाप्य का नाम। (स्त्री०)हथिनी। पालकाप्य की माता का नाम।

करोट–(न०), **करोटि**—(स्त्री०) [क√रुट्+अच्] [क√रुट्+इन्] खोपड़ी। कटोरा या पात्र।

√कर्क्—भ्वा० पर० अक० हँसना। कर्कति, कर्किष्यति, अकर्कीत्।

कर्क—(पु०) [√कृ+क] केकड़ा। राशि-चक्र की चौथी राशि। अग्नि। जलपात्र। आईना, दर्पण। सफेद रंग का घोड़ा।

कर्कट, कर्कटक—(पु०) [√कर्क्+अटन्] [कर्कट+कन्] केकड़ा। कर्कराशि। घेरा, चक्कर, कंक पक्षी। कमल की जड़। काँटा। तराजू की डंडी का सिरा जिसमें पलड़े की तनी बाँधी जाती है। एक रतिबंध। वृत्त की त्रिज्या। नृत्य का एक हस्तक। सेमल का पेड़।—**शृङ्गी**–(स्त्री०) काकड़ासींगी।

कर्कटि, कर्कटी—(स्त्री०) [कर√कट+इन्, शक० पररूप] [कर्क √अट्+इन्, पररूप, ङीप्] मादा केकड़ा। छोटा घड़ा। सेमल का फल। तराजू की डाँडी का टेढ़ा छोर। एक तरह की ककड़ी। तरोई। एक साँप।

कर्कन्धु, कर्कन्धू—(स्त्री०) [कर्क कण्टकं, दधाति, कर्क√धा+कु, नुम्] [कर्क√धा+कू, (न०)] उन्नाव या ईरानी बेर का पेड़ और उसके फल; "कर्कन्धूनामुपरि तुहिनं रञ्जयत्यग्रसन्ध्या", शा० ४।

कर्कर—(वि०) [कर्क√रा+क] कड़ा, ठोस, पोढ़ा। (पु०) हथौड़ा, घन। दर्पण, आईना। हड्डी। खोपड़ी की हड्डी का टूटा हुआ टुकड़ा।—**अक्ष** (**कर्करात्त**)–**अङ्ग** (**कर्कराङ्ग**)–(पु०) खञ्जन पक्षी।—**अन्धुक** (**कर्करान्धुक**)–(पु०) अन्धा कुआँ, अन्धकूप।

कर्कराट्—(पु०) [कर्कं हास रटति प्रकाशयति, कर्क√रट्+कुन्] दीर्घ तिरछी दृष्टि, दूर तक देखनेवाली तिरछी चितवन। अलक।

कर्कराल—(पु०) [कर्कर√अल्+अच्] सुवासित घुँघराले बाल।

कर्करी—(स्त्री०) [कर्कर+ङीप्] ऐसा जलपात्र जिसकी पेंदी में चलनी की तरह छिद्र हों।

कर्कश—(वि०) [कर√कश्+अच्, पृषो० वा कर्क+श] कड़ा, सख्त, रूखा, निष्ठुर, दयाशून्य। प्रचण्ड। उद्दण्ड। समझने में कठिन, समझ में न आने योग्य। (पु०) तलवार, खड्ग। करञ्जा, गन्ना।

कर्कशा—(स्त्री०) [कर्कश+टाप्] व्यभि-चारिणी या कटुभाषिणी स्त्री। वृश्चिकाली वृक्ष। छोटी मेढ़ासींगी। झड़बेर।

कर्कशिका, कर्कशी—(स्त्री०) [कर्कश+कन्—टाप्, इत्व] [कर्कश+ङीप्] झड़बेर या बनबेर।

कर्कि—(पु०) [√कर्क+इन्] कर्क राशि।

कर्कोट, कर्कोटक—(पु०) [√कर्क+ओट] [कर्क√अट्+अच्+कन्, पृषो० ओकारा-देश] आठ मुख्य सर्पों में से एक। यह एक बड़ा विषैला सर्प होता है। यहाँ तक कि इसके देख देने ही से देखे जाने वाले पर सर्प-विष का असर पैदा हो जाता है। गन्ना। बेल का पेड़।

√**कर्चूर**—(पु०) [√कर्च्+ऊर, पृषो० च आदेश] कचूर। एक सुगन्ध-द्रव्य।

√**कर्ज्**—भ्वा० पर० सक० पीड़ित करना। कर्जति, कर्जिष्यति, अकर्जीत्। (न०) सुवर्ण। हरताल, मैनफल।

√**कर्ण्**—चु० उभ० सक० छेदना। (आ उपसर्ग के साथ इसका अर्थ सुनना हो जाता है) कर्णयति—ते, कर्णयिष्यति—ते, अच-कर्णत्—त।

कर्ण—(पु०) [कीर्यते क्षिप्यते वायुना शब्दो यत्र, √कॄ+न, वा कर्ण्यते आकर्ण्यते अनेन, √कर्ण्+अप्] कान। कड़ावार गंगाल या जंगाल आदि बर्तन के कड़े या कान। दस्ता, बेंट। डाँड़, पतवार। समकोण त्रिभुज की वह रेखा जो समकोण के सामने होती है। महाभारत में वर्णित कौरव-पक्षीय एक प्रसिद्ध योद्धा राजा (यह सूर्यपुत्र के नाम से प्रसिद्ध था, तथा बड़ा प्रसिद्ध दानी था। कुन्ती जब क्वाँरी थी, तब उसके गर्भ से इसकी उत्पत्ति हुई थी। इसीसे यह "कानीन" भी कहलाता था। कुरुक्षेत्र के युद्ध में इसने कौरवों

की ओर से पाण्डवों से युद्ध किया था। अन्त में अर्जुन द्वारा यह मारा गया था)।—**अञ्जलि (कर्णाञ्जलि)**–(पुं०) कान का एक भाग अथवा वह मुख्य भाग जिससे सुनाई पड़ता है।—**अनुज (कर्णानुज)**–(पुं०) युधिष्ठिर।—**अन्तिक (कर्णान्तिक)**–(वि०) कान के समीप का।—**अन्दु,—अन्दू (कर्णान्दु,–न्दू)**–(स्त्री०) कान की बाली या करनफूल।—**अर्पण (कर्णार्पण)**–(न०) सुनना, कान देना।—**आस्फाल, (कर्णास्फाल)**—(पुं०) हाथी आदि का कान फटफटाना।—**उत्तंस (कर्णोत्तंस)**–(पुं०) कान में धारण किया जानेवाला एक आभूषण।—**उपकर्णिका (कर्णोपकर्णिका)**–(स्त्री०) अफवाह, किंवदन्ती।—**क्ष्वेड**–(पुं०) कान में सतत आवाज का होना।—**गोचर**–(वि०) जो सुन पड़े।—**ग्राह**-(पुं०) कर्णधार, पतवारी।—**जप**–(वि०) (**कर्णेजप** भी रूप होता है) गुप्त बात कहने वाला, मुखबिर। (पुं०) निन्दक।—**जाह**–(पुं०) [कर्ण+जाहच्] कान की जड़; 'अपि कर्णजाहविनिवेशितानन:' माल० ५.८।—**जित्**–(पुं०) कर्ण को हरानेवाला, अर्जुन की उपाधि।—**ताल**–(पुं०) हाथी के कानों की फटफट का शब्द।—**धार**-(पुं०)पतवारी।—**धारिणी**–(स्त्री०)हथिनी।—**परम्परा**–(स्त्री०)) सुनी-सुनाई बात, अफवाह।—**पालि**–(स्त्री०) कान की लौ, बाली।—**पाश**–(पुं०) [कर्ण+पाशप्] सुन्दर कान।—**पिशाची**–(स्त्री०) एक देवी या पिशाचिनी। उसकी प्रसन्नता से मिलने वाली परोक्ष ज्ञान की शक्ति। — **पूर**–(पुं०) करनफूल, कान का आभूषण विशेष। अशोक का वृक्ष।—**पूरक**–(पुं०) करनफूल, बाली। कदम्ब का पेड़। अशोक का पेड़। नील कमल।—**प्रान्त**–(पुं०) दे० 'कर्णपालि'।—**भूषण**– (न०),—**भूषा**–(स्त्री०) कान का गहना।—**मूल**–(न०) कान के नीचे का भाग।—**मोटी**–(स्त्री०) दुर्गा का एक रूप।—**वंश**–(पुं०) बांस-बल्ली से बना मचान।—**वर्जित**–(वि०) कानरहित। (पुं०) सर्प।—**विद्रधि**–(पुं०) कान के भीतर होने वाली फुंसी या घाव।—**विवर**–(न०) कान का छेद।—**विष्**–(स्त्री०) कान का मैल या ठेठ।—**वेध**–(पुं०) संस्कार-विशेष जिसमें कान छेदे जाते हैं, छिदाउन।—**वेष्ट**–(पुं०),— **वेष्टन**–(न०) कान की बालियां।—**शष्कुली**–(स्त्री०) कान का बहिर्भाग।—**शूल**–(पुं०, न०) कान का दर्द।—**श्रव**–(वि०) ऊँची आवाज से कहा गया, सुन पड़ने योग्य; 'कर्णश्रवेऽनिले' मनु० ४.१०२।—**स्राव,—संस्रव**–(पुं०) कान का बहना, कान का रोग-विशेष।—**सू**–(स्त्री०) कर्ण की जननी, कुन्ती।—**हीन**–(वि०) कर्णविवर्जित। (पुं०) सर्प।

कर्णाकर्णि—(अव्य०) [कर्णे कर्णे गृहीत्वा प्रवृत्तं कथनम्, व्यतिहारे इच्, पूर्वस्य दीर्घत्वं] कानों-कान।

कर्णाट—[कर्ण√अट्+अच्, शक० पररूप; किन्तु भाषा-विज्ञान के मत में कर्नाडु (कर् कृष्ण+नाडु स्थान) अर्थात् कृष्ण प्रदेश या कृष्णकार्पासोत्पादक क्षेत्र से कर्णाट बना है] भारत के दक्षिणी प्रायद्वीप का एक भूखण्ड। एक राग।

कर्णाटी—(स्त्री०) [कर्णाट+ङीप्] कर्णाट देश की स्त्री। एक राग।

कर्णिन्—(पुं०) [√कर्ण्+इन] बाण का भेद। छेदाई।

कर्णिक—(वि०) [√कर्ण्+इकन्] कानों वाला। पतवार वाला। (पुं०) माझी, पतवारी।

कर्णिका—(स्त्री०) [कर्णिका+टाप्] कानों

की बाली, घुमड़ी। पद्मबीजकोष। कूँची या चित्रकार की लेखनी। मध्यमा उँगली। फल का डंठल। हाथी की सूँड़ की नोक। खड़िया।

कर्णिकार—(पु०) [कर्णि√कृ+अण्]बनचम्पा या कठचम्पा का पेड़। पद्मकोषबीज। (न०) कर्णिकार वृक्ष का फूल।

कर्णिन्—(वि०)[कर्ण+इनि] कानों वाला। बड़े-बड़े कानों वाला। शरपक्ष युक्त। (पु०) गधा। पतवारी। गाँठोंदार बाण।

कर्णी—(स्त्री०) [कर्ण+ङीप्] पुङ्खदार या विशेष बनावट का बाण। मूलदेव की माता का नाम, यह मूलदेव चौर्यकला-विज्ञान के प्रादुर्भाव-कर्त्ता थे।—**सुत**-(पु०) मूलदेव जो चुराने की कला के आविष्कारकर्त्ता बतलाने जाते हैं।

कर्णीरथ—(पु०) [कर्णः सामीप्यात् स्कन्धः अस्य अस्ति वाहनत्वेन, कर्ण+इनि, स चासौ रथश्च इति कर्म० स० दीर्घश्च] म्याना, डोली, पालकी। (जो स्त्रियों की सवारी के काम आती है); 'कर्णीरथस्था रघुवीरपत्नी' र० १४.१३।

√कर्त्—चु० उभ० अक० शिथिल होना, ढीला होना। कर्तयति-ते, कर्तयिष्यति-ते, अचकर्तत्-त।

कर्तन—(न०) [√कृत्+ल्युट्] काटना, तराशना। रुई या सूत कातना।

कर्तनी—(स्त्री०) [कर्तन+ङीप्] कैंची। चक्कू, छोटी तलवार।

कर्तरी, कर्तरिका—(स्त्री०) [√कृत्+अरन्+ङीप्] [कर्तरी+कन्-टाप्, ह्रस्व]दे० 'कर्तनी'।

कर्त्तव्य—(वि०) [√कृ+तव्यत्] करने योग्य। [√कृत्+तव्यत्] काटने या नाश करने योग्य।

कर्तृ—(वि०) [√कृ+तृच्] कर्त्ता, करने वाला। (पु०) ईश्वर। ब्रह्मा की एक उपाधि। विष्णु और शिव की उपाधि।

कर्त्री—(स्त्री०) [कर्तृ+ङीप्] छुरी। कतरनी, कैंची।

√कर्द्—भ्वा० पर० अक० कुत्सित शब्द करना। कर्दति, कर्दिष्यति, अकर्दीत्।

कर्द—(पु०) [√कर्द्+अच्] कीचड़।

कर्दट—(पु०) [कर्द√अट्+अच्, पररूप] कीचड़। पद्मकंद। जलज तृणमात्र।

कर्दम—(पु०) [√कर्द्+अम्] कीचड़, कीच। मैल, कूड़ा। (आलं०) पाप। (न०) मांस।—**आटक** (कर्दमाटक)- (पु०) कूड़ाखाना।

कर्पट—(पु०, न०) [√कृ+विच्-कर् स चासौ पटश्च कर्म० स०] पुराना या पैबंद लगा हुआ कपड़ा। दगीला कपड़ा।

कर्पटिक, कर्पटिन्—(वि०) [कर्पट+ठन्-इक] [कर्पट+इनि] जो चिथड़े लपेटे हो।

कर्पण—(पु०) [√कृप+ल्युट्] एक प्रकार का शस्त्र, साँग; 'चापचक्रकणपकर्पणप्रासपट्टिश' दश०।

कर्पर—(पु०) [√कृप्+अरन् (बा०)] कड़ाही, कड़ाह। पात्र, बर्तन। ठीकरा। खोपड़ी। एक प्रकार का हथियार।

कर्पास—(पु०, न०), **कर्पासी**-(स्त्री०) [√कृ+पास] [कर्पास+ङीप्] कपास का वृक्ष, रुई का पेड़।

कर्पूर—(पु०, न०) [√कृप्+ऊर] कपूर, काफूर।—**खण्ड**-(पु०) कपूर का खेत। कपूर की डली।—**तैल**-(न०) कपूर का तेल।

कर्फर—(पु०) [√कृ+विच्, √फल्-अच्, रस्य लः, कीर्यमाणः फलः प्रतिबिम्बो यत्र ब० स०] दर्पण, आईना।

कर्बु—(वि०) [√कर्ब् (र्व)+उन्] रंग-बिरंगा, चितकबरा।

कर्बुर—(वि०) [√कर्ब् (र्व्)+उरच्] रंग-बिरंगा, चितकबरा; 'कर्बुरितसदृशन-

निकुम्बकर्बुरः शि० १७.५६ । भूरा, धुमैला । (पुं०) चितकबरा रंग । पाप । प्रेत, शैतान । धतूरे का पेड़ । (न०) सोना । जल ।

कर्बुरित—(वि०) [कर्बुर+इतच्] रंग-बिरंगा ।

कर्मठ—(वि०) [कर्मणि घटते, कर्मन्+अठच्] कार्यकुशल, क्रियाकुशल, काम करने में निपुण । परिश्रम से काम करने वाला । केवल धार्मिक अनुष्ठानों के करने ही में लवलीन ।

कर्मण्य—(वि०) [कर्मन्+यत्] कर्म-कुशल । चतुर । (न०) कार्य-निष्ठा । सक्रियता ।

कर्मण्या—(स्त्री०) [कर्मण्य+टाप्] मजदूरी, पारिश्रमिक ।

कर्मन्—(न०) [√कृ+मनिन्] कार्य, काम । क्रिया । धंधा । शास्त्रविहित नित्य-नैमित्तिक आदि कर्म । आचरण । वह पूर्व-जन्म-कृत कर्म जिसका फल इस जन्म में मिल रहा हो, भाग्य । वह जिस पर क्रिया का फल पड़े (व्या०) ।—**अक्षम** (**कर्माक्षम**)–(वि०) कार्य करने में असमर्थ, निकम्मा ।—**अङ्ग** (**कर्माङ्ग**)–(न०)यज्ञ कर्म का एक भाग ।—**अधिकार** (**कर्माधिकार**)–(पुं०) धार्मिक कृत्य या क्रिया करने का अधिकार ।—**अनुरूप** (**कर्मानुरूप**)–(वि०)कर्मानुसार । पूर्व-जन्म में किये हुए कर्मों के अनुसार ।—**अन्त** (**कर्मान्त**)–(पुं०) किसी कार्य या क्रिया का अवसान । व्यापार, व्यवसाय । कार्य-संपादन । खत्ती, अनाज का भाण्डार । जुती हुई जमीन ।—**अन्तर** (**कर्मान्तर**)–दूसरा काम । प्रायश्चित्त, पापनिवृत्ति । किसी धर्मानुष्ठान के मध्य का अवकाश ।—**अन्तिक** (**कर्मान्तिक**)–(वि०) अन्तिम ।(पुं०) नौकर ।—**आजीव** (**कर्माजीव**)–(पुं०) किसी पेशे से जीविका-निर्वाह करना ।—**इन्द्रिय** (**कर्मेन्द्रिय**)–(न०) वे इन्द्रियाँ जो कर्म करें, जैसे हाथ, पैर, वाणी, गुदा और उपस्थ ।—**उदार** (**कर्मोदार**)–(न०) उदार कर्म, उच्चाशयता ।—**उद्युक्त** (**कर्मोद्युक्त**)–(वि०) मशगूल, लवलीन, क्रियाशील ।—**कर**–(पुं०) रोजनदारी पर काम करने वाला मजदूर । यमराज ।—**कर्तृ**– (वि०) काम करने वाला ।(पुं०) व्याकरणोक्त वाच्यविशेष, इसमें कर्तृत्व की विवक्षा से कर्म ही कर्ता होता है ।—**काण्ड**–(पुं०,न०) वेद का वह अंश जिसमें यज्ञानुष्ठानादि कर्मों का तथा उनके माहात्म्य का वर्णन है ।—**कार**–(पुं०) वह मनुष्य जो कोई भी काम करे । कारीगर । मजदूर । लुहार । साँड़ ।—**कारिन्**–(पुं०) मजदूर । कारीगर ।—**कार्मुक**–(पुं०, न०) सुदृढ़ धनुष ।—**कीलक**–(पुं०) धोबी ।—**क्षेत्र**–(न०) वह भूमि जहाँ धार्मिक कर्मानुष्ठान किया जाय (भारतवर्ष कर्मभूमि कहलाता है) ।—**गृहीत**–(वि०) कोई कार्य करते समय पकड़ा हुआ (जैसे चोरी करते समय चोर) ।—**घात**–(पुं०) काम बंद कर देना, काम छोड़ बैठना ।—**चण्डाल**—**चाण्डाल**–(पुं०) नीच काम करने वाला, वसिष्ठ जी ने पाँच प्रकार के कर्मचाण्डाल बतलाते हैं :—असूयकः पिशुनश्च कृतघ्नो दीर्घरोषकः । चत्वारः कर्मचाण्डाला जन्मतश्चापि पञ्चमः ।।—दुस्साहस-पूर्ण या निष्ठुर काम करने वाला । राहु का नाम ।—**चारिन्** (पुं०) काम करने वाला, अहलकार ।—**चोदना**–(स्त्री०) वह हेतु या कारण जिससे प्रेरित हो कोई यज्ञानुष्ठान कर्म करे । शास्त्र की वह स्पष्ट आज्ञा या निर्देश, जिसमें किसी धार्मिक अनुष्ठान करने का अवश्य करणीय विधान वर्णित हो ।—**ज्ञ**-(वि०) धर्मानुष्ठान का विधान जानने वाला ।—**त्याग**–(पुं०) लौकिक कर्मों का त्याग ।—**दुष्ट**–(वि०) असदाचारी, दुष्ट, लंपट ।—**दोष**–(पुं०) पाप । भूल, चूक । मानवोचित कर्मों का शोच्य परिणाम । अयशस्कर आचरण ।

—धारय—(पुं०) एक प्रकार का समास, इसमें विशेषण और विशेष्य का समान अधिकरण होता है।—ध्वंस—(पुं०) किसी धर्मानुष्ठान-कर्म के फल का नाश। कर्मक्षति।—नाशा—(स्त्री०) शाहाबाद जिले की एक नदी जिसके जलस्पर्श से समस्त पुण्य का नाश हो जाता है।—निष्ठ—(वि०) धार्मिक कृत्यों के करने में संलग्न।—न्यास—(पुं०) धर्मानुष्ठानों के फल का त्याग।—पथ—(पुं०) कर्मयोग, कर्म-मार्ग (ज्ञानमार्ग का उल्टा)।—पाक—(पुं०) पूर्व जन्म में किये हुए कर्मों के फल की प्राप्ति का समय।—फल—(न०) पूर्वजन्म में किये हुए शुभाशुभ कर्मों का शुभाशुभ फल।—बंध,—बंधन—(न०) आवागमन, अथवा जन्म-मरण का बंधन।—भू,—भूमि—(स्त्री०) भारतवर्ष।—मीमांसा—(स्त्री०) कर्मकाण्ड सम्बन्धी वेदभाग पर विचार करने वाला जैमिनि द्वारा रचित शास्त्र।—मूल—(न०) कुश।—युग—(न०) कलियुग।—योग—(पुं०) कर्ममार्ग।—वज्र—(पुं०) शूद्र।—वाटी—(स्त्री०) तिथि।—विपाक—(पुं०) दे० 'कर्मपाक'।—शाला—(स्त्री०) दूकान। कारखाना।—शील,—शूर—(वि०) परिश्रमी, क्रियाशील।—सङ्ग—(पुं०) लौकिक कर्मों और उनके फलों में आसक्ति।—सचिव—(पुं०) दीवान, वजीर।—संन्यासिक,—संन्यासिन्—(पुं०) संन्यासी जिसने समस्त लौकिक कर्मों का त्याग कर दिया हो। ऐसा तपस्वी जो धार्मिक अनुष्ठान तो करे किन्तु उनके फलों की कामना न करे।—साक्षिन्—(पुं०) प्रत्यक्षदर्शी साक्षी। वह साक्षी जो जीवधारियों के शुभाशुभ कर्मों को साक्षी बनकर देखता हो। (ऐसे नौ साक्षी माने गये हैं। यथा :—सूर्यः सोमो यमः कालो महाभूतानि पञ्च च। एते शुभाशुभस्येह कर्मणो नव साक्षिणः ॥)—सिद्धि—(स्त्री०) सफलता, मनोरथ का साफल्य।—स्थान—(न०) कार्यालय, दफ्तर। कारखाना। कुंडली में लग्न से दसवाँ स्थान।—हीन—(वि०) जिससे कोई अच्छा कार्य न हो। हतभाग्य।

कर्मार—(पुं०) [कर्मन्√ऋ+अण्] कर्म-कार। कारीगर। लुहार। बाँस। कमरख।

कर्मिन्—(वि०) [कर्मन्+इनि] क्रियाशील, कार्यतत्पर। जो फल-प्राप्ति की अभिलाषा से धर्मानुष्ठान करता हो; 'कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन' भग ६.४६। (पुं०) कारीगर।

कर्मिष्ठ—(वि०) [कर्मिन्+इष्ठन्, इनो लुक्] कर्म-कुशल। कर्म-निष्ठ।

√कर्व्—भ्वा० पर० अक० अहंकार करना। (सक०) जाना। कर्वति, कर्विष्यति, अकर्वीत्।

कर्वट—(पुं०) [√कर्व्+अटन्] मण्डी अथवा किसी प्रान्त का ऐसा मुख्य नगर जिसके अन्तर्गत कम से कम २०० से ४०० तक ग्राम हों।

कर्ष—(पुं०) [√कृष्+अच् वा घञ्] तनाव, खिंचाव। आकर्षण। खेत की जुताई। हल-रेखा। बहेड़े का पेड़। खरोंच। (पुं०, (न०) १६ माशे का मान (५ रत्ती के माशे से)।

कर्षक—(वि०) [√कृष्+ण्वुल्] खींचने वाला। (पुं०) किसान।

कर्षण—(न०) [√कृष्+ल्युट्] खींचना, तानना; 'मज्यमानमतिमात्रकर्षणात्' र० ११.४६। जोतना, हल चलाना। खरोंचना। समय बढ़ाना। क्षति पहुँचाना।

कर्षिणी—(स्त्री०) [√कृष्+णिनि—ङीप्] घोड़े की लगाम। खिरनी का पेड़।

कर्षू—(स्त्री०) [√कृष्+ऊ] कृत्रिम क्षुद्र जलाशय। नदी। नहर। (पुं०) कंडों की आग। खेती। आजीविका।

कर्हि—(अव्य०) [किम्+र्हिल्, क आदेश] किस समय, कब ।—**चित्**-(अव्य०) कभी, किसी समय ।

√कल्—भ्वा० आत्म० अक० आवाज करना । (सक०) गिनती करना । कलते, कलिष्यते, अकलिष्ट । चु० उभ० सक० जाना । गिनना । कलयति-ते, कलयिष्यति-ते अचीकलत्-त । प्रेरणा करना । कालयति-ते, अचीकलत्-त ।

कल—(वि०) [√कल् वा √कड्+घञ्, अवृद्धिः, डलयोरैकत्वम्] अस्पष्ट, मधुर, धीमी और कोमल (ध्वनि) । निर्बल । कच्चा, अनपचा हुआ, अपक्व । कलहंस का शब्द करने वाला । —**अंकुर** (**कलांकुर**)-(पुं०) सारसपक्षी ।—**अनुनादिन्** (**कलानुनादिन्**)-(पुं०) गौरैया पक्षी । भ्रमर । चातक पक्षी ।—**अविकल** (**कलाविकल**)-(पुं०) गौरैया पक्षी ।—**आलाप** (**कलालाप**) (पुं०) धीमी कोमल गुनगुनाहट । मधुर एवं प्रिय सम्भाषण । भ्रमर ।—**उत्ताल** (**कलोत्ताल**)-(वि०) मधुर और ऊँचा (शब्द)। —**कण्ठ**-(वि०) मधुर कण्ठस्वर वाला ।—(पुं०) कोयल । हंस । कबूतर ।—**कल** (पुं०)-जन-समुदाय का कोलाहल । अस्पष्ट और अंडबंड शोरगुल; 'चलितया विदधे कलमेखलाकलकलोऽलकलोलदृशान्यया' शि० ६.१४ । शिव का नाम । —**कूजिका**,—**कूणिका**-(स्त्री०) निर्लज्जा स्त्री, असती स्त्री ।—**घोष**-(पुं०) कोयल ।—**तूलिका**-(स्त्री०) निर्लज्जा या रसीली स्त्री।—**धौत**-(न०) चाँदी । सोना ।—**लिपि** -(स्त्री०) सुनहले अक्षरों की लिखावट ।—**ध्वनि**-(पुं०) मधुर धीमा स्वर । कबूतर । मोर, मयूर । कोयल ।—**नाद**-(पुं०) मधुर धीमी स्वर ।—**भाषण**-(न०) बालकों की तोतली बोली ।—**रव**-(पुं०) मधुर धीमा स्वर ।—**हंस**-(पुं०) हंस, राजहंस । बत्तक । परमात्मा । उत्तम राजा ।

कलङ्क—(पुं०) [√कल्+क्विप्, कल् चासौ अंकश्च कर्म० स०] धब्बा, दाग । काला दाग । लांछन, बदनामी, अपकीर्ति । दोष, त्रुटि । लोहे का मोर्चा । गारे की कजली ।

कलङ्कष—(पुं०) [करेण कषति हिनस्ति, कल√कष्+खच्—मुम्] [स्त्री०— **कलङ्कषी**] सिंह ।

कलङ्कित—(वि०) [कलङ्क+इतच्] बदनाम । मुर्चा लगा हुआ ।

कलङ्कुर—(पुं०)[कं जलं लङ्कयति भ्रामयति, क√लङ्क्+णिच्+उरच्] पानी का भँवर, आवर्त ।

कलञ्ज—(पुं०) [कं लञ्जयति, क√लञ्ज्+अण्] पक्षी । जहरीले अस्त्र से मारा हुआ हिरन आदि जीव । तंबाकू का पौधा । (न०) जहरीले अस्त्र से मारे हुए पशु-पक्षी का मांस ।

कलत्र—(न०) [√गड्+अत्रन्, गकारस्य ककारः, डलयोरभेदः] पत्नी । कमर । शाही गढ़ ।

कलन—(न०) [√कल्+ल्युट्] धब्बा, दाग । त्रुटि, अपराध । ग्रहण, पकड़, 'कलनात्सर्वभूतानां तस्मात्कालः प्रकीर्तितः' । अवगति, समझ । रव, शब्द । गर्भ की बिलकुल पहली, शुक्र-शोणित के संयोग के बाद की अवस्था । गणित की क्रिया ।

कलना—(स्त्री०) [√कल्+युच्—टाप्] पकड़, ग्रहण । मोचन, छोड़ना । वशवर्तित्व । समझ । धारण करना, पहनना ।

कलन्दिका—(स्त्री०) [कल√दा+क+कन्—टाप्, इत्व, पृषो० मुम्] बुद्धि । प्रतिभा ।

कलभ—(पुं०) [स्त्री०—**कलभी**] [कलेन करेण शुण्डेन भाति, कल√भा+क वा√कल्+अभच्] [कलभ+ङीप्] हाथी का बच्चा । तीस वर्ष की उम्र का हाथी । ऊँट का या अन्य किसी जानवर का बच्चा । —**वल्लभ**-(पुं०) पीलु का वृक्ष ।

कलम—(पुं०) [√कल्+णिच्+अम] एक तरह का धान जिसका चावल महीन और सुगंधित होता है। नरकुल जिसकी कलम बनती है। चोर। गुंडा, बदमाश, दुष्ट। लेखनी।

कलम्ब—(पुं०) [√कल्+अम्बच्] तीर। कदम्ब वृक्ष।

कलम्बुट—(न०) [क√लम्ब्+उटन्] (ताजा) मक्खन।

कलल—(पुं०) [√कल्+कलच्] गर्भ का प्रारंभिक रूप जब वह कुछ कोषों का गोला रहता है। गर्भाशय।—**ज**-(पुं०) राल। गर्भ।

कलविङ्क (ङ्ग)-(पुं०)[कल√वङ्क्+अच्, पृषो० इत्वम्] गौरैया पक्षी। इन्द्रजौ। धब्बा, दाग। सफेद चँवर।

कलश, कलस—(पुं०, न०) [कल√शु+ड] [क√लस्+अच्] घड़ा, कलसा। चौंतीस सेर का माप।—**जन्मन्**-(पुं०) अगस्त्य का नाम।

कलशी, कलसी—(स्त्री०) [कलश—स+ङीष्] छोटा घड़ा, गगरी।—**सुत**-(पुं०) अगस्त्य ऋषि का नाम।

कलह—(पुं०, न०) [कलं कामं हन्ति अत्र, कल√हन्+ड] झगड़ा, लड़ाई-भिड़ाई। युद्ध, जंग। दावपेंच, धोखाधड़ी। आघात। प्रहार। (पुं०) नारद।—**अन्तरिता** (**कलहान्तरिता**)-(स्त्री०) प्रेमी से झगड़ा हो जाने के कारण उस अपने से वियुक्त स्त्री।—**अपहृत** (**कलहापहृत**)-(वि०) बरजोरी हरा हुआ, छीना हुआ।—**प्रिय**-(वि०) वह व्यक्ति जिसे लड़ाई-झगड़ा अच्छा लगता हो।

कला—(स्त्री०) [√कल्+अच्—टाप्] किसी वस्तु का छोटा अंश, टुकड़ा। चन्द्र-मण्डल का १६वाँ अंश। ब्याज, सूद। समयविभाग। राशि के तीसवें भाग का ६०वाँ भाग। कलाएँ चौंसठ होती हैं। यथा—१ गीत, २ वाद्य, ३ नृत्य, ४ नाट्य, ५ चित्रकारी, ६ तिलक के साँचे बनाना, ७ चावलों और फूलों का चौका पूरना, ८ फूलों की सेज बिछाना, ९ दाँतों, कपड़ों और अंगों को रँगना, १० ऋतु के अनुकूल घर सजाना, ११ पलँग बिछाना, १२ जलतरंग बजाना, १३ पिचकारी और गुलाबपाश का उपयोग, १४ चित्र इकट्ठे करना, १५ माला गूँथना, १६ सिर के बालों में फूल लगाकर गूँथना, १७ वस्त्राभूषण-धारण, १८ कानों के लिए आभूषण बनाना, १९ इत्र निकालना २० भूषणों की योजना, २१ इन्द्रजाल, २२ कुरूप को सुन्दर करना, २३ हाथ की सफाई, २४ अनेक प्रकार के भोज्य पदार्थ बनाना, २५ पीने के लिए शर्बत, अर्क तथा शराब बनाना, २६ सीना-पिरोना, २७ रफूगरी, कसीदा, २८ पहेलियाँ हल करना, २९ श्लोक का अन्तिम अक्षर लेकर उसी अक्षर से आरम्भ होने वाला दूसरा श्लोक कहना, ३० कठिन पदों का तात्पर्य निकालना, ३१ पुस्तक वाचन, ३२ नाटक देखना, ३३ काव्य-समस्या-पूर्ति, ३४ निवाड़ या बेंत से चारपाई बुनना, ३५ तर्क करना, ३६ बढ़ई, संगतराश का काम, ३७ घर बनाना, ३८ सोना, चाँदी और रत्नों की परीक्षा, ३९ मिली धातुओं को अलग-अलग करके साफ करना, ४० रत्नों के रंगों की पहचान, ४१ खानों की विद्या, ४२ वृक्षों का ज्ञान, चिकित्सा और उन्हें रोपने की विधि, ४३ मेढ़े, बटेर, बुलबुल लड़ाने की विधि, ४४ तोता-मैना पढ़ाना, ४५ उबटन लगाना और पैर, सिर आदि दबाना, ४६ बालों का मलना और तेल लगाना, ४७ अक्षरों से और मुष्टिका से बात बताना, ४८ विदेशी भाषाओं का ज्ञान, ४९ दैवी लक्षण (जैसे बादल की गरज आदि) देखकर आगामी घटना के लिए भविष्यवाणी कहना, ५० यंत्र-निर्माण, ५१ स्मरणशक्ति

बढ़ाना, ५२ दूसरे को पढ़ते हुए सुनकर उसे उसी तरह पढ़ देना ५३ दूसरे का अभिप्राय समझकर उसके अनुसार तुरन्त कविता करना, ५४ क्रिया के प्रभाव को पलटना, ५५ छल करना, ५६ अभिधानकोष-छंद-ज्ञान, ५७ वस्त्रों को हिफाजत से रखना, ५८ जुआ खेलना, ५९ पासा फेंकना, ६० बच्चों को खिलाना, ६१ विनय और शिष्टाचार, ६२ विजय-संबंधी विद्या का ज्ञान, ६३ वेतालों की विद्या का ज्ञान, ६४ कामशास्त्र का ज्ञान। चातुर्य। कपट, छल। नौका। रजोदर्शन। **—अन्तर** (**कलान्तर**) -(न०) अन्य अंश। ब्याज, सूद, लाभ। **—अयन** (**कलायन**)-(पुं०) तलवार की धार पर नृत्य करने वाला। **—आकुल** (**कलाकुल**)-हलाहल विष। **—केलि**-(वि०) विलासी, रसीला। (पुं०) कामदेव की उपाधि। **—क्षय**-(पुं०) चन्द्र का ह्रास। **—धर, —निधि, —पूर्ण, —भृत्**-(पुं०) चन्द्रमा।

कलाद, कलादक-(पुं०) [कला-आ √दा +क] [कला √अद्+ण्वुल्] सुनार।

कलाप—(पुं०) [कला√आप्+अण् वा घञ्] गट्ठा, गट्ठर। समुदाय। मयूरपुच्छ। स्त्री का इजारबंद या करधनी। आभूषण। हाथी की गरदन की रस्सी। तरकस, तूणीर। तीर, बाण। चन्द्रमा। बुद्धिमान् एवं चतुर मनुष्य। एक ही छन्द में लिखी हुई पद्य-रचना। संस्कृत का एक व्याकरण।

कलापक—(न०) [कलाप+कन्] चार श्लोकों का समूह जो किसी एक ही विषय के वर्णन में हो और जिनका एक ही अन्वय हो। [कलाप+वुन्] ऋण जिसकी अदायगी उस समय हो जिस समय मोर अपनी पूँछ फैलावे। (पुं०) [कलाप+कन्] गट्ठा, गट्ठर। मोतियों की माला। हाथी के गले की रस्सी। करधनी या कमरबंद। माथे पर का तिलक-विशेष।

कलापिन्—(पुं०) [कलाप+इनि] मोर; 'कलविलापि कलापि कदम्बकं' शि० ६.३१। कोयल। वटवृक्ष।

कलापिनी—(स्त्री०) [कलापिन् + ङीप्] मोरनी। रात। नागरमोथा।

कलाय—(पुं०) [कला√अय्+अण्] मटर, केराव (एक मोटा अन्न)।

कलाविक—(पुं०) [कलम् आविकायति विशेषेण रौति, कल—आ—वि√कै+क] मुर्गा।

कलाहक—(पुं०) [कलम् आहन्ति, कल—आ √हन्+ड+कन्] कोहिली, एक प्रकार का मुँह से बजाया जाने वाला बाजा।

कलि—(पुं०) [कलते कलेराश्रयत्वेन वर्तते, √कल्+इन्] झगड़ा, लड़ाई। युद्ध, जंग। चौथा युग यानी कलियुग। (कलियुग ४३२००० वर्ष का होता है, यह ११०२ खी० पू० वर्ष की ८वीं फरवरी को लगा था।) मूर्तिधारी कलियुग जिसने राजा नल को सताया था। किसी श्रेणी का सर्वनिकृष्ट व्यक्ति। विभीतक वृक्ष, बहेड़ा का पेड़। पासे का वह पहलू जिस पर १ अंकित हो। वीर, शूर। तीर, बाण। (स्त्री०) कली। **—कार, —कारक, —क्रिय**-(पुं०) नारद की उपाधि। **—द्रुम, —वृक्ष**-(पुं०) बहेड़े का पेड़। **—युग**-(न०) कलिकाल।

कलिका—(स्त्री०) [कलि+ कन्—टाप्] अनखिला फूल, बौड़ी। वीणा का मूल। एक छंद। [कला+कन् —टाप्, इत्व] कला, अंश, इकाई।

कलिङ्ग—(पुं०) [कलि√गम्+ड] इन्द्रयव। सिरिस। वटवृक्ष। तरबूज। एक राग। प्राचीन भारत का एक जनपद। वहाँ का निवासी। वाममार्ग में इसकी सीमा का उल्लेख इस प्रकार पाया जाता है—जगन्नाथात्स-मारभ्य कृष्णतीरान्तगः प्रिये। कलिङ्गदेशः सम्प्रोक्तो वाममार्गपरायणः॥

कलिञ्ज—(पुं०) [क √लञ्ज्+अण्, नि० साधुः] चटाई । चिक, पर्दा ।

कलित—(वि०) [√कल्+क्त] गृहीत । ज्ञात । प्राप्त । युक्त । विभूषित । गणना किया हुआ । ध्वनित । सुन्दर ।

कलिन्द—(पुं०) [कलि√दा वा √दो+खच्, मुम्] पर्वत जिससे यमुना नदी निकलती है । सूर्य ।—**कन्या**,—**जा**,—**तनया**,—**नन्दिनी**-(स्त्री०) यमुना नदी की उपाधियाँ ।

कलिल—(वि०) [√कल्+इलच्] ढका हुआ । भरा हुआ । मिला हुआ । प्रभावान्वित । अभेद्य । (न०) एक बड़ा ढेर ।

कलुष—(वि०) [क√लुष्+अण् वा √कल्+उषच्] मटीला, गँदला । छिलकादार । भरा हुआ । क्रुद्ध । दुष्ट । पापी । निष्ठुर । काला । सुस्त, आलसी । क्रोध । मैल । गंदगी । पाप । (पुं०) भैंसा ।—**योनिज**-(वि०) वर्णसङ्कर ।

कलेवर—(पुं०, न०) [कले शुक्रे वरं श्रेष्ठम्, अलुक् स०] शरीर, देह । डील, आकार ।

कल्क—(पुं०, न०) [√कल्+क] घी या तेल की तलछट, काँइट, कीट । लेही या लेही की तरह चिपकने वाला कोई पदार्थ : मैल, कूड़ा । विष्ठा । नीचता । कपट । दम्भ । पाप । पीसा हुआ चूर्ण । एक गन्धद्रव्य, तुरुष्क ।—**फल**-(पुं०) अनार का पेड़ ।

कल्कन—(न०) [कल्क+णिच्+ल्युट्] छलना, प्रवञ्चना । विवाद ।

कल्कि, कल्किन्-(पुं०) [कल्क+णिच्+इन्] [कल्क+इनि] भगवान् विष्णु का दसवाँ अथवा अन्तिम अवतार, जो पुराणों के अनुसार कलियुग के अंत में संभल (मुरादाबाद) में होगा । (मत्स्य, कूर्म, वराह, नरसिंह, वामन, परशुराम, रामचंद्र, कृष्ण, बुद्ध और कल्कि—ये दस अवतार हैं) ।

कल्प—(वि०) [√क्लृप्+अच् घञ् वा] साध्य, होने योग्य, सम्भव । उचित, ठीक, योग्य । निपुण, दक्ष । (पुं०) धर्मशास्त्र की आज्ञा, आईन । निर्दिष्ट नियम । प्रस्ताव । सूचना । निश्चय, सङ्कल्प । पद्धति, ढंग, तरीका । प्रलय । ब्रह्मा का एक दिवस अथवा १००० युगवाली काल । चिकित्सा । छः वेदाङ्गों में से वेद का एक अङ्ग ।—**अन्त** (**कल्पान्त**)-(पुं०) प्रलय काल, नाश ।—**आदि** (**कल्पादि**)-(पुं०) सृष्टि के आरम्भ काल में सब वस्तुओं का पुनः निर्माण ।—**कार**-(पुं०) कल्पसूत्र के निर्माता, (आश्वलायन, आपस्तंब, बौधायन, कात्यायन)। नाई । (वि०) सजाने-सँवारने वाला ।—**क्षय**-(पुं०) प्रलय, सर्वनाश ।—**तरु**,—**द्रुम**,—**पादप**,—**वृक्ष**-(पुं०) स्वर्ग का एक वृक्ष जो समुद्र-मंथन से निकले हुए १४ रत्नों में है और जो कुछ भी माँगिये उसे देने वाला माना जाता है । एक वृक्ष जो अफ्रीका और भारत के मद्रास, बंबई आदि प्रदेशों में होता है । (आल०) उदार वस्तु ।—**पाल**-(पुं०) मद्य-विक्रेता ।—**लता**,—**लतिका**-(स्त्री०) स्वर्गीय लता-विशेष ।—**सूत्र**-(न०) वैदिक यज्ञादि या गृहस्थ कर्मों का विधान करने वाला सूत्रग्रंथ (श्रौत गृह्य सूत्र) ।—**हिंसा**-(स्त्री०) अन्न के पीसने, पकाने आदि में होने वाली हिंसा (जैन०) ।

कल्पक—(पुं०) [√क्लृप्+णिच्+ण्वुल्] नाई । कचूर । एक संस्कार । (वि०) कल्पना करने वाला । रचने वाला । काटने वाला ।

कल्पन—(न०) [√क्लृप्+ल्युट्] बनाना । सजाना, सुव्यवस्थित करना । पूरा करना । कार्य में परिणत करना । कतरना । काटना । गाड़ना । सजाने के लिये तर-ऊपर रखना ।

कल्पना—(स्त्री०) [√क्लृप्+णिच्+युच्] बनाना, करना । तरतीब में लाना । सजाना । रचना करना । आविष्कार करना । विचार ।

मानसिक कल्पना। जाल, जालसाजी। रीति, भाँति, युक्ति।

कल्पनी—(स्त्री०) [कल्पन+ङीप्] कैंची, कतरनी।

कल्पित—(वि०) [क्लृप्+णिच्+क्त] सोचा, माना हुआ। मन से गढ़ा हुआ, फर्जी। सजाया, सँवारा हुआ।

कल्मष—(वि०) [कर्म शुभकर्म स्यति नाशयति पृषो० साधु] पापी। दुष्ट। मैला-कुचैला, गंदा। (न०) पाप; 'स हि गगनविहारी कल्मषध्वंसकारी' हि० १.२१। हाथी की पूँछ। मल। मैल। (पुं०) एक नरक। एक मास।

कल्माष—(वि०) [कलयति,√कल+क्विप्, तं माषयति अभिभवति, √माष्+णिच् + अच्, कल् चासौ माषश्च कर्म० स०] [स्त्री०—**कल्माषी**] रंग-बिरंगा, चितकबरा। सफेद और काला मिला हुआ। (पुं०) चितकबरा रंग। सफेद और काले रंगों का संमिश्रण। दैत्य, दानव।—**कण्ठ**–(पुं०) शिव की उपाधि।

कल्माषी—(स्त्री०) [कल्माष+ङीप्] काली या साँवली स्त्री। यमुना नदी का नाम।

कल्य—(वि०) [√कल+यत्] स्वस्थ, रोग-रहित। तैयार। तत्पर। चतुर। शुभ। बहरा। गूँगा। शिक्षाप्रद। (न०) तड़का, सबेरा। आने वाला अगला दिन। मदिरा। बधाई। शुभ कामना, आशीर्वाद। शुभ संवाद। —**आश** (**कल्याश**)–(पुं०),—**जग्धि**–(स्त्री०) कलेवा, सबेरे का भोजन।—**पाल**,—**पालक** (पुं०) कलार, कलवार, शराब खींचने वाला। —**वर्त**–(पुं०) कलेवा, जलपान। (न०) तुच्छ वस्तु।

कल्या—(स्त्री०) [कलयति मादयति, √कल्+णिच्+यक्—टाप्]मदिरा। बधाई। —**पाल**,—**पालक**–(पुं०) कलाल, कलवार।

कल्याण—(वि०) [कल्ये प्रातः अण्यते शब्द्यते, कल्य √अण्+घञ्] (पुं०, न०) मंगल। सुख-सौभाग्य। भलाई। अभ्युदय। सोना। स्वर्ग। शुभ कर्म। एक राग। (वि०) मंगलकारी। सुंदर। सौभाग्यशाली [स्त्री० —**कल्याणा, कल्याणी**]।—**कृत्**–(वि०) लाभदायक, शुभ। मङ्गलकारी, शुभप्रद। पुण्यात्मा।—**धर्मन्**–(वि०) पुण्यात्मा।—**वचन**–(न०) सौहार्दव्यञ्जक भाषण, शुभ कामनाएँ।

कल्याणक—(वि०)[कल्याण+कन्][स्त्री० **कल्याणिका**] शुभ। समृद्धिशाली। धन्य।

कल्याणिन्—(वि०) [कल्याण+इनि] [स्त्री०—**कल्याणिनी**] सुखी, भरा-पूरा। भाग्यशाली, धन्य। शुभ, मङ्गलकारी।

कल्याणी—(स्त्री०) [कल्याण+ङीप्] गौ, गाय।

√कल्ल्—भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना। चुप रहना। कल्लते, कल्लिष्यते, अकल्लिष्ट।

कल्ल—(वि०) [कल्लते शब्दं न गृह्णाति, √कल्ल+अच्] बहरा, बधिर।

कल्लोल—(पुं०) [√ कल्ल् + ओलच्] विशाल लहर। शत्रु। प्रसन्नता, हर्ष।

कल्लोलिनी—(स्त्री०) [कल्लोल+इनि—ङीप्] नदी, सरिता।

√कव्—भ्वा० आत्म० सक० प्रशंसा करना। वर्णन करना। चित्रण करना, चित्र बनाना। कवते, कविष्यते, अकविष्ट।

कवक—(पुं०) [√कव् + अच्+कन्] कवल, निवाला। कुकुरमुत्ता।

कवच—(पुं०, न०) [कं वातं वञ्चयति, क√वञ्च+अच्] वर्म, जिरहबख्तर। तावीज, यंत्र। ढोल। पाकर का पेड़।—**पत्र**-(न०) भोजपत्र।—**हर**(वि०) वर्म धारण किये हुए। कवच धारण करने योग्य अवस्था का।

कवटी—(स्त्री०) [√कु+अटन्—ङीप्] दरवाजे का पल्ला।

कवर, कबर—(वि०) [√कु+वरच्] [स्त्री०—**कवरा या कवरी, कबरा या कबरी**] मिश्रित, मिलाजुला । जड़ा हुआ । रंगबिरंगा । (पुं०, न०) नमक । खटाई या खट्टापन । चोटी, जूड़ा । चितकबरापन ।

कवरी, कबरी—(पुं०) [कवर+ङीष्] गुँथी हुई चोटी, चोटीबन्द; 'दधती विलोलकवरीकमाननं' उत्त० ३.४ । वन-तुलसी ।

कवल—(पुं०, न०) [क√वल्+अच्] कौर, ग्रास । कुल्ली । एक मछली ।

कवलित—(वि०) [कवल+णिच् +क्त] खाया हुआ, निगला हुआ । चबाया हुआ । ग्रहण किया हुआ, पकड़ा हुआ ।

कवाट—(न०) [कलं शब्दम् अटति, √कु+अप्, √अट्+अच् या कं वातं वटति वारयति, क√वट्+अण्] दे० 'कपाट'।

कवि—(वि०) [कव्+इन्] सर्वज्ञ, सर्ववित् । बुद्धिमान्, चतुर, प्रतिभावान् । विचारवान् । प्रशंसनीय, श्लाघ्य । (पुं०) पद्यरचना करने वाला, शायर; 'इदम् कविभ्यः पूर्वेभ्यो नमोवाकं प्रशास्महे' उत्त० १ । एक ऋषि असुराचार्य, शुक्र । आदिकवि वाल्मीकि । ब्रह्मा । सूर्य । (स्त्री०) लगाम ।—**ज्येष्ठ**-(पुं०) वाल्मीकि की उपाधि ।—**पुत्र**-(पुं०) शुक्र की उपाधि ।—**राज**-(पुं०) बड़ा शायर । एक कवि का नाम, एक पद्य-रचयिता जो राघवपाण्डवीय के नाम से प्रसिद्ध है ।

कविक—(पुं०) [कवि+कन्] लगाम । कवि, शायर ।

कविका—(स्त्री०) [कविक+टाप्] लगाम, खलीन । केवड़ा । एक मछली ।

कविता—(स्त्री०) [कवेर्भावः, कवि+तल्-टाप्] पद्यरचना, रसात्मक छंदोबद्ध रचना ।

कविय, कवीय—(न०) [कं सुखम् यजति, क√ यज् +क, यजः स्थाने वी आदेशः, इयङ्] [कवि+छ— ईय] लगाम ।

कवोष्ण—(वि०) [कुत्सितम् ईषत् उष्णम् कर्म० स०, कोः कवादेशः] गुनगुना, कुछ-कुछ गर्म ।

कव्य—(न०) [कूयते हीयते पितृभ्यः यत् अन्नादिकम्, √कु+यत्] पितरों के लिए तैयार किया हुआ अन्न (देवताओं के लिए तैयार किया हुआ अन्न हव्य कहलाता है) (वि०) [कवि+यत्] स्तुति या प्रशंसा करने वाला । (पुं०) वेदोक्त पितृलोक-विशेष ।—**वाह्**,—**वाह**, —**वाहन**-(पुं०) अग्नि ।

√कश्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना । कशति, कशिष्यति, अकशीत्— अकाशीत् ।

कश—(पुं०) [कशति शब्दायते ताडयति वा, √कश्+अच्] कोड़ा, चाबुक ।

कशा—(स्त्री०) [कश+टाप्] चाबुक, कोड़ा । कोड़े मारना, डोरी, रस्सी ।

कशिपु—(पुं०, न०) [कशति दुःखं कश्यते वा, मृगय्वादित्वात् निपातनात् साधुः] चटाई । तकिया । बिस्तर, शय्या । (पुं०) भोजन । परिच्छद, वस्त्र । भोजन-वस्त्र ।

कशेरु, कसेरु—(पुं०, न०) [क दे शीर्यते वा कं जलं वातं वा शृणाति, क√शृ+उ, एरुङादेश] [√कस्+एरुन्] मेरुदण्ड-अस्थि, पीठ के बीच की हड्डी । एक घास या जल में उत्पन्न होने वाला एक मूल जिसे कसेरू कहते हैं ।

कश्मल—(वि०) [√कश्+कल, मुट्] गंदा, मैला । लज्जाकर, घृणित । (न०) मन की उदासी; 'कुतस्त्वा कश्मलमिदं विषमे समुपस्थितं' भग० २.२ । मोह । पाप । मूर्च्छा ।

कश्मीर—(पुं०) [√कश्+ईरन्, मुट्] भारत के पश्चिमोत्तर कोण में स्थित एक सुंदर पहाड़ी प्रदेश । तंत्र ग्रन्थानुसार इस देश की सीमा यह है।—'शारदामठमारभ्य कुंकुमाद्रितटान्तकः । तावत्कश्मीरदेशः स्यात् पञ्चाशद्योजनात्मकः ॥ —**ज**,—**जन्मन्**-(पुं०, न०) केसर, जाफ़रान ।

कश्य—(वि०)[कशाम् अर्हति, कशा+य] चाबुक लगाने योग्य। (न०) शराब, मदिरा, मद्य।

कश्यप—(पुं०) [कश्यं सोमरसादिजनितं मद्यं पिबति, कश्य√पा+क] एक ऋषि जिनकी विभिन्न पत्नियों से सुर, असुर आदि संपूर्ण प्राणियों की उत्पत्ति मानी जाती है। सप्तर्षिमंडल का एक तारा। कछुवा। एक तरह की मछली। एक तरह का हिरन। **–नन्दन**– (पुं०) गरुड़। देव, असुर आदि।

√**कष्**—भ्वा० पर० सक० मलना। खरोंचना। छीलना। जाँचना, परीक्षा लेना। (कसौटी पर रगड़ कर) परीक्षा लेना। घायल करना। नष्ट करना। खुजलाना। कषति, कषिष्यति, अकषीत्—अकाषीत्।

कष—(वि०) [कषति अत्र अनेन वा, √कष् +अच् वा√कष्+घ नि०] रगड़ा हुआ, खुरचा हुआ। (पुं०) रगड़। कसौटी का पत्थर। परीक्षा।

कषण—(न०) [√कष्+ल्युट्] रगड़ना। चिह्न करना। छीलना। कसौटी पर कसना।

कषा—[कष्यते ताड्यते अनया, √कष्+अप् (बा०)—टाप्] दे० 'कशा।'

कषाय—(वि०) [कषति कण्ठम्, √कष्+ आय] कडुआ, कसैला। सुगन्धित। कलौंहा लाल। मधुर स्वर वाला। भूरा। अनुचित। मैला। (पुं० न०) कसैला या कडुवा स्वाद या रस। लाल रङ्ग। काढ़ा। लेप, उबटन। तेल, फुलेल लगाकर शरीर को सुवासित करना। गोंद, राल। मैल। सुस्ती। मूढ़ता। सांसारिक पदार्थों में अनुराग या अनुरक्ति। (पुं०) अत्यासक्ति। कलियुग।

कषायित—(वि०) कषाय: रक्तपीतादिवर्णः संजातोऽस्य, कषाय+इतच्] रंगीन, रंजित; 'अमुनैव कषायितस्तनी' कु० ५.३४। भावान्तरित, विकृत।

कषि—(वि०) [कषति हिनस्ति √कष+ इ] हानिकर, अनिष्टकर, क्षतिजनक।

कषेरुका, कसेरुका—(स्त्री०) [√कष् वा√ कस् + एरुक् + उत्व + कन्–टाप्] पीठ के बीच की हड्डी, मेरुदण्ड, रीढ़।

कष्ट—(वि०) [√कष्+क्त] बुरा, खराब। पीड़ाकारक, सन्तापकारी। क्लिष्ट, कठिनाई से वश में होने वाला। उपद्रवी, अनिष्टकारी, अशुभ बतलाने वाला। (न०) पीड़ा, व्यथा। पाप। दुष्टता। कठिनाई। मुसीबत। श्रम। (अव्य०) हाय! हन्त! **—आगत** (कष्टागत)–(वि०) कठिनाई से प्राप्त या कठिनाई से आया हुआ। **—कर**(वि०) पीड़ाकारक, दुःखमय। **—तपस्**–(वि०) कठोर तप करने वाला। **—साध्य**–(वि०) कठिनाई से पूरा होने वाला। **—स्थान**– (न०) दूषित जगह, कठिनाई का या अप्रिय या प्रतिकूल स्थान।

कष्टि—(स्त्री०) [√कष+क्तिन्] जाँच, परीक्षा। पीड़ा, दुःख।

√**कस्**—भ्वा० पर० सक० जाना। कसति, कसिष्यति, अकसीत्— अकासीत्।

कस्तीर—(पुं० न०) [क√तॄ+अच्, नि० सुट्] राँगा। टीन।

कस्तुरिका, कस्तूरिका, कस्तूरी—(स्त्री०) [कस्तूरी + कन्–टाप्, पृषो० साधुः] [कस्तूरी+कन्–टाप्, ह्रस्व] [कसति गन्धोऽस्याः, √कस्+ ऊर, तुट्—ङीप्] एक सुगन्धित पदार्थ जो एक तरह के नर हिरन की नाभि के पास की गाँठ में पैदा होता है और दवा के काम में आता है। मुश्क, कस्तूरी।—**मृग**–(पुं०) वह हिरन जिसकी नाभि से कस्तूरी निकलती है।

कह्लार—(न०) [के जले ह्लादते, क√ह्लाद् +अच्, पृषो० दस्य रः] सफेद कमल।

कह्व —(पुं०) [के जले ह्वयति शब्दायते स्पर्धते

वा, क√ड्वे+क] बगला। एक प्रकार का सारस।

कांसीय—(न०) [कंस+छ—ईय+अण्] जस्ता।

कांस्य—(वि०) [कंस+ञ्य वा कंस+छ—ईय+यत्, छलोप] काँसे या फूल का बना हुआ। (न०) फूल, काँसा। काँसे का घड़ियाल। पीतल का बना जल पीने का पात्र, गिलास।—**कार**-(पुं०) कसेरा, काँसे का बरतन बनाने वाला।—**ताल**-(पुं०) झाँझ, मजीरा।—**भाजन**-(न०) काँसे का पात्र। —**मल**-(न०) कसाव, ताँबे-पीतल आदि का मोर्चा, तिराई।

काक—(पुं०) [√कै +कन्] कौवा। (आल०) तुच्छ जन, नीच, निर्लज्ज या उद्धत पुरुष। लँगड़ा आदमी। जल में केवल सिर भिगोकर (काक की तरह) स्नान करना। (न०) कौओं का झुंड।—**अक्षिगोलकन्याय** (**काकाक्षिगोलक०**)-(पुं०) कौए की एक ही आँख की पुतली दोनों नेत्रों में चली जाती है, इसी प्रकार उभय सम्बन्धी दृष्टान्त। —**अरि** (**काकारि**)-(पुं०) उल्लू, उलूक। —**उदर** (**काकोदर**)-(पुं०) साँप।—**उलूकिका,—उलूकीय** (**काकोलूकिका**), (**काकोलूकीय**)- (न०) काक और उलूक का स्वाभाविक वैर। पंचतंत्र के तीसरे तंत्र का नाम 'काकोलूकीयम्' है।—**चिञ्चा**-(स्त्री०) गुञ्जा या घुँघची का झाड़।—**छद** (**काकच्छद**),—**छदि** (**काकच्छदि**- (पुं०) खंजन पक्षी। जुल्फ, अलक।—**जात**-(पुं०) कोकिल।—**तालीय**-(वि०) अचानक या इत्तिफाकिया होने वाला; 'अहो न खलु भोः तदेतत् काकतालीयं नाम' माल० ५। —**तालुकिन्**-(वि०) तिरस्करणीय, दुष्ट। —**दन्त**-(पुं०)कौए के दाँत। (आल०)कोई वस्तु जिसका अस्तित्व असम्भव हो, अनहोनी बात।—**दन्तगवेषण**-(न०) ऐसी बात की खोज जो सर्वथा असम्भव हो, व्यर्थ का काम ऐसा काम जिसके करने में कुछ भी लाभ न हो।—**ध्वज**-(पुं०) वाडवानल।—**निद्रा**-(स्त्री०) झपकी जो तुरन्त दूर हो जाय।—**पक्ष,—पक्षक**-(पुं०) एक प्रकार की जुल्फें, पट्टे; बालकों की दोनों कनपटियों के लंबे बालों को काकपक्ष कहते हैं।—**पद**-(न०) छूट का यह (‸) चिह्न। (हस्तलिखित पुस्तक या किसी लेख में जहाँ यह चिह्न लगा हो वहाँ समझ लें कि यहाँ कुछ छूट गया है।) (पुं०) स्त्री-समागम का एक ढंग।—**पीलु**-(पुं०) कुचला।—**पुच्छ, —पुष्ट**-(पुं०) कोकिल, कोयल।—**पेय**-(वि०) छिछला, उथला।—**फल**-(पुं०) नीम का पेड़।—**फला**-(स्त्री०) बन-जामुन।—**बन्ध्या** (**वन्ध्या**)-(स्त्री०) एक बच्चा जनकर बाँझ हो जाने वाली स्त्री।—**बलि**-(पुं०) श्राद्ध आदि में कौए के लिये निकाला जाने वाला अन्न।—**भीरु**-(पुं०) उल्लू, उलूक।—**यव**-(पुं०) अनाज की बाल जिसमें दाना न हो। —**रुत**-(न०) कौए की काँव-काँव जिससे भविष्यद् के शुभाशुभ का ज्ञान होता है। —**रुहा**-(स्त्री०) पेड़ों के सहारे जीने वाला पौधा। —**शीर्ष**- (पुं०) वकवृक्ष, अगस्त का पेड़।—**स्वर**-(पुं०) कौए की कर्णकटु बोली।

काकी—(स्त्री०) [काक+ङीष्] मादा कौआ। वायसी लता।

काकल, काकाल—(पुं०) [का इत्येवं कलो यस्य ब० स०] [का इति शब्दं कलति रौति, का√कल् + अण्] द्रोणकाक, पहाड़ी कौआ। (काकल न०) [ईषत् कलो यस्मात्, कोः कादेशः] कंठमणि।

काकलि, काकली-(स्त्री०) [√कल+इन् कलिः, कु ईषत् कलिः कोः कादेशः] [काकलि+ङीष्] धीमा मधुर स्वर; 'अनुबद्धमुग्धकाकलीसहितं' उत्त० ३।

एक यन्त्र या बाजा जिससे चोर यह जानने का यत्न किया करते हैं कि लोग जगते हैं या सोते हैं। कंघी। गुञ्जा का झाड़।—रव-(पुं०) कोकिल।

काकिणिका, काकिणी-(स्त्री०) [काकिणी+कन्—टाप्, ह्रस्व] [ककते गणनाकाले चञ्चलीभवति, √ कक् + णिनि—ङीप् पृषो० नस्य णः] कौड़ी। एक सिक्का जो चौथाई पण या २० कौड़ियों के बराबर होता है। चौथाई माशा। माप का एक अंश। तराजू की डंडी। अठारह इंच या आधगज।

काकिनी—(स्त्री०)[√कक्+णिनि—ङीप्] दे० 'काकिणी।'

काकु—(स्त्री०) [√कक्+उण्] वक्रोक्ति। भय, क्रोध, शोक के आवेश में स्वर की विकृति या परिवर्तन। अस्वीकारोक्ति को इस ढंग से कहना कि सुनने वाले को वह स्वीकारोक्ति जान पड़े। गुनगुनाहट। जिह्वा।

काकुत्स्थ—(पुं०) [ककुत्स्थ+अण्] ककुत्स्थ राजा के वंशधर, सूर्यवंशी राजाओं की एक उपाधि।

काकुद—(न०) [काकुं ध्वनिभेदं ददाति, काकु√ दा+क] तालू, तलुआ, जिह्वा का आश्रयस्थान।

काकोल—(पुं०) [√कक्+णिच्+ओल वा क√कुल्+घञ् कोः कादेशः] काला कौआ, पहाड़ी काक। सर्प। शूकर। कुम्हार। नरक-भेद।

काक्ष—(पुं०) [कुत्सितम् अक्षं यत्र, कोः कादेशः] तिरछी चितवन, कनखिया देखना। (न०) चढ़ी हुई त्योरी। ऐसे देखना जिससे आन्तरिक अप्रसन्नता प्रकट हो; "काक्षेणानादरेक्षितः" भट्टि ५.२८।

काक्षीव—(पुं०) [ईषत् क्षीवति अस्मात्, √क्षीव+घञ्, कादेशः] सहिजन का पेड़।

√काङ्क्ष्—भ्वा० उभ० सक० इच्छा करना, चाहना। आशा करना, प्रतीक्षा करना। काङ्क्षति-ते, काङ्क्षिष्यति-ते, अकाङ्क्षीत्—अकाङ्क्षिष्ट।

काङ्क्षा—(स्त्री०) [√काङ्क्ष्+अ—टाप्] कामना, इच्छा। प्रवृत्ति, झुकाव।

काङ्क्षिन्—(वि०) [√काङ्क्ष् +णिनि] [स्त्री०—**काङ्क्षिणी**] इच्छा करने वाला, अभिलाषी।

काच—(पुं०) [√कच्+घञ्, कुत्वाभाव] काच, शीशा। फाँसा, फंदा। लटकने वाली अलमारी का खाना। जुए की रस्सी। एक नेत्र-रोग। मोम। खारी मिट्टी।—**घटी**-(स्त्री०) झारी, लोटा जो काच का बना हो।—**भाजन**-(न०) शीशे का पात्र।—**मणि**-(पुं०) स्फटिक।—**मल**, —**लवण**—**सम्भव**-(न०) काला नमक या सोडा।

काचक—(पुं०) [काच+कन्] शीशा। पत्थर।

काचन, काचनक-(न०) [√कच+णिच् +ल्युट्] [काचन+कन्] डोरी या फीता जो बंडल लपेटने या कागजों को नत्थी करने के काम में आवे।

काचनकिन्—(पुं०)[काचनक+इनि]पोथी, पत्रा। हस्तलिखित ग्रन्थ।

काचूक—(पुं०) [√कच्+ऊकञ् (बा०)] मुर्गा। चक्रवाक, चकवा।

काजल—(न०) [ईषत् वा कुत्सितं जलम्, कोः कादेशः] स्वल्प जल। दूषित जल।

√काञ्च्—भ्वा० आत्म० अक० चमकना, (सक०) बाँधना। काञ्चते, काञ्चिष्यते, अकाञ्चिष्ट।

काञ्चन—(वि०) [काञ्चन+अण्] [स्त्री०—**काञ्चनी**] सुनहला या सोने का बना हुआ। (न०) [√काञ्च्+ल्यु] सोना, सुवर्ण। चमक, दमक। सम्पत्ति, धनदौलत। कमल का रेशा। (पुं०) धतूरे का पौधा। चम्पा का पौधा।—**अङ्गी** (काञ्चनाङ्गी)-(स्त्री०)

सुनहले रंग की स्त्री।—**कन्दर**–(पुं०) सोने की खान।—**गिरि**–(पुं०) सुमेरु पर्वत।—**भू**–(स्त्री०) पीली मिट्टी वाली ज़मीन। सुवर्णरज।—**सन्धि**–(पुं०) दो पक्षों के बीच हुई ऐसी सन्धि या सुलह जिसमें उभय पक्ष के लिये समान शर्तें हों।

काञ्चनार, काञ्चनाल–(पुं०) [काञ्चन√ऋ+अण्] [काञ्चन√अल+अण्] कोविदार या कचनार का पेड़।

काञ्चि, काञ्ची–(स्त्री०) [काञ्च्+इन्] [काञ्चि+ङीप्] करधनी जिसमें रौने या घुँघुरु लगे हों, कवनी करधनी। दक्षिण भारत की स्वनाम-प्रसिद्ध एक नगरी जिसकी गणना सप्त मोक्षपुरियों में है. आधुनिक काँजीवरम् नगर।—**पद**–(न०) कुल्हा और कमर।

काञ्जिक—(न०) [कुत्सिता अञ्जिका प्रकाशो यस्य कु√अञ्च्+ण्वुल्–टाप्, ह्रस्व, कोः कादेशः] धान्याम्ल,काँजी, एक खट्टा पेय।

काटुक—(न०) [कटुकस्य भावः, कटुक+अण्] खटाई, खट्टापन।

काठ—(पुं०) [√कठ् + घञ्] चट्टान, पत्थर।

काठिन, काठिन्य–(न०) [कठिन+अण्] [कठिन+ष्यञ्] कड़ाई, कड़ापन। निष्ठुरता, कठोरता।

काण—(वि०) [√कण्+घञ्] काना। छेद किया हुआ। फूटी (कौड़ी)। यथा—'प्राप्तः काणवराटकोपि न मया तृष्णेऽधुना मुञ्च माम्।'

काणेय, काणेर–(पुं०) [काणा+ढक्—एय] [काणा+ढक्] कानी स्त्री का पुत्र।

काणेली—(स्त्री०) [काण√इल्+अच्–ङीप्] असती या व्यभिचारिणी स्त्री। अविवाहिता स्त्री।—**मातृ**–(पुं०) अविवाहिता स्त्री का पुत्र। छिनाल स्त्री का पुत्र: 'काणेलीमातःअस्ति किञ्चिच्चिह्नं यदुपलक्षयसि' मृच्छ०१।

काण्ड—(पुं०, न०) [√कण्+ड, दीर्घ] भाग, अंश। एक पोर से दूसरे पोर तक का किसी पोरदार पौधे का भाग। पेड़ का तना। किसी ग्रंथ का एक भाग। विभाग। गुच्छा। तीर। लंबी हड्डी। बेंत। डंडा। जल। अवसर, मौका। खास जगह। समूह। खुशामद। एक माप।—**कटुक**–(पुं०) करेला।—**कार**–(पुं०) तीर बनाने वाला। (न०) सुपारी का पेड़।—**गोचर**–(पुं०) लोहे का तीर।—**पट,—पटक**–(पुं०)कनात, पर्दा।—**पात**–(पुं०) तीर की उड़ान या वह स्थान जहाँ तक तीर जा सके।—**पृष्ठ**-(पुं०)सैनिक, शस्त्रजीवी। वेश्या स्त्री का पति। दत्तक पुत्र या औरस पुत्र से भिन्न कोई पुत्र (यह गाली देने में प्रयुक्त होता है)। कमीना, नमकहराम। महावीर-चरित्र में जामदग्न्य को शतानन्द ने काण्डपृष्ठ कहा है—'स्वकुलं पृष्ठतः कृत्वा यो वै परकुलं व्रजेत्। तेन दुश्चरितेनासौ काण्डपृष्ठ इति स्मृतः॥—**भङ्ग**–(पुं०)हड्डी का टूटना या किसी शरीरावयव का भङ्ग होना।—**वीणा**–(स्त्री०) चंडालवीणा, बेंतों का बना एक बाजा।—**सन्धि**–(पुं०) गाँठ।—**स्पृष्ट**–(पुं०) योद्धा, सैनिक।—**हीन**–(न०) भद्रमुस्ता, एक प्रकार का मोथा। (पुं०) लोध्र, लोध।

काण्डवत्—(पुं०) [काण्ड + मतुप्—व] धनुषधारी।

काण्डीर—(पुं०) [काण्ड—ईरन्] धनुषधारी। अपामार्ग।

काण्डोल—[कण्डोल+अण्] नरकुल की बनी डलिया या टोकरी।

कात्—(अव्य०) [कुत्सितम् अतति अनेन, कु√अत्+क्विप्, कोः कादेशः] गाली, तिरस्कारव्यञ्जक शब्द। प्रायेण इसका प्रयोग 'कृ' के साथ ही होता है (कात्कृ): 'यन्मर्मस्पर्शमत्तेन गुरुः सदसि कात्कृतः'।

कातर—(वि०) [ईषत् तरति स्वयं कार्यं कर्तुं

शक्नोति, कु√तृ+अच् , कोः कादेशः] भीरु, डरपोक, उत्साहहीन। दुःखित, शोकान्वित। भीत। घबड़ाया हुआ, विकल, व्याकुल। भय से विह्वल या भय के कारण थरथराता हुआ।

कातर्य—(न०) [कातर+ष्यञ्] भीरुता, डरपोकपना।

कात्यायन—(पुं०) [कतस्य गोत्रापत्यम्, कत+यञ्+फक्–आयन] कत गोत्र में उत्पन्न पुरुष। पाणिनीय सूत्रों पर वार्तिक लिखने वाले वररुचि। विश्वामित्र के वंशज एक ऋषि जिन्होंने श्रौतसूत्र, गृह्यसूत्र आदि की रचना की है।

कात्यायनी—(स्त्री०) [कात्यायन– ङीप्] कत गोत्र में उत्पन्न स्त्री। याज्ञवल्क्य की एक पत्नी। वृद्ध या अधेड़ विधवा (जो लाल वस्त्र पहनती हो)। पार्वती। **—पुत्र,—सुत**–(पुं०) कार्त्तिकेय का नाम।

कार्थचित्क—(वि०) [कथञ्चित्+ठक्] [स्त्री०—**कार्थचित्की**] जो कठिनाई से पूर्ण हुआ हो।

काथिक—(पुं०) [कथा–ठक्] कहानी कहने वाला।

कादम्ब—(पुं०) [कदम्ब+अण्] कलहंस। तीर। गन्ना। कदम्ब का पेड़। (न०) कदम्ब के फूल।

कादम्बर—(न०) [कादम्ब√ला+क, लस्य रः] कदम्ब के फूलों की शराब; 'निषेव्य मधुमाधवाः सरसमत्र कादम्बरं' शि० ४.६६। गुड़। दही की मलाई।

कादम्बरी—(स्त्री०) [कु कृष्णवर्णं नीलवर्णम् अम्बरं यस्य ब० स० कोः कदादेशः, कदम्बरो बलरामः तस्य प्रिया, कदम्बर+अण्–ङीप्] कदम्ब के फूलों से खींची हुई मदिरा। मदिरा, शराब। हाथी की कनपटी से चूने वाला मद। सरस्वती। मादा कोकिल। मैना। बाणभट्ट-रचित प्रसिद्ध गद्यकाव्य और उसकी नायिका। गड्ढों में एकत्र वर्षा का जल।

कादम्बिनी—(स्त्री०) [कादम्बाः कलहंसाः सन्ति अस्याम्, कादम्ब + इनि–ङीप्] बादलों की लंबी पंक्ति, मेघमाला। एक रागिनी।

कादाचित्क—(वि०) [कदाचित्+ठञ्] जो कभी हो, इत्तिफाकिया।

काद्रवेय—(पुं०) [कद्रोः अपत्यम्, कद्रु+ढक्] कद्रु के पुत्र—शेष, अनन्त, वासुकि आदि सर्प।

कानक—(न०) [कनक+अण्] जमालगोटा।

कानन—(न०) [√कन्+णिच्+ल्युट्] जङ्गल, वन। घर, मकान। **—अग्नि** (**काननाग्नि**)–(पुं०) दावानल। **—ओकस्** (**काननौकस्**)– (पुं०) वनवासी। बानर।

कानिष्ठिक—(न०) [कनिष्ठिका+अण्] छगुनिया, सबसे छोटी हाथ की उँगली।

कानिष्ठिनेय—(पुं०) [कनिष्ठा+ढक्, इनङ् आदेश] सबसे छोटे बच्चे (लड़की) की सन्तान।

कानीन—(पुं०) [कन्यायाः जातः, कन्या+अण्, कानीन आदेश] अविवाहिता स्त्री से उत्पन्न पुत्र। व्यास। कर्ण।

कान्त—(वि०) [√कन्+क्त वा √कम्+क्त] प्रिय, इष्ट, प्यारा। मनोहर, सुन्दर। (पुं०) प्रेमी, आशिक। पति। प्रेमपात्र, माशूक; 'कान्तोदन्तः सुहृदुपगतः सङ्गमात्किञ्चिदूनः' मे० १००। चन्द्रमा। वसन्तऋतु। एक प्रकार का लोहा। रत्नविशेष। कार्त्तिकेय। विष्णु। शिव। कामदेव। चक्रवाक। श्रीकृष्ण। कुंकुम। **—पक्षिन्**–(पुं०) मोर, मयूर। **—लोह**–(न०) चुम्बक पत्थर।

कान्ता—(स्त्री०) [√कम् + क्त–टाप्] माशूका या प्रेमपात्री सुन्दरी स्त्री। पत्नी, भार्या। प्रियङ्गु बेल। बड़ी इलायची। पृथिवी। **—अङ्घ्रिदोहद** (**कान्ताङ्घ्रिदोहद**)– (पुं०) अशोकवृक्ष।

कान्तार--(पुं०, न०) [कान्त√ऋ+अण्] विशाल बियाबान, निर्जन वन। खराब सड़क। रन्ध्र, छेद। गड्ढा। (पुं०) लाल रङ्ग के गन्नों की अनेक जातियाँ। तिन्दुक, पहाड़ी आबनूस।

कान्ति--(स्त्री०) [√कम् +क्तिन्] मनोहरता, सौन्दर्य। शोभा, दीप्ति, आब। व्यक्तिगत शृङ्गार। कामना, इच्छा, चाह। अलङ्कार शास्त्र में प्रेम से बढ़ी हुई सुन्दरता। साहित्य-दर्पणकार ने, 'कान्ति' 'शोभा' और 'दीप्ति' में इस प्रकार अन्तर बतलाया है—'रूपयौवनलालित्यं भोगाद्यैरङ्गभूषणम्। शोभा प्रोक्ता सैव कान्तिर्मन्मथाप्यायिता द्युतिः। कान्तिरेवातिविस्तीर्णा दीप्तिरित्यभिधीयते॥' मनोहर मनोनीत स्त्री। दुर्गा की उपाधि।—कर-(वि०) सौन्दर्य लानेवाला, शोभा बढ़ाने वाला।—द-(वि०) सौन्दर्यप्रद, शोभाजनक। (न०) पित्त। घी।—**दायक,—दायिन्**-(वि०) शोभा देनेवाला।—**भृत्**-(पुं०) चन्द्रमा।

कान्तिमत्--(वि०)[कान्ति+मतुप्] कान्तियुक्त, मनोहर, सुन्दर। (पुं०) चन्द्रमा। कामदेव।

कान्दव—(न०) [कन्दु+अण्] लोहे की कढ़ाई या चूल्हे में भुनी हुई कोई वस्तु।

कान्दविक—(पुं०) [कान्दव+ठक्] नानबाई, हलवाई।

कान्दिशीक—(वि०) ['कां दिशं यामि' इत्येवं वादिनोऽर्थे ठक्, पृषो० साधुः] भगोड़ा, भाग जाने वाला; 'मृगजनः कान्दिशीकः संवृत्तः' पं० १.२। भयभीत, डरा हुआ।

कान्यकुब्ज—(पुं०) [कन्याः कुब्जाः यत्र, कन्याकुब्ज+अण्, पृषो० साधुः] एक देश का नाम, कन्नौज। ब्राह्मण-भेद।

कापटिक—(वि०) [कपट+ठक्][स्त्री०—**कापटिकी**] धोखेबाज, जालसाज। दुष्ट। (पुं०) चापलूस, खुशामदी।

कापट्य— (न०) [कपट+ष्यञ्] दुष्टता। जालसाजी, धोखा, छल, कपट।

कापथ—(पुं०) [कुत्सितः पन्थाः कु० स०, समासान्त अच्, कादेशः] खराब सड़क।

कापाल, कापालिक--(पुं०) [कपाल+अण्] [कपाल+ठक्] शैव सम्प्रदाय के अन्तर्गत एक उपसम्प्रदाय। इस सम्प्रदाय के लोग अपने पास खोपड़ी रखते हैं और उसी में रींध कर या रख कर खाते हैं, वामाचारी। एक प्रकार का कोढ़।

कापालिन्—(पुं०) [कपाल+अण् (स्वार्थ) +इनि] शिव का नाम।

कापिक—(वि०) [कपि+ठक्] [स्त्री०—**कापिकी**] वानर जैसी शकल का या वानर की तरह आचरण करने वाला।

कापिल—(वि०) [कपिल+अण् (स्वार्थ)] [स्त्री०—**कापिली**] कपिल का या कपिल संबंधी। कपिल द्वारा पढ़ाया हुआ या कपिल से निकला हुआ। (पुं०) कपिल के सांख्यदर्शन को मानने वाला या उसका अनुयायी। भूरा रंग।

कापिश—(न०) [कपिशा माधवी तत्पुष्पात् जातम्, कपिशा+अण्] माधवी के फूलों की शराब। मद्यमात्र।

कापिशायन—(न०) [कापिशी+ष्फक्] मद्य। मधु। देवता।

कापिशी—(स्त्री०) [कपिश+अण्—ङीप्] एक स्थान जहाँ शराब अच्छी बनती थी।

कापुरुष—(पुं०) [कुत्सितः पुरुषः, कु० स०, कोः कादेशः] नीच या ओछा जन। डरपोक या दुष्ट जन; 'सुसन्तुष्टः कापुरुषः स्वल्पेनापि तुष्यति' पं० १.२५।

कापेय—(वि०) [कपि+ढक्] वानर की जाति का। वानर जैसी चेष्टा करने वाला। (न०) बंदरों की घुड़की आदि।

कापोत—(वि०) [कपोत+अण्] धूसर वर्ण का। (पुं०) धूसर वर्ण। [स्त्री०—**कापोती**] (न०) कबूतरों का गिरोह। सुर्मा।—**अञ्जन**

(**कापोताञ्जन**)–(न०) आँख में लगाने का सुर्मा ।

काप्यकार—(पुं०) [कुत्सितमाप्यं काप्यं पापं करोति धातूनामनेकार्थत्वात् कथयति इति√कृ+ट्] अपने पापों को स्वीकार करने वाला ।

काम्—(अव्य०) किसी को बुलाने में प्रयोग होने वाला अव्यय ।

काम—(पुं०) [√कम्+णिङ् + घञ्] कामना, अभिलाषा । अभिलषित वस्तु । स्नेह, प्रेम । एक पुरुषार्थ । स्त्री-सम्भोग की कामना या स्त्रीसम्भोग का अनुराग, मैथुनेच्छा । कामदेव । प्रद्युम्न का नाम । बलराम का नाम । एक प्रकार का आम का पेड़ । (न०) [√कम्+णिङ्+घञ्] इष्ट वस्तु, अभीष्ट पदार्थ । वीर्य, धातु ।—**अग्नि** (**कामाग्नि**)–(पुं०) प्रेम की आग या सरगर्मी, उत्कट प्रेम ।—**अङ्कुश** (**कामाङ्कुश**)-(पुं०) नख, नाखून । जननेन्द्रिय, लिङ्ग ।—**अङ्ग** (**कामाङ्ग**)–(पुं०) आम का पेड़ ।—**अन्ध** (**कामान्ध**) –(पुं०) कोकिल ।—**अन्धा** (**कामान्धा**)–(स्त्री०) कस्तूरी ।—**अन्निन्** (**कामान्निन्**) –(वि०) मनोभिलषित भोजन जब चाहे तब पाने वाला ।—**अभिकाम** (**कामाभिकाम**) –(वि०) कामुक, लंपट ।—**अरण्य** (**कामारण्य**)–(न०) मनोहर उपवन या सुन्दर उद्यान । —**अरि** (**कामारि**)–(पुं०) शिव ।—**अर्थिन्** (**कामार्थिन्**)–(वि०) कामुक ।—**अवतार** (**कामावतार**)– (पुं०) प्रद्युम्न का नाम ।—**अवसाय** (**कामावसाय**) (पुं०) दुःख-सुख की ओर से उदासीनता । —**अशन** (**कामाशन**)–(न०) इच्छानुसार खाना । असंयत भोग-विलास ।—**आतुर** (**कामातुर**)–(वि०) प्रेम के कारण बीमार, कामवेग से बेहाल ।—**आत्मज** (**कामात्मज**) –(पुं०) प्रद्युम्न-पुत्र अनिरुद्ध की उपाधि । —**आत्मन्** (**कामात्मन्**)–(वि०) कामुक, कामासक्त, प्राशिक ।—**आयुध** (**कामायुध**) –(न०) कामदेव के बाण । जननेन्द्रिय । (पुं०) आम का पेड़ ।—**आयुस्** (**कामायुस्**)–(पुं०) गीध, गिद्ध । गरुड़ ।—**आर्त** (**कामार्त**)–(पुं०) कामपीड़ित,प्रेमविह्वल; 'कामार्ता हि प्रकृतिकृपणाश्चेतनाचेतनेषु, मे० ५ ।—**आसक्त** (**कामासक्त**)–(वि०) कामी, कामुक, प्रेम में विह्वल ।—**ईप्सु** (**कामेप्सु**)–(वि०) अभीष्ट वस्तु के लिये प्रयत्नवान् ।—**ईश्वर** (**कामेश्वर**)–(पुं०) कुबेर की उपाधि । परब्रह्म ।—**उदक** (**कामोदक**)– (न०) स्वेच्छापूर्वक जलदान । सगोत्र या जो तर्पण के अधिकारी हैं, उनसे भिन्न किसी का जलतर्पण करना ।—**उपहत** (**कामोपहत**) –(वि०) काम-पीड़ित ।—**कला**-(स्त्री०) काम की स्त्री रति का नाम । काम का उद्दीपन । मैथुन । एक तंत्रोक्त विद्या । रति-सुख-वर्धन करने वाली कला ।—**कामिन्**-(वि०) कामना का अनुसरण करने वाला 'स शान्तिमाप्नोति न कामकामी' भग०।—**कूट**– (पुं०) वेश्या का प्रेमी । वेश्यापना ।—**केलि**– (वि०) कामरत, कामुक, कामी । (पुं०) रतिक्रीड़ा ।—**चर**,—**चार**– –(वि०) बेरोकटोक, असंयत । (पुं०) बेरोकटोक गति । स्वेच्छाचारिता । कामासक्तता । मैथुनेच्छा । स्वार्थपरता ।—**चारिन्** –(वि०) असंयतगतिशील । कामी, कामुक । स्वेच्छाचारी । (पुं०) गरुड़ । गौरैया ।—**जित्**–(वि०) काम को जीतने वाला । (पुं०) शिव की उपाधि । स्कन्द की उपाधि ।—**ताल**–(पुं०) कोकिल ।—**तिथि**–(स्त्री०) काम की पूजा की तिथि, त्रयोदशी ।—**द**– (वि०) अभिलाषा पूर्ण करने वाला ।—**दा**–(स्त्री०) कामधेनु ।—**दर्शन**– (वि०) मनोहर रूप वाला ।—**दुघा**,—**दुह्** (स्त्री०) कामधेनु ।—**दूती**–(स्त्री०) कोकिला ।—**देव**–(पुं०)प्रेम के अधिष्ठाता देवता । कंदर्प ।

विष्णु । शिव ।—**धेनु**–(स्त्री०) स्वर्ग की गाय जो सब कामनाओं की पूर्ति करने वाली मानी जाती है । वसिष्ठ की गाय नंदिनी जिसके लिये विश्वामित्र से उनका युद्ध हुआ । —**ध्वंसिन्**–(पुं०) शिव का नाम ।—**पत्नी**–(स्त्री०) रति, कामदेव की स्त्री ।—**पाल**-(पुं०) विष्णु । शिव । बलराम ।—**प्रवेदन**-(न०) अपनी इच्छा प्रकट करना ।—**प्रश्न**–(पुं०) मनमाना प्रश्न या सवाल ।—**फल**–(पुं०) आम के पेड़ों की एक जाति ।—**बाण**–(पुं०) कामदेव के पाँच बाण—मोहन, उन्मादन, संतपन, शोषण और निश्चेष्टीकरण अथवा ये पाँच पुष्प—लालकमल, नीलकमल, अशोक, आम और चमेली ।—**भोग**–(पुं०) मैथुनेच्छा की पूर्ति । —**मह**-(पुं०) कामदेव सम्बन्धी उत्सव-विशेष जो चैत्रमास की पूर्णिमा को मनाया जाता है । —**मूढ़**,—**मोहित**–(वि०) प्रेम से बुद्धि गँवाये हुए, कामान्ध ।—**रस**–(पुं०) वीर्यपात ।—**रसिक**–(वि०) कामुक, कामी ।—**रूप**–(वि०) इच्छानुसार रूप धारण करने वाला; 'जानामि त्वाम् प्रकृतिपुरुषं कामरूपं मघोनः' मे० ६ । सुन्दर, खूबसूरत । (पुं०) गोहाटी का प्रदेश कामरूप देश के नाम से प्रसिद्ध है ।—**रेखा**,—**लेखा**–(स्त्री०) वेश्या, रंडी । —**लता**–(स्त्री०) पुरुषेंद्रिय, लिंग । —**लोल**–(वि०) कामपीड़ित ।—**वर**–(पुं०) मुँहमाँगा वरदान ।—**वल्लभ**–(पुं०) वसन्तऋतु । आम का पेड़ ।—**वल्लभा**–(स्त्री०) चन्द्रमा की चाँदनी ।—**वश**–(वि०) प्रेमासक्त । (पुं०) प्रेमासक्ति ।—**वाद**–(पुं०) मनमाना कहना, जो जी में आवे सो कहना ।—**विहन्तृ**–(वि०) कामदेव को जीत लेने वाला । (पुं०) महादेव ।—**वृत्त**–(वि०) यथेच्छाचारी । कामुक, ऐयाश ।—**वृत्ति**–(वि०) स्वेच्छाचारी, स्वतंत्र । (स्त्री०) स्वतन्त्रता, स्वेच्छाचारिता ।—**वृद्धि**–(स्त्री०) कामेच्छा की वृद्धि ।—**शर**–(पुं०) दे० 'कामबाण' । आम का पेड़ ।—**शास्त्र**–(पुं०) कामकला सिखाने वाला शास्त्र, प्रणयात्मक विज्ञान । —**संयोग**–(पुं०) अभीष्ट पदार्थ की उपलब्धि या प्राप्ति ।—**सख**–(पुं०) वसन्तऋतु ।—**सू**–(वि०) किसी भी अभिलाषा को पूरा करने वाला ।—**सूत्र**–(न०) वात्स्यायन सूत्र जिसमें कामशास्त्र का प्रतिपादन है ।—**हैतुक** (वि०) बिना किसी कारण के केवल इच्छामात्र से उत्पन्न ।

कामतः—(अव्य०) [काम+तस्] स्वेच्छा से । जानबूझ कर, इरादतन । रसिकता से ।

कामन—(वि०) [कामयते इति,√कम्+णिङ् +युच्] कामुक, लंपट । (न०) [भावे युच्] ख्वाहिश, चाह, अभिलाषा ।

कामना—(स्त्री) [कामन+टाप्] अभिलाषा, इच्छा, चाह ।

कामनीयक—(न०) [कमनीयस्य भावः, कमनीय+वुञ्] रमणीयता, खूबसूरती ।

कामन्दकि—(पुं०) [कमन्दकस्य अपत्यम्, कमन्दक+इञ्] एक नीतिशास्त्र-प्रणेता ।

कामन्दकीय—(न०) [कामन्दकि+छ—ईय] कामन्दकि-प्रणीत एक नीतिशास्त्र ।

कामन्धमिन्—(पुं०) [कामं यथेष्टं धमति, काम√ध्मा+णिनि, धमादेशः मुम् च नि०] कसेरा, ठठेरा ।

कामम्—(अव्य०) [√कम्+णिङ् + अमु] इच्छा या प्रवृत्ति के अनुसार । इच्छानुकूल । प्रसन्नता से, रजामन्दी से । ठीक, स्वीकारोक्ति सूचक अव्यय । माना हुआ, स्वीकार किया हुआ । निस्सन्देह, सचमुच, वस्तुतः । बेहतर, बल्कि ।

कामयमान, कामयान, कामयितृ–(वि०) [√कम्+णिङ्+शानच्, मुक्] [√कम् +णिङ् +शानच्, मुगभाव] [√कम् + णिङ् +तृच्] कामुक । रसिया, ऐयाश, लम्पट ।

कामल—(वि०) [√कम्+णिङ्+कलच्] रसिया, ऐयाश, लम्पट। (पु०) वसन्त ऋतु। मरुभूमि, रेगिस्तान।

कामलिका—(स्त्री०) [कामल+कन्—टाप् इत्व] मदिरा, शराब।

कामवत्—(वि०) [काम+मतुप्—वत्व]। अभिलाषी, चाह रखने वाला। रसिक, ऐयाश।

कामिन्—(वि०) [√कम्+णिङ् +णिनि] [स्त्री०—**कामिनी**] कामी, रसिक, ऐयाश। अभिलाषी। (पु०) प्रेमी, आशिक। स्त्रैण, स्त्रीनिर्जित पुरुष। चक्रवाक। गौरैया। शिव की उपाधि। चन्द्रमा। कबूतर।

कामिनी—(स्त्री०) [कामिन्+ङीप्] प्यार करने वाली स्त्री। मनोहर या सुन्दरी स्त्री: 'उदयति हि शशाङ्कः कामिनी गण्डपाण्डुः' मृच्छ० १.५७। स्त्री, औरत। भीरु स्त्री। शराब, मदिरा।

कामुक—(वि०) [√कम्+णिङ् +उकञ्] [स्त्री०—**कामुका या कामुकी**] अभिलाषी, चाह रखने वाला। रसिक। लम्पट, ऐयाश। (पुं०) प्रेमी, आशिक। ऐयाश आदमी। गौरैया पक्षी। अशोक वृक्ष।

कामुका—(स्त्री०) [कामुक+टाप्] धन की कामना रखने वाली स्त्री। जरपरस्त औरत।

कामुकी—(स्त्री०) [कामुक+ङीप्] छिनाल या ऐयाश औरत।

काम्पिल्ल, काम्पील—[कम्पिला नदीविशेषः तस्याः अदूरे भवः, कम्पिला+अण्, काम्पिल +अच्, नि० साधुः] [कम्पिला+अण् नि० दीर्घः] गुण्डारोचना नामक लता।

काम्बल—(पुं०) [कम्बलेन आवृतः, कम्बल +अण्] कंबल या ऊनी वस्त्र से ढकी हुई गाड़ी या रथ।

काम्बविक—(पुं०) [कम्बुः भूषणत्वेन शिल्पमस्य, कम्बु+ठक्] शंख या सीप के बने आभूषण बेचने वाला दूकानदार, शंख का व्यापारी।

काम्बोज—(पु०) [कम्बोज+अण्] कम्बोज (कंबोडिया) देशवासी। कम्बोज देश का राजा। पुन्नाग वृक्ष। कम्बोज देश में उत्पन्न होने वाले घोड़ों की एक जाति।

काम्य—(वि०) [√कम्+णिङ् +यत्] वाञ्छनीय। किसी विशेष कामना के लिए किया हुआ (कर्मानुष्ठान)। सुन्दर, मनोहर, कमनीय।—**अभिप्राय** (**काम्याभिप्राय**)–(पुं०) स्वार्थवश किया हुआ कर्म, जिसका हेतु या कारण स्वार्थ हो।—**कर्मन्**–(पुं०) धर्मानुष्ठान जो किसी उद्देश्य-विशेष के लिये किया गया हो और जिससे भविष्य में फल-प्राप्ति की इच्छा हो।—**गिर्**–(स्त्री०) अनुकूल कथन या भाषण।—**दान**–(न०) ऐसा दान या भेंट जो स्वीकार करने योग्य हो। स्वेच्छानुसार दी हुई भेंट या अपनी इच्छा के अनुसार दिया हुआ दान।—**मरण**–(न०) इच्छामृत्यु। आत्महत्या।—**व्रत**–(न०) अपनी इच्छा से रखा हुआ व्रत।

काम्या—(स्त्री०) [√कम्+णिङ् +क्यप् —टाप्] अभिलाषा, इच्छा। प्रार्थना।

काम्ल—(वि०) [कु ईषत् अम्लः, कु० स०] नाममात्र को खट्टा, कम खट्टा।

काय—(पुं०, न०) [√चि+घञ् नि० साधुः] शरीर, देह, तन। पेड़ का धड़ या तना। तारों को छोड़कर वीणा का समस्त काठ का ढाँचा। समुदाय, संघ। पूँजी, मूलधन। घर, वासा, डेरा। चिह्न। स्वभाव। (पुं०) [कः प्रजापतिः देवता अस्य, क+अण्, इत्वादेश, आदि-वृद्धि] प्राजापत्य विवाह। आठ प्रकार के विवाहों में से एक। (न०) प्रजापतितीर्थ। हाथ की उँगलियों की जड़ के पास का भाग, विशेष कर कनिष्ठिका का मूल भाग।—**अग्नि**-(**कायाग्नि**) (पुं०) पाचनशक्ति।—**क्लेश**–(पुं०) शरीर सम्बन्धी कष्ट।—

चिकित्सा-(स्त्री०) आयुर्वेद के आठ विभागों में तीसरा विभाग अर्थात् उन रोगों की चिकित्सा या इलाज जो समस्त शरीर में व्याप्त हों।—मान-(न०) शरीर का माप। पर्णशाला, झोपड़ी।—वलन- (न०) कवच, वर्म।

कायक, कायिक-(वि०) [काय+वुन्] [काय+ठक्] शरीर-सम्बन्धी।

कायका, कायिका-(स्त्री०) [कायक+टाप्] [कायिक+टाप्] ब्याज, सूद।—**वृद्धि**-(स्त्री०) वह ब्याज या सूद जो किसी धरोहर रखे हुए जानवर का उपयोग करने के बदले मुजरा दिया जाय।

कायस्थ—(पुं०) [काय√स्था+क] परमात्मा। एक हिंदू उपजाति।

कायस्था—(स्त्री०) [कायस्थ+टाप्] कायस्थ स्त्री। हड़। आँवला। तुलसी। काकोली।

कायस्थी—(स्त्री०) [कायस्थ+ङीष्] कायस्थ की स्त्री।

कार—(वि०) [√कृ+अण् वा√कृ+घञ् वा क√ऋ+घञ्] [स्त्री०—**कारी**] समासान्त शब्द का अन्तिम भाग होकर जब यह आता है, तब इसका अर्थ होता है करने वाला, बनाने वाला, सम्पादन करने वाला, यथा, कुम्भकार, ग्रन्थकार आदि। (पुं०) कार्य। कर्म (यथा पुरुषकार)। उद्योग, प्रयत्न, चेष्टा। धार्मिक तप। पति, स्वामी, मालिक। सङ्कल्प, दृढ़ निश्चय। शक्ति, सामर्थ्य, ताकत। कर या चुंगी। बर्फ का ढेर। हिमालय पर्वत।—**अवर** (**कारावर**)-(पुं०) एक वर्णसङ्कर जाति जिसकी उत्पत्ति निषाद पिता और वैदेही जाति की माता से हुई है।—**कर**-(वि०) गुमाश्ता या ग्रामपुरस्कार की जगह काम करने वाला।—**भू**-(पुं०) चुंगी उगाहने की जगह, कर वसूल करने का स्थान।

कारक—(वि०) [√कृ+ण्वुल्] [स्त्री०—**कारिका**] करने वाला, बनाने वाला। प्रतिनिधि, कारिन्दा, मुनीम। (न०) व्याकरण में कारक उसे कहते हैं जिसका क्रिया से सम्बन्ध होता है। कर्त्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान, अधिकरण, सम्बन्ध—ये सात कारक हैं। व्याकरण का वह भाग जिसमें कारकों का वर्णन है।—**दीपक**-(न०) एक अर्थालङ्कार।—**हेतु**-(पुं०) ज्ञापक हेतु का उल्टा, क्रियात्मक हेतु।

कारण—(न०) [√कृ+णिच्+ल्युट्] हेतु। जिसके बिना कार्य की उत्पत्ति न हो सके। साधन, जरिया। उत्पादक, कर्त्ता, जनक, तत्त्व। किसी नाटक की मूल घटना। इन्द्रिय। शरीर। चिह्न। दस्तावेज, प्रमाण। वह आधार जिस पर कोई मत या निर्णय अवलम्बित हो।—**उत्तर** (**कारणोत्तर**)-(न०) मन में कुछ अभिप्राय रख कर उत्तर देना। वादी की कही बात को कह कर पीछे उसका खण्डन करना)। जैसे—मैं यह स्वीकार करता हूँ कि यह घर गोविन्द का है; किन्तु गोविन्द ने मुझे यह दान में दे दिया है)।—**भूत**-(वि०) कारण बना हुआ, हेतु बना हुआ।—**माला**-(स्त्री०) एक अर्थालङ्कार।—**वादिन्**-(पुं०) वादी, मुद्दई।—**वारि**-(न०) वह जल जो सृष्टि के आदि में उत्पन्न किया गया था।—**विहीन**-(वि०) हेतुरहित, कारणरहित, बेवजह।—**शरीर**-(न०)नैमित्तिक शरीर। अज्ञान या अविद्यारूप शरीर।

कारणा—(स्त्री०) [√कृ+णिच्+युच्—टाप्] पीड़ा, क्लेश। नरक में डाला जाना।

कारणिक—(वि०) [कारण+ठक्] परीक्षक। न्यायकर्त्ता। नैमित्तिक।

कारण्डव—(पुं०) [√रम्+ड रण्डः ईषत् रण्डः कारण्डः तं वाति, कारण्ड√वा+क] एक प्रकार का हंस या बत्तख।

कारन्धमिन्—(पुं०) [कर एव कारः तं धमति,

कार√ध्मा+इनि पृषो० साधुः] कसेरा, ठठेरा । खनिज-विद्या-विद् । धातु-परीक्षक ।

कारव—(पुं०) [का इति रवो यस्य, ब० स०] काक, कौआ ।

कारवेल्ल,—वेल्लक—(पुं०) [कार √वेल्ल्+अच्] [कारवेल्ल+क] करेला ।

कारस्कर—(पुं०) [कारं करोति, कार √कृ+ट, सुट्] किंपाक नामक वृक्ष ।

कारा—(स्त्री०) [कीर्यते क्षिप्यते दण्डार्हो यस्याम्, √कॄ+अङ, गुण, दीर्घ नि०] जेल-खाना, बंदीगृह । वीणा का एक भाग या तुंबी । पीड़ा । कष्ट । दूती । सुनारिन । वीणा की गूँज को कम करने का औजार ।—**आगार, (कारागार),—गृह,—वेश्मन्**-(न०) जेलखाना, कैदखाना; 'कारागृहे निर्जितवासवेन लङ्केश्वरेणोषितमाप्रसादात्' र० ६.४०।—**गुप्त**- (पुं०) कैदी, बंदी ।—**पाल**-(पुं०) जेलखाने का दरोगा ।

कारि—(स्त्री०) [√कृ+इञ्] क्रिया, कर्म । (पुं० या स्त्री०) कला-कुशल, दस्तकार ।

कारिका—(स्त्री०) [√कृ+ण्वुल्—टाप्, इत्व] नाचने वाली स्त्री । कारोबार, व्यापार, व्यवसाय । काव्य, दर्शन, व्याकरण, विज्ञान सम्बन्धी प्रसिद्ध पद्यात्मक कोई रचना [जैसे सांख्यकारिका] । अत्याचार, जुल्म । ब्याज, सूद । अल्पाक्षरयुक्त और बहु अर्थवाची श्लोक ।

कारित—(वि०) [√कृ+णिच्+क्त] कराया हुआ ।

कारिता—(स्त्री०) [कारित+टाप्] वह अधिक सूद जो ऋणी ने देना स्वीकार किया हो ।—**वृद्धि**-(स्त्री०) ऋण किये हुए द्रव्य को किसी को देकर उससे लिया जाने वाला सूद ।

कारिन्—(पुं० [√कृ+णिनि] कारीगर । कलाकार । (वि०) करने वाला ।

कारीरी—(स्त्री०) [कं जलम् ऋच्छति, क√ऋ+क्विन्, कारो मेघः तम् ईरयति, कार √ईर्+अण्—ङीप्] वर्षा के लिये किया जाने वाला एक यज्ञ ।

कारीष—(न०) [करीष+अण्] सूखे गोबर या करसी का ढेर ।

कारु—(वि०) [√कृ+उण्] [स्त्री०—**कारू**] कर्त्ता, करने वाला । भयावह । (पुं०) कारिंदा, नौकर । कलाकार । कारीगर, कारीगरों में गणना इतनों की है —'तक्षा च तंतुवायश्च नापितो रजकस्तथा । पञ्चमश्चर्मकारश्च कारवः शिल्पिनो मताः ॥'—**चौर**-(पुं०) सेंध फोड़ने वाला चोर । डाकू ।—**ज**-(पुं०) शिल्प से बनी कोई वस्तु । युवा हाथी या हाथी का बच्चा । टीला, पहाड़ी । फेन । गेरू । तिल, मस्सा ।

कारुणिक—(वि०) [करुणा शीलमस्य, करुणा +ठक्] [स्त्री०—**कारुणिकी**] दयालु, करुणा करने वाला ।

कारुण्य—(न०) [करुणा+ष्यञ्] दया, रहम, अनुकम्पा ।

कार्कश्य—(न०) [कर्कश+ष्यञ्]सख्ती । कठोरता । दृढ़ता । ठोसपना । हृदय की कठोरता, संगदिली ।

कार्तवीर्य—(पुं०)[कृतवीर्य+अण्] हैहय-राज कृतवीर्य का पुत्र । इसकी राजधानी माहिष्मती नगरी थी, इसको सहस्रबाहु या सहस्रार्जुन भी कहते हैं ।

कार्तस्वर—(न०)[कृतस्वरे तदाख्ये आकर-विशेषे भवम् अथवा कृताः पठिताः स्वरा येन सः कृतस्वरः सामगायकः तस्मै दक्षिणात्वेन देयम्, कृतस्वर+अण्] सोना, सुवर्ण ।

कार्तान्तिक—(पुं०) [कृतान्तं वेत्ति, कृतान्त +ठक्] ज्योतिषी, भविष्यद्वक्ता; 'कार्तान्तिको भूत्वा नुवं बभ्राम' दश०।

कार्त्तिक—(पुं०) [कृत्तिकानक्षत्रयुक्ता पौर्ण-मासी यत्र, कृत्तिका+अण्] आश्विन के बाद के मास का नाम जिसकी पूर्णमासी के

दिन चन्द्रमा कृत्तिका नक्षत्र में होता है, अथवा जिसकी पूर्णमासी के दिन कृत्तिका नक्षत्र होता है। स्कन्द की उपाधि। बार्हस्पत्य वर्ष।

कार्त्तिकी—(स्त्री०) [कार्त्तिक+अण्—ङीप्] कार्त्तिक मास की पूर्णमासी।

कार्त्तिकेय—(पुं०) [कृत्तिकानाम् अपत्यम् पाल्यत्वेन, कृत्तिका+ढक्] शिवपुत्र, स्कन्द, स्वामिकार्त्तिकेय।—**प्रसू**-(स्त्री०) पार्वती-देवी, स्कन्द की जननी।

कार्त्स्न्य—(न०) [कृत्स्न+ष्यञ्] सम्पूर्णता, समूचापन।

कार्दम—(वि०) [कर्दम+अण्] [स्त्री०—**कार्दमी**] कीचड़ युक्त, कीचड़ से भरा या उससे सना। कर्दम प्रजापति सम्बन्धी।

कार्पट—(पुं०) [कर्पट+अण्] आवेदनकर्त्ता, अर्जी देने वाला, प्रार्थी, उम्मेदवार। चिथड़ा, लत्ता।

कार्पटिक—(पुं०) [कर्पट+ठक्] तीर्थ-यात्री। तीर्थजलों को ढोकर आजीविका करने वाला। तीर्थयात्रियों का एक दल। अनुभवी मनुष्य। पिछलग्गू, खुशामदी।

कार्पण्य—(न०)[कृपण+ष्यञ्] धनहीनता, गरीबी। अनुकम्पा, दया। कंजूसी, सूमपना। शक्तिहीनता, निर्बलता; 'कार्पण्यदोषोपहत-स्वभावः' भग० २.७। हलकापन, ओछापन।

कार्पास—(वि०) [कर्पास+अण्][स्त्री०—**कार्पासी**] कपास या रुई का बना हुआ। (पुं०, न०) कोई वस्तु जो रुई से बनी हो। कागज।—**अस्थि** (**कार्पासास्थि**)-(न०) बिनौला, कपास का बीज।—**नासिका**-(स्त्री०) तकुआ, तकला।—**सौत्रिक**-(वि०) (कार्पाससूत्रेण निर्वृत्तः, कार्पाससूत्र +ठक्, द्विपदवृद्धि] कपास के सूत से बना हुआ।

कार्पासिक—(वि०) [कर्पास+ठक्] [स्त्री० —**कार्पासिकी**] रुई का बना हुआ या कपास से उत्पन्न।

कार्पासिका, कार्पासी—(स्त्री०) [कार्पासी+कन्—टाप्, ह्रस्व] [कर्पास+ङीप्] कपास का पौधा।

कार्मण—(वि०) [कर्मन्+अण्][स्त्री०—**कार्मणी**] किसी कार्य को पूरा करने वाला, किसी कार्य को सुचारु रूप से करने वाला। (न०) जादू। तंत्रविद्या।

कार्मिक—(वि०) [कर्मन्+ठञ्][स्त्री०—**कार्मिकी**] निर्मित, बना हुआ। जरी का काम किया हुआ, रंगबिरंगे सूतों से बिना हुआ। (न०) वह वस्त्र जिसमें, चक्र, स्वस्तिक आदि चिह्न बुनकर बनाये गये हों।

कार्मुक—(वि०) [कर्मन्+उकञ्] [स्त्री० **कार्मुकी**] काम के योग्य, काम करने लायक। किसी कार्य को सुचारु रूप से पूर्ण करने वाला। (न०) धनुष, कमान। बाँस।

कार्य—(वि०) [√कृ+ण्यत्] करने योग्य, कर्त्तव्य। (न०) काम। धंधा, व्यवसाय। धार्मिक कृत्य। प्रभाव। कारण का विकार, परिणाम। लेन-देन का विवाद। मुकदमा। प्रयोजन। हेतु। फलित ज्योतिष में लग्न से दसवाँ स्थान। नाटक का शेष अंक।—**अक्षम**-(वि०) जो अपने कर्त्तव्य कार्य करने में असमर्थ हो, अयोग्य।—**अकार्य-विचार** (**कार्याकार्यविचार**)-(पुं०) किसी विषय की सपक्ष-विपक्ष युक्तियों पर वादानु-वाद, किसी कार्य के औचित्य-अनौचित्य पर वादानुवाद।—**अधिप** (**कार्याधिप**)-(पुं०) कार्याध्यक्ष। ज्योतिष में वह ग्रह जिसकी परि-स्थिति देखकर किसी प्रश्न का उत्तर दिया जाय।—**अर्थ** (**कार्यार्थ**)-(पुं०) उद्देश्य, प्रयोजन। नौकरी पाने के लिये आवेदनपत्र। **अर्थिन्** (**कार्यार्थिन्**)-(वि०) प्रार्थी। किसी पदार्थ की प्राप्ति के लिये प्रयत्नशील। पद-प्रार्थी, नौकरी चाहने वाला। अदालत में किसी दावे के लिये वकालत करने वाला। अदालत का आश्रय ग्रहण करने वाला।

—आसन (कार्यासन)–(न०) वह स्थान जहाँ लेन-देन या क्रय-विक्रय होता हो, दूकान, गद्दी।—ईक्षण (कार्येक्षण)–(न०) काम की निगरानी।—उद्धार (कार्योद्धार)–(पुं०) कार्य का संपादन। कर्तव्यपालन।—कर–(वि०) काम करने वाला। गुणकारी।—कारण–(न०) मिलित कार्य और कारण, नतीजा और सबब।—काल—(पुं०) काम करने का समय। कार्य का उपयुक्त समय या अवसर।—गौरव–(न०) कार्य या विषय का महत्त्व।—चिन्तक–(वि०) परिणामदर्शी, विवेकी। (पुं०) किसी कार्य या कार्यालय का प्रबन्धकर्त्ता या व्यवस्थापक।——च्युत–(वि०) बेकार, जो कहीं नौकर-चाकर न हो। किसी पद से हटाया या निकाला हुआ।—दर्शन–(न०) अवेक्षण, मुआयना, पर्यवेक्षण। अनुसन्धान, तहकीकात।—निर्णय–(पुं०) किसी काम का फैसला या निपटारा।—पञ्चक–(पुं०) ईश्वर के पाँच काम—अनुग्रह, तिरोभाव, आदान, स्थिति और उद्भव।—पुट–(पुं०) निरर्थक काम करने वाला व्यक्ति। पागल, झक्की। निठल्ला।—प्रद्वेष–(पुं०) अकर्मण्यता, काहिली, सुस्ती।—प्रेष्य–(पुं०) प्रतिनिधि। दूत।—विपत्ति–(स्त्री०) कार्य के संपादन में उपस्थित होने वाली बाधा। असफलता।—शेष–(पुं०) किसी कार्य का अवशिष्ट अंश। किसी कार्य की सम्पन्नता, पूर्णता।—सिद्धि–(स्त्री०) सफलता, कामयाबी।—स्थान–(न०) दफ्तर, कार्यालय।—हन्तृ–(वि०) दूसरे के काम में बाधा डालने वाला, विपक्षी।

कार्यतः—(अव्य०) [कार्य+तस्] किसी प्रयोजन या उद्देश्य से। अन्ततोगत्वा, लिहाजा, फलतः।

कार्श्य—(न०) [कृश+ष्यञ्] नटापन, दुबलापन, पतलापन। कमी, स्वल्पता, थोड़ापन। साल का पेड़। बड़हर। कचूर।

कार्ष, कार्षक–(पुं०) [कृषि+ण][कार्ष+कन्] किसान, खेतिहर।

कार्षापण—(पुं०, न०), **कार्षापणक**–(पुं०) [कर्ष+अण्—कार्षः, आ √पण्+घञ्—आपणः, कार्षस्य आपणः ष० त०] [कार्षापण+कन्] भारत में पुराने समय में चलने वाला एक सिक्का। सोलह कौड़ी या रत्ती। सोना-चाँदी। (पुं०) कृषक, किसान।

कार्षापणिक—(वि०) [कार्षापण+टिठन्] [स्त्री०—**कार्षापणिकी**] एक कार्षापण के मूल्य का, जिसका मूल्य एक कार्षापण हो।

कार्षिक—(पुं०) [कर्ष+ठक् (स्वार्थे)] दे० 'कार्षापण'।

कार्ष्ण—(वि०) [कृष्ण+अण्] [स्त्री०—**कार्ष्णी**] श्रीविष्णु या श्रीकृष्ण से सम्बन्ध रखने वाला। व्यास का। कृष्ण मृग का।

कार्ष्णायस—(वि०) [कृष्णायस्+अण्] [स्त्री०—**कार्ष्णायसी**] काले लोहे का बना हुआ। (न०) लोहा।

कार्ष्णि—(पुं०) [कृष्णस्य अपत्यम्, कृष्ण+इञ्] प्रद्युम्न। कामदेव। शुकदेव।

कार्ष्ण्य—(न०) [कृष्ण+ष्यञ्] कालापन। स्याही।

काल—(वि०) [कु ईषत् कृष्णत्वं लाति, कु √ला+क, कोः कादेशः वा धातुषु कुत्सितरूपतया अलति, कु√अल्+अच्, कोः कादेशः] [स्त्री० **काली**] काला। गहरे नीले रंग का। (न०) लोहा। कक्कोल, शीतल चीनी। कालीयक नामक गंधद्रव्य। (पुं०) काला या गहरा नीला रंग। मृत्यु। महाकाल। शनिग्रह। कासमर्द या कसौंदे का पेड़। रक्तचित्रक। राल। कोयल। शिव। विष्णु। नेत्र का काला भाग। कलवार। प्रारब्ध। एक पर्वत। [कलयति आयुः, √कल्+णिच्+अच्+अण् वा कलयति सर्वाणि भूतानि, √कल्+णिच्+अच्+अण्] समय। उपयुक्त समय या अवसर। समय का कोई

विभाग (घड़ी, घंटा आदि)। मौसम, (वैशेषिक दर्शन के अनुसार नौ द्रव्यों में से काल एक द्रव्य माना गया है)।—**अक्षरिक** (**कालाक्षरिक**)–(पुं०) [काले अक्षरं वेत्ति, कालाक्षर+ठक्] पढ़ा-लिखा, साक्षर।—**अगरु** (**कालागरु**)–(न०) काला अगर।—**अग्नि** (**कालाग्नि**),—**अनल** (**कालानल**)-(पुं०) प्रलय के समय की आग।—**अजिन** (**कालाजिन**)–(न०) काले मृग का चर्म।—**अञ्जन** (**कालाञ्जन**)–(न०) एक प्रकार का अंजन या सुरमा।—**अण्डज** (**कालाण्डज**)–(पुं०) कोकिल।—**अतिपात** (**कालातिपात**),—**अतिरेक** (**कालातिरेक**)–(पुं०) विलम्ब, देरी, समय गँवाना। अवधि या म्याद बीत जाने के कारण होने वाली हानि।—**अध्यक्ष** (**कालाध्यक्ष**)–(पुं०) सूर्य देवता। परमात्मा।—**अनुनादिन्** (**कालानुनादिन्**) (पुं०) मधुमक्खिका। गौरैया पक्षी। चातक पक्षी।—**अन्तक** (**कालान्तक**)–(पुं०) समय, जो मृत्यु का अधिष्ठातृ देवता और समस्त पदार्थों का नाशक माना जाता है।—**अन्तर** (**कालान्तर**)-(न०) अन्य समय या अन्य अवसर।—**अन्तस्** (**कालान्तस्**)–(न०) बीच का समय। समय की अवधि।—**अभ्र** (**कालाभ्र**)–(पुं०) काला, पनीला बादल।—**अयस** (**कालायस**–(न०) [कालञ्च तद् अयश्च कर्म० स०, टच्] कान्त लौह, इस्पात। लोहा।—**अवधि** (**कालावधि**) (पुं०) निर्दिष्ट समय।—**अशुद्धि** (**कालाशुद्धि**)—(स्त्री०) स्यापे या शोक मनाने की अवधि, जन्म अथवा मरण अशौच या सूतक।—**उप्त** (**कालोप्त**)– (वि०) ठीक मौसम में बोया हुआ।—**कञ्ज**–(न०) नीलकमल।—**कटङ्कट**–(पुं०) शिव का नाम।—**कण्ठ**–(पुं०) मोर, मयूर। गौरैया पक्षी। शिव की उपाधि।—**करण**– (न०) समय नियत करना।—**कर्णिका**,—**कर्णी**–(स्त्री०) बदकिस्मती, विपत्ति, दुर्भाग्य।—**कर्मन्**–(न०) मृत्यु, मौत।—**कील**–(पुं०) कोलाहल।—**कुण्ठ**–(पुं०) यमराज, धर्मराज।—**कूट**–(पुं०, न०) हलाहल विष, वह विष जो समुद्र-मन्थन के समय निकला था जिसे शंकर ने अपने कण्ठ में रख लिया था।—**कृत्**–(पुं०) सूर्य। मोर, मयूर। परमात्मा।—**क्रम**–(पुं०) समय का बीत जाना।—**क्रिया**–(स्त्री०) समय का नियत करना। मृत्यु।—**क्षेप**–(पुं०) विलम्ब, देरी, समय का नाश। समय बिताना।—**खण्ड**–(न०) यकृत्, लीवर।—**गङ्गा**–(स्त्री०) यमुनानदी।—**ग्रन्थि**–(पुं०) वर्ष।—**चक्र**–(न०) समय का पहिया। युग। (आल०) भाग्यचक्र, जीवन के उतार-चढ़ाव।—**चिह्न**– (न०) मृत्यु निकट आने के लक्षण।—**चोदित**–(वि०) वह जिसके सिर पर काल या मृत्युदेव खेल रहे हों।—**ज्ञ**–(वि०) उचित समय या उचित अवसर जानने वाला; "प्रत्यासन्नो हि नारीणामकालज्ञो मनोभवः" र० १२.३३। (पुं०) ज्योतिषी। मुर्गा।—**त्रय**–(न०) भूत, वर्तमान, भविष्यद्।—**दण्ड**-(पुं०) मृत्यु, मौत।—**धर्म**,—**धर्मन्**-(पुं०) ऐसे आचरण जो किसी भी समय के लिये उपयुक्त हों। ऋतुविशेष के लिये उपयुक्त आचरण। मृत्युकाल, मृत्यु।—**धारणा**-(स्त्री०) समय का निर्धारण। काल की अवस्था का ज्ञान।—**निरूपण**–(न०) समय का निश्चय करना। समय जानने की विद्या, कालनिरूपण शास्त्र।—**निर्यास**—(पुं०) गूगुल।—**नेमि**–(स्त्री०) कालरूपी पहिये के आरे। रावण के चाचा का नाम, जिसे रावण ने हनुमान को मार डालने का काम सौंपा था, किन्तु पीछे वह स्वयं हनुमान द्वारा मार डाला गया था। हिरण्यकशिपु का पुत्र। एक अन्य राक्षस, जिसके १०० पुत्र थे और जिसे विष्णु ने मारा था।—**पाश**–(पुं०) यम का पाश या फाँसी।—**पाशिक** –(पुं०) जल्लाद, वह आदमी जो मृत्युदण्ड-प्राप्त

लोगों को फाँसी लगाता हो ।—**पृष्ठ**-(न०) हिरनों की एक जाति । कङ्कपक्षी ।—**पृष्ठक** -(न०) कर्ण के धनुष का नाम । धनुष । —**प्रभात**-(न०) शरद् ऋतु ।—**भक्ष**-(पुं०) शिव ।—**मुख**-(पुं०) लंगूरों की एक जाति ।—**मेषी**-(स्त्री०) मंजिष्ठा नामक पौधा ।—**यवन**-(पुं०) यवन जातीय राजा, जिसने श्रीकृष्ण पर मथुरा में, जरासन्ध के कहने से चढ़ाई की थी और जो श्रीकृष्ण की युक्ति से राजा मुचुकुन्द द्वारा भस्म किया गया था । —**योग**-(पुं०) भाग्य, किस्मत ।—**योगिन्** -(पुं०) शिव की उपाधि ।—**रात्रि**, —**रात्री** -(स्त्री०) अँधेरी रात । प्रलयकाल की रात, कल्पान्तरात्रि । कार्त्तिकी अमा की रात ।—**लौह**- (न०) इस्पात लोहा ।—**विप्रकर्ष**-(पुं०) समय की वृद्धि ।—**वृद्धि**-(स्त्री०) ब्याज या सूद जो नियत रूप से किसी निर्दिष्ट समय पर अदा किया जाय ।—**वेला**-(स्त्री०) शनिग्रह का समय, दिन में आधे पहर यह समय नित्य आता है । इस समय में शुभ कार्य करना वर्जित है ।—**सदृश**-(वि०) समयानुकूल । मृत्युतुल्य ।—**सर्प**- (पुं०) काला और महाविषैला साँप ।—**सार**-(पुं०) काले रंग का मृग ।—**सूत्र**,—**सूत्रक**-(न०) समय या मृत्यु का डोरा । एक नरक ।—**स्कन्ध**-(पुं०) तमालवृक्ष ।—**स्वरूप**- (वि०) मृत्यु की तरह भयङ्कर ।—**हर**-(पुं०) शिवजी का नाम ।—**हरण**- (न०) समय का नाश, विलम्ब ।—**हानि**-(स्त्री०) विलम्ब, कालातिक्रमण ।

कालक—(न०) [काल+कन् वा√कल्+णिच्+ण्वुल्] यकृत्, कलेजा, जिगर । (पुं०) तिल, मस्सा, लहसुन । पनिया साँप । आँख का गोल और काला भाग ।

कालञ्जर—(पुं०) [कालं जरयति, काल√जृ+णिच्√अच्, मुम् (बा०)] मेरु के उत्तर का एक पर्वत तथा उस पर्वत के समीप का भूखण्ड । साधु-समारोह । शिव की उपाधि ।

कालशेय—(न०) [कलश+ढक्—एय] मखनिया दूध, वह दूध जो मक्खन निकालने के पश्चात् शेष रहता है ।

काला—(स्त्री०) [काल + अच्—टाप्] नीलिनी वृक्ष । त्रिवृत् । पिप्पली । नागबला । मजीठ । कृष्णजीरक । अहिंसा । असगंध । पाटला । दक्ष की एक कन्या ।

कालाप—(पुं०) [कालः मृत्युः आप्यते यस्मात्, काल√आप्+घञ्] सिर के केश । साँप का फन । राक्षस । [कलापं वेत्ति अधीते वा, कलाप+अण्] कलाप व्याकरण पढ़ने वाला । इस व्याकरण का जानने वाला ।

कालापक—(न०) [कलाप+वुन्] कलाप व्याकरण जानने वाले विद्वानों का समुदाय । कलाप के सिद्धांत या उसकी शिक्षा ।

कालिक—(वि०) [काल+ठक्] [स्त्री०—**कालिकी**] समय सम्बन्धी । समय पर निर्भर । समयानुसार । (पुं०) सारस । बगला । (न०) कृष्णचन्दन ।

कालिका—(स्त्री०) [काल+ठन्—टाप् या काल+ङीप्+कन्—टाप् ह्रस्व] काला रंग, कालौंच । स्याही, काली स्याही । किसी वस्तु का मूल्य जो किश्तबन्दी करके चुकाया जाय । छमाही या तिमाही सूद जो निर्दिष्ट समय पर अदा किया जाय । बादलों का समूह; 'कालिकेव निबिडा बलाकिनी' र० ११.१५ । बट्टा, वह धातु जो सोने में मिलाई जाती है । कलेजा, यकृत् । कौए की मादा । बिच्छू । मदिरा, शराब । दुर्गा देवी का नाम ।

कालिङ्ग—(वि०) [कलिङ्ग+अण्] [स्त्री० —**कालिङ्गी**] कलिंग देश में उत्पन्न या उस देश का । (पुं०) कलिङ्ग देश का राजा । कलिङ्ग देश का सर्प । हाथी । [केन जलेन आलिङ्ग्यते असौ, क—आ√लिङ्ग्+घञ्]

राजककटी, एक प्रकार की ककड़ी । (न०) तरबूज, हिंदवाना, कलींदा ।
कालिनी—(स्त्री०) [काल+इनि+ङीप्] आर्द्रा नक्षत्र ।
कालिन्द—(न०) [कालिं जलराशिं ददाति, कालि√दा+क, पृषो० मुम्] तरबूज । (वि०) [कलिन्द वा कालिन्दी+अण्] कलिंद पर्वत या कालिंदी नदी से संबद्ध ।
कालिन्दी—(स्त्री०) [कलिन्द +अण् — ङीप्] यमुना नदी । श्रीकृष्ण की एक स्त्री । असित की स्त्री और सगर की माता । निसोत औषधि ।—**कर्षण,—भेदन**–(पुं०) बलराम की उपाधि ।—**सू**–(स्त्री०) सूर्य-पत्नी संज्ञा ।—**सोदर**–(पुं०) यमराज ।
कालिमन्—(पुं०) [कालस्य भावः, काल+इमनिच्] कालौंछ, कालापन ।
कालिय—(पुं०) [के जले आलीयते, क–आ √ली+क] एक बड़ा भारी सर्प जो यमुना में रहता था और जिसे श्रीकृष्ण ने दमन कर वृन्दावन से भगाया था ।—**दमन,—मर्दन** –(पुं०) श्रीकृष्ण की उपाधि ।
काली—(स्त्री०)[काल+ङीप्]काला रंग । स्याही, मसी । पार्वती की उपाधि । कृष्ण मेघमाला । काले रंग की स्त्री । व्यास-माता सत्यवती का नाम । रात्रि ।—**तनय**–(पुं०) भैंसा ।
कालीक—(पुं०) [के जले अलति पर्याप्नोति, क√अल्+इकन्, पृषो० दीर्घ] क्रौंच पक्षी, बगले का भेद ।
कालीन—(वि०) [काल+ख–ईन] किसी विशेष समय का, सामयिक ।
कालीयक—(न०) [काल+छ–ईय+कन् वा कालीय√कै+क]एक प्रकार का चंदन । एक तरह की हल्दी । केसर ।
कालुष्य—(न०) [कलुष+ष्यञ्] गन्दगी, मैलाकुचैलापन, गँदलापना । मलिनता, अस्वच्छता; 'कालुष्यमुपयाति बुद्धिः' काद०। अनैक्य ।
कालेय—(वि०) [कलि+ढक्] कलियुग संबंधी । (पुं०) [कालायाः अपत्यम्, काला +ढक्] एक दैत्य । दारु हल्दी । कुत्ता । कामला रोग । नील कमल । शिलाजीत । (न०) [कलायै रक्तधारिण्यै हितम् , कला+ढक्] यकृत् , कलेजा । कृष्णचन्दन । केसर, जाफरान ।
कालेयक—(पुं०) [कालेय + कन्] दे० 'कालेय' ।
काल्पनिक—(वि०)[कल्पना+ठक्] [स्त्री० —**काल्पनिकी**] बनावटी, फर्जी । जाली ।
काल्य—(वि०) [काल+यत्] सामयिक, अवसरानुसार । अनुकूल । शुभ, कल्याणकारी । (न०) [कल्य+अण्] तड़का, सवेरा, भोर, प्रभात । प्रातःकाल का कर्तव्य ।
काल्या—(स्त्री०) [कालः गर्भधारणयोग्य-समयः प्राप्तोऽस्याः, काल+यत्–टाप्] गर्भा-धान के योग्य गाय । इसका दूसरा नाम उप-सर्या है ।
काल्याणक—(न०) [कल्याण+वुञ्] भलाई, शुभ ।
कावचिक—(वि०)[कवच+ठञ्] [स्त्री०— **कावचिकी**] कवच या वर्म सम्बन्धी । (न०) [कवचिन्+ठञ्] कवचधारी पुरुषों का समूह ।
कावृक—(पुं०) [कुत्सितो वृक इव वा ईषत् वृकइव, कोः कादेशः] मुर्गा । चकवा ।
कावेर—(न०) [कस्य सूर्यस्य इव आ ईषत् वेरम् अङ्गं यस्य ज्योतिर्मयत्वात्] केसर, जाफरान ।
कावेरी—(स्त्री०) [कं जलमेव वेरं शरीर-मस्याः, कवेर+अण्–ङीप्] दक्षिण भारत की एक नदी का नाम । [कुत्सित वेरं यस्याः] रंडी, वेश्या ।
काव्य—(वि०) [कवि+ण्य] जिसमें कवि अथवा पण्डित के लक्षण विद्यमान हों । कवि संबंधी ।(न०) [कवि+ष्यञ् (भावे)]

पद्यमयी रचना; 'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' सा० द० । शायरी, कविता । प्रसन्नता । बुद्धि । ईश्वरी प्रेरणा, स्फूर्ति । (पुं०) [कवि +ष्यञ् (स्वार्थे)] शुक्राचार्य का नाम, यह असुरों के गुरु थे ।—**चौर**–(पुं०) दूसरे की कविता चुरानेवाला ।—**रसिक**–(वि०) वह जो कविता को पसंद करता तथा उसकी विशेषताओं और सौन्दर्य की सराहना करता हो । शायरी का शौकीन ।—**लिङ्ग**–(न०) एक अर्थालंकार ।

काव्या—(स्त्री०) [√कव्+ण्यत्—टाप्] । समझ, बुद्धि । पूतना ।

√काश्—भ्वा० आत्म० अक० चमकना । काशते, काशिष्यते, अकाशिष्ट । दि० आत्म० अक० काश्यते, काशिष्यते, अकाशिष्ट ।

काश—(पुं०, न०) [√काश्+घञ्] एक प्रकार की घास जो छत छाने और चटाई बनाने के काम में आती है, काँस।(न०) उस घास का फूल, तृणपुष्प । फेफड़े का एक रोग, खाँसी ।

काशि—(पुं०)[√काश्+इन्]काशी नगरी के आस-पास का प्रदेश । मुट्ठी । सूर्य । (स्त्री०) काशी, बनारस ।—**प**–(पुं०) शिव की उपाधि ।—**राज**–(पुं०) काशी के एक राजा का नाम जो अम्बा, अम्बिका और अम्बालिका का पिता था ।

काशिका—(स्त्री०) [काशि+कन्—टाप्] काशी-पुरी । पाणिनीय व्याकरण पर जयादित्य और वामन की लिखी हुई वृत्ति ।

काशिन्—(वि०)[√काश्+णिनि] [स्त्री० —**काशिनी**] चमकीला । सदृश, समान [यथा जितकाशिन् अर्थात् जो विजयी के समान आचरण करे ।]

काशी—(स्त्री०) [√काश्+अच्—ङीप्] उत्तर भारत की एक प्रसिद्ध नगरी जो सप्त मोक्षदा पुरियों में से एक है, वाराणसी ।—**नाथ**–(पुं०) शिव ।—**यात्रा**–(स्त्री०) काशी की तीर्थयात्रा ।

काश्मरी—(स्त्री०) [√काश्+वनिप्, र, ङीप्, पृषो० मत्व] एक पौधा जिसे गँभारी कहते हैं ।

काश्मीर—(वि०) [कश्मीर या काश्मीर+अण्] [स्त्री०—**काश्मीरी**] कश्मीर देश में उत्पन्न । कश्मीर देश का । कश्मीर से आया हुआ । (पुं०) कश्मीर देश । वहाँ बसने वाला । (न०) पुष्करमूल । केसर ।—**ज**,—**जन्मन्**–(न०) केसर, जाफ़रान ।

काश्य—(न०) [कुत्सितम् अश्यं यस्मात् ब० स०] मदिरा, शराब, मद्य ।—**प**–(न०) मांस, गोश्त ।

काश्यप—(पुं०) [कश्यप+अण्] एक प्रसिद्ध ऋषि । कणाद का नाम ।—**नन्दन**–(पुं०) गरुड़ की उपाधि । अरुण का नाम ।

काश्यपि—(पुं०) [कश्यप+इञ्] गरुड़ और अरुण की उपाधि ।

काश्यपी—(स्त्री०)[काश्यप+ङीप्] पृथ्वी ।

काष—(पुं०)[√कष्+घञ्] वह वस्तु जिस पर कोई चीज घिसी, रगड़ी जाय; 'लीनालिः सुरकरिणाम् कपोलकाषः' कि० ५.२६ । कसौटी । सान । एक ऋषि । रगड़न, खरोंच ।

काषाय—(वि०) [कषाय+अण्][स्त्री०—**काषायी**]जोगिया या गेरुआ रङ्ग का ।(न०) जोगिया या गेरुआ रङ्ग का वस्त्र ।

काष्ठ—(न०) [√काश्+क्थन्] । काठ, लकड़ी । शहतीर, लट्ठा । छड़ी । नापने का एक औजार ।—**आगार** (**काष्ठागार**)–(न०) लकड़ी का बना मकान या घेरा ।—**अम्बुवाहिनी** (**काष्ठाम्बुवाहिनी**)–(स्त्री०) जल सींचने के लिये काष्ठनिर्मित एक पात्र, द्रोणी । डोलची ।—**कदली**–(स्त्री०) जंगली केला ।—**कीट**–(पुं०) लकड़ी का घुन ।—**कुट्ट**,—**कूट**–(पुं०) कठफोड़वा, हुदहुद पक्षी ।

—कुद्दाल–(पुं०) लकड़ी की कुदाल ।—तक्ष,—तक्षक–(पुं०) बढ़ई ।—तन्तु–(पुं०) शहतीरों में रहने वाला एक छोटा कीड़ा ।—दारु–(पुं०) देवदारु का पेड़, पलाश का पेड़ ।—भारिक–(पुं०) लकड़हारा, लकड़ी ढोने वाला ।—मठी–(स्त्री०) चिता ।—मल्ल–(पुं०) अरथी या ठठरी जिस पर रख कर मुर्दा ले जाया जाता है ।—लेखक–(पुं०) लकड़ी में रहने वाला एक छोटा कीड़ा, घुन ।—वाट–(पुं०) (न०) लकड़ी की दीवाल ।

काष्ठक—(न०) [काष्ठ√कै+क] ऊद, अगर ।

काष्ठा—(स्त्री०) [√काश्+क्थन्—टाप्] दिशा । सीमा । चरम सीमा; 'काष्ठागतस्नेहरसानुविद्धम्' कु० ३.३५। घुड़दौड़ का मैदान । घुड़दौड़ का पाला । आकाशस्थित पवन या वायु का मार्ग । समय का परिमाण, कला का तीसवाँ भाग ।

काष्ठिक—(पुं०) [काष्ठ+ठन्] लकड़ी ढोने वाला ।

काष्ठिका—(स्त्री०) [काष्ठ—ङीप्+कन्—टाप् , ह्रस्व] लकड़ी का एक छोटा टुकड़ा ।

काष्ठीला—(स्त्री०) [कुत्सिता ईषत् वा अष्ठीलेव, कोः कादेशः] कदली वृक्ष, केले का पेड़ ।

√कास्—भ्वा० आत्म० अक० चमकना । खखारना, खाँसना । कासते, कासिष्यते, अकासिष्ट ।

कास—[√कास्+घञ्] खाँसी । जुकाम । छींक । सहिजन का पेड़ ।—कन्द–(पुं०) कसेरू ।—कुण्ठ–(वि०) खाँसी से पीड़ित ।—घ्न,—हृत्–(वि०) खाँसी दूर करने वाला, कफ निकालने वाला ।

कासर—(पुं०) [के जले आसरति, क—आ√सृ+अच्] भैंसा । [स्त्री०—**कासरी**] भैंस ।

कासार—(पुं०, न०) [√कास्+आरन् वा कस्य जलस्य आसारो यत्र ब० स०] तालाब । पुष्करिणी, तलैया । झील, सरोवर ।

कासू, कासू—(स्त्री०) [√कस् वा√कन् +ऊ, पृषो०] एक प्रकार का भाला । अस्पष्ट भाषण । दीप्ति, दमक, आब । रोग । भक्ति ।

कासृति—(स्त्री०) [कुत्सिता सरणिः, कोः कादेशः] पगडंडी । गुप्तमार्ग । गली ।

काहल—(वि०) [कुत्सितम् अस्पष्टं हलं वाक्यं ध्वनिर्वा यत्र ब० स०] सूखा, मुर्झाया हुआ । उत्पाती । अत्यधिक, बड़ा । (पुं०) बिल्ली । मुर्गा । काक । रव, आवाज । (न०) अस्पष्ट भाषण ।

काहला—(स्त्री०) [कुत्सित हलति शब्दं करोति कु√हल्+अच्—टाप्, कोः कादेशः] बड़ा ढोल ।

काहली—(स्त्री०) [कंसुखम् आहलति ददाति, क—आ√हल्+इन्—ङीप्] युवती स्त्री ।

किंवत्—(वि०) [किम्+मतुप् , मस्य वः] गरीब, तुच्छ, बापुरा, बेचारा ।

किंशारु—(पुं०) [किम्√शॄ+ञुण्] शस्यशूक, अनाज का रेशा या बाल का टूंड़ । बगुला । कङ्कपक्षी । तीर ।

किंशुक—(पुं०) [किञ्चित् शुकः शुकावयवविशेष इव, उपमि० स०] पलाश वृक्ष, ढाक या टेसू का पेड़ । (न०) पलाश पुष्प; 'किंशुकैः शुकमुखच्छविभिर्नं दग्धम्' र० ९.३१ ।

किंशुलक—(पुं०) [किंशुक नि० साधुः]पलाश वृक्ष ।

किकि—(पुं०) [√कक्+इन्, पृषो० इत्व] नारियल का पेड़ । नीलकण्ठ पक्षी । चातक पक्षी ।

किक्किश—(पुं०) एक तरह का कीड़ा ।

किखि—(पुं०) बन्दर । (स्त्री०) लोमड़ी ।

किङ्किणिका, किङ्किणी–(स्त्री०) [किमपि किञ्चित् वा कणति, किम्√कण्+इन्—ङीप्, पृषो० साधुः] [किङ्किणी+कन्—टाप् ,

ह्रस्व] करधनी। छोटी घण्टी; 'क्वणत्कनककिङ्किणीझणझणायितस्यन्दनैः;' उत्त० ५.५। एक तरह का खट्टा अंगूर।

किङ्किर—(पुं०) [किम्√कृ+क] घोड़ा, कोकिल। भौंरा। कामदेव। लाल रंग।

किङ्किरा—(स्त्री०) [किङ्किर+टाप्] खून, रक्त, लोहू।

किङ्किरात—(पुं०) [किङ्किर√अत्+अण्] तोता। कोकिल। कामदेव। अशोक वृक्ष।

किञ्जल, किञ्जल्क—(पुं०) [किञ्चित् जलं यत्र, ब० स०] [किञ्चित् जलति अपवारयति, किम्√जल्+क (बा०)] कमल पुष्प का रेशा या कमल का फूल, किसी वृक्ष का फूल या उसका रेशा।

√किट्—भ्वा० पर० सक० जाना। अक० डरना। केटति, केटिष्यति, अकेटीत्।

किटि—(पुं०) [√किट्+इन् कित्त्व गुणनिषेधः] शूकर,सुअर।

किटिभ—(पुं०) [किटि√भा+क] जूँ, खटमल।

किट्ट, किट्टक—(न०) [√किट्+क्त] [किट्ट+कन्] कीट, काँइट, मैल, तलछट, छानन।

किट्टाल—(पुं०) [किट्ट√अल्+अच्] ताँबे का घड़ा। लोहे का मोर्चा।

किण—(पुं०) [√कण्+अच्, पृषो० इत्व] ठेठ, घट्टा, चट्टा, गूल, फोड़े या घाव का निशान। तिल, मस्सा। लकड़ी का घुन।

किण्व—(न०) [√कण्+क्वन्, इत्व] पाप। (पुं०, न०) मदिरा का खमीर उठाने या उसमें उफान लाने वाली एक चीज।

√कित्—भ्वा० पर० सक० चिकित्सा करना। चिकित्सति, चिकित्सिष्यति, अचिकित्सीत्। जु० पर० सक० जानना। चिकेति, केतिष्यति, अकेतीत्।

कितव—(पुं०) [√कि+क्त, कित√वा+क] जुआरी। धूर्त। [स्त्री—**कितवी**] बदमाश, गुंडा। धतूरे का पौधा। गोरोचन।

किन्विन्—(पुं०) [किं कुत्सिता बुद्धिरस्ति अस्य, किन्वी+इनि] घोड़ा, अश्व।

किन्नर—(पुं०) [किं कुत्सितो नरः, कु० स०] देवताओं के गायक। इनका मुख घोड़े जैसा और शरीर मनुष्य जैसा होता है।—**ईश** (**किन्नरेश**)–(पुं०) कुबेर, धनाधिप।

किम्—(अव्य०) [कु+डिमु (बा०)] समासान्त शब्दों में यह प्रथम कु की जगह प्रयुक्त होता है और इसके अर्थ यह होते हैं—खराबी, ह्रास, दोष, कलङ्क या धिक्कार, यथा—**किंसखा**, अर्थात् दुष्ट या बुरा मित्र। किन्नर, अर्थात् बुरा मनुष्य या अङ्ग-भङ्ग मनुष्य आदि, दे० आगे के समासान्त शब्द।—**दास** (**किन्दास**)–(पुं०) बुरा नौकर।—**नर** (**किन्नर**)–(पुं०) दुष्ट या विकृत पुरुष। देवगायक जाति-विशेष।—**नरी** (**किन्नरी**)–(स्त्री०) किन्नर की स्त्री। वीणा विशेष।—**पाक** (**किम्पाक**)–(पुं०) [किं कुत्सितः पाकः परिणामो यस्य ब० स०] लाल इन्द्रायण। कुचला। रोग। ज्वर।—**पुरुष** (पुं०) नीच या तिरस्करणीय पुरुष। किन्नर।—**पुरुषेश्वर**–(पुं०) कुबेर।—**प्रभु**–(पुं०) बुरा स्वामी या बुरा राजा।—**राजन्** (**किंराजन्**) (पुं०) बुरा राजा। (वि०) बुरे राजा वाला।—**सखि** (**किंसखि**)–(पुं०) (एकवचन कर्त्ता कारक में किंसखा रूप होता है) दुष्ट मित्र, यथा —'स किंसखा साधु न शास्ति योऽधिपं' —किरातार्जुनीय।

किम्—(सर्वनाम०, अव्य०) [कर्त्ता एकवचन (पुं०) **कः**, (स्त्री०) **का**, (न०) **किम्**] कौन। क्या। कौनसा।—**अपि** (**किमपि**)–(अव्य०) कुछ-कुछ। बहुत अधिक, अकथनीय, अवर्णनीय। कहीं ज्यादा।—**अर्थम्** (**किमर्थम्**)–(अव्य०)– किस प्रयोजन से, किस

उद्देश्य से। क्यों, क्योंकर।—**आख्य** (**किमाख्य**)–(वि०) किस नाम का, किस नाम वाला।—**इति** (**किमिति**)–(अव्य०) काहे, को, क्योंकर, किस काम के लिये।—**उ**, **उत**,—(**किमु**, **किमुत**)–(अव्य०) या, अथवा, वा। (सन्देहात्मक) क्यों। कितना और अधिक। कितना और कम।—**कर** (**किङ्कर**)–(पुं०) नौकर, दास, गुलाम।—'अवेहि मां किङ्करमष्टमूर्तेः'—रघुवंश।—**करा** (**किङ्करा**)–(स्त्री०) दासी, नौकरानी।—**करी** (**किङ्करी**)–(स्त्री०) नौकर की पत्नी।—**कर्तव्यता**,—(**कार्यता**) (**किङ्कर्तव्यता**),—(**किङ्कार्यता**)–(स्त्री०) किकर्तव्यमूढ़ता, अर्थात् ऐसी परिस्थिति में पहुँचना जब अपने मन में स्वयं यह प्रश्न उठे कि अब मुझे क्या करना चाहिये, परेशानी।—**कारणम्** (**किङ्कारणम्**)–(अव्य०) क्योंकर, किस कारण से।—**किल** (**किङ्किल**)–(अव्य०) एक अव्यय जो अप्रसन्नता या असन्तोष प्रकट करता है।—**क्षण** (**किङ्क्षण**)–(वि०) कितने क्षणों में सम्पन्न। अकर्मण्य, जो समय का मूल्य नहीं समझता।—**गोत्र** (**किङ्गोत्र**)–(वि०) किस वंश का, किस खानदान का।—**च** (**किञ्च**)–(अव्य०) अतिरिक्त। उपरान्त।—**चन** (**किञ्चन**)–(अव्य०) कुछ अंश में, थोड़ा सा।—**चित्** (**किञ्चित्**) (अव्य०) कुछ अंश में, कुछ-कुछ, थोड़ा-सा।—॰**कर** (**किञ्चित्कर**)–(वि०) कुछ करने वाला, उपयोगी।—॰**काल** (**किञ्चित्काल**)–(पुं०) कभी-कभी, कुछ समय।—॰**ज्ञ** (**किञ्चिज्ज्ञ**)–(वि०) थोड़ा जानने वाला, बकवादी।—॰**प्राण** (**किञ्चित्प्राण**)–(वि०) थोड़े जीवन वाला।—॰**मात्र** (**किञ्चिन्मात्र**) (वि०) बहुत थोड़ा।—**छंदस्** (**किञ्छन्दस्**)–(वि०) किस वेद को जानने वाला।—**तर्हि** (**किन्तर्हि**)–(अव्य०) फिर क्यों कर। किन्तु। तथापि। कितना ही। फिर भी इसके उपरान्त।—**तु** (**किन्तु**)–(अव्य०) लेकिन। तो भी, तथापि।—**दैवत** (**किन्दैवत**)–(वि०) किस देवता का।—**नामधेय**, **नामन्** (**किन्नामधेय**),—(**किन्नामन्**)–(वि०) किस नाम का।—**निमित्त** (**किन्निमित्त**)–(वि०) किस प्रयोजन का। (अव्य०) क्यों, क्योंकर, किस लिये, किस कारण से।—**नु** (**किन्नु**)–(अव्य०) या, अथवा। अत्यधिक। अत्यल्प। क्या।—॰**खलु** (**किन्नुखलु**)–(अव्य०) ऐसा क्यों कर, क्योंकर सम्भव, क्यों। निश्चय ही। अस्तु, ऐसा ही सही।—**पच**,—**पचान**–(वि०) कंजूस, सूम, मक्खीचूस।—**पराक्रम**–(वि०) किस शक्ति या विक्रम वाला।—**पुनर्**–(अव्य०) कितना और अधिक या कितना और कम।—**प्रकारम्**–(अव्य०) किस ढंग से, किस तरह।—**प्रभाव**–(वि०) किस प्रभाव या दबाव का, किस रुतबे का।—**भूत**–(वि०) किस तरह का या किस स्वभाव का।—**रूप** (**किंरूप**)–(वि०) किस शकल का।—**वदन्ति**,—**वदन्ती**, (**किंवदन्ति**), (**किंवदन्ती**)–(स्त्री०) [किम्√वद्+झिच्—अन्तादेश, पक्षे ङीप्] जनरव, अफवाह।—**वराटक** (**किंवराटक**)–(पुं०) अपव्ययी पुरुष, फजूल खर्च करने वाला आदमी।—**वा** (**किंवा**)–(अव्य०) या, या तो, अथवा।—**विद्**—(**किंविद्**)–(वि०) क्या जानने वाला।—**व्यापार**,—(**किंव्यापार**)–(वि०) किस पेशे का।—**शील** (**किंशील**)–(वि०) कैसे स्वभाव का।—**स्वित्** (**किंस्वित्**)–(अव्य०) या, अथवा; 'अद्रेः शृङ्गं हरति पवनः किंस्विदित्युन्मुखीभिः' मे० १४।

कियत्—(वि०) [किं परिमाणमस्य किम्+

वतुप्, वस्य घः किमः कि आदेशः] [कर्त्ता एकवचन] (पुं०)—कियान्, –(स्त्री०)—कियती; –(न०)कियत्] कितना। निकम्मा। कुछ, थोड़ा सा।—एतिका (कियदेतिका)–(स्त्री०) उद्योग। घोर गम्भीर उद्योग।—काल—(वि०) कितने समय का। कुछ थोड़े समय का।—चिरम् (कियच्चिरम्)–(अव्य०) कब तक, कितने समय तक।—दूरम् (कियद्दूरम्)–कितनी दूर, कितने फासिले पर। कुछ समय के लिये। कुछ दूर पर।

कियाह्—(पुं०) लाल रंग का घोड़ा।

किर—(पुं०) [√कॄ+क] शूकर, सुअर।

किरक—(पुं०) [√कॄ+ण्वुल्] लेखक। [किर+कन् (क्षुद्रार्थे)] सुअर का बच्चा, घेंटा।

किरण—(पुं०) [कीर्यन्ते विक्षिप्यन्ते रश्मयोऽस्मात्, √कॄ+क्यु] ज्योति से प्रवाह रूप में निकलने वाली रेखा। (सूर्य, चन्द्र अथवा किसी प्रकाशयुक्त पदार्थ की) किरन; 'एको हि दोषो गुणसन्निपाते निमज्जतीन्दोः किरणेष्विवाङ्कः' कु० १.३। धूलिकण।—मालिन्–(पुं०) सूर्य।

किरात— (पुं०) [किरम् अवस्करादेः निक्षेपभूमिम् अतति निरन्तरं भ्रमति, किर√अत्+अच्] एक पहाड़ी जंगली जाति, जो वनजन्तुओं को मारकर उनके मांस पर अपना निर्वाह करती है।—'वैयाकरणकिरातादपशब्दमृगाः क्व यान्तु संत्रस्ताः। यदि नटगणकचिकित्सकवैतालिकवदनकंदरा न स्युः'॥ जंगली या बर्बर जाति। बौना, वामन। साईस, घुड़सवार। किरात का रूप धारण करने वाले शिव का नाम। एक प्रदेश का नाम।—आशिन् (किराताशिन्)–(पुं०) गरुड़ की उपाधि।

किराती—(स्त्री०)[किरात+ङीष्] किरात जाति की स्त्री। चमर डुलाने वाली स्त्री। कुटनी। किराती का रूप धारण करने वाली पार्वती। आकाश-गंगा।

किरि—(पुं०) [√कॄ+इ] शूकर, सुअर। बादल।

किरीट—(पुं०, न०)[√कॄ+कीटन्] मुकुट, ताज, कलँगी। व्यापारी।—धारिन्–(पुं०) राजा।—मालिन्- (पुं०) अर्जुन की उपाधि।

किरीटिन्—(वि०) [किरीट+इनि] मुकुट धारण करने वाला। (पुं०) अर्जुन का नाम।

किर्मी—(स्त्री०) [√कॄ+क्विप्, किर्√मा+क—ङीप्] बड़ा कमरा। भवन। सोने की पुतली। पलाश वृक्ष।

किर्मीर—(वि०) [√कॄ+ईरन्, मुट्] चित्र वर्ण वाला, चितकबरा। (पुं०) नारंगी का पेड़। चितकबरा रंग। एक राक्षस जिसे भीम ने मारा था।—जित्,—निषूदन—सूदन–(पुं०) भीम की उपाधि।

√किल्—तु० पर० अक० सफेद होना, क्रीड़ा करना। किलति, केलिष्यति, अकेलीत्।

किल—(अव्य०) [√किल्+क] निश्चय, अवश्य। सत्य। यथावत्, ज्यों का त्यों। अलीक कार्य। सम्भावना। असन्तोष। अरुचि। तिरस्कार। हेतु, कारण। (पुं०) खेल।—किञ्चित्–(न०) कामप्रणोदित उद्विग्नता, प्रेमी के सामने रोदन, हास्य, मचलना, रूठना, क्रोध करना आदि।

किलकिल (पुं०), **किलकिला**—(स्त्री०) [√किल्+क, प्रकारे वीप्सायां वा द्वित्वम्, पक्षे टाप्] एक प्रकार का हर्षसूचक शब्दविशेष, वानरों की किलकारी।

किलिञ्ज—(न०)[किलि√जन्+ड]चटाई। हरी लकड़ी का पतला तख्ता। तख्ता।

किल्विन्—(पुं०) [√किल्+क्विप्, किल्+विनि] घोड़ा।

किल्बिष—(न०) [√किल्+टिषच्, बुक्] पाप। अपराध, दोष। रोग।

किशलय—(पुं०, न०) [किञ्चित् शलति, किम् √शल+कयन् (बा०), पृषो० साधुः] कोंपल, नवपल्लव, कोमल नया पत्ता ।

किशोर—(पुं०) [किम्√शृ+ओरन्] ११ से १५ वर्ष तक की उम्र वाला लड़का । बछेड़ा । सिंह आदि का बच्चा जो जवान न हुआ हो । सूर्य ।

किशोरी—(स्त्री०) [किशोर+ङीष्] ११ से १५ वर्ष तक की लड़की ।

किष्किन्ध, किष्किन्ध्य–(पुं०) [कि कि दधाति, किम् किम्√धा+क, पूर्वस्य किमो मलोपः, सुट्, षत्वम्] [किष्किन्ध+यत्] मैसूर के आसपास का प्रदेश । उस प्रदेश में स्थित एक पर्वत ।

किष्किन्धा, किष्किन्ध्या–(स्त्री०) [किष्किन्ध+टाप्] [किष्किन्ध्य+टाप्] किष्किन्ध्य प्रदेश की (बालि-सुग्रीव की) राजधानी ।

किष्कु—(वि०) [√कै+कु, नि० साधुः] दुष्ट, तिरस्कारणीय, बुरा ।(पुं०) (स्त्री०) बाँह । बारह अंगुल का माप ।

किसल, किसलय–(पुं०, न०) दे० 'किशल', 'किशलय' ।

कीकट—(वि०) [की शनैः द्रुतं वा कटति गच्छति, की√कट+अच्] [स्त्री०—**कीकटी**] गरीब, बपुरा, दीन । कंजूस, कृपण । (पुं०) मगध का वेदोक्त नाम, चरणाद्रि (चुनार) से गृध्रकूट (गिद्धौर) पर्वत पर्यन्त कीकट देश है । "कीकटेषु गया पुण्या ।"

कीकश—(पुं०) [की √कश्+अच्] चांडाल ।

कीकस—(वि०) [की कुत्सितं यथा स्यात् तथा कसति, की√कस्+अच्] कर्कश । (पुं०) कीड़ा (न०) हड्डी, अस्थि ।

कीचक—(पुं०) [चीकयति शब्दायते,√चीक्+वुन्, आद्यन्त विपर्यय] खोखला बाँस, पोला बाँस । बाँस जो हवा चलने पर खड़खड़ाता हो अथवा हवा के चलने से उत्पन्न बाँस की सनसनाहट; 'शब्दायन्ते मधुरमनिलैः कीचकाः पूर्यमाणाः' मे० ५५ । एक जाति का नाम । विराट राजा का साला और उसकी सेना का प्रधान सेनापति । इसे भीम ने मारा था क्योंकि इसने द्रौपदी के साथ अनुचित कर्म करना चाहा था ।—**जित्**–(पुं०) भीम की उपाधि ।

√कीट्—चु० उभ० सक० बाँधना । कीटयति—ते, कीटयिष्यति—ते, अचीकिटत्—त ।

कीट—(पुं०) [√कीट्+अच्] कीड़ा । तिरस्कार या हिकारत में इस शब्द का प्रयोग समासान्त शब्दों में किया जाता है । जैसे **द्विपकीटः**, अर्थात् दुष्ट हाथी; **पक्षिकीट**, अर्थात् दुष्ट पक्षी आदि ।—**घ्न**–(पुं०) गन्धक ।—**ज**–(न०) रेशम ।—**जा**–(स्त्री०) लाख, चपड़ा ।—**मणि**–(पुं०) जुगनू, खद्योत ।

कीटक—(पुं०) [कीट+कन्] कीड़ा । मागध जाति का बन्दीजन ।

कीदृक्ष, कीदृश्, कीदृश—[किम् √ दृश् + क्स, की आदेश] [किम्√दृश्+क्विन्, की आदेश] [किम्√दृश्+कञ्, की आदेश] किस प्रकार का, कैसा, किस स्वभाव का ।

कीनाश—(वि०) [क्लिश्नाति हिनस्ति √क्लिश्+कन्, ईत्व, लकार का लोप, ना का आगम]भूमि जोतने वाला । गरीब, धनहीन । कंजूस । स्वल्प, थोड़ा । (पुं०) यमराज की उपाधि । वानर विशेष ।

कीर—(पुं०) [की इति अव्यक्तशब्दम् ईरयति, की√ईर्+अच्] तोता, सुग्गा । न० [कीलति बध्नाति शरीरम्, √कील्+अच्, लस्य र०] मांस । (पुं०) (बहु०) [क√ईर्+ णिच्, पृषो० साधुः] कश्मीर देश और उस देश के रहने वाले ।—**इष्ट**–(कीरेष्ट) (पुं०) आम का वृक्ष ।—**वर्णक**–(न०) सुगन्ध द्रव्यों का सरताज ।

कीर्ण—(वि०) [√कॄ+क्त] गुथा हुआ। फैला हुआ। पड़ा हुआ। बिखरा हुआ। ढका हुआ। भरा हुआ। रखा हुआ। घायल, चोटिल।

कीर्णि—(स्त्री०) [√कॄ+क्तिन्] बिखेरना। ढकना, छिपाना। घायल करना।

कीर्तन—(न०) [कृत्+ल्युट्] कीर्ति-वर्णन, यशोगान। राम-कृष्ण आदि की कथा गाते-बजाते हुए कहना। गाते-बजाते हुए भाषण करना। कथन। वर्णन।

कीर्तना—(स्त्री०) [√कृत्+णिच्+युच्] वर्णन। कथन। पाठ। कीर्त्ति, यश।

कीर्ति—(स्त्री०) [√कृत्+इन्, इरादिश्च] प्रसिद्धि। यश। प्रशंसा। कीचड़। फैलाव। प्रकाश। आवाज। दक्ष प्रजापति की कन्या और धर्म की पत्नी।—**भाज्**–(वि०) प्रसिद्ध, प्रख्यात, मशहूर। (पुं०) द्रोणाचार्य की उपाधि।—**शेष**–(पुं०) मृत्यु, मौत। (वि०) जिसकी कीर्तिमात्र इस दुनिया में रह गई हो, मृत।

√कील्—भ्वा० पर० सक० बाँधना। खोंसना। कीलना। अर्थात् बन्द कर देना। कील ठोंकना। सहारा देना, टेक लगाना। कीलति, कीलिष्यति, अकीलीत्।

कील—(पुं०) [√कील्+घञ्] लोहे का काँटा। बर्छी, भाला। खूंटा। हथियार। कोहनी। कोहनी का प्रहार। लौ। सूक्ष्म अणु। शिव का नाम। मूढ़गर्भ।

कीलक—(पुं०) [कील+कन्] पच्चर, खूंटी, मेख, कील। खम्भा, स्तूप। पशुओं के बाँधने का खूंटा। एक तंत्रोक्त देवता। (न०) अन्य मंत्र का प्रभाव नष्ट कर देने वाला मंत्र। ज्योतिष के अनुसार प्रभव आदि ६० वर्षों के अंतर्गत एक वर्ष।

कीलाल—(पुं०) न० [कील√अल्+अण्] अमृत के समान स्वर्गीय एक पेय पदार्थ। शहद। पशु, जानवर। जल। रुधिर। सीसा।—**धि**–(पुं०) समुद्र।—**प**–(पुं०) राक्षस।

कीलिका—(स्त्री०) [कील+कन् –टाप्, इत्व] धुरे की खूँटी। एक तरह का बाण। मनुष्य के शरीर की एक अस्थि।

कीलित—(वि०) [√कील+क्त] बंधा हुआ। गड़ा हुआ। कील से जड़ा हुआ; 'तेन मम हृदयमिदमसमशरकीलितम्' गीत ७।

कीश—(वि०) [क√ईश्+क] । नंगा। (पुं०) वानर। सूर्य। पक्षी।

√कु—भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना। कवते, कोष्यते, अकोष्ट। तु० आत्म० अक० कराहना। कुवते, कोष्यते, अकुत। अ० पर० अक० शब्द करना। कौति, कोष्यति, अकौषीत्।

कु—(अव्य०) [√कु+डु] ह्रास। खराबी। कमी। घिसावट। पाप। धिक्कार। स्वल्पता। आवश्यकता और त्रुटि व्यञ्जक अव्यय। इसके विविध पर्यायवाची शब्द हैं– "कद्", "कव"। "का" और "कि"। [उदाहरण।—**कदश्व**। **कवोष्ण**। **कोष्ण** **किप्रभु**]। (स्त्री०) पृथिवी। त्रिभुज का आधार।—**कर्मन्**– (न०) श्रोछा काम, बुरा काम।—**कील**–(पुं०) पर्वत।—**ग्रह**–(पुं०) अशुभ ग्रह।—**ग्राम**–(पुं०) पुरवा, छोटा ग्राम।—**चर**–(वि०) [स्त्री० कुचरा, कुचरी] रेंगने वाला। दुष्ट। निंदक। (पुं०) स्थिर ग्रह।—**चर्या**–(स्त्री०) दुष्टता, दुष्टाचरण।—**चेल,—चैल**—(वि०) जिसके कपड़े बहुत मैले या फटे हों। (न०) मलिन वस्त्र।—**जन्मन्**–(वि०) अकुलीन, नीच।—**तनु**–(वि०)कुरूप। विकलाङ्ग।—(पुं०) कुबेर की उपाधि।—**तंत्री**–(स्त्री०) बुरी वीणा।—**तीर्थ**–(पुं०) बुरा शिक्षक।—**दिन**–(न०) अशुभ दिवस।—

दृष्टि–(स्त्री०) बुरी निगाह । कमज़ोर निगाह । वेद-विरुद्ध सम्मति ।—**देश**–(पुं०) बुरा देश या स्थान । ऐसा देश जहाँ जीवनोपयोगी पदार्थ अप्राप्त हों या जहाँ का राजा अच्छा न हो और अत्याचारी हो ।—**देह**–(वि०) कुरूप । विकलाङ्ग ।—(पुं०) कुबेर की उपाधि ।—**धी**–(वि०) मूर्ख, मूढ़, बेवकूफ । दुष्ट ।—**नट**–(पुं०) बुरा अभिनय पात्र ।—**नदिका**–(स्त्री०) छोटी नदी या नाला ।—**नाथ**–(पुं०) दुष्ट स्वामी या मालिक ।—**नामन्**–(पुं०) कंजूस ।—**पथ**–(पुं०) कुमार्ग ।—**पुत्र**–(पुं०) दुष्ट पुत्र या बेटा ।—**पुरुष**–(पुं०) नीच आदमी ।—**पूय**–(वि०) नीच, ओछा, तिरस्करणीय ।—**प्रिय**–(वि०) अप्रिय, तिरस्करणीय, नीच, ओछा ।—**प्लव**–(पुं०) बुरी नाव ।—**ब्रह्मन्**–(पुं०) पतित ब्राह्मण ।—**मंत्र**–(पुं०) बुरी सलाह—**मुख**–(पुं०) रावण की सेना का एक योद्धा, दुर्मुख ।—**योग**–(पुं०) ग्रहों का बुरा या अशुभ संयोग ।—**रस**-(पुं०) मदिरा-विशेष ।—**रूप**–(वि०) बदशक्ल, भद्दा ।—**रूप्य**–(न०) टीन, जस्ता ।—**लक्षण**–(न०) बुरा लक्षण । अनिष्टसूचक चिह्न । (वि०) बुरे लक्षण वाला ।—**वंग**-(पुं०) सीसा ।—**वचस्**,—**वाक्य**–(न०) गाली-गलौज ।—**वर्षा**–(पुं०) अचानक या प्रचंड वर्षा ।—**विवाह**–(पुं०) विवाह की बुरी पद्धति ।—**वृत्ति**–(स्त्री०) बुरा आचरण, बद चाल-चलन ।—**वैद्य**—(पुं०) खराब वैद्य, नीम हकीम ।—**शील**–(वि०) उजड्ड, असभ्य, दुष्ट, बदतमीज़, अशिष्ट, दुष्टस्वभाव ।—**स्थल**–(न०)बुरा स्थान ।—**सरित्**–(स्त्री०) छोटी नदी या नाला ।—**सृति**–(स्त्री०) दुष्टाचरण ।—**स्त्री**–(स्त्री०) दुष्टा स्त्री ।

कुकभ—(न०) [कुकेन आदानेन पानेन भाति, कुक√भा+क] एक प्रकार की शराब ।

कुकुद कुकूद—(पुं०) [कु कु वा कू इत्ययम् अलङ्कृता कन्या तां सत्कृत्य पात्राय ददाति, कु कु वा कु कू√दा+क] विवाह में उपयुक्त पात्र को उचित शृङ्गार सहित एवं शास्त्रीय विधानानुसार कन्या देने वाला ।

कुकुन्दर कुकुन्दुर—(न०) [स्कन्द्यते कामिना अत्र, नि० साधुः] जघनकूप, मेरुदण्ड के निम्नभाग में नितम्ब-स्थान-स्थित गर्तद्वय । (पुं०) [कु√दृ (अन्तर्भूतण्य-र्थ) +अण्, नि० साधुः] कुकरौंधा ।

कुकुर—(पुं०)[कु√कुर्+क यादव क्षत्रियों की एक शाखा । यादव राजा अंधक का पुत्र जिससे उक्त शाखा चली । एक जनपद, दशार्ह । कुत्ता । ग्रन्थिपर्णी । एक साँप ।

कुकूल—(पुं०, न०) [√कु+ऊलच्, कुगागम] भूसी, चोकर । चोकर की आग, 'कुकूलानां राशौ तदनु हृदयं पच्यत इव' उत्त० ६.४० ।(न०) [कोः कूलम् ष० त०] सूराख, छेद । गड्ढा, गर्त । कवच, वर्म ।

कुक्कुट—(पुं०) [√कुक्+क्विप् तेन कुटति, कुक्√कुट्+क] मुर्गा । लूक, अधजल लकड़ी । चिनगारी [स्त्री०—**कुक्कुटी**] मुर्गी ।

कुक्कुटक—(पुं०) [कुक्कुट+कन्] शूद्र से निषादी में उत्पन्न एक वर्णसंकर जाति ।

कुक्कुटि, कुक्कुटी—(स्त्री०) [कुक्कुट+क्विप्+इन्, पक्षे ङीप्] ढोंग । दम्भ । स्वार्थसिद्धि के लिये किया गया धर्मानुष्ठान । छिपकली । शाल्मली । [कुक्कुट+ङीप्] मुर्गी ।

कुक्कुभ—(पुं०) [कुक्कु शब्दं भाषते, कुक्कु√भाष्+ड (बा०)] जंगली मुर्गा । मुर्गा । वारनिश, रोगन ।

कुक्कुर—(पुं०) [कोकते आदत्ते √कुक्+क्विप्] कुक् किञ्चिदपि गृह् गन्तं जनं दृष्ट्वा कुरति शब्दायते, कुक्√कुर्+क] [स्त्री०—**कुक्कुरी**] कुत्ता ।—**वाच्**–(पुं०) हिरनों की एक जाति ।

कुक्ष—(पुं०) [√कुष्+स] पेट ।

कुक्षि—(पुं०) [√कुष्+क्सि] पेट। गर्भाशय, पेट का वह भाग जिसमें गर्भ की झिल्ली रहती है। किसी भी वस्तु का भीतरी भाग। रन्ध्र। गुफा, गुहा। म्यान। खाड़ी।—**शूल**-(पुं०) पेट का दर्द।

कुक्षिम्भरि—(वि०) [कुक्षि√भृ+इन्, मुम्] पेटू, पल्ले दर्जे का स्वार्थी, मरभुका, भोजनभट्ट।

कुङ्कुम—(न०) [कुक्+उमक्, नि० मुम्] केसर। रोली। कुंकुमा; 'नवकुंकुमकेसरान्, र० ४.६७।—**अद्रि**-, (**कुङ्कुमाद्रि**) पुं० कश्मीर का एक पर्वत।

कुच्—√तु० पर० अक० सिकुड़ना। कुचति, कुचिष्यति, अकुचीत्। भ्वा० पर० अक० ऊँची आवाज करना। टेढ़ा होना। सक०। रोकना। लिखना। कोचति, कोचिष्यति, अकोचीत्।

कुच—(पुं०)[√कुच्+क] स्तन, उरोज, चूची।—**अग्र** (**कुचाग्र**)—**मुख**-(न०) चूची के ऊपर की घुंडी।—**फल**-(पुं०) अनार का वृक्ष।

कुचर—(वि०) [कु√चर्+अच्] [स्त्री०—कुचरा,—कुचरी] रेंगने वाला। दुष्ट। निन्दक। (पुं०) स्थिर ग्रह। हिंसक। 'मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठः, वेद।

कुचेल—(वि०) [प्रा० ब०] मैले कपड़े पहनने वाला।

कुचुमार—(पुं०) कामशास्त्र के एक प्राचीन आचार्य।

कुच्छ—(न०) [कु√छो+क] कुमुदपुष्प। श्वेत पद्म।

√**कुज्**—भ्वा० पर० सक० चोरी करना। कोजति, कोजिष्यति, अकोजीत्।

कुज—(पुं०)[कु√जन्+ड] वृक्ष। मङ्गल-ग्रह। नरकासुर।

कुजम्भन, कुजम्भिल-(पुं०) [कोः पृथिव्या जम्भनमिव यस्य, ब० स०] [कोः पृथिव्याः कौ वा जम्भलः, ष० त० या स० त०] घर में सेंध लगाने वाला चोर।

कुज्झटि, कुज्झटिका, कुज्झटी-(स्त्री०) [√कुज्+क्विप्, √झट्+इन्, कुज् चासौ झटिश्च कर्म० स०] [कुज्झटि+कन्-टाप्] [कुज्झटि+ङीप्] कुहासा। नीहार। पाला।

√**कुञ्च्**—भ्वा० पर० अक० टेढ़ा होना। थोड़ा होना। कुञ्चति, कुञ्चिष्यति, अकुञ्चीत्।

कुञ्चन—(न०) [√कुञ्च्+ल्युट्] सिकुड़ना, सिमटना। टेढ़ा होना। आँखों का एक रोग।

कुञ्चि—(पुं०)[√कुञ्च्+इन्] आठ अंजुली या मुट्ठी का एक परिमाण।

कुञ्चिका—(स्त्री०) [√कुञ्च्+ण्वुल्-टाप्, इत्व] ताली, चाबी। बाँस का अङ्कुर। गुंजा। काला जीरा।

कुञ्चित—(वि०)[√कुञ्च्+क्त] सिकुड़ा हुआ। मुड़ा हुआ। घुँघराला (बाल)।

कुञ्ज—(पुं०, न०) [कु√जन्+ड, पृषो० साधुः] लता वृक्षों से परिवेष्टित स्थान, लतागृह, लतावितान; 'पत सखि कुञ्जं सतिमिरपुञ्जं शीलय नीलनिचोलम्।'—गीतगोविन्द। हाथी के दाँत।—**कुटीर**-(पुं०) लतागृह।

कुञ्जर—(पुं०) [कुञ्ज+र] हाथी। श्रेष्ठार्थवाचक (अमरकोषकार ने निम्न शब्द श्रेष्ठार्थवाचक बतलाये हैं—व्याघ्र, पुङ्गव, ऋषभ, कुञ्जर, सिंह, शार्दूल, नाग)। पीपल। हस्त नक्षत्र।—**अनीक** (**कुञ्जरानीक**)-(न०) सेना का एक अंग जिसमें हाथीसवारों की टोली हो।—**अशन**, (**कुञ्जराशन**)-(पुं०) पीपल का वृक्ष।—**अराति** (**कुञ्जराराति**)-(पुं०) शेर। शरभ।—**ग्रह**-(पुं०)हाथी पकड़ने वाला।

√**कुट्**—तु० पर० अक० कुटिल होना। कुटति, कुटिष्यति, अकुटीत्। चु० आत्म०

सक० काटना। कोटयते, कोटयिष्यते, अचू-कुटत।

कुट—(पुं०, न०) [√कुट्+क] जलपात्र, कलसा, घड़ा, (पुं०) दुर्ग, गढ़। हथौड़ा, घन। वृक्ष। घर। पर्वत।—**ज**-(पुं०) इन्द्रजौ। कमल। अगस्त्य। द्रोणाचार्य।—**हारिका**-(स्त्री०) दासी, चाकरानी।

कुटक—(न०) [कुट+कन्] एक वृक्ष। दक्षिण का एक प्राचीन देश। वह डंडा जिसमें मथानी की रस्सी लपेटी जाती है। हल का फाल।

कुटङ्क—(पुं०) [कु√टङ्क्+घञ्] छत। छप्पर।

कुटङ्गक—(पुं०) [कुटस्य अङ्गुलिः पृषो० साधुः] वृक्ष पर फैली हुई लताओं से बना हुआ मंडप। वृक्ष पर फैलने वाली लता। छत, छाजन। झोपड़ी। छोटा घर। भांडार गृह।

कुटप—(पुं०) [कुट√पा+क] ३२ तोले की एक तौल। गृहउद्यान। घर के निकट का बाग। ऋषि। (न०) कमल।

कुटर—(पुं०)[√कुट्+करन्(बा०)] खंभा जिसमें मथानी की रस्सी लपेटी जाय।

कुटल—(न०) [√कुट्+कलन्] छप्पर, छाजन।

कुटि—(पुं०)[√कुट्+इन्] शरीर। वृक्ष। (स्त्री०) झोपड़ी। मोड़। झुकाव।—**चर**-(पुं०) सूंस, शिशुमार।

कुटिर—(न०) [√कुट्+इरन्] कुटी, झोपड़ी।

कुटिल—(वि०) [√कुट्+इलच्] टेढ़ा, झुका हुआ, मुड़ा हुआ। दुःखदायी। कपटी, बेईमान।—**आशय** (कुटिलाशय)-(वि०) दुष्ट नीयत का, दुष्टात्मा।—**पक्ष्मन्**-(वि०) झुके हुए पलकों वाला।—**स्वभाव**-(वि०) कपटी, छली, धोखेबाज।

कुटिलिका—(स्त्री०) [कुटिल+कन्—टाप्, इत्व] पैर दबाकर चलना (जैसे शिकारी चलते हैं)। लुहार की भट्ठी, लोहसाही।

कुटी—(स्त्री०) [कुटि+ङीष्] मोड़। झोपड़ी। कुटनी।—**चक**-(पुं०) चार प्रकार के संन्यासियों में से एक।—'चतुर्विधा भिक्षवस्ते कुटीचकबहूदकौ। हंसः परमहंसश्च यो यः पश्चात् स उत्तमः'॥—महाभारत।—**चर**-(पुं०) वह संन्यासी जो अपनी गृहस्थी का भार अपने पुत्र को सौंप स्वयं तप और धर्मानुष्ठान में लग जाता है।

कुटीर—(पुं०, न०) **कुटीरक**-(पुं०) [कुटी+र] [कुटीर+कन्] कुटी, कुटिया। रतिक्रिया।

कुटुनी—(स्त्री०) [√कुट्+उन्—ङीष्] कुटनी, जो लंपटों को छिनाल औरतें लाकर दे।

√कुटुम्ब्—चु० आत्म० अक० धारण करना। कुटुम्बयते।

कुटुम्ब, कुटुम्बक—(न०, पुं०) [√कुटुम्ब्+अच्] [कुटुम्ब+कन्] बाल-बच्चे, संतान। कुनबा, परिवार; 'उदारचरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम्' हि० १.७०। कुटुम्ब का व्यक्ति, स्वजन। संबंधी। परिवार के प्रति कर्तव्य। नाम। समूह।—**कलह**-(पुं०, न०) घरेलू झगड़ा, घरू विवाद।—**भर**-(पुं०) गृहस्थी का भार।—**व्यापृत**-(वि०) जो गृहस्थी का पालन-पोषण करे और उनकी सम्हाल रखे।

कुटुम्बिक, कुटुम्बिन्—(वि०) [कुटुम्ब+ठन्] [कुटुम्ब+इनि] कुनबे, बाल-बच्चे वाला, (पुं०) कुटुम्ब का व्यक्ति। किसान।

कुटुम्बिनी—[कुटुम्बिन्+ङीप्] बाल-बच्चे वाली स्त्री। गृहिणी; 'भवतु कुटुम्बिनीमाहूय पृच्छामि' मु० १। क्षीरिणी नामक पौधा।

√कुट्ट—चु० उभ० सक०। काटना, विभाजित करना। पीसना, चूर्ण करना, कूटना। कलङ्क

लगाना, दोष लगाना। धिक्कारना। वृद्धि करना। कुट्टयति-ते।

कुट्टक—(पुं०) [√कुट्ट्+ण्वुल्] पीसने वाला, कूटने वाला।

कुट्टन—(न०) [√कुट्ट्+ल्युट्] काटना, कतरना। पीसना, कूटना। गाली देना, धिक्कारना।

कुट्टनी, कुट्टिनी—(स्त्री०) [कुट्टयति नाशयति स्त्रीणां कुलम्, √कुट्ट्+णिच् (स्वार्थे)+ल्युट्—ङीप्] [कुट्टं स्त्रीणां कुलनाशः कर्तव्यतया अस्ति अस्याः,कुट्ट+इनि—ङीप्] कुटनी।

कुट्टमित—(न०) [√कुट्ट्+घञ्, तेन निर्वृत्तः इत्यर्थे कुट्ट+इमप्+इतच्] प्रियतम के साथ मिलने की आन्तरिक इच्छा रहते भी, न मानने के लिये हाथ या सिर हिलाकर, इसारे से इनकार करना।

कुट्टाक—(वि०)[कुट्ट्+षाकन्][स्त्री०—कुट्टाकी] जो काटता या विभाजित करता है या जो काटा या विभाजित किया जाता है।

कुट्टार—(पुं०) [√कुट्ट्+आरन्] पहाड़। (न०) स्त्रीमैथुन। ऊनी कंबल। अकेलापन।

कुट्टिम—(पुं०, न०) [√कुट्ट्+इमप्] पत्थर जड़ा हुआ फर्श; 'कान्तेन्दुकान्तोपलकुट्टिमेषु' शि० ३.४४। ठोंक-पीटकर मकान बनाने के लिये तैयार की गयी नींव। रत्नों की खान। अनार। झोपड़ी।

कुट्टिहारिका—(स्त्री०)[कुट्टि मत्स्यमांसादिकं हरति, कुट्टि√हृ+ण्वुल्—टाप्, इत्व] दासी, खरीदी हुई दासी।

कुट्टीर—(पुं०)[√कुट्ट्+ईरन्] छोटा पहाड़।

कुठ—(पुं०) [कुठ्यते छिद्यते असौ, √कुठ् क (घञर्थे)] वृक्ष।

कुठर—(पुं०) [√कुठ+करन् (बा०)] दे० 'कुटर'।

कुठार—(पुं०) [√कुठ्+आरन्][स्त्री०—कुठारी] कुल्हाड़ी, फरसा।

कुठारिक—(पुं०) [कुठार+ठन्] लकड़हारा, लकड़ी काटने वाला।

कुठारिका—(स्त्री०) [कुठार + ङीप् + कन्—टाप्, ह्रस्व] छोटी कुल्हाड़ी।

कुठारु—(पुं०) [√कुठ+आरु] वृक्ष। बंदर।

कुठि—(पुं०) [√कुठ्+इन्, कित्] वृक्ष। पहाड़।

√कुड्—तु० पर० अक०। बालक होना। कुडति, कुडिष्यति, अकुडीत्।

कुडङ्ग—(पुं०) लताकुञ्ज, लतागृह।

कुडप, कुडव—(पुं०) [√कुड् + कपन्] [√कुड+कवन्] अनाज की एक तौल जो १२ अंजलि भर अथवा प्रस्थ के बराबर होती है।

कुड्मल—(वि०) [√कुड्+कलच्, मुट्] खुला हुआ, खिला हुआ, फैला हुआ; 'विजृम्भणोद्गन्धिषु कुड्मलेषु'। (पुं०) खिलावट, कली। (न०) नरक-विशेष।

कुड्मलित—(वि०) [कुड्मल+इतच्] कलीदार, जिसमें कलियाँ आ गयी हों, फूला हुआ। प्रसन्न, हँसमुख।

कुड्य—(न०) [कु+यक् (अघ्न्यादित्वात्), डुगागम] दीवाल। दीवाल पर पलस्तर करना। उत्सुकता।—**छेदिन्** (**कुड्यच्छेदिन्**)—(पुं०) सेंध लगाने वाला चोर।—**छेद्य** (**कुड्यच्छेद्य**)—(न०) दीवार का गड्ढा।

√कुण्—तु० पर० अक० शब्द करना। सक० सहारा देना। कुणति, कुणिष्यति, अकुणीत्। चु० (अदन्त) पर० सक० बुलाना। कुणयति।

कुणक—(पुं०) [कुण्+क (घञर्थे)+कन् (अनुकम्पायाम्)] हाल का उत्पन्न हुआ जानवर का बच्चा।

कुणप—(वि०) [√कुण्+कपन्][स्त्री०—कुणपी] मुर्दा जैसी दुर्गंध वाला। (पुं०, न०)

मुर्दा, शव,; 'शासनीयः कुणपभोजनः' विक्र० ४ (पुं०) भाला, बर्छी । दुर्गंध ।

कुणि—(पुं०) [√कुण्+इन्] विसहरी, फोड़ा जो हाथ की अँगुलियों के नाखूनों के किनारे होता है । लुन्जा, जिसकी एक बाँह सूख गयी हो । तुन का पेड़ ।

कुण्टक—(वि०) [√कुण्ट्+ण्वुल्] [स्त्री० —कुण्टकी] मोटा, स्थूल ।

कुण्ठ्—भ्वा० पर० अक० सुस्त पड़ जाना । लँगड़ा हो जाना या अंगहीन हो जाना । मूर्ख बनना । कुण्ठति, कुण्ठिष्यति, अकुण्ठीत्, चु० पर० सक० लपेटना । बचाना । कुण्ठयति—कुण्ठति ।

कुण्ठ—(वि०) [√कुण्ठ्+अच्] सुस्त, ढीला; 'वज्रं तपोवीर्यमहत्सु कुण्ठं' कु० ३.१२ । अल्हड़, अनाड़ी, मूढ़ । काहिल, अकर्मण्य । निर्बल ।

कुण्ठक—(पुं०) [√कुण्ठ्+ण्वुल्] मूर्ख, बेवकूफ ।

कुण्ठित—(√कुण्ठ्+क्त] भोथरा, गोंठिल । मूर्ख । विकलाङ्ग ।

√कुण्ड्—भ्वा० आत्म० सक० जलाना । कुण्डते, कुण्डिष्यते, अकुण्डिष्ट । भ्वा० पर० अक० विकल होना । कुण्डति, कुण्डिष्यति, अकुण्डीत् । चु० पर० सक० बचाना । कुण्डयति—कुण्डति ।

कुण्ड—(पुं०, न०) [√कुण्+ड] पानी रखने का कुंडा । मटका । छोटा तालाब । हौज । हवन की अग्नि या जल-संचय के लिये खोदा हुआ गढ़ा । घटलोई । कमंडलु । खप्पर, भिक्षापात्र । (पुं०) [कुण्ड्यते दह्यते कुलम् अनेन, √कुण्ड्+घञ्] छिनाले का लड़का, पति जीवित रहते हुए अन्य पुरुष से उत्पन्न किया हुआ पुत्र, [स्त्री०—कुण्डी]—"पत्यौ जीवति कुण्डः स्यात् ।" —मनु० ।—आशिन् (कुण्डाशिन्)—(पुं०) जारज बेटे की कमाई खाने वाला ।—ऊधस् [ब० स०, ङीप्, अनङ आदेश—कुण्डोध्नी] । दूध से ऐन भरी हुई गौ । स्त्री जिसके कुच पूरे निकल चुके हों ।—कीट—(पुं०) चकले वाला, व्यभिचारिणी स्त्रियों के अड्डे वाला । चार्वाक मतावलम्बी, नास्तिक । छिनाले में उत्पन्न ब्राह्मण ।—कील—(पुं०) कमीना या अधम पुरुष ।—गोल, —गोलक— (न०) महेरी, पसाव, पीच, माँड़, कांजी । (पुं०) कुण्ड और गोलक का समुदाय ।

कुण्डल—(पुं०, न०) [√कुण्ड्+कलच् या कुण्ड√ला+क] कान का आभूषण । पहुँची । रस्सी या साँप की फेंटी ।

कुण्डलना—(स्त्री०) [कुण्डल+णिच्+युच् टाप्] घिराव । एक गोल चिह्न जो उस शब्द पर लगाया जाता है, जिसको पढ़ते समय, विचारते समय अथवा नकल करते समय छोड़ देना चाहिये, यह चिह्न गोलाकार होता है ।

कुण्डलिन्—(वि०) [कुण्डल+इनि] [स्त्री० —कुण्डलिनी] कुण्डलों से भूषित । गोलाकार । ऐंठनदार, उमेंठा हुआ । (पुं०) सर्प । मोर । वरुण की उपाधि ।

कुण्डलिनी—(स्त्री०) [कुण्डलिन्+ङीप्] दुर्गा या शक्ति का एक रूप । मूलाधार चक्र में स्थित एक शक्ति जिसे तंत्र और हठयोग का साधक जगाकर ब्रह्मरंध्र में लगाने का यत्न करता है ।

कुण्डिका—(स्त्री०) [कुण्ड+कन्—टाप्, इत्व] घड़ा । कमण्डलु ।

कुण्डिन—[√कुण्ड्+इनच्] (पुं०) एक मुनि । (न०) एक नगर का नाम, विदर्भों की राजधानी ।

कुण्डिर, कुण्डीर—(वि०) [√कुण्ड्+इरन्] [√कुण्ड्+ईरन्] बलवान् (पुं०) मनुष्य ।

कुतप—(पुं०) [कु√तप्+अच्] ब्राह्मण । एक बाजा । सूर्य । अग्नि । मेहमान । बैल ।

दौहित्र, धेवता, लड़की का लड़का। भानजा, बहिन का लड़का। अनाज। दिन का आठवाँ मुहूर्त। (न०) कुश, दर्भ। एक प्रकार का कंबल।

कुतस्—(अव्य०) [किम्+तसिल्] कहाँ से, किधर से। कहाँ, किस स्थान पर। क्यों, किसलिए। क्योंकर, किस प्रकार। अत्यधिक, अत्यन्त। क्योंकि, यतः।

कुतस्त्य—(वि०) [कुतस्+त्यप्] कहाँ से आया हुआ। कैसे हुआ।

कुतुक—(न०) [√कुत्+उकञ्] अभिलाषा, कामना। कौतुक। उत्कण्ठा; 'केलिकलाकुतुकेन च' गीत० १।

कुतुप—(पुं०, न०) [कुतप पृषो० साधुः] दिन का आठवाँ मुहूर्त। [ह्रस्वा कुतूः, कुतू+डुप् पृषो० साधुः] चमड़े की कुप्पी।

कुतू—(स्त्री०) [कु √ तन्+कू, टिलोप (बा०)] चमड़े की कुप्पी।

कुतूहल—(वि०) [कुतू√हल्+अच्] अद्भुत, विलक्षण। सर्वोत्तम, सर्वश्रेष्ठ। श्लाघ्य। प्रसिद्ध। अभिलाषा। उत्सुकता, उत्कण्ठा। क्रीड़ा। अचंभा।

कुत्र—(अव्य०) [किम्+त्रल्] कहाँ, किस जगह।

कुत्रत्य—(वि०) [कुत्र+त्यप्] कहाँ रहनेवाला, कहाँ बसनेवाला।

√**कुत्स्**—चु० आत्म० सक० निंदा करना। कुत्सयते।

कुत्सन—(न०), **कुत्सा**—(स्त्री०) [√कुत्स्+ल्युट्] [√कुत्स्+अ—टाप्] गाली, तिरस्कार, निन्दा, अपशब्द।

कुत्सित—(वि०) [√कुत्स्+क्त] निंदित, कमीना, दुष्ट।

√**कुथ्**—दि० पर० अक० दुर्गंध करना। कुथ्यति, कोथिष्यति, अकोथीत्। क्र्या० दे० '√कुन्थ्'।

कुथ—(पुं०, न०), **कुथा**—(स्त्री०) [√कु +थक्] हाथी की झूल। कालीन, गलीचा। कुश। कंथा। एक कीड़ा।

कुद्दार, कुद्दाल, कुद्दालक—(पुं०) [कु √दृ+णिच्+अण्, पृषो० साधुः] [कु √दल्+णिच्+अण्, पृषो० साधुः] [कुद्दाल +कन्] कुदाली। फावड़ा। कचनार का वृक्ष, काञ्चन वृक्ष।

कुद्मल—(न०) [=कुड्मल, पृषो० साधुः] दे० 'कुड्मल'।

कुद्रङ्क, कुद्रङ्ग—(पुं०) [कुद्र√कै+क नि० साधुः] [कु—उत्√रञ्ज्+घञ्] चौकीदार का घर या चौकी या मचान पर बनी मड़ैया। घंटाघर।

कुनक—(पुं०) काक, कौआ।

कुन्त—(पुं०) [कु√उन्द्+त (बा०), शक० पररूप] प्रास नामक शस्त्र, भाला। सपक्ष तीर। छोटा कीड़ा।

कुन्तल—(पुं०) [कुन्त√ला+क] सिर के केश। जलपान करने का कटोरा या प्याला। हल। जौ। सुगन्ध द्रव्य। एक देश और उसके निवासी।

कुन्ति—(पुं०) [√कम्+झिच्] राजा क्रथ के पुत्र का नाम।—**भोज**—(पुं०) एक यादव वंशी राजा का नाम। (इसके कोई सन्तान न थी, अतः इसने कुन्ती को गोद लिया था)।

कुन्ती—(स्त्री०) [कुन्ति + ङीष्] शूरसेन राजा की औरसी पुत्री जिसका नाम पृथा था और कुन्तिभोज ने इसे गोद लिया था। यह राजा पाण्डु की पटरानी थी और इसी के गर्भ से कर्ण, युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन का जन्म हुआ था।

√**कुन्थ्**—क्र्या० पर० सक०। चिपटाना। पीड़ित करना। कुथ्नाति, कुन्थिष्यति, अकुन्थीत्। भ्वा० पर० सक० कष्ट देना। मारना। कुन्थति, कुन्थिष्यति, अकुन्थीत्।

कुन्द—(पुं०, न०) [कु√दै वा√दो+क,

नि० मुम् अथवा√कु+दत्, नुम्] चमेली की जाति का एक पौधा। (न०) कुन्द का फूल; 'कुन्दावदाताः कलहंसमालाः' भट्टि० २.१८। (पुं०) विष्णु की उपाधि। खराद। कुबेर के नौ धनागारों में से एक। करवीर वृक्ष।

कुन्दम—(पुं०) [कुन्द√मा+क] बिल्ली, बिडाल।

कुन्दिनी—(स्त्री०) [कुन्द+इनि—ङीप्] कमलों का समूह।

कुन्दु—(पुं०) [कु√दृ+डु, बा० नुम्] चूहा, मूसा।

√कुन्द्र्—चु० पर० सक० झूठ बोलना। कुन्द्रयति।

√कुप्—दि० पर० सक० क्रोध करना। कुप्यति, कोपिष्यति, अकोपीत्।

कुपिन्द—दे० कुविन्द।

कुपिनिन्—(पुं०) [कुपिनी मत्स्यधानी अस्ति अस्य, कुपिनी+इनि]' धीवर, मछुवा।

कुपिनी—(स्त्री०) [√कुप्+इनि—ङीप्] छोटी मछलियाँ फँसाने का एक प्रकार का जाल।

कुपूय—(वि०) [कु√पूय्+अच्] दुष्टाचरण वाला। नीच, अकुलीन, घृणित।

कुप्य—(न०) [√गुप्+क्यप्, कुत्व] उपधातु। चाँदी और सोने को छोड़कर अन्य कोई भी धातु।

कुबेर, कुवेर—(पुं०)[√कुम्ब्+एरक्, नलोप वा कुत्सितं बेरं शरीरं यस्य,ब० स०][√कुम्ब् +एरक् आदि] धनाध्यक्ष देवता का नाम जो उत्तर दिशा के अधिष्ठाता और धनसमृद्धि के स्वामी माने जाते हैं।—**अद्रि**,—**अचल**, (**कुबेराद्रि**), (**कुबेराचल**)—(पुं०) कैलास पर्वत का नाम।—**दिश्**-(स्त्री०) उत्तर दिशा।

कुब्ज—(वि०) [कु√उब्ज्+अच्, उकारलोप] कुबड़ा, झुका हुआ। (पुं०) खड्ग-विशेष। कूबड़। एक रोग। अपामार्ग।

कुब्जक—(पुं०) [कु√उब्ज्+ण्वुल्] एक वृक्ष का नाम।

कुब्जा—(स्त्री०) [कुब्ज+टाप्] राजा कंस की एक जवान कुबड़ी दासी का नाम, इसका कुबड़ापन श्रीकृष्ण ने मिटाया था।

कुब्जिका—(स्त्री) [कुब्जक+टाप्, इत्व] आठ वर्ष की अविवाहिता लड़की।

कुभृत्—(पुं०) [कु√भृ+क्विप्] पर्वत, पहाड़।

कुमार्—चु० पर० अक० खेलना। कुमारयति, कुमारयिष्यति, अचुकुमारत्।

कुमार—(पुं०) [√कुमार्+अच्] पुत्र, बालक। पाँच वर्ष के नीचे की उम्र का बालक। युवराज, राजकुमार। कार्त्तिकेय का नाम। अग्नि का नाम। तोता। सिन्धुनद का नाम।—**पालन**-(पुं०) वह पुरुष जो बालकों की देखभाल करे। शालिवाहन राजा का नाम।—**भृत्या**- (स्त्री०) लड़कों की देखभाल। धातृपना, दाई का काम, प्रसूता स्त्री की परिचर्या।—**वाहन**,—**वाहिन्**-(पुं०) मोर, मयूर।—**सू**-(स्त्री०) पार्वती का नाम।

कुमारक—(पुं०) [कुमार+कन्] बच्चा, बालक। आँख की पुतली।

कुमारिक—(वि०)[स्त्री०—**कुमारिकी**],—**कुमारिन्**-(वि०) [स्त्री०—**कुमारिणी**],—[कुमारी+ठन्][कुमारी + इनि] लड़कियों के बाहुल्य वाला।

कुमारिका, कुमारी-(स्त्री०) [कुमारी+ठन्—टाप्] [कुमार+ङीप्] १० और १२ वर्ष के बीच की उम्र की लड़की। अविवाहिता कन्या। लड़की, पुत्री। दुर्गा का नाम। कई एक पौधों का नाम। सीता। बड़ी इलायची। भारतवर्ष की दक्षिणी सीमा का एक अन्तरीप। श्यामा पक्षी। नवमल्लिका। घृतकुमारी। एक नदी।—**पुत्र**-(पुं०) कानीन, अविवाहिता का पुत्र।—**श्वशुर**-(पुं०) विवाह

होने से पहिले सतीत्व से भ्रष्ट हुई लड़की का ससुर ।

कुमुद्—(वि०) [कु√मुद्+क्विप्] अकृपालु । अमित्र । लालची । (न०) कुमुदनी का फूल । लाल कमल का फूल ।

कुमुद—(पुं०,न०) [कु√मुद्+क] कुईं या सफेद कमल जो चन्द्रमा के उदय होने पर खिलता है। लाल कमल। (न०) चाँदी। (पुं०) विष्णु की उपाधि ; दक्षिण दिशा के दिग्गज का नाम जिसने अपनी छोटी बहिन कुमुद्वती का विवाह श्रीरामपुत्र कुश के साथ किया था।—**अभिख्य** (**कुमुदाभिख्य**)-(न०) चाँदी । —**आकर**,—**आवास**, (**कुमुदाकर**), (**कुमुदावास**)-(पुं०) सरोवर जो कमलों से भरा हो।—**ईश** (**कुमुदेश**)-(पुं०) चन्द्रमा। —**खण्ड**-(न०) कमल-समूह ।—**नाथ**,—**पति**,—**बन्धु**,—**बान्धव**, —**सुहृद्**-(पुं०) चन्द्रमा ।

कुमुद्वती—(स्त्री०) [कुमुद+मतुप्– वत्व] दे० 'कुमुदिनी' ।

कुमुदिनी—(स्त्री०) [कुमुद+इनि] कुईं या सफेद कमल का पौधा । कुमुद पुष्पों का समूह; 'ग्रथेन्दावानन्दं व्रजति समुपोढे कुमुदिनी' उत्त० ५.२६ । वह स्थान जहाँ कुमुदों का बाहुल्य हो । —**नायक**,—**पति**-(पुं०) चन्द्रमा ।

कुमोदक—(पुं०) [कु√मुद्+णिच्+ण्वुल्] विष्णु की उपाधि ।

√कुम्ब्—भ्वा० पर० सक० ढाँकना। कुम्बति, कुम्बिष्यति, अकुम्बीत् । चु० पर० सक० ढाँकना, कुम्बयति—कुम्बति ।

कुम्बा—(स्त्री०) [√कुम्ब्+अङ–टाप्] यज्ञस्थान का परदा या घेरा ।

√कुम्भ्—चु० पर० सक० ढाँकना । कुम्भयति—कुम्भति ।

कुम्भ—(पुं०) [कु√उम्भ्+अच्, शक० पररूप] घड़ा, कलसा; 'इयं सुस्तनी मस्तकन्यस्तकुम्भा'। हाथी के माथे के दो मांसपिण्ड। कुम्भ राशि । चौसठ सेर या २० द्रोण की तौल । प्राणायाम का एक अंग जिसमें साँस खींचने के बाद रोकी जाती है । वेश्यापति । कुम्भकर्ण का पुत्र । गुग्गुल ।—**कर्ण**-(पुं०) रावण का छोटा भाई ।—**कार**-(पुं०) कुम्हार । वर्णसङ्कर जाति, उशना के मतानुसार —'वैश्यायां विप्रतश्चौर्यात् कुम्भकारः स उच्यते ।'—पराशर के मतानुसार —'मालाकारात्कर्मकर्यां कुम्भकारो व्यजायत ।' —**घोष**-(पुं०) एक प्राचीन कस्बे का नाम । —**ज**,—**जन्मन्**,—**योनि**, —**सम्भव**- (पुं०) अगस्त्य की उपाधियाँ । द्रोणाचार्य की उपाधि । वशिष्ठ की उपाधि । —**दासी**- (स्त्री०) कुटनी ।—**मण्डूक**-(पुं०) घड़े का मेढक । (आलं०) अनुभवशून्य मनुष्य ।—**सन्धि**-(पुं०) हाथी के माथे पर के दो मांसपिण्डों के बीच का गढ़ा ।

कुम्भक—(पुं०) [कुम्भ√कै+क] प्राणायाम का एक अंग जिसमें नाक-मुँह बंद करके साँस रोकी जाती है ।

कुम्भा—(स्त्री०) [कुत्सितवृत्त्या उम्भा पूर्तिः अस्याः शक० पररूप] छिनाल स्त्री, रंडी ।

कुम्भिका—(स्त्री०) [कुम्भ+कन्–टाप्, इत्व] छोटा घड़ा । वेश्या । जलकुंभी । परवल की लता । एक नेत्र-रोग, बिलनी । कायफल । एक शिश्नरोग

कुम्भिन्—(पुं०) [कुम्भ+इनि] हाथी । मगर, घड़ियाल । एक मछली । एक प्रकार का विषैला कीड़ा । गुग्गुल ।—**मद** (**कुम्भिमद**) -(पुं०) हाथी का मद ।

कुम्भिल—(पुं०) [√कुम्भ्+इलच्] घर में सेंध फोड़ने वाला चोर । ग्रन्थचोर, लेखचोर, श्लोकार्ध चुराने वाला । साला । गर्भ पूर्ण होने के पूर्व ही उत्पन्न हुआ बालक ।

कुम्भी—(स्त्री०) [कुम्भ+ङीप्] छोटा

घड़ा। हंडी। अनाज की तौल का एक बटखरा। जलकुंभी। सलई का पेड़। गनियारी। दंती। पाँडर।—नस-(पुं०) [कुम्भी इव नासिका यस्य, ब० स०, अन्, नसादेश:] एक प्रकार का विषैला साँप।—पाक-(एकवचन या बहुवचन) (पुं०) एक नरक जहाँ पापी, कुम्हार के बरतनों की तरह आवाँ में पकाये जाते हैं।

कुम्भीक—(पुं०) [कुम्भी√कै+क] पुन्नाग वृक्ष। एक तरह का नपुंसक, गांडू।—मक्षिका-(स्त्री०) एक प्रकार की मक्खी।

कुम्भीर—(पुं०) [कुम्भिन्√ईर्+अण्] घड़ियाल। एक छोटा कीड़ा। एक यक्ष।

कुम्भीरक, कुम्भील, कुम्भीलक—(पुं०) [कुम्भीर+कन्] [=कुम्भीर रस्य ल:] [कुम्भील+कन्] चोर। मगर, घड़ियाल।

√कुर्—तु० पर० अक० शब्द करना। कुरति, कोरिष्यति, अकोरीत्।

कुरङ्कुर, कुरङ्गर—(पुं०) [कुरम् इति अव्यक्त-शब्दं करोति, कुरम्√कृ+ट] [कुरम्√कुर्+अच्] सारस पक्षी।

कुरङ्ग—(पुं०) [√कु+अङ्गच्] हिरन। तामड़े रंग का हिरन। एक पर्वत। एक तीर्थ। [स्त्री०—**कुरङ्गी**]—'लवंगी कुरङ्गीदृगङ्गीकरोतु।'—जगन्नाथ।—**अक्षी (कुरङ्गाक्षी)**, —**नयना**, —**नेत्रा**-(स्त्री०) हिरन जैसी आँखों वाली स्त्री।—**नाभि**(पुं०) कस्तूरी, मुश्क।

कुरङ्गम—(पुं०) [कुर√गम्+खच्, मुम्] दे० 'कुरङ्ग'।

कुरबिल्ल—(पुं०) [कुर√बिल्ल्+अच्] केकड़ा। बनैले सेब। कर्कराशि।

कुरट—(पुं०) [√कुर्+अटन्, कित्] मोची, चमार।

कुरण्ट, कुरण्टक-(पुं०), **कुरण्टिका**-(स्त्री०) [√ कुर्+अण्टक्] [कुरण्ट+कन्] [कुरण्ट+कन्—टाप्, इत्व] कटसरैया। कुटज वृक्ष। तिलिवार वृक्ष।

कुरण्ड—(पुं०) [√कुर्+अण्डक] अण्डकोषवृद्धि का रोग, एक रोग जिसमें पोते बढ़ जाते हैं।

कुरर, कुरल—(पुं०)[√कु+क्रन्, पक्षे रलयोरभेद:] क्रौंच पक्षी, करांकुल। एक तरह का गिद्ध।

कुररी—(स्त्री०)[कुरर+ङीष्]मादा कुरर; 'चक्रन्द विग्ना कुररीव भूय:'र०१४·६८ भेड़, मेषी।—**गण**—(पुं०)कुररी पक्षियों का झुंड।

कुरव, (पुं०), **कुरवक**—(पुं० न०) [कु ईषत् रवो यत्र] [कुरव+कन्] लाल फूल वाली कटसरैया; 'कुरवका: रवकारणतां ययु:' र० ६.२६। शाक। गीदड़।

कुरीर—(न०) [√कृ+ईरन्, उकारादेश] मैथुन। स्त्रियों के सिर पर ओढ़ने का वस्त्र-विशेष।

कुरु—(पुं०) [√कृ+कु, उकारादेश] आधुनिक दिल्ली के आस-पास का प्रदेश। उस देश के राजा। पुरोहित। भात।—**क्षेत्र**- (न०) दिल्ली के पश्चिम एक तीर्थ-स्थान, जहाँ कौरवों और पाण्डवों का लोकक्षय-कारी इतिहास-प्रसिद्ध युद्ध हुआ था।—**जांगल**-(न०) कुरुक्षेत्र।—**राज**,—**राज**-(पुं०) राजा दुर्योधन।—**बिल्व**-(पुं०) चार तोले की सोने की तौल।—**वृद्ध**-(पुं०) भीष्म की उपाधि।

कुरुविन्द—(न०) [कुरु√विद्+श, मुम्] माणिक। आईना। काला नमक। (पुं०) कुलथी। उड़द। मोथा।

कुर्कुट—(पुं०) [कुर्√कुट्+क] मुर्गा। कूड़ा।

कुर्कुर—(पुं०) [कुर् इति अव्यक्तशब्दं कुरति शब्दायते, कुर्√कुर्+क] कुत्ता।

कुर्चिका—(स्त्री०) [=कूर्चिका पृषो० ह्रस्व] कूर्चिका, कूंची।

√कुर्द्—भ्वा० आत्म० अक० खेलना। कुर्दते, कुर्दिष्यते, अकुर्दिष्ट।

कुर्दन—(न०) [√कुर्द्+ल्युट्] खेलकूद।
कुर्पर, कूर्पर–(पुं०) [√कुर्+क्विप, कुर् √पृ+अच्, पक्षे दीर्घ नि०] घुटना। कोहनी।
कुर्पास, कूर्पास, कुर्पासक, कूर्पासक—(पुं०) [कूर्पर√अस्+घञ् पृषो० साधुः] [कुर्पास वा कूर्पास+कन्] स्त्रियों के पहिनने की एक प्रकार की चोली या अँगिया; 'मनोज्ञ-कूर्पासकपीडितस्तना'।
कुर्वत्—[√कृ+शतृ] करता हुआ। (पुं०) नौकर। मोची, चमार।
कुल्√—भ्वा० पर० सक० बाँधना। मेल करना। कोलति, कोलिष्यति, अकोलीत्।
कुल—(न०)[√कुल्+क] वंश, घराना। घर, मकान। उच्च वंश। झुंड, समूह, समुदाय; 'मृगकुलं रोमन्थमभ्यस्यतु' श० २.६। (बुरे अर्थ में) गिरोह। देश। शरीर। अगला भाग। —**अकुल (कुलाकुल)**–(पुं०) तन्त्रशास्त्र के अनुसार बुध दिन, द्वितीया, षष्ठी तथा द्वादशी तिथि और आर्द्रा, मूल, अभिजित् एवं शत-भिषा नक्षत्र को कुलाकुल कहते हैं।—**अङ्गना (कुलाङ्गना)**–(स्त्री०) उच्च-कुलोद्भवा स्त्री। —**अङ्गार (कुलाङ्गार)**–(पुं०) कुल का नाश करने वाला। कुलकलङ्क। —**अचल (कुलाचल),—अद्रि, (कुलाद्रि), —पर्वत,—शैल**–(पुं०) प्रसिद्ध सप्त पर्वतों —महेंद्र, मलय, सह्य, शुक्ति, ऋक्ष, विन्ध्य और पारियात्र में से कोई।—**अन्वित (कुलान्वित)**–(वि०) उत्तम कुलोत्पन्न।—**अभिमान (कुलाभिमान)**–(पुं०) अपने कुल का अहङ्कार।—**आचार (कुलाचार)**–(पुं०) अपने वंश का परम्परागत आचार।—**आचार्य (कुलाचार्य)**–(पुं०) कुलपुरोहित। वंशावली रखने वाला।—**ईश्वर (कुलेश्वर)**–(पुं०) कुटुम्ब का मुखिया। शिव का नाम।—**उत्कट (कुलोत्कट)**-(वि०) उच्च कुलोद्भव। (पुं०) अच्छी नस्ल का घोड़ा।—**उत्पन्न (कुलोत्पन्न),—उद्गत (कुलोद्गत),–उद्भव (कुलोद्भव)**–(वि०) अच्छे वंश में उत्पन्न। —**उद्वह (कुलोद्वह)**–(पुं०) खानदान का मुखिया। —**उपदेश (कुलोपदेश)**–(पुं०) खानदानी नाम।—**कज्जल**–(पुं०) कुल-कलंक, कुलाङ्गार।—**कण्टक**–(पुं०) अपने कुल के लिये दुःखदायी।—**कन्यका,—कन्या**–(स्त्री०) कुलीन लड़की।—**कर**–(पुं०) कुल का आदिपुरुष।—**कर्मन्**–(न०) अपने कुल खानदान की खास रस्म अथवा विशेष रीति।—**कलङ्क**–(पुं०) अपने खानदान में धब्बा लगाने वाला।—**क्षय**–(पुं०) वंश का नाश। कुल की बरबादी।—**गिरि,—पर्वत, —भूभृत्,—शैल**–(पुं०) प्रधान सप्त पर्वतों में से एक, कुलाचल।—**घ्न**–(वि०) वंश को बरबाद करने वाला।—**ज,—जात**–(वि०) कुलीन, अच्छे खानदान का, खानदानी। पैतृक, बाप-दादों का, पुरखों का।—**जन**–(पुं०) कुलीन जन।—**तन्तु**–(पुं०) अपने कुल को कायम रखने वाला।—**तिथि**–(पुं०, स्त्री०) चतुर्थी, अष्टमी, द्वादशी, चतुर्दशी, वह तिथि जिस दिन कुलदेवता का पूजन होता है।—**तिलक**—(पुं०) अपने वंश को उजागर करने वाला, वंशउजागर। —**दीप,—दीपक**–(पुं०) कुलउजागर।—**दुहितृ**–(स्त्री०) कुलकन्या।—**देवता**-(स्त्री०) खानदानी देवता, वह देवता जिनका पूजन अपने कुल में सदा से होता चला आता हो। —**द्रुम**–(पुं०) बेल, बरगद, पीपल, गूलर, नीम, आमला, लसोढ़ा, इमली, करंज और कदंब—ये दस प्रधान वृक्ष।—**धर्म**–वंश-(पुं०) परम्परा से प्रचलित धर्म, अपने खानदान की पद्धति या रीति-रस्म; 'उत्सन्नकुलधर्माणाम् मनुष्याणाम् जनार्दन' भग० १.४३।—**धारक**–(पुं०) पुत्र।—**धुर्य**–(पुं०) वह पुत्र जो अपने घर वालों का भरणपोषण कर सकता हो, वयस्क पुत्र।—**नन्दन**–(वि०) अपने कुल की प्रतिष्ठा बढ़ाने वाला।—

नायिका-(स्त्री०) वह लड़की जिसकी पूजा वाममार्गी तांत्रिक भैरवीचक्र में किया करते हैं।—नारी-(स्त्री०) कुलीन और सती स्त्री।—नाश-(पुं०) खानदान का नाश या बरबादी। [कुलं भूमिलग्नम् न अश्नाति, कुल—नञ्√अश्+अन्] ऊँट।— परम्परा-(स्त्री०) वंशावली।—पति- (पुं०) १० हजार शिष्यों का भरण-पोषण कर, उनको पढ़ाने वाला ब्रह्मर्षि; 'मुनीनां दशसाहस्रं योऽन्नदानादिपोषणात्। अध्यापयति विप्रर्षिरसौ कुलपतिः स्मृतः' ।।—पांसुका-(स्त्री०) कुलटा स्त्री।—पालि,—पालिका,—पाली-(स्त्री०) सती या कुलीन स्त्री।—पुत्र-(पुं०) उत्तम कुल में उत्पन्न लड़का।—पुरुष-(पुं०) कुलीन, पुरुष, खानदानी आदमी। पुरखा, बुजुर्ग।—पूर्वग-(पुं०)पुरखा, बुजुर्ग।—भार्या-(स्त्री०) पतिव्रता या सती स्त्री।—भृत्या-(स्त्री०) गर्भवती स्त्री की परिचर्या।—मर्यादा-(स्त्री०) कुल की प्रतिष्ठा, खानदानी इज्जत।—मार्ग-(पुं०)खानदानी रस्म।—योषित्,—वधू-(स्त्री०) कुलीन और अच्छे आचरण वाली स्त्री।—वार-(पुं०) मुख्य दिवस अर्थात् मंगलवार और शुक्रवार।—विद्या-(स्त्री०) वह ज्ञान जो किसी घर में परम्परा से प्राप्त होता आया हो।—विप्र-(पुं०)पुरोहित।—वृद्ध-(पुं०) कुल का वृद्ध और अनुभवी पुरुष।—व्रत-(न०) खानदानी व्रत।—श्रेष्ठिन्-(पुं०) किसी वंश का प्रधान। कुलीन घराने का कारीगर।—संख्या-(स्त्री०) खानदानी इज्जत। सम्मानित घरानों में गणना।—सन्तति-(स्त्री०) आल-औलाद।—सम्भव-(वि०) कुलीन घराने का।—सेवक-(पुं०) खानदानी या उत्कृष्ट नौकर।—स्त्री-(स्त्री०) अच्छे घराने की औरत, नेकऔरत; 'अधर्माभिभवात्कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियः' भग० १.४१।—स्थिति-(स्त्री०)वंश की प्राचीनता या समृद्धि।

कुलक—(वि०)[√कुल्+अच्+कन्]कुलीन। (पुं०) किसी जत्थे का मुखिया, किसी थोक का प्रधान। किसी प्रसिद्ध घराने का कलाकोविद। बाँबी। (न०) समूह, समुदाय। ऐसे ५ से १५ तक के श्लोकों का समूह जो एक वाक्य बनाते हों या एकान्वयी हों।

कुलटा—(स्त्री०) [कुल√अट्+अच्—टाप्, शक० पररूप] छिनाल औरत, व्यभिचारिणी स्त्री।—पति-(पुं०) कुटना, मछन्दर।

कुलतः—(अव्य०) [कुल+तस्] जन्म से।

कुलत्थ—(पुं०) [कुल√स्था+क, पृषो० साधुः] कुलथी, एक प्रकार का अनाज।

कुलन्धर—(वि०) [कुल√धृ+खच्, मुम्] अपने कुल या वंश को स्थिर रखने वाला।

कुलम्भर—(पुं०) [कुल √ भृ + खच्, मुम्] चोर।

कुलवत्—(वि०) [कुल+मतुप्] कुलीन, खानदानी।

कुलाय—(पुं०न०) [कुलं पक्षिसमूहः अयतेऽत्र, कुल √ अय् + घञ्] पक्षी का घोंसला; 'कूजत्क्लान्तकपोतकुक्कुटकुलाः कूले कुलायद्रुमाः' उत्त० २.९। स्थान, जगह। जाला, बुना हुआ वस्त्र। किसी वस्तु के रखने का घर या खाना, पात्र। [कौ पृथिव्यां लायो लयोऽस्य] शरीर।—निलाय-(पुं०) घोंसले में बैठना, अंडे सेना।—स्थ- (पुं०) पक्षी।

कुलायिका—(स्त्री०) [कुलाय+ठन्—टाप्] चिड़ियाखाना। पिंजड़ा। पक्षियों के बैठने की अटारी।

कुलाल—(पुं०) [√कुल्+कालन्]कुम्हार। जंगली मुर्गा।

कुलि—(पुं०) [√कुल्+इन्, किन्] हाथ।

कुलिक—(पुं०) [कुल+ठन्] शिल्पि-श्रेणी का प्रधान। कुलीन शिल्पी। स्वजन। शिकारी। एक कँटीला पौधा। कुलवार। एक विष। (वि०) कुलीन।—वेला-(स्त्री०)

दिन का वह विशेष भाग जिसमें शुभ कार्य करने का निषेध है।

कुलिङ्ग—(पुं०) [कु+लिङ्ग्+अच्] पक्षी। गौरैया। जहरीला चूहा।

कुलिन्—(वि०) [√कुल+इनि] [स्त्री०—कुलिनी] कुलीन। (पुं०) पर्वत, पहाड़।

कुलिन्द—[कुल्+इन्द] पश्चिमोत्तर भारत का एक प्राचीन जनपद। कुलिंद-निवासी।

कुलिर—(पुं०, न०) [√कुल+इरन्, कित्] केकड़ा। कर्कराशि।

कुलिश, कुलीश—(पुं०) [कुलि√शी+ड, पक्षे पृषो० दीर्घ] इंद्र का वज्र। बिजली। हीरा। कुल्हाड़ी। एक तरह की मछली।—धर,—पाणि-(पुं०) इंद्र।—नायक-(पुं०) स्त्रीमैथुन का आसन-विशेष, एक रतिबन्ध।

कुली—(स्त्री०) [कुलि+ङीष्] बड़ी साली। भटकटैया।

कुलीन—(वि०) [कुल+ख—ईन] अच्छे खानदान का। (पुं०) अच्छी नस्ल का घोड़ा।

कुलीनस—(न०) कुलीनं भूमिलग्नं द्रव्यं स्यति, कुलीन√सो+क] जल।

कुलीर, कुलीरक-(पुं०) [√कुल्+ईरन्, कित्] [कुलीर+कन्] केकड़ा। कर्क राशि।

कुलुक-(न०)[√कुल्+उकन्] जीभ का मैल।

कुलुकगुञ्जा-(स्त्री०) [कौ पृथिव्यां लुक्का लुक्कायिता गुञ्जा इव] लुकाठी, अधजली लकड़ी।

कुलूत—(पुं०) पश्चिमोत्तर भारत का एक जनपद।

कुल्माष—(न०) [√कुल्+क्विप्, कुल् माषोऽस्मिन्, ब० स०] काँजी। (पुं०) कुलथी। वन कुलथी। बोरो धान। चना आदि द्विदल। एक रोग।

कुल्य—(वि०) [कुल+य वा यत्] कुल का, वंश-सम्बन्धी। कुलीन पुरुष। (न०) मित्र-भाव से घरेलू बातों के सम्बन्ध में प्रश्न, (समवेदना, सहानुभूति, बधाई आदि)। [√कुल्+क्यप्] हड्डी। मांस। सूप।

कुल्या—(स्त्री०) [√कुल्+क्यप्—टाप्] सती स्त्री। नहर, नाला, छोटी नदी; 'कुल्याम्भोभिः पवनचपलैः शाखिनो धौतमूलाः' श० १.१५। गढ़ा, गर्त, खाई। अनाज की तौल-विशेष, जो ८ द्रोण के बराबर होती है।

कुव—(न०) [कु√वा+क] फूल। कमल।

कुवल—(न०) [कु√वल्+अच्] कुईं। मोती। जल।

कुवलय—(न०) [कोः पृथिव्याः वलयमिव, उपमित स०] कुईं। नीली कुईं। नील कमल।[कोः वलयम्, ष० त०] भूमण्डल।

कुवलयिनी—(स्त्री०) [कुवलय+इनि—ङीप्] नीली कुईं का पौधा। नीली कुईं के फूलों का समूह।

कुवाद—(वि०) [कु√वद्+अण्] निन्दक, दोष ढूंढ़ने वाला। नीच, कमीना, दुष्ट।

कुविक—(पुं०) एक देश का नाम।

कुविन्द, कुविन्द—(पुं०) [कु√विद्+श] [√कुप्+किन्दच्] जुलाहा, कोरी। कोरी की जाति का नाम।

कुवेणी—(स्त्री०) [कु√वेण्+इन्—ङीप्] पकड़ी हुई मछलियों को रखने की टोकरी। [कुत्सिता वेणी, कु० स०] बुरी बँधी हुई सिर की चोटी।

कुवेल—(न०) [कुवेषु जलजपुष्पेषु ई शोभां लाति, कुव—ई√ला+क] कमल।

कुश—(वि०) [कु√शी+ड] पापी। मत-वाला। (न०) जल। (पुं०) कड़ी और नुकीली पत्तियों वाली एक घास जो यज्ञ, पूजन आदि धार्मिक कृत्यों की आवश्यक सामग्री है, दर्भ। श्री रामचन्द्र जी के ज्येष्ठ पुत्र। द्वीप-विशेष।—अग्र-(कुशाग्र)-(वि०) कुश की नोक जैसा तीक्ष्ण, तेज।—बुद्धि-(वि०)पैनी, तीक्ष्ण बुद्धि वाला; 'कुशाग्रबुद्धे! कुशली गुरुस्ते' र० ५.४।—अरणि (कुशा-

रणि)-(पुं०) [कुशं शापदानार्थं जलम् पाणिरस्यास्य] दुर्वासा ।—कण्डिका-(स्त्री०) वेदी पर या कुंड में अग्नि-स्थापन की क्रिया ।—स्थल-(न०) [कुशप्रधानं स्थलम्, मध्य स०] कन्नौज ।—स्थली-(स्त्री०) द्वारका ।—हस्त-(वि०) दान, श्राद्ध आदि करने को उद्यत ।

कुशल—(न०) [√कुश्+कलच्] कल्याण, मंगल । गुण, धर्म । चतुरता, निपुणता । (वि०) [कुशल+अच्] ठीक, उचित । प्रसन्न । निपुण, पटु ।—**काम**-(वि०) सुख-प्राप्ति का अभिलाषी ।—**प्रश्न**-(पुं०) राजी-खुशी पूछना ।—**बुद्धि**-(वि०) बुद्धिमान् । कुशाग्रबुद्धि, प्रतिभाशाली ।

कुशलिन्—(वि०) [कुशल+इनि] [स्त्री०—कुशलिनी] प्रसन्न । अच्छी दशा में । भरा-पूरा ।

कुशा—(स्त्री०) [कुश+टाप्] रस्सी । लगाम ।

कुशावती—(स्त्री०) [कुश+मतुप्, मस्य वः, दीर्घः] श्रीरामचन्द्र जी के पुत्र कुश की राजधानी का नाम ।

कुशिक—(वि०) [कुश+ठन्] ऐंचा-ताना । (पुं०) विश्वामित्र के पिता का नाम । हल की फाल । तेल की तलछट । बहेड़ा । धूने का पेड़ ।

कुशी—(स्त्री०) [कुश+ङीप्] हल की फाल ।

कुशीलव—(पुं०) [कुत्सितं शीलमस्य, कुशील+व] भाट, चारण । गवैया । अभिनय या नाटक का पात्र बनने वाला ; 'तत्किमिति नारम्भयसि कुशीलवैः सह संगीतकं' वे० १ । नट, नर्तक । खबर फैलाने वाला । वाल्मीकि की उपाधि ।

कुशुम्भ—(पुं०) [कु√शुम्भ्+अच्] संन्यासी का जलपात्र, कमण्डलु ।

कुशूल—(पुं०) [√कुश्+ऊलच्, पृषो० सस्य शत्वम्] अन्न भरने का कोठार, भण्डारी । धान की भूसी की आग ।

कुशेशय—(न०) [कुशे√शी+अच्, अलुक् स०] कमल; 'भूयात्कुशेशयरजोमृदुरेणुरस्याः पन्थाः' श० ४.१० । (पुं०) सारस । कनेर का पेड़ ।

√कुष्—क्र्या० पर० फाड़ना । खींच कर निकालना । खींचना । परीक्षा करना, जाँचना, पड़तालना । अक० चमकना । कुष्णाति, कोषिष्यति, अकोषीत् ।

कुषल—(वि०) [√कुष्+कलच्] होशियार ।

कुषाकु—(पुं०) [√कुष्+काकु] सूर्य । अग्नि । बन्दर ।

कुषित—(वि०) [√कुष्+क्त] जल-मिश्रित, जिसमें पानी मिला हो ।

कुष्ठ—(पुं०, न०) [√कुष्+क्थन्] कोढ़ रोग ।—**अरि** (**कुष्ठारि**)-(पुं०) गन्धक । कत्था । परवल । कितने ही पौधों का नाम ।—**केतु**-(पुं०) खेखसा का नाम ।—**गन्धिनी**-(स्त्री०) अश्वगन्ध ।

कुष्ठिन्—(वि०) [कुष्ठ+इनि] [स्त्री०-कुष्ठिनी] कोढ़ी ।

कुष्माण्ड—(पुं०) [कु ईषत् उष्मा अण्डेषु बीजेषु यस्य, ब० स०, शक० पररूप] कुम्हड़ा । झूठा गर्भ । शिव का एक गण ।

कुष्माण्डक—(पुं०) [कुष्माण्ड+कन्] कुम्हड़ा ।

√कुस्—दि० पर० सक० आलिङ्गन करना । घेरना । कुस्यति, कोसिष्यति, अकुसत्—अकोसीत् ।

कुसित—(पुं०) [√कुस्+क्त] आबाद देश । ब्याज या सूद पर निर्वाह करने वाला ।

कुसीद—(न०) [√कुस्+ईद] कर्जा जो सूद सहित अदा किया जाय । रुपये उधार देना । ब्याजखोरी, ब्याज का धंधा । (वि०) काहिल ।—**जीविन्**-(पुं०) महाजनी करने

वाला। सूदखोर।—पथ–(पुं०) सूदखोरी। ब्याज, सूद। ५ सैकड़े से अधिक भाव का सूद।—वृद्धि–(स्त्री०) रुपयों पर ब्याज।

कुसीदा—(स्त्री०) [कुसीद+टाप्] ब्याजखोर स्त्री।

कुसीदायी—(स्त्री०) [कुसीद+ङीप्, ऐ आदेश] ब्याजखोर की पत्नी।

कुसीदिक, कुसीदिन्–(पुं०), [कुसीद+ष्ठन्] [कुसीद+इनि] ब्याजखोर, सूद खाने वाला।

कुसुम—(न०) [√कुस्+उम] फूल। रजोदर्शन। फल।—**अञ्जन** (**कुसुमाञ्जन**) (न०) पीतल की भस्म जो अञ्जन की जगह इस्तेमाल की जाती है।—**अञ्जलि** (**कुसुमाञ्जलि**)–(पुं०) फूलों से भरी अंजलि, पुष्पाञ्जलि।—**अधिप** (**कुसुमाधिप**),—**अधिराज** (**कुसुमाधिराज**)– (पुं०) चम्पा का पेड़।—**अवचाय** (**कुसुमावचाय**)–(पुं०) फूल एकत्र करना।—**अवतंसक** (**कुसुमावतंसक**)–(न०) सेहरा, सरपेच, हार।—**अस्त्र** (**कुसुमास्त्र**),—**आयुध** (**कुसुमायुध**),— **इषु** (**कुसुमेषु**),—**बाण**,—**शर**–(पुं०) कुसुम बाण, पुष्पशर, फूल का तीर। कामदेव का नाम।—**आकर** (**कुसुमाकर**)–(पुं०) बाग, बगीचा, पुष्पोद्यान। गुलदस्ता। वसन्त ऋतु।—**आत्मक** (**कुसुमात्मक**)–(न०) केसर, जाफरान।—**आसव** (**कुसुमासव**)–(न०) शहद, मधु। मदिरा-विशेष।—**उज्ज्वल** (**कुसुमोज्ज्वल**)–(वि०) पुष्पों से प्रकाशित।—**कार्मुक**,—**चाप**,—**धन्वन्**–(पुं०) कामदेव।—**चित**–(वि०) पुष्पों के ढेर का।—**पुर**–(न०) पटना, पाटलिपुत्र; 'कुसुमपुराभियोगं प्रत्यनुदासीनो राक्षसः' मुद्रा० २।—**लता**–(स्त्री०) फूली हुई बेल।—**शयन**–(न०) फूलों की सेज।—**स्तबक**–(पुं०) गुलदस्ता।

कुसुमवती—(स्त्री०) [कुसुम+मतुप्–ङीप्, मस्य वः] रजस्वला स्त्री।

कुसुमित—(वि०) [कुसुम+इतच्] फूला हुआ, पुष्पित।

कुसुमाल—(पुं०) [कुसुमवत् लोभनीयानि द्रव्याणि आलाति, कुसुम–आ√ला+क] चोर।

कुसुम्भ—(पुं०,न०)[√कुस्+उम्भ]कुसुंभ। केसर। संन्यासी का जलपात्र। (पुं०) दिखावटी स्नेह। (न०) सुवर्ण, सोना।

कुसूल—(पुं०) [√कुस्+ऊलच्] खत्ती, खाँ, अन्न का भाण्डार-गृह।

कुसृति—(स्त्री०) [कुत्सिता सृतिः उपायो व्यवहारो वा, कु० स०] छल। जाल, कपट। धोखा, प्रवञ्चना।

कुस्तुभ—(पुं०) [कु√स्तुम्भ्+क] विष्णु। समुद्र।

√कुह्—चु० आत्म० सक० आश्चर्यित करना। कुहयते, अचूकुहत।

कुह—(अव्य०) [किम्+ह, किमः कु आदेशः] कहाँ। किस स्थान पर। (पुं०) [√कुह् + णिच्+अच्] कुबेर। छलिया। बड़े बेर का पेड़। नील कमल।

कुहक—(वि०) [√कुह्+क्वुन्] ठग, वंचक। ऐन्द्रजालिक। (पुं०) मेंढक। ग्रन्थिपर्ण वृक्ष। (न०) जालसाजी। इन्द्रजाल।—**कार**–(वि०) ऐन्द्रजालिक। जालसाज। छलिया।—**चकित**–(वि०) इन्द्रजाल विद्या के प्रभाव से विस्मित। संशयात्मा, शक्की। धोखे से डरा हुआ।—**स्वन**,—**स्वर**–(पुं०) मुर्गा।

कुहका—(स्त्री०) [कुहक+टाप्] इंद्रजाल। धोखेबाजी।

कुहन—(पुं०) [कु√हन्+अच्] चूहा, मूसा। साँप। (न०) [कु√हन्+अप्] छोटा मिट्टी का पात्र। शीशे का पात्र।

कुहना, कुहनिका—(स्त्री०) [√कुह्+युच्] [कुहन+क–टाप्, इत्व] दंभ।

कुहर—(न०)[√कुह्+क, कुहं राति, कुह

√ रा+क] रन्ध्र, छिद्र। गुफा। बिल। कान। गला। सामीप्य। मैथुन, समागम।
कुहरित—(न०) [कुहर+णिच्+क्त] आवाज। कोकिल की कूक। मैथुन के समय की सिसकारी।
कुहू, कुहू—(स्त्री०) [√कुह्+कु] [कुहु+ऊङ] अमावस्या, अमावस। इस तिथि का देवता। कोकिल की कूक; 'पिकेन रोषारुणचक्षुषा मुहुः कुहूरुताहूयत चन्द्रवैरिणी' नैष० १.१०० ।—**कण्ठ,—मुख,—रव,—शब्द**—(पुं०) कोयल।
√कू—क्र्या० उभ० अक० शब्द करना, शोर करना। दुःख में चिल्लाना, कहरना। कुनाति—कुनीते, कविष्यति—ते, अकवीत्—अकविष्ट।
कू—(स्त्री०)[√कू+क्विप्] चुड़ैल,दुष्टा स्त्री।
कूच—(पुं०) [√कू+चट्] चूची, विशेष कर युवती अथवा अविवाहिता स्त्री की।
कूचिका, कूची—(स्त्री०) [कूच+कन्—टाप्, इत्व] [कूच+ङीष्] कूँची। ताली।
√कूज्—भ्वा०पर०अक० भिनभिनाना, गुञ्जार करना, कूजना। कूजति, कूजिष्यति, अकूजीत्।
कूज—(पुं०), **कूजन**—(न०), **कूजित**—(न०) [√कूज्+घञ्] [√कूज्+ल्युट्] [कूज्+क्त] कूक, चहचहाहट। पहियों की खड़खड़ाहट या चूँ—चाँ।
कूट्—चु० पर० सक० कू० जलाना। पीड़ित करना। मन्त्रणा देना; आत्म० छिपाना, धूप देना। कूटयति-ते।
कूट—(वि०)[√कूट्+अच्]मिथ्या। अचल, दृढ़। (पुं० न०) कपट, छल, माया, धोखा। चालाकी, जालसाजी। विषम प्रश्न, परेशान करने वाला सवाल। क्लिष्ट रचना। झूठ, मिथ्या। पर्वत की चोटी या शिखर, 'वर्धयन्निव तत्कूटानुद्धतैर्धातुरेणुभिः' र० ४.७१। निकास, ऊँचाई, उभाड़। माथे की हड्डी। शिखा। सींग। कोना। छोर। प्रधान, मुख्य। ढेर, राशि। हथौड़ा, घन। हल की फाल, कुशी। हिरन फँसाने की जाल। गुप्ती। कलसा, घड़ा। (पुं०) घर, आवास-स्थल। अगस्त्य का नाम।—**अक्ष** (**कूटाक्ष**)—(पुं०) सीसा या पारा भरा हुआ पासा जो फेंकने पर किसी खास बल से ही चित हो। झूठा पासा।—**आगार** (**कूटागार**)—(न०) अटारी, अटा।—**अर्थ** (**कूटार्थ**)—(पुं०) सन्दिग्ध अर्थ।—**उपाय** (**कूटोपाय**)—(पुं०) जाल-साजी, ठगविद्या।—**कार**—(पुं०) जालसाज, ठग। झूठा गवाह।—**कृत्**—(वि०) जाली दस्तावेज बनाने वाला। घूस देने वाला। (पुं०) कायस्थ। शिव का नाम।—**खड्ग**—(पुं०) गुप्ती (तलवार)।—**छद्मन्**—(पुं०) कपटी, छलिया, ठग।—**तुला**—(स्त्री०) झूठी तराजू।—**धर्म**—(वि०) मिथ्या भाषण जहाँ कर्तव्य समझा जाय।—**पाकल**—(पुं०) हाथी का वातज्वर।—**पालक**—(पुं०) कुम्हार। कुम्हार का आँवा।—**पाश,—बन्ध**—(पुं०) फंदा, जाल।—**मान**—(न०) झूठी तौल।—**मोहन**—(पुं०) स्कन्द की उपाधि।—**यन्त्र**—(न०) फंदा, जाल, जिसमें पक्षी या हिरन फँसाये जाते हैं।—**युद्ध**—(न०) धोखे-धड़ी का युद्ध।—**शाल्मलि**—(पुं०, स्त्री०) काला शाल्मलि। नरक में दण्ड देने का यन्त्र-विशेष या यमराज की गदा।—**शासन**—(न०) बनावटी आज्ञापत्र, फरमान।—**साक्षिन्**—(पुं०) झूठा गवाह।—**स्थ**—(वि०) शिखर या चोटी पर अवस्थित या खड़ा हुआ। सर्वोच्च पद पर अधिष्ठित। सर्वोपरि। (पुं०) परमात्मा। आकाशादि तत्त्व। व्याघ्रनख नामक सुगन्ध द्रव्य विशेष।—**स्वर्ण**—(न०) बनावटी या झूठा सोना, मुलम्मा।

कूटक—(न०) [कूट+कन्] छल, धोखा। श्रेष्ठत्व। उन्नयन। हल की नोक, कुशी।—**आख्यान** (**कूटकाख्यान**)—(न०) बनावटी कहानी।

कूटशः—(अव्य०) [कूट+शस्] ढेर में, समूह में।

√कूण्—चु० आत्म० सक० बोलना, बातचीत करना। सिकोड़ना, बंद करना। कूणयते। (अदन्त कूण धातु परस्मैपदी है।)

कूणिका—(स्त्री०) [√कूण्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] सींग। वीणा की खूँटी।

कूणित—(वि०) [√कूण्+क्त] बंद, मुँदा हुआ।

कूदर—(पुं०) [कु-उदर ब० स०] पतित ब्राह्मण।

कूद्दाल—(पुं०) [कु√दल्+अण्, पृषो० साधुः] पहाड़ी आबनूस।

कूप—(पुं०) [√कु+प, दीर्घ] कुआँ, इनारा। छेद, रन्ध्र। बिल। कुप्पी, कुप्पा। मस्तूल; 'द्रोणीनौकूपदण्डः' दश०। **—अङ्क** (**कूपाङ्क**), **—अङ्ग** (**कूपाङ्ग**)—(पुं०) रोमाञ्च, रोंगटे खड़े होना। **—कच्छप—मण्डूक**—(पुं०) कुएँ का कच्छप या मेढक। (आल०) अनुभवशून्य मनुष्य। **—यन्त्र**—(न०) पानी निकालने का रहट।

कूपक—(पुं०) [कूप+कन्] अस्थायी या कच्चा कुआँ। गुफा। जाँघों के बीच का स्थान। जहाज का मस्तूल। चिता। चिता के नीचे के रन्ध्र। कुप्पी, कुप्पा। नदी के बीच की चट्टान या वृक्ष।

कूपार, कूवार—(पुं०) [कुत्सितः पारः तरणम्, अस्मिन् ब० स०] [कु√वृ+अण्, पृषो० दीर्घ] समुद्र।

कूपी—(स्त्री०) [कूप+ङीप्] कुइयाँ, छोटा कूप। बोतल, करावा। नाभि।

कूबर, कूवर—(वि०) [√कु+ब (व) रच्] [स्त्री०—**कूबरी, कूवरी**] सुन्दर, मनोहर। कुबड़ा। (पुं०) वह बाँस जिसमें जुए को फँसाते हैं। कुबड़ा आदमी।

कूबरी, कूवरी—(स्त्री०) [कूब (व) र+ङीप्] कंबल या कपड़े से ढकी गाड़ी। वह बाँस या लंबी लकड़ी जिसमें जुआ लगाया जाता है।

कूर—(न० पुं०) [√वे+क्विप्—ऊः, को भूमौ ऊर्व वयनं लाति, √ला+कः, लस्य रः] भोजन। भात।

कूर्च—(पुं०, न०) [√कुर्+चट्, नि० दीर्घ] मूठा, पूला। मुट्ठी भर कुश। मोरपंख। दाढ़ी; 'लम्बकूर्चानां तापसानां कदम्बैः' श०.६ चुटकी। दोनों भौहों का मध्यभाग। कूँची। जाल, छल, कपट। डींग मारना, अकड़ना। दम्भ, ढोंग। (पुं०) सिर। भण्डारी। **—शीर्ष, —शेखर**—(पुं०) नारियल का वृक्ष।

कूर्चिका—(स्त्री०) [कूर्चक+टाप्, इत्व] चित्र लिखने की कूँची। कुंजी, ताली। कली, फूल। दुग्धविकार। सुई।

कूर्दन—(न०) [√कुर्द्+ल्युट्, दीर्घ] छलाँग। खेल, क्रीडा।

कूर्दनी—(स्त्री०) [कूर्दन+ङीप्] चैत्री पूर्णिमा को कामदेव सम्बन्धी उत्सव-विशेष। चैत्री पूर्णिमा।

कूर्प—(पुं०) [कुर्√पा+क, दीर्घ] दोनों भौहों के बीच का स्थान।

कूर्पर—(पुं०) दे० 'कुर्पर'।

कूर्म—(पुं०) [कु ईषत् ऊर्मिः वेगो यस्य, पृषो० साधुः] कछुवा। कच्छपावतार। **—अवतार** (**कूर्मावतार**)—(पुं०) विष्णु भगवान् का कच्छपावतार। **—पृष्ठ, —पृष्ठक**—(न०) कछुवे की पीठ। ढकना। **—राज**—(पुं०) विष्णु भगवान् अपने दूसरे अवतार के रूप में।

√कूल्—भ्वा० पर० सक० ढाँकना। कूलति, कूलिष्यति, अकूलीत्।

कूल—(न०) [√कूल्+अच्] नदी आदि का किनारा। ढाल, उतार। अंचल, छोर। सामीप्य। तालाब। सेना का पिछला भाग। ढेर, टीला। **—चर**—(वि०) नदीतट पर चरने वाला या रहने वाला। **—भू**—(स्त्री०)

तट की भूमि ।—हुण्डक,—हुण्डक-(पुं०) जलभँवर ।

कूलङ्कष—(पुं०) [कूल√कष्+खच्, मुम्] किनारे को छूने वाला,किनारे से टकराने वाला।

कूलङ्कषा—(स्त्री०) [कूलङ्कष+टाप्] नदी, सरिता ।

कूलन्धय—(वि०) [कूल√धे+खश्, मुम्] किनारे को छूने वाला ।

कूलमुद्रुज—(वि०) [कूल–उद्√रुज्+खश्, मुम्] तट ढहाने वाला ।

कूलमुद्वह—(वि०) [कूल–उद्√वह्+खश्, मुम्] नदीतट को ढहाने वाला, ले जाने वाला ।

कूष्माण्ड—(पुं०) [कु ईषत् उष्मा अण्डेषु बीजेषु यस्य] कुम्हड़ा ।

कूहा—(स्त्री०) [कु ईषत् ऊह्यतेऽत्र, कु√-ऊह्+क] कुहासा, कुहरा ।

√कृ—स्वा० उभ० सक० हिंसा करना । कृणोति—कृणुते, करिष्यति—ते, अकार्षीत्—अकृत । त० उभ० सक० करना । करोति—कुरुते, करिष्यति—ते, अकार्षीत् —अकृत ।

कृक—(पुं०) [√कृ+कक्] गला ।

कृकण, कृकर—(पुं०) [कृ√कण्+अच्] [कृ√कृ+ट] तीतर ।

कृकलास, कृकुलास—(पुं०) [कृक√लस्+अण्] [कृकलास पृषो० साधु:] छिपकली, गिरगट ।

कृकवाकु—(पुं०) [कृक√वच्+ञुण्, क आदेश] मुर्गा । मोर । छिपकली, बिस्तुइया । —ध्वज-(पुं०) कार्त्तिकेय की उपाधि ।

कृकाटिका—(स्त्री०) [कृक√अट्+अण्—कृकाट+कन्—टाप्, इत्व] गरदन का उठा हुआ भाग । गरदन का पिछला भाग, घट्टी ।

कृच्छ्र—(वि०) [√कृन्त्+रक्, छकार आदेश] कष्टकर, पीड़ाकारी । बुरा, दुष्ट । पापी । सङ्कट में फँसा हुआ । (पुं०, न०) कठिनाई । कष्ट, पीड़ा; 'लब्ध कृच्छ्रेण रक्ष्यते' हि० । सङ्कट, विपत्ति । तप । प्रायश्चित्त । पाप । मूत्रकृच्छ्र रोग ।—अतिकृच्छ्र (कृच्छ्रातिकृच्छ्र) (न०) एक तरह का व्रत जसमें बारह दिन उपवास करना पड़ता है ।—प्राण-(वि०) जिसके प्राण सङ्कट में हों । कष्टपूर्वक साँस लेने वाला । कठिनाई से जीवन निर्वाह करने वाला ।—साध्य-(वि०) (रोगी) जो कठिनाई से अच्छा हो सके । कठिनाई से पूर्ण करने योग्य ।

√कृत्—तु० पर० सक० काटना । कृन्तति, कर्तिष्यति-कर्त्स्यति, अकर्तीत् । रु० पर० सक० घेरना । लपेटना । कृणत्ति, कर्तिष्यति —कर्त्स्यति, अकर्तीत् ।

कृत—(वि०) [√कृ+क्त] किया हुआ । बनाया हुआ । पकाया हुआ । (न०) कर्म, कार्य, क्रिया । सेवा । परिणाम, फल । उद्देश्य, प्रयोजन । पासे का वह पहल जिस पर ४ बिंदु बने हों । चार युगों में से प्रथम युग जिसमें मनुष्यों के १,२८०,०० वर्ष होते हैं (मनु० अ० १ श्लो० ६९ और इस पर कुल्लूकभट्ट की व्याख्या द्र०)।किन्तु महाभारत के अनुसार कृतयुग में मनुष्यों के ४८०० वर्षों के ऊपर वर्ष होते हैं । चार की संख्या ।—अकृत (कृताकृत)-(वि०) किया और अनकिया अर्थात् अधूरा ।—अङ्क (कृताङ्क)-(वि०) चिह्नित, दागा हुआ । गिनती किया हुआ । (पुं०) पासे का वह पहल जिसपर चार बिंदकी बनी हों ।—अञ्जलि (कृताञ्जलि)-(वि०) हाथ जोड़े हुए ।—अनुकर (कृतानुकर)-(वि०) किये हुये कार्य की नकल करने वाला । —अनुसार (कृतानुसार)-(पुं०) नियत अभ्यास । रीति, रस्म ।—अन्त (कृतान्त)-(पुं०) यमराज । प्रारब्ध, किस्मत; 'क्रूरस्त-स्मिन्नपि न सहते संगमं नौ कृतान्तः' मे० १०५ । सिद्धान्त । पापकर्म, दुष्टकर्म । शनिग्रह । शनिवार ।—०जनक-(पुं०) सूर्य ।—अन्न (कृतान्न)-(न०) पकाया हुआ खाना ।

पचा हुआ अन्न । विष्ठा ।—**अपराध** (**कृताऽपराध**)–(वि०) कसूरवार, अपराधी, दोषी । —**अभय** (**कृताभय**)–(वि०) किसी सङ्कट या भय से बचाया हुआ ।—**अभिषेक** (**कृताभिषेक**)–(वि०) राजगद्दी पर बैठाया हुआ, राजतिलक किया हुआ ।—**अभ्यास** (**कृताभ्यास**)–(वि०) अभ्यस्त ।—**अर्थ** (**कृतार्थ**)–(वि०) सफल । सन्तुष्ट, प्रसन्न । चतुर ।—**अवधान** (**कृतावधान**)–(वि०) होशियार, सावधान ।—**अवधि** (**कृतावधि**)–(वि०) निर्धारित, नियत । सीमाबद्ध, मर्यादित । —**अवस्थ** (**कृतावस्थ**)–(वि०) बुलाया हुआ । स्थिर । —**अस्त्र** (**कृतास्त्र**)–(वि०) हथियारबंद । अस्त्रविद्या में निपुण । —**आगम** (**कृतागम**) –(वि०) योग्य, कुशल । (पु०) परमात्मा । —**आत्मन्** (**कृतात्मन्**)–(वि०) इन्द्रियजित्, संयमी । पवित्र मन वाला ।—**आभरण** (**कृताभरण**) –(वि०) भूषित, सजा हुआ ।—**आयास** (**कृतायास**)– (वि०) जिसने परिश्रम किया हो । पीड़ित ।—**आह्वान** (**कृताह्वान**)–(वि०) ललकारा हुआ, चुनौती दिया हुआ । —**उद्वाह** (**कृतोद्वाह**)–(वि०) विवाहित । ऊपर को बाहें उठाकर तप करने वाला ।—**उपकार** (**कृतोपकार**)–(वि०) जिसका उपकार किया गया हो, अनुगृहीत । —**कर्मन्**–(वि०) जो अपना काम कर चुका हो । चतुर, निपुण । (पुं०) परमात्मा । संन्यासी ।—**काम**–(वि०) वह जिसकी कामनाएँ पूरी हो चुकी हों ।—**काल**–(वि०) निश्चित समय का । वह जिसने कुछ काल तक प्रतीक्षा की हो । (पुं०) निश्चित समय । —**कृत्य**–(वि०) वह जिसकी उद्देश्य-सिद्धि हो चुकी हो । सन्तुष्ट, अघाया हुआ । कर्त्तव्य पालन किये हुए ।—**क्रय**–(पुं०) खरीदार, गाहक ।—**क्षण**–(वि०) घड़ी भर बड़ी उत्सुकता के साथ प्रतीक्षा करने वाला । अवसरप्राप्त ।—**घ्न**–(वि०) नेकी, उपकार न मानने वाला, एहसान-फरामोश ।—**चूड**–(पुं०) वह बालक जिसका चूड़ाकरण संस्कार हो चुका है ।—**ज्ञ**–(वि०) नेकी, उपकार मानने वाला, मशकूर । (पुं०) कुत्ता ।—**तीर्थ**–(वि०) जो सब तीर्थ कर आया हो । जो किसी अध्यापक के पास अध्ययन करता हो । उपायों को अच्छी तरह जानने वाला । पथप्रदर्शक ।—**दास**–(पुं०) नियत काल के लिये किसी का दासत्व या नौकरी करने वाला, पन्द्रह प्रकार के दासों में से एक ।—**धी**–(वि०) स्थिरचित्त । कृतसंकल्प । शिक्षित । —**निर्णेजन**–(वि०) धोया हुआ । धो डालने वाला । पाप-मुक्ति के लिये प्रायश्चित्त कर चुकने वाला ।—**निश्चय**–(वि०) जिसने किसी बात का पक्का इरादा, निश्चय कर लिया हो ।—**पुङ्ख**–(वि०) धनुर्विद्या में निपुण ।—**पूर्व**–(वि०) पहले किया हुआ ।—**प्रतिकृत**–(न०) प्रत्याक्रमण और बचाव ।—**प्रतिज्ञ**–(वि०) वह जो किसी के साथ कोई प्रतिज्ञा या ठहराव कर चुका हो । अपनी प्रतिज्ञा को पूर्ण किये हुए ।—**बुद्धि**–(वि०) दे० 'कृतधी' ।—**मुख**–(वि०) शिक्षित, विद्वान् ।—**युग**–(न०) सत्ययुग ।—**लक्षण**–(वि०) चिह्नित । दागी हुआ । अपने गुणों से प्रसिद्ध । छुटा, बींधा हुआ । निरूपित ।—**वर्मन्**–(पुं०) कौरव पक्षीय एक योद्धा जो सात्यकि द्वारा मारा गया था ।—**विद्य**–(वि०) शिक्षित, विद्वान्; 'शूरोऽसि कृतविद्योऽसि' पं० ४ । —**वेतन**–(वि०) भाड़े का, वेतनभोगी । —**वैदिन्**–(वि०) कृतघ्न ।—**वेश**–(वि०) सजा हुआ, भूषित ।—**शोभ**–(वि०) सुन्दर । उत्तम । चतुर, कुशल । —**शौच**–(वि०) पवित्र, शुद्ध ।—**श्रम**–(वि०) मिहनत कर चुकने वाला । अधीत, पढ़ा-लिखा ।—**सङ्कल्प**–(वि०) निश्चय किया हुआ ।—**संज्ञ**–(वि०) सचेत, मूर्च्छा से जागा हुआ ।

जागा हुआ ।—सन्नाह-(वि०) कवच पहिने हुए ।—सपत्निका-(वि०) वह स्त्री जिसके सौत हो ।—हस्त,—हस्तक-(वि०) निपुण, कुशल । धनुर्विद्या में पटु, अस्त्र-शस्त्र चलाने की विद्या में निपुण ।

कृतक—(वि०) [कृत+कन्] किया हुआ । बनाया हुआ । तैयार किया हुआ । [√कृत्+क्वुन्] कृत्रिम; बनावटी । मिथ्या, झूठा । गोद लिया हुआ (पुत्र) ।

कृतम्—(अव्य०) [√कृत्+कमु (बा०)] पर्याप्त, काफी, अधिक नहीं; 'अथवा कृतं सन्देहेन' श० १ ।

कृति—(स्त्री०) [√कृ+क्तिन्] करतूत । पुरुषार्थ । बीस अक्षर के चरण वाला श्लोक-विशेष । जादू, इन्द्रजाल । चोट । वध । बीस की संख्या ।—कर-(पुं०) रावण की उपाधि ।

कृतिन्—(वि०) [कृत+इनि] सन्तुष्ट, अघाया हुआ, अपनी साध पूरी किये हुए । भाग्यवान्, धन्य, कृतकृत्य । चतुर, योग्य, पटु, निपुण । नेक, धर्मात्मा, पवित्र । आज्ञानुसार करने वाला ।

कृते, कृतेन—(अव्य०) लिये, निमित्त, बवजह ।

कृत्ति—(स्त्री०) [√कृत्+क्तिन्] चर्म, चमड़ा । मृगछाला । भोजपत्र । कृत्तिका नक्षत्र ।—वास,—वासस्-(पुं०) शिव ।

कृत्तिका—[√कृत्+तिकन्, कित्त्व] २७ नक्षत्रों में से तीसरा ।—तनय,—पुत्र,—सुत-(पुं०) कार्तिकेय ।—भव-(पुं०) चन्द्रमा ।

कृत्नु—(वि०) [√कृ+क्नु] भलीभाँति करनेवाला । काम करने की योग्यता रखने वाला । चतुर, चालाक । (पुं०) कारीगर, शिल्पी ।

कृत्य—(वि०) [√कृ+क्यप्, तुगागम] वह जो किया जाना चाहिये, उपयुक्त, ठीक । संभव, साध्य । विश्वासघाती । (न०) कर्त्तव्य । कर्म । कार्य । अवश्य करणीय कार्य । उद्देश्य, प्रयोजन । (पुं०) "तव्य", "अनीय" "य" और "एलिम" आदि प्रत्यय ।

कृत्या—(स्त्री०) [कृत्य+टाप्] कार्य, क्रिया । जादू, टोना । देवी-विशेष जो मारण कर्म के लिये, विशेष-रूप से बलिदानादि से पूजी जाती है ।

कृत्रिम—(वि०) [√कृ+क्त्रि, मप्] बनावटी, नकली, कल्पित । गोद लिया हुआ ।—धूप,—धूपक-(पुं०) राल, लोबान, गुगुल आदि को मिलाने से बनी हुई धूप ।—पुत्रक-(पुं०) गुड्डा, गुड़िया, पुतली । (पुं०) १२ प्रकार के पुत्रों में से एक, जो वयस्क हो और अपने जनक-जननी की अनुमति बिना किसी का पुत्र बन बैठा हो । "कृत्रिमः स्यात्स्वयंदत्तः ।" —याज्ञवल्क्य । (न०) एक प्रकार का नमक । एक सुगन्ध-पदार्थ ।

कृत्स—(न०) [√कृत्+स, कित्] जल । समूह । (पुं०) पाप ।

कृत्स्न—(वि०) [√कृत्+क्स्न] संपूर्ण, समूचा । (न०) जल । कुक्षि, पेट ।

कृन्तत्र—(न०) [√कृत्+क्त्रन्, नुमागम] हल ।

कृन्तन—(न०) [√कृत्+ल्युट्] काटना । फाड़ना । नोचना । कुतरना ।

√कृप्—भ्वा० आत्म० लुङ्, लुट्, लृट्, लृङ में उभ० सक० कल्पना करना, रचना करना । कल्पते, कल्प्स्यति—कल्पिष्यते—कल्प्स्यते, अक्लृपत्—अकल्पिष्ट—अक्लृप्त ।

कृप—(पुं०) [√कृप्+अच्] अश्वत्थामा के मामा का नाम, सप्त चिरजीवियों में से एक ।

कृपण—(वि०) [√कृप्+क्युन्] गरीब, दयापात्र, अभागा, सहाय्यहीन । सत्यासत्य-विवेक-शून्य; 'कामार्ता हि प्रकृतिकृपणाः-

चेतनाचेतनेषु, मे० ५। अकर्मण्य, नीच, ओछा, दुष्ट। कंजूस, लालची। (पुं०) कंजूस आदमी। (न०) कंजूसी, दरिद्रता।—**धी**,—**बुद्धि**-(वि०) छोटे दिल का, नीचमना।—**वत्सल**-(वि०) दीनों पर दया करने वाला, दीनदयालु।

कृपा—(स्त्री०) [√कृप्+अङ—टाप्] रहम, दया, अनुकम्पा।

कृपाण—(पुं०) [कृपा√नुद्+ड] तलवार। छुरी। कटारी।

कृपाणिका—(स्त्री०) [कृपाण+कन्—टाप्, इत्व] खंजर। छुरी।

कृपाणी—(स्त्री०) [कृपाण+ङीप्] कैंची। चाकू। खंजर।

कृपालु—(वि०) [कृपा√ला+डु] दयालु, कृपापूर्ण।

कृपी—(स्त्री०) [कृप+ङीष्] कृपाचार्य की बहिन और द्रोणाचार्य की पत्नी।—**पति**-(पुं०) द्रोणाचार्य।—**सुत**-(पुं०) अश्वत्थामा।

कृपीट—(न०) [√कृप्+कीटन्] जङ्गल, वन। ईंधन। जल। पेट।—**पाल**-(पुं०) पतवार। समुद्र। पवन, हवा।—**योनि**-(पुं०) अग्नि।

कृमि—(पुं०) [√क्रम्+इन्, संप्रसारण] कीड़ा। रोग के कीटाणु। गधा। मकड़ी। लाख। चींटी, कीड़ों से भरा हुआ।—**कोश**—**कोष**-(पुं०) रेशम के कीड़े का खोल, रेशम का कोया।—**०उत्थ** (**कृमिकोशोत्थ**)-(न०) रेशमी वस्त्र।—**ज**,—**जग्ध**-(न०) अगर की लकड़ी।—**जा**-(स्त्री०) लाह, लाख।—**जलज**,—**वारिरुह्**-(पुं०) घोंघा, जल का कीड़ा।—**पर्वत**,—**शैल**-(पुं०) ढूह, बाँबी।—**फल**-(पुं०) उदुम्बर या गूलर का पेड़।—**शङ्ख**-(पुं०) शंख का कीड़ा।—**शुक्ति**-(स्त्री०), घोंघा, सीप। कीड़ा जो इनमें रहे। दोपट्टा शंख।

कृमिण, कृमिल—(वि०) [कृमि+न, णत्व] [कृमि+ल] कीड़ेदार, कीड़ों से पूर्ण।

कृमिला—(स्त्री०) [कृमि√ला+क—टाप्] बहुत बच्चे जनने वाली औरत।

√कृश्—दि० पर० अक० दुबला होना, लटना। क्षीण पड़ना (चन्द्रमा की तरह)। कृश्यति, कर्शिष्यति, अकृशत्।

कृश—(वि०) [√कृश्+क्त, नि० साधुः] पतला, दुबला, लटा। थोड़ा। निर्धन।—**अक्ष** (**कृशाक्ष**)-(पुं०) मकड़ी।—**अङ्ग** (**कृशाङ्ग**)-(वि०) दुबला, लटा।—**अङ्गी** (**कृशाङ्गी**)-(स्त्री०) छरहरे शरीर की स्त्री। प्रियंगु लता।—**उदरी** (**कृशोदरी**)-(वि०) पतली कमरवाली।

कृशर—(पुं०) [कृश√रा+क] तिल-चावल की खिचड़ी। खिचड़ी।

कृशला—(स्त्री०) [कृश√ला+क—टाप्] सिर के बाल।

कृशानु—(पुं०) [√कृश्+आनुक्] आग।—**रेतस्**-(पुं०) शिव की उपाधि।

कृशाश्विन्—(पुं०) [कृशाश्वेन मुन्युमार-वंशानुगतिना प्रोक्तं नाट्यसूत्रादिकम् अधीते वेत्ति वा, कृशाश्व+इनि] नाट्य करने वाला, नाटक का पात्र।

√कृष्—तु० उभ०, भ्वा० पर० सक० खींचना, घसीटना। आकर्षण करना। सेना की तरह परिचालन करना। झुकाना (कमान की तरह)। वशवर्ती करना। दबा लेना। जोतना। प्राप्त करना। छीन ले जाना। विमुक्त करना। तु० कृषति—ते, क्रक्ष्यति—ते, कर्क्ष्यति—ते, अक्राक्षीत्—अकार्क्षीत्—अकृक्षत्—अकृष्ट। भ्वा० कर्षति, क्रक्ष्यति—कर्क्ष्यति, अक्राक्षीत—अकार्क्षीत्—अकृक्षत्।

कृषाण, कृषिक—(पुं०) [√कृष्+आनक्

(वा०)] [√कृष्+किकन्] किसान, खेतिहर ।

कृषि—(स्त्री०) [√कृष्+इन्, कित्] जुताई । खेती, किसानी; 'चीयते बालिशस्यापि सत्क्षेत्रपतिता कृषिः' मु० १ ।—**कर्मन्**– (न०) खेती ।—**जीविन्**–(वि०) खेती करके निर्वाह करनेवाला ।—**फल**–(न०) खेती की पैदावार ।—**सेवा**–(स्त्री०) किसानी, खेतिहरपन ।

कृषीवल—(पुं०) [कृषि+वलच्, दीर्घ] किसान, काश्तकार, खेतिहर ।

कृष्कर—(पुं०) [कृष√कृ+टक् पृषो० साधुः] शिव ।

कृष्ट—(वि०) [√कृष्+क] खींचा हुआ, आकृष्ट । जोता हुआ ।

कृष्टि—(पुं०) [√कृष्+क्तिच्] विद्वान् व्यक्ति । (स्त्री०) [√कृष्+क्तिन्] खिंचाव, आकर्षण । जुताई ।

कृष्ण—(वि०) [√कृष्+नक्+अच्] काला । दुष्ट; बुरा । (न०) [√कृष्+नक्]। कालिख । लोहा । सुरमा । आँख की पुतली । काली मिर्च या गोल मिर्च । सीसा । (पुं०) काला रङ्ग । काला मृग । काक । कोकिल । कृष्णपक्ष, अँधेरा पाख । कलियुग । भगवान् विष्णु का आठवाँ अवतार जो कंसादि दुर्दान्त दैत्यों के नाश के लिये मथुरा में हुआ था और जिनके चरित्रों से भागवतादि पुराण और महाभारतादि इतिहास पूर्ण हैं । महाभारत के रचयिता कृष्ण द्वैपायन व्यास । अर्जुन का नाम । अगर की लकड़ी ।—**अगुरु** (कृष्णागुरु)–(न०) काला अगर ।—**अचल** (कृष्णाचल)– (पुं०) रैवतक पहाड़ ।—**अजिन**(कृष्णाजिन)–(न०) काले मृग का चर्म ।—**अयस्** (कृष्णायस्),–**आमिष**(कृष्णामिष (न०) लोहा, कान्तिसार लोहा ।—**अध्वन्** (कृष्णाध्वन्), **अर्चिस्**–(कृष्णार्चिस्)–(पुं०) आग ।—**अष्टमी** (कृष्णाष्टमी)–(स्त्री०) भाद्र-कृष्ण-अष्टमी जो श्रीकृष्ण के जन्म की तिथि है ।—**आवास**–(कृष्णावास) (पुं०) अश्वत्थ ।—**उदर** (कृष्णोदर)–(पुं०) एक प्रकार का सर्प ।—**कन्द**–(न०) लाल कमल ।—**कर्मन्**–(वि०) पाप कर्म करने वाला, असदाचरणी ।—**काक**–(पुं०) जंगली काक या पहाड़ी कौआ ।—**काय**– (पुं०) भैंसा ।—**कोहल**–(पुं०) जुआरी ।—**गति**–(पुं०) आग; 'धर्मोघने कृष्णगति सहायं' र० ६.४२ ।—**ग्रीव**–(पुं०) शिव ।—**तार**–(पुं०) मृग विशेष ।—**देह**—(पुं०) भौंरा, भ्रमर ।—**धन**–(न०) बुरे ढङ्ग से या बेईमानी करके कमाया हुआ धन ।—**द्वैपायन**–(पुं०) व्यास का नाम ।—**पक्ष**– (पुं०) अँधियारा पाख, बदी ।—**मृग**–(पुं०) काला हिरन ।—**मुख**, —**वक्त्र**,—**वदन**—(पुं०) काले मुख का बानर ।—**यजुर्वेद**–(पुं०) तैत्तिरीय या कृष्ण यजुर्वेद ।—**लोह**–(पुं०) चुम्बक पत्थर ।—**वर्ण**–(पुं०) काला रङ्ग । राहुग्रह । शूद्र ।—**वर्त्मन्**–(पुं०) अग्नि । राहुग्रह । ओछा आदमी ।—**वेणा**–(स्त्री०) कृष्णा नदी का नाम ।—**शकुनि**–(पुं०) काक, कौआ ।—**सार**–(पुं०) चित्तीदार हिरन ।—**शृङ्ग**–(पुं०) भैंसा ।—**सख**, —**सारथि**–(पुं०) अर्जुन ।

कृष्णक—(न०) [अनुकम्पितं कृष्णाजिनम्, कृष्णाजिन+ कन्, अजिनस्य लोपः] काले हिरन का चमड़ा ।

कृष्णल—(न०) घुँघची । (पुं०) [कृष्ण √ला+क] घुँघची का पौधा ।

कृष्णा—(स्त्री०) [कृष्ण+टाप्] द्रौपदी । दक्षिण भारत की एक नदी का नाम ।

कृष्णिका—(स्त्री०) [कृष्ण+ठन्—टाप्] राई ।

कृष्णिमन्—(पुं०) [कृष्ण+इमनिच्] कालापन ।

कृष्णी—(स्त्री०) [कृष्ण+ङीष्] अँधियारी रात ।

√कॄ—तु० पर० सक० फेंकना । बिखेरना । किरति, करिष्यति—करीष्यति, अकारीत् । क्र्या० उभ० सक० मारना । कृणाति—कृणीते, करिष्यति—ते, —करीष्यति—ते, —अकारीत्—अकरिष्ट—अकरीष्ट—अकीर्ष्ट ।

कृत्—चु० पर० सक० उल्लेख करना । पुनरावृत्ति करना । उच्चारण करना । कहना । पढ़ना । घोषित करना । सूचना देना । पुकारना । स्तव करना, प्रशंसा करना । कीर्तयति, कीर्तयिष्यति, अचीकृतत्—अचिकीर्तत् ।

क्लृप्त—[√कृप्+क्त, लत्व] रचित, बनाया हुआ । सजा हुआ हुआ । टुकड़े किया हुआ । उत्पन्न किया हुआ । स्थिर किया हुआ । नियत । आविष्कृत ।—**कीला**–(स्त्री०) किवाला, एक प्रकार की दस्तावेज ।

क्लृप्ति—(स्त्री०) [√कृप्+क्तिन्, लत्व] पूर्णता । सफलता । आविष्कार । सुव्यवस्था ।

क्लृप्तिक—(वि०) [क्लृप्त+ठन्] खरीदा हुआ, क्रीत ।

केकय—(पुं०) एक प्राचीन जनपद, आधुनिक कक्का (कश्मीर) । उस देश का निवासी ।

केकर—(वि०) [के मूर्ध्नि नेत्रतारां कर्तुं शीलमस्य, के√कृ+अच्, अलुक् स०] [स्त्री०— **केकरी**] ऐंचाताना, भेंगी आँख वाला । (न०) भेंगी या ऐंची आँख ।

केकल—(वि०) नाचने वाला ।

केका—(स्त्री०) [के√कै+ड, अलुक् स०, टाप्] मोर की बोली ।

केकावल, केकिक, केकिन्—(पुं०) [केका+वलच् (बा०)] [केका+ठन्] [केका+इनि] मोर, मयूर ।

केणिका—(स्त्री०) [के मूर्ध्नि कुत्सितः अणकः (स्त्रीत्वं लोकात्)—टाप्] पटकुटी, खीमा, तंबू, कनात ।

केत—(पुं०) [√कित्+घञ्] मकान । आबादी, बस्ती । झंडा, पताका । सङ्कल्प । मंत्रणा । बुद्धि । निमंत्रण । धन । आकांक्षा । विवेक ।

केतक—(न०) [√कित्+ण्वुल्] केतकी का फूल । (पुं०) । केतकी या केवड़ा । झंडा, पताका ।

केतकी—(स्त्री०) [केतक+ङीष्] एक पुष्पवृक्ष, केवड़ा । केतकी का फूल ।

केतन—(न०) [√कित्+ल्युट्] घर, मकान । आमंत्रण, बुलावा । जगह, स्थान । झंडा, पताका; 'भग्नभीमेन मरुता भवतो रथकेतनं, वे० २.२३ । चिह्न । अनिवार्य कर्म ।

केतित—(व०) [केत+इतच्] आमंत्रित, बुलाया हुआ । बसा हुआ ।

केतु—(पुं०) [√चाय्+तु, कयादेश] झंडा, पताका । प्रधान, मुखिया, नेता । पुच्छलतारा, धूमकेतु । निशान । चमक । किरण । उपग्रह विशेष ।—**ग्रह**–(पुं०) नव ग्रहों के अंतर्गत एक ।—**पताका**–(स्त्रीः०) वर्षेश निकालने का नौ कोष्ठों का एक चक्र ।—**भ**–(पुं०) बादल ।—**यष्टि**–(स्त्री०) पताका का बाँस ।—**रत्न**–(न०) वैदूर्यमणि, लहसुनिया ।—**वसन**–(न०) कपड़े की पताका ।

केदार—(पुं०) [केन जलेन दारोऽस्य वा के शिरसि दारोऽस्य, ब० स०] पानी भरे खेत । चरागाह । थाला, खोड़आ । पर्वत । केदार पर्वत । शिव जी का एक रूप ।—**खण्ड**–(न०) मेंड़, बाँध ।—**नाथ**–(पुं०) शिव का रूप-विशेष ।

केनार—(पुं०) [के मूर्ध्नि नारः, अलुक् स०] सिर, शीश । खोपड़ी । गाल । गाँठ, जोड़ ।

केनिपात—(पुं०) [के जले निपात्यतेऽसौ, के—नि√पत्+णिच्+अच्] पतवार, डाँड़ ।

केन्द्र—(न०) किसी वृत्त के भीतर का वह बिन्दु जिससे परिधि तक खींची हुई सब

रेखायें परस्पर बराबर हों। जन्मपत्र के लग्न, चतुर्थ, सप्तम और दशम स्थान। मुख्य स्थान। मध्यस्थल।

√**केप्**—भ्वा० आत्म० अक० काँपना। सक० जाना। केपते, केप्स्यते, अकेप्त।

केयूर—(पुं०, न०) [के बाहुशिरसि याति, के √या+ऊर, किच्, अलुक् स०] बाजूबंद, बिजायठ। एक रतिबंध।

केरल—(पुं०) मलाबार देश और वहाँ के अधिवासी।

केरली—(स्त्री०) [केरल+ङीप्] मलाबार की स्त्री। ज्योतिविज्ञान।

√**केल्**—भ्वा० पर० सक० हिलाना। अक० क्रीड़ा करना। केलति, केलिष्यति, अकेलीत्।

केलक—(पुं०) [√केल्+ण्वुल्] नचैया, नाचने वाला।

केलास—(पुं०) [केला विलासः सीदति अस्मिन्, केला√सद्+ड] स्फटिक पत्थर।

केलि—(पुं०, स्त्री०) [√केल्+इन्] खेल, क्रीड़ा। आमोद-प्रमोद। हँसी-मजाक, दिल्लगी। (स्त्री०) धरती। **—कला**–(स्त्री०) रतिकला। सरस्वती देवी की वीणा। **—किल**–(पुं०) विदूषक, मसखरा। **—किलावती**—(स्त्री०) कामदेव की पत्नी रति देवी। **—कीर्ण**–(पुं०) ऊँट। **—कुञ्चिका**–(स्त्री०) छोटी साली। **—कुपित**—(वि०) खेल में क्रुद्ध। **—कोष**–(पुं०) अभिनय पात्र। नचैया। **—गृह, –निकेतन, –मन्दिर–सदन**–(न०) रतिगृह। क्रीड़ागृह। प्रमोद-भवन। **—नागर**–(पुं०) कामासक्त, कामुक, ऐयाश। **—पर**–(वि०) खिलाड़ी, आमोद-प्रमोद-प्रिय। **—मुख**–(पुं०) हँसी। आमोद-प्रमोद। **—वृक्ष**–(पुं०) कदम्ब, वृक्ष-विशेष। **—शयन**–(न०) सेज। **—शुषि**–(स्त्री०) पृथिवी। **सचिव**–(पुं०) कामक्रीड़ा के विषय में सलाह देने वाला, अभिन्न मित्र। खेल-मंत्री।

केलिक—(पुं०) [केलि+कन्] अशोक वृक्ष।

केली—(स्त्री०) [केलि+ङीष्] खेल, क्रीड़ा। आमोद-प्रमोद। **—पिक**–(पुं०) आमोद के लिये पाली हुई कोयल। **—वनी**–(स्त्री०) प्रमोद-वन। **—शुक**–(पुं०) आमोद के लिये पाला गया तोता।

√**केव्**—भ्वा० आत्म० सक० सेवा करना। केवते, केविष्यते, अकेविष्ट।

केवल—(वि०) [√केव्+कलच्, वा के √वल्+अच्] विशिष्ट, असाधारण। अकेला, मात्र, एकमात्र, बेजोड़। समस्त, समूचा। अनावृत, बिना ढका हुआ। शुद्ध, साफ। अमिश्रित। (अव्य०) सिर्फ, एकमात्र।

केवलतस्—(अव्य०) [केवल+तस्] नितान्तता से। विशुद्धता से।

केवलिन्—(वि०) [केवल+इनि] [स्त्री०—**केवलिनी**] अकेला, सिर्फ, एकमात्र। ब्रह्म के साथ एकत्व के सिद्धान्त पर पूर्ण श्रद्धावान् जैन तीर्थङ्कर की उपाधि।

केश—(पुं०) [क्लिश्यते क्लिश्नाति वा, √क्लिश्+अन्, ललोप] बाल। विशेषकर सिर के केश। घोड़ा या सिंह के गर्दन के बाल, अयाल। किरण। [कस्य ईशः, ष० त०] वरुण। एक सुगन्ध द्रव्य। **—अन्त (केशान्त)**–(पुं०) बाल की नोक या सिरा। चूड़ाकरण संस्कार। **—उच्चय (केशोच्चय)**–(पुं०) बहुत या सुन्दर बाल। **—कर्मन्**–(पुं०) बालों को सम्हालना या काढ़ना, माँग-पट्टी बनाना। **—कलाप**–(पुं०) बालों का ढेर। **—कीट**–(पुं०) जूँ, बालों में रहने वाले कीट। **—गर्भ**–(पुं०) वेणी, चोटी। **—च्छिद्**–(पुं०) नाई, हज्जाम। **—पक्ष, —पाश—हस्त**–(पुं०) बहुत घने बाल, जुल्फ। **—बन्ध**–(पुं०) बाल बाँधने का फीता। **—भू, —भूमि**–(स्त्री०) सिर या शरीर का अन्य कोई भाग जिस पर केश उगें। **—प्रसाधनी**—(स्त्री०), **—मार्जक, —मार्जन**–

(न०) कंघा, कंघी।—रचना-(स्त्री०) बाल सम्हालना।—वेश-(पुं०) बालों का शृंगार।

केशट—(पुं०) [केश √अट्+अच्, शक० पररूप] बकरा। विष्णु। खटमल। भाई। कामदेव का एक बाण।

केशव—(पुं०) [को ब्रह्मा ईशो रुद्रः तौ वातः प्रलये उपाधिरूपं परित्यज्य तिष्ठतः यत्र, केश √वा+ड] परमात्मा। [केशं केशिनामानमसुरं वाति हन्ति, केश √ वा +क] विष्णु। विष्णु की एक मूर्ति। (वि०) [केश+व (प्राशस्त्ये)] बहुत अथवा सुन्दर केशों वाला।—आयुध (केशवायुध)-(पुं०) आम का पेड़। (न०) विष्णु का शस्त्र।—आलय (केशवालय),—आवास (केशवावास)-(पुं०) पीपल का पेड़।

केशाकेशि—(अव्य०) [केशेषु केशेषु गृहीत्वा प्रवृत्तं युद्धम्, पूर्वपदस्य आकार इत्वञ्च] परस्पर बाल खींचकर की जाने वाली लड़ाई, झोंटाझोंटी।

केशिक—(वि०) [केश+ठन् (प्राशस्त्ये)] [स्त्री०—केशिकी]- सुन्दर बालों वाला।

केशिन्—(पुं०) [केश+इनि] सिंह। श्री कृष्ण के हाथ से निहत हुए एक राक्षस का नाम। देवसेना का हरण करने वाला और इन्द्र द्वारा मारा गया एक दूसरा राक्षस। श्रीकृष्ण। (वि०) अच्छे बालों वाला।—निषूदन (केशिनिषूदन), — मथन (केशिमथन)-(पुं०) श्रीकृष्ण की उपाधियाँ।

केशिनी—(स्त्री०) [केशिन्+ङीप्] सुन्दर वेणी वाली स्त्री। विश्रवस् की पत्नी और रावण की माता का नाम। एक अप्सरा। दमयंती की दूती जो नल के पास उसका संदेश ले गई थी। जटामासी। दुर्गा।

केसर, केशर-(पुं०, न०) [के√सृ+अच्, अलुक् स०] [के√शृ+अच्, अलुक् स०] सिंह की गरदन के बाल, अयाल। फूल का रेशा या सूत। बकुल वृक्ष। पुन्नाग। वृक्ष। (आम-फल का) रेशा। (न०) बकुलपुष्प।—अचल (केसराचल)-(पुं०) मेरु पर्वत।—वर-(न०) कुंकुम, जाफ़रान।

केसरिन्, केशरिन्—(पुं०) [केसर वा केशर +इनि] सिंह। अपनी श्रेणी का सर्वोत्कृष्ट या सर्वोत्तम व्यक्ति। घोड़ा। नीबू अथवा चकोतरा अथवा बिजौरे का पेड़। पुन्नाग वृक्ष। हनुमान् के पिता का नाम।—सुत-(पुं०) हनुमान्।

√कै—भ्वा० पर० अक० शब्द करना। कायति, कास्यति, अकासीत्।

कैंशुक—(न०) [किंशुक+अण्] किंशुक का फूल, टेसू।

कैकय—(पुं०) [केकय+अण्] केकय देश का राजा।

कैकस—(पुं०) [कीकस+अण्] राक्षस।

कैकेय—(पुं०) [केकय+अण्, इयादेश] केकय देश का राजा या राजकुमार।

कैकेयी—(स्त्री०) [कैकेय+ङीप्] महाराज दशरथ की छोटी रानी और भरत की जननी।

कैटभ—(पुं०) [कीट√भा+ड+अण्] एक दैत्य जो विष्णु के हाथ से मारा गया था।—अरि (कैटभारि), —जित्—रिपु,—हन्-(पुं०) विष्णु।

कैतक—(न०) [केतकी+अण्] केतकी का फूल।

कैतव—(न०) [कितव+अण्] धोखा, छल, ठगी। जुआ। पण। लहसुनिया। (पुं०) ठग, छलिया। जुआरी। धतूरा।—प्रयोग-(पुं०) चालाकी, ठगी।— वाद-(पुं०) छल। प्रवञ्चना।

कैदार—(पुं०) [केदार+अण्] धान्य, अन्न। (न०) खेतों का समुदाय।

कैमुतिक—(पुं०) [किमुत+ठक्] न्याय-विशेष।

कैरव—(पुं०) [किम् कुत्सितो रवो यस्य, किरव+अण्, की आदेश, वृद्धि] जुआरी। ठग, प्रवञ्चक। शत्रु। (न०) [के जले रौति कैरवः हंसः तस्य प्रियम्, कैरव+अण्] कुमुद, कुईं। सफेद कमल जो चन्द्रमा की चाँदनी में खिलता है; 'चन्द्रो विकासयति कैरवचक्रवालं'।—**बंधु**-(पुं०) चन्द्रमा।

कैरविन्—(पुं०) [कैरव+इनि] चन्द्रमा।

कैरविणी—(स्त्री०) [कैरविन्+ङीप्] कुमुदिनी। कमल का पौधा जिसमें सफेद कमल के फूल लगे हों। सरोवर जिसमें कुमुद या सफेद कमल के फूलों का बाहुल्य हो। कुमुदों या सफेद कमलों का समूह।

कैरवी—(स्त्री०) [कैरव+ङीप्] चन्द्रमा की चाँदनी।

कैलास—(पुं०) [के जले लासो दीप्तिरस्य केलासः स्फटिकः स इव शुभ्रः, केलास+अण्] हिमालय पर्वत का शिखर।—**नाथ**-(पुं०) शिव। कुबेर।

कैवर्त—(पुं०) [के जले, वर्तते, के√वृत्+अच्, अलुक् स०+अण्] मल्लाह, मछुआ।

कैवल्य—(न०) [केवल+ष्यञ्] आत्मा का असंग, अलिप्त भाव। स्वरूप में स्थिति, मोक्ष। एक उपनिषद् का नाम।

कैशिक—(वि०) [केश+ठक्] [स्त्री०—कैशिकी] केशों जैसा। बालों की तरह महीन। (न०) बालों की लट या गुच्छा। (पुं०) प्रणय। शृंगार रस। नृत्य का एक भाव। एक राग।

कैशिकी—(स्त्री०) [कैशिक+ङीप्] नाट्य-शास्त्र की एक वृत्ति।

कैशोर—(न०) [किशोर+अण्] किशोर अवस्था जो ११ से १५ वर्ष तक रहती है।

कैश्य—(न०) [केश+ष्यञ्) सम्पूर्ण केश, केश-समूह।

कोक—(पुं०) [कोकते आदत्ते, √कुक्+अच्] भेड़िया। चक्रवाक। कोकिल। मेंढक। विष्णु।—**देव**-(पुं०) कबूतर।—**बंधु**-(पुं०) सूर्य।

कोकनद—(न०) [कोक√नद्+अच्] लाल कमल।

कोकाह—(पुं०) [कोक—आ√हन्+ड] सफेद घोड़ा।

कोकिल—(पुं०) [√कुक्+इलच्] कोयल। अधजली लकड़ी।—**आवास** (कोकिलावास),—**उत्सव** (कोकिलोत्सव)-(पुं०) आम का वृक्ष।

कोङ्क, कोङ्कण-(पुं०) सह्य पर्वत और समुद्र के बीच का भूखण्ड या प्रदेश।

कोङ्कणा—(स्त्री०) [कोङ्कण+टाप्] जमदग्नि की पत्नी रेणुका का नाम।—**सुत**-(पुं०) परशुराम।

कोजागार—(पुं०) [को जागर्ति इति लक्ष्म्या उक्तिरत्र पृषो० साधुः] आश्विनी पूर्णिमा के दिवस का उत्सव। व्रत।

कोट—(पुं०) [√कुट्+घञ्] गढ़, किला। परकोटा। राजप्रासाद। कुटिलता, बाँकापन। दाढ़ी।

कोटर—(पुं, न०) [कोट√ रा+क] पेड़ के तने का खोखला भाग; 'नीवाराः शुकगर्भकोटरमुखभ्रष्टास्तरूणामधः', श० १.१४। किले के आसपास का जंगल जो उसके रक्षार्थ लगाया गया हो।

कोटरा—(स्त्री०) [कोटर+टाप्] बाणासुर की माता।

कोटरी, कोटवी—(स्त्री०) [कोट√री+क्विप्] [कोट√वी+क्विप्] नंगी स्त्री। दुर्गा देवी।

कोटि, कोटी—(स्त्री०) [√कुट्+इञ्] [कोटि+ङीप्] कमान की मुड़ी हुई नोक। छोर। अस्त्र की नोक या धार; 'भूमिनिहितैककोटिकार्मुकं' र० ११.४१। चरम बिन्दु। आधिक्य। सर्वोत्कृष्टता। चन्द्रकला। करोड़

की संख्या । समकोण त्रिभुज की एक भुजा । श्रेणी, कक्षा, विभाग । राज्य, सल्तनत । विवादग्रस्त प्रश्न का एक पक्ष । माध्यमिकों के सिद्धान्त में तात्त्विक भावना जो चार प्रकार की मानी गई है—१ सत्, २ असत् ३ सत्-असत्, ४ न सत् न असत् ।—ईश्वर-(कोटीश्वर)–(पुं०) करोड़पति ।—जित्–(वि०) कालिदास की उपाधि ।—पात्र–(न०) पतवार ।—पाल–(पुं०) दुर्गरक्षक ।—वेधिन्–(वि०) क्लिष्टकर्मा, बड़ा कठिन काम करने वाला ।

कोटिक—(पुं०) [कोटि√कै+क] एक तरह का मेढक । इन्द्रगोप । (वि०) अत्यन्त उच्च काम करने वाला, पराकाष्ठा को प्राप्त ।

कोटिर—(पुं०) [कोटि√रा+क] साधुओं के सिर के बालों की चोटी जिसे वे माथे के ऊपर बाँध लेते हैं और जो सींग की तरह जान पड़ती है । नेवला । इन्द्र ।

कोटिश, कोटीश–(पुं०) [कोटि–टी √शो+क] हेंगा, पाटा ।

कोटिशस्—(अव्य०) [कोटि+शस्] करोड़ों, असंख्य ।

कोटीर—(पुं०) [कोटि√ईर्+अण्] मुकुट, ताज । कलँगी, चोटी । साधुओं के सिर की चोटी । जिसे वे सींग की शकल में माथे के ऊपर बाँध लिया करते हैं ।

कोट्ट—(पुं०) [√कुट्ट+घञ्, नि० गुण] कोट, गढ़, किला । महल, राजप्रासाद ।

कोट्टवी—(स्त्री०) [कोट्ट√वा+क–ङीप्] बाल खोले नंगी स्त्री । दुर्गादेवी । बाणासुर की माता का नाम ।

कोट्टार—(पुं०) [√कुट्ट+आरक्, पृषो० साधुः] किला या किले के भीतर का ग्राम । तालाब की सीढ़ियाँ । कूप । लम्पट या दुराचारी पुरुष ।

कोण—(पुं०) [√कुण्+घञ् वा अच्] कोना । सारंगी या बेला बजाने का गज । तलवार आदि हथियारों की पैनी धार । छड़ी । डंका या ढोल बजाने की लकड़ी । मंगल ग्रह । शनि ग्रह । जन्म-कुण्डली में लग्न से नवम और पञ्चम स्थान ।— कुण–(पुं०) खटमल ।

कोणप—(पुं०) दे० 'कौणप' ।

कोदण्ड—(पुं०, न०) [√कु+क्विप्, कोः शब्दायमानो दण्डो यस्य, ब० स०] कमान, धनुष ।(पुं०)[कोदण्डं धनुः तत्तुल्य आकारो यस्य, कोदण्ड+अच्] भौं ।

कोद्रव—(पुं०) [√कु+क्विप्, √द्रु+अच्, कर्म० स०] कोदो अनाज ।

कोप—(पुं०) [√ कुप्+घञ्] क्रोध, कोप, रोष, गुस्सा । (पित्त-) कोप (वात-) कोप आदि शारीरिक अस्वस्थता । —आकुल (कोपाकुल),—आविष्ट (कोपाविष्ट) (वि०) क्रुद्ध, कुपित ।—पद–(न०) क्रोध का कारण । बनावटी क्रोध ।—लता–(स्त्री०) कर्णस्फोटी लता ।

कोपन—(वि०) [√कुप्+ल्यु] क्रोधी, क्रुद्ध हो जाना ।

कोपना—(स्त्री०) [√कुप्+ल्यु–टाप्] विगड़ैल औरत, क्रोधी स्वभाव की स्त्री ।

कोपिन्—(वि०) [√कुप्+णिनि] क्रुद्ध । क्रोध उत्पन्न करने वाला । शरीरस्थ रसों का उपद्रव उत्पन्न करने वाला ।

कोमल—(वि०) [√कु+कलच्, मुट्, नि० गुण] मुलायम, नरम । धीमा, मंद, प्रिय, मधुर । मनोहर, सुन्दर ।

कोमलक—(न०) [कोमल+कन्] कमल नाल के सूत या रेशे ।

कोयष्टि, कोयष्टिक—(पुं०) [कं जलं यष्टिरिव यस्य ब० स०, पृषो० अकारस्य उकारः] [कोयष्टि+कन्] शिखरी, एक पक्षी जो पानी के ऊपर उड़ा करता है ।

कोर—(पुं०) [√कुर्+अच्, गुणः,

लस्य रः] वह संधि या जोड़ जिस पर से अंग मोड़ा जा सके। कली।

कोरक—(पुं०, न०) [√कुल्+ण्वुल्, लस्य रः] कली। कमलनाल सूत्र। सुगन्ध द्रव्य-विशेष।

कोरदूष—(पुं०) [कोर√दूष्+णिच्+] कोदो।

कोरित—(वि०) [कोर+इतच्] कलीदार, अङ्कुरित। चूर्ण किया हुआ, पिसा हुआ। टुकड़े-टुकड़े किया हुआ।

कोल—(न०) [√कुल्+अच्] एक तोला भर की तौल। गोल या काली मिर्च। एक प्रकार का बेर। (पुं०) शूकर, सुअर। नाव, बेड़ा। वक्षस्थल। कवड़। गोद। आलिङ्गन। शनिग्रह। एक जंगली जाति।—**प्रस्थ** (**कोलाप्रस्थ**)–(पुं०)कलिङ्ग देश।—**पुच्छ**–(पुं०) सफेद चील।

कोलम्बक—(पुं०) [√कुल्+ अम्बच्+ कन्] वीणा का ढाँचा।

कोला, कोलि, कोली—(स्त्री०) [√कुल्+ ण-टाप्] [√कुल्+इन्] [√कुल्+ अच्–ङीष्] बेर का पेड़।

कोलाहल—(पुं०) [एकीभूताव्यक्तशब्दविशेषः कोलः तम् आहलति, कोल–आ√हल्+ अच्] बहुत से लोगों के एक साथ बोलने से होने वाला शोर, हंगामा, हल्ला। एक संकर राग। मृदङ्ग।

कोविद—(वि०) [√कु+विच्, तं वेत्ति, √विद्+क] पण्डित। अनुभवी। चतुर, बुद्धिमान्।

कोविदार—(पुं०) [कु–वि√दृ+अण्] लाल कचनार का पेड़; ; 'चित्त विदारयति कस्य न कोविदारः' र० ३.६।

कोश, कोष—(पुं०,न०)[कुश्यते, संश्लिष्यते, √कुश् या √कुष्+घञ्] कठौती। बाल्टी। कोई भी पात्र। संदूक। आलमारी। दराज। म्यान। ढक्कन। खोल। ढेर। भाण्डारगृह। खजाना, धनागार। धन-सम्पत्ति, दौलत। सोना-चाँदी। शब्दार्थसंग्रहावली। कली, अनखिला फूल। फल की गुठली। छीमी, फली। जायफल। रेशम का कोया। योनि। अण्डकोश। अंडा। लिंग, पुरुषजननेन्द्रिय। गोला, गद। वेदान्त में वर्णित पाँच प्रकार के कोश; यथा अन्नमयकोश, प्राणमयकोश आदि। [धर्मशास्त्र में] एक प्रकार की अपराधी के अपराध की कठोर परीक्षा।—**अधिपति** (**कोशाधिपति**), —**अध्यक्ष** (**कोशाध्यक्ष**)–(पुं०) खजानची। कुबेर। —**अगार** (**कोशागार**)–(पुं०) धनागार, खजाना।—**कार**–(पुं०) म्यान या परतला बनाने वाला। शब्दकोश बनाने वाला। कोश के भीतर का रेशमी कीड़ा। कोशवासी तितली आदि जिनके पर न आये हों।—**कारक**–(पुं०) रेशम का कीड़ा।—**ग्रह**–(पुं०) गधा।—**गृह**–(न०) खजाना।—**चञ्चु**–(पुं०) सारस।—**नायक,—पाल**–(पुं०) खजानची। भंडारी।—**पेटक**–(पुं०) (न०) तिजोरी। लॉकर।—**वासिन्**–(पुं०) कोशस्थ जीव।—**वृद्धि**–(स्त्री०) धन की वृद्धि। अंडकोश की वृद्धि।—**शायिका**–(स्त्री०) म्यान में रखी हुई छुरी आदि।—**स्थ**–(वि०) कोश में स्थित। (पुं०) कोशवासी जीव।—**हीन**–(वि०) गरीब, धनहीन।

कोशलिक—(न०) [कुशल+ठञ्] घूस, रिश्वत।

कोशातकिन्—(पुं०) [कोश√अत्+क्वन् –कोशातक+इनि] व्यापार, व्यवसाय, तिजारत। व्यापारी, सौदागर। बाड़वानल।

कोशिन्, कोषिन्—(पुं०) [कोश (ष)+ इनि] आम का पेड़।

कोष्ठ—(न०) [√कुष्+थन्] घेरे की दीवाल, चहारदीवारी। (पुं०) शरीर के भीतर का आमाशय, मूत्राशय, पित्ताशय जैसा

कोई अंग। पेट। भीतर का कमरा। अन्न-भाण्डार।—**अगार** (**कोष्ठागार**)-(न०) भाण्डार; 'पर्याप्तमस्तिकोष्ठागारं मांस-शोणितैर्मे गृहं भविष्यति' वे० ३।—**अग्नि** (**कोष्ठाग्नि**)-(पुं०) अन्न पचाने वाली शक्ति।—**पाल**-(पुं०) खजानची। भंडारी। चौकीदार।

कोष्ठक—(न०) [कोष्ठ+कन्] ईंट-चूने का बना हौद जिसमें पशु पानी पियें। (पुं०) अनाज का भाण्डार। हाते की दीवाल, चारदीवारी।

कोष्ण—(वि०) [ईषदुष्णः, कु—उष्ण, कोः कादेशः] गुनगुना, कुनकुना, थोड़ा गरम। (न०) गर्मी, ऊष्मा।

कोसल, कोशल—(पुं०) एक प्राचीन जनपद, अवध। कोसलवासी।

कोसला, कोशला—(स्त्री०) [कोस (श)-ल+टाप्] अयोध्या नगरी।

कोहल—(पुं०) [√कुह्+कलच्, गुण (बा०)] काहिली, वाद्य विशेष। शराब।

कौक्कुटिक—(पुं०) [कुक्कुट+ठक्] मुर्गे पालने या बेचने वाला व्यक्ति। वह साधु जो चलते समय जमीन की ओर दृष्टि रखता है जिससे कोई जीव उसके पैर से न कुचले। दम्भी, पाखण्डी।

कौक्ष—(वि०) [कुक्षि+अण्] कुक्षि या कोख से संबंध रखने वाला। [स्त्री०—**कौक्षी**]

कौक्षेय—(वि०) [कुक्षि+ढञ् [स्त्री०—**कौक्षेयी**] पेट वाला। म्यान वाला।

कौक्षेयक—(पुं०) [कुक्षि+ढकञ्] तलवार, खाँड़ा; 'वामं नाभ्यवलम्बिना कौक्षेयकेण' काद०।

कौङ्क, कौङ्कण—(पुं०) [कुङ्क+अण्] [कोङ्कण+अण्] कोङ्कण देश और वहाँ के अधिवासी।

कौट—(पुं०) [कूट+अण्] छल। धोखा। जाल। (वि०) [स्त्री०—**कौटी**] स्वतन्त्र, मुक्त। घरेलू। बेईमान। छली। जाल में फँसा हुआ।—**ज**-(पुं०) कुटज वृक्ष।—**तक्ष**-(पुं०) स्वतन्त्र बढ़ई (ग्रामतक्ष का उलटा)।—**साक्षिन्**-(पुं०) झूठा गवाह।—**साक्ष्य**-(न०) झूठी या जाली गवाही।

कौटकिक, कौटिक—(पुं०) [कूट+कन्—कूटक+ठञ्] [कूट+ठक्] पक्षी आदि फँसाने वाला, बहेलिया। मांस-विक्रेता व्यक्ति।

कौटिलिक—(पुं०) [कुटिलिकया हरति मृगान् अङ्गारान् वा, कुटिलिका+अण्] व्याध, बहेलिया। लुहार।

कौटिल्य—(न०) [कुटिल+ष्यञ्] कुटिलता। दुष्टता। बेईमानी। जाल। छल। (पुं०) [कौटिल्य+अच्] चाणक्य का नाम, एक प्रसिद्ध नीतिकार; 'कौटिल्यः कुटिलमतिः स एष येन क्रोधाग्नौ प्रसभमदाहि नन्दवंशः' मुद्रा० १.७।

कौटुम्ब—(वि०) [कुटुम्ब+अण्] [स्त्री० —**कौटुम्बी**] गृहस्थोपयोगी। गृहोपयोगी। (न०) पारिवारिक सम्बन्ध, रिश्तेदारी।

कौटुम्बिक—(वि०) [कुटुम्ब+ठक्] [स्त्री० —**कौटुम्बिकी**] पारिवारिक, परिवार सम्बन्धी। (पुं०) पिता या घर का बड़ा बूढ़ा।

कौणप—(पुं०) [कुणप+अण्] राक्षस, दानव, दैत्य।—**दन्त**-(पुं०) भीष्म।

कौण्य—(वि०) लूला।

कौतुक—(न०) [कुतुक+अण्] अभिलाषा, कुतूहल, इच्छा। कौतूहलोत्पादक कोई वस्तु। विवाहसूत्र जो कलाई पर बाँधा जाता है। विवाह की एक विधि। उत्सव, विवाहादि शुभ उत्सव। हर्ष, आह्लाद। क्रीड़ा, आमोद-प्रमोद। तमाशा। हँसी-मजाक। बधाई।—**अगार** (**कौतुकागार**), —**गृह**-(न०) जलसे या तमाशे का घर, प्रमोद-भवन।—**क्रिया**-(स्त्री०),—**मङ्गल**-(न०) विवाह आदि का उत्सव।—**तोरण**-(पुं०, न०) मङ्गलसूचक महराबदार द्वार, जो विवाहादि उत्सवों के अवसर पर बनाये जाते हैं।

कौतूहल, कौतूहल्य—(न०) [कुतूहल+अण्] [कुतूहल+ष्यञ्] अभिलाषा । औत्सुक्य । आश्चर्य ।

कौन्तिक—(पुं०) [कुन्त+ठक्—इक] भाला अथवा बर्छीधारी मनुष्य ।

कौन्तेय—(पुं०) [कुन्ती+ढक्—एय]कुन्ती का पुत्र, युधिष्ठिर, भीम, और अर्जुन ।

कौप—(वि०)[कूप+अण्] [स्त्री०—**कौपी**] कूप सम्बन्धी या कूप से निकला हुआ ।

कौपीन—(न०) [कूप+खञ्—ईन] लँगोटी। गुप्तांग । चिथड़ा । पाप या अनुचित कर्म ।

कौब्ज्य—(न०) [कुब्ज+ष्यञ्] टेढ़ापन । कुबड़ापन ।

कौमार—(वि०) [कुमार+अण्] कुमार-संबंधी। कोमल। युद्धदेव-संबंधी। [स्त्री०—**कौमारी**] (न०) जन्म से पाँच वर्ष तक की अवस्था। कुँवारापन (१६ वर्ष की अवस्था तक की लड़की का कुँवारापन माना गया है) ।—**भृत्य** (न०) बालक का पालन-पोषण और चिकित्सा ।

कौमारक—(न०) [कौमार+कन्] कुमारा-वस्था; 'कौमारकेऽपि गिरिवद् गुरुतां दधानः' उत्त० ६.१६ ।

कौमारिक—(पुं०)[कुमारी+ठक्] लड़कियों का पिता ।

कौमारिकेय—(पुं०) [कुमारिका+ढक्] अनब्याही स्त्री का पुत्र ।

कौमुद—(पुं०) [कुमुद+अण्] कार्तिक मास ।

कौमुदी—(स्त्री०)[कौमुद+ङीप्] चाँदनी। सिद्धान्तकौमुदी नामक एक ग्रन्थ । कार्तिकी पूर्णिमा । आश्विनी पूर्णिमा । उत्सव; विशेष कर वह उत्सव जिसमें घरों और देवालयों में दीपमालिका की जाय । व्याख्या ।—**पति**-(पुं०)चन्द्रमा।—**वृक्ष**-(पुं०)दीवट, चिराग-दान ।

कौमोदकी, कौमोदी—(स्त्री०) [कोः पृथिव्याः मोदकः- कुमोदक+अण्- ङीप्] [कुं पृथिवीं मोदयति—कुमोद+अण् —ङीप्] भगवान् विष्णु की गदा का नाम ।

कौरव—(पुं०) [कुरु+अण्] राजा कुरु की संतान । कुरु-नरेश । (वि०) [स्त्री०—**कौरवी**] कुरुओं से सम्बन्ध रखने वाला ।

कौरव्य—(पुं०)[कुरु+ण्य] कुरु का वंशज। कुरुओं का राजा या शासक ।

कौर्प्य—(पुं०) वृश्चिक राशि ।

कौल—(वि०) [कुल+अण्] [स्त्री०—**कौली**] पैतृक, मौरूसी । कुलीन, अच्छे खानदान का । (पुं०) वाममार्गी तान्त्रिक । ब्रह्मज्ञानी। (न०) वाममार्ग का सिद्धान्त और उसके अनुष्ठान ।

कौलकेय—(पुं०) [कुल+ढक्, कुक्] वर्ण-सङ्कर । छिनाल का लड़का ।

कौलटिनेय—(पुं०) [कुलटा+ढक्, इनङ् आदेश] सती भिखारिन का लड़का । वर्ण-सङ्कर ।

कौलटेय—(पुं०) [कुलटा+ढक्] सती या असती भिखारिन का पुत्र । वर्णसङ्कर, दोगला ।

कौलव—(पुं०) ज्योतिष् के २१ करणों में से एक ।

कौलिक—(वि०) [कुल+ठक्] [स्त्री०—**कौलिकी**] कुल-सम्बन्धी । कुल में प्रचलित । (पुं०) जुलाहा । पाखंडी, दम्भी । वाममार्गी ।

कौलीन—(वि०) [कुल+खञ्] कुलीन, खानदानी । (पुं०) भिखारिन का लड़का । वाममार्गी । (न०) [कुलीनं भूमिलीनम् अर्हति, कुलीन+अण्] लोकापवाद, कुत्सा, निन्दा । असदाचरण, कुकर्म । पशुओं की लड़ाई । मुर्गों की लड़ाई । युद्ध, लड़ाई । छिपाने योग्य अंग, गुह्याङ्ग । [कुलीनस्य भावः, कुलीन+अण्] कुलीनता ।

कौलीन्य—(न०) [कुलीन+ष्यञ्] कुली-नता । पारिवारिक अपवाद ।

कौलूत—(पुं०) [कुलूत+अण्] कुलूतदेश का राजा; 'कौलूतश्चित्रवर्मा ।'—मुद्राराक्षस ।

कौलेयक—(पुं०) [कुल+ढकञ्] कुत्ता । पाजी कुत्ता । शिकारी कुत्ता ।

कौल्य—(वि०) [कुले भव:, कुल+ण्यत्] कुलीन ।

कौविर, कौवेर—(वि०) [कुवे (बे) र+अण्] [स्त्री०—कौविरा, कौवेरी] कुबेरसम्बन्धी ।

कौवेरी कौविरी—(स्त्री०) [कौवे (बे) र+ङीप्] उत्तर दिशा ।

कौश—(वि०) [कुश+अण्] [स्त्री०—कौशी] कुश का बना । (न०) [कोश+अण्] रेशमी वस्त्र ।

कौशल, कौशल्य—(न०) [कुशल+अण्] [कुशल+ष्यञ्] कुशलता, दक्षता । मंगल, कल्याण ।

कौशलिक—(न०) [कुशल+ठक्] घूस, रिश्वत ।

कौशलिका, कौशली—(स्त्री०) [कुशल+ठक्—टाप्] [कुशल+अण्—ङीप्] भेंट, चढ़ावा कुशलप्रश्न ।

कौशलेय—(पुं०) [कौशल्या+ढक्—एय, यलोप] कौशल्यानन्दन श्रीरामचन्द्र जी ।

कौशल्या, कौसल्या—(स्त्री०) [कोश (स)-ल+ञ्य] महाराज दशरथ की महारानी और श्रीरामचन्द्र की जननी ।

कौशल्यायनि—(पुं०) [कौशल्या+फिञ्] कौशल्यानन्दन श्रीराम ।

कौशाम्बी—(स्त्री०) [कुशाम्ब+अण्—ङीप्] वत्सदेश की प्राचीन राजधानी जिसे कुश के पुत्र कौशाम्ब ने बनाया था, आधुनिक कोसम ।

कौशिक—(वि०) [कुशिक+अण्] [स्त्री० कौशिकी] म्यानदार, म्यान में रखा हुआ । रेशमी । (पुं०) विश्वामित्र । उल्लू । कोशकार । गदा, सार । गूगल । नेवला । सँपेरा, साँप पकड़नेवाला । शृङ्गार । गुप्त धन जाननेवाला । इन्द्र ।—**अराति** (**कौशिकाराति**), —**अरि** (**कौशिकारि**)–(पुं०) काक, कौआ ।—**प्रिय**–(पुं०) श्री रामचन्द्र की उपाधि ।—**फल**–(पुं०) नारियल का पेड़ ।

कौशिका—(स्त्री०) [कोश+कन्+अण्—टाप्, इत्व] कटोरा, प्याला ।

कौशिकी—(स्त्री०) [कुशिक+अण्—ङीप्] बिहार प्रान्त की एक नदी । दुर्गादेवी । चार प्रकार की नाट्यशास्त्र की वृत्तियों में से एक ।—'सुकुमारार्थसन्दर्भा कौशिकी तासु कथ्यते'—साहित्यदर्पण ।

कौशेय, कौषेय–(न०) [कोश + ढक्] [कौशेय पृषो० अस्य षः] रेशम । रेशमी वस्त्र । लहँगा ।

कौसीद्य—(न०) [कुसीद+ष्यञ्]सूदखोरी । सुस्ती, अकर्मण्यता, काहिली, परिश्रम से अरुचि ।

कौसृतिक—(पुं०) [कुसृति+ठक्] छलिया, धोखेबाज, बदमाश । मदारी, ऐन्द्रजालिक ।

कौस्तुभ—(पुं०) [कु भूमिं स्तुभ्नाति व्याप्नोति कुस्तुभः समुद्रः तत्र भवः, कुस्तुभ+अण्] समुद्रमन्थन के समय प्राप्त एक मणि, जिसे भगवान् विष्णु अपने वक्षस्थल पर धारण करते हैं; 'सकौस्तुभं ह्रेपयतीव कृष्णम्' र० ६.४९ ।—**लक्षण**,—**वक्षस्**, —**हृदय**–(पुं०) विष्णु भगवान् की उपाधियाँ ।

√**क्नस्**—दि० पर० अक० टेढ़ा होना । चमकना । क्नस्यति, क्नसिष्यति, अक्नसीत्—अक्नासीत् ।

√**क्नू**—क्र्या० उभ० अक० शब्द करना । क्नूनाति—क्नूनीते, क्नविष्यति—ते, अक्नावीत् ।

√**क्नूय्**—भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना । गीला होना । क्नूयते, क्नयिष्यते, अक्नूयिष्ट ।

क्रकच—(पुं०) [क इति कचति शब्दायते, क√कच्+अच्] आरा ।—**च्छद**–(पुं०)

केतकी वृक्ष ।—पत्र–(पु०) साल का वृक्ष । —पाद, पाद–(पु०) बिस्तुइया, छिपकली ।

क्रकर—(पु०) [क इति शब्दं कर्तुं शीलमस्य, क√कृ+अच्] तीतर । आरा । निर्धन मनुष्य । रोग, बीमारी ।

क्रतु—(पु०) [√कृ+कतु] यज्ञ । विष्णु की उपाधि । दस प्रजापतियों में से एक । प्रतिभा । शक्ति, योग्यता ।—उत्तम (क्रतूत्तम)–(पु०) राजसूय यज्ञ ।—द्रुह,—द्विष्–(पु०) राक्षस, दैत्य ।—ध्वंसिन्–(पु०) शिव की उपाधि ।—पति–(पु०) यज्ञकर्ता ।—पुरुष–(पु०) विष्णु की उपाधि ।—भुज्–(पु०) ईश्वर ।—राज्–(पु०) यज्ञों के प्रभु । राजसूय यज्ञ ।

√क्रथ्—भ्वा० पर० सक० मारना । क्रथति, क्रथिष्यति, अक्रथीत्–अक्राथीत् ।

क्रथकैशिक—(पु०) एक देश का नाम ।—'अथेश्वरेण क्रथकैशिकानां'—रघुवंश ।

क्रथन—(न०) [√क्रथ्+ल्युट्] हत्या, कत्लआम ।

क्रथनक—(पु०) [क्रथन+कन्] ऊँट ।

√क्रन्द्—भ्वा० पर० अक० रोना । सक० बुलाना । क्रन्दति, क्रन्दिष्यति, अक्रन्दीत् ।

क्रन्दन, क्रन्दित–(न०) [√क्रन्द्+ल्युट् √क्रन्द्+क्त भावे] रोदन, रोना, विलाप । पारस्परिक ललकार ।

√क्रम्—भ्वा० पर० अक० सक० चलना-फिरना, पदार्पण करना । समीप जाना । गुजरना, निकल जाना । कूदना । चढ़ना । ढकना । कब्जा करना, अधिकार जमाना । आगे निकल जाना, बढ़ जाना । योग्य होना । किसी काम को हाथ में लेना । बढ़ना । पूरा करना, सम्पन्न करना । स्त्रीमैथुन करना । क्राम्यति–क्रामति, क्रमिष्यति, अक्रमीत् ।

क्रम—(पु०) [√क्रम्+घञ्] पग, कदम । पैर । भ्रमन । अग्रगमन । मार्ग । अनुष्ठान आरम्भ । सिलसिला । तरीका, ढंग । पकड़ । जानवर की उस समय की एक बैठक जब वह उछल कर किसी पर आक्रमण करना चाहता है, दबकन । तैयारी, तत्परता । भारी काम । जोखों का काम । कर्म । कार्य । वेद पढ़ने की एक विशेष शैली । शक्ति, ताकत ।—अनुसार (क्रमानुसार),—अन्वय (क्रमान्वय)–(पु०) ठीक सिलसिलेवार यथावस्थित ।—आगत (क्रमागत),—आयात (क्रमायात)–(वि०) पैतृक, पुश्तैनी ।—ज्या–(स्त्री०) क्षय, घटती ।—भङ्ग–(पु०) अनियमितता ।

क्रमक—(वि०) [क्रम+वुन्] क्रमानुसार, क्रमबद्ध, पद्धति के अनुसार, यथानि (पु०) वह विद्यार्थी जो क्रमशः पाठ्यक्रम पूरा करे ।

क्रमण—(न०) [√क्रम्+ल्युट्] पग, कदम । चलना या चाल । पदगमन । उल्लंघन, भंग । (पु०) पैर । घोड़ा ।

क्रमतः—(अव्य०) [क्रम्+तस्] धीरे-धीरे । क्रम से ।

क्रमशः—(अव्य०) [क्रम+शस्] सिलसिलेवार, क्रमानुसार । धीरे-धीरे ।

क्रमिक—(वि०) [क्रम+ठन्] क्रमागत, एक के बाद एक, सिलसिलेवार । पैतृक, पुश्तैनी ।

क्रमु, क्रमुक—(पु०) [√क्रम्+उ] [क्रमु+कन्] सुपारी का पेड़ ।

क्रमेल, क्रमेलक—(पु०) [क्रम√एल्+अच्] [क्रमेल+कन्] ऊँट; 'निरीक्षते केलिवनं प्रविश्य क्रमेलकः कण्टकजालमेव' विक्र० १.२९ ।

क्रय—(पु०) [√क्री+अच्] मोल लेना, खरीदना ।—आरोह (क्रयारोह)–(पु०) बाजार, हाट ।—क्रीत–(वि०) खरीदा हुआ, मोल लिया हुआ ।—लेख्य–(न०) बेचीनामा, क्रयपत्र, वृहस्पति । बेचीनामे की व्याख्या इस प्रकार करते हैं—गृहक्षेत्रादिकम् क्रीत्वा तुल्यमूल्याक्षरान्वितम् । पत्रं कारयते यत्तु

क्रयलेख्य तदुच्यते ।—**विक्रय**–(पु०) व्यापार, व्यवसाय, खरीद-फरोख्त । —**विक्रयिक**–(पु०) व्यापारी, सौदागर ।

क्रयण—(न०) [√क्री+ल्युट्] खरीद, लिवाली ।

क्रयिक—(पुं०) [क्रय+ठन्] व्यापारी, सौदागर । खरीदार, ग्राहक ।

क्रय्य—(वि०) [√क्री+यत्, नि० साधुः] बिक्री के लिये, बिकाऊ ।

क्रव्य—(न०) [√क्लव्+यत्, रस्य लः] कच्चा मांस । —**अद्** (क्रव्याद्), —**अद** (क्रव्याद),—**भुज्**–(वि०) कच्चा मांस खाने वाला ।(पुं०) शेर, चीता आदि मांस-भक्षी जीव-जन्तु । राक्षस, पिशाच ।

क्रशिमन्—(पुं०) [कृश+इमनिच्] दुबला-पन, क्षीणता ।

क्राकचिक—(पुं०) [क्रकच+ठक्] आरा-कश, आरा चलाने वाला ।

क्रान्त—(वि०) [√क्रम्+क्त] बीता हुआ । लाँघा हुआ । दबा हुआ । चढ़ा हुआ । गया हुआ, गत । (पुं०) घोड़ा । पैर, पद ।—**दर्शिन्**–(वि०) सर्वज्ञ ।

क्रान्ति—(स्त्री०) [√क्रम्+क्तिन्] गति । पग, कदम । अग्रगमन । आक्रमण । विषुव-रेखा से किसी ग्रहमण्डल की दूरी । स्थिति में भारी उलट-फेर ।—**कक्ष**–(पु०),—**मण्डल**, —**वृत्त**–(न०) अयनवृत्त या मण्डल, पृथिवी का भ्रमणपथ ।

क्रायक, क्रायिक—(पुं०) [√क्री+ण्वुल्] [क्रय+ठक्] खरीदार, गाहक । व्यापारी ।

क्रिमि—(पुं०) [√क्रम्+इन्, इत्व] कीड़ा । छोटा कीड़ा । —**जा**–(स्त्री०) लाख ।

क्रिया—(स्त्री०) [√कृ+श, रिङ् आदेश, इयङ्] कुछ किया जाना । कर्म । व्यापार, चेष्टा । उद्योग, उद्यम । परिश्रम । शिक्षण । गानवाद्यादि किसी कला की अभिज्ञता या जानकारी । अभ्यास । साहित्यिक रचना, यथा —'भूणुत मनोभिरवहितैः क्रियामिमां कालि-दासस्य' —विक्रमोर्वशीय ।—'कालिदासस्य क्रियायां कथं परिषदो बहुमानः' —माल-विकाग्निमित्र । अनुष्ठान । प्रायश्चित्त । श्राद्ध-कर्म । पूजन । चिकित्सा ।—**अन्वित** (**क्रियान्वित**)–(वि०) सत्कर्म करने वाला । —**अपवर्ग** (**क्रियापवर्ग**)–(पुं०) किसी कार्य का सम्पादन या सुसम्पन्नता । कर्मकाण्ड से छुटकारा ।—**अभ्युपगम**(**क्रियाभ्युपगम**) –(पुं०) विशेष प्रतिज्ञापत्र, इकरारनामा ।—**अवसन्न** (**क्रियावसन्न**)–(वि०) वह पुरुष जो अपने गवाहों के बयान के कारण अपना मुकदमा हारता है ।—**कलाप**–(पुं०) वह समस्त कर्मकाण्ड जो एक सनातनधर्मी को करना चाहिये । किसी व्यवसाय का आद्यन्त विस्तृत विवरण ।—**कार**–(पु०) गुमाश्ता, मुख्तार, मुनीम । नवसिखुआ । इकरारनामा, प्रतिज्ञापत्र ।—**द्वेषिन्**–(पुं०) जिसकी ओर गवाही दे उसके मामले को अपनी गवाही से हराने वाला (पाँच-प्रकार के गवाहों में से एक) ।—**निर्देश**–(पु०) गवाही, साक्ष्य । **पटु**–(वि०) क्रियाकुशल, कार्यनिपुण ।—**पथ**–(पु०) चिकित्सा-प्रणाली ।—**पर**–(वि०) अपने कर्तव्य-पालन में परिश्रम करने वाला ।—**पाद**–(पुं०) लिखित प्रमाण तथा अन्य प्रमाण जो वादी की ओर से अपने अर्जी दावे में पेश किये गये हों ।—**योग**–(पुं०) क्रिया से सम्बन्ध । उपायों का प्रयोग । —**लोप**–(पुं०) किसी आवश्यक अनुष्ठेय कर्म का त्याग ।—**वाचक, वाचिन्**–(वि०) (अव्य०) जो क्रिया के ढङ्ग का वर्णन करे । —**वादिन्**–(पु०) वादी, मुद्दई ।—**विधि**–(पु०) किसी कर्म का विधान । —**विशेषण**–(न०) वह शब्द जो क्रिया की विशेषता—उसका काल, स्थान, रीति आदि बतावे ।—**संक्रान्ति**–(स्त्री०) शिक्षण, ज्ञानोपदेश ।

—समभिहार–(पुं०) किसी कर्म की पुनरावृत्ति।

क्रियावत्—(वि०) [क्रिया+मतुप्] अभ्यस्त, किसी कार्य को करने का अभ्यासी।

√क्री—क्र्या० उभ० सक० खरीदना, मोल लेना। अदल-बदल करना, विनिमय करना। क्रीणाति—क्रीणीते, क्रेष्यति—ते, अक्रैषीत्—अक्रेष्ट।

√क्रीड्—भ्वा० पर० अक० सक० खेलना, अपना दिल बहलाना। जुआ खेलना। हँसी करना, उपहास करना, मसखरी करना। क्रीडति, क्रीडिष्यति, अक्रीडीत्।

क्रीड—(पुं०) [√क्रीड्+घञ्] खेल, आमोद-प्रमोद। हँसी-दिल्लगी।

क्रीडन—(न०) [√क्रीड्+ल्युट्] खेल, आमोद-प्रमोद। खिलौना।

क्रीडनक—(पुं०), **क्रीडनीय**–(न०), **क्रीडनीयक**–(न०) [क्रीडन+कन्] [√क्रीड्+अनीयर्] [क्रीडनीय+कन्] खिलौना।

क्रीडा—(स्त्री०) [√क्रीड्+अ—टाप्] खेल, आमोद-प्रमोद। हँसी-दिल्लगी। —**उपस्कर** (**क्रीडोपस्कर**) (न०) खेल का सामान। —**गृह**–(न०) प्रमोदभवन, क्रीडा-भवन। —**शैल**–(पुं०) कृत्रिम पहाड़, प्रमोद-शैल; 'क्रीडाशैलः कनककदलीवेष्टनः प्रेक्षणीयः' मे० ७७। —**नारी**–(स्त्री०) रंडी। —**कोप**–(पुं०) झूठा कोप, बनावटी कोप। —**कौतुक**—(न०) विलास। सहवास। —**मयूर**–(पुं०) मनबहलाव के लिये रखा हुआ मोर। —**रत्न**–(न०) रमणकार्य, मैथुन।

क्रीत—(वि०) [√क्री+क्त] खरीदा हुआ, मोल लिया हुआ। (पुं०) धर्मशास्त्र में वर्णित बारह प्रकार के पुत्रों में से एक प्रकार का, खरीदा हुआ पुत्र। —**अनुशय** (**क्रीतानुशय**) (पुं०) किसी चीज को खरीदने के बाद पछताना। मोल ली हुई वस्तु को वापिस करना।

√क्रुञ्च्—भ्वा० पर० अक० टेढ़ा होना। सक० जाना। अनादर करना, क्रुञ्चति, क्रुञ्चिष्यति, अक्रुञ्चीत्।

क्रुञ्च्—(पुं०) **क्रुञ्च**–(पुं०) [√क्रुञ्च्+क्विन्] [√क्रुञ्च्+अच्] बगला। क्रौञ्च-पक्षी।

√क्रुध्—दि० पर० अक० कुपित होना, नाराज होना। क्रुध्यति, क्रोत्स्यति, अक्रुधत्।

क्रुध्—(स्त्री०) [√क्रुध्+क्विप्] क्रोध गुस्सा।

√क्रुश्—भ्वा० पर० अक० रोना। सक० बुलाना, क्रोशति, क्रोक्ष्यति, अक्रुक्षत्।

क्रुष्ट—(वि०) [√क्रुश्+क्त] बुलाया हुआ। (न०) रोदन। शोर।

क्रूर—(वि०) [√कृत्+रक्, क्रू आदेश] निष्ठुर, निर्दयी, दयाशून्य, नृशंस। सख्त, रूखा। भयङ्कर, भयानक, भयप्रद; 'तस्मिन्नभिवकसम्भारं कल्पितं क्रूरनिश्चया' र० १२.४। उपद्रवी, उत्पाती, बरबाद करने वाला। घायल, चोटिल। खूनी। कच्चा। मजबूत। गर्म। तीक्ष्ण। अप्रिय। (न०) घाव। हत्या। निर्दयता। (पुं०) बाज, शिकरा। बहरी बगला। —**आकृति** (**क्रूराकृति**)–(वि०) भयङ्कर रूप वाला। —**आचार** (**क्रूराचार**) (वि०) निष्ठुर व्यवहार करने वाला। —**आशय** (**क्रूराशय**)–(वि०) जिसमें भयङ्कर जीव हों (जैसे नदी)। नृशंस स्वभाव वाला। —**कर्मन्**–(न०) खूनी काम। कोई भी कठोर परिश्रम का काम। —**कृत्**–(वि०) खूंखार, निर्दयी। —**कोष्ठ**–(वि०) दस्तावर दवा यानी जुलाब देने पर भी जिसको दस्त न आवें ऐसे कोठे वाला। कब्जियत रोग से पीड़ित। —**गन्ध**–(पुं०) गंधक। —**दृश्**–(वि०) कुदृष्टि वाला, बुरी निगाह डालने वाला। उत्पाती, दुष्ट। —**राविन्**–(पुं०) पहाड़ी काक। —**लोचन**–(पुं०) शनिग्रह।

क्रेतृ—(पुं०) [√क्री + तृच्] खरीदने वाला, गाहक ।

क्रोञ्च—(पुं०) [√क्रुञ्च् + अच्, गुण (बा०)] एक पर्वत का नाम ।

क्रोड—(पुं०) [क्रुड्+घञ्] शूकर । वृक्ष का खोड़र । वक्षस्थल । किसी वस्तु का मध्यभाग । शनिग्रह । (न०) दे० 'क्रोडा' ।—**अङ्क** (**क्रोडाङ्क**),—**अङ्घ्रि** (**क्रोडाङ्घ्रि**),—**पाद** –(पुं०) कछुवा ।—**पत्र**–(न०) हाशियें का लेख । पत्र की समाप्ति करने के बाद लिखा हुआ लेख । न्यूनता-पूरक पत्र । दानपत्र का अनुबन्ध ।

क्रोडा—(स्त्री०) [क्रोड+टाप्] वक्षःस्थल, छाती । वस्तु का भीतरी भाग, खोखला न ।

क्रोडी—(स्त्री०) [क्रोड+ङीष्] सुअरी । वाराहीकन्द ।

क्रोडीकरण—(न०) [क्रोड+च्वि,√कृ + ल्युट्] आलिङ्गन, छाती से लगाना ।

क्रोडीमुख—(पुं०) [क्रोड्याः मुखमिव मुखमस्य ब० स०] गैंडा ।

क्रोध—(पुं०) [√क्रुध् + घञ्] कोप, रोष । रौद्ररस का भाव ।—**मूर्च्छित**–(वि०) गुस्से में भरा हुआ, कुपित ।

क्रोधन—(वि०) [√क्रुध्+ल्यु] क्रोध में भरा हुआ, क्रुद्ध । (न०) [√क्रुध्+ल्युट्] क्रोध करना ।

क्रोधना—(स्त्री०) [क्रोधन+टाप्] क्रोध वाली स्त्री ।

क्रोधालु—(वि०) [क्रुध्+आलुच्] क्रोधी, गुस्सैल ।

क्रोश—(पुं०) [क्रुश्+घञ्] चीख, चीत्कार, चिल्लाहट । कोलाहल । कोस । मील ।—**ताल**, **ध्वनि**–(पुं०) बड़ा ढोल ।

क्रोशन—(वि०) [√क्रुश्+ल्यु] चीत्कार करने वाला । (न०) [√क्रुश्+ल्युट्] चीत्कार, चीख ।

क्रोष्टु—(पुं०) [√क्रुश्+तुन्] [स्त्री०—**क्रोष्ट्री**] गीदड़, शृगाल ।

क्रौञ्च—(पुं०) [क्रुञ्च+अण्] कुरर पक्षी । एक पर्वत, यह हिमालय पर्वत का नाती है, कार्तिकेय तथा परशुराम ने इसे बेधा था—'हंसद्वारं भृगुपतियशोवर्त्म यत् क्रौञ्चरन्ध्रम्' मे० ५७ ।—**अदन** (**क्रौञ्चादन**)–(न०) कमल-नाल के रेशे ।—**अराति** (**क्रौञ्चाराति**), —**अरि** (**क्रौञ्चारि**),—**रिपु**–(पुं०) कार्तिकेय । परशुराम ।—**दारण**,—**सूदन**– (पुं०) कार्तिकेय । परशुराम ।

क्रौर्य—(न०) [क्रूर+ष्यञ्] क्रूरता, निष्ठुरता ।

√**क्लन्द्**—भ्वा० पर० अक० रोना । सक० बुलाना । क्लन्दति । क्लन्दिष्यति । अक्लन्दीत् ।

√**क्लम्**—दि० पर० अक० ग्लानि करना । थक जाना । क्लाम्यति, क्लमिष्यति, अक्लमीत् ।

क्लम, **क्लमथ**–(पुं०) [√क्लम् +घञ्, अवृद्धि] [√क्लम्+अथच्] थकावट, थकाई; 'विनोदितदिनक्लमः कृतरुचश्च जाम्बूनदैः' शि० ४.६६ ।

क्लान्त—(वि०) [√क्लम्+क्त] थका हुआ, परिश्रान्त । कुम्हलाया हुआ, मुर्झाया हुआ । लटा, निर्बल ।

क्लान्ति—(स्त्री०) [√क्लम्+क्तिन्] थकावट, श्रम ।—**छिद्** (**क्लान्तिच्छिद्**) –(वि०) थकावट दूर करने वाला ।

√**क्लिद्**—दि० पर० अक० गीला होना, क्लिद्यति, क्लेदिष्यति, अक्लेदीत्,—अक्लेत्सीत्,—अक्लिदत् ।

क्लिन्न—(वि०) [√क्लिद्+क्त]भीगा, तर । —**अक्ष** (**क्लिन्नाक्ष**)–(वि०) चुंधा, किचड़ाहा ।

√**क्लिश्**—दि० आत्म० अक० पीड़ित होना । क्लिश्यते, क्लेशिष्यते, अक्लेशिष्ट, क्र्या० पर० सक० सताना । क्लिश्नाति, क्लेशिष्यति— क्लेक्ष्यति, अक्लेशीत् —अक्लिक्षत् ।

क्लिशित, **क्लिष्ट**–(वि०) [√क्लिश्+क्त] पीड़ित, दुःखी, सन्तप्त । सताया हुआ । मुर-

डाला हुआ। विरोधी, असङ्गत [जैसे, मेरी माता वन्ध्या है।] कृत्रिम। लज्जित।

क्लिष्टि—(स्त्री०) [√क्लिश्+क्तिन्] सन्ताप, पीड़ा, दुःख। नौकरी, चाकरी, सेवा।

√क्लिव्—(व्) भ्वा० आत्म० अक०, मस्त होना। नपुंसक होना। चतुर न होना। क्लीब (व) ते, क्लीबि (वि) ष्यते, अक्लीबि-(वि) ष्ट।

क्लीब, क्लीव–(वि०) [√क्लीब् (व्) +क] नपुंसक, हिजड़ा। भीरु, निर्वंश। ओछा, नीच। सुस्त, काहिल। नपुंसकलिङ्ग का। (पुं०, न०) नपुंसक, हिजड़ा, खोजा।—'न मूत्रं फेनिलं यस्य विष्ठा चाप्सु निमज्जति। मेढ्रं चोन्मादशुक्राभ्यां हीनं क्लीबः स उच्यते।—कात्यायन। नपुंसकलिङ्ग।

क्लेद—(पुं०) [√क्लिद्+घञ्] नमी, तरी, सील। फोड़े का बहाव। कष्ट, दुःख, पीड़ा।

क्लेश—(पुं०) [√क्लिश्+घञ्] पीड़ा, कष्ट, क्रोध। सांसारिक झंझट।—**क्षम**–(वि०) कष्ट सहन करने योग्य।

क्लैब्य, क्लैव्य—(न०) [क्लीब (व)+ष्यञ्] नपुंसकता। भीरुता; 'क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ' गी० २.३। निरर्थकता।

क्लोमन्—(न०) [√क्लु+मनिन्] दाहिना फेफड़ा, फुफ्फुस।

क्व—(अव्य०) [किम्+अत्, कु आदेश] कहाँ, किधर।—**चित्**–(अव्य०) कहीं। कहीं-कहीं। बहुत कम। कभी।

क्वण्—भ्वा० पर० अक० झंकार करना, घुंघरू जैसा शब्द करना। क्वणति, क्वणिष्यति, अक्वणीत्, —अक्वाणीत्।

क्वण—(पुं०), **क्वणन, क्वणित**—(न०), **क्वाण**–(पुं०) [√क्वण्+अप्] [√क्वण् +ल्युट्] [√क्वण्+क्त] [√क्वण्+घञ्] शब्द। किसी भी बाजे का शब्द।

क्वत्य—(वि०) [क्व+त्यप्] किस स्थान का, कहाँ का।

क्वथ्—भ्वा० पर० सक० उबालना, काढ़ा बनाना। जीर्ण करना, पचाना। क्वथति, क्वथिष्यति, अक्वथीत्।

क्वथ, क्वाथ–(पुं०) [√क्वथ्+अप्] [√क्वथ्+घञ्] काढ़ा।

क्वाचित्क—(वि०) [स्त्री०—**क्वाचित्की**] [क्वचित्+ठञ्]क्वचित् होने, मिलने वाला। दुर्लभ। असाधारण।

क्ष—(पुं०) [√क्षि+ड] नाश। अन्तर्धान, अदर्शन। विद्युत्। क्षेत्र। किसान। विष्णु का चौथा या नृसिंहावतार। राक्षस।

√क्षण्, √क्षन्–त० उभ० सक० घायल करना। भङ्ग करना। क्षणोति, —क्षणुते, क्षणिष्यति—ते, अक्षणीत्—अक्षणिष्ट।

क्षण—(पुं०, न०) [√क्षण्+घञ्] लहमा, पल, सेकेण्ड। अवकाश, फुर्सत।—'अहमपि लब्धक्षणः स्वगृहं गच्छामि।'—मालविकाग्नि-मित्र। उपयुक्त क्षण, अवसर। शुभ क्षण। उत्सव, हर्ष। परतंत्रता, दासता। मध्य बिन्दु, मध्य।—**क्षेप**–(पुं०) क्षण भर का विलम्ब।—**द**–(पुं०) ज्योतिषी। (न०) पानी, जल।—**दा**–(स्त्री०) रात्रि; 'क्षणादथैष क्षणदा-पतिप्रभः' नैष० १.६७। हल्दी।—**०कर**,—**पति**–(पुं०) चन्द्रमा।—**द्युति**–(स्त्री०) **प्रभा**–(स्त्री०) विद्युत्, बिजली।—**निः-श्वास**–(पुं०) सूंस, शिशुमार।—**भङ्गुर**-(वि०)छन भर में, थोड़ी ही देर में मिट जाने वाला। निर्बल।—**रामिन्**-(पुं०) कबूतर, परेवा।—**विध्वंसिन्**–(वि०) एक क्षण में नष्ट होने वाला। (पुं०) एक श्रेणी का नास्तिक दार्शनिक।

क्षणतु—(पुं०) [√क्षण्+अतु]घाव, फोड़ा।

क्षणन—(न०) [√क्षण्+ल्युट्] घाव करना, चोटिल करना। मार डालना।

क्षणिक—(पुं०) [क्षण+ठन्] क्षणभर का, दमभर का।

क्षणिका—(स्त्री०) [क्षणिक+टाप्] विद्युत्, बिजली ।

क्षणिन्—(वि०) [क्षण+इनि] [स्त्री०—**क्षणिनी**] अवकाश रखने वाला । दमभर का, क्षणिक ।

क्षणिनी—(स्त्री०) [क्षणिन्+ङीप्] रात, रजनी ।

क्षत—(न०) [√क्षण्+क्त] घाव, जख्म । चोट से होने वाला फोड़ा । दुःख । भय । खतरा । (वि०) घायल । काटा हुआ । भंग किया हुआ । तोड़ा हुआ । चीरा हुआ । फाड़ा हुआ ।—**अरि** (क्षतारि)–(वि०) विजयी, फतहयाब ।–**उदर** (क्षतोदर)–(न०) दस्तों की बीमारी ।—**कास**–(पुं०) खाँसी जो चोटफेट से उत्पन्न हुई हो ।—**ज**–(न०) रक्त, लोहू, खून; 'स छिन्नमूलः क्षतजेन रेणुः' र० ७.४३ । पीप, पसेव, राल ।—**योनि**–(स्त्री०) उपभुक्त स्त्री, वह स्त्री जो पुरुष के साथ सम्भोग करा चुकी हो ।—**विक्षत**–(वि०) जिसका शरीर घावों से भरा हो ।—**वृत्ति**–(स्त्री०) आजीविका-रहित ।—**व्रत**–(पुं०) ब्रह्मचारी, व्रतभङ्ग करने वाला ब्रह्मचारी ।

क्षति—(स्त्री०) [√क्षण्+क्तिन्] चोट, घाव । विनाश । बरबादी, हानि, नुकसान, ह्रास, कमी ।

क्षत्तृ—(पुं०) [क्षद्+तृच्] वह जो काटता या मोड़ता है । द्वारपाल, दरबान । कोचवान, सारथी । शूद्र पुरुष और क्षत्रिया स्त्री से उत्पन्न पुरुष । दासीपुत्र । ब्रह्मा । मछली ।

क्षत्र—(न०, पुं०) [√ क्षण्+क्विप्, क्षत् ततः त्रायते, √त्रै+क] अधिकार, प्रभुता, शक्ति । क्षत्रिय जाति का पुरुष या क्षत्रिय जाति ।—**अन्तक** (क्षत्रान्तक)–(पुं०) परशुराम ।—**धर्म**–(पुं०) बहादुरी, वीरता, सैनिक शूरता । क्षत्रिय के अवश्य कर्त्तव्य कर्म ।—**प**–(पुं०) शासक, मण्डलेश्वर, सूबेदार ।—**बन्धु**–(पुं०) जाति का क्षत्रिय । केवल क्षत्रिय, दुष्ट या पापी क्षत्रिय ।(यह गाली है जैसे ब्रह्मबन्धु) ।

क्षत्रिय—(पुं०) [क्षत्र+घ–इय] दूसरे वर्ण का पुरुष, राजपूत ।—**हन्**–(पुं०) परशुराम ।

क्षत्रियका, क्षत्रिया, क्षत्रियिका–(स्त्री०) [क्षत्रिया+कन्–टाप्, ह्रस्व] [क्षत्रिय+टाप्] [क्षत्रिया+कन्–टाप्, इत्व] क्षत्रिय वर्ण की स्त्री । क्षत्रिय की पत्नी ।

क्षत्रियाणी—(स्त्री०) [क्षत्रिय + ङीप्, आनुक्] क्षत्रिय वर्ण की स्त्री । क्षत्रिय की पत्नी ।

क्षत्रियी—(स्त्री०) [क्षत्रिय+ङीप्] क्षत्रिय की पत्नी ।

क्षन्तृ—(वि०) [√क्षम्+तृच] [स्त्री०—**क्षन्त्री**] धैर्यवान्, सहन-शील । विनयी ।

√क्षप्—चु० उभ० सक० फेंकना । भेजना । प्रेरित करना । क्षपयति–ते, क्षपयिष्यति–ते, अचिक्षिपत्–त ।

क्षपण—(पुं०) [√क्षप्+णिच्+ल्यु] बौद्ध सम्प्रदाय का भिक्षुक । (न०) [√क्षप्+ल्युट्] अशौच, सूतक, अशुद्धि । नाश । निर्वासन ।

क्षपणक—(पुं०) [क्षपण+कन्] बौद्ध या जैन भिक्षुक ।

क्षपणी—(स्त्री०) [√क्षप्+ल्युट्–ङीप्] जड़ । जाल ।

क्षपण्यु—(पुं०) [√क्षप्+अन्यु, णत्व] अपराध, जुर्म ।

क्षपा—(स्त्री०) [√क्षप्+अच्–टाप्] रात, रजनी । हल्दी ।—**अट** (क्षपाट)–(पुं०) रात में घूमने वाला । राक्षस । पिशाच; 'ततः क्षपाटैः पृथुपिङ्गलाक्षैः' भट्टि० २.३० ।—**कर,—नाथ**–(पुं०) चन्द्रमा । कपूर ।—**घन**–(पुं०) काला मेघ ।—**चर**–(पुं०) राक्षस । पिशाच ।

√क्षम्—भ्वा० आत्म० सक० सहना । क्षमते, क्षमिष्यते,—क्षंस्यते, अक्षमिष्ट—अक्षंस्त । दि० पर० सक० सहना । क्षाम्यति, क्षमिष्यति—क्षंस्यति, अक्षमत् ।

क्षम—(वि०) [√क्षम्+अच्] धैर्यवान् । सहनशील, विनयी । उपयुक्त, योग्य । उचित, ठीक । सहने योग्य, सह लेने योग्य । अनुकूल ।

क्षमा—(स्त्री०) [√क्षम्+अङ्—टाप्] धैर्य, सहनशक्ति, माफी । पृथिवी । दुर्गा देवी ।—**ज**-(पु०) मङ्गल ग्रह ।—**भुज्**-**भुज**-(पु०) राजा ।

क्षमितृ—(वि०) [स्त्री०—**क्षमित्री**], **क्षमिन्**—(वि०) [स्त्री०—**क्षमिनी**] [√क्षम्+तृच्] [√क्षम्+घिनुण्] धैर्यवान् । क्षमाशील, सहनशील ।

क्षमिन्—(वि०) [√क्षम्+घिनुण्] क्षमा करने वाला ।

क्षय—(पु०) [√क्षि+अच्] घर, मकान । हानि । ह्रास, कमी । अन्त, नाश; 'निशाक्षयं याति ह्रियेव पाण्डुताम्' । समाप्ति । आर्थिक हानि । (भाव का) गिराव । स्थानान्तरितकरण । प्रलय । यक्ष्मा रोग । साधारणतः कोई भी रोग । बीजगणित में ऋण या बाकी ।—**कर**-(वि०) नाशक, नाश करने वाला ।—**काल**-(पु०) प्रलय का समय । घटती का समय ।—**कास**—(पु०) क्षय रोग से उत्पन्न खाँसी ।—**पक्ष**-(पु०) अँधियारा पाख ।—**युक्ति**-(स्त्री०),—**योग**- (पु०) नाश करने का अवसर ।—**रोग**-(पु०) यक्ष्मा रोग, तपेदिक की बीमारी ।—**वायु**-(पु०) प्रलयकालीन पवन ।—**संपद्**-(स्त्री०) नितान्त हानि, सम्पूर्णतः हानि, सर्वनाश ।

क्षयथु—(पु०) [√क्षि+अथुच्] क्षय रोग या उसकी खाँसी ।

क्षयिन्—(वि०) [क्षय +इनि] [स्त्री०—**क्षयिणी**] विनाशक, नाशक । क्षयरोगग्रस्त । विनश्वर । (पु०) चन्द्रमा ।

क्षयिष्णु—(वि०) [√क्षि+इष्णुच्] नाश करने वाला । विनश्वर, टूटने-फूटने वाला ।

√क्षर्—भ्वा० पर० अक० बहना । चलना । क्षरति, क्षरिष्यति, अक्षारीत् ।

क्षर—(वि०) [√क्षर्+अच्] बहने वाला । जङ्गम, चर । (न०) पानी । शरीर । (पु०) बादल ।

क्षरण—(न०) [√क्षर्+ल्युट्] बहने, चूने, टपकने, रिसने की क्रिया । पसीना आने की क्रिया ।

क्षरिन्—(पु०) [क्षर+इनि] वर्षा ऋतु ।

√क्षल्—चु० उभ० पक्षे भ्वा० पर० सक० धोना, माँजना । पोंछ डालना । क्षालयति-ते,—क्षलति, क्षालयिष्यति-ते,—क्षलिष्यति, अचिक्षलत्-त,—अक्षालीत् ।

क्षव, **क्षवथु**—(पु०) [√क्षु + अप्] [√क्षु+अथुच्] छींक । खाँसी ।

क्षात्र—(वि०) [क्षत्र+अण्] [स्त्री०—**क्षात्री**] क्षत्रिय सम्बन्धी या क्षत्रिय का । (न०) क्षत्रिय का कर्म । क्षत्रिय जाति । क्षत्रिय का भाव, क्षत्रियत्व ।

क्षान्त—(वि०) [√क्षम्+क्त] धैर्यवान्, सहनशील, क्षमावान् । माफ किया हुआ ।

क्षान्ता—(स्त्री०) [क्षान्त+टाप्] पृथिवी ।

क्षान्तु—(वि०) [√क्षम्+तुन्, वृद्धि] धैर्यवान् सहनशील । (पु०) पिता, जनक, बाप ।

क्षाम—(वि०) [√क्षै+क्त] झुलसा हुआ । पतला । थोड़ा । निर्बल । नष्ट । (न०) क्षय । (पु०) विष्णु ।

क्षार—(वि०) [√क्षर्+ण] खारा । क्षरणशील, रिसने वाला, बहने वाला । (न०) काला नमक । पानी, जल । (पु०) रस, सार । शीरा, चोटा, राब । कोई भी तीक्ष्ण पदार्थ । शीशा । लुच्चा, ठग ।—**अच्छ** (क्षाराच्छ)

—(न०) समुद्री नमक ।—अञ्जन (क्षाराञ्जन)—(न०) खारा अञ्जन या लेप ।—अम्बु (क्षाराम्बु)—(न०) खारा रस ।—उद (क्षारोदः),—उदक (क्षारोदक),—उदधि (क्षारोदधि),—समुद्र—(पुं०) खारा समुद्र ।—त्रय,—त्रितय—(न०) सज्जी, शोरा और जवाखार (या सोहागा) ।—नदी—(स्त्री०) नरक में खारे पानी की एक नदी ।—भूमि,—मृत्तिका—(स्त्री०) नूनिया जमीन ।—मेलक—(पुं०) खारा पदार्थ ।—रस—(पुं०) खारा रस ।

क्षारक—(पुं०) [क्षार+कन्] खार । रस, सार । [√क्षर्+ण्वुल्] पिंजड़ा । टोकरी या जाल जिसमें पक्षी रखे जाते हैं । धोबी । कली ।

क्षारण—(न०), **क्षारणा**—(स्त्री०)—[√क्षर्+णिच्+ल्युट्] [√क्षर्+णिच्+युच्] खार बनाना । टपकाना । पारे का १५ वाँ संस्कार । अभिशाप, अभियोग, विशेष कर व्यभिचार या लम्पटता का ।

क्षारिका—(स्त्री०) [√क्षर्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] भूख ।

क्षारित—(वि०) [√क्षर्+णिच्+क्त] टपकाया हुआ । लम्पटता का झूठा दोष लगाया हुआ ।

क्षालन—(न०) [√क्षल्+णिच्+ल्युट्] धोना, साफ करना, पखारना । छिड़कना ।

क्षालित—(वि०) [√क्षल्+णिच्+क्त धुला हुआ, साफ किया हुआ; तथा वृत्तं पापैः व्यथयति यथा क्षालितमपि' उत्त० १.२८ । पोंछा हुआ, झाड़ा हुआ ।

√क्षि—भ्वा० पर० अक० क्षय होना । क्षयति, क्षेष्यति, अक्षैषीत् । स्वा० पर० सक० हिंसा करना । क्षिणोति, क्षेष्यति, अक्षैषीत् । तु० पर० सक० जाना, अक० निवास करना । क्षियति, क्षेष्यति, अक्षैषीत् । क्र्या० पर० सक० मारना । क्षिणाति, क्षेष्यति, अक्षैषीत् ।

√ क्षिण्—त० उभ० सक० मारना । क्षिणोति—क्षिणुते, क्षेणिष्यति-ते, अक्षेणीत्—अक्षेणिष्ट ।

क्षिति—(स्त्री०) [√क्षि+क्तिन्] पृथिवी । गृह, आवासस्थान । हानि, नाश । प्रलय ।—ईश (क्षितीश),—ईश्वर (क्षितीश्वर)—(पुं०) राजा ।—कण—(पुं०) धूल, रज ।—कम्प—(पुं०) भूचाल, भूडोल ।—क्षित्—(पुं०) राजा ।—ज—(पुं०) वृक्ष । केंचुआ । मङ्गलग्रह । नरकासुर । (न०) अन्तरिक्ष ।—जा—(स्त्री०) सीता ।—तल—(न०) पृथिवी-तल, जमीन की सतह ।—देव—(पुं०) ब्राह्मण ।—धर—(पुं०) पहाड़ ।—नाथ,—प,—पति,—पाल,—भुज्,—रक्षिन्—(पुं०) राजा, सम्राट् ।—पुत्र—(पुं०) मङ्गल-ग्रह ।—प्रतिष्ठ—(वि०) धरती पर बसने-वाला ।—भृत्—(पुं०) पर्वत, पहाड़ ।—मण्डल—(न०) भूमण्डल, भगोलक ।—रन्ध्र—(न०) गड्ढा, गर्त ।—रुह—(पुं०) पेड़, वृक्ष ।—वर्धन—(पुं०) शव, मुर्दा, मृतकशरीर, लाश ।—वृत्ति—(स्त्री०) धैर्ययुक्त व्यवहार या आचरण । पृथिवी की गति ।—व्युदास—(पुं०) बिल ।

क्षिद्र—(पुं०) [√क्षिद्+रक्] रोग । सूर्य । सींग ।

√क्षिप्—तु० उभ० [किन्तु जब इसके पूर्व अभि, प्रति, और अति जोड़े जाते हैं तब यह धातु पर० होती है ।] सक० फेंकना; 'किं कूर्मस्य भरव्यथा न वपुषि क्ष्मां न क्षिपत्येष यत्' मु० २.१८ । पटकना । भेजना, रवाना करना । छोड़ना, मुक्त कर देना । रखना, स्थापित करना । लगाना । अर्पित करना । छीन लेना । नाश कर डालना । खारिज कर देना, अस्वीकृत कर देना । घृणा करना । अपमान करना । क्षिपति-ते, क्षेप्स्यति-ते, अक्षैप्सीत्-अक्षिप्त ।

क्षिपण—(न०) [√क्षिप्+ल्युट्] भेजना, पठाना । फेंकना । गाली-गलौज ।

क्षिपणि, क्षिपणी—(स्त्री०) [√क्षिप्+अनि] [क्षिपणि+ङीष्] डाँड़ । जाल । हथियार । आघात, चोट, प्रहार ।

क्षिपण्यु—(पुं०) [√क्षिप्+कन्युच्] शरीर, वसन्तऋतु ।

क्षिपा—(स्त्री०) [√ क्षिप्+अङ—टाप्] भेजना । फेंकना । रात्रि ।

क्षिप्त—(वि०) [√क्षिप्+क्त] फेंका हुआ । त्यागा हुआ । अनादृत । स्थापित । पागल । सिड़ी । (न०) गोली का घाव ।—**कुक्कुर**—(पुं०) पागल कुत्ता ।—**चित्त**—(वि०) चंचल चित्त वाला । विकल ।—**देह**—(वि०) लेटा हुआ, पसरा हुआ ।

क्षिप्ति—(स्त्री०) [√क्षिप्+क्तिन्] फेंकना । कूटार्थ, पहेली का अर्थ ।

क्षिप्र—(वि०) [√ क्षिप् + रक्] [तुलनात्मक—क्षेपीयस् । क्षेपिष्ठ] फुर्तीला, शीघ्रगामी । लचीला । (न०, पुं०) अँगूठे और तर्जनी के बीच का स्थान । मुहूर्त का १५वाँ भाग । (अव्य०) जल्द, तत्काल ।—**कारिन्**—(वि०) तेजी से काम करने वाला । मुस्तैद ।

क्षिया—(स्त्री०) [√क्षि+अङ—टाप्] हानि, नाश, बरबादी । ह्रास । असभ्यता । आचारभेद ।

√क्षिव्—भ्वा० पर० सक० दूर करना । क्षेवति, क्षेविष्यति, अक्षेवीत् ।

√क्षीज्—भ्वा० पर० अक० अव्यक्त शब्द करना । क्षीजति, क्षीजिष्यति, अक्षीजीत् ।

क्षीजन—(न०) [√क्षीज्+ल्युट्] पोले नरकुल आदि में से निकली हुई सरसराहट की आवाज ।

क्षीण—(वि०) [√क्षि+क्त, दीर्घ] दुबला, पतला, सटा हुआ । खर्च कर डाला गया । नाजुक । स्वल्प, थोड़ा, कम । धनहीन, गरीब । शक्तिहीन, निर्बल ।—**चन्द्र**—(पुं०) कृष्णपक्ष का चन्द्रमा ।—**धन**—(वि०) निर्धन, गरीब ।—**पाप**—(वि०) पाप का फल भोगने के पीछे उस पाप से रहित ।—**पुण्य**—(वि०) जिसका संचित पुण्यफल पूरा हो चुका हो और जिसे अगले जन्म के लिये पुनः पुण्यफल सञ्चय करना चाहिये ।—**मध्य**—(वि०) पतली कमर वाला ।—**वासिन्**—(वि०) खँडहर में रहने वाला ।—**विक्रान्त**—(वि०) साहस या सत्व से रहित ।—**वृत्ति**—(वि०) आजीविका से रहित ।

क्षीब्—भ्वा० आत्म० अक० मत्त होना, मस्त होना । क्षीबते, क्षीबिष्यते, अक्षीबिष्ट ।

क्षीब—(वि०) [√क्षीब्+क्त, नि० साधुः] मत्त, मतवाला ।

क्षीर—(पुं०, न०) [घस्यते अद्यते, √घस्+ईरन्, उपधालोपः, घस्य ककारः षत्वञ्च] दूध । किसी वृक्ष का दूध जैसा रस । जल ।—**अद** (क्षीराद)—(पुं०) बच्चा, शिशु ।—**अब्धि** (क्षीराब्धि)—(पुं०) दूध का समुद्र ।—०**ज** (क्षीराब्धिज)—(पुं०) चन्द्रमा । मोती ।—०**जा** (क्षीराब्धिजा),—०**तनया** (क्षीराब्धितनया)—(स्त्री०) लक्ष्मी ।—**आह्व** (क्षीराह्व)—(पुं०) सरल वृक्ष, सनोवर का वृक्ष ।—**उद** (क्षीरोद)—(पुं०) दूध का समुद्र; 'क्षीरोदवेलेव सफेनपुञ्जा' कु० ७.२६ ।—**ऊर्मि** (क्षीरोर्मि)—(स्त्री०) दूध के समुद्र की लहर ।—**ओदन** (क्षीरोदन)— (पुं०) दूध में उबले हुए चावल ।—**कण्ठ**—(पुं०) बच्चा, शिशु ।—**ज**—(न०) जमौआ दूध, जमा हुआ दूध ।—**तनया**—(स्त्री०) लक्ष्मी ।—**द्रुम** (पुं०) अश्वत्थ वृक्ष । बरगद का पेड़ ।—**धात्री**—(स्त्री०) दूध पिलाने वाली दासी ।—**धि**,—**निधि**—(पुं०) दूध का समुद्र ।—**धेनु**—(स्त्री०) दुधार गाय ।—**नीर**—(न०) पानी और दूध । दूध सदृश जल । मेल-मेल, मिलावट ।—**प**—(पुं०) दूध पीने वाला बच्चा ।—**वारि**, **वारिधि**—(पुं०) दूध का समुद्र ।—**विकृति**—(स्त्री०) जमा

हुआ दूध, दूध का विकार ।—**वृक्ष**–(पुं०) न्यग्रोध, उदुम्बर, अश्वत्थ और मधूक नाम के वृक्ष ।—**शर**–(पुं०) मलाई । दूध का झाग या फेन ।—**समुद्र**–(पुं०) दूध का समुद्र ।—**सार**–(पुं०) मक्खन ।—**हिण्डीर**–(पुं०) दूध का फेन ।

क्षीरिका—(स्त्री०) [क्षीर+ठन्–टाप्] पिंडखजूर । वंशलोचन । खीर, दूध से बना खाद्य पदार्थ ।

क्षीरिन्—(वि०) [क्षीर+इनि] दुधार, दूध देने वाला ।

क्षीव्—दे० '√क्षीव्' ।

क्षीव—(वि०) दे० 'क्षीव' ।

√**क्षु**—अ० पर० अक० छींकना । खाँसना, खखारना । क्षौति, क्षविष्यति, अक्षावीत् ।

क्षुण्ण—(वि०) [क्षुद्+क्त] कुचला हुआ, कूटा हुआ । अभ्यस्त । अनुगत । चूर्ण किया हुआ ।—**मनस्**–(वि०) पश्चात्ताप करने वाला ।

क्षुत्—(स्त्री०) [√क्षु+क्विप्, तुगागम] भूख, क्षुधा । छींक ।—**क्षाम**—(वि०) आहार न मिलने से दुर्बल, क्षुधाक्षीण ।—**पिपासा**—(स्त्री०) भूख-प्यास ।

क्षुत—(न०) [√क्षु+क्त] छींक ।

क्षुतक—(पुं०) [क्षुत+कन्] राई ।

क्षुता—(स्त्री०) [क्षुत+टाप्] छींक ।

√**क्षुद्**—रु० उभ० सक० पीसना । क्षुणत्ति—क्षुन्ते, क्षोदिष्यति—ते, अक्षुदत्—अक्षौदीत्—अक्षोदिष्ट ।

क्षुद्र—(वि०) [√क्षुद्+रक्] बिल्कुल छोटा । छोटा । ओछा, कमीना । उद्दण्ड । निष्ठुर । गरीब । कंजूस ।—**अञ्जन** (क्षुद्राञ्जन)–(न०) रोग विशेष में व्यवहार किया जाने वाला सुर्मा ।—**अन्त्र** (क्षुद्रान्त्र)–(पुं०) हृदय के भीतर का छोटा-सा रन्ध्र ।—**उलूक** (क्षुद्रोलूक)–(पुं०) उल्लू ।—**कम्बु**–(पुं०) छोटा शङ्ख ।—**कुष्ठ**–(न०) एक प्रकार की हल्की कोढ़ ।—**घण्टिका**–(स्त्री०) घुँघरू, रोंना । बजनी करधनी ।—**चन्दन**–(न०) लाल-चन्दन की लकड़ी ।—**जन्तु**–(पुं०) कोई भी क्षुद्र जीव ।—**दंशिका**–(स्त्री०) डाँस, गो-मक्षिका ।—**बुद्धि**–(वि०) ओछी बुद्धि का, कमीना ।—**रस**–(पुं०) शहद ।—**रोग**–(पुं०) मामूली बीमारी, आयुर्वेद में इस प्रकार की ४४ बीमारियाँ गिनायी गयी हैं ।—**शङ्ख**–(पुं०) छोटा घोंघा ।—**सुवर्ण**–(न०) खोटा या हल्का सोना ।

क्षुद्रल—(वि०) [क्षुद्र+लच्] महीन, छोटा । (पशुओं और रोगों के लिये इस शब्द का प्रयोग विशेष रूप से होता है ।)

क्षुद्रा—(स्त्री०) [क्षुद्र+टाप्] मधुमक्षिका । कर्कशा स्त्री । लंजी औरत । वेश्या, रंडी ।

√**क्षुध्**—दि० पर० अक० भूखा होना, भूख लगना । क्षुध्यति, क्षोत्स्यति, अक्षुधत् ।

क्षुध्, क्षुधा—(स्त्री०) [√क्षुध्+क्विप्] [क्षुध्+टाप्] भूख ।—**आर्त** (क्षुधार्त), —**आविष्ट** (क्षुधाविष्ट)–(वि०) भूख से पीड़ित ।—**क्षाम** (क्षुत्क्षाम)–(वि०) भूखे रहते-रहते दुबला हो गया हुआ ।—**पिपासित** (क्षुत्पिपासित)–(वि०) भूखा-प्यासा ।—**निवृत्ति** (क्षुन्निवृत्ति)–(स्त्री०) भूख का दूर होना, पेट भरना ।

क्षुधालु—(वि०) [√क्षुध्+आलुच्] भूखा ।

क्षुधित—(वि०) [√क्षुध्+क्त] भूखा ।

क्षुप—(पुं०) [√क्षुप्+क] झाड़ी, झाड़ ।

क्षुब्ध—(वि०) [√क्षुभ्+क्त] क्षोभयुक्त, उत्तेजित, अशान्त, भीत । जिसमें जोर की लहरें उठ रही हों । तूफानी (समुद्र) । (पुं०) मथानी की डाँडी; 'क्षोभैव मन्दरक्षुब्धक्षुभिताम्भोधिवर्णना' शि० २.१०७ । रति का एक आसन ।

√**क्षुभ्**—भ्वा० आत्म० अक० काँपना, थरथराना । उत्तेजित होना । विकल होना ।

अस्थिर होना । क्षोभते, क्षोभिष्यते, अक्षोभिष्ट । दि० पर० क्षुभ्यति, क्षोभिष्यति, अक्षोभीत् । क्र्या० पर० क्षुभ्नाति ।

क्षुभित—(वि०) [√ क्षुभ्+क्त] अशान्त, व्याकुल । भयभीत । क्रुद्ध ।

क्षुमा— (स्त्री०) [√क्षु+मक्, टाप्] अलसी, एक प्रकार का सन ।

√क्षुर्—तु० पर० सक० काटना । खरोंचना । हल से खेत में रेखाएँ सी खींचना । रेखा खींचना । क्षुरति, क्षोरिष्यति, अक्षोरीत् ।

क्षुर—(पुं०) [√क्षुर्+क] छुरा, उस्तरा । छुरेनुमा शरपत्र । गौ घोड़े आदि का खुर । तीर ।—**कर्मन्** (न०)—**क्रिया**- (स्त्री०) हजामत ।—**चतुष्टय**- (न०) हजामत के लिये आवश्यक चार वस्तुएँ ।—**धान**,—**भाण्ड**-(न०) उस्तरे का घर, नाऊ की पेटी ।—**धार**-(वि०) छुरे की तरह पैना ।—**प्र**-(पुं०) घोड़े के सुम के आकार की नोक वाला तीर । कुदाली, फावड़ी ।—**मर्दिन्**,—**मुण्डिन्**-(पुं०) नाई, हज्जाम ।

क्षुरिका, क्षुरी--(स्त्री०) [क्षुर—ङीष्+कन्—टाप्, ह्रस्व] [क्षुर+ङीष्] चाकू, छुरी, कटार । छोटा उस्तरा ।

क्षुरिणी--(स्त्री०) [क्षुर+इनि—ङीप्] हज्जाम की पत्नी, नाइन, नाउन ।

क्षुरिन्—(पुं०) [क्षुर+इनि] हज्जाम, नाऊ, नाई ।

क्षुल्ल—(वि०) [क्षुदं लाति गृह्णाति, क्षुद्√ला+क] छोटा, कम, स्वल्प ।

क्षुल्लक—(वि०) [क्षुल्ल+कन्] थोड़ा । छोटा । नीच, तुच्छ । निर्धन । दुष्ट, कलुषित हृदय का । पीड़ित । कठिन ।

क्षेत्र—(न०) [√क्षि+ष्ट्रन्] खेत । स्थावर सम्पत्ति । स्थान । तीर्थस्थान । चारों ओर से घेरा हुआ चौगान । उर्वरा भूमि, उपजाऊ जमीन । उत्पत्तिस्थान । भार्या । शरीर । मन । घर । क्षेत्र, रेखागणित की एक आकृति [जैसे त्रिभुज] । अङ्कित क्षेत्र, चित्र ।—**अधिदेवता** (**क्षेत्राधिदेवता**),-(स्त्री०) किसी पवित्र स्थल का अधिष्ठातृ या रक्षक देवता ।—**आजीव**— (**क्षेत्राजीव**), —**कर**-(पुं०) किसान, खेतिहर ।—**गणित**-(न०) खेत, जमीन का रकबा निकालने की क्रिया । भूमिति, रेखागणित ।—**गत**- (वि०) रेखागणित सम्बन्धी या भूमि की नापजोख सम्बन्धी ।—**ज**-(वि०) क्षेत्रोत्पन्न । शरीरोत्पन्न । (पुं०) १२ प्रकार के पुत्रों में से एक, नियोग द्वारा उत्पन्न पुत्र ।—**जात**-(पुं०) दूसरे की भार्या से उत्पन्न किया का पुत्र ।—**ज्ञ**-(वि०) स्थलों का जानकार । चतुर, दक्ष । (पुं०) जीवात्मा । परमात्मा; 'क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि' गीता । अधर्मी, दुराचारी । किसान ।—**पति**-(पुं०) जमीन का मालिक ।—**पद**-(पुं०) किसी देवता के उद्देश्य से उत्सर्ग किया हुआ पवित्र स्थल ।—**पाल**-(पुं०) खेत का रखवाला । देवता विशेष जो खेत की रखवाली करता है । शिव ।—**फल**-(न०) खेत की लंबाई-चौड़ाई का माप ।—**भक्ति**-(स्त्री०) खेत का विभाग ।—**भूमि**-(स्त्री०) भूमि जिसमें खेती की जाती है ।—**विद्**-(वि०) दे० 'क्षेत्रज्ञ' । (पुं०) किसान । आध्यात्मिक ज्ञान सम्पन्न विद्वान् । जीवात्मा ।—**स्थ**-(वि०) पवित्र स्थल में रहने वाला ।

क्षेत्रिक—(वि०) [क्षेत्र+ठन्] [स्त्री०—**क्षेत्रिकी**] खेत सम्बन्धी; (पुं०) किसान । जोता ।

क्षेत्रिन्—(पुं०) [क्षेत्र+इनि] कृषक । (नाममात्र का) जोता । जीवात्मा । परमात्मा ।

क्षेत्रिय—(वि०) [क्षेत्र+घ] खेत सम्बन्धी । असाध्य । (न०) आभ्यन्तरिक रोग । चरागाह, गोचरभूमि । (पुं०) लम्पट । व्यभिचारी ।

क्षेप—(पुं०) [√क्षिप्+घञ्] उछालना । फेंकना । पटकना । घूमना । अवयवों का

चालन। भेजना, रवाना करना। भङ्ग करना। (नियम) तोड़ना। व्यतीत कर डालना। विलम्ब। दीर्घसूत्रता। अपशब्द। अपमान। अभिमान। पुष्प-स्तवक गुलदस्ता।

क्षेपक—(वि०) [√क्षिप्+ण्वुल् वा क्षेप+कन्] फेंकने वाला। भेजने वाला। मिलावटी। बीच में घुसेड़ा हुआ। अपमान-कारक। (पु०) मिलावटी या बनावटी भाग। किसी ग्रन्थ का वह अंश जो मूलग्रन्थकार का न हो कर अन्य किसी ने मूलग्रन्थकार के नाम से स्वयं बनाकर ग्रन्थ में जोड़ दिया हो, पुस्तक में ऊपर से मिलाया हुआ पाठ।

क्षेपण—(न०) [√क्षिप्+ल्युट्] फेंकना। भेजना। बतलाना। व्यतीत करना। छोड़ जाना। गाली देना। गुफना या गोफन नामक एक यंत्र जिसमें रखकर कंकड़ दूर तक फेंका जाता है।

क्षेपणि, क्षेपणी—(स्त्री०) [√क्षिप्+अनि] [क्षेपणि+ङीप्] डाँड़। मछली पकड़ने का जाल। गोफ या गुफना जिससे कंकड़ दूर तक फेंके जाते हैं।

क्षेम—(वि०) [√क्षि+मन्] सुरक्षित। प्रसन्न। सुखी। नीरोग। (पु०, न०) शान्ति। प्रसन्नता। चैन। सुख। नीरोगता। निर्विघ्नता। रक्षा। जो वस्तु पास है उसका रक्षण; 'योगक्षेमं वहाम्यहम्' गीता। मोक्ष, अनन्तसुख। (पु०) एक प्रकार का सुगन्धद्रव्य। —**कर**-[क्षेम√कृ+अच्] (**क्षेमंकर**) [क्षेम√कृ+खच्] (वि०) शुभ। मङ्गलकारी।

क्षेमिन्—(वि०) [क्षेम+इनि] [स्त्री०—**क्षेमिणी**] सुरक्षित। आनन्दित।

√**क्षै**—भ्वा० पर० अक० क्षय या नाश होना। क्षायति, क्षास्यति, अक्षासीत्।

क्षैण्य—(न०) [क्षीण+ष्यञ्] नाश। दुबलापन। क्षीणता।

क्षैत्र—(न०) [क्षेत्र+अण्] खेतों का समूह। खेत।

क्षैरेय—(वि०) [क्षीर+ढञ्] [स्त्री०—**क्षैरेयी**] दुधार, दूध वाला। दूध सम्बन्धी।

क्षोड—(पु०) [क्षोड्+घञ्] हाथी बाँधने का खूंटा।

क्षोणि, क्षोणी—(स्त्री०) [√क्षै+डोनि] [क्षोणि+ङीष्] भूमि। एक की संख्या।

क्षोत्तृ—(वि०) [√क्षुद्+तृच्] कूटने-पीसने वाला। (पु०) मूसल। बट्टा।

क्षोद—(पु०) [√क्षुद्+घञ्] घुटाई। पिसाई। सिल या उखली। रज, धूल, कण। —**क्षम**-(वि०) जाँच, अनुसन्धान या परीक्षा में ठहरने योग्य।

क्षोदिमन्—(पु०) [क्षुद्र+इमनिच्] सूक्ष्मता।

क्षोभ—(पु०) [√क्षुभ्+घञ्] हिलाना। चलना। उछालना। झटका देना। उत्तेजना। घबड़ाहट। उत्पात।

क्षोभण—(न०) [√क्षुभ्+ल्युट्] उत्तेजना भड़क। (पु०) [√क्षुभ्+णिच्+ल्युट्] कामदेव के पाँच बाणों में से एक।

क्षोम—(पु०, न०) [√क्षु+मन्] दुमंजिले पर का कमरा। अटारी। अलसी आदि के रेशों से बना हुआ कपड़ा।

क्षौणि, क्षौणी—(स्त्री०) [√क्षु+नि, वृद्धि] [क्षौणि+ङीष्] भूमि। एक की संख्या। —**प्राचीर**-(पु०) समुद्र। —**भुज्**-(पु०) राजा। —**भृत्**-(पु०) पहाड़, पर्वत।

क्षौद्र—(न०) [क्षुद्र+अण्] छोटापन, ओछापन, नीचता। पानी। रजकण। [क्षुद्राभिः मक्षिकाभिः निर्वृत्तम्, क्षुद्रा+अण्] शहद, मधु। —**ज**-(न०) मोम। (पु०) चम्पा का वृक्ष।

क्षौद्रेय—(न०) [क्षौद्र+ढञ्] मोम।

क्षौम—(न०) [√क्षु+मन्+अण्] (पु०) रेशमी वस्त्र, बुना हुआ रेशम; 'क्षौमं केनचिदिन्दुपाण्डुतरुणा माङ्गल्यमाविष्कृतं' श० ४.५। हवादार अटा या अटारी। मकान का पिछवाड़ा। (न०) प्रस्तर। अलसी।

क्षौमी—(स्त्री०) [क्षुमा+अण्—ङीप्] सन, पटसन ।

क्षौर—(न०) [क्षुर+अण्] हजामत ।

क्षौरिक—(पुं०) [क्षौर+ठन्]हज्जाम, नाई ।

√**क्ष्णु**—अ० पर० सक० तेज करना, क्ष्णौति, क्ष्णविष्यति, अक्ष्णावीत् ।

क्ष्मा—(स्त्री०) [√ क्षम्+अच्, उपधा-लोप] जमीन । एक की संख्या ।—**ज**-(पुं०) मङ्गलग्रह ।—**प**,—**पति**, —**भुज्** -(पुं०) राजा ।—**भृत्**-(पुं०) राजा या पहाड़ ।

√**क्ष्माय्**—भ्वा० आत्म० अक० काँपना । क्ष्मायते, क्ष्मायिष्यते, अक्ष्मायिष्ट ।

√**क्ष्विड्**—भ्वा० आत्म० सक० प्यार करना । क्ष्वेडते, क्ष्वेडिष्यते, अक्ष्वेडिष्ट ।

क्ष्विण्ण—(वि०) [√क्ष्विद्+क्त] छूटा हुआ । चिकना ।

√**क्ष्विद्**—भ्वा० आत्म० अक० भीगना । (पसीना) छूट निकलना । मवाद का बहना । (जब इसमें प्र लगता है तब इसका अर्थ होता है भिनभिनाना,घरघराना) । क्ष्वेदते, क्ष्वेदिष्यते, अक्ष्विदत् अक्ष्वेदिष्ट । दि० पर० क्ष्विद्यति, अक्ष्विदत् ।

क्ष्वेड—(पुं०) [√क्ष्विड्+घञ् वा अच्] आवाज, शोर । जहरीले जानवरों का जहर, विष । नमी । त्याग ।

क्ष्वेडा—(स्त्री०) [√क्ष्विड्+अच्—टाप्] सिंहगर्जना । रणगुहार, रण में योद्धाओं की ललकार । बाँस, बल्ली ।

क्ष्वेडित—(न०) [√क्ष्विड्+क्त] सिंहनाद ।

√**क्ष्वेल्**—भ्वा० पर० अक० खेलना । सक० जाना । हिलाना । क्ष्वेलति, क्ष्वेलिष्यति, अक्ष्वेलीत् ।

क्ष्वेला—(स्त्री०) [√क्ष्वेल्+अ—टाप्] खेल, क्रीड़ा । हँसी, मजाक ।

ख

ख—संस्कृत अथवा नागरी वर्णमाला का दूसरा व्यञ्जन और कवर्ग का दूसरा वर्ण, इसका उच्चारण स्थान कण्ठ है, इसको स्पर्शवर्ण कहते हैं । (पुं०) [√खर्व्+ड] सूर्य । (न०) आकाश । स्वर्ग । इन्द्रिय । नगर । खेत । शून्य । अनुस्वार । रन्ध्र । शरीर के छेद या निकास यथा मुँह, कान, आँखें, नथुने, गुदा और इन्द्रिय । घाव । आनन्द । अभ्रक । क्रिया । ज्ञान । ब्राह्मण ।—**अट**-(पुं०) [श्रेष्ठ] ग्रह । राहु ।—**आपगा** (**खापगा**)—(स्त्री०) गङ्गा का नाम ।—**उल्क** (**खोल्क**); (पुं०) धूमकेतु । ग्रह ।—**उल्मुक** (**खोल्मुक**)-(पुं०) मङ्गल-ग्रह ।—**कामिनी**-(स्त्री०)दुर्गा ।—**कुन्तल**-(पुं०) शिव ।—**ग**-(पुं०) चिड़िया, पक्षी । पवन । सूर्य । ग्रह । टिड्डा । देवता । बाण, तीर ।—०**अधिप** (**खगाधिप**)- (पुं०) गरुड़ ।—०**अन्तक** (**खगान्तक**)-(पुं०) बाज । गीध ।—०**अभिराम** (**खगाभिराम**) -(पुं०) शिव ।—० **आसन** (**खगासन**)-(पुं०) उदयाचलपर्वत । विष्णु ।—०**इन्द्र** (**खगेन्द्र**),—०**ईश्वर** (**खगेश्वर**)-(पुं०) गरुड़ ।—०**वती**- [खग+मतुप्, वत्व, ङीप्](स्त्री०) पृथिवी ।—०**स्थान**-(न०) वृक्ष का कोटर या खोड़र । घोंसला ।—**गङ्गा**-(स्त्री०) आकाश गङ्गा ।—**गति**-(स्त्री०) उड़ान ।—**गम**- (पुं०) पक्षी ।—**गोल**- (पुं०) आकाशमण्डल ।—०**विद्या**-(स्त्री०) ज्योतिर्विद्या ।—**चमस**-(पुं०) चन्द्रमा ।—**चर**- (पुं०) (इसके **खचर**, और **खेचर**, दो रूप होते हैं) पक्षी । सूर्य । बादल । हवा; 'खचरस्य सुतस्य सुतः खचरः' महा०। राक्षस ।—**चरी** (**खचरी**,-**खेचरी**)- (स्त्री०) उड़ने वाली अप्सरा । दुर्गादेवी की उपाधि ।—**जल**-(न०) ओस । वर्षा का जल । कोहरा । कुहासा ।—**ज्योतिस्**-(पुं०) जुगनू ।—**तमाल**-(पुं०) बादल । धूआँ ।—**द्योत**-(पुं०) जुगनू;

'खद्योतालीविलसितनिभां विद्युदुन्मेषदृष्टिं' मे० ८१ । सूर्य ।—**द्योतन**-(पुं०) सूर्य ।—**धूप**-(पुं०) अग्निबाण ।—**पराग**-(पुं०) अन्धकार ।—**पुष्प**-(न०) आकाश का फूल (इस शब्द का प्रयोग उस समय किया जाता है, जब असम्भवता दिखलानी होती है)—निम्न श्लोक में चार असम्भवताएँ प्रदर्शित की गई हैं—'मृगतृष्णाम्भसि स्नातः शशशृङ्गधनुर्धरः । एष वन्ध्यासुतो याति खपुष्पकृतशेखरः ॥' —सुभाषित ।—**भ**-(न०)ग्रह ।—**भ्रान्ति**-(पुं०) चील ।—**मणि**-(पुं०) सूर्य ।—**मीलन**-(न०) तंद्रा, ऊँघाई ।—**मूर्ति**-(पुं०) शिव ।—**वारि**-(न०) वृष्टिजल । ओस ।—**बाष्प**-(पुं०) ओस । कुहरा, कुहासा ।—**शय** या **खेशय**-(वि०) आकाश में सोने वाला या रहने वाला ।—**श्वास**-(पुं०) हवा, पवन ।—**समुत्थ**, —**सम्भव**-(वि०) आकाशोत्पन्न ।—**सिन्धु**-(पुं०) चन्द्रमा ।—**स्तनी**-(स्त्री०) धरती, जमीन ।—**स्फटिक**-(न०) सूर्यकान्त या चन्द्रकान्त मणि ।—**हर**-(वि०) जिसका भाजक शून्य हो ।

√**खक्ख्**—भ्वा० पर० अक० हँसना । खक्खति, खक्खिष्यति, अखक्खीत् ।

खक्खट—(वि०) [√खक्ख्+अटन्] सख्त, ठोस । (पुं०) खड़िया मिट्टी ।

खक्कुर—(पुं०) [ख√कु+खच्, मुम्] अलक, लट ।

√**खच्**—चु० उभ० सक० बाँधना । जड़ना । लपेटना । खचयति-ते, खचयिष्यति-ते, अचखचत्-त । क्र्या० पर० अक० प्रकट होना, सामने आना । पुनर्जन्म होना । सक० पवित्र करना । खच्नाति, खचिष्यति, अखचीत्—अखाचीत् ।

खचित—(वि०) [√खच्+क्त] जड़ा हुआ । पंक्तिः; 'शकुन्तनीडखचितं बिभ्रज्जटामण्डलं' श० ७-११ । आबद्ध ।

√**खज्**—भ्वा० पर० सक० मथना । खजति, खजिष्यति, अखजीत्—अखाजीत् ।

खज, खजक-(पुं०) [√खज्+अच्] [खज+कन्] मथानी, मथने की लकड़ी विशेष ।

खजप—(न०) [√खज्+कपन्] घी, घृत ।

खजाक—(पुं०) [√खज्+आक] पक्षी, चिड़िया ।

खजाजिका—(स्त्री०) [√खज्+अ—टाप्, खजा—√अज्+घञ्, खजायै आजो यस्याः, ब० स०, ङीप्+कन्—टाप्, ह्रस्व] कलछी, चमचा ।

√**खञ्ज्**—भ्वा० पर० अक० लँगड़ा कर चलना । खञ्जति, खञ्जिष्यति, अखञ्जीत् ।

खञ्ज—(वि०) [√खञ्ज्+अच्] लँगड़ा ।—**खेट**,—**खेल**-(पुं०) खेल । खंजन पक्षी ।

खञ्जन—(पुं०) [√खञ्ज्+ल्यु] एक प्रसिद्ध छोटी चिड़िया, खंडरिच । (न०) [√खञ्ज्+ल्युट्] लँगड़ी चाल ।

खञ्जना, खञ्जनिका-(स्त्री०) [खञ्जन+आच्+क्विप्—टाप्] [खञ्जन+ठन्—टाप्] खंजन की शक्ल की एक चिड़िया । सर्षप ।

खञ्जरीट, खञ्जरीटक-(पुं०) [खञ्ज√ऋ+कीटन्][खञ्जरीट+कन्]खंजन पक्षी ।

√**खट्**—भ्वा० पर० सक० चाहना । खटति, खटिष्यति, अखटीत्—अखाटीत् ।

खट—(पुं०) [√खट्+अच्] कफ । अंधा कूप । टाँकी । हल । घास ।—**कटाहक**-(पुं०) पीकदान ।—**खादक**-(पुं०) गीदड़, शृगाल । काक, कौआ । जन्तु । शीशे का पात्र ।

खटक—(पुं०) [√खट+वुन्] सगाई कराने का धंधा करने वाला । अधमुँदा हाथ ।—**आमुख** (**खटकामुख**)- (न०) बाण चलाने में हाथ की एक मुद्रा ।

खटिका—(स्त्री०) [√खट्+अच्+कन्—

टाप्, इत्व] खड़िया। कान की बाहरी भाग।

खटिनी, खटी—(स्त्री०) [√खट्+इनि–ङीप्] [√खट्+अच्+ङीप्] खड़ी, खड़िया मिट्टी।

√**खट्ट्**—चु० उभ० सक० घेरना। खट्टयति–ते, खट्टयिष्यति–ते, अचखट्टत्–त।

खट्टन—(वि०) [√खट्ट् +ल्यु] बौने आकार का। (पु०) बौना, नाटाकार मनुष्य।

खट्टा—(स्त्री०) [√खट्ट् + अच्–टाप्] खाट, चारपाई। एक प्रकार की घास।

खट्टि—(पु०, स्त्री०) [√खट्ट् +इन्] अर्थी, विमान।

खट्टिक—(पु०) [√खट्ट् +अच्+ठन्] चिड़ीमार, बहेलिया। कसाई।

खट्टेरक—(वि०) [√खट्ट् +एरक] ठिगना, नाटाकार।

खट्वा—(स्त्री०) [√खट्+क्वन्] खाट, चारपाई। हिंडोला, झूला।—**अङ्ग** (**खट्वाङ्ग**)–(पु०) लकड़ी या डंडा जिसकी मूँठ में खोपड़ी जड़ी हो, यह शिव का हथियार समझा जाता है और उनके अनुयायी गुसाँई साधु उसे अपने पास रखते हैं। दिलीप राजा का दूसरा नाम।—०**धर** (**खट्वाङ्गधर**), —०**भृत्** (**खट्वाङ्गभृत्**)–(पु०) शिव की उपाधियाँ।—**आप्लुत** (**खट्वाप्लुत**), **आरूढ** (**खट्वारूढ**)–(वि०) नीच। दुष्ट। मूर्ख।

खट्वाका, खट्विका—(स्त्री०) [खट्वा +कन् –टाप्] [खट्वा+कन्–टाप्, इत्व] खटोला, छोटी खाट।

√**खड्**—चु० पर० सक० भेदन करना। खंडित करना। तोड़ना। खाडयति।

खड—(पु०) [√ खड् + अप्] घास, फूस। पयाल। (पु०) आयुर्वेद में बताया हुआ एक तरह का पन्ना। खट्टा-माट्ठा।

खडिका, खडी—(स्त्री०) [√खड्+अच् –ङीप्+कन्, ह्रस्व] [√खड्+अच्–ङीप्] खड़िया मिट्टी।

खड्ग—(न०) [√खड्+गन्] लोहा। (पु०) तलवार। गैंड़े का सींग। गैंड़ा।—**आघात** (**खड्गाघात**)–(पु०) तलवार का घाव।— **आधार** (**खड्गाधार**)– (पु०) म्यान, परतला।—**आमिष** (**खड्गामिष**) –(न०) गैंड़े का मांस।—**आह्व** (**खड्गाह्व**) –(पु०) गैंडा।—**कोश**– (पु०) म्यान, परतला।—**धर**–(पु०) तलवार चलाने वाला योद्धा।—**धेनु**, — **धेनुका**- (स्त्री०) छोटी तलवार। गैंड़े की मादा।—**पत्र**- (न०) तलवार की धार।—**पिधान**, —**पिधानक**–(न०) म्यान, परतला।—**पुत्रिका**–(स्त्री०) छुरी, चाकू। छोटी तलवार। —**प्रहार**–(पु०) तलवार का आघात। —**फल**–(न०) तलवार की धार।—**बन्ध**—(पु०) चित्रकाव्य का एक भेद जिसमें शब्द खड्ग की शकल में लिखे जाते हैं।

खड्गवत्—(वि०) [खड्ग+मतुप्, वत्व] तलवार से सज्जित।

खड्गिक—(पु०) [खड्ग+ठन्] तलवार से लड़ने वाला योद्धा, तलवारबंद सिपाही। कसाई, बूचड़।

खड्गिन्—(वि०) [खड्ग+इनि] [स्त्री० —**खड्गिनी**] तलवारबंद। (पु०) गैंडा।

खड्गीक—(न०) [खड्ग+ईक (बा०)] हँसिया, दराँती।

√**खण्ड्**—भ्वा० आत्म० सक० तोड़ना। काटना। चीरना, फाड़ना। चूर्ण कर डालना। भली भाँति हरा देना। नाश करना। हताश करना, विफल करना। गड़बड़ करना, उपद्रव मचाना। ठगना, धोखा देना खण्डते, खण्डिष्यते, अखण्डिष्ट।

खण्ड—(न०, पु०) [√खन्+ड] नक्व, दरार। टुकड़ा, भाग, हिस्सा, अंश;

'दिव: कान्तिमत्खण्डमेकं' मे० ३० । अध्याय, सर्ग । समूह, समुदाय, झुंड । (पुं०) खांड, चीनी । रत्न का दोष । (न०) एक प्रकार का नमक । एक प्रकार का गन्ना ।—अभ्र (खण्डाभ्र)-(न०) बिखरे हुए बादल । भोगविलास में दाँतों से काटने का निशान । —आली (खण्डाली)- (स्त्री०) [खण्ड—आ√ला+क—ङीष्] तेल का एक नाप । सरोवर या झील । स्त्री जिसका पति नमकहरामी के लिये अपराधी ठहराया गया हो ।—कथा-(स्त्री०) छोटी कहानी ।—काव्य-(न०) छोटा पद्यात्मक ग्रन्थ, जैसे मेघदूत । खण्डकाव्य की परिभाषा साहित्य-दर्पणकार ने यह दी है—'खण्डकाव्यं भवेत् काव्यस्यैकदेशानुसारि च' ।—ज-(पुं०) एक प्रकार की चीनी ।—धारा-(स्त्री०) कैंची, कतरनी ।—परशु-(पुं०) शिव । परशुराम ।—पर्शु- (पुं०) शिव । परशुराम । राहु । हाथी, जिसका एक दाँत टूटा हो ।—पाल-(पुं०) हलवाई ।—प्रलय-(पुं०) छोटा प्रलय जिसमें स्वर्ग के नीचे के समस्त लोक नष्ट हो जाते हैं ।—मोदक-(पुं०) बताशा ।—लवण-(न०) काला नमक ।—विकार (पुं०) खांड, चीनी ।—शर्करा-(स्त्री०) मिश्री ।—शीला-पुंश्चली स्त्री, छिनाल औरत ।

खण्डक—(पुं०, न०) [खण्ड+कन्] टुकड़ा, अंश, भाग । (पुं०) [खण्ड+क] शक्कर, खांड । (वि०) [√खण्ड्+ण्वुल्] खंडन करने वाला । काटने वाला ।

खण्डन—(न०) [√खण्ड्+ल्युट्] तोड़ना, टुकड़े-टुकड़े करना । काटना; 'घटय भुजबन्धनं जनय रदखण्डनम्' गीत० १० । हताश करना । बाधा डालना । धोखा देना । किसी की दलीलों को काट देना । विसर्जन, बरखास्तगी ।

खण्डल—(पुं०) [खण्ड+लच् नि० (स्वार्थे)] खण्ड, टुकड़ा । (वि०) [खण्ड√ला+क] खंड धारण करने वाला ।

खण्डशस्—(अव्य०) [खण्ड+शस्] खंड-खंड करके । कई खंडों में बाँटकर ।

खण्डित—(वि०) [√खण्ड्+क्त] कटा हुआ । टुकड़े-टुकड़े किया हुआ । नष्ट किया हुआ । (बहस में) हराया हुआ । विप्लव किया हुआ ।—विग्रह-(वि०) अंगहीन, अंगभंग ।—वृत्त-(वि०) असदाचारी, दुराचारी, भ्रष्ट ।

खण्डिता—(स्त्री०) [खण्डित+टाप्] वह स्त्री जिसका पति अन्यत्र रात बिताता हो । आठ मुख्य नायिकाओं में से एक ।

खण्डिनी—(स्त्री०) [खण्ड+इनि—ङीप्] पृथिवी ।

√ खद्—भ्वा० पर० अक० पक्का होना । सक० मारना । खदति, खदिष्यति, अखादीत्-अखदीत् ।

खदिर—(पुं०) [√खद्+किरच्] कत्थे का वृक्ष । इन्द्र । चन्द्रमा ।

खदिरी—(स्त्री०) [खदिर+ङीष्] लाजवंती । वराहक्रान्ता लता ।

√खन्—भ्वा० प० उभ० सक० खोदना । खनति—ते, खनिष्यति—ते, अखानीत्—अखनीत्—अखनिष्ट ।

खनक—(पुं०) [√खन्+वुन्] खोदने वाला । सेंध फोड़ने वाला । मूसा । खान ।

खनन—(न०) [√खन् + ल्युट्] खुदाई । गाड़ना ।

खनि, खनी—(स्त्री०) [√ खन्+इ] [खनि+ङीष्] खान ।

खनित्र—(न०) [√खन्+इत्र] फावड़ा, कुदाली । खंता ।

खपुर—(पुं०) [खं पिपर्ति उच्चतया, ख√पृ+क] सुपाड़ी का पेड़ ।

खर—(पुं०) [खं मुखबिलम् अतिशयेन अस्ति अस्य, ख+र, वा खम् इन्द्रियं राति, ख√रा+क] गधा । खच्चर । बगला । कौआ ।

राम के हाथों मारा गया एक राक्षस। साठ संवत्सरों में से २५ वाँ। कुरर पक्षी। (वि०) मृदु, श्लक्ष्ण द्रव का उलटा, कड़ा। तेज, तीक्ष्ण; 'देहि खरनयनशरघातं' गीत० १०। खट्टा। तीता। सघन, घना। हानिकारक। तेज धार वाला। गरम, उष्ण। निष्ठुर, नृशंस।—**अंशु** (**खरांशु**),—**कर**, —**रश्मि** —(पुं०) सूर्य।—**कुटी**-(स्त्री०) गधों का अस्तबल। नाई की दूकान।—**कोण**,—**क्वाण**-(पुं०) तीतर विशेष।—**कोमल**-(पुं०) ज्येष्ठमास।—**गृह**, —**गेह**-(न०) गधों के लिये अस्तबल।—**दण्ड**-(न०) कमल।—**ध्वंसिन्**-(पुं०) श्रीराम।—**नाद**-(पुं०) गधे का रेंकना।—**नाल**-(पुं०) कमल।—**पात्र**- (न०) लोहे का बर्तन। **पाल**-(पुं०) काठ का बर्तन।—**प्रिय**-(पुं०) कबूतर।—**यान**-(न०) गधे की गाड़ी यानी वह गाड़ी जिसमें गधे जुते हों।।—**शब्द**-(पुं०) गधे का रेंकना। समुद्री गिद्ध, मच्छड़।—**शाला**-(स्त्री०) गधों का अस्तबल।—**स्वरा**-(स्त्री०) जंगली चमेली।

खरिका—(स्त्री०) [ख√रा+क, ततः स्वार्थे कन्, टाप्, इत्व] पिसी हुई कस्तूरी।

खरिन्धम, खरिन्धय—(वि०) [खरी √ध्मा+खश्, धमादेश, मुम्, ह्रस्व] [खरी √धे+खश्, मुम्, ह्रस्व] गधी का दूध पीने वाला।

खरी—(स्त्री) [खर+ङीष्] गधी।—**जंघ**-(पुं०) शिव।—**वृष**-(पुं०) गधा। मूर्ख।

खरु—(वि०) [√खन्+कु, र आदेश] सफेद। मूर्ख, मूढ़। निर्दयी। वर्जित वस्तुओं का अभिलाषी। (पुं०) घोड़ा। दाँत। घमंड। कामदेव। शिव। (स्त्री०) वह लड़की जो अपना पति स्वयं पसंद करे।

खर्ज्—भ्वा० पर० सक० पीड़ा पहुँचाना। खरोंचना। पूजा करना। खर्जति, खर्जिष्यति, अखर्जीत्।

खर्जन—(न०) [खर्ज्+ल्युट्] खरोंचना, छीलना।

खर्जिका—(स्त्री०) [√खर्ज्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] उपदंश रोग, गरमी की बीमारी। पानेच्छा उत्पन्न करने वाला खाद्य पदार्थ गजक।

खर्जु—(स्त्री०) [√खर्ज्+उन्] खरोंचना, छीलन। खजूर का पेड़। धतूरे का झाड़।

खर्जुर—(न०) [√खर्ज्+उरच्] चाँदी। हरताल।

खर्जू—(स्त्री०) [√खर्ज्+ऊ] खाज, खुजली।

खर्जूर—(न०) [√खर्ज्+ऊर] चाँदी। हरताल। (पुं०) खजूर का वृक्ष। बिच्छू।

खर्जूरी—(स्त्री०) [खर्जूर+ङीष्] खजूर का पेड़।

खर्पर—(पुं०) [=कर्पर पृषो० कस्य खः] चोर। गुंडा। ठग। खप्पर, खोपड़ी। खपरा। छाता।

खर्परिका, खर्परी—(स्त्री०) [खर्पर+अच्—ङीप्+कन्—टाप्, ह्रस्व] [खर्पर-ङीष्] एक प्रकार का सुर्मा।

√खर्ब्, खर्व्—भ्वा० पर० सक० जाना। अक० अकड़ना। खर्ब(र्व)ति, खर्बि(र्वि)ष्यति, अखर्बी(र्वी)त्।

खर्ब, खर्व—(वि०) [√खर्ब् (र्व्)+अच्] विकलांग। बौना, ठिगना, कदाकार। छोटा (कद में)। (पुं०, न०) दस अरब की संख्या।—**शाख**-(वि०) ठिगना, कदाकार।

खर्वट—(पुं०, न०) [√खर्व्+अटन्] हाट, पैंठ। पहाड़ की तराई का ग्राम।

√खल्—भ्वा० पर० अक० हिलना, काँपना। सक० एकत्र करना, इकट्ठा करना। खलति, खलिष्यति, अखालीत्—अखलीत्।

खल—(पुं०) [√खल्+अच्] खलिहान।

जमीन, स्थल । स्थान, जगह । धूल का ढेर । तलछट, नीचे बैठा हुआ कीचड़ । (पु०) दुष्ट मनुष्य ।—उक्ति (खलोक्ति) (स्त्री०) गाली ।—धान्य–(न०) खलिहान ।—पू–(वि०) [खल√पू+क्विप्] खलिहान आदि को शुद्धि करने वाला ।—मूर्ति–(पु०) पारा ।—संसर्ग–(पु०) दुष्ट की संगति ।

खलक—(पु०) [ख√ला+क+कन्] घड़ा ।

खलति—(वि०) [स्खलन्ति केशा यस्मात्, √स्खल्+अतच्, नि० साधुः] गंजा ।

खलतिक—(पु०) [खलति√कै+क] पहाड़ ।

खलि—(पु०) [√खल्+इन्] तेल की तलछट, कीट, काइट, खरी ।

खलिन, खलीन—(पु०, न०) [खे अश्वमुखच्छिद्रे लीनम्, पृषो० वा ह्रस्व] लगाम, रास ।

खलिनी—(स्त्री०) [खल+इनि—ङीप्] खलिहानों का समूह ।

खलीकार—(पु०), **खलीकृति**–(स्त्री०) [खल+च्वि, ईत्व√कृ+घञ्] [खल+च्वि — √कृ+क्तिन्] चोटिल करना, घायल करना । बुरा व्यवहार करना । दुष्टता, उत्पात ।

खलु—(अव्य०) [√खल्+उन् (बा०)] निश्चय, वास्तविकता, और यथार्थताबोधक अव्यय । मिन्नत, आर्जू, प्रार्थना, विनय । अनुसंधान । वर्जन, मनाही, निषेध । हेतु । (कभी-कभी यह वाक्यालङ्कार की तरह भी व्यवहार में लाया जाता है) ।

खलुज्—(पुं०) [खम् इन्द्रियं लुञ्चति हन्ति, ख√लुञ्च्+क्विप्] अँधियारा, अँधेरा ।

खलूरिका—(स्त्री०) परेड, मैदान जहाँ सैनिक लोग कवायद करें तथा अस्त्रप्रयोग का अभ्यास करें ।

खल्या—(स्त्री०) [खल+यत्—टाप्] खलिहानों का समूह ।

खल्ल—(पुं०) [√खल्+क्विप् तं लाति, खल् √ला+क] खरल जिसमें डाल कर कोई वस्तु कूटी जाय, चक्की । गड्ढ, गढ़ा । चमड़ा । चातक पक्षी । मशक ।

खल्लिका—(स्त्री०) [खल्ल+कन्—टाप्, इत्व] कड़ाही ।

खल्लिट, खल्लीट—(वि०) [खल्+क्विप्+इन्, खल्लि √टल्+ड] [खल्लि+ङीष् खल्ली√टल्+ड] गंजा ।

खल्वाट—(वि०) [√खल्+क्विप् तं वटते वेष्टयते, √वट्+अण्, उप० स०] गंजा ।

खश—(पु०) उत्तर भारत में एक पहाड़ी देश और उस देश के अधिवासी ।

खशीर—(पुं०) देश विशेष और उसके अधिवासी ।

खष्प—(पुं०) [√खन्+प, नि० नस्य षः] कोप । निष्ठुरता, नृशंसता ।

खस—(पुं०) [खानि इन्द्रियाणि स्यति निश्चलीकरोति, ख√सो+क] खाज, खुजली । देश विशेष ।

खसूचि—(पु०, स्त्री०) [ख √सूच्+इ] जो (पूछा जाने पर प्रश्न को भुलवाने के लिये) आकाश की ओर इंगित करता है । निन्दाव्यञ्जक शब्द, यथा "वैयाकरणखसूचिः"- वैयाकरण जो व्याकरण को भूल गया हो । व्याकरण को भली भाँति न जानने वाला ।

खस्खस—(पुं०) [खस प्रकारे द्वित्वम्, पृषो० अकारलोपः] पोस्ते के दाने ।—रस–(पुं०) अफीम, अहिफेन ।

खाजिक—(पुं०) [खे ऊर्ध्वदेशे आजः क्षेपः तत्र साधुः, खाज+ठन्] भुना हुआ अनाज ।

खाट, खात्—(अव्य०) गला साफ करते समय का शब्द, खखार ।

खाट्—(पु०), —**खाटा**, —**खाटिका**—**खाटी**—(स्त्री०) [खे ऊर्ध्वमार्गे अटत्यनेन, ख√अट्+घञ्] [खाट+टाप्] [खाट+कन्—टाप्, इत्व] [खाट+ङीष्] अर्थी, टिकटी, जिस पर रखकर मुर्दे को श्मशान में ले जाते हैं ।

खाण्डव—(पुं०) [खण्ड+अण्—खाण्ड √ला+क]मिश्री, कन्द । (न०) इन्द्र के एक वन का नाम जो कुरुक्षेत्र के समीप था और जिसे अर्जुन और श्रीकृष्ण की सहायता से अग्निदेव ने भस्म किया था ।—**प्रस्थ**–(पुं०) एक नगर का नाम ।

खाण्डविक, खाण्डिक—(पुं०) [खाण्डव +ठञ्] [खण्ड+ठञ्] हलवाई ।

खात—(वि०) [√खन्+क्त] खुदा हुआ । फटा हुआ । टूटा, फूटा । (न०) गढ़ा, गर्त । रन्ध्र, सूराख, छेद । खनन, खुदाई । तालाब जो लंबा अधिक और चौड़ा कम हो ।—**भू**–(स्त्री०) नगर के या किले के चारों ओर जल से भरी खाई ।

खातक—(पुं०) [खात इव कायति, खात √कै+क] कर्ज़ुआ, कर्ज़दार । (न०) [खात+कन्] खाई, गढ़ा, गर्त ।

खाता—(स्त्री०) [खात+टाप्] कृत्रिम तालाब ।

खाति—(स्त्री०) [खन्+क्तिन्] खुदाई ।

खात्र—(न०) [√खन्+ष्ट्रन्, कित्] फावड़ा, कुदाली । लंबा अधिक और चौड़ा कम तालाब । डोरा । वन, जंगल । भय ।

√**खाद्**—भ्वा० पर० सक० खाना, भक्षण करना । शिकार करना । काटना । खादति, खादिष्यति, अखादीत् ।

खादक—(वि०) [√खाद्+ण्वुल्] [स्त्री० —**खादिका**] खाने वाला, निपटाने वाला । (पुं०) कर्ज़दार, ऋणी ।

खादन—(न०) [√खाद्+ल्युट्] खाना, चबाना । भोज्य पदार्थ । (पुं०) दाँत, दन्त ।

खादिर—(वि०) [खदिर+अञ्] [स्त्री० **खादिरी**—] खदिर यानी कत्थे के वृक्ष से बना हुआ या इस वृक्ष सम्बन्धी ।

खादुक—(वि०) [√खाद्+उन्+कन्] [स्त्री०—**खादुकी**] उत्पाती, उपद्रवी ।

खाद्य—(न०) [√खाद्+ण्यत्] भोज्य-पदार्थ, खाना ।

खान—(न०) खुदाई । चोट ।—**उदक** (**खानोदक**)–(पुं०) नारियल का वृक्ष ।

खानक—(वि०) [√ खन्+ण्वुल्] [स्त्री० —**खानिका**] खोदने वाला । खान खोदने वाला । (पुं०) बेलदार ।

खानि—(स्त्री०) [खनिरेव पृषो० वृद्धिः] खान ।

खानिक—(न०) [खान+ठन्] दीवार में किया हुआ छेद, दरार । सेंध ।

खानिल—(पुं०) [खान+इलच् (बा०)] घर में सेंध लगाने वाला चोर ।

खार—(पुं०), **खारि, खारी**–(स्त्री०) [खम् आकाशम् आधिक्येन ऋच्छति, ख√ऋ+ अण्] [ख–आ√रा+क–ङीष्, वा ह्रस्वः] १२ मन ३२ सेर की एक तौल ।

खार्वा—(स्त्री०) त्रेता युग ।

खिङ्खिर—(पुं०) [खिम् इत्यव्यक्तशब्द किरति, खिम् √कॄ+क, पृषो० साधुः] लोमड़ी । खाट का पाया । एक गन्धद्रव्य ।

√**खिट्**—भ्वा० पर० सक० डरना । खेटति, खेटिष्यति, अखेटीत् ।

√**खिद्**—दि० आत्म० अक० दीन होना । खिद्यते, खेत्स्यते, अखित्त । रु० आत्म० अक० दुःखी होना । खिन्ते, खेत्स्यते, अखित्त । तु० पर० सक० दुःख देना, खिन्दति, खेत्स्यति, अखैत्सीत् ।

खिदिर—(पुं०) [√खिद्+किरच्] तपस्वी, फकीर । मोहताज, भिखमंगा । चन्द्रमा ।

खिन्न—(वि०) [√खिद्+क्त] सन्तप्त, उदास, दुःखी, पीड़ित; 'खिन्नः खिन्नः शिख-रिषु पदं न्यस्य गन्तासि यत्र' मे० १३ ।

√**खिल्**—तु० पर० सक० बीनना । खिलति, खेलिष्यति, अखेलीत् ।

खिल—(न०, पुं०) [√खिल्+क] बंजर जमीन का टुकड़ा, मरु-भूमि का एक खण्ड ।

अतिरिक्त भजन जो मूलभजनसंग्रह में न पाया हो। त्रुटिपूरक, परिशिष्ट भाग। संग्रह। शून्यता, खोखलापन ।

√खु—भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना, खवते, खोष्यते, अखोष्ट ।

खुङ्गाह—(पुं०) [खुम् इत्यव्यक्तशब्दं कृत्वा गाहते, खुम्√गाह्+अच्] काला टट्टू या घोड़ा ।

√खुज्—भ्वा० पर० सक० चुराना। खोजति, खोजिष्यति, अखोजीत् ।

√खुड्—चु० उभ० सक० फाड़ना । खंड-खंड करना, खोडयति—ते, खोडयिष्यति—ते, अचुखोडत्—त ।

√खुर्—तु० पर० सक० काटना, खुरति, खोरिष्यति, अखोरीत् ।

खुर—(पुं०) [√खुर्+क] (गाय आदि का) खुर। एक सुगन्ध द्रव्य। छुरा, उस्तुरा। खाट का पाया।—**आघात** (**खुराघात**),—**क्षेप**-(पुं०) खुर का आघात। टाप से मारना। —**नस्**,—**नस**-(वि०) [ब० स०, नासिकायाः नसादेशः, वा अन्त्यलोपः] चपटी नाक वाला। —**पदवी**-(स्त्री०) घोड़े के पैरों के चिह्न। —**प्र**-(पुं०) तीर जिसकी नोक या फल अर्द्धचन्द्राकार हो।

खुरली—(स्त्री०) [खुरैः सह लाति पौनःपुन्येन यत्र, खुर√ला+क—ङीप्] सैनिक कवायद या अस्त्र-चालन का अभ्यास ।

खुराक—(पुं०) [√खुर्+आकन्] पशु।

खुरालक—(पुं०) [खुर इव अलति पर्याप्नोति, खुर√अल्+ण्वुल्] लोहे का तीर ।

खुरालिक—(पुं०) [खुरालि, ष० त०, खुराणाम् आलिभिः कायति प्रकाशते, खुरालि √कै+क] छुरा रखने का म्यान या केस। लोहे का तीर । तकिया ।

खुल्ल—(वि०) [=क्षुल्ल, पृषो० साधुः] छोटा, कम, नीच, थोड़ा ।—**तात**-(पुं०) पिता का छोटा भाई, छोटा चाचा ।

खेट—(पुं०) [√खिट्+अच्] गाँव । कफ। देवतादि का आयुधरूप मूसल। घोड़ा।

खेटितान, खेटिताल—(पुं०) [√खिट्+इन्, खेटिः तानोऽस्य, ब० स०] [खेटिः तालोऽस्य, ब० स०] वैतालिक जो अपने मालिक को गा-बजा कर जगावे ।

खेटिन्—(पुं०) [√खिट्+णिनि] नागर। कामुक ।

खेद—(पुं०) [√खिद्+घञ्] उदासी । शिथिलता । थकावट; 'अध्वखेदं नयेथाः' मे० ३२ । पीड़ा, शोक ।

खेय—(न०) [√खन्+क्यप्, इकारादेश] गड्ढा, खाई । (पुं०) पुल ।

√खेल्—भ्वा० पर० सक० हिलाना । अक० इधर-उधर घूमना। काँपना। खेलना। खेलति, खेलिष्यति, अखेलीत् ।

खेल—(वि०) [√खेल्+अच्] खिलाड़ी । कामी, कामुक ।

खेलन—(न०) [√खेल्+ल्युट्] हिलाना-डुलाना । खेल, क्रीड़ा । अभिनय ।

खेला—(स्त्री०) [√खेल्+अ—टाप्] क्रीड़ा, खेल ।

खेलि—(स्त्री०) [खे आकाशे अलति पर्याप्नोति, खे√अल्+इन्] क्रीड़ा, खेल । तीर ।

√खेव्—भ्वा० आत्म० सक० सेवा करना । खेवते, खेविष्यते, अखेविष्ट ।

√खै—भ्वा० पर० अक० स्थिर होना। सक० हिंसा करना । खाना । खायति, खास्यति, अखासीत् ।

√खोट्—चु० पर० सक० खाना। खोटयति—ते, खोटयिष्यति—ते, अचुखोटत्—त ।

खोटि—(स्त्री०) [√खोट्+इन्] चालाक या नटखट स्त्री ।

√खोड्—भ्वा० पर० अक० गति में रुकावट पड़ना। खोडति, खोडिष्यति, अखोडीत् ।

खोड—(वि०) [√खोड्+अच्] लँगड़ा । लूला ।

√खोर् (ऋ)—भ्वा० पर० अक० गति-भंग होना। खोरति, खोरिष्यति, अखोरीत्।

खोर, खोल—(वि०) [√खोर् (ऋ)+अच्] लँगड़ा। लूला।

खोलक—(पुं०) [खोल+कन्] पुरवा, गाँव। बाँबी। सुपाड़ी का छिलका। डेगची विशेष।

खोलि—(पुं०) [√खोल्+इन्] तरकस।

खोल्क—(पुं०) जलती हुई लकड़ी।

√ख्या—अ० पर० सक० कहना। वर्णन करना; 'ते रामाय वधोपायमाचख्युः विबुधद्विषः' र० १५.५। ख्याति, ख्यास्यति, अख्यत्।

ख्यात—(वि०) [√ख्या+क्त] जाना हुआ। उक्त, कहा हुआ। प्रसिद्ध, मशहूर।—गर्हण—(वि०) बदनाम।

ख्याति—(स्त्री०) [√ख्या+क्तिन्] प्रसिद्धि, शोहरत, गौरव, कीर्ति, संज्ञा, पदवी, उपाधि। वर्णन। प्रशंसा। (दर्शन में) ज्ञान।

ख्यापक—(वि०) [√ख्या+णिच्+ण्वुल्] प्रसिद्ध करने वाला।

ख्यापन—(न०) [√ख्या+णिच्+ल्युट्] वर्णन। प्रकाशन, व्यक्तकरण, प्रकट करना। प्रसिद्ध करना, कीर्ति फैलाना।

ग

ग—[√गै+क] संस्कृत या नागरी वर्णमाला का तीसरा व्यञ्जन, कवर्ग का तीसरा वर्ण, इसका उच्चारणस्थान कण्ठ है। इसको स्पर्श-वर्ण कहते हैं। (वि०) केवल समास में पीछे आता है और वहाँ इसका अर्थ होता है कौन, कौन जाता है, हिलने वाला, जाने वाला, ठहरने वाला, रहने वाला, मैथुन करने वाला। (न०) गीत, भजन। (पुं०) गन्धर्व। गणेश। छन्दःशास्त्र में गुरु अक्षर के लिये चिह्न।

गगन, गगण—(न०) [√गच्छति, अस्मिन्, √गम्+ल्युट्, ग आदेश] (किसी-किसी के मतानुसार गगणम् रूप अशुद्ध है।—'फाल्गुने गगने फेने णत्वमिच्छन्ति बर्बराः।'—अर्थात् फाल्गुन, गगन और फेन शब्दों में जङ्गली लोग न की जगह ण लगाते हैं)। आकाश, अन्तरिक्ष; 'सोऽयं चन्द्रः पतति गगनात्' श० ४। शून्य, सिफर। स्वर्ग।—अग्र (गगनाग्र)—(न०) सब से ऊँचा ऊर्ध्वलोक।—अङ्गना (गगनाङ्गना)—(स्त्री०) अप्सरा, परी, किन्नरी।—अध्वग (गगनाध्वग)—(पुं०) सूर्य। ग्रह। स्वर्गीय जीव।—अम्बु (गगनाम्बु)—(न०) वृष्टि-जल।—उल्मुक (गगनोल्मुक)—(पुं०) मङ्गलग्रह।—कुसुम, पुष्प (न०) आकाश का फूल (असम्भाव्य वस्तु)।—गति—(पुं०) देवता। स्वर्गीय जीव। ग्रह।—चर (गगनेचर भी) (वि०) आकाश में चलने वाला। (पुं०) पक्षी। ग्रह। स्वर्गीय आत्मा।—ध्वज—(पुं०) सूर्य। बादल।—सद्—(पुं०) आकाशवासी या अन्तरिक्ष में बसने वाला। (पुं०) स्वर्गीय जीव।—सिन्धु—(स्त्री) गङ्गा की उपाधि।—स्थ, —स्थित—(वि०) आकाश में टिका हुआ।—स्पर्शन—(पुं०) पवन, हवा। अष्ट मरुतों में से एक का नाम।

गङ्गा—(स्त्री०) [गम्यते ब्रह्मपदमनया गच्छतीति वा, √गम्+गन्—टाप्] भारतवर्ष की पुण्यतोया प्रसिद्ध नदी।—अम्बु (गङ्गाम्बु), —अम्भस् (गङ्गाम्भस्)—(न०) गङ्गाजल। आश्विन मास की वृष्टि का निर्मल जल।—अवतार (गङ्गावतार)—(पुं०) गङ्गा का भूलोक में आगमन। तीर्थस्थल विशेष।—उद्भेद (गङ्गोद्भेद)—(पुं०) गङ्गा के निकलने का स्थान, गङ्गोत्री।—क्षेत्र—(न०) गङ्गा और उसके दोनों तटों से दो-दो कोस का स्थान।—ज—(पुं०) कार्तिकेय।—दत्त—(पुं०) भीष्मपितामह।—द्वार—(न०) वह स्थान जहाँ गङ्गा पहाड़ छोड़ मैदान में आती

है, हरिद्वार।—धर–(पुं०) शिव। समुद्र।—पुत्र–(पुं०) भीष्म। कार्तिकेय। एक वर्णसङ्कर जाति। इस जाति के लोग मुर्दे ढोया करते हैं। गङ्गा के घाटों पर बैठ कर यात्रियों से पुजवाने वाला ब्राह्मण, घाटिया।—भृत्–(पुं०) शिव। समुद्र।—यात्रा–(स्त्री०) गङ्गा को जाना। मरणासन्न पुरुष को मरने के लिये गङ्गातट पर ले जाना।—सागर–(पुं०) वह स्थान जहाँ गङ्गा समुद्र में गिरती है।—सुत–(पुं०) भीष्म। कार्तिकेय।—ह्रद–(पुं०) एक तीर्थ का नाम।

गङ्गका, गङ्गाका, गङ्गिका—(स्त्री०) [गङ्गा+कन्–टाप् वा ह्रस्वः] [गङ्गा+कन्–टाप्] [गङ्गा+कन्–टाप्, इत्व] श्री गङ्गा।

गङ्गोल—(पुं०) एक रत्न जिसे गोमेद भी कहते हैं।

गच्छ—(पुं०) [√गम्+श] वृक्ष। अङ्कगणित का पारिभाषिक शब्द विशेष।

√**गज्**—भ्वा० पर० अक० मद से शब्द करना। गरजना। गजति, गजिष्यति, अगाजीत्—अगजीत्।

गज—(पुं०) [√गज+अच्] हाथी; 'कथाचितौ विश्वगिरागजौ गजौ' कि० १.३६। आठ की संख्या। लंबाई नापने का माप विशेष जो दो हाथ का होता है।—'साधारणस्त्रगुणा विशदङ्गुलको गजः।' राक्षस जिसे शिव ने मारा था।—अग्रणी (गजाग्रणी)–(पुं०) सर्वोत्तम हाथी। ऐरावत की उपाधि।—अधिपति (गजाधिपति)–(पुं०) गजराज।—अध्यक्ष (गजाध्यक्ष)–(पुं०) हाथियों का दारोगा।—अपसद (गजापसद)–(पुं०) दुष्ट हाथी।—अशन (गजाशन)–(पुं०) पीपल। (न०) कमल की जड़।—अरि (गजारि)–(पुं०) सिंह। गज नामक राक्षस के मारने वाले शिव।—आजीव (गजाजीव)–(पुं०) महावत।—आनन (गजानन),—आस्य (गजास्य)–(पुं०) गणेश।—आयुर्वेद (गजायुर्वेद)–(पुं०) हाथियों की चिकित्सा का शास्त्र।—आरोह (गजारोह)–(पुं०) महावत।—आह्व (गजाह्व),—आह्वय (गजाह्वय)–(न०) हस्तिनापुर नगर का नाम।—इन्द्र (गजेन्द्र)–(पुं०) गजराज। ऐरावत।—०कर्ण (गजेन्द्रकर्ण)–(पुं०) शिव।—कूर्माशिन्–(पुं०) गरुड़।—गति–(स्त्री०) हाथी जैसी चाल। मदमाती चाल। गजगामिनी स्त्री।—गामिनी–(स्त्री०) हाथी जैसी चाल से चलनेवाली स्त्री।—दन्त–(पुं०) हाथी का दाँत। गणेश। कपड़े टाँगने के लिये दीवार में गाड़ी हुई खूँटी। एक तरह का घोड़ा। दाँत पर निकला हुआ दाँत। नृत्य का एक भाव।—दन्तमय–(वि०) हाथी दाँत का बना हुआ।—दान–(न०) हाथी का मद। हाथी का दान।—नासा–(स्त्री०) हाथी की सूँड़।—पति–(पुं०) हाथी का स्वामी। बड़ा ऊँचा गजराज। सर्वोत्तम हाथी।—पुङ्गव–(पुं०) गजराज।—पुट—(पुं०) जमीन में एक छोटा-सा गड्ढा जिसमें आग सुलगाकर धातुओं को फूँका जाता है।—पुर (न०) हस्तिनापुर नगर।—बंधनी,—बंधिनी–(स्त्री०) गजशाला।—भक्षक–(पुं०) अश्वत्थ वृक्ष।—मण्डन–(न०) हाथी के माथे पर बनाई हुई रङ्ग-बिरङ्गी रेखाएँ। हाथी का शृंगार।—मण्डलिका,—मण्डली–(स्त्री०) हाथियों की मण्डली।—माचल–(पुं०) सिंह।—मुक्ता–(स्त्री०),—मौक्तिक–(न०) गज के मस्तक से निकलने वाला मोती।—मुख,—वक्त्र—वदन–(पुं०) गणेश।—मोटन–(पुं०) सिंह, शेर।—यूथ–(न०) हाथियों का झुंड।—योधिन्–(वि०) हाथी की पीठ पर बैठकर लड़ने वाला।—राज–(पुं०) हाथियों में सर्वोत्कृष्ट हाथी।—व्रज–(पुं०) हाथियों की एक टोली।—साह्वय–(न०)

हस्तिनापुर ।—स्नान-(न०) हाथी का स्नान । (आलं०) व्यर्थ का काम, जिस प्रकार हाथी स्नान कर पुनः सूंड़ से सूखी मिट्टी अपने ऊपर डाल कर स्नान व्यर्थ कर डालता है उसी प्रकार कोई काम करके पुनः वह खराब कर डाला जाय, तो उस कार्य को गजस्नान-वत् कार्य कहते हैं ।

गजता—(स्त्री०) [गज+तल्] हाथियों का समूह ।

गजदघ्न, गजद्वयस—(वि०) [गज+दघ्नच्] [गज+द्वयसच्]हाथी जितना (लंबा या ऊंचा ।

गजवत्—(अव्य०) [गज+वति] हाथी की तरह । (वि०) [गज+मतुप्] हाथी रखनेवाला ।

√गञ्ज्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना । गञ्जति, गञ्जिष्यति, अगञ्जीत् ।

गञ्ज—(पु०)[√गञ्ज्+घञ्]खान।खजाना। गोशाला । मण्डी, अनाज की मण्डी । अवज्ञा, तिरस्कार ।—**जा**-(स्त्री०)झोपड़ी, मड़ैया । मदिरा की दूकान । मदिरापात्र ।

गञ्जन—(वि०) [√ गञ्ज् + णिच्+ ल्यु] अत्यधिक घृणित । लज्जित किया हुआ । विजयी; "स्वलकमलगञ्जनं मम हृदयरञ्जनं" गीत० १० ।

गञ्जा—(स्त्री०) [गञ्ज+टाप्] झोपड़ी । कलारी, शराब की दूकान । पानपात्र ।

गञ्जिका—(स्त्री०) [गञ्जा+कन्—टाप् इत्व] कलारी, शराब की दूकान ।

√गड्—भ्वा० पर० सक० चुआना । सींचना । गडति, गडिष्यति, अगाडीत्—अगडीत् ।

गड—(पु०) [√गड्+अच्] पर्दा । हाता । खाई । रोकथाम, अटकाव । सुनहले रङ्ग की मछली ।—**उत्थ**, (**गडोत्थ**),—**देशज**,—**लवण**-(न०) सेंधा नमक ।

गडयन्त, गडयित्नु—(पु०) [√ गड्+ णिच्+झच्] [√गड्+णिच्+इत्नुच्] बादल, मेघ ।

गडि—(न०) [√गड्+इन्] बछड़ा । सुस्त बैल ।

गडु—(वि०)[√गड्+ उन्] कुबड़ा ।(पु०) कूबड़ । बर्छी, भाला, साँग । निरर्थक वस्तु ।

गडुक—(पु०) [गडु √कै +क] झारी, लोटा, जलपात्र । अंगूठी ।

गडुर, गडुल—(वि०) [गडु+र, पक्षे आ० लस्य र:] कुबड़ा, झुका हुआ ।

गडेर—(पु०) [√गड्+एरक्] बादल, मेघ ।

गडोल—(पु०) [√गड्+ओलच्] मुँह भर । कच्ची खांड़ ।

गड्डर, गड्डुल—(पु०) [√गड्+डर वा डल] भेड़, मेष ।

गड्डरिका—(स्त्री०) [गड्डर+ठन्] भेड़ों की कतार । अविच्छिन्न धारा ।—**प्रवाह**-(पु०) भेड़ियाधसान, अंधानुकरण ।

गड्डुक—(पु०) [गडुक, पृषो० साधुः] सोने का गडुआ या पात्र विशेष ।

√ गण्—चु० उभ० सक० गिनना, गणना करना । जोड़ना, हिसाब लगाना । तखमीना करना, अन्दाजा लगाना । श्रेणीवार रखना । खयाल करना । लगाना । (दोष) । ध्यान देना । गणयति—ते, गणयिष्यति—ते, अजीगणत्—त, —अजगणत्—त ।

गण—(पु०) [√गण्+अच्] झुण्ड, गिरोह, समूह, ठेक, टोली, दल । श्रेणी, कक्षा । नौकरों की टोली । शिव के गण । एक उद्देश्य के लिये बनी हुई मनुष्यों की संस्था । एक सम्प्रदाय । सैनिकों की एक छोटी टोली । संख्या । ज्योतिष के अनुसार नक्षत्रों के गण; यथा—देवतागण, मनुष्यगण, राक्षसगण । छन्द शास्त्र के तीन वर्णों के आठ समूह; यथा—मगण, यगण आदि । व्याकरण में धातुओं के दस गण; यथा—भ्वादि, अदादि, जुहोत्यादि आदि । गणेश का नाम ।

—**अग्रणी (गणाग्रणी)**–(पुं०) गणेश ।—**अचल (गणाचल)**–(पुं०) कैलास पर्वत का नाम ।—**अधिप (गणाधिप)**, —**अधिपति (गणाधिपति)**–(पुं०) शिव । गणेश । सेनापति । मुख । मुखप या मुखपति ।—**अन्न (गणान्न)**– (न०) कई आदमियों के खाने योग्य बनाया हुआ भोज्य पदार्थ ।—**अभ्यन्तर (गणाभ्यन्तर)**–(वि०) दल या समुदाय में से एक । (पुं०) किसी धार्मिक संस्था का नेता या मुखिया ।—**ईश (गणेश)**–(पुं०) पार्वतीनन्दन, गिरिजा के पुत्र गणेश ।—**ईशान (गणेशान)**,—**ईश्वर (गणेश्वर)** –(पुं०) गणेश । शिव ।— **उत्साह(गणोत्साह)**–(पुं०) गैंडा ।—**कार**–(पुं०) श्रेणीबद्ध करने वाला । भीम की उपाधि ।—**चक्रक**–(न०) धर्मात्माओं की पंक्ति या ज्योनार ।—**देवता**–(पुं०) देव-समूह । अमरकोशकार ने इनकी गणना यह बतलायी है:—'आदित्यविश्ववसवस्तुषिता भास्वरानिलाः, महाराजिकसाध्याश्च रुद्राश्च गणदेवताः'—अर्थात् १२ आदित्य, १० विश्वेदेव, ८ वसु, ४९ वायु, १२ साध्य, ११ रुद्र, ३६ तुषित, ६४ आभास्वर, २२० महाराजिक ।—**द्रव्य**–(न०) सार्वजनिक सम्पत्ति ।—**धर**–(पुं०) एक श्रेणी या संस्था का मुखिया । पाठशालीय अध्यापक ।—**नाथ**,—**नायक**–(पुं०) गणेश । शिव ।—**नायिका** —(स्त्री०)– दुर्गादेवी । प,—**पति**–(पुं०) शिव अथवा गणेश ।—**पीठक**–(न०) वक्षस्थल, छाती ।—**पुङ्गव**–(पुं०) जाति या श्रेणी का मुखिया । (बहुवचन) एक देश और उसके अधिवासी ।—**पूर्व**–(पुं०) किसी जाति या श्रेणी का मुखिया ।—**भर्तृ**–(पुं०) शिव । गणेश । श्रेणी का मुखिया ।—**भोजन**–(न०) पंगत, ज्योनार, भोज ।—**राज्य**–(न०) वह राज्य जिसमें शासन चुने हुए मुखियों के द्वारा होता हो । दक्षिण की एक रियासत का नाम ।—**हास**,—**हासक**–(पुं०) सुगन्ध द्रव्य विशेष ।

गणक—(वि०) [√गण्+णिच्+ण्वुल्] [स्त्री०—**गणिका**] गणना करने वाला । (पुं०) ज्योतिषी ।

गणकी—(स्त्री०) [गणक–ङीप्] ज्योतिषी की स्त्री ।

गणतिथ—(वि०) [गणानां पूरकम्, गण+तिथुक्] दल या टोली बनाने वाला ।

गणन—(न०) [√गण्+णिच्+ल्युट्] गिनती, हिसाब-किताब । जोड़ । कल्पना, विचार । विश्वास ।

गणना—(स्त्री०) [√गण्+णिच्+युच्] गिनती । हिसाब । लिहाज ।—**महामात्र**–(पुं०) अर्थमंत्री ।

गणशस्—(अव्य०) [गण+शस्] समूह में, टोली में । श्रेणी के क्रम से ।

गणि—(स्त्री०) [√गण्+इन्] गिनती, गणना ।

गणिका—(स्त्री०) [गणः लम्पटगणः उपपतित्वेन अस्ति अस्याः, गण+ठन्] रण्डी, वेश्या 'गुणानुरक्ता गणिका च यस्य वसन्तशोभेव वसन्तसेना ' मृच्छ १.६ । हथिनी । पुष्प विशेष ।

गणित—(वि०) [गण्+क्त] गिना हुआ । संख्या डाला हुआ । जोड़ा-घटाया हुआ । ध्यान दिया हुआ । (न०) गणना, गिनती । अङ्कगणित, जिसके अन्तर्गत पाटीगणित या व्यक्तगणित, बीजगणित और रेखागणित सम्मिलित । जोड़ ।

गणितिन्—(पुं०) [गणित+इनि] जिसने गणना की हो । अङ्कगणित का जानने वाला ।

गणिन्—(वि०) [गण+इनि], [स्त्री०—**गणिनी**] किसी का झुंड या दल रखने वाला । (पुं०) अध्यापक, शिक्षक ।

गणेय—(वि०)[√गण्+एय] गिनती करने योग्य, गिनने योग्य ।

गणेरु—(पुं०) [√गण्+एरु] कर्णिकार वृक्ष । (स्त्री०) रंडी । हथिनी ।

गणेरुका—(स्त्री०) [गणेरु √कै+क] कुटनी । चाकरानी, दासी ।

गण्ड्—भ्वा० पर० अक० मुख का एक भाग होना । गण्डति, गण्डिष्यति, अगण्डीत् ।

गण्ड—(पुं०) [√गण्ड्+अच्] गाल; 'तदीयमार्द्रारुणगण्डलेखं' कु० ७.८२ । हाथ की कनपटी । बुद्बुद, बबूला, बुल्ला । फोड़ा । गिल्टी । मुँहासा । घेघा, गरदन की एक बीमारी । गाँठ, जोड़ । चिह्न, दाग । गैंडा । मूत्रस्थली । योद्धा । घोड़े के साज का एक अंश । (ज्यो०) एक अनिष्ट योग ।—**अङ्ग** (**गण्डाङ्ग**)–(पुं०) गैंडा ।—**उपधान** (**गण्डोपधान**)–(न०) तकिया, मसनद ।—**कुसुम**–(न०) हाथी का मद ।—**कूप**–(पुं०) पर्वतशिखर पर का कूप या कुआँ ।—**देश**, —**प्रदेश**–(पुं०) गाल ।—**फलक**–(न०) चौड़ा गाल ।—**माल**–(पुं०) —**माला** –(स्त्री०) वह रोग जिसमें गरदन में माला की तरह गिल्टियाँ निकलती हैं ।—**मूर्ख**–(वि०) वज्रमूर्ख । महामूर्ख ।—**शिला**–(स्त्री०) एक बड़ी भारी चट्टान जिसे भूडोल या तूफान ने नीचे गिरा दिया हो । माथा ।—**साह्वया**–(स्त्री०) गण्डकी नदी का नाम ।—**स्थल**–(न०),—**स्थली**–(स्त्री०) गाल । हाथी की कनपटी ।

गण्डक—(पुं०) [गण्ड+कन्] गैंडा । रोक, अड़चन । गाँठ, ग्रन्थि । चिह्न । फोड़ा । वियोग, विरह । चार कौड़ी के मूल्य का एक सिक्का ।

गण्डका—(स्त्री०) [गण्डक+टाप्] डला, डली, भेला, भेली, लौंदा, चक्का, ढोंका, ढेला ।

गण्डकी—(स्त्री०) [गण्डक+ङीप्] एक नदी जो गङ्गा में गिरती है ।—**पुत्र**–(पुं०) —**शिला**–(स्त्री०) शालग्राम शिला ।

गण्डली—(पुं०) [गण्ड इव अद्रौ तत्र लीयते, गण्ड√ ली+क्विप्] शिव ।

गण्डि—(पुं०) [√गण्ड्+इन्] पेड़ का तना या धड़, जड़ से लेकर उस स्थान तक का भाग जहाँ से डालियों का निकलना आरम्भ होता है ।

गण्डिका—(स्त्री०) [गण्ड+ठन्–टाप्] एक पत्थर ।

गण्डीर—(पुं०) [√गण्ड्+ईरन्] शूर-वीर । पोई का साग । सेंहुड़ ।

गण्डू—(स्त्री०) [√गण्ड्+उ–ऊङ] तकिया । जोड़, गाँठ, ग्रन्थि ।—**पद**–(पुं०) केंचुआ, किञ्चुलक ।

गण्डूष, (पुं०)—**गण्डूषा**–(स्त्री०) [√गण्ड्+ऊषन्] चुल्लू (जल आदि); 'गण्डूषजलमात्रेण शफरी फर्फरायते' । कुल्ली । हाथी की सूँड़ की नोक ।

गण्डोल—(पुं०) [√गण्ड्+ओलच्] कच्ची शक्कर । कौर, निवाला ।

गत—(वि०) [√गम्+क्त] गया हुआ । बीता हुआ, गुजरा हुआ । मृत, मरा हुआ । आया हुआ, पहुँचा हुआ । अवस्थित । गिरा हुआ । कम किया हुआ । सम्बन्धी, विषय का ।—**अक्ष** (**गताक्ष**)–(वि०) अन्धा, नेत्रहीन ।—**अध्वन्** (**गताध्वन्**)– वह जिसने अपनी यात्रा पूरी कर डाली हो । अभिज्ञ, अवगत । (स्त्री०) चतुर्दशी युक्त अमावस्या ।—**अनुगत** (**गतानुगत**)–(न०) किसी रीति या रस्म का अनुयायी या मानने-वाला ।—**अनुगतिक** (**गतानुगतिक**)–(वि०) आँख मूँद कर दूसरों के पीछे चलने वाला । अंधानुयायी; 'गतानुगतिको लोको न लोकः पारमार्थिकः' पं० ।—**अन्त** (**गतान्त**)–(वि०) वह जिसकी समाप्ति आ पहुँची हो ।—**अर्थ** (**गतार्थ**)–(वि०) निर्धन, गरीब । अर्थहीन ।—**असु** (**गतासु**),—**जीवित**, —**प्राण**–(वि०) मृत, मरा हुआ ।—**आधि**

(गताधि) (वि०) मानसिक कष्ट से रहित। निश्चिन्त, प्रसन्न।—**आयुस्** (**गतायुस्**)—(वि०) जिसकी आयु समाप्त हो चली हो। बेजान। अशक्त।—**आर्तवा** (**गतार्तवा**)—(स्त्री०) वह स्त्री जो ऋतुमती न होती हो। बुढ़िया।—**उत्साह** (**गतोत्साह**)—(वि०) उत्साहहीन। उदास।—**कल्मष**—(वि०) पाप या दोष से मुक्त, पवित्र।—**क्लम**-(वि०) थकान-रहित।—**चेतन**-(वि०) मूर्च्छित, बेहोश —**प्रत्यागत**—(वि०) जाकर लौटा हुआ।—**प्रभ**—(वि०) जिसमें प्रभा या तेज न हो। मंदा। धुँधला। कुम्हलाया हुआ।—**प्राण** (वि०) मृत, मरा हुआ।—**प्राय**—(वि०) लगभग गुजरा हुआ। गया, बीता हुआ-सा।—**भर्तृका**—(स्त्री०) विधवा, राँड़। प्रोषितभर्तृका, वह स्त्री जिसका पति विदेश गया हो।—**लज्ज**—(वि०) निर्लज्ज, बेशरम।—**लक्ष्मीक**—(वि०) भाग्यहीन। प्रभाहीन, चमक रहित।—**वयस्क**—(वि०) अधिक अवस्था का, बूढ़ा।—**वर्ष**—(पुं०, न०) बीता हुआ वर्ष।—**वैर**—(वि०) मेल-मिलाप किये हुए, सन्धि किये हुए।—**व्यथ**—(वि०) पीड़ा-रहित।—**सत्त्व**—(वि०) मृत, मरा हुआ। नीच, ओछा।—**सन्नक**—(वि०) हाथी जिसके मद न चूता हो।—**स्पृह**—(वि०) जिसे कोई चाह या इच्छा न हो। सांसारिक अनुराग से रहित।

गति—(स्त्री०) [गम्+क्तिन्] जाना, गमन। चाल, हरकत। प्रवेश। पथ, मार्ग। पहुँचना, प्राप्ति। फल, परिणाम। हालत, दशा। उपाय, जरिया। शरण-स्थान। उत्पत्ति-स्थान। प्रवाह। यात्रा। कर्मफल। भाग्य। नक्षत्रपथ। ग्रहों की चाल। नासूर। ज्ञान। पुनर्जन्म। आयु की भिन्न दशाएँ, यथा—शैशव, यौवन, बुढ़ापा आदि।—**अनुसर** (**गत्यनुसर**)—(पुं०) दूसरे के पीछे चलना, दूसरे के मार्ग पर गमन करना।—**भङ्ग**—(पुं०) छंद, तान आदि में पढ़ने या गाने की लय का टूट जाना।—**हीन**—(वि०) गति-रहित। असहाय। अनाथ।

गत्वर—(वि०) [√गम्+क्वरप्, अनुनासिकलोप, तुक्] [स्त्री०—**गत्वरी**] चर, जङ्गम, चलनेवाला। नश्वर, नाशवान्; 'गत्वरौ यौवनश्रियः' कि० ११.१२।

√गद्—भ्वा० पर० अक० स्पष्ट बोलना। गदति, गदिष्यति, अगादीत् — अगदीत्।

गद—(न०) [√गद्+अच्] एक प्रकार का रोग। (पुं०) भाषण, वक्तृता। वाक्य। रोग। गर्जन, गड़गड़ाहट।—**अगद** (**गदागद**)—(पुं०) द्वि० में, अश्विनी कुमार।—**अग्रणी** (**गदाग्रणी**)—(पुं०) सब रोगों का सरदार अर्थात् क्षय रोग।—**अम्बर** (**गदाम्बर**)—(पुं०) बादल।—**अराति** (**गदाराति**)—(पुं०) दवा।

गदयित्नु—(वि०) [√गद्+णिच्+इत्नुच्] बातूनिया, बकवादी। कामी, लम्पट। (पुं०) कामदेव का नाम।

गदा—(स्त्री०) [√गद्+अच्—टाप्] लोहे का बना एक पुराना हथियार जिसके एक सिरे पर नोकदार बड़ा लट्टू लगा होता था, गुर्ज। बाँस के डंडे में पहनाया हुआ पत्थर का गोला जिसे मुद्गर की तरह भाँजते हैं।—**अग्रज** (**गदाग्रज**)—(पुं०) श्रीकृष्ण का नाम।—**अग्रपाणि** (**गदाग्रपाणि**)—(वि०) दाहिने हाथ में गदा लेनेवाला।—**धर**—(पुं०) विष्णु।—**भृत्**—(पुं०) गदा से युद्ध करने वाला। (पुं०) विष्णु।—**युद्ध**—(न०) गदा की लड़ाई।—**हस्त**—(वि०) गदास्त्र से सज्जित।

गदिन्—(वि०) [गदा+इनि] [स्त्री०—**गदिनी**] गदा लिये हुए। रोगी, बीमार। (पुं०) विष्णु।

गद्गद—(वि०) [गद् इत्यव्यक्तं गदति, गद्√गद्+क वा अच्] हर्ष, प्रेम, शोक आदि के

अतिरेक से जिसका गला भर आया हो। जिसके मुँह से स्पष्ट शब्द न निकलते हों। पुलकित, आनन्दित। (पुं०) हकलाना। (न०) हकला कर बोलना।—स्वर–(पुं०) हकलाने की बोली। भैंसा।

गद्य—(वि०) [√गद्+यत्] कहने योग्य। (न०) पद्य नहीं, वार्त्तिक, वह रचना जिसमें कविता या पद्य न हो।

गद्याणक, गद्यानक, गद्यालक—(पुं०) घुँघची या रत्ती भर की तौल।

गन्तु—(पुं०) [√गम्+तुन्] पथिक। मार्ग।

गन्तृ—(वि०) [√गम्+तृन्] [स्त्री०—गन्त्री] जाने वाला। स्त्री के साथ मैथुन करने वाला।

गन्त्री—(स्त्री०) [√गम्+ष्ट्रन्–ङीप्] बैलगाड़ी। घोड़ागाड़ी।

√गन्ध्—चु० आत्म० सक० घायल करना। माँगना। जाना। गन्धयते, गन्धयिष्यते, अजगन्धत।

गन्ध—(पुं०) [√गन्ध्+अच्] बू, बास। सुगन्ध पदार्थ। गन्धक। घिसा हुआ चन्दन। सम्बन्ध, रिश्ता। घमण्ड।—**अम्ला** (**गन्धाम्ला**)–(स्त्री०) जंगली नीबू का वृक्ष।—**अश्मन** (**गन्धाश्मन**)–(पुं०) गन्धक।—**आखु** (**गन्धाखु**)–(पुं०) छछून्दर।—**आढ्य** (**गन्धाढ्य**)–(पुं०) नारंगी का पेड़। (न०) चन्दन काठ।—**आली** (**गन्धाली**)–(स्त्री०) एक लता, गंधपसार। भिड़।—**०गर्भ**–(पुं०) छोटी इलायची।—**इन्द्रिय** (**गन्धेन्द्रिय**)–(न०) नाक, नासिका।—**इभ** (**गन्धेभ**),—**गज**,—**द्विप**,—**हस्तिन्**–(पुं०) सर्वोत्तम हाथी; 'शमयति गजानन्यान् गन्धद्विपः कलभोऽपि सन्' विक्र० ५.१८।—**उत्तमा** (**गन्धोत्तमा**)–(स्त्री०) शराब, मदिरा।—**ओतु** (**गन्धोतु**)–(पुं०) खट्टाश, गंध-बिलाव।—**कालिका**—**काली**–(स्त्री०) वेद व्यास की माता का नाम।—**केलिका**,—**चेलिका**–(स्त्री०) कस्तूरी, मुश्क।—**ग्राही**–(स्त्री०) नाक।—**धूलि**–(स्त्री०) कस्तूरी।—**नकुल**–(पुं०) छछून्दर।—**नालिका**,—**नाली**–(स्त्री०) नाक, नासिका।—**निलया**–(स्त्री०) एक प्रकार की चमेली।—**प**–(पुं०) पितृगण विशेष।—**पलाशिका**–(स्त्री०) हल्दी।—**पाषाण**–(पुं०) गन्धक।—**पुष्पा**–(स्त्री०) नील का पौधा।—**पूतना**–(स्त्री०) बालग्रह विशेष।—**फली**–(स्त्री०) प्रियङ्गुलता। चम्पा-पुष्प की कली।—**बन्धु**–(पुं०) आम का पेड़।—**मादन**–(पुं०) भौंरा। गन्धक। मेरु पर्वत के पूर्व एक पर्वत जिसमें महकदार अनेक वन हैं।—**मादनी**–(स्त्री०) शराब।—**मादिनी**–(स्त्री०) लाख, लपड़ा।—**मार्जार**–(पुं०) गंधबिलाव, मुश्कबिलाई।—**मूल**—(पुं०) कुलंज का वृक्ष।—**मूषा**–(स्त्री०) —**मूषिक**–(पुं०)—**मूषी**–(स्त्री०) छछूँदर।—**मृग**–(पुं०) मुश्कबिलाई। मुश्कहिरन, कस्तूरीमृग।—**मैथुन**–(पुं०) साँड़, बैल।—**मोदन**–(पुं०) गन्धक।—**मोहिनी**–(स्त्री०) चंपा की कली।—**राज**–(पुं०) चमेली। (न०) चन्दन।—**लता**–(स्त्री०) प्रियङ्गु की बेल।—**लोलुपा**–(स्त्री०) मधुमक्षिका।—**वह**–(पुं०) पवन, हवा; 'रात्रिन्दिवं गन्धवहः प्रयाति' श० ५.४।—**वहा**–(स्त्री०) नासिका, नाक।—**वाहक**–(पुं०) पवन, हवा। कस्तूरीमृग।—**वाही**–(स्त्री०) नाक।—**विह्वल**–(पुं०) गेहूँ।—**वृक्ष**–(पुं०) साल का पेड़।—**व्याकुल**–(न०) कङ्कोल वृक्ष।—**शुण्डिनी**–(स्त्री०) छछूँदरी।—**शेखर**–(पुं०) मुश्क, कस्तूरी।—**सोम**–(न०) सफेद कुमुदिनी।

गन्धक—(पुं०) [गन्ध+कन्] गन्धक।

गन्धन—(न०) [√गन्ध+ल्युट्] सत्य-

जमाव, मतलबोटा। चोट, घाव। प्राकट्य, प्रकाशन। सूचना, सङ्केत, इशारा।

गन्धवती—(स्त्री०) [गन्ध+मतुप्, वत्व—ङीप्] भूमि, पृथिवी। शराब। व्यास-माता सत्यवती। चमेली की जातियाँ।

गन्धर्व—(पुं०) [गन्ध√अर्व्+अच् वा गो√धृ+व, पृषो० साधुः] देवताओं के गवैया। गवैया। घोड़ा। मुश्कहिरन, कस्तूरीमृग। मृत्यु के बाद और जन्म के पूर्व की जीव की दशा। कोयल। —**नगर**, —**पुर**–(न०) गन्धर्वों की पुरी। दृष्टिदोषसे आकाश में दिखाई देने वाला मिथ्या आभास का नगर, कल्पित नगर। —**राज**–(पुं०) गन्धर्वों के राजा चित्ररथ। —**विद्या**–(स्त्री०) सङ्गीत विद्या। —**विवाह**–(पुं०) आठ प्रकार के विवाहों में से एक, इस प्रकार का विवाह युवक और युवती के पारस्परिक प्रेमबंधन पर ही निर्भर है, युवक-युवती को न तो अपने किसी सगे सम्बन्धी से अनुमति लेने की आवश्यकता पड़ती है और न कोई रीतिरस्म अदा करने की जरूरत होती है। —**वेद**–(पुं०) चार उपवेदों में से एक, यह सामवेद का उपवेद है। —**हस्त**, —**हस्तक**–(पुं०) अंडी या रेंडी का वृक्ष।

गन्धा—(स्त्री०) [√गन्ध्+णिच्+अच् वा गन्ध+अच्+टाप्] चंपे की कली।

गन्धार—(पुं०) [गन्ध√ऋ+अण्] एक प्राचीन जनपद, कंधार के आस-पास का देश। सप्तक का तीसरा स्वर। सिन्दूर।

गन्धालु—(वि०) [गन्ध+आलुच्] सुवासित, सुगंधित।

गन्धिक—(वि०) [गन्ध+ठन्] सुगन्धियुक्त। अल्प परिमाण का। (पुं०) गन्धी, इत्रफरोश। गन्धक।

गभस्ति—(पुं०) [गम्यते ज्ञायते,√गम्+ड—गः विषयः तं बभस्ति,√भस्+क्तिच्] किरण। सूर्य। शिव। (स्त्री०) अग्नि की स्त्री स्वाहा। उँगली। हाथ। —**कर**, —**पाणि**, —**हस्त**–(पुं०) सूर्य।

गभस्तिमत्—(पुं०) [गभस्ति+मतुप्] सूर्य; 'घनव्यपायेन गभस्तिमानिव' र० ३.३७। (न०) पाताल के सात विभागों में से एक।

गभीर—(वि०) [गच्छति जलमत्र,√गम्+ईरन्, भ अन्तादेश] गहन, गहरा; 'उत्तालास्त इमे गभीरपयसः पुण्याः सरित्सङ्गमाः' उत्त० २.३०। गुप्त, रहस्यमय। दुर्बोध। गाढ़ा, सघन, घना। —**आत्मन्** (**गभीरात्मन्**)–(पुं०) परमेश्वर। —**वेपस्**–(वि०) अत्यन्त काँपने वाला।

गभीरिका—(स्त्री०) [गभीर+कन्—टाप्, इत्व] बड़ा ढोल जिसमें बड़ा गंभीर शब्द हो।

गभोलिक—(पुं०) [अव्युत्पन्न प्रातिपदिक] गोल छोटा तकिया। मसूर।

√गम्—भ्वा० पर० सक० जाना। गच्छति, गमिष्यति, अगमत्।

गम—(वि०) [√गम्+खच्] (समास के अन्त में जोड़ा जाता है जैसे, "हृदयङ्गम" "पुरोगमा" आदि और तब इसका अर्थ होता है) जाते हुए। पहुँचते हुए, प्राप्त होते हुए। (पुं०) [√गम्+अप्] गमन। प्रस्थान। आक्रमणकारी का कूच। मार्ग, रास्ता। अविवेक। कम समझ पाना। स्त्री-मैथुन। चौपड़ का खेल। —**आगम** (**गमागम**)–(पुं०) चराचर, संसार। जाना-आना।

गमक—(वि०) [√गम्+णिच्+ण्वुल्] [स्त्री०—**गमिका**] सूचक, सङ्केतकारी। बोधक।

गमन—(न०) [√ गम्+ल्युट्]गमन, चाल, गति। समीपगमन। आक्रमणकारी का कूच। प्राप्ति, उपलब्धि। स्त्रीमैथुन।

गमिन्—(वि०) [√गम्+इनि] जाने वाला। जाने की इच्छा रखने वाला, गमनेच्छु। (पुं०) यात्री।

गमनीय, गम्य—(वि०) [√गम्+अनी-

यत्] [√गम्+यत्] बोधगम्य, समझने योग्य। पाने योग्य। जिसके पास जाया जा सके। (स्त्री०) संभोग करने योग्य।

गम्भारिका, गम्भारी—(स्त्री०) [√गम्+क्विप्, गमं निम्नगतिं बिभर्ति, गम्√भृ+ण्वुल्—टाप्, इत्व] [गम्√भृ+अण्—ङीप्] एक वृक्ष का नाम।

गम्भीर—(वि०) [√गम्+ईरन्, नि० भुगागम] (हरेक अर्थ में) गहरा। गम्भीर शब्द वाला (जैसे ढोल)। गाढ़ा, सघन, प्रगाढ़। अगाध। संगीन, गूढ़तर, रहस्यमय। दुर्विगम्य, कठिनता से समझने योग्य। (पुं०) कमल। नींबू, चकोतरा। एक राग। —**वेदिन्**—(वि०) अंकुश की परवाह न करने वाला, बार-बार अंकुश मारने पर भी आदिष्ट कार्य न करने वाला, हठीला (हाथी)।

गम्भीरा, गम्भीरिका—(स्त्री०) [गम्भीर—टाप्] [गम्भीर+कन्—टाप्] इत्व] एक नदी का नाम।

गय—(पुं०) रामायण में प्रसिद्ध एक वानर का नाम। एक राजर्षि, जिनकी यज्ञ-भूमि का नाम, महाभारत के अनुसार, गया पड़ा। एक असुर जिसको ब्रह्मा, विष्णु आदि से मिला हुआ वरदान गया के तीर्थत्व और माहात्म्य का कारण हुआ।

गया—(स्त्री०) [गयासुरः गयनृपो वा कारणत्वेन अस्ति अस्याः, गय अच्—टाप्] बिहार प्रान्त के एक नगर का नाम, जहाँ सनातनधर्मी अत्यन्त प्राचीन काल से अपने पितरों का उद्धार करने को जाते हैं।

गर—(वि०) [√गॄ+अच्] [स्त्री०—गरी] निगलने योग्य। (पुं०) पेय, शरबत। रोग, बीमारी। निगलना, लीलना। (पुं०, न०) जहर, विष। विषनाशक वस्तु, जहरमोहरा। (न०) तर करना, भिगोना। —**अधिका** (**गराधिका**)—(स्त्री०) लाक्षा कीट, लाख या लाल रंग जो लाक्षा या लाख से निकलता है। —**घ्नी**—(स्त्री०) गरई मछली। —**द**—(वि०) जहर देने वाला, विष खिलाने वाला। (न०) जहर, विष। —**व्रत**—(पुं०) मयूर, मोर।

गरण—(न०) [√गॄ+ल्युट्] निगलने की क्रिया। छिड़काव। जहर, विष।

गरभ—(पुं०) [√गॄ+अभच्] बच्चादानी, गर्भाशय।

गरल—(न०, पुं०) [√गॄ+अलच्] विष, जहर। 'गरलमिव कलयति मलयसमीरं' गीत० ४। साँप का विष। घास का पूला। एक माप। —**अरि** (**गरलारि**)—(पुं०) पन्ना, हरे रंग की एक मणि।

गरित—(वि०) [गर+क्विप्+क्त] विष मिला हुआ।

गरिमन्—(पुं०) [गुरु+इमनिच्, गर् आदेश] भार, गुरुता। महत्त्व, विशेषता, गौरव। उत्तमता। अष्ट सिद्धियों में से एक जिसके अनुसार स्वेच्छापूर्वक अपने शरीर को जितना चाहे उतना बड़ा या भारी बनाया जा सकता है।

गरिष्ठ—(वि०) [गुरु+इष्ठन्, गर् आदेश] सबसे अधिक भारी। सर्वाधिक महत्त्व-पूर्ण।

गरीयस्—(वि०) [स्त्री० **गरीयसी**], [गुरु+ईयसुन्, गर् आदेश] अत्यन्त भारी। अत्यन्त महत्त्वपूर्ण; 'वृद्धस्य तरुणी भार्या प्राणेभ्योऽपि गरीयसी' हि० १.११२।

गरुड—(पुं०) [गरुद्भ्यां पक्षाभ्यां डीयते, गरुद् √डी+ड, पृषो० तलोप] विनता के गर्भ से उत्पन्न कश्यप के पुत्र जो पक्षिराज और विष्णु के वाहन माने जाते हैं। गरुडाकार भवन। गरुड के आकार का व्यूह। —**अग्रज** (**गरुडाग्रज**)—(पुं०) अरुण जो गरुड के बड़े भाई और सूर्य के सारथी माने जाते हैं। —**अङ्क** (**गरुडाङ्क**)—(पुं०) विष्णु का नाम। —**अङ्कित** (**गरुडाङ्कित**)—**अश्मन्** (**गरुडाश्मन्**), —**ध्वज**—(पुं०)

विष्णु की उपाधि ।—व्यूह–(पुं०) वह व्यूह या सैन्य रचना जिसमें सेना का मध्य भाग चौड़ा और अगला-पिछला भाग पतला हो ।

गरुत्—(पुं०) [√गृ वा√गॄ+उति] पक्षी का पर । भोजन करना, निगलना ।—**योधिन्**–(पुं०) लवा, बटेर ।

गरुल—(पुं०) [गरुड, डस्य लः] पक्षिराज गरुड़ ।

गर्ग—(पुं०) [√गॄ+ग] ब्रह्मा के पुत्रों में से एक । साँड़ । केंचुआ । [गर्ग+यञ्–लुक्] (बहु०) गर्ग के वंशधर, गर्गगोत्री ।—**स्रोतस्**–(न०) एक तीर्थ का नाम ।

गर्गर—(पुं०) [गर्ग इति शब्दं राति, गर्ग √रा+क] भँवर । वैदिक काल का एक बाजा । एक तरह की मछली । मथानी ।

गर्गरी—(स्त्री०) [गर्गर–ङीष्] मथानी । गगरी ।

गर्गाट—(पुं०) [गर्ग इति शब्देन अटति, गर्ग √अट्+अच्] एक प्रकार की मछली ।

√गर्ज्—भ्वा० पर० अक० गरजना । गुर्राना, घुरघुराना । सिंहनाद करना, कड़कना । गर्जति, गर्जिष्यति, अगर्जीत् ।

गर्ज—(पुं०) [√गर्ज्+घञ्] हाथी की चिंघाड़ । बादलों की गड़गड़ाहट ।

गर्जन—(न०) [√गर्ज्+ल्युट्] गरजने की क्रिया, गरजना । गरजने की आवाज । बादलों की गड़गड़ाहट । गंभीर ध्वनि । रोष, क्रोध । युद्ध, लड़ाई । भर्त्सना, फटकार ।

गर्जा—(स्त्री०), **गर्जि**–(पुं०) [गर्ज+टाप्] [√गर्ज्+इन्] बादलों का गर्जन ।

गर्जित—(वि०) [√गर्ज्+क्त] गरजा हुआ । (न०) मेघ आदि का गर्जन । (पुं०) [गर्ज+इतच्] मद वाला हाथी ।

गर्त—(न०, पुं०) [√गॄ+तन्] गड्ढा । बिल । नहर । समाधि । (पुं०) कटिखात, रोग विशेष । त्रिगर्त देश का एक प्रान्त ।—**आश्रय** (**गर्ताश्रय**)–(पुं०) चूहे की तरह भूमि में बिल बना कर रहने वाला जन्तु ।

गर्तिका—(स्त्री०) [गर्त+ठन्+टाप्] जुलाहे का कारखाना, तंतुशाला ।

√गर्द्—चु० उभ० पक्षे भ्वा० पर० अक० शब्द करना । गर्दयति—ते,—गर्दति, गर्दयिष्यति—ते,—गर्दिष्यति, अजगर्दत्—त,—अगर्दीत् ।

गर्दभ—(न०) [√गर्द्+अभच्] सफेद कुमुदिनी । (पुं०) [स्त्री०—**गर्दभी**) गधा । गंध, बास ।—**अण्ड** (**गर्दभाण्ड**)—**अण्डक** (**गर्दभाण्डक**)–(पुं०) पाकड़ । पीपल ।—**आह्वय** (**गर्दभाह्वय**)–(न०) सफेद कमल ।—**गद**–(पुं०) चर्मरोग विशेष ।

√गर्ध्—चु० उभ० सक० चाहना । गर्धयति—ते, गर्धयिष्यति—ते, अजगर्धत्—त ।

गर्ध—(पुं०) [√गर्ध्+घञ्] कामना, इच्छा । उत्सुकता । लालच ।

गर्धन, गर्धित—(वि०) [√गृध्+ल्युट्] [गर्ध+इतच्] लालची, लोभी ।

गर्धिन्—(वि०) [गर्ध+इनि] [स्त्री०—**गर्धिनी**] अभिलाषी, इच्छुक । लालची; 'नवान्नामिषगर्धिनः' मनु० ४.२८। उत्सुकता पूर्वक अनुसरण करने वाला ।

गर्भ—(पुं०) [√गॄ+भन्] शुक्र-शोणित के संयोग से उत्पन्न मांस-पिंड, हमल । गर्भाशय की झिल्ली, गर्भाधान । गर्भाधान का समय । गर्भ का बच्चा । बच्चा या पक्षिशावक । भीतर का भाग, अभ्यन्तरीण भाग । आकाशोत्पन्न पदार्थ, जैसे कोहासा, ओस, हिम । प्रसूतिका-गृह । कोठे के भीतर की कोठरी । छेद । अग्नि । भोजन । कटहल का काँटीला छिलका । नदी का पेटा । फल । संयोग । पद्मकोष ।—**अङ्क** (**गर्भाङ्क**)–(पुं०), (**गर्भोऽङ्क** भी होता है ।) अभिनय के किसी दृश्य के अन्तर्गत कोई दृश्य ।—**अवक्रान्ति** (**गर्भावक्रान्ति**)–(स्त्री०) गर्भस्थित बालक के शरीर में जीव का पड़ना ।—**आगार** (**गर्भागार**)–(न०) गर्भस्थान, बच्चेदानी । जनानखाना, अन्तः-

पुर । प्रसूतिकागृह । मन्दिर में वह स्थान जहाँ मूर्ति स्थापित हो, गर्भमन्दिर ।—**आधान (गर्भाधान)**–(न०) गर्भ-धारण । १६ संस्कारों में से एक ।—**आशय (गर्भाशय)** (पु०) स्त्री के पेट की वह थैली जिसमें बच्चा रहता है, बच्चादानी ।—**आस्राव (गर्भास्राव)**–(पु०) गर्भ का कच्ची अवस्था में गिर जाना ।—**ईश्वर (गर्भेश्वर)**–(पु०) गर्भकाल से ही राजा, वंशानुगत राजा ।—**उत्पत्ति (गर्भोत्पत्ति)** (स्त्री०) गर्भपिण्ड का बनना ।—**उपघात (गर्भोपघात)**–(पु०) गर्भ का गिर पड़ना ।—**काल**–(पु०) गर्भस्थापन का समय ।—**कोश,—कोष**–(पु०) गर्भाशय ।—**क्लेश**–(पु०) गर्भस्थ बच्चे के बाहर निकलने के समय की पीड़ा जो गर्भधारिणी स्त्री को होती है ।—**क्षय**–(पु०) गर्भ का नाश ।—**गृह,—भवन,—वेश्मन्**– (न०) भवन के बीचोबीच का कमरा । प्रसूतिका-गृह । गर्भमन्दिर या वह कमरा जिसमें मूर्ति स्थापित हो ।—**ग्रहण** (न०) गर्भधारण, गर्भ रह जाना ।—**घातिन्**–(वि०) गर्भ गिराने वाला ।—**चलन**–(न०) गर्भ का हिलना-डुलना या स्थानच्युत होना ।—**च्युति**–(स्त्री०) जन्म, उत्पत्ति । कच्चा गर्भ गिर पड़ना ।—**दास**–(पु०),—**दासी**–(स्त्री०) जन्म से गुलाम या जन्म से दासी ।—**द्रुह्**–(वि०) गर्भाधान न चाहने वाला । गर्भपात कराने वाला ।—**धरा**–(स्त्री०) गर्भिणी ।—**धारण**–(न०) **धारणा**–(स्त्री०) गर्भ में सन्तान को रखना ।—**ध्वंस**–(पु०) गर्भ का नाश ।—**धान्यन्**–(पु०) ६० दिन में पकने वाला धान ।—**पात**–(पु०) गर्भ का गिर जाना । चौथे महीने के बाद से गर्भ का गिरना ।—**पोषण —भर्मन्**–(न०) गर्भस्थ बच्चे का पालन-पोषण; 'प्रनुष्ठितै निपुणैराप्तैरस्य गर्भभर्मणि' र० ३.४२ । —**मण्डप**–(पु०) जच्चाघर, प्रसूतिका-गृह ।—**मास**-(पु०) गर्भ रहने का महीना।—**मोचन**–(न०) प्रसव करना ।—**योषा**–(स्त्री०) गर्भिणी स्त्री ।—**लक्षण**–(न०) गर्भ धारण के चिह्न ।—**लम्भन**–(न०) गर्भ की रक्षा के लिये किया जाने वाला एक संस्कार ।—**वसति**–(स्त्री०),—**वास**–(पु०) गर्भ के भीतर रहना । गर्भाशय ।—**विच्युति**–(स्त्री०) गर्भाधान के प्रारम्भ ही में गर्भपात ।—**वेदना**–(स्त्री०) बच्चा उत्पन्न करने के समय का कष्ट ।—**व्याकरण**–(न०) चिकित्सा शास्त्र का एक अंग जिसमें गर्भ की उत्पत्ति, वृद्धि आदि का वर्णन किया गया है ।—**व्यूह**–(पु०) एक व्यूह या सैन्य-रचना जिसमें सेना कमल के आकार में खड़ी की जाती है ।—**शङ्कु**–(पु०) गर्भस्थित मृत शिशु को निकालने का औजार ।—**सम्भव** (पु०),—**सम्भूति**–(स्त्री०) गर्भ रह जाना ।—**स्थ**–(वि०) गर्भ का । आभ्यन्तरिक, भीतरी ।—**स्राव**–(पु०) दे० 'गर्भपात' ।

गर्भक—(न०) [गर्भ+कन्] दो रात्रि (जिसके बीच में एक दिन हो) की अवधि । (पु०) फूलों का गुच्छा जो बालों में खोंसा जाता है ।

गर्भण्ड—(पु०) [गर्भस्य अण्ड इव प० त०, पररूप] नाभि की वृद्धि । अंडे की तरह उभरी हुई नाभि ।

गर्भवती—(स्त्री०) [गर्भ+मतुप्—ङीप्, वत्व] जिसके पेट में गर्भ हो ।

गर्भिणी—(स्त्री०) [गर्भ+इनि+ङीप्] गर्भवती स्त्री ।—**अवेक्षण** (**गर्भिण्यवेक्षण**)–(न०) गर्भिणी की परिचर्या । धातृपना, दाई का काम ।—**दोहद,—दौहृद** —(न०) गर्भिणी स्त्री की इच्छाएँ या रुचि ।—**व्याकरण**–(न०), —**व्याकृति**–(स्त्री०) दे० 'गर्भव्याकरण' ।

गर्भित—(वि०) [गर्भ+इतच्] गर्भयुक्त । भरा हुआ । (पु०) काव्य का एक दोष, किसी अतिरिक्त वाक्य का किसी वाक्य के बीच में आ जाना ।

गर्भतृप्त—(वि०) [अलुक् स० त०] गर्भ में बालक होने से तृप्त। भोजन एवं सन्तान की ओर से निश्चिन्त। कामचोर, आलसी।

गर्मुत्—(स्त्री०) [√गृ+उति, मुट्] एक प्रकार की घास। एक प्रकार का नरकुल। सुवर्ण, सोना।

√गर्व्—भ्वा० पर० अक० अहङ्कार करना। सक० जाना। गर्वति, गर्विष्यति, अगर्वीत्। चु० आत्म० अक० अहङ्कार करना। गर्वयते, गर्वयिष्यते, अजगर्वत।

गर्व—(पुं०) [√गर्व्+घञ्] अभिमान, घमण्ड, ऐंठ, अकड़।

गर्वाट—(पुं०) [गर्व√अट्+अच्] द्वारपाल, दरबान। चौकीदार।

√गर्ह्—भ्वा० आत्म० सक० निन्दा करना। गर्हते, गर्हिष्यते, अगर्हिष्ट। चु० गर्हयते, गर्हयिष्यते, अजगर्हत।

गर्हण—(न०), **गर्हणा**—(स्त्री०) [√गर्ह्+ल्युट्] [√गर्ह्+युच्—टाप्] निन्दा करना। दोष लगाना। भर्त्सना करना।

गर्हा—(स्त्री०) [√गर्ह्+अ—टाप्] निंदा। भर्त्सना।

गर्ह्य—(वि०) [√गर्ह्+ण्यत्] भर्त्सनीय, धिक्कारने योग्य। निन्द्य।—**वादिन्**—(वि०) निन्दक। अपशब्द कहने वाला।

√गल्—भ्वा० पर० सक० खाना। टपकाना, चुआना। अक० गिर पड़ना, गिर जाना। अदृश्य हो जाना, गायब हो जाना। गलति, गलिष्यति, अगालीत्।

गल—(पुं०) [√गल्+अप्] गला। गर्दन। साल वृक्ष की राल। एक वाद्ययन्त्र या बाजा।—**अङ्कुर** (**गलाङ्कुर**)—(पुं०) गले का एक रोग।—**उद्भव** (**गलोद्भव**)— घोड़े के गले के बाल या अयाल।—**ओघ** (**गलौघ**)—(पुं०) गले का अर्बुद रोग।—**कंबल**—(पुं०) बैल या गाय के गले का झालर जो लटकता रहता है।—**गण्ड**—(पुं०) घेघा, गले का एक रोग।—**ग्रह**—(पुं०)—**ग्रहण**—(न०) गरदनियाना, गर्दन में हाथ लगा कर पकड़ना। गले का एक रोग। कृष्णपक्ष की ४थी, ७मी, ८मी, ९मी, १३शी, अमावस्या। ऐसा दिवस जिसमें अध्ययन आरम्भ हो, किन्तु अगले दिन ही अनध्याय हो। अपने आप बिसाई विपत्ति। मछली को चटनी।—**चर्मन्**—(न०) नरेटी, नली, नरखड़ा।—**देश**—(पुं०) गर्दन।—**द्वार**—(न०) मुख।—**मेखला**—(स्त्री०) हार, कण्ठा।—**वार्त**—(वि०) स्वस्थ, तन्दुरुस्त। मुफ्तखोर, खुशामदी टट्टू।—**व्रत**—(पुं०) मयूर, मोर।—**शुण्डिका**—(स्त्री०) छोटी जीभ, उपजिह्वा, कव्वा।—**शुण्डी**—(स्त्री०) गरदन की गिल्टियों की सूजन।—**स्तनी** (**गलेस्तनी**)—(स्त्री०) गलथन वाली बकरी।—**हस्त**—(पुं०) अर्धचन्द्र, गलहत्था, गरदनिया। अर्धचन्द्र जैसा बाण।—**हस्तित**—(वि०) गले में हाथ डाल कर निकाला हुआ।

गलक—(पुं०) [√गल्+अच्—कन्] गला। गड़ाकू मछली।

गलन—(न०) [√गल्+ल्युट्] चूना, टपकना, रिसना।

गलन्तिका, गलन्ती—(स्त्री०) [√गल्+शतृ—ङीप्, नुम्+कन्—टाप्, ह्रस्व] [√गल+शतृ—ङीप्, नुम्] कलसिया, छोटा कलसा, छोटा घड़ा। छोटा घड़ा जिसकी पेंदी में छेद करके शिव के ऊपर टाँग देते हैं, जिससे उस छेद से बराबर शिव पर जल टपका करे।

गलि—(पुं०) [√गल्+इन्] पुष्ट किन्तु कामचोर बैल।

गलित—(वि०) [√गल्+क्त] गिरा हुआ। खिसका हुआ। चुआ हुआ। बहा हुआ। खोया हुआ। पृथक् किया हुआ। नजर से छिपा हुआ। संयुक्त। ढीला। टपक-टपक कर खाली हुआ। साफ किया हुआ। क्षीण,

निर्बल।—**कुष्ठ**–(न०) कोढ़ के रोग की वह दशा जब अँगुलियाँ आदि गल कर गिर पड़ती हैं।।—**दन्त**–(वि०) दन्तहीन।—**नयन**–(वि०) अंधा।

गलितक—(पुं०) [गलित इव कायति, गलित √कै+क] नृत्य विशेष।

गलु—(पुं०) एक प्रकार का पत्थर या नग, जिससे प्राचीन काल में मद्य-पात्र बनते थे।

गलेगण्ड—(पुं०) [गले गण्ड इवास्य, अलुक् स०] एक पक्षी जिसकी गरदन में खाल की थैली सी लटका करती है।

√गल्भ्—भ्वा० आत्म० अक०। साहसी होना। आत्म-निर्भर होना। गल्भते, गल्भिष्यते, अगल्भिष्ट।

गल्भ—(वि०) [√गल्भ्+अच्] ढीठ। घमंडी। साहसी, हिम्मती।

गल्या—(स्त्री०) [गलानां कण्ठानां समूहः, गल+यत्] गलों का समूह।

गल्ल—(पुं०) [√गल्+ल] गाल, विशेष कर मुख के दोनों ओर के पास का भाग।

—**चातुरी**–(स्त्री०) छोटा गोल तकिया जो गाल के नीचे रखा जाता है।

गल्लक—(पुं०) [√गल्+क्विप्—गल्, त लाति, गल्√ला+क, ततः स्वार्थे कन्] पानपात्र, जाम, मदिरा पीने का बरतन। नीलमणि, पुखराज।

गल्लर्क—(पुं०) शराब पीने का प्याला।

गल्वर्क—(पुं०) [गलुर्मणिभेदः तस्य इव अर्कों दीप्तिर्यस्य ब० स०] स्फटिक मणि। लाजवर्द। मदिरा-पान-पात्र।

√गल्ह्—भ्वा० आत्म० सक०। कलङ्क लगाना, इलजाम लगाना। भर्त्सना करना। गल्हते, गल्हिष्यते, अगल्हिष्ट।

गव—[किसी-किसी समासान्त पद के पहले लगाया जानेवाला 'गो' का पर्याय]।—**अक्ष** (**गवाक्ष**)–(पुं०) रोशनदान, झरोखा।—(**गवाक्षित**)–[गवाक्ष+इतच्] (वि०) खिड़कियोंदार।—**अग्र** (**गवाग्र**)–(न०) गौओं का झुंड।—**अदन** (**गवादन**)–(न०) चरागाह, गोचरभूमि।—**अदनी** (**गवादनी**)–(स्त्री०) गोचरभूमि। नाँद जिसमें गौओं को सानी खिलायी जाती है।—**अधिका** (**गवाधिका**) –(स्त्री०) लाख, लाक्षा।—**अर्ह** (**गवार्ह**)– (वि०) गौ के मूल्य का।—**अविक** (**गवाविक**)– (न०) गौओं और भेड़ों का झुंड।—**अशन** (**गवाशन**)–(पुं०) चमार, मोची।—**अश्व** (**गवाश्व**)–(न०) साँड़ और घोड़े।—**आकृति** (**गवाकृति**)–(वि०) गौ की आकृति का।—**आह्निक** (**गवाह्निक**)–(न०) नाप जिसके अनुसार रोज गौ को चारा दिया जाय।—**इन्द्र** (**गवेन्द्र**)–(पुं०) गौ का मालिक। उत्तम साँड़।—**उद्ध** (**गवोद्ध**)–(पुं०) उत्तम साँड़ या गाय।

गवय—(पुं०) [गाम् सादृश्येन अयते, गो√अय्+अच्] गौ जाति का एक पशु, नीलगाय का नर; 'पृष्टः कथञ्चिद्गवयैर्विविग्नैः' कु० १.५६।

गवल—(पुं०) [गवं शब्दं लाति, गव√ला+क] जङ्गली भैंसा। (न०) भैंसे का सींग, 'गवलासितकान्ति' शि० २०.१२।

गवालूक—(पुं०) [गवाय शब्दाय अलति, गव√अल्+ऊकञ्] दे० 'गवय'।

गविनी—(स्त्री०) [गो+इनि—ङीप्] गौओं की हेड़ या झुंड।

गवी—(स्त्री०) गाय। वाणी।

गवेडु, गवेधु–(पुं०), **गवेधुका**–(स्त्री०) [गवे दीयते,गो√दा+क, पृषो० ह्रस्व डः, अलुक् स०] [गवे धीयते, गो√धा+कु, अलुक् स०] [गवेधु+कन्—टाप्] मवेशियों के खाने योग्य एक घास।

गवेरुक—(न०) [गां भूमिम् ईर्ते उत्पत्तौ प्राप्नोति, गो √ईर्+उकञ्] गेरू, लाल खड़िया।

√गवेष्—चु० आत्म० सक० तलाश करना,

खोजना, ढूँढ़ना । अक० उद्योग करना । कड़ा परिश्रम करना । गवेषयते, गवेषयिष्यते, अजगवेषत ।

गवेष—(वि०) [√गवेष्+अच्] खोज करने वाला । (पुं०) [√गवेष्+घञ्] ढूँढ़ना, खोज, तलाश ।

गवेषण, गवेषणा—[√गवेष् + ल्युट्] [√गवेष्+णिच्+युच्—टाप्] किसी वस्तु की खोज, तलाश ।

गवेषित—(वि०) [√गवेष्+क्त] ढूंढ़ा हुआ, तलाश किया हुआ, अनुसंधान किया हुआ ।

गव्य—(वि०) [गो+यत्] गौ या मवेशियों से युक्त । गौ से उत्पन्न, यथा—दूध, दही, मक्खन आदि । मवेशियों के योग्य या उनके लिये उपयुक्त ।—(न०) गौओं की हेड़ या रौहर । गोचरभूमि । गौ का दूध । पीला रङ्ग या रोगन ।

गव्या—(स्त्री०) [गव्य+टाप्] गौओं की हेड़ । दो कोस की दूरी का माप । धनुष की डोरी । हरताल ।

गव्यूत—(न०), **गव्यूति**–(स्त्री०) [गव्यूति पृषो० साधुः][गोः यूतिः] माप विशेष जो एक कोस या दो मील के बराबर होता है । माप जो दो कोस या चार मील के बराबर होता है ।

√**गह्**—चु० उभ० अक० (वन की तरह) घना होना, सघन होना । अप्रवेश्य या अप्रवेशनीय होना । गहयति-ते, गहयिष्यति-ते, अजगहत्-त ।

गहन—(वि०) [√गह्+ल्यु] गहरा । सघन, घना । अप्रवेश्य जिसमें कोई घुस या पैठ न सके, अगम्य । क्लिष्टता पूर्वक समझने योग्य, दुरधिगम्य । क्लिष्ट, कठिन; 'गहना कर्मणो गतिः' भग० ४.१८ । पीड़ा या दुःख देने वाला । प्रचण्ड । (न०) [√गह् +ल्युट्] गहराई । ऐसा सघन वन जिसमें कोई घुस न सके । छिपने की जगह । गुफा । पीड़ा, कष्ट ।

गह्वर—(वि०) [√गह्+वरच्][स्त्री०—**गह्वरी**] अप्रवेश्य । (न०) अतल-स्पर्श गर्त । गहराई । वन, जङ्गल । गुफा । अगम्य स्थान । छिपने का स्थान । पहेली । दम्भ, पाखंड । रोदन, क्रन्दन । (पुं०) लता-मण्डप, निकुञ्ज ।

गह्वरी—(स्त्री०)[गह्वर—ङीष्]गुफा, कन्दरा ।

गा—भ्वा० आत्म० सक० जाना । गाते, गास्यते, अगास्त । जु० पर० सक० स्तुति करना । जिगाति, गास्यति, अगासीत् ।

गा—(स्त्री०) [√गै+क्विप्] गीत, भजन ।

गाङ्ग—(वि०) [गङ्गा+अण्] [स्त्री०—**गाङ्गी**] गङ्गा से उत्पन्न या गङ्गा का । (न०) आकाश-गङ्गा का जल । [लोगों का विश्वास है कि जब सूर्य के देखते-देखते जल की वृष्टि होती है तब वह आकाश-गंगा का जल होता है] । सुवर्ण, सोना । (पुं०) भीष्म । कार्तिकेय ।

गाङ्गट, गाङ्गटेय—(पुं०) [गाङ्ग√अट्+अच्, शक० पररूप] [गाङ्ग√अट्+अच्, पृषो० साधुः] झींगा मछली ।

गाङ्गायनि—(वि०) [गङ्गा+फिञ्—आयन] भीष्म । कार्तिकेय ।

गाङ्गेय—(वि०) [गङ्गा+ढक्][स्त्री०—**गाङ्गेयी**] गङ्गा का या गङ्गा में स्थित । (न०) सुवर्ण, सोना । (पुं०) भीष्म । कार्तिकेय ।

गाजर—(न०) [गार्ज मद राति, गार्ज√रा +क] एक मीठा मूल जो कच्चा और अचार-मुरब्बे आदि के रूप में भी खाया जाता ।

गाढ—(वि०) [√गाह्+क्त] डूबा हुआ, गोता लगाया हुआ । गहरा घुसा हुआ । सघन बसा हुआ । अत्यन्त दबा हुआ । मूँदा हुआ, बन्द । पक्का कसा हुआ । सघन, घना । गहरा, अगम्य । मजबूत, दृढ़ । उग्र, प्रचण्ड । अत्यन्त, अतिशय । अपरिमित ।—**मुष्टि**—(वि०) बद्धमुष्टि, कञ्जूस, मक्खीचूस । (स्त्री०) तलवार ।

गाढम्—(अव्य०) अतिशयता से। पुख्ता से, दृढ़ता से।

गाणपत—(वि०) [गणपति+अण्] [स्त्री०—**गाणपती**] किसी दल के नायक से संबंध रखने वाला। गणेश सम्बन्धी।

गाणपत्य—(न०) [गणपति+ष्य] गणेश की पूजा या आराधना। मुखियापन, सरदारी। (पु०) गणेश का उपासक।

गाणिक्य—(न०) [गणिका+ष्यञ्] वेश्या या रंडियों का समूह।

गाणेश—(पु०) [गणेश+अण्] गणेश का उपासक।

गाण्डिव—(पु०), **गाण्डीव**—(न०) [गाण्डिः ग्रन्थिः अस्य अस्ति, गाण्डि+व, वैकल्पिक पूर्वदीर्घ] अर्जुन के धनुष का नाम; 'गाण्डीवं स्रंसते हस्तात्' भग० १.२९। असल में यह धनुष सोम ने वरुण को और वरुण ने अग्नि को दिया था। खाण्डववनदाह के समय यह अर्जुन को अग्नि द्वारा प्राप्त हुआ था। धनुष।—**धन्वन्**—(पु०) अर्जुन।

गाण्डीविन्—(पुं०) [गाण्डीव+इनि] अर्जुन।

गातागतिक—(वि०) [गतागत+ठक्] आने-जाने के कारण उत्पन्न।

गतानुगतिक—(वि०) [गतानुगत+ठक्] [स्त्री०—**गातानुगतिकी**] अन्ध अनुयायी या पुरानी लकीर का फकीर बनने के कारण पैदा हुआ।

गातु—(पुं०) [√गै+तुन्] भजन। गीत। गवैया। गन्धर्व। कोयल। भौंरा।

गातृ—(पुं०) [√गै+तृच्] [स्त्री०—**गात्री**] गवैया। गन्धर्व।

गात्र—(न०) [गम्+त्रन्, आकार आदेश] देह। अंग। हाथी के अगले पैर का ऊपरी भाग।—**अनुलेपनी** (**गात्रानुलेपनी**)—(स्त्री०) उबटना।—**आवरण** (**गात्रावरण**) (न०) कवच। ढाल।—**उत्सादन** (**गात्रोत्सादन**)—(न०) तेल-उबटन लगा कर शरीर को साफ करना।—**कर्षण**—(न०) शरीर का कमजोर होना।—**मार्जनी**—(स्त्री०) तौलिया। अँगोछा।—**यष्टि**—(स्त्री०) लटा, दुबला शरीर।—**रुह**—(न०) रोंगटा, रोम।—**लता**—(स्त्री०) छरहरा बदन।—**विन्द**—(पु०) लक्ष्मणा के गर्भ से उत्पन्न कृष्ण के एक पुत्र का नाम।—**सङ्कोचिन्**—(पु०) साही। जोंक।—**सम्प्लव**—(पु०) गोताखोर पक्षी।—**सम्मित**—(वि०) तीन महीने से ऊपर का (भ्रूण)।—**सौष्ठव**—(न०) देह, अंगों की सुघड़ाई।

गाथ—(पु०) [√गै+थन्] गीत। भजन।

गाथक, गाथिक—(पु०) [√गै+थकन्] [गाथ+ठन्] गवैया। पुराणों या धर्म-कथाओं को गाकर पढ़ने वाला।

गाथा—(स्त्री०) [गाथ+टाप्] छन्द। वेद से भिन्न छन्द। श्लोक। गीत। प्राकृत भाषा का एक भेद।—**कार**—(पु०) गाथा-रच-यिता। गायक।

गाथिका—(स्त्री०) [गाथा+कन्—टाप् ह्रस्व] गीत। भजन।

√**गाध्**—भ्वा० आत्म० अक० स्थगित होना, रुक जाना। रवाना होना। घुसना; 'गाधितासे नभोभूयः' भट्टि० २२.२। गोता लगाना। सक० पाने की इच्छा करना। ढूंढ़ना। बटोर-जोड़ कर एकत्र करना। गूँथना। गाधते, गाधिष्यते, अगाधिष्ट।

गाध—(वि०) [√गाध्+घञ्] पार होने योग्य, उथला। गम्य। (न०) उथली जगह, वह जगह जहाँ जल कम हो और पैदल ही लोग पार हो जायँ। स्थान। लाभेच्छा, लिप्सा। तली, तल।

गाधि, गाधिन्—(पु०) [√गाध्+इन्] [गाध+इनि] विश्वामित्र के पिता का नाम।—**ज**,—**नन्दन**,—**पुत्र**—(पु०) विश्वामित्र।—**नगर**,—**पुर**—(न०) आधुनिक कन्नौज या कान्यकुब्ज देश का नाम।

गाथेय—(पु०) [गाधि+ढक्] विश्वामित्र का नाम ।

गान—(न०) [√गै+ल्युट्] गीत । भजन ।

गान्त्री—(स्त्री०) [गन्त्री+अण्—ङीप्] बैलगाड़ी ।

गान्दिनी—(स्त्री०) [गो√दा + णिनि, पृषो० साधुः] गङ्गा । स्वफल्क की माता और अक्रूर की पत्नी का नाम ।—**सुत** (पु०) भीष्म । कार्त्तिकेय । अक्रूर ।

गान्धर्व—(वि०) [गन्धर्व+अण्] [स्त्री० —**गान्धर्वी**] गन्धर्व सम्बन्धी । (न०) गन्धर्वों की कला । जैसे सङ्गीत आदि; 'कापि वेला चारुदत्तस्य गान्धर्वं श्रोतुं गतस्य' मृ० ३ । (पु०) गवैया । देवगायक । आठ प्रकार के विवाहों में से एक । उपवेद जो सामवेद के अन्तर्गत माना गया है । घोड़ा । —**शाला**-(स्त्री०) सङ्गीतालय ।

गान्धर्वक, गान्धर्विक-(प०) [गान्धर्व+कन्] [गन्धर्व+ठक्] गवैया ।

गान्धार—(पु०) [गन्ध+अण्, गान्ध√ऋ +अण्] सङ्गीत के सप्तस्वरों में से तीसरा । सरगम (सा रे ग म प) का तीसरा वर्ण । गेरू । भारत और फारस के बीच का देश, आधुनिक कंधार । कंधार देश का शासक या अधिवासी ।

गान्धारि—(पुं०) [गन्ध+अण्, गान्ध √ऋ+इन्] दुर्योधन के मामा शकुनि की उपाधि ।

गान्धारी—(स्त्री०) [गान्धार+अण्—ङीप् धृतराष्ट्र की पत्नी और दुर्योधनादि कौरवों की जननी ।

गान्धारेय—(पुं०) [गान्धारी+ढक्] दुर्योधन की उपाधि ।

गान्धिक—(पु०) [गन्ध+ठक्] गंधी, इतर-फुलेल बेचने वाला । लेखक । मुहर्रिर । (न०) इतर-फुलेल आदि सुगन्ध-द्रव्य ।

गामिन्—(वि०) [√गम्+णिनि] [समास के अन्त में आने वाला] जाने वाला; 'द्वितीयगामी नहि शब्द एष नः' र० ३।४९। घूमने वाला । सवार होने वाला । सम्बन्धी, सम्बन्ध रखने वाला ।

गामुक—(वि०) [√ गम्+उकञ्] जाने वाला ।

गाम्भीर्य—(पु०) [गम्भीर+ष्यञ्] गहराई, गंभीरता ।

गाय—(पु०) [√गै+घञ्] गान, गीत । भजन ।

गायक—(पु०) [√गै+ण्वुल्] गवैया ।

गायत्र—(पु०, न०) [गायत्री+अण्] वैदिक छन्द विशेष जिसमें २४ अक्षर होते हैं । एक परम पवित्र एवं ब्राह्मणों द्वारा उपास्य वैदिक मंत्र, जिसकी उपासना किये बिना ब्राह्मण में ब्राह्मणत्व ही नहीं आता ।

गायत्रिन्—(वि०) [गायत्र+इनि] [स्त्री० —**गायत्रिणी**] सामवेद के मंत्रों को गाने वाला ।

गायत्री—(स्त्री०) [गायन्तं त्रायते, गायत् √त्रै+क] वेदमाता, द्विजों का उपास्य एक वैदिक मंत्र । दुर्गा । गंगा ।

गायन—(पु०) [√गै+ल्यु] [स्त्री०—**गायनी**] गवैया । आजीविका के लिये गान-विद्या का अभ्यास करने वाला । [√गै+ल्युट्] गाना ।

गारित्र—(न०)[√गॄ+णित्रन्] अन्न । चावल ।

गारुड—(वि०) [गरुड+अण्] [स्त्री०—**गारुडी**] गरुड़ के आकार का । गरुड़-सम्बन्धी । गरुडोत्पन्न । (प०, न०) पन्ना । सर्पों को वशीभूत करने का मंत्र विशेष । गरुड़-मंत्र से अभिमंत्रित अस्त्र । सोना, सुवर्ण ।

गारुडिक—(पु०) [गारुड+ठक्] ऐन्द्र-जालिक, जादूगर । जहरमोहरा बेचने वाला, विषवैद्य ।

गारुत्मत—(वि०) [गरुत्मत्+अण्]

[स्त्री०—गारुत्मती] गरुड़ के आकार का। गरुड़ के मंत्र से अभिमंत्रित (अस्त्र)। (न०) पन्ना।

गार्दभ—(वि०) [गर्दभ+अण्] [स्त्री०—**गार्दभी**] गधे का या गधे से उत्पन्न।

गार्ध्य—(न०) [गर्ध+ष्यञ्] लालच, लोभ; 'पीत्वा जलानां निधिनातिगार्ध्यात्' शि० ३.३७।

गार्ध्र—(वि०) [गृध्र+अण्] [स्त्री०—**गार्ध्री**] गीध से उत्पन्न। (पुं०) लोभ, लालच। तीर, बाण।—**पक्ष**,—**वासस्**-(पुं०) गीध के परों से युक्त तीर।

गार्भ—(वि०) [स्त्री०—**गार्भी**], **गार्भिक**-(वि०) [स्त्री०—**गार्भिकी**] [गर्भ+अण्] [गर्भ+ठञ्] गर्भाशय सम्बन्धी। भ्रूण सम्बन्धी।

गार्भिणी, **गर्भिण्य**—(न०) [गर्भिणी+अण्] [प्रामादिक: पाठ:] कई एक गर्भवती स्त्रियाँ।

गार्हपत—(न०) [गृहपति+अण्] गृहस्थ का पद और उसका गौरव।

गार्हपत्य—(पुं०) [गृहपति+ञ्य] अग्निहोत्र का अग्नि। तीन प्रकार के अग्नियों में से एक। वह स्थान जहाँ यह पवित्र अग्नि रखा जाय। (न०) गृहस्थ का पद और गौरव।

गार्हमेध—(वि०) [गृह+अण्, गार्ह—मेध कर्म० स०] [स्त्री०—**गार्हमेधी**] गृहस्थ के योग्य या गृहस्थ के उपयुक्त। (पुं०) गृहस्थ के नित्य अनुष्ठेय पञ्चयज्ञ।

गालन—(न०) [√गल्+णिच्+ल्युट्] (किसी पनीली वस्तु को) छानना। पिघलाना।

गालव—(पुं०) [√गल्+घञ्, तं वाति, √वा+क] लोध्र वृक्ष। आबनूस विशेष। विश्वामित्र के एक शिष्य का नाम। पाणिनि के पूर्ववर्ती एक वैयाकरण।

गालि—(स्त्री०) [√गल्+इञ्] गाली, अपशब्द, कुवाक्य; 'ददतु ददतु गालीर्गालिमन्तो भवन्त:'।

गालित—(वि०) [√गल्+णिच्+क्त] छाना हुआ। चुआया हुआ, (अर्क की तरह) खींचा हुआ। पिघलाया हुआ।

गालोड्य—(न०) [गलोड्य+अण्] कमल गट्टा या कमल का बीज।

गावल्गणि—(स्त्री०) [गवल्गण+इञ्] सञ्जय की उपाधि, गवल्गण का पुत्र।

√गाह्—भ्वा० आत्म० अक० गोता लगाना, स्नान करना। घुसना। पैठना। घूमना-फिरना। गड़बड़ करना, उथल-पुथल करना। लीन होना, तन्मय होना। सक० मथना। हिलाना-डुलाना। अपने को छिपाना। नष्ट करना। गाहते, गाहिष्यते,—घाक्ष्यते, अगाहिष्ट,—अगाढ।

गाह—(पुं०) [√गाह्+घञ्] डुबकी, गोता, स्नान। गहराई।

गाहन—(न०) [√गाह्+ल्युट्] गोता या डुबकी लगाने की क्रिया, स्नान।

गाहित—(वि०) [√गाह्+क्त] स्नान किया हुआ, डुबकी लगाया हुआ। घुसा हुआ।

गिन्दुक—(पुं०) [गेन्दुक पृषो० साधु:] खेलने का गेंद। गेंदुक नामक वृक्ष विशेष।

गिर्—(स्त्री०) [√गृ+क्विप्] वाणी। शब्द। भाषा। स्तव। संसार। गीत। भजन। विद्या की अधिष्ठात्री देवी श्रीसरस्वती।—**पति**-(पुं०) [**गी:पति**, **गीष्पति**, और **गीर्पति**) बृहस्पति अर्थात् देवाचार्य। विद्वान्, पंडित।—**रथ** (**गीरथ**)—बृहस्पति का नाम।—**वाण**,—**बाण**-(पुं०) (**गीर्वाण**) देवता।

गिरा—(स्त्री०) [गिर्+टाप्] दे० 'गिर्'।

गिरि—(पुं०) [√गृ+कि] पहाड़, पर्वत। संन्यासियों की एक उपाधि। आँख का एक रोग। पारे का एक दोष। गेंद। बादल। आठ की संख्या। (स्त्री०) चुहिया। निगलना, लीलना।—**इन्द्र** (**गिरीन्द्र**)-(पुं०) ऊँचा

पहाड़ । शिव । हिमालय ।—**ईश** (गिरीश) –(पुं०) हिमालय, शिव ।—**कच्छप**–(पुं०) पहाड़ी कछुआ ।—**कण्टक**–(पुं०) इन्द्र का वज्र ।—**कदम्ब** (पुं०)—**कदम्बक**–(पुं०) कदम्ब वृक्ष की एक जाति ।—**कन्दर**–(पुं०) गुफा ।—**कर्णिका**–(स्त्री०) पृथिवी ।—**काण** –(वि०) जिसकी एक आँख गिरि रोग से नष्ट हो गई हो ।—**कानन**–(न०) पहाड़ी छोटा वन ।—**कूट**–(न०) पर्वतशिखर ।—**गङ्गा**–(स्त्री०) पहाड़ से निकलने वाली एक नदी ।—**गुड**–(पुं०) गेंद । गोला ।—**गुहा**–(स्त्री० पहाड़ी गुफा या कंदरा ।—**चर**–(पुं०) पर्वतवासी । चोर ।—**ज**–(वि०) पहाड़ से उत्पन्न । (न०) अबरक । गेरू । लोबान । रत्न । लोहा ।—**जा**–(स्त्री०) पार्वती देवी । पहाड़ी केला । मल्लिका लता । गङ्गा ।—**०तनय**,—**०नन्दन**, —**०सुत**– (पुं०) कार्तिकेय । गणेश ।—**०पति**–(पुं०) शिव ।—**०अमल** (**गिरिजामल**)–(न०) अबरक ।—**जाल**–(न०) पहाड़ की पंक्ति या सिलसिला ।—**ज्वर**–(पुं०) इन्द्र का वज्र ।—**दुर्ग**–(न०) पहाड़ी किला ।—**द्वार**–(न०) घाटी ।—**धातु**–(पुं०) गेरू ।—**ध्वज**–(न०) इन्द्र का वज्र ।—**नगर**–(न०) दक्षिणापथ के एक नगर का नाम ।—**णदी**–(स्त्री०) (नदी) पहाड़ी चश्मा ।—**णद्ध**–(नद्ध) (वि०) पहाड़ों से घिरा हुआ ।—**नन्दिनी**–(स्त्री०) पार्वती । गङ्गा । कोई भी (पहाड़ी) नदी । यथा—'कलिन्दगिरिनन्दिनीतटसुरद्रुमालंबिनी' भामिनीविलास ।—**णितम्ब** –(नितम्ब)–(पुं०) पहाड़ का ढाल ।—**निम्ब**–(पुं०) बकायन ।—**पीलु**–(पुं०) एक फलदार वृक्ष, फालसा ।—**पुष्पक**–(न०) शिलाजीत । पत्थर-फोड़ ।—**पृष्ठ**–(पुं०) पहाड़ की चोटी ।—**प्रपात**–(पुं०) पहाड़ की ढाल ।—**प्रस्थ**–(पुं०) पहाड़ के ऊपर का चौरस मैदान ।—**भिद्**–(पुं०) इन्द्र ।—**भू**–(वि०) पहाड़ से उत्पन्न (स्त्री०) श्री गङ्गा । पार्वती ।—**मल्लिका**–(स्त्री०) कुटजवृक्ष ।—**मान**–(पुं०) विशाल और अतिबलिष्ठ हाथी ।—**मृद्**–(स्त्री०) **०भव**–(न०) गेरू ।—**राज्**,—**राज**–(पुं०) हिमालय ।—**व्रज**–(न०) मगध के एक नगर का नाम ।—**शाल**–(पुं०) एक प्रकार का बाज पक्षी ।—**शृङ्ग**–(पुं०) गणेश की उपाधि । (न०) पर्वत-शिखर ।—**षद्**,–(सद्) (पुं०) शिव ।—**सानु**–(न०) पठार, अधित्यका ।—**सार**–(पुं०) लोहा । जस्ता । मलयपर्वत की उपाधि ।—**सुत**–(पुं०) मैनाक पर्वत ।—**सुता**–(स्त्री०) पार्वती ।—**स्रवा**–(स्त्री०) पहाड़ी नदी, पहाड़ी चश्मा जो बड़े वेग से बहे ।

गिरिक, गिरियक, गिरियाक—(पुं०) [गिरि √कै+क] [गिरि √या+कन्+कन्] [गिरि √या+क्विप्+कन्] शिव । गेंद ।

गिरिका—(स्त्री०) [गिरि+कन्—टाप्] चुहिया, छोटा चूहा ।

गिरिश—(पुं०) [गिरि √शी+ड, अथवा गिरि+श]शिव; 'गिरिशमुपचचार प्रत्यहं सा सुकेशी' कु० १.६० ।

गिल—(पुं०) [√गृ+क, इत्व, लकार] मगर । जंबीरी नीबू । (वि०) भक्षक, निगलने वाला ।—**गिल**–[गिल √गिल्+क],—**ग्राह**–[गिल √ग्रह्+अण्] –(पुं०) घड़ियाल ।

गिलन—(न०) [√गृ+ल्युट्, इत्व, लकार] निगलना, खा डालना ।

गिलायु—(पुं०) गले की कड़ी गिल्टी ।

गिलित, गिरित—(वि०) [√गृ+क्त] (भावे) —गिल (र)=भक्षण,+इतच्] खाया हुआ, निगला हुआ ।

गिष्णु, गेष्णु—(पुं०) [√गै+इष्णुच्, आकारलोपः, पक्षे आकारलोपाभावः] गवैया, सामवेद गाने वाला ब्राह्मण ।

गीत—(वि०) [√गै+क्त] गाया हुआ ।

वर्णित, कथित ।—अयन (गीतायन) (न०) गीत का साधन, वीणा आदि ।—क्रम-(पुं०) किसी गीत का गानक्रम, स्वरों का उतार-चढ़ाव । एक तरह की तान ।—गोविन्द-(पुं०) जयदेव-रचित एक प्रसिद्ध गीतकाव्य ।—ज्ञ-(वि०) गानविद्या में निपुण ।—प्रिय-(पुं०) शिव ।—मोदिन्-(पुं०) किन्नर ।—शास्त्र-(न०) सङ्गीत विद्या ।

गीतक—(न०) [गीत+कन्] गान । स्तोत्र ।

गीता—(स्त्री०) [गीत+टाप्] संस्कृत के कतिपय पद्यमय धार्मिक ग्रन्थों के नाम । जैसे रामगीता, भगवद्गीता, शिवगीता आदि ।

गीति—(स्त्री०) [√गै+क्तिन्] भजन, गीत, एक छन्द का नाम ।

गीतिका—(स्त्री०) [गीति√कै+क—टाप्] छोटा भजन । गान ।

गीतिन्—(वि०) [गीत+इनि] [स्त्री०—गीतिनी] जो गाने की ध्वनि में पढ़ता हो । ऐसा पढ़ने वाला अधम माना गया है । यथा—'गीती शीघ्री शिरःकंपी तथा लिखित-पाठकः ।'—शिक्षा ।

गीर्ण—(वि०) [√गृ+क्त] निगला हुआ, खाया हुआ । प्रशंसित ।

गीर्णि—(स्त्री०) [√गृ+क्तिन्] प्रशंसा । कीर्ति । भक्षण, निगलना ।

√गु—भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना । गवते, गोष्यते, अगोष्ट । तु० पर० अक० विष्ठोत्सर्ग करना । गुवति, गुष्यति, अगुषीत् ।

गुग्गुल, गुग्गुलु—(पुं०) [√गुज्+क्विप्—गुक् रोगः ततो गुडति रक्षति, गुक्√गुड्+क, डस्य लकारः] [गुक्√गुड्+कु, डस्य लकारः] एक प्रकार का सुगन्ध पदार्थ । गूगुल ।

गुच्छ—(पुं०) [√गु+क्विप्—गुत्, तं स्यति, गुत्√षो+क] गुच्छा । फूलों का गुच्छा, गुलदस्ता, मयूरपंख । मुक्ताहार । ३२ या ७० लरों की मोतियों की माला ।—अर्ध (गुच्छार्ध)-(पुं०) २४ लरों की मोतियों की माला । (न०) आधा गुच्छा ।—कणिश-(पुं०) अन्नविशेष, रागी धान ।—पत्र-(पुं०) खजूर का पेड़ । ताड़ का पेड़ ।—फल-(पुं०) पेकूर । केले का पेड़ । मकोय । रीठा ।—फला—(स्त्री०) अग्निदमनी । द्राक्षा । कदली । काकमाची ।—मूलिका—(स्त्री०) एक घास, गुंडासिनी ।

गुच्छक—(पुं०) [गुच्छ+कन्] गुच्छा ।

√गुज्—तु० पर० अ० शब्द करना । गुजति, गुजिष्यति, अगुजीत् ।

गुञ्ज—(पुं०) [√गुज्+क] गुनगुनाहट, भिनभिनाहट । पुष्पगुच्छ, गुलदस्ता ।—कृत् -(पुं०) भौंरा ।

√गुञ्ज्—भ्वा० पर० अक० गूंजना, गुनगुनाना । गुञ्जति, गुञ्जिष्यति, अगुञ्जीत् ।

गुञ्जन—(न०) [√गुञ्ज्+ल्युट्] धीरे-धीरे बोलना, गुनगुनाना ।

गुञ्जा—(स्त्री०) [√गुञ्ज्+अच्—टाप्] घुंघची का झाड़ । धीमी आवाज, गुनगुनाहट । ढोल । मदिरा की दुकान । ध्यान ।

गुञ्जिका—(स्त्री०) [गुञ्जा+कन्—टाप्, इत्व] घुंघची का दाना ।

गुञ्जित—(न०) [√गुञ्ज्+क्त] गुंजार, गुनगुनाहट ।

गुटिका—(स्त्री०) [√गु+टिक्—गुटि+कन्—टाप्] गोली । गोल स्फटिक, स्फटिक की गुरिया । गोला या गेंद । रेशम का कोया । मोती ।—अञ्जन-(न०) सुर्मा विशेष ।

गुटी—(स्त्री०) [गुटि+ङीष्] दे० 'गुटिका' ।

√गुड्—तु० पर० सक० बचाना । गुडति, गुडिष्यति, अगुडीत् ।

गुड—(पुं०) [√गुड्+क] ईख या ताड़-खजूर के रस को गाढ़ा करके बनाई हुई बट्टी या भेली । गोला, गेंद । कौर । हाथी का

कवच या जिरहबख्तर ।—**उदक (गुडोदक)**–(न०) गुड़ या सीरे का शरबत ।—**उद्भवा (गुडोद्भवा)**–(स्त्री०) चीनी । शक्कर ।—**ओदन (गुडौदन)**–(न०) मीठा भात ।—**तृण**–(न०)—**दारु**–(पुं०, न०) गन्ना, ऊख ।—**त्वचा**–(स्त्री०) दारचीनी ।—**धेनु**–(स्त्री०) दान के लिये बनाई हुई गुड़ की गाय ।—**पर्वत**–(पुं०) दान के लिये गुड़ का बनाया हुआ पहाड़ ।—**पाक**–(पुं०) गुड़ की चाशनी में डालकर ओषधि बनाने की प्रक्रिया । उस प्रक्रिया से बनी औषधि ।—**पुष्प**–(पुं०) महुआ ।—**फल**–(पुं०) पीलू का पेड़ ।—**शर्करा**–(स्त्री०) चीनी ।—**शृङ्ग**–(न०) कलश ।—**हरीतकी**–(स्त्री०) शीरे में पकी हुई हर्र अर्थात् हर्र का मुरब्बा ।

गुडक—(पुं०) [गुड+कन्] गोलाकार पदार्थ गेंद । गुड़ । गुड़-पक्व औषधि ।

गुडल—(न०) [गुडं कारणतया लाति, गुड √ला√क] मदिरा, शराब, वह शराब जो शीरे से खींची गयी हो ।

गुडा—(स्त्री०) [गुड+टाप्] कपास का पौधा । गोली ।

गुडाका—(स्त्री०) [गुडयति संकोचयति देहेन्द्रियादीनि स गुडः तम् आकाति प्रकाशयति, गुड–आ√कै+क–टाप्] सुस्ती । निद्रा ।—**ईश (गुडाकेश)**–(वि०) नींद को वश में करने वाला । (पुं०) अर्जुन; 'मम देहे गुडाकेश यच्चान्यद् द्रष्टुमिच्छसि' भग० ११.७ । शिव ।

गुडगुडायन—(वि०) [गुडगुड इत्येवम् अयनं यस्य, ब० स०] जिससे गुडगुड का शब्द हो ।

गुडेर—(पुं०) [√गुड्+एरक्] गेंद । गोला । कौर, ग्रास ।

√गुण्—चु० उभ० सक० गुणा करना । सलाह देना । आमन्त्रण देना, न्योतना । गुणयति–ते, गुणयिष्यति–ते, अजूगुणत्–त ।

गुण—(पुं०) [√गुण्+अच्] सिफत (अच्छी या बुरी) । भलाई । सुकृति । उत्तमता । ख्याति । उपयोग । लाभ । प्रभाव । परिणाम । शुभ परिणाम । डोरा । रस्सा । धनुष की प्रत्यञ्चा; 'कनकपिङ्गतडिद्गुणसंयुतं' र० ९.५४ । बाजे की डोरी । नस । लक्षण । प्रकृति का धर्म—सत्त्व, रजस्, तमस् । सूत की बत्ती । तन्तु । इन्द्रियजन्य विषय (यथा रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्द) । पुनरावृत्ति, गुना, यथा दसगुना । बार, यथा दस बार । गौण । आधिक्य । विशेषण । इ, उ, ऋ और लृ के स्थान में ए, ओ, अर् और अल् का आदेश । काव्यालंकार-शास्त्र में मम्मट ने गुण की परिभाषा यह दी है :—'ये रसस्याङ्गिनो धर्माः शौर्यादय इवात्मनः, उत्कर्षहेतवस्ते स्युरचलस्थितयो गुणाः' । नीति में राजा के लिए ६ गुण बतलाये हैं । यथा—सन्धि, विग्रह, यान, स्थान, आसन, संश्रय और द्वैध या द्वैधीभाव । तीन की संख्या । वृत्तांश की प्रान्तद्वय-संयोजक सरल रेखा । ज्ञानेन्द्रिय । पाचक भीम की उपाधि । त्याग । विराग ।—**कार**–(पुं०) कुशल रसोइया जो हर प्रकार के व्यञ्जन बना सके । भीम की उपाधि ।—**ग्राम**–(पुं०) सद्गुणों का समूह ।—**त्रय**,—**त्रितय**–(न०) सत्त्व, रजस्, तमस् ।—**लयनिका**,—**लयनी**–(स्त्री०) तम्बू, खीमा ।—**वृक्ष**,—**वृक्षक**–(पुं०) मस्तूल या वह खंभा जिससे जहाज या नाव बाँध दी जाती है ।—**शब्द**–(पुं०) विशेषण ।—**सागर**–(पुं०) अच्छे गुणों का समुद्र, अत्यन्त गुणवान् पुरुष । ब्रह्मा, परमात्मा ।

गुणक—(वि०) [√गुण्+ण्वुल्] हिसाब जोड़ने वाला या लगाने वाला । (पुं०) वह अंक जिससे गुणा करें । इन्द्रिय ।

गुणन—(न०) [√गुण्+ल्युट्] गुणा । गिनती । किसी के सद्गुणों का बखान ।

गुणनिका—(स्त्री०) [√गुण्+युच्+कन्] अध्ययन । पुनरावृत्ति । नृत्य या नृत्यकला ।

(नाटक की) प्रस्तावना । माला, हार । शून्य, सिफर ।

गुणनीय—(वि०) [√गुण्+अनीयर्] गुणा करने योग्य । गिनने योग्य । परामर्श देने योग्य । (पुं०) अध्ययन । अभ्यास ।

गुणवत्—(वि०) [गुण+मतुप्] गुण वाला, गुणी ।

गुणा—(स्त्री०) [√गुण्+अच्+टाप्]दूब ।

गुणिका—(स्त्री०) [√गुण्+इन्+कन्—टाप्] गुमड़ी, गिल्टी ।

गुणित—(वि०) [√गुण्+क्त] गुणा किया हुआ । ढेर लगाया हुआ, जमा किया हुआ । गिना हुआ ।

गुणिन्—(वि०) [गुण+इनि] गुणों से युक्त, गुणवान् । नेक । शुभ । किसी के गुणों से परिचित । मुख्य ।

गुणीभूत—(वि०) [अगुणो गुणो भूतः, गुण+च्वि√भू+क्त] महत्त्वपूर्ण अर्थ से वञ्चित । गौण गुणों से युक्त ।—**व्यङ्ग्य**—(न०) अलङ्कार में कहा हुआ मध्यम काव्य ।

√गुण्ठ्—चु० पर० सक० घेरना, चारों ओर से छेंक लेना । लपेटना । ढकना । गुण्ठयति—गुण्ठति, गुण्ठयिष्यति— गुण्ठिष्यति, अजुगुण्ठत्—अगुण्ठीत् ।

गुण्ठन—(न०) [√गुण्ठ्+ल्युट्] ढकना । छिपाना । (शरीर में) मलना । जैसे शरीर में भस्म मलना ।

गुण्ठित—(वि०) [√गुण्ठ्+क्त] घिरा हुआ । ढका हुआ । पिसा हुआ, चूर्ण किया हुआ ।

√गुण्ड्—चु० पर० सक० ढकना । छिपाना । पीसना, चूर्ण करना । गुण्डयति—गुण्डति (√गुण्ठ् की तरह) ।

गुण्ड—(पुं०) [√गुण्ड्+अच्] चूर्ण । कसेरू ।

गुण्डक—(पुं०) [गुण्ड+कन्] रज । चूर्ण । तैलभाण्ड । धीमा मधुर स्वर ।

गुण्डिक—(पुं०) [गुण्ड+ठन्] आटा । भोजन । चूर्ण ।

गुण्डित—(वि०) [गुण्ड्+क्त] पिसा हुआ । धूलधूसरित ।

गुण्य—(वि०) [√गुण्+यत्] गुणी, गुणवान् । बखानने योग्य । प्रशंसनीय । गुणा करने योग्य ।

गुत्स—(पुं०) [√गुध्+स] गुच्छा । चँवर । ग्रन्थ का परिच्छेद । ३२ लड़ियों का मुक्ताहार ।

गुत्सक—(पुं०) [√गुध्+स+कन्] गट्ठर । गुच्छा । चँवर । अध्याय । सर्ग ।

√गुद्—भ्वा० आत्म० अक० खेलना, क्रीड़ा करना । गोदते, गोदिष्यते, अगोदिष्ट ।

गुद—(न०) [√गुद्+क] गुदा, मलद्वार । —**अंकुर** (**गुदाङ्कुर**)—(पुं०) बवासीर । —**आवर्त** (**गुदावर्त**)—(पुं०) कोष्ठबद्धता । —**उद्भव** (**गुदोद्भव**) (पुं०) बवासीर ।—**ओष्ठ** (**गुदौष्ठ**)—(पुं०)गुदा का मुख ।—**कील, कीलक**—(पुं०) बवासीर ।—**ग्रह**—(पुं०) कब्जियत, कोष्ठबद्धता ।—**पाक**—(पुं०) गुदा की सूजन ।—**वर्त्मन्**—(न०) मलद्वार ।—**स्तम्भ**—(पुं०) कोष्ठबद्धता ।

√गुध्—क्रया० पर० सक० रोकना । गुध्नाति, गोधिष्यति, अगोधीत् । भ्वा० आत्म० अक० खेलना । गोधते, गोधिष्यते, अगोधिष्ट । दि० पर० सक० घेरना । लपेटना । गुध्यति, गोधिष्यति, अगोधीत् ।

गुन्दल—(पुं०) [गुन् इति शब्देन दल्यतेऽसौ, गुन्√ दल् + णिच् + अच्]मृदंग का शब्द ।

गुन्द्राल, गुन्द्रास—(पुं०) चातक पक्षी ।

√गुप्—भ्वा० आत्म० सक० निंदा करना । जुगुप्सते, जुगुप्सिष्यते, अजुगुप्सिष्ट । रक्षा करना । छिपाना । गोपते, गोपिष्यते, अगोपिष्ट । भ्वा० पर० सक० बचाना । गोपायति, गोपायिष्यति, —गोपिष्यति,—गोप्स्यति, अगोपायीत्, —अगोपीत्,—अगौप्सीत् ।

गुपिल—(पुं०) [√गुप्+इलच्] राजा। त्राता।

गुप्त—(वि०) [√गुप्+क्त] रक्षित। छिपा हुआ। गोप्य, छिपाने लायक। अदृश्य, आँखों से ओझल। जुड़ा हुआ या जोड़ा हुआ। (पुं०) वैश्य की उपाधि।—**कथा**–(स्त्री०) गुप्त सूचना, ऐसी सूचना जो प्रकट करने योग्य न हो।—**गति**–(पुं०) जासूस, भेदिया।—**चर**–(पुं०) जासूस। बलराम।—**दान**–(न०) अप्रकट दान।—**वेश**–(पुं०) बनावटी वेश।

गुप्तक—(पुं०) [गुप्त+कन्] दे० 'गुप्त'।

गुप्ता—(स्त्री०) [गुप्त+टाप्] परकीया नायिका के ६ भेदों में से एक, सुरति छिपाने वाली नायिका। रखेली। वैश्य स्त्री का उपनाम या वर्णसूचक उपाधि।

गुप्ति—(स्त्री०) [√गुप्+क्तिन्] रक्षण। संरक्षण। छिपाव, दुराव। ढकना। गुफा। बिल। जमीन में गढ़ा खोदना। किलाबन्दी, परकोटा। बन्दीगृह। नाव का निचला तला। रोकथाम।

√गुफ्, गुम्फ्—तु० पर० सक० गूँथना। (आत्म०)लिखना। रचना। गुफति–गुम्फति, गोफिष्यति – गुम्फिष्यति, अगोफीत्—अगुम्फीत्।

गुफित, गुम्फित—(वि०) [√गुफ्+क] [√गुम्फ्+क्त] गुथा हुआ। बाँधा हुआ। बुना हुआ।

गुम्फ—(पुं०) [√गुम्फ्+घञ्] गूँथना। संयुक्त करना। सजावट। मूँछ, गलमुच्छा। बाजूबंद।

गुम्फना—(स्त्री०)[√गुम्फ्+युच्] गूँथना। क्रमबद्ध करना। यथारीति शब्दयोजना करना। वाक्य की सुन्दर रचना।

√गुर्—दि० आत्म० सक० मारना। जाना। कष्ट देना। अक० प्रयत्न करना। गुर्यते, गोरिष्यते, अगोरिष्ट।

गुरण—(न०) [√गुर्+ल्युट्] प्रयत्न। सतत चेष्टा।

गुरु—(वि०)[गृणाति उपदिशति धर्मं गिरति अज्ञानं वा, यद्वा गीर्यते स्तूयते देवगन्धर्वादिभिः, √गृ+कु, उत्व] [तुलनात्मक—गरीयस्, गरिष्ठ] भारी, बोझिल। महान्। दीर्घ। महत्वपूर्ण। क्लिष्ट (असह्य)। प्रचण्ड। सम्मानित। गरिष्ठ जो शीघ्र न पचे। उत्तम। प्यारा। बहुद्धारी। (पुं०) पिता। बूढ़ा, बुजुर्ग। अध्यापक। मन्त्रदाता। प्रभु। अध्यक्ष। शासक। देवाचार्य, बृहस्पति। बृहस्पति ग्रह। किसी नये सिद्धान्त का प्रचारक। पुष्य नक्षत्र। द्रोणाचार्य। मीमांसकों में सिद्धान्त-विशेष के प्रवर्तक प्रभाकर। दो मात्राओं वाला वर्ण, दीर्घ अक्षर।—**अर्थ** (**गुर्वर्थ**)–(पुं०) अध्यापन का शुल्क, गुरुदक्षिणा; 'गुर्वर्थमाहर्तुमहं यतिष्ये' र० ५.७।—**उत्तम** (**गुरूत्तम**)–(पुं०) परमात्मा।—**कार**–(न०) पूजन, सम्मान।—**कुण्डली**–(स्त्री०) फलित ज्योतिष के अनुसार बनाया जाने वाला एक चक्र जिसके मध्य में बृहस्पति होते हैं।—**क्रम**–(पुं०) परम्परागत प्राप्त शिक्षा।—**जन**–(पुं०) बड़ा, बुजुर्ग, पूज्य पुरुष, माता, पिता, आचार्य आदि।—**तल्प**–(पुं०) गुरु की शय्या।—**तल्पग,**—**तल्पिन्**–(पुं०) गुरुपत्नी के साथ व्यभिचार करनेवाला, पाँच महापातकियों में से एक। सौतेली माता के साथ मैथुन करने वाला।—**दक्षिणा**–(स्त्री०) वह शुल्क जो गुरु को दिया जाय।—**दैवत**–(पुं०) पुष्यनक्षत्र।—**पाक**–(वि०) गरिष्ठ (पदार्थ)जो कठिनता से पचे।—**भ**–(न०) पुष्य नक्षत्र। कमान, धनुष।—**मर्दल**–(पुं०) ढोलक या मृदङ्ग।—**रत्न**–(न०) पुखराज।—**वर्तिन्,**—**वासिन्**–(पुं०) ब्रह्मचारी। विद्यार्थी, जो गुरु के पास या घर में रहे।—**वृत्ति**–(स्त्री०) ब्रह्मचारी का अपने गुरु के प्रति व्यवहार।—**व्यथ**–

(वि०) बहुत पीड़ित या शोकान्वित ।—सिंह-(पुं०) बृहस्पति के सिंह राशि पर आने से लगने वाला एक पर्व ।

गुरुक—(वि०) [गुरु+कन्] [स्त्री०—**गुरुकी**] कुछ थोड़ा हल्का । दीर्घ (छन्दः-शास्त्र) ।

गुरुत्व—(न०) [गुरु+त्व] बड़ाई । भारीपन ।

गुर्जर, गूर्जर—(पुं०) [गुरु√जृ+णिच्+अण्, पृषो० साधुः] गुजरात प्रान्त ।

गुर्विणी, गुर्वी—(स्त्री०) [गुरुः गर्भः अस्ति अस्याः, गुरु+इनि—ङीप्] [गुरु—ङीप्] गर्भवती स्त्री; 'गुर्विणी नानुगच्छन्ति न स्पृशन्ति रजस्वलाम्'।

गुल—(पुं०) [=गुड, डस्य लः] गुड़ ।

गुलुच्छ, गुलुञ्छ—(पुं०) [=गुच्छ, पृषो० साधुः] [√गुड्+क्विप्, डस्य लः, गुल √उञ्छ्+अण्] दस्ता, गुच्छा ।

गुल्फ—(पुं०) [√गल्+फक्, अकारस्य उकारः] एड़ी के ऊपर की गाँठ । टखना, घुट्टी ।

गुल्म—(न०, पुं०) [√गुड्+मक्, डस्य लकारः] झाड़ी । वृक्षों का झुरमुट । वन । प्रधान पुरुषों से युक्त रक्षकदल, जिसमें ९ हाथी, ९ रथ, २७ घुड़सवार और ४५ पैदल होते हैं । दुर्ग, किला । प्लीहा । प्लीहावृद्धि । सिपाहियों की चौकी । घाट ।—**केश**-(वि०) झबरीले बालों वाला ।—**मूल**-(न०) अदरक, आदी ।—**लता**-(स्त्री०) सोमलता ।

गुल्मिन्—(वि०) [गुल्म+इनि] [स्त्री०—**गुल्मिनी**] झाड़ बाँधकर उगने वाला । प्लीहावृद्धि का रोगी ।

गुल्मी—(स्त्री०) [गुल्म+ङीप्] पटकुटी, खीमा, तंबू ।

गुवाक, गूवाक —(पुं०) [गवति मलवत् कषायमुत्सृजति, √ गु+आक] [=गुवाक, पृषो० साधुः] सुपाड़ी का पेड़ ।

√गुह्—भ्वा० उभ० सक० संवरण करना, छिपाना, ढकना । गूहति-ते, गूहिष्यति-ते, —घोक्ष्यति-ते, अगूहीत्- अघुक्षत्- अगूढ —अघुक्षत ।

गुह—(पुं०) [√गुह्+क] कार्तिकेय । घोड़ा । शृङ्गवेरपुर के निषादों का राजा और श्रीरामचन्द्र का मित्र । विष्णु ।

गुहा—(स्त्री०) [गुह+टाप्] गुफा । छिपाव, दुराव । गढ़ा । बिल । हृदय ।—**आहित** (**गुहाहित**)-(वि०) हृदयस्थित ।—**चर**-(न०) ब्रह्म ।—**मुख**-(वि०) खुले हुए मुख वाला ।—**शय**-(पुं०) चूहा । शेर, चीता । परमात्मा । अज्ञान ।

गुहिन—(न०) [√गुह्+इनन्] वन, जंगल ।

गुहेर—(वि०) [√गुह्+एरक्] अभिभावक, संरक्षक । (पुं०) लुहार ।

गुह्य—(वि०) [√गुह्+क्यप्] छिपाने के योग्य । गुप्त; 'मौनं चैवास्मि गुह्यानाम्' भग० १०.३८ । गूढ़, कठिनता से समझ में आने वाला । (न०) भेद, रहस्य । गुप्त अंग (गुदा आदि) । (पुं०) दम्भ । कछुआ । विष्णु ।—**गुरु**-(पुं०) शिव ।—**दीपक**-(पुं०) जुगनू ।—**निष्यन्द**-(पुं०) पेशाब, मूत्र ।—**भाषित**-(न०) गुप्त वार्ता । गुप्त मंत्रणा ।

गुह्यक—(पुं०) [गुह्य गोपनीयं कं सुखं येषाम्, ब० स०] देवयोनि विशेष । यह भी कुबेर के किन्नरों की तरह अमर है और धनागार की रक्षा का काम इनके सुपुर्द है ।

गुह्यमय—(पुं०) [गुह्य+मयट्] कार्तिकेय ।

गू—(स्त्री०) [गच्छति अपानवायुना देहात्, √गम्+कू, टिलोप] विष्ठा, मल । कूड़ा करकट ।

गूढ—(वि०) [√गुह्+क्त] गुप्त । छिपा हुआ । ढका हुआ । गहन, जिसमें कोई छिपा अर्थ या व्यंग्य हो । (पुं०) स्मृति के अनुसार पाँच प्रकार के गवाहों में से एक ।

एक अलङ्कार ।—अङ्ग (गूढाङ्ग)-(पुं०) कछवा ।—अङ्घ्रि(गूढाङ्घ्रि)-(पुं०)साँप ।—आत्मन् (गूढात्मन्)-परमात्मा ।—उत्पन्न (गूढोत्पन्न),—ज-(पुं०) धर्मशास्त्रों के मतानुसार १२ प्रकार के पुत्रों में से एक । अज्ञातनामा पिता का पुत्र, जिसकी उत्पत्ति गुपचुप हुई हो —'गृहे प्रच्छन्न उत्पन्नो गूढजस्तु सुतः स्मृतः' ।—याज्ञवल्क्य ।—नीड-(पुं०) खञ्जन पक्षी ।—पथ-(पुं०) गुप्तमार्ग । पगडंडी । मन । समझ । प्रतिभा ।—पाद्,—पाद-(पुं०) सर्प, साँप ।—पुरुष-(पुं०) भेदिया, जासूस ।—पुष्पक-(पुं०) मौलसिरी, बकुल वृक्ष ।—मार्ग-(पुं०) सुरङ्गी रास्ता ।—मैथुन-(पुं०) काक, कौआ ।—वर्चस्-(पुं०) मेढक ।—साक्षिन्-(पुं०) प्रपञ्ची गवाह, ऐसा गवाह जो छिपकर अन्य गवाहों की गवाही सुन ले और तदनुसार स्वयं गवाही दे ।

गूथ—(न०, पुं०) [√गु+थक्] विष्ठा, मल ।

√गूर्—दि० आत्म० सक० मारना । जाना । गूर्यते, गूरिष्यते, अगूरिष्ट । चु० आत्म० सक० उद्यम करना । गूरयते, गूरयिष्यते, अजूगुरत ।

गूषणा—(स्त्री०) आँखों की वह आकृति जो मोर के पंखों में होती है ।

√गृ—भ्वा० पर० सक० छिड़कना, तर करना, नम करना । गरति, गरिष्यति, अगार्षीत । चु० आत्म० सक० भलीभाँति जानना । गारयते ।

√गृज्, गृञ्ज्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना । गरजना । गर्जति,—गृञ्जति, गर्जिष्यति,—गृञ्जिष्यति, अगर्जीत्,—अगृञ्जीत् ।

गृञ्जन—(पुं०) [√गृञ्ज्+ल्युट्] गाजर । शलगम । गाँजा । (न०) विषैले तीरों से वध किये हुए पशु का माँस ।

गृध्रिका गृध्रीव—(पुं०) शृगाल विशेष, स्यारों की एक जाति ।

√गृध्—दि० पर० सक० कामना करना । लोभ करना, लालच दिखाना । गृध्यति, गर्धिष्यति, अगृधत्-अगर्धीत् ।

गृधु—(वि०) [√गृध्+कु] कामी । (पुं०) कामदेव ।

गृध्नु—(वि०) [√गृध्+क्नु] लालची, लोभी । उत्सुक । अभिलाषी ।

गृध्य—(न०), गृध्या-(स्त्री०) [√गृध्+क्यप्] [गृध्य+टाप्] अभिलाषा । लालच, लोभ ।

गृध्र—(वि०) [गृध्+क्रन्] लोभी । (पुं०) गिद्ध, गीध ।—कूट-(पुं०) एक पर्वत का नाम जो राजगृह के समीप है ।—पति,—राज-(पुं०) जटायु की उपाधि ।—वाज,—वाजित-(वि०) गीध के परों से युक्त (बाण) ।—व्यूह-(पुं०) वह व्यूह जिसमें सेना गिद्ध की शकल में खड़ी की जाय ।—सी-(स्त्री०) [गृध्र√सो+क—ङीप्] एक वातरोग जिसमें कमर से आरम्भ होकर सारे पैर में दर्द होता है और गाँठें जकड़ सी जाती हैं ।

गृष्टि—(स्त्री०)[गृह्णाति सकृद् गर्भम्, √ग्रह्+क्तिच्, पृषो० साधुः] एक ब्यान की गौ, वह गौ जो केवल एक बार ही ब्यायी हो; 'आपीनभारोद्वहनप्रयत्नाद् गृष्टिः' र० २.१८ । कोई भी जवान मादा जानवर ।

√गृह्—भ्वा० आत्म० सक० ग्रहण करना । गर्हते, गर्हिष्यते—घक्ष्यते, अगर्हिष्ट—अघृक्षत । चु० आत्म० सक० ग्रहण करना । गृहयते, गृहयिष्यते, अजगृहत ।

गृह—(न०) [√ग्रह्+क] घर, भवन । पत्नी ।—'न गृहं गृहमित्याहुर्गृहिणी गृहमुच्यते ।'—पंचतन्त्र । गृहस्थ का जीवन । नाम । (यह शब्द जब एक घर के लिये प्रयुक्त किया जाता है, तब नपुंसक लिङ्ग और जब एक से अधिक घरों के लिये तब पुंल्लिङ्ग

होता है। यथा मेघदूते—"तत्रागारं धनपतिगृहान् ( )।"—अक्ष (गृहाक्ष)-(पुं०) खिड़की।—अधिप (गृहाधिप),—ईश, (गृहेश),—ईश्वर (गृहेश्वर)-(पुं०) घर का स्वामी, गृहपति।—अम्ल (गृहाम्ल)-(न०) कांजी।—अयनिक (गृहायनिक)-(पुं०) [गृहरूपम् अयनं विद्यतेऽस्य, गृहायन+ठन्] गृहस्थ।—अर्थ (गृहार्थ)-(पुं०) घर का कामकाज। गृहस्थी के मामले।—अवग्रहणी (गृहावग्रहणी)-(स्त्री०) देहरी, दहलीज।—आराम (गृहाराम)-(पुं०) घर के आसपास का बाग।—आश्रम (गृहाश्रम)-(पुं०) गृहस्थ आश्रम। गृहस्थ।—आश्रमिन् (गृहाश्रमिन्)-(पुं०) [गृहाश्रम+इनि] गृहस्थ।—उपकरण (गृहोपकरण)-(न०) गृहस्थी के लिये उपयोगी पात्र अथवा अन्य कोई वस्तु।—कपोत,—कपोतक-(पुं०) पालतू कबूतर।—करण-(न०) घर-गृहस्थी के मामले। भवन या घर की इमारत।—कर्मन्-(न०) गृहस्थी के धंधे।—कलह-(पुं०) घरेलू झगड़े।—कारक-(पुं०) घर बनाने वाला, राज।—कार्य-(न०) घर-गृहस्थी के काम।—गोधा,—गोधिका—(स्त्री०) छिपकली।—चुल्ली-(स्त्री०) घर, जिसमें पास-पास दो कमरे हों, किन्तु इनमें से एक का मुख पूर्व और दूसरे का पश्चिम की ओर हो।—छिद्र-(न०) घर-गृहस्थी की कमजोरियाँ या कलङ्क। पारिवारिक झगड़े।—ज,—जात-(पुं०) वह दास, जो उसी घर में जन्मा हो जिसमें वह नौकर हो।—जालिका-(स्त्री०) धोखा, कपट, छल।—ज्ञानिन् [गेहेज्ञानिन् रूप भी होता है।] (वि०) अनुभवशून्य। मूर्ख।—तटी-(स्त्री०) चबूतरा, चौतरा।—देवता-(स्त्री०) घर का देवता, कुल-देवता।—देवी- (स्त्री०) जरा नाम की राक्षसी। गृहिणी।—द्रुम-(पुं०) मेढ़श्रृंगी वृक्ष। सहिजन का पेड़।—देहली-(स्त्री०) दहलीज।—नमन-(न०) पवन, हवा।—नाशन-(पुं०) जंगली कबूतर।—नीड-(पुं०) गौरैया।—पति-(पुं०) गृहस्थ। यज्ञ करने वाला। घर का स्वामी। गृहस्थ। यजमान। अग्नि।—पत्नी-(स्त्री०) गृहस्वामिनी।——पाल-(पुं०) घर का मालिक। घर का कुत्ता।—पोतक-(पुं०) वह स्थल जिसके ऊपर मकान खड़ा हो और उससे सम्बन्ध रखने वाली उसके आस पास की जमीन।—प्रवेश-(पुं०) नये बने मकान में जाने के पूर्व कतिपय शास्त्रीय कर्मानुष्ठान।—बभ्रु-(पुं०) पालतू नेवला।—बलि-(स्त्री०) अवशिष्ट अन्न से सब प्राणियों को आहारदान। जैसे पशु, पक्षी, गृहदेवता आदि को।—भङ्ग-(पुं०) घर से निर्वासित व्यक्ति। घर को नाश करना। घर फोड़ना। असफलता। किसी दूकान या घर की बरबादी।—भेदिन्-(वि०) घर का भेदिया। घर में झगड़े उत्पन्न कराने वाला।—मणि-(पुं०) दीपक।—माचिका-(स्त्री०) चमगादड़।—मृग-(पुं०) कुत्ता।—मेध-(पुं०) मकानों का समूह।—मेध-(पुं०) पंचयज्ञ। पंचयज्ञ करने वाला, गृहस्थ।—यन्त्र-(न०) डंडा या बाँस जिस पर उत्सव के अवसरों पर ध्वजा फहरायी जाय।—युद्ध-(न०) घर का भाई-भाई का झगड़ा। किसी देश के निवासियों या विभिन्न वर्गों की आपस की लड़ाई, खानाजंगी।—रन्ध्र-(न०) पारिवारिक कलह या फूट।—लक्ष्मी-(स्त्री०) घर की लक्ष्मी, सुशीला गृहिणी।—विच्छेद-(पुं०) परिवार की बरबादी। गृहकलह।—वित्त-(पुं०) घर का मालिक।—शायिन्-(पुं०) कबूतर।—शुक-(पुं०) आमोद-प्रमोद के लिये पाला गया तोता।—संवेशक-(पुं०) बढ़ई, राज, मेमार।—सज्जा—(स्त्री०)घर का साज-समान, असबाब।—

स्थ-(पुं०) ब्रह्मचर्य-पालन के बाद विवाह करके दूसरे आश्रम में प्रवेश करने या रहने वाला, गृही । घर-बार वाला । खेती-बारी करने वाला, किसान ।

गृहयाय्य—(पुं०) [√गृह्+णिच्+आय्य] गृहस्थ, बालबच्चों वाला ।

गृहयालु—(वि०) [√गृह्+णिच्+आलु] पकड़ने वाला, ग्रहण करने वाला ।

गृहिणी—(स्त्री०)[गृह+इनि—ङीप्] घर-वाली, पत्नी ।—**पद**-(न०) घरस्वामिनी की मर्यादा; 'यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः' श० ४.१७ ।

गृहिन्—(पुं०) [गृह+इनि] गृहस्थ, बाल-बच्चे वाला ।

गृहीत—(वि०) [√ग्रह् +क्त] ग्रहण किया हुआ । स्वीकृत । प्राप्त, उपलब्ध । पहिना हुआ, धारण किया हुआ । लूटा हुआ या लुटा हुआ । समझा हुआ ।—**गर्भा**-(स्त्री०) गर्भवती स्त्री ।—**दिश्**-(वि०) भागा हुआ । गायब, लापता ।

गृहीतिन्—(वि०) [गृहीत+इनि] [स्त्री०—**गृहीतिनी**] वह व्यक्ति जिसने कोई बात समझ ली हो; 'गृहीती षट्स्वङ्गेषु' दश० ।

गृहेनर्दिन्—(पुं०) [गृहे√नर्द्+णिनि, अलुक् स०] घर में डींगें मारने वाला और घर के बाहर युद्ध में पीठ दिखाने वाला, कायर, डरपोक ।

गृह्य—(वि०) [√ग्रह्+क्यप्] आकर्ष-णीय । प्रसन्न करने योग्य । घरेलू । परतंत्र, परमुखापेक्षी । पालतू । बाहर अवस्थित । (पुं०) पालतू पशु-पक्षी । गृहजन । गृहाग्नि । (न०) मलद्वार ।—**अग्नि (गृह्याग्नि)**-(पुं०) अग्निहोत्र की आग ।—**कर्मन्**-(न०) गृहस्थ के लिये विहित कर्म, संस्कारादि ।—**सूत्र**-(न०) गृह्य कर्मों, संस्कारों की विधियाँ बताने वाला वैदिक ग्रन्थ ।

गृह्या—(स्त्री०) [गृह्य+टाप्] नगर के आस-पास का गाँव ।

√गॄ—तु० पर० सक० लीलना, निगल जाना । गिरति—गिलति, गरिष्यति—गरीष्यति, अगारीत्—अगालीत् । क्र्या० पर० अक० शब्द करना । सक० स्तुति करना । गृणाति, गरिष्यति—गरीष्यति, अगारीत् ।

गेन्दु (न्दु) क—(पुं०) [गच्छतीति गः इन्दुरिव, गेन्दु+कन्, गेण्डुक—पृषो० साधुः] खेलने का गेंद । गद्दा ।

गेय—(वि०) [√गै+यत्] गाने लायक, जो गाया जा सके; 'अनन्ता वाङ्मयस्याहो गेयस्येव विचित्रता' शि० २.७२ ।

√गेव्—भ्वा० आत्म० सक० सेवा करना । गेवते, गेविष्यते, अगेविष्ट ।

√गेष्—भ्वा० आत्म० सक० अन्वेषण करना । गेषते, गेषिष्यते, अगेषिष्ट ।

गेह—(न०) [गो गणेशः गन्धर्वो वा ईहः ईप्सितो यत्र, ब० स०] घर, मकान ।

गेहेक्ष्वेडिन्—(वि०) [अलुक् स०] भीरु, कायर ।

गेहेवाहिन्—(वि०) [अलुक् स०] भीरु, कायर ।

गेहेनर्दिन्—(वि०) [अलुक् स०] डरपोक, भीरु ।

गेहेमेहिन्—(वि०) [अलुक् स०] घर में मूतने वाला । आलसी, काहिल ।

गेहेव्याड—(पुं०) [अलुक् स०] धूर्त । छली ।

गेहेशूर—(पुं०) [अलुक् स०] भीरु, डरपोक ।

गेहिन्—(वि०) [गेह+इनि] [स्त्री०—**गेहिनी**] दे० 'गृहिन्' ।

गेहिनी—(स्त्री०) [गेहिन्+ङीप्] पत्नी, गृहिणी ।

√गै—भ्वा० पर० अक० सक० गाना, गीत गाना । गाने के स्वर में पढ़ना या बोलना । वर्णन करना । निरूपण करना । पद्य द्वारा वर्णन

करना या कविता बनाकर प्रसिद्ध करना । गास्यति, गास्यति, अगासीत् ।

गैर—(वि०) [गिरि+अण्] [स्त्री०—**गैरी**] पहाड़ पर उत्पन्न ।

गैरिक—(वि०) [गिरि+ठञ्] [स्त्री०—**गैरिकी**] पहाड़ पर उत्पन्न । (पुं०, न०) गेरू । (न०) सुवर्ण, सोना ।

गैरेय—(न०) [गिरि+ढक्] शिलाजीत । गेरू ।

गो—(पुं०, स्त्री) [√गम्+डो] पशु, मवेशी (बहुवचन में) । गौ से उत्पन्न कोई भी वस्तु जैसे दूध, चमड़ा आदि । नक्षत्र । आकाश । इन्द्र का वज्र । किरण । हीरा । स्वर्ग । तीर । (स्त्री०) गाय । पृथ्वी । वाणी । सरस्वती देवी । माता । दिशा । जल । नेत्र । (पुं०) साँड़, बैल । रोम, लोम । इन्द्रिय । वृषराशि । सूर्य । नौ की संख्या । चन्द्रमा । घोड़ा ।—**कण्टक**–(पुं०, न०) बैलों से रौंदा हुआ मार्ग या स्थान जो दूसरों के जाने योग्य न रह गया हो । गाय का खुर । गौ के खुर की नोक ।—**कर्ण**–(पुं०) गाय का कान । खच्चर । साँप । बालिश्त, बित्ता । अवध प्रान्त का तीर्थ-विशेष जो गोकरननाथ के नाम से प्रसिद्ध है; 'श्रित-गोकर्णनिकेतमीश्वरं' र० ८.३३ । वाण-विशेष ।—**किराट**, —**किराटिका**–(स्त्री०) मैना पक्षी ।—**किल**, —**कील**–(पुं०) हल । मूसल ।—**कुञ्जर**–(पुं०) हृष्ट-पुष्ट बैल । शिव का नंदी ।—**कुल**–(न०) गौओं का समूह । गोशाला । गोकुल गाँव जहाँ श्रीकृष्ण पाले-पोसे गये थे ।—**कुलिक**–(वि०) [गवि पङ्कस्थगव्यां कुलिकः जड इव] दलदल में फँसी गौ को निकालने में सहायता न देने वाला । [गोः नेत्रस्य कुलमत्र, गोकुल+ठन्] ऐंचाताना ।—**कृत**–(न०) गोबर ।—**क्षीर**–(न०) गाय का दूध ।—**गृष्टि**–(स्त्री०) एक बार की ब्यायी गाय ।—**गोष्ठ**–(न०) गोशाला ।—**ग्रन्थि**–(स्त्री०) कंडी, करसी । गोशाला ।—**ग्रह**–(पुं०) मवेशी पकड़ना ।—**ग्रास**–(पुं०) भोजन का वह भाग जो गाय के लिये अलग कर दिया जाता है । गाय की तरह मुँह से उठाकर बिना चबाये भोजन करना ।—**घृत**–(न०) वृष्टि का जल । गौ का घी ।—**चन्दन**–(न०) एक प्रकार का चन्दन ।—**चर**–(वि०) इन्द्रिय द्वारा जानने योग्य, इन्द्रियग्राह्य । पृथिवी पर घूमने वाला । (पुं०) इन्द्रिय का विषय (रूप, रस आदि) । इन्द्रियग्राह्य वस्तु । साक्षात्कार । चरागाह । व्यक्ति के नाम के अनुसार निकाला हुआ ग्रह (फ० ज्यो०) ।—**चर्मन्**–(न०) गाय का चमड़ा । सतह नापने का नाप-विशेष, जिसकी परिभाषा वशिष्ठ ने इस प्रकार दी है—'दश-हस्तेन वंशेन दशवंशान् समन्ततः । पञ्च चाभ्य-धिकान् दद्यादेतद्गोचर्म चोच्यते ॥'—०**वसन**–(पुं०) शिव ।—**चारक**–(पुं०) ग्वाला, अहीर ।—**जर**–(पुं०) बूढ़ा साँड़ या बैल ।—**जल**–(न०) गोमूत्र ।—**जाग-रिक**–(न०) आनन्द । मङ्गल ।—**जिह्वा**, —**जिह्विका**–(स्त्री०) वनगोभी ।—**डुम्बा**–(स्त्री०) तरबूज ।—**तम**–(पुं०) [गोभिर्ध्वस्तं तमो यस्य, ब० स० पृषो० साधुः] एक गोत्र-प्रवर्तक ऋषि, अहल्या के पति ।—०**स्तोम**–(पुं०) एक सूक्त । एक प्रकार का यज्ञ ।—**तमी** (स्त्री०) अहल्या ।—०**पुत्र**–(पुं०) शता-नन्द ।—**तल्लज**–(पुं०) उत्तम साँड़ या गाय ।—**तीर्थ**–(न०) गोशाला ।—**त्र**–(न०) गोशाला । वंश, कुल । नाम, संज्ञा । समूह । वृद्धि । वन । खेत । मार्ग । सम्पत्ति । छत्र, छाता । भविष्यज्ञान । श्रेणी । जाति । वर्ग । (पुं०) पर्वत, पहाड़ ।—०**कीला**–(स्त्री०) पृथिवी ।—०**ज**–(वि०) एक ही कुल या वंश में उत्पन्न ।—०**पट**–(पुं०) वंशावली । —०**भिद्**–(पुं०) पहाड़ों को फोड़ने वाला, इन्द्र ।—०**स्खलन**—०**स्खलित**– (न०) गलत नाम से पुकारना ।—**त्रा**–(स्त्री०) गौओं

कौहेड़ । पृथिवी ।—दन्त–(न०) हरताल । —दा–(स्त्री०) गोदावरी नदी ।—दान–(न०) गाय का दान । विवाह के पहले का एक संस्कार, केशान्त: 'कृतगोदानमङ्गला:' उत्त० १ ।—दारण–(न०) हल । कुदाली । —दावरी–(स्त्री०) [गो√दा+ वनिप् –ङीप्, र आदेश]दक्षिण भारत की एक प्रधान नदी ।—दुह्,—दुह–(पुं०) गाय दुहने वाला, ग्वाला,—दोह–(पुं०),—दोहन–(न०) गाय दुहने का समय ।– गाय दुहना ।—दोहनी–(स्त्री०) बासन जिसमें दूध दुहा जाय । —द्रव–(पुं०) गोमूत्र ।—धन–(न०) गायों, गाय-बैलों का समूह । गाय-बैल रूप धन ।—धर–(पुं०) पर्वत ।—धूलि–(पुं०) वह समय जब गोचरभूमि से गौएँ चर कर लौटें ।—धेनु–(स्त्री०) गाय जो दूध देती हो और जिसके नीचे बछड़ा हो ।—ध्र–(पुं०) [गो√धृ (धारण करना)+क] पर्वत, पहाड़ ।—नन्दी–(स्त्री०) मादा सारस ।—नर्द–(पुं०) एक प्राचीन जनपद जो पतञ्जलि का जन्म-स्थान था । शिव । नागरमोथा । सारस । —नर्दीय–(पुं०) [गोनर्द+छ–ईय] महा-भाष्यकार पतञ्जलि ।—नस,—नास–(पुं०) सर्प विशेष । वैक्रांत मणि ।—नाथ–(पुं०) बैल, साँड़ । जमींदार । ग्वाला । गौ का धनी । —निष्यन्द–(पुं०) गोमूत्र ।—प–(पुं०) [गो√पा+क]गोपालक; 'गोपवेशस्य विष्णो:' मे० १५ । ग्वाला । प्राचीन हिन्दू राज्य-व्यवस्था में गाँव की सीमा, आबादी, खेती-बारी, क्रय-विक्रय आदि का लेखा रखने वाला कर्मचारी । गोष्ठ का अध्यक्ष । रक्षक । एक पौधा । भूमिपति, राजा ।—०अध्यक्ष (गोपाध्यक्ष),—०इन्द्र (गोपेन्द्र),—ईश (गोपेश)–(पुं०) श्रीकृष्ण ।—०दल –(पुं०) सुपारी का पेड़ । —०वधूटी–(स्त्री०) गोप-पत्नी । गोप-युवती । ग्वालिन, गोपी ।—पति–(पुं०) गौ का धनी । साँड़, मुखिया, प्रधान । सूर्य । इन्द्र । कृष्ण । शिव । वरुण । राजा ।—पशु–(पुं०) यज्ञीय पशु ।—पानसी–(स्त्री०) [गवां किरणानां पानं शोषणम्, गोपान√सो+क–ङीप्] घर में लगाने की टेढ़ी धरन, वलभी, छप्पर की धुनकिया ।—पाल–(पुं०) ग्वाला, अहीर । श्रीकृष्ण । राजा ।—पालक–(पुं०) अहीर, ग्वाला । शिव ।—पालिका—पाली–(स्त्री०) अहीरिन, ग्वाला की स्त्री ।—पी–(स्त्री०) [गोप+ङीप्] गोप-वधू, ग्वालिन ।—पीत–(पुं०) खंजन पक्षी का एक भेद ।—पुच्छ–(पुं०) वानर-विशेष । हार-विशेष जिसमें दो, चार या ३४ लड़ें हों ।—पुटिक–(न०) शिव के नादिया का सिर ।—पुत्र–(पुं०) बछड़ा ।—पुर–(न०) नगर-द्वार । मुख्य द्वार । मंदिर का सजा हुआ द्वार ।—पुरीष–(न०) गोबर ।—प्रकाण्ड–(न०) विशाल बैल ।—प्रचार–(पुं०) गोचर भूमि ।—प्रवेश–(पुं०) गौओं के चरकर लौटने का समय, सूर्यास्त काल ।—भृत्–(पुं०)पहाड़ ।—मक्षिका–(स्त्री०) कुकुरौंछी, डाँस ।—मण्डल–(न०) भूगोल । गौओं का झुंड ।—मतल्लिका–(स्त्री०) वह गाय जो काबू में लायी जा सके, सीधी गाय । उत्तम गाय ।—मथ–(पुं०)ग्वाला ।—मातृ –(स्त्री०) मातृस्थानीय गोजाति, गायकी माता । गोवंश की आदिमाता, कश्यप की पत्नी सुरभि ।—मायु– (पुं०) शृगाल ; 'धनुहुङ्कुरुते घनध्वानिनहि गोमायुरुतानि केशरी' शि० १६.२५ । मेढक । एक गन्धर्व का नाम । —मुख–(न०) एक तरह का बाजा । (पुं०) घड़ियाल, नक्र । चोरों का किया हुआ विशेष प्रकार का दीवार में सुराख । (न०, स्त्री०) जप करने की थैली ।—०व्याघ्र–(पुं०) एक तरह का व्याघ्र जिसका मुख गौ के मुख जैसा हो । (आल०) देखने में सीधा पर असल में बहुत कुटिल मनुष्य ।—मूढ–(वि०) बैल की

तरह मुड़ ।—मूत्र–(न०) गाय का मूत्र ।—मूत्रिका–(स्त्री०) [गोमूत्र+ठन्–टाप्] चित्रकाव्य का एक भेद । इस आकृति की बेल । एक मणि जिसका रंग लाली लिये हुए पीला होता है, गोलमणि । शीतलचीनी ।—मृग–(पुं०) नील गाय ।—मेद–(पुं०) मणि-विशेष ।—यान–(न०) बैलगाड़ी, बहली ।—रक्ष–(पुं०) गोपाल, ग्वाला । नारंगी ।—रङ्कु–(पुं०) जलपक्षी । कैदी, बंदी । परमहंस ।—रस–(पुं०) गाय का दूध । दही । मक्खन ।—राज–(पुं०) सर्वोत्तम बैल ।—राटिका—राटी–(स्त्री०) मैना पक्षी ।—रुत–(न०) दो कोस या चार मील का माप ।—रोचना–(स्त्री०) एक सुगंधित पदार्थ जिसकी उत्पत्ति गाय के पित्त से मानी जाती है ।—लवण–(न०) माप-विशेष जिसके अनुसार गाय को नमक दिया जाता है ।—लाङ्गुल,—लाङ्गूल–(पुं०) वानर-विशेष ।—लोमी–(स्त्री०) वेश्या, रंडी । सफेद दूब ।—वत्स–(पुं०) बछड़ा ।—० आदिन् (गोवत्सादिन्)–(पुं०) भेड़िया ।—वर्धन–(पुं०) मथुरा जिले का एक पर्वत और तीर्थस्थान ।—०धर,—०धारिन्–(पुं०) श्रीकृष्ण ।—वशा–(स्त्री०) बाँझ गाय ।—वाट,—वास–(पुं०) गोशाला ।—विन्द–(पुं०) मुख्य ग्वाला, अहीरों का मुखिया । श्रीकृष्ण । बृहस्पति ।—विष्–(स्त्री०)—विष्ठा–(स्त्री०) गोबर ।—विसर्ग–(पुं०) प्रातःकाल का वह समय जब चरने के लिए गौएं ढीली जाती हैं ।—वृन्द–(न०) मवेशियों की हेड़ या रोहर ।—वृन्दारक–(पुं०) सर्वोत्तम बैल या गौ ।—वृष–(पुं०) उत्तम सांड़ ।—०—ध्वज (पुं०) शिव ।—व्रज–(पुं०) गोशाला । गौओं का झुंड । चरागाह जहाँ गौएं चरें ।—शकृत्–(न०) गोबर ।—शाल–(न०),—शाला–(स्त्री०) वह छाया हुआ घर, जिसमें गौएं रक्खी जावें ।—शीर्ष–(पुं०) ऋषभ पर्वत । उस पर्वत पर होने वाला चंदन ।—शृङ्ग–(पुं०) दक्षिण भारत का एक पर्वत । एक ऋषि ।—षड्गव–(न०) बैलों की तीन जोड़ियाँ ।—ष्ठ–(पुं०, न०) [गो√स्था+क] गोशाला, गोठ । पशुशाला । अहीरों का गाँव । (पुं०) गोष्ठी, समाज । (न०) [गोष्ठी+यत्] कई आदमियों के साथ मिलकर करने का एक श्राद्ध ।—ष्ठी–(स्त्री०) [गो√स्था+क–ङीप्] सभा, मंडली, समाज । वार्तालाप । समूह । पारिवारिक सम्बन्ध । नाटक का एक भेद जिसमें एक ही अंक होता है ।—संख्य–(पुं०) ग्वाला, अहीर ।—सर्ग–(पुं०) प्रातःकाल ।—सूत्रिका–(स्त्री०) गाय बाँधने की रस्सी ।—स्तन–(पुं०) गाय का ऐन या थन । गुलदस्ता । चौलड़ा मोतियों का हार ।—स्तना,—स्तनी–(स्त्री०) अंगूरों का गुच्छा ।—स्थान–(न०) गोशाला ।—स्वामिन्–(पुं०) गायों का मालिक । जितेन्द्रिय । वल्लभ-कुल, निम्बार्क-सम्प्रदाय और मध्व-सम्प्रदाय के आचार्यों की पदवी ।—हत्या–(स्त्री०) गोवध ।—हित–(वि०) गौ की रक्षा करने वाला ।

गोगोयुग—(न०) [गो+गोयुगच्] गाय या बैलों की जोड़ी ।

गोणी—(स्त्री०) [√गुण्+घञ्–ङीप्] गोनी, बोरा ; एक द्रोण के बराबर की तौल । चिथड़ा ।

गोण्ड—(पुं०) [गोः अण्ड इव] मांसल नाभि । नीच जाति-विशेष, विशेष कर नर्मदा और कृष्णानदी के बीच विन्ध्याचल के पूर्वी भाग में बसने वाली जाति के लोग ।

गोधा—(स्त्री०) [√गुध्+घञ्–टाप्] गोह । चमड़े का पट्टा जो बाईं भुजा पर धनुष की रगड़ बचाने के लिए बाँधा जाता है । घड़ियाल । ताँत ।

गोधि—(पुं०) [गुध्नाति सहसा कुप्यति,

√गुध्+इन्] घड़ियाल। [गोः नेत्रं धीयते-ऽस्मिन्, गो√धा+कि] ललाट।

गोधिका—(स्त्री०) [गुध्नाति, √गुध्+ण्वुल्—टाप्] छिपकली। घड़ियाल की मादा।

गोधूम—(पुं०) [√गुध्+ऊम] गेहूँ। नारंगी।

गोप—(वि०) [√गुप्+अच्] रक्षक, रक्षा करने वाला। (पुं०) [√गुप्+घञ्] रक्षा।

गोपायन—(न०) [√गुप्+आय्+ल्युट्] रक्षण, बचाव।

गोपायित—(वि०) [√गुप्+आय्+क्त] रक्षित।

गोपी—(स्त्री०) [√गुप्+अच्—ङीष्] शारिवा, अनन्तमूल नामक लता। रक्षा करने वाली; 'गोप्त्री जनुर्वशः' र० ४.२०। छिपाने वाली। गोप-स्त्री।

गोप्तृ—(वि०) [√गुप्+तृच्] [स्त्री०—गोप्त्री] रक्षा करने वाला; 'अस्मिन् वन गोप्तरि गाहमाने' र० २.१४। छिपाने वाला।

गोप्य—(वि०) [√गुप्+ण्यत्] रक्षा करने के योग्य। (न०) [गोपी+यत्] गोपियों का समूह। (पुं०) [√गुप्+ण्यत्] दासी-पुत्र, दास।

गोमत्—(वि०) [गो+मतुप्] गोधन वाला।

गोमती—(स्त्री०) [गोमत्+ङीप्] इस नाम से प्रसिद्ध एक नदी।

गोमय—(न०, पुं०) [गो+मयट्] गोबर। —छत्र-(न०) कुकुरमुत्ता। —प्रिय-(न०) भूतृण, एक तरह की सुगंधित घास।

गोमिन्—(पुं०) [गो+मिनि] मवेशी का धनी। स्यार, शृगाल। धनंक। बुद्धदेव का सेवक।

गोरण—(न०) [√गुर्+ल्युट्] स्फूर्ति। सतत प्रयत्न, अविच्छिन्न चेष्टा।

गोर्द—(न०) [√गुर्+दन्, नि० साधुः] मस्तिष्क, दिमाग।

गोल—(पुं०) [√गुड्+अच्, डस्य लः] गोला। भूगोल। नभोमण्डल। विधवा का जारज पुत्र। एक राशि पर कई ग्रहों का समागम। मुर नामक औषधि। मैनफल।

गोलक—(पुं०) [गोल+कन्] गोला। लकड़ी का गेंद। मिट्टी का बड़ा घड़ा। विधवा का जारज पुत्र। एक राशि पर ६ या अधिक ग्रहों का योग। शीरा, राब। मदन का पेड़।

गोला—(स्त्री०) [गोल+टाप्] लड़कों के खेलने का काठ का गेंद। जल रखने का मटका। सिंगरफ, लाल संखिया। स्याही, मसी। सखी। सहेली। दुर्गा का नाम। गोदावरी नदी का नाम।

√गोष्ट्—भ्वा० आत्म० सक० इकट्ठा करना। गोष्टते, गोष्टिष्यते, अगोष्टिष्ट।

गोष्पद—(न०) [गोः पदम्, ष० त०, या गो√पद्+घञ्, नि० सुट्, षत्व] गौ का खुर। धूल में गाय के खुर का चिह्न। उस खुरचिह्न में समा जाने वाला जल। गौ के खुर में समावे उतना जल। स्थान जहाँ गौएँ प्रायः आया-जाया करें।

गोह्य—(वि०) [√गुह्+ण्यत्] छिपाने योग्य, गोप्य।

गौञ्जिक—(पुं०) [गुञ्जा परिमाणविशेषः तां ग्रहीतुं शीलमस्य, गुञ्जा+ठक्] सुनार।

गौड—(पुं०) बंगाल का पुराना नाम। स्कन्द-पुराण में इसका परिचय इस प्रकार दिया गया है :—'बङ्गदेशं समारभ्य भुवनेशान्तगः शिवे। गौडदेशः समाख्यातः सर्वविद्या-विशारदः।' गौड़देशवासी। ब्राह्मणों का एक वर्ग, पंच गौड़। ब्राह्मणों की एक उपजाति।

गौडी—(स्त्री०) [√गुड+अण्—ङीप्] शीरा या गुड़ की शराब। रागिनी-विशेष। छन्दःशास्त्र की रीति या वृत्ति-विशेष।

गौडिक—(पुं०) [√गुड+ठक्] गन्ना, ऊख।

गौण—(वि०) [गुण+अण्] [स्त्री०—**गौणी**] अमुख्य, अप्रधान । (व्याकरण में) प्रधान का उल्टा । गुणवाचक, गुण बतलाने वाला ।

गौण्य—(न०) [गुण+ष्यञ्] गुण का धर्म । अधीन होकर रहना ।

गौतम—(पुं०) [गोतम+अण्] गोतम का वंशज । न्याय शास्त्र के प्रवर्तक अक्षपाद ऋषि । भरद्वाज ऋषि का नाम । शतानन्द मुनि का नाम । कृपाचार्य का नाम, जो द्रोणाचार्य के साले थे । बुद्धदेव का नाम ।—**सम्भवा**-(स्त्री०) गोदावरी नदी ।

गौतमी—(स्त्री०) [गौतम+ङीप्] द्रोणाचार्य की स्त्री कृपी का नाम । गोदावरी नदी की उपाधि । बुद्धदेव की शिक्षा या उपदेश । गौतम द्वारा प्रवर्तित न्याय दर्शन । हल्दी । गोरोचन । कण्व मुनि की बहिन ।

गौधूमीन—(न०) [गोधूम+खञ्] खेत जिसमें गेहूँ उत्पन्न होते हैं ।

गौनर्द—(पुं०) [गोनर्द+अण्] महाभाष्य-प्रणेता पतञ्जलि की उपाधि ।

गौपिक—(पुं०) [गोपिका+अण्] गोपी या गोप की स्त्री का बालक या पुत्र ।

गौप्तेय-(पुं०) [गुप्ता+ढक्] वैश्य-स्त्री का पुत्र ।

गौर—(वि०) [√गु+र, नि० साधुः] [स्त्री० —**गौरा या गौरी**] सफेद । पीला या लाल । चमकीला, दीप्तियुक्त । विशुद्ध, स्वच्छ । मनोहर । (पुं०) सफेद रंग । पीला रंग । लाल रंग । सफेद राई । चन्द्रमा । एक प्रकार का हिरन । एक प्रकार का भैंसा । (न०) कमल-नाल-तन्तु । केसर, जाफरान । सुवर्ण, सोना ।—**आस्य** (**गौरास्य**)-(पुं०) एक प्रकार का काले रंग का बन्दर जिसका मुख सफेद होता है ।—**सर्षप**-(पुं०) सफेद राई । **गौरक्ष्य**—(न०) [गोरक्षा+ष्यञ्] गोपालन, गौरक्षण (वैश्य के लिये विहित तीन विशेष कर्मों में से एक) ।

गौरव—(न०) [गुरु+अण्] गुरुता, भारीपन । महत्त्व, बड़प्पन । आदर, सम्मान । प्रतिष्ठा, मर्यादा; 'क्वेऽयों गतो गौरवं' पंच० १.१४६ । गाम्भीर्य, गहराई ।— **आसन** (**गौरवासन**)—(न०) सम्मान की बैठक ।—**ईरित** (**गौरवेरित**)-(वि०) प्रशंसित । ख्याति-सम्पन्न ।

गौरवित—(वि०) [गौरव+इतच्] गौरव-युक्त । सम्मानयुक्त ।

गौरिका—(स्त्री०) [गौरी+कन्—टाप्,-ह्रस्व] क्वाँरी, अविवाहिता कन्या, गौरी ।

गौरिल—(पुं०) [गौर+इलच्] सफेद सरसों । लोहे या इस्पात लोहे की चूर या धूल ।

गौरी—(स्त्री०) [गौर+ङीष्] पार्वती का नाम । आठ वर्ष की कन्या । क्वाँरी । रजोधर्म जिस लड़की को न हुआ हो वह लड़की । गोरी या गेहुआँ रंग की लड़की । पृथिवी । हल्दी । गोरोचन । वरुण की स्त्री । मल्लिका की लता । तुलसी का पौधा । मजीठ का पौधा ।—**कान्त**,—**नाथ**-(पुं०) शिव ।—**गुरु**-(पुं०) हिमालय पर्वत; 'गौरीगुरोः गह्वरमाविवेश' र० २.२६ ।—**ज**-(पुं०) गणेश । कार्त्तिकेय । (न०) अबरक ।—**पट्ट**-(पुं०) वह योनिरूपी अर्घा जिसमें शिवलिङ्ग स्थापित किया जाता है ।—**पुत्र**-(पुं०) गणेश । कार्त्तिकेय ।—**पुष्प**-(पुं०) प्रियंगु नामक वृक्ष ।—**ललित**-(न०) गोरोचन । हरताल ।—**सुत**-(पुं०) कार्त्तिकेय । ऐसी स्त्री का पुत्र जिसका विवाह आठ वर्ष की अवस्था में हुआ हो ।

गौरुतल्पिक—(पुं०) [गुरुतल्प+ठक्] गुरु-पत्नी के साथ गमन करने वाला या गुरु की शय्या को भ्रष्ट करने वाला ।

गौलक्षणिक—(पुं०) [गोलक्षण+ठक्] गौ के शुभाशुभ लक्षणों को जानने वाला ।

गौल्मिक—(पुं०) [गुल्म+ठक्] किसी सैनिक-दल का एक सिपाही ।

गौशतिक—(वि०) [गोशत+ठञ्] [स्त्री० —**गौशतिकी**] १०० गायें पालने वाला ।
ग्ना—(स्त्री०) [√गम्+ना, डित्, डित्वात् अमो लोपः] स्त्री । देव-पत्नी । वाक्य । वेद ।
ग्मा—(स्त्री०) [√गम्+मा, डित्, डित्वात् अमो लोपः] पृथिवी ।
ग्रथन—(न०) [√ग्रन्थ्+ल्युट्, नलोप] गाढ़ा करना । जमाना । गूंथना । पुस्तक की रचना करना । लिखना । [**ग्रथना**, भी अन्तिम दो अर्थों का वाची है ।]
ग्रन्त—(पुं०) [√ग्रन्थ्+नङ] गुच्छा ।
ग्रथित—(वि०) [√ग्रन्थ्+क्त] गूंथा हुआ । रचा हुआ । श्रेणीबद्ध किया हुआ, यथाक्रम किया हुआ । जमाया हुआ । गाढ़ा किया हुआ । गाँठ वाला ।
√**ग्रन्थ्**—भ्वा० आत्म० अक० टेढ़ा करना । ग्रन्थते, ग्रन्थिष्यते, अग्रन्थिष्ट । क्र्या० पर० सक० गूंथना । रचना । ग्रथ्नाति, ग्रन्थिष्यति, अग्रन्थीत् । चु० पर० सक० बाँधना । ग्रन्थयति—ग्रन्थति ।
ग्रन्थ—(पुं०) [√ग्रन्थ्+घञ्] बाँधना, गाँठ लगाना । रचना । पुस्तक । धन, सम्पत्ति । अनुष्टुप् छन्द वाला पद्य ।—**कार**,—**कृत्**—(पुं०) ग्रन्थरचयिता । लेखक ।—**कुटी**,—**कूटी**—(स्त्री०) पुस्तकालय । दफ्तर जहाँ काम किया जाय ।—**चुम्बक**—(पुं०) जो किसी विषय का पूर्ण विद्वान् न हो । जिसने बहुत-सी किताबें पढ़ ली हों, किन्तु उनका तात्पर्य कुछ भी न समझा हो ।—**विस्तर**—(पुं०) ग्रन्थ का बाहुल्य । प्रकाण्डता । प्रगल्भ शैली ।—**सन्धि**—(पुं०) काण्ड । अध्याय । सर्ग ।
ग्रन्थन—(न०), **ग्रन्थना**—(स्त्री०) [√ग्रन्थ्+ल्युट्] [√ग्रन्थ्+णिच्+युच्] दे० 'ग्रथन' ।
ग्रन्थि—(स्त्री०) [√ग्रन्थ्+इन्] गिल्टी । रस्सी की गाँठ । कपड़े के आँचल की गाँठ जिसमें पैसे-रुपये गठियाये जाते हैं । बेंत या नरकुल की पोरों की गाँठ या जोड़ । टेढ़ापन । भद्दापन । माया-जाल । सूजना या फूलना ।—**छेदक**, —**भेदक**,—**मोचक**—(पुं०) गिरहकट, जेब कतरने वाला ।—**पर्ण**—(पुं०, न०) एक सुगन्धित वृक्ष, गठिवन । एक सुगन्धित पदार्थ ।—**बन्धन**—(न०) विवाह के समय दूल्हा-दुलहिन का गँठजोड़ा । गँठबंधन ।—**हर**—(पुं०) सचिव, दीवान ।
ग्रन्थिक—(पुं०) [ग्रन्थि√कै+क] पिपरा-मूल । गठिवन । करार । गुग्गुल । दैवज्ञ, ज्योतिषी । अज्ञातवास के समय राजा विराट के यहाँ रहते समय नकुल ने अपना नाम ग्रन्थिक रखा था ।
ग्रन्थित—(वि०) दे० 'ग्रथित' ।
ग्रन्थिन्—(वि०) [ग्रन्थ+इनि] जिसके पास बहुत-से ग्रन्थ हों । जिसने बहुत-से ग्रन्थ पढ़े हों । (पुं०) ग्रन्थकर्ता । विद्वान् ।
ग्रन्थिल—(वि०) [ग्रन्थि+लच्] गाँठदार । (न०) पिपरामूल । अदरक । (पुं०) विकंकत वृक्ष । करीर । चोरक नामक गंधद्रव्य । चौराई का साग । विद्वान् ।
√**ग्रस्**—भ्वा० आत्म० सक० निगलना, लील लेना । पकड़ना । शब्दों पर चिह्न लगाना । नष्ट करना । खा डालना, भक्षण कर जाना । ग्रसते, ग्रसिष्यते, अग्रसिष्ट ।
ग्रसन—(न०) [√ग्रस्+ल्युट्] निगलना, खाना । पकड़ना । चन्द्र और सूर्य का अपूर्ण ग्रास ।
ग्रस्त—(वि०) [√ग्रस्+क्त] खाया हुआ, भक्षण किया हुआ । पकड़ा हुआ । अधिकृत किया हुआ । प्रभाव पड़ा हुआ । ग्रहण लगा हुआ । (न०) अर्धोच्चारित शब्द या वाक्य ।—**अस्त** (**ग्रस्तास्त**)—(न०) ग्रहण सहित सूर्य या चन्द्रमा का अस्त होना ।—**उदय** (**ग्रस्तोदय**)—(पुं०) ग्रहण लगे हुए चन्द्रमा या सूर्य का उदय होना ।
√**ग्रह्**—वैदिक साहित्य में √ग्रभ्, क्र्या०

उभ० सक० पकड़ना, लेना, ग्रहण करना। पाना, प्राप्त करना। वसूल करना, उगाहना। गिरफ्तार करना, बंदी बनाना। रोकना, थामना। आकर्षित करना, अपनी ओर खींचना। जीतना। एक पक्ष में कर लेना। प्रसन्न करना, खुश करना। अधिकार में करना। प्रभावान्वित करना। धारण करना। सीखना। जानना-पहिचानना। विश्वास करना। ख़याल करना। इन्द्रियगोचर करना। वशवर्ती करना। अनुमान करना। परिणाम निकालना। बखान करना, वर्णन करना। खरीदना, मोल लेना। वञ्चित करना, छीन लेना। लूट लेना। धारण करना, पहिन लेना। (व्रत) रखना। ग्रस लेना। हाथ में (किसी कार्य को) लेना। स्वीकार करना। विवाह में दान कर डालना। सिखलाना। बतलाना। गृह्णाति-गृह्णीते, ग्रहीष्यति-ते, अग्रहीत्-अग्रहीष्ट।

ग्रह—(पुं०) [√ग्रह्+अच्] सूर्य की परिक्रमा करने वाला तारा। सौर मंडल के नौ प्रधान तारों में से कोई एक। नौ की संख्या। पकड़ना। प्राप्त करना। अङ्गीकार करना। उपलब्धि। चोरी। लूट का माल। ग्रहण (चन्द्रमा, सूर्य का)। ग्रह। वर्णन। निरूपण। दुहराना। ग्राह, घड़ियाल। भूत। पिशाच। बालग्रह। ज्ञान, बोध। ज्ञानेन्द्रिय। सतत चेष्टा, निरन्तर प्रयत्न। अभिप्राय। संरक्षकता। अनुग्रह।—**अधीन** (**ग्रहाधीन**)-(वि०) ग्रहों के शुभाशुभ फलों के ऊपर निर्भर।—**अवमर्दन** (**ग्रहावमर्दन**)-(पुं०) राहु का नाम। (न०) ग्रहों की टक्कर।—**अधीश** (**ग्रहाधीश**)-(पुं०) सूर्य।—**आधार** (**ग्रहाधार**),—**आश्रय** (**ग्रहाश्रय**)-(पुं०) ध्रुव वृत्त सम्बन्धी नक्षत्र। मेरु सम्बन्धी नक्षत्र।—**आमय** (**ग्रहामय**)-(पुं०) मिर्गी। भूतावेश।—**आलुञ्चन** (**ग्रहालुञ्चन**)-(न०) शिकार पर झपटना और उसके टुकड़े-टुकड़े कर डालना।—**ईश** (**ग्रहेश**)-(पुं०) सूर्य।—**कल्लोल**-(पुं०) राहु।—**गति**-(स्त्री०) ग्रहों की चाल।—**चिन्तक**-(पुं०) ज्योतिषी, दैवज्ञ।—**दशा**-(स्त्री०) ग्रह की दशा।—**नायक**-(पुं०) सूर्य। शनि।—**नेमि**-(पुं०) चन्द्रमा।—**पति**-(पुं०) सूर्य। चन्द्रमा।—**पीडन**-(न०), —**पीडा**-(स्त्री०) ग्रह के कारण दुःख या क्लेश। चन्द्र-सूर्य का ग्रहण, 'शशि-दिवाकरयोर्ग्रहपीडनं' प०।—**राज**-(पुं०) सूर्य। चन्द्र। बृहस्पति।—**मण्डल**-(न०) —**मण्डली**-(स्त्री०) ग्रह-समूह। ग्रहों का वृत्त।—**युति**-(स्त्री०) राशि-विशेष के एक ही अंश पर दो ग्रहों का आ जाना।—**वर्ष**-(पुं०) ग्रहों की गति के हिसाब से माना जाने वाला वर्ष। वर्षफल।—**विग्रह**-(पुं०) इनाम और दण्ड।—**विप्र**-(पुं०) ज्योतिषी।—**वेध**-(पुं०) ग्रहों की स्थिति का ज्ञान प्राप्त करना।—**शान्ति**-(स्त्री०) जपदानादि से अशुभ ग्रहों के अशुभ फल को दूर करना।—**शृंगाटक**-(न०) ग्रहों का एक तरह का योग।—**संगम**-(न०) कई ग्रहों का इकट्ठा हो जाना।—**स्वर**-(पुं०) राग आरंभ करने का स्वर।

ग्रहण—(न०) [√ग्रह्+ल्युट्] पकड़ना, ग्रहण करना। पाना, प्राप्ति। अङ्गीकार करना। वर्णन करना। पहनना, धारण करना। चन्द्र और सूर्य का ग्रहण। बुद्धि। ज्ञान। प्रतिध्वनि। हाथ। इन्द्रिय।

ग्रहणि, ग्रहणी—(स्त्री०) [√ग्रह्+अनि] [ग्रहणि—ङीप्] संग्रहणी का रोग, दस्तों की बीमारी।

ग्रहिल—(वि०) [ग्रह+इलच्] दिलचस्पी लेने वाला। हठी। 'प्रससाद ग्रहिलेव मानिनी' नैष० २'७७। भूताविष्ट।

ग्रहीतृ—(वि०) [स्त्री०—**ग्रहीत्री**] [√ग्रह्+तृच्] पाने वाला। स्वीकार करने

वाला। जान लेने वाला, पहिचान लेने वाला। देखने वाला। कर्जदार।

ग्राम—(पुं०) [√ग्रस्+मन्, आदन्तादेश] गाँव। पुरवा। जाति। समाज। समूह। एक षड्ज से दूसरे षड्ज तक का स्वर-समूह, स्वर-सप्तक।—**अधिकृत** (ग्रामाधिकृत),—**अध्यक्ष** (ग्रामाध्यक्ष),—**ईश** (ग्रामेश),—**ईश्वर** (ग्रामेश्वर) (पुं०)-गाँव का मुखिया, चौधरी।—**अन्त** (ग्रामान्त)-(पुं०) ग्राम की सीमा। ग्राम के समीप की जगह।—**अन्तर** (ग्रामान्तर)-(न०) अन्य ग्राम।—**अन्तिक** (ग्रामान्तिक)-(न०) ग्राम का पड़ोस या सामीप्य।—**आचार** (ग्रामाचार)-(पुं०) गाँव की प्रथा (रस्म)।—**आघात** (ग्रामाघात)-(न०) शिकार।—**उपाध्याय** (ग्रामोपाध्याय)-(पुं०) ग्रामयाजक।—**कण्टक**-(पुं०) चुगलखोर, पिशुन।—**कुमार**-(पुं०) देहाती लड़का।—**कूट**-(पुं०) ग्राम का सर्वोत्तम पुरुष। शूद्र।—**घात**-(पुं०) गाँव को लूट करना।—**घोषिन्**-(पुं०) इन्द्र।—**चर्या**-(स्त्री०) स्त्रीमैथुन।—**चैत्य**-(पुं०) गाँव का पवित्र वृक्ष।—**जाल**-(न०) कई एक ग्रामों का समूह।—**णी**-(पुं०) गाँव या समाज का मुखिया या चौधरी। नेता, मुखिया। नाई। कामी पुरुष। (स्त्री०) रंडी, वेश्या। नील का पौधा।—**तक्ष**-(पुं०) बढ़ई जो गाँव में काम करे।—**धर्म**-(पुं०) मैथुन, स्त्री-प्रसंग।—**प्रेष्य**-(पुं०) किसी ग्राम के समाज का सदेश ले जाने और ले आने वाला।—**मद्गुरिका**-(स्त्री०) ग्राम का झगड़ा या उत्पात, उपद्रव।—**मुख**-(पुं०) हाट, बाजार।—**मृग**-(पुं०) कुत्ता।—**याजक**-(पुं०),—**याजिन्**-(पुं०) ग्राम का उपाध्याय। पुजारी।—**षंड**-(पुं०) नपुंसक, हिजड़ा।—**संकर**-(पुं०) गाँव की नाली, मोरी।—**संघटन**-(पुं०) ग्राम-जीवन को संघटित, व्यवस्थित करने का कार्य।—**सिंह**-(पुं०) कुत्ता।—**स्थ**-(वि०) ग्राम में रहने वाला। एक ही ग्राम का बसने वाला साथी।—**हासक**-(पुं०) बहनोई।

ग्रामटिका—(स्त्री०) अभागा गाँव। दरिद्र गाँव।

ग्रामिक—(वि०) [ग्राम+ठञ्] ग्राम संबंधी। देहाती। गँवार, असभ्य। (पुं०) ग्राम के रक्षार्थ नियुक्त अधिकारी, मुखिया। [स्त्री०—ग्रामिकी]

ग्रामीण—(पुं०) [ग्राम+खञ्] गाँव में रहने वाला। कुत्ता। काक। शूकर। (वि०) ग्राम संबंधी। गँवार। गाँव का।

ग्रामेय—(वि०) [ग्राम+ढक्] गाँव में उत्पन्न। गँवार।

ग्रामेयी—(स्त्री०) [ग्रामेय+ङीप्] रंडी, वेश्या।

ग्राम्य—(वि०) [ग्राम+य] गाँव सम्बन्धी। गाँव का। ग्रामवासी। पालतू। जुता हुआ। नीच। अशिष्ट। अश्लील। (पुं०) पालतू कुत्ता। (न०) मैथुन। स्वीकार। एक प्रकार का रतिबन्ध। अश्लील शब्द या वाक्य। काव्य का एक दोष। देहाती भोजन। मिथुन राशि। राशि में मेष और वृष राशि को ग्राम्य कहते हैं।—**अश्व** (ग्राम्याश्व)-(पुं०) गधा।—**कर्मन्**-(न०) ग्रामवासी का पेशा या रोजगार।—**कुङ्कुम**-(न०) केसर।—**धर्म**-(पुं०) ग्रामवासी का कर्त्तव्य। मैथुन।—**पशु**-(पुं०) पालतू जानवर।—**बुद्धि**-(वि०) अज्ञानी। हसोड़। मसखरा।—**वल्लभा**-(स्त्री०) रंडी, वेश्या।—**सुख**-(न०) मैथुन।

ग्रावन्—(पुं०) [√ग्रस्+ड—ग्र:, ग्र—आ √वन्+विच्] पत्थर, चट्टान। पहाड़; 'अपि ग्रावा रोदित्यपि दलति वज्रस्य हृदयं' उत्त० १।२८। बादल।

ग्रास—(पुं०) [√ग्रस्+घञ्] कौर,

निवाला । भोजन । पालन पोषण का उपस्कर। राहु या केतु से ग्रस्त चन्द्र या सूर्य का एक भाग ।—**ग्रासाच्छादन (ग्रासाच्छादन)**-(न०) भोजन-कपड़ा ।—**शल्य**-(न०) गले में अटकने वाली कोई भी वस्तु ।

ग्राह—(वि०) [√ग्रह्+ण] पकड़ने वाला । लेने वाला ।(पुं०) मगर, घड़ियाल ।[√ग्रह्+घञ्] ग्रहण । पकड़ । आग्रह । बंदी, कैदी । स्वीकृति । समझ, ज्ञान । अटलता, दृढ़ता । दृढ़प्रतिज्ञता, संकल्प, निश्चय । रोग, बीमारी ।

ग्राहक—(वि०) [√ग्रह्+ण्वुल्] ग्रहण करने वाला । मलरोधक । (पुं०) गाहक, खरीदार । बाज पक्षी । विष-चिकित्सक ।

ग्रीवा—(स्त्री०) [गीर्यतेऽनया, √गृ+वन्, नि० साधुः] गरदन ।—**घंटा**-(स्त्री०) घोड़े के गले की घंटी या घुँघुरू ।

ग्रीवालिका—दे० 'ग्रीवा' ।

ग्रीविन्—(पुं०)[प्रशस्ता ग्रीवा अस्ति अस्य, ग्रीवा+इनि] ऊँट । (वि०) लंबी, सुन्दर गरदन वाला ।

ग्रीष्म—(पुं०) [ग्रसते रसान्, √ग्रस्+मक् नि० साधुः]गर्मी की ऋतु, ज्येष्ठ और आषाढ़ के मास । गर्मी, उष्णता ।—**उद्भवा (ग्रीष्मोद्भवा)**-(स्त्री०)-**जा**-(स्त्री०) नवमल्लिका लता ।

ग्रैव—(वि०) [स्त्री०—**ग्रैवी**], **ग्रैवेय**—(वि०) [स्त्री०—**ग्रैवेयी**]-[ग्रीवा+अण्] [ग्रीवा+ढञ्] गरदन सम्बन्धी । (न०) गले का पट्टा या कंठा । हाथी के गले की जंजीर ।

ग्रैवेयक—(न०) [ग्रीवा+ढकञ्] हार । कंठा; 'ग्रैवेयकं नोज्ज्वलं' सा० । हाथी के गले की जंजीर ।

ग्रैष्मक—(वि०) [ग्रीष्म+वुञ्] ग्रीष्म-संबंधी । गर्मी में बोया हुआ । गर्मी की ऋतु में अदा करने योग्य ।

ग्लपन—(न०) [√ग्लै+णिच्, पुक्, ह्रस्व +ल्युट्] मुर्झाना, कुम्हलाना । पर्यवसान ।

ग्लपित—(वि०) [√ग्लै+णिच्, आत्व, पुक्, ह्रस्व, क्त] क्लान्त । शिथिल ।

√ग्लस्—भ्वा० आत्म० सक० खाना, भक्षण करना । ग्लसते, ग्लसिष्यते, अग्लसिष्ट ।

√ग्लह्—भ्वा० पर०, चु० उभ० सक० जुआ खेलना । सक० पाना । ग्लहति, ग्लहिष्यति, अग्लहीत् । ग्लाहयति-ते, ग्लाहयिष्यति-ते, अजग्लहत्-त ।

ग्लह—(पुं०) [√ग्लह्+अप्] जुआरी । दाव । पासा । जूआ, द्यूत ।

ग्लान—(वि०) [√ग्लै+क्त] थका हुआ, परिश्रान्त । बीमार, रोगी ।

ग्लानि—(स्त्री०) [√ग्लै+नि] थकान; 'अङ्गग्लानि सुरतजनितां' मे० ७० । ह्रास । निर्बलता । बीमारी । घृणा, अरुचि । एक संचारी भाव ।

ग्लास्नु—(वि०) [√ग्लै+स्नु] थका हुआ, श्रान्त ।

√ग्लुच्—भ्वा० पर० सक० चोरी करना । ग्लोचति, ग्लोचिष्यति, अग्लुचत्- अग्लोचीत् ।

√ग्लुञ्च्—भ्वा० पर० सक० चोरी करना । ग्लुञ्चति, ग्लुञ्चिष्यति, अग्लुचत्-अग्लुञ्चीत् ।

√ग्लेप्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । अक० काँपना । दुःखी होना । ग्लेपते, ग्लेपिष्यते, अग्लेपिष्ट ।

√ग्लेव्—भ्वा० आत्म० सक० सेवा करना । पूजा करना । ग्लेवते, ग्लेविष्यते, अग्लेविष्ट ।

√ग्लेष्—भ्वा० आत्म० सक० ढूंढ़ना, तलाश करना । ग्लेषते, ग्लेषिष्यते, अग्लेषिष्ट ।

√ग्लै—भ्वा० पर० अक० हर्ष-क्षय होना । थक जाना । मूर्च्छित होना । ग्लायति, ग्लास्यति, अग्लासीत् ।

ग्लौ—(पुं०)[√ग्लै+डौ] चन्द्रमा । कपूर । हृदय की नाड़ी ।

घ

घ—संस्कृत वर्णमाला या नागरी वर्णमाला का चौथा वर्ण और व्यञ्जनों में से कवर्ग का चौथा व्यञ्जन। इसका उच्चारण जिह्वामूल या कण्ठ से होता है। यह स्पर्श वर्ण है। इसमें घोष, नाद, संवार और महाप्राण प्रयत्न होते हैं। (वि०) यह समास में पीछे जुड़ता है और इसका अर्थ होता है मारने वाला; हत्या करने वाला जैसे **पाणिघ, राजघ**। (पुं०) [घट-यति घर्घरादिशब्दं करोति, √घट्+ड] घंटा। घर्घरशब्द।

√**घघ्**—भ्वा० पर० अक० हँसना। घघति, घघिष्यति, अघघीत्-अघाघीत्।

√**घट्**—भ्वा० आत्म० अक० यत्न करना। प्रयत्न करना। घटित होना। होना। घटते, घटिष्यते, अघटिष्ट। णिचि घटयति इत्यादि।

घट—(पुं०) [√घट्+अच्] घड़ा। कुम्भ-राशि। हाथी का माथा। कुम्भक प्राणायाम। द्रोण के समान तौल। स्तम्भ का एक भाग। —**आटोप** (**घटाटोप**)-(पुं०) गाड़ी, पालकी आदि का ओहार जो उसे पूरी तरह ढक ले। कोई ढक लेने वाली वस्तु, सामान। घनघटा। आडंबर। —**उद्भव** (**घटोद्भव**) **ज**,—**योनि**,—**सम्भव**-(पुं०) अगस्त्य मुनि। —**ऊधस्**-(स्त्री०) (=**घटोध्नी**) दूध भरे घड़े जैसे थन वाली गौ। —**कञ्चुकी**-(स्त्री०) तांत्रिकों की एक अनैतिक रीति। —**कर्ण**-(पुं०) कुम्भकर्ण। —**कर्पर, खर्पर**-(पुं०) संस्कृत साहित्य के एक कवि जो विक्रमादित्य की सभा के नवरत्नों में से थे। खपरा। —**कार**,—**कृत्**-(पुं०) कुम्हार। —**ग्रह**-(पुं०) कहार, पन-भरा। —**दासी**-(स्त्री०) कुटनी। —**ध्वंसन**-(न०) जो अपने जीवनकाल में पुनः अपनी जाति में शामिल होने को रजामंद न हुआ हो ऐसे जातिच्युत का और्ध्वदैहिक कृत्य। —**पल्लव**-(न०) घड़े और पत्ते जैसे सिरे वाला खंभा। —**भेदनक**-(न०) कुम्हार का एक उपकरण जो बरतन बनाने के काम में आता है। —**योनि**-(पुं०) अगस्त्य। —**राज**-(पुं०) आँवा में पकाया हुआ मिट्टी का बड़ा घड़ा। —**स्थापन**-(न०) घड़ा रख कर उसमें देव-विशेष का आवाहन पूर्वक पूजन।

घटक—(वि०) [√घट्+णिच्+ण्वुल्] प्रयत्नवान्, चेष्टा करने वाला। सम्पन्न करने वाला। मौलिक। प्रधान। वास्तविक। (पुं०) एक वृक्ष जिसमें फूल न लग कर फल ही लगते हैं। दियासलाई बनाने वाला। सगाई कराने वाला, बिचवानिया। वंशावली जानने वाला।

घटन, घटना—(न०) [√घट्+ल्युट्] [√घट्+णिच्+युच्—टाप्] प्रयत्न, उद्योग। घटना। सम्पन्नता, पूर्णता। मेल, ऐक्य। संसर्ग, सम्बन्ध। बनाना। गढ़ना। तैयार करना।

घटा—(स्त्री०) [√घट्+अङ्—टाप्] उद्योग, प्रयत्न। संख्या। दल, जमाव। सैनिक कार्य के लिये जमा हुए हाथियों का समूह। समूह (बादलों का)।

घटिक—(पुं०) [घट+ठन्] घड़े, घड़नई के सहारे नदी पार करने-कराने वाला। घड़ियाल बजाने वाला। (न०) नितंब।

घटिका—(स्त्री०) [घटी+कन्—टाप्, ह्रस्व] छोटा मिट्टी का घड़ा। २४ मिनिट की एक घड़ी। जलघड़ी। घुटना।

घटिन्—(पुं०) [घटस्तदाकारोऽस्त्यस्य, घट+इनि] कुम्भ राशि।

घटिन्धम—(न०) [घटी √धेट्+खश्, मुम्, ह्रस्व] जो घड़ा भर (जल) पी जाय।

घटी—(स्त्री०) [घट+ङीप्] छोटा घड़ा। २४ मिनिट का काल। जलघड़ी। —**कार**-(पुं०) कुम्हार। —**ग्रह**,—**ग्राह**-(वि०) पनभरा, पानी ढोनेवाला। —**यंत्र**-(न०)

एक यंत्र जो पानी उलीचने के काम में आता है। जलघड़ी।

घटोत्कच—(पुं०) हिडिम्बा राक्षसी के गर्भ से उत्पन्न भीम का पुत्र। गुप्त वंश का सम्राट, महाराज श्रीगुप्त के पुत्र का नाम।

√घट्ट्—भ्वा० आत्म०, चु० उभ० हिलाना-डुलाना। स्पर्श करना। मलना। हाथों को मलना। चिकनाना। चोट मारना। निन्दा करना। उखाड़-पछाड़ करना। घट्टते, घट्टिष्यते, अघट्टिष्ट। घट्टयति-ते, घट्टयिष्यति-ते, अजघट्टत्-त।

घट्ट—(पुं०) [घट्टतेऽस्मिन्, √घट्ट्+घञ्] घाट। महसूल उगाहने का स्थान। **—कुटी**-महसूल उगाहने की चौकी। **—जीविन्**-(पुं०) घाट के महसूल या घटही नाव के खेवे से गुजर करने वाला। एक वर्णसंकर जाति (यथा "वैश्यायां रजकाज्जातः")।

घट्टना—(स्त्री०) [√घट्ट्+युच्—टाप्] हिलाना। मलना। व्यवसाय, पेशा।

√घण्—त० उभ० अक० चमकना। घणोति-घणुते, घणिष्यति-ते, अघाणीत्-अघणीत्-अघणिष्ट।

√घण्ट्—चु० पर० अक० शब्द करना। घण्टयति, घण्टयिष्यति, अजघण्टत्।

घण्ट—(पुं०) [√घण्+क्त] एक प्रकार की चटनी।

घण्टा—(स्त्री०) [√घण्ट्+अच्—टाप्] घंटा, घड़ियाल। **—अगार** (**घण्टागार**)-(न०) घंटाघर। **—ताड**-(पुं०) घंटा बजाने वाला। **—नाद**-(पुं०) घंटे का शब्द। **—पथ**-(पुं०) राजमार्ग, मुख्य सड़क। यथा—'दशधन्वन्तरो राजमार्गो घंटापथः स्मृतः।'—कौटिल्य। **—शब्द**-(पुं०) काँसा। फूल। घंटे की आवाज।

घण्टिका—(स्त्री०) [घण्टा+ङीप्+कन्, ह्रस्व] छोटी घंटी। घुंघरू। उपजिह्वा, कौआ।

घण्टु—(पुं०) [√घण्ट्+उण्] हाथी की छाती के आर-पार बाँधने की रस्सी जिसमें घंटे अटके हों। उष्णता। प्रकाश।

घण्ड—(पुं०) [घण् इति शब्दं कुर्वन् डीयते, घण्√डी+ड] मधुमक्षिका।

घन—(वि०) [√हन्+अप्, घनादेश] बादल। गदा। लुहार का बड़ा हथौड़ा। शरीर। समूह। अबरक। कफ। (न०) झाँझ, मजीरा। घंटा, घड़ियाल। लोहा। टीन। चमड़ा। छिलका। कसा हुआ, दृढ़, कड़ा, ठोस। गाढ़ा, घना, सघन। पूर्ण। गहरा। स्थायी। अभेद्य। महान्। अतिशय। तीक्ष्ण। सम्पूर्ण। शुभ। सौभाग्य-सम्पन्न। **—अत्यय** (**घनात्यय**), **—अन्त** (**घनान्त**) (पुं०) शरद ऋतु। **—अम्बु** (**घनाम्बु**)-(न०) वर्षा। **—आकर** (**घनाकर**)-(पुं०) वर्षा ऋतु। **—आगम** (**घनागम**)-(पुं०) वर्षा ऋतु; 'घनागमः कामिजनप्रियः प्रिये' ऋ० ३.१। **—आमय** (**घनामय**)-(पुं०) छुहारे का वृक्ष। **—आश्रय** (**घनाश्रय**)-(पुं०) आकाश, अन्तरिक्ष। **—उपल** (**घनोपल**)-(पुं०) ओला। **—ओघ** (**घनौघ**)-(पुं०) बादलों का समूह। **—कफ**-(पुं०) ओला। बिनौला। **—काल**-(पुं०) वर्षाकाल। **—गर्जित**-(न०) बादलों की गड़गड़ाहट। **—गोलक**-(पुं०) चाँदी, सोने की मिलावट। खोटी धातु। **—जम्बाल**-(पुं०) गाढ़ी कीचड़ या काँदो। **—ताल**-(पुं०) चातक पक्षी। सारङ्ग पक्षी। **—तोल**-(पुं०) चातक पक्षी। **—नाभि**-(पुं०) धूम, धुआँ। **—नीहार**-(पुं०) सघन कोहासा, कोहरा। **—पदवी**-(स्त्री०) आकाश, अन्तरिक्ष; "कामदृभिर्घनपदवीमनेकसंख्यैः" कि० ५.३४। **—पाषण्ड**-(पुं०) मयूर, मोर। **—फल**-(पुं०) विकंटक वृक्ष। (न०) लंबाई-चौड़ाई-मोटाई का गुणनफल। **—मूल**-(न०) जिस समान अंक के त्रिघात को घन कहते हैं वह समान अंक ही

उस अंक का घनमूल है ।—रस–(पुं०) गाढ़ा रस । सार । काढ़ा । कपूर । जल ।—वर्त्मन्–(न०) आकाश ।—वल्लिका, —वल्ली –(स्त्री०) बिजली ।—वास–(पुं०) कोंहड़ा, कूष्माण्ड ।—वाहन–(पुं०) शिव । इन्द्र ।—श्याम–(वि०) अत्यन्त काला । (पुं०) श्रीरामचन्द्र । श्री कृष्ण ।—समय–(पुं०) वर्षा ऋतु ।—सार–(पुं०) कपूर । पारा, पारद । जल ।—स्वन–(पुं०) बादलों की गड़गड़ाहट ।—हस्त–(पुं०) एक हाथ लंबा, एक हाथ चौड़ा और एक हाथ गहरा क्षेत्र या एक हाथ मोटा पिंड । अन्नादि नापने का एक मान ।

घना—(स्त्री०) [घन+अच्+टाप्] शिव की जटा ।

घनाघन—(पुं०) [√हन्+अच् नि० साधुः] इन्द्र । मदमत्त हाथी । पानी से भरा काला बादल ।

घनिष्ठ—(वि०) [अतिशयेन घनः, घन+इष्ठन्] बहुत घना । बहुत गाढ़ा । गहरा । बहुत निकट का । अंतरंग ।

घनीभाव—(पुं०) [घन+च्वि√भू+घञ्] गाढ़ा, गहरा होना । जमना, ठोस बनना । केंद्रीभूत होना ।

√घम्ब्—भ्वा० पर० सक० जाना । अक० हिलना । घम्बति, घम्बिष्यति, अघम्बीत् ।

घर—(पुं०) [√घृ+अच्] आवास, मकान ।

घरट्ट—(पुं०) [घरं सेकम् अट्टति अतिकामति, घर√अट्ट्+अण्, शक० पररूप]चक्की, जाँता ।

घर्घर—(वि०) [घर्घ√रा+क] अस्पष्ट । घर्राता हुआ । (बादल की तरह) घर घर करने वाला । (पुं०) [पुनः पुनः घरति, √घृ+यङ्–लुक्+अच्] घरघराहट । कोलाहल । द्वार, फाटक । हास्य । उल्लू । तुषाग्नि ।

घर्घरा, घर्घरी—(स्त्री०) [घर्घर+टाप्] [घर्घर+ङीप्] घुंघरू । घुँघरूदार करधनी । गङ्गा । वीणा-विशेष ।

घर्घरिका—(स्त्री०) [घर्घर+ठन्–टाप्] घुंघरू । एक प्रकार का बाजा । लावा ।

घर्घरित—(न०) [घर्घर+णिच्+क्त] शूकर की घुरघुराहट ।

घर्म—(पुं०) [घरति अङ्गात्, √घृ+मक्, नि० साधुः] गर्मी, उष्णता । ग्रीष्म ऋतु । पसीना, स्वेद । कड़ाह, बड़ी कड़ाही ।—**अंशु** (**घर्मांशु**) –(पुं०) सूर्य ।—**अन्त** (**घर्मान्त**) –(पुं०) वर्षाऋतु ।—**अम्बु** (**घर्माम्बु**), —**अम्भस्** (**घर्माम्भस्**)–(न०) पसीना, स्वेद ।—**चर्चिका**, —**विचर्चिका**–(स्त्री०) घमौरी, अम्हौरी ।—**दीधिति**,—**द्युति**, —**रश्मि**–(पुं०) सूर्य ।—**पयस्**–(न०) पसीना, स्वेद ।

√घर्व्—भ्वा० पर० सक० जाना । घर्वति, घर्विष्यति, अघर्वीत् ।

घर्ष, घर्षण—(पुं०) (न०) [√घृष्+घञ्] [√घृष्+ल्युट्] रगड़न, रगड़ । पीसना ।

घर्षणी—(स्त्री०) [√घृष्+ल्युट्–ङीप्] हरिद्रा, हलदी ।

√घस्—भ्वा० पर० सक० खाना । घसति, घस्स्यति, अघसत् ।

घस्मर—(वि०) [√घस्+क्मरच्] मरभुखा, खाऊ, पेटू । भक्षक; 'कुमुदसुतवसुघस्मरो हीमिरस्मि' वे० ५.३६ ।

घस्र—(वि०) [√घस्+रक्] चोट पहुँचाने वाला, हानिकारक । (न०) केसर, जाफरान । (पुं०) दिन । सूर्य । शिव ।

घाट—(पुं०), **घाटा**–(स्त्री०) [√घट+घञ् +अच्] [घाट+टाप्] गरदन के पीछे का भाग । घड़ा । नाव आदि से उतरने का स्थान ।

घाण्टिक—(पुं०) [घण्टा+ठक्] घंटा बजाने वाला । बंदीजन, भाट । धतूरा ।

घात—(पुं०) [√हन्+घञ्] प्रहार, चोट ।

हत्या । तीर । गुणनफल ।—**चन्द्र**–(पुं०) अशुभ राशि स्थित चन्द्रमा ।—**तिथि**–(स्त्री०) अशुभ चान्द्र तिथि ।—**नक्षत्र**–(न०) अशुभ नक्षत्र ।—**वार**–(पुं०) अशुभ दिन ।—**स्थान**–(न०) कसाईखाना । फाँसी-घर ।

घातक—(वि०) [√हन्+ण्वुल्] घात करने वाला, हत्यारा । हानिकार ।

घातन—(वि०) [√हन्+णिच्+ल्यु (कर्तरि)] वध करने वाला । (न०) [√हन्+णिच्+ल्युट् (भावे)] मारना, वध करना । यज्ञ में पशुहिंसा ।

घातिन्—(वि०) [√हन्+णिनि] [स्त्री०—**घातिनी**] प्रहार करने वाला मारने वाला । नाशक ।—**पक्षिन्** (**घातिपक्षिन्**),—**विहग** (**घातिविहग**)–(पुं०) बाज पक्षी ।

घातुक—(वि०) [√हन्+उकञ्] [स्त्री०—**घातुकी**] हिंसक । क्रूर, निष्ठुर, नृशंस ।

घात्य—(वि०) [√हन्+ण्यत्] मार डालने योग्य ।

घार—(पुं०) [√घृ+घञ्] सिञ्चन, तर करना ।

घार्तिक—(पुं०) [घृत+ठक्] घी में सिकी पूड़ी या मालपुआ, विशेष कर जिसमें अनेक छिद्र-से होते हैं ।

घास—(पुं०) [√घस्+घञ्] चारा । चरागाह, गोचरभूमि ।—**कुन्द**,—**स्थान**–(न०) चरागाह ।

घासि—(पुं०) [√घस्+इञ्] आग ।

√घु—भ्वा० आत्म० अक० अस्पष्ट शब्द करना, ऐसा शब्द करना जिसका अर्थ समझ में न आवे । घवते, घोष्यते, अघोष्ट ।

घु—(पुं०) कबूतर की कुटुरगूं, गुटुरगूं ।

√घुट्—भ्वा० आत्म० अक० लौटना । पीछे हटना । घोटते, घोटिष्यते, अघुटत्—अघोटिष्ट । तु० पर० सक० सामने से चोट करना । उलट कर मारना । घुटति, घुटिष्यति, अघुटीत् ।

घुट, घुटि, घुटी–(स्त्री०) [√घुट्+अच्] [√घट्+इन्] [घुटि–ङीप्] टखना । एड़ी ।

√घुण्—तु० उभ० अक० लोटना । डगमगाना । घूमना । लौटना । घूमकर लौट आना । चक्कर देना । सक० लेना, प्राप्त करना । घुणति—ते, घोणिष्यति—ते, अघोणीत्—अघोणिष्ट ।

√घुण—(पुं०) [√घुण्+क] घुन, काष्ठकीट ।—**अक्षर** (**घुणाक्षर**),—**लिपि**–(स्त्री०) लकड़ी में घुनों की बनाई अक्षरनुमा आकृतियाँ ।

घुण्ट, घुण्टक—(पुं०), **घुण्टिका**–(स्त्री०) [√घुट्+क, नि० साधुः] [घुण्ट+कन्] [घुण्टक+टाप्, इत्व] एड़ी ।

घुण्ड—(पुं०) [√घुण्+ड, नि० साधुः] भौंरा, भ्रमर ।

√घुर्—तु० पर० अक० शब्द करना । कोलाहल करना । सोने के समय घुर्राना । गुर्राना । भयङ्कर होना । दुःख में रोना । घुरति, घोरिष्यति, अघोरीत् ।

घुरी—(स्त्री०) [√घुर्+कि–ङीप्] थूथुन । नथुना (विशेष कर शूकर का) ।

घुर्घुर—(पुं०) [घुर् इत्यव्यक्तं घुरति, घुर् √घुर्+क] क्षुद्रकीट, घुरघुरा नामक कीड़ा । सूअर का शब्द ।

घुर्घुरी—(स्त्री०) [घुर्घुर+अच्–ङीप्] एक प्रकार का जलजन्तु ।

घुलघुलारव—(पुं०) ['घुलघुल' इत्यव्यक्तम् आरौति, आ√रु+अच्] एक प्रकार का कबूतर ।

√घुष्—भ्वा०, चु० पर० अक० शब्द करना, आवाज करना । घोषणा करना । (भ्वा०)घोषति, घोषिष्यति, अघुषत्—अघोषीत् ।

(चु०) घोषयति, घोषयिष्यति, अजूघुषत् । पक्षे भ्वा० वत् रूपाणि ।

घुसृण—(न०) [√घुष्+क्सुन, पृषो० साधुः] केसर, जाफरान ।

घूक—(पुं०) [घू इत्यव्यक्तं कायति, घू√कै+क] उल्लू, घुग्घू ।—**अरि** (**घूकारि**)—(पुं०) कौवा ।

√**घूर्**—दि० आत्म० सक० मारना । अक० पुराना होना । घूर्यते, घूरिष्यते, अघूरिष्ट ।

√**घूर्ण्**—भ्वा० आत्म०, तु० पर० अक० इधर-उधर घूमना या मारे-मारे फिरना । चक्कर लगाना । हिलाना । घूमकर पीछे पलटना ।(भ्वा०) घूर्णते, घूर्णिष्यते, अघूर्णिष्ट । (तु०) घूर्णति, घूर्णिष्यति, अघूर्णीत् ।

घूर्ण—(वि०) [√घूर्ण्+अच्] इधर-उधर घूमने वाला । (पुं०) [√घूर्ण्+घञ्] घूमना ।—**वायु**—(पुं०) बवण्डर ।

घूर्णन—(न०), **घूर्णना**—(स्त्री०) [√घूर्ण्+ल्युट्] [√घूर्ण+णिच्+युच्—टाप्] घूमना, चक्कर खाना । भ्रमण । घुमाना ।

√**घृ**—भ्वा० पर० सक० सींचना । घरति, घरिष्यति, अघार्षीत् ।

√**घृण्**—त० उभ० अक० चमकना । घृणोति—घृणुते, घर्णिष्यति—ते, अघर्णीत्, —अघृत,—अघर्णिष्ट ।

घृणा—(स्त्री०)[√घृ+नक्—टाप्] अरुचि, घिन । दया, रहम । तिरस्कार । भर्त्सना, धिक्कार ।

घृणालु—(वि०) [घृणा+आलुच्] दयालु, कोमल हृदय ।

घृणि—(पुं०) [√घृ+नि, नि० साधुः] गर्मी । धूप । किरण । सूर्य । लहर । (न०) जल ।—**निधि**—(पुं०) सूर्य ।

√**घृण्ण्**—भ्वा० आत्म० सक० लेना । घृण्णते, घृण्णिष्यते, अघृण्णिष्ट ।

घृत—(न०) [जर्यति क्षरति,√घृ+क्त] घी । मक्खन । पानी ।—**अग्र** (**घृताग्र**),—**अर्चिस्** (**घृतार्चिस्**)—(पुं०) दहकती हुई आग ।—**आहुति** (**घृताहुति**)—(स्त्री०) घी की आहुति ।—**आह्व** (**घृताह्व**)—(पुं०) वृक्ष-विशेष ।—**उद** (**घृतोद**)—(पुं०) घी का समुद्र ।—**ओदन** (**घृतौदन**)—(पुं०) घी मिश्रित भात ।—**कुल्या**—(स्त्री०) घी की नदी ।—**दीधिति**—(पुं०) आग ।—**धारा**—(स्त्री०) अविच्छिन्न घी की धार ।—**पूर**,—**वर**—(पुं०) एक मिठाई, घेवर ।—**लेखनी**—(स्त्री०) कलछी या चमचा जिससे घी डाला या निकाला जाय ।

घृताची—(स्त्री०) [घृत√अञ्च्+क्विप्—ङीप्] एक अप्सरा । राजर्षि कुशनाभ की स्त्री । प्रमति की स्त्री और रुरु की माता । रात्रि । सरस्वती । स्रुवा ।—**गर्भसम्भवा**—(स्त्री०) बड़ी इलायची । घृताची की कन्या ।

√**घृष्**—भ्वा० आत्म० सक० रगड़ना । प्रहार करना । झाड़ना । चिकनाना । चमकाना । पीसना । कूटना । स्पर्धा करना । घर्षते, घर्षिष्यते, अघर्षिष्ट ।

घृष्ट—(वि०) [√घृष्+क्त] घिसा हुआ । मांजा हुआ ।

घृष्टि—(पुं०) [√घृष्+क्तिन्] शूकर । (स्त्री०) [√घृष्+क्तिन्] पीसना । कूटना । मलना । स्पर्धा ।

घोट, घोटक—(पुं०) [√घुट्+अच्] [√घुट्+ण्वुल्] घोड़ा, अश्व ।—**अरि** (**घोटकारि**)—(पुं०) भैंसा ।

घोटिका, घोटी—(स्त्री०) [√घुट्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] [घोट+ङीष्] घोड़ी ।

घोणस, घोनस—(पुं०) [=गोनस, पृषो० साधुः] एक तरह का साँप ।

घोणा—(स्त्री०) [√घुण्+अच्—टाप्] नासिका, नाक । घोड़े का नथुना । शूकर का थूथन ।

घोणिन्—(पुं०) [घोणा+इनि] शूकर ।

घोण्टा—(स्त्री०) [√घुण्+ट—टाप्]

सुपारी का पेड़ । मदन वृक्ष । नागबला । शाकवृक्ष ।

घोर—(वि०) [√हन्+अच्, घुरादेश, अथवा√घुर्+अच्] भयङ्कर, भयानक । प्रचण्ड, उग्र; 'तत्कि कर्मणि घोरे मां नियोजयसि केशव' भग० । (न०) भय । विष । (पुं०) शिव । —**आकृति** (**घोराकृति**),—**दर्शन**-(वि०) भयानक शक्ल का ।—**पुष्प**-(न०) काँसा । फूल ।—**रासन**,—**रासिन्**,—**वासन**,—**वाशिन्**-(पुं०) शृगाल, स्यार । —**रूप**-(पुं०) शिव ।

घोरा—(स्त्री०) [घोर—टाप्] देवताड़ी लता । रात्रि । सांख्य-मत में राजसी मनोवृत्ति । भरणी, मघा, पूर्वफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ और पूर्वभाद्रपद नक्षत्रों में से किसी एक में रवि-संक्रान्ति होने पर उसे घोरा कहते हैं ।

घोल—(पुं०, न०) [√घुर्+घञ्, रस्य लः]-माठा, छाछ ।

घोष—(पुं०) [√घुष्+घञ्] शोर गुल; 'स घोषो धार्तराष्ट्राणाम्' भग० १.१९ । बादल की गड़गड़ाहट । घोषणा, ढिंढोरा । अफवाह, किंवदन्ती । ग्वाला, गोप । मच्छर । वर्णों के उच्चारण के बाह्य प्रयत्नों में से एक । अहीरों की बस्ती । बंगाली कायस्थों की एक उपाधि । (न०) काँसा ।—**वर्ण**—(पुं०) वर्ग का ३, ४, ५ अक्षर तथा य, र, ल, व ।

घोषण—(न०), **घोषणा**-(स्त्री०) [√घुष् +ल्युट्] [√घुष्+णिच्+युच्—टाप्] शोर से बोलकर बताना, मुनादी या एलान करना । ध्वनि ।

घोषयित्नु—(पुं०)[√घुष्+णिच्+इत्नुच्] घोषणा करने वाला । भाट, चारण । कोकिल ।

घ्न—(वि०) [√हन्+क] [स्त्री०—**घ्नी**] मारने वाला, हत्या करने वाला । नष्ट करने वाला (समासान्त में यथा, विघ्न) ।

√**घ्रा**—भ्वा० पर० सक० सूँघना । सूँघ कर जान लेना । चुंबन करना । जिघ्रति, घ्रास्यति, अघ्रासीत् ।

घ्राण—(वि०) [√घ्रा+क्त] सूँघा हुआ । (न०) [√घ्रा+ल्युट्] गंध । सूँघना । सूँघने की शक्ति । नाक ।—**इन्द्रिय** (**घ्राणेन्द्रिय**)-(न०) नाक ।—**चक्षुस्**-(वि०) आँखों का अंधा किन्तु नाक से सूँघ कर जान लेने वाला ।—**तर्पण**-(वि०) घ्राणेन्द्रिय को तृप्त करने वाला । सुगंधयुक्त । (न०) सुगंध ।

घ्राति—(स्त्री०) [√घ्रा+क्तिन्] सूँघने की क्रिया । नाक ।

ङ

ङ—व्यञ्जन वर्ण का पाँचवाँ और कवर्ग का अंतिम अक्षर । इसका उच्चारण-स्थान कंठ और नासिका है । (पुं०) [√ङु+ड] इन्द्रिय-विषय । विषयेच्छा । भैरव ।

√**ङु**—भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना । ङवते, ङविष्यते, अङविष्ट ।

च

च—संस्कृतवर्णमाला या नागरीवर्णमाला का २२ वाँ अक्षर और छठा व्यञ्जन और दूसरे वर्ग चवर्ग का प्रथम अक्षर । इसका उच्चारण-स्थान तालु है । यह स्पर्श वर्ण है और इसके उच्चारण में श्वास, विवार, घोष और अल्प-प्राण प्रयत्न लगते हैं । (पुं०) [√चण् वा √चि+ड] चन्द्रमा । कछुआ । चोर । (अव्य०) और । पादपूरण ।

√**चक्**—भ्वा० आत्म० अक० तृप्त होना । सक० रोकना । चकते, चकिष्यते, अचकिष्ट । भ्वा० पर० अक० तृप्त होना । चकति, चकिष्यति, अचकीत्—अचाकीत् ।

√**चकास्**—अ० पर० अक० चमकना । चकास्ति, चकासिष्यति, अचकासीत् ।

चकित—(वि०) [√चक्+क्त] (भय के कारण) थरथर काँपता या । भयभीत ।

चौंका हुआ । भीरु । शङ्कित । (न०) एक छन्द जिसके प्रत्येक पाद में १६ अक्षर होते हैं ।

चकोर—(पुं०) [चकते चन्द्रकिरणेन तृप्यति, √चक्+ओरन्] तीतर की जाति का एक पहाड़ी पक्षी जो कि चन्द्रमा को देखकर बहुत प्रसन्न होता है ।

√**चक्क्**—चु० उभ० सक० पीड़ित होना । चक्कयति—ते, चक्कयिष्यति—ते, अचचक्कत्—त ।

चक्कल—(वि०) [√चक्क्+अलन्] गोल, वर्तुल ।

चक्र—(पुं०) [√कृ+क, नि० द्वित्व] चकवा पक्षी । पहिया; 'चक्रवत्परिवर्तन्ते दुःखानि च सुखानि च' हि० १.१७३ । कुम्हार का चाक । तेली का कोल्हू । भगवान् विष्णु का आयुध विशेष । वृत्त, मण्डल । दल, समूह । राष्ट्र । राज्य । प्रान्त, सूबा, जिला या ग्रामों का समुदाय । सैनिक व्यूह । युग । अन्तरिक्ष, आकाश-मण्डल । सेना । भीड़भाड़ । ग्रन्थ का अध्याय । भँवर । नदी का घुमघुमाव ।—**अङ्ग** (**चक्राङ्ग**)-(पुं०) राजहंस । गाड़ी । चकवाक ।—**अट** (**चक्राट**)-(पुं०) मदारी, सँपेरा । गुंडा, बदमाश । दीनार या सिक्का विशेष ।—**आकार** (**चक्राकार**),—**आकृति** (**चक्राकृति**)-(वि०) गोलाकार, गोल ।—**आयुध** (**चक्रायुध**)-(पुं०) श्रीविष्णु ।—**आवर्त** (**चक्रावर्त**)-(पुं०) भँवर जैसी या चक्करदार गति ।—**आह्व** (**चक्राह्व**)-(पुं०) —**आह्वय** (**चक्राह्वय**)-(पुं०) चकवाक । —**ईश्वर** (**चक्रेश्वर**)-(पुं०) चक्रवर्ती । तांत्रिक चक्र का अधिष्ठाता । विष्णु । किसी का सर्वोच्च अधिकारी ।—**उपजीविन्** (**चक्रोपजीविन्**)-(पुं०) तेली ।—**कारक**-(न०) नाखून, नख । सुगन्ध-द्रव्य विशेष । —**कुल्या**-(स्त्री०) पिठवन ।—**गड्डु**-(पुं०) गोल तकिया ।—**गति**-(स्त्री०) चक्कर ।

चक्करदार चाल या गति ।—**गुच्छ**-(पुं०)
अशोक वृक्ष ।—**गोप्तृ**-(पुं०) रथचक्र की
रक्षा करने वाला । सेनापति । राज्य-रक्षक ।
—**ग्रहण**-(न०) [स्त्री०—**ग्रहणी**] परकोटा ।
खाईं ।—**चर**-(वि०) मण्डल में घूमने
वाला ।—**चूडामणि**-(पुं०) मुकुटमणि ।
—**जीवक**,—**जीविन्**-(पुं०) कुम्हार ।—
तीर्थ-(न०) प्रभास-क्षेत्र के अंतर्गत एक तीर्थ
(देवासुर-संग्राम के बाद सुदर्शन चक्र में लगा
रुधिर धोने से इसकी उत्पत्ति मानी जाती
है) ।—**तुण्ड**-(पुं०) गोल मुख वाली एक
मछली ।—**दण्ड**-(पुं०) एक तरह की
कसरत ।—**दन्ती**-(स्त्री०) दंती वृक्ष । जमाल-
गोटा ।—**दंष्ट्र**-(पुं०) सुअर ।—**धर**-(वि०)
चक्र धारण करने वाला । (पुं०) विष्णु ।
राजा । सूबेदार । सर्प । जादूगर, मदारी ।—
धारा-(स्त्री०) पहिये की परिधि या उसका
घेरा ।—**नाभि**-(पुं०) पहिये की नाह ।—
नामन्-(पुं०) चक्रवाक । लोहभस्म ।—
नायक-(पुं०) सैनिक टोली का नायक ।
सुगन्ध द्रव्य विशेष ।—**नेमि**-पहिये की
परिधि या उसका घेरा; 'नीचैर्गच्छत्युपरि
च दशा चक्रनेमिक्रमेण' मे० १०९ ।—**पाणि**
-(पुं०) विष्णु भगवान् ।—**पाद**,—**पादक**-
(पुं०) गाड़ी । हाथी ।—**पाल**-(पुं०) सूबे-
दार । सैनिक-विभाग का अधिकारी । आकाश-
मण्डल ।—**बन्धु**, —**बान्धव**-(पुं०) सूर्य ।
—**बाल**,—**वाल**,—**बाड**,—**वाड**-(पुं०, न०)
मंडल, वृत्त । समुदाय, समूह । आकाश-मण्डल ।
(पुं०) पौराणिक पर्वत-माला जो पृथिवी की
परिधि को दीवाल की तरह घेरे हुए है और
जो प्रकाश और अन्धकार की सीमा समझी
जाती है । चक्रवाक ।—**भृत्**-(पुं०) चक्र-
धारी । विष्णु ।—**भेदिनी**-(स्त्री०) रात ।
—**भ्रमि**-(स्त्री०) चक्की (आटा पीसने-
की) । —**मण्डलिन्**-(पुं०) सर्प विशेष ।
नृत्य का एक भेद ।—**मर्द**,—**मर्दक**-(पुं०)

चकवंड़ । —मुख–(पुं०) शूकर ।—मुद्रा–(स्त्री०) तांत्रिक पूजन में प्रयुक्त एक मुद्रा । शंख, चक्र आदि के चिह्न जो वैष्णव अपने शरीर पर छपाते हैं ।—यान–(न०) गाड़ी । —रद–(पुं०) शूकर ।—वर्तिन्–(पुं०) आसमुद्र-क्षितीश, सम्राट् ।—वाक–(पुं०) चकवा । —वाट–(पुं०) सीमा । डीवट, पतीलसोत । किसी कार्य में व्याप्ति ।—वात–(पुं०) तूफान, बवंडर ।—वाल—(पुं०) लोकालोक पर्वत । मंडल । घेरा ।—वालधि–(पुं०) कुत्ता । —वृद्धि–(स्त्री०) सूद दर सूद ।—व्यूह–(पुं०) मण्डलाकार सैनिक-संस्थापना ।— संज्ञ –(न०) टीन । (पुं०) चक्रवाक ।— साह्वय–(पुं०) चक्रवाक ।—हस्त–(पुं०) विष्णु ।

चक्रक—(वि०) [चक्र√कृ+क] पहिये के आकार का, गोल, मंडलाकार । (पुं०) एक तरह का साँप । युद्ध का एक ढंग । एक प्रकार का तर्क । इसका लक्षण है—'स्वापेक्षणीयापेक्षितसापेक्षत्वनिबन्धनः प्रसंगश्चक्रकः' (जगदीश) ।

चक्रवत्—(वि०) [चक्र+मतुप्, वत्व] पहियादार या जिसमें पहिये लगे हों । गोल । (पुं०) तेली । सम्राट् । विष्णु ।

चक्रिका—(स्त्री०) [चक्र+ठन्–टाप्] ढेर । दल । धोखा । घुटनों पर की गोल हड्डी ।

चक्रिन्—(पुं०) [चक्र+इनि] विष्णु । कुम्हार । तेली । सम्राट् । सूबेदार । गधा । चक्रवाक । मुखबिर । सर्प । काक । मदारी ।

चक्रिय—(वि०) [चक्र+घ] यात्रा करने वाला । गाड़ी में बैठने वाला ।

चक्रीवत्—(पुं०) [चक्र+मतुप्, वत्व, नि० चक्रस्य चक्रीभावः] गधा । एक राजा का नाम । चकवा ।

√चक्ष्—अ० आत्म० सक० देखना । पहचानना । बोलना, कहना । चष्टे, ख्यास्यति—ते,—क्शास्यति—ते, अख्यत्—त, अक्शासीत्—अक्शास्त ।

चक्षण—(न०) [√चक्ष्+ल्युट्] चखना । चखने की चीज, चाट । कथन । अनुग्रह ।

चक्षस्—(पुं०) [√चक्ष्+असि] दीक्षागुरु, अध्यात्म-सम्बन्धी विद्या पढ़ाने वाला । देवगुरु बृहस्पति ।

चक्षुष्मत्—(वि०) [√चक्षुस्+मतुप्] देखने की शक्ति से सम्पन्न । अच्छे या स्वच्छ नेत्रों वाला ।

चक्षुष्य—(वि०) [चक्षुस्+यत्] सुन्दर, मनोहर । आँखों के लिये भला । (पुं०) केवड़ा । सहिजन । अंजन ।

चक्षुष्या—(स्त्री०) [चक्षुष्य+टाप्] सुन्दरी स्त्री । वनतुलसी । अजश्रृंगी ।। सुरमा ।

चक्षुस्—(न०) [√चक्ष्+उसि] नेत्र । दृष्टि, देखने की शक्ति । रोशनी । कांति ।—गोचर (**चक्षुर्गोचर**)–(पुं०) दिखलाई पड़ने वाला ।—दान (**चक्षुर्दान**)–(न०) मूर्ति-प्रतिष्ठा के अन्तर्गत नेत्रोन्मीलन कृत्य । —पथ (**चक्षुःपथ**)–(पुं०) दृष्टि की पहुँच । अन्तरिक्ष ।—मल (**चक्षुर्मल**)–(न०) कीचड़, आँखों का मैल ।—राग (**चक्षूराग**)–(पुं०) आँखों की सुर्खी । आँखमिलौवल । —रोग (**चक्षूरोग**)–(पुं०) नेत्ररोग । —विषय (**चक्षुर्विषय**)–(पुं०) दृष्टिगोचरत्व । विज्ञानी, देखने से प्राप्त हुआ ज्ञान अथवा देखने से प्राप्त होने वाला ज्ञान । कोई भी पदार्थ जो दिखलाई पड़े ।

चक्कुर—(पुं०) [√चक्, उणादि उरच्] रथ । गाड़ी । कोई भी पहियादार सवारी ।

चङ्क्रमण—(न०) [√क्रम्+यङ्+ल्युट्, यङो लुक्] घूमना, 'चक्रे स चक्रनिभचङ्क्रमणच्छलेन' नै० १.१४४ । टहलना । धीरे-धीरे चलना । कूदना ।

√चञ्च्—भ्वा० पर० सक० हिलना ।

काँपना । झूलना । चञ्चति, चञ्चिष्यति, अचञ्चीत् ।

चञ्च—(पुं०) [√चञ्च्+अच्] टोकरी, डलिया । पञ्चाङ्गुलमान, पाँच अंगुल की एक नाप ।

चञ्चरिन्—(पुं०) [√चर्+यङ्–लुक् +णिनि] भ्रमर, भौंरा ।

चञ्चरीक—(पुं०) [√चर्+ईकन्, नि० साधुः] भ्रमर ।

चञ्चल—(वि०)[√चञ्च्+अलच्, अथवा चञ्च√ला+क] कँपकपा, थरथराने वाला, काँपने वाला । अस्थिर, एकसा न रहने वाला । (पुं०) पवन । प्रेमी, आशिक । मनमौजी, लम्पट ।

चञ्चला—(स्त्री०) [चञ्चल+टाप्] विद्युत्, बिजली । धन की अधिष्ठात्री देवी, लक्ष्मी । पिप्पली ।

चञ्चा—(स्त्री०) [√चञ्च्+अच्–टाप्] बेंत आदि की बनी डलिया । चटाई ।—**पुरुष**–(पुं०) पक्षी आदि को डराने के लिये बनाया जाने वाला पुआल आदि का पुतला । तुच्छ व्यक्ति ।

चञ्चु—(वि०) [√चञ्च्+उन्] प्रसिद्ध । चतुर । (पुं०) एरंड वृक्ष । बरसात में होने वाला एक साग, चेंच । हिरन । (स्त्री०) चोंच ।—**पत्र**–(पुं०) एक साग ।—**पुट**–(पुं०) पक्षी की बंद चोंच ।—**प्रहार**–(पुं०) चोंच की चोट ।—**भृत्**–(पुं०) पक्षी ।—**सूचि**—(पुं०) कारंडव पक्षी ।

चञ्चुर—(वि०) [√चञ्च्+उरच्] दक्ष, चतुर ।

चञ्चू—(स्त्री०) [चञ्चु+ऊङ] चेंच का साग । चोंच ।

√चट्—भ्वा० पर० अक० बरसना । सक० ढाँकना । चटति, चटिष्यति, अचटीत् । चु० उभ० सक० मारना । तोड़ना । चाटयति-ते, चाटयिष्यति-ते, अचीचटत्-त ।

चटक—(पुं०) [√चट्+क्वुन्] गौरवा या गौरैया ।

चटका, चटिका—(स्त्री०) [चटक+टाप्, चटक+टाप्, इत्वादेश] मादा गौरैया ।

चटु—(पुं०) [√चट्+उ] प्रियवाक्य, चापलूसी । पेट । आराधना का एक आसन । चीत्कार ।

चटुल—(वि०) [चटु+लच्] अस्थिर । चञ्चल; 'आवस्तमैक्षत जनश्चटुलाग्रपादं' शि० ५.६ । मनोहर, सुन्दर ।

चटुला—(स्त्री०) [चटुल+टाप्] बिजली, विद्युत् ।

चटुलोल, चटूल्लोल—(वि०) [कर्म० स०, नि० साधुः] सुचंचल । सुन्दर । मधुरभाषी ।

√चण्—भ्वा० पर० सक० जाना । देना । चणति, चणिष्यति, अचणीत्—अचाणीत् ।

चण—(वि०) [√चण्+अच्] प्रसिद्ध, प्रख्यात । निपुण । (पुं०) चना ।—**पत्री**–(स्त्री०) रुदंती नामक पौधा ।

चणक—(पुं०) [√चण्+क्वुन्] चना । एक गोत्रकार ऋषि ।

चणिका—(स्त्री०) [√चण्+क्वुन्+टाप्, इत्व] अलसी ।

√चण्ड्—भ्वा० आत्म० सक० कोप करना । चण्डते, चण्डिष्यते, अचण्डिष्ट ।

चण्ड—(वि०) [√चण्ड्+अच्] भयानक । उग्र । क्रुद्ध । गर्म, उष्ण । फुर्तीला । कर्मठ । हानिकर । जिसका लिंगाग्रचर्म कटा हो । (पुं०) मुंड दैत्य का भाई । शिव । स्कंद । [√चम्+ड] इमली का पेड़ । (न०) गर्मी, उष्णता । कोप ।—**अंशु** (**चण्डांशु**)—**कर**,—**दीधिति**,—**भानु**–(पुं०) सूर्य ।—**ईश्वर** (**चण्डेश्वर**)–(पुं०) शिव का रूप विशेष ।—**कौशिक**–(पुं०) एक ऋषि । संस्कृत का एक प्रसिद्ध नाटक ।—**घण्टा**–

(स्त्री०) दुर्गा ।—**तुण्डक**–(पुं०) गरुड़ का एक पुत्र ।—**नायिका** –(स्त्री०),—**मुण्डा** (**चामुण्डा**)–(स्त्री०) दुर्गा का रूप विशेष ।—**मृग**–(पुं०) वन्य जन्तु विशेष ।—**रश्मि** –(पुं०)सूर्य।—**वक्रिका**–(स्त्री०) अष्टनायिकाओं के पूजन से प्राप्त होने वाली सिद्धि ।—**रूपा**–(स्त्री०) एक देवी ।—**विक्रम**–(वि०) अत्यन्त पराक्रमी ।—**वृत्ति**–(वि०) हठी । विद्रोही ।—**शक्ति**–(वि०) प्रचण्ड शक्ति, पराक्रम वाला । (पुं०) बलि की सेना का एक दानव ।—**शील**–(वि०) क्रोधी ।

चण्डा, चण्डी—(स्त्री०) [चण्ड+टाप्] [चण्ड+ङीष्] दुर्गा देवी । क्रोधी स्वभाव की स्त्री । अष्टनायिकाओं में से एक । एक गन्धद्रव्य । सौंफ । सोवा । सफेद दूब ।

चण्डात—(पुं०) [चण्ड√अत्+अण्] सुगन्ध-युक्त कनेर ।

चण्डातक—(पुं०, न०) [चण्ड√अत्+ण्वुल्] लहँगा । साया ।

चण्डाल—(पुं०) [√चण्ड्+आलञ्] अत्यन्त नीच एवं घृणित एक वर्णसङ्कर जाति का नाम जिसकी उत्पत्ति ब्राह्मण पिता और शूद्र माता से मानी गई है । इस जाति का मनुष्य । (वि०) क्रूर कर्म करने वाला ।—**पक्षिन्** (पुं०) कौआ ।—**वल्लकी**,—**वीणा**–(स्त्री०) एक तरह का तंबूरा या चिकारा ।

चण्डालिका—(स्त्री०) [चण्डाल+ठन्–इक–टाप्] चण्डाल की वीणा । दुर्गा । करवीर ।

चण्डिका—(स्त्री०) [चण्डी+कन्–टाप्, ह्रस्व] दुर्गा का नाम ।

चण्डिमन्—(पुं०) [चण्ड+इमनिच्] क्रोध । उग्रता । गर्मी, उष्णता ।

चण्डिल—(पुं०) [√चण्ड् + इलच्] रुद्र । नाई । बथुआ साग ।

चण्डी—(स्त्री०) [चण्ड+ङीष्] दुर्गा । कर्कशा और उग्र स्त्री ।—**कुसुम**–(न०) लाल कनेर ।

चण्डु—(पुं०) [√चण्ड्+उन्] चूहा । छोटा बंदर ।

√चत्—भ्वा० उभ० द्विक० माँगना । सक० जाना । चतति-ते, चतिष्यति-ते, अचतीत्–अचतिष्ट ।

चतुर्—(वि०) [√चत्+उरन्] [सङ्ख्यावाची—सदा बहुवचनान्त, यथा—(पुं०) **चत्वारः**, (स्त्री०) **चतस्रः**, (न०) **चत्वारि**] चार; 'शेषान् मासान् गमय चतुरो लोचने मीलयित्वा' मे० ११० ।—**अंश** (**चतुरंश**) –(पुं०) चतुर्थ भाग ।—**अङ्ग** (**चतुरङ्ग**)–(न०) जिसके चार अंग हों, हाथी, घोड़े, रथ और पैदल सिपाहियों से सज्जित सेना; 'एको हि खञ्जनवरो नलिनीदलस्थो दृष्टः करोति चतुरङ्गबलाधिपत्यम्' ज्यो० । एक प्रकार की शतरञ्ज ।—**अन्त** (**चतुरन्त**)–(पुं०) चारों ओर से सीमित ।—**अन्ता** (**चतुरन्ता**)– (स्त्री०) पृथिवी ।—**अशीत** (**चतुरशीत**)–(वि०) ८४ वाँ ।—**अशीति** (**चतुरशीति**) –(वि०) ८४, चौरासी ।—**अस्र** (**चतुरस्र**) —**अस्त्र** (**चतुरस्त्र**)–(वि०) चार कोनों वाला, चतुष्कोण । सब प्रकार से सुन्दर, सुडौल ।—**अह** (**चतुरह**)–(न०) चार दिवस की अवधि । चार दिनों में पूरा होने वाला एक सोम-यज्ञ ।—**आनन** (**चतुरानन**) –(पुं०) ब्रह्मा जी ।—**आश्रम** (**चतुराश्रम**) –(न०) ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ और संन्यास—इन चार आश्रमों का समाहार ।—**कर्ण**–(वि०) (**चतुष्कर्ण**) केवल दो आदमियों का सुना हुआ ।—**गति**–(पुं०) परमात्मा । कछुआ ।—**गुण**–(वि०) चारगुना । चौपाया ।—**चत्वारिंशत्**– (चतुश्चत्वारिंशत्)–(स्त्री०) ४४, चौवालीस ।—**दन्त**–(पुं०) इन्द्र के हाथी ऐरावत की उपाधि ।—**दश**–(वि०) चतुर्दशानां पूरणः,

चतुर्दशन्+डट्] १४ वाँ ।—दशन्–(त्रि० [चतुरधिका दश, मध्य० स०] चौदह । —०भुवन (चतुर्दशभुवन)–(न०) भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्यम्—ये सात ऊर्ध्वलोक और अतल, सुतल, वितल, तलातल, महातल, रसातल और पाताल —ये सात अधोलोक ।—०रत्न (चतुर्दशरत्न) –(न०) चौदह रत्न जो समुद्रमन्थन के समय निकले थे । यथा— लक्ष्मीः कौस्तुभपारिजातकसुरा धन्वन्तरिश्चन्द्रमा, गावो कामदुघाः सुरेश्वरगजो रम्भादिदेवाङ्गनाः ॥ अश्वः सप्तमुखो विषं हरिधनुः शङ्खोऽमृतं चाम्बुधे रत्नानीह चतुर्दश प्रतिदिनं कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ।—०विद्या–(स्त्री०) चौदह विद्याएँ । वे ये हैं :—षडङ्गमिश्रिता वेदा धर्मशास्त्रं पुराणकम् ॥ मीमांसा तर्कशास्त्रं च एता विद्याश्चतुर्दश ।—दशी–(स्त्री०) [चतुर्दश+ङीप्] चौदहवीं तिथि ।—दिश–(न०) चारों दिशाओं का समूह । (अव्य०) चारों दिशाओं की ओर । सब तरफ से ।—दोल–(पु०, न०) चार आदमियों से ढोयी जाने वाली सवारी (पालकी, नालकी आदि) । चंडोल । चार डंडों का पालना ।—नवति (चतुर्नवति)–[चतुरधिका नवतिः, मध्य० स०, णत्व] (स्त्री०) ९४, चौरानबे ।—पंच–(त्रि०) [चतुःपञ्च या चतुष्पञ्च] चार या पाँच ।—पञ्चाशत्–(स्त्री०) [चतुःपञ्चाशत् या चतुष्पञ्चाशत्] ५४, चौवन ।—पथ–(पु०) [चतुःपथ या चतुष्पथ] चौराहा । (पुं०) ब्राह्मण ।—पद–(वि०) [चतुष्पद] चार पैरों वाला । चार अवयवों वाला । (पुं०) चौपाया ।—पदी–(स्त्री०) चार पदों वाला श्लोक, जिसमें ३२ अक्षर होते हैं ।—पाठी–(स्त्री०) [चतुष्पाठी] ब्राह्मणों की पाठशाला जिसमें चारों वेद पढ़ाये जायँ ।—पाणि–(पुं०) [चतुष्पाणि] विष्णु भगवान् ।—पाद्, —पाद–[चतुःपाद या चतुष्पाद] (वि०) चार पादों वाला । चार भागों या अवयवों वाला । (पु०) चौपाया ।—बाहु–(पु०) विष्णु । (न०) चतुष्कोण ।—बीज–(न०) काला जीरा, अजवायन, मेथी और चमुर का समाहार ।—भद्र–(न०) मनुष्य के चार पुरुषार्थ अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष । —भाग–(पु०) चतुर्थांश, चौथा हिस्सा, चौथाई ।—भुज–(वि०) चार भुजा वाला । (पुं०) विष्णु । (न०) चतुष्कोण ।—मास–(न०) चार मास की अवधि [आषाढ़ मास की शुक्ला ११ से कार्त्तिक शुक्ला ११ तक की अवधि] ।—मुख–(वि०) चार मुखों वाला । (पुं०) ब्रह्मा जी । (न०) चार मुख । चार द्वारों वाला घर ।—युग–(न०) चार युग । —मूर्त्ति–(पुं०) विराट्, सूत्रात्मा, अव्याकृत और तुरीय इन चारों अवस्थाओं में रहने वाला ईश्वर, परमेश्वर ।—वक्त्र–(पु०) ब्रह्मा जी ।—वर्ग–(पुं०) चार पुरुषार्थ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ।—वर्ण–(पुं०) चार जातियाँ यथा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र; 'चतुर्वर्णमयो लोकः' र० १०.२२ ।—वार्षिका –(स्त्री०) चार वर्ष की अवस्था वाली (गौ) ।—विंश–(वि०) [चतुर्विंशति+डट्] २४ वाँ । (न०) एक दिन में होने वाला एक तरह का याग ।—विंशति–(वि० या स्त्री०) २४, चौबीस ।—विद–(वि०) चारों वेदों को जानने वाला ।—विद्या–(स्त्री०) चारों वेद । —विध–(वि०) चार प्रकार का । चौगुना । —वेद–(वि०) चारों वेदों से परिचित । (पुं०) चारों वेद । परब्रह्म ।—व्यूह–(पुं०) चार पुरुषों, पदार्थों का समुदाय (जैसे— वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध । हेय (संसार), हेयहेतु, हान (मोक्ष), मोक्ष का उपाय । रोग, रोगनिदान, आरोग्य, भैषज) । विष्णु । (न०) योगशास्त्र । वैद्यक-शास्त्र । —षष्टि–(वि० या स्त्री०) (चतुःषष्टि)

चौंसठ, ६४ ।—**सप्तति**–(वि० या स्त्री०) (चतुःसप्तति) ७४, चौहत्तर ।—**हायन**, —**हायण**–(वि०) चार वर्ष की अवस्था का ।

चतुर—(वि०) [√चत्+उरच्] होशियार, निपुण, पटु । तीक्ष्ण बुद्धि-सम्पन्न । फुर्तीला, तेज । मनोहर, सुन्दर; 'न पुनरेति गतं चतुरं वयः' र० ६.४७ । (पुं०) क्रिया-चतुर या वचन-चतुर नायक । (न०) हाथीखाना, गजशाला । वक्र गति । गोल तकिया । होशियारी ।

चतुर्थ—(वि०) [चतुर्+डट्, थुगागम] [स्त्री०—**चतुर्थी**] चौथा । (पुं०) एक प्रकार का तिताला ताल ।—**आश्रम** (**चतुर्थाश्रम**)–(पुं०) संन्यासाश्रम ।

चतुर्थक—(वि०) [चतुर्थ+कन्] चौथा । (पुं०) चौथिया ज्वर ।

चतुर्थी—(स्त्री०) [चतुर्थ+ङीप्] चौथ-तिथि । संप्रदान कारक ।—**कर्मन्**–(न०) विवाह में एक कर्म जो चतुर्थ दिवस किया जाता है ।

चतुर्धा—(अव्य०) [चतुर्+धा] चार प्रकार से । चार गुना ।

चतुष्क—(न०) [चतुर्+कन्] चार का समूह । चौराहा । चौकोन आँगन । चार खंभों पर टिका हुआ बड़ा कमरा । चार लड़ियों का हार ।

चतुष्की—(स्त्री०) [चतुष्क+ङीप्] चौकोन बड़ी पुष्करिणी । मसहरी, मच्छरदानी । चौकी ।

चतुष्टय—(वि०) [चत्वारोऽवयवा यस्य, चतुर्+तयप्] चार अवयवों वाला । चारगुना । (न०) [चतुर्णाम् अवयवः, चतुर्+तयप्] चार की संख्या । चार चीजों का समूह । जन्म-कुंडली में केन्द्र, लग्न और लग्न से सातवाँ तथा दसवाँ स्थान ।

चत्वर—(न०) [√चत्+ष्वरच्] चबूतरा । आँगन । चौराहा; 'स खलु श्रेष्ठिचत्वरे निवसति' मृ० २ । समतल भूमि जो यज्ञ के लिए तैयार की गयी हो ।

चत्वारिंशत्—(स्त्री०) [चत्वारो दशतः परिमाणमस्य, व० स० नि० साधुः] चालीस, ४० ।

चत्वाल—(पुं०) [√चत्+वालञ्] हवन-कुण्ड । कुश । गर्भाशय ।

√चद्—भ्वा० उभ० द्विक० माँगना । चदति, चदिष्यति, अचदीत् ।

चदिर—(पुं०) [√चन्द्+किरच्, नि०साधुः] चन्द्रमा । कपूर । हाथी । सर्प ।

√चन्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना । सक० मारना । चनति, चनिष्यति, अचनीत्—अचानीत् ।

चन—(अव्य०) [द्व० स०] और नहीं । [√चन्+अच्] थोड़ा ।

चनस्—(न०) [√चाय्+असुन्, नुट्] आहार ।

√चन्द्—भ्वा० पर० अक० चमकना । प्रसन्न होना । चन्दति, चन्दिष्यति, अचन्दीत् ।

चन्द—(पुं०) [√चन्द्+णिच+अच्] चन्द्रमा । कपूर ।

चन्दन—(पुं०, न०) [√चन्द् + णिच् +ल्युट्]एक प्रसिद्ध वृक्ष जिसकी लकड़ी एक प्रधान गंध द्रव्य है, संदल । उसकी लकड़ी । चंदन को घिस कर बनाया हुआ लेप ।—**अचल** (**चन्दनाचल**),—**अद्रि** (**चन्दनाद्रि**),—**गिरि**–(पुं०) मलयपर्वत ।—**उदक** (**चन्दनोदक**)–(न०) चन्दन-मिश्रित जल । —**पुष्प**–(न०) लवंग, लौंग ।

चन्दिर—(पुं०) [√चन्द्+किरच्] हाथी । चन्द्रमा । कपूर ।

चन्द्र—(पुं०) [चन्दयति आह्लादयति वा चन्दति दीप्यते, √ चन्द् + णिच्+रक् वा √चन्द्+रक्] चन्द्रमा । चन्द्रग्रह । कपूर । मयूरपंख में की चन्द्रिकाएँ । जल । सुवर्ण । (चन्द्र जब समासान्त शब्दों के अन्त में आता

है, तब इसका अर्थ प्रख्यात या आदर्श होता है। यथा पुरुषचन्द्र अर्थात् सर्वोत्कृष्ट या आदर्श पुरुष)।—**अंशु** (**चन्द्रांशु**)–(पुं०) चन्द्र की किरण।—**अर्ध** (**चन्द्रार्ध**)–(पुं०) आधा चन्द्रमा।—**आत्मज** (**चन्द्रात्मज**), —**औरस** (**चन्द्रौरस**),—**ज**,—**जात**,—**तनय**,—**नन्दन**,—**पुत्र**–(पुं०) बुध ग्रह। —**आनन** (**चन्द्रानन**)–(पुं०) कार्तिकेय। —**आपीड** (**चन्द्रापीड**)–(पुं०) शिव।—**आह्वय** (**चन्द्राह्वय**)—(पुं०) कपूर।—**इष्टा** (**चन्द्रेष्टा**)–(पुं०) कुमुदिनी।—**उपल** (**चन्द्रोपल**)–(पुं०) चन्द्रकान्त मणि। —**कला**–(स्त्री०) चंद्रमंडल का १६वाँ भाग। चंद्रमा की १६ कलाएँ (कामशास्त्र के अनुसार—पूषा, यशा, सुमनसा, रति, प्राप्ति, धृति, ऋद्धि, सौम्या, मरीचि, अंशुमालिनी, अंगिरा, शशिनी, छाया, संपूर्णमंडला, तुष्टि और अमृता)। चंद्रमा की किरण। माथे पर पहनने का एक गहना। एक वर्णवृत्त। एक मतवाला ताल। छोटा ढोल। एक मछली। नखक्षत।—**०धर**–(पुं०) महादेव। —**कान्त**–(पुं०) एक मणि जिसके विषय में प्रसिद्ध है कि चंद्रकिरण के स्पर्श से वह पसीज जाता है; "द्रवति च चन्द्रकान्तः हिमरश्मावुद्गते" उत्त० ६.१२। कुमुद। (न०) श्रीखंडचंदन। एक राग।—**कान्ता**–(स्त्री०) रात। चाँदनी।—**कान्ति**–(स्त्री०) चाँदनी। (न०) चाँदी।—**क्षय**–(पुं०) अमावस्या।—**गोल**–(पुं०) चन्द्रलोक। —**गोलिका**–(स्त्री०) चाँदनी।—**ग्रहण**–(न०) पृथ्वी की छाया से चंद्रमंडल का छिप जाना, पौराणिक मत से राहु द्वारा चन्द्रमा का ग्रसन।—**चञ्चला**–(स्त्री०) एक प्रकार की छोटी मछली।—**चूड**,—**मौलि**, —**शेखर**–(पुं०) शिवजी की उपाधियाँ।—**दारा**–(पुं० बहु०) २७ नक्षत्र जो दक्ष की कन्याएँ और चन्द्रमा की स्त्रियाँ हैं।—**द्युति**–(पुं०) चन्दन काष्ठ। (स्त्री०) चाँदनी।—**नामन्**–(पुं०) कपूर।—**पाद**–(पुं०) चन्द्रकिरण।—**प्रभा**–(स्त्री०) चाँदनी।—**बाला**–(स्त्री०) बड़ी इलायची। चाँदनी।—**बिन्दु**–(पुं०) अर्धचन्द्राकार-चिह्न-युक्त बिंदु(ँ)। —**भस्मन्**–(न०) कपूर।—**भागा**–(स्त्री०) दक्षिण भारत की एक नदी का नाम।—**भास**–(पुं०) तलवार।—**भूति**–(न०) चाँदी।—**मणि**–(पुं०) चन्द्रकान्त मणि।—**रेखा**,—**लेखा**–(स्त्री०) चन्द्रमा की कला। —**रेणु**—(पुं०) ग्रन्थचोर, लेखचोर।—**लोक**–(पुं०) चन्द्रमा का लोक।—**लोहक**,—**लोह**,—**लौहक**–(न०) चाँदी।—**वंश**–(पुं०) भारतीय प्राचीन प्रसिद्ध राजवंशों में से एक जिसका प्रारंभ बुध के पुत्र पुरूरवा से माना जाता है।—**वदन**–(वि०) चन्द्रमा-जैसे मुख वाला।—**वल्ली**–(स्त्री०) सोमलता। माधवी लता।—**वेष**–(पुं०) शिव।—**व्रत**–(न०) चांद्रायण व्रत।—**शाला**,—**शालिका**–(स्त्री०) छत के ऊपर का कमरा या बँगला जिससे चाँदनी का पूरा आनंद लिया जा सके। चाँदनी।—**शिला**–(स्त्री०) चन्द्रकान्त मणि। **शेखर**—(पुं०) शिव।—**संज्ञ**–(पुं०) कपूर। —**सम्भव**–(पुं०) बुध ग्रह।—**सम्भवा**–(स्त्री०) छोटी इलायची।—**सालोक्य**–(न०) चन्द्रलोक की प्राप्ति।—**हन्**–(पुं०) राहु की उपाधि।—**हास**–(पुं०) चमचमाती तलवार। रावण की तलवार का नाम। केरल के राजा सुधार्मिक का पुत्र।—**हासा**–(स्त्री०) सोमलता।

चन्द्रक—(पुं०) [चन्द्र+कन्] चन्द्रमा। (न०) मछिजन। श्वेतमरिच। कपूर। चंदन। (पुं०) [चन्द्र√कै+क] मयूर के पंखों की चन्द्रिका। नख। चन्द्र के आकार का मंडल (जो जल में तैल-बिन्दु डालने से बन जाता है)।

चन्द्रकिन्–(पुं०) [चन्द्रक+इनि] मयूर, मोर।

चन्द्रमस्—(पुं०) [चन्द्रम् आह्लादं मिमीते, चन्द्र√मि+असुन्, मादेशः] चाँद, चन्द्रमा।

चन्द्रिका—(स्त्री०) [चन्द्र+ठन्] चाँदनी। व्याख्या, टीका। रोशनी। बड़ी इलायची। चन्द्रभागा नदी। मल्लिका लता।—**अम्बुज** (चन्द्रिकाम्बुज)-(न०) सफेद कमल जो चंद्रमा के उदय होने पर खिलता है।—**द्राव**-(पुं०) चंद्रकान्त मणि।—**पायिन्**-(पुं०) चकोर पक्षी।

चन्द्रिल—(पुं०) [चन्द्र+इलच्] नाई। शिव।

√चप्—भ्वा० पर० सक० सान्त्वना देना, ढाढ़स बँधाना। चपति, चपिष्यति, अचपीत्—अचापीत्। चु० उभ० सक० पीसना। सानना। चपयति—ते, चपयिष्यति—ते, अचीचपत्—त।

चपट—(पुं०) [√चप्+क, वा √ अट्+अच्, शक० पररूप] चपत, तमाचा।

चपल—(वि०) [√चुप्+कल, उकारस्य अकारः] काँपने वाला, थरथराने वाला। अस्थिर, चंचल; 'पवनचपलैः शाखिनो धौतमूलाः' श० १.१५। डाँवाँडोल। निर्बल। नश्वर। फुर्तीला। उतावला। अविचारी, अविवेकी। (पुं०) मछली। पारा, पारद। चातक पक्षी। सुगन्ध द्रव्य विशेष।

चपला—(स्त्री०) [चपल+टाप्] बिजली। कुलटा स्त्री। मदिरा। लक्ष्मी। जिह्वा।—**जन**-(पुं०) चंचल या अस्थिर स्वभाव की स्त्री।

चपेट—(पुं०) [चप√इट्+घञ्] थप्पड़। फैले हुए हाथ की हथेली।

चपेटा, चपेटिका—(स्त्री०) [चपेट+टाप्] [चपेट+कन्—टाप्, इत्व] थप्पड़, झापड़।

√चम्—भ्वा० पर० सक० पीना। खाना। आचामति—चमति, चमिष्यति, अचमीत्। स्वा० पर० सक० खाना। चम्नोति, चमिष्यति, अचमीत्।

चमर—(पुं०) [√चम्+अरच्] एक प्रकार का हिरन, सुरा गाय। (पुं०, न०) सुरा गाय की पूँछ का बना चँवर, चामर।

चमरी—(स्त्री०) [चमर+ङीष्] सुरा गाय, चमर की मादा।—**पुच्छ**-(न०) चमरी की पूँछ जो चँवर की तरह इस्तेमाल की जाती है। (पुं०) गिलहरी। लोमड़ी।

चमरिक—(पुं०) [चमर+ठन्] कचनार का वृक्ष।

चमस—(पुं०, न०), **चमसी**-(स्त्री०) [√चम्+असच्] [चमस+ङीष्] यज्ञों में सोमवल्ली का रस पीने का पात्र-विशेष। चमचा। धूमांस। पापड़। लड्डू।

चमू—(स्त्री०) [चमयति विनाशयति रिपून्, √चम्+ऊ] सेना, फौज। सैन्यदल जिसमें ७२९ हाथी, ७२९ ही रथ, २१८७ घुड़सवार और ३६४५ पैदल होते हैं; 'गजवती जवतीव्रहया चमूः' र० ९.१०।—**चर**-(पुं०) योद्धा। सिपाही।—**नाथ,—प,—पति**-(पुं०) सेनानायक (जनरल, कमांडर)।

चमूरु—(पुं०) [√चम्+ऊरु, उत्व] एक प्रकार का हिरन।

√चम्प्—चु० पर० सक० जाना। चम्पयति—चम्पति।

चम्प—(पुं०) [√चम्प्+अच्] कचनार का पेड़। चंपा फूल। एक क्षत्रिय राजा जिसने चम्पा पुरी स्थापित की थी।

चम्पक—(पुं०) [√चम्प्+ण्वुल्] चंपा का वृक्ष। सुगन्धिद्रव्य विशेष। (न०) चम्पा का फूल।—**माला**-(स्त्री०) चंपाकली, आभूषण-विशेष। चम्पा के फूलों का हार। छन्द-विशेष।—**रम्भा**-(स्त्री०) चंपा केला।

चम्पकालु—(पुं०) [चंपकेन पनसावयवविशेषेण अलति, चम्पक √ अल् + उण्] कटहल।

चम्पकावती, चम्पा, चम्पावती—(स्त्री०) [चम्पक+मतुप्, वत्व, दीर्घ] [√चम्प्+

अन्, चम्प+अच्—टाप्] [चम्प+मतुप्, वत्व, दीर्घ, लोप्] गंगातट पर अवस्थित एक प्राचीन नगर का नाम । इस पुरी का आधुनिक नाम भागलपुर है ।

चम्पालु—(पुं०) [चम्प—आ√ला+डु] कटहल ।

चम्पू—(स्त्री०) [√चम्प्+ऊ] गद्यपद्य-मिश्रित काव्य-विशेष; 'गद्यपद्यमयं काव्यं चम्पूरित्यभिधीयते' साहित्यदर्पण ।

√**चय्**—भ्वा० आत्म० सक० जाना । चयते, चयिष्यते, अचयिष्ट ।

चय—(पुं०) [√चि+अच्] समूह, ढेर । टीला । धुस्स । परकोटा । दुर्गद्वार । बैठकी । इमारत, भवन । लकड़ी की टाल ।

चयन—(न०) [√चि+ल्युट्] पुष्पादिक को बीनकर एकत्र करने की क्रिया । ढेर ।

√**चर्**—भ्वा० पर० सक० जाना । खाना । चरति, चरिष्यति, अचारीत् । चु० पर० सक० संदेह करना । चारयति ।

चर—(त्रि०) [√चर्+अच्] [स्त्री०—चरी] काँपता हुआ, थर-थराता हुआ । जंगम, चलने वाला । जानदार, जीवधारी । (पुं०) जासूस, भेदिया । दूत । खञ्जन पक्षी । जूआ । कौड़ी । मङ्गलग्रह । मङ्गलवार ।—**अचर** (**चराचर**)-(पुं०) स्थावर-जङ्गम । (न०) संसार । आकाश, अन्तरिक्ष ।—**द्रव्य**-(न०) चल पदार्थ, संपत्ति ।—**नक्षत्र**-(न०) स्वाती, पुनर्वसु श्रवण, धनिष्ठा आदि नक्षत्र ।—**मूर्ति**-(पुं०) वह मूर्ति जिसकी सवारी निकाली जाय ।

चरक—(पुं०) [√चर्+क्वुन् वा चर+कन्] जासूस । रमता भिक्षुक । आयुर्वेद-विशेष । पापड़ ।

चरट—(पुं०) [√चर्+अटच्] खञ्जन पक्षी ।

चरण—(पुं०) [√चर्+ल्युट्] पैर । सहारा । खंभा । वृक्ष-मूल । श्लोक का एक पाद । चौथाई । वेद की शाखा । जाति । (न०) घूमना-फिरना, भ्रमण । सम्पादन । अभ्यास । चालचलन । बर्ताव । सम्पन्नता । भक्षण ।—**अमृत** (**चरणामृत**),—**उदक** (**चरणोदक**)-(न०) जल जिससे पूज्य व्यक्ति या देव-मूर्ति के पैर धोये गये हों ।—**अर-विन्द** (**चरणारविन्द**),—**कमल**,—**पद्म**-(न०) कमल-जैसे पैर ।—**आयुध** (**चरणा-युध**)-(पुं०) मुर्गा ।—**आस्कन्दन** (**चरणा-स्कन्दन**)-(न०) पैरों से कुचलना, रौंदना ।—**ग्रन्थि**-(पुं०)—**पर्वन्**-(न०) टखना ।—**न्यास**-(पुं०) कदम ।—**प**-(पुं०) वृक्ष ।—**पतन**-(न०) पैरों पड़ना, पैर लगना ।——**पदवी**—(स्त्री०) पैरों के निशान ।—**शुश्रूषा**,—**सेवा**-(स्त्री०) चरणगत होना । पाँव दबाना, पौंचप्पी । सेवा, खिदमत ।

चरम—(त्रि०) [√चर्+अमच्] अन्तिम, आखिरी । पिछला । बूढ़ा, पुराना । बिल्कुल बाहरी । पश्चिमी । सब से नीचा या कम ।—**अचल** (**चरमाचल**),—**अद्रि** (**चर-माद्रि**),—**क्ष्माभृत्**-(पुं०) अस्ताचल पर्वत ।—**अवस्था** (**चरमावस्था**)-(स्त्री०) वृद्धा-वस्था, बुढ़ापा ।—**काल**-(पुं०)मृत्यु की घड़ी ।

चरि—(पुं०) [√चर्+इन्] जन्तु । पशु ।

चरित—(त्रि०) [√चर्+क्त] भ्रमण किया हुआ, घूमा हुआ । पूरा किया हुआ । अभ्यास किया हुआ । उपलब्ध किया हुआ । जाना हुआ । भेंट किया हुआ । (न०) गमन । मार्ग । अभ्यास । चाल-चलन, आचरण । जीवन-चरित; 'उत्तरं रामचरितं तत्प्रणीतं प्रयुज्यते' उत्त० १.२ । स्वयं लिखित जीवनी । इतिहास (कथा) ।—**अर्थ** (**चरितार्थ**)-(त्रि०) सफल । सन्तुष्ट । पूरा किया हुआ ।

चरित्र—(न०) [√चर्+इत्र] आचरण, व्यवहार । चाल-चलन । कर्त्तव्य, कर्म-कलाप । शील, स्वभाव । सदाचार । जीवनी, वृत्त । पैर । गमन ।

चरिष्णु—(वि०) [√चर्+इष्णुच्] चलने-फिरने वाला, जंगम ।

चरु—(पुं०) [√चर्+उ] यज्ञ में आहुति देने के लिये पकाया हुआ अन्न, हव्यान्न । वह बरतन जिसमें चरु पकाया जाय । मेघ । यज्ञ ।—**व्रण**–(पुं०) एक तरह की पीठी या पकवान ।

√**चर्च्**—भ्वा० पर० सक० बोलना । हिंसा करना । ताड़ना करना । चर्चति, चर्चिष्यति, अचर्चीत् । तु० पर० सक० बोलना । झिड़कना । चर्चति, चर्चिष्यति, अचर्चीत् । चु० उभ० सक० पढ़ना । चर्चयति–ते, चर्चयिष्यति–ते, अचचर्चत्–त ।

चर्चन—(न०) [√चर्च्+ल्युट्] चर्चा । अध्ययन । पुनरावृत्ति । शरीर में उबटन या लेप करना ।

चर्चरिका, चर्चरी—(स्त्री०) [चर्चरी+कन्–टाप्, ह्रस्व] [√चर्च्+अरन्–ङीप्] कीचर, फाग । रंगरलियाँ मनाना, हर्ष-क्रीड़ा । करतलध्वनि । ताल का एक भेद । एक वर्णवृत्त । एक तरह का ढोल । आमोद-प्रमोद । गाना-बजाना । धंग-भंग । नाटक में एक परदा गिरने के बाद और दूसरा उठने के पहले गाया जाने वाला गाना । चापलूसी । घुँघराले बाल । दो आदमियों का बारी-बारी कविता पाठ करना ।

चर्चा, चर्चिका—(स्त्री०) [√चर्च्+अङ–टाप्] [चर्चा+कन्–टाप, ह्रस्व] पाठ । पुनरावृत्ति । अध्ययन । बार-बार पढ़ना । बहस । खोज, अनुसंधान । निदिध्यासन । शरीर में चन्दनादि का लेप; 'श्रीखण्डचर्चा विषम्' गीत० ९ ।

चर्चिक्य—(न०) [=चार्चिक्य पृषो० साधुः] शरीर में चन्दनादि लगाना । लेप । उबटन । अंगराग ।

चर्चित—(वि०) [√चर्च्+क्त] जिसकी चर्चा की गई हो । लेप किया हुआ; 'चन्दनचर्चितनीलकलेवरपीतवसनवनमाली' गीत० १ । विचारित । अनुसन्धान किया हुआ ।

चर्पट—(पुं०) [√चृप्+अटन्] खुली या फैली हुई हथेली, चपेट, थप्पड़ ।

चर्पटी—(स्त्री०) [चर्पट+ङीप्] चपाती, रोटी ।

√**चर्व्**—भ्वा० पर० सक० खाना । चर्वति, चर्विष्यति, अचर्वीत् ।

चर्भट—(पुं०) [√चर्+क्विप्, √भट्+अच्, ततः कर्म० स०] ककड़ी ।

चर्भटी—(स्त्री०) [चर्भट+ङीप्] आनन्द-कोलाहल, हर्षरव । चर्चा । गर्वोक्ति ।

चर्म—(न०) [चर्म साधनतया अस्ति अस्य, चर्मन्+अच्, टिलोप] ढाल ।

चर्मण्वती—(स्त्री०) [चर्मन्+मतुप्, मस्य वः, ङीप्] चंबल नदी । यह नदी इटावे के पास यमुना में गिरती है ।

चर्मन्—(न०) [√चर्+मनिन्] चाम, चमड़ा । स्पर्शेन्द्रिय । ढाल ।—**अम्भस्** (**चर्माम्भस्**)–(न०) चर्म-मध्य-स्थित रस जो खाये हुए पदार्थों से बनता है ।—**अव-कर्तन** (**चर्मावकर्तन**)–(न०) चमड़े का कारोबार ।—**अवकर्तिन्** (**चर्मावकर्तिन्**), —**अवकर्तृ** (**चर्मावकर्तृ**)–(पुं०) मोची, चमार ।—**कषा** (**षा**)–(स्त्री०) एक गंधद्रव्य, चमरखा ।—**कार** (**चर्मकार**),—**कारिन्** (**चर्मकारिन्**)–(पुं०) मोची, चमार ।—**कील** (**चर्मकील**)–(पुं०) बवासीर । एक रोग जिसमें देह में नुकीले मस्से निकल आते हैं ।—**चित्रक** (**चर्मचित्रक**)–(न०) सफेद कोढ़ ।—**ज** (**चर्मज**)–(न०) बाल । रक्त ।—**तरङ्ग** (**चर्मतरङ्ग**)–(पुं०) झुर्री, शिकन ।—**दण्ड** (**चर्मदण्ड**)–(पुं०)—**दूषिका**—(स्त्री०) दाद । कुष्ठ ।—**नालिका** (**चर्मनालिका**)–(स्त्री०) कोड़ा, चाबुक ।—**द्रुम** (**चर्मद्रुम**)— **वृक्ष** (**चर्मवृक्ष**)–

(पुं०) भोजपत्र का वृक्ष ।—पट्टिका (चर्मपट्टिका)—(स्त्री०) पाँसे फेंकने का चमड़े का चौरस टुकड़ा ।—पत्रा (चर्मपत्रा)—(स्त्री०) चमगादड़ ।—पादुका (चर्मपादुका)—(स्त्री०) जूता ।—प्रभेदिका (चर्मप्रभेदिका)—(स्त्री०) चमार की राँपी ।—प्रसेवक (चर्मप्रसेवक)—(पुं०)—प्रसेविका (चर्मप्रसेविका)—(स्त्री०) धौंकनी ।—बन्ध (चर्मबन्ध)—(पुं०) चमड़े का तस्मा ।—मुण्डा (चर्ममुण्डा)—(स्त्री०) दुर्गा का नाम ।—यष्टि (चर्मयष्टि)—(स्त्री०) चाबुक ।—वसन (चर्मवसन)—(पुं०) शिवजी ।—वाद्य (चर्मवाद्य)—(न०) ढोल, ढोलक, तबला आदि ।—सम्भवा (चर्मसम्भवा)—(स्त्री०) बड़ी इलायची ।—सार (चर्मसार)—(पुं०) शरीर का स्वच्छ तरल पदार्थ या रस, लसीका ।

चर्ममय—(वि०) [चर्मन्+मयट्] चमड़े का ।

चर्मर, चर्मार—(पुं०) [चर्मन्√रा+क] [चर्मन्√ऋ+अण्] मोची, चमार ।

चर्मिक—(वि०) [चर्मन्+ठन्] ढालधारी ।

चर्मिन्—(वि०) [चर्मन्+इनि, टिलोप] ढालधारी । चमड़े का । (पुं०) ढालधारी सिपाही । केला । भूर्जपत्र का पेड़ ।

चर्य—(वि०) [√चर्+यत्] गमन करने योग्य (स्थानादि) । करने योग्य, आचरणीय ।

चर्या—(स्त्री०) [चर्य+टाप्] गति, चाल । चालचलन । व्यवहार । आचरण । अभ्यास । अनुष्ठान । निर्वाह । रक्षा । नियमित अनुष्ठान । भक्षण । रस्म, रीति ।

√चर्व्—भ्वा० पर० सक० चबाना । चूसना । चखना । चर्वति, चर्विष्यति, अचर्वीत् ।

चर्वण—(न०), चर्वणा—(स्त्री०) [√चर्व्+ल्युट्] [√चर्व्+युच्—टाप्] चबाना । चसकना । चखना ।

चर्वा—(स्त्री०) [√चर्व्+अङ्—टाप्] थप्पड़ का प्रहार । चपत ।

चर्वित—(वि०) [√चर्व्+क्त] चबाया हुआ ।—चर्वण—(न०) चबाये हुए को चबाना । एक ही विषय की शब्दान्तर में पुनरुक्ति ।—पात्र—(न०) पीकदान ।

चर्व्य—(वि०) [√चर्व्+ण्यत्] चबाने के योग्य ।

√चल्—भ्वा० पर० अक० हिलना, काँपना, थर्राना । धड़कना । उथल-पुथल होना । चलति, चलिष्यति, अचालीत् ।

चल—(वि०) [√चल्+अच्] डोलता हुआ, काँपता हुआ । अस्थिर । निर्बल । नाशवान् । घबड़ाया हुआ । (पुं०) कँपकँपी । घबड़ाहट, विकलता । पवन । पारद, पारा । विष्णु ।—अचल (चलाचल)—(वि०) स्थावर-जंगम । चंचल; 'लक्ष्मीमिव चलाचलाम्' कि० ११.३० । नाशवान् । (पुं०) काक ।—अर्थ (चलार्थ)—(पुं०) वह सिक्का या मुद्रा जिसका प्रयोग या व्यवहार निरंतर होता रहता हो, जो एक आदमी के हाथ से दूसरे के हाथ में जाता रहता हो (करेंसी) ।—०पत्र—(न०) सिक्के की तरह व्यवहृत होने वाली कागज की मुद्रा (करेंसी नोट) ।—आतङ्क (चलातङ्क)—(पुं०) गठिया वात-रोग ।—आत्मन् (चलात्मन्)—(वि०) चञ्चल ।—इन्द्रिय (चलेन्द्रिय)—(वि०) इन्द्रिय-सम्बन्धी । इन्द्रियसेव्य । सहज में परिवर्तनीय ।—इषु (चलेषु)—(पुं०) वह तीरंदाज जिसका तीर लक्ष्यच्युत हो जाय ।—कर्ण—(पुं०) किसी ग्रह का पृथिवी से ठीक-ठीक अन्तर । हाथी । (वि०) जिसके कान सदा हिलते रहें ।—चञ्चु—(पुं०) चकोर पक्षी ।—चित्त—(वि०) चञ्चल चित्त वाला ।—दल, —पत्र—(पुं०) अश्वत्थ वृक्ष ।

चलन—(वि०) [√चल्+ल्यु] हिलने वाला, काँपने वाला। (पुं०) पैर। हरिण। (न०) [√चल्+ल्युट्] काँपना। गति। भ्रमण।

चलनक—(न०) [चलन+कन्] (नर्तकी आदि का) घाघरा। नीच जाति की स्त्रियों के पहिनने की कुर्ती।

चलनी—(स्त्री०) [√चल्+ल्युट्—ङीप्] घँघरी। स्त्रियों की कुर्ती। हाथी बाँधने का रस्सा।

चला—(स्त्री०) [चल+टाप्] लक्ष्मी। शिलारस नामक गंधद्रव्य। बिजली। चार चरण और अठारह अक्षरों वाला एक छन्द। पृथिवी। पिप्पली।

चलि—(पुं०) [√चल्+इन्] चादर, ओढ़नी।

चलित—(वि०) [√चल्+क] चला हुआ, हिला हुआ, आन्दोलित। गया हुआ, प्रस्थानित। प्राप्त। जाना हुआ, समझा हुआ। (न०) नृत्य-विशेष।

चलु—(पुं०) [√चल्+उन्] मुखभर जल।

चलुक—(पुं०) [चलु+कन्] कुल्ला करने को हथेली में लिया जल। अंजलिभर या मुँह-भर जल।

√चष्—भ्वा० उभ० सक० खाना। चषति-ते, चषिष्यति-ते, अचषीत्-अचाषीत्।

चषक—(पुं० न०) [√चष्+क्वुन्] मदिरा पीने का बरतन। (न०) मदिरा। शहद।

चषति—(स्त्री०) [√चष्+अति] भोजन। हत्या। निर्बलता। ह्रास। गलाव।

चषाल—(पुं०) [√चष्+आलच्] यज्ञीय-स्तम्भ के ऊपर लगाने की काठ का छल्ला। छत्ता।

√चह्—भ्वा० पर० सक० दुष्टता करना। छलना, धोखा देना। अक० अभिमान करना। चहति, चहिष्यति, अचहीत्।

चाकचक्य—(न०) [√चक्+अच् चकः, प्रकारे द्वित्वम् चकचकः, तस्य भावः, चकचक+ष्यञ्] उज्ज्वलता। चमक-दमक। शोभा।

चाक्र—(वि०) [चक्र+अण्] चक्र-संबंधी। चक्राकार, गोल।

चाक्रिक—(पुं०) [चक्र+ठक्] कुम्हार। तेली। गाड़ीवान।

चाक्रिण—(पुं०) [चक्रिन्+अण्] कुम्हार या तेली का पुत्र।

चाक्षुष—(वि०) [चक्षुस्+अण्] नेत्र-सम्बन्धी। दृष्टिगोचर। (पुं०) छठे मनु।

चाङ्ग—(पुं०) [√चि+ड, चम् अङ्ग यस्य, ब० स०] अम्ललोणिका नामक एक खट्टा शाक। दाँतों की सफेदी या उनका सौन्दर्य।

चाञ्चल्य—(न०) [चञ्चल+ष्यञ्] अस्थिरता। चंचलता, विनश्वरता।

चाट—(पुं०) [√चट्+णिच्+अच्] ठग। (चाट ऐसे ठग को कहते हैं जो आरम्भ में अपनी ओर से उस मनुष्य के मन में पूर्ण विश्वास उत्पन्न कर लेता है, जिसे वह धोखा देना चाहता है।—'प्रतारकाः विश्वास्य ये परधनमपहरन्ति।'—मिताक्षरा।

चाटु—(न०), (पुं०) [√चट्+ञुण्] चापलूसी, खुशामद, ठकुर-सुहाती; 'प्रियः प्रियायाः प्रकरोति चाटु' शृं० ६.१४। स्पष्ट कथन। —**उक्ति** (**चाटूक्ति**)—(स्त्री०) चापलूसी की बात। —**उल्लोल** (**चाटूल्लोल**),—**कार**—(वि०) चापलूस, खुशामदी। —**पटु**—(वि०) चापलूसी करने में निपुण। (पुं०) मसखरा, भाँड़, विदूषक।

चाणक्य—(पुं०) [चणक+यञ्] विष्णुगुप्त या कौटिल्य भी चाणक्य का नाम था। इन्होंने नीतिविषयक एक उत्कृष्ट ग्रन्थ की रचना की।

चाणूर—(पुं०) कंस का एक सेवक दैत्य, जिसे मल्लयुद्ध में श्रीकृष्ण ने पछाड़ा था।

चाण्डाल—(पुं०) [चण्डाल+अण्] अन्त्यज-वर्ग में सबसे नीची मानी गई जाति, डोम। निषाद। क्रूर, नीच कर्म करने वाला व्यक्ति।

चातक—(पुं०) [√चत्+ण्वुल्] एक पक्षी जो वर्षाऋतु में स्वाती की बूँद से बड़ा प्रसन्न होता है, पपीहा।—**आनन्दन** (चातका-नन्दन)—(पुं०) वर्षाऋतु। बादल। [स्त्री०—**चातकी**]।

चातन—(न०) [√चत्+णिच्+ल्युट्] स्थानान्तरण। चोटिल करना।

चातुर—(वि०) [चतुर+अण्] चार संख्या-सम्बन्धी। [चतुर्+अण्] चतुर। चापलूस। दृश्य, दृष्टिगोचर। (न०) [चतुर+अण्] चार पहिये की गाड़ी।

चातुरक्ष—(न०) [चतुरक्ष+अण्] चौपड़ के या पासे के खेल में चार संख्या चिह्नित पासे का पड़ना, चार का दाँव आना। (पुं०) छोटा गोल तकिया।

चातुरर्थिक—(पुं०) [चतुरर्थ+ठक्—इक, वृद्धि] चार अर्थों में प्रयुक्त तद्धित प्रत्यय।

चातुराश्रमिक, चातुराश्रमिन्—(पुं०) [चतुराश्रम+ठक्] [चतुराश्रम+अण्+इनि] वह ब्राह्मण जो चार आश्रमों में से किसी एक आश्रम में हो।

चातुराश्रम्य—(न०) [चतुराश्रम+ष्यञ्] ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ और संन्यास नामक चार आश्रम।

चातुरिक—(पुं०) [चातुरी वेत्ति, चातुरी+ठक्] सारथी, गाड़ीवान।

चातुरी—(स्त्री०) [चतुर+अण्—ङीप्] निपुणता, चतुराई, चतुरता: 'तद्भटचातुरी तुरी' नै० १.१२।

चातुर्थक, चातुर्थिक—(वि०) [चतुर्थ+अण्+कन्] [चतुर्थ+ठक्] चौथिया, चौथे दिन होने वाला। (पुं०) चौथिया बुखार।

चातुर्थाह्निक—(वि०) [चतुर्थमह्नः समासान्त टच्, चतुर्थाह्ने भवः चतुर्थाह्न+ठक्] चौथे दिन का।

चातुर्दश—(न०) चतुर्दश्यां दृश्यते, चतुर्दशी+अण्] राक्षस।

चातुर्दशिक—(पुं०) [चतुर्दशी+ठक्] चतुर्दशी के दिन अनध्याय दिवस होता है। जो इस अनध्याय के दिवस अध्ययन करता है उसे चातुर्दशिक कहते हैं।

चातुर्मासिक—(वि०) [चतुरो मासान् व्याप्य ब्रह्मचर्यमस्य, चतुर्मास+ठक्] चार महीने में होने वाला (यज्ञकर्म आदि)। चातुर्मास्य यज्ञ करने वाला।

चातुर्मास्य—(न०) [चतुर्मास+ण्य] यज्ञ-विशेष जो प्रत्येक चार मास बाद अर्थात् कार्तिक, फाल्गुन और आषाढ़ के आरम्भ में किया जाता है। चौमासा, आषाढ़ की पूर्णिमा या शुक्ला द्वादशी से कार्तिक की पूर्णिमा या शुक्ला द्वादशी तक का समय। इस काल में किया जाने वाला एक पौराणिक व्रत।

चातुर्य—(न०) [चतुर+ष्यञ्] निपुणता चतुराई। मनोहरता, सौन्दर्य।

चातुर्वर्ण्य—(न०) [चतुर्वर्ण+ष्यञ्] हिंदुओं की चार वर्ण की व्यवस्था: 'चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः' भग०। इन चारों वर्णों के अनुष्ठेय कर्म।

चातुर्विध्य—(न०) [चतुर्विध+ष्यञ्] चार प्रकार, चार तरह।

चात्वाल—(पुं०) [√चत्+वालञ्] चौकोर अग्निकुण्ड। दर्भ, कुशा।

चान्दनिक—(वि०)[चन्दन+ठक्]चन्दन-संबंधी या चन्दन से उत्पन्न। चन्दन के तेल या लेप से सुवासित।

चान्द्र—(वि०)[चन्द्र+अण्]चन्द्रमा-सम्बन्धी।—**आख्य** (चान्द्राख्य)—(न०) अदरक।—**भागा**—(स्त्री०) चन्द्रभागा नदी। (पुं०) चन्द्रतिथियों से गणित मास। शुक्लपक्ष। चन्द्रकान्त मणि। (न०) चान्द्रायण व्रत।—

—मास-(पुं०) महीना जिसकी गणना चन्द्र-तिथियों के अनुसार की जाती है।—**व्रतिक**-(पुं०) चान्द्रायण-व्रत-धारी।

चान्द्रक—(न०) [चान्द्र √कै+क] सोंठ।

चान्द्रमस—(वि०) [चन्द्रमस्+अण्] चन्द्रमा-सम्बन्धी। (न०) मृगशिरस् नक्षत्र।

चान्द्रमसायन, चान्द्रमसायनि—(पुं०) [चान्द्रमसायन पृषो० इकारस्य अकारः] [चन्द्रमस्+फिञ्] बुधग्रह।

चान्द्रायण—(पुं०) [चान्द्र√अय्+ल्युट्] महीने भर का एक व्रत।

चान्द्रायणिक—(वि०) [चान्द्रायण+ठञ्] चान्द्रायण-व्रत-धारी।

चाप—(न०) [चपस्य वंशविशेषस्य विकारः, चप+अण्] धनुष, कमान। इन्द्रधनुष। वृत्तांश। धनु राशि।

चापल, चापल्य—(न०) [चपल+अण्] [चपल+ष्यञ्] चपलता, चञ्चलता। फुर्तीलापन, अस्थिरता, नश्वरता। अविचारित कर्म, जल्दबाजी का काम, बेचैनी, विकलता।

चामर—(पुं०, न०) [चमरी+अण्] चँवर, चौरी।—**ग्राह**,—**ग्राहिन्**-(पुं०) चँवर डुलाने वाला, चँवरबरदार।—**ग्राहिणी**-(स्त्री०) दासी जो राजा के ऊपर चँवर डुलावे।—**पुष्प**,—**पुष्पक**-(पुं०) सुपाड़ी का पेड़। केतकी का पेड़। आम का पेड़।

चामरिन्—(पुं०) [चामर+इनि] घोड़ा।

चामीकर—(न०) [चमीकरे रत्नाकरविशेषे भवम्, चमीकर+अण्] सुवर्ण, सोना। धतूरा।—**प्रख्य**-(वि०) सुवर्ण जैसा।

चामुण्डा—(स्त्री०) [चमू √ला+क, पृषो० साधुः] दुर्गा देवी का एक भयानक रूप।

चार्म्मिला—(स्त्री०) [√चम्+अङ्, टाप् —चमा+अण्+इलच्] नदी अथवा आधुनिक चंबल नदी।

चाम्पेय—(पुं०) [चम्पा+ढक्] चंपा वृक्ष। नागकेसर वृक्ष।—(न०) कमल नाल का सूत या रेशा। सुवर्ण। धतूरे का पौधा।

√चाय्—भ्वा० उभ० सक० पूजन करना। देखना। चायति-ते, चायिष्यति-ते, अचायीत्-अचायिष्ट।

चाय—(पुं०) [चय+अण्] समूह। संचय।

चार—(पुं०) [√चर्+घञ्] गमन, गति, चाल। अभ्यास, अनुष्ठान। बंदीगृह। बेड़ी, जंजीर। [चर+अण्] गुप्तचर, जासूस; 'चारैः पश्यन्ति राजानः' चा०। (न०) [√चर्+घञ्] एक कृत्रिम विष।

—**अन्तरित** (**चारान्तरित**)-(पुं०) जासूस।

—**ईक्षण** (**चारेक्षण**),—**चक्षुस्**-(पुं०) राजा जो चरों के द्वारा देखता है।—**पथ**-(पुं०) चौराहा।—**भट**-(पुं०)वीर, योद्धा।

—**वायु**-(पुं०) ग्रीष्म ऋतु में बहने वाला पवन, लू।

चारक—(पुं०) [√चर्+णिच्+ण्वुल्] चरवाहा। चालक। अश्वारोही, सवार। नायक, नेता। [चार+कन्] गुप्तचर। साथी। कारागार। हवालात; 'निगडितचरणा चारके निरोद्धव्या' दश०। बंधन। हथकड़ी। भ्रमणकारी ब्रह्मचारी।

चारचण, चारचुञ्चु—(वि०) [चार+चणप्] [चार+चुञ्चु] सुंदर चाल वाला।

चारण—(पुं०) [चारयति प्रचारयति नृत्यगीतादिविद्यां तज्जन्यकीर्ति वा, √चर्+णिच्+ल्यु]घूमने-फिरने वाला नट या गायक, बंदीजन, भाट। गन्धर्व। पुराण-पाठक। जासूस, भेदिया। भ्रमणकारी, पर्यटक।

चारिका—(स्त्री०) [√चर्+णिच्+ण्वुल्, टाप्, इत्व] दासी, परिचारिका।

चारितार्थ्य—(न०) [चरितार्थ+ष्यञ्] उद्देश्य-सिद्धि। सफलता।

चारित्र, चारित्र्य—(न०) [चरित्र+अण् (स्वार्थे)] [चरित्र+ष्यञ् (स्वार्थे)]आचरण, चालचलन। सुकीर्ति, नामवरी।

सत्यता, साधुता । सतीत्व । शील, स्वभाव । कुलक्रमागत आचार, सदाचार ।—**कवच**-(वि०) सदाचार ही जिसका कवच हो ।

चारु—(वि०) [चरति चित्ते, √चर्+उण्] प्रिय । अनुकूल । प्रेमपात्र, माशूक । मनोहर, सुन्दर; 'सर्वं प्रिये चारुतरं वसन्ते' ऋ० ६.२ । (न०) केसर । (पुं०) बृहस्पति ।—**अङ्गी** (**चार्वङ्गी**)-(स्त्री०) सुंदर अंगों वाली स्त्री ।—**घोण**-(वि०) सुन्दर नासिका वाला ।—**दर्शन**-(वि०) खूबसूरत, मनोहर ।—**धामा**, -**धारा**-(स्त्री०) इन्द्राणी, शची ।—**नेत्र**,-**लोचन**-(वि०) सुन्दर नेत्रों वाला । (पुं०) हिरन, मृग ।—**पर्णी**-(स्त्री०) प्रसारणी नामक पौधा ।—**फला**-(स्त्री०) अंगूर, द्राक्षा लता ।—**लोचना**-(स्त्री०) सुन्दर नेत्रों वाली स्त्री ।—**वक्त्र**-(वि०) खूबसूरत चेहरे वाला । —**वर्धना**-(स्त्री०) रमणी, सुन्दर स्त्री ।—**व्रता**-(स्त्री०) मास भर व्रत रखने वाली स्त्री ।—**शिला**-(स्त्री०) रत्न, जवाहर ।—**शील**-(वि०) अच्छे स्वभाव का ।—**हासिन्**-(वि०) मधुर हास करने वाला ।

चार्चिक्य—(न०) [चर्चिका+ष्यञ्] शरीर को सुवासित करना । शरीर में उबटन लगाना । उबटन ।

चार्म—(वि०) [चर्मन्+अण्, टिलोप] [स्त्री०—**चार्मी**] चमड़े का । चमड़े से ढका हुआ । ढालधारी ।

चार्मण—(वि०) [चर्मन्+अण्] [स्त्री०—**चार्मणी**] चर्म या खाल से ढका हुआ । (न०) चमड़ा या ढालों का समूह ।

चार्मिक—(वि०) [चर्मन्+ठक्] [स्त्री०—**चार्मिकी**] चमड़े का बना हुआ ।

चार्मिण—(न०) [चर्मिन्+अण्] ढालधारी मनुष्यों की टोली ।

चार्वाक—(पुं०) [चारुः आपातमनोरमः वाकः वाक्यं यस्य, पृषो० साधुः] इस नाम का एक व्यक्ति जो नास्तिक मत का आदि-प्रवर्तक, बृहस्पति का शिष्य बताया जाता है । महाभारत में उल्लिखित एक राक्षस जो दुर्योधन का मित्र और पाण्डवों का शत्रु था ।

चार्वी—(स्त्री०) [चारु+ङीप्] सुन्दरी स्त्री । चाँदनी । प्रतिमा । चमक । कुबेर की पत्नी का नाम ।

चाल—(पुं०) [√चल्+ण] घर का छप्पर या छाजन । नीलकण्ठ पक्षी । प्रकम्प । चर, जंगम ।

चालक—(वि०) [√चल्+णिच्+ण्वुल्] चलाने वाला । (पुं०) [√चल्+ण्वुल्] चञ्चल या बेचैन हाथी ।

चालन—(न०) [√चल्+णिच्+ल्युट्] चलाना । (पूँछ का) हिलाना या डुलाना । चलनी में रखकर छानना । छलनी ।

चालनी—(स्त्री०) [चालन+ङीप्] चलनी, छलनी ।

चाष, चास—(पुं०) [√चष्+णिच्+अच्] [चाष—पृषो० सत्व] नीलकण्ठ पक्षी ।

√चि—स्वा० उभ० सक० चयन करना, बटोरना । चिनोति—चिनुते, चेष्यति—ते, अचैषीत्—अचेष्ट । चु० उभ० सक० चयन करना । चपयति—ते, चययति—ते, चयति—ते, चपयिष्यति—ते, चययिष्यति—ते, चेष्यति—ते, अचीचपत्—त, अचीचयत्—त, अचैषीत्—अचेष्ट ।

चिकित्सक—(पुं०) [√कित्+सन्+ण्वुल्] वैद्य, हकीम ।

चिकित्सा—(स्त्री०) [√कित्+सन्+अ—टाप्] औषधोपचार, इलाज ।

चिकित्स्य—(वि०) [√कित्+सन्+यत्] साध्य रोगी, इलाज करने योग्य बीमार ।

चिकिन—(वि०) [नि नता नासिकाऽस्य इति इनच्, चिकि आदेश] चपटी नाक वाला ।

चिक्किल—(पुं०) [√चि+इलच्, कुक्] कीचड़, पंक ।

चिकीर्षा—(स्त्री०) [√कृ+सन्+अ—टाप्] करने की इच्छा । अभिलाषा, कामना ।

चिकीर्षित—(वि०) [√कृ+सन्+क्त] जिसे करने की इच्छा की गई हो । अभिलषित । (न०) अभिप्राय, प्रयोजन, मतलब ।

चिकीर्षु—(वि०) [√कृ+सन्+उ] करने की इच्छा रखने वाला । अभिलाषी, इच्छुक ।

चिकुर—(वि०) [चि इत्यव्यक्तं शब्दं करोति, चि√कुर्+क] चञ्चल, अस्थिर । काँपने वाला । अविचारी । दुस्साहसी । (पुं०) सिर के केश: 'मम रुचिरे चिकुरे कुरु मानद' गीत० १२ । पर्वत । सर्प या रेंगने वाला कोई भी जीव ।**—उच्चय** (**चिकुरोच्चय**)—**कलाप**, **—निकर**,**—पक्ष**,**—पाश**,**—भार**,—**—हस्त**-(पुं०) बालों की चोटी या जूड़ा ।

चिकूर—(पुं०) [चिकुर नि० दीर्घ] केश, बाल ।

√चिक्क्—चु० उभ० सक० कष्ट देना । चिक्कयति—ते, चिक्कयिष्यति—ते, अचिचिक्कत्—त ।

चिक्क—(पुं०) [चिक् इति अव्यक्तशब्देन कायति शब्दायते, चिक् √कै+क] छछूंदर ।

चिक्कण—(वि०) [चित्यते ज्ञायते √चित्+क्विप्, चित्√कण्+क] चिकना । चमकीला । फिसलाहट वाला । कोमल, स्निग्ध । तैलाक्त । (पुं०) सुपारी का वृक्ष । (न०) सुपारी फल ।

चिक्कस—(पुं०) [चिक्क्+असच्] जौ का आटा । तेल और हल्दी मिला हुआ जौ का आटा जो वर और कन्या को उबटन की तरह मला जाता है ।

चिक्का—(स्त्री०) [√चिक्क्+अच्—टाप्] सुपारी । चुहिया ।

चिक्किर—(न०)[√चिक्क्+इरच्] चूहा, गिलहरी ।

चिक्लिद—(न०) [√क्लिद्+यङ—लुक्+अच्] नमी, तरी । ताजगी, टटकापन ।

चिचिण्ड—(न०) कुम्हड़ा या कद्दू ।

चिच्छिल—(पुं०) एक देश और उसका निवासी ।

चिञ्चा—(स्त्री०) [चिम् इति अव्यक्तशब्दं चिनोति, चिम्√चि+ड] इमली का पेड़ । इमली, घुँघुची का पौधा ।

√चिट्—भ्वा० पर० सक० भेजना । चेटति, चेटिष्यति, अचेटीत् ।

√चित्—पहचानना । भ्वा० पर० सक० जानना, पहचानना । चेतति, चेतिष्यति, अचेतीत् । चु० आत्म० अक० सचेत होना, होश में आना । चेतयते, चेतयिष्यते, अचीचितत ।

चित्—(स्त्री०) [√चित्+क्विप्] विवेक । ज्ञान । बुद्धि । प्रतिभा । हृदय । मन । जीवात्मा । ब्रह्म ।**—आत्मन्** (**चिदात्मन्**) (पुं०) चैतन्य-स्वरूप परब्रह्म ।**—आनन्द** (**चिदानन्द**)-(पुं०) चैतन्य और आनन्दमय परब्रह्म ।**—आभास** (**चिदाभास**)-(पुं०) जीव ।**—उल्लास**(**चिदुल्लास**)-(पुं०) जीवात्माओं के मन की प्रसन्नता । चैतन्य का स्फुरण ।**—घन** (**चिद्घन**)-(पुं०) परमात्मा या ब्रह्म ।**—प्रवृत्ति**-(स्त्री०) चैतन्य की प्रवृत्ति, ज्ञान का प्रवाह या झुकाव ।**—शक्ति** (स्त्री०) बोध-शक्ति ।**—स्वरूप**-(न०) परमात्मा ।

चित—(वि०) [√चि+क्त] एकत्र किया हुआ, ढेर लगाया हुआ । प्राप्त, उपलब्ध । जड़ा हुआ, बैठाया हुआ । (न०) भवन, इमारत ।

चिता—(स्त्री०) [चित+टाप्] शव जलाने के लिये तर-ऊपर रखा हुआ काष्ठ का ढेर ।**—चूडक**-(न०) चिता ।

चिति—(स्त्री०) [√चि+क्तिन्] एकत्रीकरण । ढेर । तह, पर्त । चिता । वृद्धि ।

चितिका—(स्त्री०) [चिता+कन्—टाप्, ह्रस्व] चिता। [चिति+कन्—टाप्] ढाल, गोला, गंज। [चिति√कै+क—टाप्] करधनी।

चित्त—(वि०) [√चित्+क्त] देखा हुआ। पहिचाना हुआ। विचारित, मनन किया हुआ। निर्धारित। इच्छित। (न०) विचार। मनोयोग। इच्छा। उद्देश्य। मन। हृदय। बुद्धि। प्रतिभा। विचारशक्ति।—**अनुवर्तिन्** (**चित्तानुवर्तिन्**)–(वि०) मन का अनुसरण करने वाला।—**अपहारक** (**चित्तापहारक**),—**अपहारिन्** (**चित्तापहारिन्**)–(वि०) आकर्षक, मन चुराने वाला।—**आभोग** (**चित्ताभोग**)–(पुं०) किसी वस्तु के प्रति अनन्य अनुराग।—**आसङ्ग** (**चित्तासङ्ग**)–(पुं०) अनुराग, प्रेम।—**उद्रेक** (**चित्तोद्रेक**)–(पुं०) अभिमान, अहङ्कार।—**ऐक्य** (**चित्तैक्य**)–(वि०) मतैक्य, एकदिली।—**उन्नति** (**चित्तोन्नति**),—**समुन्नति**–(स्त्री०) उदारता, उच्चाशयता। अहङ्कार, अभिमान।—**चारिन्**–(वि०) दूसरे के इच्छानुसार चलने वाला।—**ज**,—**जन्मन्**,—**भू**, —**योनि** (पुं०) प्रेम, अनुराग। कामदेव; 'चित्तयोनिरभवत् पुनर्नवः' र० १६.४६।—**ज्ञ**–(वि०) दूसरे के मन की बात जानने वाला।—**नाश**–(पुं०) विवेकहीनता।—**निर्वृति**–(स्त्री०)सन्तोष। प्रसन्नता।—**प्रशम**–(वि०) शान्त। स्वस्थ।—**प्रशम**–(पुं०) मन की शान्ति।—**प्रसन्नता**–(स्त्री०) हर्ष।—**प्रसादन**–(न०) योगदर्शन में वर्णित चित्त का एक संस्कार जिससे चित्त की प्रसन्नता प्राप्त होती है।—**भूमि**–(स्त्री०) चित्त की अवस्था। इन पाँच में से चित्त की कोई अवस्था—क्षिप्त, मूढ़, विक्षिप्त, एकाग्र और निरुद्ध (योग)। समाधि की इन चार भूमियों में से कोई—मधुमती, मधुप्रतीका, विशोका और ऋतंभरा।—**भेद**–(पुं०) मतभेद, अनैक्य। असङ्गति।—**मोह**–(पुं०) चित्तविभ्रम।—**विकार**–(पुं०) विचार या भावना का परिवर्तन।—**विक्षेप**–(पुं०) चित्त की अस्थिरता, अनेक विषयों में भटकते रहना।—**विप्लव**,—**विभ्रम**–(पुं०) विक्षिप्तता, पागलपन।—**विश्लेष**–(पुं०) मैत्रीभङ्ग।—**वृत्ति**–(स्त्री०) प्रवृत्ति, झुकाव; 'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः' योग०। आन्तरिक अभिप्राय। उमङ्ग।—०**निरोध**—(पुं०) चित्त को बाह्य विषयों से हटाकर अन्तर्मुख करना।—**वेदना**–(स्त्री०) कष्ट। विपत्ति। चिन्ता।—**वैकल्य**–(न०) मन की बेचैनी। बावलापन, सिड़ीपन।—**हारिन्**- (वि०) मनोहर। आकर्षक। मनोमुग्धकारी। प्रिय।

चित्तवत्—(वि०) [चित्त+मतुप्, वत्व] युक्तियुक्त, सहेतुक। दयालु-हृदय। मनभावन। सर्वप्रिय।

चित्य—(पुं०) [√चि+क्यप्] अग्नि। (वि०) चुनने योग्य, चयनीय। (न०) वह स्थान जहाँ शव भस्म किया जाय, श्मशान।

चित्या—(स्त्री०) [चित्य—टाप्] चिता।

√चित्र्—चु० पर० सक० मूर्ति आदि लिखना। देखना। अक० आश्चर्य होना। चित्रयति, चित्रयिष्यति, अचिचित्रत्।

चित्र—(वि०) [√चि+ष्ट्रन् अथवा√चित्र्+अच्]चमकीला। रंग-बिरंगा। रुचिकर। भिन्न-भिन्न, तरह-तरह का। आश्चर्यकारी, अद्भुत। (न०) कागज, कपड़े आदि पर बनाई हुई वस्तु की प्रतिमूर्ति, तसवीर। आलेख्य। साम्प्रदायिक तिलक। शब्दचित्र। चित्रकाव्य। निम्न श्रेणी का काव्य। चमकीला आभूषण। आकाश। धब्बा। श्वेत कुष्ठ। आश्चर्य। (पुं०) कई प्रकार के रंग के समूह का एक रंग, चितकबरा रंग। अशोक वृक्ष। चित्रक वृक्ष। एरण्ड वृक्ष। चित्रगुप्त। (अव्य०) आह! ओह! कैसा आश्चर्य;

'किमत्र चित्रं यत्सन्तः परानुग्रहकाङ्क्षिणः' सुभा।०—अक्षी (चित्राक्षी),—नेत्रा,—लोचना—(स्त्री०) सारिका, मैना पक्षी।—अङ्ग (चित्राङ्ग)—(वि०) धारियोंदार। धब्बेदार। (न०) सेंदुर। इंगुर।—अर्पित (चित्रार्पित)—(वि०) चित्रित।—आकृति (चित्राकृति)—(स्त्री०) हाथ की बनी तसवीर।—आयस (चित्रायस)—(न०) इस्पात लोहा।—आरम्भ (चित्रारम्भ)—(पुं०) तसवीर का खाका।—उक्ति (चित्रोक्ति)—(स्त्री०) आकाशवाणी। आश्चर्यप्रद कहानी।—ओदन (चित्रौदन)—(पुं०) पीला भात।—कण्ठ—(पुं०) कबूतर, परेवा।—कम्बल—(पुं०) रंग-बिरंगी हाथी की झूल। रंगबिरंगा गलीचा।—कर—(पुं०) चित्रकार। नाटक का पात्र।—कर्मन्—(न०) असाधारण कार्य। शृङ्गार, सजावट। तसवीर। जादू। चितेरा। जादूगर।—काय—(पुं०) चीता, बाघ।—कार—(पुं०) चितेरा। सङ्कर वर्ण-विशेष।—"स्वपतेरपि गान्धिक्यां चित्रकारो व्यजायत" पराशर।—कूट—(पुं०) तीर्थक्षेत्र विशेष जो बाँदा जिले (बुन्देलखण्ड) में है।—कृत्—(पुं०) चितेरा।—क्रिया—(स्त्री०) चित्रणकला।—ग,—गत—(वि०) चित्रित।—गन्ध—(न०) हरताल।—गुप्त—(पुं०) यमराज के पेशकार जो जीवधारियों के पाप-पुण्यों का लेखा रखते हैं। कायस्थों के कुलदेवता।—घण्टा—(स्त्री०) एक देवी जिसकी गणना नौ दुर्गाओं में है।—जल्प—(पुं०) नाना विषयों पर अस्त-व्यस्त विचार।—तण्डुल—(न०) वायविडंग।—त्वच्—(पुं०) भोजपत्र।—दण्डक—(पुं०) कपास का पौधा।—न्यस्त—(वि०) चित्रित।—पक्ष—(पुं०) तीतर विशेष।—पट,—पट्ट—(पुं०) चित्र। रंगीन और खानेदार कपड़ा। वह कपड़ा, चमड़ा या कागज जिस पर चित्र बनाया जाय, चित्राधार।—पत्रिका—(स्त्री०) कपित्थपर्णी। द्रोणपुष्पी।—पर्णी—(स्त्री०) जलपिप्पली।—पथा—(स्त्री०) प्रभास तीर्थ के अंतर्गत एक छोटी नदी।—पद—(वि०) अनेक भागों में विभक्त। अच्छे या सुन्दर भावों से भरा हुआ।—पादा—(स्त्री०) मैना पक्षी।—पिच्छक—(पुं०) मोर।—पुङ्ख—(पुं०) एक प्रकार का तीर।—पृष्ठ—(पुं०) गौरैया पक्षी।—फलक—(न०) तख्ता या जिस पर रखकर चित्र खींचा जाय।—फला—(स्त्री०) लिंगिनी लता। एक मछली।—बर्ह—(पुं०) मयूर।—भानु—(पुं०) आग। सूर्य। भैरव। मदार का पौधा।—भेषजा—(स्त्री०) काकोदुंबरिका, कठूमर।—मण्डप—(पुं०) अर्जुन की पत्नी चित्राङ्गदा के पिता। मणिपुरकुमार।—मण्डल—(पुं०) सर्प विशेष।—मृग—(पुं०) चीतल हिरन।—मेखल—(पुं०) मयूर।—योग—(पुं०) बूढ़े को जवान, जवान को बूढ़ा बना देने की विद्या। ६४ कलाओं में से एक।—योधिन्—(पुं०) अर्जुन का नाम।—रथ—(पुं०) सूर्य। गन्धर्वों के एक सरदार का नाम। मुनि नाम्नी स्त्री के गर्भ से उत्पन्न कश्यप ऋषि के सोलह पुत्रों में से एक का नाम।—रश्मि—(पुं०) ४९ मरुतों में से एक।—रेख—(पुं०) एक वर्ष या भूखंड।—ल—(वि०) चितकबरा।—लता—(स्त्री०) मजीठ।—लिखित—(वि०) चित्रित। गतिहीन। मूक।—लिपि—(स्त्री०) वह लिपि जिसमें अक्षरों की जगह सांकेतिक चित्र काम में लाये जायें।—लेखा—(स्त्री०) उषा की एक सहेली का नाम।—लेखक—(पुं०) चितेरा।—लेखनिका—(स्त्री०) चितेरे की कूँची। तूलिका।—विचित्र—(वि०) रंगबिरंगा।—विद्या—(स्त्री०) चित्रकला।—शाला—(स्त्री०) चितेरे का कार्यालय।—शिखण्डिन्—(पुं०) सप्तर्षियों की उपाधि।—संस्थ—(वि०) चित्रित।—

हस्त–(पुं०) युद्ध के समय हाथ की एक विशिष्ट स्थिति ।

चित्रक—(न०) [चित्र+कन्] माथे का साम्प्रदायिक चिह्न, स्वरूप तिलक । (पुं०) [चित्र√कै+क] चित्रकार, चितेरा । चीता । रेंडी का पेड़ । चीता नामक क्षुप । चिरायता ।

चित्रा—(स्त्री०) [√चित्र्+अच्–टाप्] चौदहवाँ नक्षत्र; 'हिमनिर्मुक्तयोर्योगे चित्राचन्द्रमसोरिव' र० १.४६ । चितकबरी गाय । ककड़ी । खीरा । मजीठ । बायविडंग । मूषिकपर्णी । एक अप्सरा । एक रागिनी । एक मूर्च्छना । एक सर्प । सुभद्रा ।—**अटीर** (**चित्राटीर**)–[चित्रा √ अट् +ईरन्],—**ईश** (**चित्रेश**) –(पुं०) चन्द्रमा ।

चित्रिक—(पुं०) [चैत्र+क, पृषो० साधु.] चैत्र मास ।

चित्रिणी—(स्त्री०) [चित्र+इनि–ङीप्] चार प्रकार की (अर्थात् पद्मिनी, चित्रिणी, शङ्खिनी और हस्तिनी अथवा करिणी) स्त्रियों में से एक । रतिमञ्जरीकार ने चित्रिणी के लक्षण यह लिखे हैं:—'भवति रतिरसज्ञा नातिखर्वा न दीर्घा, तिलकुसुमसुनासा स्निग्धनीलोत्पलाक्षी । घनकठिनकुचाढ्या सुन्दरी बद्धशीला, सकलगुणविचित्रा चित्रिणी चित्रवक्त्रा' ।

चित्रित—(वि०) [√चित्र्+क्त] रंगबिरंगा । धब्बेदार । रँगा हुआ ।

चित्रिन्—(वि०) [√चित्र्+णिनि] आश्चर्यजनक । [चित्र+इनि] चित्रयुक्त । रंगबिरंगा । उजले काले बालों वाला ।

√चिन्त्—चु० पर० सक० सोचना, विचारना । ध्यान देना, ख्याल करना । स्मरण करना, याद करना । ढूंढ़ निकालना, खोज निकालना । सम्मान करना । तोलना । अच्छे-बुरे का विचार करना । वहन करना । चिन्तयति, चिन्तयिष्यति, अचिचिन्तत्; चिन्तति, चिन्तिष्यति, अचिन्तीत् ।

चिन्तन—(न०), **चिन्तना**–(स्त्री०) [√चिन्त्+ल्युट्] [√चिन्त्+णिच्+युच्] सोचना-विचारना । सोच-विचार में पड़ जाना ।

चिन्तनीय—(वि०) [√चिन्त्+अनीयर्] विचारने के योग्य । शोचनीय ।

चिन्ता—(स्त्री०) [√चिन्त्+णिच्+अङ –टाप्] चिंतन । फिक्र, सोच । दुःखदायी विचार; 'चिन्ताजडं दर्शनम्' श० ४.५ ।—**आकुल** (**चिन्ताकुल**)–(वि०) चिन्ता से विकल, उद्विग्न ।—**कर्मन्**–(न०) सोच-फिक्र ।—**पर**–(वि०) चिंता, सोच में डूबा हुआ ।—**मणि**–(पुं०) विचारते ही अभिलषित वस्तु को देने वाला रत्न विशेष ।—**वेश्मन्**–(न०) विचार-भवन, मंत्रणागृह ।—**शील**–(वि०) जिसे सोच-विचार की आदत हो, मननशील, मनीषी ।

चिन्तिडी—(स्त्री०) [=तिन्तिडी, पृषो० तस्य चत्वम्] इमली का पेड़ ।

चिन्तित—(वि०) [√चिन्त्+क्त] चिंतायुक्त, सोच में पड़ा हुआ । विचारा हुआ ।

चिन्तिति, **चिन्तिया**—(स्त्री०) [√चिन्त्+क्तिन्] [चिन्ता+घ] सोच । विचार । ख्याल ।

चिन्त्य—(वि०) [√चिन्त्+यत्] सोचने योग्य, विचारने लायक । ढूंढ़ने लायक, पता लगाने योग्य । सन्दिग्ध, विचारने योग्य ।

चिन्मय—(वि०) [चित्+मयट्] शुद्धज्ञानमय, ज्ञानस्वरूप । (न०) विशुद्ध ज्ञान । परब्रह्म ।

चिपट—(वि०) [नि नता नासिका विद्यतेऽस्य, नि+पटच्, चिआदेश] चपटी नाक का । (पुं०) [√चि+पटच्] चावल या अनाज जो चपटा किया गया हो, चिड़वा, चिउड़ा ।

चिपिट—(पुं०) [नि+पिटच्, चि आदेश] दे० 'चिपट' । [√चि+पिटच्] दे० 'चिपट' ।

—ग्रीव–(वि०) छोटी गरदन वाला।—नास,—नासिक–(वि०) चपटी नाक वाला।

चिपिटक, चिपुट—(न०) [चिपिट+कन्] [=चिपिट पृषो० साधु:] चिड़वा, चिउरा।

चिबुक, चिबुक—(न०) [√चीव् (ब्) +उ, पूर्वा० ह्रस्व, चिबु(बु)+कन्] ठुड्डी, ठोड़ी।

चिमि—(पुं०) [चिनोति मनुष्यवत् वाक्यानि, √चि+मिक् (बा०)] तोता।

चिर—(वि०) [√चि+रक्] दीर्घ। दीर्घ-काल-व्यापी, बहुत दिनों का पुराना। (न०) दीर्घकाल, बहुत समय; 'चिरात्सुतस्पर्शरसज्ञतां ययौ' र० ३.२६। (अव्य०) बहुत दिन। बहुत दिनों तक। सदा।—**आयुस् (चिरायुस्)**-(वि०) बहुत दिनों का या बड़ी उम्र का। (पुं०) देवता।—**आरोष (चिरारोष)**–(पुं०) बहुत दिनों से डाला हुआ घेरा।—**उत्थ (चिरोत्थ)**–(वि०) दीर्घ-काल-व्यापी।—**कार, —कारिक,— कारिन्,—क्रिय**–(वि०) धीरे-धीरे कार्य करने वाला, दीर्घसूत्री।—**काल**–(पुं०) दीर्घकाल।—**कालिक,—कालीन**–(वि०) बहुत दिनों का, पुराना।—**जात**–(वि०) बहुत दिनों पूर्व उत्पन्न।—**जीविन्**–(वि०) दीर्घ-जीवी। चिरजीवियों में सात की गणना है। यथा—अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनुमांश्च विभीषण:। कृप: परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविन:।—**पाकिन्**–(वि०) देर में पकने वाला।—**पुष्प**–(पुं०) बकुल वृक्ष।—**मित्र**–(न०) पुराना दोस्त।—**मेहिन्**–(पुं०) गधा, गर्दभ।—**रात्र**–(न०) कई रात्रियों की अवधि का काल। दीर्घकाल।—**विप्रोषित**–(वि०) दीर्घकाल से निर्वासित। दीर्घकालीन प्रवासी।—**सूता,—सूतिका**–(स्त्री०) वह गौ जिसके अनेक बछड़े उत्पन्न हुए हों।—**सेवक**–(पुं०) पुराना नौकर।—**स्थ,—स्थायिन्,—स्थित**–(वि०) टिकाऊ। बहुत दिनों तक चलने वाला।

चिरञ्जीव—(वि०) [चिरम्√जीव्+अच्] दे० 'चिरजीविन्'। (पुं०) कामदेव की उपाधि।

चिरण्टी, चिरिण्टी—(स्त्री०) [चिरेण अटति पितृगृहात्, चिर√अट्+अच्—ङीप्, पृषो० साधु:] [=चिरण्टी पृषो० साधु:] वह विवाहित अथवा अविवाहित स्त्री जो जवान होने पर भी दीर्घकाल तक अपने पिता के घर ही में रहे।

चिरत्न—(वि०) [चिर+त्न (भवार्थे)] [स्त्री०—**चिरत्नी**] प्राचीनकालीन, बहुत पुरानी।

चिरन्तन—(वि०) [चिरम्+ट्युल्, तुट्] प्राचीन, बहुत दिनों का; 'मुनिभिश्चिरन्तन-स्तावदभिन्यवीविशत्' शि० १.१५।

चिरस्य—(अव्य०) [चिरम् अस्यते, चिर √अस्+यत्, शक० पररूप] दीर्घकाल, बहुत समय।

चिराय—(अव्य०) [चिर√अय्+अण्] दीर्घकाल।—'चिराय नाम्न: प्रथमाभिधेयता' शि० १.४३।

चिरि—(पुं०) [चिनोति मनुष्यवत् वाक्यादिकम्, √चि+रिक्] तोता।

चिरु—(पुं०) [√चि+रुक्] कंधे के जोड़।

चिर्भटी—(स्त्री०) [चिर√भट्+अच्–ङीप् पृषो० साधु:] ककड़ी।

√चिल्—तु० पर० सक० वस्त्र धारण करना। चिलति, चेलिष्यति, अचेलीत्।

चिलमिलिका, चिलमीलिका—(स्त्री०) [चिर√मिल् वा√मील्+ण्वुल्–टाप्, इत्व] एक प्रकार की गुंज या सोने की सकड़ी। जुगनू। बिजली।

√चिल्ल्—भ्वा० पर० अक० ढीला पड़ जाना, शिथिल होना। चिल्लति, चिल्लिष्यति, अचिल्लीत्।

चिल्ल—(पुं०), **चिल्ला**-(स्त्री०) [√चिल्ल्+अच्] [चिल्ल+टाप्] चील । (वि०) [क्लिन्ने चक्षुषी यस्य, क्लिन्न+ल, चिल् आदेश] कीचभरी आँखों वाला ।—**आभ** (चिल्लाभ) (पुं०) जेबकट, गिरहकट ।

चिल्लि—(पुं०) [√चिल्ल्+इन्] दोनों भौंहों के मध्य का स्थान । चील ।

चिल्लिका—(स्त्री०) [चिल्लि+कन्—टाप्] दे० 'चिल्लि' ।

चिल्ली—(स्त्री०) [√चिल्ल्+इन्—ङीप्] लोध का पेड़ । झींगुर । बथुआ साग ।

चिल्लीका—(स्त्री०) [चिल्ली+कन्—टाप्] दे० 'चिल्ली' ।

चिवि—(पुं०) [√चीव्+इन्, पृषो० साधुः] ठुड्डी, ठोड़ी ।

√चिह्न्—चु० उभ० सक० निशान लगाना । चिह्नयति-ते, चिह्नयिष्यति-ते, अचिचिह्नत्-त ।

चिह्न—(न०) [√चिह्न्+अच्] निशान, दाग । लक्षण; 'प्रसादचिह्नानि पुरःफलानि' र० २.२२ । निशानी, यादगार । ध्वजा । लकीर । पद आदि की सूचक वस्तु । राशि । लक्ष्य ।—**कारिन्**-(पुं०) चिह्न बनाने वाला । घायल करने वाला । अवग्रह ।

चिह्नित—(वि०) [√चिह्न्+क्त] निशान किया हुआ । दागा हुआ । परिचित ।

चीत्कार—(पुं०) [चीत्√कृ+घञ्] हाथी की चिंघाड़ या गधे की रेंक ।

चीन—(पुं०) [√चि+नक्, दीर्घ] चीनदेश । हिरन विशेष । वस्त्र विशेष । (न०) झंडा, पताका । आँखों के कोयों के लिये पट्टी विशेष । सीसा । (पुं०) चीन का राजा या चीनदेशवासी ।—**अंशुक** (चीनांशुक), —**वासस्**-(न०) रेशमी वस्त्र; 'चीनांशुकैः कल्पितकेतुमालम्' कु० ७.३ ।—**कर्पूर**-(पुं०) कपूर विशेष ।—**ज**-(न०) इस्पात लोहा ।—**पिष्ट**-(न०) सिन्दूर । सीसा ।—**वङ्ग**-(न०) सीसा ।

चीनक—(पुं०) चेना नामक अन्न । चीना । कगनी ।

चीनाक—(पुं०) [चीन√अक्+अण्] कपूर विशेष ।

√चीभ्—भ्वा० आत्म० अक० डींग मारना । चीभते, चीभिष्यते, अचीभिष्ट ।

चीर—(न०) [√चि+क्रन्, दीर्घ] चिथड़ा, धज्जी । छाल । वस्त्र । चौलड़ा मोती का हार । धारी । लकीर । खुदाई । नक्काशी । सीसा ।—**परिग्रह**, —**वासिन्**-(वि०) छाल को (वस्त्र के स्थान पर) पहिने हुए । चिथड़े पहिने हुए ।

चीरि—(स्त्री०) [√चि+क्रि, दीर्घ] आँख ढाँपने का घूंघट विशेष । गेंद बल्ले का खेल । भीतर पहिनने वाले कपड़े की संजाफ या गोट ।

चीरिका, चीरुका—(स्त्री०) [चीरि√कै+क—टाप्] [=चीरिका, पृषो० साधुः] झींगुर । गेंद बल्ले का खेल ।

चीर्ण—(वि०) [√चर्+क्त, पृषो० इत्व] किया हुआ, कृत । अधीत । चीरा-फाड़ा हुआ । विभाजित । संपादित ।—**पर्ण**-(पुं०) खजूर । नीम ।

चीलिका—(स्त्री०) [ची√ला+क—टाप्, इत्व] झींगुर । गेंद बल्ले का खेल ।

√चीव्—भ्वा० उभ० सक० ग्रहण करना । ढाँकना । चीवति—ते, चीविष्यति—ते, अचीवीत्—अचीविष्ट । चु० उभ० अक० चमकना । चीवयति-ते, चीवयिष्यति—ते अचिचीवत्—त ।

चीवर—(न०) [√चि+ष्वरच्, नि० साधुः] वस्त्र; 'प्रक्षालितमेतन्मया चीवरखण्डं' मृ० ८ । कपड़ा, कंथा ।

चीवरिन्—(पुं०) [चीवर+इनि] बौद्ध या जैन भिक्षुक । भिक्षुक ।

√चुक्क्—चु० पर० सक० पीड़ा देना । चुक्कयति, चुक्कयिष्यति, अचुचुक्कत् ।

चुक्कार—(पुं०) [√चुक्क्+ अच्, चुक्क-आ√रा+क] सिंह की दहाड़ या गर्जन ।

चुक्र—(पुं०) [√चुक्+रक्, उत्व] चूक । चूका साग । अमलबेत । काँजी ।—**फल**-(न०) इमली का फल ।—**वास्तुक**-(न०) खट्टा साग विशेष, अमलोनी का साग ।

चुक्रा—(स्त्री०) [चुक्र+टाप्] अमलोनी का साग । इमली का पेड़ ।

चुक्रिमन्—(पुं०) [चुक्र+इमनिच्] खट्टापन ।

चुचुक, चुचूक—(न०) [चुचु इत्यव्यक्तशब्दं कायति, चुचु√कै+क] [=चूचुक पृषो० साधु] चूचा के ऊपर की घुंडी ।

चुञ्चु—(वि०) प्रख्यात, प्रसिद्ध । निपुण । (पुं०) छछूंदर । ब्राह्मण पुरुष और वैदेह स्त्री से उत्पन्न एक वर्णसंकर जाति ।

√**चुट्**—तु० पर० सक० काटना । चुटति, चुटिष्यति, अचुटीत् । चु० पर० सक० काटना । चोटयति, चोटयिष्यति, अचूचुटत् ।

√**चुट्ट्**—चु० पर० अक० थोड़ा होना । चुट्टयति, चुट्टयिष्यति, अचुचुट्टत् ।

√**चुण्ट्**—चु० पर० सक० काटना । चुण्टयति, चुण्टयिष्यति, अचुचुण्टत् ।

चुण्टा, चुण्डा—(स्त्री०) [√चुण्ट्+अच्—टाप्][√चुण्ड्+अच्—टाप्] छोटा कुआँ । कुएँ के पास का हौज । छोटा तालाब ।

√**चुण्ड्**—भ्वा० पर० अक० थोड़ा होना । चुण्डति, चुण्डिष्यति, अचुण्डीत् ।

√**चुत्**—भ्वा० पर० अक० चूना, टपकना । चोतति, चोतिष्यति, अचोतीत् ।

चुत—(पुं०) [√चुत्+क] गुदाद्वार । भग, योनि ।

√**चुद्**—चु० पर० सक० भेजना । निर्देश करना । आगे फेंकना । आगे बढ़ाना । सुझाना, मन में डालना । प्रेरणा करना । उसकाना, भड़काना, सजीव करना । प्रवृत्त करना । पथ प्रदर्शन करना । प्रश्न करना । दबाना । प्रार्थना द्वारा दबाव डालना । उपस्थित करना, पेश करना । चोदयति, चोदयिष्यति, अचूचुदत् ।

चुन्दी—(स्त्री०) [√चुन्द्+अच् (नि०)—ङीप्] कुटनी ।

√**चुप्**—भ्वा० पर० अक० धीरे-धीरे चलना । रेंगना । चोपति, चोपिष्यति, अचोपीत् ।

चुबुक—(पुं०) [=चिबुक पृषो० साधु:] ठुड्डी ।

√**चुम्ब्**—भ्वा० पर० सक० चूमना । चुम्बति, चुम्बिष्यति, अचुम्बीत् । चु० पर० सक० मारना । चुम्बयति, चुम्बयिष्यति, अचुचुम्बत् ।

चुम्ब—(पुं०), **चुम्बा**-(स्त्री०) [√चुम्ब्+घञ्] [√चुम्ब्+अ—टाप्] दे० 'चुम्बन' ।

चुम्बक—(पुं०) [√चुम्ब्+ण्वुल्] चूमा लेने वाला । लम्पट, रसिया । गुंडा । लिउड़ पण्डित, पल्लवग्राही पण्डित । चुम्बक पत्थर, मकनातीसी पत्थर ।

चुम्बन—(न०) [√चुम्ब्+ल्युट्] चूमने की क्रिया, चूमा ।

√**चुर्**—चु० उभ० चुराना । चोरयति—ते, चोरयिष्यति—ते, अचूचुरत्—त ।

चुरा—(स्त्री०)[√चुर्+अ—टाप्] चोरी ।

चुरि, चुरी—(स्त्री०) [√चुर्+कि] [चुरि+ङीष्] छोटा कुआँ ।

√**चुल्**—चु० पर० अक० ऊंचा होना । चोलयति, चोलयिष्यति, अचूचुलत् ।

चुलुक—(पुं०) [√चुल्+उकक् (बा०)] गहरी कीचड़ । मुंहभर जल या अञ्जली, चुल्लू । छोटा बरतन ।

चुलुकिन्—(पुं०) [चुलुक+इनि] सूँस के आकार का एक मत्स्य ।

√**चुलुम्प्**—भ्वा० पर० अक० झूलना, इधर-उधर हिलना । चुलुम्पति, चुलुम्पिष्यति, अचुलुम्पीत् ।

चुलुम्प—(पुं०) [√चुलुम्प्+घञ्] बच्चों का लाड़-प्यार । लालन ।

चुलुम्पा—(स्त्री०) [चुलुम्प+टाप्] बकरी।

√चुल्ल्—भ्वा० पर० अक० खेलना, क्रीड़ा करना। प्रेमसूचक भाव प्रदर्शित करना। चुल्लति, चुल्लिष्यति, अचुल्लीत्।

चुल्लि—(स्त्री०) [√चुल्ल्+इन्] चूल्हा।

चूचुक, चूचूक—(न०) [√चूष्+उक, षकारस्य चकारः] [=चूचुक पृषो० साधुः] स्तनाग्रभाग, चूचों के ऊपर की घुंडी।

चूडक—(पुं०) [चूडा+कन्, ह्रस्व] कूप, कुआँ।

चूडा—(स्त्री०) [चोलयति, उन्नतो भवति, √चुल्+अङ्, लस्य डः, दीर्घ (नि०)] चोटी, चुटिया, शिखा। चूडाकरण संस्कार। मुर्गा या मोर के सिर की कलंगी। सिर। चोटी, शिखर। अटारी, घटा। कूप। कलाई का आभूषण।—**करण,**—**कर्मन्**-(न०) मुण्डन संस्कार।—**पाश**-(पुं०) केश-समूह; 'चूडापाशे नवकुरवकं' मे० ६५।—**मणि**-(पुं०),—**रत्न**-(न०) शीसफूल या शीस में धारण करने के लिये मणि-जटित आभूषण विशेष। सर्वोत्तम, सर्वोत्कृष्ट।

चूडार, चूडाल—(वि०)—[चूडा√ऋ+अण्] [चूडा+लच्] चोटीदार, कलंगीदार। (न०) सिर।

चूत—(पुं०) [√चूष्+क्त, पृषो० साधुः] आम्रवृक्ष, आम का पेड़। (न०) [=चुत पृषो० साधुः] भग, योनि।

√चूर्ण्—चु० पर० सक० कूट कर या पीस कर आटा कर डालना। कूटना, कुचलना। चूर्णयति, चूर्णयिष्यति, अचुचूर्णत्।

चूर्ण—(पुं०, न०) [√चूर्ण्+घञ् वा अच्] चूर्ण। आटा। धूल। पिसा हुआ चंदन। बुकनीदार चूर्ण। (पुं०) खड़िया। चूना।—**कार**-(पुं०) चूना फूंकने वाला।—**कुन्तल**-(पुं०) घुंघराले बाल; 'सम केरलकान्तानां चूर्णकुन्तल वल्लिषिः' वि० ४.२।—**खण्ड**-(न०) रोड़ा, कंकड़।—**पारद**-(पुं०) सिंदूर। शिलरक। लाल रंग।—**योग**-(पुं०) सुगन्धित चूर्ण।

चूर्णक—(पुं०) [चूर्ण+कन्] भुना और पिसा हुआ अनाज, सत्तू। (न०) सुगमसमुक्त चूर्ण। सरल गद्यमय निबन्ध। यथा—'अकठोराक्षरं स्वल्पसमासं चूर्णकं विदुः।'—छन्दोमञ्जरी।

चूर्णन—(न०) [√चूर्ण्+ल्युट्] चूर्ण करना। चूर्ण।

चूर्णि, चूर्णी—(स्त्री०) [√चूर्ण्+इन्] [चूर्णि+ङीप्] चूर्ण। सौ कौड़ियों का योग या जोड़।

चूर्णिका—(स्त्री०) [चूर्ण+ठन्—टाप्] भुना और पिसा अनाज, सत्तू। गद्य रचना की एक शैली।

चूर्णित—(वि०) [√चूर्ण्+क्त] कूटा हुआ। पीसा हुआ। टुकड़े-टुकड़े किया हुआ। नष्ट, ध्वस्त।

चूल—(पुं०) [√चुल्+क, पृषो० दीर्घ] बाल। चोटी।

चूला—(स्त्री०) [=चूडा, पृषो० डस्य लः] ऊपर के खण्ड का कमरा। चोटी, कलंगी। पुच्छल तारे की चोटी।

चूलिका—(स्त्री०) [√चुल्+ण्वुल्, पृषो० साधुः] मुर्गे की कलंगी। हाथी का कर्णमूल। नाटक में वह कथन जो पर्दे की आड़ से कहा जाता है। यथा—'अन्तर्जवनिकासंस्थैः सूचनार्थस्य चूलिका।'—साहित्यदर्पण।

√चूष्—भ्वा० पर० सक० चूसना। चूषति, चूषिष्यति, अचूषीत्।

चूषा—(स्त्री०) [√चूष्+क—टाप्] चूसना। हाथी का हौदा कसने का तस्मा, तंग, पेटी, कमरबंद।

चूष्य—(न०) [√चूष्+ण्यत्] कोई भोज्य पदार्थ जो चूसकर खाने योग्य हो; आम आदि।

√चूर्—तु० पर० सक० चोटिल करना, मार

डालना। बाँध लेना। आपस में जोड़कर मिला देना। जलाना, प्रकाश करना। चृतति, चर्तिष्यति, अचर्तीत्।

चेकितान—(पुं०) [√कित्+यङ्—लुक्+चानश्] शिवजी। एक यादव वंशी राजा जो महाभारत के युद्ध में पाण्डवों की ओर से लड़ा था। (वि०) अत्यन्त ज्ञानयुक्त, बहुत बड़ा ज्ञानी।

चेट, चेड—(पुं०) [चिट्+अच्, पक्षे डत्वम्] दास। पति। उपपति। भाँड़। छिरन। एक प्रकार की मछली।

चेटिका, चेडिका, चेटी, चेडी—(स्त्री०) [√चिट्+ण्वुल्—टाप्, इत्व, पक्षे डत्वम्] [चेट+ङीष्, पक्षे डत्वम्] दासी, टहलनी।

चेत्—(अव्य०) [√चित्+विच्] यदि, अगर। पक्षान्तर, दूसरी तौर पर। जहाँ संदेह न हो वहाँ भी संदेह कथन। कदाचित्, शायद।

चेतन—(वि०) [√चित्+ल्युट्] सजीव, जीवित, प्राणधारी; 'चेतनाचेतनेषु'। दृश्यमान, दृष्टिगोचर। (पुं०) जीवित-प्राणी। जीवात्मा, रूह। मन। परमात्मा।

चेतना—(स्त्री०) [√चित्+युच्—टाप्] संज्ञा, बोध। समझ, धी। जीवन, सजीवता, जान। बुद्धि, विवेक।

चेतस्—(न०) [√चित्+असुन्] विवेक। चित्त, मन, आत्मा। तर्कण-शक्ति, विचार-शक्ति। **—जन्मन्** (**चेतोजन्मन्**), **—भव** (**चेतोभव**), **—भू** (**चेतोभू**)–(पुं०) प्रेम, अनुराग। कामदेव। **—विकार** (**चेतो-विकार**)–(पुं०) मन का विकार, क्रोध। मन की विकलता।

चेतोमत्—(वि०) [चेतस्+मतुप्] जीवित, सजीव।

चेदि—(पुं०) एक देश का नाम। उस देश के निवासी। वहाँ का राजा। **—पति, —भूभृत्, —राज्, —राज**–(पुं०) शिशुपाल का नाम। यह दमघोष राजा का पुत्र था और श्रीकृष्ण के हाथ से युधिष्ठिर के राज-सूययज्ञ में श्रीकृष्ण का अपमान करने के लिये मारा गया था।

चेय—(वि०) [√चि+यत्] ढेर करने योग्य, जमा करने योग्य।

√चेल्—भ्वा० पर० सक० चलना, जाना। अक० हिलना, काँपना। चेलति, चेलिष्यति, अचेलीत्।

चेल—(न०) [चिल्यते आच्छाद्यते, √चिल्+घञ्] कपड़ा। **—प्रक्षालक**–(पुं०) धोबी।

चेलिका—(स्त्री०) [चेल+कन्—टाप्, इत्व] पट्ट वस्त्र। अँगिया, चोली।

√चेष्ट्—भ्वा० आत्म० अक० सक० डोलना, घूमना। जीवन के चिह्न दिखाना, सजीव होने के लक्षण प्रदर्शित करना। उद्योग करना। पूर्ण करना। आचरण करना। चेष्टते, चेष्टिष्यते, अचेष्टिष्ट।

चेष्टक—(वि०) [√चेष्ट्+ण्वुल्] चेष्टा करने वाला। (पुं०) स्त्रीप्रसङ्ग का आसन या विधान विशेष, रतिबन्ध।

चेष्टन—(न०) [चेष्ट्+ल्युट्] उद्योग, चेष्टा, प्रयत्न।

चेष्टा—(स्त्री०) [√चेष्ट्+अङ् —टाप्] यत्न, उद्योग। हावभाव। आचरण। **—नाश**–(पुं०) मूर्च्छा। प्रलय। **—निरूपण**–(न०) किसी व्यक्ति विशेष के आचरणों पर दृष्टि रखना। **—बल**–(न०) ग्रह का स्थिति-विशेष में अधिक बलवान् हो जाना।

चेष्टित—(वि०) [√चेष्ट्+क्त]चेष्टा किया हुआ, प्रयत्न किया हुआ।

चैतन्य—(न०) [चेतन+ष्यञ्] चेतना, बोध। परमात्मा। प्रकृति।

चैत्तिक—(वि०) [चित्त+ठक्] बुद्धि सम्बन्धी, मानसिक।

चैत्य—(पुं०, न०) [चित्य+अण्] पत्थरों

का ढेर। स्मारक, कबर का पत्थर जिस पर मुर्दे के जीवनकाल आदि का परिचय रहता है। यज्ञमण्डप। मन्दिर, देवालय। धार्मिक अनुष्ठान करने का स्थान। बुद्ध या जैन मंदिर। गूलर का वृक्ष। पीपल। बेल का पेड़।—**तरु**,—**द्रुम**,—**वृक्ष**–(पुं०) किसी पवित्र स्थान पर जमा हुआ गूलर का पेड़।—**पाल**–(पुं०) किसी देवालय का पुजारी।—**मुख**–(पुं०) साधु का कमण्डलु।

चैत्र—(पुं०) [चित्रा+अण्] चैत मास। [√चि+ष्ट्रन्+अण्] बौद्ध भिक्षुक। (न०) मंदिर। मृत पुरुष का स्मारक।—**आवलि** (**चैत्रावलि**)–(स्त्री०) चैत्र की पूर्णमासी।—**सख**–(पुं०) कामदेव।

चैत्ररथ, चैत्ररथ्य—(न०) [चित्ररथेन गन्धर्वेण निर्वृत्तम्, चित्ररथ+अण्] [चैत्ररथ+ष्यञ्] (न०) कुबेर के बाग का नाम।

चैत्रि, चैत्रिक, चैत्रिन्—(पुं०) [चैत्री विद्यतेऽस्मिन्, चैत्री+इञ्] [चित्रानक्षत्रयुक्तपूर्णिमा विद्यतेऽस्मिन्, चैत्र+ठक्] [चित्रानक्षत्रयुक्तपूर्णिमा विद्यतेऽस्मिन्, चैत्र+इनि] चैत्र मास या चैत का महीना।

चैत्री—(स्त्री०) [चित्रा+अण्—ङीप्] चैत की पूर्णमासी।

चैद्य—(पुं० [चेदीनां जनपदानां राजा, चेदि+ष्यञ्] शिशुपाल।

चैल—(न०) [चेल+अण्] वस्त्र। कपड़े का टुकड़ा; 'चैलाजिनकुशोत्तर' भग०।—**धाव**–(पुं०) धोबी।

चोक्ष—(वि०) [√चक्ष्+घञ्, पृषो० साधुः] साफ सुथरा, शुद्ध। ईमानदार, सच्चा। चतुर, निपुण। प्रिय। मनोहर। तेज।

चोच—(न०) [कोचति अवरुणद्धि आवृणोति वा, √कुच्—पृषो० साधुः] छाल, बकला। चर्म, खाल। नारियल।

चोटी—(स्त्री०) [√चुट्+अण्—ङीप्] लहँगा, साया आदि।

चोड—(पुं०) [चोडति, संवृणोति शरीरम् √चुड्+अच्] दुपट्टा, उपरना। कुर्ती। चोलदेश।

चोदना—(स्त्री०) [√चुद्+णिच्+युच्] प्रेरणा। उत्साह। उपदेश।—**गुड** (पुं०) गेंद, कंदुक।

चोदित—(वि०) [√चुद्+णिच्+क्त] भेजा हुआ। उत्तेजित। जीवन डाला हुआ। युक्ति या कारण प्रदर्शित करने के लिये पेश किया हुआ।

चोद्य—(न०) [√चुद्+ण्यत्] एतराज या प्रश्न करना। पूर्वपक्ष। आश्चर्य। (त्रि०) प्रेरणा करने योग्य।

चोर, चौर—(पुं०) [√चुर्+णिच्—अच्] [चुरा चौर्यं शीलमस्य, चुरा+ण] चोरी करने वाला, छिपकर दूसरे की चीज हथिया लेने वाला, तस्कर। (न०) एक गंधद्रव्य। चोरपुष्पी नामक क्षुप।

चोरिका, चौरिका—[चोर+ठन्—टाप्] [चोर+वुञ्] चोरी। चोर का धर्म।

चोरित—(वि०) [√चुर्+णिच्+क्त] चुराया हुआ।

चोरितक—(न०) [चोरित+कन्] छोटी चोरी। चुराई हुई कोई भी वस्तु।

चोल—(पुं०) [√चुल्+घञ्] अँगिया, चोली। चोला। मजीठ। वल्कल। कवच। आधुनिक तंजौर प्रान्त प्राचीन काल में चोल देश के नाम से प्रसिद्ध था। इस देश के अधिवासी।

चोलक—(पुं०) [चोल√कै+क] कवच। [चोल+कन्] अँगिया, चोली। छाल।

चोलकिन्—(पुं०) [चोलक+इनि] कवचधारी सैनिक। बाँस का कल्ला। नारंगी का पेड़। कलाई।

चोलण्डुक, चोलोण्डुक—(पुं०) [चोलस्य अण्डुक इव, ष० त०, शक० पररूप] [चोलस्य

उण्डुक इव, ष० त०] पगड़ी, साफा । मुकुट ।

चोली—(स्त्री०) [चोल+ङीष्] चोली, अँगिया ।

चोष—(पुं०) [√चुष+घञ्] चोषण, चूसना । [√चि+ड, च—उष, कर्म स०] एक रोग जिसमें रोगी के बगल में बहुत तेज जलन होती है ।

चौड, चौल—(वि०) [चूडा+अण् डलयोर-भेदः] कलँगीदार । चूडा संबंधी । (न०) चूडाकरण संस्कार ।

चौर्य—(न०) [चोर+ष्यञ्] चोरी, चोर का काम । छलछद्म । छिपाव ।—**रत**-(न०) गुपचुप स्त्रीसम्भोग ।—**वृत्ति**-(स्त्री०) चोरी की आदत । चोरी से जीविका चलाना ।

च्यवन—(न०) [√च्यु+ल्युट्] गति, गतिशीलता । राहित्य, शून्यता, हीनता । मरण, नाश । बहाव । चुआव, टपकाव । (पुं०) एक ऋषि जिनके विषय में प्रसिद्ध है कि अश्विनीकुमारों ने उन्हें च्यवनप्राश खिला कर वृद्ध से जवान बना दिया ।

√च्यु—भ्वा० आत्म० अक० गिरना । टपकना, चूना । फिसलना । डूबना । बाहर निकलना; 'स्वतश्च्युतं वह्निमिवाद्भिरम्बुदः' र० ३.५८ । बह निकलना । अलग होना, रहित होना । च्यवते, च्योष्यते, अच्योष्ट । चु० पर० अक० हँसना । सक० सहना । च्यावयति ।

√च्युत्—भ्वा० पर० सक० बहना । टपकना फिसलना । च्योतति, च्योतिष्यति, अच्योतीत् ।

च्युत—(वि०) [√च्यु+क्त] चुआ, झड़ा हुआ, क्षरित । गिरा हुआ । फिसला हुआ । स्थानान्तरित । भटका हुआ, भूला हुआ ।—**अधिकार** (च्युताधिकार)-(वि०) बर्खास्त, नौकरी से छुड़ाया हुआ ।—**आत्मन्** (च्युतात्मन्)-(वि०) दुष्टात्मा ।

च्युति—(स्त्री०) [√च्यु+क्तिन्] पतन । स्खलन । टपकना । च्युत होना । नष्ट होना । योनि, भग । मलद्वार, गुदा ।

च्युप—(पुं०) [√च्यु+प, कित्त्व] मुख, चेहरा ।

च्यूत—(पुं०) [=च्युत, पृषो० उकारस्य दीर्घः] आम का पेड़ ।

च्योत—(न०) [√च्युत्+घञ्] चूना, टप-कना ।

च्यौत्न—(न०) [√च्यु+त्नण् (करणे)] बल, शक्ति । (वि०) [च्यु+त्नण् (कर्तरि)] दृढ़, मजबूत । जाने वाला । अवढज । जिसका पुण्य क्षीण हो गया हो ।

छ

छ—संस्कृत या नागरी वर्णमाला के स्पर्श नामक भेद के अन्तर्गत चवर्ग का दूसरा वर्ण । यह व्यंजन है । इसके उच्चारण का स्थान तालु है । इसके उच्चारण में अघोष और महाप्राण नामक प्रयत्न लगते हैं । (पुं०) [√छो+ड वा क] छेदन । भाग, अंश, टुकड़ा । (वि०) स्वच्छ । छेदक । चञ्चल ।

छग—(पुं०) [स्त्री०—**छगी**] [छम् यथादौ छेदनं गच्छति, छ√गम्+ड] बकरा ।

छगण—(पुं०) [छ√गण्+अप्] कंडा, सूखा गोबर ।

छगल—(पुं०) [स्त्री०—**छगली**] [√छो +कल, गुणागम, ह्रस्व]बकरा । (न०)नीला कपड़ा ।

छगलक—(पुं०) [छगल+कन्] बकरा ।

छटा—(स्त्री०) [√छो+अटन्] समूह, समुदाय । प्रकाश की किरणों का समूह । चमक, कान्ति, दीप्ति; 'सटाच्छटाभिन्नघनेन' शि० १.४७ । अविच्छिन्न पंक्ति । छवि । बिजली ।—**आभा** (छटाभा)-(पुं०) (स्त्री०) बिजली विद्युत् ।—**फल**-(पुं०) सुपाड़ी का वृक्ष ।

छत्र—(न०) [छादयति अनेन आतपा-दिकम् √छद्+णिच्+ष्ट्रन्, ह्रस्व] छाता,

छतरी ।—धर, धार–(पुं०) छाता तानकर (किसी के पीछे-पीछे) चलने वाला भृत्य । (पुं०) कुकुरमुत्ता ।—चक्र–(न०) ज्योतिष का एक चक्र जिससे शुभ-अशुभ फल जाने जा सकते हैं ।—धारण–(न०) छाता लेकर चलना । राजचिह्न छत्र (चँवर आदि) से भूषित होना ।—पति–(पुं०) सम्राट्, चक्रवर्ती । जम्बुद्वीप के एक प्राचीन राजा का नाम ।—भङ्ग–(पुं०) राज्यनाश । राजसिंहासन से च्युति । पारतन्त्र्य, परवशता । रजामंदी । वैधव्य ।

छत्रक—(पुं०) [छत्र√कै+क] मछरंग नाम की चिड़िया । ताल मखाने की जाति का एक वृक्ष । शिवमंदिर । (न०) [छत्र+कन्] छतरी । कुकुरमुत्ता । खुमी । शहद का छत्ता ।

छत्रा, छत्राक—(स्त्री०, पुं०) [√छद्+ष्ट्रन्] [छत्रा+कन्] कुकुरमुत्ता । धनिया । सोया ।

छत्रिक—(पुं०) [छत्र+ठन्] वह नौकर जो छाता तानकर चले ।

छत्रिन्—(वि०) [स्त्री०—**छत्रिणी**] [छत्र+इनि] छाता रखने वाला या छाता ले जाने वाला । (पुं०) नाई, हज्जाम ।

छत्वर—(पुं०) [√छद्+ष्वरच्] घर । कुञ्ज, लतामण्डप ।

√**छद्**—चु० उभ० सक० ढकना । फैलना । छिपाना । ग्रसना । छादयति—ते ।

छद, छदन—(पुं०, न०) [√छद्+अच्] [√छद्+ल्युट्] आवरण, ढकने वाली चीज । खाल । छाल । गिलाफ, खोल । पत्ता । पंख ।—पत्र–(पुं०) भोजपत्र । तेजपत्ता ।

छदि, छदिस्—(स्त्री०, न०) [√छद्+कि] [√छद्+इसुन्] गाड़ी की छत । घर की छत या छावनी ।

छद्मन्—(न०) [√छद्+मनिन्] कपटवेश । व्याज, बहाना । ठगी, धोखेबाजी । बेईमानी । छाजन ।—तापस–(पुं०) पाखण्डी, धर्म की ओट में शिकार खेलने वाला ।—वेशिन्–(वि०) जो वेष बदले हो ।

छद्मिका—(स्त्री०) [छद्मन्+इनि+कन्–टाप्] गुड़ूच, गिलोय । मजीठ ।

छद्मिन्—(वि०) [छद्मन्+इनि] कपटी, दगाबाज । कपटवेशधारी ।

छनच्छन्—(अव्य०) [अनु० प्रा०] बनावटी आवाज । छनाछन या छनछनाहट की आवाज ।

√**छन्द्**—चु० पर० सक० प्रसन्न करना, खुश करना । प्रवृत्त करना । ढकना । अक० प्रसन्न होना । छन्दयति—छन्दति ।

छन्द—(पुं०) [√छन्द्+घञ्] इच्छा, कामना, अभिलाषा । वश में करना, काबू में करना । अभिप्राय, इरादा । विष, जहर ।

छन्दस्—(न०) [√छन्द्+असुन्] कामना, अभिलाषा । स्वेच्छाचार । उद्देश्य । अभिप्राय । चालाकी । धोखा । वेद; 'प्रणवश्छन्दसामिव' र० १.११ । वृत्त, पद्य । छन्दःशास्त्र ।—कृत (छन्दस्कृत)–(न०) वेद का कोई सा भाग ।—ग (छन्दोग)– सामवेद गाने वाला ब्राह्मण, सामवेदी ।—भङ्ग (छन्दोभङ्ग)–(पुं०) छंद में वर्ण, मात्रा आदि के नियम का पूर्ण पालन न होना ।

छन्न—(वि०) [√छद्+क्त] ढका हुआ । छिपा हुआ । रहस्यमय ।

√**छम्**—भ्वा० पर० सक० खाना । छमति, छमिष्यति, अच्छमीत् ।

छमण्ड—(पुं०) [छम्+अण्डन्] मातृपितृहीन बालक ।

√**छर्द्**—चु० उभ० सक० वमन करना, कै करना । छर्दयति—ते ।

छर्द—(पुं०), **छर्दन**–(न०), **छर्दि, छर्दिका, छर्दिस्**–(स्त्री०) [√छर्द्+घञ्] [√छर्द्+ल्युट्] [√छर्द्+इन्] [छर्दि+कन्–टाप्] [√छर्द्+इसि] वमन, कै ।

छल—(पुं०, न०) [√छो+कलच्, पृषो० साधुः] अपने असली रूप को छिपाना, यथार्थ का गोपन। दूसरे को ठगने, धोखा देने वाली बात। व्याज, बहाना। कपट। शठता, धूर्तता। शत्रु पर युद्ध-नियम के विरुद्ध प्रहार करना। शास्त्रार्थ में प्रतिपक्षी के शब्दों या वाक्यों का उसके अभिप्राय से भिन्न अर्थ करना।

छलन—(न०), **छलना**—(स्त्री०) [√छल्+णिच्+ल्युट्] [√छल्+णिच्+युच्—टाप्] धोखा देना, ठगना।

छलिक—(न०) [छल+ठन्] नाटक या नृत्य का एक भेद।

छलिन्—(वि०) [छल+इनि] छल करने वाला, धोखेबाज।

छल्लि, छल्ली—(स्त्री०) [छदं छादनं लाति, छद्√ला+कि] [छल्लि+ङीष्] छाल, बकला। लता विशेष। सन्तान, औलाद।

छवि—(स्त्री०) [√छो+क्विन्, नि० साधुः] चमड़ी की रंगत। सौन्दर्य। कान्ति, दमक। चमड़ा, चर्म।

छाग—(पुं०) [√छो+गन्] [स्त्री०—छागी] बकरा। मेषराशि। (न०) बकरी का दूध। (वि०) बकरा सम्बन्धी।—**भोजन**—(पुं०) भेड़िया।—**मुख**—(पुं०) कार्त्तिकेय।—**रथ**—**वाहन**—(पुं०) अग्निदेव।

छागण—(पुं०) [छगण+अण्] कंडों की आग।

छागल—(वि०) [छगल+अण्] [स्त्री०—छागली] बकरा सम्बन्धी। (पुं०) बकरा।

छात—(वि०) [√छो+क्त] छिन्न, कटा हुआ। दुबला, लटा हुआ।

छात्र—(पुं०) [छत्रं गुरोर्दोषावरणं शीलमस्य, छत्र+ण] शिष्य, विद्यार्थी। (न०) एक तरह की मधुमक्खी, सरघा। उन मक्खी द्वारा संचित मधु।—**गण्ड**—(पुं०) वह विद्यार्थी जिसे श्लोक का पहला चरण भर याद हो, मंद-बुद्धि शिष्य।—**दर्शन**—(न०) एक दिन रखे हुए दूध का ताजा मक्खन।—**व्यंसक**—(पुं०) कुन्दजहेन तालिबइल्म, दुष्ट या मंदबुद्धि छात्र।

छाद—(न०) [√छद्+णिच्+घञ्] छप्पर। छत।

छादन—(न०) [√छद्+णिच्+ल्युट्] पर्दा; 'विनिर्मितं छादनमज्ञतायाः'। छिपाव। पत्ता। वस्त्र।

छाद्मिक—(वि०) [छद्मन्+ठञ्] छद्मवेशधारी, कपटी। (पुं०) ठग।

छान्दस—(वि०) [छन्दस्+अण्] वैदिक। वेदाधीत। पद्यमय। (पुं०) वेदज्ञ ब्राह्मण।

छाया—(स्त्री०) [√छो+य—टाप्] प्रकाश के अवरोध से उत्पन्न हलका अँधेरा, छाँव। प्रतिबिम्ब, अक्स। समानता, सादृश्य। भ्रम, धोखा। रंगों की गड़बड़ी। चमक। रंग। चेहरे की रंगत। सौंदर्य। रक्षा। पंक्ति। अंधकार। घूस, रिश्वत। दुर्गादेवी। सूर्यपत्नी का नाम।—**अङ्क** (छायाङ्क)—(पुं०) चन्द्रमा।—**गणित**—(न०) गणित की वह क्रिया जिससे छाया के सहारे ग्रहों की गति आदि जानी जा सकती है।—**ग्रह**—(पुं०) शीशा, दर्पण।—**तनय**, —**सुत**—(पुं०) शनिग्रह।—**तरु**—(पुं०) छायादार पेड़।—**दान**—(न०) ग्रहजनित अरिष्ट की शान्ति के लिये किया जाने वाला एक विशेष दान जिसमें काँसे की कटोरी में घी या तेल भर कर और उसमें अपनी छाया देखकर दक्षिणा सहित दान करते हैं।—**द्वितीय**—(वि०) अकेला।—**पथ**—(पुं०) अन्तरिक्ष, आकाशमण्डल।—**पुरुष**—(पुं०) हठयोग तंत्र के अनुसार आकाश में (साधना-विशेष से) दिखाई पड़ने वाली द्रष्टा की छायारूप आकृति।—**भृत्**—(पुं०) चन्द्रमा।—**मान**—(न०) छाया का माप।—

छत्र—(न०) छाता ।—**मुकुर**—(पुं०) चन्द्रमा ।—**यन्त्र**—(न०) धूपघड़ी ।

छायामय—(वि०) [छाया+मयट्] छाया-युक्त, सायादार ।

छिक्का—(स्त्री०) [छिक् इत्यव्यक्तं कायति छिक्√कै+क] छींक ।

छित्ति—(स्त्री०) [√छिद्+क्तिन्] छेदना, काटना ।

छित्वर—(वि०) [√छिद्+ष्वरप्, पृषो० दस्य तः] काटने वाला । छली, कपटी । शत्रु ।

√छिद्—रु० पर० सक० काटना । चीरना । तोड़ना । बाधा डालना । स्थानान्तरित करना, हटाना । नाश करना । शान्त करना । छिनत्ति—छिन्ते, छेत्स्यति—ते, अच्छिदत्—अच्छैत्सीत्—अच्छित्त ।

छिदक—(न०) [√छिद्+क्वुन्] इन्द्र का वज्र । हीरा ।

छिदा—(स्त्री०) [√छिद्+अङ्—टाप्] काटना, विभाजित करना ।

छिदि—(स्त्री०) [√छिद्+इन्] कुल्हाड़ी । इन्द्र का वज्र ।

छिदिर—(पुं०) [√छिद्+किरच्] कुल्हाड़ी । खड्ग । अग्नि । रस्सा ।

छिदुर—(वि०) [√छिद्+कुरच्] काटने-वाला । सहज में तोड़ा जाने वाला । टूटा हुआ; 'संलक्ष्यते न छिदुरोऽपि हारः' र० १६.६२ । (पुं०) बैरी । धूर्त ।

छिद्र—(वि०) [√छिद्+रक्] छिदा हुआ, छेददार । (न०) छेद, सुराख । अवकाश । गड्ढा । दोष, ऐब । दुर्बलताजनक, बाधक बात । दुर्बल पक्ष (शत्रु के छिद्र) 'छिद्रं निरूप्य सहसा प्रविशत्यशङ्कः' हि० १.८१ ।—**अनुजीविन्** (छिद्रानुजीविन्),—**अनुसन्धानिन्** (छिद्रानुसन्धानिन्),—**अनुसारिन्** (छिद्रानुसारिन्),—**अन्वेषिन्** (छिद्रान्वेषिन्)—(वि०) छिद्र या दोष ढूंढने वाला, निंदक ।—**अन्तर**—(छिद्रान्तर)—(पुं०) बेंत । नरकुल ।—**आत्मन्**—(छिद्रात्मन्)—(वि०) जो अपनी निर्बलता बतला कर दूसरों को अपने ऊपर आक्रमण करने का अवसर दे ।—**कर्ण**—(वि०) छिदे हुए कानों वाला ।—**दर्शन**—(वि०) दोषदर्शी, पराया दोष देखने वाला ।

छिद्रित—(वि०) [छिद्र+इतच्]छेदों वाला । सुराख किया हुआ । पास-पास छोटे-छोटे छिद्रों से युक्त ।

छिन्न—(वि०) [√छिद्+क्त] कटा हुआ । चिरा हुआ । अलगाया हुआ । नष्ट किया हुआ । स्थानान्तरित किया हुआ ।—**केश**—(वि०) मुण्डित, मूंड़ा हुआ ।—**द्रुम**—(पुं०) कटा हुआ पेड़ ।—**द्वैध**—(वि०) जिसकी दुविधा, संशय मिट गया हो ।—**नास,**—**नासिक**—(वि०) जिसकी नाक कट गई हो, नकटा ।—**भिन्न**—(वि०) कटा-फटा । नष्ट-भ्रष्ट । जो तितर-बितर हो गया हो ।—**मस्त,**—**मस्तक**—(वि०) सिर कटा हुआ ।—**मस्तका,**—**मस्ता**—(स्त्री०) दस महाविद्याओं के अंतर्गत एक देवी जो अपना सिर हथेली पर धरे गले से निकलती रक्तधारा को पीती हुई मानी जाती है ।—**मूल**—(वि०) जड़ से कटा हुआ ।—**रुहा**—(स्त्री०) गुडूची ।—**वेशिका**—(स्त्री०) पाठा ।—**श्वास**—(पुं०) एक प्रकार का दमे का रोग ।—**संशय**—(वि०) संशयहीन, सन्देहरहित ।

छुछुन्दर—(पुं०) [छुछुम् इत्यव्यक्तशब्दो दीर्घते निर्गच्छति अस्मात्, छुछुम्√दृ+अप्] छछूंदर जन्तु ।

√**छुट्**—तु० पर० सक० काटना । छुटति, छुटिष्यति, अच्छुटीत् ।

√**छुड्**—तु० पर० सक० छिपाना । छुडति, छुडिष्यति, अच्छुडीत् ।

√**छुप्**—तु० पर० सक० छूना । छुपति, छोप्स्यति, अच्छौप्सीत ।

छुप—(पुं०) [√छुप्+क] स्पर्श । झाड़ा । युद्ध, लड़ाई ।

√छुर्—तु० पर० सक० काटना । छुरति, छुरिष्यति, अछुरीत् ।

छुरण—(न०) [√छुर्+ल्युट्] लेप करना, पोतना; 'ज्योत्स्नाभस्मच्छुरणधवला' का. प्र. ।

छुरा—(स्त्री०) [√छुर्+क—टाप्] चूना, कलई, सफेदी ।

छुरिका—(स्त्री०) [√छुर्+क्वन्—टाप्, इत्व] छुरी । चाकू ।

छुरित—(वि०) [√छुर्+क्त] जड़ा हुआ । फैलाया हुआ । ढका हुआ । गड़बड़ किया हुआ, गोलमाल किया हुआ । मिश्रित; 'परस्परेणच्छुरितामलच्छवी' शि० १.२२ ।

छुरी, छुरिका, छूरी—(स्त्री०) [छुर+ङीष्] [छुरी+कन्—टाप्, ह्रस्व] [=छुरी, पृषो० दीर्घ] छोटा छूरा । चाकू ।

√छृ—रु० उभ० सक० चमकना । खेलना । छृणत्ति—छृन्ते, छर्दिष्यति—ते, —छर्त्स्यति—ते, अच्छृदत्—अच्छर्दीत्— अच्छर्दिष्ट । चु० पर० सक० जलाना । छर्दयति —छर्दति ।

छेक—(वि०) [√छो+डेकन्] पालतू, हिला हुआ । शहरुआ, नागरिक । धूर्त ।—**अनुप्रास** (**छेकानुप्रास**)—(पुं०) अनुप्रास अलंकार का वह भेद जिसमें एक या अधिक वर्णों की आवृत्ति एक ही बार होती है ।—**अपह्नुति** (**छेकापह्नुति**)—(स्त्री०) अपह्नुति अलंकार का एक भेद—दूसरे की अनुमिति का अयथार्थ उक्ति द्वारा खंडन ।—**उक्ति** (**छेकोक्ति**)—(स्त्री०) वह लोकोक्ति जो अर्थान्तर-गर्भित हो अर्थात् जिससे अन्य अर्थ की ध्वनि निकले ।

छेत्तव्य—(वि०) [√छिद्+तव्यत्] तोड़ने के लायक ।

छेद—(पुं०) [√छिद्+घञ्] काटना, काटकर गिराना, तोड़कर गिराना । स्थानान्तरकरण । नाश । अवसान, अन्त । खंड । गणित में भाजक । कटने का घाव । परिचायक चिह्न । अभाव । असफलता ।

छेदन—(न०) [√छिद्+ल्युट्] काटना, स्थानान्तरकरण । काटने, छाँटने का अस्त्र, औज़ार । कफ निकालने वाली दवा ।

छेदि—(वि०) [√छिद्+इन्] छेदनकर्ता । (पुं०) बढ़ई । वज्र ।

छेमण्ड—(पुं०) [√छम्+अण्डन्, एत्व] मातृपितृहीन बालक ।

छेलक—(पुं०) [√छो+डेलक] बकरा, छाग ।

छैदिक—(पुं०) [छेदम् अर्हति, छेद+ठक्] बेंत ।

√छो—दि० पर० सक० काटना । छ्यति, छास्यति, अच्छासीत् ।

छोटिका—(स्त्री०) [√छुट्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] चुटकी ।

छोरण—(न०) [√छुर्+ल्युट्] त्याग ।

√छ्युप्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । छ्युपते, छ्योपिष्यते, अछ्योपिष्ट ।

ज

ज—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का एक व्यञ्जन और चवर्ग का तीसरा वर्ण । यह स्पर्श वर्ण है । इसका बाह्य प्रयत्न संवार और नाद घोष है । यह अल्पप्राण माना जाता है । इसका उच्चारण-स्थान तालु है । जब "ज" समास के अन्त में आता है तब इसका अर्थ होता है—उससे या इससे उत्पन्न हुआ । जैसे पङ्क+ज=पङ्कज । अर्थात् कीचड़ से उत्पन्न । (पुं०) [√जन्+ड वा √जि+ड] पिता, जनक । उत्पत्ति, जन्म । ज़हर । पिशाच । विजयी । कान्ति, आभा, आब । विष्णु । मोक्ष । वेग ।—**कुट**—(पुं०) मलय पर्वत । कुत्ता । युग्म, जोड़ा । (न०) बैंगन का फल ।

√जक्ष्—अ० पर० सक० खाना । अक० हँसना । जक्षिति, जक्षिष्यति, अजक्षीत् ।

जक्षण—(न०), **जक्षि**-(स्त्री०) [√जक्ष्+ल्युट्] [√जक्ष्+इन्] खा डालना, निपटा डालना। व्यय करना। नष्ट करना।

जगत्—(वि०) [√गम्+क्विप्, नि० द्वित्व, तुगागम] चर, चलने वाला; 'सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च' वेद। (पुं०) हवा, पवन। (न०) संसार।—**अम्बिका** (**जगदम्बिका**)-(स्त्री०) दुर्गा।—**आत्मन्** (**जगदात्मन्**)-(पुं०) परमात्मा।—**आदिज** (**जगदादिज**)-(पुं०) शिव।—**आधार** (**जगदाधार**)-(पुं०) काल। पवन।—**आयु** (**जगदायु**),—**आयुस्** (**जगदायुस्**)-(पुं०) पवन।—**ईश** (**जगदीश**),—**पति**-(पुं०) परमात्मा।—**उद्धार** (**जगदुद्धार**)-(पुं०) संसार का मोक्ष।—**कर्तृ**, —**धातृ** (**जगद्धातृ**)-(पुं०) सृष्टिकर्त्ता।—**चक्षुस्** (**जगच्चक्षुस्**)-(पुं०) सूर्य।—**नाथ** (**जगन्नाथ**)-(पुं०) सृष्टि का स्वामी।—**निवास** (**जगन्निवास**)-(पुं०) परमात्मा। विष्णु। सांसारिक स्थिति।—**प्राण**, —**बल** (**जगद्बल**)-(पुं०) पवन।—**योनि** (**जगद्योनि**)-(पुं०) परमात्मा। विष्णु। शिव। ब्रह्मा। (स्त्री०) पृथिवी।—**वहा** (**जगद्वहा**)-(स्त्री०) पृथिवी।—**साक्षिन्**-(पुं०) परमात्मा। सूर्य।

जगती—(स्त्री०) [√गम्+अति, नि० साधुः] पृथिवी। मानवजाति, लोग। गौ। छन्द विशेष जिसके प्रत्येक पद में १२ अक्षर होते हैं।—**अधीश्वर** (**जगत्यधीश्वर**), —**ईश्वर** (**जगतीश्वर**)-(पुं०) राजा।—**रुह**-(पुं०) वृक्ष।

जगनु, जगनू—(पुं०) अग्नि। कीट। जानवर।

जगर—(पुं०) [√जागृ+अच्, पृषो० साधुः] कवच, जिरह।

जगल—(वि०) [√जन्+ड, जः जातः सन् √गलति, √गल्+अच्] धूर्त, चालबाज। (पुं०) शराब की सीठी। पीठी की शराब। मदन वृक्ष। (न०) कवच। गोबर।

जग्ध—(वि०) [√अद्+क्त, जग्ध् आदेश] खाया हुआ। (न०) भोजन।

जग्धि—(स्त्री०) [√अद्+क्तिन्, जग्ध् आदेश] सहभोजन। भोजन, भोज्य पदार्थ।

जग्मि—(पुं०) [√गम्+कि, द्वित्व] पवन।

जघन—(न०) [√हन्+अच्, द्वित्व] कटि के नीचे आगे का भाग, पेड़ू। कटि देश, नितम्ब। सेना का सबसे पिछला भाग।—**कूप**,—**कूपक**-(पुं०) चूतड़ के ऊपर का गड्ढा।—**गौरव**-(पुं०) नितम्बभार।—**चपला**-(स्त्री०) असती स्त्री। तेजी से नाचने वाली स्त्री। एक मात्रावृत्त।

जघन्य—(वि०) [जघन+यत्] सब से पीछे का, पिछला, अन्तिम। सब से गया बीता, निकृष्ट, नीच। नीच जाति का। (पुं०) शूद्र। (न०) लिंगेन्द्रिय।—**ज**-(पुं०) छोटा भाई। शूद्र।

जघ्नि—(पुं०) [√हन्+कि, द्वित्व] (वध करने का एक) अस्त्र। (वि०) मारने वाला। मार डालने वाला।

जघ्नु—(वि०) [√हन्+कु, द्वित्व] हनन करने वाला, घातक।

जघ्रि—(वि०) [√घ्रा+कि, द्वित्व] सूंघने वाला।

जङ्गम—(वि०) [√गम्+यङ्-लुक्+अच्] चर, जीवधारी, चलने-फिरने वाला। (न०) चलने-फिरने वाला पदार्थ।—**इतर** (**जङ्गमेतर**)-(वि०) अचल, स्थावर, जो चलफिर न सके।—**कुटी**-(स्त्री०) छाता।—**गुल्म**-(पुं०) पैदल सिपाहियों की सेना।

जङ्गल—(न०) [√गल्+यङ्-लुक्+अच्, नि० साधुः] वन। रेगिस्तान। एकान्त स्थान। उजाड़ स्थान, बंजर। मांस।

जङ्गाल—(पुं०) [=जङ्गल, पृषो० साधुः] खेत की मेंड़ ।

जङ्गुल—(न०) [√ गम्+यङ्—लुक्+उल] जहर, विष ।

जङ्घा—(स्त्री०) [जंघन्यते कुटिलं व्रजति, √हन्+यङ् —लुक्+अच् पृषो०, ततः टाप्] जाँघ, एड़ी से घुटनों तक का भाग । **—करिक**-[√कृ+अप्, करः, जंघायाः करः, ष० त०, जंघाकर+ठन्—इक] (पुं०) हरकारा, डाकिया । **—त्राण**-(न०) टाँगों के लिये कवच ।

जङ्घाल—(वि०) [जंघा+लच्] तेज दौड़ने वाला । (पुं०) हरकारा । हिरन, बारहसिंघा ।

जङ्घिल—(वि०) [जंघा+इलच्] तेज दौड़ने वाला । तेज, फुर्तीला ।

√जज्—भ्वा० पर० सक० लड़ाई करना । जजति, जजिष्यति, अजाजीत्—अजजीत् ।

√जञ्ज्—भ्वा० पर० सक० युद्ध करना । जञ्जति, जञ्जिष्यति, अजञ्जीत् ।

जञ्जपूक—(वि०) [√ जप्+यङ् + ऊक] मन में मन्त्र जपने वाला । (पुं०) तपस्वी ।

√जट्—भ्वा० पर० अक० जुड़ना, इकट्ठा होना (जैसे बालों का) । जटति, जटिष्यति, अजटीत्—अजाटीत् ।

जटा—(स्त्री०) [√जट्+अच् —टाप्] उलझे और आपस में चिपके हुए लंबे बाल; 'अंसव्यापि शकुन्तनीडनिचितं बिभ्रज्जटामण्डलम्' श० ७.११ । जटामांसी । जड़ या मूल । शाखा । शतावरी । पेड़ के प्रवाल । वेदपाठ की एक प्रणाली (इसमें 'नमः रुद्रेभ्यः' का पाठ इस तरह किया जायगा —'नमो रुद्रेभ्यो, रुद्रेभ्यो नमो नमो रुद्रेभ्यः') । **—चीर, —टङ्क, —टीर, —धर**-(पुं०) शिव जी की उपाधियाँ । **—जूट**-(पुं०) जटाओं का समुदाय । शिवजी के सिर के उठे हुए बाल । **—ज्वाल**-(पुं०) दीपक । **—धर**-(वि०) जटाजूट धारण करने वाला ।

जटायु, जटायुस्—(पुं०) [जटा√या+कु] [जटं संहतम् आयुः यस्य, ब० स०] रामायण में वर्णित बड़ी आयु वाला एक गिद्ध जिसने सीता जी के लिये रावण से युद्ध कर अपने प्राण गँवाये थे । गुग्गल ।

जटाल—(वि०) [जटा+लच्] जटाजूटधारी । एकत्रीभूत । (पुं०) गूलर का वृक्ष ।

जटि, जटी—(स्त्री०) [√जट्+इन्] [जटि —ङीष्] जटा । समूह । बरगद । पाकड़ । जटामासी ।

जटिन्—(वि०) [जटा+इनि] [स्त्री०—जटिनी] जटाधारी । (पुं०) शिव जी का नाम । प्लक्ष वृक्ष, पाकड़ ।

जटिल—(वि०) [जटा+इलच्] जटाधारी । उलझन डालने वाला, पेचीदा । अगम्य । (पुं०) ब्रह्मचारी । शिव । सिंह । बकरा ।

जठर—(वि०) [√जन्+अर, ठ आदेश] कड़ा, कठिन । बद्ध । बूढ़ा । (पुं०, न०) पेट, मेदा, कुक्षि । गर्भाशय । किसी भी वस्तु का अंदरूनी भाग । **—अग्नि** (**जठराग्नि**)-(पुं०) पेट के भीतर खाये हुए पदार्थों को पचाने वाली आग । पाकस्थली का पाचक-रस । **—आमय** (**जठरामय**)-(पुं०) उदर सम्बन्धी रोग । जलोदर रोग । **—ज्वाला, —व्यथा**-(स्त्री०) पेट की पीड़ा, पेट की व्यथा । वायुगोले का दर्द । **—यंत्रणा, —यातना**-(स्त्री०) गर्भ में रहते समय का कष्ट ।

जड—(वि०) [जलति घनीभवति, √जल्+अच्, लस्य डः] ठंडा, शीतल; 'परामृशन् हर्षजडेन पाणिना' र० ३.६८ । निर्जीव । तेजस्विताहीन । गतिहीन । लकवा मारा हुआ । मूढ़, बुद्धिहीन । विवेकहीन, अच्छे-बुरे ज्ञान से शून्य । मूक, अकड़ा हुआ । ठिठुरा हुआ । गूँगा । वेदाध्ययन करने में असमर्थ । (न०) जल । सीसा । **—क्रिय**-(वि०) सुस्त, दीर्घ-सूत्री । **—भरत**-(पुं०) भागवत में वर्णित

एक योगी जो संसार की आसक्ति से बचने के लिये जड़वत् व्यवहार करते थे ।

जडता—(स्त्री०), **जडत्व**-(न०) [जड+तल्] [जड+त्व] सुस्ती । अज्ञानता । मूर्खता ।

जडिमन्—(पुं०) [जड+इमनिच्] शीतलता । विवेकहीनता । सुस्ती, काहिली । ठिठुरन ।

जतु—(न०) [जायते वृक्षादिभ्यः √जन्+उ, त आदेश] गोंद । लाक्षा, लाख । शिलाजीत ।—**अश्मक** (**जत्वश्मक**)-(न०) शिलाजीत ।—**कारी**-(स्त्री०) पपड़ी नामक लता ।—**पुत्रक**-(पुं०) लाख की बनी पुतली । शतरंज का मुहरा । चौरस की गोटी ।—**रस**-(पुं०) लाख । महावर ।

जतुक—(न०) [जतु√कै+क] हींग । [जतु+कन्] लाख ।

जतुका—(न०) [जतुक+टाप्] लाख । चमगादड़ । पर्पटी लता ।

जतूकी, जतूका—(स्त्री०) [जतुक+ङीष्] [=जतुका, नि० दीर्घ] चमगादड़ ।

जत्रु—(पुं०) [√जन्+रु, त आदेश] कंधे के नीचे की कमानी जैसी हड्डी, हँसली ।

√**जन्**—दि० आत्म० अक० उत्पन्न होना, पैदा होना । उदय होना, निकलना । होना, घटित होना । जायते, जनिष्यते, अजनिष्ट ।

जन—(पुं०) [√जन्+अच्] जीवधारी, प्राणधारी । व्यक्ति; 'अयं जनः प्रष्टुमनास्तपोधने' कु० ५.४० । पुरुष या स्त्री । (समूहार्थ में) मनुष्य-गण, लोग । जाति । महर्लोक के आगे का लोक ।—**अतिग** (**जनातिग**)-(वि०) असाधारण, असामान्य, अलौकिक ।—**अधिप** (**जनाधिप**),—**अधिनाथ** (**जनाधिनाथ**)-(पुं०) राजा ।—**अन्त** (**जनान्त**)-(पुं०) ऐसा स्थान जहाँ बस्ती न हो । अञ्चल, प्रदेश । यम की उपाधि ।—**अन्तिक** (**जनान्तिक**)-(न०) कानाफूसी, फुसफुस ।—**अर्दन** (**जनार्दन**)-(पुं०) विष्णु या कृष्ण ।—**अशन** (**जनाशन**)-(पुं०) भेड़िया ।—**आचार** (**जनाचार**) (पुं०) रस्म, रिवाज ।—**आश्रम** (**जनाश्रम**)-(पुं०) सराय, धर्मशाला, उतारा ।—**आश्रय** (**जनाश्रय**)-(पुं०) थोड़े समय के लिये निर्मित वासस्थान । मण्डप । शामियाना । धर्मशाला ।—**इन्द्र** (**जनेन्द्र**),—**ईश** (**जनेश**),—**ईश्वर** (**जनेश्वर**)-(पुं०) राजा ।—**इष्ट** (**जनेष्ट**)-(वि०) लोगों द्वारा वाञ्छित या पसन्द । (पुं०) एक प्रकार की चमेली ।—**उदाहरण** (**जनोदाहरण**)-(न०) महिमा । कीर्ति ।—**ओघ** (**जनौघ**)-(पुं०) मनुष्यों का जमाव या समूह ।—**कारिन्**-(पुं०) लाख ।—**चक्षुस्**-(न०) लोगों की आँख । सूर्य ।—**चर्चा**-(स्त्री०) लोकवाद, वह बात जो सर्वसाधारण में फैल गई हो ।—**जागरण**-(न०) जनसाधारण, समस्त जनता में अपने अधिकार, हिताहित का ज्ञान होना ।—**त्रा**-(स्त्री०) छतरी, छाता ।—**देव**-(पुं०) राजा ।—**पद**-(पुं०) देश, राज्य, 'जनपदे न गदः पदमादधौ' र० ९.४ । राज्य-विशेष का ग्राम-भाग । लोक, प्रजा ।—०**कल्याणी**-(स्त्री०) वेश्या ।—**पदिन्**-(पुं०) किसी देश या समाज का शासक ।—**प्रवाद**-(पुं०) किंवदन्ती, अफवाह । कलङ्क, अपवाद ।—**प्रिय**-(वि०) लोकप्रिय, सब का प्यारा । (पुं०) शिव । गोक्षुम । नागर वृक्ष । सहिजन का पेड़ । (पुं०, न०) धनिया ।—**मरक**-(पुं०) महामारी ।—**मर्यादा**-(स्त्री०) प्रचलित पद्धति ।—**रञ्जन**-(वि०) लोक को सुख, आनन्द देने वाला । सार्वजनिक अनुग्रह प्राप्त करने वाला ।—**रव**-(पुं०) किंवदन्ती, अफवाह । अपवाद, कलङ्क ।—**लोक**-(पुं०) महर्लोक के ऊपर का लोक ।—**वाद** (**जनवाद** भी)-(पुं०) दे० 'जनरव' ।—**व्यवहार**-(पुं०) प्रचलित रीति, लोकाचार ।—**श्रुत**-(वि०)

सुप्रसिद्ध ।—**श्रुति**–(स्त्री०) अफवाह, किंवदन्ती ।—**संबाध**–(वि०) सघन बसी हुई (बस्ती) ।—**स्थान**–(न०) दण्डकवन, दण्डकारण्य जहाँ खर और दूषण की चौकी थी ।—**हरण** (पुं०) एक दंडक वृत्त ।

जनक—(वि०) [√जन्+णिच्+ण्वुल्] [स्त्री०—**जनिका**] पैदा करने वाला, उत्पन्न करने वाला । कारणीभूत । (पुं०) पिता । विदेह या मिथिला के एक प्रसिद्ध राजा का नाम जो सीता जी के पिता थे ।—**आत्मजा** (जनकात्मजा),—**तनया**,— **नन्दिनी**,—**सुता**–(स्त्री०) सीता जी ।

जनङ्गम—(पुं०) [जनेभ्यो गच्छति बहिः, जन√गम्+खच्, मुमागम] चाण्डाल ।

जनता—(स्त्री०) [जन+तल्] उत्पत्ति । मानवजाति । जन-समूह ।

जनन—(वि०) [√जन्+णिच्+ल्युट्] उत्पादक । (पुं०) पिता । परमेश्वर । मंत्र के दस संस्कार में से पहला (तंत्र) । (न०) [√जन्+ल्युट्] उत्पत्ति, जन्म; 'यदैव पूर्वे जनने शरीर सा दक्षरोषात्सुदती ससर्ज' कु० १.५३ । सृष्टि । प्रादुर्भाव । जीवन । वंश, कुल ।

जननि—(स्त्री०) [√जन्+अनि] माता । जन्म, उत्पत्ति ।

जननी—(स्त्री०) [जननि+ङीष्] माता । दया । चमगादड़ । लाख । जूही । मजीठ । कुटकी । जटामासी । पपड़ी ।

जनमेजय—(पुं०) [जनान् शत्रुजनान् एजयति प्रतापैः कम्पयति, जन√एज्+णिच्+खश्] चन्द्रवंशी एक प्रसिद्ध राजा । यह महाराज परीक्षित् का पुत्र था और अपने पिता को डसने वाले तक्षक से बदला लेने के लिये इसने सर्पयज्ञ किया था । पीछे आस्तिक ऋषि के समझाने पर सर्पयज्ञ बंद किया गया था ।

जनयितृ—(वि०) [√जन्+णिच्+तृच्] [स्त्री०—**जनयित्री**] उत्पादक, सृष्टिकर्त्ता । (पुं०) पिता ।

जनयित्री—(स्त्री०) [जनयितृ—ङीप्] माता ।

जनयिष्णु—(वि०) [√जन्+णिच्+इष्णुच्] उत्पन्न करने वाला ।

जनस्—(न०) [√जन्+णिच्+असुन्] जनलोक ।

जनि, जनिका, जनी—[√जन्+इन्] [जनि+कन्—टाप् तथा √जन्+णिच्—ण्वुल्—टाप्, इत्व] [जनि+ङीष्] उत्पत्ति, सृष्टि, पैदावार । स्त्री । माता । भार्या । पुत्र-वधू ।

जनित—(वि०) [√जन्+णिच्+क्त] उत्पन्न किया हुआ, पैदा किया हुआ । [√जन्+क्त] उत्पन्न, जनमा हुआ ।

जनितृ—(पुं०) [√जन्+णिच्+तृच्, नि० णिलोप]पिता । (वि०) [√जन्+तृच्] जो जनमता हो ।

जनित्र—(न०) [जनि+त्रल्] जन्म-स्थान । स्रोत ।

जनित्री—(स्त्री०) [जनितृ+ङीप्] माता ।

जनु, जनू—(स्त्री०) [√जन्+उ] [जनु—ऊङ] उत्पत्ति, पैदावार, पैदाइश ।

जनुस्—(न०) [√जन्+उसि] उत्पत्ति, जन्म । सृष्टि । जीवन, अस्तित्व ।—**अन्ध** (जनुरन्ध)–(पुं०) [अलुक् स०] जन्मान्ध, पैदायशी अंधा ।

जन्तु—(पुं०) [√जन्+तुन्] प्राणी, जीव । पशु । कीड़ा-मकोड़ा । जीवात्मा ।—**कम्बु**–(पुं०) घोंघा ।—**घ्न**–(पुं०) [जन्तु√हन्+टक्] बिजौरा नीबू । (न०) वायविडंग । हींग ।—**घ्नी**–(स्त्री०) [जन्तुघ्न+ङीप्] वायविडंग ।—**फल**–(पुं०) गूलर का वृक्ष ।

जन्तुका—(स्त्री०) [जन्तु√कै+क—टाप्] लाख । पपड़ी नामक लता ।

जन्तुमती—(स्त्री०) [जन्तु+मतुप्—ङीप्] पृथिवी ।

जन्म—(न०) [√जन्+मन्] उत्पत्ति ।

जन्मन्—(न०) [√जन्+मनिन्] जन्म, उत्पत्ति, पैदाइश; 'ता जन्मने शैलवधूम्प्रपेदे' कु० १.२१ । निकास, उद्गम, प्रादुर्भाव । सृष्टि । जीवन, अस्तित्व । जन्मस्थान ।—**अधिप** (**जन्माधिप**)–(पुं०) शिव । जन्म-राशि का स्वामी । जन्मलग्न का स्वामी ।—**अन्तर** (**जन्मान्तर**)–(न०) दूसरा जन्म । पिछला जन्म । अगला जन्म । परलोक ।—**अन्तरीय** (**जन्मान्तरीय**)–(वि०) दूसरे जन्म का । जन्मान्तरकृत ।—**अन्ध** (**जन्मान्ध**)–(वि०) जन्म से अंधा ।—**अष्टमी** (**जन्माष्टमी**)–(स्त्री०) भाद्रकृष्णा अष्टमी, जिस दिन श्रीकृष्ण भगवान् का जन्म हुआ था ।—**कील**–(पुं०) विष्णु ।—**कुण्डली**–(स्त्री०) एक चक्र जिसमें जन्म-समय के ग्रहों की स्थिति का उल्लेख किया जाता है ।—**कृत्**–(पुं०) पिता ।—**क्षेत्र**–(न०) उत्पत्तिस्थान ।—**तिथि**–(पुं०, स्त्री०), —**दिन**–(न०), —**दिवस**–(पुं०) किसी के जन्म या पैदाइश का दिन, जन्मतिथि । बरसगांठ ।—**द**–(पुं०) पिता ।—**नक्षत्र,**—**भ**–(न०) वह नक्षत्र जो जन्म के समय हो ।—**नामन्**–(न०) जन्म होने के १२ वें दिवस रखा गया नाम जो राशि के अनुसार आद्य-अक्षर-संयुक्त होता है ।—**पत्र**–(न०),—**पत्रिका**–(स्त्री०) वह पत्र या कागज जिसमें किसी के जन्मकाल के ग्रहनक्षत्रों की स्थिति, उनकी दशा, अन्तर्दशा और उनके शुभाशुभ फल बताये जाते हैं, जायचा ।—**प्रतिष्ठा**–(स्त्री०) जन्मस्थान । माता ।—**भाज्**–(पुं०) प्राणी, जीवधारी; 'मोदन्ताम् जन्मभाजः सततं' मु० १०.६० ।—**भाषा**–(स्त्री०) मातृभाषा ।—**भूमि**–(स्त्री०) जन्मस्थान ।—**योग**–(पुं०) जन्म-कुण्डली ।—**रोगिन्**–(वि०) पैदाइशी बीमार ।—**लग्न**–(न०) वह लग्न जो जन्म के समय हो ।—**वर्त्मन्**–(न०) भग, योनि ।—**शोधन**–(न०) जन्म होने पर, तत्सम्बन्धी कर्तव्यों का यथाविधि पालन ।—**साफल्य**–(न०) जीवन के उद्देश्यों की सिद्धि ।—**स्थान**–(न०) जन्मभूमि । गर्भाशय ।

जन्मिन्—(पुं०) [जन्मन्+इनि] प्राणी, जीवधारी ।

जन्य—(वि०) [√जन्+ण्यत् वा √जन्+णिच्+यत्] उत्पन्न हुआ, पैदा हुआ (समासान्त में इसका अर्थ होता है) । किसी कुल या वंश का अथवा किसी कुल या वंश सम्बन्धी । (अमुक से) उत्पन्न । गँवारू, ग्रामीण । राष्ट्रीय । (पुं०) पिता । मित्र । वर (दूल्हा) का नातेदार । बराती । साधारण जन । किंवदन्ती, अफवाह । उत्पत्ति, सृष्टि । सृष्टि की हुई वस्तु । कर्म (क्रिया का फल) । शरीर । जन्म के समय होने वाला अपशकुन । महादेव । पुत्र । जामाता । (न०) हाट । युद्ध, लड़ाई; 'तत्र जन्यं रघोर्घोरं पर्वतीयैर्गणैरभूत्' र० ४.७७ । भर्त्सना, फटकार ।

जन्या—(स्त्री०) [जन्य+टाप्] माता की सखी । वधू की सहेली । हर्ष, आह्लाद । स्नेह, प्रीति ।

जन्यु—(पुं०) [√जन्+युच्, बा० न अनादेशः] उत्पत्ति । प्राणी, जीवधारी । अग्नि । सृष्टिकर्ता या ब्रह्मा ।

√जप्—भ्वा० पर० सक० मन ही मन किसी (मंत्र को) बार-बार कहना, जप करना । जपति, जपिष्यति, अजपीत्‌–अजापीत् ।

जप—(पुं०) [√जप्+अच्] किसी मंत्र, स्तोत्र, ईश्वर के नाम आदि को धीमे स्वर से बार-बार दुहराना । किसी शब्द, नाम आदि को बार-बार मुँह से कहना ।—**परायण**–(वि०) जप में आसक्त, जपनिरत ।—**माला**–(स्त्री०) माला जिस पर जप किया जाय ।

जपा—(स्त्री०) [√जप्+अच्–टाप्] अड़हुल ।

जप्य—(न०, पु०)[√जप्+यत्] मंत्र जो जपा जाय । (वि०) जपने योग्य ।

√**जम्**—भ्वा० पर० सक० खाना । जमति, जमिष्यति, अजमीत् ।

जमदग्नि—(पु०) भृगुवंशीय एक ऋषि जो परशुराम के पिता थे । इनके पिता का नाम ऋचीक और माता का नाम सत्यवती था । जमदग्नि बड़े अध्ययनशील थे । कहा जाता है कि इन्होंने वेदाध्ययन भली भाँति किया था । इनकी पत्नी का नाम रेणुका था, जिसके गर्भ से इनके पाँच पुत्र हुए थे ।

जम्पती—(पु०) [द्विवचन] [जाया च पतिश्च, द्व० स०]पति-पत्नी, दम्पती या जायापती ।

जम्बाल—(पु०) [√जम्भ्+घञ्, नि० भस्य ब: जम्ब—आ√ला+क] कीचड़ । काई । सेवार । केवड़ा ।

जम्बालिनी—(स्त्री०) [जम्बाल+इनि—ङीप्] नदी ।

जम्बीर—(न०) [√जम्भ्+ईरन्, ब आदेश] जमीरी का फल । (पु०) जमीरी का वृक्ष । मरुवक वृक्ष । वनतुलसी ।

जम्बु, जम्बू—(स्त्री०) [√जम्+कु, पृषो० बुगागम] [जम्बु+ऊङ] जामुन का फल और जामुन का पेड़ ।—**खण्ड,—द्वीप**—(पु०) सात द्वीपों में से एक, जो मेरु पर्वत को घेरे हुए है ।—**प्रस्थ**—(पु०) एक नगर । यह कश्मीर का वर्तमान जम्मू शहर है ।—**ल**—(पु०) जामुन । केवड़ा । कर्णपाली नामक रोग ।—**वनज**—(न०) सफेद अड़हुल ।

जम्बुक, जम्बूक—(पु०) [जम्बु (म्बू) √कै+क] शृगाल, गीदड़ । नीच मनुष्य । केवड़ा । वरुण । [जम्बु (म्बू) +कन्] जामुन ।

√**जम्भ्**—भ्वा० आत्म० अक० जमुहाई लेना, उबासी लेना । जम्भते, जम्भिष्यते, अजम्भिष्ट । चु० पर० सक० नाश करना । जम्भयति—जम्भति ।

जम्भ—(पु०) [√जम्भ्+घञ्] दाँत । जबड़ा । भक्षण । कुतरना, काटकर टुकड़े-टुकड़े कर डालना । भाग, अंश । तरकस, तूणीर । ठोढ़ी । जमुहाई । नींबू या जमीरी का पेड़ । [√जम्भ्+अच्] महिषासुर का बाप जो इंद्र के हाथों मारा गया ।—**अराति** (**जम्भाराति**),—**द्विष्**,—**भेदिन्**,—**रिपु**—(पु०) इन्द्र ।—**अरि** (**जम्भारि**)—(पु०) आग । इन्द्र का वज्र । इन्द्र ।

जम्भका, जम्भा, जम्भिका—(स्त्री०) [जम्भ+कन्—टाप्] [√जम्भ्+णिच्+अच्—टाप्] [जम्भा+कन्—टाप्, इत्व] जमुहाई, उबासी ।

जम्भन—(न०) [√जम्भ्+ल्युट्] जम्हाना । भक्षण । मैथुन ।

जम्भर, जम्भीर—(पु०) [जम्भं भक्षणरुचिं राति ददाति, जम्भ√रा+क] [√जम्भ्+ईरन्] नींबू या जमीरी का वृक्ष ।

जय—(पु०) [√जि+अच्] विजय, जीत (युद्ध या जुए या मुकद्दमे में) । संयम, निग्रह । सूर्य । इन्द्रपुत्र जयन्त । युधिष्ठिर । विष्णु के द्वारपालों में से एक । अर्जुन की उपाधि । पताका विशेष । मार्ग । अग्निमंथ वृक्ष । साठ संवत्सरों में से एक । लाभ ।—**आवह** (**जयावह**)—(वि०) विजयदायी, विजय देने वाला ।—**उद्धुर** (**जयोद्धुर**)—(वि०) विजय-प्राप्ति के आनन्द में नृत्य करने वाला ।—**कोलाहल**—(पु०) जयजयकार । पासों का खेल-विशेष ।—**घोष**—(पु०),—**घोषण**—(न०)—**घोषणा**—(स्त्री०) विजय का ढिंढोरा ।—**ढक्का**—(स्त्री०) विजयसूचक ढोल का शब्द ।—**देव**—(पु०) गीतगोविंद के रचयिता प्रसिद्ध बंगीय कवि जो महाराज लक्ष्मणसेन के सभापंडित थे ।—**ध्वज**—(पु०) विजय-पताका । अवंतिराज कार्तवीर्यार्जुन का पुत्र ।—**पत्र**—(न०) पराजित राजा आदि का वह लेख जिसमें वह अपनी पराजय स्वीकार करे ।

मुकदमे में जीतने वाले पक्ष को मिलने वाला जयसूचक पत्र, डिगरी । अश्वमेध के घोड़े के माथे पर बंधा हुआ विजय-पत्र ।**—पाल**-(पुं०) जमालगोटा । राजा । ब्रह्मा ।**—पुत्रक**-(पुं०) एक प्रकार का पासा ।**—मङ्गल**-(पुं०) शाही हाथी । ज्वर की दवा ।**—वाहिनी**-(स्त्री०) शची देवी की उपाधि ।**—शब्द**-(पुं०) जयजयकार । जय ।**—श्री**-(स्त्री०) विजय की अधिष्ठात्री देवी । विजय । एक रागिनी ।**—स्तम्भ**-(पुं०) विजय का स्मारक स्वरूप स्तम्भ; 'निचखान जयस्तम्भान् गङ्गास्रोतोऽन्तरेषु सः' र० ४.३६ ।

जयद्रथ—(पुं०)[जयत् रथो यस्य, ब० स०] दुर्योधन का बहनोई जो सिन्धु देश का राजा था । यह दुःशला का पति था । अर्जुन के हाथ से यह महाभारत के युद्ध में मारा गया था ।

जयन—(न०) [√जि+ल्युट्] जीत, विजय । घुड़सवारों तथा हाथीसवारों आदि का कवच ।**—युज्**-(वि०) विजयी । बहुमूल्य साज-सामान से सजा हुआ घोड़ा आदि ।

जयन्त—(पुं०) [√जि+झच्—अन्तादेश] इन्द्रपुत्र; 'पौलोमीसम्भवेनेव जयन्तेन पुरन्दरः' विक्र० ५.४ । शिव । चन्द्रमा ।

जयन्ती—(स्त्री०) [√जि+शतृ—ङीप्] पताका, ध्वजा । इन्द्रपुत्री । दुर्गा का नाम । भाद्र-कृष्ण अष्टमी को आधी रात को रोहिणी नक्षत्र होने से पड़ने वाला एक योग (कृष्ण का जन्म इसी योग में हुआ था) ।

जया—(स्त्री०) [जय+टाप्] दुर्गा की एक सहचरी । पताका । हरी दूब । शमी । जैत । हड़ । भाँग । अड़हुल का फूल । दोनों पक्षों की तृतीया, अष्टमी और त्रयोदशी । एक प्राचीन बाजा ।

जयिन्—(वि०) [जेतुं शीलमस्य, √जि+इनि] जीतने वाला, जयशील । मनोहर ।

जय्य—(वि०) [√जि+यत् नि०] जीतने योग्य, जो जीता जा सके ।

जरठ—(वि०) [√जॄ+अठच्] सख्त, कड़ा । बूढ़ा । जर्जरित । पूरा बढ़ा हुआ । पक्का, पका हुआ । निष्ठुर, नृशंस । (पुं०) पाण्डु राजा का नाम ।

जरण—(वि०) [√जॄ+णिच्+ल्यु] जीर्ण, पुराना । (न०) बुढ़ापा । जीरा । स्याह जीरा । हींग । कसौंजा । काला नमक ।

जरत्—(वि०) [√जॄ+अतृन्] बूढ़ा । जीर्ण । (पुं०) [√जॄ+शतृ] बूढ़ा आदमी ।**—कारु**-(पुं०)एक महर्षि का नाम जिसने वासुकि की बहिन के साथ शादी की थी ।**—गव** (**जरद्गव**)-(पुं०) बूढ़ा बैल; 'जरद्गववहनः सर्वस्तथापि परमेश्वरः' पं० २.१५६ ।

जरती—(स्त्री०)[जरत्+ङीप्] बूढ़ी स्त्री, बुढ़िया ।

जरन्त—(पुं०) [√जॄ+झच्, अन्तादेश] बूढ़ा आदमी । भैंसा ।

जरा—(स्त्री०) [√जॄ+अङ—टाप्] बुढ़ापा । निर्बलता । बड़ाई । पाचनशक्ति । एक राक्षसी का नाम जिसने जरासंध के शरीर के दो टुकड़ों को जोड़ा था ।**—अवस्था** (**जरावस्था**)-(स्त्री०) वार्धक्य, वृद्धता ।**—जीर्ण** (वि०) बुढ़ापे से जिसके अंग और इंद्रियाँ शिथिल हो गई हों, जरा से जर्जर ।**—सन्ध**[जरया तदाख्यया प्रसिद्धया राक्षस्या कृता सन्धा देहसंयोजनम् यस्य, ब० स०] (पुं०) यह बृहद्रथ का पुत्र था और मगध देश का राजा था । इसकी बेटी कंस को ब्याही थी । जब उसने सुना कि श्रीकृष्ण ने इसके दामाद को मार डाला है तब इसने १८ बार मथुरा पर चढ़ाई की । इसकी चढ़ाइयों से तंग आकर यादवों को मथुरा त्यागनी पड़ी और वे मथुरा से सुदूर, समुद्रस्थित, द्वारकापुरी में जा बसे थे । अन्त में महाराज युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में श्रीकृष्णचन्द्र जी की अभिसन्धि से भीम ने इसका वध किया था ।

जरायणि—(पुं०) [जरया राक्षस्या अपत्यम्, जरा+फिञ्] जरासन्ध का नाम।

जरायु—(न०) [जराम् एति, जरा√इ+ञुण्] केंचुली। गर्भाशय की ऊपर की झिल्ली। गर्भाशय। भग।—**ज**-(वि०) वह प्राणी जो झेंड़ी में लिपटा हुआ पैदा हो या जिसका जन्म गर्भाशय में हो, पिंडज। यथा मनुष्य, मृग आदि।

जरित्—(वि०) [जरा+इतच्] जरायुक्त, बूढ़ा।

जरिन्—(वि०) [जरा+इनि] [स्त्री०—**जरिणी**] बूढ़ा, अधिक उम्र का।

जरूथ—(न०) [√जृ+ऊथन्] मांस। (वि०) कटुभाषी।

√जर्ज्—भ्वा० पर० सक० झिड़कना। मारना, ताड़ना करना। जर्जति, जर्जिष्यति, अजर्जीत्। तु० पर० सक० निंदा करना। फटकारना। जर्जति, जर्जिष्यति, अजर्जीत्।

जर्जर—(वि०) [√जर्ज्+अर] बूढ़ा। जीर्ण। घिसा हुआ। फटा हुआ। टुकड़े-टुकड़े किया हुआ। चीरा हुआ। घायल। पोला। (पुं०) पत्थरफूल। इंद्र की ध्वजा। सेवार।

जर्जरित—(वि०) [जर्जर+णिच्+क्त] जीर्ण किया हुआ, पुराना। घिसा हुआ। टुकड़े-टुकड़े किया हुआ। टुकड़े-टुकड़े हो कर बिखरा हुआ। निकम्मा किया हुआ।

जर्जरीक—(वि०) [√जर्ज्+इक नि० साधुः] क्षीण। पुराना। छिद्रों से परिपूर्ण, छिद्रान्वित।

जर्तु—(पुं०) [√जन्√तु, र आदेश] भग; योनि। हाथी।

√जल्—भ्वा० पर० अक० तेज होना। जलति, जलिष्यति, अजालीत्—अजलीत्। चु० उभ० सक० ढाँकना। जालयति—ते।

जल—(न०) [√जल्+अच्] पानी। खस। पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र। सुगंधबाला। (वि०) [=जड, डलयोरभेदः] दे० 'जड'।—**अञ्चल** (**जलाञ्चल**)—(न०) झरना, सोता। प्राकृतिक जल-प्रवाह। काई, सिवार।—**अञ्जलि** (**जलाञ्जलि**)—(पुं०) अञ्जलीभर जल। जलतर्पण; 'कुसुममालाय कुतो जलाञ्जलिः'।—**अटन** (**जलाटन**)—(पुं०) बगुला।—**अटनी** (**जलाटनी**)—(स्त्री०) जोंक, जलौका।—**अण्टक** (**जलाण्टक**)—(न०) मगर, नक्रराज।—**अत्यय** (**जलात्यय**)—(पुं०) शरद् ऋतु।—**अधिदैवत** (**जलाधिदैवत**)—(पुं०) (न०) वरुण। पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र।—**अधिप** (**जलाधिप**)—(पुं०) वरुण।—**अम्बिका** (**जलाम्बिका**)—(स्त्री०) कूप, कुआँ।—**अर्क** (**जलार्क**)—(पुं०) जल में सूर्यमण्डल का प्रतिबिम्ब।—**अर्णव** (**जलार्णव**)—(पुं०) वर्षाऋतु। मीठे जल का समुद्र।—**अर्थिन्** (**जलार्थिन्**)—(वि०) प्यासा।—**अवतार** (**जलावतार**)—(पुं०) नदी का घाट।—**अष्ठीला** (**जलाष्ठीला**)—(पुं०) बृहद् चौकोर तालाब।—**असुका** (**जलासुका**)—(स्त्री०) जोंक।—**आकार** (**जलाकार**)—(न०) सोता। फुहारा, फव्वारा। कूप।—**आकांक्ष** (**जलाकांक्ष**), —**कांक्ष**,—**कांक्षिन्**—(पुं०) हाथी।—**आखु** (**जलाखु**) (पुं०) ऊदबिलाव।—**आगम** (**जलागम**)—(पुं०) वर्षा ऋतु।—**आत्मिका** (**जलात्मिका**)—(स्त्री०) जोंक।—**आधार** (**जलाधार**)—(पुं०) तालाब, जलाशय।—**आयुका** (**जलायुका**)—(स्त्री०) जोंक।—**आर्द्र** (**जलार्द्र**)—(वि०) भीगा, तर। (न०) भीगा कपड़ा।—**आर्द्रा** (**जलार्द्रा**)—(स्त्री०) पानी से तर पंखा।—**आलोका** (**जलालोका**)—(स्त्री०) जोंक।—**आवर्त** (**जलावर्त**)—(पुं०) भँवर।—**आशय** (**जलाशय**)—(पुं०) तालाब। मछली। समुद्र।—**आश्रय** (**जलाश्रय**)—(पुं०) तालाब। जलभवन।—**आह्वय** (**जलाह्वय**)—(न०) कमल।—**इन्द्र** (**जलेन्द्र**)—(पुं०)

वरुण । समुद्र ।—**इन्धन** (**जलेन्धन**)-(न०) बाड़वानल ।—**इभ** (**जलेभ**)-(पुं०) सूंस, शिशुमार ।—**ईश** (**जलेश**), —**ईश्वर** (**जलेश्वर**)-(पुं०) वरुण । समुद्र ।—**उच्छ्वास** (**जलोच्छ्वास**) (पुं०) (नदी-आदि के) जल का किनारे से ऊपर उठकर, उछल कर बहना । अतिरिक्त जल का निकास । नदी की बाढ़ ।—**उदर** (**जलोदर**)-(न०) एक रोग जिसमें पेट की त्वचा के नीचे पानी इकट्ठा हो जाता है ।—**उरगी** (**जलोरगी**) -(स्त्री०) जोंक ।— **ओकस्** (**जलौकस्**)- -(स्त्री०),—**ओकस** (**जलौकस**)- (पुं०) जोंक ।—**कण्टक** (पुं०) सिंघाड़ा । घड़ियाल ।—**कपि**-(पुं०) सूंस ।—**कपोत**-(पुं०) जल कबूतर जो सदा पानी के किनारे रहता है ।—**करङ्क**-(पुं०) शंख । नारियल । बादल । लहर । कमल ।—**कल्क**-(पुं०) कीचड़ । सेवार ।—**काक**- (पुं०) पानी का कौआ ।—**कान्तार**-(पुं०) वरुण ।—**किराट** -(पुं०) शार्क मछली । घड़ियाल । सूंस । **कुक्कुट**-(पुं०) जलमुर्ग, मुरगाबी, कुलंग ।—**कुन्तल**,—**केश**-(पुं०) सिवार ।—**कूपी**-(स्त्री०) चश्मा, सोता । कूप । तालाब, पोखरा । भँवर ।—**कूर्म**- (पुं०) सूंस ।—**केलि**-(पुं०),—**क्रीडा**- (स्त्री०) जल में का खेल जैसे एक दूसरे पर पानी उलीचना । —**क्रिया**-(स्त्री०) जलतर्पण ।—**गुल्म**-(पुं०) कछुआ । चौखूंटा तालाब । भँवर । —**चर**-(पुं०) (**जलेचर** भी रूप होता है) जल में रहने वाला प्राणी, जल-जंतु ।—० **जीव**—०**आजीव** (**जलचराजीव**)-(पुं०) मछुवा, माहीगीर ।—**चारिन्**- (पुं०) जल में रहने वाला जन्तु । मछली ।—**ज**-(वि०) जल में पैदा होने वाला । जल में रहने वाला । (पुं०) जलजन्तु । मछली । सिवार, काई । चन्द्रमा । (पुं०, न०) शंख । घोंघा । कमल । —**जन्तु**-(पुं०) मछली । कोई भी जल में रहने वाला जीव ।—**जन्तुका**- (स्त्री०) जोंक ।—**जन्मन्**-(न०) कमल ।— **जिह्व** -(पुं०) मगर, घड़ियाल ।—**जीविन्**-(पुं०) धीवर, माहीगीर, मछुवा ।—**तरङ्ग** -(पुं०)लहर । एक बाजा जिसमें पानी से भरी कटोरियों पर छड़ी से आघात कर ध्वनि उत्पन्न की जाती है ।—**ताडन**-(न०) पानी पीटना, बेकार काम ।—**तापिन्**-(पुं०) हिलसा मछली ।—**तिक्तिका**-(स्त्री०) सलई का पेड़ ।—**त्रा**-(स्त्री०) छाता ।—**त्रास**-(पुं०) जलातङ्क रोग, पागल कुत्ते के काटने से उत्पन्न पागलपन ।—**द**-(पुं०) बादल; 'जायन्ते विरला लोके जलदा इव सज्जनाः' पं० १.२९ । कपूर ।—**दर्दुर**-(पुं०) वाद्ययंत्र विशेष ।—**देवता**- (स्त्री०) वरुण ।—**द्रोणी**-(स्त्री०) नाव का पानी उलीचने का हत्था, डोलची ।—**धर**- (पुं०) बादल । समुद्र ।—**धि**-(पुं०) समुद्र । चार की संख्या ।—**नकुल**-(पुं०) ऊदबिलाव ।—**निधि**-(पुं०) समुद्र । चार की संख्या । —**निर्गम**-(पुं०) नाली, पानी निकलने का मार्ग । जलप्रपात ।—**नीली**-(स्त्री०) सिवार, काई ।—**पटल**-(न०) बादल ।—**पति**-(पुं०) समुद्र । वरुण ।—**पथ**-(पुं०) जल-मार्ग । नहर आदि । समुद्री यात्रा ।—**पारावत**-(पुं०) दे० 'जलकपोत' ।—**पुष्प**-(न०) जल में उत्पन्न होने वाला फूल ।—**पूर**-(पुं०) जल की बाढ़ । जल से परिपूर्ण चश्मा ।—**पृष्ठजा**-(स्त्री०) काई, सिवार ।—**प्रदान**-(न०) तर्पण ।—**प्रपा**-(स्त्री०) पौसरा, प्याऊ । —**प्रपात**-(पुं०) झरना । किसी नदी-नाले का पहाड़ के ऊपर से नीचे गिरना । —**प्रलय** -(पुं०) संपूर्ण सृष्टि का जलमग्न हो जाना ।—**प्रान्त**-(पुं०) नदी, झील आदि के पास की जमीन । नदीतट ।—**प्राय**-(न०) वह देश जिसमें जल का बाहुल्य हो । —**प्रिय**- (पुं०) चातक पक्षी । मछली ।

—प्रिया–(स्त्री०) चातकी। पार्वती।—प्लव–(पुं०) ऊदबिलाव।—प्लावन–(न०) दे० 'जल-प्रलय'। बाढ़।—बन्धु–(पुं०) मछली। —बालक, —वालक–(पुं०) विन्ध्यगिरि।—बालिका–(स्त्री०) बिजली। —बिडाल– (पुं०) ऊदबिलाव।—बिम्ब–(पुं०, न०) बुलबुला। बिल्व–(पुं०) झील। सरोवर। कछुआ। सुंस। केकड़ा।—भू–(पुं०) बादल। कपूर विशेष। (स्त्री०) पानी जमा रखने का स्थान।—भृत्–(पुं०) बादल। घड़ा। कपूर। मक्षिका–(स्त्री०) जल का एक कीड़ा।—मण्डूक–(न०) जल-दर्दुर। एक प्रकार का बाजा।—मार्ग–(पुं०) नाली, पनाला, पानी निकलने का रास्ता। नहर।— मुच्–(पुं०) बादल। कपूर विशेष।—मूर्ति (पुं०) शिव।—मूर्तिका–(स्त्री०) ओला।—मोद–(पुं०) खस।—यन्त्र–(न०) फुहारा। कुएँ आदि से पानी निकालने का यंत्र (रहट आदि)। जलघड़ी।—०गृह, —०मन्दिर– (न०) वह मकान जिसमें या जिसके आस-पास फुहारे हों। वह मकान जिसके चारों ओर पानी हो।—यात्रा–(स्त्री०) जलमार्ग से नाव आदि के द्वारा यात्रा। तीर्थजल लाने के लिये यजमान की सविधि यात्रा।—यान–(न०) जहाज। नौका।—रण्ड,—रुण्ड–(पुं०) भँवर। फुहार। बूँद। सर्प।—रस–(पुं०) नमक, लवण।—राशि–(पुं०) समुद्र।—रुह–(पुं०, न०) कमल।—रूप–(पुं०) मगर, घड़ियाल।—लता–(स्त्री०) लहर।—वायस–(पुं०) कौड़िल्ला पक्षी।—वाह–(पुं०) बादल।—वाहनी–(स्त्री०) नाली, परनाला। नहर।—विन्दुजा–(स्त्री०) यावनाली शर्करा, जुआर की चीनी।—विषुव–(न०) तुला की संक्रांति।—वृश्चिक–(पुं०) झींगा मछली।—व्याल–(पुं०) पानी में रहने वाला साँप, डेंड़हा।—शय,—शयन,—शायिन्–(पुं०) विष्णु।—शूक–(न०) सिवार, काई।—शूकर–(पुं०) मगर, घड़ियाल।—शोष–(पुं०) सूखा, अनावृष्टि।—सर्पिणी–(स्त्री०) जोंक।—सूचि–(स्त्री०) सूँस, शिशुमार। काक। जोंक। कंकत्रोट नामक मछली। कछुआ। सिंघाड़ा।—स्थान–(न०),—स्थाय–(पुं०) सरोवर। झील। तालाब।—हस्तिन्–(पुं०) सील की जाति का एक स्तनपायी जलजंतु जिसकी शकल हाथी से थोड़ी-बहुत मिलती है, जल-हाथी।—हारिणी–(स्त्री०) पानी ढोने वाली, पनिहारिन। नाली।—हास–(पुं०) फेन, झाग। समुद्रफेन।

जलङ्गम—(पुं०) [जलं ग्रामान्तजलभूमि गच्छति, जल√गम्, खच्] चाण्डाल।

जलमसि—(पुं०) [जलेन जलाकारेण मस्यति परिणमति, जल√मस् + इन्] बादल। कपूर।

जलाका, जलालुका, जलिका, जलुका, जलूका—(स्त्री०) [जले आकायति प्रकाशते, जल—आ√कै+क—टाप्] [जले अलति गच्छति, जल√अल्+उक—टा.] [जलम् उत्पत्तिस्थानत्वेन अस्ति अस्याः, जल+ठन् —इक, टाप्] [जलम् ओको यस्याः पृषो० साधुः] जोंक।

जलेज, जलेजात—(न०) [जले√जन्+ड] [जले जातम्, सप्तम्या अलुक्] कमल।

जलेशय—(पुं०) [जले शेते, √शी+अच्, सप्तम्या अलुक्] मछली। विष्णु।

√जल्—भ्वा० पर० सक०, अक० बोलना। बातचीत करना। बर्राना। अस्पष्ट बोलना। तोतलाना। जल्पति, जल्पिष्यति, अजल्पीत्।

जल्प—(पुं०) [√जल्प् + अच्] कथन। बकवाद। तर्क। बहस। (वि०) [√जल्प+अच्] दूसरे की बात काट कर अपनी बात रखने वाला।

जल्पक, जल्पाक—(वि०) [जल्प+कन्]

[जल्+षाकन्] [स्त्री०—जल्पिका] बातूनी, बकवादी।

जल्पन—(न०) [√जल्प्+ल्युट्] कहना। बक-बक करना।

जव—(पुं०) [√जु+अप्] तेजी, फुर्ती; 'जवेन पीठादुदतिष्ठदच्युतः' शि० १.१२। वेग। (वि०) तेज। वेगवान्।—**अधिक** (**जवाधिक**)—(पुं०) वेगवान् घोड़ा। युद्ध की शिक्षा प्राप्त घोड़ा।—**अनिल** (**जवानिल**)—(पुं०) आँधी, तूफान।

जवन—(वि०) [√जु + ल्यु] [स्त्री०—जवनी] तेज, फुर्तीला। (पुं०) युद्ध की शिक्षा प्राप्त घोड़ा। वेगवन्त घोड़ा। (न०) [√जु +ल्युट्] तेजी, फुर्ती। वेग।

जवनिका, **जवनी**—(स्त्री०) [जूयते आच्छाद्यते अनया, √जु+ल्युट्—ङीप्, जवनी] [जवनी + कन्—टाप्, ह्रस्व, जवनिका] कनात। पर्दा; 'नरः संसारान्ते विशति यमधानीजवनिकाम्'। चिक।

जवस—(पुं०) [√जु+असच्] घास।

जवा—(स्त्री०) [जव+टाप्] जवाकुसुम, गुड़हल।

√**जष्**—भ्वा० पर० सक० मारना। जषति, जषिष्यति, अजषीत्।

√**जस्**—दि० पर० सक० मुक्त करना, छोड़ देना। जस्यति, जसिष्यति, अजसत्—अजासीत्—अजसीत्। चु० उभ० सक० मारना। तिरस्कार करना। जासयति—ते, जासयिष्यति—ते, अजीजसत्—त।

जहक—(पुं०) [√हा+कन्, द्वित्व] समय, काल। बच्चा। साँप की केंचुली।

जहत्स्वार्था—(स्त्री०) [जहत् स्वार्थो याम्] लक्षणा का एक भेद जिसमें पद या वाक्य वाच्यार्थ का त्याग कर उससे सम्बद्ध दूसरा अर्थ प्रकट करता है।

जहदजहल्लक्षणा—(स्त्री०) [जहच्च अजहच्च स्वार्थो याम् तादृशी लक्षणा] लक्षणा का एक भेद जिसमें कुछ अर्थों या विषयों का त्याग कर किसी एक को ग्रहण किया जाता है।

जहानक—(पुं०) [√हा+शानच्+कन्] कल्पान्त प्रलय।

जहु—(पुं०) [√हा+उण्, द्वित्व] किसी भी पशु का बच्चा।

जह्नु—(पुं०) [√हा+नु, द्वित्व, आकारलोप] सुहोत्र राजा का पुत्र जिसने गङ्गा को अपना दत्तक बनाया था।

जागर—(पुं०) [√जागृ + घञ्, गुण] जागरण; 'रात्रिजागरपरो दिवाशयः' र० १९.३४। जाग्रत् अवस्था का दृश्य। कवच, जिरहबख्तर।

जागरण—(न०) [√जागृ+ल्युट्] जागना, निद्रा का अभाव। सावधानी, सतर्कता।

जागरा—(स्त्री०) [√जागृ+अ+टाप्] दे० 'जागरण'।

जागरित—(वि०) [√जागृ+क्त] जागा हुआ। सतर्क। सावधान। (न०) जागृति, जागरण। सांख्य और वेदान्त के मत से वह अवस्था जिसमें मनुष्य को इन्द्रियों द्वारा सब प्रकार के व्यवहारों और कार्यों का अनुभव होता रहे।

जागरितृ, **जागरूक**—(वि०) [स्त्री०—**जागरित्री**] [√जागृ+तृच्] [√जागृ+ऊक] जागता हुआ। जागरणशील। सावधान, सतर्क।

जागर्ति, **जागर्या**, **जाग्रिया**—(स्त्री०) [√जागृ+क्तिन्] [√जागृ+श, यक्, गुण, टाप्] [√जागृ+श, रिङादेश] जागरण, जागते रहना।

जागुड—(न०) [जगुड+अण्] केसर, जाफरान। (पुं०) एक प्राचीन जनपद और वहाँ का निवासी।

√**जागृ**—अ० पर० अक० जागते रहना। सावधान रहना। रात भर बैठे रहना। नींद

में जाग जाना। पहिले से देखना। जागति, जागरिष्यति, प्रजागरीत्।

जाघनी—(स्त्री०) [जघन+अण्—ङीप्] पूंछ। जंघा।

जाङ्गल—(वि०) [स्त्री०—**जाङ्गली**] [जङ्गल+अण्] जंगली। वहशी, बर्बर। उजाड़, सूना। (पुं०) तीतर विशेष, कपिञ्जल पक्षी। (न०) मांस। हिरन का मांस। कुरुदेश का समीपवर्ती देश विशेष। वह प्रदेश जहाँ पानी कम बरसे, धूप-गर्मी अधिक कड़ी हो, पेड़-पौधे कम हों।

जाङ्गुल—(न०) [जङ्गुल+अण्] जहर, सर्प आदि विषैले जानवरों का जहर।

जाङ्गुलि, जाङ्गुलिक—(पं०) [जङ्गुल+इञ्] [जङ्गुल+ठञ्—इक] सँपेरा, विषवैद्य।

जाङ्घिक—(पुं०) [जंघा+ठञ्—इक] धावक, हरकारा। ऊँट।

जाजिन्—(पुं०) [√जज्+णिनि] योद्धा, लड़ने वाला।

जाठर—(वि०) [जठर+अण्] [स्त्री०—**जाठरी**] पेट सम्बन्धी या पेट का। (पुं०) पाचन शक्ति, जठराग्नि।

जाड्य—(न०) [जड+ष्यञ्] ठिठुरन। सुस्ती, अकर्मण्यता। मूर्खता। जड़ता। जिह्वा का स्वादराहित्य।

जात—(वि०) [√जन्+क्त] जनमा हुआ। उत्पन्न। प्रकट, व्यक्त। घटित। संगृहीत। (न०) जन्म। वर्ग। समूह: 'निःशेषविश्राणितकोशजातम्' र० ५.१। प्राणी। (पुं०) जात, अनुजात, अतिजात और अपजात इन चार प्रकार के पारिभाषिक पुत्रों में से एक पुत्र, बेटा।—**अपत्या** (**जातापत्या**)—(स्त्री०) माता।—**अमर्ष** (**जातामर्ष**)—(वि०) क्रुद्ध।—**अश्रु** (**जाताश्रु**)—(वि०) आँसू बहाता हुआ, रोता हुआ।—**इष्टि** (**जातेष्टि**)-(स्त्री०)पुत्रोत्पत्ति के समय किया जाने वाला धर्मकृत्य विशेष।—**उक्ष** (**जातोक्ष**)—(पुं०) जवान बैल।—**कर्मन्**—(न०) बालक उत्पन्न होने के समय किया जाने वाला एक संस्कार।—**कलाप**—(वि०) पूंछ वाला (जैसे मोर)।—**काम**—(वि०) मोहित, लट्टू, लवलीन।—**पक्ष**—(वि०) पंखों-वाला।—**पाश**-(वि०) बेड़ी पड़ा हुआ।—**प्रत्यय**—(वि०) विश्वास दिलाया हुआ।—**मन्मथ**—(वि०) प्रेमासक्त।—**मात्र**—(वि०) हाल का जन्मा हुआ।—**रूप**—(वि०) सुन्दर। (न०) धतूरा। सोना।—**वेदस्**—(पुं०) अग्नि। सूर्य। चित्रक वृक्ष। परमेश्वर।—**वेदसी**—(स्त्री०) दुर्गा।—**वेश्मन्**—(न०) सौरी, सूतिका-गृह।

जातक—(वि०) [जात+कन्] उत्पन्न। (पुं०) सद्योजात बालक। भिक्षुक। (न०) जातकर्म, बालक के उत्पन्न होने पर किया जाने वाला कर्म विशेष। समान वस्तुओं का जोड़ या ढेर। फलित ज्योतिष का वह अंग जिससे नवजात शिशु का शुभाशुभ फल कहा जाता है। वह बौद्ध ग्रन्थ जिसमें बुद्ध के पूर्वजन्मों की कथाएँ लिखी हैं।—**ध्वनि**—(पुं०) जोंक।

जाति—(स्त्री०) [√जन्+क्तिन्] उत्पत्ति, जन्म। जन्म से निश्चित होने वाली जाति। वर्ण। वंश, कुल। श्रेणी, कक्षा। किसी वस्तु या जीव की पहिचान का चिह्न या विशेषता। अग्निकुण्ड। जायफल। चमेली का फूल या पौधा। प्रत्यवहार्य उत्तर (न्याय में)। सरगम, सा रे ग म प धा नी सा। छन्द विशेष।—**अन्ध** (**जात्यन्ध**)—(पुं०) जन्म से अन्धा।—**कोश,—कोष**—(पुं०,न०) जायफल।—**कोशी,—कोषी**—(स्त्री०) जायफल का छिलका।—**धर्म**-(पुं०) वर्ण धर्म। जातीय गुण।—**ध्वंस**—(पुं०) वर्णच्युति या वर्णाधिकार से बहिष्कृति।—**पत्री**—(स्त्री०) जायफल का ऊपरी छिलका।—**ब्राह्मण**—(पुं०) केवल जन्म से ब्राह्मण किन्तु कर्म से नहीं। अपढ़ ब्राह्मण।—**भ्रंश**—(पुं०) जाति

भ्रष्टता, जातिच्युति ।—०कर–(न०) नौ प्रकार के पापों में से एक जिसके करने से जाति नष्ट हो जाती है । मनु के मत से—(ब्राह्मण को कष्ट देना, शराब पीना, मित्र के साथ कुटिलता का व्यवहार करना और पुरुष के साथ मैथुन करना जातिभ्रंशकर हैं) ।—लक्षण–(न०) जातीय पहचान ।—वैर–(न०) स्वाभाविक शत्रुता ।—वैरिन्–(पुं०) स्वाभाविक वैरी ।—शब्द–(पुं०) जातिवाचक शब्द, जैसे हंस, मृग आदि ।—सङ्कर–(पुं०) दोगला, वर्णसङ्कर ।—सम्पन्न (वि०) कुलीन, उत्तम कुल का ।—सार–(न०) जायफल ।—स्मर–(वि०) पिछले जन्म का वृत्तान्त स्मरण रखने वाला ।—हीन (वि०) नीच जाति का । जातिच्युत ।

जातिमत्—(वि०) [जाति+मतुप्] कुलीन, उत्तम कुल का ।

जातु—(अव्य०) [√जन्+क्तुन्, पृषो० साधुः] शायद, सम्भवतः, कदाचित्; 'न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति' गीता । कभी-कभी । एक बार । किसी समय । किसी दिन ।—धान–(पुं०) [धीयते सन्निधीयते इति धानम् सन्निधानम्, जातु गर्हितं धानम् यस्य, ब० स०] राक्षस । दैत्य । पिशाच ।

जातुष—(वि०) [स्त्री०—**जातुषी**] जतु+अण्, षुक्] लाख का बना या लाख से ढका हुआ । चिपचिपा, चिपकने वाला ।

जातू—(न०) [जातं तूर्वति हिनस्ति, √तूर्व्+क्विप्, पूर्वपददीर्घ] वज्र ।—**कर्ण**–(पुं०) एक ऋषि जिनका जन्म २८ वें द्वापर में हुआ था । ये एक उपस्मृति के रचयिता हैं ।

जात्य—(वि०) [जाति+यत्] एक ही कुल वाला । कुलीन । मनोहर । प्रिय । त्रिकोण ।

जानकी—(स्त्री०) [जनक+अण्–ङीप्] जनक की पुत्री, सीता ।

जानपद—(पुं०) [जनपद+अण्] जनपद-वासी, ग्रामवासी । कर, मालगुजारी । देहात । प्रजा । (वि०) जनपद सम्बन्धी ।

जानु—(न०) [√जन्+ञुण्] घुटना ।—**फलक—मण्डल**–(न०) घुटने के जोड़ के ऊपर की हड्डी ।—**विजानु**–(न०) मल्लयुद्ध का एक प्रकार, तलवार के ३२ हाथों में से एक ।

जानुदघ्न—(वि०) [जानु+दघ्नच्] घुटने तक ऊँचा या गहरा ।

जाप—(पुं०) [√जप्+घञ्] जप, फुसफुसाहट । मन्त्र का जप ।

जाबाल—(पुं०) [जबाला+अण्] सत्यकाम ऋषि जिनकी माता का नाम जबाला था । बकरों का समूह ।

जामदग्न्य—(पुं०) [जमदग्नि+यञ्] परशुराम का नाम ।

जामा—(स्त्री०) [√जम्+अण्–टाप्] लड़की । बहू, वधू ।

जामातृ—(पुं०) [जायां माति, मिमीते, मिनोति वा,√मा+तृच्] दामाद । प्रभु, स्वामी । सूरजमुखी । धव का पेड़ ।

जामि—(स्त्री०) [√जम्+इञ्] बहिन । लड़की । पुत्रवधू । निकट की स्त्री, नातेदारिन । सती साध्वी स्त्री ।

जामित्र—(न०) [=जायमित्र] लग्न से सातवाँ घर या जन्मलग्न से ७वीं लग्न ।

जामेय—(पुं०) [जामि+ढञ्] भाँजा, बहिन का पुत्र ।

जाम्बव—(न०) [जम्बू+अण्] सुवर्ण, सोना । जामुन-फल ।

जाम्बवत्—(पुं०) [जाम्ब+मतुप्] रीछों के राजा, जिन्होंने लंका पर आक्रमण करने में श्रीरामचन्द्र जी की सहायता की थी ।

जाम्बीर, जाम्बील—(पुं०)[जम्बीर+अण्, पक्षे रलयोरभेदः] जंबीरी नीबू ।

जाम्बूनद—(न०) [जम्बूनद+अण्]

सुवर्ण, सोना । सोने का आभूषण । धतूरे का पौधा ।

जाया—(स्त्री०) [√जन्+यक्, आत्व] स्त्री। स्त्री को जाया कहने का कारण मनुस्मृतिकार ने यह बतलाया है—'पतिर्भार्यां सम्प्रविश्य गर्भो भूत्वेह जायते, जायायास्तद्धि जायात्वं यदस्यां जायते पुनः ।'—**अनुजीविन्** (**जायानुजीविन्**),—**आजीव** (**जायाजीव**),—**—भनु**–(पुं०) नट, नचैया । रण्डी का पति । भिक्षुक, मोहताज ।

जायिन्—(वि०) [√जि+णिनि] [स्त्री०—**जायिनी**] जीतने वाला, जयशील। (पुं०) ध्रुपद की जाति का एक ताल ।

जायु—(पुं०) [√जि+उण्] औषध, दवा । वैद्य । (वि०) जयशील ।

जार—(पुं०) [जीर्यति स्त्रियाः सतीत्वम् अनेन, √जॄ+घञ्] उपपति, आशिक; 'स्वकारः स्वकां भार्यां सजारां शिरसावहत्' पं० ४.५४ । **—ज**-**जन्मन्**, **—जात**–(पुं०) दोगला । **—भरा**–(स्त्री०) छिनाल औरत ।

जारिणी—(स्त्री०) [जार+इनि—ङीप्] छिनाल औरत ।

जाल—(न०) [√जल्+ण] सूत, सन आदि की जालीदार बुनी हुई चीज जिससे मछलियाँ, चिड़ियाँ आदि फँसाते हैं। फंदा । मकड़ी का जाला । कवच । रोशनदान, खिड़की । संग्रह, समुदाय । जादू । माया । अनखिला फूल ।—**अक्ष** (**जालाक्ष**)–(पुं०) झरोखा, खिड़की । (पुं०) सूराख, छेद ।—**कर्मन्**–(न०) मछली पकड़ने का धंधा या पेशा ।—**कारक**–(पुं०) जाल बनाने वाला । मकड़ी ।—**गोणिका**–(स्त्री०) दही मथने की हाँडी, दहेंड़ी ।—**पाद्**,—**पाद**–(पुं०) हंस ।—**प्राया**–(स्त्री० कवच, जिरहबख्तर ।

जालक—(न०) [जाल+कन् वा जाल√कै+क] जाल । समूह । झरोखा, खिड़की । कली, अनखिला फूल; 'अभिनवैर्जालकैर्मालतीनाम्' मे० ९८ । चूड़ामणि । घोंसला । भ्रम, धोखा ।—**मालिन्**–(वि०) अवगुण्ठित, घूँघर ।

जालकिन्—(पुं०) [जालक+इनि] बादल ।

जालकिनी—(स्त्री०) [जालकिन्+ङीप्] भेड़ ।

जालिक—(पुं०) [जाल+ठन्] माहीगीर, मछुआ । बहेलिया, चिड़ीमार । मकड़ी । सूबेदार । बदमाश, गुंडा ।

जालिका—(स्त्री०) [जालिक+टाप्] जाल कवच । मकड़ी । जोंक । विधवा । लोहा । घूँघट । ऊनी वस्त्र ।

जालिनी—(स्त्री०) [जाल+इनि—ङीप्] चित्र-शाला । तसवीरों से सुसज्जित कमरा ।

जाल्म—(वि०) [√जल्+णिच्+म (बा०)] [स्त्री०—**जाल्मी**] निष्ठुर, नृशंस । कड़ा, सख्त । दुस्साहसी, अविवेकी । (पुं०) बदमाश । धनहीन । नीच ।

जाल्मक—(वि०) [जाल्म+कन्] [स्त्री०—**जाल्मिका**] घृणित, नीच, कमीना ।

जाल्य—(वि०) [√जल्+ण्यत् वा जाल+यत्] जाल में फँसाये जाने योग्य । (पुं०) शिव ।

जावन्य—(न०) [जवन+ष्यञ्] वेग, तेजी शीघ्रता ।

जाह्नवी—(स्त्री०) [जह्नु+अण्—ङीप्] श्री गंगा जी ।

√जि—भ्वा० पर० सक० जीतना, हराना । आगे बढ़ जाना । निग्रह करना । जयति, जेष्यति, अजैषीत् ।

जि—(पुं०) [√जि+ड्] पिशाच । (वि०) जीतने वाला ।

जिगत्नु—(पुं०) [√गम्+त्नु, सन्वद्भावः तेन द्वित्वम्] प्राणवायु ।

जिगीषा—(स्त्री०) [√जि+सन्+अ—टाप्] जीतने की अभिलाषा; 'यानं सस्मार कौबेर

वैवस्वतीजिगीषया' र० १५.४५ । स्पर्धा । प्रतिष्ठा, मान, पेशा ।

जिगीषु—(वि०) [√जि+सन्+उ] विजयी होने का अभिलाषी ।

जिघत्सा—(वि०) [√अद्+सन्+अ, घसादेश] भोजन की इच्छा, भूख ।

जिघत्सु—(वि०) [√अद्+सन्+उ] खाने का इच्छुक, भूखा ।

जिघांसा—(स्त्री०) [√हन्+सन्+अ—टाप्] वध करने की अभिलाषा । प्रतिहिंसा ।

जिघांसु—(वि०) [√हन्+सन्+उ] मार डालने की इच्छा रखने वाला । (पु०) शत्रु, वैरी ।

जिघृक्षा—(स्त्री०) [√ग्रह्+सन्+अ—टाप्] ग्रहण करने या पकड़ने की अभिलाषा ।

जिघ्र—(वि०) [√घ्रा+श, जिघ्र आदेश] सूँघने वाला । सन्देह करने वाला । देखने-समझने वाला ।

जिज्ञासा—(स्त्री०) [√ज्ञा+सन्+अ—टाप्] (किसी बात को) जानने की इच्छा ।

जिज्ञासु—(वि०) [√ज्ञा+सन्+उ] किसी बात को जानने का अभिलाषी । मुमुक्षु ।

जित्—(वि०) [√जि+क्विप्] (यह समासान्त शब्द के अन्त में आता है । यथा कामजित्) जीतने वाला । वशवर्ती करने वाला, काबू में करने वाला ।

जित—(वि०) [√जि+क्त] जीता हुआ, वशवर्ती किया हुआ । संयत । जीत कर हस्तगत किया हुआ । प्राप्त । अभिलषित ।—**अक्षर** (**जिताक्षर**)—(वि०) उत्तम पाठक जो अक्षर देखते ही पढ़ सकता हो ।—**अमित्र**—(**जितामित्र**)—(वि०) वह मनुष्य जिसने अपने वैरियों को परास्त कर दिया हो, विजयी । काम, क्रोध आदि षड्रिपुओं को जीतने वाला । (पुं०) विष्णु ।—**अरि** (**जितारि**)—(वि०) दे० 'जितामित्र' । (पुं०) बुद्धदेव की उपाधि ।—**आत्मन्** (**जितात्मन्**)—(वि०) जिसने अपने मन, अपनी इन्द्रियों को वश में कर लिया हो ।—**आहव**—(**जिताहव**)—(वि०) वह जिसने लड़ाई जीती हो, विजयी ।—**इन्द्रिय**—(**जितेन्द्रिय**—(वि०) अपनी इन्द्रियों को काबू में रखने वाला । जितेन्द्रिय की परिभाषा यह है :—'श्रुत्वा स्पृष्ट्वाथ दृष्ट्वा च भुक्त्वा घ्रात्वा च यो नरः । न हृष्यति ग्लायति वा स विज्ञेयो जितेन्द्रियः ।'—**काशिन्**—(वि०) विजयी होने का अभिमानी; 'चाणक्योऽपि जितकाशितया' मु० २ । विजयी होने की शान दिखाने वाला ।—**कोप**,—**क्रोध**—(वि०) क्रोध को जीतने वाला, उद्विग्न न होने वाला ।—**नेमि**—(पुं०) पीपल की लकड़ी का बना डंडा ।—**श्रम**—(वि०) परिश्रमी, न थकने वाला ।—**स्वर्ग**—(वि०) मरने के बाद शुभकर्मों द्वारा स्वर्ग में जाने वाला ।

जिति—(स्त्री०) [√जि+क्तिन्] जीत, विजय ।

जितुम, **जित्तम**—(पुं०) [जित् + तमप्] [जितुम=जित्तम, पृषो० साधुः] मिथुन राशि, द्वादश राशियों में तीसरी राशि ।

जित्वर—(वि०) [√जि+क्वरप्] [स्त्री०—**जित्वरी**] विजयी, फतहयाब ।

जिन—(वि०) [√जि+नक्] विजयी, फतहयाब । बहुत पुराना या बुड्ढा । (पुं०) बौद्ध या जैन साधु । जैनी अर्हतों की उपाधि । विष्णु ।—**इन्द्र** (**जिनेन्द्र**), —**ईश्वर** (**जिनेश्वर**)—(पुं०) प्रधान बौद्ध भिक्षुक, जैनियों का अर्हत ।—**सद्मन्**—(न०) जैनियों का मन्दिर ।

जिवाजिव—(पुं०) [=जीवञ्जीव, पृषो० साधुः] चकोर पक्षी ।

√जिष्—भ्वा० पर० सक० सींचना । जेषति, जेषिष्यति, अजेषीत् ।

जिष्णु—(वि०) [√जि+ग्स्नु] विजयी,

जीतने वाला । (पुं०) सूर्य । इन्द्र । विष्णु । अर्जुन ।

जिह्म—(वि०) [√हा+मन्, द्वित्वादि नि०] तिरछा, टेढ़ा, बाँका । ऐंचाताना । अनियमित चलने वाला । दुष्ट । धुँधला । पीले रंग का । सुस्त । (न०) बेईमानी । तगर का फूल ।—**अक्ष** (**जिह्माक्ष**)–(वि०) भेंड़ी आँख वाला, ऐंचा ।—**ग**,—**गति**–(वि०) टेढ़ा-मेढ़ा चलने वाला । (पुं०) साँप । —**मेहन**–(पुं०) मेढक ।—**योधिन्**–(वि०) बेईमानी से युद्ध करने वाला ।—**शल्य**–(पुं०) खदिर वृक्ष ।

जिह्व—(पुं०) [√ह्वे+ड, द्वित्वादि]जीभ ।

जिह्वल—(वि०) [जिह्व √ ला+क] जिभला, चटोरा । लालची ।

जिह्वा—(स्त्री०) [लिहन्ति अनया, √लिह् +वन्, नि० साधुः] जबान, जीभ । अग्नि की जिह्वा अर्थात् आग की लौ ।—**आस्वाद** (**जिह्वास्वाद**)–(पुं०) चाटना, लपलपाना । —**उल्लेखनी** (**जिह्वोल्लेखनी**), —**उल्लेखनिका** (**जिह्वोल्लेखनिका**) —(स्त्री०), —**निर्लेखन**–(न०) जिह्वा का मैल साफ करने वाली वस्तु, जीभी ।—**प**–(पुं०) कुत्ता । बिल्ली । चीता, बाघ । लकड़-बग्घा । रीछ ।—**मूल**–(न०) जिह्वा की जड़ । —**मूलीय**–(पुं०) वर्ण जिनके उच्चारण के लिये जिह्वामूल से सहायता ली जाती है ।—**रद**–(पुं०) पक्षी ।—**लिह्**–(पुं०) कुत्ता ।—**लौल्य**–(न०) लालच, चटोरापन ।—**शल्य** –(पुं०) खदिर का पेड़ ।

जीन—(वि०) [ज्या+क्त] बूढ़ा, पुराना । घिसा हुआ, क्षीण । (पुं०) चमड़े का थैला ।

जीमूत—(वि०) [√ज्या+क्विप्, जीः तया जरया मूतः बद्धः] बुढ़ापे से बँधा हुआ । (पुं०) [जयति आकाशम्, √जि+क्त, मुट्, दीर्घ] बादल; 'जीमूतेन स्वकुशलमयीं हारयिष्यन् प्रवृत्तिं' मे० ४ । पर्वत । इन्द्र । सूर्य । नागरमोथा । देवताड़ वृक्ष । एक ऋषि । —**कूट**–(पुं०) पहाड़ ।—**वाहन**–(पुं०) इन्द्र । विद्याधरों के एक राजा का नाम । नागानन्द नाटक का प्रधान पात्र ।—**वाहिन्**–(पुं०) धूम, धुआँ ।

जीर—(पुं०) [√ज्+रक्, ई आदेश] तल-वार । जीरा ।

जीरक, **जीरण**—(पुं०) [जीर+कन्] [=जीरक पृषो० कस्य णः] जीरा ।

जीर्ण—(वि०) [√जॄ+क्त]पुराना, प्राचीन । घिसा हुआ, फटा हुआ । पचा हुआ । (न०) लोबान । बुढ़ापा । (पुं०) बूढ़ा आदमी । वृक्ष ।—**उद्धार** (**जीर्णोद्धार**)–(पुं०) मरम्मत, रफू ।—**उद्यान** (**जीर्णोद्यान**)–(न०) उजड़ा हुआ बगीचा ।—**ज्वर**–(स्त्री०) पुराना बुखार, बहुत दिनों का ज्वर ।—**पर्ण**–(पुं०) कदम्ब वृक्ष ।—**वाटिका**–(स्त्री०) उजड़ी हुई बगिया या मकान, खंडहर ।—**वज्र**–(न०) वैक्रान्त मणि ।

जीर्णक—(वि०) [जीर्ण+कन्] सूखा हुआ । मुरझाया हुआ ।

जीर्णि—(स्त्री०) [√जॄ+क्तिन्] जीर्णता, पुरानापन । पाचन शक्ति ।

√**जीव्**—भ्वा० पर० अक०, जीवित रहना । किसी वस्तु के सहारे निर्वाह करना । जीवति, जीविष्यति, अजीवीत् ।

जीव—(पुं०) [√जीव्+घञ्] जीना, अस्तित्व कायम रखना । [√जीव्+क] प्राण, अन्तरात्मा । जीवात्मा । प्राणी । आजी-विका, पेशा । कर्ण का नाम । मरुतों का नाम । पुष्य नक्षत्र ।—**अन्तक** (**जीवान्तक**) –(पुं०) चिड़ीमार । जल्लाद, हत्यारा ।—**आत्मन्** (**जीवात्मन्**)–(पुं०) चैतन्य स्वरूप एक पदार्थ जो शरीर के भीतर रहता है ।—**आदान**(**जीवादान**)–(न०) मूर्च्छा, बेहोशी । —**आधान** (**जीवाधान**)–(न०) शरीर, देह ।—**आधार** (**जीवाधार**)–(पुं०) हृदय ।

—इन्धन (**जीवेन्धन**)–(न०) दहकती हुई लकड़ी, लुआठी ।—**उत्सर्ग** (**जीवोत्सर्ग**)–(पु०) इच्छा पूर्वक जान देना, आत्महत्या । —**ऊर्णा** (**जीवोर्णा**)–(स्त्री०) जीवित पशु की ऊन ।—**गृह**,—**मन्दिर**–(न०) शरीर, देह ।—**ग्राह**–(पु०) जीवित पकड़ा हुआ कैदी ।—**जीव** (**जीवंजीव** भी)–(पु०) चकोर पक्षी ।—**द**–(पु०) वैद्य । शत्रु ।—**धन**–(न०) पशु धन, गाय, बैल आदि ।—**धानी**–(स्त्री०) पृथिवी ।—**पति**, —**पत्नी**–(स्त्री०) स्त्री जिसका पति जीवित हो ।—**पुत्रा**,—**वत्सा**–(स्त्री०) बच्चे वाली स्त्री ।—**मातृका**- (स्त्री०) सप्तमातृका जिनके नाम ये हैं—कुमारी धनदा नंदा विमला मङ्गला बला । पद्मा चेति च विख्याताः सप्तैता जीवमातृकाः । —**रक्त**–(न०) रजोधर्म का रक्त या लोहू । —**लोक**–(पु०) मर्त्यलोक, भूलोक । प्राणी । मानव जाति; 'आलोकमर्कादिव जीवलोकः' र० ५.५५ । —**विज्ञान**–(न०) जीव-जंतुओं की शरीर-रचना, वर्गीकरण, जीने के ढंग आदि का विज्ञान (जूलॉजी) ।—**वृत्ति**–(स्त्री०) पशु पालने का पेशा ।—**शेष**–(वि०) वह जिसके पास अपने प्राण को छोड़ और कुछ भी न रह गया हो ।—**संक्रमण**– (न०) जीव का जन्मग्रहण और शरीरत्याग, आवागमन ।—**साधन**–(न०) धनाज, अन्न । —**साफल्य**–(न०) जन्मधारण करने की सफलता ।—**सू**–(स्त्री०) स्त्री जिसकी सन्तान जीवित हो ।—**स्थान**–(न०) मर्म । हृदय ।

जीवक—(पु०) [√जीव्+ण्वुल् वा √जीव्+णिच्+ण्वुल्] जीवधारी । बौद्धभिक्षुक । भीख पर निर्भर रहने वाला कोई भी भिक्षुक । सूदखोर । सँपेरा, साँप पकड़ने वाला । अष्टवर्ग के अन्तर्गत एक जड़ी ।

जीवत्—(वि०) [√जीव्+शतृ] [स्त्री०—**जीवन्ती**] जिंदा, जीवित ।—**तोका** (**जीवत्तोका**)–(स्त्री०) वह औरत जिसके बच्चे जीवित हों ।—**पति**,—**पत्नी**–(स्त्री०) स्त्री जिसका पति जीवित हो, सधवा ।—**मुक्त** (**जीवन्मुक्त**)–(वि०) परमात्मा का साक्षात्कार करने वाला, सांसारिक कर्मबन्धन से छूटा हुआ ।—**मृत** (**जीवन्मृत**)–(वि०) जिंदा मरा हुआ; अर्थात् जिंदा होने पर भी मुर्दे की तरह बेकार ।

जीवथ—(पु०) [√जीव्+अथ] जीवन, अस्तित्व । कछुवा । मोर । बादल ।

जीवन—(वि०) [√जीव्+णिच्+ल्यु वा √जीव्+ल्युट्] [स्त्री०—**जीवनी**] जीवनप्रद, जीवनी शक्ति देने वाला । (न०) जीवन, अस्तित्व । सञ्जीवनी शक्ति । जल । पेशा । ताजा घी । (पु०) प्राणधारी । पवन । पुत्र । —**अन्त** (**जीवनान्त**)–(पु०) मृत्यु, मौत । —**आघात** (**जीवनाघात**)–(न०) विष । —**आवास** (**जीवनावास**)–(पु०) वरुण देव । शरीर ।—**उपाय** (**जीवनोपाय**)—(पु०) आजीविका ।—**औषध** (**जीवनौषध**) –(न०) अमृत । सञ्जीवनी दवा ।

जीवनक—(न०) [जीवन+कन्] अन्न । (स्त्री०) खुराक । ठंड ।

जीवनीय—(न०) [√जीव्+अनीयर्] पानी । ताजा या टटका दूध ।

जीवन्त—(पु०) [√जीव्+झच्] जिंदगी, अस्तित्व । दवाई ।

जीवन्तिक—(पु०) [=जीवान्तक, पृषो० साधु] चिड़ीमार, बहेलिया ।

जीवा—(स्त्री०) [√जीव्+णिच्+अच्—टाप् वा √ज्या+क्विप्, संप्रसारण, दीर्घ, सा अस्ति अस्य इत्यर्थे व—टाप्] जल । पृथिवी । कमान की डोरी । वृत्तांश के दोनों प्रान्तों को मिलाने वाली सरल रेखा । आजीविका के साधन । गहनों की झंकार का शब्द । वच औषधि ।

जीवातु—(पु०, न०) [जीवत्यनेन, √जीव्+आतु] भोजन । जीवन । पुनरुज्जीवन; 'रे हस्त

दक्षिण मृतस्य शिशोर्द्विजस्य जीवातवे विसृज शूद्रमुनौ कृपाणं' उत्त० २.१० । मुर्दे को जिलाने वाली दवा ।

जीविका—(स्त्री०) [जीव्यतेऽनया, √जीव्+अ+कन्—टाप्, इत्व] जीवन-यात्रा का साधन, रोजी, वृत्ति ।

जीवित—(वि०) [√जीव्+क्त] जीता हुआ, जीवित, जीवनयुक्त । जिसे पुनः जीवन मिला हो । (न०) जीवन, अस्तित्व । जीवन की अवधि । आजीविका । प्राणधारी, जीव ।—**अन्तक** (**जीवितान्तक**)–(पुं०) शिव । —**ईश** (**जीवितेश**)–(पुं०) प्रेमी । पति । यम; 'जीवितेशवसतिं जगाम सा' र० ११.२० । सूर्य । चन्द्रमा ।—**काल**–(पुं०) जीवन काल या जीवन की अवधि ।—**ज्ञा**–(स्त्री०) नाड़ी, धमनी ।—**व्यय**–(पुं०) जीवनोत्सर्ग । —**संशय**–(पुं०) प्राणसङ्कट ।

जीविन्—(वि०) [जीव+इनि] [स्त्री०—**जीविनी**] जीवित, जिंदा । (पुं०) प्राणधारी ।

जीव्या—(स्त्री०) [जीव+यत्] आजीविका का साधन ।

√जु—भ्वा० पर० सक० जोर से चलना । जवति, जविष्यति, अजवीत् ।

जुकुट—(पुं०) मलय पर्वत । कुत्ता । (न०) बैंगन का पौधा ।

जुगुप्सन—(न०), **जुगुप्सा**—(स्त्री०) [√गुप् + सन् + ल्युट्] [√गुप्+सन् +अ—टाप्] भर्त्सना, फटकार । अरुचि, घृणा । निंदा ।

√जुङ्ग्—भ्वा० पर० सक० त्यागना । जुङ्गति, जुङ्गिष्यति, अजुङ्गीत् ।

जुटिका—(स्त्री०) [√जुट्(संहति, इकट्ठा होना) +क+कन्—टाप्, इत्व] शिखा, चोटी ।

√जुड्—तु० पर० सक० जाना । जुडति, जोडिष्यति, अजोडीत् । बाँधना । जुडति, जुडिष्यति, अजुडीत् । चु० पर० सक० प्रेरित करना । जोडयति, जोडयिष्यति, अजूजुडत् ।

√जुत्—भ्वा० आत्म० अक० चमकना । जोतते, जोतिष्यते, अजोतिष्ट ।

√जुष्—तु० आत्म० अक० सक० प्रसन्न या सन्तुष्ट होना । अनुकूल होना । पसन्द करना । उपयोग करना । अनुरक्त होना । सेवा करना । अनुसंधान करना । चुनना । तर्क करना । जुषते, जोषिष्यते, अजोषिष्ट ।

जुष्ट—(वि०) [√जुष्+क्त] प्रसन्न । सेवित । सम्पन्न । जूठा ।

जुष्य—(वि०) [√जुष्+क्यप्] सेवन करने योग्य ।

जुहुवान—(पुं०) अग्नि । चन्द्रमा । निष्ठुर व्यक्ति ।

जुहू—(स्त्री०) [जुहोति अनया, √हु+क्विप्, श्लुवद्भावेन द्वित्वादि] पलाश की लकड़ी का बना हुआ एक अर्धचन्द्राकार यज्ञपात्र । पूर्व दिशा ।

जुहोति—(स्त्री०) [√हु+श्तिप् (धात्वर्थ-निर्देश)] एक प्रकार का होम । यज्ञीयकर्म सम्बन्धी पारिभाषिक शब्द विशेष ।

जू—(स्त्री०) [√जु+क्विप्] तेज चाल । वायुमण्डल । राक्षसी । सरस्वती । बैल या घोड़े के माथे पर का टीका ।

जूक—(पुं०) [ग्रीक शब्द ?] तुला राशि ।

जूट—(पुं०) [√जुट् (संहति)+अच्, नि० ऊत्व] जटा । सिर के लम्बे और आपस में चिपटे हुए बाल ।

जूटक—(न०) [जूट+कन्] जटा ।

जूति—(स्त्री०) [√जु+क्तिन्, नि० दीर्घ] वेग, तेज रफ्तार । उत्तेजना । प्रवृत्ति ।

√जूर्—दि० आत्म० सक० वध करना । अक० नाराज होना । बढ़ना । जूर्यते, जूरिष्यते, अजूरिष्ट ।

जूर्ति—(स्त्री०) [√ज्वर्+क्तिन्, ऊठ्] ज्वर ।

√जुष्—भ्वा० पर० सक० मारना। जूषति, जूषिष्यति, अजूषीत्।

√जृम्भ्—भ्वा० आत्म० अक०, सक० जमुहाई लेना। खोलना। फैलाना। बढ़ाना। छा देना, सर्वत्र व्याप्त कर देना। प्रकट करना। आराम करना। पल्टा खाना, लौटना। जृम्भते, जृम्भिष्यते, अजृम्भिष्ट।

जृम्भ—(पुं०), **जृम्भण**—(न०), **जृम्भा, जृम्भिका**—(स्त्री०) [√जृम्भ्+घञ्] [√जृम्भ्+ल्युट्] [√जृम्भ्+अ—टाप्] [जृम्भा+कन्, ह्रस्व] जमुहाई। खिलना, प्रस्फुटन। फैलाव।

जृम्भक—(वि०) [√जृम्भ्+ण्वुल् वा √जृम्भ् + णिच्+ण्वुल्] जंभाई लेने वाला। मुक्त करने वाला। (पुं०) एक अस्त्र। एक रुद्रगण।

√जॄ—दि० पर० अक० बूढ़ा होना, पुराना पड़ जाना। जीर्यति, जरिष्यति—जरीष्यति, अजरत्—अजारीत्। क्र्या० पर० अक० बूढ़ा होना। जृणाति, जरिष्यति—जरीष्यति, अजरत्—अजारीत्।

जेतृ—(पुं०) [√जि+तृच्] जीतने वाला, विजयी। (पुं०) विष्णु।

जेन्ताक—(पुं०) [विदेशी शब्द?] गर्म कोठरी जिसमें बैठकर शरीर से पसीना निकाला जाय।

जेमन—(न०) [√जिम्+ल्युट्] भोजन करना, खाना। भोज्य पदार्थ।

√जेष्—भ्वा० पर० सक० जाना। जेषते, जेषिष्यते, अजेषिष्ट।

√जेह्—भ्वा० पर० अक० प्रयत्न करना। जेहते, जेहिष्यते, अजेहिष्ट।

जैत्र—(वि०) [स्त्री०—**जैत्री**] [जेतृ+अण्] जीतने वाला, विजयी। उत्कृष्ट; 'धनुर्जैत्रं रघुवंशी' र० ४.६६। (न०) विजय, जीत। उत्कृष्टता। (पुं०) पारा, पारद। एक औषध।

जैन—(पुं०) [जिन+अण्] जिनका उपासक, जैनी, जैन मतावलम्बी।

जैमिनि—(पुं०) पूर्वमीमांसा दर्शन के प्रवर्तक एक मुनि जो वेदव्यास के शिष्य थे।

जैवातृक—(वि०) [√जीव्+णिच्+आतृकन्] [स्त्री०—**जैवातृकी**] दीर्घजीवी। (पुं०) चंद्रमा। कपूर। पुत्र। दवा। किसान।

जैवेय—(पुं०) [जीवस्य गुरोः अपत्यम्, जीव+ढक्] बृहस्पति के पुत्र कच की उपाधि।

जैह्म्य—(न०) [जिह्म+ष्यञ्] टेढ़ापन, कुटिलता। असत्य।

जोङ्गट—(पुं०) [जुङ्गति अरोचकत्वं परित्यजति अनेन, √जुङ्ग्+अटन्, नि० गुण] गर्भवती स्त्री की रुचि या इच्छायें।

जोटिङ्ग—(पुं०) [जुट्+इन्, जोटि√गम्+ड, खित्वात् मुम्] शिव का नाम। महाव्रती।

जोष—(पुं०) [√जुष्+घञ्] सन्तोष। उपभोग। प्रसन्नता। शान्ति।

जोषम्—(अव्य०) [√जुष्+अम्] अपनी इच्छानुसार। सहज में। चुपचाप।

जोषा, जोषित्—(स्त्री०) [जुष्यते उपभुज्यते, √जुष्+घञ्—टाप्] [√जुष्+इति] नारी, स्त्री।

जोषिका—(स्त्री०) [√जुष् + ण्वुल्—टाप्, ह्रस्व] कलियों का गुच्छा। स्त्री।

ज्ञ—(वि०) [जानाति, √ज्ञा+क] (समासान्त शब्द के अन्त में जुड़ता है।) ज्ञाता। (पुं०) बुद्धिमान् एवं विद्वान् मनुष्य। बोधसम आत्मा। बुधग्रह। मङ्गलग्रह। ब्रह्मा।

√ज्ञप्—चु० पर० सक० जानना। बताना। मारना। तेज करना। प्रसन्न करना। स्तुति करना। ज्ञपयति, ज्ञपयिष्यति, अजिज्ञपत्।

ज्ञपित, ज्ञप्त—(वि०) [√ज्ञप्+णिच्+क्त] जाना हुआ। बताया हुआ। मारा हुआ। तुष्ट किया हुआ। तेज किया हुआ। प्रसन्न किया हुआ।

ज्ञप्ति—(स्त्री०) [√ज्ञप्+क्तिन्] ज्ञान। बुद्धि। तेज करना। तोषण। स्तुति। मारण। समझ। बुद्धि। प्रकटन। प्रख्यापन।

√ज्ञा—क्र्या० पर० सक० जानना। ढूँढ़ निकालना, पता लगा लेना। जाँचना, परीक्षा करना। पहचान लेना। सोचना-विचारना। (णिजन्त)—[**ज्ञापयति, ज्ञपयति**] सूचना देना। प्रकट करना। प्रार्थना करना। जानाति, ज्ञास्यति, अज्ञासीत्।

ज्ञात—(वि०) [√ज्ञा+क्त] जाना हुआ, विदित।—**सिद्धान्त**–(पुं०) वह मनुष्य जो किसी शास्त्र को पूर्ण रूप से जानकारी रखता हो।

ज्ञाति—(पुं०) [√ज्ञा+क्तिन्] पिता। पितृवंश में उत्पन्न व्यक्ति, गोतिया, सपिण्ड।—**भाव**–(पुं०) बिरादरी, रिश्तेदारी, नातेदारी।—**भेद**–(पुं०) नातेदारी में मतभेद।—**विद्**–(वि०) नगीची नातेदारी करने वाला।

ज्ञातेय—(न०) [ज्ञाति+ढक्–एय] ज्ञातित्व। कुल, वंश का होना। नातेदारी।

ज्ञातृ—(वि०) [√ज्ञा+तृच] जानने वाला। (पुं०) बुद्धिमान् आदमी। परिचित व्यक्ति। जमानत, प्रतिभू।

ज्ञान—(न०) [√ज्ञा+ल्युट्] जानना, बोध, जानकारी। सच्ची जानकारी, सम्यक् बोध; 'बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति' मनु। पदार्थ का ग्रहण करने वाली मन की वृत्ति। शास्त्रानुशीलन आदि से आत्मतत्त्व का अवगम, आत्मसाक्षात्कार। बुद्धिवृत्ति। वेद। परब्रह्म।—**अनुत्पाद** (**ज्ञानानुत्पाद**)–(पुं०) अज्ञानता, मूर्खता।—**आत्मन्** (**ज्ञानात्मन्**)–(वि०) सर्वविद। बुद्धिमान्।—**इन्द्रिय** (**ज्ञानेन्द्रिय**)–(न०) ज्ञानेन्द्रिय जो पाँच हैं। (यथा त्वच्, रसना, चक्षुस्, कर्ण, नासिका)।—**काण्ड**–(न०) वेद का भाग विशेष, जिसमें आत्मा और परमात्मा सम्बन्धी ज्ञान है।—**कृत**–(वि०) जानबूझ कर किया हुआ।—**गम्य**–(वि०) ज्ञान से जानने योग्य।—**चक्षुस्**–(वि०) ज्ञानदृष्टि रखने वाला, विद्वान्।—**तत्त्व**–(न०) सत्यज्ञान, ब्रह्मज्ञान।—**तपस्**–(न०) तपस्या जो सत्यज्ञान सम्पादनार्थ की जाय।—**द**–(पुं०) गुरु।—**दा**–(स्त्री०) सरस्वती।—**दुर्बल**–(वि०) ज्ञान-शून्य।—**निष्ठ**–(वि०) सत्य अथवा आध्यात्मिक ज्ञान सम्पादन में तत्पर।—**पति**–(पुं०) गुरु। परमेश्वर।—**वृद्ध**–(वि०) ज्ञानवान्।—**यज्ञ**–(पुं०) दार्शनिक।—**लक्षण**–(स्त्री०) विशेषण द्वारा विशेष्य का ज्ञान। न्यायशास्त्र के अनुसार अलौकिक प्रत्यक्ष का एक भेद।—**वापी**–(स्त्री०) काशी का एक प्रसिद्ध तीर्थ।—**शास्त्र**–(न०) भविष्य-कथन का विज्ञान, भाग्य में लिखे को बताने की विद्या।—**साधन**–(न०) ज्ञानेन्द्रिय।

ज्ञानतः—(अव्य) [ज्ञान+तस्] जान-बूझ कर, इरादतन।

ज्ञानमय—(वि०) [ज्ञान+मयट्] आध्यात्मिक ज्ञानसम्पन्न ज्ञानरूप; 'इतरो दहने स्वकर्मणां ववृते ज्ञानमयेन वह्निना' र० ८-२०। (पुं०) परब्रह्म। शिव।

ज्ञानिन्—(वि०) [ज्ञान+इनि] ज्ञानयुक्त। जिसने आत्मज्ञान या ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर लिया है। (पुं०) ज्योतिषी। ऋषि।

ज्ञापक—(वि०) [√ज्ञा+णिच्+ण्वुल्] जताने वाला, सूचक, बोधक। (पुं०) गुरु। स्वामी।

ज्ञापन—(न०) [√ज्ञा+णिच्+ल्युट्] जताना, बताना। प्रकट करना।

ज्ञापित—(वि०) [√ज्ञा+णिच्+क्त] जताया हुआ। सूचित। प्रकाशित।

ज्ञीप्सा—(स्त्री०) [ज्ञातुम् इच्छा, √ ज्ञा +सन्+अ–टाप्] जानने की अभिलाषा।

√ज्या—क्र्या० पर० अक० वृद्ध होना। जिनाति, ज्यास्यति, अज्यासीत्।

ज्या—(स्त्री०) [√ ज्या+अङ्–टाप्] कमान की डोरी। प्रत्यञ्चा। वृत्तांश की सरल रेखा।

पृथिवी । जननी, माता ।—**मिति**–(स्त्री०) रेखागणित, क्षेत्रगणित ।

ज्यानि—(स्त्री०) [√ज्या+नि] बुढ़ापा । त्याग । नदी । हानि ।

ज्यायस्—(वि०) [स्त्री०—**ज्यायसी**][अयम् अनयोः अतिशयेन प्रशस्यः वृद्धो वा, प्रशस्य वा वृद्ध+ईयसुन्, ज्यादेश] सर्वोत्कृष्ट, सर्वोत्तम । अधिकतर, बड़ा; 'प्रसवक्रमेण स किल ज्यायान्' उत्त० ६ । अधिकतर वयस्क, बालिग ।

√ज्यु—भ्वा० आत्म० सक० जाना । ज्यवते ज्योष्यते, अज्योष्ट ।

ज्येष्ठ—(वि०) [अयमेषामतिशयेन वृद्धः प्रशस्यो वा, वृद्ध वा प्रशस्य+इष्ठन्, ज्यादेश] जेठा, सब से बड़ा । सर्वोत्तम । मुख्य, प्रधान । प्रथम । (पुं०) बड़ा भाई । जेठ का महीना । परमेश्वर । सामगान का एक भेद । प्राण । टीन ।—**अंश**—(ज्येष्ठांश)–(पुं०) बड़े भाई का हिस्सा । पैतृक सम्पत्ति का वह विशेष हक जो सबसे बड़े भाई को (सब से बड़ा होने के कारण) प्राप्त होता है । सर्वोत्तम भाग ।—**अंबु**–(**ज्येष्ठाम्बु**)–(न०) पानी जिसमें अनाज धोया गया हो । माँड़, भात का पसावन ।—**आश्रम**—(**ज्येष्ठाश्रम**)–(पुं०) सर्वोत्तम अर्थात् गृहस्थ आश्रम । गृहस्थ ।—**तात**–(पुं०) ताऊ, पिता का बड़ा भाई ।—**वर्ण**–(पुं०) सब से ऊँची जाति अर्थात् ब्राह्मण जाति ।—**वृत्ति**–(पुं०) बड़ों का कर्तव्य ।—**श्वश्रू**–(स्त्री०) भार्या की बड़ी बहिन, बड़ी साली ।

ज्येष्ठा—(स्त्री०) [ज्येष्ठ+टाप्] सब से बड़ी बहिन । १८ वाँ नक्षत्र । मध्यमा अँगुली । छिपकली, बिस्तुइया । गङ्गा का नाम ।

ज्येष्ठी—(स्त्री०)[ज्येष्ठ+ङीप्] छिपकली ।

ज्यैष्ठ—(पुं०) [ज्येष्ठानक्षत्रयुक्ता पौर्णमासी, ज्येष्ठ+अण्—ङीप्, सा अस्मिन् मासे इति पुनः अण्] चान्द्र मास विशेष, जेठ मास ।

ज्यैष्ठी–(स्त्री०) [ज्येष्ठानक्षत्रयुक्ता पौर्णमासी, ज्येष्ठ+अण्—ङीप्] ज्येष्ठ मास की पूर्णिमा । छिपकली, बिस्तुइया ।

ज्यैष्ठ्य—(न०) [ज्येष्ठ+ष्यञ्] ज्येष्ठत्व, जेठापन । मुख्यता, प्रधानता ।

ज्योक्—(अव्य०) [√ज्या+उकुन्] दीर्घकाल । प्रश्न । शीघ्रता । अभी । उज्ज्वलता ।

ज्योतिर्मय—(वि०) [ज्योतिस्+मयट्]ज्योति से भरा हुआ, प्रकाशमय ।

ज्योतिष—(वि०) [ज्योतिः अस्ति अस्य, ज्योतिस्+अच्] ग्रह-नक्षत्रों की स्थिति, गति आदि का विचार करने वाला शास्त्र (गणित ज्यो०) । ग्रह-नक्षत्र आदि के शुभाशुभ फल बताने वाला शास्त्र (फलित ज्यो०) ।

ज्योतिषी—(स्त्री०) **ज्योतिष्क**–(पुं०) [ज्योतिष—ङीप्] [ज्योतिः इव कायति, ज्योतिस् √कै+क] नक्षत्र, तारा ।

ज्योतिष्मत्—(वि०) [ज्योतिस्+मतुप्] चमकदार, चमकीला । स्वर्गीय । (पुं०) सूर्य ।

ज्योतिष्मती—(स्त्री०) [ज्योतिष्मत्+ङीप्] रात; 'नक्षत्रताराग्रहसंकुलापि ज्योतिष्मती चन्द्रमसैव रात्रिः' र० ६.२२ । मन की शान्ति । मालकंगनी । एक नदी ।

ज्योतिस्—(न०) [द्योतते द्युत्यते वा√द्युत्+इसुन्, दस्य जादेशः] प्रकाश, रोशनी । लौ । (पुं०) सूर्य । नक्षत्र । अग्नि । आँख की पुतली का मध्यबिंदु । दृष्टि । आत्मा, चैतन्य । ज्योतिष शास्त्र । मेथी ।—**इङ्ग** (**ज्योतिरिङ्ग**), —**इङ्गण** (ज्योतिरिङ्गण) (पुं०) जुगनू ।—**कण** (**ज्योतिष्कण**)–(पुं०) आग की चिनगारी ।—**गण** (**ज्योतिर्गण**)–(पुं०) नक्षत्र या ग्रह समूह ।—**चक्र** (**ज्योतिश्चक्र**)–(न०) राशिचक्र ।—**ज्ञ** (**ज्योतिर्ज्ञ**) (पुं०)–ज्योतिषी ।—**मण्डल** (**ज्योतिर्मण्डल**)–(न०) ग्रहमण्डल ।—**रथ**–(**ज्योतीरथ**) ध्रुवतारा ।—**विद्** (**ज्योतिर्विद्**)–(पुं०) ज्योतिषी ।—**विद्या** (**ज्योतिर्विद्या**)–(स्त्री०), —**शास्त्र**

(ज्योतिःशास्त्र)–(न०) वह नक्षत्रादि की गति और स्वरूप का निश्चय कराने वाला शास्त्र ।—स्तोम (ज्योतिष्टोम)–(पुं०) [ज्योतींषि स्तोमा यस्य, ब० स०, षत्व] यज्ञ विशेष जिसे सम्पन्न करने के लिये १६ कर्म-काण्डी विद्वानों की आवश्यकता होती है ।

ज्योत्स्ना—(स्त्री०) [ज्योतिः अस्ति अस्याम् ज्योतिस्+न (नि०), उपधालोप] चाँदनी; 'स्फुरत्स्फार-ज्योत्स्ना-धवलित-तले क्वापि पुलिने' भर्तृ० ३.४२ । चाँदनी रात । दुर्गा । साँझ ।—ईश (ज्योत्स्नेश)–(पुं०) चन्द्रमा । —प्रिय– (पुं०) चकोर पक्षी ।—वृक्ष–(पुं०) शमादान, दीवट । मोमबत्ती ।

ज्यौत्स्नी—(स्त्री०) [ज्योत्स्ना अस्ति अस्य +ज्योत्स्ना + अण्–ङीप् (संज्ञापूर्वकस्य विधेः अनित्यत्वात् न वृद्धिः]चाँदनी रात । पटोल ।

ज्यौतिषिक—(पुं०) [ज्योतिष् +ठक्] दैवज्ञ, ज्योतिषी ।

ज्यौत्स्न—(पुं०) [ज्योत्स्ना+अण्] शुक्ल पक्ष ।

√**ज्रि**—भ्वा० पर० सक० दबाना । अक० दबना । ज्रयति, ज्रेष्यति, अज्रैषीत् । चु० पर० अक० वृद्ध होना । ज्राययति–ज्रयति ।

√**ज्वर्**—भ्वा० पर० अक० ज्वर आना । रोगी होना, बीमार होना । ज्वरति, ज्वरिष्यति, अज्वारीत् ।

ज्वर—(पुं०) [√ज्वर्+घञ्] बुखार, ताप । मानसिक व्यथा । पीड़ा ।—अग्नि (ज्वराग्नि) –(पुं०) ज्वर का चढ़ाव ।—अंकुश (ज्वरांकुश)–(पुं०) ज्वरनाशक दवा ।—प्रतीकार–(पुं०) ज्वर की दवा या ज्वर दूर करने का उपाय ।

ज्वरित, ज्वरिन्—(वि०) [ज्वर+इतच्] [ज्वर+इनि] ज्वर चढ़ा हुआ, ज्वर से आक्रान्त ।

√**ज्वल्**—भ्वा० पर० अक० दहकना । जल जाना । उत्सुक होना । ज्वलति–ज्वलयति, ज्वलिष्यति, अज्वालीत् ।

ज्वलन—(वि०) [√ज्वल्+ल्यु] दाहकारी । दहकता हुआ । जल उठने वाला । (पुं०) अग्नि; "तदनु ज्वलनं मदर्पितं त्वरयेर्दक्षिण-वातवीजनैः" कु० ४.३६ । चित्रक वृक्ष । तीन की संख्या । (न०)[√ज्वल्+ल्युट्] जलना । चमकना ।

ज्वलित—(वि०) [√ज्वल्+क्त] जला हुआ । प्रकाशमान ।

ज्वाल—(पुं०) [√ज्वल् + ण] ज्वाला । मशाल ।

ज्वाला—(स्त्री०) [ज्वाल+टाप्] आग की लपट, अग्निशिखा । ताप, दाह । दग्धान्न । —जिह्व,–ध्वज–(पुं०) आग ।—मुखी–(स्त्री०) आतिशी पहाड़, पहाड़ जिससे आग निकले । —वक्त्र–(पुं०) शिव की एक उपाधि ।

ज्वालिन्—(वि०) [√ज्वल्+णिनि] (पुं०) शिव ।

झ

झ—संस्कृत अथवा देवनागरी वर्णमाला का नवाँ और चवर्ग का चौथा वर्ण । यह स्पर्श वर्ण है और इसके उच्चारण में संवार, नाद और घोष प्रयत्न होते हैं । च, छ, ज और ञ इसके सवर्ण कहे जाते हैं । इसका उच्चारण-स्थान तालु है । (पुं०) [√झट्+ड] झुन-झुन की आवाज । झंझावात । बृहस्पति ।

झगझगायति—(क्रि०) [झगझग + क्यङ्, लट्–तिप्] चमकना । जल उठना ।

झगिति, झगिति—(अव्य०) [=झटिति, पृषो० साधुः] शीघ्रता से, फुर्ती से; 'साध्व-ष्वारा झगित्यासीत्तद्रूपाकृष्टलोचना' महा०

झङ्कार—(पुं०), **झङ्कृत**–(न०) [झन् इति अव्यक्तशब्दस्य कृतम् करणं यत्र] झन-झनाहट । झाँझ, पायल आदि के बजने से

होने वाली ध्वनि। वीणा, सितार आदि की ध्वनि।

झङ्कारिणी—(स्त्री०) [झङ्कार+इनि—ङीप्] गङ्गा नदी।

झङ्कृति—(स्त्री०) दे० 'झङ्कार'।

झञ्झन—(न०) [अव्यक्त शब्द] धातु के बने आभूषणों का शब्द, झनकार।

झञ्झा—(स्त्री०) [झम् इत्यव्यक्तशब्दं कृत्वा झटिति वेगेन वहतीति √झट्+ड—टाप्] पवन के चलने या जलवृष्टि का शब्द। आँधी-पानी। तूफान। झनझन शब्द।—**अनिल** (झञ्झानिल), —**मरुत्**,—**वात**- (पुं०) आँधी-पानी। तूफान।

√**झट्**—भ्वा० पर० अक० इकट्ठा होना। झटति, झटिष्यति, अझाटीत्—अझटीत्।

झटिति—(अव्य०) [√झट्+क्विप्, √इ +क्तिन्] तुरन्त, फुर्ती से, फौरन।

झणझण—(न०) **झणझणा**—(स्त्री०) [झणत्+डाच्, द्वित्व, पूर्वपदटिलोप] झंकार, झनझन का शब्द।

झणझणायित—(वि०) [झणझण + क्यङ +क्त] झणझण शब्द से शब्दित।

झणत्कार, झनत्कार—(पुं०) [झणत् या झनत् शब्दस्य कारः करणं यत्र] नूपुर कङ्कण आदि के बजने का शब्द, झनकार; 'झणत्काररूरक्वणितगुणगुञ्जद्गुरुधनुः' उत्त० ५.२६।

√**झम्**—भ्वा० पर० सक० खाना। झमति, झमिष्यति, अझमीत्।

झम्प—(पुं०), **झम्पा**-(स्त्री०) [झम् √पत् +ड] [झम्प+टाप्] कूदना, कुलाँच, उछाल, झपट। घोड़ों के गले में पहनाने का एक गहना।

झम्पाक, झम्पारु, झम्पिन्—[झम्पेन अकति गच्छति, झम्प √अक्+अण्] [झम्प—आ√रा+डु] [झम्प+इनि] बंदर। लंगूर।

झर—(पुं०), **झरा, झरी**-(स्त्री०) [√झॄ +अच्] [झर+टाप्] [झर+ङीप्] झरना। जलप्रपात। सोता।

√**झर्झ्**—भ्वा० तु० पर० सक० झिड़कना, मारना। पीटना। झर्झति, झर्झिष्यति, अझर्झीत्।

झर्झर—(पुं०) [√झर्झ्+अरन्] ढोल। कलियुग। बेंत की छड़ी। झाँझ, मंजीरा।

झर्झरा—(स्त्री०) [झर्झर+टाप्] वेश्या, रंडी।

झर्झरिन्—(पुं०) [झर्झर+इनि] शिव जी की उपाधि।

झर्झरीक—(पुं०) [√झर्झ्+ईकन्, नि०-सिद्धि] शरीर। देश। तसवीर।

झलज्झला—(स्त्री०) [झलज्झल इत्यव्यक्त-शब्दः अस्ति, अस्य, झलज्झल+अच्—टाप्] बूँदों की झड़ी की आवाज। हाथी के कानों के फड़फड़ाने का शब्द।

झला—(स्त्री०) [=झरा, पृषो० साधुः] लड़की। धूप। झींगुर।

झल्ल—(पुं०) [√झर्झ्+क्विप्, तं लाति, √ला+क] एक वर्णसंकर जाति। भाँड। हुडुक। ज्वाला।—**कण्ठ**-(पुं०) कबूतर।

झल्लक—(न०), **झल्लकी**-(स्त्री०) [झल्ल +कन्][झल्लक+ङीप्] करताल। झाँझ।

झल्लरी—(स्त्री०) [√झर्झ्+अरन्, पृषो० साधुः] हुडुक। झाँझ। पसीना। शुद्धता। घुँघराले बाल।

झल्लिका—(स्त्री०) [झल्ली√कै+क, पृषो० साधुः] उबटन लगाने से छूटा हुआ शरीर का मैल। रंग, इत्र आदि लगाने में व्यवहृत रुई या कपड़े की धज्जी। द्युति, चमक।

झल्ली—(स्त्री०) [झल्ल+ङीष्]एक बाजा, हुडुक।

√**झष्**—भ्वा० पर० सक० मारना। झषति, झषिष्यति, अझाषीत्—अझषीत्। उभ० सक० लेना। छिपाना। झषति—ते, झषि-

ष्यति—ते, अझषीत् — अझाषीत्—अझ-षिष्ट ।

झष—(न०) [√झष्+अच्] रेगिस्तान, बियाबान वन । (पुं०)[√झष्+अ] मछली । मगर ।; सामान्यतः जलचर जीव 'झषाणाम् मकरश्चास्मि' भग० १०.३१ । मीन-राशि । गर्मी । ताप ।—**अङ्क** (**झषाङ्क**),—**केतन**, —**केतु**, —**ध्वज**-(पुं०) कामदेव के नाम । —**अशन** (**झषाशन**)-(पुं०) सूंस ।—**उदरी** (**झषोदरी**)-(स्त्री०) व्यासमाता सत्यवती का नाम ।

झाङ्कृत—(न०) [झंकृत + अण्] पायजेब, झाँझन । जल गिरने का शब्द; 'स्थाने स्थाने मुखरककुभो झाङ्कृतैर्निर्झराणाम्' उत्त० २.१४ ।

झाट—(पुं०) [√झट्+घञ्] लताच्छादित स्थान, कुञ्ज । झाड़ी । घाव को धोना ।

झामक—(न०) [√झम् + ण्वुल्] जली हुई ईंट, झाँवा ।

झालरी—(स्त्री०) नौबत । मृदंग । नगारा । खंजरी ।

झिङ्गिनी—(स्त्री०) [√झिङ्ग्+णिनि, पृषो० साधुः] लूक । जिंगिनी नामक एक जंगली पेड़ ।

झिण्टी—(स्त्री०) [झिम् √रट्+अच्—ङीप्, पृषो० साधुः] कटसरैया ।

झिरिका—(स्त्री०)—[झिरि इति कायति शब्दायते, झिरि √कै+क—टाप्] झींगुर ।

झिल्लि—(स्त्री०) [झिर् इत्यव्यक्तशब्द लिशति, झिर् √लिश्+डि] झींगुर । एक बाजा । रोशनी. प्रकाश ।—**कण्ठ**-(पुं०) पालतू कबूतर ।

झिल्लिका—(स्त्री०) [झिल्ली + कन्—टाप्] झींगुर । झींगुर की झनकार । सूर्य-प्रकाश । दीप्ति । झिल्ली ।

झिल्ली—(स्त्री०) [झिल्लि+ङीष्] झींगुर । सूर्य की किरण का तेज । दीप्ति । दीये की बत्ती । एक बाजा ।

झीरुका—(स्त्री०) झींगुर ।

झुण्ट—(पुं०) [√जुण्ट् + अच्, पृषो० साधुः] बिना तने का पेड़ । झाड़ी ।

√झॄ—दि०, क्र्या० पर० अक० वृद्ध या पुराना होना । झीर्यति, (क्र्या०) झृणाति, झरिष्यति—झरीष्यति, अझारीत् ।

झोड—(पुं०) सुपाड़ी का पेड़ ।

ञ

ञ—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का दसवाँ व्यञ्जन जो चवर्ग का पाँचवाँ वर्ण है । इसका उच्चारण-स्थान तालु और नासिका है । इसका प्रयत्न स्पर्श, घोष और अल्पप्राण है ।(पुं०) बैल । शुक्र । ऐंड़ी-बैंड़ी चाल । सङ्गीत । घर्घर शब्द ।

ट

ट—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का ग्यारहवाँ व्यञ्जन और टवर्ग का प्रथम अक्षर । इसका उच्चारण-स्थान मूर्द्धा है । इसके उच्चारण में तालु से जीभ लगानी पड़ती है । (पुं०) [√टल्+ड] धनुष की टंकार । चतुर्थांश । वामन । पृथिवी । नारियल की नरेरी । बौना ।

√टङ्क्—चु० उभ० सक० बाँधना । लपेटना । कसना । ढकना । आच्छादित करना । टङ्कयति—ते, टङ्कयिष्यति—ते, अटटङ्कत्—त ।

टङ्क—(पुं०, न०) [√टङ्क्+घञ् वा अच्] कुदाली, कुल्हाड़ी । छेनी; 'टङ्कैर्मनःशिल-गुहेव विदार्यमाणा' मृ० १.२० । तलवार । तलवार की म्यान । पहाड़ी का ढाल । क्रोध । अहङ्कार । टाँग ।

टङ्कक—(पुं०) [टङ्क+कन्] चाँदी का सिक्का जिस पर ठप्पा लगा हो ।—**पति**-(पुं०) टकसाल का प्रधानाध्यक्ष ।—**शाला**-(स्त्री०) टकसालघर ।

टङ्कण, **टङ्कन**—(न०) [√टङ्क्+ल्यु, पृषो० णत्व, पक्षे णत्वाभाव] सुहागा । (पुं०) घोड़े की एक जाति । जाति विशेष के मनुष्य । —**क्षार**-(पुं०) सुहागा ।

टङ्कार—(पुं०) [टं चित्र-विकृतिं करोति, टम् √कृ+अण्] धनुष की चढ़ी हुई डोरी को खींचकर छोड़ने से उत्पन्न ध्वनि । धातुखंड आदि पर आघात होने से उत्पन्न ध्वनि । चिल्लाहट । प्रसिद्धि । विस्मय ।

टङ्कारिन्—(वि०) [टङ्कार+इनि] टंकार करने वाला । [स्त्री०—**टङ्कारिणी**]

टङ्किका—(स्त्री०) [टङ्क+कन्—टाप्, इत्व] पत्थर काटने की छेनी, टाँकी ।

टङ्ग—(पुं०, न०) [=टङ्क, पृषो० साधुः] कुदाल । फरसा । चार माशे की एक तौल । सोहागा । जंघा ।

टङ्गण—(पुं०, न०) [टङ्कण, पृषो० साधुः] सोहागा ।

टङ्गा—(स्त्री०) [टङ्ग+टाप्] टाँग ।

टट्टनी—(स्त्री०) [टट्ट√नी+ड, ङीप्] छिपकली ।

टट्टरी—(स्त्री०) [टट्टेति शब्दं राति, टट्ट √रा+क—ङीप्] ठट्ठा । डींग । झूठी बात । एक बाजा, ढोल ।

√टल्—भ्वा० पर० अक० बेचैन होना । टलति, टलिष्यति, अटालीत्—अटलीत् ।

टाङ्कुर—(पुं०) [टङ्कस्येदं टाङ्कं राति, √रा+क] लंपट । कुटना ।

टाङ्कार—(पुं०) [टङ्कार+अण्] टंकार । झंकार । गुंजार ।

√टिक्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । टेकते, टेकिष्यते, अटेकिष्ट ।

टिटिभ, टिट्टिभ—(पुं०) [टिटीत्यव्यक्तशब्दं भणति, टिटि√भण्+ड] [टिट्टीत्यव्यक्तशब्दं भणति, टिट्टि√भण्+ड] [स्त्री०—**टिटिभी या टिट्टिभी**] टिटहरी चिड़िया ।

√टिप्—चु० उभ० सक० प्रेरणा करना । चलाना । टेपयति—ते, टेपयिष्यति—ते, अटीटिपत्—त ।

टिप्पणी, टिप्पनी—(स्त्री०) [√टिप्+क्विप्, टिपा पन्यते स्तूयते, टिप्√पन्+अच्—ङीप् पक्षे पृषो० णत्व] व्याख्या । टीका ।

√टीक्—भ्वा० पर० सक० जाना । टीकते, टीकिष्यते, अटीकिष्ट ।

टीका—(स्त्री०) [टीक्यते गम्यते बुध्यते वा अनया, √टीक्+क—टाप्] किसी वाक्य या पद का अर्थ स्पष्ट करने वाला वाक्य, व्याख्या ।

टुण्टुक—(पुं०) [टुण्ट् इत्यव्यक्तशब्दं कायति, टुण्ट्√कै+क] एक पक्षी । काला खैर । श्योनाक वृक्ष, सोनापाठा । (वि०) छोटा । थोड़ा । निष्ठुर, नृशंस । सख्त, कड़ा ।

√ट्वल्—भ्वा० पर० अक० बेचैन होना । ट्वलति, ट्वलिष्यति, अट्वलीत् ।

ठ

ठ—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का बारहवाँ व्यञ्जन और टवर्ग का दूसरा वर्ण । इसका उच्चारण-स्थान मूर्धा है । इसका उच्चारण करते समय जीभ का मध्य-भाग तालु में लगाना पड़ता है । (पुं०) [पृषो० साधुः] रव । चन्द्र अथवा सूर्य मण्डल । वृत्त । शून्य । पवित्र स्थान । मूर्ति । देव । शिव जी का नाम ।

ठक्कुर—(पुं०) देव-प्रतिमा । प्रतिष्ठासूचक एक उपाधि । काव्यप्रदीप के रचयिता का नाम ।

ठार—(पुं०) पाला, बरफ ।

ठालिनी—(स्त्री०) पटका, कमरबंद ।

ड

ड—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का तेरहवाँ व्यञ्जन । टवर्ग का तीसरा वर्ण । इसका उच्चारण आभ्यन्तर प्रयत्न द्वारा तथा जिह्वा-मध्य को मूर्द्धा में लगाने से किया जाता है । (पुं०) [√डी+ड] शब्द विशेष । एक प्रकार का ढोल या मृदङ्ग । बाडवाग्नि, समुद्र की आग । भय । शिव । पक्षी विशेष ।

डक्कारी—(स्त्री०) चाण्डाल का बाजा । वीणा ।

√डप्—चु० आत्म० सक० इकट्ठा करना । डापयते ।

डम—(पुं०) [ड√मा+क] डोम, एक नीच जाति ।

डमर—(न०) [√मृ+अच्, मरम्, डेन त्रासेन मरम् पलायनम्, तृ० त०] डर कर भाग निकलना । (पुं०) गदर, विप्लव । शत्रु को भावभङ्गी और ललकार से डराना ।

डमरु—(पुं०) [डम् इत्यव्यक्तशब्दम् ऋच्छति, डम्√ऋ+कु] एक प्रकार का बाजा जो शिव जी को बड़ा प्रिय है, कापालिक शैवों का वाद्ययंत्र ।

√डम्ब्—चु० उभ० सक० फेंकना । भेजना । आज्ञा देना । देखना । डम्बयति—ते, डम्बयिष्यति—ते, अडडम्बत्—त ।

डम्बर—(वि०) [√डम्ब्+अरन्] प्रसिद्ध, विख्यात । (पुं०) आडम्बर । चहल-पहल । समूह । सादृश्य । गर्व । आयोजन । भारी शब्द; 'गौडी डम्बरबद्धा स्यात्' सा० द० ९। सौंदर्य । विस्तार । एक प्रकार का बड़ा चँदोवा ।

डयन—(न०) [√डी+ल्युट्] उड़ने की क्रिया, उड़ान । पालकी, डोली ।

डलक या डल्लक—(न०) डलिया या डला ।

डवित्थ—(पुं०) काठ का बारहसिंहा ।

डाकिनी—(स्त्री०) [डाय भयदानाय अकति व्रजति, ड√अक्+इनि—ङीप्] काली देवी की एक सहचरी ।

डाकृति—(स्त्री०) घंटे की नाद, झालर का शब्द ।

डामर—(वि०) भयानक, भयङ्कर । विप्लवकारी, उपद्रवी । मनोहर, सुस्वरूप । (पुं०) कोलाहल, चीत्कार । उपद्रव । किसी उत्सव या लड़ाई झगड़े के समय होने वाला चीत्कार या कोलाहल ।

डालिम—(पुं०) [=दाडिम, पृषो० साधुः] दाडिम, अनार ।

डाहल—(पुं०) एक देश और उस देश के अधिवासी ।

डिङ्गर—(पुं०) नौकर, चाकर । गुण्डा, बदमाश । नीच जाति का आदमी ।

डिण्डिम—(पुं०) [डिण्डीतिशब्दं माति, डिण्डि√मा+क] ढोलक । डुग्गी ।

डिण्डिर, डिण्डीर—(पुं०) [डिण्डि+र, पक्षे दीर्घः] समुद्रफेन ।

√डिप्—दि० पर० सक० निंदा करना । डिप्यति, डेपिष्यति, अडेपीत् । तु० पर० सक० निंदा करना । डिपति, डिपिष्यति, अडिपीत् । चु० आत्म० अक० इकट्ठा होना । डेपयते—डेपति ।

डिम्—भ्वा० पर० सक० मारना । डेमति, डेमिष्यति, अडेमीत् ।

डिम—(पुं०) [√डिम्+क] दस प्रकार के नाटकों में से एक ।—मायेन्द्रजालसंग्रामक्रोधोद्भ्रान्तादिचेष्टितैः । उपरागैश्च भूयिष्ठो डिमः ख्यातोऽतिवृत्तकः ॥

√डिम्ब्, डिम्भ्—चु० उभ० सक० प्रेरित करना । डिम्बयति—ते, डिम्भयति—ते ।

डिम्ब—(पुं०) [√डिम्ब्+घञ्] झगड़ा, टंटा । भयभीत होने पर किया हुआ शब्द । बच्चा । अण्डा । गोला या गेंद ।—**आहव** (**डिम्बाहव**)—(पुं०)—**युद्ध**—(न०) झूठा युद्ध, बिना हथियारों की लड़ाई ।

डिम्बिका—(स्त्री०) [√डिम्ब्+ण्वुल्—टाप्] छिनाल औरत, कामुकी स्त्री । बुलबुला । सोनापाठा ।

डिम्भ—(पुं०) [√डिम्भ्+अच्] बच्चा । जानवर का बच्चा; 'जृम्भस्व रे डिम्भ दन्तांस्ते गणयिष्यामि' श० ७। मूर्ख ।

डिम्भक—(पुं०) [स्त्री०—**डिम्भिका**] [डिम्भ+कन्] छोटा बच्चा । जानवर का बच्चा ।

√डी—भ्वा० आत्म० अक० उड़ना । डयते, डयिष्यते, अडयिष्ट । दि० आत्म० अक० उड़ना । डीयते, डयिष्यते, अडयिष्ट ।

डीन—(वि०) [√डी+क्त] उड़ा हुआ । (न०) पक्षी की उड़ान । पक्षियों की उड़ान

१०१ प्रकार की होती हैं। इन उड़ानों के भेदों के द्योतक उपसर्ग डीन में लगाने से उस-उस उड़ान का बोध होता है। यथाः—"अवडीन", "उड्डीन", "प्रडीन" "अभिडीन", "विडीन", "परिडीन", "पराडीन" आदि।

डुण्डुभ—(पु०) [डुण्डु√भा+क] निर्विष सर्प विशेष, ढोंड़ साँप।

डुलि—(स्त्री०) [=दुलि, पृषो० साधुः] कछुई। एक वाहन।

डोम—(पु०) [√डिम्+अच्] डोम। अत्यन्त नीच जाति का आदमी।

ढ

ढ—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का चौदहवाँ व्यञ्जन। टवर्ग का चौथा वर्ण। इसका उच्चारण स्थान मूर्द्धा है। (पु०) [√ढौक्+ड] बड़ा ढोल। कुत्ता। कुत्ते की पूँछ। परमेश्वर। ध्वनि। साँप।

ढक्का—(स्त्री०) [ढक् इति शब्देन कायति, ढक् √कै+क—टाप्] बड़ा ढोल।

ढामरा—(स्त्री०] हंसी, मादा हंस।

ढाल—(न०) [√ढौक्+अच्, पृषो० साधुः] तलवार, भाले आदि के आघात को रोकने का गेंड़े या भैंड़े के चमड़े का बना कछुए की पीठ जैसा एक साधन।

ढालिन्—(पु०) [ढाल+इनि] ढालधारी योद्धा।

√ढुण्ढ्—भ्वा० आत्म० सक० ढूँढ़ना। ढुण्ढति, ढुण्ढिष्यति, अढुण्ढीत्।

ढुण्ढि—(पु०) [√ढुण्ढ्+इन्] गणेश जी।

ढोल—(पु०) [ढक्का तदाकारं लाति, √ला+क, पृषो० साधुः] हाथ से बजाने का एक बाजा जो दोनों ओर चमड़े से मढ़ा होता है, ढोल। कानका भीतरी परदा, कर्णपटह।

√ढौक्—भ्वा० आत्म० सक० चलाना। जाना। ढौकते, ढौकिष्यते, अढौकिष्ट।

ढौकन—(न०) [√ढौक्+ल्युट्] भेंट, नज़र। घूस।

ण

ण—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का पन्द्रहवाँ व्यञ्जन टवर्ग का पञ्चम वर्ण। इसका उच्चारण-स्थान मूर्द्धा है। इसके उच्चारण में आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट और सानुनासिक है। बाह्य प्रयत्न, संवार, नाद, घोष और अल्पप्राण है। इसका प्रयोग मूर्द्धन्य वर्ण, अन्तस्थ तथा "ष" और "ह" के साथ होता है। (पु०) [√णक्+ड, पृषो० साधुः] बिन्दुदेव, एक बुद्ध का नाम। गहना। निर्णय। शिव। पानी का घर। दान। पिंगल में एक गण का नाम। ज्ञान। (वि०) गुणरहित।

संस्कृतभाषा में ण से प्रारम्भ होने वाले शब्दों का अभाव है; किन्तु धातुपाठ में कुछ धातु ऐसी हैं जिनका प्रथम अक्षर ण है। वास्तव में यह "ण" "न" स्थानीय है। इनके "ण" से लिखे जाने का कारण यह है कि इससे यह सूचित होता है कि "न" कतिपय उपसर्गों के पूर्व आने से 'ण' के रूप में भी परिवर्तित होता है। √णद्, √णम् आदि धातुओं को 'न' अक्षर में देखना चाहिये।

त

त—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का सोलहवाँ व्यञ्जन। तवर्ग का प्रथम वर्ण। इसका उच्चारण-स्थान दन्त है। इसके उच्चारण में विवार, श्वास और अघोष प्रयत्न लगाये जाते हैं। इसके उच्चारण में आधी मात्रा का समय लगता है। (पु०) [√तक्+ड] पूँछ। गीदड़ की पूँछ। छाती। गर्भाशय। टेहुनी। योद्धा। चोर। दुष्टजन। जातिच्युत। बर्बर। बौद्ध। रत्न। अमृत। छन्द में गण विशेष।

√तंस्—चु० पर० सक० सजाना। तंसयति, तंसयिष्यति, अततंसत्।

√तक्—भ्वा० पर० अक० हँसना । तकति, तकिष्यति, अताकीत्—अतकीत् ।

तकिल—(वि०) [√तक्+इलच्] छली, कपटी ।

तक्र—(न०) [√तक्+रक्] मट्ठा, छाछ । —अट (तक्राट)—(पुं०) मथानी ।—कूर्चिका—(स्त्री०) मट्ठे के योग से फाड़ा हुआ दूध, छेना ।—पिण्ड—(पुं०) छेना ।—भिद्—(पुं०) कैथ का फल, कपित्थ ।—मांस—(न०) मट्ठे के योग से पका मांस ।—वामन—(पुं०) नारंगी ।—सन्धान—(पुं०) एक तरह की काँजी ।—सार—(न०) ताजा मक्खन ।

√तक्ष्—भ्वा० पर० सक० काट डालना । छेनी से काटना । चीरना । टुकड़े-टुकड़े करना । सँभारना । बनाना । घायल करना । आविष्कार करना । मन में कल्पना करना । तक्ष्णोति—तक्षति, तक्षिष्यति, अतक्षीत्—अताक्षीत् ।

तक्षक—(पुं०) [√तक्ष्+ण्वुल्] बढ़ई । सूत्रधार । देवताओं का कारीगर । पातालवासी मुख्य नागों में से एक का नाम ।

तक्षण—(न०) [√तक्ष्+ल्युट्] पतला करना । रंदा करने का काम । काटना; 'दारवाणां च तक्षणम्' मनु० ।

तक्षणी—(स्त्री०) [√तक्ष्+ल्युट्+ङीप्] लकड़ी तराशने का औजार, बसूला ।

तक्षन्—(पुं०) [तक्ष्+कनिन्] बढ़ई । विश्वकर्मा ।

तगर—(पुं०) [तस्य क्रोडस्य गरः, ष० त०] एक वृक्ष जो कोंकण, अफगानिस्तान आदि में होता है और जिसकी जड़ गंधद्रव्य के रूप में काम आती है । मदन वृक्ष । एक औषध ।

√तङ्क्—भ्वा० पर० सक० सहन करना । अक० हँसना । कष्ट में रहना । तङ्कति, तङ्किष्यति, अतङ्कीत् ।

तङ्क—(पुं०) [√तङ्क्+घञ् वा घन्] कष्टमय जीवन । प्रियजन के वियोग से उत्पन्न कष्ट । भय । संगतराश की छेनी ।

तङ्कन—(न०) [तङ्क्+ल्युट्] कष्टमय जीवन, दुःखी जीवन ।

√तङ्ग्—भ्वा० पर० सक० जाना । अक० काँपना, थरथराना । ठोकर खाना । तङ्गति, तङ्गिष्यति, अतङ्गीत् ।

तञ्च्—भ्वा० पर० सक० जाना । तञ्चति, तञ्चिष्यति । अतञ्चीत् । रु० पर० सक० सिकोड़ना । तनक्ति, तञ्चिष्यति—तङ्क्ष्यति, अतञ्चीत्—अताङ्क्षीत् ।

√तट्—भ्वा० पर० अक० ऊँचा होना । तटति, तटिष्यति, अताटीत्—अतटीत् ।

तट—(न०) [√तट्+अच्] नदी प्रभृति का किनारा, तीर । ऊँची जमीन । (पुं०) शिव । (वि०) उच्छ्रित, उठा हुआ ।—स्थ—(वि०) [तट√स्था+क] जो समीप रहता हो । जो मतलब न रखता हो, उदासीन । (पुं०) उदासीन व्यक्ति ।—०लक्षण—(न०) वह लक्षण जिसमें लक्ष्य के अस्थायी और परिवर्तनशील गुणों का निरूपण हो ।

तटाक—(पुं०, न०) [√तट्+आकन्] तालाब ।

तटिनी—(स्त्री०) [तट+इनि—ङीप्] नदी; 'कदा वाराणस्याममरतटिनीरोधसि वसन्' ।

√तड्—चु० पर० सक० मारना । सितार आदि के तारों को बजाना । ताडयति, ताडयिष्यति, अतीतडत् ।

तडग—(पुं०) [=तडाग, पृषो० साधुः] दे० 'तडाग' ।

तडाग—(पुं०) [√तड्+आग] तालाब । हिरन फँसाने का फंदा ।

तडित्—(स्त्री०) [ताडयति अभ्रम्, √तड्+इति] बिजली, विद्युत् ।—गर्भ (तडिद्गर्भ)—(पुं०) बादल ।—लता (तडिल्लता)—(स्त्री०) दो शाखों में विभक्त विद्युत रेखा ।—

—लेखा (तडिल्लेखा)–(स्त्री०) बिजली की रेखा ।

तडित्वत्—(वि०) [तडित्+मतुप्, वत्व] बिजली वाला । (पुं०) बादल ।

तडिन्मय—(वि०) [तडित्+मयट्] बिजली से सम्पन्न ।

√तण्ड्—भ्वा० आत्म० सक० मारना । तण्डते, तण्डिष्यते, अतण्डिष्ट ।

तण्डक—(पुं०) [√तण्ड्+ण्वुल्] खञ्जन पक्षी । फेन । समासबहुल वाक्य । (न०) गृहस्तंभ । पेड़ का धड़ । सजावट । रोग । (वि०) मायावी । घातक ।

तण्डुल—(पुं०) [तण्ड्यते आहन्यते, √तण्ड् +उलच्] छिलका निकले हुए चावल । अनाज के चार रूप हैं—यथा शस्य, धान्य तण्डुल और अन्न । चारों की अलग-अलग परिभाषायें इस प्रकार हैं:—'शस्यं क्षेत्रगतं प्रोक्तं सतुषं धान्यमुच्यते । निस्तुषः तण्डुलः प्रोक्तः स्विन्नमन्नमुदाहृतम् ।

तत—(वि०) [√तन्+क्त] फैला हुआ । बढ़ा हुआ । ढका हुआ; 'स तमीं तमोभिरभिगम्य ततां' शि० ६.२३ । (न०) [√तन् +तन्] तारों वाला बाजा ।

ततस् (ततः)—(अव्य०) [तद्+तसिल्] उससे । तब से । वहाँ । वहाँ से । तब । जिसके पीछे । पश्चात्, पीछे से । अतएव । अन्ततोगत्वा । ऐसी हालत में । उसके परे । तदपेक्षा । उसके अलावा या अतिरिक्त ।—प्रभृति—(अव्य०) वहाँ से लेकर ।

ततस्त्य—(वि०) [ततस्+त्यप्] वहाँ से आया हुआ ।

तति—(स्त्री०) [√तन्+क्तिन्] श्रेणी, पंक्ति । समूह; 'क्रियतां कथमन्त्यमण्डनं परलोकान्तरितस्य ....' वस्तुतः 'क्रियता बराहततिभिर्मुस्ताक्षतिः पल्वले' श० २.५ । विस्तार । (वि०) [तत् परिमाणं येषाम्, तद् + डति] उतने ।

ततुरि—(वि०) [√तुर्व्+कि, द्वित्व, पृषो० साधुः] हिंसक । विजयी । तारने वाला । (पुं०) अग्नि । इंद्र ।

तत्त्व—(न०) [√तन्+क्विप्, तुक्, पृषो० साधुः तस्य भावः, तत्+त्व] वास्तविक दशा या परिस्थिति । वास्तविक या यथार्थ रूप । सच्चाई । निष्कर्ष । परमात्मा । यथार्थ सिद्धान्त । मन । नृत्य विशेष । वस्तु । सांख्य के मतानुसार पच्चीस पदार्थ ।—अवधान (तत्त्वावधान)–(न०) निरीक्षण, जाँच-पड़ताल, देखरेख ।—ज्ञान–(न०) ब्रह्म, आत्मा और जगद्-विषयक यथार्थ ज्ञान, ब्रह्मज्ञान ।

तत्त्वतः—(अव्य०) [तत्त्व+तस्] यथार्थ रूप में, वास्तव में ।

तत्र—(अव्य०) [तत्+त्रल्] वहाँ । उस स्थान पर । उस अवसर पर ।—भवत्–(वि०) [पूज्यार्थ तत्र भवान् नित्य स० वा सुप्सुपेति स०] पूज्य, मान्य । प्रशंसनीय ।

तत्रत्य—(वि०) [तत्र+त्यप्] वहाँ होने वाला ।

तथा—(अव्य०) [तेन प्रकारेण, तद्+थाल्] वैसा । वैसा ही । और, व ।—अपि (तथापि) –(अव्य०) तो भी, तिस पर भी, वैसा होने पर भी ।—एव (तथैव)–(अव्य०) उसी प्रकार । —गत–(पुं०) [तथा सत्यं गतं ज्ञानं यस्य, ब० स०] बुद्ध का एक नाम ।—च–(अव्य०) जैसा कि ।—हि–(अव्य०) दृष्टान्त, उदाहरण ।

तथात्व—(न०) [तथा+त्व] वैसा होने का भाव ।

तथ्य—(वि०) [तथा+यत्] सत्य, वास्तविक, असली । (न०) सचाई, वास्तविकता, असलियत ।

तद्—(सर्व०) [√तन्+अदि] वह ।—अनन्तर (तदनन्तर)–(अव्य०) ठीक उसके पीछे । उसके बाद ।—अनु (तदनु) –(अव्य०) उसके बाद; 'संदेशं मे तदनु

अन्तर श्रोष्यसि श्रोतव्यं' मे० २३। पीछे से। —अन्त (तदन्त)–(वि०) उस प्रकार समाप्त। —अपि (तदपि)—(अव्य०) तो भी। —अर्थ (तदर्थ),—अर्थीय (तदर्थीय),–(वि०) वह अर्थ रखते हुए। —अवधि (तदवधि)– (अव्य०) वहाँ तक। उस समय तक। तब तक। तब से। उस समय से। —उपरि (तदुपरि)—(अव्य०) उस पर। —एकचित्त (तदेकचित्त)– (वि०) अपने मन को नितान्ततया उस पर लगाये हुए। —काल (तत्काल)– (पुं०) वर्तमान क्षण, वर्तमान समय। (अव्य०) तुरन्त, फौरन। —क्षणं (तत्क्षणम्)— क्षणात् (तत्क्षणात्)–(अव्य०) तुरन्त, फौरन। —क्रिय (तत्क्रिय) –(वि०) बिना मजदूरी लिये काम करने वाला। —गुण (तद्गुण)–(वि०) जिसमें वे गुण हों। उसके जैसे गुणों वाला। (पुं०) अर्थालंकार का एक भेद। —०संविज्ञान–(पुं०) बहुव्रीहि समास का एक भेद। इसमें विशेष्य के अधीन होकर विशेषण का ज्ञान होता है। जैसे 'लम्बकर्णमानय' इस प्रयोग में गुणीभूत कर्ण का भी आनयन होता है। —ज्ञ (तज्ज्ञ)–(पुं०) बुद्धिमान् जन, विद्वान्। —तृतीय (तत्तृतीय)– (वि०) तीसरी बार वह कार्य करने वाला। —धन (तद्धन)–(वि०) कंजूस। लालची। —पर (तत्पर)–(वि०) कार्य-विशेष में लगा हुआ, तल्लीन। सन्नद्ध, तैयार। —परायण (तत्परायण)–(वि०) जिसका मन किसी एक ही में लगा हो। —पुरुष (तत्पुरुष)– (पुं०) परम पुरुष। एक समास (व्या०)। —फल (तत्फल)–(पुं०) कूट नाम की दवा। नील कमल। चोर नामक गंध द्रव्य।

तदा—(अव्य०) [तस्मिन् काले, तद्+दा] तब। उस समय। उस दशा में। —मुख–(वि०) आरम्भ किया हुआ। (वि०) आरम्भ।

तदात्व—(न०) [तदा+त्व] तत्काल, वर्तमान समय।

तदानीम्—(अव्य०) [तस्मिन् काले, तद्+दानीम्] उस समय, तब।

तदानींतन—(वि०) [तत्र भवः इत्यर्थे तदानीम्+ट्युल्, तुट्] उस समय का। समकालीन।

तदीय—(वि०) [तद्+छ–ईय] उसका।

तद्वत्—(वि०) [तद्+वति] उसके समान।

√तन्—त० उभ० सक० फैलाना, पसारना। ढकना। पूरा करना। रचना, करना, लिखना। झुकाना (धनुष को)। तनोति—तनुते, तनिष्यति—ते, अतानीत्—अतनीत्—अतत—अतनिष्ट।

तनय—(पुं०) [तनोति विस्तारयति कुलम् √तन्+कयन्] पुत्र। नर सन्तान।

तनया—(स्त्री०) [तनय+टाप्] पुत्री, बेटी।

तनिका—(स्त्री०) [√तन्+इन्+कन्, टाप्] पाश। रस्सी। फाँसी।

तनिमन्—(पुं०) [तनोर्भावः, तनु+इमनिच्] दुबलापन, कृशता। सुकुमारता। यकृत्, प्लीहा।

तनिष्ठ—(वि०) [तनु+इष्ठन्] अतिसूक्ष्म। बहुत थोड़ा।

तनु—(वि०) [स्त्री०—तनु, तन्वी] [√तन्+उ] पतला, दुबला। कोमल, मुलायम। महीन। छोटा। कम, थोड़ा। तुच्छ। छिछला। (स्त्री०) शरीर, देह। बाहरी रूप, आकार। स्वभाव। चर्म, चाम। —अङ्ग (तन्वङ्ग)–(वि०) दुबला-पतला, कोमल शरीर वाला। —अङ्गी (तन्वङ्गी)–(स्त्री०) दुबली-पतली स्त्री, नजाकत वाली औरत। —कूप–(पुं०) रोमों के छेद। —छद (तनुच्छद)–(पुं०) कवच। —छाय (तनुच्छाय)–(वि०) कम छाया वाला। (पुं०) बबूल। —ज–(पुं०) पुत्र। —जा–(स्त्री०) पुत्री। —त्यज्–(वि०) अपने प्राणों

को खतरे में डालने वाला, मरने वाला ।—त्याग–(वि०) थोड़ा-थोड़ा खर्च करने वाला, कंजूस ।—त्र, त्राण–(न०) कवच ।—पत्र–(पुं०) गोंदी का पेड़, इंगुदी ।—पात–(पुं०) मृत्यु ।—भव–(पुं०) पुत्र ।—भवा–(स्त्री०) पुत्री ।—भस्त्रा–(स्त्री०) नाक ।—भृत्–(पुं०) जीवधारी, प्राणधारी ।—मध्य–(वि०) पतली कमर वाला ।—रस–(पुं०) पसीना । पसेव ।—राग–(पुं०) एक सुगन्धित उबटन जिसमें केसर आदि मिलाते हैं । इस उबटन के काम के गंधद्रव्य ।—रुह्–(न०) शरीर के रोम ।—लता–(स्त्री०) लता जैसी लोच वाली सुकुमार देह ।—वात–(पुं०) एक नरक । (वि०) वह स्थान जहाँ कम हवा हो ।—वार–(न०) कवच ।—व्रण–(पुं०) मुँहासे ।—सञ्चारिणी–(स्त्री०) दस वर्ष की उम्र की लड़की । युवती स्त्री ।—सर–(पुं०) पसीना ।—ह्रद–(पुं०) गुदा, मलद्वार ।

तनुल–(वि०) [√तन्+उलच्] फैला हुआ । बढ़ा हुआ ।

तनुस्—(न०) [√तन्+उसि] शरीर ।

तनू—(स्त्री०) [√तन्+ऊ] शरीर ।—उद्भव (तनूद्भव), ज–(पुं०) पुत्र ।—उद्भवा (तनूद्भवा), जा–(स्त्री०) पुत्री ।—नप–(न०) [तन्वा ऊर्नं क्षयं पाति √पा+क] घी ।—नपात्–[तनूं न पातयति √पत्+णिच्+क्विप्] (पुं०) आग; 'तनूनपाद् धूमवितानमाश्रितैः' शि० १.६२ ।—रुह्–(न०) रोम, लोम (पुं० भी होता है) । पंख । (पुं०) पुत्र ।

तन्ति—(स्त्री०) [√तन्+क्तिन्] रेखा । वृत्तांश की सरल रेखा । गौ । डोरी । पंक्ति ।—पाल-(पुं०) गौओं की हेड़ों का रखवाला । विराट्-राज के यहाँ रहते समय सहदेव ने अपना बनावटी नाम तन्तिपाल ही रखा था ।

तन्तु—(पुं०) [√तन्+तुन्] सूत, तागा । मकड़ी का जाला । डोंत । सन्तान । ग्राह । परब्रह्म ।—काष्ठ–(न०) ताना साफ करने का जुलाहों का एक औजार ।—कीट–(पुं०) रेशम का कीड़ा ।—नाग–(पुं०) बड़ा घड़ियाल ।—नाभ–(पुं०) मकड़ी ।—निर्यास–(पुं०) ताड़ का पेड़ ।—पर्वन्–(पुं०) श्रावण की पूर्णिमा जिस दिन रक्षा-बंधन का पर्व होता है ।—भ–(पुं०) राई के दाने । बछड़ा ।—वाद्य–(न०) बाजा जिसमें तार या डोरी लगी हो ।—वान–(न०) बुनावट ।—वाय–(पुं०) जुलाहा । करघा । बुनाई ।—विग्रहा–(स्त्री०) केला ।—शाला–(स्त्री०) कपड़ा बुनने का घर ।—सन्तत–(वि०) बुना हुआ । सिला हुआ ।—सार–(पुं०) सुपारी का वृक्ष ।

तन्तुक—(पुं०) [तन्तु √कै+क वा तन्तु+कन्] राई के दाने । सूत । एक सर्प ।

तन्तुण, तन्तुन—(पुं०) [√तन्+तुनन्, णत्वे नि० णत्वम्] एक जलजंतु, मगर ।

तन्तुर, तन्तुल—(न०) [तन्तु+र] [तन्तु+लच्] कमलनाल का रेशा ।

√तन्त्र्—चु० आत्मा० सक० संयम में करना । शासन करना । पालन-पोषण करना । तन्त्रयते, तन्त्रयिष्यते, अततन्त्रत ।

तन्त्र—(न०) [तन्त्र्+अच्] करघा । सूत । ताना । वंश । अविच्छिन्न(वंश)परंपरा । कर्मकाण्डपद्धति । मुख्य विषय । सिद्धान्त । नियम । कल्पना । विज्ञान । परतन्त्रता, पराधीनता । विज्ञान शास्त्र । अध्याय । पर्व । तन्त्र शास्त्र । मंत्र-तंत्र । मुख्य या प्रधान तंत्र । दवाई । शपथ । पोशाक । किसी कार्य के करने की ठीक पद्धति । राजकीय परिवार । प्रान्त, प्रदेश । अधिकार । राज्य । शासन, हुकूमत । सेना । ढेर, समूह । घर । सजावट । धन-सम्पत्ति । आह्लाद ।—युक्ति–(स्त्री०) अशुद्धियों को दूर करते हुए अर्थ को स्पष्ट करने की युक्ति (अधिकरण, योग, पदार्थ आदि) ।—वाप–(पुं०) (कपड़े)

बुनना । करघा ।—वाय-(पुं०) मकड़ी । जुलाहा ।—संस्था-(स्त्री०) मन्त्रिमंडल, शासनसभा ।—स्कंद-(पुं०) गणितज्योतिष ।

तन्त्रक—(पुं०) [तंत्रात् तुरीवापात् अचिरापहृतम्, तंत्र+कन्] कोरा कपड़ा ।

तन्त्रण—[√तन्त्र्+ल्युट्] (न०) हुकूमत कायम रखना । शान्ति बनाये रखना ।

तन्त्रि, तन्त्री—(स्त्री०) [√तन्त्र्+इ] [तन्त्रि+ङीष्] तांत । वीणा । वीणा का तार । नस । पूंछ ।

तन्द्रा—(स्त्री०) [तद्√द्रा+क नि० दस्य नः वा √तन्द्र्+घञ्—टाप्] ऊँघ । क्लान्ति । वैद्यक में शरीर के भारी और इन्द्रियों के शिथिल होने की दशा ।

तन्द्रालु—(वि०) [तद्√द्रा+आलुच्, तदो नान्तत्वं निपात्यते] थका हुआ । निद्रालु, सोने की इच्छा रखने वाला ।

तन्द्रि, तन्द्री—(स्त्री०) [√तन्द्+क्रिन्] [तन्द्रि+ङीष्] अल्प निद्रा, ऊँघ ।

तन्मय—(वि०) [तद्+मयट्] उसी में निवेशित चित्त वाला, उसी में लगा हुआ, उसी में लीन हो जाने वाला ।

तन्मात्र—(न०) [तद्+मात्रच्] शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध—इनका आदि, अमिश्र, सूक्ष्म रूप । तदात्मक, उसी शकल का ।

तन्वी—(स्त्री०) [तनु+ङीष्] कृशाङ्गी । कोमलाङ्गी: 'इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी' श० १.२० ।

√तप्—भ्वा० पर० अक० तपना, जलना । चमकना । संतप्त होना । तपति, तपस्यति, अताप्सीत् । दि० आत्म० अक० तपस्या करना । तप्यते, तप्स्यते, अतप्त । चु० पर० सक० जलाना । तापयति—तपति, तापयिष्यति—तप्स्यति, अतीतपत्—अताप्सीत् ।

तप—(वि०) [√तप्+अच्] गर्म, उष्ण, जलता हुआ । सन्तापदायी, दुःखदायी । (पुं०) गर्मी । आग । सूर्य । ग्रीष्म ऋतु । तपस्या ।—**अत्यय** (तपात्यय),—**अन्त** (तपान्त)-(पुं०) ग्रीष्म ऋतु का अवसान और वर्षा ऋतु का आरम्भ ।

तपती—(स्त्री०) [√तप्+शतृ—ङीप्] सूर्य की एक कन्या । ताप्ती नदी ।

तपन—(पुं०) [√तप्+ल्यु] सूर्य: 'ललाटंतपस्तपति तपनः' उत्त० ३ । ग्रीष्म ऋतु । सूर्यकान्त मणि । नरक विशेष । शिव । मदार या आक का पौधा ।—**आत्मज** (तपनात्मज), —**तनय**-(पुं०) यम । कर्ण । सुग्रीव ।—**आत्मजा** (तपनात्मजा),—**तनया**-(स्त्री०) यमुना । गोदावरी ।—**इष्ट** (तपनेष्ट)-(न०) तांबा ।— **उपल** (तपनोपल),—**मणि**-(पुं०) सूर्यकान्त मणि ।—**छद** (तपनच्छद)-(पुं०) सूर्यमुखी फूल ।

तपनी—(स्त्री०) [तप्यते पापम् अनया, √तप्+ल्युट्—ङीप्] गोदावरी नदी । पाढ़ा लता ।

तपनीय—(न०) [√तप्+अनीयर्] सुवर्ण, सोना: 'अतन्त्रुमती तपनीयपीठ' र० १३.४१ ।

तपस्—(न०) [√तप्+असुन्] उष्णता, गर्मी । आग । पीड़ा, कष्ट । धार्मिक अनुष्ठान । ध्यान । आलोचना । पुण्यकर्म । अपने वर्ण या आश्रम का शास्त्र-विहित कर्मानुष्ठान । जनलोक के ऊपर का लोक । (पुं०) माघ मास । (पुं०, न०) शिशिर ऋतु । हेमन्त ऋतु । ग्रीष्म ऋतु ।—**अनुभाव** (तपोऽनुभाव)-(पुं०) धार्मिक कर्मानुष्ठान का प्रभाव ।—**अवट** (तपोऽवट)-(पुं०) ब्रह्मावर्त प्रदेश ।—**क्लेश** (तपःक्लेश)-(पुं०) तपस्या के कष्ट ।—**चरण** (तपश्चरण)-(न०),—**चर्या** (तपश्चर्या)-(स्त्री०) तपस्या ।—**तक्ष** (तपस्तक्ष)-(पुं०) इन्द्र ।—**धन** (तपोधन)-(पुं०) तपस्वी । संन्यासी ।—**निधि** (तपोनिधि)-(पुं०) तपस्वी । संन्यासी ।—**प्रभाव** (तपःप्रभाव)-(पुं०)—**बल** (तपोबल)-(न०) तपस्या द्वारा उपार्जित शक्ति ।

—राशि (**तपोराशि**)-(पुं०) बहुत बड़ा तपस्वी। संन्यासी।**—लोक** (**तपोलोक**)-(पुं०) जनलोक के ऊपर का लोक।**—वन** (**तपोवन**)-(न०) वन, जहाँ तपस्वी तप करें।**—वृद्ध** (**तपोवृद्ध**)-(वि०) बहुत तप कर चुकने वाला।**—विशेष** (**तपोविशेष**)-(पुं०) सर्वोत्कृष्ट भक्ति। प्रधान धर्मानुष्ठान।**—स्थली** (**तपःस्थली**)-(स्त्री०) काशी।

तपस—(पुं०) [√तप्+असच्] सूर्य। चन्द्रमा। पक्षी।

तपस्य—(पुं०) [तपसि साधुः, तपस्+यत्] फाल्गुन मास। अर्जुन। तापस मनु के एक पुत्र। (न०) तपस्या। कुन्दपुष्प।

तपस्या—(स्त्री०) [तपस्+क्यङ्+अ—टाप्] तप, व्रतचर्या।

तपस्विन्—(वि०) [तपस्+विनि] तपस्या करने वाला। दीन, दुखिया, बेचारा। (पुं०) नारद। संन्यासी। गौरैया। घीकुमार। दरिद्र मनुष्य। एक मत्स्य। (न०) सूर्यमुखी का फूल। दौना।

तप्त—(वि०) [√तप्+क्त] गरमाया हुआ। अंगारे की तरह लाल, अति गर्म। पिघला हुआ। सन्तप्त, पीड़ित। जिसने तपस्या की हो।**—काञ्चन**—(न०) तपाया हुआ सोना।**—कृच्छ्**—(न०) प्रायश्चित्त रूप में किया जाने वाला एक व्रत।**—माष**-(पुं०) किसी की सचाई-झुठाई के लिये की जाने वाली एक प्राचीन कठोर परीक्षा।**—रूपक**-(न०) विशुद्ध चाँदी।**—सुराकुण्ड**-(न०) एक नरक।

√तम्—दि० पर० सक० चाहना। अक० (गला) घोंटना। थक जाना। शान्त होना। मन में सन्तप्त होना, विकल होना। ताम्यति।

तम—(न०) [√तम्+घ] अन्धकार। पैर की नोक। (पुं०) राहु। तमाल वृक्ष।

तमस्—(न०) [√तम्+असुन्] अन्धकार। नरक का अंधकार। भ्रम। तमोगुण। क्लेश, दुःख। पाप। (पुं०, न०) राहु।**—अपह** (**तमोऽपह**)-(वि०) भ्रम दूर करने वाला। अज्ञान हटाने वाला। (पुं०) सूर्य। चन्द्रमा। अग्नि।**—काण्ड** (**तमःकाण्ड**)-(पुं०, न०) घोर या गाढ़ अन्धकार।**—गुण** (**तमोगुण**)-(पुं०) प्रकृति का एक गुण जो अज्ञान, आलस्य, क्रोध, भ्रम आदि का कारण है।**—घ्न** (**तमोघ्न**)-(पुं०) सूर्य। चन्द्र। अग्नि। विष्णु। शिव। ज्ञान। बुद्धदेव।**—ज्योतिस्** (**तमोज्योतिस्**)-(पुं०) जुगनू, खद्योत।**—तति** (**तमस्तति**)-(स्त्री०) अंधकार का छा जाना।**—नुद्** (**तमोनुद्**)-(पुं०) नक्षत्र। सूर्य। चन्द्रमा। अग्नि। दीपक।**—नुद** (**तमोनुद**)-(पुं०) सूर्य। चन्द्रमा।**—भिद्**, (**तमोभिद्**),**—मणि** (**तमोमणि**)-(पुं०) जुगनू।**—विकार** (**तमोविकार**)-(पुं०) बीमारी।**—हन्** (**तमोहन्**),**—हर** (**तमोहर**) (वि०) अन्धकार दूर करने वाला। (पुं०) सूर्य। चन्द्रमा।

तमस—(पुं०) [√तम्+असच्] अन्धकार। कूप।

तमस्विनी, तमा—(स्त्री०) [तमस्विन्—ङीप्] [तम+अच्+टाप्] रात। हलदी।

तमाल—(पुं०) [√तम्+कालन्] पहाड़ों पर और यमुना के किनारे होने वाला एक सदाबहार वृक्ष। वरुण वृक्ष। काला खैर। तेजपात। बाँस की छाल। माथे पर लगाने का साम्प्रदायिक चिह्न या तिलक विशेष। तलवार।**—पत्र**-(न०) तिलक विशेष। तमाखू। तेजपात। दालचीनी।

तमि, तमी—(स्त्री०) [√तम्+इन्] [तमि—ङीप्] रात, विशेष कर कृष्णपक्ष की: 'स तमीं तमोभिरभिगम्य ततां' शि० ९.२३। मूर्छा। हल्दी।

तमिस्र—(वि०) [तमिस्रा+अच्] काला। (न०) [तमस्+र, नि० साधुः] अँधियारी

अन्धकार । भ्रम । अज्ञान । क्रोध ।—**पक्ष**-(पुं०) कृष्णपक्ष ।

तमिस्रा—(स्त्री०) [तमिस्र+टाप्] कृष्ण पक्ष की रात । अगाढ़ अन्धकार ।

तमोमय—(पुं०) [तमस्+मयट्] राहु । (वि०) ज्ञानहीन । अंधकारपूर्ण ।

तम्बा, तम्बिका—(स्त्री) [तम्बति गच्छति, √तम्ब्+अच्—टाप्] [√तम्ब्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] गौ, गाय ।

√तय्—भ्वा० आत्म०, सक० जाना । रक्षा करना । तयते, तयिष्यते, अतयिष्ट ।

तर—(पुं०) [√तृ+अप्] पार करने की क्रिया । बढ़ जाना । पराभूत करना । अग्नि । वृक्ष । गति । मार्ग । घाटवाली नाव । नाव का भाड़ा । तद्धित का एक प्रत्यय जो गुणाधिक्य प्रकट करने के लिये लगाया जाता है जैसे—स्थूलतर ।—**पण्य**-(न०) भाड़ा । —**स्थान**-(न०) घाट ।

तरक्ष, तरक्षु—(पुं०) [=तरक्षु, पृषो० उलोप] [तरं बलं मार्गं वा क्षिणोति, तर √क्षि+डु] एक छोटी जाति का बाघ, लकड़बग्घा ।

तरङ्ग—(पुं०) [√तृ+अङ्गच्] लहर । (ग्रन्थ का) अध्याय । फलांग । वस्त्र ।

तरङ्गिणी—(स्त्री०) [तरङ्ग+इनि—ङीप्] नदी ।

तरङ्गित—(न०) [तरङ्ग+इतच्] लहराता हुआ, ऊपर से बहता हुआ । कंपायमान ।

तरण—(न०) [√तृ+ल्युट्] पार करना । विजय । डाँड़ । (पुं०) नाव, बेड़ा । स्वर्ग ।

तरणि—(पुं०) [√तृ+अनि] सूर्य । प्रकाश की किरण ।

तरणि, तरणी—(स्त्री०) [तरणि+ङीप्] नाव, बेड़ा ।—**रत्न**-(न०) लाल ।

तरण्ड—(पुं०, न०) [√तृ+अण्डच्] मछली फँसाने की बंसी की डोरी में बाँधी जाने वाली छोटी लकड़ी जो ऊपर उतराती रहती है । डाँड़ । नाव, बेड़ा ।—**पादा**-(स्त्री०) एक प्रकार की नाव ।

तरण्डी, तरन्ड्, तरन्ती—(स्त्री०) [तरण्ड+ङीप्] [√तृ+अदि] [तरन्त+ङीप्] नाव, बेड़ा ।

तरन्त—(पुं०) [√तृ+झच्] समुद्र । प्रचण्ड जलवृष्टि । मेंढ़क । दैत्य या राक्षस ।

तरल—(वि०) [√तृ+अलच्] थरथराने वाला, काँपने वाला । चंचल; 'तारापतिस्तरलविद्युदिवाभ्रवृन्दं' र० १३.७६ । अदृढ़ । विनश्वर । उत्तम । चमकीला । पनीला । लंपट । (पुं०) हार के बीचों बीच की मुख्य मणि । हार । समतल, सतह । तली, गहराई । हीरा । लोहा ।

तरला—(स्त्री०) [तरल+टाप्] माँड़, उबले हुए चावलों का जल विशेष । सुरा । मधुमक्खी ।

तरलायित—(वि०) [तरल+क्यच्+क्त] कँपाया या हिलाया हुआ । (न०) बड़ी लहर । अस्थिरता ।

तरवारि—(पुं०) [तरं समागतविपक्षबलं वारयति, तर √वृ + णिच्+इन्] तलवार, खड्ग ।

तरस्—(न०) [√तृ+असुन्] गति, वेग । विक्रम, शक्ति । स्फूर्ति । तीर । किनारा । चौराहा । बेड़ा ।

तरस—(न०) [√तृ+असच्] माँस ।

तरसान—(पुं०) [√तृ+आनच्, सुट्] नौका, नाव ।

तरस्विन्—(वि०) [स्त्री०—तरस्विनी] [तरस्+विनि] तेज । मजबूत । साहसी । बलवान् । (पुं०) हरकारा । वीर । पवन । गरुड़ ।

तराम्बु, तरालु—(पुं०) [तराम तरणाय अम्बुरिव] [तराय अलति पर्याप्नोति, तर √अल्+उण्] बड़ी और चपटी तली की नाव ।

तरि, तरी—(स्त्री०) [तरति अनया,√तॄ+इ][तरि+ङीप्]नाव; 'जीर्णा तरी सरिदतीव गभीरनीरा' । कपड़े रखने का संदूक । कपड़े का छोर या किनारा ।—**रथ**–(पुं०) खेवणी, डाँड़ ।

तरिक—(पुं०) [तराय तरणाय हितः, तर+ठन्] बेड़ा, नाव । [तरे तरणार्थदेयशुल्कग्रहणे अधिकृतः, तर+ठन्] मल्लाह, नाव खेने वाला ।

तरिकिन्—(पुं०) [तरिक+इनि] मल्लाह, माँझी ।

तरिका, तरिणी—(स्त्री०), **तरित्र**–(न०) **तरित्री**-(स्त्री०)[तरिक+टाप्] [तरः तरणं कृत्यत्वेन अस्ति अस्याः, तर+इनि—ङीप्] [तरति अनेन, √तॄ+इत्रन्][तरित्र+ङीप्] नौका, नाव ।

तरिता—(स्त्री०) [तर+इतच्—टाप्] तर्जनी उँगली । गाँजा । एक दुर्गा ।

तरीष—(पुं०) [√तॄ+ईषन्] सूखा गोबर, कंडा । नाव, बेड़ा । समुद्र । योग्य पुरुष । स्वर्ग । कार्य, व्यापार, पेशा ।

तरु—(पुं०) [तरति समुद्रादिकम् अनेन, √तॄ+उ] वृक्ष ।—**खण्ड**–(पुं०, न०),—**षण्ड**–(पुं०, न०) वृक्ष-समूह ।—**जीवन**–(न०) पेड़ की जड़ ।—**तल**–(न०) वृक्ष की जड़ के समीप की भूमि ।—**नख**–(पुं०) काँटा ।—**मृग**–(पुं०) वानर ।—**राग**–(पुं०) कली या फूल । अँखुआ, अंकुर ।—**राज**–(पुं०) तालवृक्ष ।—**रुहा**–(स्त्री०) वह वृक्ष जो दूसरे वृक्ष पर जमे या फैले ।—**विलासिनी**–(स्त्री०) नवमल्लिका लता ।—**शायिन्**–(पुं०) पक्षी ।

तरुण—(वि०) [√तॄ+उनन्] जवान, युवा । छोटा । हाल का पैदा हुआ । कोमल, मुलायम । नवीन, ताजा, टटका । जिन्दादिल । (पुं०) युवा पुरुष, जवान आदमी ।—**ज्वर**–(पुं०) वह ज्वर जो एक सप्ताह तक न उतरे ।—**दधि**–(न०) पाँच दिन का रखा हुआ दही ।—**पीतिका**–(स्त्री०) ईंगुर । मैनसिल ।

तरुणी—(स्त्री०)[तरुण+ङीप्] युवती स्त्री, जवान औरत ।

तरुल—(वि०) [तरु+ल] वृक्षों से परिपूर्ण ।

√तर्क्—चु० पर० सक०, अक० कल्पना करना । अनुमान करना । सन्देह करना । विश्वास करना । परिणाम पर पहुँचना । बहस करना । सोचना । इरादा करना । खोजना । समझना । बोलना । तर्कयति, तर्कयिष्यति, अततर्कत् ।

तर्क—(पुं०) [√तर्क्+अच्] कल्पना । अनुमान । युक्ति । वादविवाद । सन्देह । न्याय शास्त्र । आकांक्षा । कारण ।—**विद्या**–(स्त्री०) न्याय शास्त्र ।—**शास्त्र**–(न०) वह शास्त्र जिसमें तर्क के नियम सिद्धांत आदि निरूपित हों । गौतम और कणाद इसके प्रधान आचार्य माने जाते हैं ।

तर्कक—(पुं०) [तर्क √कृ+क] याचक, माँगने वाला । न्याय शास्त्र का जानने वाला ।

तर्कु—(पुं०, स्त्री०) [√कृत्+उ नि० साधुः] तकुआ जिस पर चर्खे में सूत लिपटता जाता है ।—**पिण्ड**–(पुं०) —**पीठी**–(स्त्री०) तकुआ के निचले छोर पर का गोला ।

तर्क्षु—(पुं०) [=तरक्षु पृषो० साधुः] तेंदुआ ।

तर्ष्य—(पुं०) [√तृष्+ष्यञ्] जवाखार नमक ।

√तर्ज्—भ्वा० पर०, चु० आत्म० सक० डरवाना, भयभीत करना । फटकारना । भर्त्सना करना । कलङ्क लगाना । चिढ़ाना । (भ्वा०) तर्जति, तर्जिष्यति अतर्जीत् । (चु०) तर्जयते, तर्जयिष्यते अततर्जत ।

तर्जन—(न०), **तर्जना**–(स्त्री०) [√तर्ज्+ल्युट्] [√तर्ज्+णिच्+युच्] भयभीत करना । डरवाना । भर्त्सना ।

तर्जनी—(स्त्री०) [तर्जन+ङीप्] अँगूठे के पास की अँगुली ।

तर्ण, तर्णक—(पुं०) [√तृण्+अच्] [तर्ण+कन्] बछड़ा, बछवा; 'अन्वायतोऽन्यागतत्तूर्णतर्णकाम्' शि० १२.४१ ।

तर्णि—(पुं०) [√तृ+नि] बेड़ा । सूर्य ।

√तर्द्—भ्वा० पर० सक० घायल करना, चोटिल करना । वध करना, काट गिराना । तर्दति, तर्दिष्यति, अतर्दीत् ।

तर्पण—(न०) [√तृप्+ल्युट्] प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना । सन्तोष, प्रसन्नता । याज्ञिक पाँच कर्तव्यानुष्ठानों में से एक, पितृयज्ञ विशेष । समिधा ।—**इच्छु** (**तर्पणेच्छु**)-(पुं०) भीष्म पितामह की उपाधि ।

तर्मन्—(न०) [√तृ+मनिन्] यज्ञीयस्तम्भ का शिरोभाग ।

तर्ष—(पुं०) [√तृष्+घञ्] प्यास । कामना, इच्छा । समुद्र । नाव । सूर्य ।

तर्षण—(न०) [√तृष्+ल्युट्] प्यास, तृषा ।

तर्षित, तर्षुल—(वि०) [तर्ष+इतच्] [√तृष्+उलच्] प्यासा, अभिलाषी, इच्छुक ।

तर्हि—(अव्य०) [तद्+हिल्] उस समय । उस दशा में ।)**यदा तर्हि**-(अव्य०) जब तब । **यदितर्हि**-(अव्य०) यदि तब ।—**कथं तर्हि**-(अव्य०) तब कैसे ।)

√तल्—चु० पर० अक० स्थिर होना । सक० पूरा करना । तालयति, तालयिष्यति, अतीतलत् ।

तल—(न०, पुं०) सतह । हथेली । तलवा । बाँह । थप्पड़ । नीचता, पद की अपकृष्टता । तलदेश, निम्न देश, तली, पेंदी ।—**अङ्गुलि** (**तलाङ्गुलि**)-(स्त्री०) पैर की उँगली ।—**अतल** (**तलातल**)-(न०) सात पातालों में से एक ।—**ईक्षण** (**तलेक्षण**)-(पुं०) सुअर ।—**उदा** (**तलोदा**)-(स्त्री०) नदी ।—**घात**-(पुं०) थप्पड़, चपेटा ।—**ताल**-(पुं०) हाथ से बजाया जाने वाला एक बाजा । ताली ।—**त्राण**,—**त्रारण**-(न०) धनुर्धरों का चमड़े का दस्ताना ।—**प्रहार**-(पुं०) थप्पड़ ।—**सारक**-(न०) जेरबंद, तंग, अधोबंधन ।

तलक—(न०) [तल√कै+क] तालाब । एक फल ।

तलतः—(अव्य०) [तल+तस्] पेंदी से ।

तलाची—(स्त्री०) [तल√अञ्च्+क्विन्—ङीप्] चटाई ।

तलिका—(स्त्री०) [तल+ठन्] जेरबंद, तंग, अधोबंधन ।

तलित—(न०) [तल+इतच्] तला हुआ मांस ।

तलिन—(वि०) [√तल्+इनन्] पतला, दुबला । कम, थोड़ा । साफ, स्वच्छ । नीचे का । पृथक् । (न०) बिस्तरा । पलंग । कोच ।

तलिम—(न०) [√तल्+इमन्] पत्थर जड़ा हुआ फर्श । चारपाई, खाट । पाल । तिरपाल । चँदोवा । लंबी तलवार या छुरी ।

तलुन—(पुं०) [तरति वेगेन गच्छति, √तृ+उनन्] वायु ।

तलुनी—(स्त्री०) [√तल्+उनन्+ङीप्] युवती ।

तल्क—(न०) [√तल्+कन्] जंगल ।

तल्प—(न, पुं०) [तल्पते शयनार्थं गम्यते, √तल्+प] चारपाई । पलंग । सेज; 'सपदि विगतनिद्रस्तल्पमुज्झाञ्चकार' र० ५.७५ । स्त्री, भार्या (यथा गुरुतल्पग) । गाड़ी में बैठने का स्थान । मकान के ऊपर की मंजिल, गुम्मेठ ।

तल्पक—(पुं०) [तल्प+कन्] वह नौकर जिसका काम सेज या चारपाई बिछाने का हो ।

तल्ल—(पुं०) [तस्मिन् लीयते इति] कूप । तडाग । (न०) बिल । गढ़ा ।

तल्लज—(पुं०) [तत् प्रसिद्धं यथा तथा लजति, √लज्+अच्] उत्तम । सर्वोत्कृष्ट । यथा—**गोतल्लजा**, **कुमारीतल्लजा**।

तल्लिका—(पु०) [तस्मिन् लीयते, √ली+ड+कन्, इत्व] ताली, कुंजी।

तल्ली—(स्त्री०) [तद् प्रसिद्धं यथा तथा लनति, √लल्+ड—ङीष्] जवान स्त्री। वरुण की स्त्री। नाव।

तष्ट—(वि०) [√तक्ष्+क्त] छिला हुआ, कटा हुआ। छेनी से छोला हुआ। सँभाला हुआ।

तष्टृ—(पुं०) [√तक्ष्+तृच्] बढ़ई। विश्वकर्मा।

√**तस्**—दि० पर० सक० ऊपर फेंकना। तस्यति, तसिष्यति, अतसत्।

तस्कर—(पुं०) [तद्√कृ+अच्, सुट्, दलोप] चोर। एक शाक। मदन-वृक्ष। कान।—**वृत्ति**—(पुं०) पाकेटमार, गिरहकट।

तस्करी—(स्त्री०) [तद्√कृ+ट, टित्वात् ङीप्] व्यसनी स्त्री।

तस्थु—(वि०) [√स्था+कु, द्वित्व] अचल, स्थिर।

ताक्षण्य, ताक्ष्ण—(पुं०) [तक्षन्+ण्य] [तक्षन्+अण्] बढ़ई का पुत्र।

ताच्छीलिक—(पुं०) [तच्छील+ठक्] विशेष प्रवृत्ति, झुकाव या स्वभाव सूचक प्रत्यय विशेष।

ताच्छील्य—(न०) [तत् शीलं यस्य तस्य भावः, तच्छील+ष्यञ्] किसी काम को लगातार करने की क्रिया।

ताटङ्क—(पु०) [ताड्यते, ताड् पृषो० डस्य टः, तथाभूतम् अङ्कम् चिह्नं यस्य, ब० स०] कान का बाला, आभूषण विशेष।

ताटस्थ्य—(न०) [तटस्थ+ष्यञ्] सामीप्य। अनासक्ति, उदासीनता, उपेक्षा।

ताड—(पुं०) [√तड्+घञ्] प्रहार, ठोकर। कोलाहल। म्यान। पहाड़।

ताडका—(स्त्री०) [√तड्+णिच्+ण्वुल्—टाप्] एक राक्षसी जिसे श्रीरामचन्द्र जी ने विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा करते समय जान से मारा था। वह सुकेतु की बेटी, सुन्द की भार्या और मारीच की माता थी।

ताडकेय—(पु०) [ताडका+ढक्—एय] ताड़का का पुत्र, मारीच।

ताडङ्क, ताडपत्र—(पुं०, न०) [तालम् अङ्क-यते लक्ष्यते, √अङ्क्+घञ्, लस्य डत्वम्, शक० पररूप] [तालस्य पत्रमिव, ष० त०, लस्य डः] दे० 'ताटङ्क'।

ताडन—(न०) [√तड्+णिच्+ल्युट्] आघात। मार। फटकार। अनुशासन। दीक्षा के मंत्र का एक संस्कार। खंडग्रहण। गुणन।

ताडनी—(स्त्री०) [ताडन+ङीप्] कोड़ा, चाबुक।

ताडि, ताडी—(स्त्री०) [√तड्+णिच्+इन्] [ताडि+ङीष्] एक प्रकार का खजूर वृक्ष। आभूषण विशेष।

ताड्यमान—(वि०) [√तड्+णिच्+शानच्, मुक्, यक्] जिस पर मार पड़ती हो। (पुं०) एक प्रकार का बाजा जो लकड़ी से बजाया जाय, एक तरह का ढोल।

ताण्डव—(न०) [तण्डुना, नन्दिना प्रोक्तम्, तण्डु√अण्] नृत्य, नाच। विशेष कर, शिव जी का नृत्य विशेष। नाचने की कला। एक प्रकार की घास।—**प्रिय**—(पुं०) शिव जी।

तात—(पुं०) [तनोति विस्तारयति गोत्रा-दिकम् √तन+क्त, दीर्घ] पिता। अपने से उम्र में छोटों के लिये सम्बोधन का शब्द विशेष। यह शब्द अपने से बड़ों के लिए भी प्रतिष्ठा सूचक सम्बोधन की तरह प्रयुक्त किया जाता है।—**गु**—(वि०) पिता के अनुकूल। (पुं०) ताऊ, चाचा।

तातन—(पुं० [तातं प्रशस्तं यथा तथा नृत्यति, तात√नृत्+ड] खञ्जन पक्षी।

तातल—(पु०) [ताप√ला+क, पृषो० पस्य

तः] रोग। लोहे का डंडा, लोहे की तेज नोक की कील। रसोई बनाना, पकाना। गर्मी।

तति—(पुं०) [√तप्+क्तिन्] पुत्र, बेटा। (स्त्री०) [√तन्+क्तिन्] वंशपरंपरा।

तात्कालिक—(वि०) [तत्काल+ठञ्] तत्काल का, उसी या उस समय का। [स्त्री० —**तात्कालिकी**]

तात्पर्य—(न०) [तत्पर+ष्यञ्] आशय, निष्कर्ष, अभिप्राय।

तात्त्विक—(वि०) [तत्त्व+ठक्] तत्त्व-संबंधी। सत्य, असली। परमावश्यक।

तादात्म्य—(न०) [तदात्मन्+ष्यञ्] अभिन्नता, दो वस्तुओं के परस्पर अभिन्न होने का भाव।

तादृक्ष, तादृश्—(वि०) [स्त्री०—**तादृक्षी, तादृशी**] [स इव दृश्यते, तद्√दृश्+क्स] [तद् √दृश्+क्विन्] वैसा, उसकी तरह।

तान—(पुं०) [√तन्+घञ्] तनाव, फैलाव। ज्ञानेन्द्रिय। सूत। (गान में) तान; 'तान-प्रदायित्वमिवोपगन्तुम्' कु० १.८।

तानव—(न०) [तनु+अण्] दुबलापन, स्वल्पता।

तानूर—(पुं०) [√तन्+ऊरण्] भँवर।

तान्त—(वि०) [√तम्+क्त] थका हुआ, शिथिल, परिश्रान्त। पीड़ित, सन्तप्त। मुर्झाया हुआ, कुम्हलाया हुआ।

तान्तव—(न०) [तन्तु+अञ्] कातना, बुनना। मकड़ी का जाला। बुना हुआ कपड़ा।

तान्त्रिक—(वि०) [स्त्री०—**तान्त्रिकी**] [तन्त्र+ठक्] किसी कला या सिद्धान्त से भली-भाँति सुपरिचित। तंत्र-सम्बन्धी। तंत्रों में कुण्ठित। (पुं०) तंत्र शास्त्र का ज्ञाता। एक प्रकार का सन्निपात।

ताप—(पुं०) [√तप्+घञ्] गर्मी, चमक। पीड़ा, कष्ट; 'समस्तापः कामं मनसिज-निदाघप्रसरयोः' श० ३.६। शोक।—**त्रय**—(न०) तीन प्रकार के कष्ट (यथा आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक) —**मान**—(न०) थर्मामीटर द्वारा मापी गई शरीर या वायुमंडल के ताप की मात्रा।—**०यन्त्र**—(न०) थरमामीटर।—**स्वेद**—(पुं०) उष्णता पहुँचने से उत्पन्न पसीना।—**हर**—(वि०) तापनाशक, शान्तिदायी।

तापन—(पुं०) [√तप्+णिच्+ल्युट्] सूर्य। ग्रीष्मऋतु। सूर्य-कान्तमणि। कामदेव के बाणों में से एक बाण का नाम। (न०) [√तप्+णिच्+ल्युट्] तपाना, जलाना। कष्ट। दण्ड।

तापस—(वि०) [स्त्री०—**तापसी**] [तपस्+ण वा तापस+अण्] तपस्या या तपस्वी सम्बन्धी। (पुं०) [स्त्री०—**तापसी**] तपस्वी। बगला। तेजपात। दौना नामक पौधा।—**इष्टा (तापसेष्टा)**—(स्त्री०) द्राक्षा, दाख। —**तरु,—द्रुम**—(पुं०) इङ्गुदी वृक्ष, हिंगोट। —**प्रिय**—(पुं०) प्रियाल वृक्ष।

तापस्य—(न०) [तापस+ष्यञ्] तपस्या, व्रतचर्या।

तापिच्छ—(पुं०) [तापिनं छादयति, तापिन् √छद्+ड, पृषो० साधुः] तमालवृक्ष; तमाल पुष्प; 'प्रफुल्लतापिच्छनिभैरभीषुभिः' शि० १.२२।

तापिन्—(वि०) [√तप्+णिच्+णिनि] ताप देने वाला। [√तप्+णिनि] तापयुक्त, जिसमें ताप हो। (पुं०) बुद्धदेव।

तापी—(स्त्री०) [√तप्+णिच्+अच् —ङीप्] तापती नदी। यमुना नदी।

ताम—(पुं०) [√तम्+घञ्] भयप्रद वस्तु। दोष, अपराध। चिन्ता। अभिलाषा। ग्लानि। क्लान्ति।

तामर—(न०) [ताम√रा+क] जल। मक्खन।

तामरस—(न०) [तामर√सस्+ड] लाल-कमल। सोना। ताँबा। धतूरा।

तामरसी—(स्त्री०) [तामरस+ङीप्] कमलिनी। तालाब जिसमें कमल हों।

तामस—(वि०) [स्त्री०—**तामसी**] [तमस्+अण्] कृष्ण, काला। तमोगुणी। अज्ञानी। दुष्ट। (न०) अन्धकार। (पुं०) दुष्टजन। साँप। उल्लू। चौथा मनु। राहु का एक पुत्र।

तामसिक—(वि०) [तमस्+ठञ्] [स्त्री०—**तामसिकी**] अँधियारा। तमस् सम्बन्धी। तमस् से उत्पन्न या निकला हुआ।

तामसी—(स्त्री०) [तामस+ङीप्] कृष्णपक्ष की रात। निद्रा। दुर्गा की उपाधि।

तामिस्र—(पुं०) [तमिस्रा+अण्] एक नरक। द्वेष। क्रोध। घृणा। कृष्णपक्ष। एक राक्षस।

ताम्बूल—(न०) [√तम्+ऊलच्, बुगागम, दीर्घ] पान।—**करंक**–(पुं०),—**पेटिका**–(स्त्री०) पानदान, पनडब्बा।—**द**,—**धर**,—**वाहक**–(पुं०) नौकर जो अपने मालिक के साथ पानदान लिये हुए डोले और जहाँ जरूरत पड़े वहाँ पान खिलावे।—**वल्ली**–(स्त्री०) पान की बेल।

ताम्बूलिक—(पुं०) [ताम्बूल+ठन्] तमोली।

ताम्बूली—(स्त्री०) [ताम्बूल+ङीष्] पान का पौधा।

ताम्र—(वि०) [√तम्+रक्, दीर्घ] ताँबे का बना हुआ। ताँबे की तरह लाल रंग का। (न०) ताँबा। एक प्रकार का कोढ़।—**अक्ष (ताम्राक्ष)**–(पुं०) काक। कोयल।—**अर्ध (ताम्रार्ध)**–(पुं०) काँसा। फूल।—**अश्मन् (ताम्राश्मन्)**–(पुं०) पद्मरागमणि।—**उपजीविन् (ताम्रोपजीविन्)**–(पुं०) जो ताँबे की चीजें बना कर जीवन-निर्वाह करता है, कसेरा।—**ओष्ठ (ताम्रोष्ठ)**–(पुं०) लाल ओंठों वाला।—**कर्णी**–(स्त्री०) पश्चिम के दिग्गज अंजन की पत्नी।—**कार**,—**कुट्ट**–(पुं०) कसेरा, ठठेरा।—**कृमि**–(पुं०) इन्द्रगोप कीट, बीरबहूटी।—**गर्भ**–(न०) तूतिया।—**चूड**–(पुं०) मुर्गा।—**त्रपुज**–(न०) पीतल।—**द्रु**–(पुं०) लालचन्दन।—**पट्ट**–(पुं०),—**पत्र**–(न०) ताम्रपत्र जिस पर दान दी हुई वस्तुओं के नाम, दानदाता का नाम और दानग्रहीता का नाम खोदा जाता था।—**पर्णी**–(स्त्री०) मलयाचल से निकलने वाली एक नदी का नाम।—**पल्लव**–(पुं०) अशोक।—**लिप्त**–(पुं०) बंगाल के अंतर्गत एक भू-खंड, तामलूक।—**वर्ण**–(वि०) ताँबे के रंग का, रक्तवर्ण। (पुं०) सिंहल द्वीप।—**वल्ली**–(स्त्री०) मजीठ।—**बीज**–(पुं०) कुलथी।—**वृक्ष**–(पुं०) लाल चन्दन का वृक्ष।—**शासन**–(न०) ताम्रपट्ट पर खुदा हुआ धर्मलेख आदि।—**शिखिन्**–(पुं०) मुर्गा, कुक्कुट।—**सार**–(न०) दे० 'ताम्रवृक्ष'।—**सारक**–(पुं०) रक्तचंदन का वृक्ष। खैर, कत्था।

ताम्रिक—(वि०) [ताम्र+ठन्] [स्त्री०—**ताम्रिकी**] ताँबे का बना हुआ। (पुं०) ठठेरा, कसेरा।

√ताय्—भ्वा० आत्म० सक० फैलाना। बढ़ाना। रक्षा करना, बचाना,। तायते, तायिष्यते, अतायि, अतायिष्ट।

तार—(वि०) [√तॄ+णिच्+अच् वा अप्] ऊँचा। चमकीला। उत्तम। स्वादिष्ठ। (पुं०) नदीतट। मोती की आब। सुन्दर या बड़ा मोती; 'हारममलतरतारमुरसि दधतं, गीत० ११'। उच्चस्वर। (न०, पुं०) ग्रह या नक्षत्र। कपूर। (न०) चाँदी। आँख की पुतली। मोती।—**अभ्र (ताराभ्र)**–(पुं०) कपूर।—**अरि (तारारि)**–(पुं०) लोहभस्म जो दवा के काम में आये।—**पतन**–(न०) नक्षत्रपात, उल्कापात।—**पुष्प**–(पुं०) कुन्द या चमेली की बेल।—**वायु**–(पुं०) सन्-सन् करती हुई हवा।—**शुद्धिकर**–(न०) सीसा, सीसक।—**स्वर**–(वि०) तेज आवाज वाला।

—हार–(पुं०) मोती का हार। दमकता हुआ हार।

तारक—(वि०) [स्त्री०—तारिका] [√तृ णिच्+ण्वुल्] ले जाने वाला। पारकरैया। रक्षक, बचाने वाला। उद्धारक। (पुं०) इन्द्र का शत्रु एक दैत्य जिसे नपुंसक का रूप धारण कर विष्णु ने मारा था। महादेव। एक दानव जिसे कार्तिकेय ने मारा था। (पुं०, न०) बेड़ा। (न०) [तार+कन्] नक्षत्र, तारा। आँख की पुतली। [तारेण कनीनिकया कायति, तार √कै+क] आँख।—**अरि** (तारकारि),—**जित्**–(पुं०) कार्तिकेय का नाम।

तारका—(स्त्री०) [तारक+टाप्] सितारा, नक्षत्र। धूमकेतु। आँख की पुतली; 'संदधे दृशमुदग्रतारकां, र० ११.६९।

तारकिणी—(स्त्री०) [तारक+इनि—ङीप्] रात जिसमें आकाश के तारे देख पड़ें।

तारकित—(वि०) [तारक+इतच्] नक्षत्रों वाला। नक्षत्र-जड़ित।

तारण—(पुं०) [√तृ+णिच्+ल्यु] विष्णु। शिव। नौका, बेड़ा। (न०) [√तृ +णिच्+ल्युट्] तारने या उद्धार करने की क्रिया।

तारणि, तारणी—(पुं०) [√तृ+णिच् +अनि] [तारणि+ङीप्] बेड़ा, नाव।

तारतम्य—(न०) [तरतम+ष्यञ्] न्यूनाधिक्य, कमज्यादा, थोड़ा-बहुत। एक दूसरे से कमी-बेशी का हिसाब। गुण, परिमाण आदि का परस्पर मिलान।

तारल—(पुं०) [तरल+अण्] लंपट मनुष्य, कामुक।

तारा—(स्त्री०) [तार+टाप्] तारा या नक्षत्र। स्थिर नक्षत्र। आँख की पुतली। मोती। बालि की स्त्री का नाम। बृहस्पति की स्त्री का नाम। तंत्रोक्त दश महाविद्याओं में से एक। हरिश्चन्द्र राजा की रानी का नाम।—**अधिप** (ताराधिप),—**आपीड** (तारापीड),—**पति**–(पुं०) चन्द्र।—**पथ**–(पुं०) आकाशमण्डल। आकाश।—**भूषा**–(स्त्री०) रात।—**मण्डल**–(न०) खगोल। आँख की पुतली।—**मृग**–(पुं०) मृगशिरस् नक्षत्र।

तारिक—(न०)[तार+ठन्] भाड़ा, किराया, उतराई।

तारिणी—(स्त्री०) [√तृ+णिच्+णिनि—ङीप्] तारने वाली, सद्गति देने वाली। पार्वती। दूसरी महाविद्या।—**ईश** (तारिणीश)–(पुं०) शिव। (वि०) जिसकी प्रभु तारिणी हैं।

तारुण्य—(न०) [तरुण+ष्यञ्] जवानी, युवावस्था। ताजगी, टटकापन।

तारेय—(पुं०) [तारा+ढक्] बुधग्रह। बालिपुत्र अङ्गद की उपाधि।

तार्किक—(पुं०) [तर्क+ठक्] न्यायदर्शनवेत्ता, नैयायिक।

तार्क्ष्य—(पुं०) [तृक्ष+अण्—तार्क्ष+यञ्] गरुड़; 'यस्तेन तार्क्ष्यात् किल कालियेन, र० ६.४९। अरुण। गाड़ी। घोड़ा। सर्प। पक्षी।—**ध्वज**–(पुं०) विष्णु।—**नायक**–(पुं०) गरुड़।

तार्तीय—(वि०) [तृतीय+अण् (स्वार्थे)] तीसरा।

तार्तीयीक—(वि०)[तृतीय+ईकक्] तीसरा।

ताल—(पुं०) [√तल+घञ् वा √तल् +णिच्+अच् वा तल+अण्] तालवृक्ष। ताली बजाना। फड़फड़ाना। हाथी के कानों की फड़फड़ाहट। संगीत में नियत मात्राओं पर ताली बजाना। दुर्गा का सिंहासन। बालिश्त। मँजीरा। हथेली। ताला। तलवार की मूँठ। (न०) ताड़ वृक्ष का फल। हड़ताल।—**अङ्क** (तालाङ्क)–(पुं०) बलराम। तालपत्र जो लिखने के काम आते हैं। पुस्तक। आरा।—**अवचर** (तालावचर)–(पुं०) नचैया, नाचने वाला। नाटक का पात्र।—

केतु–(पुं॰) भीष्मपितामह।—**क्षीरक**–(न॰) —**गर्भ**–(पुं॰) ताड़ वृक्ष का रस।—**चर**–(पुं॰) एक देश। वहाँ का निवासी। वहाँ का राजा।—**जङ्घ**–(पुं॰) एक देश। वहाँ का निवासी या राजा। एक प्रकार का ग्रह। महाभारत में वर्णित एक वीर जाति का पूर्व पुरुष।—**ध्वज**,—**भृत्**—(पुं॰) बलराम का नाम। कर्णभूषण विशेष।—**मर्दक**–(पुं॰) एक प्रकार का बाजा।—**यंत्र**-(न॰) शल्य-चिकित्सा का औज़ार।—**रेचनक**–(पुं॰) नृत्य करने वाला। नाटक खेलने वाला।—**लक्षण**–(पुं॰) बलराम।—**वन**–(न॰) ताड़ के पेड़ों का जंगल। यमुना के किनारे पर स्थित ब्रज का एक वन।—**वृन्त**–(न॰) पंखा।

तालक—(न॰) [ताल+कन्] हड़ताल। चटकनी। ताला। (पुं॰) कर्णभूषण विशेष।

तालव्य—(वि॰) [तालु+यत्] तालू से संबंध रखने वाला।—**वर्ण**–(पुं॰) वे अक्षर जो तालू की सहायता से बोले जावें। ऐसे अक्षर ये हैं—इ, ई, च्, छ्, ज्, झ्, ञ और य्।

तालिक—(पुं॰) [तल+ठञ्] चपत, तमाचा। ताली। कागज का पुलिंदा या हस्त-लिखित प्रति बाँधने का बेठन या बंधन।

तालिका—(स्त्री॰) सूची। कुंजी। तालमूली। मजीठ। हाथों से बजाई गई ताली; 'चयैकेन न हस्तेन तालिका संप्रपद्यते' पं॰ २.१२८। चपत।

तालित—(न॰) [√तड्+णिच्+क्त, डस्य लत्वम्] एक प्रकार का बाजा। रंगीन कपड़ा। रस्सी, डोरी।

ताली—(स्त्री॰) [√तल्+णिच्+अच्—ङीप्] पहाड़ी ताड़ का पेड़। ताड़ी वृक्ष। महकदार मिट्टी। एक प्रकार की कुंजी।—**वन**–(न॰) ताड़ के वृक्षों का झुरमुट।

तालु—(न॰) [तरन्त्यनेन वर्णाः, √तॄ+ञुण्, रस्य लः] तालू।—**जिह्व**–(पुं॰) मगर।

तालूर—(पुं॰) [√तल्+णिच्+ऊर] भँवर। ज्वार। बाढ़।

तालूषक—(न॰) [√तल्+णिच्+ऊषक] तालू।

तावक, तावकीन—(वि॰) [तव इदम्, युष्मद्+अण्, तवक आदेश] [तव इदम्, युष्मद्+खञ्, तवक आदेश] तेरा, तुम्हारा; 'तपः क्व वत्से क्व च तावकं वपुः', कु॰ ५.४।

तावत्—(अव्य॰) [तत्परिमाणमस्य, तद्+डवतु] साकल्य। अवधि। मान। अव-धारण। प्रशंसा। पक्षान्तर। संभ्रम। अधि-कार। तब तक। (वि॰) [तत्परिमाणमस्य, तद्+वतुप्] उतने परिमाण का।

तावतिक—(वि॰) [तावत्+क, इट्] उतने में खरीदा हुआ।

तावत्क—(वि॰) [तावता क्रीतः संख्यात्वात् कन्] इतने मूल्य का, इतने दामों का।

ताबुरि—(पुं॰) वृष राशि।

√तिक्—स्वा॰ पर॰ सक॰ जाना। तिक्नोति, तेकिष्यति, अतेकीत्।

तिक्त—(वि॰) [√तिज्+क्त] तीता, कड़ुआ। (पुं॰) ६ रसों में से एक। सुगंध। पित्तपापड़ा। कुटज। वरुण वृक्ष।—**कन्दिका**—(स्त्री॰) गंधपत्रा। वनकचूर।—**काण्ड**—(पुं॰) चिरायता।—**गन्धा**–(स्त्री॰) राई। वाराही कंद।—**घृत**–(न॰) तिक्त ओषधियों के योग से तैयार किया हुआ घृत जो कुष्ठ, विषमज्वर आदि में दिया जाता है।—**तण्डुला**–(स्त्री॰) पीपर।—**तण्डी**–(स्त्री॰) कटुतुम्बी लता।—**तुम्बी**–(स्त्री॰) तितलौकी।—**दुग्धा**–(स्त्री॰) खिरनी, क्षीरिणी वृक्ष। अजशृंगी, मेढ़ासिंगी।—**धातु**–(पुं॰) पित्त।—**फल**–(पुं॰),—**मरिच**–(पुं॰) निर्मली।—**सार**–(पुं॰) खदिर वृक्ष।

√तिग्—स्वा॰ पर॰ सक॰ जाना। तिग्नोति, तेगिष्यति, अतेगीत्।

तिग्म—(वि॰) [√तिज्+मक्] तीव्र, पैना।

नोकदार (हथियार)। उग्र, प्रचण्ड। जलता हुआ। तीता। क्रोधी। (न०) गर्मी। तीतापन।—अंशु (तिग्मांशु)-(पुं०) सूर्य। अग्नि। शिव।—कर,—दीधिति,—रश्मि-(पुं०) सूर्य।

√तिज्—चु० उभ० सक० तेज करना। तेजयति-ते। भ्वा० आत्म० सक० सहन करना। (स्वार्थ में सन् प्रत्यय) तितिक्षते, तितिक्षिष्यते, अतितिक्षिष्ट।

तितउ—(पुं०) [तन्यन्ते भृष्टयवा यत्र, √तन्+डउ, द्वित्व, इत्व] चलनी। (न०) छाता।

तितिक्षा—(स्त्री०) [√तिज्+सन्+अ—टाप्] सर्दी-गर्मी आदि द्वंद्वों को सहने की क्रिया या शक्ति। बिना प्रतीकार या विकलता के सभी दुःखों को सहना। क्षमा।

तितिक्षु—(वि०) [√तिज्+सन्+उ] सहनशील, क्षमावान्।

तितिभ—(पुं०) [तितीति शब्देन भणति, तिति√भण्+ड] जुगनू, खद्योत। इन्द्रगोप, बीरबहूटी।

तित्तिरि, तित्तिर—(पुं०) [=तितिर, पृषो० साधुः] [तित्ति इति शब्दं राति ददाति, तित्ति√रा+क] तीतर पक्षी।

तित्तिरि—(पुं०) [तित्ति इति शब्दं रौति, तित्ति√रु+डि] तीतर। एक ऋषि का नाम जिन्होंने कृष्णयजुर्वेद को सबसे प्रथम पढ़ाया।

तिथ—(पुं०) [√तिज्+थक्, जलोप] आग। समय। वर्षा या शरद् ऋतु। कामदेव।

तिथि—(पुं०, स्त्री०) [√अत्+इथिन्, पृषो० साधुः] चन्द्रकलाओं के हिसाब से होने वाली प्रतिपदा आदि तिथियाँ, चान्द्र दिवस। पन्द्रह की संख्या।—**क्षय**-(पुं०) अमावास्या। तिथि का ह्रास।—**पत्री**-(स्त्री०) पञ्चाङ्ग, पत्रा।

तिनिश—(पुं०) शीशम की जाति का एक वृक्ष।

तिन्तिड—(पुं०), **तिन्तिडी**, **तिन्तिडिका**-(स्त्री०), **तिन्तिडीक**-(पुं०) [=तिन्तिडी, पृषो० साधुः] [√तिम्+ईकन्, पृषो० साधुः] [तिन्तिडी+कन्—टाप्, ह्रस्व] [√तिम्+ईकन्, नि० साधुः] इमली का वृक्ष। इमली।

तिन्दु, तिन्दुक, तिन्दुल—(पुं०) [√तिम्+कु, नि० साधुः] [तिन्दु+कन्] [=तिन्दुक, पृषो० कस्य लः] तेंदू का पेड़।

√तिम्—भ्वा० पर० सक० नम करना, गीला करना। तेमति, तेमिष्यति, अतेमीत्।

तिमि—(पुं०) [√तिम्+इन्] समुद्र। बहुत बड़े आकार का एक समुद्री मत्स्य। मत्स्य।—**कोष**-(पुं०) समुद्र।—**ध्वज**-(पुं०) एक दैत्य जिसे इन्द्र ने महाराज दशरथ की सहायता से मारा था।

तिमिङ्गिल—(पुं०) [तिमि √गिल्+खश्, मुम्] एक विशाल मत्स्य जो तिमि मत्स्य को भी खा डालता है।

तिमित—(वि०) [√तिम्+क्त] गतिहीन, स्थिर, अचल। गीला, नम, तर।

तिमिर—(वि०) [√तिम्+किरच्] काला। अन्धकारमय। (पुं०, न०) अंधकार। अंधापन। लोहे का मोर्चा।—**अरि** (**तिमिरारि**)—**नुद्**,—**रिपु**-(पुं०) सूर्य।

तिरश्ची—(स्त्री०) [तिर्यक् जातिः स्त्रियां ङीप्] किसी जानवर, पक्षी या जन्तु की मादा।

तिरश्चीन—(वि०) [तिर्यक्+ख—ईन] टेढ़ा, तिरछा; 'गतं तिरश्चीनमनूरुसारथेः' शि० १.२।

तिरस्—(अव्य०) [तरति दृष्टिपथं √तृ+असुन्] तिरछेपन से, टेढ़ेपन से। बिना, रहित। गुप्तरीत्या, अदृश्य रूप से।

तिरयति—(क्रि०) छिपाना, गुप्त रखना।

रोकना, अड़चन डालना, बाधा देना। जीत लेना।

तिर्यक्—(अव्य०) [दे० 'तिर्यञ्च्'] टेढ़ेपन से।

तिर्यञ्च्—(वि०)(स्त्री०)[तिरश्ची—तिर्यञ्ची] [तिरस् √अञ्च्+क्विन्, तिरसः तिरि आदेशः पक्षे नलोपः] टेढ़ा, तिरछा। मुड़ा हुआ, झुका हुआ। (पुं०, न०) पशु। पक्षी।—अन्तर (तिर्यगन्तर)–(न०) अर्ज, चौड़ाई।—अयन (तिर्यगयन)–(न०) सूर्य की वार्षिक गति।—ईक्ष (तिर्यगीक्ष)–(वि०) भेंड़ा, ऐंचाताना।—जाति (तिर्यग्जाति)–(पुं०) पशु-पक्षी की जाति।—प्रमाण (तिर्यक्-प्रमाण)–(न०) चौड़ाई।—प्रेक्षण (तिर्यक्-प्रेक्षण)–(न०) कनखियों देखना। तिरछी आँख कर देखना।—योनि (तिर्यग्योनि)–(स्त्री०) पशु-पक्षी जाति।—स्रोतस् (तिर्यक्-स्रोतस्)–(पुं०) पशु-सृष्टि।

√तिल्—तु० पर० अक० चिकना होना। तिलति, तेलिष्यति, अतेलीत्। भ्वा० पर० सक० जाना। तेलति, तेलिष्यति, अतेलीत्।

तिल—(पुं०) [√तिल्+क] तिल का पौधा। तिल-बीज। शरीर पर का तिल या मस्सा। तिल के समान छोटा टुकड़ा।—अम्बु (तिलाम्बु), —उदक (तिलोदक)–(न०) तिल मिश्रित जल, जो तर्पण के काम में आता है।—उत्तमा (तिलोत्तमा)–(स्त्री०) एक अप्सरा का नाम।—ओदन (तिलौदन)–(पुं०, न०) तिल-चावल की खीर।—कालक–(पुं०) मस्सा, तिल।—किट्ट–(न०),—खलि, —खली—(स्त्री०),—चूर्ण–(न०) खली जो पशुओं को खिलायी जाती है।—तण्डुलक–(न०) आलिंगन।—धेनु–(स्त्री०) तिल की बनी गाय जो दान रूप में दी जाय।—पर्ण–(पुं०) तारपीन। (न०) चन्दन।—पर्णी–(स्त्री०) चन्दन का वृक्ष। तारपीन।—पिच्चट–(न०) तिल की पीठी। तिलकुट।—भाविनी–(स्त्री०) चमेली।—भेद–(पुं०) पोस्ते का दाना।—रस–(पुं०) तिली का तेल।—स्नेह–(पुं०) तिली का तेल।—होम–(पुं०) तिल की आहुति।

तिलक—(न०) [√तिल्+क्वुन्, तिल √कै+क, वा तिल+कन्] घिसे हुए चंदन, केसर या रोली आदि से ललाट पर बनाया हुआ विशेष आकार का चिह्न; टीका; 'न तिलकस्तिलकः प्रमदामिव' र० ९.४१। सोंचर नमक। राज्याभिषेक, राजगद्दी। स्त्रियों का एक शिरोभूषण। पेट के भीतर की तिल्ली। कुङ्कुम। (पुं०) लोध्र वृक्ष। मरुवक वृक्ष। तिलकारक रोग। घोड़े का एक भेद। पीपल का एक भेद। ध्रुवक का एक भेद जिसमें प्रत्येक चरण में २५ अक्षर होते हैं।—आश्रय (तिलकाश्रय)–(पुं०) माथा।

तिलका—(स्त्री०) [तिल√कै+क–टाप्] हार का एक भेद।

तिलतैल—(न०) [तिल+तैलम्] तिल का तेल।

तिलन्तुद—(पुं०) [तिल√तुद्+खश्, मुम्] तेली।

तिलशः (अव्य०) [तिल+शस्] अत्यन्त अल्प परिमाण में।

तिलित्स—(पुं०) बड़ा सर्प।

तिल्य—(न०) [तिलानां भवनं क्षेत्रं वा, तिल+यत्] तिल का खेत।

तिल्व—(पुं०) [√तिल्+वन्] लोध का पेड़।

तिष्ठद्गु—(अव्य०) [तिष्ठन्त्यो गावो यस्मिन् काले, तिष्ठद्गुप्रभृतित्वात् नि० अव्य० स०] वह समय जब दूध देने को गौ खड़ी होती है। सन्ध्या के घंटे या डेढ़ घंटे के बाद का समय।

तिष्य—(पुं०) [√तुष्+क्यप्, नि० साधुः] पुष्य नक्षत्र, २७ नक्षत्रों में से आठवाँ

नक्षत्र । (न०) [तिष्य+अच्] पौष मास । [√त्विष्+यक्,नि० साधुः] कलियुग ।

√तीक्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । तीकते, तीकिष्यते, अतीकिष्ट ।

तीक्ष्ण—(पुं०) [√तिज्+क्स्न, दीर्घ] शोरा । लालमिर्च । कालीमिर्च । राई । (न०) लोहा । इस्पात । गर्मी । तीतापन । युद्ध । विष । मृत्यु । हथियार । समुद्री नमक । शीघ्रता । (वि०) पैना, तीव्र । गर्म, ताता । उग्र, प्रचण्ड । कड़ा । कर्कश । टेढ़ा । कठोर । हानिकर । विषैला । कुशाग्र । बुद्धिमान्, चतुर । डाही । आत्मत्यागी ।—**अंशु (तीक्ष्णांशु)**–(पुं०) सूर्य । अग्नि ।—**आयस (तीक्ष्णायस)**–(न०) इस्पात लोहा । —**उपाय (तीक्ष्णोपाय)**–(पुं०) उग्र साधन । —**कन्द**–(पुं०) लहसुन ।—**कर्मन्**–(वि०) क्रियाशील । स्फूर्तिवान् ।—**दंष्ट्र**–(पुं०) चीता ।—**धार**–(पुं०) तलवार ।—**पुष्प**–(न०) लौंग ।—**पुष्पा**–(स्त्री०) लौंग का पौधा । केतकी का पौधा ।—**बुद्धि**–(वि०) तेज अक्ल का, चतुर ।—**रश्मि**–(पुं०) सूर्य । —**रस**–(पुं०) शोरा । विषैला तरल पदार्थ । —**लौह**–(न०) इस्पात ।—**शूक**–(पुं०) जौ ।—**सार**–(पुं०) लोहा ।—**सारा**—(स्त्री०) शीशम का पेड़ ।

√तीम्—दि० पर० अक० भींगना, नम होना । तीम्यति, तीमिष्यति, अतीमीत् ।

√तीर्—चु० पर० सक० पार जाना । काम समाप्त करना । तीरयति, तीरयिष्यति, अतितीरत् ।

तीर—(न०) [√तीर्+अच्] तट, किनारा । हाशिया, छोर, किनारा । (पुं०) बाण । सीसा । टीन । जस्ता ।

तीरित—(वि०) [√तीर्+क्त] तै किया हुआ, निर्णीत । साक्षी के अनुसार फैसला किया हुआ ।—(न०) किसी कार्य की समाप्ति या अवसान ।

तीर्ण—(वि०) [√तॄ+क्त] पार किया हुआ । फैला हुआ । सब से आगे निकला हुआ ।

तीर्थ—(न०) [तरति पापादिकं यस्मात्, √तॄ+थक्] रास्ता, मार्ग । घाट, जलस्थान । पवित्रस्थान । द्वारा, जरिया, माध्यम । उपाय । पवित्र या पुण्यप्रद व्यक्ति । गुरु । उद्गम स्थान । यज्ञ । सचिव । उपदेश । उपयुक्त स्थान या काल । उपयुक्त या साधारण पद्धति । हाथ के कई भाग जो देव और पितृ कार्य के लिये पवित्र माने जाते हैं । दार्शनिक सिद्धान्त विशेष । स्त्रियों का रज । ब्राह्मण । अग्नि । (न०) संन्यासियों की एक उपाधि ।—**उदक (तीर्थोदक)**–(न०) पवित्र जल ।—**कर (तीर्थङ्कर भी)**–(पुं०) जैन अर्हत । संन्यासी । नवीन दर्शनकार । विष्णु का नाम ।—**काक,—ध्वांक्ष,—वायस** –(पुं०) लोलुप ।—**देव**–(पुं०) शिव । —**भूत**–(वि०) पवित्र । विशुद्ध ।—**यात्रा** –(स्त्री०) पुण्यप्रद स्थानों में गमन ।—**राज** –(पुं०) प्रयाग का नाम ।—**राजि,—राजी** –(स्त्री०) काशी ।—**वाक**–(पुं०) सिर के बाल ।—**विधि**–(पुं०) तीर्थ में जाकर वहाँ कर्म विशेष करने की पद्धति ।—**सेविन्**–(वि०) तीर्थयात्री । (पुं०) बगला पक्षी ।

तीर्थिक—(पुं०) [तीर्थ+ठन्–इक] तीर्थ का ब्राह्मण, पंडा । तीर्थंकर । तीर्थयात्री ।

√तीव्—भ्वा० पर० अक० मोटा होना । तीवति, तीविष्यति, अतीवीत् ।

तीवर—(पुं०) [√तॄ+ष्वरच्] समुद्र । शिकारी । क्षत्रिया की वर्णसङ्कर औलाद ।

तीव्र—(न०) [√तीव्+रक्] उष्णता, गर्मी । तट । लोहा । (पुं०) शिव । (वि०) उग्र, प्रचण्ड । गर्म, उष्ण । चमकीला । व्यापक । अनन्त, असीम । भयानक ।—**आनन्द (तीव्रानन्द)**–(पुं०) शिव जी । —**कण्ठ,—कन्द**–(पुं०) सूरन, ओल ।—

गति-(वि०) तेज, फुर्तीला ।—पौरुष-(न०) दुस्साहस पूर्ण वीरता । वीरता ।—संवेग-(वि०) दृढ़-विचार-सम्पन्न । अति-प्रचण्ड । (पुं०) तीव्र वैराग्य ।—सव-(पुं०) एक दिन में समाप्त होने वाला एक यज्ञ, एकाह यज्ञ ।

तु—(अव्य०) [√तुद्+डु] किन्तु । प्रत्युत । और । अब । इस सम्बन्ध में । भेदसूचक भी है ।

तुक्खार,—तुखार,—तुषार- (पुं०) विन्ध्या-चल वासी जातियों में से एक जाति के लोगों का नाम ।

तुङ्ग—(वि०) [√तुन्ज्+घञ्, कुत्व] ऊँचा, उन्नत । लंबा । प्रलंब । मेहराबदार । मुख्य । दृढ़ । (पुं०) ऊँचाई, उठान । पर्वत । चोटी । बुधग्रह । गैंडा । नारियल का वृक्ष ।—बीज-(पुं०) पारा ।—भद्र-(पुं०) मदमाता हाथी ।—भद्रा-(स्त्री०) एक नदी का नाम जो कृष्णा नदी में गिरती है ।—वेणा-(स्त्री०) महाभारत में वर्णित एक नदी का नाम ।—शेखर-(पुं०) पर्वत ।

तुङ्गी—(स्त्री०) [तुङ्ग+ङीष्] रात्रि । हल्दी ।—ईश (तुङ्गीश)-(पुं०) चन्द्रमा । सूर्य । शिव । कृष्ण ।—पति-(पुं०) चन्द्रमा ।

तुच्छ—(न०) [√तुद्+क्विप्, तुद्√छो+क]तुष, भूसी । (पुं०) नील का पौधा । तूतिया । (वि०) खाली । हल्का । छोटा । थोड़ा । त्यागा हुआ । नीच । निकम्मा । गरीब । अभागा ।—द्रु-(पुं०) एरण्ड वृक्ष ।—धान्य,—धान्यक-(पुं०) फूस । पुआल ।

तुच्छता—(स्त्री०) [तुच्छ+तल्—टाप्] नीचता । अवज्ञा ।

√तुज्—भ्वा० पर० सक० हिंसा करना । तोजति, तोजिष्यति, अतोजीत् ।

√तुञ्ज्—भ्वा० पर० सक० पालन करना । तुञ्जति, तुञ्जिष्यति, अतुञ्जीत् । चु० पर० सक० मारना । अक० शक्तिग्रहण करना । निवास करना । तुञ्जयति, तुञ्जयिष्यति, अतुतुञ्जत् ।

तुञ्ज—(पुं०) [√तुञ्ज्+अच्]इन्द्र का वज्र ।

√तुट्—तु० पर० अक० झगड़ा करना । तुटति, तुटिष्यति, अतुटीत् ।

तुटुम—(पुं०) [√तुट्+उम] मूसा, चूहा ।

√तुड्—भ्वा० पर० सक० तोड़ना । तोडति, तोडिष्यति, अतोडीत् । तु० पर० सक० तोड़ना । तुडति, तुडिष्यति, अतुडीत् ।

√तुण्—तु० पर० सक० झुकाना, टेढ़ा करना । धोखा देना, ठगना । तुणति, तुणिष्यति, अतुणीत् ।

√तुण्ड्—भ्वा० आत्म० सक० तोड़ना । मारना । तुण्डते, तुण्डिष्यते, अतुण्डिष्ट ।

तुण्ड—(न०) [√तुण्ड्+अच्] मुख । चोंच । थूथन (शूकर का) । हाथी की सूंड़ । औजार की नोक ।

तुण्डि—(पुं०) [√तुण्ड्+इन्] चेहरा, मुख । चोंच । (स्त्री०) टूँड़ी, नाभि ।

तुण्डिन्—(पुं०) [तुण्ड+इनि] शिव के वृषभ का नाम ।

तुण्डिभ—(वि०) =तुन्दिभ ।

तुण्डिल—(वि०) [तुण्ड+इलच्] बातूनी, गप्पी । तोंद वाला ।

तुत्थ—(पुं०) [√तुद्+थक्] अग्नि । पत्थर ।—अञ्जन (तुत्थाञ्जन)-(न०) आँख में लगाने की एक दवा । (न०) तूतिया ।

तुत्था—(स्त्री०) [तुत्थ+टाप्] छोटी इला-यची । नील का पौधा ।

√तुद्—तु० उभ० सक० मारना, घायल करना । चुभोना, गड़ाना । पीड़ित करना, सताना । तुदति—ते, तोत्स्यति—ते, अतौ-त्सीत्—अतुत्त ।

तुन्द—(न०) [√तुद्+दन्, पृषो० नागुः] पेट, तोंद ।—कूपिका —कूपी-(स्त्री०) नाभि ।—परिमार्ज, —परिमृज्, —मृज-(वि०) काहिल, सुस्त । दीर्घसूत्री ।

तुन्दवत्—(वि०) [तुन्द+मतुप्, वत्व] तोंद वाला, जिसका उदर बड़ा हो।

तुन्दिक, तुन्दिन्, तुन्दिभ, तुन्दिल—(वि०) [अतिशयितं तुन्दम् उदरम् अस्ति यस्य, तुन्द+ठन्] [तुन्द+इनि] [तुन्दिर्वृद्धा अस्ति यस्य, तुन्दि+भ] [तुन्द+इलच्] बड़े पेट का। मटका जैसे पेट वाला। अत्यन्त मोटा। भरा हुआ या लदा हुआ।

तुन्न—(वि०) [√तुद्+क्त] कटा हुआ। फटा हुआ। घायल। सताया हुआ।—**वाय**-(पुं०) दर्जी।

√तुप्—भ्वा०, तु० पर० सक० हिंसा करना। तोपति, तोपिष्यति, अतोपीत्। (तु०) तुपति।

√तुभ्—दि०, क्र्या० पर० सक० हिंसा करना। तुभ्यति, तोभिष्यति, अतोभीत्। (क्र्या०) तुभ्नाति।

तुमुल—(वि०) [√तु+मुलक्] शोर गुल मचाने वाला। भयानक। क्रोधी। उद्विग्न, व्याकुल। घबड़ाया हुआ। (पुं०, न०) कोलाहल, शोरगुल। अस्तव्यस्त द्वन्द्वयुद्ध।

√तुम्प्—भ्वा० पर० सक० पीड़ित करना। तुम्पति, तुम्पिष्यति, अतुम्पीत्।

तुम्ब—(पुं०) [√तुम्ब्+अच्] लौकी। तूँबा। आँवला।

तुम्बर—(पुं०) [√तुम्ब रा+क] तानपूरा। एक गन्धर्व का नाम।

तुम्बा—(स्त्री०) [तुम्ब+टाप्] तूँबा। दुधार गौ।

तुम्बि, तुम्बी—(स्त्री०) [√तुम्ब्+इन्] [तुम्बि+ङीष्] कड़ई लौकी, कद्दू या घीया। इसका बना हुआ छोटा पात्र।

तुम्बुरु—(पुं०) [√तुम्ब्+उरु] एक प्रसिद्ध गन्धर्व। जैनमत में पंचम अर्हत् का उपासक। (न०) धनिया।

√तुर्—जु० पर० सक० शीघ्रता करना। तुतोर्ति। तोरिष्यति, अतोरीत्।

तुरग—(पुं०) [तुरेण वेगेन गच्छति, तुर √गम्+ड] घोड़ा। मन।—**आरोह** (**तुरगारोह**)-(पुं०) घुड़सवार।—**उपचारक** (**तुरगोपचारक**)-(पुं०) साईस।—**प्रिय**-(पुं०, न०) यव, जौ।—**ब्रह्मचर्य**-(न०) स्त्री के अभाव में विवश हो ब्रह्मचर्य धारण करना।

तुरगिन्—(पुं०) [तुरग+इनि] घुड़सवार।

तुरगी—(स्त्री०) [तुरग+ङीष्] घोड़ी।

तुरङ्ग—(पुं०) [तुर√गम्+खच्] घोड़ा। (न०) मन। सात की संख्या।—**अरि** (**तुरङ्गारि**)-(पुं०) भैंसा।—**द्विषणी**-(स्त्री०) भैंस।—**प्रिय**-(पुं०, न०) यव, जौ।—**मेध**-(पुं०) अश्वमेध यज्ञ।—**यायिन्**,—**सादिन्**-(पुं०) घुड़सवार।—**वक्त्र**,—**वदन**-(पुं०) किन्नर।—**शाला**-(स्त्री०)—**स्थान**-(न०) अस्तबल, घुड़साल।—**स्कन्ध**-(पुं०) रिसाला, घुड़सवारों की टोली।—

तुरङ्गम—(पुं०) [तुर√गम्+खच्, मुम्] घोड़ा; 'अवेहि मां प्रीतमृते तुरङ्गमात् किमिच्छसीति' र० ३.६३। (न०) मन। एक छन्द का नाम।

तुरङ्गी—(स्त्री०) [तुरङ्ग+ङीष्] घोड़ी।

तुरायण—(न०) [√तुर्+क, तुर+फक्—आयन] असंग, अनासक्ति। एक यज्ञ जो चैत्र-शुक्ला-पंचमी और वैशाख-शुक्ला-पंचमी को किया जाता है।

तुराषाह्—(पुं०) [तुरं त्वरितं साहयति, तुर √सह्+णिच्+क्विप्] [कर्त्ता एकवचन **तुराषाट्** या **तुराषाड्**] इन्द्र का नाम।

तुरी—(स्त्री०) [√तुर्+इन्—ङीप्] जुलाहों का एक प्रकार का औजार जिससे बाने का सूत भरा जाता है। चित्रकार की कूँची।

तुरीय—(न०) [चतुर्णां पूरणः, चतुर्+छ—ईय, आद्यलोप] चौथाई, चौथा हिस्सा।

[तुरीय+ब्रह्म] परब्रह्म । चौथा ।—**वर्ण**-(पुं०) शूद्र ।

तुरुष्क—(पुं०) तुर्क लोग ।

तुर्य—(वि०) [चतुर्+यत्, आद्यलोप] चौथा । (न०) चौथाई, चौथा हिस्सा ।

√**तुर्व्**—भ्वा० पर० सक० हिंसा करना । तुर्वति, तुर्विष्यति, अतुर्वीत् ।

√**तुल्**—चु० पर० सक० तौलना । सोचना, विचारना । उठाना, ऊँचा करना । पकड़ना । तुलना करना, बराबरी करना । तिरस्कार करना । सन्देह करना । परीक्षा लेना । तोलयति, तोलयिष्यति, अतूतुलत् ।

तुलन—(न०) [√तुल्+ल्युट्] तौलना । तौल । तुलना, बराबरी करना ।

तुलना—(स्त्री०) [√तुल्+णिच्+युच्—टाप्] न्यूनाधिक्य का विचार । समता, बराबरी, मिलान । उठाना । परीक्षा करना ।

तुलसी—(स्त्री०) [तुलां सादृश्यं स्यति नाशयति, तुला√सो+क—ङीप्, पररूप] एक प्रसिद्ध पौधा जो विष्णु को परम प्रिय है ।

तुला—(स्त्री०) [तोल्यतेऽनया, √तुल्+अङ—टाप्] तराज़ू । नाप । समानता, तुल्यता, बराबरी, 'किं धूर्जटेरिव तुलामुपयाति संख्ये' वे० ३.८ ।—**कूट**-(पुं०) तौल में की गई कमी । कम तौलने वाला ।—**कोटि**, —**कोटी**-(स्त्री०) तराज़ू की डंडी के दोनों छोर । नूपुर ।—**कोश**,—**कोष**-(पुं०) तौल द्वारा दिव्य परीक्षा । तराज़ू रखने की जगह ।—**दण्ड**-(पुं०) तराज़ू की डंडी । मानदण्ड ।—**दान**-(न०) अपने शरीर के वजन के बराबर सुवर्ण आदि वस्तुएँ तौल कर उन्हें दान कर देना तुलादान कहलाता है ।—**धट**-(पुं०) बटखरा । व्यापारी, सौदागर । तुलाराशि ।—**धार**-(पुं०) व्यवसायी, सौदागर ।—**परीक्षा**-(स्त्री०) तुला द्वारा परीक्षा का विधान विशेष जिसमें मिट्टी आदि से तौला हुआ व्यक्ति यदि दूसरी बार तौलने में घट जाता था तो दोषी ठहराया जाता था ।—**पुरुष**-(पुं०) सोलह प्रकार के महादानों में से एक ।—०**कृच्छ्र**-(न०) एक व्रत जिसमें तिल की खली, भात, मट्ठा, जल और सत्तू में से प्रत्येक तीन-तीन दिन खाकर पंद्रह दिनों तक रहना होता है ।—०**दान**-(न०) दे० 'तुलादान' ।—**प्रग्रह**,-**प्रग्राह**-(पुं०) तराज़ू की डोरी या डंडी ।—**मान**-(न०)—**यष्टि**-(स्त्री०) तराज़ू की डंडी ।—**बीज**-(न०) घुँघची के दाने ।—**सूत्र**-(न०) तराज़ू की डोरी ।

तुलित—(वि०) [√तुल्+क्त] तौला हुआ । मिलान किया हुआ ।

तुल्य—(वि०) [तुलया सम्मितम्, तुला+यत्] एक ही प्रकार का या एक ही श्रेणी का, बराबर का, समान, सदृश । एक सा, अभिन्न ।—**दर्शन**—(वि०) जो सबको समान दृष्टि से देखता हो, समदर्शी ।—**पान**-(न०) एक साथ पीना ।—**रूप**-(वि०) एक जैसा, एक ही रूप का ।—**वृत्ति**-(वि०) वही पेशा करने वाला ।

तुवर—(वि०) [√तु+ष्वरच्] कसैले स्वाद का । दाढ़ी रहित । (पुं०) कषाय रस । अरहर ।

√**तुष्**—दि० पर० अक० प्रसन्न होना, संतुष्ट होना । तुष्यति, तोक्ष्यति, अतुषत् ।

तुष—(पुं०) [√तुष्+क] अन्न के ऊपर का छिलका, भूसी । बहेड़े का पेड़ । अंडे के ऊपर का छिलका ।—**अग्नि** (तुषाग्नि),—**अनल** (तुषानल)-(पुं०) भूसी या चोकर की आग ।—**अम्बु** (तुषाम्बु),—**उदक** (तुषोदक)-(न०) चावल या जौ की काँजी ।—**ग्रह**,—**सार**-(पुं०) अग्नि ।—**धान्य**-(न०) छिलके वाला अन्न ।

तुषार—(वि०, पुं०) [√तुष्+आरक्] हवा में मिली भाप जो जम कर श्वेत कणों के रूप में पृथ्वी पर गिरती है, हिम, बरफ । शीतल

कपूर। घोड़ों के लिये प्रसिद्ध हिमालय के उत्तर का एक प्राचीन देश। (वि०) जो छूने में बरफ की तरह ठंडा हो। ठंडा। कुहरे का। श्रोस का।—**श्रद्रि** (**तुषाराद्रि**),—**गिरि**,—**पर्वत**-(पुं०) हिमालय पर्वत।—**कण**-(पुं०) कोहरा या पाले की बूंद, श्रोस-कण।—**काल**-(पुं०) जाड़े का मौसम।—**किरण**,—**रश्मि**-(पुं०) चन्द्रमा।—**गौर**-(वि०) बर्फ की तरह सफेद। (पुं०) कपूर।

तुषित—(बहु० पुं०) [√तुष्+कितच्] उपदेवता जिनकी संख्या १२ या ३६ बतलायी जाती है।

तुष्ट—(वि०) [√तुष्+क्त] प्रसन्न, सन्तुष्ट। जो प्राप्त हो उससे सन्तुष्ट और अप्राप्त प्रत्येक वस्तु से विरक्त।

तुष्टि—(स्त्री०) [√तुष्+क्तिन्] सन्तोष, प्रसन्नता।

तुष्टु—(पुं०) [√तुष्+तुक्] कान में पहिनने का रत्न।

√तुह्—भ्वा० पर० सक० वध करना। तोहति, तोहिष्यति, अतुहत्—अतोहीत्।

तुहिन—(वि०) [√तुह्+इनन्] शीतल, ठंडा। (न०) हिम, बरफ। चाँदनी। पाला।—**अंशु** (**तुहिनांशु**),—**कर**,—**किरण**,—**द्युति**,—**रश्मि**-(पुं०) चन्द्रमा। कपूर।—**अचल** (**तुहिनाचल**),—**अद्रि** (**तुहिनाद्रि**),—**शैल**-(पुं०) हिमालय पर्वत।—**कण**-(पुं०) श्रोस की बूंद।—**शर्करा**-(स्त्री०) बरफ।

√तूण्—चु० आत्म० सक० सिकोड़ना। पूर्ण करना। तूणयते, तूणयिष्यते, अतुतूणत।

तूण—(पुं०) [√तूण्+घञ्] तूणीर, तरकस।—**क्ष्वेड**-(पुं०) बाण, तीर।—**धार**-(पुं०) धनुर्धारी।

तूणी, **तूणीर**—(स्त्री०) [तूण+ङीष्] [√तूण्+ईरन्] बाण रखने का चोंगा, तरकश।

तूबर—(पुं०) [√तु+क्विप्, तु√वृ+पृषो० साधुः] दाढ़ी रहित पुरुष। बिना सींग का बैल। कसैला स्वाद। हिजड़ा।

√तूर्—दि० आत्म० सक० तेजी से जाना। वध करना। तूर्यते, तूरिष्यते, अतूरि—अतूरिष्ट।

तूर—(न०) [√तूर्+घञ्] तुरही बाजा।

तूर्ण—(वि०) [√त्वर्+क्त, ऊठ्, तस्य नत्वम्] तेज, वेगवान्, त्वरा वाला।

तूर्णम्—(अव्य०) तेजी से, फुर्ती से, शीघ्रता से।

तूर्णि—(पुं०) [√त्वर्+नि, नि० साधुः] मल। त्वरा। मन। तेजी।

तूर्य—(न०, पुं०) [√तूर्+ण्यत्] तुरही। मृदंग।—**श्रोघ** (**तूर्यौघ**)-(पुं०) औजारों का समूह।

√तूल्—भ्वा० पर० सक० काढ़ना। तूलति, तूलिष्यति, अतूलीत्।

तूल—(न०, पुं०) [√तूल्+क] रुई। अन्तरिक्ष। वायुमंडल।—**कार्मुक**, —**धनुस्**-(न०) रुई धुनने की कमान, धनुही।—**पिचु** -(पुं०) रुई।—**शर्करा**-(स्त्री०) बिनौला। घास का गट्ठा। शहतूत।

तूलक—(न०) [तूल+कन्] रुई।

तूला—(स्त्री०) [√तूल्+अच्—टाप्] कपास का पेड़। दीये की बत्ती।

तूलि—(स्त्री०) [√तूल्+इन्]चित्रकार की कूंची।

तूलिका—(स्त्री०) [तूलि+कन्—टाप्] चित्रकार की कूंची। सूती बत्ती। रुई-भरा गद्दा। बर्मी, छेद करने का श्रोजार।

तूली—(स्त्री०) [√तूल्+इन्—ङीप्] रुई। बत्ती। जुलाहे की कूंची। चित्रकार की कूंची। नील का पौधा।

√तूष्—भ्वा० पर० अक० प्रसन्न होना। तूषति, तूषिष्यति, अतूषीत्।

तूष्णीक—(वि०) [तूष्णीम् शीलम् अस्य, तूष्णीम्+क, मलोप] मौन रहने वाला ।

तूष्णीम्—(अव्य०) [√तुष्+नीम् (बा०)] गुप्त रूप से, चुपचाप; 'न योत्स्य इति गोविन्दमुक्त्वा तूष्णीम्बभूव ह' भ० २.९ ।-बिना बोले या शोरगुल किये ।—**भाव**-(पुं०) खामोशी, मौनावलम्बन ।—**शील**-(वि०) खामोश, चुप रहने वाला ।

तूस्त—(न०) [√तुस्+तन्, दीर्घ] जटा । धूल । पाप । ज़र्रा, सूक्ष्म कण ।

√तृह्—तु० पर० सक० वध करना । घायल करना । तृंहति, तृंहिष्यति—तर्क्ष्यति, अतृंहीत्—अताङ्क्षीत् ।

√तृक्ष्—भ्वा० पर० सक० जाना । तृक्षति, तृक्षिष्यति, अतृक्षीत् ।

√तृण्—त० उभ० सक० खाना । तृणोति—तर्णोति—तृणुते—तर्णुते ।

तृण—(न०) [√तृण्+घञ्, वा √तृह्+नक्, हकारलोप]तिनका; 'तृणमिव लघुलक्ष्मीर्नैव तान्संरुणद्धि' भर्तृ० २.१७ । खर-पात । घास । नरकुल, सरपत ।—**अग्नि** (तृणाग्नि)-(पुं०) फूस या भूसी की आग । आग जो जल्द बुझ जाय ।—**अञ्जन** (तृणाञ्जन)-(पुं०) गिरगिट ।— **अटवी** (तृणाटवी)-(स्त्री०) वन जिसमें घास बहुत हो । —**आवर्त** (तृणावर्त)-(पुं०) हवा का बवंडर । एक दैत्य का नाम जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था ।—**असृज्** (तृणासृज्),—**कुंकुम**, —**गौर**-(न०) भिन्न-भिन्न प्रकार के सुगन्ध-द्रव्य ।—**इन्द्र** (तृणेन्द्र)-(पुं०) खजूर का पेड़ ।—**उल्का** (तृणोल्का)-(स्त्री०) घास की बनी मशाल, फूस का लुआठ ।—**ओकस्** (तृणौकस्)-(न०) फूस की झोपड़ी । —**काण्ड**- (पुं०, न०) [तृणानां समूहः, तृण+काण्डच्] घास का ढेर ।—**कुटी**-(स्त्री०),—**कुटीरक**- (न०) घास-फूस की कुटिया ।—**कूर्चिका**-(स्त्री०) झाड़ू ।—**केतु**-(पुं०) खजूर का पेड़ ।—**गोधा**-(स्त्री०) एक प्रकार का गिरगिट । गोह ।—**ग्राहिन्**-(पुं०) नीलम, पुखराज ।—**चर**-(पुं०) गोमेद मणि ।—**जलायुका**,—**जलूका**-(स्त्री०) झाँझा, एक कीड़ा ।—**द्रुम**-(पुं०) नारियल । ताल । खजूर । केतक वृक्ष । छुहारे का वृक्ष ।—**धान्य**- (न०) तिन्नी नामक धान, नीवार । सावाँ ।—**ध्वज**-(पुं०) ताल वृक्ष । बाँस ।—**पीड**- (न०) हाथापाई ।—**पूली**-(स्त्री०) चटाई, नरकुल की बनी बैठकी ।—**प्राय**-(वि०) निकम्मा, तुच्छ ।—**बिन्दु**-(पुं०) एक ऋषि का नाम ।—**मणि**-(पुं०) दे० 'तृणग्राहिन्' । —**मत्कुण**-(पुं०) जामिन, जमानत करने वाला ।—**राज**-(पुं०) नारियल का पेड़ । बाँस । ईख । तालवृक्ष ।—**वृक्ष**-(पुं०) खजूर का पेड़ । छुहारे का पेड़ । नारियल का पेड़ । —**शीत**-(न०) एक प्रकार की महकदार घास ।—**सारा**-(स्त्री०) केले का पेड़ ।—**सिंह**-(पुं०) कुल्हाड़ी ।—**हर्म्य**-(पुं०) फूस का झोपड़ा ।

तृण्या—(स्त्री०) [तृण+य] घास या फूस का ढेर ।

तृतीय—(वि०) [त्रयाणां पूरणः, त्रि+तीय, सम्प्रसारण] तीसरा ।—**प्रकृति**-(पुं०) या (स्त्री०) हिजड़ा, नपुंसक ।

तृतीयक—(वि०) [तृतीय+कन्] तिजारी, तीसरे दिन आने वाला ज्वर ।

तृतीया—(स्त्री०) [तृतीय+टाप्] पक्ष की तीसरी तिथि, तीज । करण कारक की विभक्ति ।—**कृत**-(वि०) तीन बार जोता हुआ (खेत) ।—**प्रकृति**-(पुं०, स्त्री०) हिजड़ा, नपुंसक ।

तृतीयिन्—(वि०) [तृतीय+इनि] तीसरा भाग पाने का अधिकारी ।

√तृद्—रु० उभ० सक० चीरना, फाड़ना । छेद करना । मार डालना । उजाड़ देना ।

छोड़ देना, मुक्त कर देना । तिरस्कार करना । तृणत्ति—तृन्ते, तर्दिष्यति—ते—तर्त्स्यति—ते, अतृणत्—अतर्दीत्—अतर्दिष्ट ।

√तृप्—दि० पर० अक० संतुष्ट होना । सक० प्रसन्न करना । तृप्यति, तर्पिष्यति—तर्प्स्यति—त्रप्स्यति, अताप्सीत्—अत्राप्सीत्—अतर्पीत्—अतृपत् ।

तृप्त—(वि०) [√तृप्+क्त] सन्तुष्ट, अघाया हुआ ।

तृप्ति—(स्त्री०) [√तृप्+क्तिन्] सन्तोष । छकाई, अघाई । प्रसन्नता, आह्लाद ।

√तृम्फ्—तु० पर० अक० प्रसन्न होना । तृम्फति, तृम्फिष्यति, अतृम्फीत् ।

√तृष्—दि० पर० अक० प्यासा होना । लालच करना । तृष्यति, तर्षिष्यति, अतृषत् ।

तृष्—(स्त्री०) [√तृष्+क्विप्] [कर्ता एकवचन—तृट्, तृड्] प्यास । उत्कट अभिलाषा । उत्सुकता ।

तृषा—(स्त्री०) [तृष्+टाप्] प्यास ।—आर्त (तृषार्त)—(वि०) प्यासा ।—हृ—(न०) पानी ।

तृषित—[तृषा+इतच्] प्यासा । इच्छुक । लोभी ।

तृष्णज्—(वि०) [√तृष्+नजिङ्] लालची, लोभी । प्यासा ।

तृष्णा—(स्त्री०) [√तृष्+न—टाप्] प्यास । अभिलाषा । लालच ।—क्षय—(पुं०) मन की शान्ति । सन्तोष ।

तृष्णालु—(वि०) [तृष्णा+आलु] बहुत प्यासा । बड़ा लालची ।

√तृह्—तु० पर० सक० हिंसा करना । तृहति, तर्हिष्यति—तर्क्ष्यति, अतर्हीत्—अतृक्षत् । रु० पर० सक० हिंसा करना । तृणेढि, तर्हिष्यति, अतर्हीत् ।

√तॄ—भ्वा० पर० सक० पार होना । (मार्ग) तै करना । तैरना, उतराना । (कठिनाई को) पार करना । सम्पूर्णतः अपने अधिकार में कर लेना । पूरा करना, समाप्त करना । छुटकारा पाना, छूट जाना । तरति, तरीष्यति—तरिष्यति, अतारीत् ।

√तेज्—भ्वा० पर० सक० पालन करना । तेजति, तेजिष्यति, अतेजीत् ।

तेजन—(न०) [√तिज्+णिच्+ल्यु वा ल्युट्] बाँस । पैना करना, तेज करना । जलाना । चमकाना । पालिश करना । नरकुल । बाण की नोक । हथियार की धार ।

तेजल—(पुं०) [√तिज्+णिच्+कलन] एक प्रकार का तीतर ।

तेजस्—(न०) [√तिज्+असुन्] तेजी । (चाकू की) तेज धार । आग की शिखा । गर्मी । चमक । पाँच तत्त्वों में से एक । सौन्दर्य । पराक्रम । स्फूर्ति । चरित्रबल । सर्वोत्कृष्ट आभा । वीर्य; 'दुष्यन्तेनाहितं तेजो दधानां भूतये भुवः' श० ४.१ । मुख्य लक्षण । सार । आध्यात्मिक शक्ति । अग्नि । गूदा । पित्त । घोड़े का वेग । ताजा मक्खन । सुवर्ण । ब्रह्म । सत्त्वगुण (सांख्यमतानुसार) ।—कर—(वि०) चमक पैदा करने वाला । बलप्रद ।—भङ्ग (तेजोभङ्ग)—(पुं०) अपमान । अनुत्साह ।—मण्डल (तेजोमण्डल)—(न०) प्रकाश का घेरा ।—मात्रा (तेजोमात्रा)—(स्त्री०) सत्त्वगुण का अंश । इन्द्रियसमूह ।—मूर्ति (तेजोमूर्ति)—(पुं०) सूर्य ।—रूप (तेजोरूप)—(पुं०) ब्रह्म, परमात्मा ।

तेजस्वत्, तेजोवत्—(वि०) [तेजस्+मतुप्, मस्य व.] चमकीला । तेज, तीक्ष्ण । वीर । क्रियाशील ।

तेजस्विन्—(वि०) [तेजस्+विनि] [स्त्री०—तेजस्विनी] चमकीला । शक्तिमान् । वीर । कुलीन । प्रसिद्ध । प्रचण्ड । क्रोधी । विधान के अनुसार ।

तेजित—(वि०) [√तिज्+णिच्+क्त] पैनाया हुआ । उत्तेजित, भड़काया हुआ ।

तेजीयस्—(वि०) [तेजस्+ईयसुन्] अधिक तेज वाला ।

तेजोमय—(वि०) [तेजस्+मयट्] महत्त्वपूर्ण । ज्योतिर्मय, प्रकाशमय । प्रधान तेज वाला ।

√तेप्—भ्वा० आत्म० अक० बहना । तेपते, तेप्स्यते, अतेप्त ।

तेम—(पुं०) [√तिम्+घञ्] आर्द्रीभाव, गीला होना ।

तेमन—(न०) [√तिम्+ल्युट्] गीला होना, भींगना । गीला । चटनी । मसाला ।

√तेव्—भ्वा० आत्म० अक० खेलना । तेवते, तेविष्यते, अतेविष्ट ।

तेवन—(न०) [√तेव्+ल्युट्] खेल, आमोद-प्रमोद । क्रीडास्थल, विहार भूमि ।

तैजस—(वि०) [तेजस्+अण्] [स्त्री०—**तैजसी**] चमकीला । ज्योतिर्मय, तेजोमय; 'तैजसस्य धनुषः प्रवृत्तये' र० ११.४३ । धातु का । विषयी । विक्रमी । क्रियात्मक । शक्तिमान्, बलिष्ठ । (न०) घी ।—**आवर्तनी** (**तैजसावर्तनी**)—(स्त्री०) सोना-चाँदी आदि गलाने की घरिया, मूषा ।

तैतिक्ष—(वि०) [तितिक्षा+ण] [स्त्री०—**तैतिक्षी**] सहनशील ।

तैतिर—(पुं०) [=तैत्तिर, पृषो० साधुः] तीतर पक्षी । गण्डक, गैंडा ।

तैतिल—(पुं०) गैंडा पशु । देवता । (न०) बव आदि करणों में से चौथा करण (ज्यो०) ।

तैत्तिर—(पुं०) [तित्तिर+अण्] तीतर । गैंडा । (न०) तीतरों का समूह ।

तैत्तिरीय—(पुं० बहु०) [तित्तिरिणा प्रोक्तम् अधीयते, तित्तिर+छण्—ईय] यजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखा वाले । (पुं०) [तित्तिरिभिः अधिगतः, तित्तिरि+छण्] कृष्ण यजुर्वेद ।

तैमिर—(पुं०) [तिमिर+अण्] आँख के धुंधलेपन का रोग ।

तैर्थिक—(वि०) [तीर्थ+ठञ्] पवित्र, शुद्ध । (न०) पवित्र जल, किसी पुण्य नदी या सरोवर का जल । (पुं०) संन्यासी । नवीन दार्शनिक सिद्धान्त का आविष्कार करने वाला । नवीन मत या सम्प्रदाय का प्रवर्तक ।

तैल—(न०) [तिल+अण्] तेल । धूप, लोबान ।—**अटी** (**तैलाटी**)—(स्त्री०) बर्रैया ।—**अभ्यङ्ग** (**तैलाभ्यङ्ग**)—(पुं०) शरीर में तेल की मालिश ।—**कल्कज**—(पुं०) खली ।—**किट्ट**—(न०) तेल के नीचे बैठा हुआ मैल । खली ।—**चौरिका**—(स्त्री०) तेलचट्टा ।—**द्रोणी**—(स्त्री०) काठ का बना मनुष्य के बराबर का एक पात्र जिसमें प्राचीन काल में तेल भर कर रोगी लिटाये जाते थे तथा सड़ने से बचाने के लिये मुर्दे रखे जाते थे ।—**धान्य**—(न०) उन धान्यों का एक वर्ग जिनसे तैल निकलता है—(तिल, अलसी, तोरी, तीनों प्रकार की सरसों, खस और कुसुम के बीज) ।—**पर्णिका**,—**पर्णी**—(स्त्री०) चन्दन । धूप । तारपीन ।—**पायिन्**—(पुं०) झींगुर ।—**पिञ्ज**—(पुं०) सफेद तिल ।—**पिपीलिका**—(स्त्री०) छोटी लाल चींटी ।—**फल**—(पुं०) इंगुदी वृक्ष ।—**भाविनी**—(स्त्री०) चमेली ।—**माली**—(स्त्री०) दीपक की बत्ती ।—**यंत्र**—(न०) कोल्हू ।—**स्फटिक**—(पुं०) तृणमणि ।

तैलक—(न०) [तैल+कन्] थोड़ा तेल ।

तैलङ्ग—(पुं०) आधुनिक कर्नाटक प्रदेश । (पुं० बहु०) कर्नाटक के अधिवासी ।

तैलिक, तैलिन्—(पुं०) [तैल+ठन्] [तैल+इनि] तेली ।

तैलिनी—(स्त्री०) [तैल+इनि—ङीप्] बत्ती ।

तैलीन—(न०) [तिलानां भवनं क्षेत्रम्, तिल+खञ्] तिल का खेत ।

तैष—(पुं०) [तिष्येण नक्षत्रेण युक्ता पौर्ण-

मासो, तिष्य+अण्—ङीप्—तैषी, सा अस्ति अस्मिन् मासे, तैषी+अण्] पौष मास ।

तोक—(न०) [√तु+क] औलाद, बच्चा ।

तोकक—(पु०) [तोक+कन्] चातक पक्षी ।

तोक्म—(पुं०) [√तक्+म, पृषो० ओत्व] अंकुर । जौ का नया अंकुर । हरा और कच्चा जौ । हरा रंग । (न०) बादल । कान का मैल ।

तोडन—(न०) [√तुड्+ल्युट्] चीरना, विभाजित करना । चोटिल करना ।

तोत्त्र—(न०) [√तुद्+ष्ट्रन्] अंकुश या कीलदार चाबुक ।

तोद—(पु०) [√तुद्+घञ्] पीड़ा । सन्ताप ।

तोदन—(न०) [√तुद्+ल्युट्] पीड़ा । अंकुश । मुख । एक फलदार वृक्ष । दे० 'तोत्त्र' ।

तोमर—(न०,पुं०) [तुम्पति, हिनस्ति √तुम्प्+अर, नि० साधुः] लोहे का डंडा । बर्छी, भाँग ।—**धर**—(पुं०) अग्निदेव ।

तोय—(न०) [√तु+विच्, तवे पूर्त्यै याति, √या+क वा √तु+यत् नि० साधुः] पानी ।—**अधिवासिनी** (**तोयाधिवासिनी**)—(स्त्री०) पाटला वृक्ष ।—**आधार** (**तोयाधार**),—**आशय** (**तोयाशय**)—(पुं०) सरोवर । कूप । जलाशय; 'तोयाधारपथाश्च वल्कलशिखानिष्यन्दरेखाङ्किताः' श० १.१४ ।—**आलय** (**तोयालय**)—(पुं०) समुद्र ।—**ईश** (**तोयेश**)—(पुं०) वरुण की उपाधि । (न०) शतभिषा नक्षत्र । पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र ।—**उत्सर्ग** (**तोयोत्सर्ग**)—(पुं०) जल-वृष्टि ।—**कर्मन्**—(न०) शरीर के भिन्न-भिन्न इन्द्रियों को जल से मार्जित करना । जलतर्पण ।—**कृच्छ्र**—(पुं०, न०) व्रतनामा विशेष जिसमें केवल जल पीकर ही निर्दिष्ट काल तक रहना पड़ता है ।—**क्रीडा**—(स्त्री०) जलविहार ।—**गर्भ**—(पुं०) नारियल ।—**चर**—(पुं०) जलजीव ।—**डिम्ब**,—**डिम्भ**—(पुं०) ओला ।—**द**—(पुं०) बादल ।—**धर**—(पुं०) बादल ।—**धि**,—**निधि**,—(पुं०) समुद्र ।—**नीवी**—(स्त्री०) पृथिवी ।—**प्रसादन**—(न०) कतकफल, निर्मली (इससे जल साफ किया जाता है) ।—**फला**—(स्त्री०) ककड़ी की बेल ।—**मल**—(न०) समुद्र फेन ।—**मुच्**—(पुं०) बादल ।—**यन्त्र**—(न०) जलघड़ी । फौवारा ।—**राज्**,—**राशि**—(पुं०) समुद्र ।—**वेला**—(स्त्री०) समुद्रतट ।—**वल्ली**—(स्त्री०) करेला ।—**वृक्ष**,—**शूक**—(पुं०) सेवार ।—**व्यतिकर**—(पुं०) (नदियों का) सङ्गम ।—**शुक्तिका**—(स्त्री०) सीपी ।—**सर्पिका**—(स्त्री०)—**सूचक**—(पुं०) मेढक । एक वर्षासूचक योग (ज्यो०) ।

तोरण—(न०, पुं०) [√तुर्+ल्युट्] मेहराबदार द्वार । बरसाती । फाटक; 'गत्वो नृपाणामथ तोरणाद् बहिः' शि० १२.१ । अस्थायी रूप से बनाया हुआ फाटक । मेहराबदार स्नानागार के समीप का चबूतरा । (न०) गर्दन, गला । (पु०) शिव ।

तोल—[√तुल्+घञ्] तौल जो तराजू में तौल कर जानी गयी हो । १२ माशे की तौल, एक तोला ।

तोष—(पुं०) [√तुष्+घञ्] सन्तोष, प्रसन्नता ।

तोषण—(न०) [√तुष्+ल्युट्] सन्तोष, प्रसन्नता ।

तोसल—(न०) [तोस√ला+ड] मूसल ।

तौक्षिक—(पुं०) तुलाराशि ।

तौतिक—(न०) मोती । (पुं०) सीपी जिसमें से मोती निकलता है ।

तौर्य—(न०) [तूर्य+अण्] तुरही का शब्द ।—**त्रिक**—(न०) नृत्य, गीत और सङ्गीत, गान, वाद्य और नृत्य तीनों की संगति ।

तौल—(न०) [तुला+अण्] तराजू ।

तौलिक, तौलिकिक—(पुं०) [तुलि+ठक्] [तुलिका+ठक्] चित्रकार, चितेरा ।

त्यक्त—(वि०) [√त्यज्+क्त] त्यागा हुआ, छोड़ा हुआ । त्यागी ।—**अग्नि** (**त्यक्ताग्नि**) -(पुं०) ब्राह्मण जिसने अग्नि-होत्र करना त्याग दिया हो ।—**जीवित**, —**प्राण**-(वि०) किसी भी प्रकार की जोखिम में अपने को डालने के लिये उद्यत, प्राण त्यागने को तैयार ।—**लज्ज**- (वि०) बेहया, बेशर्म ।

√त्यज्—भ्वा० पर० सक०, अक० त्यागना, छोड़ना । विदा करना । विरक्त होना । बच निकलना । छुट्टी पाना, पीछा छुड़ाना । एक ओर कर देना । ध्यान न देना । बाँटना । त्यजति, त्यक्ष्यति, अत्याक्षीत् ।

त्यद्—(वि०) [√त्यज्+अदि, डित्] वह । आकाश । वायु । प्रसिद्ध ।

त्याग—(पुं०) [√त्यज्+घञ्] छोड़ना, अलग हो जाना । विराग । भेंट, दान; 'करे श्लाघ्यस्त्यागः', भर्तृ० २.६५ । उदारता । पसेव, शरीर का मल । —**युत**,—**शील**- (वि०) उदार ।

त्यागिन्—(वि०) [√त्यज्+घिनुण्] त्यागने वाला, छोड़ देने वाला । दे डालने वाला, दानी । वीर, बहादुर । कर्मानुष्ठान के फल की आशा न रखने वाला ; 'यस्तु कर्मफल-त्यागी स त्यागीत्यभिधीयते' भग० १८.११ ।

√त्रङ्क्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । त्रङ्कते, त्रङ्किष्यते, अत्रङ्किष्ट ।

√त्रन्द्—भ्वा० पर० अक० चेष्टा करना । त्रन्दति, त्रन्दिष्यति, अत्रन्दीत् ।

√त्रप्—भ्वा० आत्म० अक० शर्माना, लज्जित होना । त्रपते, त्रपिष्यते—त्रप्स्यते, अत्रपिष्ट —अत्रप्त ।

त्रपा—(स्त्री०) [√त्रप्+अङ—टाप्] लाज, शर्म । छिनाल स्त्री । ख्याति, प्रसिद्धि ।—**निरस्त**,—**हीन**-(वि०) निर्लज्ज, बेहया । —**रण्डा**-(स्त्री०) वेश्या, रंडी ।

त्रपिष्ठ—(वि०) [अयम् एषाम् अतिशयेन तृप्रः तृप्र+इष्ठन् तृप्रशब्दस्य त्रप् आदेशः] अत्यन्त लज्जाशील ।

त्रपीयस्—(वि०) [स्त्री०—**त्रपीयसी**][तृप्र +ईयसुन्, त्रप् आदेश] दे० 'त्रपिष्ठ' ।

त्रपु—(न०) [√त्रप्+उस्] सीसा । राँगा । —**कर्कटी**-(स्त्री०) ककड़ी । खीरा ।

त्रपुल, त्रपुष, त्रपुस्, त्रपुस—(न०) [√त्रप् +उल] [√त्रप्+उष] [√त्रप्+उस्] [√त्रप्+उस] राँगा ।

त्रप्स्य—(न०) मठा या घोला हुआ दही ।

त्रय—(वि०)[स्त्री०—**त्रयी**] [त्रि+अयच्] तिहरा, तीन गुना । तीन प्रकार के, तीन भागों में विभाजित । (न०) तिगड्डा, तीन का समूह ।

त्रयस्—[समास में त्रि शब्द का एक आदेश] **चत्वारिंश** (**त्रयश्चत्वारिंश**)-(वि०) तैंतालीसवाँ । —**चत्वारिंशत्** (**त्रयश्चत्वारिंशत्**)-(वि०) तैंतालीस ।—**त्रिंश** (**त्रयस्त्रिंश**)-(वि०) ३३ वाँ ।—**त्रिंशति** (**त्रयस्त्रिंशति**)-(वि० या स्त्री०) तेंतीस । —**दश** (**त्रयोदश**)-(वि०) तेरहवाँ ।—**दशन्** (**त्रयोदशन्**)-(वि० बहु०) तेरह । —**दशी** (**त्रयोदशी**)-(स्त्री०) तेरस ।—**नवति** (**त्रयोनवति**)-(स्त्री०) तिरानवे ।—**पंचाशत्** (**त्रयःपंचाशत्**)-(स्त्री०) तिरपन । —**विंश** (**त्रयोविंश**)-(वि०) २३ वाँ । —**विंशति** (**त्रयोविंशति**)-(स्त्री०) तेईस । —**षष्टि** (**त्रयःषष्टि**)-(स्त्री०) तिरसठ । —**सप्तति** (**त्रयःसप्तति**) (स्त्री०) तिहत्तर ।

त्रयी—(स्त्री०) [त्रय+ङीप्] ऋक्, यजुः और साम, इन तीन वेदों का समूह । त्रिमूर्ति । सधवा स्त्री जिसका पति और बाल-बच्चे जीवित हों । बुद्धि ।—**तनु**-(पुं०) सूर्य । शिव ।—**धर्म** (पुं०) तीनों वेदों में कथित धर्म ।—**मुख**-(पुं०) ब्राह्मण ।

√त्रस्—दि० पर० अक० काँपना, डर-

डराना । त्रस्यति, त्रसिष्यति, अत्रसीत्—अत्रासीत् ।

त्रस—(वि०) [√त्रस्+क] चल, जंगम, गतिशील । (न०) वन, जंगल । जानवर । (पुं०) हृदय ।—**रेणु**—(पुं०) सूर्य की किरण में भासित परमाणु का छठवाँ अंश । (स्त्री०) सूर्य की स्त्री का नाम ।

त्रसर—(पुं०) [√त्रस्+अरन् (बा०)] सूत लपेटने की क्रिया । जुलाहे की ढरकी ।

त्रसुर, त्रस्नु—(वि०) [√त्रस्+उरच्] [√त्रस्+क्नु] भयविह्वल, डरपोक ।

त्रस्त—(वि०) [√त्रस्+क्त] डरा हुआ, भयभीत । चकित । कांपता हुआ । द्रुत (संगीत) ।

त्राण—(वि०) [√त्रै+क्त, तस्य नत्वम्] रक्षा किया हुआ, बचाया हुआ । (न०) [√त्रै+ल्युट्] रक्षा, बचाव; 'आर्तत्राणाय वः शस्त्रं न प्रहर्तुमनागसि' श० १.११ । पनाह, शरण ।

त्रात—(वि०) [√त्रै+क्त, विकल्पेन तस्य नत्वाभावः] रक्षित, बचाया हुआ ।

त्रापुष—(वि०) [त्रपुष+अण्] [स्त्री०—त्रापुषी] रांगे का बना हुआ ।

त्रास—(पुं०) [√त्रस्+घञ्] डर, भय । शङ्का । रत्न का एक दोष ।

त्रासन—(वि०) [√त्रस्+णिच्+ल्यु] भयप्रद, भयावह । (न०) [√त्रस्+णिच्+ल्युट्] भयभीत करने की क्रिया ।

त्रासित—(वि०) [√त्रस्+णिच्+क्त] त्रस्त किया हुआ, डराया हुआ ।

त्रि—(वि०) [√तृ+ड्रि] [इसके रूप केवल बहुवचन में होते हैं । कर्ता पुं०—त्रयः—(स्त्री०)—तिस्रः—(न०) त्रीणि] तीन ।—**अंश** (त्र्यंश)—(पुं०) तिहरा हिस्सा, तिगुना हिस्सा । तिहाई हिस्सा ।—**अक्ष** (त्र्यक्ष), —**अक्षक** (त्र्यक्षक)—(पुं०) शिव जी । —**अक्षर** (त्र्यक्षर)—(पुं०) ओंकार, प्रणव । घटक, स्त्री पुरुष की जोड़ी मिलाने वाला ।—**अङ्कुट** (त्र्यङ्कुट),—**अङ्कट** (त्र्यङ्कट)—(न०) बहंगी । कांवर । एक प्रकार का सुरमा या अञ्जन ।—**अञ्जल** (त्र्यञ्जल)—(न०), —**अञ्जलि** (त्र्यञ्जलि)—(स्त्री०)—तीन अंजुली ।—**अधिष्ठान** (त्र्यधिष्ठान)—(पुं०) जीवात्मा ।—**अध्वगा** (त्र्यध्वगा),—**मार्गगा**,—**वर्त्मगा**—(स्त्री०) गङ्गा जी की उपाधियाँ ।—**अम्बक** (त्र्यम्बक)—(पुं०) तीन नेत्रों वाला अर्थात् शिव जी ।—**अम्बका** (त्र्यम्बका)—(स्त्री०) दुर्गा, पार्वती ।—**अब्द** (त्र्यब्द)—(वि०) तीन साल का । (न०) तीन वर्षों का समूह ।—**अशीत** (त्र्यशीत)—(वि०) ८३ वाँ ।—**अष्टन्** (त्र्यष्टन्)—(वि०) चौबीस ।—**अश्र** (त्र्यश्र),—**अस्र** (त्र्यस्र) (वि०)—तिकोना, त्रिभुजाकार । (न०) त्रिकोण, त्रिभुज ।—**अह** (त्र्यह)—(पुं०) तीन दिवस का काल ।—**आहिक** (त्र्याहिक)—(पुं०) तीन दिन में पूरा हुआ या तीन दिन में उत्पन्न हुआ, तिजारी ।—**ऋच** (त्र्यृच)—(तृच भी) (न०) तीन ऋचाओं की समष्टि ।—**कण्ट**,—**कण्टक**—(पुं०) गोखरू । मेढ़ुंड । टेंगरा मछली । (वि०) जिसमें तीन कांटे या नोंकें हों ।—**ककुद्**—(पुं०) त्रिकूट पर्वत । विष्णु । दस दिनों में किया जाने वाला एक याग । (वि०) जिसे तीन डील या सींग हों ।—**ककुभ्**—(पुं०) इन्द्र । उदान वायु । नौ दिनों में होने वाला एक यज्ञ ।—**कटु**,—**कटुक**—(न०) तीन कड़ुए पदार्थों का समाहार—सोंठ, पीपर और मिर्च ।—**कर्मन्**—(न०) ब्राह्मण के तीन मुख्य कर्तव्य अर्थात् यज्ञ करना, वेदों का पढ़ना और दान देना । (पुं०) इन तीन कर्मों को करने वाला ब्राह्मण ।—**काय**—(पुं०) बुद्ध का नाम ।—**काल**—(न०) तीनों काल अर्थात् भूत, भविष्यत् और वर्तमान या प्रातः, मध्याह्न और सायं ।—**कूट**—(पुं०) एक पर्वत का नाम जो लंका में है और जिसकी

चोटी पर लंका नगरी बसी हुई थी।—**कूटक**-(न०) त्रिफला ताकू।—**कोण**-(वि०) तिकोना। (न०) तीन कोनों का क्षेत्र, त्रिभुज। कामरूप का एक सिद्ध पीठ। जन्मकुंडली में लग्नस्थान से पांचवां और नवां स्थान। मोक्ष। योनि।—**गण**-(पु०) धर्म, अर्थ और काम; 'न बाधतेऽस्य त्रिगणः परस्पर' कि० १.११।—**गत**-(वि०) तिहरा। तीन दिन में किया हुआ।—**गर्त**-(पु०) देश विशेष, पंजाब का आधुनिक जालंधर क्षेत्र। इस देश के शासक अथवा अधिवासी।—**गर्ता**-(स्त्री०) छिनाल औरत।—**गुण**-(वि०) तीन डोरों वाला। तिगुना। तीन गुणों वाला अर्थात् सत्त्व, रजस् और तमस् गुणों वाला।—**गुणा**-(स्त्री०) माया। दुर्गा।—**चक्षुस्**- (पु०) शिव।—**चतुर**-(वि०) तीन या चार।—**चत्वारिंश**-(वि०) ४३ वां।—**चत्वारिंशत्**-(स्त्री०) ४३।—**जगत्**-(न०)—**जगती**-(स्त्री०) त्रिलोक, स्वर्ग, पृथ्वी और पाताल। आकाश, स्वर्ग और भूलोक।—**जट**-(पु०) शिव जी का नाम।—**जटा**- (स्त्री०) अशोक वाटिका में सीता जी के साथ रहने वाली राक्षसियों में से एक राक्षसी का नाम।—**ज्या**-(स्त्री०) धनुष।—**णव,— णवन्**-(वि० बहु०) तीन बार ९ अर्थात् २७।—**णाचिकेत**-(पु०) वह जिसने तीन बार नाचिकेत अग्नि का आधान किया हो। कृष्ण यजुर्वेद की काठक संहिता का अध्ययन या अनुगमन करने वाला। नारायण।—**तय**(पु०)**स्त्री**,—**तयी**-(पु०)तीन वस्तुओं का समुदाय।—**दण्ड**-(न०) वह दंड जिसे कुटीचक और बहूदक संन्यासी धारण करते हैं (यह बांस के तीन डंडों को एक में बांध कर बनाया जाता है)। वाणी, मन और शरीर—इन तीनों का संयमन।—**दण्डिन्**-(पु०) तीन दण्डों को बांध कर उसे दाहिने हाथ में धारण करने वाले श्रीवैष्णव संन्यासी। वह जिसने अपने मन, वाणी और शरीर को अपने वश में कर लिया हो—'वाग्दण्डोऽथ मनोदण्डः कायदण्डस्तथैव च, यस्यैते निहिता बुद्धौ त्रिदण्डीति स उच्यते।' —मनुस्मृति।—**दश**-(पु०) देवता। जीव। स्वर्ग। (वि०) तीस।—**०गोप**-(पु०) बीरबहूटी।— **०दीर्घिका**- (स्त्री०) आकाश गंगा, मंदाकिनी।—**दिव**-(पु०) स्वर्ग 'त्रिमार्गयेव त्रिदिवस्य मार्गः' कु० १.२८। आकाश। (न०) सुख।—**०ओकस** (**त्रिदिवौकस**)-(पु०) देवता।—**दोष**-(न०) वात, पित्त और कफ—इन तीनों का व्यतिक्रम।—**धामन्**-(पु०) शिव। विष्णु। अग्नि। मृत्यु।—**धारा**-(स्त्री०) गंगा।—**नयन,—नेत्र,—लोचन**-(पु०) शिव जी।**नवत**-(वि०) ९३वां।—**पञ्च**-(वि०) पन्द्रह।—**पञ्चाश**-(वि०) ५३ वां।—**पञ्चाशत्**-(स्त्री०) ५३।—**पट्**-(पु०) कांच, शीशा।—**पताक**-(पु०) तीन उंगली उठाये हुए फैला हुआ हाथ। माथे का ऊर्ध्वपुण्ड्र, तिलक।—**पत्रक**-(न०) पलाश वृक्ष।—**पथ** (न०) तीन मार्गों का समूह। भूमि, स्वर्ग, आकाश या आकाश, भूमि, पाताल। ज्ञान, कर्म और उपासना— ये तीनों मार्ग।—**०गा**-(स्त्री०) गङ्गा।—**पद**—(न०), —**पदिका**-(स्त्री०) तिपाई।—**पदी**-(स्त्री०) हाथी का जेरबंद। गायत्री छन्द। तिपाई, गोधापदी नाम का पौधा।—**पर्ण**-(पु०) किंशुक वृक्ष।—**पाय**-(न०) तीन बार भिगोया हुआ सूत। वल्कल, छाल।—**पाद**-(वि०) तीन पैरों वाला। तीन हिस्सों वाला। तीन चौथाई वाला। (पु०) ज्वर। विष्णु।—**पिब**-(पु०) वह बकरा जिसके दोनों कान पानी पीते समय पानी से छू जाते हैं।—**पुट**-(वि०) तिकोना। (पु०) बाण। खेसारी। हथेली। एक हाथ या बालिश्त। नदीतट या समुद्रतट।—**पुटक**-(पु०) त्रिकोण।—**पुटा**-(स्त्री०) दुर्गा का

नाम ।—**पुण्ड्र**, —**पुण्ड्रक**–(न०) माथे पर का तीन आड़ी रेखाओं वाला टीका ।—**पुर**–(न०) तीन नगरों का समूह। (पृथिवी, अन्तरिक्ष और आकाश में चाँदी, सोने और लोहे की तीन पुरियाँ, मयदानव ने राक्षसों के लिये बनायी थी, जिनको देवताओं की प्रार्थना स्वीकार कर, शिव जी ने नष्ट कर डाला था) (पु०) एक दानव का नाम जो इन नगरों का अधिपति था ।—०**अन्तक** (**त्रिपुरान्तक**),—०**अरि** (**त्रिपुरारि**),—०**घ्न**,—०**दहन**,—०**द्विष**,—०**हर**–(पु०) महादेव जी के नामान्तर ।—०**भैरवी**–(स्त्री०) दे० 'त्रिपुरा'।—०**मल्लिका**–(स्त्री०) चमेली का एक भेद ।—०**सुन्दरी**–(स्त्री०) दुर्गा ।—**पुरा**–(स्त्री०) पार्वती का एक रूप ।—**पुरी**–(स्त्री०) जबलपुर के पास एक नगर । एक प्रदेश का नाम ।—**पौरुष**–(वि०) [त्रीन् पित्रादीन् पुरुषान् व्याप्नोति, अण् उत्तरपदवृद्धिः] तीन पीढ़ियों तक चलने वाला ।—**प्रश्न**–(पु०) दिशा, देश और काल सम्बन्धी प्रश्न (ज्यो०)।—**प्रस्रुत**–(पु०) मदमाता हाथी ।—**फला**–(स्त्री०) हर्रे, बहेड़ा और आँवला ।—**बलि**, —**बली**, —**वलि**,—**वली**–(स्त्री०) नाभि के ऊपर तीन सिमिटनें । ये स्त्री के सौन्दर्य का चिह्न मानी गयी हैं । **भद्र**–(न०) स्त्रीप्रसङ्ग, स्त्रीमैथुन ।—**भुज**–(न०) त्रिकोण ।—**भुवन**–(न०) तीन लोक; स्वर्ग, पृथ्वी और पाताल—इन तीन भुवनों का समाहार; 'पुण्ये ग्रामास्त्रिभुवनगुरोर्धाम चण्डीश्वरस्य' मे० ३३ ।—०**सुन्दरी**–(स्त्री०) पार्वती ।—**भूम**–(पु०) तीन खना महल, तिमंजिला मकान ।—**मद**–(पु०) विद्या, धन और कुटुम्ब सम्बन्धी मद । मोथा, चीता और वायबिडंग—इन तीनों का समूह ।—**मधु**,—**मधुर**–(न०) दूध, चीनी और मधु इन तीनों का समाहार । (पु०) ऋग्वेद का एक अंश ।—**मार्गा**–(स्त्री०) श्री गंगा जी ।—**मुकुट**–(पु०) त्रिकूटाचल ।—**मुख**–(पु०) बुद्धदेव की उपाधि ।—**मुनि**–(न०) पाणिनि, कात्यायन और पतञ्जलि ।—**मूर्ति**–(पु०) ब्रह्मा, विष्णु और महादेव ।—**यष्टि**–(स्त्री०) पित्तपापड़ा । तीन लड़ियों का हार ।—**यामा**–(स्त्री०) तीन पहर की, रात्रि; 'संक्षिप्यते क्षण इव कथं दीर्घयामा त्रियामा' मे० १०८ । हल्दी । यमुना । नील । काला निसोथ ।—**योनि**–(पु०) मुकदमा, अभियोग । मुकदमा दायर करने के साधारणतः तीन कारण होते हैं। यथा—क्रोध, लोभ और बुद्धि-विपर्यय ।—**रात्र**–(न०) तीन रात की अवधि ।—**रेख**–(पु०) शंख ।—**लवण**–(पु०) सेंधा, साँभर और साँचर नमक ।—**लिङ्ग**–(वि०) तीन लिङ्गों वाला अर्थात् विशेषण । (पु०) तैलङ्ग देश ।—**लोक**–(न०) स्वर्ग, मर्त्य और पाताल—ये तीनों लोक ।—०**ईश** (**त्रिलोकेश**)–(पु०) परमेश्वर । सूर्य ।—०**नाथ**,—०**पति**–(पु०) इन्द्र । विष्णु । शिव ।—**लोचना**–(स्त्री०) दुर्गा । असती, व्यभिचारिणी स्त्री ।—**वर्ग**–(पु०) धर्म, अर्थ और काम । क्षय, स्थान और वृद्धि ।—**वर्णक**–(न०) ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य ।—**वार**–(अव्य०) तिबारा, तीन बार ।—**विक्रम**–(पु०) वामनावतार ।—**विद्य**–(पु०) तीनों वेदों का जानने वाला ।—**विध**–(वि०) तीन प्रकार का । तिगुना ।—**विनत**–(वि०) देवता, ब्राह्मण और गुरु के प्रति श्रद्धालु ।—**विष्टप**–(न०) स्वर्ग ।—**वृत्**–(पु०) एक याग । एक लता, निसोथ । (वि०) त्रिगुणित ।—**करण**–(न०) तेज, जल और अन्न का योग ।—**वेणि**, —**वेणी**–(स्त्री०) प्रयाग का वह स्थान जहाँ गङ्गा सरस्वती और यमुना का सङ्गम है ।—**वेद**–(पु०) तीनों वेदों को जानने वाला ब्राह्मण ।—**शङ्कु**–(पु०) सूर्यवंशी एक राजा का नाम । यह हरिश्चन्द्र राजा का पिता और अयोध्या का राजा था । बालक

पक्षी । पतंग । झिल्ली । जुगनू । खद्योत । —०ज-(पुं०) हरिश्चन्द्र राजा ।—०याजिन्-(पुं०) विश्वामित्र ।—**शत**-(वि०) तीन सौ । (न०) तीन सौ ।—**शर्करा**- (स्त्री०) गुड़, चीनी और मिश्री । —**शिख**-(न०) तीन कलंगी का मुकुट ।—**शिरस्**-(पुं०) राक्षस जिसे श्रीरामचन्द्र जी ने मारा था । —**शूल**-(न०) तीन फलों का एक प्रसिद्ध अस्त्र जो शिव का प्रधान अस्त्र है ।—०**अङ्क** (त्रिशूलाङ्क),—०**धारिन्**-(पुं०) शिव की उपाधि ।—**शूलिन्**-(पुं०) शिवजी ।**शृङ्ग**-(पुं०) त्रिकूटाचल ।-**षष्टि**-(स्त्री०) तिरसठ की संख्या ।—**सन्ध्य** (न०),-**सन्ध्यी**-(स्त्री०) प्रातः, मध्याह्न और सायं काल ।—**सप्तत**-(वि०) ७३ वाँ ।—**सप्तति**-(स्त्री०) तिहत्तर ।—**सप्तन्**-(वि० बहु०) इक्कीस ।—**साम्य**-(न०) तीनों गुणों की समानता ।—**स्थली**-(स्त्री०) तीन तीर्थ स्थान अर्थात् काशी, प्रयाग और गया ।—**स्रोतस्**(स्त्री०) गंगा । —**सीत्य**,—**हल्य**-(वि०) तीन बार जुता हुआ (खेत) ।—**हायण** (वि०) तीन वर्ष का ।

त्रिंश—(वि०) [त्रिंशत्+डट्] [स्त्री०—त्रिंशी] तीसवाँ । तीनवाला । तीस से जुड़ा हुआ, (जैसे त्रिंशशत अर्थात् १३०) ।

त्रिंशक—(वि०) [त्रिंश+कन्] तीस वाला । [त्रिंशत्+वुन्, डित्] तीस में खरीदा हुआ या तीस के मूल्य का ।

त्रिंशत्—(स्त्री०) [त्रयो दशतः परिमाणमस्य, नि० साधुः] तीस ।—**पत्र**-(न०) चन्द्रमा के उदय पर खिलने वाला कमल, कुमुद ।

त्रिंशति—(स्त्री०) [=त्रिंशत्, पृषो० साधुः] तीस ।

त्रिंशत्क—(न०) [त्रिंशत्+कन्] तीस का जोड़ ।

त्रिक—(वि०) [त्रि+कन्] तिगुना । तीन सौ । (न०) त्रिमूर्ति । तिराहा । तीन का समाहार । रीढ़ का अधो भाग जहाँ कूल्हे की हड्डियाँ मिलती हैं, कटिदेश; "कश्चिद्विवृत्तत्रिकभिन्नहारः" र० ६.१६ । कंधे की हड्डियों के बीच का भाग । त्रिफला । त्रिकटु । त्रिमद । तीन प्रतिशत सूद या लाभ ।

त्रिका—(स्त्री०) [त्रि√कै+टाप्] अरहट, कुएँ से पानी निकालने का यंत्र विशेष ।

त्रितय—(वि०) [त्रयोऽवयवा अस्य, त्रि+तयप्] [स्त्री०—**त्रितयी**] तीन भागों वाला । (न०) तीन का समूह ।

त्रिधा—(अव्य०) [त्रि+धाच्] तीन प्रकार से या तीन भागों में ।

त्रिस्—(अव्य०) [त्रि+सुच्] तिबारा, तीन बार ।

√**त्रुट्**—तु०, चु० पर० सक० काटना । त्रुट्यति —त्रुटति, त्रुटिष्यति, अत्रुटीत् । त्रोटयति ।

त्रुटि, त्रुटी—(स्त्री०) [√त्रुट्+इन्, कित्] [त्रुटि+ङीष्] काटना, तोड़ना, फाड़ना । छोटा हिस्सा, अणु । क्षण या लव । सन्देह । हानि । नाश । छोटी इलायची (का पौधा) ।

त्रेता—(स्त्री०) [त्रीन् भेदान् एति प्राप्नोति, पृषो० साधुः] तीन का समूह । तीन प्रकार के हवनाग्नि का समूह । पासे में तीन का दाँव फेंकना । चार युगों में से दूसरा युग ।

त्रेधा—(अव्य०) [त्रि+एधाच्] तीन प्रकार से । तीनों भागों से ।

√**त्रै**—भ्वा० आत्म० सक० रक्षा करना, बचाना । त्रायते, त्रास्यते, अत्रास्त ।

त्रैकालिक—(वि०) [स्त्री०—**त्रैकालिकी**] [त्रिकाल+ठञ्] तीन काल से सम्बन्ध रखने वाला । अर्थात् बीते हुए, आगे आने वाले और वर्तमान कालों से सम्बन्धयुक्त ।

त्रैकाल्य—(न०) [त्रिकाल+ष्यञ्] तीन काल—भूत, भविष्यद् और वर्तमान ।

त्रैगुणिक—(वि०) [त्रिगुण+ठञ्] तिहरा, तीन गुना।

त्रैगुण्य—(न०) [त्रिगुण+ष्यञ्] तीन गुणों का धर्म या भाव। तीन गुणों का समाहार। सत्त्व, रजस्, और तमस्; 'नि[स्त्रैग]ुण्यो भवार्जुन' भग०।

त्रैपुर—(पुं०) [त्रिपुर+अण्] त्रिपुर प्रदेश। उस देश का शासक या रहने वाला।

त्रैमातुर—(पुं०) [त्रिमातृ+अण्, उत्व] लक्ष्मण का नाम।

त्रैमासिक—(वि०) [त्रैमासं तृतीयमासं भूतः स्वसत्तया प्राप्तः इत्यर्थे ठञ्] [स्त्री०—**त्रैमासिकी**] तीन मास का। प्रत्येक तीसरे मास होने या निकलने वाला।

त्रैराशिक—(न०) [तीन् राशीन् अधिकृत्य प्रवृत्तम्, त्रिराशि+ठञ्] तीन ज्ञात राशियों के सहारे चौथी अज्ञात राशि निकाल लेने की रीति (गणित)।

त्रैलोक्य—(न०) [त्रिलोकी+ष्यञ्] तीन लोकों का समूह।—**विजया**—(स्त्री०) भांग।

त्रैवर्णिक—(वि०) [त्रिवर्ण+ठञ्] [स्त्री०—**त्रैवर्णिकी**] प्रथम तीन वर्णों से सम्बन्ध रखने वाला।

त्रैविक्रम—(वि०) [त्रिविक्रम+अण्] विष्णु या वामनावतार का; 'त्रैविक्रमं पादमिवेन्द्रशत्रुः' र० ७.३५।

त्रैविद्य—(न०) [त्रिविद्या+अण्] तीनों वेद। तीनों वेद जानने वाले ब्राह्मणों की मंडली। तीनों वेदों का अध्ययन। (पुं०) तीनों वेदों का ज्ञाता।

त्रैविष्टप, त्रैविष्टपेय—(पुं०) [त्रिविष्टपे वसति, त्रिविष्टप+अण्] [त्रिविष्टप+ढक्] देवता।

त्रैशङ्कव—(पुं०) [त्रिशंकु+अण्] त्रिशंकु के पुत्र राजा हरिश्चन्द्र की उपाधि।

त्रैस्वर्य—(न०) [त्रिस्वर+ष्यञ्] तीनों स्वर उदात्त, अनुदात्त और स्वरित।

त्रोटक—(न०) [√त्रुट्+णिच्+ण्वुल्] एक प्रकार का शृंगारप्रधान नाटक। जैसे कालिदास का विक्रमोर्वशीयम्।

त्रोटि—(स्त्री०) [√त्रुट्+इ] चोंच।—**हस्त**—(पुं०) पक्षी।

त्रोत्र—(न०) [√त्रै+ष्ट्रन्] पशुओं को हाँकने की छड़ी। चाबुक। एक अस्त्र। एक व्याधि।

√त्वक्ष्—भ्वा० पर० सक० तराशना, छीलना। त्वक्षति, त्वक्षिष्यति, अत्वक्षीत्।

त्वङ्कार—(पुं०) [त्वम्√कृ+अण्] तूकार, अप्रतिष्ठाकारक सम्बोधन।

√त्वङ्ग्—भ्वा० पर० सक० जाना। अक० कूदना। काँपना। त्वङ्गति, त्वङ्गिष्यति, अत्वङ्गीत्।

√त्वच्—तु० पर० सक० ढाँकना। छिपाना। त्वचति, त्वचिष्यति, अत्वचीत्—अत्वाचीत्।

त्वच्—(स्त्री०) [√त्वच्+क्विप्] चमड़ी (मनुष्य, सर्प आदि की)। छाल। कोई चीज जो ढकने वाली हो। स्पर्श ज्ञान।—**अंकुर** (त्वगङ्कुर)-(पुं०) रोमाञ्च, रोंगटे खड़े होना।—**इन्द्रिय** (त्वगिन्द्रिय)-(न०) स्पर्शेन्द्रिय।—**कण्डुर** (त्वक्कण्डुर)-(पुं०) फोड़ा। घाव।—**गन्ध** (त्वग्गन्ध)-(पुं०) नारंगी, सन्तरा।—**छेद** (त्वक्छेद)-(पुं०) चर्म का घाव, खरोंच।—**ज** (त्वग्ज)-(न०) खून, लोहू। रोम, लोम।—**तरङ्गक** (त्वक्तरङ्गक)-(पुं०) झुर्री, सिकुड़न।—**त्र** (त्वक्त्र)-(न०) कवच।—**दोष** (त्वग्दोष)-(पुं०) चर्मरोग। कोढ़।—**पत्र** (त्वक्पत्र)—(न०) दालचीनी। तेजपात।—**पत्री** (त्वक्पत्री)—**पर्णी** (त्वक्पर्णी)—(स्त्री०) हिंगुपत्री। केले का वृक्ष।—**पारुष्य** (त्वक्पारुष्य)-(न०) चर्म का रूखापन।—**पुष्प** (त्वक्पुष्प)-(पुं०) रोमाञ्च।—**सार** (त्वक्सार)-(पुं०) [त्वचि-

सार] बाँस।—सुगन्ध (त्वक्सुगन्ध)-(पुं०) नारंगी।

त्वचा—(स्त्री०) [त्वच्+टाप्] दे० 'त्वच्'।

त्वचिष्ठ—(वि०) [त्वच्+इष्ठन्] जिस पर कड़ी छाल हो।

त्वक्सार—(पुं०) [अलुक् समास] बाँस। ताल का पेड़।

त्वदीय—(वि०) [तव इदम्, युष्मद्+छ, त्वत् आदेश] तुम्हारा, तेरा।

त्वद्विध—(वि०) [तव इव विधा प्रकारो यस्य] तेरी तरह, तुम्हारी तरह।

√त्वर्—भ्वा० आत्म० अक० शीघ्रता करना। त्वरते, त्वरिष्यते, अत्वरिष्ट।

त्वरा, त्वरि—(स्त्री०) [√त्वर्+अङ-टाप्] [√त्वर्+इन्] शीघ्रता, जल्दी।

त्वरित—(वि०) [√त्वर्+क्त] तेज, फुर्तीला। (न०) जल्दी, तेजी (अव्य०) जल्दी से।

त्वष्टृ—(पुं०) [√त्वक्ष्+तृच्] बढ़ई। विश्वकर्मा। ग्यारहवें आदित्य। चित्रा नक्षत्र।

त्वादृश्, त्वादृश—(वि०) [स्त्री०—त्वादृशी] [त्वमिव दृश्यते, युष्मद्√दृश् क्विन्] [युष्मद्√दृश्+कञ्] तुम्हारे जैसा, तुम सरीखा।

त्वाष्ट्र—(पुं०) [त्वष्टृ+अण्] वृत्रासुर। (न०) वज्र। एक छोटा रथ।

त्वाष्ट्री—(स्त्री०) [त्वाष्ट्र+ङीप्] चित्रा नक्षत्र। विश्वकर्मा की पुत्री संज्ञा जो सूर्य की पत्नी बनी।

√त्विष्—भ्वा० उभ० अक० चमकना, प्रदीप्त होना। त्वेषति-ते, त्वेक्ष्यति-ते, अत्विक्षत्-त।

त्विष्—(स्त्री०) [√त्विष्+क्विप्] रोशनी, प्रकाश, आभा, चमक; 'वयस्त्विषामित्यव-धारितं पुरा' शि० १.३। सौन्दर्य। अधिकार। वचन। अभिलाषा। रीति-रस्म। प्रचण्डता। वाणी।—ईश (त्विषीश या त्विषामीश), —पति (त्विट्पति या त्विषाम्पति)-(पुं०) सूर्य।

त्विषि—(पुं०) [√त्विष्+इन्] किरण। दीप्ति। प्रभा। शक्ति।

√त्सर्—भ्वा० पर० सक० कपट से जाना। त्सरति, त्सरिष्यति, अत्सारीत्।

त्सरु—(पुं०) [√त्सर्+उ] रेंग कर चलने वाला कोई भी जानवर। तलवार या अन्य किसी हथियार की मूँठ; 'त्सरुप्रदेशादप-वर्जिताङ्गुः' कि० १७.५८।

त्सारुक—(वि०) [√त्सर्+उकञ्] जो तलवार चलाने में सिद्धहस्त हो।

थ

थ—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का सत्रहवाँ व्यञ्जन और तवर्ग का दूसरा वर्ण। इसका उच्चारण-स्थान दन्त है। (पुं०) [√थुड्+ड] पहाड़। (न०) रक्षा। भय। मङ्गल। आहार। एक रोग।

√थुड्—तु० पर० सक० ढकना। छिपाना। थुडति, थुडिष्यति, अथुडीत्।

थुडन—(न०) [√थुड्+ल्युट्] ढकना। लपेटन।

थुत्कार—(पुं०) [थुत् इत्यव्यक्तशब्दस्य कारः करणं यत्र] थूकते समय जो शब्द किया जाता है।

√थुर्व्—भ्वा० पर० सक० वध करना। थूर्वति, थुर्विष्यति, अथूर्वीत्।

थूत्कार, थूत्कृत—(पुं०, न०) [थूत् इत्यस्य कारः] [थूत् इत्यस्य कृतम्] थूत् शब्द जो थूकने के समय किया जाता है।

थं—(अव्य०) नृत्य के समय मृदङ्ग के बोल।

द

द—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का अठारहवाँ व्यञ्जन और तवर्ग का तीसरा वर्ण। इसका उच्चारणस्थान दन्तमूल है। दन्तमूल में जिह्वा के अगले भाग के स्पर्श से इसका उच्चारण

होता है। यह अल्पप्राण है और इसमें संवार, नाद और घोष बाह्यप्रयत्न होते हैं। (वि०) (यह समास के पीछे आता है) देने वाला। जैसे धनद, अन्नद, गरद, तोयद, अनलद आदि। (स्त्री०) (दा) [√दा+क—टाप्] भार्या, पत्नी। (पुं०) [√दै वा √दो वा √दा+क] पहाड़। दाँत। दाता, देने वाला आदमी।

√दंश्—भ्वा० पर० सक० काटना। डंक मारना। डसना। दशति, दङ्क्ष्यति, अदाङ्क्षीत्।

दंश—(पुं०) [√दंश्+घञ्] डसना। काटना। डंक मारना। सर्प का विषदन्त। वह स्थान जहाँ डसा हो। काटना। चीरना। तीखापन। कवच। शरीर की संधि। [√दंश्+अच्] वनमक्षिका, डाँस। दाँत। चुभने वाली बात। द्वेष। आक्षेप।—**भीरु**-(पुं०) भैंसा।—**मूल**-(पुं०) सहजन का पेड़।—**वदन**-(पुं०) एक तरह का बगला।

दंशक—(पुं०) [√दंश्+ण्वुल्] कुत्ता। डाँस। मच्छड़। भिड़। (वि०) काटने वाला। डंक मारने वाला।

दंशन—(न०) [√दंश्+ल्युट्] डसने या काटने की क्रिया; 'दष्टाश्च दंशनैः कान्तं दासीकुर्वन्ति योषितः' सा० द०। कवच।

'शित—(वि०) [√दंश्+क्त] काटा हुआ। कवच धारण किये हुए।

दंशिन्—(पुं०) [√दंश्+णिनि] दे० 'दंशक'।

दंशी—(स्त्री०) [दंश+ङीप्] छोटी गोमक्खी।

दंष्ट्रा—(स्त्री०) [√दंश्+ष्ट्रन्] बड़ा दाँत, दाढ़। हाथी का दाँत। डंक। विषदन्त।—**अस्त्र** (**दंष्ट्रास्त्र**),—**आयुध** (**दंष्ट्रायुध**) (पुं०) जंगली शूकर।—**कराल**-(वि०) भयानक दाँतों वाला।—**विष**-(पुं०) एक प्रकार का विषैला सर्प।

दंष्ट्राल—(वि०) [दंष्ट्रा+ल] बड़े-बड़े दाँतों वाला।

दंष्ट्रिका—(वि०) [दंष्ट्रा+कन्—टाप्, ह्रस्व] दे० 'दंष्ट्रा'।

दंष्ट्रिन्—(पुं०) [दंष्ट्रा+इनि] बनैला शूकर। सर्प। सेई।

दक—(न०) [उदक पृषो० √दैप्+क, ततः संज्ञायां कन्] जल।

√दक्ष्—भ्वा० आत्म० अक० वृद्धि बढ़ाना। शीघ्रता करना। दक्षते, दक्षिष्यते, अदक्षिष्ट।

दक्ष—(वि०) [√दक्ष्+अच्] जिसमें किसी विषय को सद्यः समझने तथा कोई कार्य तत्काल करने की शक्ति हो, कुशल, निपुण; 'मेरौ स्थिते दोग्धरि दोहदक्षे' कु० १.२। ईमानदार। दाहिना। (पुं०) एक प्रजापति जो ब्रह्मा के दाहिने अंगूठे से उत्पन्न हुए थे। मुर्गा। नंदी। अग्नि। शिव। वह नायक जिसके कई नायिकाएँ हों। उशीनर के एक पुत्र। विष्णु।—**अध्वरध्वंसक** (**दक्षाध्वरध्वंसक**),—**क्रतुध्वंसिन्** (पुं०) शिव जी।—**कन्या**,—**जा**,—**तनया**-(स्त्री०) दुर्गा की उपाधि। अश्विनी आदि नक्षत्र।—**सुत**-(पुं०) देवता।

दक्षाय्य—(पुं०) [√दक्ष्+आय्य] गीध। गरुड़ की उपाधि।

दक्षिण—(वि०) [√दक्ष्+इनन्] योग्य, निपुण। निष्णात। दाहिना (बाम का उल्टा)। दक्षिण ओर अवस्थित। सच्चा, ईमानदार। प्रिय। शिष्ट, सभ्य। आज्ञाकारी। अवलम्बित। (पुं०) उत्तर के सामने की दिशा, दक्खिन। विष्णु। शिव। एक तंत्रोक्त आचार। अपनी सभी नायिकाओं में तुल्य अनुराग रखने वाला नायक। दाहिना हाथ। दाहिना पार्श्व। रथ का दाहिना घोड़ा।—**अग्नि** (**दक्षिणाग्नि**)-(पुं०)

अन्वाहार्यपचन । यज्ञाग्नि जो दक्षिण दिशा में स्थापित की जाती है ।—अग्र (दक्षिणाग्र)–(वि०) दक्षिण की ओर निकला हुआ ।—अचल (दक्षिणाचल)–(पुं०) दक्षिणी पर्वतमाला अर्थात् मलयाचल ।—अभिमुख (दक्षिणाभिमुख)–(वि०) दक्षिण दिशा की ओर मुख किये हुए । दक्षिण की ओर बहने वाला ।—अयन (दक्षिणायन)–(न०) सूर्य की गति विशेष । (कर्क की संक्रान्ति से मकर की संक्रान्ति पर्यन्त जिस मार्ग पर सूर्य चलते हैं वह दक्षिणायन कहलाता है । इस पथ पर सूर्य ६ मास रहते हैं)।—आचार (दक्षिणाचार)–(पुं०) शुद्ध आचरण । तंत्र में एक आचार जिसमें अपने को शिव मान कर पंचतत्त्वों द्वारा शिव के पूजन का विधान है ।—आशा (दक्षिणाशा)–(स्त्री०) दक्षिण दिशा ।—०पति–(पुं०) यमराज, धर्मराज ।—इतर (दक्षिणेतर)–(वि०) वाम, बायाँ । उत्तरी ।—इतरा (दक्षिणेतरा)–(स्त्री०) उत्तर दिशा ।—उत्तर (दक्षिणोत्तर)–(वि०) दक्षिण से उत्तर की ओर झुका हुआ ।—०वृत्त–(न०) मध्याह्न रेखा ।—कालिका–(स्त्री०) वह काली जिनका दाहिना पैर शिव के वक्षःस्थल पर रहता है ।—गोल–(पुं०) विषुवत् रेखा से दक्षिण में स्थित तुला आदि ६ राशियों का समूह ।—पश्चात्–(अव्य०) दक्षिण पश्चिम की ओर ।—पश्चिमा–(स्त्री०) नैऋत कोण ।—पूर्वा, —प्राची–(स्त्री०) दक्षिण-पूर्व का कोण ।—समुद्र–(पुं०) दक्षिणी समुद्र, लवणसमुद्र ।—स्थ–(पुं०) सारथि । (वि०) दक्षिण भाग में स्थित ।

दक्षिणतः—(अव्य०) [दक्षिण+अतसुच्] दाहिनी ओर से या दक्षिण दिशा की ओर से । दक्षिण हाथ की ओर । दक्षिण दिशा की ओर या दाहिनी ओर ।

दक्षिणा—(अव्य०) [दक्षिण+आच्] दाहिनी ओर का या दक्षिण दिशा में । (स्त्री०) [दक्षिण+टाप्] दक्षिण दिशा । यज्ञ, दानकर्म आदि के अंत में ब्राह्मणों और पुरोहितों को दिया जाने वाला द्रव्य । दक्ष प्रजापति की कन्या । यज्ञपुरुष की पत्नी । दुधार गौ । दान । वह नायिका जो दूसरे नायक में अनुरक्त रहती हुई भी पूर्व नायक के प्रति प्रेम और सद्भाव रखती है ।—अर्ह (दक्षिणार्ह)–(वि०) दक्षिणा या दान देने योग्य ।—आवर्त (दक्षिणावर्त)–(पुं०) वह शंख जिसमें हवा निकलने का मार्ग दाहिनी ओर हो । (वि०) दाहिनी ओर मुड़ा हुआ । दक्षिण दिशा की ओर मुड़ा हुआ ।—काल–(पुं०) दक्षिणा लेने का समय ।—पथ–(पुं०) दक्षिणी भारत ।—प्रवण–(वि०) दक्षिण दिशा की ओर झुका हुआ ।

दक्षिणाहि—(अव्य०) [दक्षिण+आहि] दाहिनी ओर दूर । दक्षिण दिशा में दूर ।

दक्षिणीय,—दक्षिण्य–(वि०) [दक्षिणामर्हति, दक्षिणा+छ—ईय] [दक्षिणा+यत्] दक्षिणा पाने योग्य ।

दक्षिणेन—(अव्य०) [दक्षिण+एनप्] दाहिनी ओर का ।

दग्ध—(वि०) [√दह्+क्त] जला हुआ, अग्नि में भस्म हुआ । (आलं०) सन्तप्त, पीड़ित, सताया हुआ । भूखों मरा हुआ, अकाल का मारा । अशुभ, अमङ्गलकारी । शुष्क । स्वाद-रहित, फीका । अभागा । तुच्छ ।

दग्धा—(स्त्री०) [दग्ध+टाप्] वह दिशा जिस में सूर्य बराबर सिर पर रहता है । कुछ विशेष तिथियाँ जो अशुभ मानी जाती हैं, जैसे, मीन और धन के सूर्य में द्वितीया, वृष और कुम्भ में चतुर्थी, मेष और कर्क में षष्ठी, कन्या और मिथुन में अष्टमी, वृश्चिक और सिंह में दशमी, मकर और तुला में द्वादशी ।

दम्भिका—(स्त्री०) [दग्ध+कन्—टाप्, इत्व] जला हुआ भात । जला हुआ अन्न ।

√दम्भ्—स्वा० पर० सक० मारना, वध करना । दम्भोति, दम्भिष्यति, अदम्भीत्–अदाम्भीत् ।

√दण्ड्—चु० पर० सक० दण्ड देना, सजा देना । जुर्माना करना । दण्डयति, दण्डयिष्यति, अददण्डत् ।

दण्ड—(पुं०, न०) [√दण्ड्+घञ् वा अच्] डंडा, लगुड । राजदण्ड, आसादण्ड । दण्ड जो द्विजों को उपनयन संस्कार के समय ग्रहण कराया जाता है । संन्यासी द्वारा ग्रहण किया जाने वाला दण्ड । हाथी का दाँत । डंठल । नाव के डाँड़ । मथानी । अर्थदण्ड, जुर्माना । शारीरिक दण्ड । कैद, कारागृह-वास । आक्रमण । सेना; 'तस्य दण्डवतः दण्डः स्वदेहान्न व्यशिष्यत' र० १७.६२ । व्यूह । वशवर्तीकरण । चार हाथ की नाप विशेष । लिङ्ग । अहङ्कार । शरीर । यम की उपाधि । विष्णु का नाम । शिव जी । सूर्य का सहचर । साठ पल (२४ मिनट) का काल का एक सूक्ष्म विभाग, घड़ी । घोड़ा । हल में लगी लंबी लकड़ी, हरिस । राजा । इक्ष्वाकु के सौ पुत्रों में से एक ।—**अजिन** (**दण्डाजिन**)–(न०) दण्ड और मृगचर्म । (आलं०) दम्भ और छल या प्रवञ्चना ।—**आदेश** (**दण्डादेश**)–(पुं०) किसी अपराधी को दंड देने का न्यायाधीश द्वारा सुनाया जाने वाला आदेश या निर्णय (सेण्टेन्स) ।—**अधिप** (**दण्डाधिप**)–(पुं०) मुख्य न्यायाधीश ।—**अनीक** (**दण्डानीक**)–(न०) सेना की एक टोली ।—**अर्ह** (**दण्डार्ह**)–(वि०) सजा पाने योग्य ।—**अलसिका** (**दण्डालसिका**)–(स्त्री०) हैजा ।—**आज्ञा** (**दण्डाज्ञा**)–(स्त्री०) सजा देने का हुक्म ।—**आहत** (**दण्डाहत**)–(न०) मट्ठा, छाँछ ।—**कर्मन्**–(न०) दण्डविधान ।—**काक**–(पुं०) डोमकौआ, द्रोणकाक ।—**काष्ठ**–(न०) लकड़ी का डंडा ।—**ग्रहण**–(न०) संन्यासी होना ।—**घ्न**–(वि०) डंडे से प्रहार करने वाला । डंडे से मार कर जान लेने वाला । दंड को न मानने वाला ।—**चक्र**–(पुं०) सेना का एक विभाग । पुराणोक्त एक अस्त्र ।—**छदन** (**दण्डच्छदन**)–(न०) भाण्डार जिसमें भिन्न-भिन्न प्रकार के बर्तन रखे जाते हैं ।—**ढक्का**–(स्त्री०) दमामा, नगाड़ा ।—**दास**–(पुं०) ऋण न चुकाने के कारण बना हुआ दास ।—**देवकुल**–(न०) न्यायालय, कचहरी ।—**धर**,—**धार**–(वि०) असा ले चलने वाला । दण्ड देने वाला । (पुं०) राजा । यम । न्यायाधीश ।—**नायक**–(पुं०) न्यायाधीश । सेनानायक ।—**नीति**–(स्त्री०) न्यायविधान । नागरिक और सैनिक शासन-पद्धति । राजनीति, शासन-व्यवस्था ।—**नेतृ**–(पुं०) राजा ।—**प**–(पुं०) राजा ।—**पात**–(पुं०) छड़ी का गिरना । दण्ड-विधान ।—**पांशुल**–(पुं०) द्वारपाल, दरबान ।—**पाणि**–(पुं०) यमराज ।—**पातन**–(न०) दण्डविधान करना ।—**पारुष्य**–(न०) आक्रमण । जोर-जबरदस्ती । कठोर दण्ड-विधान ।—**पाल**,—**पालक**–(पुं०) मुख्य या प्रधान न्यायकर्त्ता । द्वारपाल, दरबान ।—**पोण**–(पुं०) मूठदार चलनी ।—**प्रणाम** (पुं०) शरीर को झुकाये बिना नमस्कार करना, प्रणाम करते समय डंडे की तरह सतर खड़े रहना । प्रणाम करते समय लकड़ी की तरह पृथिवी पर पड़ जाना ।—**बालधि**–(पुं०) हाथी ।—**भङ्ग**–(पुं०) दण्डविधान को भङ्ग कर देना ।—**भृत्**–(पुं०) कुम्हार । यम ।—**माणव**,—**मानव**–(पुं०) असाधारी । दण्डधारी संन्यासी ।—**माथ**–(पुं०) राजमार्ग ।—**मुद्रा**–(स्त्री०) तंत्र के अनुसार एक मुद्रा जिसमें मुट्ठी बाँध कर बीच की उँगली ऊपर की ओर सीधी खड़ी करते हैं ।—**यात्रा**–

(स्त्री०) बरात का जलूस। चढ़ाई।—याम-(पुं०) यमराज। अगस्त्य। दिवस।—वादिन्, —वासिन्-(पुं०) द्वारपाल। रक्षक।—वाहिन्-(पुं०) पुलिस का उच्च पदाधिकारी।—विकल्प-(पुं०) दंडसंबन्धी विकल्प (कद या जुर्माने में से किसी एक को चुन लेने की अनुमति)।—विधि-(पुं०) दण्डविधान के नियम। फौजदारी कानून।—विष्कम्भ-(पुं०) वह खंभा जिसके सहारे रस्सी फेरी जाती है।—व्यूह-(पुं०) विशेष ढंग से सेना को खड़े करने की व्यवस्था।—शास्त्र-(न०) दण्ड-विधान की पद्धति, जुर्म और सजा का कानून।—सन्धि-(पुं०) सेना या लड़ाई का सामान लेकर की जाने वाली संधि।—स्थान-(न०) शरीर के उदर, उपस्थ आदि दस स्थान जहाँ दंड देकर कष्ट पहुँचाया जा सकता है।—हस्त-(पुं०) द्वारपाल, दरवान। यमराज। (न०) तगर का फूल।

दण्डक—(पुं०) [दण्ड+कन्] डंडा, सोंटा। हरिस। झंडे का डंडा। [√दण्ड्+णिच्+ण्वुल्] दंड देने वाला, शासित करने वाला। इक्ष्वाकु राजा का एक पुत्र। (पुं०) न०) [दण्ड √कै+क] वह छंद जिसके प्रत्येक चरण में २६ से अधिक अक्षर हों। दंडकारण्य।—अरण्य (दण्डकारण्य)-(न०) विन्ध्य के दक्षिण एक प्राचीन बन जहाँ वनवासकाल में श्रीराम ने निवास किया था (सीताहरण यहीं हुआ था)।

दण्डका—(स्त्री०) [दण्डक—टाप्] दंडका-रण्य। दंडकवन की भूमि। नामवाला लता।

दण्डन—(न०) [√दण्ड् + णिच्+ल्युट्] दंड की क्रिया, सजा देना।

दण्डादण्डि—(अव्य०) [दण्डैश्च दण्डैश्च प्रहृत्य प्रवृत्तं युद्धम्, समासान्तः इच्, पूर्व-पददीर्घः] लट्ठबाजी, लट्ठों की लड़ाई।

दण्डार—(पुं०) [दण्ड √ऋ+अण्] गाड़ी। कुम्हार का चाक। नाव। मस्त हाथी।

दण्डिक—(पुं०) [दण्ड+ठन्] दंडधारक, दण्डधारी।

दण्डिका—(स्त्री०) [दण्डिक+टाप्] छड़ी। पंक्ति। मोती का हार। रस्सी।

दण्डिन्—(पुं०) [दण्ड+इनि] संन्यासी। द्वारपाल। डाँड चलाने वाला, खेवट। जैनी साधु। यम। राजा। काव्यादर्श तथा दश-कुमारचरित का रचयिता।

दत्त—(वि०) [√दा+क्त] दिया हुआ; डाला हुआ, भेंट किया हुआ। सौंपा हुआ, हवाले किया हुआ। रक्खा हुआ। (पुं०) हिन्दू धर्मशास्त्रानुसार १२ प्रकार के पुत्रों में से एक। वैश्यों की एक उपाधि। दत्तात्रेय।—अनपकर्मन् (दत्तानपकर्मन्), अप्रदानिक (दत्ताप्रदानिक)-(न०) दी हुई वस्तु को न देना। हिन्दू धर्म-शास्त्र में वर्णित बारह प्रकार के स्वाधिकारों में से एक।—अवधान (दत्तावधान)-(वि०) एकाग्रचित्त, मनोयोगी।—आत्रेय (दत्ता-त्रेय)-(पुं०) एक ऋषि का नाम जो अत्रि और अनसूया से उत्पन्न हुए थे और जो ब्रह्मा, विष्णु, महेश का मिश्रित अवतार माने जाते हैं।—आदर (दत्तादर)-(वि०) सम्मान प्रदर्शित करने वाला, आदर करने वाला।—शुल्का-(स्त्री०) दुलहिन जिसके लिये शुल्क दिया गया हो।—हस्त-(वि०) हाथ का सहारा देने वाला। हाथ का सहारा पाये हुए; 'स कामरूपेश्वरदत्तहस्तः' र० ७.१७।

दत्तक—(पुं०) [दत्त+कन्] गोद लिया हुआ पुत्र।

दत्तेय—(पुं०) [दत्ता+ढक्—एय] इन्द्र।

दत्तोलि—(पुं०) पुलस्त्य मुनि।

दत्रिम—(वि०) [√दा+त्रि, मप्] दान से प्राप्त। (पुं०) दत्तक पुत्र।

√दद्—भ्वा० आत्म० सक० देना । ददते, ददिष्यते, अददिष्ट ।

दद—(वि) [√दद्+अ] दाता, देने वाला ।

ददन—(न०) [√दद्+ल्युट्] दान । भेंट ।

दद्रु—(पुं०) [√दद्+रु] दाद का रोग । कछुआ ।—घ्न—(पुं०) चक्रमर्द, चकवँड़ ।

दद्रुण—(वि०) [दद्रु+न] दद्रु रोग से ग्रस्त ।

दद्रू—(पुं०) [√दरिद्रा+उ, नि० साधुः] दे० 'दद्रु' ।

√दध्—भ्वा० आत्म० सक० ग्रहण करना । रखना अधिकार में कर लेना । देना । नजर करना, भेंट करना । दधते, दधिष्यते, अदधिष्ट ।

दधि—(न०) [√धा+कि वा √दध्+इन्] जमाया दूध, दही । तारपीन । वस्त्र ।—अन्न (दध्यन्न)—(न०) दही मिला हुआ अन्न ।—ओदन (दध्योदन)—(न०) दही मिला हुआ भात ।—उत्तर (दध्युत्तर),—उत्तरक (दध्युत्तरक),—उत्तरग (दध्युत्तरग)—(न०) दही का तोड़ ।—उद (दध्युद),—उदक (दध्युदक)—(पुं०) दधिसागर ।—कूर्चिका—(स्त्री०) दही और उबाले हुए दूध के योग से बना हुआ एक पेय । छेना ।—चार—(पुं०) मथानी, रई ।—ज—(न०) ताजा मक्खन ।—फल—(पुं०) कैथा ।—मण्ड—(पुं०),—वारि—(न०) दही का तोड़ ।—मंथन—(न०) दही का बिलोना ।—शोण—(पुं०) बंदर ।—सक्तु—(पुं०) दही मिला हुआ सत्तू ।—सार,—स्नेह—(पुं०) ताजा मक्खन ।—स्वेद—(पुं०) माठा, छाछ ।

दधित्थ—(पुं०) [दधि√स्था+क, पृषो० साधुः] कैथा, कपित्थ ।

दधीच—(पुं०) एक प्रसिद्ध ऋषि का नाम जिन्होंने वज्र बनाने के लिये अपने शरीर के हाड़ दे दिये थे ।—अस्थि (दधीचास्थि)—(न०) इन्द्र का वज्र । हीरा ।

दधीचि—(पुं०) =दधीच ।—अस्थि (दधीच्यस्थि)=दधीचास्थि ।

दधृष्—(वि०) धृष्ट । निर्लज्ज ।

दनु—(स्त्री०) दानवों की माता जो दक्ष की लड़की और कश्यप की पत्नी थी ।—ज,—पुत्र,—सम्भव,—सुत—(पुं०) दैत्य, दानव ।—द्विष्—(पुं०) देवता ।

दन्त—(पुं०) [√दम्+तन्] दाँत । विषदन्त । हाथी का दाँत । बाण की नोक । पर्वत की चोटी । कुञ्ज ।—अग्र (दन्ताग्र)—(न०) दाँत का अग्रभाग ।—अन्तर (दन्तान्तर)—(न०) दाँतों के बीच का हिस्सा ।—उद्भेद (दन्तोद्भेद)—(पुं०) दाँत निकलना ।—उलूखलिक (दन्तोलूखलिक)—(पुं०) जो दाँतों से उखली-मूसल का काम ले । एक प्रकार के साधु जो धान आदि को यों ही चबा कर खा जाते हैं ।—कर्षण—(पुं०) नीबू का वृक्ष ।—कार—(पुं०) हाथी के दाँत की चीजें बनाने वाला कारीगर ।—काष्ठ—(न०) दातुन, दतवन, मुखारी ।—कलह—(पुं०) लड़ाई ।—ग्राहिन्—(वि०) दाँतों को खराब करने वाला ।—घर्ष—(पुं०) दाँतों को कटकटाना ।—चाल—(पुं०) ढीला दाँत, दाँत जो हिल उठा हो ।—छद (दन्तच्छद)—(पुं०) ओठ ।—०उपमा (दन्तच्छदोपमा)—(स्त्री०) बिंबाफल, कुँदरू ।—जात—(वि०) [बच्चा] जिसके दाँत निकल आये हों ।—धावन—(न०) मुखारी करना । मुखारी, दतवन । (पुं०) बकुल का पेड़ ।—पत्र—(न०) कर्णभूषण विशेष ।—पत्रक—(न०) पत्रिका—(स्त्री०) कर्णभूषण विशेष । कुन्द ।—पवन—(न०) दाँत साफ करने की कूची । दाँत साफ करना ।—पात—(पुं०) दाँतों का पतन ।—पाली—(स्त्री०) दाँत की नोक । मसूड़ा ।—पुष्प—(न०) कुन्द का फूल । कतकफूल ।—प्रक्षालन—(न०) दाँतों का धोना ।—भाग—(पुं०) हाथी के माथे का

अगला भाग ।—**मल**–(न०) दाँतों का मैल । —**मांस**,—**मूल**, —**वल्क**–(न०) मसूड़ा । —**मूलीय**–(पुं०) दाँत की सहायता से उच्चारण किये जाने वाले अक्षर ।—यथा लृ, तृ, थृ, दृ, ध, नृ, और सृ ।—**रोग**–(पुं०) दाँत की पीड़ा ।—**लेखक**–(वि०) दाँतों की रँगाई से जीविका चलाने वाला ।—**वस्त्र**—**वासस्**–(न०) ओंठ; "तुला यदारोहति दन्तवाससा" कु० ५.३४ ।—**बीज**, —**बीजक**-(पुं०) अनार का वृक्ष ।—**वीणा**–(स्त्री०) एक प्रकार की वीणा जो दाँत में लगा कर बजाई जाती है । दाँत कटकटाना ।—**वैदर्भ**–(पुं०) बाहरी चोट से दाँतों का हिल उठना । —**व्यसन** (न०) दाँत का टूट जाना ।—**शठ**–(वि०) खट्टा । (पुं०) नीबू । कैथ । कमरख । नारंगी । चूक । खटाई ।—**शर्करा** –(स्त्री०) दाँत की पपड़ी ।—**शाण**–(पुं०) दन्तमञ्जन, मिस्सी ।—**शूल**–(न०, पुं०) दाँत का दर्द ।—**शोधनि**–(स्त्री०) खरका । —**शोथ**–(पुं०) मसूड़ों की सूजन ।—**हर्षक** –(पुं०) नीबू का पेड़ ।

दन्तक—(पुं०) [दन्त+कन्] दाँत । पर्वत का शिखर । पर्वत की चोटी के पास आगे की ओर निकला हुआ पत्थर । दीवाल में लगी खूँटी ।

दन्तजाह—(न०) [दन्त+जाहच्] दाँत की जड़ ।

दन्तादन्ति—(अव्य०) [दन्तैश्च दन्तैश्च प्रहृत्य प्रवृत्तं युद्धम्, समासान्त : इच्, पूर्वपद-दीर्घः] लड़ाई-झगड़े में एक दूसरे को दाँत से काटना ।

दन्तावल, दन्तिन्—(पुं०) [अतिशयितौ दन्तौ यस्य, दन्त+वलच्, दीर्घ] [प्रशस्तौ दन्तौ यस्य, दन्त+इनि] हाथी ।

दन्तुर—(वि०) [उन्नताः दन्ताः सन्ति यस्य, दन्त+उरच्] बड़े-बड़े या आगे निकले हुए दाँतों वाला । दाँतेदार, खुरदरे किनारे वाला । लहरियादार । ऊपर उठा हुआ । (पुं०) हाथी । सूअर ।—**च्छद** (**दन्तुरच्छद**)–(पुं०) नीबू का पेड़ ।

दन्तुरित—(वि०) [दन्तुर+इतच्] दे० 'दन्तुर' । लिप्त ।

दन्त्य—(वि०) [दन्त+यत्] जिसका उच्चारण-स्थान दंत हो—जैसे तवर्ग । दाँतों के लिये हितकर । दाँत संबंधी ।

दन्दश—(पुं०) दाँत ।

दन्दशूक—(वि०) [गर्हितं दशति, √दंश् +यङ् +ऊक] जहरीला । काटने वाला । उत्पाती ।—(पुं०) साँप । सरीसृप जन्तु । राक्षस; 'इषुमति रघुसिंहे दन्दशूकाञ्जिघांसौ' भट्टि १.२६ ।

दभ्र—(वि०) [√दम्भ्+रक्] स्वल्प, थोड़ा । सूक्ष्म, कृश । (पुं०) समुद्र ।

√**दम्**—दि० पर० सक० पालना । वशवर्ती करना, जीतना । रोकना । शान्त करना । दाम्यति, दमिष्यति, अदमत् ।

दम—(पुं०) [√दम्+घञ्] पालना । वशवर्ती करना । बाहर की वृत्तियों को रोकना । बुरे कामों से मन को हटाना । मन की दृढ़ता । सजा, दण्ड । कीचड़ ।

दमक—(वि०) [√दम्+ण्वुल्—अक] दबाने, रोकने या शान्त करने वाला ।

दमथ, दमथु—(पुं०) [√दम्+अथच्] [√दम्+अथुच्] आत्मसंयम । सजा ।

दमन—(वि०) [स्त्री०—**दमनी**] [√दम् +ल्यु] दमन करने वाला । अनुशासित करने वाला । पराजित करने वाला । (न०) [√दम् +ल्युट्] दबाने या बलपूर्वक शांत करने का काम । आत्म-नियंत्रण । दंड देना । वध । इन्द्रियों की बाह्य वृत्तियों का निरोध । (पुं०) [√दम्+ल्यु] विष्णु । शिव । सारथि । सैनिक, योद्धा ।

दमयन्ती—(स्त्री०) [दमयति नाशयति यमज्ञानादिकम्, √दम्+णिच्+शतृ — ङीप्]

विदर्भ के राजा भीम की राजकुमारी। इसका दमयन्ती नाम इस लिये पड़ा था कि, इसने अपने अनुपम सौन्दर्य से संसार की समस्त रूपवती स्त्रियों का अभिमान दूर कर दिया था।

दमयितृ—(वि०) [√दम्+णिच्+तृच्] दमन करने वाला। वशवर्ती करने वाला। दण्ड देने वाला। (पुं०) विष्णु। शिव।

दमित—(वि०) [√दम्+क्त] जिस का दमन किया गया हो। विजित, पराभूत।

दमुनस्, दमूनस्—(पुं०) [√दम्+उनस्, पक्षे दीर्घः] अग्नि। शुक्राचार्य।

दम्पती—(पुं०) (द्विवचन) [जाया च पतिश्च, द्व० स०, जायाशब्दस्य दमादेशः] पतिपत्नी, स्त्री-पुरुष।

√दम्भ्—स्वा० पर० अक० पाखंड करना। दभ्नोति, दम्भिष्यति, अदम्भीत्।

दम्भ—(पुं०) [√दम्भ्+घञ्] पाखंड, आडंबर, ढकोसला। कपट। शठता। इन्द्र का वज्र। शिव।

दम्भन—(न०) [√दम्भ्+ल्युट्] ढोंग करना, पाखंड करना।

दम्भिन्—(पुं०) [√दम्भ्+णिनि] पाखंडी। छलिया।

दम्भोलि—(पुं०) [√दम्भ्+असुन्, दम्भसि प्रेरणे अलति पर्याप्नोति, √अल्+इन्] इन्द्र का वज्र।

दम्य—(वि०) [√दम्+यत्] दमन करने योग्य। काबू में लाने योग्य। दण्डनीय। (पुं०) नया बैल, बिना निकाला हुआ बछड़ा; 'गुर्वीं धुरं यो भुवनस्य पित्रा धुर्येण दम्यः सदृशं बिभर्ति' र० ६.७८।

√दय्—भ्वा० आत्म० सक० दया करना, सहानुभूति प्रदर्शित करना। प्यार करना। पसंद करना। रक्षा करना। जाना। देना। बाँटना। घायल करना। दयते, दयिष्यते, अदयिष्ट।

दया—(स्त्री०) [√दय्+अङ्—टाप्] किसी को दुःख में देख उसके दुःख को दूर करने की इच्छा, अनुकंपा, रहम। दक्ष प्रजापति की एक कन्या जिसका विवाह धर्म से हुआ था।—**कूट**,—**कूर्च**—(पुं०) बुद्धदेव की उपाधि।

दयालु—(वि०) [√दय्+आलुच्] दया वाला, कृपालु।

दयित—(वि०) [√दय्+क्त] प्यारा। अभिलषित, चाहा हुआ। (पुं०) पति। प्रेमी, प्रेमपात्र।

दयिता—(स्त्री०) [दयित+टाप्] पत्नी। प्रेयसी।

दर—(वि०) [√दृ+अप्] फटा हुआ, चिरा हुआ। (पुं०, न०) गुफा। गड्ढा। शंख। (पुं०) भय। विदारण। (अव्य०) किञ्चित्, थोड़ा।—**इन्द्र** (**दरेन्द्र**)—(पुं०) भगवान् विष्णु का शंख।—**कण्ठिका**—(स्त्री०) शतावर।—**तिमिर**—(न०) भयजन्य अंधकार।

दरण—(न०) [√दृ+ल्युट्] तोड़ना। चीरना, फाड़ना।

दरणि—(पुं०), **दरणी**—(स्त्री०) [√दृ+अनि] [दरणि—ङीष्] भँवर, चक्कर। धार। समुद्र का हिलोरा या लहर।

दरद्—(स्त्री०) [√दृ+अदि] हृदय। भय। पर्वत। बाँध।

दरद—(पुं०) [दर√दै+क] काश्मीर का सीमावर्ती एक देश। (न०) ईंगुर, सिंगरफ। (वि०) [दर√दा+क] भयदायक, भयंकर।

दरि, **दरी**—(स्त्री०) [√दृ+इन्] [दरि+ङीष्] कंदरा, गुफा। सर्पों का एक भेद।—**भृत्**—(पुं०) पहाड़।

दरिद्र—(वि०) [√दरिद्रा+अच्] गरीब, मोहताज।

दरिद्रता—(स्त्री०) [दरिद्र+तल्—टाप्] निर्धनता।

√दरिद्रा—अ० पर० अक० निर्धन होना। कष्ट में होना। लटा, दुबला होना। दरिद्राति, दरिद्रिष्यति, अदरिद्रीत्—अदरिद्रासीत्।

दरोदर—(पुं०) [दरो भयं तज्जनकम् उदरं यस्य, वा दुरोदर पृषो० साधुः] जुआरी। जुए का दाव। (न०) जुआ। पासा।

दर्दर—(पुं०) [√दृ+यङ+अच्, पृषो० साधुः] पहाड़। कुछ टूटा हुआ घड़ा।

दर्दरीक—(पुं०) [√दृ+यङ+ईकन्] मेढक। बादल। (न०) बाजा।

दर्दुर—(पुं०) [√दृ+यङ+उरच्] मेढक। बादल। शहनाई। पर्वत। दक्षिण भारत का एक पर्वत।

दद्रु, दद्रू—(पुं०) [√दरिद्रा+उ, नि० साधुः] दाद, एक प्रकार का चर्मरोग।

दर्प—(पुं०) [√दृप्+घञ् वा अच्] अहङ्कार, अभिमान। दुस्साहस। गर्व, घमण्ड। चिड़चिड़ापन। गर्मी। कस्तूरी, मृगमद।—**आध्मात** (**दर्पाध्मात**)-(वि०) अभिमान से फूला हुआ।—**छिद्** (**दर्पच्छिद्**),—**हर**-(वि०) दर्पखर्वकारी, नीचा दिखाने वाला।

दर्पक—(पुं०) [√दृप्+णिच्+ण्वुल्] कामदेव का नाम।

दर्पण—(न०) [√दृप्+णिच्+ल्यु] आंख वाला। (पुं०) आईना, बट्टा, शीशा। एक पर्वत जो कुबेर का निवास-स्थान माना जाता है। (न०) [√दृप्+णिच्+ल्युट्] प्रज्वलित करना। गर्वयुक्त करना।

दर्पित, दर्पिन्—(वि०) [√दर्प्+क्त] [दर्प+इनि] [स्त्री०—**दर्पिणी**] अभिमानी, अहंकारी। चिड़चिड़ा।

दर्भ—(पुं०) [√दृ+भ] कुश, एक प्रकार की पवित्र घास।—**अनूप** (**दर्भानूप**)-(पुं०) जलप्रचुर देश जहाँ कुश बहुतायत से लगे हों।—**आह्वय** (**दर्भाह्वय**)-(पुं०) मूंज।

दर्भट—(न०) [√दृभ्+अटन्] भीतर का एकान्त कमरा।

दर्व—(पुं०) [√दृ+व] आततायी। राक्षस। हिंस्र जंतु। करछुल। साँप का फन। चोट।

दर्वट—(पुं०) [दर्व√अट्+अच्, शक० पररूप] चौकीदार (ग्राम का)। दरबान, द्वारपाल।

दर्वरीक—(पुं०) [√दृ+ईकन् नि० साधुः] इन्द्र। बाजा विशेष। वायु।

दर्विका—(स्त्री०) [दर्वि+कन्—टाप्] कलछी। चमचा।

दर्वी, दर्वि—(स्त्री०) [√दृ+विन्—ङीप्] [√दृ+विन्] कलछी; 'मांसमुद्दर्वीपरिघट्टनेन' महा०। चमचा। सर्प का फन।—**कर**-(पुं०) सर्प।

दर्श—(पुं०) [√दृश्+घञ्] दृश्य। दर्शन। अमावस्या। यज्ञ विशेष।—**प**-(पुं०) एक देववर्ग।—**यामिनी**-(स्त्री०) अमावस्या की रात।—**विपद्**-(पुं०) चन्द्रमा।

दर्शक—(वि०) [√दृश्+ण्वुल्] देखने वाला। [√दृश्+णिच्+ण्वुल्] दिखलाने वाला। बतलाने वाला। (पुं०) द्वारपाल, दरबान। निपुणजन।

दर्शन—(न०) [√दृश्+ल्युट्] देखना। जानना। दृश्य। आँख। पर्यवेक्षण, मुआयना। भेंट करना। उपस्थित होना। रूप। स्वप्न। समझ। निर्णय। धर्म सम्बन्धी ज्ञान। वह शास्त्र जिसमें आत्मा, अनात्मा, जीव, ब्रह्म, प्रकृति, पुरुष, जगत्, धर्म, मोक्ष, मानव जीवन के उद्देश्य आदि का निरूपण हो, तत्त्वज्ञान कराने वाला शास्त्र। (छः आस्तिक—सांख्य, योग, वैशेषिक, न्याय, मीमांसा (पूर्वमीमांसा) और वेदान्त (उत्तरमीमांसा) तथा छः नास्तिक—चार्वाक, जैन, माध्यमिक, योगाचार, सौत्रान्तिक और वैभाषिक—प्रधान माने जाते हैं)। आईना,

दर्पण । गुप्त । धर्म ।—**इप्सु** (**दर्शनेप्सु**)-(वि०) देखने का अभिलाषी ।—**प्रतिभू**-(पु०) जमानतदार । वह प्रतिभू जो महाजन की इच्छा के अनुसार ऋणी को किसी भी समय या किसी भी स्थान पर उपस्थित करने का भार स्वीकार करे ।

दर्शनीय—(वि०) [√दृश्+अनीयर्] देखने योग्य । मनोहर । [√दृश्+णिच्+अनीयर्] दिखाने योग्य ।

दर्शयितृ—(पुं०) [√दृश्+णिच्+तृच्] द्वारपाल । पथप्रदर्शक ।

दर्शित—(वि०) [√दृश्+णिच्+क्त] दिखलाया हुआ । प्रादुर्भूत । समझाया हुआ । सिद्ध किया हुआ । स्पष्ट ।

√**दर्शिन्**—(वि०) [स्त्री०—**दर्शिनी**] [दृश्+णिनि] देखने वाला । पहचानने वाला । जानने वाला ।

√**दल्**-भ्वा० पर० सक०अक० चीरना । फटना, फाड़ना । तड़कना, तड़काना । फूटना, फोड़ना । फैलना, फैलाना । दलति, दलिष्यति, अदालीत् ।

दल—(न०, पुं०) [√दल्+अच्] टुकड़ा । अंश । आधा । म्यान । छोटा अंकुर । कोंपल । पत्ता । किसी हथियार का फल । ढेर । समूह । सेना की टुकड़ी ।—**आढक** (**दलाढक**)-(पुं०) फेन । समुद्री मत्स्य विशेष की हड्डी । काई । आँधी । गेरू । धूल । गाँव का मुखिया । हाथी का कान । नागकेसर । कुंद ।—**कपाट**-(पुं०) कली के ऊपर की पंखुड़ी ।—**कोष**-(पुं०) कुन्द की बेल ।—**गञ्जन**-(वि०) सेना को मारने वाला । (पुं०) एक प्रकार का धान ।—**निर्मोक**-(पुं०) भोजपत्र का वृक्ष ।—**पति**-(पुं०) दल का मुखिया या सरदार ।—**पुष्पा**-(स्त्री०) केतक वृक्ष ।—**सूची**-(स्त्री०) काँटा ।—**स्नसा**-(स्त्री०) पत्ते का रेशा या नस ।

दलन—(न०) [√दल्+ल्युट्] तोड़ना । काटना । छिन्न करना । कुचलना; 'मत्तेभकुम्भदलने भुवि सन्ति शूराः' भर्तृ० १.५६ । पीसना । चीरना ।

दलनी—(स्त्री०), **दलि**—(पु०) [दलन+ङीप्] [√दल्+इन्] ढेला ।

दलप—(पुं०) [√दल्+कपन्] हथियार । सुवर्ण । शास्त्र ।

दलशः—(अव्य०) [दल+शस्] टुकड़े-टुकड़े करके ।

दलित—(वि०) [√दल्+क्त] टूटा हुआ । फटा हुआ । चिरा हुआ । खुला हुआ । फैला हुआ ।

दल्भ—(पु०) [√दल्+भ] पहिया । जाल । बेईमानी । पाप ।

दल्मि—(पुं०) [√दल्+मि] चन्द्रमा । वज्र ।

दव—(पुं०) [√दु+अच्] जंगल । दावाग्नि । अग्नि । ज्वर । पीड़ा ।—**अग्नि** (**दवाग्नि**),—**दहन**-(पुं०) वन में स्वतः लगने वाली आग, वनाग्नि; 'शशाम वृष्ट्यापि विना दवाग्निः' र० २.१४ ।

दवथु—(पुं०) [√दु+अथुच्] दाह । पीड़ा । आँख का फूलना ।

दविष्ठ—(वि०) [दूर+इष्ठन्, दव आदेश] दूरतम । सुदूर, बहुत दूरवर्ती ।

दवीयस्—(वि०) [दूर+ईयसुन्, दव आदेश] दूरतर । सुदूर ।

दशक—(वि०) [दशन्+कन्] दस का समाहार ।

दशत्—(स्त्री०) [दशन्+अति] दसों का समूह ।

दशति—(स्त्री०) [दशावृत्ता दश नि० साधुः] सौ, शत ।

दशन्—(वि०) [√दंश्+कनिन्] (समास में 'दशन्' के नकार का लोप हो जाता है, जैसे—दशकण्ठ, दशकन्धर इत्यादि) नौ और एक । (त्रि०) दस की संख्या, १० ।—**अंगुल** (**दशांगुल**)-(वि०) जो माप में

दस अंगुल का हो । (न०) खरबूजा ।—**अर्ध** (**दशार्ध**)–(वि०) पाँच । (पुं०) बुद्धदेव ।—**अवतार** (**दशावतार**) –(पुं०) विष्णु के दस अवतार ।—**अश्व** (**दशाश्व**)–(पुं०) चन्द्रमा ।—**आनन** (**दशानन**),—**आस्य** (**दशास्य**)–(पुं०) रावण ।—**आमय** (**दशामय**)–(पुं०) रुद्र ।—**ईश** (**दशेश**)–(पुं०) १० गाँव का मुखिया ।—**एकादशिक** (**दशैकादशिक**)-(वि०) वह आदमी जो १० दे और ११ वसूल करे, अर्थात् १० सैकड़ा सूद लेने वाला ।—**कण्ठ**,—**कन्धर**–(पुं०) रावण ।—**कर्मन्**–(न०) गर्भाधान से लेकर अंत्येष्टिक्रिया या विवाह तक के दस कर्म ।—**कुलवृक्ष**–(पुं०) तंत्र में गृहीत दस वृक्ष—लसोड़ा, करंज, बेल, पीपल, कदम्ब, नीम, बरगद, गूलर, आँवला और इमली ।—**क्षीर**–(न०) दस जीवों—गाय, भैंस, भेड़, बकरी, ऊँटनी, घोड़ी, स्त्री, हथिनी, हरिनी और गधी का दूध ।—**गात्र**–(पुं०) शरीर के मुख्य दस अंग । मृत्यु के दसवें दिन पूरा होने वाला एक और्ध्वदैहिक कृत्य; इस कर्म के अंतर्गत प्रतिदिन दिये गये पिंड से क्रमशः प्रेत के दस गात्रों—अंगों का निर्माण होता है ।—**गुण**–(वि०) दसगुना, दसगुना अधिक ।—**ग्रामिन्**, —**प**–(पुं०) १० गाँव का अधिपति ।—**ग्रीव**–(पुं०) रावण ।—**पारमिताधर**–(पुं०) दस सिद्धियों का रखने वाला, बुद्धदेव की उपाधि ।—**पुर**–(न०) राजा रन्तिदेव की राजधानी ।—**बल**,—**भूमिक**–(पुं०) बुद्धदेव ।—**मालिक**–(पुं०) एक देश का नाम ।—**मास्य**–(वि०) दस मास का । दस मास तक गर्भ में रहा हुआ ।—**मुख**–(पुं०) रावण ।—**०रिपु**–(पुं०) श्रीरामचन्द्र ।—**रथ**–(पुं०) महाराज अज के पुत्र, श्रीरामचन्द्र के पिता महाराज दशरथ ।—**रश्मिशत**–(पुं०) सूर्य ।—**रात्र**–(न०) दस रात का काल । (पुं०) दस दिन में पूर्ण होने वाला एक यज्ञ ।—**रूपभृत्**–(पुं०) विष्णु ।—**वक्त्र**, —**वदन**–(पुं०) रावण ।—**वाजिन्**–(पुं०) चन्द्रमा ।—**वार्षिक**–(वि०) दस वर्ष में होने वाला या दस वर्ष तक रहने वाला ।—**विध**–(वि०) दस प्रकार का ।—**शत**–(न०) एक हजार ।—**शतरश्मि**–(पुं०) सूर्य ।—**शती**–(स्त्री०) एक हजार ।—**साहस्र**–(न०) दस हजार ।—**हरा**–(स्त्री०) गंगा जी की उपाधि । ज्येष्ठ शुक्ला दशमी को होने वाला गङ्गोत्सव । दुर्गा जी का उत्सव जो आश्विन शुक्ला दशमी को होता है ।

दशतय—(वि०) [दश अवयवा यस्य, दशन् +तयप्] [स्त्री०—**दशतयी**] दस अवयवों वाला, दस की संख्या से युक्त ।

दशधा—(अव्य०) [दशानां प्रकारः दशन् धा] दस प्रकार से । दस भागों में ।

दशन—(न०) [√दंश्+ल्युट्, दशदशेति निर्देशात् क्वचित् अकित्यपि नलोपः] दाँत से काटने की क्रिया । कवच । (पुं०) दाँत । शिखर ।—**अंशु** (**दशनांशु**)–(पुं०) दाँतों की दमक ।—**अङ्क** (**दशनाङ्क**)–(पुं०) दन्तक्षत, दाँत से काटने का चिह्न ।—**उच्छिष्ट** (**दशनोच्छिष्ट**)–(पुं०) ओंठ । चुम्बन । आह ।—**छद** (**दशनच्छद**),—**वासस्**–(न०) ओंठ । चूमा ।—**पद**–(न०) दन्तक्षत का स्थान और निशान; 'दशनपदं भवदधरगतं मम जनयति चेतसि खेदं' गीत० ८ ।—**बीज**–(पुं०) अनार का वृक्ष ।

दशम—(वि०) [दशानां पूरणः, दशन्+डट् –मट्] [स्त्री०—**दशमी**] दसवाँ ।

दशमिन्—(वि०) [नवतेः ऊर्ध्वम् दशमी सा अवस्थाभेदः अस्ति अस्य, दशमी+इनि] लगभग सौ की अवस्था का, बहुत बूढ़ा ।

दशमी—(स्त्री०) [दशम+ङीप्] चान्द्र मास के प्रत्येक पक्ष की दसवीं तिथि । नब्बे वर्ष से आगे की अवस्था । मरणावस्था । शताब्दी

का अंतिम दशक ।—स्थ–(वि०) अतिवृद्ध, जिसकी अवस्था ६० वर्ष से ऊपर हो गई हो ।

दशा—(स्त्री०) [√दंश्+अङ नि०, टाप्] कपड़े की झालर । बत्ती । उम्र या जीवन की दशा, अवस्था । काल, अवधि । परिस्थिति, हालत । मन की दशा । प्रारब्ध । ज्योतिष के अनुसार मनुष्य के जीवन में प्रत्येक ग्रह का नियत भोग-काल, जिसकी सीमा १२० वर्ष है । इसे विंशोत्तरी दशा कहते हैं । इसमें सूर्य ६ वर्ष, चन्द्रमा १० वर्ष, मंगल ७ वर्ष, राहु १८ वर्ष, गुरु १६ वर्ष, शनि १९ वर्ष, बुध १७ वर्ष, केतु ७ वर्ष और शुक्र २० वर्ष रहता है ।—**अन्त** (**दशान्त**)–(पुं०) बत्ती का छोर । जीवन का अन्त ।—**इन्धन** (**दशेन्धन**)–(पुं०) दीपक ।—**कर्ष**–(पुं०) कपड़े का किनारा । दीपक ।—**पाक,—विपाक**–(पुं०) प्रारब्धानुसार फल । जीवन की दशा में परिवर्तन ।

दशार्ण—(पुं०) [दश ऋणानि दुर्गभूमयो जलधारा वा यत्र, ब० स०] एक प्राचीन देश जो मध्य देश के दक्षिण-पूर्व में था । उक्त देश के अधिवासी ।

दशिन्—(वि०) [दशन्+इनि] [स्त्री०—**दशिनी**] दस वाला । (पुं०) दस गाँवों का व्यवस्थापक ।

दशेर—(वि०) [√दंश्+एरक्] उत्पाती । हानिकर । (पुं०) उपद्रवी या विषैला जानवर ।

दशेरक—(पुं०) [दशेर+कन्] मरुदेश या वहाँ का निवासी । ऊँट का बच्चा ।

दष्ट—(वि०) [√दंश्+क्त] काटा या डंक का मारा हुआ ।

√दस्—दि० पर० सक० करना । ऊपर फेंकना । लूटना । दस्यति, दसिष्यति, अदसत् ।

दस्यु—(पुं०) [√दस्+युच्] एक दुष्ट जाति के जीवों की संज्ञा जिनको, देवताओं के शत्रु होने के कारण इन्द्र ने मारा था । व्रात्य, संस्कार-भ्रष्ट । चोर । डाकू । लुटेरा । दुष्ट । अत्याचारी ।

दस्र—(वि०) [√दस्+रक्] हिंस्र । भयङ्कर । नाशक । (पुं० द्वि०) दोनों अश्विनी कुमार । (पुं०) गर्दभ, गधा । अश्विनी नक्षत्र ।—**सू**–(स्त्री०) [दस्र√सू+क्विप्] सूर्य की पत्नी और अश्विनी कुमारों की माता ।

√दह्—भ्वा० पर० सक० जलाना । नाश करना । सन्तप्त करना, पीड़ित करना । दागना । दहति, धक्ष्यति, अधाक्षीत् ।

दहन—(वि०) [√दह्+ल्यु] जलाने वाला । (पुं०) अग्नि । चित्रक, चीता । भिलावाँ । कबूतर । दुष्ट या क्रोधी मनुष्य । एक रुद्र । कृत्तिका नक्षत्र । तीन की संख्या । (न०) [√दह्+ल्युट्] जलाना ।—**अराति** (**दहनाराति**)–(पुं०) जल ।—**उपल** (**दहनोपल**)–(पुं०) सूर्यकान्त मणि ।—**उल्का** (**दहनोल्का**)–(स्त्री०) लुआठ, अधजली लकड़ी ।—**केतन**–(पुं०) धूम ।—**प्रिया**–(स्त्री०) स्वाहा, अग्नि की स्त्री ।—**सारथि**–(पुं०) पवन ।

दहर—(वि०) [√दह्+अर] स्वल्प, थोड़ा । अत्यंत सूक्ष्म । जो कठिनाई से समझ में आये । (पुं०) बच्चा, शिशु । जानवर का बच्चा । छोटा भाई । हृदयगह्वर या हृदय । चूहा । वरुण । नरक ।

दह्र—(पुं०) [√दह्+रक्] दावानल । नरक । अग्नि । वरुण । हृदयाकाश ।

√दा—जु० उभ० सक० देना । ददाति-दत्ते, दास्यति—ते, अदात्—अदित । अ० पर० सक० काटना । दाति, दास्यति, अदासीत् । भ्वा० पर० सक० देना । यच्छति, दास्यति, अदात् ।

दाक्षायणी—(स्त्री०) [दक्ष+फिञ्—आयन्, ङीप्] २७ नक्षत्र में से कोई भी । कश्यप-पत्नी दिति का नाम । पार्वती । रेवती नक्षत्र । कद्रू या विनता । दन्ती का पौधा ।—**पति**–

(पुं०) शिव । चन्द्रमा ।—**पुत्र**-(पुं०) देवता ।

दाक्षाय्य—(पुं०) [√दक्ष्+आय्य+अण्] गृद्ध, गीध ।

दाक्षिण—(वि०) [स्त्री०—**दाक्षिणी**] [दक्षिणा+अण्] यज्ञ की दक्षिणा सम्बन्धी । दक्षिण दिशा सम्बन्धी । (न०) यज्ञीय दक्षिणा की वस्तुओं का समुच्चय ।

दाक्षिणात्य—(वि०) [दक्षिणा+त्यक्] दक्षिण देश का, दक्षिणी; 'अस्ति दाक्षिणात्ये जनपदे महिलारोप्यं नाम नगरं' पं० १ । (पुं०) दक्खिन का रहने वाला आदमी । नारियल ।

दाक्षिणिक—(वि०) [स्त्री०—**दाक्षिणिकी**] [दक्षिणा+ठक्—इक] यज्ञीय दक्षिणा सम्बन्धी ।

दाक्षिण्य—(न०) [दक्षिण+ष्यञ्] नम्रता । कृपालुता । प्रेमी का बनावटी या अत्यन्त शिष्टाचार । ऐकमत्य । प्रतिभा । चातुरी ।

दाक्षी—(स्त्री०) [दक्ष+इञ्—ङीप्] दक्ष की कन्या । पाणिनि की माता का नाम ।—**पुत्र**-(पुं०) पाणिनि का नाम; 'मुनेर्दाक्षीपुत्रादपि तव समर्थः पदविधिः' ।

दाक्ष्य—(न०) [दक्ष+ष्यञ्] चातुरी, निपुणता । सत्यता, ईमानदारी ।

दाघ—(पुं०) [√दह्+घञ्, कुत्व] जलन ।

दाडक—(पुं०) [दालयति मुखाभ्यन्तरस्थद्रव्यं विचूर्णीकरोति, √दल्+णिच्+ण्वुल्, लस्य डः] दाँत । दाढ़ ।

दाडिम, **दालिम**—(पुं०), **दाडिमा, दालिमा**-(स्त्री०) [√दल्+घञ्+इमप्, डलयोरभेदः । स्त्रियां टाप्] अनार का पेड़ । छोटी इलायची ।—**प्रिय,—भक्षण**- (पुं०) तोता ।

दाडिम्ब—(पुं०) [√दा+डिम्ब (बा०)] अनार का पेड़ ।

दाढा—(स्त्री०) [√दा+क्विप्, दा √ढौक्+ड—टाप्] बड़ा दाँत । समूह । इच्छा ।

दाढिका—(स्त्री०) [दाढ+कन्—टाप्, इत्व] दाढ़ी । दाँत ।

दाण्डाजिनिक—(वि०) [स्त्री०—**दाण्डाजिनिकी**] [दण्डाजिन+ठञ्—इक] दण्ड और मृगचर्म धारण करने वाला । (पुं०) धोखे बाज, छलिया । पाखण्डी, दम्भी ।

दाण्डिक—(पुं०) [दण्ड+ठञ्] दण्डदाता, सजा देने वाला ।

दात—(वि०) [√दा+क्त] कटा हुआ । धोया हुआ । पका हुआ ।

दाति—(स्त्री०) [√दा+क्तिन्] देना । काटना । वितरण, बाँट ।

दातृ—(वि०) [स्त्री०—**दात्री**] [√दा+तृच्] देने वाला । उदार । (पुं०) दाता । महाजन । शिक्षक ।

दात्यूह—(पुं०) [दाति√ऊह्+अण्] चातक पक्षी । बादल । जलकाक ।

दात्र—(न०) [√दा+ष्ट्रन्] हँसिया ।

दाद—(पुं०) [√दद्+घञ्] दान । भेंट ।—**द**-(पुं०) दाता ।

दान—(न०) [√दा+ल्युट्] देना, सौंपना, हवाले करना । दान, भेंट, पुरस्कार । उदारता । हाथी का मदजल; 'सदानतोयेन विषाणिनाम्:' शि० ४.६ । चार उपायों में से एक, जिससे शत्रु को अपने में मिलाया जाता है । काटना । बाँटना । स्वच्छता । रक्षा । आसन ।—**कुल्या**-(स्त्री०) हाथी की कनपटी से मदजल का बहना ।—**धर्म**-(पुं०) धर्मार्थ, धर्मार्थ दान ।—**पति**-(पुं०) अत्यन्त उदार पुरुष । अक्रूर जो कृष्ण के मित्र थे ।—**पत्र**-(न०) दस्तावेज जिसमें किसी वस्तु का दान किसी के नाम लिखा गया हो ।—**पात्र**-(न०) दान लेने के योग्य व्यक्ति । ब्राह्मण जिसे दान दिया जा सके ।—**प्रातिभाव्य**-(न०) ऋण अदा करने की जमानत ।—

भिन्न–(वि०) जो घूस देकर विरुद्ध बना दिया गया हो।—**वज्र**–(पुं०) देवताओं और गन्धर्वों के एक प्रकार के घोड़े जो अत्यन्त वेगवान् होते और सदा एक रूप रहते हैं।—**वीर**–(पुं०) अत्यन्त उदार पुरुष।—**शील**, —**शूर**,—**शौण्ड**–(वि०) अत्यन्त दानी या उदार पुरुष।

दानक—(न०) [दान+कन्] क्षुद्रदान।

दानव—(पुं०) [दनोः अपत्यम्, दनु+अण्] कश्यप के पुत्र जो दनु के गर्भ से उत्पन्न हुए थे, राक्षस।—**अरि** (**दानवारि**) –(पुं०) देवता। विष्णु।—**गुरु**–(पुं०) शुक्र का नाम।

दानवेय—[दनु–ऊढ + ढक्–एय] दे० 'दानव'।

दान्त—(वि०) [√दम्+क्त] दमन किया हुआ, वश में किया हुआ। पालतू। त्यक्त। उदार। (पुं०) पालतू बैल। दाता। दमनक वृक्ष।

दान्ति—(स्त्री०) [√दम्+क्तिन्] आत्म संयम। वश में करना।

दान्तिक—(वि०) [दन्त+ठञ्–इक] हाथी दांत का बना हुआ।

दापित—(वि०) [√दा+णिच्+क्त] दिलाया हुआ। जुर्माना किया हुआ। निब-टाया हुआ। फैसला किया हुआ।

दामन्—(स्त्री०, न०) [√दो+मनिन्] रज्जु, रस्सी। कमर-पेटी, कमरबंद। (विद्युत्) रेखा, धारी। बड़ी पट्टी का बंधन।—**अञ्चल** (**दामाञ्चल**),—**अञ्जन** (**दामा-ञ्जन**)–(न०) घोड़े की पिछाड़ी बांधने की रस्सी।—**उदर** (**दामोदर**)–(पुं०) श्रीकृष्ण।

दामनी—(स्त्री०) [दामन्+अण्–ङीप्] वह लंबी रस्सी जिसमें छोटी-छोटी रस्सियाँ बाँध कर बछड़े या पशु बाँधे जाते हैं।

दामिनी—(स्त्री०) [दामन्+इनि–ङीप्] बिजली। स्त्रियों का एक सिर का गहना।

दाम्पत्य—(न०) [दम्पती+यक्] पति-पत्नी का संबंध। दम्पती संबंधी कृत्य।

दाम्भिक—(वि०) [स्त्री०—**दाम्भिकी**] [दम्भ+ठक्] धोखेबाज, छलिया, कपटी। ढोंगी।

दाय—(पुं०) [√दा वा √दै वा √दो+घञ्, युक्] दान। भेंट, नजर। यौतुक, दहेज। हिस्सा, भाग। वह पैतृक या सम्बन्धी का धन जिसका उत्तराधिकारियों में विभाग हो सके। हानि, नाश। दुर्भाग्य। जगह।—**अपवर्तन** (**दायापवर्तन**) –(न०) पैतृक सम्पत्ति का अपहरण या जब्ती।—**अर्ह** (**दायार्ह**)–(वि०) पैतृक सम्पत्ति पाने का दावा पेश करने वाला।—**आद** (**दायाद**) –(पुं०) उत्तराधिकारी। पुत्र। भाईबन्धु। दूर का नातेदार। पावनादार।—**आदा** (**दायादा**),—**आदी** (**दायादी**)– (स्त्री०) उत्तराधिकारिणी। कन्या, पुत्री।—**आद्य** (**दायाद्य**)–(न०) [दायाद+ष्यञ्] वह संपत्ति जिस पर सपिंड कुटुम्बियों का अधिकार पहुँचे, दाय। उत्तराधिकारी होने की अवस्था।—**काल**–(पुं०) पैतृक सम्पत्ति के बँटवारे का समय।—**बन्धु**–पैतृक सम्पत्ति का भागीदार। भाई।—**भाग**–(पुं०) उत्तरा-धिकारियों में सम्पत्ति का बँटवारा।

दायक—(वि०) [स्त्री०—**दायिका**] [√दा+ण्वुल्, युक्] देने वाला।

दार—(पुं०) [√दृ+घञ्] चीरना, विदा-रण। दरार। छिद्र। (बहु०) [दारयति भ्रातॄन्, √दृ+णिच्+अच्] पत्नी।—**अधीन** (**दाराधीन**)–(वि०) स्त्री पर अवल-म्बित।—**उपसंग्रह** (**दारोपसंग्रह**),—**ग्रह** –(पुं०), —**ग्रहण**–(न०), —**परिग्रह**– (पुं०)–विवाह, शादी।—**कर्मन्**–(न०) विवाह।

दारक—(वि०) [स्त्री०—**दारिका**] [√दृ+णिच्+ण्वुल्] फाड़ने वाला, चीरने

वाला। (पुं०) पुत्र। बच्चा, शिशु। कोई भी जानवर का बच्चा। ग्राम-शूकर।

दारण—(न०) [√दॄ+णिच्+ल्युट्] चीरना, फाड़ना। निर्मली। वह शस्त्र आदि जिससे कुछ चीरा जाय। व्रणस्फोटक औषध-विशेष।

दारद—(पुं०) [दरद+अण्] एक प्रकार का विष जो दरद देश में होता है। पारद, पारा। समुद्र। (पुं०, न०) ईंगुर।

दारिका—(स्त्री०) [दारक+टाप्, अत इत्वम्] लड़की। पुत्री; 'दारिका हृदयदारिका पितुः'। वेश्या।

दारित—(वि०) [√दॄ+णिच्+क्त] चीरा हुआ, विदीर्ण किया हुआ।

दारिद्र्य—(न०) [दरिद्र+ष्यञ्] निर्धनता, गरीबी।

दारी—(स्त्री०) [√दॄ+णिच्+इन्—ङीप्] दरार। एक क्षुद्र रोग, बिवाई।

दारु—(वि०) [√दा वा√दो +रु] दानशील। चटपट टूट या फूट जाने वाला। (पुं०) उदार व्यक्ति। [√दॄ+उण्] शिल्पी, बढ़ई, कारीगर। (न०) काठ। कुन्दा। चटखनी। देवदारु वृक्ष। कच्चा लोहा। पीतल। **—अण्ड (दार्वण्ड)**-(पुं०) मोर, मयूर। **—आघाट (दार्वाघाट)**-(पुं०) कठफोड़वा। **—गर्भा**-(स्त्री०) कठपुतली। **—ज**-(पुं०) ढोल विशेष। **—पात्र**-(न०) काठ का पात्र। **—पुत्रिका, —पुत्री**-(स्त्री०) काठ की गुड़िया। **—मुख्याह्वया, —मुख्याह्वा**-(स्त्री०) गोह। **—यंत्र**-(न०) कठपुतलियाँ जो तार के बल नचायी जाती हैं। काठ की कोई भी कल। **—वधू**-(पुं०) कठपुतली या काठ की गुड़िया। **—सार**-(पुं०) चन्दन। **—हस्तक**-(पुं०) काठ का चमचा।

दारुक—(पुं०) [दारु+कन्] देवदारु वृक्ष। कृष्ण के सारथी का नाम; 'उत्कन्धरं दारुक इत्युवाच' शि० ४.१८।

दारुका—(स्त्री०) [दारु √ कै+क—टाप् काठ की पुतली। काठ की बनी किसी की शक्ल।

दारुण—(वि०) [√दॄ+णिच्+उनन्] कड़ा। कठोर, निष्ठुर। भयानक। भारी। तीक्ष्ण। दिल दहलाने वाला। (पुं०) भयानक रस। चित्रक। विष्णु। शिव। राक्षस। एक नरक।

दार्ढ्य—(न०) [दृढ+ष्यञ्] सख्ती, दृढ़ता। विश्वास-जनक प्रमाण।

दार्दुर—(न०, पुं०) [दर्दुर+अ] शंख (दक्षिणावर्ती)। (न०) जल। लाख, लाक्षा। (वि०) [दर्दुर+अण्] मेढ़क संबंधी।

दार्भ—(वि०) [स्त्री०—**दार्भी**][दर्भ+अण्] कुश का बना हुआ।

दार्व—(वि०) [स्त्री०—**दार्वी**] [दारु+अण्] लकड़ी का, काठ का।

दार्वट—(न०) [दारु इव निश्चलतया निरूपणीयविषयनिश्चयार्थम् अटन्त्यत्र, दारु√अट्+क] मंत्रणा करने का गुप्त स्थान। मंत्रणा-गृह।

दार्शनिक—(पुं०) [दर्शन+ठञ्—इक] दर्शन शास्त्रों से सुपरिचित।

दार्षद—(वि०) [स्त्री०—**दार्षदी**] [दृषद्+अण्] पत्थर का। खनिज।

दार्ष्टान्त—(वि०) [स्त्री०—**दार्ष्टान्ती**] [दृष्टान्त+अण्] दृष्टान्त देकर समझाया हुआ।

दाल्मि—(पुं०) [दालयति असुरान्, √दल्+णिच्+मि] इन्द्र का नाम।

दाव—(पुं०) [दुनोति उपतापयति, √दु+ण] वन, जंगल। वन में लगने वाली अग्नि। [√दु+घञ्] दाह, जलन। **—अग्नि (दावाग्नि), —अनल (दावानल)—दहन**-(पुं०) वन की आग। जो बाँस आदि की रगड़ खाने से स्वतः लग जाती है।

दाश—(पुं०) [दशति हिनस्ति मत्स्यान्, √दंश्+ट, नस्य आत्वम्] धीवर, मछुआ।

भृत्य, चाकर ।—ग्राम-(पुं०) ग्राम, जिसमें अधिकांश मछुए रहते हों ।—नन्दिनी-(स्त्री०) सत्यवती, जो व्यास की माता थी ।

दाशरथ, दाशरथि—(पुं०) [दशरथ+अण्] [दशरथ+इञ्] दशरथ का पुत्र, साधारणतः श्री राम तथा उनके तीनों भाइयों का नाम, किन्तु विशेषतः श्रीरामचन्द्र का नाम ।

दाशार्ह—(पुं०) [दशार्ह+अण्] दशार्ह के वंशज अर्थात् यादव गण ।

दाशेर—(पुं०) [दाशी+ढ्रक्] मछुए का पुत्र । मछुआ । ऊँट ।

दाशेरक—(पुं०) [दाशेरप्रधानः देशः, संज्ञायां कन्] मालवा प्रदेश । मालवा प्रदेश के शासक और अधिवासी ।

√दास्—भ्वा० उभ० सक० देना । दासति—ते, दासिष्यति—ते, अदासीत्—अदासिष्ट ।

दास—(पुं० [√दास्+अच्] भृत्य, नौकर । खरीदा हुआ नौकर, गुलाम । मछुवा । शूद्र । शूद्र के नाम के पीछे लगाया जाने वाला शब्द विशेष ।—**अनुदास** (**दासानुदास**)-(पुं०) गुलाम का गुलाम । (ला०) अत्यंत विनम्र ।—**जन**-(पुं०) सेवक या दास ।

दासी—(स्त्री०) [दास+ङीप्]स्त्री गुलाम । चाकरनी । मछुए की पत्नी । शूद्र की पत्नी । धीवरी । वेश्या ।—**पुत्र**,—**सुत**-(पुं०) दासी का पुत्र या बेटा ।—**सभ**-(न०) दासियों का समूह ।

दासेय—(पुं०) [दासी+ढक्—एय] दासी का पुत्र । दास । धीवर, मछुवा ।

दासेर, दासेरक—(पुं०) [दासी+ढ्रक्] [दासेर+कन्] दासी का पुत्र । शूद्र । मछुआ । ऊँट ।

दास्य—(न०) [दास+ष्यञ्] गुलामी । चाकरी, नौकरी; 'पतिकुले तव दास्यमपि क्षमं' श० ४.२७ । बन्धन ।

दाह—(पुं०) [√दह्+घञ्] जलाना । लालिमा (जैसे-आकाश की) । जलन । ज्वराश ।—**अगुरु** (**दाहागुरु**)-अगर जिसे सुगंध के लिये जलाते हैं ।—**काष्ठ**-(न०) अगर ।—**आत्मक** (**दाहात्मक**)-(वि०) जल उठने वाला, भभकने वाला ।—**ज्वर**-(पुं०) ज्वर जिसके चढ़ने पर शरीर में जलन सी उत्पन्न हो जाय ।—**सर**-(पुं०)—**सरस्**,—**स्थल**-(न०) श्मशान, मरघट ।—**हर**-(वि०) गर्मी नष्ट करने वाला । (न०) उशीर, खस ।

दाहक—(वि०) [स्त्री०—**दाहिका**] [√दह्+ण्वुल्] जलाने वाला । झुलसाने वाला । आग लगाने वाला । दागने वाला, जुल देने वाला । (पुं०) अग्नि । चित्रक वृक्ष, चीता । लाल चीता ।

दाह्य—(वि०) [√दह्+ण्यत्] जलाने योग्य । भभक उठने योग्य ।

दिक्क—(पुं०) [दिक् कायते, दिक्√कै+क] करभ, जवान हाथी, जिसकी उम्र २० वर्ष की हो ।

दिग्ध—(वि०) [√दिह्+क्त] लिप्त, लिपा हुआ । गंदा किया हुआ । विषाक्त, विष में बुझाया हुआ । (पुं०) तेल । मलहम । उबटन । अग्नि । आग में बुझा तीर । कहानी (सच्ची या कल्पित) ।

दिण्डि, दिण्डिर—(पुं०) [=तिण्डि, पृषो० साधुः] [=डिण्डिर, पृषो० साधुः] एक प्रकार का बाजा ।

दित—(वि०) [√दो+क्त] कटा हुआ, खंडित । विभक्त ।

दिति—(स्त्री०) [√दो+क्तिन्] किसी वस्तु के दो या अधिक टुकड़े करने की क्रिया, खंडन । [√दो+क्तिन्] दक्ष की एक कन्या का नाम जो कश्यप को ब्याही थी और जो दैत्यों की माता थी ।—**ज**,—**तनय**-(पुं०) राक्षस । दैत्य ।

दित्य—(पुं०) [दिति+यत्] दैत्य ।

दित्सा—(स्त्री०) [दातुम् इच्छा, √दा+सन्+अ+टाप्] देने की इच्छा ।

दिदृक्षा—(स्त्री०) [द्रष्टुम् इच्छा, √दृश्+सन्+अ+टाप्] देखने की इच्छा; 'एकत्र सौन्दर्यदिदृक्षयेव' कु० १.४६ ।

दिदृक्षु—(वि०) [द्रष्टुम् इच्छुः, √दृश्+सन्+उ] देखने के लिये इच्छुक ।

दिधि—(पुं०) [√धा+कि] धैर्य । धारण ।

दिधिषु—(पुं०) [दिधिं धैर्यं स्यति, √सो+कु, दिधिषुम् आत्मनः इच्छति, दिधिषु+क्यच्+क्विप्] वह पुरुष जिसके साथ किसी स्त्री का दूसरा विवाह हुआ हो । गर्भाधान कराने वाला मनुष्य ।

दिधिषू, दिधीषू—(स्त्री०) [दिधि √सी+कू, पृषो० साधुः] दो बार ब्याही हुई स्त्री । वह अविवाहिता स्त्री जिसकी छोटी बहिन का विवाह हो गया हो ।—**पति**-(पुं०) वह मनुष्य जिसने अपने भाई की विधवा स्त्री से विवाह किया हो ।

दिधीर्षा-(स्त्री०) [√धृ+सन्+अ+टाप्] धारण करने की इच्छा । सहायता करने की अभिलाषा ।

दिन—(न०) [द्यति खण्डयति महाकालम्, √दो+इनच्] वह समय जिसका आरम्भ सूर्योदय और अंत सूर्यास्त से होता है । सूर्योदय से सूर्योदय तक का चौबीस घंटे का समय । समय, काल । मिति, तिथि, तारीख । नियत समय । कालविशेष ।—**अण्ड** (दिनाण्ड)-(न०) अन्धकार ।—**अत्यय** (दिनात्यय),—**अन्त** (दिनान्त),—**अवसान** (दिनावसान)-(न०) सन्ध्या, सूर्यास्त का समय ।—**अधीश**(दिनाधीश),—**ईश्वर**(दिनेश्वर)-(पुं०)सूर्य ।०**आत्मज**(दिनेश्वरात्मज)-(पुं०)शनिग्रह । सुग्रीव ।—**कर**,—**कर्तृ**, —**कृत्**-(पुं०) सूर्य ।—**केशर**-(पुं०) अन्धकार ।—**क्षय**-(पुं०) तिथि क्षय । सन्ध्याकाल ।—**चर्या**-(स्त्री०) दिन भर का कार्य । नित्य का धंधा । नित्य का कार्यक्रम ।—**ज्योतिस्**—(न०) धूप ।—**दुःखित**-(पुं०) चक्रवाक, चकवा पक्षी ।—**प**,—**पति**,—**बन्धु**,—**मणि**,—**मयूख**- (पुं०) ,—**रत्न**-(न०) सूर्य ।—**मुख**-(न०) प्रातःकाल ।—**मूर्द्धन्**—(पुं०)उदयाचल पर्वत ।—**यौवन**-(न०) दोपहर, मध्याह्न काल ।

दिनिका—(स्त्री०) [दिन+ठन्—इक—टाप्] एक दिन की मजदूरी ।

दिन्दिक—(पुं०) खेलने का गेंद ।

दिलीप—(पुं०) सूर्यवंशी एक राजा जो अंशुमान् के पुत्र और भगीरथ के पिता थे । किन्तु कालिदास ने इनको रघु का पिता बतलाया है ।

√दिव्—दि० पर० अक०, सक० चमकना । फेंकना । पटकना । जुआ खेलना । क्रीड़ा करना । हँसी मजाक करना । दांव लगाना । बेचना । फिजूल खर्ची करना, उड़ाना । प्रशंसा करना । प्रसन्न होना । पागल होना । नशे में चूर होना । सोना । अभिलाषा करना । विलाप करना । तंग करना ।दीव्यति, देविष्यति, अदेवीत् ।

दिव्—(स्त्री०) [कर्ता एकवचन—द्यौः] [√दिव्+डिव्] स्वर्ग । आकाश । दिवस । प्रकाश ।—**ओकस्** (**दिवोकस्**)-(पुं०) [द्यौः स्वर्गः आकाशो वा ओको यस्य, ब० स०] देवता । चातक पक्षी ।—**पति** (**दिवस्पति**)-(पुं०) [दिवः पतिः, अलुक् स०] तेरहवें मन्वन्तर के इन्द्र का नाम; 'अलंघनीया दिवस्पतेराज्ञा' श० ६ ।—**पृथिवी** (**दिवस्पृथिवी**)-(स्त्री०) [द्यौश्च पृथिवी च, दिवो दिवसादेशः] स्वर्ग और भूमि ।—**ज** (**दिविज**)-(पुं०) [दिवि जायते, √जन्+ड, अलुक् स०] देवता । केसरयुक्त अगरचंदन ।—**स्थ** (**दिविष्ठ**)-(वि०) [दिवि√स्था+क, अलुक् स०] देवता ।

दिव—(न०) [√दिव्+क] स्वर्ग। आकाश। दिवस। जंगल।—**ओकस्** (**दिवौकस्**)–(पुं०) [दिवं स्वर्गः आकाशो वा ओको यस्य, ब० स०] देवता; 'पथि व्यजृम्भन्त दिवौकसामपि' र० ३.१९। चातक पक्षी।

दिवस—(न०, पुं०) [दीव्यत्यत्र, √दिव् +असच्, कित्त्व] दिन, वार, रोज।—**ईश्वर** (**दिवसेश्वर**),—**कर**–(पुं०) सूर्य।—**मुख** (न०) प्रातःकाल।—**विगम**–(पुं०) सन्ध्याकाल, सूर्यास्तकाल।

दिवा—(अव्य०) [√दिव्+का] दिनके समय में।—**अटन** (**दिवाटन**)–(पुं०) काक।—**अन्ध** (**दिवान्ध**)–(पुं०) उल्लू।—**अन्धकी** (**दिवान्धकी**),—**आन्धिका** (**दिवान्धिका**)–(स्त्री०) छछूंदर।—**कर**–(पुं०) सूर्य। काक। सूरजमुखी फूल।—**कीर्ति**–(पुं०) चाण्डाल, नीच जाति का आदमी। नाई। उल्लू।—**निश**–(अव्य०) दिन रात।—**प्रदीप**–(पुं०) दिन का दीपक। दुर्बोध मनुष्य।—**भीत**—**भीति**,–(पुं०) उल्लू। चोर।—**मध्य**–(न०) दोपहर।—**रात्र**—(अव्य०) दिन रात।—**वसु**–(पुं०) सूर्य।—**शय**–(वि०) दिन में सोने वाला।—**स्वप्न**,—**स्वाप**–(पुं०) दिन में सोना।

दिवातन—(वि०) [स्त्री०—**दिवातनी**] [दिवा+ट्युल्, तुडागम] दिन का या दिन सम्बन्धी।

दिवि—(स्त्री०) [√दिव्+इन्, कित्त्व] चाष पक्षी, नीलकंठ।

दिव्य—(वि०) [दिव्+यत्] दैवी, स्वर्गीय। अलौकिक। चमकीला, दमकदार। मनोहर, सुन्दर। (न०) दैव दिन। एक परीक्षा जिससे प्राचीन काल में अपराधी की सदोषता या निर्दोषता का निर्णय करते थे। वह स्नान जो धूप में बरसते हुए पानी से किया जाय। लौंग। हरिचंदन। (पुं०) अलौकिक पुरुष। तत्त्ववेत्ता। यव, जवा। धूप। लोकोत्तर गुणों से युक्त नायक।—**अंशु** (**दिव्यांशु**)–(पुं०) सूर्य।—**अङ्गना** (**दिव्याङ्गना**)—नारी,—**स्त्री**–(स्त्री०)—अप्सरा। देवबधू।—**अदिव्य** (**दिव्यादिव्य**)–(वि०) लौकिक तथा अलौकिक (वीर) जैसे अर्जुन।—**उदक** (**दिव्योदक**)–(न०) वृष्टि का जल।—**कारिन्**—(वि०) शपथ खाने वाला, सत्या-सत्य की परीक्षा देने वाला।—**गायन**–(पुं०) गन्धर्व।—**चक्षुस्**–(वि०) दिव्य-दृष्टि वाला। अंधा। (पुं०) वानर। (न०) अलौकिक दृष्टि।—**ज्ञान**–(न०) अलौकिक ज्ञान, नैसर्गिक ज्ञान।—**दृश्**–(पुं०) ज्योतिषी, दैवज्ञ।—**प्रश्न**–(पुं०) शकुन विचार।—**रत्न**–(न०) चिन्तामणि।—**रथ**–(पुं०) देवविमान जो आकाश में चलता है।—**रस**–(पुं०) पारद, पारा।—**वस्त्र**–(वि०) जिसने सुंदर वस्त्र धारण किया हो। नैसर्गिक परिच्छद-सम्पन्न। (पुं०) धूप, घाम। सूरज-मुखी फूल।—**सरित्**–(स्त्री०) आकाशगङ्गा।—**सार**–(पुं०) साल वृक्ष।

दिव्या—(स्त्री०) [दिव्य+टाप्] लोकोत्तर गुणों से युक्त नायिका। हरीतकी। वन्ध्या कर्कोटिका, बाँझ ककोड़ा। शतावरी। महामेदा। ब्राह्मी। श्वेत दूर्वा। बड़ा जीरा।

√दिश्—तु० उभ० सक० बतलाना। देना। अदा करना। अङ्गीकार करना। आज्ञा देना, हुक्म देना। अनुमति देना, परवानगी देना। दिशति-ते, देक्ष्यति-ते, अदिक्षत्-त।

दिश्—(स्त्री०) [कर्त्ता एकवचन **दिक्**, **दिग्**] [दिशति अवकाशं ददाति, √दिश्+क्विन्] दिशा; 'दिशि दिशि किरति सजलकणजालं' गीत० ४। निर्देश, सङ्केत। प्रान्तस्थ प्रदेश। विदेशी प्रवास। दृष्टिकोण। आज्ञा, आदेश। दस की संख्या। पक्ष या दल।—**अन्त** (**दिगन्त**)–(पुं०) दूरवर्ती स्थान।—**अन्तर** (**दिगन्तर**)–(न०) दूसरी ओर

मध्यवर्ती स्थान, अन्तरिक्ष । सुदूरवर्ती स्थान विशेष ।—**अम्बर** (**दिगम्बर**)-(वि०) नितांत नंगा । (पुं०) नागा, जैन या बौद्ध धर्म का भिक्षुक, सन्यासी । शिव । अन्धकार ।—**ईश (दिगीश)**,—**ईश्वर** (**दिगीश्वर**)-(पुं०) दिक्पाल ।—**कर** (**दिक्कर**)-(पुं०) युवक, युवा-पुरुष । शिव जी ।—**करी** (**दिक्करी**),—**कारिका** (**दिक्कारिका**)-युवती लड़की या स्त्री ।—**करिन्** (**दिक्करिन्**),—**गज** (**दिग्गज**),—**दन्तिन्** (**दिग्दन्तिन्**),—**वारण** (**दिग्वारण**)-(पुं०) ऐरावत आदि आठ दिव्य हस्ती, दिग्गज । —**चक्र** (**दिक्चक्र**) (न०)-आकाश मण्डल । समूचा संसार ।—**जय** (**दिग्जय**),—**विजय** (**दिग्विजय**)-(पुं०) संसार की विजय ।—**दर्शन** (**दिग्दर्शन**)-(न०) केवल दिशा-निर्देश ।—**नाग** (**दिङ्नाग**)-दिग्गज । कालिदास का समकालीन एक कवि ।—**मुख** (**दिङ्मुख**)-(न०) आकाश का कोई स्थान या भाग ।—**मोह** (**दिङ्मोह**)-(पुं०) दिशाभ्रम ।—**वस्त्र** (**दिग्वस्त्र**)-(वि०) नितांत नंगा । (पुं०) दिगम्बरी साधु । शिव जी ।—**विभावित** (**दिग्विभावित**)-(वि०) जगत्प्रसिद्ध ।

दिशा—(स्त्री०) [√दिश्+अङ्–टाप्] ओर, तरफ । दस की संख्या ।—**गज**-(पुं०) दिग्गज ।—**पाल**-(पुं०) दस दिशाओं के रक्षक—इंद्र, अग्नि, यम आदि दस देवता ।

दिष्ट—(वि०) [√दिश्+क्त] दिखलाया हुआ, निर्दिष्ट । वर्णित । निश्चित । आदिष्ट । (न०) अंश । प्रारब्ध । आज्ञा । निर्देश । उद्देश्य ।—**अन्त** (**दिष्टान्त**)-(पुं०) मृत्यु; 'दिष्टान्तमाप्स्यति भवानपि पुत्रशोकात्' र० ९.७९ ।

दिष्टि—(स्त्री०) [√दिश्+क्तिन् क्तिच् वा] अंश । निर्देश । आदेश । नियम । भाग्य । हर्ष । शुभ कार्य ।

दिष्ट्या—(अव्य०) [√दिश्+क्विप्, दिशं देशनं स्त्यायति, √स्त्यै+क्विप्, नि० साधुः] सौभाग्य से, भाग्यवश ।

दिष्णु—(वि०) [√दा+गिष्णु] देने वाला, दाता ।

√**दिह्**—अ० उभ० सक० लेप करना । फैलाना । भ्रष्ट करना, अपवित्र करना । देग्धि—दिग्धे, धेक्ष्यति—ते, अधिक्षत्—त अदिग्ध ।

√**दी**—दि० आत्म० अक० नष्ट होना । मर जाना । दीयते, दास्यते, अदास्त ।

√**दीक्ष्**—भ्वा० आत्म० सक०, अक० यज्ञ करने की योग्यता प्रदान करना । आत्मसमर्पण करना । शिष्य बनाना । उपनयन संस्कार करना । यज्ञ करना । आत्मसंयम का अभ्यास करना । दीक्षते, दीक्षिष्यते, अदीक्षिष्ट ।

दीक्षक—(पुं०) [√दीक्ष्+ण्वुल्] दीक्षा देने वाला गुरु ।

दीक्षण—(न०) [√दीक्ष्+ल्युट्] दीक्षा देने की क्रिया । यज्ञ समाप्त होने पर उसकी त्रुटियों की शान्ति के लिये किया जाने वाला यजन ।

दीक्षा—(स्त्री०) [√दीक्ष्+अ–टाप्] यज्ञ कर्म, सोमयागादि का संकल्पपूर्वक अनुष्ठान । किसी देवता के मंत्र का उपदेश । उपनयन संस्कार । किसी उद्देश्य की सिद्धि के लिये आत्मसमर्पण करना ।

दीक्षित—(वि०) [√दीक्ष्+क्त] दीक्षा प्राप्त । मंत्रोपदिष्ट । यज्ञ करने के लिये तैयार । व्रत धारण किये हुए । (पुं०) शिष्य । ज्योतिष्टोम आदि बड़े-बड़े यज्ञ करने वालों की सन्तान ।

दीदिवि—(वि०) [√दिव्+क्विन्, द्वित्व, दीर्घ] भात । स्वर्ग । बृहस्पति ।

दीधिति—(स्त्री०) [√दीधी+क्तिन्, इट्, ईकारलोप] प्रकाश की किरण । चमक । कान्ति । शारीरिक स्फूर्ति ।

दीधितिमत्—(वि०) [दीधिति+मतुप्] चमकीला । (पुं०) सूर्य ।

√दीधी—अ० आत्म० अक० चमकना । प्रकट होना । दीधीते, दीधिष्यते, अदीधिष्ट ।

दीन—(वि०) [√दी+क्त, तस्य नः] गरीब, निर्धन, निष्किञ्चन । सन्तप्त, पीड़ित । दुःखी । उदास । भीरु, डरपोक । नीचा । दयार्द्र, करुण । (न०) तगरपुष्प ।—**दयालु**,—**वत्सल**–(वि०) दीनों पर कृपा करने वाला । —**बन्धु**–(पुं०) दीनों का मित्र ।

दीनार—(पुं०) [√दी+आरक्, नुट्] स्वर्णमुद्रा, अशरफी; 'जितश्चासौ मया षोडश सहस्राणि दीनाराणां' दश० । एक प्रकार का प्राचीन कालीन सोने का सिक्का । सुवर्ण भूषण ।

√दीप्—दि० आत्म० अक० चमकना । जलना । भभकना । क्रोधाविष्ट होना । ज्योतिर्मय होना । दीप्यते, दीपिष्यते, अदीपि—अदीपिष्ट ।

दीप—(पुं०) [√दीप्+क] दीया, चिराग । —**अन्विता** (दीपान्विता)–(स्त्री०) कार्तिक मास की अमावस्या जिस दिन दिवाली पड़ती है ।—**आराधन** (दीपाराधन)–(न०) आरती करना ।—**आलि** (दीपालि),—**आली** (दीपाली),—**अवली** (दीपावली) –(स्त्री०),— **उत्सव**(दीपोत्सव)–(पुं०) दीपकों की माला या पंक्ति, दिवाली का उत्सव जो कार्तिकी अमावस्या को किया जाता है ।—**कलिका**–(स्त्री०) दीपक का फूल, चिराग का गुल ।—**किट्ट**–(न०) काजल । —**कूपी**,—**वर्ती**–(स्त्री०) दीपक की बत्ती, पलीता ।—**पादप**,—**वृक्ष**–(पुं०) दीवट, झाड़, शमादान ।—**पुष्प**–(पुं०) चम्पक वृक्ष ।—**भाजन**–(न०) दीये का पात्र ।—**माला**–(स्त्री०) जलते हुए दीपकों की पंक्ति या श्रेणी ।—**शत्रु**–(पुं०) पतिंगा, पंखी । —**शिखा**–(स्त्री०) दीपक की लौ ।—**शृंखला**–(स्त्री०) दीपकों की पंक्ति, रोशनी ।

दीपक—(वि०) [स्त्री०—दीपिका] [√दीप् +णिच्+ण्वुल्] दीप्त करने वाला । आलोकित करने वाला । अग्निवर्धक । उत्तेजक । (न०) अर्थालंकार का एक भेद, जहाँ प्रस्तुत और अप्रस्तुत का एक ही धर्म कहा जाता है अथवा बहुत सी क्रियाओं का एक ही कारक होता है वहाँ दीपकालंकार होता है । केसर । अजवायन । (पुं०) कामदेव । बाज पक्षी । [√दीप्+ण्वुल्] दीया, चिराग ।

दीपन—(वि०) [√दीप्+णिच्+ल्यु] जलाने वाला । प्रकाश करने वाला । पाचनशक्ति को बढ़ाने वाला । स्फूर्ति उत्पन्न करने वाला । (पुं०) तगर की जड़ । केसर । मयूरशिखा वृक्ष । कासमर्द, कसौंदा । प्याज । प्राह्य मंत्र का एक संस्कार । (न०) [√दीप् +णिच्+ल्युट्] दीप्त करना । प्रज्वलित करना । आलोकित करना । अग्निवर्धन । उत्तेजित करना ।

दीपिका—(स्त्री०) [√दीप्+णिच्+ण्वुल् —टाप्, इत्व] एक रागिनी । चाँदनी । [दीप+कन्—टाप्, इत्व] छोटा दीपक ।

दीपित—(वि०) [√दीप् + णिच्+क्त] जलाया हुआ । प्रभासित । उत्तेजित ।

दीप्त—(वि०) [√दीप्+क्त] जला हुआ । धधकता हुआ । चमकीला । तपा हुआ । भड़का हुआ । (न०) सोना । हींग । नींबू । (पुं०) सिंह ।—**अंशु** (दीप्तांशु)–(पुं०) सूर्य । —**अक्ष** (दीप्ताक्ष)–(पुं०) बिलाव ।—**अग्नि** (दीप्ताग्नि)–(वि०) जिसकी जठराग्नि प्रज्वलित हो । (पुं०) धधकती हुई आग । अगस्त्य जी का नाम ।—**अङ्ग** (दीप्ताङ्ग)–(पुं०) मयूर, मोर ।—**आत्मन्** (दीप्तात्मन्) –(वि०) कोपन स्वभाव का ।—**उपल** (दीप्तोपल)–(पुं०) सूर्यकान्त मणि ।—

किरण–(पुं०) सूर्य ।—कीर्ति–(पुं०) कार्तिकेय का नाम ।—जिह्वा–(स्त्री०) लोमड़ी (यह प्रायः किसी बदमिजाज या कलहप्रिया स्त्री के लिये आलङ्कारिक रूप से प्रयुक्त होता है)।—तपस्–(वि०) तपस्या में निरत ।—पिङ्गल–(पुं०) सिंह ।—रस–(पुं०) केंचुआ ।—लोचन–(पुं०) बिलाव ।—लोह–(न०) पीतल । काँसा ।

दीप्ति—(स्त्री०) [√दीप्+क्तिन्] चमक । आभा, कान्ति । अत्यन्त मनोहरता । लाख । पीतल ।

दीप्र—(वि०) [√दीप्+र] दीप्तियुक्त । चमकीला । (पुं०) अग्नि ।

दीप्य—(वि०) [√दीप् + ण्यत्] जो जलाने योग्य हो । जो जठराग्नि को तीव्र करे । (पुं०) अजवायन । जीरा । मयूरशिखा । रुद्रजटा ।

दीप्या—(स्त्री०) [दीप्य+टाप्] पिंडखजूर ।

दीर्घ—(वि०) [तुलना करने में **द्राघीयस्** —**द्राघिष्ठ**][√दृ+घञ्(बा०)] लंबा (समय और स्थान सम्बन्धी) बहुत दूर तक पहुँचने या व्याप्त होने वाला । दीर्घकालीन, बहुत समय का । गम्भीर । गुरु (मात्रा) । (पुं०) ऊँट । दीर्घ स्वर (आ, ई, आदि) । पाँचवीं, छठी, सातवीं और नवीं राशियाँ । एक तरह का सरपत ।—**अध्वग** (**दीर्घाध्वग**)–(पुं०) हरकारा, कासिद ।—**अहन्** (**दीर्घाहन्**)–(पुं०) ग्रीष्मऋतु ।—**आकार** (**दीर्घाकार**)–(वि०) लंबा अधिक, चौड़ा कम ।—**आयु** (**दीर्घायु**),—**आयुस्** (**दीर्घायुस्**) (वि०) दीर्घजीवी, लंबी आयु वाला । (पुं०) कौआ । सेमर का पेड़ । मार्कण्डेय ऋषि ।—**आयुध** (**दीर्घायुध**)–(पुं०) भाला । बर्छी आदि कोई भी लंबा हथियार । शूकर ।—**आस्य** (**दीर्घास्य**)–(पुं०) हाथी ।—**कण्ठ**, —**कण्ठक**,—**कन्धर** –(पुं०) सारस पक्षी ।—**काय**–(वि०) कद में लंबा ।—**केश**–(पुं०) रीछ ।—**गति**,—**ग्रीव**, —**घाटिक**, —**जंघ**–(पुं०) ऊँट ।—**जिह्व**–(पुं०) सर्प ।—**तपस्** –(पुं०) अहल्या के पति गौतम का नाम ।—**तमस्**–(पुं०) उतथ्य के पुत्र एक ऋषि जो गुरु के शाप से अंधे हो गये थे ।—**तरु**, —**द्रुम**–(पुं०) ताड़ वृक्ष । —**तुण्डी**–(स्त्री०) छछूंदर ।—**दर्शिन्**–(वि०) दूर देखने वाला । आगापीछा सोचने वाला, विवेकी, समझदार । (पुं०) रीछ । उल्लू । —**नाद**–(वि०) निरन्तर अति कोलाहल करने वाला । (पुं०) कुत्ता । मुर्गा । शंख ।—**निद्रा**–(स्त्री०) दीर्घकालीन नींद । मृत्यु । —**पत्र**–(पुं०) ताड़ का वृक्ष । —**पाद**–(पुं०) बगला । सारस ।—**पादप** (पुं०) नारियल का पेड़ । सुपाड़ी का पेड़ । ताड़ का पेड़ ।—**पृष्ठ**–(पुं०) सर्प ।—**बाला**–(स्त्री०) चमरी, सुरही गाय ।—**मारुत**—(पुं०) हाथी । —**रत**–(पुं०) कुत्ता ।—**रव**–(पुं०) शूकर । —**रसन**–(पुं०) सर्प ।—**रोमन्**– (पुं०) शूकर ।—**वक्त्र**–(पुं०) हाथी ।—**सक्थ**–(वि०) बड़ी-बड़ी जाँघों वाला ।—**सत्र**–(न०) दीर्घ-काल-व्यापी सोमयाग । (पुं०) ऐसा यज्ञ करने वाला ।—**सूत्र**,—**सूत्रिन्**–(वि०)—धीरे काम करने वाला, धीमा, सुस्त ।

दीर्घम्—(अव्य०) अर्से का । अर्से तक । गहराई से, गम्भीरता से । दूर । सुदूर ।

दीर्घिका—(स्त्री०) [दीर्घ+कन्–टाप्, इत्व] बावली, छोटा तालाब (जलाशयोत्सर्गतत्त्व के अनुसार दीर्घिका ३०० धनुष लंबी होती है) । जलाशय: 'शृङ्गाहतं क्रोशति दीर्घिकाणाम्' र० १६.१३ । एक प्रकार की बड़ी नाव ।

दीर्ण—(वि०) [√दृ+क्त] फटा हुआ, चिरा हुआ । भयभीत, डरा हुआ ।

√दु—स्वा० पर० सक० जलाना, भस्म कर

डालना। सताना। तंग करना। पीड़ित करना, दुःखी करना; 'तत्र विश्रान्त मुखं कर्तं दुनोति-माम्' र० ८.५५। दुनोति, दोष्यति, अदोषीत्।

√दुःख्—चु० पर० अक० दुःखी होना। दुःखयति—ते।

दुःख—(न०) [√दुःख+अच् वा घञ्] कष्ट, क्लेश, तकलीफ। संसार। व्याधि। (वि०) [दुःख+अच्] पीड़ाकारक। दुःखयुक्त। कठिन।—**अतीत** (**दुःखातीत**)—(वि०) दुःखों से मुक्त।—**अन्त** (**दुःखान्त**)—(पुं०) मोक्ष।—**कर**—(वि०) पीड़ादायी, कष्टकारक।—**ग्राम**—(पुं०) संसार। दुःखों का समूह।—**छिन्न**—(वि०) सख्त, कड़ा। पीड़ित। दुःखी।—**प्राय**,—**बहुल**—(वि०) दुःखों से परिपूर्ण।—**भाज्**—(वि०) दुःखी।—**लोक**—(पुं०) सांसारिक जीवन जो दुःखपूर्ण है।—**शील**—(वि०) जिसे दुःख के अनुभव का अभ्यास हो। कठिनता से काबू में किया जाने वाला, दुष्ट स्वभाव का।

दुःखित, दुःखिन्—(वि०) [स्त्री०—**दुःखिनी**] [दुःख+इतच्] [दुःख+इनि] जिसे दुःख या कष्ट हो, पीड़ित। बापुरा, अभागा।

दुकूल—(न०) [√दु+ऊलच्, कुक्] रेशमी वस्त्र; 'श्यामलमृदुलकलेवरमण्डनम-धिगतगौरदुकूलं' गीत० ११। सूक्ष्म वस्त्र। वस्त्र।

दुग्ध—(वि०) [√दुह्+क्त] दुहा हुआ, दूध निकाला हुआ। भरा हुआ, प्रपूर्ण। (न०) दूध। वृक्षों का दूध जैसा रस।—**अग्र** (**दुग्धाग्र**),—**तालीय**—(न०) मलाई।—**पाचन**—(न०) दुधैंडी जिसमें दूध गर्माया जाता हो।—**पोष्य**—(वि०) माता का दूध पीने वाला (बच्चा)।—**समुद्र**—(पुं०) क्षीरसागर।

दुघ—(वि०) [√दुह्+क] दुहने वाला। देने वाला।

दुघा—(स्त्री०) [दुघ+टाप्] दुधार गौ।

दुण्डुक—(वि०) [दुण्डुभ इव कायति, दुण्डुभ √कै+क, पृषो० भलोप] बेईमान। दुष्ट हृदय का। जालसाज।

दुण्डुभ—(पुं०) [द्रोवति मज्जति, द्रु+उभ, नुम् रलोप] एक तरह का निर्विष सर्प, डेड़हा साँप।

दुद्रुम—(पुं०) [दुर् दुष्टो द्रुमः, पृषो० रलोपः] हरा प्याज।

दुन्दम—(पुं०) [दुन्द इत्यव्यक्त मणति शब्दायते, दुन्द√मण्+ड] नगाड़ा।

दुन्दु—(पुं०) एक प्रकार का ढोल। कृष्ण के पिता वसुदेव का नाम।

दुन्दुभ—[दुन्दु√भण्+ड] दे० 'दुन्दुभि'।

दुन्दुभि—(पुं०, स्त्री०) [दुन्दु इत्यव्यक्तशब्देन भाति, √भा+कि] बड़ा ढोल, नगाड़ा। (पुं०) विष्णु। कृष्ण। विषविशेष। दैत्य जिसे बालि ने मारा था।—**स्वन**—(पुं०) सुश्रुत के अनुसार एक तरह की विषचिकित्सा।

दुर्—(अव्य०) [√दु+रुक्] एक उपसर्ग जो दुस् के बदले संज्ञापदों और क्रियापदों के पहले जोड़ा जाता है। इसका प्रयोग "बुरे" "कठोर" या "दुरूह" के अर्थ में किया जाता है।—**अक्ष** (**दुरक्ष**)—(वि०) कमजोर आँख वाला। बुरे नेत्रों वाला। (पुं०) कपट का पासा।—**अतिक्रम** (**दुरतिक्रम**)—(वि०) दुस्तर, जिसको लाँघना या पार करना कठिन हो। अजेय। अनिवार्य।—**अत्यय** (**दुरत्यय**)—(वि०) दे० '**दुरतिक्रम**'।—**अदृष्ट** (**दुर-दृष्ट**)—(न०) अभाग्य, बुरी किस्मत।—**अधिग** (**दुरधिग**),—**अधिगम** (**दुरधि-गम**)—(वि०) दुष्प्राप्य, जो कठिनाई से मिल सके। दुर्ज्ञेय जो कठिनाई से समझ में आ सके।—**अधिष्ठित** (**दुरधिष्ठित**)—(वि०) बुरी तरह किया हुआ, दुर्व्यवस्थित।—**अध्यय** (**दुरध्यय**)—(वि०) कठिनता से प्राप्त करने योग्य। अध्ययन करने के लिये अलसान

कठिन ।—**अध्यवसाय** (**दुरध्यवसाय**)-(पुं०) मूर्खता पूर्ण व्यवसाय या कार्य ।—**अध्व** (**दुरध्व**)-(पुं०) बुरा मार्ग ।—**अन्त** (**दुरन्त**)-(वि०) अनन्त, अन्तरहित । जिसकी समाप्ति पर पहुँचा ही न जा सके । परिणाम में दुःखदायी; 'अहो दुरन्ता बलवद्-विरोधिता' कि० १.२३ ।—**अन्वय** (**दुरन्वय**) -(वि०) कठिनाई से पीछे चलने योग्य । कठिनाई से प्राप्त करने या समझने योग्य । (पुं०) भ्रमपूर्ण परिणाम या फल ।—**अभि-मानिन्** (**दुरभिमानिन्**)-(वि०) अनुचित अभिमान करने वाला ।—**अवगम** (**दुरव-गम**)-(वि०) समझ में न आने योग्य ।—**अवग्रह** (**दुरवग्रह**)-(वि०) कठिनाई से वश में लाने योग्य ।—**अवस्थ** (**दुरवस्थ**)- (वि०) दुर्दशाग्रस्त ।—**अवस्था** (**दुरवस्था**)-(स्त्री०) दुर्दशा ।—**आकृति** (**दुराकृति**)-(वि०) बदसूरत, कुरूप ।—**आक्रम** (**दुराक्रम**)-(वि०) अजेय, न जीतने योग्य ।—**आक्रमण** (**दुराक्रमण**)-(पुं०) अनुचित चढ़ाई । दुरूह स्थान ।—**आगम** (**दुरागम**)-(पुं०) अनुचित या शास्त्र-विरुद्ध उपलब्धि ।—**आग्रह** (**दुराग्रह**)-(पुं०) मूर्खता-पूर्ण हठ, जिद ।—**आचर** (**दुराचर**)-(वि०) कठि-नाई से पूर्ण होने वाला ।—**आचार** (**दुरा-चार**)-(वि०) दुष्ट आचरण वाला, दुष्ट । (पुं०) कुत्सित पद्धति, दुष्टता ।—**आत्मन्** (**दुरात्मन्**)-(पुं०) दुष्टात्मा, पाजी, बद-माश ।—**आधर्ष** (**दुराधर्ष**)-(वि०) दुरतिक्रम, दुरूह । जिस पर आक्रमण न किया जा सके । क्रोधी ।—**आनम** (**दुरा-नम**)-(वि०) कठिनता से झुकाने या खींचने योग्य; 'स्वं विचिन्त्य च धनुर्दुरानमं' र० ११.३८ ।—**आप** (**दुराप**)-(वि०) कठि-नाई से प्राप्तव्य ।—**आराध्य** (**दुराराध्य**)-(वि०) कठिनाई से प्रसन्न होने वाला या मनाया जाने वाला ।—**आरोह** (**दुरारोह**)-(वि०) कठिनाई से चढ़ने योग्य । (पुं०) नारियल का पेड़ । ताड़ का वृक्ष । छुहारे का पेड़ ।—**आलाप** (**दुरालाप**)-(पुं०) आक्रोश, शाप । गाली-गलौज ।—**आलोक** (**दुरालोक**) -(वि०) कठिनाई से देखने या पहचानने योग्य । चकाचौंध वाला ।—**आवार** (**दुरा-वार**)-(वि०) कठिनाई से ढकने योग्य । कठिनाई से काबू में आने वाला ।—**आशय** (**दुराशय**)-(वि०) दुष्ट मन वाला, दुष्टात्मा, मलिनचित्त का ।—**आशा** (**दुराशा**)-(स्त्री०) बुरी या दुष्ट अभिलाषा । आशा जिसका पूरा होना कठिन हो ।—**आसद** (**दुरासद**)-(वि०) अजेय, जिस पर आक्र-मण न किया जा सके । कठिनाई से मिलने वाला । असमान, असदृश ।—**इत** (**दुरित**) -(वि०) कठिन । पापपूर्ण । (न०) बुरा मार्ग । दुष्टता । पाप । भय । मुसीबत, विपत्ति ।—**इष्ट** (**दुरिष्ट**)-(न०) आक्रोश, शाप । अनुष्ठान जो दूसरे को हानि पहुँचाने के लिये किया जाय ।—**ईश** (**दुरीश**)-(पुं०) बुरा स्वामी, दुष्ट मालिक ।—**ईषणा** (**दुरीषणा**),—**एषणा** (**दुरेषणा**)-(स्त्री०) अकोसा, शाप ।—**उक्त** (**दुरुक्त**),—**उक्ति** (**दुरुक्ति**)-(स्त्री०) ऐसा कथन जो बुरा लगे, गाली, भर्त्सना, धिक्कार ।—**उत्तर** (**दुरुत्तर**) -(वि०) जो उत्तर देने योग्य न हो ।—**उदाहर** (**दुरुदाहर**)-(वि०) कठिनाई से उच्चारण करने योग्य ।—**उद्वह** (**दुरुद्वह**)-(वि०) असह्य ।—**ऊह** (**दुरूह**)-(वि०) बहुत माथापच्ची करने पर भी जल्दी समझ में न आने वाला, कठिनता से समझ में आने योग्य ।—**ग**-(वि०) कठिनाई से प्रवेश करने योग्य । अगम्य, अप्राप्तव्य । जो समझ में न आ सके । (पुं०, न०) किसी वन, नदी या पर्वत के ऊपर का मार्ग जो कठिनाई से तै किया जा सके । सङ्कीर्ण मार्ग । गढ़, किला । ऊबड़-खाबड़ भूमि । कठिनाई । विपत्ति ।

महाविघ्न । भवबंधन । कुकर्म । शोक । दुःख । नरक । यमदंड । जन्म । महाभय । मतिरोग । गुग्गुल । परमेश्वर ।—**गत**–(वि०) अभागा । दुरवस्था को प्राप्त । अकिञ्चन, निर्धन । दुःखी । विपत्तिग्रस्त ।—**गति**–(स्त्री०) अभाग्य, बदकिस्मती । कष्ट । कठिन अवस्था या मार्ग । नरक ।—**गन्ध**–(वि०) दुर्गन्धियुक्त । (पुं०) बदबू । प्याज । आम का पेड़ । —**गन्धि,—गन्धिन्**–(वि०) बदबू वाला । —**गम**–(वि०) न जाने योग्य । अप्राप्तव्य । समझने में कठिन ।—**गा**–(स्त्री०) आद्या शक्ति, भगवती देवी, पार्वती । नील का पौधा । अपराजिता लता । श्यामा पक्षी । नववर्षीया कन्या ।—**गाध, —गाह,—गाह्य**—(वि०) थाह लेने में कठिन, जिसकी थाह जल्दी न मिल सके । जिसका अनुसन्धान न हो सके ।—**ग्रह**–(वि०) कठिनाई से प्राप्तव्य या सम्पन्न करने योग्य । कठिनाई से जीतने या काबू में करने योग्य । कठिनाई से समझ में आने योग्य । (पुं०) मरोड़, जकड़, अकड़वाई ।—**घट**–(वि०) कठिन । असम्भव ।—**घोष**–(पुं०) चीख, चिल्लाहट । रीछ ।—**जन**–(वि०) दुष्ट । मलिन चित्त का । (पुं०) दुष्ट आदमी, उत्पाती आदमी । —**जय**–(वि०) जो कठिनाई से जीता जा सके, जिस पर विजय पाना कठिन हो । (पुं०) परमेश्वर ।—**जर**–(वि०) सदैव युवा रहने वाला । कड़ा (खाद्य पदार्थ), सहज में न पचने योग्य । कठिनाई से उपभोग करने योग्य ।—**जात**–(वि०) दुःखी । अभागा । दुष्ट स्वभाव का । बुरा । मिथ्या । बनावटी । (न०) दुर्भाग्य, बदकिस्मती । विपत्ति ।—**जाति**–(वि०) बुरी या नीच जाति का । बुरे स्वभाव का । (स्त्री०) नीच जाति, दुष्कुल । दुर्भाग्य ।—**ज्ञान,—ज्ञेय**–(वि०) जो जल्दी बोधगम्य न हो या जाना न जा सके ।—**णय, नय**–(पुं०) दुष्टाचरण । अनौचित्य, अन्याय ।—**णामन्, —नामन्**–(वि०) बुरे नाम वाला । (न०) बुरा नाम । दुर्वचन । बवासीर । (स्त्री०) घोंघा । सीप ।—**दम,—दमन, — दम्य**–(वि०) कठिनाई से वश में आने योग्य ।—**दर्श**–(वि०) कठिनाई से दिखलाई पड़ने वाला । चकाचौंध वाला ।—**दान्त**–(वि०) जिसका दमन करना कठिन हो । प्रचंड, प्रबल । (पुं०) बछड़ा । झगड़ा । कलह ।—**दिन**–(न०) बुरा दिन । दिन जिसमें आकाश मेघाच्छादित रहे । वृष्टि । गाढ़ अंधकार ।—**दृष्ट**–(वि०) अनुचित-रीत्या निर्णीत ।—**दैव**–(न०) दुर्भाग्य, बदकिस्मती ।—**द्यूत**–(न०) कपट द्यूत ।—**द्रुम**–(पुं०) प्याज ।—**धर**–(वि०) जिसे धारण करना या पकड़ रखना कठिन हो । (पुं०) पारा, पारद ।—**धर्ष**–(वि०) जिसका तिरस्कार न हो सके । जो पकड़ा न जा सके । अगम्य । भयावह, भयजनक । क्रोधन स्वभाव का ।—**धी**–(वि०) दे० 'दुर्बुद्धि' ।—**दुरूढ**–(पुं०) वह शिष्य जो गुरु की युक्तियुक्त बात भी जल्दी न माने । —**नामक**–(पुं०) अर्शरोग, बवासीर ।—**निग्रह**–(वि०) जो दबाया न जा सके, जिस पर शासन न किया जा सके ।—**निमित**–(वि०) असावधानी से भूमि पर रखा हुआ । —**निमित्त**– (न०) अपशकुन । अनुचित बहाना ।—**निवार,—निवार्य**–(वि०) कठिनाई से रोकने या बचाने योग्य ।—**नीत**–(न०) दुराचरण, बुरा चाल-चलन ।—**नीति**–(स्त्री०) दुष्ट नीति, अयुक्त आचरण ।—**बल**–(वि०) निर्बल, कमजोर । उत्साहहीन । छोटा । थोड़ा ।—**बाल**–(वि०) गंजा, खल्वाट ।—**बुद्धि**–(वि०) मूर्ख, मूढ़ । दुष्टचित्त का, दुष्टात्मा ।—**बोध**–(वि०) जो शीघ्र समझ में न आ सके, गूढ़, क्लिष्ट ।—**भग**–(वि०) अभागा ।—**भगा**–(स्त्री०) पत्नी जिसे उसका पति नापसन्द करता हो । दुष्ट

स्वभाव वाली स्त्री ।—**भर**–(वि०) जिसे धारण करना, ढोना या निभाना कठिन हो । भारी, दूभर ।—**भाग्य**–(वि०) अभागा, बदकिस्मत । (न०) बदकिस्मती ।—**भिक्ष**–(न०) अकाल, कहत ।—**भृत्य**–(पुं०) बुरा नौकर ।—**भ्रातृ**–(पुं०) बुरा भाई ।—**मति**–(वि०) मूर्ख, मूढ़ । दुष्ट । (स्त्री०) दुष्ट-बुद्धि । (पुं०) साठ संवत्सरों में से एक । इस वर्ष में दुर्भिक्ष होता है ।—**मद**–(वि०) प्रमत्त । मदान्ध, गर्व से भरा हुआ ।—**मनस्**–(वि०) मन में दुःखी । अनुत्साहित । उदास ।—**मनुष्य**–(पुं०) बुरा आदमी ।—**मंत्र**–(पुं०)—**मंत्रित**–(न०) बुरा परामर्श, बुरी सलाह ।—**मरण**–(न०) अकाल मृत्यु ।—**मर्याद**–(वि०) दुश्शील । दुष्ट ।—**मल्लिका**,—**मल्ली**–(स्त्री०) छोटा नाटक, एक प्रकार का उपरूपक ।—**मित्र**–(पुं०) बुरा दोस्त । शत्रु ।—**मुख**–(वि०) कुरूप, बदशकल । बदजबान ।—**मूल्य**–(वि०) महँगा, तेज ।—**मेधस्**–(वि०) मूर्ख, मूढ़, कुन्द । (पुं०) मूढ़ व्यक्ति ।—**योध**–(वि०) जो भीषण युद्ध में भी डट कर लड़ता रहे । अजेय । —**योधन**–(वि०) दे० 'दुर्योध' । (पुं०) धृतराष्ट्र का ज्येष्ठ पुत्र ।—**योनि**–(वि०) नीच जाति में उत्पन्न ।—**लक्ष्य**–(वि०) कठिनाई से देख पड़ने वाला ।—**लभ**–(वि०) कठिनाई से प्राप्त होने योग्य या मिलने योग्य । सर्वोत्तम । प्रिय । मूल्यवान् ।—**ललित**–(वि०) लाड़ प्यार से बिगड़ा हुआ, दुलार से खराब किया हुआ । नटखट । उपद्रवी ।—**लेख्य**–(न०) जाली दस्तावेज ।—**वच**—(वि०) जो कठिनाई से कहा जा सके, जिसे कहना क्लेशकर हो । (न०) गाली । कटुवचन ।—**वचस्**–(न०) गाली । कुवाच्य । —**वर्ण**–(वि०) बुरे रंग का । (न०) चाँदी । —**वसति**–(स्त्री०) ऐसा प्रवासस्थान जहाँ रहने में कष्ट हो ।—**वह**–(वि०) जिसे ढोना कठिन हो । असह्य, दुःसह ।—**वाच्य**–(वि०) बोलने या कहने में कठिन । कुवाच्य युक्त । कठोर, निष्ठुर । (न०) गाली । धिक्कार । बदनामी, अपवाद ।—**वाद**–(पुं०) अपवाद । अपयश । स्तुति के रूप में कहा गया दुर्वचन, निंदित वाक्य ।—**वार**,—**वारण**–(वि०) दे० 'दुर्निवार' ।—**वासना**–(स्त्री०) बुरी अभिलाषा । अलीक कल्पना । विषयों का चित्त पर पड़ा हुआ कुसंस्कार ।—**वासस्**–(वि०) बुरी तरह पोशाक पहिने हुए । नंगा । (पुं०) अत्रि और अनुसूया के पुत्र एक ऋषि का नाम ।—**विगाह**,—**विगाह्य**–(वि०) जिसकी थाह जल्दी न मिल सके ।—**विचिन्त्य**–(वि०) जो समझ में न आ सके ।—**विदग्ध**–(वि०) अपटु । नितान्त या निपट अजान । मूर्खता-वश अभिमान से फूला हुआ, वृथाभिमानी । —**विध**–(वि०) कमीना । दुष्ट । अकिञ्चन । मूर्ख ।—**विनय**–(पुं०) अविनय, औद्धत्य । बुरा चाल-चलन ।—**विनीत**–(वि०) ढीठ । हठी, जिद्दी ।—**विपाक**–(पुं०) बुरा परिणाम या फल । इस जन्म या पूर्व जन्म में किये हुए कर्मों का बुरा फल ।—**विलसित** –(न०) उद्दण्डता । नटखटी ।—**वृत्त**–(वि०) जिसका आचरण बुरा हो, दुराचारी । (न०) असदाचरण, बुरा चाल-चलन ।—**वृष्टि**–(स्त्री०) सूखा, अकाल ।—**व्यवहार** –(पुं०) अनुचित निर्णय या फैसला ।—**व्रत**–(वि०) नियम या आज्ञा का पालन न करने वाला ।—**हुत**–(न०) विधि-विरुद्ध हवन किया हुआ ।—**हृद्**–(वि०) कुटिल हृदय वाला, दुष्ट-हृदय । तुच्छ विचारों वाला, नीच । (पुं०) अमित्र, शत्रु ।—**हृदय**–(वि०) दुष्ट-हृदय, बुरा इरादा रखने वाला ।—**हृषीक**–(वि०) जिसकी इंद्रियाँ दुर्बल या विकार-ग्रस्त हों ।

दुरोदर—(न०) [दुष्टम् आ समन्तात् उदरमस्य, ब० स०] जुआ पासे का खेल; 'न

मृगयाभिरतिर्न दुरोदरं' र० ६ । (पुं०) द्यूतकार, जुआरी । पासे की पेटी । दाँव ।

√दुल्—चु० पर० सक० ऊपर फेंकना । झुलाना । दोलयति, दोलयिष्यति, अदूदुलत् ।

√दुर्व्—भ्वा० पर० सक० वध करना । बींधना । दूर्वति, दूर्विष्यति, अदूर्वीत् ।

दुलि—(स्त्री०) [√दुल्+कि] छोटी कछुई ।

√दुष्—दि० पर० अक० खराब होना । धब्बा लगना । अपवित्र होना । गलती करना । असतो होना । नमकहरामी करना । दुष्यति, दोक्ष्यति, अदुषत् ।

दुष्ट—(वि०) [√दुष्+क्त] क्षतिग्रस्त । निकम्मा । दोषयुक्त । तर्कशास्त्र में व्यभिचार आदि दोषों से युक्त (हेतु) । पित्त आदि के प्रकोप से विकार-ग्रस्त (नेत्र आदि) । खल, बदमाश । कष्टदायी । (न०) कोढ़ । पाप । अपराध ।—**आत्मन्** (**दुष्टात्मन्**)—**आशय** (**दुष्टाशय**)-(वि०) जिसका अंतःकरण बुरा हो । खोटी प्रकृति का ।—**गज**-(पुं०) खूनी हाथी ।—**चेतस्**,—**धी**,—**बुद्धि**-(वि०) खोटे हृदय का, मलिन-चित्त ।—**वृष**-(पुं०) खराब या अड़ियल बैल ।

दुष्टि—(स्त्री०)[√दुष्+क्तिन्] दोष, ऐब ।

दुष्टु—(अव्य०) [दुर्√स्था+कु] निंदा, शिकायत । अनुचित रूप से । भूल से, गलती से ।

दुष्मन्त, दुष्यन्त—(पुं०) एक प्रसिद्ध पुरुवंशी राजा । इन्होंने ही शकुंतला के गर्भ से चक्रवर्ती भरत को उत्पन्न किया ।

दुस्—(अव्य०) [√दु+डुस्] यह एक उपसर्ग है जो संज्ञावाची और कभी-कभी क्रियावाची शब्दों में लगाया जाता है । इसका प्रयोग "बुरा, दुष्ट, अपकृष्ट, कठोर या कठिन" के अर्थों में किया जाता है ।—**कर** (**दुष्कर**)-(न०) कठिन और पीड़ादायी कार्य । आकाश । (वि०) जिसे करना कठिन हो, कष्टसाध्य ।—**कर्मन्** (**दुष्कर्मन्**)-(न०) पापकर्म । अपराध ।—**काल** (**दुष्काल**)-(पुं०) बुरा समय । प्रलय काल । शिव की उपाधि ।—**कुल** (**दुष्कुल**)-(न०) अकुलीन कुल, नीच कुल; 'स्त्रीरत्नं दुष्कुलादपि' मनु ।—**कुलीन** (**दुष्कुलीन**)-(वि०) नीच वंशोत्पन्न ।—**कृत्** (**दुष्कृत्**)-(पुं०) दुष्ट जन ।—**कृत** (**दुष्कृत**) (न०)—**कृति** (**दुष्कृति**)-(स्त्री०) पापकर्म, असत्कर्म ।—**क्रम** (**दुष्क्रम**)-(वि०) अस्तव्यस्त, गड़बड़ ।—**चर** (**दुश्चर**)-(वि०) कठिनाई से पूरा होने वाला । अप्रवेश्य । अप्राप्तव्य । असदाचरणी । (पुं०) रीछ । शंख विशेष ।—**चरित** (**दुश्चरित**)-(न०) बुरा आचरण, कदाचार । दुष्कृत, पाप । (वि०) बुरे आचरण वाला ।—**चिकित्स्य** (**दुश्चिकित्स्य**)-(वि०) असाध्य, आरोग्य न होने वाला ।—**च्यवन** (**दुश्च्यवन**)-(पुं०) इन्द्र ।—**च्याव** (**दुश्च्याव**)-(पुं०) शिवजी ।—**तर**-(वि०) कठिनाई से पार किया जाने वाला । कठिनाई से वश में किया जाने वाला ।—**तर्क**-(पुं०) मिथ्या वादविवाद ।—**पच** (**दुष्पच**)-(वि०) कठिनाई से पचने योग्य ।—**पतन** (**दुष्पतन**)-(न०) बुरी तरह गिरना । अपशब्द ।—**परिग्रह** (**दुष्परिग्रह**)-(वि०) कठिनाई से पकड़ा जानेवाला । (वि०) दुष्टा स्त्री या भार्या वाला ।—**पूर** (**दुष्पूर**)-(वि०) मुश्किल से भरा जाने वाला या अघाने वाला ।—**प्रकाश** (**दुष्प्रकाश**)-(वि०) अँधियारा । धुँधला ।—**प्रकृति** (**दुष्प्रकृति**)-(वि०) बुरे स्वभाव का । चिड़चिड़ा ।—**प्रजस्** (**दुष्प्रजस्**)-बुरी सन्तान वाला ।—**प्रज** (**दुष्प्रज**)-(वि०) मूढ़ । निर्बल चित्त का ।—**प्रधर्ष** (**दुष्प्रधर्ष**),—**प्रधृष्य** (**दुष्प्रधृष्य**)-(वि०) दे० दुर्धर्ष ।—**प्रवाद** (**दुष्प्रवाद**)-(पुं०) कलङ्क । अपकीर्ति ।—**प्रवृत्ति** (**दुष्प्रवृत्ति**)-(स्त्री०) बुरी प्रवृत्ति । बुरी खबर, अमङ्गलजनक संवाद ।—**प्रसह** (**दुष्प्रसह**)-(वि०) भयङ्कर ।

असह्य ।—आप (दुष्प्राप)—आपण (दुष्प्रापण)–(वि०) कठिनता से मिलने योग्य ।—शकुन (दुःशकुन)–(न०) अपशकुन, बुरा सगुन ।—शला (दुःशला)–(स्त्री०) धृतराष्ट्र की एक मात्र पुत्री का नाम। यह जयद्रथ को ब्याही गयी थी ।—शासन (दुःशासन)–(वि०)–कठिनाई से काबू में आने वाला । (पु०) धृतराष्ट्र के १०० पुत्रों में से एक पुत्र का नाम । इसी ने महारानी द्रौपदी का भरी सभा में चीर खींच कर अपमान किया था । इस अपमान का बदला भीमसेन ने कुरुक्षेत्र की लड़ाई में इसके कलेजे का गर्मागर्म लोहू पीकर लिया था । —शील (दुःशील)–(वि०) बुरे स्वभाव का, पापिष्ठ, दुराचारी, धर्मभ्रष्ट ।—सम (दुःसम)–(वि०) असम, असदृश, जो बराबर या समान न हो। अभागा । दुष्ट, कुत्सित, अनुचित ।—सत्त्व (दुःसत्त्व)–(न०) दुष्ट प्राणी ।—सन्धान (दुःसन्धान), —सन्धेय (दुःसन्धेय)–(वि०) कठिनाई से मिलने या आपस में मेल कर लेने वाले । —सह (दुःसह) (वि०) जिसे सहना कठिन हो, जो सहन-शक्ति से बाहर हो, असह्य । साक्षिन् (दुःसाक्षिन्)–(पु०) झूठा साक्षी, झूठा गवाह ।—साध (दुःसाध),—साध्य (दुःसाध्य)–(वि०) कठिनाई से पूरा या व्यवस्थित होने वाला । असाध्य (रोग) । कठिनाई से वश में होने वाला ।—स्थ (दुःस्थ),—स्थित (दुःस्थित)–(वि०) बुरा। अकिञ्चन, निर्धन, अभागा । पीड़ित । अस्वस्थ, [illegible] । मूर्ख ।—स्थिति (दुःस्थिति)–(स्त्री०) बुरी दशा, बुरी हालत ।—स्पर्श (दुःस्पर्श) (वि०) जिसे छूना कठिन हो । —स्पर्शा (दुःस्पर्शा)–(स्त्री०) केवांच । भटकटैया । लताकरंज । आकाशगंगा ।—स्मर (दुःस्मर)–(वि०) कठिनाई से स्मरण किया जाने वाला या जिसे स्मरण करने से पीड़ा हो ।—स्वप्न (दुःस्वप्न)–(पु०) कुख्वाब सपना ।

√दुह्—अ० उभ० सक० दुहना, दबा कर निचोड़ लेना । एक के भीतर से दूसरी चीज निकालना; 'प्राणान्दुहन्निवात्मानं शोकं चित्तमिवारुधत्' भट्टि० ८.६ । लाभ उठाना । (किसी अपेक्षित वस्तु को) देना । उपभोग करना । दोग्धि—दुग्धे, धोक्ष्यति—ते, अधुक्षत्—त, अदुग्ध । भ्वा० पर० सक० मारना, वध करना । दोहति, दोहिष्यति, अदुहत्—अदोहीत् ।

दुहितृ—(स्त्री०) [√दुह्+तृच्] बेटी, पुत्री ।—पति या दुहितुः पति–(पु०) दामाद, जमाई ।

√दू—दि० आत्म० अक० सन्तप्त होना, दुःखी होना । सक० दुःखी करना । दूयते, दविष्यते, अदविष्ट ।

दूडभ—(वि०) [दुर्√धं+क] अधम । नीच ।

दूत, दूतक—(पु०) [दूयते वार्तावहनादिना, √दु+क्त, दीर्घ] [दूत+कन्] कासिद, संदेश ले जाने वाला, पैगाम ले जाने वाला, इधर की बात और उधर की बात इधर पहुँचाने वाला ।

दूतिका, दूती—[दूयते नायकादिवार्ताहरणादिना, √दू+ति+कन्—टाप्] [दूति—ङीष्] कुटनी । [कभी कभी दूती का "ती" ह्रस्व भी हो जाता है ।]

दूत्य—(न०) [दूतस्य दूत्या वा भावः कर्म वा, दूत (ती)+यत्] दूतपना । संदेश, पैगाम ।

दून—(वि०) [√दू+क्त, नत्व] क्लान्त, थका हुआ । पीड़ित, दुःखी; 'कथमथ वञ्चयसे जनमनुगतमसमशरज्वरदूनं' गीत० ८ ।

दूर—(वि०) [दुःखेन ईयते, दुर् √इण +रक्, धातोः लोपः] [दवीयस्, दविष्ठ, तुलना में] दूरवर्ती, फासले पर ।—अन्तरित

(**दूरान्तरित**)–(वि०) दूर होने के कारण बिलगाया हुआ ।—**आपात** (**दूरापात**)–(पुं०) दूर से निशानाबाजी करना ।—**आप्लाव** (**दूराप्लाव**)–(पुं०) दूर से फलांगना या कूदना ।—**आरूढ** (**दूरारूढ**)–(वि०) ऊँचा चढ़ा हुआ । बहुत आगे बढ़ा हुआ ।—**ईरितेक्षण** (**दूरेरितेक्षण**)–(वि०) भेंड़ा, ऐंचाताना ।—**गत**–(वि०) दूर स्थानान्तरित किया हुआ । दूर गया हुआ ।—**ग्रहण**–(न०) दूरस्थ वस्तुओं को देखने की अलौकिक शक्ति ।—**दर्शन**–(पुं०) गीध । विद्वान् पुरुष ।—**दर्शिन्**–(वि०) दूर की बात सोचने वाला, परिणामदर्शी । (पुं०) गीध । पण्डित । देवदूत, पैगम्बर । ऋषि ।—**दृष्टि**–(स्त्री०)दूर तक देख सकने की शक्ति । विवेक ।—**पात**–(पुं०) बहुत ऊँचाई से गिरना । दूर की उड़ान ।—**पार**–(वि०) बहुत चौड़ा(यथा चौड़े पाट की नदी)। कठिनाई से पार होने योग्य ।—**बंधु**–(वि०) भार्या तथा भाई-बन्धुओं से दूर किया हुआ ।—**वर्तिन्**–(वि०) दूरी पर मौजूद, फासले पर स्थित ।—**वस्त्रक**–(वि०) नंगा ।—**विलम्बिन्**–(वि०) बहुत नीचा लटकने वाला ।—**वेधिन्**–(वि०) दूर से छेद करने वाला या चुभने वाला ।—**संस्थ**–(वि०) बहुत दूरी पर स्थित ।

दूरतः—(अव्य०) [दूर+तस्] बहुत दूर से, फासले से ।

दूरेत्य—(वि०) [दूरे भवः, दूर+एत्य] दूरस्थ, जो दूर में स्थित हो ।

दूर्य—(न०) [दूरे उत्सार्यम्, दूर+यत्] विष्ठा, मैला । कचूर ।

दूर्वा—(स्त्री०)[√दुर्व्+अच्, दीर्घ, टाप्] दूब, एक प्रकार की घास जो बहुत फैलती है और देव तथा पितृ-पूजन के काम आती है । यह घोड़ों को खिलायी जाती है और घोड़े इसे बड़े प्रेम से खाते हैं ।

दूलिका, दूली–[दूर+अच्, रस्य लः, ङीप्–दूली] [दूली+कन्, टाप्, ह्रस्व] नील का पौधा ।

दूष—(वि०) [√दुष्+णिच्+अच्] अपवित्र करने वाला, खराब करने वाला यथा "पंक्तिदूष" ।

दूषक—(वि०) [√दुष्+णिच्+ण्वुल्] [स्त्री०—**दूषिका**] भ्रष्ट करने वाला, नष्ट करने वाला । पापी । कुपथ में प्रवृत्त करने वाला । स्त्रियों का सतीत्व नष्ट करने वाला । (पुं०) बदनाम मनुष्य ।

दूषण—(न०) [√दुष्+णिच्+ल्युट्] दोष; 'नोलूकोऽप्यवलोकते यदि दिवा सूर्यस्य किं दूषणम्' । गाली, कुवाच्य । अपवाद, अपकीर्ति । (पुं०) [√दुष्+णिच्+ल्यु] रावणपक्षीय एक प्रधान राक्षस जिसे जनस्थान में श्रीरामचन्द्र जी ने मारा था ।

दूषि, दूषी—(स्त्री०) [√दुष्+णिच्+इन्] [दूषि+ङीप्] आँख का कीचड़ ।—**विष**–(न०) स्थावर, जंगम, या कृत्रिम विष का वह अंश जो शरीर में बना रहने के कारण कालांतर में जीर्ण होकर धातुओं को दूषित बना देता है ।

दूषिका—(स्त्री०) [दूषि+कन्–टाप्] चित्रकार की कूची । चावल विशेष । आँख का कीचड़ ।

दूषित—(वि०) [√दुष्+णिच्+क्त] भ्रष्ट, नष्ट । चोटिल । टूटा-फूटा । अपकीर्तित, कलङ्कित । मिथ्या दोषारोपित, बदनाम किया हुआ ।

दूष्य—(वि०) [√दुष्+णिच्+यत्] भ्रष्ट होने योग्य, कलङ्क लगाने योग्य । (न०) पीप । विष । रुई । वस्त्र, कपड़ा । शामियाना, तंबू ।

दूष्या—(स्त्री०) [दूष्य+टाप्] हाथी का चमड़े का जेरबंद ।

√दृह्—भ्वा० पर० सक० मजबूत करना,

दृढ़ करना । अक० दृढ़ होना । बढ़ना, अधिक होना । दृंहति, दृंहिष्यति, अदृंहीत् ।

दृंहित—(वि०) [√दृंह्+क्त] मजबूत किया हुआ, दृढ़ किया हुआ । बढ़ा हुआ ।

√दृ—तु० आत्म० सक० सम्मान करना, आदर करना; 'भूरिश्रुतं शाश्वतमाद्रियन्ते', माल० १.५ । आद्रियते, आदरिष्यते, आदृत । स्वा० पर० सक० वध करना । दृणोति, दरिष्यति, अदार्षीत् ।

दृक—(न०) [√दृ+कक्] छिद्र, रन्ध्र, छेद ।

दृढ—(वि०) [√दृह्+क्त] मजबूत । अचल । अथक । मोटा, ठोस । स्थापित । अचञ्चल । दृढ़ता से बँधा हुआ । कसा हुआ । घना । बड़ा । अत्यधिक शक्तिशाली । चिमड़ा । ऐसा कड़ा जो कठिनाई से लचाया जा सके । ठहरने वाला, चलाऊ । विश्वस्त । निश्चित । **—अंग (दृढाङ्ग)**–(वि०) शरीर का पुष्ट । (न०) हीरा । **—इषुधि (दृढेषुधि)**–(वि०) मजबूत तरकश रखने वाला । **—काण्ड,—ग्रन्थि**–(पुं०) बाँस । **—ग्राहिन्**–(वि०) मजबूती से पकड़ने वाला । **—दशक**–(पुं०) शार्क नामक समुद्री जन्तु विशेष । **—द्वार**–(वि०) मजबूती से द्वार को बंद रखने वाला । **—धन**–(पुं०) बुद्ध देव की उपाधि । **—धन्वन्, —धन्विन्**–(पुं०) अच्छा तीरन्दाज । **—निश्चय**–(वि०) दृढ़ सङ्कल्प वाला । **—नीर, —फल**–(पुं०) नारियल का वृक्ष । **—प्रतिज्ञ**–(वि०) वचन या प्रतिज्ञा का पक्का । **—प्ररोह**–(पुं०) गूलर का पेड़ । **—प्रहारिन्**–(वि०) कस कर प्रहार करने वाला । ठीक लक्ष्य वेधने वाला । **—भक्ति**–(वि०) नमकहलाल, सच्चा । **—मति**–(वि०) अपने विचार का पक्का । **—मुष्टि**–(वि०) सूम, कंजूस । मजबूती से मुट्ठी बाँधने वाला । (पुं०) तलवार । **—मूल**–(पुं०) नारियल का पेड़ । **—लोमन्**–(पुं०) जंगली सुअर । **—वल्कल**–(पुं०) सुपारी का पेड़ । बड़हल का पेड़ । (वि०) कड़ी छाल वाला । **—वल्का**–(स्त्री०) अंबष्ठा लता । **—वैरिन्**–(पुं०) करुणाशून्य शत्रु, बेरहम दुश्मन । **—व्रत**–(वि०) धर्मानुष्ठान में दृढ़ । सच्चा । अध्यवसायी । **—सन्धि**–(वि०) मजबूती से मिले हुए । अच्छी तरह जुड़े हुए । **—सूत्रिका**–(स्त्री०) मूर्वा-लता । **—सौहृद**–(वि०) मैत्री में अचल या दृढ़ ।

दृति—(पुं०) [√दृ+ति, ह्रस्व] पानी भरने का चमड़े का डोल । मछली । धौंकनी । वह चमड़ा जो गाय-बैल आदि के गले के नीचे झूलता रहता है, गलकंबल । मेघ । **—हरि**–(पुं०) कुत्ता ।

दृन्फू—(स्त्री०) [√दृन्फ्+कू, नि० साधुः] साँपिन । वज्र ।

दृम्भू—(स्त्री०) [√दृम्भ्+कू, नि० साधुः] इन्द्र का वज्र । सूर्य । राजा । यम ।

√दृप्—दि० पर० अक० प्रसन्न होना । गर्व करना । दृप्यति, दर्पिष्यति, अदृपत्—अदर्पीत्—अदार्प्सीत्—अद्राप्सीत् । तु० पर० सक० कष्ट देना । दृपति । चु० पर० सक० उत्तेजित करना । दर्पयति—दर्पति ।

दृप्त—(वि०) [√दृप्+क्त] गर्वित । उन्मत्त । हर्षयुक्त । तेजोयुक्त । दीप्त । (पुं०) विष्णु ।

दृप्र—(वि०) [√दृप्+रक्] अभिमानी, अकड़बाज । मजबूत, दृढ़ ।

√दृभ्—तु० पर० सक० गाँठना । दृभति, दर्भिष्यति, अदर्भीत् । चु० पर० अक० डरना । दर्भयति-दर्भति ।

√दृम्फ्—तु० पर० सक० कष्ट देना । दृम्फति, दृम्फिष्यति, अदृम्फीत् ।

√दृश्—भ्वा० पर० सक० देखना । पश्यति, द्रक्ष्यति, अदर्शत्-अद्राक्षीत् ।

दृश्—(स्त्री०) [√दृश्+क्विप्] दृष्टि, निगाह । आँख; 'सन्दधे दृशमुदग्रतारकां', र० ११.६९ । बोध, ज्ञान । दो की संख्या ।

ग्रह की गति।—अध्यक्ष (दृगध्यक्ष)–(पुं०) सूर्य।—कर्ण (दृक्कर्ण)–(पुं०) सर्प।—क्षय (दृक्क्षय)–(पुं०) धुंधला दिखलाई पड़ना, देखने की शक्ति का कम हो जाना।—जल (दृग्जल)–(न०) आँसू।—पात (दृक्पात)–(पुं०) निगाह, नजर, चितवन।—प्रिया (दृक्प्रिया)–(स्त्री०) सौन्दर्य।—भक्ति (दृग्भक्ति)–(स्त्री०) प्रेम भरी चितवन।—विष (दृग्विष)–(पुं०) एक प्रकार का साँप जिसकी आँखों में विष रहता है।—श्रुति। (दृक्श्रुति)–(पुं०) साँप।

दृशद्—(स्त्री०) [=दृषद्, पृषो० साधुः] दे० 'दृषद्'।

दृशा—(स्त्री०) [दृश्+टाप्] आँख।—आकांक्ष्य (दृशाकांक्ष्य)–(न०) कमल।—उपम (दृशोपम)–(न०) सफेद कमल।

दृशान—(पुं०) [√दृश्+आनच्] दीक्षा गुरु। ब्राह्मण। लोकपाल। (न०) प्रकाश, चमक।

दृशि, दृशी—(स्त्री०) [√दृश्+इन्] [दृशि+ङीप्] आँख। शास्त्र।

दृश्य—(वि०) [√दृश्+क्यप्] दिखलाई पड़ने वाला। मनोहर, सुन्दर। (न०) दिखलाई पड़ने वाली वस्तु।

दृश्वन्—(वि०) [√दृश्+क्वनिप्] देखने वाला। (आलं०) जानकार।

दृषद्—(स्त्री०) [√दृ+अदि, षुक्, ह्रस्व] शिला, चट्टान। चक्की। सिल, जिस पर मसाले आदि पीसे जाते हैं।—उपल (दृषदुपल)–(पुं०) सिल।

दृषन्माषक—(पुं०) [माषः मूल्यत्वेन दीयते, माष+कन्, दृषदि पेषणव्यवहारे राज्ञे देयः माषकः, अलुक् स०] कर जो चक्की चलाने वालों पर लगाया जाय।

दृषद्वत्—(वि०) [दृषद्+मतुप्, वत्व] पथरीला, चट्टानदार।

दृषद्वती—(स्त्री०) [दृषद्वत्+ङीप्] आर्यावर्त देश की पूर्वी सीमा की एक नदी जो सरस्वती नदी में गिरती है।

दृष्ट—(वि०) [√दृश्+क्त] देखा हुआ। जाना हुआ, समझा हुआ। पाया हुआ, मिला हुआ। प्रकट, प्रादुर्भूत। निश्चित किया हुआ, निर्णीत। (न०) अनुभूति। दर्शन। राजा को अपनी तथा शत्रु की सेना से होने वाला भय। डाकुओं आदि का भय।—अन्त (दृष्टान्त)–(पुं०) मिसाल, उदाहरण। न्याय के अनुसार ऐसी प्रत्यक्ष बात जिसे सब जानते या मानते हों। एक अर्थालंकार। शास्त्र। मृत्यु।—अर्थ (दृष्टार्थ)–(वि०) जिसका अर्थ या विषय स्पष्ट हो। व्यावहारिक।—कष्ट, —दुःख–(वि०) कष्टसहिष्णु, दुःख झेलने वाला।—कूट–(न०) कठिन प्रश्न, पहेली, बुझौवल।—दोष–(वि०) दोषयुक्त देखा हुआ। दुष्ट। पकड़ा हुआ।—प्रत्यय–(वि०) विश्वस्त। विश्वास दिलाया हुआ।—रजस्–(स्त्री०) रजोधर्म को प्राप्त लड़की।—व्यतिकर–(वि०) मुसीबतें झेले हुए। अनिष्ट को पहिले ही से जान लेने वाला।

दृष्टि–(स्त्री०) [√दृश्+क्तिन्] निगाह, नजर। मन की आँखों से देखना। ज्ञान। आँख। चितवन। बुद्धि।—कृत–(न०) स्थलपद्म।—क्षेप–(पुं०) दृष्टि डालने की क्रिया, नजर डालना, अवलोकन।—गुण–(पुं०) तीरन्दाजों का निशाना या लक्ष्य।—गोचर–(वि०) नजर के सामने पड़ने वाला।—पूत–(वि०) देखने में शुद्ध। देखा-समझा हुआ; 'दृष्टिपूतं न्यसेत् पादम्'।—बन्धु–(पुं०) जुगनू।—विक्षेप–(पुं०) कनखियों से देखना।—विभ्रम–(पुं०) प्रेमभरी चितवन, नेत्रविलास।—विद्या–(स्त्री०) नेत्रविद्या, आलोकविज्ञान।—विष–(पुं०) सर्प।

√दृह्—भ्वा० पर० अक० दरना। दृढ़ होना। बढ़ना। समृद्धिमान् होना। सक० कस कर बाँधना। दर्हति, दर्हिष्यति, अदर्हीत्।

√दृ—भ्वा० पर० अक० डरना। दरति, दरिष्यति, अदारीत्। (णिच्) दरयति। क्र्या० पर० सक० फाड़ डालना। दृणाति, दरी (रि) ष्यति, अदारीत्।

√दे—भ्वा० आत्म० सक० रक्षा करना। दयते, दास्यते, अदास्त।

देदीप्यमान—(वि०) [√दीप् + यङ +शानच्] खूब चमकता हुआ, जाज्वल्यमान।

देय—(वि०) [√दा+यत्] देने योग्य।

√देव्—भ्वा० आत्म० अक० खेलना, क्रीड़ा करना। विलाप करना। चमकना। देवते, देविष्यति, अदेविष्ट।

देव—(वि०) [स्त्री०—**देवी**] [√दिव्+अच्] सम्मान्य, पूज्य। (पुं०) अमर, सुर, देवता। राजा। मेघ। पारा। ब्राह्मणों की एक उपाधि। देवदारु। तेजोमय व्यक्ति। परमात्मा। (न०) इन्द्रिय।—**अंश** (**देवांश**)–(पुं०) देवता का भाग। भगवान् का अंशावतार। —**अगार** (**देवागार**)–(पुं०, न०) मन्दिर, देवस्थान। स्वर्ग।—**अङ्गना** (**देवाङ्गना**)–(स्त्री०) स्वर्गीय अप्सरा। देवता की स्त्री।—**अतिदेव** (**देवातिदेव**), —**अधिदेव** (**देवाधिदेव**)–(पुं०) सर्वोच्च देवता, शिव। —**अधिप** (**देवाधिप**)–(पुं०) इन्द्र।—**अन्धस्** (**देवान्धस्**),—**अन्न** (**देवान्न**) –(न०) देवताओं का अन्न, हवि। अमृत। —**अभीष्ट** (**देवाभीष्ट**)–(वि०) देवताओं का प्रिय। देवता को चढ़ा हुआ।—**अभीष्टा** (**देवाभीष्टा**)–(स्त्री०) पान। सुपारी।—**अरण्य** (**देवारण्य**)–(न०) देवताओं का उपवन, नंदनवन।—**अरि** (**देवारि**)– (पुं०) दानव।—**अर्चन** (**देवार्चन**)–(न०),—**अर्चना** (**देवार्चना**)–(स्त्री०) देवताओं का पूजन।—**अवसथ** (**देवावसथ**)–(पुं०) देवालय, मन्दिर। —**अश्व** (**देवाश्व**)–(पुं०) इन्द्र का घोड़ा उच्चैःश्रवा।—**आक्रीड** (**देवाक्रीड**)–(पुं०) देवताओं का उद्यान, नन्दन वन। —**आजीव** (**देवाजीव**),—**आजीविन्** (**देवाजीविन्**)–(पुं०) पुजारी, देवलक। —**आत्मन्** (**देवात्मन्**)–(पुं०) देवस्वरूप। पीपल का पेड़।—**आयतन** (**देवायतन**) –(न०) मन्दिर।—**आयुध** (**देवायुध**)–(न०) देवता का हथियार। इन्द्रधनुष। —**आलय** (**देवालय**)–(पुं०) स्वर्ग। मन्दिर।—**आवास** (**देवावास**)–(पुं०) स्वर्ग। अश्वत्थ वृक्ष। मन्दिर। सुमेरु पर्वत। —**आहार** (**देवाहार**)–(पुं०) अमृत। —**इज्** (**देवेज्**)–(वि०) [कर्त्ता एकवचन **देवेट्**, या **देवेड्**,] जिसने देवताओं का यज्ञ किया हो, देवयष्टा।—**इज्य** (**देवेज्य**) –(पुं०) बृहस्पति।—**इन्द्र** (**देवेन्द्र**),—**ईश** (**देवेश**)–इन्द्र। शिव।—**उद्यान** (**देवोद्यान**)–(न०) देवताओं के उद्यान —नंदन, चैत्ररथ, वैभ्राज और सर्वतोभद्र। त्रिकाण्डशेष के अनुसार वैभ्राज, चैत्ररथ, मैश्रक और मिश्रकावण। मन्दिर के समीप का बाग।—**ऋषि** (**देवर्षि**)–(पुं०) अत्रि, भृगु, पुलस्त्य, अंगिरस् आदि देवर्षि हैं। नारद की उपाधि।—**ओकस्** (**देवौकस्**) –(न०) सुमेरु पर्वत।—**कन्या**–(स्त्री०) अप्सरा।—**कर्दम**–(पुं०) चंदन, अगर, कपूर और केसर के मिश्रण से तैयार किया हुआ एक सुगन्ध द्रव्य।—**कर्मन्**,—**कार्य** –(न०) धार्मिक कृत्य या अनुष्ठान। देवार्चन।—**काष्ठ**–(न०) देवदारु वृक्ष।—**कुण्ड**–(न०) प्राकृतिक तालाब।—**कुल**–(न०) मन्दिर। देव-जाति। देवताओं का समूह।—**कुल्या**–(स्त्री०) स्वर्ग-गङ्गा।—**कुसुम**–(न०) लवङ्ग, लौंग।—**खात**,—**खातक**–(न०) गुफा। किसी मनुष्य का न बनाया हुआ तालाब या जलाशय। मन्दिर के समीप का जलाशय।—**गण**–(पुं०) देवताओं का समूह। आदित्य, विश्व, वसु आदि

विशिष्ट देववर्ग। देवता का अनुचर। अश्विनी, रेवती, पुष्य आदि नक्षत्रों का एक समूह। **—गणिका**–(स्त्री०) अप्सरा। **—गर्जन**–(न०) बादल की गड़गड़ाहट। **—गायन**–(पुं०) गन्धर्व। **—गिरि**–(पुं०) पर्वत का नाम। **—गुरु**–(पुं०) कश्यप। बृहस्पति। **—गृही**–(स्त्री०) सरस्वती की उपाधि या उसके समीप के स्थान की उपाधि। **—गृह**–(न०) मन्दिर। राजप्रासाद, महल। **—चर्या**–(स्त्री०) देवार्चन, देवपूजन। **—चिकित्सक**–(पुं०) अश्विनीकुमारद्वय। **—छन्द**–(पुं०) सौलड़ा मोती का हार। **—तरु**–(पुं०) अश्वत्थ वृक्ष। मंदारवृक्ष। पारिजात वृक्ष। सन्तान वृक्ष। कल्पवृक्ष। हरिचन्दन वृक्ष। **—ताड़**–(पुं०) अग्नि। राहु। **—दत्त**–(पुं०) अर्जुन के शंख का नाम; 'देवदत्तं धनञ्जयः (दध्मौ)' भग० १.१५। वह शरीरसंचारी वायु जिससे जम्हाई आती है। **—दारु**–(पुं०) देवदार, एक पहाड़ी पेड़ जिसकी लकड़ी कड़ी, हल्की और पीले रंग की होती है। **—दास**–(पुं०) मन्दिर का नौकर। **—दासी**–(स्त्री०) मन्दिरों में रहने वाली स्त्री, जिसको उसके घर वालों ने देवता को चढ़ा दिया हो, नर्तकी। वेश्या। **—दीप**–(पुं०) देवता के निमित्त जलाया जाने वाला दीप। आँख। **—दूत**–(पुं०) देवता या ईश्वर का दूत, पैगंबर। फरिश्ता। **—दुन्दुभि**–(पुं०) देवताओं का ढोल या नगाड़ा। श्यामा तुलसी जिसमें लाल मञ्जरी लगती है। **—देव**–(पुं०) ब्रह्मा। शिव। विष्णु। **—द्रोणी**–(स्त्री०) देवयात्रा। शिवलिंग का अरघा। **—धर्म**–(पुं०) धार्मिक अनुष्ठान। **—नदी**–(स्त्री०) गङ्गा। कोई भी पवित्र नदी। **—नन्दिन्**–(पुं०) इन्द्र के द्वारपाल का नाम। **—नागरी**–(स्त्री०) वह लिपि जिसमें संस्कृत भाषा लिखी जाती है। **—निकाय**–(पुं०) स्वर्ग। **—निन्दक**–(पुं०) नास्तिक। **—निर्मित**–(वि०) देवता द्वारा रचित। प्राकृतिक। **—पति**–(पुं०) इन्द्र। **—पथ**–(पुं०) आकाशमार्ग। आकाश-गङ्गा। छाया-पथ। **—पशु**–(पुं०) देवता को चढ़ाया हुआ कोई भी जानवर। **—पुर**–(न०), **—पुरी**–(स्त्री०) अमरावती पुरी। **—पूज्य**–(पुं०) बृहस्पति। **—प्रतिकृति, —प्रतिमा**–(स्त्री०) देवता की मूर्ति, विग्रह। **—प्रश्न**–(पुं०) ग्रहादि संबंधी जिज्ञासा। भविष्य संबंधी प्रश्न। **—प्रिय**–(पुं०) शिव। अगस्त का पेड़। पीली भँगरैया। —(**देवानांप्रिय**)—यह अनियमित समास है। इसका अर्थ होता है बकरा। मूर्ख (पशु के समान मूढ़)। **—बलि**–(पुं०) देवताओं के निमित्त उपहार। **—ब्रह्मन्**–(पुं०) नारद। **—ब्राह्मण**–(पुं०) ब्राह्मण जो मन्दिर की चढ़त पर निर्वाह करता हो। प्रतिष्ठित ब्राह्मण। **—भवन**–(न०) स्वर्ग। मन्दिर। अश्वत्थ वृक्ष। **—भूति**–(स्त्री०) आकाशगंगा। देवताओं का ऐश्वर्य। **—भूमि**–(स्त्री०) स्वर्ग। **—भूय**–(न०) [देवस्य भावः, √भू+क्यप्] देवत्व। देवसायुज्य। **—भृत्**–(पुं०) विष्णु। इन्द्र। **—मणि**–(पुं०) कौस्तुभ मणि। सूर्य। **—मातृक**–(वि०) वह देश जो नदी, नहर के जल पर नहीं, किन्तु सर्वथा वृष्टि जल पर ही निर्भर हो। **—मान**–(न०) कालगणना का वह मान जो देवताओं के संबंध में काम में लाया जाता है—जैसे मनुष्य का एक सौर वर्ष देवताओं के एक दिन के बराबर होता है। **—मानक**–(पुं०) विष्णु भगवान् की कौस्तुभ मणि। **—मुनि**–(पुं०) देवर्षि। **—यजन**–(न०) यज्ञभूमि, यज्ञस्थली; 'देवयजनसम्भवे सीते' उत्त०। **—यात्रा**–(स्त्री०) किसी देवता की सवारी निकालने का उत्सव। **—यान**–(न०) वह मार्ग जिससे जीवात्मा शरीर से निकलने पर ब्रह्मलोक को जाता है। देवताओं का विमान। **—युग**–(न०) कृतयुग। **—योनि**–(स्त्री०) देवताओं

के अंश से उत्पन्न विद्याधर आदि की योनियाँ प्रधान हैं। (यथा विद्याधर, अप्सरा, यक्ष, राक्षस, गन्धर्व, किन्नर, पिशाच, गुह्यक और सिद्ध)।—**योषा**-(स्त्री०) अप्सरा।—**रहस्य**-(न०) दैवी रहस्य।—**राज्**,-**राज**-(पुं०) इन्द्र।—**लता**-(स्त्री०) नवमल्लिका।—**लिङ्ग**-(न०) किसी देवता की मूर्ति।—**लोक**-(पुं०) देवताओं का लोक, स्वर्ग। भूः, भुवः आदि सात लोक।—**वक्त्र**-(न०) अग्नि।—**वर्त्मन्**-(न०) आकाश।—**वर्धकि**,—**शिल्पिन्**-(पुं०) विश्वकर्मा।—**वाणी**-(स्त्री०)संस्कृत भाषा। आकाशवाणी।—**वाहन**-(न०) अग्नि।—**विद्या**—(स्त्री०) निरुक्त विद्या।—**व्रत**-(न०) धार्मिक व्रत। (पुं०) भीष्म। कार्तिकेय।—**शत्रु**-(पुं०) दैत्य।—**शुनी**-(स्त्री०) देवताओं की कुतिया सरमा की उपाधि।—**शेष**-(न०) यज्ञ का अवशिष्ट भाग।—**सूत**-(पुं०) विष्णु। नारद। वेदसंहिता। देवता।—**सभा**-(स्त्री०) देवताओं का सभाभवन जिसका नाम है सुधर्मन्। जुआखाना।—**सभ्य**-(पुं०) जुआरी। जुआखाने में रहने वाला। देवता का सेवक।—**सायुज्य**-(न०) देवत्व-प्राप्ति। देवता के साथ एकासन होने की योग्यता।—**सेना**-(स्त्री०) देवताओं की फौज। स्कन्द की स्त्री षष्ठी, सोलह मातृकाओं में से एक।—**स्व**-(न०) देवताओं की सम्पत्ति, देवनिर्माल्यधन, वह सम्पत्ति जो केवल धर्मकृत्यों ही में लगायी जा सके।—**हविस्**-(न०) यज्ञ में देवताओं के उद्देश से उत्सर्ग किया हुआ पशु।—**हूति**-(स्त्री०) कर्दम मुनि की स्त्री, कपिल की माता।

देवकी—(स्त्री०) [देवक+ङीप्] देवक की कन्या का नाम जो वसुदेव को ब्याही थी और जिसके गर्भ से श्रीकृष्ण का जन्म हुआ था।—**नन्दन**,—**पुत्र**,—**मातृ**,—**सूनु**-(पुं०) श्रीकृष्ण।

देवट—(पुं०) [√दिव्+अटन्] कारीगर।

देवता—(स्त्री०) [देव एव, देव+तल्-टाप्] इन्द्रादि देवता। देवमूर्ति। इन्द्रिय।—**अगार** (**देवतागार**)-(पुं०, न०)—**आगार** (**देवतागार**)-(पुं०, न०),—**गृह**-(न०) देवालय, देवमन्दिर।—**अधिप** (**देवताधिप**)-(पुं०) इन्द्र।—**अभ्यर्चन** (**देवताभ्यर्चन**)-देवताओं का पूजन।—**आयतन** (**देवतायतन**)-(न०) **आलय** (**देवतालय**),-(पुं०)-**वेश्मन्**-(न०)मन्दिर, देवालय।—**प्रतिमा**-(स्त्री०) किसी देवता की मूर्ति।—**स्नान**-(न०) देवमूर्ति का स्नान।

देवद्र्यञ्च्—(वि०) [देवम् अञ्चति पूजयति, देव√अञ्च् + क्विन् अद्रि आदेश] देवपूजक।

देवन—(पुं०) [√दिव्+अनि] पति का छोटा भाई, देवर।

देवन—(न०) [√दिव्+ल्युट्] सौन्दर्य। चमक, आभा। पासे का खेल, जुआ। आमोद-प्रमोद। बाग। कमल। स्पर्धा। व्यापार। प्रशंसा। (पुं०) पासा।

देवना—(स्त्री०) [√दिव्+युच्+टाप्] जुआ। क्रीड़ा। सेवा।

देवयानी—(स्त्री०) शुक्र की कन्या का नाम।

देवर, देवृ—(पुं०) [√दिव्+अर] [√दिव्+ऋ] पति का छोटा या बड़ा भाई, देवर या जेठ।

देवल—(पुं०) [देव√ला+क] निम्न कोटि का ब्राह्मण जो देवता की चढ़त पर अपना निर्वाह करता है। [√दिव्+कलच्] धार्मिक पुरुष। नारद मुनि। देवर। एक स्मृतिकार। असित ऋषि के पुत्र एक धर्मशास्त्रवक्ता मुनि।

देवसात्—(अव्य०) [देवाधीनं करोति, देव

+शाति] देवता के निमित्त देय, जो देवता को उत्सर्ग किया जाय।

देविक, देविल—(वि०) [स्त्री०—**देविकी, देविला**] [देव+ठन्—इक] [√दिव्+इलच्] देव-संबंधी। स्वर्गीय। धार्मिक। [अनुकम्पितो देवदत्तः, देवदत्त+ठन्—इक, उत्तरपदलोप। देवदत्त+इलच् उत्तरपदलोप] दयापात्र देवदत्त।

देवी—(स्त्री०) [√दिव्+अच्—ङीप्] देवपत्नी। दुर्गा का नाम। सरस्वती का नाम। अग्रमहिषी, पटरानी। पूज्य या प्रतिष्ठित स्त्रियों की उपाधि।

देश—(पुं०) [दिश्+अच्] स्थान। राष्ट्र। क्षेत्र। विभाग। एक राग। नियम।—**अतिथि (देशातिथि)**–(पुं०) विदेशी।—**अन्तर (देशान्तर)**–(न०) अन्य देश।—**अन्तरिन् (देशान्तरिन्)**–(पुं०) विदेशी।—**आचार (देशाचार)**,—**धर्म**–(पुं०) देशविशेष में प्रचलित रीति-रिवाज, आचार-व्यवहार। देशविशेष के लिये उचित धर्म।—**कालज्ञ**–(वि०) [देशकाल, इ० म०, √ज्ञा+क] उचित समय और स्थान का ज्ञाता।—**ज, —जात**–(वि०) देश में उत्पन्न, देशी।—**भाषा**–(स्त्री०) किसी देश की बोलचाल की भाषा।—**रूप**–(न०) औचित्य, उपयुक्तता।—**व्यवहार**–(पुं०) स्थानीय आचार।

देशक—(पुं०) [√दिश्+ण्वुल्] शासक। शिक्षक। पथप्रदर्शक।

देशना—(स्त्री०) [√दिश्+णिच्+युच्—टाप्] शिक्षा, उपदेश। आदेश।

देशिक—(वि०) [देश+ठन्—इक] देश विशेष सम्बन्धी। (पुं०) आध्यात्मिक गुरु। यात्री। पथ-प्रदर्शक। स्थानों से परिचय रखने वाला।

देशिनी—(स्त्री०) [√दिश्+णिनि—ङीप्] तर्जनी, अँगूठे के पास वाली अँगुली।

देशी—(स्त्री०) [देश—ङीप्] एक रागिनी। स्थान या देशविशेष की बोली।

देशीय—(वि०) [देश+छ—ईय] स्वदेश सम्बन्धी, अपने देश का। देश सम्बन्धी, देश का।

देश्य—(वि०) [√दिश्+ण्यत्] जो बतलाने योग्य या सिद्ध करने को हो। [देश+यत्] देश में उत्पन्न। प्रान्तीय। स्थानीय। विशुद्ध उत्पत्ति का। (पुं०) किसी देश का अधिवासी। प्रत्यक्ष दर्शी; 'अभियोक्ता दिशेद्देश्यं' मनु० ८.५२। (न०) [√दिश्+ण्यत्] पूर्व पक्ष।

देष्णु—(वि०) [√दा+इष्णुच्] देने वाला। बहुत उदार। उद्दंड। (पुं०) धोबी।

देह—(न०, पुं०) [देग्धि प्रतिदिनं √दिह्+घञ्] शरीर। जीवन। लेपन।—**अन्तर (देहान्तर)**–(न०) अन्य शरीर।—**प्राप्ति**–(स्त्री०) जन्मग्रहण।—**आत्मवाद (देहात्मवाद)**–(पुं०) चार्वाक का मत, नास्तिकवाद।—**आत्मवादिन् (देहात्मवादिन्)**–(पुं०) चार्वाकसिद्धान्तानुयायी।—**आवरण (देहावरण)**–(न०) कवच। पोशाक।—**ईश्वर (देहेश्वर)**–(पुं०) जीव।—**उद्भव (देहोद्भव)**, —**उद्भूत (देहोद्भूत)**–(वि०) शरीर से उत्पन्न। जन्मगत।—**कर्तृ**–(पुं०) सूर्य। परमात्मा। पिता।—**कोष**–(पुं०) शरीर को आच्छादित करने वाली वस्तु। पर, डैना। चमड़ा।—**क्षय**–(पुं०) शरीर का नाश। बीमारी, रोग।—**गत**–(वि०) शरीर में प्राप्त।—**ज**–(पुं०) पुत्र।—**जा**–(स्त्री०) पुत्री।—**त्याग**–(पुं०) मृत्यु। इच्छामृत्यु।—**द**–(पुं०) पारा।—**दीप**–(पुं०) नेत्र।—**धर्म**–(पुं०) शरीर के आवश्यक कृत्य।—**धारक**–(न०) हड्डी।—**धारण**–(न०) शरीर धारण करना, जन्म लेना। प्राणरक्षा।—**धि**–(पुं०) डैना।—**धृष्**–(पुं०) वायु।—**बद्ध**–(वि०) शरीरधारी।

—भाज्–(पुं०) शरीरधारी कोई भी जीव, विशेष कर मनुष्य ।—भुज्—(पुं०) जीव । सूर्य ।—भृत्–(पुं०) जीवधारी, विशेष कर मनुष्य; 'भिगिमां देहभृतामसारताम्' र० ८.५१ । शिव जी । जीवन, जीवनी-शक्ति ।—यात्रा–(स्त्री०) मृत्यु । शरीर की रक्षा का साधन । आजीविका ।—लक्षण–(न०) चर्म के ऊपर का तिल या मस्सा ।—वायु–(पुं०) शरीर स्थित पाँच पवन ।—सार–(पुं०) मज्जा ।

देहम्भर—(वि०) [देह√भृ+खच्, मुम्] शरीरमात्र का पोषक । स्वार्थी । पेटू ।

देहला—(स्त्री०) [देहं लाति देहस्य पुष्टिं ददाति, देह√ला+क—टाप्] शराब, मदिरा ।

देहलि, देहली—(स्त्री०) [देही लेपः तं लाति गृह्णाति, देह√ ला+कि] [देहलि+ङीप्] ड्योढ़ी, दहलीज, दहरी ।—दीप–(पुं०) देहली पर रखा हुआ दीपा (जो बाहर-भीतर दोनों ओर प्रकाश फैलाता है) । अर्थालंकार का एक भेद ।

देहवत्—(वि०) [देह+मतुप्—वत्व]शरीरधारी । (पुं०) मनुष्य । जीव ।

देहिन्—(वि०) [स्त्री०—देहिनी] [देह +इनि] शरीरधारी । (पुं०) जीवधारी विशेषतया मनुष्य । जीव, आत्मा; 'अन्यानि संयाति नवानि देही' भग० ।

देहिनी—(स्त्री०) [देहिन्+ङीप्] पृथिवी ।

√दै—भ्वा० पर० सक० पवित्र करना, साफ करना । बचाना, रक्षा करना । दायति, दास्यति, अदासीत् ।

दैतेय—(पुं०) [दितेरपत्यम्, दिति+ढक्] दिति के पुत्र, राक्षस, दैत्य ।—इज्य (दैतेयेज्य),—गुरु,—पुरोधस्, —पूज्य–(पुं०) शुक्राचार्य ।—निषूदन–(पुं०) विष्णु ।—मातृ–(स्त्री०) दिति, दैत्यों की माता ।—मेदजा–(स्त्री०) पृथिवी ।

दैत्य—(पुं०) [दितेरपत्यम्, दिति+ण्य] दिति के पुत्र अर्थात् दैत्य ।—अरि (दैत्यारि)–(पुं०) देवता । विष्णु ।—देव–(पुं०) वरुण । पवन ।—पति–(पुं०) हिरण्यकशिपु ।

दैत्या—(स्त्री०) [दैत्य+टाप्] सुरा नामक गंधद्रव्य । चंडौषधि । दैत्य जाति की स्त्री । मदिरा ।

दैन, दैनन्दिन, दैनिक—(वि०) [स्त्री०—दैनी, दैनन्दिनी, दैनिकी] [दिन+अण्] [दिने दिने भवः, दिनन्दिन+अण्, नि० साधुः][दिने भवः, दिन+ठञ्] प्रतिदिन का, नित्य का ।

दैन, दैन्य—(न०) [दीनस्य भावः, दीन +अण्] [दीन+ष्यञ्] निर्धनता, गरीबी । शोक । उदासी । निर्बलता । कमीनापन ।

दैनिकी—(स्त्री०) [दैनिक+ङीप्] दैनिक मजदूरी, दिन भर की उजरत ।

दैर्घ, दैर्घ्य—(न०) [दीर्घ+अण्] [दीर्घ +ष्यञ्] लम्बाई, बड़ाई ।

दैव—(वि०) [स्त्री०—दैवी] [देव+अण्] देवता संबन्धी । नैसर्गिक । स्वर्गीय । राजकीय । (न०) देवतीर्थ, दाहिने हाथ की अँगुलियों के अगले भाग का नाम । आठ प्रकार के विवाहों में से एक । भाग्य; 'दैवमचिंतासः कल्पयन्ति' मु० २ । एक प्रकार का श्राद्ध ।—अत्यय (दैवात्यय)– (पुं०) असाधारण प्राकृतिक घटना से उत्पन्न उपद्रव ।—अधीन (दैवाधीन),—आयत्त (दैवायत्त) –(वि०) भाग्याधीन ।—अहोरात्र (दैवाहोरात्र)–(पुं०) देवताओं का एक दिन रात, अर्थात् मनुष्यों का एक वर्ष ।—उपहत (दैवोपहत)–(वि०) अभागा ।—कर्मन्–(न०) देवताओं को भेंट चढ़ाने का कर्म ।—कोविद्,—चिन्तक,—ज्ञ– (पुं०) ज्योतिषी । —गति–(स्त्री०) भाग्य का पलटा, भाग्य का फेर ।—तन्त्र–(वि०) भाग्याधीन—दीप–(पुं०) नेत्र ।—दुर्विपाक–(पुं०) भाग्य की निष्ठुरता ।—दोष–(न०) भाग्य

का बुरापन ।—पर–(वि०) भाग्य पर भरोसा करने वाला, भाग्यवादी ।—प्रश्न–(पुं०) भावी शुभाशुभ की सूचिका एक प्रकार की आकाशवाणी । भविष्यकथन ।—युग–(न०) देवताओं का युग जिसमें देवताओं के १२००० वर्ष हुआ करते हैं ।—योग–(पुं०) भाग्य से किसी घटना का अतर्कित भाव से होना ।—योगात्–(अव्य०) संयोग से, अकस्मात् ।—लेखक–(पुं०) दैवज्ञ ।—वश–(पुं०, न०) भाग्य की शक्ति ।—वाणी–(स्त्री०) आकाशवाणी । संस्कृत भाषा ।—हीन–(वि०) भाग्यहीन, प्रारब्ध का फूटा, अभागा ।

दैवक—(पुं०) [दैव+कन्] देवता ।

दैवत—(वि०) [स्त्री०—**दैवती** [देवता+अण्] देवता संबंधी । (न०) देवता । देव-समूह, देवतामात्र । देव-मूर्ति ।

दैवतस्—(अव्य०) [दैव+तस्] संयोगवश, दैवयोग से ।

दैवत्य—(वि०) [देवता+ष्यञ्] देवता सम्बन्धी ।

दैवल, दैवलक—(पुं०) [देवं देवयोनिं लाति गृह्णाति पूज्यत्वेन, देव√ला+क, देवल+अण्][दैवल+कन्] दुष्ट (भूत) आत्मा का सेवक, भूत-प्रेत का उपासक ।

दैवाकरि—(पुं०) यम । शनि ।

दैवारिप—(पुं०) [देवारीन् असुरान् पाति आश्रयदानेन, √पा+क, देवारिपः समुद्रः तत्र भवः, देवारिप+अण्] शंख ।

दैवासुर—(न०) [देवासुरस्य वैरम्, देवासुर+अण्]देवता और दैत्यों का स्वाभाविक बैर ।

दैविक—(स्त्री०) [स्त्री०—**दैविकी**] [देव+ठञ्] देवता संबन्धी । देवता के निमित्त किया हुआ । देवकृत ।

दैविन्—(पुं०) [दैव+इनि] ज्योतिषी, दैवज्ञ ।

दैव्य—(न०) [स्त्री०—**दैव्या, दैवी**] [देव+यञ्] भाग्य, प्रारब्ध । दैवी शक्ति ।

दैशिक—(वि०) [स्त्री०—**दैशिकी**] [देश+ठञ्] स्थानीय । प्रान्तीय । जातीय । समूचे देश से सम्बन्ध रखने वाला । किसी स्थान से परिचित । (पुं०) शिक्षक । पथप्रदर्शक ।

दैष्टिक—(वि०) [स्त्री०—**दैष्टिकी**][दिष्ट+ठक्]भाग्य में लिखा हुआ, दैवनिर्दिष्ट । (पुं०) भाग्यवादी ।

दैहिक—(वि०) [स्त्री०—**दैहिकी**] [देह+ठञ्] शारीरिक, शरीर-सम्बन्धी ।

दैह्य—(वि०)[देह+ष्यञ्] शरीर-सम्बन्धी । (पुं०) जीवात्मा ।

√दो—दि० पर० सक० काटना, विभक्त करना । अनाज काटना । द्यति, दास्यति, अदात् ।

दोग्धृ—(वि०) [√दुह्+तृच्] दुहने वाला । (पुं०) ग्वाला, अहीर । बछड़ा । भाड़े का कवि । वह पुरुष जो अपने स्वार्थ के लिये ही कोई कार्य करता हो ।

दोग्ध्री—(स्त्री०) [दोग्धृ+ङीप्] दुधार गौ । दूध पिलाने वाली दाई ।

दोघ—(पुं०) [√दुह्+अच, नि० साधुः] बछड़ा । ग्वाला । वह कवि जो पुरस्कार के लिये कविता करता हो ।

दोर—(पुं०) [=डोर, नि० ह्रस्व दः,√दो √रा+ड, पृषो० साधुः] रज्जु, डोर ।

दोल—(पुं०) [√दुल्+घञ्] झूला, हिंडोला । दोलोत्सव ।

दोला, दोलिका—(स्त्री०) [√दुल्+अ–टाप्] [दोल+कन्–टाप्, इत्व] डोली, पालकी । हिंडोला । उतार-चढ़ाव, घटा-बढ़ी । सन्देह, अनिश्चय ।—**अधिरूढ** (दोलाधिरूढ),—**आरूढ** (दोलारूढ)–(वि०) झूले पर चढ़ा हुआ ।—**युद्ध**–(न०) युद्ध जिसमें हार-जीत का कुछ निश्चय न हो ।

दोष—(पुं०) [√दुष्+घञ् वा णिच्+घञ्]

त्रुटि। कलङ्क। भर्त्सना। ऐब। भूल। गलती। जुर्म, अपराध। खराबी। हानि। दुष्परिणाम। रोग। त्रिदोष। आलङ्कारिक त्रुटि। बखेड़ा। खण्डन।—**आरोप** (**दोषारोप**)–(पुं०) दोष या इल्जाम लगाना।—**एकदृश्** (**दोषैकदृश्**)–(वि०) छिद्रान्वेषी, ऐब ढूंढने वाला।—**कर**,—**कृत्**–(वि०) हानिकारक।—**ग्रस्त**–(वि०) दोषी, दोष या त्रुटि से पूर्ण।—**ग्राहिन्**–(वि०) मलिन-चित्त, दुष्ट-हृदय। भर्त्सनात्मक।—**ज्ञ**–(वि०) दोष जानने वाला। (पुं०) बुद्धिमान् पुरुष। हकीम, वैद्य।—**त्रय**–(न०) वात, पित्त और कफ का व्यतिक्रम।—**दृष्टि**–(वि०) निन्दक, दोष ढूंढने वाला।—**भाज्**–(वि०) दोषी, अपराधी।

दोषण—(न०) [√दुष्+णिच्+ल्युट्] आरोप।

दोषल—(वि०) [दोष+लच्] जिसमें दोष हो, दोषी। खोटा। लंपट।

दोषस्—(स्त्री०) [√दुष्+असुन्] रात। (न०) अन्धकार।

दोषा—(अव्य०) [दुष्यते अन्धकारेण, √दुष्+घञ्—टाप्] रात्रि, रात। (स्त्री०) [√दम्+डोसि—टाप्] बांह। [दुष्यति अत्र,√दुष्+घा] रात्रि। निशामुख।—**आस्य** (**दोषास्य**),—**तिलक**–(पुं०) दीपक।—**कर**–(पुं०) चन्द्रमा।

दोषातन—(वि०) [स्त्री०—**दोषातनी**] [दोषा रात्रौ भवः, दोषा+ट्यु, तुट्] रात सम्बन्धी।

दोषावह—(वि०) [दोष—आ √वह+अच्] दोषयुक्त। दोषपूर्ण।

दोषिक—(वि०) [स्त्री०—**दोषिकी**] [दोष+ठन्] दोषी। खराब। (पुं०) बीमारी, रोग।

दोषिन्—(वि०) [स्त्री०—**दोषिणी**] [दोष +इनि] अपवित्र। भ्रष्ट। दोषपूर्ण। अपराधी। दुष्ट। खोटा।

दोस्—**स्**—(पुं०, न०) [दम्यते अनेन,√दम् +डोसि] बांह, भुजा।—**गडु** (**दोर्गडु**)–(वि०) टेढ़ी भुजा वाला।—**ग्रह** (**दोर्ग्रह**)–(वि०) शक्तिमान्, ताकतवर। (पुं०) भुजपीड़ा।—**दण्ड** (**दोर्दण्ड**)–(पुं०) मजबूत भुजा। डंडे जैसी भुजा।—**मूल** (**दोर्मूल**)–(न०) बगल, कांख।—**युद्ध** (**दोर्युद्ध**)–(न०) द्वन्द्व-युद्ध।—**शालिन्** (**दोःशालिन्**)–(पुं०) बहादुर, वीर।—**शिखर** (**दोःशिखर**)–(न०) कंधा।—**सहस्रभृत्** (**दोःसहस्रभृत्**)–(पुं०) बाणासुर की उपाधि। सहस्रार्जुन की उपाधि।—**स्थ** (**दोःस्थ**)–(पुं०) भृत्य, नौकर। सेवा, चाकरी। खिलाड़ी। खेल, क्रीड़ा।

दोह—(पुं०) [√दुह्+घञ्] दुहना। दूध। दूध दुहने का पात्र।—**अपनय** (**दोहापनय**)–(पुं०)—**ज**–(न०) दूध।

दोहद—(न०) [दोहम् आकर्षं ददाति, दोह √दा+क] गर्भवती स्त्री की रुचि। गर्भ। वृक्षों की अभिलाषा, जो उनके मन में फूल खिलने के समय होती है। (यथा अशोक वृक्ष चाहता है कि युवतियाँ उसे ठुकरावें। बकुल चाहता है कि सुन्दरियाँ मुँह में भरकर शराब के कुल्ले उस पर करें।) प्रबल अभिलाषा; 'प्रवर्तितमहासमरदोहदा नरपतयः' वे० ४। अभिलाषा, कामना।—**लक्षण**–(न०) गर्भ सम्बन्धी लक्षण। भ्रूण। जीवन की एक अवस्था से दूसरी अवस्था में प्रवेश।

दोहदवती—(स्त्री०) [दोहद+मतुप्, वत्व —ङीप्] गर्भवती स्त्री जो किसी वस्तु पर मन चलावे।

दोहन—(न०) [√दुह्+ल्युट्] दुहना। दुधैंड़ी, दुग्धपात्र। (ला०) चूसना।

दोहनी—(स्त्री०) [दोहन+ङीप्] दुधैंड़ी, दूध दुहने का पात्र।

दौहल—(पुं०) [दोहम् आकर्षं लाति, दोह √ला+क] दे० 'दोहद'।

दौहली—(स्त्री०) [दौहल+ङीप्] अशोक वृक्ष। अर्क वृक्ष।

दौह्य—(वि०) [√दुह्+ण्यत्] दुहने योग्य। (न०) दूध।

दौःशील्य—(न०) [दुःशील+ष्यञ्] बुरा मिजाज, दुष्ट स्वभाव।

दौःसाधिक—(पुं०) [दुर्दुष्टः साधः कर्म तत्र नियुक्तः दुःसाध+ठक्] द्वारपाल। ग्राम का व्यवस्थापक।

दौकूल, दौगूल—(पुं०) [दुकूलेन परिवृतो रथः दुकूल+अण्] गाड़ी जिस पर रेशमी उथार या पर्दा पड़ा हो। (न०) महीन रेशमी वस्त्र।

दौत्य—(न०) [दूतस्य भावः कर्म वा, दूत+ष्यञ्] दूत का कार्य। संदेसा।

दौरात्म्य—(न०) [दुरात्मन्+ष्यञ्] दुरात्मा होने का भाव, दुर्जनता। अंतःकरण, बुद्धि, स्वभाव आदि की सदोषता।

दौर्गत्य—(न०) [दुर्गत+ष्यञ्] धनहीनता, अभाव, मुहताजपना। दुःख। अभागापन।

दौर्गन्ध्य—(न०) [दुर्गन्ध+ष्यञ्] बुरी या अप्रिय गन्ध।

दौर्जन्य—(न०) [दुर्जन+ष्यञ्] दुर्जनता, दुष्टता।

दौर्जीवित्य—(न०) [दुर्जीवित+ष्यञ्] दुःख पूर्ण जीवन।

दौर्बल्य—(न०) [दुर्बल+ष्यञ्] निर्बलता कमजोर।

दौर्भागिनेय—(पुं०) [दुर्भगाया अपत्यं पुमान्, दुर्भगा+ढक्, इनङ्] उस स्त्री का पुत्र जिसकी अपने पति के साथ खटपट रहती हो।

दौर्भाग्य—(न०) [दुर्भग (गा)+ष्यञ् उभयपदवृद्धि] भाग्य की खोटाई, बदकिस्मती।

दौर्भ्रात्र—(न०) [दुष्टो भ्राता, तस्य भावः, दुर्भ्रातृ+अण्] भाई-भाई में झगड़ा।

दौर्मनस्य—(न०) [दुर्मनस्+ष्यञ्] मानसिक पीड़ा।

दौर्मन्त्र्य—(न०) [दुर्मन्त्र+ष्यञ्] असत् परामर्श।

दौर्वचस्य—(न०) [दुर्वचस्+ष्यञ्] असद् भाषण।

दौर्हृद, दौहृद—(न०) [दुर्हृद्+अण्] शत्रुता। मन का विकार। गर्भ; 'सुदक्षिणा दौर्हृदलक्षणं दधौ' र० ३.१। गर्भवती स्त्री की रुचि। अभिलाषा।

दौर्हृदय—(न०) [दुर्हृदय+अण्] मनोविकार। शत्रुता।

दौल्मि—(पुं०) [दुल्म+इञ्] इन्द्र।

दौवारिक—(पुं०) [स्त्री०—**दौवारिकी**] [द्वारि नियुक्तः, द्वार+ठक्, औ आगम] द्वारपाल, दरबान।

दौश्चर्य—(न०) [दुश्चर+ष्यञ्] असद् आचरण। दुष्टता। असत्कार्य।

दौष्कुल, दौष्कुलेय—(वि०) [स्त्री०—**दौष्कुली, दौष्कुलेयी**] [दुष्टं कुलमस्य, ब० स०, ततः स्वार्थे अण्] [दुष्टं कुलम्, प्रा० स०, तत्र भवः, दुष्कुल+ढक्] तुच्छ कुल में उत्पन्न, नीच घर में उत्पन्न।

दौष्ठव—(न०) [दुर् निन्दितं तिष्ठति, दुर् √स्था+कु, षत्व,=दुष्ठु तस्य भावः दुष्ठु+अण्] औद्धत्य। दुष्टता।

दौष्मन्ति, दौष्यन्ति—(पुं०) [दुष्मन्त, दुष्यन्त+इञ्] दुष्यन्त या दुष्मन्त के पुत्र, भरत।

दौहित्र—(पुं०) [दुहितुः अपत्यम्, दुहितृ+अञ्] बेटी का बेटा, नाती। (न०) कपिला गौ का घृत। तिल। तलवार।

दौहित्रायण—(पुं०) [दौहित्र+फक्] दौहित्र का पुत्र।

दौहित्री—(स्त्री०) [दौहित्र+ङीप्] पुत्री की पुत्री, नतिनी।

दौहृदिनी—(स्त्री०) [दौहृद+इनि—ङीप्] गर्भवती स्त्री।

√द्यु—अ० पर० सक० किसी ओर आगे बढ़ना। आक्रमण करना। द्यौति, द्योष्यति, अद्योष्ट।

द्यु—(न०) [√दिव्+उन्, किद्] दिवस। आकाश। चमक। स्वर्ग। (पुं०) अग्नि।—**ग**–(पुं०) पक्षी।—**चर**–(पुं०) ग्रह। पक्षी।—**जय**–(पुं०) स्वर्गप्राप्ति।—**धुनि**,—**नदी**–(स्त्री०) स्वर्गीय गंगा।—**निवास**–(पुं०) देवता।—**पति**–(पुं०) सूर्य। इन्द्र।—**मणि**–(पुं०) सूर्य।—**लोक**–(पुं०) स्वर्ग।—**षद्**,—**सद्**–(पुं०) देवता। ग्रह।—**सरित्**–(स्त्री०) आकाशगङ्गा।

द्युक—(पुं०) उल्लू।—**अरि** (**द्युकारि**)–(पुं०) काक, कौवा।

√द्युत्—भ्वा० आत्म० अक० चमकना। द्योतते, द्योतिष्यते, अद्युतत्–अद्योतिष्ट।

द्युति—(स्त्री०) [√द्युत्+इन्] शरीर की सहज कांति, आभा, छवि। चमक, दीप्ति; 'काचः काञ्चनसंसर्गाद् धत्ते मारकतीं द्युतिम्' हि०।—**कर**–(पुं०) ध्रुव।—**धर**–(पुं०) विष्णु।

द्युतित—(वि०) [√द्युत्+क्त, वा० न गुणः] दीप्तियुक्त, प्रकाशवान्।

द्युम्न—(न०) [द्युम् अग्निम् मनति अभ्यस्यति यस्मै, द्यु√म्ना+क] तेज। चमक। शक्ति। धन। प्रत्यादेश।

द्युवन्—(पुं०) [√द्यु+वनिप्] सूर्य।

द्यूत—(न०, पुं०) [√दिव्+क्त, ऊठ्] जुआ, चौपड़ का खेल। जीता हुआ इनाम या पुरस्कार।—**अधिकारिन्** (**द्यूताधिकारिन्**)–(पुं०) जुआखाने का मालिक।—**कर**,—**कृत्**–(पुं०) जुआ खेलने वाला। जुआरी।—**कार**,—**कारक**–(पुं०) जुआखाना रखने वाला। जुआरी।—**क्रीडा**–(स्त्री०) पासे का खेल, जुआ।—**पूर्णिमा**,—**पौर्णिमा**–(स्त्री०) कोजागरी पूरनमासी, आश्विन मास की पूरनमासी।—**बीज**–(न०) कौड़ी।—**वृत्ति**–(पुं०) पेशेवर जुआरी। जुआखाना रखने वाला या चलाने वाला।—**सभा**–(स्त्री०),—**समाज**–(पुं०) जुआखाना। जुआरियों का समुदाय।

√द्यै—भ्वा० पर० सक० तिरस्कार करना, तुच्छ समझ कर व्यवहार करना। बदनाम करना। द्यायति, द्यास्यति, अद्यासीत्।

द्यो—(स्त्री०) [**कर्त्ता एक०—द्यौः**] [द्योतन्ते देवा यत्र,√द्युत्+डो (बा०)] स्वर्ग। आकाश।—**भूमि**–(स्त्री०) पक्षी।—**सद्** (**द्योषद्**)–(पुं०) देवता।

द्योत—(पुं०) [√द्युत्+घञ्] प्रकाश। सूर्य की धूप। गर्मी।

द्योतक—(वि०) [√द्युत्+ण्वुल्] प्रकाश करने वाला, प्रकाशक। सूचक।

द्योतिस्—(न०) [√द्युत्+इसुन्] प्रकाश। आभा। नक्षत्र।—**इङ्गण** (**द्योतिरिङ्गण**)–(पुं०) खद्योत, जुगनू।

द्रक्षण–(न०) [द्राक्‌क्षरत्यनेन√द्राक्ष+ल्युट्, पृषो० ह्रस्वः] एक मान जो तोले के बराबर होता था।

द्रढिमन्—(पुं०) [दृढस्य भावः, दृढ+इमनिच्] मजबूती, दृढ़ता। समर्थन। बयान। बोझ, भार।

द्रप्स, द्रप्स्य—(न०) [दृप्यन्ति अनेन, √दृप्+स, आदेश][√दृप्+स्य, र आदेश] पतला दही। रस। शुक्र। बूंद। चिनगी।

√द्रम्—भ्वा० पर० सक० जाना। द्रमति, द्रमिष्यति, अद्रमीत्।

द्रम, द्रम्म—(न०) सोलह पण मूल्य की एक मुद्रा।

द्रव—(वि०) [√द्रु+अप्] दौड़ने वाला (घोड़े की तरह)। चूने वाला, टपकने वाला। तर। बहने वाला। पनीला। तरल। पिघला हुआ। (पुं०) गमन। भ्रमण। टपकना, चूना। उफनना। पीछे भाग आना। खेल, आमोद। पनीलापन। पनीला पदार्थ। रस।

स्राव, काढ़ा । वेग ।—**आधार** (**द्रवाधार**) -(पुं०) छोटा बरतन । चुल्लू ।—**ज**-(पुं०) शीरा, राब ।—**द्रव्य**-(न०) तरल पदार्थ । —**रसा**-(स्त्री०) लाख । गोंद ।

द्रवन्ती—(स्त्री०) [√द्रु+शतृ—ङीप्] मूसाकानी । नदी ।

द्रविड—(पुं०) दक्षिण भारत का एक प्रदेश वहाँ का निवासी । एक जाति का नाम । ब्राह्मणों का एक वर्ग जिसके अन्तर्गत पाँच ब्राह्मण हैं— आन्ध्र, कार्णाटक, गुर्जर, द्रविड़, महाराष्ट्र ।

द्रविण—(न०) [√द्रु+इनन्] धन, सम्पत्ति । सुवर्ण । पराक्रम । वस्तु, पदार्थ । इच्छा ।—**अधिपति** (**द्रविणाधिपति**), —**ईश्वर** (**द्रविणेश्वर**)-(पुं०) कुबेर की उपाधि ।

द्रव्य—(न०) [√द्रु+यत् वा द्रु+यत्] वस्तु, पदार्थ । उपादान सामग्री, उपयुक्त या योग्य पदार्थ । वह पदार्थ जो क्रिया और गुण अथवा केवल गुण का आश्रय हो । वैशेषिक-दर्शन के अनुसार पृथ्वी, जल आदि नौ द्रव्य । कोई भी अधिकृत वस्तु जैसे धन, सम्पत्ति, सामान आदि । औषधि विशेष । शील । काँसा । मदिरा । होड़ । लाख । गोंद ।—**अर्जन** (**द्रव्यार्जन**)-(न०) —**वृद्धि**, —**सिद्धि**-(स्त्री०) धन की प्राप्ति ।—**ओघ** (**द्रव्यौघ**) -(पुं०) धन का बाहुल्य ।—**परिग्रह**-(पुं०) धन या सम्पत्ति का आदान ।—**प्रकृति**-(स्त्री०) पदार्थ का स्वभाव ।—**वाचक**-(वि०) जिससे किसी द्रव्य का बोध हो ।—**संस्कार**-(पुं०) यज्ञीय वस्तुओं की शुद्धि ।—

द्रव्यवत्—(वि०) [द्रव्य+मतुप्, वत्व] धनी, अमीर ।

द्रष्टव्य—(वि०) [√दृश्+तव्यत्] देखने योग्य । मनोहर, सुन्दर ।

द्रष्टृ—(वि०) [√दृश्+तृच्] देखने वाला, दर्शक । प्रकाशक । ऋषि । न्यायाधीश:

द्रह—(पुं०) [=ह्रद, पृषो० साधुः] गहरी झील ।

√**द्रा**—अ० पर० अक० सोना । भागना । द्राति, द्रास्यति, अद्रासीत् ।

द्राक्—(अव्य०) [√द्रा+कु] शीघ्रता से । तुरन्त ।—**भृतक**-(न०) टटका पानी, कुएँ से तुरन्त निकाला हुआ जल ।

द्राक्षा—(स्त्री०) [√द्राक्ष्+अ—टाप्, नि० नलोप] दाख; 'द्राक्षे द्रक्ष्यन्ति के त्वाम्' गीत० १२ । मुनक्का ।—**रस**-(पुं०) अंगूर का रस । अंगूरी शराब ।

√**द्राख्**—भ्वा० पर० सक० सोखना । अक० पर्याप्त होना । द्राखति, द्राखिष्यति, अद्राखीत् ।

√**द्राघ्**—भ्वा० आत्म० अक० लंबा करना । वृद्धि करना । घनीभूत करना । सक० विलम्ब करना । द्राघते, द्राघिष्यते, अद्राघिष्ट ।

द्राघिमन्—(पुं०) [दीर्घ+इमनिच्, द्राघ् आदेश] लंबाई । अक्षांश सूचित रेखा का अंश ।

द्राघिष्ठ—(वि०) [अतिशयेन दीर्घः, दीर्घ+इष्ठन् द्राघ् आदेश] सब से अधिक लंबा । बहुत लंबा ।

द्राघीयस्—(वि०) [स्त्री०—**द्राघीयसी**] [दीर्घ+ईयसुन्, द्राघ् आदेश] दे० दीर्घतर ।

√**द्राङ्क्ष्**—भ्वा० पर० सक० चाहना । द्राङ्क्षति, द्राङ्क्षिष्यति, अद्राङ्क्षीत् ।

√**द्राड्**—भ्वा० आत्म० सक० वध करना । द्राडते, द्राडिष्यते, अद्राडिष्ट ।

द्राण—(वि०) [√द्रा+क्त, नत्व, णत्व] भागा हुआ । सोया हुआ । (न०) भागना । नींद ।

द्राप—(पुं०) [√द्रा+णिच्, पुक्+अच्] कीचड़ । स्वर्ग । आकाश । मूर्ख । शिव । छोटा शंख ।

द्रामिल—(पुं०) [द्रमिलाख्यो देशोऽभिजनोऽस्य, द्रमिल+अण्] चाणक्य का नाम ।

द्राव—(पुं०) [√द्रु+घञ्] पलायन । वेग । बहाव । गर्मी, ताप । पिघलाव ।

द्रावक—(पुं०, वि०) [√द्रु+ण्वुल् वा√द्रु+णिच्+ण्वुल्] द्रव रूप में करने वाला, ठोस चीज को तरल करने वाला । बहाने वाला । गलाने वाला । पिघलाने वाला । (पुं०) चन्द्रकान्त मणि । चोर । चतुर आदमी । सुहागा । चुम्बक पत्थर । लम्पट । (न०) मोम ।

द्रावण—(न०) [√द्रु+णिच्+ल्युट्] भगा देना । पिघलाना । (अर्क की तरह) खींचना । [√द्रु+णिच्+ल्यु] रीठा ।

द्राविड—(पुं०) [द्रविडो देशोऽभिजनोऽस्य, द्रविड+अण्] द्रविड़ देश वासी ।

द्राविडक—(न०) [द्राविड+कन्] काला नमक । (पुं०) आँवा हल्दी ।

द्राविडी—(स्त्री०) [द्रविडे भवा, द्रविड+अण्—ङीप्] इलायची ।

√द्राह्—भ्वा० आत्म० अक० जागना । द्राहते, द्राहिष्यते, अद्राहिष्ट ।

√द्रु—भ्वा० पर० अक० भागना । बहना । तरल होना । घुल जाना । पिघलना । सक० आक्रमण करना । द्रवति, द्रोष्यति, अदुद्रुवत् ।

द्रु—(पुं०, न०) [√द्रु+डु] लकड़ी । लकड़ी का बना कोई भी उपकरण ।(पुं०) वृक्ष । शाखा, डाली ।—**किलिम**-(न०) देवदारु वृक्ष ।—**घण**-(पुं०) [द्रु√हन्+अप्, घनादेश, णत्व] काठ की हथौड़ी । बढ़ई की हथौड़ी जैसा लोहे का बना हथियार । कुल्हाड़ी । ब्रह्मा ।—**घ्नी**-(स्त्री०) कुल्हाड़ी ।—**नख**-(पुं०) काँटा ।—**नस**-(वि०) [द्रुरिव दीर्घा नासिकाऽस्य, ब० स०, समासान्त अच्, नसादेश, णत्व] लंबी नाक वाला ।—**सल्लक**-(पुं०) पियालवृक्ष ।

√द्रुण्—तु० पर० सक० मारना । टेढ़ा करना । जाना । द्रुणति, द्रोणिष्यति, अद्रोणीत् ।

द्रुण—(न०) [√द्रुण्+क] धनुष । तलवार । (पुं०) बिच्छू । भृंगी कीड़ा । बदमाश ।—**ह**-(पुं०) तलवार का म्यान ।

द्रुणा—(स्त्री०) [√द्रुण्+क, टाप्] ज्या, धनुष की डोरी ।

द्रुणि, द्रुणी—(स्त्री०) [√द्रुण्+इन्] [द्रुणि+ङीप्] छोटा या मादा कछुवा । बाल्टी, डोल । कनखजूरा, गोजर ।

द्रुत—(वि०) [√द्रु+क्त] तेज, वेगवान् । बहा हुआ । भागा हुआ । पिघला हुआ । तरल हुआ । (पुं०) बिच्छू । वृक्ष । बिलाव । हिरन । खरहा ।—**मध्या**-(स्त्री०) एक अर्धसम वर्णवृत्त (छंद) ।—**विलम्बित**-(न०) एक वर्णवृत्त। इसके प्रत्येक चरण में १२ अक्षर रहते हैं ।

द्रुति—(स्त्री०) [√द्रु+क्तिन्] पिघलना । जाना । भाग जाना ।

द्रुपद—(पुं०) पांडवों की पत्नी द्रौपदी के पिता जो पांचाल देश के राजा थे । इनका दूसरा नाम यज्ञसेन था ।

द्रुम—(पुं०) [समुदाये वृत्ताः शब्दाः अवयवेऽप्यपि वर्त्तन्ते इति न्यायात् द्रुः शाखा अस्ति अस्य, द्रु+म] वृक्ष, पेड़ 'यत्र द्रुमा अपि मृगा अपि बन्धवो मे उत्त० ३.८ । पारिजात । कुबेर ।—**अरि** (द्रुमारि)-(पुं०) हाथी ।

आमय (द्रुमामय)-(पुं०) लाख । गोंद ।—**आश्रय** (द्रुमाश्रय)-(पुं०) छिपकली ।—**ईश्वर** (द्रुमेश्वर)-(पुं०) ताड़ का पेड़ ।—**उत्पल** (द्रुमोत्पल)-(पुं०) कर्णिकार वृक्ष ।—**नख,—नर**-(पुं०) काँटा ।—**व्याधि**-(पुं०) लाख । गोंद ।—**श्रेष्ठ**-(पुं०) ताड़ का पेड़ ।

द्रुमषण्ड—(न०) [द्रुमाणां समूहः, द्रुम षण्डच्] पेड़ों का समूह ।

द्रुमिणी—(स्त्री०) [द्रुम+इनि—ङीप्] जंगल ।

द्रुवय—(पुं०) [द्रु+वय] परिमाण । लकड़ी की माप ।

√द्रुह्—दि० पर० सक० घृणा या नफरत करना। हानि पहुँचाने का अवसर ढूँढ़ना। बदला लेने के लिये षड्यन्त्र रचना। उपद्रव करने का मंसूबा बाँधना। द्रुह्यति, द्रोहिष्यति—ध्रोक्ष्यति, अद्रुहत्।

द्रुह—(वि०) [√द्रुह्+क] घायल करने वाला, चोटिल करने वाला। द्रोह करने वाला। (पुं०) पुत्र। झील।

द्रुहण, द्रुहिण—(पुं०) [द्रु संसारगति हन्ति, द्रु√हन्+अच्, णत्व] [द्रुह्यति दुष्टेभ्यः, √द्रुह्+इनन्, णत्व] ब्रह्मा या शिव का नाम।

√द्रू—क्या० उभ० सक० हिंसा करना। द्रूणाति—द्रूणीते, द्रविष्यति—ते, अद्रावीत् अद्रविष्ट।

द्रू—(पुं०) [√द्रु+क्विप्, दीर्घ] सुवर्ण।

द्रूघण—(पुं०) [=द्रुघण, पृषो० साधुः] दे० 'द्रुघण'।

द्रूण—(पुं०) [=द्रुण, पृषो० साधुः०] बिच्छू।

√द्रेक्—भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना। बढ़ना। अविनीत होना। द्रेकते, द्रेकिष्यते, अद्रेकिष्ट।

√द्रै—भ्वा० पर० अक० सोना। द्रायति, द्रास्यति, अद्रासीत्।

द्रोण—(पुं०) [द्रुण+अच् वा√द्रु+न] चार सौ बाँस लंबी झील। जल से भरा बादल; 'अनावृष्टिहते शस्ये द्रोणमेघ इवोदितः' मृ० १०.२६। वनकाक। बिच्छू। वृक्ष। सफेद फूलों का पेड़। कौरव और पाण्डवों के गुरु द्रोणाचार्य। (न०, पुं०) एक तौल जो १६ या ३२ सेर की होती है। (न०) कठौता। टब।—**आचार्य (द्रोणाचार्य)**—(पुं०) अश्वत्थामा के पिता।—**काक**–(पुं०) जंगली काक।—**क्षीरा**, —**घा**,—**दुग्धा**,—**दुघा**–(स्त्री०) एक द्रोण दूध देने वाली गाय।—**मुख**–(न०) ४०० ग्रामों की राजधानी।

द्रोणि, द्रोणी—[√द्रु+नि] [द्रोणि—ङीप्] डोंगी। पानी रखने का केले की छाल आदि का बना एक प्रकार का पात्र। कठवत। टब। द्रोणाचार्य की पत्नी। केले का पेड़। नील का पौधा। नाँद। १२८ सेर की तौल। घाटी।—**दल**–(पुं०) केतक वृक्ष।

द्रोह—(पुं०) [√द्रुह्+घञ्] उत्पात, उपद्रव। प्रतिहिंसा का भाव। द्वेष। विश्वासघात। विद्रोह। अपराध।—**अट (द्रोहाट)** (पुं०) दम्भी, पाखण्डी। शिकारी। झूठा आदमी।—**चिन्तन**–(न०) बुरा विचार।—**बुद्धि**–(वि०) उपद्रव करने को तुला हुआ। (स्त्री०) दुष्ट विचार।

द्रौणायन द्रौणायनि द्रौणि—(पुं०) [द्रोणस्य अपत्यं पुमान्, द्रोण+फक्—आयन्] [द्रोण+फिञ्—आयन्] [द्रोण+इञ्] द्रोणपुत्र अश्वत्थामा; 'यद्रामेण कृतं तदेव कुरुते द्रौणायनिः क्रोधनः' वे० ३.३१।

द्रौपदी—(स्त्री०) [द्रुपद+अण्—ङीप्] द्रुपद की पुत्री जो पाण्डवों को ब्याही गयी थी और जिसका कौरवों द्वारा भरी सभा में किया गया अपमान, कुरुक्षेत्र के इतिहास-प्रसिद्ध महायुद्ध के कारणों में से एक है।

द्रौपदेय—(पुं०) [द्रौपदी+ढक्—एय] द्रौपदी का पुत्र।

द्वन्द्व—(न०) [द्वौ द्वौ सहाभिव्यक्तौ, द्वि-शब्दस्य द्वित्वं, पूर्वपदस्य अम्भावः उत्तरपदस्य नपुंसकत्वं नि०] युगल, जोड़ा। स्त्री-पुरुष का, नर-मादा का जोड़ा, मिथुन; 'न चेदिदं द्वन्द्वमयोजयिष्यत्' कु० ७.६६। दो परस्पर विरुद्ध वस्तुओं या भावों का जोड़ा—जैसे शोक-मोह शीत-उष्ण आदि। झगड़ा, टंटा। मल्ल-युद्ध। सन्देह, अनिश्चय। गूढ़। गुप्तभेद। (पुं०) घड़ियाल जिस पर घंटा बजाया जाता है। समास का एक भेद।—**चर**,—**चारिन्**–(वि०) जुटा रहने वाला। (पुं०) चक्रवाक, चकवा।—**भाव**-(पुं०) विरोध, अनबन।—**भिन्न**-(न०) नर और मादा का बिछोह।—**भूत**–

(वि०) जोड़ा बाँधे हुए । सन्दिग्ध ।—**युद्ध**—(न०) दो का पारस्परिक युद्ध ।

द्वन्द्वशस्—(अव्य०) [द्वन्द्व+शस्] दो-दो करके, जोड़े में ।

द्वय—(वि०) [स्त्री०—**द्वयी**] [द्वौ अवयवौ यस्य, वा द्वि अवयवम्, द्वि+अयट्] दुगुना, दुहरा । दो प्रकार का ।(न०) जोड़ा । दो प्रकार का स्वभाव । मिथ्यापन ।—**अतिग** (**द्वयातिग**)—(वि०) रजस् और तमस् से रहित जिसका मन हो । (पुं०) ऋषि ।—**आत्मक** (**द्वयात्मक**)—(वि०) दो प्रकार के स्वभाव का ।—**वादिन्**—(वि०) दुरंगी बात कहने वाला ।

द्वापर—(न०, पुं०) [द्वौ परौ प्रकारौ विषयौ वा यस्य, पृषो० साधुः] तीसरे युग का नाम, पासे का वह पहल जिस पर दो बुंदे हों । सन्देह ।

द्वार्—(स्त्री०) [√द्वृ+णिच्+क्विप्] गृहनिर्गमस्थान दरवाजा । उपाय, साधन ।—**स्थ,—स्थित** (**द्वाःस्थ—द्वास्थ, द्वाःस्थित,—द्वास्थित**),—(पुं०)द्वारपाल,दरबान ।

द्वार—(न०) [√द्वृ+णिच्+अच्] दरवाजा, फाटक । शरीर के नौ छिद्र । माध्यम, साधन ।—**अधिप** (**द्वाराधिप**)—(पुं०) दरबान ।—**कण्टक**—(पुं०) चटखनी, बेंड़ा । —**कपाट**—(पुं०) न० किवाड़, पल्ला ।—**गोप,—नायक, —प, —पाल, —पालक**—(पुं०) द्वारपाल, दरबान ।—**दारु**—(पुं०) सागवान की लकड़ी ।—**पट्ट**—(पुं०) किवाड़ । दरवाजे का पर्दा ।—**पिण्डी**—(स्त्री०) देहली, दहलीज, ड्योढ़ी ।—**पिधान**—(पुं०) दरवाजे की चटखनी ।—**बलिभुज्**—(पुं०) काक । गौरैया ।—**बाहु**—(पुं०) बाजू ।—**यन्त्र**—(न०) ताला, चटखनी ।—**स्थ**—(पुं०) दरबान ।

द्वारका, द्वारिका—(स्त्री०) [द्वारेण (प्रशस्तद्वारेण] कायति, द्वार √कै+क—टाप्] [प्रशस्तानि द्वाराणि सन्ति अस्याम्, द्वार+ठन्, टाप्] गुजरात प्रान्त स्थित श्रीकृष्ण की राजधानी का नाम ।—**ईश** (**द्वारकेश**)—(पुं०) श्रीकृष्ण ।

द्वारवती, द्वारावती—(स्त्री०) [द्वार+मतुप्, वत्व—ङीप्, पक्षे नि० दीर्घ] द्वारका, श्रीकृष्ण की राजधानी का नाम ।

द्वारिक, द्वारिन्—(पुं०) [द्वा पाल्यत्वेन अस्ति अस्य, द्वार+ठन्] [द्वार+इनि] द्वारपाल, दरबान ।

द्वि—(वि०) [√द्व+डि] कर्त्ता द्विवचन—**द्वौ**—(पुं०)—**द्वे**—(स्त्री०),—**द्वे**—(न०) दो । दोनों ।—**अक्ष** (**द्व्यक्ष**)—(वि०) दो आँखों वाला ।—**अक्षर** (**द्व्यक्षर**)—(वि०) दो अक्षरों वाला ।—**अङ्गुल** (**द्व्यङ्गुल**)—(वि०) दो अंगुल लंबा । (न०) दो अंगुल की लंबाई ।—**अणुक** (**द्व्यणुक**)—(पुं०) दो अणुओं के योग से बना हुआ द्रव्य ।—**अर्थ** (**द्व्यर्थ**)—(वि०) दो अर्थ का । जटिल । दो लक्ष्यों वाला ।—**अशीत** (**द्व्यशीत**)—(वि०) ८२ वाँ ।—**अशीति** (**द्व्यशीति**)—(स्त्री०) ८२, बयासी ।—**अष्ट** (**द्व्यष्ट**)—(न०) ताँबा ।—**अह** (**द्व्यह**) दो दिवस की अवधि ।—**आत्मक** (**द्व्यात्मक**)—(वि०) दो प्रकार के स्वभाव वाला ।—**आमुष्यायण** (**द्व्यामुष्यायण**)—(पुं०) [अमुष्य प्रसिद्धस्य अपत्यम्, अदस्+फक्, —आमुष्यायणः, द्वयोः आमुष्यायणः, ष० त०] (पुं०) दो बाप का बेटा,एक तो अपने जनक का, दूसरे दत्तक लेने वाले पिता का ।—**ऋच** (**द्वृच**)—(न०) ऋचाओं का संग्रह ।—**क,—ककार**—(पुं०) काक ।—**ककुद** (पुं०) ऊँट ।—**क्षार**—(पुं०) शोरा और सज्जी ।—**गु**—(वि०) दो गाय के बदले में प्राप्त । (पुं०) तत्पुरुष समास का एक अवान्तर भेद जिसमें प्रथम शब्द संख्यावाची होता है ।—**गुण**—(वि०) दूना, दुगना । —**गुणित**—(वि०) दूना किया हुआ, दो से

गुणा किया हुआ।—चरण-(वि०) दो पैरों वाला। —चत्वारिंश-(द्विचत्वारिंश या द्वाचत्वारिंश)-(वि०)— ४२ वाँ।—चत्वारिंशत्- (स्त्री०)—(द्विचत्वारिंशत् या द्वाचत्वारिंशत्) ४२, बयालिस।—ज-(वि०) [द्वाभ्यां जन्मसंस्काराभ्यां जायते, द्वि√जन् +ड] दो बार उत्पन्न हुआ। (पुं०) ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य। ब्राह्मण जिसमें समस्त संस्कार हों। पक्षी; 'स तमानन्दमविन्दत द्विजः' नैष० २.१। सर्प, मछली आदि कोई भी अण्डज जन्तु। दाँत।—०बन्धु,— ०ब्रुव-(पुं०) केवल जन्म का ब्राह्मण किन्तु ब्राह्मणोचित कर्मों से रहित। ब्राह्मण बनने का दावा रखने वाला मनुष्य, बनावटी ब्राह्मण।—०राज-(पुं०) ब्राह्मण। श्रेष्ठ ब्राह्मण। चंद्रमा। गरुड़। कपूर।—०वाहन -(पुं०) विष्णु।—०व्रण-(पुं०) दाँत का एक रोग।—जन्मन्,—जाति-(पुं०) प्रथम तीन वर्णों में से कोई भी हिन्दू। ब्राह्मण। चिड़िया। दाँत।—जातीय-(वि०) प्रथम तीन वर्णों से सम्बन्ध युक्त।—जिह्व-(पुं०) सर्प। चुगलखोर। कपटी मनुष्य।—ठ-(पुं०) [द्वौ ठकारौ लेखनाकारौ यस्य, ब० स०] विसर्ग। स्वाहा।—त्रिंश (द्वात्रिंश)-(वि०) ३२ वाँ, बत्तीस का।—त्रिंशत् (द्वात्रिंशत्) -(स्त्री०) ३२।—दण्डि-(अव्य०) मिले हुए दो डंडों का प्रहार।—दत्-(वि०) दो दाँतों वाला।—दश-(वि०) २०, बीस।—दश (द्वादश)-(वि०) बारहवाँ। बारह से बना हुआ।—दशन् (द्वादशन्)-(वि० बहु०) १२, बारह।—०अंशु (द्वादशांशु)-(पुं०) बुध। बृहस्पति।—०आयुस् (द्वादशायुस्)-(पुं०) कुत्ता।—दशी (द्वादशी)-पक्ष की बारहवीं तिथि।—दैवत-(न०) विशाखा नक्षत्र।—देह- (पुं०) गणेश।—धातु-(पुं०) गणेश।—नवत-(वि०) ९२वाँ।—नवति-(स्त्री०) ९२।—प-(पुं०)हाथी।—पक्ष-(पुं०) चिड़िया। मास।—पञ्चाश-(वि०) ५२ वाँ।—पञ्चाशत्- (स्त्री०) ५२।—पथ- (न०) दो मार्ग।—पद-(पुं०) दो पैर का आदमी।—पदिका,—पदी-(स्त्री०) एक प्रकार की गीति जिसमें दो चरण होते हैं। एक मात्रिक वृत्त।—पाद्,—पाद-(पुं०) दो पैर का, आदमी। पक्षी। देवता।—पाद्य-(न०) [द्वौ पादौ परिमाणं यस्य, द्विपाद+यत्] दुहरी सजा।—पायिन्-(पुं०) हाथी।—बिन्दु-(पुं०) विसर्ग।—भुज-(पुं०) कोण।—भूम-(वि०) दोमंजला।—मातृ,—मातृज-(पुं०) गणेश। जरासन्ध।—मार्गी-(स्त्री०) चौराहा।—मुखा-(स्त्री०) जोंक।—मुखी-(स्त्री०) वह गाय जो बच्चा दे रही हो और जिसके बच्चे का मुँह और दो पैर ही पेट से निकल पाये हों।—र- (पुं०) भौंरा।—रद-(पुं०) हाथी; 'सममेव समाक्रान्तं द्वयं द्विरदगामिना' र० ४.४।—रसन -(पुं०) सर्प।—रात्र-(न०) दो रात।—रूप-(वि०) दो रूप वाला। दो रंग का।—रेतस्-(पुं०)खच्चर।—रेफ-(पुं०) भौंरा।—वज्रक-(पुं०) ५६ कोने का या सोलह पहल का घर विशेष।—वाहिका- (स्त्री०) दोला, झूला।—विंश (द्वाविंश)—(वि०) बाईसवाँ।—विंशति(द्वाविंशति)-(स्त्री०) बाईस।—विध (वि०) दो प्रकार का।—वेशरा-(स्त्री०) एक प्रकार की हल्की गाड़ी जिसमें दो खच्चर जोते जाते हैं।—शत- (न०) दो सौ। एक सौ दो।—शत्य-(वि०) दो सौ मूल्य का या दो सौ में खरीदा गया।—शफ-(वि०) दो खुर वाला कोई भी जानवर। (पुं०) चिरा हुआ सुम या खुर।—शीर्ष- (पुं०) अग्नि।—षष्-(वि०) दो बार ६, यानी १२।—षष्ट (द्विषष्ट, द्वाषष्ट)-(वि०) बास

ठवाँ।—षष्टि (द्विषष्टि, द्वाषष्टि)-(स्त्री०) बासठ।—सप्तत (द्वि, द्वा-सप्तत) (वि०) बहत्तरवाँ।—सप्तति (द्वि, द्वा, सप्तति)-(स्त्री०) बहत्तर।—सप्ताह-(पु०) एक पक्ष या पखवारा।—सहस्र,—साहस्र-(वि०) २००० से युक्त। (न०) दो हजार।—सीत्य,—हल्य-(वि०) दो प्रकार से जोता हुआ। अर्थात् प्रथम लंबान में दूसरी बार चौड़ान में।—सुवर्ण-(वि०) दो मोहरों में खरीदा हुआ या दो मोहरों के मूल्य का।—हन्- (पु०) हाथी।—हायन, —वर्ष-(वि०) दो वर्ष पुराना या दो वर्ष की उम्र का।—हीन-(वि०) नपुंसक लिङ्ग का।—हृदया- (स्त्री०) गर्भवती स्त्री।—होतृ-(पु०) अग्नि।

द्विक—(वि०) [द्वाभ्यां कायति, द्वि√कै+क] दो। [द्वितीयेन रूपेण ग्रहणम् इति कन् पूरणप्रत्ययस्य च लुक्] दूसरा। [द्वयोरवयवः द्वौ अवयवौ वा यस्य, कन्] दुगुना। दूसरी बार होने वाला। दो प्रतिशत बढ़ा हुआ: 'द्विकं शतं वृद्धिः' मनु० ८.१४१। (पु०) [द्वौ ककारौ यत्र] काक। चक्रवाक।

द्वितय—(वि०) [द्वौ अवयवौ यस्य, द्वि अवयव वा, द्वि+तयप्] [स्त्री०—द्वितयी] दो से युक्त अथवा दो में विभक्त। दूना। दूसरा। (न०) दो की संख्या।

द्वितीय—(वि०) [द्वयोः पूरणम्, द्वि+तीय] दूसरा। (पु०) कुटुम्ब में दूसरा, पुत्र। साथी।—आश्रम (द्वितीयाश्रम)-(पु०) गृहस्थाश्रम, गार्हस्थ्य।

द्वितीयक—(वि०) [द्वितीय+कन्] दूसरा। दूसरी बार होने वाला।

द्वितीया—(स्त्री०) [द्वितीय+टाप्] चान्द्र मास की दूसरी तिथि। पत्नी। एक विभक्ति।

द्वितीयाकृत—(वि०) [द्वितीयं कर्षणं कृतम् यत्र, द्वितीय+डाच् √कृ+क्त] दो बार जुता हुआ।

द्वितीयिन्—(वि०) [स्त्री०—द्वितीयिनी] [द्वितीय+इनि] दूसरे स्थान को अधिकृत किये हुए।

द्विधा—(अव्य०) [द्विप्रकारम्, द्वि+धाच्] दो भागों में। दो प्रकार से।—करण-(न०) दो भागों में विभक्त करना।—गति-(पु०) केकड़ा। मगर। जल-थल-चर जन्तु।

द्विशस्—(अव्य०) [द्वि+शस्] दो-दो करके।

√द्विष्—अ० उभ० सक० बैर करना। द्वेष्टि—द्विष्टे, द्वेक्ष्यति—ते, अद्विक्षत्—त।

द्विष्—(वि०) [√द्विष्+क्विप्] विरोधी, घृणा करने वाला। (पु०) शत्रु।

द्विष—(पु०) [√द्विष्+क] शत्रु।

द्विषत्—(पु०) [√द्विष्+शतृ] शत्रु, दुश्मन।

द्विष्ट—(वि०) [√द्विष्+क्त] जिससे द्वेष हो। (न०) [=द्वयष्ट पृषो० साधुः] ताँबा।

द्विस्—(अव्य०) [द्वि+सुच्] दुबारा।—आगमन (द्विरागमन)-(न०) गौना।—आप (द्विराप)-(पु०) हाथी।—उक्त (द्विरुक्त)-(वि०) दो बार कहा हुआ, दुहराया हुआ। फालतू, अधिक।—उक्ति (द्विरुक्ति)-(स्त्री०) पुनरावृत्ति, दुहराना। फालतूपन, व्यर्थत्व।—ऊढा (द्विरूढा)-(स्त्री०) स्त्री जिसका दो बार विवाह हुआ हो।—भाव (द्विर्भाव)-(पु०),—वचन (द्विर्वचन)-(न०) दुहराव।

द्वीप—(न०, पु०) [द्विर्गता आपो यस्मिन्, ब० स०, अच्, ईत्व] स्थल का वह भाग जिसके चारों ओर पानी हो। पुराणों के अनुसार जंबू आदि बड़े-भूभागों में से हर एक। अवलंब, सहारा। (न०) [द्वौ वर्णौ ईप्से, द्वि √ई+प] बाघ का चमड़ा।—कर्पूर-(पु०) चीन का कपूर।

द्वीपवत्—(वि०) [द्वीप+मतुप्, वत्व] द्वीपों से परिपूर्ण। (पु०) समुद्र।

द्वीपवती—(स्त्री०) [द्वीपवत्+ङीप्] पृथिवी ।

द्वीपिन्—(पुं०) [द्वीप+इनि] चीता; 'चर्मणि द्वीपिनं हन्ति' । लकड़बग्घा ।—**नख**—(पुं०) चीते का नाखून । सुगन्ध द्रव्य विशेष ।

द्वेधा—(अव्य०) [द्वि+धा] दो भागों में । दो प्रकार से ।

द्वेष—(पुं०) [√द्विष्+घञ्] घृणा, नफरत । शत्रुता ।

द्वेषण—(वि०) [√द्विष्+ल्यु] नफरत करने वाला । (पुं०) शत्रु । (न०) [√द्विष्+ल्युट्] द्वेष करने की क्रिया, घृणा । शत्रुता ।

द्वेषिन्, द्वेष्टृ—(वि०) [√द्विष्+णिनि] [√द्विष्+तृच्] घृणा करने वाला । वैर करने वाला । (पुं०) शत्रु ।

द्वेष्य—(वि०) [√द्विष्+ण्यत्] द्वेष करने योग्य । घृणा करने योग्य । (पुं०) शत्रु ।

द्वैगुणिक—(पुं०) [द्विगुणं ग्रहीतुम् एकगुणं ददाति, द्विगुण+ठक्] दूना ब्याज लेने वाला महाजन । वह ब्याजखोर जो सौ पर सौ ही सूद लेता है ।

द्वैगुण्य—(न०) [द्विगुण+ष्यञ्] दूनी रकम, दूना मूल्य या दूनी नाप । द्वैध । तीन गुणों में से दो गुणों की विद्यमानता (तीन गुण—सत्त्व, रजस् और तमस्) ।

द्वैत—(न०) [द्विधा इतं द्वीतं तस्य भावः, द्वीत+अण्] दो होने का भाव । जोड़ा, युगल । भेददृष्टि, भेदभावना । द्वैतवाद । अज्ञान, मोह ।—**वन**—(न०) एक वन जिसमें पांडवों ने कुछ समय तक निवास किया था ।—**वाद**—(पुं०) वह सिद्धान्त जिसमें जीव और ब्रह्म दो भिन्न पदार्थ मानकर विचार किया जाता है । वेदान्त को छोड़कर शेष पाँचों आस्तिक दर्शन इसी सिद्धान्त के पोषक हैं ।—**वादिन्**—(पुं०) द्वैत सिद्धान्त मानने वाला ।

द्वैतिन्—(पुं०) [द्वैत+इनि] द्वैतवादी (नैयायिक प्रभृति) ।

द्वैतीयीक—(वि०) [द्वितीय+ईकक्] दूसरा ।

द्वैध—(न०) [द्वि+धमुञ्] दुहरापन, दो प्रकार का स्वभाव या अवस्था । अन्तर, फर्क । सन्देह, शक । दो प्रकार का व्यवहार (भीतर कुछ और बाहर कुछ) । राजनीति के षड् गुणों में से एक । इसमें पारस्परिक व्यवहार में दो प्रकार का स्वभाव रखना पड़ता है अर्थात् मुख्य उद्देश्य को छिपा कर गौण उद्देश्य प्रकट किया जाता है ।

द्वैधीभाव—(पुं०) [द्वैध+च्वि√भू+घञ्] दे० 'द्वैध' । निश्चय का अभाव, दुविधा ।

द्वैध्य—(न०) [द्विधा+ष्यञ्] अन्तर, फर्क । छलबल, कपट ।

द्वैप—(वि०) [स्त्री०—**द्वैपी**] [द्वीप+अण्] द्वीप सम्बन्धी । टापू में रहने वाला । [द्वीप+अञ्] व्याघ्राम्बर से ढका हुआ या बना हुआ । (पुं०) व्याघ्र के चाम से मढ़ा हुआ रथ या गाड़ी ।

द्वैपायन—(पुं०) [द्वीपम् अयनम् उत्पत्तिस्थानं यस्य, ब० स०, द्वीपायन+अण्] वेदव्यास । इनका जन्म एक द्वीप में हुआ था, इसी से इनका यह नाम पड़ा ।

द्वैप्य—(वि०) [स्त्री०—**द्वैप्या** या **द्वैप्यी**] [द्वीप+यञ्] टापू में रहने वाला या टापू से सम्बन्ध रखने वाला ।

द्वैमातुर—(वि०) [द्वयोर्मात्रोरपत्यं, द्विमातृ+अण्, उत्व] दो माताओं वाला । (पुं०) गणेश । जरासन्ध ।

द्वैमातृक—(वि०) [स्त्री०—**द्वैमातृकी**] [द्वे मातृके इव यस्य, ब० स०, द्विमातृक+अण्] वह भूमि जो वृष्टि के जल और नदी के जल पर निर्भर हो ।

द्वैयह्निक—(वि०) [द्वयोरह्नोर्भवः, द्वि+अहन्+ठञ्, अह्न आदेश] जो दो दिनों में हो । जिसमें दो दिन लगें ।

द्वैरथ—(न०) [द्वौ रथौ यत्र युद्धे, ब० स०,

द्विरथ+अण्] वह युद्ध जो दो रथों द्वारा किया जाय।

द्वैराज्य—(न०) [द्विराज+ष्यञ्] वह राज्य जो दो राजाओं में बँटा है।

द्वैवार्षिक—(वि०) [द्विवर्ष+ठञ्—इक, पादिवृद्धि] दुसाला।

द्वैविध्य—(न०) [द्विविध+ष्यञ्] दो तरह का होने का भाव। भिन्नता। दुबिधा।

ध

ध—नागरी या संस्कृत वर्णमाला का उन्नीसवाँ व्यञ्जन और तवर्ग का चौथा वर्ण। इसका उच्चारण स्थान दन्तमूल है। इसके उच्चारण में आभ्यन्तर प्रयत्न की आवश्यकता होती है, और जिह्वा का अग्रभाग दाँतों के मूल में लगाना पड़ता है। बाह्य प्रयत्न संवार, नाद, घोष महाप्राण है। (वि०) [√धा +ड] धारण करने वाला। ग्रहण करने वाला, पकड़ने वाला। (न०) धनदौलत, सम्पत्ति। (पुं०) ब्रह्मा। कुबेर। धर्म।

धक्—(पुं०) [अव्युत्पन्न शब्द] कोष में निकलने वाला शब्द विशेष।

√धक्क्—चु० पर० सक० नाश करना। धक्कयति, धक्कयिष्यति, अदधक्कत्।

धट—(पुं०) [धं धनम् अटति गच्छति प्राप्नोति तौल्यत्वेन, ध√अट+अच्, शक० पररूप] तराजू। तराजू द्वारा कठोर परीक्षा। तुला राशि।

धटक—(पुं०) [धटेन तुलया कायति, धट √कै+क] ४२ रत्ती के वजन की एक पुरानी तौल।

धटिका, धटी—[धटी+कन्—टाप्, ह्रस्व] [√धन्+अच्, नि० नस्य टः, ङीप्] लँगोटी। चीर। गर्भाधान के उपरांत स्त्रियों को पहनने के लिये दिया जाने वाला वस्त्र।

धटिन्—(पुं०) [धट+इनि] व्यापारी। शिव जी। तुला राशि।

√धण्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना। धणति, धणिष्यति, अधाणीत्—अधणीत्।

धत्तूर, धत्तूरक—[√धयति धातून्, √धे +उरच्, पृषो० साधुः] [धत्तूर+कन्] धतूरा।

√धन्—जु० पर० सक० धानों को उत्पन्न करना। दधन्ति, धनिष्यति, अधानीत्—अधनीत्। दे० '√धन्'।

धन—(न०) [√धन्+अच्] सम्पत्ति, दौलत। प्रियतम कोई भी वस्तु। बहुमूल्य कोई भी वस्तु; 'कष्टं जनःकुलधनैरनुरञ्जनीयः', उत्त० १.१४। पूँजी। लूट का माल। खिलाड़ी को, जो खेल में जीता हो, दिया जाने वाला पुरस्कार। पुरस्कार प्राप्त करने के लिये भिड़न्त। अङ्कगणित में जोड़ का चिह्न (+)।—अधिकार (धनाधिकार)-(पुं०) पैतृक सम्पत्ति पर अधिकार पाने का हक।—अधिकारिन् (धनाधिकारिन्), अधिकृत— (धनाधिकृत)-(पुं०) खजानची, कोषाध्यक्ष। उत्तराधिकारी।—अधिगोप्तृ (धनाधिगोप्तृ),—अधिप (धनाधिप),—अधिपति (धनाधिपति),—अध्यक्ष (धनाध्यक्ष)-(पुं०) कुबेर। कोषाध्यक्ष।—अपहार (धनापहार)-(पुं०) जुर्माना। लूट।—अर्चित (धनार्चित)-(वि०) धन के दान से सम्मानित। मूल्यवान् भेंट देकर सन्तुष्ट रखा हुआ। धनी, अमीर।—अर्थिन् (धनार्थिन्)-(वि०) लालची। कंजूस।—आढ्य (धनाढ्य)-(वि०) धनी, धनवान्, अमीर।—आधार (धनाधार)-(पुं०) खजाना, कोषागार।—ईश (धनेश), —ईश्वर (धनेश्वर)-(पुं०) खजानची। कुबेर। विष्णु।—ऊष्मन् (धनोष्मन्)-(पुं०) धन की गर्माहट या गर्मी।—एषिन् (धनैषिन्)-(वि०) धन चाहने वाला। (पुं०) महाजन जो अपना रुपया माँगे।—केलि-(पुं०) कुबेर।—क्षय-(पुं०) धन का नाश।—गर्व, —गर्वित-(वि०) पास में रुपयों के तोड़े होने के कारण अभि-

मानी ।—जात-(न०) सम्पत्ति, सब प्रकार की मूल्यवान् अधिकृत सामग्री ।—द-(पुं०) उदार पुरुष । दानी पुरुष । कुबेर की उपाधि । अग्नि का नाम ।—दण्ड-(पुं०) अर्थदण्ड, जुर्माना ।—दायिन् -(पुं०) अग्नि ।—पति-(पुं०) कुबेर; 'तत्रागारं धनपतिगृहानुत्तरेणास्मदीयं' मे० ७५ ।— पाल-(पुं०) खजानची । कुबेर । —पिशाचिका, —पिशाची-(स्त्री०) धन का लालच, धनलिप्सा ।—प्रयोग-(पुं०) लाभ की इच्छा से किसी व्यापार में धन लगाना । सूद पर रुपया देना ।—मूल-(न०) पूंजी, मूलधन । —लोभ-(पुं०) लालच ।—व्यय-(पुं०) खर्च । फजूलखर्ची, अपव्यय ।—स्थान- (न०) कुंडली में लग्न से दूसरा स्थान जिसमें पड़े ग्रहों की स्थिति के अनुसार किसी का धनवान् या निर्धन होना जाना जाता है । कोषागार ।—हर-(पुं०) उत्तराधिकारी । चोर । गन्धविशेष ।

धनक—(पुं०) [धनस्य कामः, धन+कन्] धन की इच्छा ।

धनञ्जय—(पुं०) [धनं जयति सम्पादयति, धन√जि+खच्, मुम्] अर्जुन का नाम; 'धनस्य मध्ये तिष्ठामि तेनाहमौ धनञ्जयः' महा० । अग्नि की उपाधि ।

धनवत्—(वि०) [धन+मतुप्—वत्व] धनी, धनवान् ।

धनिक-(पुं०) [धनम् अस्ति अस्य, धन +ठन् वा धनिन्√कै+क] धनी पुरुष । महाजन । उत्तमर्ण । पति। ईमानदार व्यापारी। प्रियंगु वृक्ष ।

धनिन्—(वि०) [स्त्री०—धनिनी] [धनम् अस्ति अस्य, धन+इनि] अमीर, धनवान् । (पुं०) धनी आदमी । महाजन ।

धनिष्ठ—(वि०) [अतिशयेन धनी, धनिन्+इष्ठन्, इनो लोपः] बड़ा धनवान् ।

धनिष्ठा—(स्त्री०) [धनिष्ठ+टाप्] २३ वाँ नक्षत्र ।

धनी—(स्त्री०) [धनम् अस्ति अस्याः, धन +अच्—ङीप्] जवान स्त्री ।

धनु—(पुं०) [√धन्+उ] धनुष, कमान । मेष आदि बारह राशियों में से एक । प्रियंगु वृक्ष । चार हाथ की एक माप । रेतीला तट । (वि०) धनुर्धर, धनुष धारण करने वाला ।

धनुस्—(न०) [√धन्+उसि] दे० 'धनु' ।—कर (धनुष्कार)-(वि०) धनुर्धारी । कमान बनाने वाला ।—काण्ड (धनुःकाण्ड)-(न०) तीर कमान ।—खण्ड (धनुःखण्ड)-(न०) कमान का एक भाग ।—गुण (धनुर्गुण)-(पुं०) रोदा, कमान की डोरी ।—ग्रह (धनुर्ग्रह)-(पुं०) तीरन्दाज । —ज्या (धनुर्ज्या)-(स्त्री०) कमान की डोरी ।—द्रुम (धनुर्द्रुम)-(पुं०) बाँस । —धर,—भृत् (धनुर्धर)-(पुं०) तीरन्दाज । —पाणि (धनुष्पाणि)-(वि०) हाथ में धनुष लिये हुए ।—मार्ग (धनुर्मार्ग)-(पुं०) धनुषाकार रेखा ।—विद्या(धनुर्विद्या) -(स्त्री०) धनुष चलाने की विद्या ।—वृक्ष (धनुर्वृक्ष)-(पुं०) बाँस । अश्वत्थ वृक्ष । —वेद (धनुर्वेद)-(पुं०) अथर्ववेद के अन्तर्गत एक उपवेद जिसमें बाण चलाने की विद्या का वर्णन है ।

धनू—(स्त्री०) [√धन्+ऊ] कमान ।

धन्य—(वि०) [धन+यत्] धन देने वाला । जिससे धन प्राप्त हो । धनवान् । भाग्यवान् । सुकृती । गुणी । सर्वोत्कृष्ट, सर्वोत्तम । (न०) सम्पत्ति, धनदौलत । (पुं०) भाग्यवान् या सुकृती जन । नास्तिक । एक जादू का नाम । —वाद-(पुं०) शाबाशी, प्रशंसा, वाह वाह, सत्क्रिया । कृतज्ञताद्योतक शब्द ।

धन्यंमन्य—(वि०) [धन्य√मन्+खश्, मुम्]अपने को धन्य या भाग्यवान् मानने वाला ।

धन्या—(स्त्री०) [धन्य+टाप्] उपमाता। वनदेवी। मनु की एक कन्या जो ध्रुव को ब्याही थी। आमलकी, छोटा आँवला। धनिया।

धन्याक—(न०) [√धन्+आकन् नि० साधुः] धनिया।

√धन्व्—भ्वा० पर० सक० जाना। धन्वति, धन्विष्यति, अधन्वीत्।

धन्व—(न०) [√धन्+वन्] कमान। —धि-(पुं०) कमान रखने का बक्स।

धन्वन्—(पुं०, न०) [√धन्व्+कनिन्] सूखा जमीन, रेगिस्तान। समुद्रतट। आकाश। —दुर्ग-(न०) चारों ओर रेगिस्तान होने से अगम्य दुर्ग।

धन्वन्तर—(न०) चार हाथ या दो गज का नाप।

धन्वन्तरि—(पुं०) [धनुरुपलक्षणत्वात् शल्यादिचिकित्साशास्त्रं तस्य अन्तम् ऋच्छति, √ऋ+इ] देववैद्य, देवताओं के चिकित्सक। राजा विक्रमादित्य की सभा के एक रत्न। सूर्य। शिव।

धन्विन्—(वि०) [स्त्री०—**धन्विनी**] [धनु+इनि] कमान से सज्जित। (पुं०) तीरन्दाज; 'उत्कर्षः स च धन्विनां यदिषवः सिध्यन्ति लक्ष्ये चले' श० २.५। अर्जुन की उपाधि। शिव की उपाधि। धनु राशि।

धन्विन—(पुं०) [√धन्व्+इनन्] शूकर।

√धम्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना। धमति, धमिष्यति, अधमीत्।

धम—(वि०) [स्त्री०—**धमा, धमी**] [√धम्+अच्] धौंकने वाला। पिघलाने वाला। (पुं०) चन्द्रमा। कृष्ण की उपाधि। यम। ब्रह्मा।

धमक—(पुं०) [√धम्+ण्वुल्] लुहार।

धमन—(वि०) [√धम्+ल्यु] धौंकने वाला। निष्ठुर। [√धम्+ल्युट्] (न०) हवा फूंकने का काम। (पुं०) एक प्रकार का नरकुल।

धमनि, धमनी—(स्त्री०) [√धम्+अनि] [धमनि+ङीप्] नरकुल। नाड़ी, शिरा। गला, ग्रीवा।

धमि—(स्त्री०) [√धम्+इ] धौंकने की क्रिया।

धम्मल, धम्मिल, धम्मिल्ल—(पुं०) [धमतीति धम्, √धम्+क्विप्, मिलतीति मिल, √मिल्+क, पृषो० साधुः] स्त्री के सिर के बालों का जूड़ा जिसमें मोती और फूल आदि गुथे हों; 'उरसि निपतितानां स्रस्तधम्मिल्लकानां, भर्तृ०'।

धय—(वि०) [√धे+श] पीने वाला। चूसने वाला। (यथा स्तनंधय)।

धर—(वि०) [स्त्री०—**धरा—धरी**] [√धृ+अच्] पकड़ने वाला, धारण करने वाला। [यथा गङ्गाधर।] (पुं०) पहाड़। रुई का ढेर। विट, कुटना। कच्छपावतार। वसुओं में से एक का नाम।

धरण—(वि०) [स्त्री०—**धरणी**] [√धृ+ल्यु वा ल्युट्] धारण करने वाला। रक्षा करने वाला। वहन करने वाला। (न०) सहारा। खंभा। दस पल के समान की एक तौल। जमानत। (पुं०) बाँध। पुल। संसार। सूर्य। स्त्री के स्तन। चावल। हिमालय।

धरणि, धरणी—(स्त्री०) [√धृ+अनि] [धरणि+ङीष्] पृथ्वी। सेमर का पेड़। शहतीर। नस, नाड़ी। —**ईश्वर (धरणीश्वर)**-(पुं०) राजा। विष्णु। शिव। —**कीलक**-(पुं०) पहाड़। —**ज**, —**पुत्र**, —**सुत**-(पुं०) मङ्गल ग्रह। नरकासुर। —**जा**, —**पुत्री**, —**सुता**-(स्त्री०) श्रीसीता, जानकी। —**धर**-(पुं०) शेष। विष्णु। पर्वत। कच्छप। राजा। दिग्गज। —**भृत्**-(पुं०) पर्वत। विष्णु। शेष।

धरा—(स्त्री०) [√धृ+अच् वा √धृ+अप्—टाप्] पृथिवी। शिरा। गर्भाशय। योनि। गूदा। —**अधिप (धराधिप)**-(पुं०)

राजा ।—**अमर** (**धरामर**),—**देव**, —**सुर** –(पुं०) ब्राह्मण ।—**आत्मज** (**धरात्मज**), —**पुत्र**,—**सूनु**–(पुं०) मङ्गल ग्रह । नरकासुर ।—**आत्मजा** (**धरात्मजा**)–(स्त्री०) सीता जी ।—**धर**–(पुं०) पर्वत । कृष्ण या विष्णु । शेष नाग ।—**पति**–(पुं०) राजा । विष्णु ।—**भुज्**–(पुं०) राजा ।—**भृत्**–(पुं०) पर्वत ।

धरित्री—(स्त्री०) [√धृ+ इत्र–ङीप्] पृथिवी ।

धरिमन्—(पुं०) [√धृ+इमनिच्] तराजू । रूप ।

धर्तूर—(पुं०) [=धुस्तुर, पृषो० साधुः] धतूरे का पौधा ।

धर्त्र—(न०) [√धृ+त्र] घर । सहारा, टेक । यज्ञ । पुण्य । सदाचार ।

धर्म—(पुं, न०) [धरति लोकान् ध्रियते पुण्यात्मभिः इति वा, √धृ+मन्] वह कर्म जिसके करने से करने वाले का इस लोक में अभ्युदय हो और परलोक में मोक्ष की प्राप्ति हो; 'एक एव सुहृद् धर्मो निधनेऽप्यनुयाति यः' हि० १.५५ । आईन, कानून । कर्त्तव्य । न्याय । किसी वस्तु या व्यक्ति की वह वृत्ति जो उसमें सदा रहे और उससे कभी पृथक् न हो । ईश्वर-भक्ति । कर्त्तव्याकर्त्तव्य-अवधारण-विषयक शास्त्र । समानता । यज्ञ । सत्सङ्ग । तौर-तरीका । उपनिषद् । (पुं०) युधिष्ठिर का का नाम । यम का नाम ।—**अङ्ग** (**धर्माङ्ग**) –(पुं०), —**अङ्गा** (**धर्माङ्गा**)–(स्त्री०) बगला । सारस ।—**अधर्म** (**धर्माधर्म**)–(पुं०द्विवचन) शुभ और अशुभ । उचित और अनुचित ।—**अधिकरण** (**धर्माधिकरण**)–(न०) आईन के अनुसार शासन । आईन का प्रयोग करना ।—**अधिकरणिन्** (**धर्माधिकरणिन्**)–(पुं०) न्यायाधीश ।—**अधिकार** (**धर्माधिकार**)–(पुं०) धार्मिक कृत्यों की व्यवस्था । न्याय का प्रयोग । न्यायाधीश का पद ।—**अधिष्ठान** (**धर्माधिष्ठान**) –(न०) न्यायालय ।—**अध्यक्ष** (**धर्माध्यक्ष**) –(पुं०) न्यायाधीश । विष्णु ।—**अनुष्ठान** (**धर्मानुष्ठान**)–(न०) धार्मिक या पुण्य कार्य करना । धर्मानुसार व्यवहार करना, सदाचरण ।—**अपेत** (**धर्मापेत**)–(वि०) सत्कर्म से अलग । अधार्मिक । (न०) पाप, असत्कर्म । अन्याय ।—**अरण्य** (**धर्मारण्य**) –(न०) तपोभूमि । ऋष्याश्रम ।—**अलीक** (**धर्मालीक**)–(वि०) असदाचरणी ।—**आगम** (**धर्मागम**)–(पुं०) धर्मशास्त्र ।—**आचार्य** (**धर्माचार्य**)–(पुं०) धर्म की शिक्षा देने वाला । धर्म शास्त्र का अध्यापक ।—**आत्मज** (**धर्मात्मज**)–(पुं०) युधिष्ठिर । —**आत्मन्** (**धर्मात्मन्**)–(वि०) धर्मशील, धार्मिक । पवित्र ।—**आसन** (**धर्मासन**)–(न०) न्याय का सिंहासन; 'धर्मासनाद् विशति वासगृहं नरेन्द्रः' उत्त० १.७ ।—**इन्द्र** (**धर्मेन्द्र**)–(पुं०) युधिष्ठिर ।—**ईश** (**धर्मेश**)–(पुं०) यमराज ।—**उत्तर** (**धर्मोत्तर**–(वि०) न्याय करने और पक्षपात-शून्य होने में प्रसिद्ध ।—**उपदेश** (**धर्मोपदेश**)–(पुं०) धर्मशास्त्र की शिक्षा । धर्मशास्त्रों का समुच्चय ।—**कर्मन्**,— **कार्य**–(न०),—**क्रिया**–(स्त्री०) कोई भी धार्मिक कृत्य, कोई भी धर्मानुष्ठान, कोई भी धार्मिक विधि या विधान । सदाचरण ।—**कवादरिद्र**–(पुं०) कलियुग का मानव ।—**काय**–(पुं०) बुद्धदेव ।—**कील**–(पुं०) राजा की ओर से दानपत्र या दान देने की आज्ञा ।—**केतु**–(पुं०) बुद्धदेव ।—**कोश**, —**कोष**–(पुं०) धर्मशास्त्रों का समूह या कर्त्तव्य कर्मों का समुच्चय ।—**क्षेत्र**–(न०) भारतवर्ष; 'धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेताः युयुत्सवः' भग० १.१ । दिल्ली के पास का एक स्थान, कुरुक्षेत्र ।—**घट**–(पुं०) वैशाख मास में (ब्राह्मण को दिया जाने वाला) सुगन्धयुक्त जल से पूर्ण

धड़ा ।—**चक्र**-(न०) धर्म-समूह । प्राचीन काल का एक अस्त्र । बुद्ध की शिक्षा ।—°**भृत्**-(पुं०) बौद्ध या जैन ।—**चरण**-(न०),—**चर्या**-(स्त्री०) धर्मशास्त्रानुसार आचरण । धार्मिक कर्त्तव्यों का नियमित अनुष्ठान ।—**चारिन्**-(वि०) पुण्यात्मा, धर्मात्मा । (पुं०) संन्यासी ।—**चारिणी**-(स्त्री०) पत्नी । सती स्त्री ।—**चिन्तन**-(न०),—**चिन्ता**-(स्त्री०) धार्मिक विषयों का मनन ।—**ज**-(पुं०) धर्मराज की औरस सन्तान, युधिष्ठिर ।—**जन्मन्**-(पुं०) युधिष्ठिर का नाम ।—**जिज्ञासा**-(स्त्री०) धर्म सम्बन्धी बातें जानने की इच्छा ।—**जीवन**-(वि०) वह पुरुष जो अपने वर्ण के धर्मानुसार आचरण करता है ।—**ज्ञ**-(वि०) जिसे धर्म के स्वरूप का ज्ञान हो । उचित-अनुचित जानने वाला ।—**त्याग**-(पुं०) धर्म को छोड़ देना, धर्म विशेष के ऊपर से विश्वास हटा लेना ।—**दारा**-(पुं० बहुवचन) धर्मपत्नी ।—**दुघा**-(स्त्री०) वह गाय जिसका दूध केवल धार्मिक कृत्यों के लिये दुहा जाता हो ।—**द्रवी**-(स्त्री०) गंगा ।—**द्रोहिन्**-(पुं०) राक्षस ।—**धातु**-(पुं०) बुद्ध की उपाधि ।—**ध्वज**, —**ध्वजिन्**-(पुं०) पाखण्डी, दम्भी ।—**नन्दन**-(पुं०) युधिष्ठिर ।—**नाथ**-(पुं०) धर्मानुसार स्वामी या मालिक ।—**नाभ**-(पुं०) विष्णु ।—**निवेश**-(पुं०) धर्म के प्रति भक्ति ।—**निष्पत्ति**-(स्त्री०) कर्तव्यपालन ।—**पत्नी**-(स्त्री०) शास्त्र-विधि* से परिणीत पत्नी ।—**पर**-(वि०) धर्मपरायण, पुण्यात्मा, सुकृती ।—**परिणाम**-(पुं०) एक धर्म के अनन्तर दूसरे धर्म में प्रवेश (योग) ।—**पाठक**-(पुं०) धर्मशास्त्र पढ़ाने वाला ।—**पाल**-(पुं०) धर्म की रक्षा करने वाला । दंड (जिसके डर से लोग धर्म-विरुद्ध आचरण नहीं करते) । राजा दशरथ के एक मंत्री । धर्मशास्त्र रक्षक ।—**पीड़ा**-(स्त्री०) धर्मशास्त्र के विरुद्ध आचरण ।—**पुत्र**-(पुं०) वह सन्तान जो कर्त्तव्य समझ कर उत्पन्न की जाय न कि सुखभोग के उद्देश्य से । युधिष्ठिर की उपाधि ।—**प्रतिरूपक**-(न०) किसी संपन्न मनुष्य द्वारा दुःख भोगते हुए स्वजनों की उपेक्षा करके केवल यश के लिये दूसरों को दिया गया दान (मनु०) (ऐसा दान धर्म का आभासमात्र है) ।—**प्रवक्तृ**-(पुं०) धर्म शास्त्र का व्याख्याता, कानूनी सलाहकार, धर्मव्यवस्थादाता । धर्मोपदेष्टा, धर्मोपदेशक ।—**प्रवचन**-(न०) कर्त्तव्य सम्बन्धी विज्ञान । धर्मशास्त्र का व्याख्यान । (पुं०) धर्मशास्त्र का व्याख्याता । बुद्धदेव की उपाधि ।—**वाणिजिक**,—**वाणिजिक**-(पुं०) वह मनुष्य जो धार्मिक कृत्यों को इसलिये करता है कि उसे उनसे कुछ लाभ उसी प्रकार हो जिस प्रकार बनिये को व्यापार करने से होता है ।—**भगिनी**-(स्त्री०) वह स्त्री जो धर्म के नाते बहिन लगे, धर्मबहिन । धर्मगुरु की पुत्री ।—**भागिनी**-(स्त्री०) सती भार्या, पतिव्रता पत्नी ।—**भाणक**-(पुं०) पुराण-पाठक, कथावाचक ।—**भ्रातृ**-(पुं०) वह मनुष्य जो धर्म के नाते भाई लगे । गुरुपुत्र ।—**महामात्र**-(पुं०) सचिव जिसके हाथ में धर्मादा विभाग हो ।—**मूल**-(न०) धर्म का प्रामाणिक आधार—(१) वेद, (२) वेद के जानने वालों की स्मृति और उनके रागद्वेषादिपरित्यागात्मक शील, (३) साधुओं के आचार और आत्मतुष्टि ।—**युग**-(न०) कृतयुग, सत्ययुग ।—**यूप**-(पुं०) विष्णु ।—**रति**-(वि०) जिसे धर्म के प्रति अनुराग हो । धर्मपरायण । (स्त्री०) धर्मानुराग ।—**राज**-(पुं०) यमराज । जिन । युधिष्ठिर । राजा ।—**रोधिन्**-(वि०) धर्म-शास्त्र-विरुद्ध । अधार्मिक । असदाचरणी ।—**लक्षण**-(न०) धर्म की पहचान । वेद ।—**लक्षणा**-(स्त्री०) मीमांसा दर्शन ।—

लोप–(पुं० धर्माचरण का नाश । असदाचरण ।—**वत्सल**–(वि०) जिसे धर्म प्यारा हो, धर्मात्मा ।—**वर्तिन्**–(वि०) जो धर्मानुकूल आचरण करे, पुण्यात्मा ।—**वासर**–(पुं०) पूर्णमासी ।—**वाहन**–(पुं०) शिव । भैंसा (धर्मराज का वाहन) ।—**विद्**-(वि०) धर्मशास्त्र का जानने वाला ।—**विप्लव**–(पुं०) धर्म का व्यतिक्रम । असदाचरण ।—**वैतंसिक**–(पुं०) अन्याय से उपार्जित धन का दान करने वाला, इस आशा से कि लोग उसे उदार या दानी मानें ।—**व्याध**–(पुं०) मिथिलावासी एक व्याध जिसने कौशिक नाम के तपस्वी को धर्म का तत्त्व समझाया था ।—**व्रता**–(स्त्री०) मरीचि ऋषि की पत्नी जो परम साध्वी थी ।—**शाला**–(स्त्री०) वह स्थान जहाँ धर्मार्थ अन्नादि बँटता हो, धर्मसत्र । यात्रियों के निःशुल्क ठहरने के लिये बनवाया हुआ स्थान । न्यायालय । कोई भी धार्मिक संस्था ।—**शासन**,—**शास्त्र**–(न०) कर्त्तव्याकर्त्तव्य का यथार्थ उपदेशक शास्त्र, मनुस्मृति आदि धर्मशास्त्र ।—**शील**–(वि०) धर्म के अनुसार आचरण करने वाला, धार्मिक ।—**संहिता**–(स्त्री०) मनु-याज्ञवल्क्यादि स्मृतियाँ ।—**सङ्ग**–(पुं०) न्याय या सुकर्म के प्रति अनुराग । दम्भ, पाखण्ड ।—**सभा**–(स्त्री०) न्यायालय ।—**सहाय**–(पुं०) किसी धार्मिक कृत्य के अनुष्ठान में भाग लेने वाला या सहायता पहुँचाने वाला (ऋत्विक् आदि)।—**सावर्णि**–(पुं०) बारहवें मनु ।—**सुत**–(पुं०) युधिष्ठिर ।—**सूत्र**–(न०) जैमिनिरचित धर्ममीमांसाविषयक एक ग्रन्थ ।—**सेतु**–(पुं०) धर्म की रक्षा करने वाला । शिव ।—**स्थ**–(पुं०) विचारपति । (वि०) धर्म में अवस्थित या लगा रहने वाला ।

धर्मतः—(अव्य०) [धर्म+तस्] नियम या धर्म शास्त्रानुसार ।

धर्मयु—(वि०) [धर्म+यु] धर्मात्मा । न्यायी ।

धर्मिन्—(वि०) [धर्म+इनि] धर्मात्मा । न्यायी । अपना कर्त्तव्य जानने वाला । धर्मशास्त्रानुसार चलने वाला । विशेष लक्षणयुक्त । (पुं०) विष्णु ।

धर्मीपुत्र—(पुं०) नाटक का पात्र, अभिनेता ।

धर्म्य—(वि०) [धर्मात् अनपेतः, धर्म+यत्] धर्मयुक्त, धर्मानुसार; 'धर्म्याद्धि युद्धाच्छ्रेयो ऽन्यत्क्षत्रियस्य न विद्यते' भग० २.३१ । धार्मिक । न्यायवान् । [धर्मेण प्राप्यः, धर्म+यत्] धर्म- करने से प्राप्त होने योग्य ।

धर्ष—(पुं०) [√धृष्+घञ्] अविनय, अविनीत व्यवहार, धृष्टता । अभिमान । अधैर्य । असंयम । सतीत्व-हरण । अपमान । रोक, दबाव । हिजड़ा, नपुंसक ।—**कारिणी**–(स्त्री०) स्त्री जिसका सतीत्व हरण हो चुका हो ।

धर्षक—(वि०) [√धृष्+ण्वुल्] ढिठाई करने वाला । अपमान करने वाला । दमन करने वाला । सतीत्व-हरण करने वाला । असहनशील । (पुं०) व्यभिचारी । अभिनयकर्त्ता, नट, नर्तक ।

धर्षण—(न०), **धर्षणा**–(स्त्री०) [√धृष्+ल्युट्] [√धृष्+णिच्+युच्] अवज्ञा, अपमान । आक्रमण । सतीत्वहरण । सम्भोग, रति । कुवाक्य, गाली ।

धर्षणि, धर्षणी—(स्त्री०) [कर्षतीति,√कृष्+अणि, कस्य धः] [धर्षणि+ङीष्] असती, कुलटा स्त्री ।

धर्षित—(वि०)[√धृष्+णिच्+क्त] दबाया या दमन किया हुआ । गाली दिया हुआ । अपमानित किया हुआ । (न०) अभिमान । मैथुन । असहिष्णुता ।

धर्षिता—(स्त्री०) [धर्षित+टाप्] वेश्या । असती स्त्री ।

धर्षिन्—(वि०) [√धृष्+णिनि] धृष्ट । असहिष्णु । आक्रमण करने वाला । दबाने वाला । अभिमानी । सतीत्वहरण करने

वाला । अपमान करने वाला । मैथुन करने वाला ।

धर्षिणी—(स्त्री०) [धर्षिन्+ङीप्] वेश्या। कुलटा स्त्री ।

धलण्ड—(पुं०) [√धा+ड, तं लण्डयति उत्क्षिपति इति √लण्ड्+अण्] दुष्कण्टक वृक्ष, अंकोल ।

धव—(पुं०) [√धु+अप्] कंपन, थरथराना । [√धु+अच्] पति, स्वामी । पुरुष । धूर्त मनुष्य । एक वृक्ष जिसकी जड़, पत्ती, फूल आदि दवा के काम आते हैं ।

धवल—(वि०) [√धाव्+कल, ह्रस्व] सफेद । सुन्दर । साफ, विशुद्ध । (न०) सफेद कागज ।–(पुं०) सफेद रंग । श्रेष्ठ बैल । चीन का कपूर । धव का पेड़ ।—**उत्पल** (**धवलोत्पल**)–(न०) सफेद कमल या कुमुदिनी जो चन्द्रमा के उदय होने पर खिलती है ।—**गिरि**–(पुं०) हिमालय की सर्वोच्च चोटी ।—**गृह**–(न०) चूने से पुता घर । राजप्रासाद ।—**पक्ष**–(पुं०) हंस । चान्द्रमास का शुक्लपक्ष ।—**मृत्तिका**–(स्त्री०) खड़िया मिट्टी, दुधिया ।

धवला—(स्त्री०) [धवल+टाप्] उजली गाय । गोरे रंग की स्त्री ।

धवली—(स्त्री०) [धवल+ङीष्] सफेद रंग की गाय । सफेद मिर्च ।

धवलित—(वि०) [धवल+इतच्] सफेद किया हुआ ।

धवलिमन्—(पुं०) [धवल+इमनिच्] सफेदी । श्वेतता । पीलापन; 'प्रियविरहजन्मा धवलिमा'।

धवित्र—(न०) [√धू+इत्र] मृगचर्म का बना पंखा ।

√धा—जु० उभ० सक० रखना, स्थापित करना । जड़ना, बैठाना । गाड़ना । निर्देश करना । पान करना । थामना, पकड़ना । ग्रहण करना । पहनना, धारण करना । दिखाना । वहन करना । सहन करना । समर्थन करना । सहारा लगाना । उत्पन्न करना । झेलना, भोगना । पोषण करना । दधाति—धत्ते, धास्यति–ते, अधात्—अधित ।

धाक—(पुं०) [√धा+क] बैल । पात्र । भोज्य पदार्थ । खंभा ।

धाटी—(स्त्री०) [√धट्+घञ्–ङीष्] आक्रमण, हमला । प्रपात ।

धाणक—(पुं०) [√धा+आणक] एक प्राचीन स्वर्ण-मुद्रा ।

धातु—(पुं०) [√धा+तुन्] सोना, चाँदी आदि खनिज पदार्थ; 'त्वामालिख्य प्रणयकुपितां धातुरागैः शिलायां' मे० १०५ । रस, रक्त, मांस आदि सात शरीरस्थ पदार्थ । पंचमहाभूत—पृथिवी, जल, तेज, वायु और आकाश । वात, पित्त और कफ । क्रिया सम्बन्धी धातु । जीवात्मा । परमात्मा । इन्द्रिय । इन्द्रियजन्य कर्म यथा रूप, रस, गन्ध आदि । हड्डी ।—**उपल** (**धातूपल**)–(पुं०) खड़िया मिट्टी ।—**काशीश**,—**कासीस**–(न०) कसीस ।—**कुशल**–(वि०) लोहा, पीतल आदि से वस्तु बनाने में पटु ।—**क्षय**–(पुं०) शरीर के तत्त्वों का क्षय । क्षयरोग ।—**गर्भ**,—**गोप**–(पुं०) बुद्ध आदि महात्माओं की अस्थि रखने का डिब्बा (बौद्ध)।—**घ्न**–(वि०) जो धातुओं का मारक हो । (न०) काँजी ।—**द्रावक**–(पुं०) सोहागा ।—**भृत्**–(पुं०) पर्वत ।—**मल**–(न०) वैद्यक के अनुसार वात, पित्त, कफ, पसीना, नाखून, बाल, आँख या कान का मैल आदि, जिनकी सृष्टि शरीरस्थ किसी धातु के परिपक्व हो जाने पर उसके बचे हुए निरर्थक अंश या मल से होती है । सीसा ।—**माक्षिक**–(न०) सोनामक्खी नाम की उपधातु ।—**मारिन्**–(पुं०) गन्धक ।—**राजक**–(पुं०) वीर्य ।—**वल्लभ**–(न०) सोहागा ।—**वाद**–(पुं०) रासायनिक क्रिया

द्वारा सोना, चाँदी आदि बनाने की कला, कीमियागरी ।—**वादिन्**–(पुं०) रसायनी, कीमियागर ।—**वैरिन्**–(पुं०) गन्धक ।—**शेखर**–(न०) कसीस । सीसा ।—**शोधन**, —**सम्भव**–(न०) सीसा ।—**संज्ञ**–(न०) सीसा ।—**साम्य**–(न०) वात, पित्त, कफ की समावस्था । अच्छा स्वास्थ्य ।—**सारिणी** —(स्त्री०) सुहागा ।—**स्तम्भक** –(वि०) जो वीर्य का स्तंभन करे ।—**हन्**– (पुं०) गंधक ।

धातुमत्—(वि०) [धातु+मतुप्] जिसमें धातु की विपुलता हो ।

धातृ—(पुं०) [√धा+तृच्] ब्रह्मा । शिव । विष्णु । जीव । सप्तर्षियों का नाम । विवाहिता स्त्री का प्रेमी या आशिक। वायु के ४९ भेदों में से एक । सूर्य के १२ भेदों में से एक । ब्रह्मा के एक पुत्र का नाम । भृगु के एक पुत्र । (वि०) धारण करने वाला, धारक । पोषण करने वाला, पोषक ।

धात्र—(न०) [√धा+ष्ट्रन्] पात्र जिसमें कोई चीज रखी जा सके ।

धात्री—(स्त्री) [धात्र+ङीप्] दाई, धाय, उपमाता । माता । पृथिवी । आँवले का वृक्ष; 'धात्रीफलं सदा पथ्यम्' ।—**पुत्र**–(पुं०) धाय का लड़का । नट, अभिनयकर्त्ता ।—**फल**–(न०) आँवला ।

धात्रेयिका, धात्रेयी—(स्त्री०) [धात्री+ढक्–ङीप् धात्रेयी] [धात्रेयी+कन्–टाप्, ह्रस्व] धाय की लड़की । धाय, धात्री ।

धान—(न०), **धानी**–(स्त्री०) [√धा+ल्युट्] [धान+ङीप्] पोषण । आधार । वह जिसमें कोई वस्तु रखी जाय, पात्र, स्थान, जगह । जैसे मसीधानी, राजधानी ।

धाना—(स्त्री० बहु०) [√धा+न–टाप्] भुने हुए जौ या चावल । भुना हुआ कोई भी अनाज । अनाज । अंकुर ।

धानुर्दण्डिक, धानुष्क—(पुं०) [धनुर्दण्ड+ठक्] [धनुष्+ठक्+क] धनुर्धर, तीरन्दाज; 'निमित्तादपराद्धेषोर्धानुष्कस्येव वल्गितं' शि० २.२७ ।

धानुष्य—(पुं०) [धनुषि साधुः, धनुष्+यत्] बाँस ।

धानेय, धानेयक—(न०) धनिया ।

धान्या—(स्त्री०) इलायची, एला ।

धान्य—(न०) [धाने पोषणे साधु, धान+यत्] अन्न, अनाज । सतुष अन्न । धान । चार तिल का एक प्राचीन परिमाण । धनिया ।—**अर्थ** (**धान्यार्थ**)–(पुं०) धान के रूप में संपत्ति ।—**अम्ल** (**धान्याम्ल**)–(न०) काँजी, माँड़ का बना हुआ खट्टा पदार्थ ।—**अस्थि** (**धान्यास्थि**)–(न०) भूसी, चोकर ।—**उत्तम** (**धान्योत्तम**)–(वि०) अनाजों में उत्तम अर्थात् चावल ।—**कल्क**–(न०) भूसी । पुआल ।—**कोश**–(पुं०),—**कोष्ठक**–(न०) खत्ती, अनाज का भण्डार ।—**क्षेत्र**–(न०) अनाज का खेत ।—**चमस**–(पुं०) विशेष क्रिया से तैयार किया हुआ चावल, चिउड़ा, चिपिटक ।—**चारिन्**, —**जीविन्**–(पुं०) पक्षी ।—**तुषोद**–(पुं०) काँजी ।—**त्वच्** –(स्त्री०) अनाज की भूसी ।—**पञ्चक**–(न०) अन्न के पाँच भेद (शालि, व्रीहि, शूक, शिम्बी, क्षुद्र) । धान्यपंचक को एक साथ उबाल कर तैयार किया जाने वाला एक प्रकार का पाचक पानी जो अतीसार में दिया जाता है (आयुर्वेद) ।—**पति**–(पुं०) चावल । अन्न, जौ ।—**माय**–(पुं०) अनाज का व्यापारी ।—**राज**–(पुं०) जौ ।—**वर्धन**–(न०) ब्याज पर अनाज उधार देना ।—**वीज**,—**बीज**–(न०) धनिया ।—**वीर**–(पुं०) उड़द, माष ।—**शीर्षक**–(न०) अनाज की बाल ।—**शूक**–(न०) टूँड़ ।—**सार**–(पुं०) कूटा हुआ अनाज, चावल ।

धान्या—(स्त्री०), —**धान्याक**—(न०) [= धन्याक, पृषो० साधुः] [धन्याक+अण्] धनिया।

धान्वन—(वि०) [स्त्री०—**धान्वनी**] [धन्वन्+अण्] मरुदेशस्थ। मरुदेशसंबन्धी।

धामक—(पुं०) [=धानक, पृषो० साधुः] एक माशे की तौल। एक प्रकार की सुगंध घास।

धामन्—(न०) [दधाति गृहस्थादिकं धीयते द्रव्यजातम् अस्मिन् इति वा,√धा+मनिन्] गृह, घर। निवासस्थान। स्थान। शोभा। देवस्थान। किरण। प्रकाश। बल। प्रताप। उत्पत्ति। शरीर। (सैन्य) दल। समूह। दशा, परिस्थिति।—**केशिन्**, —**निधि**—(पुं०) सूर्य।

धामनिका, **धामनी**—(स्त्री०) [धामनी कन्—टाप्, ह्रस्व] [धमनी+अण्—ङीप्] धमनी, नाड़ी, शिरा।

धाय्य—(पुं०) [धीयते आश्रियते मङ्गलार्थम् √धा+ण्यत्, युक्] पुरोहित।

धाय्या—(स्त्री०) [धीयते समित् अनया, √धा+ण्यत्, युक् टाप्] वह ऋचा (वेदमन्त्र) जो अग्नि प्रज्वलित करते समय पढ़ी जाती है।

धार—(वि०) [√धृ+अण्] ग्रहण करने वाला। वहन करने वाला। सहारा देने वाला। बहने वाला। (पुं०) विष्णु। (न०) [धाराया इदम्, धारा+अण्] जमा किया हुआ वर्षा का जल जो बड़ा गुणकारी होता है। अचानक मूसलधार जलवृष्टि। ओला। गहरी जगह। ऋण। सीमा।

धारक—(वि०) [√धृ+ण्वुल्] धारण करने वाला। (पुं०) कलश, घड़ा। पात्र। संदूक आदि।

धारण—[√धृ+णिच्+ल्युट्] किसी वस्तु को ग्रहण करना या उसका आधार बनना, पकड़ना, थामना या लेना। पहनना। ऋण या उधार लेना। अवलंबन ग्रहण करना। सुरक्षित रखना। स्मरण रखना।

धारणक—(पुं०) कर्जदार, ऋणी।

धारणा—(स्त्री०) [√धृ + णिच्+युच्, टाप्] धारण करने की क्रिया या भाव। वह शक्ति जिसमें कोई बात मन में धारण की जाती है, बुद्धि, समझ; 'परिचेतुमुपांशु-धारणाम्' र० ८.१८। दृढ़ निश्चय, पक्का विचार। मर्यादा। योग के आठ अंगों में से एक। विश्वास।—**शक्ति**—(स्त्री०) याद रखने की ताकत।

धारणी—(स्त्री०) [√धृ+णिच्+ल्युट्—ङीप्] पंक्ति, रेखा। शिरा।

धारयित्री—(स्त्री०) [√धृ+णिच्+तृच्—ङीप्] धारण करने वाली। पृथिवी।

धारा—(स्त्री०) [√धृ+णिच्+अङ्—टाप्] जल का प्रवाह, धार; 'तर्जितः परशुधारया मम' र० ११.७८। घड़े का छेद जिससे पानी या अन्य कोई तरल पदार्थ बहे। घोड़े की चाल। सिरा। पहाड़ का किनारा। पहिया। बाग की दीवाल या घेरा। सेना का अग्रभाग। सर्वोच्चस्थान। समूह। कीर्ति। रात। हल्दी। समानता। कान का अग्रभाग।—**अग्र** (**धाराग्र**)—(पुं०) बाण का चौड़ा फल।—**अङ्कुर** (**धाराङ्कुर**)—(पुं०) वृष्टिजल की बूँद। ओला। शत्रुसैन्य के सम्मुख आगे बढ़ना।—**अङ्ग** (**धाराङ्ग**)—(पुं०) तलवार।—**अट** (**धाराट**)—(पुं०) चातक पक्षी। घोड़ा। बादल। मदमाता हाथी।—**अधिरूढ** (**धाराधिरूढ**)—(वि०) सर्वोच्च स्थान पर चढ़ा हुआ।—**अवनि** (**धारावनि**)—(स्त्री०) वायु, हवा।—**अश्रु** (**धाराश्रु**)—(न०) आँसुओं का प्रवाह।—**आसार** (**धारासार**)—(पुं०) मूसलधार जलवृष्टि।—**उष्ण** (**धारोष्ण**)—(न०) (थन से निकला हुआ) गर्म (दूध)।—**गृह**—(न०) स्नानागार जिसमें फुहारा लगा हो।—**धर**—

(पुं०) बादल। तलवार।—निपात,—पात–(पुं०) जलवृष्टि। जलप्रवाह।—फल–(पुं०) मदन वृक्ष, मनफल का पेड़।—यन्त्र–(न०) फुहारा, फौवारा।—वर्ष–(पुं०, न०) मूसलधार या लगातार जलवृष्टि।—वाहिन् (वि०) अविच्छिन्न गति वाला। लगातार होने या जारी रहने वाला।—विष–(पुं०) तलवार।—सम्पात–(पुं०) अविरल वर्षा, महावृष्टि।—स्नुही–(स्त्री०) तिधारा थूहर (सेहुंड)।

धारिणी—(स्त्री०) [√धृ+णिनि–ङीप्] पृथिवी।

धारिन्—(वि०) [स्त्री०—धारिणी] [√धृ+णिनि] धारण करने वाला। याद रखने वाला। (पुं०) पीलू का पेड़।

धार्तराष्ट्र—(पुं०) [धृतराष्ट्रस्यापत्यम्, धृतराष्ट्र+अण्] धृतराष्ट्र का पुत्र। [धृतराष्ट्रे सुराष्ट्रदेशे भवः, धृतराष्ट्र+अण्] हंस विशेष जिसके पैर और चोंच काली होती है।

धार्मिक—(वि०) [स्त्री०—धार्मिकी] [धर्मं चरति सततम् अनुशीलयति, धर्म+ठक्] धर्मशील, धर्मात्मा। न्यायप्रिय। धर्मसम्बन्धी।

धार्मिण—(न०) [धर्मिन्+अण्] धार्मिक लोगों का समूह।

धार्य—(वि०) [√धृ+ण्यत्] धारण करने योग्य। सह्य। स्मरण रखने योग्य।

धार्ष्ट्य—(न०) [धृष्ट+ष्यञ्] धृष्टता, ढिठाई। अविनय।

√धाव्—भ्वा० उभ० अक० दौड़ना। भागना। सक० शुद्ध करना। धावति-ते, धाविष्यति-ते, अधावीत्—अधाविष्ट।

धावक—(वि०) [√धाव्+ण्वुल्] धोने वाला। दौड़ने वाला। (पुं०) दूत। धोबी। संस्कृत भाषा के एक कवि का नाम; 'श्रीहर्षादेर्धावकादीनामिव यशः', काव्य०।

धावन—(न०) [√धाव+ल्युट्] दौड़ना। बहाव। आक्रमण। सफाई। किसी वस्तु से रगड़ना।

धावल्य—(न०) [धवल+ष्यञ्] सफेदी। पीलापन।

√धि—तु० पर० सक० ग्रहण करना, धरना, पकड़ना। धियति, धेष्यति, अधैषीत्।

धि—(पुं०) धारण करने वाला। भाण्डार।

धिक्—(अव्य०) [√धक्क् वा√धा+डिकन्] भर्त्सना, निंदा और घृणा के अर्थ में प्रयुक्त होने वाला अव्यय।—कार–(पुं०), —क्रिया–(स्त्री०) भर्त्सना। तिरस्कार।—दण्ड (धिग्दण्ड)–(पुं०) तिरस्कार रूप दंड।—पारुष्य–(न०) कुवाच्य। गाली।

√धिक्ष्—भ्वा० आत्म० सक० उद्दीप्त करना। अक० क्लेश भोगना। जीना। धिक्षते, धिक्षिष्यते, अधिक्षिष्ट।

धिप्सु—(वि०) [√दम्भ्+सन्+उ] धोखा देने का अभिलाषी। धोखेबाज।

धिषण—(न०) [√धृष्+क्यु, धिष् आदेश] आवासस्थान, रहने की जगह। (पुं०) बृहस्पति का नाम।

धिषणा—(स्त्री०) [धिषण+टाप्] वाणी। प्रशंसा। बुद्धि। प्याला। कमण्डलु।

धिष्ण्य—(न०) [√धृष्+ण्य, नि० ऋकारस्य इकारः] स्थान। मकान। धूमकेतु, टूटता हुआ तारा। अग्नि। नक्षत्र। (पुं०) वह स्थान जहाँ यज्ञीय अग्नि स्थापन किया जाय; 'धर्मो वेदिम्परितः क्लृप्तधिष्ण्याः' श० ४.७। दैत्यगुरु शुक्राचार्य। शुक्रग्रह। पराक्रम।

धी—(स्त्री०) [√ध्यै+क्विप्, सम्प्रसारण] बुद्धि, समझ। विचार। कल्पना। इरादा। भक्ति। प्रार्थना। यज्ञ।—इन्द्रिय (धीन्द्रिय)–(न०) ज्ञानेन्द्रिय।—गुण–(पुं०) बुद्धि सम्बन्धी गुण। (वे गुण ये हैं—'शुश्रूषा श्रवणं चैव ग्रहणं धारणं तथा। ऊहापोहार्थविज्ञानं तत्त्वज्ञानं च धीगुणाः।'—कामन्दक)।—पति–[=धियांपति] (पुं०)

बृहस्पति ।—मन्त्रिन्, —सचिव–(पुं०) कर्मसचिव का उल्टा, अर्थात् वह मंत्री जो केवल परामर्श दे । बुद्धिमान् परामर्शदाता । —शक्ति–(स्त्री०)बुद्धि सम्बन्धी विशिष्टता । सख–(पुं०) परामर्शदाता, मंत्री ।

धीत—(वि०) [√धे+क्त] जो पिया गया हो । जिसका अनादर हुआ हो । जिसकी आराधना की गई हो । प्यासा ।

धीति—(स्त्री०) [√धे+क्तिन्] पीना । प्यास । अनादर । आराधना । उँगली ।

धीमत्—(वि०) [धी+मतुप्] बुद्धिमान् । (पुं०) बृहस्पति की उपाधि ।

धीर—(वि०) [धी√रा+क] जिसका चित्त विकारजनक कारणों के रहते हुए भी विचलित न हो, धैर्ययुक्त । वीर । साहसी । दृढ़ । दृढ़ मन का । शान्त । गम्भीर । उत्साहवान् । बुद्धिमान्, चतुर । कोमल; 'धीरसमीरे यमुनातीरे वसति वने वनमाली' गीत० । सुन्दर । सुस्त । दुस्साहसी । उजड्ड ।—**उदात्त** (**धीरोदात्त**)–(पुं०) किसी काव्य या कविता का प्रधानपात्र जो वीर और उदात्त विचारों का हो ।—**उद्धत** (**धीरोद्धत**)–(पुं०) किसी काव्य या कविता का प्रधान पात्र जो वीर तो हो किन्तु साथ ही तुनकमिजाज भी हो ।—**चेतस्**–(वि०) दृढ़ । दृढ़मनस्क । साहसी ।—**पत्री**–(स्त्री०) जमींकंद, धरणीकंद ।—**प्रशान्त**–(पुं०) किसी काव्य या कविता का प्रधानपात्र जो वीर होने के साथ ही साथ शान्त प्रकृति का भी हो । —**ललित**–(पुं०) किसी काव्य या कविता का प्रधानपात्र जो दृढ़ और वीर तो हो, किन्तु साथ ही आमोदप्रिय और लापरवाह भी हो ।—**स्कन्ध**–(पुं०) भैंसा ।

धीरता—(स्त्री०) [धीर+तल्—टाप्] धीर होने का भाव या गुण । सहनशीलता । मन की दृढ़ता । स्पर्धा आदि मानसिक वेगों का दमन । गाम्भीर्य । संतोष । चातुर्य ।

धीरा—(स्त्री०) [धीर+टाप्] किसी काव्य का या कवि की कृति की मुख्य-पात्री, जो अपने पति या प्रेमी के प्रति अपने मन में ईर्ष्यापरायण हो, किन्तु अपने इस मानसिक भाव को बाह्य सङ्केतों से अपने पति या प्रेमी के सामने प्रकट न होने दे । काकोली । मालकँगनी ।

धीलटि, धीलटी—(स्त्री०) [धियं बुद्ध्या लटति बालोक्त्या मोचयति, धी√लट्+इन्] [धीलटि+ङीप्] पुत्री ।

धीवर—[दधाति मत्स्यान्, √धा+ष्वरच्] मछुआ, मल्लाह । सेवक । काला मनुष्य । (न०) लोहा ।

धीवरी—(स्त्री०) [धीवर+ङीप्] धीवर की स्त्री । बड़ी मछली पकड़ने का एक तरह का बर्छा । मछली की टोकरी ।

√धु—स्वा० उभ० अक० काँपना । धुनोति —धुनुते, धोष्यति—ते, अधौषीत्—अधोष्ट ।

√धुक्ष्—भ्वा० आत्म० सक० उद्दीप्त करना । अक० क्लेश भोगना । जीना । धुक्षते, धुक्षिष्यते, अधुक्षिष्ट ।

धुत—(वि०) [√धु+क्त] हिला हुआ, कंपित । त्यक्त ।

धुनि, धुनी—(स्त्री०) [धुनोति वेतसादिनदीजातवृक्षान्, √धु+नि] [धुनि+ङीष्] नदी ।—**नाथ**–(पुं०) समुद्र ।

धुन्ध—(पुं०) तीव्रता । परिश्रम ।

धुन्धुमार—(पुं०) [धुन्धु√मृ+अण्] राजा कुवलयाश्व । वीरबहूटी । घर का धुआँ । गिरगिट । छोर ।

धुर्, धुरा–[धुर्, कर्त्ता एकवचन धूः] (स्त्री०) [√धुर्व्+क्विप्, पक्षे टाप्] जुआ । जुए का वह भाग जो जानवर के कंधे पर रहता है । धुरी के छोरों की कीलें जो पहियों को निकलने से रोकती हैं । अंश । बोझ, भार । सब से आगे का या सब से ऊँचा भाग, चोटी ।—**गत** (**धूर्गत**)–[धुरं गतः, द्वि० त०, पूर्वो० दीर्घः] (वि०) रथ के बाँस पर

लगा हुआ। मुख्य, प्रधान।—जटि (धूर्जटि)—[धुरः त्रैलोक्यचिन्तायाः जटिः संघातः अत्र, ब० स०, पृषो० दीर्घः] (पुं०) शिव जी की उपाधि।—धर (धूर्धर, धुरन्धर)—[धुरां धरः, ष० त०, पृषो० दीर्घः] [धुरा√धृ+खच्, मुम्, ह्रस्व] (वि०) जुआ ढोने वाला। जोतने योग्य। सद्गुणों से सम्पन्न। आवश्यक कर्त्तव्यों के भार से भारान्वित। प्रधान, मुखिया। (पुं०) बोझ ढोने वाला जानवर। काम धंधे में संलग्न मनुष्य।—वह (धूर्वह)—(वि०) बोझ ढोने वाला। व्यवस्थापक।—(पुं०) बोझ ढोने वाला जानवर।—धूर्वोढृ भी इसी अर्थ में प्रयुक्त होता है।

धुरीण, धुरीय—(वि०) [धुरं वहति, धुर्+ख] [धुरम् अर्हति, धुर्+छ] बोझ ढोने योग्य, भार उठाने योग्य। (गाड़ी या हल में) जोतने योग्य। उत्तरदायी कर्त्तव्यों से सम्पन्न। मुखिया। (पुं०) बोझ ढोने वाला जानवर। काम-धंधे में लिप्त मनुष्य।

धुर्य—(वि०) [धुरं वहति, धुर्+यत्] बोझ ढोने योग्य, बोझ उठाने योग्य। उत्तरदायी कर्त्तव्यों का भार सौंपने योग्य। (पुं०) बोझा ढोने वाला जानवर। घोड़ा या बैल जो गाड़ी या रथ में जुता हुआ हो; 'धुर्यान् विश्रामयेति' र० १.५४। विष्णु। ऋषभ नामक औषधि।

धुस्तुर, धुस्तूर—(पुं०) [धुनोति कम्पयति चित्तं सेवनेन, √धु+उर, सुट्, पक्षे पृषो० साधुः] धतूरे का पौधा।

√धूर्—भ्वा० पर० सक० हिंसा करना। धूर्वति, धूर्विष्यति, अधूर्वीत्।

√धू—भ्वा० उभ० सक० कांपना। धवति—ते, धविष्यति—ते—धोष्यति—ते, अधावीत्—अधविष्ट—अधोष्ट। स्वा० धुनोति—ते। तु० पर० धुवति। क्र्या० उभ० धुनाति—धुनीते। चु० धूनयति—ते। धूनयिष्यति—ते, अदूधुनत्—त।

धूत—(वि०) [√धू+क्त] हिला हुआ। झड़ा हुआ। स्थानान्तरित किया हुआ। हवा किया हुआ। त्यागा हुआ। भागा हुआ। धिक्कारा हुआ। जाँचा हुआ। तिरस्कृत किया हुआ। अनुमान किया हुआ।—कल्मष,—पाप—(वि०) पापों से मुक्त।

धूति—(स्त्री०) [√धू+क्तिन्] हिलाना। घुमाना। हवा करना।

धून—(वि०) [√धू+क्त, तस्य नः] कंपा हुआ। आन्दोलित।

धूनक—(पुं०) [√धू+ण्वुल्—अक, नुगागम] राल।

√धूप्—भ्वा० पर० सक०, अक० गर्माना या गर्म होना। धूप देना। चमकना। बोलना। धूपायति, धूपायिष्यति—धूपिष्यति, अधूपायीत्—अधूपीत्। चु० धूपयति, धूपयिष्यति, अदूधुपत्।

धूप—(पुं०) [√धूप्+अच्] एक प्रकार का द्रव्य जिसे आग पर डालने से सुगन्ध युक्त धुआँ निकलता है। इसके पञ्चाङ्ग, दशाङ्ग, षोडशाङ्ग आदि अनेक भेद हैं।—अङ्ग (धूपाङ्ग)—(पुं०) तारपीन। सरल नामक वृक्ष।—अर्ह (धूपार्ह)—(न०) गुग्गुल।—पात्र—(न०) धूपदानी।

धूपन—(न०) [√धूप्+ल्युट्] धूप देना, अगियारी देना।

धूपिका—(स्त्री०) कुहासा।

धूपित—(वि०) [√धूप्+क्त] धूप दिया हुआ, सुगन्ध युक्त किया हुआ।

धूम—(पुं०) [√धू+मक्] धुआँ। कुहरा। हल्का। बादल। डकार। विशेष प्रकार का धुआँ जिसका रोगविशेष में सेवन कराया जाता है।—आभ (धूमाभ)—(वि०) धुमैले रंग का।—ऊर्णा (धूमोर्णा)—(स्त्री०) यमपत्नी का नाम।—केतन,—केतु—(पुं०)

अग्नि; 'कोपस्य नन्दकुलकाननधूमकेतोः' मु० १.१० । धूमकेतु, पुच्छलतारा । केतु ग्रह ।—ज–(पुं०) बादल ।—दर्शिन्–(पुं०) वह मनुष्य जिसे चारों ओर धुंधला दिखाई देता हो ।—ध्वज–(पुं०) अग्नि ।—पथ–(पुं०) धुआँ निकलने का झरोखा । पितृयान ।—पान–(न०) दंतरोग, नेत्ररोग, व्रण आदि में विशिष्ट वस्तुओं, ओषधियों को चिलम पर चढ़ा कर गाँजे आदि की तरह पीना । तमाखू, गाँजा आदि पीना ।—पोत–(पुं०) अग्निबोट, धुआँकश ।—महिषी–(स्त्री०) कुहरा, कुज्झटिका ।—योनि–(पुं०) बादल ।—ल–(वि०) [धूम√ला+क] धुएँ के रंग का, मटमैला ।—लता–(स्त्री०) कुंचित धूमराशि ।—संहति–(स्त्री०) धूमराशि ।—सार–(पुं०) मकान का धुआँ ।

धूमिका—(स्त्री०) [धूम इव अस्ति अस्याः, धूम+ठन्–टाप्] कुहासा, कुहरा । एक चिड़िया ।

धूमित—(वि०) [धूमोऽस्य संजातः, धूम+इतच्] जिसमें धुआँ लगा हो । जो धुआँ लगने से धुंधला हो गया हो । (पुं०) साढ़े बारह अक्षरों का एक मंत्र (यह दोषयुक्त माना जाता है—तंत्र) ।

धूम्या—(स्त्री०) [धूमानां समूहः, धूम+यत्—टाप्] धुएँ की घटा, अगाढ़ धूम ।

धूम्र—(पुं०) [धूमं धूम्रवर्णं राति, धूम√रा+क, पृषो० साधुः] ललाई लिये काला रंग, कृष्ण-लोहित वर्ण । सिह्लक । लोबान । शिव । एक असुर । कार्तिकेय का एक अनुचर । एक योग (ज्यो०) । (न०) पाप । दुष्टता । (वि०) धुमैले रंग का, भूरा । ललौहा काला । अंधकार । बैंगनी ।—अट (धूम्राट)–(पुं०) धूम्यार पक्षी, भृङ्गराज ।—केश–(पुं०) राजा पृथु का एक पुत्र । जिसके बाल धुएँ के रंग के हों ।—वर्ण–(वि०) कृष्ण-लोहित वर्ण का । बैंगनी रंग का ।—लोचन–(पुं०) कबूतर ।—लोहित–(वि०) गहरा बैंगनी । (पुं०) शिवजी ।—शूक–(पुं०) ऊँट ।

धूम्रक—(पुं०) [धूम्रवर्णेन कायति, धूम्र√कै+क] ऊँट, उष्ट्र ।

√धूर्—दि० आत्म० सक० मारना । जाना । धूर्यते, धूरिष्यते, अधूरिष्ट ।

धूर्त—(वि०) [√धुर्व्+क्तन् वा √धूर्+क्त] मायावी, छली, कपटी । वंचक, प्रतारक, दगाबाज, धोखा देने वाला । उत्पाती, उपद्रवी । (पुं०) दगाबाज आदमी । जुआरी । दाँवपेंच करने वाला आदमी । धतूरा । चोर नामक गन्धद्रव्य । साहित्य में शठनायक का एक भेद ।—कृत्–(वि०) चालाक । बेईमान । (पुं०) धतूरे का पौधा ।—जन्तु–(पुं०) मनुष्य ।—रचना–(स्त्री०) बदमाशी । गुंडापन ।

धूर्तक—(पुं०) [धूर्त+कन्] शृगाल । धूर्त । जुआरी । कौरव्य कुल का एक नाग ।

धूर्वी—(स्त्री०) [धुर्√अञ्+क्विप्, अञ् इत्यस्य वी आदेशः] गाड़ी का अगला हिस्सा, गाड़ी का बंब ।

धूलक—(न०) [√धू+लक (बा०)] विष ।

धूलि, धूली—(स्त्री०) [√धू+लि (बा०)] [धूलि+ङीप्] धूल, गर्दा; 'अनीत्वा पङ्कतां धूलिमुदकं नावतिष्ठते' शि० २.३४ । चूर्ण ।—कुट्टिम–(न०), —केदार–(पुं०) टीला । किले का धुस्स । जुता हुआ खेत ।—ध्वज–(पुं०) वायु, पवन ।—पटल–(पुं०) धूल का बादल ।—पुष्पिका, —पुष्पी–(स्त्री०) केतकी का पौधा ।

धूलिका—(स्त्री०) [धूलिः इव प्रतिकृतिः, धूलि+कन् —टाप्] कुहरा, कुहासा । नीहार, महीन जलकणों की झड़ी ।

√धूस् (श्) (ष)—चु० पर० सक०

कान्ति करना । धूसयति, धूसयिष्यति, अदुधुसत् ।

धूसर—(वि०) [√धू+सरन्] धुमैले रंग का । (पुं०) भूरा; 'वसुधालिङ्गनधूसरस्तनी' कु० ४.४ । गधा । ऊँट । कबूतर । तेली ।

√धृ—भ्वा० उभ० सक० धारण करना । धरति—ते, धरिष्यति—ते, अधार्षीत्, अधृत । भ्वा० आत्म० अक० झूलना या गिरना । धरते, धरिष्यते, अधृत । तु० आत्म० अक० ठहरना । ध्रियते, धरिष्यते, अधृत ।

√धृज्—भ्वा० पर० सक० जाना । धर्जति धर्जिष्यति, अधर्जीत् ।

√धृञ्ज्—भ्वा० पर० सक० जाना । धृञ्जति, धृञ्जिष्यति, अधृञ्जीत् ।

धृत—(वि०) [√धृ+क्त] पकड़ा हुआ । अधिकृत किया हुआ । रखा हुआ । गिरा हुआ । धरा हुआ । जमा किया हुआ । अभ्यास किया हुआ । तौला हुआ ।—**आत्मन्** (धृतात्मन्)–(पुं०) विष्णु । (वि०) दृढ़ मन वाला ।—**दण्ड**–(वि०) सजा देने वाला । सजा पाने वाला ।—**पट**–(वि०) कपड़े से लिपटा हुआ ।—**राजन्**–(वि०) अच्छे राजा द्वारा शासन किया हुआ ।—**राष्ट्र** (धृतराष्ट्र)–(पुं०) विचित्रवीर्य का पुत्र, यह दुर्योधन का पिता था । वह देश जहाँ का राजा व शासक अच्छा हो । एक नाग । काले पैर और चोंच वाला हंस ।—**वर्मन्**–(वि०) कवचधारी । (पुं०) त्रिगर्त नरेश केतुवर्मा का अनुज जिसने अर्जुन से युद्ध किया था ।—**व्रत**–(वि०) जिसने कोई व्रत धारण किया हो । (पुं०) इंद्र । वरुण । अग्नि ।

धृति—(स्त्री०) [√धृ+क्तिन्] धारण । ग्रहण । पकड़ना । ठहराव, स्थैर्य । धैर्य । तुष्टि । प्रीति । एक योग (ज्यो०) । गौरी आदि सोलह मातृकाओं में से एक । मन की धारणा (इसके तीन भेद हैं—१ सात्त्विकी, २ राजसी, ३ तामसी ।) एक व्यभिचारी भाव (सा०) । दक्ष की एक कन्या जो धर्म की पत्नी है । चंद्रमा की एक कला ।

धृतिमत्—(वि०) [धृति+मतुप्] धैर्ययुक्त । दृढ़ सङ्कल्प वाला । सन्तुष्ट ।

धृत्वन्—(पुं०) [√धृ+क्वनिप्] विष्णु । ब्रह्मा । पुण्य । आकाश । समुद्र । चालाक आदमी ।

√धृष्—स्वा० पर० अक० प्रगल्भ होना । धृष्णोति, धर्षिष्यति, अधर्षीत् । चु० पर० सक० दबाना । धर्षयति–धर्षति ।

धृष्ट—(वि०) [√धृष्+क्त] ढीठ, साहसी । अशिष्ट, बेहया, निर्लज्ज । अभिमानी । लंपट । (पुं०) अपराध करके निःशंक बना रहने वाला नायक । बेवफा पति या प्रेमी ।—**द्युम्न**–(पुं०) द्रुपद राजा का बेटा ।—**धी**,—**मानिन्**–(वि०) अभिमानी ।

धृष्णज्—(वि०) [√धृष्+नजिङ्] साहसी । निर्लज्ज, बेहया ।

धृष्णि—(स्त्री०) [√धृष्+नि] किरण ।

धृष्णु—(वि०) [√धृष्+क्नु] दे० 'धृष्ट' ।

√धॄ—क्र्या० पर० अक० जीर्ण होना । धृणाति, धरिष्यति-धरीष्यति, अधारीत् ।

√धे—भ्वा० पर० सक० पीना । चूसना । धयति, धास्यति, अधयत्–अधात् –अधासीत् ।

√धेक्—चु० पर० सक० देखना । धेकयति, धेकयिष्यति, अदिधेकत् ।

धेन—(पुं०) [√धे+नन्] समुद्र । नद ।

धेनु—(स्त्री०) [धयति लेढि सुतान् वा धीयते वत्सैः, √धे+नु] हाल की ब्यायी हुई गौ । दुधार गाय । किसी भी पुरुषवाची शब्द के पीछे यह शब्द लगाने से वह शब्द स्त्रीवाची हो जाता है । यथा—खड्गधेनुः, आदि । पृथिवी ।

धेनुक—(पुं०) [धेनुः इव प्रतिकृतिः, धेनु

+कन्] बलराम द्वारा मारे गये एक दैत्य का नाम ।—**सूदन**-(पुं०) बलराम ।

धेनुका—(स्त्री०) [धेनुक+टाप्] हथिनी। दुधार गौ, भेंट ।

धेनुष्या—(स्त्री०) [धेनु+यत्, सुक्] वह गाय जो बंधक रखी गयी हो ।

धैनुक—(न०) [धेनूनां समूहः, धेनु+ठक्] गौओं का समूह, एक रतिबंध ।

धैर्य—(न०) [धीरस्य भावः कर्म वा, धीर+ष्यञ्] धीरज, धीरता, चित्त की स्थिरता। शान्ति । गाम्भीर्य । साहस ।

धैवत—(पुं०) [धीमताम् प्रथम्, धीमन्+अण्, पृषो० मस्य वत्वम्] सङ्गीत के सप्त-स्वरों में से एक ।

धैवत्य—(न०) [धीव्नो भावः, धीवन्+ष्यञ्, नस्य तः] चातुर्य ।

√**धोर्**—भ्वा० पर० अक० गतिचातुर्य, चाल की चतुराई। धोरति, धोरिष्यति, अधोरीत् ।

धोरण—(न०) [√धोर्+ल्युट्] सवारी, वाहन । तीव्र गमन । घोड़े की कदम चाल ।

धोरणि, धोरणी—(स्त्री०) [धोरति क्रमशः प्राप्नोति, √धोर्+अनि] [धोरणि+ङीप्] श्रेणी । परम्परा ।

धोरित—(न०) [√धोर्+क्त] चोट पहुँचाना । गमन, गति । घोड़े की कदम ।

धौत—(वि०) [√धाव्+क्त] धोया हुआ, साफ किया हुआ । चिकनाया हुआ, चमकाया हुआ । चमकीला, सफेद; 'विकसद्दन्तांशुधौताधरं' गीत० १२ । (न०) चांदी । प्रक्षालन ।—**कट**(पुं०) मोटे कपड़े का थैला ।—**कोषज—कौषेय**-(न०) धुला या साफ किया हुआ रेशम ।—**खण्डी**-(स्त्री०) मिश्री ।—**शिल**-(न०) स्फटिक ।

धौम्र—(पुं०) [धूम्र+अण्] धूम्र वर्ण, धुएँ का रंग। भवन के लिये स्थान जो विशेषरीत्या बनाया गया हो ।

धौरितक—(न०) [धोरित+अण्+कन्] घोड़े की कदम चाल ।

धौरेय—(वि०) [धुरा+ढक्] [स्त्री०—धौरेयी] बोझ ढोने योग्य । (पुं०) बोझ ढोने वाला जानवर । घोड़ा । नेता ।

धौर्तक, धौर्तिक, धौर्त्य—(न०) [धूर्तस्य भावः कर्म वा, धूर्त+वुञ्] [धूर्त+ठञ्] [धूर्त+ष्यञ्] धूर्तता । धूर्तकर्म, धोखे का काम ।

√**ध्मा**—भ्वा० पर० अक० शब्द करना । फूँकना । साँस लेना । आग फूँकना । धमति, ध्मास्यति, अध्मासीत् ।

ध्माकार—(पुं०) [ध्मा√कृ+अण्] लुहार।

ध्माङ्क्ष्—भ्वा० पर० सक० चाहना । अक० भयंकर शब्द करना। ध्माङ्क्षति, ध्माङ्क्षिष्यति, अध्माङ्क्षीत् ।

ध्माङ्क्ष—(पुं०) [√ध्माङ्क्ष्+अच्]काक । बगला । फकीर । घर ।

ध्मात—(वि०) [√ध्मा+क्त] बजाया हुआ । फूंका हुआ । फुलाया हुआ ।

ध्मापित—(वि०) [√ध्मा+णिच्, पुक्+क्त] जलाकर भस्म किया हुआ ।

ध्यात—(वि) [√ध्यै+क्त]ध्यान किया हुआ, विचार किया हुआ ।

ध्यान—(न०) [√ध्यै+ल्युट्] किसी के स्वरूप का चिंतन; 'ज्ञानात् ध्यानं विशिष्यते' भग० १२.१२ । बाह्य इन्द्रियों के प्रयोग के बिना केवल मन में लाने की क्रिया या भाव । अन्तःकरण में उपस्थित करने की क्रिया या भाव । मानसिक प्रत्यक्ष ।—**गम्य**-(वि०) केवल ध्यान द्वारा प्राप्तव्य ।—**तत्पर,—निष्ठ,—पर**-(वि०) ध्यान में मग्न ।—**योग**-(पुं०) ध्यान रूपी योग, प्रगाढ़ ध्यान ।—**स्थ**-(वि०) ध्यान में निरत होने के कारण आत्मविस्मृत ।

ध्यानिक—(वि०) [ध्यान+ठक्] ध्यान द्वारा पाया हुआ या खोजा हुआ ।

ध्माम—(वि०) [√ध्मैं+मक्] मैला-कुचैला, काला-कलूटा। (न०) दमनक वृक्ष। गंधतृण, एक प्रकार की सुगंधित घास।

ध्मामन—(पु०) [√ध्मैं+मनिन्] परिमाण, माप। प्रकाश। (न०) ध्यान।

√ध्मैं—भ्वा० पर० सक० ध्यान करना, सोचना। ध्मायति, ध्मास्यति, अध्मासीत्।

√ध्रज्—भ्वा० पर० सक० जाना। ध्रजति, ध्रजिष्यति, अध्राजीत्—अध्रजीत्।

√ध्रञ्ज्—भ्वा० पर० सक० जाना। ध्रञ्जति, ध्रञ्जिष्यति, अध्रञ्जीत्।

√ध्रण्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना। ध्रणति, ध्रणिष्यति, अध्राणीत्—अध्रणीत्।

√ध्राख्—भ्वा० पर० सक० सुखाना। पूरा करना। ध्राखति, ध्राखिष्यति, अध्राखीत्।

√ध्राघ्—भ्वा० आत्म० अक० समर्थ होना। ध्राघते, ध्राघिष्यते, अध्राघिष्ट।

√ध्राड्—भ्वा० आत्म० अक० फटना। ध्राडते, ध्राडिष्यते, अध्राडिष्ट।

ध्राडि—[√ध्राड्+इन्] पुष्पचयन, फूलों का चुनना।

√ध्रु—भ्वा० पर० अक० स्थिर होना। ध्रुवति, ध्रोष्यति, अध्रौषीत्। तु० पर० सक० जाना। अक० स्थिर होना। ध्रुवति, ध्रुष्यति, अध्रुवीत्।

ध्रुव—(वि०) [√ध्रु+क] स्थिर, अचल, सदा एक ही स्थान पर रहने वाला, इधर-उधर न हटने वाला। सदा एक ही अवस्था में रहने वाला, नित्य। निश्चित। दृढ़, पक्का। (पु०) ध्रुव तारा। पृथिवी का मध्यदेश। वट वृक्ष, बरगद। खंभा, स्थाणु। वृक्ष का तना। टेक (गीत की)। समय। युग। अमाना। ब्रह्मा। विष्णु। शिव। उत्तानपाद राजा के एक पुत्र का नाम जिसने पिता द्वारा अपमानित हो, तपःप्रभाव से राज्य किया था। बारहवाँ योग (ज्यो०)। उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तरा भाद्रपदा और रोहिणी नक्षत्र। नासिका का अग्रभाग। एक यज्ञ-पात्र। —अक्षर (ध्रुवाक्षर); (पु०) विष्णु। —आवर्त (ध्रुवावर्त)—(पुं०) घोड़े के शरीर पर की बालों की भँवरी। —तारक—(न०), —तारा—(स्त्री०) उत्तर दिशा में मेरु के ऊपर सदा एक स्थान पर स्थित रहने वाला एक तारा। —दर्शक—(पुं०) सप्तर्षि-मंडल। एक दिशा-सूचक यंत्र जिसकी सुई बराबर उत्तर दिशा की ओर रहती है, कुतुबनुमा। —दर्शन—(न०) विवाह-संस्कार के अंतर्गत एक कृत्य। इसमें वर-वधू को मंत्र पढ़ कर ध्रुव तारा दिखाया जाता है। —धेनु—(स्त्री०) दोहन-काल में चुपचाप खड़ी रहने वाली गाय।

ध्रुवक—(पुं०) [ध्रुव+कन्] गीत का वह प्रारंभिक अंश जो बराबर दुहराया जाता है, टेक। (वृक्ष का) तना। खंभा।

ध्रौव्य—(न०) [ध्रुव+ष्यञ्] दृढ़ता, स्थिरता। निश्चय।

√ध्वंस्—भ्वा० आत्म० अक० नीचे गिरना। गिर कर टुकड़े-टुकड़े हो जाना। नष्ट होना। सड़ जाना। ग्रस्त होना। सक० जाना। ध्वंसते, ध्वंसिष्यते, अध्वंसत्—अध्वंसिष्ट।

ध्वंस—(पुं०), **ध्वंसन**—(न०) [√ध्वंस्+घञ्] [√ध्वंस्+ल्युट्] नाश। अधःपतन। अभाव का एक भेद (न्या०) गिरकर चूर-चूर होना। (किसी मकान का) सहसा बैठ जाना। हानि। गमन।

ध्वंसि—(पुं०) [√ध्वंस्+इन्] एक मुहूर्त का शतांश।

√ध्वज्—भ्वा० पर० सक० जाना। ध्वजति, ध्वजिष्यति, अध्वजीत्—अध्वाजीत्।

ध्वज—(पुं०) [√ध्वज्+अच्] सेना, रथ, देवता आदि का चिह्नभूत पताकायुक्त या पताकारहित बाँस, पलाश आदि का लंबा डंडा। झंडा, पताका। निशान, चिह्न। खट्वांग, खाट की पट्टी। शिश्न, लिंग।

पूरब की ओर का घर। डींग। दर्प, घमंड। श्रेष्ठ व्यक्ति आदि (समासांत में)। [ध्वज+अच्] मद्यव्यवसायी, कलाल।—**अंशुक** (**ध्वजांशुक**),—**पट**-(पुं०, न०) झंडा; 'तमाधूतध्वजपटं व्योमगङ्गोर्मिवायुभिः' र० १२.८५। —**आहृत** (**ध्वजाहृत**)-(वि०) समर-क्षेत्र में पकड़ा हुआ।—**गृह**-(न०) घर जिसमें झंडे रखे जाते हैं।—**द्रुम**-(पुं०) ताड़ का वृक्ष। —**प्रहरण**-(पुं०) पवन।—**भङ्ग**—नपुंसकता, क्लीवता।—**यन्त्र**-(न०) झंडा खड़ा करने का यंत्र।—**यष्टि**-(स्त्री०) झंडे का बाँस।

ध्वजवत्—(वि०) [ध्वज+मतुप्] झंडों से सुसज्जित। चिह्न-युक्त। किसी अपराध के लिये दागा हुआ, दाग कर चिह्नित किया हुआ। (पुं०) वह ब्राह्मण जो ब्रह्महत्या के प्रायश्चित्त के रूप में मारे गये व्यक्ति की खोपड़ी लेकर तीर्थों में भिक्षाटन करता फिरे (स्मृति)। मद्यव्यवसायी, कलवार।

ध्वजिन्—(वि०) [स्त्री०—**ध्वजिनी**] [ध्वज+इनि] ध्वज वाला, जिसके पास या हाथ में ध्वज हो। जिसका कोई विशेष चिह्न हो। (पुं०) कलवार। गाड़ी। पर्वत। सर्प। मयूर। घोड़ा। ब्राह्मण।

ध्वजिनी—(स्त्री०) [ध्वजिन्+ङीप्] पाँच प्रकार की सेनाओं में से एक सेना; 'उद्धूलमं-र्ध्वजिनीभिः' शि० १२.६६।

ध्वजीकरण—(न०) [ध्वज+च्वि, √कृ+ल्युट्] झंडा खड़ा करना, झंडा फहराना।

√ध्वञ्ज्—भ्वा० पर० सक० जाना। ध्वञ्जति, ध्वञ्जिष्यति, अध्वञ्जीत्।

√ध्वण्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना। ध्वणति, ध्वणिष्यति, अध्वणीत्—अध्वाणीत्।

√ध्वन्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना। ध्वनति, ध्वनिष्यति, अध्वनीत्—अध्वानीत्। चु० पर० अक० शब्द करना। ध्वनयति, ध्वनयिष्यति, अदध्वनत्।

ध्वन—(पुं०) [√ध्वन्+अप्] शब्द, स्वर। भिनभिन आवाज।

ध्वनन—(न०) [√ध्वन्+ल्युट्] शब्द करना। संकेत करना। अर्थ लगाना।

ध्वनि—(स्त्री०) [√ध्वन्+इ] शब्द, आवाज, नाद। बाजे की लय। बादल की गड़गड़ाहट। खाली शब्द। साहित्य में ध्वनि उस विशेषता को कहते हैं, जो काव्य में शब्दों के नियत अर्थों के योग से सूचित होने वाले अर्थ की अपेक्षा प्रसङ्ग से निकलने वाले अर्थ में होती है।—**काव्य**-(न०) व्यंग्य-प्रधान काव्य, वह काव्य जिसमें व्यंग्यार्थ प्रधान हो।—**ग्रह**-(पुं०) कान। श्रवण करना।—**नाला**-(स्त्री०) एक प्रकार की तुरही। वीणा। बाँसुरी।—**विकार**-(पुं०) भय या शोक के कारण परिवर्तित हुआ कण्ठस्वर।

ध्वनित—(वि०) [√ध्वन्+क्त] जो ध्वनि के रूप में व्यक्त हुआ हो, व्यंजित। शब्दित। बजाया हुआ, वादित।

ध्वस्त—(वि०) [√ध्वंस्+क्त] गिरा हुआ। नष्ट हुआ। गला हुआ।

ध्वस्ति—(स्त्री०) [√ध्वंस्+क्तिन्] नाश, बरबादी।

√ध्वाङ्क्ष—भ्वा० पर० सक० चाहना। अक० भयंकर शब्द करना। ध्वाङ्क्षति, ध्वाङ्क्षिष्यति, अध्वाङ्क्षीत्।

ध्वाङ्क्ष—(पुं०) [√ध्वाङ्क्ष्+अच्] काक। भिक्षुक। निर्लज्ज मनुष्य। सारस।—**अराति** (**ध्वाङ्क्षाराति**)-(पुं०) उल्लू।—**पुष्ट**-(पुं०) कोयल।

ध्वान—(पुं०) [√ध्वन्+घञ्] शब्द। भिनभिनाहट, गुञ्जार। बड़बड़ाना।

ध्वान्त—(न०) [√ध्वन्+क्त] अंधकार; 'ध्वान्तं नीलनिचोलचारुसुदृशां प्रत्यङ्गमालिङ्गति' गीत० ११।, एक नरक जहाँ सदा अँधेरा छाया रहता है।—**अराति** (**ध्वान्ताराति**)-(पुं०) सूर्य। चंद्रमा।

अग्नि । श्वेत वर्ण । अर्क वृक्ष ।—उन्मेष (ध्वान्तोन्मेष),—वित्त-(पुं०) जुगनू ।—शात्रव-(पुं०) सूर्य । चंद्रमा । अग्नि । सफेद रंग ।

√ध्वृ—भ्वा० पर० सक० झुकाना । मार डालना । ध्वरति, ध्वरिष्यति, अध्वार्षीत् ।

न

न—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का बीसवाँ व्यञ्जन और तवर्ग का पाँचवाँ वर्ण । इसका उच्चारणस्थान दन्त है । इसका उच्चारण करते समय आभ्यन्तर प्रयत्न और जीभ के अग्र-भाग का दन्तमूल से स्पर्श होता है और यह बाह्य प्रयत्न,संवार,नाद,घोष और अल्पप्राण है । (वि०) [√नह् वा √नश्+ड] पतला । फालतू । खाली, रीता । वही । समान । अविभक्त । (पुं०) मोती । गणेश का नाम । दौलत, सम्पत्ति । दल । युद्ध । (अव्य०) नहीं, न ।

नकिञ्चन—(वि०) [नास्ति किञ्चन यस्य, नञर्थस्य नशब्दस्य सुप्सुपेति समासः] जिसके पास कुछ न हो, दरिद्र, कंगाल । "सर्वकाम-रसैर्हीनाः स्थानभ्रष्टा नकिञ्चनाः ।" महा-भारत ।

नकुट—(न०) [√कुट्+क, नशब्देन अत्र समासः] नाक, नासिका ।

नकुल—(पुं०) [नास्ति कुलं यस्य, समासो नञो न लोपः प्रकृतिभावात्] नेवला । "सत्त्वैः सत्त्वा हि जीवन्ति दुर्बलैर्बलवत्तराः । नकुलो मूषिकानत्ति बिडालो नकुलांस्तथा ।।" महा-भारत । युधिष्ठिर का एक छोटा भाई । शिव । (वि०) कुलरहित ।

√नक्क्—चु० पर० सक० नाश करना । नक्कयति, नक्कयिष्यति, अननक्कत् ।

नक्त—(न०) [√नज+क्त] वह समय जब संध्या होने में केवल एक क्षण की देर हो । रात । [नक्तम् अक्तत्वेन अस्ति अस्य, नक्त+अच्] एक व्रत जिसमें केवल रात को तारे देखकर भोजन करते हैं । (वि०) लज्जित ।—अन्ध (नक्तान्ध)-(वि०) रात को अंधा, जो रात में न देख सके ।—चर्या-(स्त्री०) रात में भ्रमण करने वाला ।—चारिन्-(पुं०) शिव । उल्लू । बिल्ली । चोर । राक्षस ।—भोजन-(न०) रात का भोजन, ब्यालू ।—माल-(पुं०) करंज वृक्ष का नाम ।—मुखा-(स्त्री०) रात ।—व्रत-(न०) एक व्रत जिसमें केवल रात को तारे देख कर भोजन किया जाता है । कोई भी व्रत जो रात में किया जाय ।

नक्तक—(पुं०) [नक्त√कै+क] गंदा कपड़ा । फटा पुराना कपड़ा । आँख का परदा, पलक ।

नक्तम्—(अव्य०) रात में, रात के समय; 'गच्छन्तीनां रमणवसतिं योषितां तत्र नक्तम्' मे० ३७ ।—चर (नक्तञ्चर)-(पुं०) कोई भी रात में घूमने वाला प्राणधारी । चोर ।—चारिन् (नक्तञ्चारिन्)-(पुं०) दे० 'नक्तञ्चर' । दिन (नक्तन्दिन),—दिव (नक्तन्दिव)-(न०) दिन रात ।

नक्र—(न०) [न √क्रम्+ड, प्रकृतिभावात् नलोपाभावः] चौखट का ऊपर का काठ । नासिका, नाक । (पुं०) मगर, घड़ियाल ।

नक्रा—(स्त्री०) [नक्र+अच्—टाप्] नाक । शहद की मक्खियों या बर्रों का समूह ।

√नक्ष्—भ्वा० पर० सक० जाना । नक्षति, नक्षिष्यति, अनक्षीत् ।

नक्षत्र—(न०) [नक्षति शोभां गच्छति,√नक्ष् +अत्रन्] तारा । ग्रह । मोती ।—ईश (नक्षत्रेश),—ईश्वर (नक्षत्रेश्वर)—नाथ,—प,—पति,—राज-(पुं०) चंद्रमा ।—कल्प-(पुं०) अथर्ववेद का एक कल्प जिसमें कृत्तिका आदि नक्षत्रों की पूजा का वर्णन है ।—कान्तिविस्तार-(पुं०) श्वेत यावनाल, सफेद ज्वार ।—चक्र-(न०) नक्षत्र-मण्डल । राशिचक्र ।—दर्श-(पुं०)

दैवज्ञ, ज्योतिषी ।—**नेमि**–(पुं०) चन्द्रमा । ध्रुवतारा । विष्णु । (स्त्री०) रेवती नक्षत्र ।—**पथ**–(पुं०) नक्षत्रों के भ्रमण का मार्ग, आकाश ।—**पथयोग**–(पुं०) एक योग जिसमें युद्ध के लिये प्रस्थान करने पर राजा विजयी होता है ।—**पाठक**–(पुं०) ज्योतिषी ।—**माला**–(स्त्री०) तारा-समूह । मोतियों की माला या हार । हाथी के गले का कठला ।—**योग**–(पुं०) चन्द्रमा के साथ नक्षत्रों का योग ।—नक्षत्रविशेष में क्रूर ग्रहों का योग ।—**योनि**–(स्त्री०) विवाह के लिये निषिद्ध नक्षत्र ।—**वर्त्मन्**–(पुं०) आकाश ।—**विद्या**–(स्त्री०) खगोल विद्या, ज्योतिष विद्या ।—**वीथि**–(स्त्री०) तीन-तीन नक्षत्रों के बीच का रिक्त स्थान जो वीथि जैसा प्रतीत होता है, ऐसी नौ वीथियाँ हैं (ज्यो०) ।—**वृष्टि**–(स्त्री०) उल्कापात, तारे का टूटना ।—**व्यूह**–(पुं०) पदार्थ आदि के स्वामी नक्षत्रों का सूचक-चक्र (ज्यो०) ।—**शूल**–(पुं०) विशिष्ट दिशा में विशिष्ट नक्षत्रों के रहने का दुष्काल जिसमें यात्रा करना निषिद्ध है ।—**सन्धि**–(पुं०) चंद्रमा आदि ग्रहों का पूर्व नक्षत्र से उत्तर नक्षत्र पर जाना ।—**सत्र**–(न०) नक्षत्रों के निमित्त किया जाने वाला यज्ञ-विशेष ।—**साधक**–(पुं०) शिव ।—**साधन**–(न०) विशिष्ट नक्षत्र पर विशिष्ट ग्रह का स्थिति-काल जानने की गणना ।—**सूचक**–(पुं०) कुत्सित ज्योतिषी ।

नक्षत्रिन्—(पुं०) [नक्षत्र+इनि] चन्द्रमा । विष्णु ।

√**नख्**—भ्वा० पर० सक० जाना । नखति, नखिष्यति, अनखीत्—अनाखीत् ।

नख—(न०, पुं०) [नह्यते इव शरीरे, √नह्+ख, हकारस्य लोपः] हाथ या पैर का नाखून । बीस की संख्या । (पुं०) हिस्सा, भाग ।—**अङ्क** (**नखाङ्क**)–(पुं०) खरोंच, नखचिह्न ।—**आघात** (**नखाघात**)–(पुं०) दे० 'नखक्षत' । युद्ध या लड़ाई में नख द्वारा किया गया आघात ।—**आयुध** (**नखायुध**)–(पुं०) चीता । सिंह । मुर्गा ।—**आशिन्** (**नखाशिन्**)–(पुं०) उल्लू ।—**कुट्ट**–(पुं०) नाई ।—**क्षत**–(न०) नाखून के गड़ने से पड़ने वाला चिह्न । पुरुष द्वारा किये मर्दन, स्पर्श आदि से स्त्री के स्तन आदि पर पड़ने वाला नख का चिह्न (सा०) ।—**दारण**–(पुं०) बाज । गीध । (न०) नहरनी ।—**निकृन्तन**—(न०),—**रञ्जनी**–(स्त्री०) नहरनी ।—**पद**–(न०),—**व्रण**–(पुं० नाखून गड़ने का चिह्न; 'नखपदसुखान् प्राप्य वर्षाग्रबिन्दून' मे० ३५ ।—**पर्णी**–(स्त्री०) वृश्चिकका नामक पौधा ।—**फलिनी**–(स्त्री०) सेम ।—**मुच**–(पुं०) धनुष, कमान ।—**लेखा**–(स्त्री०) नखचिह्न । नख को रंगना ।—**बिन्दु**–(पुं०) मेहदी या महावर लगा कर नाखूनों पर बनाया गया गोल या चंद्राकार चिह्न ।—**विष**–(पुं०) वह जीव जिसके नाखूनों में विष हो—जैसे कुत्ता, बंदर, बिल्ली आदि ।—**विष्किर**–(पुं०) अपने शिकार को नाखून से फाड़ कर खाने वाला (पक्षी आदि) ।—**वृक्ष**–(पुं०) नील का पौधा । शिकारी चिड़िया ।—**शङ्ख**–(पुं०) छोटा शंख ।

नखजाह—(न०) [नख+जाहच्] नखमूल, नाखून की जड़ ।

नखम्पच—(वि०) [नखं पचति तापयति, नख √पच्+खश्, मुम्] नखतापक, नाखून को खराब करने वाला । [स्त्रियां टाप्] लपसी ।

नखर—(न०, पुं०) [नख√रा+क] नख, नाखून । प्राचीन काल का एक अस्त्र ।—**आयुध** (**नखरायुध**)–(पुं०) चीता । सिंह । मुर्गा ।—**आह्व** (**नखराह्व**)–(पुं०) करवीर ।

नखानखि—(अव्य०) [नखैश्च नखैश्च प्रहृत्य इदं युद्धं प्रवृत्तम्, ब० स०] परस्पर नखाघात

द्वारा प्रवृत्त युद्ध, वह लड़ाई जो केवल नख गड़ा कर की जाती है।

नखिन्—(वि०) [नख+इनि] जिसके नाखून बड़े-बड़े हों। कँटीला। (पुं०) चीता। सिंह।

नग—(पुं०) [न गच्छति, न√गम्+ड] पर्वत। वृक्ष। पौधा। सूर्य। साँप। सात की संख्या।—**अटन** (नगाटन)-(पुं०) बंदर। —**अधिप** (नगाधिप),—**अधिराज** (नगाधिराज),—**इन्द्र** (नगेन्द्र)-(पुं०) हिमालय। सुमेरु पर्वत।—**अरि** (नगारि)-(पुं०) इन्द्र।—**उच्छ्राय** (नगोच्छ्राय)-(पुं०) पर्वत की ऊँचाई।—**ओकस्** (नगौकस्)-(पुं०) पक्षी। काक। सिंह। शरभ। —**ज** (वि०) पर्वतोत्पन्न। (पुं०) हाथी।—**जा**,—**नन्दिनी**-(पुं०) पार्वती।—**पति**-(पुं०) हिमालय पर्वत। चन्द्रमा।—**भिद्**-(पुं०) पत्थर तोड़ने का एक प्राचीन अस्त्र। कुल्हाड़ी। इन्द्र।—**मूर्धन्**-(पुं०) पर्वत-शिखर।—**रन्ध्रकर**-(पुं०) कार्तिकेय; 'नगरन्ध्रकरौजसः' र० ६.२।—**वाहन**-(पुं०) शिव।

नगर—(न०) [नगा इव प्रासादादयः सन्ति यत्र, नग+र] कस्बे से बड़ी और समृद्ध बस्ती जिसमें अनेक जातियों और पेशों के लोग बसते हों, पुर, शहर।—**अधिकृत** (नगराधिकृत),—**अधिप** (नगराधिप), **अध्यक्ष**— (नगराध्यक्ष)-(पुं०) वह व्यक्ति जिसके ऊपर नगर की रक्षा आदि का दायित्व हो।—**उपान्त** (नगरोपान्त)-(पुं०) नगर के समीप की आबादी।—**ओकस्** (नगरौकस्)-(पुं०) नागरिक, नगर-निवासी।—**काक**-(पुं०) शहरुआ कौआ। तिरस्कार का शब्द।—**घात**-(पुं०) हाथी।—**जन**-(पुं०) नगर के लोग, नागरिक।—**प्रदक्षिणा**-(स्त्री०) जलूस में मूर्ति को नगर के चारों ओर ले जाना।—**प्रान्त**-(पुं०) नगर के समीप का स्थान, उपनगर।—**मार्ग**-(पुं०) राजमार्ग। चौड़ी सड़क।—**रक्षा**-(पुं०) नगर की व्यवस्था या शासन-प्रबन्ध।—**स्थ**-(पुं०) नगरनिवासी।

नगरी—(स्त्री०) [नगर+ङीप्] नगर, शहर, पुरी।—**काक**-(पुं०) सारस या बगला।—**बक**-(पुं०) काक, कौआ।

नग्न—(वि०) [√नज्+क्त] नंगा, विवस्त्र, उघारा; 'नग्नक्षपणके देशे रजकः किं करिष्यति'। बिना जुता हुआ। जो आबाद न हो। (पुं०) नंगा भिक्षुक, नागा। क्षपणक, बौद्ध भिक्षुक। दम्भी, पाखण्डी। सेना के साथ रहने वाला या भ्रमण करने वाला। चारण। शिव। वह व्यक्ति जिसके कुल में किसी ने वेद-शास्त्र का अध्ययन न किया हो। —**अट** (नग्नाट),—**अटक** (नग्नाटक)-(पुं०) जो नंगा घूमे-फिरे। दिगंबर जैन या बौद्ध।

नग्नक—(वि०) [स्त्री०—**नग्निका**] [नग्न+कन्] दे० 'नग्न'।

नग्नका, नग्निका— [नग्नक-टाप्, पक्षे इत्वम्] नंगी या निर्लज्ज स्त्री। रजोधर्म होने के पूर्व की अवस्था वाली लड़की।

नग्नङ्करण—(न०) [अनग्नः नग्नः क्रियतेऽनेन नग्न+च्वि, √कृ+ख्युन्, मुम्] नंगा करना।

नग्नम्भविष्णु, नग्नम्भावुक—(वि०) नग्न होने वाला।

नग्ना—(स्त्री०) [नग्न+टाप्] नंगी स्त्री, बेहया स्त्री। बारह वर्ष या दस वर्ष से कम उम्र की बालिका, जिसको रजोधर्म न हुआ हो।

नङ्ग—[नं नति गच्छति, न√गम्+ड, मुम्] जार, उपपति।

नचिकेतस्—(पुं०) वाजश्रवा ऋषि के पुत्र। अग्नि।

नचिर—(न०) [न चिरम्, नञ्शब्देन सुप्सुपेति समासः] थोड़ा समय। (वि०) क्षणस्थायी।

√नज्—भ्वा० आत्म० अक० लजाना, शर-माना । नजते, नजिष्यते, अनजिष्ट ।

नञ्—(अव्य०) न होना । रोकना । बाँझा-पन । बुरा । जाँचना । थोड़ा । बराबर । विरोध । भेद ।

√नट्—भ्वा० पर० अक०, सक० नाचना । अभिनय करना । घायल करना । (णिजन्त) [नाटयति—नाटयते] अभिनय करना, भाव प्रदर्शित करना । अनुकरण करना, नकल करना । गिरना, टपकना । चमकना । घायल करना । नटति, नटिष्यति, अनटीत्—अना-टीत् ।

नट—(पुं०) [√नट्+अच्] नचैया, अभि-नयपात्र । निम्न श्रेणी के क्षत्रिय का पुत्र । अशोक वृक्ष । एक प्रकार का नरकुल ।—**अन्तिका** (**नटान्तिका**)–(स्त्री०) नम्रता । लज्जा ।—**ईश्वर** (**नटेश्वर**)–(पुं०) शिव । —**चर्या**–(स्त्री०) नाटक के पात्र द्वारा किया हुआ अभिनय ।—**पत्रिका**–(स्त्री०) बैंगन । —**भूषण**,—**मण्डन**–(पुं०) हरताल ।—**रङ्ग**–(पुं०) अभिनयशाला ।—**राज**–(पुं०) कृष्ण । शिव । कुशल नट ।—**वर**–(पुं०) सूत्रधार । अतिकुशल नट । कृष्ण जो नाट्य के आचार्य माने जाते हैं । (वि०) चतुर, चालाक ।—**संज्ञक**–(न०) गोदंती हरताल । (पुं०) नाटक का पात्र, नचैया ।

नटन—(न०) [√नट्+ल्युट्] नृत्य, नाच । नाटकीय अभिनय, हावभाव प्रदर्शन ।

नटी—(स्त्री०) [नट+ङीप्] नट की स्त्री । नाचने वाली स्त्री । अभिनय करने वाली स्त्री । अभिनय करने वाले नट की स्त्री । वेश्या ।—**सुत**–(पुं०) नर्तकी का पुत्र ।

नटचा—(स्त्री०) [नट+य—टाप्] अभिनय करने वाले नटों का समुदाय ।

नड—(पुं०) [√नल्+अच्, लस्य डत्वम्] नरकट । चूड़ी बनाने का पेशा करने वाली जाति । एक गोत्र-प्रवर्तक ऋषि ।—**अगार** (**नडागार**),—**आगार** (**नडागार**)–(न०) नरकुल की झोपड़ी ।—**प्राय**–(वि०) सरपत के बाहुल्य से सम्पन्न ।—**वन**–(स्त्री०) सरपत का वन ।—**संहति**–(स्त्री०) सरपत का समूह ।

नडभक्त—(न०) [नडस्य विषयो देशः, नड+भक्तल्] नरकट से पूर्ण स्थान ।

नडश—(वि०) [नड+श] [स्त्री०—**नडशी**] सरपतों से ढका हुआ ।

नडिनी—(स्त्री०) [नड+इनि—ङीप्] वह नदी जिसमें सरपत अधिक हों ।

नडिल, नड्वत—(वि०) [नड+इलच्] [नड +ड्वतुप्] [स्त्री०—**नडिली, नड्वती**] दे० 'नडप्राय' ।

नड्या—(स्त्री०) [नड+य—टाप्] सरपतों का ढेर ।

नड्वल—(वि०) [नड+ड्वलच्] जहाँ सर-पतों की अधिकता हो; 'नड्वलानीव गजः परेषाम्' र० १८.५ ।

नत—(वि०) [√नम्+क्त] नम्रीभूत, झुका हुआ । प्रणाम करता हुआ । टेढ़ा । (न०) मध्याह्न रेखा से किसी भी ग्रह की दूरी । तगरमूल ।—**अंश** (**नतांश**)–(पुं०) वह वृत्त जिसका केन्द्र भूकेन्द्र पर हो और जो विषुवत् रेखा पर लंब हो । इस वृत्त का उप-योग ग्रहों की स्थिति निश्चित करते समय होता है ।—**अङ्ग** (**नताङ्ग**)–(वि०) बदन झुकाये हुए । प्रणाम करने वाला ।—**अङ्गी** [नतम् अङ्गं यस्याः, ब० स०, ङीप्] (स्त्री०) स्त्री, सुन्दर ।—**नाडिका**,—**नाडी**–(स्त्री०) मध्याह्न और अर्ध रात्रि के बीच का कोई जन्मकाल ।—**नासिक**–(वि०) चिपटी नाक वाला ।—**भ्रू**–(स्त्री०) टेढ़ी भौं वाली स्त्री ।

नति—(स्त्री०) [√नम्+क्तिन्] झुकाव । प्रणाम । टेढ़ापन । प्रणाम करने के लिये शरीर झुकाना ।

√नद्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना । प्रति-

ध्वनि करना। बोलना। चिल्लाना। दहाड़ना। नदति, नदिष्यति, अनदीत्—अनादीत्।

नद—(पुं०) [√नद्+अच्] बड़ी नदी। जलप्रवाह; 'चिर मुनिनदंनदंवृन्दम्' कि० ५.२७। नाला। समुद्र।—**राज**-(पुं०) समुद्र।

नदथु—(पुं०) [√नद्+अथुच्] शोर। बैल का डँकरना।

नदी—(स्त्री०) [√नद्+अच्—ङीप्] जल की वह बड़ी प्राकृतिक धारा जो किसी पहाड़, झील आदि से निकल कर विशिष्ट मार्ग से बहती हुई दूसरी नदी, झील या समुद्र में जा मिली हो। (जिन जलप्रवाहों के अधिष्ठातृ-देवता स्त्री हैं, उन्हें नदी और जिनके अधिष्ठातृ-देवता पुरुष हैं उन्हें नद कहते हैं)।—**इन** (**नदीन**),—**ईश** (**नदीश**),—**कान्त**-(पुं०) समुद्र। **कदम्ब**-(न०) नदियों का समूह। (पुं०) महाश्रावणिका, बड़ी गोरखमुंडी।—**कूलप्रिय**-(पुं०) जल-बेंत।—**ज**-(वि०) जलोत्पन्न। (पुं०) भीष्म। (न०) कमल।—**तरस्थान**-(न०) उतरने का स्थान, घाट।—**दोह**-(पुं०) भाड़ा, उत-राई, किराया।—**धर**-(पुं०) शिव।—**निष्पाव**-(पुं०) बोरो धान।—**पति**-(पुं०) समुद्र। वरुण।—**पूर**-(पुं०) उमड़ी हुई नदी।—**भव**-(न०) नदी-लवण, सेंधा नमक।—**मातृक**-(वि०) नदी के जल या नहर के जल से सींचा जाने वाला (देश)।—**रय**-(पुं०) नदी की धार या प्रवाह।—**वङ्क**-(पुं०) नदी का मोड़।—**ष्ण**-(वि०) [नदी√स्ना+क, षत्व] जो नदी-स्नान करने में पटु हो। जिसे नदी के भीतर के सुगम या दुर्गम स्थलों का ज्ञान हो।—**सर्ज**-(पुं०) अर्जुन वृक्ष।

नद्ध—(√नह्+क्त] बँधा हुआ। चारों ओर से लपेटा हुआ। पहनाया हुआ। ढका हुआ। जड़ा हुआ। गुथा हुआ। जुड़ा हुआ। मिला हुआ। (न०) बंधन। गाँठ, गिरह।

नद्ध्री—(स्त्री०) [√नह्+ष्ट्रन्—ङीप्] ताँत या चमड़े की डोरी। चमड़े की पट्टी।

ननन्दृ, ननान्दृ—(स्त्री०) [न नन्दति सेवयापि न तुष्यति, न√नन्द्+ऋन्] [न √नन्द्+ऋन्, पृषो० दीर्घ] पति की बहन, ननद।

ननु—(अव्य०) [न√नुद्+डु] एक अव्यय जिसका व्यवहार कोई बात पूछने, सन्देह प्रकट करने या वाक्य के आरम्भ में किया जाता है।

√नन्द्—भ्वा० पर० अक० प्रसन्न होना। नन्दति, नन्दिष्यति, अनन्दीत्।

नन्द—(पुं०) [√नन्द्+अच्] प्रसन्नता, हर्ष, आह्लाद। (ग्यारह इंच लंबी) वीणा-विशेष। मेढक। विष्णु। यशोदा के पति का नाम। पाटलिपुत्र के नन्द-साम्राज्य के संस्थापक राजा का नाम; 'अगृहीते राक्षसे किमुत्खातं नन्दवंशस्य' मु० १.३।—**आत्मज** (**नन्दात्मज**),—**नन्दन**-(पुं०) श्रीकृष्ण।—**पाल**-(पुं०) वरुण।

नन्दक—(वि०) [√नन्द्+णिच्+ण्वुल्] प्रसन्न करने वाला। कुटुम्ब को प्रसन्न करने वाला। (पुं०) कृष्ण की तलवार का नाम। कोई भी तलवार। [√नन्द्+ण्वुल्] मेढक।

नन्दकिन्—(पुं०) [नन्दक+इनि] विष्णु।

नन्दथु—(पुं०) [√नन्द्+अथुच्] प्रसन्नता, आनन्द, खुशी।

नन्दन—(वि०) [√नन्द्+णिच्+ल्यु] आनंद देने वाला, हर्षप्रद। (पुं०) पुत्र। विष्णु। शिव। कार्त्तिकेय का एक अनुचर। कामाख्या का एक पर्वत। केसर। चंदन। एक प्रकार का विष। एक प्रकार का अस्त्र। [√नन्द्+ल्यु] मेढक। (न०) [√नन्द्+णिच्+ल्यु] इंद्र का उद्यान। एक छंद। [√नन्द्+ल्युट्] आनंद, हर्ष। —

त्र—(न०) पीले चन्दन की लकड़ी, हरिचन्दन ।

नन्दन्त, नन्दयन्त—(पुं०) [नन्दति अनेन, √नन्द्+अन्—अन्त आदेश] [नन्दयति, √नन्द्+णिच्+झच्+अन्त] पुत्र ।

नन्दा—(स्त्री०) [नन्द—टाप्] प्रसन्नता, हर्ष । धन-दौलत, सम्पत्ति । छोटा मिट्टी का घड़ा । शुक्ल पक्ष की ये तिथियाँ—प्रतिपदा, षष्ठी, एकादशी । ननद । दुर्गा का एक विग्रह । एक प्रकार की संक्रांति (ज्यो०) । मूर्च्छना का एक भेद (संगीत) ।

नन्दि—(पुं०, स्त्री०) [√नन्द्+इन् प्रसन्नता, हर्ष । (पुं०) परमानंदस्वरूप विष्णु । शिव । एक गंधर्व । शिव का वाहन, नंदिकेश्वर । नाटक में नांदीपाठ करने वाला व्यक्ति । द्यूत ।—**ग्राम**-(पुं०) उस ग्राम का नाम जहाँ श्रीराम के वनवासकाल में भरत जी रहे थे ।—**घोष**-(पुं०) अर्जुन के रथ का नाम ।—**वर्धन**-(पुं०) शिव का नाम । मित्र । पक्ष का अवसान । पुत्र । प्राचीन काल का एक विमान । (वि०) आनंद बढ़ाने वाला ।

नन्दिक—(पुं०) [नन्द+ठन्—इक] तून का पेड़ । धव का पेड़ । हर्ष । छोटा घड़ा । शिव का एक गण ।—**ईश (नन्दिकेश)**, —**ईश्वर (नन्दिकेश्वर)**-(पुं०) शिव के एक प्रधान गण का नाम । शिव का नाम ।

नन्दिन्—(वि०) [√नन्द्+णिनि वा √नन्द्+णिच्+णिनि] आनन्दित, आह्लादित । प्रसन्नताकारक । (पुं०) पुत्र । नाटक में आशीर्वादात्मक वचन कहने वाला व्यक्ति । शिव के द्वारपाल का नाम । शिव के वाहन का नाम । विष्णु । बरगद का पेड़ । धव का पेड़ । दाग कर छोड़ा हुआ साँड़ ।—**ईश (नन्दीश)**,—**ईश्वर (नन्दीश्वर)**-(पुं०) शिव । शिव के पार्श्वचरों का अधिपति । ताल का एक भेद (संगीत) ।

नन्दिनी—(स्त्री०) [√नन्द्+णिनि—ङीप्] पुत्री, बेटी । दुर्गा । ननद । सुरभी गौ की लड़की, कामधेनु । श्री गङ्गा जी । श्यामा तुलसी ।

नपात्—(पुं, वि०) [न पाति, √पा+शतृ, ततो नञा समासे प्रकृतिभावः] जो रक्षक या पालने वाला न हो । (पुं०)[न पातयति पितॄन्, √पत्+णिच्+क्विप्, नञ्समास, प्रकृतिभाव] पौत्र, पोता । यह वैदिक प्रयोग है; यथा 'तनूनपात्' ।

नपुंसक—(न०, पुं०) [न स्त्री न पुमान्, नि० स्त्रीपुंसयोः पुंसक आदेशः, नञा समासे प्रकृतिभावः] न स्त्री और न पुरुष, हिजड़ा । भीरु, डरपोक । (न०) नपुंसकवाची शब्द, नपुंसकलिङ्ग ।

नप्तृ—(पुं०) [न पतन्ति पितरो येन, न √पत्+तृच्, नि० साधुः] नाती । पोता ।

√नभ्—भ्वा० आत्म० सक० हिंसा करना । अक० न होना । नभते, नभिष्यते, अनभत् —अनभिष्ट । दि० पर० सक० हिंसा करना । नभ्यति, नभिष्यति, अनभत् । क्र्या० पर० सक० हिंसा करना । नभ्नाति, नभिष्यति, अनभीत्—अनाभीत् ।

नभ—(वि०) [√नभ्+अच्] हिंसक, मारने वाला । (पुं०) सावन का महीना (न०) आकाश ।—**ग**-(पुं०) वैवस्वत मनु का पुत्र ।

नभस्—(न०) [√नह्+असुन्, भ आदेश] आकाश । वायुमण्डल । मेघ । कुहरा । जल । वय, उम्र । (पुं०) जलवृष्टि । वर्षाऋतु । नासिका । गन्ध, श्रावणमास; 'प्रत्यासन्ने नभसि दयिताजीवितालम्बनार्थी, मे० ४ ।—**अम्बुप** (**नभोऽम्बुप**)-(पुं०) पपीहा, चातक पक्षी ।—**कान्तिन्** (**नभःकान्तिन्**)-(पुं०) सिंह ।—**गज**(**नभोगज**)-(पुं०) बादल ।—**चक्षुस्** (**नभश्चक्षुस्**)-(पुं०) सूर्य ।—**चमस्** (**नभश्चमस्**)-(पुं०) चन्द्रमा । जादू ।—**चर** (**नभश्चर**)-(वि०)

आकाशगामी । (पुं०) देवता, किन्नर आदि । पक्षी ।—द्रुह (नभोद्रुह)–(पुं०) मेघ ।—दृष्टि (नभोदृष्टि)–(वि०) अंधा । आकाश की ओर देखने वाला ।—द्वीप (नभोद्वीप),—धूम (नभोधूम)–(पुं०) मेघ, बादल ।—नदी (नभोनदी)–(स्त्री०) आकाशगङ्गा ।—प्राण (नभःप्राण)–(पुं०) वायु ।—मणि (नभोमणि)–(पुं०) सूर्य ।—मण्डल (नभोमण्डल)–(न०) मण्डलाकार आकाश ।—रजस् (नभोरजस्)–(पुं०) अन्धकार ।—रेणु (नभोरेणु)–(स्त्री०) कुहरा ।—लय (नभोलय)–(पुं०) धूम ।—लिह् (नभोलिह्)–(वि०) आकाश चूमने वाला, महोच्च, बहुत ऊँचा ।—सद् (नभःसद्)–(पुं०) देवता ।—सरित् (नभस्सरित्)–(स्त्री०) आकाशगङ्गा ।—स्थली (नभःस्थली)–(स्त्री०) आकाश ।—स्पृश् (नभःस्पृश्)–(वि०) आकाश को छूने वाला, बहुत ऊँचा ।

नभस—(पुं०) [√नभ्+असच्] आकाश । वर्षाऋतु । समुद्र ।

नभसङ्गम—(पुं०) [नभस√गम्+खच्, मुम्] पक्षी ।

नभस्य—(पुं०) [नभसे मेघाय साधुः, नभस्+यत्] भाद्रपद मास; 'अथ नभस्य इव त्रिदशायुधं' र० ९.५४ ।

नभस्वत्—(वि०) [नभस्+मतुप्, मस्य वः] बादलों या कुहरे से भरा हुआ । (पुं०) पवन, वायु ।

नभाक—(पुं०) [√नभ्+आक] अन्धकार । राहु । उपग्रह ।

नभ्राज्—(पुं०) [√भ्राज्+क्विप्, नञ् समासे प्रकृतिभावः] काली घटा या काला बादल ।

√नम्—भ्वा० पर० सक० प्रणाम करना । अक० झुकना । शब्द करना । नमति, नंस्यति, अनंसीत् ।

नमत—(वि०) [√नम्+अतच्] झुका हुआ । टेढ़ामेढ़ा । (पुं०) अभिनय-कर्त्ता, नट । धूम । स्वामी, प्रभु । मेघ, बादल ।

नमन—(न०) [√नम्+ल्युट्] झुकना । प्रणाम । नमस्कार ।

नमस्—(अव्य०) [√नम्+असुन्] नमन, नमस्कार । त्याग । वज्र । अन्न । यज्ञ । स्तोत्र ।—कार–(पुं०) किसी के प्रति विनय सूचित करने के लिये सिर नवाना, हाथ जोड़ना आदि ।—कृति–(स्त्री०) नमस्कार करना ।—कृत–(वि०) नमस्कार किया हुआ । पूजित ।—गुरु (नमोगुरु)–(पुं०) ब्राह्मण । दीक्षागुरु ।—वाक–(पुं०) [√वच्+घञ्, नमसो वाकः, ष० त०] नमस्कार का वाक्य; 'इदं कविभ्यः पूर्वेभ्यो नमोवाकं प्रशास्महे' उत्त० १.१ ।

नमस—(वि०) [√नम्+असच्] अनुकूल ।

नमसित—(वि०) [नमस्+क्यच्, √नमस्य+क्त, यलोप] जिसे नमस्कार किया गया हो । पूजित ।

नमस्य—(वि०) [√नमस्य+यत्, अल्लोप-यलोपौ] नमस्कार करने योग्य । सम्माननीय ।

नमस्या—(स्त्री०) [√नमस्य+अ+टाप्] पूजा, अर्चा । सम्मान । प्रणाम ।

नमुचि—(पुं०) [न√मुच्+इन्] एक दैत्य का नाम जिसका इन्द्र ने वध किया था । कामदेव का नाम ।

नमेरु—(पुं०) [√नम्+एरु] रुद्राक्ष या सुर-पुन्नाग वृक्ष ।

नम्र—(वि०) [√नम्+र] नत, झुका हुआ । विनयावनत । टेढ़ा । पूजा करने वाला । भक्त ।

√नय्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । रक्षा करना । नयते, नयिष्यते, अनयिष्ट ।

नय—(पुं०) [√नी+अच्] ले जाने या नेतृत्व करने की क्रिया । व्यवहार, बर्ताव । दूरदर्शिता । विवेक । नीति; 'चलति नयान्न जिगीषतां हि चेतः' १०.२६ । राजनीतिक

प्रतिमा। राज्य की नीति। न्याय। नीति-विद्या। समानता। आर्जव। सत्यशीलता। व्यवस्था। कल्पना। सारकथा। मूलवाक्य। सिद्धान्त। विधि, तौर-तरीका। मत, राय। दार्शनिक सिद्धान्त। एक प्रकार का जुआ। विष्णु।—**कोविद**,—**ज्ञ**–(वि०) नीति जानने वाला, नीति-कुशल।—**चक्षुस्**–(वि०) दूरदर्शी, नीतिज्ञ।—**नागर**–(वि०) नीति-निपुण।—**नेतृ**–(पुं०) राजनीतिक नेता।—**पीठी**–(स्त्री०) शतरंज की बिसात।—**विद्**,—**विशारद**–(पुं०) राजनीति का ज्ञाता। नीति-कुशल।—**शास्त्र**–(न०) राजनीति-शास्त्र। नीति सम्बन्धी कोई शास्त्र।—**शालिन्**–(वि०) विनयी। सदाचारी।

नयन—(न०) [√नी+ल्युट्] ले जाना। व्यवस्था करना। ले लेना। पास लाना, खींचना। शासन करना, हुकूमत करना। प्राप्त करना। नेत्र, आँख।—**अभिराम** (**नयनाभिराम**)–(वि०) देखने में मनोहर। (पुं०) चन्द्रमा।—**उत्सव** (**नयनोत्सव**)–(पुं०) दीपक। कोई भी मनोहर वस्तु।—**उपान्त** (**नयनोपान्त**)–(पुं०) अपांग प्रदेश, आँख का कोना, आँख की कोर।—**गोचर**–(वि०) दिखलाई पड़ने वाला, समक्ष।—**छद** (**नयनच्छद**)–(पुं०) पलक।—**पथ**–(पुं०) जितनी दूर तक दृष्टि जा सके, दृष्टि के भीतर का स्थान।—**पुट**–(न०) आँख के गड्ढे या गोलक।—**विषय**–(पुं०) दृश्य वस्तु। क्षितिज। दृष्टिपथ।—**सलिल**–(न०) आँसू।

नर—(पुं०) [√नृ+अच्] पुरुष, मर्द। नरसिंह के शरीर के नर भाग से उत्पन्न एक दिव्य महर्षि। स्वायंभुव मन्वन्तर में धर्म और दक्ष प्रजापति की कन्या मूर्ति से उत्पन्न एक ऋषि जो ईश्वर के अंशावतार माने जाते हैं। नरदेव के अवतार अर्जुन। विष्णु। शिव। घोड़ा। शतरंज का मोहरा। रोजकपूर, बाल्य-कर्पूर तृण। छाया-व्यवहार में छाया द्वारा समय जानने के लिये सीधी गाड़ी जाने वाली लकड़ी, शंकु। सेवक।—**अधिप** (**नराधिप**),—**ईश** (**नरेश**),—**ईश्वर** (**नरेश्वर**),—**देव**,—**पति**,—**पाल**–(पुं०) राजा।—**अन्तक** (**नरान्तक**)–(पुं०) मृत्यु।—**अयन** (**नरायण**)–(पुं०) विष्णु।—**अशन** (**नराशन**)–(पुं०) राक्षस।—**इन्द्र** (**नरेन्द्र**)–(पुं०) राजा। वैद्य, चिकित्सक। विषवैद्य।—**उत्तम** (**नरोत्तम**)–(पुं०) श्रेष्ठ मनुष्य। विष्णु।—**ऋषभ** (**नरर्षभ**)–(पुं०) राजा।—**कपाल**–(पुं०) मनुष्य की खोपड़ी।—**कीलक**–(पुं०) गुरुहन्ता, दीक्षा-गुरु की हत्या करने वाला।—**केशरिन्**–(पुं०) नृसिंहावतार। सिंह जैसा पराक्रमी मनुष्य।—**गण**–(पुं०) नक्षत्र-समूह-विशेष। इस गण में जन्म लेने वाला व्यक्ति।—**त्रात**–(पुं०) राजा।—**दारा**–(पुं०) जनखा, नपुंसक।—**द्विष्**–(पुं०) दैत्य, दानव।—**नारायण**–(पुं०) नर और नारायण—अर्जुन और कृष्ण जिन्हें एक ही सत्ता के दो रूप मानते हैं।—**पशु**–(पुं०) पशु तुल्य मनुष्य।—**पुङ्गव**–(पुं०) पुरुषश्रेष्ठ।—**मालिका**,—**मालिनी**,—**मानिनी**–(स्त्री०) मर्दानी औरत जिसके दाढ़ी हो।—**मेध**–(पुं०) यज्ञ विशेष जिसमें मनुष्य की बलि दी जाती थी।—**यंत्र**–(न०) धूपघड़ी।—**यान**–(न०),—**रथ**–(पुं०) कोई सवारी जिसे आदमी ढकेल कर या उठा कर ले चलें (डोली, पालकी, रिक्शा आदि)।—**लोक**–(पुं०) वह लोक जिसमें मनुष्य रहें। मानव जाति।—**वाहन**–(पुं०) कुबेर। (न०) दे० 'नरयान'।—**वीर**–(पुं०) बहादुर आदमी।—**व्याघ्र**,—**शार्दूल**–(पुं०) श्रेष्ठ पुरुष।—**शृङ्ग**–(न०) एक अलीक कथन (मनुष्य का सींग जिसका होना असम्भव है)।—**संसर्ग**–(पुं०) मानवसमाज।—**सिंह**,—**हरि**–(पुं०) नृसिंहावतार।—**स्कन्ध**–(पुं०) मनुष्यों का समूह या दल।

नरक—(न०, पुं०) [नृणाति क्लेशं प्रापयति, √नृ+वुन्] वह स्थान जहाँ मरने के बाद जीवों को जीवित अवस्था में किये हुए पापों का दण्ड दिया जाता है। नरक २१ हैं। इनकी यातनाओं में तारतम्य है। (पुं०) एक असुर का नाम। यह प्राग्ज्योतिषपुर का अधिपति था। यह अदिति के कानों के कुण्डल ले भागा था। अतः देवताओं के प्रार्थना करने पर श्रीकृष्ण ने अकेले ही उसे मार गिराया था।—**अन्तक** (**नरकान्तक**), —**अरि** (**नरकारि**),—**जित्**–(पुं०) श्रीकृष्ण।—**आमय** (**नरकामय**)–(पुं०) नरक की तरह दुःखदायक एक प्रकार का रोग। भूत, प्रेतात्मा।—**कुण्ड**–(न०) नरक का एक गर्त जिसमें पापियों को नरकयातना दी जाती है।—**स्था**–(स्त्री०) वैतरणी नदी।

नरङ्ग, नराङ्ग—(पुं०) [√नृ+अङ्गच्] नर√अङ्ग्+अण्] पुरुष की जननेन्द्रिय, लिङ्ग। मुहाँसा।

नरन्धि—[नरा धीयन्ते अस्मिन्, नर√धा+कि, पृषो० मुम्] सांसारिक जीवन।

नरी—(स्त्री०) [नर+ङीष्] औरत, स्त्री।

नर्कुटक—(न०) [नरस्य कुटकमिव, पृषो० साधुः] नाक।

नर्त—(पुं०) [√नृत्+घञ्] नाच, नृत्य। (वि०) [√नृत्+अच्] नाच।

नर्तक—(पुं०) [√नृत्+ण्वुल्] नाचने या नृत्य करने का पेशा करने वाला। अभिनेता। शिव। एक संकर जाति (स्मृति)। चारण, भाट। हाथी। राजा। मयूर, मोर।

नर्तकी—(स्त्री०) [नर्तक+ङीष्] नाचने या नृत्य करने का पेशा करने वाली स्त्री। अभिनेत्री। नलिका नामक गंधद्रव्य। हथिनी। मोरनी।

नर्तन—(न०) [√नृत्+ल्युट्] नाचना या नृत्य करना। अङ्गविक्षेपभेद, नृत्य, नाच। (वि०) [√नृत्+ल्यु] नर्तक, नाचने वाला।

—**गृह**–(न०),—**शाला**–(स्त्री०) नाचघर। —**प्रिय**–(पुं०) शिव जी। मोर।

नर्तित–(वि०) [√नृत्+णिच्+क्त] नचाया हुआ।

√नर्द्—भ्वा० पर० अक० गरजना। आवाज करना। भीषण शब्द करना। सक० जाना। नर्दति, नर्दिष्यति, अनर्दीत्।

नर्द—(वि०) [√नर्द्+अच्] डँकरने या गरजने वाला।

नर्दन—(न०) [√नर्द्+ल्युट्] गरजना। ऊँचे स्वर में गुण-गान करना।

नर्दित—(वि०) [√नर्द्+क्त] गरजा हुआ। (पुं०) एक तरह का पासा या पासे का दाँव।

नर्मट—(पुं०) [नर्मन्+अटन्, पृषो० साधुः] खपर, खपड़ा। सूर्य।

नर्मठ—(पुं०) [नर्मन्+अठन्] विदूषक। भाँड। कामुक, लम्पट। खेल, आमोद-प्रमोद। मैथुन, सम्भोग। ठोढ़ी। चूची के ऊपर की काली घुंडी, चूचुक।

नर्मन्—(न०) [√नृ+मनिन्] क्रीड़ा, मनोरञ्जन। हँसी-मज़ाक, दिल्लगी; 'नर्मप्रायाभिः कथाभिः' का०।—**कील** –(पुं०) पति।—**गर्भ**–(वि०) हँसोड़ा, पुरमज़ाक। (पुं०) गुप्त प्रेमी, छिपा हुआ आशिक।—**द**–(वि०) हँसाने वाला। आह्लादक। (पुं०) नर्मसचिव, विदूषक।—**दा**– (स्त्री०) नदी जो विन्ध्यगिरि से निकल कर खंभात की खाड़ी में गिरती है।—**द्युति**–(वि०) प्रसन्न, हर्षयुक्त। (स्त्री०) किसी हँसी की बात सुन प्रसन्न होना।—**सचिव**,—**सुहृद्**–(पुं०) विदूषक, वह मनुष्य जो किसी राजा के पास उसे हँसाने के लिये रहे।

नर्मरा—(स्त्री०) [नर्मन्+र–टाप्] पहाड़ी घाटी। धौंकना। बूढ़ा स्त्री जिसको रजोधर्म न होता हो। सरल वृक्ष। गुफा, खोह।

√नल्—भ्वा० पर० अक० महकना। सक०

बाँधना । नलति, नलिष्यति, अनलीत्—अनालीत् ।

नल—(न०) [√नल्+अच्] कमल । (पुं०) एक प्रकार का नरकुल । दमयन्ती के पति राजा नल । श्रीरामजी की सेना का एक प्रसिद्ध वानरयूथपति, जिसने समुद्र पर पुल बाँधने के काम में मुख्य साहाय्य प्रदान किया था ।—**कील**–(पुं०) घुटना, टेहुना ।—**कूबर**,—**कूवर**–(पुं०) कुबेर के एक पुत्र का नाम ।—**द**–(न०) उशीर, खस ।—**पट्टिका**—(स्त्री०) चटाई ।—**मीन**–(पुं०) झींगा मछली ।

नलक—(न०) [नल√कै+क] शरीर की कोई भी लंबी हड्डी । गोलाकार वह हड्डी जिसके भीतर मज्जा हो । नली के आकार की हड्डी । कालदेवल के भतीजे का नाम, जिसे बुद्ध ने उपदेश दिया था ।

नलकिनी—(स्त्री०) [नलक+इनि—ङीप्] जंघा, जाँघ । घुटना ।

नलिन—(न०) [√नल्+इनच्] कमल का फूल । जल । नील का पौधा । "नलिनेशय" विष्णु की उपाधि है । (पुं०) सारस । नीम । पद्मकेशर ।

नलिनी—(स्त्री०) [नल+इनि—ङीप्] कमलिनी; 'पर्वताग्रे नलिनी प्ररोहति' मृ० ४.१७। कमल का ढेर । वह स्थान या तालाब जहाँ कमल बहुतायत से उत्पन्न होते हों ।—**खण्ड**, **षण्ड**–(न०) कमलिनियों का ढेर ।—**रुह्**–(पुं०) ब्रह्मा की उपाधि । (न०) कमलनाल । कमल के नाल के भीतर का सूत ।

नल्व—(पुं०) [√नल्+व] भूमि नापने का एक नाप जो ४०० हाथ का होता है ।

नव–(वि०) [√नु+अप्] नया, ताजा, टटका । आधुनिक । (पुं०) कौआ । स्तोत्र । रक्तपुनर्नवा ।—**अन्न** (**नवान्न**)–(न०) नया अन्न । हाल में तैयार हुआ अन्न । एक प्रकार का श्राद्ध जो नया अन्न तैयार होने पर पितरों के उद्देश्य से किया जाता है । नये अन्न के आगम के निमित्त किया जाने वाला कृत्य-विशेष ।—**अम्बु** (**नवाम्बु**)–(न०) ताजा पानी ।—**अह**–(पुं०) नौ दिन । नौ दिनों में समाप्त किया जाने वाला यज्ञ आदि । किसी सप्ताह, पक्ष आदि का प्रथम दिन ।—**इतर** (**नवेतर**)–(वि०) पुराना ।—**उद्धृत** (**नवोद्धृत**)–(न०) टटका मक्खन ।—**ऊढा** (**नवोढा**),—**पाणिग्रहणा**–(स्त्री०) नवविवाहिता स्त्री । युवती । लज्जा और भय के मारे नायक के पास जाने में सकुचाने वाली नायिका ।—**कारिका**,—**कालिका**, —**फलिका**–(स्त्री०) हाल की ब्याही औरत । स्त्री जो थोड़े दिनों पूर्व प्रथम बार रजस्वला हुई हो ।—**छात्र** (**नवच्छात्र**)–(पुं०) हाल में दाखिल हुआ विद्यार्थी ।—**नी**–(स्त्री०)—**नीत**–(न०) ताजा मक्खन ।—**नीतक**–(न०) घी । टटका मक्खन ।—**पाठक**–(पुं०) नया शिक्षक ।—**मालिका**,—**मल्लिका**–(स्त्री०) चमेली का एक भेद ।—**यज्ञ**–(पुं०) नये अन्न या फल से अग्नि में आहुति देने की एक क्रिया ।—**यौवन**–(न०) ताजी जवानी या युवावस्था ।—**रजस्**–(स्त्री०) लड़की जिसको हाल ही में रजोदर्शन हुआ हो ।—**रत्न**—(न०) नौ प्रकार के रत्न या मणि—मोती, मानिक, वैदूर्य, गोमेद, हीरा, मूँगा, पद्मराग, पन्ना और नीलम । विक्रमादित्य की सभा के प्रख्यात नौ विद्वान्—धन्वन्तरि, क्षपणक, अमरसिंह, शंकु, वेताल-भट्ट, घटखर्पर, कालिदास, वराहमिहिर और वररुचि । नौ प्रकार के रत्नों वाला हार ।—**रस**—(पुं०) साहित्य में प्रसिद्ध नौ प्रकार के रस—शृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्भुत और शान्त ।—**रात्र** (न०) नौ दिनों में समाप्त होने वाला यज्ञ, व्रत, अनुष्ठान आदि । चैत्र और आश्विन की शुक्ल प्रतिपदा से नवमी तक के

नौ दिन जिनमें दुर्गा की विशिष्ट पूजा की जाती है ।—वधू, —वरिका–(स्त्री०) नवविवाहिता स्त्री, नयी दुलहिन ।—वल्लभ–(न०) अगर का एक भेद ।—वस्त्र–(न०) कोरा या नया कपड़ा ।—शशिभृत्–(पुं०) शिव जी का नाम ।—सङ्गम–(पुं०) पति और पत्नी का प्रथम मिलन, प्रथम समागम ।—सूति,—सूतिका–(स्त्री०) दुधार गौ । जच्चा स्त्री ।

नवक—(न०) [नवानाम् अवयवः, नवन्+कन् नलोप] नौ सजातीय वस्तुओं का समाहार—जैसे (नौ) रत्नों का नवक, (नौ) श्लोकों का नवक ।(वि०) [नव परिमाणमस्य, नवन्+कन्] जिसमें नौ हों ।

नवत—(वि०) [स्त्री०—नवती] [नवति+डट्] नब्बेवाँ । (पुं०) [√नु+अतच्] कंबल । रेशमी कपड़ा । हाथी की झूल जिस पर चित्रकारी हो । पर्दा, आवरण ।

नवति—(स्त्री०) [नव दशतः परिमाणमस्य इति विग्रहे नि० साधुः] नब्बे की संख्या ।

नवतिका—(स्त्री०) [नवति+कन्—टाप्] नब्बे । [नवं नूतनं तैकते करोति, नवन्√तिक्+क—टाप्] तूलिका, चित्रकार की कूँची ।

नवन्—(वि०) [√नु+कनिन्, बा० गुणः] नौ, जिसमें नौ संख्या हो । (न०) नौ की संख्या ।—अशीति (नवाशीति)–(स्त्री०) ८९, नवासी ।—अर्चिस् (नवार्चिस्), —दीधिति–(पुं०) मङ्गल ग्रह ।—कुमारी –(स्त्री०) नवरात्र में पूजी जाने वाली नौ कुमारियाँ—कुमारिका, त्रिमूर्ति, कल्याणी, रोहिणी, काली, चण्डिका, शांभवी, दुर्गा और सुभद्रा ।—कृत्वस्–(अव्य०) नौगुना ।—खण्ड (न०) पृथ्वी के नौ विभाग—भारत, इलावृत्त, किंपुरुष, भद्र, केतुमाल, हरि, हिरण्य, रम्य और कुश ।—ग्रह–(पुं०) नौ ग्रह—सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु ।—चत्वारिंश–(वि०) ४९ वाँ, उनचासवाँ ।—चत्वारिंशत्–(स्त्री०) ४९, उनचास ।—छिद्र,—द्वार–(न०) शरीर जिसमें ९ छेद हैं ।—त्रिंश–(वि०) ३९ वाँ ।—दश–(वि०) १९ वाँ, उन्नीसवाँ ।—नवति–(स्त्री०) ९९, निन्नानवे ।—निधि–(पुं०) कुबेर की नौ निधियाँ यथा—'महापद्मश्च पद्मश्च शंखो मकरकच्छपौ । मुकुन्दकुन्दनीलाश्च खर्वश्च निधयो नव ।'—पञ्चाश–(वि०) उनसठवाँ ।—पञ्चाशत्–(स्त्री०) ५९, उनसठ ।—रत्न–(न०) नौ प्रकार के रत्न—मोती, मानिक, बैदूर्य, गोमेद, हीरा, मूँगा, पद्मराग, पन्ना और नीलम । विक्रमादित्य की सभा के नौ कविरत्न—"धन्वन्तरिक्षपणकामरसिंहशङ्कुवेतालभट्टघटखर्परकालिदासाः । ख्यातो वराहमिहिरो नृपतेः सभायाम् रत्नानि वै वररुचिर्नव विक्रमस्य" ।—रस–(पुं०) काव्य के नौ रस, यथा—शृङ्गार, करुण, हास्य, रौद्र, वीर, बीभत्स, अद्भुत और शान्त ।—रात्र–(न०) चैत्र शुक्ला प्रतिपदा से नवमी तक और आश्विनी शुक्ला प्रतिपदा से ९मी तक के नौ दिन, जिनमें लोग धर्मानुष्ठान किया करते हैं ।—विंश–(वि०) २९ वाँ, उनतीसवाँ ।—विंशति–(स्त्री०) २९, उनतीस ।—विध–(वि०) नौ गुना या नौ प्रकार का ।—विष–(न०) नौ प्रकार के विष—वत्सनाभ, हारिद्रिक, सक्तुक, प्रदीपन, सौराष्ट्रिक, शृङ्गक, कालकूट, हलाहल और ब्रह्मपुत्र ।—शक्ति–(स्त्री०) शक्ति के नौ विग्रह—प्रभा, माया, जया, सूक्ष्मा, विशुद्धा, नन्दिनी, सुप्रभा, विजया और सर्वसिद्धिदा ।—शत–(न०) १०९, एक सौ नौ । नौ सौ ।—शायक–(पुं०) नौ निम्न जातियाँ—ग्वाला, तेली, माली, जुलाहा, हलवाई, बरई, कुम्हार, कमकर और नाई ।—षष्टि–(स्त्री०) ६९, उनहत्तर ।—सप्तति–(स्त्री०) ७९, उन्नासी ।

नवधा—(अव्य०) [नवन्+धा] नौ प्रकार से । नौ भागों में ।

नवम—(वि०) [स्त्री०—**नवमी**] [नवानां पूरणः, नवन्+डट् तस्य स्थाने मट्] नवाँ ।

नवशः-(अव्य०) [नवन्+शस्।] नौ से ।

नवीन, नव्य—(वि०) [नव+ख—ईन] [नव+यत्] अपूर्व । नया । ताजा, टटका । हाल का, आधुनिक ।

√**नश्**—दि० पर० अक० लुप्त हो जाना । नष्ट हो जाना । भाग जाना । उड़ जाना । असफल हो जाना । नश्यति, नशिष्यति—नङ्क्ष्यति, अनशत् ।

नश्—(स्त्री०), **नश**-(पुं०), **नशन**-(न०) [√नश्+क्विप् (भावे)] [√नश्+क] [√नश्+ल्युट्] नाश, बरबादी ।

नश्वर—(वि०) [स्त्री०—**नश्वरी**] [√नश् +क्वरप्] नाशवान्, जो नष्ट हो जाय, जो ज्यों का त्यों न रहे । नाशक । उपद्रवकारी ।

नष्ट—(वि०) [√नश्+क्त] खोया हुआ । जो अदृश्य हो, जो दिखाई न दे । जिसका नाश हो गया हो, जो बरबाद हो गया हो । मृत, मरा हुआ । खराब किया हुआ । वञ्चित । —**अर्थ** (नष्टार्थ)-(वि०) गरीब बनाया हुआ ।—**आतङ्क** (नष्टातङ्क)-(वि०) बिना भय या शङ्का का ।—**आप्तिसूत्र** (नष्टाप्तिसूत्र)-(न०) ऐसा चिह्न जिससे चुराई हुई चीज का पता लग जाय ।—**आशङ्क** (नष्टाशङ्क)-(वि०) भयरहित । निरापद ।—**इन्दुकला** (नष्टेन्दुकला)-(स्त्री०)वह अमावस्या जिसमें चन्द्रमा बिलकुल दिखाई न दे ।—**इन्द्रिय** (नष्टेन्द्रिय)-(वि०) इन्द्रिय-रहित ।—**चेतन**,—**चेष्ट**, —**संज्ञ**-(वि०)बेहोश, मूर्च्छित ।—**चेष्टता**-(स्त्री०) मूर्च्छा, बेखबरी । मूर्च्छा नामक सात्त्विक भाव । प्रलय ।—**जन्मन्**-(पुं०) वर्णसङ्कर, दोगला ।

√**नस्**—भ्वा० आत्म० अक० टेढ़ा होना । नसते, नसिष्यते, अनसिष्ट ।

नस्—(स्त्री०) [√नस्+क्विप्] नाक ।

नसा—(स्त्री०) [नस्+टाप्] नासिका, नाक ।

नस्त—(पुं०) [√नस्+क्त (बा०) इडभावः] नाक । सुँघनी ।—**ऊत** (नस्तोत)-(पुं०) नाथ से थामा हुआ बैल ।

नस्ता—(स्त्री०) [नस्त+टाप्] पशुओं के नाक का छेद जिसमें नाथ बाँधी जाती है । —**ऊत** (नस्तोत)-(पुं०) नाथा हुआ बैल ।

नस्तित—(वि०) [नस्त+इतच्] नाथा हुआ, नाक में छेद कर रस्सी डाला हुआ ।

नस्य—(वि०) [नासिका+यत्, नसादेश] नासिका सम्बन्धी । (न०) नाक के भीतर के बाल । सुँघनी ।

नस्या—(स्त्री०) [नस्य+टाप्] नाक । जानवर की नाक का छेद जिसमें रस्सी पहनाई जाती है ।

√**नह्**—दि० उभ० सक० बाँधना । लपेटना । पहनना, धारण करना । नह्यति—ते, नत्स्यति —ते, अनात्सीत्— अनद्ध ।

नहि—(अव्य०) [द्वि० स०] नहीं, न । किसी प्रकार नहीं, बिलकुल नहीं ।

नहुष—(पुं०) [√नह्+उषच्] चन्द्रवंशी पुरूरवा राजा का पौत्र और राजा ययाति का पिता ।

ना—(अव्य०) [√नह्+डा] नहीं , न ।

नाक—(पुं०) [न कम् सुखम् इति अकम् दुःखम्, तत् नास्ति अत्र, नि० प्रकृतिभावः] स्वर्ग । आकाशमण्डल ।—**चर**-(पुं०) देवता । किन्नर ।—**नाथ**,—**नायक**-(पुं०) इन्द्र ।—**वनिता**-(स्त्री०) अप्सरा ।—**सद्**-(पुं०) देवता ।

नाकिन्—(पुं०) [नाक+इनि] देवता; 'स्वरूप योग्यैक फलानि नाकिनां' शि० १.४५ ।

नाकु-(पुं०) [√नम्+उ, नाक आदेश] दीमक की मिट्टी का ढूह, वल्मीक । पर्वत ।

नाक्षत्र—(वि०) [नक्षत्र+अण्] [स्त्री०—नाक्षत्री] नक्षत्रयुक्त । (न०) ६० घड़ी के दिन से ३० दिवस का मास, जितने दिनों में चन्द्रमा २७ नक्षत्रों पर १ बार घूम जाता है उसे नाक्षत्र मास कहते हैं ।

नाक्षत्रिक—(पु०) [नक्षत्रात् आगतः, नक्षत्र+ठञ्] नाक्षत्र मास ।

नाग—(पुं०) [नग पर्वते भवः, नग+अण् अथवा न गच्छति अगः, न अगः नागः] सर्प । सर्प जाति-विशेष जिनका ऊपरी शरीर मनुष्याकृति का और नीचे का धड़ सर्पाकारोराकृति का होता है । हाथी । जल-जीव-विशेष, शार्क । निष्ठुर या संगदिल आदमी । कोई भी प्रसिद्ध पुरुष ("यथा पुरुषनाग") । बादल । खूँटी । नागकेसर । नागरमोथा । शरीरस्थ पाँच वायुओं में से नाग वायु वह है, जिसके द्वारा डकारें आती हैं । ग्यारह की संख्या ।—**अङ्गना** (नागाङ्गना)-(स्त्री०) हथिनी । हाथी की सूँड़ ।—**अञ्जना** (नागाञ्जना)-(स्त्री०) हथिनी ।—**अधिप** (नागाधिप)-(पुं०) शेष जी ।—**अन्तक** (नागान्तक),—**अराति** (नागाराति),—**अरि** (नागारि)-(पुं०) गरुड़ ।—**अशन** (नागाशन)-(पुं०) मयूर । गरुड़ ।—**आनन** (नागानन)-(पुं०) गणेश जी ।—**आह्व** (नागाह्व)-(पुं०) हस्तिनापुर ।—**इन्द्र** (नागेन्द्र) (पुं०) उत्कृष्ट हाथी । ऐरावत । शेष जी ।—**ईश** (नागेश)-(पुं०) शेष जी । परिभाषेन्दु शेखर के रचयिता का नाम (नागेशभट्ट) पतञ्जलि का नाम ।—**उदर** (नागोदर) (न०) लोहे का तवा या बकतर जिसे अस्त्रों के आघात से बचने के लिये छाती पर बाँधा जाता था । गर्भोपद्रव भेद ।—**केसर**-(पुं०) सफेद महँकदार फूलों वाला एक सदाबहार पेड़ जिसकी लकड़ी बहुत कड़ी होती है, नागचंपा, वज्रकाठ ।—**गति**-(स्त्री०) अश्विनी, भरणी या कृत्तिका नक्षत्र पर रहने के समय किसी ग्रह की गति ।—**गर्भ**-(न०) सिन्दूर ।—**चूड**-(पुं०) शिव जी ।—**ज**-(न०) सिन्दूर । राँगा ।—**जिह्विका**-(स्त्री०) मैनसिल ।—**जीवन**-(न०) राँगा ।—**दन्त**—**दन्तक**-(पुं०) हाथीदाँत । खूँटी जिस पर कपड़े आदि टाँगे जाते हैं ।—**दन्ती**-(स्त्री०) कुंभा नामक ओषधि । सूर्यमुखी फूल । वेश्या ।—**नक्षत्र**,—**नायक**-(न०) अश्लेषा नक्षत्र । (पुं०) सर्पों का राजा ।—**नासा**-(स्त्री०) हाथी की सूँड़ ।—**निर्यूह**-(पुं०) दीवार की बड़ी खूँटी ।—**पञ्चमी**-(स्त्री०) श्रावण शुक्ला ५ को नाग सम्बन्धी एक उत्सव ।—**पद**-(पुं०) रतिबंध, मैथुन करने का एक आसन ।—**पाश**-(पुं०) ऐन्द्रजालिक फंदा, जो युद्धकाल में शत्रु को फँसाने के लिये व्यवहृत किया जाता था । वरुण के फंदे का नाम ।—**पुष्प**-(पुं०) चम्पा का पेड़ । पुन्नाग वृक्ष ।—**फल**-(पुं०) पटोल, परवल ।—**बन्धक**-(पुं०) हाथी पकड़ने वाला ।—**बन्धु**-(पुं०) पीपल का पेड़ । गूलर का पेड़ । बरगद का पेड़ ।—**बल**-(पुं०) भीम की उपाधि ।—**भूषण**-(पुं०) शिव जी का नाम ।—**माण्डलिक**-(पुं०) सँपेरा, साँप पालने वाला ।—**मल्ल**-(पुं०) ऐरावत हाथी ।—**मातृ**-(स्त्री०) नागों की माता, कद्रु, सुरसा । आस्तीक की माता मनसा देवी । मैनसिल ।—**यष्टि**,—**यष्टिका**-(स्त्री०) नये खुदे ताल का पानी नापने का बाँस विशेष । धरती में छेद करने का बर्मा ।—**रक्त**-(न०) **रेणु**-(पुं०) सिन्दूर ।—**रंग**-(पुं०) नारंगी ।—**राज**-(पुं०) शेष जी ।—**लता**,—**वल्लरी**,—**वल्ली**-(स्त्री०) पान की बेल ।—**लोक**-(पुं०) नागों के रहने का लोक, पाताललोक ।—**वारिक**-(पुं०) राजा की सवारी का हाथी । महावत । मयूर । गरुड़ । हाथियों के यूथ का पति । किसी सभा का प्रधान पुरुष ।—**सम्भव**, —**सम्भूत**-(न०) सिन्दूर ।—

—साह्वय–(न०) हस्तिनापुर ।—सुगन्धा–(स्त्री०) भुजंगाक्षी, एक प्रकार की रास्ना ।—स्तोकक–(पुं०) वत्सनाभ विष ।—स्फोता–(स्त्री०) नागदंती ।—हनु–(पुं०) नख नामक गंध द्रव्य ।—हन्त्री–(स्त्री०) बांझ ककोड़ा, वंध्या कर्कोटकी ।

नागर—(वि०) [स्त्री०—नागरी] [नगर +अण्] नगर में उत्पन्न हुआ, शहरुआ । नगर सम्बन्धी । शिष्ट । चतुर, चालाक । बुरा, वह पुरुष जिसमें नगर की बुराइयाँ आ गयी हों । (पुं०) नीर, पुरवासी । देवर । व्याख्यान । नारंगी । थकावट । परिश्रम । किसी बात की जानकारी से इनकार । (न०) सोंठ । नागर-मोथा । मोथा । एक रतिबंध ।

नागरक, नागरिक—(वि०) [नागर+कन् वा नगर+वुञ्] [नगर+ठञ्] नगर में उत्पन्न, शहरुआ । शिष्ट, सभ्य । चालाक, चतुर । (पुं०) नगर में रहने वाला व्यक्ति । शिष्ट मनुष्य । वह व्यक्ति जिसमें नगर के सारे दोष आ गये हों । चोर । कारीगर । पुलिस का प्रधानाध्यक्ष ।

नागरी—(स्त्री०) [नागर+ङीप्] वह वर्ण-माला जिसमें संस्कृत लिखी जाती है । कपट से भरी चालाक औरत । स्नुही का पौधा, सेहुँड़ । भारत की वह प्राचीन लिपि जिसमें संस्कृत और हिन्दी लिखी जाती है । पत्थर की मोटाई की एक बड़ी माप । पत्थर की भारी पटिया ।

नागरीट, नागवीट—[नागरीम् एटति, नागरी√इट्+क] [नाग इव वेटति, नाग –वि√इट्+क] लम्पट, व्यभिचारी । प्रेमी, आशिक । जोर, उपपति ।

नागरुक—(पुं०) [नाग√रु+क] नारंगी ।

नागर्य—(न०) [नागर+ष्यञ्] चालाकी ।

नाचिकेत—(पुं०) [नचिकेता+अण्] आग ।

नाट—(पुं०) [√नट्+घञ्] नाच, अभि-नय करने की क्रिया । कर्नाटक देश का नाम ।

नाटक—(न०) [नाट+कन्] रूपक के दस भेदों में से एक जो प्रथम और सर्वप्रधान है । रूपक । अभिनय । दृश्यकाव्य, अभिनय ग्रन्थ । (पुं०) [√नट्+ण्वुल्] अभिनय करने वाला । नर्तक ।

नाटकीय—(वि०) [नाटक+छ] नाटक सम्बन्धी: 'पूर्वरङ्गः प्रसंगाय नाटकीयस्य वस्तुनः' शि० २.८ ।

नाटार—(पुं०) [नट्याः अपत्यम्, नटी +आरक्] नटी का पुत्र ।

नाटिका—(स्त्री०) [नाट+कन्–टाप्, इत्व] छोटा नाटक जिसमें चार अङ्क होते हैं। इसकी कथा कल्पित होती है। इसमें स्त्री पात्रों का आधिक्य होता है ।

नाटितक—(न०) [√नट्+णिच्–क +कन्] किसी की चेष्टा आदि का अनुकरण । स्वांग ।

नाटेय, नाटेर—(पुं०, न०) [नट्याः अपत्यम्, नटी+ढक्] [नटी+ढ्रक्] नटी या नर्तकी का पुत्र ।

नाट्य—(न०) [नटानां कार्यम्, नट+ष्यञ्] नृत्य गीत और वाद्य, नटों का काम ।—आचार्य (नाट्याचार्य)–(पुं०) अभिनय, नृत्य आदि का शिक्षक ।—उक्ति(नाट्योक्ति) (स्त्री०) विशेष सम्बोधनसूचक शब्द जो विशेष व्यक्तियों के लिये नाटक ग्रन्थों में व्यवहृत किये जाते हैं ।—धर्मिका,—धर्मी –(स्त्री०) नाटक सम्बन्धी नियम ।—प्रिय–(पुं०) शिवजी ।—शाला–(स्त्री०) नाटक खेलने का घर या स्थान । वह घर जो राज-भवन के दरवाजे के पास हो ।—शास्त्र–(न०) नृत्य, गीत और अभिनय की विद्या ।

नाडि, नाडी—(स्त्री०) [√नड् (भ्रंश) +णिच्+इन्] नाडि+ङीष्] कमल का पोला नाल । किसी तृण का पोला डंठल ।

शरीर के भीतर की वे नलियाँ जिनमें होकर लोहू बहा करता है। विशेषकर वे नलियाँ जिनमें हृदय से शुद्ध रक्त बनकर प्रत्येक क्षण सारे शरीर में जाया करता है, धमनी। वंशी। वीणा। भगन्दर। कलाई पर का नाड़ा। २४ मिनिट के बराबर का काल। अर्ध मुहूर्त काल। ऐन्द्रजालिक कर्तव्य।—**चक्र**-(न०) नाभि-प्रदेश में स्थित मुर्गी के अंडे के आकार का चक्रविशेष जिसमें से सभी नाड़ियाँ निकली हैं (हठयोग)।—**चरण**-(पुं०) पक्षी।—**चीर**-(न०) एक छोटा नरकुल।—**जङ्घ**-(पुं०) काक। एक मुनि। एक चिरजीवी बगुला जो इंद्रद्युम्न नामक जलाशय में रहता है (म० भा०)। कश्यप का पुत्र राजधर्म नाम का बगुला (म० भा०)।—**तरङ्ग**-(पुं०) काकोल। हिंसक। ज्योतिषी। लंपट।—**तिक्त**-(पुं०) नेपाली नीम।—**देह**-(पुं०) शिव का द्वारपाल भृंगी जो अत्यंत कृशकाय है।—**नक्षत्र**-(न०) जन्मनक्षत्र; जिस नक्षत्र में मनुष्य का जन्म होता है उसे तथा उससे दसवें, सोलहवें, अठारहवें, तेइसवें और पचीसवें नक्षत्र को नाडीनक्षत्र या नाडी कहते हैं।—**परीक्षा**-(स्त्री०) नाड़ी देखना।—**मण्डल**-(न०) विषुवत् रेखा।—**व्रण**-(पुं०) वह पुराना घाव जिसमें भीतर ही भीतर छेद हो जाता और मवाद निकला करता है।

नाडिका—(स्त्री०) [नाडि+कन्—टाप्] नाड़ी, धमनी। घड़ी (२४ मिनट का काल)।

नाडिन्धम, नाडीन्धम—(वि०) [नाडीम् धमति, नाडी√ध्मा+खश्, धमादेश, ह्रस्व, मुम्, पक्षे ह्रस्वाभावः] नली को फूंकने वाला। नाड़ियों को हिलाने वाला। श्वास को जल्दी चलाने वाला, हँफाने वाला। (पुं०) सुनार, स्वर्णकार।

नाणक—(न०) [अणति शब्दायते, √अण्+ण्वुल्, न आणकम्] सिक्का। एक प्राचीन सिक्का (मृच्छकटिक)।; 'एषा नाणकमोषिकामकशिका' मृ० १.२३।

नातिचर—(वि०) [न अतिचरः] बहुत काल का नहीं। बहुत लंबा।

नातिदूर—(वि०) [न अतिदूरः] बहुत दूर नहीं।

नातिवाद—(वि०) [न अतिवादः] कुवाक्यों को बचाना।

√नाथ्—भ्वा० आत्म० सक० माँगना, याचना करना। कष्ट देना। आशीर्वाद देना। अक० प्रभु होना। नाथते, नाथिष्यते, अनाथिष्ट।

नाथ—(पुं०) [√नाथ्+अच्] मालिक, स्वामी, प्रभु। नेता। पति। नटखट बैल की नाक में डाला हुआ रस्सा।—**हरि**-(पुं०) पशु, हैवान।

नाथवत्—(वि०) [नाथ+मतुप्, वत्व] सनाथ जिसका कोई रक्षक या रक्षा करने वाला हो। परतंत्र, दूसरे पर निर्भर।

नाद—(पुं०) [√नद्+घञ्] शब्द, ध्वनि, आवाज। गर्जन। चिल्लाहट, चीत्कार। वर्णों का अव्यक्त मूलरूप। सानुनासिक स्वर जो 'ँ' अर्द्धचन्द्र से व्यक्त होता है।

नादिन्—(वि०) [√नद्+णिनि] शब्द करने वाला, नाद करने वाला। रोंभने वाला। दहाड़ने वाला। (पुं०) कालञ्जर गिरि से उत्पन्न जातिस्मर सात मृग।

नादेय—(वि०) [स्त्री०—**नादेयी**] [नदी+ढक्] नदी में होने वाला। नदी सम्बन्धी। (न०) सेंधा नमक। काँस। वानीर का पेड़।

√नाध्—दे० '√नाथ्'। नाधते, नाधिष्यते, अनाधिष्ट।

नाना—(अव्य०) [न+नाञ्] अनेक प्रकार के, कई तरह के, विविध। अनेक, बहुत। उभयार्थ। विनार्थ।—**अत्यय** (नानात्यय) -(वि०) अनेक प्रकार का।—**अर्थ** (नानार्थ) -भिन्न-भिन्न उद्देश्य और लक्ष्य वाला।

अनेकार्थवाची ।—**कन्द**–(पुं०) पिंडालू । (वि०) जिसमें से बहुत जड़ें निकली हों ।—**रस**–(वि०) भिन्न-भिन्न प्रकार के स्वादों वाला ।—**रूप**–(वि०) अनेक रूपों वाला ।—**वर्ण**–(वि०) अनेक रंगों का ।—**विध**–(वि०) विविध प्रकार का । (अव्य०) अनेक प्रकार से ।

नानान्द्र—(पुं०) [ननान्दुः अपत्यम्, ननान्दृ+अण्] ननद का पुत्र ।

नान्त—(वि०) [न० ब०] अन्तरहित। असीम ।

नान्तरीयक—(वि०) [न अन्तरा विना भवः, अन्तरा+छ, टिलोप+कन्] अवश्यम्भावी । जो पृथक् न हो सके । घनिष्ठ सम्बन्ध रखने वाला ।

नान्द—(न०) [√नम्+ष्ट्रन्] प्रशंसा । विरुदावली ।

नान्दिकर, नान्दिन्—(पुं०) [नान्दीं करोति, नान्दी√कृ+ट, ह्रस्व] [√नन्द्+णिनि] नांदी का पाठ करने वाला । नाटक के आरंभ में मंगल के रूप में भेरी आदि बजाने वाला ।

नान्दी—(स्त्री०) [नन्दन्ति देवा अत्र,√नन्द्+घञ्, पृषो० वृद्धि, ङीप्] । प्रसन्नता, हर्ष । समृद्धि । देवस्तुति । नाटक के पूर्व आशीर्वादात्मक स्तुति ।—**कर**–(पुं०) दे० 'नान्दिकर' ।—**निनाद**–(पुं०) हर्षनाद ।—**पट**–(पुं०) कूपादिमुखबन्धन वस्त्र, कुएँ का ढकना ।—**मुख**–(पुं०) कुएँ का ढक्कन । एक आभ्युदयिक श्राद्ध जो मांगलिक अवसरों पर किया जाता है, वृद्धिश्राद्ध।—०**श्राद्ध**–(न०) आभ्युदयिक श्राद्ध जो किसी शुभ कार्य को आरम्भ करने के पूर्व किया जाता है ।—**वादिन्**–(पुं०) नाटक में मङ्गलाचरण करने वाला । ढोल बजाने वाला ।

नापित—(पुं०) [न आप्नोति सरलताम्, न √आप्+तन्, इट्] नाई, हज्जाम ।

नापित्य–(न०) [नापित+ष्यञ्]नाई का धंधा।

नाभि—(पुं०, स्त्री०) [√नह्+इञ्, भ आदेश] ढोंढ़ी, तुन्दकूपी । (पुं०) चक्रमध्य, पहिये का मध्यभाग । प्रधान, मुखिया; 'कृत्स्नस्य नाभिर्नृपमण्डलस्य' र० १८.२० । समीप की नातेदारी । सम्राट् । समीपी नातेदार । क्षत्रिय । घर । (स्त्री०) मुश्क । कस्तूरी ।—**आवर्त** (नाभ्यावर्त)–(पुं०) ढोंढ़ी का गढ़ा ।—**कण्टक,—गुडक,—गोलक**–(पुं०) उभरी हुई ढोंढ़ी ।—**ज,—जन्मन्,—भू**–(पुं०) ब्रह्मा ।—**नाडी**–(स्त्री०)—**नाल**–(न०) नाभि की नाड़ी जो गर्भकाल में माता की रसवहा नाड़ी से जुड़ी रहती है ।—**पाक**–(पुं०) एक रोग जिसमें बच्चों की नाभि पक जाती है ।—**वर्धन**–(न०) नाल काटने की क्रिया ।—**वर्ष**–(पुं०) जंबूद्वीप के नौ वर्षों में से एक, भारतवर्ष ।—**सम्बन्ध**–(पुं०) एक ही उदर से या एक ही गोत्र में उत्पन्न होने का नाता ।

नाभिल—(वि०) [नाभि+लच्] नाभि सम्बन्धी । उभरी हुई नाभि वाला ।

नाभील—(न०) [नाभि—ङीष्, नाभी√ला+क] नाभि का गढ़ा । पीड़ा । कष्ट । भङ्गनाभि । स्त्रियों का कटि के नीचे का भाग, ऊरुसन्धि ।

नाभ्य—(वि०) [नाभि+यत्]नाभि सम्बन्धी । (पुं०) शिव जी ।

नाम—(अव्य०) [√नम्+णिच्+ड] प्राकाश्य । संभावना । क्रोध । उपनाम । कुत्सन । विस्मय । स्मरण । विकल्प। विभक्तिहीन शब्द, सचमुच, यथार्थ में, सत्य करके, 'विनीतवेषेण प्रवेष्टव्यानि तपोवनानि नाम' श० १ ।

नामन्—(न०) [म्नायते अभ्यस्यते,√म्ना+मनिन् नि० साधुः] शब्द जिससे किसी वस्तु, व्यक्ति या समूह का ज्ञान प्राप्त हो किसी वस्तु या व्यक्ति का निर्देश करने वाला शब्द, संज्ञा, आख्या, अभिख्या, आह्वा ।—**अङ्क** (नामाङ्क)–(वि०) नाम से चिह्नित ।

—अनुशासन (**नामानुशासन**),**—अभिधान** (**नामाभिधान**)–(न०) नाम बतलाना। शब्दकोश।**—अपराध** (**नामापराध**)–(पुं०) नाम लेकर गाली देना। नाम निकालना यानी बदनामी करना।**—आवली** (**नामावली**)–(स्त्री०) नामों की तालिका। **—करण,—कर्मन्**–(न०) नामकरण-संस्कार।**—ग्राह**–(पुं०) नाम लेकर सम्बोधन करना; 'नामग्राहमरोदीत् सा' भट्टि० ५.५। **—द्वादशी**–(स्त्री०) अगहन सुदी तीज को होने वाला एक व्रत जिसमें गौरी, काली आदि बारह देवियों की पूजा होती है।**—धारक,—धारिन्**–(वि०) नाम मात्र रखने वाला, सिर्फ नाम मात्र का।**—धेय**–(न०) नाम।**—निर्देश**–(पुं०) नाम लेकर बतलाना। **—मात्र**–(वि०) कहने भर को, अत्यल्प। **—माला**–(स्त्री०),**—संग्रह**–(पुं०) नामों की तालिका।**—मुद्रा**–(स्त्री०) मोहर वाली अँगूठी।**—वर्जित**–(वि०) नाम-रहित। मूर्ख।**—वाचक**–(वि०) नाम बतलाने वाला। (न०) व्यक्तिवाचक संज्ञा। **—शेष**–(वि०) जिसका केवल नाम बच रहा हो, मृतक, मरा हुआ।

नामि—(पुं०) [√नम्+इञ्] विष्णु।

नामित—(वि०) [√नम्+णिच्+क्त] झुकाया हुआ।

नाम्य—(वि०) [√नम्+णिच्+यत्] लचीला, झुकाने योग्य।

नाय—(पुं०) [√नी+घञ्] नेता, मुखिया। नेतृत्व। नीति। साधन।

नायक—(पुं०) [√नी+ण्वुल्] ले जाने या पहुँचाने वाला व्यक्ति। किसी समुदाय या जनता को विशिष्ट उद्देश्य की कार्य-सिद्धि का मार्ग-निर्देश करने वाला प्रभावशाली व्यक्ति या अधिकारी, अग्रेसर। वह सेनापति जिसके अधीन दल और सेनापति हों; 'नायका मम सैन्यस्य संज्ञार्थं तान् ब्रवीमि ते. भग०१।' बीस हाथियों और घोड़ों के दल का अध्यक्ष। प्रभु, अधीश्वर। हार का प्रधान मणि। श्रेष्ठ पुरुष, किसी समुदाय का अग्रगण्य व्यक्ति। शृंगार का आलंबन रूप यौवन, आदि से संपन्न पुरुष। वह पुरुष जिसके चरित्र को लेकर किसी काव्य या नाटक आदि की रचना की गई हो। नायक चार प्रकार के होते हैं—धीरोदात्त, धीरोद्धत, धीरललित, धीरप्रशान्त। इन नायकों के फिर चार-चार भेद हैं—अनुकूल, दक्षिण, शठ, धृष्ट। एक राग। शाक्य मुनि। एक छन्द।**—अधिप** (**नायकाधिप**)–(पुं०) राजा।

नायिका—(स्त्री०) [नायक+टाप्, इत्व] स्वामिनी। भार्या। किसी काव्य की प्रधान पात्री। नायिका के तीन भेद हैं—स्वकीया, परकीया, सामान्या। स्वकीया तीन प्रकार की है—मुग्धा, मध्या, प्रौढ़ा। मध्या और प्रौढ़ा के तीन-तीन भेद हैं—धीरा, अधीरा, धीराधीरा। ये छह नायिका भी दो प्रकार की हैं—ज्येष्ठा, कनिष्ठा। परकीया के दो भेद हैं—ऊढ़ा, अनूढ़ा। सामान्या वेश्या होती है। अवस्था के कारण इन आठ नायिकाओं के भेद—स्वाधीनभर्तृका, खण्डिता, अभिसारिका, कलहान्तरिता, विप्रलब्धा, प्रोषितभर्तृका, वासकसज्जा, विरहोत्कण्ठिता।

नार—(न०) [नर+अण्] नर-समूह, मनुष्यों की भीड़। (पुं०) जल। हाल का पैदा हुआ बछड़ा। सोंठ। (वि०) नर-संबंधी। आध्यात्मिक।**—कीट**–(पुं०) अश्मकीट। छलिया। आशा दिला कर उसे भंग करने वाला व्यक्ति।**—जीवन**–(न०) स्वर्ण।

नारक—(वि०) [स्त्री०—**नारकी**] [नरक+अण्] नरक सम्बन्धी। (पुं०) नरक, दोजख। नरकवासी जीव।

नारकिक, नारकिन्, नारकीय—(वि०) [नरक+ठक्] [नारक+इनि] [नारक+छ] नरक का। (पुं०) नरकवासी जीव।

नारङ्ग—(पुं०) [√नॄ+अङ्गच्, वृद्धि]

गाजर । पिप्पलीरस । नारंगी का पेड़ । लंपट । यमज प्राणी ।

नारद—(पुं०) [नारं परमात्मविषयकं ज्ञानं ददाति, नार√दा+क अथवा नारं नरसमूहं द्यति खण्डयति कलहेन, √दो+क अथवा नारं जलं पितृभ्यो ददाति, √दा+क] एक प्रसिद्ध देवर्षि । ब्रह्मा के दस मानस पुत्रों में से यह एक हैं ।

नारसिंह—(वि०) [नरसिंह+अण्] नरसिंह सम्बन्धी । (पुं०) विष्णु की उपाधि ।

नारा—(स्त्री०) [नरस्य मुनेः इयम्, नर+अण्—टाप्] जल ।

नाराच—(पुं०) [नारं नरसमूहम् आचामति, नर—आ√चम् (भक्षण)+ड] लोहे का तीर । तीर । जलहस्ती, सूँस ।

नाराचिका, नाराची—(स्त्री०) [नाराच+ठन्—टाप्] [नाराच+अच्—ङीप्] सुनार का काँटा ।

नारायण—(पुं०) [नारा अयनं यस्य, ब० स०] विष्णु भगवान् । इस शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार मनु ने बतलायी है:—"आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः । ता यदस्यायनं पूर्वं तेन नारायणः स्मृतः ॥" एक ऋषि का नाम जो नर के साथी थे और जिनकी जंघा से उर्वशी की उत्पत्ति हुई थी । यथा "ऊरूद्भवा नरसखस्य मुनेः सुरस्त्री ।"

नारायणी—(स्त्री०) [नारायण+अण्—ङीप्] लक्ष्मी देवी । दुर्गा देवी ।

नारिकेल, नालिकेर—(पुं०) [√किल्+घञ्, नार्याः केलः, ष० त०, पृषो० ह्रस्व, अथवा √नल्+इण्, केन जलेन इलति, √इल्+क, कर्म० स०, पक्षे लस्य रः] नारियल ।

नारी—(स्त्री०) [नुः नरस्य वा धर्म्या, नृ+अञ्—ङीन्] स्त्री, औरत ।—**तरङ्गक**—(पुं०) प्रेमी, आशिक । लंपट, व्यभिचारी ।—**दूषण**—(न०) स्त्रियों के दोष जिनका उल्लेख मनु ने इस प्रकार किया है:—पानं दुर्जनसंसर्गः पत्या च विरहोऽटनम् । स्वप्नोऽन्यगेहवासश्च नारीणां दूषणानि षट् ॥—**प्रसङ्ग**—(पुं०) लंपटता, व्यभिचार ।—**रत्न** (न०) उत्तम स्त्री ।

नार्यङ्ग—(पुं०) [नारीणाम् अङ्गमिव शोभनम् अङ्गम् यस्य] नारंगी का पेड़ ।

नाल—(वि०) [नल+अण्] नरकुल का बना हुआ । (न०) [√नल्+ण] कमल आदि की डंडी; 'विकचकमलैः स्निग्धवैडूर्यनालैः' मे० ७६ । पौधे का पोला तना, कांड । (पुं०) नाड़ी, धमनी । हरताल । मूठ । (पुं०) [√नल्+घञ्] नहर । नाली ।

नालम्बी—(स्त्री०) शिव की वीणा ।

नाला—(स्त्री०) [√नल्+ण—टाप्] नरकट । कमलदंड । पौधे का पोला तना ।

नालि, नाली—(स्त्री०) [√नल्+णिच्+इन्] [नालि+ङीप्] धमनी, नाड़ी । कमल का नाल । घड़ी, २४ मिनट का काल । हाथी का कान छेदने का औजार । नाली । नहर । कमल का फूल ।

नालिक—(पुं०) [नल एव नालः तृणविशेषः, स भोक्तव्यत्वेन अस्ति अस्य, नाल+ठन्] भैंसा । [नालम् अस्ति अस्य, नाल+ठन्] कमल । बाँसुरी ।

नालिका—(स्त्री०) [नाल+कन्—टाप्, इत्व]पद्मदंड । नाली । हाथी का कान छेदने का चाबुक । जुलाहों की सूत लपेटने की नली । पटुआ साग । एक गंधद्रव्य ।

नालिकेल—(पुं०), **नालिकेली**—(स्त्री०) [=नारिकेल, लरयोरैक्यात् रस्य लः [नालिकेल+ङीप्]नारियल ।

नालीक—(पुं०) [नाली√कै+क] तीर । एक प्रकार का छोटा बाण जो नली में रख कर छोड़ा जाता है । कमल । सूतदार कमलनाल । कमल के फूल का सूत दार डंठल ।

नालीकिनी—(स्त्री०) [नालीक+इनि—

ङीप्] कमल के फूलों का समूह। कमलों का तालाब।

नाविक—(पुं०) [नावा तरति, नौ+ठन्] कर्णधार, माझी, मल्लाह। पोतारोही, नाव पर यात्रा करने वाला।

नाविन्—(पुं०) [नौः अस्ति अस्य, नौ+इनि] मल्लाह।

नाव्य—(वि०) [नावा तार्यम्, नौ+यत्] नाव से लाँघने योग्य। [√नु+ण्यत्] प्रशंसार्ह। (न०) [नवस्य भावः, नव+ष्यञ्] नवीनता, नयापन।

नाश—(पुं०) [√नश्+घञ्] अस्तित्व न रहना, सत्ता न रहना। प्रध्वंस, लय, संहार, बरबादी। अदर्शन, लोप। संकट। दुर्भाग्य, बदकिस्मती। त्याग। भाग जाना।

नाशक—(वि०) [√नश्+णिच्+ण्वुल्] नाश करने वाला, बरबाद करने वाला। वध करने वाला, मारने वाला। दूर करने वाला, न रहने देने वाला।

नाशन—(वि०) [स्त्री०—**नाशनी**] [√नश्+णिच्+ल्यु] नाश करने वाला। (न०) [√नश्+णिच्+ल्युट्] नाश, बरबादी। स्थानान्तरकरण। मृत्यु।

नाशिन्—(वि०) [स्त्री०—**नाशिनी**] [√नश्+णिच्+णिनि] नाशक, नाश करने वाला। [नाश+इनि] नाश योग्य होने वाला।

नाष्टिक—(पुं०) [नष्टं द्रव्यं स्वामित्वेन अर्हति, नष्ट+ठञ्] किसी खोई हुई वस्तु का मालिक या रखने वाला।

√नास्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना। नासते, नासिष्यते, अनासिष्ट।

नासत्य—(पुं०) [नास्ति असत्यम् यस्य, न० ब०, नञः प्रकृतिवद्भावः] अश्विनीकुमार।

नासा—(स्त्री०) [√नास्+अ—टाप्] नाक। सूँड़। अडूसा। स्वर। चौखट का ऊपर का बाजू। —**अग्र** (**नासाग्र**)-(न०) नाक की नोक। —**छिद्र**,—**रन्ध्र**,—**विवर**-(न०) नाक का छेद। —**दारु**-(न०) चौखट का ऊपर का बाजू। —**परिस्राव**-(पुं०) सर्दी से नाक का बहना। —**पुट**-(न०) नथुना, नकुना। —**वंश**-(पुं०) नाक के ऊपर बीचों-बीच वाली पतली हड्डी, नाक का बाँसा। —**स्राव**-(पुं०) नाक का एक रोग जिसमें नाक से सफेद और पीला मवाद निकला करता है।

नासिकन्धय—(वि०) [नासिका√धे+खश् ह्रस्व, मुम्] नाक से पीने वाला।

नासिका—(स्त्री०) [√नास्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] नाक, घ्राणेन्द्रिय। नाक की शकल की कोई चीज। हाथी की सूँड। मरेठा। —**मल**-(पुं०) नाक से निकलने वाला श्लेष्मा।

नासिक्य—(वि०) [नासिका+ष्यञ्] नासिका से उत्पन्न। (न०) नाक। (पुं०) अश्विनी-कुमार। अनुनासिक स्वर।

नासीर—(वि०) [√नास्+क्विप्, नासा शब्देन ईर्ते गच्छति, √ईर्+क] आगे चलने वाला, अग्रेसर; 'नलस्य नासीरगते वितेनतुः' नै० १.६८। (पुं०) (सेना का) अगला भाग। सेनानायक के आगे चलने वाला दल जो जयनाद करता जाता है।

नास्ति—(अव्य०) [न अस्ति, अस्ति इति विभक्तिप्रतिरूपकम् अव्ययम्, सुप्सुपेति योगविभागात् समासः] अविद्यमानता, नहीं। —**वाद**-(पुं०) वह सिद्धान्त, जिसमें ईश्वर का होना नहीं माना जाता है; 'बौद्धेनेव सर्वदा नास्तिवादशूरेण' का०।

नास्तिक—(पुं०) [नास्ति परलोकः ईश्वरो वा इति मतिर्यस्य, नास्ति+ठक्] वह जिसे ईश्वर, परलोक आदि में विश्वास न हो, वेदनिन्दक, आस्तिक का उलटा। (नास्तिकों के अपने छः दर्शन हैं। चार्वाक, बौद्ध और जैन नास्तिक माने जाते हैं। इनमें चार्वाक घोर नास्तिक हैं।)

नास्तिक्य—(न०) [नास्तिक+ष्यञ्] नास्तिकता, ईश्वर, परलोक आदि में अविश्वास ।

नास्तिद—(पुं०) आम का पेड़ ।

नास्य—(न०) [नासा+यत्] बैल आदि की नाथ, नकेल । (वि०) नाक सम्बन्धी ।

नाह—(पुं०) [√नह्+घञ्] बंधन । फंदा, लासा, जाल । कब्जियत, बद्धकोष्ठता ।

नाहुष, नाहुषि—(पुं०) [नहुषस्य अपत्यम्, नहुष+अण्] [नहुष+इञ्] ययाति राजा की उपाधि ।

नि—(अव्य०) [√नी+डि] यह एक उपसर्ग है जो संज्ञावाचक और क्रियावाचक शब्दों में लगाया जाता है और निम्न अर्थों में प्रयुक्त होता है । नीचापन, नीचे की ओर की गति जैसे 'निपतित' । समूह, समुदाय; जैसे 'निकर', 'निकाय' । आधिक्य; यथा 'निकाम' । आज्ञा, आदेश; यथा 'निदेश' । सातत्य, स्थिरत्व; यथा 'निविशन' । पटुता; यथा 'निपुण' । रोक, बंधन; यथा 'निबन्ध' । सम्मिलन, संयोग, यथा 'निपीतमुदकम्' । सामीप्य; यथा 'निकट' । तिरस्कार, हानि; यथा 'निकृति' । दिखावट; यथा 'निदर्शन' । अवसान; यथा 'निवृत्त' । आश्रय, यथा 'निलय' । सन्देह । निश्चय । स्वीकृति । फेंक देना । दान ।

निःक्षेप—(पुं०) [निर्√क्षिप्+घञ्] दे० 'निक्षेप' ।

निःश्रयणी, निःश्रेणि—(स्त्री०) [निः निश्चितम् श्रीयते आश्रीयते अनया, निर्√श्रि+ल्युट्—ङीप्] [निः निश्चिता श्रेणिः सोपानपंक्तिः यत्र, ब० स०] काठ की सीढ़ी । सीढ़ी; 'चक्रे त्रिदिवनिःश्रेणिः सरयूरनुयायिनाम्' र० १५.१०० ।

निःश्वास—(पुं०) [निर्√श्वस्+घञ्] बाहर साँस निकालना । साँस लेना । आह भरना, ऊँची साँस लेना ।

निःसरण—(न०) [निर्√सृ+ल्युट्] बाहर निकलना । बाहर निकलने का रास्ता । द्वार, दरवाजा । महायात्रा, मृत्यु । उपाय, साधन । निर्वाण, मोक्ष ।

निःसह—(वि०) [निर्√सह्+खल्] असह्य, जो बरदाश्त न हो सके । शक्तिहीन; 'अयि विरम निःसहासि जाता' माल० २ ।

निःसारण—(न०) [निर्√सृ+णिच्+ल्युट्] निकालना, बाहर कर देना । घर का द्वार ।

निःस्रव—(पुं०) [निर्√स्रु+अप्] शेष, बचत । निर्गमन, निकास ।

निःस्राव—(पुं०) [निर्√स्रु+ण] व्यय, खर्च । उबले हुए चावलों का जल या माँड़ी ।

निःस्व—(वि०) [निः नास्ति स्वं धनं यस्य, ब० स०] धनहीन, दरिद्र, कंगाल । इसका लक्षण यों है—'सूर्पाकारौ विरूक्षौ च वक्रौ पादौ शिरालकौ । संशुष्कौ पाण्डुरनखौ निःस्वस्य विरलांगुली ।' (गरुड़ पु०)

निकट—(वि०) [नि समीपे कटति, नि√कट्+अच्] पास का, समीपवर्ती । (पुं०, न०) समीप, पास, नजदीक, सामीप्य ।

निकर—(पुं०) [नि√कृ+अच् वा अप्] ढेर, गल्ला । झुंड, समूह । गट्ठर । सार । उचित पुरस्कार या भेंट । द्रव्यकोष ।

निकर्तन—(न०) [नि√कृत्+ल्युट्] काटकर नीचे गिराने की क्रिया ।

निकर्षण—(न०) [निः नास्ति कर्षणं यत्र, ब० स०] मैदान, खुली जगह, चौगान जो नगर के निकट हो । घर के द्वार के सामने की खुली जगह । पड़ोस । अनबुई अनजुती जमीन का टुकड़ा ।

निकष—(पुं०) [नि√कष्+घ वा अप्] कसौटी; 'निकषे हेमरेखेव' र० १७.४६ । हथियारों पर सान रखने का पत्थर, सिल्ली । कसौटी पर की सोने की रेखा ।—उपल

(निकषोपल),—ग्रावन्,—पाषाण—(पुं०) सोना कसने या सान चढ़ाने का पत्थर।

निकषा—(स्त्री०) [नि√कष्+अच्—टाप्] रावण आदि राक्षसों की माता का नाम। (अव्य०) समीप।—**आत्मज** (**निकषा-त्मज**)—(पुं०) राक्षस।

निकाम—(वि०) [नि√कम्+घञ्] विपुल, बहुत, अत्यधिक। अभिलाषी। (पुं०, न०) कामना, अभिलाषा। (अव्य०) इच्छानुसार। अपने सन्तोषार्थ। अत्यधिक।

निकाय—(पुं०) [नि√चि+घञ्, कुत्व] ढेर। समूह। झुंड। सभा। आवासस्थान। शरीर। निशाना, लक्ष्य। परमात्मा।

निकाय्य—(पुं०) [नि√चि+ण्यत्, नि० साधुः] गृह, घर।

निकार—(पुं०) [नि√कृ+घञ्] अनाज फटकना। ऊपर उठाना। वध, हत्या। [नि√कृ+घञ्] अनादर, अवज्ञा, तिरस्कार; 'तीर्णो निकारार्णवः' वे० ६.४३। पराभव। द्वेष। दुष्टता। विरोध।

निकारण—(न०) [नि√कृ+णिच्+ल्युट्] मारण, वध।

निकाश, निकास—(पुं०) [नि√काश् (स्) घञ्] दृष्टि, प्रत्यक्ष। आकाश। सामीप्य, पड़ोस। समानता, सादृश्य।

निकाष—(पुं०) [नि√कष्+घञ्] रगड़। 'कनकनिकाषराजिगौरैः' कि० ७.६। खरोंच।

निकुञ्चन—(पुं०) [नि√कुञ्च्+ल्यु] एक प्राचीन तौल जो = तौले के बराबर होती है।

निकुञ्ज—(पुं०, न०) [नितरां को पृथिव्यां जायते, नि—कु√जन्+ड, पृषो० साधुः] लतागृह, लतामण्डप। ऐसा स्थान जो घनी लताओं और घने वृक्षों से ढका हो।

निकुम्भ—(पुं०) [नि√कुम्भ्+अच्] शिव के एक अनुचर का नाम। सुन्द और उपसुन्द के पिता का नाम।

निकुरम्ब, निकुरुम्ब—(न०) [नि √कुर्+अम्बच्] [नि√कुर्+उम्बच्] समूह। 'लतानिकुरम्बं' गीत० ११।

निकुलीनिका—(स्त्री०) कोई भी दस्तकारी या कला जो किसी के घर में परम्परागत होती चली आती हो।

निकृत—(वि०) [नि√कृ+क्त] तिरस्कृत। प्रवञ्चित, धोखा खाये हुए। स्थानान्तरित किया हुआ। दुःखी। दुष्ट। कमीना, नीच। पापी।—**प्रज्ञ**—(वि०) दुष्टहृदय, दुर्नीता।

निकृति—(स्त्री०) [नि√कृ+क्तिन्] नीचता। दुष्टता। बेईमानी। कपट। मानहानि, अपमान। कुवाच्य, गाली। अस्वीकृति। स्थानान्तरकरण। धनहीनता, गरीबी।

निकृन्तन—(वि०) [स्त्री०—**निकृन्तनी**] [नि√कृत्+ल्यु] काटकर नीचे गिराने वाला। (न०) [नि√कृत्+ल्युट्] काटना। काटने का औजार।

निकृष्ट—(वि०)] नि√कृष्+क्त] नीच, कमीना, पाजी। जातिच्युत। घृणित। गँवार।

निकेत—(पुं०) [निकेतति निवसति अस्मिन्, नि√कित्+घञ्] आवासस्थान, घर।

निकेतन—(न०) [नि√कित्+ल्युट्] मकान, घर। (पुं०) पलाण्डु, प्याज।

निकोचन—(न०) [नि√कुच्+ल्युट्] संकुचन, सिकोड़, सिमटाव।

निक्वण, निक्वाण—(पुं०) [नि √क्वण्+अप्] [नि√क्वण्+घञ्] साङ्गीतिक स्वर। स्वर। वीणा की झनकार। किन्नरों का शब्द।

√निक्ष्—भ्वा० पर० सक० चूमना। निक्षति, निक्षिष्यति, अनिक्षीत्।

निक्षा—(स्त्री) [√निक्ष्+अ—टाप्] जूँ का अण्डा। लीख।

निक्षिप्त—(वि०) [नि√क्षिप्+क्त] फेंका

हुआ। नीचे पटका हुआ। धरोहर रखा हुआ। गिरवी रखा हुआ। भेजा हुआ। नापसंद किया हुआ। त्यागा हुआ।

निक्षेप—(पुं०) [नि√क्षिप्+घञ्] फेंकने या डालने की क्रिया या भाव। चलाने की क्रिया या भाव। गिरवी। धरोहर। कोई धरोहर। रखी वस्तु कोई चीज बिना सील मोहर लगाये खुली जमा करा देना। पोंछने या सुखाने की क्रिया।

निक्षेपण—(न०) [नि√क्षिप्+ल्युट्] फेंकना। छोड़ना। चलाना। त्यागना। कोई भी उपाय जिसके द्वारा कोई वस्तु रखी जाय।

निखनन—(न०) [नि√खन्+ल्युट्] खनना, खोदना। गाड़ना।

निखर्व—(वि०) [नितरां खर्वः, प्रा० स०] ठिगना, बौना। (न०) दस हजार करोड़, दश सहस्र कोटि।

निखात—(वि०) [नि√खन्+क्त] खोदा हुआ, खोदकर निकाला हुआ। खोद कर लगाया हुआ या जमाया हुआ। खोदकर गाड़ा हुआ; 'अष्टादशद्वीपनिखातयूपः' र० ६.३८।

निखिल—(वि०) [निवृत्तं खिलं शेषो यस्मात्, ब० स०] सम्पूर्ण, समूचा, तमाम, सब।

निगड—(न०, पुं०) [नि√गल्+अच्, लस्य डत्वम्] लोहे की जंजीर जो हाथी के पैर में बाँधी जाती है। बेड़ी, जंजीर।

निगडित—(वि०) [निगड+इतच्] बेड़ी पड़ा हुआ, जंजीर से बँधा हुआ।

निगण—(पुं०) [=निगरण, पृषो० साधुः] यज्ञीय धूम।

निगद, निगाद—(पुं०) [नि√गद्+अप्] [नि√गद्+घञ्] स्तुति-पाठ। व्याख्यान। संवाद। पाठ सीखना। वर्णन।

निगदित—(न०) [नि√गद्+क्त] संवाद, कथोपकथन। व्याख्यान।

निगम—(पुं०) [नि√गम्+घञ्] वेद। वेद का कोई अंश या अवतरण। वेदवाक्य। आप्तवचन। धातु। निश्चय। विश्वास। न्याय। व्यापार, व्यवसाय। हाट, मंडी, बाजार। बनजारा। फेरी वाला सौदागर। मार्ग। नगर।

निगमन—(न०) [नि√गम्+ल्युट्] वेद का अवतरण। न्याय में अनुमान के पाँच अवयवों में से एक। परिणाम, नतीजा।

निगर, निगार—(पुं०) [नि√गॄ+अप्] [नि√गॄ+घञ्] निगलने या भक्षण करने की क्रिया। होम का धुआँ।

निगरण—(न०) [नि√गॄ+ल्युट्] निगलना, लीलना, खा डालना। (पुं०) गला। यज्ञीय अग्नि या यज्ञीय जले हुए पदार्थ का धुआँ।

निगल, निगाल—(पुं०) [=निगर, निगार, रलयोरभेदः] निगलना, लीलना, खा डालना। घोड़े का गला या गर्दन।

निगीर्ण—(पुं०) [नि√गॄ+क्त] निगला हुआ, लीला हुआ। (आलं०) छिपा हुआ। सम्पूर्णतया सोखा हुआ या खाया हुआ।

निगु—(वि०) [निगृह्यते ज्ञायते अनेन इति नि√गुह्+डु बा०] सुन्दर। (पुं०) मन। मैल। मूल। चित्रण।

निगूढ—(वि०) [नि√गुह्+क्त] छिपा हुआ। अत्यन्त गुप्त। (पुं०) वनमुद्ग, जंगली मूँग।

निगूहन—(न०) [नि√गुह्+ल्युट्] छिपाना, चुराना।

निग्रन्थन—(न०) [नि√ग्रन्थ्+ल्युट्] हत्या, वध।

निग्रह—(पुं०) [नि√ग्रह्+अप्] रोक, अवरोध। दमन; 'स्वनिग्रहे तु यस्यापि न मे प्रयत्नः' मु० १.२२। पकड़ना, गिरफ्तार करना। पकड़ कर बंद कर देना, कैद कर लेना। पराभव, पराजय। नाश, विनाश।

चिकित्सा, रोग की रोकथाम । दण्ड, सजा । भर्त्सना, डाँट, फटकार । अरुचि, घृणा । (न्याय में) तर्क सम्बन्धी दोष-विशेष । दस्ता, बेंट । सीमा, हद ।

निग्रहण—(वि०) [नि√ग्रह्+ल्यु] रोकने वाला । दबाने वाला । (न०) [नि+ग्रह्+ल्युट्] रोकने का कार्य । दबाने का कार्य । गिरफ्तारी, पकड़ । दण्ड, सजा । पराजय, हार ।

निग्राह—(पुं०) [नि√ग्रह्+घञ्] सजा । शाप ।

निघ—(वि०) [नियमितं निविशेषेण वा हन्यते ज्ञायते, नि√हन्+क नि० साधुः] जितना लंबा उतना ही चौड़ा । (पुं०) गेंद । पाप ।

निघण्टु—(पुं०) [निघण्टति शोभते, नि√घण्ट्+कु] वैदिक शब्दकोश । (यास्क ने निघण्टु की जो व्याख्या लिखी है वह निरुक्त के नाम से प्रसिद्ध है।) शब्दसंग्रह मात्र, जैसे वैद्यक का निघण्टु ।

निघर्ष—(पुं०), **निघर्षण**—(न०) [नि√घृष्+घञ्] [नि √घृष्+ल्युट्] रगड़, घिसावट । पीसना ।

निघस—(पुं०) [नि√अद्+अप्, घसादेश] खाने की क्रिया, भोजन करने की क्रिया । भोजन, खाने की सामग्री ।

निघात—(पुं०) [नि√हन्+घञ्] प्रहार, आघात । अनुदात्त स्वर । एक स्वर द्वारा दूसरे स्वर का हनन ।

निघाति—(स्त्री०) [नि√हन्+इञ्, कुत्व] लोहे की गदा । लौहदण्ड । निहाई ।

निघुष्ट—(न०) [नि√घुष्+क्त] शब्द । शोरगुल, कोलाहल ।

निघ्न—(वि०) [निहन्यते निगृह्यते, नि√हन्+क] अधीन, वशीभूत; 'निघ्नस्य मे भर्तृनिदेशरौक्ष्यं' र० १४.५८ । आहत, घायल । गुणित, गुणा किया हुआ । अवलम्बित, निर्भर । (पुं०) सूर्यवंशीय राजा अनरण्य का पुत्र । एक राजा जो अनमित्र का पुत्र था ।

निचय—(पुं०) [नि√चि+अच्] ढेर । समूह । सञ्चय, निश्चय ।

निचाय—(पुं०) [नि√चि+घञ्] धान आदि का ढेर ।

निचि—(पुं०) [नि√चि+डि] गाय का कान सहित सिर, गोकर्णशिरोदेश ।

निचिकी—(स्त्री०) [निचिना कायति शोभते निचि √कै+क—ङीप्] अच्छी गाय ।

निचित—(वि०) [नि√चि+क्त] ढका हुआ । फैला हुआ । पूरित, भरा हुआ । उठा हुआ । सञ्चित ।

निचुल—(पुं०) [नि√चुल्+क] हिज्जल का वृक्ष । बेंत । कालिदास के एक कविमित्र । ऊपर से शरीर ढाँकने का कपड़ा ।

निचुलक—(न०) [निचुल इव प्रतिकृतिः, निचुल+कन्] उरस्त्राण, कवच-विशेष । कञ्चुक, अंगा ।

निचोल—(पुं०) [नि√चुल्+घञ्] चादर, ओढ़नी । घूँघट, बुरका । पलंगपोश । डोली का परदा ।

निचोलक—(पुं०) [निचोल√कै+क] सदरी । चोली । कवच, उरस्त्राण ।

निच्छवि—(स्त्री०) [प्रा० ब०] तीरभुक्ति देश, तिरहुत ।

निच्छिवि—(पुं०) एक प्रकार का व्रात्य क्षत्रिय, सवर्णा स्त्री से उत्पन्न व्रात्य क्षत्रिय की सन्तान ।

√निज्—जु० उभ० सक० धोना, साफ करना, पवित्र करना । अपने शरीर को धोना या पवित्र करना । पोषण करना । नेनेक्ति—नेनिक्ते, नेक्ष्यति—ते, अनिजत्—अनैक्षीत् —अनिक्त ।

निज—(वि०) [नि√जन्+ड] अपना, स्वकीय, जो पराया न हो । विलक्षण । सदैव बना रहने वाला । (अव्य०) बिलकुल ।

प्रधानतः। अधिकतर। यथार्थ में। निश्चयपूर्वक।

√निञ्ज्—अ० आत्म० सक० पवित्र करना। निङ्क्ते, निञ्जिष्यते, अनिञ्जिष्ट।

निटल, निटिल—(न०) [नि√टल्+अच्] मस्तक, माथा।—**अक्ष (निटलाक्ष),(निटिलाक्ष)**-(पुं०) शिव जी का नाम।

निडीन—(न०) [नीचैः डीनं पतनम् अस्ति अस्मिन्] पक्षियों का नीचे की ओर उड़ना या झपट्टा।

नितम्ब—(पुं०) [निभृतं तम्यते आकाङ्क्ष्यते कामुकैः, वा नितम्बति पीडयति नायक-चित्तम्, नि√तम्ब्+अच्] चूतड़, कमर का पिछला उभरा हुआ भाग (विशेषतः स्त्रियों का)। ढालुवाँ किनारा (पर्वत का)। नदी का ढालुवाँ तट। कंधा। बड़ी चट्टान।—**बिम्ब**-(वि०) मंडलाकार नितंब।

नितम्बवती—(स्त्री०) [नितम्ब+मतुप्, वत्व—ङीप्] दे० 'नितम्बिनी'।

नितम्बिनी—(स्त्री०) [नितम्ब+इनि—ङीप्] बड़े और सुन्दर नितम्बों वाली स्त्री। स्त्री।

नितराम्—(अव्य०) [नि+तरप्+अम्] सदैव, हमेशा। समूचा, सम्पूर्ण, तमाम। अत्यधिक, अत्यन्त। निश्चय रूप से, अवश्य।

नितल—(न०) [नितरां तलम् अधोभागः यस्मिन्] सात पातालों में से एक।

नितान्त—(वि०) [नि√तम्+क्त, दीर्घ] एकदम, बिलकुल। अत्यधिक, अतिशय। (न०) अत्यन्त अधिकता; 'नितान्तकठिनां रुजं मम न वेद सा मानसीं', वि० २.२।

नित्य—(वि०) [नियमेन भवः, नि+त्यप्] जो सब दिन रहे, जिसका कभी नाश न हो, शाश्वत, अविनाशी। प्रति दिन का, रोज का। उत्पत्ति-विनाश-रहित। जिसकी परम्परा विच्छिन्न न हो, जैसे वर्ण। (पुं०) समुद्र। (अव्य०) प्रतिदिन, हर रोज। सदा, हमेशा।—**कर्मन्**, —**कृत्य**-(नि०), —**क्रिया**-(स्त्री०) प्रतिदिन का काम, नित्य की क्रिया, जैसे सन्ध्या, तर्पण, अग्निहोत्रादि।—**गति**-(पुं०) वायु।—**दान**-(न०) प्रतिदिन दान देने का कर्म।—**नर्त**-(पुं०) महादेव।—**नियम**-(पुं०) प्रतिदिन का बँधा हुआ काम।—**नैमित्तिक**-(न०) वह कर्म जो नित्य भी हो और नैमित्तिक भी—जैसे पर्वश्राद्ध, प्रायश्चित्तादि कर्म।—**प्रलय**-(पुं०) नित्य होने वाला प्रलय, सुषुप्ति (वेदांत)।—**मुक्त**-(पुं०) परमात्मा। श्रीरामानुज सिद्धान्तानुसार विष्वक्सेनादि सूरिगण, जिनके विषय में वेदों में लिखा है—'तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः'।—**यौवना**-(वि०, स्त्री०) सदैव युवती बनी रहने वाली अथवा जिसका यौवन बराबर या बहुत काल तक स्थिर रहे। (स्त्री०) द्रौपदी।—**शङ्कित**-(वि०) सदैव सशङ्कित रहने वाला।—**सत्त्वस्थ**-(वि०) जो कभी धैर्य न छोड़े। सदा सत्त्वगुण से युक्त रहने वाला, जो रजोगुण और तमोगुण को छोड़ कर सदा सत्त्वगुण का अवलंबन करे।—**सम**-(पुं०) जाति के २४ भेदों में से एक (न्या०)।—**समास**-(पुं०) वह समास जिसका विग्रह कर देने पर उसके पदों से अभीष्ट अर्थ न निकाला जा सके (जैसे जमदग्नि, जयद्रथ)।

नित्यता—(स्त्री०), **नित्यत्व**-(न०) [नित्य+तल्] [नित्य+त्व] नित्य होने का भाव, अविनाशिता।

नित्यदा—(अव्य०) [नित्य+दाच्] सर्वदा, हमेशा।

नित्यशस्—(अव्य०) [नित्य+शस्] सदा, हमेशा। हररोज, प्रतिदिन।

√निद्—भ्वा० उभ० सक० निंदा करना। अक० समीप होना। नेदति—ते, नेदिष्यति—ते, अनेदीत्—अनेदिष्ट।

निदद्रु—(पुं०) [निदात् विभाद् प्रति पलायते, निद √द्रा+कु] मनुष्य । [निः नास्ति दद्रुः यस्य] दद्रुरोग-रहित, जिसे दाद का रोग न हो ।

निदर्शक—(वि०) [नि√दृश्+ण्वुल्] देखने वाला । जानने वाला, पहचानने वाला । [नि √दृश्+णिच्+ण्वुल्] बतलाने वाला, निर्देश करने वाला ।

निदर्शन—(न०) [नि√दृश्+णिच्+ल्युट्] दिखाने का कार्य, प्रदर्शित करने का कार्य । प्रमाण । उदाहरण, 'निदर्शनमसाराणां लघुर्बहुतृणं नरः' शि० २.५० । शकुन, शुभ सूचना । आप्तवचन ।

निदाघ—(पुं०) [नितरां दह्यते अत्र, नि √दह्+घञ्, कुत्व] गर्मी, ऊष्मा । ग्रीष्म ऋतु । पसीना ।—**कर**–(पुं०) सूर्य ।—**काल**–(पुं०) ग्रीष्मऋतु ।

निदान—(न०) [नि निश्चयं दीयते अनेन, नि√दा वा √दो+ल्युट्] बंधना, रस्सी, बागडोर । बछड़ा बाँधने की रस्सी । आदिकारण । कारण । रोगलक्षण, रोगनिर्णय, रोग की पहचान । अन्त, छोर । पवित्रता, शुद्धि । तप का फल माँगना ।

निदिग्ध—(वि०) [नि √दिह्+क्त] लेप किया हुआ । बढ़ाया हुआ ।

निदिग्धा—(स्त्री०) [निदिग्ध+टाप्] छोटी इलायची । भटकटैया ।

निदिध्यास—(पुं०), **निदिध्यासन**—(न०) नि√ध्यै+सन्+घञ्] [नि√ध्यै+सन्+ल्युट्] बारंबार स्मरण, बारंबार ध्यान में लाना ।

निदेश—(पुं०) [नि√दिश्+घञ्] शासन । आज्ञा; 'स्थितं निदेशे पृथगादिदेश' र० १४.१४ । कथन । वर्णन । वार्तालाप । पड़ोस, नैकट्य । पात्र । यज्ञीय पात्र ।

निदेशिन्—(वि०) [नि√दिश्+णिनि] निर्देश करने वाला, बतलाने वाला ।

निदेशिनी—(स्त्री०) [निदेशिन्+ङीप्] दिशा । देश ।

निद्रा—(स्त्री०) [√निन्द्+रक्, नलोप–टाप्] प्राणियों की वह अवस्था जिसमें संज्ञा-वहा नाड़ियों का काम रुक जाता, आँखें बंद हो जातीं, शरीर शिथिल पड़ जाता और चेतना जाती-सी रहती है, नींद । सुस्ती । मुकुलित अवस्था ।—**भङ्ग**–(पुं०) जागरण ।—**वृक्ष**–(पुं०) अन्धकार ।—**सञ्जनन**–(न०)–कफ, श्लेष्मा । (कफ की वृद्धि से नींद अधिक आती है)

निद्राण—(न०) [नि√द्रा+क्त, तस्य नः, ततो णत्वम्] जो सो गया हो । मीलित ।

निद्रालु—(वि०) [नि√द्रा+आलुच्] सोनेवाला, निद्राशील ।

निद्रित—(वि०) [निद्रा+इतच्] सोया हुआ ।

निधन—(वि०) [निवृत्तं धनं यस्य, ब० स०] गरीब, धनहीन । (पु० न०) [नि√धा+क्यु] नाश । मरण; 'स्वधर्मे निधनं श्रेयः' भग० ३.३५ । समाप्ति, अवसान । कुण्डली में आठवाँ स्थान । जन्मनक्षत्र से सातवाँ, सोलहवाँ और तेईसवाँ नक्षत्र । पाँच या सात अवयवों वाले साम का अंतिम अवयव जिसे उद्गाता, प्रस्तोता और प्रतिहर्ता मिल कर गाते हैं । गीत का अंतिम भाग । कुल, खानदान । कुल का अधिपति ।

निधान—(न०) [नि√धा+ल्युट्] नीचे रखना, तलेऊपर जमा करना । सुरक्षित रखना । वह स्थान जहाँ कोई वस्तु रखी जाय । द्रव्य-कोश । सम्पत्ति ।

निधि—(पुं०) [नि√धा+कि] आधार । भाण्डार, खजाना । सम्पत्ति, कुबेर के नौ प्रकार के खजाने हैं । [यथा—पद्म, महापद्म, शंख, मकर, कच्छप, मुकुन्द, कुन्द, नील और खर्व] । समुद्र । विष्णु । शिव । अनेक सद्गुणों से भूषित पुरुष । नौ की संख्या ।

जीवक नाम की ओषधि । नलिका नाम का गंधद्रव्य ।—ईश (निधीश),—नाथ-(पुं०) कुबेर ।

निधुवन—(न०) [नितरां धुवनं हस्तपादादिकम्पनं यत्र] मैथुन । केलि, क्रीड़ा । हँसी-ठट्ठा ।

निध्यान—(न०) [नि√ध्यै+ल्युट्] दर्शन, देखना । निदर्शन ।

निध्वान—(पुं०) [नि√ध्वन्+घञ्] शब्द मात्र ।

निनङ्क्षु—(वि०) [नष्टुम् इच्छुः, √नश्+सन्+उ] मरने का अभिलाषी । निकल भागने की इच्छा रखने वाला ।

निनद, निनाद—(पुं०) [नि√नद्+अप्] नि√नद्+घञ्] शब्द । गुंजार । रथ के पहिये की आवाज ।

निनयन—(न०) [नि√नी+ल्युट्] किसी कार्य को पूर्ण करने की क्रिया । उड़ेलना ।

√निन्द्—भ्वा० पर० सक० कलङ्क लगाना । धिक्कारना, डाँटना, फटकारना । निन्दति, निन्दिष्यति, अनिन्दीत् ।

निन्दक—(वि०) [√निन्द्+ण्वुल्] निन्दा करने वाला । गाली देने वाला । बदनाम करने वाला ।

निन्दन—(न०), **निन्दा**—(स्त्री०) [√निन्द्+ल्युट्] [√निन्द्+अ—टाप्] कलङ्क । कुवाच्य । बदनामी । दुष्टता ।—**स्तुति**-(स्त्री०) व्याजस्तुति, स्तुति के रूप में निन्दा ।

निन्दित—(वि०)[√निन्द्+क्त] कलङ्कित । बदनाम किया हुआ । कुवाच्य कहा हुआ ।

निन्दु—(स्त्री०) [√निन्द्+उ] मृतवत्सा, मरा बच्चा जनने वाली स्त्री या जिस स्त्री के सन्तान होकर मर जाती हो ।

निन्द्य—(वि०) [√निन्द्+ण्यत्] निन्दा करने योग्य, निन्दनीय । वर्जित, निषिद्ध ।

√निन्व्—भ्वा० पर० सक० सींचना । निन्वति, निन्विष्यति, अनिन्वीत् ।

निप—(पुं०, न०)[नियत पिबति अनेन, नि √पा+क] जल का घड़ा । (पुं०)[=नीप, पृषो० साधुः] कदम्ब का पेड़ ।

निपठ, निपाठ—(पुं०) [नि√पठ्+अप्] [नि√पठ्+घञ्] पाठ । अध्ययन ।

निपतन—(न०) [नि√पत्+ल्युट्] नीचे गिरने की क्रिया । नीचे उतरने की क्रिया ।

निपत्या—(स्त्री०) [निपतति अस्याम्, नि √पत्+क्यप्] जमीन जहाँ चिकनाहट या फिसलन हो । रणक्षेत्र ।

निपाक—(पुं०) [नि√पच्+घञ्] पकाने की क्रिया (जैसे कच्चे फल को) ।

निपात—(पुं०) [नि√पत्+घञ्] पतन, गिराव; 'पयोधरोत्सेधनिपातचूर्णिताः' कु० ५.२४ । अधःपतन । विनाश । मृत्यु । व्याकरण के मतानुसार वह शब्द जिसके बनने के नियम का पता न हो या जो व्याकरण के नियमों से सिद्ध न हो ।

निपातन—(न०) [नि√पत्+णिच्+ल्युट्] गिराने का कार्य । नाश, क्षय, ध्वंस । वध, हत्या । नियमविरुद्ध शब्द का रूप ।

निपान—(न०) [नि√पा+ल्युट्] पीने की क्रिया । तालाब; 'गाहन्ताम् महिषा निपानसलिलं शृङ्गैर्मुहुस्ताडितं' श० २.६ । कूप के समीप का हौद जिसमें पशुओं के पीने को जल भरा जाय । कूप । दूध दुहने का पात्र ।

निपीडन—(न०) [नि√पीड्+णिच्+ल्युट्] बहुत अधिक पीड़ा पहुँचाना । निचोड़ना, मारना । पेरना । दबाना या मलना ।

निपीडना—(स्त्री०) [नि√पीड् +णिच्+युच्—टाप्] दे० 'निपीडन' ।

निपुण—(वि०) [नि√पुण्+क] चतुर । योग्य । अनुभवी । दयालु या मैत्री भाव रखने वाला । तीक्ष्ण । सूक्ष्म । कोमल । सम्पूर्ण, पूरा । ठीक-ठीक ।

निपुणम्, निपुणेन—(अव्य०) निपुणता से,

पटुता से। चतुराई से। सम्पूर्णतया। ज्यों का त्यों, ठीक-ठीक।

निबद्ध—(वि०) [नि√बन्ध्+क्त] बँधा हुआ, बन्धन में पड़ा हुआ। रोका हुआ। बंद किया हुआ। सम्बन्ध रखे हुए। बना हुआ। जड़ा हुआ। भू-साक्ष्य देने को बुलाया हुआ।

निबन्ध—(पुं०) [नि√बन्ध्+घञ्] बंधन। (मकान) बनाना। रोक-थाम। बंधन, बेड़ी। पट्टी। सहारा, अवलम्ब। अधीनता। संबंध। कारण। उपादान कारण। स्थान। आधार। प्रबन्ध, व्यवस्था। सद्‌वृत्ति। वीणा की खूँटी। नीम का पेड़। वह वस्तु जिसे देने की प्रतिज्ञा की गयी हो। पेशाब रुकने की बीमारी। ग्रन्थ की वृत्ति, पुस्तक की टीका। किसी विषय का वह सविस्तार विवेचनात्मक लेख जिसमें उससे सम्बन्ध रखने वाले अनेक मतों, विचारों, मन्तव्यों आदि का तुलनात्मक और पाण्डित्य-पूर्ण विवेचन हो। उक्त प्रकार का वह छोटा लेख जो विद्यार्थी अपनी लेखन-शक्ति और विवेचन-बुद्धि बढ़ाने के लिये अभ्यास के रूप में लिखते हैं। (न०) [नितरां बन्धः यत्र] गीत।

निबन्धन—(न०) [नि√बन्ध्+ल्युट्—अन] बंधन। नियम। कर्तव्य। कारण। गाँठ। वीणा या सितार की खूँटी।

निबन्धनी—(स्त्री०) [नि√बन्ध्+ल्युट्—ङीप्] बंधन का साधन।

निबर्हण, निबर्हन—(वि०) [नि√बृ (बृ) हं+ल्यु] नाश करने या मारने वाला। (न०) [नि√बृ (बृ) हं+ल्युट्]मारने या नाश करने की क्रिया या भाव, मारण।

निबिड—(वि०) दे० 'निविड'।

निभ—(वि०) [नि√भा+क] बहुत चमकदार, प्रखर प्रकाश वाला। समान, सदृश। (न० पुं०)प्राकट्य प्रादुर्भाव। मिस, बहाना। चालाकी। प्रकाश।

निभालन—(न०) [नि√भल् + णिच् +ल्युट्] देखना। पहचानना।

निभूत—(वि०) [नि√भू+क्त] बीता हुआ, भूत। जो बहुत डर गया हो, अतिभीत।

निभृत—(वि०) [नि√भृ+क्त] रखा हुआ। जमा किया हुआ। नीचा किया हुआ। परिपूर्ण। छिपा हुआ। शान्त; 'निभृतनिकुञ्ज-गृहं गतया' गीत० २। चुप। दृढ़, अचल। नम्र, कोमल। विनीत, विनम्र। दृढ़ सङ्कल्प का, दृढ़ विचार का। एकान्ती, अकेला। बंद, मूँदा हुआ।

निभृतम्—(अव्य०) चुपचाप, गुपचुप, गुप्त रीति से।

निमग्न—(वि०) [नि√मस्ज्+क्त] डूबा हुआ। सना हुआ, लिप्त। नीचे बैठा हुआ। ग्रस्त हुआ। छिपा हुआ। दबा हुआ। अप्रधान।

निमज्जथु—(पु०) [नि√मस्ज्+अथुच्] डूबने की क्रिया। सेज पर पड़ कर सोना; 'तल्पे कान्तान्तरैः सार्धमन्येऽहं विह निमज्जथुं' भट्टि० ५.२०।

निमज्जन—(न०) [नि√मस्ज्+ल्युट्] डुबकी लगाकर स्नान करना, अवगाहन।

निमन्त्रण—(न०) [नि√मन्त्र्+ल्युट्] किसी कार्य, उत्सव आदि में या श्राद्ध, भोज आदि में सम्मिलित होने का निवेदन, बुलावा, दावत, न्योता। (निमंत्रण का अकारण पालन न करने पर मनुष्य दोष का भागी होता है)।

निमय—(पुं०) [नि√मि+अच्] विनिमय, अदलाबदली।

निमान—(न०) [नि√मा+ल्युट्] माप। मूल्य।

निमि—(पुं०) इक्ष्वाकुवंशीय एक राजा का नाम जो मिथिला के राजवंश का पूर्व पुरुष था। एक ऋषि जो दत्तात्रेय के पुत्र थे। पलकों का गिरना, निमेष।

निमित्त—(न०) [नि√मिद्+क्त] हेतु, कारण । चिह्न, लक्षण । शकुन । उद्देश्य, फल की तरफ लक्ष्य ।—**आवृत्ति (निमित्तावृत्ति)**–(स्त्री०) किसी विशेष कारण पर निर्भर होना ।—**कारण**–(न०), —**हेतु**–(पुं०) वह कारण जिसकी सहायता या कर्तृत्व से कोई वस्तु बने ।—**कृत्**–(पुं०) काक, कौआ ।— **धर्म**–(पुं०) प्रायश्चित्त । धार्मिक विधि जो कभी-कभी की जाय ।—**विद्**–(वि०) शकुनों का शुभाशुभ फल जानने वाला । (पुं०) ज्योतिषी ।

निमिष—(पुं०) [नि√मिष्+क] आँख झपकाने की क्रिया । आँखें बंद करने की क्रिया । पलक मारने भर का समय, पल, क्षण । फूलों के मुँदने की क्रिया । पलकों के खुलने और बंद होने की क्रिया । विष्णु ।

निमीलन—(न०) [नि√मील्+ल्युट्] आँखें मुँदना या झपकाना । मरण । सर्वग्रास ग्रहण ।

निमीला, निमीलिका—(स्त्री०) [नि√मील् +अ–टाप्] [निमीला+कन्–टाप्, इत्व] आँखों की झपकी । ब्याज, छल ।

निमेष—(पुं०) [नि√मिष्+घञ्] दे० 'निमिष' ।—**कृत्**–(स्त्री०) बिजली, विद्युत् । —**रुच्**–(पुं०) जुगनू ।

निम्न—(न०) [नि√म्ना+क] गहराई । नीची जमीन । ढाल । दरार । (वि०) [निकृष्टा म्ना अभ्यासः शीलम् वा यत्र] गहरा । नीचा । दबा हुआ ।—**उन्नत (निम्नोन्नत)**–(वि०) ऊँचा-नीचा, ऊबड़-खाबड़ ।—**गत**–(न०) नीची जगह ।—**गा**–(स्त्री०) नदी । पहाड़ी सोता ।

निम्ब—(पुं०) [√निन्द्+अच्, बवयोरभेदात् बः] नीम का पेड़ ।

निम्लोच—(पुं०) [नि√म्लुच्+घञ्] सूर्यास्त ।

नियत—(वि०) [नि√यम्+क्त] नियम द्वारा स्थिर, बँधा हुआ, संयत । ठीक किया हुआ, निश्चित । नियोजित, स्थापित, प्रतिष्ठित, तैनात । (पुं०) शिव । संयम ।—**व्यावहारिक काल**–(पुं०) व्रत, यात्रा, श्राद्ध, विवाह आदि के लिये नियत समय(ज्यो०) ।

नियति—(स्त्री०) [नि√यम्+क्तिन्] नियत होने का भाव, बंधेज, बद्ध होने का भाव । ठहराव, स्थिरता । दैव, अदृष्ट; 'नियतेर्नियोगात्' शि० ४.३४ । नियत बात, अवश्य होने वाली बात, पूर्व कृत कर्म का परिणाम जो अनिवार्य है (जैन) । जड़ प्रकृति ।

नियती—(स्त्री०) [नि√यम्+ क्तिच्–ङीप्] दुर्गा ।

नियन्तृ—(पुं०) [नि√यम्+तृच्] सारथी, गाड़ीवान । शासक । दण्ड देने वाला । संचालक ।

नियन्त्रण—(न०), —**नियन्त्रणा**– (स्त्री०) [नि√यन्त्र्+ल्युट्] [नि√यन्त्र्+णिच् +युच्] नियमों में बाँध कर रखना, वश में रखना, स्वच्छंद न रहने देना, प्रतिबंधन ।

नियन्त्रित—(वि०) [नि√यन्त्र्+क्त] नियम से बँधा हुआ, प्रतिबद्ध, जिस पर किसी प्रकार की रोकथाम हो ।

नियम—(पुं०) [नि√यम्+अप्] विधान या निश्चय के अनुकूल नियंत्रण । दबाव, शासन । बँधा हुआ क्रम, प्रचलित विधान, परम्परा, दस्तूर । ठहराई हुई रीति या विधि, व्यवस्था, पद्धति । शर्त, ठहराव । प्रतिज्ञा । अर्थालङ्कार-विशेष । विष्णु । महादेव ।—**निष्ठा**–(स्त्री०) नियमानुसार काम करने की श्रद्धा ।—**पत्र**–(न०) इकरारनामा, प्रतिज्ञापत्र ।—**सेवा**–(स्त्री०) आश्विन शुक्ला एकादशी से प्रारंभ कर कार्तिक भर की जाने वाली विष्णु की उपासना ।—**स्थिति**–(स्त्री०) तपस्या । संन्यास ।

नियमन—(न०) [नि√यम्+ल्युट्] नियम में बाँधने का कार्य, अनुशासन या वश में

रखना, नियंत्रण, शासन; 'नियमनादसतां च नराधिपः' र० ६-६ । निग्रह, दमन । ऐसा विधान जिससे दूसरे का निवारण हो । दीनता । आदेश । निश्चित नियम ।

नियमवती—(स्त्री०) [नियम+मतुप्—ङीप्] वह स्त्री जिसका मासिक स्राव नियमित रूप से होता हो ।

नियमित—(वि०) [नि√यम्+णिच् +क्त] रोका हुआ । शासन किया हुआ । निर्दिष्ट किया हुआ । इकरार किया हुआ, प्रतिज्ञाबद्ध ।

नियातन—(न०) [नि√यत् + णिच् +ल्युट्] निपातन, नाश या ध्वंस करने का कार्य ।

नियाम—(पुं०) [नि√यम्+घञ्] नियम । रोक, अवरोध । धर्म सम्बन्धी व्रत ।

नियामक—(वि०) [स्त्री०—**नियामिका**] [नि√यम्+णिच्+ण्वुल्] रोकने वाला, अवरोध करने वाला । वश में करने वाला, काबू में लाने वाला । स्पष्टतया परिभाषा करने वाला । पथप्रदर्शक । शासक । (पुं०) मालिक, स्वामी । शासक । सारथी । मल्लाह, माझी ।

नियुक्त—(वि०) [नि√युज् + क्त] निर्देश किया हुआ । आज्ञा दिया हुआ । नियत किया हुआ, नियोजित, अधिकार दिया हुआ । प्रवन करने के लिये अनुमति दिया हुआ । लगा हुआ, संलग्न । बँधा हुआ । दर्याफ्त किया हुआ ।

नियुक्ति—(स्त्री०) [नि√युज् + क्तिन्] आज्ञा, आदेश । तैनाती, मुकर्ररी ।

नियुत—(न०) [नियुतो बहुसंख्या प्राप्यतेऽनेन, नि√यु+क्त] एक लाख, लक्ष । दस लाख ।

नियुद्ध—(वि०) [नि√युध्+क्त] पैदल युद्ध करने वाला । (न०) व्यक्तिगत झगड़ा । बाहुयुद्ध, हाथाबाहीं, कुश्ती ।

नियोग—(पुं०) [नि√युज् + घञ्] किसी काम में लगाना, तैनाती । उपयोग । आज्ञा । बंधन । संलग्न । आवश्यकता । एहसान । उद्योग । निश्चय । एक प्राचीन प्रथा जिसके अनुसार निःसतान स्त्री, पति के रोगी, नपुंसक या मृत होने की दशा में, देवर या किसी अन्य गोत्रज के द्वारा संतान उत्पन्न करा सकती थी (मनु०), किन्तु कलियुग में यह प्रथा वर्जित है । वह अपाय जिससे बचने के लिये एक ही उपाय का निश्चय हो सके, दूसरे का नहीं (कौ०) ।

नियोगिन्—(वि०) [नियोग + इनि] जो नियुक्त किया गया हो । जिसे कोई पद या अधिकार दिया गया हो । नियोग करने वाला । (पुं०) कर्म-सचिव ।

नियोक्तृ—(वि०) [नि√युज् + तृच्] नियोग करने योग्य । (पुं०) स्वामी, प्रभु ।

नियोजन—(न०) [नि√युज् + ल्युट्] नियोग । प्रेरणा, किसी कार्य में प्रवृत्त करना । तैनात या मुकर्रर करना । बंधन, अटकाव । आज्ञा । अनुरोध ।

नियोज्य—(वि०) [नि√युज् +ण्यत्] जो नियुक्त किया जा सके । (पुं०) नौकर, सेवक । कर्मचारी ।

नियोद्धृ—(पुं०) [नि√युध् +तृच्] मल्ल, पहलवान । मुर्गा ।

निर्—(अव्य०) [√नृ +क्विप्, इत्व] वियोग । ध्वंस । आदेश । अतिक्रम । भोग । निश्चित । बाहर । दूर । रहित । यह एक उपसर्ग भी है जो धातु आदि के पहले लग कर उपर्युक्त अर्थ प्रकाशित करता है ।—**अंश (निरंश)**—(वि०) समूचा, सम्पूर्ण । वह जो पैतृक सम्पत्ति में से कुछ भी भाग पाने का अधिकारी न हो ।—**अक्ष (निरक्ष)**; (पुं०) ऐसी जगह जहाँ विस्तार करने का स्थान न हो ।—**अग्नि (निरग्नि)**—(वि०) अग्निहोत्र की आग को असावधानी से बुझा

जाने देने वाला ।—**अङ्कुश (निरङ्कुश)**—(वि०) बिना रोक-टोक का । वश में न रहने वाला, काबू में न आने वाला । स्वाधीन, स्वतंत्र ।—**अङ्ग (निरङ्ग)**–(वि०) जिसमें भाग न हों । उपायशून्य, उपायवर्जित ।—**अञ्जन (निरञ्जन)**–(वि०) बिना सुर्मे का । बेदाग, निष्कलङ्क । मिथ्या से रहित । सीधा-सादा, चालाकी न जानने वाला । (पु०) शिव जी की उपाधि ।—**अञ्जना (निरञ्जना)**–(स्त्री०) पूर्णिमा । दुर्गा का एक नाम ।—**अतिशय (निरतिशय)**–(वि०) हद दर्जे का ।—**अत्यय (निरत्यय)**–(वि०) खतरे से महफूज, सुरक्षित । दोषशून्य; 'निरत्ययं साम न दानवर्जितं' कि० १.१२ ।—**अध्व (निरध्व)**–(वि०) गुमराह, वह जो मार्ग भूल गया हो ।—**अनुक्रोश (निरनुक्रोश)**–(वि०) निर्दय, संगदिल, निष्ठुर हृदय । (पु०) निष्ठुरता ।—**अनुग (निरनुग)**–(वि०) जिसके कोई अनुयायी न हो ।—**अनुनासिक (निरनुनासिक)**–(वि०) जिसका उच्चारण नाक से न हो ।—**अनुरोध (निरनुरोध)**–(वि०) प्रतिकूल । अकृपालु ।—**अन्तर (निरन्तर)**–(वि०) अविच्छिन्न । जिसके बीच में अन्तर या फासला न हो । निबिड़, घना । बड़े आकार का । ईमानदार, सच्चा । जो अन्तर्धान न हो, जो दृष्टि से ओझल न हो । समान, एक सा ।—**अन्तराल (निरन्तराल)**–(वि०) जिसमें अवकाश न हो, सङ्कीर्ण ।—**अन्वय (निरन्वय)**–(वि०) निस्सन्तान, बेऔलाद । जिसका कोई सम्बन्ध न हो । मूल से भिन्न । दृष्टि से ओझल । नौकर-चाकरों से रहित ।—**अपत्रप (निरपत्रप)**–(वि०) निर्लज्ज, बेहया । साहसी ।—**अपराध (निरपराध)**–(वि०) जिसने अपराध न किया हो, बेकसूर ।—**अपाय (निरपाय)**–(वि०) दुष्टता से रहित, अपकारशून्य । अविनाशी । अभ्रान्त । अमोघ, अव्यर्थ ।—**अपेक्ष (निरपेक्ष)**–(वि०) जिसे किसी बात की चाह न हो । लापरवाह, असावधान । कामनाशून्य । जिसे किसी सांसारिक पदार्थ से अनुराग न हो । निःस्वार्थी । तटस्थ ।—**अपेक्षा (निरपेक्षा)**–(स्त्री०) अपेक्षा या चाह का अभाव । लगाव का न होना । अवज्ञा ।—**अभिभव (निरभिभव)**–(वि०) जो अपमान का पात्र न हो ।—**अभिमान (निरभिमान)**–(वि०) अहङ्कार से रहित, अभिमानशून्य ।—**अभिलाष (निरभिलाष)**–(वि०) इच्छारहित ।—**अभ्र (निरभ्र)**–(वि०) बादलशून्य ।—**अमर्ष (निरमर्ष)**–(वि०) क्रोधरहित । धैर्यधारी ।—**अम्बु (निरम्बु)**–(वि०) जल से बचने या परहेज करने वाला । जलरहित ।—**अर्गल (निरर्गल)**–(वि०) बिना चटखनी या सांकल-कुंडे का, बेरोकटोक ।—**अर्थ (निरर्थ)**–(वि०) धनहीन, गरीब, अर्थरहित । वाहियात । व्यर्थ, निष्प्रयोजन ।—**अर्थक (निरर्थक)**–(वि०) व्यर्थ, हानिकर । बिना अर्थ का, वाहियात । (न०) पादपूरक अक्षर ।—**अवकाश (निरवकाश)**–(वि०) बिना स्वतंत्र स्थान का । जिसको फुर्सत न हो ।—**अवग्रह (निरवग्रह)**–(वि०) बेरोकटोक, बेकाबू । स्वतंत्र, खुदमुख्तार । मनमौजी, जिद्दी ।—**अवद्य (निरवद्य)**–(वि०) कलङ्करहित, दोषरहित; 'हृद्यनिरवद्यरूपो भूपो बभूव' दश० । जो आपत्तिजनक न हो ।—**अवधि (निरवधि)**–(वि०) असीम । सीमारहित ।—**अवयव (निरवयव)**; जिसमें अवयव (अङ्ग-उपाङ्ग) न हों । जिसमें हिस्से न हों । अदृश्य ।—**अवलम्ब (निरवलम्ब)**–(वि०) बिना सहारे का । जो सहारा न दे ।—**अवशेष (निरवशेष)**–(वि०) समूचा, पूर्ण ।—**अशन (निरशन)**–(वि०) भोजन से परहेज करने वाला ।

(न०) कड़ाका, लंघन, फाका ।—**अस्त्र** (**निरस्त्र**)–(वि०) हथियारशून्य । खाली हाथ ।—**अस्थि** (**निरस्थि**)–(वि०) जिसके हड्डी न हों ।—**अहङ्कार** (**निरहङ्कार**),—**अहङ्कृति** (**निरहङ्कृति**)–(वि०) अभिमान-रहित, गर्वशून्य ।—**आकाङ्क्ष** (**निराकाङ्क्ष**)–(वि०) जिसे आकांक्षा न हो, कामना-शून्य, इच्छारहित ।—**आकार** (**निराकार**)–(वि०) जिसका आकार या शकल-सूरत न हो । जिसके आकार की भावना न हो । बदशकल, बदसूरत, कुरूप । कपट-वेशी । विनम्र । (पुं०) सर्वव्यापी सर्वशक्तिमान् परमात्मा । विष्णु । शिव ।—**आकुल** (**निराकुल**)–(वि०) व्याप्त, भरा हुआ । जो घबराया न हो, धीर, शांत । स्पष्ट, साफ ।—**आकृति** (**निराकृति**)–(वि०) आकार-रहित, जिसकी कोई शकल न हो । बेशकल, बदसूरत । (पुं०) स्वाध्याय-रहित विद्यार्थी, वेदपाठ-रहित ब्रह्मचारी । वैदिक कर्मानुष्ठान पञ्च महायज्ञादि कर्म से रहित व्यक्ति ।—**आक्रोश** (**निराक्रोश**)–(वि०) जो दोषी न ठहराया गया हो ।—**आगस्** (**निरागस्**)–(वि०) दोष-रहित । पापशून्य ।—**आचार** (**निराचार**)–(वि०) आचार-रहित ।—**आडम्बर** (**निराडम्बर**)–(वि०) जिसमें ढोंग न हो । बिना ढोल का, ढोलों से रहित ।—**आतङ्क** (**निरातङ्क**)–(वि०) निर्भय, निडर । बिना किसी पीड़ा का, स्वस्थ ।—**आतप** (**निरातप**)–(वि०) गर्मी से रहित । छायादार । जहाँ सूर्य की रश्मियाँ प्रवेश न कर सकें ।—**आतपा** (**निरातपा**)–(स्त्री०) रजनी, रात ।—**आदर** (**निरादर**)–(वि०) अपमान, बेइज्जती ।—**आधार** (**निराधार**)–(वि०) अवलम्ब या आश्रयरहित ।—**आधि** (**निराधि**)–(वि०) मनोव्यथा से रहित । नीरोग ।—**आपद्** (**निरापद्**)–(वि०) जिसे कोई आपदा न हो ।—**आबाध** (**निराबाध**)–(वि०) उपद्रवों से रहित । बिना बाधा का । जो उपद्रव न करे ।—**आमय** (**निरामय**)–(वि०) रोग-रहित; 'सर्वे सन्तु निरामयाः' । दोषशून्य । कलङ्क या ऐबों से रहित । पूर्ण । अचूक, अभ्रान्त । (पुं०) जंगली बकरा । शूकर ।—**आमिष** (**निरामिष**)–(वि०) जिसमें मांस न हो । जिसमें मैथुन करने की इच्छा न हो । जो लालची न हो । जिसे पारिश्रमिक या मजदूरी न मिले ।—**आय** (**निराय**)–(वि०) जिससे या जिसे कुछ भी आय या आमदनी न हो ।—**आयास** (**निरायास**)–(वि०) जिसमें परिश्रम न लगे, सुकर, सरल, सहज ।—**आयुध** (**निरायुध**)–(वि०) जिसके पास हथियार न हो, खाली हाथ ।—**आलम्ब** (**निरालम्ब**)–(वि०) बिना सहारे का, निराधार, निराश्रय । मित्र-शून्य ।—**आलोक** (**निरालोक**)–(वि०) जो देख न सके, दृष्टिहीन । प्रकाशशून्य, अँधेरा ।—**आश** (**निराश**)–(वि०) आशारहित ।—**आशङ्क** (**निराशङ्क**)–(वि०) निडर, निर्भय ।—**आशिस्** (**निराशिस्**)–(वि०) आशीर्वाद या वर से रहित । लटम्ब; 'अग-च्छदम्बस्य निराशिषः सतः' कु० ५.७६ ।—**आश्रय** (**निराश्रय**)–(वि०) निरवलम्ब, निराधार । साहाय्यशून्य, एकाकी ।—**आस्वाद** (**निरास्वाद**)–(वि०) जिसमें कुछ भी स्वाद या जायका न हो, सीठा ।—**आहार** (**निराहार**)–(वि०) बिना भोजन का । (पुं०) कड़ाका, लंघन ।—**इच्छ** (**निरिच्छ**)–(वि०) बिना इच्छा का । जिसका किसी में अनुराग न हो ।—**इन्द्रिय** (**निरिन्द्रिय**)–(वि०) जो किसी इंद्रिय से रहित हो । जिसके शरीर का कोई अंग रहा न हो या बेकाम हो गया हो । निर्बल ।—**इन्धन** (**निरिन्धन**)–(न०) ईंधन का अभाव ।—**ईति** (**निरीति**)–(वि०) अतिवृष्टि, अनावृष्टि आदि ईतियों से रहित ।—**ईश्वर** (**निरी-**

श्वर)-(वि०) जिसमें ईश्वर के अस्तित्व का खंडन हो, जिसमें ईश्वर के अभाव का प्रतिपादन हो। ईश्वर को न मानने वाला, नास्तिक।—ईष (निरीष)-(न०) हल का फाल।—ईह (निरीह)-(वि०) कामनारहित, इच्छाशून्य। अक्रियाशील।—उच्छ्वास (निरुच्छ्वास)-(वि०) जो श्वास न लेता हो, जिसकी श्वास-प्रश्वासक्रिया बन्द हो। जहाँ साँस लेने तक की जगह न हो, तंग, सँकरा। श्वास-रहित।—उत्तर (निरुत्तर)-(वि०) लाजवाब। अपने से श्रेष्ठतर व्यक्ति से रहित।—उत्सव (निरुत्सव)-(वि०) बिना उत्सवों का।—उत्साह (निरुत्साह)-(वि०) जिसमें उत्साह न हो। काहिल, सुस्त।—उत्सुक (निरुत्सुक)-(वि०) उत्सुकताहीन। शान्त। अत्यंत उत्सुक।—उदक (निरुदक)-(वि०) जलरहित।—उद्यम (निरुद्यम),—उद्योग (निरुद्योग)-(वि०)जिसके पास कोई उद्यम न हो, बेकाम, बेकार।—उद्वेग (निरुद्वेग)-(वि०) उद्वेग से रहित, निश्चिंत।—उपक्रम (निरुपक्रम)-(वि०) उपक्रमरहित, प्रारम्भशून्य।—उपद्रव (निरुपद्रव)-(वि०) आफत-विपत्ति से रहित, भाग्यवान्। शान्तिमय। सुरक्षित।—उपधि (निरुपधि)-(वि०) पवित्र। ईमानदार।—उपपत्ति (निरुपपत्ति)-(वि०) अयोग्य, अनुपयुक्त।—उपपद (निरुपपद)-(वि०) बिना किसी उपाधि या खिताब का।—उपप्लव (निरुपप्लव)-(वि०) उपद्रव से रहित।—उपम (निरुपम)-(वि०) जिसकी उपमा न हो, उपमा-रहित, बेजोड़।—उपसर्ग (निरुपसर्ग)-(वि०) उपद्रवों या अपशकुनों से रहित।—उपाख्य (निरुपाख्य)-(वि०) जो असली न हो, बनावटी। जिसका अस्तित्व ही न हो (जैसे वन्ध्यापुत्र)। तुच्छ। अदृश्य।—उपाय (निरुपाय)-(वि०) उपायरहित।

—उपेक्ष (निरुपेक्ष)-(वि०) उपेक्षा से रहित। धोखा या छल से रहित। जो अप्रासंगिक न हो।—ऊष्मन् (निरूष्मन्)-(वि०)गर्मी-रहित, ठंडा।—ऋति-(स्त्री०) क्षय, नाश। संकट। शाप। मृत्यु। दारिद्र्य। पृथ्वी का नीचे का तल। नैर्ऋत कोण की देवी।—गन्ध-(वि०) जिसमें बू न हो।—गर्व-(वि०) अहङ्कारशून्य।—गवाक्ष-(वि०) जिसमें खिड़की या झरोखा न हो।—गुण-(वि०) जो सत्त्व, रज, तम—इन तीनों गुणों से परे हो, त्रिगुणातीत। जो गुणवान् न हो, गुणरहित। जिसमें डोरी न हो (धनुष)। (पुं०)परमात्मा।—गृह-(वि०) जिसके घर-द्वार न हो।—गौरव-(वि०) जिसका गौरव न हो।—ग्रन्थ-(वि०) मूर्ख। असहाय। विरक्त। वस्त्रहीन। निष्फल। (पुं०) बौद्ध या दिगम्बर जैन साधु, क्षपणक। जुआड़ी। एक ऋषि। बुद्धिहीन व्यक्ति।—ग्रन्थि-दे० 'निर्ग्रन्थ'।—ग्रन्थिक-(वि०) चतुर, चालाक। जिसके साथ कोई न हो, एकाकी। त्यक्त, त्यागा हुआ। फलरहित। (पुं०) नागा। दिगम्बर जैन साधु।—घट-(न०) बाजार जहाँ बड़ी भीड़ लगी हो, सब के लिये खुला हुआ बाजार।—घृण-(वि०) निष्ठुर। निर्लज्ज, बेहया।—जन-(वि०) जहाँ कोई न हो, एकांत, सुनसान। (न०) एकांत स्थान। मरुभूमि।—जर-(वि०) जो कभी बुड्ढा न हो, सदा युवा बना रहने वाला। (न०) अमृत। (पुं०) देवता।—जल-(वि०) जलरहित। जहाँ पानी न हो। जिसमें जल तक न ग्रहण किया जाय, जिसमें जल पीने का निषेध हो। (पुं०) उजाड़, रेगिस्तान।—जिह्व-(पुं०) मेंढक।—जीव (वि०) मरा हुआ, मृत, मुर्दा।—ज्वर-(वि०) जिसको ज्वर न हो।—दण्ड-(वि०) जिसे सभी तरह के दंड दिये जा सकें। दंड देने योग्य। (पुं०) शूद्र।—दय-(वि०)

निष्ठुर, संगदिल । क्रोधी । अत्यन्त वृद्ध ।—**दयम्**–(अव्य०) निष्ठुरता से, बेरहमी से । —**दश**–(वि०) दस दिन से अधिक का । —**दशन**–(वि०) जिसके दाँत न हों, पोपला । —**दुःख**–(वि०) पीड़ा रहित । जिससे पीड़ा न हो ।—**दोष**–(वि०) निरपराध । त्रुटि-रहित ।—**द्रव्य**–(वि०) गरीब, निर्धन ।—**द्रोह**–(वि०) द्रोह या विद्वेष से रहित ।—**द्वन्द्व**–(वि०) जिसका कोई द्वन्द्वी न हो । जो राग-द्वेष, मान-अपमान आदि द्वन्द्वों (जुट्टों)से परे या रहित हो । स्वच्छन्द ।—**धन**–(वि०) सम्पत्तिहीन, दरिद्र । (पुं०) बुड्ढा बैल ।—**धर्म**–(वि०) धर्म से रहित, जो धर्म का पालन न करे ।—**धूम**–(वि०) धूमरहित । —**नर**–(वि०) जिसको मनुष्यों ने त्याग दिया हो ।—**नाथ**–(वि०) अनाथ, असहाय, जिसका कोई नाथ न हो ।—**निद्र**–(वि०) जागता हुआ, जो सोता न हो ।—**निमित्त**–(वि०) बिना कारण का, कारण-रहित ।—**निमेष**–(वि०) जिसकी पलक न गिरे।—**बन्धु**–(वि०) जिसका जाति-बिरादरी वाला न हो । मित्रवर्जित ।—**बल**–(वि०) अशक्त, बल-रहित, कमजोर ।—**बाध**–(वि०) बिना बाधा या रोक का, प्रतिबंध-रहित । जहाँ या जिसमें कोई उपद्रव न हो, निरुपद्रव । एकांत, निर्जन ।—**बुद्धि**–(वि०) बुद्धिहीन, मूर्ख, बेवकूफ ।—**बुष**,—**बुस**–(वि०) जिसकी भूसी न निकाली गयी हो ।—**भय**–(वि०) निडर, भयरहित । सुरक्षित ।—**भर**–(वि०) अत्यंत, बहुत अधिक । तीव्र । गाढ़ । भरा हुआ । अवलंबित । (पुं०) बेगार में काम करने वाला आदमी ।—**भाग्य**–(वि०) अभागा, बदकिस्मत ।—**भृति**–(वि०) जिसको दैनिक भृति यानी मजदूरी न मिली हो ।—**मक्षिक**–(वि०) जहाँ कोई (एक मक्खी तक) न हो, निर्जन, एकान्त ।—**मत्सर**–(वि०) ईर्ष्यारहित ।—**मत्स्य**–(वि०) मछलियों से शून्य ।—**मद**–(वि०) जो नशे में न हो । जो अभिमानी न हो ।—**मनुज**, —**मनुष्य**–(वि०) जहाँ कोई मनुष्य न रहता हो । गैर-आबाद । मनुष्यों द्वारा परित्यक्त ।—**मन्यु**–(वि०) क्रोधरहित ।—**मम**–(वि०) ममतारहित । निष्ठुर ।—**मर्याद**–(वि०) जिसने मर्यादा का अतिक्रमण कर दिया हो उद्दंड, अशिष्ट । असीम ।—**मल**–(वि०) जिसमें मैल न हो, साफ, स्वच्छ । चमकीला । पापरहित । (न०) अभ्रक । निर्मली । देवता को समर्पित पदार्थ का अवशिष्ट ।—**मशक**–(वि०) मच्छरों से रहित ।—**मांस**–(वि०) मांस से रहित ।—**मानुष**–(वि०) दे० 'निर्मनुज' ।—**मार्ग**–(वि०) पथशून्य ।—**मुट**–(पुं०) सूर्य । बदमाश, गुंडा । वह वृक्ष जिसमें बहुत फल लगे हों । खपड़ा । (न०) करशून्य हट्ट, बाजार जिसमें चुंगी न ली जाती हो ।—**मूल**–(वि०) जड़हीन । आधारहीन । मिटाया हुआ ।—**मेघ**–(वि०) बिना बादलों का । —**मोक्ष**–(पुं०) पूर्ण मोक्ष जिसमें एक भी संस्कार न बच रहे ।—**मोह**–(वि०) मोह या अज्ञान से रहित । ममता, दया से शून्य, निष्ठुर, बेदर्द । (पुं०) रैवत मनु के एक पुत्र । शिव ।—**यत्न**–(वि०) अक्रियाशील, सुस्त । —**यन्त्रण**–(वि०) जिसकी कोई रोकटोक न हो । जो वश में न रह सके । (न०) स्वाधीनता । मनमौजीपन ।—**यशस्क**–(वि०) अकीर्तिकर ।—**यूथ**–(वि०) झुंड से छूटा हुआ ।—**रक्त** (**नीरक्त**)–रक्तशून्य । बे-रंग, फीका ।—**रजस्** (**नीरजस्**)—**रजस्क** (**नीरजस्क**)–(न०) जिसमें गर्द-गबार न हो । (स्त्री०) स्त्री जो रजस्वला न हो ।—**रन्ध्र** (**नीरन्ध्र**)–(वि०) बिना छेदों या सूराखों का । सघन, घना । मोटा ।—**रव** (**नीरव**)-(वि०)जो शोर न करे । जहाँ कोलाहल न हो ।—**रस** (**नीरस**)–(वि०)जिसमें रस न हो, रसहीन । सूखा, शुष्क । फीका

जिसमें कोई स्वाद न हो। जिसमें कोई आनन्द न मिले, जिससे मनोरंजन न हो (जैसे नीरस काव्य)। अप्रिय। निष्ठुर, बेरहम। (पुं०) अनार।—रसन (नीरसन), —रशन (नीरशन) –(वि०) मेखला, करधनी या कमरबंद से रहित: 'अविरलित नीरशनैः' कि० ५.११। —रुच् (नीरुच्)–(वि०) धुँधला, जिसमें चमक न हो।—रुज् (नीरुज्), —रुज (नीरुज)–(वि०) नीरोग, जो रोगी न हो।—रूप (नीरूप)– (वि०) आकार शून्य, जिसकी कोई शक्ल न हो।—रोग (नीरोग)–(वि०) स्वस्थ, चंगा, तंदुरुस्त। —लक्षण–(वि०) जिसके शरीर में कोई शुभ चिह्न न हो। जिसको कोई पहचान न पावे। तुच्छ। जिसमें कोई चच्चा न हो। —लज्ज–(वि०) बेहया, बेशर्म।—लिङ्ग– (पुं०) जिसकी पहचान के लिये कोई चिह्न न हो।—लेप–(वि०) विषयों से अलग रहने वाला, निर्लिप्त। जो लीपा-पोता न गया हो। पापरहित। कलङ्कशून्य।—लोभ–(वि०) जो लोभी न हो, जो लालची न हो। संतोषी। —लोमन्–(वि०) जिसके बाल न हों।—वंश–(वि०) जिसकी वंश-परम्परा उसी के शरीर से समाप्त हो जाय, जिसका वंश उच्छिन्न हो गया हो, सन्तानहीन।—वण, —वन– (वि०) जंगल के बाहर। जहाँ जंगल न हो। खुला हुआ। ऊसर।—वसु–(वि०) निर्धन, गरीब।—वात–(वि०) जहाँ पवन न हो। शान्त। (पुं०) ऐसा स्थान जो पवन के उपद्रवों से रक्षित हो।—वानर–(वि०) जहाँ बंदर न हों।—वायस –(वि०) जहाँ कौए न हों।—विकल्प, —विकल्पक–(वि०) जो विकल्प, परिवर्तन या प्रभेदों से रहित हो; 'प्रविश सहसा निर्विकल्पे समाधौ'। जो दृढ़ विचार वाला न हो। जो पारस्परिक सम्बन्ध न रख सके।—विकार–(वि०) अपरिवर्तित, जो बदले नहीं। जिसका कोई स्वार्थ न हो।—विकास–(वि०) अनखिला हुआ। —विघ्न–(वि०) बिना विघ्न-बाधा का, विघ्न-बाधाओं से मुक्त। (न०) विघ्नों का अभाव। —विचार–(वि०) अविचारी, जो किसी बात पर विचार न करे, अविवेकी।—विचिकित्स–(वि०) वह जो सन्देह या शङ्का न करे।—विचेष्ट–(वि०) गतिहीन, संज्ञाहीन। अज्ञानी, मूर्ख।—विनोद–(वि०) आमोद-प्रमोद से रहित।—विन्ध्या–(स्त्री०) विन्ध्याचल से निकलने वाली एक नदी का नाम।—विमर्श–(वि०) विचार-हीन, अविवेकी।—विवर–(वि०) जिसमें कोई रन्ध्र या छिद्र न हो। जिसमें अन्तर न हो, घनिष्ठ। —विवाद–(वि०) जिसमें मतभेद का अभाव हो, सर्वसम्मत।—विवेक–(वि०) मूर्ख, जिसमें अच्छाई-बुराई का विचार करने की शक्ति न हो।—विशङ्क–(वि०) निडर, निर्भय।—विशेष–(वि०) वह जो किसी में भेदभाव न करे। (पुं०) परब्रह्म, परमात्मा। —विशेषण–(वि०) बिना उपाधियों का। —विष–(वि०) विषहीन, जिसमें जहर न रहा हो।—विषय–(वि०) घर से निकाला हुआ। जिसको काम करने के लिये कोई भी स्थान न हो। जिसको विषय-वासना (मैथुनादि की इच्छा) न हो।—विषाण–(वि०) जिसके सींग न हो।—विहार–(वि०) जिसके लिये आनन्द का अभाव हो।—वीज, —बीज– (वि०) बीजरहित। नपुंसक। कारणरहित। —वीर–(वि०) वीरहीन। प्रभुतारहित।—वीरा–(वि०) वह स्त्री जिसका पति और लड़के मर चुके हों।—वीर्य–(वि०) शक्तिहीन, निर्बल: 'निर्वीर्यं गुरुशापभाषितवशात् किं मे तवेवायुधं' वे० ३.३४। नपुंसक।—वृक्ष–(वि०) वृक्षों से रहित।—वृष–(वि०) बैल-रहित।—वेग–(वि०) जिसमें वेग या गति न हो, स्थिर।—वेतन–(वि०) जिसे वेतन न मिलता हो, अवैतनिक।—वेष्टन–

(न०) जुलाहे की ढरकी ।—**वैर**–(वि०) जिसका कोई शत्रु न हो। शान्तिप्रिय। (न०) शत्रुता का अभाव ।—**व्यञ्जन** –(वि०) सरल, साफ, निष्कपट । बिना मसालों का । —**व्यथ**–(वि०) पीड़ारहित । शान्त ।—**व्यपेक्ष**–(वि०) तटस्थ, उदासीन ।—**व्यलीक**–(वि०) जो किसी को कष्ट न दे । पीड़ारहित । कोई भी कार्य हो, मन लगा कर या रजामंदी से करने वाला । सच्चा, निष्कपट ।—**व्याघ्र**–(वि०) वह स्थान जहाँ चीतों का उत्पात न हो ।—**व्याज**–(वि०) ईमानदार, सच्चा, साफ मन का । निष्कपट, छलशून्य ।—**व्यापार**–(वि०) जिसके पास कोई काम-धंधा न हो । गतिहीन ।—**व्रण**–(वि०) जिसे कोई घाव, दाग न हो।—**व्रत**-(वि०) जो व्रत न रखता हो ।—**हिम**–(न०) जाड़े का अवसान । हिम का अभाव । (वि०) हिमशून्य ।—**हेति**– (वि०) हथियार-रहित ।—**हेतु**–(वि०) कारण-रहित । —**ह्रीक**–(वि०) निर्लज्ज, बेहया । साहसी ।

निरत—(वि०) [नि√रम्+क्त] किसी कार्य में लगा हुआ, तत्पर, लीन । प्रसन्न, आनन्दित । बंद ।

निरति—(पुं०) [नि√रम्+क्तिन्] अत्यन्त रति, अत्यधिक प्रीति । लिप्त या लीन होने का भाव ।

निरय—(पुं०) [निर् √इ+अच्] नरक, दोजख ।

निरवहानिका, निरवहालिका — (स्त्री०) [निर्–अव √हन्+ण्वुल्–टाप्, इत्व] [निर्–अव√हल्+ण्वुल्, टाप् इत्व] बाड़ा । चहारदीवारी, प्राचीर ।

निरस—(वि०) [निवृत्तो रसो अस्मात्] रसहीन । स्वादहीन, फीका । सूखा । (पुं०) [रसस्य अभावः] नीरसता । स्वादहीनता । शुष्कता । विरक्ति ।

निरसन—(न०) [स्त्री०—**निरसनी**] [निर् √अस्+ल्युट्] निराकरण, परिहार । फेंकना । दूर करना । वमन करना, कै करना । थूकना ।

निरस्त—(वि०) [निर् √अस्+क्त] फेंका हुआ । भगाया हुआ, देश से निकाला हुआ । नष्ट किया हुआ । त्यागा हुआ । हटाया हुआ । छोड़ा हुआ (जैसे तीर) । खण्डन किया हुआ । उगला हुआ । थूका हुआ । अस्पष्ट रूप से जल्दी-जल्दी बोला हुआ । फाड़ा या चीरा हुआ । दबाया हुआ । रोका हुआ । तोड़ा हुआ (जैसे कोई प्रतिज्ञा) ।—**भेद**–(वि०) समस्त भेदों को दूर किये हुए । समान, एक सा ।—**राग**–(वि०) संसारत्यागी, सांसारिक समस्त वासनाओं को त्यागे हुए ।

निराक—(पुं०) [निर्√अक्+घञ्] पाचन-क्रिया । पसीना । पाप का परिणाम ।

निराकरण—(न०) [निर्–आ√ कृ +ल्युट्] छाँटना । हटाना, दूर करना । मिटाना । शमन, निवारण । खण्डन । देशनिर्वासन । तिरस्कार । मुख्य यज्ञीय कर्मों की अवहेलना ।

निराकुल—(वि०) [प्रा० स०] पूर्ण, भरा हुआ । जो घबराया न हो, धीर, शान्त ।

निराकरिष्णु—(वि०) [निर्–आ+कृ +इष्णुच्] निराकरण करने वाला, जो निवारण या दूर कर सके ।

निराकृति, निराक्रिया—(स्त्री०) [निर्—आ√कृ+क्तिन्] [निर्—आ√कृ+श]निराकरण,परिहार । अस्वीकृति । रोक-टोक, बाधा । विरोध । (वि०) [ब० स०] आकृतिरहित, निराकार । स्वाध्यायरहित, वेदपाठरहित । पंचमहायज्ञ के अनुष्ठान से रहित ।

निराग—(वि०) [निवृत्तः रागो यस्मात्] रागरहित, अनुरागशून्य ।

निराविष्ट—(वि०) [निर्–आ√ विश् +क्त] जो पूरा-पूरा अदा कर दिया गया हो (कर्ज) ।

निरामालु—(पुं०) [नि√रम् + आलु] कैथ का पेड़ ।

निरास—(पुं०) [निर्√अस्+घञ्] निराकरण, स्थानान्तरकरण । उगलना । खण्डन । प्रतिवाद, विरोध ।

निरिङ्गिणी, निरिङ्गिनी—(स्त्री०) [निः निर्गतं जनम् इङ्गति प्राप्नोति, निर्√इङ्ग्+इनि—ङीप्] चिक । परदा ।

निरीश—ष–(वि०) [निर्गता ईषा यस्मात्-बहु०] हरिसशून्य, वह हल जिसमें हरिस न हो ।

निरीक्षण—(न०), **निरीक्षा**–(स्त्री०) [निर् √ईक्ष्+ल्युट्] [निर् √ईक्ष्+अ—टाप्] चितवन । दृष्टि । खोज, तलाश । सोचविचार । आशा । जन्म-काल में ग्रहों का योग या स्थिति ।

निरुक्त—(वि०) [निर्√वच् + क्त] जिसका निर्वचन किया गया हो, व्याख्या किया हुआ । नियुक्त । (न०) व्याख्या, व्युत्पत्ति । वेद के छः अंगों में से एक, जिसमें अप्रचलित शब्दों की व्याख्या की गयी है । एक प्रसिद्ध व्याख्या का नाम, जो यास्क द्वारा निघण्टु पर की गयी है ।

निरुक्ति—(स्त्री०) [निर्√वच्+क्तिन्] निरुक्त की रीति से निर्वचन, किसी पद या वाक्य की ऐसी व्याख्या जिसमें व्युत्पत्ति आदि अच्छी तरह समझायी गयी हो । एक काव्यालङ्कार जिसमें अर्थ तो मनमाना किया जाय, किन्तु हो सयुक्तिक ।

निरुद्ध—(वि०) [नि√रुध्+क्त] विशेष रूप से रुका हुआ, प्रतिबद्ध, रुँधा हुआ । (पुं०) पाँच प्रकार की मनोवृत्तियों में से एक (योग) ।—**कण्ठ**–(वि०) जिसका गला रुँध गया हो ।—**गुद**–(वि०) एक रोग जिसमें मलद्वार बंद-सा हो जाता है ।

निरूढ—(वि०) [नि√रुह्+क्त] प्रसिद्ध, विख्यात । जिसका अधिक व्यवहार होता हो । साफ किया हुआ । अविवाहित । (पुं०) शक्ति तुल्य लक्षणा द्वारा अर्थबोधक शब्द । एक प्रकार का पशुयाग ।—**लक्षणा**–(स्त्री०) लक्षणा-विशेष जिसमें गृहीत अर्थ रूढ़ हो गया हो अर्थात् वह अर्थ केवल प्रसंग या प्रयोजनवश ही ग्रहण न किया गया हो ।

निरूढि—(स्त्री०) [नि√रुह्+क्तिन्] ख्याति, प्रसिद्धि । हेलमेल, परिचय । दृढ़ीकरण ।

निरूपण—(न०) **निरूपणा**–(स्त्री०) [नि √रूप्+णिच्+ल्युट्] [नि√रूप् +णिच् युच्] ढूँढ़ना, अन्वेषण । किसी विषय को इस रूप में रखना कि वह साफ-साफ समझ में आ जाय, मौखिक रूप से या लेख द्वारा किसी विषय को ठीक-ठीक समझा देना । आलोक । रूप-दृष्टि ।

निरूपित—(वि०) [नि√रूप्+णिच्+क्त] जिसका निरूपण किया गया हो । देखा हुआ । नियुक्त किया हुआ । विचारा हुआ । खोजा हुआ ।

निरूह—(पुं०) [निर्√ऊह्+घञ्] वस्ति-क्रिया । तर्क । निश्चय । वाक्य जिसमें कुछ छूटा न हो, पूर्ण वाक्य ।

निर्ऋति—(स्त्री०) [निर्गता ऋतिर्घृणा यत्र प्रा० ब०] अलक्ष्मी, दरिद्रता । अधर्म की भार्या । अधर्म की कन्या । मृत्यु की स्त्री का नाम । मूला नक्षत्र । (पुं०) दक्षिण और पश्चिम दिशा के स्वामी । (वि०) उपद्रव-रहित ।

निरोध—(पुं०) [नि√रुध्+घञ्] रुकावट । घेरा । संयम । बाधा । चोटिल करना । नाश । अरुचि । आशा का टूटना । चित्त की वह अवस्था जिसमें सभी वृत्तियाँ और संस्कारों का लय हो जाता है ।

निर्ग—(पुं०) [निर्√गम्+ड] देश । प्रान्त । स्थान ।

निर्गन्धन—(न०) [निर्√गन्ध्+ल्युट्] मारना, वध करना ।

निर्गम—(पुं०) [निर्√गम्+अप्] बाहर जाना, निकलना। द्वार, निकलने का मार्ग।

निर्गमन—(न०) [निर्√गम्+ल्युट्] निकलने की क्रिया, निकास।

निर्गुह—(पुं०) [निर्√गुह्+क] वृक्ष का कोटर। (वि०) अत्यंत गूढ़, बहुत गुप्त।

निर्ग्रन्थन—(न०) [निर्√ग्रन्थ्+ल्युट्] हत्या, वध।

निर्घण्ट—(पुं०) [निर्√घण्ट्+घञ्] शब्दों और उनके अर्थों की तालिका। विषयसूची।

निर्घर्षण—(न०) [निर्√घृष्+ल्युट्] रगड़।

निर्घात—(पुं०) [निर्√हन्+घञ्] नाश। आंधी, तूफान। हवा की सनसनाहट। भूचाल। वज्रपात। बिजली की कड़क।

निर्घातन—(न०) [निर् √हन्+णिच् +ल्युट्] जबरदस्ती बाहर करना। बाहर निकाल लाना। शस्त्र-चिकित्सा की एक क्रिया।

निर्घोष—(पुं०) [निर्√घुष्+घञ्] शब्द, आवाज। बड़े जोरों का कोलाहल; 'ज्यानिर्घोषैः क्षोभयामास सिंहान्' र० ९.६४।

निर्जय, निर्जिति—(पुं० स्त्री०) [निर्√जि +अच्] [निर्√जि+क्तिन्] पूर्णतया विजय, पूरी जीत।

निर्झर—(पुं०, न०) [निर्√झृ+अप्] झरना। जल-प्रपात। (पुं०) सूर्य का एक घोड़ा। हाथी। भूसे की आग।

निर्झरिन्—(पुं०) [निर्झर+इनि] पर्वत, पहाड़।

निर्झरिणी, निर्झरी—(स्त्री०) [निर्झरिन् +ङीप्] [निर्झर+ङीप्] झरने से निकलने वाली नदी।

निर्णय—(पुं०) [निर्√नी+अच्] हटाना। किसी विषय पर अच्छी तरह विचार करके उसके दो पक्षों में से किसी एक को उचित ठहराना। विचारपति का किसी विवाद के विषय में अपना मत स्थिर करना। विचारपति द्वारा किसी विवाद के विषय में स्थिर किया गया मत, फैसला।—**पाद**—(पुं०) व्यवहार के चार पादों में से एक। विचार-निष्पत्ति।

निर्णायक—(वि०) [निर्√नी+ण्वुल्] निर्णय करने वाला, फैसला देने वाला।

निर्णायन—(न०) [निर्√नी +णिच् +ल्युट्] निश्चय कराने की क्रिया। निर्णय का कारण। हाथी की आँख का बाहरी कोण।

निर्णिक्त—[निर्√निज्+क्त] धुला हुआ, साफ किया हुआ। जिसके लिये प्रायश्चित्त किया गया हो।

निर्णिक्ति—(पुं०) [निर्√निज्+क्तिन्] धुलाई। सफाई। प्रायश्चित्त।

निर्णेक—(पुं०) [निर्√निज्+घञ्] धुलाई। स्नान। प्रायश्चित्त।

निर्णेजक—(पुं०) [निर्√निज्+ण्वुल्] रजक, धोबी।

निर्णेजन—(न०) [निर्√निज्+ल्युट्] धोना, साफ करना। स्नान। प्रायश्चित्त (किसी पाप का)।

निर्णोद—(पुं०) [निर् √नुद+घञ्] स्थानान्तरकरण, देश-निकाला।

निर्दट, निर्दंड—(वि०) [=निर्दय, पृषो० साधुः] निष्ठुर, नृशंस। दूसरों के दोषों पर प्रसन्न होने वाला। डाही, ईर्ष्यालु। बदजबान, गाली-गलौज करने वाला। व्यर्थ, अनावश्यक। उग्र, प्रचण्ड। उन्मत्त, नशे में चूर।

निर्दर, निर्दरि—(पुं०) [निर्√दृ+अप्] [निर्√दृ+इन्] गुफा, गह्वर। निर्झर। गोंद।

निर्दलन—(न०) [निर् √दल्+ल्युट्] नाश करना । भंग करना ।

निर्दहन—(न०) [निर् √दह्+ल्युट्] जलाने की क्रिया । (पुं०) [निर् √दह् +ल्यु] भिलावें का पेड़ । (वि०) [निः नास्ति दहनः (नम्) यत्र] अग्नि से रहित । जिसमें दाह न हो ।

निर्दातृ—(पुं०) [निर् √दा+तृच्] दाता । [√दो+तृच्] निराने वाला । किसान ।

निर्दारित—(वि०) [निर् √दृ + णिच् +क्त] फाड़ा हुआ ।

निर्दिग्ध—(वि०) [निर् √दिह् + क्त] लेप किया हुआ । (तेल) लगाया हुआ । हृष्ट-पुष्ट, मोटा-ताजा ।

निर्दिष्ट—(वि०) [निर् √दिश्+क्त] जिसका निर्देश हो चुका हो, बतलाया या नियत किया हुआ । आज्ञप्त, आज्ञा दिया हुआ । वर्णित । तलाया या दर्शाया किया हुआ । निश्चित किया हुआ । प्रकट किया हुआ ।

निर्देश—(पुं०) [निर् √दिश् + घञ्] बतलाना । आदेश । उपदेश; 'अगुरुतोऽयं निर्देशः' महा० । कथन । उल्लेख । सामीप्य,पास ।

निर्धार—(पुं०) **निर्धारण**—(न०) [निर् √धृ +णिच्+घञ्] [निर् √धृ+णिच्+ल्युट्] समान जाति, गुण, क्रिया आदि वाले बहुतों में से एक को छाँटना, चुनना या अलग करना । नियत करना । निर्णय या निश्चय करना । निश्चय, निर्णय ।

निर्धारित—(वि०) [निर् √धृ+णिच्+क्त] जिसका निर्धारण किया गया हो ।

निर्धूत—(वि०) [निर् √धू+क्त] हिलाया हुआ । हटाया हुआ । त्यागा हुआ । वञ्चित किया हुआ । बचाया हुआ । खण्डन किया हुआ । नष्ट किया हुआ ।

निर्धौत—(वि०) [निर् √धाव्+क्त] धोया हुआ; 'निर्धौतदानामलगण्डभित्तिः' र० ५.४३ । चमकाया हुआ ।

निर्बन्ध—(पुं०) [निर् √बन्ध्+घञ्] जिद, हठ । कड़ी माँग । दुराग्रह । दोषारोपण । झगड़ा ।

निर्बर्हण—(न०) [निर् √बर्ह्+ल्युट्] मारण ।

निर्भट—(वि०) [निर् √भट् + अच्] दृढ़, मजबूत, सख्त ।

निर्भर्त्सन—(न०), **निर्भर्त्सना**—(स्त्री०) [निर् √भर्त्स्+ल्युट्] [निर् √भर्त्स्+युच्] धमकी । डाँट-डपट । कुवाच्य, गाली । कलङ्क, बदनामी । विद्वेष-बुद्धि, द्रोह-भाव । लाल रंग । लाख ।

निर्भेद—(पुं०) [निर् √भिद्+घञ्] फट पड़ना, विभक्त होना (बीच से) चिरना । चीरना, फाड़ना । स्पष्ट कथन । नदीगर्भ । किसी बात का दृढ़ निश्चय ।

निर्मथ—(पुं०), **निर्मथन**—(न०), **निर्मन्थ**—(पुं०) **निर्मन्थन**—(न०), [निर् √मथ् +घञ्] [निर् √मथ्+ल्युट्] [निर् √मन्थ् +घञ्] [निर् √मन्थ्+ल्युट्] रगड़, मथन, मथने की क्रिया, गड़बड़ करने की क्रिया । अरणि, जिसके मथन से यज्ञ के लिये अग्नि उत्पन्न किया जाता है ।

निर्मन्थ्य—(वि०) [निर् √मन्थ्+ण्यत्] गड़बड़ करने या मथने योग्य । रगड़ कर उत्पन्न करने योग्य । (न०) अरणि की लकड़ी जिसे रगड़ कर आग पैदा करते हैं ।

निर्माण—(न०) [निर् √मा+ल्युट्] नापने की क्रिया । नाप । बनाने की क्रिया, गढ़ने या ढालने की क्रिया । सृष्टि । शक्ल, आकार । भवन । अंश । सार, मज्जा ।

निर्माल्य—(न०) [निर् √मल्+ण्यत्] किसी देवता को समर्पित की हुई वस्तु, किसी देवता पर चढ़ चुकी हुई वस्तु (विसर्जन के बाद देवार्पित वस्तु को 'निर्माल्य' कहते हैं) ।

निर्मिति—(स्त्री०) [निर् √मा+क्तिन्]

उत्पत्ति, पैदावार। बनावट। कोई भी कारीगरी की वस्तु।

निर्मुक्त—(वि०) [निर्√मुच्+क्त] छोड़ा हुआ, मुक्त किया हुआ। सांसारिक मोह-ममता से छूटा हुआ। पृथक् किया हुआ। (पुं०) वह साँप जिसने हाल ही में केंचुली त्यागी हो।

निर्मूलन—(न०) [निर्√मूल्+णिच्+ल्युट्] जड़ से उखाड़ डालना, जड़ से नाश करना: 'कर्मनिर्मूलनक्षमः' भर्तृ० ३.७२।

निर्मृष्ट—(वि०) [निर्√मृज्+क्त] धोया या पोंछा हुआ। रगड़ कर साफ किया हुआ।

निर्मोक—(पुं०) [निर्√मुच्+घञ्] मुक्त-करण, आज़ाद कर देने की क्रिया। चमड़ा। केंचुली। कवच। आकाश। वायुमण्डल।

निर्मोचन—(न०) [निर्√मुच्+ल्युट्] मुक्ति, छुटकारा।

निर्यांण—(न०) [निर्√या+ल्युट्] बाहर निकलना। यात्रा, प्रस्थान। वह सड़क जो किसी नगर के बाहर की ओर जाती हो। अदृश्य होना, गायब होना। शरीर से आत्मा का निकलना, मृत्यु। मोक्ष, परमानंद। हाथी की आँख का बाहरी कोना। पशुओं के पैरों में बाँधने की रस्सी।

निर्यातन—(न०) [निर्√यत्+णिच्+ल्युट्] बदला चुकाना। (धरोहर का धनी को) पुनः सौंपना। ऋण चुकाना। दान। प्रतीकार, बदला। हत्या।

निर्याति—(स्त्री०) [निर्√या+क्तिन्] बहिर्गमन, प्रस्थान। मृत्यु।

निर्याम—(पुं०) [निर्√यम्+घञ्] कर्णधार, नाव खेने वाला, नाविक।

निर्यास—(पुं०, न०) [निर्√यस्+घञ्] वृक्षों का चिपचिपा रस, गोंद, राल। काढ़ा, क्वाथ। कोई गाढ़ी तरल वस्तु।

निर्यूह—(पुं०) [निर्√वह्+क, पृषो० साधुः] कलस। मुकुट। शिरोभूषण। खूँटी। द्वार, दरवाज़ा। काढ़ा।

निर्लुञ्चन—(न०) [निर्√लुञ्च्+ल्युट्] खींच कर उखाड़ लेना।

निर्लुण्ठन—(न०) [निर्√लुण्ठ्+ल्युट्] लूट-खसोट। चीरफाड़।

निर्लेखन—(न०) [निर्√लिख्+ल्युट्] किसी चीज पर का मैल आदि खुरचना। वह वस्तु जिससे किसी चीज पर का मैल खुरचा जाय।

निर्ल्वयनी—(स्त्री०) [निर्√ली+ल्युट् पृषो० साधुः] साँप की केंचुल।

निर्वचन—(न०) [निर्√वच्+ल्युट्] कथन। उच्चारण। कहावत, लोकोक्ति। शब्दसाधन। शब्दसूची।

निर्वपण—(न०) [निर्√वप्+ल्युट्] भेंट करना। पिण्डदान। पुरस्कारप्रदान। दान। भेंट।

निर्वर्णन—(न०) [निर्√वर्ण्+ल्युट्] देखना। सावधानी से देखना।

निर्वर्तक—(वि०) [स्त्री०—**निर्वर्तिका**] [निर्√वृत्+णिच्+ण्वुल्] पूरा करने वाला, निष्पन्न करने वाला।

निर्वर्तन—(न०) [निर्√वृत्+णिच्+ल्युट्] कर्म को पूर्ण करने की क्रिया।

निर्वहण—(न०) [निर्√वह्+ल्युट्] समाप्ति, पूर्णता। अन्त को पहुँचाना यानी समाप्त या पूरा करना, उपसंहार, समाप्ति; 'तत्किंनिमित्तं कुकविकृतनाटकस्येव प्रत्य-न्यूलेऽन्यन्निर्वहणे' मु० ६। नाश।

निर्वाण—(वि०) [निर्√वा+क्त] फूँक कर बाहर निकाला हुआ। (दीपक) बुझाया हुआ। खोया हुआ। मृत। जीवन से मुक्त। डूबा हुआ, अस्त हुआ। चुप किया हुआ। (न०) बुझने की क्रिया। अन्तर्धान, अदृश्यता। मृत्यु। मोक्ष (बौद्धों की मोक्ष-प्राप्ति का नाम निर्वाण है)।

निर्वृत्त—(वि०) [निर्√वृत् + क्त] पूरा किया हुआ, जो पूरा हो गया हो, जिसकी निष्पत्ति हो चुकी हो।

निर्वृत्ति—(स्त्री०) [निर् √वृत् + क्तिन्] निष्पत्ति, समाप्ति।

निर्वेद—(पुं०) [निर्√विद्+घञ्] वैराग्य। दुःख। अनुताप। अपमान।

निर्वेश—(पुं०) [निर्√विश् + घञ्] लाभ, प्राप्ति। मजदूरी। भाड़ा। भोजन। उपभोग। उपयोग। रकम की वापिसी। प्रायश्चित्त। विवाह। मूर्च्छा, बेहोशी।

निर्व्यथन—(न०) [निर् √व्यथ् + ल्युट्] बड़ा दर्द, तीव्र पीड़ा। रन्ध्र, छेद।

निर्व्यूढ—(वि०) [निर्—वि √ वह्+क्त] समाप्त किया हुआ, पूरा किया हुआ। बढ़ा हुआ, वृद्धि को प्राप्त। पूर्णतया देखा हुआ। सत्यसिद्ध किया हुआ, सत्यता से अन्त तक सत्यसिद्ध किया हुआ, सत्यता से अन्त तक पहुँचाया हुआ अर्थात् समाप्त किया हुआ। त्यक्त, छोड़ा हुआ।

निर्व्यूढि—(स्त्री०) [निर्—वि √ वह् +क्तिन्] समाप्ति, अन्त। चोटी, सर्वोच्च स्थल।

निर्व्यूह—(पुं०) [=निर्यूह, पृषो० साधुः] छोटा बुर्ज। शिरस्त्राण। द्वार, फाटक। खूँटी। क्वाथ, काढ़ा।

निर्हरण—(न०) [निर्√हृ + ल्युट्] शव को जलाने के लिये ले जाना। शव को जलाने के लिये चिता पर रखना। ले जाना। खींच कर निकाल लेना। हटाना। जड़ से उखाड़ डालना।

निर्हाद—(पुं०) [निर्√हद् + घञ्] मल, विष्ठा।

निर्हार—(पुं०) [निर्√हृ+घञ्] (तीर के)निकालने की क्रिया। मल मूत्रादि का त्यागना। इच्छानुसार लगाना। निज की सम्पत्ति या धन दौलत का सञ्चय करना।

निर्हारिन्—(वि०) [निर्√ हृ + णिनि] (शव को जलाने के लिये) ले जाने वाला। फैलाने वाला, प्रचार करने वाला। (पुं०) दूरगामी गंध, वह गंध जो बहुत दूर तक फैले।

निर्हृति—(स्त्री०) [निर्√हृ+क्तिन्] हटाना, रास्ता साफ करना।

निर्ह्राद—(पुं०) [निर् √ ह्रद्+घञ्] पक्षी आदि का शब्द।

निलय—(पुं०) [नि√ली + अच्] छिपने का स्थान। जानवरों का बिल या भाँटा। चिड़ियों का घोंसला। आवास-स्थान, घर।

निलयन—(न०) [नि √ली +ल्युट्] किसी स्थान में बस जाना। आवासस्थान, घर।

निलिम्प—(पुं०) [नि√लिप् + श, नुम्] देवता। मरुतों का दल।—**निर्झरी**–(स्त्री०) आकाशगंगा।

निलिम्पा, निलिम्पिका—(स्त्री०) [निलिम्प—टाप्] [निलिम्प+कन्, टाप्, इत्व] गौ।

निलीन—(वि०) [नि√ली + क्त] पिघला हुआ। बंद या लपेटा हुआ। छिपा हुआ। घिरा हुआ। नष्ट किया हुआ। बदला हुआ।

निवचन—(न०) [प्रा० स०] निरन्तर वचन, बराबर कहते जाना।

निवपन—(न०) [नि√वप् + ल्युट्] बिखेरना। बोना। पितरों के नाम पर किसी वस्तु को देना; 'को नः कुले निवपनानि प्रयच्छतीति' श० ६.२४।

निवरा—(स्त्री०) [नि√वृ + अप्—टाप्] क्वारी कन्या, अविवाहिता स्त्री।

निवर्तक—(वि०) [नि√वृत् + णिच् +ण्वुल्] लौटाने वाला, वापिस लाने वाला। बंद करने वाला। पकड़ने वाला। मिटा देने वाला। छुड़ा देने वाला।

निवर्तन—(वि०) [नि√वृत्+णिच् +ल्यु] लौटाने वाला। पीछे हटाने वाला। बंद

करने वाला । (न०) [नि√वृत् + णिच् +ल्युट्] वापिसी । वंदी । विरक्ति । अकर्मण्यता । ला कर पीछे देने की या लौटाने की क्रिया । पश्चात्ताप । उन्नति करने की अभिलाषा । सौ वर्गगज भूमि अथवा २० बाँस लंबी जगह ।

निवसति—(स्त्री०) [नि√वस् + अतिच्] वासस्थान, घर ।

निवसथ—(पुं०) [नि√वस् + अथच्] ग्राम, गाँव ।

निवसन—(न०) [नि √वस्+ल्युट्] घर, मकान । वस्त्र । भीतर पहिनने का कपड़ा ।

निवह—(पुं०) [नि √ वह्+अच्] समूह, समुदाय । राशि, ढेर । सात पवनों में से एक पवन का नाम ।

निवात—(वि०) [निवृत्तो वातो यस्मिन्] जहाँ पवन न हो । शान्त । सुरक्षित । (न०) वह स्थान जो पवन से रक्षित हो । सुरक्षित स्थान । सुदृढ़ कवच । (पुं०) [नितरां वाति गच्छति अत्र, नि√वा+क्त] आश्रयस्थल, घर ।

निवाप—(पुं०) [नि√वप् + घञ्] बीज, अनाज जो बीज के काम में आवे । पितरों के उद्देश्य से या उनके नाम पर किसी वस्तु का दान । दान । अन्न ।

निवार—(पुं०) **निवारण**-(न०) [नि √वृ√णिच्+अच्] [नि √वृ+णिच् +ल्युट्] रोक । हटाने या रोकने की क्रिया । वर्जन, बाधा ।

निवास—(पुं०) [नि√वस् + घञ्] रहने का भाव या कार्य । रहना । घर, डेरा, विश्रामस्थल । रात बिताना । पोशाक का कोई वस्त्र ।

निवासन—(न०) [निवास+णिच् + ल्युट्] आवासस्थल । टिकाव । समययापन ।

निवासिन्—(वि०) [नि√वस् +णिनि] रहने वाला, निवास करने वाला । वस्त्र पहनने वाला । (पुं०) बाशिन्दा, रहने, बसने वाला ।

निविड—(वि०) [नि √विड्+क] घना, घनघोर । गहरा । दृढ़, अभेद्य । मोटा । बड़ा । चपटी या टेढ़ी नाक का ।

निविरीस—(वि०) [नि + विरीसच्] घना, सघन; 'उरुनिविरीसनितम्बभारखेदि' शि० ७.२० । । भद्दा । टेढ़ी नाक वाला ।

निर्विशेष—(वि०) [निवृत्तः विशेषो यस्मात्] अभिन्न, एकसा, समान, सदृश । (पुं०) [प्रा० स] भिन्नता का अभाव ।

निविष्ट—(वि०) [नि√विश् + क्त] स्थित, ठहरा हुआ । एकाग्र । लपेटा हुआ । घुसा या घुसाया हुआ । बाँधा हुआ । दीक्षा दिया हुआ । सुव्यवस्थित, क्रम में रखा हुआ ।—**पण्य**-(न०) बोरों में कसा हुआ माल ।

निवीत—(न०) [नि√व्ये +क्त, सम्प्रसारण] जनेऊ को गले में माला की तरह डालना । इस प्रकार पहना हुआ जनेऊ । ओढ़ने का वस्त्र, ओढ़नी, प्रावरण ।

निवृत—(वि०) [नि√वृ+क्त] घिरा हुआ । लपेटा हुआ (न०) ओढ़नी, उत्तरीय ।

निवृति—(स्त्री०) [नि√वृ + क्तिन्] घेरा । आवरण ।

निवृत्त—[नि√वृत्+क्त] लौटा हुआ, वापिस आया हुआ । गया हुआ । रुका हुआ । बंद किया हुआ । विरक्त । असदाचरण के लिये पश्चात्ताप किये हुए । समाप्त किया हुआ । (न०) प्रत्यागमन, वापिसी । राग-रहित मन ।—**आत्मन्** (**निवृत्तात्मन्**)-(वि०) विषयों से विरत । (पुं०) ऋषि । विष्णु ।—**कारण**-(वि०) बिना किसी अन्य हेतु या उद्देश्य का । (पुं०) धर्मात्मा मनुष्य, वह मनुष्य जिसमें सांसारिक वासनाएँ न रह गयी हों ।—**मांस**-(वि०) जिसने मांस खाना त्याग दिया हो; 'निवृत्तमांसस्तु जनकः' उत्त० ४ ।—**राग**-(वि०) जितेन्द्रिय, जिसने अपनी इन्द्रियों को वश में कर लिया हो ।—**वृत्ति**-(वि०) किसी पेशे को त्यागने वाला ।—**हृदय**

–(त्रि०) वह जो अपने मन में पश्चात्ताप करता हो, मन में पछताने वाला ।

निवृत्ति—(स्त्री०) [नि√वृत् + क्तिन्] वापिसी । अन्तर्धान । समाप्ति । विरक्ति । त्याग । सांसारिक झंझटों से विपरीत । आराम । परमानन्द । संन्यास । रोक ।

निवेदन—(न०) [नि√विद्+णिच्+ल्युट्] किसी से नम्रतापूर्वक कुछ कहना । प्रार्थना । सौंपना । उत्सर्ग करना । प्रतिनिधि । भेंट ।

निवेद्य—(त्रि०) [नि√विद् + ण्यत्] निवेदन करने योग्य, बताने लायक । (न०) किसी देवमूर्ति के लिये भोग, नैवेद्य ।

निवेश—(पुं०) [नि√विश्+घञ्] प्रवेश । शिविर, डेरा । पड़ाव; 'सेनानिवेशं तुमुलं चकार' र ५.४६ । घर । धरोहर । विवाह । प्रतिलिपि । सैनिक छावनी । सजावट ।

निवेशन—(न०) [नि√विश् + ल्युट्] प्रविष्ट होना । पड़ाव । विवाह । लिखापढ़ी । घर । तम्बू । कस्बा या नगर । घोंसला । [नि √विश्+णिच्+ल्युट्] प्रविष्ट करने की क्रिया ।

निवेष्ट—(पुं०)[नि√वेष्ट् + घञ्] आवरण । ढँकने का कपड़ा ।

निवेष्टन—(न०) [नि√वेष्ट् + ल्युट्] ढकने की क्रिया ।

√निश्—भ्वा० पर० अक० एकाग्र होना । नेशति, नेशिष्यति, अनेशीत् ।

निश—(स्त्री०) [नितरां श्यति तनूकरोति व्यापारान्, नि√शो+क, पृषो० साधुः] रात । हल्दी ।

निशमन—(न०) [नि√शम् + णिच् +ल्युट्] चितवन । दृश्य । श्रवण । जानकारी ।

निशरण, निशारण—(न०) [नि√शृ+ ल्युट्] [नि√शृ + णिच्+ल्युट्] वध, हत्या ।

निशा—(स्त्री०) [निश्+टाप्] रात । हल्दी ।—**अट** (निशाट), —**अटन** (निशाटन)–(पुं०) उल्लू । राक्षस । भूत । —**अतिक्रम** (निशातिक्रम),—**अत्यय** (निशात्यय), —**अन्त** (निशान्त),—**अवसान** (निशावसान)–(पुं०) रात का बीत जाना । प्रातःकाल ।—**अन्ध** (निशान्ध) –(त्रि०) जो रात को अंधा हो जाय ।—**अधीश** (निशाधीश),—**ईश** (निशेश), —**नाथ**, —**पति**, —**मणि**–(पुं०),—**रत्न**–(न०) चन्द्रमा ।—**अर्धकाल** (निशार्धकाल)–(पुं०) रात्रि का प्रथम भाग ।—**आख्या** (निशाख्या),—**आह्वा** (निशाह्वा) –(स्त्री०) हल्दी ।—**आदि** (निशादि)–(पुं०)सन्ध्याकाल, सूर्यास्त के बाद का समय । —**उत्सर्ग** (निशोत्सर्ग)–(पुं०) रात्रि का अवसान, प्रातःकाल ।—**कर**–(पुं०)चन्द्रमा । मुर्गा । कपूर ।—**गृह**–(न०) सोने का कमरा । —**चर**–(त्रि०) [स्त्री०—चरा,—चरी] –रात को इधर-उधर घूमने वाला । (पुं०) राक्षस । शिव जी की उपाधि । गीदड़, शृगाल । उल्लू । सर्प । चकवाक । चोर । —**०पति**–(पुं०) शिव । रावण ।—**चरी** –(स्त्री०)राक्षसी । वह स्त्री जो पूर्व निश्चय के अनुसार रात में अपने प्रेमी से मिलने जाय । वेश्या, कुलटा स्त्री ।—**चर्मन्**–(पुं०) अंधकार ।—**जल**–(न०) ओस ।—**दर्शिन्** –(पुं०) उल्लू ।—**पुष्प**–(न०) कुमुद ।—**बल**–(पुं०) मेष, वृष, मिथुन, कर्क, धन और मकर राशियाँ जो रात को विशेष सबल मानी जाती हैं ।—**मुख**–(न०) रात का आरम्भ । —**मृग**–(पुं०) शृगाल, गीदड़ ।—**वन** –(पुं०) सन ।—**विहार**–(पुं०) राक्षस । —**वेदिन्**–(पुं०) मुर्गा ।—**हस**–(पुं०) कुमुद ।

निशात—(त्रि०) [नि√शो + क्त] पैनाया हुआ, तीक्ष्ण । चिकनाया हुआ । चमकीला ।

निशान—(न०) [नि√शो + ल्युट्] सान पर चढ़ाना, तेज करना।

निशान्त—(न०) [निशाम्यते विश्रम्यते अस्मिन्, नि√शम्+क्त] गृह। (पुं०) [निशायाः अन्तः] रात्रि का अंत, प्रातःकाल। भवन; 'तस्याः स राजोपपदं निशान्तम्' र० १६.४०। (वि०) [नितरां शान्तः] बहुत शान्त।

निशामन—(न०) [नि√शम् + णिच् +ल्युट्] चितवन। दृश्य। श्रवण। बार-बार अवलोकन। परछाँही, प्रतिबिम्ब।

निशित—(वि०) [नि√शो + क्त] तेज, सान पर चढ़ा हुआ। (न०) लोहा।

निशीथ—(पुं०) [नितरां शेरते यत्र, नि √शी+थक्] अर्धरात्रि, आधी रात। सोने का समय, रात। भागवत के अनुसार रात्रि का एक कल्पित पुत्र।

निशीथिनी, निशीथ्या—(स्त्री०) [निशीथ +इनि—ङीप्][निशीथ+यत्—टाप्] रात्रि।

निशुम्भ—(पुं०) [नि√शुम्भ् + घञ्] हत्या, वध। भग्नकरण। (धनुष को) झुकाने की क्रिया। एक दैत्य का नाम जिसका वध दुर्गा देवी ने किया था।—**मथनी,—मर्दिनी**—(स्त्री०) दुर्गा देवी का उपाधि।

निशुम्भन—(न०) [नि√शुम्भ् + ल्युट्] मारण, वध करना।

निश्चय—(पुं०) [निर्√चि+अच्] संदेह-रहित ज्ञान। दृढ़ विचार। विश्वास। निर्णय, फैसला। जाँच। अर्थालंकार का एक भेद।

निश्चल—(वि०) [निर् √चल्+अच्] अचल, स्थिर, अटल। जो तनिक भी न हिले-डुले। अपरिवर्तनीय जो कभी बदले नहीं।—**अङ्ग (निश्चलाङ्ग)**—(वि०) मजबूत शरीरवाला। (पुं०) सारस-विशेष। चट्टान या या पर्वत।

निश्चला—(स्त्री०) [निश्चल+टाप्] शालपर्णी। पृथ्वी।

निश्चायक—(वि०) [निर्√चि + ण्वुल्] वह जो किसी बात का निर्णय या निश्चय करता हो, निर्णायक।

निश्चारक—(न०) [निर्√चर् + ण्वुल्] प्रवाहिका नामक रोग (यह अतिसार का एक भेद है।) वायु। स्वच्छन्दता।

निश्चित—(वि०) [निर् √चि+क्त] जिसके बारे में निश्चय किया जा चुका है, निश्चय किया हुआ। जो इधर-उधर न हो सके, जिसमें किसी प्रकार का हेरफेर न हो सके, पक्का।

निश्चिति—(स्त्री०) [निर्√चि + क्तिन्] निश्चय या निर्णय करने की क्रिया।

निश्रम—(पुं०) [नि√श्रम् + घञ्] अध्यवसाय, किसी कार्य को करते-करते न घबड़ाना या ऊबना।

निश्रयणी, निश्रेणि, निश्रेणी—(स्त्री०) [नि√श्रि + ल्युट्—ङीप्] [नि√श्रि +नि, वैकल्पिक ङीप्] सीढ़ी, नसैनी।

निश्वास—(पुं०) [नि√श्वस् +घञ्] साँस लेना। आह भरना।

निषङ्ग—(पुं०) [नि√सञ्ज् +घञ्] आलिङ्गन। ऐक्य, मेल। तरकस, तूणीर। तलवार।—**धि**—(पुं०) तलवार की म्यान।

निषङ्गथि—(पुं०) [नि √सञ्ज्+अथिन्] आलिङ्गन। धनुर्धर, तीरंदाज। सारथी। रथ। कंधा। घास।

निषङ्गिन्—(वि०) [निषङ्ग +इनि] आलिङ्गन करने वाला। तरकस रखने वाला। खड्ग धारण करने वाला। (पुं०) तीरन्दाज, धनुर्धर। तरकस। धृतराष्ट्र का एक पुत्र।

निषण्ण—(वि०) [नि√सद् + क्त] बैठा हुआ। जिसको सहारा मिला हुआ हो। उदास।

निषण्णक—(न०) [निषण्ण+कन्] आसन ।

निषद्या—(स्त्री०) [नि√सद् + क्यप्] छोटी खाट । व्यापारी की दूकान या गद्दी । मंडी, हाट; 'केचिद् गुर्वीमित्य संवन्निषद्याम्' शि० ६=१५ ।

निषद्वर—(पुं०) [नि√सद् + ष्वरच्] कीचड़, कामदेव ।

निषद्वरी—(स्त्री०) [निषद्वर+ङीप्] रात्रि ।

निषध—(पुं०) [नि√सद्+अच्, पृषो० साधुः] एक प्राचीन देश जहाँ के राजा नल थे । नल के भाई कुश के पौत्र । जनमेजय के पुत्र । कुरु का एक पुत्र । निषाद स्वर । एक पर्वत जो हेमकूट से उत्तर माना गया है । (वि०) कठिन ।

निषाद—(पुं०) [नि √सद्+घञ्] भारत की एक अति प्राचीन वन्य जाति । इस जाति के लोगों में चिड़ीमार, माहीगीर आदि निन्दित कर्म करने वाले हुआ करते है । वर्णसङ्कर जाति-विशेष, चाण्डाल, विशेष कर ब्राह्मण पिता और शूद्रा माता से उत्पन्न सन्तति । सङ्गीत के सप्त स्वरों में अन्तिम और ऊँचा स्वर । इसका सरगम में संक्षिप्त रूप "नि" है ।

निषादित—(वि०) [नि √सद्+णिच्+क्त] बैठाया हुआ । पीड़ित ।

निषादिन्—[नि√सद्+णिनि] नीचे बैठा हुआ या लेटा हुआ । (पुं०) महावत ।

निषिद्ध—(वि०) [नि√सिध्+क्त] वर्जित, मना किया हुआ ।

निषिद्धि—(स्त्री०) [नि √सिध्+क्तिन्] निषेध, मनाई ।

निषीदन—(न०) [नि√सद् + ल्युट्] बैठना ।

निषूदन—(न०) [नि√सूद्+णिच्+ल्युट्] वध, हत्या । (पुं०) [नि√सूद् + णिच् +ल्यु] वध करने वाला ।

निषेक—(पुं०) [नि√सिच् + घञ्] छिड़काव । चुआव । बहाव । वीर्यपात । गर्भाधान । सिञ्चन । धोने के लिये जल । वीर्यपात सम्बन्धी अपवित्रता । मैला पानी ।

निषेध—(पुं०) [नि√सिध् + घञ्] वर्जन, मनाही, रोक । अस्वीकृति । निषेधवाची नियम । नियम का अपवाद ।

निषेवक—(वि०) [नि√सेव् + ण्वुल्] अभ्यास करने वाला । अनुसरण करने वाला । भक्त । अनुरागी । रहने वाला । वास करने वाला । उपभोग करने वाला ।

निषेवण—(न०), **निषेवा**—(स्त्री०) [नि √सेव्+ल्युट्] [नि√सेव् + अ—टाप्] सेवा, चाकरी । पूजा । अभ्यास । अभिनय । अनुराग । आसक्ति । निवास । परिचय । उपयोग ।

√निष्क्—[चु० आत्म० सक०] तौलना । नापना । निष्कयते, निष्कयिष्यते, अनिनिष्कत ।

निष्क—(न०, पुं०) [√निष्क् +अच्] सोने का सिक्का जो एक कर्ष या १६ माशे का होता है । १०८ या १०५ सुवर्णों की एक प्राचीन तौल । कंठा या हार जो सुवर्ण का बना हुआ हो । सुवर्ण । (पुं०) चाण्डाल ।

निष्कर्ष—(पुं०) [निस् √कृष्+घञ्] निचोड़, सार । नाप । निश्चय । नतीजा । निःसारण ।

निष्कर्षण—(न०) [निस् √कृष्+ल्युट्] खिंचाव, खींच कर निकालना । (नतीजा) निकालना ।

निष्कालन—(न०) [निर् √कल् + णिच् +ल्युट्] (पशुओं को) हँका देना । मार डालना, वध करना ।

निष्काश, निष्कास—(पुं०) [निस् √ काश् (स्) +घञ्] बाहर करना, निकालना । बाहर निकालने का रास्ता । बरसाती, मुख्द्वार के आगे पटा हुआ या छायादार स्थान । प्रभात । अन्तर्धान, लोप ।

निष्कासित—(वि०) [निस्√कस्+णिच्+क्त]

निकाला हुआ, बाहर किया हुआ। रखा हुआ, स्थापित। नियत किया हुआ। खोला हुआ। भर्त्सना किया हुआ।

निष्कासिनी—(स्त्री०) [निस्√कस् + णिनि –ङीप्] नौकरानी जो अपने मालिक के काबू में न हो।

निष्कुट—(पुं०) [निस्√कुट् +क] घर से लगा हुआ बगीचा, नजरबाग। खेत। अंतःपुर, जनानखाना। द्वार। वृक्ष का कोटर। क्यारी। एक पर्वत।

निष्कुटि, निष्कुटी—(स्त्री०) [निस्√कुट् +इन्] [निष्कुटि+ङीष्] बड़ी इलायची।

निष्कुषित—(वि०) [निस् √कुष् + क्त] निष्कासित। छीला हुआ। जिसकी खाल अलग कर दी गयी हो। जहाँ-तहाँ काटा या खाया हुआ (जैसे—कीट-निष्कुषित)। खुरेद कर निकाला हुआ।

निष्कुह—(पुं०) [निस्√कुह् + अच्] वृक्ष-कोटर।

निष्कृत—(वि०) [निस्√कृ + क्त] मुक्त, छूटा हुआ। निश्चित। हटाया हुआ। क्षमा किया हुआ। (न०) प्रायश्चित्त।

निष्कृति—(स्त्री०) [निस्√कृ + क्तिन्] प्रायश्चित्त। छुटकारा। उपकार या ऋण से उद्धार: 'न तस्य निष्कृतिः शक्या कर्तुं वर्षशतैरपि' मनु०। स्थानान्तर-करण। नीरोगता-प्राप्ति, आराम होना। बचाव। बचावखाली। बुरा चाल-चलन।

निष्कृष्ट—(वि०) [निस्√कृष् +क्त] निचोड़ कर निकाला हुआ, सारभूत।

निष्कोष—(पुं०), —**निष्कोषण**—(न०) [निस् √कुष् + घञ्] [निस्√कुष्+ल्युट्] छीलना। भूसी निकालना, फाड़कर खुरेद कर या खींच कर बाहर निकालना।

निष्कोषणक—(न०) [निस्√कुष्+ल्यु+कन्] दाँत साफ करने का तिनका या खरका।

निष्क्रम—(पुं०) [निस्√क्रम् + घञ्] बाहर निकालना। वैदिक हिन्दुओं में बच्चे का एक संस्कार (इसमें बालक जब चार मास का होता है तब उसे बाहर लाकर सूर्य का दर्शन कराते हैं)। जातिभ्रष्टता, पतित होना। मन की वृत्ति।

निष्क्रमण—(न०) [निस्√क्रम्+ल्युट्] दे० 'निष्क्रम': 'चतुर्थे मासि कर्तव्यं शिशोर्निष्क्रमणं गृहात्' मनु०।

निष्क्रमणिका—(स्त्री०) [निष्क्रमण + ङीप् +कन्–टाप्, ह्रस्व]

निष्क्रय—(पुं०) [निस्√क्री + अच्] छुटकारा, उद्धार। वह द्रव्य जो छुड़ाने के हेतु दिया जाय। पुरस्कार, इनाम। भाड़ा, मजदूरी। वापसी। बदला, विनिमय।

निष्क्रयण—(न०) [निस्√क्री +ल्युट्] दे० 'निष्क्रय'।

निष्टपन—(न०) [निस् √तप्+ल्युट्] जलाना।

निष्ठ—(वि०) [नितरां तिष्ठति, नि√स्था +क] स्थित, ठहरा हुआ। तत्पर। लगा हुआ। जिसमें किसी के प्रति भक्ति या श्रद्धा हो। पटु, निपुण। विश्वासी।

निष्ठा—(स्त्री०) [नि√स्था + अङ–टाप्] स्थिति, ठहराव। भक्ति। श्रद्धा। प्रगाढ़ अनुराग। विश्वास। उत्कृष्टता। निपुणता। निष्पत्ति, समाप्ति। किसी रूपक या नाटक का दुःखान्त। नाश। निश्चय। याचना। कष्ट।

निष्ठान—[नि√स्था+ल्युट्] चटनी, मसाला।

निष्ठीव, निष्ठेव—(न०, पुं०) **निष्ठीवन, निष्ठेवन, निष्ठीवित**—(न०) [√ष्ठिव् +घञ्, दीर्घ] [नि√ष्ठिव् घञ्, दीर्घाभावे गुणः] [नि√ष्ठिव्+ल्युट्, दीर्घ, पक्षे दीर्घाभावः] [नि√ष्ठिव्+क्त, दीर्घ] थूक। एक दवा जिसके सेवन से रोगी का कफ निकलने लगता है।

निष्ठुर—(वि०) [नि√स्था+उरच्] कठिन, कड़ा, सख्त। तीव्र, तीक्ष्ण, उग्र। नृशंस, कड़े जी का, संगदिल। बेलगाम, निर्लज्ज, बड़बोला। (न०) परुष वचन, कड़ी बात। अश्लील वचन।

निष्ठ्यूत—(वि०) [नि√ष्ठिव्+क्त, ऊठ्] थूका हुआ, उगला हुआ; 'निष्ठ्यूतश्चरणोपभोगसुलभो लाक्षारसः केनचित्' श० ४। फेंका हुआ। बाहर निकाला हुआ। उक्त, कहा हुआ।

निष्ठ्यूति—(स्त्री०) [नि√ष्ठिव्+क्तिन्] थूक, खखार।

निष्ण, निष्णात—(वि०) [नि√स्ना+क] [नि√स्ना+क्त] कुशल, निपुण, पटु। विशेषज्ञ, किसी विषय का बहुत अच्छा ज्ञाता या जानकार। पारङ्गत। सुचारु रूप से सम्पन्न किया हुआ। श्रेष्ठतर।

निष्पक्व—(वि०) [निस्√पच्+क्त] काढ़ा निकाला हुआ, उबाला हुआ। भली भाँति रांधा हुआ।

निष्पतन—(न०) [निस्√पत्+ल्युट्] झपट कर निकलना, शीघ्र बाहर आना।

निष्पत्ति—(स्त्री०) [निस्√पद्+क्तिन्] जन्म, पैदावार, पक्वावस्था, परिपाक। समाप्ति, अन्त। निपटेरा।

निष्पन्न—(वि०) [निस्√पद्+क्त] उत्पन्न हुआ। पूर्ण। समाप्त। सिद्ध। तत्पर।

निष्पवन—(न०) [निस्√पू+ल्युट्] फटकना।

निष्पादन—(न०) [निस्√पद्+णिच्+ल्युट्] पूर्णता। समाप्ति। सिद्धि। निष्पत्ति करना, सम्पादन करना। पूर्ण करना।

निष्पाव—(पुं०) [निस्√पू+घञ्] फटक कर अनाज को साफ करना। सूप से निकली हुई हवा। राजमाष। सफेद सेम।

निष्पीडित—(वि०) [निस्√पीड्+क्त] निचोड़ा हुआ; 'निष्पीडितेन्दुकरकन्दलजो नु सेकः' उ० ३-११।

निष्पेष, निष्पेषण—(पुं०, न०) [निस्√पिष्+घञ्] [निस्√पिष्+ल्युट्] मिलाकर रगड़ना, पीसना। कूटना, चूर्ण करना।

निष्प्रवाण, निष्प्रवाणि—(न०) [निस्-प्र√वे+ल्युट्] (निर्गता प्रवाणी तन्तुवायशलाका यस्मात् यस्य वा, 'निष्प्रवाणिश्च' इति नि० साधुः] कोरा वस्त्र।

निस्—(अव्य०) [√निस्+क्विप्] एक उपसर्ग जिससे इन अर्थों का बोध होता है—निषेध। सफलता। निश्चय। पूर्णता। उपभोग। तरण। भग्न करण। बाहर। दूर। नहीं। बिना। (निस् और निर् ये दोनों उपसर्ग समानार्थक हैं)। —**कण्टक** (**निष्कण्टक**)-(वि०) काँटों से रहित। शत्रुओं से शून्य। भय से रहित। —**कन्द** (**निष्कन्द**) कन्द से रहित। —**कपट** (**निष्कपट**)-(वि०) कपट या छल से रहित। —**कम्प** (**निष्कम्प**)-(वि०) गतिहीन। स्थिर, दृढ़, अटल। —**करुण** (**निष्करुण**)-(वि०) करुणाशून्य, क्रूर। —**कल** (**निष्कल**)-(वि०) बिना हिस्सों का समूचा, छोटा किया हुआ। नपुंसक। अङ्गभङ्ग किया हुआ, विकलाङ्ग। (पुं०) आधार। ब्रह्म का नाम। **कला** (**निष्कला**), —**कली** (**निष्कली**)-(स्त्री०) बूढ़ी औरत जिसके बालबच्चे होने की सम्भावना न रही हो अथवा जिसका स्त्रीधर्म होना बन्द हो गया हो। —**कलङ्क** (**निष्कलङ्क**)-(वि०) निर्दोष, कलङ्क से रहित। —**कषाय** (**निष्कषाय**)-(वि०) मैल से रहित, साफ। दुष्ट वासनाओं से शून्य। —**काम** (**निष्काम**)-(वि०) कामनाओं या इच्छाओं से रहित। समस्त सांसारिक वासनाओं से रहित। —**कारण** (**निष्कारण**)-(वि०) कारण-रहित, बिना किसी कारण का। बिना किसी कारण के होने वाला,

अहेतुक ।—**कालक** (**निष्कालक**)-(पुं०) वह प्रायश्चित्ती जिसका मुण्डन हुआ हो, और जो शरीर में घी लगाये हो ।—**कालिक** (**निष्कालिक**)-(वि०) जिसका जीवनकाल समाप्त होने पर हो, जिसके जीवन के दिन इने-गिने रह गये हों । अजेय ।—**किञ्चन** (**निष्किञ्चन**)-(वि०) जिसके पास एक पैसा भी न हो, धनहीन, निर्धन ।—**कुल** (**निष्कुल**)-(वि०) जिसके कुल में कोई न रह गया हो ।—**कुलीन** (**निष्कुलीन**)-(वि०) नीच ।—**कूट** (**निष्कूट**)-(वि०) जो कपटी न हो । ईमानदार, सच्चा ।—**कृप** (**निष्कृप**)-(वि०) जिसमें दया न हो, निर्दय, निष्ठुर । तेज ।—**कैवल्य** (**निष्कैवल्य**)-(वि०) नितान्त, निपट, बिल्कुल । मोक्ष-हीन ।—**क्रिय** (**निष्क्रिय**)-(वि०) कोई काम-धाम न करने वाला, जो कुछ भी न करे-धरे । विहित कर्मों को न करने वाला । जिसमें या जिससे कार्य या व्यापार न हो, क्रिया-रहित ।—०**प्रतिरोध**-(पुं०) शासक की ओर से होने वाले दमन का प्रतिकार न कर उसकी अनुचित आज्ञा या कानून का उल्लंघन (पैसिव रेज़िस्टेंस) ।—**क्षत्र** (**निःक्षत्र**),—**क्षत्रिय** (**निःक्षत्रिय**)-(वि०) क्षत्रिय जाति से रहित या शून्य ।—**क्षेप** (**निःक्षेप**)-(पुं०) फेंकने, डालने, रखने, भेजने, चलाने, त्यागने या अर्पण करने की क्रिया या भाव । धरोहर, अमानत । धरोहर रखना । मरम्मत या सफाई करने के लिये किसी कारीगर को कोई वस्तु देना ।—**चक्षुस्** (**निश्चक्षुस्**)-(वि०) अंधा, नेत्रहीन ।—**चत्वारिंश** (**निश्चत्वारिंश**)-(वि०) जिसमें चालीस की संख्या न हो ।—**चिन्त** (**निश्चिन्त**)-चिन्ता से रहित, बेफिक्र । अविवेकी, विचारहीन ।—**चेतन** (**निश्चेतन**)-मूर्छित, बेहोश ।—**चेतस्** (**निश्चेतस्**)-(वि०) वह जिसके होश-हवास दुरुस्त न हों ।—**चेष्ट** (**निश्चेष्ट**)-(वि०) चेष्टा-रहित । अचेत, मूर्छित । अचल, स्थिर ।—**छन्दस्** (**निश्छन्दस्**)-(वि०) वेदों का अध्ययन न करने वाला ।—**छिद्र** (**निश्छिद्र**) बिना किसी दोष या त्रुटि का । बिना छेदों का । अबाधित, बेरोकटोक ।—**तन्तु**-(वि०) सन्तानहीन ।—**तन्द्र**-(वि०) जो काहिल या सुस्त न हो, ताजा । तन्दुरुस्त, भला-चंगा ।—**तमस्क**,—**तिमिर**-(वि०) अंधकार-शून्य । पाप या दुराचरण से रहित ।—**तर्क्य** (वि०) विचार से परे ।—**तल**-(वि०) गोल, मण्डलाकार या गोलाकार; 'मुक्ताकलापस्य च निस्तलस्य' कु० १.४२ । गतिशील । जिसमें तली न हो ।—**तुष**-(वि०) जिसमें भूसी न हो । साफ किया हुआ ।—**तेजस्**-(वि०) तेजोहीन, जिसमें तेज का अभाव हो । कान्तिहीन, निष्प्रभ ।—**त्रप**-(वि०) बेहया, निर्लज्ज ।—**त्रिंश**-(वि०) तीस से ऊपर । बेरहम, नृशंस, क्रूर । (पुं०) तलवार ।—**त्रैगुण्य**-(वि०) सत्त्व, रजस् और तमस् से रहित ।—**पङ्क** (**निष्पङ्क**)-(वि०) जिसमें कीचड़ आदि न लगा हो, स्वच्छ ।—**पताक** (**निष्पताक**)-(वि०) जिसके पास झंडा-झंडी न हो ।—**पतिसुता** (**निष्पतिसुता**)-(वि०) वह स्त्री जिसका न पति हो, न पुत्र हो ।—**पत्र** (**निष्पत्र**)-(वि०) पत्तों से रहित । पक्ष-रहित, जिसके पक्ष न हों ।—**पद** (**निष्पद**)-(वि०) बिना पैरों का । (न०) यान जो बिना पहियों के चले ।—**परिकर** (**निष्परिकर**)-(वि०) बिना तैयारी का, बिना सरंजाम का ।—**परिग्रह** (**निष्परि-ग्रह**)-(वि०) जिसने विवाह न किया हो, अविवाहित । जिसके पास कुछ न हो । दान आदि न लेने वाला । जो विषयादि में आसक्त न हो । (पुं०) कंथा, पादुका आदि पदार्थों से रहित साधु ।—**परिच्छद** (**निष्परिच्छद**)-(वि०) बिना कपड़े का । जिसके पिछलगुए

न हो, जिसके अनुचर न हो ।—**परीक्ष** (**निष्परीक्ष**)–(वि०) जो भली भांति परीक्षित न किया गया हो, जिसकी अच्छी तरह से जाँच-पड़ताल न की गयी हो ।—**परीहार** (**निष्परीहार**)–(वि०) जिसका परिहार न हो । जो चेतावनी की परवाह न करे ।—**पर्यन्त** (**निष्पर्यन्त**),—**पार** (**निष्पार**)–(वि०)–असीम, सीमारहित, बेहद ।—**पाप** (**निष्पाप**)–(वि०) पापशून्य, निरपराध । साफ, शुद्ध ।—**पुत्र** (**निष्पुत्र**)–(वि०) पुत्रहीन ।—**पुरुष** (**निष्पुरुष**)–(वि०) बेऔलाद । पुत्रसन्तानरहित । पुंल्लिङ्ग नहीं, स्त्रीलिङ्ग, नपुंसक लिङ्ग । (पुं०) हिजड़ा । भीरु, डरपोक ।—**पुलाक** (**निष्पुलाक**)–(वि०) भूसी निकाला हुआ, बिना भूसी का ।—**पौरुष** (**निष्पौरुष**)–(वि०) पौरुषहीन, जिसमें पुरुषत्व न हो ।—**प्रकम्प** (**निष्प्रकम्प**)–(वि०) कंपनरहित, अचल, स्थिर । (पुं०) चौदहवें मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक ।—**प्रकारक** (**निष्प्रकारक**)–(वि०) विवरण-रहित । वैशिष्ट्य से रहित । निर्विकल्पक, जिसमें ज्ञाता और ज्ञेय का भेद नहीं रह जाता, दोनों एक हो जाते हैं।—**प्रकाश** (**निष्प्रकाश**)–(वि०) प्रकाशरहित, अँधेरा ।—**प्रचार** (**निष्प्रचार**)–(वि०) न हिलने-डुलने वाला, एक ही स्थान पर रहने वाला । एकाग्र ।—**प्रतिकार**,—**प्रतीकार** (**निष्प्रति(ती)कार**),—**प्रतिक्रिय** (**निष्प्रतिक्रिय**)–(वि०) जिसका प्रतीकार न किया जा सके, असाध्य । अबाधित, बेरोकटोक ।—**प्रतिघ** (**निष्प्रतिघ**)–(वि०) बेरोकटोक, अबाधित ।—**प्रतिद्वन्द्व** (**निष्प्रतिद्वन्द्व**)–(वि०) अजातशत्रु, जिसका कोई विरोधी न हो । बेजोड़ ।—**प्रतिभ** (**निष्प्रतिभ**)–(वि०) प्रतिभाहीन, जिसमें चमक न हो । जिसमें प्रतिभा का अभाव हो, जो हाजिरजवाब या प्रत्युत्पन्नमति न हो । विरक्त, उदासीन ।—**प्रतिभान** (**निष्प्रतिभान**)–(वि०) भीरु, डरपोक ।—**प्रतीप** (**निष्प्रतीप**)–(वि०) सामने देखने वाला । पीछे न मुड़ने वाला ।—**प्रत्यूह** (**निष्प्रत्यूह**)–(वि०) निर्विघ्न, अबाधित, बेरोकटोक ।—**प्रपञ्च** (**निष्प्रपञ्च**)–(वि०) जो प्रपञ्ची या छली न हो, ईमानदार ।—**प्रभ** (**निष्प्रभ या निःप्रभ**)–(वि०) जिसमें प्राभ या चमक न हो । धूमिल । उदास । अस्पष्ट । अन्धकारमय ।—**प्रमाणक** (**निष्प्रमाणक**)–(वि०) बिना आधार या प्रमाण का ।—**प्रयोजन** (**निष्प्रयोजन**)–(वि०) बिना प्रयोजन का । निष्कारण । निरर्थक । अनावश्यक । (क्रि० वि०) वृथा, बिना किसी मतलब के ।—**प्राण** (**निष्प्राण**)–(वि०) मृत, मरा हुआ ।—**फल** (**निष्फल**)–(वि०) जिसका कोई फल न हो, फलहीन । (आलं०) असफल, नाकामयाब । निरर्थक, व्यर्थ । बाँझ, जिसमें फल न लगे । अर्थशून्य । बीज-रहित, नपुंसक ।—**फला** (**निष्फला**)–(स्त्री०),—**फली** (**निष्फली**)–(स्त्री०) स्त्री जिसकी उम्र गर्भ धारण करने योग्य न रही हो ।—**फेन** (**निष्फेन**)–(वि०) फेनरहित ।—**शब्द** (**निःशब्द**)–(वि०) जो किसी प्रकार का शब्द न करे । शब्दरहित, जहाँ किसी प्रकार का शब्द न होता हो; "**निःशब्दं** रोदितुमारेभे" ।—**शलाक** (**निःशलाक**)–(वि०) एकांत, निर्जन; "अरण्ये निःशलाके वा मंत्रयेदविभावितः ।" —**शेष** (**निःशेष**)–(वि०) जिसमें कुछ बच न जाय, सारा, समूचा । जिसमें कुछ करने को न रह गया हो, पूर्ण, समाप्त ।—**शोध्य** (**निःशोध्य**)–(वि०) जिसका परिमार्जन करना आवश्यक न हो । साफ, स्वच्छ ।—**संशय** (**निःसंशय**)–(वि०) जिसमें किसी प्रकार का संदेह न हो, संदेहरहित । निश्चित ।—**सङ्ग** (**निःसङ्ग**)–(वि०) संगरहित, विषया-

नुरागशून्य । एकाकी । निर्लिप्त । निष्काम । —संज्ञ (निःसंज्ञ)–(वि०) बेहोश, मूर्च्छित । —सत्त्व (निःसत्त्व)–(वि०) स्फूर्ति-हीन, निर्बल । नपुंसक । नीच, श्रोछा, कमीना । अस्तित्वहीन । प्राणधारियों से रहित ।—सन्तति (निःसन्तति),—सन्तान (निः-सन्तान)–(वि०) बे-श्रौलाद, जिसके कोई सन्तान न हो ।—सन्दिग्ध (निःसन्दिग्ध), —सन्देह (निःसन्देह)–(वि०) दे० 'निःसंशय' ।—सन्धि (निःसन्धि, निस्सन्धि)–(वि०) जिसमें ऐसी कोई सन्धि या गांठ न हो जो दिखलायी पड़े, सघन ।—सपत्न (निःसपत्न)–(वि०) जिसका कोई शत्रु या प्रतिद्वन्द्वी न हो । जो सर्वथा एक ही का हो। श्रवातवान् ।—समम् (निस्समम्) (अव्य०) बिना ऋतु के, ठीक समय पर नहीं । दुष्टता से ।—संपात (निःसंपात)–(वि०) मार्ग न देने वाला, जिसमें मार्ग अवरुद्ध हो जाय । (पुं०) अर्द्ध-रात्रि का अन्धकार, आधी रात की अँधियारी, घनान्धकार ।—संबाध (निःसंबाध)–(वि०) सङ्कीर्ण नहीं, प्रशस्त, विस्तृत ।—सीम (निःसीम),—सीमन् (निःसीमन्) (वि०) जो नापा न जा सके, सीमारहित; 'अहह महतां निःसीमानश्चरित्रविभूतयः' भर्तृ० २.३५ ।— स्नेह (निःस्नेह)–(वि०) शुष्क । तटस्थ, उदासीन । जिससे कोई प्यार न करता हो, जिसकी कोई देखरेख न रखता हो ।—स्पन्द (निःस्पन्द)–(वि०) गतिहीन । —स्पृह (निःस्पृह)–कामनाशून्य । लापर-वाह । सन्तुष्ट । सांसारिक बंधनों से मुक्त । —स्व (निःस्व)–(वि०) निर्धन, गरीब ।—स्वाद (निःस्वाद)–(वि०) स्वादरहित, बिना स्वाद का, फीका ।

निसर्ग—(पुं०) [नि√सृज् + घञ्] प्रकृति, स्वभाव । स्वरूप, आकृति । देना । दान । मलमूत्र-त्याग । अधिकार-त्याग । रचना । सृष्टि ।—आयुस् (निसर्गायुस्)–(न०) आयु निकालने की एक प्रकार की गणना (ज्यो०) ।—ज,—सिद्ध–(वि०) स्वाभाविक, सहज ।—भिन्न–(वि०) स्वभाव से पृथक् । —विनीत–(वि०) स्वभाव से विवेकी । स्वभाव से सदाचारी ।

निसार—(पुं०) [नि√सृ + घञ्] समूह । सोनापाठा नामक वृक्ष ।

निसूदन—(न०) [नि√सूद् + ल्युट्] मारना, वध करना । (वि०) [नि√सूद् +ल्यु] मारने वाला, वध करने वाला ।

निसृष्ट—(वि०) [नि √सृज् +क्त] सौंपा हुआ । त्यागा हुआ । निकाला हुआ । बिदा किया हुआ । आज्ञा दिया हुआ । बीच में पड़ा हुआ, मध्यस्थ । दिया हुआ, प्रदत्त । (न०) एक दिन की मजदूरी, दैनिक भृति (कौ०) ।—अर्थ (निसृष्टार्थ)–(वि०) वह जिसे किसी विषय का प्रबन्ध सौंपा गया हो । (पुं०) तीन प्रकार के दूतों में से वह दूत जो उभय पक्ष की बातों को समझ कर स्वयं उत्तर दे ले और कार्य निष्पन्न कर ले । धन के आय-व्यय तथा कृषि और वाणिज्य की निगरानी के लिये नियुक्त किया जाने वाला कर्मचारी । स्वामी के कार्य को लगन से करने तथा अपने पौरुष को प्रकट करने वाला धीर वीर दृढ़मति पुरुष ।—दूतिका, —दूती–(स्त्री०) वह दूती जो नायक और नायिका के मनोरथ को समझ कर अपनी बुद्धि से कार्य सिद्ध करे ।

निस्तरण—(न०) [निस्√तृ + ल्युट्] निस्तार, छुटकारा, उद्धार । पार जाने की क्रिया । उपाय ।

निस्तर्हण—(न०) [निस्√तृह्+ल्युट्] वध, हत्या ।

निस्तार—(पुं०) [निस्√तृ + घञ्] पार होने की क्रिया । पिंड छुड़ाने की क्रिया, छुटकारा । मोक्ष; 'संसार तव निस्तार-

पदवी न दवाग्नेर्भट्टि० १.६१ । ऋण से छुटकारा । उपाय ।

निस्तीर्ण—(वि०) [निस्√तॄ + क्त] छूटा हुआ, मुक्त । जो तै या पार कर चुका हो ।

निस्तोद—(पुं०) [निस्√तुद् + घञ्] चुभने की-सी तीव्र व्यथा, बहुत अधिक पीड़ा ।

निस्पन्द, निःस्पन्द—(पुं०) [नि √स्पन्द्+घञ् अस्य षत्वं न] कम्पन, गति, धड़कन ।

निस्यन्द, निष्यन्द—(पुं०) [नि √स्यन्द् +घञ्, षत्व विकल्प से] चूना, टपकना, बहना । रस, बहाव; 'हिमाद्रिनिष्यन्द इवावतीर्णः' र० १४.३ ।

निस्यन्दिन्—(वि०) [नि√स्यन्द्+णिनि] टपकने वाला, बहने वाला ।

निस्रव, निस्राव—(पुं०) [नि √स्रु+अप्] [नि√स्रु+घञ्] चूना, बहना, अपक्षरण । भात का माँड ।

निस्वन, निस्वान—(पुं०) [नि√ स्वन् +अप्] [नि√स्वन्+घञ्] शब्द, आवाज । बाण की सरसराहट । कोलाहल ।

निहत—(वि०) [नि √हन्+क्त] मारा हुआ । नष्ट किया हुआ । मढ़ा हुआ । संलग्न ।

निहनन—(न०) [नि√हन्+ल्युट्] वध, हत्या ।

निहव—(पुं०) [नि√ह्वे+अप्, संप्रसारण] आह्वान, बुलाना ।

निहार—(पुं०) [नि√हृ+घञ्] कुहरा । पाला । ओस ।

निहिंसन—(न०) [नि√हिंस् +ल्युट्] मार डालना, वध करना ।

निहित—(वि०) [नि√धा + क्त] स्थापित, रखा हुआ । बीच में घुसेड़ा हुआ । भण्डार में जमा किया हुआ । गम्भीर स्वर से कहा हुआ । पकड़ा हुआ । सौंपा हुआ ।

निहीन—(वि०) [नितरां हीनः, प्रा० स०] कमीना, नीच । (पुं०) नीच मनुष्य, कमीना आदमी ।

निह्नव—(पुं०) [नि√ह्नु+ अप्] छिपाव, दुराव । अस्वीकृति । रहस्य । अविश्वास । सन्देह । दुष्टता । प्रायश्चित्त । बहाना ।

निह्नुति—(स्त्री०) [नि√ह्नु+क्तिन्] किसी बात की जानकारी को छिपा डालना । कपटाचरण । छिपाव, दुराव ।

√नी—भ्वा० उभ० सक० ले जाना । मार्ग प्रदर्शन करना । पहुँचाना । लेना । निर्देश देना । शासन करना । नयति-ते, नेष्यति-ते, अनैषीत्-अनेष्ट ।

नी—(पुं०) [√नी + क्विप्] नेता, पथ-प्रदर्शक । जैसे सेनानी, अग्रणी, ग्रामणी आदि ।

नीका—(स्त्री०) खेतों की सिंचाई के लिये पानी का बंबा या नहर ।

नीकाश—(वि०) [नि √काश्+अच्, दीर्घ] सदृश, समान, तुल्य; 'विकासिकासननीकाशं' शि० ४.३५ ।

नीच—(वि०) [निकृष्टाम् ईं शोभां चिनोति, नि—ई √चि+ड] जो जाति, गुण, कर्म आदि में घट कर हो, अधम, निकृष्ट । खल, दुष्ट, खोटा । बौना (उच्च का उलटा) । (पुं०) नीच मनुष्य । चोर नामक गंधद्रव्य । कुंडली में किसी ग्रह का अपने उच्च स्थान से सातवाँ स्थान (ज्यो०) ।—**गा**—(स्त्री०) नदी ।—**भोज्य**-(पुं०) पलाण्डु, प्याज ।—**योनिन्**-(वि०) अकुलीन, निम्न जाति में उत्पन्न ।—**वज्र**-(पुं०), नि०) वैक्रान्त नामक रत्न ।

नीचका, नीचिका, नीचिकी—(स्त्री०) [निकृष्टाम् ईं शोभां चकति प्रतिहन्ति, नि —ई √चक्+अच्+टाप्] सर्वोत्तम गौ ।

नीचकिन्—(पुं०) [नि—ई √चक् +इनि] किसी वस्तु का सर्वोच्च भाग । बैल का सिर । अच्छी गौ का स्वामी ।

नीचा—(स्त्री०) [नि —ई√चि+डा] दे० 'नीचका' ।

नीचकंस् नीचंस्—(अव्य०) [नीचैंस् इत्यस्य टेः प्रागकच्] [नि √चि+डैस्, दीर्घ] नीचा, तले, भीतर । झुककर प्रणाम । कोमलता । मन्द स्वर से । छोटा । बौना । (पुं०) एक पर्वत का नाम ।—**गति**–(स्त्री०) धीमा कदम, मंद चाल ।—**मुख**–(वि०) नीचे मुख किये हुए ।

नीड—(पुं०, न०) [नितराम् ईड्यते स्तूयते, नि √ईड्+घञ्] पक्षी का घोंसला । शय्या । पलंग । माँद । किसी गाड़ी का अंदरूनी हिस्सा । रहने का स्थान, विश्राम-स्थल ।—**उद्भव** (**नीडोद्भव**), —**ज**–(पुं०) पक्षी ।

नीडक—(पुं०) [नीडे कायति प्रकाशते, नीड √कै+क] पक्षी । [नीड+कन्] घोंसला ।

नीत—(वि०) [√नी+क्त)] लाया गया, पहुँचाया गया । पाया गया, प्राप्त । व्यय किया गया । बीता हुआ । भली भाँति आचरित । किया हुआ । (न०) धन, संपत्ति । गल्ला ।

नीति—(स्त्री०) [नीयन्ते संलभ्यन्ते उपायादयः ऐहिकामुष्मिकार्था वा अनया, √नी +क्तिन्] ले जाने की क्रिया । पथप्रदर्शन । चालचलन । शील । युक्ति, उपाय । राज्य की रक्षा के लिये काम में लायी जाने वाली युक्ति, राजाओं की चाल जो वे राज्य की प्राप्ति अथवा रक्षा के लिये चलते हैं । आचार-पद्धति, लोक या समाज के कल्याण के लिये निर्दिष्ट किया हुआ आचार-व्यवहार । प्राप्ति । दान । सम्बन्ध । सहारा ।—**कुशल**,—**ज्ञ**, —**निपुण**, —**विद्**–(वि०) नीति जानने वाला ।—**घोष**–(पुं०) बृहस्पति की गाड़ी का नाम ।—**दोष**–(पुं०) नीति सम्बन्धी त्रुटि या भूल ।—**बीज**–(न०) षड्यंत्र का उद्गमस्थल ।—**व्यतिक्रम**–(पुं०) राजनीतिक, सामाजिक नीति के नियमों को तोड़ना । आचार-पद्धति में भूल, नीति में भूल ।—**शास्त्र**–(न०) वह शास्त्र जिसमें देश, काल और पात्र के अनुरूप व्यवहार करने के नियमों का निरूपण किया गया हो । वह शास्त्र जिसमें मनुष्य-समाज के हित के लिये देश, काल और पात्र के अनुसार आचार, व्यवहार, प्रबन्ध एवं शासन का विधान हो ।

नीध्र, नीव्र—(न०) [नि √धृ+क, पूर्वदीर्घ] [नि √वृ+क, पूर्वदीर्घ] छप्पर या छत की ओलती । वन । पहिये का व्यास या चक्कर । चन्द्रमा । रेवती नक्षत्र ।

नीप—(पुं०) [√नी+प, आ० गुणाभाव] पहाड़ की तलहटी । कदम्ब वृक्ष । अशोक वृक्ष; 'नीपः प्रदीपायते' मृ० ५.१४ । रस्सी का फन्दा । राजवंश-विशेष । (न०) कदम्ब पुष्प ।

नीर—(न०) [नयति प्रापयति स्थानात् स्थानान्तरम्, √नी+रक्] जल, पानी । रस । अर्क । कोई द्रव पदार्थ ।—**ज**–(न०) कमल । मोती । उशीर । कुट । ऊदबिलाव । (पुं०) शिव ।—**द**–(पुं०) बादल ।—**धि**, —**निधि** –(पुं०) समुद्र ।—**रुह्**–(न०) कमल ।

नीराजन, नीराजना—(स्त्री०) [निर्√राज्+ल्युट्] [निर्√राज्+णिच्+युच् वा नीरस्य शान्त्युदकस्य अजनं क्षेपो यत्र सा नीराजना] अस्त्रों का मार्जन । यह एक सैनिक एवं धार्मिक कृत्य था, जिसे राजा लोग, शत्रु पर चढ़ाई करने के पूर्व आश्विन मास में किया करते थे । देवता को दीप आदि दिखाने की पूजन-विधि, आरती ।

√नील्—भ्वा० पर० अक० वर्ण या रंग होना । नीलति, नीलिष्यति, अनीलीत् ।

नील—(पुं०) [स्त्री०—**नीला**, **नीली**] [√नील् +अच्] नीला रंग; 'नीलस्निग्धः श्रयति शिखरं नूतनस्तोयवाहः' उत्त० १.३३ । एक पौधा जिससे नीला रंग तैयार किया जाता है । एक पर्वत । राम की सेना का एक वानर जिसने नल के साथ समुद्र में पुल बाँधा

था। कुबेर की एक निधि। कलंक। बड़ का पेड़। इन्द्रनील मणि। यमराज का एक विग्रह। एक तरह का पक्षी, मैना। काले-नीले रंग का बैल। काचलवण। तूतिया। सुरमा। एक विष। तालीसपत्र। चिह्न। नृत्य के १०८ करणों में से एक। एक मात्रिक वृत्त। एक दिग्गज। सौ खरब की संख्या, १,००,००,००,००,००,०००। (वि०) [नील+अच्] नीला। नील से रंगा हुआ।—**अङ्ग** (**नीलाङ्ग**)–(पुं०) सारस पक्षी।—**अञ्जन** (**नीलाञ्जन**) (न०) सुर्मा।—**अञ्जना** (**नीलाञ्जना**),—**अञ्जसा** (**नीलाञ्जसा**)–(स्त्री०) बिजली, विद्युत्।—**अब्ज** (**नीलाब्ज**),—**अम्बुज** (**नीलाम्बुज**),—**अम्बुजन्मन्** (**नीलाम्बुजन्मन्**),—**उत्पल** (**नीलोत्पल**)–(न०) नील कमल।—**अभ्र** (**नीलाभ्र**)–(पुं०) काली घटा।—**अम्बर** (**नीलाम्बर**)–नीलवस्त्र पहिने हुए। (पुं०) राक्षस। शनिग्रह। बलराम।—**अरुण** (**नीलारुण**)–(पुं०) तड़का, भोर।—**अश्मन्** (**नीलाश्मन्**)–(पुं०) नीलम रत्न।—**कण्ठ**–(पुं०) मयूर। शिव। नीलकण्ठ पक्षी। जलकुक्कुट विशेष। खञ्जन पक्षी। गौरैया। भ्रमर।—**केशी**–(स्त्री०) नील का पौधा।—**ग्रीव**–(पुं०) शिव।—**छद**–(पुं०) छुहारे का पेड़। गरुड़।—**तरु**–(पुं०) ताड़वृक्ष।—**ताल**–(पुं०) तमाल वृक्ष।—**पङ्क**–(पुं०, न०) अन्धकार।—**पटल**–(न०) काला परदा या काला उघार। अंधे की आँख पर का काला जाला।—**पिच्छ**–(पुं०) बाज पक्षी।—**पुष्पिका**–(स्त्री०) नील का पौधा। अलसी।—**भ**–(पुं०) चन्द्रमा। बादल। भ्रमर।—**मणि**,—**रत्न**–(न०) नीलम।—**मीलिका**–(पुं०) जुगनू, खद्योत।—**मृत्तिका**–(स्त्री०) पुष्पकसीस। काली मिट्टी।—**राजि**–(स्त्री०) कालिमा की रेखा। घनान्धकार।—**लोहित**–(पुं०) शिव।—**लोहिता**–(स्त्री०) जामुन की एक जाति। पार्वती।—**वल्ली**–(स्त्री०) परगाछा।—**वृन्तक**–(न०) रुई।—**वृष**–(पुं०) एक प्रकार का वृष (सांड़) जिसका उत्सर्ग प्रशस्त माना जाता है (इसके मुंह, सिर, पूंछ और खुर का रंग श्वेत होता है और शेष शरीर का लाल)।—**वृषा**–(स्त्री०) बैंगन।—**शिग्रु**,–(पुं०) सहजन का पेड़।—**सन्ध्या**–(स्त्री०) कृष्णापराजिता।—**सार**–(पुं०) तेंदू का पेड़।

नीलक—(न०) [नील+कन्] काला लवण। नीला इस्पात लोहा। नीलाथोथा, तूतिया। (पुं०) काले रंग का घोड़ा।

नीलङ्गु, नीलाङ्गु—(पुं०) [नि√लङ्ग्+कु, पूर्वदीर्घ] [नि√लङ्ग्+कु, धातूप-सर्गयोः दीर्घः] कीड़ा। एक तरह का छोटा कीड़ा। एक तरह की मक्खी। गीदड़। भँवरा। फूल।

नीलिका—(स्त्री०) [नील+क–टाप्, इत्व] नील का पौधा। नीला सिंदुवार। एक नेत्र-रोग। वायु और पित्त के प्रकोप से होने वाला एक क्षुद्र रोग जिसमें मुंह पर और अन्य अंगों में छोटे-छोटे काले दाने निकल आते हैं। न्यवारी।

नीलिमन्—(पुं०) [नील+इमनिच्] नीला-पन। कालापन।

नीली—(स्त्री०) [नील+अच्–ङीष्] नील का पौधा। नीले रंग की मक्खी। रोग विशेष।—**राग**–(वि०) अनुराग में दृढ़। (पुं०) प्रेम जो नील के रंग की तरह पक्का हो या जो कभी न छूटे, अटल प्रेम। स्थायी मित्र।—**सन्धान**–(न०) नील का खमीर।

√**नीव्**—भ्वा० पर० सक० स्थूल होना। नीवति, नीविष्यति, अनीवीत्।

नीवर—(पुं०) [नयति आत्मानं यत्रकुत्रचित् देहयात्रानिष्पादनाय, √नी+ष्वरच्] अव-

मान, व्यापार। व्यवसायी। संन्यासी। कीचड़। जल।

नीवाक—(पुं०) [नि√वच्+घञ् कुत्व, दीर्घ] महँगी के समय अनाज की बढ़ी हुई माँग। अकाल, दुर्भिक्ष।

नीवार—(पुं०) [नि √वृ+घञ् दीर्घ] वे चावल जो बिना जोते-बोये अपने आप उत्पन्न हों, पसाई के चावल, तिन्नी के चावल, मुन्यन्न।

नीवि, नीवी—(स्त्री०) [नि √व्ये + इञ्, यलोप, पूर्वदीर्घ] [नीवि+ङीप्] कमर में लपेटी हुई धोती की वह गाँठ जिसे स्त्रियाँ पेट के नीचे सूत की डोरी से या यों ही बाँधती हैं। नारा, इजारबंद; 'प्रस्थानभिन्नां न बबन्ध नीविं' र० ७.९। पूँजी। होड़। वस्त्र (वेद)।

नीवृत्—(पुं०) [नि √वृ+क्विप्, पूर्व-दीर्घ] कोई भी आबाद स्थान।

नीव्र—(वि०) दे० 'नीध्र'।

नीशार—(पुं०) [नि √शृ +घञ्, पूर्वदीर्घ] ओढ़ने का गरम कपड़ा, आवरण (जैसे—कंबल आदि)। मसहरी। कनात।

नीहार—(पुं०) [नि √हृ+घञ्, पूर्वदीर्घ] कुहरा। हिम, बरफ। मलमूत्र। खाली करना, निष्कासन।

नु—(अव्य०) [√नुद्+डु] सन्देह और अनिश्चितता-सूचक अव्यय; 'स्वप्नो नु माया नु मतिभ्रमो नु' श०। यह सम्भावना और अवश्य के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है।

√नु—अ० पर० सक० प्रशंसा करना, सराहना करना, तारीफ करना। नौति, नविष्यति, अनावीत्।

नुत—(वि०) [√नु+क्त] जिसकी स्तुति की गई हो, स्तुत। जिसकी प्रशंसा की गई हो, प्रशंसित।

नुति—(स्त्री०) [√नु+क्तिन्] प्रशंसा, तारीफ, बिरदावली। पूजन-अर्चा।

√नुद्—तु० उभ० सक० धक्का देना। हाँकना। ठेलना। उत्तेजित करना। बतलाना। आग्रह करना। हटाना। भगा देना। फेंक देना। भेजना। नुदति—ते, नोत्स्यति—ते, अनौत्सीत्—अनुत्त।

नूतन, नूत्न—(वि०) [नव एव, नव+तनप्, नू आदेश] [नव+त्न, नू आदेश] नया। ताजा। वर्तमान। तत्क्षण का। हाल का, आधुनिक। अद्भुत। विलक्षण।

नूनम्—(अव्य०) [नु√ऊन्+अम्] तर्क, ऊहापोह। अर्थनिश्चय। अवधारण। स्मरण। वाक्यपूरण। उत्प्रेक्षा।

नूपुर—(न०, पुं०) [√नू+क्विप्, नू√पुर+क] पैर का एक गहना, घुँघरू। (ना०) नगण का प्रथम भेद।

नृ—(पु०) [√नी+ऋन्, डित्] नर, मनुष्य। मनुष्य जाति। शतरंज की गोट या गट्टी। सूर्य-घड़ी की कील। पुंल्लिङ्ग शब्द। —अस्थिमालिन् (नृस्थिमालिन्)—(पुं०) शिव जी। —कपाल–(न०) मनुष्य की खोपड़ी। —केसरिन्–(पुं०) नृसिंहावतार। —जल–(न०) मनुष्य का मूत्र। —दुर्ग–(पुं०) वह दुर्ग (किला) जिसके चारों ओर सेना हो। —देव–(पुं०) राजा। —धर्मन्–(पुं०) कुबेर। —पशु–(पुं०) मनुष्य-रूपी पशु, पशुतुल्य मनुष्य। महामूर्ख मनुष्य। —मिथुन–(न०) मिथुन राशि। —मेध–(पुं०) नरमेध यज्ञ, वह यज्ञ जिसमें मनुष्य का बलिदान किया जाता है। —यज्ञ–(पुं०) पञ्च-यज्ञों में से एक। —लोक–(पुं०) भूलोक, मर्त्यलोक। —वराह–(पुं०) विष्णु का वराह अवतार। —वाहन–(पुं०) कुबेर। —वेष्टन–(पुं०) शिव। —शृङ्ग–(न०) असम्भावना के उदाहरण के लिये मनुष्य के सींग। —सिंह–(पुं०) मनुष्यों में शेर या उत्तम पुरुष। विष्णु भगवान् का चौथा नृसिंहावतार। —सेन–(न०), —सेना–(स्त्री०) मनुष्यों की

फौज ।—**सोम**-(पुं०) आदर्श मनुष्य, बड़ा आदमी ।

नृग—(पुं०) वैवस्वत मनु के पुत्र महाराज नृग जिन्हें एक ब्राह्मण के शाप से गिरगिट होना पड़ा था ।

√**नृत्**—दि० पर० अक० नाचना । रंगमञ्च पर अभिनय करना । हावभाव दर्शाना । नृत्यति, नर्तिष्यति—नर्त्स्यति, अनर्तीत् ।

नृति—(स्त्री०) [√नृत् + इन्] नाच, नृत्य ।

नृत्त, नृत्य—(न०) [√नृत् + क्त][√नृत् √क्यप्] ताल, लय और रस के अनुसार विलासपूर्वक अंगों का विक्षेप करने का एक व्यापार, ताल, लय, तथा रस के अनुसार किया जाने वाला नाच (इसके दो प्रधान भेद हैं—(१) तांडव और (२) लास्य ।—**प्रिय**-(पुं०) शिव ।—**शाला**-(स्त्री०) नाचघर । —**स्थान**-(न०) रंगभूमि, अभिनय स्थान ।

नृप, नृपति, नृपाल—(पुं०) [नॄन् नरान् पाति, रक्षति, नृ√पा+क] [नृणां पतिः, ष० त०] [नॄन् पालयति, नृ√पाल्+णिच् +अण्] राजा ।—**अध्वर** (**नृपाध्वर**)-(पुं०) राजसूय यज्ञ ।—**आत्मज**-(**नृपात्मज**)-(पुं०) राजकुमार ।—**आभीर**(**नृपाभीर**,—**मान**-(न०) वह सङ्गीत जो राजा के भोजन करते समय होता है ।—**गृह**-(न०) राजप्रासाद, महल ।—**नीति**-(स्त्री०) राजनीति ।—**प्रिय**-(पुं०) आम का वृक्ष । —**लक्ष्मन्**,—**लिङ्ग**-(न०) राजचिह्न, विशेष कर सफेद छाता ।—**वल्लभा**—(स्त्री०) रानी । केतकी ।—**शासन**-(न०) राजाज्ञा । —**सभ**-(न०),—**सभा**-(स्त्री०) राजाओं का समारोह ।

नृशंस—(वि०) [नृ√शंस् + अण्] मनुष्यों को सताने वाला, क्रूर, अत्याचारी ।

√**नॄ**,—क्र्या० पर० सक० ले जाना । नृणाति, नरिष्यति—नरीष्यति, अनारीत् ।

नेजक—(पुं०) [√निज् + ण्वुल्] धोबी ।

नेजन—(न०) [√निज् + ल्युट्] धुलाई, सफाई ।

नेतृ—(पुं०) [√नी+तृच्] दलविशेष या जनता को किसी ओर ले चलने वाला, नायक, अगुआ, सरदार । पहुँचाने वाला । स्वामी, मालिक । काम को निभाने वाला । प्रवर्तक । किसी काव्य या चरितनायक । नीम का पेड़ । विष्णु ।

नेत्र—(न०) [नीयते वा नयति अनेन,√नी +ष्ट्रन्] अगुआपन, सञ्चालन । आँख । मथानी की रस्सी । महीन रेशमी कपड़ा । वृक्ष की जड़ । वाद्ययंत्र, बाजा । गाड़ी, सवारी । दो की संख्या । नेता । नक्षत्र, तारा ।—**अञ्जन** (**नेत्राञ्जन**)-(न०) आँखों का सुर्मा ।—**अन्त** (**नेत्रान्त**)-(पुं०) आँख के कोने का बाहरी भाग ।—**अम्बु** (**नेत्राम्बु**),—**अम्भस्** (**नेत्राम्भस्**)-(न०) आँसू ।—**आमय** (**नेत्रामय**)-(पुं०) आँख का रोग ।—**उत्सव** (**नेत्रोत्सव**)-(पुं०) कोई भी मनोहर वस्तु ।—**उपम** (**नेत्रोपम**)-(न०) बादाम ।—**कनीनिका**-(स्त्री०) आँख की पुतली ।—**कोष**-(पुं०) आँख का ढेला । फूल की कली ।—**गोचर**-(वि०) दृष्टि के भीतर ।—**छद**-(पुं०) पलक ।—**ज**,—**जल**,-(न०) आँसू ।—**पर्यन्त**-(पुं०) आँख का कोया या कोना ।—**पिण्ड**-(पुं०) नेत्रगोलक, आँख का डेला । बिल्ली ।—**बन्ध**-(पुं०) आँखमिचौनी ।—**भाव**-(पुं०) नृत्य में केवल आँखों की क्रिया द्वारा सुख-दुःख आदि अभिव्यक्त करने का भाव ।—**मल**-(न०) आँख का कीचड़ ।—**योनि**-(पुं०) इन्द्र । चन्द्रमा ।—**रञ्जन**-(न०) सुर्मा ।—**रोमन्**-(न०) आँख की बिरनी या बरौनी ।—**वस्त्र**-(न०) पलक । घूँघट-विशेष ।—**वारि**-(न०) आँसू ।—**विट्**—(न०) आँख का कीचड़ ।—**विष**—

(पुं०) एक दिव्य सर्प जिसकी आँखों में विष होता है ।—**स्तम्भ**–(पुं०) आँखों का पथरा जाना, आँखों का हिलना-डुलना बंद हो जाना ।

नेत्रिक—(न०) [नेत्र+ठन्] एक प्रकार की छोटी पिचकारी । पाइप, नली । कलछी ।

नेत्री—(स्त्री०) [नेत्र+ङीप्] नदी । धमनी । स्त्रीनेता । लक्ष्मी देवी ।

√नेद्—भ्वा० पर० सक० निंदा करना । अक० समीप होना । नेदति, नेदिष्यति, अनेदीत् ।

नेदिष्ठ—(वि०) [अयम् एषाम् अतिशयेन अन्तिकः, अन्तिक+इष्ठन्, नेदादेश] निकटतम । अधिकतम । निपुण । (पुं०) अंकोट वृक्ष ।

नेदीयस्—(वि०)[स्त्री०—**नेदीयसी**] [अयम् अनयोः अतिशयेन अन्तिकः, अन्तिक +ईयसुन्, अन्तिकस्य नेदादेशः] निकटतर ।

नेप—(पुं०) [√नी + प, गुण] घर का पुरोहित ।

नेपथ्य—(न०) [√नी+विच्, नेः नेता तस्य पथ्यम्] शृङ्गार, भूषण । पोशाक, परिच्छद । अभिनयकर्त्ता की पोशाक । वह स्थान जहाँ नाटक के पात्र अपना रूप भरते हैं । पर्दे के पीछे का स्थान ।—**विधान**–(न०) उस स्थान की व्यवस्था जहाँ अभिनयकर्त्ता अपना रूप भरते हैं ।

नेपाल—(न०) ताँबा । (पुं०) भारतवर्ष के उत्तर में स्थित स्वनामख्यात राज्य-विशेष । नेपाल देश का अधिवासी ।—**जा**,—**जाता**–(स्त्री०) मैनसिल ।—**निम्ब**–(पुं०) एक प्रकार का चिरायता ।—**मूलक**–(न०) हस्तिकंद जैसा एक मूल, नेवार ।

नेपालिका—(स्त्री०) [नेपाल+ङीप्+कन्–टाप्, ह्रस्व] मैनसिल ।

नेपाली—(स्त्री०) [नेपाल+ङीप्] जंगली छुहारे का वृक्ष या उसके फल ।

नेम—(वि०) [√नी+मन्] [कर्ता बहुवचन—**नेमे**, —**नेमाः**] आधा । (पुं०) हिस्सा । समय । समय की अवधि । ऋतु । सीमा । अहाता । दीवाल की नींव । छल, कपट । सन्ध्या, शाम । गढ़ा । जड़ ।

नेमि, नेमी—(स्त्री०) [√नी+मि] [नेमि+ङीष्] पहिये का ढाँचा या घेरा; 'चक्रनेमिक्रमेण' मे० १०६ । घेरा । कुएँ की जगत । जमघट । चरखी । कोर, किनारा । (पुं०) तिनिश वृक्ष । वज्र । एक जिन ।

√नेष्–भ्वा० आत्म० सक० जाना । नेषते, नेषिष्यते, अनेषिष्ट ।

नेष्टु—(पुं०)[√निष्+तुन्] मिट्टी का ढेला ।

नेष्टृ—(पुं०) [√नी+तृन्, नि० साधुः] सोमयाग में यज्ञ कराने वाले, जिनकी संख्या १६ होती है ।

नैःश्रेयस, नैःश्रेयसिक—(वि०) [स्त्री०—**नैःश्रेयसी—नैःश्रेयसिकी**] [निःश्रेयस+अण्] [निःश्रेयस+ठक्] कल्याणकारक । मोक्ष देने वाला ।

नैःस्व, नैःस्व्य—(न०) [निःस्व+अण्] [निःस्व+ष्यञ्] धनहीनता, गरीबी, मुहताजी ।

नैक—(वि०) [न एकः, नञर्थशब्देन सह सुपेति समासः] एक से अधिक, बहुत, बहुसंख्यक । (पुं०) विष्णु ।—**आत्मन्** (**नैकात्मन्**),—**रूप**,—**शृङ्ग**–(पुं०) परब्रह्म ।—**चर**–(वि०) झुंड या जमात में चलने वाला, जो अकेले न चले, समूहचारी (जैसे हाथी, हिरन, भेड़ आदि) ।—**भावाश्रय**–(वि०) अस्थिर, चंचल । परिवर्तनशील । —**भेद**–(वि०) विभिन्न प्रकार का ।

नैकटिक—(वि०) [स्त्री०—**नैकटिकी**] [निकट+ठक्] पड़ोस का, पास का, समीपस्थ । (पुं०) भिक्षुक, संन्यासी ।

नैकट्य—(न०) [निकट+ष्यञ्] सामीप्य, समीपता ।

नैकषेय—(पुं०) [निकषाया अपत्यम्, निकषा+ढक्] राक्षस, दानव ।

नैकृतिक—(वि०) [स्त्री०—**नैकृतिकी**] [निकृत्या परापकारेण जीवति वा निकृत्या निष्ठुरतया चरति, निकृति+ठक्] दूसरे का अपकार करके अपना स्वार्थ सिद्ध करने वाला । दूसरे को हानि पहुँचा कर अपनी जीविका चलाने वाला । बेईमान । कमीना, नीच । दुष्ट । रूखा ।

नैगम—(वि०) [स्त्री०—**नैगमी**] [निगम +अण्] वेद सम्बन्धी । (पुं०) वेद का व्याख्याकार या टीकाकार । उपनिषद् । युक्ति, उपाय । विवेकपूर्ण आचरण । नागरिक । व्यापारी ।

नैघण्टुक—(न०) [निघण्टुः पर्यायशब्दम् अधिकृत्य प्रवृत्तम्, निघण्टु+ठक्]वेद का शब्दकोष, वैदिक शब्दों का कोष । शब्दकोश ।

नैचिक—(न०) [नीचा भवति, नीचा +ठक्] बैल का सिर ।

नैचिकी—(स्त्री०) [नीचैश्चरति, नीचस् +ठक् या निचि: गोकर्णशिरोदेश:, तत: स्वार्थे कन् प्रशस्त निचिकम् यस्याः, निचिक +अण्—ङीप्] अच्छी गाय ।

नैतल—(न०) [नितल + अण्] नरक । पाताल ।—**सद्मन्**–(पुं०) यम ।

नैत्य—(वि०) [नित्य+अण्] नित्य होने या किया जाने वाला । नित्य किया जाने वाला । (न०) नित्यकर्म ।

नैत्यक, नैत्यिक—(वि०) [स्त्री०—**नैत्यकी**, —**नैत्यिकी**] [नैत्य+कन्] [नित्य +ठक्] सदैव अनुष्ठेय, नियमित रूप से अनुष्ठेय । अनिवार्य, जो टल न सके ।

नैदाघ—(पुं०) [निदाघ+अण्] ग्रीष्म ऋतु, गर्मी का मौसम । (वि०) निदाघ-संबंधी, ग्रीष्म का ।

नैदान—(पुं०) [निदान + अण्] उत्पत्ति, कारण ।

नैदानिक—(पुं०) [निदान + ठक्] निदान-शास्त्र-विशारद ।

नैदेशिक—(पुं०) [निदेश+ठक्] आज्ञा-पालन करने वाला, नौकर ।

नैपातिक—(वि०) [स्त्री०—**नैपातिकी**] [निपात+ठक्] अकस्मात् या दैवसंयोग से वर्णन करने वाला ।

नैपुण्य—(न०) [निपुण+ष्यञ्] निपुणता, पटुता, चातुर्य । नाज़ुक मामला । सम्पूर्णता ।

नैभृत्य—(न०) [निभृत + ष्यञ्] लाज । सङ्कोच । विनम्रता । रहस्य ।

नैमन्त्रणक—(न०) [निमन्त्रण + अण् +कन्] भोज, दावत ।

नैमय—(पुं०) व्यापारी, व्यवसायी ।

नैमित्तिक—(वि०) [स्त्री०—**नैमित्तिकी**] [निमित्त+ठक्] जो किसी कारण-विशेष वश किया जाय, जो निमित्त या कारण उप-स्थित होने पर या किसी विशेष प्रयोजन की सिद्धि के लिये हो । असाधारण । कभी-कभी होने वाला । (न०) कारण । कभी-कभी होने वाला शास्त्रोक्त कर्म । (पुं०) ज्योतिषी ।

नैमिष—(वि०) [स्त्री०—**नैमिषी**] [निमिष +अण्] एक निमिष या क्षण रहने वाला, क्षणिक । (न०) नैमिषारण्य तीर्थ ।

नैमेय—(पुं०) [नि √मि+यत्+अण्] विनिमय, बदलौवल ।

नैयग्रोध—(न०) [न्यग्रोध + अण्] बरगद का फल ।

नैयत्य—(न०) [नियत+ष्यञ्] नियत होने का भाव । संयम, जितेन्द्रियत्व ।

नैयमिक—(वि०) [स्त्री०—**नैयमिकी**] [नियम+ठक्] नियमित, नियमानुसार होने या किया जाने वाला ।

नैयायिक—(पुं०) [न्याय+ठक्] न्यायशास्त्र का जानने वाला, न्यायवेत्ता ।

नैरन्तर्य—(न०) [निरन्तर+ष्यञ्] निरंतर का भाव, निरंतरत्व, अविच्छिन्नता ।

नैरपेक्ष्य—(न०) [निरपेक्ष+ष्यञ्] निरपेक्षता, तटस्थता, उदासीनता ।

नैरयिक—(पुं०) [निरय+ठक्] नरकवासी, नरक भोगने वाला ।

नैरर्थ्य—(न०) [निरर्थ+ष्यञ्] निरर्थकता, ऊटपटाँग, वाहियातपन ।

नैराश्य—(न०) [निराश्+ष्यञ्] ना-उम्मेदी, निराशा का भाव । आशा या इच्छा का अभाव ।

नैरुक्त—(पुं०) [निरुक्त + अण्] निरुक्ति जानने वाला, शब्द-व्युत्पत्ति-तत्त्वज्ञ ।

नैरुज्य—(न०) [नीरुज्+ष्यञ्] स्वास्थ्य, तंदुरुस्ती ।

नैर्ऋत—(पुं०) [निर्ऋति+अण्] राक्षस, दैत्य । दक्षिण-पश्चिम कोण का स्वामी, राहु । मूल नक्षत्र । (वि०) निर्ऋति-संबंधी ।

नैर्ऋती—(स्त्री०) [नैर्ऋत+ङीप्] दुर्गा-देवी । दक्षिण-पश्चिम का कोना, उपदिशा-विशेष ।

नैर्गुण्य—(न०) [निर्गुण+ष्यञ्] निर्गुण होने का भाव, सत्त्व आदि गुणों से रहित होने का भाव, निर्गुणत्व । गुणराहित्य ।

नैर्घृण्य—(न०) [निर्घृण+ष्यञ्] निष्ठुरता, नृशंसता, क्रूरता ।

नैर्मल्य—(न०) [निर्मल+ष्यञ्] सफाई, शुद्धता । निष्कलङ्कता ।

नैर्लज्ज्य—(न०) [निर्लज्ज+ष्यञ्] निर्लज्जता, बेशर्मी ।

नैल्य—(न०) [नील+ष्यञ्] नीलापन ।

नैविड्य—(न०) [निविड+ष्यञ्] घनिष्ठता, घनापन । सामीप्य ।

नैवेद्य—(न०) [निवेदं निवेदनम् अर्हति, निवेद+ष्यञ्] भोज्य पदार्थ जो किसी देवता को अर्पण किया जाय ।

नैश, नैशिक—(वि०) [स्त्री०—**नैशी, नैशिकी**] [निशा+अण्] [निशा + ठञ्] रात सम्बन्धी; 'तमैंस तिमिरमपाकरोति चन्द्रः' श० ६ । रात में दिखलाई पड़ने वाला ।

नैश्चल्य—(न०) [निश्चल+ष्यञ्] निश्चल होने का भाव, स्थिरता ।

नैश्चित्य—(न०) [निश्चित+ष्यञ्] निश्चित होने का भाव, दृढ़ विचार, पक्का इरादा । निश्चित कृत्य या संस्कार ।

नैषध—(पुं०) [निषध+अण्] निषध देश का राजा । यह उपाधि इस देश के राजाओं में से राजा नल को थी । निषध-देश-वासी । [नैषधं नलम् अधिकृत्य कृतो ग्रन्थः, नैषध +अण्] श्रीहर्ष कवि का एक महाकाव्य जिसमें नल की कथा वर्णित है ।

नैषेचनिक—(न०) राज्याभिषेक के समय दिया जाने वाला उपहार ।

नैष्कर्म्य—(न०) [निष्कर्मन्+ष्यञ्] निष्क्रियता । आलस्य, कर्म न करने का भाव । सभी कर्मों का त्याग, आसक्ति और फल की कामना त्याग कर किये जाने वाले कर्म का अनुष्ठान (गीता) ।

नैष्किक—(न०) [स्त्री०—**नैष्किकी**] [निष्क +ठक्] एक निष्क देकर खरीदा हुआ । (पुं०) टकसालघर का व्यवस्थापक ।

नैष्ठिक—(वि०) [स्त्री०—**नैष्ठिकी**] [निष्ठा ठक्] अन्तिम । निर्णीत । निर्दिष्ट । दृढ़ । सर्वोच्च । पूर्णतया परिचित या अवगत । सदैव के लिये त्यागने और शुद्ध रहने का व्रत धारण करने वाला । (पुं०) वह ब्रह्मचारी जिसने आजन्म के लिये ब्रह्मचर्यव्रत धारण किया हो और जो अपने गुरुदेव की सेवा में रहे ।

नैष्ठुर्य—(न०) [निष्ठुर+ष्यञ्] निठुराई, क्रूरता, नृशंसता ।

नैष्ठ्य—(न०) [निष्ठ+ष्यञ्] दृढ़ता । स्थिरता ।

नैसर्गिक—(वि०) [स्त्री०—**नैसर्गिकी**]

[निसर्ग+ठञ्] स्वाभाविक, प्रकृतिजन्य, सहज ।

नैस्त्रिंशिक—(पुं०) [निस्त्रिंश+ठञ्] तलवार-बहादुर, खड्गधारी ।

नो—(अव्य०) [√नह्+डो] नहीं, न ।

नोचेत्—(अव्य०) [द्व० स०] नहीं तो, अन्यथा ।

नोदन—(न०) [√नुद्+ल्युट्] खंडन । प्रेरण, चलाने या हाँकने का काम । बैलों को हाँकने का पैना ।

नोधा—(अव्य०) [नव+धाच्, पृषो० साधुः] नौ प्रकार । नौगुना ।

नौ—(स्त्री०) [नुद्यते अनया, √नुद्+डौ] जहाज, पोत । नौका, नाव, बेड़ा । एक नक्षत्र का नाम ।—**आरोह** (नावारोह)-(पुं०) नाव का यात्री ।—**कर्णधार**-(पुं०) डाँड खेने वाला । माझी ।—**कर्मन्**-(न०) माझी का पेशा ।—**चर**,—**जीविक**-(पुं०) मल्लाह, माझी ।—**तार्य**-(वि०) जहाज या नाव में बैठ कर पार जाने योग्य ।—**दण्ड**-(पुं०) डाँड ।—**यायिन्**-(वि०) नौ या जहाज से जाने वाला (माल या मुसाफिर)।—**वाह**-(पुं०) वह जो जहाज की पतवार पकड़े रहे, कर्णधार, नाविक ।—**व्यसन**-(न०) जहाज का नष्ट होना, जहाज का नाश; 'नौव्यसने विपन्नः' श० ६ ।—**साधन**-(न०) जहाजी बेड़ा, नौसेना, जलसेना ।

नौका—(स्त्री०) [नौ+कन्—टाप्] छोटी नाव ।—**दण्ड**-(वि०) डाँड ।

न्यक्—(अव्य०) [नि √अञ्च्+क्विन्] एक अव्यय जो तिरस्कार, अधःपात, अपमान का पर्यायवाची है ।—**करण**-(न०),—**कार**-(पुं०) नीचा दिखाना । तिरस्कार ।—**भाव** (न्यग्भाव)-(पुं०) नीचता, नीच होने का भाव ।—**भावित** (न्यग्भावित)-(वि०) अपमानित । अप्रधानीकृत ।

न्यक्ष—(वि०) [नियते निकृते वा अक्षिणी यस्य, ब० स०, षच् प्रत्यय] नीच, अपकृष्ट । (न०) सूराख । (पुं०) भैंसा । परशुराम ।

न्यग्रोध—(पुं०) [न्यक् रुणद्धि, न्यक्√रुध्+अच्] वटवृक्ष, बरगद का पेड़ । लंबाई का एक नाप, उतनी लंबाई जितनी कि दोनों हाथों के फैलाने से होती है, पुरसा । विष्णु । शिव । राजा उग्रसेन का एक पुत्र (ह० वं०)। मूसाकानी । मोहनौषधि ।—**परिमण्डला**-(स्त्री०) उत्तमा स्त्री, उत्तमा स्त्री का लक्षण इस प्रकार है:— 'स्तनौ सुकठिनौ यस्या नितम्बे च विशालता । मध्ये क्षीणा भवेद्या सा न्यग्रोधपरिमण्डला ।' अन्यच्च 'दूर्वाकाण्डमिव श्यामा न्यग्रोध-परिमण्डला ।'

न्यङ्कु—(पुं०) [नि √अञ्च्+कु] बारहसिंगा-विशेष । एक मुनि । (वि०) बहुत चलने वाला, अतिगमनशील ।—**भूरुह**-(पुं०) सोनापाठा ।—**सारिणी**-(स्त्री०) बृहती छन्द का एक भेद ।

न्यञ्च्—(वि०) [स्त्री०—नीची] [नि √अञ्च्+क्विन्] नीचे फेंका या मुड़ा हुआ । मुँह के बल पड़ा हुआ । नीच, तुच्छ, कमीना । सुस्त, काहिल । समूचा, समग्र ।

न्यञ्चन—(न०) [नि√अञ्च्+ल्युट्] मोड़, घुमाव । लुकने का स्थान, छिपने की जगह । गुफा ।

न्यय—(पुं०) [नि √इ+अच्] हानि, नाश । बरबादी ।

न्यसन—(न०) [नि √अस्+ल्युट्] धरोहर, न्यास । सौंपना । दे देना ।

न्यस्त—(वि०) [नि√अस्+क्त] नीचे फेंका हुआ । फेंका हुआ । डाला हुआ, रखा हुआ, धरा हुआ । स्थापित किया हुआ । बैठाया या जमाया हुआ । चुन कर सजाया हुआ । धरोहर रखा हुआ, अमानत रखा हुआ । छोड़ा हुआ, त्यागा हुआ ।—**दण्ड**-(वि०) सजा से बरी किया हुआ । (पुं०) संन्यासी ।—**देह**-(पुं०) मृत, मरा हुआ ।—**शस्त्र**-(वि०) वह जिसने

अपने हथियार रख दिये हों। निरस्त्र, जिसके पास अपने बचाव के लिये कुछ भी न हो; 'आनार्यस्य त्रिभुवनगुरोर्न्यस्तशस्त्रस्य शोकात्' वे० ३.१८। जो हानिकारक न हो।

न्याक्य—(न०) [नि √अक्+ण्यत्] भुना हुआ चावल।

न्याद—(पुं०) [नि√अद् + ण] भोजन, आहार।

न्याय—(पुं०) [नियमेन ईयते, नि √इ +घञ्] पद्धति, तौरतरीका, रीति। योग्यता। औचित्य। विधान। ईमानदारी। कानूनी कार्रवाई। कानून के अनुसार सजा। राजनीति। सादृश्य, समानता। प्रसिद्ध नीतिवाक्य। प्रसिद्ध कहावत। उपयुक्त उदाहरण। वैदिक स्वर-विशेष। सार्वजनिक नियम। हिन्दूषड्-दर्शनों में से एक, जिसके आविष्कारकर्ता गौतम ऋषि थे। न्यायशास्त्र। तर्क जिसमें प्रतिज्ञा, हेतु, उदाहरण, उपनय और निगमन ये पाँच अवयव होते हैं। विष्णु।—**अधीश** (**न्यायाधीश**)–(पुं०) विवाद या मामले का निबटारा करने वाला अधिकारी, विचारपति (जज)।—**आलय** (**न्यायालय**)– (पुं०) वह स्थान जहाँ न्यायाधीश विवाद या मामले का निर्णय करता है, अदालत, कचहरी।—**पथ**–(पुं०) मीमांसा शास्त्र। —**वर्तिन्**–(वि०) सदाचारी।—**वादिन्**– (वि०) वह जो ठीक और न्यायोचित बात कहता है।—**वृत्त**–(न०) अच्छा चाल-चलन। सद्गुण।—**शास्त्र**–(न०) न्याय दर्शन। न्याय दर्शन का विज्ञान।—**सारिणी**–(स्त्री०) उचित अथवा उपयुक्त आचरण या व्यवहार।—**सूत्र**–(न०) न्याय शास्त्र के सूत्र।

न्यायतः—(अव्य०) [न्याय+तस्] न्याय से, ईमान से। धर्म और नीति के अनुसार।

न्यायिन्—(वि०) [न्याय +इनि] न्याय के अनुसार आचरण करने वाला, न्याय के पथ पर चलने वाला।

न्याय्य—(वि०) [न्यायादनपेतम्, न्याय +यत्] ठीक, उचित, न्यायसङ्गत; 'न्याय्यात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः' भर्तृ० २.८३।

न्यास—(पुं०) [नि√अस्+घञ्] रखना, स्थापना। उचित स्थान पर रखना। धरोहर, निक्षेप, अमानत; 'प्रत्यर्पितन्यास इवान्तरात्मा' श० ४.२१। अर्पण। त्याग चिह्न। स्वर मंद करना। संन्यास। किसी रोग या बाधा की शान्ति के लिये रोगी या बाधाग्रस्त मनुष्य के एक-एक अंग पर हाथ ले जाकर मंत्र पढ़ने का विधान। पूजा की तांत्रिक पद्धति के अनुसार देवता के भिन्न-भिन्न अंगों का ध्यान करते हुए मंत्र पढ़ कर उन पर विशेष वर्णों का स्थापन। (पूजन में न्यास किया जाता है।)

न्यासिन्—(वि०) [नि√अस् + णिनि] त्यागी। संन्यासी।

न्युङ्ख, न्यूङ्ख—(पुं०) [नि√उङ्ख्+ घञ्, +पक्षे पृषो० साधुः] ऋचाओं का भेद। (वि०) मनोहर, सुन्दर। उचित, ठीक।

√न्युब्—स्वीकार करना। प्रसन्न होना।

√न्युब्ज्—मोड़ना। दबाना। फेंकना।

न्युब्ज—(वि०) [नि√उब्ज् +अच्] नीचे को मोड़ा या झुकाया हुआ। मुँह के बल पड़ा हुआ, औंधा पड़ा हुआ। झुका हुआ, टेढ़ा। कुबड़ा। (न०) पात्र-विशेष जो श्राद्ध-कर्म के काम में आता है। कमरख फल। (पुं०) न्यग्रोधवृक्ष, बरगद का पेड़। कुश-निर्मित स्रुवा।—**खड्ग**–(पुं०) खाँडा, एक प्रकार की तलवार।

न्यून—(वि०) [नि√ऊन्+अच्] जो घट कर हो। कम, थोड़ा। विकृत। हीन। नीच, निकृष्ट।—**अङ्ग** (**न्यूनाङ्ग**)–(वि०) जिसका कोई अंग कम या विकृत हो।—**अधिक**

(न्यूनाधिक)–(वि०) कमबेश । असमान ।
—धी–(वि०) अज्ञान, मूर्ख ।

न्योकस्—(वि०) [नियतम् ओको यस्य] जिसके रहने का स्थान नियत हो । [वैदिक] दिव्यधाम में रहने वाला ।

न्योचनी—(स्त्री०) [नि√उच्+ल्यु–ङीप्] दासी, परिचारिका ।

न्योजस्—(वि०) [नि√उब्ज् + असिच्, बलोप, गुण] टेढ़ा । (आल०) दुष्ट, बदमाश ।

प

प—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का इक्कीसवाँ व्यञ्जन है और अन्तिम वर्ग का प्रथम वर्ण है । इसका उच्चारण ओठ से होता है । अतएव शिक्षाकार ने इसे ओष्ठ्य माना है । इसके उच्चारण में दोनों ओठ मिल जाते हैं; अतएव यह स्पर्शवर्ण है । इसके उच्चारण के लिये विवार, श्वास, घोष और अल्प-प्राण नामक प्रयत्न का व्यवहार किया जाता है । (वि०) [√पा+क] पीने वाला (जैसे "पादप" । रक्षक । शासक । अभिभावक । (यथा गोप, नृप, क्षितिप) ।(पुं०)[√पत् +णिच् वा √पत्+ड] वायु । पत्र, पत्ता । अंडा ।

पक्कण—(पुं०) [पचति श्वादिनिकृष्टमांसम्, √पच्+क्विप्=पक्=शबरः, तस्य कणः कलहशब्दः कोलाहलशब्दो वा यत्र] चांडाल का घर । चांडालों की बस्ती ।

पक्ति—(स्त्री०) [√पच्+क्तिन्] (भोजन) पकाना, पाचन । (फल आदि का) पकना । प्रसिद्धि, यश । पाचन-संस्थान ।—शूल–(न०) अजीर्ण के कारण होने वाला दर्द ।

पक्तृ—(वि०) [√पच्+तृच्] पकाने या पचाने वाला । (पुं०) जठराग्नि । रसोइया ।

पक्त्रिम—(वि०) [√पच्+क्त्रि, मम्] पका हुआ । पकाया हुआ । पकाने से प्राप्त (नमक) ।

पक्व—(वि०) [√पच्+क्त, तस्य वः] पका हुआ । पकाया हुआ । पक्का; 'पक्वेष्टकानामाकर्षण' मृ० ३ । अनुभवी । दृढ़, पुष्ट । सफेद (बाल) । पूर्णतः विकसित ।—अतिसार (पक्वातिसार)–(पुं०) दस्तों की पुरानी बीमारी ।—आधान (पक्वाधान) –(न०),—आशय (पक्वाशय)– (पुं०) पाचन-संस्थान का वह भाग जहाँ आहार पचता है ।—कृत्—(पुं०) नीम । (वि०) पाक-कर्त्ता, पकाने वाला ।—रस–(पुं०) मद्य ।—वारि–(न०) कांजी ।

पक्वश—(पुं०) [=पुक्कश, पृषो० साधुः] एक बर्बर जाति का नाम, चाण्डाल ।

√पक्ष्—चु० पर० सक० लेना, पकड़ना । स्वीकार करना । तरफदारी करना, पक्षपात करना । पक्षयति, पक्षयिष्यति, अपपक्षत् ।

पक्ष—(पुं०) [√पक्ष्+अच् वा पक्ष्, पक्षयुक्त अर्थ में पक्ष+अच्] बाजू । तीर के दोनों ओर लगे हुए पर । कंधा । कोख । सेना का एक बाजू । किसी वस्तु का आधा । पखवारा जो १५ दिन का होता है । दल, तरफ । वंश, कुल । किसी दल का अनुयायी । श्रेणी । समूह । अनुयायियों की कोई भी संख्या । वादविवाद का एक पक्ष । कल्पना । विवादग्रस्त विषय । दो की संख्या का वाची शब्द । पक्षी । परिस्थिति,हालत । शरीर । शरीरावयव । राजा के चढ़ने का हाथी । सेना । दीवाल । विरोध । प्रत्युत्तर, उत्तर का उत्तर । प्रमाण । मात्रा । पद । धारणा । अग्निकुण्ड का वह स्थान जहाँ राख जमा हो । सामीप्य । कोष्ठक । शुद्धता । पर ।—अन्त (पक्षान्त) –(पुं०) कृष्ण या शुक्ल पक्ष का पन्द्रहवाँ दिन—पूर्णिमा, अमावस्या । सेना के पक्षों के छोर ।—अन्तर (पक्षान्तर)—(न०) दूसरा पक्ष । भिन्न कल्पना ।—अवसर (पक्षावसर)–(पुं०) दे० 'पक्षान्त' ।—आघात (पक्षाघात)–(पुं०) एक वातरोग

जिसमें शरीर का बायाँ या दहिना भाग बेकाम हो जाता है, लकवा। युक्ति का खण्डन।—**आभास** (**पक्षाभास**)–(पुं०) हेत्वाभास से युक्त तर्क, सिद्धान्ताभास। झूठा अर्जीदावा।—**आहार** (**पक्षाहार**)–(पुं०) वह व्यक्ति जो पक्ष (अर्थात् १५ दिवस) में केवल एक दिवस भोजन करे।—**उद्ग्राहिन्** (**पक्षोद्ग्राहिन्**)–(वि०) पक्षपात करने वाला।—**गम**–(वि०) उड़ने वाला।—**ग्रहण**–(न०) किसी भी पक्ष का हो जाना।—**घात**–दे० 'पक्षाघात'।—**चर**–(पुं०) हाथी जो अपने गिरोह से बहक गया हो। चन्द्रमा। टहलुआ, चाकर।—**छिद्** (**पक्षच्छिद**)–(पुं०) इन्द्र।—**ज**–(पुं०) चन्द्रमा।—**द्वय**–(न०) बहस के दोनों पहलू। उभयपक्ष अर्थात् एक मास।—**द्वार**–(न०) अप्रधान द्वार, गुप्त या चोर दरवाजा।—**धर**–(वि०) पंखों वाला। पक्ष-विशेष में रहने वाला, किसी भी दल-विशेष का पक्षपाती या तरफदार। (पुं०) पक्षी। चन्द्रमा। पक्षपाती व्यक्ति। अपने झुंड से बहका हुआ हाथी।—**नाडी**–(स्त्री०) पक्षी का मोटा पर जिसका उपयोग कलम में किया जाता है।—**पात**–(पुं०) किसी भी पक्ष की तरफदारी; 'भवन्ति भव्येषु हि पक्षपाताः' कि० ३.१२। रुचि, अभिलाषा। किसी पक्ष से अनुराग। परों का झड़ना। पक्षपाती, तरफदार।—**पातिता**–(स्त्री०),—**पातित्व**–(न०) पक्षपात, तरफदारी। मैत्री। सहायकत्व। परों का चालन।—**पालि**–(वि०) पक्षपाती, तरफदार। सहानुभूति रखने वाला। अनुयायी।—**पुट**–(पुं०) पंख, डैना।—**पोषक**–(वि०) किसी पक्ष का समर्थक, तरफदार।—**बिन्दु**–(पुं०) कंक पक्षी।—**भुक्ति**–(स्त्री०) उतनी दूरी जितनी सूर्य एकपखवारे में तै करता है।—**मूल**–(न०) पंख की जड़। प्रतिपदा।—**रचना**–(स्त्री०) दलबंदी, गुट बनाना।—**वाहन**–(पुं०) पक्षी।—**व्यापिन्**–(वि०) समूचे तर्क में व्याप्त होने वाला या समूचे तर्क को ग्रहण करने वाला।—**हत**–(वि०) जिसके शरीर का एक अंश लकवा से मारा गया हो।—**हर**–(पुं०) पक्षी।—**होम**–(पुं०) एक पखवारे तक होने वाला यज्ञ। धार्मिक विधि या कृत्य जो प्रतिपक्ष किया जाय।

पक्षक—(पुं०) [पक्ष+कन्] खिड़की, पक्षद्वार। पक्ष। साथी, सहवर्ती।

पक्षता—(स्त्री०) [पक्ष+तल्—टाप्] तरफदारी। किसी एक पक्ष में हो जाना। किसी पक्ष या किसी तरफ को ग्रहण कर लेना। किसी का एक अंग बन जाना। किसी पक्ष का समर्थन करना। न्याय शास्त्र में अनुमित्साविरहविशिष्टसिद्ध्यभावः; यही पक्षतावच्छिन्नमिति का कारण है।

पक्षति—(स्त्री०) [पक्षस्य मूलम्, पक्ष+ति] पंख की जड़; 'सद्यश्छिन्नजटायुपक्षतिः' उत्त० ३.४३। शुक्ला प्रतिपदा।

पक्षस्—(न०) [√पक्ष् + असुन्, सुट्] पंख। रथ आदि का पार्श्व। दरवाजे का पल्ला। सेना की एक टुकड़ी। अर्द्धमास। नदीतट। तरफ, ओर।

पक्षालु—(पुं०) [पक्ष+आलुच्] पक्षी।

पक्षिणी—(स्त्री०) [पक्ष + इनि—ङीप्] मादा पक्षी। दो दिन और एक रात का समय। पूर्णिमा।

पक्षिन्—(वि०) [स्त्री०—**पक्षिणी**] [पक्ष+इनि] पंखों वाला। पक्षों से सम्पन्न। पक्षपाती, तरफदार। (पुं०) पक्षी। तीर। शिव जी।—**इन्द्र** (**पक्षीन्द्र**),—**प्रवर**,—**राज्**,—**राज**,—**सिंह**,—**स्वामिन्**–(पुं०) गरुड़।—**कीट**–(पुं०) तुच्छ पक्षी।—**पति**–(पुं०) सम्पाति गिद्ध।—**पानीयशालिका**–(स्त्री०) कठौता या कुण्ड जिसमें पक्षियों के लिये जल भरा रहे।—**पुङ्गव**–(पुं०) जटायु।—**बालक**,—**शावक**–(पुं०)

पक्षी का बच्चा ।—**शाला**—(स्त्री॰) घोंसला । चिड़ियाखाना । पिंजड़ा ।

पक्षिल—(पुं॰) [पक्ष+इलच्] वात्स्यायन मुनि का नाम ।

पक्षीय—(वि॰) [पक्ष+छ+ईय] किसी पक्ष या दल से सम्बन्ध रखने वाला ।

पक्ष्मन्—(न॰) [√पक्ष्+मनिन्] बरौनी; 'सलिलगुरुभिः पक्ष्मभिः' श॰ ३.५५ । पुष्प की पंखुरी । महीन डोरा । डोरे का छोर । पर, पंख । फूल का एक पत्ता ।—**कोप**,—**प्रकोप**–(पुं॰) आंख में बरौनी के चले जाने से उत्पन्न हुई आंख की जलन ।

पक्ष्मल—(वि॰) [पक्ष्मन्+लच्] सुन्दर बरौनी वाला । बालों वाला, बालदार ।

पक्ष्य—(वि॰) [**पक्षे भवः, पक्ष+यत्**] एक पक्ष में उत्पन्न होने वाला । पक्षपाती । एकतरफी, एक संग का । प्रत्येक पक्ष में बदलने वाला ।

पङ्क—(पुं॰, न॰)[√पच्+घञ्, कुत्व] कीचड़ । घनी बड़ी राशि । दलदल । पाप । मलहम । उबटन ।—**कर्वट**–(पुं॰) नदी की बाढ़ से आई हुई मिट्टी ।—**कीर**–(पुं॰) टिटिहरी नाम की चिड़िया ।—**क्रीड**,—**क्रीडनक**–(पुं॰)शूकर,सुअर ।—**ग्राह**–(पुं॰) मगर, घड़ियाल ।—**छिद्**(**पङ्कच्छिद्**)–(पुं॰) रीठे का वृक्ष । निर्मली का वृक्ष ।—**ज**–(न॰) कमल । (पुं॰) सारस पक्षी ।—**जन्मन्**–(न॰) कमल । (पुं॰) सारस पक्षी । —**दिग्ध**–(वि॰) कीचड़ में सना हुआ । —**मग्न**–(वि॰) कीचड़ में डूबा हुआ ।—**भारक**–(वि॰) पंकिल, कीचड़हा ।—**मण्डूक**–(पुं॰) दुपट्टा शंख ।—**रुह्**,—**रुह**–(न॰) कमल ।—**वास**–(पुं॰) नकरा । —**शूरण**,—**सूरण**–(पुं॰) कमल की जड़, भसीड़ा ।

पङ्कजिनी—(स्त्री॰) [पङ्कज+इनि] कमल का पौधा । कमल के पौधों का समूह । स्थान जहाँ कमल-पुष्पों की बहुतायत हो । कुमुदिनी का लचीला दण्ड या डंठल ।

पङ्कण—(पुं॰) [मांसादिनिमित्तकं पापाचारकर्मपि कणः कलहो यस्य, पृषो॰ साधुः] चाण्डाल की झोपड़ी या निवास-स्थान ।

पङ्कार—(पुं॰) [पङ्क√ऋ+अण्] सिवार । बांध । मेंड़ । जीना, सीढ़ी । जल-कुब्जक पुष्प । सिंघाड़ा ।

पङ्किन्—(वि॰) [पङ्क+इनि] कीचड़ से भरा हुआ, कीचड़ से सना हुआ ।

पङ्किल—(वि॰) [पङ्क+इलच्] पंकयुक्त, जिसमें कीचड़ मिला हो, कीच वाला । (पुं॰) नाव, किश्ती ।

पङ्केज—(न॰) [पङ्के जायते, पङ्के √जन् +ड, सप्तम्या अलुक्] कमल ।

पङ्केरुह्, **पङ्केरुह**—(न॰) [पङ्के √रुह् +क्विप्] [पङ्के √रुह्+क] कमल । (पुं॰) सारस पक्षी ।

पङ्केशय—(वि॰) [पङ्के√शी + अच्] कीचड़ में रहने वाला ।

पङ्क्ति—(स्त्री॰) [√पञ्च्+क्तिन्] वह समूह जिसमें प्रायः सजातीय पदार्थ या व्यक्ति एक दूसरे के पीछे या बगल में क्रम के अनुसार स्थित हों, श्रेणी, कतार । एक वैदिक छंद । कुलीन ब्राह्मणों की श्रेणी । भोज में एक साथ खाने वालों की पांत, पंगत । वर्तमान या जीवित पीढ़ी । पृथिवी । कीर्ति । पाँच का समूह या पाँच की संख्या । दस की संख्या । पाचन क्रिया, पकाने की क्रिया ।—**कण्टक**–(पुं॰) पंक्तिदूषक ।—**ग्रीव**–(पुं॰) रावण का नाम ।—**चर**–(पुं॰) समुद्री गिद्ध । कुरर पक्षी ।—**दूष**,—**दूषक**–(पुं॰) जातिबहिष्कृत पुरुष जिसके साथ पंक्ति में बैठ कर कोई भोजन न करे या जिसके साथ बैठ कर भोजन करने से भोजन करने वाले पतित हो जायं ।—**पावन**–(पुं॰) वह ब्राह्मण जिसको यज्ञादि में बुलाना, भोजन

करवाना और दान देना श्रेष्ठ माना गया है। ऐसा ब्राह्मण पंक्ति को पवित्र करता है।—
—बाह्य— (वि०) पंक्ति या जाति से बाहर किया हुआ। —बीज—(पुं०) बबूल।—रथ—(पुं०) दशरथ का नाम।

पङ्क्तिका—[पङ्क्ति +कन्—टाप्] पंक्ति। कतार।

पङ्गु—(वि०) [स्त्री०—पङ्गु या पङ्गवी] [√खञ्ज्+कु, खस्य पत्वे, जस्य गादेशः, नुम्] जो पाँव के बेकाम होने से चल-फिर न सकता हो। जो चल न सके, गतिहीन। (पुं०) लँगड़ा आदमी; 'पङ्गुम् लङ्घयते गिरिम्'। शनिग्रह।—ग्राह— (पुं०) मगर। मकरराशि।

पङ्गुक—(वि०) [पङ्गु+कन्] दे० 'पंगु'।

पङ्गुल—(वि०) [पङ्गु+लच्] लँगड़ा, पंगु। (पुं०) काँच जैसा सफेद घोड़ा। रेंडी का पेड़।

√पच्—भ्वा० उभ० सक० अक० पकाना। भूनना। साफ करना (भोजन बनाने के पदार्थों को)। (ईंटों को) पकाना। जलाना। पचाना (भोजन को): 'पचाम्यन्नं चतुर्विधम्' भग० १५.१४। पकाना (फलादि को)। पूर्णता को प्राप्त करना। गलाना (धातुओं का)। अपने लिये भोजन बनाना। पचति-ते, पक्ष्यति-ते, अपाक्षीत्—अपक्त।

पच्—(वि०) [√पच्+क्विप्] पकाने वाला।

पच—(वि०) [√पच्+अच्] पाक-कर्त्ता।

पचक—(पुं०) [पच+कन्] पकाने वाला, रसोइया।

पचत—(वि०) [√पच्+अतच्] पकाया हुआ। पका हुआ। (पुं०) अग्नि। सूर्य। इन्द्र। (न०) बना हुआ भोजन।

पचतभृज्जता—(स्त्री०) [पचतभृज्जत इत्युच्यते यस्यां क्रियायाम्, मयू० स०] पाक करो, भर्जन करो, ऐसी आदेश-क्रिया।

पचन—(वि०) [√पच्+ल्यु] पाक-कर्ता, पकाने वाला। (पुं०) अग्नि। (न०) [√पच्+ल्युट्] पकने या पकाने का कार्य। पकाने का साधन।

पचम्पच—(पुं०) [प्रकारे पच इत्यस्य द्वित्वम् वा पचस्य पाककर्तुः यमादेः अपि पचः] शिव जी की उपाधि।

पचा—(स्त्री०) [√पच् + अङ—टाप्] पकाने की क्रिया।

पचि—(पुं०) [√पच्+इन्] अग्नि। रसोई बनाने की क्रिया।

पचेलिम—(वि०) [√पच् + एलिमच्] जो अपने आप पक जाय। जो शीघ्र पक जाय; 'ददर्श मातूरफल पचेलिमम्' नै० १.९४। (पुं०) अग्नि। सूर्य।

पचेलुक—(पुं०) [√पच्+एलुक] रसोइया, पाचक।

पज्झटिका—(स्त्री०) एक मात्रिक छंद। छोटी घंटी (बजने की)।

पज्र—(वि०) [**वैदिक**] [√पञ्ज्+रक्, पृषो० नलोप] पाप से जीर्ण। हविष्यान्न-युक्त। सुसंपादित। शक्तिशाली। धनवान्। (पुं०) अंगिरस् की उपाधि।

√पञ्च्—भ्वा० आत्म० सक० प्रकट करना। पञ्चते, पञ्चिष्यते, अपञ्चिष्ट। चु० पर० सक० विस्तार-पूर्वक बोलना। पञ्चयति—पञ्चति, पञ्चयिष्यति—पञ्चिष्यति, अपपञ्चत्—अपञ्चीत्।

पञ्चथु—(पुं०) [√पञ्च्+अथुच्] काल, समय। कोयल।

पञ्चन्—[**संख्यावाची विशेषण**] [√पञ्च्+कनिन्] (समास में पञ्चन् के नकार का लोप हो जाता है, इसका प्रयोग सदैव बहुवचन में होता है।) पाँच।—**अंश** (**पञ्चांश**)—(पुं०) पाँचवाँ भाग।—**अग्नि** (**पञ्चाग्नि**)—(पुं०) पाँच प्रकार की निम्नलिखित अग्नियाँ—अन्वाहार्य, पचन, गार्हपत्य, आहवनीय और आवसथ्य। स्वर्ग, पर्जन्य, पृथिवी, पुरुष और योषित्—ये पाँच (छा०

उ०)। चारों ओर जलते हुए चार अग्नि तथा ऊपर से सूर्य के ताप का सेवन करने का ग्रीष्म ऋतु में किया जाने वाला एक तप। चीता, चिचड़ा, भिलावाँ, गंधक और मदार—ये पाँच बहुत गरम तासीर वाली ओषधियाँ (आ० वैं०)। (वि०) दक्षिण, आहवनीय आदि पाँच अग्नियों का आधान करने वाला।—**अङ्ग**(**पञ्चाङ्ग**)–(वि०) पाँच अंगों वाला। (पुं०) कछुवा। पंचकल्याण घोड़ा। (न०) पाँच भागों का समुदाय। राजनीति के पाँच अंग—सहाय, साधन, उपाय, देश-काल-भेद और विपत्प्रतीकार। पूजन के पाँच प्रकार, पञ्चोपचार। वृक्ष की पाँच वस्तुएँ (छाल, पत्ते, फूल, जड़, फल)। तिथिपत्र (जिसमें ये पाँच बातें हों—तिथि, वार, नक्षत्र, योग और करण)।—**अङ्गिक** (**पञ्चाङ्गिक**)–(वि०) पाँच अवयवों वाला।—**अङ्गी** (**पञ्चाङ्गी**)–(स्त्री०) घोड़े की लगाम।—**अङ्गुल** (**पञ्चाङ्गुल**)–(वि०) [स्त्री०—**अङ्गुला**, **अङ्गुली**] पाँच अंगुल बड़ा।—(पुं०) रेंड़। तेजपत्ता। पौधा।—**आज** (**पञ्चाज**)–(न०) बकरी का दूध, दही, घी, पुरीष और मूत्र।—**अप्सरस्** (**पञ्चाप्सरस्**)–(न०) एक झील का नाम जिसे माण्डकर्णी ने बनाया था।—**अमृत** (**पञ्चामृत**)–(वि०) ५ पदार्थों से बना हुआ।—(न०) पाँच द्रव्यों का समूह, पाँच मीठी वस्तुओं का समुदाय जो देवपूजन में प्रयुक्त होती है (दुग्धं च शर्करा चैव घृतं दधि तथा मधु)।—**अर्चिस्** (**पञ्चार्चिस्**)–(पुं०) बुधग्रह।—**अवस्थ** (**पञ्चावस्थ**) (पुं०) शव, लाश।—**अविक** (**पञ्चाविक**)–(न०) भेंड़ का दूध, दही, घी, पुरीष और मूत्र।—**अशीति**(**पञ्चाशीति**)–(स्त्री०) ८५, पचासी।—**अह**(**पञ्चाह**)–(पुं०) पाँच दिन का काल।—**आतप** (**पञ्चातप**)–(पुं०) पंचाग्नि तापना (चार अग्नि और १ सूर्य), एक प्रकार का तप।—**आत्मक** (**पञ्चात्मक**)–(वि०) पाँच तत्त्वों का बना हुआ (शरीर)।—**आनन**(**पञ्चानन**),—**आस्य**—(**पञ्चास्य**)—**मुख**,—**वक्त्र**–(पुं०) शिव। शेर। सिंहराशि।—**आननी** (**पञ्चाननी**)–(स्त्री०) दुर्गा देवी।—**आम्नाय** (**पञ्चाम्नाय**)–(पुं०, बहुवचन) तंत्र शास्त्र जो शिवजी के पाँच मुखों से निकला था।—**इन्द्रिय** (**पञ्चेन्द्रिय**)–(न०) पाँच इन्द्रियों का समुदाय।—**इषु** (**पञ्चेषु**)—**बाण**,—**शर**–(पुं०) कामदेव। (कामदेव के पाँच बाण ये हैं।—"अरविंदमशोकं च चूतं च नवमल्लिका। नीलोत्पलं च पंचैते पंचबाणस्य सायकाः।" अन्यच्च "सम्मोहनोन्मादनौ च शोषणस्तापनस्तथा। स्तम्भनश्चेति कामस्य पञ्च बाणाः प्रकीर्तिताः।)"–**उपचार** (**पञ्चोपचार**)—(पुं०) पूजन के साधनभूत पाँच द्रव्य—गंध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य। (न०) इन पाँच द्रव्यों से किया गया पूजन।—**उष्मन्** (**पञ्चोष्मन्**)–(पुं० बहु०) शरीरस्थ पाँच अग्नि।—**कन्या**–(स्त्री०) अहल्या, द्रौपदी, कुंती, तारा और मंदोदरी—ये पाँच स्त्रियाँ जिनमें सदा कन्यात्व रहा।—**कपाल**–(पुं०) वह पुरोडाश जिसका संस्कार पाँच कपालों (कसोरों) में किया गया हो। (वि०) पाँच प्यालों में बनाया हुआ या भेंट किया हुआ।—**कर्ण**–(न०) (जानवरों के) कान पर पाँच की संख्या दागना।—**कर्मन्**–(न०) पाँच प्रकार के कर्म (उत्क्षेपण, अपक्षेपण, आकुञ्चन, प्रसारण और गमन)। पाँच प्रकार की चिकित्सा (वमन, रेचन, नस्य, अनुवासन, निरूह)।—**कल्याण**–(पुं०) वह घोड़ा जिसके पैर और मुँह सफेद रंग के हों (ऐसा घोड़ा बहुत मांगलिक माना जाता है)।—**कवल**–(पुं०) भोजन के

पहले पक्षियों आदि के लिये निकाला जाने वाला पाँच ग्रास अन्न ।—**कषाय**–(पुं०) जामुन, सेमर, खिरैंटी, मौलसिरी और बेर की छाल का रस ।—**काम**–(पुं०) पाँच प्रकार के कामदेव जिनके नाम ये हैं—काम, मन्मथ, कंदर्प, मकरध्वज और मीनकेतु ।—**कारण**–(न०) कार्योत्पत्ति के पाँच कारण—काल, स्वभाव, नियति, पुरुष और कर्म (जैन) ।—**कृत्य**–(न०) ईश्वर के पाँच कर्म—सृष्टि, स्थिति, ध्वंस, विधान और अनुग्रह ।—**कोण**–(न०) पाँच भुजाओं वाला क्षेत्र (ज्या०) । (वि०) पाँच कोनों वाला ।—**कोल**–(न०) पीपल, पिपरामूल, चई, चित्रकमूल और सोंठ—इन पाँच द्रव्यों से बनने वाला एक पाचक ।—**कोष**–(पुं० बहु०) शरीरस्थ ५ कोष । (पाँच कोष ये हैं:—अन्नमयकोष, प्राणमयकोष, मनोमयकोष, विज्ञानमयकोष, आनन्दमयकोष) ।—**कोशी**–(स्त्री०) पाँच कोस का अन्तर । काशीपुरी का नाम ।—**क्लेश**–(पुं०) अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश—ये पाँच क्लेश (योग) ।—**खट्व**–(न०),—**खट्वी**–(स्त्री०) पाँच खाटों का समुदाय ।—**गङ्ग**–(न०) गंगा, यमुना, सरस्वती, किरणा और धूतपापा—इन पाँच नदियों का समाहार ।—**गव**–(न०) पाँच गौओं का समुदाय ।—**गव्य**–(न०) गौ से उत्पन्न पाँच पदार्थ (दूध, दही, घी, मूत्र, गोबर) ।—**गु**–(वि०) पाँच गौएँ देकर खरीदा हुआ ।—**गुण**–(वि०) पाँचगुना । (पुं०) रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्द ।—**गुणी**–(स्त्री०) जमीन ।—**गुप्त**–(पुं०) कछुवा । चार्वाकमत ।—**गौड**–(पुं०) उत्तर-भारत के पाँच प्रकार के ब्राह्मण—सारस्वत, कान्यकुब्ज, गौड़, मैथिल और औत्कल (उत्कल) ।—**चत्वारिंश**–(वि०) पैंतालीसवाँ ।—**जन**–(पुं०) मनुष्य । एक दैत्य, जिसे कृष्ण भगवान् ने मारा था । जीवात्मा । पाँच प्रकार के जीव (अर्थात् देवता, मानव, गन्धर्व, नाग और पितर) । पाँच वर्ण :—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और अन्त्यज ।—**जनीन**–(पुं०) अभिनयकर्त्ता । विदूषक, मसखरा ।—**ज्ञान**–(पुं०) बुद्धदेव की उपाधि । पाशुपत सिद्धान्तों का जानकार पुरुष ।—**तक्ष**–(न०),—**तक्षी**–(स्त्री०) पाँच बढ़इयों का समूह ।—**तत्त्व**–(न०) पाँच तत्त्वों का समूह (पृथ्वी, जल, तेजस्, वायु और आकाश) । पंचमकार (वाममार्ग के) (यथा मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा और मैथुन) ।—**तन्त्र**–(न०) एक नीतिविषयक संस्कृत का ग्रन्थ जिसमें पाँच अध्याय हैं और पाँच नैतिक विषयों का उल्लेख किया गया है ।—**तन्मात्र**–(न०) इन्द्रियों से ग्रहण किये जाने वाले पाँच विषय; :— शब्द, रस, स्पर्श, रूप और गन्ध ।—**तपस्**–(पुं०) वह साधु जो ग्रीष्मऋतु में सूर्यातप में अपने चारों ओर चार जगहों में आग जला तथा पाँचवें सूर्य के आतप से पंचाग्नि तापता है ।—**तिक्त**–(न०) पाँच, कड़वी दवाइयाँ—गुरुच, भटकटैया, सोंठ, कुट और चिरायता ।—**तीर्थ**–(न०) पाँच तीर्थों—विश्रांति, शौकर, नैमिष, प्रयाग और पुष्कर (वराह पु०) का समाहार । (इस प्रकार के अन्य समाहार भी मिलते हैं) ।—**तृण**–(न०) कुश, काँस, सरकंडा, डाभ और ईख—इन पाँच तृणों का समाहार ।—**त्रिंश**–(वि०) ३५ वाँ ।—**त्रिंशत्** (त्रि०) ३५, पैंतीस ।—**त्रिंशति**–(स्त्री०) ३५ की संख्या ।—**दश**–(वि०) १५ वाँ । १५ से बढ़ा हुआ अर्थात् पन्द्रह अधिक । यथा पञ्चशतं दशम् यानी ११५ ।—**दशन्**–(वि०) (बहु०) १५, पन्द्रह ।—**दशिन्**–(वि०) १५ से बना हुआ ।—**दशी**–(स्त्री०) पूर्णिमा । अमावस्या । वेदांत का एक प्रसिद्ध ग्रन्थ ।—**दीर्घ**–(न०) शरीर के पाँच दीर्घ भाग अर्थात्—"बाहू नेत्रद्वयं

कुक्षिद्वे तु नासे नवैव च । स्तनयोरन्तरं चैव पञ्चदीर्घं प्रचक्षते ॥"—**देवता**-(स्त्री०) पाँच देवता । यथा—आदित्यं गणनाथं च देवीं रुद्रं च केशवम् । पञ्चदैवतमित्युक्तं सर्वकर्मसु पूजयेत् ॥—**द्राविड**-(पुं०) दक्षिण भारत के पाँच प्रकार के ब्राह्मण—महाराष्ट्र, तैलंग, कर्णाटिक, गुर्जर और द्राविड़ ।—**नख**-(पुं०)पाँच नखों वाले कोई जीव; 'पञ्च पञ्चनखाः भक्ष्याः' मनु० । हाथी । कछुवा । सिंह या चीता ।—**नद**-(पुं०) पंजाब जहाँ पाँच नदियाँ हैं (शतद्रू, विपाशा, इरावती, चन्द्रभागा, और वितस्ता । इनके आधुनिक नाम हैं—सतलज, व्यास, रावी, चिनाब और झेलम) । पंजाब प्रान्त वासी ।—**नवति**-(स्त्री०) ९५ ।—**नीराजन**-(न०) किसी देवविग्रह के सामने पाँच वस्तुओं का घुमाना । यथा दीपक, कमल, वस्त्र, आम और पान ।—**पञ्चाश**-(वि०) पचपनवाँ, ५५वाँ ।—**पञ्चाशत्**-(स्त्री०) ५५, पचपन ।—**पदी**-(स्त्री०) एक प्रकार की ऋचा । पाँच डग; 'एतैर्वर्णैः पञ्चपदी न दीयते' सुभा० । पाँच पद (व्या०) । वह संबंध जिसमें मैत्री का भाव न हो । —**पर्वन्**-(न० बहु०) पाँच पर्व; यथा—"चतुर्दश्यष्टमी चैव अमावास्या च पूर्णिमा । पर्वाण्येतानि राजेन्द्र रविसंक्रान्तिरेव च ॥"—**पल्लव**-(न०) यज्ञ कर्म में—आम, जामुन, कैथ, बेल और बिजौरा—इन पाँच वृक्षों के पल्लव । वैदिक कर्म में—पीपल, गूलर, पाकड़, आम और बड़—इन पाँच वृक्षों के पल्लव । तान्त्रिक कर्म में—कटहल, आम, पीपल, बड़ और मौलसिरी—इन पाँच वृक्षों के पल्लव ।—**पाद्**-(वि०)पाँच पैरों का । (पुं०) संवत्सर । —**पात्र**-(न०) पाँच बरतनों का समूह श्राद्ध-विशेष जिसमें पाँच पात्रों में रख कर भोग लगाया जाता है ।—**पितृ**-(पुं० बहु०) पाँच पिता; यथा—"जनकश्चोपनेता च यश्च कन्यां प्रयच्छति । अन्नदाता भयत्राता पञ्चैते पितरः स्मृताः ॥"—**पित्त**-(न०) सूअर, बकरा, भैंसा, मछली और मोर—इन पाँच जानवरों का पित्त ।—**प्राण**-(पुं० बहु०) शरीरस्थ पाँच प्राणवायु, यथा—प्राण, अपान, व्यान, उदान और समान ।—**प्रासाद**-(पुं०) विशेष ढंग का मन्दिर जिसमें चार कोनों पर चार कलस और लाट या धौरहर हों ।—**बन्ध**-(पुं०) अर्थदण्ड-विशेष जो चोरी गयी या खोयी हुई वस्तु का या उसके मूल्य का पाँचवाँ भाग होता है ।—**बला**-(स्त्री०) बला, अतिबला, नागबला, राजबला और महाबला—ये पाँच ओषधियाँ ।—**बाण,—बाण,—शर**-(पुं०) कामदेव के पाँच प्रकार के बाण—सम्मोहन, उन्मादन, स्तंभन, शोषण और तापन । कामदेव ।—**बाहु**-(पुं०) शिव ।—**भद्र**-(वि०) पाँच गुणों वाला (व्यंजन आदि) । पाँच शुभ लक्षणों वाला (घोड़ा) । दुष्ट ।—**भुज**-(वि०) पाँच भुजाओं वाला । (न०) पाँच भुजाओं वाला क्षेत्र ।—**भूत**-(न०) पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश—ये पाँच तत्त्व ।—**मकार**-(न०) वाममार्गियों के मतानुसार मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा और मैथुन । —**महापातक**-(न०) मनुस्मृति के अनुसार ब्रह्महत्या, सुरापान, चोरी, गुरु-स्त्रीगमन और इन पातकों के करने वाले का सहवास, पाँच महापातक माने गये हैं ।—**महायज्ञ**-(पुं० बहु०) स्मृतियों और गृह्यसूत्रों के अनुसार पाँच कृत्य जिनका नित्य करना गृहस्थ के लिये आवश्यक है । वे पाँच कृत्य ये हैं:—स्वाध्याय—इसे ब्रह्मयज्ञ कहते हैं, सन्ध्यावंदन इसीके अन्तर्गत है; पितृतर्पण—इसे पितृयज्ञ भी कहते हैं; हवन—इसको देवयज्ञ कहते हैं; बलिवैश्वदेव—इसे भूतयज्ञ कहते हैं; अतिथिपूजन—इसे नृयज्ञ कहते हैं ।—**महा-**

व्याधि–(पुं०) अर्श, यक्ष्मा, कुष्ठ, प्रमेह और उन्माद—ये पाँच दुःसाध्य व्याधियाँ ।—**महाव्रत**–(न०) अहिंसा, सूनृता, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह (योग)। ।—**माषक**, —**माषिक**–(वि०) अर्थदण्ड जिसमें पाँच माशा (सुवर्ण) अपराधी को देना पड़ता है ।—**मास्य**–(वि०) हर पाँचवें महीने होने वाला ।—**मुख**–(पुं०) पाँच नोकों वाला बाण । पाँच मुखों वाला रुद्राक्ष । शिव । सिंह । (वि०) जिसके पाँच मुँह हों ।—**मुद्रा** –(स्त्री०) तंत्रानुसार पूजन में पाँच प्रकार की मुद्राएँ दिखाना आवश्यक है । वे पाँच मुद्रा ये हैं—आवाहनी, स्थापनी, सन्निधापनी, संबोधिनी और सम्मुखीकरणी ।—**मूत्र**– (न०) गाय, बकरी, भेड़, भैंस और गधी-इन पाँच जानवरों का मूत्र ।—**याम**–(पुं०) दिन ।—**रत्न**–(न०) पाँच जवाहिर नीलम, हीरा, पद्मराग, मोती और मूँगा । सोना, चाँदी, मोती, लाजावर्त (रावटी) और मूँगा । सुवर्ण, हीरा, नीलम, पद्मराग और मोती । महाभारत के पाँच प्रसिद्ध उपाख्यान ।—**रसा**–(स्त्री०) आँवला ।—**रात्र**–(न०) पाँच रात का समय ।—**राशिक**–(न०) गणित का एक प्रकार का हिसाब जिसमें चार ज्ञात राशियों के द्वारा पाँचवीं अज्ञात राशि का पता लगाया जाता है ।—**लक्षण**– (न०) पुराण, जिसमें पाँच लक्षण होते हैं ।, वे लक्षण ये हैं—सृष्टि की उत्पत्ति, प्रलय-देवताओं की उत्पत्ति और वंशपरम्परा, मन्वन्तर और मनु के वंश का विस्तार ।—**लवण** –(न०) पाँच प्रकार के नमक-काँच, सेंधा, सामुद्र, विट् और सोंचर ।—**लाङ्गलक**– (न०) महादान, अर्थात् उतनी भूमि का दान जिसको पाँच हल जोत सकें ।—**लौह**– (न०)पाँच धातु–ताँबा, पीतल, राँगा, सीसा और लोहा । (मतान्तरे) सोना, चाँदी, ताँबा, सीसा और राँगा ।—**लौहक**–(न०) पाँच प्रकार का लोहा । यथा—वज्रलौह, कान्तलौह, पिण्डलौह, क्रौंचलौह, और मुण्डलौह ।—**वट**–(पुं०) यज्ञोपवीत, जनेऊ ।—**वटी**- (स्त्री०) पाँच वृक्षों का समूह—अश्वत्थ, बिल्व, वट, आँवला और अशोक । दण्डकारण्य के अन्तर्गत स्थान- विशेष । यह स्थान गोदावरी नदी के तट पर नासिक में है । सीताहरण यहीं हुआ था । —**वर्ग**–(पुं०) पाँच वस्तुओं का समूह । यथा—पाँच तत्त्व, पाँच इन्द्रियाँ, पाँच महायज्ञ ।—**वर्ण**–(न०) अकार, उकार, मकार, नाद और बिन्दु से संयुक्त ओंकार । पंचवर्णान्वित तण्डुलचूर्ण (चावल का चूर्ण कर उसमें पाँच रंग मिलाने से पचवर्ण बनता है) ।—**वर्षदेशीय**–(वि०) लगभग पाँच वर्ष का ।—**वर्षीय**–(वि०) पाँच वर्ष का ।—**वल्कल**–(न०) पाँच वृक्षों की छाल का समुदाय । वे पाँच वृक्ष ये हैं—बरगद, गूलर, पीपल, पाकर और बेंत या सिरिस । —**वार्षिक**–(वि०) प्रति पाँचवें वर्ष होने वाला ।—**वाहिन्**–(वि०) पाँच सवारियों से युक्त । जिसे पाँच आदमी ढोकर ले जा सकें । —**विंश**–(वि०) २५ वाँ ।—**विंशति**– (स्त्री०) २५, पच्चीस ।—**विंशतिका**– (स्त्री०) २५ (कहानियों का) संग्रह । यथा बैताल पचीसी ।—**विध**–(वि०) पाँच प्रकार का । पचगुना ।—**विष**–(न०) पाँच विषों का समूह—ताम्र, हरिताल, सर्पविष, करवीर और वत्सनाभ ।—**वृक्ष**–(पुं०) पाँच देव-वृक्ष— मंदार, पारिजात, संतान, कल्पवृक्ष और हरिचंदन ।—**शत**–(वि०) जिसका जोड़ ५०० हो । (न०) १०५ । पाँच सौ ।—**शब्द**–(पुं०)पंच मंगल-वाद्य । शंखध्वनि आदि पाँच प्रकार की ध्वनियाँ । सूत्र, वार्तिक, भाष्य, कोष और कवियों का प्रयोग (व्या०) ।— **शस्य**–(न०) धान, मूँग, तिल, उड़द और जौ-ये पाँच प्रकार

के मत ।—शाख-(पुं०) हाथ । हाथी । —शिख-(पुं०) सांख्यदर्शन के एक प्रसिद्ध आचार्य । सिंह ।—शूरण- (न०) अत्यम्लपर्णी, मालकंद, सूरन, सफेद सूरन और काडवेल—ये पाँच प्रकार के सूरन । —ष-(वि०, बहु०) जिसकी संख्या पाँच या छः हो; 'सन्त्यन्येऽपि बृहस्पतिप्रभृतयः सम्भाविताः पञ्चषाः' भर्तृ०, २·३४ ।—षष्ट (वि०) ६५ वाँ ।—षष्टि-(स्त्री०) ६५ । —सन्धि-(पुं०) पाँच प्रकार की सन्धियाँ —स्वरसंधि, व्यंजनसंधि, विसर्गसंधि, स्वादिसंधि और प्रकृति-भाव (व्या०) ।—सप्तत-(वि०) ७५ वाँ ।—सप्तति-(स्त्री०) ७५ ।—सुगन्धक-(न०) पाँच प्रकार के सुगन्ध द्रव्य । यथा—'कर्पूरकक्कोललवङ्गपुष्पगूवाकजातीफलपञ्चकेन । समांशभागेन च योजितेन मनोहरं पंचसुगन्धकं स्यात् ।' —सूना-(स्त्री०) पाँच प्रकार की हिंसा जो गृहस्थों से, घर के कामधंधों में हुआ करती है । वे पाँच हिंसाएँ जिन कर्मों से होती हैं वे ये हैं—चूल्हा जलाना, आटा पीसना, झाड़ू देना, कूटना, और पानी का घड़ा रखना ।—हायन-(वि०) पाँच वर्ष का ।

पञ्चक—(वि०) [पञ्चन्+कन्] पाँच से सम्पन्न । पाँच सम्बन्धी । पाँच से खरीदा हुआ । पाँच प्रतिशत ब्याज लेने वाला । (न०, पुं०) पाँच का जोड़ या पाँच का समूह । धनिष्ठा आदि पाँच नक्षत्र । इन नक्षत्रों का योगकाल जिसमें प्रेतदाह, दक्षिण की यात्रा आदि निषिद्ध है, पचखा । युद्ध-क्षेत्र ।

पञ्चकृत्वस्—(अव्य०) [पञ्चन्+कृत्वसुच्] पाँच बार, पाँच मरतबा ।

पञ्चतय—(वि०) [पञ्च अवयवा यस्य, पञ्चन्+तयप्] पाँच अवयवों या संख्याओं से युक्त ।

पञ्चता—(स्त्री०), **पञ्चत्व**-(न०) [पञ्चन्+तल्—टाप्] [पञ्चन्+त्व] शरीर के उपादान रूप पाँच महाभूतों का अपने-अपने रूप को प्राप्त हो जाना, मृत्यु ।

पञ्चधा—(अव्य०) [पञ्चन्+धा] पाँच भागों में । पाँच प्रकार से ।

पञ्चनी—(स्त्री०) [पञ्चन् +ल्युट्—ङीप्] शतरंज जैसे खेल की बिछात का कपड़ा ।

पञ्चम—(वि०) [स्त्री०—**पञ्चमी**] [पञ्चानां पूरणः, पञ्चन्+डट्—मुट्] पाँचवाँ । दक्ष, निपुण । रुचिर, सुन्दर । (पुं०) सप्तस्वरों में से पाँचवाँ स्वर । यह स्वर पिक या कोकिल के कण्ठस्वर के समान माना गया है; 'व्यथयति वृथा मौनं तन्वि प्रपञ्चय पञ्चमं, गीत० १० । मैथुन ।—आस्य (**पञ्चमास्य**)-(पुं०) कोकिल ।

पञ्चमी—(स्त्री०) [पञ्चम+ङीप्] चंद्रमा की पाँचवीं कला । पाख की पाँचवीं तिथि । व्याकरण में पाँचवीं विभक्ति । बिसात । [पंचानां पाण्डवानाम् इयम् अथवा पञ्च पतीन् मिनोति स्नेहादिभिः बध्नाति या, पञ्चन् √मी +क्विप्—ङीप्] द्रौपदी ।

पञ्चशः—(अव्य०) [पञ्चन्+शस्] पाँच-पाँच (बार) ।

पञ्चाश—(वि०) [स्त्री०—**पञ्चाशी**] [पञ्चाशत्+डट्] पचासवाँ ।

पञ्चाशत्—(वि०) [पंचदशतः परिमाणम् अस्य, नि० साधुः] जिसमें पचास की संख्या हो । पचास ।

पञ्चाशिका—(स्त्री०) [पञ्चाश+क—टाप्, इत्व] पचास का समूह । पचास पद्यों का संग्रह । यथा चौरपञ्चाशिका ।

पञ्चिका—(स्त्री०) एतरेय ब्राह्मण । पाँच अध्यायों व खण्डों का समूह । पाँच पासों से खेला जाने वाला खेल-विशेष ।

पञ्चाल—(पुं०) [√पञ्च्+कालन्] हिमालय तथा चंबल से सीमित एक प्राचीन देश जो

गंगा के दोनों ओर स्थित था। (द्रुपद वहाँ के राजा थे—म० भा०) इस देश का निवासी। यहाँ का राजा। एक ऋषि। महादेव।

पञ्चालिका—(स्त्री०) [पञ्चाय प्रपञ्चाय अलति, √अल्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] गुड़िया, पुतली।

पञ्चाली—(स्त्री०) [पञ्चाल+ङीप्] द्रौपदी। गुड़िया, पुतली। राग-विशेष। शतरंज या अन्य उसी प्रकार के खेल की बिसात। (पंचारी का अर्थ भी यही है)।

पञ्चावट—(पुं०) [पञ्च विस्तृतमुरःस्थलम् आवटति, आ√वट्+अच्] यज्ञीय सूत्र जो कंधे के आरपार पहिना जाता है, जनेऊ।

पञ्जर—(न०) [पञ्ज्यते रुध्यतेऽत्र, √पञ्ज्+अरन्] पिंजड़ा। (न०, पुं०) हड्डियों का ढाँचा, ठठरी, कंकाल। पसली। (पुं०) शरीर। कलियुग। गाय का एक संस्कार।—**आखेट** (**पञ्जराखेट**)-(पुं०) मछली पकड़ने का जाल या डलिया-विशेष।—**शुक**-(पुं०) पिंजड़े में बंद तोता, पालतू तोता।

पञ्जरक—(न०, पुं०) [पञ्जर + कन्] पिंजड़ा।

पञ्जि, पञ्जी—(स्त्री०) [√पञ्ज्+इन्] [पञ्जि+ङीप्] रूई का गोलाकार गाला जिससे सूत काता जाता है, पूनी। लेखा-बही। पत्रा, तिथिपत्र।—**कार**,—**कारक**-(पुं०) लेखक (क्लर्क)। पत्रा बनाने वाला। कायस्थ। पँजियार।

पञ्जिका—(स्त्री०) [पञ्जि + कन्—टाप्] ऐसी टीका जिसमें प्रत्येक शब्द का अर्थ समझाया गया हो, विशद टीका। पंचांग, तिथिपत्र। यमराज की वह लेखाबही जिसमें मनुष्यों के शुभाशुभ कार्यों का लेखा लिखा जाता है। रोकड़बही, जिसमें आमदनी और खर्च लिखा जाता है।—**कारक**-(पुं०) लेखक। बही लिखने वाला। पंचांग बनाने वाला। कायस्थ।

√पट्—भ्वा० पर० सक० जाना। पटति, पटिष्यति, अपटीत्—अपाटीत्। चु० पर० सक० चीरना। पाटयति, पाटयिष्यति, अपीपटत्। लपेटना, वेष्टित करना। पटयति, पटयिष्यति, अपपटत।

पट—(न०, पुं०) [√पट्+क (अवर्थे)] कपड़ा, वस्त्र। महीन कपड़ा; 'मेघाः स्रवन्ति बलदेवपटप्रकाशाः' मृ० ५.४। पर्दा। घूँघट। पटरी या कपड़े का टुकड़ा, जिस पर चित्र लिखे जायँ। (पुं०) कोई वस्तु जो अच्छी प्रकार बनी हो। (न०) छत। छावन या छप्पर।—**उटज** (**पटोटज**) (न०) खेमा। कुकुरमुत्ता, छत्रक।—**कर्मन्**-(न०) जुलाहे का काम, बुनाई।—**कार**-(पुं०) जुलाहा। चित्रकार।—**कुटी**-(स्त्री०),—**मण्डप**,—**वाप**-(पुं०),—**वेश्मन्**-(न०) खेमा, तंबू।—**वाद्य**-(न०) झाँझ जैसा एक बाजा (संगीत)।—**वास**-(पुं०) रावटी, खेमा। धोती या साड़ी के नीचे पहनने का स्त्रियों का एक तरह का घाँघरा। कपड़ा बासने का सुगंधित द्रव्य।—**वासक**-(पुं०) कपड़ा बासने का सुगंधित द्रव्य या चूर्ण।

पटक—(पुं०) [पट √कै+क] शिविर, तंबू, खेमा। सूती कपड़ा। आधा गाँव।

पटच्चर—(न०) [पटत् इत्यव्यक्तशब्दं चरति, पटत् √चर्+अच्] चिथड़ा, फटा पुराना कपड़ा। (पुं०) चोर।

पटत्क—(पुं०) [पटत् इव वेष्टित इव कायति, पटत् √कै+क] चोर।

पटमय—(वि०) [पट+मयट्] कपड़े का बना। (पुं०) खेमा, तंबू।

पटल—(न०) [पट√ला+क वा√पट्+कलच्] छत, छाजन। आवरण रूप वस्तु। तह, परत। आँख का एक रोग। समूह। राशि; 'रथाङ्गपाणेः पटलेन रोचिषां' शि० १.२१। शरीर के किसी अंग पर का चिह्न (जैसे—तिल)। दलबल, लवाजमा।

टोकरी । पृष्ठभाग । अध्याय । (पुं०) वृक्ष । ठंठन ।—**प्रान्त**–(पुं०) ओलती ।

पटली—(स्त्री०) [पटल+ङीप्] छाजन, छप्पर । वृक्ष । ठंठन ।

पटह—(पुं०) [पटेन हन्यते, पट√हन्+ड, या पटत् शब्दं जहाति, पटत्√हा+ड, नि० साधुः] ढोल । मृदंग । तबला । डुग्गी । नगाड़ा, डंका । आरम्भ करना । वध करना । —**घोषक**–(पुं०) ढंढोरा पीटने वाला, ढिंढोरा पीटने वाला ।—**भ्रमण**–(वि०) लोगों को जमा करने के लिये इधर-उधर घूम कर ढोल बजाने वाला ।

पटाक—(पुं०) [पटति गच्छति, √पट्+आक] पक्षी, चिड़िया ।

पटालुका—(स्त्री०) [पट √अल्+उक –टाप्] जोंक, जलौका ।

पटि, पटी—(स्त्री०) [√पट्+इन्] [पटि +ङीप्] रंगशाला का पर्दा । वस्त्र । मोटा कपड़ा । कनात । रंगीन वस्त्र ।—**क्षेप**–(पुं०) रंगमंच का पर्दा गिरना या गिराना ।

पटिका—(स्त्री०) [पटि+कन्–टाप्] बुना हुआ वस्त्र ।

पटिमन्—(पुं०) [पटोः भावः, पटु+इम-निच्] निपुणता, चातुरी । तीव्रता । खारापन । कड़ाई, सख्ती । उग्रता । रूखापन ।

पटीर—(वि०) [√पट्+ईरन्] सुन्दर, रूपवान् । लंबा, ऊँचा । (पुं०) गेंद । गोली (खेलने की) । चन्दन । कामदेव । (न०) कत्था । चलनी । पेट । खेत । बादल । ऊँचाई । मूली । गठिया । मोतियाबिंद ।—**जन्मन्**–(पुं०) चन्दन का वृक्ष ।

पटु—(वि०) [स्त्री०—**पटु** या **पट्वी**] [√पट् +णिच्+उ, पटादेश] चतुर, निपुण । चरपरा । कुशाग्र-बुद्धि । प्रचण्ड, उग्र । चीखने वाला । उद्‌योगी । स्वभावतः उन्मुख । सख्त । निष्ठुर, नृशंस-हृदय । धूर्त, मक्कार । स्वस्थ । क्रियाशील । वाचाल । फूला हुआ । बढ़ाया या फुलाया हुआ । बड़बोला, बलवान । स्पष्ट । (न०) कुकुरमुत्ता । नमक । पांगा (समुद्री) नमक । परवल । करेला । चीन का कपूर । जीरा । बच । चोर नामक गंधद्रव्य ।—**त्रय**–(न०) तीन प्रकार के (विट्, सैन्धव और सोंचर) नमकों का समाहार (आ० वे०)।—**पर्णिका**,—**पर्णी**–(स्त्री०) मकोय ।

पटुकल्प—(वि०) [ईषदूनः पटुः, पटु+कल्पप्] जो कुछ कम पटु हो ।

पटुता—(स्त्री०), **पटुत्व**–(न०) [पटु+तल् –टाप्] [पटु+त्व] दक्षता, कुशलता ।

पटुरूप—(वि०) [प्रशस्तः पटुः, पटु+रूपप्] अत्यंत कुशल ।

पटोल—(पुं०) [√पट्+ओलच्] एक प्रकार का कपड़ा । परवल ।

पटोलक—(पुं०) [पटोल√कै+क] घोंघा, सीपी ।

पट्ट—(न०, पुं०) [√पट्+क्त, इट् का अभाव] पट्टी, तख्ती, लिखने की पटिया । ताँबे आदि धातुओं की चिपटी पट्टी जिसके ऊपर राजाज्ञा या दान आदि की सनद खोदी जाती थी । मुकुट । पगड़ी । रेशम । महीन या रंगीन वस्त्र । सब कपड़ों के ऊपर पहिनने का वस्त्र । पगड़ी । राजसिंहासन । कुर्सी । ढाल । चक्की का पाट । चौराहा । नगर । घाव या चोट पर बाँधने की पट्टी ।—**अभिषेक** (**पट्टाभिषेक**)–(पुं०) मुकुटधारण की क्रिया ।—**अर्हा** (**पट्टार्हा**)–(स्त्री०) पटरानी । —**उपाध्याय** (**पट्टोपाध्याय**)–(पुं०) राजा की आज्ञाओं को लिखने वाला मुख्य लेखक, खासकलम ।—**ज**–(न०) एक प्रकार का रेशमी कपड़ा ।—**देवी**,—**महिषी**,—**राज्ञी** –(स्त्री०) पटरानी ।—**वस्त्र**,—**वासस्**– (वि०) बने हुए रेशमी वस्त्र अथवा रंगीन वस्त्र धारण करने वाला ।—**शाक**—(न०)

पट्टवा ।—**सूत्रकार**–(पुं०) रेशमी वस्त्र बुनने वाला आदमी ।

पट्टक—(पुं०) [पट्ट+कन्] तख्ती । धातु की चपटी पट्टी जिस पर राजकीय आज्ञा या दान आदि की सनद खोदी जाय । चोट या घाव की पट्टी । दस्तावेज ।

पट्टन—(न०), **पट्टनी**–(स्त्री०) [पटन्ति गच्छन्ति वाणिज्ये यत्र,√पट्+तनप्] [पट्टन+ङीप्] नगर । बड़ा नगर ।

पट्टला—(स्त्री०) मण्डल, जिला । समाज ।

पट्टिका—(स्त्री०) [पट्टी+कन्–टाप् ह्रस्व] पट्टी, तख्ती । प्रमाणपत्र, सनद । वस्त्रखण्ड, कपड़े का टुकड़ा । 'वल्कलैकदेशाद्विपाट्य पट्टिका' का० । रेशमी वस्त्र का टुकड़ा; घाव या चोट की पट्टी । पठानी लोध ।—**वायक**–(पुं०) रेशमी वस्त्र बनाने वाला जुलाहा या कोरी ।

पट्टिश, पट्टिस, पट्टीश, पट्टीस—(पुं०) [√पट्+टिश (स) नृ, पक्षे पट्टी√शो वा √सो+क] एक प्रकार का बड़ी पैनी नोक का भाला, पटा ।

पट्टी—(स्त्री०) [पट्ट+ङीप्] पठानी लोध । माथे का आभूषण-विशेष, खौर । घोड़े का पेटबंद या तंग ।

पट्टोलिका—(स्त्री०) [पट्ट पट्टाख्यम् उलति, प्राप्नोति, पट्ट√उल्+ण्वुल्, –टाप्, इत्व] पट्टा, जो भूमि जोतने का जोते को दिया जाता है । लिखित कानूनी व्यवस्था ।

√पठ्—भ्वा० पर० सक० पढ़ना । पाठ करना । अध्ययन करना । उद्धृत करना । प्रकट करना । घोषणा करना । उल्लेख करना । वर्णन करना । पठति, पठिष्यति, अपाठीत् –अपठीत् ।

पठन—(न०) [√पठ्+ल्युट्] पढ़ना । पाठ करना । उल्लेख करना । अध्ययन करना ।

पठि—(स्त्री०) [√पठ्+इन्] पढ़ना । अध्ययन करना ।

पठित—(वि०) [√पठ्+क्त] पढ़ा हुआ । पाठ किया हुआ । अधीत ।

√पण्—भ्वा० आत्म० सक० खरीदना, अदलबदल करना । मोल भाव करना । दाँव लगाना, होड़ बदना । जोखों उठाना । खेल में जीतना । पणते, पणिष्यते, अपणिष्ट । स्तुति करना । पणायति, पणायिष्यति, अपणायीत् ।

पण—(पुं०) [√पण्+अप्] पासे से खेलना या दाँव लगाकर खेलना । कोई खेल जो दाँव लगाकर या होड़ बदकर खेला जाय । दाँव पर रखी हुई वस्तु । शर्त, ठहराव, इकरार । मजदूरी, भाड़ा । पुरस्कार, इनाम । रकम जो किसी सिक्के में हो या कौड़ियों में । सिक्का-विशेष जो ८ कौड़ियों का होता था । मूल्य, दाम । धनदौलत, सम्पत्ति । बिक्री के लिये वस्तु । व्यवसाय, बनिज । दूकान । फेरी वाला । शराब खींचने वाला । मकान, घर । सेना की चढ़ाई का खर्च । मुट्ठी भर कोई भी वस्तु । विष्णु ।—**अङ्गना** (पणाङ्गना),—**स्त्री**–(स्त्री०) वेश्या, रंडी ।—**अर्पण** (पणार्पण)–(न०) इकरारनामा । ठेका ।—**ग्रन्थि**–(पुं०) मंडी, पैंठ ।—**बन्ध**–(पुं०) सन्धि । इकरारनामा, शर्तनामा ।

पणता—(स्त्री०), **पणत्व**–(न०) [पण+तल्–टाप्] [पण+त्व] कीमत, मूल्य, दाम ।

पणन—(न०) [√पण्+ल्युट्] खरीदने-बेचने की क्रिया । बाजी लगाना, शर्त लगाना । प्रतिज्ञा करना, इकरार करना, कौल करना ।

पणव—(पुं०), **पणवा**–(स्त्री०) [पणं स्तुति वाति, पण√वा+क] [पणव+टाप्] छोटा ढोल । एक वर्णवृत्त ।—**आनक** (पणवानक)–(पुं०) नगाड़ा; 'सहसैवाभ्यहन्यन्त पणवानकगोमुखाः' भग० १.१३ ।

पणविन्—(पुं०) [पणव+इनि] शिव ।

पणस—(पुं०) [√पण्+असच्] बिक्री की वस्तु ।

पणाया—(स्त्री०) [√पण् + आय+अप्–टाप्] व्यवसाय। बाज़ार। व्यापार का लाभ। जुआ। प्रशंसा।

पणायित—(वि०) [√पण् + आय+क्त] प्रशंसित। खरीदा हुआ। बेचा हुआ।

पणि—(स्त्री०) [√पण्+इन्] बाजार। मंडी। (पुं०) लोभी। कृपण। पापी जन।

पणिक—(वि०) [पण्+ठन्] ५० पण का (जुर्माना)।

पणित—(वि०) [√पण+क्त] खरीदा या बेचा हुआ। दाँव पर लगाया हुआ। (न०) दाँव। होड़।

पणितृ—(पुं०) [√पण् + तृच्] व्यवसायी, सौदागर।

√पण्ड्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। पण्डते, पण्डिष्यते, अपण्डिष्ट। चु० पर० सक० नाश करना। पण्डयति, पण्डयिष्यति, अपपण्डत्।

पण्ड—(पुं०) [पण्डते निष्फलत्वं प्राप्नोति, √पण्ड्+अच् वा √पण्+ड] हिजड़ा, नपुंसक।

पण्डा—(स्त्री०) [पण्ड+टाप्] सत्-असत् का विवेक करने वाली बुद्धि। निश्चयात्मिका बुद्धि। ज्ञान। विद्या।—**अपूर्व (पण्डापूर्व)**–(न०) अदृष्ट फल की अप्राप्ति, भाग्य में जो लिखा हो उसका न होना।

पण्डावत्—(वि०) [पण्डा+मतुप्, वत्व] पण्डा-युक्त, बुद्धिमान्। (पुं०) विद्वान्, पण्डित।

पण्डित—(वि०) [पण्डा+इतच्] विद्वान्। निपुण। (पुं०) शास्त्र के तात्पर्य को जानने वाला विद्वान् व्यक्ति। वह व्यक्ति जिसमें सत्-असत् का विवेक करने की शक्ति हो। शिव। एक गंधद्रव्य, सिह्लक।—**मण्डल**–(न०)—**सभा**–(स्त्री०) विद्वानों का समुदाय।—**मानिक,**—**मानिन्**–(वि०) अपने को पण्डित मानने वाला।—**वादिन्**–(वि०) अपने को बुद्धिमान् समझने का दावा रखने वाला।

पण्डितक—(वि०) [पण्डित+कन्] विद्वान्। चतुर। (पुं०) विद्वान् आदमी।

पण्डितजातीय—(वि०) [पण्डित+जातीयर्] कुछ पंडित।

पण्डितिमन्—(पुं०) [पण्डित + इमनिच्] पांडित्य, पंडिताई, विद्वत्ता।

पण्य—(वि०) [√पण्+यत्] क्रय-विक्रय के योग्य। व्यवहार या व्यापार के योग्य। (पुं०) विक्रेय वस्तु, सौदा। रोजगार, व्यापार। मूल्य, दाम। दुकान।—**अङ्गना (पण्याङ्गना)**,—**योषित्**,—**विलासिनी**–(स्त्री०) रंडी, वेश्या।—**अजिर (पण्याजिर)**–(न०) गाँव।—**आजीव (पण्याजीव)**–(पुं०) व्यापारी।—**आजीवक (पण्याजीवक)**–(न०) बाजार।—**निर्वाहण** (न०) चुंगी या महसूल दिये बिना ही माल निकाल ले जाना (कौ०)।—**पति**–(पुं०) बहुत बड़ा व्यापारी।—**फलत्व**–(न०) व्यापार में उन्नति या लाभ।—**भूमि**–(स्त्री०) मालगोदाम।—**वीथिका**—**वीथी**,—**शाला**–(स्त्री०) बाजार। दुकान।—**समवाय**–(पुं०) थोक बिक्री का माल।

पण्या—(स्त्री०) [पण्य+टाप्] वेश्या।

√पत्—भ्वा० पर० अक० गिरना। नीचे उतरना। आकाश में उड़ना। पतति, पतिष्यति, अपप्तत्। चु० पर० सक० गिरना। उड़ना। पतयति–पतति–पातयति, पातयिष्यति, अपीपतत्।

पत—(वि०) [√पत्+अच्] पुष्ट। (पुं०) उड़ान। गमन। पतन। उतार।—**ग**–(पुं०) पक्षी।

पतक—(वि०) [पत+कन्] गिरने वाला। नीचे उतरने वाला। (पुं०) ज्योतिष सम्बन्धी सारिणी।

पतङ्ग—(पुं०)[√पत्+अङ्गच्]सूर्य; 'विकसति हि पतङ्गस्योदये पुण्डरीकं' उत्त० ६·१२। एक प्रकार का धान, जड़हन। जलमहुआ। गेंद। विष्णु। पिशाच। अग्नि। अश्व। बाण। मक्षिका। कोई परदार कीड़ा जो आग की ज्योति देखते ही पहुँच जाता है। (न०) पारा। एक प्रकार का चंदन।

पतङ्गम—(पुं०) [पत+√गम्+खच्, मुम्] पक्षी। पतिंगा, शलभ।

पतङ्गिका—(स्त्री०) [पतङ्ग+कन्—टाप्, इत्व] एक तरह की मधुमक्खी। छोटी चिड़िया।

पतङ्गिन्—(पुं०) [पतङ्गः उत्प्लवेन गमनम् अस्ति अस्य, पतङ्ग+इनि] पक्षी।

पतञ्चिका—(स्त्री०) [पतम् अभिमतं शत्रुं चिक्कयति पीडयति, पृषो० साधुः] धनुष की डोरी।

पतञ्जलि—(पुं०) [पतन् अञ्जलिः नमस्यतया यस्मिन्, शक० पररूप] महाभाष्य के प्रसिद्ध रचयिता, योग दर्शन के निर्माता।

पतत्—(वि०)-(स्त्री०—**पतन्ती**) [√पत्+शतृ] गिरता हुआ। नीचे आता हुआ। उड़ता हुआ। (पुं०) पक्षी।—**ग्रह**-(पुं०) सेना। जो बगल में रखी जाय। पीकदान।—**भीरु**-(पुं०) बाज पक्षी, शिकरा।

पतत्र—(न०) [√पत्+अत्रन्] डैना, पर। वाहन सवारी।

पतत्रि-(पुं०) [√पत् + अत्रिन्] पक्षी।

पतत्रिन्—(पुं०) [पतत्र+इनि] पक्षी। तीर। घोड़ा। (न०) (द्वि०) [वैदिक] दिन और रात।—**केतन**-(पुं०) विष्णु।—**राज**-(पुं०) गरुड़।

पतन—(न०) [√पत्—भावे ल्युट्] उड़ने की क्रिया। नीचे आने की क्रिया। अस्त होना, डूबना। नरक में गिरना। स्वधर्म-त्याग। गौरवान्वित पद से च्युत होना। नाश। ह्रास। मृत्यु। तटक पड़ना। (गर्भ) पात। (अङ्कगणित में) बाकी। ग्रह का विस्तार।—**धर्मिन्**-(वि०) नाशवान्, नश्वर।

पतनीय—(वि०) [√पत्+अनीयर्] पतन के योग्य। पतित होने के योग्य। जातिभ्रष्ट करने वाला। (न०) जातिभ्रष्टकर पाप।

पतम, पतस—(पुं०) [√पत् + अम] [√पत्+असच्] चन्द्रमा। पक्षी। टिड्डी।

पतयालु, पतयिष्णु—(वि०) [√पत्+णिच् +आलुच्] [√पत्+णिच् + इष्णुच्] गिरने योग्य, पतनशील।

पताका—(स्त्री०) [पत्यते ज्ञायते कस्यचित् भेदोऽनया, √पत्+आक+टाप्]झंडा। झंडा फहराने का डंडा, ध्वज। चिह्न, निशान। प्रतीक। सौभाग्य। नाटक में एक विशिष्ट स्थल, दे० 'पताकास्थानक'। तीर चलाने में उँगलियों की एक विशेष प्रकार की मुद्रा। प्रासंगिक कथावस्तु का एक भेद (न०)।—**अंशुक** (**पताकांशुक**)-(न०) झंडा।—**स्थानक**-(न०) नाटक में वह स्थल जहाँ किसी सोचे हुए विषय या प्रस्तुत प्रसंग से मेल खाने वाला दूसरा विषय या प्रसंग उपस्थित हो जाय। साहित्यदर्पण में इसकी परिभाषा इस प्रकार है —'यत्रार्थे चिन्तितेऽन्यस्मिंस्तल्लिङ्गोऽन्यः प्रयुज्यते। आगन्तुकेन भावेन पताकास्थानकं तु तत्।'

पताकिक—(वि०) [पताका+ठन् —इक] पताका धारण करने वाला, झंडाबरदार।

पताकिन्—(वि०) [पताका+इनि] झंडा ले चलने वाला। झंडियों से भूषित या सजाया हुआ। (पुं०) राजचिह्न-सूचक झंडा ले चलने वाला व्यक्ति। झंडा रथ। राशियों का एक वेध (ज्यो०)।

पताकिनी—(स्त्री०)[पताकिन्+ङीप्] सेना, फौज; 'रथवर्त्मरजोऽप्यस्य कुत एव पताकिनी' र० ४.८२।

पतापत—(वि०) [√पत् + यङ —लुक्

+अत् नि० साधुः] गमनशील। पतनशील।

पतिंवरा—(स्त्री०) [पति√वृ+खच्, मुम्] स्वेच्छा से वर चुनने वाली कन्या। वह कन्या जो अपना वर चुनने के लिये स्वयंवरभूमि में उतरी हो: 'यं यं व्यतीयाय पतिंवरा सा' र०।

पति—(पुं०) [पाति रक्षति, √पा+डति] किसी वस्तु का स्वामी, मालिक, अधीश। किसी ब्याही हुई औरत का भर्ता, शौहर, कान्त। शासक। अपरिमित ज्ञानशक्ति तथा प्रभुशक्ति से युक्त महेश्वर जो जगत् की सृष्टि और संहार के कारण हैं (पाशुपत दर्शन)। जड़। गति। उड़ान। (स्त्री०) स्वामिनी। अधिष्ठात्री।—**घातिनी**–(स्त्री०),—**घ्नी**–(स्त्री०) स्त्री जो पतिघातिनी हो, जिसने अपने पति की हत्या की हो। हाथ की एक रेखा जिसका फल यह है कि जिस स्त्री के वह रेखा हो वह अपने पति के साथ विश्वासघात करे।—**देवता**,—**देवा**–(स्त्री०) वह स्त्री जो अपने पति को देवतातुल्य पूज्य एवं मान्य समझे, सती या साध्वी स्त्री।—**धर्म**–(पुं०) पत्नी का अपने पति के प्रति कर्त्तव्य।—**प्राणा**–(स्त्री०) सती स्त्री।—**लङ्घन**–(न०) पुनर्विवाह करके प्रथम पति की अवहेलना करना।—**लोक**–(पुं०) वह उत्तम परलोक जिसमें पति की आत्मा का निवास हो (मृत्यु के बाद पतिव्रता स्त्री उसी लोक में पहुँचती है जिसमें उसका पति निवास करता है)।—**वेदन**– (पुं०) शिवजी।—(न०) मंत्र-तंत्र से पति को प्राप्त करना।—**व्रता**–(स्त्री०) सती स्त्री।—**सेवा**–(स्त्री०) पतिभक्ति।

पतित—(वि०) [√पत्+क्त] गिरा हुआ। ऊपर से नीचे आया हुआ। आचार, नीति या धर्म से गिरा हुआ, महापापी, अतिपातकी। जातिबहिष्कृत, समाज से निकाला हुआ, जाति या बिरादरी से खारिज। पराजित। अंतर्गत। स्थापित। (न०) उड़ान।—**वृत्त**–(वि०) भ्रष्ट आचरण वाला। जो पतित होकर जीवन बिताये।—**सावित्रीक**–(पुं०) वह द्विज जिसका उपनयन संस्कार या तो हुआ ही न हो या हुआ हो तो विधिपूर्वक न हुआ हो।

पतित्व—(न०) [वैदिक] [पति+त्व] स्वामी या प्रभु होने का भाव। पाणिग्राहक या पति होने का भाव। विवाह।

पतित्वन—(न०) [पति+त्वनप्] यौवन।

पतिवती—(स्त्री०) [वैदिक] [पति+मतुप्, ततः ङीप्] सधवा, जीवित पति वाली।

पतिवत्नी—(स्त्री०) [पति+मतुप्, वत्व –ङीप्, नुगागम] स्त्री जिसका पति जीवित हो, सधवा।

पतीयन्ती—(स्त्री०) [पतिम् इच्छति, पति +क्यच्+शतृ–ङीप्] पति-कामना वाली स्त्री अथवा पति के योग्य पत्नी।

पतेर—(वि०) [√पत्+एरक्] उड़ने वाला, उड़ाकू। गमन करने वाला। (पुं०) पक्षी। गड्ढा। एक माप, आढ़क।

पत्तन—(न०) [पतन्ति गच्छन्ति जना यस्मिन्, √पत्+तनन्] नगर, शहर; 'पत्तने विद्यमानेऽपि ग्रामे रत्नपरीक्षा' माल० १। मृदङ्ग।

पत्ति—(पुं०) [पद्यते विपक्षसेनां प्रति पद्भ्यां गच्छति, √पद्+ति] पैदल, पैदल सैनिक। पैदल चलने वाला यात्री। वीर। (स्त्री०) फौज का एक छोटा दस्ता जिसमें एक रथ, एक हाथी, तीन घुड़सवार और पाँच पैदल सिपाही होते हैं। पैदल चलना।—**काय**–(पुं०) पैदल सिपाहियों की पल्टन।—**गणक**–(पुं०) वह सैनिक अधिकारी जिसका काम पैदल सैनिकों को एकत्र करना तथा उनकी गणना करना हो।—**पाल**–(पुं०) पाँच या छः सिपाहियों का अग्रणी या नायक।—**व्यूह**–(पुं०) वह व्यूह जिसमें आगे कवच-धारी सैनिक हों और पीछे धनुर्धर (कौ०)।

—संहति–(स्त्री०) पैदल सिपाहियों की टुकड़ी ।

पत्तिक—(वि०) [पत्ति+कन्] पैदल गमन करने वाला ।

पत्तिन्—(पुं०) [पद्भ्यां तेलति, पाद √तिल्+डिन्, पदादेश] पैदल सैनिक ।

पत्नी—(स्त्री०) [पत्युः यज्ञे सम्बन्धो यया, पति+ङीप्, नुक्] किसी पुरुष से संबद्ध वह स्त्री जिसके साथ उसका ब्याह हुआ हो । परिणीता स्त्री, भार्या, जोरू ।—**भाट** (**पत्न्याट**)–(पुं०) जनानखाना, अन्तःपुर । —**शाला**–(स्त्री०) पत्नी के रहने और गृहस्थी के योग्य कमरा । यज्ञशाला में वह घर जो यजमानपत्नी के लिये बनाया जाता है । यह घर यज्ञशाला से पश्चिम की ओर होता है ।—**संनहन**—(न०) पत्नी की कमर में कमरबंद बाँधना । पत्नी का कमरबंद ।

पत्र—(न०) [√पत्+ष्ट्रन्] वृक्ष का पत्ता । पुष्प की पंखुरी । कमल की पाँखुरी । कागज । पट्टा, दस्तावेज । सुवर्ण या अन्य किसी धातु का पत्र जिस पर कुछ खोदा जाय । डैना, पर । तीर के पर । सवारी (जैसे गाड़ी, घोड़ा, ऊँट) । अंग पर चन्दन आदि से अलंकार बनाना: 'रचय कुचयोः पत्रं चित्रं कुरुष्व कपोलयोः' गीत० १२ । तलवार या छुरी की धार । छुरी, कटार ।—**अङ्ग** (**पत्राङ्ग**) –(न०) भोजपत्र का पेड़ । लाल चन्दन । कमलगट्टा । पतंग, बक्कम ।—**अङ्गुलि** (**पत्राङ्गुलि**)–पत्रभंग । माथे पर त्रिपुण्ड्र लगाना । —**अञ्जन** (**पत्राञ्जन**)–(न०) स्याही । कालिख पोतना ।—**आढ्य** (**पत्राढ्य**)–(न०) पीपलामूल । पर्वततृण । तृणाढ्य । पतंग, बक्कम । नरसल । तालीस पत्र ।—**आवलि** (**पत्रावलि**)–(स्त्री०) सिन्दूर । पत्र रचना, पत्तियों की पतनार । शरीर पर चन्दनादि से विशेष रूप से लकीरें कर शरीर का शृङ्गार करना ।—**आवली** (**पत्रावली**) –(स्त्री०) पत्तों की पंक्ति या श्रेणी । पीपल के कोमल पत्तों का, जव और शहद के साथ संमिश्रण ।—**आहार** (**पत्राहार**) (पुं०) पत्ते खाकर निर्वाह करना ।—**ऊर्ण** (**पत्रोर्ण**)–(न०) रेशमी वस्त्र । सोना पाठा ।—**उल्लास** (**पत्रोल्लास**)–(पुं०) कली या अँखुआ ।—**काहला**–(स्त्री०) वह शोर जो पक्षी के परों की फड़फड़ाहट अथवा पत्तों से हो ।—**कृच्छ्र**–(न०) एक व्रत जिसमें केवल पत्तों का काढ़ा पीकर रहना पड़ता है ।—**घना**–(स्त्री०) सातला नामक पौधा ।—**ज**–(पुं०) तेजपात । —**झङ्कार**–(पुं०) नदी की धार ।—**दारक**–(पुं०) आरा ।—**नाडिका**–(स्त्री०) पत्ते की नसें ।—**परशु**–(पुं०) छेनी ।—**पाल**–(पुं०) बड़ी कटार, लंबी छुरी ।—**पाली**–(स्त्री०) बाण का वह भाग जिसमें पर लगे हों । कैंची ।—**पाश्या**–(स्त्री०) माथे का आभूषण-विशेष, टीका ।—**पिशाचिका**—(स्त्री०) पत्तों की बनी टोपी ।—**पुट**–(न०) दोना या पत्ते का बना कोई पात्र ।—**पुष्पा**–(स्त्री०) छोटे पत्ते की तुलसी ।—**बन्ध**–(पुं०) पुष्पों की सजावट ।—**बाल**, —**वाल**–(पुं०) डाँड़ ।—**भङ्ग** (पुं०),—**भङ्गि**,—**भङ्गी**–(स्त्री०) वे चित्र या रेखा जो सौन्दर्यवृद्धि के उद्देश्य से स्त्रियाँ कस्तूरी केसर आदि के लेप अथवा सुनहले, रुपहले पत्तरों (कटोरियों) से भाल, कपोल आदि पर बनाती हैं । पत्रभंग बनाने की क्रिया ।—**यौवन**–(न०) कोंपल । —**रञ्जन**–(न०) पृष्ठ की सजावट, पत्ते का शृङ्गार ।—**रथ**–(पुं०) पक्षी ।—**०इन्द्र**-(पुं०) गरुड़ ।—**०केतु**–(पुं०) विष्णु ।—**रेखा**,—**लेखा**,—**वल्लरी**,—**वल्लि**,—**वल्ली**, –(स्त्री०) दे० 'पत्रभङ्ग' ।—**लता**–(स्त्री०) वह लता जिसमें पत्ते ही पत्ते हों । लंबी छुरी । —**वाह**–(पुं०) (बाण) जो परों से सम्पन्न हो । पक्षी ।—**वाह**–(पुं०) पक्षी । तीर । हरकारा, डाकिया, चिट्ठीरसाँ ।—**विशेषक**–

(पुं०) दे० 'पत्रभङ्ग' ।—**वेष्ट**–(पुं०) एक प्रकार का कर्णभूषण, ताटंक ।—**शाक**–(पुं०) पत्तों की भाजी ।—**शिरा**–(स्त्री०) पत्ते की नस ।—**श्रेष्ठ**–(पुं०) बिल्ववृक्ष, बेल का पेड़ ।—**सूचि**–(स्त्री०) काँटा ।—**हिम**– (न०) ऐसा मौसम जिसमें पाला पड़े या अधिक ठंडक रहे, हिमदुदिन ।

पत्रक—(न०) [पत्र+कन्, वा पत्र√कॄ+क] पत्ता । तेजपत्ता । पत्तों की श्रेणी । शरीर का सौन्दर्य बढ़ाने के लिये शरीर पर बनायी गयीं रेखाएँ ।

पत्रणा—(स्त्री०) [पत्र+णिच्+ युच्–टाप्] दे० 'पत्रभङ्ग' । तीर को परों से सम्पन्न करने की क्रिया ।

पत्रिका—(स्त्री०)[पत्री+कन्–टाप्, ह्रस्व] चिट्ठी, खत । कोई छोटा लेख या लिपि । कागज का कोई टुकड़ा या पत्ता । [पत्र+ठन्–इक–टाप्] कदली आदि नवपत्रिका । एक तरह का कपूर ।

पत्रिणी—(स्त्री०) [पत्रिन्+ङीप्] अँखुआ, अंकुर ।

पत्रिन्—(वि०) [स्त्री०—**पत्रिणी**] [पत्र+इनि] परदार । जिसमें पत्र या पत्ते हों । (पुं०) तीर । पक्षी । बाज पक्षी । पर्वत । रथ । वृक्ष ।

पत्री—(स्त्री०) [पत्र+ङीप्] चिट्ठी । अँखुआ ।

पत्सल—(पुं०) [√पद्+सरन्, रस्य लः] मार्ग, रास्ता ।

√पथ्—भ्वा० पर० सक० जाना । पथति, पथिष्यति, अपथीत् ।

पथ—(पुं०) [√पथ्+क (घञर्थे)] मार्ग, रास्ता । कार्य या व्यवहार की पद्धति ।—**अतिथि** (**पथातिथि**)–(पुं०) यात्री, राहगीर ।—**कल्पना** –(स्त्री०) इन्द्रजाल, जादू का खेल ।—**दर्शक**–(पुं०) रास्ता बतलाने वाला, रहनुमा ।

पथक—(पुं०)[पथे कुशलः] रास्ता जानने वाला । मार्ग बतलाने वाला ।

पथत्—(पुं०) [√पथ्+शतृ]गमन-कर्त्ता । मार्ग, सड़क ।

पथिक—(पुं०) [पथिन्+ष्कन्] रास्ता चलने वाला, राही, यात्री ।—**आश्रय** (**पथिकाश्रय**)–(पुं०) सराय, धर्मशाला ।—**सन्तति**, —**संहति** (स्त्री०),—**सार्थ**–(पुं०) यात्रियों का दल ।

पथिका—(स्त्री०) [पथिक+टाप्] मुनक्का ।

पथिन्—(पुं०) [√पथ्+इनि] राह, मार्ग; यात्रा । पहुँच । बर्ताव का ढंग । पंथ, सम्प्रदाय, सिद्धान्त । नरक का विभाग । (समास में 'न्' का लोप हो जाता है । इसका प्रथमांत रूप 'पन्था' होता है । समास में उत्तरपद के रूप में प्रयुक्त होने पर इसका रूप 'पथ' हो जाता है, जैसे—दृष्टिपथ, सत्पथ) ।—**कृत्**–(पुं०) [वैदिक] पथप्रदर्शक । अग्नि का नाम ।—**देय**–(न०) सार्वजनिक सड़कों पर लगाया गया राजकर ।—**द्रुम**–(पुं०) कत्था का पेड़ ।—**प्रज्ञ**–(वि०) रास्तों का जानकार ।—**वाहक**–(वि०)निष्ठुर । (पुं०) शिकारी, चिड़ीमार, बहेलिया । बोझा ढोने वाला कुली ।

पथिल—(पुं०) [√पथ्+इलच्] यात्री, राहगीर, मुसाफिर ।

पथ्य—(वि०) [पथिन् +यत्] लाभदायक, गुणकारी । योग्य, उपयुक्त, उचित । (न०) रोगी के लिये हितकर वस्तु या आहार । नीरोगता । कल्याण; 'उत्तिष्ठमानस्तु परो नोपेक्ष्यः पथ्यमिच्छता' शि० २.१० । हर्रे का पेड़ । सेंधा नमक ।—**अपथ्य** (**पथ्यापथ्य**)–(न०) हितकारी और अहितकारी वस्तुएँ ।

पथ्या—(स्त्री०) [पथ्य+टाप्] मार्ग, रास्ता । हर्रे । एक मात्रिक छंद । चिभिटा । वनककोड़ा ।

√पद्—दि० आत्म० सक० अक० जाना । चलना-फिरना । प्राप्त करना । अभ्यास करना । अनुष्ठान में लाना । [वैदिक] थक कर गिर पड़ना । [वैदिक] नाश करना । पद्यते, पत्स्यते, अपादि ।

पद्—(पुं०) [√पद्+क्विप्] पैर । चतुर्थ भाग ।—**ग**-(पुं०) पैदल सिपाही ।—**ज** (**पज्ज**)-(पुं०) शूद्र ।—**त्रा** (**पत्त्रा**),—**त्री** (**पत्त्री**)-(स्त्री०) जूता ।—**निष्क** (**पन्निष्क**)-(पुं०) निष्क सिक्के का चतुर्थांश ।—**रथ** (**पद्रथ**)-(पुं०) पैदल सिपाही ।—**हति** (**पद्धति**),—**हती** (**पद्धती**)-(स्त्री०) मार्ग, रास्ता । प्रथा, रीति । परिपाटी, प्रणाली । पंक्ति, पाँत । वह ग्रंथ जिसमें किसी ग्रंथ का सारांश समझाया गया हो । जाति आदि सूचित करने के लिये जोड़ा गया उपनाम जिसे नाम के साथ लगाते हैं (जैसे—शर्मा वर्मा, गुप्त और दास) । विवाह आदि संस्कारों की विधि सूचित करने वाली पुस्तक ।—**हिम** (**पद्धिम**)-(न०) पैर का ठंढापन, पद-शैत्य ।

पद—(पुं०) [√पद्+अच्] पैर । चतुर्थ भाग, चौथाई हिस्सा । (न०) डग, कदम; 'जनपदे न गदः पदमादधौ' र० ९.४ । पैर का निशान, चरण चिह्न । चिह्न, निशान । स्थान । आधार । योग्यता या कार्य के अनुसार नियत स्थान, ओहदा, दर्जा । विषय । पात्र । किसी छंद या पद्य का चरण या चौथा भाग । विभक्ति, प्रत्यय के युक्त शब्द । मंत्र में प्रयुक्त शब्दों को अलग-अलग करना, मंत्रगत शब्दों का पृथक्करण (वेद) । वाक्य आदि का कोई अंश । बिसात का कोष्ठ या खाना । किरण । प्रदेश । दान की ये वस्तुएँ—जूता, छाता, कपड़ा, अँगूठी, कमंडलु, आसन, बरतन और भोज्य वस्तु । वस्तु । व्यवसाय । त्राण, रक्षा । बहाना । वर्गमूल (गणित) । चर्म-पादुका, जूता ।—**अङ्क** (**पदाङ्क**)-(पुं०) —**चिह्न**-(न०) पैर का निशान ।—**अङ्गुष्ठ** (**पदाङ्गुष्ठ**)-(पुं०) पैर का अँगूठा ।—**अध्ययन** (**पदाध्ययन**)-(न०) पदपाठ के अनुसार वेदाध्ययन ।—**अनुग** (**पदानुग**)-(वि०) जो पीछे-पीछे चले । अनुकूल । (पुं०) अनुयायी, पिछलग्गू ।—**अनुराग** (**पदानुराग**)-(पुं०) चाकर, नौकर । सेना ।—**अनुशासन** (**पदानुशासन**)-(न०) व्याकरण ।—**अनुषङ्ग** (**पदानुषङ्ग**)-(पुं०) कोई वस्तु जो पद में जोड़ दी जाय ।—**अन्त** (**पदान्त**)-(पुं०) किसी वाक्यखण्ड की पंक्ति की समाप्ति । शब्द का अन्त ।—**अन्तर** (**पदान्तर**)-(न०) दूसरा डग या कदम । एक डग की दूरी । दूसरा पद । दूसरा स्थान ।—**अन्त्य** (**पदान्त्य**)-(वि०) पद के अंत में स्थित, अन्तिम ।—**अब्ज** (**पदाब्ज**),—**अम्भोज** (**पदाम्भोज**),—**अरविन्द** (**पदारविन्द**),—**कमल**,—**पङ्कज**,—**पद्म**-(न०) कमल जैसे पैर ।—**अर्थ** (**पदार्थ**)-(पुं०) पद या शब्द का अर्थ । वह वस्तु जिसका किसी शब्द से बोध हो । उन विषयों में कोई एक जिनके नाम, रूप आदि का कथन न्याय, वैशेषिक आदि दर्शनों में किया गया है । कोई अभिधेय वस्तु । न्याय में १६, वैशेषिक में ६ या ७, सांख्य में २५, योग में २६ और वेदांत में दो पदार्थ माने गये हैं ।—**आघात** (**पदाघात**)-(पुं०) पैर का प्रहार ।—**आजि** (**पदाजि**)-(पुं०) पैदल सिपाही ।—**आदि** (**पदादि**)-(पुं०) वाक्य-खण्ड के आरम्भ की पंक्ति । किसी शब्द का आदि या प्रथम अक्षर ।—**०विद्** (**पदादिविद्**)-(पुं०) कुशिष्य, बुरा शागिर्द ।—**आवली** (**पदावली**)-(स्त्री०) पदों या शब्दों की परंपरा । किसी रचना में निबद्ध अनेक पद या शब्द । शब्दों की लड़ी । किसी कवि या लेखक द्वारा प्रयुक्त शब्द-समूह; 'मधुरकोमल-कान्त-पदावली' गीत० १ ।—

आसन (पदासन)–(न०) पैर रखने की काठ की छोटी चौकी ।—आहत (पदाहत) –(वि०) लतियाया हुआ ।—कार,—कृत् (पु०) पदपाठ का रचयिता ।—क्रम–(पु०) चलना, गमन ।—ग–(पु०) पैदल सिपाही । –गति–(स्त्री०) चाल ।—(पदच्छेद),—विच्छेद,—विग्रह–(पु०) वाक्य या वाक्यांश के पदों को एक दूसरे से अलग करना । वाक्य के संहित और समास-गत पदों को विभक्त करना ।—च्युत–(वि०) जो अपने स्थान या पद से पृथक् किया गया हो ।—तल–(न०) तलवा ।—त्वरा-(स्त्री०) –जूता ।—त्राण–(पु०) जूता, खड़ाऊँ आदि ।—न्यास–(पु०) कदम रखना । पदचिह्न । विशेष ढंग से पैर रखना । गोखुर, गोखरू । श्लोकपाद लिखना ।—पङ्क्ति–(स्त्री०) पदचिह्नों की श्रेणी । शब्दा-वली । ईंट । सूखी ईंट ।—पाठ–(पु०) वेद-मंत्रों का वह क्रम जिसमें उनमें प्रयुक्त सभी पद विभक्त करके अपने मूल रूप में अलग-अलग रखे गये हों । वह ग्रन्थ जिसमें वेद-मंत्रों का ऐसा संपादन किया गया हो (संहिता-पाठ का उलटा) ।—पात,—विक्षेप, डग भरना ।—बन्ध–(पु०) कदम रखना । —भञ्जन–(न०) शब्दों का पृथक्करण । –भञ्जिका–(स्त्री०) टीका जिसमें शब्दों की सन्धियों और शब्दों के समासों पर अधिक श्रम किया गया हो । बही । पञ्चाङ्ग ।—भ्रंश –(पु०) पदच्युति, मुअत्तली ।—माला–(स्त्री०) पद-श्रेणी । मोहन-विद्या ।—मैत्री–(स्त्री०) किसी छन्द या पद्य में एक ही शब्द या वर्ण की चमत्कार-पूर्ण आवृत्ति । दो से अधिक पदों की एक दूसरे के अनुरूप स्थिति, अनु-प्रास ।—योपन–(न०) [वैदिक] बेड़ी ।—रिपु–(पु०) काँटा ।—वाय–(पु०) [वैदिक] नेता ।—विष्टम्भ–(पु०) पग, कदम ।—वृत्ति–(स्त्री०) दो शब्दों की सन्धि ।—वेदिन्—(पु०) शब्द-शास्त्र या भाषाविज्ञान का ज्ञाता ।—व्याख्यान–(न०) शब्दों की व्याख्या या टीका ।—संघात,—संघाट–(पु०) संहिता के उन शब्दों का मिलान जो पृथक् हैं । टीकाकार, व्याख्यान करने वाला ।—स्थ–(वि०) पैदल चलने वाला । अधि-कारी या उच्चपदस्थ ।—स्थान–(न०) पदचिह्न ।

पदक—(न०) [पद+कन्] पग । स्थान । ओहदा । गले का एक गहना जिसमें किसी देवता के पैरों के चिह्न अंकित होते हैं और जो प्रायः बालकों की रक्षा के लिये पहनाया जाता है । पूजन के लिये बनायी हुई किसी देवता के चरण की प्रतिमूर्ति । कोई बहुत अच्छा या कमाल का काम करने पर किसी को उपहार रूप में दिया जाने वाला सोने-चाँदी आदि के सिक्के जैसा गोल या अन्य आकार का टुकड़ा जिस पर प्रायः देने वाले का नाम अंकित रहता है, तमगा । (पु०) [पदं वेत्ति, पद+वुन्] वेदों का पदपाठ करने में प्रवीण व्यक्ति । एक गोत्र-प्रवर्तक ऋषि ।

पदवि, पदवी—(स्त्री०) [√पद्+अवि] [पदवि+ङीष्] मार्ग, रास्ता; 'अनुयाहि साधुपदवीं' भर्तृ० २.७७ । चलन, प्रणाली, पद्धति । स्थान । राज, संस्था आदि की ओर से किसी को दी जाने वाली आदर या योग्यतासूचक उपाधि, खिताब । दरजा, ओहदा ।

पदात, पदाति—(पु०) [पद √अत्+अच्] [पद√अत्+इन्] पैदल सिपाही; 'पत्तिः पदाति' र० ७.३७ । पैदल चलने वाला ।—अध्यक्ष (पदाताध्यक्ष, पदात्यध्यक्ष)–(पु०) पैदल सेना का अधिपति ।

पदातिक, पदातीय—(पु०) [पदाति+कन्] [पदाति+छ] दे० 'पदाति' ।

पदातिन्—(वि०) [पदात+इनि, वा पद

√पत्+णिनि] पैदल सेना रखने वाला। पैदल चलने वाला। (पुं०) पैदल सिपाही।

पद्वार—(पुं०) [पद √ऋ+अण्] पैर की धूल।

पद्रि—(वि०) [√पद्+इन्] [वैदिक] पैदल चलने वाला। एक पाद लंबा। केवल एक दल या विभाग वाला।

पद्विक—(पुं०) [पादेन चरति, पाद+ष्ठन्, पादस्य पद्वादेशः] पैदल सिपाही। (न०) पैर की नोक।

पद्वेक—(पुं०) बाज पक्षी।

पद्म—(न०) [√पद्+मन्] कमल। वे बिंदियाँ जो हाथी की सूँड़ आदि पर होती हैं। एक प्रकार की मोर्चाबंदी, पद्मव्यूह। ६ चक्रों में से कोई एक (तंत्र)। पदमकाठ। सीसा। पुष्करमूल। एक पुराण। एक कल्प (पुराण)। दाग, धब्बा, चिह्न। मनुष्य के शरीर पर का कोई दाग, तिल आदि। पैर में होने वाला एक भाग्य-सूचक चिह्न (सामुद्रिक)। खंभे का एक भाग (वास्तुविद्या)। एक नक्षत्र। एक गंधद्रव्य। एक नरक। एक वर्णवृत्त। कमल की जड़। (पुं०) एक प्रकार का मंदिर। राम। कार्त्तिकेय का एक अनुचर। एक प्रकार का साँप। हाथी। कुबेर की नौ निधियों में से एक। १०० नील की संख्या। १६ प्रकार के रति-बंधों (मैथुन के आसनों) में से एक—"हस्ताभ्यां च समालिंग्य नारीं पद्मासनोपरि। रमेद् गाढं समाकृष्य बन्धोऽयं पद्मसंज्ञकः॥" (वि०) [पद्म+अच्] कमल के रंग का।—**अक्ष** (**पद्माक्ष**)–(वि०) कमल सदृश नेत्रों वाला। (पुं०) सूर्य। विष्णु। (न०) कमलगट्टा।—**अन्तर** (**पद्मान्तर**)–(न०, पुं०) कमल-पत्र।—**आकर** (**पद्माकर**)–(पुं०) बड़ा तालाब जिसमें कमल की बहुतायत हो। जल-पूर्ण सरोवर या तालाब। कमल का तालाब। कमल-समूह।—**आलय** (**पद्मालय**)–(पुं०) सृष्टिकर्ता ब्रह्मा।—**आलया** (**पद्मालया**)–(स्त्री०) लक्ष्मी देवी। लवङ्ग, लौंग।—**आसन** (**पद्मासन**)–(न०) कमल की बैठकी, ध्यान करने के लिये बैठने वालों का आसन-विशेष जिसमें पलथी मार कर सीधे बैठते हैं। (पुं०) सृष्टिकर्त्ता ब्रह्मा। शिव। सूर्य।—**आह्व** (**पद्माह्व**)–(न०) लवङ्ग, लौंग।—**उद्भव** (**पद्मोद्भव**)–(पुं०) ब्रह्मा।—**कर**, —**हस्त**–(वि०) वह जिसके हाथ में कमल हो। (पुं०) विष्णु। कमल सदृश हाथ।—**करा**,—**हस्ता**–(स्त्री०) लक्ष्मी।—**कर्णिका**–(स्त्री०) कमल का बीजकोष। कमल-व्यूह बना कर खड़ी हुई सेना का मध्यवर्ती भाग।—**कलिका**–(स्त्री०) कमल की कली, अनखिला कमल का फूल।—**काष्ठ**–(न०) पद्माख, दवा-विशेष।—**केशर**–(न, पुं०) कमल की तिरी।—**कोश**,—**कोष**,–(पुं०) कमल का सम्पुट, कमल के बीच का छत्ता जिसमें बीज होते हैं। करमुद्रा-विशेष।—**खण्ड**, **षण्ड**–(न०) कमल-समूह।—**गन्ध**, —**गन्धि**–(वि०) कमल जैसी खुशबूवाला। (न०) पद्मकाष्ठ, पद्माख।—**गर्भ**–(पुं०) ब्रह्मा। विष्णु। शिव। सूर्य। कमलपुष्प का भीतरी या मध्यभाग।—**गुणा**,—**गृहा**–(स्त्री०) धन की अधिष्ठात्री देवी, लक्ष्मी। लवङ्ग, लौंग।—**चारिणी**–(स्त्री०) गेंदा। शमी। हल्दी।—**ज**,—**जात**,—**भव**,—**भू**, —**योनि**,—**सम्भव**–(पुं०) कमल से उत्पन्न ब्रह्मा।—**तन्तु**–(पुं०) कमलनाल।—**दर्शन**–(पुं०) लोबान।—**नाभ**, —**नाभि**–(पुं०) विष्णु।—**नाल**–(न०) कमल की डंडी।—**निधि**–(पुं०) कुबेर की नव निधियों में से एक।—**पाणि**–(पुं०) ब्रह्मा। बुद्ध-देव। सूर्य। विष्णु।—**पुराण**–(न०) व्यास-प्रणीत अष्टादश महापुराणों में से एक।—**पुष्प**–(पुं०) कनेर का पेड़। पिकांगपक्षी। पारिभद्रक वृक्ष।—**प्रभ**–(पुं०) एक बुद्ध जिनका अवतार होने को है (बौद्ध)। वर्त-

मान अवसर्पिणी के छठे अर्हत् (जैन)।—प्रिया-(स्त्री०) जरत्कारु मुनि की पत्नी मनसा देवी।—बन्ध-(पुं०) एक प्रकार का चित्र-काव्य जिसमें अक्षरों को ऐसे क्रम से लिखते हैं, जिससे कमल का आकार बन जाता है।—बन्धु-(पुं०) सूर्य। भ्रमर।—बीज-(न०) कमलगट्टा।—भास-(पुं०) विष्णु।—मालिनी-(स्त्री०) धन की अधिष्ठात्री देवी लक्ष्मी।—मुखी-(स्त्री०) दूब।—मुद्रा-(स्त्री०) एक मुद्रा जिसमें दोनों हथेलियों को सामने करके उँगलियाँ नीचे रखते हैं और अँगूठे मिला देते हैं।—योनि-(पुं०) ब्रह्मा।—राग-(पुं०, न०) मानिक या लाल नामक रत्न; 'अशोकनिर्भर्त्सितपद्मराग' कु० ३.५३।—रूपा-(स्त्री०) लक्ष्मी देवी।—रेखा- (स्त्री०) सामुद्रिक शास्त्रानुसार हथेली की कमलाकार रेखा जो धनवान् होने का लक्षण मानी जाती है।—लाञ्छन-(पुं०) ब्रह्मा। कुबेर। सूर्य। राजा।—लाञ्छना- (स्त्री०) लक्ष्मी देवी। सरस्वती देवी। तारा।—वासा-(स्त्री०) लक्ष्मी।—व्याकोश-(पुं०) संपुटित कमल के आकार की सेंध।—व्यूह-(पुं०) प्राचीन काल की एक प्रकार की मोर्चाबंदी जिसमें सैनिकों को इस ढंग से खड़ा करते थे कि कमलपुष्प का आकार बन जाता था।—समासन-(पुं०) ब्रह्मा।—स्नुषा-(स्त्री०) गङ्गा। लक्ष्मी। दुर्गा।—हास-(पुं०) विष्णु।

पद्मक—(न०) [पद्म+कन्] पद्मव्यूह, कमल-व्यूह। [पद्म√कै+क] पद्मकाष्ठ। कुट नामक ओषधि। हाथी के चेहरे और सूँड़ पर के रंगीन दाग। बैठने का आसन-विशेष, पद्मासन।

पद्मकिन्—(पुं०) [पद्मकं बिन्दुजालम् अस्ति अस्य, पद्मक+इनि] हाथी। भोजपत्र का पेड़।

पद्मा—(स्त्री०) [पद्मम् अस्ति अस्याः पद्म+अच्—टाप्] श्रीविष्णुपत्नी लक्ष्मी जी का नामान्तर। लवंग, लौंग। मनसा देवी। गेंदा।

पद्मावती—(स्त्री०) [पद्म+मतुप्, वत्व, दीर्घ] लक्ष्मी का नामान्तर। एक नदी का नाम। मनसा देवी। पटना का एक पुराना नाम। उज्जैन का एक पुराना नाम।

पद्मिन्—(त्रि०) [पद्म+इनि] कमल रखने वाला। धब्बेदार। (पुं०) हाथी। विष्णु का नामान्तर।

पद्मिनी—(स्त्री०) [पद्मिन्+ङीप्] कमल का पौधा। कमलसमुदाय। वह सरोवर या ताल जिसमें कमलों की बहुतायत हो। कमलनाल। हथिनी। कोकशास्त्र के अनुसार स्त्रियों की चार जातियों में से सर्वोत्तम जाति। इस जाति की स्त्री अत्यन्त कोमलाङ्गी, सुशीला, रूपवती और पतिव्रता होती है —"भवति कमलनेत्रा नासिकाक्षुद्ररन्ध्रा, अविरलकुचयुग्मा चारुकेशी कृशाङ्गी। मृदुवचनसुशीला गीतवाद्यानुरक्ता सकलतनुसुवेशा पद्मिनी पद्मगन्धा॥"—**ईश (पद्मिनीश)**, —**कान्त**,—**वल्लभ**-(पुं०) सूर्य।—**खण्ड**, —**षण्ड**-(न०) कमल-समूह। वह स्थान जहाँ कमलों की बहुतायत हो।

पद्मेशय—(पुं०) [पद्मे शेते, √शी+अच्, अलुक् स०] विष्णु का नामान्तर।

पद्य—(वि०) [पदम् अर्हति पद्भ्यां जातो वा, पद(द्)+यत्] जिसमें कविता के पद या चरण हों। चरण सम्बन्धी। पदचिह्न से चिह्नित। शब्द सम्बन्धी। अन्तिम। (पुं०) शूद्र। शब्द का अंश। (न०) श्लोक, छन्द। प्रशंसा, स्तुति।

पद्या—(स्त्री०) [पदाय हिता, पद+यत्—टाप्] सड़क के किनारे की पैदल चलने की पटरी। पगडंडी। वीथी।

पद्र—(पुं०) [पद्यते अस्मिन्, √पद्+रक्] ग्राम । भूलोक । एक देश ।

पद्व—(पुं०) [पद्यते गम्यते यस्मिन् अनेन वा, √पद्+वन् नि० साधुः] भूलोक, मर्त्यलोक । गाड़ी । मार्ग ।

पद्वन्—(पुं०) [√पद्+वनिप्] मार्ग ।

√पन्—भ्वा० उभ० सक० स्तुति करना, प्रशंसा करना । (आत्म०) प्रसन्न होना, हर्षित होना । पनायति, पनायिष्यति—पनिष्यते, अपनायीत्—अपनिष्ट ।

पनस—(पुं०) [पनाय्यते स्तूयते अनेन देवः मनुष्यादिर्वा, √पन्+असच्] कटहल या कटहर का वृक्ष । काँटा । रामदल का एक वानर । विभीषण का एक मंत्री । (न०) कटहल का फल ।

पनसिका—(स्त्री०) [पनसवत् कण्टकमयाकृतिः विद्यते अस्याः, पनस+ठन्—टाप्] कान और गर्दन पर होने वाली फुंसी जो कटहल के काँटे की तरह नुकीली होती है ।

पनस्यति—(कण्ड्वादि क्रि०) प्रशंसार्ह होना, प्रशंसा के योग्य होना ।

पनायित, पनित—(वि०) [√पन्+आय +क्त] [√पन्+क्त] प्रशंसित, प्रशंसा किया हुआ ।

पनु, पनू—(स्त्री०) [√पन्+उ] [पनु+ऊङ्] [वैदिक] श्लाघा । सराहना, प्रशंसा ।

पन्थक—(वि०) [पथि जातः, पथिन्+कन्, पन्थ आदेश] मार्ग में उत्पन्न, रास्ते में पैदा हुआ ।

पन्न—(वि०) [√पद्+क्त] गिरा हुआ, नीचे खसका हुआ । गया हुआ, गत । (न०) नीचे की ओर जाना, अधोगमन । रेंगना । —ग-(पुं०) साँप; 'विप्रकृतः पन्नगः फणां कुरुते' श० ६.३० । सीसा । पदमकाठ ।

पन्नद्धी—(स्त्री०) [पदः नद्धीव √नह्+ष्ट्रन् +ङीप् वा, ष० त०] जूता ।

पपि—(पुं०) [पाति लोकम् पिबति वा, √पा+कि, द्वित्व] चन्द्रमा ।

पपी—(पुं०) [पाति रक्षति लोकम्,√पा +ई, कित्, द्वित्व] सूर्य । चन्द्रमा ।

पपु—(वि०) [√पा+कु, द्वित्व] पालनपोषण करने वाला, रक्षा करने वाला । (स्त्री०) वह पोष्या माता जिसने माता की तरह पाला हो ।

√पम्पस्—कण्ड्वा० पर० अक० दुःखी होना । पम्पस्यति ।

पम्पा—(स्त्री०) [पाति रक्षति महर्ष्यादीन्, √पा—मुडागमश्च नि० साधुः] दण्डक वन की एक झील या सरोवर का नाम । दक्षिण भारत की एक नदी जो ऋष्यमूक पर्वत के समीप थी ।

√पय्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । पयते, पयिष्यते, अपयिष्ट ।

√पयस्—कण्ड्वा० पर० अक० फैलना । पयस्यति ।

पयस्—(न०) [√पय्+असुन् वा √पा +असुन्, इकार आदेश] पानी । दूध । वीर्य । भोजन । [वैदिक] रात । शक्ति, ताकत ।—**गल** (**पयोगल**),—**गड** (**पयोगड**)-(पुं०) ओला । द्वीप ।—**घन** (**पयोघन**)-(न०) ओला ।—**चय** (**पयश्चय**) -(पुं०) जलाशय, तालाब, झील, सरोवर । —**जन्मन्** (**पयोजन्मन्**)-(पुं०) बादल । —**द** (**पयोद**)-(पुं०) बादल ।—**०सुहृद्** -(पुं०) मोर ।—**धर** (**पयोधर**)-(पुं०) बादल । स्त्री का स्तन या चूची । डौंड़ । नारियल का वृक्ष । मोथा । कसेरुक । मेरुदण्ड, पीठ के बीच की हड्डी ।—**धस्** (**पयोधस्**)-(पुं०) समुद्र । झील, सरोवर । बादल ।—**धारागृह** (**पयोधारागृह**)-(न०) स्नानागार जहाँ जल झरता हो ।—**धि** (**पयोधि**),—**निधि** (**पयोनिधि**) -(पुं०) समुद्र ।—**पूर** (**पयःपूर**)-(पुं०)

जलकुण्ड । सरोवर ।—मुच् (पयोमुच्) -(पुं०) बादल ।—राशि (पयोराशि)-(पुं०) समुद्र ।—वाह (पयोवाह)-(पुं०) बादल ।—व्रत (पयोव्रत)-(न०) दुग्धाहार पर रहने का व्रत ।

पयस्य—(वि०) [पयसो विकारः, पयसः इदम्, पयः पिबति, पयस्+यत्] दूध का बना हुआ । पनीला । (पुं०) बिल्ली ।

पयस्या—(स्त्री०) [पयस्य+टाप्] दही । दुधिया । क्षीरकाकोली । स्वर्णक्षीरी ।

पयस्वल—(वि०) [पयस्+वलच्] दूध या जल से युक्त । (पुं०) बकरा ।

पयस्विन्—(वि०) [पयस्+विनि] दूध या जल से युक्त ।

पयस्विनी—(स्त्री०) [पयस्विन्+ङीप्] दुधार गौ; 'प्रदक्षिणीकृत्य पयस्विनीं ताम्' र० २.२१ । नदी । बकरी । रात । दूधफली । दूधबिदारी । जीवन्ती ।

पयोधिक—(न०) [पयोधि √कै+क] समुद्रफेन ।

पयोर—(पुं०) [पयस्√रा+क] कत्थे का वृक्ष ।

पयोष्णी—(स्त्री०) एक नदी का नाम जो विन्ध्याचल से निकलती है और चित्रकूट के नीचे बहती हुई जाती है ।

पर—(वि०) [√पृ+अप् (कर्तरि भावे वा)] दूसरा, भिन्न, अन्य, स्वातिरिक्त । दूर, अलग । परे, उस ओर । पीछे का, बाद का । उच्चतर । सर्वोच्च, सब से बड़ा; 'मनसस्तु परा बुद्धिः' भग० ३.४२ । सब से अधिक प्रसिद्ध । मुख्य, प्रधान । अपरिचित, गैर, अजनबी । विरोधी । छूटा हुआ, बचा हुआ । अन्तिम, अन्त का । प्रवृत्त । लीन, तत्पर । (न०) सर्वोच्च शिखर । मोक्ष । परब्रह्म । किसी शब्द का गौण अर्थ । (पुं०) अन्य पुरुष । शत्रु ।—**अङ्ग** (पराङ्ग) -(न०) दूसरे का अंग । श्रेष्ठ अंग । शरीर का पिछला भाग ।—**अङ्गव** (पराङ्गव) (नि०) शिव जी का नामान्तर ।—**अदन** (परादन)-(न०) फारस या अरब का घोड़ा ।—**अधिकारचर्चा** (पराधिकारचर्चा)-(स्त्री०) अनधिकार हस्तक्षेप । छेड़छाड़ ।—**अन्त** (परान्त)-(पुं०) मृत्यु । (पुं० बहु०) एक मानव जाति ।—**अन्तक** (परान्तक)-(पुं०) शिव जी का नामान्तर ।—**अन्न** (परान्न)-(वि०) दूसरे के अन्न पर निर्वाह करने वाला । (न०) दूसरे का अन्न ।—**अपर** (परापर) -(वि०) दूर और निकट, दूर और समीप । पहिला और पिछला । पूर्व और पर । सबेरो और अबेरो । ऊँचा और नीचा । श्रेष्ठ और निकृष्ट । (पुं०) मध्यम श्रेणी का गुरु ।—**अमृत** (परामृत)-(न०) वर्षा ।—**अयन** (परायण)-(वि०) भक्त, अनुरक्त । निर्भर, अधीन । लीन, डूबा हुआ । सम्बन्धयुक्त । सहायक । (न०) अन्तिम उपाय । मुख्य उद्देश्य । सार । (वैदिक) दृढ़ भक्ति ।—**अर्थ** (परार्थ)-(वि०) अन्य उद्देश्य या अर्थ वाला । दूसरे के लिये किया हुआ । (पुं०) सर्वाधिक लाभ । परमार्थ । मुख्य, सब से बढ़ कर अर्थ । सब से बढ़ कर पदार्थ अर्थात् स्त्रीप्रसङ्ग ।—**अर्थे** (परार्थे)-(अव्य०) दूसरे के लिये ।—**अर्ध** (परार्ध)-(न०) गणित में सब से बड़ी संख्या । ब्रह्मा की आयु का आधा भाग । केसर । उशीर, खस । चंदन ।—**अर्ध्य** (परार्ध्य)-(वि०)संख्या में बहुत आगे का । सर्वश्रेष्ठ, सर्वोत्तम; 'समस्त यानेन परार्ध्यजन्मना' र० ३.२७ । अत्यन्त मूल्यवान् । सब से अधिक सुन्दर । (न०) अनन्त या असीम संख्या । सब से बड़ी वस्तु आदि ।—**अवर** (परावर)-(वि०) दूर और नजदीक । सबेरी और अबेरी । पहले का और पीछे का । ऊंचा और नीचा । परम्परा-

गत । सब शामिल किये हुए । (न०) कार्य और कारण । विचार का समूचा विस्तार । संसार । पूर्णता ।—**अवरा** (**परावरा**)-(स्त्री०) एक प्रकार की विद्या (उपनिषद्) ।—**अह** (**पराह**)-(पुं०) दूसरा दिन ।—**अह्ण** (**पराह्ण**)-(पुं०) दिन का उत्तरार्द्ध काल ।—**आगम** (**परागम**)-(पुं०) शत्रु का आगमन या आक्रमण ।—**आचित** (**पराचित**)-(वि०) दूसरे द्वारा पाला-पोसा हुआ । (पुं०) गुलाम, दास ।—**आत्मन्** (**परात्मन्**)-(पुं०) परब्रह्म ।—**आधि** (**पराधि**)-(पुं०) बहुत तीव्र मानसिक व्यथा ।—**आयत्त** (**परायत्त**)-(वि०) अधीन, परमुखापेक्षी, दूसरे पर निर्भर; 'परायत्तः प्रीतेः कथमिव रसं वेत्तु पुरुषः' मु० ३.४ ।—**आयुस्** (**परायुस्**)-(न०) ब्रह्मा का नामान्तर ।—**आविद्ध** (**पराविद्ध**)-(पुं०) कुबेर का नामान्तर । विष्णु का नामान्तर ।—**आश्रय** (**पराश्रय**)-(वि०) दूसरे पर निर्भर । (पुं०) दूसरे का सहारा या अवलंब । शत्रु का प्रतिनिवर्तन, लौटना ।—**आश्रया** (**पराश्रया**)-(स्त्री०) वह वृक्ष जो दूसरे वृक्ष पर उगे, परगाछा ।—**आसङ्ग** (**परासङ्ग**)-(पुं०) पराधीन, दूसरे पर निर्भर ।—**आस्कन्दिन्** (**परास्कन्दिन्**)-(पुं०) चोर ।—**इतर** (**परेतर**)-(वि०) कृपालु । निज का ।—**ईश** (**परेश**)-(न०) ब्रह्मा की उपाधि । विष्णु का नामान्तर ।—**इष्टि** (**परेष्टि**)-(पुं०) ब्रह्मा ।—**उत्कर्ष** (**परोत्कर्ष**)-(पुं०) दूसरे की समृद्धि ।—**उपकार** (**परोपकार**)-(पुं०) दूसरों की भलाई ।—**उपकारिन्** (**परोपकारिन्**)-(वि०) दूसरों की भलाई करने वाला ।—**उपजाप** (**परोपजाप**)-(पुं०) शत्रुओं में भेदभाव उत्पन्न करना ।—**उपदेश** (**परोपदेश**)-(पुं०) दूसरों को शिक्षा या नसीहत देना ।—**उपरुद्ध** (**परोपरुद्ध**)-(वि०) शत्रु द्वारा घेरा हुआ ।—**ऊढा** (**परोढा**)-(स्त्री०) दूसरे की स्त्री ।—**एधित** (**परैधित**) (वि०) दूसरे द्वारा पाला-पोसा हुआ । (पुं०) नौकर । कोयल ।—**कलत्र**-(न०) दूसरे की स्त्री ।—**काय**-(पुं०, न०) दूसरे का शरीर । ०**प्रवेश**-(पुं०) योगी का अपनी आत्मा को किसी के शव में पहुँचाना ।—**कार्य**-(न०) दूसरे का काम या धंधा ।—**क्षेत्र**-(न०) दूसरे का शरीर । दूसरे का खेत । दूसरे की स्त्री ।—**गामिन्**-(वि०) दूसरे के साथ जाने या रहने वाला । दूसरे को लाभ पहुँचाने वाला ।—**गुण**-(वि०) दूसरे को लाभदायी ।—**ग्रन्थि**-(पुं०) जोड़, गाँठ ।—**ग्लानि**-(स्त्री०) शत्रु को वशीभूत करने की क्रिया ।—**चक्र**-(न०) शत्रुसैन्य । छः ईतियों मेंसे एक, शत्रुद्वारा आक्रमण । वैरी राजा ।—**छन्द** (**परच्छन्द**)-(वि०) अधीन । (पुं०) दूसरे की इच्छा । पराधीनता ।—**छिद्र** (**परच्छिद्र**) -(न०) दूसरे की कमजोरी ।—**ज**-(वि०) 'परजात' ।—**जन**-(पुं०) अजनबी, गैर ।—**जात**-(वि०) दूसरे से उत्पन्न । आजीविका के लिये दूसरे पर निर्भर रहने वाला । (पुं०) नौकर । कोयल । दूसरी जाति का मनुष्य, दूसरी बिरादरी का आदमी ।—**जित**-(वि०) दूसरे से जीता हुआ, हारा हुआ । दूसरे के सहारे रहने वाला । (पुं०) कोयल पक्षी ।—**तन्त्र**-(वि०) पराश्रित, दूसरे के सहारे रहने वाला, पराधीन ।—**दार**-(पुं० बहु०) दूसरे की स्त्री ।—**दारिन्**-(पुं०) व्यभिचारी, लंपट ।—**दुःख**-(न०) दूसरे का दुःख या शोक ।—**देवता**-(स्त्री०) परमात्मा, परब्रह्म ।—**देश**-(पुं०) विदेश, स्वदेशातिरिक्त देश ।—**देशापवाहन**-(न०) दूसरे देश के लोगों को बुला कर उनसे उपनिवेश बसाना (कौ०) ।—**द्रोहिन्**,—**द्वेषिन्**-(वि०) दूसरों से घृणा या शत्रुता करने वाला ।—**धन**-(न०) दूसरे की सम्पत्ति ।

—**धर्म**–(पुं०) दूसरे का धर्म; 'स्वधर्मे निधनं श्रेय: परधर्मो भयावह:' भग० ३.३५। दूसरे का कर्तव्य या धंधा। दूसरी जाति के कर्तव्य।—**ध्यान**–(न०) वह ध्यान जिसमें ध्येय के अतिरिक्त कोई वस्तु न रहे।—**निपात**–(पुं०) समास में पहिले आने योग्य शब्द का बाद में रखा जाना (जैसे—भूतपूर्व)। —**पक्ष**–(पुं०) शत्रुपक्ष या शत्रु का दल। विरोधी का मत। विरोधी की दलील।—**पद**–(न०) सर्वोच्च पद। मोक्ष।—**पाक**–(पुं०) दूसरे के उद्देश्य से अथवा पंचयज्ञ के लिये भोजन पकाना या तैयार करना (स्मृति)। —०**निवृत्त**–(वि०) जो पंचयज्ञ न करे (स्मृति)।—०**रत**–(वि०) पेट के लिये दूसरे की रसोई बनाने वाला, किन्तु पाक बनाने के पूर्व निर्दिष्ट पञ्चयज्ञादि करने वाला।—'पञ्चय-ज्ञान् स्वयं कृत्वा परान्नमुपजीवति। सततं प्रातरुत्थाय परपाकरतस्तु स: ॥'—**पिण्ड**–(पुं०) दूसरे का दिया हुआ भोजन। दूसरे का भोजन।—**पुरञ्जय**–(पुं०) शूर। विजयी। —**पुरुष**–(पुं०) अजनबी, अपरिचित आदमी। परब्रह्म। विष्णु। दूसरी स्त्री का पति।—**पुष्ट**–(वि०) दूसरे द्वारा पाला-पोसा गया। (पुं०) कोयल।—०**महोत्सव**–(पुं०) आम।—**पुष्टा**–(स्त्री०) वेश्या, रंडी। बंदाक, बाँदी।—**पूर्वा**–(स्त्री०) वह स्त्री जो अपने प्रथम पति को छोड़ दूसरा पति करे। —**प्रपौत्र**–(पुं०) प्रपौत्र का पुत्र।—**प्रेष्य**–(पुं०) नौकर, चाकर।—**ब्रह्मन्**–(न०) परमात्मा।—**भाग**–(पुं०) दूसरे का हिस्सा। उत्कृष्टतर गुण; 'तस्या: कपोले परभाग-लाभाद्बबन्ध चक्षूंषि' कु० ७.१७। सौभाग्य। समृद्धि। सर्वोत्तमता, सर्वोत्कृष्टता। पर्यावृत्तान्त। विपुलता। उच्चता। अन्तिम भाग, शेष।—**भाषा**–(स्त्री०) संस्कृत से भिन्न भाषा। दूसरी भाषा।—**भुक्त**–(वि०) अन्य द्वारा उपभुक्त या व्यवहृत किया हुआ।—**भृत्**–(पुं०) काक, कौआ।—**भृत**–(वि०) दूसरे द्वारा पाला-पोसा हुआ। (पुं०) कोयल पक्षी।—**मत**–(न०) दूसरे की राय। भिन्न राय या सिद्धान्त।—**मर्मज्ञ**–(वि०) दूसरे की गुप्त बातें जानने वाला।—**मृत्यु**–(पुं०) काक, कौआ।—**रमण**–(पुं०) किसी विवाहित स्त्री का प्रेमी या आशिक।—**लोक**–(पुं०) स्वर्ग आदि लोक जहाँ मृत्यु के पश्चात् प्राणी की आत्मा जाती है।—०**गम**–(पुं०),—**गमन**–(न०),—**प्राप्ति**–(स्त्री०),—**यान**–(न०), —**वास**–(पुं०) मृत्यु (आदरार्थक)।—**वश**,—**वश्य**–(वि०) पराधीन, पराश्रित। —**वाच्य**–(न०) दोष, त्रुटि।—**वाणि**–(पुं०) न्यायकर्त्ता। वर्ष, साल। कार्त्तिकेय के वाहन मयूर का नाम।—**वाद**–(पुं०) अपवाह, किंवदन्ती। आपत्ति, एतराज। वाद-विवाद।—**वादिन्**–(पुं०) वह जो किसी के विरोध में कुछ कहे, प्रत्युत्तर देने वाला, प्रतिवादी।—**वेश्मन्**–(न०) परब्रह्म का आवासस्थान।—**व्रत**–(पुं०) धृतराष्ट्र का नामान्तर।—**श्वस्**–(अव्य०) आने-वाले कल के बाद का दूसरा दिन, परसों।—**सङ्गत**–(वि०) दूसरे के साथ रहने वाला। दूसरे से लड़ने वाला।—**संज्ञक**–(पुं०) जीव, रूह।—**सवर्ण**—(वि०) आगे आने वाले वर्ण के समान (व्या०)।—**सात्**–(अव्य०) दूसरे के हाथ में गया हुआ।—**सेवा**–(स्त्री०) दूसरे की चाकरी।—**स्त्री**–(स्त्री०) दूसरे की भार्या।—**स्व**–(न०) दूसरे की संपत्ति। —**हन्**–(वि०) शत्रुहन्ता।—**हित**–(वि०) शुभचिन्तक, परोपकार। दूसरे के लिये लाभ-कारक। (न०) दूसरे का कुशल, दूसरे की भलाई।

परकीय—(वि०) [परस्य इदम्, पर+छ, कुक्] दूसरे का, पराया; 'अर्थो हि कन्या परकीय एव' श० ४.२१। अपरिचित, द्वेषी।

परकीया—(स्त्री०) [परकीय+टाप्] दूसरे की भार्या, स्त्री जो अपनी न हो। वह नायिका जो गुप्त रूप से परपुरुष से प्रेम करे।

परञ्जन, परञ्जय—(पुं०) [परस्याः पश्चिमस्याः दिशः जनः स्वामी, नि० साधुः] [परां पश्चिमां दिशं जयति स्वामित्वेन,√जि+अच्, पुंवद्भावः, मुम्] वरुण का नामान्तर।

परतस्—(अव्य०) [पर+तस्] दूसरे से। शत्रु से। आगे। परे। पीछे। ऊपर। अन्यथा, नहीं तो। भिन्न प्रकार से।

परत्र—(अव्य०) [परस्मिन् स्थाने वा काले, पर+त्र] दूसरे स्थान में। परलोक में। उत्तर काल में।—**भीरु**—(पुं०) वह जो परलोक से भयभीत हो, धर्मात्मा आदमी।

परत्व—(न०) [परस्य भावः, पर+त्व] पर होने का भाव, पूर्व या पहले होने का भाव। भेद। दूरी। परिणाम। शत्रुता। समय या स्थान की पूर्वता। वैशेषिक दर्शनानुसार द्रव्य के २४ गुण।

परन्तप—(वि०) [परान् शत्रून् तापयति, पर √तप्+णिच्+खच्, ह्रस्व, मुम्] शत्रुओं को ताप देने वाला, वैरियों को दुःख देने वाला। जितेन्द्रिय। (पुं०) चिन्तामणि। तामस मनु का एक पुत्र।

परम्—(अव्य०) [√पृ+अम्] श्रेष्ठ नियोग। शेष। पश्चात्। किन्तु। अधिक।—**पद**—(न०) वैकुण्ठधाम। मोक्ष। उच्च पद।

परम—(वि०) [परम् उत्कृष्टं माति,√मा+क] जो सबसे उच्च या उत्कृष्ट हो, सर्वोत्कृष्ट, सर्वोच्च। उत्कृष्ट। मुख्य। सब से पहले का, आद्य। अत्यधिक। अतिगूढ़। सब से खराब। हद दर्जे का। (पुं०) ओंकार। शिव। विष्णु।—**अङ्गना (परमाङ्गना)**—(स्त्री०) सर्वोत्कृष्ट स्त्री।—**अणु (परमाणु)**—(पुं०) पृथिवी, जल, तेज और वायु का वह सब से छोटा भाग जिसके और टुकड़े न हो सकें। किसी पदार्थ का वह सब से छोटा टुकड़ा जिसके और टुकड़े न हो सकें।—**अद्वैत (परमाद्वैत)**—(न०) परब्रह्म या परमात्मा। नितान्त-भेद-विकल्प-रहित वाद। जीव और ब्रह्म के अभेद की कल्पना करने वाला वेदान्त-सिद्धान्त विशेष।—**अन्न (परमान्न)**—(न०) खीर, दूध में पके हुए चावल।—**अर्थ (परमार्थ)**—(पुं०) सर्वोच्च या सर्वोत्कृष्ट सत्य। सत्य आत्मज्ञान। जीव और ब्रह्म सम्बन्धी ज्ञान। सत्य। कोई भी उत्तम और आवश्यक वस्तु। उत्तम भाव। उत्तम प्रकार की सम्पत्ति।—**अर्थतः (परमार्थतः)**—(अव्य०) सचमुच, वास्तव में; 'उवाच चैनं परमार्थतो हरं न वेत्सि नूनं' कु० ५.७५।—**अह (परमाह)**—(पुं०) शुभ दिन। पुण्य दिवस।—**आत्मन् (परमात्मन्)**—(पुं०) ब्रह्म।—**आनन्द (परमानन्द)**—(पुं०) बहुत बड़ा सुख। ब्रह्म के अनुभव का सुख। परमात्मा।—**आपद् (परमापद्)**—(स्त्री०) सब से बड़ी विपत्ति या मुसीबत।—**ईश (परमेश)**—(पुं०) विष्णु।—**ईश्वर (परमेश्वर)**—(पुं०) विष्णु। इन्द्र। शिव। सर्वशक्तिमान् परब्रह्म, परमात्मा। ब्रह्मा। संसार का अधीश्वर, दुनिया का अधिष्ठाता।—**ऋषि (परमर्षि)**—(पुं०) उच्च कोटि का ऋषि (जैसे वेदव्यास)।—**ऐश्वर्य (परमैश्वर्य)**—(न०) श्रेष्ठ विभूति।—**कान्ति**—(स्त्री०) सूर्यसिद्धान्त के अनुसार सूर्य की शेष कांति।—**गति**—(स्त्री०) मोक्ष, मुक्ति।—**गव**—(पुं०) उत्तम बैल, साँड़ या गाय।—**गहन**—(वि०) जिसे समझना या जिसका पार पाना बहुत कठिन हो, बहुत पेचीदा, अति कठिन।—**जा**—(स्त्री०) प्रकृति।—**तत्त्व**—(न०) मूलतत्त्व, ब्रह्म।—**पद**—(न०) सर्वोत्तम पद। मोक्ष।—**पुरुष**,—**पूरुष**—(पुं०) परमात्मा, पर-ब्रह्म।—**प्रख्य**—(वि०) प्रसिद्ध, प्रख्यात।—**ब्रह्मन्**—(न०) परमात्मा।—**भट्टारक**—(पुं०) चक्रवर्ती राजाओं की एक

प्राचीन उपाधि ।—भट्टारिका-(स्त्री०) पटरानियों का एक प्राचीन उपाधि ।—महत्-(वि०) सब से बड़ा । सब से अधिक महत्त्व वाला (काल, आकाश, आत्मा और दिशाये चार सर्वंगत होने से परम महत् माने जाते हैं) ।—रस-(पु०) पानी मिला माठा । —श्रेष्ठ-(वि०) सब से बढ़िया, श्रेष्ठतम । (पुं०) ब्रह्मा । विष्णु । शिव । देवता ।—हंस -(पुं०) वह संन्यासी जो ज्ञान की परमावस्था को प्राप्त कर चुका हो । कुटीचक, बहूदक, हंस और परमहंस नाम से संन्यासियों के चार भेद स्मृतिकारों ने किये हैं । इनमें परमहंस सर्वश्रेष्ठ माना गया है ।

परमक—(वि०) [परम+कन्] सर्वोच्च । सर्वोत्तम ।

परमतः—(अव्य०) [परम +तस्] अत्यधिकता से ।

परमता—(स्त्री०) [परम+तल् —टाप्] सर्वोच्चता । सर्वोच्च लक्ष्य ।

परमेष्ठ—(पुं०) [परमे व्योम्नि चिदाकाशे ब्रह्मपदे वा तिष्ठति' √स्था+क, सप्त कित्' अलुक्, षत्व] ब्रह्मा की उपाधि । देवता ।

परमेष्ठिन्—(पुं०) [परमे व्योम्नि चिदाकाशे ब्रह्मपदे वा तिष्ठति√स्था+इनि, सच कित्, ततोऽलुक् षत्वञ्च] ब्रह्मा । विष्णु । शिव । गरुड़ । अग्नि । कोई भी आध्यात्मिक गुरु । (जैनियों का) अर्हत् ।

परम्पर—(वि०) [परं पिपर्ति, √पृ+अच्, अलुक् स०] एक के बाद दूसरा, सिलसिलेवार । (पुं०) पौत्र, प्रपौत्र आदि । हिरन-विशेष ।

परम्परा—(स्त्री०) [परम्पर+टाप्] अविच्छिन्न क्रम, सिलसिला जो टूटे नहीं । पंक्ति । समूह । क्रम, विधि । वंश, कुल । वध ।

परम्पराक—(न०) [परम्परया कायते प्रकाशते, परम्परा√कै+क । परम्परास्थापितपशुहननात् तथात्वम्] यज्ञ में पशु का वध ।

परम्परीण—(वि०) [परांश्च परतरांश्च अनुभवति, परम्पर+ख—ईन] वंशक्रम से प्राप्त । परम्परागत ।

परवत्—(वि०) [परः नियोजकतया अस्ति अस्य, पर+मतुप्, मस्य वः] पराधीन; 'आज्ञा यदित्वं परवानसि त्वं' र० १४.५९ । बलरहित, शक्तिहीन । सम्पूर्णतः परवश । अनुरक्त, भक्त ।

परवत्ता—(स्त्री०) [परवत्+तल्—टाप्] परवशता, पराधीनता ।

परञ्ज—(न०) [परं जयति, √जि+ड] इन्द्र की तलवार । (पुं०) कोल्हू । तलवार की धार । फेन ।

परश—(पुं०) [स्पृशति इति पृषो० साधुः] पारस पत्थर, स्पर्शमणि ।

परशु—(पुं०) [परान् शत्रून् शृणाति हिनस्ति अनेन, पर√शृ+कु, डित्त्व] एक अस्त्र जिसमें एक डंड के सिरे पर एक अर्द्धचन्द्राकार लोहे का फल लगा रहता है, कुल्हाड़ी विशेष, फरसा । वज्र ।—धर-(पुं०) परशुराम । गणेश । परशुधारी सिपाही ।—राम -(पुं०) जमदग्नि के पुत्र जो विष्णु के छठे अवतार माने जाते हैं ।—वन-(न०) नरकविशेष ।

परश्वध, परस्वध—(पुं०) [पर √श्वि+ड, ततः परश्वं दधाति√धा+क] [=परस्वध, नि० षस्य सत्वम्] परशु, कुठार, कुल्हाड़ी ।

परस्—(अव्य०) [परस्मात् परस्मिन् परो वा, पञ्चम्याद्यर्थे असि] परे । आगे । अपेक्षाकृत अधिक । दूसरी तरफ । अत्यन्त दूसरा । छोड़ कर । (वैदिक) भविष्यत् में । पीछे से ।—कृष्ण (परःकृष्ण)-(वि०) बहुत काला ।—पुंसा (परःपुंसा)-(स्त्री०) [वैदिक] वह स्त्री जो अपने पति से सन्तुष्ट न होकर आशिक या प्रेमी की तलाश में

हो ।—**पुरुष** (परःपुरुष)–(वि०) जो मनुष्य से बढ़ कर हो ।—**शत** (परःशत)–(वि०) सौ से अधिक ।—**श्वस्** (परःश्वस्)–(अव्य०) आने वाले कल के बाद का दिन, परसों ।—**सहस्र** (परःसहस्र)–(वि०) एक हजार से अधिक; 'परःसहस्राः हरिद्स्तपांसि तन्वा' उत्त० १.१५ ।

परस्तात्—(अव्य०) [पर + अस्ताति (पञ्चम्यार्थे)] परे, दूसरी तरफ या ओर। और आगे । इसके बाद, पीछे से । अपेक्षाकृत ऊँचा, उच्चतर। (वैदिक) दूर से । अलग, पृथक् ।

परस्पर—(वि०) [परः परः इति विग्रहे समासवद्भावे पूर्वपदस्य सुः] अन्योन्य, इतरेतर । (अव्य०) एक दूसरे के साथ, आपस में ।—**ज्ञ**–(पुं०) मित्र ।

परस्मैपद—(न०), **परस्मैभाषा**—(स्त्री०) [परस्मै परार्थं परबोधकं पदम्] [परस्मै परार्थं भाषा] संस्कृत में क्रियाएँ दो प्रकार की होती हैं, उनमें से एक, व्याकरण में कथित तिप् आदि । इससे दूसरे के लिये फल का ज्ञान होता है ।

परा—(अव्य०) [√पॄ+अच्–टाप्] विमोक्ष । प्राधान्य । प्रातिलोम्य । अर्पण । आभिमुख्य । भृशार्थ । विक्रम । गति । वध । (उपसर्ग विशेष) भंग । अनादर । प्रत्यावृत्ति । न्यग्भाव । (स्त्री०) मूलाधार में स्थित रहने वाली नादरूपिणी वाणी । ब्रह्मविद्या । गंगा । बाँझ ककोड़ा । (वि० स्त्री०) श्रेष्ठ ।—**गति**–(स्त्री०) गायत्री ।

पराक—(पुं०) [परम् आकं दुःखम् उपवासादिजन्यशारीरिकादिक्लेशो यत्र यस्मात् वा] बारह दिनों तक भोजन न करने का प्रायश्चित्त रूप में किया जाने वाला एक कृच्छ्रव्रत । बलिदान करने का खड्ग । एक रोग । (वि०) छोटा ।

पराकाश—(पुं०) बहुत दूर की आशा या उम्मेद ।

परा√कृ—(क्रि०) त्यागित कर देना, अस्वीकृत कर देना । तिरस्कार करना ।

पराकरण—(न०) [परा √कृ+ल्युट्] अस्वीकृत कर देने की क्रिया । तिरस्कार ।

पराके—(अव्य०) [पर√अक् +के] फासले पर, अन्तर पर (वैदिक) ।

परा√क्रम्—(क्रि०) हिम्मत दिखाना, बहादुरी दिखाना । लौट जाना, पीठ फेरना । आक्रमण करना । आगे बढ़ना ।

पराक्रम—(पुं०) [परा√क्रम्+घञ्, वृद्धिनिषेध] सामर्थ्य, बल । बहादुरी, साहस । आक्रमण । प्रयत्न, उद्योग । विष्णु का नामान्तर ।

पराक्रमिन्—(वि०) [पराक्रम + इनि] पराक्रम वाला, शूर । पुरुषार्थी ।

पराक्रान्त—(वि०) [परा√क्रम् + क्त] शक्तिशाली । वीर, बहादुर । आक्रमण किया हुआ । पीछे भगाया हुआ ।

पराग—(पुं०) [परा √गम्+ड] पुष्परज, वह रज या धूल जो फूलों के बीच लंबे केसरों पर जमा रहती है । धूल, रज । एक प्रकार का सुगन्ध-चूर्ण जो स्नानोपरान्त शरीर में मला जाता है । चन्दन । चन्द्रमा, सूर्य का ग्रहण । कीर्ति, ख्याति । स्वाधीनता, मनमौजीपन ।

परा√गम्—(क्रि०) लौटना । घेरना, छेंकना । घुसना । प्रस्थान करना । मर जाना ।

परागत—(वि०) [परा √गम्+क्त] मृत, मरा हुआ । ढका हुआ । फैला हुआ । व्याप्त, पूर्ण; 'स्फुटपरागपरागतपंकजं, शि० ६.२ ।

पराङ्गव—[पराङ्गं बलवद् या प्रचुरशरीरं वाति प्राप्नोति, √वा+क] समुद्र ।

पराच्—(वि०) [स्त्री०—**पराची**] [परा √अञ्च्+क्विन्] दूसरी ओर स्थित । पराङ्मुख, मुँह फेरे हुए । प्रतिकूल, विरोधी । फासले पर । बाहर की ओर घूमा हुआ । भगाया हुआ । लौटाया हुआ । उल्टा चलने

वाला ।—मुख (पराङ्मुख)–विमुख, मुँह फेरे हुए । उदासीन । विरुद्ध । (पुं०) तान्त्रिक मंत्र जो शत्रु के चलाये अस्त्र को लौटाने के लिये पढ़ा जाता है ।

पराचीन—(वि०) [पराच्+ख – ईन] सामने की ओर भगाया हुआ । ध्यान न देने वाला । उत्तरकालभव, पीछे हुआ । दूसरी ओर अवस्थित ।

परा√जि—(कि०) हराना, जीतना । खोना, हाथ से निकाल देना । जीत लिया जाना, पराजित होना । (किसी वस्तु को) असह्य जानना । वशीभूत हो जाना ।

पराजय—(पुं०) [परा√जि+अच्] विजय का उलटा, हार ।

पराजित—(वि०) [परा√जि+क्त] जिसने हार खायी हो, हारा हुआ, हराया हुआ ।

पराजिष्णु—(वि०) [परा √जि+इष्णुच्] जीतने वाला, विजयी ।

पराञ्ज—(पुं०) [पर√अञ्ज्+घञ्] कोल्हू (तेल का) । फेन । तलवार या छुरी की बाढ़ ।

पराणुत्ति—(स्त्री०) [परा √नुद्+क्तिन्] भगा देने की क्रिया । हटा देने की क्रिया ।

परात्पर—(पुं०) [परात् श्रेष्ठादपि परः] परमात्मा, परब्रह्म ।

परा√दा—(क्रि०) [वैदिक] सौंप देना, हवाले कर देना । फेंक देना । बरबाद कर डालना । दे डालना । बदल लेना । बाहर कर देना ।

परादान—(न०) [परा √दा+ल्युट्] दे डालना, त्याग देना । विनिमय ।

परानसा, पराणसा—(स्त्री०) [परा√अन् +अच्–टाप्, केषाञ्चित् मते णत्वपाठः] वैद्यक चिकित्सा, चिकित्सा की क्रिया ।

परा√पत्—(कि०) पहुँचना, समीप आना । लौटना । बच जाना । प्रस्थान करना । गिर पड़ना । असफल होना । (णिज०) भगा देना ।

परा√भू—(क्रि०) हराना । नाश करना । घायल करना । चिढ़ाना, छेड़छाड़ करना । अन्तर्धान होना । नष्ट होना, खो जाना । वशवर्ती हो जाना, आत्मसमर्पण कर देना ।

पराभव—(पुं०) [परा √भू+अप्] हार, पराजय; 'पराभवोऽप्युत्सव एव मानिनाम्' कि० १.४१ । तिरस्कार, अपमान । नाश । अन्तर्धान ।

पराभूत—(वि०) [परा√ भू+क्त] हराया हुआ, जीता हुआ । तिरस्कृत, अपमानित ।

पराभूति—(स्त्री०) [परा √भू+क्तिन्] दे० 'पराभव' ।

परामर्श—(पुं०) [परा √मृश्+घञ्] पकड़ना । खींचना(जैसे "केशपरामर्श") । (धनुष को) झुकाना या तानना । प्रचण्डता । आक्रमण । होहल्ला । रुकावट; 'तपःपरामर्शविवृद्धमन्योः' कु० ३.७१ । स्मरण करना । विचार । मनन । निर्णय । स्पर्श । अपयश । रोग से पीड़ित होना ।

परामर्शन—(न०) [परा √मृश्+ल्युट्] पकड़ना । खींचना । स्मरण करना । विवेचन करना । सलाह करना ।

परामृत—(वि०) [परम् अमृतम् अमरणधर्मकं ब्रह्मात्मभूतं यस्य, ब० स०] जिसने मृत्यु को जीत लिया हो, मुक्त । (न०) मोक्ष । [परम् अमृतम् वारि यस्मात्, ब० स०] वर्षा ।

परा√मृश्—(कि०) छूना । रगड़ना । धीरे-धीरे चोट मारना । हाथ लगाना । आक्रमण करना । घेरा डालना । भ्रष्ट करना । विचार करना । मन ही मन सोचना-विचारना । सलाह लेना ।

परामृष्ट—(वि०) [परा √मृश्+क्त] स्पर्श किया हुआ, छुआ हुआ । पकड़ा हुआ । बुरी तरह व्यवहार किया हुआ । भङ्ग किया हुआ । विचारा हुआ । निर्णय किया हुआ । सहा हुआ । सम्बन्ध किया हुआ । रोगाक्रान्त ।

परारि—(अव्य०) [पूर्वतरे वत्सरे इत्यर्थे पर-

भाव; आरि च संवत्सरे] पूर्वतर वर्ष में, पारसाल, परियार साल।

परारु—(पुं०) [परा√ऋ+उन्] कारवेल्ल, करेला।

परारुक—(पुं०) [परा√ऋ+उक] पत्थर या चट्टान।

परावत्—(अव्य०) [परा √अव्+अति] [वैदिक] फासले पर, अन्तर पर।

परावाक—(पुं०) [परा√वच्+घञ्] [वैदिक] खण्डन, प्रतिवाद।

पराविद्ध—(पुं०) [परा √व्यध्+क्त] कुबेर का नामान्तर।

परा√वृत्—(क्रि०) लौटना, लौट आना।

परावर्त—(पुं०) [परा√वृत्+घञ्] प्रत्यावर्तन, पलटने का भाव, पलटाव। बदलौअल, अदलबदल, विनिमय। फिर से पाने की क्रिया, पुनःप्राप्ति। सजा का बदल जाना।

परावृत्त—(वि०) [परा √वृत्+क्त] पलटा या पलटाया हुआ। फेरा हुआ। बदला हुआ। लौटा कर दिया हुआ।

परावृत्ति—(स्त्री०) [परा√वृत्+क्तिन्] पलटने या पलटाने का भाव, पलटाव। मुकदमे का फिर से विचार या फैसला।

पराव्याध—(पुं०) [परा√व्यध् +घञ्] इतना फासला जितने में फेंका हुआ पत्थर जा कर गिरे।

पराशर—(पुं०) [परान् आशृणाति, √शृ +अच्] एक नाम। एक प्रसिद्ध ऋषि जो वसिष्ठ-पुत्र शक्ति के औरस और अदृश्यन्ती के गर्भ से उत्पन्न हुए थे (कृष्ण-द्वैपायन व्यास इन्हीं के पुत्र थे। इनकी नाम-निरुक्ति के बारे में इस प्रकार लिखा है—"परासुः स यतस्तेन वसिष्ठः स्थापितो मुनिः। गर्भस्थेन ततो लोके पराशर इति स्मृतः।") आयुर्वेद के एक आचार्य।

पराशरिन्—(पुं०) [पराशरेण प्रोक्तं भिक्षुसूत्रं पराशरं तद् वित्तेऽस्य अध्ययनाम, पराशर+इनि] भिक्षुक, संन्यासी।

परास्—(क्रि०) [परा√अस्] त्यागना, छोड़ना। निकालना। अस्वीकृत करना, नामंजूर करना, खारिज करना।

परास—(पुं०) [परा√अस्+घञ्] दे० 'पराव्याध'। टीन।

परासन—(न०) [परा √अस्+ल्युट्] वध, हत्या।

परासु—(वि०) [परा गताः असवो यस्य, प्रा० ब०] प्राणरहित, मृत।

परास्त—(वि०) [परा √अस्+क्त] हराया हुआ। फेंका हुआ। बहाया हुआ। निकाल-बाहर किया हुआ। त्यक्त, त्यागा हुआ। खण्डन किया हुआ, अस्वीकृत किया हुआ।

पराहत—(वि०) [परा √हन् +क्त] आक्रान्त। ध्वस्त। दूर किया हुआ, भगाया हुआ। (न०) आघात, चोट।

परि—(अव्य०) [√पृ+इन्] एक उपसर्ग जिसके अन्य शब्दों में जोड़ने से निम्न अर्थों की उपलब्धि होती है—सर्वतोभाव, अच्छी तरह। अतिशय। पूर्णता। दोषाख्यान; जैसे परिहास, परिवाद। नियम। क्रम। चारों ओर। आलिंगन। भूषण। पूजन। उपरम। शोक। आच्छादन।

परिकथा—(स्त्री०) [परितः कथा, प्रा० स०] एक कहानी के अन्तर्गत उसी के सम्बन्ध की दूसरी कहानी।

परिकम्प—(पुं०) [परितः कम्पो यस्मात्, प्रा० ब०] भयङ्कर कँपकँपी। अत्यंत भय।

परिकर—(पुं०) [परि √कृ+अप् वा ष] सेवकगण, अनुगत सहचर। समूह। समारंभ, तैयारी। कमरबंद; 'बध्नन्सवेगपरिकरं' का०। पलंग। विवेक। परिवार। एक अर्थालङ्कार जिसमें अभिप्रायपूर्ण विशेषणों के साथ विशेष्य आता है। फैसला, निर्णय।

परिकर्तृ—(पुं०) [परि √कृ+तृच्] पुरो-

हित जो अविवाहित ज्येष्ठ भ्राता के रहते छोटे भाई का विवाह करावे ।

परिकर्मन्—(पुं०) [परि √कृ+मनिन्] नौकर । (न०) देह में चन्दन, केसर आदि लगाना; 'कृताकारपरिकर्माणि' श० २ । पैर में महावर लगाना । तैयारी । पूजन, अर्चन । पवित्रीकरण । अंकों का परस्पर योग, गुणन, भाग आदि (गणित) ।

परिकर्ष—(पुं०), **परिकर्षण**–(न०) [परि √कृष्+घञ्] [परि √कृष्+ल्युट्] खींचने की क्रिया, खींच कर निकालने की क्रिया । उखाड़ने की क्रिया ।

परिकल्कन—(न०) [परि √कल्+क+क्विप् +ल्युट्] धोखा, छल, कपट ।

परिकल्पन—(न०), **परिकल्पना**–(स्त्री०) [परि √कृप्+ल्युट्] [परि √कृप्+णिच् +युच्] तै करना, निश्चित करना । बनावट, रचना । आविष्कार । सम्पन्नकरण । विभक्त-करण ।

परिकाङ्क्षित—(पुं०) [परि√काङ्क्ष्+क्त] भक्त । संन्यासी ।

परिकीर्ण—(वि०) [परि √कॄ+क्त] फैला हुआ, बिखरा हुआ । घिरा हुआ । भीड़भाड़ से युक्त । परिपूर्ण; 'परिकीर्णाः वनजैर्मृगा-विभिः' शि० १६·१० ।

परिकीर्तन—(न०)[परि√कॄत्+ल्युट्—अन] प्रशंसा । यश । सब तरह से डींग मारना ।

परिकूट—(न०) [परि सर्वतो भूषितं कूटम्, प्रा० स०] नगर के द्वार पर की खाई । (पुं०) [प्रा० ब०] एक नागराज ।

परिकोप—(पुं०) [परि √कुप्+घञ्] महान् क्रोध । प्रचंड कोप ।

परिक्रम—(पुं०) [परि√क्रम्+घञ्] बुद्धि-निबंध । टहलना । फेरी देना, चारों ओर घूमना । क्रम, सिलसिला । एक के पीछे दूसरे का आना । प्रविष्ट होना, घुसना ।—सह–(पुं०) बकरा ।

परिक्रय—(पुं०), **परिक्रयण**–(न०) [परि √क्री+घञ्] [परि √क्री+ल्युट्] मज-दूरी, भाड़ा । मजदूरी पर काम में लगाना । क्रय, खरीद । विनिमय, अदलाबदली । सन्धि जो रुपये देकर की गयी हो ।

परिक्रिया—(स्त्री०) [परितः क्रिया, प्रा० स०] खाई से घेरना । घेरना । एक दिन में होने वाला एक तरह का याग । ध्यान, मनोयोग ।

परिक्लान्त—(वि०) [परि√क्लम्+क्त] बहुत अधिक थका हुआ ।

परिक्लेद—(पुं०) [परि√क्लिद्+घञ्] तरी, नमी, गीलापन ।

परिक्लेश—(पुं०) [परि √क्लिश्+घञ्] बहुत अधिक क्लेश । थकाई, थकावट ।

परिक्षय—(पुं०) [परि√क्षि+अच्] नाश । अदृश्य हो जाने की क्रिया । समाप्त होने की क्रिया । बरबादी । हानि । घाटा । असफलता; 'परिक्षयोऽपि तेऽधिकतरं रमणीयः' मृ० १ ।

परिक्षाम—(वि०) [परि √क्षै+क्त, मकारा-देश] अतिक्षीण । बहुत दुर्बल, लटा हुआ ।

परिक्षालन—(न०) [परि√क्षल्+णिच् +ल्युट्] धुलाई, सफाई । धोने के लिये जल ।

परिक्षिप्त—(वि०) [परि√क्षिप्+क्त] खाई आदि से घिरा हुआ । बिखरा हुआ । घेरा हुआ । बिछा हुआ । त्यागा हुआ, छोड़ा हुआ ।

परिक्षीण—(वि०) [परि√क्षि+क्त] नष्ट हुआ । अन्तर्धान हुआ । नष्ट किया हुआ । क्षीण किया हुआ । दुबला या लटा हुआ । घिसा हुआ । निबटा हुआ । नितान्त नाश को प्राप्त हुआ । खोया हुआ । छोटा किया हुआ । घटाया हुआ । दिवाला निकाले हुए ।

परिक्षीब—(वि०) [परि√क्षीव्+क्त, तस्य लोपः] नशे में बिल्कुल चूर ।

परिक्षेप—(पुं०) [परि√क्षिप्+घञ्] इधर-

उधर भ्रमण करना, टहलना । फैलाना, बिखेरना । घेरना, छेकना । घेरने की सीमा या घेरा । ज्ञानेंद्रिय ।

परिखा—(स्त्री०) [परितः खन्यते, परि√खन्+ड+टाप्] खाई, किसी नगर या गढ़ के बाहर की नहर जो नगर या गढ़ की रक्षा के लिये खोदी जाती है, खंदक ।

परिखात—(न०) [परि√खन्+क्त] खाई, खंदक । पहिये से बनी लीक या लकीर । खुदाई । हराई, बाह ।

परिखेद—(पुं०) [परितः खेदः, प्रा० स०] बहुत अधिक थकावट । मुर्दनी ।

परिख्याति—(स्त्री०) [परितः ख्यातिः, प्रा० स०] विशेष प्रसिद्धि ।

परिगणन—(न०), **परिगणना**—(स्त्री०) [परि√गण्+ल्युट्] [परि √गण्+णिच्+युच्] भली-भाँति गिनना, पूरा-पूरा गिनना । ठीक-ठीक बयान या कथन ।

परिगत—(वि०) [परि√गम्+क्त] घेरा हुआ । चारों ओर छाया हुआ । जाना हुआ, समझा हुआ; 'परिगतपरिगन्तव्य एव भवान्' वे० ३ । भरा हुआ । ढका हुआ । प्राप्त किया हुआ । स्मरण किया हुआ ।

परिगलित—(वि०) [परि√गल्+क्त] डूबा हुआ । टकराया हुआ । गिरा हुआ । अदृश्यता को प्राप्त । पिघला या गला हुआ । बहा हुआ ।

परिगर्हण—(न०) [परि √गर्ह्+ल्युट्] बड़ा भारी कलङ्क या दोषारोपण ।

परिगूढ़—(वि०) [परि√गुह्+क्त] नितान्त गुप्त । जो समझ ही में न आवे, बड़ी कठिनाई से समझ में आने वाला ।

परिगृहीत—(वि०) [परि√ग्रह्+क्त] पकड़ा हुआ, काबू में आया हुआ । आलिङ्गन किया हुआ, छाती से लगाया हुआ । चिपटाया हुआ । घेरा हुआ । स्वीकृत किया हुआ । लिया हुआ । माना हुआ । आश्रय दिया हुआ । अनुग्रह किया हुआ । अनुसरण किया हुआ । आज्ञा का पालन किया हुआ । विरोध किया हुआ ।

परिगृह्या—(स्त्री०) [परि √ग्रह्+क्यप्] विवाहिता स्त्री ।

परिग्रह—(पुं०) [परि√ग्रह्+अप्] पकड़ । छिपाव, घिराव । पहनाव-उढ़ाव । प्राप्ति, उपलब्धि । स्वीकृति । सम्पत्ति, धनदौलत; 'त्यक्तसर्वपरिग्रहः' भग० ४.२१ । विवाह में पाना । विवाह । भार्या, पत्नी । अपने संरक्षण में लेना । अनुग्रह करना । चाकर, टहलुआ । परिवार । अन्तःपुर । जड़ । चन्द्रग्रहण । सूर्यग्रहण । शपथ । सेना का पिछला भाग । विष्णु का नामान्तर । पूर्णता । दावा । स्वागत-सत्कार । आदर । आतिथ्य-सत्कार करने वाला । दमन । दंड । राज्य । सम्बन्ध । योग, संकलन । शाप ।

परिग्रहीतृ—(पुं०) [परि√ग्रह्+तृच्] पोष्य पुत्र लेने वाला पिता । पति ।

परिग्लान—(वि०) [परि√ग्लै+क्त] थका हुआ, परिश्रान्त ।

परिघ—(पुं०) [परि√हन्+अप्, घादेश] अर्गल । बाधा, रुकावट । मूठ पर लोहा जड़ा हुआ डंडा या छड़ी । लोहे का डंडा । घड़ा, कलसा । शीशे का घड़ा । घर । वध । चोट । फाटक । प्रातः या सायंकाल सूर्य के सामने आने वाला बादल । वह शिशु जिसकी जन्म के समय स्थिति बदल गई हो । योग का एक भेद ।

परिघट्टन—(न०) [परि √घट्ट्+ल्युट्] चारों ओर से रगड़ना । कलछी आदि से चारों ओर से मथना या चलाना ।

परिघात—(पुं०), **परिघातन**—(न०) [परि √हन्+घञ्, वृद्धि, नस्य तः] [परि√हन्+णिच्+ल्युट्] वध, हत्या, हनन । स्थानान्तरकरण, पिण्ड छुड़ाना । मार डालने का अस्त्र । गंडा । उल्लंघन करना ।

परिघोष—(पुं०) [परि√घुष्+घञ्] घोर,

हो-हल्ला, कोलाहल। अनुचित कथन। मेघ-गर्जन।

परिचतुर्दशन—(त्रि०) [परि हीनाः चतुर्दश यतः ततः अच् समासान्तः] पंद्रह।

परिचय—(पुं०) [परि √चि+अच्] ढेर, संग्रह। जानकारी, अभिज्ञता। परीक्षा। अध्ययन। अभ्यास। ज्ञान। पहचान।——(स्त्री०) बढ़ता हुआ प्रेम या करुणा।

परिचर—(पुं०) [परि√चर्+अच्] नौकर, सेवक, खिदमतगार। रथ की रक्षा के लिये नियुक्त सैनिक, रथरक्षक। अंगरक्षक। दंड-नायक। रोगी की सेवा के लिये नियुक्त व्यक्ति।

परिचरण—(पुं०) [परि√चर्+ल्यु] नौकर, सेवक। सहायक। (न०) [परि√चर्+ल्युट्] चलना, फिरना। सेवा।

परिचर्या—(स्त्री०) [परि√चर्+श, यक् च नि० अथवा क्यप्] सेवा; 'परिचर्यापरो भव' र० १.९१। उपस्थिति।

परिचाय्य—(पुं०) [परि √चि + ण्यत्, आय् आदेश] यज्ञीय अग्नि।

परिचारक, परिचारिक—(पुं०) [परि√चर् +ण्वुल्] [परि √चर्+घञ्, परिचार +ठन्] सेवक, टहलुआ।

परिचित—(वि०) [परि √चि+क्त] जाना-पहचाना हुआ। एकत्र किया हुआ। ढेर लगाया हुआ। अभ्यस्त।

परिचिति—(स्त्री०) [परि √चि+क्तिन्] परिचय, जान-पहचान।

परिच्छद्—(पुं०) [परि √छद्+क्विप्] राजा आदि के साथ सदैव रहने वाले नौकर, लवाजिमा। असबाब, सामान।

परिच्छद—(पुं०) [परि√छद्+णिच्+घ, ह्रस्व] पट, कपड़ा जो किसी वस्तु को ढक या छिपा सके, आच्छादन। वस्त्र, पोशाक। 'शाखावसक्तकमनीयपरिच्छदानाम्' कि० ७.४०। अनुचर, सेवक। आश्रितों का मण्डल। छत्र, चामर आदि सामान। सामान, असबाब। यात्रोपयोगी समान।

परिच्छन्द—(पुं०) [परि √छन्द्+क] अनुचर, सेवक, टहलुआ।

परिच्छन्न—(वि०) [परि√छद्+क्त] ढका हुआ। लिपटा हुआ। कपड़ा पहिने हुए, वस्त्र धारण किये हुए। छाया हुआ। घिरा हुआ। छिपा हुआ।

परिच्छित्ति—(स्त्री०) [परि√छिद्+क्तिन्] सीमा, अवधि, इयत्ता। अवधारण। विभाजन। परिमिति। सटीक परिभाषा।

परिच्छिन्न—(वि०) [परि √छिद्+क्त] विभाजित। भली भाँति परिभाषा दिया हुआ। निश्चित किया हुआ। सीमाबद्ध।

परिच्छेद—(पुं०) [परि√छिद्+घञ्] काट-छाँट कर अलग करना। अवधि, सीमा। अवधारण। निर्णय, निश्चय (जैसे सत्य और असत्य का)। विभाजन। परिभाषा। सटीक परिभाषा। उन कई विभागों में से कोई एक जिनमें कोई ग्रंथ विषय के अनुसार विभक्त रहता है। किसी ग्रंथ या पुस्तक का वह भाग जिसमें किसी एक विषय की चर्चा हो। उपचार। माप।

परिच्छेद्य—(वि०) [परि √छिद्+ण्यत्] गिनने नापने या तौलने योग्य। बाँटने योग्य, विभाज्य।

परिजन—(पुं०) [परिगतो जनः, प्रा० स०] अनुचर, सदा साथ रहने वाले नौकर। आश्रित जन, जैसे स्त्री-पुत्रादि। नौकर।

परिजल्पित—(न०) [परि√जल्प् +क्त] ऐसा गूढ़ कथन जिससे अपनी श्रेष्ठता और निपुणता प्रकट हो और अपने स्वामी की निष्ठुरता, परिवञ्चना तथा अन्य ऐसे ही दुर्गुण प्रकट हों।

परिज्ञप्ति—(स्त्री०) [परि √ज्ञप्+क्तिन्] वार्तालाप, संवाद। पहिचान।

परिज्ञान—(न०) [परि√ज्ञा + ल्युट्]

पूरा जानकारी, पूरा ज्ञान। सूक्ष्म ज्ञान। पहचान।

परिडीन—(न०) [परि√डी+क्त] पक्षियों की चक्कर लाते हुए उड़ान।

परिणत—(वि०) [परि √नम्+क्त] झुका हुआ, नवा हुआ। उतरता हुआ (जैसे उतरती उम्र)। पका हुआ। पूर्ण वृद्धि को प्राप्त। पूर्ण रूप से बढ़ा हुआ। पचा हुआ। रूपान्तरित, बदला हुआ। समाप्त। (पुं०) वह हाथी जो दाँतों का प्रहार करने को झुका हुआ हो।

परिणति—(स्त्री०) [परि √नम्+क्तिन्] नमन, झुकाव। पकावट, पक्वता। रूपान्तरित्व, अवस्थान्तरित्व। पूर्ण वृद्धि। पूर्णता। परिणाम, नतीजा। अन्त, समाप्ति। जीवन का अवसान, वृद्धावस्था। परिपाक, पचन।

परिणद्ध—(वि०) [परि √नह्+क्त] बँधा हुआ, मढ़ा हुआ। चौड़ा, विशाल।

परिणय—(पुं०), **परिणयन**—(न०) [परि √नी+अप्] [परि √नी+ल्युट्] चारों ओर (विशेषकर विवाह-मंडप में स्थापित अग्नि के चारों ओर) ले जाना। विवाह, शादी।

परिणहन—(न०) [परि √नह्+ल्युट्] कसना, चारों ओर से लपेटना।

परिणाम, परीणाम—(पुं०) [परि √नम्+घञ्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] परिवर्तन, अदलबदल, रूपान्तरकरण। पाचन शक्ति। नतीजा, फल। वृद्धि। पक्वता। अन्त, समाप्ति। वृद्धावस्था, बुढ़ापा; 'परिणामे हि दिलीपवंशजाः' र० ८.११। क्षेप (काल-का), समय बिताना। अर्थालङ्कार-विशेष, जिसमें उपमेय के कार्य का उपमान द्वारा किया जाना अथवा अप्रकृत (उपमान) को प्रकृत (उपमेय से एक रूप हो कर कोई कार्य करना) कहा जाय।—**दर्शिन्**-(वि०) दूरदर्शी, विवेकी।—**दृष्टि**-(वि०) विवेकी। (स्त्री०) विमृश्यकारिता, विज्ञता।—**पथ्य**-(वि०) अन्त में गुणकारी।—**वाद**-(पुं०) वह सिद्धांत कि कार्य कारण में अव्यक्त रूप से विद्यमान रहता है और इस प्रकार अव्यक्त कार्य ही कारण है तथा व्यक्त कारण ही कार्य।—**शूल**-(न०) वायगोले का दर्द।

परिणाय, परीणाय—(पुं०) [परि √नी+घञ्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] शतरंज की चाल, शतरंज की गोट की चाल।

परिणायक—(पुं०) [परि √नी+ण्वुल्] नेता। पति।

परिणाह, परीणाह—(पुं०) [परि √नह्+घञ्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] फैलाव, विस्तार। चौड़ाई, अर्ज।

परिणाहवत्—(वि०) [परिणाह+मतुप्, वत्व] विस्तार-युक्त, फैला हुआ।

परिणाहिन्—(वि०) [परिणाह+इनि] दे० 'परिणाहवत्'।

परिणिंसक—(वि०) [परि√निस्+ण्वुल्] खाने वाला; 'पलानाम्परिणिंसकः' भट्टि० ९.१०६। चूमन करने वाला।

परिणिंसा—(स्त्री०) [परि √निस्+अ—टाप्] खाना। चूमना।

परिणीत—(वि०) [परि √नी+क्त] विवाहित। पूरा किया हुआ, समाप्त।—**रत्न**-(न०) चक्रवर्ती राजाओं के सात प्रकार के कोषों में से एक (बौद्ध)।

परिणीता—(स्त्री०) [परिणीत+टाप्] विवाहिता स्त्री।

परिणेतृ—(पुं०) [परि √नी+तृच्] पति, स्वामी।

परितर्पण—(न०) [परि √तृप्+ल्युट्] संतुष्ट करना, खुश करना।

परितस्—(अव्य०) [परि+तस्] चारों ओर, सब तरफ। सब प्रकार से।

परिताप—(पुं०) [परि √तप्+घञ्] बड़ी भारी गर्मी, उत्कट उष्णता। कष्ट, पीड़ा। विलाप। कम्प, भय।

परितुष्ट—(वि०) [परि √तुष्+क्त] भली-भाँति सन्तुष्ट । आह्लादित, हर्षित ।

परितुष्टि—(स्त्री०) [परि √तुष्+क्तिन्] सन्तोष । पूर्ण सन्तोष । हर्ष, आह्लाद ।

परितोष—(पुं०) [परि √तुष् + घञ्] सन्तोष, वासना । या किसी वस्तु की प्राप्ति की अभिलाषा का अभाव । पूर्ण सन्तोष । आह्लाद, हर्ष ।

परितोषण—(वि०) [परि √तुष् +णिच् +ल्यु] तुष्ट करने वाला । (न०) [परि √तुष्+णिच्+ल्युट्]परितुष्ट करने का कार्य।

परित्यक्त—(वि०) [परि √त्यज्+क्त] पूरे तौर से त्यागा हुआ, रहित किया हुआ । छोड़ा हुआ (जैसे तीर) ।

परित्याग—(पुं०) [परि√त्यज्+घञ्] पूरी तरह त्याग देना, पूर्ण त्याग । यज्ञ । विराग । असावधानी । उदारता । घाटा, हानि ।

परित्राण—(न०) [परि√त्रै+ल्युट्] पूर्ण रक्षा, पूरा बचाव । अनिष्ट में प्रवृत्त व्यक्ति का निवारण । आत्मरक्षा । आश्रय, पनाह । बाल । मूँछ ।

परित्रास—(पुं०) [परि√त्रस्+घञ्] भारी डर, अत्यधिक भय ।

परिदंशित—(वि०) [परि√दंश्+क्त] कवच से भली भाँति आपादमस्तक ढका हुआ, जिरहपोश ।

परिदान—(न०) [परि √दा+ल्युट्] विनिमय, अदल-बदल । भक्ति, अनुरक्ति । धरोहर रखने वाले को धरोहर सौंपना ।

परिदायिन्—(पुं०) [परि √दा+णिनि] वह पिता जो अपनी लड़की को ऐसे मनुष्य को विवाह में दे डाले जिसका बड़ा भाई क्वारा हो ।

परिदाह, परीदाह—(पुं०) [परि√दह् +घञ्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] अति दाह या ताप, बहुत अधिक जलन । अत्यधिक मानसिक दुःख, तीव्र मनस्ताप ।

परिदिग्ध—(वि०) [परि √दिह्+क्त] (किसी वस्तु से) बहुत अधिक ढका हुआ, जिस पर कोई वस्तु बहुत अधिक मात्रा में लगी या पुती हो । (न०) वह मांसखंड जिस पर अन्न की तह चढ़ायी गयी हो ।

परिदेव—(पुं०), **परिदेविता**–(स्त्री०), **परिदेवन**–(न०), (स्त्री०)–[परि√दिव्+घञ्[परि√दिव्+णिनि+तल्–टाप्] [परि√दिव्+ल्युट्] बहुत अधिक रोना-धोना,बिलखना, विलाप करना ।

परिद्रष्टृ—(पुं०) [परि√दृश् + तृच्] तमाशबीन, दर्शक ।

परिधर्षण—(न०) [परि√धृष्+ल्युट्] आक्रमण, चढ़ाई । बलात्कार । हतक, कुवाच्य । दुर्व्यवहार, बुरा बर्ताव ।

परिधान, परीधान—(न०) [परि√धा +ल्युट्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] चारों ओर से घेरना या आवृत करना । नाभि से नीचे का पहनावा । पोशाक पहनना, वस्त्र धारण करना । वस्त्र; 'आत्तचित्रपरिधानविभूषाः' कि० ६.१ ।

परिधानीय—(न०) [परि√धा + अनीयर्] जामा, अंगे या जामे के नीचे पहिनने का वस्त्र । (वि०) पहनने योग्य ।

परिधापन—(न०) [परि √धा + णि च् –पुक्+ल्युट्–अन] पहनाना ।

परिधाय—(पुं०) [परि √धा+घञ्] पानी जमा करने या होने की जगह, जलस्थान । अनुचरगण । दल-बल । पिछला भाग, चूतड़, पुट्ठा आदि ।

परिधि—(पुं०) [परि√धा+कि] दीवाल । हाता । मेंड़ । घेरा । सूर्यमण्डल का घेरा; 'परिधेर्मुक्त इवोष्णदीधितिः' र० ८.३० । आकाशमय घेरा या प्रकाश का घेरा । आकाशमण्डल का घेरा । पहिये का घेरा । अग्निकुण्ड के चारों ओर गोलाकार रखी हुई पलाश आदि की लकड़ी । क्षितिज ।

आवरण। पहनावा। समुद्र (जो पृथ्वी को घेरे हुए है)। उस वृक्ष की कोई शाखा जिसमें बलिपशु बाँधा जाता है। परिक्रमा करने का नियत मार्ग।—**पति**,—**खेचर**—(पु०) शिव जी का नामान्तर।—**स्थ**—(पु०) रखवाला, चौकीदार। रथ और रथी का रक्षक एक सैनिक या सैनिकदल।

परिधूपित—(वि०) [परि √धूप्+क्त] धूप द्वारा सुवासित, सुगन्धीकृत।

परिधूसर—(वि०) [परि सर्वतोभावेन धूसरः] बिलकुल भूरा।

परिधेय—(न०) [परि√धा+यत्] दे० 'परिधानीय'।

परिध्वंस—(पु०) [परि√ध्वंस्+घञ्] बरबादी, विनाश। जातिच्युति। विफलता।

परिध्वंसिन्—(वि०) [परि √ध्वंस्+णिनि] गिरने वाला। नाश होने वाला।

परिनिर्वाण—(वि०) [प्रा० स०] बिलकुल बुझा हुआ। (न०) पूर्ण निर्वाण, मोक्ष (बौद्ध)।

परिनिर्वृत्ति—(स्त्री०) [प्रा० स०] पूर्ण मोक्ष (बौद्ध)।

परिनिष्ठा—(स्त्री०) [प्रा० स०] पूर्ण ज्ञान। सर्वाङ्गपूर्णता। चरम सीमा या अवस्था, पराकाष्ठा।

परिनिष्ठित—(वि०) [परि–नि √स्था+क्त] पूर्ण रूप से निपुणताप्राप्त, पूर्ण कुशल।

परिपक्व—[प्रा० स०] भली भाँति पकाया हुआ। भली भाँति सेंका हुआ। बिलकुल पका हुआ। बड़ा चतुर या चालाक। भली भाँति पचा हुआ। नष्ट होने वाला अथवा मरने वाला।

परिपण, परिपन—(न०) [परि √पण् (न्) +घ] पूँजी, मूल धन, बारदाना।

परिपणन—(न०) [परि√पण्+ल्युट्] बाजी लगाना। वादा करना।

परिपणित—(वि०) [परि √पण्+क्त] वादा किया हुआ। जिसके लिये शर्त की गयी हो, जिसकी बाजी लगायी गयी हो; 'सततमनभिभाषणं मया ते परिपणितम्' शि० ७.६।—**कालसन्धि**—(पु०) वह संधि जिसमें यह प्रतिज्ञा की गई हो कि कौन कितने समय तक लड़ेगा।—**देशसन्धि**—(पु०) वह संधि जिसमें यह नियत किया गया हो कि कौन पक्ष किस देश पर चढ़ाई करेगा।—**सन्धि**—(पु०) वह संधि जिसमें कुछ शर्तें स्वीकार की गई हों।

परिपन्थक—(पु०) [परिपन्थयति दोषादिकं प्राप्नोति, परि√पन्थ्+ण्वुल्] शत्रु, दुश्मन।

परिपन्थिन्—(वि०) [परि √पन्थ्+णिनि] मार्ग रोकने वाला। मार्गावरोधक। (पु०) शत्रु, दुश्मन। डाकू, लुटेरा; 'अर्थपरिपन्थी महानरातिः' मु० ५।

परिपाक, परीपाक—(पु०) [परि√पच्+घञ्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] भली भाँति पकना या पकाया जाना। पाचनशक्ति। पूर्ण वृद्धि को प्राप्त होना, परिपूर्णता। फल, परिणाम। चातुर्य, चालाकी।

परिपाटल—(वि०) [प्रा० स०] पीलापन लिये लाल रंग का।

परिपाटि, परिपाटी—(स्त्री०) [परि भागेन पाटिः पाटनं गतिः यस्याः, प्रा० ब०] [परिपाटि+ङीष्] क्रम, शैली, सिलसिला। प्रणाली, तरीका, चाल, ढंग।

परिपाठ—(पु०) [प्रा० स०] विस्तार के साथ उल्लेख या पाठ करना।

परिपार्श्व—(वि०) [अत्या० स०] पास का, निकटवर्ती। (न०) [प्रा० स०] बगल।

परिपालन—(न०) [परि √पाल् + णिच् +ल्युट्] रक्षा, बचाव। पालन-पोषण।

परिपिष्टक—(न०) [परि√पिष् + क्त +कन्] सीसा।

परिपीडन—(न०) [परि √पीड्+ल्युट्] बहुत पीड़ा देना। पेरना, दबा कर निचोड़ना। अनिष्ट करना, हानि पहुँचाना।

परिपुटन—(न०) [परि √पुट्+ल्युट्] हटाना, पृथक्करण। छाल या चाम को अलग करना।

परिपूजन—(न०) [परि √पूज्+ल्युट्] सम्मान करना, अर्चन करना।

परिपूजा—(स्त्री०) [प्रा० स०] सम्यक् पूजा।

परिपूत—(वि०) [परि √पू+क्त] पूर्णतया साफ किया हुआ, नितान्त स्वच्छ। फटका हुआ। भूसी से अलगाया हुआ।

परिपूरण—(न०) [परि√पूर्+ल्युट्] परिपूर्ण करना। भर देना।

परिपूर्ण—(वि०) [परि√पूर्+क्त] बिल्कुल भरा हुआ, लबालब। अघाया हुआ, सन्तुष्ट। —**चन्द्रविमलप्रभ**-(पुं०) एक तरह की समाधि जिसका वर्णन बौद्ध शास्त्रों में मिलता है।

परिपूर्ति—(स्त्री०) [परि √पूर्+क्तिन्] परिपूर्ण होने की क्रिया या भाव, परिपूर्णता।

परिपृच्छा—(स्त्री०) [परि √प्रच्छ्+अङ —टाप्] प्रश्न। जिज्ञासा। पूछना।

परिपेलव—(वि०) [प्रा० स०] अत्यन्त कोमल, अति सुकुमार।

परिपोट, परिपोटक—[परि√पुट्+घञ्] [परिपोट+कन्] कान का एक रोग (इसमें लौक का चमड़ा सूज कर स्याही लिये हुए लाल रंग का हो जाता है और उसमें दर्द होता है)।

परिपोषण—(न०) [परि√पुष्+ल्युट्] खिलाना-पिलाना, पालन-पोषण। बढ़ना, वृद्धि।

परिप्रश्न—(पुं०) [प्रा० स०] प्रश्न। जिज्ञासा। पूछताछ का प्रश्न; 'तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया' भग० ४.३४।

परिप्राप्ति—(स्त्री०) [प्रा० स०] मिलना, प्राप्ति, उपलब्धि।

परिप्रेष्य—(पुं०) [प्रा० स०] भृत्य, नौकर। (वि०) भेजने योग्य।

परिप्लव—(वि०) [परि √प्लु+अच्] हिलता हुआ, काँपता हुआ। उतराता हुआ। चञ्चल, अस्थिर। (पुं०) बूड़ा, बाढ़, प्लावन। नाव। अत्याचार, जुल्म। आप्लावित होना।

परिप्लुत—(वि०) [परि √प्लु+क्त] जल आदि से आर्द्र या सिक्त, सराबोर। जल से आप्लावित, बाढ़ के पानी से व्याप्त। अभिभूत। (न०) कुदान, छलांग।

परिप्लुता—(स्त्री०) [परिप्लुत+टाप्] मदिरा। मैथुन-वेदना-युक्त योनि।

परिप्लुष्ट—(वि०) परि√प्लुष्+क्त] जला हुआ, झुलसा हुआ।

परिबर्ह, परिवर्ह—(पुं०) [परि√ब(व) र्ह्+घञ्] लवाजमा, नौकर-चाकर। राजा के छत्र, चँवर आदि राजचिह्न। सजावट का सामान। सम्पत्ति, धनदौलत।

परिबर्हण, परिवर्हण—(न०) [परि √ब (व) र्ह्+ल्युट्] अनुचरवर्ग। शृङ्गार, सजावट। बढ़ती। पूजा, उपासना।

परिबाधा—(स्त्री०) [प्रा० स०] कष्ट, पीड़ा। थकावट। कठिनाई।

परिबृंहण, परिवृंहण—(न०) [परि √बृं (वृं) ह्+ल्युट्] समृद्धि। किसी ग्रन्थ के अङ्ग स्वरूप अन्य ग्रन्थ, वह ग्रन्थ अथवा शास्त्र जो किसी अन्य ग्रन्थ या शास्त्र की पूर्ति या पुष्टि करता हो जैसे ब्राह्मण ग्रन्थ वेद के परिबृंहण हैं।

परिबृंहित, परिवृंहित—(वि०) [परि√बृं (वृं) ह्+क्त] उन्नत, बढ़ा हुआ। समृद्ध, फलता, फूलता हुआ। किसी से जुड़ा या मिला हुआ, युक्त, संयुक्त।

परिभङ्ग—(पुं०) [प्रा० स०] टुकड़े-टुकड़े होकर टूटना, टुकड़े-टुकड़े हो जाना।

परिभर्त्सन—(न०) [परि √भर्त्स्+ल्युट्] डाँट, डपट, धिक्कार, फटकार।

परिभव, परीभव—(पुं०) [परि √भू +अप्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] अनादर, तिरस्कार, अपमान ।—**आस्पद** (परि (री) भवास्पद),—**पद**-(न०) तिरस्करणीय वस्तु, तिरस्कार के योग्य पदार्थ । अपमान या अपमानार्ह परिस्थिति ।—**विधि**-(पुं०) अपमान ।

परिभविन्—(वि०) [स्त्री०—**परिभविनी**] [परि√भू+इनि] अपमानकारक, तिरस्कार या अपमान करने वाला । अपमानित ।

परिभाव—(पुं०) [परि√भू +घञ्] दे० 'परिभव' ।

परिभाविन्—(वि०) [स्त्री०—**परिभाविनी**] [परि√भू+णिनि] अपमानकारक, तिरस्कार करने वाला । लज्जित करने वाला । तुच्छ समझने वाला । सामना करने वाला , चुनौती देने वाला ।

परिभाषण—(न०) [परि√भाष् + ल्युट्] वार्तालाप, संवाद, कथोपकथन, गपशप, बातचीत । निन्दापूर्वक उलहना, किसी को दोष देते हुए या लानत-मलामत करते हुए उसके कार्य पर अप्रसन्नता प्रकट करना । फटकार, भर्त्सना । नियम । आज्ञा, आदेश ।

परिभाषा—[परि√भाष्+अ—टाप्] किसी का ऐसा नपा-तुला परिचय जिससे उसके स्वरूप, गुण, वैशिष्ट्य आदि का यथार्थ ज्ञान हो जाय, लक्षण । ऐसी संज्ञा जिसका प्रयोग किसी शास्त्र, कला या विद्या के क्षेत्र में विशिष्ट अर्थ में होता हो, किसी शास्त्र, कला या विद्या के क्षेत्र में विशिष्ट अर्थ में प्रयुक्त होने वाला शब्द । अपने प्रयोग के लिये शास्त्रकारों द्वारा रची हुई विशिष्ट संज्ञा । परिभाषा का शाब्दिक रूप, परिभाषा का वचन । पारिभाषिक शब्दावली । बातचीत, आलाप । व्याख्या । निंदा ।

परिभुक्त—(वि०) [परि √भुज्+क्त] खाया हुआ । व्यवहृत, काम में लाया हुआ । अधिकृत ।

परिभुग्न—(वि०) [परि √भुज्+क्त] झुका हुआ, टेढ़ा, मुड़ा हुआ ।

परिभूति—(स्त्री०) [परि √भू+क्तिन्] तिरस्कार, हतक, अपमान, अनादर ।

परिभूषण—(न०) [परि√ भूष् + णिच् +ल्युट्] सजाना, बनाव-सिंगार करना, सँवारना । (पुं०) [परि√भूष्+ल्यु] वह सन्धि या शान्ति जो किसी विशेष प्रदेश या भूखण्ड का समस्त राजस्व देकर स्थापित की गयी हो ।

परिभोग—(पुं०) [परि √भुज्+घञ्] भोग, उपभोग । मैथुन, स्त्रीप्रसङ्ग; 'स्त्रीव कान्तपरिभोगमायतम्' र० ११.५२ । अनधिकार किसी वस्तु को काम में लाना ।

परिभ्रंश—(पुं०) [परि√भ्रंश् + घञ्] छुटकारा, निकास । गिराव, पतन, च्युति, स्खलन ।

परिभ्रम—(पुं०) [परि √भ्रम्+घञ्] इधर-उधर टहलना, घूमना । घुमा-फिरा कर कहना, सीधे न कर कह फेरफार से कहना । भूल, भ्रम ।

परिभ्रमण—(न०) [परि√भ्रम् + ल्युट्] पर्यटन, भ्रमण, मटरगश्त । घूमना, चक्कर लगाना । व्यास, घेरा, परिधि ।

परिभ्रष्ट—(वि०) [परि √भ्रंश्+क्त] पतित, गिरा हुआ, च्युत, स्खलित । निकल कर भागा हुआ । अधःपतित । रहित किया हुआ, वञ्चित किया हुआ । असावधानी किया हुआ ।

परिमण्डल—(वि०) [प्रा० ब०] वर्तुलाकार, गोल । जो परिमाण में एक परमाणु के बराबर हो । (न०) [प्रा० स०] वृत्त, घेरा, दायरा । पिंड, गोलक । परिधि ।—**कुष्ठ**-(पुं०) एक प्रकार का कोढ़ ।

परिमन्थर—(वि०) [प्रा० स०] अत्यन्त सुस्त, परले दर्जे का दीर्घसूत्री या बिलदा ।

परिमन्द—(वि०) [प्रा० स०] अत्यन्त धुँधला, अस्पष्ट; 'परिमन्दसूर्यनयनो दिवसः' शि०

६.३। बहुत सुस्त। बहुत थका हुआ या कमजोर। बहुत थोड़ा।

परिमर—(पुं०) [परि√मृ+अप्] विनाश। वायु। शत्रुओं के नाश का एक तांत्रिक प्रयोग।

परिमर्द—(पुं०), **परिमर्दन**-(न०) [परि √मृद्+घञ्] [परि √मृद्+ल्युट्] रगड़ना, पीसना। कुचलना। नाश। अनिष्ट। दबाना।

परिमर्श—(पुं०) [परि √मृश्+घञ्]स्पर्श। रगड़।

परिमर्ष—(पुं०) [परि √मृष्+घञ्] डाह। ईर्ष्या। घृणा। क्रोध।

परिमल—(पुं०) [परि√मल् +अच्] सुवास, उत्तम गन्ध, खुशबू। खुशबूदार चीजों को चूर्ण करना या मलना। खुशबूदार चीज। सहवास, संभोग। पण्डितों का समुदाय। धब्बा, कलङ्क।

परिमलित—(वि०) [परि√मल् + क्त] सुवासित, खुशबूदार। सौन्दर्यभ्रष्ट।

परिमाण, परीमाण—(न०) [परि √मा +ल्युट्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] माप। तौल। मात्रा। आकार।

परिमार्ग—(पुं०), **परिमार्गण**-(न०) [परि √मार्ग्+घञ्] [परि √मार्ग्+ल्युट्] तलाश, खोज, अनुसन्धान। स्पर्श, संसर्ग।

परिमार्जन—(न०) [परि√मृज् + णिच् +ल्युट्] धोने या माँजने का काम। झाड़ने-पोंछने का काम। एक प्रकार की मिठाई जो घी मिश्रित शहद के शीरे में डुबोई हुई होती है।

परिमित—(वि०) [परि√मा + क्त] न अधिक और न कम। सीमा, संख्या आदि से बद्ध। नपा तुला हुआ। हिसाब या अंदाज से उचित मात्रा या परिमाण में स्थित।—**आभरण** (**परिमिताभरण**)-(वि०) अंदाज से आभूषण धारण किए हुए, थोड़े गहने पहने हुए।—**आयुस्** (**परिमितायुस्**)-(वि०) अल्पायु, थोड़े दिनों जीने वाला।—**आहार** (**परिमिताहार**),—**भोजन**-(त्रि०) कम भोजन करने वाला।—**कथ**-(वि०) कम बोलने वाला, नपे तुले शब्द कहने वाला।

परिमिति—(स्त्री०) [परि √मा+क्तिन्] नाप। परिमाण। सीमा।

परिमिलन—(न०) [परि√मिल् + ल्युट्] स्पर्श, संसर्ग। संयोग, मेल।

परिमुखम्—(अव्य०) [अव्य० स०] चेहरे के निकट। किसी पुरुष के इर्द गिर्द। चारों तरफ।

परिमुग्ध—(वि०) [परि √मुह्+क्त] मनोहर तथापि सादा। मनमोहक किन्तु मूर्ख।

परिमृदित—(वि०) [परि √मृद्+क्त] कुचला हुआ, पैरों से रौंदा हुआ। आलिङ्गन किया हुआ। रगड़ा हुआ, पीसा हुआ।

परिमृष्ट—(वि०) [परि √मृज्+क्त] साफ किया हुआ, धोया हुआ। पवित्र किया हुआ। रगड़ा हुआ। थपथपाया हुआ। आलिङ्गन किया हुआ। फैला हुआ, व्याप्त।

परिमेय—(वि०) [परि √मा+यत्] जो नापा या तौला जा सके। जो गिना जा सके। परिच्छिन्न, जिसकी सीमा हो। कुछ।

परिमोक्ष—(पुं०) [परि √मोक्ष् + घञ्] स्थानान्तरकरण। मुक्ति, छुटकारा। मलपरित्याग। निकास। निर्वाण।

परिमोक्षण—(न०) [परि √मोक्ष्+ल्युट्] मुक्त करना, छोड़ना। मुक्ति, छुटकारा। धौतिक्रिया।

परिमोष—(पुं०) [परि√मुष्+घञ्] चोरी। डाकाजनी।

परिमोषिन्—(पुं०) [परि √मुष्+णिनि] चोर। डाकू।

परिमोहन—(न०) [प्रा० स०] किसी के मन या उसकी बुद्धि को पूर्ण रूप से अपने वश में कर लेना, सम्यक् वशीकरण।

परिम्लान—(वि०) [परि√म्ला+क्त] कुम्हलाया हुआ, मुरझाया हुआ। मलिन, हतप्रभ, निस्तेज। निर्बल, कमजोर। धब्बा खाया हुआ, कलङ्कित।

परिरक्षक—(वि०) [परि √ रक्ष्+ण्वुल्] सब प्रकार से रक्षा करने वाला। देखभाल करने वाला, अभिभावक।

परिरक्षण—(न०), **परिरक्षा**—(स्त्री०) [परि √रक्ष्+ल्युट्] [परि√रक्ष् + अ—टाप्] सब प्रकार या सब तरह से रक्षा। देखभाल। बचाव। पालन।

परिरथ्या—(स्त्री०) [परितो रथ्या] चौराहा।

परिरम्भ, परीरम्भ—(पुं०), **परिरम्भण**—(न०) [परि√रम्+घञ्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] [परि√रम्+ल्युट्] आलिङ्गन करने की क्रिया; 'परोरम्भारम्भः क इव भविताम्भोरुहदृशः' सा० द० १०।

परिराटिन्—(वि०) [परि√रट् +णिनुण्] चिल्लाने वाला, चीख मारने वाला। रट लगाने वाला।

परिलघु—(वि०) [प्रा० स०] बहुत हलका। पचने में सुलभ; 'क्षीणः क्षीणः परिलघु पयः स्रोतसाम् चोपभुज्य' मे० १३। बहुत छोटा।

परिलुप्त—(वि०) [परि √लुप्+क्त] क्षतिग्रस्त। लुप्त। नष्ट।—**संज्ञ**—(वि०) बेहोश, संज्ञाहीन।

परिलेख—(पुं०) [परि√लिख्+घञ्] रेखाचित्र, खाका। रेखायें या चित्र खींचने का उपकरण, कूँची, कलम आदि। चित्र।

परिलोप—(पुं०) [परि√लुप्+घञ्] लोप। नाश। क्षति। उपेक्षा।

परिवत्सर—(पुं०) [प्रा० स०] पाँच संवत्सरों में से एक। एक समूचा वर्ष, एक पूरा साल।

परिवर्जन—(न०) [परि √वृज्+ल्युट् वा णिच्+ल्युट्] त्याग, परित्याग। तजना, छोड़ना। वध, हत्या।

परिवर्त, परीवर्त—(पुं०) [परि √वृत्+घञ्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] फेरा, घुमाव, चक्कर। विवर्तन, आवृत्ति। अवधि की समाप्ति। युग की समाप्ति। भगदड़, पलायन। वर्ष। पुनर्जन्म। विनिमय, अदल-बदल। पुनरागमन। आवासस्थान, घर। परिच्छेद। अध्याय। भगवान् विष्णु का दूसरा अवतार, कच्छपावतार।

परिवर्तक—(वि०) [परि √वृत् + णिच् +ण्वुल्] घुमाने वाला, चक्कर देने वाला। बदलने वाला, विनिमय करने वाला।

परिवर्तन—(न०) [परि √वृत्+ल्युट्] घुमाव, फेरा, चक्कर। अदला-बदली, हेरफेर, तबादला। दशान्तर, स्थित्यन्तर। किसी काल या युग की समाप्ति।

परिवर्तिका—(स्त्री०) [परि √वृत् +ण्वुल् —टाप्, इत्व] एक रोग जिसमें अधिक खुजलाने, दबाने या रगड़ लगने से लिङ्ग का चर्म उलट कर सूज जाता है।

परिवर्तिन्—(वि०) [परि√वृत् + णिनि] घूमने वाला, चक्कर लगाने वाला। बार-बार घूम कर आने या होने वाला; 'परिवर्तिनि संसारे मृतः को वा न जायते' पं० १.२७। समीपवर्ती, पास रहने वाला। भागने वाला। बदलने वाला। त्यागने वाला। छोड़ देने वाला, दण्ड भरने वाला।

परिवर्धन—(न०) [परि√वृध् + ल्युट्] संख्या, गुण आदि में किसी पदार्थ की वृद्धि, परिवृद्धि।

परिवसथ—(पुं०) [परितो वसन्ति अत्र, परि √वस्+अथ] ग्राम, गाँव।

परिवह—(पुं०) [परि सर्वतोभावेन वहति, परि √वह्+अच्] सात पवनमार्गों में से छठवाँ पवन मार्ग। इसी मार्ग में आकाशगंगा बहती है और सप्तर्षि चला करते हैं।

परिवाद, परीवाद—(पुं०) [परि √वद् +घञ्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] निन्दा, बुराई। कलङ्क, अपकीर्ति, बदनामी; 'मा भूत्परीवाद-

नवावतारः' र० ५.२४ । दोषारोपण । मिजराब जिसे पहन कर वीणा या सितार बजाया जाता है ।

परिवादक—(पुं०) [परि √वद्+ण्वुल् या णिच्+ण्वुल्] वादी, मुद्दई । सितार या वीणा बजाने वाला ।

परिवादिन्—(वि०) [परि√वद् + णिनि] निन्दक, निन्दा करने वाला । दोषी ठहराने वाला । चीखने वाला, चिल्लाने वाला । (पुं०) दोषारोपण करने वाला, दावागीर ।

परिवादिनी—(स्त्री०) [परिवादिन्+ङीप्] वीणा जिसमें सात तार होते हैं ।

परिवाप, परीवाप—(पुं०) [परि √वप् +घञ्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] मुण्डन । बुआई, बवनी । जलाशय, तालाब । अनुचरवर्ग । घर का उपयोगी सामान । भूना हुआ चावल, लावा, करही । छेना ।

परिवापित—(वि०) [परि √वप्+णिच् +क्त] मूँड़ा हुआ, मुंडित ।

परिवार, परीवार—(पुं०) [परिव्रियते अनेन, परि √वृ+घञ्' पक्षे दीर्घः] कुटुंब आदि । आश्रित जन, परिजन । अनुचर वर्ग । ढक्कन, आवरण, परिच्छद । म्यान, परतला ।

परिवारण—(न०) [पर√वृ + णिच् +ल्युट्] ढकने की क्रिया । आवरण । म्यान ।

परिवारित—(वि०) [परि √वृ +णिच् +क्त] घिरा हुआ, आवेष्टित । फैला हुआ, पसरा हुआ । (न०) ब्रह्मा का धनुष ।

परिवास—(पुं०) [परि √वस्+घञ्] ठह-रना, टिकना । सुगंध, सुवास । प्रवास, परदेश का निवास । किसी अपराधी भिक्षु का बाहर किया जाना (बौद्ध) ।

परिवाह, परीवाह—(पुं०) [परि √वह् +घञ्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] ऐसा जल-प्रवाह जिसके कारण पानी ताल, तालाब आदि की समाई से ज्यादा हो जाय और बाँध के ऊपर से बहने लगे; 'पूरोत्पीडे तडागस्य परीवाहः प्रतिक्रिया' उत्त० ३.२९ । जलमार्ग, जल बहने की नाली, बंबा या नहर ।

परिवाहिन्—(वि०) [परि √वह्+णिनि] समाई से अधिक जल के आने से बाँध के ऊपर से बहने वाला ।

परिविण्ण, परिविन्न, परिवित्त, परिवित्ति—(पुं०) [परि√विद्+क्त, पक्षे नत्वणत्वयोः अभावः] [परिवित्ति, परि √विद्+क्तिन्] अविवाहित ज्येष्ठ भ्राता, जिसका छोटा भाई विवाहित हो ।

परिविद्ध—(पुं०) [परि √व्यध्+क्त] कुबेर का नामान्तर ।

परिविन्दक, परिविन्दत्—(पुं०) [परि √विद्+ण्वुल्] [परि √विद्+शतृ] वह छोटा भाई, जिसका विवाह ज्येष्ठ भ्राता का विवाह होने से पूर्व हो चुका हो ।

परिविहार—(पुं०) [परितो विहारः, प्रा० स०] आनन्दार्थ इधर-उधर भ्रमण ।

परिविह्वल—(वि०) [प्रा० स०] बहुत घब-ड़ाया हुआ, नितान्त उद्विग्न ।

परिवृढ—(वि०) [परि √वृह्+क्त] दृढ़, मजबूत । (पुं०) स्वामी । सरदार ।

परिवृत—(वि०) [परि√वृ+क्त] घेरा हुआ । छिपा हुआ । व्याप्त, छाया हुआ । परिचित, जाना हुआ ।

परिवृत्त—(वि०) [परि√वृत्+क्त] घुमाया हुआ । भगाया हुआ । समाप्त किया हुआ । बदला हुआ । आवेष्टित । (न०) आलिङ्गन ।

परिवृत्ति—(स्त्री०) [परि √वृत्+क्तिन्] घुमाव, चक्कर । वापिसी, पलटाव । विनिमय, बदलौबल । समाप्ति, अवसान । घिराव । किसी स्थान पर टिकना या बसना । एक अर्था-लङ्कार जिसमें एक वस्तु को देकर दूसरी के लेने अर्थात् बदल-बदल का कथन होता है । एक शब्द के बदले दूसरे शब्द को बैठाना ।

परिवृद्धि—(स्त्री०) [प्रा० स०] पूर्ण वृद्धि, सम्यक् वृद्धि ।

परिवेत्तृ—(पुं०) [परि √विद्+तृच्] दे० 'परिविन्दक'।

परिवेदन—(न०) [परि √विद्+ल्युट्] बड़े भाई के अविवाहित रहते छोटे भाई का विवाह। विवाह। पूर्ण ज्ञान। प्राप्ति। अन्वाधान। विद्यमानता। कष्ट। तर्क।

परिवेदना—(स्त्री०) [परि √विद्+युच्—टाप्] तीक्ष्ण बुद्धिमानी, विदग्धता, चतुराई।

परिवेदनीया, परिवेदिनी—(स्त्री०) [परि √विद्+अनीयर्—टाप्] [परि √विद्+णिनि—ङीप्] उस छोटे भाई की स्त्री, जिसका विवाह ज्येष्ठ भ्राताओं के पूर्व हो चुका हो।

परिवेश, परीवेश, परिवेष, परीवेष—(पुं०) [परि√विश् +घञ्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] [परि√विष्+घञ्,पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] परसना या परोसना। घेरा, परिधि। सूर्य या चन्द्र का पार्श्व या घेरा; 'लक्ष्यते स्म तदनन्तरं रविर्बद्धभीमपरिवेषमण्डलः' र० ११.५९। चन्द्रमण्डल। सूर्यमण्डल। कोई ऐसी वस्तु जो चारों ओर से घेर कर किसी वस्तु की रक्षा करती हो।

परिवेषक—(पुं०) [परि √विष्+ण्वुल्] खाना परोसने वाला।

परिवेषण—(न०) [परि √विष्+ल्युट्] परोसना। घेरना। चन्द्रमा या सूर्य का पार्श्व या घेरा। परिधि।

परिवेष्टन—(न०) [परि√वेष्ट् + ल्युट्] चारों ओर से घेरना या वेष्टन करना। छिपाने, ढकने या लपेटने वाली चीज, आच्छादन। परिधि।

परिवेष्टृ—(पुं०) [परि √विष्+तृच्] दे० 'परिवेषक'।

परिव्यय—(पुं०) [परि—वि √इ+अच्] मूल्य। मसाला।

परिव्याध—(पुं०) [परि √व्यध्+ण] सरपत या नरकुल की एक जाति।

परिव्रज्या—(स्त्री०) [परि √व्रज्+क्यप्—टाप्] जगह-जगह घूमते फिरना। एकान्तवास (संन्यासी की तरह)। संसार की मोह-ममता का त्याग। तपस्या। संन्यास।

परिव्राज्, परिव्राज, परिव्राजक—(पुं०) [परित्यज्य सर्वान् विषयभोगान् गृहाश्रमात् व्रजति, परि √व्रज्+क्विप्, दीर्घ] [परि √व्रज्+घञ् (कर्तरि)] [परि √व्रज्+ण्वुल्] वह जो घर-बार छोड़ कर चतुर्थ आश्रम में प्रविष्ट हो गया हो, संन्यासी।

परिशश्वत—(वि०) [स्त्री०—परिशश्वती] [प्रा० स०] सदा उसी रूप में बना रहने वाला।

परिशिष्ट—(वि०) [परि √शिष्+क्त] छूटा हुआ, बचा हुआ। (न०) किसी ग्रन्थ या पुस्तक का पीछे जोड़ा हुआ अंश।

परिशीलन—(न०) [परि√शील्+ल्युट्] स्पर्श। सदैव का संसर्ग; 'ललितलवङ्गलता-परिशीलनकोमलमलयसमीरे' गीत० १। मनन पूर्वक अध्ययन।

परिशुद्धि—(स्त्री०) [प्रा० स०] पूर्ण रूप से पवित्रता। छुटकारा, रिहाई।

परिशुष्क—(वि०) [परि √शुष्+क्त] भली भाँति सूखा हुआ। कुम्हलाया हुआ। अत्यन्त रसहीन। पोला, खोखला। (न०) एक प्रकार का तला हुआ मांस।

परिशून्य—(वि०) [प्रा०स०] बिल्कुल खाली। नितान्त ज्ञानहीन, पूर्णतः वञ्चित या रहित।

परिशृत—(न०) [परि√श्रु+क्त] मद्य। उमंग, जोश।

परिशेष, परीशेष—(पुं०) [परि √शिष्+घञ्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] बचा हुआ, अवशिष्ट। समाप्ति। अतिरिक्तत्व।

परिशोध—(पुं०) **परिशोधन**— (न०) [परि+शुध्+घञ्] [परि√शुध् + ल्युट्] पूर्णतया शुद्ध करना, संशोधन। भुगतान, चुकता करना।

परिशोष—(पुं०) [परि√शुष्+घञ्] बहुत अधिक सूख जाना, शुष्क हो जाना। [परि √शुष्+णिच्+घञ्] सम्पूर्ण रूप से खाने या भूनने की क्रिया।

परिश्रम—(पुं०) [परि√श्रम्+घञ्, न वृद्धिः] क्लान्ति, थकावट। क्लेशकर आयास, मेहनत।

परिश्रय—(पुं०) [परि √श्रि+अच्] सभा, परिषद्। आश्रय, रक्षा-स्थान। वेष्टन, घेरा।

परिश्रान्ति—(स्त्री०) [परि√श्रम् + क्तिन्] अधिक थकावट। परिश्रम, मेहनत।

परिश्रुत—(वि०) [परि √श्रु+क्त] विख्यात, प्रसिद्ध।

परिश्लेष—(पुं०) [परि √श्लिष्+घञ्] आलिङ्गन।

परिषद्—(स्त्री०) [परितः सीदन्ति अस्याम्, परि√सद्+क्विप्] सभा, मजलिस। धर्मसभा।

परिषद, परिषद्य, परिषद्वल—(पुं०) [परितः सीदति, परि√सद्+अच्] परिषदमर्हति, परिषद् + यत्] [परिषद् अस्य अस्ति, परिषद्+वलच्] सदस्य, सभासद्।

परिषेक—(पुं०), **परिषेचन**—(न०) [परि √सिच्+घञ्] [परि√सिच् + ल्युट्] सींचना, छिड़कना, नम करना।

परिष्कण्ण, परिष्कन्न—(वि०) [परि√स्कन्द्+क्त, दस्य तस्य च नः, षत्वणत्वे, पक्षे णत्वाभावः] जिसका पालन अन्य के द्वारा हुआ हो। (पुं०) पोष्यपुत्र, वह बालक जिसे किसी अपरिचित मनुष्य ने पाला-पोसा हो।

परिष्कन्द—(पुं०) [परि √स्कन्द् +घञ्] वह जिसका पालन-पोषण उसके माता-पिता ने नहीं प्रत्युत दूसरे ने किया हो। नौकर (विशेषतः वह जो सवारी के साथ-साथ चले)।

परिष्कर—(पुं०) [परि √कृ+अप्, सुट्, षत्व] सजावट।

परिष्कार—(पुं०) [परि√कृ+घञ्, सुट्, षत्व] शृङ्गार, सजावट। भूषण, गहना। पाचनक्रिया। संस्कार। आरम्भिक संस्कारों द्वारा पवित्र करने की क्रिया। सामान (सजावट का)।

परिष्कृत—(वि०) [परि √कृ+क्त, सुट्, षत्व] शृङ्गारित, सजाया हुआ। पकाया हुआ। आरम्भिक संस्कारों से शुद्ध किया हुआ।

परिष्क्रिया—(स्त्री०) [परि √कृ+श, सुट्—टाप्] सजाना, अलंकृत करना। शोधन।

परिष्टोम, परिस्तोम—(पुं०) [परि √स्तु+मन्, षत्व, पक्षे षत्वाभावः] हाथी की रंगीन झूल। आच्छादन। गद्दा।

परिष्यन्द—(पुं०) [परि √स्यन्द्+घञ्] प्रवाह, बहाव। नदी। आर्द्रता। द्वीप (वेद)।

परिष्वक्त—(वि०) [परि √स्वञ्ज्+क्त] गले लगाया हुआ, आलिङ्गन किया हुआ।

परिष्वङ्ग—(पुं०) [परि √स्वञ्ज्+घञ्] आलिङ्गनः 'व्योम्नः परिष्वङ्गमिवाद्रपक्षैः' कि० १८.१६। स्पर्श।

परिसंवत्सर—(अव्य०) [ऊर्ध्वं संवत्सरात्, अव्य० स०] एक साल से ऊपर।

परिसङ्ख्या—(स्त्री०) [परि —सम्√ख्या +अङ—टाप्] गणना, गिनती। एक अर्थालङ्कार। ऐसा विधान जिससे विहित वस्तु से भिन्न सभी वस्तुओं का निषेध हो जाय (मीमांसा)।

परिसङ्ख्यात—(पुं०) [परि —सम्√ख्या +क्त] गिना हुआ, गणना किया हुआ। विशेष रूप से बतलाया हुआ।

परिसङ्ख्यान—(न०) [परि—सम् √ ख्या +ल्युट्] गणना, गिनती। विशेष निर्देश। यथार्थ निर्णय। उचित अनुमान या तख़मीना।

परिसञ्चर—(पुं०) [परि — सम्√चर् +अप्] महाप्रलय।

परिसमापन, परिसमाप्ति—(स्त्री०) [परि

–सम् √आप्+ल्युट्] [परि–सम्√आप् +क्तिन्] अच्छी तरह समाप्त करना, पूरा करना।

परिसमूहन—(न०) [परि–सम् √ ऊह् +ल्युट्] एकत्र करना। यज्ञाग्नि में समिधा डालना। यज्ञ में अग्नि के चारों ओर गिरे हुए तृण आदि को आग में डालना। यज्ञाग्नि के चारों ओर जल से मार्जन करना।

परिसर—(पुं०) [परि √सृ+अ] नदी, नगर, पर्वत आदि के आस-पास की भूमि; 'गोदावरीपरिसरस्य गिरेस्तटानि' उत्त० ३.८। विधान, नियम। स्थिति। मृत्यु। एक देवता। इधर से उधर जाना, हिलना-डोलना। चौड़ाई।

परिसरण—(न०) [परि √सृ+ल्युट्] इधर-उधर घूमना-फिरना।

परिसर्प—(पुं०) [परि √सृप्+घञ्] इधर-उधर जाना या घूमना। तलाश में जाना। अनुसरण करना। घेरा, हाता।

परिसर्पण—(न०) [परि √सृप्+ल्युट्] हिलना। रेंगना। इधर-उधर दौड़ना। चलते-फिरते रहना।

परिसर्या, परीसर्या—(स्त्री०), **परिसार, परीसार**–(पुं०) [परि√सृ+श, यक्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] [परि√सृ+घञ्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] इधर-उधर घूमना-फिरना। फेरी।

परिस्तरण—(न०) [परि √स्तृ वा√ स्तॄ +ल्युट्] चारों ओर फैलाना या बिछाना। आवरण, आच्छादन।

परिस्पन्द—(पुं०) [परि√स्पन्द् + घञ्] अनुचरवर्ग। पुष्पों से केशों का शृङ्गार। आभूषण या सजावट का कोई भी उपस्कर। धड़कन, गति। रसद। कूदना। कुचलना।

परिस्फुट—(वि०) [प्रा० स०] बिल्कुल साफ, स्पष्टगोचर। पूरा फूला हुआ। पूरा बड़ा हुआ।

परिस्फुरण—(न०) [परि√स्फुर् + ल्युट्] कंप, थरथराहट। खिलना।

परिस्यन्द—(पुं०) [परि √स्यन्द्+घञ्] चूना, टपकना, रिसना। बहाव, धारा। अनुचरवर्ग।

परिस्रव—(पुं०) [परि √स्रु+अप्] बहाव, धार। फिसलाहट। नदी।

परिस्राव—(पुं०) [परि √स्रु + णिच् +घञ्] चारों ओर से चूना, टपकना या रिसना। एक रोग जिसमें मल के साथ-साथ पित्त और कफ गिरता है (आ० वे०)। बच्चे का जन्म लेना।

परिस्रुत्, परिस्रुता—(स्त्री०) [परि-√स्रु+क्विप्, तुक्] [परिस्रुत्+टाप्] मदिरा-विशेष। टपकना, चूना, बहना।

परिहत—(वि०) [परि √हन्+क्त] ढीला किया हुआ। मरा हुआ।

परिहरण—(न०) [परि√हृ + ल्युट्] त्याग। निवारण। खण्डन। छीन लेना, अपहरण करना।

परिहार, परीहार—(पुं०) [परि√हृ +घञ्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] तजना, त्यागना। हटाना, अलग करना। निराकरण, खण्डन। वर्णन न करना, छोड़ जाना। दुराव, छिपाव। ग्राम के समीप का भूमिखण्ड या परती जमीन जो सब ग्रामवालों की समझी जाय; 'धनुःशतं परीहारो ग्रामस्य स्यात्समन्ततः' मनु० ७.२०१। अपमान। आपत्ति, एतराज।

परिहाणि, परिहानि—(स्त्री०) [प्रा० स०, णत्विक णत्व] नुकसान, घाटा। ह्रास। त्यागना, छोड़ना। उपेक्षा करना।

परिहार्य—(वि०) [परि√हृ+ण्यत्] त्याज्य, जिसका परिहार किया जा सके, जिससे बचा जा सके। (पुं०) कङ्कण, कंगन।

परिहास, परीहास—(पुं०) [परि√हस् +घञ्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] हँसी, मजाक

दिल्लगी; 'परीहासास्त्रिताः सततमभवन् येन नवतः' वे० ३.१४ । क्रीड़ा,खेल । चिढ़ाना ।—वेदिन्-(पुं०) विदूषक, भाँड़, मसखरा ।

परिहृत—(त्रि०) [परि √हृ+क्त] त्यागा हुआ, छोड़ा हुआ । नष्ट किया हुआ । छिपाया हुआ । छीना हुआ ।

परीक्षक—(पुं०) [परि √ईक्ष्+ण्वुल्] परीक्षा करने या लेने वाला, परखने वाला, जाँचने वाला (व्यक्ति) ।

परीक्षण—(न०) [परि√ईक्ष् + ल्युट्] परीक्षा करने या लेने की क्रिया, जाँच, परख । राजा के मंत्री, चर आदि के दोषादोष की जाँच करना ।

परीक्षा—(स्त्री०) [परि√ईक्ष् + अ—टाप्] किसी के गुण, दोष, योग्यता, शक्ति आदि की सच्ची जानकारी के लिये उसे अच्छी तरह देखना-भालना—परख या किसी के गुण, दोष, योग्यता आदि का पता लगाने के लिये किया जाने वाला काम, इम्तहान । तर्क, प्रमाण आदि के द्वारा किसी वस्तु के तत्त्व का निश्चय करना । किसी वस्तु का ऐसा प्रयोग जो उसके बारे में कोई विशेष बात निश्चय करने के लिये किया जाय ।

परीक्षित्—(पुं०) [परि सर्वतोभावेन क्षीयते हन्यते दुरितम् येन, परि√क्षि+क्विप्, तुक्, वा परिक्षीणेषु कुरुषु क्षीयते ईष्टे, क्विप् उपसर्गस्य दीर्घः] अर्जुन के पौत्र और अभिमन्यु के पुत्र का नाम ।

परीक्षित—(वि०) [परि √ईक्ष्+क्त] जाँचा हुआ, पड़ताला हुआ ।

परीत—(वि०) [परि√इ+क्त] घिरा हुआ । बीता हुआ, गुजरा हुआ । जमा हुआ । पकड़ा हुआ । अधिकृत किया हुआ ।

परीप्सा—(स्त्री०) [परि √आप्+सन् +अ—टाप्] किसी वस्तु की प्राप्ति की कामना । शीघ्रता, त्वरा ।

परीर—(न०) [√पॄ+ईरन्] फल ।

परीरम्भ—(न०) [परि √ईर्+ल्युट्] कछुवा । छड़ी । पट्टशाटक, वस्त्र-विशेष ।

परीष्टि—(स्त्री०) [परि√इष् + क्तिन्] अनुसन्धान, खोज । सेवा, चाकरी । अभिलाषा ।

परु—(पुं०) [√पॄ+उ] समुद्र । गाँठ, जोड़ । अवसर । स्वर्ग । पहाड़ ।

परुत्—(अव्य०) [पूर्वस्मिन् वत्सरे इति पूर्वस्य परभावः उत् च] गतवर्ष ।

परुत्न—(वि०) [पूर्वस्मिन् वत्सरे भवः इति पूर्वस्य परभावः, उत्, नप्रत्ययः] पिछले साल का ।

परुद्वार—(पुं०) [परुः समुद्रः पर्वतो वा द्वारमिव यस्य, ब० स०] घोड़ा ।

परुष—(वि०) [पॄ+उषन्] कड़ा, कठोर कर्कश । अत्यन्त रूखा या रसहीन । अप्रिय, बुरा लगने वाला । निष्ठुर, निर्दय; 'अपरुषा परुषाक्षरमीरिता' र० ९.८ । तीक्ष्ण, प्रचण्ड । सुस्त, आलसी । मैला-कुचैला । चितकबरा । (न०) कड़ी बात, दुर्वचन ।—इतर(परुषेतर) —(वि०) मुलायम, कोमल ।—उक्ति (परुषोक्ति),—वचन-(न०) कुवाच्य या सख्त-कलामी ।

परुस्—(न०) [√पॄ+उस्] गाँठ, जोड़ । अवयव, शरीरावयव ।

परेत—[परं लोकम् इतः] मृत, मरा हुआ । (पुं०) प्रेत, भूत ।—भर्तृ,—राज-(पुं०) यम ।—भूमि—(स्त्री०), —वास-(पुं०) श्मशान, कब्रस्तान ।

परेद्यवि, परेद्युस्—(अव्य०) [परस्मिन् अहनि, नि०साधुः] अन्य दिवस, दूसरे दिन ।

परेष्टु, परेष्टुका—(स्त्री०) [परैः इष्यते, पर√इष्+तु] [परेष्टु+कन्—टाप्] कई बार की ब्यायी हुई गाय ।

परोक्ष—(न०) [अक्ष्णः परम्, अव्य० स०] वर्तमान न होने की स्थिति, अनुपस्थिति । भूतकाल (व्या०) । (वि०) [परोक्ष+अच्]

दृष्टि से बाहर, अगोचर । अनुपस्थित । गुप्त । अनजान, अपरिचित । (पुं०) तपस्वी । मनु का पुत्र और ययाति का पौत्र ।—भोग –(पुं०) वस्तु के मालिक की अनुपस्थिति में उसकी वस्तु का उपभोग ।—वृत्ति–(वि०) दृष्टि के ओझल रहने वाला । (स्त्री०) अज्ञात जीवन ।

परोष्णी—(स्त्री०) [परः शत्रुः उष्णो यस्याः] एक तेल पीने वाला कीड़ा, तेलचटा ।

पर्जन्य—(पुं०) [पर्षति सिञ्चति वृष्टिं ददाति, √पृष्+अन्य नि० षकारस्य जकारः] बादल जो पानी बरसावे । बादल जो गर्जना करे । बादल; 'अन्नाद् भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः' भग० ३.१४ । वृष्टि । इन्द्र ।

√पर्ण्—चु० पर० सक० सब्ज करना, हरा-भरा करना । पर्णयति, पर्णयिष्यति, अपपर्णत् ।

पर्ण—(न०) [√पृ+न वा √पर्ण्+अच्] डैना, बाजू । बाण में लगे पंख । पत्ता । पान, ताम्बूल । (पुं०) पलाश वृक्ष ।—**अशन (पर्णाशन)**–(न०) पत्ते खा कर रहना ।—**उटज (पर्णोटज)**–(न०) पत्तों की झोपड़ी, पर्णकुटी ।—**कार**–(पुं०) तमोली, पान बेचने वाला ।—**कुटिका,—कुटी**–(स्त्री०) झोपड़ी जो पत्तों से बनायी गयी हो ।—**कृच्छ्र**–(पुं०) एक प्रकार का प्रायश्चित्त जिसमें प्रायश्चित्ती को पाँच दिन पत्तों का काढ़ा और कुश खाकर रहना होता है ।—**खण्ड**–(पुं०) बिना फूल-फलों का वृक्ष । (न०) पत्तों का समूह ।—**चीरपट**–(पुं०) शिव जी का नामान्तर ।—**चोरक**–(पुं०) एक प्रकार का गन्धद्रव्य ।—**नर**–(पुं०) पत्तों का पुतला जो अप्राप्त शव के स्थान में रख कर फूँक दिया जाता है ।—**भेदिनी**–(स्त्री०) प्रियंगुलता ।—**भोजन**–(पुं०) बकरा ।—**मच**–(पुं०) शिशिरऋतु ।—**मृग**–(पुं०) कोई पशु जो वृक्षों के झुरमुट में रहे ।—**रुह**–(पुं०) वसन्तऋतु ।—**लता**–(स्त्री०) पान की बेल ।—**वीटिका**–(स्त्री०) पान का बीड़ा । सुपारी के टुकड़े जो पान के बीड़े में रखे जाते हैं ।—**शय्या**–(स्त्री०) पत्तों का बिछौना ।—**शबर**—(न०) एक प्राचीन देश ।—**शाला**–(स्त्री०) पर्णकुटी, पत्तों की बनी झोपड़ी ।—**शुष्**—(पुं०) शीतकाल ।

पर्णल—(वि०) [पर्ण+लच्] जहाँ पत्तों का बाहुल्य हो, पत्तों की इफरात वाला ।

पर्णसि—(पुं०) [√पृ+असि, नुक्] जल-विहार-भवन, घर जो पानी के बीच में बना हो । कमल । शाक । शृङ्गार । उबटन ।

पर्णिन्—(पुं०) [पर्ण+इनि] वृक्ष ।

पर्णिल—(वि०) [पर्ण + इलच्] दे० 'पर्णल' ।

√पर्द्—भ्वा० आत्म० अक० पादना, अपान वायु छोड़ना । पर्दते, पर्दिष्यते, अपर्दिष्ट ।

पर्द—(पुं०) [√पृ+द] केशसमूह, घने बाल । [√पर्द्+अच्] अपानवायु, पाद, गोज ।

√पर्प्—भ्वा० पर० सक जाना । पर्पति, पर्पिष्यति, अपर्पीत् ।

पर्प—(पुं०) [√पृ+प] छोटी घास । पंगुपीठ, एक पहिये की गाड़ी जिसके सहारे पंगु चले । मकान ।

पर्पीक—(पुं०) [√पृ+ईकन्] सूर्य । अग्नि । तालाब, जलाशय ।

√पर्ब्—भ्वा० पर० सक० जाना । पर्बति पर्बिष्यति, अपर्बीत् ।

पर्यङ्क—(पुं०) [परिगतः अङ्कम्, अत्या० स०] पलंग । खाट । अवसक्थिका, कमर पीठ और घुटने में लपेटने की वस्तु-विशेष । योगासन-विशेष ।—**बन्ध**–(पुं०) वीरासन-विशेष; 'पर्यङ्कबन्धस्थिरपूर्वकायम्' कु० ३.४५ ।—**भोगिन्**–(पुं०) सर्प-विशेष ।

पर्यटन, पर्यटित—(न०) [परि √अट्

+ल्युट्] [परि √अट्+क्त (भावे)] भ्रमण, चारों ओर घूमना ।

पर्यनुयोग—(पुं०) [परितः अनुयोगः, प्रा० स०] दूषणार्थ जिज्ञासा, किसी विषय का खण्डन करने के लिये पूछताछ या अनुसन्धान ।

पर्यन्त—(अव्य०) [अव्य० स०] तक, तलक, लौं । (पुं०) [प्रा० स०] परिधि, व्यास । सीमा, किनारा । पार्श्व, बगल । समाप्ति, अवसान । **—देश**-(पुं०), **—भू**, **—भूमि**-(स्त्री०) पड़ोस का जिला, नगर, कसबा या स्थान ।

पर्यन्तिका—(स्त्री०) [परितः सर्वतोभावेन अन्तिका, गुणादीनां नाशिका] सद्गुणों की हानि या अभाव ।

पर्यय—(पुं०) [परित्यज्य शास्त्रलौकिक-मर्यादाम् अयः गमनम्, परि √इ+अच्] ऐसा आचार जिसमें शास्त्रीय और लौकिक मर्यादा का अतिक्रमण हो । विपर्यय, गड़बड़ी । परिवर्तन, तबदीली । विरोध ।

पर्ययण—(न०) [परि √अय्+ल्युट्] चक्कर लगाना, परिक्रमा करना, चारों ओर घूमना । घोड़े का जीन, काठी ।

पर्यवदात—(वि०) [प्रा० स०] नितान्त विशुद्ध या स्वच्छ ।

पर्यवरोध—(पुं०) [प्रा० स०] रोक, अटकाव ।

पर्यवसान—(न०) [प्रा० स०] समाप्ति, अन्त । इरादा, निश्चय ।

पर्यवसित—(वि०) [परि-अव √सो+क्त] समाप्त, पूरा किया हुआ । नष्ट हुआ । निश्चित किया हुआ ।

पर्यवस्था—(स्त्री०), **पर्यवस्थान**-(न०) [परि-अव √स्था+अङ] [परि-अव√स्था+ल्युट्] विरोध । मुक़ाबला । रुकावट । खण्डन ।

पर्यश्रु—(वि०) [प्रा० स०] आँखों में आँसू भरे हुए; 'पर्यश्रुरस्वजत' र० १३.७० ।

पर्यसन—(न०) [परि √अस्+ल्युट्] निक्षेप, फेंकना । भेज देना । मुलतवी करना, स्थगित करना ।

पर्यस्त—(वि०) [परि √अस्+क्त] बिखरा हुआ, छितराया हुआ । घिरा हुआ । उल्टा-पल्टा हुआ, अस्त-व्यस्त किया हुआ । विसर्जन किया हुआ, निकाला हुआ । चोटिल किया हुआ, घायल किया हुआ ।

पर्यस्ति, पर्यस्तिका—(स्त्री०) [पर्यस्यते शरीरं यत्र, परि √अस्+क्तिन्] [पर्यस्ति+कन्-टाप्] वीरासन । पलंग ।

पर्याकुल—(वि०) [परितः आकुलः, प्रा० स०] गँदला (जैसे पानी) । बहुत अधिक विकल, बहुत घबड़ाया हुआ । गड़बड़ किया हुआ, अस्तव्यस्त किया हुआ । सम्पन्न, पूर्ण ।

पर्याचान्त—(न०) [परितः आचान्तम्, प्रा० स०] वह भोजन जो एक साथ खाने वालों में से किसी एक के बीच में ही आचमन कर लेने के बाद औरों के आगे बच रहा हो । (वि०) समय से पहले ही आचमन किया हुआ ।

पर्याण—(न०) [परि √या+ल्युट्, पृषो० साधुः] जीन कसा हुआ, काठी कसा हुआ ।

पर्याप्त—(वि०) [परि √आप्+क्त] प्राप्त, हासिल किया हुआ । समाप्त किया हुआ, पूर्ण किया हुआ । पूरा, समूचा । योग्य, काबिल । काफी, यथेष्ट । (न०) तृप्ति । शक्ति । निवारण । प्रचुरता । सामर्थ्य । योग्यता ।

पर्याप्ति—(स्त्री०) [परि √आप्+क्तिन्] उपलब्धि । समाप्ति, अवसान । पूर्णता, यथेष्टता । अघाना, सन्तोष । प्रहार को रोकने की क्रिया । योग्यता ।

पर्याय—(पुं०) [परि√इ+घञ्] समानार्थवाची शब्द, समानार्थक शब्द । क्रम, सिलसिला । प्रकार, ढंग, तरह । मौका, अवसर । बनाने का काम, निर्माण । द्रव्य का धर्म । अर्थालङ्कार-विशेष । एक ही कुल में उत्पन्न होने के कारण किन्हीं दो व्यक्तियों का पार-

सारिक सम्बन्ध ।—उक्ति (पर्यायोक्ति)—(स्त्री०) वह अलंकार जिसमें कोई बात साफ-साफ न कह कर कुछ घुमाव से कही जाय या जिसमें किसी ब्याज से कार्यसाधन किये जाने का वर्णन हो ।

पर्याली—(अव्य०) [परि–आ √अल्+ई] एक अव्यय जिसका अर्थ होता है हिंसन, अनिष्ट ।

पर्यालोचन—(न०), **पर्यालोचना**—(स्त्री०) [परि–आ √लोच्+ल्युट्] [परि–आ√लोच्+णिच् + युच्—टाप्] अच्छी तरह देख भाल, समीक्षा, पूरी जांच-पड़ताल । जानकारी, परिचय ।

पर्यावर्त—(पुं०), **पर्यावर्तन**—(न०) [परि–आ √वृत्+घञ्] [परि–आ√वृत्+ल्युट्] वापस आना, लौटना । सूर्य का ऐसा परिभ्रमण जिसमें उसकी पश्चिम पड़ने वाली छाया पूर्व की ओर पड़े ।

पर्याविल—(वि०) [परितः आविलः, प्रा० स०] बड़ा मैला या गँदला ।

पर्यास—(पुं०) [परि √अस्+घञ्] समाप्ति, अवसान । चक्कर । परिवर्तित क्रम । पतन । हनन ।

पर्याहार—(पुं०) [परि–आ √हृ + घञ्] कंधों पर जुआ रख कर किसी बोझी हुई गाड़ी को खींचना । ढुलाई । बोझ, भार । मिट्टी का घड़ा । अनाज को जमा करने की क्रिया ।

पर्युक्षण—(न०) [परि√उक्ष् + ल्युट्] श्राद्ध, होम या पूजन आदि के समय बिना किसी मंत्रोच्चारण के चारों ओर जल छिड़कना ।

पर्युत्थान—(न०) [परि–उद् √ स्था +ल्युट्] खड़ा हो जाना ।

पर्युत्सुक—(वि०) [परितः उत्सुकः, प्रा० स०] बहुत उत्सुक; 'पर्युत्सुक एव माधवः' कु० ५.२८ । उदास, खिन्न । व्याकुल, क्षुब्ध ।

पर्युदञ्चन—(न०) [परि–उद् √ अञ्च् +ल्युट्] ऋण, कर्जा । उद्धार ।

पर्युदस्त—(वि०) [परि—उद् √ अस्+क्त] निवारित, रोका गया । निकाला हुआ ।

पर्युदास—(पुं०) [परि–उद् √ अस् +घञ्] निषेध । किसी नियम या आज्ञा का अपवाद ।

पर्युपस्थान—(न०) [परि – उप √स्था +ल्युट्] सेवा, टहल । उपस्थिति ।

पर्युपासन—(न०) [परि – उप√आस् +ल्युट्] पूजा, अर्चन । मान, सम्मान । सेवा । मैत्री, सौजन्य । आस-पास बैठना ।

पर्युप्ति—(स्त्री०) [परि √वप्+क्तिन्] बोने की क्रिया, बोआई ।

पर्युषण—(न०) [परि√उष् +ल्युट्] पूजन, अर्चन । सेवा ।

पर्युषित—(वि०) [परि√ वस्+क्त] बासी, जो ताजा न हो । फीका । मूर्ख । व्यर्थ ।

पर्येषण—(न०), **पर्येषणा**—(स्त्री०) [परि √इष्+ल्युट्] [परि√इष्+युच्—टाप्] तर्क द्वारा अनुसन्धान । खोज, तहकीकात । सम्मान-प्रदर्शन । पूजन ।

पर्येष्टि—(स्त्री०) [परि – आ √इष् +क्तिन्] खोज, तलाश, अनुसन्धान ।

√पर्व्—भ्वा० पर० सक० पूरा करना । पर्वति, पर्विष्यति, अपर्वीत् ।

पर्वक—(न०) [पर्वणा ग्रन्थिना कायति, पर्वन् √कै+क] घुटना ।

पर्वणी—(स्त्री०) पूर्णिमा । उत्सव । आंख की सन्धि में होने वाला एक रोग ।

पर्वत—(पुं०) [√पर्व् + अतच्] पहाड़ । चट्टान । कृत्रिम पर्वत । सात की संख्या । वृक्ष ।—अरि (**पर्वतारि**)—(पुं०) इन्द्र का नामान्तर ।—आत्मज (**पर्वतात्मज**)—(पुं०) मैनाक पर्वत का नामान्तर ।—आत्मजा (**पर्वतात्मजा**)—(स्त्री०) पार्वती देवी ।—आधारा (**पर्वताधारा**)—(स्त्री०) पृथिवी ।—आशय (**पर्वताशय**)—(पुं०) बादल ।—आश्रय (**पर्वताश्रय**)—(पुं०) शरभ नामक

जन्तु-विशेष।—काक-(पुं०) जंगली कौआ। —कीला-(स्त्री०) पृथिवी।—जा-(स्त्री०) नदी।—पति-(पुं०) हिमालय।—मोचा-(स्त्री०) पहाड़ी केला।—राज्,—राज-(पुं०) विशाल पर्वत। पर्वतों का स्वामी अर्थात् हिमालय पर्वत।—स्थ-(वि०) पर्वतवासी या पहाड़ी।

पर्वन्—(न०) [√पर्व्+कनिन् वा √पृ+वनिप्] ग्रन्थि, जोड़, गाँठ। शरीरावयव, अङ्ग। अंश, भाग, टुकड़ा। पुस्तक का भाग, जैसे महाभारत में १८ भाग या पर्व हैं। जीने की सीढ़ी। अवधि, निर्दिष्ट काल, विशेष कर प्रतिपक्ष की अष्टमी, चतुर्दशी तथा पूर्णिमा, एवं अमावस्या: 'पर्वात्यये सोम इवोष्णरश्मेः, र० ७.३३। चातुर्मास्य के अंतर्गत वैश्व, वरुण, प्रवास आदि चार भाग। पूर्णिमा अमावास्या और संक्रान्ति। चन्द्र या सूर्य ग्रहण। उत्सव, त्योहार। अवसर। (समास में पूर्वपद बनने पर नकार का लोप हो जाता है; यथा 'पर्वकाल' आदि)।—काल-(पुं०) चतुर्दशी, अष्टमी, पूर्णिमा, अमावास्या और संक्रान्ति।—कारिन्-(पुं०) वह ब्राह्मण जो अमावास्या आदि पर्व दिवसों में किया जाने वाला धर्मानुष्ठान-विशेष, व्यक्तिगत लाभ के लोभ में फँस, किसी भी दिन कर डाले।—गामिन्-(पुं०) पर्व के दिन स्त्रीप्रसङ्ग करने वाला (पर्व के दिन स्त्रीप्रसङ्ग करना वर्जित है।)—धि-(पुं०) चन्द्रमा।—नाल-(पुं०) कलाई।—मूल-(न०) चतुर्दशी और पूर्णिमा या अमावास्या का संधिकाल।—मूला-(स्त्री०) सफेद दूब।—योनि-(पुं०) नरकुल, सरपत या बेंत।—रुह्-(पुं०) अनार का पेड़।—सन्धि-(पुं०) पूर्णिमा अथवा अमावास्या और प्रतिपदा के बीच का समय, वह समय जब कि पूर्णिमा या अमावास्या का अन्त हो चुका हो और प्रतिपदा आरम्भ होती हो। चन्द्र या सूर्य का ग्रहणकाल।

पर्शु—(पुं०) [परं शत्रुं शृणाति, पर√शृ+कु सच डित्, वा स्पृशति शत्रून्√स्पृश्, शुन्, पृ आदेश] फरसा। पसली। हथियार।—पाणि-(पुं०) गणेश जी। परशुराम।

पर्शुका—(स्त्री०) [पर्शुः इव प्रतिकृतिः, पर्शु+कन्—टाप्] पसली।

पश्वध—(पुं०) [=परश्वध √धा+क, पृषो० साधुः] कुठार।

पर्षद्—(स्त्री०) [परि√सद्+क्विप्, षत्व, इकारलोप] सभा। धर्मोपदेशक पंडितों का समाज।

√पल्—भ्वा० पर० सक० जाना। पलति, पलिष्यति, अपलीत्—अपालीत्।

पल—(पुं०) [√पल् + अच्] पुआल। भूसी। (न०) मांस। एक तौल जो ४ कर्ष के बराबर होती है। तरल पदार्थों का माप-विशेष। समय का एक लघु विभाग जो ६० विपल अर्थात् २४ सेकेंड के बराबर होता है।—अग्नि (पलाग्नि)-(पुं०) पित्त।—अङ्ग (पलाङ्ग)-(पुं०) कछुवा। सूंस।—अद (पलाद),—अशन (पलाशन)-(पुं०) राक्षस।—क्षार-(पुं०) खून।—गण्ड-(पुं०) लेपक, मिट्टी का पलस्तर करने वाला, राज।—प्रिय-(पुं०) राक्षस। वनकाक।—भा-(स्त्री०) धूप-घड़ी के शंकु (कील) की तत्कालीन छाया जब मेषसंक्रान्ति के मध्याह्न-काल में सूर्य ठीक विषुवत् रेखा पर होता है।

पलङ्कट—(वि०) [पलं मांसं कटति आकुञ्चितं करोति, पल√कट्+अच्, मुम्] भीरु, डरपोक, बुजदिल।

पलङ्कर—(पुं०) [पलं मांसं करोति, पलम्√कृ+अच् द्वितीयायाः अलुक्] पित्त।

पलङ्कष— [पलं कषति, पलम् √ कष्+अच्, द्वितीयायाः अलुक्] दानव। गुग्गुल। पलाण्ड।

पलङ्कषा—(स्त्री०) [पलङ्कष+टाप्] गोखरू।

रास्ना । गुग्गुल । पलास । गोरखमुण्डी । लाख । मक्खी ।

पलव—(पुं०) [पलं पलायनं वाति हिनस्ति नाशयति, पल √वा+क] एक प्रकार का जाल जिससे मछलियाँ पकड़ी जाती हैं ।

पलाण्डु—(पुं०, न०) [पलस्य मांसस्य अण्डमिव आचरति, पल√अण्ड्+कु] प्याज ।

पलाप—(पुं०) [पलं मांसम् आप्यते प्राप्यते बाहुल्येन अत्र, पल √आप्+घञ्] हाथी का कपोल, कनपटी आदि । पगहा ।

पलायन—(न०) [परा √अय् + ल्युट्, रस्य लः] भागना, भागने की क्रिया या भाव ।

पलायित—(वि०) [परा √अय्+क्त, रस्य लः] भागा हुआ, जो छूट कर भाग गया हो ।

पलाल—(पुं, न०) [पलति अस्यशून्यत्वं प्राप्नोति, पल+कालन्] पुआल । भूसी । चोकर ।—दोहद-(पुं०) आम का वृक्ष ।

पलालि—(पुं०) [पल √अल्+इन्] मांस का ढेर ।

पलाश—(पुं०) [पलं गति कम्पनम् अश्नुते व्याप्नोति, पल√अश्+अण्] एक वृक्ष का नाम जिसका दूसरा नाम किंशुक भी है । ढाक, टेसू; 'नवपलाशपलाशवनं पुरः' शि० ६.२ । (न०) पलाश वृक्ष के फूल । पत्ता । हरा रंग । किसी तेज हथियार का फल ।

पलाशिन्—(पुं०) [पलाश+इनि] वृक्ष । [पल√अश्+णिनि] राक्षस ।

पलिक्नी—(स्त्री०) [पलितम् अस्याः अस्ति, पलित+अन्, तस्य क्न, ङीप्] बूढ़ी स्त्री जिसके बाल पक गये हों । गाय जो प्रथम बार ब्यायी हो, बालगर्भिणी गौ ।

पलिघ—(पुं०) [परि√हन्+अप्, घादेश, रस्य लः] शीशे का घड़ा । परकोटे की दीवाल । लोहे का डंडा । गोशाला । फाटक ।

पलित—(वि०) [√पल् +क्त वा √पल् +इतच्, पादेश] पका हुआ या सफेद (बाल) । बुड्ढा । (न०) बुढ़ापे के कारण बालों का सफेद होना; 'कैकेयीशङ्कयेवाह पलितच्छद्मना जरा' र० १२.२ । अत्यधिक या भभ्भाले हुए केश । कीचड़ । ताप, गरमी । गुग्गुल । मिर्च । कपालरोग ।

पलितङ्करण—(न०) [अपलितं पलितं क्रियतेऽनेन, व्यर्थे पलित √कृ+ख्युन्, मुम्] पलित या सफेद करना या बनाना ।

पलितम्भविष्णु—(वि०) [अपलितः पलितो भवति, पलित √भू+खिष्णुच्, मुम्] सफेद हो जाने वाला ।

पल्यङ्क—(पुं०) [परितः अङ्क्यतेऽत्र, परि √अङ्क्+घञ्, रस्य लः] पलंग, शय्या ।

पल्ययन—(न०) [परि √अय्+ल्युट्, रस्य लः] जीन, काठी । लगाम, रास ।

√पल्यूल्—चु० पर० सक० काटना । पवित्र करना। पल्यूलयति, पल्यूलयिष्यति, अपपल्यूलत्।

√पल्ल्—भ्वा० पर० सक० जाना । पल्लति, पल्लिष्यति, अपल्लीत् ।

पल्ल—(पुं०) [पलति अस्मादिप्राचुर्यं गच्छति, √पल्ल्+अच्] एक बड़ा अनाज का भाण्डार या खत्ती ।

पल्लव—(पुं, न०) [पल्यते, √पल्+क्विप्, लूयते, √लू+अप्, पल् चासौ लवश्च, कर्म० स०] अंकुर, अंखुवा, कोंपल; 'लतेव सन्नद्धमनोज्ञपल्लवा' र० ३.७ । कली । विस्तार, प्रहार । अलक्त । (आलं०) लाल रंग । बल । घास की पत्ती । कड़ा या कंकण या बाजूबंद । प्रेम । शृंगार । रस्सी या वस्त्र का छोर । नृत्य में हाथ की एक मुद्रा । चपलता, चाञ्चल्य । (पुं०) लंपट, दुराचारी ।—अङ्कुर (पल्लवाङ्कुर),—आधार (पल्लवाधार)-(पुं०) शाखा, डाली ।—अस्त्र (पल्लवास्त्र)-(पुं०) कामदेव ।—ग्राहिन्-(वि०) जिसमें पल्लव लगे हों या लग रहे हों । अपूर्ण, अधूरा (ज्ञान) । अधूरी ज्ञान-

कारी वाली । तुच्छ बातों में व्यस्त रहने वाला ।—द्रु-(पुं०) अशोक वृक्ष ।

पल्लवक—(पुं०) [पल्लव√कै+क] अधर्मी । दुराचारी । वह बालक जो अप्राकृतिक मैथुन करवावे, अस्वाभाविक अभिगमन के लिये रखा हुआ बालक । रंडी का प्रेमी या आशिक । अशोक वृक्ष । एक प्रकार की मछली । कल्ला, अँखुआ ।

पल्लविक—(पुं०) [पल्लवः शृङ्गार-रसः अस्ति अस्य, पल्लव+ठन्] कामुक, लंपट । नास्तिक, दुराचारी । बहादुर, साहसी ।

पल्लवित—(वि०) [स्त्री०—पल्लविनी] [पल्लव+इतच्] जिसमें पल्लव लगे हों । विस्तृत । लाख में रँगा हुआ । रोमाञ्चयुक्त । (न०) लाख का रंग ।

पल्लि, पल्ली—(स्त्री०) [√पल्ल्+इन्] [पल्लि+ङीष्] गाँवड़ा, छोटा ग्राम । झोपड़ी । मकान । छिपकली । जमीन पर फैलने वाली लता ।

पल्लिका—(स्त्री०) [पल्ल+कन्—टाप्] छोटा गाँव, छोटी बस्ती, टोला । छिपकली, बिस्तुइया ।

पल्वल—(न०) [√पल्+वलच्] छोटा तालाब; 'मुस्ताक्षतिः पल्वले' श० ।—**आवास** (**पल्वलावास**)-(पुं०) कछुआ ।

पव—(पुं०) [√पू+अप् या अप्] पवन, हवा । शुद्धता । अनाज को फटकना या पछोरना । (न०) गोबर ।

पवन—(पुं०) [√पू+युच् (बहुलमन्यत्रापि), वा√पू+ल्युट्] हवा । वायु के अधिष्ठातृ-देव । (न०) सफाई । पछोरना, फटकना । चलनी । जल । कुम्हार का आवाँ (पुं० भी है) ।—**अशन** (**पवनाशन**),—**भुज्**-(पुं०) साँप ।—**आत्मज** (**पवनात्मज**)-(पुं०) हनुमान । भीम । अग्नि ।—**आश** (**पवनाश**)-(पुं०) सर्प ।—**०नाश**-(पुं०) गरुड़ । मयूर ।—**तनय**,—**सुत**-(पुं०) हनुमान । भीम ।—**परीक्षा**-(स्त्री०) आषाढ़-शुक्ला पूर्णिमा को वायु की दिशा देखने की एक क्रिया जिसके अनुसार ज्योतिषी ऋतु का भविष्य बतलाते हैं ।—**व्याधि**-(पुं०) कृष्ण-सखा उद्धव या ऊधो । गठिया का रोग ।

पवमान—(पुं०) [√पू+शानच्, मुक्] वायु; 'पवमानः पृथ्वीरुहानिव' र० ८.६ । गार्हपत्य अग्नि । सोमदेवता (वेद) ।

पवाका—(स्त्री०) [पू+आप्, नि० साधुः] तूफान, बवण्डर ।

पवि—(पुं०) [√पू+इ] इन्द्र का वज्र । वाणी । बाण या भाले की नोक । बाण । अग्नि । बिजली । स्नुही वृक्ष । मार्ग ।

पवित—(वि०) [√पू+क्त, इडागम] स्वच्छ किया हुआ, साफ किया हुआ । (न०) काली मिर्च, गोल मिर्च ।

पवित्र—(वि०) [√पू+इत्र] शुद्ध, पाप-रहित । निर्मल, साफ । यज्ञादि द्वारा शुद्ध हुआ । (न०) चलनी आदि साफ करने का साधन । कुश जो यज्ञ में घी को छिड़कने या शुद्ध करने में व्यवहृत होता है । कुश की पवित्री । यज्ञोपवीत, जनेऊ । ताँबा । जल-वृष्टि । जल । मलना, साफ करना । वर्षा । घी । शहद ।—**आरोपण** (**पवित्रारोपण**),—**आरोहण** (**पवित्रारोहण**)-(न०) यज्ञोपवीत धारण करना । भक्तों द्वारा विष्णु आदि देवताओं को यज्ञोपवीत पहनाने का कृत्य (वैष्णव श्रावण-शुक्ला-द्वादशी को विष्णु-मूर्ति को यज्ञोपवीत पहनाते हैं) ।—**धान्य**-(न०) यव, जौ ।—**पाणि**-(वि०) हाथ में कुश ग्रहण किये हुए ।

पवित्रक—(न०) [पवित्र√कै+क] जाल । सन के सूत का बना हुआ जाल । क्षत्रिय का यज्ञोपवीत । [पवित्र+कन्] कुश । दौने का पेड़ । पीपल का पेड़ । गूलर का पेड़ ।

पवित्री—(स्त्री०) [पवित्र+ङीप्] कुश की बनी हुई अंगूठी जैसी वस्तु जिसे धार्मिक

कृत्य करते समय अनामिका में पहनते हैं, पैंती ।

√पश्—चु० पर० सक० बाँधना । पाशयति ।

पशव्य—(वि०) [पशु+यत्] पशु के योग्य । पशु सम्बन्धी । पशुतापूर्ण ।

पशु—(पु०) [सर्वम् अविशेषेण पश्यति, √दृश्+कु, पशादेश] मवेशी, जानवर, लाङ्गूल-विशिष्ट चतुष्पद जन्तु । बलि के उपयुक्त पशु जैसे बकरा । शिव का एक पारिषद, प्रमथ । मूर्ख, विवेकहीन मनुष्य । वह यज्ञ जिसमें पशु को बलि दी जाय । देवता । अग्नि । जीवात्मा (पाशुपतदर्शन) ।—**अवदान** (**पश्ववदान**)–(न०) पशुबलि ।—**क्रिया**–(स्त्री०) पशुबलिदान की क्रिया । मैथुन ।—**गायत्री**–(स्त्री०) मंत्र विशेष जो आसन्न मृत्यु वाले के कान में पढ़ा जाता है । (वह मंत्र यह है :—पशुपाशाय विद्महे शिरश्छेदाय (विश्वकर्मणे) धीमहि । तन्नो जीवः प्रचोदयात् ।)—**घात**–(पु०) यज्ञ में पशुवध ।—**चर्या**–(स्त्री०) मैथुन ।—**धर्म**–(पु०) पशु-व्यवहार । स्वच्छन्द मैथुन । विधवा-विवाह ।—**नाथ**–(पु०) शिव ।—**प**–(पु०) पशुपाल ।—**पति**–(पु०) शिव । पशुपाल, पशु पालने या रखने वाला । एक सिद्धान्त का नाम ।—**पाल**,—**पालक**–(पु०) ग्वाला । गड़रिया ।—**पालन**,—**रक्षण**–(न०) पशुओं का पालना या रखना ।—**पाशक**–(पु०) संभोग करने का एक ढंग ।—**प्रेरण**–(न०) पशु हाँकना ।—**मारम्**–(अव्य०) पशुवध की प्रणाली के अनुसार; 'इष्टिपशुमारम्मारितः' श० ६ ।—**यज्ञ**,—**याग**–(पु०) वह यज्ञ जिसमें किसी पशु की बलि दी जाय ।—**रज्जु**–(स्त्री०) पशु बाँधने की रस्सी ।—**राज**–(पु०) सिंह ।—**हरीतकी**–(स्त्री०) आमड़े का फल ।

पश्चात्—(अव्य०) [अपरस्मिन् अपरस्मात् अपरो वा वसति आगतो रमणीयं वा, अपर+आति, पश्चभाव] पीछे से, पीछे । अन्त में, अन्ततोगत्वा । पश्चिम दिशा से । पश्चिम की ओर ।—**कृत**–(वि०) पीछे छोड़ा हुआ ।—**ताप**–(पु०) पछतावा, अनुशय ।

पश्चार्ध—(पु०) [अपरश्चासौ अर्धश्च, कर्म० स०, अपरस्य पश्चभावः] पीछे वाला आधा भाग । अपरार्ध, शेषार्ध । पश्चिमी भाग ।

पश्चिम—(वि०) [पश्चात् भवः, पश्चात्+डिमच्] जो पीछे उत्पन्न हुआ हो । अंतिम, चरम । (पु०) पश्चिम दिशा ।—**क्रिया**–(स्त्री०) अंत्येष्टि कर्म ।—**प्लव**–(पु०) पश्चिम की ओर झुकी हुई भूमि ।—**रात्र**–(पु०) रात का पिछला भाग ।

पश्चिमा—(स्त्री) [पश्चिम+टाप्] सूर्य के अस्त होने की दिशा, पच्छिम ।—**उत्तरा** (**पश्चिमोत्तरा**)–(स्त्री०) [पश्चिमायाः उत्तरस्या दिशः अन्तराला दिक्, ब० स०] उत्तर और पश्चिम के बीच की विदिशा, वायव्य कोण ।

पश्यत्—(वि०) [स्त्री०—**पश्यन्ती**] [√दृश्+शतृ, पश्यादेश] देखता हुआ ।

पश्यतोहर—(पु०) [पश्यन्तं जनम् अनादृत्य हरति, √हृ+अच्, ष० त०, षष्ठ्याः अलुक्] चोर । डाकू । सुनार ।

पश्यन्ती—(स्त्री०) [√दृश्+शतृ, पश्यादेश—ङीप्, नुम्] वेश्या । वह शब्द जो मूलाधार में उत्पन्न होने वाले सूक्ष्म शब्द की उत्पत्ति के अनंतर वायु के संयोग से नाभिदेश में उत्पन्न होता है (परावाक् और पश्यन्ती वाक् केवल ईश्वर और योगियों के लिये ही गोचर हैं । वस्तुतः एक ही शब्द मूलाधार, नाभि, हृदय तथा कंठ के संयोग से क्रमशः परा, पश्यन्ती, मध्यमा तथा वैखरी—इन चार संज्ञाओं से अभिहित होता है) ।

√पष्—चु० पर० सक० जाना । पषयति ।

पस्त्य—(न०) [अपस्त्यायन्ति संगीभूय तिष्ठन्ति जीवा यत्र, अप √स्त्यै+क, नि०

अकारलोप] गृह, घर; 'पस्त्यमप्रमातुमथ तं प्रभुरापपृच्छे' ।

पस्पश—(पुं०) पतञ्जलिकृतमहाभाष्य के प्रथम अध्याय के प्रथम आह्निक का नाम । उपोद्घात, आरम्भिक वक्तव्य; 'शब्दविद्येव नो भाति राजनीतिरपस्पशा' शि० २.११२ ।

पह्लव,—पह्लव,—पाह्लव—(पुं० बहुवचन) एक जाति के लोगों का नाम; सम्भवतः फारस वाले ।

√पा—भ्वा० पर० सक० पीना । पिबति, पास्यति, अपात् । अ० पर० सक० बचाना । पाति, पास्यति, अपासीत् ।

पा—(वि०) [√पा+विच्] पीने वाला (यथा "**सोमपाः**")। रक्षा करने वाला। (यथा "**गोपाः**") ।

पांशन, पांसन—(वि०) [स्त्री०—**पांशनी, पांसनी**] [√पंश् (स्)+ल्यु, पृषो० दीर्घ] अपमानकारक । नष्टकारी । दुष्ट । बदनाम । (प्रायः समास में व्यवहृत—पौलस्त्यकुलपांशन) ।

पांशव, पांसव—(न०) [पांशु+अण् [पांसु+अण्] पांगा नमक । (वि०) पांशु से उत्पन्न । धूलमय ।

पांशु, पांसु—(पुं०) [√पंश् (स्)+कु, दीर्घ] धूल । बालू । गोबर की खाद । पांगा नमक । एक प्रकार का कपूर । पित्तपापड़ा । भूसंपत्ति ।—**कासीस**–(न०) कसीस ।—**कुली**–(स्त्री०) राजमार्ग, चौड़ी सड़क ।—**कूल**–(न०) धूल का ढेर । ऐसा प्रमाणपत्र या दस्तावेज जो किसी विशिष्ट व्यक्ति के नाम से न हो । निरापद-शासन ।—**कृत**–(वि०) धूल से ढका हुआ ।—**क्षार,—ज**–(न०) पांगा नमक ।—**गुण्ठित** –(वि०) दे० 'पांशुकृत' ।—**चत्वर**–(न०) ओला ।—**चन्दन**–(पुं०) शिव जी का नाम ।—**चामर**–(पुं०) धूल का ढेर । सीमा, तंबू । बाँध या (नदी) तट जो दूब घास से ढका हो । प्रशंसा ।—**जालिक**–(पुं०) विष्णु का नामान्तर ।—**पटल**–(न०) धूल की तह या पर्त ।—**मर्दन**–(पुं०) पेड़ के चारों ओर खोद कर बनाया गड्ढा जिसमें जल भर दिया जाय, थाला, आलवाल ।

पांशुर, पांसुर—(पुं०) [पांशु (सु) √रा +क] डांस । गोमक्खी । लुंजा जो गाड़ी में बैठ कर घूमे ।

पांशुल, पांसुल—(वि०) [पांशु (सु) +लच्] धूलधूसरित, धूल से लस्त-पस्त । दगीला, दागदार । भ्रष्ट करने वाला । अपमान करने वाला । (पुं०) लंपट मनुष्य । शिव जी का नामान्तर ।

पांशुला, पांसुला—(स्त्री०) [पांशु (सु) ल +टाप्] रजस्वला स्त्री । छिनाल औरत । जमीन, भूमि ।

पाक—(पुं०) [√पच्+घञ्] भोजन बनाने की क्रिया । पकाने की क्रिया । पकाया हुआ अन्न, रसोई । पिंडदान के निमित्त दूध में पकाया हुआ चावल । पकवान । बुद्धि का परिपक्व होना । समाप्ति। भोजन बनाने का बरतन । आतंक । (विद्रोहादि का) उच्छेद । उलट-फेर (देश का) । पचन (भोजन) की क्रिया, हजम करने की क्रिया । परिणाम । किये हुए कर्मों का विपाक, कर्मविपाक । अनाज । (घाव या फोड़े का) पक जाना । (बालों का पक कर वृद्धावस्था के कारण) सफेद होना । गार्हपत्याग्नि । उल्लू । बच्चा । एक दैत्य का नाम जिसे इन्द्र ने मारा था ।—**अगार** (**पाकागार**),—**आगार** (**पाकागार**)–(पुं०, न०),—**शाला**–(स्त्री०),—**स्थान**–(न०) रसोईघर । —**अतीसार** (**पाकातीसार**)–(पुं०) पुरानी दस्तों की बीमारी ।—**अभिमुख** (**पाकाभिमुख**)–(वि०) जो पकने पर हो ।परिणामोन्मुख ।—**कृष्ण,—फल**–(पुं०) पानी आमला । जंगली करौंदा ।—**ज**–(न०) काला नमक, कचिया

नमक। परिणामशूल, शकरा।—**पात्र**–(न०) रसोई के बरतन।—**पुटी**–(स्त्री०) कुम्हार का आवाँ।—**यज्ञ**–(पुं०) पञ्चमहायज्ञ में ब्रह्मयज्ञ को छोड़ अन्य चार यज्ञ। वृषोत्सर्ग और गृहप्रतिष्ठा आदि कार्यों में किया जाने वाला खीर-हवन।—**शुक्ला**–(स्त्री०) खड़िया मिट्टी।—**शासन**–(पुं०) इन्द्र का नामान्तर; 'तव निश्चितव कन्दर्पमगमत्पाकशासनः' कु० २.६३।—**शासनि**–(पुं०) इन्द्र-पुत्र जयन्त का नाम। बालि का नाम। अर्जुन का नाम।

पाकल—(पुं०) [पाक √ला+क] अग्नि। हवा। हाथी का ज्वर।

पाकिम—(वि०) [पाकेन निर्वृत्तम्, पाक +इमप्] राँधा हुआ, पकाया हुआ। पका हुआ (डार का या पाल का)। उबाल कर उपलब्ध (यथानियम)।

पाकु, पाकुक—(पुं०) [√पच्+उण्, क आदेश] [पच्+षुकन्, क आदेश] पाक-कर्ता, रसोइया।

पाक्य—(वि०) [√पच्+ण्यत्, क आदेश] राँधने या पकाने योग्य। (न०) काला नमक। पांगा नमक। जवाखार। शोरा।

पाक्ष—(वि०) [स्त्री०—**पाक्षी**] [पक्ष+अण्] पक्ष से संबंध रखने वाला, पाक्षिक। किसी दल से सम्बन्ध रखने वाला।

पाक्षिक—(वि०) [स्त्री०—**पाक्षिकी**] [पक्षे तिष्ठति, पक्ष+ठक्] किसी पखवारे से सम्बन्ध युक्त, पखवारे का। किसी दल का पक्षपात करने वाला। वैकल्पिक। चिड़िया से संबंध रखने वाला। (पुं०) बहेलिया, चिड़ीमार।

पाखण्ड—(पुं०) [पातीति √पा+क्विप्, पाः त्रयीधर्मः तं खण्डयति, पा √खण्ड् +अच्] वेद-विरुद्ध आचार। दिखावटी उपासना या भक्ति, पूजा-पाठ आदि का आडम्बर। ढकोसला, ढोंग। वंचना, छल। (वि०) जो वेद के विरुद्ध आचरण करे। 'पालनाच्च त्रयी-धर्मः पाशब्देन निगद्यते। तं खण्डयन्ति ते यस्मात् पाखण्डास्तेन हेतुना॥'

पागल—(वि०) [पा रक्षणम् तस्मात् गलति आत्मरक्षणात् विच्युतो भवति, √गल् +अच्] विक्षिप्त, जिसका दिमाग ठीक न हो।

पाङ्क्तेय, पाङ्क्त्य—(वि०) [पङ्क्ति+ढ] [पङ्क्ति+यञ्] भोजन की पंगति में एक साथ बैठने योग्य, संसर्ग करने योग्य।

पाचक—(वि०) [√पच्+ण्वुल्] पकाने वाला। पचाने वाला। (पुं०) रसोइया, सूपकार। अग्नि। भोजन को पचाने वाली औषधि। (न०) पित्त।—**स्त्री**–(स्त्री०) रसोई बनाने वाली, रसोईदारिन।

पाचन—(वि०) [स्त्री०—**पाचनी**] [√पच् +णिच्+ल्यु] पचाने वाला, हाजिम। (फल आदि का)पकाने वाला। (पुं०) अग्नि। खट्टा रस। (न०)(पाप का नाश करने वाला) प्रायश्चित्त। भोजन पचाने वाली विशेष प्रकार की औषधि। [√पच् +णिच्+ल्युट्] पचाने या पकाने की क्रिया। (फल को) पकाने की क्रिया। घाव को भरने की क्रिया। घाव में से मवाद आदि निकालने की क्रिया।

पाचल—(पुं०) [√पच्+णिच् + कलन्] पकाने वाला। पचाने वाला। (पुं०) रसोइया। अग्नि। हवा।

पाची—(स्त्री०) [√पच्+णिच् + इन् —ङीष्] एक लता, मरकतपत्री।

पाजस्—(न०) [√पा + असुन्, जुट्] सामर्थ्य। बल।

पाञ्चकपाल—(वि०) [स्त्री०—**पाञ्चकपाली**] [पञ्चकपाल+अण्] पंचकपाल यज्ञ संबंधी। पाँच कटोरों में रखे हुए नैवेद्य संबंधी।

पाञ्चजन्य—(पुं०) [पञ्चजने दैत्यविशेषे भवः, पञ्चजन+ञ्य] श्रीकृष्ण के शंख का नाम; 'पाञ्चजन्यं हृषीकेशः' भग० १.१५।—**धर**–(पुं०) श्रीकृष्ण का नामान्तर।

पाञ्चदश—(वि०) [स्त्री०—**पाञ्चदशी**]

[पञ्चदशी+अण्] महीने की पन्द्रहवीं तिथि सम्बन्धी ।

पाञ्चदश्य—(न०) [पञ्चदशन् + ष्यञ्] पन्द्रह का समूह ।

पाञ्चनद—(वि०) [पञ्चनद+अण्] पंचनद संबंधी, पंजाब का ।

पाञ्चभौतिक—(वि०) [स्त्री०—**पाञ्चभौतिकी**] [पञ्चभूत+ठक्, द्विपदवृद्धि] पृथ्वी, जल, तेज आदि पाँच भूतों या तत्त्वों का बना हुआ ।

पाञ्चवर्षिक—(वि०) [स्त्री०—**पाञ्चवर्षिकी**] [पञ्चवर्ष+ठञ्] पाँच वर्ष का ।

पाञ्चशब्दिक—(न०) [पञ्चशब्द + ठक्] एक प्रकार का बाजा जिसमें पाँच प्रकार के शब्द मिले रहते हैं । पाँच प्रकार का सङ्गीत ।

पाञ्चाल—(वि०) [स्त्री०-**पाञ्चाली**] [पञ्चाल +अण्] पंचाल देश-संबंधी, पञ्चाल देश का । पंचाल देश पर शासन करने वाला । (पुं०) पंचाल नामक देश । पंचाल देश का राजा । पंचाल देश के निवासी । बढ़ई, जुलाहा, नाई, धोबी और मोची—इन पाँचों का समाहार ।

पाञ्चालिका—(स्त्री०) [पाञ्चाली+कन्—टाप्, ह्रस्व] गुड़िया, पुतली ।

पाञ्चाली—(स्त्री०) [पञ्चाल+अण्—ङीप्] पंचाल देश की स्त्री या रानी । द्रौपदी का नाम । गुड़िया, पुतली । साहित्य में एक प्रकार की रचनाशैली जिसमें बड़े-बड़े पाँच, छः समासों से युक्त और कान्तिगुणपूर्ण पदावली होती है । कोई गौड़ी और वैदर्भी के संमिश्रण को पाञ्चाली मानते हैं ।

पाट्—(अव्य०) [√पट्+णिच्+क्विप्] एक अव्यय जो सम्बोधन अथवा पुकारने के लिये प्रयुक्त होता है ।

पाटक—(पुं०) [√पट् + णिच्+ण्वुल्] चीरने वाला । ग्राम का एक भाग । ग्राम का अर्द्ध भाग । बाजा-विशेष । नदीतट । घाट की पैड़ियाँ । मूलधन या पूँजी का घाटा । बालिश्त । चौरस के पासों की फिकावट ।

पाटच्चर—(पुं०) [पाटयन्, छिन्दन् चरति, √चर्+अच्, पृषो० साधुः] चोर ।

पाटन—(न०) [√पट्+णिच् +ल्युट्] चीरने की, फाड़ने की, तोड़ने की और नष्ट करने की क्रिया ।

पाटल—(वि०) [पाटल+अच्] पिलौहाँ, लाल या गुलाबी रंग का; 'कपोलपाटलादेशि बभूव रघुचेष्टितम्' र० ४.६८ । (न०) [√पट् +णिच्+कलच्] पाडर वृक्ष का फूल । एक प्रकार का चावल जो वर्षा ऋतु में तैयार होता है । केसर । (पुं०) पिलौहाँ-लाल या गुलाबी रंग । पाडर या पाडर वृक्ष । —**उपल (पाटलोपल)**-(पुं०) लाल नामक मणि ।—**द्रुम**-(पुं०) पाडर या पाटला का पेड़ ।

पाटला—(स्त्री०) [पाटल+अच् —टाप्] लाल लोध्र । पाटला या पाडर का पेड़ या इस पेड़ के फूल । दुर्गा का नामान्तर ।

पाटलि—(स्त्री०) [√पट् +णिच्+घञ्, पाटः दीप्तिः तं लाति, √ला+इ] पाडर का पेड़ । पांडुफली ।—**पुत्र**-(न०) आधुनिक पटना नगर का प्राचीन नाम (इसका नामान्तर पुष्पपुर या कुसुमपुर भी है) ।

पाटलिक—(पुं०) [√पट्+णिच् +अलि +कन्] विद्यार्थी । शिष्य । पाटलिपुत्र । (वि०) दूसरे का भेद जानने वाला । देश-काल का ज्ञान रखने वाला ।

पाटलिमन्—(पुं०) [पाटल + इमनिच्] पिलौहाँ लाल रंग ।

पाटल्या—(स्त्री०) [पाटल+यत्—टाप्] पाटल वृक्ष के फूलों का समुदाय ।

पाटव—(न०) [पटोः भावः कर्म वा, पटु +अण्] पटुता, चतुराई, कुशलता; 'उपलेभे पाटवं नु हृदयं नु बभूविः' कि० ६.५४ । स्फूर्ति । आरोग्य । तीक्ष्णता ।

पाटविक—(वि०) [स्त्री०—**पाटविकी**] [पाटवं पटुत्वम् अस्ति अस्य, पाटव+ठन्] चतुर, होशियार। धोखेबाज।

पाटित—(वि०) [√पट्+णिच् + क्त] फाड़ा हुआ, विदारित।

पाटी—(स्त्री०) [√पट् + णिच्+इन् —ङीप्] परिपाटी, प्रणाली, रीति। अंकगणित। खरेटी। पंक्ति, आवलि। अङ्कगणित।—**गणित**–(न०) गणित-शास्त्र, अंक-विद्या।

पाटीर—(पुं०) [पटीर+अण्] चन्दन। खेत। जस्ता। बादल। चलनी। जुकाम, प्रतिश्याय।

पाठ— (पुं०) [√पठ्+घञ्] पढ़ने की क्रिया या भाव। ब्रह्मयज्ञ अर्थात् वेदपाठ, पञ्चमहायज्ञों में से एक। जो कुछ पढ़ाया जाय। किसी पाठ्य पुस्तक का वह अंश जो किसी विषय से संबद्ध हो, परिच्छेद। वाक्य, पद्य आदि का लिखित रूप।—**अन्तर** (**पाठान्तर**)–(न०) दूसरा पाठ।—**छेद**–(**पाठच्छेद**) (पुं०) पाठ्य वस्तु के बीच में होने वाला विराम, यति।—**दोष**–(पुं०) पाठ संबंधी दोष (अठारह प्रकार के पाठ-दोष गिनाये गए हैं; जैसे–विस्वर, विरस, विश्लिष्ट, काकस्वर आदि)।—**निश्चय**–(पुं०) किसी पुस्तक के किसी अंश पर मनन कर उसके शुद्ध पाठ का निश्चय करना।—**मञ्जरी**,—**शालिनी** –(स्त्री०) मैना या सारिका पक्षी।—**शाला**–(स्त्री०), विद्यालय, मदरसा, स्कूल।

पाठक—(पुं०) [√पठ्+णिच्+ण्वुल्] पढ़ाने वाला, शिक्षक, गुरु। पुराणवाचक, कथावाचक। दीक्षागुरु। [√पठ्+ण्वुल्] पढ़ने वाला, छात्र, विद्यार्थी।

पाठन—(न०) [√पठ्+णिच् + ल्युट्] पढ़ाना। अध्यापन कर्म।

पाठित—(वि०) [√पठ् +णिच् + क्त] सिखलाया हुआ, पढ़ाया हुआ।

पाठिन्—(वि०) [√पठ्+णिनि वा पाठ +इनि] पढ़ने वाला। पाठ करने वाला। वह जिसने किसी विषय का अध्ययन किया हो।

पाठीन—(पुं०) [√पठ्+ईनण्] पुराणों की कथा सुनाने वाला। पाठक। [पाठि पृष्ठं नमयति, पाठि √नम्+णिच्+ड, दीर्घ] एक प्रकार की मछली, पढ़िना मछली। गुगुल।

पाण—(पुं०) [√पण् + घञ्] व्यापार, व्यवसाय। व्यापारी। खेल। खेल का दाँव। इकरार-नामा। प्रशंसा। हाथ।

पाणि—(पुं०) [पणायन्ते व्यवहरन्ति अनेन, √पण्+इण्] हाथ। (स्त्री०) [पणायन्ते व्यवहरन्ति अस्याम्, √पण्+इण्] मंडी, हाट, बाजार।—**कर्मन्**–(पुं०) शिव। मृदंग, ढोल आदि बाजे बजाने वाला व्यक्ति।—**गृहीती**–(स्त्री०) भार्या, पत्नी।—**ग्रह**–(पुं०),—**ग्रहण**–(न०) विवाह, शादी।—**ग्रहीतृ**,—**ग्राहक**–(पुं०) वर, पति।—**घ**–(पुं०) ढोल, मृदंग आदि बजाने वाला। मजदूर। कारीगर।—**घात**–(पुं०) हाथ का आघात या प्रहार, घूँसा।—**ज**–(पुं०) हाथ की उँगलियों के नाखून।—**तल**–(न०) हथेली।—**धर्म**–(पुं०) विवाह की विधि या क्रिया।—**पीडन**–(न०) विवाह; 'पाणिपीडनविधेरनन्तरं' कु० ८.१।— **प्रणयिनी**–(स्त्री०) भार्या।—**बन्ध**–(पुं०) विवाह।—**भुज्**–(पुं०) गूलर का वृक्ष।—**मुक्त**–(न०) हाथ से फेंका जाने वाला अस्त्र।—**रुह्**,—**रुह**–(पुं०) नख, नाखून।—**वाद**–(पुं०) ताली पीटना। ढोलक बजाना।—**सर्ग्या**–(स्त्री०) रस्सी। **स्वनिक**,—**स्वानिक** —(वि०) हाथ से बाजा बजाने वाला।

पाणिनि—(पुं०) [पणनं पणः तत् अस्त्यर्थे इनि, तदपत्यम् इत्यर्थे अण्, तस्य छात्र इत्यर्थे इञ्] एक विख्यात मुनि जिन्होंने अष्टाध्यायी नामक प्रसिद्ध सूत्रबद्ध व्याकरण-

ग्रन्थ बनाया । आहिक, दाक्षीपुत्र, शालङ्की, पाणिन और शालातुरीय ये सब इनके नामान्तर हैं ।

पाणिनीय—(वि०) [पाणिनिना प्रोक्तं तस्येदं वा, पाणिनि+छ] पाणिनि सम्बन्धी या पाणिनि का बनाया हुआ । (न०) पाणिनि का बनाया व्याकरण । (पुं०) पाणिनि का अनुयायी ।

पाणिन्धम—(वि०) । [पाणि धमति, पाणि √ध्मा+खश्, मुम्] हाथ से धौंकने वाला । हाथ से बजाने वाला, पाणिवादक । (पुं०) [पाणयो ध्मायन्तेऽत्र सर्पाद्यपनोदनाय] अंधकाराच्छादित मार्ग ।

पाण्डर—(वि०) [पाण्डर+अच्] सफेद रंग का । (न०) चमेली का फूल । कुंद पुष्प । मरुवक वृक्ष । गेरू । [√पण्ड्+अर्, दीर्घ] सफेद रंग ।

पाण्डव—(पुं०) [पाण्डोः अपत्यम्, पाण्डु+अण्] पांडु के पुत्र—युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव ।—**आभील** (**पाण्डवाभील**)–(पुं०) श्रीकृष्ण का नाम । —**श्रेष्ठ**–(पुं०) युधिष्ठिर ।

पाण्डवीय—(वि०) [पाण्डव+छ] पांडव संबंधी । पाण्डवों का ।

पाण्डित्य—(न०) [पण्डित+ष्यञ्] पंडिताई, विद्वत्ता ।

पाण्डु—(वि०) [√पण्ड्+कु, नि० दीर्घ] पीलापन लिये हुए सफेद रंग का । सफेद रंग का । (पुं०) सफेद-पीला रंग । सफेद रंग । एक रोग जिसमें रक्त के दूषित होने से शरीर के चमड़े का रंग पीला हो जाता है । सफेद हाथी । पाण्डवों के पिता का नाम ।—**कण्टक**–(पुं०) चिचड़ा ।—**कम्बल**–(पुं०) सफ़ेद कंबल । ऊपर पहिनने का गर्म कपड़ा । राजा के हाथी की झूल । —**पुत्र**–(पुं०) पाँच पाण्डवों में से कोई भी । —**मृत्तिका**–(स्त्री०) सफेद या पीले रंग की मिट्टी । खड़िया ।—**राग**–(पुं०) सफेदी । —**रोग**–(पुं०) एक प्रसिद्ध रोग जिसमें सारा शरीर पीला पड़ जाता है, पीलिया ।—**लिपि**–(स्त्री०) दे० 'पाण्डुलेख' । पुस्तक की हस्तलिखित प्रति ।—**लेख**–(पुं०) पट्टी, कागज आदि पर अंकित वह लेख या रेखा-चित्र जिसे पुनः काट-छाँट कर ठीक किया जाय, मसविदा ।—**शर्मिला**–(स्त्री०) द्रौपदी का नामान्तर ।—**सोपाक**–(पुं०) एक वर्णसङ्कर जाति ।

पाण्डुर—(वि०) [पाण्डु+र] पीलापन लिये हुए सफेद रंग का । सफेद रंग का । (पुं०) पीलापन लिये हुए सफेद रंग । सफेद रंग । (न०) सफेद कोढ़ ।—**इक्षु** (**पाण्डुरेक्षु**)–(पुं०) एक प्रकार की ईख, सफेद ईख ।

पाण्ड्य—(पुं०) [पाण्डुः देशोऽभिजनोऽस्य तस्य राजा वा, पाण्डु+ड्यन्] पांडु देश का निवासी । पांडु देश का राजा ।

पात—(वि०) [√पा+क्त] रक्षित, बचाया हुआ । (पुं०) [√पत्+घञ्] उड़ान । नीचे उतरना । पतन । नाश । प्रहार । बहना (जैसे आँसुओं का) । तीर या गोली आदि का) छूटना । आक्रमण । होना (किसी घटना का) घटना । चूकना । [√पत्+ण] राहु का नामान्तर ।

पातक—(न०, पुं०) [पातयति अधो गमयति दुष्क्रियाकारिणम्, √पत्+णिच् + ण्वुल्] पाप, गुनाह ।

पातङ्गि—(पुं०) [पतङ्ग+इञ्] शनिग्रह । यमराज । कर्ण । सुग्रीव ।

पातञ्जल—(वि०) [पतञ्जलि+अण्] पतंजलि का बनाया हुआ; 'पातञ्जले महाभाष्ये कृतभूरिपरिश्रमः' सुभा० । (न०) पतंजलि विरचित योगदर्शन ।

पातन—(न०) [√पत्+णिच् + ल्युट्] गिराने की क्रिया । नीचा दिखाने की क्रिया । स्थानान्तरित करने या हटाने की क्रिया ।

पाताल—(न०) [पतन्ति अस्मिन् दुष्क्रियावन्तः, √पत्+आलच्, वा पादस्य तले वर्तते इति पृषो० साधुः] नीचे के सप्त लोकों में से अन्तिम लोक का नाम। (कहा जाता है, इस लोक में नाग रहते हैं। नीचे के सात लोकों के नाम ये हैं:—अतल, वितल, सुतल, रसातल, तलातल, महातल और पाताल)। नीचे का कोई भी लोक। गढ़ा या सूराख। बाड़वानल।—**गङ्गा**-(स्त्री०) नीचे के लोक में बहने वाली गङ्गा।—**निलय**,—**निवास**,—**वासिन्**-(पुं०) दैत्य, दानव। नाग।

पाति—(पुं०) [√पा+अति] प्रभु, स्वामी। पति। पक्षी।

पातिक—(पुं०) [पातः पतनं जले निमज्जनोन्मज्जनमेव अस्ति अस्य, पात+ठन्] शिशुमार, सूँस।

पातित—(वि०) [√पत्+णिच् +क्त] गिराया हुआ। फेंका हुआ। नीचा दिखाया हुआ। (पद में) नीचा किया हुआ।

पातित्य—(न०) [पतित+ष्यञ्] पतित होने का भाव। पद या जाति की भ्रंशता।

पातिन्—(वि०) [स्त्री०—**पातिनी**] [√पत्+णिनि] गमनकारी। नीचे उतरने वाला। गिरने वाला। डूबने वाला। सम्मिलित होने वाला। [√पत्+णिच्+णिनि] गिराने या फेंकने वाला। उड़ेलने वाला।

पातिली—(स्त्री०) [पातिः सम्पातिः पक्षियूथं लीयतेऽत्र, पाति√ली+ड—ङीप्] जाल, फंदा। हांड़ी। नारी।

पातुक—(वि०) [स्त्री०—**पातुकी**] [√पत्+उकञ्] जो प्रायः या अक्सर गिरा करे, पतनशील। (पुं०) पहाड़ का उतार। सूंस, शिशुमार।

पात्र—(न०) [पाति रक्षति क्रियामाधेयं वा पिबन्ति अनेन वा,√पा+ष्ट्रन्] पानी पीने का बर्तन। कोई भी बर्तन। किसी वस्तु का आधार। जलाशय। दान पाने के योग्य व्यक्ति; 'वित्तस्य पात्रे व्ययः' भर्तृ० २.८२। अभिनय करने वाला, अभिनेता। अमात्य, राजसचिव। नदी के उभय तटों के बीच का स्थान। योग्यता। आज्ञा। चार सेर का एक पुराना परिमाण, आढक। पत्ता।—**उपकरण** (**पात्रोपकरण**)-(न०) सजावट के तुच्छ साधन, अपकृष्ट श्रेणी की सजावट।—**पाल**-(पुं०) डाँड़ या खेवा। तराजू की डंडी।—**संस्कार**-(पुं०)बरतनों की सफाई। नदी का प्रवाह।

पात्रिक—(वि०) [स्त्री०—**पात्रिकी**] [पात्र+ठन् वा ठञ्] जो किसी पात्र से नापा गया हो। आढक से नापा हुआ। (न०) बरतन। छोटा बरतन कटोरा आदि।

पात्रिय, पात्र्य—(वि०) [पात्रम् अर्हति, पात्र+घ] [पात्र+यत्] जिसके साथ एक पात्र में भोजन किया जा सके, भोजन में शरीक होने योग्य।

पात्रीय—(न०) [पात्रे साधु, पात्र+छ] स्रुवा आदि यज्ञीय पात्र।

पात्रीर—(न०, पुं०) [पात्र्यै राति वा पात्रीं राति, पात्री √रा+क] यज्ञ में समर्पित किया जाने वाला पदार्थ, यज्ञद्रव्य।

पात्रेबहुल, पात्रेसमित—(पुं०) [पात्रे भोजने एव बहुलः नतु कार्ये, अलुक् स०] [पात्रे भोजनसमये एव समितः संगतः नतु कार्ये, अलुक् स०] वह (मनुष्य) जो खाने भर के लिये साथ रहे और किसी काम न आये। दगाबाज आदमी, कपटी या दम्भी मनुष्य।

पाथ—(न०) [पीयते अदः,√पा+थ] जल। (पुं०) [पाति रक्षति, √पा+थ] सूर्य। अग्नि। वायु। (न०) अन्न। आकाश।

पाथस्—(न०) [पाति रक्षति, √पा+असुन्, थुट्] जल। अन्न। आकाश।—**ज**-(**पाथोज**) (न०) कमल। शंख।—**द**-(**पाथोद**),—**धर**-(**पाथोधर**) (पुं०) बादल।—**धि**-(**पाथोधि**),—**निधि** (**पाथोनिधि**),—**पति**-(**पाथस्पति**) (पुं०) समुद्र।

पाथेय—(न०) [पथिन्+ढञ्] वह भोज्य वस्तु जिसे पथिक राह में खाने के लिये साथ ले जाता है, संबल। राहखर्च। कन्या राशि।

पाद—(पुं०) [√पद्+घञ्] पैर। किरण; 'बालस्यापि रवेः पादाः पतन्त्युपरि भूभृतां' पं० १.३२८। चारपाई या कुर्सी आदि का पाया। वृक्ष की जड़। पहाड़ की तलैटी। चतुर्थांश। श्लोक, पद्य या मंत्र का चौथा भाग। किसी वस्तु का निचला भाग। एक पैर या बारह अंगुल की माप। किसी पुस्तक के अध्याय का विशेष अंश। अंश, भाग। खंभा, स्तम्भ।—**अग्र** (**पादाग्र**)—(न०) पैर का सबसे आगे का भाग।—**अङ्क** (**पादाङ्क**)—(पुं०) पदचिह्न, पैर का निशान।—**अङ्गद** (**पादाङ्गद**)— (न०), —**अङ्गदी** (**पादाङ्गदी**)—(स्त्री०)नूपुर।—**अङ्गुष्ठ** (**पादाङ्गुष्ठ**)—(पुं०) पैर का अँगूठा।—**अन्त** (**पादान्त**)—(पुं०) चरण का अन्तिम भाग।—**अम्बु** (**पादाम्बु**)—(न०) माठा जिसमें एक चौथाई जल मिला हो।—**अरविन्द** (**पादारविन्द**),—**कमल**,—**पङ्कज**,—**पद्म**—(न०) कमल जैसे चरण।—**अलिन्दी** (**पादालिन्दी**)—(स्त्री०) नाव, नौका।—**अवसेचन** (**पादावसेचन**)—(न०) पैर धोना। जल जिससे पैर धोये जायें।—**आघात** (**पादाघात**)—(पुं०) पैर का प्रहार, लात मारना।—**आनत** (**पादानत**)— (वि०) पैरों में पड़ा हुआ या गिरा हुआ।—**आवर्त** (**पादावर्त**)—(पुं०) कुएँ से जल निकालने वाला यंत्र, रहट।—**आसन** (**पादासन**) —(न०) पैर रखने का पीढ़ा।—**आस्फालन** (**पादास्फालन**)—(न०) पैरों को कठिनाई से आगे बढ़ाना (जैसे कीचड़ में चलते समय)।—**आहत**(**पादाहत**)—(वि०) पैर से पीटा हुआ।—**उदक** (**पादोदक**), —**जल**—(न०) पैर धोने का जल या वह जल जिसमें किसी पूज्य व्यक्ति के पैर धोये गये हों।—**उदर** (**पादोदर**)—(पुं०) साँप।—**कटक**—(पुं०-न०),—**कीलिका**— (स्त्री०) नूपुर।—**क्षेप**—(पुं०) कदम, पग।—**ग्रन्थि**—(पुं०) एड़ी।—**ग्रहण**—(न०) पादस्पर्श, पैर छूना (प्रणामार्थ)।—**चतुर**,—**चत्वर**—(पुं०) निन्दक, चुगलखोर। बकरा। बालू का भीटा। ओला।—**चार**—(पुं०) पैदल चलना; 'यदि न विनश्येत पादचारेण गौरी' मे० ६०।—**चारिन्**—(वि०) पैदल चलने वाला। (पुं०) पैदल सिपाही।—**ज**— (पुं०) शूद्र।—**तल**—(न०) पैर का तलवा।—**त्र**—(पुं०), —**त्रा**—(स्त्री०), —**त्राण**—(न०) जूता।—**प**—(पुं०) वृक्ष।—०**खण्ड**— (पुं०,-न०) जंगल।—**पालिका**—(स्त्री०) पैर का गहना।—**पाश**—(पुं०) पशु के पैर में बाँधने की रस्सी।—**पाशी**—(स्त्री०) बेड़ी। चटाई। लता, बेल।—**पीठ**—(पुं०, न०)पैर रखने का पीढ़ा।—**पूरण**—(न०) पादपूर्ति, किसी श्लोक या कविता के किसी चरण को लेकर उस चरण के भाव को नष्ट न करते हुए पूरा श्लोक बना देना।—**प्रक्षालन**—(न०) पैर धोना।—**प्रतिष्ठान**—(न०) पैर का पीढ़ा।—**प्रहार**—(पुं०) पैर की ठोकर या आघात।—**बन्धन**—(न०) बेड़ी।—**भाग**—(पुं०) पैर का निचला भाग। चतुर्थांश।—**मुद्रा**— (स्त्री०) पदचिह्न, पैर का निशान।—**मूल**—(न०)एड़ी या एड़ीकी गाँठ। पैर का तलवा। पर्वत की तलैटी। किसी मनुष्य के बारे में नम्रतासूचक कथन।—**रजस्**-(न०) पैर की धूल।—**रज्जु**—(स्त्री०) हाथी के पाँव बाँधने की रस्सी या जंजीर।—**रथी**—(स्त्री०) खड़ाऊँ। जूता।—**रोह**,—**रोहण**—(पुं०) वटवृक्ष।—**वन्दन**—(न०) चरणों में प्रणाम।—**वल्मीक**—(पुं०) फीलपाँव, श्लीपद।—**विरजस्**—(न०) जूता। (पुं०) देवता।—**शाखा**—(स्त्री०) पैर की अँगुली।—**शैल**—(पुं०) किसी पर्वत की तलैटी की

पहाड़ी।—शोथ-(पुं०) पैर की सूजन।—शौच-(न०) पैर धोना।—सेवन-(न०), —सेवा-(स्त्री०) चरणस्पर्श कर प्रतिष्ठा करना। सेवा।—स्फोट-(पुं०) पैर चटकाना। एक प्रकार का कुष्ठ, विपादिका।—हत-(वि०) लतियाया हुआ।—हर्ष-(पुं०) एक वातरोग जिसमें पैर में झुनझुनी होती है।

पादजाह—(न०) [पादस्य मूलम्, पाद +जाहच्] दे० 'पादमूल'।

पादविक—(पुं०) [पदवीम् अनुधावति, पदवी+ठक्] पथिक, यात्री।

पादात्—(पुं०) [पादाभ्याम् अतति, पाद √अत्+क्विप्] पैदल सिपाही।

पादात—(न०) [पदातीनां समूहः, पदाति +अण्] पैदल सिपाहियों का समूह।

पादाति, पादातिक—(पुं०) [पादाभ्याम् अतति, पाद √अत्+इन्] [पादेन अव: रक्षणम् तत्र नियुक्तः, पादाव+ठक्] पैदल सिपाही।

पादिक—(वि०) [स्त्री०—**पादिकी**] [पाद +ठक्] जो किसी के चतुर्थांश के बराबर हो (जैसे पादिक शत—पचीस प्रतिशत)।

पादिन्—(वि०) [पाद+इनि] पैर वाला। चार चरणों वाला, चार भागों वाला। जो किसी वस्तु के चतुर्थांश का अधिकारी हो। (पुं०) उभयचर जंतु (मगर, घड़ियाल, कछुआ आदि)।

पादुक—(वि०) [स्त्री०—**पादुकी**] [√पद् +उकञ्] पैदल जाने वाला।

पादुका—(स्त्री०) [पादू+कन्—टाप्, ह्रस्व] जूता। खड़ाऊँ; 'व्रज भरत !गृहीत्वा पादुके त्वमयोध्याम्' भट्टि० ३.५६।—कार-(पुं०) मोची, जूता बनाने वाला।

पादू—(स्त्री०) [पद्यते गम्यते सुखेन यया, √पद्+ऊ, णित्] जूता।—कृत्-(पुं०) मोची।

पाद्य-(वि०) [पाद+यत्] पाद संबंधी। पैर का। (न०) पैर धोने के लिये जल।

पान—(न०) [√पा+ल्युट्] पान करना, पीना। अधर को चूमना। शराब पीना। शरबत पीना। पानपात्र। पैनाना, तेज करना। रक्षा, बचाव। (पुं०) कलवार, शराब खींचने वाला।—अगार (पानागार),—आगार (पानागार)-(पुं०, न०) मदिरागृह, शराबखाना।—अत्यय (पानात्यय)-(पुं०) अधिक शराब पीने से होने वाला एक प्रकार का विकार जिसमें कंप, शिरोवेदना, दाह, मूर्छा आदि उपसर्ग होते हैं।—गोष्ठिका,—गोष्ठी-(स्त्री०) शराबियों की मंडली। मदिरागृह, शराब की दूकान।—प-(वि०) शराब पीने वाला।—पात्र,—भाजन, —भाण्ड-(न०) शराब आदि पीने का बरतन।—भू,—भूमि,—भूमी-(स्त्री०) शराब पीने की जगह, वह स्थान जहाँ शराबी इकट्ठे होकर शराब पियें।—मण्डल-(न०) मदिरापान करने वालों की गोष्ठी।—रत-(वि०) शराब पीने का लतियल।—वणिज्-(पुं०) शराब बेचने वाला, कलाल।—विभ्रम-(पुं०) दे० 'पानात्यय'।—शौण्ड-(पुं०) बड़ा शराबी।

पानक—(न०) [पान√कै+क] एक प्रकार का पेय जो पकाये हुए आम, इमली आदि के रस में पानी, नमक, मिर्च आदि मिला कर तैयार करते हैं, पना।

पानिक—(पुं०) [पान+ठक्] शराब बेचने वाला, कलवार।

पानिल—(न०) [पान+इलच्] पानपात्र, शराब पीने का बरतन।

पानीय—(वि०) [√पा+अनीयर्] पीने योग्य। रक्षा करने योग्य। (न०) जल। पेय, शराब (तंत्र)।—नकुल-(पुं०) ऊदबिलाव।—चूर्णिका-(स्त्री०) बालू, रेती।—शाला,—शालिका-(स्त्री०) पौसाला, प्रपा, वह स्थान जहाँ बिना कुछ लिये प्यासे को जल पिलाया जाय।

पान्थ—(पुं०) [पथि कुशलः, पथिन्+ण, पन्थादेश] बटोही, यात्री।

पाप—(वि, न०) [पाति रक्षति अस्मात् आत्मानम्, √पा+प] बुरे कामों से उत्पन्न होने वाला वह अदृष्ट जिससे मनुष्य बुरी गति को प्राप्त होता है। ऐसा अदृष्ट उत्पन्न करने वाला कृत्य, कुकृत्य, अधार्मिक कृत्य (जैसे—हिंसा, चोरी आदि)। अपराध, जुर्म। (वि०) [पाप+अच्] पापयुक्त, पापी। दुष्ट। अनिष्टकर। नीच। अशुभ। (पुं०) पापी मनुष्य; 'पापं पापाः कथयत कथं शौर्यराशेः पितुर्मे' वे० ३.५। **—अधम** (**पापाधम**)–(वि०) पापियों में भी नीच या गया बीता। **—अपनुत्ति** (**पापापनुत्ति**)–(स्त्री०) प्रायश्चित्त। **—अह** (**पापाह**)–(पुं०) अशौच का दिन। अशुभ दिन। **—आचार** (**पापाचार**)–(पुं०) पापमय आचरण, पाप से भरा हुआ कृत्य, दुराचार। (वि०) जिसका आचरण पापमय हो। **—आत्मन्** (**पापात्मन्**)–(वि०) जिसकी आत्मा सदा पाप में प्रवृत्त रहे, पापपरायण। दुष्ट। **—आशय** (**पापाशय**), **—चेतस्**–(वि०) बुरे इरादे रखने वाला, दुष्टहृदय। **—कर, —कारिन्, —कृत्**–(वि०) पाप कमाने वाला, पापी। **—क्षय**–(पुं०) पाप का नाश। **—ग्रह**–(पुं०) दुष्ट ग्रह (यथा—मंगल, शनि, राहु और केतु)। **—घ्न**–(वि०) पापनाशक। **—चर्य**–(पुं०) पापी। राक्षस। **—दृष्टि**–(वि०) बुरी निगाह वाला। **—धी**–(वि०) दुर्बुद्धि, दुष्टहृदय। **—नापित**–(पुं०) दुष्ट नाई। **—नाशन**–(वि०) पाप को दूर करने वाला। (पुं०) विष्णु। शिव। (न०) प्रायश्चित्त। **—पति**–(पुं०) प्रेमी, आशिक। **—पुरुष**–(पुं०) पापमय पुरुष, बहुत पापी मनुष्य। एक प्रकार का पापमय पुरुष जिसका ध्यान बाँयी कोख में किया जाता है (तंत्र)। परमेश्वर द्वारा सारे जगत् के दमन के लिये रचा गया पापमय पुरुष जिसके विविध अंग भिन्न-भिन्न पापों से तैयार किये गये माने जाते हैं (पद्मपु०)। **—फल**–(वि०) बुरे परिणाम वाला, अशुभ। **—बुद्धि, —भाव, —मति**–(वि०) दुष्टहृदय, दुष्ट। **—भाज्**–(वि०) पापपूर्ण, पापी। **—मुक्त**–(वि०) पाप से छूटा हुआ, पवित्र। **—मोचन, —विनाशन**–(न०) पाप को दूर करने या नष्ट करने की क्रिया, पाप का निराकरण। **—योनि**–(वि०) कमीना, अकुलीन। (स्त्री०) नीच योनि (जैसे तिर्यक् योनि)। **—रोग**–(पुं०) किसी पाप के कुफल के रूप में होने वाला रोग-विशेष (जैसे—कुष्ठ, यक्ष्मा, उन्माद आदि)। चेचक। **—शील**–(वि०) पापकर्मों को करने की प्रवृत्ति रखने वाला। **—सङ्कल्प**–(वि०) जिसका संकल्प पाप करने का हो, पापात्मा। (पुं०) दुष्ट विचार।

पापर्द्धि—(पुं०) [पापानाम् ऋद्धिः यत्र, ब० स०] शिकार, आखेट।

पापल—(वि०) [पाप √ला+क] पाप देने वाला, पापकर। (न०) एक परिमाण।

पापिन्—(वि०) [स्त्री०—**पापिनी**] [पाप+इनि] पाप करने वाला। दुष्ट। (पुं०) पाप करने वाला मनुष्य।

पापिष्ठ—(वि०) [अतिशयेन पापी, पाप+इष्ठन्] बड़ा भारी पापी या दुष्ट।

पापीयस्—(वि०) [स्त्री०—**पापीयसी**] [अयमेषामतिशयेन पापी, पाप+ईयसुन्] अधिक पापी। अतिशय पापी।

पाप्मन्—(पुं०) [√पा+मनिन्, पुगागम] पाप; 'मया गृहीतनामानः स्पृश्यन्त इव पाप्मना' उत्त० १.४८। दुष्टता। अपराध। दुर्भाग्य।

पामन—(पुं०) [√पा+मनिन्] चर्म रोग विशेष, खाज, खुजली। **—घ्न**–(पुं०) गन्धक।

पामन—(वि०) [पामन्+न, नलोप] जिसे पामा रोग हुआ हो।

पामर—(वि०) [स्त्री०—पामरा, पामरी] [पामन्+र, नलोप] खजुहा। दुष्ट। कमीना।

मूर्ख । निर्धन । असहाय । (पुं०) मूर्ख या कमीना आदमी । वह मनुष्य जो अत्यन्त नीच कर्म या धंधा करता हो; 'वल्गन्ति चेत्पामराः' भा० १.७२ ।

पामा—(स्त्री०) [पामन्+ङीप्-निषेध, नलोप, दीर्घ] दे० 'पामन्' ।

पायना—(स्त्री०) [√पा + णिच्+युच् —टाप्] पिलाना । सिञ्चन, नम करना । पैनाना, तेज करना ।

पायस—(वि०) [स्त्री०—**पायसी**] [पयस् +अण्] दूध या जल का बना हुआ । (न०, पुं०) खीर, दूध में चावल डालकर रांधा हुआ भोज्य पदार्थ-विशेष । तारपीन । (न०) दूध ।

पायसिक—(वि०) [पयस्+ठक्—इक] जिसे उबाला हुआ या गरम दूध प्रिय लगे ।

पायिक—(पुं०) पैदल सिपाही । दूत ।

पायु—(पुं०) [√पा+उण्, युक्] गुदा, मलद्वार ।

पाय्य—(न०) [√मा+ण्यत् नि० पत्व, युक्] जल । पेय पदार्थ । संरक्षण । परिमाण ।

√पार्—चु० पर० सक० कार्य समाप्त करना । पारयति, पारयिष्यति, अपपारत् ।

पार—(पुं०) [√पार्+णिच् + अच् वा √पृ+घञ्] नदी या समुद्र का सामने वाला या दूसरा तट । (न०) किसी वस्तु की आगे की या सामने की ओर । अपरतट या सीमा । किसी वस्तु का अधिक से अधिक परिमाण । (पुं०) पारा ।—**अपार** (पारापार),—**अवार** (पारावार)–(न०) दोनों किनारे, उभय तट । (पुं०) समुद्र; 'शोकपारावारमुत्तर्तुमशक्नुवती' दश० ।—**अयन** (पारायण)–(न०) पारगमन । समय बाँध कर किया जाने वाला किसी ग्रन्थ का आद्योपान्त पाठ । सम्पूर्णता ।—**अयनी** (पारायणी)–(स्त्री०) सरस्वती का नामान्तर । ध्यान । क्रिया । प्रकाश ।—**काम**–(वि०) दूसरे छोर पर जाने का अभिलाषी ।—**ग**–(वि०) पार जाने वाला । अन्त तक पहुँचने वाला । किसी विषय की पूर्ण जानकारी प्राप्त कर लेने वाला । प्रकाण्ड विद्वान् ।—**गत**–(वि०) पार तक पहुँचा हुआ । जिसने पार पा लिया हो । जिसने किसी विद्या या शास्त्र का पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लिया हो । पवित्र ।—**गामिन्**–(वि०) पार जाने वाला ।—**दर्शक**–(वि०) पार को या दूसरे किनारे को दिखाने वाला । जिसके भीतर से होकर प्रकाश की किरणों के जा सकने के कारण उस पार की वस्तुएँ दिखलाई दें ।—**दृश्वन्**–(वि०) [पारं दृष्टवान्, पार√दृश्+क्वनिप्] दूरदर्शी । जिसने किसी वस्तु का पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लिया हो ।

पारक—(वि०) [स्त्री०—**पारकी**] [√पृ (पूर्तौ, पालने, प्रीतौ, व्यायामे) +ण्वुल्] पूर्ति करने वाला । पालन करने वाला । प्रीति करने वाला । उद्धार करने वाला । पार करने वाला ।

पारक्य—(वि०) [परस्मै लोकाय हितम्, पर +ष्यञ्, कुक्] जो परलोक के लिये हितकर हो । जो दूसरे के लिये हो । पराया, दूसरे का । विरोधी । (वि०) पुण्यकार्य जो परलोक सुधारता है ।

पारग्रामिक—(वि०) [स्त्री०—**पारग्रामिकी**] [परग्राम+ठक्] पराया । विरोधी ।

पारञ्—(पुं०) [√पार् + णिच्+अजि] सोना, सुवर्ण ।

पारजायिक—(पुं०) [परजायां गच्छति, परजाया+ठक्] लम्पट पुरुष, व्यभिचारी आदमी ।

पारटीट, पारटीन—(पुं०) चट्टान, शिला ।

पारण–(वि०) [√पृ+णिच् +ल्यु] पार करने वाला । उद्धार करने वाला, उबार ने

वाला। (पुं०) मेघ। एक ऋषि। (न०) [√पृ+णिच्+ल्युट्] तृप्त करने की क्रिया या भाव। [√पार्+ल्युट्] समाप्ति। किसी पुराणादि धर्मग्रन्थ का नियमित रूप से नित्य पाठ। किसी व्रत या उपवास के दूसरे दिन किया जाने वाला पहला भोजन और तत्सम्बन्धी कृत्य।

पारणा—(स्त्री०) [√पार् + णिच्+युच् +टाप्] व्रत-समाप्ति पर भोजन। भोजन करना।

पारणीय—(वि०) [√पार् + णिच् +अनीयर्] समाप्त, पूरा करने योग्य।

पारत—(पुं०) [त्रिविधव्याधिसंकटादिभ्यः पारं तनोति, पार √तन्+ड] पारा।

पारतन्त्र्य—(न०) [परतन्त्र +ष्यञ्] परा-धीनता, परतंत्रता।

पारत्रिक—(वि०) [स्त्री०—**पारत्रिकी**] [परत्र +ठक्] परलोक का। परलोक बनाने वाला, जिससे परलोक बने।

पारद—(पुं०) [जरामरणसंकटादिभ्यः पारं ददाति, पार√दा+क] पारा।

पारदारिक—(पुं०) [परेषां दारान् गच्छति, परदारा+ठक्] परस्त्री से मैथुन करने वाला, व्यभिचारी।

पारदार्य—(न०) [परदाराः दारा यस्य स परदारः तस्य कर्म, परदार+ष्यञ्] परस्त्री-गमन, व्यभिचार, लम्पटता।

पारदेशिक—(वि०) [स्त्री०—**पारदेशिकी**] [परदेश+ठक्] दूसरे देश का, विदेशी। (पुं०) विदेश का रहने वाला व्यक्ति। यात्री।

पारदेश्य—(वि०, पुं०) [स्त्री०—**पारदेश्यी**] [परदेशं गतः, परदेश+ष्यञ्] दे० 'पार-देशिक'।

पारभृत—(न०) [इसका शुद्ध रूप प्राभृत जान पड़ता है] भेंट, नजर।

पारमहंस्य—(न०) [परमहंस+ष्यञ्] सर्वो-त्कृष्ट संन्यास या ध्यान। (वि०) परमहंस-संबन्धी। परमहंस का।

पारमार्थिक—(वि०) [स्त्री०—**पारमार्थिकी**] [परमार्थाय परमपुरुषार्थाय हितम्, परमार्थ +ठक्] परमार्थ-सम्बन्धी, अध्यात्म-ज्ञान-सम्बन्धी। असली, वास्तविक, सत्यस्थित, यथार्थ में विद्यमान; 'स लोकः पारमार्थिकः' पं० १.३१२। सत्यप्रिय, न्यायप्रिय। सर्वोत्तम। सर्वोत्कृष्ट।

पारमिक—(वि०) [स्त्री०—**पारमिकी**] [परम्+ठक्] सबसे बड़ा, सर्वोत्कृष्ट। मुख्य, प्रधान।

पारमित—(वि०) [पारम् इतः प्राप्तः, अलुक् स०] उस पार गया हुआ। आरपार गया हुआ।

पारमेष्ठ्य—(न०) [परमेष्ठिन्+ष्यञ्] प्रधा-नता। सर्वोच्च पद। सर्वेश्वरता। राजचिह्न। (वि०) ब्रह्मा से संबन्ध रखने वाला। ब्रह्मा का।

पारम्परीण—(वि०) [स्त्री०—**पारम्परीणी**] [परम्परा+खञ्] परम्परागत, एक के बाद दूसरा, क्रम से बराबर चला आता हुआ।

पारम्परीय—(वि०) [परम्परा+छ] परम्परा-गत।

पारम्पर्य—(न०) [परम्परा+ष्यञ्] परंपरा का भाव। कुल आदि की परंपरा।

पारयिष्णु—(वि०) [√पार् + णिच् +इष्णुच्] प्रसन्नकर। पार जाने या किसी काम को पूरा करने में समर्थ।

पारलौकिक—(वि०) [स्त्री०—**पारलौकिकी**] [परलोक+ठक्] परलोक सम्बन्धी। परलोक में शुभ फल देने वाला।

पारवत—(पुं०) दे० 'पारावत'।

पारवश्य—(न०) [परवश+ष्यञ्] परा-धीनता, परतंत्रता।

पारशव—(वि०) [स्त्री०—**पारशवी**] [परशु +अण्] लोहे का बना हुआ। कुल्हाड़ी सम्बन्धी। (पुं०) लोहा। [श्राद्धादिकार्ये पारः पारगोऽपि सन् शव इव] वर्णसङ्कर जाति-

विशेष, ब्राह्मण पिता और शूद्रा माता से उत्पन्न जाति। हरामी, दोगला।

पारश्वध, पारश्वधिक—(पुं०) [परश्वधः प्रहरणम् अस्य, परश्वध+अण्] [परश्वध+ठञ्] वह योद्धा जिसका अस्त्र फरसा हो, फरसा लेकर युद्ध करने वाला योद्धा।

पारस—(वि०) [स्त्री०—**पारसी**] [पारस्य-देशे भवः, अण् (बा०) यलोप] फारस देश संबन्धी। फारस का। फारस देश में उत्पन्न।

पारसिक, पारसीक—(पुं०) [=पारसीक, पृषो० साधुः] फारस देश। फारस देश का घोड़ा। फारसदेश का निवासी; 'पारसीकांस्ततो जेतुं प्रतस्थे स्थलवर्त्मना' र० ४.६।

पारसी—(स्त्री०) फारसी भाषा।

पारस्त्रैणेय—(पुं०) [परस्त्री+ढक्, इनङ् आदेश, उभयपदवृद्धि] परायी स्त्री से उत्पन्न पुत्र।

पारस्य—(पुं०) पारस या फारस देश।

पारहंस्य—(वि०) [परहंस+ष्यञ्] दे० 'पारमहंस्य'।

पारा—(स्त्री०) [पार+अच्—टाप्] एक नदी का नाम।

पारापत—(पुं०) [पारात् अपि आपतति, पार-आ√पत्+अच्] कबूतर।

पारायणिक—(पुं०) [पारायण + ठञ्] पुराण-पाठक। छात्र।

पारारुक—(पुं०) [पार √ऋ + उकञ्] प्रस्तर। पत्थर।

पारावत—(पुं०) [=पारापत, पृषो० पस्य वः] कबूतर। पंडुक। बंदर। पर्वत।—**अङ्घ्रि** (पारावताङ्घ्रि)-(स्त्री०) ज्योतिष्मती नामक लता।—**सवा**-(स्त्री०) सरस्वती नदी।—**पदी**-(स्त्री०) मालकंगनी। काकजंघा।

पारावारीण—(वि०) [पारावार=पारापार+ख] जो किसी वस्तु के एक किनारे से दूसरे किनारे तक पहुँच गया हो। जिसने किसी विषय, विद्या या शास्त्र का पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लिया हो। समुद्रगामी।

पाराशर, पाराशर्य—(पुं०) [पराशर+अण्] [पराशर+यञ्] पराशरपुत्र व्यास जी का नामान्तर।

पाराशरि—(पुं०) [पराशर+इञ्] शुकदेव जी का नामान्तर। व्यास जी का नाम।

पाराशरिन्—(पुं०) [पाराशर+अण्+इनि] संन्यासी विशेष कर वे जो व्यास-रचित शारीर सूत्र पढ़ें।

पारिकाङ्क्षिन्—(पुं०) [पारयति संसारात् पारि ब्रह्मज्ञानं तत् काङ्क्षति, पारि√काङ्क्ष+णिनि] ध्यानमग्न रहने वाला संन्यासी।

पारिक्षित—(पुं०) [परिक्षित्+अण्] परिक्षित् के पुत्र जनमेजय।

पारिखेय—(वि०) [स्त्री०—**पारिखेयी**] [परिखा+ढ] परिखा या खाई से घिरा हुआ।

पारिजात, पारिजातक—(पुं०) [पारम् अस्य अस्ति इति पारी समुद्रः तस्मात् जातः] [पारिजात+कन्] स्वर्ग-स्थित पाँच वृक्षों में से एक; 'कल्पद्रुमाणामिव पारिजातः' र० ६.६। यह समुद्र-मन्थन के समय निकला था और इन्द्र को मिला था। श्रीकृष्ण ने इन्द्र से छीन कर इसे सत्यभामा के बाग में लगाया था। हरसिंगार। कचनार। फरहद। सुगंध।

पारिणाय्य—(वि०) [स्त्री०—**पारिणाय्यायी**] [परिणय+ष्यञ्] विवाह सम्बन्धी। विवाह में प्राप्त। (न०) विवाह के समय मिली हुई स्त्री की सम्पत्ति। विवाह-निर्णय।

पारिणाह्य—(न०) [परिणाह+ष्यञ्] चारपाई, बरतन आदि घरेलू सामान।

पारितथ्या—(स्त्री०) [परितः तथा भूता, परितथा+ष्यञ् (स्वार्थे)] बालों में गूँथने की मोतियों की लड़ी। माँग पर पहना जाने वाला स्त्रियों का एक गहना।

पारितोषिक—(वि०) [स्त्री०—पारि-

तोषिकी] [परितोष+ठक्] सन्तुष्टकारी, प्रसन्नकारक। (न०) पुरस्कार, इनाम।

पारिध्वजिक—(पुं०) [परितः ध्वजा, परिध्वजा+ठक्] झंडाबरदार, झंडा ले चलने वाला।

पारिन्द्र—(पुं०) [=पारीन्द्र, पृषो० ह्रस्व] सिंह।

पारिपन्थिक—(पुं०) [परिपन्थं पन्थानं वर्जयित्वा व्याप्य वा तिष्ठति, परिपन्थ+ठक्] डाकू, लुटेरा। चोर।

पारिपाट्य—(न०) [परिपाटी+ष्यञ्] ढंग, रीति, प्रकार, परिपाटी। नियमितता।

पारिपार्श्व—(न०) [परिपार्श्व+अण्] अनुचर-वर्ग।

पारिपार्श्वक, पारिपार्श्विक—(पुं०) [पारिपार्श्व+कन्] [परिपार्श्व+ठक्] अनुचर, सेवक। (नाटक में) स्थापक का अनुचर।

पारिपार्श्विका—(स्त्री०) [पारिपार्श्विक+टाप्] सदा साथ रहने वाली दासी या नौकरानी।

पारिप्लव—(वि०) [परि√प्लु+अच्, +अण्] इधर-उधर घूमने वाला। चंचल; 'ननन्द पारिप्लवनेत्रया नृपः' र० ३।११। तैरने वाला। उद्विग्न, घबड़ाया हुआ। (न०) चञ्चलता, अस्थिरता। विकलता। (पुं०) नौका, नाव।

पारिप्लाव्य—(न०) [परिप्लव+ष्यञ्] परेशानी, विकलता। उद्विग्नता। कम्प। (पुं०) हंस।

पारिबर्ह—(पुं०) [परिबर्ह+अण्] विवाह के समय की भेंट।

पारिभद्र—(पुं०) [परितः भद्रम् अस्मात्, परिभद्र+अण्] मूँगे का पेड़। देवदारु वृक्ष। सरल वृक्ष। नीम का पेड़।

पारिभाव्य—(न०) [परिभू+ष्यञ्] प्रतिभू या जामिन होने का भाव, जमानत।

पारिभाषिक—(वि०) [स्त्री०—**पारिभाषिकी**] [परिभाषा+ठञ्] जिसका अर्थ परिभाषा द्वारा सूचित किया जाय, जिसका व्यवहार किसी विशेष अर्थ के सङ्केत के रूप में किया जाय। प्रचलित। सर्वसामान्य।

पारिमाण्डल्य—(न०) [परिमण्डलस्य परमाणोः भावः, परिमण्डल+ष्यञ्] अणु या परमाणु का परिमाण।

पारिमुखिक—(वि०) [स्त्री०—**पारिमुखिकी**] [परिमुखं वर्तते, परिमुख+ठक्] मुँह के सामने का। समीपवर्ती, पास का।

पारिमुख्य—(न०) [परिमुख+ष्यञ्] सामने या समीप होने का भाव।

पारियात्र, पारिपात्र—(पुं०) सप्त कुल पर्वतों में से एक जो विन्ध्य के अन्तर्गत है।

पारियात्रिक, पारिपात्रिक—(पुं०) [पारिया (पा) त्र+ठक्] पारियात्र पर्वत पर रहने वाला। पारियात्र पर्वत।

पारियानिक—(पुं०) [परियानं प्रयोजनम् अस्य, परियान+ठक्] वह रथ जिस पर चढ़ कर कहीं यात्रा की जाय।

पारिरक्षक—(पुं०) [परिरक्षति आत्मानम्, परि √रक्ष्+ण्वुल् + अण्] तपस्वी, साधु।

पारिवित्त्य—(न०) [परिवित्त+ष्यञ्] बड़े भाई के अविवाहित रहते छोटे भाई का विवाह हो जाना।

पारिव्राजक, पारिव्राज्य—(न०) [परिव्राजक+अण्] [परिव्राज्+ष्यञ्] परिव्राजक का कर्म या भाव, संन्यास।

पारिशील—(पुं०) [परिशील+अण्] एक प्रकार का पुआ या मालपुआ।

पारिशेष्य—(न०) [परिशेष+ष्यञ्] बचत, बचा हुआ।

पारिषद—(वि०) [स्त्री०—**पारिषदी**] [परिषद्+अण्] परिषद् सम्बन्धी। (पुं०) परिषद् में उपस्थित पुरुष, परिषद् का सदस्य। राजा का मित्र या अनुचर। देवता का अनुयायिवर्ग।

पारिषद्य—(पुं०) [परिषद् +ण्य] दर्शक । परिषद् में उपस्थित जन ।

पारिहारिकी—(स्त्री०) [परिहार+ठञ्—इक—ङीप्] एक प्रकार की पहेली ।

पारिहार्य—(पुं०) [परि√हृ+ण्यत्+अण्] कंगन, वलय । (न०) परिहारत्व, ग्रहण ।

पारिहास्य—(न०) [परिहास+ष्यञ्] मजाक, दिल्लगी, हँसी-ठट्ठा ।

पारी—(स्त्री०) [√पॄ +णिच् + घञ् —ङीप्] हाथी के पैर का रस्सा । जल-परिमाण । पानपात्र । दुधैड़ी ।

पारीण—(वि०) [पार+ख] पार करने वाला । पूरा करने वाला; 'त्रिवर्गपारीणमसौ भवन्तम्' भट्टि० २.४६ । जो किसी विद्या या शास्त्र में कुशल हो (समासांत में) ।

पारीणाह्य—(न०) [परीणाह+ष्यञ्] दे० 'पारिणाह्य' ।

पारीन्द्र—(पुं०) [पारिः पशुः तस्य इन्द्रः] सिंह । अजगर सर्प ।

पारीरण—(पुं०) [पारम् जलपूरे रणं यस्य] कछुवा । पटशाक ।

पारु—(पुं०) [पिबति रसान्, √पा+रु] सूर्य । अग्नि ।

पारुष्य—(न०) [परुष+ष्यञ्] कठोरता । रूखापन । कड़ुआपन । नृशंसता । गाली, कुवाच्य । उग्रता (वचन या कर्म में) । इन्द्र का उद्यान । अगर । (पुं०) बृहस्पति का नामान्तर ।

पारोवर्य—(न०)[परोऽवर+ष्यञ्] परम्परा ।

पार्घट—(न०) [पादे घटते इति अच्, पृषो० साधुः] धूल या राख ।

पार्जन्य—(वि०) [पर्जन्य+ष्यञ्] मेघ या जलवृष्टि सम्बन्धी ।

पार्ण—(वि०)[स्त्री०—**पार्णी**][पर्ण+अण्] पत्ता सम्बन्धी । पत्तों का बना हुआ । पत्तों पर बैठाया हुआ । (जैसे कर)

पार्थ—(पुं०) [पृथायाः अपत्यम्, पृथा+अण्] कुन्ती का दूसरा नाम पृथा था । अतएव युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन को पार्थ कहते थे, किन्तु विशेषतया अर्जुन की पार्थ संज्ञा थी । अर्जुन नाम का पेड़ ।—**सारथि**–(पुं०) श्रीकृष्ण ।

पार्थक्य—(न०) [पृथक्+ष्यञ्] पृथक् होने का भाव, अलहदगी ।

पार्थव—(न०) [पृथोः भावः, पृथु+अण्] विशालता, स्थूलता ।

पार्थिव—(वि०) [स्त्री०—**पार्थिवी**] [पृथिवी +अञ्] पृथिवी संबंधी । पृथिवी से उत्पन्न । मिट्टी का बना हुआ । राजा के योग्य, राजोचित, राजसी । (पुं०) पृथिवीपति, राजा । एक संवत्सर जिसमें सभी देशों में पृथिवी शस्यशालिनी होती है । मिट्टी का शिवलिंग । मिट्टी का बरतन । मंगल ग्रह । (न०) तगर-पुष्प ।—**नन्दन, —सुत**–(पुं०) राजकुमार । —**कन्या,— नन्दिनी, —सुता** –(स्त्री०) राजकुमारी ।

पार्थिवी—(स्त्री०) [पार्थिव+ङीप्] सीता का नामान्तर । लक्ष्मी का नामान्तर ।

पार्पर—(पुं०) मुट्ठी भर चावल । क्षयरोग । भस्म । कदंब का केसर । यम ।

पार्यन्तिक—(न०) [स्त्री०—**पार्यन्तिकी**] [पर्यन्त+ठक्] अंतिम ।

पार्वण—(न०) [पर्वन्+अण्] किसी पर्व पर या अमावास्या के दिन किया जाने वाला श्राद्ध (इस श्राद्ध में पिता पितामहादि समस्त मातृ-कुल और पितृकुल के पितरों को पिण्ड-दान दिया जाता है) (वि०) पर्व संबंधी या पर्व का । (पुं०) एक प्रकार का मृग ।

पार्वत—(वि०) [स्त्री०—**पार्वती**] [पर्वत +अण्] पहाड़ पर रहने वाला । पर्वत पर उत्पन्न या पर्वत से आया हुआ । पहाड़ी ।

पार्वतिक—(न०) [पर्वत+ठञ्] पहाड़ों का समूह या सिलसिला ।

पार्वती—(स्त्री०) [पार्वत+ङीप्] दुर्गादेवी ।

ग्वालिन । द्रौपदी । पहाड़ी नदी । सुगन्धयुक्त मृत्तिका-विशेष ।—**नन्दन**–(पुं०) गणेश । कार्त्तिकेय ।

पार्वतीय— (वि०) [स्त्री०—पार्वतीयी] पार्वत+छ] पर्वत पर रहने वाला । (पुं०) पर्वतवासी, पहाड़ी आदमी; 'तत्र जन्य रघो-र्घोरं पार्वतीयैर्गणैरभूत्' र० । एक विशेष पहाड़ी जाति का नाम ।

पार्वतेय—(वि०) [स्त्री०—**पार्वतेयी**] [पर्वत +ढक्] पर्वत से उत्पन्न । (न०) सुर्मा । हुलहुल का पौधा । गजपिप्पली । धातकी वृक्ष ।

पार्शव—(पुं०) [पर्शु+अण्] पर्शु या फरसे से युद्ध करने वाला ।

पार्श्व—(न०, पुं०) [√स्पृश्+श्वण्, पृ आदेश] शरीर का बगलों के नीचे का भाग, जहाँ पसलियाँ हैं । बगल; 'शयने सन्निप-ण्णैकपार्श्वां' मे० ८६ । ओर, तरफ । निकटता, सामीप्य । (पुं०) पारसनाथ का नामान्तर । (न०) [पर्शु+अण्] पसलियों का समूह । कुटिल उपाय, टेढ़ी चाल ।—**अनुचर** (**पार्श्वानुचर**)–(पुं०) परिचारक, सेवक । अर्दली ।—**अस्थि** (**पार्श्वास्थि**)– (न०) पसली ।—**आयात** (**पार्श्वायात**)–(वि०) अतिनिकटवर्ती ।—**आसन्न** (**पार्श्वासन्न**)–(वि०) पास बैठा हुआ, उपस्थित ।—**उदरप्रिय** (**पार्श्वोदरप्रिय**)–(पुं०) केकड़ा ।—**ग**–(पुं०) अर्दली ।—**गत**– (वि०) जो साथ हो । शरणागत ।—**चर**– (वि०) दे० 'पार्श्वग' ।—**द**–(पुं०) अर्दली । नौकर ।—**देश**–(पुं०) बगल ।—**परिवर्तन**–(न०) करवट बदलना । भाद्रशुक्ल ११ जिसका नाम पार्श्वैकादशी है । इस दिन शेषशायी विष्णु करवट बदलते हैं ।—**भाग**– (पुं०) बगल ।—**वर्तिन्**–(वि०) बगल में रहने वाला । लगा हुआ, समीपी ।—**शय**–(वि०) करवट सोने वाला । बगल में सोने वाला ।—**शूल**–(पु, न०) पसली का दर्द ।—**संस्थान**—((न०) ईंटों की खड़ी जोड़ाई (शुल्वशास्त्र) ।—**सूत्रक**–(पुं०) आभूषण-विशेष ।—**स्थ**–(वि०) समीपवर्ती, निकटस्थ । (पुं०) साथी, सहचर । अभिनय के नटों में से एक जो पास खड़ा रहता है ।

पार्श्वक—(पुं०) [स्त्री०—**पार्श्विकी**] [अनृजः उपायः पार्श्वम् तेन अन्विच्छति अर्थान्, पार्श्व+कन्] कुटिल उपायों से धन कमाने वाला, चोर ।

पार्श्वतस्—(अव्य०) [पार्श्व+तस्] पार्श्व से, बगल से ।

पार्श्विक—(वि०) [स्त्री०—**पार्श्विकी**) [पार्श्व+ठक्] बगल सम्बन्धी । (पुं०) पक्षपाती जन, तरफदार आदमी । सहचर, साथी । ऐन्द्रजालिक, जादूगर । कपट या छल से पैसा कमाने वाला आदमी ।

पार्षत—(वि०) [स्त्री०—**पार्षती**] [पृषत +अण्] चित्तल हिरन सम्बन्धी । (पुं०) राजा द्रुपद और उसके राजकुमार । धृष्टद्युम्न का नामान्तर ।

पार्षती—(स्त्री०) [पार्षत+ङीप्] द्रौपदी । दुर्गादेवी ।

पार्षद्—(स्त्री०) [=परिषद्, पृषो० साधुः] सभा ।

पार्षद—(पुं०) [पर्षद्+ण] साथी, संगी । अर्दली । अनुचर वर्ग । सभा में उपस्थित जन, सभासद् ।

पार्षद्य—(पुं०) [पर्षद्+ण्य] सभासद, सदस्य ।

पार्ष्णि—(पु, स्त्री०) [√पृष्+नि, नि० साधुः] एड़ी; 'उद्वेजयत्यङ्गुलिपार्ष्णिभागान्' कु० १.११ । सेना का पिछला भाग । पीठ । जिगीषा, जीतने की इच्छा । जाँच । पदाघात, ठोकर । (स्त्री०) छिनाल स्त्री । कुन्ती का नामान्तर ।—**ग्रह**–(पुं०) अनुयायी ।—**ग्रहण**–(न०) शत्रु की सेना पर पीछे की

ओर से आक्रमण करना ।—ग्राह–(पुं०) पीछे पड़ा हुआ शत्रु । सेनापति जो पीछे रहने वाली सेना का नायक हो । मित्र राजा जो अपने मित्र राजा को सहायता दे ।—घात –(पुं०) पादप्रहार, ठोकर ।—त्र–(न०) पीछे रहने वाली सेना ।—ग्राह–जो पीछे रह कर कार्य सम्पन्न करे ।

पाल—(पुं०) [√पाल् +अच्] रक्षक, रखवाला । ग्वाला, अहीर । गड़रिया । राजा । पीकदान ।—घ्न–(पुं०) कुकुरमुत्ता, कठफूल, छत्रक ।

पालक—(पुं०) [√पाल्+ण्वुल्] रक्षक । राजा । साईस । घोड़ा । चित्रक वृक्ष । पिता से भिन्न व्यक्ति जिसने किसी का पालन-पोषण किया हो ।

पालकाप्य—(पुं०) करेणुभू ऋषि; इन्होंने सब से प्रथम हाथियों के सम्बन्ध का विज्ञान लोगों को सिखलाया था । (न०) [पालकाप्य +अण्] अश्व, गज आदि से संबद्ध शास्त्र जिसमें हाथी-घोड़े आदि के लक्षण, गुण आदि का निरूपण है ।

पालङ्क—(पुं०) [√पाल्+क्विप्, पाल् √अङ्क्+घञ्] पालक का शाक । बाज पक्षी । एक रत्न जो काला, हरा और लाल होता है ।

पालङ्की—(स्त्री०) [पालङ्क+ङीष्] कुंदुरु नामक गन्ध द्रव्य-विशेष ।

पालङ्क्य—(पुं०) [स्त्री०—पालङ्क्या] [पालङ्क+ष्यञ् (स्वार्थे)] पालक साग ।

पालङ्क्या—(स्त्री०) [पालङ्क्य+टाप्] कुंदुरु ।

पालन—(वि०) [√पाल्+ल्यु] जीवनरक्षाकारी । (न०) [√पाल्+ल्युट्] भरण-पोषण, परवरिश । भंग न करना, न टालना । हाल की ब्यायी गौ का दूध ।

पालयितृ—(पुं०) [√पाल्+णिच्+तृच्] रक्षक ।

पालाश—(वि०) [स्त्री०—पालाशी] [पलाश +अण्] पलाश वृक्ष का । उससे उत्पन्न । पलाश की लकड़ी का बना हुआ । सब्ज, हरा । (पुं०) हरा रंग ।—खण्ड,—षण्ड–(पुं०) मगध देश ।

पालि, पाली—(स्त्री०) [√पाल+इन्] [पालि+ङीष्] कान का अग्रभाग । नोक । किनारा । किसी अस्त्र की बाढ़ या धार । सीमा, हद । पंक्ति; 'विपुलपुलकपालिः' गीत० ६ । धब्बा । पुल । अङ्क, गोद । तालाब जो लंबा अधिक चौड़ा कम हो । छात्रावस्था में गुरु द्वारा छात्र का भरण-पोषण । जूं । प्रशंसा ।

पालिका—(स्त्री०) [पालि+कन्–टाप्] कान का अग्रभाग । तलवार की तेज बाढ़ । छुरी विशेष ।

पालित—(वि०) [√पाल् + क्त] रक्षित । पाला हुआ । (पुं०)शाखोट वृक्ष, सिहोर ।

पालित्य—(न०) [पलित+ष्यञ्] बालों की सफेदी ।

पाल्वल—(वि०)[स्त्री०—पाल्वली] [पल्वल +अण्]तलैया में उत्पन्न । तलैया सम्बन्धी ।

पावक—(पुं०) [√पू + ण्वुल्] अग्नि, आग । अग्नि देव । सूर्य । वरुण । वैद्युत अग्नि । सदाचार । तपस्वी । भिलावाँ । वाय-विडंग । कुसुंभ । चित्रक वृक्ष । तीन की संख्या ।—आत्मज (पावकात्मज)–(पुं०) कार्त्तिकेय । सुदर्शन ऋषि ।

पावकि—(पुं०) [पावक+इञ्] दे० 'पावकात्मज' ।

पावन—(वि०) [स्त्री०—पावनी] [√पू +णिच्+ल्यु] पाप से छुड़ाने वाला । पवित्र, विशुद्ध । (न०) तप । जल । गोबर । माथे का तिलक । (पुं०) अग्नि । धूप । सिद्ध । व्यास देव । (न०) [√पू+णिच्+ल्युट्] पवित्र करने की क्रिया ।—ध्वनि–(पुं०) शंखनाद ।

पावनी—(स्त्री०) [पावन+ङीप्] तुलसी। गौ। गङ्गा नदी।

पावमानी—(स्त्री०) [पवमानम् अधिकृत्य प्रवृत्ता, पवमान+अण्—ङीप्] वेद की एक ऋचा का नाम।

पावर—(पुं०) पासे का वह पहलू जिस पर दो की संख्या अंकित हो। पासे को विशेष रूप से फेंकना ; 'पावरपतनाच्च शोषितशरीरः' मृ० २.८।

पाश—(पुं०) [पश्यते बध्यते अनेन, √पश्+घञ्] रस्सा। जंजीर, बेड़ी। जाल। वरुण का अस्त्र-विशेष। पासा। किसी बुनी हुई वस्त्र की बाढ़ या उसका किनारा।—**अन्त** (**पाशान्त**)–(पुं०) कपड़े की उल्टी ओर।—**क्रीड़ा**–(स्त्री०) जुआ, द्यूत कर्म।—**धर**,—**पाणि**–(पुं०) वरुण देव का नामान्तर।—**बन्ध**–(पुं०) फंदा, फाँस।—**बन्धक**–(पुं०) चिड़ीमार, बहेलिया।—**भृत्**—(पुं०) वरुण का नामान्तर।—**मुद्रा**–(स्त्री०) एक मुद्रा जो एक में सटायी हुई दायें और बायें हाथ की तर्जनियों के सिरों पर एक-एक अँगूठे को रखने से बनती है।—**रज्जु**–(स्त्री०) बड़ी रस्सी।—**हस्त**–(पुं०) वरुण। यम।

पाशक—(पुं०) [पाशयति पीडयति, √पश्+णिच्+ण्वुल्] पासा।—**पीठ**–(न०) पीढ़ा जिस पर जुआ खेला जाता है।

पाशन—(न०) [√पश्+णिच्+ल्युट्] फंदा, जाल। रस्सा। जाल में फँसाना।

पाशव—(वि०) [स्त्री०—**पाशवी**] [पशु+अण्] पशु से सम्बन्ध-युक्त या पशु से उत्पन्न। (न०) पशुओं का झुंड।—**पालन**–(न०) चरागाह या वहाँ की घास।

पाशित—(वि०) [√पश्+णिच्+क्त] बँधा हुआ। फंदे में फँसा हुआ। बेड़ी पड़ा हुआ।

पाशिन्—(पुं०) [पाश+इनि] वरुण। यम। बहेलिया, चिड़ीमार।

पाशुपत—(वि०) [स्त्री०—**पाशुपती**] [पशुपति+अण्] पशुपति सम्बन्धी, शिवसम्बन्धी। (न०) पाशुपत सिद्धान्त। (पुं०) शैव। पशुपति के सिद्धान्तों को मानने वाला।—**अस्त्र** (**पाशुपतास्त्र**)–(न०) शिव जी का एक अस्त्र।

पाशुपाल्य—(न०) [पशुपाल+ष्यञ्] वैश्यवृत्ति। ग्वाले या गड़रिये का धंधा।

पाश्चात्य—(वि०) [पश्चात्+त्यक्] पश्चिम का, पश्चिमी। पीछे का, पिछला। पीछे होने वाला। (न०) पीछे का भाग।

पाश्या—(स्त्री०) [पाश+य+टाप्] पाशसमूह। जाल।

पाषण्डक, पाषण्डिन्—(पुं०) [पापं सनोति दर्शनसंसर्गादिना ददाति, पा√सन्+ड, पृषो० साधुः, वा पाति रक्षति दुष्कृतेभ्यः, √पा+क्विप्, पा वेदधर्मः तं षण्डयति खण्डयति, पा√षण्ड्+अच्—पाषण्ड+कन्] [पा त्रयीधर्मः तं षण्डयति, पा√षण्ड्+णिनि] धार्मिकता का आडंबर फैलाने वाला व्यक्ति। वेद-विरुद्ध आचरण करने वाला व्यक्ति।

पाषाण—(पुं०) [√पष्+आनच् स च णित्] पत्थर, शिला।—**गर्दभ**–(पुं०) जबड़े के जोड़ के पास होने वाली कड़ी सूजन।—**दारक**,—**दारण**–(पुं०) संगतराश की छेनी।—**सन्धि**–(पुं०) चट्टान में बनी गुफा।—**हृदय**–(वि०) जिसका दिल पत्थर की तरह कड़ा हो, नृशंस।

पाषाणी—(स्त्री०) [पाषाण+ङीप्] छोटा पत्थर जो बटखरे की तरह काम में लाया जाय।

√पि—तु० पर० सक० जाना। पियति, पेष्यति, अपैषीत्।

पिक—(पुं०) [अपि कायति शब्दायते, अपि √कै+क, अकारलोप] कोयल पक्षी; 'उन्मीलन्ति कुहूः कुहूरिति कलोत्तालाः पिकानां

गिर' गीत० १ ।—**आनन्द** (**पिकानन्द**), —**बान्धव**-(पुं०) वसन्त ऋतु ।—**बन्धु**, —**राग**,—**वल्लभ** (पुं०) आम का पेड़ ।

पिक्क—(पुं०) [पिक् इत्यव्यक्तशब्देन कायति, पिक्√कै+क] हाथी का बच्चा । बीस वर्ष का हाथी ।

पिङ्ग—(पुं०) [√पिञ्ज्+अच्, कुत्व] पीलापन लिये भूरा रंग । भूरापन लिये लाल रंग; 'अन्तर्निविष्टामलपिङ्गतार' कु० ७.३३ । [पिङ्ग+अच्] हरताल । चूहा । भैंसा । (वि०) पीलापन लिये भूरा । दीपशिखा के रंग का, ललाई लिये भूरा ।—**अक्ष** (**पिङ्गाक्ष**)-(वि०) भूरे रंग की आँखों वाला । (पुं०) लंगूर । शिव जी का नामान्तर । —**ईक्षण** (**पिङ्गेक्षण**)-(पुं०) शिव ।—**ईश** (**पिङ्गेश**)-(पुं०) अग्निदेव ।—**कपिशा** -(स्त्री०) तेलचट्टा ।—**चक्षुस्**-(पुं०) केकड़ा । मकर ।—**जट**-(पुं०) शिव ।—**सार**-(पुं०) हरताल ।—**स्फटिक**-(पुं०) गोमेद रत्न ।

पिङ्गल—(पुं०) [पिङ्ग+लच्] पिंग वर्ण, ललाई लिये भूरा रंग । [पिङ्गल+अच्] आग । बंदर । न्योला । छोटा उल्लू । सर्प-विशेष । सूर्य का एक गण । कुबेर की नव-निधियों में से एक । एक प्राचीन मुनि जो छंदःशास्त्र के प्रथम आचार्य माने जाते हैं; 'छन्दोज्ञाननिधिं जघान मकरो वेलातटे पिङ्गलं' पं० २.३३ । (न०)पीतल । हरताल । (वि०) पिंग वर्ण का, ललाई लिये भूरे रंग का ।

पिङ्गला—(स्त्री०) [पिङ्गल+टाप्] शरीर के दक्षिण भाग की एक सिद्ध नाड़ी । पीतल । गोरोचन । शीशम का पेड़ । लक्ष्मी । उल्लू की एक जाति । कुमुद नामक दिग्गज की पत्नी । एक पुराण-प्रख्यात वेश्या का नाम ।

पिङ्गलिका—(स्त्री०) [पिङ्गल+ठन्—टाप्] सारस पक्षी । उल्लू पक्षी ।

पिङ्गा—(स्त्री०) [पिङ्ग+अच्—टाप्] हल्दी । केसर । हरताल । चण्डिका देवी । गोरोचन । वंशरोचन । अलंबा ।

पिङ्गाश—(न०) [पिङ्ग√अश् + अण्] चोखा सोना । (पुं०) गाँव का मुखिया या जमींदार । मछली विशेष ।

पिङ्गाशी—(स्त्री०) [पिङ्गाश+ङीष्] नील का पौधा ।

पिचण्ड—पिचिण्ड-(पुं०, न०) [अपि चण्ड्यते अनेन, अपि√चण्ड्+घञ्, अकारलोप] [=पिचण्ड, पृषो० साधुः] पेट, उदर । पशु का कोई अंग ।

पिचण्डक—(पुं०) [पिचण्डे कुशलः, पिचण्ड +कन्] औदरिक, पेटू, मरभुक्खा ।

पिचव्य—(पुं०) [पिचवे तूलाय साधुः इति पिचु+यत्] कपास का पौधा ।

पिचिण्डिका—(स्त्री०) [पिचिण्ड इव पिण्डा-कृतिः अस्ति अस्य, पिचिण्ड+ठन्—टाप्] टाँग का पीछे की ओर का मांसल भाग ।

पिचिण्डिल—(वि०) [अतिशयितः पिचिण्डः अस्य, पिचिण्ड+इलच्] बड़े पेट का, बड़ी तोंद वाला ।

पिचु—(पुं०) [√पिच् (मर्दन)+कु] रुई । दो तोले के बराबर की तौल जिसे कर्ष कहते हैं । कोढ़ रोग विशेष ।—**तूल**-(न०) रुई । —**मन्द**,—**मर्द**-(पुं०) नीम का पेड़ ।

पिचुल—(पुं०) [पिचु √ला+क] रुई । जल-कौआ । समुद्रफल । झाऊ का पेड़ ।

√पिच्च्—चु० उभ० सक० काटना । पिच्चयति—ते, पिच्चयिष्यति—ते, अपि-पिच्चत्—त ।

पिच्चट—(वि०) [√पिच्च्+अटन्] दबा कर चिपटा किया हुआ । (पुं०) आँख की सूजन । (न०) जस्ता । सीसा ।

पिच्चा—(स्त्री०) [√पिच्च्+अच्—टाप्] मोती की लड़, जिसका वजन एक धरण हो (मोतियों का एक परिमाण) ।

√पिच्छ्—तु० पर० सक० रोकना । तोड़ना । पिच्छति, पिच्छिष्यति, अपिच्छीत् ।

पिच्छ—(न०) [√पिच्छ्+अच्] मयूर की पूँछ का पर। मयूर की पूछ। बाण में लगा पर। डैना, बाजू। कलगी, चोटी। (पु०) पूँछ।—**बाण**–(पु०) बाज पक्षी।—**लतिका**–(स्त्री०) पूँछ पर का पंख।

पिच्छल—(वि०) [पिच्छ+लच्] चिकना, फिसलने वाला। (पु०) वासुकि के वंश का एक नाग। शीशम। अकासबेल। मोचरस।

पिच्छा—(स्त्री०) [पिच्छ+टाप्] म्यान, गिलाफ़, खोल। चावल का माँड़। पंक्ति। ढेर। मोचरस। केला। कवच। टाँग की पिंडुरी, पिंडली। साँप का विष। सुपाड़ी।

पिच्छिका—(स्त्री०) [पिच्छ + ठन्–टाप्] चँवर। मोरपंख का गुच्छा।

पिच्छिल—(वि०) [पिच्छा+इलच्] चिकना, फिसलन वाला। पूँछ वाला। (पु०, न०) [स्त्री०—**पिच्छिला**] भात का माँड़। एक प्रकार की चटनी। दही जिसके ऊपर छाली हो।—**त्वच्**–(पु०) नारंगी का पेड़।

√**पिञ्ज्**—अ० आत्म० सक० रँगना। स्पर्श करना। सजाना। अक० अवयव होना। अव्यक्त शब्द करना। पिङ्क्ते, पिञ्जिष्यते, अपिञ्जिष्ट। चु० पर० सक० देना। लेना। वध करना। अक० चमकना। शक्तिमान् होना। बसना। पिञ्जयति–पिञ्जति।

पिञ्ज—(न०) [√पिञ्ज्+घञ् वा अच्] ताक़त, शक्ति। (पु०) चन्द्रमा। कपूर। वध। ढेर।

पिञ्जट—(पु०) [√पिञ्ज्+अटन्] आँख का कीचड़।

पिञ्जन—(न०) [√पिञ्ज्+ल्युट्] धुना की धनुही जिससे रुई धुनकी जाती है।

पिञ्जर—(पु०) [√पिञ्ज्+अर] सुनहला या भूरा रंग। पीला रंग। (वि०) [पिञ्जर +अच्] (न०) सोना। हरताल। अस्थिपंजर। पिंजड़ा।

पिञ्जरक—(न०) [पिञ्जर+कन्] हरताल।

पिञ्जरित—(वि०) [पिञ्जर+इतच्] पीले रंग का। भूरे रंग का।

पिञ्जल—(वि०) [√पिञ्ज्+कलन्] बहुत घबराया हुआ या परेशान। भयभीत। (न०) हरताल। कुश की पत्ती।

पिञ्जा—(स्त्री०) [पिञ्ज्+टाप्] चोट। अनिष्ट। हल्दी। रुई। जातुगरली।

पिञ्जाल—(न०) [√पिञ्ज् + आलच्] सुवर्ण।

पिञ्जिका—(स्त्री०)[√पिञ्ज्+ण्वुल्–टाप्, इत्व] धुनी रुई की पोली बत्ती, जिससे कातने पर बढ़-बढ़ कर सूत निकलते हैं, पूनी।

पिञ्जूष—(स्त्री०) [√पिञ्ज्+ऊषण्] कान का मैल या ठेंठ।

पिञ्जेट—(पु०) [=पिञ्जट, पृषो० साधुः] दे० 'पिञ्जट'।

पिञ्जोला—(स्त्री०)[√पिञ्ज्+ओल–टाप्] पत्तों की खरभर।

√**पिट्**—भ्वा० पर० अक० इकट्ठा होना। शब्द करना। पिटति, पेटिष्यति, अपेटीत्।

पिट—(न०) [√पिट्+क] घर। छत। (पु०) बक्स, पेटी। टोकरी।

पिटक—(न०, पु०) [पिट+कन्] पेटी। टोकरी। अन्न की भण्डारी, बखारी। मुहाँसा; 'ततः गण्डस्योपरि पिटकः संवृत्तः' श० २। इन्द्र के झंडे पर का आभूषण-विशेष।

पिटक्या—(स्त्री०) [पिटक+य+टाप्] पेटियों का ढेर।

पिटाक—(पु०) [√पिट्+काक (बा०)] पिटारा। सन्दूक। एक मुनि।

पिट्टक—(न०) [=किट्टक, पृषो० कस्य पः] दाँत का मैल।

√**पिठ्**—भ्वा० पर० सक० वध करना। क्लेश देना। पेठति, पेठिष्यति, अपेठीत्।

पिठ—(पु०) [√पिठ्+क] दर्द।

पिठर—(पु०) [√पिठ्+करन्] एक प्रकार

का घर या कमरा। एक दानव। (न०, पुं०) बटलोई। (न०) मोथा। मथानी।

पिठरक—(न०, पुं०) [पिठर+कन्] बरतन। कड़ाई।—**कपाल**–(पुं०, न०) खप्पर। कमण्डलु।

पिडक—(पुं०), **पिडका**–(स्त्री०) [√पीड्+ण्वुल्, नि० साधुः] [पिडक+टाप्] छोटा फोड़ा, फुड़िया, फुंसी। मुहासा।

√**पिण्ड्**—भ्वा० आत्म०, चु० पर० सक० समेट कर गोला बनाना। जोड़ना, मिलाना। ढेर लगाना, इकट्ठा करना। पिण्डते, पिण्डिष्यते, अपिपिण्डिष्ट। चु० पिण्डयति—पिण्डति।

पिण्ड—(वि०) [स्त्री०—**पिण्डी**] [√पिण्ड्+अच्] घना, सघन। ठोस। (न०, पुं०) गोला। डला। कौर; 'उपानयत्पिण्डमिवामिषस्य' र० २.५९। खीर का पिण्ड जो पितरों के लिये होता है। भोजन। जीविका। खैरात, धर्मादा। मांस। शरीर; 'पिण्डेष्वनास्था खलु भौतिकेषु' र० २.५७। ढेर। टाँगों की पिंडुली। हाथी का माथा। दरवाजे के सामने का छप्पर। धूप या सुगन्धित द्रव्य-विशेष। (अंकगणित में) जोड़। (रेखागणित में) मुटाई। (न०) ताकत, बल। लोहा। ताजा मक्खन। सेना।—**अन्वाहार्य** (**पिण्डान्वाहार्य**)–(वि०) पितरों का पिण्डदान कर चुकने के बाद खाने योग्य।—**अन्वाहार्यक** (**पिण्डान्वाहार्यक**)–(न०) पितरों के उद्देश्य से दिया हुआ भोजन।—**अभ्र** (**पिण्डाभ्र**)–(न०) ओला।——**अलक्तक** (**पिण्डालक्तक**)–(पुं०) महावर।—**अशन** (**पिण्डाशन**),—**आश** (**पिण्डाश**),—**आशक** (**पिण्डाशक**),—**आशिन्** (**पिण्डाशिन्**)–(पुं०) भिक्षुक, भिखारी।—**आयस** (**पिण्डायस**) (न०) फौलाद।—**उदकक्रिया** (**पिण्डोदकक्रिया**) (स्त्री०) पितरों को पिण्डदान तथा जलदान, श्राद्ध और तर्पण।—**उद्धरण** (**पिण्डोद्धरण**)–(न०) साथ-साथ पिण्डदान करना, मिलकर पिंडा पारना।—**कन्द** (पुं०) पिंडालू।—**खर्जूर**–(पुं०),—**खर्जूरी**—(स्त्री०) छुहारे का पेड़।—**गोस**–(पुं०) गोंद, लोबान।—**ज** (पुं०) पिंड के रूप में पैदा होने वाला, जरायुज।—**तैल**–(न०),—**तैलक**–(पुं०) शिलारस।—**द**–(वि०) भोजन देने वाला। पितरों को पिण्डदान करने वाला। (पुं०) पुरुष नातेदारों में पिण्ड देने का अधिकारी। मालिक, संरक्षक।—**दान**–(न०) पितरों को पिण्ड देना।—**निर्वपण**–(न०) पितरों को पिण्डदान देना।—**पात**–(पुं०) खैरात बाँटना, धर्मादा बाँटना।—**पातिक**–(पुं०) खैरात या धर्मादे पर गुजर-बसर या निर्वाह करने वाला।—**पाद**,—**पाद्य**–(पुं०) हाथी।—**पुष्प**–(पुं०) अशोक वृक्ष। गुलाब विशेष। अनार। (न०) अशोक या गुलाब का फूल। कमल।—**भाज्**–(वि०) पिण्डों में भाग पाने का अधिकारी। (पुं० बहुवचन में) पितरगण।—**भृति** (स्त्री०) निर्वाह, आजीविका का उपाय।—**मूल**,—**मूलक**–(न०) गाजर। शलजम।—**यज्ञ**–(पुं०) श्राद्ध कर्म।—**लेप**–(पुं०) हाथ में लगी हुई पिण्ड की खीर।—**लोप**–(पुं०) श्राद्ध कर्म का लोप।—**सम्बन्ध**–(पुं०) मृत पुरुषों में और जीवितों में वह सम्बन्ध जिससे जीवित लोग मृतों को पिण्ड दे सकें।

पिण्डक—(न०, पुं०) [पिण्ड √कै+क] गोला। गुमड़ा। टाँग की पिंडुरी। लोबान। गाजर। भोज्य पदार्थ का गोलाकार कौर, कवल। (पुं०) पिशाच।

पिण्डन—(न०) [√पिण्ड्+ल्युट्] पिण्ड बनाना।

पिण्डल—(पुं०) [पिण्ड्+कलच्] पुल। टीला।

पिण्डस—(पुं०) [पिण्डेन परदत्तग्रासेन

सनोति जीवति, पिण्ड √सन्+ड] भिक्षुक, फकीर ।

पिण्डात—(पुं०) [पिण्ड इव अतति सादृश्यम् अनुकरोति, पिण्ड √अत्+अच्] लोबान ।

पिण्डार—(पुं०) [पिण्डम् ऋच्छति, पिण्ड √ऋ+अण्] भिक्षु । ग्वाला । भैंसों का चरवाहा । विकंकत वृक्ष, कठेर । एक प्रकार की धिक्करात्मक सूचना । एक शाक । एक नाग ।

पिण्डि, पिण्डी—(स्त्री०) [√पिण्ड्+इन्] [पिण्ड+ङीष्] गोला । लुगदी । पहिये के बीच का भाग, चक्रनाभि । टाँग की पिंडुरी । अशोक वृक्ष । ताड़-विशेष ।—**पुष्प**–(पुं०) अशोक वृक्ष ।—**शूर**–(पुं०) घर में बैठे ही बैठे बहादुरी दिखाने वाला । पेटू ।

पिण्डिका—(स्त्री०) [√पिण्ड् + ण्वुल् —ङीप्+कन्—टाप्, ह्रस्व] मांसकी गोलाकार सूजन, गिल्टी । पिंडली ।

पिण्डित—(वि०) [√पिण्ड् +क्त] पिंडी बनाया हुआ । घन । ढेर किया हुआ । मिश्रित । गुणा किया हुआ । गिना हुआ ।

पिण्डिन्—(वि०) [पिण्ड+इनि] शरीरधारी: 'पिण्डहीनो यथा पिण्डी जयश्रीस्त्वां विना तथा'। श्राद्ध के पिण्डों को पाने वाला । (पुं०) भिक्षुक । पितरों को पिण्ड देने वाला व्यक्ति ।

पिण्डिल—(पुं०) [पिण्ड+इलच्] पुल । बाँध । ज्योतिषी, गणक ।

पिण्डीकरण (न०) [पिण्ड+च्वि, इत्व, दीर्घ √कृ+ल्युट्—अन] पिण्डाकार बनाना, पिण्ड का रूप देना ।

पिण्डीर—(वि०) [पिण्ड √ईर् + णिच् +अच्] रसहीन, फीका, सूखा । (पुं०) अनार का वृक्ष । समुद्रफेन ।

पिण्डोलि—(स्त्री०) [√पिण्ड्+ओलि] जूठन । (पुं०) ऊँट ।

पिण्याक—(न०, पुं०) [√पिष्+आक, नि० साधुः] तिल या सरसों की खली । शिलाजीत । शिलारस । केसर । हींग ।

पितामह—(पुं०)[स्त्री०—**पितामही**] [पितृ+डामहच्] बाबा, दादा, पिता का पिता । ब्रह्मा जी का नामान्तर ।

पितृ—(पुं०) [पाति रक्षति अपत्यम्, √पा+तृच्] [एक०—**पिता**) किसी के सम्बन्ध में वह व्यक्ति जिसके वीर्य से उसकी उत्पत्ति हुई हो, जनक, बाप । **पितरौ** (द्वि०) पिता-माता; 'जगतः पितरौ वन्दे' र० १.१ । **पितरः** (बहु०) पूर्वपुरुष, पुरखा । पितृकुल के पितर । पितृगण ।—**अर्जित** (**पित्रर्जित**)–(वि०) पिता या पुरखों द्वारा पैदा किया हुआ, पैतृक (सम्पत्ति) ।—**कर्मन्**, —**कार्य**, —**कृत्य**–(न०),—**क्रिया**–(स्त्री०) श्राद्ध, तर्पण आदि जो पितरों के निमित्त किये जाते हैं ।—**कानन**–(न०) श्मशान कब्रगाह ।—**कुल्या**–(स्त्री०) मलय से निकलने वाली एक नदी ।—**गण**–(पुं०) पितर । मरीचि आदि ऋषियों के पुत्र, अग्निष्वात्त आदि ।—**गृह**–(न०) पिता का घर, मायका । श्मशान ।—**ग्रह**–(पुं०) स्कंद आदि नौ बालग्रहों में से एक ।—**घातक**,—**घातिन्**–(पुं०) पितृहत्यारा, पिता को मारने वाला ।—**तर्पण**–(न०) पितरों को जलदान । तिल । अँगूठे और तर्जनी के बीच का स्थान जिसके द्वारा तर्पण समर्पित करने का विधान है । श्राद्ध के समय दान की जाने वाली वस्तुएँ ।—**तिथि**–(स्त्री०) अमावास्या ।—**तीर्थ**–(न०) गया तीर्थ । अँगूठे और तर्जनी के बीच का हथेली का स्थान ।—**दान**–(न०) पितरों का श्राद्ध या श्राद्ध सम्बन्धी दान ।—**दाय**–(पुं०) बपौती, पिता से प्राप्त सम्पत्ति या धन ।—**दिन**–(न०) अमावास्या ।—**देव**–(पुं०) अग्निष्वात्त आदि पितर । पिता रूपी देवता ।

(वि०) जो पिता को देवतुल्य माने; 'पितृदेवो भव' वेद ।—**दैवत**–(वि०) जिसके अधिष्ठाता पितर हों। जिसका सम्बन्ध पितरों की पूजा से हो। (न०) मघा नक्षत्र ।—**द्रव्य**–(न०) बपौती, पिता से प्राप्त सम्पत्ति ।—**पक्ष**–(पु०) पिता की ओर के लोग। पिता के सम्बन्धी। पितृकुल। आश्विन का कृष्ण पक्ष ।—**पति**–(पु०) यमराज का नामान्तर ।—**पद**–(न०) पितृलोक। पिता या पितर का दर्जा। —**पितृ**– (पु०) बाप का बाप, बाबा ।—**पुत्र**–(पु०, द्वि०) पिता और पुत्र ।—**पूजन**–(न०) पितरों की अर्चा । श्राद्ध आदि कार्य ।—**पैतामह**–(वि०) [स्त्री० —**पैतामही**] जिसका सम्बन्ध बाप-दादों से हो, बाप-दादों का। (पु०, बहु०) पुरखे। —**प्रसू**–(स्त्री०) दादी, बाप की मा, पितामही । सन्ध्या ।—**प्राप्त**– (वि०) पिता से प्राप्त, पुरखों से प्राप्त।—**बन्धु**–(पु०) पिता के नातेदार पितृकुल के लोग ।—**भक्त**–(वि०) पिता का आज्ञाकारी ।—**भक्ति**–(स्त्री०) पिता की भक्ति, पिता में पूज्य-बुद्धि ।—**भोजन**–(न०) पितरों को अर्पण किया हुआ भोजन। उरद ।—**भ्रातृ**–(पुं०) चाचा, ताऊ ।—**मन्दिर**–(न०) पिता का घर। श्मशान ।—**मेध**–(पुं०) वैदिक अन्त्येष्टि कर्म का भेद। —**यज्ञ**–(पु०) पितृतर्पण ।—**राज्**,—**राज**–(पु०)यमराज।—**रूप**–(पुं०)शिव। —**लोक**–(पु०)वह लोक जिसमें पितृगण रहते हैं ।—**वंश**–(पुं०) पिता का कुल । —**वन**–(न०)श्मशान।—**वसति**–(स्त्री०) —**सद्मन्**–(न०) श्मशान।—**श्राद्ध**–(न०) पितरों के निमित्त किया जाने वाला श्राद्ध। —**स्वसृ**–(स्त्री०) बुआ ।—**स्वस्रीय**–(पु०) फुफेरा भाई ।—**सन्निभ**–(वि०) पिता के सदृश ।—**सू**–(स्त्री०) [सूते इति सूः पितॄणां सूः जननी इव] सन्ध्या, सायंकाल। [पितरं सूते, पितृ√सू+क्विप्] पितामही, दादी।—**स्थानीय**–(पु०) अभिभावक, संरक्षक । —**हन्**–(पु०) पिता की हत्या करने वाला।—**हू**–(पुं०) दाहिना कान ।

पितृक—(वि०) [पितुः सम्बन्धि पितुः आगतं वा, पितृ+कन् वा=पैत्रिक, पृषो० साधुः] पिता सम्बन्धी। पुरखों का, पुश्तैनी। अन्त्येष्टि क्रिया सम्बन्धी ।

पितृव्य—(पुं०) [पितृ+व्यत्] पिता का भाई, चाचा। कोई भी पुरुष-जातीय वयोवृद्ध नातेदार।

पित्त—(न०) [अपि दीयते प्रकृतावस्थया रक्ष्यते विकृतावस्थया नाश्यते वा शरीरं येन, अपि√दो+क्त, अपेः अकारलोपः] एक तरल पदार्थ जो शरीर के भीतर यकृत में बनता है ।—**अतीसार (पित्तातीसार)**–(पु०) पित्त के प्रकोप से उत्पन्न दस्तों का रोग ।—**उपहत (पित्तोपहत)**–(वि०) पित्त-प्रकोप से पीड़ित ।—**कोष**–(पु०) पित्त की थैली, पित्ताशय ।—**क्षोभ**–(पुं०) पित्त का प्रकोप ।—**गुल्म**–(पु०) पित्त की अधिकता से उदर का फूलना ।—**घ्नी**–(स्त्री०) गुड़च ।—**ज्वर**–(पु०) पित्त के प्रकोप से उत्पन्न ज्वर ।—**द्राविन्**–(वि०) पित्त को पिघलाने वाला । (पु०) मीठा नीबू ।—**प्रकोप**–(पुं०) पित्त का विकार। —**रक्त**–(न०) रक्तपित्त नामक रोग । —**विदग्ध**–(वि०) पित्त विकार से निर्बल किया गया ।—**शमन**,—**हर**–(वि०) पित्त के विकारों को दूर करने वाला ।—**संशमनवर्ग**—(पु०) चंदन, रक्तचंदन, नेत्रबाला, खस, अर्कपुष्पी, विदारीकन्द, सतावर, सिवार आदि पित्तनाशक ओषधियों का समूह।

पित्तल—(वि०) [पित्त √ला+क] पित्त

को उभाड़ने वाला, पित्तकारी । (न०) पीतल । भोजपत्र । हरताल ।

पित्र्य—(वि०) [पितुः इदम्, पितुः आगतम् पितरो देवता अस्य, पितुः तुल्यः वा पितॄणां प्रियः, पितृ+यत्, रीङ् आदेश] पैतृक, पुरखों का, पुश्तैनी । मृत पितरों से सम्बन्ध रखने वाला । (न०) मघा नक्षत्र । तर्जनी और अँगूठे के बीच का हथेली का भाग । (पुं०) ज्येष्ठ भ्राता । माघ मास ।

पित्र्या—(स्त्री०) [पित्र्य+टाप्] मघा नक्षत्र । पूर्णिमा । अमावास्या ।

पित्सत्—(पुं०) [√पत्+सन्, इस्, अभ्यासलोप, पित्स+शतृ] पक्षी ।

पित्सल—(पुं०) [√पत्+सल, इत्] मार्ग, रास्ता ।

पिधान—(न०) [अपि √धा+ल्युट्, अपेः अकारलोपः] ढकने या आच्छादित करने की क्रिया । म्यान । लबादा, चादर । ढक्कन, ढकना ।

पिधानक—(न०) [पिधान+कन्] म्यान, परतला । ढकना ।

पिधायक—(वि०) [अपि√धा + ण्वुल्, अकारलोप] छिपाने वाला, ढकने वाला ।

पिनद्ध—(वि०) [अपि √नह्+क्त, अकारलोप] बँधा हुआ । पोशाक की तरह धारण किया हुआ । छिपा हुआ । छिदा हुआ । लपेटा हुआ ।

पिनाक—(न०, पुं०) [पाति रक्षति पनाय्यते स्तूयते वा √पा वा√पन्+आक, नि० साधुः] शिव जी का धनुष । त्रिशूल । धनुष । डंडा या छड़ी । धूल की वृष्टि ।—**गोप्तृ**, —**धृक्**, —**धृत्**,—**पाणि**—(पुं०) शिव ।

पिनाकिन्—(पुं०) [पिनाक+इनि] शिव; 'न सन्ति याथार्थ्यविदः पिनाकिनः' कु० ५.७७ ।

पिन्यास—(न०) [अपिगतो न्यासोऽत्र प्रा० ब०, अकारलोपः भागुरिमतेन] हींग ।

√पिन्व्—भ्वा० पर० सक० सींचना । पिन्वति, पिन्विष्यति, अपिन्वीत् ।

पिपतिषत्—(पुं०) [√पत् + सन्+शतृ] पक्षी ।

पिपतिषु—(वि०) [√पत् + सन्+उ] गिरने का इच्छुक । पतनशील । (पुं०) चिड़िया ।

पिपासा—(स्त्री०) [√पा+सन् + अ —टाप्] प्यास, तृषा ।

पिपासित, पिपासिन्, पिपासु—(वि०) [√पा+सन्+क्त] [पिपासा + इनि] [√पा+सन्+उ] प्यासा ।

पिपील—(पुं०), **पिपीली**—(स्त्री०)—[अपि √पील्+अच्, अकारलोप] [पिपील —ङीप्] चींटा । चींटी ।

पिपीलक—(पुं०) [अपि √पील्+ण्वुल्, अकारलोप] चींटा ।

पिपीलिक—(न०) [अपि√पील् + इकन्, अकारलोप] एक प्रकार का सोना (यह चींटों का एकत्र किया हुआ माना जाता है) ।—**पुट**—(पुं०) वल्मीक ।—**मध्य**, —**मध्यम**—(वि०) जो चींटी के मध्य भाग की तरह बीच में पतला हो ।

पिपीलिका—(स्त्री०) [पिपीलक + टाप्, इत्व] चींटी ।—**परिसर्पण**—(न०) चींटियों का इधर-उधर भ्रमण ।—**मध्य**—(पुं०) एक प्रकार का चांद्रायण व्रत ।

पिप्पल—(पुं०) [√पा + अलच्, पृषो० साधुः] पीपल का पेड़ । स्तन की ढपनी, चूचुक । आस्तीन । बंधन-रहित रखा हुआ पक्षी । पक्षी । (न०) पीपल का फल । कोई भी बिना गुठली का फल । मैथुन । जल ।

पिप्पलि, पिप्पली—(स्त्री०) [√पॄ +अलच्—ङीष्, पक्षे ह्रस्वाभावः] पीपल नाम की ओषधि ।

पिप्पिका—(स्त्री०) दाँत का मल ।

पिप्लु—(पुं०) [अपि प्लवते देहोपरि, अपि √प्लु+डु, अपेः अकारलोपः] तिल, मस्सा ।

पियाल—(पुं०) [√पीय् + कालन्, ह्रस्व] चिरौंजी का पेड़ । (न०) चिरौंजी ।

√पिल्—चु० उभ० सक० फेंकना । पटकना । भजना । बतलाना । उत्तेजना देना । पेलयति —ते, पेलयिष्यति—ते, अपीपिलत्—त ।

पिलु—(पुं०) दे० 'पीलु' ।—**पर्णी**–(स्त्री०) मूर्वा लता ।

पिल्ल—(वि०) [क्लिन्ने चक्षुषी यस्य, क्लिन्न +अच् पिल्लादेश] जिसके नेत्र क्लेदयुक्त हों । (न०) ऐसा नेत्र ।

पिल्लका—(स्त्री०) [पिल्ल√कै+क—टाप्] हथिनी ।

√पिश्—तु० पर० सक० हिस्सा करना । बनाना । संघटन करना । प्रकाश करना, उजाला करना । पिंशति, पेशिष्यति, अपेशीत् ।

पिश—(वि०) [√पिश्+क] पाप से मुक्त । (न०) विविध रूप । (पुं०) रुरु ।

पिशङ्ग—(पुं०) [√पिश्+अङ्गच्] ललाई लिये भूरा रंग । (वि०) [पिशङ्ग+अच्] ललाई लिये भूरे रंग का; 'पिशङ्गमौञ्जीयुजम्' शि० १.६ ।

पिशङ्गक—(पुं०) [पिशङ्ग+क]विष्णु और उनके अनुचर का नामान्तर ।

पिशाच—(पुं०) [पिशितं मांसम् अश्नाति, पिशित√अश्+अण् पृषो० शितभागस्य लोपः अशभागस्य शाचादेशः] दश प्रकार की देवयोनियों में से एक । एक निम्न देवयोनि । प्रेत । दुष्ट मनुष्य (ला०) ।—**कन**–(पुं०) पीली सरसों ।—**द्रु**–(पुं०) सिहोर वृक्ष ।—**बाधा**,–(स्त्री०)—**सञ्चार**–(पुं०) पिशाच का आवेश ।—**भाषा**–(स्त्री०) पैशाची प्राकृत जिसका प्रयोग संस्कृत के नाटकों में मिलता है ।—**मोचन**–(न०) एक तीर्थ (स्कंद-पुराण) ।—**सभ** (न०) पिशाचों की सभा ।

पिशाचकिन्—(पुं०) [पिशाचाः सन्ति यस्य, पिशाच+इनि, कुक्] कुबेर का नामान्तर ।

पिशाचिका—(स्त्री०) [पिशाच+ङीष् +कन्—टाप्, ह्रस्व] स्त्री पिशाच । पिशाच की स्त्री । एक प्रकार की जटामासी । किसी वस्तु की प्राप्ति के लिये पिशाच की तरह उत्सुकता । लड़ने की पैशाचिक अभिलाषा; 'किमनया आयुधपिशाचिकया' माल० ३ ।

पिशित—(न०) [√पिश्+इतन् वा क्त] मांस; 'आक्षिप्य तेभ्यः पिशितप्रियापि' र० ७.५० ।—**अशन** (पिशिताशन)—,**आश** (पिशिताश),—**आशिन्** (पिशिताशिन्),—**भुज्**–(पुं०) मांसभक्षी, गोश्त खोर । राक्षस । पिशाच । भेड़िया ।

पिशुन—(वि०) [√पिश्+उनन्] बतलाने वाला, निर्देश करने वाला । एक की बुराई दूसरे से कर भेद डालने वाला, इधर की उधर लगाने वाला । दुर्जन, खल । कमीना, नीच । मूर्ख । (पुं०) निन्दक, चुगलखोर । रुई । नारद का नामान्तर । कौआ ।—**वचन**, —**वाक्य**–(न०) चुगली, निन्दा, बुराई ।

√पिष्—रु० पर० सक० कूटना, पीसना, चूर्ण करना । नष्ट करना, वध करना । पिनष्टि, पेक्ष्यति, अपिषत् ।

पिष्ट—(पुं०) [√पिष्+क्त] पिसा हुआ, चूर्ण किया हुआ । निचोड़ा हुआ । गूंधा हुआ । (न०) पिसी हुई कोई भी वस्तु । आटा । पीठी । सीसा ।—**उदक** (पिष्टोदक) –(न०) आटा में मिला हुआ जल ।—**पचन** –(न०) आटा भूंजने की कड़ाही । तवा ।—**पशु**–(न०) आटा का बनाया हुआ पशु का खिलौना ।—**पिण्ड**–(पुं०) आटा का लड्डू या बाटी ।—**पूर**–(पुं०) एक मिठाई, घेवर । वटक, बड़ी ।—**पेष**–(पुं०),—**पेषण**–(न०) पिसे को पीसना । व्यर्थ का काम करना ।—

मेह–(पु०) प्रमेह रोग के भिन्न-भिन्न प्रकारों में से एक प्रकार ।—वर्ति–(पु०) छोटा लड्डू जो जवा, दाल की पीठी या चावल के आटा से बनाया जाता है ।—सौरभ–(न०) घिसा हुआ चन्दन ।

पिष्टक—(न०, पु०) [पिष्ट + कन्] पूड़ी जो किसी अन्न के आटे की बनायी गयी हो । रोटी । (न०) पिसे हुए तिल ।

पिष्टप—(न०,पु०) [विशन्ति अत्र सुकृतिनः, √विश्+कप्,नि० साधुः वा√पिष्+टपन्] ब्रह्माण्ड का विभाग-विशेष, लोक, भुवन ।

पिष्टात—(पु०) [पिष्ट √अत्+अण्] खुशबूदार चूर्ण । अबीर । बुक्का ।

पिष्टिक—(पु०) [पिष्ट+ठन्] चावलों की बनी हुई तवाखीर या वंसलोचन ।

पिष्टिका—(स्त्री०) [पिष्टिक+टाप्] चावल या दाल की पीठी ।

√पिस्—भ्वा० पर० सक० जाना, देना या लेना। अनिष्ट करना । अक० बलवान् होना । बसना । पेसति, पेसिष्यति, अपेसीत् । चु० पेसयति ।

पिहित—(वि०) [अपि √धा+क्त, हि आदेश, अकारलोप] बंद किया हुआ । बंधा हुआ । ढका हुआ, छिपा हुआ । भरा हुआ या आच्छादित ।

√पी—दि० आत्म० सक० पीना । पीयते, पेष्यते, अपेष्ट ।

पीच—(न०) ठोड़ी ।

पीठ—(न०) [पठन्ति उपविशन्ति अत्र,√पिठ्+घञ्, वा० दीर्घ अथवा पीयते अत्र, √पी+ठक्] पीढ़ा । कुशासन । मूर्ति का वह आधारवत् स्थान जिस पर वह खड़ी रहती है । किसी वस्तु के रहने का स्थान, अधिष्ठान (यथा विद्यापीठ) । राजसिंहासन; 'अवेन पीठादुदतिष्ठदच्युतः' शि० १.१२ । वह स्थान जहाँ सती के शरीर का कोई अंग अथवा आभूषण भगवान् विष्णु के चक्र से कट कर गिरा था । बैठने का एक विशेष ढंग । कंस का एक मंत्री ।—केलि–(पु०) दे० 'पीठमर्द' ।—गर्भ–(पु०) वह गड्ढा जो वेदी पर मूर्ति को जमाने के लिये खोद कर बनाया जाता है ।—नायिका–(स्त्री०) १४ वर्ष की कन्या जो दुर्गोत्सव में दुर्गा की प्रतिनिधि मानी जाती है ।—भू–(पु०) प्राचीर के आसपास का भूभाग ।—मर्द–(पु०) नायक के चार सखाओं में से एक जो अपनी वचनचातुरी से नायिका का मान-मोचन करने में समर्थ हो । नर्तकी वेश्या को नृत्य सिखाने वाला उस्ताद ।—सर्प–(वि०) लंगड़ा ।

पीठिका—(स्त्री०) [पीठ+ङीष्+क–टाप्, ह्रस्व] पीढ़ी । मूर्ति या खंभे का मूल या आधार । पुस्तक का अंश या अध्याय ।

√पीड्—चु० पर० सक०, अक० कष्ट देना । सताना, अत्याचार करना । अनिष्ट करना । छेड़खानी करना, चिढ़ाना । सामना करना । (किसी नगर पर) घेरा डालना । दबाना, निचोड़ना । चुटकी काटना । नाश करना । किसी अमाङ्गलिक वस्तु से ढकना । ग्रहण डालना । चूक जाना, लापरवाही करना । पीडयति, पीडयिष्यति, अपिपीडत् —अपीपिडत् ।

पीडक—(पु०) [√पीड्+ण्वुल्] अत्याचारी, जालिम ।

पीडन—(न०) [√पीड्+ल्युट्] दबाने की क्रिया, चाँपना । अत्याचार करना । निचोड़ना । दबाना । दबाने का यंत्र-विशेष । पकड़ना, ग्रहण करना । बरबाद करना, नष्ट करना । पीट-पीट कर अनाज (बालों से) निकालना । सूर्य, या चन्द्र का ग्रहण । तिरोभाव, लोप ।

पीडा—(स्त्री०) [√पीड्+अ—टाप्]दर्द । कष्ट । अनिष्ट, हानि । उच्छेद, नाश । अतिक्रमण, नियमभङ्गकरण । रोक-थाम । दया । सूर्यचन्द्रग्रहण । शिर-माला, सिर में लपेटी

हुई माला। सरल वृक्ष।—**कर**–(वि०) कष्टदायी, दुःखदायी।—**स्थान**–(न०) कुंडली में अशुभ ग्रहों के स्थान।

पीडित—(वि०) [√पीड्+क्त] पीड़ायुक्त, क्लेशयुक्त। निचोड़ा हुआ। दबाया हुआ। थामा हुआ, पकड़ा हुआ। भङ्ग किया हुआ, तोड़ा हुआ। उच्छिन्न, नष्ट किया हुआ। ग्रहण लगा हुआ। बँधा हुआ, ग्रसा हुआ। (न०) पीड़ा, दुःख। स्त्रियों के कान का छेद, कर्णभेद। रति का एक आसन।

पीत—(वि०) [√पा+क्त] पिया हुआ। तर, भीगा हुआ। [पीतवर्णः अस्ति अस्य, पीत+अच्] पीले रंग का। (पुं०) [पिबति वर्णान्तरम्, √पा+क्त(औणादिक)] पीला रंग। पुखराज। गंधक। चंपक। कनेर। दीप। केसर। वल्कल। चकवा पक्षी। मेढक। इंद्र। गरुड़। (न०) सोना। हरताल। —**अब्धि** (**पीताब्धि**)–(पुं०) अगस्त्य ऋषि का नामान्तर।—**अम्बर** (**पीताम्बर**)–(पुं०) विष्णु भगवान् का नामान्तर। नट, अभिनयकर्त्ता। काषाय वस्त्रधारी संन्यासी। —**अरुण** (**पीतारुण**)–(वि०) पिलौंहा लाल।—**अश्मन्** (**पीताश्मन्**)–(पुं०) पुखराज रत्न।—**कदली**–(स्त्री०) स्वर्ण-कदली, सोनकेला।—**कन्द**–(न०) गाजर। —**कावेर**–(न०) केसर। पीतल।—**काष्ठ**–(न०) पीला चन्दन। पद्माख।—**गन्ध**–(न०) पीला चन्दन।—**चन्दन**–(न०) हरिचन्दन। पीले रंग का चन्दन। केसर। हल्दी।—**चम्पक**–(पुं०) दिया, चिराग, प्रदीप।—**तण्डुल**–(पुं०) कँगनी धान। साल वृक्ष।—**तुण्ड**–(पुं०) कारण्डव या बया पक्षी।—**तैला**–(स्त्री०) मालकँगनी। बड़ी मालकँगनी।—**दारु**–(न०) देवदारु। दारुहल्दी का पौधा। सरल वृक्ष।—**दुग्धा**–(स्त्री०) दुधार गाय। वह गाय जो सूद के एवज में दुध खाने के लिये ऋणदाता को दी गयी हो।—**द्रु**–(पुं०) दारु हल्दी। सरल वृक्ष।—**पादा**– (स्त्री०) मैना पक्षी जिसके पैर पीले होते हैं, गुलगुलिया।—**मणि**–(पुं०) पुखराज।—**माक्षिक**–(न०) सोना-माखी।—**मूलक**–(न०) गाजर। शलजम। —**रक्त**–(वि०) नारंगी रंग का। (न०) पुखराज।—**राग**– (पुं०) पीला रंग। मोम। पद्मकेसर।—**वालुका**–(स्त्री०) हल्दी।—**वासस्**–(पुं०) कृष्ण या विष्णु का नामान्तर।—**सार**–(पुं०) पुखराज। चन्दन वृक्ष। (न०) पीला चन्दन।—**सारि**–(न०) सुर्मा।—**स्कन्ध**–(पुं०) शूकर। —**स्फटिक**–(पुं०) पुखराज।—**हरित**–(वि०) पिलौंहा हरा।

पीतक—(न०) [पीत+कन्] हरताल। पीतल। केसर। शहद। अगर काष्ठ। चन्दन काष्ठ।

पीतन—(न०) [पीतं करोति, पीत+णिच्+ल्यु वा पीत√नी+ड] हरताल। केसर। (पुं०) देवदारु। आमड़ा। पाकड़।

पीतल—(वि०) [पीत √ला+क] पीला। (न०) पीतल धातु। (पुं०) पीला रंग।

पीति—(पुं०) [√पा+क्तिच्] घोड़ा। (स्त्री०) [√पा+क्तिन्] पान, पीने की क्रिया। गति। हाथी की सूँड़।

पीतिका—(स्त्री०) [पीतवर्णः अस्ति अस्याः पीत+ठन्] केसर। हल्दी। पीली चमेली।

पीतिन्—(पुं०) [पीत+इनि] घोड़ा।

पीतु—(पुं०) [√पा+क्तुन्] सूर्य। अग्नि। हाथियों के गिरोह का सरदार या यूथपति।

पीथ—(पुं०) [√पा+थक्] सूर्य। समय। अग्नि। (न०) पेय पदार्थ। जल। घी।

पीथि—(पुं०) [=पीति, पृषो० तस्य थः] घोड़ा।

पीन—(वि०) [√प्याय्+क्त] मोटा, स्थूल। परिपुष्ट। बड़ा। पूरा। अत्यधिक।—**ऊधस्** (**पीनोध्नी**)–(स्त्री०) भारी थन वाली

गाय ।—**वत्स्**–(वि०) भरी हुई छातियों वाला ।

पीनस—(पुं०) [पीनं स्थूलमपि जनं स्यति नाशयति, पीन √सो+क] नाक का एक रोग जिसमें गंधग्रहण की शक्ति नष्ट हो जाती है । जुकाम ।

पीयु—(पुं०) [√पा+कु, नि० युगागम, ईत्व] काक । सूर्य । अग्नि । उल्लू । समय । सुवर्ण ।

पीयूष—(न०, पुं०) [√पीय् (सौत्र) +ऊषन्] अमृत, सुधा; 'मनसि वचसि काये पुण्यपीयूषपूर्णाः' भर्तृ० २.७८ । दूध । ब्याने के सात दिन के भीतर का गाय का दूध, पेवस ।—**महस्**,—**रुचि**–(पुं०) चन्द्रमा । कपूर ।—**वर्ष**–(पुं०)अमृतवृष्टि । चन्द्रमा । कपूर ।

√**पील्**—भ्वा० पर० सक० रोकना । पीलति, पीलिष्यति, अपीलीत् ।

पीलक—(वि०) [√पील् +ण्वुल्] रोकने वाला । (पुं०) काला बड़ा चींटा ।

पीलु—(पुं०) [√पील्+कु] एक वृक्ष, पीलु । तीर । अणु । कीट । हाथी । ताड़ वृक्ष का तना । पुष्प । ताड़ वृक्षों का समूह ।

पीलुक—(पुं०) [पीलु√कै+क] चींटा ।

√**पीव्**—भ्वा० पर० अक० मोटा होना । पीवति, पीविष्यति, अपीवीत् ।

पीवन्—(वि०) [स्त्री०—**पीवरी**] [√प्यै +क्वनिप्] मोटा, स्थूल । बलवान् । (पुं०) पवन ।

पीवर—(वि०) [स्त्री०—**पीवरा** या **पीवरी**] [√प्यै+ष्वरच्] स्थूल, मोटा; 'तं कर्ण-भूषणनिपीडितपीवरांसं' र० ५.६५ । भरा-पूरा । (पुं०) कछुवा ।

पीवरी—(स्त्री०) [पीवर+ङीप्] युवती स्त्री । गौ । शतमूली । शालपर्णी ।

पीवा—(स्त्री०) [पीयते, √पी+व—टाप्] जल ।

पुंवत्—(अव्य०) [पुंस्+वति] पुरुष जैसा; 'पुंवत्प्रगल्भा प्रतिहाररक्षी' र० ६.२० । पुंल्लिंग की तरह ।

√**पुंस्**—चु० पर० सक० कुचलना । पीसना । पीड़ा देना । दण्ड देना । पुंसयति—पुंसति, पुंसयिष्यति—पुंसिष्यति, अपुपुंसत्—अपुंसीत् ।

पुंस्—(पुं०) [कर्ता—**पुमान्**, **पुमांसौ**, **पुमांसः**; सम्बोधन एकवचन—**पुमन्**] [√पू +डुमसुन्] पुरुष, नर, मादा का उल्टा; 'पुंसि विश्वसिति कुत्र कुमारी' नै० ५.११० । मनुष्य, इंसान । मनुष्य जाति । नौकर । पुल्लिङ्ग शब्द । पुंल्लिङ्ग । जीव ।—**अनुज** (**पुंसानुज**)–(पुं०) [पुंसा अनुजः, समासे तृतीयायाः अलुक्] वह जिसका अनुज पुरुष हो ।—**अनुजा** (**पुमनुजा**)–(स्त्री०) [पुमा-सम् अनुलक्ष्य जायते, पुंस्—अनु √जन् +ड—टाप्] लड़के के पीठ की लड़की अर्थात् वह लड़की जिसका बड़ा भाई हो ।—**अपत्य** (**पुमपत्य**)–(न०) नर बच्चा ।—**अर्थ** (**पुमर्थ**)–(पुं०) मनुष्य का उद्देश्य, पुरुषार्थ [पुरु-षार्थ चार हैं, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष] ।—**आख्या** (**पुमाख्या**)–(स्त्री०) नर की संज्ञा ।—**आचार** (**पुमाचार**)–(पुं०) पुरुष के आचार ।—**कामा** (**पुंस्कामा**)–(स्त्री०) स्त्री जो पुरुष की कामना करती हो ।—**कोकिल** (**पुंस्कोकिल**)–(पुं०) नर कोयल ।—**खेट** (**पुंखेट**)–(पुं०) नर ग्रह या नक्षत्र ।—**गव** (**पुङ्गव**)–(पुं०) साँड़ । बैल । (समासान्त शब्द के अन्त में आने पर इसका अर्थ होता है मुख्य, सर्वश्रेष्ठ । प्रसिद्ध, प्रख्यात ।—०**केतु**–(पुं०) शिव जी का नामान्तर ।—**चली** (**पुंश्चली**)–(स्त्री०) रंडी, वेश्या ।—**पुंश्चलीय**–(पुं०) [पुंश्-चली+छ] रंडी का बेटा ।—**चिह्न** (**पुंश्चिह्न**)–(न०) शिश्न, जननेन्द्रिय ।—**जन्मन्** (**पुंजन्मन्**) –(न०) बालक की

उत्पत्ति ।—दास (पुंदास)–(पुं०) पुरुष नौकर ।—ध्वज (पुंध्वज)–(पुं०) जीवधारियों में किसी भी जाति का नर । चूहा ।—नक्षत्र (पुन्नक्षत्र)– (न०) पुरुष-वाची नक्षत्र ।—नाग (पुन्नाग) –(पुं०) मनुष्यों में हाथी अर्थात् प्रसिद्ध पुरुष । सफेद हाथी । सफेद कमल । कायफर या जायफल । नागकेसर वृक्ष ।—नाट, नाड (पुन्नाट, पुन्नाड)– –(पुं०) चकवंड का पौधा ।—नामधेय (पुन्नामधेय)–(पुं०) नर, पुरुषवाची ।—नामन् (पुन्नामन्)–(वि०) पुरुषवाची नामधारी । (पुं०) पुंनाग वृक्ष ।—पुत्र (पुंस्पुत्र)–(पुं०) लड़का ।—प्रजनन (पुंस्प्रजनन)–(न०) लिंग, जननेन्द्रिय।—भूमन् (पुंभूमन्)–(पुं०) पुरुषवाची शब्द जो सदा बहुवचन में प्रयुक्त किया जाता है —"दाराः पुंभूम्नि चाक्षताः"—अमरकोष ।—योग–(पुं०) (पुंयोग)—पुरुष का योग या संबंध ।— रत्न (पुंरत्न)–(न०) उत्तम या श्रेष्ठ पुरुष ।—राशि (पुंराशि)—पुरुषवाची राशि ।—रूप (पुंरूप)–(न०) पुरुष का आकार ।—लिङ्ग (पुंलिङ्ग)–(वि०) पुरुषवाची । (न०) पुरुष का चिह्न, शिश्न ।—वत्स (पुंवत्स)–बछड़ा ।—वृष–(पुं०) छछूंदर ।—वेष (पुंवेष)–(वि०) मर्दानी पोशाक में स्थित ।—सवन (पुंसवन)– (न०) [पुमांसमिव सूते बलप्रदानेन पुरुषवत् जनयति अनेन, पुंस् √सू+ल्युट्] द्विजातियों के १६ संस्कारों में से दूसरा संस्कार जो गर्भाधान से तीसरे मास किया जाता है । दूध । गर्भपिण्ड ।

पुंस्त्व—(न०) [पुंस्+त्व] पुरुषत्व, मर्दानगी । वीर्य । पुरुषलिङ्ग ।

पुक्कश, पुक्कस—(वि०) [स्त्री०—पुक्कशी, पुक्कसी] [पुक् कुत्सितं कशति गच्छति, पुक् √कश्+अच्] [पुक् √कस्+अच्] नीच, ओछा । (पुं०) वर्णसङ्कर जाति-विशेष ।

पुङ्ख—(न०, पुं०) [पुमांसं खनति, पुंस् √खन्+ड] तीर की वह जगह जहाँ उसमें पर लगे होते हैं; 'सुवर्णपुङ्खद्युतिरञ्जितांगुलिम्' र० ६४ । (पुं०) मंगलाचार । बाज पक्षी ।

पुङ्खित—[पुङ्ख+इतच्] पुंखयुक्त, जिसमें पर लगे हों ।

पुञ्ज—(न०, पुं०) [=पुञ्ज पृषो० साधुः] ढेर, राशि । समूह ।

पुञ्जल—(पुं०) [पुञ्जं देशसमूहं लाति आदत्ते पुञ्ज √ला+क] आत्मा ।

√पुच्छ्—भ्वा० पर० सक० मापना । पुच्छति, पुच्छिष्यति, अपुच्छीत् ।

पुच्छ—(न०, पुं०) [√पुच्छ्+अच्] पूंछ । बालदार पूंछ । मयूर की पूंछ । पीछे का भाग । किसी वस्तु का छोर । कलाप, समूह ।—अग्र (पुच्छाग्र)–पूंछ की नोक ।—कण्टक–(पुं०) बिच्छू ।

पुच्छजाह—(पुं०) [पुच्छ+जाहच्] पूंछ की जड़ ।

पुच्छटि, पुच्छटी—(स्त्री०) [पुच्छ √अट्+इन्] [पुच्छटि+ङीप्] उंगली चटकाना ।

पुच्छिन्—(पुं०) [पुच्छ+इनि] मुर्गा ।

पुञ्ज—(पुं०) [पुंस् √जि+ड वा √पिञ्ज् अच् पृषो० साधुः] ढेर, राशि ।

पुञ्जि—(स्त्री०) [√पिञ्ज्+इन् पृषो० साधुः] ढेर, राशि ।

पुञ्जिक—(पुं०) ओला ।

पुञ्जित—(वि०) [पुञ्ज+इतच्] जमा किया हुआ, ढेर लगाया हुआ । मिलाकर दबाया हुआ ।

√पुट्—तु० पर० अक० जुड़ना, मिलना । पुटति, पुटिष्यति, अपुटीत् । चु० पर० सक० मिलना, पुटयति, पुटयिष्यति, अपुपुटत् ।

पुट—(न०, पुं०) [√पुट्+क] तह, पल्ला । अंजली । पत्तों का बना दोना; 'दुग्ध्वा

नव: पत्रपुटे मदीयं' र० २.६५ । कोई भी ग्रौंड़ा पात्र । छीमी, फली । म्यान । गिलाफ । ग्राच्छादन । पलंक । घोड़े का सुम । (पुं०) चौखटा । (न०) जायफल । एक दूसरे पर ढक्कन की तरह रख कर एक में जोड़े हुए दोने के ग्राकार के दो पात्र या मिट्टी ग्रादि के दो कपाल ।**—उटज (पुटोटज)**–(न०) सफेद छत्र ।**—उदक (पुटोदक)**–(पुं०) नारियल । **—ग्रीव**–(पुं०) घड़ा, कलसा । ताँबे का घड़ा ।**—पाक**–(पुं०) दवाइयाँ बनाने का एक विधान जिसमें उन्हें जामुन बरगद ग्रादि के पत्तों से लपेट ग्रौर ऊपर से गीली मिट्टी लगा कर ग्राग में पकाते हैं । कटोरे के ग्राकार के दो बरतनों से पुटित की हुई ग्रोषधि को विशेष ग्राकार के गड्ढे में उपले की ग्राँच में पकाने की क्रिया ।**—भेद**–(पुं०) जल का भँवर । नगर । वाद्ययंत्र विशेष (ग्रातोद्य) ।**—भेदन**–(न०) नगर, शहर; 'पुटभेदनं दनुसुतारिरैक्षत' शि० १३.२६ ।

पुटक—(न०) [पुट+कन् वा पुट√कै+क] तह, परत । कोई भी छिछला बरतन । दोना । कमल । जायफल ।

पुटकिनी—(स्त्री०) [पुटक+इनि–ङीप्] कमल । कमल-समूह ।

पुटिका—(स्त्री०) [पुट + ठन्–टाप्] पुड़िया । इलायची ।

पुटित—(वि०) [√पुट्+क्त वा पुट+इतच्] रगड़ा हुग्रा, पीसा हुग्रा । सिकुड़ा हुग्रा । सिला हुग्रा । टकियाया हुग्रा । चिरा हुग्रा । (वह मंत्र ग्रादि) जिसके ग्रादि ग्रौर ग्रंत में प्रणव ग्रादि का पाठ या जप किया जाय ।

पुटी—(स्त्री०) [√पुट् + क–ङीप्] कौपीन, लँगोटी । ग्राच्छादन । छोटा दोना । पुड़िया ।

√पुटट्—चु० पर० ग्रक० छोटा होना । पुट्टयति, पुट्टयिष्यति, ग्रपुपुट्टत् ।

√पुड्—तु० पर० सक० त्यागना, छोड़ना । विदा करना । निकाल देना । खोज निकालना । पुडति, पुडिष्यति, ग्रपुडीत् ।

√पुण्—तु० पर० ग्रक० शुभ कर्म करना । पुणति, पोणिष्यति, ग्रपोणीत् ।

√पुण्ड्—भ्वा० पर० सक० पीसना । पुण्डति, पुण्डिष्यति, ग्रपुण्डीत् ।

पुण्ड—(पुं०) [√पुण्ड्+घञ्] तिलक, टीका ।

पुण्डरीक—(न०) [√पुण्ड्+ईकन्, नि० साधु:] कमलपुष्प, विशेष कर सफेद रंग का । सफेद छाता । (पुं०) सफेद रंग । ग्राग्नेयी दिशा का दिग्गज । चीता । सर्प-विशेष । चावल-विशेष । कोढ़ रोग-विशेष । गजज्वर । ग्राम्र वृक्ष-विशेष । घड़ा । ग्रग्नि । साम्प्रदायिक तिलक, चिह्न ।**—ग्रक्ष (पुण्डरीकाक्ष)**—(वि०) (पुण्डरीकवत् ग्रक्षिणी यस्य, ब० स०] जिसकी ग्राँखें कमल के समान हों । (पुं०) विष्णु का नामान्तर ।

पुण्ड्र—(पुं०) [√पुण्ड्+रक्] लाल जाति की ईख । कमल । सफेद कमल । माथे का तिलक । कीड़ा । तिलक का पेड़ । पाकड़ । तिनिश का पेड़ । भारत का एक प्राचीन देश । इस देश का निवासी ।**—केलि**–(पुं०) हाथी ।

पुण्ड्रक—(पुं०) [पुण्ड्र+कन्] ईख की एक जाति, पौंड़ा । साम्प्रदायिक तिलक । माधवी लता । तिलक वृक्ष ।

पुण्य—(न०) [पूयते ग्रनेन, √पू+यत्, णुगागम, ह्रस्व] शुभ फल देने वाला कार्य । सुकर्म से उत्पन्न शुभ ग्रदृष्ट । पवित्रता । पशुग्रों को पानी पिलाने का हौज । (कुंडली में) लग्न से नवाँ स्थान । एक व्रत जिसे स्त्रियाँ पति-प्रेम ग्रौर पुत्र-प्राप्ति के लिये करती हैं । (वि०) [पुण्य+ग्रच्] पवित्र, शुद्ध, ग्रच्छा । नेक, ईमानदार । शुभ, मङ्गलात्मक । ग्रनुकूल । ग्राह्लादप्रद । मनोहर,

सुन्दर । मधुर । धूमधड़ाके का, उत्सव सम्बन्धी ।—**अहन्** (**पुण्याह**)–(न०) आनन्द का या मङ्गल दिवस, सुदिन ।—०**वाचन**–(न०) किसी धार्मिक कृत्य के प्रारम्भ में ब्राह्मण का 'पुण्याह' शब्द का तीन बार कहना ।—**आत्मन्** (**पुण्यात्मन्**)–(वि०) पुण्य करना जिसका स्वभाव हो, पुण्यशील, धर्मात्मा ।—**उदय** (**पुण्योदय**)–(पुं०) शुभ अदृष्ट का उदय होना, सौभाग्योदय ।—**उद्यान** (**पुण्योद्यान**)–(वि०) सुन्दर उद्यान रखने वाला ।—**कर्तृ**–(पुं०) पुण्यात्मा या धर्मात्मा आदमी ।—**कर्मन्**–(वि०) शुभ कार्य करने वाला, पुण्यात्मा । (न०) पुण्य का कार्य ।—**काल**–(पुं०) ऐसा समय जिसमें स्नान, दान आदि करने से पुण्य हो । —**कीर्ति**–(वि०) शुभनाम या नामवरी वाला, प्रख्यात, प्रसिद्ध ।—**कृत्**–(वि०) पुण्य करने वाला ।—**कृत्या**–(स्त्री०) धर्म-कार्य ।—**क्षेत्र**–(न०) तीर्थ स्थान । आर्यावर्त का नाम ।—**गन्ध**–(वि०) मधुर सुगन्धि युक्त ।—**गृह**–(न०) वह घर जहाँ लोगों को खैरात बाँटी जाती है । देवालय । —**जन**–(पुं०) धर्मात्मा आदमी । दानव । यक्ष ।—०**ईश्वर** (**पुण्यजनेश्वर**)–(पुं०) कुबेर; 'अनुयमौ यमपुण्यजनेश्वरौ' र० ९.६ ।—**जित**–(वि०) धर्मकर्म से जीता हुआ ।—**तीर्थ**–(न०) यात्रा का स्थान । तीर्थस्थान ।—**तृण**–(न०) श्वेत कुश ।—**दर्शन**–(वि०) जिसका दर्शन शुभ फल देने वाला हो । सुन्दर, मनोहर । (पुं०) नील-कंठ पक्षी । (न०) पवित्र स्थान आदि का दर्शन ।—**पुरुष**–(पुं०) पुण्यात्मा या धर्मात्मा जन ।—**प्रताप**–(पुं०) पुण्य या अच्छे कर्म का प्रभाव ।—**फल**–(न०) सत्कर्मों का पुरस्कार । (पुं०) उद्यान-विशेष जहाँ लक्ष्मी का निवास माना जाता है ।—**भाज्**–(वि०) धर्मात्मा ।—**भू**,—**भूमि**–(स्त्री०) पवित्र स्थान । तीर्थ स्थान । आर्यावर्त देश । पुत्रवती स्त्री ।—**लोक**–(पुं०) स्वर्ग ।—**शकुन**–(न०) शुभ शकुन । (पुं०) शुभसूचक पक्षी ।—**शील**–(वि०) मनुष्य जिसका स्वभाव सत्कर्मों की ओर हो ।—**श्लोक**–(वि०) अच्छे या सुन्दर चरित्र अथवा यश वाला, पवित्र चरित्र या आचरण वाला । (पुं०) नल, युधिष्ठिर आदि । यथा —पुण्यश्लोको नलो राजा पुण्यश्लोको युधिष्ठिरः । पुण्यश्लोका च वैदेही पुण्यश्लोको जनार्दनः ।—**श्लोका**–(स्त्री०) सीता । द्रौपदी । गंगा ।—**स्थान**–(न०) तीर्थ-स्थान । लग्न से नवाँ स्थान ।

पुण्यवत्—(वि०) [पुण्य + मतुप्—वत्व] सत्कर्मी, धर्मात्मा । भाग्यवान् । सुखी ।

पुण्या—(स्त्री०) [पुण्य+टाप्] तुलसी ।

पुत्—(न०) [√पू+डुति, पृषो०, साधुः] नरक-विशेष जिसमें वे जीव डाले जाते हैं जो अपुत्रक हैं ।

पुत्तल, पुत्तलक—(पुं०) [√पुत् (गत्यर्थक) +घञ्, पुत्त गमनं लाति अन्यस्मात्, पुत्त √ला+क] [पुत्तल+कन्] धात्वादिनिर्मित प्रतिमूर्ति, पुतला ।—**दहन**–(न०)—**विधि**, –(पुं०) अप्राप्त मृतक के बदले उसका पुतला बना कर जलाना ।

पुत्तली, पुत्तलिका—(स्त्री०) [पुत्तली +कन्—टाप्, ह्रस्व] [पुत्तल+ङीष्] पुतली ।

पुत्तिका—(स्त्री०) [पुत्तम् इतस्ततो भ्रमणम् अस्ति अस्याः, पुत्त+ठन्—टाप्] एक प्रकार की मधुमक्षिका । दीमक ।

पुत्र—(पुं०) [पुतः त्रायते, पुत्√त्रै+क, वा पुनाति पित्रादीन्, √पू+क्त्र, ह्रस्वता] बेटा, पूत (पुत्र नाम इसलिए पड़ा— पुन्नाम्नो नरकाद्यस्मात् त्रायते पितरं सुतः । तस्मात्पुत्र इति प्रोक्तः स्वयमेव स्वयंभुवा) ।—**अन्नाद** (**पुत्रान्नाद**)–(पुं०) पुत्र की कमाई पर निर्वाह करने वाला । कुटीचक संन्यासी ।

—अर्थिन् (**पुत्रार्थिन्**)–(वि०) पुत्र की कामना रखने वाला ।**—इष्टि** (**पुत्रेष्टि**), **—इष्टिका** (**पुत्रेष्टिका**)–(स्त्री०) पुत्र-प्राप्ति के लिये किया जाने वाला यज्ञ-विशेष । **—काम**–(वि०) पुत्र की अभिलाषा वाला । **—कार्य**–(न०) कोई रीति या रस्म जो पुत्र सम्बन्धी हो ।**—कृतक**–(पु०) गोद लिया हुआ बेटा । पुत्र की तरह माना-जाना हुआ ।**—घ्नी**–(स्त्री०) अपने पुत्रों को खा जाने वाली स्त्री । अप्रकृत माता ।**—जात**–(वि०) बेटा वाला, पुत्र पैला ।**—दा**–(स्त्री०) वन्ध्या कर्कटी । सेमली । लक्ष्मणा नामकी जड़ी । जीवन्ती । श्वेतकंटकारी, सफेद भटकटैया ।**—दात्री**–(स्त्री०) मालवा की एक प्रसिद्ध लता, भ्रमरी ।**—दार**–(न०) बेटा और स्त्री ।**—पौत्र**–(न०) पुत्र और पौत्र का समाहार ।**—पौत्रीण**–(वि०) [पुत्रपौत्र+ख] पुत्र से पौत्र को प्राप्त होने वाला, आनुवंशिक, पुश्तैनी ।**—प्रतिनिधि**–(पु०) बेटा का एवजी, दत्तक पुत्र ।**—लाभ**–(पु०) पुत्र की प्राप्ति ।**—वधू**–(स्त्री०) पुत्र की पत्नी, पतोहू ।**—सख**–(पु०) वह पुरुष जो लड़कों को बहुत चाहता हो ।**—हीन**–(वि०) वह पुरुष जिसके कोई पुत्र न हो ।

पुत्रक—(पु०) [पुत्र+कन्] छोटा पुत्र या बच्चा । पुतला । छलिया । टिड्डा । शरभ जन्तु । बाल, केश ।

पुत्रका, पुत्रिका, पुत्री—(स्त्री०) [पुत्र+कन्–टाप्] [पुत्री+कन्–टाप्, ह्रस्व] [पुत्र+ङीन् वा ङीष्] बेटी । गुड़िया, पुतली । (समासान्त शब्दों में जब यह अन्त में होता है तब इसका अर्थ 'छोटी जाति की कोई भी वस्तु' होता है । यथा 'असि-पुत्रिका')।**—पुत्र**,**—सुत**–(पु०) बेटी का बेटा, दौहित्र । लड़की का वह पुत्र जो अपने नाना की गोद गया हो, पुत्र के स्थान पर माना हुआ कन्या का पुत्र ।**—प्रसू**–(स्त्री०) ऐसी माता जिसकी सन्तान कन्याएँ ही हों—पुत्र न हो ।**—भर्तृ**–(पु०) जामाता, दामाद ।

पुत्रिन्—(वि०) [स्त्री०—**पुत्रिणी**] [पुत्र+इनि] पुत्र या पुत्रों वाला । (पु०) एक पुत्र का पिता ।

पुत्रिय, पुत्रीय, पुत्र्य—(वि०) [पुत्र+घ] [पुत्र+छ] [पुत्र+यत्] पुत्र सम्बन्धी । पुत्र का ।

पुत्रीया—(स्त्री०) [पुत्र+क्यच्+अ–टाप्] पुत्र-प्राप्ति की कामना या अभिलाषा ।

√पुथ्—दि० पर० सक० मारना, वध करना । पुथ्यति, पोथिष्यति, अपोथीत् ।

पुद्गल—(वि०) [√गल् + अच्, पुत् (कुत्सित) गलो यस्मात्, ब० स०] सुन्दर । (पु०) परमाणु । शरीर । आत्मा । शिव का नामान्तर ।

पुनर्—(अव्य०) [√पन्+अर्, उत्व] फिर, दुबारा । भेद । अवधारण । पक्षान्तर । अधिकार । विशेष ।**—अर्थिता** (**पुनरर्थिता**)–(स्त्री०) बार-बार की हुई प्रार्थना ।**—आगत** (**पुनरागत**)–(वि०) फिर आया हुआ, लौटा हुआ ।**—आधान** (**पुनराधान**), **—आधेय** (**पुनराधेय**)–(न०)श्रौत, स्मार्त अग्नि का पुनः स्थापन ।**—आवर्त** (**पुनरावर्त**)– (पु०) प्रत्यागमन । पुनर्जन्म ।**—आवर्तिन्** (**पुनरावर्तिन्**)–(वि०) फिर से या बार-बार जन्म ग्रहण करने वाला । **—आवृत्त** (**पुनरावृत्त**)–(वि०) दोहराया हुआ । संसार में फिर से आया हुआ । लौटा हुआ । **—आवृत्ति** (**पुनरावृत्ति**) (स्त्री०) दुहराना । पुनर्जन्म । संशोधन (किसी-पुस्तक का) ।**—उक्त** (**पुनरुक्त**)–(वि०) पुनः कहा हुआ, दुहराया हुआ । फालतू, अनावश्यक । (न०) दुबारा कहना ।—**पुनरुक्तता**–(स्त्री०) दुहराने की क्रिया ।

कालतूपना, अनावश्यकता ।**— उक्ति (पुनरुक्ति)**–(स्त्री०) दे० 'पुनरुक्तता' । **—उत्थान (पुनरुत्थान)**–(न०) फिर से उठना ।**—उत्पत्ति (पुनरुत्पत्ति)**–(स्त्री०) पुनर्जन्म ।**—उपगम (पुनरुपगम)**–(पु०) लौटना ।**—उपोढा (पुनरुपोढा,—ऊढा (पुनरूढा)**–(स्त्री०) दुबारा ब्याही हुई स्त्री । **—गमन**–(न०) दुबारा जाना ।**—जन्मन्**– (न०) मरने के बाद फिर से उत्पन्न होना, दुबारा शरीर धारण करना ।**—जात**–(वि०) पुनः उत्पन्न हुआ ।**—नव**–(पु०) नाखून ।**—दारक्रिया**–(स्त्री०) पुनर्विवाह (पुरुष का) ।**—नवा**–(स्त्री०) एक शाक जिसकी पत्तियाँ चौलाई शाग की तरह होती हैं ।**— प्रत्युपकार (पुनःप्रत्युपकार)**–(पुं०) किसी के उपकार का फिर से बदला चुकाना ।**—भव**–(पुं०) फिर से शरीर धारण करना, दुबारा उत्पन्न होना । नाखून ।**—भाव**–(पुं०) पुनर्जन्म ।**—भू**–(पुं०) पुनर्विवाहिता विधवा । **—यात्रा**–(स्त्री०) पुनर्गमन । बार-बार जलूस का निकलना ।**—वसु**–(पुं०) सत्ताईस नक्षत्रों में से सातवाँ नक्षत्र । धनारंभ । कात्यायन मुनि । विष्णु । शिव ।**—विवाह**–(पुं०) दुबारा विवाह ।

√पुन्थ्—भ्वा० पर० सक० मारना । कष्ट देना । पुन्थति, पुन्थिष्यति, अपुन्थीत् ।

पुप्फुल—(पुं०) [=फुप्फुस, पृषो० साधुः] उदरस्थ वायु, जठरवात ।

पुप्फुस—(पुं०) [पुप्फु इतिस् शब्दोऽस्ति अस्य, पुप्फुस्+अच्] फेफड़ा । पद्मबीज-कोष ।

√पुर्—तु० पर० सक० आगे जाना । पुरति, पोरिष्यति, अपोरीत् ।

पुर्—(स्त्री० [√पृ+क्विप्] नगर, शहर जिसकी रक्षा के लिये चारों ओर परकोटे की दीवाल हो । किला । महल । दीवाल । शरीर । प्रतिभा । प्रज्ञा ।**—द्वार्**–(स्त्री०), **—द्वार**–(न०) नगर का फाटक ।

पुर—(न०) [√पृ वा √पुर्+क] नगर, शहर । महल । गढ़ । घर । शरीर । जनानखाना । पाटलिपुत्र, पटना । दोना, पत्तों से बनाया गया प्यालेनुमा पात्र । छिनाल स्त्रियों या रंडियों का बाजार। चमड़ा । नागरमोथा । गुग्गुल । कली को आवृत करने वाला पत्ता। राशि, पुंज । (पुं०) त्रिपुरासुर ।**—अट्ट (पुराट्ट)**–(पुं०) परकोटे की दीवाल पर बनी हुई बुर्जी या बुर्ज ।**—अधिप (पुराधिप)**, **—अध्यक्ष (पुराध्यक्ष)**–(पुं०) किसी नगर का शासक या हाकिम ।**—अराति (पुराराति),—अरि (पुरारि),—असुहृद (परासुहृद),—रिपु**–(पुं०) शिव जी के नामान्तर ।**—उत्सव (पुरोत्सव)**–(वि०) नगर में मनाया जाने वाला उत्सव ।**—उद्यान (पुरोद्यान)**–(न०) नगर में लगाया हुआ बाग ।**—ओकस् (पुरौकस्)**–(पुं०) नागरिक, नगर-निवासी ।**—कोट्ट**–(न०) नगर-रक्षक दुर्ग ।**—ग**–(वि०) नगर में जाने वाला । अनुकूल ।**—जित्, —द्विष,—भिद्**–(पुं०) शिव जी का नाम ।**—ज्योतिस्**–(पुं०) अग्नि । अग्निलोक ।**—तटी**–(स्त्री०) छोटा ग्राम जिसमें बाजार या पैंठ लगती हो ।**—तोरण** –(न०) नगर का बहिर्द्वार ।**—निवेश**–(पुं०) नगर की नींव डालना ।**—पाल**–(पुं०) शहर का हाकिम । जीव ।**—मथन**–(पुं०) शिव । **—मार्ग**–(पुं०) नगर की सड़क ।**—रक्ष, —रक्षक,—रक्षिन्**–(पुं०) नगर की रक्षा के लिये नियुक्त कर्मचारी ।**—रोध**–(पुं०) नगर का अवरोध या घेरा ।**—वासिन्**–(पुं०) नागरिक, नगर निवासी ।**—शासन**–(पुं०) विष्णु । शिव ।

पुरट—(न०) [√पुर्+अटन्] सुवर्ण ।

पुरण—(पुं०)[√पृ+क्यु, उत्व, रपर]समुद्र।

पुरतस्—(अव्य०) [पुर+तस्] सामने, आगे।

पुरन्दर—(पुं०) [पुरं दारयति, पुर √दृ+णिच्+खच्, मुम्] इन्द्र। शिव। अग्नि। चोर।

पुरन्दरा—(स्त्री०) [पुरन्दर+टाप्] गंगा।

पुरन्ध्रि, पुरन्ध्री—(स्त्री०) [स्वजनसहितं पुरं धारयति, पुर √धृ+खच्, पृषो० साधुः] पति, पुत्र, कन्या आदि से भरीपूरी स्त्री; पुरन्ध्रीणां चित्तं कुसुमसुकुमारं हि भवति' उत्त० ४.१२।

पुरला—(स्त्री०) [पुर √ला +क–टाप्] दुर्गा।

पुरस्—(अव्य०) [पूर्व+असि, पुर् आदेश] सामने, आगे। पहिले। पूर्व दिशा में। पूर्व की ओर। **—करण**–(न०), **—कार**–(पुं०) आगे करना या रखना। सम्मान-प्रदर्शन। पूजन। सहवर्तित्व। तैयारी करना। क्रम में लाना। पूर्ण करना। आक्रमण करना। आरोप। **—कृत**–(वि०) सामने रखा हुआ। सजाया हुआ। पूजा किया हुआ। सम्मानित। तैयार किया हुआ। संस्कारित। दोषी ठहराया हुआ। पूर्ण किया हुआ। होने के पूर्व ही होने की आशा से आशान्वित। **—क्रिया**–(स्त्री०) सम्मानप्रदर्शन। प्रारम्भिक संस्कार। **ग— (पुरोग)**, **—गम (पुरोगम)**–(पुं०) नेता, अगुआ। **—गति (पुरोगति)**–(स्त्री०) पूर्ववर्तिता, अग्रगमन। (पुं०) कुत्ता। **—गन्तृ (पुरोगन्तृ)**, **—गामिन् (पुरोगामिन्)**–(वि०) पहले या आगे जाने वाला। प्रधान नेता। (पुं०) कुत्ता। **—चरण (पुरश्चरण)**–(न०) प्रारम्भिक संस्कार। तैयारी। किसी देवता के नाम का जप और उसके उद्देश्य से हवन। **—छद (पुरश्छद)**–(पुं०) स्तन के ऊपर की ढोंडी, चूचुक। **—जन्मन् (पुरोजन्मन्)** (वि०) पूर्व उत्पन्न। **—डाश्**, **—डाश (पुरोडाश्, पुरोडाश)**–(पुं०) [पुरस् √दाश्+क्विप्, नि० दस्य डः] [पुरस् √दाश्+घञ्, नि० दस्य डः] चावल के आटे की बनी हुई टिकिया जो कपाल में पकाई जाती थी। यज्ञ में इसके टुकड़े काट कर, और मंत्र पढ़ कर देवताओं के उद्देश्य से इसकी आहुति दी जाती थी। **—धस् (पुरोधस्)**–(पुं०) [पुरस् √धा+असि] पुरोहित। **—धान (पुरोधान)**–(न०) [पुरस् √धा+ल्युट्] सामने रखना, आगे रखना। पुरोहित द्वारा कराया हुआ कर्म। **—धिका (पुरोधिका)**–(स्त्री०) मन पर चढ़ी हुई औरत, प्रियतमा। **—पाक (पुरःपाक)**–(वि०) जिसकी सिद्धि निकट हो। **—प्रहर्तृ (पुरःप्रहर्तृ)**–(पुं०) अगली पाँत में लड़ने वाला सैनिक।

पुरस्तात्—(अव्य०) [पूर्व+अस्ताति, पुर् आदेश] आगे, सामने; 'वस्तं पुरस्तात्पुरशासनस्य' कु० ७.३०। आरम्भ में। पूर्व, पेश्तर। पूर्व दिशा की ओर। अन्त में।

पुरा—(अव्य०) [√पुर्+का] प्राचीन काल में, पहले। अब तक। सिवा। थोड़े समय में। (प्राचीन, अतीत आदि अर्थों का भी इससे द्योतन होता है)। (स्त्री०) [पुर+टाप्] प्राची, पूरब। एक सुगंधित द्रव्य। गंगा। किला। **—कथा**–(स्त्री०) पुरानी कहावत या कहानी। **—कल्प**–(पुं०) पूर्वकाल की सृष्टि। भक्तकाल की कथा। पुरातन युग। **—कृत**– (वि०) पहिले किया हुआ। **—योनि**–(वि०) प्राचीन काल में उत्पन्न। (पुं०) शिव। **—वसु**–(पुं०) भीष्म। **—विद्**–(वि०) प्राचीनकाल को जानने वाला। **—वृत्त**–(वि०) प्राचीन काल से सम्बन्ध-युक्त। (न०) इतिहास। प्राचीन वार्ता।

पुराण—(वि०) [स्त्री०—**पुराणा, पुराणी**] [पुरा भवः, पुरा+ट्यु नि० वा पुरा नीयते, पुरा √नी+ड] पुराना, मुद्दत का; 'पुराणपत्रापगमादनन्तरं' र० ३.७। आदि का। घिसा

हुआ, वर्त्ता हुआ। (न०) प्राचीन वृत्तांत। हिन्दुओं के विशिष्ट धर्मग्रन्थ जिनमें संसार की सृष्टि से लेकर प्रलय तक का इतिहास वर्णित है। (पुराण अठारह हैं—विष्णु, पद्म, ब्रह्म, शिव, भागवत, नारद, मार्कण्डेय, अग्नि, ब्रह्मवैवर्त, लिंग, वराह, स्कंद, वामन, कूर्म, मत्स्य, गरुड़, ब्रह्मांड और भविष्य। इनमें सृष्टि, लय, मन्वन्तरों तथा प्राचीन ऋषियों, मुनियों और राजाओं के वंशों तथा चरित्रों का वर्णन किया गया है।) एक पुराना सिक्का जो ८० कौड़ियों के बराबर होता था, कार्षापण। १८ की संख्या। (पुं०) शिव।—**अन्त (पुराणान्त)**–(पुं०) यम का नामान्तर।—**ग**–(पुं०) ब्रह्मा का नामान्तर। पुराण-पाठक।—**पुरुष**–(पुं०) विष्णु का नामान्तर।

पुरातन—(वि०) [स्त्री०—**पुरातनी**] [पुरा+ट्यु, तुट्] प्राचीन, पुराना। आदिकाल का। जीर्ण। (पुं०) विष्णु का नामान्तर।

पुरि—(स्त्री०) [√पृ+इ] नगरी। शरीर। नदी।—**शय**–(वि०) [पुरि √शी+अच्] शरीर में निवास करने वाला।

पुरी—(स्त्री०) [पुरि+ङीष्] नगर, शहर। गढ़, दुर्ग। शरीर।—**मोह**–(पुं०) धतूरा।

पुरीतत्—(पुं, न०) [पुरी √तन्+क्विप्] हृदय के पास की एक नाड़ी। आँत।

पुरीष—(न०) [पिपर्ति शरीरम्, √पृ+ईषन्] विष्ठा, मल। कूड़ा करकट।—**उत्सर्ग (पुरीषोत्सर्ग)**–(पुं०) मलत्याग।—**निग्रहण**–(न०) कोष्ठबद्धता, कब्जियत।

पुरीषण—(पुं०) [पुरीषं देहात् इष्यते त्यज्यते, पुरी√इष्+ल्युट्] विष्ठा, मल। (न०) मलत्याग करना।

पुरीषम—(पुं०) [पुरीषं मिमीते, पुरीष √मा+क] उरद, माष।

पुरु—(वि०) [स्त्री०—**पुरु**,—**पुर्वी**] [√पृ+कु, उत्व, रपर] बहुत, विपुल। अत्यधिक। (पुं०) पुष्पराग। देवलोक, अमरलोक। चन्द्रवंशी एक राजा का नाम। यह राजा ययाति का पुत्र था।—**जित्**–(पुं०) विष्णु। कुन्तिभोज राजा या उसके भाई का नामान्तर।—**द**–(न०) सुवर्ण।—**दंशक**–(पुं०) हंस।—**दम, —द्रुह**–(पुं०) इन्द्र।—**भोजस्**–(पुं०) बादल। मेष, भेड़ा। (वि०) बहुत खाने वाला।—**लम्पट**–(वि०) बड़ा विषयी, बड़ा कामुक।—**ह**–(वि०) [पुरु√हन्+ड] बहुत।—**हूत**–(वि०) अनेकों से आमंत्रित। (पुं०) इन्द्र का नामान्तर।—**हूति**—(पुं०) विष्णु।

पुरुष—(पुं०) [पुरति अग्रे गच्छति, √पुर्+कुषन्] मर्द, नर, स्त्री का उलटा। मानव जाति। कर्मचारी (राजपुरुष)। ऊँचाई या गहराई की एक प्राचीन नाप जो पुरुष या १२० अंगुल के बराबर होती थी। मेरु पर्वत। पुन्नाग वृक्ष। पारा। गुग्गुल। पति। पूर्व पुरुष, पुरखा। विषम राशि—मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु और कुंभ। शिव। सूर्य। जीव; 'द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च' भग० १५.१६। परमात्मा। व्याकरण में पुरुष के तीन भेद अर्थात् उत्तम, मध्यम और प्रथम (अन्य) माने गये हैं। आँख की पुतली। (सांख्यदर्शन में) प्रकृति से भिन्न, एक अपरिणामी, अकर्त्ता और असङ्ग चेतन पदार्थ।—**अङ्ग (पुरुषाङ्ग)**–(न०) जननेन्द्रिय, लिङ्ग।—**अधम (पुरुषाधम)**–(पुं०) नीच मनुष्य।—**अधिकार (पुरुषाधिकार)**–(पुं०) पुरुष का कर्तव्य। मरदानगी का काम।—**अन्तर (पुरुषान्तर)**–(न०) दूसरा आदमी।—**अर्थ (पुरुषार्थ)**–(पुं०) मनुष्य के जीवन का प्रधान उद्देश्य, वह वस्तु या प्रयोजन जिसकी प्राप्ति या सिद्धि के लिये मनुष्य को उद्योग करना चाहिये (पुरुषार्थ चार माने गये हैं—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष)। उद्योग।—**अस्थिमालिन् (पुरुषास्थिमालिन्)**–(पुं०) [पुरुषाणाम् अस्थीनि तेषां माला

अस्थि अस्य, पुरुषास्थिमाला+इनि] शिव जी का नामान्तर ।—**अाद** (**पुरुषाद**)-(पुं०) [पुरुष √ अद्+अण्] नरभक्षक, राक्षस ।—**आद्य** (**पुरुषाद्य**)-(पुं०) विष्णु का नामान्तर ।—**आयुष** (**पुरुषायुष**), —**आयुस्** (**पुरुषायुस्**)-(न०) मनुष्य की जिन्दगी या उम्र । —**आशिन्** (**पुरुषाशिन्**)-(पुं०) नरभक्षी, राक्षस ।—**इन्द्र** (**पुरुषेन्द्र**)-(पुं०) राजा । श्रेष्ठ पुरुष ।—**उत्तम** (**पुरुषोत्तम**)-(पुं०) सर्वोत्तम मनुष्य । परमात्मा ।—**कार**-(पुं०) मनुष्य का उद्योग या प्रयत्न, मरदानगी; 'एवं पुरुषकारेण विना दैवं न सिध्यति' पं० ३२ । —**कुणप**-(पुं०, न०)मनुष्य की लाश या मृतक शरीर ।—**केसरिन्**-(पुं०) विष्णु भगवान् का नृसिंहावतार ।—**ग्रह**-(पुं०) मंगल, सूर्य और गुरु (ज्यो०) ।—**ज्ञान**-(न०) मनुष्य जाति का ज्ञान ।—**द्विष्**-(पुं०) विष्णु का शत्रु ।—**नाथ**-(पुं०) चमूपति । राजा ।—**पशु**-(पुं०) नरपशु । —**पुङ्गव**,— **पुण्डरीक**-(पुं०) उत्कृष्ट या प्रख्यात पुरुष । —**पुर**-(न०) गांधार की प्राचीन राजधानी, वर्तमान् पेशावर ।—**प्रेक्षा**-(स्त्री०) केवल पुरुषों कि देखने का खेल या मेला ।—**बहुमान**-(पुं०) मनुष्य जाति का सम्मान ।—**मेध**-(पुं०) नरमेध (यज्ञ), एक प्राचीन वैदिक यज्ञ जिसमें मनुष्य की बलि दी जाती थी ।—**राशि**—(पुं०) मेष, मिथुन, सिंह आदि विषम राशियों में से कोई एक (ज्यो०) ।—**वर** (पुं०) विष्णु का नामान्तर । श्रेष्ठ पुरुष । —**वाह**-(पुं०) गरुड़ का नाम । कुबेर ।—**व्याघ्र**,—**शार्दूल**, —**सिंह**-(पुं०) वह जो पुरुषों में सिंह के समान हो, सिंह के समान पराक्रमी पुरुष ।—**शीर्ष**-(न०) काठ का बना हुआ मनुष्य का सिर जिसे चोर सेंध में यह देखने के लिये डालते थे कि यह प्रवेश के योग्य है या नहीं (स्तेयशास्त्र) ।—**समवाय**-(पुं०) मनुष्यों का समूह ।—**सूक्त**-(न०) ऋग्वेद के एक सूक्त का नाम जो 'सहस्रशीर्षा' से आरम्भ होता है ।

पुरुषक—(पुं०, न०) [पुरुष+कन्] पुरुष की तरह दो पैरों पर खड़ा होना, घोड़े का जमना या अलफ होना ।

पुरुषता—(स्त्री०), **पुरुषत्व**-(न०) [पुरुष+तल्—टाप्] [पुरुष+त्व] पुरुष का भाव या धर्म । मरदानगी ।

पुरुषदघ्न, पुरुषद्वयस—(वि०) [पुरुष+दघ्नच्] [पुरुष+द्वयसच्] जो ऊंचाई में पुरुष के बराबर हो ।

पुरुषायित—(वि०) [पुरुष + क्यङ+क्त] मनुष्य की तरह आचरण करने वाला ।(न०) मनुष्यवत् आचरण । स्त्री-मैथुन करने का आसन-विशेष ।

पुरुषी—(स्त्री०) [पुरुष+ङीप्] स्त्री ।

पुरूरवस्—(पुं०) [पुरु प्रचुरं यथा स्यात् तथा रौति वा पुरौ पर्वते रौति, पुरु √रु + असि, नि० साधुः] एक चन्द्रवंशी राजा का नाम जिसका विवाह उर्वशी से हुआ था (पर अंत में दोनों बिछुड़ गये) ।

पुरोटि—(पुं०) [पुरस् √अट्+इन्] नदी का प्रवाह या धार । पत्तों की मरमर ।

पुरोडाश—दे० पुरस् के अन्तर्गत ।

पुरोधस्—दे० पुरस् के अन्तर्गत ।

√**पुर्व्**—भ्वा० पर० सक० भरना । आमंत्रित करना, बुलावा भेजना । अक० बसना । पूर्वति, पूर्विष्यति, अपूर्वीत् ।

√**पुल्**—भ्वा० पर० अक० बड़ा होना । पोलति, पोलिष्यति, अपोलीत् । चु० पर० अक० बड़ा होना । पोलयति, पोलयिष्यति, अपूपुलत् ।

पुल—(वि०) [√पुल्+क] बड़ा, महान् । (पुं०) रोंगटों का खड़ा होना ।

पुलक—(पुं०) अंग या गर्भ के अतिरेक में

शरीर के रोंगटों का खड़ा होना; 'चारु चुचुम्ब नितम्बवती दयितं पुलकैरनुकूले' गीत० १। एक प्रकार का पत्थर या रत्न। खनिज पदार्थ। रत्नदोष। गजान्नपिण्ड। हरताल। शराब पीने का काँच का गिलास। राई का मसाला-विशेष।—**अङ्ग (पुलकाङ्ग)**–(पुं०) वरुण का फंदा।—**आलय (पुलकालय)**–(पुं०) कुबेर का नामान्तर। —**उद्गम (पुलकोद्गम)**–(पुं०) रोमाञ्च।

पुलकित—(वि०) [पुलक+इतच्] रोमाञ्चित, गद्गद, आनन्दित।

पुलकिन्—(वि०) [स्त्री०—**पुलकिनी**] [पुलक+इनि] जो रोमाञ्चित हो। (पुं०) कदंब वृक्ष-विशेष।

पुलस्ति, पुलस्त्य—(पुं०) [√पुल्+क्तिच्, पुलं महत्त्वम् अस्यते गच्छति, पुल् √अस् +ति] [पुलस्ति+यत्] ब्रह्मा के मानस पुत्र ऋषियों में से एक।

पुला—(स्त्री०) [√पुल्+अ—टाप्] गले का कव्वा, काग।

पुलाक—(पुं०, न०) [√पुल्+आक नि०] कदन्न। उबला हुआ चावल, भात। संक्षेप। अल्पता। चावल का माँड़। क्षिप्रता, जल्दी।

पुलाकिन्—(पुं०) [पुलाक+इनि] वृक्ष।

पुलायित—(न०) [=पलायित, पृषो० साधु:] घोड़े की सरपट चाल।

पुलिन—(न०, पुं०) [√पुल्+इनन् स च कित्] नदी का रेतीला तट। पानी के भीतर से हाल की निकली हुई जमीन, चर। नदीतट; 'कालिन्द्याः पुलिनेषु केलिकुपितामुत्सृज्य रासे रसं' वे० १.२

पुलिनवती—(स्त्री०) [पुलिन+मतुप्, वत्व—ङीप्] नदी।

पुलिन्द—(पुं०) [√पुल्+किन्दच्] भारतवर्ष की एक प्राचीन असभ्य जाति। इस जाति के बसने का देश।

पुलिरिक—(पुं०) सर्प।

पुलोमन्—(पुं०) (समास में नकार का लोप हो जाता है) इन्द्र के ससुर एक दैत्य का नाम।—**अरि (पुलोमारि)**,—**जित्**,—**द्विष्**, —**भिद्**–(पुं०) इन्द्र के नामान्तर। —**जा**, —**पुत्री**–(स्त्री०) पुलोमन् की पुत्री और इन्द्र की स्त्री शची।

√पुष्—दि०, क्र्या० पर० सक०, अक० पोषण करना, पालना-पोसना। सहायता करना। बढ़ने देना। उन्नति करना। प्राप्त करना। उपभोग करना। दिखाना। बढ़ जाना या परवरिश पाना। प्रशंसा करना। पुष्यति, पोक्ष्यति, अपुषत्। पुष्णाति, पोषिष्यति, अपोषीत्।

पुष्कर—(न०) [√पुष्+करन् स च कित्] नीलकमल। हाथी की सूँड़ की नोक। ढोल का चाम। ढोलक का पुरा। तलवार की धार। तलवार की म्यान। तीर। आकाश। अन्तरिक्ष। वायुमण्डल। पिंजड़ा। जल। नशा, मद। नृत्यकला। युद्ध, लड़ाई। मेल। अजमेर के निकटस्थ एक तीर्थ-स्थान का नाम। (पुं०) तालाब। सरोवर। सर्प विशेष। ढोल। नगाड़ा। सूर्य। एक जाति के उन बादलों का नाम जो अनावृष्टि का कारण होते हैं। शिव जी का नामान्तर। (न०, पुं०) ब्रह्माण्ड के सप्त विशाल भागों में से एक।—**अक्ष (पुष्कराक्ष)**–(पुं०) विष्णु का नाम।—**आख्य (पुष्कराख्य**, —**आह्व (पुष्कराह्व)**–(पुं०) सारस।—**चूड**–(पुं०) वह दिग्गज जो लोकालोक पर्वत पर स्थित है।—**जटा**–(स्त्री०) दे० 'पुष्करमूल'।—**तीर्थ**–(पुं०) अजमेर के पास का एक तीर्थस्थान।—**पत्र**–(न०) कमल का पत्ता।—**प्रिय**–(पुं०) मोम।—**बीज**– (न०) कमलगट्टा।—**मुख**–(न०) सूँड़ के मुँह पर का छेद। (वि०) सूँड़ के मुख जैसे मुख वाला (पात्र)। —**मूल**–(न०) कमल की जड़। कूट नामक

श्रोषधि।—**व्याघ्र**–(पु०) मगर, घड़ियाल।—**शिफा**–(स्त्री०) कमल की जड़, भसीड़ा।—**स्थपति**–(पु०) शिव जी का नामान्तर।—**स्रज्**–(स्त्री०) कमल की माला।

पुष्करिणी—(स्त्री०) [पुष्करिन्+ङीप्] हथिनी। कमल का तालाब। झील, तालाब। कमल का पौधा। एक प्राचीन नदी। चाक्षुष मनु की पत्नी। भुमन्यु की पत्नी श्रौर ऋचीक की माता।

पुष्करिन्—(वि०) [स्त्री०—**पुष्करिणी**] [पुष्कर+इनि] कमलयुक्त। (पु०) हाथी।

पुष्कल—(वि०) [पुष्कं पुष्टिम् अर्हति वा पुष्कम् अस्ति अस्य, पुष्क+लच्] बहुत, विपुल, अधिक। पूर्ण, पूरा। चटकीला। सर्वोत्तम, सर्वश्रेष्ठ। समीपवर्ती।[√पुष्+कलन्] गूँजने वाला, प्रतिध्वनि करने वाला। (पु०) एक प्रकार का ढोल। मेरु पर्वत। (न०) अनाज नापने का एक मान जो ६४ मुट्ठियों के बराबर होता था। चार ग्रास की भिक्षा।

पुष्कलक—(पु०) [पुष्कल + कन्] हिरन जिसकी नाभि से कस्तूरी निकलती है; 'नोम्नि पुष्कलको हतः'। पच्चर, कील।

पुष्ट—[√पुष्+क्त] पोषण किया हुआ, पाला हुआ। मोटा-ताजा। बलिष्ठ। बलवर्द्धक। अच्छी तरह सम्पन्न। पूरी तरह शब्द करने वाला। मुख्य, प्रधान। पूर्ण। (पु०) विष्णु।

पुष्टि—(स्त्री०) [√पुष्+क्तिन्] पोषण। मोटाई। बलिष्ठता। सम्पत्ति, सुख की सामग्री या साधन। सम्पन्नता। चटकीलापन या भड़कीलापन। वृद्धि। एक मातृका। एक योगिनी। धर्म की एक पत्नी। असगंध। लोभ की माता। चंद्रमा की एक कला।—**कर**–(वि०) पुष्ट करने वाला। बल-वीर्यवर्द्धक।—**कर्मन्**–(न०) एक धार्मिक अनुष्ठान जो सांसारिक समृद्धि की प्राप्ति के लिये किया जाता है।—**द**–(वि०) पुष्टि देने वाला। ताजगी देने वाला। समृद्धिकारी।—**वर्धन**–(वि०) समृद्धिकारक। स्वास्थ्यवर्द्धक; 'त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनं' वेद। (पु०) मुर्गा, कुक्कुट।

√पुष्—दि० पर० अक० खिलना। सक० चौंकाना। पुष्प्यति, पुष्पिष्यति, अपुष्पीत्।

पुष्प–(न०) [√पुष्प्+अच्] फूल। स्त्री का रजोधर्म या मासिक धर्म। पुखराज। नेत्ररोग-विशेष। कुबेर का पुष्पक विमान। बाँकता। (प्रेमियों की भाषा में) सुशीलता। विकास, फूलना।—**अञ्जन** (**पुष्पाञ्जन**)–(न०) एक प्रकार का अंजन जो पीतल के हरे कसाव के साथ कुछ अन्य दवाओं के संमिश्रण से पीस कर तैयार किया जाता है।—**अञ्जलि** (**पुष्पाञ्जलि**)–(पुं०) फूलों से भरी अंजलि जो किसी देवता या पूज्य पुरुष को चढ़ाई जाय।—**अम्बुज** (**पुष्पाम्बुज**)–(न०) मकरन्द।—**अवचय** (**पुष्पावचय**) (पुं०) फूलों को एकत्र करना या चुनना।—**अस्त्र** (**पुष्पास्त्र**)–(पुं०) कामदेव का नामान्तर।—**आकर** (**पुष्पाकर**),—**आगम** (**पुष्पागम**)–(पु०) वसन्त ऋतु; 'मासो नु पुष्पाकरः' विक्र० १.६।—**आजीव** (**पुष्पाजीव**)–(पु०) माली, मालाकार।—**आपीड** (**पुष्पापीड**)–(पुं०) सिर पर धारण की जाने वाली फूलों की माला आदि। गुलदस्ता।—**इषु** (**पुष्पेषु**)–(पुं०) कामदेव।—**आसव** (**पुष्पासव**)–(न०) शहद, मधु।—**उद्यान** (**पुष्पोद्यान**) (न०) फुलवारी।—**उपजीविन्** (**पुष्पोपजीविन्**)–(पुं०) माली, मालाकार।—**करण्ड**,—**करण्डक**–(न०) उज्जयिनी का प्राचीन शिवोद्यान। फूल तोड़ने की डलिया।—**काल**–(पु०) वसन्त ऋतु। स्त्रियों का ऋतुकाल।—**कीट**–(पुं०) भौंरा।—

कृच्छ्र–(न०) एक व्रत जिसमें कुछ फूलों के काढ़े पर महीने भर रहना पड़ता है।—**केतन**,—**केतु**–(पुं०) कामदेव। (न०) मकरन्द, पराग।—**गृह**– (न०) शीशे का घर या कमरा जिसमें पौधे सर्दी से बचा कर रखे जाते हैं।—**घातक**– (पुं०) बाँस।—**चाप**–(पुं०) कामदेव।—**चामर**–(पुं०) दौनामरुआ। केवड़ा।—**ज**–(न०) पुष्परस।—**द**–(पुं०) वृक्ष।—**दन्त**–(पुं०) शिव के एक गण का नाम। महिम्न-स्तोत्र के रचयिता का नाम। वायव्य कोण के दिग्गज का नाम।—**दामन्**–(न०) पुष्पहार।—**द्रव**–(पुं०) फूलों का रस।—**द्रुम**–(पुं०) फूलने वाला वृक्ष।—**ध**–(पुं०), व्रात्य ब्राह्मण की सवर्णा पत्नी से उत्पन्न संतान; 'व्रात्यात्तु जायते विप्रात् पापात्मा भूर्जकण्टकः। आवन्त्यवाटधानौ च पुष्पधः शैख एव च।'—**धनुस्**,—**धन्वन्**–(पुं०) कामदेव।—**धारण**–(पुं०) विष्णु का नामान्तर।—**ध्वज**–(पुं०) कामदेव का नामान्तर।—**लिक्ष**–(पुं०) भौंरा।—**निर्यास**,—**निर्यासक**–(पुं०) पुष्परस।—**नेत्र**– (न०) एक तरह की पिचकारी की सलाई।—**पत्र**–(न०) फूल की पँखड़ी।—**पत्रिन्**– (पुं०) कामदेव।—**पथ**–(पुं०)—**पदवी**–(स्त्री०) भग, स्त्री का गुप्ताङ्ग।—**पुर**–(न०) पटना का नामान्तर।—**प्रचय**,—**प्रचाय**–(पुं०) हाथ से पुष्प तोड़ना।—**प्रचायिका**–(स्त्री०) नियमपूर्वक फूल तोड़ना।—**प्रस्तार**–(पुं०) पुष्प-शय्या।—**फल**–(पुं०) कुम्हड़ा। कैथा। (न०) अर्जुन वृक्ष।—**बाण**,—**वाण**–(पुं०) कामदेव।—**भद्र**–(पुं०) ६२ खंभों वाला एक प्रकार का मंडप।—**भव**–(पुं०) फूल का रस।—**मञ्जरिका**–(स्त्री०) नील कमल।—**माला**–(स्त्री०) फूलों की माला।—**मास**–(पुं०) चैत्रमास। वसन्तऋतु।—**रजस्**–(न०) मकरंद, पराग।—**रथ**–(पुं०) गाड़ी जो युद्धोपयोगी न हो, जिसमें साधारणतया बैठकर घूमा-फिरा जाय।—**राग**,—**राज**–(पुं०) पुखराज।—**रेणु**–(पुं०) मकरंद; 'पुष्परेणूत्किरैर्वातैः' र० १.३८।—**रोचन**–(न०) नागकेसर वृक्ष।—**लाव**–(पुं०) पुष्प इकट्ठा करने वाला, माली।—**लावी**–(स्त्री०) मालिन।—**लिक्ष**,—**लिह्**–(पुं०) भ्रमर।—**वटुक**– (पुं०) नायक का भेद।—**वर्ग**–(पुं०) कचनार, सेमल, अगस्त्य आदि के फूलों का एक विशिष्ट समाहार (आ० वै०)।—**वर्त्मन्**–(पुं०) द्रुपद।—**वर्ष**–(पुं०),—**वर्षण**–(न०) फूलों की वर्षा, पुष्पवृष्टि।—**वाटिका**,—**वाटी**–(स्त्री०) फूल-बगिया।—**वेणी**–(स्त्री) फूलों की माला।—**शकटी**–(स्त्री०) आकाशवाणी।—**शय्या**–(स्त्री०) फूलों की शय्या।—**शर**,—**शरासन**,—**सायक**– (पुं०) कामदेव।—**समय**–(पुं०) वसन्त ऋतु।—**सार**,—**स्वेद**–(पुं०) अमृत या फूलों से बना शहद।—**हासा**–(स्त्री०) रजस्वला स्त्री।—**हीना**–(स्त्री०) वह स्त्री जिसे रजोदर्शन न हो, बाँझ।

पुष्पक—(न०) [पुष्प+कन्] फूल। लोहे या पीतल का मोर्चा। लोहे का प्याला। विमान-विशेष जिसे रावण ने अपने बड़े भाई कुबेर से छीन लिया था। रत्न-कङ्कण। रसौत। नेत्र रोग-विशेष, फूला।

पुष्पन्धय—(पुं०) [पुष्प√धे+खश्, मुम्] भ्रमर। (वि०) मकरंद पान करने वाला।

पुष्पवत्—(वि०) [पुष्प+मतुप्, वत्व] फूलों वाला। फूलों से सजाया हुआ। (पुं० द्वि०) चन्द्र और सूर्य।

पुष्पवती—(स्त्री०) [पुष्पवत्+ङीप्] रजस्वला स्त्री।

पुष्पा—(स्त्री०) [पुष्प+अच्–टाप्] लौंग। चम्पा नगरी, वर्तमान भागलपुर।

पुष्पिका—(स्त्री०) [√पुष् +ण्वुल्—टाप्, इत्व] दाँत का मैल। लिङ्ग का मैल। अध्याय के अन्त का वह भाग जिसमें वर्णन किये हुए प्रसङ्ग की समाप्ति सूचित की जाती है। यथा 'इति श्रीमन्महाभारते' आदि।

पुष्पिणी—(स्त्री०) [पुष्पिन्+ङीप्] रज-स्वला स्त्री।

पुष्पित—(वि०) [पुष्प+इतच् या √पुष् +क्त] जिसमें फूल लगे हों। खिला हुआ, विकसित। रंग-बिरंगा। अलंकृत (भाषण आदि)।

पुष्पिता—(स्त्री०) [पुष्पित+टाप्] रजस्वला स्त्री।

पुष्पिन्—(स्त्री०) [पुष्प+इनि] फूलदार, फूलों वाला।

पुष्य—(पुं०) [√पुष्+क्यप्] कलियुग। पौषमास। ८वाँ नक्षत्र।

पुष्पलक—(पुं०) [पुष्प √लक् + अच्] कस्तूरी मृग। क्षपणक, चँवर लिये हुए जैन साधु। खूँटा। कील।

√**पुस्त्**—चु० पर० सक० बाँधना। आदर और अनादर करना। पुस्तयति, पुस्तयि-ष्यति, अपुपुस्तत्।

पुस्त—(न०) [√पुस्त्+घञ्] गीली मिट्टी का पलस्तर। चित्रकारी। लीपना-पोतना। मिट्टी लगाने या खोदने आदि का काम। लकड़ी या धातु की बनी कोई वस्तु। हाथ की लिखी पोथी।—**कर्मन्**—(न०) लकड़ी, धातु आदि का शिल्प, कारीगरी।

पुस्तक—(न०, पुं०),—**पुस्ती**—(स्त्री०) [पुस्त+कन्] [पुस्त+ङीप्] हाथ की लिखी हुई पोथी। ग्रन्थ, किताब।

√**पू**—भ्वा० आत्म०, क्र्या० उभ० सक० पवित्र करना। माँजना। साफ करना। भूसी अलग करना, फटकना। प्रायश्चित्त करना। लक्षण से पहचानना। सोच-विचार कर कोई नई बात पैदा करना। पवते, पविष्यते, अपविष्ट। क्र्या० पुनाति-पुनीते, पविष्यति-ते, अपावीत्-अपविष्ट।

पूग—(पुं०) [√पू+गन्, कित्] ढेर। समूह; 'भवद्गुणपूगपूरितमतृप्ततया' शि० १.६४। संख्या। संघ। सुपारी का पेड़। कटहल का पेड़। शहतूत का पेड़। स्वभाव। (न०) सुपारी फल।—**कृत**—(वि०) जमा किया हुआ, इकट्ठा किया हुआ, राशीकृत।—**पात्र**—(न०) पीकदान। पानदान।—**पीठ**—(न०) पीकदान।—**पुष्पिका**—(स्त्री०) विवाहसंबंध पक्का होने पर दिया जाने वाला पान-फूल।—**फल**—(न०) सुपाड़ी।—**वैर**—(न०) अनेक लोगों से शत्रुता।

√**पूज्**—चु० पर० सक० पूजना। सम्मान-पूर्वक स्वागत करना। पूजयति-पूजति, पूज-यिष्यति-पूजिष्यति, अपूपुजत्-अपूजीत्।

पूजक—(पुं०) [स्त्री०—**पूजिका**] [√पूज् +णिच्+ण्वुल्] पुजारी। (वि०) सम्मान करने वाला। पूजा करने वाला।

पूजन—(न०) [√पूज्+ल्युट्] पूजने की क्रिया, पूजा, अर्चा। सम्मान, प्रतिष्ठा।—**अर्ह** (**पूजनार्ह**)—(वि०) पूज्य, पूजा के योग्य।

पूजा—(स्त्री०) [√पूज् + णिच्+अङ —टाप्] पत्र, पुष्प, गन्ध आदि के समर्पण के साथ ईश्वर या इष्ट देवता का ध्यान, स्मरण आदि करने का कृत्य, अर्चन। सत्कार, आवभगत।

पूजित—(वि०) [√पूज्+क्त] सम्मानित। पूज्य। स्वीकृत। सम्पन्न। सिफारिश किया हुआ।

पूजिल—(वि०) [√पूज्+इलच्] पूज्य। माननीय। (पुं०) देवता।

पूज्य—(वि०) [√पूज्+ण्यत्] मान करने योग्य। पूजा करने योग्य। (पुं०) ससुर, पत्नी का पिता या पति का पिता।

√पूण्—चु० उभ० सक० इकट्ठा करना । पूणयति-ते ।

पूत—(वि०) [√पू+क्त] पवित्र, शुद्ध; 'सत्यपूतां वदेद् वाचं' मनु० ६.४६ । सूप से फटका हुआ । प्रायश्चित्त (करके पवित्र) किया हुआ । आविष्कार किया हुआ । [√पूय्+क्त] सड़ा हुआ । बदबूदार । (न०) सचाई । (पुं०) शंख । सफेद कुश ।—**आत्मन् (पूतात्मन्)**–(वि०) साफ दिल का । (पुं०) विष्णु का नामान्तर ।—**क्रतायी**–(स्त्री०) [पूतक्रतोः स्त्री, पूतक्रतु+ङीप्, ऐकार आदेश) इन्द्राणी, शची ।—**क्रतु**–(पुं०) [पूतः क्रतुः येन, ब० स०] इन्द्र का नामान्तर ।—**तृण**–(न०) सफेद कुश ।—**द्रु**–(पुं०) पलाश वृक्ष ।—**धान्य**–(न०) तिल ।—**पाप्मन्**–(वि०) पाप से मुक्त ।—**फल**–(पुं०) कटहल का वृक्ष ।

पूतना—(स्त्री०) [पूत+णिच् + युच् –टाप्] एक राक्षसी जो कंस की प्रेरणा से गोकुल में श्रीकृष्ण को मारने गई थी, किन्तु श्रीकृष्ण द्वारा स्वयं मारी गयी । राक्षसी । बच्चों का एक क्षुद्र रोग । एक प्रकार की हड़ । गंधमासी ।—**अरि (पूतनारि)**, —**सूदन**, —**हन्**–(पुं०) श्रीकृष्ण ।

पूति—(वि०) [√पूय्+क्तिन्] दुर्गन्ध वाला, बदबू करने वाला । (न०) गंदा पानी । पीप । रोहिष तृण । (पुं०) गंध बिलाव । (स्त्री०) [√पू+क्तिन्] पवित्रता, शुद्धता । [√पूय्+क्तिन्] दुर्गंध, बदबू ।—**अण्ड (पूत्यण्ड)**–(पुं०) कस्तूरी मृग ।—**कन्या**–(स्त्री०) पुदीना ।—**काष्ठ**–(न०) देवदारु वृक्ष ।—**काष्ठक**–(पुं०) सरल का वृक्ष ।—**गन्ध**–(वि०) दुर्गन्धयुक्त । (पुं०) दुर्गन्ध, बदबू । इंगुदी का पेड़ । गन्धक ।—**गन्धि**–(वि०) [पूतिः गन्धो यस्य, ब० स०, इकार आदेश] दुर्गन्धयुक्त, बदबूदार ।—**गन्धिका**–(स्त्री०) बकुची । पोय ।—**तैला**–(स्त्री०) ज्योतिष्मती ।—**नस्य**–(पुं०) एक रोग जिसमें श्वास के साथ दुर्गन्ध निकलती है ।—**नासिक**–(वि०) बदबूदार नाक वाला ।—**फला**, —**फली** (स्त्री०) सोमराजी, बकुची ।—**भाव**–(पुं०) सड़ने की क्रिया ।—**मयूरिका**–(स्त्री०) अजमोदा ।—**मूषिका**–(स्त्री०) छछूंदर ।—**मेद**–(पुं०) विट्खदिर ।—**वक्त्र**–(वि०) वह जिसके मुख से दुर्गन्ध आती हो ।—**व्रण**–(न०) मवाद देने वाला फोड़ा ।

पूतिक—(वि०) [पूति √कै+क] बदबूदार । (न०) विष्ठा, मल ।

पूतिका—(स्त्री०) [पूतिक+टाप्] पोय का साग । मार्जारी । दीमक ।—**मुख**–(पुं०) शंबूक, घोंघा ।

पून—(वि०) [√पू+क्त, तस्य नः] नष्ट किया हुआ ।

पूप—(पुं०) [√पू+क्विप्, पू√पा +क] पुआ ।

पूपला, पूपली, पूपालिका, पूपाली, पूपिका—(स्त्री०) [पूप√ला+क, पूपल +टाप्] [पूपल+ङीष्] [पूपान् अलति, पूप √अल्+अच्–ङीष् + कन्–टाप्, ह्रस्व] [पूप √अल्+अच्–ङीष्] [पूपः पूपाकारोऽस्ति अस्याः, पूप+ठन् –टाप्] मालपुआ या पुआ ।

√पूय्—भ्वा० आत्म० अक० दुर्गन्ध करना । सक० फाड़ना । पूयते, पूयिष्यते, अपूयिष्ट ।

पूय—(न०, पुं०) [पूय्+अच्] पीप, मवाद ।—**रक्त**–(पुं०) नासिका का रोग-विशेष । (न०) कच्चलोहू । नाक से पीप मिला हुआ रक्त का निकलना ।

√पूर्—दि० आत्म० सक० भरना, पूर्ण करना; 'को न याति वशं लोके मुखे पिण्डेन पूरितः' भर्तृ० २.११८ । प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना । पूर्यते, पूरिष्यते, अपूरि –अपूरिष्ट ।

पूर—(न०) [√पूर्+क] दाहागुरु, दाह अगर। (पुं०) भरना, पूर्ण कर देना। सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना। उड़ेलना। नदी या समुद्र के जल की बाढ़; 'महोदधेः पूर इवेन्दुदर्शनात्' र० ३.१७। धार या बाढ़। सरोवर। तालाब। घाव का भरना या साफ करना। एक प्रकार की रोटी या पूरी।—उत्पीड (पूरोत्पीड)–(पुं०) जल की बाढ़।

पूरक—(वि०) [पूर्+ण्वुल्] पूरा करने वाला। सन्तुष्ट करने वला। (पुं०) नीबू या जमीरी का वृक्ष। पितृश्राद्ध में सब से पीछे दिया जाने वाला पिण्ड। गुणक अङ्क।

पूरण—(वि०) [स्त्री—पूरणी] [√पूर्+ल्यु] पूरा करने वाला। जिससे किसी संख्या की पूर्ति हो, जैसे प्रथम, द्वितीय आदि; 'न पूरणो त समृपवति संख्या' कि० ३.५१। प्रसन्न या तुष्ट करने वाला। (न०) [√पूर्+ल्युट्] पूर्ण करने की क्रिया। भरने या भर जाने की क्रिया। एक प्रकार की रोटी। फुलाव, सूजन। पालन (यथा वचनपालन)। मृतक कर्म में व्यवहृत होने वाली रोटी या पूरी। वृष्टि। अंकों का गुना करना। झुकाना, खींचना (धनुष)। मोड़। ताना। नाव बाँधने का रस्सा। (पुं०) पुल। बाँध। समुद्र। नागरमोथा। सुगन्धतृण। विष्णुतैल।—प्रत्यय–(पुं०) एक प्रत्यय जो किसी अंक में पीछे लगा देने से क्रम बतलावे जैसे दूसरा, तीसरा आदि।

पूरिका—(स्त्री०) [पूर+ङीप्+कन्–टाप्, ह्रस्व] कचौड़ी।

पूरित—(वि०) [√पूर्+क्त] पूरा किया हुआ। भरा हुआ। ढका हुआ। गुणा किया हुआ। तृप्त।

पूरु—(पुं०) [√पॄ+कु] मनुष्य। राजा ययाति का कनिष्ठ पुत्र। जह्नु ऋषि का एक पुत्र। एक राक्षस।

पूरुष—(पुं०) [√पुर्+कुषन्, नि० दीर्घ] पुरुष, आत्मा।

पूर्ण—(वि०) [√पूर्+क्त, नि० इडभाव] पूरित, भरा हुआ। तमाम, समूचा। समाप्त किया हुआ। बीता हुआ। सन्तुष्ट। शब्दकारी, झनझनाने या खनखनाने वाला। बलिष्ठ। दृढ़। स्वार्थी। झुकाया हुआ (धनुष)। (पुं०) जल (वेद)। एक गंधर्व। एक नाग। एक ताल।—अङ्क (पूर्णाङ्क)–(पुं०) पूरी संख्या। अभिन्न अङ्क।—अभिलाष (पूर्णाभिलाष)–(वि०) सन्तुष्ट, अघाया हुआ।—अवतार (पूर्णावतार)—(पुं०) वह अवतार जिसमें ईश्वर अपनी सभी कलाओं से युक्त होकर अवतीर्ण हुआ हो, विष्णु का चौथा, सातवाँ और आठवाँ अवतार।—आनक (पूर्णानक)–(न०) ढोल। नगाड़ा। नगाड़े का शब्द। पात्र। चन्द्रकिरण।—आहुति (पूर्णाहुति)–(स्त्री०) वह आहुति जिससे होम-कर्म समाप्त किया जाता है, होम-कर्म की अन्तिम आहुति।—इन्दु (पूर्णेन्दु)–(पुं०) पूर्णचन्द्र।—उपमा (पूर्णोपमा)–(स्त्री०) सर्वाङ्गपूर्ण उपमा जिसमें उपमान, उपमेय, साधारण धर्म और उपमा प्रतिपादक बातें हों।—ककुद– (वि०) पूरे कुब्ब वाला।—काम–(वि०) जिसकी सभी इच्छायें पूरी हो चुकी हों, आप्तकाम।—कुम्भ–(पुं०) भरा हुआ घड़ा। युद्ध का विशेष प्रकार। दीवाल में घड़े के बराबर का सूराख।—पात्र–(न०) जल से भरा हुआ पात्र। चावल से भरा हुआ बड़ा जो होम के अंत में दक्षिणा के रूप में ब्रह्मा या पुरोहित को दिया जाता है। अनाज का माप जो २५६ मुठियों के बराबर होता है। बक्स जिसमें भर कर उत्सवों पर नातेदार के पास सौगात भेजी जाय।—बीज,–बीज–(पुं०) बिजौरा नीबू।—मासी–(स्त्री०) पूर्णिमा, पूनो।

पूर्णक—(पु॰) [पूर्ण+कन्] वृक्ष-विशेष। रसोइया। कुक्कुट।

पूर्णिमा—(स्त्री॰) [√पृ+निङ, पूर्णि √मा+क—टाप्] उजियाले पाख की अन्तिम तिथि जिस दिन चन्द्रमा का मण्डल पूर्ण दिखलाई पड़ता है।

पूर्त—(वि॰) [√पृ+क्त] पूर्ण, पूरा। छिपा हुआ, ढका हुआ। पोषित। रक्षित। (न॰) पूर्ति। पालन-पोषण। पुरस्कार। धर्मार्थ अथवा परोपकार का कार्य-विशेष। पूर्त की परिभाषा इस प्रकार है :—"वापीकूपतडागादिदेवतायतनानि च। अन्नप्रदानमारामः पूर्तमित्यभिधीयते॥"

पूर्ति—(स्त्री॰) [√पृ+क्तिन्] पूर्ण करने की क्रिया। समाप्ति। (वचन) पालन। तृप्ति।

√पूर्व्—भ्वा॰ पर॰ सक॰ निवास करना। सक॰ बुलाना। पूर्वति—पूर्वति।

पूर्व—(वि॰) [√पूर्व्+अच्] (दिक्, देश और काल वाचक अर्थ में यह शब्द सर्वनाम है। तीनों लिङ्गों में इसका रूप सर्व शब्द की तरह चलेगा, पर जहाँ सर्वनाम संज्ञा न होगी वहाँ नर शब्द की तरह रूप होगा।) पूरबी। पहला, प्रथम। अगला, आगे का। ज्येष्ठ, बड़ा। समग्र, समूचा। प्राचीन, पुराना। पूरब में स्थित। पहले कहा हुआ। बहुत दिनों से चला आता हुआ (रिवाज आदि)। (पु॰) पुरखा: 'पयः पूर्वैः सनिश्वासैः कवोष्णमुपभुज्यते, र॰ १.६७। सूर्य के निकलने की दिशा, पूरब। जैनमतानुसार सात नील, पाँच खरब, साठ अरब वर्ष का एक काल-विभाग। (न॰) अगला भाग। (अव्य॰) पहले, पेश्तर। —**अचल** (पूर्वाचल), —**अद्रि** (पूर्वाद्रि)-(पु॰) उदयाचल। —**अपर** (पूर्वापर)-(वि॰) अगला और पिछला। पूरब और पश्चिम का। (न॰) आगा-पीछा। प्रमाण और कोई विषय जिसे सिद्ध करना है। —**अभिमुख** (पूर्वाभिमुख)-(वि॰) पूर्व को मुख किये हुए। —**अम्बुधि** (पूर्वाम्बुधि)-(पु॰) पूर्वी समुद्र। —**अर्जित** (पूर्वार्जित)-(वि॰) पूर्व कर्मों से उपार्जित। (न॰) पुश्तैनी जायदाद या सम्पत्ति। —**अर्ध** (पूर्वार्ध)-(न॰, पु॰) पहला आधा भाग। —**आवेदक** (पूर्वावेदक)-(पु॰) मुद्दई (वादी)। —**आषाढा** (पूर्वाषाढा)-(स्त्री॰) २०वें नक्षत्र का नाम। —**इतर** (पूर्वेतर)-(वि॰) पश्चिमी। —**कर्मन्**-(न॰) पूर्व समय में किया हुआ कर्म। प्रथम किया जाने वाला कर्म। कर्म जो पूर्वजन्म में किये हैं। —**कल्प**-(न॰) पहले के समय। —**काय**-(पु॰) जानवरों के शरीर का अगला भाग। मनुष्य के शरीर का ऊपरी भाग। —**काल**-(पु॰) प्राचीन काल, पुराना समय। पहले का समय, बीता हुआ समय। (वि॰) प्राचीन काल का। —**कालिक**, —**कालीन**-(वि॰) पूर्वकाल सम्बन्धी। पुराना, प्राचीन। —**काष्ठा**-(स्त्री॰) पूर्व दिशा। —**कृत्**-(पु॰) (पूर्व-दिशा का सूचक) सूर्य। (पूर्व दिशा का अधिपति) इंद्र। —**कोटि**-(स्त्री॰) वाद का पूर्वांग। —**गङ्गा**-(स्त्री॰) नर्मदा नदी का नाम। —**चोदित**-(वि॰) पूर्व-कथित, पहले कहा हुआ। —**ज**-(वि॰) जिसकी उत्पत्ति पहले हुई हो, पहले जन्मा हुआ। (पु॰) ज्येष्ठ भ्राता। बड़ी स्त्री का पुत्र। पूर्वपुरुष। —**जन्मन्**-(न॰) वर्तमान जन्म से पहले का जन्म, पिछला जन्म। (पु॰) ज्येष्ठ। —**जा**-(स्त्री॰) बड़ी बहिन। —**जाति**-(स्त्री॰) पूर्व जन्म। —**ज्ञान**-(न॰) पूर्वजन्म का ज्ञान। —**दक्षिण**-(वि॰) दक्षिण पूर्व के कोने वाला, अग्निकोणीय। —**दक्षिणा**-(स्त्री॰) अग्निकोण। —**दिक्पति**-(पु॰) इन्द्र। —**दिन**-(न॰) दोपहर के पहिले का समय। —**दिश्**-(स्त्री॰) पूरब, प्राची। —**दिष्ट**-(न॰) भाग्य का

लिखा हुआ मूल, ऋण आदि । (वि०) जिसका विधान पहले किया जा चुका हो, पूर्वविहित ।—**देव**–(पुं०) प्राचीन देवता । दैत्य या दानव । पितर ।—**देश**–(पुं०) पूर्वीय देश अथवा भारत का पूर्वीय भाग ।—**पक्ष**–(पुं०) पूर्व कोटि । मास का पहला पखवारा । किसी तर्क के सम्बन्ध में प्रथम आपत्ति । मुकद्दमा, अभियोग ।—**पद**–(न०) किसी समासान्त शब्द का प्रथम शब्द या किसी वाक्य का पूर्व पद ।—**पर्वत**–(पुं०) उदयाचल ।—**पाश्चात्य**–(वि०) पूर्वी पश्चिम से सम्बन्ध रखने वाला ।—**पाणिनीय**–(पुं०) पूर्व देश में रहने वाले पाणिनि के अनुयायी ।—**पितामह**–(पुं०) पूर्वपुरुष, पुरखा । प्रपितामह ।—**पुरुष**–(पुं०) ब्रह्मा । पुरखा, दादा-परदादा आदि ।—**फल्गुनी**–(स्त्री०) ११ वाँ नक्षत्र ।—**भाद्रपदा**–(स्त्री०) २५वाँ नक्षत्र ।—**भाव**–(पुं०) पूर्व सत्ता । प्राथमिकता । विचार की अभिव्यक्ति, पूर्वराग (साहित्य) ।—**भुक्ति**–(स्त्री०) पहले का कब्जा ।—**भूत**–(वि०) जो पहले हुआ हो । —**मीमांसा**–(स्त्री०) दर्शनशास्त्र-विशेष, जिसमें कर्मकाण्ड-सम्बन्धी विषयों का निर्णय किया गया है ।—**रङ्ग**–(पुं०) वह गान या स्तुति जो किसी अभिनय के प्रारम्भ में विघ्न-प्रशमनार्थ नटों द्वारा गायी जाती है; 'पूर्वरङ्गं विधायैव सूत्रधारो निवर्तते' सा० द० ।—**राग**–(पुं०) नायक और नायिका में श्रवण, दर्शन आदि के कारण मिलन से पहले उत्पन्न होने वाला अनुराग ।—**रात्र**–(पुं०) रात्रि का प्रथम भाग ।—**रूप**–(न०) पहले वाला रूप, वह रूप जो पहले रहा हो । शीघ्र होने वाले परिवर्तन की सूचना । रोमोत्पत्ति का लक्षण । आगमसूचक लक्षण ।—**वयस्**–(वि०) बाल्यावस्था का, छोटी उम्र वाला । (न०) बचपन ।—**वर्तिन्**–(वि०) पहले का ।—**वाद**–(पुं०) व्यवहार शास्त्रानुसार वह अभियोग जो न्यायालय में उपस्थित किया जाय, पहला दावा, नालिश ।—**वादिन्**–(पुं०) वादी, मुद्दई ।—**वृत्त**–(न०) पहले का हाल । पूर्व आचरण ।—**सक्थ**–(न०) जंघा का ऊपरी भाग ।—**सन्ध्या**–(स्त्री०) प्रातः काल, भोर ।—**सर**–(वि०) आगे जाने वाला ।— **सागर**–(पुं०) पूर्वीय समुद्र ।—**साहस**– (पुं०) प्रथम या तीन बड़े भारी अर्थदण्डों में से एक ।—**स्थिति**–(स्त्री०) पूर्वावस्था ।

पूर्वक—(वि०) [पूर्व+कन्] सहित । पूर्ववर्ती । (पुं०) पूर्वपुरुष, पुरखा ।

पूर्वतस्—(अव्य०) [पूर्व+तस्] पूर्व से, पहले से । पूर्व दिशा में, पूर्व दिशा की ओर ।

पूर्वत्र—(अव्य०) [पूर्व+त्रल्] पहले भाग में । पूर्व में ।

पूर्ववत्—(अव्य०) [पूर्व+वति] पहिले की तरह ।

पूर्विन्—(वि०) [स्त्री०—**पूर्विणी**] [पूर्व +इनि] पहिले का ।

पूर्वीण—(वि०) [पूर्व+ख–ईन] प्राचीन, पुरातन । पुश्तैनी, पैतृक ।

पूर्वेद्युस्—(अव्य०) [पूर्वस्मिन् अहनि, पूर्व + एद्युस् नि० साधुः] अगले दिन । बीते हुए कल । भोर में, सबेरे । दिन के पूर्वार्द्ध में । धर्मवासर ।

√पूल्—भ्वा०, पर० सक० ढेर करना, एकत्र करना । पूलति, पूलिष्यति, अपूलीत् । चु० पूलयति, पूलयिष्यति, अपूपुलत् ।

पूल, पूलक—(पुं०) [√पूल्+अच्] [√पूल्+ण्वुल्] तृण आदि का ढेर, पूला ।

पूलिका—(स्त्री०) [=पूरिका, रस्य लः] एक प्रकार की मीठी पूरी ।

√पूष्—भ्वा० पर० अक० बढ़ना। पूषति, पूषिष्यति, अपूषीत्।

पूष, पूषक—(पुं०) [√पूष्+क] [पूष+कन्] शहतूत का पेड़।

पूषन्—(पुं०) [कर्ता-पूषा,-षणौ,-षणः] [√पूष् + कनिन्] सूर्य।—**असुहृद्** (**पूषासुहृद**)-(पुं०) शिव का नामान्तर।—**आत्मज** (**पूषात्मज**)-(पुं०) बादल। इन्द्र।—**दन्तहर**-(पुं०) वीरभद्र (जिसने सूर्य का दाँत तोड़ा था)।—**भासा**-(स्त्री०) इन्द्रपुरी, अमरावती।

√पृ—स्वा० पर० अक० प्रसन्न होना। पृणोति, परिष्यति, अपारीत्। तु० आत्म० अक० क्रियाशील होना, कामकाज में लगा रहना। (प्रायः करके इस धातु में वि और आङ् उपसर्ग लग जाते हैं) व्याप्रियते, व्यापरिष्यते, व्यापृत।

पृक्त—(वि०) [√पृच्+क्त] मिला हुआ, मिश्रित। संबद्ध, युक्त। भरा हुआ, पूर्ण। (न०) धन-दौलत, सम्पत्ति।

पृक्ति—(स्त्री०) [√पृच्+क्तिन्] मिलाव, मिश्रण। संपर्क, संबंध, योग। स्पर्श।

पृक्थ—(न०) [√पृच्+थक्] सम्पत्ति, धन-दौलत।

√पृच्—अ० आत्म०, रु० पर० अक० सक० संमिश्रण होना। संयोगान्वित होना। जोड़ना, मिलाना। सन्तुष्ट करना। बढ़ाना। पृक्ते, पर्चिष्यते, अपर्चिष्ट। रु० पृणक्ति, पर्चिष्यति, अपर्चीत्।

पृच्छक—(पुं०) [√प्रच्छ्+ण्वुल्] पूछने वाला, जिज्ञासु; 'पृच्छकेन सदा भाव्यं पुरुषेण विजानता' पं० ५.९३।

पृच्छन—(न०) [√प्रच्छ्+ल्युट्] जिज्ञासा, प्रश्न।

पृच्छा—(स्त्री०) [√प्रच्छ्+अङ्-टाप्] प्रश्न, जिज्ञासा। भविष्य सम्बन्धी प्रश्न।

√पृज्—अ० आत्म० अक० संसर्ग में आना। सक० स्पर्श करना। पृङ्क्ते, पृञ्जिष्यते, अपृञ्जिष्ट।

√पृड्—तु० पर० सक० सुखी करना। पृडति, पर्डिष्यति, अपर्डीत्।

√पृण्—तु० पर० सक० प्रसन्न करना। पृणति, पर्णिष्यति, अपर्णीत्।

पृत्—(स्त्री०) [√पृ+क्विप्, तुक्] सेना। युद्ध।

पृतना—(स्त्री०) [√पृ+तनन्-टाप्] सेना। सैन्यदल, जिसमें २४३ हाथी, २४३ रथ, ७२९ घोड़े और १२१५ पैदल सिपाही होते हैं। मुठभेड़, युद्ध।—**साह्**-(पुं०) इन्द्र का नामान्तर।

पृतन्यु—(वि०) शत्रुता करने वाला, आक्रामक।

√पृथ्—चु० पर० सक० फेंकना। भेजना। अक० बढ़ना। फैलना। पर्थयति, पर्थयिष्यति, अपीपृथत्—अपपर्थत्।

पृथक्—(अव्य०) [√प्रथ्+अज्, कित्, संप्रसारण] अलग-अलग। एकाकी, अकेला। भिन्न, जुदा।—**आत्मता** (**पृथगात्मता**)-(स्त्री०) विरक्ति, वैराग्य। भेद, अन्तर। निर्णय या फैसला।—**आत्मन्** (**पृथगात्मन्**)-(वि०) भिन्न, अलहदा।—**आत्मिका** (**पृथगात्मिका**)-(स्त्री०) व्यक्तित्व, व्यक्तिगत अस्तित्व।—**करण**-(न०),—**क्रिया**-(स्त्री०) अलग करने का काम।—**कुल**-(वि०) जुदे खानदान का।—**क्षेत्र**-(पुं०) (बहु०) वे लड़के जो एक पिता किन्तु भिन्न माताओं अथवा भिन्न-भिन्न वर्ण की माताओं की कोख से उत्पन्न हुए हों।—**चर**-(वि०) एकाकी जाने वाला।—**जन**-(पुं०) मूर्ख, बेवकूफ। नीच व्यक्ति, कमीना आदमी। पापी जन; 'विविनक्ति न बुद्धिदुर्विधः स्वयमेव स्वहितं पृथग्जनः' शि० १६.३९।—**भाव**-(पुं०) अलहदगी, जुदापन।—**रूप**-(वि०) अनेक रूपों वाला, नाना प्रकार

का।—**विध**–(वि०) नाना प्रकार का।—**शय्या**–(स्त्री०) अलग सोना।—**स्थिति** (स्त्री०) भिन्न अस्तित्व।

पृथवी—(स्त्री०) [√प्रथ्+अवन्, संप्रसारण] =पृथिवी।

पृथा—(स्त्री०) पाण्डु राजा की दो रानियाँ थीं। उन दो में से कुन्ती का दूसरा नाम पृथा था।—**ज**,—**तनय**,—**सुत**,—**सूनु**–(वि०) प्रथम तीन पाण्डवों का नाम, किन्तु विशेषकर अर्जुन का।—**पति**–(पुं०) राजा पाण्डु।

पृथिका—(स्त्री०) [√प्रथ्+क–टाप्, इत्व] वृश्चिकादि जाति का शतपदविशिष्ट कोई जीव, गोजर।

पृथिवी—(स्त्री०) [√प्रथ् + षिवन्, संप्रसारण] दे० 'पृथ्वी'।—**इन्द्र** (**पृथिवीन्द्र**), —**ईश** (**पृथिवीश**), —**क्षित्**,—**पाल**,—**पालक**, —**भुज्**,—**भुज**,—**शक्र**–(पुं०) राजा।—**तल**–(न०) धरातल, ज़मीन की सतह।—**पति**–(पुं०) राजा। यमराज।—**मण्डल**–(पुं०, न०) दे० 'भूमण्डल'।—**रुह्**–(पुं०) वृक्ष, पेड़।—**लोक**–(पुं०) भूलोक, मर्त्यलोक।

पृथु—(वि०) [स्त्री०—**पृथु** या **पृथ्वी**] [√प्रथ्+कु संप्रसारण] चौड़ा, विस्तृत। अधिक, विपुल। बड़ा, महान्। असंख्य, अगणित। चतुर, चालाक। आवश्यक (पुं०) अग्नि। शिव। एक विश्वेदेव। विष्णु। इक्ष्वाकु वंश का एक राजा जिसका पुत्र त्रिशंकु हुआ। वेन के पुत्र जो प्रथम राजा माने जाते हैं (इन्होंने ही गोरूपधारिणी पृथ्वी से ओषधियों का दोहन किया था)। (स्त्री०) काला जीरा। हिंगुपत्री। अफ़ीम, अहिफेन।—**उदर** (**पृथूदर**)–(वि०) बड़े पेटवाला, घमघूसर। (पुं०) मेढ़ा, मेष।—**कीर्ति**–(स्त्री०) वसुदेव की एक बहन। (वि०) बड़ी कीर्ति वाला, महान् यशस्वी।—**कोल**–(पुं०) बड़ा बेर।—**पत्र**–(पुं०, न०) लाल लहसुन।—**प्रथ**,—**यशस्**–(वि०) दूर-दूर तक प्रसिद्ध।—**बीजक**–(न०) मसूर।—**रोमन्**–(पुं०) मछली।—**शिम्ब**–(पुं०) सोनापाठा। पीली लोध।—**श्रवस्**–(वि०) बड़े कानों वाला। बहुत प्रसिद्ध। (पुं०) कार्त्तिकेय का एक अनुचर।—**श्री**–(वि०) बहुत बड़ा, समृद्धिशाली।—**श्रोणि**–(वि०) जिसकी कटि चौड़ी हो।—**सम्पद्**–(वि०) धनी, धनवान्।—**स्कन्ध**–(पुं०) शूकर, सुअर।

पृथुक—(न०, पुं०) [पृथु√कै+क] चिड़वा, चिउड़ा। (पुं०) बच्चा; 'निन्युः जनन्यः पृथुकान् पथिभ्यः' शि० ३.३०।

पृथुका—(स्त्री०) [पृथुक+टाप्] हिंगुपत्री। लड़की।

पृथुल—(वि०) [पृथु+लच् या पृथु √ला +क] स्थूल, मोटा। विस्तीर्ण, विशाल।

पृथ्वी—(स्त्री०) [पृथु+ङीष्] सौर मंडल का वह प्रसिद्ध ग्रह जिस पर मर्त्यलोक की स्थिति है, पाँच महाभूतों में से एक। पृथ्वी का तल, भूमि, धरती। बड़ी इलायची। एक छन्द का नाम।—**ईश** (**पृथ्वीश**), —**पति**,—**पाल**,—**भुज्**–(पुं०) राजा।—**खात**–(न०) गुफा, खोह।—**गर्भ**–(पुं०) गणेश का नाम।—**गृह**–(न०) गुफा, खोह।—**ज**–(पुं०) वृक्ष। मङ्गल ग्रह। (न०) साँभर नमक।

पृथ्वीका—(स्त्री०) [पृथ्वी+कन्–टाप्] बड़ी इलायची। छोटी इलायची। काला जीरा। हिंगुपत्री।

पृदाकु—(पुं०) [√पर्द्+काकु, संप्रसारण, अकारलोप] बिच्छू। चीता। छोटी जाति का जहरीला साँप। वृक्ष। हाथी। तेंदुआ।

पृश्नि, पृश्णि—(वि०) [√स्पृश्+नि, नि० साधुः] [=पृश्नि, पृषो० साधुः] छोटे कद का, बौना। दुबला-पतला। सुकोमल, नाज़ुक। चित्तीदार, धब्बादार। (स्त्री०) किरण।

ज़मीन, भूमि । तारागणयुक्त आकाश । कृष्णमाता देवकी का दूसरा नाम ।—**गर्भ**, —**धर**,—**भद्र**–(पुं०) कृष्ण ।—**पर्णी**–(स्त्री०) पिठवन ।—**शृङ्ग**–(पुं०) कृष्ण । गणेश ।

पृश्निका, पृष्णिका, पृश्नी, पृष्णी—(स्त्री०) [पृश्नी जले कायति शोभते, पृश्नि √कै +क–टाप् [=पृश्निका, पृषो० साधुः] [पृश्नि+ङीष्] [=पृश्नी, पृषो० साधुः] जलकुम्भी, एक पौधा जो जल में उत्पन्न होता है ।

√**पृष**—भ्वा० आत्म० सक० सींचना । पर्षते, पर्षिष्यते, अपर्षिष्ट ।

पृषत्—(न०) [√पृष+अति] जल या अन्य किसी तरल पदार्थ की बूंद ।—**अंश** (**पृषदंश**),—**अश्व** (**पृषदश्व**)–(पुं०) पवन, हवा । शिव ।—**आज्य** (**पृषदाज्य**)–(न०) दही में मिला हुआ घी ।—**पति** (**पृषताम्पति**)–(पुं०) पवन, हवा ।—**बल** (**पृषद्बल**)–(पुं०) पवनदेव के घोड़े का नाम ।

पृषत—(वि०)[√पृष+अतच्] चितकबरा । (पुं०) चित्तीदार हिरन । जलबिन्दु; 'पृषतैरपां शमयता च रजः' कि० ६.२७ । वायु का वाहन । बच्चा ।—**अश्व** (**पृषताश्व**)–(पुं०) पवन ।

पृषत्क—(पुं०) [पृषत्+कन्] तीर, बाण ।

पृषन्ति—(पुं०) [√पृष्+झिच्] जलबिन्दु; 'पयःपृषन्तिभिः स्पृष्टाः यान्ति वाताः शनैः शनैः' महा० ।

पृषाकरा—(स्त्री०) [√पृष्+क्विप्, पृषे सेचनाय आकीर्यते, पृष्–आ √कृ+अप् –टाप्] पत्थर का बटखरा । छोटा पत्थर ।

पृषातक–(न०) [पृषन्तं पृषदाज्यम् आतङ्कते हसति, पृषत्–आ√तङ्क्+अच्, पृषो० साधुः] घी और दही का संमिश्रण ।

पृषोदर—(पुं०) [पृषत् उदरं यस्य, पृषो० तलोपः] वायु । (वि०) स्वल्पोदर, जिसका पेट छोटा हो ।

पृष्ट—[√प्रच्छ्+क्त] जिज्ञासित, पूछा हुआ । [√पृष्+क्त] छिड़का हुआ ।—**हायन**–(पुं०) धान-विशेष । हाथी ।

पृष्टि—(स्त्री०)[√प्रच्छ्+क्तिन्] जिज्ञासा, प्रश्न, सवाल । [√पृष्+क्तिन्] सेक । [√पृष्+क्तिच्] पृष्ठ देश, पिछला भाग ।

पृष्ठ—(न०) [√पृष्+थक्, नि० साधुः] पीठ । पिछला भाग । जानवर की पीठ । सतह, तल, ऊपरी भाग । पीठ या दूसरी ओर (किसी पत्र या दस्तावेज़ का) । समतल छत । पुस्तक का पन्ना ।—**अस्थि** (**पृष्ठास्थि**) –(न०) रीढ़, मेरुदण्ड ।—**ग**–(वि०) (घोड़े आदि पर) चढ़ा हुआ ।—**गोप**,—**रक्ष**–(पुं०) वह सिपाही जो किसी योद्धा की पीठ की रक्षा पर नियुक्त हो ।—**ग्रन्थि**–(वि०) कुबड़ा । (पुं०) कूबड़ । एक तरह का रोग ।—**चक्षस्**–(पुं०) केकड़ा । भालू ।—**तल्पन**–(न०) हाथी की पीठ की बाहरी पेशियाँ ।—**दृष्टि**–(पुं०) केकड़ा । भालू, रीछ ।—**फल**–(न०) किसी पिंड के ऊपरी भाग का क्षेत्रफल ।—**भाग**–(पुं०) पिछला भाग । पीठ ।—**मांस**–(न०) पीठ का मांस । पीठ की गुमड़ी ।—**मांसाद**,—**मांसादन** –(वि०) चुगलखोर । (न०) चुगली; 'पृष्ठमांसादनं तद्यत्परोक्षे दोषकीर्तनं' हि० १.८१ ।—**यान** –(न०) सवारी (घोड़े-आदि की) ।—**लग्न**—(वि०) पीछे-पीछे चलने वाला, अनुयायी ।—**वंश**– (पुं०) रीढ़ ।—**वास्तु**–(न०) मकान का ऊपर का तल्ला ।—**वाह्**,—**वाह्य**–(पुं०) बैल जिसकी पीठ पर बोझा लादा जाता हो ।—**शय**–(वि०)पीठ पर सोने वाला ।—**शृङ्ग**–(पुं०) जंगली बकरा ।—**शृङ्गिन्**–(पुं०) मेष, मेढ़ा । भैंसा । हिजड़ा । भीम का नामान्तर ।

पृष्ठक—(न०) [पृष्ठ+कन्] पीठ ।

पृष्ठतस्—(अव्य०) [पृष्ठ+तस्] पीछे । पीछे से । पीठ की ओर, पीछे की ओर । पीठ पर । पीठ के पीछे ।

पृष्ठ्य—(वि०) [पृष्ठ+यत्] पीठ सम्बन्धी । (पुं०) वह घोड़ा जिसकी पीठ पर बोझा लादा जाता हो ।

पृष्णि—(स्त्री०) [=पृश्नि, पृषो० साधुः] एड़ी । पिछला भाग । किरण ।

√पॄ—जु०, क्र्या० पर० सक० भरना । परिपूर्ण करना । (वचन) पालन करना । (आशा) पूरी करना । फूँक से फूल जाना या फूँकना । तृप्त करना । पालन-पोषण करना । जु० पिपर्ति, परीष्यति—परिष्यति, अपारीत् । क्र्या०, पृणाति ।

पेचक—(पुं०) [√पच्+वुन्, इत्व] उल्लू । हाथी की पूँछ की जड़ । सेज, शय्या । बादल । जूँ ।

पेचकिन्, पेचिल—(पुं०) [पेचक+इनि] [√पच्+इलच्, इत्व] हाथी ।

पेञ्जूष—(पुं०) कान का मैल या ठेठ ।

पेट—(न०, पुं०) [√पिट्+अच्] पेटी । संदूक । थैला । समूह । (पुं०) फैली हुई उँगलियों सहित खुला हाथ, थप्पड़, प्रहस्त ।

पेटक—(न०, पुं०) [पेट+कन् वा √पिट्+ण्वुल्] टोकरी । पिटारा । थैला । बोरा । समूह ।

पेटाक—(पुं०) [=पेटक, पृषो० साधुः] थैला । पेटी । टोकरा ।

पेटिका, पेटी—(स्त्री०) [√पिट्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] [पेट+ङीष्] छोटा पिटारा । छोटा संदूक । छोटा थैला । टोकरी ।

पेडा—(स्त्री०) [=पेट, पृषो० साधुः] बड़ा थैला ।

पेय—(वि०) [√पा+यत्] पीने योग्य । (न०) जल । दूध । शरबत । एक प्रकार का व्यंजन ।

पेया—(स्त्री०) [पेय+टाप्] एक प्रकार का माँड मिला हुआ पेय पदार्थ, चावलों की बनी हुई एक प्रकार की लपसी ।

पेरु—(पुं०) समुद्र । अग्नि । सूर्य ।

पेयूष—(न०, पुं०) [√पीय्+ऊषन्, वा० गुण] अमृत, सुधा । उस गौ का दूध जिसको ब्याये ७ दिन से अधिक न हुए हों । ताजा घी ।

पेरा—(स्त्री०) एक प्रकार का बाजा ।

√पेल्—भ्वा० पर० सक० जाना । अक० काँपना । पेलति, पेलिष्यति, अपेलीत् ।

पेल—(न०), **पेलक**—(पुं०) [√पेल्+अच्] [पेल+कन्] अण्डकोष ।

पेलव—(वि०) [पेल√वा+क] सुकुमार, सुकोमल; 'अपर्णया पेलवयापि तप्तम्' कु० ७.६५ । दुबला, क्षीण । विरल ।

पेलि, पेलिन्—(पुं०) [√पेल्+इन्] [पेल+इनि] घोड़ा ।

√पेव्—भ्वा० आत्म० सक० सेवा करना । पेवते, पेविष्यते, अपेविष्ट ।

पेशल, पेषल, पेसल—(वि०) [√पिश् (ष्, स्)+अलच्] कोमल, मुलायम, सुकुमार; 'तदलके दलकेशरपेशलम्' र० ९.४० । दुबला, पतला । मनोहर, सुन्दर । चतुर, निपुण । छली, कपटी ।

पेशि, पेशी—(स्त्री०) [√पिश्+इन्] [पेशि+ङीष्] मांस का टुकड़ा, मांस-खण्ड । मांस का गोला या पिण्ड । अंडा । पुट्ठा । गर्भाधान होने के कुछ ही दिनों बाद का कच्चा गर्भपिण्ड । खिलने वाली कली । (पुं०) इन्द्र का वज्र । एक प्रकार का बाजा ।
—कोश, —कोष—(पुं०) पक्षी का अंडा ।

√पेष्—भ्वा० आत्म० अक० प्रयत्न करना । पेषते, पेषिष्यते, अपेषिष्ट ।

पेष—(पुं०) [√पिष्+घञ्] पीसने की क्रिया, पीसना ।

पेषण—(न०) [√पिष्+ल्युट्] पीसना,

चूर-चूर करना। खलिहान में वह जगह जहाँ दाँय चलाई जाती है। खल और लोढ़ा। कोई भी कूटने-पीसने का यंत्र।

पेषणि, पेषणी—(स्त्री०), [√पिष्+अनि] [पेषणि+ङीप्] सिल। चक्की। खरल।

पेषाक—(पुं०) [√पिष्+आकन्] पत्थर का टुकड़ा जिस पर कुछ पीसा जाय। दे० 'पेषणि'।

√पेस्—भ्वा० पर० सक० जाना। पेसति, पेसिष्यति, अपेसीत्।

पेस्वर—(वि०) [√पेस्+वरच्] गमनकारी। नाशकारी।

√पै—भ्वा० पर० सक० सुखाना। पायति, पास्यति, अपासीत्।

पैङ्गि—(पुं०) [पिङ्ग+इञ्] यास्क का नाम विशेष।

पैञ्जूष—(पुं०) [पिञ्जूष+अण्] कर्ण, कान।

पैठर—(वि०) [स्त्री०—पैठरी] [पिठर+अण्] किसी पात्र में उबाला हुआ।

पैठीनसि—(पुं०) एक उपस्मृतिकार ऋषि का नाम।

√पैण्—भ्वा० पर० सक० जाना। प्रेरित करना। अलग करना। पैणति, पैणिष्यति, अपैणीत्।

पैण्डिक्य, पैण्डिन्य—(न०) [पिण्ड+ठन्—इक+ष्यञ्] [पिण्ड+इन्+ष्यञ्] भिक्षावृत्ति, भिखारीपना।

पैतामह—(वि०) [स्त्री०—पैतामही] [पितामह+अण्] पितामह सम्बन्धी। पितामह से प्राप्त। ब्रह्मा का। ब्रह्मा से प्राप्त।

पैतामहिक—(वि०) [स्त्री०—पैतामहिकी] [पितामह+ठक्] पितामह सम्बन्धी। पितामह से प्राप्त।

पैतृक—(वि०) [स्त्री०—पैतृकी] [पितृ+ठक्] पिता सम्बन्धी। पुश्तैनी, परंपरागत। पितरों का। (न०) पुरखों का श्राद्ध कर्म।

पैतृमत्य—(पुं०) [पितृमती+ण्य] कानीन, अविवाहिता स्त्री का पुत्र। किसी प्रसिद्ध पुरुष का पुत्र।

पैतृष्वसेय, पैतृष्वस्रीय—(पुं०) [पितृष्वसृ+ढक्] [पितृष्वसृ+छण्] फुफेरा भाई, बुआ का बेटा।

पैत्त—(वि०) [स्त्री०—पैत्ती], **पैत्तिक**—(वि०) [स्त्री०—पैत्तिकी] [पित्त+अण्] [पित्त+ठञ्] पित्त का, पित्त सम्बन्धी।

पैत्र—(वि०) [स्त्री०—पैत्री] [पितृ+अण्] पैतृक, पुश्तैनी। पितरों का। (न०) तर्जनी और अँगूठे के बीच का स्थान।

पैलव—(वि०) [स्त्री०—पैलवी] [पीलु+अण्] पिलुआ की लकड़ी का बना हुआ।

पैशल्य—(न०) [पेशल+ष्यञ्] नम्रता, नरमी। कोमलता।

पैशाच—(वि०) [स्त्री०—पैशाची] [पिशाच+अण्] पिशाच सम्बन्धी। पिशाचतुल्य। पिशाचोचित। (पुं०) आठ प्रकार के विवाहों में से आठवाँ या निकृष्ट श्रेणी का विवाह एक प्रकार का हीन विवाह जिसमें किसी सोई हुई या प्रमत्त कन्या का कौमार हरण करने वाला उसके पतित्व का अधिकारी हो जाता है (स्मृति)। एक प्रकार का पिशाच या राक्षस।

पैशाचिक—(वि०) [पिशाच+ठक्] पिशाच सम्बन्धी। पिशाच का। नारकीय। शैतानी, राक्षसी।

पैशाची—(स्त्री०) [पैशाच+ङीप्] किसी धार्मिक विधान के समय बनाया हुआ नैवेद्य। रात। एक प्रकार की निकृष्ट प्राकृतिक बोली।

पैशुन, पैशुन्य—(न०) [पिशुनस्य भावः कर्म वा, पिशुन+अण्] [पिशुन+ष्यञ्] चुगली, पीठ पीछे निन्दा। गुंडई, बदमाशी। दुष्टता।

पैष्ट—(वि०) [स्त्री०—पैष्टी] [पिष्ट+अण्] आटा या पिठी का बना हुआ।

पैष्टिक—(वि०) [स्त्री०—**पैष्टिकी**] [पिष्ट+ठञ्] आटा या पिठी का बना हुआ। (न०) कचौड़ी। अनाज से खींची हुई मदिरा।

पैष्टी—(स्त्री०) [पैष्ट+ङीप्] अनाज को सड़ाकर बनाया हुआ मद्य।

पोगण्ड—(वि०) [√पू+विच्, पौः शुद्धो गण्डो यस्य] पाँच से सोलह वर्ष तक की अवस्था का। [पोः गण्ड इव एकदेशोऽस्य] वह जिसका कोई अंग कम या विकृत हो। (पुं०) पाँच से सोलह वर्ष तक के भीतर का बालक।

पोट—(पुं०) [√पुट्+घञ्] घर की नींव। **—गल**–(पुं०) एक प्रकार का नरकुल। काँस। मछली-विशेष।

पोटक—(पुं०) [√पुट्+ण्वुल्] नौकर।

पोटा—(स्त्री०) [√पुट् + अच्–टाप्] मरदानी औरत, मर्दों के चिह्न दाढ़ी-मूँछ आदि से युक्त स्त्री। हिजड़ा। दासी।

पोटी—(स्त्री०) [पोट+ङीप्] गुदा। घड़ियाल की जाति का एक जलजंतु, नाक।

पोट्टलिका, पोट्टली—(स्त्री०) [पोट्टली+कन्–टाप्, ह्रस्व] [पोट √ली+ड–ङीप्, पृषो० साधुः] पोटली।

पोट्ट—(पुं०) [√पुट्+उन्] खोपड़ी की ऊपर वाली हड्डी।

पोत—(पुं०) [√पू+तन्] किसी भी जानवर का बच्चा। दस वर्ष की उम्र का हाथी। नाव, बेड़ाः 'पोतो दुस्तरवारिराशितरणे' हि० २.१६४। वस्त्र। वृक्ष का अँखुआ। वह स्थान जहाँ घर हो। वह भ्रूण जिस पर अभी झिल्ली न पड़ी हो। **—आच्छादन (पोताच्छादन)**–(न०) तंबू, कनात। **—आधान (पोताधान)**–(न०) मछलियों के बच्चों का समूह। **—वाहिन्**–(पुं०) जहाज का मालिक। **—भङ्ग**–(पुं०) जहाज का चट्टान से टकरा कर ध्वस्त हो जाना। **—रक्ष**–(पुं०) नाव का डाँड़। **—वणिज्**–(पुं०) व्यापारी जो समुद्र मार्ग से गमनागमन कर व्यापार करे। **—वाह**–(पुं०) माँझी, मल्लाह।

पोतक—(पुं०) [पोत √कै+क वा पोत+कन्] जानवर का बच्चा। छोटा वृक्ष। वह भूखण्ड जिस पर घर बना हो।

पोतास—(पुं०) [पोत√अस्+अच्] कपूर।

पोतृ—(पुं०) [√पू+तृन्] यज्ञ कराने वाले सोलह ब्राह्मणों में से एक जिसको याज्ञिक भाषा में "ब्रह्मन्" कहते हैं। पवित्र वायु। विष्णु।

पोत्या—(स्त्री०) [पोत+य] नावों या जहाजों का समूह।

पोत्र—(न०) [√पू+ष्ट्रन्] सुअर का थूथन या खाँग। वज्र। नाव। जहाज। हल की फाल। वस्त्र। यज्ञपात्र-विशेष जो पोता नामक याजक के पास रहता है। पोता नामक याजक का पद। **—आयुध (पोत्रायुध)**–(पुं०) शूकर, सुअर।

पोत्रिन्—(पुं०) [पोत्र+इनि] शूकर, सुअर।

पोल—(पुं०) (वि०) [√पुल्+ण] महत्त्व-युक्त, प्रभाव वाला। (पुं०) एक प्रकार की रोटी या फुलका। नाभि के नीचे का भाग, पेड़ू। पुंज, ढेर।

पोलिका, पोली—(स्त्री०) [पोली+कन्–टाप्, ह्रस्व] [पोल+ङीप्] पतली पूरी।

पोलिन्द—(पुं०) [पोतस्य अलिन्द इव, पृषो० साधुः] जहाज का मस्तूल।

पोष—(पुं०) [√पुष्+घञ्] पालन-पोषण, परवरिश। वृद्धि, बढ़ती। तुष्टि, सन्तोष। अभ्युदय, उन्नति। धन, दौलत।

पोषण—(न०) [√पुष्+ल्युट्] पोसना, पालन करना। बढ़ाना। समर्थन करना। सहायता देना।

पोषयित्नु—(पुं०) [√पुष् + णिच्+इत्नुच्] कोयल।

पोषित्—(वि०) [√पुष्+णिच् +तृच्]

पालन-पोषण करने वाला। (पुं०) परवरिश करने वाला, अभिभावक।

पोषित्, पोष्टृ—(वि०) [√पुष्+णिनि] [पुष्+तृच्] पालन-पोषण-कर्ता, खिलाने-पिलाने वाला। (पुं०) पालने-पोसने वाला व्यक्ति, रक्षक। एक तरह का करंज।

पोष्य—(वि०) [√पुष्+ण्यत्] पालनीय, पालने योग्य। जिसका पोषण करना आवश्यक हो।—**पुत्र,—सुत**–(पुं०) पुत्र के समान पाला हुआ लड़का, दत्तक।—**वर्ग**–(पुं०) माता, पिता, गुरु, पुत्र, पत्नी, सन्तान, अभ्यागत और शरणागत "पोष्यवर्ग" में हैं।

पौंश्चलीय—(वि०) [स्त्री०—**पौंश्चलीया**] [पुंश्चली+छण्] वेश्या या कुलटा सम्बन्धी।

पौंश्चल्य—(न०) [पुंश्चली+ष्यञ्] वेश्या-पन, कुलटापन।

पौंसवन—(न०) [पुंसवन+अण्] दे० 'पुंसवन'।

पौंस्न—(वि०) [स्त्री०—**पौंस्नी**] [पुंस्+स्नञ्] पुरुषोचित, मानव योग्य। (न०) पुरुषत्व। पौरुष।

पौगण्ड—(न०) [पोगण्ड+अण्] पाँच से दस (किसी-किसी के मत से सोलह] वर्ष तक की अवस्था। (वि०) पौगण्डावस्थायुक्त, पाँच से दस वर्ष तक के भीतर का।

पौण्ड्र—(पुं०) [पुण्ड्र+अण्] एक देश का नाम। उस देश के राजा या निवासी का नाम। गन्ना या ईख-विशेष। माथे पर का तिलक। भीम के शंख का नाम; 'पौण्ड्रं दध्मौ महाशङ्खं भीमकर्मा वृकोदरः' भग० १.१५।

पौण्ड्रक—(पुं०) [पौण्ड्र+कन्] पौंडा, गन्ना। वर्णसङ्कर जाति-विशेष।

पौतव—(न०) [=पौतव, पृषो० साधुः] एक तौल।

पौतिक—(न०) [पूतिक+अण्] एक प्रकार का शहद।

पौत्र—(वि०) [स्त्री०—**पौत्री**] [पुत्र+अण्] पुत्र सम्बन्धी या पुत्र से निकला हुआ। (पुं०) पुत्र का पुत्र, पोता।

पौत्री—(स्त्री०) [पौत्र+ङीप्] पुत्र की बेटी, पोती।

पौत्रिकेय—(पुं०) [पुत्रिका+ढक्] लड़की का लड़का जो अपने नाना की सम्पत्ति का उत्तराधिकारी हो।

पौनःपुनिक—(वि०) [स्त्री०—**पौनःपुनिकी**] [पुनः पुनः+ठञ्, टिलोप] बार-बार होने वाला, अक्सर दुहराया हुआ।

पौनःपुन्य—(न०) [पुनः पुनः+ष्यञ्] अनेकशः आवृत्ति, बार-बार होने का भाव।

पौनरुक्त, पौनरुक्त्य—(न०) [पुनरुक्त+अण्] [पुनरुक्त+ष्यञ्] बार-बार दुहराने की क्रिया। फालतूपना; 'अभिव्यक्तायां चान्द्रिकायां किं दीपिकापौनरुक्त्येन' वि० ३।

पौनर्भव—(वि०) [पुनर्भू+अञ्] उस विधवा सम्बन्धी, जिसने दूसरे पति के साथ विवाह किया हो। (पुं०) पुनर्विवाहिता विधवा का पुत्र, स्मृतियों में वर्णित १२ प्रकार के पुत्रों में से एक। किसी स्त्री का दूसरा पति।

पौर—(वि०) [स्त्री०—**पौरी**] [पुर+अण्] पुर सम्बन्धी, नगर का। जो नगर में पैदा हुआ हो। पेटू, औदरिक (वेद)। (पुं०) नागरिक, नगर निवासी। रोहिष नाम की घास।—**अङ्गना** (**पौराङ्गना**)—**योषित्**,—**स्त्री**–(स्त्री०) नगरवासिनी स्त्री।—**जानपद**–(वि०) नगर और देहात से सम्बन्धयुक्त। (पुं०) देहात और नगर का निवासी; 'कथं दुर्जनाः पौर-जानपदाः' उत्त० १।—**वृद्ध**–(पुं०) नगर का प्रतिष्ठित व्यक्ति, प्रमुख नागरिक।

—सख्य—(न०) एक नगर का नागरिक होना, सहनागरिकता ।
पौरक—(न०) [पौर√कै+क] नगर या पुर के समीप का उद्यान ।
पौरन्दर—(वि०) [स्त्री०—**पौरन्दरी**] [पुरन्दर+अण्] इन्द्र सम्बन्धी । (न०) ज्येष्ठा नक्षत्र ।
पौरव—(वि०) [स्त्री०—**पौरवी** [पुरु+अण्] पुरु से आया हुआ । पुरु सम्बन्धी । (पुं०) पुरु की सन्तान । आर्यावर्त का एक प्राचीन देश (म० भा०) । इस देश का राजा या निवासी ।
पौरवीय—(वि०) [स्त्री०—**पौरवीयी**] [पौरवो राजा भक्तिरस्य,पौरव+छ] जिसकी भक्ति पौरव राजा में हो, पौरव में अनुरक्त ।
पौरस्त्य—(वि०) [पुरस्+त्यक्] पूरब का, पूर्वीय । सब से आगे का । प्रथम, आद्य ।
पौराण—(वि०) [स्त्री०—**पौराणी**] [पुराण+अण्] पुरातन काल का, प्राचीन । आदि का । पुराण सम्बन्धी । पुराण से निकला हुआ ।
पौराणिक—(वि०) [स्त्री०—**पौराणिकी**] [पुराण+ठक्] प्राचीन, पुरातन । पुराण सम्बन्धी । पुराणों का जानकार । (पुं०) पुराण का जानकार व्यक्ति । पुराण-वाचक ।
पौरुष—(वि०) [स्त्री०—**पौरुषी**] [पुरुष+अण्] पुरुष सम्बन्धी । पुरुष का । (पुं०) उतना बोझ जितना कि एक आदमी ले जा सके । (न०) पुरुष का भाव, पुरुषत्व । पुरुषार्थ । शुक्र । उद्यम । पराक्रम । ऊँचाई या गहराई की एक नाप, पुरसा । पुरुष की निर्गेन्द्रिय ।
पौरुषी—(स्त्री०) [पौरुष+ङीप्] स्त्री, औरत ।
पौरुषेय—(वि०) [स्त्री०—**पौरुषेयी**] [पुरुष+ढञ्] पुरुष सम्बन्धी । पुरुष का । पुरुषकृत, आदमी का किया हुआ । आध्यात्मिक । (पुं०) पुरुषवध । मनुष्य-समूह । रोजंदारी पर काम करने वाला मजदूर । पुरुष का कर्म, मानव-कर्म ।
पौरुष्य—(न०) [पुरुष+ष्यञ्] मनुष्यता । साहस । वीरता ।
पौरोगव—(पुं०) [पुरोऽग्रे गौः नेत्रं यस्य, पुरोगु+अण्] पाकशालाध्यक्ष, राजा की पाकशाला का अध्यक्ष ।
पौरोभाग्य—(न०) [पुरोभागिन्+ष्यञ्, अन्त्यलोप, वृद्धि] दोषदर्शन । ईर्ष्या ।
पौरोहित्य—(न०) [पुरोहित+ष्यञ्] पुरोहिताई, पुरोहित का कर्म ।
पौर्णमास—(वि०) [स्त्री०—**पौर्णमासी**] [पूर्णमासी+अण्] पूर्णिमा सम्बन्धी । (पुं०) एक याग या इष्टिका जो पूर्णिमा के दिन होती है ।
पौर्णमासी, पौर्णमी—(स्त्री०) [पौर्णमास+ङीप्] [पूर्ण√मा+क+अण्—ङीप्] पूर्णिमा, पूरनमासी ।
पौर्णमास्य—(न०) [पौर्णमासी + यत् (वा०)] पूर्णिमा के दिन किया जाने वाला यज्ञ-विशेष ।
पौर्णिमा—(स्त्री०) [पूर्णिमा+अण्—टाप्] पूर्णमासी ।
पौर्तिक—(वि०) [स्त्री०—**पौर्तिकी**] [पूर्त+ठक्] पूर्त-साधक कर्म । परोपकार के कर्म ।
पौर्व—(वि०) [स्त्री०—**पौर्वी**] [पूर्व+अण्] भूतकाल सम्बन्धी । पूर्व दिशा सम्बन्धी ।
पौर्वदेहिक, पौर्वदैहिक—(वि०) [स्त्री०—**पौर्वदैहिकी**] [पूर्वदेह + ठक्] पूर्वजन्म-सम्बन्धी । पूर्वजन्म-कृत ।
पौर्वपदिक—(वि०) [स्त्री०—**पौर्वपदिकी**] [पूर्वपद+ठञ्] समास के पूर्वपद से संबद्ध ।
पौर्वापर्य—(न०) [पूर्वापर+ष्यञ्] आगे और पीछे का सम्बन्ध, अनुक्रम, सिलसिला ।

पौर्वाह्णिक—(वि०) [स्त्री०—**पौर्वाह्णिकी**] [पूर्वाह्ण+ठञ्] पूर्वाह्ण संबंधी। पूर्वाह्ण में किया जाने वाला।

पौर्विक—(वि०) [स्त्री०—**पौर्विकी**] [पूर्वस्मिन् भवः, पूर्व+ठञ्] पहिले का, पूर्व का। पैतृक। पुरातन, प्राचीन।

पौलस्त्य—(पुं०) [पुलस्तेः वा पुलस्त्यस्य अपत्यम् पुलस्ति वा पुलस्त्य+यञ्] रावण; 'पौलस्त्यः कथमन्यदारहरणे दोषं न विज्ञातवान्' पं० २ .४। कुबेर। विभीषण। चन्द्रमा।

पौलि—(पुं०, स्त्री०), **पौली**-(स्त्री०) [√पुल्+ण, पोलेन निर्वृत्तः, पोल+इञ्] [पौलि+ङीप्] पकने की अवस्था को प्राप्त फल आदि। कम भुना हुआ अन्न। इस प्रकार के अन्न की रोटी।

पौलोम—(वि०) [पुलोमन्+अण् अनो लोपः] पुलोमा संबंधी। पुलोमा के गोत्र में उत्पन्न। (पुं०) इन्द्र।

पौलोमी—(स्त्री०) [पौलोम+ङीप्] शची, इन्द्राणी; 'आशीरन्या न ते युक्ता पौलोम्या सदृशीभव' श० ७.२८।—**सम्भव**-(पुं०) जयन्त।

पौष—(पुं०) [पौषी पौर्णमासी अस्मिन्, पौषी+अण्] पूस मास।

पौषी—(स्त्री०) [पुष्यनक्षत्रेण युक्तः, पुष्य+अण्, यलोप—ङीप्] दूसरे मास की पूर्णिमा।

पौष्कर, पौष्करक—(वि०) [स्त्री० **पौष्करी** या **पौष्करकी**] [पुष्कर+अण् [पौष्कर+कन्] नील कमल सम्बन्धी।

पौष्करिणी—(स्त्री०) [पुष्कराणां समूहः अस्या अस्ति, पौष्कर+इनि—ङीप्] सरोवर जिसमें कमल हों।

पौष्कल—(पुं०) [पुष्कलेन निर्वृत्तम्, पुष्कल+अण्] अनाज विशेष।

पौष्कल्य—(न०) [पुष्कल+ष्यञ्] आधिक्य, अधिकता। पूर्ण वृद्धि।

पौष्टिक—(वि०) [स्त्री०—**पौष्टिकी**] [पुष्ट्यै वृद्ध्यै हितम्, पुष्टि+ठञ्] पुष्टिकारक, पुष्ट करने वाला, बलवीर्यदायक। (न०) धन, जन आदि की वृद्धि करने वाला कर्म। एक वस्त्र जो मुंडन-संस्कार के समय धारण किया जाता है।

पौष्ण—(न०) [पूषा देवता अस्य, पूषन्+अण्, उपधालोप] रेवती नक्षत्र।

पौष्प—(वि०) [स्त्री०—**पौष्पी**] [पुष्प+अण्] पुष्प सम्बन्धी, फूलों का। फूलों से निकला हुआ।

पौष्पी—(स्त्री०) [पौष्प+ङीप्] एक तरह की शराब जो फूलों से तैयार की जाती है। पाटलिपुत्र, पटना।

प्याट्—(अव्य०) [√प्याय्+डाटि (बा०)] हो, अहो कहकर पुकारने के लिये व्यवहृत होने वाला अव्यय-विशेष।

प्यान—(वि०) [√प्याय् वा √प्यै+क्त] स्फीत, बढ़ा हुआ। मोटा, पीन।

√प्याय्—भ्वा० आत्म० अक० बढ़ना। प्यायते, प्यायिष्यते, अप्यायि—अप्यायिष्ट।

प्यायन—(न०) [√प्याय्+ल्युट्] वृद्धि, वर्धन।

प्यायित—(वि०) [√प्याय्+क्त] जिसकी वृद्धि हुई हो। जिसकी शक्ति बढ़ गई हो। जो मोटा हो गया हो। जो तृप्त किया गया हो।

√प्यै—भ्वा० आत्म० अक० बढ़ना, वृद्धि को प्राप्त होना। पूर्ण हो जाना। प्यायते, प्यास्यते, अप्यास्त।

प्र—(अव्य०) [√प्रथ्+ड] जब यह उपसर्ग किसी क्रिया में लगाया जाता है, तब इसका अर्थ होता है आगे, सामने, पेश्तर, पहले, आगे की ओर; यथा प्रगम, प्रस्थान आदि। विशेषवाची शब्दों में लगाने से इसका अर्थ होता है—बहुत, अत्यधिकता से, अत्यधिक, यथा प्रकृष्ट, प्रशस्त आदि। (इ) संज्ञावाची

शब्दों के पूर्व लगाने पर इसका अर्थ होता है :—

(क) प्रारम्भ, प्रारम्भ। यथा—प्रस्थान।
(ख) लंबाई। यथा—प्रवालमूलिक।
(ग) बल। यथा—प्रभु।
(घ) घनिष्ठता। अत्याधिक्य। यथा—प्रवाद।
(ङ) उद्भव स्थान, निकास। यथा—प्रभव। प्रपौत्र।
(च) सम्पूर्णता, पूर्णता। यथा—प्रभुत्तमग्रम्।
(छ) राहित्य। वियोग। विना। यथा—प्रोषिता।
(ज) जुदा। यथा—प्रजू।
(झ) उत्तमता। यथा—प्राचार्यः।
(ञ) पवित्रता। यथा—प्रसन्नजलम्।
(त) अभिलाषा। यथा—प्रार्थना।
(थ) अवसान। यथा—प्रशम।
(द) सम्मान, प्रतिष्ठा। यथा—प्राञ्जलि।
(ध) विशिष्टता। यथा—प्रवाल। प्रणस।

प्रकट—(वि०) [प्र√कट्+अच्] जाहिर। प्रत्यक्ष। खुला, बे-परदा। जो दिखलाई पड़े। (अव्य०) साफ तौर से। प्रत्यक्षरीत्या।—**प्रीतिवर्द्धन**–(पुं०) शिव जी।

प्रकटन—(न०) [प्र √कट्+ल्युट्] प्रकट या प्रत्यक्ष होने की क्रिया।

प्रकटित—(वि०) [प्र√कट्+क्त] प्रकट किया हुआ। प्रत्यक्ष किया हुआ। सर्वसाधारण के सामने रखा हुआ। साफ।

प्रकम्प—(पुं०) [प्र√कम्प्+घञ्] कंपकंपी, थरथराहट।

प्रकम्पन—(वि०) [प्र√कम्प् + णिच् +ल्यु] कँपाने वाला। हिलाने वाला। (पुं०) पवन, आँधी; 'प्रकम्पनेनानुचकम्पिरे सुराः' शि० १.६७। नरक-विशेष। (न०) [प्र√कम्प्+ल्युट्] अत्यधिक कँपकँपी या थरथराहट।

प्रकर—(न०) [प्र√कृ वा√कृ+अप्] अगर की लकड़ी। (पुं०) ढेर। समूह; 'बाणप्रकरकलुषां दृष्टिं' श० ६.८। गुलदस्ता। साहाय्य, सहायता। मैत्री। चलन, प्रथा। सम्मान। बरजोरी हरण, उड़ारना।

प्रकरण—(न०) [प्र√कृ +ल्युट्] निर्माण, रचना। किसी विषय को समझने या समझाने के लिये उस पर वादविवाद करना, जिक्र करना। विषय, प्रसङ्ग। किसी ग्रन्थ के अन्तर्गत छोटे-छोटे भागों में से कोई भाग, परिच्छेद। अवसर, मौका। प्रारम्भिक वक्तव्य, मुखबन्ध। दृश्य काव्य के अन्तर्गत रूपक के दस भेदों में से एक।—**सम**–(पुं०) सत्पक्ष नामक हेत्वाभास। (न्या०)।

प्रकरणिका, प्रकरणी—(स्त्री०) [प्रकरणी +कन्—टाप्, ह्रस्व] [प्रकरण+ङीप्] वह नाटक जो प्रकरण जैसा ही हो, पर आकार में उससे छोटा हो।

प्रकरिका—(स्त्री०) [प्रकरी+कन् —टाप्, ह्रस्व] दृश्य काव्य का स्थल-विशेष जो उसमें लगा दिया जाता है और जो यह बतलाता है कि आगे क्या होने वाला है।

प्रकरी—(स्त्री०) [प्रकर+ङीष्] नाटक के किन्हीं दो अंकों के बीच का वह अंश जिसमें आगे होने वाली घटना की सूचना दी जाती है। नटों की पोशाक। मैदान। चौराहा। गान-विशेष।

प्रकर्ष—(पुं०) [प्र√कृष्+घञ्] उत्तमता; 'वपुःप्रकर्षादजयद् गुरुं रघुः' र० ३.३४। अधिकता। बल। खींचने की क्रिया। विस्तार। विशेषता।

प्रकर्षण—(न०) [प्र √कृष्+ल्युट्] खींच लेने की क्रिया। हल जोतने की क्रिया। प्रसार। उत्कृष्टता। विकलता। चाबुक। लगाम। सूद से अधिक रुपया वसूल करना।

प्रकला—(स्त्री०) [प्रा० स०] एक कला

(समय) का आठवाँ भाग।—**विद्**–(वि०) जानता। (पुं०) व्यापारी।

प्रकल्पना—(स्त्री०) [प्र√कृप्+णिच्+युच्] निश्चित करना, स्थिर करना।

प्रकल्पित—(स्त्री०) [प्र√कृप्+णिच्+क्त] बनाया हुआ, निर्माण किया हुआ। निश्चित किया हुआ, निर्दिष्ट किया हुआ।

प्रकल्पिता—(स्त्री०) [प्रकल्पित+टाप्] एक प्रकार की बड़ी पहेली। एक प्रकार की पहेली या बुझौवल।

प्रकाण्ड—(न०, पुं०) [प्रकृष्टः काण्डः, प्रा० स०] वृक्ष का तना, स्कन्ध। डाली, शाखा। बाँह का ऊपरी भाग। (वि०) [प्रा० ब०] बहुत बड़ा। (समास के अन्त में) अपनी जाति में सर्वोत्कृष्ट।

प्रकाण्डक—(पुं०) [प्रकाण्ड+कन्] दे० 'प्रकाण्ड'।

प्रकाण्डर—(पुं०) [प्रकाण्ड√रा+क] वृक्ष, पेड़।

प्रकाम—(पुं०) [प्रा० स०] अभिलाषा। तृप्ति, संतोष। (वि०) [प्रा० ब०] यथेष्ट, काफी। जिसमें काम-वासना की अधिकता हो।—**भुज्**–(वि०) अघाकर खाने वाला।

प्रकामम्—(अव्य०) [प्र√कम्+णमुल्] अत्यधिक; 'जातो ममायं विशदः प्रकामं' श० ४.२१। पर्याप्त रूप से, कामनानुसार। स्वेच्छानुसार।

प्रकार—(पुं०) [प्र√कृ+घञ्] ढंग, तौर-तरीका, प्रणाली। तरह, भाँति। भेद, किस्म। साम्य, सादृश्य। विशेषता, विशिष्टता।

प्रकाश—(वि०) [प्र√काश्+अच्] चमकीला। सुस्पष्ट। प्रत्यक्ष। सतेज, उज्ज्वल। प्रसिद्ध, प्रख्यात। प्रकट। (स्थान) जहाँ से वृक्ष आदि काट कर साफ कर दिये गये हों। बढ़ा हुआ। सदृश। (पुं०) रोशनी, उजियाला। चमक, आभा। (आलं०) व्याख्या; (यथा काव्यप्रकाश)। धूप, घाम। प्राकट्य। कीर्ति। ख्याति। मैदान। सुनहला दर्पण। किसी ग्रन्थ का कोई विभाग, परिच्छेद।—**आत्मक** (**प्रकाशात्मक**)–(वि०) चमकीला, उज्ज्वल।—**आत्मन्** (**प्रकाशात्मन्**)–(वि०) चमकीला, सतेज। (पुं०) शिव। विष्णु। सूर्य।—**इतर**(**प्रकाशेतर**)–(वि०) अदृश्य, जो देख न पड़े।—**क्रय**–(पुं०) खुल्लमखुल्ला खरीद।—**नारी**–(स्त्री०) रंडी, वेश्या।

प्रकाशम्—(अव्य०) [प्र√काश्+णमुल्] खुल्लमखुल्ला, साफ तौर पर। चिल्ला कर।

प्रकाशक—(वि०) [स्त्री०—**प्रकाशिका**] [प्र√काश्+णिच्+ण्वुल्] प्रकट करने वाला, दिखलाने वाला। व्यक्त करने वाला, व्याख्या करने वाला। चमकीला। प्रसिद्ध। (पुं०) सूर्य। आविष्कारकर्ता। व्याख्या-कर्ता। प्रसिद्ध करने वाला, जैसे—ग्रंथ-प्रकाशक।—**ज्ञातृ**–(पुं०) मुर्गा।

प्रकाशन—(वि०) [प्र√काश्+णिच्+ल्यु] प्रकट करने वाला। प्रसिद्ध करने वाला। (पुं०) विष्णु। (न०) [प्र√काश्+णिच्+ल्युट्] प्रकाशित करने का काम, प्रकाश में लाने का काम।

प्रकाशित—(वि०) [प्र√काश्+णिच्+क्त] प्रकट किया हुआ, प्रसिद्ध किया हुआ। चमकता हुआ। जिसमें से प्रकाश निकल रहा हो। प्रत्यक्ष, जो देख पड़े। स्पष्ट।

प्रकाशिन्—(वि०) [प्रकाश+इनि] प्रकाश-युक्त, चमकीला।

प्रकिरण—(न०) [प्र√कॄ+ल्युट्] बिखेरना। फैलाना। मिश्रण।

प्रकीर्ण—(वि०) [प्र√कॄ+क्त] बिखरा हुआ। फैला हुआ। लहराता हुआ। अस्त-व्यस्त। असंलग्न, असम्बद्ध। उद्विग्न। फुटकर। मिला-जुला। परिशिष्ट। (न०) फुटकल वस्तुओं का संग्रह। अध्याय जिसमें फुटकल नियमों का संग्रह हो। विक्षेप।

विस्तार। चँवर। अनेक प्रकार की वस्तुओं का मिश्रण। बिखेरना।

प्रकीर्णक—(वि०) [प्रकीर्ण+कन्] बिखरा हुआ। (न०, पुं०) चँवर। घोड़े के सिर पर लगायी जाने वाली कलगी। (न०) फुटकल वस्तुओं का संग्रह। वह परिच्छेद या प्रकरण जिसमें फुटकल बातें दी गई हों। वह पाप जिसका प्रायश्चित्त धर्मग्रंथों में न बताया गया हो। (पुं०) घोड़ा।

प्रकीर्तन—(न०) [प्र √कॄत् + ल्युट्] बोलना। प्रशंसा करना।

प्रकीर्ति—(स्त्री०) [प्रा० स०] प्रशंसा। ख्याति, प्रसिद्धि। घोषणा।

प्रकुञ्च—(पुं०) [प्र√कुञ्च्+घञ्] आठ तोले या एक पल का माप।

प्रकुपित—(वि०) [प्रा० स०] अत्यन्त क्रुद्ध। उत्तेजित।

प्रकुल—(न०) [प्र√कुल्+क] सुन्दर शरीर, सुडौल बदन।

प्रकूष्माण्डी—(स्त्री०) [प्रा० ब०, ङीप्] दुर्गा।

प्रकृत—(वि०) [प्र√कृ+क्त] सुसम्पन्न। प्रारब्ध, शुरू किया हुआ। नियुक्त किया हुआ। असली, यथार्थ। जिसका प्रसंग छिड़ा हो, प्रकरणप्राप्त। आवश्यक। मनोरञ्जक। (न०) वास्तविक विषय। प्रस्तुत विषय।—**अर्थ (प्रकृतार्थ)**–(वि०) यथार्थ भाव बतलाने वाला। (पुं०) वास्तविक भाव।

प्रकृति—(स्त्री०) [प्रक्रियते कार्यादिकम् अनया, प्र√कृ+क्तिन्] स्वभाव, मिजाज; 'प्रकृतिः खलु सा महीयसः सहते नान्यसमुन्नतिं यया' कि० २.२१। बनावट, आकार। निकास। परंपरा। उद्गम स्थल। (सांख्यदर्शन में पुरुष और प्रकृति को छोड़ तीसरी वस्तु नहीं मानी गयी)। आदर्श, नमूना। स्त्री। परब्रह्म का मूर्तिमान् सङ्कल्प, जिसके कारण सृष्टि की उत्पत्ति होती है। पुरुष या स्त्री की जननेन्द्रिय, लिङ्ग, भग। माता। (बहु०) राजा के अमात्य, मंत्रिमण्डल। राजा की प्रजा; 'प्रवर्तताम् प्रकृतिहिताय पार्थिवः' श०७.३५। राजतंत्र के अङ्ग जो सात माने गये हैं।—"स्वाम्यमात्यसुहृत्कोशराष्ट्रदुर्गबलानि च।"—सांख्यदर्शन के अनुसार आठ प्रधान तत्त्व जिनसे हरएक वस्तु उत्पन्न होती है। सृष्टि को बनाने वाले ५ तत्त्व।—**ईश (प्रकृतीश)**–(पुं०) राजा या जिले का हाकिम।—**कृपण**–(वि०) स्वभाव से मूर्ख या जो पहचान न सके।—**तरल**–(वि०) स्वभाव से चञ्चल।—**पुरुष**–(पुं०) अमात्य, पुरोहित।—**भाव**—(पुं०) मूल, अविकृत रूप।—**मण्डल**–(न०) स्वामी, अमात्य, सुहृद्, कोष, राष्ट्र, दुर्ग और बल—ये सात राज्यांग। समूचा राज्य या राष्ट्र या बादशाहत।—**लय**–(पुं०) प्रकृति में लीन होना।—**सिद्ध**–(वि०) नैसर्गिक, स्वाभाविक।—**सुभग**–(वि०) स्वभाव से मनोहर।—**स्थ**–(वि०) जो अपनी स्वाभाविक अवस्था में हो। स्वस्थ, आरोग्यता प्राप्त किया हुआ।

प्रकृष्ट—(वि०) [प्र √कृष्+क्त] आकृष्ट, खिंचा हुआ। लंबा, दीर्घ। उत्कृष्ट। प्रधान, मुख्य। विक्षिप्त, अशान्त।

प्रक्लृप्त—(वि०) [प्र√क्लृप्+क्त] तैयार किया हुआ, बनाया हुआ। सुव्यवस्थित।

प्रकोप—(पुं०) [प्र√कुप्+घञ्] भड़कना। कुपित होना। सुलगना, क्षोभ।

प्रकोष्ठ—(पुं०) [प्र √कुष्+स्थन्] कोहनी के नीचे का भाग; 'कनकवलयभ्रंशरिक्तप्रकोष्ठः' मे० २। दरवाजे के समीप का कोठा। घर का आँगन।

प्रकोष्ठक—(पुं०) [प्रकोष्ठ+कन्] बड़े दरवाजे के पास की कोठरी; 'तस्थुषिनस्क्षितिपालसंकुले नवकुनद्वारबहिःप्रकोष्ठके' कु० १५.६।

प्रक्खर—(वि०) [=प्रखर, पृषो० साधुः] अतितीक्ष्ण। (पु०) घोड़े या हाथी का कवच। कुत्ता। खच्चर।

प्रक्रम—(पु०) [प्र√क्रम्+घञ्] पग, कदम। तरतीब, सिलसिला। आरम्भ, उपक्रम। अवसर। अनुपात।—**भङ्ग**—(पु०) किसी कार्य में किसी आरम्भ किये हुए क्रम का उल्लङ्घन। साहित्य का एक दोष जो उस समय माना जाता है, जिस समय किसी विषय के वर्णन में आरम्भ किये हुए क्रम आदि का यथावत् पालन नहीं किया जाता।

प्रक्रमण—(न०) [प्र √क्रम्+ल्युट्—अन] आरंभ करना। कदम बढ़ाना। अधिक भ्रमण।

प्रक्रान्त—(वि०) [प्र √क्रम्+क्त] आरम्भ किया हुआ। गया हुआ। प्रस्तुत। विवादग्रस्त। वीर। (न०) यात्रा का आरंभ। वाद का विषय।

प्रक्रिया—(स्त्री०) [प्र√कृ+श] ढंग, तरीका। संस्कार। राजचिह्न (छत्रादि) का धारण करना। उत्पाद। ग्रन्थ का अध्याय, परिच्छेद। व्याकरण में वाक्यरचना-प्रणाली। अधिकार।

प्रक्रीड—(पु०) [प्र√क्रीड्+अच्] खेल, क्रीड़ा, आमोद-प्रमोद।

प्रक्लिन्न—(वि०) [प्र√क्लिद्+क्त] तर, नम, भींगा हुआ। तृप्त, अघाया हुआ। करुणापूर्ण, दयामय।

प्रक्वण, प्रक्वाण—(पु०) [प्र√क्वण्+ अप्] वीणा की झनकार।

प्रक्षय—(पु०) [प्र√क्षि+अच्] नाश, बरबादी।

प्रक्षरण—(न०) [प्र√क्षर्+ल्युट्] टपकना, चूना। बहना।

प्रक्षालन—(न०) [प्र √क्षल् + णिच् +ल्युट्] धोना। माँजना, साफ करना। स्नान करना। कोई भी वस्तु जो साफ करने के काम में आवे। धोने के लिये जल।

प्रक्षालित—(वि०) [प्र √क्षल् + णिच् +क्त] धोया हुआ, साफ किया हुआ। पवित्र किया हुआ। प्रायश्चित्त करा के शुद्ध किया हुआ।

प्रक्षिप्त—(वि०) [प्र√क्षिप्+क्त] फेंका हुआ। घुसेड़ा हुआ। बढ़ाया हुआ। ऊपर से मिलाया हुआ।

प्रक्षीण—(वि०) [प्र √क्षि+क्त] जीर्ण। नष्ट किया हुआ। प्रायश्चित करके पवित्र किया हुआ। लुप्त।

प्रक्षुण्ण—(वि०) [प्र √क्षुद्+क्त] कुचला हुआ। भेदा हुआ, छेदा हुआ। उत्तेजित किया हुआ।

प्रक्षेप—(पु०) [प्र √क्षिप्+घञ्] फेंकना, डालना। छितराना, बिखेरना। ऊपर से मिलाना। गाड़ी का बक्स या भण्डारी। किसी व्यापार के हिस्सेदारों का जमा किया हुआ अपने-अपने हिस्सों का रुपया।

प्रक्षेपण—(न०) [प्र√क्षिप्+ल्युट्] फेंकना, डालना। ऊपर से मिलाना। नियत करना (मूल्य आदि)।

प्रक्षोभण—(न०) [प्र √क्षुभ् + ल्युट्] घबराहट, बेचैनी।

प्रक्ष्वेडन—(पु०) [प्र√क्ष्विड् +ल्यु] लोहे का बाण। शोर-गुल, कोलाहल।

प्रखर—(वि०) [प्रकृष्टः खरः, प्रा० स०] अत्यन्त उष्ण। बड़ा तेज या तीव्र। बड़ा कठोर या रूखा। (पु०) खच्चर। कुत्ता। घोड़े की पाखर या हाथी का कवच।

प्रख्य—(वि०) [प्र√ख्या+क] प्रत्यक्ष। स्पष्ट। सदृश।

प्रख्या—(स्त्री०) [प्र√ख्या + अङ्—टाप्] प्रत्यक्ष-गोचरत्व। प्रसिद्धि, प्रख्याति; 'स्ववसतपरमप्रख्याः सम्प्रत्येव पुरीमिमाम्' वा०। प्रकाशित वस्तु या विषय। सादृश्य, समानता।

प्रख्यात—(वि०) [प्र √ख्या+क्त] प्रसिद्ध, मशहूर। आने ही से मोल लिया हुआ। प्रसन्न, आह्लादित।—**वप्तृक**-(वि०) प्रसिद्ध पिता वाला।

प्रख्यान—(न०) [प्र √ख्या+ल्युट्—अन] खबर देना, सूचित करना। अनुभव करना।

प्रख्याति—(स्त्री०) [प्र√ख्या + क्तिन्] शुहरत, प्रसिद्धि। प्रशंसा, तारीफ।

प्रगण्ड—(पुं०) [प्रत्यासन्नो गण्डो ग्रन्थिर्यस्य, प्रा० ब०] कंधे से लेकर कोहनी तक का भाग।

प्रगण्डी—(स्त्री०) [प्रगण्ड+ङीष्] नगर के परकोट की दीवाल।

प्रगत—(वि०) [प्र√गम्+क्त] आगे गया हुआ। जुदा, अलग।—**जानु**—**जानुक**-(वि०) जिसके घुटने एक दूसरे से बहुत अलग हों (ऐसे प्राणी की टाँगें प्रायः धनुषाकार होती हैं)।

प्रगम—(पुं०) [प्र √गम्+अप्] आगे बढ़ना। प्रेम का प्रथम प्रदर्शन।

प्रगमन—(न०) [प्र√गम्+ल्युट्] आगे बढ़ना, उन्नति करना। प्रेमस्थापन में प्रथम प्रेमदर्शन।

प्रगर्जन—(न०) [प्र √गर्ज्+ल्युट्] गरजने की क्रिया। चिल्लाना।

प्रगल्भ—(वि०) [प्र√गल्भ्+अच्] साहसी, उत्साही। निर्भय, निडर। वाग्मी। हाज़िर-जवाब, प्रत्युत्पन्नमति। दृढ़प्रतिज्ञ। प्रौढ़। पूर्ण वृद्धि को प्राप्त। दृढ़। निपुण। अभिमानी। निर्लज्ज। आदर्श। प्रसिद्ध।

प्रगल्भा—(स्त्री०) [प्रगल्भ+टाप्] साहसी स्त्री। नायिकाओं में से एक।

प्रगाढ़—(वि०) [प्र√गाह्+क्त] तर, भीगा हुआ। डूबा हुआ। अधिक, बहुत। दृढ़, मजबूत। कड़ा, सख्त। (न०) तंगी, अभाव। तपस्या, शारीरिक तप।

प्रगाढम्—(अव्य०) अत्यधिकता से। दृढ़ता से।

प्रगातृ—(पुं०) [प्र√गै+तृच्] उत्तम गवैया।

प्रगुण—(वि०) [प्रकर्षेण गुणो यत्र, प्रा० ब०] अच्छे गुणों वाला; 'श्रमजयात्प्रगुणां च करोत्यसौ' र० ९.४९। सीधा, ईमानदार। योग्य। निपुण, पटु।

प्रगुणित—(वि०) [प्र√गुण्+क्त] सीधा किया हुआ। चिकनाया हुआ।

प्रगृहीत—(वि०) [प्र√ग्रह्+क्त] जो भली भाँति ग्रहण किया गया हो। प्राप्त। स्वीकृत। जिसका उच्चारण सन्धि के नियमों का ध्यान रखे बिना किया गया हो।

प्रगृह्य—(न०) [प्र√ग्रह्+क्यप्] वह पद जिस पर सन्धि के नियमों का प्रभाव न पड़े और जो स्वतंत्र रीति से लिखा जाय और बोला जाय।

प्रगे—(अव्य०) [प्रकर्षेण गीयतेऽत्र, प्र√गै+के] बड़े तड़के, भोर ही; 'सायं स्नायात्प्रगे तथा' मनु० ६.६।—**तन**-(वि०) [प्रगे प्रातः भवः प्रगे+ट्यु, तुट्] प्रातः काल किया जाने वाला।—**निद्र**,—**शय**-(वि०) जो सबेरा होने पर भी सोता रहे।

प्रगोपन—(न०) [प्र √गुप्+ल्युट्] रक्षण, बचाव।

प्रग्रथन—(न०) [प्र√ग्रन्थ्+ल्युट्] बुनना। गूँथना।

प्रग्रह—(पुं०) [प्र√ग्रह्+अप्] धारण, ग्रहण। चन्द्र या सूर्य के ग्रहण का आरम्भ। लगाम, रास। रोक-थाम। बन्धन। बँधुआ, कैदी। (घोड़े आदि पशुओं को) साधना। किरण। तराजू की डोरी। स्वर जिसमें सन्धि के नियम लागू न हों।

प्रग्रहण—(न०) [प्र√ग्रह्+ल्युट्] पकड़ना, धरना। सूर्य या चन्द्र ग्रहण का आरम्भ। लगाम। बंधन। नियमन। घोड़े आदि को साधना। नेतृत्व करना।

प्रग्राह—(पुं०) [प्र√ग्रह्+घञ्] पकड़,

ग्रान। ढोना, ले जाना। तराजू की डोरी। लगाम, रास।

प्रग्रीव—(न०, पुं०) [प्रकृष्टा ग्रीवा आकृतिः अस्य, प्रा० ब०] रँगा हुआ कलस या बुर्जी। किसी मकान के चारों ओर लकड़ी का बनाया हुआ घेरा। तबेला। वृक्ष की फुनगी।

प्रघटक—(पुं०) [प्र√घट् + णिच्+ण्वुल्] नियम। सिद्धान्त। आदेश।

प्रघटा—(स्त्री०) [प्रा० स०] किसी विज्ञान के प्रारम्भिक सिद्धान्त।—**विद्**–(पुं०) फालतू विषय पढ़ने वाला, बकवादी।

प्रघण, प्रघन, प्रघाण, प्रघान—(पुं०) [प्र √हन्+अप्, पक्षे णत्वाभावः] [प्र√हन् +अप्, वृद्धि, पक्षे णत्वाभावः] दैहली के दरवाजे के सामने छाया हुआ स्थान, बरसाती। बरामदा। ताँबे का बरतन। लोहे की गदा या घन।

प्रघस—(वि०) [प्र√अद्+अप्, घसादेश] पेटू, मरभुक्खा। (पुं०) राक्षस। भुक्खड़पन, पेटूपन।

प्रघात—(पुं०) [प्र√हन्+घञ्] वध। युद्ध, लड़ाई।

प्रघुण—(पुं०) [प्र√घुण् +क] मेहमान, अतिथि।

प्रघूर्ण—(पुं०) [प्र√घूर्ण् +अच्] मेहमान, अतिथि।

प्रघोष—(पुं०) [प्र√घुष् +घञ्] आवाज, शोर। गर्जन।

प्रचक्र—(न०) [प्रगतश्चक्रम्, प्रा० स०] सेना जो रवानगी में हो।

प्रचक्षस्—(पुं०) [प्र√चक्ष् +असुन्] बृहस्पति ग्रह। बृहस्पति का नामान्तर।

प्रचण्ड—(वि०) [प्रकर्षेण चण्डः, प्रा० स०] अत्यन्त तीव्र, प्रखर। बलवान्। अतितेजस्वी। क्रोधमूर्च्छित, तीव्रकोपी। साहसी। भयङ्कर। असह्य, दुस्सह।—**आतप** (**प्रचण्डातप**)–(पुं०) भयङ्कर गर्मी।—**घोण**–(वि०) लंबी नाक वाला।—**मूर्ति**–(पुं०) वरुण वृक्ष। (स्त्री०) भारी और बली शरीर।—**सूर्य**–(पुं०) ऐसी कड़ी धूप जो सही न जाय।

प्रचय, प्रचाय—(पुं०) [प्र√चि+अच्] [प्र √चि+घञ्] संग्रह, एकत्रकरण। ढेर, राशि। वृद्धि, बढ़ती। साधारण मेल-मिलाप।

प्रचयन—(न०) [प्र√चि+ल्युट्] संग्रह, एकत्रीकरण।

प्रचर—(पुं०) [प्र √चर्+अप्] रास्ता, मार्ग। रीति, रिवाज।

प्रचल—(वि०) [प्र√चल्+अच्] थरथराता हुआ, काँपता हुआ। प्रचलित, रिवाज के मुताबिक।

प्रचलाक—(पुं०) [प्र√चल् +आकन्] बाण का आघात। मयूर की पूँछ। सर्प।

प्रचलाकिन्—(पुं०) [प्रचलाक+इनि] मयूर, मोरः एतस्मिन्प्रचलाकिनाम्प्रचलताम् उत्त० २.२६।

प्रचलायित—(वि०) [प्रचल+क्यङ् +क्त] लुढ़कता हुआ। निद्रा आदि के कारण जिसका सिर झुक रहा हो।

प्रचायिका—(स्त्री०) [प्र√चि + ण्वुल्] बारी-बारी से फूल आदि चुनना। [प्र√चि +ण्वुल्] पुष्प आदि का चयन करने वाली स्त्री।

प्रचार—(पुं०) [प्र√चर् + घञ्] घूमना-फिरना। प्रत्यक्ष होना, दृष्टिगोचर होना। चलन, रिवाज। किसी वस्तु का निरन्तर व्यवहार या उपयोग। चालचलन, आचरण। रीति-रस्म। क्रीडास्थली, अखाड़ा। चरागाह। पथ, मार्ग।

प्रचाल—(पुं०) [प्रकृष्टः चालः, प्रा० स०] वीणा की गरदन।

प्रचालन—(न०) [प्र√चल् + णिच् ल्युट्] भली भाँति गड़बड़ करना, हिलाना-डुलाना।

प्रचित—(वि०) [प्र √चि+क्त] जिसका चयन हुआ हो, चुना हुआ। एकत्रित किया हुआ, संग्रह किया हुआ। अनदाने भरा हुआ। वृद्धि को प्राप्त।

प्रचुर—(वि०) [प्र√चुर् +क वा प्रगतम् चुरायाः, प्रा० स०] बहुत अधिक, विपुल। बहुत बड़ा। पूर्ण। (पुं०) चोर।—**पुरुष**—(वि०) आबाद, बसा हुआ। (पुं०) चोर।

प्रचेतस्—(पुं०) [प्र√चित्+असुन्] वरुण का नामान्तर; 'पाशी पाशः प्रचेतसः' कु० २.२१। एक प्राचीन ऋषि जो स्मृतिकार भी थे। प्राचीनबर्हि के दस पुत्र।

प्रचेतृ—(पुं०) [प्र√चि+तृच्] चयन करने वाला व्यक्ति। सारथी, रथ हाँकने वाला।

प्रचेय—(वि०) [प्र √चि+यत्] चयन के योग्य, चुनने योग्य। वृद्धि के योग्य।

प्रचेल—(न०) [प्र √चेल्+घञ्] पीला चन्दन काष्ठ।

प्रचेलक—(पुं०) [प्र√चेल्+ण्वुल्] घोड़ा, अश्व। (वि०) तीव्र गति वाला।

प्रचोदन—(न०) [प्र√चुद्+ल्युट्] प्रेरणा, उत्तेजन। प्रवृत्ति। आदेश। नियम।

प्रचोदित—(वि०) [प्र√चुद्+क्त] प्रेरित। उत्तेजित। प्रवर्तित। आज्ञप्त। निर्देश दिया हुआ। प्रेषित। भेजा हुआ। निश्चय किया हुआ।

√प्रच्छ्—तु० पर० सक० पूछना, प्रश्न करना। तलाश करना, खोजना। पृच्छति, प्रक्ष्यति, अप्राक्षीत्।

प्रच्छद—(पुं०) [प्र√छद् + णिच्+घ] ढकने वाला कपड़ा आदि, आच्छादन। बिछावन की चादर।—**पट**—(पुं०) ढकने या ओढ़ने का कपड़ा (चादर, ओहार)। बुरका। बिछावन। बिछावन की चादर।

प्रच्छन—(न०), **प्रच्छना**—(स्त्री०) [√प्रच्छ् +ल्युट्] [√प्रच्छ् + युच्—टाप्] जिज्ञासा, प्रश्न। आमंत्रण।

प्रच्छन्न—(वि०) [प्र √छद्+क्त] ढका हुआ, आच्छन्न। छिपा हुआ, गुप्त।—**तस्कर**—(पुं०) ऐसा चोर जो चोरी करते कभी देखा न गया हो, किन्तु चोरी अवश्य करता हो।

प्रच्छर्दन—(न०) [प्र√छर्द्+ल्युट्] प्राणवायु को नाक के द्वारा बाहर निकालने की क्रिया, रेचन। वमन, कै।

प्रच्छर्दिका—(स्त्री०) [प्र√छर्द् +ण्वुल्—टाप्, इत्व] कै आने का रोग, वमन।

प्रच्छादन—(न०) [प्र √छद् + णिच् ल्युट्] ढकना। छिपाना। उत्तरीय, ओढ़नी।

प्रच्छादित—(वि०) [प्र √छद् + णिच् +क्त] ढका हुआ, आवृत। छिपाया हुआ।

प्रच्छाय—(न०) [प्रकृष्टा छाया यत्र] सघन छायादार स्थान; 'प्रच्छायसुलभनिद्रादिवसाः परिणामरमणीयाः' श० १.३

प्रच्छिल—(वि०) [√प्रच्छ् +इलच्] निर्जल, सूखा हुआ।

प्रच्यव—(पुं०) [प्र√च्यु+घञ् वा अप्] क्षरण। अधःपात। नाश। वापिसी।

प्रच्यवन—(न०) [प्र√च्यु+ल्युट्] पतन। पीछे की ओर हटाव। हानि। क्षरण, टपकना, चूना।

प्रच्युत—(वि०)[प्र√च्यु+क्त] झड़ा हुआ, टूटकर गिरा हुआ। अपने स्थान से हटा हुआ। अधःपतित।

प्रच्युति—(स्त्री०) [प्र√च्यु+क्तिन्] अपने स्थान से गिरने या हटने का भाव। हानि। अधःपात।

प्रज—(पुं०) [प्रविश्य जायायां जायते, प्र √जन्+ड] पति, स्वामी।

प्रजन—(पुं०) [प्र√जन्+घञ्] गर्भाधान के लिये नर पशु द्वारा मादा से संगम। संतान उत्पन्न करना। जन्मदाता, जनक।

प्रजनन—(न०) [प्र√जन्+ल्युट्] संतान

उत्पन्न करना। जन्म, पैदाइश। वीर्य। भग, लिंग। संतान। नर पशु का (गर्भाधान के लिये) मादा से संगम करना। (वि०) [प्र √जन्+णिच्+ल्यु] उत्पन्न करने वाला।

प्रजनिका—(स्त्री०) [प्र √जन् + णिच् +ण्वुल्—टाप्, इत्व] माता, जननी।

प्रजनुक—(पुं०) [प्र√जन् + उक] शरीर, देह।

प्रजनू—(स्त्री०) [प्र√जन् + ऊ] संतान उत्पन्न करने का काम। भग।

प्रजल्प—(पुं०) [प्र √जल्प्+घञ्] गप्प-शप्प। बकवाद, ऊटपटांग बातचीत।

प्रजल्पन—(न०) [प्र√जल्प् +ल्युट्] वार्तालाप। गपशप।

प्रजविन्—(वि०) [स्त्री०—**प्रजविनी**] [प्र √जु+इनि] तेज, वेगवान्। (पुं०) दूत, हरकारा।

प्रजा—(स्त्री०) [प्र √जन्+ड—टाप्] सन्तान, औलाद। उत्पत्ति, जन्म। प्राणी। किसी राज्य या राष्ट्र की जनता; 'प्रजाः प्रजाः स्वा इव तन्त्रयित्वा' श० ५.५। वीर्य।—**अन्तक** (**प्रजान्तक**)–(पुं०) यम।—**ईप्सु** (**प्रजेप्सु**)–(वि०) सन्तानेच्छुक।—**ईश** (**प्रजेश**), —**ईश्वर** (**प्रजेश्वर**)–(पुं०) प्रजापति। राजा।—**उत्पादन** (**प्रजोत्पादन**)–(न०) सन्तान उत्पन्न करने की क्रिया।—**काम**–(वि०) सन्तानेच्छुक।—**तन्तु**–(पुं०) कुल, वंश। वंशपरम्परा।—**तन्त्र**—(न०) प्रजा या प्रजा के प्रतिनिधियों द्वारा परिचालित शासन-व्यवस्था।—**दान**–(न०) [प्रजातः जन्मतः दानं शुद्धिः अस्य] रजत, चाँदी।—**नाथ**–(पुं०) राजा। ब्रह्मा। मनु। दक्ष।—**निषेक**–(पुं०) गर्भस्थापन, गर्भाधान।—**प**–(पुं०) राजा।—**पति**–(पुं०) सृष्टि उत्पन्न करने वाला। ब्रह्मा जी का नामान्तर। ब्रह्मा के दस पुत्र जो प्रजापति कहलाये। विश्वकर्मा का नामान्तर। सूर्य। राजा। दामाद, जमाई। विष्णु भगवान्। पिता, जनक। लिङ्ग, पुरुष की जननेन्द्रिय।—**पाल**,—**पालक**–(पुं०) राजा, नरपति।—**पालि**–(पुं०) शिव।—**वृद्धि**–(स्त्री०) सन्तान की बढ़ती।—**सृज्**–(पुं०) ब्रह्मा।—**हित**–(वि०) सन्तान या रैयत के लिये लाभकारी। (न०) जल।

प्रजागर—(पुं०) [प्र√जागृ+अप्] निद्रा का अभाव, अनिद्रित्व। सावधानी। रक्षक, अभिभावक। कृष्ण भगवान् का नामान्तर।

प्रजात—(वि०) [प्र√जन्+क्त] पैदा हुआ, उत्पन्न।

प्रजाता—(स्त्री०) [प्रजात+अच्—टाप्] जच्चा, वह स्त्री जिसके बच्चा पैदा हुआ हो।

प्रजाति—(स्त्री०) [प्र√जन्+क्तिन्] जन्म, उत्पत्ति। सन्तान। उत्पादक शक्ति। प्रसव-वेदना, प्रसव की पीड़ा।

प्रजावत्—(वि०) [प्रजा+मतुप्, वत्व] सन्तान वाला।

प्रजावती—(स्त्री०) [प्रजावत्+ङीप्] बड़े भाई की स्त्री, भौजाई। संतानवती स्त्री। गर्भवती स्त्री।

प्रजिन—(पुं०) [प्र √जि+नक्] वायु।

प्रजीवन—(न०) [प्रा० स०] आजीविका।

प्रजुष्ट—(वि०) [प्र√जुष्+क्त] आसक्त, लगा हुआ। अनुरक्त।

प्रज्ञ—(वि०) [प्र√ज्ञा+क] प्रकृष्ट बुद्धि वाला, बुद्धिमान्। (किसी बात की) जानकारी रखने वाला (समास में)।

प्रज्ञप्ति—(स्त्री०) [प्र √ज्ञा+णिच् +क्तिन्] प्रण, शर्त। शिक्षा। विज्ञप्ति, सूचना। सिद्धान्त।

प्रज्ञा—(स्त्री०) [प्र√ज्ञा+अ—टाप्] बुद्धि। ज्ञान। प्रतिभा। विवेक। [प्रज्ञ+टाप्] सरस्वती। बुद्धिमती स्त्री।—**चक्षुस्**–(पुं०) अंधा, नेत्रहीन। (पुं०) धृतराष्ट्र का नामा-

न्तर। (न०) हिय की प्रांत। मन।—**पारमिता**–(स्त्री०) बौद्ध ग्रन्थों के अनुसार दस पारमिताओं (गुणों की पराकाष्ठा) में से एक जिसे गौतम बुद्ध ने अपने अर्हंट-जन्म में प्राप्त किया था।—**वृद्ध**–(वि०) बुद्धिमत्ता में बढ़ा।—**हीन**–(वि०) बुद्धिहीन, मूढ़।

प्रज्ञात—(वि०) [प्र √ज्ञा+क्त] जाना हुआ, समझा हुआ। पहचाना हुआ। स्पष्ट, साफ। प्रसिद्ध, प्रख्यात।

प्रज्ञान—(न०) [प्र √ज्ञा+ल्युट्] प्रतिभा। ज्ञान। बुद्धि, चिह्न।

प्रज्ञावत्—(वि०) [प्रज्ञा+मतुप्, वत्व] बुद्धिमान्। प्रतिभावान्।

प्रज्ञाल, प्रज्ञिन्, प्रज्ञिल–(वि०) [स्त्री०—**प्रज्ञिनी**] [प्रज्ञा+लच्] [प्रज्ञा+इनि] [प्रज्ञा+इलच्] बुद्धिमान्। प्रतिभाशाली। विवेकी।

प्रज्ञु—(वि०) [प्रगते विरले जानुनी यस्य, ब० स०, ज्ञु आदेश] दे० 'प्रगतजानु'।

प्रज्वलन—(न०) [प्र √ज्वल्+ल्युट्] अच्छी तरह जलने की क्रिया।

प्रज्वलित—(वि०) [प्र √ज्वल्+क्त] जला हुआ, दहका हुआ। धधकता हुआ, जलता हुआ। चमकीला, चमचमाता हुआ।

प्रडीन—(न०) [प्र √डी+क्त] चारों ओर (पक्षियों का) उड़ना। आगे की ओर उड़ना। उड़ान भरना।

प्रण—(वि०) [पुरा भवः, प्र+न] प्राचीन, पुराना।

प्रणख—(पुं०) [प्रकृष्टः नखः, प्रा० स०, णत्व] नख का अग्रभाग।

प्रणत—(वि०) [प्र√नम्+क्त] बहुत झुका हुआ। प्रणाम करता हुआ। दीन। चतुर, निपुण।

प्रणति—(स्त्री०) [प्र √नम् + क्तिन्] प्रणाम। नमस्कार। प्रणिपात, दण्डवत्। नम्रता। शरणागति।

प्रणदन—(न०) [प्र √नद्+ल्युट्] आवाज करना। जोर की आवाज, चिल्लाहट। गरजना, गर्जन।

प्रणय—(पुं०) [प्र √नी+अच्] विवाह, पाणिग्रहण। प्रेम, प्रीति। मैत्री। मेलजोल। विश्वास। अनुग्रह। श्रद्धा। विनय। प्रार्थना। प्रणाम। मोक्ष।—**अपराध** (**प्रणयापराध**) –(पुं०) प्रेम या मैत्री के विरुद्ध कोई अपराध। —**उन्मुख** (**प्रणयोन्मुख**)–(वि०) अन्तर्गत प्रेम को प्रकट करने को उद्यत। प्रेमावेश से धैर्यरहित।—**कलह**–(पुं०) प्रेमी का झगड़ा, बनावटी या झूठमूठ का झगड़ा।—**कुपित** –(वि०) जो प्रणय-कलह के कारण रूठ गया हो, प्रणय-कलह से रूठा हुआ।—**कोप**–(पुं०) नायिका का अपने नायक के प्रति झूठमूठ का क्रोध।—**प्रकर्ष**–(पुं०) अत्यधिक प्रेम।—**भङ्ग**–(पुं०) मित्रता का टूट जाना। नमकहरामीपना।—**वचन**–(न०) प्रेमप्रदर्शक वाक्य।—**विमुख**–(वि०) प्रेम से पराङ्मुख। मैत्री करने का अनिच्छुक। —**विहति**,—**विघात**–(पुं०) प्रीतियुक्त प्रार्थना की अस्वीकृति, अवज्ञा।

प्रणयन—(न०) [प्र√नी+ल्युट्] लाना। परिचालन करना। बनाना। लेख लिखना। दण्डाज्ञा देना। (यथा दण्डस्य प्रणयनम्।) अग्नि का संस्कार करना।

प्रणयवत्—(वि०) [प्रणय+मतुप्, वत्व] प्रिय, प्यारा। निश्छल, साफ दिल का। उत्सुकतापूर्वक अभिलाषी, कामना करने वाला।

प्रणयिन्—(वि०) [प्रणय+इनि] प्रेम करने वाला, अनुरागी। अभिलाषी, इच्छुक। परिचित, घनिष्ठ। (पुं०) मित्र। प्रेमी। पति। विनम्र प्रार्थी।

प्रणयिनी—(स्त्री०) [प्रणयिन्+ङीप्] प्रेम करने वाली, प्रेमिका। भार्या, पत्नी। सखी, सहेली।

प्रणव—(पुं०) [प्रकर्षेण नूयते स्तूयते आत्मा स्वेष्टदेवता च अनेन, प्र√नू+अप्, णत्व] ओङ्कार; 'प्रणवश्छन्दसामिव' र० १.११ । तबला । मृदङ्ग । ढोल । विष्णु या परब्रह्म का नामान्तर ।

प्रणस—(वि०) [प्रगता नासिका, यस्य, नासिकाशब्दस्य नसादेशः, अच्, णत्वम्] नवी नाक वाला, नक्कू ।

प्रणाडी—(स्त्री०) [=प्रणाली, लस्य डः] दे० 'प्रणाली' । द्वार ।

प्रणाद—(पुं०) [प्र√नद्+घञ्] कोलाहल, होहल्ला, शोर-गुल । गर्जन । हिनहिनाहट । बरबराहट । जयजयकार, वाहवाही । सहायता के लिये चीत्कार । कर्णनाद नामक कान का रोग जिसमें यों ही मृदंग आदि की ध्वनि सुनाई देती है ।

प्रणाम—(पुं०) [प्र √नम्+घञ्] झुकना, नत होना । अपनी लघुता या विनय सूचित करने के लिये किसी के सामने झुकने, हाथ जोड़ने आदि का व्यापार । प्रणाम चार प्रकार का होता है—अभिवादन, अष्टांग, पंचांग और करशिर-संयोग ।

प्रणायक—(पुं०) [प्र √नी+ण्वुल्] सेना-पति । नेता, पथप्रदर्शक ।

प्रणाय्य—(वि०) [प्र √नी+ण्यत्] प्यारा, प्रेमपात्र । धर्मात्मा, ईमानदार । **नापसंद**, अरुचिकर । विरक्त ।

प्रणाल—(पुं०), **प्रणालिका, प्रणाली**—(स्त्री०) [प्रणल्यते जलादि निःसार्यते अनेन, प्र√नल्+घञ्] [प्रणाल+ङीप्+कन्—टाप्, ह्रस्व] [प्रणाल+ङीप्] नाली; 'नमुहुर्मुहुः पयसाम्प्रणाल्यः' शि० ३.४४ । नहर । बंबा । परंपरा, प्रथा ।

प्रणाश—(पुं०) [प्र√नश्+घञ्] विनाश, बरबादी । मृत्यु । गायब होना । भागना ।

प्रणाशन—(वि०) [प्र√नश् + णिच् +ल्यु] नाश करने वाला । स्थानान्तरित करने वाला । (न०) [प्र√नश्+णिच् +ल्युट्] नाश करने की क्रिया या भाव, नष्ट करना । विनाश ।

प्रणिंसित—(वि०)[प्र√निंस्+क्त] जिसका चुंबन किया गया हो, चूमा हुआ ।

प्रणिधान—(न०) [प्र—नि√धा +ल्युट्] रखना । प्रयोग, व्यवहार, उपयोग । महान् प्रयत्न । चित्त की एकाग्रता, समाधि । अत्यन्त भक्ति । कर्मफलत्याग ।

प्रणिधि—(पुं०) [प्र—नि√धा +कि] भेदिया, गुप्तचर । नौकर, चाकर । याचना । प्रवधान ।

प्रणिनाद—(पुं०) [प्र—नि√नद् + घञ्] उच्चस्वर । घोर ध्वनि ।

प्रणिपतन—(न०), **प्रणिपात**—(पुं०) [प्र—नि √पत्+ल्युट्] [प्र—नि √पत्+घञ्] प्रणाम । चरणों में सिर नवाना ।—**रस**—(पुं०) आयुधों पर पढ़ा जाने वाला मंत्र-विशेष ।

प्रणिहित—(वि०) [प्र—नि √धा+क्त] स्थापित । सौंपा हुआ । फैलाया हुआ, जमा किया हुआ । लवलीन । दृढ़प्रतिज्ञ । साव-धान । प्राप्त । आमूली किया हुआ ।

प्रणीत—(वि०) [प्र√नी+क्त] उपस्थित किया हुआ, पेश किया हुआ । सौंपा हुआ । लाया हुआ । तैयार किया हुआ । सिखलाया हुआ । फेंका हुआ । निकाला हुआ । (पुं०) मंत्रों से संस्कृत किया हुआ यज्ञाग्नि । (न०) अच्छी तरह पकाया या बनाया हुआ कोई पदार्थ ।

प्रणुत—(वि०) [प्र √नुद्+क्त] निकाला हुआ, भगाया हुआ । भड़काया हुआ । चौंकाया हुआ ।

प्रणुन्न—(वि०) [प्र √नुद्+क्त, नत्व] भगाया हुआ । चलाया हुआ । भड़का हुआ । काँपता हुआ ।

प्रणेतृ—(पुं०) [प्र√नी+तृच्] नेता। सृष्टिकर्त्ता, बनाने वाला। किसी सिद्धान्त का प्रचारक। प्रणयनकर्त्ता, ग्रन्थरचयिता।

प्रणेय—(वि०) [प्र√नी+यत्] ले जाने योग्य। पथ-प्रदर्शन के योग्य। अधीन, वशवर्ती। पूर्ण करने योग्य। निश्चय करने योग्य। जिसके लौकिक संस्कार हो चुके हों।

प्रणोद—(पुं०) [प्र √नुद्+घञ्] प्रेरित करना। हुँकाना। सुझाना।

प्रतत—(वि०) [प्र√तन्+क्त] फैला हुआ या फैलाया हुआ। तना हुआ या ताना हुआ। आवृत।

प्रतति—(स्त्री०) [प्र√तन्+क्तिन् वा क्तिच्] विस्तार, फैलाव। लता, बेल।

प्रतन—(वि०) [स्त्री०—प्रतनी] [प्र+ट्यु तुट्] प्राचीन, पुराना।

प्रतनु—(वि०) [स्त्री०—प्रतनु या प्रतन्वी] [प्रकृष्टः तनुः, प्रा० स०] क्षीण, दुबला। बारीक, सूक्ष्म; 'प्रतनुविरलैः प्रान्तोन्मीलन्मनोहरकुन्तलैः' उत्त० १.२०। बहुत छोटा, तुच्छ।

प्रतपन—(न०) [प्र √तप्+ल्युट्] तपाना, तप्त करना।

प्रतप्त—(वि०) [प्र√तप्+क्त] गर्माया हुआ। उत्सुक। सन्तप्त, सताया हुआ, पीड़ित।

प्रतर—(पुं०) [प्र√तॄ+अप्] पार होना, उतरना, पार जाना।

प्रतर्क—(पुं०), **प्रतर्कण**—(न०) [प्र√तर्क्+अप्] [प्र√तर्क+ल्युट्] संशय, संदेह। तर्क, वाद-विवाद।

प्रतर्दन—(न०) [प्र √तर्द्+ल्युट् —वा न] ताड़ना। मारना। (पुं०) [प्र√तर्द्+णिच्+ल्यु] विष्णु। काशी के प्राचीन राजा दिवोदास का पुत्र।

प्रतल—(न०) [प्रकृष्टं तलम्, प्रा० स०] सप्त अधोलोकों में से एक। (पुं०) हाथ की हथेली।

प्रतान—(पुं०) [प्र√तन्+घञ्] अंकुर। लता, बेल। पल्लवित होना। रोग-विशेष जिसमें मूर्च्छा आती है, मिरगी।

प्रतानिन्—(वि०) [प्र √तन्+णिनि] फैलने वाला। अंखुआ या कोंपल वाला।

प्रतानिनी—(स्त्री०) [प्रतानिन्+ङीप्] खूब फैलने वाली लता या बेल।

प्रताप—(पुं०) [प्र√तप्+घञ्] राजा का कोष, दंड-जनित तेज। वीरता। प्रभुत्व, पराक्रम आदि का आतंक फैलाने वाला प्रभाव, इक़बाल। प्रकृष्ट ताप। मदार का पेड़।

प्रतापन—(वि०) [प्र√तप् + णिच् +ल्युट्] तप्त करना। गर्माना। सताना। (न०) दण्डविधान। (पुं०) [प्र √तप् +णिच्+ल्यु] कुम्भीपाक नरक। विष्णु भगवान् का नाम।

प्रतापवत्—(वि०) [प्रताप+मतुप्, वत्व] महिमान्वित, गौरवान्वित। पराक्रमी। (पुं०) शिव का नामान्तर।

प्रतार—(पुं०) [प्र√तॄ+णिच्+घञ्] पार ले जाना। वञ्चना, ठगी।

प्रतारक—(पुं०) [प्र√तॄ+णिच्+ण्वुल्] वञ्चक, ठग। धूर्त।

प्रतारण—(न०) [प्र√तॄ+णिच्+ल्युट्] पार करना। छलना, धोखा देना, ठगना।

प्रतारणा—(स्त्री०) [प्र√तॄ+णिच्+युच् —टाप्] दे० 'प्रतारण'।

प्रतारित—(वि०) [प्र √तॄ+णिच्+क्त] छला हुआ, ठगा हुआ।

प्रति—(अव्य०) [√प्रथ्+डति] एक उपसर्ग जो शब्दों के पूर्व लगाया जाता है और निम्न अर्थ देता है—विरुद्ध। सामने। बदले में। हर एक। समान। जोड़ का। मुकाबले में। ओर।—**अक्षर** (प्रत्यक्षर)–(अव्य०) प्रत्येक अक्षर में, अक्षर-अक्षर में।—**अग्नि** (प्रत्यग्नि)–(अव्य०) अग्नि की तरफ।—

—अङ्ग (प्रत्यङ्ग)–(न०) शरीर का छोटा अवयव जैसे नाक। भाग। आयुध। (अव्य०) शरीर के प्रत्येक अवयव में या पर। प्रत्येक उपविभाग के लिये।—अनन्तर (प्रत्यनन्तर)–(वि०) समीपवर्ती। समीपी (कुटुम्बी)। अत्यन्त घनिष्ठ।—अनिल (प्रत्यनिल)–(अव्य०) पवन की ओर या विरुद्ध।—अनीक (प्रत्यनीक)–(वि०) विरोधी। सामना करने वाला। (पुं०) शत्रु। (न०) शत्रुता। आक्रमणकारी सेना, विरोधी सेना; 'येऽवस्थिताः प्रत्यनीकेषु योधाः' भग० ११.४२। एक अर्थालंकार।—अनुमान (प्रत्यनुमान)–(न०) प्रतिकूल अनुमान (जैसे—'पर्वतो वह्निमान्' के विरोध में 'पर्वतो वह्न्यभाववान्' ऐसा अनुमान)।—अन्त (प्रत्यन्त)–(वि०) समीपी, सीमावर्ती। (पुं०) सीमा, हद। सीमान्त देश, विशेष कर वह देश जिसमें हूण और म्लेच्छ बसते हों; 'सगुप्तमूलप्रत्यन्तः' र० ४.२६।—अपकार (प्रत्यपकार)–(पुं०) बदले में अनिष्ट करना।—अब्द (प्रत्यब्द)–(अव्य०) प्रतिवर्ष।—अर्क (प्रत्यर्क)–(पुं०) झूठ-मूठ का सूर्य, बनावटी सूर्य।—अवयव (प्रत्यवयव)–(अव्य०) प्रत्येक अवयव में। विस्तार से।—अवर (प्रत्यवर)–(वि०) निम्नतर, कम प्रतिष्ठित। अति नीच, अति तुच्छ।—अश्मन् (प्रत्यश्मन्)–(पुं०) गेरू। सिन्दूर।—अह (प्रत्यह)–(अव्य०) प्रतिदिवस, हर रोज।—आकार (प्रत्याकार)–(पुं०) म्यान, परतला।—आघात (प्रत्याघात)–(पुं०) बदले का प्रहार। प्रतिक्रिया।—आचार (प्रत्याचार)–(पुं०) उपयुक्त आचरण।—आत्म (प्रत्यात्म)–(अव्य०) एकाकी, अकेला। अलग-अलग।—आदित्य (प्रत्यादित्य)–(पुं०) दे० 'प्रत्यर्क'।—आरम्भ (प्रत्यारम्भ)–(पुं०) पुनः प्रारम्भ, दुबारा शुरुआत। निषेध।—आशा (प्रत्याशा)–(स्त्री०) आकांक्षा। भरोसा, प्रत्यय।—उत्तर (प्रत्युत्तर)–(न०) जवाब का जवाब।—उलूक (प्रत्युलूक)–(पुं०) काक। कोई पक्षी जो उल्लू के समान हो।—ऋच (प्रत्यृच)–(अव्य०) प्रत्येक ऋचा में।—एक (प्रत्येक)–(वि०) हर एक। (अव्य०) एक-एक कर के। अलग-अलग।—कञ्चुक–(पुं०) शत्रु।—कण्ठ–(अव्य०) अलग-अलग, एक के बाद एक। गले के समीप।—कर्मन्–(न०) बदला, प्रतीकार। वह कार्य जो किसी दूसरे कर्म के द्वारा प्रेरित हो। शृंगार, प्रसाधन। विरोध, वैर।—कश–(वि०) जो कोड़े का भी ख्याल न करे।—काय–(पुं०) पुतला। मूर्ति, तसवीर। शत्रु। बाण का लक्ष्य।—कितव–(पुं०) जुआरी का जोड़ीदार।—कुञ्जर–(पुं०) आक्रमणकारी हाथी।—कूप–(पुं०) परिखा, खाई।—कूल–(वि०) विपरीत, उलटा। अप्रिय। अशुभ। विरोधी। हठीला, जिद्दी, दुराग्रही।—क्षण–(अव्य०) प्रत्येक क्षण में, हरदम, निरन्तर।—क्रोध–(पुं०) क्रोध के प्रति होने वाला क्रोध।—गज–(पुं०) आक्रमणकारी हाथी।—गात्र–(अव्य०) प्रति अवयव में।—गिरि–(पुं०) सामने का पहाड़। छोटा पहाड़ या पहाड़ी।—गृह,—गेह–(अव्य०) हर एक घर में।—ग्राम–(अव्य०) हर एक गाँव में।—चन्द्र–(पुं०) झूठमूठ का चन्द्रमा।—चरण–(अव्य०) प्रत्येक (वैदिक) सिद्धान्त या शाखा में। प्रत्येक पग पर।—छाया–(स्त्री०) प्रतिबिम्ब, परछाईं। मूर्ति, प्रतिमा। तसवीर।—जङ्घा–(स्त्री०) टाँग का अगला भाग।—जिह्वा,—जिह्विका–(स्त्री०) गले के भीतर की घण्टी, कव्वा, छोटी जीभ।—तन्त्र–(अव्य०) स्वमत-

विरुद्ध शास्त्र, वह शास्त्र जिसके सिद्धान्त अपने शास्त्र के सिद्धान्तों के प्रतिकूल हों। —**तन्त्रसिद्धान्त**–(पुं०) वह सिद्धान्त जो कुछ शास्त्रों में हों और कुछ में न हो (जैसे मीमांसा में शब्द को नित्य माना है, पर न्याय में वह अनित्य माना जाता है)। —**त्र्यह**–(न०) एक बार में (लगातार) तीन दिन।—**दिन**–(अव्य०) दे० 'प्रत्यहं'।—**द्वन्द्व**–(पुं०) दो समान विरोधी व्यक्ति, शत्रु। (न०) दो समान व्यक्तियों का विरोध।—**द्वन्द्विन्**–(वि०) विरोधी। प्रतिकूल। डाह करने वाले, प्रतिस्पर्द्धी। (पुं०) शत्रु।—**द्वार**–(अव्य०) प्रत्येक द्वार पर।—**ध्वनि**, —**ध्वान**–(पुं०) किसी शब्द का वह प्रतिरूप जो उसके किसी बाधक पदार्थ से टकराने पर उत्पन्न होता है और मूलशब्द के उपरान्त सुनाई पड़ता है, प्रतिशब्द, गूँज।—**नप्तृ**–(पुं०) पौत्र का पुत्र, प्रपौत्र।—**नव** (वि०) नवीन। हाल का खिला हुआ या जिसमें हाल ही में कलियाँ आयी हों।—**नाड़ी**–(स्त्री०) उपनाड़ी, छोटी नाड़ी।—**नायक**–(पुं०) नाटकों अथवा काव्यों में मुख्य नायक का प्रतिद्वन्द्वी नायक। जैसे रामायण काव्य में श्रीराम जी मुख्य नायक है और रावण प्रतिनायक है।—**नियम**–(पुं०) सामान्य नियम या व्यवस्था।—**निर्यातन**–(पुं०) वह अपकार जो किसी अपकार का बदला चुकाने को किया जाय।—**प**–(पुं०) राजा शान्तनु के पिता का नाम।—**पक्ष**–(पुं०) प्रतिवादी। विरोधी पक्ष। शत्रु।—**पक्षिन्**–(पुं०) विरोधी, वैरी।—**पुरुष**, —**पूरुष**–(पुं०) वह मनुष्य जो किसी का स्थानापन्न होकर काम करे, प्रतिनिधि। साथी। पुतला (किसी का)। मनुष्य का पुतला जिसे चोर घर में स्वयं घुसने के पहले यह जानने के लिये फेंका करते थे कि कोई जगता तो नहीं है।—**प्राकार**–(पुं०) परकोटे की दीवाल।—**प्रिय**–(न०) वह उपकार जो किसी उपकार का बदला चुकाने के लिये किया जाय; 'प्रतिप्रियङ्कर्तुमभवतो न कुर्याम्' र० ५.५६।—**फल**–(न०) प्रतिबिम्ब। किसी के किये हुए का अनुरूप प्रतीकार। परिणाम, नतीजा। पुरस्कार, वह जो बदले में दिया जाय।—**बन्धु**–(पुं०) समान पद या स्थिति वाला।—**बल**–(वि०) समान बल वाला, जोड़ीदार। (न०) सामर्थ्य।—**बाहु**–(पुं०) बाँह का अगला भाग।—**बिम्ब**,-**बिम्बक**–(पुं०,न०) परछाँही, छाया। प्रतिमा, प्रतिमूर्ति। चित्र, तसवीर।—**भट**–(वि०) मुकाबला करने वाला। (पुं०) बराबर का योद्धा, समान बल वाला योद्धा।—**भय**–(वि०) भयङ्कर, खौफनाक। (न०) डर, खतरा।—**मण्डल**–(न०) सूर्य आदि चमकते हुए ग्रहों का मण्डल या घेरा, परिवेश।—**मल्ल**–(पुं०) बराबर का पहलवान।—**माया**–(स्त्री०) जादू के बचाव का जादू।—**मित्र**–(न०) शत्रु।—**मुख**–(वि०) सामने खड़ा हुआ। समीपस्थ। (न०) नाटक की पञ्चसन्धियों में से एक। इस सन्धि में विलास, परिसर्प, नर्म (परिहास), प्रगमन, विरोध, पर्युपासन, पुष्प, वज्र, उपन्यास और वर्णसंहार आदि का वर्णन किया जाता है।—**मुद्रा**–(स्त्री०) मुद्रा की छाप। दूसरी मोहर।—**मूर्ति**–(स्त्री०) पत्थर, धातु आदि की बनायी हुई देवता आदि की मूर्ति, प्रतिमा।—**यूथप**–(पुं०) आक्रमणकारी हाथियों के दल का अगुआ या नायक।—**रथ**–(पुं०) बराबरी का लड़ने वाला योद्धा।—**राज**–(पुं०) आक्रमणकारी या शत्रु राजा।—**रूप**–(वि०) एक ही जैसे रूप वाला। सुन्दर। उपयुक्त, उचित। (न०) तसवीर, चित्र। मूर्ति। प्रतिमा।—**रूपक**–(न०) प्रतिबिम्ब। मूर्ति। चित्र। जाली

पत्रादि।—लक्षण–(न०) चिह्न, सबूत।—लिपि– (स्त्री०) लेख की नकल। हाथ का लिखा हुआ लेख।—लोम–(वि०) विपरीत, उल्टा। जाति-विरुद्ध (अर्थात् वह जिसके पिता और माता भिन्न-भिन्न वर्ण के हों)। कमीना, नीच। वाम, बाँया।—लोमक– (न०) उल्टा क्रम।—वचन, —वचस्,— वाक्य–(न०),—वाच्–(स्त्री०) उत्तर, जवाब। विरुद्ध वाक्य। प्रतिनिर्देश।—वसथ–(पुं०) गाँव, ग्राम।—वस्तु–(न०) वह वस्तु जो किसी अन्य वस्तु के बदले में दी जाय। समानान्तर।—वात–(पुं०) प्रतिकूल पवन।—विष–(न०) विष का उतारा।—वार्ता–(स्त्री०) जवाब या उत्तर में भेजा गया संवाद, प्रत्युत्तर रूप वृत्तांत।—विष्णुक–(पुं०) राजा मुचुकुन्द। मुचुकुन्द वृक्ष।—वीर–(पुं०) विरोधी, विपक्षी।—वृष–(पुं०) आक्रमणकारी साँड़।—वेश– (पुं०) पड़ोस। पड़ोस का मकान, घर के सामने या निकट का घर।—वेशिन्–(पुं०) पड़ोसी, पड़ोस में रहने वाला।—वेश्मन्– (न०) पड़ोसी का घर।—वेश्य–(पुं०)पड़ोसी।—वैर–(न०) वैर का प्रतिकार, शत्रुता का बदला।—शब्द–(पुं०) प्रतिध्वनि, गूँज। गर्जन।—शशिन्–(पुं०) झूठमूठ का चन्द्रमा। चन्द्रमा का घेरा।—सम–(वि०) बराबरी वाला, जोड़ीदार।—सव्य–(वि०) प्रतिकूल, विरुद्ध आचरण करने वाला।—सूर्य,—सूर्यक–(पुं०) सूर्य का घेरा। एक उत्पात जिसमें सूर्य के सामने एक और सूर्य निकला हुआ दिखलाई देता है। गिरगिट।—सेना–(स्त्री०) शत्रु की सेना।—हस्त, —हस्तक–(पुं०) प्रतिनिधि, एवजी; 'पुत्रस्योत्पादने न सन्ति प्रतिहस्तका:' हि० २.३३।

प्रतिक—(वि०) [कार्षापणेन क्रीत:, प्रति +टिठन्] १६ पण या ८२८० कौड़ियों में मोल लिया हुआ।

प्रतिकर—(पुं०) [प्रति√कृ वा√कृ+अप्] विस्तीर्ण होने का भाव, विस्तीर्णता। विक्षेप। मुआवजा, क्षतिपूर्ति। प्रतिशोध।

प्रतिकर्तृ—(वि०) [स्त्री०—प्रतिकर्त्री] [प्रति√कृ+तृच्] प्रतिशोध करने वाला। क्षतिपूर्ति करने वाला। (पुं०) विरोधी, प्रतिपक्षी।

प्रतिकर्ष—(पुं०) [प्रति√कर्ष्+घञ्] एकत्र करना। संयोग।

प्रतिकश—(पुं०) [प्रति √कश् + अच्] नायक, नेता। सहायक। वार्ताहर, कासिद।

प्रतिकार, प्रतीकार—(पुं०) [प्रति √कृ + घञ्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घ:] प्रतिशोध, बदला। वह कार्य जो किसी बुरे कार्य का बदला देने को किया जाय। चिकित्सा, इलाज। विपक्षता, सामना।—विधान–(न०) इलाज, चिकित्सा; 'प्रतिकारविधानमायुष: सति शेषे फलाय कल्पते' र० ८.४०।

प्रतिकाश, प्रतीकाश—(पुं०) [प्रति√कश् +घञ्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घ:] प्रतिबिम्ब। चितवन, दृष्टि।

प्रतिकुञ्चित—(वि०) [प्रति√कुञ्च्+क्त] मुड़ा हुआ, झुका हुआ, टेढ़ा।

प्रतिकृत—(वि०) [प्रति √कृ+क्त] फेरा हुआ, लौटा हुआ। अदा किया हुआ, प्रतिशोधित। इलाज किया हुआ।

प्रतिकृति—(स्त्री०) [प्रति√कृ+क्तिन्] बदला, प्रतिकार। प्रतिबिम्ब। चित्र, तसवीर। मूर्ति, प्रतिमा। प्रतिनिधि।

प्रतिकृष्ट—(वि०) [प्रति√कृष्+क्त] दुबारा जोता हुआ। प्रतिनिन्दित, निष्कृष्ट। छिपा हुआ। नीच, कमीना।

प्रतिक्रम—(पुं०) [प्रति √क्रम्+घञ्] प्रत्यावर्तन, लौट आना। प्रतिकूल आचार।

प्रतिक्रिया—(स्त्री०) [प्रति√कृ+श, इयङ् —टाप्] प्रतीकार, बदला। एक तरफ कोई क्रिया होने पर परिणाम-स्वरूप दूसरी तरफ होने वाली क्रिया। विरोध, सामना। व्यक्तिगत सजावट या शृङ्गार। रक्षण। माहात्म्य।

प्रतिक्रुष्ट—(वि०) [प्रति√क्रुश्+क्त] निर्धन, बापुरा।

प्रतिक्षय—(पुं०) [प्रति √क्षि+अच्] अंगरक्षक। सेवक।

प्रतिक्षिप्त—(वि०) [प्रति√क्षिप्+क्त)] लौटाया हुआ, अस्वीकृत। रोका हुआ, सामना किया हुआ। गाली दिया हुआ, निन्दा किया हुआ। भेजा हुआ, रवाना किया हुआ।

प्रतिक्षुत—(न०) [प्रति √क्षु+क्त] छींक, छिक्का।

प्रतिक्षेप—(पुं०) [प्रति√क्षिप्+घञ्] अस्वीकृति, ग्रहण न करना। खण्डन करना। फेंकना। प्रतियोगिता, होड़।

प्रतिख्याति—(स्त्री०) [प्रति√ख्या+क्तिन्] बहुत अधिक प्रसिद्धि।

प्रतिगत—(वि०) [प्रति√गम्+क्त] पक्षियों की एक प्रकार की उड़ान।

प्रतिगमन—(न०) [प्रति √गम्+ल्युट्] लौट जाना, वापिस जाना।

प्रतिगर्हित—(वि०) [प्रति√गर्ह्+क्त] कलङ्कित, निन्दित।

प्रतिगर्जना—(स्त्री०) [प्रति√गर्ज्+युच्] गर्जन के जवाब में गर्जन।

प्रतिगृहीत—(वि०) [प्रति√ग्रह्+क्त] लिया हुआ, जो ग्रहण कर लिया गया हो। स्वीकृत, माना हुआ। विवाहित।

प्रतिग्रह—(पुं०) [प्रति√ग्रह्+अप्] स्वीकार, ग्रहण। उस दान का लेना जो विधिपूर्वक दिया जाय। पकड़ना। पाणिग्रहण, विवाह। ग्रहण, उपराग। स्वागत। अनुग्रह; 'राज्ञः प्रतिग्रहोऽयम्' श० १। सेना का पिछला भाग। पीकदान। विरोध करना। उत्तर देना। प्रतिकूल ग्रह।

प्रतिग्रहण—(न०) [प्रति √ग्रह्+ल्युट्] प्रतिग्रह लेना। स्वागत। विवाह।

प्रतिग्राहिन्, प्रतिग्रहीतृ—(पुं०) [प्रतिग्रह+इनि] [प्रति √ग्रह्+तृच्] दान लेने वाला। पति।

प्रतिग्राह—(पुं०) [प्रति √ग्रह्+ण] प्रतिग्रह। पीकदान।

प्रतिघ—(पुं०) [प्रति √हन्+ड, कुत्व] विरोध। लड़ाई, आपस की मारपीट। क्रोध। मूर्छा। शत्रु। रुकावट, बाधा।

प्रतिघात, प्रतीघात—(पुं०) [प्रति√हन्+णिच्+अप्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] मारण। आघात के बदले किया गया आघात। रुकावट, बाधा। निवारण।

प्रतिघातन—(न०) [प्रति √हन्+णिच्+ल्युट्] हटाना, टालना। प्राणघात, वध।

प्रतिघ्न—(न०) [प्रति√हन्+क] शरीर, देह।

प्रतिचिकीर्षा—(स्त्री०) [प्रति√कृ+सन्—टाप्] बदला लेने की अभिलाषा।

प्रतिचिन्तन—(न०) [प्रति √चिन्त्+ल्युट्] बार-बार सोचना, पुनर्विचार।

प्रतिच्छदन—(न०) [प्रति√छद्+ल्युट्] ढाँकने वाली वस्तु। चादर, चद्दर।

प्रतिच्छन्द, प्रतिच्छन्दक—(पुं०) [प्रति √छन्द्+घञ्] [प्रतिच्छन्द+कन्] सादृश्य। तसवीर। प्रतिमा। पर्याय।

प्रतिच्छन्न—(वि०) [प्रति√छद्+क्त] ढका हुआ। लपेटा हुआ। छिपा हुआ।

प्रतिच्छेद—(पुं०) [प्रति√छिद्+घञ्] बाधा, रुकावट।

प्रतिजल्प, प्रतिजल्पक—(पुं०) [प्रति √जल्प्+घञ्] [प्रतिजल्प+कन्] प्रतिष्ठापूर्वक प्रकट की हुई सहमति या ऐकमत्य।

प्रतिजागर—(पुं०) [प्रति √जागृ+घञ्]

खूब सावधानी रखना सम्यक् ध्यान देना।

प्रतिजीवन—(न०) [प्रति √जीव्+ल्युट्] नया जन्म। फिर से जी जाना।

प्रतिज्ञा—(स्त्री०) [प्रति √ज्ञा+अङ—टाप्] वादा। स्वीकृति। किसी काम को करने या न करने के विषय में वचनदान। घोषणा। न्याय में अनुमान के पाँच खण्डों या अवयवों में प्रथम अवयव। अभियोग, दावा।—**पत्र**-(न०) वह पत्र जिस पर कोई प्रतिज्ञा लिखी हो, इकरारनामा।—**भङ्ग**-(पुं०) वादे को तोड़ देना।—**विरोध**-(पुं०) प्रतिज्ञा के प्रतिकूल आचरण, वादा-खिलाफी।—**विवाहित**-(वि०) जिसकी सगाई (वाक्दान) हो गई हो।—**संन्यास**-(पुं०) वादाखिलाफी, प्रतिज्ञा भंग करने की क्रिया। न्याय में एक प्रकार का निग्रहस्थान।

प्रतिज्ञात—(वि०) [प्रति√ज्ञा+क्त] वादा किया हुआ। कहा हुआ। स्वीकृत, माना हुआ।

प्रतिज्ञान—(न०) [प्रति√ज्ञा+ल्युट्] ईमानधर्म से कहना। इकरार, वादा। स्वीकारोक्ति।

प्रतितर-(पुं०) [प्रति √तृ+अप्] जहाजी, माँझी, डाँड़ खेने वाला।

प्रतिदर्शन—(न०) [प्रति√दृश्+ल्युट्] भेंट, मुलाकात।

प्रतिदान—(न०) [प्रति √दा+ल्युट्] लौटाना या रखी हुई वस्तु को लौटाना। विनिमय, एक वस्तु लेकर बदले में दूसरी वस्तु देना, बदला।

प्रतिदारण—(न०) [प्रति √दृ+ णिच्+ल्युट्] लड़ाई, युद्ध। चीरना। फाड़ना।

प्रतिदिवन्—(पुं०) [प्रति √दिव्+कनिन्] सूर्य। दिन।

प्रतिदृष्ट—(वि०) [प्रति√दृश्+क्त] देखा हुआ। दृष्टिगोचर, निगाह के सामने पड़ा हुआ।

प्रतिधावन—(न०) [प्रति √धाव्+ल्युट्] आक्रमण, हमला।

प्रतिध्वस्त—(वि०) [प्रति√ध्वंस्+क्त] गिराया हुआ, पटका हुआ।

प्रतिनन्दन—(न०) [प्रति √नन्द्+ल्युट्] आशीर्वाद के साथ अभिनंदन करना। बधाई। स्वागत। धन्यवाद देने की क्रिया।

प्रतिनाद—(पुं०) [प्रति √नद्+घञ्] प्रतिध्वनि, गूँज, झाँई।

प्रतिनाह, प्रतीनाह—(पुं०) [प्रति √नह्+घञ्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः]झंडा। पताका।

प्रतिनिधि—(पुं०) [प्रतिनिधीयते सदृशीक्रियते, प्रति—नि √धा+कि] वह व्यक्ति जो दूसरे के बदले कोई काम करने को नियुक्त किया जाय। जामिन। प्रतिमा।

प्रतिनिर्जित—(वि०) [प्रति—निर् √जि+क्त] विजित। खण्डन किया हुआ।

प्रतिनिर्देश्य—(वि०) [प्रति—निर्√दिश्+ण्यत्] वह जो यद्यपि प्रथम व्यक्त किया जा चुका है, तथापि पुनः कहा जाय, इस अभिप्राय से कि कुछ अधिक कथन किया जाय।

प्रतिनिर्यातन—(न०) [प्रति—निर्√यत्+णिच्+ल्युट्] अपकार जो किसी अपकार का बदला चुकाने को किया जाय।

प्रतिनिवर्तन—(न०) [प्रति—नि √वृत्+ल्युट्] लौटना, वापिस आना। मुड़ना, पराङ्मुख होना।

प्रतिनिविष्ट—(वि०) [प्रति—नि√विश्+क्त] हठी, आग्रही, जिद्दी।—**मूर्ख**-(पुं०) दुराग्रही मूर्ख; 'न तु प्रतिनिविष्ट-मूर्खजनचित्तमाराधयेत्' भर्तृ० २.५।

प्रतिनोद—(पुं०) [प्रति√नुद्+घञ्] पीछे हटाने की क्रिया। दूर भगाना।

प्रतिपत्ति—(स्त्री०) [प्रति√पद्+क्तिन्] प्राप्ति, उपलब्धि; 'वामर्थप्रतिपत्तये' र० १.१। ज्ञान। स्वीकृति। स्वीका-

रीति। कथन। आरम्भ। कार्यवाही। पद्धति। पूरा करना। मन्तव्य। दृढ़ सङ्कल्प। संवाद। सम्मान। ढंग। उपाय। प्रतिभा। बुद्धि। उपयोग, व्यवहार। उन्नति। ख्याति। साहस। विश्वास। प्रमाण। भरोसा। —**दक्ष**–(वि०) कोई काम कैसे करना चाहिये यह जानने वाला। —**पटह**–(पुं०) नगाड़ा। —**भेद**–(पुं०) मतभेद। —**विशारद**–(वि०) निपुण, पटु।

प्रतिपद्—(स्त्री०) [प्रति √पद्+क्विप्] मार्ग। दरवाजा। बुद्धि। श्रेणी। अग्नि की जन्मतिथि। एक पुराना बाजा, दगड़ा। आरम्भ। पक्ष की प्रथम तिथि। —**चन्द्र** (**प्रतिपच्चन्द्र**)-(पुं०) प्रतिपदा का चन्द्रमा। —**तूर्य** (**प्रतिपत्तूर्य**)-(न०) नगाड़ा।

प्रतिपदा, प्रतिपदी—(स्त्री०) [प्रतिपद्+टाप्] [प्रतिपद्+ङीप्] पक्ष की प्रथम तिथि, पड़िवा।

प्रतिपन्न—(वि०) [प्रति √पद्+क्त] प्राप्त। पूरा किया हुआ। आरम्भ किया हुआ। प्रतिज्ञात। अङ्गीकृत। जाना हुआ, उत्तर दिया हुआ। सम्मानित। स्थापित। प्रमाणित।

प्रतिपादक—(वि०) [स्त्री०—**प्रतिपादिका**] [प्रति √पद्+णिच्+ण्वुल्] भली भाँति समझाने वाला। साबित करने वाला। निष्पादन करने वाला, निरूपण करने वाला। उन्नति करने वाला। निर्वाह करने वाला। उत्पन्न करने वाला।

प्रतिपादन—(न०) [प्रति √पद्+णिच् +ल्युट्] ज्ञान कराना, बोधन। किसी विषय का सप्रमाण कथन, निरूपण। दान। स्थापन। प्रत्यर्पण। आरंभ, उपक्रम। पूर्ण करना। उत्पन्न करना।

प्रतिपादित—(वि०) [प्रति √पद्+णिच् +क्त] दिया हुआ, स्थापित किया हुआ। सिद्ध किया हुआ। अच्छी तरह समझाया हुआ। बोधित किया हुआ। उत्पन्न किया हुआ।

प्रतिपाद्य—(वि०) [प्रति √पद्+णिच्+यत्] निरूपण करने योग्य। जिसे प्रमाणित किया जाय। जिसका स्पष्टीकरण किया जाय। देय।

प्रतिपालक—(पुं०) [प्रति √पाल्+णिच् +ण्वुल्] पालन करने वाला। रक्षक।

प्रतिपालन—(न०) [प्रति √पाल् +णिच् +ल्युट्] पालन करना। प्रतीक्षा करना। रक्षण। अभ्यास। आलोचन।

प्रतिपीडन—(न०) [प्रति √पीड्+णिच् +ल्युट्] अत्याचार करना।

प्रतिपूजन—(न०), **प्रतिपूजा**— (स्त्री०) [प्रति √पूज्+ल्युट्] [प्रति √पूज्+अ—टाप्] अभिवादन, सम्मान प्रदर्शन। पारस्परिक अभिवादन, पारस्परिक शिष्टाचार प्रदर्शन।

प्रतिपूरण—(न०) [प्रति √पूर्+ल्युट्] भरना, परिपूर्ण करना। सुईदार पिचकारी से किसी तरल पदार्थ को भीतर डालना।

प्रतिप्रणाम—(न०) [प्रति—प्र √नम् +घञ्] प्रणाम के बदले का प्रणाम।

प्रतिप्रदान—(न०) [प्रति—प्र √दा+ल्युट्] किसी ली हुई या धरोहर रखी हुई वस्तु को लौटाना। विवाह में दान करना।

प्रतिप्रयाण—(न०) [प्रति—प्र √या+ल्युट्] लौटना, फिरना।

प्रतिप्रश्न—(पुं०) [प्रति √प्रच्छ् + नङ्] प्रश्न के बदले प्रश्न। उत्तर।

प्रतिप्रसव—(पुं०) [प्रति—प्र √सू +अप्] अपवाद का अपवाद। जिस बात का एक स्थान पर निषेध किया गया हो उसीका किसी विशेष अवस्था में विधान।

प्रतिप्रहार—(पुं०) [प्रति—प्र √हृ+घञ्] प्रहार के बदले प्रहार, चोट के बदले चोट।

प्रतिप्लवन—(न०) [प्रति √प्लु + ल्युट्] पीछे की ओर कूदना। कूद कर लौट आना।

प्रतिफल—(पुं०) **प्रतिफलन**-(न०) [प्रति √फल्+अच्] [प्रति√फल् + ल्युट्] परिणाम, नतीजा। प्रतिबिम्ब, छाया, परछाँई। प्रतिशोध। बदला।

प्रतिफुल्लक—(वि०) [प्रति√फुल्ल्+ण्वुल्] फूलने वाला, पूरा खिला हुआ।

प्रतिबद्ध—(वि०) [प्रति√बन्ध्+क्त] बँधा हुआ। सम्बन्धयुक्त। जिसमें रुकावट या प्रतिबन्ध हो। जड़ा हुआ; 'बहलानुराग-कुरुविन्ददलप्रतिबद्धमध्यमिव' शि० ९.८। फँसा हुआ। हटाया हुआ। जो हताश हो चुका हो। अविच्छिन्न सम्बन्धयुक्त, जैसे आग और धुँआ।

प्रतिबन्ध—(पुं०) [प्रति √बन्ध्+घञ्] बंधन। रोक। विघ्न, बाधा; 'सततःप्रतिबन्ध-जन्तुना' र० ८.८०। सामना, मुकाबला। घिराव। सम्बन्ध। अनिवार्य तथा अविच्छिन्न सम्बन्ध।

प्रतिबन्धक—(वि०)[स्त्री०—**प्रतिबन्धिका**] [प्रति √बन्ध्+ण्वुल्] बाँधने वाला। रोकने वाला। मुकाबला करने वाला, सामना करने वाला। बाधा डालने वाला। (पुं०) शाखा।

प्रतिबन्धन—(न०) [प्रति √बन्ध्+ल्युट्] बंधन। कैद। विघ्न।

प्रतिबन्धि—(पुं०), **प्रतिबन्धी**-(स्त्री०) [प्रति √बन्ध+इन्] [प्रतिबन्ध+ङीप्] आपत्ति, एतराज। ऐसा तर्क जो विपक्ष पर भी समान रूप से असर डाले। (इसे 'प्रतिबन्दी' भी कहते हैं।)

प्रतिबाधक—(वि०) [प्रति √बाध्+ण्वुल्] कष्ट पहुँचाने वाला। हटाने वाला, दूर भगा देने वाला। रोकने वाला, बाधा डालने वाला।

प्रतिबाधन—(न०) [प्रति√बाध्+ल्युट्] कष्ट पहुँचाना। हटाना। दूर भगाना। नामंजूर करना, अस्वीकृत करना।

प्रतिबिम्बन—(न०) [प्रतिबिम्ब + क्विप् +ल्युट्] परछाँई, प्रतिच्छाया। तुलना। चित्र। प्रतिमा।

प्रतिबिम्बित—(वि०) [प्रतिबिम्ब+क्विप् +क्त] जिसका प्रतिबिम्ब पड़ता हो, जिसकी परछाँही पड़ती हो। जो झलकता हो, जिसका आभास मिलता हो।

प्रतिबुद्ध—(वि०) [प्रति √बुध्+क्त] जगा हुआ। खिला हुआ। जाना हुआ। प्रसिद्ध।

प्रतिबुद्धि—(स्त्री०) [प्रति √बुध्+क्तिन्] जागृति। विरोधी अभिप्राय या इरादा।

प्रतिबोध—(पुं०) [प्रति √ बुध्+घञ्] जागना। ज्ञान, अवगति; 'तदपोहितुमर्हसि प्रिये प्रतिबोधेन विषादमाशु मे' र० ८.५४। शिक्षण। युक्ति। स्मृति।

प्रतिबोधन—(न०) [प्रति √बुध् + णिच् +ल्युट्] जगाने की क्रिया। ज्ञान कराना।

प्रतिबोधित—(वि०) [प्रति √बुध्+णिच् +क्त] जगाया हुआ। सिखलाया हुआ। बोध कराया हुआ।

प्रतिभा—(स्त्री०) [प्रतिभाति शोभते, प्रति √भा+क—टाप्] झटिति विषयग्राहिणी बुद्धि, असाधारण मानसिक शक्ति। सूरत, रूप। उज्ज्वलता, चमक। बुद्धि, समझदारी। प्रतिबिम्ब। साहस। वीरता। धृष्टता।—**अन्वित** (**प्रतिभान्वित**)-(वि०) जिसमें प्रतिभा हो। प्रगल्भ।—**मुख**-(वि०) कुशाग्रबुद्धि। साहसी। पूर्ण विश्वासी।—**हानि**-(स्त्री०) अन्धकार। बुद्धि का अभाव।

प्रतिभात—(वि०) [प्रति √भा+क्त] चमकीला, प्रकाशवान्। जाना हुआ, समझा हुआ।

प्रतिभान—(न०) [प्रति√भा +ल्युट्] प्रभा, चमक। बुद्धि। हाजिरजवाबी, प्रत्युत्पन्नमतित्व।

प्रतिभाव-(पुं०) [प्रति √भू+घञ्] अनुकूल होना। पारस्परिक पत्र-व्यवहार। रुचि। स्वभाव।

प्रतिभाषा—(स्त्री०) [प्रति √भाष्+अ—टाप्] उत्तर, जवाब।

प्रतिभास—(पुं०) [प्रति √भास्+घञ्] प्रकाश। आभास। आकृति। भ्रम, धोखा।

प्रतिभासन—(न०) [प्रति√भास्+ल्युट्] चमकना। दीख पड़ना।

प्रतिभिन्न—(वि०) [प्रति √भिद् +क्त] जिसका भेदन किया गया हो। विभक्त।

प्रतिभू—(पुं०) [प्रति√भू+क्विप्] जमानत करने वाला, जामिन।

प्रतिभेदन—(न०) [प्रति√भिद्+ल्युट्] बेधना। चीरना। भेद खोलना। विभाग करना। (नेत्र आदि) निकाल लेना।

प्रतिभोग—(पुं०)[प्रति√भुज्+घञ्]उपभोग।

प्रतिमा—(स्त्री०) [प्रतिमीयते, प्रति√मा+अङ—टाप्] मिट्टी, पत्थर आदि की बनी हुई देवताओं की मूर्ति। अनुकृति। चित्र, तसवीर। प्रतिबिंब, परछाईं। सादृश्य (समासांत में 'प्रतिम'-सदृश के अर्थ में); 'गुरोः कुलानुप्रतिमात्' र० २.४६। बटखरा। एक अलंकार (इसमें किसी मनुष्य, पदार्थ या व्यक्ति की स्थापना होती है)। चिह्न। हाथी के सिर का, दाँतों के बीच का एक भाग।—गत–(वि०) चित्र या मूर्ति में विद्यमान।—चन्द्र–(पुं०) चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब।—परिचारक–(पुं०) पुजारी।

प्रतिमान—(न०) [प्रति√मा+ल्युट्] दृष्टान्त, उदाहरण। मूर्ति, प्रतिमा। सादृश्य। बटखरा। हाथी के दोनों दाँतों के बीच का भाग। प्रतिबिम्ब।

प्रतिमुक्त—(वि०) [प्रति√मुच्+क्त] पहिना हुआ। बाँधा हुआ। अस्त्रशस्त्र से सज्जित, हथियारबंद। छोड़ा हुआ। लौटाया हुआ। जोर से फेंका हुआ।

प्रतिमोक्ष—(पुं०), **प्रतिमोक्षण**–(न०) [प्रति √मोक्ष्+घञ्] [प्रति√मोक्ष् +ल्युट्] मोक्ष-प्राप्ति। कर से मुक्ति। मोचन।

प्रतिमोचन—(न०) [प्रति √मुच्+ल्युट्] खोलना। बदला; 'वैरप्रतिमोचनाय' र० १४.४१। छुटकारा, मुक्ति।

प्रतियत्न—(पुं०) [प्रति√यत् + नङ्] उद्योग। तैयारी। पूर्ण करना। नया गुण या खूबी उत्पन्न कर देना। अभिलाषा। मुकाबला, सामना। बदला। कैदी बनाना, गिरफ्तार करना। अनुग्रह, कृपा।

प्रतियातन—(न०) [प्रति √यत् +णिच् +ल्युट्] प्रतिशोध, बदला।

प्रतियातना—(स्त्री०) [प्रति √यत्+णिच् +युच्] तसवीर। मूर्ति, प्रतिमा; 'पृथ्वी पृथिव्याः प्रतियातनेव' शि० ३.३४।

प्रतियान—(न०) [प्रति √या + ल्युट्] लौटना, वापस आना।

प्रतियोग—(पुं०) [प्रति√युज्+घञ्] किसी वस्तु का दूसरा प्रतिरूप या उतारा। सामना, मुकाबला। खण्डन। सहयोग। मारक।

प्रतियोगिता—(स्त्री०) [प्रतियोगिन्+तल् —टाप्] प्रतियोगी होने का भाव, विरोध, प्रतिद्वन्द्विता, होड़। शत्रुता।

प्रतियोगिन्—(पुं०) [प्रति√युज् +घिनुण्] शत्रु, विरोधी। बाधा डालने वाला। सहायक। साथी। बराबर वाला, जोड़ का। वह जिसका अभाव हो। वह जिसका किसी से प्रतिकूल संबंध हो, जैसे घट घटाभाव का प्रतियोगी है (न्या०)। वह वस्तु जो किसी अन्य वस्तु पर आश्रित हो।

प्रतियोद्ध, प्रतियोध—(पुं०) [प्रति√युध् +तृच्] [प्रति √युध्+घञ्] मुकाबले में लड़ने वाला, प्रतिद्वंद्वी।

प्रतिरक्षण—(न०),**प्रतिरक्षा**–(स्त्री०)[प्रति √रक्ष्+ल्युट्] [प्रति √रक्ष्+अ–टाप्] रक्षा, हिफाजत।

प्रतिरम्भ—(पुं०) [प्रति √ रम्भ्+घञ्] क्रोध, रोष।

प्रतिरव—(पुं०) [प्रति √रु+घञ्] झगड़ा, टंटा । प्रतिध्वनि ।

प्रतिरुद्ध—(वि०) [प्रति√रुध् +क्त] रुका या रोका हुआ, अवरुद्ध । अटका हुआ । निर्बल । बेकाम किया हुआ ।

प्रतिरोध—(पुं०) [प्रति √रुध्+घञ्] रोक, रुकावट । घेरा । विरोधी । छिपाव । चोरी । भर्त्सना ।

प्रतिरोधक, प्रतिरोधिन्—(पुं०) [प्रति √रुध्+ण्वुल्] [प्रति √रुध्+णिनि] प्रतिरोध करने वाला व्यक्ति । वैरी, शत्रु । डाकू । चोर ।

प्रतिरोधन—(न०) [प्रति√रुध् + ल्युट्] प्रतिरोध करने की क्रिया ।

प्रतिलम्भ—(पुं०) [प्रति √लभ्+घञ्] प्राप्ति, उपलब्धि । भर्त्सना, कुवाक्य ।

प्रतिलाभ—(पुं०) [प्रति √लभ्+घञ्] वापिस लेना, फेर लेना । प्राप्त करना ।

प्रतिवर्तन—(न०) [प्रति√वृत् + ल्युट्] लौटने की क्रिया ।

प्रतिवहन—(न०) [प्रति√वह्+ल्युट्] उलटी ओर ले जाना । विरुद्ध दिशा में ले जाना ।

प्रतिवाद—[प्रति√वद्+घञ्] वादी की बात के विरोध में कही जाने वाली बात, वादी की बात का उत्तर । विरोध, खंडन ।

प्रतिवादिन्—(पुं०) [प्रति√वद्+णिनि] वादी की बात का उत्तर देने वाला । प्रतिवाद का खंडन करने वाला । वह जिस पर दावा किया गया हो, मुद्दालेह । विपक्षी ।

प्रतिवार—(पुं०), **प्रतिवारण**—(न०) [प्रति √वृ+घञ्] [प्रति√वृ+णिच्+ल्युट्] रोकना, मना करना । [प्रति√वृ+णिच्+ल्यु] मतवाला हाथी । एक असुर ।

प्रतिवासिन्—(वि०) [स्त्री०—**प्रतिवासिनी**] [प्रति√वस्+णिनि] समीप का निवासी । (पुं०) पड़ोसी ।

प्रतिविघात—(पुं०) [प्रति—वि√हन्+घञ्] बचाव । चोट के बदले चोट ।

प्रतिविधान—(न०) [प्रति—वि √धा+ल्युट्] प्रतीकार । व्यूहरचना । रोक । उपसंस्कार ।

प्रतिविधि—(पुं०) [प्रति—वि√धा +कि] बदला । प्रतीकार ।

प्रतिविशिष्ट—(वि०) [प्रति—वि√शास्+क्त] अत्युत्तम, बहुत बढ़िया ।

प्रतिवेदित—(वि०) [प्रति √विद्+णिच्+क्त] आगाह किया हुआ, जताया हुआ ।

प्रतिवेदिन्—(वि०) [प्रति √विद्+णिनि] अनुभव करने वाला, जानने-समझने वाला ।

प्रतिवेश—(पुं०) [प्रति √विश्+घञ्] पड़ोसी । पड़ोसी का वासस्थान, पड़ोस ।—**वासिन्**—(वि०) पड़ोस में बसने वाला ।

प्रतिवेशिन्—(वि०) [स्त्री०—**प्रतिवेशिनी**] [प्रतिवेश+इनि] पड़ोसी ।

प्रतिवेश्य—(पुं०) [प्रति√विश् +ण्यत्] पड़ोसी ।

प्रतिवेष्टित—(वि०) [प्रति √वेष्ट्+क्त] प्रत्यावृत्त, लौटा हुआ । विपर्यस्त ।

प्रतिव्यूह—(पुं०) [प्रति—वि√ऊह्+घञ्] शत्रु पर आक्रमण करने के लिये सेना का व्यूह बनाना । समुदाय, दल ।

प्रतिशम—(पुं०) [प्रति√शम् + घञ्] निवृत्ति, छुटकारा । अवसान, समाप्ति ।

प्रतिशयन—(न०) [प्रति √शी+ल्युट्] किसी कामना की सिद्धि के लिये देवस्थान पर खाना-पीना त्याग कर पड़ा रहना, धरना देना ।

प्रतिशयित—(वि०) [प्रति√शी + क्त] धरना दिया हुआ; 'अनया च किलास्मै प्रतिशयिताय स्वप्ने समादिष्टं' दश० ।

प्रतिशाप—(पुं०) [प्रति √शप्+घञ्] शाप के बदले शाप । अकोसा के बदले अकोसा ।

प्रतिशासन—(न०) [प्रति√शास् + ल्युट्] आज्ञा प्रदान करना। किसी कार्य पर बाहर भेजना।

प्रतिशिष्ट—(वि०) [प्रति√शास् + क्त] भेजा हुआ। आज्ञप्त। विसर्जन किया हुआ। खारिज किया हुआ। प्रख्यात, प्रसिद्ध।

प्रतिश्या—(स्त्री०) **प्रतिश्यान**—(न०), **प्रतिश्याय**—(पुं०) [प्रति√श्यै+क—टाप्] [प्रति√श्यै+क्त] [प्रति√श्यै+ण] जुकाम, सर्दी।

प्रतिश्रय—(पुं०) [प्रति√श्रि + अच्] आश्रम। घर। सभा। यज्ञमण्डप। साहाय्य, सहायता। वादा, प्रतिज्ञा।

प्रतिश्रव—(पुं०) [प्रति√श्रु+अप्] प्रतिज्ञा, रजामंदी, इकरार, वादा। गूंज, झाँई, प्रतिध्वनि।

प्रतिश्रवण—(न०) [प्रति√श्रु + ल्युट्] सुनना। प्रतिज्ञाबद्ध होना। प्रतिज्ञा, वादा, इकरार।

प्रतिश्रुत्, प्रतिश्रुति—(स्त्री०) [प्रति√श्रु +क्विप्] [प्रति√श्रु+क्तिन्] वादा, प्रतिज्ञा। प्रतिध्वनि, गूंज, झाँई; 'क्षणं प्रतिश्रुन्मुखराः करोति' र० १३.४०।

प्रतिश्रुत—(वि०) [प्रति√श्रु+क्त] प्रतिज्ञात। स्वीकार किया हुआ।

प्रतिषिद्ध—(वि०) [प्रति√सिध् + क्त] निषिद्ध, वर्जित। अस्वीकृत। खण्डि०, खण्डन किया हुआ।

प्रतिषेध—(पुं०) [प्रति√सिध् + घञ्] निषेध, मनाही। अस्वीकृति। अपलाप। खण्डन। अस्वीकारसूचक अव्ययात्मक शब्द। —अक्षर (प्रतिषेधाक्षर)–(न०)—उक्ति (प्रतिषेधोक्ति)–(स्त्री०) इन्कार, अस्वीकारोक्ति।—उपमा (प्रतिषेधोपमा) (स्त्री०)–दण्डी कवि वर्णित कई प्रकार की उपमाओं में से एक।

प्रतिषेधक,प्रतिषेद्धृ—(वि०) [प्रति√सिध् ण्वुल्] [प्रति√सिध्+तृच्] प्रतिषेध करने वाला, मना करने वाला। रोकने वाला। (पुं०) बाधा डालने या मनाई करने वाला व्यक्ति।

प्रतिषेधन—(न०) [प्रति√सिध् + ल्युट्] रोक-थाम। निषेध, मनाई। इन्कार, अस्वीकृति।

प्रतिष्क, प्रतिष्कश—(पुं०) [प्रति√स्कन्द् +ड] [प्रति√कश्+अच्, सुट्] जासूस, भेदिया। दूत।

प्रतिष्कष—(पुं०) [प्रति√कष् + अच्, सुट्] भेदिया। दूत। चाबुक। चमड़े का तस्मा।

प्रतिष्कष—(पुं०) [प्रति√कष् + अच्, सुट्] चाबुक, कोड़ा। चमड़े का तस्मा।

प्रतिष्टम्भ—(पुं०) [प्रति√स्तम्भ् + घञ्, षत्व] प्रतिबंध। स्तब्ध या निश्चेष्ट होने या करने का भाव; 'बाहुप्रतिष्टम्भविवृद्धमन्युः' र० २.३२। बाधा। शोक।

प्रतिष्ठा—(स्त्री०) [प्रति√स्था + अङ —टाप्] स्थापना। अवस्थान, स्थिति। घर। आवादी। स्थिरता, स्थायित्व। नींव। खंभा। उच्चपद। कीर्ति। प्राणप्रतिष्ठा (किसी देव-मूर्ति की)। अभीष्ट-सिद्धि। शान्ति। आधार। पृथिवी। अभिषेक। सीमा।

प्रतिष्ठान—(न०) [प्रति√स्था+ल्युट्] नींव। आधार। स्थान। अवस्थिति। टाँग। पैर। एक प्राचीन राजधानी का नाम जो प्रयाग के समीप गंगा पर झूसी के नाम से अब प्रसिद्ध है। गोदावरी नदी के तटवर्ती एक नगर का नाम।

प्रतिष्ठित—(पुं०) [प्रति√स्था+क्त] खड़ा किया हुआ। जमाया हुआ। गाड़ा हुआ। स्थापित किया हुआ। अवस्थित। अभिषेक किया हुआ। पूर्ण किया हुआ। जिसका मूल्य लग चुका हो। प्रसिद्ध, प्रख्यात।

प्रतिसंविद्—(स्त्री०) [प्रति—सम्√विद्+क्विप्] किसी वस्तु का सम्यक् परिज्ञान या जानकारी।

प्रतिसंहार—(पुं०) [प्रति—सम् √ हृ+घञ्] वापिस कर लेने की क्रिया। ह्रास, न्यूनता। सङ्कोचन। परिमिति, रोध। सन्निवेश। त्याग।

प्रतिसंहृत—(वि०) [प्रति—सम्√हृ+क्त] वापिस लिया हुआ, फेरा हुआ। समझा हुआ। शामिल किया हुआ। सिकुड़ा हुआ। दबा हुआ।

प्रतिसङ्क्रम—(पुं०) [प्रति—सम् √क्रम्+घञ्] प्रतिच्छाया, परछाईं। परिशोषण। तिरोधान।

प्रतिसङ्ख्या—(स्त्री०) [प्रति—सम् √ख्या+अङ्—टाप्] अव्यवहित ज्ञान, चैतन्य।

प्रतिसञ्चर—(पुं०) [प्रति—सम् √ चर्+ट] पीछे की ओर जाना। पुराणानुसार वह प्रलय जिसमें विश्व प्रकृति में लीन हो जाता है।

प्रतिसन्देश—(पुं०) [प्रति—सम् √दिश्+घञ्] सन्देसे का जवाब, सन्देसे के उत्तर में सँदेसा।

प्रतिसन्धान—(न०) [प्रति—सम् √ धा+ल्युट्] मिलान, जोड़। दो युगों के बीच का सन्धिकाल। इलाज। आत्म-संयम। प्रशंसा। अनुसंधान। धनुष पर बाण चढ़ाना।

प्रतिसन्धि—(पुं०) [प्रति—सम् √ धा+कि] पुनर्मिलन। गर्भाशय में प्रवेश-करण। दो युगों के परिवर्तन का मध्यकाल। उपरम, विश्राम। भाग्य की प्रतिकूलता। पुनर्जन्म।

प्रतिसमाधान—(न०) प्रति—सम् — आ √धा+ल्युट्] प्रतिकार। चिकित्सा।

प्रतिसमासन—(न०) [प्रति—सम—आ √अस्+ल्युट्] निवारण। प्रतिरोध।

प्रतिसर—(न०, पुं०) [प्रति√सृ+अच्] कलाई या गरदन में बाँधने का ताबीज। (पुं०) नौकर, अनुचर। कङ्कण। ब्याह में पहिना जाने वाला कङ्कण-विशेष; 'स्रस्तोरग-प्रतिसरेण करेण' कि० ५.३३। पुष्पहार या फूलमाला। प्रभात। सेना का पश्चात् भाग। तांत्रिक मंत्र-विशेष। घाव का पुरना या अच्छा होना।

प्रतिसर्ग—(पुं०) [प्रति√सृज+घञ्] पुराण के मतानुसार वे सब सृष्टियाँ जिनकी रचना ब्रह्मा के मानस पुत्रों द्वारा की गयी। प्रलय। पुराण का एक भाग जिसमें प्रलय आदि का विचार किया गया है।

प्रतिसव्यानिक—(पुं०) [प्रतिसव्यान+ठक्] भाट, मागध, बंदी।

प्रतिसारण—(न०) [प्रति√सृ + णिच् ल्युट्] दूर हटाना, दूरीकरण। घाव के किनारों की सफाई और मलहम-पट्टी करना। घाव में मलहम लगाने का एक औजार। भगंदर, बवासीर रोगों को गरम घी या तेल से दागने की एक क्रिया (सुश्रुत)।

प्रतिसीरा—(स्त्री०) [प्रति √सि+क्रन्, दीर्घ—टाप्] परदा। कनात। चिक।

प्रतिसृष्ट—(वि०) [प्रति√सृज्+क्त] भेजा हुआ, रवाना किया हुआ। प्रसिद्धि-प्राप्त। 'सदेह' था, भगाया हुआ। खारिज किया हुआ। प्रमत्त, नशे में चूर।

प्रतिस्नात—(वि०) [प्रति √स्ना+क्त] स्नान किया हुआ।

प्रतिस्नेह—(पुं०) [प्रति √स्निह् + घञ्] प्यार के बदले प्यार।

प्रतिस्पन्दन—(न०) [प्रति√स्पन्द् +ल्युट्] हृदय की धकधक।

प्रतिस्वन, प्रतिस्वर—(पुं०) [प्रति√स्वन्+अप्] [प्रति√स्वृ+अप्] प्रतिध्वनि, आईं।

प्रतिहत—(वि०) [प्रति√हन्+क्त] हटाया हुआ। भगाया हुआ। अवरुद्ध, रुका हुआ। भेजा हुआ। नापसन्द, घृणास्पद। हताश। —**मति**-(वि०) घृणा या अरुचि रखने वाला।

प्रतिहति—(स्त्री०) [प्रति √हन्+क्तिन्] रोकने या हटाने की चेष्टा। प्रतिघात। नैराश्य, विफलता; 'प्रतिहतिं ययुरर्जुनमुष्टयः' कि० १८.५। कोप। टक्कर।

प्रतिहनन—(न०) [प्रति√हन् + ल्युट्] वह आघात जो किसी के आघात करने पर किया जाय।

प्रतिहर्तृ—(पुं०) [प्रति√हृ+तृच्] सोलह प्रकार के ऋत्विजों में से एक। निवारण करने वाला, पीछे हटाने वाला।

प्रतिहार, प्रतीहार—(पुं०) [प्रति √हृ +घञ्, घञि उपसर्गस्य दीर्घः] द्वार, दरवाजा। द्वारपाल, दरबान। ऐन्द्रजालिक, जादूगर। इन्द्रजाल। उद्गाता द्वारा गाये जाने वाले साम का एक अवयव।—**भूमि**–(स्त्री०) घर का चबूतरा।—**रक्षी**–(स्त्री०) स्त्री द्वारपाल।

प्रतिहारक—(पुं०) [प्रति√हृ + ण्वुल्] ऐन्द्रजालिक। दूसरे स्थान पर ले जाने वाला। प्रतिहार साम का गान करने वाला।

प्रतिहास—(पुं०) [प्रति√हस्+घञ्] हँसी के बदले हँसी।

प्रतिहिंसा—(स्त्री०) [प्रति √हिंस्+अ —टाप्] बदला लेना। बैर चुकाना।

प्रतीक—(वि०) [प्रति+कन्, नि० दीर्घ] प्रतिकूल, विरुद्ध। उलटा, औंधा, विलोम। (पुं०) अवयव, अङ्ग। अंश, भाग। (न०) मूर्ति। मुख, चेहरा। किसी पद या वाक्य का प्रथम शब्द।

प्रतीक्षण—(न०), **प्रतीक्षा**–(स्त्री०) [प्रति √ईक्ष्+ल्युट्] [प्रति√ईक्ष् + अ—टाप्] आसरा, इन्तजार। प्रत्याशा। खयाल, ध्यान। प्रतिपालन। पूजा।

प्रतीक्षित—(वि०) [प्रति √ईक्ष्+क्त] वह जिसकी प्रतीक्षा की गयी हो या जिसकी बाट जोही गयी हो। विचार किया हुआ, सोचा-विचारा हुआ।

प्रतीक्ष्य—(वि०) [प्रति√ईक्ष्+ण्यत्] प्रतीक्षा करने योग्य। सोचने-विचारने योग्य। माननीय; "भक्तिः प्रतीक्ष्येषु कुलोचिता ते" र० ५.१४। परिपूर्ण करने योग्य।

प्रतीची—(स्त्री०) [प्रति√अञ्च् +क्विन् —ङीप्] पश्चिम दिशा।

प्रतीचीन—(वि०) [प्रत्यञ्च्+ख, अलोप, नलोप, दीर्घ] पश्चिमी, पाश्चात्य। भविष्य का। पीछे का।

प्रतीच्छक—(पुं०) [प्रतिगता इच्छा यस्य, प्रा० ब०, कप्] ग्राहक, लेने वाला।

प्रतीच्य—(वि०) [प्रतीची+यत्] पश्चिम दिशा का। पाश्चात्य-देश-वासी।

प्रतीत—(वि०) [प्रति√इ+क्त]गुजरा हुआ, गया हुआ। विश्वस्त, विश्वास किया हुआ। सिद्ध, साबित किया हुआ। भली भाँति ज्ञात। प्रसिद्ध, विख्यात। दृढ़ निश्चय किया हुआ। प्रसन्न, आनन्दित; 'पतिः प्रतीतः प्रसवोन्मुखीं प्रियां' र० ३.१२। प्रतिष्ठित, सम्मानित। चतुर, बुद्धिमान्।

प्रतीति—(स्त्री०) [प्रति√इ + क्तिन्] निश्चित विश्वास या धारणा। यकीन, प्रत्यय। ज्ञान। कीर्ति। सम्मान। हर्ष।

प्रतीन्धक—(पुं०) विदेह देश का नामान्तर।

प्रतीप—(वि०) [प्रतिकूला आपो यस्मिन्, ब० स०, अप्रत्यय, ईत्व] विरुद्ध, प्रतिकूल। उलटा, विलोम। पश्चाद्गामी। अप्रिय, अप्रसन्नकर। हठी, दुराग्रही। बाधाकारक। (न०) अर्थालङ्कार विशेष (इसमें उपमेय को उपमान के समान न कह कर, उलटा उपमान को उपमेय के समान कहते हैं। अथवा उपमेय द्वारा उपमान के तिरस्कार का वर्णन करते हैं)। (पुं०) महाराज शान्तनु के पिता का नाम। (अव्य०) विरुद्ध इसके, दूसरी ओर। उलटे क्रम से, विलोम क्रम से। प्रतिकूल, बरखिलाफ।—**ग**–(वि०) प्रतिकूल गमनकारी, उलटा आचरण करने वाला —**गमन**

–(न०),–**गति**–(स्त्री०)–पीछे की ओर की गति या गमन ।—**तरण**–(न०) धारा के विरुद्ध जाना या नाव चलाना ।—**दर्शिनी**–(स्त्री०) स्त्री, औरत । देखते ही मुँह फेर लेने वाली नई स्त्री, नववधू ।—**वचन**–(न०) खण्डन, किसी के वचन के विरुद्ध कथन ।—**विपाकिन्**–(वि०) उलटा फल देने वाला ।

प्रतीर—(न०) [प्रतीरयति जलगतिकर्म समाप्तिं नयति, प्र√तीर्+क] तट, किनारा ।

प्रतीवाप—(पुं०) [प्रति√वप्+घञ्, उपसर्गस्य दीर्घः] वह दवा जो पीने के लिये काढ़े आदि में मिलायी जाय । किसी धातु का रूप बदलने के लिये उसमें अन्य धातु या वस्तु मिलाना । संक्रामक रोग, छुआछूत के रोग ।

प्रतीवेश—(पुं०) [प्रति√विश् + घञ्, उपसर्गस्य दीर्घः] दे० 'प्रतिवेश' ।

प्रतीवेशिन्—(वि०) [प्रतीवेश+इनि] दे० 'प्रतिवेशिन्' ।

प्रतीहार—दे० 'प्रतिहार' ।

प्रतीहारी—(स्त्री०) [प्रतीहार+अच्–ङीष्] स्त्री दरबान या स्त्री द्वारपाल ।

प्रतुद—(पुं०) [प्र√तुद्+क] पक्षियों की जाति-विशेष ।(इस जाति में तोता, बाज, कौआ आदि हैं)। छेदने या चुभाने का यन्त्र-विशेष ।

प्रतुष्टि—(स्त्री०) [प्र√तुष्+क्तिन्] सन्तोष । हर्ष ।

प्रतोद—(पुं०) [प्र√तुद्+घञ्] अंकुश । चाबुक । आरई, चुभोने का औजार ।

प्रतूर्ण—(वि०) [प्र√त्वर्+क्त] वेगवान्, तेज ।

प्रतोली—(स्त्री०) [प्र√तुल्+घञ्–ङीष्] नगर के बीच की चौड़ी सड़क; 'प्राप्तप्रतोलीमतुलप्रतापः' शि० ३.६४ । गली, कूचा । बाजार के बीच का रास्ता । किले के नीचे से होकर जाने वाला रास्ता । फोड़े आदि पर पट्टी बाँधने का एक ढंग । इस ढंग की बाँधी हुई पट्टी । गली । ग्राम सड़क । किसी नगर का मुख्य मार्ग ।

प्रत्त—(वि०) [प्र√दा+क्त] दिया हुआ, दे डाला हुआ । चढ़ाया हुआ, भेंट किया हुआ । विवाह में दिया हुआ ।

प्रत्न—(वि०) [प्र+त्नप्] प्राचीन, पुरातन । अगला । परंपरागत ।

प्रत्यक्—(अव्य०) [दे० 'प्रत्यञ्च्'] विरुद्ध दिशा में । पीछे की ओर । प्रतिकूल । पश्चिम की ओर । भीतर की ओर । पहिले, प्राचीन काल में ।

प्रत्यक्ष—(वि०) [प्रतिगतम् अक्षि इन्द्रियं प्रा० समासे अच् वा प्रत्यक्षम् अस्ति अस्य, अर्श आदित्वात् अच्] जो आँखों के सामने हो, नयन-गोचर । उपस्थित, विद्यमान । जिसका ज्ञान इंद्रियों के द्वारा हो सके, इन्द्रियगोचर । स्पष्ट, साफ । सीधा । (न०) एक प्रकार का ज्ञान जो इंद्रिय और अर्थ के सन्निकर्ष से उत्पन्न होता है और चार प्रकार के प्रमाणों के अंतर्गत माना जाता है । किसी ज्ञानेंद्रिय द्वारा वस्तु-विशेष का ग्रहण ।—**दर्शन**,—**दर्शिन्**–(पुं०) चश्मदीद गवाह, वह साक्षी जिसने कोई घटना अपनी आँखों से देखी हो ।—**दृष्ट**–(वि०) खुद का देखा हुआ ।—**प्रमा**–(स्त्री०) इंद्रियों के संपर्क से प्राप्त यथार्थ ज्ञान ।—**प्रमाण**–(न०) आँखों से देखा हुआ सबूत ।—**लवण**–(पुं०) भोजन पक चुकने के बाद ऊपर से मिलाया जाने वाला नमक ।(श्राद्ध आदि में ऐसा लवण निषिद्ध है) ।—**वादिन्**–(पुं०) वह व्यक्ति जो केवल प्रत्यक्ष प्रमाण या इंद्रियजन्य प्रमाण माने ।—**विहित**–(वि०) जिसका प्रत्यक्ष रूप से विधान हो । स्पष्ट रूप से आदेश किया हुआ ।

प्रत्यक्षिन्—(पुं०) [प्रत्यक्ष+इनि] प्रत्यक्षद्रष्टा । आँखों देखा गवाह ।

प्रत्यग्र—(वि०) [प्रतिगतम् अग्रम् श्रेष्ठं प्रथम-दर्शन यस्य, प्रा० ब०] ताजा, टटका; 'प्रत्यग्रहतानाम्मांसम्' वे० ३। दुहराया हुआ। विशुद्ध।—**वयस्**-(वि०) नौजवान।

प्रत्यञ्च्—(वि०) [स्त्री०—**प्रतीची**, बोपदेव के मतानुसार **प्रत्यञ्ची**] [प्रति√अञ्च् +क्विन्] मुड़ा हुआ, घूमा हुआ। पीछे पड़ा हुआ। अगला। लौटा हुआ। बदला हुआ। पश्चिमी, पाश्चात्य।—**आत्मन्** (**प्रत्यगात्मन्**)-(पुं०) परमेश्वर, ब्रह्मचैतन्य। व्यक्तिगत जीव।—।—**आशापति**, (**प्रत्यगाशापति**) -(पुं०) पश्चिम दिशा के दिक्पाल वरुण देव।—**उदच्** (**प्रत्यगुदच्**)-(स्त्री०) उत्तर-पश्चिम कोण, वायव्यकोण।—**दक्षिणतः** (**प्रत्यग्दक्षिणतः**)-(अव्य०) नैर्ऋत्य कोण की ओर।—**दृश्** (**प्रत्यग्दृश्**)-(स्त्री०) अन्तर्दृष्टि।—**मुख** (**प्रत्यङ्मुख**)-(वि०) जिसका मुँह पश्चिम की ओर हो। उल्टा मुँह किये हुए।—**स्रोतस्** (**प्रत्यक्स्रोतस्**)- (वि०) पश्चिम की ओर बहने वाला (नद)। (स्त्री०) नर्मदा नदी का नामान्तर।

प्रत्यञ्चित—(वि०) [प्रति√अञ्च् +क्त] सम्मानित, पूजित, अर्चित।

प्रत्यदन—(न०) [प्रति√अद् + ल्युट्] भोजन करना। भोजन।

प्रत्यभिज्ञा—(स्त्री०) [प्रति—अभि √ज्ञा +अङ—टाप्] वह ज्ञान जो किसी देखी हुई वस्तु को अथवा उसके समान अन्य किसी वस्तु को फिर से देखने पर हो, स्मृति की सहायता से उत्पन्न होने वाला ज्ञान। यह ज्ञान कि परमेश्वर और जीवात्मा एक है।—**दर्शन**-(न०) एक दर्शन जिसके अनुसार महेश्वर या परमशिव ब्रह्म या परमात्मा माने जाते हैं।

प्रत्यभिज्ञात—(वि०) [प्रति—अभि√ज्ञा +क्त] पहचाना हुआ।

प्रत्यभिज्ञान—(न०) [प्रति—अभि √ ज्ञा +ल्युट्] पहचान; 'प्रत्यभिज्ञानरत्नं च रामायादर्शयत्कृती' र० १२.६४। समान वस्तु को देख कर किसी पूर्व देखी हुई वस्तु का स्मरण हो आना।

प्रत्यभिभूत—(वि०) [प्रति—अभि √भू +क्त] जीता हुआ।

प्रत्यभियुक्त—(वि०) [प्रति—अभि √युज् +क्त] अभियोग के बदले अभियोग लगाया हुआ।

प्रत्यभियोग—(पुं०) [प्रति—अभि√युज् +घञ्] वह अभियोग जो अभियुक्त अपने अभियोग लगाने वाले पर लगावे।

प्रत्यभिवाद—(पुं०), **प्रत्यभिवादन**-(न०) [प्रति—अभि√वद्+णिच् + घञ्] [प्रति —अभि√ वद् + णिच्+ल्युट्] प्रणाम करने वाले को दिया जाने वाला आशीर्वाद। नमस्कार के बदले का नमस्कार।

प्रत्यभिस्कन्दन—(न०) [प्रति—अभि √स्कन्द्+ल्युट्] अभियोग के बदले का अभियोग।

प्रत्यय—(पुं०) [प्रति√इ+अच्] प्रतीति, विश्वास। भरोसा। ज्ञान, बुद्धि, समझ। निश्चय। अनुभव। कारण, हेतु। ख्याति। वह अक्षर या शब्द जो किसी धातु या मूल शब्द के अन्त में जोड़ा जाय। शपथ। परमुखापेक्षी। चाल, प्रचलन। छंदों की संख्या जानने की एक रीति। छिद्र।—**कारक**,—**कारिन्**-(वि०) विश्वास दिलाने वाला।—**कारिणी**-(स्त्री०) मुहर, मुद्रा।

प्रत्ययित—(वि०) [प्रत्यय+इतच्] आप्त, प्राप्त, विश्वस्त, जिसका विश्वास किया जाय। प्रतिगत, लौटा हुआ।

प्रत्ययिन्—(वि०) [प्रत्यय+इनि] विश्वास करने वाला। विश्वास करने योग्य, विश्वस्त।

प्रत्यर्थ—(वि०) [प्रति √ अर्थ्+अच्]

उपयोगी, काम का। (न०) उत्तर, जवाब। विरोध।

प्रत्यर्थक—(पुं०) [प्रति√अर्थ् + ण्वुल्] विपक्षी, विरोधी।

प्रत्यर्थिन्—(वि०) [स्त्री०—**प्रत्यर्थिनी**] [प्रति√अर्थ् + णिनि] विरोधी; 'सधर्मस्थसखः शश्वदर्थिप्रत्यर्थिनां स्वयं' र० १७.३९। (पुं०) शत्रु। प्रतिद्वन्द्वी, जोड़ीदार। प्रतिवादी, मुद्दालेह।—**भूत**—(वि०) बाधक बना हुआ।

प्रत्यर्पण—(न०) [प्रति√ऋ + णिच् + ल्युट्, पुकागम] वापिस देना, लिये हुए को लौटा देना।

प्रत्यर्पित—(वि०) [प्रति√ऋ + णिच् + क्त, पुकागम] लौटाया हुआ, फेरा हुआ।

प्रत्यवमर्श, प्रत्यवमर्ष—(पुं०) [प्रति—अव √मृश् + घञ्] [प्रति—अव √मृष् + घञ्] अनुचिन्तन। सहिष्णुता। परामर्श, सलाह। परिणाम।

प्रत्यवरोधन—(न०) [प्रति—अव √रुध् + ल्युट्] रुकावट, बाधा।

प्रत्यवसान—(न०) [प्रति—अव √सो + ल्युट्] खाना, भोजन।

प्रत्यवसित—(वि०) [प्रति—अव √सो + क्त] भक्षित, खाया हुआ। जो फिर पुराना (बुरा) रहन-सहन अपना चुका हो।

प्रत्यवस्कन्द—(पुं०), **प्रत्यवस्कन्दन**—(न०) [प्रति—अव√स्कन्द् + घञ्] [प्रति—अव √स्कन्द् + ल्युट्] व्यवहार-शास्त्रानुसार प्रतिवादी का वह उत्तर जो वादी के कथन का खण्डन करने को दिया जाय।

प्रत्यवस्थान—(न०) [प्रति—अव √स्था + ल्युट्] विरोधी या प्रतिवादी के रूप में स्थित होना। पूर्व स्थिति में बने रहना। स्थानान्तरकरण। विरोध।

प्रत्यवहार—(पुं०) [प्रति—अव √हृ + घञ्] लड़ने के लिये तैयार सैनिकों को युद्ध से निवृत्त करना। वापिसी। प्रलय, संहार; 'सर्गस्थितिप्रत्यवहारहेतुः' र० २.४४।

प्रत्यवाय—(पुं०) [प्रति—अव √अय् + घञ्] ह्रास, न्यूनता। बाधा। विरुद्ध मार्ग। पाप। अपराध। भारी परिवर्तन। जो नहीं है उसका उत्पन्न होना या जो है उसका न रह जाना।

प्रत्यवेक्षण—(न०), **प्रत्यवेक्षा**—(स्त्री०) [प्रति—अव √ईक्ष् + ल्युट्] [प्रति—अव √ईक्ष् + अ—टाप्] किसी बात को भली भाँति विचारना। देखना-भालना, मुआयना करना।

प्रत्यस्तमय—(पुं०) सूर्यास्त। अवसान, समाप्ति।

प्रत्याक्षेपक—(वि०) [स्त्री०—**प्रत्याक्षेपिका**] [प्रति—आ√क्षिप् + ण्वुल्] हँसी उड़ानेवाला। चिढ़ाने वाला। तिरस्कार करने वाला।

प्रत्याख्यात—(वि०) [प्रति—आ √ख्या + क्त] अस्वीकृत, जो अङ्गीकार न किया गया हो। वर्जित, निषिद्ध। हटाया हुआ। खारिज किया हुआ। उत्साहहीन किया हुआ।

प्रत्याख्यान—(न०) [प्रति—आ√ख्या + ल्युट्] अस्वीकृति। तिरस्कार। भर्त्सना। खण्डन, प्रतिवाद।

प्रत्यागति—(स्त्री०) [प्रति—आ √गम् + क्तिन्] वापसी।

प्रत्यागम—(पुं०), **प्रत्यागमन**—(न०) [प्रति—आ√गम् + अप्] [प्रति—आ √गम् + ल्युट्] लौट आना, वापस आना।

प्रत्यादान—(न०) [प्रति—आ √दा + ल्युट्] वापिस ले लेना।

प्रत्यादिष्ट—(वि०) [प्रति—आ √दिश् + क्त] निर्दिष्ट। सूचित किया हुआ। अस्वीकृत किया हुआ। बरतरफ किया हुआ, हटाया हुआ। छाया में फेंका हुआ। चेतावनी दिया हुआ, सावधान किया हुआ।

प्रत्यादेश—(पु०) [प्रति—आ √दिश् +घञ्] आज्ञा, आदेश। सूचना। घोषणा। अस्वीकृति; 'प्रत्यादेशान्न खलु भवतो धीरतां कल्पयामि' मे० १४। प्रतिवाद। परास्त करने की क्रिया। लज्जित करना। चेतावनी। आकाशवाणी।

प्रत्यानयन—(न०) [प्रति — आ√नी +ल्युट्] लौटा लाना। दूसरे के हाथ में गयी हुई वस्तु को फिर ले आना।

प्रत्यापत्ति—(स्त्री०) [प्रति—आ √ पद् +क्तिन्] वापिसी। वैराग्य।

प्रत्याय—(पु०) [प्रति√अय्+घञ्] राजस्व, कर।

प्रत्यायक—(वि०) [प्रति—आ √इ +णिच् +ण्वुल्] सिद्ध करने वाला। समझाने वाला। विश्वास कराने वाला।

प्रत्यायन—(वि०) [प्रति—आ √इ + णिच् +ण्वुल्] विश्वास दिलाने की क्रिया। व्याख्या करना। (वधू को) लिवा लाना। (सूर्य का) अस्त होना।

प्रत्यालीढ—(न०) [प्रति—आ√लिह्+क्त] धनुषधारियों के बैठने का एक आसन। जिसमें बायाँ पैर आगे बढ़ते हैं और दाँया पीछे खींच लेते हैं।

प्रत्यावर्तन—(न०) [प्रति—आ √ वृत्+ल्युट्] लौटना, लौटकर आना, वापस आना।

प्रत्याश्वस्त—(वि०) [प्रति—आ√श्वस् +क्त] ढाढ़स बँधाया हुआ, धीरज बँधाया हुआ।

प्रत्याश्वास—(पु०) [प्रति—आ √श्वस् +घञ्] फिर से श्वांस का चलने लगना।

प्रत्याश्वासन—(न०) [प्रति—आ√श्वस् +णिच्+ल्युट्] ढाढ़स या धीरज बँधाना।

प्रत्यासत्ति—(स्त्री०) [प्रति— आ √सद् +क्तिन्] समय या स्थान की समीपता। घनिष्ठता। उपमिति, भिन्न भिन्न वस्तुओं का सादृश्य। न्याय में अलौकिक प्रत्यक्ष का कारण रूप संबन्ध।

प्रत्यासन्न—(वि०) [प्रति—आ√सद्+क्त] पास आया हुआ, निकट पहुँचा हुआ।

प्रत्यासर, प्रत्यासार—(पु०) [प्रति—आ √सृ+अप्] [प्रति—आ√सृ+घञ्] सेना का पीछे का भाग। ऐसी मोर्चाबन्दी जिसमें एक व्यूह के पीछे दूसरा बनाया गया हो।

प्रत्यास्वर—(पु०) [प्रति—आ√स्वृ+अप्] (डूबने के बाद फिर से उदित हुआ) सूर्य। (वि०) पुनः चमकने वाला।

प्रत्याहरण—(न०) [प्रति—आ √ हृ +ल्युट्] वापस लेना या लाना। रोक रखना। इन्द्रियसंयम।

प्रत्याहार—(पु०) [प्रति—आ√हृ + घञ्] पीछे खींच लेना। पीछे हटा लेना। रोक रखना। इन्द्रिय-दमन। प्रलय। योग के आठ अंगों में से एक।

प्रत्युक्त—(वि०) [प्रति√वच् + क्त] उत्तर दिया हुआ, जिसका उत्तर दिया जा चुका हो।

प्रत्युक्ति—(स्त्री०) [प्रति√वच् + क्तिन्] उत्तर, जवाब।

प्रत्युच्चार—(पु०), **प्रत्युच्चारण**—(न०) [प्रति—उद् √चर्+णिच्+घञ्] [प्रति—उद् √चर्+णिच्+ल्युट्] पुनरुक्ति।

प्रत्युज्जीवन—(न०) [प्रति—उद् √जीव् +ल्युट्] मरे हुए व्यक्ति का फिर से जी उठना, पुनर्जीवन।

प्रत्युत—(अव्य०) [प्रति—उत, द्व० स०] इसके विपरीत, बल्कि, वरन्।

प्रत्युत्क्रम—(पु०), **प्रत्युत्क्रमण**—(न०), **प्रत्युत्क्रान्ति**—(स्त्री०) [प्रति—उद् √क्रम् +घञ्] [प्रति—उद्√क्रम्+ल्युट्] [प्रति—उद् √क्रम्+क्तिन्] उद्योग जो कोई कार्य आरम्भ करने के लिये किया जाय। लड़ाई

की तैयारी। वह आक्रमण जो युद्ध के समय सबसे पहले हो।

प्रत्युत्थान—(न०) [प्रति–उद् √ स्था +ल्युट्] अभ्युत्थान, किसी बड़े के आने पर उसके प्रति सम्मान प्रदर्शन करने के लिये उठ खड़े होना। किसी के विरुद्ध उठ खड़े होना। युद्ध के लिये तैयारी करना।

प्रत्युत्थित—(वि०) [प्रति–उद्√स्था+क्त] किसी मित्र या शत्रु से मिलने के लिये उठा हुआ।

प्रत्युत्पन्न—(वि०) [प्रति–उद् √पद्+क्त] जो फिर से उत्पन्न हुआ हो। जो ठीक समय पर उत्पन्न हुआ हो। उद्यत, तत्पर। (न०) गुणा।—**मति**–(वि०) हाजिर-जवाब, वह जो मौके पर ठीक उत्तर दे या समय पर जिसकी बुद्धि काम कर जाय। साहसी, हिम्मतवाला। तीक्ष्ण, तीव्र।

प्रत्युदाहरण—(न०) [प्रति–उद् – आ –हृ +ल्युट्] उदाहरण के विरोध में दिया गया उदाहरण, विरुद्ध उदाहरण।

प्रत्युद्गत—(वि०) [प्रति–उद्√गम्+क्त] अतिथि के आने पर उसके प्रति सम्मान प्रदर्शनार्थ अपना आसन छोड़ उठ खड़ा हुआ, अभ्युत्थित; 'प्रत्युद्गतो मां भरतो ससैन्यः' र० १३.६४। किसी के विरुद्ध गया हुआ।

प्रत्युद्गति–(स्त्री०), **प्रत्युद्गम**–(पुं०), **प्रत्युद्गमन**–(न०) [प्रति–उद् √गम्+क्तिन्] [प्रति–उद् √गम्+अप्] [प्रति–उद् √गम्+ल्युट्] आगे बढ़ कर या अपने आसन को छोड़ कर आये हुए अतिथि की आवभगत के लिये उठ खड़ा होना।

प्रत्युद्गमनीय—(न०) [प्रति–उद् √गम् +अनीयर्] एक प्रकार के वस्त्र का जोड़ा (उत्तरीय और अधोवस्त्र), जो प्राचीन काल में यज्ञों में या भोजन के समय पहना जाता था; 'गृहीतप्रत्युद्गमनीयवस्त्रा' कु० ७.११।

प्रत्युद्धरण—(न०) [प्रति–उद् √हृ+ल्युट्] परहस्तगत वस्तु को वापिस लेना। पुनः उठ खड़ा होना।

प्रत्युद्यम—(पुं०) [ति–उद् √यम्+अप्] समान भार या बल।। प्रतिरोध, प्रतिक्रिया।

प्रत्युद्यात्—(वि०) [प्रति–उद्√ या+तृच्] विरुद्ध गमन करने वाला। आक्रमण करने वाला।

प्रत्युन्नमन—(न०) [प्रति–उद् √ नम् +ल्युट्] पुनः उठ खड़ा होना। उछलकर लौट आना, पलटा खाना।

प्रत्युपकार—(पुं०) [प्रति–उप√कृ+घञ्] वह उपकार जो किसी उपकार के बदले में किया जाय।

प्रत्युपक्रिया—(स्त्री०) [प्रति–उप√ कृ +श, इयङ, टाप्] वह सेवा जो किसी के बदले में की जाय।

प्रत्युपदेश—(पुं०) [प्रति– उप √ दिश् +घञ्] वह उपदेश जो उपदेश के बदले दिया जाय।

प्रत्युपमान—(न०) [प्रति–उप √ मा +ल्युट्] उपमान का उपमान। नमूना, बानगी। यथार्थ नकल। यथार्थ तुलना।

प्रत्युपलब्ध—(वि०) [प्रति–उप √ लभ् +क्त] वापिस मिला हुआ, फिर से पाया हुआ।

प्रत्युपवेश—(पुं०), **प्रत्युपवेशन**–(न०) [प्रति–उप √विश्+णिच्+घञ्] [प्रति –उप √विश्+णिच्+ल्युट्] बलपूर्वक राजी कराना। कोई कार्य कराने के लिये अभ्यास कराना।

प्रत्युपस्थान—(वि०) [प्रति–उप √ स्था +ल्युट्] सामीप्य, नैकट्य, पड़ोस।

प्रत्युप्त—(वि०) [प्रति √वप्+क्त] जड़ा हुआ। बोया हुआ। गाड़ा हुआ। मजबूत करके गाड़ा हुआ।

प्रत्युष—(पुं०), **प्रत्युषस्**–(न०) [प्रत्योषति

नाशयति अन्धकारम्, प्रति√उष्+क] [प्रति√उष्+असि] प्रभात, भोर। तड़का।

प्रत्यूष—(न०, पुं०) [प्रत्यूषति रुजति कामुकान्, प्रति √ऊष्+क] प्रभात, भोर; 'प्रत्यूषेषु स्फुटितकमलामोदमैत्रीकषायः' मे० ३१।(पुं०) सूर्य। आठ वसुओं में से एक।

प्रत्यूषस्—(न०) [प्रति√ऊष्+असि] प्रभात, सवेरा।

प्रत्यूह—(पुं०) [प्रति √ऊह्+घञ्] अड़चन, विघ्न।

√**प्रथ्**—भ्वा० आत्म०, चु० पर० सक०, अक० (धन की) वृद्धि करना। (कीर्ति का) फैलना। प्रसिद्ध होना, विख्यात होना। प्रकट होना, प्रकाश में आना। प्रथते, प्रथिष्यते, अप्रथिष्ट। (चु०) प्रथयति, प्रथयिष्यति, अपप्रथत्।

प्रथा—(स्त्री०) [√प्रथ् + अङ—टाप्] कीर्ति, ख्याति। रीति।

प्रथित—[√प्रथ्+क्त] बढ़ा हुआ, फैला हुआ। प्रसिद्ध किया हुआ। प्रचार किया हुआ। दिखलाया हुआ, प्रकट किया हुआ। प्रसिद्ध, विख्यात।

प्रथिमन्—(न०) [पृथोर्भावः, पृथु+इमनिच् प्रथादेश] चौड़ाई। विस्तार; 'प्रथिमानं दधानेन जघनेन सा' भट्टि० ४.१७। धायतन।

प्रथिवि—(स्त्री०)[=पृथिवी, पृषो० साधुः] पृथ्वी, धरा, भूमि।

प्रथिष्ठ—(वि०) [अतिशयेन पृथुः, पृथु +इष्ठन्, प्रथादेश] सबसे लंबा। सबसे चौड़ा।

प्रथीयस्—(वि०) [स्त्री०—**प्रथीयसी**] [पृथु+ईयसुन्, प्रथादेश] अपेक्षाकृत लंबा, चौड़ा।

प्रथु—(वि०) [√प्रथ्+उण्]विस्तृत, चारों ओर व्याप्त या फैला हुआ। (पुं०) विष्णु।

प्रथुक—(पुं०) [√प्रथ्+उक] चिउड़ा। शावक।

प्रदक्षिण—(वि०)[प्रा० स०]विनम्र। पूज्य। शुभ। दाहिनी ओर स्थित। (न०, पुं०) [प्रगतं दक्षिणम्, 'तिष्ठद्गुप्रभृतीनि च' इति समासः] भक्ति पूर्वक किसी पूज्य को दाहिनी ओर कर उसके चारों ओर घूमना, परिक्रमा, फेरी। (अव्य०) बायीं से दाहिनी ओर। दाहिनी ओर। दक्षिण दिशा की ओर।—**अर्चिस्** (**प्रदक्षिणार्चिस्**)-(वि०) अग्नि जिसकी लौ दाहिनी ओर झुकी हो। —**क्रिया**-(स्त्री०) परिक्रमा करने की क्रिया।—**पट्टिका**-(स्त्री०) आँगन।

प्रदग्ध—(वि०) [प्र√दह्+क्त] बहुत जला हुआ, जो भस्म हो चुका हो।

प्रदत्त—(वि०) [प्र √दा+क्त] जिसका देना आरम्भ हो गया हो।

प्रदर—(पुं०) [प्र√दॄ+अप्] फोड़ने या तोड़ने का भाव। अस्थिभङ्ग, हड्डी का टूटना। दरार। छिद्र। सेना का पलायन। स्त्रियों का रोग विशेष जिसमें स्त्रियों के गर्भाशय से सफेद या लाल रंग का लसदार पानी-सा बहा करता है।

प्रदर्प—(पुं०) [प्रा० स०] भारी घमंड।

प्रदर्श—(पुं०) [प्र√दृश्+घञ्] रूप, सूरत। आदेश, आज्ञा।

प्रदर्शक—(वि०) [प्र √दृश् + णिच् +ण्वुल्] दिखलाने वाला। बतलाने वाला।

प्रदर्शन—(न०) [प्र√दृश्+ल्युट् वा णिच् +ल्युट्] सूरत, शक्ल। दिखावट, दिखलाने का काम। प्रदर्शनी, नुमाइश। शिक्षण, उपदेश। उदाहरण, दृष्टान्त।

प्रदर्शित—(वि०) [प्र√दृश्+णिच् + क्त] दिखलाया हुआ। सिखलाया हुआ। घोषित किया हुआ।

प्रदल—(पुं०) [प्र√दल् + अच्] तीर।

प्रदव—(पुं०) [प्र√दु+अप्] बहुत अधिक ताप। प्रज्वलन।

प्रदातृ—(पुं०) [प्र√दा+तृच्] दाता, देने वाला। उदार पुरुष। कन्यादान (विवाह में) करने वाला। इन्द्र का नामान्तर।

प्रदान—(न०) [प्र √ दा+ल्युट्] दान। विवाह में देना। शिक्षण। भेंट। पुरस्कार। अंकुश।—**शूर**-(पुं०) बड़ा दानी, दानवीर।

प्रदानक—(न०) [प्रदान +कन्] भेंट। दान। पुरस्कार।

प्रदाय—(न०) [प्र√दा+घञ्, युक्] पुरस्कार। भेंट।

प्रदि—(पुं०) [प्र√दा+कि] पुरस्कार। भेंट।

प्रदिग्ध—(वि०) [प्र√दिह्+क्त] तेल या घी से चिकनाया हुआ। (न०) विशेष प्रकार से पका हुआ मांस।

प्रदिश्—(स्त्री०) [प्रगता दिग्भ्यः] दो मुख्य दिशाओं के बीच का कोना, विदिशा।

प्रदिष्ट—(वि०) [प्र√दिश्+क्त] दिखलाया हुआ। बतलाया हुआ। आज्ञा दिया हुआ, आदिष्ट। नियुक्त किया हुआ। निश्चित किया हुआ; 'प्रदिष्टकाला परमेश्वरेण' र० २.३६।

प्रदीप—(पुं०) [प्र√दीप् + णिच्+क] दीपक, चिराग। वह जिससे प्रकाश हो।

प्रदीपन—(वि०) [स्त्री०—**प्रदीपनी**] [प्र √दीप्+णिच्+ल्यु] प्रकाश करने वाला। उत्तेजक। (पुं०) एक प्रकार का खनिज विष। [प्र√दीप्+णिच्+ल्युट्] प्रकाश करना, जलाना। उत्तेजित करना।

प्रदीप्त—(वि०) [प्र√दीप्+क्त] जला हुआ, प्रकाशित। प्रकाशमान, जगमगाता हुआ। उठा हुआ; 'प्रदीप्तशिरसमाशीविषं' दश०। उत्तेजित।

प्रदुष्ट—(वि०) [प्र√दुष्+क्त] बिगड़ा हुआ। दुष्ट। बुरे स्वभाव का। लम्पट, कामुक।

प्रदूषित—(वि०) [प्र√दूष् + णिच्+क्त] विशेष रूप से दूषित।

प्रदेय—(वि०) [प्र√दा+यत्] देने योग्य, दान करने योग्य। (पुं०) दे० 'प्रदि'।

प्रदेश—(पुं०) [प्र√दिश्+घञ्] बतलाना। दिखाना। किसी देश का वह बड़ा भाग जो भाषा, रीति, आबहवा आदि की दृष्टि से उसी देश के अन्य भागों से भिन्न हो, प्रान्त। स्थान, जगह। बालिश्त, बित्ता। निर्णय। दीवाल। (व्याकरण का) उदाहरण।

प्रदेशन—(न०) [प्र √दिश् + ल्युट्] आदेश। परामर्श। भेंट, नजर।

प्रदेशनी, प्रदेशिनी—(स्त्री०) [प्रदेशन+ङीप्] [प्र √दिश्+णिनि—ङीप्] तर्जनी, अँगूठे के पास की उँगली।

प्रदेह—(पुं०) [प्र √दिह् + घञ्] लेप, पलस्तर। फोड़े आदि पर दवा चढ़ाना।

प्रदोष—(वि०) [प्रकृष्टः दोषो यस्य, प्रा० ब०] बुरा, खराब। (पुं०) [प्रकृष्टः दोषः, प्रा० स०] अपराध। गदर आदि जैसी गड़बड़ अवस्था। [दोषा रात्रिः, प्रारम्भो दोषायाः प्रा० स०] सायंकाल, रात्रि का प्रथम प्रहर। 'प्रदोषोऽस्तमयादूर्ध्वं घटिकाद्वयमिष्यते'।—**काल**-(पुं०) सायंकाल, रात्रि का आरम्भ।—**तिमिर**-(न०) सायङ्काल की अँधियारी।

प्रदोह—(पुं०) [प्र √दुह्+घञ्] दुहना, दूध निकालना।

प्रद्युम्न—(पुं०) [प्रकृष्टं द्युम्नं बलं यस्य, प्रा० ब०] कामदेव का एक नाम। प्रद्युम्न श्रीकृष्ण के पुत्र थे और रुक्मिणी के पेट से उत्पन्न हुए थे।

प्रद्योत—(पुं०) [प्रकृष्टो द्योतः, प्रा० स०] जगमगाहट, प्रकाश, रोशनी। चमक, आभा। किरण। [प्रकृष्टो द्योतो यस्य, प्रा० ब०]

प्राचीन कालीन उज्जैन के एक राजा का नाम ।

प्रद्योतन—(न०) [प्र √द्युत्+ल्युट्] चमकना । दीप्ति । (पु०) [प्र√द्युत्+युच्] सूर्य ।

प्रद्रव—(पु०) [प्र√द्रु+अप्] पलायन ।

प्रद्राव—(पु०) [प्र√द्रु+घञ्] पलायन, निकल भागना । तेज चलना या जाना ।

प्रद्वार—(पु०, न०) [प्रगतं द्वारम्, प्रा० स०] दरवाजे के सामने का स्थान या जगह ।

प्रद्वेष—(पु०), **प्रद्वेषण**—(न०) [प्र √द्विष्+घञ्] [प्र√द्विष्+ल्युट्] अरुचि, घृणा । बैर, शत्रुता ।

प्रधन—(न०) [प्र√धा+क्यु] युद्ध में लूट का माल । नाश । चीरफाड़ । युद्ध; 'प्रहितः प्रधनाय माधवानहमाकारयितुम्महीभृता' शि० १६.५२ ।

प्रधमन—(न०) [प्र √धम्+ल्युट्] वैद्यक में वह क्रिया जिसके द्वारा कोई दवा नाक के रास्ते जोर से सुँघा कर ऊपर चढ़ायी जाय । एक प्रकार की सुँघनी ।

प्रधर्ष—(पु०) [प्र√धृष्+घञ्] बलात्कार । आक्रमण, हमला ।

प्रधर्षण—(न०), **प्रधर्षणा**—(स्त्री०) [प्र √धृष्+णिच्+ल्युट्] [प्र√धृष् + णिच् +युच्] आक्रमण, हमला । बलात्कार । दुर्व्यवहार । अपमान, तिरस्कार ।

प्रधर्षित—(वि०) [प्र√धृष् + णिच्+क्त] आक्रमण किया हुआ । चोट पहुँचाया हुआ । अनिष्ट किया हुआ । अभिमानी, अहङ्कारी ।

प्रधान—(वि०) [प्र√धा+युच् वा ल्युट्] खास, मुख्य । मुख्यतया प्रचलित । (न०) मुख्य वस्तु, अति आवश्यक वस्तु । इस भौतिक संसार का उपादान कारण, प्रकृति । परब्रह्म । बुद्धि-तत्त्व । (न०, पु०) महामात्य, प्रधान सचिव । सेनापति । महावत, फीलवान ।—**अङ्ग** (**प्रधानाङ्ग**)–(न०) किसी वस्तु की प्रधान शाखा या भाग । शरीर का प्रधान अङ्ग । किसी राज्य का प्रधान अधिकारी ।—**अमात्य** (**प्रधानामात्य**)–(पु०) प्रधान सचिव, महामात्य ।—**आत्मन्** (**प्रधानात्मन्**)–(पु०) विष्णु का नामान्तर ।—**धातु**–(पु०) शरीर का प्रधान तत्त्व, वीर्य । —**पुरुष**—(पु०) राज्य का प्रधान पुरुष । शिव जी का नामान्तर ।—**मन्त्रिन्**–(पु०) किसी देश या राज्य का सबसे बड़ा मंत्री । —**वासस्**–(न०) मुख्य वस्त्र ।—**वृष्टि**–(स्त्री०) अतिवृष्टि ।

प्रधावन—(पु०) [प्र√धाव+ल्यु वा ल्युट्] वायु । (न०) प्रक्षालन ।

प्रधि—(पु०) [प्र√धा+कि] नेमि, पहिये का धुरा; 'प्रधिमण्डलोद्धतपरागघनवलयमध्यवर्तिनः' शि० १५.७६ ।

प्रधी—(वि०) [प्रकृष्टा धीः यस्य, प्रा० ब०] कुशाग्रबुद्धि वाला । (स्त्री०) [प्रकृष्टा धीः, प्रा० स०] महती बुद्धि या प्रतिभा ।

प्रधूपित—(वि०) [प्र√धूप्+क्त वा प्रकर्षेण धूपितः] सुवासित । गर्माया हुआ, तपाया हुआ । चमकता हुआ, दीप्त । सन्तप्त ।

प्रधूपिता—(स्त्री०) [प्रधूपित+टाप्] सन्तप्ता (स्त्री) । वह दिशा जिधर सूर्य बढ़ रहा हो ।

प्रधृष्ट—(वि०) [प्र√धृष्+क्त] वह जिसके साथ ढिठाई के साथ बर्ताव किया गया हो । अभिमानी, अहङ्कारी ।

प्रध्मापन—(न०) [प्र√ध्मा+णिच्, पुक् + ल्युट्–अन] स्वर नलिका की रुकावट दूर करने, श्वास क्रिया ठीक करने का उपचार ।

प्रध्यान—(न०) [प्र√ध्यै+ल्युट्] गम्भीर ध्यान या सोच-विचार । विचार ।

प्रध्वंस—(पु०) [प्र√ध्वंस्+घञ्] पूर्णरीत्या विनाश । सांख्य के मत में किसी वस्तु की प्रतीत अवस्था ।—**अभाव** (**प्रध्वंसाभाव**) –(पु०) न्याय के अनुसार पाँच प्रकार के अभावों में से एक, वह अभाव जो किसी

वस्तु के उत्पन्न होकर नष्ट हो जाने पर हो।

प्रध्वस्त—(वि०) [प्र√ध्वंस्+क्त] जो नष्ट हो गया हो, जिसका प्रध्वंस हो चुका हो।

प्रनप्तृ—(पुं०) [प्रगतो नप्तारं जनकतया, प्रत्या० स०] परनाती, नाती का लड़का।

प्रनष्ट—(वि०) [प्र√नश्+क्त] अन्तर्धान, जो देख न पड़े। मरा हुआ। खोया हुआ। बरबाद।

प्रनायक—(वि०) [प्रकृष्टो नायकोऽस्य, प्रा० ब०] जिसका नायक महान् हो। (पुं०) [प्रकृष्टो नायकः, प्रा० स०] उत्तम नायक।

प्रनाल, प्रनाली—(पुं०, स्त्री०) दे० 'प्रणाल, प्रणाली'।

प्रनिघातन—(न०) [प्र—नि √हन्+णिच् +ल्युट्] वध, हत्या।

प्रनृत्त—(वि०) [प्र √नृत्+क्त] नाचने वाला। (न०) नाच, नृत्य।

प्रपक्ष—(पुं०) [प्रगतः पक्षम्, प्रत्या० स०] पखार, पंख का अगला हिस्सा।

प्रपञ्च—(पुं०) [प्र√पञ्च्+घञ्] विकास। विस्तार; 'अब्धाइव नाटकप्रपञ्चाः' सि० २०.४४। बाहुल्य। व्याख्या। अति विस्तार। दुनिया का जंजाल। भ्रम, धोखा। ठगी।—**बुद्धि**–(वि०) छलिया, धोखेबाज।

प्रपञ्चित—(वि०) [प्र√पञ्च्+क्त] प्रकटित। विस्तारित। भली भाँति व्याख्या किया हुआ। भटका हुआ, भूला हुआ। धोखा खाया हुआ, छला हुआ।

प्रपतन—(न०) [प्र√पत्+ल्युट्] पलायन। पात। नीचे उतरना। मृत्यु। उतार।

प्रपद—(न०) [प्रारब्धं प्रगतं वा पदम्, प्रा० स०] पैर का अग्रभाग।

प्रपदीन—(वि०) [प्रपद+ख] पैर का अग्रभाग सम्बन्धी।

प्रपन्न—(वि०) [प्र√पद्+क्त] आया हुआ, पहुँचा हुआ। शरण में आया हुआ, शरणागत। प्रतिज्ञात। उपलब्ध, प्राप्त। निर्धन।

प्रपन्नाड—(पुं०) [प्रपन्न √अल् + अण्, डलयोः अभेदः] चकमर्दक, चकवँड़।

प्रपर्ण—(वि०) [प्रपतितं पर्णं यस्मात्, प्रा० ब०] जिसके पत्ते झड़ गये हों, पत्तों से रहित। (न०) [प्रा० स०] गिरा हुआ पत्ता।

प्रपलायन—(न०) [प्र—परा √अय् + ल्युट्, रस्य लः] भाग खड़ा होना, पलायन।

प्रपा—(स्त्री०) [प्रकर्षेण पिबन्ति अस्याम्, प्र√पा+अङ वा क—टाप्] पौसला, प्याऊ। कूप। हौज। वह जल का स्थान जहाँ पशु जल पीयें।—**पालिका**–(स्त्री०) वह स्त्री जो बटोहियों को जल पिलावे।

प्रपाठक—(पुं०) [प्रकृष्टः पाठोऽत्र, ब० स०, कप्] ग्रन्थ का अध्याय, परिच्छेद। सबक, पाठ।

प्रपाणि—(पुं०) [प्रकृष्टः पाणिः, प्रा० स०] हाथ का अग्रभाग। हथेली।

प्रपात—(पुं०) [प्र √पत्+घञ्] प्रस्थान। पतन। अचानक आक्रमण। जलप्रपात, पानी का झरना। तट। पहाड़ का उतार या ढाल। झड़ना (जैसे केशों का)। निकल पड़ना (जैसे वीर्य का)। बहाव के ऊपर से अपने को नीचे गिरा देना। उड़ान विशेष।

प्रपातन—(न०) [प्र√पत् + णिच्+ल्युट्] अपने को नीचे गिरा देना।

प्रपादिक—(पुं०) मयूर, मोर।

प्रपान—(न०) [प्र √पा+ल्युट्] पीना। पेय पदार्थ।

प्रपानक—(न०) [प्रकृष्टं पानमस्य, प्रा० ब०, कप्] एक प्रकार का पेय पदार्थ, पना।

प्रपितामह—(पुं०) [प्रकर्षेण पितामहः, प्रा० स०] परदादा। परब्रह्म। कृष्ण का नामान्तर।

प्रपितामही—(स्त्री०) [प्रा० स०] परदादी।

प्रपितृव्य—(पुं०) [प्रा० स०] दादा का चाचा, चचेरा परदादा।

प्रपीडन—(न०) [प्र√पीड्+णिच्+ल्युट्] दबाना। दबाकर निचोड़ना। वारक औषध।

प्रपीन—(वि०) [प्रा० स०] सूजा हुआ। फैला हुआ।

प्रपुन्नाट, प्रपुन्नाड—(पुं०) [पुनांसं नाटयति, √नट्+णिच्+अण्] चक्रमर्द नाम का पौधा, चकवँड़।

प्रपूरित—(वि०) [प्र√पूर्+क्त] भरा हुआ, परिपूर्ण।

प्रपृष्ठ—(वि०) [प्रकृष्टं पृष्ठं यस्य, प्रा० ब०] विशिष्ट पीठवाला।

प्रपौत्र—(पुं०) [प्रा० स०] पौत्र का पुत्र, परपोता।

प्रपौत्री—(स्त्री०) [प्रा० स०] पौत्र की बेटी, परपोती।

प्रफुल्ल—(वि०) [प्रा० स०] पूर्ण खिला या फूला हुआ। आनन्दित। मुसक्याता हुआ। —**नयन**,—**नेत्र**,—**लोचन**-(वि०) हर्ष से खुले हुए नेत्र वाला।—**वदन**-(वि०) जिसके चेहरे पर हर्ष छाया हो।

प्रबद्ध—(वि०) [प्र√बन्ध्+क्त] बँधा हुआ। रोका हुआ, अवरुद्ध, अड़चन में डाला हुआ।

प्रबन्द्धृ—(पुं०) [प्र√बन्ध्+तृच्] ग्रन्थकार।

प्रबन्ध—(पुं०) [प्र √बन्ध्+घञ्] बंधन, गाँठ। (अविच्छिन्न) क्रम। ऐसा निबन्ध जिसका सिलसिला जारी रहे। कोई भी रचना, विशेषकर पद्यमयी। योजना।—**कल्पना**-(स्त्री०) वह रचना जिसमें थोड़े से सत्य वृत्तान्त में बहुत कुछ काल्पनिक बातें मिलायी गयी हों, कथा (जैसे कादंबरी)—**काव्य**—(न०) (मुक्तक का उलटा) वह काव्य जिसमें किसी के जीवन की विशेष घटनाओं का क्रमबद्ध चित्रण किया गया हो।

प्रबन्धन—(न०) [प्रा० स०] अच्छी तरह बाँधना।

प्रबभ्रु—(पुं०) इन्द्र का नामान्तर।

प्रबर्ह, प्रबर्ह—(वि०) [प्र √ब (व) र्ह् +अच्] सर्वोत्तम, सर्वश्रेष्ठ।

प्रबल—(वि०) [प्रकृष्टं बलं यस्य, प्रा० ब०] अत्यन्त बली या ताकतवर। प्रचण्ड। आवश्यक। विपुल। हानिकर। (पुं०) [प्र√बल् +अच्] कोंपल, पल्लव।

प्रबह्लिका, प्रवह्लिका—(स्त्री०) [प्र√ब (व) ह्ल्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] पहेली, प्रश्नोत्तर।

प्रबाधन—(न०) [प्र√बाध्+ल्युट्] अत्याचार, प्रपीडन। अस्वीकृति। दूर रखना, हटाना।

प्रबाल, प्रवाल—(पुं०, न०) [प्र √ब (व) ल्+णिच्+अच्] अंकुर, अँखुआ। मूँगा। वीणा का भाग-विशेष। (पुं०) शिष्य। पशु।—**अश्मन्तक** (**प्रबा** (**वा**) **लाश्मन्तक**-(पुं०) मूँगे का वृक्ष।—**पद्म**-(न०) लाल कमल।—**फल**-(न०) लाल चन्दन। —**भस्मन्**-(न०) मूँगे का भस्म।

प्रबाहु—(पुं०) [प्रगतो बाहुम्, अत्या० स०] बाँह का अगला भाग, पहुँचा।

प्रबाहुक—(अव्य०) [प्रकृष्टो बाहुः अत्र, प्रा० ब०, कप्] ऊँचाई पर। साथ ही साथ।

प्रबुद्ध—(वि०) [प्र √बुध्+क्त] जागृत, जाना हुआ। पंडित। जानकार। पूर्ण खिला हुआ। सचेत।

प्रबोध—(पुं०) [प्र√बुध्+घञ्] जागना। (आल०) यथार्थ ज्ञान, पूर्ण बोध। (फूलों का) खिलना या फैलना। सतर्कता। समझदारी, ज्ञान। भ्रम का दूर होना, सत्य ज्ञान। ढाढ़स, धीरज। किसी सुगन्ध द्रव्य में पुनः सुगन्ध उत्पन्न करने की क्रिया।

प्रबोधन—(वि०) [स्त्री०—**प्रबोधनी**] [प्र √बुध्+णिच्+ल्यु] जगाने वाला। (न०) [प्र √बुध्+ल्युट् वा णिच्+ल्युट्] जागृति, जागरण। सचेत होना। ज्ञान। शिक्षण। सुगन्ध द्रव्य की नष्ट हुई सुगन्ध को पुनः सुगन्ध से युक्त करना।

प्रबोधनी, प्रबोधिनी—(स्त्री०) [प्र √बुध् +णिच्+ल्युट्—ङीप्] [प्र √बुध् +णिच्+णिनि—ङीप्] कार्त्तिक शुक्ला ११. उस दिन भगवान् चार मास शयन कर जागते हैं। दुरालभा, धमासा।

प्रबोधित—(वि०) [प्र√बुध् + णिच्+क्त] जगाया हुआ। समझाया हुआ, सिखा दिया हुआ।

प्रभञ्जन—(न०)[प्र√भञ्ज्+ल्युट्]टुकड़े-टुकड़े कर डालना। (पुं०) [प्र√भञ्ज् +युच्] पवन, वायु, विशेष कर आँधी।

प्रभद्र—(पुं०) [प्रकृष्टं भद्रं यस्मात्, प्रा० ब०] नीम का पेड़।

प्रभव—(पुं०) [प्र√भू+अप्] जन्म, उत्पत्ति; 'अकिञ्चनः सन् प्रभवः स सम्पदां' कु० ५.७७। नदी का उद्गमस्थान। उपादान कारण। रचयिता, सृष्टिकर्त्ता। उत्पत्ति-स्थान। पराक्रम। विष्णु का नामान्तर। मूल, जड़। साठ संवत्सरों में से एक।

प्रभवितृ—(पुं०) [प्र √भू+तृच्]शासक।

प्रभविष्णु—(वि०) [प्र √भू+इष्णुच्] शक्तिमान्। (पुं०) स्वामी, मालिक। विष्णु।

प्रभा—(स्त्री०) [प्र √भा+अङ् —टाप्] चमक, जगमगाहट। किरण। सूरजघड़ी पर सूर्य की छाया। दुर्गा का नामन्तर। कुबेर की नगरी का नाम। एक अप्सरा का नाम। **—कर**–(पुं०) सूर्य। चन्द्रमा। अग्नि। समुद्र। शिव। मीमांसा दर्शन के एक प्रसिद्ध आचार्य जो 'गुरु' नाम से प्रसिद्ध हैं। कुशद्वीप का एक पर्वत। मदार का पौधा। **—करी**–(स्त्री०) बोधिसत्त्वों की तृतीयावस्था। **—कीट**–(पुं०) जुगनू, खद्योत। **—तरल**– (वि०) कम्पित भाव से दीप्तिमान्। **—मण्डल**–(न०) प्रकाश का घेरा। **—लेपिन्** –(वि०) प्रकाश से आच्छादित। चमक बिखेरता हुआ।

प्रभाग—(पुं०) [प्र √भज्+घञ्] भाग का भाग, टुकड़े का टुकड़ा। भिन्न का भिन्न, जैसे ½ का ⅓ आदि।

प्रभात—(वि०) [प्रकर्षेण भातुं प्रवृत्तम्, प्र √भा+क्त] रोशनी होना आरम्भ हुआ। (न०) प्रातःकाल, सवेरा।

प्रभान—(न०) [प्र √भा+ल्युट्] ज्योति, दीप्ति, प्रकाश।

प्रभाव—(पुं०) [प्र√भू+घञ्] आभा, चमक, जगमगाहट। महत्त्व, गौरव। शक्ति, बल। राजोचित शक्ति या अधिकार। अलौकिक शक्ति। महिमा, माहात्म्य। **—ज**–(वि०) प्रभाव से उत्पन्न। (न०) एक प्रकार की राजशक्ति जो कोश और दंड के रूप में व्यक्त होती है। एक प्रकार का रोग जो देवता, ऋषि, वृद्धादि के शाप या ग्रहादि के हेरफेर से उत्पन्न होता है।

प्रभाषण—(न०) [प्र √भाष् + ल्युट्] अच्छी तरह कहना। व्याख्या। कैफियत।

प्रभास—(पुं०) [प्र√भास्+घञ्] दीप्ति, प्रकाश। (पुं०, न०) [प्र√भास् + अच्] सोमतीर्थ, एक प्रसिद्ध तीर्थस्थान जो काठियावाड़ में है। (पुं०) एक वसु। कार्त्तिकेय का एक अनुचर।

प्रभासन—(न०) [प्र√भास्+ल्युट्] चमक, दीप्ति, प्रकाश।

प्रभास्वर—(वि०) [प्र√भास् + वरच्] चमकीला, दीप्तिमान्।

प्रभिन्न—(वि०) [प्र √भिद्+क्त] अलग किया हुआ, अलगाया हुआ। फटा हुआ, चिरा हुआ। विभक्त। तोड़ कर टुकड़े-टुकड़े किया हुआ। कटा हुआ। फूला हुआ, खिला हुआ। परिवर्तित, अदल-बदल किया हुआ। बदशक्ल किया हुआ। अंग-भङ्ग किया हुआ। ढीला किया हुआ। नशे में चूर, मतवाला। (पुं०)मतवाला हाथी। **—अञ्जन**(**प्रभिन्नाञ्जन**)–(न०) काजल।

प्रभु—(वि०) [स्त्री०—**प्रभु, प्रभ्वी**] [प्र √भू+डु] बलवान् । योग्य । अधिकार-प्राप्त । जोड़ का, बराबरी का । (पुं०) स्वामी, मालिक; 'प्रभुर्बुभूषुर्भुवनत्रयस्य' कि० १.४६ । शासक । सर्वोच्च अधिकारी । पारा । विष्णु । शिव । इन्द्र । ब्रह्मा ।—**भक्त**– (वि०) अपने मालिक का हितैषी या खैरख्वाह । (पुं०) अच्छा घोड़ा ।—**भक्ति**–(स्त्री०) अपने मालिक की हित-तत्परता या खैरख्वाही ।

प्रभुता—(स्त्री०), **प्रभुत्व**–(न०) [प्रभु +तल्–टाप्] [प्रभु+त्व] प्रभु का भाव । स्वामित्व, मालिकपन । शासनाधिकार । बड़ाई, महत्त्व । वैभव ।

प्रभूत—(वि०) [प्र√भू+क्त] जो अच्छी तरह हो चुका हो । उद्गत, निकला हुआ । उत्पन्न । बहुत, विपुल । पूर्ण । परिपक्व । उच्च । विशाल ।—**यवसेन्धन**–(वि०) जहाँ हरी घास और ईंधन की बहुतायत या इफ-रात हो ।—**वयस्**–(वि०) बुड्ढा, वृद्ध ।

प्रभूति—(स्त्री०) [प्र√भू+क्तिन्] उत्पत्ति, निकास । बल, शक्ति । पर्याप्तता ।

प्रभृति—(अव्य०) [प्र√भृ +क्तिन्]इत्यादि, वगैरह । से, तब से । अब से ।

प्रभेद—(पुं०) [प्र √भिद्+घञ्] भेद, विभिन्नता । स्फोटन, फोड़ कर निकलने की क्रिया । हाथी की कनपटी से मद का चूना; 'कटप्रभेदेन करीव पार्थिवः' र० ३.३७ । प्रकार, किस्म । विभाग । वियोग ।

प्रभ्रंश—(पुं०) [प्र√भ्रंश्+घञ्] गिरना । निकल कर गिर जाना ।

प्रभ्रंशथु—(पुं०) [प्र√भ्रंश्+अथुच्] (नाक में होने वाला) पीनस रोग ।

प्रभ्रंशित—(वि०) [प्र√भ्रंश् + णिच् +क्त] नीचे गिराया या फेंका हुआ । वञ्चित कियाहुआ ।

प्रभ्रंशिन्—(वि०) [प्र√भ्रंश् + णिनि] गिरने वाला । हटने वाला ।

प्रभ्रष्ट—(वि०) [प्र√भ्रंश्+क्त] पतित, नीचे गिरा हुआ । टूटा हुआ । (न०) शिखा-वलम्बिनी फूलमाला ।

प्रभ्रष्टक—(न०) [प्रभ्रष्ट+कन्] दे० 'प्रभ्रष्ट' ।

प्रमग्न—(वि०) [प्र√मस्ज्+क्त] डूबा हुआ ।

प्रमत—(वि०) [प्र√मन्+क्त] विचारा हुआ, मनन किया हुआ ।

प्रमत्त—(वि०) [प्र√मद्+क्त] नशे में चूर । पागल, उन्मत्त । असावधान, लापर-वाह । जो संध्या आदि न करे । भूल करने वाला । कामुक । व्यसनी ।—**गीत**–(वि०) असावधानी में गाया हुआ ।—**चित्त**–(वि०) असावधान, लापरवाह ।

प्रमथ—(पुं०) [प्र √मथ्+अच्] घोड़ा । शिव के गण जिनकी संख्या किसी-किसी पुराणानुसार ३६ करोड़ बतलाई गयी है ।—**अधिप** (**प्रमथाधिप**),—**नाथ**,—**पति** –(पुं०) शिव जी ।

प्रमथन—(न०) [प्र√मथ्+ल्युट्] मथना । पीड़ित करना, सताना । कुचलना । हत्या, वध ।

प्रमथित—(वि०) [प्र √मथ्+क्त] सताया हुआ, पीड़ित । कुचला हुआ । मार डाला हुआ । भली भाँति मथा हुआ । (न०) माठा जिसमें जल न हो ।

प्रमद—(वि०) [प्रकृष्टो मदो यस्य, प्रा० ब०] जिसमें बहुत मद हो । मतवाला । उग्र । असावधान । असंयत, अशिष्ट । (पुं०) [प्र √मद्+अप्] हर्ष, आह्लाद । धतूरा ।—**कानन**,—**वन**–(न०) ऐशबाग, आनन्द-बाग ।

प्रमदक—(वि०) [प्रमद+कन्] कामुक, लंपट ।

प्रमदन—(न०) [प्र√मद् + ल्युट्] कामवासना । प्रीतिद्योतक अभिलाषा ।

प्रमदा—(स्त्री०) [प्रमदयति पुरुषम्, प्र√मद्+णिच्+अच् वा प्रमदो हर्षोऽस्ति अस्याः प्रमद+अच्—टाप्] युवती सुन्दरी स्त्री; 'प्रमदया मदयापितलज्जया' र० ९.३१ । पत्नी । कन्याराशि ।—**कानन**,—**वन**–(न०) राजमहल में रनवास का उद्यान, जहाँ रानियाँ चलें-फिरें ।—**जन**–(पुं०) युवती । स्त्री जाति ।

प्रमद्वर—(वि०) [प्र√मद्+ष्वरच्] असावधान, लापरवाह ।

प्रमनस्—(वि०) [प्रकृष्टं मनो यस्य, प्रा० ब०] प्रसन्न, हर्षित ।

प्रमन्यु—(वि०) [प्रकृष्टो मन्युः यस्य, प्रा० ब०] क्रोधाविष्ट, क्रुद्ध । पीड़ित, दुःखी ।

प्रमय—(पुं०) [प्र√मी+अच्] मृत्यु, मौत । बरबादी, नाश । अधःपात । वध, हत्या ।

प्रमर्दन—(न०) [प्र√मृद्+ल्युट्] अच्छी तरह मर्दन, अच्छी तरह कुचलना या नष्ट करना । (पुं०) [प्र√मृद्+ल्यु] विष्णु का नामान्तर ।

प्रमा—(स्त्री०) [प्र√मा+अङ्—टाप्] शुद्ध बोध, यथार्थ ज्ञान, जो जैसा है उसको उस रूप में जानना (न्या०) । आधार, नींव (वेद) । माप ।

प्रमाण—(न०) [प्रमीयते अनेन, प्र √मा+ल्युट्] माप, नाप । आकार । पैमाना । सीमा । परिमाण, मात्रा । अधिकारी या वह पुरुष जिसका कथन अन्तिम निर्णय हो । यथार्थ ज्ञान, शुद्ध बोध । यथार्थ-ज्ञान-प्राप्ति का साधन, वह साधन जिसके सहारे कोई बात सिद्ध की जाय, सबूत । [नैयायिकों ने चार प्रमाण माने हैं:— प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द । वेदान्ती और मीमांसक इन चार के अतिरिक्त अनुपलब्धि और अर्थापत्ति दो प्रमाण और मानते हैं । सांख्य वाले केवल प्रत्यक्ष, अनुमान और आगम —ये तीन ही प्रमाण मानते हैं ।] मुख्य, प्रधान । ऐक्य । धर्मशास्त्र, आगम । कारण, युक्ति । —**अधिक** (**प्रमाणाधिक**)—(वि०) परिमाण से अधिक । अत्यधिक, बहुत ज्यादा । —**अन्तर** (**प्रमाणान्तर**)–(न०) दूसरा प्रमाण । कोई बात प्रमाणित करने के लिये अन्य उपाय ।— **अभाव** (**प्रमाणाभाव**)–(पुं०) प्रमाण का अभाव ।—**ज्ञ**–(पुं०) शिव जी ।—**दृष्ट**–(वि०) प्रमाण-सिद्ध । —**पत्र**– (न०) वह लिखा हुआ कागज जिसका लेख किसी बात का प्रमाण हो ।—**पुरुष**–(पुं०) पंच । न्यायाधीश ।—**शास्त्र**–(न०) धर्मशास्त्र । न्याय-शास्त्र ।—**सूत्र**–(न०) नापने का फीता ।

प्रमाणिक—(वि०) [प्रमाणं सिद्धिहेतुतया अस्ति अस्य, प्रमाण+ठन्] जो प्रत्यक्षादि प्रमाणों द्वारा सिद्ध हो । (न०) चौबीस अंगुल की लंबाई की एक माप, हाथ ।

प्रमातामह—(पुं०) प्रकृष्टो मातामहः, प्रा० स०] परनाना, नाना का पिता ।

प्रमातामही—(स्त्री०) [प्रा० स०] परनानी, बड़े नाना की पत्नी ।

प्रमाथ—(पुं०) [प्र√मथ् +घञ्] अत्याचार, पीड़न । मथन । हत्या, वध; 'सैनिकानाम्प्रमाथेन सत्यमोजायितं त्वया' उत्त० ५.३१ । बलात्कार, किसी स्त्री से उसकी इच्छा के विरुद्ध भोग । बरजोरी किसी स्त्री को पकड़ कर ले जाना, स्त्री भगाना । प्रतिद्वन्द्वी को भूमि पर पटक कर उसके घिस्से लगाना ।

प्रमाथिन्—(वि०) [प्र √मथ्+णिनि] मथने वाला । बलपूर्वक हरण करने वाला । पीड़ा पहुँचाने वाला । मारने, नष्ट करने वाला । क्षुब्ध करने वाला । काटने वाला ।

प्रमाद—(पुं०) [प्र√मद्+घञ्] असावधानी, लापरवाही । नशा, मस्ती । पागलपन ।

गलती। घटना, दुर्घटना। विपत्ति, संकट।

प्रमादिका—(स्त्री०) वह कन्या जिसका कौमार्य किसी ने नष्ट कर दिया हो। लापरवाह स्त्री।

प्रमापण—(न०) [प्र√मी + णिच्+ल्युट्, पुक्] हत्या, वध।

प्रमार्जन—(न०) [प्र √मृज् + णिच् +ल्युट्] माँजना, धोना। पोंछना। हटाना।

प्रमित—(वि०) [प्र√ मि वा √मा+क्त] परिमित। अल्प, थोड़ा; 'प्रमितविषयां शक्तिविन्दन्' माल० १.५१। जिसका यथार्थ ज्ञान हो चुका हो। ज्ञात, विदित। अवधारित, प्रमाणित।

प्रमिति—(स्त्री०) [प्र√मा वा√मि+क्तिन्] माप, नाप। यथार्थ या सत्य ज्ञान, यथार्थ बोध। वह ज्ञान जो किसी प्रमाण की सहायता से प्राप्त हुआ हो।

प्रमीढ—(वि०) [प्र √मिह्+क्त] गाढ़ा, घना। मूत्र बन कर निकला हुआ।

प्रमीति—(स्त्री०) [प्र√मी +क्तिन्] मृत्यु, मौत। नाश।

प्रमीला—(स्त्री०) [प्र √मील्+अ—टाप्] उँघाई, तंद्रा। थकावट, शैथिल्य। अर्जुन की एक स्त्री का नाम जो प्रथम उनसे लड़ी और पीछे उनकी पत्नी बन गयी।

प्रमीलित—(वि०) [प्र √मील्+क्त] आँख मूँदे हुए।

प्रमुक्त—(वि०) [प्र√मुच् + क्त] ढीला किया हुआ। त्यागा हुआ, छोड़ा हुआ। फेंका हुआ।

प्रमुख—(वि०) [प्रा० ब०] मुख्य, प्रधान। प्रथम; 'प्रीतिप्रमुखवचनं स्वागतं व्याजहार' मे० ४। मान्य। (पुं०) प्रतिष्ठित पुरुष। ढेर। समुदाय। (न०) [प्रा० स०] मुख। किसी ग्रन्थ का या किसी ग्रन्थ के अध्याय का आरम्भ।

प्रमुग्ध—(वि०) [प्रा० स०] मूर्च्छित, अचेत, बेहोश। अत्यन्त मनोहर।

प्रमुद्—(स्त्री०) [प्रकृष्टा मुत् हर्षः, प्रा० स०] अत्यन्त आनन्द। (वि०) [प्रकृष्टा मुत् यस्य, प्रा० ब०] अतिहर्ष-युक्त।

प्रमुदित—(वि०) [प्र√मुद्+क्त] आह्लादित, प्रसन्न।—हृदय—(वि०) जिसे आन्तरिक प्रसन्नता हो।

प्रमुषित—(वि०) [प्र √मुष्+क्त] चुराया हुआ। हतबुद्धि।

प्रमुषिता—(स्त्री०) [प्रमुषित+टाप्] एक प्रकार की पहेली।

प्रमूढ—(वि०) [प्र √मुह्+क्त] घबड़ाया हुआ, व्याकुल। मूर्ख।

प्रमृत—(वि०) [प्र√मृ+क्त] मृत, मरा हुआ। (न०) [प्रकृष्टं मृतं प्राणिहिंसनं यत्र, प्रा० ब०] कृषि, खेती (हल चलने से मिट्टी में रहने वाले बहुत से जीव मर जाते हैं, इसी से इसे प्रमृत कहा गया है)।

प्रमृष्ट—(वि०) [प्र√मृज्+क्त] मला हुआ, माँजा हुआ। पोंछा हुआ। चिकनाया या चमकाया हुआ।

प्रमेय—(वि०) [प्र√मा+यत्] जो प्रमा या यथार्थ ज्ञान का विषय हो सके। जिसका मान बताया जा सके। अवधार्य, जिसका निर्धारण किया जा सके। (न०) प्रमा या यथार्थ ज्ञान का विषय।

प्रमेह—(पुं०) [प्र√मिह्+घञ्] एक रोग जिसमें शरीर की धातुएँ अनेक रूपों में पेशाब के रास्ते गिरा करती हैं।

प्रमोक्ष—(पुं०) [प्र √मोक्ष्+घञ्] त्याग, छोड़ना। फेंकना। मुक्ति।

प्रमोचन—(न०) [प्र √मुच्+ल्युट्] छोड़ना, छुटकारा देना।

प्रमोद—(पुं०) [प्र√मुद् + घञ्] हर्ष, आनन्द। सुख। [प्रा० ब०] एक नाग। कार्त्तिकेय का एक अनुचर। बृहस्पति के पहले

युग के चौथे वर्ष का नाम। एक प्रकार की सिद्धि जिससे आध्यात्मिक दुःखों का विनाश हो जाता है।

प्रमोदन—(वि०) [प्र√मुद् + णिच्+ल्यु] प्रसन्नकारक, हर्षप्रद। (पुं०) विष्णु भगवान् का नाम। (न०) [प्र√मुद्+णिच्+ल्युट्] हर्ष-सम्पादन, प्रसन्न करना।

प्रमोदित—(वि०) [प्रमोद+इतच्] प्रमोद-युक्त, प्रसन्न, हर्षित। (पुं०) कुबेर का नामान्तर।

प्रमोह—(पुं०) [प्र √मुह्+घञ्] मोह। मूर्च्छा। पल्ले दर्जे की मूर्खता। घबड़ाहट।

प्रयत—(वि०) [प्र√यम्+क्त वा प्र√यत् +घञ्] इन्द्रियों को दमन किये हुए, जितेन्द्रिय। जो तपस्या द्वारा पवित्र हो चुका हो। नम्र। सावधान। यत्नशील।

प्रयत्न—(पुं०) [प्र√यत्+नङ्] किसी कार्य की सिद्धि के लिये किया जाने वाला प्रयास, चेष्टा, कोशिश। अध्यवसाय। बड़ी सावधानी। व्याकरण के मतानुसार श्वास, जिह्वा, कंठ आदि का वह व्यापार जिसके सहारे वर्णों का उच्चारण होता है। आत्मा के ६ गुणों में से एक। फल की प्राप्ति के लिये शीघ्रतापूर्वक की जाने वाली क्रिया (नाटक०)।

प्रयस्त—(वि०) [प्र√यस्+क्त] प्रयास से किया हुआ। सुसंस्कृत। मसाले आदि डाल कर बढ़िया तौर से पकाया हुआ।

प्रयाग—(पुं०) [प्रकृष्टो यागो यागफलं यस्य यस्मात् वा, प्रा० ब०] एक प्रसिद्ध तीर्थ जो गंगा-यमुना के संगम पर अवस्थित है। इन्द्र। घोड़ा। [प्रा० स०] यज्ञ।—भव-(पुं०) इन्द्र का नामान्तर।

प्रयाचन—(न०) [प्र√याच् + ल्युट्] माँगना, याचना करना। गिड़गिड़ाना।

प्रयाज—(पुं०) [प्र√यज्+घञ्] यज्ञाङ्गत्वात् न कुत्वम्] दर्शपौर्णमास यज्ञ के अंतर्गत एक अंग यज्ञ; यह यज्ञ पाँच प्रकार का है।

प्रयाण—(न०) [प्र√या +ल्युट्] प्रस्थान, यात्रा। उन्नति, आगे बढ़ना। आक्रमण। आरम्भ। मृत्यु; 'प्रयाणकाले मनसाचलेन' भग०। घोड़े की पीठ। पशु का पीछे का भाग।—भङ्ग-(न०) यात्रा के बीच रुक जाना, यात्रा-भंग।

प्रयाणक—(न०) [प्रयाण+कन्] यात्रा, प्रस्थान। गमन, गति।

प्रयात—(वि०) [प्र√या+क्त] जो यात्रा कर चुका हो। आगे बढ़ा हुआ। मरा हुआ, मृत। (पुं०) पहाड़ या चट्टान का ऊँचा खड़ा किनारा, प्रपात। रात में या निद्रा के समय किया गया आक्रमण।

प्रयापित—(वि०) [प्र√या+णिच्, पुक् +क्त] आगे बढ़ाया हुआ, आगे जाने के लिए प्रेरित किया हुआ। भगाया हुआ।

प्रयाम—(पुं०) [प्र√यम्+घञ्] अकाल, अभाव (अन्नादि का)। महँगी। संयम। लंबाई।

प्रयास—(पुं०) [प्र√यस् + घञ्] प्रयत्न, चेष्टा, उद्योग। श्रम।

प्रयुक्त—(वि०) [प्र√युज्+क्त] जुए में जोता हुआ। काठी या चारजामा कसा हुआ। व्यवहार में लाया हुआ, इस्तेमाल किया हुआ। संलग्न। नियुक्त किया हुआ। किया हुआ। ध्यानावस्थित। (ब्याज पाकर) लगाया हुआ। प्रेरित किया हुआ, उकसाया हुआ।—संस्कार—(वि०) साफ कर चमकाया हुआ।

प्रयुक्ति—(स्त्री०) [प्र√युज्+क्तिन्] उपयोग, इस्तेमाल, प्रयोग। उत्तेजना, उकसाने की क्रिया। प्रयोजन, उद्देश्य। अवसर। परिणाम, नतीजा।

प्रयुत—(न०) [प्रकर्षेण युतम्] दस लाख की संख्या।

प्रयुद्ध—(न०) [प्रा० स०] युद्ध, लड़ाई ।

प्रयुयुत्सु—(पुं०) [प्र√युध् + सन्+उ] योद्धा । मेढ़ा । पवन । संन्यासी । इन्द्र ।

प्रयोक्तृ—(वि०) [प्र √युज्+तृच्] प्रयोगकर्त्ता, व्यवहार करने वाला, अनुष्ठान करने वाला । उत्तेजित करने वाला, भड़काने वाला । (नाटक में) अभिनयकर्त्ता । ब्याज पर रुपया उधार देने वाला । बाण चलाने वाला । पाठ करने वाला, वाचक ।

प्रयोग—(पुं०) [प्र √युज्+ घञ्, कुत्व] व्यवहार, अनुष्ठान । रीतिरस्म, पद्धति । चलाना, फेंकना (तीर या अन्य किसी वस्तु को)। 'प्रयोगसंहारविभक्तमन्त्रं' र० ५.५७ । अभिनय करना, नाटक खेलना । अभ्यास । प्रणाली, प्रथा । क्रिया । पाठ पढ़ कर सुनाना, पाठ करना । आरम्भ । योजना । साधन । परिणाम । तांत्रिक उपचार । धनवृद्धि के लिए धन लगाना । घोड़ा ।—**अतिशय (प्रयोगातिशय)**-(पुं०) नाटक में प्रस्तावना का एक भेद जिसमें प्रस्तुत प्रयोग के अंतर्गत दूसरा प्रयोग उपस्थित हो जाता है और उसी पर पात्र प्रवेश करते हैं ।
—**निपुण**-(वि०) अभ्यास में निपुण ।

प्रयोजक—(पुं०) [प्र √युज्+ण्वुल्] प्रयोगकर्त्ता, अनुष्ठान करने वाला । काम में लगाने वाला, प्रेरक । नियन्ता, व्यवस्थापक । महाजन, कर्ज देने वाला । धर्मशास्त्र या आईन की व्यवस्था देने वाला । स्थापनकर्त्ता, प्रतिष्ठापक ।

प्रयोजन—(न०) [प्र√युज्+ल्युट्] कार्य । अपेक्षा, आवश्यकता । उद्देश्य; 'पुत्रप्रयोजना दाराः' सुभा० । उद्देश्य-सिद्धि का साधन । अभिप्राय, मतलब । लाभ । मुनाफा । सूद, ब्याज ।

प्रयोज्य—(वि०) [प्र√युज् +ण्यत्] प्रयोग के योग्य, बरतने योग्य, काम में लाने योग्य । अभ्यास करने योग्य । नियुक्त करने योग्य । चलाने या फेंकने योग्य (अस्त्र) । (न०) पूँजी, सरमाया । (पुं०) नौकर, टहलू ।

प्ररुदित—(वि०) [प्र√रुद् + क्त] फूट-फूट कर रोया हुआ ।

प्ररूढ—(वि०) [प्र√रुह्+क्त] पूर्ण वृद्धि को प्राप्त । उत्पन्न । बढ़ा हुआ । गहरा धँसा हुआ । लंबा ।

प्ररूढि—(स्त्री०) [प्र √रुह्+क्तिन्] बाढ़, बढ़ती ।

प्ररोचन—(न०) [प्र√रुच् +णिच्+ल्युट्] उत्तेजना । उदाहरण, नज़ीर । प्रदर्शन (ऐसा जिससे लोगों को देखने की रुचि पैदा हो और वे पसंद करें) । किसी नाटक में आगे होने वाले दृश्य का रोचक वर्णन ।

प्ररोह—(पुं०) [प्र√रुह्+अच् वा घञ्] अंकुर, अँखुआ; 'हा राघव कुलप्ररोह' वे० ४ । टहनी जो कलम लगाने के लिये उतारी जाय । उल्का । नया पत्ता या डाली । तुन का पेड़ । आरोह, चढ़ाव । उत्पत्ति । उगना ।

प्ररोहण—(न०) [प्र √रुह् + ल्युट्] उत्पत्ति । आरोह, चढ़ाव । भूमि से निकलना, उगना ।

प्रलपन—(न०) [प्र √लप्+ल्युट्] वार्तालाप, सम्भाषण । बकवास, ऊटपटाँग बातचीत । विलाप ।

प्रलपित—(वि०) [प्र√लप् + क्त] कहा हुआ । ऊटपटाँग कहा हुआ । (न०) वार्तालाप ।

प्रलब्ध—(वि०) [प्र√लभ्+क्त] गृहीत । छला हुआ, धोखा दिया हुआ ।

प्रलम्ब—(वि०)[प्र√लम्ब्+अच् वा घञ्] नीचे की ओर दूर तक लटकता हुआ । बड़ा (यथा प्रलंबनासिका) । सुस्त, काहिल।

(पुं०) लटकाव, झुलाव । शाखा, डाली । गले में पड़ी फूलमाला । कण्ठहार या गुंज । स्त्री के कुच । जस्ता या सीसा । एक दैत्य का नाम जिसे बलराम ने मारा था । —अण्ड (प्रलम्बाण्ड)-(पुं०) मनुष्य जिसके अण्डकोष लटकते हों या बड़े हों । —घ्न,—मथन,—हन्(पुं०) बलराम ।

प्रलम्बन—(न०) [प्र√लम्ब्+ल्युट्] लटकना । अवलंबित होना ।

प्रलम्बित—(वि०) [प्र √लम्ब्+क्त] खूब नीचे तक लटका हुआ ।

प्रलम्भ—(पुं०) [प्र√लभ्+घञ्, मुमागम] उपलब्धि, प्राप्ति । छल, कपट ।

प्रलय—(पुं०) [प्रलीयते अस्मिन्, प्र√ली +अच्] नाश, लय को प्राप्त होना, रह न जाना । कल्पान्त में संसार का नाश । मृत्यु, मौत । मूर्च्छा, बेहोशी, अचेतनता । प्रणव, ओंकार । **—काल**-(पुं०) संसार के नाश का समय । **—जलधर**-(पुं०) प्रलयकालीन मेघ । **—दहन**-(पुं०) प्रलयकालीन आग । **—पयोधि**-(पुं०) प्रलयकालीन समुद्र ।

प्रललाट—(वि०) [प्रकृष्टो ललाटो यस्य, प्रा० ब०] बड़ा या विशाल माथे वाला ।

प्रलव—(पुं०) [प्र√लू+अप्] अच्छी तरह काटना । टुकड़ा, धज्जी ।

प्रलवित्र—(न०) [प्र√लू+इत्र] काटने का औजार—चाकू, हँसिया आदि ।

प्रलाप—(पुं०) [प्र√लप्+घञ्] वार्तालाप, संवाद । व्यर्थ की बकवाद, अनाप-सनाप बातचीत । विलाप । **—हन्**-(पुं०) कुलत्थाञ्जन, एक प्रकार का अंजन ।

प्रलापिन्—(वि०) [प्र√लप् + णिनि] बातूनी । व्यर्थ की बातचीत करने वाला ।

प्रलीन—(वि०) [प्र√ली + क्त] पिघला हुआ, घुला हुआ । विनष्ट । अचेत, बेहोश ।

प्रलून—(वि०) [प्र√लू+क्त] कटा हुआ । (पुं०) एक तरह का कीड़ा ।

प्रलेप—(पुं०) [प्र√लिप्+घञ्] लेप । घाव या फोड़े पर कोई मलहम जैसी गीली दवा चढ़ाना । वह मलहम जैसी दवा जो घाव या फोड़े पर चढ़ायी जाती है । उबटन ।

प्रलेपक—(पुं०) [प्र √लिप्+ण्वुल्] लेप करने वाला । उबटन लगाने वाला । एक प्रकार का मन्द ज्वर ।

प्रलेह—(पुं०) [प्र √लिह्+घञ्] कोरमा, मांस का बनाया हुआ खाद्य पदार्थ विशेष ।

प्रलोठन—(न०) [प्र√लुठ्+ल्युट्] जमीन पर लोटना-पोटना ।

प्रलोभ—(पुं०) [प्र√लुभ्+घञ्] अत्यन्त लोभ ।

प्रलोभन—(न०) [प्र√लुभ् + णिच् +ल्युट्] किसी को किसी ओर प्रवृत्त करने के लिए उसे लाभ की आशा देने का काम, लालच देना, ललचाना ।

प्रलोभनी—(स्त्री०) [प्रलोभन+ङीप्] रेत, बालू ।

प्रलोल—(वि०) [प्रा० स०] अत्यन्त उद्विग्न या आकुल । कंपित ।

प्रवक्तृ—(पुं०) [प्र√वच्+तृच्] अच्छा वक्ता, कुशल वक्ता । वेद आदि का उपदेश या प्रवचन करने वाला । (मनु०) ।

प्रवग, प्रवङ्ग, प्रवङ्गम—(पुं०) [=प्लवग, लस्य रः] [=प्लवङ्ग, लस्य रः] [=प्लवङ्गम, लस्य रः] वानर, बंदर । पक्षी ।

प्रवचन—(न०) [प्र√वच् + ल्युट्] अच्छी तरह समझा कर कहना, अर्थ खोलकर बतलाना । व्याख्या । वाग्मिता । वेदाङ्ग । वेद, पुराण आदि का उपदेश करना ।

प्रवञ्चन—(न०) [प्र√वञ्च्+ल्युट्—सन] ठगना, धोखा देना ।

प्रवट—(पुं०) [प्र√वट् + अच्] गेहूँ ।

प्रवण—(वि०) [√प्रु+ल्युट्] क्रमशः नीचा होता हुआ, ढालुआँ । झुका हुआ, मुड़ा हुआ । रत, प्रवृत्त । अनुरक्त । अनुकूल ।

उत्सुक । सम्पन्न । नम्र, विनीत । क्षीण, जर्जरित । (न०) पहाड़ का ढाल या उतार । (पुं०) चौराहा, चतुष्पथ । पेट । श्रम ।

प्रवत्स्यत्—(वि०) [स्त्री०—**प्रवत्स्यती** या **प्रवत्स्यन्ती**] [प्र√वस् + लृट्—शतृ] जो विदेश की यात्रा करने वाला हो ।—**पतिका**—(स्त्री०) वह नायिका जिसका पति विदेश जाने वाला हो ।

प्रवयण—(न०) [प्र √वे+ल्युट्] बुनना । बुने हुए कपड़े का ऊपर का भाग । [प्र√अज् +ल्युट्, वी आदेश] अंकुश ।

प्रवयस्—(वि०) [प्रगतं वयो यस्य, प्रा० ब०] वृद्ध, बुड्ढा ।

प्रवर—(वि०) [प्र√वृ+अप्] मुख्य, प्रधान । उम्र में सब से बड़ा । (पुं०) बुलाहट, बुलावा । अग्निसंस्कार का मंत्रविशेष । वंश, कुल । पूर्वपुरुष । गोत्रप्रवर्तक ऋषि । सन्तति । चादर । (न०) अगर काष्ठ ।—**वाहन**—(पुं०, द्विवचन] अश्विनीकुमारों का नामान्तर ।

प्रवर्ग—(पुं०) [प्रवृज्यते निःक्षिप्यते हविरादिकम् अस्मिन्, प्र√वृज्+घञ्] यज्ञीय अग्नि । विष्णु । एक याग ।

प्रवर्ग्य—(पुं०) [प्र√वृज्+ ण्यत्] प्रवर्ग यज्ञ में अनुष्ठेय होम । सोम याग की प्रारम्भिक विधि ।

प्रवर्त—(पुं०) [प्र√वृत्+घञ्] कार्यारम्भ । गोल आकार का एक आभूषण । एक प्रकार के मेघ ।

प्रवर्तक—(वि०) [स्त्री०—**प्रवर्तिका**] [प्र [√ वृत्+णिच्+ण्वुल्]सञ्चालक, किसी काम को चलाने वाला । आरम्भ करने वाला । काम में लगाने वाला, प्रवृत्त करने वाला । निकालने वाला, ईजाद करने वाला । (पुं०) पंच । हारजीत का निर्णय करने वाला, मध्यस्थ । (न०) नाटक में प्रस्तावना का एक भेद; इसमें सूत्रधार वर्तमान समय का वर्णन करता है और उसी का संबन्ध लिये पात्र का प्रवेश होता है ।

प्रवर्तन—(न०) [प्र√वृत् + णिच्+ल्युट् वा प्र√वृत्+ल्युट्] कार्यारम्भ । कार्यसञ्चालन । प्रेरणा । उत्तेजना, उकसाना । प्रवृत्ति । चाल-चलन, आचरण ।

प्रवर्तना—(स्त्री०) [प्र√वृत् + णिच्+युच् —टाप्] प्रवृत्त करने की क्रिया, प्रेरणा ।

प्रवर्तयितृ—(वि०) [प्र√वृत् + णिच्+ +तृच्] किसी काम को चलाने वाला । किसी काम की नींव डालने वाला । उकसाने वाला ।

प्रवर्तित—(वि०) [प्र√वृत्+णिच्+क्त] चलाया हुआ । आरम्भ किया हुआ । स्थापित । उत्तेजित, उभारा हुआ । सुलगाया हुआ, जलाया हुआ । बनाया हुआ । पवित्र किया हुआ ।

प्रवर्तिन्—(वि०) [प्र√वृत्+णिच्+णिनि वा प्र√वृत्+णिनि] प्रेरणा करने वाला । चलाने वाला । आगे बढ़ाने वाला । प्रयोग करने वाला । क्रियाशील ।

प्रवर्धन—(न०) [प्र√वृध्+ल्युट्] बढ़ती, वृद्धि ।

प्रवर्ष—(पुं०) [प्र√वृष् + घञ्] मूसलधार वृष्टि ।

प्रवर्षण—(न०) [प्र√वृष्+ल्युट्] प्रथम वृष्टि । वृष्टि ।

प्रवसन—(न०) [प्र√वस्+ल्युट्] विदेशगमन । मरण ।

प्रवह—(पुं०) [प्र√वह् + अच्] प्रवाह, धार । हवा, पवन । पवन के सप्तमार्गों में से एक । इसी में ज्योतिष्क पिण्ड आकाश में स्थित हैं । घर, नगर आदि से बाहर जाना । पानी बहा कर ले जाने का कुंड ।

प्रवहण—(न०) [प्र√वह् + ल्युट्] (स्त्रियों के लिये) पर्देदार गाड़ी या पालकी

या डाला। सवारी। जहाज, पोत। कन्या को ब्याह देना।

प्रवह्लि, प्रवह्लिका, प्रवह्ली—(स्त्री०) [प्र√वह्ल्+इन्] [प्र√वह्ल्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] [प्रवह्लि+ङीष्] पहेली, बुझौवल।

प्रवाच्—(वि०) [प्रकृष्टा वाक् यस्य, प्रा० ब०] वाक्पटु, वाग्मी। बातूनी, गप्पी।

प्रवाचन—(न०) [प्र√वच्+णिच्+ल्युट्] घोषणा। उपाधि।

प्रवाच्य—(न०) [प्र√वच्+ण्यत्] साहित्यिक रचना।

प्रवाण—(न०) [प्र√वे+ल्युट्] बने हुए कपड़े में गोट लगाना या उसके छोरों को सम्हारना।

प्रवाणि, प्रवाणी—(स्त्री०) [=प्रवाणी, नि० ह्रस्व] [प्रवाण+ङीष्] जुलाहों की ढरकी। करघा।

प्रवात—(वि०) [प्रकृष्टो वातो यस्य यस्मिन् वा, प्रा० ब०] आँधी में पड़ा हुआ। (पु०) हवादार स्थान। [प्रकृष्टो वातः, प्रा० स०] हवा का झोंका। अंधड़, आँधी। स्वच्छ वायु।

प्रवाद—(पु०) [प्र √वद्+घञ्] शब्दोच्चारण। व्यक्तकरण, प्रकट करना। वार्तालाप, बातचीत। किंवदन्ती, अफवाह। कल्पना-प्रसूत रचना, काल्पनिक रचना। पारस्परिक भाषा। चुनौती।

प्रवार, प्रवारक—(पु०) [प्र√वृ+घञ्] [प्रवार+कन्] चादर। आच्छादन।

प्रवारण—(न०) [प्र√वृ+णिच्+ल्युट्] इच्छा पूर्ण करना। निषेध। काम्य दान।

प्रवाल—दे० 'प्रबाल'।

प्रवास—(पु०) [प्र√वस्+घञ्] विदेश में रहना, परदेश का निवास। विदेश।

प्रवासन—(न०) [प्र√वस्+णिच्+ल्युट्] विदेश में वास। निर्वासन, देशनिकाला। वध, हत्या।

प्रवासिन्—(पु०) [प्र√वस्+णिनि] परदेश में रहने वाला व्यक्ति।

प्रवाह—(पु०) [प्र√वह्+घञ्] धार। चश्मा, स्रोत। जल का बहाव। घटनाचक्र। क्रियाशीलता। जलाशय, झील। [प्रकृष्टो वाहः, प्रा० स०] उत्तम घोड़ा।

प्रवाहक—(पु०) [प्र√वह्+ण्वुल्] राक्षस। पिशाच। (वि०) अच्छी तरह वहन करने वाला।

प्रवाहण—(न०) [प्र√वह्+णिच्+ल्युट्] निकालना। दस्त करा कर साफ करना।

प्रवाहिका—(स्त्री०) [प्र√वह्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] दस्तों की बीमारी।

प्रवाही—(स्त्री०) [प्र√वह्+घञ्—ङीष्] रेत, बालू।

प्रविकीर्ण—(वि०) [प्र—वि√कॄ+क्त] बिखरा हुआ, छिटकाया हुआ।

प्रविख्यात—(वि०) [प्र—वि√ख्या+क्त] सुप्रसिद्ध, बहुत मशहूर।

प्रविख्याति—(स्त्री०) [प्र—वि √ख्या+क्तिन्] प्रतिप्रसिद्धि।

प्रविचय—(पु०) [प्र—वि√चि+अच्] परीक्षा। अनुसन्धान।

प्रविचार—(पु०) [प्रा० स०] उत्तम विचार, सुविचार।

प्रविचेतन—(न०) [प्र—वि√चित्+ल्युट्] समझदारी।

प्रवितत—(वि०) [प्र—वि√तन्+क्त] फैला हुआ, पसरा हुआ। अस्त-व्यस्त, उलझे हुए (केश)।

प्रविदार—(पु०) [प्र—वि √दॄ+घञ्] फटना, विदीर्ण होना।

प्रविदारण—(न०) [प्र—वि√दॄ+णिच्+ल्युट्] चीरना, फाड़ना। कलियों का लगना। लड़ाई, युद्ध। भीड़भाड़।

प्रविद्ध—(वि०) [प्र√व्यध्+क्त] अच्छी तरह छेदा हुआ। फेंका हुआ।

प्रविद्रुत—(वि०) [प्र—वि√द्रु+क्त] भगाया हुआ। छितराया हुआ।

प्रविभक्त—(वि०) [प्र—वि√भज्+क्त] अलग किया हुआ, पृथक् किया हुआ। विभाजित, जिसका बटवारा हो चुका हो।

प्रविभाग—(पु०) [प्र—वि√भज्+घञ्] उत्तम बाँट। क्रमवार रखना। अंश, भाग।

प्रविर—(पु०) पीला चन्दन।

प्रविरल—(वि०) [प्रा० स०] बहुत दूर-दूर अलगाया हुआ। स्वल्प, बहुत थोड़ा; 'प्रविरला इव मुग्धवधूकथाः' र० ६.३४। अतिदुष्प्राप्य।

प्रविलय—(पु०) [प्र—वि√ली+अच्] भली भाँति घुलना या लीन होना।

प्रविलुप्त—(वि०) [प्र—वि√लुप्+क्त] हटा हुआ। कटा हुआ। गिरा हुआ। घिसा हुआ।

प्रविवाद—(पु०) [प्रा० स०] झगड़ा, टंटा।

प्रविविक्त—(वि०) [प्रा० स०] बिल्कुल अलग। एकाकी।

प्रविश्लेष—(पु०) [प्रा० स०] अत्यंत अलगाव।

प्रविषण्ण—(वि०) [प्रा० स०] अत्यंत उदास। उत्साह-शून्य।

प्रविष्ट—(वि०) [प्र√विश्+क्त] घुसा हुआ। संलग्न। आरम्भ किया हुआ।

प्रविष्टक—(न०) [प्रविष्ट+कन्] रंगभूमि का द्वार।

प्रविस्तर, प्रविस्तार—(पु०) [प्र—वि√स्तॄ+अप्] [प्र—वि√स्तॄ+घञ्] पूर्ण विस्तार या फैलाव।

प्रवीण—(वि०) [प्रकृष्टा संसाधिता वीणा अस्य, प्रा० ब०, वीणया गायकस्य नैपुण्य-सिद्धेः तत्तुल्यनैपुण्यात् तथात्वम्] चतुर, निपुण, कुशल।

प्रवीर—(वि०) [प्रा० स०] सर्वोत्कृष्ट। मजबूत, दृढ़। (पु०) वीर पुरुष, बहादुर आदमी। भारी योद्धा। प्रधान पुरुष।

प्रवृत—(वि०) [प्र√वृ+क्त] चुना हुआ, छाँटा हुआ।

प्रवृत्त—(वि०) [प्र√वृत्+क्त] आरम्भ किया हुआ। संचालित। संलग्न। प्रस्थानित। निश्चित। अविवादग्रस्त। गोल। (पु०) गोल आभूषण विशेष। कार्य।

प्रवृत्तक—(न०) [प्रवृत्त+कन्] रंगभूमि का प्रवेशद्वार।

प्रवृत्ति—(स्त्री०) [प्र√वृत्+क्तिन्] अविच्छिन्न उन्नति। उत्पत्ति। उद्गमस्थान। उदय। प्राकट्य। आरम्भ। लगन। झुकाव। चाल-चलन। व्यापार। व्यवहार। अविच्छिन्न उद्योग। भाव, अर्थ। सातत्य, अविच्छिन्नता। सांसारिक विषयों में अनुरक्ति। वृत्तान्त, हाल; 'जीमूतेन स्वकुशलमयीं हारयिष्यन्प्रवृत्तिं' मे० ४। किसी नियम का किसी विषय में लागू होना। प्रारब्ध, भाग्य। बोध। हाथी का मद। उज्जयिनी पुरी का नाम।—**ज्ञ**—(पु०) भेदिया, जासूस।—**मार्ग**—(पु०) संसार के धंधों में संलग्न रहना।—**विज्ञान**—(न०) बाह्य जगत् का ज्ञान (बौद्ध)।

प्रवृद्ध—(वि०) [प्र√वृध्+क्त] पूरा बढ़ा हुआ। फैला हुआ। पूर्ण। अहंकारी। उग्र। लंबा।

प्रवृद्धि—(स्त्री०) [प्र√वृध्+क्तिन्] उन्नति। उत्थान। समृद्धि।

प्रवेक—(वि०) [प्र√विच्+घञ्] श्रेष्ठ। सर्वोत्कृष्ट।

प्रवेग—(पु०) [प्रकृष्टो वेगः, प्रा० स०] बड़ा वेग।

प्रवेट—(पु०) [प्र√वी+ट] जौ, यव।

प्रवेणि, प्रवेणी—(स्त्री०) [प्र√वेण्+इन्] [प्रवेणि+ङीष्] बालों का जूड़ा; 'हेम-भक्तिमतीं भूमेः प्रवेणीमिव पिप्रिये' र० १५.३०। हाथी की झूल। रंगीन ऊनी कपड़े का थान। प्रवाह या नदी की धार।

प्रवेतृ—(पुं०) [प्र√अज्+तृन्, अजेः वी आदेशः] रथवान, सारथी।

प्रवेदन—(न०) [प्र √विद्+णिच्+ल्युट्] प्रकट करना।

प्रवेप, प्रवेपक, प्रवेपथु (पुं०), **प्रवेपन**—(न०) [प्र √वेप्+घञ्] [प्रवेप+कन्] [प्र√वेप् + अथुच्] [प्र√वेप्+ल्युट्] थर्राना, कँपकँपी।

प्रवेरित—(वि०) इधर-उधर पटका हुआ या फेंका हुआ।

प्रवेल—(पुं०) [प्र √वेल्+अच्] पीला मूंग, पीला मूंग।

प्रवेश—(पुं०) [प्र√विश्+घञ्] भीतर जाना, घुसना। पैठ, पहुँच। किसी विषय की जानकारी। द्वार। वार्ता रखना। दूसरे के काम में दखल देना। सूर्य का किसी राशि में संक्रमण। किसी कार्य में संलग्न रहना। किसी पात्र का रंगमंच पर आना।

प्रवेशक—(पुं०) [प्र√विश्+ण्वुल्] प्रवेश करने वाला। नाटक के अभिनय में वह स्थल जहाँ कोई अभिनय करने वाला दो अंकों के बीच की घटना का (जो दिखलायी न गयी हो) परिचय पारस्परिक वार्तालाप द्वारा देता है।

प्रवेशन—(न०) [प्र√विश्+ल्युट्] भीतर गमन, प्रवेश। सिंहद्वार। मैथुन, स्त्रीसङ्गम।

प्रवेशित—(वि०) [प्र√विश्+णिच्+क्त] घुसाया हुआ, पैठाया हुआ। पहुँचाया हुआ। परिचय कराया हुआ।

प्रवेष्ट—(पुं०) [प्र√वेष्ट्+अच्] बाँह। पहुँचा। हाथी की पीठ का वह मांसल भाग जहाँ लोग बैठते हैं। हाथी के मसूड़े। हाथी की झूल।

प्रव्यक्त—(वि०) [प्र—वि√अञ्ज्+क्त वा प्रकर्षेण व्यक्तः, प्रा० स०] स्फुट, स्पष्ट, साफ।

प्रव्यक्ति—(स्त्री०) [प्र—वि√अञ्ज्+क्तिन्] स्पष्टता, प्रकाश।

प्रव्याहार—(पुं०) [प्र—वि—आ √ हृ +घञ्] वार्तालाप की वृद्धि।

प्रव्रजन—(न०) [प्र√व्रज् +ल्युट्] विदेश-गमन। घर-बार छोड़ संन्यास लेना।

प्रव्रजित—(वि०) [प्र√व्रज्+क्त] संन्यास लिया हुआ। विदेश गया हुआ। (न०) संन्यासी का जीवन। (पुं०) संन्यासी। बौद्ध भिक्षुक का शिष्य।

प्रव्रज्या—(स्त्री०) [प्र√व्रज्+क्यप्—टाप्] विदेशगमन। भ्रमण। संन्यास। संन्यासाश्रम। **—अवसित (प्रव्रज्यावसित)**—(पुं०) वह पुरुष जिसने संन्यासाश्रम ग्रहण कर उसे त्याग दिया हो।

प्रव्रश्चन—(पुं०) [प्र√व्रश्च्+ल्युट्] लकड़ी काटने का औजार, कुल्हाड़ी।

प्रव्राज्, प्रव्राजक—(पुं०) [प्र √ व्रज् +क्विप्] [प्र√व्रज्+ण्वुल्] संन्यासी।

प्रव्राजन—(न०) [प्र√व्रज्+णिच्+ल्युट्] निर्वासन, घर छुड़ाकर वन में भेजना।

प्रशंसन—(न०) [प्र√शंस्+ल्युट्] प्रशंसा करना, गुणों का वर्णन करना।

प्रशंसा—(स्त्री०) [प्र√शंस् + अ—टाप्] गुणवर्णन, बड़ाई, तारीफ। **—मुखर**—(वि०) जोर-जोर से प्रशंसा करने वाला।

प्रशंसित—(वि०) [प्रशंसा+इतच्] सराहा हुआ, तारीफ किया हुआ।

प्रशंसोपमा—(स्त्री०) उपमा अलंकार का एक भेद। इसमें उपमेय की विशेष प्रशंसा कर उपमान की प्रशंसा व्यक्त की जाती है।

प्रशंस्य—(वि०) [प्र √शंस्+यत्] प्रशंस-नीय, प्रशंसा करने योग्य।

प्रशत्वन्—(पुं०) [प्र √शद्+क्वनिप्, तुट्] समुद्र।

प्रशत्वरी—(स्त्री०) [प्रशत्वन्+ङीप्, रआदेश] नदी।

प्रशम—(पुं०) [प्र√शम्+घञ्] शान्ति।

'प्रशमस्खलितपूर्वपार्थिवं' र० ८.१२। शमन। नाश। अवसान, अन्त। निवृत्ति।

प्रशमन—(वि०) [स्त्री०—**प्रशमनी**] [प्र √शम् + णिच्+ल्यु] शान्त करने वाला। (न०) [प्र√शम् + णिच् +ल्युट्] शांत करना, शमन; 'आपन्नार्ति-प्रशमनफलाः सम्पदो ह्युत्तमानां' मे० ५३। नाशन। मारण। प्रतिपादन। वश में करना। नीरोग करना।

प्रशमित—(वि०) [प्र√शम्+णिच्+क्त] शांत किया हुआ। बुझाया हुआ। प्रायश्चित्त द्वारा शुद्ध किया हुआ।

प्रशस्त—(वि०) [प्र√शंस्+ क्त] प्रशंसा किया हुआ। श्रेष्ठ। कृतकृत्य। शुभ।—**अद्रि** (**प्रशस्ताद्रि**)-(पुं०) मध्य-देशवर्ती एक पर्वत का नाम।—**पाद**-(पुं०) एक प्राचीन आचार्य। इन्होंने वैशेषिक दर्शन पर पदार्थधर्मसंग्रह नामक एक ग्रन्थ लिखा था, जो अब भी मिलता है।

प्रशस्ति—(स्त्री०)[प्र√शंस्+क्तिन्]प्रशंसा, तारीफ। वर्णन। प्रशंसा में रची हुई कविता। श्रेष्ठता, उत्कृष्टता। आशीर्वचन। राजा का वह आज्ञापत्र जो पत्थर आदि पर खोदा जाता था और जिसमें राजवंश तथा उसकी कीर्ति आदि का वर्णन रहता था। वह प्रशंसासूचक वाक्य जो पत्र के आदि में लिखा जाता है, सरनामा। प्राचीन ग्रंथ का वह आदि और अंत वाला अंश जिससे उसके रचयिता, काल, विषय आदि का ज्ञान होता।

प्रशस्य—(वि०) [प्र√शंस्+क्यप्] प्रशंसा के योग्य, प्रशंसनीय। उत्तम, श्रेष्ठ।

प्रशाख—(वि०) [प्रशस्ता शाखा यस्य, प्रा० स०] अनेक लचन या विस्तारित शाखाओं वाला। गर्भपिंड की पाँचवीं अवस्था जब उसमें हाथ-पैर बन चुकते हैं।

प्रशाखा—(स्त्री०) [प्रगता शाखाम्, अत्या० स०] अवशाखा, शाखा की शाखा, टहनी।

प्रशाखिका—(स्त्री०) [प्रशाखा+कन्—टाप्, इत्व] छोटी डाली या टहनी।

प्रशान्त—(वि०) [प्रकर्षेण शान्तः, प्रा० स०] अत्यंत शांत, स्थिर, अचंच। शान्त, निश्चल वृत्ति वाला। वश में किया हुआ। समाप्त। मृत।—**आत्मन्** (**प्रशान्तात्मन्**)-(वि०) जिसका मन शांत हो।—**ऊर्ज** (**प्रशान्तोर्ज**)-(वि०) निर्बल किया हुआ।—**चेष्ट**-(वि०) काम-धंधा छोड़े हुए।—**बाध**-(वि०)वस्तु जिसकी समस्त बाधाएँ दूर हो चुकी हों।

प्रशान्ति—(स्त्री) [प्रा० स०] अत्यंत शांति। शान्ति, स्थिरता।

प्रशासन—(न०) [प्र√शास्+ल्युट्] हुकूमत करना, शासन करना। हुकूमत, शासन। शिष्य आदि को दी जाने वाली कर्तव्य की शिक्षा।

प्रशास्तृ—(पुं०)[प्र√शास्+तृन्] शासक। राजा। होता का प्रधान सहायक जिसे मैत्रावरुण कहते हैं। परामर्शदाता।

प्रशिथिल—(वि०) [प्रा० स०] बहुत ढीला।

प्रशिष्य—(पुं०) [प्रगतः शिष्यम् अध्यापकत्वेन, अत्या० स०] शिष्य का शिष्य।

प्रशुद्धि—(स्त्री०) [प्रा० स०] अत्यंत शुद्धि या पवित्रता।

प्रशोष—(पुं०) [प्र√शुष्+घञ्] सूखना, खुश्क होना।

प्रश्चोतन—(न०) [प्र√श्चुत्+ल्युट्] चूने की क्रिया, क्षरण।

प्रश्न—(पुं०) [√प्रच्छ्+नङ्] सवाल। अनुसन्धान, पूँछ-ताछ। विवाद-ग्रस्त विषय। अंकगणित का हल करने के लिये कोई सवाल। भविष्य सम्बन्धी जिज्ञासा। किसी ग्रन्थ का कोई छोटा अध्याय।—**उपनिषद्** (**प्रश्नोपनिषद्**)-(न०) एक उपनिषद् जिसमें ६ प्रश्न और उनके छह उत्तर हैं।—

दूती–(स्त्री०) बुझौअल, पहेली ।—**विपाक**—(पुं०) वह ज्योतिषी जो ग्रहदशा आदि-सम्बन्धी प्रश्नों का उत्तर दे (वेद) । मध्यस्थ, पंच ।

प्रश्रथ—(पुं०) [प्र√श्रथ्+अच्] ढीलापन ।

प्रश्रय—(पुं०), **प्रश्रयण**–(न०) [प्र√श्रि+अच्] [प्र √श्रि+ल्युट्] विनय, नम्रता; 'समागतैः प्रश्रयनम्रमूर्तिभिः' शि० १२.३३ । प्रेम । सम्मान ।

प्रश्रित—(वि०) [प्र√श्रि+क्त] विनम्र, विनीत ।

प्रश्लथ—(वि०) [प्रा० स०] बहुत ढीला । उत्साहहीन ।

प्रश्लिष्ट—(वि०) [प्र √श्लिष्+क्त] सुसम्बद्ध, युक्तियुक्त । संधिविशिष्ट ।

प्रश्लेष—(पुं०) [प्र√श्लिष्+घञ्] घनिष्ठ संसर्ग । सन्धि होने में स्वरों का परस्पर मिल जाना ।

प्रश्वास—(पुं०) [प्र√श्वस्+घञ्] नथुने से बाहर आयी हुई साँस । वायु के नथुने से निकलने की क्रिया ।

प्रष्ठ—(वि०) [प्र√स्था+क] सामने खड़ा होने वाला । प्रधान, मुख्य । अगुआ, नेता; 'चिरराज रथप्रष्ठैर्वालखिल्यैरिवांशुमान्' र० १५.१० । —**वाह्**–(पुं०) जवान बैल, जिसे हल जोतने का अभ्यास कराया जाता हो ।

√प्रस्—भ्वा० आत्म० सक० बच्चा पैदा करना । फैलाना, पसारना । प्रसते, प्रसिष्यते, अप्रसिष्ट ।

प्रसक्त—(वि०) [प्र√सञ्ज्+क्त] सम्बन्ध-युक्त । अत्यन्त आसक्त । समीप, लगा हुआ । नित्य । प्राप्त, उपलब्ध ।

प्रसक्ति—(स्त्री०) [प्र√सञ्ज्+क्तिन्] अनुराग । सम्बन्ध, संसर्ग । प्राप्ति । व्याप्ति । अध्यवसाय । परिणाम, नतीजा । अनुमिति । आपत्ति ।

प्रसङ्ख्या—(स्त्री०) [प्रा० स०] जोड़, मीजान । ध्यान ।

प्रसङ्ख्यान—(न०) [प्र–सम् √ ख्या+ल्युट्] गणना । ध्यान । आत्मानुसन्धान । ख्याति, प्रसिद्धि । भुगतान, चुकता ।

प्रसङ्ग—(पुं०) [प्र√सञ्ज्+घञ्] अनुराग, आसक्ति । संसर्ग, सम्बन्ध । अनुचित सम्बन्ध । विषय जो विवादग्रस्त हो या जिस पर बात-चीत होती हो । अवसर । उपयुक्त काल । व्याप्ति रूप सम्बन्ध ।

प्रसञ्जन—(न०)[प्र√सञ्ज्+ल्युट्] जोड़ने की क्रिया, मिलाना । उपयोग में लाना, काम में लाना ।

प्रसत्ति—(स्त्री०) [प्र √सद्+क्तिन्] अनुग्रह । स्वच्छता, पवित्रता । प्रसन्नता ।

प्रसन्धान—(न०) (प्र–सम्√धा + ल्युट्] मिलाना, योग, जुटाव ।

प्रसन्न—(वि०) [प्र√सद्+क्त] पवित्र, स्वच्छ । आह्लादित । कृपालु । शुभ । संतुष्ट । स्पष्ट । सत्य, ठीक ।—**आत्मन्** (**प्रसन्नात्मन्**)–(वि०) जो सदा प्रसन्न रहे, आनन्द । —**इरा** (**प्रसन्नेरा**)–(स्त्री०) एक प्रकार की मदिरा ।—**कल्प**–(वि०) प्रायःशान्त । प्रायःसत्य ।—**मुख**,–**वदन**–(वि०) जिसका मुख प्रसन्न हो, जिसकी आकृति से प्रसन्नता टपकती हो, हँसता हुआ चेहरा ।—**सलिल**–(वि०) स्वच्छ जलवाला ।

प्रसन्ना—(स्त्री०) [प्रसन्न+टाप्] हर्षयुक्त स्त्री । वह मद्य जो पहले खींचा गया हो ।

प्रसभ—(अव्य०) [प्रगता सभा सामान-विकारोऽस्मात्, प्रा० ब०] बलपूर्वक, बरजोरी, जबरदस्ती; 'इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः' भग० २.६० बहुतायत से । अड़ पकड़कर, ह करके ।—**दमन**–(न०) जबरदस्ती वशीभूत करना । —**हरण**–(न०) जबरदस्ती हरण कर जाना ।

प्रसमीक्षण—(न०), **प्रसमीक्षा**–(स्त्री०) [प्र–सम् √ईक्ष्+ल्युट्] [प्र–सम्√ईक्ष्+अङ–टाप्] गम्भीर आलोचना।

प्रसयन—(न०) [प्र√सि+ल्युट्] बंधन। जाल।

प्रसर—(पुं०)[प्र√सृ+अप्] आगे बढ़ना। बेरोक-टोक गति, अबाधित गति। प्रसार, विस्तार, फैलाव। आयतन, बड़ी मात्रा। प्रभाव। धार, बहाव। समूह। युद्ध। लोहे का तीर। वेग। विनम्र याचना या प्रार्थना।

प्रसरण—(न०) [प्र√सृ+ल्युट्] आगे बढ़ना। निकल भागना। फैलने की क्रिया या भाव। शत्रु को घेर लेना। सुशीलता।

प्रसरणि, प्रसरणी—(स्त्री०) [प्र√सृ+अनि] [प्रसरणि+ङीप्] शत्रु को घेर लेना।

प्रसर्पण—(न०) [प्र√सृप्+ल्युट्] आगे बढ़ना, आगे खिसकना। घुसना, पैठना। (सेना का) चारों ओर फैल जाना।

प्रसल, प्रशल—(पुं०) [प्र√शल्+अच्, पक्षे पृषो० शस्य सः] हेमन्त ऋतु।

प्रसव—(पुं०) [प्र√सू+अप्] बच्चा जनने की क्रिया, जनना। जन्म, उत्पत्ति। अपत्य, सन्तान। उत्पत्तिस्थान, उद्गमस्थल। फूल। फल। उपज।—**उन्मुख** (प्रसवोन्मुख)–(वि०) उत्पन्न होने वाला।—**गृह**–(न०) प्रसूतिकागृह, वह कमरा जिसमें बच्चा जना जाय, सौबर।—**धर्मिन्**–(वि०) उर्वर, जिसमें कोई वस्तु पैदा हो सके।—**बन्धन**–(न०) वह पतला सींका जिसके सिरे पर पत्ता या फूल लगता है, वृन्त।—**वेदना**,—**व्यथा**–(स्त्री०) वह दर्द जो बच्चा जनने के पूर्व गर्भवती स्त्री के पेट में हुआ करता है।—**स्थली**–(स्त्री०) माता।—**स्थान**–(न०) वह स्थान जहाँ बच्चा उत्पन्न हो। जाल। घोंसला।

प्रसवक—(पुं०) [प्रसवेन पुष्पादिना कायति शोभते, प्रसव√कै+क] पियालवृक्ष, चिरौंजी का पेड़।

प्रसवन—(न०) [प्र√सू+ल्युट्] बच्चा जनना। उत्पन्न करना।

प्रसवन्ति—(स्त्री०) [प्र√सू+झिच् अन्तादेश] जच्चा औरत।

प्रसवितृ—(पुं०) [प्र√सू+तृच्] पिता, जनक।

प्रसवित्री—(स्त्री०) [प्रसवितृ + ङीप्] माता।

प्रसव्य—(वि०) [प्रगतं सव्यात्, प्रा० स०] प्रतिकूल। जो बायीं ओर को हो, बायाँ।

प्रसह—(वि०) [प्र√सह्+अच्]सहनशील, सहिष्णु। (पुं०) शिकारी पशु या पक्षी। सहनशीलता। सामना, मुकाबला।

प्रसहन—(न०) [प्र√सह्+ल्युट्] सहनशीलता, सहिष्णुता। सामना, मुकाबला। पराजय। आलिङ्गन। (पुं०) [प्रगतं सहनं सहागुणो यस्मात्, प्रा० ब०] शिकारी पशु या पक्षी।

प्रसह्य—(अव्य०)[प्र√सह्+क्त्वा–ल्यप्] बरजोरी, जबरदस्ती; 'प्रसह्य सिंहः किल तां चकर्ष' र० २.२७। बहुतायत से, अत्यन्त अधिकाई से।

प्रसातिका—(स्त्री०)[प्र√सो+क्तिन्, प्रगता सातिः नाशो यस्याः, प्रा० ब०, कप्–टाप्] छोटे दाने का धान्य, साँवाँ।

प्रसाद—(पुं०) [प्र√सद्+घञ्] प्रसन्नता। अनुग्रह, कृपा। अच्छा स्वभाव। शान्ति, उद्वेगराहित्य। स्वच्छता। प्राञ्जलता, सुस्पष्टता; 'प्राप्तबुद्धिप्रसादाः' कि० ११.६। वह भोज्य पदार्थ जो देवता को निवेदित किया गया हो। देवता, गुरुजन आदि को देने पर बची हुई वस्तु जो काम में लायी जाय। निःस्वार्थ दान, पुरस्कार। कोई भी पदार्थ जो तुष्टिसाधन के लिये भेंट किया जाय।—**उन्मुख** (प्रसादोन्मुख)–

(वि०) कृपालु, अनुग्रह करने को तत्पर। **—पराङ्मुख**-(वि०) अप्रसन्न, नाराज। वह जो किसी की कृपा की परवाह न करे। **—पात्र**-(न०) कृपापात्र। **—स्थ**-(वि०) कृपालु। शुभ। शान्त। प्रसन्न।

प्रसादक—(वि०)[स्त्री०—**प्रसादिका**] [प्र √सद्+णिच् +ण्वुल्] स्वच्छ करने वाला, साफ करने वाला। ढाढ़स बाँधने वाला, धीरज देने वाला। प्रसन्न करने वाला। अनुग्रह करने वाला।

प्रसादन—(वि०) [स्त्री०—**प्रसादनी**] [प्र √सद्+णिच्+ल्यु] साफ करने वाला, पवित्र या स्वच्छ करने वाला। धीरज बँधाने वाला। प्रसन्न करने वाला। (न०) शाही खीमा, बादशाह का तंबू। (न०) [प्र√सद् +णिच्+ल्युट्] अस्वच्छता को हटाना या साफ करना। धीरज बँधाना। प्रसन्न करना। अनुग्रह करना।

प्रसादना—(स्त्री०) [प्र√सद् + णिच् +युच्—टाप्] सेवा, परिचर्या। पवित्र करना।

प्रसादित—(वि०) [प्र√सद्+णिच्+क्त] स्वच्छ किया हुआ, पवित्र किया हुआ। सन्तुष्ट किया हुआ। परिचर्या किया हुआ। शान्त किया हुआ, धीरज बँधाया हुआ।

प्रसाधक—(वि०) [स्त्री०—**प्रसाधिका**] [प्र√साध्+ण्वुल्] सिद्ध या निष्पन्न करने वाला। स्वच्छ करने वाला। सजावट या शृंगार करने वाला। (पु०) राजाओं को वस्त्र, आभूषणादि पहनाने वाला नौकर।

प्रसाधन—(न०) [प्र√साध्+ल्युट्] सम्पादन, कार्य को पूरा करना। सुव्यवस्था करना। सजावट, शृङ्गार। कंघी। **—विधि**-(स्त्री०) शृङ्गार का तरीका। **—विशेष**-(पु०) सब से बढ़-बढ़ कर शृङ्गार।

प्रसाधनी—(स्त्री०)[प्रसाधन+ङीप्] कंघी।

प्रसाधिका—(स्त्री०) [प्रसाधक + टाप्, इत्व] वह दासी जो अपनी स्वामिनी के शृङ्गार के साधनों की देखरेख रखा करे। तिन्नी धान।

प्रसाधित—(वि०) [प्र√साध्+क्त] सँवारा हुआ, सजाया हुआ। सुसम्पादित।

प्रसार—(पु०) [प्र √सृ+घञ्] विस्तार, फैलाव, पसार।

प्रसारक—(वि०) [प्र√सृ+णिच् + ण्वुल् —अक] फैलाने वाला।

प्रसारण—(न०) [प्र√सृ + णिच्+ल्युट्] फैलाना, पसारना, विस्तृत करना।

प्रसारिणी—(स्त्री०) [प्र√सृ + णिनि —ङीप्] गंधप्रसारिणी लता। लाजवंती। फैल कर शत्रु को घेरना।

प्रसारित—(वि०) [प्र√सृ + णिच्+क्त] फैलाया हुआ, पसारा हुआ। (बिक्री के लिए) सामने रखा हुआ।

प्रसाह—(पु०) [प्र√सह्+घञ्] हार, पराजय। आत्मशासन।

प्रसित—(वि०) [प्र√सि+क्त]बँधा हुआ। अनुरक्त; 'प्रसितावुदयापवर्गयोः' र० ८.२३। संलग्न। अभिलषित। (न०) पीब, मवाद।

प्रसिति—(स्त्री०) [प्र√सि+क्तिन्] जाल। पट्टी। बंधन। बंधन का साधन (रस्सी, जंजीर आदि)। तंतु। आक्रमण। विस्तार। कम। अधिकार।

प्रसिद्ध—(वि०) [प्र√सिध्+क्त] विख्यात, मशहूर। सजाया हुआ, सँवारा हुआ।

प्रसिद्धि—(स्त्री०) [प्र√सिध् +क्तिन्] ख्याति। सफलता। परिपूर्णता। आभूषण, सजावट।

प्रसीदिका—(स्त्री०) वाटिका, फुलवगिया।

प्रसुप्त—(वि०) [प्र√स्वप्+क्त] निद्रित, सोया हुआ। प्रगाढ़निद्रित। संपुटित (फूल)।

प्रसुप्ति—(स्त्री०) [प्र√स्वप्+क्तिन्] गाढ़ी नींद। लकवे की बीमारी।

प्रसू—(वि०) [प्र√सू+क्विप्] जनने वाली। उत्पन्न करने वाली। (स्त्री०) माता। घोड़ी। फलने वाली लता या बेल। केला। अँखुआ।

प्रसूका—(स्त्री०) [प्रसू + कन्—टाप्] घोड़ी। अश्वगंध।

प्रसूत—(वि०) [प्र√सू+क्त] उत्पन्न, सञ्जात, पैदा। (न०) फूल। उत्पत्ति का साधन।

प्रसूता—(स्त्री०) [प्रसूते स्म, प्र√सू+क्त (कर्तरि)—टाप्] जच्चा स्त्री।

प्रसूति—(स्त्री०) [प्र√सू+क्तिन्] प्रसव, जनन। उद्भव, उत्पत्ति। अपत्य, सन्तति। उत्पत्तिस्थान। प्रकृति। माता। जच्चा।—**ज**–(न०) बच्चा जनते समय होने वाली वेदना या दर्द।—**वायु**–(पुं०) वह वायु जो बच्चा जनते समय गर्भाशय में उत्पन्न होता है।

प्रसूतिका—(स्त्री०) [प्रसूतः सूतः अस्याः अस्ति, प्रसूत+ठन्—टाप्] जच्चा स्त्री, वह स्त्री जिसके हाल में बच्चा हुआ हो।

प्रसून—(वि०) [प्र√सू+क्त, तस्य नत्वम्] उत्पन्न हुआ, पैदा हुआ। (न०) फूल, पुष्प; 'लतायां पूर्वलूनायाम्प्रसूनस्यागमः कुतः' उत्त० ५.२०। कली। फल।—**इषु** (प्रसूनेषु),—**बाण**,—**शर**–(पुं०) कामदेव।—**वर्ष**–(पुं०) फूलों की वर्षा।

प्रसूनक—(न०) [प्रसून+कन्] फूल। कली।

प्रसृत—(वि०) [प्र√सृ+क्त] आगे बढ़ा हुआ। फैला हुआ। छाया हुआ। लंबा। लगा हुआ। तेज, फुर्तीला। सुशील। गया हुआ। प्रेरित। प्रचलित। इंद्रियलोलुप। (न०, पुं०) हथेली भर का मान। (पुं०) आधी अंजलि, पसर।—**ज**–(पुं०) व्यभिचार द्वारा उत्पन्न किया हुआ पुत्र (महा०)।

प्रसृता—(स्त्री०) [प्रसृत+टाप्] टाँग।

प्रसृति—(स्त्री०) [प्र√सृ+क्तिन्] आगे बढ़ना। फैलाव। आधी अंजलि, पसर। हथेली भर का मान।

प्रसृष्ट—(वि०) [प्र√सृज्+क्त] भली भाँति उत्पन्न। त्यागा हुआ। क्लेशित।

प्रसृष्टा—(स्त्री०) [प्रसृष्ट+टाप्] युद्ध का एक दाँव। फैलायी हुई उँगली।

प्रसृत्वर—(वि०)[प्र√सृ+क्वरप्,तुक्] चारों ओर फैलाने वाला।

प्रसृमर—(वि०) [प्र √सृ+क्मरच्] चूने वाला, टपकने वाला।

प्रसेक—(पुं०) [प्र√सिच्+घञ्] सींचना, सिञ्चन। क्षरण, चूना। वमन, कै। चरक के अनुसार मुँह से पानी छूटना या नाक से पानी गिरना।

प्रसेविका—(स्त्री०) छोटी बगिया।

प्रसेव, प्रसेवक—(पुं०) [प्र√सिव्+घञ्] [प्रसेव+कन्] वीणा की तुँबी। कपड़े या चमड़े का थैला।

प्रस्कन्दन—(न०) [प्र√स्कन्द्+ल्युट्] कूदना, फलाँग। विरेचन, जुलाब। अतिसार, दस्तों का रोग। (पुं०) शिव।

प्रस्कन्न—(वि०) [प्र√स्कन्द्+क्त] फलाँग लगाये हुए, उछला हुआ। गिरा हुआ। परास्त, पराजित। (पुं०) जातिच्युत व्यक्ति। नियम-भङ्ग करने वाला व्यक्ति। घोड़े का एक रोग।

प्रस्कुन्द—(पुं०) [प्रगतः कुन्दं चक्रम्, अत्या० स०, मुट्] गोलाकार वेदी।

प्रस्खलन—(न०) [प्र √स्खल्+ल्युट्] पतन। लड़खड़ाना।

प्रस्तर—(पुं०) [प्र√स्तॄ+अच्] फूलों और पत्तों की सेज, शय्या। चौरस जगह, मैदान। पत्थर, चट्टान। रत्न। कुश का मुट्ठा। ग्रंथ का अध्याय।

प्रस्तरण—(न०), **प्रस्तरणा**–(स्त्री०) [प्र √स्तॄ+ल्युट्] [प्र√स्तॄ+युच्—टाप्] शय्या, सेज। बैठकी, आसन।

प्रस्तार—(पुं०) [प्र√स्तृ+घञ्] फैलाव, विस्तार। फूलों और पत्तों से सँवारी सेज या शय्या। सेज, शय्या। चौरस जमीन, मैदान। जंगल, वन। छन्दशास्त्र के अनुसार नव प्रत्ययों में से प्रथम। इसमें छंदों के भेद की संख्या और उनके रूपों का वर्णन होता है। इसके दो भेद हैं। प्रथम वर्णप्रस्तार। द्वितीय मात्रा प्रस्तार।

प्रस्ताव—(पुं०) [प्र√स्तु+घञ्] आरम्भ। भूमिका। वर्णन। अवसर; 'शिष्याय बृह-ताम्पत्युः प्रस्तावमदिशद् दृशा' शि० २.६८। प्रकरण। नाटक में अभिनय से पूर्व विषय का परिचय। सभा के सामने विचार के लिये रखी हुई बात।

प्रस्तावना—(स्त्री०) [प्र√स्तु + णिच् +युच्—टाप्] प्रशंसा, सराहना। आरम्भ। भूमिका, उपोद्घात। नाटक में सूत्रधार और किसी नट की आरम्भिक बातचीत जिसमें नाटक-रचयिता और उसकी योग्यता का वर्णन किया जाता है।

प्रस्तावित—(वि०) [प्र√स्तु + णिच्+क्त] आरम्भ किया हुआ। वर्णित। जो प्रस्ताव रूप में रखा गया हो।

प्रस्तिर—(पुं०) [=प्रस्तर, नि० इत्व] फूलों और पत्तियों की सेज।

प्रस्तीत, प्रस्तीम—(वि०) [प्र√स्त्यै+क्त, संप्रसारण, पक्षे तस्य मः] शब्द करता हुआ, शब्दायमान। भीड़भाड़ लगाये हुए।

प्रस्तुत—(वि०) [प्र√स्तु+क्त] जिसकी स्तुति या प्रशंसा की गयी हो। आरम्भ किया हुआ। पूर्ण किया हुआ। जो घटित हुआ हो। जो समीप या सामने हो। विवादग्रस्त या प्रकरण-प्राप्त। (न०) उपस्थित विषय। विचाराधीन या विवादग्रस्त विषय।—**अङ्कुर** (**प्रस्तुताङ्कुर**)—(पुं०) एक अलङ्कार। इसमें एक प्रस्तुत पदार्थ के सम्बन्ध में कुछ कह कर उसका अभिप्राय दूसरे प्रस्तुत पदार्थ पर घटाया जाता है, प्रस्तुतालङ्कार।

प्रस्थ—(वि०) [प्र√स्था+क] यात्रा के लिये जाने वाला। फैलाने या विस्तार करने वाला। स्थिर, दृढ़। चौरस मैदान। पहाड़ के ऊपर की चौरस भूमि, अधित्यका; 'प्रस्थं हिमाद्रे-र्मृगनाभिगन्धि' कु० १.५४। पर्वतशिखर। प्राचीन कालीन एक तौल जो बत्तीस पल की मानी गई है। आढक का चतुर्थांश। कोई वस्तु जो एक प्रस्थ के माप की हो।—**पुष्प**—(पुं०) दोनामरुआ। छोटे पत्ते की तुलसी।

प्रस्थम्पच—(वि०) [प्रस्थ√पच्+खश्, मुम्] एक प्रस्थ परिमाण का भोजन पकाने वाला।

प्रस्थान—(न०) [प्र√स्था+ल्युट्] गमन, यात्रा, रवानगी। राजा या चढ़ाई करने वाली सेना का कूच। मृत्यु। अपकृष्ट श्रेणी का नाटक। मार्ग। उपदेश की पद्धति या उपाय। वैखरी वाणी के १८ भेद।—**त्रयी**—(स्त्री०) उपनिषद्, गीता और ब्रह्मसूत्र।

प्रस्थापन—(न०) [प्र√स्था+णिच्, पुक्+ल्युट्] प्रस्थान कराना, भेजना। दौत्य-कार्य पर नियुक्त करना। स्थापन, सिद्ध करना। उपयोग। पशुओं की रवानगी, उनको दूर भेजना।

प्रस्थापित—(वि०) [प्र√स्था +णिच्, पुक् +क्त] भेजा हुआ, रवाना किया हुआ। सिद्ध किया हुआ, स्थापित किया हुआ।

प्रस्थित—(वि०) [प्र√स्था+क्त] जो जाने को तैयार हो, गमनोद्यत। स्थिर। दृढ़। गया हुआ।

प्रस्थिति—(स्त्री०) [प्र √स्था + क्तिन्] रवानगी, प्रस्थान, यात्रा, कूच।

प्रस्न—(पुं०) [प्र√स्ना+क] स्नान-पात्र।

प्रस्नव—(पुं०) [प्र√स्नु+अप्] उमड़ कर बहना। (दूध की) धार; 'प्रस्नवेनाभि-वर्षन्ती' र० १.८४।

प्रस्नुत—(वि०) [प्र √स्नु+क्त] टपकता हुआ, चूता हुआ। गिरता हुआ।—**स्तनी**—(स्त्री०) वह स्त्री जिसके स्तनों से (मातृस्नेह के आधिक्य से) दूध टपकता हो।

प्रस्नुषा—(स्त्री०) [प्रा० स०] पौत्र की पत्नी, नतबहू।

प्रस्पन्दन—(न०) [प्र√स्पन्द्+ल्युट्] धड़कन।

प्रस्फुट—(वि०) [प्र√स्फुट्+क] फूला हुआ, खिला हुआ। जाहिर, साफ, स्पष्ट।

प्रस्फुरित—(वि०) [प्र√स्फुर्+क्त] काँपता हुआ, थरथराता हुआ।

प्रस्फोटन—(न०) [प्र √स्फुट्+ल्युट् वा णिच्+ल्युट्] फोड़ निकलना। विकसित होना या करना। प्रकट करना, प्रकाशित करना, फटकना (अन्न का)। सूप। पीटना, ठोंकना।

प्रस्रंसिन्—(वि०) [स्त्री०—**प्रस्रंसिनी**] [प्र√स्रंस्+णिनि] अकाल ही में गिरने वाला या कच्चा गिरने वाला (गर्भ)।

प्रस्रव—(पुं०) [प्र√स्रु + अप्] उमड़ कर बह निकलना। धारा। स्तन से निकला हुआ दूध। पेशाब, मूत्र। आँसू।

प्रस्रवण—(न०) [प्र √स्रु+ल्युट्] जल आदि का लगातार चूना या बहना। स्तन से निकलता हुआ दूध; 'घटस्तनप्रस्रवणै-र्व्यवर्धयत्' कु० ५.१४। जलप्रपात। चश्मा, सोता। फव्वारा। दह या कुण्ड। पसीना। मूत्रोत्सर्ग। (पुं०) माल्यवान् पर्वत।

प्रस्राव—(पुं०) [प्र√स्रु+घञ्] बहाव, उमड़न। पेशाब, मूत्र। (पुं०) (बहुवचन) आँसुओं का उमड़ना या गिरना।

प्रस्रुत—(वि०) [प्र√स्रु+क्त] उमड़ा हुआ। टपका हुआ।

प्रस्वन, प्रस्वान—(पुं०) [प्र√स्वन्+अप्] [प्र√स्वन्+घञ्] जोर की आवाज या शोरगुल।

प्रस्वाप—(पुं०) [प्र√स्वप्+घञ्] निद्रा। स्वप्न। [प्र√स्वप्+णिच्+अच्] अस्त्र विशेष जिसके कारण शत्रु-सेना सो जाती हो।

प्रस्वापन—(न०) [प्र√स्वप्+णिच्+ल्युट्] सुलाना। अस्त्र-विशेष जो शत्रुसैन्य को निद्रित करता है।

प्रस्वार—(पुं०) [प्र √स्वृ+घञ्] ओंकार (वेद)।

प्रस्विन्न—(वि०) [प्र√स्विद्+क्त] पसीने से तर।

प्रस्वेद—(पुं०) [प्र√स्विद्+घञ्] बहुत अधिक पसीना।

प्रस्वेदित—(वि०) [प्रस्वेद+इतच्] पसीने से तराबोर। गर्म।

प्रहणन—(न०) [प्र√हन्+ल्युट्] वध, हत्या।

प्रहणे(ने)मि—(पुं०) [प्रहन्ति इति प्र √हन्+ड, तादृशी नेमिरस्य ब० स०] चन्द्रमा।

प्रहत—(वि०) [प्र√हन्+क्त] हत, वध किया हुआ। पीटा हुआ। हराया हुआ। फैलाया हुआ। अविच्छिन्न। सिखाया हुआ। कुचला हुआ।

प्रहर—(पुं०) [प्रह्रियते ढक्कादिः अस्मिन्, प्र√हृ+अप्] दिन का आठवाँ भाग, याम। पहर।

प्रहरक—(वि०) घड़ियाल। वह आदमी जो पहरे पर हो और घंटा बजाता हो।

प्रहरण—(न०) [प्र√हृ+ल्युट्] प्रहार, वार। फेंकना। आक्रमण। चोट। स्थानान्तरित करना। आयुध, हथियार; 'या सुकुमारम्प्रहरणम्महेन्द्रस्य' विक्र०१। युद्ध। पर्दादार डोली या गाड़ी।

प्रहरणीय—(न०) [प्र√हृ+अनीयर्] अस्त्र। (वि०) प्रहरण के योग्य।

प्रहरिन्—(पुं०) [प्रहरः अधिकारकालत्वेन अस्ति अस्य, प्रहर+इनि] पहरेदार, चौकीदार।

प्रहर्तृ—(वि०) [प्र√हृ+तृच्] प्रहार करने वाला। लड़ने वाला, योद्धा।

प्रहर्ष—(पुं०) [प्रा० स०] अत्यधिक हर्ष। लिङ्ग का उत्थान।

प्रहर्षण—(न०) [प्र√हृष्+णिच्+ल्युट्] अत्यन्त आनन्दित करना। (पुं०) [प्र√हृष्+णिच्+ल्युट्] बुध नामक ग्रह।

प्रहर्षणी, प्रहर्षिणी—(स्त्री०) [प्र √हृष्+णिच्+ल्युट्—ङीप्] [प्र √हृष्+णिच्+णिनि—ङीप्] हल्दी। एक वर्णवृत्त का नाम जिसमें १३ अक्षर होते हैं।

प्रहर्षुल—(पुं०) बुध ग्रह।

प्रहसन—(न०) [प्र√हस्+ल्युट्] जोर की हँसी, अट्टहास। मजाक, उपहास, दिल्लगी। हास्यरस-प्रधान एक नाटक, निम्नश्रेणी का एक सुखान्त नाटक।

प्रहसन्ती—(स्त्री०) [प्र√हस्+शतृ—ङीप्] यूथिका, जूही। वासन्ती। अँगीठी।

प्रहसित—(वि०) [प्र √हस्+क्त] हँसता हुआ। (न०) हास्य, हँसी। (पुं०) एक बुद्ध।

प्रहस्त—(पुं०) [प्रततः प्रसृतो वा हस्तो यत्र यस्य वा प्रा० ब०] चपेटा, थप्पड़। रावण के एक अमात्य एवं सेनापति का नाम।

प्रहाण—(न०) [प्र√हा+ल्युट्] त्यागना। ध्यान।

प्रहाणि—(स्त्री) [प्र√हा+नि, णत्व] त्याग। कमी, अभाव। हानि।

प्रहार—(पुं०) [प्र√हृ+घञ्] आघात, वार, चोट। तलवार का घाव। लात की चोट, ठोकर। गोली मारना।—**आर्त** (प्रहारार्त)–(वि०) प्रहार से घायल। (न०) प्रहार की दारुण पीड़ा।

प्रहारण—(न०) [प्र√हृ+णिच्+ल्युट्] काम्यदान, मनचाहा दान।

प्रहास—(वि०) [प्र√हस्+घञ्] अट्टहास। चिढ़ाना, बनाना। व्यङ्ग्योक्ति। नट। शिव। [प्रकृष्टो हासो यस्मात् यस्य वा, प्रा० ब०] प्रभास नामक तीर्थ, सोमतीर्थ।

प्रहासिन्—(पुं०) [प्र √हस्+णिच्+णिनि] विदूषक, मसखरा।

प्रहि—(पुं०) [प्र √हृ+इण्, डित्: तेन ऋकारलोप:] कूप, इनारा।

प्रहित—(वि०) [प्र√धा+क्त] स्थापित। चढ़ाया हुआ। भेजा हुआ, रवाना किया हुआ; "विचारमार्गप्रहितेन चेतसा" कु० ५.४२। छोड़ा हुआ (जैसे तीर)। नियत किया हुआ। उपयुक्त, उचित। (न०) दाल। चटनी। एक प्रकार का साग।

प्रहीण—(वि०) [प्र√हा+क्त, ईत्, तस्य नः, णत्व] त्यक्त, त्यागा हुआ। एकाकी। (न०) नाश। स्थानान्तरकरण]। हानि।

प्रहुत—(न०) [प्रहूयते स्म, प्र√हु+क्त] भूत यज्ञ, बलिवैश्वदेव।

प्रहृत—(वि०) [प्र√हृ+क्त] जिस पर प्रहार किया गया हो। फेंका हुआ। पीटा हुआ। (न०) प्रहार, चोट, आघात।

प्रहृष्ट—(वि०) [प्र√हृष्+क्त] अत्यन्त प्रसन्न, आह्लादित। रोमाञ्चित।—**आत्मन्** (**प्रहृष्टात्मन्**),—**चित्त**,—**मनस्**–(वि०) जिसका मन बहुत प्रसन्न हो।—**रोमन्**—(वि०) जिसके बाल खड़े हों।

प्रहृष्टक—(पुं०) [प्रहृष्ट+कन्] काक, कौआ।

प्रहेलक—(पुं०) [प्रहिलति स्वादादिना अभिप्रायं सूचयति, प्र√हिल्+ण्वुल्] पुआ। त्योहार में बाँटी जाने वाली मिठाई। लपसी। पहेली, बुझौवल।

प्रहेला—(स्त्री०) [प्र √हिल्+अ—टाप्] स्वच्छन्द क्रीड़ा, रंगरस, विहार।

प्रहेलि, प्रहेलिका—(स्त्री०) [प्रहिलति अभिप्रायं सूचयति, प्र√हिल्+इन्] [प्र√हिल्+वुन्—टाप्, इत्व] पहेली, बुझौवल।

प्रह्लाद, प्रह्‌लाद—(पुं०) [प्र√ह्‌लाद्+घञ्, रलयोः ऐक्यम्] प्रसन्न आनन्द, अधिक प्रसन्नता । शोर, कोलाहल । [प्र √ह्‌लाद्+णिच्+अच्] हिरण्यकशिपु के पुत्र का नाम । इन्हीं प्रह्‌लाद को पुराणों ने भक्तशिरोमणि की उपाधि दी गई है ।

प्रह्लादन, प्रह्‌लादन—(वि०) [प्र√ह्लाद्+णिच्+ल्यु, रलयोः ऐक्यम्] प्रसन्नकारक, आनन्ददायी । (न०) [प्र√ह्‌लाद्+णिच्+ल्युट्] प्रसन्न करना, आह्‌लादित करना ।

प्रह्‌लन्न—(वि०) [प्र√ह्‌लाद्+क्त, ह्रस्व] प्रसन्न ।

प्रह्व—(वि०) [प्र√ह्वे+वन्, नि० साधुः] ढालुवाँ, उतार का । झुका हुआ । विनम्र, विनीत । आसक्त ।—**अञ्जलि (प्रह्वाञ्जलि)**—(वि०) अञ्जलिबद्ध हो सिर नवाये हुए ।

प्रह्वलीका—(स्त्री०) [=प्रवह्‌लिका, पृषो० साधुः] पहेली, बुझौवल ।

प्रह्वाय—(पुं०) [प्र√ह्वे+घञ्] बुलावा, आमंत्रण ।

प्रांशु—(वि०) [प्रकृष्टा अंशवोऽस्य, प्रा० ब०] ऊँचा । लंबा ; 'शालप्रांशुर्महाभुजः' र० १.१३ । (पुं०) लंबे डील-डौल का आदमी ।

√प्रा—अ० पर० स० पूर्ण करना । प्राति, प्रास्यति, अप्रासीत् ।

प्राक्—(अव्य०) [प्राचि सप्तम्यर्थे अस्तिः, तस्य लुक्] पहिले । आरम्भ में, हाल ही में । पूर्व (किसी ग्रन्थ के पिछले भाग में]) । पूर्व दिशा में । (अमुक स्थान से) पूर्व । सामने । जहाँ तक हो वहाँ तक, वहाँ तक (यथा—प्राक् कडारात्)

प्राकट्य—(न०) [प्रकट+ष्यञ्] प्रकट होने का भाव । प्रादुर्भाव ।

प्राकरणिक—(वि०) [स्त्री०—प्राकरणिकी] [प्रकरण+ठक्] जिसका प्रकरण हो । प्रकरण संबन्धी ।

प्राकर्षिक—(वि०) [स्त्री०—प्राकर्षिकी] [प्रकर्ष+ठक्] श्रेष्ठतर समझा जाने का अधिकारी ।

प्राकषिक—(पुं०) [प्र—आ √कष्+इकन्] स्त्री द्वारा नियुक्त नर्तक । स्त्रियों की मंडली में नाचने वाला पुरुष । वह पुरुष जिसकी जीविका दूसरों की स्त्रियों से चलती हो, औरतों का दलाल ।

प्राकाम्य—(न०) [प्रकाम+ष्यञ्] कार्य करने का स्वातंत्र्य । स्वेच्छाचारिता । आठ प्रकार के ऐश्वर्य या सिद्धियों में से एक । इनके प्राप्त हो जाने पर मनुष्य जिस वस्तु की इच्छा करता है, वह उसे तुरंत मिल जाती है ।

प्राकार—(पुं०) [प्र √कृ+घञ् आधारे] परकोटा । चहारदीवारी ।

प्राकृत—(वि०) [स्त्री०—**प्राकृता** या **प्राकृती**] [प्रकृतेः अयम्, प्रकृति+अण्] प्रकृति संबन्धी, प्रकृति से उत्पन्न । स्वाभाविक, सहज । साधारण, मामूली । लौकिक, संसारी । [प्रकृष्टम् अकृतम् अकार्यम् यस्य, प्रा० ब०] नीच । अशिक्षित, गँवार । (पुं०) नीच मनुष्य । गँवार आदमी । (न०) [प्रकृतिः संस्कृतं तत्र भवं ततः आगतं च, प्रकृति+अण्] प्रांतीय बोलचाल की भाषा जो संस्कृत से निकली हो या जो संस्कृत शब्दों के अपभ्रंश रूपों से बनी हो । एक प्राचीन भाषा जिसका प्रचार प्राचीन भारत में था और जिसका प्रयोग संस्कृत नाटकों में स्त्रियों, सेवकों और साधारण व्यक्तियों के मुख से करवाया गया है ।—**अरि (प्राकृतारि)**—(पुं०) नैसर्गिक शत्रु, अर्थात् पड़ोसी राज्य का राजा ।—**उदासीन (प्राकृतोदासीन)**—(पुं०) स्वभावतः तटस्थ अर्थात् राजा जिसका राज्य बहुत दूर पर हो ।—**ज्वर**—(पुं०) मामूली बुखार ।—**प्रलय**—(पुं०) पुराणानुसार एक प्रकार का प्रलय, जिसका प्रभाव प्रकृति पर भी पड़ता है; अर्थात् इस प्रलय में प्रकृति भी ब्रह्म में लीन हो जाती है ।—

मित्र– (न०) स्वाभाविक मित्र ।—शत्रु (पुं०) दे० 'प्राकृतारि' ।

प्राकृतिक—(वि०) [स्त्री०—**प्राकृतिकी**] [प्रकृति+ठञ्] स्वाभाविक, प्रकृति से उत्पन्न । प्रकृति संबन्धी । साधारण । भौतिक । सांसारिक । नीच ।

प्राक्तन—(वि०) [स्त्री०—**प्राक्तनी**] [प्राच्+ट्यु तुट्] पहिले का, पूर्व का । पुराना, प्राचीन । पिछले किसी जन्म का; 'प्रपेदिरे प्राक्तनजन्मविद्या' कु० १.३० । (न०) पूर्वजन्मकृत कर्म, भाग्य, प्रारब्ध ।—**कर्मन्**—(न०) भाग्य । पहले का कर्म ।

प्राखर्य—(न०) [प्रखर+ष्यञ्] उग्रता । तीतापन, कड़ुआपन । दुष्टता ।

प्रागल्भ्य—(न०) [प्रगल्भ+ष्यञ्] प्रगल्भता, धीरता । घमंड, अभिमान । चतुरता । प्रधानता । प्रबलता । बड़प्पन । प्रादुर्भाव, प्राकट्य । वाग्मिता । धूमधाम, आडम्बर । प्रौढत्व । स्त्री का भय से रहित होना, जो सात्त्विक भाव माना जाता है ।

प्रागार—(पुं०) [प्रकृष्टः आगारः, प्रा० स०] इमारत, भवन ।

प्राग्र—(न०) [प्रा० स०] सर्वोच्च स्थान ।—**सर**–(वि०) प्रथम, सब से आगे का ।—**हर**–(वि०) मुख्य, प्रधान ।

प्राग्राट—(पुं०) [प्राग्र√अट्+अच्] पतला जमा हुआ दूध ।

प्राग्र्य—(वि०) [प्राग्र+यत्] प्रधान, श्रेष्ठ ।

प्राघात—(पुं०) [प्रकृष्टः आघातो यस्मिन्, प्रा० ब०, वा० प्र–आ√हन्+घञ्] युद्ध, लड़ाई ।

प्राघार—(पुं०) [प्र√घृ+घञ्] टपकना, चूना, रिसना ।

प्राघुण, प्राघुणक, प्राघुणिक, प्राघूर्णक, प्राघूर्णिक—(पुं०) [प्राघोणते भ्राम्यति, प्र–आ √घुण् + क] [प्राघुण+कन्] [प्राघुण+ठक् (स्वार्थे)] [प्र–आ√घूर्ण्+ण्वुल्] [प्र–आ√घूर्ण्+घञ्=प्राघूर्णो भ्रमणम् तत्र साधुः; प्राघूर्ण+ठञ्] मेहमान, पाहुना, अतिथि ।

प्राङ्ग—(न०) [प्रहतः प्रकृष्टः वा अङ्गम् अस्य, प्रा० ब०] ढोलक । (वि०) उत्तम अंगों वाला ।

प्राङ्गण—(न०) [प्रकर्षेण अङ्गनं गमनं यत्र, प्रा० ब०] आँगन, सहन । (कमरे का) फर्श । [प्रकृष्टम् अङ्गनम् अङ्गं यस्य, प्रा० ब०] छोटा ढोल, पणव ।

प्राच्—(वि०) [स्त्री०—**प्राची**,—**प्राञ्ची**] [प्र√अञ्च्+क्विन्] सामने का, आगे का । पूर्वी, पूरब का । पहले का । (पुं०) पूर्वदेशवासी ।—**अग्र** (**प्रागग्र**)–(वि०) पूर्व दिशा की ओर घूमा हुआ, पूर्वाभिमुख ।—**अभाव** (**प्रागभाव**)–(पुं०) वह अभाव जिसके पीछे उसका प्रतियोगी भाव उत्पन्न हो, अपनी उत्पत्ति के पहले कारण में कार्य अभाव ।—**अभिहित** (**प्रागभिहित**)–(वि०) पूर्वकथित ।—**अवस्था** (**प्रागवस्था**)–(स्त्री०) पहिले की हालत या अवस्था ।—**आयत** (**प्रागायत**)–(वि०) पूर्व की ओर बढ़ा हुआ ।—**उक्ति** (**प्रागुक्ति**)–(स्त्री०) पहिले का कथन ।—**उत्तर** (**प्रागुत्तर**)–(वि०) ईशान कोण का ।—**उदीची** (**प्रागुदीची**)–(स्त्री०) ईशान कोण ।—**कर्मन्** (**प्राक्कर्मन्**)–(न०) पूर्व जन्म में किये हुए कर्म ।—**काल** (**प्राक्काल**)–(पुं०) पहले का समय, बीता हुआ समय । प्राचीन काल ।—**कालीन** (**प्राक्कालीन**)-(वि०) प्राचीन काल संबंधी ।—**कूल** (**प्राक्कूल**)–(वि०) (कुशों के सिरे) पूर्व दिशा की ओर निकले हुए ।—**कृत** (**प्राक्कृत**)–(वि०) पूर्व जन्म में किया हुआ ।—**चरणा** (**प्राक्चरणा**)–(स्त्री०) भग, योनि ।—**चिर** (**प्राक्चिर**)–(अव्य०) उपयुक्त समय में, अपेक्षित काल में । प्रति

विलम्ब होने के पूर्व ।—**जन्मन्** (**प्राग्जन्मन्**)–(न०), **जाति** (**प्राग्जाति**) (स्त्री०) पूर्व जन्म ।—**ज्योतिष** (**प्राग्ज्योतिष**)–(पुं०) कामरूप देश । इस देश के अधिवासी ।(न०)एक नगर का नाम ।—**दक्षिण** (**प्राग्दक्षिण**)–(वि०) आग्नेयी दिशा का ।—**देश** (**प्राग्देश**)–(पुं०) पूर्वी देश । —**द्वार** (**प्राग्द्वार**),—**द्वारिक** (**प्राग्द्वारिक**) –(वि०) वह घर जिसका द्वार या दरवाजा पूर्व की ओर हो ।—**न्याय** (**प्राङ्न्याय**)–(पुं०) व्यवहार शास्त्र के अनुसार अभियोग का एक उत्तर । इसमें प्रतिवादी यह कहता है कि वादी प्रस्तुत अभियोग लगा कर पहले भी मेरे ऊपर दावा कर चुका है और उसमें उसकी पराजय हुई है ।—**प्रहार** (**प्राक्प्रहार**)–(पुं०) पहिली चोट ।—**फल** (**प्राक्फल**)–(पुं०) कटहल का पेड़ ।—**फल्गुनी** (**प्राक्फल्गुनी**), —**फाल्गुनी** (**प्राक्फाल्गुनी**)–(स्त्री०) ग्यारहवाँ नक्षत्र । —**फाल्गुन** (**प्राक्फाल्गुन**),—**फाल्गुनेय** (**प्राक्फाल्गुनेय**)–(पुं०) बृहस्पतिग्रह ।—**भक्त** (**प्राग्भक्त**)–(न०) वह दवा जो भोजन करने के पूर्व ली जाय ।—**भाग** (**प्राग्भाग**) –(पुं०) सामने का हिस्सा ।—**भार** (**प्राग्भार**)–(पुं०) पर्वतशिखर । अगला या सामने का हिस्सा । अतिमात्रा, ढेर ।—**भाव** (**प्राग्भाव**)–(पुं०) पूर्व का अस्तित्व । उत्कृष्टता, उत्तमता ।—**मुख** (**प्राङ्मुख**) (वि०) पूर्व की ओर मुख किये हुए । अभिलाषी । —**वंश** (**प्राग्वंश**)–(पुं०) यज्ञमण्डप विशेष जिसके खंभे पूर्व की ओर मुड़े हुए हों अथवा वह कमरा जिसमें यज्ञकर्त्ता के मित्र और कुटुम्बी एकत्र हों; 'प्राचीनस्थूणो यज्ञशालाविशेषः' । पूर्व कालीन कोई राजवंश या पीढ़ी ।—**वृत्तान्त** (**प्राग्वृत्तान्त**) –(पुं०) पुरातन घटना ।—**शिरस्**,—**शिरस**,— **शिरस्क** (**प्राक्शिरस्** आदि)–(वि०) पूर्व ओर सिर घुमाये हुए ।—**सन्ध्या** (**प्राक्सन्ध्या**)–तड़का, सवेरा । प्रातःकाल की संध्या ।—**सवन** (**प्राक्सवन**)(न०) प्रातःकालीन अग्निहोत्र ।—**स्रोतस्** (**प्राक्स्रोतस्**) –(वि०) पूर्व की ओर बहने वाला ।

प्राचण्ड्य—(न०) [प्रचण्ड+ष्यञ्] प्रचंडता, तीव्रता । भयङ्करता ।

प्राचिका—(स्त्री०) [प्र√अञ्च् + क्वुन् –टाप्, इत्व] मच्छर । डाँस की जाति की एक जंगली मक्खी ।

प्राची—(स्त्री०) [प्र√अञ्च् +क्विन् –ङीप्] पूर्व दिशा । पूज्य और पूजक के बीच की दिशा या स्थान ।—**पति**–(पुं०) इन्द्र का नामान्तर ।—**मूल**–(न०) पूर्व की ओर का आकाश । पूर्वी क्षितिज; 'प्राचीमूले तनुमिव कलामात्रशेषां हिमांशोः, मे० ८६ ।

प्राचीन—(वि०) [प्राक् एव, प्राच्+ख] पूर्वी, पूर्व दिशा का । पहले का । पुरातन, पुराना । (न०, पुं०) दे० 'प्राचीर' ।—**आवीत** (**प्राचीनावीत**)–(न०) यज्ञोपवीत धारण करने का एक ढंग । इसमें बायाँ हाथ यज्ञोपवीत से बाहर और यज्ञोपवीत दाहिने कंधे पर रहता है । (यह उपवीत का उल्टा है । इस प्रकार का यज्ञोपवीत पितृकार्य में धारण किया जाता है) ।—**कल्प**–(पुं०) पहला कल्प, पूर्वकल्प ।—**तिलक**–(पुं०) चन्द्रमा ।—**पनस**–(पुं०) बिल्ववृक्ष ।—**बर्हिस्**–(पुं०) एक प्राचीन राजा जो प्रजापति कहलाते थे और जिनसे प्रचेतागण उत्पन्न हुए । इन्द्र का नामान्तर ।—**मत**–(न०) पुराना विश्वास । वह मत जो प्राचीन काल से चला आ रहा हो ।

प्राचीर—(न०) [प्र–आ √चि+क्रन्, दीर्घ] नगर या किले आदि के चारों ओर उसकी रक्षा करने के लिये बनायी हुई दीवाल, चहारदीवारी, परकोटा ।

प्राचुर्य—(न०) [प्रचुर+ष्यञ्] विपुलता, बहुतायत । राशि ।

प्राचेतस—(पुं०) [प्रचेतसः अपत्यम्, प्रचेतस्+अण्] मनु का नाम । दक्ष का नाम । वाल्मीकि का नाम । वरुण के पुत्र ।

प्राच्य—(वि०) [प्राचि भवः, प्राच्+यत्] पूर्वी देश या पूर्व दिशा में उत्पन्न या रहने वाला, पूर्वी । प्राचीन, पुरातन । सामने का अगला । (पुं०) शरावती नदी के पूर्व का देश । इस देश का निवासी ।—**भाषा**-(स्त्री०) वह बोलचाल की भाषा जो भारत में पूर्व देश में बोली जाती है, पूर्वी बोली ।

प्राच्यक—(वि०) [प्राच्य+कन्] दे० 'प्राच्य' ।

प्राच्छ्—(वि०) [√प्रच्छ्+क्विप्, नि० दीर्घ] पूछने वाला ।—**विवाक** (**प्राड्-विवाक**)—(पुं०) न्यायाधीश । वकील ।

प्राजक—(पुं०) [प्र√अज्+णिच्+ण्वुल्] सारथी, रथ हाँकने वाला ।

प्राजन—(न०, पुं०) [प्र √ अज्+ल्युट्] कोड़ा, चाबुक; 'त्यक्तप्राजनरश्मिरङ्कितनुः पार्थाङ्कितैर्मार्गणैः' वे० ५.१० । अंकुश ।

प्राजापत्य—(वि०) [प्रजापति+यक्] प्रजापति सम्बन्धी । (न०) बारह दिनों में होने वाला एक व्रत । रोहिणी नक्षत्र । उत्पादक शक्ति । (पुं०) हिन्दू धर्मशास्त्रानुसार आठ प्रकार के विवाहों में से एक । प्रयाग का नामान्तर । विष्णु । पितृलोक ।

प्राजापत्या—(स्त्री०) [प्राजापत्य+टाप्] एक इष्टि का नाम । यह संन्यास ग्रहण के समय की जाती है । इसमें सर्वस्व दक्षिणा में दे दिया जाता है । वैदिक छन्दों के आठ भेदों में से एक ।

प्राजिक—(पुं०) बाज पक्षी ।

प्राजितृ, प्राजिन्—(पुं०) [प्र√अज्+तृच्] [प्र√अज्+णिनि] सारथी ।

प्राजेश—(न०) [प्रजेशो देवता अस्य, प्रजेश+अण्] वह चरु आदि पदार्थ जो प्रजापति देवता के निमित्त हो । रोहिणी नक्षत्र ।

प्राज्ञ—(वि०) [स्त्री०—**प्राज्ञा** या **प्राज्ञी**] [प्रकर्षेण जानाति, प्र√ज्ञा+क, ततः प्रज्ञ एव, प्रज्ञ+अण् (स्वार्थे)] विद्वान् । बुद्धिमान् । (पुं०) बुद्धिमान् या विद्वान् व्यक्ति । कल्किदेव के ज्येष्ठ भ्राता । वेदांत के अनुसार जीवात्मा । एक जाति का तोता । [प्रकृष्टः अज्ञः, प्रा० स०] बड़ा मूर्ख व्यक्ति ।

प्राज्ञा—(स्त्री०) [प्रज्ञा+अण् (स्वार्थे)—टाप्] बुद्धि, समझ । [प्राज्ञ+टाप्] चतुर या बुद्धिमती स्त्री ।

प्राज्ञी—(स्त्री०) [प्राज्ञ+ङीप्] चतुर या बुद्धिमती स्त्री । विद्वान् की स्त्री । सूर्यपत्नी ।

प्राज्य—(वि०) [प्र√अज्+ण्यत्] प्रचुर, अधिक, बहुत; 'तव भवतु बिडौजाः प्राज्यवृष्टिः प्रजासु' श० ७.३४ । बड़ा, ऊँचा । लंबा । [प्रकृष्टम् आज्यम् यस्मिन्, प्रा० ब०] जिसमें खूब घी पड़ा हो ।

प्राञ्चल—(वि०) [प्र√अञ्च्+अलच्] सीधा, सरल । ईमानदार, सच्चा ।

प्राञ्जलि—(वि०) [प्रबद्धः अञ्जलिः येन, प्रा० ब०] जो हाथ जोड़े हो, अंजलिबद्ध । (स्त्री०) [प्रबद्धः अंजलिः, प्रा० स०] जोड़े हुए हाथ ।

प्राञ्जलिक, प्राञ्जलिन्—(वि०) [प्राञ्जलि+कन्] [प्राञ्जलि+इनि] दे० 'प्राञ्जलि' ।

प्राण—(पुं०) [प्राणिति जीवति बहुकालम्, प्र√अन्+अच् या प्राणिति अनेन प्र √अन्+घञ्] श्वास, साँस । शरीर की वह हवा जिससे कोई जीवित कहलाता है । शरीरस्थित पञ्च प्राणवायु । पवन, वायु । बल, शक्ति । जीव या आत्मा । परब्रह्म । इन्द्रिय । प्राण समान प्रिय कोई पदार्थ या व्यक्ति । कवित्व शक्ति या प्रतिभा । उच्छ्वासविलास । पाचनशक्ति । समय का मान विशेष । गोंद, लोबान ।—**अतिपात** (**प्राणातिपात**)—

(पुं०) जीवहत्या या वध।—**अत्यय** (**प्राणात्यय**)–(पुं०) जीवन की हानि।—**अधिक** (**प्राणाधिक**)–(वि०) प्राण से भी अधिक प्रिय। शक्ति या बल में उत्कृष्टतर।—**अधिनाथ** (**प्राणाधिनाथ**)–(पुं०) पति।—**अधिप** (**प्राणाधिप**)–(पुं०) जीव, आत्मा।—**अन्त** (**प्राणान्त**)–(पुं०) मृत्यु, मौत।—**अन्तिक** (**प्राणान्तिक**)–(वि०) प्राण हरने वाला, घातक। जीवन के साथ अन्त होने वाला। (न०) हत्या।—**अपहारिन्** (**प्राणापहारिन्**)–(वि०) सांघातिक, प्राणनाशक।—**आघात** (**प्राणाघात**)–(पुं०) प्राण का नाश, वध।—**आचार्य** (**प्राणाचार्य**)-(पुं०) राजवैद्य, शाही हकीम।—**आद** (**प्राणाद**)–(वि०) प्राणनाशक।—**आबाध** (**प्राणाबाध**)–(पुं०) जान का खतरा, जीवन के लिये अनिष्ट।—**आयाम** (**प्राणायाम**)–(पुं०) श्वास-प्रश्वास की गति का विच्छेद करने वाली क्रिया। योगशास्त्रानुसार योग के आठ अंगों में से चौथा।—**ईश्वर** (**प्राणेश्वर**)–(पुं०) प्यार करने वाला, प्रेमी। पति।—**ईशा** (**प्राणेशा**),—**ईश्वरी** (**प्राणेश्वरी**)–(स्त्री०) पत्नी। प्रेयसी।—**उत्क्रमण** (**प्राणोत्क्रमण**)–(न०),—**उत्सर्ग** (**प्राणोत्सर्ग**)–(पुं०) मृत्यु, मरण।—**उपहार** (**प्राणोपहार**)–(पुं०) भोजन।—**कृच्छ्र**–(न०) जीवन का सङ्कट या खतरा।—**घातक**–(वि०) जीवननाशक।—**घ्न**–(वि०) जीवननाशकारी।—**छेद**–(**प्राणच्छेद**) (पुं०) हत्या, कत्ल।—**त्याग**–(पुं०) आत्महत्या, खुदकुशी। मृत्यु, मौत।—**द**–(न०) खून, लोहू। जल।—**दक्षिणा**–(स्त्री०) जीवनदान।—**दण्ड**–(पुं०) फाँसी की सजा।—**दयित**–(पुं०) पति, स्वामी।—**दान**–(न०) जीवनदान, किसी को मारने से बचाना।—**द्रोह**–(पुं०) किसी को मार डालने की चेष्टा।—**धार**–(पुं०) जीवधारी।—**धारण**–(न०) जीवन धारण करने का भाव, जीवन-निर्वाह। जीवनी शक्ति।—**नाथ**–(पुं०) प्रेमी। पति। यम का नामान्तर।—**निग्रह**–(पुं०) प्राणायाम, श्वास को रोकना या बंद कर लेना।—**पति** (पुं०) प्रेमी। पति। जीव, आत्मा।—**परिक्रय**–(पुं०) जीवन को दाँव पर लगाना अथवा जीवन की बाजी लगाना या जान को खतरे में डालना।—**परिग्रह**–(पुं०) प्राणधारण, जीवन।—**प्रतिष्ठा**–(स्त्री०) हिन्दूधर्मशास्त्र के अनुसार किसी नई बनी हुई मूर्ति को मन्दिर आदि में स्थापित करते समय मन्त्रों द्वारा उसमें प्राण का आरोप करना।—**प्रद**–(वि०) जीवनदाता।—**प्रदा**–(स्त्री०) ऋद्धि नामक ओषधि।—**प्रयाण**–(न०) मृत्यु।—**प्रिय**–(पुं०) जो प्राण के समान प्रिय हो, प्रियतम, पति।—**भक्ष**–(वि०) पवन पीकर जीवित रहने वाला।—**भास्वत्**–(पुं०) समुद्र।—**भृत्**–(वि०) जीवधारी; 'अन्तर्गतम्प्राणभृता हि वेद' र० २.४३।—**मोक्षण**–(न०) मृत्यु, मरण। आत्मघात।— **यात्रा**–(स्त्री०) प्राण की श्वास-प्रश्वास-क्रिया। वे व्यापार जिनसे मनुष्य जीवित रहे, आजीविका।—**योनि**–(स्त्री०) जीवन का आदिकारण।—**रन्ध्र**–(न०) मुख, मुँह। नाक के नथुने।—**रोध**–(पुं०) प्राणायाम। जीवन के लिये सङ्कट।—**विनाश**,—**विप्लव**–(पुं०) मृत्यु, मौत।—**वियोग** (पुं०) जीव का शरीर से विच्छेद, मृत्यु, मौत।—**व्यय**–(पुं०) प्राणोत्सर्ग, प्राणनाश, मृत्यु।—**संयम**–(पुं०) प्राणायाम।—**संशय**–(पुं०),—**सङ्कट**–(न०)—**सन्देह**–(पुं०) जान-जोखिम, वह अवस्था जिसमें प्राण जाने का भय हो।—**सद्मन्**–(न०) शरीर, देह।—**समा**–(स्त्री०) पत्नी।—**सार**–(वि०) वह जिसमें बहुत बल

हो, बलिष्ठ; 'गिरिश्वर इव नागः प्राणसारं बिभर्ति' श० २·४।—हर–(वि०) मारक, घातक, प्राणलेवा।—हारक–(वि०) प्राण नाश करने वाला। (न०) वत्सनाभ विष।

प्राणक—(पु०)[प्राण√कै+क] जीवधारी, प्राणधारी। लोबान। जीवक वृक्ष।

प्राणथ—(पु०) [प्र√अन्+अथ] वायु। तीर्थस्थान। प्राणधारियों का स्वामी, प्रजापति। (वि०) शक्तिशाली।

प्राणन—(न०) [प्र√अन्+ल्युट्] श्वास-प्रश्वास। जीवन, जान। (पु०) गला।

प्राणन्त—(पु०) [प्र√अन्+झ—अन्तादेश] वायु। रसाञ्जन।

प्राणन्ती—(स्त्री०) [प्राणन्त+ङीष्] भूख। सिसकन। हिचकी, छींक।

प्राणाय्य—(वि०) [स्त्री०—प्राणाय्यी] उपयुक्त, उचित, ठीक।

प्राणित—(वि०) [प्र√अन्+क्त] जीवित, जिन्दा।

प्राणिन्—(वि०) [प्राण+इनि (समस्त रूपों में नकार का लोप हो जाता है)] जिसमें प्राण हों। (पु०) प्राणधारी, मनुष्य आदि।—अङ्ग (प्राण्यङ्ग)–(न०) प्राणधारी के शरीर का अवयव।—जात–(न०) जीव-जगत्। प्राणिवर्ग।—द्यूत–(न०) धर्मशास्त्रानुसार वह बाजी जो मेढ़े, तीतर, घोड़े आदि जीवों की लड़ाई पर लगायी जाय।—पीड़ा–(स्त्री०) जीवों के साथ निर्दयता का व्यवहार। —हिंसा(स्त्री०) पशुओं का अनिष्ट।— हिता–(स्त्री०) जूता। खड़ाऊँ।

प्रणीत्य—(न०) [प्रणीत+ष्यञ्] कर्ज़ा, ऋण।

प्रातर्—(अव्य०) [प्र√अत्+अरन्] तड़के, सवेरे।—अह्न (प्रातरह्न)–(पु०) दोपहर के पूर्व का समय।—आश (प्रातराश)–(पु०) सवेरे का हल्का भोजन, कलेवा; 'अन्यथा प्रातराशाय कुर्याम त्वाम्' भट्टि० ८.९८।—आशिन् (प्रातराशिन्)–(पु०) वह पुरुष जो कलेवा खा चुका हो।—कर्मन् (प्रातःकर्मन्)—कार्य (प्रातःकार्य),—कृत्य (प्रातःकृत्य) – (न०) प्रातःकालीन कर्म।—काल (प्रातःकाल) (पु०) प्रभात, सवेरे का समय।—गेय (प्रातर्गेय)–(पु०) वे बंदीजन या भाट जो प्रातःकाल राजश्री की स्तुति कर राजा को जगाते थे।—त्रिवर्गा (प्रातस्त्रिवर्गा)–(स्त्री०) गङ्गा।—दिन-(प्रातर्दिन)–(न०) दोपहर के पूर्व का समय।—प्रहर (प्रातःप्रहर)–(पु०) दिन का प्रथम पहर।—भोक्तृ (प्रातर्भोक्तृ)–(पु०) काक, कौआ।—भोजन (प्रातर्भोजन)–(न०) कलेवा।—सन्ध्या (प्रातःसन्ध्या)–(स्त्री०) प्रातःकालीन भगवदुपासना का कृत्यविशेष।

प्रातस्तन—(वि०) [[स्त्री०—प्रातस्तनी] [प्रातर्+ट्यु, तुट्] प्रातःकाल सम्बन्धी।

प्रातस्तराम्—(अव्य०) [प्रातर्+तरप्, आम्] बड़े तड़के।

प्रातस्त्य—(वि०) [प्रातर्+त्यक्] प्रातःकाल सम्बन्धी।

प्राति—(स्त्री०) [प्र√अत्+इन्] अंगूठे और तर्जनी के बीच का स्थान, पितृतीर्थ। [√प्रा+क्तिन्] पूर्ति। नाम।

प्रातिका—(स्त्री०) [प्र√अत्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] अड़हुल या जवा का पेड़।

प्रातिकूलिक—(वि०) [स्त्री०—प्रातिकूलिकी] [प्रतिकूल+ठक्] विरुद्ध, प्रतिकूल।

प्रातिकूल्य—(न०) [प्रतिकूल+ष्यञ्] प्रतिकूलता, विरोध।

प्रातिजनीन—(वि०) [स्त्री०—प्रातिजनीनी] [प्रतिजन+खञ्] प्रत्येक व्यक्ति

के लिये उपयुक्त। विरोधी के उपयुक्त, शत्रु के लायक।

प्रातिज्ञ—(न०) [प्रतिज्ञा+अण्] तर्क या आलोचना का विषय।

प्रातिदैवसिक—(वि०) [स्त्री०—**प्रातिदैवसिकी**] [प्रतिदिवस+ठञ्] प्रतिदिन या नित्य होने वाला।

प्रातिपक्ष—(वि०) [स्त्री०—**प्रातिपक्षी**] [प्रतिपक्ष+अण्]प्रतिकूल, विरुद्ध।

प्रातिपक्ष्य—(न०) [प्रतिपक्ष+ष्यञ्]प्रतिकूलता। शत्रुता।

प्रातिपद—(वि०) [स्त्री०—**प्रातिपदी**] [प्रतिपदा+अण्] प्रतिपदा तिथि सम्बन्धी या प्रतिपदा को उत्पन्न। आरंभ का।

प्रातिपदिक—(पुं०) [प्रतिपदा+ठञ्] अग्नि। (न०) [प्रतिपद+ठञ्] संस्कृत व्याकरणानुसार वह अर्थवान् शब्द जो धातु न हो और जिसकी सिद्धि विभक्ति लगने से न हुई हो; 'अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्' पा० १.२.४५।

प्रातिपौरुषिक—(वि०) [स्त्री०—**प्रातिपौरुषिकी**] [प्रतिपुरुष+ठञ्] पुरुषार्थ या मरदानगी सम्बन्धी।

प्रातिभ—(वि०) [स्त्री०—**प्रातिभी**] [प्रतिभा+अण्]प्रतिभा सम्बन्धी। प्रतिभायुक्त। (न०) विस्तृत कल्पना-शक्ति। योगमार्ग का एक उपसर्ग या विघ्न।

प्रातिभाव्य—(न०) [प्रतिभू+ष्यञ्, द्विपदवृद्धि] जमानत, जामिनदारी। वह धन जो जामिन को देना पड़े।

प्रातिभासिक—(वि०) [स्त्री०—**प्रातिभासिकी**] [प्रतिभास+ठञ्] जो वास्तव में न हो पर भ्रम के कारण भासित हो। जो व्यावहारिक न हो। जो असली न हो।

प्रातिरूपिक—(वि०) [प्रतिरूप+ठञ्—इक्] उसी रूप का, नकली।

प्रातिलोमिक—(वि०) [स्त्री०—**प्रातिलोमिकी**] [प्रतिलोम+ठञ्] विपक्ष, विरुद्ध।

प्रातिलोम्य—(न०) [प्रतिलोम+ष्यञ्] प्रतिलोम का भाव। विरुद्धता, प्रतिकूलता।

प्रातिवेशिक, प्रातिवेश्मक, प्रातिवेश्यक—(पुं०) [प्रतिवेश+ठञ्] [प्रतिवेश्म+अण्+कन्] [प्रतिवेश+ष्यञ्+कन्] पड़ोसी।

प्रातिवेश्य—(पुं०) [प्रतिवेश+ष्यञ्] पड़ोस, पड़ोसी। वह पड़ोसी जिसके घर का द्वार ठीक अपने घर के द्वार के सामने हो।

प्रातिशाख्य—(न०)[प्रतिशाखं भवः, प्रतिशाख+ञ्य] ग्रन्थ विशेष जिसमें वेदों की किसी शाखा के स्वर, पद, संहिता, संयुक्त वर्णादि के उच्चारणादि का निर्णय किया गया है। वेदों की प्रत्येक शाखा की संहिताओं पर एक एक प्रातिशाख्य ग्रन्थ थे। ऐसा लेखों के सङ्केतों से जान पड़ता है।

प्रातिस्विक—(वि०)[स्त्री०—**प्रातिस्विकी**] [प्रतिस्व+ठञ्] निजी। अपना-अपना, प्रत्येक का। असाधारण, विलक्षण।

प्रातिहन्त्र—(न०) [प्रतिहन्तृ+अण्] प्रतिहिंसा, बदला।

प्रातिहार, प्रातिहारक, प्रातिहारिक—(पुं०) [प्रतिहार+अण्][प्रातिहार+कन्] [प्रतिहार+ठञ्] मायावी, जादूगर, ऐन्द्रजालिक।

प्रातीतिक—(वि०) [स्त्री०—**प्रातीतिकी**] [प्रतीति+ठञ्] काल्पनिक, जिसकी प्रतीति केवल चिन्ता या कल्पना के द्वारा मन में होती है।

प्रातीप—(पुं०) [प्रतीप+अण्] प्रतीप के पुत्र राजा शान्तनु।

प्रातीपिक—(वि०) [स्त्री०—**प्रातीपिकी**] [प्रतीप+ठञ्] विरुद्धाचरण करने वाला। विपरीत, उल्टा।

प्रात्ययिक—(वि०) [स्त्री०—**प्रात्ययिकी**] [प्रत्यय+ठञ्] विश्वासी, इतमीनानी। (पुं०) मिताक्षरा के अनुसार तीन प्रकार के प्रतिभू (जामिन) में से दूसरा।

प्रात्यहिक—(वि०) [स्त्री—**प्रात्यहिकी**] [प्रत्यह+ठक्] दैनिक, प्रति दिन का।

प्राथमिक—(वि०) [स्त्री०—**प्राथमिकी**] [प्रथम+ठक्] प्रारम्भिक, आदि का, आदिम। प्रथम बार होने वाला। पहला, अगला।

प्राथम्य—(न०) [प्रथम+ष्यञ्] प्रथमता, पहिलापन।

प्रादक्षिण्य—(न०) [प्रदक्षिण+ष्यञ्] प्रदक्षिणा, परिक्रमा।

प्रादुस्—(अव्य०) [प्र√अद् + उसि] स्पष्टतः, प्रकाशतः।—**करण**–(**प्रादुष्करण**)–(न०) प्रकट करना। उत्पन्न करना।—**भाव** (**प्रादुर्भाव**)–(पु०) प्रकट होना। उत्पत्ति। विकास। किसी देवता का धराधाम पर अवतार।

प्रादुष्य—(न०) [प्रादुस्+यत्] प्रकटन, आविर्भाव। 'प्रादुष्यात्त इव जितः पुरः परेण' कि० म.१२।

प्रादेश—(पुं०) [प्र√दिश्+घञ्, उपसर्गस्य दीर्घः] अँगूठे के सिरे से तर्जनी के सिरे तक की दूरी। प्राचीन काल का एक मान जो अँगूठे की नोक से लेकर तर्जनी की नोक तक का होता था और नापने के काम में आता था। प्रदेश, स्थान।

प्रादेशन—(न०) [प्र–आ √दिश्+ल्युट्] पुरस्कार। दान।

प्रादेशिक—(वि०) [स्त्री०—**प्रादेशिका**] [प्रदेश+ठक्] प्रदेश सम्बन्धी। प्रान्तिक। प्रसङ्गगत, प्रसङ्गानुसारी। पर्यायोतक। सीमित। (पुं०) सामन्त, जमींदार आदि। सूबेदार।

प्रादेशिनी—(स्त्री०) [प्रादेश+इनि–ङीप्] तर्जनी, अँगूठे के पास की उँगली।

प्रादोष, प्रादोषिक—(वि०) [स्त्री०—**प्रादोषी, प्रादोषिकी**] [प्रदोष+अण्] [प्रदोष+ठञ्] प्रदोष सम्बन्धी।

प्राधनिक—(न०) [प्रधन सङ्ग्रामः तत्साधनं प्रयोजनम् अस्य, प्रधन+ठक्] युद्ध का सामान। हथियार, आयुध।

प्राधानिक—(वि०) [स्त्री०—**प्राधानिकी**] [प्रधान+ठक्] प्रधानसम्बन्धी। सर्वोत्कृष्ट।

प्राधान्य—(न०) [प्रधान+ष्यञ्] प्रधानता, श्रेष्ठता। मुख्यता, उत्कर्ष। प्रधान कारण।

प्राधीत—(वि०) [प्र–अधि√इ+क्त] भली भाँति पढ़ा हुआ, बहुत पढ़ा हुआ।

प्राध्व–(वि०) [प्रगतोऽध्वानम्, अत्या० स०, अच् समासान्तः] जो दूर हो, दूरवर्ती। झुका हुआ। बद्ध। अनुकूल। (पुं०) सवारी, रथ आदि। [प्रकृष्टः अध्वा, प्रा० स०] लंबी राह।

प्राध्वम्—(अव्य०) [प्र–आ√ध्वन्+डमि] अनुकूलता से। टेढ़ेपन से।

प्रान्त—(पु०) [प्रकृष्टः अन्तः, प्रा० स०] किनारा, हाशिया, छोर; 'प्रान्तसंस्तीर्णदर्भाः' श० ४.७। कोना। सीमा। अन्त। नोक।—**ग**–(वि०) समीपस्थ, पास रहने वाला।—**दुर्ग**–(न०) किसी नगर के परकोटे के बाहर की आबादी। परकोटे के बाहर का दुर्ग।—**विरस**–(वि०) अन्त में फीका। अन्ततः निःसार।

प्रान्तर—(न०) [प्रकृष्टम् अन्तरम् अवकाशो व्यवधानं वा यत्र, ब० स०] लंबा और सुनसान रास्ता। रास्ता जिस पर छाया न हो। वन। पेड़ का खोखर, कोटर।

प्रापक—(वि०) [स्त्री०—**प्रापिका**] [प्र √आप्+ण्वुल् वा णिच्+ण्वुल्] प्राप्त करने या कराने वाला। पहुँचाने वाला। सिद्ध करने वाला।

प्रापण—(न०) [प्र√आप्+ल्युट् वा णिच् +ल्युट्] प्राप्त करना या कराना। पहुँचाना। हवाला।

प्रापणिक—(पु०) [प्र–आ√पण्+किकन्] व्यापारी, सौदागर; 'आहृतादि प्रापणिकादजस्रं' शि० ४.११।

प्राप्त—(वि०) [प्र√आप्+क्त] लब्ध, पाया हुआ। समुपस्थित। सहा हुआ। आया हुआ। पूर्ण किया हुआ। उपयुक्त, ठीक।—**अनुज्ञ** (**प्राप्तानुज्ञ**)–(वि०) (जाने की) अनुमति पाये हुए।—**अर्थ** (**प्राप्तार्थ**)–(वि०) सफल। (पुं०) मिली हुई वस्तु।—**अवसर** (**प्राप्तावसर**) –(वि०) जिसे करने का मौका मिला हो।—**उदय** (**प्राप्तोदय**)–(वि०) जिसका उदय हुआ है। उन्नति-प्राप्त।— **कारिन्**–(वि०) उचित करने वाला।—**काल**–(वि०) जिसे करने का समय उपस्थित हो, समयोचित। उपयुक्त काल, उचित समय। मरणयोग्य काल। विवाह योग्य समय।—**पञ्चत्व**–(वि०) मृत, मरा हुआ।—**प्रसवा** – (वि० स्त्री०) जो बच्चा जनने को हो।—**बुद्धि**–(वि०) बुद्धिमान्, चतुर। जो बेहोशी के बाद फिर होश में आया हो।—**भार**–(पुं०)बोझ ढोने वाला पशु।—**मनोरथ**–(वि०) वह जिसका उद्देश्य पूरा हो चुका हो।—**यौवन**–(वि०)जवान,युवा।—**रूप**–(वि०) खूबसूरत, सुन्दर। बुद्धिमान्। योग्य, उपयुक्त।—**व्यवहार**–(वि०) वयस्क, बालिग।—**श्री**–(वि०) वह जिसकी बढ़ती (दूसरे के द्वारा) हुई हो।

प्राप्ति—(स्त्री०) [प्र√आप्+क्तिन्] उपलब्धि, मिलना। पहुँच। आगमन। अर्जन। अनुमान। हिस्सा, अंश। प्रारब्ध, भाग्य। उदय। अणिमादि अष्ट प्रकार के ऐश्वर्यों में से एक, जिससे वांछित पदार्थ मिलता है। संहति। सुखागम। जरासंध की एक पुत्री जो कंस से ब्याही थी। कामदेव की एक पत्नी। चन्द्रमा का ग्यारहवाँ स्थान (फलित-ज्यो०)।—**आशा** (**प्राप्त्याशा**)–(स्त्री०) (कोई वस्तु) मिलने की आशा। आरब्ध कार्य की एक अवस्था जिसमें फलप्राप्ति की आशा होती है।

प्राबल्य—(न०) [प्रबल+ष्यञ्] प्रबलता। प्रधानता। शक्ति।

प्राबालिक, प्रवालिक—(पुं०) [प्रबा (वा) ल+ठक्] मूँगों का व्यापार करने वाला।

प्राबोधक, प्राबोधिक—(पुं०) [प्र—आ√बुध्+णिच्+ण्वुल्] [प्रबोध+ठञ्] भोर, तड़का, सवेरा। बंदीजन जिनका काम स्तुति सुना कर राजा को जगाने का हो।

प्राभञ्जन—(न०) [प्रभञ्जनो देवता अस्य, प्रभञ्जन+अण्] स्वाती नक्षत्र।

प्राभञ्जनि—(पुं०) [प्रभञ्जन+इञ्] हनुमान्। भीम।

प्राभव—(न०) [प्रभु+अण्] प्रभुत्व। उत्कृष्टता। प्राधान्य।

प्राभवत्य—(न०) [प्रभवतो भावः, प्रभवत्+ष्यञ्] प्रधानता। अधिकार।

प्राभाकर—(पुं०) [प्रभाकर+अण्] मीमांसा के प्रसिद्ध आचार्य प्रभाकर के मत का अनुयायी।

प्राभातिक—(वि०) [स्त्री०—**प्राभातिकी**] [प्रभात+ठञ्] प्रातःकाल सम्बन्धी।

प्राभृत, प्राभृतक—(न०) [प्र—आ √भृ+क्त] [प्राभृत+कन्] नजराना, भेंट, चढ़ावा। रिश्वत।

प्रामाणिक—(वि०) [स्त्री०—**प्रामाणिकी**] [प्रमाण+ठञ्] जो प्रत्यक्षप्रमाणादि से सिद्ध हो। शास्त्र-सिद्ध। विश्वस्त। प्रमाण सम्बन्धी। (पुं०) वह जो प्रमाण को स्वीकार करे। नैयायिक। व्यापारियों का मुखिया।

प्रामाण्य—(न०) [प्रमाण+ष्यञ्] प्रमाण का भाव, प्रमाणत्व। विश्वस्तता। सबूत, प्रमाण।

प्रामादिक—(वि०) [प्रमाद+ठञ्] प्रमाद-जनित। दूषित।

प्रामाद्य—(न०) [प्रमाद्यति अनेन, प्र√मद्+ण्यत्] पागलपन। नशा।

प्राय—(पुं०) [प्र √अय्+घञ्] जीवन से

प्रस्थान, मृत्यु। किसी इष्टसिद्धि के लिये खाना-पीना छोड़कर धरना देना या भूखों-प्यासों मर जाने को तैयार होना। सब से बड़ा अंश। आधिक्य, विपुलता; 'कमलामोद-प्राया वनानिलाः' उत्त० ३.२४। जीवन की अवस्था। (वि०) तुल्य। पूर्ण (इन अर्थों में इस शब्द का प्रयोग समास में होता है, जैसे–'काष्टप्राय')।**—उपगमन (प्रायोपगमन)**–(न०),**—उपवेश (प्रायोपवेश)** –(पुं०),**—उपवेशन (प्रायोपवेशन)**–(न०),**—उपवेशनिका (प्रायोपवेशनिका)**–(स्त्री०) वह अनशन व्रत, जो प्राण त्यागने के लिये किया जाय, अन्न-जल त्याग कर मरने को बैठना; 'प्रायोपवेशसदृशं व्रतमास्थितस्य' वे० ३.१६।**—उपेत (प्रायोपेत)**–(वि०) अन्न-जल त्याग कर मरने के लिये बैठने वाला।**—उपविष्ट (प्रायोपविष्ट)**–(वि०) वह जिसने प्रायोपवेशन व्रत किया हो।**—दर्शन**–(न०) मामूली अद्भुत व्यापार या घटना।

प्रायण—(न०) [प्र√अय्+ल्युट्] प्रवेश। आरम्भ। इच्छामृत्यु। शरण में होना। स्थान बदलना। जीवनमार्ग। दूध के योग से बना हुआ एक व्यंजन। वह आहार जिससे अनशन भंग किया जाय।

प्रायणीय—(वि०) [प्रायण+छ] प्रारंभिक। (न०) सोम याग में पहिली सुत्या के दिवस का कर्म।

प्रायशस्—(अव्य०) [प्राय+शस्] बाहुल्य से, बहुधा। सब प्रकार से।

प्रायश्चित्त—(न०), **प्रायश्चित्ति**–(स्त्री०) [प्रायस्य पापस्य चित्तं विशोधनं यस्मात्, ब० स०, नि० सुट्] शास्त्रीय कृत्य विशेष जिसके करने से करने वाले का पाप छूट जाता है। क्षतिपूरण।

प्रायश्चित्तिन्—(वि०) [प्रायश्चित्त+इनि] प्रायश्चित्त करने वाला।

प्रायस्—(अव्य०) [प्र√अय् + असुन्] विशेष कर, बहुधा, अकसर। लगभग, करीब-करीब।

प्रायाणिक, प्रायात्रिक—(वि०) [स्त्री०—**प्रायाणिकी** या **प्रायात्रिकी**] [प्रयाण+ठक्] [प्रयात्रा+ठक्] यात्रा के लिए उपयुक्त या आवश्यक। (न०) शंख, चंवर, दही आदि मंगलद्रव्य।

प्रायिक—(वि०) [स्त्री०—**प्रायिकी**] [प्राय+ठक्] प्रायः होने वाला जो बहुधा या अधिकता से होता है।

प्रायुद्धेषिन्—(पुं०) [प्रायुधि प्रकृष्टयुद्धादिस्थाने हेषते शब्दायते, प्रायुध्√हेष्+णिनि] घोड़ा।

प्रायेण—(अव्य०) [विभक्ति-प्रतिरूपक अव्यय] प्रायः, अकसर।

प्रायोगिक—(वि०) [स्त्री०–**प्रायोगिकी**] [प्रयोग+ठक्] जो नित्य काम में आता हो।

प्रारब्ध—(वि०) [प्र–आ √रभ्+क्त] आरम्भ किया हुआ। (न०) तीन प्रकार के कर्मों में से वह कर्म जिसका फल भोगा जा रहा हो। भाग्य।

प्रारब्धि—(स्त्री०) [प्र–आ√रभ्—क्तिन्] आरम्भ, शुरुआत। हाथी बाँधने का खूंटा या रस्सा।

प्रारम्भ—(पुं०) [प्र–आ √रभ्+घञ्, मुम्] आरम्भ, शुरुआत। कर्म; 'आरम्भ-सदृशोदयः' र० १.१५।

प्रारम्भण—(न०) [प्र–आ √रभ्+ल्युट्] आरंभ करना, शुरू करना।

प्रारिप्सित—(वि०) [प्र–आ√रभ्+सन्+क्त] जिसे आरंभ करने की इच्छा की गई हो।

प्रारोह—(पुं०) [प्ररोहः शीलम् अस्य, प्ररोह+ण] अंकुर, अँखुआ।

प्रार्ण—(न०) [प्रकृष्टम् ऋणम्, प्रा० स०] मुख्य ऋण।

प्रार्थक—(वि०) [स्त्री०—**प्रार्थिका**] [प्र √अर्थ्+ण्वुल्] याचक, प्रार्थी। (पुं०) वर।

प्रार्थन—(न०) **प्रार्थना**—(स्त्री०) [प्र√अर्थ् +ल्युट्] [प्र√अर्थ् + णिच्—टाप्] किसी से कुछ माँगना। किसी बात के लिये किसी से विनय-पूर्वक कहना। आक्रमण। हिंसा। इच्छा। मुकद्दमा।—**भङ्ग**—(पुं०) प्रार्थना अस्वीकार करना।—**सिद्धि**—(स्त्री०) प्रार्थना स्वीकृति, अभिलषित वस्तु की प्राप्ति।

प्रार्थनीय—(वि०) [प्र√अर्थ् + णिच् +अनीयर्] प्रार्थना करने योग्य, याचनीय। (न०) द्वापर युग का नाम।

प्रार्थित—(वि०) [प्र√अर्थ्+क्त] याचित, जो माँगा गया हो। अभिलषित। आक्रमण किया हुआ। वध किया हुआ।

प्रालम्ब—(वि०) [प्र—आ √लम्ब्+अच्] विशेष रूप से लटकने वाला। (पुं०) मोती का आभूषण विशेष। स्त्री के स्तन। (न०) वह हार जो कुचों तक लंबा हो।

प्रालम्बिका—(स्त्री०) [प्रालम्ब + कन् —टाप्, इत्व] सोने का हार।

प्रालेय—(न०) [प्रकर्षेण लीनाः सन्ति पदार्थाः यत्र इति प्रलयो हिमालयः ततः आगतम्, प्रलय+अण्] हिम, बर्फ, पाला, ओस; 'प्रालेयशीतमचलेश्वरमीश्वरोऽपि' शि० ८.६४।—**अद्रि** (प्रालेयाद्रि),—**शैल**—(पुं०) हिमालय पर्वत।—**अंशु** (प्रालेयांशु),—**कर**,—**रश्मि**—(पुं०) चन्द्रमा। कपूर।—**लेश**—(पुं०) ओला।

प्रावट—(पुं०) [प्र—अव√अट् + अच् नक० पररूप] यव, जवा।

प्रावण—(न०) [प्र—आ √वन् (संभक्तौ) +घ] कुदाल, फावड़ा।

प्रावर—(पुं०) [प्र—आ √वृ+अप्] परकोटा, हाता, घेरा। उत्तरीय वस्त्र। देश विशेष।

प्रावरण—(न०) [प्र—आ√वृ + ल्युट्] ओढ़नी, चादर। ढक्कन।

प्रावरणीय—(न०) [प्र—आ √वृ+अनीयर्] उत्तरीय वस्त्र। एक प्रान्त का नाम।—**कीट**—(पुं०) एक प्रकार का कपड़े का कीड़ा।

प्रावारक—(पुं०) [प्र—आ √वृ + घञ् +कन्] उत्तरीय वस्त्र; 'जातीकुसुमवासितः प्रावारकोऽनुप्रेषितः' मृ० १।

प्रावारिक—(पुं०) [प्रावार+ठक्] उत्तरीय वस्त्र बनाने वाला।

प्रावास—(वि०) [स्त्री०—**प्रावासी**] [प्रवास+अण्] यात्रा सम्बन्धी। यात्रा में देने योग्य। यात्रा में करने योग्य।

प्रावासिक—(वि०) [स्त्री०—**प्रावासिकी**] [प्रवास+ठक्] यात्रा के योग्य।

प्रावीण्य—(न०) [प्रवीण+ष्यञ्] चातुरी, निपुणता, पटुता।

प्रावृत—(वि०) [प्र—आ√वृ+क्त] घिरा हुआ। आच्छादित, ढका हुआ। पर्दा पड़ा हुआ। (न०, पुं०) घूँघट। बुरका। चादर। (यह स्त्रीलिङ्ग भी है।)

प्रावृति—(स्त्री०) [प्र—आ√वृ + क्तिन्] चहारदीवारी। बाड़ा। बाड़। आत्मा-सम्बन्धी अज्ञान, आध्यात्मिक अन्धकार।

प्रावृत्तिक—(वि०) [स्त्री०—**प्रावृत्तिका**] [प्रवृत्ति+ठक्] अप्रधान, गौण। (पुं०) दूत, एलची।

प्रावृष्—(स्त्री०) [प्र—आ√वृष् + क्विप्] वर्षा ऋतु; 'कलापिनाम्प्रावृषि पश्य नृत्यं' र० ६.५१।—**अत्यय** (प्रावृडत्यय)—(पुं०) वर्षाऋतु का अन्त। शरद् ऋतु।—**काल** (प्रावृट्काल)—(पुं०) वर्षा ऋतु, बरसात।

प्रावृष—(पुं०), **प्रावृषा**—(स्त्री०) [प्र—आ √वृष्+क] [प्रावृष+टाप्] वर्षा ऋतु, वर्षाकाल।

प्रावृषिक— वि०) [स्त्री०— **प्रावृषिकी**]

[प्रावृष्+ठञ्] वर्षाऋतु में उत्पन्न ।(पुं०) [प्रावृषि √कै+क, अलुक् स०] मोर ।

प्रावृषेण्य—(त्रि०) [प्रावृष+एण्य] वर्षाऋतु में उत्पन्न या वर्षाऋतु सम्बन्धी । वर्षाऋतु में देय (ऋण आदि) । (न०) प्राचुर्य, आधिक्य ।(पुं०)कदम्ब वृक्ष। कुटज,कुरैया ।

प्रावृष्य—(पुं०) [प्रावृष् + यत्] धारा-कदम्ब । कुटज, कुरैया । कठेर का पेड़ । (न०) वैदूर्य मणि ।

प्रावेण्य—(न०) बढ़िया ऊनी चादर, शाल ।

प्रावेशन—(वि०) [स्त्री०—**प्रावेशना**] [प्रवेशने दीयते वा तत्र कार्यम्, प्रवेशन+अण्] (वस्तु) जो प्रवेश करने पर दी जाय या वह (कार्य) जो प्रवेश करने पर किया जाय।(न०) [प्र—आ√विश्+ल्युट्] अर्चा, पूजन । कारखाना ।

प्रावेशिक—(वि०) [स्त्री०—**प्रावेशिकी**] [प्रवेशाय साधुः, प्रवेश+ठञ्] प्रवेश का साधन भूत, जिसके द्वारा (रंगशाला या भवन में) प्रवेश मिले । प्रवेशसंबंधी ।

प्राव्रज्य, प्राव्राज्य—(न०) [प्रव्रज्या+अण्, उत्तरपद-वृद्धि-विकल्प] प्रव्रज्या सम्बन्धी । (न०) संन्यासी का जीवन ।

प्राश—(पुं०) [प्र √अश्+घञ्] भोजन करना । चखना । भोज्य पदार्थ ।

प्राशन—(न०) [प्र√अश्+ल्युट् वा णिच् +ल्युट्] खाना, भोजन करना । खिलाना । भोजन, भोज्य पदार्थ ।

प्राशनीय—(न०) [प्र√अश्+अनीयर्] भोजन-सामग्री, खाद्य पदार्थ । (वि०) खाने योग्य ।

प्राशस्त्य—(न०)[प्रशस्त+ष्यञ्] प्रशस्तता, उत्तमता । प्रधानता, श्रेष्ठता ।

प्राशित—(वि०) [प्र √अश्+क्त] खाया हुआ, भक्षित । (न०) भक्षण । [प्रकर्षेण अशितं यत्र, प्रा० ब०] पितृयज्ञ; 'प्राशितं पितृतर्पणम्' मनु० ३.७४ भोजन, भक्षण।

प्राश्निक—(पुं०) [प्रश्न+ठक्] प्रश्न पूछने वाला, परीक्षक । पंच । साक्षी । सभा की कार्रवाई करने वाला, सभ्य ।

प्रास—(पुं०) [प्र √अस्+घञ्] प्राचीन कालीन एक प्रकार का भाला । इसमें ७ हाथ लंबी बाँस की छड़ लगायी जाती थी और उसकी एक नोक पर लोहे का नुकीला फल रहता था । यह फल तेज होता था और उस पर स्तबक चढ़ा रहता था; 'समुल्लसत्प्रास-महोर्मिमालं' कि० १.६४ । फेंकना ।

प्रासक—(पुं०) [प्रास+कन्] प्रास, भाला । पासा ।

प्रासङ्ग—(पुं०)[प्र√सञ्ज्+घञ्, उपसर्गस्य दीर्घः] जूआ जिसमें बैल लगाये जाते हों । तुला । तुलादंड ।

प्रासङ्गिक—(वि०) [स्त्री०—**प्रासङ्गिकी**] [प्रसङ्ग+ठक्] प्रसङ्ग सम्बन्धी । प्रसङ्गागत । इत्तिफाकिया । प्रस्तावानुरूप । समयोचित । उपाख्यानघटित या तदन्तर्भुक्त ।

प्रासङ्ग्य—(पुं०) [प्रासङ्ग+यत्] हल में चला हुआ बैल ।

प्रासाद—(पुं०) [प्रसीदन्ति अस्मिन्, प्र √सद्+घञ्, उपसर्गस्य दीर्घः] महल, राजभवन । विशाल भवन । देवालय, मन्दिर । महल या बड़े भवन की छत । दर्शकों के लिए बना हुआ ऊँचा स्थान ।—**अङ्गन** (**प्रासादाङ्गन**)-(न०) राजभवन का आँगन ।—**आरोहण** (**प्रासादारोहण**)-(न०) राजभवन पर चढ़ना या उसमें प्रवेश करना ।—**कुक्कुट**-(पुं०) पालतू कबूतर । —**तल**-(न०) राजभवन की छत या फर्श । —**पृष्ठ**-(पुं०) राजभवन के ऊपर का छज्जा या बरामदा ।—**प्रतिष्ठा**-(स्त्री०)मन्दिर की प्रतिष्ठा ।—**शायिन्**-(वि०) राजभवन में सोने वाला ।—**शृङ्ग**-(न०) राजभवन या मन्दिर का कलस या गुमटी ।

प्रासादिक—(वि०) [प्रसाद+ठक्—इक]

कृपायुक्त, अनुकूल। सुन्दर। जो प्रसाद के रूप में दिया जाय।

प्रासिक—(पुं०) [प्रास+ठक्] भाले से लड़ने वाला योद्धा, प्रासधारी।

प्रासूतिक—(वि०) [स्त्री०—**प्रासूतिकी**] [प्रसूति + ठक्] प्रसूति सम्बन्धी, बच्चा सम्बन्धी।

प्रास्त—(वि०) [प्र√अस्+क्त] फेंका हुआ, छोड़ा हुआ। निकाला हुआ, बहिष्कृत किया हुआ।

प्रास्ताविक—(वि०) [स्त्री०—**प्रास्ताविकी**] [प्रस्ताव+ठक्]प्रस्ताव के रूप में काम आने वाला।प्रारम्भिक। भूमिका सम्बन्धी। उचित समय का, सामयिक। प्रासङ्गिक।

प्रास्तुत्य—(न०)[प्रस्तुत+ष्यञ्] विवाद या विचार का विषय बनना।

प्रास्थानिक—(वि०) [प्रस्थाने साधु:, प्रस्थान +ठञ्] जो प्रस्थान के समय मंगलकारक हो। (न०)वह वस्तु जो यात्रा के समय शुभ समझी जाती हो। यथा—शंख-ध्वनि, दही, मछली आदि।

प्रास्थिक—(वि०) [प्रस्थ +ठञ्] तौल में एक प्रस्थ भर। एक प्रस्थ के मूल्य में खरीदा हुआ। एक प्रस्थ बीज से बोया जाने वाला। जिसमें एक प्रस्थ अन्न पके या अँटे।

प्रास्रवण—(वि०) [स्त्री०—**प्रास्रवणी**] [प्रस्रवण+अण्] सोते से निकला हुआ।

प्राह—(पुं०) [प्रकर्षेण आह इति शब्दोऽत्र, प्रा० ब०] नृत्य कला की शिक्षा।

प्राह्ण–(पुं०)[प्रथमञ्च तदहश्च, कर्म० स०, टच्, अह्नादेश, णत्व] दोपहर से पूर्व का समय, पूर्वाह्ण। तदभिमानी देवता।

प्राह्णेतन—(वि०) [स्त्री०—**प्राह्णेतनी**] [प्राह्ण +ट्यु, तुट्, नि० एत्व] मध्याह्न के पूर्व होने वाला, मध्याह्न पूर्व सम्बन्धी।

प्राह्णेतराम्, प्राह्णेतमाम्-(अव्य०)[प्राह्ण +तरप्, आमु नि० एत्व] [प्राह्ण+तमप्, आमु, नि० एत्व]अतिशय, पूर्वाह्ण, बहुत सबेरे।

प्रिय—(वि०) [√प्री+क] प्यारा। मनोहर। (पुं०) प्रेमी। स्वामी। एक जाति का हिरन। (न०) प्यार। मेहरबानी, अनुग्रह। प्रसन्न- कारक सूचना या खबर। आनन्द। —**अतिथि** (**प्रियातिथि**)–(वि०) अतिथि-सत्कार करने वाला, आतिथेय।—**अपाय** (**प्रियापाय**)–(पुं०) किसी प्रिय वस्तु का अभाव या अनुपस्थिति।—**अप्रिय** (**प्रियाप्रिय**)–(वि०)प्यारा-कुप्यारा, रुचिकर और अरुचिकर।—**अम्बु** (**प्रियाम्बु**)–(पुं०) आम का पेड़।—**अर्ह** (**प्रियार्ह**)–(वि०) प्रेम या कृपा करने योग्य। मनभावन। (पुं०) विष्णु का नामान्तर।—**असु** (**प्रियासु**)– (पूर्व जीवन का प्रेमी।—**आख्य** (**प्रियाख्य**)–(वि०)शुभसंवाद सुनाने वाला।— **आख्यान** (**प्रियाख्यान**)–(न०) शुभसंवाद।—**आत्मन्** (**प्रियात्मन्**)–(वि०) मनभावन, मनोहर।—**उक्ति** (**प्रियोक्ति**)– (स्त्री०),—**उदित** (**प्रियोदित**)–(न०) चापलूसी की बातें। मैत्री सूचक वक्तृता।— **उपपत्ति** (**प्रियोपपत्ति**) –(स्त्री०) आनन्ददायिनी घटना।—**उपभोग** (**प्रियोपभोग**) –(पुं०) किसी प्रेमी या प्रेयसी के साथ रंगरेलियाँ।—**एषिन्** (**प्रियैषिन्**)–(वि०) प्रसन्न करने या सेवा करने का अभिलाषी। प्यारा।—**कर**–(वि०) आनन्ददायी, हर्षप्रद।—**कर्मन्** (वि०) मित्रभाव से बर्ताव करने वाला। —**कलत्र**–(पुं०) वह पति जो अपनी भार्या को बहुत चाहता हो।—**काम**–(वि०) सेवा करने के लिये इच्छुक।—**कार**,—**कारिन्**–(वि०)भलाई करने वाला, नेकी करने वाला।—**कृत्**–(पुं०) हितैषी, मित्र। विष्णु।—**जन**–(पुं०) प्यारा जन, प्रेम-पात्र जन।—**जानि**–(पुं०) अपनी पत्नी

को प्यार करने वाला पुरुष।—**तोषण**–(पुं०) स्त्री-मैथुन का आसन-विशेष।—**दर्श**–(वि०) मनोहर, खूबसूरत।—**दर्शन**–(वि०) मनोहर सूरत का, खूबसूरत; 'अहो प्रियदर्शनः कुमारः' उत्त०५। (पुं०) तोता। खिरनी का पेड़। एक गन्धर्व का नाम।—**दर्शिन्**–(पुं०) अशोक राजा की उपाधि।—**देवन**–(वि०) जुआ खेलने का शौकीन।—**धन्व**–(पुं०) शिवजी।—**पुत्र**–(पुं०) पक्षी विशेष।—**प्रसादन**–(न०) पति को सन्तोष प्रदान।—**प्राय**–(वि०) अत्यन्त कृपालु या शिष्ट। (न०) प्रिय सम्भाषण जो एक प्रेमी अपनी प्रेयसी से करता हो।—**प्रेप्सु**–(वि०) अपनी इष्टसिद्धि का अभिलाषी।—**भाव**–(पुं०) प्रेम की भावना।—**भाषण**–(न०) मीठा बोल।—**भाषिन्**–(वि०) मीठा बोलने वाला।—**मण्डन**–(वि०) आभूषणों का शौकीन।—**मधु**–(वि०) शराब का मुश्ताक। (पुं०) बलराम जी का नामान्तर।—**रण**–(वि०) बहादुर।—**वचन**–(वि०) अच्छे वचन कहने वाला।—**वयस्य**–(पुं०) प्यारा मित्र।—**वर्णी**–(स्त्री०) कँगनी नाम का अन्न।—**वस्तु**–(न०) प्यारी वस्तु।—**वाच्**–(वि०) प्यारी बातें कहने वाला। (स्त्री०) कृपामय या प्यारा वचन।—**वादिका**–(स्त्री०) बाजा विशेष। —**वादिन्**–(वि०) मधुरभाषी। चापलूस; 'सुलभाः पुरुषाः राजन् सततं प्रियवादिनः' वा०। —**व्रत**–वि०) जिसे व्रत प्रिय हो। (पुं०) स्वायंभुव मनु के एक पुत्र।—**श्रवस्**–(पुं०) कृष्ण का नाम।—**संवास**–(पुं०) प्रिय पात्र का सत्सङ्ग।—**सख**–(पुं०) प्यारा मित्र।—**सखी**–(स्त्री०) प्यारी सहेली।—**सङ्गमन**–(न०) प्रिय और प्रिया के मिलने का स्थान। वह स्थान जहाँ कश्यप और अदिति का मिलन हुआ था।—**सत्य**–(वि०) सत्य को पसन्द करने वाला। सत्य होने पर भी प्रिय।—**सन्देश**–(पुं०) खुशखबरी, अच्छा सन्देसा। चम्पा का पेड़।—**समागम**–(पुं०) प्रेमपात्र के साथ मिलन।—**सम्प्रहार**–(वि०) मुकदमेबाज।—**सहचरी**–(स्त्री०) प्यारी पत्नी।—**सुहृद्**–(पुं०) प्राणप्रिय मित्र।—**स्वप्न**–(वि०) सोने का शौकीन, जो निद्रा लेना बहुत पसन्द करता हो।

प्रियंवद—(वि०) [प्रियं वदति, प्रिय√वद् +खच्, मुम्] मधुरभाषी। (पुं०) पक्षी विशेष। एक गन्धर्व का नाम।

प्रियक—(न०) [प्रिय+कन्] असन के पेड़ का फल। (पुं०) एक तरह का चितकबरा हिरन। केलिकदम्ब। धाराकदम्ब। महाकदम्ब। पियासाल वृक्ष। तिन्दुक वृक्ष। प्रियंगुलता। शहद की मक्खी। पक्षी विशेष। केसर। कार्तिकेय का एक अनुचर।

प्रियकार, प्रियङ्कर, प्रियङ्करण—(वि०) [प्रिय√कृ+अण्] [प्रिय√कृ + खच्, मुम्] [प्रिय√कृ + ख्युन्, मुम्] प्रिय करने वाला। प्रसन्न करने वाला। हित करने वाला।

प्रियङ्गु—(पुं०) [प्रिय√गम्+कु] एक लता का नाम जिसके सम्बन्ध में कहा जाता है कि जहाँ उसे किसी स्त्री ने स्पर्श किया कि वह फलने लगती है। राई। बड़ी पीपल। (न०) केसर।

प्रियतम—(वि०) [प्रिय+तमप्] सब से अधिक प्यारा। (पुं०) आशिक, प्रेमी। पति।

प्रियतमा—(स्त्री०) [प्रियतम+टाप्] पत्नी। प्रेमिका, माशूका।

प्रियतर—(वि०) [प्रिय+तरप्] दो में जो अधिक प्रिय हो, अपेक्षाकृत प्यारा।

प्रियता—(स्त्री०), **प्रियत्व**–(न०) [प्रिय +तल्–टाप्] [प्रिय+त्व] प्रिय होने का भाव। प्यार, प्रेम।

प्रियम्भविष्णु, प्रियम्भावुक—(वि०) [प्रिय

√भू+खिष्णुच्, मुम्] [प्रिय √ भू +खुकञ्, मुम्] जो पहले अप्रिय रहे पर बाद में प्रिय हो जाय।

प्रिया—(स्त्री०) [प्रिय+टाप्] पत्नी। प्रेमिका। नारी। माया। छोटी इलायची। समाचार। मदिरा। चमेली।

प्रियाल—(स्त्री०) [प्रिय √अल् + अच्] पियार का पेड़ जिसके फलों के बीज को चिरौंजी कहते हैं।

प्रियाला—(स्त्री०) [प्रियाल+टाप्] दाख।

√प्री—क्र्या० उभ० सक० प्रसन्न करना, तृप्त करना। चाहना। प्रीणाति—प्रीणीते, प्रेष्यति-ते, अप्रैषीत्—अप्रेष्ट। दि० आत्म० सक० प्रसन्न करना। प्रीयते, प्रेष्यते, अप्रेष्ट। चु० पर० सक० तृप्त करना। प्रीणयति।

प्रीण—(वि०) [√प्री + क्त, तस्य नः] प्रसन्न, सन्तुष्ट, आनन्दित। [प्र+अ—ईन] प्राचीन, पुरातन।

प्रीणन—(न०) [√प्री+णिच्, नुक् +ल्युट्] प्रसन्न करना, तृप्त करना।

प्रीत—(वि०) [√प्री+क्त, वा नत्वाभाव] प्रसन्न, सन्तुष्ट। प्यारा।—**आत्मन्** (प्रीतात्मन्),—**मनस्**–(वि०) मन से प्रसन्न, चित्त से आनन्दित। (पुं०) शिव।

प्रीति—(स्त्री०) [√प्री + क्तिन्] हर्ष, आनन्द। अनुकम्पा, अनुग्रह। प्रेम। अनुराग। मैत्री। कामदेव की स्त्री और रति की सौत का नाम। फलित ज्योतिष के २७ योगों में से दूसरा।—**कर**–(वि०) प्रसन्नता उत्पन्न करने वाला। कृपालु। अनुकूल।—**कर्मन्**–(न०) मित्रोचित कर्म।—**जुष्**–(पुं०) कामदेव।—**द**–(पुं०) मसखरा, विदूषक।—**दत्त**–(वि०) प्रेम से दिया हुआ, स्नेह के कारण दिया हुआ। (न०) वह सम्पत्ति जो किसी स्त्री को उसके सगे सम्बन्धियों से मिली हो विशेष कर वह जो उसे उसके ससुर या सास से विवाह के अवसर पर प्राप्त हुई हो।—**दान**–(न०),—**दाय**–(पुं०) प्रेमोपहार; 'तदवसरोऽयम्प्रीतिदायस्य' माल० ४।—**धन**–(न०) प्रेम या मित्रता के नाते दिया हुआ धन या रुपया।—**पात्र**–(न०) प्रेमपात्र, कोई भी पुरुष या पदार्थ जिसके प्रति प्रेम हो।—**मनस्**–(वि०) मन में प्रसन्न।—**रीति**–(स्त्री०) प्रेमपूर्ण व्यवहार, परस्पर का प्रेम-संबंध।—**वचस्**,—**वचन**–(न०) मित्रोपयुक्त वचन या भाषण।—**वर्धन**–(वि०) प्रेम या हर्ष बढ़ाने वाला। (पुं०) विष्णु भगवान्।—**वाद**–(पुं०) मित्रोपयुक्त वाद-विवाद।—**विवाह**–(पुं०) वह विवाह जो केवल प्रीतिवश हुआ हो।—**श्राद्ध**–(न०) श्रद्धापूर्वक किया गया श्राद्ध-विशेष।

√प्रु—भ्वा० आत्म० सक० जाना। (अक०) कूदना। उछलना। प्रवते, प्रोष्यते, अप्रोष्ट।

√प्रुट्—भ्वा० पर० सक० मलना। प्रोटति, प्रोटिष्यति, अप्रोटीत्।

प्रुष्—भ्वा० पर० सक० जलाना, भस्म कर डालना। प्रोषति, प्रोषिष्यति, अप्रोषीत्। क्र्या० पर० अक० तर होना, भींग जाना। सक० उड़ेलना, छिड़कना। भरना, परिपूर्ण करना। प्रुष्णाति, प्रोषिष्यति, अप्रोषीत्।

प्रुष्ट—(वि०) [√प्रुष्+क्त] जलाया हुआ, जला कर राख किया हुआ।

प्रुष्व—(पुं०) [प्रुष्+क्वन्] वर्षा ऋतु। सूर्य। जलबिन्दु।

प्रेक्षक—(पुं०) [प्र+ईक्ष्+ण्वुल्] दर्शक, तमाशबीन।

प्रेक्षण—(न०) [प्र√ईक्ष्+ल्युट्] देखने की क्रिया। आँख; 'चकितहरिणीप्रेक्षणा' मे० ८२। कोई भी सार्वजनिक दृश्य या तमाशा।—**कूट**–(न०) आँख का ढेला।

प्रेक्षणक—(न०) [प्रेक्षण+कन्] दृश्य, तमाशा।

प्रेक्षणिका—(स्त्री०) वह स्त्री जिसे तमाशा देखने का बड़ा शौक हो।

प्रेक्षणीय—(वि०) [प्र√ईक्ष् + अनीयर्] देखने योग्य, दर्शनीय; 'यः प्रेक्षणीयः सुतरांबभूव' र० १४.६ । ध्यान देने के योग्य । सुन्दर ।

प्रेक्षणीयक—(न०) [प्रेक्षणीय + कन्] तमाशा । दृश्य ।

प्रेक्षा—(स्त्री०) [प्र√ईक्ष्+अ—टाप्] देखना । दृष्टि, निगाह । स्वाँग, तमाशा देखना, सार्वजनिक कोई भी स्वाँग या तमाशा विशेषकर नाटकीय अभिनय। बुद्धि। किसी विषय की अच्छाई और बुराई का विचार । वृक्ष की शाखा या डाली ।—**आगार** (**प्रेक्षागार**) –(पुं०, न०),—**गृह**, —**स्थान**–(न०) रंगशाला, वह घर या भवन जहाँ नाटक खेला जाय ।—**समाज**–(पुं०) दर्शकवृन्द ।

प्रेक्षावत्—(वि०) [प्रेक्षा+मतुप्, वत्व] समझदार, बुद्धिमान् ।

प्रेक्षित—(वि०) [प्र√ईक्ष्+क्त] देखा हुआ, ताका हुआ । (न०) चितवन, नजर ।

प्रेङ्ख—(पुं०) [प्र√इङ्ख्+घञ्] झूलना । पेंग लेना । एक प्रकार का सामगान ।

प्रेङ्खण—(वि०) [प्र√इङ्ख्+ल्यु] भ्रमणकारी, इतस्ततः फिरने वाला । (न०) [प्र √इङ्ख्+ल्युट्] अच्छी तरह झूलना । झूला, हिंडोला । अठारह प्रकार के रूपकों में से एक । इसमें सूत्रधार, विष्कम्भक, प्रवेशक आदि की आवश्यकता नहीं होती । इसका नायक कोई नीच जाति का हुआ करता है । इसमें नान्दी और प्ररोचना नेपथ्य में होते हैं और इसमें एक ही अङ्क होता है । इसमें प्रधानता वीररस की रखी जाती है ।

प्रेङ्खा—(स्त्री०) [प्र√इङ्ख्+अ—टाप्] झूला, हिंडोला । नृत्य । भ्रमण । विशेष प्रकार का घर या भवन । घोड़े की एक चाल।

प्रेङ्खित—(स्त्री०) [प्र√इङ्ख्+क्त] काँपा हुआ । झूला हुआ ।

√प्रेङ्खोल्—चु० उभ० अक० हिलना, डुलना । सक० हिलाना, डुलाना । प्रेङ्खोलयति—ते ।

प्रेङ्खोलन—(न०) [√प्रेङ्खोल्+ल्युट्] झूलना । हिलना, डोलना । हिंडोला, झूला ।

प्रेत—(वि०) [प्र√इ+क्त] मृत, मरा हुआ। (पुं०) मृत आत्मा की वह अवस्था जो और्ध्वदेहिक कृत्य किये जाने के पूर्व रहती है; 'स्वजनाश्रु किलातिसन्ततं दहति प्रेतमिति प्रचक्षते' र० ८.८५ । भूत ।—**अधिप** (**प्रेताधिप**)–(पुं०) यमराज ।—**अन्न** (**प्रेतान्न**)–(न०)वह अन्न जो प्रेतों के निमित्त अर्पित किया गया हो।—**अस्थि** (**प्रेतास्थि**) –(न०) मुर्दे की हड्डियाँ ।— **ईश** (**प्रेतेश**), **ईश्वर** (**प्रेतेश्वर**)–(पुं०) यमराज, यमराज ।—**कर्मन्**,—**कृत्य**–(न०), —**कृत्या** –(स्त्री०) दाह से लेकर सपिण्डीकरण तक का वह कर्म जो मृतक जीव के उद्देश्य से किया जाता है । —**गृह**–(न०) श्मशान ।—**चारिन्**–(पुं०) शिव जी ।—**दाह**–(पुं०) मृतक के जलाने आदि का कर्म ।—**धूम**–(पुं०) चिता से निकला हुआ धुआँ ।—**निर्यातक**–(पुं०) धन लेकर प्रेत का दाह आदि करने वाला व्यक्ति, मुर्दा-फरोश ।—**निर्हारक**–(पुं०) शवहारक, शव को श्मशान तक ले जाने वाला मनुष्य ।—**पक्ष**–(पुं०) क्वार का अँधियारा या कृष्ण पक्ष पितृपक्ष कहलाता है ।—**पटह**–(पुं०) वह ढोल जो किसी के जनाजे या ठठरी को ले जाते समय बजाया जाता है । —**पति**–(पुं०) यम का नामान्तर ।—**पावक**–(पु०) रात के समय श्मशान, कब्रिस्तान, जंगल आदि सूनी जगहों में दिखाई देने वाला जलता हुआ प्रकाश जिसे लोग प्रेतलीला समझते हैं ।—**पुर**–(न०) यमराजपुरी ।—**भाव**–(पुं०)मृत्यु । —**भूमि**–(स्त्री०) श्मशान ।—**मेघ**–(पुं०)

प्रेतोद्देश्यक श्राद्धरूप यज्ञ, मृतक के उद्देश्य से किया जाने वाला श्राद्ध ।—**राक्षसी**–(स्त्री०) तुलसी ।—**राज** –(पुं०) यमराज ।—**लोक**–(पुं०) वह लोक जहाँ प्रेत निवास करते हैं । यमलोक ।—**वन**–(न०) श्मशान ।—**वाहित**–(वि०) जिस पर भूत सवार हो, भूताविष्ट ।—**शरीर**–(न०) मृत शरीर ।—**शिला**–(स्त्री०) गया की वह शिला जिस पर पिण्डदान करने से मृतक प्रेतयोनि से छुटकारा पाता है ।—**शुद्धि**–(स्त्री०), —**शौच**–(न०) किसी मरे हुए नातेदार के सूतक की शुद्धि ।—**श्राद्ध**– मरने की तिथि से एक वर्ष के अन्दर होने वाले १६ श्राद्ध । इनमें सपिण्डी, मासिक और षाण्मासिक श्राद्ध भी शामिल हैं ।—**हार**–(पुं०) मृत शरीर को उठाकर श्मशान तक ले जाने वाला, मुरदा उठाने वाला । मृतक का सगा या नातेदार ।

प्रेतिक—(पुं०) [प्रकर्षेण इतिः गमनं यस्य, प्रा० ब०, +कन्] भूत, प्रेत ।

प्रेत्य—(अव्य०) [प्र√इ + क्त्वा—ल्यप्] मर कर, मरने के उपरान्त ।—**जाति**–(स्त्री०) मर कर फिर से जन्म लेना, पुनर्जन्म ।—**भाव** –(पुं०) किसी जीव की शरीर छोड़ने के बाद की दशा ।

प्रेत्वन्—(पुं०) [प्र√इ + क्वनिप्] पवन, हवा । इन्द्र का नामान्तर ।

प्रेप्सा—स्त्री०) [प्र √आप् + सन्+अ –टाप्] प्राप्त करने की अभिलाषा। इच्छा ।

प्रेप्सु—(वि०) [प्र√आप्+सन्, उ] अभिलाषी, इच्छुक ।

प्रेमन्—(पुं०, न०) [प्रियस्य भावः, प्रिय +इमनिच्, प्रादेश अथवा√प्री+मनिन्] (समास में नलोप) प्यार, मुहब्बत, अनुराग । अनुकम्पा, अनुग्रह । आमोद-प्रमोद । हर्ष, प्रसन्नता ।—**अश्रु** (**प्रेमाश्रु**)–(पुं०) प्रेम या स्नेह के आँसू ।—**ऋद्धि** (**प्रेमर्द्धि**) –(स्त्री०) स्नेह का आधिक्य, प्रगाढ़ प्रेम ।—**पर**–(वि०) प्यारा, प्रिय ।—**पातन**–(न०) (हर्ष के) आँसू । नेत्र (जिनसे प्रेमाश्रु गिरें) ।—**पात्र** –(न०) वह जिसके प्रति प्रेम हो ।—**बन्ध**–(पुं०) —**बन्धन**–(न०) प्रेम की फाँस या गाँस ।

प्रेमिन्—(वि०) [स्त्री०—**प्रेमिणी**] [प्रेमन् +इनि] प्रेम करने वाला । प्रेमयुक्त । (पुं०) प्रेम करने वाला व्यक्ति, आशिक ।

प्रेयस्—(वि०) [स्त्री०—**प्रेयसी**] [अयम् अनयोः अतिशयेन प्रियः, प्रिय+ईयसुन्, प्रादेश] अधिकतर प्यारा । (पुं०) प्रेमी । पति । (पुं०, न०) चापलूसी ।

प्रेयसी—(स्त्री०) [प्रेयस्+ङीप्] पत्नी । प्रियतमा ।

प्रेयोपत्य—(पुं०) बगुला या क्रौंच पक्षी ।

प्रेरक—(वि०) [स्त्री०—**प्रेरिका**] [प्र√ईर् +णिच्+ण्वुल्] प्रेरणा करने वाला । फेंकने वाला ।

प्रेरण—(न०), **प्रेरणा**–(स्त्री०) [प्र√ईर् +णिच्+ल्युट्] [प्र√ईर्+णिच्+युच्] किसी को किसी कार्य में प्रवृत्त करना । उत्तेजित करना । आवेग, उत्तेजना । फेंकना; 'भवति विफलप्रेरणा चूर्णमुष्टिः' मे० ६८ । भेजना ।

प्रेरित—(वि०) [प्र√ईर्+णिच् + क्त] किसी कार्य में प्रवृत्त किया हुआ । उत्तेजित किया हुआ । आग्रह किया हुआ । उद्विग्न किया हुआ । भेजा हुआ । स्पर्श किया हुआ । (पुं०) दूत, एलची ।

√प्रेष्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । प्रेषते, प्रेषिष्यते, अप्रेषिष्ट ।

प्रेष—(पुं०) [प्र√ईष्+घञ्] प्रेषण, भेजना । सन्ताप, शोक ।

प्रेषण—(न०), **प्रेषणा**–(स्त्री०) [प्र√ईष् +ल्युट्, पररूप] [प्र√ईष्+युच्, पररूप]

प्रेरणा। किसी विशेष अभीष्ट सिद्धि के लिये भेजना।

प्रेषित—(वि०) [प्र√इष्+क्त, पररूप] (संदेसा देकर) भेजा हुआ। आज्ञा दिया हुआ। निर्देश किया हुआ। घूमा हुआ। गड़ा हुआ। (आँखें) नीचे किये हुए। बहिष्कृत।

प्रेष्ठ—(वि०) [अयम् एषाम् अतिशयेन प्रियः, प्रिय+इष्ठन्] अतिशयप्रिय, प्रियतम, बहुत प्यारा। (पुं०) प्रेमी। पति।

प्रेष्ठा—(स्त्री०) [प्रेष्ठ+टाप्] पत्नी। प्रेमिका। जंघा।

प्रेष्य—(वि०) [प्र√इष्+ण्यत्] जो भेजने योग्य हो। (पुं०) नौकर, टहलू। दूत।—जन–(पुं०) नौकर, चाकर।—भाव–(पुं०) गुलामी, चाकरी।—वधू–(पुं०) नौकर की पत्नी। नौकरानी, दासी।—वर्ग (पुं०) अनुचरों का समूह।

प्रेष्या—(स्त्री०) [प्रेष्य+टाप्] दासी, नौकरानी।

प्रेहिकटा—(स्त्री०) [प्रेहि कट इत्युच्यते यस्यां क्रियायाम्, मयू० स०] आचार विशेष जिसमें चटाइयों का निषेध है।

प्रेहिकर्दमा—(स्त्री०) [प्रेहि कर्दम इत्युच्यते यस्यां क्रियायाम्, मयू० स०] अनुष्ठान विशेष जिसमें अपवित्रता वर्जित है।

प्रेहिद्वितीया—(स्त्री०) [प्रेहि द्वितीय इत्युच्यते यस्यां क्रियायाम्, मयू० स०] अनुष्ठान विशेष जिसमें स्वयं को छोड़ अन्य पुरुष की उपस्थिति वर्जित है।

प्रेहिवाणिजा—(स्त्री०) [प्रेहि वाणिज इत्युच्यते यस्यां क्रियायाम्, मयू० स०] अनुष्ठान विशेष जिसमें किसी भी व्यवसायी की उपस्थिति वाञ्छनीय नहीं है।

प्रैय—(न०) [प्रिय+अण्] प्रिय का भाव, प्रेम। इच्छा।

प्रैष—(पुं०) [प्र√इष्+घञ्, वृद्धि] प्रेषण। आज्ञा। आमंत्रण। सङ्कट, विपत्ति। विक्षिप्तता, पागलपन। कुचलना, मर्दन।

प्रैष्य—(न०) [प्र√इष्+ण्यत्, वृद्धि] चाकरी, गुलामी; 'बङ्गमं प्रैष्यभावे वः' कु० ६.५८। (पुं०) नौकर, दास।—भाव–(पुं०) नौकरी, दासत्ववृत्ति।

प्रैष्या—(स्त्री०) [प्रैष्य+टाप्] दासी, नौकरानी।

प्रोक्त—(वि०) [प्रकर्षेण उच्यते स्म, प्र√वच्+क्त] कहा हुआ। नियत किया हुआ, ठहराया हुआ।

प्रोक्षण—(न०) [प्र√उक्ष्+ल्युट्] मार्जन, जल छिड़क कर पवित्र करना। यज्ञ में वध के पूर्व यज्ञीय पशु पर जल छिड़कना। हिंसा।

प्रोक्षणी—(स्त्री०) [प्रोक्षण+ङीप्] वह पवित्र जल जो मार्जन के लिये या छिड़कने के लिये हो। वह पात्र जिसमें प्रोक्षण के लिये जल रखा जाता है, प्रोक्षणीपात्र।

प्रोक्षणीय—(न०) [प्र√उक्ष्+अनीयर्] प्रोक्षण के लिये उपयुक्त जल। (वि०) प्रोक्षण के योग्य।

प्रोक्षित—(वि०) [प्र √उक्ष्+क्त] जल के मार्जन से पवित्र किया हुआ। बलिदान के पूर्व जल से छिड़का हुआ। बलिदान किया हुआ।

प्रोच्चण्ड—(वि०) [प्रकर्षेण उच्चण्डः, प्रा० स०] अतिशय भयानक।

प्रोच्चैस्—(अव्य०) [प्रा० स०] अतिशय उच्चता से। अतिशय अधिकता से।

प्रोच्छ्रित—(वि०) [प्रा० स०] अतिशय ऊँचा या उन्नत।

प्रोज्जासन—(न०) [प्र–उद् √ जस्+णिच्+ल्युट्] वध, हत्या।

प्रोज्झन—(न०) [प्र √उज्झ्+ल्युट्] परित्याग। वैराग्य।

प्रोज्झित—(वि०) [प्र √उज्झ्+क्त] विशेष रूप से त्यागा हुआ, छोड़ा हुआ।

प्रोञ्छन—(न०) [प्र √उञ्छ्+ल्युट्] पोंछ डालना। मिटा डालना; 'प्रोञ्छनाय विषये रसस्य' नै०५.२६। अवशिष्ट को बीन लेना।

प्रोण्ठ—(पुं०) [प्र √अष्ठ्+अच् पृषो० सिद्धि] पीकदान।

प्रोढ, प्रोढि—दे० 'प्रौढ, प्रौढि'।

प्रोत—(वि०) [प्र√वे+क्त, सम्प्रसारण] सिला हुआ, टाँका लगा हुआ। ओत का उलटा, लंबा या सीधा फैला हुआ। बँधा हुआ। बिंधा हुआ। गुथा हुआ, निकला हुआ। जड़ा हुआ, बैठाया हुआ। (न०) बुना हुआ वस्त्र।—उत्सादन (प्रोतोत्सादन)-(न०) [प्रोतानां वस्त्राणाम् उत्सादनम् उत्तोलनं उच्चालनम् यत्र, ब० स०] छाता। खेमा, तंबू, पटगृह।

प्रोत्कण्ठ—(वि०) [प्रकर्षेण उत्कण्ठः, प्रा० स०] गर्दन उठाये हुए। [प्रकृष्टा उत्कण्ठा यस्य, प्रा० ब०] जिसे बहुत अधिक उत्कंठा हो।

प्रोत्कृष्ट—(न०) [प्र—उत्√कुश्+क्त] कोलाहल, शोरगुल, गुलगपाड़ा।

प्रोत्खात—(वि०) [प्र—उद् √खन्+क्त] खोदा हुआ, गड्ढा किया हुआ।

प्रोत्तुङ्ग—(वि०) [प्रकर्षेण उत्तुङ्गः, प्रा० स०] बहुत ऊँचा।

प्रोत्फुल्ल—(वि०) [प्रा० स०] अच्छी तरह खिला हुआ, पूर्ण विकसित।

प्रोत्सारण—(न०) [प्र—उद्√सृ +णिच् +ल्युट्] पिंड छुड़ाना, पीछा छुड़ाना। हटा देना, निकाल देना।

प्रोत्सारित—(वि०) [प्र—उद् √सृ +णिच्+क्त] निकाला हुआ, हटाया हुआ। आगे बढ़ाया हुआ। त्याग हुआ।

प्रोत्साह—(पुं०) [प्रकृष्टः उत्साहः, प्रा०स०] बहुत अधिक उमङ्ग, अतिशय उत्साह।

प्रोत्साहक—(पुं०) [प्र—उद् √ सह्, +णिच्+ण्वुल्] उत्साह बढ़ाने वाला।

√प्रोथ्—भ्वा० उभ० अक० समान होना। योग्य होना। परिपूर्ण होना। प्रोथति—ते, प्रोथिष्यति—ते, अप्रोथीत्—अप्रोथिष्ट।

प्रोथ—(वि०) [√प्रोथ् + अ वा√प्रु +थन्] विख्यात, प्रसिद्ध। स्थापित। यात्रा करने वाला। (न०, पुं०) घोड़े का नथुना; 'पटुतरचपलौष्ठः प्रस्फुरत्प्रोथमश्वः' शि० ११.११। शूकर का थूथन। (पुं०) कमर। चूतड़। गढ़ा, गर्त। वस्त्र। पुराना वस्त्र। गर्भाशय। यात्री।

प्रोथिन्—(पुं०) [प्रोथ+इनि] घोड़ा।

प्रोद्घुष्ट—(वि०) [प्रा० स०] प्रतिध्वनित, प्रतिशब्दायमान।

प्रोद्घोषण—(न०), **प्रोद्घोषणा**—(स्त्री०) [प्रा० स०] उच्च स्वर में बोलना या घोषित करना।

प्रोद्दीप्त—(वि०) [प्रा० स०] अच्छी तरह जलता हुआ, धधकता हुआ।

प्रोद्भिन्न—(वि०) [प्र—उद्√भिद् +क्त] उगा हुआ। फोड़ कर निकला हुआ।

प्रोद्भूत—(वि०) [प्र—उद् √ भू+क्त] निकला हुआ, उगा हुआ।

प्रोद्यत—(वि०) [प्र—उद्√यम्+क्त] उठा हुआ। क्रियावान्, परिश्रमी।

प्रोद्वाह—(पुं०) [प्र—उद् √ वह् +घञ्] विवाह।

प्रोन्नत—(वि०) [प्रकर्षेण उन्नतः, प्रा० स०] अतिशय ऊँचा। आगे निकला हुआ। बड़ा-चढ़ा।

प्रोल्लाघित—(वि०) [प्र—उद् √ लाघ्+क्त] बीमारी से उठा हुआ, रोग छूटने पर कुछ-कुछ प्राप्तबल। रोबीला।

प्रोल्लेखन—(न०) [प्र—उद् √ लिख् ल्युट्] खोलना। चिह्न करना।

प्रोषित—(वि०) [प्र, √वस्+क्त, इट्,

संप्रसारण] विदेश गया हुआ, विदेशवासी। —भर्तृका—(स्त्री०) वह स्त्री जिसका पति परदेश में हो। 'नानाकार्यवशात् यस्या दूरदेशं गतः पतिः। सा मनोभवदुःखार्ता भवेत् प्रोषितभर्तृका' ।। (सा०) ।

प्रोष्ठ, प्रौष्ठ—(पुं०) प्रकृष्टः ओष्ठोऽस्य, ग्रा० व०, पररूप, पक्षे वृद्धिः] बैल, साँड़। बेंत। स्टूल। एक प्रकार की मछली, सौरी मछली। एक प्राचीन देश जो दक्षिण में था।—**पद**–(पुं०) [प्रोष्ठी गौः तस्य इव पादा येषाम् प्रौष्ठपदा नक्षत्रविशेषाः, तद्युक्ता पौर्णमासी, प्रौष्ठपद+अण्—ङीप्, सा अस्मिन् मासे, प्रौष्ठपदी+अण्] भाद्रपद, भादों का महीना।—**पदा**–(स्त्री०) पूर्वाभाद्रपदा और उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र।

प्रौढ—(वि०) [प्र√वह्+क्त, सम्प्रसारण, वृद्धि] पूर्ण वृद्धि को प्राप्त। जिसकी युवावस्था समाप्ति पर हो। जिसमें पूर्णता आ गयी हो; 'प्रौढपुष्पैः कदम्बैः' मे० २५ (जैसे प्रौढ़ विद्वान्)। निपुण। अनुभवी। परिपक्व। विवाहित। उठाया हुआ। गाढ़ा, घना। विशाल। सबल। उग्र, प्रचण्ड। साहसी। अभिमानी।—**प्रताप**–(वि०) बड़ा शक्तिमान्।—**यौवन**–(वि०) ढलती जवानी का।

प्रौढा—(स्त्री०) [प्रौढ+टाप्] अधिक उम्रवाली स्त्री। ३० से ५० या ५५ वर्ष तक की अवस्था वाली स्त्री प्रौढ़ा मानी गयी है।—**अङ्गना** (**प्रौढाङ्गना**)–(स्त्री०) साहसी स्त्री।—**उक्ति** (**प्रौढोक्ति**)–(स्त्री०) साहसपूर्ण कथन।

प्रौढि—(स्त्री०) [प्र√वह्+क्तिन्, सम्प्रसारण, वृद्धि] पूर्णवयस्कता। बढ़ती। बड़ाई, बड़प्पन। साहस। अभिमान। शक्ति। उद्योग।—**वाद**–(पुं०) चटकीला भड़कीला भाषण। साहस से भरा बयान या कथन।

प्रौण—(वि०) [प्र√ओण्+अच्] चतुर, निपुण।

प्रौह—(वि०) [प्र√ऊह्+अच्, वृद्धि] तर्क करने वाला, तार्किक। निपुण, चतुर। (पुं०) [प्र√ऊह्+घञ्, वृद्धि] हाथी का पैर। गाँठ, जोड़।

√प्लक्ष्—भ्वा० पर० स० खाना। प्लक्षति, प्लक्षिष्यति। अप्लाक्षीत्।

प्लक्ष—(पुं०) [√प्लक्ष्+घञ्] वट वृक्ष; 'प्लक्षप्ररोह इव सौधतलं बिभेद' र०८.९३। पाकर वृक्ष। पुराणानुसार सात द्वीपों में से एक। खिड़की।—**जाता**,—**समुद्रयायिका**–(स्त्री०) सरस्वती नदी का नामान्तर। **तीर्थप्रस्रवण**,—(न०),—**राज**–(पुं०) वह स्थान जहाँ से सरस्वती नदी निकलती है।

प्लव—(वि०) [√प्लु+अच्] तैरता हुआ। कूदता हुआ। क्षणभंगुर। (पुं०) तैरना, उतराना। जल की बाढ़। छलांग, कुलांच। बेड़ा, छोटी नाव; 'सर्वं ज्ञानप्लवेनैव वृजिनं सन्तरिष्यसि' भग० ४.३६। मेढक। बंदर। उतार, ढाल। शत्रु। भेड़ा। चाण्डाल। मछली पकड़ने का जाल। वट वृक्ष। कारण्डव पक्षी। साठ संवत्सरों में से पैंतीसवाँ संवत्सर। हाथी। मन्त्र। शब्द। नागरमोथा।—**ग**–(पुं०) बंदर। मेढक। जल का पक्षी विशेष। सिरीष वृक्ष। सूर्य के सारथी का नाम। कन्याराशि।—**गति**–(पुं०) मेढक।

प्लवक—(पुं०) [प्लव+कन्] मेढक। कूदने वाला व्यक्ति। रस्से पर नाचने वाला नट। पाकर वृक्ष। चाण्डाल। बंदर।

प्लवङ्ग—(पुं०) [प्लवेन प्लुतगत्या गच्छति, प्लव√गम्+खच्, डित्, टिलोप, मुमागम] वानर। मृग। पाकर वृक्ष।

प्लवङ्गम—(पुं०) [प्लवेन गच्छति, प्लव √गम्+खच्, मुमागम] वानर। मेढक।

प्लवन—(न०) [√प्लु+ल्युट्] तैरना। स्नान। उछाल, छलांग। आप्लावन,

जल-प्रलय । ढाल । घोड़े की एक चाल ।

प्लवाका—(स्त्री०) [√प्लु+आकन्—टाप्] नाव, भेला ।

प्लविक—(वि०) [प्लवेन तरति, प्लव ठन्] मल्लाह, मांझी ।

प्लाक्ष—(न०) [प्लक्ष+अण्] प्लक्ष वृक्ष के फल । प्लक्षों का समूह । (वि०) प्लक्ष संबंधी । प्लक्ष का बना हुआ ।

प्लाव—(पुं०) [√प्लु+घञ्] बाढ़ (जल की) । तरल पदार्थ का छानना (जिससे उसमें मैल न रह जाय) । उछाल । डुबकी ।

प्लावन—(न०) [√प्लु +णिच्+ल्युट्] स्नान । जल की बाढ़ । जलप्रलय ।

प्लावित—(वि०) [√प्लु + णिच्+क्त] तैराया हुआ । जल की बाढ़ में डूबा हुआ । नम, गीला ।

√प्लिह्—भ्वा० पर० सक० जाना । प्लेहति, प्लेहिष्यति, अप्लेहीत् ।

√प्ली—क्र्या० पर० सक० जाना । प्लिनाति, प्लेष्यति, अप्लैषीत् ।

प्लीहन्—(पुं०) [√प्लिह्+कनिन्, नि० दीर्घ] तिल्ली, बरवट ।—**उदर** (प्लीहोदर)-(न०) तिल्ली की वृद्धि ।—**उदरिन्** (**प्लीहोदरिन्**)-(वि०) वह पुरुष जो तिल्ली की वृद्धि से पीड़ित हो ।—**शत्रु**-(पुं०) रोहितक वृक्ष, रोहड़ा वृक्ष ।

√प्लु—भ्वा० आत्म० अक० तैरना । नाव द्वारा पार होना । डोलना, इधर-उधर झूलना । कूदना, फलांगना । उड़ना । (स्वर का) दीर्घ होना । (णिज०) [**प्लावयति, प्लावयते**] तैरना । बहा ले जाना । स्नान करना । बाढ़ में डूबना । तारतम्य करना । प्लवते, प्लोष्यते, अप्लोष्ट ।

प्लुत—(वि०) [√प्लु+क्त] तैरता हुआ, उतराता हुआ । डूबा हुआ । कूदा हुआ । बढ़ा हुआ । ढका हुआ । जिसमें तीन मात्रायें हों । (न०) छलांग, फलांग । घोड़े की चाल विशेष, पोई । (पुं०) स्वर का एक भेद जो दीर्घ से भी बड़ा और तीन मात्रा का होता है; 'एकमात्रो भवेद् ह्रस्वो द्विमात्रो दीर्घ उच्यते । त्रिमात्रस्तु प्लुतो ज्ञेयो व्यञ्जनं चार्धमात्रकम् ।' —**गति**-(पुं०) खरगोश, खरहा । (स्त्री०) उछलते हुए चलना ।

प्लुति—(स्त्री०) [√प्लु+क्तिन्] जल की बाढ़ । छलांग, फलांग । किसी वर्ण का तीन मात्राओं सहित उच्चारित होना । घोड़े की चाल विशेष, जिसे पोई कहते हैं ।

√प्लुष्—भ्वा० पर० सक० जलाना । प्लोषति, प्लोषिष्यति, अप्लोषीत् । दि० पर० सक० जलाना । प्लुष्यति, प्लोषिष्यति, अप्लुषत्—अप्लोषीत् । क्र्या० पर० सक० छिड़कना, तर करना । मालिश करना, तेल लगाना । भरना । प्लुष्णाति, प्लोषिष्यति, अप्लोषीत् ।

प्लुष्ट—(वि०) [√प्लुष्+क्त] जला हुआ, दग्ध ।

√प्लेव्—भ्वा० आत्म० सक० खिदमत करना, सेवा करना । प्लेवते, प्लेविष्यते, अप्लेवीत् ।

प्लोत—(न०) [प्र √वे+क्त, सम्प्रसारण, रस्य लः] घाव पर बाँधी जाने वाली पट्टी । कपड़ा ।

प्लोष—(पुं०) [√प्लुष् + घञ्] जलन, दाह ।

प्लोषण—(वि०) [स्त्री०—**प्लोषणी**] [√प्लुष्+ल्यु] जलने वाला । (न०) [√प्लुष्+ल्युट्] जलन, दाह ।

√प्सा—अ० पर० सक० खाना, भक्षण करना । प्साति, प्सास्यति, अप्सासीत् ।

प्सात—(व०) [√प्सा + क्त] भक्षित, खाया हुआ ।

प्सान—(न०) [√प्सा+ल्युट्] भोजन ।

फ

फ—(पुं०) संस्कृत वर्णमाला का बाइसवाँ

व्यञ्जन और पवर्ग का दूसरा वर्ण। इसका उच्चारण-स्थान ओष्ठ है और इसके उच्चारण में आभ्यन्तर प्रयत्न होता है। इसका उच्चारण करते समय जिह्वा का अग्र भाग होठों से छूता है, अतः इसे स्पर्शवर्ण कहते हैं। इसके वाह्यप्रयत्न, विवार, श्वास और अघोष हैं। इसकी गणना महाप्राण में है। प, ब, भ, तथा म, इसके सवर्ण हैं। (न०) [√फक्क् +ड] रूखा बोल। फूत्कार, फूंक। झंझावात। जमुहाई। साफल्य। रहस्यमय अनुष्ठान। व्यर्थ की बकबक। गर्मी, उष्णता। उन्नति।

√फक्क्—भ्वा० पर० अक० धीरे-धीरे चलना। गलती करना। दूषित व्यवहार करना। बढ़ना। फूल उठना। फक्कति, फक्किष्यति, अफक्कीत्।

फक्किका—(स्त्री०) [√फक्क् +ण्वुल् —टाप्, इत्व] वह जो शास्त्रार्थ में दुरूह स्थल को स्पष्टीकरण करने के लिये पूर्वपक्ष के रूप में कहा जाय, निर्णय के लिये पूर्वपक्ष। पक्षपात, वह राय जो पूर्वपक्ष और उत्तरपक्ष को सुनने के पूर्व ही कायम कर ली जाय।

फट्—(अव्य०) एक तान्त्रिक शब्द जिसको अस्त्र मंत्र भी कहते हैं।

फट—(पुं०) [√स्फुट्+अच्, पृषो० साधुः] साँप का फैला हुआ फन; 'विषम्भवतु मा भूद्वा फटाटोपो भयङ्करः' पं० १.२४। दाँत। बदमाश, ठग।

फडिङ्गा—(स्त्री०) [फड् इति शब्दं इङ्गति गच्छति, फड् √इङ्ग् + अच्—टाप्] फतिंगा। झींगुर।

√फण्—भ्वा० पर० सक० जाना। अक० अनायास उत्पन्न होना। फणति, फणिष्यति, अफाणीत्—अफणीत्।

फण—(पुं०), **फणा**—(स्त्री०) [फणति विस्तृतिं गच्छति, √फण्+अच्] [फण+टाप्] साँप का फैला हुआ फन।—**कर**—(पुं०) साँप।—**धर**—(पुं०) साँप। शिव जी।—**भृत्**—(पुं०) सर्प।—**मणि**—(पुं०) वह मणि जो सर्प के फन में होती है।—**मण्डल**—(न०) साँप का फन जो फेंटी मारने से गोलाकार हो गया हो।

फणिन्—(पुं०) [फणा+इनि (समास में नलोप)] फनधारी सर्प। राहु। महाभाष्यकार पतञ्जलि; 'फणिभाषित-भाष्य-फक्किका' नै० २.९५। सर्पिणी नामक ओषधि। मरुवक नामक ओषधि। रांगा या टीन।—**इन्द्र (फणीन्द्र)**,—**ईश्वर (फणीश्वर)**—(पुं०) शेषनाग का नामान्तर। वासुकि नाग। पतञ्जलि।—**खेल**—(पुं०) लवा, बटेर।—**चक्र**—(न०) एक प्रकार का सर्पाकार चक्र जिसके द्वारा शुभ या अशुभ नाड़ीकूट जाना जाता है।—**तल्पग**—(पुं०) विष्णु का नामान्तर।—**पति**—(पुं०) शेषनाग। वासुकि नाग।—**प्रिय**—(पुं०) पवन।—**फेन**—(पुं०) अफीम।—**भाष्य**—(न०) पाणिनि के सूत्रों पर पतञ्जलि का महाभाष्य।—**भुज्**—(पुं०) मोर। गरुड़।—**मुख**—(न०) प्राचीन काल का एक औजार जो चोरों के सेंध मारने के काम में आता था।—**लता**,—**वल्ली**,—(स्त्री०) पान की बेल।—**हन्त्री**—(स्त्री०) गन्धनाकुली, रास्ना ओषधि।

फत्कारिन्—(पुं०) [फत्कार इति शब्दः अस्ति अस्य, फत्कार+इनि] पक्षी।

फर—(न०) [√फल्+अच्, लस्य रः] ढाल, फलक।

फरुवक—(न०) पान रखने का डब्बा।

फर्करीक—(पुं०) [√स्फुर्+ईकन्, धातोः फर्करादेशः] हाथ की खुली हुई हथेली। (न०) कल्ला, वृक्ष की नयी डाली। कोमलता।

फर्करीका—(स्त्री०) [फर्करीक+टाप्] जूता।

√फल्—भ्वा० पर० अक० फलना । सफल होना । परिणाम निकलना । पकना । विशीर्ण होना । फलति, फलिष्यति, अफालीत् ।

फल—(न०) [√फल्+अच्] पेड़-पौधों का गूदेदार बीज-कोश । फसल, पैदावार । परिणाम, नतीजा । पुरस्कार । कर्म से प्राप्त होने वाला सुख-दुःख रूप भोग । उद्देश्य । लाभ, फायदा; 'किमपेक्ष्य फलम्पयोधरान्' कि० २.२१ । मूल धन का ब्याज । सन्तति, औलाद । फल के भीतर का बीज या गूदा । तलवार की धार । तीर की नोक । ढाल । अण्डकोष । अङ्कगणित की किसी क्रिया का अन्तिम परिणाम । रजस्वलाधर्म । जायफल । हल की नोक ।—**अनुबन्ध (फलानुबन्ध)**–(पुं०) फलों या परिणामों की प्रणाली ।—**अनुमेय (फलानुमेय)**–(वि०) फल देख कर निकाला हुआ सार ।—**अन्त (फलान्त)** (पुं०) बाँस ।—**अन्वेषिन् (फलान्वेषिन्)**–(वि०) (कर्म का) फल या पुरस्कार चाहने वाला ।—**अम्ल (फलाम्ल)**–(न०) इमली । अम्लवेत । खट्टे फल वाला पेड़ ।—**०पञ्चक (फलाम्लपञ्चक)**–(न०) बेर, अनारदर, विषाविल, अम्लवेत और बिजौरा का समाहार ।—**अशन (फलाशन)**–(पुं०) तोता, सुग्गा, सूआ ।—**अस्थि (फलास्थि)**–(न०) नारियल ।—**आकाङ्क्षा (फलाकाङ्क्षा)**–(स्त्री०) (अच्छे) परिणाम की अभिलाषा । —**आगम (फलागम)**–(पुं०) फलोत्पत्ति; 'भवन्ति नम्रास्तरवः फलागमैः' शा० ५.१२ । फल फलने का समय या मौसम । शरदृतु । —**आढ्या (फलाढ्या)**–(स्त्री०) कठकेला । एक प्रकार के अंगूर जिनमें बीज नहीं होते । —**उत्पत्ति (फलोत्पत्ति)**–(स्त्री०) फल की पैदावार । लाभ, मुनाफा । (पुं०) आम का पेड़ ।—**उदय (फलोदय)**–(पुं०) फल का दृष्टिगोचर होना । परिणाम निकलना । सफलताप्राप्ति या अभीष्टसिद्धि ।—**कण्टक**–(पुं०) कटहल ।—**कर्कशा**–(स्त्री०) वनबेर, झड़बेरी ।—**काल**–(पुं०) फलों का मौसम ।—**कृच्छ्**–(पुं०) एक प्रकार का कृच्छ्रव्रत जिसमें फलों का क्वाथ पीकर रहना होता है ।—**कृष्ण**–(पुं०) जलआँवला । करंज का पेड़ ।—**केसर**–(पुं०) नारियल का वृक्ष ।—**ग्रह**–(पुं०) लाभ निकालने वाला व्यक्ति ।—**ग्रहि,—ग्राहिन्**–(वि०) ऋतु में फल देने वाला ।—**चमस**–(पुं०) ...—**छदन (फलच्छदन)**–(न०) तख्तों से बना हुआ मकान ।—**त्रय**–(न०) त्रिफला । द्राक्षा, परुष और काश्मीरी ।—**त्रिक**–(न०) त्रिफला । त्रिकुटा ।—**द**–(वि०) फलदायी । लाभदायी । (पुं०) वृक्ष ।—**निवृत्ति**–(स्त्री०) परिणाम का अवसान ।— **निष्पत्ति**–(स्त्री०) फलोत्पत्ति ।—**पाकान्ता** –(स्त्री०) वे पौधे जो फल पकने के बाद नष्ट हो जाते हैं ।—**पादप**–(पुं०) फलदार वृक्ष । **पुच्छ**—(पुं०) गाजर, शलजम आदि के वर्ग की वनस्पति ।—**पूर,—पूरक**–(पुं०) बिजौरा, नीबू ।—**प्रदान**–(न०) सगाई । फल का दान ।—**भूमि**–(स्त्री०) वह स्थान जहाँ कर्मों के फल का भोग करना हो ।—**भृत्**–(वि०) फलदार ।—**भोग**–(पुं०) फल का भुगतना । लाभ आदि का अधिकार ।—**योग**–(पुं०) फलप्राप्ति या अभीष्टप्राप्ति । मजदूरी ।—**राज**–(पुं०) तरबूज ।—**वर्तुल**–(न०) तरबूज ।—**वृक्ष**–(पुं०) फलवान् वृक्ष ।—**वृक्षक**–(पुं०) कटहल का पेड़ ।—**षाडव**–(पुं०) अनार का वृक्ष ।—**श्रुति**–(स्त्री०) सत्कर्म विशेष का फल बताने वाला वाक्य । ऐसे वाक्य का श्रवण । —**श्रेष्ठ**–(पुं०) आम का पेड़ ।—**सम्पद्**–(स्त्री०) फलों का बाहुल्य । सफलता । —**साधन**–(न०) किसी भी अभीष्ट-सिद्धि का कोई उपाय ।—**स्थापन**–(न०)

सीमन्तोन्नयन संस्कार ।—स्नेह्–(पु॰) अख-रोट का पेड़ । —हारी–(स्त्री॰) काली या दुर्गा का नामान्तर । —हेतु–(वि॰) फल के उद्देश्य से काम करने वाला ।

फलक—(न॰) [फल+कन्] लकड़ी का तख्ता, पट्टी । चौरस सतह । ढाल । कागज का तख्ता । ताँबे, हाथीदाँत, दफ्ती आदि का पट्ट जो लेख या चित्र के आधार का काम दे । चौकी । फल, परिणाम । लाभ । आर्तव । कमल का बीजकोश । ललाट की अस्थि । धोबी का पाट । तीर की गाँसी। चूतड़ । हथेली ।—पाणि–(वि॰) ढाल-धारी ।—यन्त्र–(न॰) ज्योतिष सम्बन्धी यंत्र विशेष जिसको भास्कराचार्य ने आवि-ष्कृत किया था ।

फलतस्—(अव्य) [फल+तस्] फलस्वरूप, परिणामतः, अन्ततो गत्वा, लिहाजा, अतः ।

फलन—(न॰) [√फल्+ल्युट्] फलोत्पत्ति, फलों का लगना । नतीजा निकलना ।

फलवत्—(वि॰) [फल+मतुप्, वत्व] फल वाला, फरने वाला । परिणामप्रद । सफल । लाभप्रद ।

फलवती—(स्त्री॰) [फलवत्+ ङीप्] प्रियंगु नाम का पौधा ।

फलिता—(स्त्री॰) [फल+इतच्—टाप्] रजस्वला स्त्री ।

फलिन्—(वि॰) [फल+इनि] फलवान् । फलने वाला । (पु॰) वृक्ष ।

फलिन्—(वि॰) [फल+इनि] फलने वाला । (पु॰) कटहल का पेड़ । श्योनाक । रीठा ।

फलिनी, फली—(स्त्री॰) [फलिन्+ ङीप्] [फल+अच्—ङीष्] प्रियङ्गु नामक लता । अग्निशिखा वृक्ष । इलायची । द्राक्षासव । मुसली । मेंहदी । जल-पीपल । त्रायमाण लता । दूधी, दुग्धिका ।

फल्गु—(वि॰) [√फल्+उ, गुकागम] रसहीन, फीका । साररहित । निकम्मा, अनु-पयोगी, अनावश्यक । थोड़ा । सूक्ष्म । व्यर्थ । निर्बल, कमजोर । (स्त्री॰) वसन्त ऋतु । गूलर, वृक्ष विशेष । गया की एक नदी का नाम । मिथ्या वचन ।—उत्सव–(पु॰) होली का त्योहार, वसन्तोत्सव ।

फल्गुन—(पु॰) [√फल्+उनन्, गुकागम] फागुन मास । इन्द्र का नाम । अर्जुन ।

फल्गुनी—(स्त्री॰) [फल्गुन+ ङीप्] नक्षत्र-विशेष पूर्वफल्गुनी और उत्तरफल्गुनी नक्षत्र।

फल्य—(न॰) [फलाय हितम्, फल+यत्] फूल ।

फाणि—(पु॰) [√स्फाय्+नि, पृषो॰ साधु] शीरा । दही में गूँधा हुआ सत्तू ।

फाणित—(न॰) [√फण् + णिच्+क्त] राब । शीरा ।

फाण्ट—(वि॰) [√फण्+क्त, नि॰ साधुः] आसानी से या सहज में बना हुआ । (पु॰, न॰) एक तरह का काढ़ा जो औषध-चूर्ण को गरम पानी में भिगो कर छान लेने से प्रस्तुत होता है ।

फाल—(न॰, पु॰) [फलाय शस्याय हितम्, फल+अण् वा फल्यते विदार्यते भूमिः अनेन √फल्+घञ्] हल की लकड़ी में लगाया जाने वाला नुकीला लोहा जिससे जमीन खुदती है, कुसी । सीमन्त भाग, माँग की पट्टी । (पु॰) बलराम । शिव । नीबू का वृक्ष । (न॰) सूती कपड़ा । जुता हुआ खेत । नौ प्रकार की दैवी या दिव्य परीक्षाओं में से एक । गुलदस्ता । फलाँग । एक तरह का फावड़ा । ललाट । फूला ।

फाल्गुन—(पु॰) [फल्गुन+अण् (स्वार्थे] फागुनमास । [फल्गुनीनक्षत्रे जातः, फल्गुनी +अण्] अर्जुन का नामान्तर । अर्जुन वृक्ष ।—अनुज (फाल्गुनानुज)–(पु॰) चैत्रमास । वसन्तकाल । नकुल और सहदेव का नाम ।

फाल्गुनी—(स्त्री॰) [फल्गुनीभिः युक्ता पौर्ण-

मासी, फल्गुनी+अण्—ङीप्] फागुन मास की पूर्णमासी । [फल्गुन+अण्—ङीप्] पूर्वा फाल्गुनी और उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र । —भव–(पुं०) बृहस्पति का नाम ।

फिरङ्ग—(पुं०) फिरंगियों का देश, फिरंगिस्तान, यूरोप । गरमी की बीमारी । भावप्रकाश में इस रोग की नाम-निरुक्ति इस प्रकार की गई है—'फिरङ्गसंज्ञके देशे बाहुल्येनैव यद् भवेत् । तस्मात् फिरङ्ग इत्युक्तो व्याधिर्व्याधिविशारदैः ॥'

फिरङ्गिन्—(पुं०) [फिरङ्ग+इनि] फिरंग देश का निवासी, यूरोपियन ।

फु—(पुं०) [√फल्+डु] मंत्रोच्चारण करके फूंकना । तुच्छ वचन ।

फुक—(पुं०) [फुना अस्पष्टवाक्येन कायति शब्दायते, फु√कै+क] पक्षी ।

फुट—(वि०) [√स्फुट्+क, पृषो० सिद्धि] विदीर्ण । खिला हुआ ।

फुत्, फूत्—(अव्य०) अनुकरण शब्द । तुच्छ भाषण ।—**कर**—(पुं०) अग्नि ।—**कार**–(पुं०),—**कृत**– (न०),—**कृति**–(स्त्री०) फूंकना । सर्प की फुफकार । सिसकन । चीख मारना ।

फुफ्फुस—(न०, पुं०) फेफड़ा ।

√फुल्ल्–भ्वा० पर० अक० फूलना, खिलना । फुल्लति, फुल्लिष्यति, अफुल्लीत् ।

फुल्ल—(वि०) [√फुल्ल्+अच् वा √फल्+क्त, उत्व, लत्व] फैला हुआ, खिला हुआ । विकसित; 'फुल्लासनाग्रविटपान्' र० ९.६३ । प्रसन्न । (न०) पुष्प ।—**लोचन**–(वि०) (आनन्द से) जिसके नेत्र विकसित हो रहे हों ।—**फाल**–(पुं०) फटकने में सूप या छाज से निकलने वाली हवा ।

फेट्कार—(पुं०) [फेट् इति अव्यक्तशब्दस्य कारः करणम्] अव्यक्त वायुशब्द या पशुध्वनि ।

फेण, फेन—(पुं०) [√स्फाय्—न, फेशब्दादेश, पाक्षिक णत्व] झाग, बुद्बुदों का समूह, फेन ।—**पिण्ड**–(पुं०) बबूला, बुद्बुद । खोखले विचार ।—**वाहिन्**–(पुं०) छानने के काम आने वाला कपड़ा, छनना ।

फेणक, फेनक—(न०) [फेण, फेन+कन्] झाग, फेन ।

फेनिल—(वि०) [फेन+इलच्] झागदार, फेनदार; 'फेनिलमम्बुराशि' र० १३.२ ।

फेरु, फेरण्ड—(पुं०) [फे इति शब्द राति गृह्णाति, फे√रा+कु] [फे इत्यव्यक्तशब्देन रण्डति, फे√रण्ड्+अच्] शृगाल, गीदड़, स्यार ।

फेरव—(पुं०) [फे इति रवो यस्य] शृगाल, स्यार । बदमाश, गुंडा । राक्षस । प्रेत । पिशाच ।

फेरु—(पुं०) [फे इति शब्देन रौति, फे√रु+डु] स्यार, गीदड़ ।

√फेल्—भ्वा० पर० सक० जाना । फेलति, फेलिष्यति, अफेलीत् ।

फेल—(न०), **फेला, फेलिका, फेली**–(स्त्री०) [फेल्यते दूरे निक्षिप्यते, √फेल्+घञ्] [√फेल्+अ—टाप्] [√फेल्+इन्+कन्—टाप्] [√फेल्+इन्—ङीप्] उच्छिष्ट, जूठा ।

ब

ब—संस्कृत वर्णमाला का तेईसवां व्यञ्जन और पवर्ग का तीसरा वर्ण । यह दोनों ओठों को मिलाने पर उच्चारित होता है इसलिये इसको ओष्ठ्य वर्ण कहते हैं । यह अल्पप्राण है और इसके उच्चारण में संवार, नाद और घोष नाम के बाह्य प्रयत्न होते हैं । (पुं०) [√वल्—ड] बुनावट । बुआई । वरुण । घड़ा । योनि । समुद्र । जल । गमन । तन्तुसन्तान । सूचना ।

√बंह्—भ्वा० आत्म० अक० बढ़ना । बंहते, बंहिष्यते, अबंहिष्ट ।

बंहिमन्—(पुं०) [बहुल+इमनिच्, बंहादेश] बाहुल्य, विपुलता ।

बंहिष्ठ—(वि०) [बहु+इष्ठन्, बंहादेश] बहुत अधिक ।

बंहीयस्—(वि०) [बहु+ईयसुन्, बंहादेश] अत्यधिक, अतिशय बहुल ।

बक—(पुं०) [वङ्कते कुटिलीभवति, √वङ्क्+अच्, पृषो० साधुः] ढोंगी, छलिया, कपटी । एक असुर का नाम जिसे भीम ने मारा था । एक और असुर का नाम जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था । एक पुष्पवृक्ष, अगस्त । कुबेर का नाम ।—**चर**,—**वृत्ति**,—**व्रतचर**,—**व्रतिक**,—**व्रतिन्**–(पुं०) वह पुरुष जो नीचे ताकता हो और स्वार्थ साधन में तत्पर तथा कपटयुक्त हो, ढोंगी, बगलाभगत ।—**जित्**, —**निषूदन**–(पुं०) भीम । श्रीकृष्ण ।—**ध्यान**–(न०) बगले जैसी ध्यानमग्न होने की दिखाऊ मुद्रा, साधुता का ढोंग ।—**पञ्चक**–(न०) कार्त्तिक-शुक्ल एकादशी से पूर्णिमा तक के पाँच दिन ।—**व्रत**–(न०) ढोंग, दम्भ ।

बकुल—(पुं०) [√वङ्क्+उरच्, रेफस्य लत्वम्, नलोपः] मौलसिरी का पेड़ । शिव । (न०) मौलसिरी का फूल ।

बकेरुका—(स्त्री०) [बकानां बकसमूहानाम् ईरकं गतिः यत्र] छोटी बगली । वात-वर्जित शाखा ।

बकोट—(पुं०) बगला ।

√बण्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना । बणति, बणिष्यति, अबाणीत्—अबणीत् ।

√बद्—भ्वा० पर० अक० स्थिर होना । बदति, बदिष्यति, अबादीत्—अबदीत् ।

बदर—(पुं०) [बदति स्थिरीभवति छिन्नेऽपि पुनः पुनः प्ररोहति, √बद्+अरच्] बेर का पेड़ । (न०) उसका फल । कपास । बिनौला ।—**पाचन**–(न०) तीर्थस्थान विशेष ।

बदरिका—(स्त्री०) [बदरी+कन्—टाप्, ह्रस्व] बेर का पेड़ या फल; 'अन्ये अर्बरिकाकाराः बहिरेव मनोहराः' हि० १.९४ । हिन्दुओं के चार धामों में से एक, जिसे बदरिकाश्रम या बदरीनारायण कहते हैं ।—**आश्रम** (**बदरिकाश्रम**)–(न०) हिन्दुओं का हिमालय-पर्वत-स्थित प्रसिद्ध तीर्थस्थान ।

बदरी—(स्त्री०) [बदर+ङीष्] बेर का पेड़ ।

बद्ध—(वि०) [√बन्ध्+क्त] बँधा हुआ । हथकड़ी-बेड़ी से जकड़ा हुआ । गिरफ्तार किया हुआ, पकड़ा हुआ । कैदखाने में बंद । कमर में कसा हुआ । रोका हुआ । बनाया हुआ । जुड़ा हुआ, मिला हुआ । दृढ़ता से जमाया हुआ । भव-बंधन में फँसा हुआ ।—**अङ्गुलित्र** (**बद्धाङ्गुलित्र**),—**अङ्गुलित्राण** (**बद्धाङ्गुलित्राण**)–(वि०) दस्ताना पहिने हुए ।—**अञ्जलि** (**बद्धाञ्जलि**)–(वि०) हाथ जोड़े हुए ।—**अनुराग** (**बद्धानुराग**)–(वि०) प्रेम में बँधा हुआ ।—**अनुशय** (**बद्धानुशय**)–(वि०) पश्चात्ताप करने वाला ।—**आशङ्क** (**बद्धाशङ्क**)–(वि०) जिसके मन में शंका उत्पन्न हो गई हो, शक्की ।—**उत्सव** (**बद्धोत्सव**)–(वि०) उत्सव मनाने वाला ।—**उद्यम** (**बद्धोद्यम**)–(वि०) मिलकर यत्न करने वाला ।—**कक्ष**,—**कक्ष्य**—(वि०) दे० 'बद्धपरिकर' ।—**कोप**,—**मन्यु**,—**रोष**–(वि०) क्रोधी, रोषान्वित । क्रोध को दबा देने वाला ।—**चित्त**,—**मनस्**–(वि०) किसी ओर मन को दृढ़ता से लगाने वाला ।—**जिह्व**–(वि०) जीभ कीला हुआ, मौन ।—**दृष्टि**,—**नेत्र**,—**लोचन**– (वि०) जो किसी चीज पर आँखें गड़ाये हो ।—**नेपथ्य**–(वि०) नाटकीय पोशाक पहिने हुए ।—**परिकर**–(वि०)

कमर कसे हुए, तैयार ।—**प्रतिज्ञ**–(वि०) वेतन लिये हुए, प्रतिज्ञा किये हुए । दृढ़ता-पूर्वक (किसी बात का) निश्चय किये हुए । —**मुष्टि**–(वि०) कंजूस । मुट्ठी बाँधे हुए । **मूल**–(वि०) जिसने जड़ पकड़ ली हो । जो दृढ़ या अटल हो गया हो ।—**मौन**–(वि०) खामोश, चुपचाप ।—**राग**–(वि०) किसी के प्रति अनुरक्त या आसक्त ।—**वसति**–(वि०) जिसका वास-स्थान निश्चित हो । —**वाच्**–(वि०) जिसका बोलना बंद हो गया हो, जबानबंद ।— **वेपथु**–(वि०) थरथर काँपता हुआ ।—**वैर**–(वि०) जिसके मन में किसी के प्रति वैर बद्धमूल हो गया हो ।—**शिख**–(वि०) जिसकी चोटी गठियायी या बँधी हुई हो । अल्प-वयस्क ।—**सूतक**–(पुं०) रसेश्वर दर्शन के अनुसार विशेष प्रकार से तैयार किया हुआ पारा ।—**स्नेह**–(वि०) दे० 'बद्धराग' ।

√**बध्**—भ्वा० आत्म० सक० बाँधना । घृणा करना, नफरत करना । बीभत्सते, बीभत्सिष्यते, अबीभत्सिष्ट । चु० पर० सक० बाँधना । बाधयति ।

बधिर—(वि०) [बध्नाति कर्णम्, √बन्ध् +किरच्] बहरा ।

बधिरित—(वि०) [बधिर+क्विप् + क्त] बहरा बनाया हुआ ।

बधिरिमन्—(पुं०) [बधिर+इमनिच्]बहरा-पन, बधिरता ।

बधू—दे० 'वधू' ।

बधूटी—दे० 'वधूटी' ।

बन्दिन्—दे० 'वन्दिन्' ।

बन्दि, बन्दी—दे० 'वन्दि' ।

√**बन्ध्**—क्र्या० पर० सक० बाँधना, कसना । पकड़ना, कैद करना । बेड़ी डालना । रोकना । पहिनना, धारण करना । आकर्षण करना । मिलाकर बाँधना या कसना । (इमारत या भवन) बनाना । (पद्य) रचना । पैदा करना । लगाना । रचना । बध्नाति, भन्त्स्यति, अभान्त्सीत् ।

बन्ध—(पुं०) [√बन्ध्+घञ्]बंधन; 'बन्धं मोक्षं च या वेत्ति बुद्धिः सा पार्थ सात्त्विकी' भग० १८.३० । बाल बाँधने का फीता या डोरी । बेड़ी, जंजीर । पकड़, गिरफ्तारी । बनावट । सम्बन्ध, मेल । जोड़ना (हाथों-का)। पट्टी, मेलमिलाप । प्रदर्शन, प्रकटन । फैलाव । परिणाम । परिस्थिति । मैथुन का आसन विशेष । किनारी, चौखटा । विशेष प्रकार की पद्य-रचना (खड्गबंध) । शरीर । धरोहर ।—**करण**– (न०) बेड़ी डालना । कैद करना ।—**तन्त्र**–(न०) पूरी फौज या चतुरंगिनी सेना ।—**स्तम्भ**–(पुं०) खूँटा ।

बन्धक—(वि०) [√बन्ध्+ण्वुल् या बन्ध +कन्] बाँधने वाला । पकड़ने वाला । भङ्ग करने वाला, तोड़ने वाला । (पुं०) पट्टी । रस्सी । बाँध । धरोहर । आसन । विनिमय, बदलौअल । वादा । अंगन्यास । बंधन । कैद । नगर ।

बन्धकी—(स्त्री०) [बध्नाति मानसम्, √बन्ध् +ण्वुल् —ङीष्] छिनाल स्त्री । रंडी, वेश्या । हथिनी ।

बन्धन—(न०) [√बन्ध्+ल्युट्]बाँधने की क्रिया । वह वस्तु जो किसी की स्वतंत्रता में बाधक हो । फँसा रखने वाली वस्तु । रस्सी । जंजीर, बेड़ी । कारागार, कैदखाना । वध, हिंसा । डंठल । रग, नस । पट्टी ।—**आगार** (**बन्धनागार**)–(पुं०),—**आलय** (**बन्धनालय**)–(पुं०) कारागार, कैदखाना । —**कारिन्**—(वि०) बाँधने वाला । आलिंगन करने वाला ।—**ग्रन्थि**–(पुं०) बंधन या पट्टी की गाँठ । फंदा । पशु बाँधने की रस्सी ।—**पालक**, —**रक्षिन्**–(पुं०) कारागार का रक्षक, जेलखाने का दरोगा । —**वेश्मन्**–(न०) जेलखाना, कारागार ।

—स्तम्भ-(पुं०) पशु बाँधने का खूँटा। —स्थ-(पुं०) कैदी, बँधुआ।—स्थान-(न०) अस्तबल, गोशाला आदि।

बन्धित—(वि०) [बन्ध+इतच्] बँधा हुआ। कैद में पड़ा हुआ।

बन्धित्र—(पुं०) [बन्ध्+इत्र] कामदेव। चमड़े का पंखा। देह पर का तिल।

बन्धु—(पुं०) [√बन्ध+उ] नातेदार, भाई-बिरादरी, सम्बन्धी। पारिवारिक नातेदार [धर्मशास्त्र में तीन प्रकार के बन्धु बतलाये गये हैं। अर्थात् 'आत्मबन्धु', 'पितृबन्धु' और 'मातृबन्धु']। कोई भी किसी प्रकार का सम्बन्धी जैसे प्रवासबन्धु, धर्मबन्धु, आदि। मित्र। पति [यथा "वैदेहिबन्धोर्हृदयं विददे" —रघुवंश। पिता। माता। भाई। बन्धु-जीव नामक वृक्ष। जो किसी जाति या पेशे से नाम मात्र का सम्बन्ध रखता हो। (इसका प्रयोग प्रायः तिरस्कारसूचक होता है—यथा, 'ब्रह्मबन्धु।")—**कृत्य**-(न०) भाई-बिरादर का कर्तव्य।—**जन**-(पुं०) आत्मीय, निकट संबंधियों की समष्टि, भाई-बंद। —**जीव**,—**जीवक**-(पुं०) एक वृक्ष का नाम, गुलदुपहरिया।—**दत्त**-(न०) विवाह के समय स्त्री को अपने नातेदारों से मिला हुआ धन।—**प्रीति**-(स्त्री०) भाई-बिरादरी का प्रेम। मित्र के प्रति प्रेम।—**भाव**-(पुं०) मैत्री। भाईचारा, नातेदारी। —**वर्ग**-(पुं०) भाई-बन्द।—**हीन**-(वि०) भाई-बिरादरी या या मित्र से रहित।

बन्धुक—(पुं०) [√बन्ध्=उक] दुपहरिया का वृक्ष जिसमें लाल रंग के फूल लगते हैं और जो बरसात में फलता है। वर्णसङ्कर।

बन्धुका, बन्धुकी—(स्त्री०) [बन्धु+कन् —टाप्, पक्षे ङीप्] असती स्त्री, छिनाल औरत।

बन्धुता—(स्त्री०) [बन्धु+तल्—टाप्] बन्धु होने का भाव। भाई-चारा। मैत्री, दोस्ती।

बन्धुदा—(स्त्री०) [बन्धु√दा+क—टाप्] छिनाल औरत।

बन्धुर—(वि०) [√बन्ध्+उरच्] तरङ्गित, लहराता हुआ। चढ़ाव-उतार वाला। ऊँचा-नीचा। झुका हुआ, नवा हुआ। टेढ़ा। मनोहर, सुन्दर। बहरा। अनिष्टकर, उपद्रवी। (न०) मुकुट, ताज। (पुं०) हंस। सारस। अर्कविशेष। खली। योनि।

बन्धुरा—(स्त्री०) [बन्धुर+टाप्] छिनाल औरत। (पुं० बहुवचन) भुना हुआ अनाज या कोई खाद्य पदार्थ।

बन्धुल—(वि०) [√बन्ध्+उलच् वा बन्धु √ला+क] झुका हुआ। प्रसन्नकारक, हर्ष-प्रद। सुन्दर। (पुं०) छिनाल औरत का लड़का। वेश्या-पुत्र। रंडी का टहलू। गुल-दुपहरिया।

बन्धूक—(पुं०) [बध्नाति सौन्दर्येण चित्तम्, √बन्ध्+ऊक] गुलदुपहरिया का पौधा। (न०) उसका फूल; 'बन्धूकद्युतिबान्धवोऽयमधरः' गीत० १०।

बन्धूर—(वि०) [√बन्ध् + ऊर] दे० 'बन्धुर'। (न०) छिद्र, छेद।

बन्धूलि—(पुं०) [√बन्ध्+ऊलि] बन्धु-जीव नामक वृक्ष, गुलदुपहरिया का पौधा।

बन्ध्य—(वि०) [√बन्ध्+ण्यत्] बाँधने योग्य। कैद करने लायक। मिलाने योग्य, एक करने योग्य। बनाने योग्य। बाँझ, जिसमें कुछ भी पैदावार न हो, बंजर। वंचित (समासान्त में)।

बन्ध्या—(स्त्री०) [बन्ध्य+टाप्] बाँझ औरत। बाँझ गौ। बालछड़।—**तनय**, —**पुत्र**,—**सुत**-(पुं०),—**दुहितृ**,—**सुता**-(स्त्री०) बाँझ स्त्री का पुत्र या पुत्री; 'एष बन्ध्यासुतो याति खपुष्पकृत-शेखरः'। [इसका प्रयोग केवल किसी असम्भाव्य वस्तु के लिये किया जाता है।]

बन्ध्र—(न०) [√बन्ध् + ष्ट्रन्] बन्धन, गाँस।

बभ्रवी—(स्त्री०) [बभ्रोः शिवस्य इयं पत्नी, बभ्रु+अण्—ङीप्, न वृद्धिः] दुर्गा देवी का नामान्तर।

बभ्रु—(वि०) [√भृ+कु, द्वित्व] गहरे रंग का; 'बबन्ध बालारुणबभ्रुवल्कलं' कु० ५.८। गंजा। (पुं०) अग्नि। नेवला। गहरा भूरा रंग। भूरे रंग के केशों वाला मनुष्य। एक यादव का नाम। शिव। विष्णु। चातक। —**धातु**-(पुं०) सुवर्ण, सोना। गेरू।—**वाहन**-(पुं०) चित्राङ्गदा के गर्भ से उत्पन्न अर्जुन के पुत्र का नाम।

बम्भर—(पुं०) [√भृ+अच्, द्वित्व, मुम्] भ्रमर, भौंरा।

बम्भराली—(स्त्री०) [बम्भर √अल्+अच्—ङीप्] मक्खी।

बरट—(पुं०) [√वृ+अटन्] एक अन्न।

√**बर्ब्**—भ्वा० पर० सक० जाना। बर्बति, बर्बिष्यति, अबर्बीत्।

बर्बट—(पुं०) [√बर्ब्+अटन्] राजमाष नाम का अनाज।

बर्बटी—(स्त्री०) [**बर्बट**+ङीष्] राजमाष नाम का धान्य। रंडी, वेश्या।

बर्बर—(वि०) [√वृ+अरच्, वुट्] अनार्य। जंगली। मूर्ख। घुँघराले। (पुं०) जंगली, असभ्य आदमी। घुँघराले बाल। एक कीड़ा। एक प्रकार का नृत्य। हथियार की आवाज़।

बर्बरा—(स्त्री०) [बर्बर+टाप्] वनतुलसी। एक नदी। पीत चंदन। नीले रंग की मक्खी।

बर्बुर—(पुं०) [√बर्ब्+उरच्] बबूल का पेड़।

√**बर्ह्**—भ्वा० आत्म० अक० प्रधान होना। सक० बोलना। देना। ढकना। मारना। चिल्लाना। बर्हते, बर्हिष्यते, अबर्हिष्ट।

बर्ह—(न०, पुं०) [√बर्ह्+अच्] मयूर की पूँछ। पक्षी की पूँछ। मोर की पूँछ के पर। पत्ता। अनुचर वर्ग।—**भार**-(पुं०) मोर की पूँछ। मोरछल।

बर्हण—(न०) [√बर्ह्+ल्यु] पत्ता।

बर्हि—(पुं०) [√बर्ह्+इन्] अग्नि। (न०) कुश, दर्भ।

बर्हिण—(वि०) [बर्ह+इनच् वा √बर्ह्+इनन्] मोर की पाँखों से अलंकृत। (पुं०) मोर। मयूर।—**वाज**-(पुं०) मयूर के पंखों से युक्त बाण, वह तीर जिसमें मोर के पंख लगे हों।—**वाहन**-(पुं०) कार्त्तिकेय।

बर्हिन्—(पुं०) [बर्ह+इनि] मोर।

बर्हिस्—(पुं०, न०) [√बर्ह्+इसि, नलोप] कुश, दर्भ। कुश की शय्या। (पुं०) अग्नि। प्रकाश। (न०) जल। यज्ञ।—**केश** (**बर्हिष्केश**),—**ज्योतिस्** (**बर्हिर्ज्योतिस्**)-(पुं०) अग्नि। देवता।—**शुष्मन्** (**बर्हिःशुष्मन्**)-(पुं०) अग्नि।—**सद्** (**बर्हिषद्**)-(वि०) कुशासन पर बैठा हुआ। (पुं०) (बहुवचन) पितृगण विशेष।

√**बल्**—भ्वा० पर० अक० श्वांस लेना, जीवित रहना। सक० अनाज एकत्र करना। उभ० सक० देना। मार डालना। बोलना। देखना। चिह्नित करना। बलति-ते, बलिष्यति-ते, अबालीत्—अबलीत्—अबलिष्ट। चु० उभ० सक० पालन-पोषण करना। बालयति-ते।

बल—(न०) [√बल्+अच्] शरीर की शक्ति, ताकत। उग्रता, प्रचण्डता। सेना, सैन्यदल। (शरीर की) मुटाई, मोटापन। शरीर। वीर्य, धातु। खून। गोंद। घेंघुआ, अंकुर। (पुं०) कौआ। कृष्ण के बड़े भाई बलराम। एक दैत्य जिसे इन्द्र ने मारा था।—**अग्र** (**बलाग्र**)-(पुं०) सेनानायक, चमूपति।—**अङ्कक** (**बलाङ्कक**)-(पुं०)

बसन्त ऋतु ।—**अञ्चिता (बलाञ्चिता)**–(स्त्री०) बलराम की बाँसुरी ।—**अट (बलाट)**–(पुं०) मूंग ।—**अध्यक्ष (बलाध्यक्ष)**–(पुं०) चमूपति, सेना का बड़ा अधिकारी ।—**अनुज (बलानुज)**–(पुं०) श्रीकृष्ण ।—**अभ्र (बलाभ्र)**–(पुं०) बादल के आकार में सेना ।—**अराति (बलाराति)**–(पुं०) इन्द्र ।—**अवलेप (बलावलेप)**–(पुं०) बलवान् होने का अभिमान ।—**आत्मिका (बलात्मिका)**–(स्त्री०) हस्तिशुण्डी या सूरजमुखी ।—**आश (बलाश)**, —**आस (बलास)**–(पुं०) क्षय रोग । कफ । गले की सूजन ।—**आह (बलाह)**–(पुं०) जल ।—**उपपन्न (बलोपपन्न)**,—**उपेत (बलोपेत)**–(वि०) बलवान्, ताकतवर ।—**ओघ (बलौघ)**–(पुं०) सेनाओं का समूह, अनेक सेनाएँ ।—**क्षोभ**–(पुं०) गदर, विप्लव ।—**चक्र**–(न०) साम्राज्य, राष्ट्र । सेना ।—**ज**–(न०) नगरद्वार । खेत । अनाज । अनाज का ढेर । युद्ध । गरी ।—**जा**–(स्त्री०) पृथिवी । सुन्दरी स्त्री । रस्सी । चमेली विशेष ।—**द**–(पुं०) बैल ।—**देव**–(पुं०) पवन । श्रीकृष्ण के बड़े भाई का नाम ।—**द्विष्**–(पुं०),—**निषूदन**–(पुं०) इन्द्र ।—**पति**–(पुं०) सेनापति ।—**प्रसू**–(पुं०) बलराम की माता रोहिणी जी ।—**भद्र**–(पुं०) मजबूत आदमी । गवय, नीलगाय । बलराम । लोध्र वृक्ष ।—**भद्रा**—(स्त्री०) कुमारी । घृतकुमारी ।—**भिद्**–(पुं०) इन्द्र ।—**भृत्**–(वि०) मजबूत, बलवान् ।—**राम**–(पुं०) बलदेव जी का नामान्तर ।—**विन्यास**–(पुं०) सैन्यव्यूह ।—**व्यसन**—(न०) सेना की हार ।—**सूदन** (पुं०) इन्द्र ।—**स्थ**–(पुं०) योद्धा ।—**स्थिति**–(स्त्री०) पड़ाव, छावनी ।—**हन्**–(पुं०) इन्द्र।—**हीन**-(वि०) बलशून्य, निर्बल, कमजोर।

बलक्ष—(वि०) [√बल् + क्विप्, बल् √क्षल्+घञ्] श्वेत, सफेद; 'द्विरददन्तवलक्षमलक्ष्यत' शि० ६.३४ । (पुं०) सफेद रंग ।—**गु**–(पुं०) चन्द्रमा ।

बलल—(पुं०) [बल√ला+क] बलराम । इन्द्र का नामान्तर ।

बलवत्—(वि०) [बल+मतुप्, वत्व] शक्तिशाली, ताकतवर । रोबीला । सघन, गाढ़ा । मुख्य, प्रधान । अधिक आवश्यक । अधिक भारी । अतिशय ।

बला—(स्त्री०) [बल+अच्—टाप्] एक मंत्र या विद्या का नाम, जिसके प्रभाव से योद्धा को युद्ध के समय भूख या प्यास नहीं सताती; 'तौ बलातिबलयोः प्रभावतः' र०। (यह मंत्र या विद्या विश्वामित्र ने श्रीरामचन्द्र जी और श्रीलक्ष्मण जी को सिखलायी थी) ।

बलाक—(पुं०) [बल √ अक् + अच्] बगला । राजा पुरु के पुत्र । शाकपूणि ऋषि के एक शिष्य का नाम । एक व्याध ।

बलाका—(स्त्री०) [√बल्+अक या बल √अक्+अच्—टाप्] प्रिया । कामुकी स्त्री । बक-पंक्ति । गति के अनुसार नृत्य का एक भेद ।

बलाकिका—(स्त्री०) [बलाका+कन्—टाप्, इत्व] छोटी जाति का बगला या सारस ।

बलाकिन्—(वि०) [बलाका+इनि] जहाँ बगलों या सारसों की बहुतायत हो ।

बलात्—(अव्य०) [बल √अत् + क्विप्] बलपूर्वक, जबर्दस्ती ।—**कार**–(पुं०) जबर्दस्ती करना । किसी स्त्री का सतीत्व नष्ट करना या उसकी इच्छा के विरुद्ध संभोग करना । अन्याय । ऋणी को पकड़कर तथा मारपीट कर पावना वसूल करना ।—**कृत**–(वि०) जिसके साथ जोरजुल्म या बलात्कार किया गया हो ।

बलाहक—(पुं०) [बल—आ √हा+क्वुन्] बादल। मोथा। बगला या सारस। पहाड़। प्रलयकालीन सात बादलों में से एक का नाम।

बलि—(पुं०) [√बल्+इन्] किसी देवता को उत्सर्ग किया कोई खाद्य पदार्थ। भूतयज्ञ। पूजन, अर्चा। उच्छिष्ट। नैवेद्य। कर। चँवर का डंड। एक प्रसिद्ध दैत्य का नाम, जो विरोचन का पुत्र था। (इसी के लिये भगवान् ने वामनावतार धारण किया था)। (स्त्री०) झुर्री, बल, सिकुड़न।—**कर्मन्**–(न०) भूतयज्ञ, समस्त प्राणियों के उद्देश्य से भोजनोत्सर्ग करना। राजकर का भुगतान।—**दान**–(न०) देवता को नैवेद्य का अर्पण। प्राणियों को भोज्यपदार्थ प्रदान।—**ध्वंसिन्**–(पुं०) विष्णु।—**नन्दन**, —**पुत्र**, —**सुत**–(पुं०) बलिराज के पुत्र बाणासुर का नामान्तर।—**पुष्ट**–(पुं०),—**भोजन**–(पुं०) काक, कौआ।—**प्रिय**–(पुं०) लोध्रवृक्ष।—**बन्धन**–(पुं०) विष्णु।—**भुज्**–(पुं०) काक। गौरैया। बगला।—**मन्दिर**, —**वेश्मन्**, —**सद्मन्**–(न०) पाताल लोक, राजा बलि के रहने का स्थान।—**मुख**—(पुं०) बन्दर।—**वैश्वदेव**—(न०) भूतयज्ञ।—**हन्**–(पुं०) विष्णु।—**हरण**–(न०) प्राणिमात्र को आहार प्रदान।

बलिन्—(वि०) [बल+इनि] बलवान्, ताकतवर। (पुं०) भैंसा। सूकर। ऊँट। बैल। योद्धा। चमेली विशेष। कफ। बलराम जी का नामान्तर।

बलिन्दम—(पुं०) [बलि√दम् + खच्, मुम्] विष्णु।

बलिमत्—(वि०) [बलि+मतुप्] पूजन का या बलिदान का सामान ठीक करने वाला। कर वसूल करने वाला।

बलिमन्—(पुं०) [बल+इमनिच्] शक्ति, ताकत।

बलिवर्द=बलीवर्द।

बलिष्ठ—(वि०) [बलवत्+इष्ठन्, मतुपो-लुक्] अतिशय बलवान्। (पुं०) ऊँट, उष्ट्र।

बलिष्णु—(वि०) [√बल्+इष्णुच्] अपमानित, तिरस्कृत।

बलीक—(पुं०) [√बल्+ईकन्] छप्पर की मुंडेर।

बलीयस्—(वि०) [स्त्री०—**बलीयसी**] [बलिन्+ईयसुन्] दे० 'बलिष्ठ'।

बलीवर्द—(पुं०) [√वृ+क्विप्—वर्, ई वरं=ईवरौ तौ ददाति, √दा+क—ईवर्दः, बली चासौ ईवर्दश्च, कर्म० स०] साँड़। बैल।

बल्य—(वि०) [बल+यत्] बलवान्, ताकतवर। बलप्रद। (न०) वीर्य। (पुं०) बौद्ध भिक्षुक।

बल्लव–(पुं०) [√बल्ल् + अच् वाति √वा+क] ग्वाला, अहीर; 'हरिविरहाकुलबल्लवयुवतिसखीवचनं पठनीयं' गीत० ४। पाचक, रसोइया। भीम का फर्जी नाम जो उन्होंने अज्ञातवास के समय रखा था।—**युवति**,—**युवती**–(स्त्री०) गोपी।

बल्लवी—(स्त्री०) [बल्लव+ङीष्] गोपी, ग्वालिन।

बल्वज—(पुं०), **बल्वजा**–(स्त्री०) एक जाति की मोटे तृण की घास।

बल्हिक, बल्हीक—(पुं०, बहु०) बलख देश और उसके अधिवासी।

बष्कय=वष्कय।

बष्कयणी, **बष्कयिणी** = वष्कयणी, वष्कयिणी।

√बस्त्—चु० आत्म० सक० जाना। मारना, वध करना। बस्तयते, बस्तयिष्यते, अबबस्तत।

बस्त—(पुं०) [बस्तयते यज्ञार्थं वध्यते, √बस्त्+घञ्] बकरा।—**कर्ण**–(पुं०) साल वृक्ष।

बहल—(वि०) [√वह् + अलच्] दृढ़, मजबूत। बहुल, प्रचुर। स्थूल, मोटा। विस्तृत। अबरीला। कर्कश। (पुं०) ईख। नाव।

बहला—(स्त्री०) [बहल+टाप्] बड़ी इलायची।

बहिस्—(अव्य०) [√वह्+इसुन्] बाहर, भीतर का उलटा। बाहर से, अलग।—**अङ्ग (बहिरङ्ग)**–(वि०) बाहरी, अंतरंग का उलटा। (न०) बाहरी अंग, भाग। व्याकरण में प्रत्ययादि निमित्तक प्रकृति के अवयवादि में होने वाला कार्य।—**इन्द्रिय (बहिरिन्द्रिय)**–(न०) बाहरी इंद्रिय। बाह्य विषयों को ग्रहण करने वाली इंद्रिय (कान, नाक आदि)।—**कार (बहिष्कार)**–(पुं०) बाहर करना, निकालना। दूर करना, हटाना। संबंध-त्याग, वस्तुविशेष का सामूहिक व्यवहारत्याग।—**कुटीचर (बहिष्कुटीचर)**–(पुं०) केकड़ा।—**देश (बहिर्देश)**–(पुं०) गाँव या नगर के बाहर का स्थान। परदेश।—**ध्वजा (बहिर्ध्वजा)**–(स्त्री०) दुर्गा।—**मुख (बहिर्मुख)**–(वि०) जिसका मन बाहरी विषयों में उलझा, आसक्त हो, विमुख। (पुं०) देवता।—**रति (बहिर्रति)**–(स्त्री०) बाहरी रति या समागम जिसके अंतर्गत आलिंगन, चुंबन, स्पर्श, मर्दन, नखदान, रददान और अधरपान है।—**लापिका (बहिर्लापिका)**–(स्त्री०) काव्य-रचना में एक प्रकार की पहेली। इसमें उसके उत्तर का शब्द पहेली के शब्दों के बाहर रहता है भीतर नहीं।—**वासस् (बहिर्वासस्)**–(न०) बाहरी वस्त्र। अन्तर्वास को कौपीन और कौपीन के ऊपर पहने जाने वाले वस्त्र को बहिर्वास कहते हैं।

बहु—(वि०) [स्त्री०—**बहु** या **बह्वी**] [√बंह्. +कु, नलोप] बहुत, ज्यादा, प्रचुर; 'अल्पस्य हेतोर्बहु हातुमिच्छन्' र० २.४७। अनेक, बहुत से।—**अप्**, —**अप (बह्वप् —प)** – (वि०) बहुत जल वाला, जलमय (प्रदेश आदि)।—**अपत्य (बह्वपत्य)**– (वि०) अनेक सन्तानों वाला। (पुं०) शूकर। चूहा।—**अपत्या (बह्वपत्या)**–(स्त्री०) कई बार की ब्यायी हुई गौ।—**आशिन् (बह्वाशिन्)**–(वि०) पेटू, भोजनभट्ट।—**उदक (बहूदक)**–(पुं०) एक प्रकार का संन्यासी जिसे अपने भोजन के लिये सात घरों से भिक्षा माँगनी पड़ती है।—**ऋच् (बह्वृच्)** –(स्त्री०) ऋग्वेद।—**एनस् (बह्वेनस्)**–(वि०) बड़ा पापी।—**कर**–(वि०) मशगूल, कामधंधे में लगा हुआ। (पुं०) मेहतर, सफाई करने वाला। ऊँट।—**करी**–(स्त्री०) झाड़ू, बढ़नी।—**कालीन**–(वि०) पुरातन, पुराना।—**कूर्च**–(पुं०) नारियल का वृक्ष विशेष।—**गन्धदा**–(स्त्री०) मुश्क, कस्तूरी।—**गन्धा**–(स्त्री०) यूथिका लता। चम्पा की कली।—**जल्प**–(वि०) बातूनी, बकवादी।—**दक्षिण**–(वि०) जिसमें बहुत-सा दान दिया जाय। उदार।—**दायिन्**–(वि०) उदार।—**दुग्ध**–(पुं०) गेहूँ।—**दुग्धा**–(स्त्री०) बहुत दूध देने वाली गौ।—**दृश्वन्**–(वि०) [बहु√दृश् +क्वनिप्] जिसने बहुत देखा-सुना हो, बड़ा अनुभवी।—**धार**–(न०) इन्द्र का वज्र।—**धेनुक**–(न०) बहुत-सी गौएँ।—**नाद**–(पुं०) शंख।—**पत्र**–(पुं०) प्याज। हरिताल। मुचुकुन्द वृक्ष। पलाश वृक्ष। (न०) अभ्रक, अबरक।—**पत्री**– (स्त्री०) तुलसी वृक्ष।—**पद्**, —**पाद्**,— **पाद**–(पुं०) वट वृक्ष।—**पुष्प**–(पुं०) पारिभद्र वृक्ष। नीम का पेड़।—**प्रज**–(वि०) अनेक सन्तानों वाला। (पुं०) शूकर। चूहा। मूँज घास।—**प्रद**–(वि०) अतिशय उदार।

—**प्रसू**–(स्त्री०) अनेक बच्चों की माता। —**प्रेयसी**–(वि०) अनेक प्रेमिकाओं वाला। —**फल**–(पुं०) कदम्ब वृक्ष। —**फला**–(स्त्री०) खीरा। छोटा करेला, करेली। भुईंआँवला। काकमाची। —**फेना**–(स्त्री०) सातला। संखाहुली। —**बल**–(पुं०) शेर। —**बाहु**–(पुं०) रावण। बाणासुर। —**बीज**–(पुं०) बिजौरा नीबू। शरीफा। बीज वाला केला। —**भाग्य**–(वि०) बड़ा भाग्यवान्। —**भाषिन्**–(वि०) बकवादी, गप्पी। —**मञ्जरी**–(स्त्री०) तुलसी। —**मत**– (वि०) अतिशय माननीय; 'यया-तेरिव शर्मिष्ठा भर्तुर्बहुमता भव' श० ४.६। —**मल**–(न०) सीसा। जस्ता। —**मान**–(पुं०) अतिशय मान। (न०) वह पुरस्कार जो बड़े से छोटे को मिले। —**मान्य**–(वि०) सम्माननीय, पूज्य। —**माय**–(वि०) बहुत मायावी, छली। विश्वासघाती। —**मार्गगा**–गंगा नदी। —**मार्गी**–(स्त्री०) वह जगह जहाँ अनेक मार्ग मिलते हैं। —**मूत्र**–(वि०) प्रमेह रोग से पीड़ित। —**मूर्ति**–(पुं०) विष्णु। (स्त्री०) वनकपास। अनेक मूर्तियाँ। (वि०) बहुरूपिया। —**मूर्धन्**–(पुं०) विष्णु का नामान्तर। —**मूल्य**–(वि०) कीमती, बहुत दामों का। —**मृग**–(वि०) जहाँ बहुत से हिरन हों। —**रूप**–(वि०) अनेक रूप धारण करने वाला। चितकबरा। (पुं०) सरट, गिरगिट। केश। सूर्य। शिव। विष्णु। ब्रह्मा। कामदेव। —**रेतस्**–(पुं०) ब्रह्मा। —**रोमन्**–(पुं०) भेड़ा। —**लवण**–(न०) लूनिया जमीन। —**वचन**–(न०) व्याकरण की एक परिभाषा जिससे एक से अधिक वस्तुओं के होने का ज्ञान होता है। —**वर्ण**–(वि०) अनेक रंगों का। —**विघ्न**–(वि०) अनेक विघ्न या बाधाओं से भरा हुआ। —**विध**–(वि०) अनेकप्रकार का। —**व्रीहि**–(वि०) बहुत चावलों वाला; 'तत्पुरुषकर्मधारय येनाहं स्यामबहुव्रीहिः'। (पुं०) छः प्रकार के समासों में से एक। इसमें दो या अधिक पदों के मिलने से जो पद बनता है वह किसी अन्य पद का विशेषण होता है। —**शत्रु**–(पुं०) गौरैया पक्षी। —**शल्य**–(पुं०) लाल खैर। (वि०) जिसमें बहुत काँटे या गाँसियाँ हों। —**शृङ्ग**–(पुं०) विष्णु का नामान्तर। —**श्रुत**–(वि०) जिसने अनेक प्रकार के विद्वानों से भिन्न-भिन्न शास्त्रों की बातें सुनी हों, अनेक विषयों का जानकार, बड़ा विद्वान्। —**सन्तति**–(पुं०) एक जाति का बाँस। (वि०) अधिक बाल-बच्चों वाला। —**सार**–(पुं०) खदिर वृक्ष। —**सुता**–(स्त्री०) शतमूली। —**सू**–(स्त्री०) अनेक सन्तति वाली जननी। सूकरी। —**सूति**–(स्त्री०) अनेक बच्चों की माता। गौ जो बहुत ब्याती हो। —**स्वन**–(पुं०) शंख। उल्लू।

बहुक—(पुं०) [बहु+कन्] सूर्य। अर्क, मदार। केकड़ा। चातक।

बहुतर—(वि०) [बहु+तरप्] अपेक्षाकृत अधिक, अधिकतर।

बहुतम—(वि०) [बहु+तमप्] अत्यन्त अधिक।

बहुतः—(अव्य०) [बहु+तस्] अनेक वस्तुओं से।

बहुता, बहुत्व—[बहु+तल्–टाप्] [बहु+त्व] अनेकता। आधिक्य।

बहुतिथ—(वि०) [बहु+तिथुक्] बहुत संख्या, परिमाण आदि से युक्त।

बहुधा—(अव्य०) [बहु+धाच्] अनेक ढंगों से, बहुत प्रकार से। बहुत करके, प्रायः, अकसर।

बहुल—(वि०) [√बंह्+कुलच्, नलोप] बहुत, अनेक। प्रचुर, अधिक, ज्यादा। गाढ़ा। काला। (न०) आकाश। सफेद गोलमिर्च। (पुं०) कृष्ण पक्ष; 'प्रादुरासः

बहुलग्लपाच्छविः' र० ११.१५ । अग्नि । **—आलाप (बह्वालाप)**–(वि०) बातूनी, बकवादी । **—गन्धा**–(स्त्री०) इलायची ।

बहुला—(स्त्री०) [बहुल+टाप्] गौ । इलायची । नील का पौधा । कृत्तिका नक्षत्र ।

बहुलिका—(स्त्री०) [बहुल+कन्—टाप्, इत्व] सप्तर्षि-मण्डल ।

बहुशस्—(अव्य०) [बहु+शस्] अधिकता से, प्रचुरता से । अक्सर, बहुधा । साधारणतः, मामूली तौर से ।

बाकुल—(न०) [बकुल+अण्] बकुल वृक्ष का फल ।

√**बाड्**—भ्वा० आत्म० अक० स्नान करना । डूबना । बाडते, बाडिष्यते, अबाडिष्ट ।

बाडव—दे० 'वाडव' ।

बाडवेय—दे० 'वाडवेय' ।

बाड्व्य—दे० 'वाडव्य' ।

बाढ—दे० 'वाढ' ।

बाढम्—दे० 'वाढम्' ।

बाण—(पुं०) [√बण्+घञ्] तीर, नरकुल, सरपत । तीर की नोक जिसमें पर लगे हों । गाय का ऐन या थन । पौधा विशेष । दैत्यराज बलि के एक पुत्र का नाम, बाणासुर । कादम्बरी के रचयिता प्रसिद्ध कवि बाणभट्ट । अग्नि । पाँच की संख्या । **—असन (बाणासन)**–(न०) कमान, धनुष । **—आवलि (बाणावलि)**, **—आवली (बाणावली)**–(स्त्री०) तीरों की कतार । **—आश्रय (बाणाश्रय)**–(पुं०) तरकश, तूणीर । **—गोचर**–(पुं०) तीर की मार । **—जाल**–(न०) अनेक तीर । **—जित्**–(पुं०) विष्णु । **—तूण**, **—धि**–(पुं०) तरकश, तूणीर । **—पाणि**–(वि०) धनुर्धर । **—पात**–(पुं०) भूमि का माप, जितनी दूर तीर जा कर पड़े । तीर की मार । **—मुक्ति**–(स्त्री०), **—मोक्षण**–(न०) मारना । **—योजन**–(न०) तरकश । **—वृष्टि**–(स्त्री०) बाणों की वर्षा । **—वार**–(पुं०) कवच । **—सुता**–(स्त्री०) उषा जो बाणासुर की बेटी थी । **—हन्**–(पुं०) विष्णु ।

बाणिनी—दे० 'वाणिनी' ।

बादर—(वि०) [स्त्री०—**बादरी**] [बदर+अण्] बेरवृक्ष सम्बन्धी । कपास का पेड़ । (न०) बेर का पेड़ । रेशम । जल । सूती कपड़ा । दहिनावर्त्ती शंख । (पुं०) रूई का झाड़ ।

बादरा—(स्त्री०) [बादर+टाप्] कपास का पौधा ।

बादरायण—(पुं०) [बदर्यां भवः, बदरी+फक्—आयन्] वेदव्यास का नामान्तर । **—सूत्र**–(न०) वेदान्त दर्शन । **—सम्बन्ध**–(पुं०) कल्पित रिश्ता ।

बादरायणि—(पुं०) [बादरायण+इञ्] शुकदेव जी का नाम, जो व्यास के पुत्र थे ।

बादरिक—(वि०) [स्त्री०—**बादरिकी**] [बदरी+ठञ्—इक] बेरों को बीन कर एकत्र करने वाला ।

√**बाध्**—भ्वा० आत्म० सक० सताना, अत्याचार करना, जुल्म करना । सामना करना, मुकाबला करना । आक्रमण करना । भङ्ग करना । अनिष्ट करना । भगा देना । खारिज करना । नष्ट करना । बाधते, बाधिष्यते, अबाधिष्ट ।

बाध—(पुं०), **बाधा**–(स्त्री०) [√बाध्+घञ्] [√बाध्+अ—टाप्] पीड़ा, कष्ट । अत्याचार । छेड़खानी । हानि, अनिष्ट । भय । मुकाबला, सामना । एतराज, आपत्ति । खण्डन, प्रतिवाद ।

बाधक—(वि०) [स्त्री०—**बाधिका**] [√बाध्+ण्वुल्] दुःखदायी, पीड़ाकारी । छेड़छाड़ करने वाला । मिटाने वाला । बाधा डालने वाला ।

बाधन—(न०) [√बाध्+ल्युट्] अत्या-

चार। छेड़खानी। कष्ट, पीड़ा। स्थानान्तर-करण। प्रतिवाद।

बाधित—(वि०) [√बाध्+क्त] अत्याचार किया हुआ। पीड़ित। मुकाबला किया हुआ, सामना किया हुआ। रोका हुआ। खारिज किया हुआ। खण्डन किया हुआ।

बाधिर्य—(न०) [बधिर+ष्यञ्] बहिरापन।

बाध्य—(वि०) बाधा देने योग्य। पीड़ित। रोका हुआ। विवश। —**रेतस्**—(वि०) नपुंसक।

बान्धकिनेय—(पुं०) [बन्धकी+ढक्, इनङ् आदेश] कुलटा स्त्री का पुत्र, जारज। दोगला। वर्णसङ्कर।

बान्धव—(पुं०) [बन्धु+अण् (स्वार्थे)] रिश्तेदार, नातेदार। मातृ-पक्षी नातेदार। मित्र। भाई। —**जन**—(पुं०) नातेदार, नाते-गोते का। —**धुरा**—(स्त्री०) मैत्रीभाव, सद्भाव।

बान्धव्य—(न०) [बन्धु+ष्यञ्] रक्त-सम्बन्ध, नातेदारी, रिश्तेदारी।

बाभ्रवी—(स्त्री०) [बभ्रु+अण्—ङीप्] दुर्गा देवी का नामान्तर।

बार्बटीर—(पुं०) आम का गूदा। टीन। जस्ता। अँखुआ, अंकुर। वेश्यापुत्र।

बार्ह—(वि०) [स्त्री०—**बार्ही**] [बर्ह+अण्] मोर की पूँछ के परों का बना हुआ।

बार्हद्रथ, बार्हद्रथि—(पुं०) [बृहद्रथ+अण्] बृहद्रथ+इञ्] जरासन्ध का नाम।

बार्हस्पत—(वि०) [स्त्री०—**बार्हस्पती**] [बृहस्पति+अण्] बृहस्पति सम्बन्धी, बृहस्पति से उत्पन्न, बृहस्पति का।

बार्हस्पत्य—(वि०) [बृहस्पति+ण्य] बृहस्पति सम्बन्धी। (न०) पुष्य नक्षत्र। (पुं०) बृहस्पति का शिष्य। उन बृहस्पति का अनुयायी जिन्होंने जड़वाद का उपवाद लोगों को सिखलाया था, जड़वादी।

बार्हिण—(वि०) [स्त्री०—**बार्हिणी**] [बर्हिन्+अण्] मयूर सम्बन्धी या मयूर से उत्पन्न।

बाल—(वि०) [√बल्+ण, तथा बाल+अच्] जो जवान न हुआ हो। हाल का उगा हुआ; यथा, बाल सूर्य। बालकों का-सा। अजानी। (पुं०) बच्चा, बालक। अवयस्क, नाबालिग। बछेड़ा। मूर्ख। पूँछ। केश। पाँच वर्ष का हाथी। सुगंधवाला। नारियल। —**अरुण** (**बालारुण**)—(पुं०) बालसूर्य। तड़का, भोर। —**अर्क** (**बालार्क**)—(पुं०) प्रातःकालीन सूर्य। हाल का निकला सूर्य। —**अवस्था** (**बालावस्था**)—(स्त्री०) बचपन। —**आतप** (**बालातप**)—(पुं०) प्रातःकालीन धूप। —**इन्दु** (**बालेन्दु**)—(पुं०) (प्रतिपदा-द्वितीया का) चन्द्रमा; 'बालेन्दुवक्राणि' कु० ३.२९। —**इष्ट** (**बालेष्ट**)—(पुं०) बेर का पेड़। —**उपचार** (**बालोपचार**)—(पुं०) बच्चों की चिकित्सा। —**कदली**—(स्त्री०) छोटी जाति के केले का वृक्ष। —**कृमि**—(पुं०) जूँ। —**क्रीडन**—(न०) बालकों का खेल। —**क्रीडनक**—(पुं०) कौड़ी। खिलौना। —**क्रीड़ा**—(स्त्री०) बालकों का खेल। —**खिल्य**—(पुं०) पुराणों के अनुसार ब्रह्मा के रोम से उत्पन्न ऋषि-समूह जिनके शरीर का आकार अँगूठे के बराबर है। इस समूह में साठ हजार ऋषियों की गणना है। ये सब के सब बड़े तपस्वी हैं। —**गर्भिणी**—(स्त्री०) वह गौ जो प्रथम बार गाभिन हुई हो। —**ग्रह**—(पुं०) बालकों को पीड़ा पहुँचाने वाला उपग्रह या पिशाच (इनकी संख्या ९ बतायी जाती है)। बालरोग-विशेष। —**चन्द्र**—(पुं०) दूज का चाँद। —**चरित**—(न०) बचपन के काम, बाललीला। —**चर्य**—(पुं०) कार्त्तिकेय। —**चर्या**—(स्त्री०) बालक का कार्य। शिशु-पालन। —**तनय**—(पुं०) खदिर का वृक्ष। —**तन्त्र**—(न०) बालकों के लालन-पालन

आदि की विधि, चौलकर्म ।—**वल्क**–(पुं०) खैर का पेड़ ।—**पाश्या**–(स्त्री०) [बालपाशे केशसमूहे साधुः, बालपाश+यत्–टाप्] सिर के केशों में धारण करने का पुराने ढंग का एक गहना । चोटी में गूंथने की मोती की लड़ी ।—**पुष्पिका**,—**पुष्पी** (स्त्री०) जूही ।—**बोध**–(पुं०) कोई पुस्तक जो बालकों या अनुभव-शून्य लोगों के पढ़ने के लिये हो ।—**भद्रक**–(पुं०) विष-विशेष । —**भार**–(पुं०) लंबी और बालदार पूंछ । —**भाव**–(पुं०) लड़कपन ।—**भैषज्य**–(न०) रसांजन । बालक की ओषधि ।—**भोज्य**–(पुं०) मटर । चना ।—**मृग**–(पुं०) हिरन का बच्चा ।—**यज्ञोपवीतक**–(न०) जनेऊ जो वक्षःस्थल के ऊपर से पहिना जाय ।—**राज**–(न०) वैडूर्यमणि । —**वत्स**–(पुं०) छोटा बाछा । कबूतर ।—**वायज**–(न०) [बालवाये वैडूर्यप्रभवे देश-विशेषे जायते, बालवाय√जन्+ड] वैडूर्य-मणि ।—**वासस्**–(न०) ऊनी वस्त्र ।—**वाह्य**–(पुं०) जंगली बकरा ।—**विधवा**–(स्त्री०) वह स्त्री जो बाल्यावस्था ही में विधवा हो गयी हो ।—**व्यजन**–(न०) चौरी, चँवर ।—**सूर्य**, —**सूर्यक**–(पुं०) वैडूर्यमणि । प्रातःकालीन सूर्य ।—**हत्या**–(स्त्री०) बालक का वध ।— **हस्त**–(पुं०) बालदार पूंछ । केशसमूह ।

बालक—(वि०) [स्त्री०—**बालिका**] [बाल+कन्] जो लड़के की तरह हो, जो जवान न हुआ हो । अज्ञानी । (न०) अँगूठी । (पुं०) बच्चा, लड़का । नाबालिग । अँगूठी । मूर्ख आदमी । कङ्कण । घोड़ा या हाथी की पूंछ । केश ।

बाला—(स्त्री०) [बालट+टाप्] लड़की । वह युवती जो १६ वर्ष से कम उम्र की हो । युवती स्त्री । चमेली-विशेष । नारियल का वृक्ष । घृतकुमारी । छोटी इलायची । हल्दी ।

बालि—(पुं०) [√बल् +इन्, णित्व] वानरराज सुग्रीव के बड़े भाई और अङ्गद के पिता का नाम ।—**हन्**, —**हन्तृ**–(पुं०) श्रीरामचन्द्र ।

बालिका—(स्त्री०) [बाला+कन्–टाप्] इत्व] छोटी लड़की । बालों की गाँठ । छोटी इलायची । रेती । पत्तों की खरभर ।

बालिन्—(पुं०) [बालः उत्पत्तिस्थानत्वेन अस्ति अस्य, बाल+इनि] वानरराज बालि ।

बालिनी—(स्त्री०) [बालिन्+ ङीप्] अश्विनी नक्षत्र ।

बालिमन्—(पुं०) [बाल+इमनिच्] लड़क-पन ।

बालिश—(न०) [बालाः सन्ति यत्र इति बाली मस्तकः तेन शेते यत्र, बालिन् √शी+ड] तकिया । (पुं०) [√बाड्+इन् बाडि श्यति, बाडि √शो+ड, डलयोरभेदः] मूर्ख, अबोध व्यक्ति । बालक, बच्चा ।

बालिश्य—(न०) [बालिश+ष्यञ्] लड़क-पन, बचपन । मूर्खता, बेवकूफी ।

बालीश—(पुं०) कृच्छ्ररोग ।

बालु—(पुं०), **बालुक**–(न०) [√बल्+उण्] [बालु+क] एलुवा । पानी-आँवला ।

बालुका—दे० 'वालुका' ।

बालुकी, **बालुङ्की**, **बालुङ्गी**–(स्त्री०) [√बल्+उकञ्—ङीप्] एक प्रकार की ककड़ी ।

बालूक—(पुं०) [√बल्+ऊकञ्] एक प्रकार का विष ।

बालेय—(वि०) [स्त्री०—**बालेयी**] [बलये उपकरणाय साधुः, बलि+ढञ्] बलि देने योग्य । कोमल, मुलायम । बलि के वंश का । (पुं०) गधा, रासभ ।

बाल्य—(न०) [बाल+ष्यञ्] बचपन, लड़कपन। मूर्खता, मूढ़ता।

बाल्हक, बाल्हिक, बाल्हीक—(न०) [बाल्हिदेशे भवः बाल्हि+वुञ्] [बाल्हि+ठञ्] केसर। हींग। (पुं०) बलखदेश का अधिवासी। उस देश का राजा। बलख का घोड़ा।

बाल्हि—(पुं०) बलख-बुखारा देश।

बाष्प—(पुं०, न०) [√बा+प, पुक्] आँसू; 'कण्ठः स्तम्भितबाष्पवृत्तिकलुषः' श० ४.५। भाप। लोहा। —**अम्बु (बाष्पाम्बु)**—(न०) आँसू। —**कण्ठ**—(वि०) जिसका गला भर आया हो। गद्गद कण्ठ। —**मोक्ष**—(पुं०), —**मोचन**—(न०) आँसू बहाना।

बास्त—(पुं०) [स्त्री०—**बास्ती**] [बस्त+अण्] बकरे का या बकरे से निकला हुआ।

बाह—(पुं०) [=बाहु, पृषो० साधुः] बाँह।

बाहा—(स्त्री०) [बाह+टाप्] बाँह।

बाहीक—(पुं०) [√बह्+ईकण्] पंजाब की एक जाति, जाट। इस जाति का व्यक्ति।

बाहु—(पुं०) [बाधते शत्रून्, √बाध्+कु, हकारादेश] बाँह। कलाई। पशु के अगले पैर। चौखट का बाजू। —**कुण्ठ**, —**कुब्ज**—(वि०) वह जिसका हाथ टूटा हो, लुंजा। —**कुन्थ**—(पुं०) पक्षी का बाजू, डैना। —**चाप**—(पुं०) फासला जो हाथों से नापा हुआ हो। —**ज**—(पुं०) क्षत्रिय। तोता। —**त्र**—(पुं०, न०), —**त्राण**—(न०) बाहु को बचाने वाला कवच-विशेष। —**पाश**—(पुं०) बाँहों को फैलाकर हथेलियों को मिला लेने से बनने वाला घेरा, आलिंगन करते समय बाहुओं की मुद्रा। मल्लयुद्ध का एक पेंच। —**प्रहरण**—(न०) घूँसों की लड़ाई, हाथाबाँही। —**बल**—(न०) बाँह की शक्ति। पराक्रम। —**भूषण**—(न०), —**भूषा**—(स्त्री०) बाजूबंद, केयूर। —**भेदिन्**—(पुं०) विष्णु का नामान्तर। —**मूल**—(न०) कंधे और बाँह का जोड़। —**युद्ध**—(न०) मल्लयुद्ध। —**योध**, —**योधिन्**—(पुं०) बाहुयुद्ध या कुश्ती लड़ने वाला। —**लता**—(स्त्री०) बाहुरूप लता। लता जैसी बाँह। सुकुमार बाँह। —**विस्फोट**—(पुं०) ताल ठोंकना। —**वीर्य**—(न०) बाँह का जोर। —**व्यायाम**—(पुं०) कसरत। —**शालिन्**—(पुं०) शिव। भीम। —**शिखर**—(न०) कंधा। —**सम्भव**—(पुं०) क्षत्रिय। —**सहस्रभृत्**—(पुं०) कार्तवीर्य राजा।

बाहुक—(पुं०) [बाहु√कै+क] बंदर। राजा नल का बदला हुआ नाम। एक नाग।

बाहुगुण्य—(न०) [बहुगुण+ष्यञ्] अनेक गुणों की सम्पन्नता।

बाहुदन्तक—(न०) [बहवः चत्वारो दन्ता अस्य, ब० स०, कप्—ऐरावतः उपचारात् इन्द्रः तेन प्रोक्तम्, बहुदन्तक + अण्] स्मृति जिसके रचयिता इन्द्र कहे जाते हैं।

बाहुदन्तेय—(पुं०) [बहुदन्त+ढ] इन्द्र।

बाहुदा—(स्त्री०) [बाहु√दा+क—टाप्] महाभारतोक्त एक नदी का नाम। राजा परीक्षित् की पत्नी।

बाहुभाष्य—(न०) [बहुभाष+ष्यञ्] बकवादीपन, बातूनीपन।

बाहुरूप्य—(न०) [बहुरूप + ष्यञ्] बहुरूपता, अनेकता।

बाहुल—(पुं०) [बहुल+अण्] अग्नि। कार्तिकमास। (न०) अनेकता। [बाहु√ला+क] बाहुत्राण, युद्ध के समय बाहु पर बाँधा जाने वाला कवच। —**ग्रीव**—(पुं०) मोर, मयूर।

बाहुलक—(न०) [बाहुल+कन्] अनेकता। व्याकरण में विधि-विशेषः 'बाहुलकाच्छन्दसि'। बाहुलक विधि के चार भेद बताये गये हैं; यथा—कहीं प्रवृत्ति, कहीं अप्रवृत्ति, कहीं विभाषा और कहीं इसकी अन्यथा।

बाहुलेय—(पुं०) [बहुलानां कृत्तिकादीनाम् अपत्यम् पुमान्, बहुला√ढक्] कार्त्तिकेय ।

बाहुल्य—(न०) [बहुल+ष्यञ्] अधिकता, प्राचुर्य ।

बाहूबाहवि—(अव्य०) [बाहुभिः बाहुभिः प्रवृत्त युद्धम्, ब० स०] हाथाबाँही ।

बाह्य—(वि०) [बहिस्+ष्यञ्] बाहर का, बाहरी । अजनबी, अपरिचित । समाज-बहिष्कृत ।

बाह्वृच्य—(न०) [बह्वृच+ष्यञ्] ऋग्वेद की परम्परागत शिक्षा ।

√**बिट्**—भ्वा० पर० अक० शपथ खाना । चिल्लाना । सक० शाप देना । शपथ देना । बेटति, बेटिष्यति, अबेटीत् ।

बिटक—(न०, पुं०), **बिटका**—(स्त्री०) [=पिटक, पृषो० साधुः] बलतोड़, फोड़ा ।

बिड—(न०) [√बिड्+क] खारी नमक ।

बिडाल—(पुं०) [√बिड्+कालन्] बिलाव । आँख का डेला ।—**पद**—(पुं०),—**पदक**—(न०) एक तौल जो १६ माशे की होती थी ।—**व्रतिक**—(वि०) ढोंगी ।

बिडालक—(पुं०) [बिडाल+कन्] बिलाव । नेत्ररोग की एक ओषधि । नेत्रगोलक । हरिताल ।

√**बिन्द्**—भ्वा० पर० सक० चीरना । विभाजित करना । बिन्दति, बिन्दिष्यति, अबिन्दीत् ।

बिन्दु—(पुं०) [√बिन्द्+उ] बूँद । बिंदी । हाथी पर रंगीन बूँदें जो उसे सजाने को बनायी जाती हैं । शून्य । अपरदन्त । भ्रूमध्य । नाटक का वह स्थल जहाँ गौण घटनाओं का विस्तृत रूप ग्रहण करना आरंभ होता है ।—**चित्रक**—(पुं०) चित्तल, बारहसिंगा ।—**जाल**,—**जालक**—(न०) अनेक बिन्दु । हाथी के माथे और सूँड का चित्रण ।—**तन्त्र**—(पुं०) पासा । शतरंज की बिछात ।—**देव**—(पुं०) महादेव ।—**पत्र**—(पुं०) भोजपत्र का वृक्ष ।—**फल**—(न०) मोती ।—**रेखक**—(पुं०) अनुस्वार । पक्षी-विशेष ।—**वासर**—(पुं०) गर्भस्थापन का दिवस ।

बिभित्सा—(स्त्री०) [√भिद् + सन्+अ—टाप्] भेद करने की बलवती इच्छा ।

बिभ्रक्षु, **बिभ्रक्षिषु**—(पुं०) [√भ्रस्ज् +सन्+उ, विकल्पेन इट्] अग्नि ।

बिम्ब—(पुं०, न०) [√वी+वन्, नि० साधुः] अक्स, प्रतिच्छाया । चन्द्रमा या सूर्य का मण्डल; 'वदनेन निर्जितं तव निलीयते चन्द्रबिम्बमम्बुधरे' सुभा० । गोलाकार कोई वस्तु । कमण्डलु । दर्पण । घड़ा । (न०) कुँदरू ।—**ओष्ठ** (**बिम्बोष्ठ**, **बिम्बौष्ठ**)—(वि०) जिसके कुँदरू के फल जैसे लाल ओठ हों ।

बिम्बक—(न०) [बिम्ब+कन्] चन्द्र या सूर्य का मण्डल । कुँदरू फल ।

बिम्बित—(वि०) [बिम्ब+इतच्] प्रतिच्छाया पड़ा हुआ । चित्र खींचा हुआ ।

√**बिल्**—तु० पर० सक० चीरना, फाड़ना । तोड़ना, दो टुकड़े करना । बिलति, बेलिष्यति, अबेलीत् । चु० बेलयति ।

बिल—(न०) [√बिल्+क] जमीन या दीवार में बनाया हुआ लंबा छेद । इस तरह का छेद जिसमें कोई जंतु (साँप, चूहा आदि) रहता हो । गुफा, माँद । (पुं०) इन्द्र के घोड़े उच्चैःश्रवस् का नाम ।—**ओकस्** (**बिलौकस्**)—(पुं०) वे जन्तु जो बिल (माँद) में रहते हैं ।—**कारिन्**—(पुं०) चूहा ।—**योनि**—(वि०) उस जाति के जानवर जो बिल में रहते हैं ।—**वास**—(पुं०) नेवर (यह एक पशु है जो ऊदबिलाव की तरह होता है) ।—**वासिन्** (या **बिलेवासिन्**)—(पुं०) साँप ।

बिलङ्गम—(पुं०) [बिल√गम्+खच्, मुम्] साँप ।

बिलेशय—(पुं०) [बिले शेते, √शी+अच्,

शलुक् स०] साँप । चूहा । माँद या बिल में रहने वाला कोई भी जन्तु ।

बिल्ल—(पुं०) [बिल√ला+क, नि० यकार-लोप] गर्त, गढ़ा । आलवाल, थाला । हींग । —**सू**–(स्त्री०) दस बच्चों की जननी ।

बिल्व—(पुं०) [√बिल्+वन्] बेल का पेड़ । (न०) बेल का फल । एक तौल जो एक पल की होती है ।—**दण्ड**–(पुं०) शिव जी । —**पेशिका**–(पुं०),—**पेशी**–(स्त्री०) बेल के फल की नरेटी या कड़ा छिलका ।

बिल्वकीया—(स्त्री०) [बिल्व+छ, कुक्] वह भूमि जहाँ अनेक बेल के पेड़ लगाये गये हों ।

बिल्हण—(पुं०) विक्रमाङ्कदेव चरित के रचयिता एक कवि का नाम ।

√बिस्—दि० पर० सक० जाना । उत्तेजित करना, भड़काना । फेंकना । चीरना । बिस्यति, बेसिष्यति, अबिसत् ।

बिस—(न०) [√बिस्+क] कमल-नाल-तन्तु ।—**कण्ठिका**–(स्त्री०), —**कण्ठिन्**–(पुं०) छोटा सारस ।—**कुसुम**,—**पुष्प**,—**प्रसून**–(न०) कमल का फूल; 'जर्ज्जरबिसधृतविकाशिबिसप्रसूनाः' शि० ।—**ज**-(न०) कमल का फूल ।—**नाभि**–(स्त्री०) पद्मिनी । —**नासिका**–(स्त्री०) एक तरह की बकी । —**शालूका**–(स्त्री०) कमल की जड़ ।

बिसल—(न०) [बिस√ला+क] पँखुवा, अंकुर । पल्लव । कली ।

बिसिनी—(स्त्री०) [बिस+इनि] कमल का पौधा । कमल-समूह । मृणालादियुक्त भूमि या स्थान ।

बिसिल—(वि०) [बिस+इलच्] बिस सम्बन्धी या बिस से निकला हुआ ।

बिस्त—(पुं०) [√बिस्+क्त] ८० रत्ती के बराबर की एक तौल जो सोना तौलने के काम में आती है ।

बीज—(न०) [विशेषेण कार्यरूपेण अपत्यतया च जायते, वि√जन्+ड, उपसर्गस्य दीर्घः अथवा विशेषेण ईजते कुक्षि शरीरं वा गच्छति, वि√ईज्+अच्] बीया, वह दाना या गुठली जिससे पेड़-पौधे का अंकुर उगे । उपादान कारण । वीर्य । गूदा, गरी । बीजगणित । बीजमंत्र । कथा-वस्तु का मूल । (पुं०) बिजौरा नीबू ।—**अक्षर** (**बीजाक्षर**) –(न०) मंत्र का आदि अक्षर ।—**अध्यक्ष** (**बीजाध्यक्ष**)–(पुं०) शिव ।—**अश्व** (**बीजाश्व**)–(पुं०) कोतल घोड़ा ।—**आढ्य** (**बीजाढ्य**),—**पूर**,—**पूरक**–(पुं०) बिजौरा नीबू ।—**उदक** (**बीजोदक**)–(न०) ओला ।—**कर्तृ**–(पुं०) शिव ।—**कोष**,—**कोश**–(पुं०) फूल का वह भाग जिसमें बीज रहता है, बीजाधार ।—**गणित**–(न०) गणित का एक भेद जिसमें संख्या की जगह अक्षर का प्रयोग करते हैं ।—**गुप्ति**–(स्त्री०) सेम । भूसी । फली, छीमी ।—**दर्शक** –(पुं०) रंगशाला का का व्यवस्थापक ।—**धान्य**–(न०) धनियाँ । —**न्यास**–(पुं०) किसी नाटक की कथा के उद्गम स्थान को या आधार को बतलाना ।—**पुरुष**–(पुं०) गोत्रप्रवर्तक ।—**फलक**–(पुं०) नीबू का वृक्ष ।—**मन्त्र**–(पुं०) विभिन्न देवता के उद्देश्य से निर्दिष्ट मूलमंत्र । —**मातृका**—(स्त्री०) कमल-गट्टा ।—**रुह**– (पुं०) अनाज ।—**वाप**–(पुं०) बीज बोने वाला । बीज बोने की क्रिया ।—**वाहन**– (पुं०) शिव जी ।—**सू**–(पुं०) पृथिवी ।

बीजक—(न०) [बीज+कन्] बीज, बीया । (पुं०) [बीज√कै+क] जंभीरी । जन्म के समय बच्चे की वह अवस्था जब उसका सिर दोनों भुजाओं के बीच में होकर योनि के द्वार पर आ जाय ।

बीजल—(वि०) [बीज+लच्] बीजों वाला, जिसमें अधिक बीज हों।

बीजिक—(वि०) [बीज+ठन्] अधिक बीजों वाला।

बीजिन्—(वि०) [स्त्री०—**बीजिनी**] [बीज+इनि] बीजों वाला। (पुं०) असली जनक। पिता, जनक। सूर्य।

बीज्य—(वि०) [बीज+यत्] बीज से उत्पन्न। कुलीन।

बीभत्स—(वि०) [√बध् + सन्+घञ्] घृणित; 'बीभत्समेवाये वर्तते' माल० ५। डाही, ईर्ष्यालु। बर्बर। निष्ठुर। भयानक। (पुं०) घृणा। काव्य के नौ रसों के अन्तर्गत सातवाँ रस। अर्जुन का नामान्तर।

बीभत्सु—(पुं०) [√बध् + सन् + उ] अर्जुन; 'तेन देवमनुष्येषु बीभत्सुरिति विश्रुतः' महा०।

बुक—(वि०) [√बुक्क्+अच्, पृषो० उपधालोप] भीषण शब्द करने वाला। (पुं०) रेंड़ी का पेड़।

√बुक्क्—भ्वा० पर० अक० भूँकना। बुक्कति, बुक्किष्यति, अबुक्कीत्। चु० बुक्कयति।

बुक्क—(न०, पुं०) [√बुक्क्+अच्] हृदयस्थ मांसपिंड। हृदय। अग्रमांस। रक्त। (पुं०) बकरा। समय।

बुक्कन—(न०) [√बुक्क्+ल्युट्] भूँकना।

बुक्कस—(पुं०) [=पुक्कस, पृषो० साधुः] चाण्डाल।

बुक्का, बुक्की—(स्त्री०) [बुक्क+टाप्] [बुक्क+ङीष्] हृदय। गुरदे का मांस। शोणित। बकरी। प्राचीन काल का एक बाजा जो मुँह से फूँक कर बजाया जाता था।

√बुङ्ग्—भ्वा० पर० सक० त्यागना। बुङ्गति, बुङ्गिष्यति, अबुङ्गीत्।

बुद्ध—(वि०) [√बुध्+क्त] जाना हुआ, समझा हुआ। जगा हुआ। देखा हुआ। बुद्धिमान्। पण्डित। (पुं०) बुद्धिमान् या पण्डित पुरुष। बौद्ध धर्म के प्रवर्तक शाक्यसिंह का नाम।—**आगम** (**बुद्धागम**)—(पुं०) बुद्ध-धर्म के सिद्धान्त और यम-नियम।—**उपासक** (**बुद्धोपासक**)—(पुं०) बौद्ध धर्मानुयायी।—**गया**—(स्त्री०) गया के पास का वह स्थान जहाँ बुद्ध को बुद्धत्व प्राप्त हुआ था।—**मार्ग**—(पुं०) बुद्धधर्म, के सिद्धान्त।

बुद्धि—(स्त्री०) [√बुध् + क्तिन्] जानने, समझने और विचार करने की शक्ति, समझ, अक्ल। अंतःकरण की निश्चयात्मिका वृत्ति। प्रकृति का पहला परिणाम, महत्तत्त्व।—**अतीत** (**बुद्ध्यतीत**)—(वि०) समझ के बाहर।—**इन्द्रिय** (**बुद्धीन्द्रिय**)—(न०) ज्ञानेन्द्रिय।—**गम्य**,—**ग्राह्य**—(वि०) समझ के भीतर, जो बुद्धि से समझा जा सके।—**जीविन्**—(वि०) वह जो बुद्धि द्वारा अपना निर्वाह करता हो।—**द्यूत**—(न०) शतरंज का खेल।—**भ्रम**—(पुं०) चित्त का डाँवाँडोल होना, मन की अस्थिरता।—**शालिन्**,—**सम्पन्न**—(वि०) बुद्धिमान्, समझदार, अक्लमन्द।—**सख**,—**सहाय**—(पुं०) मंत्री, सचिव, वज़ीर।—**हीन**—(वि०) नासमझ, बेवकूफ।

बुद्धिमत्—(वि०) [बुद्धि+मतुप्] समझदार। चतुर।

बुद्बुद—(पुं०) [अनु०] बुलबुला।

√बुध्—भ्वा०, दि० जानना, समझना। पहचानना। ध्यान देना। सोचना, विचारना। जागना। होश में आना। भ्वा० पर० बोधति, बोधिष्यति, अबोधीत्, उभ० बोधति-ते, बोधिष्यति-ते, अबुधत्—अबोधीत्—अबोधिष्ट। दि० आत्म० बुध्यते, भोत्स्यते, अबोधि।

बुध—(पुं०) [√बुध्+क] बुद्धिमान् या विद्वान् व्यक्ति। देवता। बुध ग्रह।—**जन**-

(पुं०) बुद्धिमान् या विद्वान् आदमी।—**तात** –(पुं०) चन्द्रमा।—**दिन**–(न०), —**वार**– (पुं०),—**वासर**–(पुं०) बुधवार। —**रत्न**–(न०) पन्ना।—**सुत**–(पुं०) राजा पुरूरवा की उपाधि।

बुधान—(पुं०) [√बुध् + आनच्, कित्] आचार्य, गुरु। (वि०) विज्ञ। बहुवादी। प्रियवादी। कवि।

बुधित—(वि०) [√बुध्+क्त] जाना हुआ, समझा हुआ।

बुधिल—(वि०) [√बुध्+किलच्] बुद्धिमान्। विद्वान्।

बुध्न—(पुं०) [√बन्ध्+नक्, बुधादेश] बर्तन की तली। पेड़ की जड़। सबसे नीचे का भाग। शिव।

बुन्द्—भ्वा० उभ० सक० जानना, समझना। बुन्दति-ते, बुन्दिष्यति-ते, अबुदत्—अबुन्दीत् —अबुन्दिष्ट।

बुभुक्षा—(स्त्री०) [√भुज् + सन्+अ —टाप्] भूख। किसी वस्तु के उपभोग की इच्छा।

बुभुक्षित—(वि०) [बुभुक्षा+इतच्] भूखा; 'बुभुक्षितः किन्न करोति पापं' पं० ४.१५।

बुभुक्षु—(वि०) [√भुज्+सन्+उ] भूखा। सांसारिक सुखोपभोग का इच्छुक।

बुभुत्सु—(वि०) [√बुध् +सन् +उ] जो समझना चाहता हो, जिज्ञासु।

बुभूषा—(स्त्री०) [√भूष् + सन्+अ, टाप्] सजाने की इच्छा। सजावट।

√**बुल्**—चु० उभ० अक० डूबना। सक० डुबोना। बोलयति-ते, बोलयिष्यति-ते, अबू-बुलत्-त।

बुलि—(स्त्री०) [√बुल्+इन्, कित्] भय। योनि। गुदा।

√**बुस्**—दि० पर० सक० छोड़ना, त्यागना। बुस्यति, बोसिष्यति, अबुसत्।

सं० श० कौ०—५३

बुस, बुष—(न०) [√बुस्+क, पक्षे पृषो० षत्व] भूसी। रद्दी, कूड़ा-करकट। सूखा गोबर। धन-दौलत।

√**बुस्त्**—चु० पर० सक० सम्मान करना। अपमान करना। बुस्तयति—बुस्तति, बुस्तयिष्यति—बुस्तिष्यति, अबुबुस्तत्—अबुस्तीत्।

बुस्त—(न०) [√बुस्त् +घञ्] फल का छिलका। भुना हुआ मांस-विशेष।

बुसी, बृषी, बृसी—(स्त्री०) [बुवन्तोऽस्यां सीदन्ति, ब्रुवत् √सद् +ड—ङीप्, पृषो० साधुः] किसी महात्मा का आसन या गद्दी।

√**बृंह्**—भ्वा० पर० अक० बढ़ना। उगना। दहाड़ना, गरजना। बृंहति, बृंहिष्यति, अबृंहीत्।

बृंहण—(न०) [√बृंह्+ल्युट्] हाथी की चिंघार; 'बृंहणैर्वारणानाम्' शि० १८.३।

बृंहित—(वि०) [√बृंह्+क्त] उगा हुआ। बढ़ा हुआ। गरजा हुआ। (न०) हाथी की चिंघार; 'भ्रमरमहेभबृंहितानि' कि० ७.३९।

√**बृह्**—भ्वा० पर० अक० बढ़ना। गरजना। बर्हति, बर्हिष्यति, अबृहत्—अबर्हीत्। तु० पर० अक० उद्योग या प्रयत्न करना। बृहति, बर्हिष्यति, अबर्हीत्।

बृहत्—(वि०) [स्त्री०—**बृहती**] [√बृह् +अति नि० साधुः] बहुत बड़ा, विशाल। लंबा-चौड़ा। बलिष्ठ। पर्याप्त। ऊँचा। ठसा हुआ, सघन। (स्त्री०) व्याख्यान। (न०) वेद। साम वेद का नाम। ब्रह्मा का नाम।—**अङ्ग** (**बृहदङ्ग**),—**काय**–(वि०) बड़े भारी डील-डौल का। (पुं०) हाथी। —**आरण्य** (**बृहदारण्य**),—**आरण्यक** (**बृहदारण्यक**)- (न०) एक प्रसिद्ध उपनिषद् जो शतपथ ब्राह्मण के अन्तिम ६ अध्यायों में वर्णित है।—**एला** (**बृहदेला**) (स्त्री०) बड़ी इलायची। —**कुक्षि**–(वि०) बड़े पेट वाला।—**केतु**–(पुं०) अग्नि का

नाम ।—गृह (बृहद्गृह)- (पुं०) कारुष देश ।—चित्त (बृहच्चित्त)- (पुं०) जमीरी नीबू का वृक्ष ।—ढक्का (बृहड्ढक्का)-(स्त्री०) बड़ा ढोल ।—नट (बृहन्नट), —नल (बृहन्नल)-(पुं०), —नला (बृहन्नला)-(स्त्री०) विराट् के दरबार में जिन दिनों अर्जुन छिप कर रहते थे, उन दिनों वे इसी नाम से वहाँ परिचित थे ।—नेत्र (बृहन्नेत्र)-(वि०) दूरदर्शी, विवेकी ।—पाटलि-(पुं०) धतूरा । —पाद-(पुं०) बट या गूलर का वृक्ष ।—भट्टारिका (बृहद्भट्टारिका)—(स्त्री०) दुर्गा का नाम ।—भानु (बृहद्भानु) - (पुं०) अग्नि ।—रथ (बृहद्रथ)-(पुं०) इन्द्र । जरासन्ध के पिता का नाम ।—राविन् (बृहद्राविन्)-(पुं०) छोटी जाति का उल्लू । —स्फिच्-(वि०) बड़े नितंबों वाला ।

बृहतिका—(स्त्री०) [बृहत्+ङीप् + कन् —टाप्, ह्रस्व] उत्तरीय वस्त्र, चादर ।

बृहस्पति—(पुं०) [बृहतां वाचां पतिः, ष० त, नि० सुट्] देवताओं के गुरु । बृहस्पति ग्रह । एक स्मृतिकार का नाम ।—पुरोहित-(पुं०) इन्द्र का नाम ।—वार,—वासर-(पुं०) गुरुवार ।

बैजिक—(वि०) [स्त्री०—बैजिकी] [बीज +ठक्] बीज संबंधी । मूल संबंधी । पैतृक । (न०) उपादान कारण, उद्गम स्थान । (पुं०) अँखुआ, अंकुर । आत्मा ।

बैडाल—(वि०) [स्त्री०—बैडाली] [बिडाल +अण्] बिलाव संबंधी ।—व्रत-(न०) बिल्ली की तरह ऊपर से तो बहुत सीधा-सादा बना रहना पर समय पर घात करना । —व्रति-(पुं०) वह पुरुष जो पवित्र जीवन व्यतीत इस लिये करे कि बिना ऐसा किये उसके फँसाये कोई स्त्री फँसे ही नहीं ।—व्रतिक,—व्रतिन्-(पुं०) धर्म का आडंबर करने वाला, ढोंगी ।

बैल्व—(वि०) [स्त्री०—बैल्वी] [बिल्व +अण्] बेल वृक्ष सम्बन्धी या बेल वृक्ष की लकड़ी का बना हुआ । बेल के पेड़ों से आच्छादित । (न०) बेल वृक्ष का फल ।

बोध—(पुं०) [√बुध्+घञ्] जानकारी । ज्ञान; 'बालानां सुखबोधाय' । विचार । बुद्धि, समझ । जागृति । सान्त्वना । खिलना । निर्देश । अनुमति । उपाधि, संज्ञा ।—अतीत (बोधातीत)-(वि०) ज्ञान के परे । —कर-(वि०) जताने वाला । बतलाने वाला । (पुं०) बंदीजन जो राजाओं को जगाया करते थे । शिक्षक, अध्यापक ।—गम्य-(वि०) जो समझ में आ जाय ।—पूर्वम्-(अव्य०) इरादतन, जान-बूझकर । —वासर-(पुं०) देवोत्थानी एकादशी, जो कार्तिक शुक्ल पक्ष में होती है ।

बोधक—(वि०) [स्त्री०—बोधिका] [√बुध् +णिच्+ण्वुल्] बतलाने वाला । सिखलाने वाला । सूचक । जगाने वाला । (पुं०) जासूस, भेदिया ।

बोधन—(न०) [√बुध् +णिच्+ल्युट्] ज्ञापन, जताना, सूचित करना; 'भयरुषोश्च तदिङ्गितबोधनं' र० ९.४९ । जगाना । उद्दीपन । धूप देना । (पुं०) [√बुध्+णिच् +ल्यु] बुधग्रह ।

बोधनी—(स्त्री०) [बोधन+ङीप्] कार्तिक शुक्ला ११वीं । बड़ी पीपल ।

बोधान—(पुं०) [√बुध्+आनच्] बुद्धिमान् पुरुष । बृहस्पति का नामान्तर ।

बोधि—(पुं०) [√बुध्+इन्] पूर्ण ज्ञान । वट वृक्ष । मुर्गा । बुद्धदेव का नामान्तर ।—तरु,—द्रुम,—वृक्ष-(पुं०) वृक्ष जिसके नीचे बुद्ध भगवान् ने बुद्धत्व प्राप्त किया था ।—द-(पुं०) जैनियों का अर्हत् ।—सत्त्व- (पुं०) वह जो बुद्धत्व प्राप्त करने का अधिकारी हो, परन्तु बुद्ध न हो सका हो ।

बोधित—(वि०) [√बुध् +णिच्+क्त] जताया हुआ । प्रकट किया हुआ । स्मरण दिलाया हुआ । आदेश दिया हुआ । सूचित किया हुआ ।

बौद्ध—(वि०) [स्त्री०—**बौद्धी**] [बुद्धि +अण्] बुद्धि या समझ से सम्बन्ध रखने वाला । [बुद्ध+अण्] बुद्ध से सम्बन्ध रखने वाला । (पु०) बुद्धप्रवर्तित धर्म का अनुयायी ।

बौध—(पुं०) [बुधस्यापत्यं पुमान्, बुध +अण्] पुरूरवा का नामान्तर ।

बौधायन—(पुं०) [बोधस्यापत्यं पुमान्, बोध +फक्] बोध ऋषि के पुत्र । श्रौतसूत्र, गृह्यसूत्र और धर्मसूत्र के रचयिता एक ऋषि ।

ब्रध्न—(पुं०) [√बन्ध्+नक्, ब्रधादेश] सूर्य । वृक्षमूल, पेड़ की जड़ । दिवस । मदार का पौधा । सीसा । जस्ता । घोड़ा । शिव या ब्रह्मा ।

ब्रह्म—(न०) [बृंहति वर्धते निरतिशयमहत्त्वलक्षणवृद्धिमान् भवति,√बृंह्+मनिन्, नकारस्याकारः रत्वञ्च, (ये ये नान्ताः ते ते अकारान्ता अपि इत्युक्तेः अकारान्तोऽयं शब्दः)] परमात्मा ।

ब्रह्मण्य—(वि०) [ब्रह्मन्+यत्]ब्रह्म संबंधी । पवित्र । ब्राह्मण के योग्य । ब्राह्मणों से प्रीति करने वाला । (पुं०) वेदों में निष्णात व्यक्ति । शहतूत का वृक्ष । ताड़ का पेड़ । मूँज । शनिग्रह । विष्णु का नामान्तर । कार्तिकेय । —देव-(पु०) विष्णु भगवान् ।

ब्रह्मण्या—(स्त्री०) [ब्रह्मण्य+टाप्] दुर्गा देवी की उपाधि ।

ब्रह्मण्वत्—(न०) [ब्रह्मन् + मतुप्—वत्व] अग्नि का नामान्तर ।

ब्रह्मता—(स्त्री०), **ब्रह्मत्व**-(न०) [ब्रह्मन् +तल्—टाप्] [ब्रह्मन्+त्व] शुद्ध ब्रह्मभाव । ब्राह्मणत्व । ब्रह्म में लीनता ।

ब्रह्मन्—(न०) [हि० 'ब्रह्म' (समास में नकार का लोप हो जाता है)] परमात्मा । परब्रह्म; 'अमीभूता दृष्टिस्त्रिभुवनमपि ब्रह्म मनुते' भर्तृ० ३.८४ । स्तुति की एक ऋचा । धर्मग्रन्थ । वेद । प्रणव, ओङ्कार । ब्राह्मण वर्ण । ब्राह्मी शक्ति । तप । कीर्ति । शुचिता । मोक्ष । वेदों का ब्राह्मण भाग । सम्पत्ति । ब्रह्मविद्या । (पुं०) विष्णु । ब्राह्मण । भक्तजन । सोमयज्ञ के चार ऋत्विजों में से एक । ब्रह्मविद्या जानने वाला । सूर्य ।प्रतिमा। सप्त प्रजापतियों का नामान्तर । [सप्त प्रजापति—मरीचि, अत्रि, अंगरिस्, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु और वसिष्ठ] । बृहस्पति का नामान्तर । शिव । —**अक्षर** (**ब्रह्माक्षर**) (न०) प्रणव, ओङ्कार ।—**अङ्कभू** (**ब्रह्माङ्कभू**)-(पुं०) घोड़ा । वह पुरुष जिसने मंत्रोच्चारण पूर्वक घोड़े के भिन्न-भिन्न शरीरावयवों का स्पर्श किया हो ।—**अञ्जलि** (**ब्रह्माञ्जलि**)-(पुं०) वेदपाठ के समय स्वरविभागार्थ की जाने वाली अञ्जलि । वेदपाठार्थ गुरु के निकट कर्तव्य विनयाञ्जलि ।—**अण्ड** (**ब्रह्माण्ड**)-(न०) अंडाकार भुवनकोष जिसके भीतर से यह सारा जगत् उत्पन्न हुआ ।—०**पुराण** (**ब्रह्माण्डपुराण**)-(न०) अठारह पुराणों में से एक ।—**अधिगम** (**ब्रह्माधिगम**)-(पु०),—**अधिगमन** (**ब्रह्माधिगमन**)-(न०) वेदाध्ययन ।—**अम्भस्** (**ब्रह्माम्भस्**)-(न०) गोमूत्र ।—**अभ्यास** (**ब्रह्माभ्यास**)-(पुं०) वेदाध्ययन ।—**अयण** (**ब्रह्मायण**)-(पुं०)नारायण का नामान्तर । —**अरण्य** (**ब्रह्मारण्य**)-(न०) ब्रह्मविद्या अध्ययन करने का स्थान । एक वन ।—**अर्पण** (**ब्रह्मार्पण**)-(न०) ब्रह्मज्ञान का अर्पण । ब्रह्म में अनुरागवान् होना । एक तांत्रिक प्रयोग का नाम । श्राद्ध-विशेष जिसमें पिण्ड-दान (खीर के पिण्ड) नहीं होता ।—**अस्त्र**(**ब्रह्मास्त्र**)-(न०)एक प्रकार का अस्त्र

जो मंत्र से अभिमंत्रित कर चलाया जाता था। यह अमोघ अस्त्र समस्त अस्त्रों में श्रेष्ठ माना जाता था।—**आत्मभू (ब्रह्मात्मभू)**–(पुं०) घोड़ा।—**आदिजाता (ब्रह्मादिजाता)**–(स्त्री०) गोदावरी नदी।—**आनन्द (ब्रह्मानन्द)**–(पुं०) ब्रह्म के स्वरूप के अनुभव का आनन्द। ब्रह्मज्ञान से उत्पन्न आत्मसंतोष: 'ब्रह्मानन्दसाक्षात्क्रिया' माल० ७.३१॥—**आरम्भ (ब्रह्मारम्भ)**–(पुं०) वेदाभ्यास का आरम्भ।—**आवर्त (ब्रह्मावर्त)**–(पुं०) सरस्वती और दृषद्वती नदियों के बीच की भूमि का नाम-विशेष। यथा—सरस्वतीदृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम्। तं देवनिर्मितं देशं ब्रह्मावर्तं प्रचक्षते॥—मनु०।—**आसन (ब्रह्मासन)**–(न०) वह आसन-विशेष जिसके अनुसार बैठ कर ब्रह्म का ध्यान किया जाता है।—**आहुति (ब्रह्माहुति)**–(स्त्री०) ब्रह्मयज्ञ। वेदाध्ययन।—**उज्झता (ब्रह्मोज्झता)**–(स्त्री०) वेदाध्ययन सम्बन्धी प्रमाद या उनके अध्ययन से विमुखता।—**उद्य (ब्रह्मोद्य)**–(न०) वेदों की व्याख्या अथवा ब्रह्मविद्या सम्बन्धी विषयों पर विचार।—**उपदेश (ब्रह्मोपदेश)**–(पुं०) ब्रह्मविद्या या वेदों को पढ़ाना।—**ऋषि (ब्रह्मर्षि या ब्रह्मऋषि)**–(पुं०) ब्राह्मण ऋषि। वसिष्ठ आदि मंत्रद्रष्टा ऋषि।—**०देश (ब्रह्मर्षिदेश)**–(पुं०) आर्यावर्त का भाग-विशेष। यथा— 'कुरुक्षेत्रं च मत्स्याश्च पंचालाः शूरसेनकाः। एष ब्रह्मर्षिदेशो वै ब्रह्मावर्तादनन्तरः॥—मनु।—**ओदन (ब्रह्मौदन)**–(पुं०, न०) यज्ञ में यज्ञ कराने वालों को दिया जाने वाला भोजन।—**कन्यका**–(स्त्री०) सरस्वती।—**कर**–(पुं०) यज्ञ कराने वालों को दी जाने वाली दक्षिणा।—**कर्मन्**–(न०) ब्राह्मण का अनुष्ठेय कर्म। वेदविहित कर्म।—**कला**–(स्त्री०) दाक्षायणी का नामान्तर।—**कल्प**–(पुं०) उतना समय जितने में एक ब्रह्मा रहता है।—**काण्ड**–(न०) वेद का वह भाग जिसमें ज्ञानकाण्ड है।—**काष्ठ**–(पुं०) शहतूत का पेड़।—**कूर्च**–(न०) रजस्वला के स्पर्श या इसी प्रकार की अन्य अशुद्धि दूर करने के लिये अनुष्ठेय व्रत-विशेष। इसमें एक दिन निराहार रह कर दूसरे दिन पञ्चगव्य पिया जाता है।—**कृत्**–(वि०) तप या स्तुति करने वाला। (पुं०) विष्णु। शिव। इन्द्र।—**कोश**–(पुं०) समस्त वेदराशि।—**क्षत्र**–(पुं०) ब्राह्मण और क्षत्रिय से उत्पन्न एक जाति (दाक्षिणात्य में ब्रह्मक्षत्रगण कायस्थ कहलाते हैं)।—**गुप्त**–(पुं०) एक ज्योतिषी का नाम जो ईसा की ५९८ ई० में उत्पन्न हुआ था।—**गोल**–(पुं०) ब्रह्माण्ड।—**ग्रन्थि**–(पुं०) जनेऊ की मुख्य गाँठ, ब्रह्मगाँठ।—**ग्रह**,—**पिशाच**,—**पुरुष**–(पुं०),—**रक्षस्**–(न०),—**राक्षस**–(पुं०) ब्रह्मराक्षस। ब्रह्मराक्षस होने का कारण याज्ञवल्क्य स्मृति में यह लिखा है "परस्य योषितं हृत्वा ब्रह्मस्वमपहृत्य च। अरण्ये निर्जले देशे भवति ब्रह्मराक्षसः॥—**घातक**,—**घातिन्**–(पुं०) ब्राह्मण की हत्या करने वाला।—**घातिनी**–(स्त्री०) रजस्वला होने के दूसरे दिन की उस स्त्री की संज्ञा।—**घोष**–(पुं०) वेदाध्ययन। वेदपाठ।—**घ्न**–(पुं०) ब्राह्मण की हत्या करने वाला।—**चक्र**–(न०) कार्यकारणात्मक संसाररूप चक्र।—**चर्य**–(न०) चार आश्रमों में से पहला। स्मरण, कीर्तन आदि अष्टविध मैथुन से बचने का व्रत, वीर्यरक्षा: 'अविप्लुतब्रह्मचर्यो गृहस्थाश्रममाचरेत्' मनु० ३.२। ब्रह्म के साक्षात्कार की साधना।—**चारिक**–(न०) ब्रह्मचारी का जीवन।—**चारिन्**–(वि०, पुं०) [ब्रह्म ज्ञानं तपो वा अवश्यम् आचरति अर्जयति, ब्रह्म √चर्+णिनि] गुरुकुल में रह

कर ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए वेदाध्ययन करने वाला व्यक्ति। वह व्यक्ति जो आजीवन ब्रह्मचर्य धारण करने का सङ्कल्प किये हुये हो। शिव जी। स्कन्द।—**चारिणी**–(स्त्री०) दुर्गा की उपाधि। सती स्त्री। ब्राह्मीबूटी। —**ज**– (पुं०) हिरण्यगर्भ। कार्त्तिकेय।—**जन्मन्**– (न०) उपनयन संस्कार।—**जार**– (पुं०) ब्राह्मणी का उपपति। इन्द्र।—**जीवन**–(वि०) श्रौत स्मार्त कर्म करा कर जीविका चलाने वाला। वेतनभोगी या स्वार्थसेवी ब्राह्मण।—**ज्ञ**–(पुं०) कार्त्तिकेय। विष्णु। (वि०) ब्रह्म को जानने वाला, ब्रह्मवेत्ता।—**ज्ञान**–(न०) परम तत्त्व का ज्ञान, ब्रह्मविद्या।—**ज्योतिस्**– (न०) शिव। ब्रह्म या देवता की ज्योति।—**तत्त्व**–(न०) ब्रह्म सम्बन्धी सत्यज्ञान।—**द**–(पुं०) वेददाता गुरु।—**दण्ड**–(पुं०) ब्राह्मण का शाप। ब्राह्मण की यष्टि। शिव। एक केतु।—**दान**–(न०) वेद पढ़ाना।—**दाय**–(पुं०) वेद का वह भाग जिसमें ब्रह्म का निरूपण हो। ब्राह्मण की सम्पत्ति।—**दायाद**–(पुं०) ब्राह्मण जिसको वेद पैतृक सम्पत्ति है। ब्राह्मणपुत्र।—**दारु**–(पुं०) शहतूत का पेड़।—**दिन**–(न०) ब्रह्मा का एक दिन जो १०० चतुर्युगियों का माना जाता है।—**देय**–(स्त्री०) ब्राह्मविवाह के नियमानुसार दी जाने वाली कन्या।—**दैत्य**–(पुं०) ब्राह्मण जो दैत्य हो गया है, ब्रह्मराक्षस।—**द्विष्**, —**द्वेषिन्**–(वि०) ब्राह्मणों से घृणा करने वाला। वेदनिंदक।—**द्वेष**–(पुं०) वेदों या ब्राह्मणों से घृणा।—**नदी**–(स्त्री०) सरस्वती नदी।—**नाभ**–(पुं०) विष्णु।—**निष्ठ**–(वि०) ब्रह्म के ध्यान में मग्न रहने वाला। (पुं०) शहतूत का पेड़।—**पद**–(न०) ब्रह्मत्व। ब्राह्मणत्व।—**परिषद्**–(स्त्री०) ब्राह्मणों की सभा।—**पवित्र**–(पुं०) दर्भ, कुश।—**पादप**–(पुं०) पलाश का पेड़।—**पाश**–(पुं०) ब्रह्मा का पाश नामक अस्त्र।—**पितृ**–(पुं०) विष्णु।—**पुत्र**–(पुं०) ब्राह्मण का बेटा। एक नद का नाम। यह मानसरोवर से निकल कर हिमालय के पूर्वी प्रान्त आसाम में हो कर भारत में प्रवेश करता है और बंगाल की खाड़ी में गिरता है।—**पुत्री**–(स्त्री०) सरस्वती नदी। सरस्वती। वाराहीकंद।—**पुर**–(न०) हृदय। ब्रह्मलोक।—**पुरी**–(स्त्री०) ब्रह्मलोक। वाराणसी।—**पुराण**–(न०) एक महापुराण; इसे आदिपुराण भी कहते हैं।—**प्राप्ति**–(स्त्री०) ब्रह्म में लीनता।—**बन्धु**– (पुं०) पतित ब्राह्मण।—**बीज**(न०) प्रणव, ओङ्कार।—**ब्रुव**,—**ब्रुवाण**–(पुं०) बनावटी ब्राह्मण।—**भाग**–(पुं०) शहतूत का पेड़। यज्ञ कराने वालों में प्रधान का भाग।—**भूय**–(न०) ब्रह्म में लय होना, मोक्ष; 'ब्रह्मभूयाय कल्पते' भग० १४.२६।—**मङ्गलदेवता**–(स्त्री०) लक्ष्मी देवी का नामान्तर।—**मह**–(पुं०) ब्राह्मणों के उपलक्ष्य में किया हुआ उत्सव।—**मीमांसा**–(स्त्री०) वेदान्त दर्शन।—**मूर्धभृत्**–(पुं०) शिव।—**मेखल**–(पुं०) मूंज तृण।—**यज्ञ**– (पुं०) पञ्चमहायज्ञों में से एक, विधिपूर्वक वेदाभ्यास।—**योग**–(पुं०) आध्यात्मिक ज्ञान की उपलब्धि।—**योनि**–(वि०) ब्रह्म से उत्पन्न।—**रन्ध्र**–(न०) ब्रह्माण्ड द्वार, मस्तक के मध्य में माना हुआ गुप्त छेद जिससे प्राण निकलने पर ब्रह्मलोक में उस जीव का जाना माना जाता है।—**राक्षस**–(पुं०) प्रेतयोनि प्राप्त करने वाला ब्राह्मण। शिव का एक गण।—**रात्र**–(पुं०) शुकदेव जी।—**रात्रि**–(पुं०) ब्राह्ममुहूर्त, रात का शेष चार दंड।—**राशि**–(पुं०) परशुराम का एक नाम। बृहस्पति से आक्रान्त श्रवण नक्षत्र।—**रीति**–

(स्त्री०) एक तरह का पीतल ।—**रेखा**,—**लेखा**–(स्त्री०), —**लिखित**–(न०),—**लेख**–(पुं०) भाग्य व अभाग्य का लेख जिसके बारे में प्रसिद्धि है कि ब्रह्मा किसी जीव के गर्भ में आते ही उसके मस्तक पर लिख देते हैं ।—**लोक**–(पुं०) ब्रह्मा का लोक ।—**वक्तृ**–(पुं०) वेदों का व्याख्याता ।—**वध**–(पुं०),—**वध्या**–(स्त्री०) ब्रह्महत्या, ब्राह्मण-वध ।—**वर्चस्**, —**वर्चस**–(न०) वह तेज या शक्ति जो ब्राह्मण तप एवं स्वाध्याय द्वारा प्राप्त करता है, ब्रह्मतेज; 'तस्य हेतुस्त्वद्-ब्रह्मवर्चसं' र० १.६३ ।—**वर्धन**–(न०) ताँबा ।—**वादिन्**–(पुं०) वेदों को पढ़ाने या सिखाने वाला । वेदान्ती ।—**विद्**,—**विद**–(वि०) ब्रह्म को जानने वाला । (पुं०) ऋषि । विष्णु । शिव ।—**विद्या**–(स्त्री०) वह विद्या जिसके द्वारा कोई ब्रह्म को जान सके ।— **विन्दु**,—**बिन्दु**–(पुं०) वेद पाठ करते समय मुँह से गिरा हुआ थूक का छींटा ।—**विवर्धन** –(पुं०) इन्द्र का नामान्तर ।—**वृक्ष**–(पुं०) पलाश या ढाक का पेड़ । गूलर वृक्ष ।— **वृत्ति**–(स्त्री०) ब्राह्मण की आजीविका ।—**वृन्द**–(न०) ब्राह्मणों का समुदाय ।—**वेद**–(पुं०) वेद का ज्ञान । ब्रह्मज्ञान । वेदान्त ।—**वेदिन्**–(वि०) वेदों का जानने वाला ।—**वैवर्त**–(न०) ब्रह्म के कारण प्रतीत होने वाला जगत्, ब्रह्म का विवर्त जगत् । अष्टादश पुराणों में से एक ।—**शिरस्**, —**शीर्षन्**–(न०) अस्त्र विशेष । इस अस्त्र का चलाना अगस्त्य जी से सीखकर द्रोणाचार्य ने अर्जुन और अश्वत्थामा को सिखाया था ।—**संसद्**–(स्त्री०) ब्राह्मणों की सभा ।—**सती**–(स्त्री०) सरस्वती नदी ।—**सत्र**–(न०) ब्रह्मयज्ञ ।—**सदस्**–(न०) ब्रह्मा का आलय । ब्राह्मण का निवास-स्थान ।—**सभा**–(स्त्री०) ब्रह्मा की कचहरी या न्यायालय जहाँ ब्राह्मण न्याय करता हो ।—**सम्भव**–(वि०) ब्राह्मण से उत्पन्न । (पुं०) नारद जी का नाम ।—**सर्प**– (पुं०) सर्प विशेष ।—**सायुज्य**–(न०) ब्रह्म में पूर्ण तादात्म्य, एकरूपता ।—**सार्ष्टिता**–(स्त्री०) ब्रह्म में एकत्व ।—**सावर्णि**–(पुं०) दसवें मनु का नाम ।—**सू**–(पुं०) चतुर्व्यूहात्मक विष्णु की एक मूर्ति । अनिरुद्ध । कामदेव ।—**सूत्र**–(न०) यज्ञोपवीत । बादरायण-रचित ब्रह्म-सूत्र । इसमें ब्रह्म का प्रतिपादन है और ये वेदान्त दर्शन के आधार हैं ।—**सूनु**–(पुं०) नारद, मरीचि आदि सप्तर्षिगण । केतु-विशेष ।—**सृज्**–(पुं०) शिव जी ।—**स्तम्ब**–(पुं०) संसार, दुनिया ।—**स्तेय**–(न०) उपायों से सत्यज्ञान की प्राप्ति अनुचित । गुरु की अनुमति के बिना दूसरे को पढ़ाया हुआ पाठ सुनकर वेद पढ़ना ।—**स्व**–(न०) ब्राह्मण का धन ।—**हत्या**–(स्त्री०) ब्राह्मण का वध जिसे मनु ने महा-पातक बताया है ।—'ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमः । महान्ति पातकान्येव संसर्गश्चापि तैः सह ।'—**हन्**–(वि०) ब्राह्मण की हत्या करने वाला ।—**हृदय**–(पुं०, न०) प्रथम वर्ग के १६ नक्षत्रों में से एक जिसे अंगरेजी में 'कैपेल्ला' कहते हैं ।

ब्रह्मण्य—(वि०) [ब्रह्मन्+मयट्] वेद सम्बन्धी; 'ज्वलन्निव ब्रह्ममयेन तेजसा' कु० ५.३० । ब्राह्मण के योग्य । (न०) ब्रह्मास्त्र ।

ब्रह्मवत्—(वि०) [ब्रह्मन् + मतुप्—वत्व] आध्यात्मिक-ज्ञान-सम्पन्न ।

ब्रह्माणी—(स्त्री०) [ब्रह्माणम् अणति कीर्त-यति, ब्रह्मन्√अण् + अण्—ङीप् वा ब्रह्माणम् आनयति जीवयति, ब्रह्मन्√अन् +णिच्+अण्—ङीप्, णिलोप, णत्व] ब्रह्मा जी की स्त्री । दुर्गा की उपाधि । रेणुका नामक गन्धद्रव्य । पीतल ।

ब्रह्मिन्—(पुं०) [ब्रह्म वेदः तपो वा अस्ति यस्य शेषतया, ब्रह्मन्+इनि, टिलोप] वेद और तपस्या के शेषीभूत परमेश्वर ।

ब्रह्मिष्ठ—(वि०) [अतिशयेन ब्रह्मी, ब्रह्मिन् +इष्ठन्, टिलोप] अतिशय ब्रह्मज्ञानसम्पन्न। वेदविद्या में विशारद ।

ब्रह्मिष्ठा—(स्त्री०) [ब्रह्मिष्ठ+टाप्] दुर्गा की उपाधि ।

ब्रह्मी—(स्त्री०) [ब्रह्मन् + अण्—ङीप्, टिलोप, बाहुलकात् न वृद्धिः]=ब्राह्मी ।

ब्रह्मेशय—(पुं०) [ब्रह्मणि तपसि शेते,√शी +अच्, पृषो० साधुः] कार्त्तिकेय । विष्णु ।

ब्राह्म—(वि०) [स्त्री०—**ब्राह्मी**] [ब्रह्मन् +अण्, टिलोप] परब्रह्म सम्बन्धी । ब्रह्मा का। वेदाध्ययन सम्बन्धी। वैदिक । पवित्र । जिसका अधिष्ठाता ब्रह्मा हो । (न०) हाथ के अँगूठे के नीचे का स्थान । धर्मग्रन्थों का अध्ययन । (पुं०) आठ प्रकार के विवाहों में से एक । नारद ।—**अहोरात्र**–(पुं०) ब्रह्मा का एक दिन और रात ।—**देया**–(स्त्री०) कन्या जिसका विवाह ब्रह्मविवाह की विधि से होने वाला हो ।—**मुहूर्त**–(पुं०) रात के पिछले पहर के अन्तिम दो दण्ड, सूर्योदय से पूर्व दो घड़ी तक का समय ।

ब्राह्मण–(वि०) [स्त्री०—**ब्राह्मणी**] [ब्रह्मणो विप्रस्य प्रजापतेर्वा अपत्यम्, वा ब्रह्म वेदः तम् अधीते, ब्रह्मन्+अण्–ब्राह्मणः (वि०तथा न० में ब्राह्मण+अण् यथावश्यक)] ब्राह्मण का । ब्राह्मणोपयोगी । ब्राह्मण का किया हुआ । (पुं०) चारों वर्णों में प्रथम और श्रेष्ठ वर्ण । (ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में ब्राह्मण की उत्पत्ति विराट् पुरुष के मुख से वर्णित है ।) यज्ञ कराने वाला, पुरोहित । ब्रह्मवादी । अग्नि । (न०) ब्राह्मणों की सभा । वेद का वह भाग जो मंत्र नहीं कहलाता और जिसमें वेद के मंत्रों का यज्ञ-कार्यों में प्रयोग बतलाया गया है । वेद के मंत्रभाग से यह भिन्न है । प्रत्येक वेद का ब्राह्मण पृथक् है । यथा—

वेद	ब्राह्मण
ऋग्वेद—	ऐतरेय, या आश्वलायन और कौशीतकी या शांखायन ।
यजुर्वेद—	शतपथ ।
सामवेद—	पञ्चविंश और षड्विंश और ६ ग्रन्थ भी हैं ।
अथर्ववेद—	गोपथ ।

—**अतिक्रम** (**ब्राह्मणातिक्रम**)–(पुं०) ब्राह्मण के प्रति अपमान, ब्राह्मण की अवज्ञा या तिरस्कार ।—**चक्षुस्**–(न०) श्रुति और स्मृति ।—**चाण्डाल**–(पुं०) शास्त्रनिषिद्ध कर्म करने वाला, अपकृष्ट ब्राह्मण । ब्राह्मण जाति की स्त्री और शूद्र जाति के पिता से उत्पन्न जन ।—**जात**– (न०),—**जाति**–(स्त्री०) ब्राह्मण की जाति ।—**जीविका**–(स्त्री०) यजन-याजनादिरूप ब्राह्मण-वृत्ति ।—**द्रव्य**,—**स्व**–(न०) ब्राह्मण का धन ।—**निन्दक**–(पुं०) ब्राह्मण की निन्दा करने वाला । नास्तिक ।—**प्रिय**–(पुं०) विष्णु ।—**ब्रुव**–(पुं०) कहलाने भर का ब्राह्मण, कर्म और संस्कार से हीन ब्राह्मण ।—**सन्तर्पण**–(न०) ब्राह्मणों को तृप्त या सन्तुष्ट करना ।

ब्राह्मणक—(पुं०) [ब्राह्मण+कन्] नाम मात्र का ब्राह्मण, निकृष्ट अथवा अयोग्य ब्राह्मण । उस देश विशेष का नाम जहाँ रणप्रिय ब्राह्मण वास करते थे ।

ब्राह्मणत्रा—(अव्य०) [ब्राह्मण+त्राच्] ब्राह्मण को देने योग्य । ब्राह्मणों में । ब्राह्मण की दशा में ।

ब्राह्मणाच्छंसिन्—(पुं०) [ब्राह्मणे मंत्रेतरवेद-भागे विहितानि शस्त्राणि उपचारात् ब्राह्मणानि तानि शंसति, द्वितीयार्थे पञ्चम्युपसंख्यानम् इति विभक्तेः अलुक्] सोमयाग में ब्रह्मा का सहकारी एक ऋत्विक् ।

ब्राह्मणी—(स्त्री०) [ब्राह्मण+ङीप्] ब्राह्मण की पत्नी। बुद्धि। गिरगिट की जाति का एक जन्तु।

ब्राह्मण्य—(वि०) [ब्राह्मण+ष्यञ् वा यत्] ब्राह्मण के योग्य, अनुरूप। (न०) ब्राह्मण का धर्म, ब्राह्मणत्व; 'सत्य शपे ब्राह्मण्येन' मृ० ५। ब्राह्मणों का समुदाय। (पुं०) शनि-ग्रह का नामान्तर।

ब्राह्मी—(स्त्री०) [ब्रह्मणः इयम्, ब्रह्मन्+अण्, टिलोप, ङीप्] ब्रह्मा की मूर्तिमती शक्ति। सरस्वती। वाणी। कहानी, कथा। धर्मानुष्ठान, धार्मिक कृत्यों की रस्म। रोहिणी नक्षत्र। दुर्गा। ब्राह्म विवाह से परिणीता स्त्री। ब्राह्मण की पत्नी। एक प्रसिद्ध बूटी जो आयुर्वेद में बुद्धिवर्धक मानी गयी है। भारत-वर्ष की एक प्राचीन लिपि जिससे नागरी, बँगला आदि आधुनिक लिपियाँ निकली हैं। पीतल। एक नदी का नाम।—**कन्द**—(पुं०) वाराही कंद।—**गायत्री**—(स्त्री०) एक वैदिक छन्द। इसमें ४८ वर्ण होते हैं।—**जगती**—(स्त्री०) वैदिक छन्द विशेष, जिसमें ७२ वर्ण होते हैं।—**पंक्ति**—(स्त्री०) वैदिक छन्द विशेष, जिसमें ६० वर्ण होते हैं।—**बृहती**—(स्त्री०) वैदिक छन्द जिसमें ५४ वर्ण होते हैं।

ब्राह्म—(वि०) [स्त्री०—**ब्राह्मी**] [ब्रह्मन्+अण्] ब्रह्म सम्बन्धी। परब्रह्म सम्बन्धी। ब्राह्मणों से सम्बन्ध रखने वाला। (न०) आश्चर्य, विस्मय।—**हुत** (**ब्राह्महुत**)—(न०) ब्रह्मयज्ञ।

ब्रुड—(वि०) [√ब्रू+क] बनावटी।

√**ब्रू**—अ० उभ० सक० कहना। बोलना। पुकारना। उत्तर देना। ब्रवीति—आह—ब्रूते, वक्ष्यति—ते, अवोचत्—त।

√**ब्रूस्**—चु० पर० सक० मारना, वध करना। ब्रूसयति।

ब्लेष्क—(न०) फंदा, जाल, पाश।

भ

भ—संस्कृत वर्णमाला का चौबीसवाँ व्यञ्जन और पवर्ग का चौथा वर्ण। इसका उच्चारण-स्थान ओष्ठ है और इसका प्रयत्न संवार, नाद और घोष है। यह महाप्राण है और इसका अल्पप्राण "ब" है। (न०) [√भा+ड] नक्षत्र। राशि। ग्रह। तारा। सत्ताईस की संख्या। मधुमक्खी। (पुं०) शुक्र ग्रह। भ्रम।—**ईन** (**भेन**),—**ईश** (**भेश**)—(पुं०) सूर्य।—**गण**—(पुं०) सितारों का समुदाय। राशिचक्र। राशिचक्र में ग्रहों का भ्रमण। छन्दःशास्त्रानुसार एक गण जिसमें आदि का एक वर्ण गुरु और अन्त के दो वर्ण लघु होते हैं।—**नेमि**—(पुं०) नक्षत्र-चक्र।—**चक्र**,—**मण्डल**—(न०) राशिचक्र। नक्षत्रचक्र।—**पञ्जर**—(न०) नक्षत्रचक्र। आकाश।—**पति**—(पुं०) चन्द्रमा।—**लता**—(स्त्री०) रामबला लता।—**सूचक**—(पुं०) ज्योतिषी।

भक्किका—(स्त्री०) [=झिल्लिका, पृषो० साधुः] झींगुर।

भक्त—(वि०) [√भज्+क्त] बाँटा हुआ, विभाजित। पूजन किया हुआ। संलग्न। अनुरक्त; 'भक्तोऽसि मे सखा चेति' भग० ४.३। पकाया हुआ। (न०) भोजन। भात। उबाला हुआ कोई भी भोज्य-पदार्थ। बाँट। (पुं०) उपासक, सेवक।—**अभिलाष** (**भक्ताभिलाष**)—(पुं०) भक्त की इच्छा। भगवद्-भक्ति की इच्छा। भोजन करने की इच्छा।—**उपसाधक** (**भक्तोपसाधक**)—(पुं०) रसोइया, पाचक।—**कंस**—(न०) भोजन के पदार्थों से भरी हुई थाली।—**कर**—(पुं०) एक प्रकार का सुगन्धित द्रव्य जो अनेक अन्य द्रव्यों को मिलाकर बनाया जाता है।—**कार**

-(पुं०) रसोइया, पाचक ।—छन्द (भक्तच्छन्द)(न०) भूख ।—दातृ,-दायक,-दायिन्—(वि०) भरण-पोषण करने वाला ।—दास-(पुं०) भोजन मात्र पाने पर खिदमत करने वाला ।—द्वेष-(पुं०) भोजन के प्रति अरुचि ।—पुलाक-(पुं०) माँड़ । भोजन का कौर ।—मण्ड-(न०) माँड़ ।—रोचन-(वि०) भूख बढ़ाने वाला । —वत्सल-(वि०) भक्तों पर कृपा करने वाला ।—शाला-(स्त्री०) प्रार्थियों से मुलाकात करने का कमरा । भोजन-गृह ।

भक्ति—(स्त्री०) [√भज्+क्तिन्] भिन्नता, पृथक्ता । बटवारा, बाँट । विभाग, अंश । विभाग करने वाली रेखा। गौणवृत्ति । उपचार । एक वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में तगण, मगण और अंत में गुरु होता है । अनुराग, श्रद्धा । सम्मान । सेवा । पूजन ।—च्छेद-(पुं०) रेखाओं द्वारा की जाने वाली चित्रकारी । विष्णुभक्त के विशेष चिह्न; जैसे तिलक, मुद्रा आदि ।—पूर्वकम्-(अव्य०) भक्ति सहित ।—भाज्-(वि०) भक्ति के पात्र । अनुरागवान् ।—मार्ग-(पुं०) भक्तियोग, भक्ति का वह साधन जिसके द्वारा भगवत्प्राप्ति हो ।—योग-(पुं०) भक्तिरूप योग, भक्ति के द्वारा भगवान् को पाने की साधना ।

भक्तिमत्—(वि०) [भक्ति+मतुप्] भक्तियुक्त । सच्चा विश्वास रखने वाला ।

भक्तिल—(वि०) [भक्ति √ला+क] भक्तिदायक । विश्वस्त । (घोड़ा, नौकर आदि) ।

√भक्ष्—चु० पर० सक० खाना, भक्षण करना । बरबाद करना, नष्ट करना । डसना, काटना। भक्षयति, भक्षयिष्यति, अबभक्षत् ।

भक्ष—(पुं०) [√भक्ष् +घञ्] भोजन करना । भोज्य पदार्थ ।

भक्षक—(वि०) [स्त्री०—भक्षिका] [√भक्ष्+ण्वुल्] खाने वाला । पेटू, भोजनभट्ट ।

भक्षण—(वि०) [स्त्री०—भक्षणी] [√भक्ष्+ल्यु] खाने वाला । (न०) [√भक्ष्+ल्युट्] खाना ।

भक्ष्य—(वि०) [√भक्ष्+ण्यत्] खाने योग्य । (न०) भोज्य पदार्थ ।—कार-(पुं०) (भक्ष्यंकार भी होता है ।) पाचक, रसोइया ।

भग—(पुं०, न०) [भज्यते अनेन अस्मिन् वा, √भज्+घ] स्त्रीचिह्न, योनि । गुह्य-स्थान । (न०) उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र । (पुं०) सूर्य के द्वादश रूपों में से एक । चन्द्रमा । शिव का रूप-विशेष । सौभाग्य । समृद्धि । गौरव । कीर्ति । मनोहरता, सौन्दर्य । सर्वोत्तमता । प्रेम, स्नेह । आमोद-प्रमोद । सद्गुण । धर्म । इच्छा । उद्योग, प्रयत्न । निरपेक्षता (सांसारिक पदार्थों के प्रति) । मोक्ष, मुक्ति । बल, शक्ति । सर्वव्यापकता ।—अङ्कुर (भगाङ्कुर)-(पुं०) बवासीर, अर्शरोग ।—घ्न-(पुं०) शिव जी ।—दत्त-(पुं०) प्राग्ज्योतिष पुर का राजा जो कुरुक्षेत्र के युद्ध में बड़ी वीरता के साथ लड़कर अर्जुन के हाथ से मारा गया था ।—देव-(पुं०) पहले दर्जे का कामुक या लंपट ।—देवता-(स्त्री०) विवाह का अधिष्ठाता देवता ।—दैवत-(न०) उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र ।—नन्दन-(पुं०) विष्णु ।—भक्षक-(पुं०) कुटना, भड़ुआ ।

भगन्दर—(पुं०) [भगं गुह्यम् दारयति, भग √दृ+णिच्+खच्, मुम्] गुदावर्त के किनारे होने वाला एक व्रणरोग ।

भगवत्—(वि०) [भग+मतुप्—वत्व] ऐश्वर्ययुक्त; 'भगवत्परवानयं जनः' र० ८.८१ । पूज्य, सम्माननीय । (पुं०) देवता । विष्णु । शिव । जिन । बुद्धदेव ।

भगवदीय—(पुं०) [भगवत्+छ—ईय] भगवान् विष्णु का उपासक ।

भगाल—(न०) [√भज्+कालन्, कुत्व] आदमी की खोपड़ी ।

भगालिन्—(पुं०) [भगाल+इनि] शिव ।

भगिन्—(वि०) [स्त्री०—भगिनी] [भग+इनि] समृद्धिशाली । भाग्यवान् । प्रतापी ।

भगिनिका—(स्त्री०) [भगिनी+कन्—टाप् ह्रस्व] बहिन ।

भगिनी—(स्त्री०) [भगं यत्नः पित्रादितो द्रव्यादाने विद्यतेऽस्याः, भग+इनि—ङीप्] सहोदर बहिन । सौभाग्यवती स्त्री । स्त्री ।—पति,—भर्तृ—(पुं०) बहनोई, बहिन का पति ।

भगिनीय—(पुं०) [भगिनी+छ—ईय] भांजा, बहिन का पुत्र ।

भगीरथ—(पुं०) [भं ज्योतिष्कमण्डलं गीर्वाङ्मयं तत्र रथ इन्द्रियाणि रथ इव यस्य] सूर्यवंशी एक प्राचीन राजा का नाम जिसने तप कर गङ्गा को मृत्युलोक में बुलाया ।—पथ, —प्रयत्न—(पुं०) बड़ा भारी परिश्रम । —सुता—(स्त्री०) श्रीगङ्गा जी ।

भग्न—(वि०) [√भञ्ज्+क्त] टूटा-फूटा । फटा हुआ । पराजित । हताश । पकड़ा हुआ । रोका हुआ । निर्बल किया हुआ । भली-भांति पराजित किया हुआ । नष्ट किया हुआ । (न०) पैर की हड्डी का टूटना ।—आत्मन् (भग्नात्मन्)—(पुं०) चन्द्रमा ।—आपद्, (भग्नापद्) (वि०) वह जिसने विपत्तियों अथवा अपने दुर्भाग्य पर विजय प्राप्त की हो । —आश (भग्नाश)—(वि०) निराश, हताश ।—उत्साह (भग्नोत्साह)—(वि०) हतोत्साह ।—पाद—(पुं०) पुनर्वसु, उत्तराषाढ़ा, कृत्तिका, उत्तराफाल्गुनी, पूर्वा भाद्रपदा और विशाखा नक्षत्र जिनमें मरने पर द्विपाद दोष लगता है ।—पृष्ठ—(वि०) टूटी हुई पीठ वाला । सामने आने वाला ।—प्रतिज्ञ—(वि०) वह जिसने अपनी प्रतिज्ञा तोड़ दी हो ।—मनस्—(वि०) हताश ।—व्रत—(वि०) वह जिसने अपना व्रत भङ्ग कर डाला हो ।—सङ्कल्प—(वि०) वह जिसका विचार विफल हुआ हो ।

भग्नी—(स्त्री०) [=भगिनी, पृषो० साधुः] बहिन ।

भङ्कारी, भङ्गारी—(स्त्री०) [भम् इत्यव्यक्तशब्दं करोति, भम्√कृ+अण्—ङीप्] [=भङ्कारी, पृषो० साधुः] मच्छड़ । डाँस । फनगा ।

भङ्क्ति—(स्त्री०) [√भञ्ज्+क्तिन्] (हड्डी का) टूटना ।

भङ्ग—(पुं०) [√भञ्ज् +घञ्] टूटने का भाव । अलहदगी, पृथक्ता । अंश, हिस्सा । अधःपात । विनाश । भगदड़ । पराजय । असफलता । अस्वीकृति । दर्ज । बाधा, रुकावट । प्रतिबन्ध । किसी कार्य को स्थगित करने की क्रिया । भाग जाने की क्रिया । फेर, मोड़ । लहर । सिकुड़न । झुकाव । गमन । लकवा का रोग । छल । नहर । घुम-घुमाकर कोई बात कहने का ढंग । पटसन, पटुआ ।—नय—(पुं०) बाधाओं को दूर करने की क्रिया ।—वासा—(स्त्री०) हल्दी, हरिद्रा ।—सार्थ—(वि०) बेईमान, दगाबाज ।

भङ्गा—(स्त्री०) [√भञ्ज्+अ—टाप्] पटसन, पटुआ । भांग ।

भङ्गि, भङ्गी—(स्त्री०) [√भञ्ज् + इन्, कुत्व] [भङ्गि+ङीष्] टूटना । लहर-झुकाव । टेढ़ापन । सिकुड़न । जल की बाढ़ । टेढ़ा-मेढ़ा मार्ग । घुम-घुमाकर बात कहने का ढंग । बहाना । फरेब, चाल, धोखा । व्यङ्ग्योक्ति । रसिकता-पूर्ण उत्तर । पग, कदम । अन्तर । लज्जाशीलता ।—भक्ति—(स्त्री०) लहरियादार जीना ।

भङ्गिन्—(वि०) [भङ्ग+इनि] भंग हो जाने वाला, नश्वर ।

भङ्गिमत्—(वि०) [भङ्गि+मतुप्] लहरियादार।

भङ्गिमन्—(पुं०) [भङ्ग+इमनिच्] (हड्डी का) टूटना। टेढ़ापन। घुँघरालापन। धोखा, छल। व्यङ्ग। हठ। निठुराई।

भङ्गोल—(न०) ज्ञानेन्द्रियों का विकार।

भङ्गुर—(वि०) [√भञ्ज्+घुरच्]भंग होने वाला, नाशवान्। परिवर्तनशील। टेढ़ा। घूमघुमौआ, घुँघराला। दगाबाज। (पुं०) नदी का मोड़ या घुमाव।

√भज्—भ्वा० उभ० सक० बँटवारा करना। अपने लिये प्राप्त करना। अङ्गीकार करना। आश्रय लेना। उपयोग करना। अधिकार में करना। परिचर्या करना। सम्मान करना। पूजा करना। चुनना; 'सन्तः परीक्ष्यान्यतरद् भजन्ते' माल० १.२। सम्भोग करना। प्रक० अनुरक्त होना। किसी के हिस्से में पड़ना। भजति-ते, भक्ष्यति-ते, अभाक्षीत्—अभक्त। चु० पर० सक० पकाना। देना। भाजयति, भाजयिष्यति, अबभाजत्।

भजन—(न०) [√भज् + ल्युट्] भाग, खण्ड। सेवा। पूजा, उपासना।

भजमान—(वि०) [√भज् + चानश् या शानच्] विभाजक। उपयोग करने वाला। योग्य, ठीक, उपयुक्त।

√भञ्ज्—रु० पर० सक० तोड़ना, टुकड़े-टुकड़े कर डालना। नाश करना, गिरा कर नष्ट कर डालना। (किले में) सन्धि कर देना। विफल करना, हताश करना। रोकना, बाधा डालना। हराना। भनक्ति, भङ्क्ष्यति, अभाङ्क्षीत्।

भञ्जक—(वि०) [स्त्री०—भञ्जिका][√भञ्ज्+ण्वुल्] तोड़ने वाला, भङ्गकारी।

भञ्जन—(वि०) [स्त्री०—भञ्जनी] [√भञ्ज्+ल्यु]तोड़ने वाला। रोकने वाला। विफल करने वाला। उग्र पीड़ा देने वाला। (न०) [√भञ्ज् + ल्युट्]भंग करना। नाश। ध्वंस। भगाना, खदेड़ना। बाधा डालना। पीड़ा देना। दाँतों का नष्ट हो जाना।

भञ्जनक—(पुं०) [√भञ्ज् + ल्यु+कन्] एक रोग जिसमें दाँत गिर जाते और मुँह टेढ़ा हो जाता है।

भञ्जर—(पुं०) [√भञ्ज्+अरच्]मन्दिर के समीप लगा हुआ वृक्ष।

√भट्—भ्वा० पर० सक० पालना, पालन-पोषण करना। भाड़े पर लेना। मजदूरी पाना। बोलना। भटति, भटिष्यति, अभाटीत्—अभटीत्।

भट—(पुं०) [√भट् + अच्] योद्धा। सैनिक। भाड़ेतू सिपाही। एक वर्णसंकर जाति। राक्षस।

भटित्र—(वि०) [√भट्+इत्र] शूलपक्व मांसादि, कबाब।

भट्ट—(पुं०) [√भट् + तन्] स्वामित्व। प्रभु, स्वामी। उपाधि विशेष (यह उपाधि विद्वान् ब्राह्मणों के नाम के पीछे लगायी जाती है)। भाट। एक वर्णसंकर जाति; 'क्षत्रियाद् विप्रकन्यायाम्भट्टो जातः'। योद्धा। वेदज्ञाता। दार्शनिक। पण्डित।—**आचार्य** (**भट्टाचार्य**)-(पुं०) सम्मानित विद्वान् या अध्यापक की उपाधि।

भट्टार—(वि०) [भट्ट स्वामित्वम् ऋच्छति, भट्ट√ऋ+अण्] मान्य, पूज्य।

भट्टारक—(वि०) [स्त्री०—भट्टारिका] [भट्टार+कन्] पूज्य, मान्य। (पुं०) राजा (नाटक में प्रयुक्त)। तपोधन। देवता। सूर्य। —**वासर**-(पुं०) रविवार।

भट्टिनी—(स्त्री०) [भट्ट स्वामित्वम् अस्ति अस्याः, भट्ट+इनि—ङीप्] नाटक की भाषा में राजा की वह स्त्री जिसका अभिषेक न हुआ हो। ऊँचे पद की स्त्री। ब्राह्मण की स्त्री।

भण्ड—(पुं०) [√भण्ड्+अच्, नि० नलोप] वर्णसङ्कर जाति विशेष।

भंडिल—(पुं०) [√भण्ड्+इलच्, नि० नलोप] योद्धा। शूरवीर। चाकर, अनुचर।

√भण्—भ्वा० पर० सक० कहना। वर्णन करना। नाम लेना, पुकारना। भणति, भणिष्यति, अभाणीत्—अभणीत्।

भणन, भणित—(न०), **भणिति**—(स्त्री०) [√भण्+ल्युट्] [√भण्+क्त] [√भण्+क्तिन्] कथन। वार्तालाप, बातचीत। वर्णन।

√भण्ड्—भ्वा० आत्म० सक० झिड़कना, डाँटना। चिढ़ाना। बोलना। उपहास करना। भण्डते, भण्डिष्यते, अभण्डिष्ट। चु० पर० सक० भाग्यवान् बनाना। ठगना। भण्डयति—भण्डति।

भण्ड—(पुं०) [√भण्ड्+अच्] भाँड़। विदूषक। वर्णसङ्कर जाति-विशेष। —**तपस्विन्**–(पुं०) कल्पित तपस्वी, ढोंगी। —**हासिनी**–(स्त्री०) वेश्या, रंडी।

भण्डक—(पुं०) [भण्ड+कन्] खञ्जन पक्षी।

भण्डन—(न०) [√भण्ड्+ल्युट्] कवच। युद्ध। उपद्रव। दुष्टता।

भण्डि, भण्डी—(स्त्री०) [√भण्ड्+इन्] [भण्डि+ङीष्] लहर। मजीठ। सिरिस का पेड़।

भण्डिल—(वि०) [√भण्ड् + इलच्] मङ्गलकारी, शुभ। भाग्यशाली। (पुं०) सौभाग्य। आनन्द। कुशलता। दूत। कलावन्त, कारीगर। सिरिस का पेड़।

भदन्त—(पुं०) [√भन्द्+झच्—अन्तादेश, नलोप] प्रतिष्ठा-सूचक बौद्ध-धर्मानुयायी की उपाधि। बौद्ध-भिक्षुक। (वि०) पूजित। प्रशस्त।

भदाक—(पुं०) [√भन्द्+आक, नलोप] समृद्धि, सौभाग्य।

भद्र—(वि०) [√भन्द्+रक्, नि० नलोप] शुभ, मङ्गलकारक; 'त्वयि वितरतु भद्रमूलसे मङ्गलाय' उत्त० ३.४८। सर्वाग्रणी, सर्वोत्तम। कृपालु। आनन्ददायी। मनोहर, सुन्दर। श्लाघ्य। प्रिय। दिखावटी, बनावटी। भाग्यवान्। समृद्धिशाली। (न०) प्रसन्नता। सौभाग्य। कुशलता। समृद्धि। सुवर्ण। लोहा। (पुं०) खञ्जन पक्षी। उत्तर दिशा का दिग्गज। बैल। कदम्ब वृक्ष। मेरु पर्वत। दम्भी। ढोंगी। शिव। बलदेव। —**अङ्ग** (भद्राङ्ग)–(पुं०) बलराम। —**आकार** (भद्राकार), —**आकृति** (भद्राकृति)–(वि०) सुन्दर डील-डौल का। —**आत्मज** (भद्रात्मज)–(पुं०) खड्ग, तलवार। —**आसन** (भद्रासन)–(न०) सिंहासन। ध्यान करने का आसन-विशेष। —**ईश** (भद्रेश)–(पुं०) शिव जी। —**एला** (भद्रैला)–(स्त्री०) बड़ी इलायची। —**कपिल**–(पुं०) शिव। —**कारक**–(वि०) मङ्गलकारी, शुभ। —**काली**–(स्त्री०) दुर्गा देवी। —**कुम्भ**–(पुं०) सोने का घड़ा जिसमें गंगा जल भरा हो। —**गणित**–(न०) बीजगणित के अंतर्गत गणित-विशेष। यंत्र-रचना या यंत्र लिखना। —**घट**, —**घटक**–(पुं०) वह घड़ा जिसमें नामों की गोली डालकर लाटरी या चिट्ठी निकाली जाती है। —**दारु**–(पुं०, न०) देवदारु का पेड़। —**नामन्**–(पुं०) खंजन पक्षी। —**पीठ**–(न०) राजसिंहासन। उच्चासन। एक प्रकार का पंख वाला कीड़ा। —**बलन**–(पुं०) बलराम जी। —**मल्लिका**—(स्त्री०) मालती। —**मुख**–(वि०) सुन्दर, प्रसन्न चेहरे वाला। (वास्तव में यह सम्बोधन के रूप में 'सज्जन' 'महोदय' के अर्थ में प्रयुक्त होता है)। —**मृग**–(पुं०) हाथी-विशेष। —**रेणु**–(पुं०) इन्द्र के हाथी का नाम। —**वर्मन्**–(पुं०) नवमल्लिका। —**शाख**–(पुं०) कार्त्तिकेय। —**श्रय**, —**श्रिय**–(न०) चन्दन। —**श्री**–(स्त्री०) चन्दन का पेड़। —**सोमा**–(स्त्री०) गंगा।

भद्रक—(वि०) [स्त्री०—**भद्रिका**] [भद्र+कन्] शुभ, नेक। सुन्दर। (पुं०) देवदारु वृक्ष। मोथा।

भद्रङ्कर—(वि०) [भद्र √कृ+खच्, मुम्] मंगलकारक, शुभकारी।

भद्रवत्—(वि०) [भद्र+मतुप्—वत्व] शुभ। (न०) देवदारु वृक्ष।

भद्रा—(स्त्री०) [भद्र+टाप्] गौ। द्वितीया, सप्तमी, और द्वादशी तिथियों की संज्ञा। आकाशगंगा। सुभद्रा। दुर्गा। हल्दी। कट्फल। अनन्ता। जीवन्ती। अपराजिता। नीली। अतिबला। शमी। बच। दन्ती। श्वेतदूर्वा। पुष्करमूल।—**श्रय**-(न०) चंदन।

भद्रिका—(स्त्री०) [भद्रा+कन्—टाप्, इत्व] द्वितीया, सप्तमी और द्वादशी तिथि। योगिनी दशा के अंतर्गत पाँचवीं दशा। तावीज, यंत्र।

भद्रिल—(न०) [भद्र+इलच्] समृद्धि। सौभाग्य।

भम्भ—(पुं०) [भम् इत्यव्यक्त शब्देन भाति, भम्√भा+क] मक्खी। धुआँ।

भम्भरालिका, भम्भराली—(स्त्री०) [भम् इत्यव्यक्तशब्दस्य भरं बाहुल्यम् आलाति, भम्भर—आ √ला+क—ङीप् +कन्—टाप्, ह्रस्व] [भम्भराल+ङीप्] घोमक्खी, डाँस। मच्छड़।

भम्भाव—(पुं०) गाय का रांभना।

भय—(न०) [√भी+अच्] डर, भीति, खौफ। जोखिम। भयानक रस का स्थायी भाव। (पुं०) बीमारी, रोग।—**अन्वित** (**भयान्वित**), —**आक्रान्त** (**भयाक्रान्त**)-(वि०) डरा हुआ, भयभीत।—**आतुर** (**भयातुर**), —**आर्त** (**भयार्त**)-(वि०) भयभीत, डरा हुआ।—**आवह** (**भयावह**)-(वि०) डरावना, भयोत्पादक; 'स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः' भग० ३.३५। जोखिम का।—**उत्तर** (**भयोत्तर**)-(वि०) भयान्वित।—**कर**-(वि०) भयावह, डरावना। खतरनाक।—**डिण्डिम**-(पुं०) लड़ाई में बजाया जाने वाला ढोल, मारू बाजा।—**प्रद**-(वि०) भय देने वाला, भयकारी।—**भीत**-(वि०) डरा हुआ।—**भ्रष्ट**-(वि०) डर के मारे भागा हुआ।—**वर्जिता**-(स्त्री०) वादी और प्रतिवादी द्वारा स्वयं तय की हुई दो गाँवों के बीच की सीमा।—**विप्लुत**-(वि०) डरा हुआ, भयभीत।—**व्यूह**-(पुं०) सेना का व्यूह-विशेष जो उस समय रचा जाता है जिस समय किसी प्रकार के भय की उपस्थिति की आशङ्का होती है।

भयङ्कर—(वि०) [भय √कृ+खच्, मुम्] भयजनक, डरावना। (पुं०) एक तरह का छोटा उल्लू। एक बाजा। एक अस्त्र।

भयानक—(वि०) [बिभेति अस्मात्, √भी+आनक] डरावना। (न०) भय, डर। (पुं०) चीता। राहु। साहित्य में नौ रसों के अन्तर्गत छठा रस।

भर—(वि०) [√भृ+अच्] अतिशय, बहुत। भरण-पोषण करने वाला। (पुं०) भार, बोझ। समूह। आधिक्य, अतिरेक। पीनता। चोरी। स्तुति। संग्राम। दो सौ पल का एक परिमाण।

भरट—(पुं०) [√भृ + अटन्] कुम्हार। नौकर।

भरण—(वि०) [स्त्री०—**भरणी**] [√भृ+ल्यु] भरण-पोषण करने वाला, परवरिश करने वाला। (पुं०) भरणी नक्षत्र। (न०) [√भृ+ल्युट्] पालन-पोषण। धारण। उत्पादन। भृति, वेतन।

भरणी—(स्त्री०) [भरण+ङीप्] २७ नक्षत्रों में से दूसरे नक्षत्र का नाम।—**भू**-(पुं०) राहु।

भरण्ड—(पुं०) [√भृ + अण्डन्] स्वामी, प्रभु। राजा। बैल। कीट, कीड़ा।

भरण्य—(न०) [भरण+यत्] भरण-पोषण। मजदूरी। भरणी नक्षत्र।

भरण्या—(स्त्री०) [भरण्य+टाप्] मजदूरी, उजरत। स्त्री।—**भुज्**-(पुं०) मजदूर। नौकर।

भरण्यु—(पुं०) [√भरण्य् (कण्ड्वादि-गणीय)+उ] स्वामी, मालिक। रक्षक। मित्र। अग्नि। चन्द्रमा। सूर्य।

भरत—(पुं०) [बिभर्ति लोकान् वा बिभर्ति स्वाङ्गम्, √भृ + अतच्] दुष्यन्त और शकुन्तला से उत्पन्न। यह चक्रवर्ती राजा हो गये हैं और इन्हीं के नाम पर इनके राज्य का नाम भारतवर्ष पड़ा है। महाराज दशरथ के पुत्र जो रानी कैकेयी की कोख से उत्पन्न हुए थे। एक ऋषि जिन्होंने नाटक-रचना की कला में एक प्रसिद्ध ग्रन्थ रचा है। शबर। जुलाहा। खेत। जड़भरत। अग्नि। आयुध-जीविसंघभेद। ऋत्विज्। [भरतस्य शिष्यः, भरत + अण्—लुक्] नट।—**अग्रज** (**भरताग्रज**)-(पुं०) श्रीरामचन्द्र।—**खण्ड** -(न०) भारतवर्ष के अंतर्गत कुमारिका-खंड। भारतवर्ष।—**ज्ञ**-(वि०) भरतमुनि-रचित नाट्यशास्त्र का ज्ञाता।—**पुत्रक**-(पुं०) नट, अभिनयकर्ता।—**वर्ष**-(पुं०) दे० "भारतवर्ष"।—**वाक्य**-(न०) नाटक का अंतिम गान जो आशीर्वादात्मक होता है।

भरथ—(पुं०) [√भृ+अथ] राजा। अग्नि। लोकपाल।

भरद्वाज—(पुं०) [द्वाभ्यां जायते, √जन् +ड, पृषो० द्वाजः संकरः, बिभर्ति मरुद्भिः, √भृ+अप् भरः, भरश्चासौ द्वाजश्च, कर्म० स०] सप्तर्षियों में से एक। भरत पक्षी।

भरित—(वि०) [भर+इतच्]। पोषित। परिपूर्ण; 'जगज्जालं कर्ता कुसुमभरसौर-भ्यभरितं' भा० १.५१।

भरु—(पुं०) [√भृ+उन्] पति। स्वामी। शिव। विष्णु। सुवर्ण। समुद्र।

भरुज—(पुं०) [स्त्री०—**भरुजा** या **भरुजी**] [भेति शब्देन रुजति, भ√रुज्+क] शृगाल, गीदड़, सियार।

भरूटक—(न०) [√भृ+ऊट +कन्] भुना हुआ मांस।

भर्ग—(पुं०) [√भृज्+घञ्] शिव। ब्रह्मा। आदित्य-तेज। एक प्राचीन देश। भर्जन, भूनना।

भर्ग्य—(पुं०) [√भृज्+ण्यत्] शिव का नामान्तर।

भर्जन—(वि०) [√भृज्+ल्यु] भूनने वाला, नाश करने वाला। (न०) [√भृज्+ल्युट्] भूनने या पकोरने की क्रिया। कड़ाही। वध करना।

भर्तृ—(पुं०) [बिभर्ति, पुष्णाति पालयति वा धारयति, √भृ+तृच्] पति, प्रभु, स्वामी। नायक।—**घ्नी**-(स्त्री०) पति-घातिनी स्त्री।—**दारक**-(पुं०) युवराज। (यह नाटक की भाषा में युवराज को सम्बोधन करते समय प्रयुक्त होता है)।— —**दारिका**-(स्त्री०) युवराज्ञी।—**व्रत** -(न०) पातिव्रत्य धर्म।—**व्रता**-(स्त्री०) पतिव्रता स्त्री।—**शोक**-(पुं०) पति के मरने का शोक।—**हरि**-(पुं०) एक प्रसिद्ध ग्रन्थ-रचयिता जिनके बनाये नीति, शृङ्गार और वैराग्य शतक प्रसिद्ध हैं।

भर्तृमती—(स्त्री०) [भर्तृ+मतुप्—ङीप्] सौभाग्यवती स्त्री।

भर्तृसात्—(अव्य०) [भर्तृ+साति] पति के अधिकार में।

√**भर्त्स्**—चु० आत्म० सक० डाँटना-डपटना। फटकारना। चिढ़ाना। भर्त्सयते, भर्त्सयिष्यते, अबभर्त्सत।

भर्त्सक—(पुं०) [√भर्त्स्+ण्वुल्] डराने-धमकाने वाला। गरियाने वाला।

भर्त्सन—(न०), **भर्त्सना**-(स्त्री०), **भर्त्सित**-(न०) [√भर्त्स्+ल्युट्] [√भर्त्स्+णिच्+युच्—टाप्] [√भर्त्स्+क्त] डाँट-डपट। गाली-गलौज। धमकी। शाप, सकोसा।

भर्मन्—(न०) [√भृ+मनिन्] पोषण। मजदूरी। सुवर्ण। नाभि। धतूरा।

√भर्व्—भ्वा० पर० सक० हिंसा करना। भर्वति, भर्विष्यति, अभर्वीत्।

√भल्—भ्वा० आत्म० सक० निरूपण या वर्णन करना। वध करना। देना। देखना। भलते, भलिष्यते, अभलिष्ट।

√भल्ल्—भ्वा० आत्म० सक० निरूपण करना। वर्णन करना। घायल करना, वध करना। देना। भल्लते, भल्लिष्यते, अभल्लिष्ट।

भल्ल—(पुं०, न०) [√भल्ल्+अच्] एक प्रकार का शस्त्र जिससे शरीर में धँसा हुआ तीर निकाला जाता था। एक प्रकार का बाण; 'कश्चिदाकर्ण-विकृष्टभल्ल-वर्षी' र० ६.६६। (पुं०) रीछ। शिव। भिलावे का वृक्ष। [√भल्ल्+घञ्] दान। हत्या।

भल्लक—(पुं०) [भल्ल+कन्] रीछ, भालू। भिलावाँ। एक पक्षी।

भल्लात, भल्लातक—(पुं०) [भल्लं भल्लास्त्र-मिव अतति आत्मानं ज्ञापयति, भल्ल√अत्+अच्] [भल्लात+कन्] भिलावे का वृक्ष।

भल्लुक, भल्लूक—(पुं०) [√भल्ल्+ऊक, पक्षे पृषो० ह्रस्व] भालू, रीछ; 'दधति कुहर-भाजामत्र भल्लूकयूनां' उत्त० २.२१।

भव—(पुं०) [√भू+अप्] होना, सत्ता। उत्पत्ति। सांसारिक अस्तित्व। संसार। शिव; 'दक्षस्य कन्या भवपूर्वपत्नी' कु० १.२१। कामदेव। मेघ।—**अतिग** (**भवातिग**)-(वि०) सांसारिक अस्तित्व से निस्तार पाने वाला।—**अन्तकृत्** (**भवान्तकृत्**)-(पुं०) ब्रह्मा जी का नामान्तर।—**अन्तर** (**भवान्तर**)-(न०) आगे का या पिछला अस्तित्व।—**अब्धि** (**भवाब्धि**),—**अर्णव** (**भवार्णव**),—**समुद्र**,—**सागर**,—**सिन्धु**-(पुं०) सांसारिक जीवनरूपी सागर।—**आत्मज** (**भवात्मज**)-(पुं०) गणेश जी या कार्त्तिकेय के नामान्तर।—**उच्छेद** (**भवोच्छेद**)-(पुं०) सांसारिक जीवन का नाश।—**क्षिति**-(स्त्री०) जन्मस्थान।—**घस्मर**-(पुं०) दावानल।—**चक्र**-(न०) बुद्धमतानुसार जीवात्मा का जन्मान्तर जानने का चक्र विशेष।—**छिद्**-(वि०) सांसारिक जीवन के बंधनों का काटने वाला, पुनर्जन्म रोकने वाला।—**छेद**-(पुं०) पुनर्जन्म की रोक।—**दारु**-(न०) देवदारु वृक्ष।—**नाशिनी**—(स्त्री०) सरयू नदी।—**प्रत्यय**-(पुं०) समाधि की एक अवस्था।—**बन्धन**—(न०) संसार- बंधन, जन्म-मरण का चक्र।—**भूति** (पुं०) एक प्रसिद्ध संस्कृत कवि।—**द्**-(पुं०) वह ढोल जो किसी के मरने पर पीटा जाता है, मातमी ढोल।—**विलास**-(पुं०) माया। लौकिक सुख।—**वीति**-(स्त्री०) सांसारिक प्रपञ्च से छुटकारा।—**व्यय**-(पुं०) जन्म और लय।—**शूल**-(पुं०) सांसारिक दुःख और क्लेश।—**शेखर**-(पुं०) चन्द्रमा।—**सङ्गिन्**-(वि०) संसार में आसक्त।—**संशोधन**-(न०) एक तरह की समाधि।

भवत्—(वि०) [स्त्री०—**भवन्ती**] [भाति विद्यते, √भा+डवतु] होने वाला। वर्तमान। (सर्व०) आप।

भवती—(स्त्री०) [भवत्+ङीप्] आप (स्त्री)।

भवदीय—(वि०) [भवत्+छ—ईय] आपका।

भवन—(न०) [√भू+ल्युट्] अस्तित्व। उत्पत्ति। घर, मकान। स्थान। अधिष्ठान।

प्रासाद, महल। जन्मकुंडली। प्रकृति।—उदर (भवनोदर)-(न०) घर के भीतर का स्थान।—पति,—स्वामिन्-(पुं०) घर का मालिक। राशि-स्वामी।

भवन्त, भवन्ति—(पुं०) [√ भू+झच्—अन्तादेश] [√भू+झिच्—अन्तादेश] वर्तमान समय, इस बीच में।

भवन्ती—(स्त्री०) [√भू + शतृ+ङीप्, नुम्] पतिव्रता या सती पत्नी।

भवानी—(स्त्री०) [भवस्य भार्या, भव+ङीष्, आनुक्] पार्वती का नाम जो शिव जी की पत्नी हैं।—गुरु-(पुं०) हिमालय पर्वत।—पति-(पुं०) शिव जी का नाम।

भवादृक्ष, भवादृश्, भवादृश—(वि०) [स्त्री०—भवादृक्षी, भवादृशी,] [भवानिव दृश्यते यः, भवत्√दृश्+क्स] [भवत्√दृश्+क्विप्] [भवत्√दृश्+क] आप जैसा।

भविक—(वि०) [स्त्री०—भविकी] [भवः ऐश्वर्यादिकम् उत्पाद्यत्वेन अस्ति अस्य, भव+ठन्] मंगलकारी। लाभकारी। प्रसन्न। समृद्धिवाली। (न०) मंगल, कुशल।

भवितव्य—(वि०) [√भू+तव्यत्] होने योग्य, होनहार। जो अवश्यम्भावी है।

भवितव्यता—(स्त्री०) [भवितव्य+तल्—टाप्] होनी। प्रारब्ध, भाग्य।

भवितृ—(वि०) [स्त्री०—भवित्री] [√भू+तृच्] होने वाला, होनहार।

भविन—(पुं०) [भवाय काव्यादिप्रकाशाय इनः सूर्य इव, पृषो० साधुः] कवि। (इस अर्थ में, किन्तु पुंल्लिंग में "भविनिन्" शब्द का प्रयोग होता है।)

भविल—(पुं०) [√भू+इलच्] उपपति, जार, प्राशिक। लंपट, कामी। (वि०) भावी।

भविष्णु—(वि०) [√भू+इष्णुच्] होने वाला। धनेच्छुक, धन-दौलत की कामना रखने वाला।

भविष्य—(वि०) [√भू+लृट्—शतृ, स्य, पृषो० तलोप] होने वाला, भावी। (न०) वर्तमान काल के उपरान्त आने वाला समय, आने वाला काल।—ज्ञान-(न०) आने वाले समय या घटना की जानकारी।—पुराण-(न०) अष्टादश पुराणों में से एक।

भविष्यत्—(वि०) [स्त्री०—भविष्यती या भविष्यन्ती] [√भू+लृट्—शतृ, स्य] होने वाला, भावी। (न०) आने वाला काल। एक फल।—आक्षेप (भविष्यदाक्षेप)—(पुं०) एक अर्थालंकार।—वक्तृ,—वादिन्-(वि०) आगे होने वाली घटनाओं का बतलाने वाला, पेशीनगोई करने वाला।

भव्य—(वि०) [√भू+यत्] मौजूद, विद्यमान। आगे होने वाला। बहुत करके होने वाला। उपयुक्त, ठीक। अच्छा, उत्कृष्ट। शुभ। भाग्यवान्। मनोहर, सुन्दर। शान्त। सत्य। (न०) अस्तित्व। आने वाला काल। परिणाम, फल। शुभ परिणाम। हड्डी। नीम। कमरख। करेला।

भव्या—(स्त्री०) पार्वती का नाम।

√भष्—भ्वा० पर० अक० भूँकना। गुर्राना। सक० गालियाँ देना। डाँटना, डपटना। भषति, भषिष्यति, अभषीत्—अभाषीत्।

भष, भषक—(पुं०) [√भष् + अच्] [√भष्+वुन्] कुत्ता।

भषण—(पुं०) [√भष्+ल्यु] कुत्ता। (न०) [√भष्+ल्युट्] कुत्ते का भूँकना।

√भस्—जु०पर०सक० डाँटना। अक०चमकना। बभस्ति, भसिष्यति, अभासीत्—अभसीत्।

भसद्—(पुं०) [√भस् + अदि] काष्ठ, लकड़ी। घोड़े का मांस। जघन। योनि। मांस। हृत्पिण्ड। (पुं०) सूर्य। कारण्डव पक्षी। काल।

भसन—(पुं०) [√भस्+ल्यु] भ्रमर, भौंरा।

भसन्त—(पुं०) [√भस्+झच्—अन्तादेश] समय।

भसित—(वि०) [√भस्+क्त] जल कर राख हुआ, भस्म हुआ। (न०) राख।

भस्त्रका, भस्त्रा, भस्त्री—(स्त्री०) [√भस् +त्रन्+कन्—टाप्] [√भस्+त्रन्—टाप्] [√भस् + त्रन्—ङीप्] भाथी, धौंकनी। मशक या चाम का कोई पात्र जिसमें जल भरा जाय। चमड़े का थैला।

भस्मक—(न०) [भस्मन्+कन्] राख, खाक। एक रोग जिसमें भोजन तुरन्त पच जाता है। नेत्ररोग विशेष। सोना। चाँदी। बिडंग।

भस्मन्—(वि०) [√भस्+मनिन्] राख, खाक। भस्म जो शरीर में लगायी जाती है। **—अग्नि (भस्माग्नि)**-(पुं०) भस्मक रोग। **—अवशेष (भस्मावशेष)**-(वि०) राख के रूप में रहने वाला अथवा जिसकी केवल राख बच रहे। **—असुर (भस्मासुर)**-(पुं०) एक दैत्य जिसे शिव ने यह वरदान दिया था कि वह जिसके सिर पर हाथ रखेगा वह जल जायगा। **—आह्वय (भस्माह्वय)**-(पुं०) कपूर। **—उद्धूलन (भस्मोद्धूलन)**, **—गुण्ठन**-(न०) शरीर में भस्म मलना; 'भस्मोद्धूलनभद्रमस्तु भवते' का० १०। **—कार**-(पुं०) धोबी। **—कूट**-(पुं०) राख का ढेर। **—गन्धा, —गन्धिका, —गन्धिनी**-(स्त्री०) रेणुका नामक सुगन्धद्रव्य। **—गात्र**—(पुं०) कामदेव। **—तूल**- (न०) कुहरा, पाला। धूल की वर्षा। कई ग्रामों का समुदाय। **—प्रिय**-(पुं०) शिव। **—मेह**-(पुं०) अश्मरी (पथरी) रोग का एक भेद। **—लेपन**-(न०) भस्म से शरीर पोतना। **—विधि**-(पुं०) कोई विधान जो भस्म से किया जाय। **—वेधक**-(पुं०) कपूर। **—स्नान**-(न०) सारे शरीर में राख मलना।

भस्मता—(स्त्री०) [भस्मन्+तल्—टाप्] भस्म होने का कार्य।

भस्मसात्—(अव्य०) [भस्मन्+साति] भस्माकार में परिणत। सम्यक् भस्मीभूत।

√भा—अ० पर० अक० चमकना। दिखलाई पड़ना। होना। अपने को दिखलाना। भाति, भास्यति, अभासीत्।

भा—(स्त्री०) [√भा+अङ्—टाप्] प्रकाश, आभा, चमक। कान्ति, सौन्दर्य; 'तावद् भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः' सुभा०। किरण। बिजली। प्रतिच्छाया, परछाईं। **—कोश,— कोष**-(पुं०) सूर्य। **—गण**-(पुं०) किरणों का समुदाय। **—निकर**-(पुं०) किरणों का संग्रह, प्रकाशपुंज। **—नेमि**-(पुं०) सूर्य।

भाक्त—(वि०) [भक्तम् अस्मै नियतं दीयते, भक्त+अण्] जिसे नित्य भोजन दिया जाता हो, आश्रित। [भक्ताय हितम्, भक्त +अण्] भोज्य पदार्थ होने योग्य, खाने योग्य। [भक्तेः गौण्याः वृत्तेः आगतम्, भक्ति +अण्] गौण भाव में प्रयुक्त, औपचारिक।

भाक्तिक—(पुं०) [भक्तम् अस्मै नियतं दीयते, भक्त+ठक्] चाकर, नौकर। (वि०) आश्रित।

भाक्ष—(वि०) [स्त्री०—**भाक्षी**] [भक्षा शीलम् अस्य, भक्षा+अण्] भुक्खड़, भोजनभट्ट।

भाग—(पुं०) [√भज्+घञ्] अंश, हिस्सा; 'नीवारभागधेयोचितैर्मृगैः' र० १.५०। बँटवारा। भाग्य, प्रारब्ध। किसी समूची वस्तु का एक अंश या टुकड़ा, चतुर्थांश। वृत्त के व्यास का ३६० वाँ अंश। किसी राशि का ३० वाँ अंश। भागफल। स्थान, जगह। **—अर्ह (भागार्ह)**-(वि०) पैतृक सम्पत्ति में भाग पाने का अधिकारी। **—कल्पना**-(स्त्री०) हिस्सों का विभाजन। **—जाति**-(स्त्री०) विभाग के चार प्रकारों में से एक। इसमें एक हर और एक अंश होता है। यह चाहे समभिन्न हो चाहे विषमभिन्न। जैसे $\frac{६}{११}$, $\frac{११}{६}$। **—धेय**-(न०) पाती, हिस्सा। भाग्य, प्रारब्ध। सौभाग्य, खुशकिस्मती।

सम्पत्ति । आह्लाद । (पुं०) कर । उत्तराधिकारी ।—भाज्-(वि०) हिस्सेदार, पातीदार ।—भुज्-(पुं०) राजा ।—हर-(पुं०) समान उत्तराधिकारी । भाग (अङ्कगणित का) ।—हार-(पुं०) (अङ्कगणित का) भाग ।

भागवत—(वि०) [स्त्री०—**भागवती**] [भगवतः भगवत्या वा इदम्, भगवत्+अण्] भगवान् सम्बन्धी । पावन । (न०) अष्टादश पुराणों में से एक सात्त्विक पुराण, जिसमें मुख्य रूप से कृष्ण की कथा वर्णित है । देवीभागवत । (पुं०) विष्णुभक्त ।

भागशस्—(अव्य०) [भाग+शस्] टुकड़ों में हिस्सा करके । हिस्से के अनुसार ।

भागिक—(वि०) [भाग+ठन्] हिस्सा सम्बन्धी । हिस्से वाला । भिन्नात्मक । जिस पर ब्याज मिले ।

भागिन्—(वि०) [√भज्+घिनुण्] भागों का हिस्सों वाला । हिस्से वाला । बाँट या हिस्सा लेने वाला । सम्बन्धयुक्त । अधिकारी । मालिक । जो एक भाग पाने का अधिकारी हो । भाग्यवान् । अपकृष्ट, गौण ।

भागिनेय—(पुं०) [भगिन्या अपत्यम्, भगिनी+ढक्] भानजा, भगिनीपुत्र ।

भागिनेयी—(स्त्री०) [भागिनेय+ङीप्] भानजी, भगिनी की पुत्री ।

भागीरथी—(स्त्री०) [भगीरथस्य इयम्, भगीरथ+अण्—ङीप्] श्री गङ्गा ।

भाग्य—(न०) [√भज्+ण्यत्] प्रारब्ध, किस्मत । सौभाग्य । समृद्धि । हर्ष । कुशलता । **—आयत्त** (**भाग्यायत्त**)-(वि०) प्रारब्ध पर निर्भर । **—उदय** (**भाग्योदय**)-(पुं०) भाग्योदय, भाग्य का खुलना । **—विप्लव**-(पुं०) बदकिस्मती । **—वशात्**-(अव्य०) भाग्य से, भाग्यवश ।

भाग्यवत्—(वि०) [भाग्य+मतुप्] भाग्यशाली, खुशकिस्मत । हरा-भरा, समृद्धिमान् ।

भाङ्ग—(वि०) [स्त्री०—**भाङ्गी**] [भङ्गा+अण्] भाँग का बना । (न०) भाँग का खेत ।

भाङ्गक—(पुं०) चीथड़ा ।

भाङ्गीन—(न०) [भङ्गाया भवनं क्षेत्रम्, भङ्गा+खञ्] भाँग का खेत ।

√भाज्—चु० पर० सक० अलग करना । बाँटना, वितरित करना भाजयति, भाजयिष्यति, अबभाजत् ।

भाजक—(पुं०) [√भाज्+ण्वुल्] भाग करने वाला, बाँटने वाला । (पुं०) वह अंक जिससे किसी राशि को भाग दिया जाय ।

भाजन—(न०) [√भाज्+ल्युट्] बरतन, पात्र । आधार: 'स श्रियो भाजनं नरः' प० १.१४३ । योग्य व्यक्ति या वस्तु । प्रतिनिधित्व । जल की एक तौल । विभाग करना ।

भाजित—(वि०) [√भाज्+क्त] अलग किया हुआ । जिसको दूसरी संख्या से भाग दिया गया हो । (न०) पाती, हिस्सा, अंश ।

भाजी—(स्त्री०) [√भाज्+अच्—ङीष्] माँड़ । यवागू ।

भाज्य—(न०) [√भज् वा √भाज्+ण्यत्] अंश, भाग । वह अङ्क जिसे भाजक अङ्क से भाग दिया जाता है । उत्तराधिकार, पैतृक सम्पत्ति । (वि०) भाग करने योग्य, विभाज्य ।

भाटक—(पुं०, न०) [√भट्+ण्वुल्] भाड़ा, किराया ।

भाटि—(स्त्री०) भाड़ा । रण्डियों की आमदनी ।

भाट्ट—(पुं०) [भट्ट+अण्] कुमारिल भट्ट के मीमांसा सम्बन्धी सिद्धान्तों का अनुयायी ।

भाण—(पुं०) [√भण्+घञ्] नाट्यशास्त्रानुसार एक प्रकार का रूपक जो नाटकादि दस रूपकों में से एक माना गया है । इसमें केवल एक ही अंक होता है और इसमें हास्य रस की प्रधानता होती है । इसमें यह

आकाश की ओर देखता हुआ आप ही आप सारी कहानी उक्ति-प्रत्युक्ति के रूप में कह डालता है, मानों वह किसी से बातचीत कर रहा हो ।

भाणक—(पुं०) [√भण्+ण्वुल्] घोषणा करने वाला । निरूपण करने वाला ।

भाण्ड—(न०) [√भण् + ड + अण्] बरतन । पेटी, बक्स । कोई भी औजार या यंत्र । बाजा । माल, सामान । माल की गाँठ । कीमती माल, बहुमूल्य सामान; 'शान्तं वा रघुनन्दने तदुभयं यत्पुत्रभाण्डं हि मे' उत्त० ४.२५ । नदी गर्भ । घोड़े का जीन या साज । भाँड़पन, मसखरापन ।—**आगार** (**भाण्डागार**)-(पुं०, न०) मालगोदाम । भंडार । खजाना ।—**पति**-(पुं०) व्यापारी ।—**पुट**-(पुं०) नाई ।—**प्रतिभाण्डक**-(न०) विनिमय, चीजों का बदला ।—**शाला**-(स्त्री०) मालगोदाम । भंडार ।

भाण्डक—(पुं०, न०) [भाण्ड + कन्] कटोरा । (न०) सौदागरी का माल ।

भाण्डार—(न०) [भाण्डम् तदाकारम् ऋच्छति, भाण्ड √ऋ+ अण्] भंडार । मालगोदाम ।

भाण्डारिन्—(पुं०) [भाण्डार + इनि] भंडारी । मालगोदाम का अधिकारी ।

भाण्डि—(स्त्री०) [√भण्ड् + इन्, पृषो० साधुः] उस्तरा रखने का घर या खोल, किसबत ।—**वाह**-(पुं०) नाई ।—**शाला** -(स्त्री०) हज्जाम की दूकान ।

भाण्डिक—(पुं०) [भाण्ड+ठन्] नाई । तुरही आदि बजाकर राजाओं को जगाने वाला मनुष्य ।

भाण्डिल—(पुं०) [भाण्डि+लच्] नाई, हज्जाम ।

भाण्डिका—(स्त्री०) [भाण्डि+कन्—टाप्] औजार । लोजार । बरतन ।

भाण्डिनी—(स्त्री०) पेटी । टोकरी ।

भाण्डीर—(पुं०) [√भण्ड्+ईरन्, पृषो० साधुः] वट वृक्ष, बरगद का पेड़ ।

भात—(वि०) [√भा+क्त] चमकीला, चमकदार । (न०)प्रभात, भोर । दीप्ति, प्रकाश ।

भाति—(स्त्री०) [√भा + क्तिन्] चमक, प्रकाश । ज्ञान ।

भातु—(पुं०) [√भा+तुन्] सूर्य ।

भाद्र, भाद्रपद—(पुं०) [भाद्री पौर्णमासी अस्मिन् मासे भाद्री + अण्] [भाद्रपदी पौर्णमासी अस्मिन्, भाद्रपदी+अण्] भादों का महीना ।

भाद्रपदा—(स्त्री० बहु०) [भद्रस्येदम्, भद्र +अण्, भाद्रमिव पदम् आसाम्, ब० स० टाप्] २५ वें और २६ वें नक्षत्रों का नाम, पूर्वा भाद्रपदा और उत्तरा भाद्रपदा ।

भाद्रपदी, भाद्री—(स्त्री०) [भाद्रपद+ङीप्] [भद्राभिः युक्ता पौर्णमासी, भद्रा +अण् —ङीप्] भादों महीने की पूर्णमासी ।

भाद्रमातुर—(पुं०) [भद्रमातुः अपत्यम्, भद्रमातृ+अण्, उकारादेश] नेक माता का पुत्र ।

भान—(न०) [√भा + ल्युट्] प्रकटन, दृष्टिगोचर होना । प्रकाश, आभा । ज्ञान । प्रतीति ।

भानु—(पुं०) [√भा+नु]प्रकाश । किरण; 'जगत्यपर्याप्तसहस्रभानुना न यन्नियन्तुं समभावि भानुना' शि० १.२७ । सूर्य । सौन्दर्य । दिवस । राजा । शिव । (स्त्री०) सुन्दरी स्त्री ।—**केशर**,—**केसर**- (पुं०) सूर्य ।—**ज**-(पुं०) शनिग्रह ।—**दिन** -(न०),—**वार**-(पुं०) रविवार, इतवार ।

भानुमत्—(वि०) [भानु+मतुप्]चमकीला, प्रकाशमान । सुन्दर, मनोहर । (पुं०) सूर्य; 'विशेषिताम्भानुमतो मयूखैः' कु० ३.६५ । कृष्ण का एक पुत्र ।

भानुमती—(स्त्री०) [भानुमत्+ङीप्] गंगा। विक्रमादित्य की रानी जो अत्यन्त रूपवती और इंद्रजाल, विद्या में पारंगत थी। दुर्योधन की स्त्री का नाम।

√भाम्—भ्वा० आत्म० अक० क्रोध करना। भामते, भामिष्यते, अभामिष्ट। चु० पर० अक० क्रोध करना। भामयति, भामयिष्यति, अबभामत्।

भाम—(पुं०) [√भाम् + घञ्] क्रोध। [√भा+म] चमक, आभा। सूर्य। अर्क-वृक्ष। बहनोई, भगिनीपति।

भामा—(स्त्री०) [√भाम् + अच्—टाप्] क्रोध करने वाली स्त्री। सत्यभामा जो श्री कृष्ण जी की पत्नियों में से एक थी।

भामिनी—(स्त्री०) [√भाम् + णिनि —ङीप्] कामिनी, सुन्दरी युवती स्त्री। कोपना स्त्री; 'उपचीयत एव कापि शोभा परितो भामिनि ते मुखस्य नित्यम्'—भामिनी-विलास।

भार—(पुं०) [√भृ+घञ्] बोझ। झोंक। प्रचण्डता (यथा युद्ध की)। अतिशयता। श्रम, आयास। बड़ी मात्रा। बीस पसेरी की तौल। जूआ (उस गाड़ी का जो बोझ ढोने के लिये हो)।—**आक्रान्त (भाराक्रान्त)**-(वि०) बोझ से दबा हुआ।—**उद्वह (भारोद्वह)**-(वि०) बोझा ढोने वाला।—**उपजीवन (भारोपजीवन)**-(न०) बोझ ढोकर उसकी आमदनी से जीविका चलाना।—**तुला**-(स्त्री०) वास्तु विद्या के अनुसार स्तम्भ के नौ भागों में से पाँचवाँ जो बीच में होता है।—**दण्ड**-(न०) बहँगी।—**फल**—(न०) केला।—**यष्टि**-(स्त्री०) वह बल्ली जिसमें लटका कर भारी सामान ढोया जाता है, बहँगी।—**वाह**,—**वाहिक**-(वि०) [स्त्री०—**भारोही**] बोझ ढोने वाला। (पुं०) कुली।—**वाहन**-(पुं०) जानवर जो बोझा ढोये।—**सह**-(वि०) जो भारी बोझा उठा सके अतएव बड़ा मजबूत या ताकतवर।—**सुत**-(पुं०) यम। शनि।—**सुता**—(स्त्री०) यमुना।—**सेन**-(पुं०) कर्ण का एक पुत्र।—**हर**,—**हार**-(पुं०) कुली, हम्माल।—**हारिन्**-(पुं०) कृष्ण का नामान्तर।

भारण्ड—(पुं०) पक्षी विशेष, जिसे आज तक किसी ने नहीं देखा। इसको भारुण्ड भी कहते हैं।

भारत—(न०) [भरतेन चिह्नितं तस्येदं वा, भरत + अण्] भारतवर्ष, हिन्दुस्थान। [भारतान् भरतवंशीयान् अधिकृत्य कृतो ग्रन्थः, भारत+अण्] महाभारत ग्रन्थ जिसमें मुख्यतः कौरवों और पाण्डवों के प्रसिद्ध युद्ध का वर्णन है। (पुं०) [भरतस्य गोत्रापत्यम्, भरत+अण्] भरतवंशज। [भारतम् अभिजनोऽस्य, भारत+अण्, अणो लुक्] भारतवर्षवासी। [भरतेन मुनिना प्रोक्तम्, भरत+अण्, भारतम् नाट्यशास्त्रम् तदधीते, भारत+अण्] नट।—**महासागर**-(पुं०) भारतवर्ष के दक्षिण में अवस्थित महासमुद्र।—**वर्ष**-(पुं०, न०) जम्बूद्वीप के नौ वर्षों में से एक, हिंदुस्तान। 'भरणाच्च प्रजानां वै मनुर्भरत उच्यते। निरुक्तवचनाच्चैव वर्षं तद् भारतं स्मृतम्'। ब्रह्माण्डपुराण।

भारती—(स्त्री०) [√भृ + अतच्+अण् —ङीप्] वाणी, स्वर, शब्द। वाणी की अधिष्ठात्री देवी, सरस्वती। रचना शैली-विशेष। (यथा—भारती संस्कृतप्रायो वाग्व्यापारो नटाश्रयः।—साहित्यदर्पण)। लवा, बटेर।

भारद्वाज—(पुं०) [भरद्वाजस्यापत्यम्, भरद्वाज + अण्] द्रोणाचार्य का नाम। अगस्त्य का नामान्तर। मङ्गलग्रह। भरदूल पक्षी। (न०) हड्डी, अस्थि।

भारव—(पुं०) [भारं वाति, भार√वा+क] कमान की डोरी ।

भारवि—(पुं०) किरातार्जुनीय के रचयिता एक प्रसिद्ध एवं सफल संस्कृत भाषा के कवि ।

भारि—(पुं०) [इभस्य अरिः, पृषो० साधुः] सिंह ।

भारिक, भारिन्—(वि०) [भार+ठन्] [भार+इनि] (पुं०) कुली, हम्माल ।

भारुण्ड—(पुं०) एक पक्षी । एक साम । उस साम के द्रष्टा एक ऋषि ।

भारोही—(स्त्री०) [भार√वह् + ण्वि, ऊङ्–ङीप्] बोझ ढोने वाली स्त्री ।

भार्ग—(पुं०) [भर्गस्य देशभेदस्य राजा, भर्ग+अण्] भर्गदेश का राजा ।

भार्गव—(पुं०) [भृगोः अपत्यम् तद्गोत्रापत्यम्, भृगु+अण्] शुक्राचार्य । परशुराम । शिव । धनुर्धर । हाथी ।—**प्रिय**–(पुं०) हीरा ।

भार्गवी—(स्त्री०) [भार्गव+ङीप्] दूब । लक्ष्मी ।

भार्य—(पुं०) [√भृञ् + ण्यत्] सेवक । आश्रित व्यक्ति । आयुधजीवी । (वि०) भरण करने योग्य ।

भार्या—(स्त्री०) [भार्य+टाप्] पत्नी; 'सा भार्या या प्रजावती' हि० १.१०६ । मादा जानवर ।—**आट** (**भार्याट**)–(वि०) पत्नी के वेश्यापन से आजीविका निर्वाह करने वाला ।—**ऊढ** (**भार्योढ**)–(वि०) विवाहित ।—**जित**–(पुं०) स्त्री का वशवर्ती पति ।

भार्यारु—(पुं०) [भार्या√ऋ+उण्] मृग विशेष । उस पुत्र का पिता जो अन्य की स्त्री से उत्पन्न हुआ हो ।

भाल—(न०) [√भा+क्विप्, भां लाति, भा√ला+क] ललाट, माथा । प्रकाश । अंधकार ।—**अङ्क** (**भालाङ्क**)–(पुं०) भाग्यवान् पुरुष । शिव । आरा । कच्छप, कछुआ ।—**चन्द्र**–(पुं०) शिव । गणेश ।—**दर्शन**–(न०) इंगुर, सिंदूर ।—**दर्शिन्**–(पुं०) माथा देखने वाला अर्थात् वह नौकर जो सदा मालिक की ओर ध्यान रखता हो ।—**दृश्**, —**लोचन**–(पुं०) शिव ।—**पट्ट**–(पुं०, न०) माथा ।

भालु—(पुं०) [भृणाति रोगान्√भृ+उण्, वृद्धि, रस्य लः] सूर्य ।

भालुक, भालूक, भाल्लुक, भाल्लूक—(पुं०) [भल्लते हिनस्ति प्राणिनः, √भल्+ऊक्+अण्] [√भल्+ऊक्+अण्] [भल्ल् (ल्लू) क+अण्] रीछ, भालू ।

भाव—(पुं०) [√भू+घञ्; भावयति, चिन्तयति वा ज्ञापयति पदार्थान्, √भू+णिच्+अच्] अस्तित्व, विद्यमानता । घटना । अवस्था, दशा । ढंग । पद, ओहदा । वास्तविकता । स्वभाव; 'त्वयि मे भावनिबन्धना रतिः' र० ८.५२ । झुकाव । चित्तवृत्ति । प्रेम, अनुराग । अभिप्राय । अर्थ । सङ्कल्प । हृदय, मन । आत्मा । जीवधारी । भावना । हावभाव । प्रेमोद्योतक हावभाव । उत्पत्ति । संसार । गर्भाशय । अलौकिक शक्ति । परामर्श । उपदेश । जन्मकुंडली में विभिन्न स्थान (तनु, धन आदि) । ग्रहों की शयन, उपवेशन आदि बारह प्रकार की चेष्टाओं में से कोई एक । द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष और समवाय ये ६ पदार्थ । ज्ञानेंद्रिय । धात्वर्थ । नाट्योक्ति में विद्वान्, नाट्योक्ति में भाव शब्द का प्रयोग विद्वान् के अर्थ में किया जाता है ।—**अनुग** (**भावानुग**)–(वि०) 'भाव' का अनुसरण करने वाला । स्वाभाविक ।—**अनुगा** (**भावानुगा**)–(स्त्री०) प्रतिच्छाया ।—**अन्तर** (**भावान्तर**)–(न०) मन की अवस्था दूसरी हो जाना । अर्थांतर ।—**आकूत** (**भावाकूत**) –(न०) मानसिक

चिन्ता या कल्पना-लहरी। —**आत्मक** (**भावात्मक**)–(वि०) स्वाभाविक, असली। —**आलीना** (**भावालीना**) –(स्त्री०) प्रतिच्छाया।—**गम्भीर**–(वि०) भाव द्वारा गंभीर, जिसका तात्पर्य कठिन है।—**गम्य**–(न०) मन द्वारा जानने योग्य। —**ग्राहिन्**–(वि०) तात्पर्य समझने वाला। —**ज**–(पुं०) कामदेव।—**ज्ञ**, —**विद्**–(वि०) हृदय की बात जानने वाला।—**प्रवणता**—(स्त्री०) भाव प्रधान होना। भावों के वश, भावों से परिचालित होने की प्रवृत्ति। भावुकता।—**बन्धन**–(न०) प्रेम-रज्जु द्वारा बाँधना।—**मिश्र**–(पुं०) मान्य पुरुष, भद्र पुरुष।—**मृषावाद**–(पुं०) मुँह से मिथ्या न बोलना पर मन में मिथ्या सोचना (जैन)।—**रूप**– (वि०) असली, वास्तविक।—**वाचक**– (न०) व्याकरण में वह संज्ञा जिसके द्वारा किसी पदार्थ का भाव, धर्म या गुण मालूम पड़े।—**वाच्य**–(न०) क्रिया का वह रूप जिसमें वाक्य उद्देश्य कर्ता या कर्म न हो कर भाव होता है।—**विकार**–(पुं०) भाव के ये ६ विकार —उत्पत्ति, अस्तित्व, विपरिणमन, वर्धन, क्षय और नाश (निरुक्त)।—**शबलत्व**–(न०) अनेक प्रकार के भावों का संमिश्रण। —**शून्य**–(वि०) प्रेमरहित।— **समाहित**–(वि०) जिसके मन में भाव केंद्रित हों, भक्तिपूर्ण।—**सर्ग**–(पुं०) (सांख्य) तन्मात्राओं की उत्पत्ति। कल्पनाप्रसूत रचना। —**स्थ**–(वि०) भाव में लीन। अनुरक्त। —**स्निग्ध**–(वि०) अकपट भाव से अनुरक्त।

भावक—(वि०) [√भू+णिच्, ण्वुल्] उत्पादक। भाव से पूर्ण। सौख्य-वृद्धिकारक। कल्पना करने वाला। अद्भुत रसोद्दीपक पदार्थ और सुन्दरता के प्रति रुचि रखने वाला। (पुं०) [भाव+कन्] भावना, हृदयगत भाव। प्रेम के भावों को बहिश्चेष्टा से द्योतन करना।

भावन—(वि०) [स्त्री०—**भावनी**] [√भू+णिच्+ल्यु] उत्पादक। प्रभाव डालने वाला, असर करने वाला। (पुं०) निमित्त कारण। सृष्टिकर्ता। शिव। विष्णु। (न०) [√भू+णिच्+ल्युट्] दे० 'भावना'।

भावना—(स्त्री०) [√भू+णिच् + युच्–टाप्] उत्पत्ति, प्रादुर्भाव। किसी के स्वार्थ को आगे बढ़ाना। कल्पना। विचार। भक्ति; 'भावनया त्वयि लीना' गीत० ४। श्रद्धा। ध्यान। धारणा। अप्रमाणाहित अनुमान, कल्पित विषय। आलोचना। खोज। निर्णय। स्मरण। ज्ञान। प्रतीति। प्रमाण। तर्क। सूखे चूर्ण को किसी तरल पदार्थ से तर करना। बसाना, पुष्प तथा सुगन्ध द्रव्यों से सजाना।

भावाट—(पुं०) [अटनम् आटः, √अट्+घञ्, भावस्य आटः ष० त० वा भाव √अट्+अण्] उच्छ्वास, हृदय का आवेग। रागद्वेष। प्रेमभाव का प्रकटन। सजावट। साधु पुरुष। लंपट जन। नट, अभिनयकर्ता।

भाविक—(वि०) [स्त्री०—**भाविकी**] [भावेन निर्वृत्तम्, भाव+ठक्] भावनाप्रधान, भावुक। स्वाभाविक, नैसर्गिक। आने वाला (काल)। (न०) प्रेम और कामेच्छा से परिपूर्ण वचन। अलङ्कार विशेष। इसमें भूत और भावी बातों का प्रत्यक्ष वर्तमान की तरह निरूपण करना पड़ता है।

भावित—(वि०) [√भू + णिच्+क्त] रचा हुआ। पैदा किया हुआ। प्रकट किया हुआ; 'भावितविषवेगविक्रियः' दश०। पोसा हुआ। विचारा हुआ। कल्पना किया हुआ। ध्यान किया हुआ। परिवर्तित। शुद्ध किया हुआ। सिद्ध किया हुआ। व्याप्त, परिपूर्ण। उत्साहित। तर, भीगा हुआ।

सुगन्धित किया हुआ। मिश्रित।—आत्मन् (भावितात्मन्), —बुद्धि-(वि०) वह जिसने अपने आत्मा को परमात्मा का ध्यान करके पवित्र कर लिया हो। भक्तिपूर्ण। विचारवान्। संलग्न, तल्लीन।

भावितक—(न०) [भावित+कन्] सत्य विवरण।

भावित्र—(न०) [√भू+णित्रन्] स्वर्ग, मर्त्य और पाताल का समूह, त्रैलोक्य।

भाविन्—(वि०) [भविष्यतीति √भू+इनि, णित्] होने वाला; 'अभावि न तद्भावि भावि चेन्न तदन्यथा' हि० १। आगे आने वाला (काल)। होने योग्य। अवश्यम्भावी। कुलीन। सुन्दर।

भाविनी—(स्त्री०) [भाव+इनि—ङीप् वा भाविन्+ङीप्] सुंदरी स्त्री। सती स्त्री। स्वेच्छाचारिणी या निरङ्कुशा स्त्री।

भावुक-(वि०) [√भू + उकञ्] होने वाला। जो शीघ्र भावों विशेषतः कोमल-करुण भावों के अधीन हो जाय, कोमल-चित्त। सहृदय, रसज्ञ। समृद्धि-शाली। प्रसन्न। (न०) प्रसन्नता। कुशलता। समृद्धि। भाषा जिससे प्रेम और आसक्ति प्रकट हो। (पु०) बहनोई, भगिनीपति।

भावुकता—(स्त्री०) भावुक होना, भाव-प्रवणता।

भाव्य—(वि०) [√भू+ण्यत्] होने वाला। आने वाला (काल)। पूर्ण होने वाला। वह जिसका विचार होने वाला हो। (न०) होनी, भवितव्यता।

√भाष्—भ्वा० आत्म० द्विक० बोलना, कहना। सम्बोधन करना। वार्तालाप करना। निरूपण करना। वर्णन करना। भाषते, भाषिष्यते, अभाषिष्ट।

भाषण—(न०) [√भाष्+ल्युट्] कथन। वार्तालाप, बातचीत। दयामय शब्द। व्याख्यान।

भाषा—(स्त्री०) [√भाष् +अ—टाप्] बोली, जबान, वाणी। परिभाषा। शैली। सरस्वती का नामान्तर। अर्जीदावा, अभियोगपत्र।—अन्तर (भाषान्तर)-(न०) दूसरी बोली या भाषा।—पाद-(पु०) अर्जीदावा। —सम-(पु०) शब्दालङ्कार विशेष। इसमें शब्दों को इस प्रकार किसी वाक्य में क्रमबद्ध किया जाता है कि, चाहे उसे संस्कृत भाषा का वाक्य समझो चाहे प्राकृत का, यथा —मंजुलमणिमंजीरे कल-गम्भीरे विहर सरसीनीरे। विरसासि केलिकीरे किमालि धीरे च गन्धसारसमीरे॥ —साहित्यदर्पण।

भाषिका—(स्त्री०) [भाषा+कन् —टाप्, ह्रस्व, इत्व] बोली, भाषा।

भाषित—(वि०) [√भाष् +क्त] कहा हुआ। (न०) वाणी, बोली, कथन।

भाष्य—(न०) [√भाष् +ण्यत्] कथन। मामूली बोली या भाषा का कोई भी ग्रन्थ या रचना। व्याख्या, टीका। सूत्र या मूल ग्रन्थ पर की हुई व्याख्या या टीका।—कर, —कार, —कृत्-(पु०) टीकाकार। पतंजलि का नामान्तर।

√भास्—भ्वा० आत्म० अक० चमकना, दमकना। स्पष्ट होना। मन में आना। सामने आना। भासते, भासिष्यते, अभासिष्ट।

भास्—(स्त्री०) [√भास्+क्विप्] प्रकाश, आभा। किरण; 'असमभासमभासयदीश्वरः' र० ९.२१। प्रतिबिम्ब। गौरव। इच्छा।—कर-(पु०) सूर्य। वीर। अग्नि। शिव। सिद्धान्तशिरोमणि आदि ग्रन्थों के रचयिता एक प्रसिद्ध ज्योतिषी। (न०) सुवर्ण।—०द्युति-(पु०) विष्णु।—०प्रिय—(पु०) लाल।—करि-(पु०) शनिग्रह।

भास—(पु०) [√भास् + घञ्] चमक, दीप्ति। कल्पना। [√भास्+अच्] मुर्गा।

गीध । गोष्ठ । एक संस्कृत कवि का नाम, 'भासो हासः कविकुलगुरुः कालिदासो विलासः ।

भासक—(वि०) [स्त्री० —**भासिका**] [√भास् + णिच्+ण्वुल्] प्रकाशक, द्योतक । (पुं०) एक संस्कृत कवि का नाम ।

भासन—(न०) [√भास्+ल्युट्] चमक, दमक । प्रकाश ।

भासन्त—(वि०) [स्त्री०—**भासन्ती**] [√भास्+झच्—अन्तादेश] चमकीला । सुन्दर । (पुं०) सूर्य । चन्द्रमा । नक्षत्र । भास पक्षी ।

भासु—(पुं०) [√भास्+उन्] सूर्य ।

भासुर—(वि०) [√भास्+घुरच्] चमकीला; 'तप्तभूपतिभासुरहेमराशि' र० ५.३० । भयानक । (पुं०) शूरवीर । बिल्लौर ।

भास्मन—(वि०) [स्त्री०—**भास्मनी**] [भस्मन्+अण्, अनन्तत्वात् नटिलोपः] भस्म से बना हुआ । भस्म का ।

भास्वत्—(वि०) [भास्+मतुप्, मस्य वः] चमकीला, दीप्तिमान् । (पुं०) सूर्य । अग्नि । अर्कवृक्ष । वीर । दिन ।

भास्वती—(स्त्री०) [भास्वत्+ङीप्] दीप्तिमती । सूर्य की पुरी । गाय का थन ।

भास्वर—(वि०) [√भास्+वरच्] चमकीला, दीप्तिमान् । (पुं०) सूर्य । दिवस, दिन ।

√भिक्ष्—भ्वा० आत्म० द्विक० माँगना, याचना करना । भीख माँगना । माँगना; किन्तु पाना नहीं । अक० पीड़ित होना भिक्षते, भिक्षिष्यते, अभिक्षिष्ट ।

भिक्षण—(न०) [√भिक्ष्+ल्युट्] भीख माँगना ।

भिक्षा—(स्त्री०) [√भिक्ष् + अ—टाप्] माँगना, माँगना । माँगने पर जो मिले । मजदूरी । चाकरी, सेवावृत्ति ।—**अटन** (**भिक्षाटन**)—(न०) भीख माँगते मारे-मारे फिरना ।—**अन्न** (**भिक्षान्न**)—(न०) भिक्षा में प्राप्त अन्न, भीख ।—**अर्थिन्** (**भिक्षार्थिन्**)—(पुं०) भिखारी, भिक्षुक ।—**अर्ह** (**भिक्षार्ह**)—(वि०) भिक्षापात्र, वह जिसे भीख देना उचित है ।—**आशिन्** (**भिक्षाशिन्**)—(वि०) भीख पर निर्वाह करने वाला । बेईमान ।—**आहार** (**भिक्षाहार**)—(पुं०) [illegible] ।—**उपजीविन्** (**भिक्षोपजीविन्**)—(वि०) भिखारी, भिक्षुक ।—**करण**—(न०) भीख माँगना ।—**पात्र**—(न०) भिक्षापात्र, खप्पर । भिक्षा लेने का अधिकारी ।—**माणव**—(पुं०) बाल भिखारी । —**वृत्ति**—(स्त्री०) भीख माँगने का पेशा ।

भिक्षाक—(पुं०) [स्त्री०—**भिक्षाकी**] [√भिक्ष्+षाकन्] भिखारी ।

भिक्षित—(वि०) [√भिक्ष्+क्त] याचित, माँगा हुआ ।

भिक्षु—(पुं०) [√भिक्ष् + उ] भिक्षुक, भिखारी । संन्यासी । बौद्ध भिक्षुक ।—**चर्या**—(स्त्री०) भिक्षा-वृत्ति, भिक्षुक-जीवन । —**संघाती**—(स्त्री०) भिक्षुक के कपड़े, चीवर, गुदड़ी ।

भिक्षुक—(पुं०) [भिक्षु+कन् वा √भिक्ष् +उक] भिखारी ।

भित्त—(न०) [√भिद्+क्त] अंश, भाग । टुकड़ा, टँक । खंड । दीवार ।

भित्ति—(स्त्री०) [√भिद्+क्तिन्] दीवार, भीत । तोड़ना । चीरना । नींव । चित्राधार । टुकड़ा । टूटी हुई कोई वस्तु । दरार । चटाई । छिद्र, दोष । अवसर ।—**खातन**—(पुं०) चूहा ।—**चौर**—(पुं०) घर में सेंध लगाने वाला । चोर । —**पातन**—(पुं०) बड़ा चूहा ।

भित्तिका—(स्त्री०) [√भिद्+तिकन् कित्, टाप्] छोटा गाँव । दीवाल । छिपकली, बिस्तुइया ।

√**भिद्**—रु० उभ० सक० टुकड़े करना। फोड़ना। खोदना। पृथक् करना। भङ्ग करना। गड़बड़ करना। अदल-बदल करना। घटाना-बढ़ाना। मिलाना। बिखेरना, छितराना। खोलना। ढीला करना। छिपी हुई बात को प्रकट करना। परेशान करना। पहचानना। भिनत्ति—भिन्ते, भेत्स्यति—ते, अभिदत्—अभैत्सीत्—अभित्त।

भिदक—(न०) [√भिद्+क्वुन्] हीरा। इन्द्र का वज्र। (पुं०) तलवार।

भिदा—(स्त्री०) [√भिद् +अङ—टाप्] टूटना। फटना। अलहदगी। अन्तर। जाति, किस्म। जीरा।

भिदि—(पुं०), **भिदिर**—(न०), **भिदु**—(पुं०) [√भिद्+इ, किन्] [√भिद् +किरच्] [√भिद्+कु] इन्द्र का वज्र।

भिदुर—(वि०) [√भिद्+कुरच्] तोड़ने वाला। चीरने वाला। भङ्गप्रवण, टूटने-फूटने वाला। मिश्रित; 'नीलाश्मद्युति-भिदुराम्भसोऽपरत्र' शि० ४.२६। तुनुक। (न०) इन्द्र का वज्र। (पुं०) प्लक्षवृक्ष।

भिद्य—(पुं०) [√भिद् +क्यप्] तोड़ से बहने वाला नद। नद विशेष।

भिद्र—(न०) [√भिद्+रक्] वज्र।

भिन्दपाल, भिन्दिपाल—(पुं०) [√भिन्द् +इन्, भिन्दि विदारणं पालयति, भिन्दि √पाल्+अण् पक्षे पृषो० साधुः] छोटा एक डंडा जो प्राचीन काल में फेंक कर मारा जाता था। गुफना, जिसमें कंकड़ या पत्थर रख कर उसे घुमा कर फेंका जाता है।

भिन्न—(वि०) [√भिद्+क्त, तस्य नः] टूटा हुआ। फटा हुआ। चिरा हुआ। विभाजित, पृथक् किया हुआ। (खोलकर) अलग किया हुआ। खिला हुआ। फूला हुआ। पृथक्, अलग। इतर, दूसरा। ढीला। मिश्रित। फिरा हुआ। परिवर्तित, बदला हुआ। भयानक। मस्त (हाथी)। (पुं०) रत्न का एक दोष जिसके कारण पहनने वाले को पुत्रादि का शोक प्राप्त होता है। (न०) टुकड़ा। फूल। क्षतरोग विशेष। वह संख्या जो एकाई से कुछ कम हो।—**अञ्जन** (भिन्नाञ्जन)–(न०) कई द्रव्यों को मिलाकर बनाया हुआ सुर्मा।—**उदर** (भिन्नोदर)–(पुं०) सौतेला भाई।—**करट**–(पुं०) मदमस्त हाथी।—**कूट**–(वि०) नायक-विहीन।—**क्रम**–(वि०) क्रमरहित, गड़बड़।—**गति**–(वि०) तेज चाल से जाने वाला।—**गर्भ**–(वि०) तितर-बितर।—**दर्शिन्**–(वि०) पक्षपाती।—**प्रकार**–(वि०) दूसरी किस्म या जाति का।—**भाजन**–(न०) फूटा बरतन। खप्पर।—**मर्मन्**–(वि०) वह जिसका मर्मस्थल बिधा हो।—**मर्याद**–(वि०) वह जिसने मर्यादा या सीमा भङ्ग कर दी हो। असंयत, जो काबू में न हो।—**रुचि**–(वि०) जुदी रुचि वाला।—**वर्चस्**, —**वर्चस्क**–(वि०) मलोत्सर्ग करने वाला।—**वृत्त**–(वि०) असद् जीवन व्यतीत करने वाला। जिसमें छंद संबंधी दोष हों।—**वृत्ति**–(वि०) बुरी राह चलने वाला। इतर रुचि या भावना रखने वाला।—**संहति**–(वि०) जिसका संबंध विच्छिन्न हो गया हो, असंयुक्त।—**स्वर**–(वि०) आवाज बदले हुए। बेसुरा।—**हृदय**–(वि०) वह जिसका हृदय छिदा हो।

भिरिण्टिका—(स्त्री०) श्वेतगुञ्जा, सफेद घुँघची।

√**भिल्**—तु० पर० सक० भेदन करना। भिलति, भेलिष्यति, अभेलीत्।

भिल्ल—(पुं०) [√भिल् + लक्] भील जाति।—**गवी**–(स्त्री०) नीलगाय।—**तरु**–(पुं०) लोध्र वृक्ष।—**भूषण**–(न०) घुँघची।

भिल्लोट, भिल्लोटक—(पुं०) [भिल्लप्रियम् उटं पत्रं यस्य, ब० स०] [भिल्लोट+कन्] लोध्र वृक्ष।

भिषक्पाश—(पुं०) [कुत्सितो भिषक्, भिषज् +पाशप्] अताई वैद्य, नीम-हकीम ।

√**भिषज्**—क० पर० सक० रोग का प्रतीकार करना, चिकित्सा करना । भिषज्यति ।

भिषज्—(पुं०) [बिभेति रोगो यस्मात्, √भी+अजि, षुगागम, ह्रस्वता; वा√भिषज् + क्विप्] वैद्य, चिकित्सक । विष्णु ।—**जित (भिषग्जित)**—(न०) औषधि, दवा । —**प्रिया (भिषक्प्रिया)**—(स्त्री०) गुडूच । —**वर (भिषग्वर)**—(पुं०) सर्वश्रेष्ठ वैद्य । अश्विनीकुमार ।

भिस्मा, भिस्मिका, भिस्मिटा, भिस्सटा, भिस्सिटा—(स्त्री०) [भिस्सटा, भिस्सामन्न टीकते, भिस्सा √टीक्+ड, पृषो० साधुः] [भिस्सिटा, भिस्सा √टीक्+ड पृषो० साधुः] जला हुआ अन्न, दग्धान्न । भुना हुआ अन्न ।

भिस्सा—(स्त्री०) [√भस्+स, इत्व, टाप्] अन्न ।

√**भी**—जु० पर० अक० डरना, भयभीत होना । बिभेति, भेष्यति, अभैषीत् ।

भी—(स्त्री०) [√भी+क्विप्] भय, डर ।

भीत—(वि०) [√भी+क्त] भयभीत, डरा हुआ; 'न भीतो मरणादस्मि' मृ० १०.२७ । खतरे में पड़ा हुआ ।—**भीत** (वि०) अतिशय डरा हुआ ।

भीति—(स्त्री०) [भी+क्तिन्] डर, भय । कँपकँपी, थरथराहट ।—**गायन**—(पुं०) मुँह-चोर गवैया ।—**नाटितक**—(न०) भयभीत होने का हावभाव दिखलाना ।

भीम—(वि०) [बिभेति अस्मात्, √भी +मक्] भयावना, डराने वाला । (पुं०) पाँच पाण्डवों में से दूसरे जो वायु के पुत्र माने जाते हैं, भीमसेन । भयानक रस । शिव ।—**उदरी (भीमोदरी)**—(स्त्री०) उमा का नामान्तर ।—**कर्मन्**—(वि०) भयङ्कर शक्ति वाला ।—**कुमार**—(पुं०) घटोत्कच ।—**तिथि**—(स्त्री०) माघ शुक्ला एकादशी ।—**दर्शन**—(वि०) देखने में भयङ्कर । —**नाद**—(वि०) भयानक रूप से शब्द करने वाला । (पुं०) सिंह । प्रलयकालीन सप्त मेघों में से एक का नाम । —**पराक्रम**—(वि०) भयङ्कर शक्ति वाला । —**रथ**—(पुं०) एक असुर जो कूर्मावतार में विष्णु के हाथों मारा गया था । धृतराष्ट्र का एक पुत्र । कृष्ण का एक पुत्र ।—**रथी**—(स्त्री०) किसी मनुष्य की उम्र के ७७वें वर्ष के ७ वें मास की ७ वीं रात का नाम। [यह रात बड़ी खतरनाक बतलायी जाती है—"सप्तसप्ततिमे वर्षे सप्तमे मासि सप्तमी । रात्रिर्भीमरथी नाम नराणामतिदुस्तरा ।।"] एक नदी जो सह्य पर्वत से निकली है ।—०**दशा**—(स्त्री०) उसे पार कर लेने के बाद की वयोदशा जो अतिपुण्यजनक मानी गई है ।—**रूप**—(वि०) भयानक शक्ल का ।—**विक्रान्त**—(पुं०) सिंह ।—**विग्रह**—(वि०) भयङ्कर डील-डौल का ।—**शासन**—(पुं०) यमराज ।—**सेन**—(पुं०) दूसरे पाण्डव का नाम । भीमसेनी कपूर ।

भीमर—(न०) युद्ध, लड़ाई ।

भीमा—(स्त्री०) [भीम+टाप्] दुर्गा । रोचना नामक गंधद्रव्य । चाबुक । दक्षिण भारत की एक नदी ।

भीरु—(वि०) [स्त्री०—**भीरु, भीरू**] [√भी +क्रु] डरपोक । भयभीत । (न०) चाँदी । (स्त्री०) भीरु स्त्री । बकरी । शतावरी । भटकटैया । (पुं०) शृगाल । चीता ।—**चेतस्**—(पुं०) हिरन, मृग ।—**पत्री**,—**पर्णी**—(स्त्री०) शतमूली ।—**रन्ध्र**—(पुं०) चूल्हा, भट्ठी ।—**सत्त्व**—(वि०) स्वभावतः भीरु । (पुं०) हिरन ।

भीरुक, भीलुक—(वि०) [भीरु +कन्] [√भी+क्लुकन्] भीरु, डरपोक । मुँह चुराने वाला । (न०) जंगल, वन । (पुं०)

रीछ। उल्लू। बाघ। सियार। ऊख की एक जाति।

भीरु, भीलू—(स्त्री०) [भीरु+ऊङ्, पक्षे रलयोरभेदः] डरपोक स्त्री, भयशीला नारी: 'स्वम् रक्षसा भीरु यतोऽपनीता' र० १३.२४।

भीषण—(वि०) [√भी+णिच्, षुक्+ल्यु] भयानक, डरावना, भयप्रद। जो कुछ उग्र या दुष्ट हो। (पुं०) भयानक रस। शिव जी का नामान्तर। कबूतर। हिंताल। कुंदरु। ब्रह्मा।

भीषा—(स्त्री०) [√भी + णिच्, षुक्+अङ्—टाप्] डराने की क्रिया। भय, डर।

भीषित—(वि०) [√भी+णिच्, षुक्+क्त] डरा हुआ, भयभीत।

भीष्म—(वि०) [बिभेति अस्मात्, √भी+मक्, षुक्] भयङ्कर।—**जननी**-(स्त्री०) श्री गङ्गा। (पुं०) भयानक रस। राक्षस। शिव जी का नामान्तर। शान्तनु-पुत्र भीष्म पितामह, जिनका जन्म श्रीगङ्गादेवी के गर्भ से हुआ था।—**पञ्चक**-(न०) कार्तिक शुक्ला ११ से १५ तक ५ दिवस को भीष्म-पञ्चक कहते हैं। इन पाँच दिनों में स्त्रियाँ प्रायः व्रत किया करती हैं।—**सू**-(स्त्री०) गंगा का नाम।

भीष्मक—(पुं०) [भीष्म+कन्] राजा शान्तनु के पुत्र का नाम। विदर्भ के एक राजा का नाम जिसकी पुत्री रुक्मिणी के साथ श्रीकृष्ण ने विवाह किया था।

भुक्त—(वि०) [√भुज्+क्त] खाया हुआ। भक्षित। उपभुक्त, उपयोग में लाया हुआ। अनुभूत। भोग के लिये रखा हुआ। (यथा—भोग-बंधक)। (न०) भक्षण करने या उपभोग करने की क्रिया। भक्ष्य पदार्थ। वह स्थान जहाँ किसी ने भोजन किया हो।—**उच्छिष्ट** (**भुक्तोच्छिष्ट**)-(न०), —**शेष**-(पुं०) —**समुज्झित**-(न०) खाने से बचा हुआ, जूठन।—**सुप्त**-(वि०) भोजनोपरान्त सोने वाला।

भुक्ति—(स्त्री०) [√भुज् +क्तिन्] भोजन, आहार। विषयोपभोग। कब्जा, दखल। भोजन। ग्रहों का किसी राशि में एक-एक अंश करके गमन।—**प्रद**-(पुं०) मूंग।—**वर्जित**-(वि०) वह जिसका उपभोग निषिद्ध हो।

भुग्न—(वि०) [√भुज् (मोड़ने)+क्त, तस्य नः] टेढ़ा, वक्र। टूटा हुआ।—**नेत्र**—(न०) एक सन्निपात जिसमें रोगी की आँखें टेढ़ी हो जाती हैं।

√भुज्—तु० पर० सक० झुकाना। टेढ़ा करना। भुजति, भोक्ष्यति, अभौक्षीत्। रु० पर० स० खाना, भक्षण करना। उपभोग करना, बरतना। संभोग करना। शासन करना। रक्षा करना। सहना। अनुभव करना। भुनक्ति, भोक्ष्यति, अभौक्षीत्।

भुज्—(वि०) [√भुज्+क्विप्] खाने वाला। उपभोग करने वाला। सहने वाला। शासन करने वाला। (स्त्री०) उपभोग। लाभ, मुनाफा।

भुज—(पुं०) [√भुज्+क] भुजा, बाहु। हाथ। हाथी की सूँड़। मोड़, घुमाव। त्रिकोण की एक भुजा।—**अन्तर** (**भुजान्तर**),—**अन्तराल** (**भुजान्तराल**)-(न०) वक्षःस्थल, छाती। गोद।—**आपीड** (**भुजापीड**)-(पुं०) कोरियाना, बाँहों में दबाना।—**कोटर**-(पुं०) बगल।—**दण्ड**-(पुं०) बाहुदण्ड।—**दल**-(पुं०, न०) हाथ।—**बन्धन**-(न०) बाँहों के भीतर भर लेना, आलिङ्गन: 'घटय भुजबन्धनम्' गीत० १०।—**बल**-(न०), —**वीर्य**-(न०) बाँहों की ताकत।—**मध्य**-(न०) भुजान्तर, क्रोड़। कपूर।—**मूल**-(न०) कंधा।—**लता**-(स्त्री०) लता जैसी कोमल कमनीय बाँह।—**शिखर**,—**शिरस्**-(न०) कंधा।—**सम्भोग**-(पुं०) आलिङ्गन।

भुजग—(पुं०) [भुजं वक्रं गच्छति, भुज √गम्+ड] सर्प, साँप।—**अन्तक** (भुजगान्तक),—**अशन** (भुजगाशन),—**आभोजिन्** (भुजगाभोजिन्),—**दारण**,—**भोजिन्**–(पुं०) गरुड़। मोर। न्योला।—**ईश्वर** (भुजगेश्वर),—**राज**–(पुं०) शेष जी।

भुजङ्ग—(पुं०) [भुजं वक्रं गच्छति, भुज √गम्+खच्, मुम् खस्य डित्वात् टिलोपः] सर्प, साँप। उपपति, जारः 'अभूमिरेषा भुजङ्गभङ्गिभाषितानां' का०। पति, स्वामी। राजा का एक पार्श्ववर्ती। नौकर, विदूषक। अश्लेषा नक्षत्र। सीसा। आठ की संख्या।—**इन्द्र** (भुजङ्गेन्द्र)–(पुं०) शेष जी। वासुकि।—**ईश** (भुजङ्गेश)–(पुं०) वासुकि। शेष। पतञ्जलि। पिंगलमुनि।—**कन्या**–(स्त्री०) सर्प की युवती कन्या।—**भ**–(न०) अश्लेषा नक्षत्र।—**भुज्**–(पुं०) गरुड़। मयूर।—**लता** (स्त्री०) ताम्बूल लता, पान की बेल।—**हन्**—(पुं०) गरुड़।

भुजङ्गम—(पुं०) [भुज√गम्+खच्, मुम्] सर्प। राहु। आठ की संख्या। सीसा। अश्लेषा नक्षत्र।

भुजा—(स्त्री०) [भुज+टाप्] बाँह। हाथ। साँप की गिड़ुरी।—**कण्टक**–(पुं०) नाखून, नख।—**दल**–(पुं०) हाथ।—**मध्य**–(पुं०) कुहनी। छाती।—**मूल**–(न०) कंधा।

भुजिष्य—(पुं०) [स्वाम्युच्छिष्टम् भुङ्क्ते, √भुज्+किष्यन्] दास, गुलाम। कलाई का सूत्र। रोग।

भुजिष्या—(स्त्री०) [भुजिष्य+टाप्] दासी: 'यथाङ्गदाश्लिष्ट भुजंभुजिष्या' र० ६.५३। वेश्या।

भुण्ड्—भ्वा० आत्म० सक० पालना। चुनना। भुण्डते, भुण्डिष्यते, अभुण्डिष्ट।

√भुरण्—कं० पर० सक० धारण करना। पोषण करना। भुरण्यति।

भुर्भुरिका, भुर्भुरी—(स्त्री०) एक प्रकार की मिठाई।

भुवन—(न०) [भवन्ति अस्मिन् भूतानि, √भू+क्युन्] जगत्। पृथिवी। स्वर्ग। आकाश। प्राणधारी। मानवजाति। जल। चौदह की संख्या।—**ईश** (भुवनेश)–(पुं०) राजा। शिव।—**ईश्वर** (भुवनेश्वर)–(पुं०) राजा। शिव।—**ओकस्** (भुवनौकस्)–(पुं०) देवता।—**त्रय**–(न०) तीन लोक— स्वर्ग, मर्त्य, पाताल।—**पावनी**–(स्त्री०) गङ्गा।—**शासिन्**–(पुं०) संसार का शासक।

भुवन्यु—(पुं०) [√भू+कन्युच्] स्वामी, प्रभु। सूर्य। अग्नि। चन्द्रमा।

भुवस्—(अव्य०) [√भू+असुन्, कित्] अन्तरिक्ष, आकाश। सप्तव्याहृतियों में से एक।

भुविस्—(पुं०) [√भू+इसिन्, कित्] समुद्र।

भुशुण्डि, भुशुण्डी—(स्त्री०) पत्थर फेंकने का एक प्राचीन अस्त्र जो चमड़े का बनाया जाता था।

√भू—भ्वा० पर० अक० होना। भवति, भविष्यति, अभूत्। उभ० सक० पाना। भवति—ते, भविष्यति—ते, अभूत्—अभविष्ट। चु० आत्म० सक० पाना। भावयते, भावयिष्यते, अबीभवत। उभ० सक० शुद्ध करना। सोचना। मिलना। भावयति—ते, भावयिष्यति—ते, अबीभवत्—त।

भू—(पुं०) [√भू+क्विप्] विष्णु। (त्रि०) (समासान्त में)—से उत्पन्न होने वाला; यथा—कमलभू, चित्तभू। (स्त्री०) पृथिवी। जगत्। जमीन। भूसम्पत्ति। स्थान, जगह विवेच्य या आलोच्य विषय। एक की संख्या। व्याहृतियों में से प्रथम व्याहृति।—**उत्तम**

(भूत्तम)–(न०) सुवर्ण ।—कन्द–(पु०) महाश्रावणिका । सूरण, ओल ।—कम्प–(पु०) भूडोल, भूचाल ।—कर्ण–(पु०) पृथिवी का व्यास ।—कल–(पु०) बिगड़ैल घोड़ा ।—कश्यप–(पु०) वसुदेव, श्री कृष्ण के पिता का नाम ।—काक–(पु०) एक प्रकार का बाज या कंक पक्षी । नीला कबूतर । कौंच पक्षी ।—केश–(पु०) वट वृक्ष ।—केशा–(स्त्री०) राक्षसी ।—क्षित्–(पु०) सूअर, शूकर ।—गर–(न०) विष विशेष । —गर्भ–(पु०) धरती का भीतरी भाग । विष्णु । भवभूति का नामान्तर ।—गृह,—गेह–(न०) तहखाना, जमीन के नीचे बना हुआ घर ।—गोल–(पु०) भूमण्डल । भूगोलशास्त्र ।—०विद्या–(स्त्री०),—०शास्त्र– (न०) पृथिवी के बाह्य रूप, प्राकृतिक विभाग आदि का ज्ञान कराने वाली विद्या या शास्त्र ।—घन–(पु०) शरीर । —चक्र–(न०) पृथिवी की परिधि, विषुवत्-रेखा ।—चर–(वि०) पृथिवी पर रहने या चलने वाला । (पु०) स्थलचर प्राणी । शिवजी ।—छाय–(न०)—छाया–(स्त्री०) पृथिवी की छाया जिसे अनजान लोग राहु कहते हैं । अंधकार ।— जन्तु–(पु०) एक तरह का घोंघा । हाथी ।—जम्बु,—जम्बू–(स्त्री०) गेहूँ । बनजामुन । —तल –(न०) पृथिवी की सतह ।—तृण (भूतृण) –(पु०) रूसा नामक घास ।— दार–(पु०) शूकर, सूअर ।—देव,—सुर–(पु०) ब्राह्मण ।—धन–(पु०) राजा । —धर–(पु०) पहाड़ । शिव । कृष्ण । सात की संख्या ।—नाग–(पु०) केंचुआ, मिट्टी का कीड़ा-विशेष ।—नेतृ–(पु०) राजा ।—प– (पु०) राजा ।—पति– –(पु०) राजा । शिव । इन्द्र ।—पद– (पु०) वृक्ष ।—पदी–(स्त्री०) चमेली-विशेष ।—परिधि–(पु०) पृथिवी का व्यास या घेरा ।—पाल–(पु०) राजा ।—पालन–(न०) राज्य, रियासत ।—पुत्र,—सुत–(पु०) मङ्गलग्रह । नरकासुर ।—पुत्री,—सुता–(स्त्री०) सीता की उपाधि । —प्रकम्प–(पु०) भूचाल, भूडोल ।—बिम्ब– (पु०, न०) दे० 'भूछाय' । भूगोल । —भर्तृ–(पु०) राजा ।—भाग–(पु०) पृथिवी का टुकड़ा ।—भृत्–(पु०) पर्वत; 'दाता मे भूभृतां नाथः प्रमाणीक्रियतामिति' कु० ६.१ । राजा । विष्णु । सात की संख्या । —मण्डल–(न०) धरती । भूगोल ।—रुह्, —रुह–(पु०) वृक्ष ।—लोक–(पु०) मर्त्य लोक ।—वलय– (न०) पृथ्वी की परिधि ।—वल्लभ –(पु०) राजा । बाद-शाह ।—वृत्त–(न०) विषुवरेखा, भूप-रिधि ।—शक्र–(पु०) राजा ।—शय–(पु०) विष्णु ।—श्रवस्–(पु०) दीमक की मिट्टी का टीला ।—स्पृश्–(पु०) मानव । वैश्य ।—स्वर्ग–(पु०) मेरु पर्वत ।—स्वामिन्–(पु०) जमींदार ।

भूक—(न०, पु०) [√भू+कक्] रन्ध्र छिद्र । चश्मा, सोता । समय । अंधकार । —ल (पु०) [भूक समयं लाति, भूक +ला+क—टिलोप] अड़ियल घोड़ा ।

भूत–(वि०) [√भू+क्त] जो हो चुका हो । अतीत, बीता हुआ । वस्तुतः घटित । उत्पन्न । सत्य । युक्त, उचित । प्राप्त । मिश्रित । समान, सदृश । (न०) कोई वस्तु चाहे वह मानवी हो चाहे दैवी और चाहे निर्जीव । प्राणधारी । आत्मा । प्रेत, पिशाच । पंच महाभूतों—पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश —में से कोई तत्त्व । वास्तविक घटना । भूतकाल, गुजरा हुआ समय । संसार, जगत् । कुशलता । पाँच की संख्या । (पु०) पुत्र । शिव । कृष्णपक्षीय चतुर्दशी । कार्त्तिकेय । बहुत बड़ा भक्त ।—अनुकम्पा (भूतानु-कम्पा)–(स्त्री०) प्राणिमात्र पर दया ।—

अन्तक (भूतान्तक)–(पु०) यमराज। रुद्र। —अर्थ (भूतार्थ)–(पु०) यथार्थ, वास्तविक।—आत्मक (भूतात्मक)– (वि०) पंचतत्त्वों का बना हुआ।—आत्मन् (भूतात्मन्)–(पु०) जीवात्मा। परमात्मा। ब्रह्मा की उपाधि। शिव की उपाधि। मूलतत्त्व सम्बन्धी पदार्थ, मौलिक पदार्थ। शरीर। युद्ध।—आदि (भूतादि)–(पु०) परब्रह्म। अहङ्कार। —आर्त (भूतार्त)– –(वि०) प्रेताविष्ट, प्रेतपीड़ित।—आवास (भूतावास)–(पु०) शरीर। शिव। विष्णु। बहेड़ा।—आविष्ट (भूताविष्ट)– जिसे भूत लगा हो। —आवेश (भूतावेश) –(पुं०) भूत लगना, भूत का किसी पर सवार होना।—इज्य (भूतेज्य)–(न०), —इज्या (भूतेज्या)–(स्त्री०) प्रेतपूजा, भूतों के लिये बलिदान। इष्टा (भूतेष्टा) –(स्त्री०) कृष्ण-पक्ष की चतुर्दशी।—ईश (भूतेश)–(पु०) ब्रह्मा। विष्णु। शिव। —ईश्वर (भूतेश्वर)–(पु०) शिव।— उन्माद (भूतोन्माद)–(पु०) वह उन्माद रोग जो भूतों या पिशाचों के आक्रमण के कारण हो।—उपसृष्ट (भूतोपसृष्ट),— उपहत (भूतोपहत)–(वि०) प्रेत के कब्जे में पड़ा।—ओदन (भूतौदन)–(पु०) भूतों को दिया जाने वाला भात।—कर्तृ, —कृत्–(पुं०) ब्रह्मा की उपाधि।—काल–(पु०) बीता हुआ समय।—केशी–(स्त्री०) श्वेत तुलसी।—क्रान्ति–(स्त्री०) भूतावेश।—गण–(पु०) प्राणियों का समुदाय। मरे हुए, पुरुषों के आत्माओं या राक्षसों का समुदाय। —ग्रस्त–(वि०) प्रेताविष्ट।— ग्राम–(पु०) जीवधारी मात्र की समष्टि। भूत-प्रेतों का समूह। शरीर।—घ्न–(पु०) ऊँट। लहसुन। भोजपत्र।—घ्नी–(स्त्री०) तुलसी।—चतुर्दशी–(स्त्री०) नरक चौदस, कार्तिक-कृष्ण-चतुर्दशी।—

चारिन्–(पु०) शिव जी की उपाधि।— जय–(पु०) तत्त्वों पर विजय। —दया–(स्त्री०) प्राणि मात्र पर कृपा।—धरा, —धात्री,—धारिणी–(स्त्री०) पृथिवी। —नाथ–(पु०) शिव।—नायिका–(स्त्री०) दुर्गा देवी।—नाशन–(पु०) भिलावाँ। राई, सरसों। कालीमिर्च। रुद्राक्ष। हींग। —निचय–(पु०) शरीर। पक्ष–(पु०) कृष्ण पक्ष।—पति–(पु०) शिव; 'आनास्पदम्भूतपतेर्विवेश' कु० ३.४३। अग्नि। —पत्री–(स्त्री०) कृष्ण तुलसी।— पूर्णिमा–(स्त्री०) आश्विन की पूर्णिमा। —पूर्व–(वि०) पूर्ववर्ती, जो पहिले हो चुका हो।—प्रकृति–(स्त्री०) मूल प्रकृति, सब प्राणियों का उत्पत्तिस्थान।—ब्रह्मन्–(पु०) अकुलीन ब्राह्मण, देवल।—भर्तृ– (पु०) शिव की उपाधि।—भावन–(पु०) शिव। परब्रह्म। विष्णु।—भाविन्–(वि०) जीवों की सृष्टि करने वाला। अतीत और भावी। —भाषा–(स्त्री०),—भाषित– (न०) पैशाची भाषा।—महेश्वर–(पु०) शिव जी।—यज्ञ–(पु०) पञ्चमहायज्ञों में से एक, बलिवैश्वदेव।—योनि–(पु०) परमेश्वर। (स्त्री०) प्रेतयोनि। समस्त प्राणियों का उत्पत्तिस्थान।—राज–(पु०) शिव जी।—वर्ग–(पु०) भूतसमूह। पिशाच जाति।—वास–(पु०) बिभीतक वृक्ष, बहेड़े का पेड़।—वाहन–(पुं०) शिव जी की उपाधि।—विक्रिया–(स्त्री०) मिरगी का रोग। भूत या पिशाच का फेरा। —विज्ञान, —विद्या–(स्त्री०) भूत-प्रेत-विद्या, आयुर्वेद के आठ विभागों में से एक जिसमें पिशाच आदि की बाधा से उत्पन्न रोगों की चिकित्सा बताई गई है।—वृक्ष– (पुं०) बिभीतक वृक्ष, बहेड़ा।—शुद्धि– (स्त्री०) पूजन के पहले शरीर अथवा उसके उपादान रूप पंच भूतों की मंत्रादि

द्वारा शुद्धि ।—**संसार**–(पुं०) मर्त्यलोक । —**सञ्चार**–(पुं०) भूत या पिशाच का फेरा ।—**सर्ग**–(पुं०) संसार की उत्पत्ति । —**सूक्ष्म**–(न०) सांख्य के मतानुसार पञ्च-भूतों का आदि, अमिश्र एवं सूक्ष्मरूप ।—**स्थान**–(न०) जीवधारियों का वासस्थान । प्रेतों के रहने का स्थान ।–**हत्या**—(स्त्री०) जीवधारियों का नाश ।—**हृर**–(पुं०) गुग्गुल ।—**हारिन्**–(पुं०) देवदारु । लाल कनेर ।–**हास**–(पुं०)सन्निपात का एक भेद।

भूतमय—(वि०) [भूत + मयट्] जिसमें समस्त प्राणी सम्मिलित हों । पञ्चतत्त्वों का बना हुआ या उत्पन्न किये हुए जीवों से बना हुआ ।

भूति—(स्त्री०) [√भू +क्तिन्] अस्तित्व, होने का भाव । जन्म, उत्पत्ति । कुशलत्व । प्रसन्नता । सफलता । सौभाग्य । सम्पत्ति वैभव; 'प्रजानामेव भूत्यर्थं स ताभ्यो बलिमग्रहीत्' र० १.१८ । भस्म, राख । हाथी का मस्तक रंग कर उसका शृङ्गार करना । जप या तांत्रिक अनुष्ठानादि से प्राप्त अलौकिक शक्ति । भुना हुआ मांस । हाथी का मद । (पुं०) [√भू+क्तिच्] शिव । विष्णु । पितृगण ।—**कर्मन्**–(न०) कोई शुभ कृत्य या उत्सव का विधान ।—**काम**–(वि०) सम्पत्ति-प्राप्ति का अभिलाषी । (पुं०) किसी राज्य का सचिव । बृहस्पति का नामान्तर ।—**काल**–(पुं०) आनन्द-प्रद शुभ घड़ी ।—**कील**–(पुं०) छिद्र । गर्त । नगर या दुर्ग के चारों ओर जल से भरी खाई । तहखाना, भूमि के नीचे की गुफानुमा छोटी कोठरी ।—**कृत्**–(पुं०) शिव जी का नामान्तर ।—**गर्भ**–(पुं०) भवभूति कवि का नामान्तर ।—**द**(पुं०) शिव जी का नामान्तर ।—**निधान**–(न०) धनिष्ठा नक्षत्र ।—**भूषण**,—**वाहन**–(पुं०) शिवजी ।

भूतिक—(न०) [√भू+क्तिच्+कन्] कपूर । चन्दन । जायफल । चिरायता । अजवायन । कत्था ।

भूमत्—(वि०) [भू+मतुप्] पृथिवी या भूमि रखने वाला । (पुं०) पृथिवी-पाल, राजा ।

भूमन्—(पुं०) [बहोर्भावः, बहु+इमनिच्, बहोः भू आदेशः, इलोपः] अधिक परिमाण, विपुलता, प्राचुर्य; 'भूम्ना रसानाम् गहनाः प्रयोगाः' माल० १.४ । एक बड़ी संख्या । धन-सम्पत्ति । (न०) पृथिवी । प्रान्त, भूखण्ड । प्राणी । बहुतायत ।

भूमय—(वि०) [स्त्री०—**भूमयी**] [भू +मयट्] मिट्टी का, मिट्टी से बना या मिट्टी से उत्पन्न ।

भूमि—(स्त्री०) [भवन्ति भूतानि अस्याम्, √भू+मि, कित्] पृथिवी । कर्दममय स्थान । पृथिवी का पृष्ठदेश । नगर के चारों ओर का विस्तृत मैदान । देश । ज़मीन । स्थान, स्थल, जगह । भूसम्पत्ति । मंजिल, तला; 'सप्तभूमिकः प्रासादः' । गोचरभूमि, चरागाह । नाटक में किसी पात्र का चरित्र या अभिनय । आधार । योगी के चित्त की एक अवस्था । व्याप्ति । जिह्वा ।—**अन्तर** (**भूम्यन्तर**)– (पुं०) पड़ोसी राज्य का अधिपति ।—**आमलकी** (**भूम्यामलकी**)–(स्त्री०) भुईंआंवला ।—**इन्द्र** (**भूमीन्द्र**), —**ईश्वर** (**भूमीश्वर**)–(पुं०) राजा ।—**कम्प**–(पुं०) भूडोल, भूचाल ।—**कु** (**कू**) ०**काण्ड**—(न०) जमीन पर होने वाला कुम्हड़ा, भुईंकुम्हड़ा ।—**गम**—(पुं०) ऊँट ।—**गुहा**–(स्त्री०) गुफा ।—**गृह**–(न०) तहखाना ।—**चल**–(पुं०)—**चलन**–(न०) भूडोल, भूचाल ।—**ज**–(पुं०) मङ्गल ग्रह । नरकासुर । मानव । भूनिंब नामक पौधा ।—**जा**–(स्त्री०) सीता । —**जीविन्**–(पुं०) जमीन से

जीविका करने वाला, कृषक । वैश्य ।—तल-(न०) जमीन की सतह ।—दान-(न०) जमीन या पृथिवी का दान ।—देव-(पुं०) ब्राह्मण ।—धर- (पुं०) पर्वत । बादशाह । शेष नाग । सात की संख्या ।—नाथ, —पति,—पाल,—भुज्-(पुं०) राजा ।—पक्ष-(पुं०) तेज घोड़ा ।—पिशाच-(न०) ताड़ का पेड़ ।—पुत्र-(पुं०) मंगल ग्रह । नरकासुर ।—पुरन्दर-(पुं०) राजा । महाराज दिलीप का नाम ।—भृत्-(पुं०) पर्वत । राजा ।—मण्डपभूषणा-(स्त्री०) माधवी लता ।—मण्डा-(स्त्री०) चमेली विशेष ।—रक्षक-(पुं०) देशरक्षक । तेज घोड़ा ।—रुह-(पुं०) वृक्ष ।—रुहा-(स्त्री०) दूब ।—लग्ना-(स्त्री०) सफेद फूल की अपराजिता ।—लता -(स्त्री०) शंखपुष्पी ।—लवण-(पुं०) शोरा । —लाभ-(पुं०) मृत्यु ।—लेपन-(न०) गोबर ।—वर्धन-(पुं०, न०) लाश ।— शय-(वि०) पृथिवी पर सोने वाला । (पुं०) जंगली कबूतर ।—शयन-(न०) शय्या- (स्त्री०) जमीन पर सोना ।—सम्भव ,—सुत-(पुं०) मङ्गलग्रह । नरकासुर ।—सम्भवा,—सुता-(स्त्री०) सीता की उपाधि ।—स्तोम-(पुं०) एक ही दिन में पूरा होने वाला एक यज्ञ ।—स्पृश्-(पुं०) मनुष्य । वैश्य । चोर । (वि०) अंधा । लँगड़ा ।

भूमिका—(स्त्री०) [भूमि+कन्, वा भूमि √कै + क—टाप्] जमीन, भूमि । पङ्किल भूमि । मंजिल, तल्ला । डग, पद । लिखने का तख्ता । नाटक में किसी का चरित्र या अभिनय । नाटक के नट की पोशाक । शृङ्गार । किसी ग्रन्थ के प्रारम्भ की सूचना जिससे उस ग्रन्थ के विषय में आवश्यक विषयों का ज्ञान हो, प्रस्तावना । योगी के चित्त की एक विशेष अवस्था ।

भूमी—(स्त्री०) [भूमि+ङीप्] दे० 'भूमि'।—कदम्ब-(पुं०) कदम्ब वृक्ष विशेष ।—पति,—भुज्-(पुं०) राजा ।—रुह्,—रुह-(पुं०) वृक्ष ।

भूयशस्—(अव्य०) [भूयस्+शस्] प्रायः, अक्सर । अतिशय । पुनः ।

भूयस्—(वि०) [स्त्री०—भूयसी] [अयम् अनयोः अतिशयेन बहुः, बहु+ईयसुन्, ईलोप, भू आदेश] बहुतर, अधिक; 'भद्रं भद्रं वितर भगवन् भूयसे मङ्गलाय' माल० १.३ । (अव्य०) [भुवे भावाय यस्यति यतते, भू√यस्+क्विप्] पुनः । और अधिक । साधारणतः ।

भूयस्त्व—(न०) [भूयस्+त्व] विपुलता, बहुतायत । प्रबलता ।

भूयिष्ठ—(वि०) [अयम् एषाम् अतिशयेन बहुः, बहु+इष्ठन्, यिडागम, भू आदेश] बहुत अधिक ।

भूर्—(अव्य०) [√भू+रुक्] अन्तरिक्ष लोक से नीचे चरण-सञ्चार-योग्य स्थान, लोक । तीन व्याहृतियों में से एक ।

भूरि—(वि०) [√भू+क्रिन्] प्रचुर । अधिक । बड़ा । (पुं०) विष्णु । ब्रह्मा । शिव । (न०) सुवर्ण ।—गम-(पुं०) गधा ।—तेजस्-(वि०) बड़ा चमकीला । (पुं०) अग्नि ।—दक्षिण-(वि०) मूल्यवान् या बढ़िया वस्तुओं की दक्षिणा से युक्त । उदार । —दान-(न०) बड़ा दान । उदारता ।—दावन्-(वि०) बहुत बड़ा दानी ।—द्युम्न-(पुं०) नवें मनु का एक पुत्र ।—धन-(वि०) बहुत धनवान् ।—धामन्-(वि०) बहुत तेज वाला । बहुत प्रभावशाली । (पुं०) नवम मनु का एक पुत्र ।—प्रयोग-(वि०) प्रायः उपभोग में आने वाला ।—प्रेमन्-(पुं०) चकवा ।—भाग-(वि०) बहुत धनवान् ।—माय-(पुं०) शृगाल, गीदड़ । —रस-(पुं०) गन्ना ।—लाभ-(पुं०)

बड़ा मुनाफा ।—विक्रम-(वि०) बड़ा बहादुर ।—श्रवस्-(पुं०) एक महारथी का नाम जो महाभारत के युद्ध में कौरवों की ओर से पाण्डवों से लड़ा था और सात्यकि के हाथ से मारा गया था।

भूरिज्-(स्त्री०) [√भृ+इजि,पृषो० साधुः] पृथिवी ।

भूर्ज—(पुं०) [भू√ऊर्ज्+अच्] भोजपत्र का वृक्ष ।—कण्टक-(पुं०) वर्णसङ्कर-विशेष—'व्रात्यात्तु जायते विप्रात् पापात्मा भूर्जकण्टकः' (मनु० १०।२१) ।—पत्र-(पुं०) भोजपत्र का पेड़ । (न०) भोजपत्र ।

भूर्णि—(स्त्री०) [√भृ+नि, नि० ऊत्त्व] जमीन । पृथिवी ।

√भूष्—भ्वा०, चु० पर० सक० सजाना, शृङ्गार करना । छा देना । भूषति, भूषिष्यति, अभूषीत् । चु० भूषयति, भूषयिष्यति, अबूभुषत् ।

भूषण—(न०) [√भूष् +ल्युट्] शृङ्गार, सजावट । गहना, आभूषण ।

भूषा—(स्त्री०) [√भूष् + अ—टाप्] शृङ्गार, सजावट । गहना, आभूषण । रत्न ।

भूषित—(वि०) [√भूष्+क्त] सजा हुआ । आभूषणों से युक्त ।

भूष्णु—(वि०) [भू+स्नु] होने वाला । धन की कामना करने वाला ।

√भृ—भ्वा०, जु० उभ० सक० भरना । परिपूर्ण करना । सहारा देना । पोषण करना । अधिकार करना, कब्जा करना । पहिनना, धारण करना । अनुभव करना । देना । रखना । पकड़ना । (स्मृति में) धारण करना । भाड़ा करना । लाना । भरति—ते, भरिष्यति—ते, अभार्षीत्—अभृत । जु० बिभर्ति, भरिष्यति—ते, अभार्षीत्—अभृत ।

भृकुंश, भृकुंस—(पुं०) [√कुंस् + अच्, कुंसो भाषदीपनम्, पक्षे पृषो० सस्य शत्वम्, भ्रुवा कुंशो भावप्रकाश इङ्गितज्ञापनं यस्य, नि० संप्रसारण] स्त्री का वेष धारण करने वाला नट ।

भृकुटि, भृकुटी—(स्त्री०) [√कुट्+इन्, भ्रुवः कुटिः कौटिल्यम्, नि० संप्रसारण] भौंह ।

भृम्—(अव्य०) यह आग की चटचटाहट की आवाज को प्रकट करता है ।

भृगु—(पुं०) [तपसा भृज्ज्यते, √भ्रस्ज +कु, संप्रसारण, कुत्व] एक गोत्रप्रवर्तक मुनि जो ब्रह्मा के पुत्र माने जाते हैं । जमदग्नि । शुक्राचार्य । शुक्रग्रह । पहाड़ का बड़ा कगार; 'भृगुपतनकारणमपृच्छम्' दश०। पहाड़ के शिखर की समतल भूमि । कृष्ण भगवान् । शिव ।—उद्वह (भृगूद्वह)-(पुं०) परशुराम ।—ज,—तनय-(पुं०)शुक्राचार्य । —नन्दन-(पुं०) परशुराम । शुक ।—पति-(पुं०) परशुराम ।—पतन-(न०), —पात-(पुं०) पहाड़ के कगार से गिर कर आत्म-हत्या करना ।—रेखा,—लता-(स्त्री०) विष्णु की छाती पर पड़ा हुआ भृगु के लात मारने का चिह्न ।—वार, —वासर -(पुं०) शुक्रवार ।—शार्दूल, —श्रेष्ठ,— —सत्तम-(पुं०) परशुराम ।—सुत,—सूनु (पुं०) परशुराम । शुक्र ग्रह ।

भृङ्ग—(पुं०) [बिभर्ति, √भृ+गन्, कित्, नुडागम] भौंरा, भ्रमर; 'भृङ्गः पुष्पं पुरुषं स्त्री वाञ्छति नवं नवं' सुभा०। बिलनी । भँगरा । कलिंग या भीमराज पक्षी । लंपट मनुष्य । सुवर्ण घट या सुवर्णपात्र । (न०) दालचीनी । अबरक ।—अभीष्ट (भृङ्गाभीष्ट)-(पुं०) आम का पेड़ ।—आनन्दा (भृङ्गानन्दा)-(स्त्री०) यूथिका लता ।—आवली (भृङ्गावली)- भ्रमर-पंक्ति, भौंरों की पाँत ।—ज-(न०) अगर । अबरक ।—वणिका-(स्त्री०) छोटी इलायची ।—प्रिया-(स्त्री०) माधवी लता । —राज-(पुं०) बड़ा भौंरा । भँगरा नामक पौधा । भीमराज पक्षी ।—रिटि,—रीटि- (पुं०)

शिव के गण विशेष जो बड़े कुरूप हैं ।—रोल–(पुं०) एक जाति की बर्रैया या भिड़ । —वल्लभ —(पुं०) आदाकदंब । भूमिकदंब । —वल्लभा—(स्त्री०) भूमिजंबु ।

भृङ्गार—(पुं०, न०) [भृ+आरन्, नि० नुम्, गुक् वा भृङ्ग √ऋ+अण्] झारी; 'शिशिरसुरभिसलिलपूर्णोऽयम् भृङ्गारः' वे० ६ । सुवर्ण घट या सुवर्णपात्र । राज्याभिषेक के समय काम में आने वाला घट । (न०) स्वर्ण, सोना । लवङ्ग, लौंग ।

भृङ्गारिका, भृङ्गारी—(स्त्री०) [भृङ्गार+कन्—टाप्, इत्व] झिल्ली नामक कीड़ा, झींगुर ।

भृङ्गिन्—(पुं०) [भृङ्गः भृङ्गवत् वर्णः अस्ति अस्य, भृङ्ग+इनि]वटवृक्ष । शिव के एक गण का नाम ।

भृङ्गिरिटि, भृङ्गिरीटि—(पुं०) [भृङ्ग √रट्+इन्, पृषो० साधुः] शिव के द्वारपाल ।

भृङ्गेरिटि—(पुं०) [भृङ्गे भृङ्गविषये रिटति, भृङ्गे √रिट्+इ, अलुक् स०]शिव का एक गण ।

√भृज्—भ्वा० आत्म० सक० भूनना । भर्जते, भर्जिष्यते, अभर्जिष्ट ।

√भृड्—तु० पर० अक० डुबकी लगाना । भृडति, भृडिष्यति, अभृडीत् ।

भृण्टिका-(स्त्री) [=भिरिण्टिका, पृषो०, साधुः] सफेद घुँघची ।

भृण्डि—(स्त्री०) लहर ।

भृत—(वि०) [भृ+क] भरा हुआ, पूरित । पाला हुआ, पोषित । सम्पन्न । भाड़े पर लिया हुआ । (पुं०) भाड़े का नौकर ।

भृतक—(वि०) [भृत+कन्] मजदूरी या भाड़े पर रखा हुआ । (पुं०) वेतन पर काम करने वाला नौकर ।—अध्यापक (भृतकाध्यापक)-(पुं०)वेतनभोगी शिक्षक ।(वि०) वेतनभोगी शिक्षक द्वारा पढ़ाया हुआ छात्र ।

भृति—(स्त्री०) [√भृ+क्तिन्] पालन-पोषण । भोजन । मजदूरी । भाड़ा । (वेतन पाने की शर्त पर) नौकरी । पूँजी, मूलधन । —अध्यापन (भृत्यध्यापन)-(न०) वेतन लेकर पढ़ाना ।—भुज्-(पुं०) वेतनभोगी नौकर ।

भृत्य—(वि०) [√भृ+क्यप्] वह जिसका पालन-पोषण किया जाय । (पुं०) नौकर । अमात्य ।—जन-(पुं०) नौकर, सेवक ।—भर्तृ-(पुं०)नौकरों का पालक । घर या परिवार का मालिक ।—वर्ग-(न०) अनुचर-समुदाय ।—वात्सल्य-(न०) नौकरों के प्रति दया ।

भृत्या—(स्त्री०) [भृत्य+टाप्] दासी । भोजन । मजदूरी । सेवा ।

भृत्रिम—(वि०) [√भृ+क्त्रिमप्] पालन-पोषण किया हुआ ।

भृमि—(स्त्री०) [√भ्रम्+इ, संप्रसारण] भँवर, चक्कर । बवंडर । एक प्रकार की वीणा ।

√भृश्—दि० पर० अक० नीचे गिरना । अधःपतन होना । भृश्यति, भर्शिष्यति, अभृशत् ।

भृश—(वि०) [√भृश्+क] शक्तिशाली । प्रचंड । अत्यधिक ।—दुःखित,—पीडित—(वि०) अत्यन्त सन्तप्त ।—संहृष्ट-(वि०) अत्यानन्दित ।

भृशम्—(अव्य०) [√भृश्+कमु] अत्यधिकता से । प्रचण्डता से; 'तमवेक्ष्य रुरोद सा भृशं' कु० ४.२६ । अक्सर, प्रायः । अच्छे ढंग से ।

भृष्ट—(वि०) [√भ्रस्ज्+क्त] भूना हुआ, अकोरा हुआ ।—अन्न (भृष्टान्न)-(न०) उबाल कर भूना हुआ दाना, लावा, खील ।

भृष्टि—(स्त्री०) [√भ्रस्ज्+क्तिन्] भूनना, अकोरना । उजड़ा हुआ बाग या उपवन ।

√भॄ—क्र्या० पर० सक० पालन-पोषण करना । भूनना । कलङ्कित करना । भर्त्सना करना । भृणाति, भरि(री)ष्यति, अभारीत् ।

भेक—(पुं०) [√भी+कन्] मेढक। भीरु मनुष्य। बादल।—**भुज्**-(पुं०) साँप।—**रव**-(पुं०) मेढकों का टर्राना।

भेकी—(स्त्री०) [भेक+ङीष्] मेढकी। मंडूकपर्णी वृक्ष।

भेड़—(पुं०) [√भी+ड] मेष, भेड़ा। भेना।

भेंड—(पुं०) [=भेड, पृषो० साधुः] भेड़ा मेष।

भेद—(पुं०) [√भिद्+घञ्] भेदने की क्रिया, छेदना। बेधना। विदीर्ण करना। दरार। गड़बड़ी। अलहदगी, अलगाव। चोट। परिवर्तन। झगड़ा। विश्वासघात। धोखा। किस्म, जाति। द्वैतता। चार प्रकार की राजनीतियों में से एक, जिसके द्वारा शत्रु और उसके मित्रों में परस्पर झगड़ा उत्पन्न कर दिया जाता है। रेचन विधि, मल को साफ कर देने की क्रिया।—**उन्मुख** (**भेदोन्मुख**)-(वि०) खिलने वाला, फूटने वाला।—**कर**,—**कृत्**-(वि०) भेद या झगड़ा उत्पन्न करने वाला।—**दर्शिन्**,—**दृष्टि**—**बुद्धि**-(वि०) संसार को परब्रह्म से भिन्न मानने वाला।—**प्रत्यय**-(पुं०) द्वैतवाद में विश्वास रखने वाला व्यक्ति।—**वादिन्**-(पुं०) द्वैतवादी।—**सह**-(वि०) विभाजित या पृथक् होने योग्य। वह जो बिगाड़ा जा सके, जो प्रलोभन में फँसाया जा सके।

भेदक—(वि०) [स्त्री०—**भेदिका**] [√भिद्+ण्वुल्] तोड़ने वाला। चीरने वाला। विभाजित करने वाला, अलग करने वाला। नाश करने वाला। विवेचन करने वाला। लक्षण वर्णन करने वाला। (पुं०) विशेषण।

भेदन—(न०) [√भिद् + ल्युट्] चीर-फाड़। पृथक्त्व, अलहदगी। पहचान। अनैक्य फैलाना, झगड़ा-टंटा उत्पन्न करना। रेचन, दस्त लाना। (पुं०) [√भिद+ल्यु] सूअर। (न०) हींग। अम्लवेत।

भेदिन्—(वि०) [√भिद्+णिनि] चीरने वाला, फाड़ने वाला। अलगाने वाला। भेद लेने वाला।

भेदिर, भेदुर—(न०) [=भिदिर,—भिदुर, पृषो० साधुः] इन्द्र का वज्र।

भेद्य—(न०) [√भिद्+ण्यत्] विशेष्य, संज्ञा। (वि०) भेदन करने योग्य।—**लिङ्ग**-(वि०) लिङ्ग द्वारा पहचानने योग्य।

भेर—(पुं०) [बिभेति अस्मात्, √भी+रन्] बड़ा ढोल या नगाड़ा।

भेरि, भेरी—(स्त्री०) [√भी+क्रिन् (बा०) गुण] [भेरि+ङीष्] दे० 'भेर'।

भेरुण्ड—(वि०) भयानक, भयप्रद। (न०) गर्भधारण, गर्भाधान। (पुं०) चिड़ियों की एक जाति। हिंस्र जन्तु (भेड़िया, सियार आदि)।

भेरुण्डक—(पुं०) [भेरुण्ड+कन्] शृगाल आदि हिंस्र जन्तु।

भेल—(वि०) [√भी+रन्, रस्य लः] डरपोक, भीरु। मूर्ख, अज्ञानी। चञ्चल। लंबा। फुर्तीला। (पुं०) नाव, बेड़ा।

भेलक—(पुं, न०) [भेल+कन्] नाव, बेड़ा।

√**भेष्**—भ्वा० उभ० अक० डरना। सक० जाना। भेषति—ते, भेषिष्यति—ते, अभेषीत्—अभेषिष्ट।

भेषज—(न०) [भिषज्+अण्, नि० एत्व] औषध, दवा; 'अतिवीर्यवतीव भेषजे' कि० २.४। जल। सुख। सोंठ। (पुं०) विष्णु।—**आगार** (**भेषजागार**)-(पुं०, न०) दवाखाना या दवा की दुकान।—**अङ्ग** (**भेषजाङ्ग**)-(न०) कोई चीज जो दवा खाने के बाद ली जाय।

भैक्ष—(वि०) [स्त्री०—**भैक्षी**] [भिक्षा+अण्] भिक्षा पर निर्वाह करने वाला। (न०) भिक्षा, भीख; 'भैक्षेण वर्तयेन्नित्यं' मनु० २.१८८। भिक्षा-समूह।—**अन्न** (**भैक्षान्न**)-(न०) भिक्षा का अन्न।—

—आशिन् (भैक्षाशिन्)- (वि०) भिक्षा में मिले हुए अन्न को खाने वाला। (पुं०) भिखारी।—आहार (भैक्षाहार)-(पुं०) भिखारी, भिक्षुक।—चरण,—चर्य-(न०) —चर्या-(स्त्री०) भीख माँगना।—जीविका,—वृत्ति-(स्त्री०)भिक्षा पर जीवन व्यतीत करना।—भुज्-(पुं०) दे० भैक्षाशिन्।

भैक्षव, भैक्षुक—(न०) [भिक्षु+अञ्] [भिक्षुक+अञ्] भिक्षुकों का समूह।

भैक्ष्य—(न०) [भिक्षा+ष्यञ्] भीख। भिक्षा-समूह। चतुर्थ आश्रम में करने योग्य एक वृत्ति।

भैम—(वि०) [स्त्री०—**भैमी**] [भीम+अण्] भीम-संबन्धी। (पुं०) भीम का वंशज। उग्रसेन।

भैमसेनि, भैमसेन्य—(पुं०) [भीमसेन+इञ्] [भीमसेन+ण्य] भीमसेन का पुत्र।

भैमी—(स्त्री०) [भम+ङीप्] भीम की पुत्री दमयन्ती। माघ-शुक्ला ११शी।

भैरव—(वि०) [स्त्री०—**भैरवी**] [भीरु+अण्]भयानक, डरावना। [भैरव+अण्] भैरव सम्बन्धी। (न०) [भीरु+अण्] भय, डर। (पुं०) [भीः भयंकरो रवो यस्य, भीरव+अण्] शिव के गण [विशेष जो उन्हीं के अवतार माने जाते हैं।—ईश (भरवेश)- (पुं०) विष्णु। शिव।—तर्जक-(पुं०) विष्णु।—यातना-(स्त्री०) वह यातना जो उन प्राणियों को, जो काशी में शरीर त्यागते हैं, मरते समय उनकी शुद्धि के लिये भैरव द्वारा दी जाती है।

भैरवी—(स्त्री०) [भैरव+ङीप्]दुर्गा देवी। एक रागिनी। तीन वर्ष या कम की लड़की जो दुर्गापूजा में दुर्गा देवी की जगह पूजी जाती है।—चक्र-(न०) तांत्रिक (वाममार्गी) साधकों की चक्राकार में बैठी हुई मंडली जो पंच मकार की विधि से भैरवी देवी का पूजन करती है।

भैषज—(न०) [भेषज+अण् (स्वार्थे)] औषध। (पुं०) लावक, लवा पक्षी।

भैषज्य—(न०) [भेषज+ष्य] रोग की चिकित्सा। दवा-दारू। आरोग्य करने की शक्ति।

भैष्मकी—(स्त्री०) [भीष्मक+अण्—ङीप्] रुक्मिणी।

भोक्तृ—(वि०) [√भुज्+तृच्] खाने वाला। भोग करने वाला। कब्जा करने वाला। उपयोग में लाने वाला, बरतने वाला। अनुभव करने वाला। (पुं०) काबिज। उपभोगकर्ता। उपयोगकर्त्ता। पति। राजा। प्रेमी, आशिक।

भोक्तृत्व—(न०) [भोक्तृ+त्व] भोग। अधिकार। अनुभूति।

भोग—(पुं०) [√भुज् + घञ्] भक्षण, आहार करना। स्त्रीसम्भोग। कब्जा, अधिकार। उपयोग। शासन, हुकूमत। प्रयोग, लगाना (जैसे रुपये का ब्याज पर या व्यापार में)। अनुभव। प्रतीति। पाप-पुण्य का फल। उपभोग। उपभोग के लिये पदार्थ। भोज, दावत। किसी देव-विग्रह के लिये नैवेद्य। लाभ, मुनाफा। आय। मालगुजारी। सम्पत्ति। पंक्तिबद्ध सेना। वह मजदूरी या रुपया-पैसा जो किसी वेश्या को उसके साथ उपभोग करने के बदले में दिया जाय। मोड़, घुमाव। देह; 'भोगिभोगासनासीनं' र० १०.७। सर्प का फैला हुआ फन। सर्प।—अर्ह (भोगार्ह) –(वि०) उपभोग योग्य। (न०) सम्पत्ति, धन दौलत।—अर्ह्य (भोगार्ह्य)-(न०) अनाज, अन्न।—आधि (भोगाधि)-(पुं०) गिरवी रखी हुई धरोहर जिसका उपभोग तब तक किया जा

सके जब तक उसका मालिक उसे छुड़ावे नहीं ।—**आवास** (**भोगावास**)–(पुं०) जनानखाना, अंतःपुर ।—**गुच्छ**–(न०) रण्डियों की उजरत, वेश्या-शुल्क ।—**गृह**–(न०) जनानखाना ।—**तृष्णा**–(स्त्री०) सांसारिक पदार्थों के उपभोग की कामना या अभिलाषा ।—**देह**–(पुं०) जीव का सूक्ष्म शरीर या कारणशरीर जिसके द्वारा वह मर्त्यलोक में किये हुए शुभाशुभ कर्मों का फल परलोक में भोगता है ।—**धर**–(पुं०) साँप ।—**पति**–(पुं०) प्रदेश विशेष का शासक ।—**पाल**–(पुं०) साईस ।—**पिशाचिका**–(स्त्री०) भूख ।—**बन्धक**–(पुं०) वह बंधक या रेहन जिसमें रुपया देने वाले को ब्याज के बदले बंधक रखी चीज को काम में लाने का अधिकार हो ।—**भूमि**–(स्त्री०) भारतवर्ष से भिन्न देश (भारतवर्ष कर्मभूमि है) ।—**भृतक**–(पुं०) नौकर, चाकर (केवल खुराक लेकर काम करने वाला) ।—**लाभ**–(पुं०) अनाज का ब्याज, डेढ़िया, सवाई ।—**वस्तु**–(न०) उपभोग वस्तु ।—**व्यूह**–(पुं०) सैन्य-रचना का एक प्रकार, सैनिकों को एक के पीछे एक के क्रम से खड़ा करना ।—**स्थान**–(न०) शरीर । जनानखाना, अंतःपुर ।

भोगवत्—(वि०) [भोग+मतुप्, वत्व] भोगयुक्त ।(पुं०)सर्प । पर्वत ।(न०)नाट्य ।

भोगवती—(स्त्री०) [भोगवत् + ङीप्] पातालगंगा । नागिन । नागों की पुरी जो पाताल में है । द्वितीयातिथि की रात । महाभारत के अनुसार एक नदी का नाम । कार्तिकेय की एक मातृका का नाम ।

भोगिक—(पुं०) [भोगे अश्वभोगे नियुक्तः, भोग+ठन्] साईस ।

भोगिन्—(वि०) [भोग+इनि] खाने वाला । उपयोग करने वाला । अनुभव करने वाला । टेढ़ा-मेढ़ा या मोड़ों वाला । फनों वाला । कामुक । धनी, सम्पत्तिशाली ।(पुं०) सर्प; 'विभूषणोद्भासि पिनद्धभोगि वा' कु० ५.७८ । राजा । इन्द्रियपरायण व्यक्ति । आमोद-प्रमोद में एकान्तरत नर । नाई, नापित । गाँव का मुखिया । अश्लेषा नक्षत्र ।—**इन्द्र** (**भोगीन्द्र**), —**ईश** (**भोगीश**)–(पुं०) शेष जी या वासुकी नाग ।—**कान्त**–(पुं०) पवन, हवा ।—**भुज्**–(पुं०) न्यौला । मयूर, मोर ।—**वल्लभ**–(न०) चन्दन ।

भोगिनी—(स्त्री०) [भोगिन्+ङीप्] राजा की रखैल स्त्री या वेश्या ।

भोग्य—(वि०) [√भुज्+ण्यत्, कुत्व] भोगने योग्य, काम में लाने लायक । जो सह लिया जाय । लाभकारी । (न०) भोगने योग्य वस्तु । सम्पत्ति ।

भोग्या—(स्त्री०) [भोग्य+टाप्]रंडी, वेश्या ।

भोज—(पुं०) [भोजस्य इदम्, भोज+अण्, अणो लुक्]भोजपुर । महाभारत के अनुसार राजा द्रुह्य का एक पुत्र । श्रीकृष्ण का एक सखा । मालवा प्रान्त के अन्तर्गत धारा नगरी के एक प्राचीन एवं प्रसिद्ध प्रजाप्रिय राजा का नाम । विदर्भ के एक राजा का नाम । यथा—'भोजेन दूतो रघवे विसृष्टः ।'–रघुवंश ।—**अधिप** (**भोजाधिप**)–(पुं०) कंस । कर्ण ।—**इन्द्र** (**भोजेन्द्र**)–(पुं०) भोजराज ।—**कट**–(न०) राजकुमार रुक्मिन् द्वारा प्रतिष्ठित नगर का नाम ।—**देव**,—**राज**–(पुं०) राजा भोज ।—**पति**–(पुं०) राजा भोज । कंस ।

भोजक—(वि०) [√भुज्+णिच् + ण्वुल्] भोजन कराने वाला । परोसने वाला । [√भुज्+ण्वुल्] भोजन करने वाला । भोग करने वाला, भोगी । विलासी, ऐयाश । (पुं०) ब्राह्मण का एक भेद ।

भोजन—(न०) [√भुज्+ल्युट्] आहार को मुँह में रख कर खाना, भक्षण करना ।

खाने की सामग्री, खाने का पदार्थ। खाने के लिये भोजन देना। कोई उपभोग्य पदार्थ। सम्पत्ति।—**अधिकार** (**भोजनाधिकार**)-(पुं०) पाकशाला की अध्यक्षता। भोजन-संबन्धी अधिकार।—**आच्छादन** (**भोजनाच्छादन**)-(न०) खाना-कपड़ा।—**काल**-(पुं०),—**वेला**-(स्त्री०),—**समय**—(पुं०) भोजनकाल, खाने का समय।—**त्याग** (पुं०) आहार का त्याग, उपवास।—**भूमि**-(स्त्री०) भोजन का कमरा।—**विशेष**-(पुं०) बढ़िया खाने की सामग्री।—**वृत्ति**-(स्त्री०) भोजन- व्यवसाय। खाद्य।—**व्यग्र**-(वि०) भोजन करने में लगा हुआ।—**व्यय**-(पुं०) खाने-पीने का खर्च।

भोजनीय—(वि०) [√भुज् + अनीयर्] खाने योग्य। (न०) खाने का सामान।

भोजयितृ—(वि०) [भुज्+णिच्+तृच्] खिलाने वाला।

भोज्य—(वि०) [√भुज्+ण्यत्] खाने योग्य। (न०) भोजन। खाद्य पदार्थ।—**काल**-(पुं०) भोजन का समय।—**सम्भव** (पुं०) आमरस, उदरस्थ भोज्य-पदार्थ का अर्ध जीर्ण रस।

भोज्या—(स्त्री०) [भोज+ष्यञ्—चाप्] राजकुमारी, महाराज अज की पत्नी इन्दुमती, 'पूर्वानुशिष्टां निजगाद भोज्याम्' र० ६.२६। राजा भोज की एक रानी।

भोट—(पुं०) भूटान देश। तिब्बत।—**अङ्ग** (**भोटाङ्ग**)-(पुं०) भूटान।

भोटीय—(वि०) [भोट+छ—ईय] तिब्बतीय (जन)।

भोभीरा—(स्त्री०) मूंगा।

भोस्—(अव्य०) [√भा+डोस्] ओ-हो। अरे। आह। सम्बोधनात्मक अव्यय।

भौजङ्ग—(वि०) [स्त्री०—**भौजङ्गी**] [भुजङ्ग+अण्] सर्प-सम्बन्धी। सर्पवत्, सर्प समान। (न०) अश्लेषा नक्षत्र।

भौट—(पुं०) [भोट+अण्] तिब्बत का रहने वाला प्राणी।

भौत—(वि०) [स्त्री०—**भौती**] [भूत+अण्] भूत संबन्धी। जीवित व्यक्तियों से सम्बन्ध युक्त। पैशाचिक। भूताविष्ट (पुं०) भूत-प्रेतों को पूजने वाला व्यक्ति। देवल, देवता की पूजा कर उस चढ़े हुए द्रव्य से निर्वाह करने वाला, पुजारी। भूतयज्ञ, बलिकर्म। (न०) भूत-प्रेतों का समुदाय।

भौतिक—(वि०) [स्त्री०—**भौतिकी**] [भूत+ठक्] जीवधारी सम्बन्धी। जड़ पदार्थ सम्बन्धी। भूत-प्रेत सम्बन्धी। (न०) मोती। तत्त्व। तत्त्वों के गुण। उपद्रव। आधिव्याधि। आँख, नाक आदि इन्द्रियाँ। (पुं०) शिव।—**मठ**-(पुं०) साधु-संन्यासी अथवा छात्रों के रहने का स्थान।—**विद्या**-(स्त्री०) जादूगरी।—**सृष्टि**-(स्त्री०) देव, मनुष्य, तिर्यक्—इन तीन योनियों का समूह।

भौती—(स्त्री०) [भूतानां भूतयोनीनाम्, इयम्, भूत+अण्—ङीप्] रात।

भौत्य—(पुं०) [भूति+ष्यञ्] भूतिमुनि के पुत्र, चौदहवें मनु।

भौम—(वि०) [स्त्री०—**भौमी**] [भूमि+अण्] पृथिवी सम्बन्धी। मिट्टी का बना हुआ। [भौम+अण्] मङ्गल ग्रह सम्बन्धी। (पुं०) मङ्गल ग्रह। नरकासुर। जल। प्रकाश।—**दिन**-(न०),—**वार**-(पुं०)—**वासर**-(पुं०) मंगलवार।—**रत्न**-(न०) मूँगा।

भौमन—(न०) [√भू+मन्, भूमा=ब्रह्म, तस्यापत्यम्, भूमन्+अण्] विश्वकर्मा।

भौमिक, भौम्य—(वि०) [स्त्री०—**भौमिकी**] [भूमि+ठञ्] [भूमि+ष्यञ्] भूमि सम्बन्धी। पृथ्वी पर रहने वाला। (पुं०) भूमि का अधिकारी, जमींदार।

भौरिक—(पुं०) [भूरि सुवर्णम् अधिकरोति, भूरि+ठक्] कनकाध्यक्ष, कोषाध्यक्ष।

भौवादिक—(वि०) [स्त्री०—**भौवादिकी**] [भ्वादि+ठक्] भू श्रेणी की धातु सम्बन्धी। (पुं०) भ्वादिगण में पठित धातु।

√भ्यस्—भ्वा० आत्म० अक० डरना। भ्यसते, भ्यसिष्यते, अभ्यसिष्ट।

√भ्रंश्—दि० पर०, आत्म० अक० गिरना, ठोकर खाना। भटकना। खोना। बच जाना, भाग जाना। क्षीण होना, घटना। लोप होना। भ्रश्यति-ते, भ्रंशिष्यति, अभ्रशत्।

भ्रंश, भ्रंस—(पुं०) [√भ्रंश् (स्)+घञ्] पतन। ह्रास। नाश; 'स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशः' भग० २.६३। ढीलापन। लोप। भटक जाना।

भ्रंशन, भ्रंसन—(वि०) [स्त्री०—**भ्रंशनी, भ्रंसनी**] [√भ्रंश् (स्)+ल्यु] गिरने वाला। (न०) [√भ्रंश् (स्)+ल्युट्] गिरने की क्रिया। वञ्चित होना।

भ्रंशिन्—(वि०) [√भ्रंश्+णिनि] गिरने वाला। जीर्ण होने वाला। भटकने वाला। नष्ट होने वाला।

√भ्रंस्—भ्वा० आत्म० अक० दे० '√भ्रंश्'। भ्रंसते, भ्रंसिष्यते, अभ्रंसत्—अभ्रंसिष्ट।

भ्रकुंस—(पुं०) [भ्रुवा कुंसो भाषणं यस्य, ब० स०, अकारादेश] स्त्रीवेषधारी नट, जनाना रूप धरे हुए नट।

√भ्रक्ष्—भ्वा० उभ० सक० खाना, भक्षण करना। भ्रक्षति-ते, भ्रक्षिष्यति-ते, अभ्रक्षीत्-अभ्रक्षिष्ट।

भ्रज्जन—(न०) [√भ्रस्ज्+ल्युट्] भूनने, सेकने या झकोरने की क्रिया।

√भ्रण्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना। भ्रणति, भ्रणिष्यति, अभ्रणीत्—अभ्राणीत्।

√भ्रम्—भ्वा०, दि० पर० अक० भ्रमण करना। घूमना, कावा काटना। भटक जाना। लड़खड़ाना, सन्देह युक्त होना, डाँवाडोल होना। धुकधुक करना। झिलमिलाना। सक० घेरना। भूलना। भ्रम्यति-भ्रमति, भ्रमिष्यति, अभ्रमीत्। दि० भ्राम्यति, भ्रमिष्यति, अभ्रमत्।

भ्रम—(पुं०) [भ्रम्+घञ्] भ्रमण। कावा काटना। भटकना। भूल, गलती। घबड़ाहट। परेशानी। भँवर। कुम्हार का चाक। चक्की का पाट। खराद। सुस्ती। जलस्रोत, जलपथ। —**आकुल** (**भ्रमाकुल**)—(वि०) घबड़ाया हुआ। —**आसक्त** [**भ्रमासक्त**]—(पुं०) सिकलीगर, शस्त्रमार्जक।

भ्रमण—(न०) [√भ्रम्+ल्युट्] घूमना, फिरना। चक्कर। भटकना। चञ्चलता। भूल, गलती। घुमरी, चकाचौंध।

भ्रमणी—(स्त्री०) [भ्रमण+ङीप्] मनोविनोद के लिये चक्कर खाने का साधन-विशेष। जोंक, जलौका।

भ्रमत्—(वि०) [√भ्रम्+शतृ] घूमता हुआ। —**कुटी**—(स्त्री०) बाँस आदि की खपच्चियों से बना छाता।

भ्रमर—(पुं०) [√भ्रम्+करन्] भौंरा। कामुक जन। कुम्हार का चाक। (न०) घुमरी, चक्कर। —**अतिथि** (**भ्रमरातिथि**)—(पुं०) चम्पा का वृक्ष। —**अभिलीन** (**भ्रमराभिलीन**)—(वि०) जिसमें मधुमक्खी या भ्रमर लपटे हों। —**अलक** (**भ्रमरालक**)—(पुं०) माथे पर की अलक या लट। —**आनन्द** (**भ्रमरानन्द**)—बकुल वृक्ष, मौलसिरी का पेड़। —**इष्ट** (**भ्रमरेष्ट**)—(पुं०) स्योनाक वृक्ष। —**उत्सवा** (**भ्रमरोत्सवा**)—(स्त्री०) माधवी लता। —**करण्डक**—(पुं०) कंडी जिसमें भौंरे भरे रहते हैं, (चोर लोग अपने साथ इसे रखते हैं और जिस घर में चोरी करने जाते हैं उसमें यदि दीपक जलता रहता है तो भौंरों को छोड़ देते हैं। वे जाकर दीपक बुझा देते हैं।)—**कीट**—(पुं०) बर्रं विशेष। —**निकर**—(पुं०) भौंरों का

झुंड । —प्रिय-(पुं०) धाराकदम्ब । —बाधा-(स्त्री०) भ्रमर या मधुमक्षिका द्वारा विघ्न। —मण्डल-(न०) भ्रमर या मधुमक्षिकाओं का दल । —हस्त-(पुं०) नाटक के चौदह प्रकार के हस्तविन्यासों में से एक।

भ्रमरक—(पुं०) [भ्रमर + कन्] भ्रमर। भौंर। (न०, पुं०) माथे पर लटकने वाली लट या अलक, जुल्फ। क्रीड़ा के लिये गेंद। लट्टू।

भ्रमरी—(स्त्री०) [भ्रमर+ङीप्] मादा भौंरा। जतुका लता। पार्वती।

भ्रमि—(स्त्री०) [√भ्रम्+इ] चक्कर खाना, घूमना; 'भ्रमिषु कृतपुटान्तर्मण्डलावृत्तिचक्षुः' उत्तर० ३·१९। कुम्हार का चाक। खरादी की खराद। भँवर। हवा का चक्कर, बवण्डर। गोलाकार सैन्य-व्यूह। भूल, गलती।

भ्रशिमन्—(पुं०) [भृशस्य भावः, भृश+इमनिच्, ऋतो रः] उग्रता, प्रचण्डता। आधिक्य।

भ्रष्ट—(वि०) [√भ्रंश्+क्त] गिरा हुआ, पतित। भूला, भटका। क्षीण। बरबाद। दुराचारी, बदचलन। —**अधिकार** (**भ्रष्टाधिकार**)-(वि०) बरखास्त किया हुआ, किसी पद या अधिकार से निकाला हुआ। —**क्रिय**-(वि०) कर्म को छोड़े हुए। —**योग**-(पुं०) योग मार्ग से च्युत। धर्मच्युत, धर्म से डिगा हुआ।

√**भ्रस्ज्**—तु० उभ० सक० भूनना, सेंकना। भृज्जति—ते, भ्रक्ष्यति—ते, भर्क्ष्यति—ते, अभार्क्षीत्—अभ्राक्षीत्, अभर्ष्ट—अभ्रष्ट।

√**भ्राज्**—भ्वा० आत्म० अक० चमकना, दमकना। भ्राजते, भ्राजिष्यते, अभ्राजिष्ट।

भ्राज—(न०) [√भ्राज्+क] एक प्रकार का साम जो गवामयनसत्र में विषुव नामक प्रधान दिन में गाया जाता था। (पुं०) सप्त सूर्यों में से एक का नाम।

भ्राजक—(वि०) [स्त्री० — **भ्राजिका**] [√भ्राज्+ण्वुल्] चमकने वाला, दीप्तिमान्। (न०) त्वचा में रहने वाला पित्त।

भ्राजथु—(पुं०) [√भ्राज्+अथुच्] आभा, चमक। सौन्दर्य।

भ्राजिन्—(वि०) [√भ्राज्+णिनि] चमकने वाला।

भ्राजिष्णु—(वि०) [√भ्राज् + इष्णुच्] चमकने वाला। (पुं०) विष्णु। शिव।

भ्रातृ—(पुं०) [√भ्राज्+तृन्, नि० साधुः] भाई। सगा या सहोदर भाई। समीपी सम्बन्धी। साधारणतः सम्बोधनात्मक शब्द। यथा 'भ्रातः! कष्टमहो' (भाई बड़ा कष्ट है)। —**गन्धि, गन्धिक**-(वि०) नाममात्र का भाई। —**ज**-(पुं०) भतीजा। —**जा**-(स्त्री०) भतीजी। —**जाया** (स्त्री०)-[=**भ्रातुर्जाया** भी रूप होता है।] भौजाई, भाई की स्त्री। —**दत्त**-(न०) वह सम्पत्ति जो भाई अपनी बहिन को विवाह के समय दे। —**द्वितीया**-(स्त्री०) दिवाली के बाद की द्वितीया, भैयादूज। —**पुत्र**-(पुं०) [**भ्रातुष्पुत्रः** भी रूप होता है।] भाई का बेटा, भतीजा। —**भाव**-(पुं०) भाई का-सा स्नेह, भाईचारा। —**वधू**-(स्त्री०) भाई की पत्नी, भौजाई। —**श्वशुर**-(पुं०) पति का बड़ा भाई, जेठ, भैंसुर।

भ्रातृक—(वि०) [भ्रातृ+ठन्—क] भाई से मिला हुआ। भाई सम्बन्धी।

भ्रातृव्य—(पुं०) [भ्रातुः अपत्यम्, भ्रातृ+व्यत्] भतीजा, भाई का लड़का। [भ्रातृ+व्यन्] शत्रु, दुश्मन।

भ्रात्रीय—(पुं०) [भ्रातृ+छ] भाई का पुत्र, भतीजा।

भ्रात्र्य—(न०) [भ्रातृ+ष्यञ्] भाईचारा, भ्रातृभाव।

भ्रान्त—[भ्रम्+क्त, दीर्घ] भ्रमण किये हुए, घूमा-फिरा हुआ। चक्कर खाया हुआ। भूला

हुआ, भटका हुआ। परेशान। घबड़ाया हुआ। (न०) भ्रमण; 'वरं पर्वतदुर्गेषु भ्रान्तं वनचरैः सह' भर्तृ० २.१४। भूल, गलती। (पुं०) मतवाला हाथी। धतूरा।

भ्रान्ति—(स्त्री०) [√भ्रम्+क्तिन्] भ्रमण। चक्कर काटना। घूम कर आना। गलती, भूल। परेशानी, घबड़ाहट। सन्देह, संशय। **—कर**-(वि०) भ्रम में डालने वाला। **—नाशन**-(पुं०) शिव जी। **—हर**-(वि०) भ्रम दूर करने वाला।

भ्रान्तिमत्—(वि०) [भ्रान्ति+मतुप्] भ्रमयुक्त। (पुं०) काव्यालङ्कार विशेष, जिसमें किसी वस्तु को, दूसरी वस्तु के साथ उसकी समानता देख, भ्रम से उसे दूसरी वस्तु ही समझ लेना निरूपित होता है।

भ्राम—(वि०) [√भ्रम्+ण?] भ्रमयुक्त। घूमने वाला। (पुं०) [√भ्रम्+घञ्?] इधर-उधर का भ्रमण। भ्रम, गलती।

भ्रामक—(वि०) [स्त्री०—**भ्रामिका**] [√भ्रम्+णिच्+ण्वुल्] घुमाने वाला। परेशान करने वाला। बहकाने वाला, चालबाज। (पुं०) सूरजमुखी फूल। चुम्बक पत्थर। छली, धूर्त। गीदड़, शृगाल।

भ्रामर—(वि०) [स्त्री०—**भ्रामरी**] [भ्रमर+अण् वा अञ्] भ्रमर सम्बन्धी। (न०, पुं०) चुम्बक पत्थर। (न०) चक्कर काटना। घुमरी, चक्कर। मिरगी। शहद। स्त्री-सम्भोग का आसन विशेष।

भ्रामरी—(स्त्री०) [भ्रमरस्य इयम् भ्रमर+अण् भ्रामरः भ्रमरवत् वर्णः सः अस्याः अस्ति, भ्रामर+अच्—ङीष्] दुर्गा देवी। प्रदक्षिणा, परिक्रमा।

√भ्राश्—भ्वा० आत्म० अक० चमकना। भ्राश्यते—भ्राशते, भ्राशिष्यते, अभ्राशिष्ट।

भ्राष्ट्र—(न०, पुं०) [√भ्रस्ज्+ष्ट्रन् या भ्रष्ट्र+अण्] दाना भूनने का पात्र, कड़ाही। प्रकाश। आकाश।

भ्राष्ट्रमिन्ध—(वि०) [भ्राष्ट्र√इन्ध्+खश्, मुम्] भड़भूँजा, भूँजवा।

√भ्री—क्र्या० पर० अक० डरना। सक० भरना। भ्रिणाति, भ्रेष्यति, अभ्रैषीत्।

भ्रुकुंश, भ्रूकुंश, भ्रुकुंस, भ्रूकुंस—(पुं०) [भ्रुवा कुंशो (सो) भाषणं यस्य, वैकल्पिक ह्रस्व] अभिनयकर्त्ता पुरुष जो स्त्री के वेष में हो।

भ्रुकुटी, भ्रूकुटी—(स्त्री०) [भ्रुवः कुटिः कौटिल्यम्, ष० त०, ह्रस्वता] [भ्रुकुटि—ङीष्] भ्रू-भंग। भौंह।

भ्रू—(स्त्री०) [भ्राम्यति नेत्रोपरि, √भ्रम्+डू] भौं; 'कान्तिर्भ्रुवोरायतलेखयोर्या' कु० १.४७। **—कुटि, —कुटी**-(स्त्री०) [ष० त०, ह्रस्वाभाव] भ्रू-भंग, भौं टेढ़ी करना। **—क्षेप**-(पुं०) भौं टेढ़ी करना। **—भङ्ग, —भेद**-(पुं०) भौं टेढ़ी करना, तेवरी चढ़ाना। **—भेदिन्**-(वि०) तेवरी चढ़ाने वाला। **—मध्य**-(न०) दोनों भौंवों के बीच का स्थान। **—विकार, —विक्षेप**-(पुं०), **—विक्रिया**-(स्त्री०) त्योरी बदलना। **—विलास**-(पुं०) भौंवों का मोहक संचालन, भंगी।

√भ्रूण्—चु० आत्म० सक० आशा करना। शंका करना। भ्रूणयते।

भ्रूण—(पुं०) [√भ्रूण्+घञ्] स्त्री का गर्भ। शिशु की उस समय की अवस्था जब वह गर्भ में रहता है। **—घ्न, —हन्**-(वि०) भ्रूणहत्या करने वाला। **—हत्या**-(स्त्री०) गर्भपात द्वारा गर्भस्थ शिशु की हत्या करना।

√भ्रेज्—भ्वा० आत्म० अक० चमकना। भ्रेजते, भ्रेजिष्यते, अभ्रेजिष्ट।

√भ्रेष्, √भ्लेष्—भ्वा० उभ० सक० जाना। अक० लड़खड़ाना। डरना। अप्रसन्न होना। भ्रे (भ्ले) षति—ते, भ्रे (भ्ले) षिष्यति—ते, अभ्रे (भ्ले) षीत्—अभ्रे-(भ्ले) षिष्ट।

भ्रेष—(पुं०) [√भ्रेष्+घञ्] चलना, गमन। फिसलना, लड़खड़ाना। नाश। हानि। पाप। भंग करना, तोड़ना। अलग करना, जुदा करना। डर।

भ्रौणहत्य—(न०) [भ्रूणहत्या + अण्] गर्भ गिराकर या अन्य किसी प्रकार गर्भस्थ शिशु को मार डालना।

√म्लक्ष्—भ्वा० उभ० सक० खाना। म्लक्षति —ते, म्लक्षिष्यति—ते, अम्लक्षीत् —अम्लक्षिष्ट।

√म्लाश्—भ्वा० आत्म० अक० चमकना। म्लाशयते—म्लाशते, म्लाशिष्यते, अम्लाशिष्ट।

म

म—संस्कृत वर्णमाला का पचीसवाँ व्यञ्जन और पवर्ग का अन्तिम वर्ण। इसका उच्चारण होंठ और नासिका द्वारा होता है। जिह्वा के अग्रभाग का दोनों होठों से स्पर्श होने पर इसका उच्चारण होता है। यह स्पर्श और अनुनासिक वर्ण है। इसके उच्चारण में संवार, नादघोष और अल्पप्राण प्रयत्न लगाये जाते हैं। प, फ, ब और भ इसके सवर्ण कहे जाते हैं। (न०) [√मा+क] जल। सुख। कुशलता। (पुं०) समय, काल। विष, ज़हर। ऐन्द्रजालिक चुटकुला। चन्द्रमा। ब्रह्मा। विष्णु। शिव। यम।

मकर—(पुं०) [√कृ+अच् —करः मनुष्याणां करः हिंसकः, वा मुखं वा मं विषं किरति, नख वा म√कृ+ट, पृषो० साधुः] मगर। घड़ियाल; "झषाणाम् मकरश्चास्मि" भग० १०.३१। मकर राशि। मकराकृत व्यूह। मकराकृत कुण्डल। मकराकार मुद्रा। कुबेर की नव निधियों में से एक निधि का नाम।—**अङ्क** (**मकराङ्क**)—(पुं०) कामदेव। समुद्र।—**अश्व** (**मकराश्व**)—(पुं०) वरुण।—**आकर** (**मकराकर**), —**आलय** (**मकरालय**),— **आवास** (**मकरावास**)—(पुं०) समुद्र।—**कुण्डल**—(न०) मकराकृत कुण्डल।—**केतन**,—**केतु**—(पुं०) कामदेव की उपाधियाँ।—**ध्वज**—(पुं०) कामदेव। आयुर्वेद-प्रसिद्ध एक रस, रससिंदूर।—**व्यूह**—(पुं०) मकर के आकार में की हुई सैन्यरचना।—**संक्रमण**—(न०) सूर्य का मकरराशि पर जाना।—**संक्रान्ति**—(स्त्री०) माघ मास की संक्रान्ति जिस दिन सूर्य उत्तरायण होते हैं।—**सप्तमी**—(स्त्री०) माघ-शुक्ला ७मी।

मकरन्द—(पुं०) [मकरमपि मन्दति बध्नाति धारयति वा, मकर√मन्द्+अण्, शका० पररूप] फूलों का रस; 'मकरन्दतुन्दिलानामरविन्दानाम्' भा० १.६। कुन्द पुष्प। कोयल। भ्रमर। आम का वृक्ष विशेष जिसमें सुगंध होती है। एक वृत्त। (न०) किंजल्क, फूल का केसर।

मकरन्दवत्—(वि०) [मकरन्द+मतुप्, वत्व] मकरन्द से पूर्ण।

मकरन्दवती—(स्त्री०) [मकरन्दवत्+ङीप्] पाटला लता।

मकरिन्—(पुं०) [मकराः सन्ति यस्मिन्, मकर+इनि] समुद्र की उपाधि।

मकरी—(स्त्री०) [मकर+ङीप्] मादा घड़ियाल।—**पत्र**—(न०),—**लेखा**—(स्त्री०) लक्ष्मी जी के मुख का चिह्न विशेष।—**प्रस्थ**—(पुं०) एक नगर।

मकुट—(न०) [√मङ्क्+उट, आगमशास्त्रस्य अनित्यत्वात् न नुम्] ताज, मुकुट।

मकुति—(पुं०) [√मङ्क् + उति, पृषो० साधुः] राजा की ओर से शूद्रों के लिये आदेश, शूद्रशासन।

मकुर—(पुं०) [√मङ्क्+उरच्] दर्पण, आईना। बकुल वृक्ष। कली। अरबी चमेली। कुम्हार के चाक को घुमाने का डंडा।

मकुल—(पुं०) [√मङ्क्+उलच्] बकुल वृक्ष। कली।

मकुष्टक, मकुष्ठ—(पुं०) [√मङ्क्+उ, पृषो० नलोप—मकुं भूषां स्तकति प्रतिहन्ति, मकु√स्तक्+अच्] [मकु√स्था + क] मोठ नामक अन्न, वनमुंग।

मकूलक—(पुं०) [√मङ्क्+ऊलच्+कन्, पृषो० नलोप] कली। दन्ती वृक्ष।

√**मक्क्**—भ्वा० आत्म० सक० जाना। मक्कते, मक्किष्यते, अमक्किष्ट।

मक्कुल—(पुं०) [√मक्क्+उलच्] धूप, लोबान। गेरू।

मक्कोल—(पुं०) [√मक्क्+ओलच्] खड़िया मिट्टी।

√**मक्ष्**—भ्वा० पर० सक० इकट्ठा करना, जमा करना। अक० कुपित होना। मक्षति, मक्षिष्यति, अमक्षीत्।

मक्ष—(पुं०) [√मक्ष्+घञ्] कोप, क्रोध। दम्भ, पाखण्ड। समूह।—**वीर्य**—(पुं०) पियाल वृक्ष।

मक्षिका, मक्षीका—(स्त्री०) [मशति शब्दायते, √मश्+सिकन्—टाप्] [=मक्षिका, पृषो० दीर्घः] मक्खी। शहद की मक्खी।—**मल**—(न०) मोम।

√**मख्**—भ्वा० पर० सक० जाना। रेंगना मखति, मखिष्यति, अमाखीत्—अमखीत्।

मख—(पुं०) [√मख्+घञ् वा घ (संज्ञापूर्वक-विधेः अनित्यत्वात् न वृद्धिः)] यज्ञ, याग; 'अकिञ्चनत्वम्मखजं व्यनक्ति' र० ५.१६।—**अग्नि** (**मखाग्नि**), —**अनल** (**मखानल**)—(पुं०) यज्ञीयाग्नि, यज्ञ की आग।—**असुहृद्** (**मखासुहृद्**)—(पुं०) शिव जी का नामान्तर।—**क्रिया**—(स्त्री०) यज्ञीय कर्म विशेष।—**त्रातृ**—(पुं०) श्रीराम जी की उपाधि। (इन्होंने विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा की थी)।—**द्विष्**—(पुं०) राक्षस।—**द्वेषिन्**—(पुं०) शिव जी की उपाधि (इन्होंने दक्ष का यज्ञ विनष्ट किया था)।—**हन्**—(न०) इन्द्र। शिव।

√**मगध्**—कं० पर० सक० घेरना। लपेटना। मगध्यति।

मगध—(पुं०) [√मगध्+अच्, वा √मङ्ग्+अच्, पृषो० साधुः, मगं दोषं दधाति, मग√धा+क] बिहार के दक्षिणी भाग का प्राचीन नाम, कीकट देश; 'अस्ति मगधेषु पुष्पपुरी नाम नगरी' दश०। [मगध+अण्—लुक्] मगध देश के अधिवासी। [मगध+अच्] बड़ी पीपल।—**अधिप** (**मगधाधिप**), —**ईश्वर** (**मगधेश्वर**)—(पुं०) मगध-नरेश। जरासंध।—**उद्भवा** (**मगधोद्भवा**)—(स्त्री०) बड़ी पीपल।—**पुरी**—(स्त्री०) मगध नाम की नगरी।—**लिपि**—(स्त्री०) मागधी लिपि। लिखावट।

मग्न—(वि०) [√मस्ज्+क्त] निमज्जित, डूबा हुआ। लवलीन, लिप्त, लीन।

मघ—(न०) [√मङ्घ्+अच्, पृषो० साधुः] एक प्रकार का पुष्प। धन। पुरस्कार। (पुं०) पुराणों के अनुसार एक द्वीप का नाम, जिसमें म्लेच्छ रहते हैं। देश-विशेष। एक दवा का नाम। हर्ष, आनन्द। दसवाँ मघा नक्षत्र।

मघवत्—(पुं०) [मघवन्—तृ अन्तादेशः, ऋकारस्य इत्संज्ञा] इन्द्र का नाम।

मघवन्—(पुं०) [√मह्+कनि, हुगागम, हस्य घः] इन्द्र का नाम; 'क्रिया दधानो मघवा विघातम्'। उल्लू, पेचक। व्यास जी का नाम।

मघा—(स्त्री०) [√मह्+घ, हस्य घत्वम्, टाप्] दसवें नक्षत्र का नाम।—**त्रयोदशी**—(स्त्री०) भाद्र-कृष्णा त्रयोदशी।—**भव**,—**भू**—(पुं०) शुक्रग्रह।

√**मङ्क्**—भ्वा० आत्म० सक० जाना। सजाना, शृंगार करना। मङ्कते, मङ्किष्यते, अमङ्किष्ट।

मङ्किल—(पुं०) [√मङ्क्+इलच्] दावानल।

मङ्कुर—(पुं०) [√मङ्क्+उरच्] दर्पण, आईना।

मङ्क्षण—(न०) [√मङ्क्+ल्युट्, पृषो० कस्य क्षत्वम्] टाँगों की रक्षा के लिये चर्म-निर्मित कवच ।

मङ्क्षु—(अव्य०) [√मङ्क्+उन्, पृषो० सस्य षत्वम्] तुरन्त, फौरन । शीघ्रता से; 'मङ्क्षूदपाति परितः पटलैरलीनाम्' शि० ५.३७ । अतिशय, अत्यधिक । वस्तुतः ।

√मङ्ख्—भ्वा० पर० सक० जाना । मङ्खति, मङ्खिष्यति, अमङ्खीत् ।

मङ्ख—(पु०) [√मङ्ख्+अच्] राजा का बन्दीजन, भाट । मरहम ।

√मङ्ग्—भ्वा० पर० सक० जाना । मङ्गति, मङ्गिष्यति, अमङ्गीत् ।

मङ्ग—(पु०) [√मङ्ग्+अच्] नाव का अगला भाग । जहाज का एक बाजू ।

मङ्गल—(वि०) [मङ्गति हितार्थं सर्पति वा मङ्गति दुरदृष्टम् अनेन अस्मात् वा, √मङ्ग्+अलच्] शुभ । समृद्धिमान् । बहादुर, वीर । (न०) शुभत्व । आनन्द । सौभाग्य । कुशल । शुभ शकुन । आशीर्वाद, । शुभ पदार्थ, मंगलकारी वस्तु । विवाहादि मङ्गलोत्सव । शुभावसर, शुभ घटना । प्राचीन रीति-रस्म । हल्दी । (पु०) मंगल ग्रह ।—**अक्षत** (**मङ्गलाक्षत**)-(पु० बहु०) वे अक्षत या चावल जो आशीर्वाद देते समय ब्राह्मण यजमान के ऊपर छोड़ते हैं ।—**अगुरु** (**मङ्गलागुरु**)-(न०) एक तरह का अगर ।—**अयन** (**मङ्गलायन**)-(न०) आनन्द या समृद्धि का मार्ग ।—**अष्टक** (**मङ्गलाष्टक**)-(न०) आशीर्वादात्मक श्लोक जो विवाह कराने वाला पुरोहित या पाधा वर-वधू की मङ्गल-कामना के लिये विवाह के समय पढ़ता है ।—**आह्निक**(**मङ्गलाह्निक**)-(न०) वह धार्मिक कृत्य जो मङ्गल-कामना के लिये नित्य किया जाय ।—**आचरण** (**मङ्गलाचरण**)-(न०) वह श्लोक या पद्य जो किसी शुभ कार्य के आरम्भ में कार्य की निर्विघ्न समाप्ति के लिये पढ़ा या लिखा जाय ।—**आचार** (**मङ्गलाचार**)-(पु०) गीतवाद्यादि शुभ कृत्य । आशीर्वादोच्चारण ।—**आतोद्य** (**मङ्गलातोद्य**)-(न०) वह ढोल जो किसी उत्सवावसर पर बजाया जाय ।—**आदेशवृत्ति** (**मङ्गलादेशवृत्ति**)- (पु०) भाग्य में लिखा शुभाशुभ फल बताने वाला, ज्योतिषी ।—**आरम्भ** (**मङ्गलारम्भ**)-(पु०) गणेश जी ।—**आलय** (**मङ्गलालय**), —**आवास** (**मङ्गलावास**)-(पु०) मंगलमय परमेश्वर । देवालय, मंदिर ।—**कारक**, —**कारिन्**-(वि०) शुभ, कल्याणकारक ।—**क्षौम**-(न०) वह रेशमी वस्त्र जो किसी उत्सव के अवसर पर पहिनाया जाय ।—**ग्रह**-(पुं०) शुभ ग्रह । मंगल नामक ग्रह ।—**च्छाय**-(पु०) बरगद । पाकड़ ।—**तूर्य**,—**वाद्य**-(न०) तुरही या ढोल जो किसी उत्सव या मंगल कृत्य होते समय बजाया जाय ।—**देवता**-(स्त्री०) शुभ या मङ्गल देवता ।—**पाठक**-(पुं०) भाट, बंदीजन, मागध ।—**प्रतिसर**,—**सूत्र**-(न०) वह डोरा जो किसी देवता के प्रसाद रूप में किसी शुभ अवसर पर कलाई में बाँधा जाता है । वह डोरा जो सौभाग्यवती स्त्री अपने गले में तब तक बाँधती है जब तक उसका पति जीवित रहता है । तावीज या बाजूबंद की डोरी ।—**प्रदा**-(स्त्री०) हल्दी । शमी का वृक्ष ।—**प्रस्थ**-(पुं०) एक पर्वत ।—**वचस्** -(न०), —**वाद**-(पुं०) आशीर्वचन, आशीर्वाद ।—**वार**,—**वासर**-(पुं०) मङ्गल का दिन ।—**स्नान**-(न०) वह स्नान जो मङ्गल की कामना से अथवा किसी शुभ अवसर पर किया जाता है ।

मङ्गला—(स्त्री०) [मङ्गलम् अस्ति अस्याः, मङ्गल+अच्—टाप्] पार्वती । पतिव्रता स्त्री । सफेद दूब । नीली दूब । हल्दी ।

मङ्गलीय—(वि०) [मङ्गल + छ] शुभ, सौभाग्यशाली ।

मङ्गल्य—(वि०) [मङ्गल+यत्] शुभ । प्रसन्नकारक । सुन्दर । पवित्र; 'त्रिलोकी-मङ्गल्याम्' उत्त० ४.१० । (न०) अनेक तीर्थ-स्थानों से लाया हुआ जल जो राज्याभिषेक के काम में आता है । सुवर्ण । चन्दन-काष्ठ । सिंदूर । दही । (पुं०) वट वृक्ष । नारियल का वृक्ष । मसूर की दाल ।—**कुसुमा**—(स्त्री०) शंखपुष्पी ।

मङ्गल्यक—(पुं०) [मङ्गल्य+कन्] मसूर ।

मङ्गल्या—(स्त्री०) [मङ्गल्य+टाप्] एक प्रकार का अगरु जिससे चमेली के फूल जैसी महक निकलती है । दुर्गा का नाम । चन्दन विशेष । गन्ध द्रव्य विशेष । एक प्रकार का पीला रोगन ।

√मङ्घ्—भ्वा० पर० सक० सजाना, शृंगार करना । मङ्घति, मङ्घिष्यति, अमङ्घीत् । भ्वा० आत्म० सक० छलना, धोखा देना । आरम्भ करना । कलङ्क लगाना । फटकारना । चलना । जाना । शीघ्रतापूर्वक चलना । रवाना होना । मङ्घते, मङ्घिष्यते, अमङ्घिष्ट ।

√मच्—भ्वा० आत्म० अक० दुष्टता करना, दुष्ट होना । शेखी मारना, अभिमान करना । सक० धोखा देना । मचते, मचिष्यते, अमचिष्ट ।

मचर्चिका—(स्त्री०) [मं शम्भुं चर्चति, म √चर्च्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] संज्ञा के अंत में लगाया जाने वाला शब्द विशेष, जिसके अर्थ होते हैं:—सर्वश्रेष्ठ, सर्वोत्तम, अपनी जाति में सबसे अच्छा; जैसे गोमचर्चिका अर्थात् सर्वश्रेष्ठ गौ ।

मच्छ—(पुं०) [√मद्+क्विप्, √शी+ड] मत्स्य ।

मज्जन्—(पुं०) [√मस्ज् + कनिन्, नि० साधुः] नली की हड्डी के भीतर का गूदा जो बहुत कोमल एवं चिकना हुआ करता है । पौधे के बीच की नस ।—**कृत**–(न०) हड्डी ।—**समुद्भव**–(पुं०) वीर्य ।

मज्जन—(न०) [√मस्ज् +ल्युट्] डूबना, गोता मारना । नहाना; 'तासाम् नृपो मज्जनरागदर्शी' र० १६.५७ । मज्जा ।

मज्जा—(न०) [√मस्ज्+अच् — टाप्] हड्डी के भीतर का गूदा । माँस का गूदा । पौधे के बीच की नस ।—**ज**–(न०) वीर्य ।—**रजस्**–(न०) नरक-विशेष ।—**रस**–(पुं०) वीर्य, धातु ।—**सार**–(पुं०) कायफल ।

√मञ्च्—भ्वा० आत्म० सक० धारण करना । पूजन करना । ऊँचा करना या होना । मञ्चते, मञ्चिष्यते, अमञ्चिष्ट ।

मञ्च—(पुं०) [मञ्चते उच्चीभवति, √मञ्च् +घञ्] खाट । पलंग । उच्च स्थान । प्रतिष्ठा का स्थान । मचान । रंग-मंच । सिंहासन । व्यासगद्दी ।

मञ्चक—(न०) [मञ्च+कन्] खाट । सिंहासन । ऊँचा बना हुआ चबूतरा ।—**आश्रय** (**मञ्चकाश्रय**)–(पुं०) खटकीरा या खटमल ।

मञ्चिका—(स्त्री०) [मञ्चक + टाप्, इत्व] मचिया । कुर्सी ।

मञ्जर—(न०) [मञ्जयति, दीप्यते, √मञ्ज् +अर] फूलों का झब्बा । मोती । तिलक वृक्ष ।

मञ्जरि, मञ्जरी—(स्त्री०) [मञ्ज√ऋ +इन्, शक० पररूप, पक्षे ङीप्] छोटे पौधे या लता आदि का नया निकला हुआ कल्ला, कोंपल । वृक्ष विशेष में फूलों या फलों के स्थान में एक सींके में लगे हुए अनेक दानों का समूह; 'निचये: सहकार मञ्जरीः' कु० ४.३८ । समानान्तर रेखा या पंक्ति । मोती । लता । तुलसी । तिलक वृक्ष ।—**नम्र**–(पुं०) बेंत ।

मञ्जरित—(वि०) [मञ्जरी + इतच्] मंजरियों से लदा हुआ। फूलों से सम्पन्न। कलियों से युक्त।

मञ्जा—(स्त्री०) [√मञ्ज् + अच्—टाप्] बकरी। मंजरी। बेल।

मञ्जि, मञ्जी—(स्त्री०) [√मञ्ज् + इन्, पक्षे ङीप्] मंजरी। लता।—**फला**—(स्त्री०) केले का वृक्ष।

मञ्जिका—(स्त्री०) [√मञ्ज् + ण्वुल्—टाप्, इत्व] वेश्या, रंडी।

मञ्जिमन्—(पुं०) [मञ्जु + इमनिच्] सौंदर्य, मनोहरता।

मञ्जिष्ठा—(स्त्री०) [अतिशयेन मञ्जिमती, मञ्जिमत्+इष्ठन्, मतुपो लुक्—टाप्] मजीठ।—**मेह**—(पुं०) प्रमेह रोग विशेष।—**राग**—(पुं०) मजीठ का रंग। (आलं०) ऐसा पक्का प्रेम या अनुराग जैसा कि मजीठ का पक्का रंग होता है, स्थायी या टिकाऊ प्रेम या अनुराग।

मञ्जीर—(पुं० न०) [मञ्जति मधुरं शब्दायते, √मञ्ज्+ईरन्] नूपुर, बिछिया; 'सिञ्जानमञ्जुमञ्जीरम्प्रविवेश निकेतनं' गीत० ११। (न०) वह खंभा जिसमें मथानी या रई की रस्सी लपेटी जाती है।

मञ्जील—(पुं०) वह गाँव जिसमें मुख्य रूप से धोबी रहते हों।

मञ्जु—(वि०) [√मञ्ज्+उ] मनोज्ञ, सुंदर। मधुर।—**केशिन्**—(पुं०) कृष्ण।—**गमन**—(वि०) जिसकी चाल सुन्दर हो।—**गमना**—(स्त्री०) हंसी, मादा हंस। (वि० स्त्री०) मनोहर गतिवाली।—**गर्त**—(पुं०) नेपाल देश का प्राचीन नाम।—**गिर्**—(वि०) वह जिसकी मधुर वाणी हो।—**गुञ्ज**—(पुं०) मधुर गुञ्जार।—**घोष**—(वि०) मधुर स्वर।—**नाशी**—(स्त्री०) सुन्दरी स्त्री। दुर्गा। शची, इन्द्राणी।—**पाठक**—(पुं०) तोता, सुग्गा।—**प्राण**—(पुं०) ब्रह्मा।—**भाषिन्**,—**वाच्**—(वि०) मधुरभाषी।—**वक्त्र**—(वि०) सुन्दर मुख वाला, खूबसूरत।—**स्वन**,—**स्वर**—(वि०) मधुर स्वर करने वाला।

मञ्जुल—(वि०) [मञ्जु+लच्] मनोहर, सुन्दर। सुरीला (कण्ठ)। (न०) कुंज। जल का सोता। कूप। नदी या जलाशय का पाट। (पुं०) जलकुक्कुट, जल का मुर्गा।

मञ्जूषा—(स्त्री०) [√मञ्ज् + ऊषन्—टाप्] पेटी। मजीठ। पत्थर। बड़ा पिटारा या टोकरा।

√मट्—भ्वा० पर० अक० निर्बल होना। नष्ट होना। मटति, मटिष्यति, अमटीत्—अमाटीत्।

मटची—(स्त्री०) [√मट्+अप्, मट√चि+डि, मटचि—ङीष्] लाल रंग की एक छोटी चिड़िया। ओला।

मटस्फटि—(पुं०) [मटम् अवसादं स्फटति निराकरोति, मट√स्फट्+इ] दर्पारंभ, अभिमान का आरम्भ।

मट्टुक—(न०) छत की मुंडेर।

√मठ्—भ्वा० पर० अक० रहना, बसना। सक० जाना। पीसना। मठति, मठिष्यति, अमठीत्—अमाठीत्।

मठ—(न०, पुं०) [मठन्ति वसन्ति अत्र, √मठ्+क] वह मकान जिसमें किसी महन्त के अधीन अन्य बहुत से साधु रह सकें। छात्रालय, छात्रावास। विद्यालय, विद्यामन्दिर। मन्दिर। बैलगाड़ी।—**आयतन** (**मठायतन**)—(न०) मठ, अखाड़ा। विद्यामन्दिर, विद्यालय। संघाराम।

मठर—(वि०) [√मन्+अर, ठ अन्तादेश] जो मद्य पीकर मतवाला हुआ हो।

मठिका—(स्त्री०) [मठ+कन्—टाप्, इत्व] दे० 'मठी'।

मठी—(स्त्री०) [मठ+ङीप्] छोटा मठ या अखाड़ा ।

मड्डु, मड्डुक—(पुं०) [मज्जन्ति अन्ये शब्दा अत्र, √मस्ज्+डु, पृषो० साधुः] [मड्डु+कन्] ढोल । डमरू ।

√मण्—भ्वा० पर० अक० अव्यक्त शब्द करना, बड़बड़ाना । मणति, मणिष्यति, अमणीत्–अमाणीत् ।

मणि—(पुं०, स्त्री०) [√मण्+इन्, स्त्रीत्व-पक्षे वा ङीष् तेन मणी इत्यपि] बहुमूल्य रत्न, जवाहर; 'मणौ वज्रसमुत्कीर्णे सूत्र-स्येवास्ति मे गतिः' १.४ । आभूषण । कोई भी वस्तु जो अपनी जाति में श्रेष्ठ हो । चुम्बक पत्थर । कलाई । घड़ा । भगाङ्कुर, योनिलिङ्ग, योनि का अगला भाग । लिङ्ग का अगला भाग । बकरी के गले की थैली । **—इन्द्र (मणीन्द्र)**, **—राज**–(पुं०) हीरा । **—कण्ठ**–(पुं०) नीलकण्ठ पक्षी । **—कण्ठक**–(पुं०) मुर्गा । **—कर्णिका**, **—कर्णी**–(स्त्री०) काशी का एक प्रसिद्ध तीर्थ जहाँ विष्णु की उत्कट तपस्या देखकर शंकर का सिर हिलने से उनके कान का मणिमय कुंडल गिर गया । मणिमय कर्ण-भूषण ।**—काच**–(पुं०) बाण का वह भाग जहाँ कि पर लगे होते हैं । स्फटिक ।**—कानन**–(न०) गरदन ।**—कार**–(पुं०) जौहरी । **—तारक**–(पुं०) सारस पक्षी ।**—दर्पण**–(पुं०) दर्पण जिसमें रत्न जड़े हों ।**—द्वीप**–(पुं०) अनन्त नाग का फन । अमृत सागर का एक द्वीप ।**—धनु**–(पुं०) **धनुस्**–(न०) इन्द्रधनुष ।**—पाली**–(स्त्री०) जौहरिन । स्त्री जो रत्न रखती हो ।**—पुष्पक**–(पुं०) सहदेव के शंख का नाम ।**—पूर**–(पुं०) नाभि । चोली, जिसमें बहुत से रत्न टके हों । (न०) कलिङ्ग देश का एक नगर **—बन्ध**–(पुं०) कलाई, पहुँचा । **—बन्धन**–(न०) अँगूठी का वह स्थान जहाँ नगीना जड़ा जाता है । मोती की लड़ी । कलाई । **—बीज**, **—बीज**–(पुं०) अनार का पेड़ । **—भित्ति**–(स्त्री०) शेष के भवन का नाम ।**—भू**–(स्त्री०) रत्न-जटित फर्श ।**—भूमि**– (स्त्री०) मणियों की खान । रत्नजटित फर्श । **—मन्थ**–(न०) सेंधा नमक ।**—माला**– (स्त्री०) रत्नहार । चमक, आभा । प्रेमक्रीड़ा में गाल पर या अन्यत्र दाँतों से काटने का गोल चकत्ता या दाग । लक्ष्मी जी का नाम । एक वृक्ष का नाम ।**—रत्न**–(न०) जवाहिर । **—राग**– (पुं०) रत्नों का रंग । (न०) हिङ्गुल, शिंगरफ ।**—सर**–(पुं०) मोतियों की माला ।**—सूत्र**–(न०) मोतियों की लड़ी ।

मणिक—(पुं०, न०) [मणि + कन्] मिट्टी का घड़ा । (पुं०) जवाहर विशेष, माणिक, चुन्नी ।

मणित—(न०) [√मण्+क्त] एक अव्यक्त सिसकारी जो स्त्रीसम्भोग के समय मुख से निकला करती है ।

मणिमत्—(वि०) [मणि + मतुप्] रत्न-जटित । (पुं०) सूर्य । एक पर्वत का नाम । एक तीर्थ का नाम ।

मणीचक—(न०) [मणीं चकते प्रतिहन्ति दीप्त्या, मणी √चक्+घञ्] चन्द्रकान्त-मणि । (पुं०) मत्स्यरंग पक्षी, कौडियाला ।

मणीवक—(न०) [मणीव कायति, मणीव √कै+क] पुष्प, फूल ।

√मण्ठ्—भ्वा० आत्म० सक० कामना करना । खेदपूर्वक स्मरण करना । मण्ठते, मण्ठिष्यते, अमण्ठिष्ट ।

मण्ठ—(पुं०) [√मण्ठ्+अच्] मैदे का बना एक पकवान, माठ ।

√मण्ड्—भ्वा० आत्म० सक० विभक्त करना । मण्डते, मण्डिष्यते, अमण्डिष्ट ।

भ्वा० पर० सक० सजाना, शृङ्गार करना। मण्डति, मण्डिष्यति, अमण्डीत् ।

मण्ड—(पु०, न०) [√मन्+ड] वह गाढ़ा-चिकना पदार्थ विशेष जो किसी तरल पदार्थ के ऊपर आ जाता है। माँड़, दूध की मलाई। फेन, झाग। खमीरा। गूदा, सार। सिर। (पु०) आभूषण। मेंढक। एरण्ड का वृक्ष। —**प**-(वि०) माँड़ पीने वाला। मलाई खाने वाला। (पु०, न०) [√मण्ड्+घञ्, मण्डं भूषां पाति रक्षति, मण्ड√पा+क] मँड़वा। तंबू। कुंज। भवन जो देवता को चढ़ा दिया गया हो। —**प्रतिष्ठा**-(स्त्री०) किसी देवालय की प्रतिष्ठा। —**हारक**-(पुं०) कलाल जो शराब खींचता है।

मण्डक—(पुं०) [मण्डेन कृतः, मण्ड+कन्] एक प्रकार का पिष्टक, मैदे की रोटी-विशेष।

मण्डन—(न०) [√मण्ड्+ल्युट्] शृङ्गार करना, सँवारना। गहना: 'मामक्षमं मण्डन-कालहानेः' र० १३.१६। सजावट, शृङ्गार। (पुं०) [√मण्ड्+ल्यु] एक पण्डित का नाम, मण्डन मिश्र जो शङ्कराचार्य द्वारा शास्त्रार्थ में हराये गये थे।

मण्डयन्त—(पुं०) [√मण्ड् + णिच्+झच्] आभूषण, सजावट। नट। भोज्य पदार्थ। स्त्रियों का समुदाय।

मण्डयन्ती—(स्त्री०) [मण्डयन्त + ङीप्] स्त्री, नारी।

मण्डरी—(स्त्री०) [√मण्ड् + अरन्—ङीप्] झिल्ली, झींगुर-विशेष।

मण्डल—(वि०) [√मण्ड्+कलच्] गोल। —**अग्र** (**मण्डलाग्र**)-(पुं०) खाँड़ा, मुड़ी हुई तलवार। (न०) वृत्ताकार विस्तार, व्यास। ऐन्द्रजालिक की खींची हुई गोलाकार रेखा। चन्द्र-सूर्य का पार्श्व। ग्रह के घूमने की कक्षा। समुदाय, समूह: 'एवं मिलितेन कुमारमण्डलेन' दश०। सभा। बड़ा वृत्त। चारों दिशाओं का घेरा जो गोलाकार दिखलाई पड़ता है, क्षितिज। जिला या प्रान्त। बारह राज्यों का गट्ठ या समूह। शिकार खेलने का घेरा-विशेष। तांत्रिक मंत्र-विशेष। ऋग्वेद का एक खंड। कुष्ठ रोग-विशेष जिसमें शरीर में गोल सफेद दाग पड़ जाते हैं। गन्ध द्रव्य-विशेष। (पु०) गोलाकार सैन्य-व्यूह। कुत्ता। सर्प-विशेष। —**अधिप** (**मण्डलाधिप**), —**अधीश** (**मण्डलाधीश**),—**ईश** (**मण्डलेश**), —**ईश्वर** (**मण्डलेश्वर**)-(पु०) सूबेदार, जिलेदार। राजा। —**आवृत्ति** (**मण्डलावृत्ति**)-(स्त्री०) चक्करदार चाल। —**कार्मुक**- (वि०) गोल धनुषधारी। —**नृत्य**-(न०) गोलाकार नाच। —**न्यास**-(पु०) वृत्त का वर्णन। —**पत्रिका**—(स्त्री०) लाल गदहपुरना। —**पुच्छक**-(पुं०) एक कीड़ा जो प्राणनाशक होता है। इसके काटने से सर्प के जैसा विष चढ़ता है। —**वट**-(पुं०) गोल वट वृक्ष। —**वर्तिन्**-(पुं०) एक छोटे प्रान्त का शासक। —**वर्ष**-(पुं०) सार्वत्रिक वर्षा।

मण्डलक—(न०) [मण्डल + कन्] घेरा। चक्र। जिला या प्रान्त। समुदाय, समूह। चक्राकार सैन्य-व्यूह। सफेद कुष्ठ जिसमें गोल चकत्ते सारे शरीर में पड़ जाते हैं। दर्पण।

मण्डलायित—(वि०) [मण्डलवत् आच-रितम्, मण्डल+क्यङ्, दीर्घ, √मण्डलाय+क्त] गोल, चक्करदार। (न०) गोला। गेंद।

मण्डलित—(वि०) [मण्डलं कृतम्, मण्डल+क्विप्, √मण्डल+क्त] वह जो गोल बनाया गया हो।

मण्डलिन्—(वि०) [मण्डल+इनि] वर्तु-लाकार बनाने वाला। देश का शासन करने

वाला । (पुं०) सर्प-विशेष । बिल्ली । ऊद-बिलाव । कुत्ता । सूर्य । वटवृक्ष । सूबेदार ।

मण्डा—(स्त्री०) [मण्ड+अच् — टाप्] मदिरा । आँवला ।

मण्डित—(वि०) [√मण्ड् + क्त] सजाया हुआ, सँवारा हुआ ।

मण्डूक—(न०) [√मण्ड् + ऊकण्] सोना-पाठा । प्राचीन काल का एक बाजा । एक प्रकार का नृत्य । एक ताल । स्त्रीसम्भोग का एक आसन । (पुं०) मेढक ।—**अनुवृत्ति**-(**मण्डूकानुवृत्ति**), —**प्लुति**-(स्त्री०) मेढक की छलाँग ।—**कुल**-(न०) मेढकों का समुदाय ।—**योग**-(पुं०) मण्डूकासन से बैठ ध्यान करने की क्रिया ।—**सरस्**-(न०) तालाब जिसमें मेढक भरे हों ।

मण्डूकी—(स्त्री०) [मण्डूक+ङीष्] मेढकी । स्वेच्छाचारिणी स्त्री, छिनाल औरत । मंडूकपर्णी, ब्राह्मी आदि पौधों का नाम ।

मण्डूर—(न०) [√मण्ड् + ऊरच्] लोहे का मैल, सिङ्घाण ।

मत—(वि०) [√मन्+क्त] सोचा हुआ । विश्वास किया हुआ । अनुमान किया हुआ । विचार किया हुआ । सम्मान किया हुआ । प्रशंसित । मूल्यवान् समझा हुआ । कल्पना किया हुआ । ध्यान किया हुआ । पहचाना हुआ । सोचकर निकाला हुआ । लक्ष्य किया हुआ । पसंद किया हुआ । (न०) विचार । धारणा । विश्वास । सम्मति । सिद्धान्त; 'ये मे मतमिदं नित्यमनुतिष्ठन्ति मानवाः' भग० ३.३१ । सम्प्रदाय, पंथ । परामर्श, सलाह । उद्देश्य । सङ्कल्प । अभिप्राय । स्वीकृति । चुनाव में, प्रस्ताव आदि के पक्ष-विपक्ष में, निर्धारित विधि से प्रकट किया हुआ मत, वोट (आ०) ।—**अक्ष** (**मताक्ष**)-(वि०) पाँसे के खेल में निपुण ।—**अन्तर** (**मतान्तर**)-(न०) भिन्न सम्मति । भिन्न सम्प्रदाय ।—**अवलम्बन** (**मतावलम्बन**)-(न०) खास राय को मानना ।

मतङ्ग—(पुं०) [माद्यति अयम् अनेन वा, √मद्+अङ्गच्, दस्य तः] हाथी । बादल । एक ऋषि का नाम ।

मतङ्गज—(पुं०) [मतङ्गः मेघ इव जायते तदाख्यमुनेः जातो वा, मतङ्ग√जन्+ड] हाथी ।

मतल्लिका—(स्त्री०) [मतं मतिम् अलति भूषयति, मत√अल्+ण्वुल्, पृषो० साधुः] यह शब्द संज्ञा के अन्त में लगाया जाता है । इसका अर्थ होता है सर्वोत्कृष्ट, अपनी जाति में श्रेष्ठ । यथा —**गोमतल्लिका**-अर्थात् सर्वोत्तम गौ या श्रेष्ठ जाति की गौ ।

मतल्ली—(स्त्री०) दे० '**मतल्लिका**' ।

मति-(स्त्री०) [√मन्+क्तिन्] बुद्धि, समझदारी । मन । हृदय । विचार । धारणा । विश्वास । राय । कल्पना । सङ्कल्प । सम्मान । कामना । स्मृति ।—**ईश्वर** (**मतीश्वर**)-(पुं०) विश्वकर्मा ।—**गर्भ**-(वि०) प्रतिभाशाली । बुद्धिमान् ।—**द्वैध**-(न०) मतभेद ।—**निश्चय**-(पुं०) दृढ़ विश्वास ।—**पूर्वकम्**-(अव्य०) जान-बूझ कर, इरादतन ।—**प्रकर्ष**-(पुं०) चातुर्य, नैपुण्य ।—**भेद**(पुं०) बुद्धि की भिन्नता । मतपरिवर्तन ।—**भ्रम**,—**विपर्यास**-(पुं०) धोखा, विभ्रम, मन की गड़बड़ी । भूल, गलती ।—**विभ्रम**, —**विभ्रंश**-(पुं०) पागलपन, विक्षिप्तता ।—**शालिन्**-(वि०) बुद्धिमान् ।—**हीन**-(वि०) मूर्ख, बेवकूफ ।

मत्क—(वि०) [अस्मद् + कन्, मदादेश] मेरा, हमारा; 'संमृणुष्व कपे मत्कैः सङ्गच्छस्व वनैः शुभैः' भट्टि० ८.१६ । (पुं०) [√मद्+क्विप् + कन्] खटमल, खटकीरा ।

मत्कुण—(पुं०) [√मद् +क्विप्, √कुण् +क, ततः कर्म० स०] खटमल । बिना

दाँतों का हाथी । छोटा हाथी । बेदाढ़ी का नर । भैंसा । नारियल का पेड़ । (न०) टाँगों की रक्षा के लिये चर्म का बना कवच विशेष । —अरि (मत्कुणारि)–(पुं०) पटसन का पौधा ।

मत्त—(वि०) [√मद्+क्त] मस्त, मतवाला । उन्मत्त, पागल । मद में मस्त (जैसे हाथी) । अभिमानी, अहङ्कारी । अति प्रसन्न । खिलाड़ी । रसिक ।—(पुं०) शराबी । पागल आदमी । मदमस्त हाथी । कोयल । भैंस । धतूरा ।—**आलम्ब** (**मत्तालम्ब**)–(पुं०) किसी बड़े भवन का घेरा । बरामदा ।—**इभ** (**मत्तेभ**)–(पुं०) मदमस्त हाथी ।—**काशिनी**,—**कासिनी**–(स्त्री०) अत्यन्त रूपवती स्त्री ।—**दन्तिन्**,—**नाग**,—**वारण**–(पुं०) मदमत्त हाथी । (न०) विशाल भवन का हाता या घेरा । बुर्जी या अटारी जो किसी विशाल भवन के ऊपर हो । बरामदा । (न०) कटी हुई सुपारी ।

मत्य—(न०) [मत+यत्] हेंगा, सिरावन, खुरपा आदि की बेंट, मूठ । ज्ञान-प्राप्ति का साधन ।

मत्स—(पुं०) [√मद्+सन्] मच्छ । मत्स्य देश का राजा ।

मत्सर—(पुं०) [√मद् + सरन्] डाह, हसद, जलन । शत्रुता । अभिमान । लोभ । क्रोध । डाँस । मच्छर । (वि०) लोभी । कृपण । तंगदिल, सङ्कीर्णमना । दुष्ट ।

मत्सरिन्—(वि०) [मत्सर+इनि] डाही, जलने वाला । द्वेष करने वाला; 'परवृद्धिमत्सरि मनो हि मानिनां' शि० १५.१ । लोभयुक्त ।

मत्स्य—(पुं०) [माद्यन्ति लोका अनेन, √मद् +स्यन्] मछली । विराट देश । मत्स्य-नरेश । मीन राशि । विष्णु के दस अवतारों में से पहला ।—**अक्षका** (**मत्स्याक्षका**),—**अक्षी** (**मत्स्याक्षी**)–(स्त्री०) सोमलता-विशेष । ब्राह्मी । गाडर दूब ।—**अवतार** (**मत्स्यावतार**)–(पुं०) विष्णु भगवान् के दस अवतारों में से प्रथम, मत्स्यावतार ।—**अशन** (**मत्स्याशन**)–(न०) मछली खाना ।—**असुर** (**मत्स्यासुर**)–(पुं०) एक दैत्य का नाम ।—**आद** (**मत्स्याद**)–(वि०) मछली खाने वाला ।—**आधानी** (**मत्स्याधानी**),—**धानी**–(स्त्री०) मछली रखने की टोकरी ।—**उदरिन्** (**मत्स्योदरिन्**)–(पुं०) विराट का नामान्तर ।—**उदरी** (**मत्स्योदरी**)–(स्त्री०) सत्यवती ।—**उदरीय** (**मत्स्योदरीय**)–(पुं०) वेदव्यास ।—**उपजीविन्** (**मत्स्योपजीविन्**)–(पुं०) मछुआ, मछवाहा ।—**करण्डिका**–(स्त्री०) मछलियाँ रखने की काँड़ी ।—**गन्ध**–(वि०) मछराइन । **गन्धा**–(स्त्री०) सत्यवती ।—**घातिन्**,—**जीविन्**–(पुं०) मछुआ ।—**जाल**–(न०) मछली पकड़ने का जाल ।—**देश**–(पुं०) मत्स्य देश, जहाँ का राजा विराट था ।—**द्वादशी**–(स्त्री०) अगहन सुदी द्वादशी ।—**नारी**–(स्त्री०) सत्यवती ।—**नाशक**,—**नाशन**–(पुं०) कुरर पक्षी ।—**पुराण**–(न०) अष्टादश पुराणों में से एक जो महापुराणों में परिगणित है ।—**बन्ध**,—**बन्धिन्**–(पुं०) मछली पकड़ने वाला, मछुवा ।—**बन्धन**–(न०) मछली पकड़ने की बंसी ।—**बन्धनी**,—**बन्धिनी**—(स्त्री०) मछली रखने की टोकरी ।—**मुद्रा**—(स्त्री०) पूजन-विशेष में दोनों हाथों से मछली के आकार की बनायी जाने वाली एक मुद्रा ।—**रङ्क**,—**रङ्ग**,—**रङ्कक**–(पुं०) मछरंगा पक्षी, रामचिड़िया ।—**संघात**–(पुं०) मछलियों का गुट या गोल ।

मत्स्यण्डिका, मत्स्यण्डी—(स्त्री०) [मद मधुरसं स्यन्दते, मद √स्यन्द् + ण्वुल्–टाप्, इत्व पृषो० साधुः] [मद√स्यन्द्

+अच्–ङीष्, पृषो० साधुः] मांटी और बिना साफ की हुई चीनी ।

√मथ्—भ्वा० पर० सक० बिलोना । मथति, मथिष्यति, अमथीत् ।

मथ—(पुं०) [√मथ्+अप्] दे० 'माथ' ।

मथन—(न०) [स्त्री०—**मथनी**] [√मथ्+ल्युट्] मथने की क्रिया, बिलोना । वध । नाश । (पुं०) गनियारी नामक वृक्ष ।—**अचल** (**मथनाचल**),—**पर्वत**–(पुं०) मन्दराचल पर्वत ।

मथि—(पुं०) [√मथ्+इन्] रई, मथने की लकड़ी विशेष ।

मथित—(वि०) [√मथ्+क्त] मथा हुआ । आलोड़ित, घोलकर भली भांति मिलाया हुआ । पीड़ित, सन्तप्त । वध किया हुआ । जोड़ से उखड़ा हुआ । (न०) विशुद्ध माठा या छाछ ।

मथिन्—(पुं०) [√मथ्+इनि] रई, मा । बिलोने की लकड़ी विशेष । पवन । पुरुष की जननेन्द्रिय । बिजली । वज्र ।

मथुरा, **मथूरा**—(स्त्री०) [मथ्यते पापराशिर्यया,√मथ्+उरच्–टाप्] [√मथ्+ऊर–टाप्] श्रीकृष्ण की जन्मभूमि और मोक्षदा सप्तपुरियों में से एक ।—**ईश** (**मथुरेश**),—**नाथ**–(पुं०) श्रीकृष्ण ।

√**मद्**—भ्वा० पर० अक० नशे में चूर होना । पागल होना, धूम मचाना । आनन्द मनाना । दीन होना । मदति, मदिष्यति, अमादीत्–अमदीत् । दि० पर० अक० आनन्दित होना । माद्यति, मदिष्यति, अमदत् ।

मद—(पुं०) [√मद्+अप्] नशा । विक्षिप्तता, पागलपन । लंपटता, कामुकता । हाथी का मद अथवा वह गन्धयुक्त द्रव जो मतवाले हाथियों की कनपुटियों से बहता है; 'मदेन भाति कलभः प्रतापेन महीपतिः'। अनुराग, प्रेम । अभिमान, अहङ्कार । हर्षातिरेक । मदिरा, शराब । शहद । कस्तूरी । वीर्य ।—**अत्यय** (**मदात्यय**),—**आतङ्क** (**मदातङ्क**)-(पुं०) नशा पीने के कारण उत्पन्न हुआ सिर का दर्द आदि ।—**अन्ध** (**मदान्ध**)-(पुं०) नशे से अंधा । अभिमान से अंधा ।—**अपनयन** (**मदापनयन**)–(न०) नशा उतारना ।—**अम्बर** (**मदाम्बर**)–(पुं०) मदमस्त हाथी । इन्द्र के ऐरावत हाथी का नामान्तर ।—**अलस**–(वि०) नशे से या कामासक्ति से शिथिल ।—**अलसा** (**मदालसा**)–(स्त्री०) चन्द्रवंशी राजा ऋतध्वज की विदुषी, ब्रह्मवादिनी पत्नी जिसकी कथा मार्कण्डेयपुराण में वर्णित है ।—**अवस्था** (**मदावस्था**)–(स्त्री०) नशे की दशा या हालत । कामुकता ।—**आकुल** (**मदाकुल**) –(वि०) मदमस्त ।—**आढ्य** (**मदाढ्य**)–(वि०) नशे में चूर । (पुं०) खजूर का पेड़ ।—**आम्नात** (**मदाम्नात**)– (पुं०) हाथी की पीठ पर रख कर बजाया जाने वाला नगाड़ा या ढोल ।—**आलापिन्** (**मदालापिन्**)–(पुं०) कोयल ।—**आह्व** (**मदाह्व**)–(पुं०) कस्तूरी ।—**उत्कट** (**मदोत्कट**)–(वि०) नशे में चूर । कामुक । अहङ्कारी । मदमाता । (पुं०) मदमस्त हाथी । फाखता चिड़िया ।—**उत्कटा** (**मदोत्कटा**)– (स्त्री०) शराब, मदिरा ।—**उदग्र** (**मदोदग्र**),—**उन्मत्त** (**मदोन्मत्त**)–(वि०) नशे में चूर । उग्र । अभिमानी ।—**उद्धत** (**मदोद्धत**) –(वि०) मदोन्मत्त । घमंडी ।—**उल्लापिन्** (**मदोल्लापिन्**)–(पुं०) कोयल ।—**कट**–(पुं०) साँड़ ।—**कर**–(वि०) नशा पैदा करने वाला, नशीला ।—**करिन्**–(पुं०) मदमस्त हाथी ।—**कल**–(वि०) अस्पष्टतया बोलने वाला । धीरे-धीरे प्रेमालाप करने वाला । मदोन्मत्त । मन्दमधुर । मदमाता । (पुं०) मदमस्त हाथी ।—**कोहल**–(पुं०) छोड़ा हुआ साँड़ ।—**खेल**–(वि०)

मदमस्त ।—**गन्धा**–(स्त्री०) नशीली पेय वस्तु। भांग ।—**गमन**–(पुं०) भैंसा ।—**च्युत**–(वि०) गर्वनाशक । (पुं०) इन्द्र । —**जल**,—**वारि**– (न०) मत्त हाथी के मस्तक का स्राव, हाथी का मद ।—**ज्वर**– (पुं०) अहङ्कार का ज्वर या अभिमान की गर्मी ।—**द्विप**–(पुं०) खूनी हाथी या बिगड़ा हुआ हाथी ।—**प्रयोग**,— **प्रसेक**– (पुं०), —**प्रस्रवण**–(न०),—**स्राव**– (पुं०),—**स्रुति**–(स्त्री०) मत्त हाथी के मस्तक का स्राव, हाथी का मद ।—**मुकुलिताक्षी**—(स्त्री०) वह स्त्री जिसकी आँखें नशे से बंद-सी हो रही हों ।—**राग**–(पुं०) कामदेव । मुर्गा । शराबी ।—**लेखा**–(स्त्री०) मदजल से बनने वाली लकीर । एक वर्णवृत्त ।—**विक्षिप्त**–(वि०) मदमस्त । उग्र ।—**विह्वल**–(वि०) अभिमान में चूर । नशे में बुत्त या चूर ।—**वृन्द**–(पुं०) हाथी । —**शौण्डक**–(न०) कायफल ।—**सार**– (पुं०) शहतूत का पेड़ । कपास का पेड़ ।—**स्थल**,—**स्थान**– (न०) शराब की दूकान ।—**हेतु**–(पुं०) मस्ती का कारण । धाय का पेड़ ।

मदन—(वि०) [स्त्री०—**मदनी**] [√मद् +णिच्+ल्यु]नशीला, विक्षिप्तता कारक । आह्लादकारक । (पुं०) कामदेव; 'हतमपि निहन्त्येव मदनः' भर्तृ० ३.१८ । प्रेम । वसंतकाल । भ्रमर । खंजन । मौलसिरी । खैर । मैनफल । धतूरा । मोम । आलिंगन का एक भेद ।—**अग्रक** (**मदनाग्रक**)– (पुं०)कोदों नाज, कोद्रव अन्न ।—**अङ्कुश** (**मदनाङ्कुश**)–(पुं०) लिङ्ग । नख या सम्भोग के समय लगा हुआ नखाघात ।—**अन्तक** (**मदनान्तक**), —**अरि** (**मदनारि**) —**दमन**, —**दहन**,—**नाशन**,— **रिपु**– (पुं०) शिव जी की उपाधियाँ ।—**अवस्थ** (**मदनावस्थ**) –(वि०) प्रेमासक्त ।—**आतुर** (**मदनातुर**), —**आर्त्त** (**मदनार्त्त**), —**क्लिष्ट**, —**पीडित**–(वि०) प्रेम का बीमार ।—**आलय** (**मदनालय**)–(पुं०) भग । कमल । कुंडली में सप्तम स्थान ।—**इच्छा**(**मदनेच्छा**), काम-वासना ।—**उत्सव** (**मदनोत्सव**)–(पुं०) दे० 'मदनमहोत्सव' । होली ।—**उत्सवा** (**मदनोत्सवा**)–(स्त्री०) अप्सरा, स्वर्ग की वेश्या । —**उद्यान** (**मदनोद्यान**)–(न०) आनन्दबाग ।—**कण्टक**–(पुं०) सात्त्विक अनुरागजनित रोमांच ।—**कदन**–(पुं०) शिव ।—**कलह**–(पुं०) प्रेम का झगड़ा । सम्भोग, मैथुन ।—**काकुरव**–(पुं०) कबूतर या फाख्ता ।—**गोपाल**–(पुं०) श्रीकृष्ण ।—**चतुर्दशी**– (स्त्री०) चैत्रशुक्ला १४वीं का नाम ।—**त्रयोदशी**–(स्त्री०) चैत्रशुक्ला १३वीं । यह मदनमहोत्सव के अन्तर्गत है ।—**नालिका**–(स्त्री०) असती भार्या । —**पक्षिन्**–(पुं०) खंजनपक्षी ।—**पाठक**– (पुं०)कोयल ।—**फलक** (**मदनफलक**)-(न०) कलमी आम ।—**महोत्सव**–(पुं०) प्राचीन काल का एक उत्सव जो चैत्रशुक्ला द्वादशी से चतुर्दशी पर्यन्त मनाया जाता था । इस उत्सव में व्रत, कामदेव की पूजा, गीत-वाद्य और रात्रि-जागरण किया जाता था । उत्सव में स्त्रियाँ और पुरुष दोनों सम्मिलित होते थे और बाग-बगीचों में जाकर आमोद-प्रमोद किया करते थे ।—**मोहन**– (पुं०) श्रीकृष्ण ।—**लेख**–(पुं०) नायक-नायिका का एक दूसरे को लिखा हुआ प्रेम-पत्र ।—**शलाका**–(स्त्री०) मैना । कोकिला, कोयल । —**सदन**–(पुं०) भग । जन्म-कुंडली में लग्न से सातवाँ स्थान । —**सारिका**—(स्त्री०) मैना ।

मदनक—(पुं०) [मदन+कन्] दमनक वृक्ष, दौना । खैर । धतूरा । मैनफल । मौलसिरी । मोम ।

मदना, मदनी—(स्त्री०) [√मद् + वुन् —टाप्] [√मद् + ल्युट्—ङीप्] शराब। कस्तूरी। अतिमुक्ता बेल। मेथी। धाय का पेड़।

मदयन्तिका, मदयन्ती—(स्त्री०) [मदयन्ती +कन्—टाप्, ह्रस्व] [√मद् + णिच् +शतृ—ङीप्] मल्लिका।

मदयित्नु—(वि०) [√मद् + णिच् +इत्नुच्] नशीला, बदहवास कर देने वाला। आह्लादकर। (पुं०) कामदेव। बादल। कलवार, शराब खींचने वाला। शराबी आदमी। शराब।

मदार—(पुं०) [√मद्+आरन्] मदमस्त हाथी। शूकर। धतूरा। प्रेमी। कामुक, लंपट। गन्धद्रव्य विशेष। छलिया, कपटी।

मदि—(स्त्री०) [√मद्+इन्, पृषो० साधुः] पटेला, सिरावन।

मदिर—(वि०) [√मद्+किरच्] नशीला, विशेषकारी। आनन्दकारी, नयनाभिराम। (पुं०) लाल फूलों वाला खदिर वृक्ष।—**अक्षी** (**मदिराक्षी**),—**ईक्षणा** (**मदिरेक्षणा**),—**नयना**,—**लोचना**–(स्त्री०) वह स्त्री जिसके नेत्र मनोहर हों या जिसकी आँखों में जादू सा हो; 'मदिराक्षि मदाननार्पितं' र० ८.६८।—**आयतनयन** (**मदिरायतनयन**)–(वि०)बड़ी और आकर्षण करने वाली आँखों वाला।—**आसव** (**मदिरासव**)–(पुं०) नशीला अर्क, शराब।

मदिरा—(स्त्री०) [मदिर + टाप्] शराब 'परिणतमदिराभं भास्करेणांशुबाणैः' शि० ११.४९। खंजन पक्षी। दुर्गा का नाम।—**उत्कट** (**मदिरोत्कट**)—**उन्मत्त** (**मदिरोन्मत्त**)– (वि०) शराब के नशे में चूर।—**गृह**–(न०),—**शाला**–(स्त्री०) शराब की दूकान, कलवरिया।—**सख**–(पुं०) आम का वृक्ष।

मदिष्ठा—(स्त्री०) [मदोऽस्या अस्ति, मद +इनि, इयम् अतिशयेन मदिनी, मदिनी +इष्ठन्—इनी लोपः, टाप्]शराब, मदिरा।

मदीय—(वि०) [मम इदम्, अस्मद्+छ —ईय, मदादेश] मेरा।

मद्गु—(पुं०) [√मस्ज्+उ, कुत्व, जश्त्व] एक प्रकार का जलपक्षी जिसकी लंबाई पूँछ से चोंच तक २४ इञ्च तक की होती है। सर्प-विशेष। वनजन्तु-विशेष। एक प्रकार का युद्धपोत। वर्णसङ्कर जाति-विशेष जिसकी उत्पत्ति ब्राह्मण जाति के पिता और मागध जाति की माता से होती है। जाति-बहिष्कृत, पतित।

मद्गुर–(पुं०) [√मद्+उरच्, नि० सिद्धिः] मोती निकालने वाला, गोताखोर। माँगुर मछली। प्राचीन काल की एक वर्णसङ्कर जाति, जिसका पेशा वन्य पशुओं का मारना था।

मद्य—(न०) [माद्यति अनेऽनेन, √मद्+यत्] शराब, दारू, मदिरा।—**आमोद** (**मद्यामोद**)–(पुं०) बकुलवृक्ष। **कीट**– (पुं०) मद्य से उत्पन्न कीट-विशेष। —**द्रुम**–(पुं०) माड़ नामक वृक्ष।—**प**–(पुं०)पियक्कड़, शराबी।—**पान**–(न०) मदिरापान, किसी भी नशीली वस्तु का सेवन।—**पीठ**– (वि०) शराब के नशे में चूर।—**पुष्पा**–(स्त्री०)धातकी, धौ। —**बीज**,—**बीज**– (न०) शराब खींचने के लिये उठाया हुआ खमीर।—**भाजन** –(न०) शराब रखने का करवा या कोई भी काँच का पात्र।—**मण्ड**– (पुं०) फेन जो मद्य का खमीर उठने पर ऊपर आता है, मद्यफेन।—**वासिनी**–(स्त्री०) धातकी का पौधा, धौ।—**सन्धान**–(न०) मदिरा खींचने का व्यापार।

मद्र—(न०) [√मन्द्+रक्] हर्ष, आनन्द। (पुं०) एक प्राचीन देश का वैदिक नाम।

यह देश कश्यपसागर के दक्षिणी तट पर पश्चिम की ओर था। ऐतरेय ब्राह्मण में इसे उत्तरकुरु के नाम से बतलाया है। पुराणों के मतानुसार यह देश जो रावी और झेलम नदी के बीच में है। मद्र देश का शासक। मद्र देश का अधिवासी।

मद्रक—(पुं०) [मद्र+कन्] मद्र देश का शासक या निवासी। दक्षिण की एक नीच जाति का नाम।

मधव्य—(पुं०) [मधु+यत्] वैशाख मास।

मधु—(वि०) [स्त्री०—**मधु** या **मध्वी**] [मन्यन्ते विशेषेण जनाः, √मन् + उ, धश्चान्तादेश] मधुर। स्वादिष्ठ। प्रिय। प्रसन्नकर। (न०) शहद। फूल का रस। मदिरा जिसका स्वाद मीठा होता है। जल। चीनी। मीठापन या मधुरता। (पुं०) वसन्त ऋतु। चैत्र मास; 'भास्करस्य मधुमाधवाविव' र० ११.७। मधुदैत्य जिसे भगवान् विष्णु ने मारा था। लवणासुर के पिता का नाम, जिसे शत्रुघ्न जी ने मारा था। अशोकवृक्ष। कार्त्तवीर्य राजा।—**अष्ठीला** (**मध्वष्ठीला**)–(स्त्री०) शहद का लौंदा, जमा हुआ शहद।—**आधार** (**मध्वाधार**)–(पुं०) मधुमक्खियों का छत्ता। मोम।—**आपात** (**मध्वापात**)–(पुं०) प्रारम्भिक मधु।—**आम्र** (**मध्वाम्र**)–(पुं०) आम का वृक्ष विशेष।—**आसव** (**मध्वासव**)–(पुं०) महुए की बनी शराब।—**आस्वाद** (**मध्वास्वाद**)–(वि०) जिसमें शहद का स्वाद हो।—**आहुति** (**मध्वाहुति**)–(स्त्री०) मधुर शाकल्य का हवन।—**उच्छिष्ट** (**मधूच्छिष्ट**),—**उत्थ** (**मधूत्थ**),—**उत्थित** (**मधूत्थित**)–(न०) शहद की मक्खियों का बनाया मोम।—**उत्सव** (**मधूत्सव**)–(पुं०) वसन्तोत्सव।—**उदक** (**मधूदक**)–(न०) शहद का शरबत। शहद और जल के संयोग से बनाई हुई शराब।—**उपघ्न** (**मधूपघ्न**)– (न०) मधु का आवासस्थान। मथुरा का नामान्तर।—**कण्ठ**–(पुं०) कोकिल।—**कर**–(पुं०) भौंरा। प्रेमी, आशिक। लंपट पुरुष।—**कर्कटी**–(स्त्री०) मीठा नीबू, शरबती नीबू। सन्तरा।—**कानन**,—**वन**–(न०) वह वन या जंगल जिसमें मधु रहता था।—**कार**,—**कारिन्** –(पुं०) मधुमक्षिका।—**कुक्कुटिका**,—**कुक्कुटी**–(स्त्री०) जम्बीरी नीबू का पेड़।—**कुल्या**–(स्त्री०) पुराणानुसार कुशद्वीप की एक नदी का नाम जिसमें पानी के बदले शहद बहा करता है।—**कृत्**–(पुं०) मधुमक्षिका।—**केशट**–(पुं०) भ्रमर।—**कैटभ**–(पुं० द्वि०) विष्णु के कान के मैल से उत्पन्न दो दैत्य—मधु और कैटभ।—**कोश**,—**कोष**,–(पुं०) शहद की मक्खियों का छत्ता।—**क्रम**–(पुं०) मद्यपान का उत्सव।—**क्षीर**,—**क्षीरक**–(पुं०) खजूर का पेड़।—**गन्ध**–(पुं०) अर्जुन का पेड़। मौलसिरी।—**गायन**–(पुं०) कोयल पक्षी।—**ग्रह**–(पुं०) वाजपेय यज्ञ में किया जाने वाला एक हवन जिसमें मधु की आहुति दी जाती है।—**घोष**–(पुं०) कोयल।—**ज**–(न०) मोम जो शहद के छत्ते से निकलता है।—**जा**–(स्त्री०) मिसरी। पृथिवी।—**जम्बीर**–(पुं०) जंभीरी।—**जित्**,—**द्विष्**,—**निषूदन**,—**निहन्तृ**,—**मथ्**,—**मथन**,—**रिपु**,—**शत्रु**,—**सूदन**–(पुं०) विष्णु भगवान् के नामान्तर; 'स मधुमन्मथमन्मथसन्निभः' र० ९.४८।—**जीवन**– (पुं०) बहेड़े का पेड़।—**तृण**–(पुं०, न०) गन्ना, ईख।—**त्रय**–(न०) तीन मीठी चीजें अर्थात् शक्कर, शहद, घी।—**दीप**–(पुं०) कामदेव।—**दूत**– (पुं०)—**दोह**–(पुं०) शहद या मिठास निकालने की क्रिया।—**द्रु**–(पुं०) भ्रमर। लंपट पुरुष।—**द्रव**–

(पुं०) लाल सहँजन का पेड़ ।—द्रुम-(पुं०) आम का पेड़ ।—धातु-(पुं०) गन्धक तथा अन्य धातु मिश्रित पीले रंग का पदार्थ विशेष ।—धारा-(स्त्री०) शहद की धार ।—धूलि-(पुं०) खाँड़, शक्कर ।—नारिकेलक-(पुं०) नारियल विशेष ।—नेतृ-(पुं०) भौंरा ।—प,—पायिन् -(पुं०) भौंरा । शराबी । —पटल-(न०) शहद की मक्खी का छत्ता ।—पति-(पुं०) श्रीकृष्ण का नामान्तर ।— पर्क-(पुं०) दही, घी, जल, शहद और चीनी के योग से बना हुआ पदार्थ-विशेष; 'सविस्तरवन्मधुपर्कमर्पितम्', नै० १६.१३ । यह देवताओं को अर्पण किया जाता है । इससे देवता बड़े सन्तुष्ट होते हैं । इसके अर्पण करने से सुख एवं सौभाग्य की वृद्धि होती है । पूजन के षोडश उपचारों में से एक उपचार मधुपर्क-अर्पण भी है । तदनुसार घी, दही और मधु को मिलाने से मधुपर्क तैयार होता है ।—पर्क्य-(वि०) मधुपर्क अर्पण करने योग्य ।—पर्णिका,—पर्णी-(स्त्री०) नील का पौधा । गुड़ूच । गभारी । पायिन्-(पुं०) भौंरा ।—पीलु-(पुं०) अखरोट ।—पुर-(न०),—पुरी-(स्त्री०) मथुरा नगरी ।—पुष्प-(पुं०) अशोक वृक्ष । बकुल वृक्ष । दन्ती नामक पेड़ । सिरिस वृक्ष ।— प्रणय-(पुं०) शराब पीने की लत ।—प्रमेह-(पुं०) एक प्रकार का प्रमेह रोग जिसमें पेशाब के साथ शक्कर निकलने लगती है ।—प्राशन-(न०) षोडश संस्कारों में से एक जिसमें नवजात शिशु को शहद चटाया जाता है ।—प्रिय-(पुं०) बलराम ।—फल-(पुं०) नारियल फल । दाख । कौटाय या विकङ्कत नामक वृक्ष ।—फलिका-(स्त्री०) मीठी खजूर ।—बहुला-(स्त्री०) माधवी लता ।— बीज-(पुं०) अनार का पेड़ ।—बीजपूर-(पुं०) जम्भीरी विशेष ।—मक्ष-(पुं०) —क्षा -(स्त्री०), —मक्षिका-(स्त्री०) शहद की मक्खी ।—मज्जन-(पुं०) अखरोट का पेड़ ।—मद-(पुं०) शराब का नशा ।—मल्लि, —मल्ली-(स्त्री०) मालती लता ।—माधव- (पुं०) वसंत के दो मास—चैत्र और वैशाख । एक संकर राग ।—माधवी-(स्त्री०) मदिरा विशेष । वासन्ती लता । एक रागिनी जो भैरव राग की सहचरी है । वसन्त ऋतु में फूलने वाला कोई भी फूल ।—माध्वीक-(न०) शराब, मदिरा ।—मारक-(पुं०) भ्रमर ।—मूल -(न०) रतालू ।—मेह-(पुं०) पेशाब के साथ शक्कर आने का रोग, शर्करा-प्रमेह ।— यष्टि-(स्त्री०) मुलेठी ।—रस-(पुं०) ईख, गन्ना । मधुरता, मिठास ।—रसा-(स्त्री०) अंगूरों का गुच्छा । दाख । मूर्वा । गंभीरी । दुधिया ।—रसिक-(पुं०) भ्रमर ।—लग्न- (पुं०) लाल सहँजन ।—लिह्, —लेह,—लेहिन् -(पुं०) भौंरा ।—वन-(न०) वह वन जिसमें मधु दैत्य रहता था और जहाँ पीछे से शत्रुघ्न जी ने मथुरा बसाई । किष्किन्धा के निकट सुग्रीव का एक वन । (पुं०) कोकिल, कोयल ।—वार-(पुं०) मद्य पीने की रीति ।—व्रत-(पुं०) भौंरा, भ्रमर ।—शर्करा-(स्त्री०) शहद-चीनी ।—शाख-(पुं०) महुए का पेड़ ।—शिष्ट,—शेष-(न०) मोम ।—श्रेणी-(स्त्री०) मूर्वा लता ।—श्वासा- (स्त्री०) जीवंती ।—ष्ठील-(पुं०) [मधु √ष्ठीव्+क, पृषो० वस्य लत्वम्] महुए का पेड़ ।—सख,—सहाय,—सारथि,—सुहृद्— (पुं०) कामदेव ।—सिक्थक-(पुं०) एक प्रकार का स्थावर विष । मोम ।—सूदन-(पुं०) [मधु पुष्परसं वा मधुनामानं दैत्यं सूदयति नाशयति, मधु √ सूद्+णिच्+ल्यु] भौंरा ।

श्रीकृष्ण ।—**सूक्नी**—(स्त्री०) पालक का साग ।—**स्थान**— (न०) शहद का छत्ता । —**स्रव**-(पुं०) महुए का पेड़ । (वि०) जिससे शहद या मिठास झड़े ।—**स्रवा**-(स्त्री०) मुलेठी । मूर्वा । संजीवनी बूटी ।—**स्वर**-(पुं०) कोकिल ।—**हन्**-(वि०) शहद को नष्ट करने वाला या एकत्र करने वाला । (पुं०) शिकारी पक्षी ; विष्णु का नामान्तर ।

मधुक—(न०) [मधु + कन् या मधु√कै +क] मुलेठी । सीसा । (पुं०) महुए का पेड़ । अशोक वृक्ष । पक्षी विशेष ।

मधुमत्—(वि०) [मधु+मतुप्] मीठा । मधुयुक्त । प्रिय ।

मधुमती—(स्त्री०) [मधुमत्+ङीप्]समाधि की वह अवस्था जब रज और तम का लोप होकर सत्त्व गुण का पूर्ण प्रकाश होता है । एक नदी । मधुदैत्य की पुत्री । तंत्रोक्त एक नायिका या योगिनी ।

मधुर—(वि०) [मधु√रा + क या मधु माधुर्यम् अस्ति अस्य, मधु+र] माधुर्ययुक्त, मीठा । सुन्दर । जो सुनने में भला जान पड़े । कोमल । सौम्य । प्रिय । (न०) मिठास । शरबत । विष । राँगा । (पुं०) लाल गन्ना । चावल । गुड़ । आम विशेष । महुआ । बादाम । काकोली । सफेद सेम । राजमाष । —**कण्टक**-(पुं०) एक प्रकार की मछली । —**जम्बीर**-(न०) जंभीरी ।—**त्रय**-(न०) दे० 'मधुत्रय' ।—**त्वच्**-(पुं०) धौ का पेड़ । —**फल**-(पुं०) बेर फल, राजदरबार । तरबूज ।

मधुरता—(स्त्री०), **मधुरत्व**-(न०) [मधुर +तल्—टाप्] [मधुर + त्व] मिठास । सौन्दर्य, मनोहरता । सुकुमारता, कोमलता ।

मधुरिमन्-(पुं०) [मधुर+इमनिच्]मिठास ।

मधुलिका—(स्त्री०) [मधुल + कन्—टाप्, इत्व] राई । एक मातृका । एक प्रकार की शराब । भूरे रंग की एक प्रकार की दाल । पुष्पपराग । मूंग, मसूर, उड़द आदि शमीधान्य ।

मधूक—(न०) [√मह् + ऊक, नि० ह्रस्व ध:] महुए का फूल; 'दूर्वावता पाण्डुमधूकदाम्ना' कु० ७.१४ । (पुं०) महुए का पेड़ । मुलेठी । भ्रमर ।

मधूल– (पुं०) [मधु√उर्+क, रस्य लत्वम्] जल महुए का पेड़ ।

मधूलिका—(स्त्री०) [मधूल + कन्—टाप्, इत्व] मूर्वा । मुलेठी । मधूली (गेहूँ) से बनायी हुई शराब ।

मधूली—(स्त्री०) [मधूल+ङीप्] आम का पेड़ । पानी में पैदा होने वाली मुलेठी । मध्य देश का गेहूँ ।

मध्य—(वि०) [√मह् +यक्, नि० ह्रस्व ध:] बीच का, मध्यवर्ती । मझोला, दरमियानी । मातदिल । तटस्थ, निरपेक्ष । ठीक, उचित । (न०,पुं०), बीच, मध्य का भाग । शरीर का मध्य भाग, कमर । किसी वस्तु का भीतर का भाग । मध्यावस्था । घोड़े की कोख या बक्खी । संगीत में एक सप्तक जिसके स्वरों का उच्चारण वक्षस्थल से कण्ठ के भीतर के स्थानों से किया जाता है । साधारणत: इसे बीच का सप्तक मानते हैं । (न०)दस परार्ध की संख्या ।—**अङ्गुलि** (मध्याङ्गुलि),—**अङ्गुली** (मध्याङ्गुली)-(स्त्री०) हाथ की बीच की उँगली ।—**अह्न** (मध्याह्न)-(पुं०) दोपहर ।—**कर्ण**-(पुं०) वे रेखाएँ जो किसी वृत्त के केन्द्र से परिधि तक खींची जाती हैं ।—**गत**-(वि०) बीच का, मध्यवर्ती ।—**गन्ध** (पुं०) आम का पेड़ ।—**ग्रहण**-(न०) चन्द्र अथवा सूर्य के ग्रहण का मध्यकाल । —**दिन** (मध्यन्दिन)-(न०) दोपहर ।—**देश** -(पुं०) कमर । पेट, उदर । हिमालय और विन्ध्य गिरि के बीच का देश । इसकी

सीमा पुराणों में इस प्रकार है—उत्तर में हिमालय, दक्षिण में विन्ध्याचल, पश्चिम में कुरुक्षेत्र और पूर्व में प्रयाग। प्राचीन काल में यही देश आर्यों का प्रधान निवासस्थान था और बहुत पवित्र माना जाता था। मध्याह्न रेखा। —**देह**–(पुं०) उदर, पेट। —**पदलोपिन्**–(पुं०) दे० 'मध्यमपदलोपिन्'। —**प्रीत**–(पुं०) जान-पहचान, परिचय। —**भाग**–(पुं०) बीच का हिस्सा। कमर। —**यव**–(पुं०) प्राचीन काल का एक परिमाण जो छौली सरसों के बराबर होता था। —**रात्र**–(पुं०), —**रात्रि**–(स्त्री०) अर्द्धरात्रि। —**रेखा**–(स्त्री०) ज्योतिष और भूगोल शास्त्र में वह रेखा जिसकी कल्पना देशान्तर निकालने के लिये की जाती है। यह रेखा उत्तर दक्षिण मानी जाती है और उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुवों को काटती हुई एक वृत्त बनाती है। —**लोक**–(पुं०) पृथिवी। —**वयस्**–(वि०) अधेड़ उम्र का। —**वर्तिन्**–(वि०) बीच का, जो मध्य में हो। (पुं०) पंच, बीच में पड़ने वाला। —**वृत्त**–(न०) नाभि। —**सूत्र**–(न०) दे० 'मध्यरेखा'। —**स्थ**–(वि०) मध्यवर्ती। मझोला। उदासीन, तटस्थ। (पुं०) दो में झगड़ा होने पर बीच में पड़ कर उस झगड़े का निपटाने वाला व्यक्ति। शिव जी की उपाधि। —**स्थल**–(न०) मध्य भाग। बीच की जगह। कमर। —**स्थान**–(न०) बीच की जगह। अन्तरिक्ष।

मध्यतस्—(अव्य०) [मध्य+तस्] बीच से। बीच में।

मध्यम—(वि०) [मध्ये भवः, मध्य+म] मध्यवर्ती, बीच का। मझोला। निरपेक्ष, पक्षपात-शून्य। (पुं०) संगीत कला के सप्त स्वरों में से चौथा स्वर। एक राग का नाम। मध्य देश। व्याकरण में मध्यम पुरुष। तटस्थ राजा; 'धर्मोत्तरम्मध्यममाश्रयन्ते' र० १३.७। वह उपपति जो नायिका के कुपित होने पर अपना अनुराग न प्रकट करे और उसकी चेष्टाओं से उसके मन का भाव भाँप ले। साहित्य में तीन प्रकार के नायकों में से एक। सूबेदार। (न०) कमर। —**अङ्गुलि** (मध्यमाङ्गुलि)–(पुं०) हाथ की बीच की उँगली। —**कक्षा**–(स्त्री०) बीच का आँगन या सहन। —**जात**–(वि०) मझला, दो के बीच का उत्पन्न। —**पदलोपिन्**–(पुं०) व्याकरण में वह समास जिसमें प्रथम पद से द्वितीय पद का सम्बन्ध बतलाने वाला शब्द लुप्त या समास से अध्याहृत रहता है, लुप्तपद-समास। —**पाण्डव**–(पुं०) अर्जुन। —**पुरुष**–(पुं०) व्याकरणानुसार तीन पुरुषों में से वह पुरुष जिससे बात की जाय, वह पुरुष जिससे कुछ कहा जाय। —**भृतक**–(पुं०) किसान, खेतिहर। —**रात्र**–(पुं०) आधीरात। —**लोक**–(पुं०) बीच का लोक अर्थात् पृथिवी। —**संग्रह**–(पुं०) पुष्पादि साधारण वस्तुओं की भेंट भेजकर, दूसरे की स्त्री को अपने ऊपर अनुरक्त बना लेना। [व्यासस्मृति के अनुसार—'प्रेषणं गन्धमाल्यानां धूपभूषणवाससाम्। प्रलोभनं चान्नपानैर्मध्यमः संग्रहः स्मृतः॥']—**साहस**–(पुं०) मनुस्मृति के अनुसार पाँच सौ पण तक का अर्थदण्ड या जुरमाना। —**स्थ**–(वि०) मध्यस्थित, बीच का।

मध्यमक—(वि०) [स्त्री०—मध्यमिका] [मध्यम+कन्] बीच का, बीचों बीच का मझला।

मध्यमा—(स्त्री०) [मध्यम+टाप्] हाथ के बीच की उँगली। वह सयानी लड़की जो विवाह योग्य हो गयी हो। कमलगट्टा। वह नायिका जो अपने प्रियतम के प्रेम या दोष के अनुसार उसका आदर-मान या अपमान करे। स्त्री जो अपनी जवानी की उम्र के बीच पहुँची हो।

मध्यमिका—(स्त्री०) [मध्यम + कन्—टाप्, इत्व] लड़की जो विवाह योग्य हो गयी हो।

मध्या—(स्त्री०) [मध्य + टाप्] बिचली उँगली। रजःप्राप्त स्त्री। वह नायिका जिसमें काम और लज्जा समान हों।

मध्व—(पुं०) दक्षिण भारत के एक प्रसिद्ध वैष्णवसम्प्रदायाचार्य और माध्वसम्प्रदाय के प्रवर्तक। इनको लोग वायु का अवतार मानते हैं। इनके बनाये बहुत से ग्रंथ और भाष्य हैं। इनके सिद्धान्तानुसार सर्वप्रथम एक मात्र नारायण थे। उन्हीं से समस्त जगत् तथा देवतादि की उत्पत्ति हुई। ये जीव और ईश्वर की पृथक्-पृथक् सत्ता मानते हैं। इनके दर्शन को पूर्णप्रज्ञ दर्शन कहते हैं और इनके सिद्धान्त को मानने वाले इनके सम्प्रदाय के लोग माध्व कहलाते हैं।

मध्वक—(पुं०) मधुमक्खी।

मध्विजा—(स्त्री०) [मधु ईजते प्राप्नोति कारणत्वेन, मधु√ईज्+क, पृषो० ह्रस्वः] कोई भी नशीली चीज जो पियी जाय। शराब, मदिरा।

मन्—दि० आत्म० सक० जानना। मन्यते, मंस्यते, अमंस्त। त० आत्म० सक० जानना। मनुते। मनिष्यते, अमत—अमनिष्ट। भ्वा० पर० सक० पूजा करना। अक० अहंकार करना। मनति, मनिष्यति, अमनीत्—अमा-नीत्।

मनन—(न०) [√मन् + ल्युट्] चिन्तन। बुद्धि। तर्क द्वारा निकाला हुआ परिणाम। कल्पना।

मनस्—(न०) [मन्यते बुध्यते अनेन, √मन् + असुन्] प्राणियों में वह शक्ति जिसके द्वारा उनको वेदना, सङ्कल्प, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न बोध और विचार आदि का अनुभव होता है, अन्तःकरण, चित्त। न्याय में मन को एक द्रव्य और आत्मा या जीव से भिन्न माना है। वैशेषिक दर्शन में मन को एक अप्रत्यक्ष द्रव्य माना है। संख्या, परिणाम, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व और संस्कार मन के गुण बतलाये गये हैं। मन अणु-रूप है।—**अधिनाथ** (**मनोऽधिनाथ**)—(पुं०) प्रेमी। पति।—**अनवस्थान** (**मनोऽनवस्थान**)—(न०) चित्त की अनवधानता।—**अनुग** (**मनोऽनुग**)—(वि०) मन का अनुगामी, मन के अनुसार चलने वाला।—**अपहारिन्** (**मनोपहारिन्**)—(वि०) मन को हरने वाला। मन को वश में करने वाला।—**कान्त** (**मनस्कान्त** या **मनःकान्त**)—(वि०) मन को प्रिय।—**क्षेप** (**मनःक्षेप**)—(पुं०) मन की विकलता।—**गत** (**मनोगत**)—(वि०) मन में वर्तमान, मन का, भीतरी, गुप्त; 'मनोगतं सा न शशाक शंसितुं' कु० ५.५१। मन पर प्रभाव डालने वाला। (न०) अभिलाषा। विचार। धारणा।—**गति** (**मनोगति**)—(स्त्री०) हृदयाभिलाष। मन की गति।—**गवी** (**मनोगवी**)—(स्त्री०) इच्छा, कामना।—**गुप्ता** (**मनोगुप्ता**)—(स्त्री०) लाल मैनसिल।—**ज** (**मनोज**),—**जन्मन्** (**मनोजन्मन्**)—(वि०) मन से उत्पन्न। (पुं०) कामदेव।—**जव** (**मनोजव**)—(वि०) मन के समान वेगवान्। विचार करने या कोई बात समझने में फुर्तीला। पितृतुल्य।—**जात** (**मनोजात**)—(वि०) मन से उत्पन्न।—**जिघ्र** (**मनोजिघ्र**)—(वि०) मन की बात को तोड़ने वाला।—**ज्ञ** (**मनोज्ञ**)—(वि०) सुन्दर, मनोहर। (पुं०) गन्धर्व का नाम।—**ज्ञा** (**मनोज्ञा**)—(स्त्री०) मनोहरा; 'इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी' श० १.२०। मैनसिल। बाँझ ककोड़ा। जातीपुष्प। मदिरा। राजकुमारी।—**ताप** (**मनस्ताप**),—**पीड़ा** (**मनःपीड़ा**)—(स्त्री०) मानसिक कष्ट। पश्चात्ताप।—**तुष्टि** (**मनस्तुष्टि**)—(स्त्री०) मन का सन्तोष।—

तोका (मनस्तोका)– (स्त्री०) दुर्गा ।—दण्ड (मनोदण्ड)–(पुं०) मन पर पूर्ण अधिकार ।—दाह (मनोदाह) –(पुं०) मानसिक पीड़ा ।—नीत (मनोनीत)–(वि०) मन के अनुकूल । चुना हुआ ।—पति (मनःपति)–(पुं०) विष्णु । पूत (मनःपूत)–(वि०) जो मन से पवित्र माना गया हो, जिसको चित्त ने मान लिया हो । शुद्ध मन का ।—प्रीति (मनःप्रीति)–(स्त्री०)मानसिक सन्तोष, हर्ष ।—भव (मनोभव),—भू (मनोभू)–(पुं०) कामदेव । प्रेम ।—मथन (मनोमथन)–(पुं०) कामदेव ।—यायिन् (मनोयायिन्)–(वि०) अपनी इच्छानुसार चलने वाला । फुर्तीला ।—योग (मनोयोग)–(पुं०) मन की एकाग्रता, मन को एकाग्र करके किसी ओर उसको लगाना ।—योनि (मनोयोनि)–(पुं०)कामदेव ।—रञ्जन (मनोरञ्जन)–(न०) मन को प्रसन्न करने की क्रिया । दिल-बहलाव, मनोविनोद ।—रथ (मनोरथ)–(पुं०) अभिलाषा, इच्छा, कामना ।—रम (मनोरम)–(वि०)मनोज्ञ, मनोहर, सुन्दर ।—रमा (मनोरमा)–(स्त्री०) सुन्दर स्त्री । एक प्रकार का रोगन ।—राज्य (मनोराज्य) –(स्त्री०) कल्पनासृष्टि, खयाली पुलाव ।— लय (मनोलय)–(पुं०) मन का नाश । विवेक का नष्ट होना ।—लौल्य (मनोलौल्य)–(न०) मन की चंचलता या लहर ।—वृत्ति (मनोवृत्ति)–(स्त्री०) चित्त की वृत्ति, मनोविकार ।—वेग (मनोवेग)–(पुं०) विचार करने में फुर्तीलापन ।—व्यथा (मनोव्यथा)–(स्त्री०) मानसिक कष्ट ।— शिल (मनःशिल)–(पुं०),—शिला (मनःशिला)–(स्त्री०) मैनसिल ।—संस्कार (मनःसंस्कार)—(पुं०) मन पर पड़ने वाला प्रभाव । मन का परिष्कार ।—हत (मनोहत)–(वि०) हताश ।—हर (मनोहर)–(वि०) मन को हरने वाला, चित्त को आकर्षित करने वाला । (पुं०) कुन्दपुष्प । (न०) सोना ।—हर्तृ (मनोहर्तृ),— हारिन् (मनोहारिन्)–(वि०) मन को चुराने वाला, मनोहर, मनोज्ञ ।—हारी (मनोहारी)–(स्त्री०) असती या छिनाल स्त्री ।—ह्लाद (मनोह्लाद)–(पुं०) मन की प्रसन्नता ।—ह्वा (मनोह्वा)—(स्त्री०) मनःशिला, मैनसिल ।

मनसा—(स्त्री०) [मनः भक्ताभीष्टपूरणाय मननम् अस्ति अस्याः मनस्+अच्—टाप्] कश्यप की एक लड़की का नाम जो सर्पराज अनन्त की बहिन और जरत्कारु की भार्या थी । इसको मनसादेवी भी कहते हैं ।

मनसिज—(पुं०) [मनसि जायते, √जन्+ड, सप्तम्या अलुक्] कामदेव । प्रेम ।

मनसिशय—(पुं०) [मनसि शेते, √शी+अच्, सप्तम्या अलुक्]कामदेव; 'मनसिशयमहास्त्रम्' शि० ७.२ ।

मनस्तः—(अव्य०) [मनस्+तस्] मन से, हृदय से ।

मनस्विन्—(वि०) [प्रशस्त मनः अस्ति अस्य, मनस्+विनि] बुद्धिमान् । प्रतिभाशाली । ऊँचे मन का । दृढ़ मन का ।

मनस्विनी—(स्त्री०) [मनस्विन् + ङीप्] उदार मन की या अभिमानिनी स्त्री । बुद्धिमती या सती स्त्री । दुर्गा का नाम ।

मनाक्—(अव्य०) [√मन् + आक] थोड़ा, कम, अल्प मात्रा में । मन्द-मन्द, धीरे-धीरे । —कर–(वि०) कम करने वाला । (न०) अगर काष्ठ ।

मनाका—(स्त्री०) [√मन् + आक—टाप्] हथिनी ।

मनित—(वि०) [√ मन् + क्त] जाना हुआ, समझा हुआ । माना हुआ ।

मनीक—(न०) [√मन्+कीकन्] सुर्मा। अञ्जन।

मनीषा—(स्त्री०) [मनस: ईषा, ष० त०, शक० पररूप] अभिलाषा, कामना। बुद्धि। विचार, खयाल।

मनीषिका—(स्त्री०) [मनीषा + कन्—टाप्, ह्रस्व, इत्व] समझ, बुद्धि।

मनीषित—(वि०) [मनीषा+इतच् वा मनस् √ईष्+क्त] अभिलषित, वांछित। अनुकूल। (न०) अभिलाषा। अभिलषित पदार्थ; 'मनीषितं द्यौरपि येन दुग्धा' र० ५.३३।

मनीषिन्—(वि०) [मनीषा+इनि] बुद्धिमान्। विचारवान्। (पुं०) बुद्धिमान् या विद्वान् जन। विचारशील पुरुष।

मनु—(पुं०) [√मन्+उ] ब्रह्मा के पुत्र जो मानव जाति के मूलपुरुष माने जाते हैं। चौदह मनु। पुराणों के अनुसार तथा सूर्यसिद्धान्त नामक ग्रन्थ के अनुसार एक कल्प में १४ मनुओं का अधिकार होता है और उनके अधिकार काल को मन्वन्तर कहते हैं:—चौदह मनुओं के नाम ये हैं:—१ स्वायंभुव, २ स्वारोचिष, ३ औत्तमि, ४ तामस, ५ रैवत, ६ चाक्षुष, ७ वैवस्वत, ८ सावर्णि, ९ दक्ष-सावर्णि, १० ब्रह्मसावर्णि, ११ धर्मसावर्णि, १२ रुद्रसावर्णि, १३ रौच्यदेवसावर्णि, १४ इन्द्र-सावर्णि। चौदह की संख्या। मनुष्य। जिनभेद। मंत्र। (स्त्री०) मनु की पत्नी। वन-मेथी।—**अन्तर** (**मन्वन्तर**)–(न०) मनु की आयु का काल, एक मनु के रहने की अवधि। यह इकहत्तर चतुर्युगी का होता है। इसमें मानवी गणना से ४३,२०,००० वर्ष और ब्रह्मा के एक दिन का चौदहवाँ भाग होता है।—**ज**–(पुं०) मनुष्य, मानव जाति।—**ज्येष्ठ**–(पुं०) तलवार।—**राज्**–(पुं०) कुबेर का नामान्तर।—**श्रेष्ठ**–(पुं०) विष्णु का नामान्तर।—**संहिता**–(स्त्री०) धर्मशास्त्र का एक प्रसिद्ध ग्रन्थ जो मनु का बनाया हुआ है, मनुस्मृति।—**स्मृति**—(स्त्री०) दे० 'मनुसंहिता'।

मनुष्य—(पुं०) [मनो: अपत्यम्, मनु +यत्, षुक् आगम] आदमी, मानव, इन्सान।—**इन्द्र** (**मनुष्येन्द्र**),—**ईश्वर** (**मनुष्येश्वर**)–(पुं०) राजा।—**जाति**–(पुं०) मानव जाति।—**देव**–(पुं०) नरेन्द्र, राजा। ब्राह्मण।—**धर्मन्**–(पुं०) कुबेर।—**मारण**–(न०) नरहत्या।—**यज्ञ**–(पुं०) आतिथ्य-सत्कार।—**लोक**–(पुं०) मर्त्य लोक।—**विश्**,—**विशा**–(स्त्री०) मानव जाति।—**शोणित**–(न०) मनुष्य का रक्त।—**सभा**–(स्त्री०) मनुष्यों की सभा। मनुष्य-समुदाय।

मनोमय—(वि०) [मनस् + मयट्] मानसिक, मनोरूप।—**कोश**,—**कोष**–(पुं०) वेदान्त दर्शन के अनुसार पाँच कोशों में से तीसरा; मन, अहङ्कार और कर्मेन्द्रियाँ, इस कोश के अन्तर्गत हैं।

मन्तु—(पुं०) [√मन् + तुन्] अपराध; 'मुग्धैव मन्तून्परिकल्प्य' मा० २.१३। मनुष्य। प्रजापति।

मन्तृ—(पुं०) [√मन् + तृच्] विद्वान्। मननकर्ता।

√मन्त्र्—चु० आत्म० सक० सलाह लेना। सलाह देना। अभिमन्त्रित करना। कहना, बोलना। मन्त्रयते, मन्त्रयिष्यते, अमन्त्रत।

मन्त्र—(पुं०) [√मन्त्र्+घञ् वा अच्] वह शब्द या शब्द-समूह जिससे किसी देवता की सिद्धि या अलौकिक शक्ति की प्राप्ति हो। वैदिक वाक्य। निरुक्त के अनुसार वैदिक मंत्र तीन प्रकार के माने जाते हैं। यथा परोक्ष-कृत, प्रत्यक्षकृत और आध्यात्मिक। वेदों का मंत्रभाग जो ब्राह्मण भाग से भिन्न है। गुप्त वार्ता, कान में कही जाने वाली बात, सलाह,

मंत्रणा ।—आराधन (मन्त्राराधन)–(न०) मंत्र की सिद्धि के लिये की जाने वाली आराधना ।—उदक (मन्त्रोदक),—जल,—तोय,—वारि–(न०) मंत्र से अभिमंत्रित जल ।—उपष्टम्भ (मन्त्रोपष्टम्भ)–(पुं०) परामर्श द्वारा समर्थन करना ।—करण–(न०) वेदसंहिता । वेदपारायण ।—कार–(पुं०) मंत्रद्रष्टा ऋषि ।—काल–(पुं०) परामर्श का समय ।—कुशल–(वि०) परामर्श देने में निपुण ।—कृत्–(पुं०) वेद का रचयिता । वेदपाठी । परामर्शदाता । दूत, एलची । —गण्डक–(पुं०) विज्ञान । विद्या ।—गुप्ति–(स्त्री०) गुप्तपरामर्श । —गूढ–(पुं०) गुप्तचर, जासूस ।—जिह्व–(पुं०) अग्नि ।—ज्ञ–(पुं०) मंत्री । पण्डित ब्राह्मण । गुप्तचर, जासूस ।—द, —दातृ–(पुं०) दीक्षा या मंत्रदाता गुरु । —दर्शिन्–(पुं०) मंत्रद्रष्टा ऋषि । वेदवित्, वेदज्ञ ।—दीधिति–(पुं०) अग्नि । —दृश्–(पुं०) मंत्रद्रष्टा । परामर्शदाता ।—देवता–(स्त्री०) वह देवता जिसका किसी मंत्र में आह्वान किया गया हो ।—धर–(पुं०) परामर्शदाता, मंत्री ।—निर्णय–(पुं०) विचार करने के पीछे अन्तिम फैसला । —पूत–(वि०) मंत्र द्वारा पवित्र किया हुआ ।—प्रयोग–(पुं०) प्रयुक्ति—(स्त्री०) मंत्र से काम लेना ।—बीज,— बीज–(न०) किसी मंत्र का प्रथमाक्षर । मूलमंत्र । —भेद–(पुं०) सलाह का प्रकट कर देना ।—मुग्ध–(वि०) मंत्र से मोहित, वश किया हुआ । जड़वत् ।—मूर्ति–(पुं०) शिव जी ।—मूल–(न०) इन्द्रजाल, जादू । राज्य । —योग–(पुं०) मंत्र का प्रयोग । तंत्र ।— विद्या–(स्त्री०) मंत्र-तंत्र की विद्या ।— संस्कार–(पुं०) मंत्र पढ़कर किया जाने वाला संस्कार । विवाह । मंत्रग्रहण के पूर्व किया जाने वाला उसका तंत्रोक्त संस्कार (जनन, जीवन, अभिषेक आदि) ।—संहिता–(स्त्री०) वेदों का वह अंश जिसमें मंत्रों का संग्रह है ।—साधक–(पुं०) तांत्रिक ।—सिद्धि–(स्त्री०) मंत्र का सिद्ध होना, मंत्र द्वारा प्राप्त शक्ति ।

मन्त्रण—(न०), —**मन्त्रणा**–(स्त्री०) [√मन्त्र् +णिच्+ल्युट्] [√मन्त्र्+णिच् + युच्] सलाह-मशविरा करना । परामर्श, सलाह ।

मन्त्रित—(वि०) [√मन्त्र्+णिच्+क्त] मंत्र द्वारा संस्कृत, अभिमंत्रित । परामर्श किया हुआ । कहा हुआ ।

मन्त्रिन्—(पुं०) [मन्त्र + इनि वा √मन्त्र् +णिनि] जिसके साथ एकांत में परामर्श किया जाय, सचिव, अमात्य । राज्य के किसी विभाग का वह प्रधान अधिकारी जिसकी सलाह से उस विभाग का कार्य-संचालन हो ।—धुर– (वि०) सचिव के पद का दायित्व उठा लेने योग्य ।—पति, —प्रधान, —प्रमुख,— वर,— श्रेष्ठ–(पुं०) प्रधान सचिव या अमात्य । —प्रकाण्ड–(पुं०) श्रेष्ठ सचिव ।—श्रोत्रिय–सचिव जो वेदवित् हो ।

√मन्थ्—भ्वा० पर० सक० मथना, बिलोना । हिलाना । पीस डालना । पीड़ित करना, सन्तप्त करना । घायल करना । नाश करना, वध करना । चीरना, फाड़ना । मन्थति, मन्थिष्यति, अमन्थीत् । क्र्या० पर० सक० बिलोना । मथ्नाति ।

मन्थ—(पुं०) [√मन्थ् + घञ्] मंथन, बिलोना; 'मन्थादिव क्षुभ्यति गाङ्गमम्भः' उत्त० ३.१६ । वध करना । शरबत जिसमें कई वस्तुएँ मिली हों । मथानी । सूर्य की किरण । आँख का कीचड़ । आँख का जाला या मोतिया-बिन्द । यंत्र जिससे आग उत्पन्न की जाती है ।—अचल (मन्थाचल),—अद्रि (मन्थाद्रि),—गिरि, —पर्वत,

—शैल- (पुं०) मन्दराचल पर्वत ।—उदक (मन्थोदक),—उदधि (मन्थोदधि) -(पुं०) क्षीरसागर, दूध का समुद्र ।—गुण-(पुं०) मथन-दण्ड की रस्सी ।—ज-(न०) मक्खन ।—दण्ड, —दण्डक-(पुं०) मथानी, रई ।

मन्थन—(पुं०) [√मन्थ् + ल्युट्] मथानी, रई । (न०) मथना, गड़बड़ करना । दो लकड़ियों को रगड़ कर आग उत्पन्न करना ।—घटी-(स्त्री०) मथन करने का बरतन ।

मन्थनी—(स्त्री०) [मन्थन+ङीप्] वह बरतन जिसमें मथानी डालकर मथा जाय ।

मन्थर—(वि०) [√मन्थ् + अरन्] सुस्त, अक्रियाशील । मूर्ख । मन्द स्वर वाला; 'मन्मथमन्थरा भाषिणः' शि० ६.४० । लंबा । झुका हुआ, टेढ़ा । चौड़ा । भारी । नीच । (पुं०) भाण्डार, धनागार । सिर के बाल । कोप । ताजा मक्खन । मथानी । बाधा, अड़चन । दुर्ग । फल । गुप्तचर । बैशाख मास । मन्दराचल । बारहसिगा । (न०) कुसुम का फूल ।

मन्थरा—(स्त्री०) [मन्थर +टाप्] कैकेयी की कुबड़ी चेरी, जिसने उसे भड़का कर, श्रीरामचन्द्र जी को १४ वर्ष का वनवास दिलवाया था ।

मन्थाद्—(पुं०) [√मन्थ्+आह] पवन जो चँवर डुलाने से निकले ।

मन्थान—(पुं०) [√मन्थ्+आनच्] मथानी, रई । शिव जी । मंदर पर्वत । अमलतास ।

मन्थानक—(पुं०) [मन्थान + कन्] एक प्रकार की घास ।

मन्थिन्—(वि०) [√मन्थ्+णिनि वा मन्थ +इनि] मथने वाला । सन्तापकारक । (पुं०) वीर्य ।

मन्थिनी—(स्त्री०) [मन्थिन्+ङीप्] वह बरतन जिसमें कोई तरल पदार्थ मथा जाय ।

√मन्द्—भ्वा० आत्म० अक० (वैदिक) नशे में होना । प्रसन्न होना । सुस्त पड़ना । चमकना । मन्द चाल से चलना । मन्दते, मन्दिष्यते, अमन्दिष्ट ।

मन्द—(वि०) [मन्द्+अच्] धीमा, सुस्त, काहिल, दीर्घसूत्री । उदासीन, तटस्थ । मूर्ख, मंदबुद्धि का,निर्बल मस्तिष्कवाला; 'द्विपन्ति मन्दाश्चरितं महात्मनाम्' कु० ५.७५ । नीचा, गहरा । खोखला, पोला । कोमल, मुलायम । छोटा । निर्बल । अभागा, दुःखी । कुम्हलाया हुआ, मुरझाया हुआ । दुष्ट, बदमाश । मद्य पीने को लालायित । (पुं०) शनिग्रह । यम । प्रलय । हाथी विशेष । (अव्य०) धीमे से, धीरे-धीरे । आहिस्ता से, उग्रता या प्रचण्डता से नहीं । हल्केपन से । मन्द स्वर से ।—अक्ष (मन्दाक्ष)-(वि०) कमजोर दृष्टि वाला । (न०) लज्जा का भाव, लज्जाशीलता ।—अग्नि (मन्दाग्नि)-(वि०) वह जिसकी पाचनशक्ति कम हो गयी हो । (पुं०) एक रोग जिसमें रोगी की पाचन-शक्ति कम हो जाती है ।—अनिल (मन्दानिल)-(पुं०) धीमा बहने वाला वायु ।—आक्रान्ता (मन्दाक्रान्ता)-(स्त्री०) सत्रह अक्षर के वर्णवृत्त का नाम ।—आत्मन् (मन्दात्मन्)-(वि०) मन्दबुद्धि, मूर्ख ।—आदर (मन्दादर) -(वि०) कम सम्मान प्रदर्शित करने वाला । अनादरवान ।—उत्साह (मन्दोत्साह) -(वि०) वह जिसका उत्साह कम हो ।—उदरी (मन्दोदरी)-(स्त्री०) रावण की पटरानी का नाम । इसकी गणना पाँच सती स्त्रियों में है ।—उष्ण (मन्दोष्ण)-(वि०) शीतोष्ण, गुन-गुना ।—कर्ण- (वि०) थोड़ा-थोड़ा बहरा ।—कान्ति-(पुं०) चन्द्रमा ।—ग-(पुं०) शनिग्रह ।—जननी-(स्त्री०) शनि की माता ।—समीर—हलकी, सुखद वायु ।

—स्मित–(न०),—हास–(पुं०), —हास्य–(न०) मुसकान ।

मन्दट—(पुं०) [मन्द√अट् + अच्, शक० पररूप] पारिभद्र या देवदारु वृक्ष । मूंगा का वृक्ष ।

मन्दन—(न०) [√मन्द् + ल्युट्] प्रशंसा । स्तोत्र ।

मन्दयन्ती—(स्त्री०) [√मन्द्+णिच्+शतृ –ङीप्] दुर्गा देवी ।

मन्दर—(वि०) [√मन्द्+अर]सुस्त, धीमा, काहिल । गाढ़ा, घना । लंबा । भारी डील का । (पुं०) मन्दराचल का नाम । मोतियों का हार । स्वर्ग । दर्पण । मंदार वृक्ष, इन्द्र के नन्दन कानन के पाँच वृक्षों में से एक ।—**आवास** (**मन्दरावास**),—**वासिनी**–(स्त्री०) दुर्गा का नामान्तर ।

मन्दसान—(पुं०) [√मन्द + सानच्] अग्नि । जीवन, आयु । निद्रा ।

मन्दा—(स्त्री०) [मन्द+टाप्] सूर्य की संक्रान्ति जो उत्तरफल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तर भाद्रपद और रोहिणी नक्षत्रों में पड़े ।

मन्दाक—(पुं०) [√मन्द् + आक] स्तुति । स्रोत, धारा ।

मन्दाकिनी—(स्त्री०) [मन्दम् अकितुं शीलम् अस्याः, मन्द √अक् + णिनि–ङीप्] पुराणानुसार गङ्गा की वह धारा जो स्वर्ग में है और जो ब्रह्मवैवर्त के अनुसार एक अयुत योजन लम्बी है; 'मन्दाकिन्याः सलिलशिशिरैः सेव्यमाना मरुद्भिः' मे० ६.७ ।

मन्दार—(पुं०) [√मन्द् + आरन्] मूंगे का वृक्ष । यह इन्द्र के नन्दन कानन के पाँच वृक्षों में से एक है । अर्क, मदार । धतूरा । स्वर्ग । हाथी । (न०) मूंगे के वृक्ष का फूल ।—**माला**–(स्त्री०) मंदार के फूलों का हार ।—**षष्ठी**–(स्त्री०) माघ शुक्ला षष्ठी ।

मन्दारक, मन्दारव, मन्दारु—(पुं०) [मन्दार+कन्] [मन्द–आ√रु + अच्] [√मन्द+आरु] दे० 'मन्दार' ।

मन्दिमन्—(पुं०) [मन्द+इमनिच्] धीमापन, सुस्ती । मूढ़ता, मूर्खता ।

मन्दिर—(न०) [√मन्द्+किरच्] रहने का घर । नगर । शिविर, छावनी । देवालय । —**पशु**–(पुं०) बिलार ।—**मणि**–(पुं०) शिव जी का नाम ।

मन्दिरा—(स्त्री०) [मन्दिर+टाप्] अस्तबल । मजीरा बाजा ।

मन्दुरा—(स्त्री०) [√मन्द् + उरच्–टाप्] अश्वशाला, घुड़साल । चटाई । गद्दा ।

मन्द्र—(वि०) [√मन्द्+रक्] गंभीर । प्रसन्न । आह्लादकारी । (पुं०, न०)गंभीर ध्वनि । संगीत के तीन स्वर-सप्तकों (मंद, मध्य, तार)में से पहला । एक प्रकार का ढोल, मृदङ्ग । हाथी विशेष ।

मन्मथ—(पुं०) [मनन् मत्√मन्थ्+अच्, पृषो० साधुः, वा √मन् +क्विप्, √मथ् +अच्, मन्–मथ, ष० त०] कामदेव । प्रेम । कैथा ।—**आनन्द** (**मन्मथानन्द**)–(पुं०) आम विशेष का वृक्ष ।—**आलय** (**मन्मथालय**)–(पुं०) आम का पेड़ । भग । —**प्रिया**–(स्त्री०) रति ।—**युद्ध**–(न०) स्त्री-सम्भोग ।—**लेख**–(पुं०) प्रेमपत्र ।

मन्मन—(पुं०) गुप्त कानाफूंसी । कामदेव ।

मन्यु—[√मन्+युच्] क्रोध, रोष । दुःख, शोक । दुर्दशा । अहंकार । स्तोत्र । कर्म । नीचता । यज्ञ । अग्नि । शिव ।

√मभ्र्—भ्वा० पर० सक० जाना । मभ्रति, मभ्रिष्यति, अमभ्रीत् ।

मम—(अव्य०) [विभक्ति प्रतिरूपक अव्यय, अस्मद् शब्दस्य षष्ठ्येकवचने रूपम्] मेरा । —**कार**–(पुं०)ममता, मैं-मेरापन । निजी संपत्ति ।

ममता—(स्त्री०) [मम+तल्—टाप्] मेरेपन का भाव, ममत्व, अपनापन। अभिमान, अहङ्कार। स्नेह।

ममत्व—(न०) [मम+त्व] दे० 'ममता'।

ममापताल—(पु०) [√मव्+आल, दलोप, मकारादेश, आपतुडागम] विषय।

मम्मट—(पु०) काव्यप्रकाश के रचयिता एक विद्वान् का नाम।

√मय्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। मयते, मयिष्यते, अमयिष्ट।

मय—(वि०) [स्त्री०—**मयी**] तद्धित का एक प्रत्यय जो तद्रूप, विकार और प्राचुर्य के अर्थ में शब्दों में जोड़ा जाता है; जैसे—'आनन्दमय'। (पु०) दैत्य जाति के एक शिल्पी का नाम। पाण्डवों के लिये सभा-भवन इसी ने बनाया था। दिति का पुत्र, जिसकी पुत्री मन्दोदरी रावण को ब्याही थी। [√मयते द्रुतं गच्छति, √मय्+अच्] घोड़ा। ऊँट। खच्चर, अश्वतर।

मयट—(पु०) [√मय्+अटन्] घास-फूस की झोपड़ी।

मयष्टक, मयुष्टक—(पु०) [=मकुष्टक, पृषो० साधुः] [मयून् मृगान् स्तकति प्रीणयति, मयु√स्तक्+अच्, षत्व] वनमूंग।

मयु—(पु०) [√मय्+कु वा मिनोति सुशब्दं करोति, √मि+उ] किन्नर। मृग, हिरन। —**राज**-(पु०) कुबेर का नाम।

मयूख—(पु०) [मापयन् गगनं प्रमापयन् खोखति गच्छति, पृषो० साधुः वा माति परिमातीव, √मा+ऊख, मयादेश] किरण; 'दंष्ट्रामयूखैः शकलानि कुर्वन्' र० २.४६। ज्वाला। सौन्दर्य। दीप्ति। धूपघड़ी की कील।

मयूर—(पु०) [मयूरिव रौति शब्दायते, मयू √रु+क, पृषो० साधुः वा मीनाति हन्ति सर्पान्, √मी+ऊरन्] मोर। पुष्प-विशेष। सूर्य-शतक के बनाने वाले कवि का नाम। —**अरि** (मयूरारि)-(पु०) छिपकली। —**केतु**-(पु०) कार्त्तिकेय। —**ग्रीवक**-(न०) तूतिया। —**चटक**-(पु०) गौरैया पक्षी। —**चूडा**-(स्त्री०) मयूरशिखा। —**जङ्घ**—(पु०) सोनापाढ़ा। —**तुत्थ**-(न०) तूतिया। —**रथ**-(पु०) कार्त्तिकेय। —**शिखा**-(स्त्री०) मोर की चोटी।

मयूरक—(न०) [मयूर+कन्] तूतिया। (पु०) मोर। तूतिया।

मयूरी—(स्त्री०) [मयूर+ङीष्] मयूर की मादा।

मरक—(पु०) [म्रियन्ते जना यस्मात्, √मृ+अप्+कन्] महामारी, हैजा। मृत्यु। दैवव्यसन। एक प्राचीन जाति।

मरकत—(न०) [मरकात् मारिभयात् तरन्त्यनेन, मरक √तृ+ड] पन्ना। —**मणि**-(पु०, स्त्री०) पन्ना। —**शिला**-(स्त्री०) पन्ना की सिल्ली; 'वापी चास्मिन् मरकतशिलाबद्धसोपानमार्गा' मे० ७६।

मरण—(न०) [मृ+ल्युट्] मृत्यु, मौत। विष विशेष। —**अन्त** (मरणान्त),—**अन्तक** (मरणान्तक)-(वि०) मृत्यु के साथ समाप्त होने वाला। —**अभिमुख** (मरणाभिमुख),—**उन्मुख** (मरणोन्मुख)-(वि०) जो मर रहा हो, मरणासन्न। —**धर्मन्**-(वि०) मरणशील, मर्त्य।

मरत—(पु०) [√मृ+अतन्] मृत्यु।

मरन्द—(पु०),—**मरन्दक**-(न०) [मरं मरणं द्यति खण्डयति भ्रमराणां जीवहेतुत्वात्, मर √दो+क वा=मकरन्द, पृषो० साधुः] [मरन्द+कन्] फूल का रस। —**ओकस्** (मरन्दौकस्)-(न०) फूल।

मरार—(पु०) [मरं मरणम् अलति निवारयति, मर√अल्+अण्, लस्य रत्वम्] अन्नभंडार। खलिहान।

मराल—(वि०) [√मृ+आलच्] चिकना। (पु०) [स्त्री०—**मराली**] हंस। बत्तख की तरह का जलचर पक्षी विशेष, कारण्डव।

घोड़ा । बादल । नयनाञ्जन, सुर्मा । अनार के वृक्षों की कुंज । बदमाश, दुष्ट ।

मरिच, मरीच—(न०) [म्रियते नश्यति श्लेष्मादिकम् अनेन, √मृ+इच] [√मृ+ईच] कालीमिर्च । (पुं०) कालीमिर्च का झाड़ ।

मरीचि—(पुं०, स्त्री०) [√मृ+ईचि] किरण । प्रकाश का अणु । मृगमरीचिका, मृगतृष्णा । (पुं०) एक ऋषि जो ब्रह्मा के पुत्र कहे जाते हैं और दस प्रजापतियों में इनकी गणना की जाती है । एक स्मृतिकार । श्रीकृष्ण का नाम । कंजूस ।—**तोय**—(न०) मृगतृष्णा । —**मालिन्** (वि०) जो किरणों से घिरा हो । (पुं०) सूर्य ।

मरीचिका—(स्त्री०) [मरीचि + कन् —टाप्] मृगतृष्णा, सिरोह ।

मरीचिन्—(पुं०) [मरीचि+इनि] सूर्य ।

मरु—(पुं०) [म्रियतेऽस्मिन्, √मृ+उ] रेगिस्तान, ऐसा देश जहाँ जल का अकाल-सा हो । पर्वत । एक देश और उसके अधिवासियों का नाम, मारवाड़, मारवाड़ी । कुरवक वृक्ष । मरुआ नामक पौधा ।—**उद्भवा** (**मरूद्भवा**)—(स्त्री०) कपास । जवासा । धमासा । छोटा बेर । ककड़ी ।—**कच्छ**—(पुं०) दक्षिण दिशा में स्थित देश-विशेष । —**द्विप**, —**प्रिय**—(पुं०) ऊँट ।—**धन्व**, —**धन्वन्**—(पुं०) मरुभूमि ।—**भू**—(स्त्री०) मरुभूमि । मारवाड़ देश ।—**भूमि**—रेगिस्तान, जल-रहित रेतीला मैदान ।—**सम्भवा**—(स्त्री०) महेन्द्रवारुणी । छोटा जवासा । एक तरह का खदिर ।—**स्थल**—(न०), —**स्थली**—(स्त्री०) रेगिस्तान, रेतीला मैदान ।

मरुक—(पुं०) मोर ।

मरुत्—(पुं०) [म्रियते प्राणी यस्याभावात्, √मृ+उति] पवन; 'दिशः प्रसेदुर्मरुतो ववुः सुखाः' र० ३.१४ । पवन का अधिष्ठाता देवता । देवता; 'वैमानिकानाम्मरुतामपश्यत्' र० ६.१ । मरुवक नामक पौधा । (न०) ग्रन्थिपर्णि नामक वृक्ष ।—**आन्दोल** (**मरुदान्दोल**)—(पुं०) हिरन या भैंसे के चाम का बना पंखा ।—**कर्मन्**—(न०) —**क्रिया**—(स्त्री०) अफरा, पेट का फूलना ।—**गण** (**मरुद्गण**)—(पुं०) देवताओं का समुदाय । —**तनय**,—**पुत्र**, —**सुत**, —**सूनु**—(पुं०) हनुमान् । भीम । —**पट**—(पुं०) नाव का पाल ।—**पति**, —**पाल**—(पुं०) इन्द्र ।—**पथ**—(पुं०) आकाश, अन्तरिक्ष ।—**प्लव**—(पुं०) सिंह ।—**फल**—(न०) ओला ।—**बद्ध** (**मरुद्बद्ध**)—(पुं०) विष्णु । यज्ञीय पात्र विशेष ।—**लोक** (**मरुल्लोक**)—(पुं०) वह लोक जिसमें देवता रहते हैं ।—**वर्त्मन्** (**मरुद्वर्त्मन्**)—(न०) आकाश, अन्तरिक्ष । —**वाह** (**मरुद्वाह**)—(पुं०) धूम । अग्नि । —**सख**—(पुं०) पवन । इन्द्र ।

मरुत—(पुं०) [√मृ + उत] पवन । देवता ।

मरुत्त—(पुं०) [मरुत्+तप्] एक चन्द्रवंशी राजा का नाम जिसके यज्ञ में देवता आकर काम करते थे ।

मरुतक—(पुं०) [मरुदिव तकति हसति, मरुत् √तक्+अच्] मरुआ नामक पौधा । देवदारु वृक्ष ।

मरुत्वत्—(पुं०) [मरुत्+मतुप्, मस्य वः] बादल । इन्द्र । हनुमान् ।

मरुल—(पुं०) [√मृ + उल] कारंडव पक्षी ।

मरुव—(पुं०) [मरु √वा+क] दौनामरुआ । राहु का नामान्तर ।

मरुवक—(पुं०) [मरुव+कन्] दौनामरुआ । नीबू विशेष । चीता । राहु । सारस ।

मरूक—(पुं०) [म्रियते इव भयशीलत्वात्, √मृ+ऊक] मोर । बारहसिंगा विशेष ।

√मर्क्—भ्वा० पर० सक० जाना । मर्कति, मर्किष्यति, अमर्कीत् ।

मर्क—(पुं०) [√मर्क् +अच्] शरीर । वायु । बंदर ।

मर्कट—(पुं०) [√मर्क्+अटन्] बंदर । मकड़ा । सारस । स्त्रीसम्भोग का आसन विशेष । एक स्थावर विष ।—**आस्य** (**मर्कटास्य**)–(वि०) बंदर के जैसा मुँह वाला । (न०) बंदर का मुँह । तांबा ।—**इन्दु** (**मर्कटेन्दु**)–(पुं०) कुचिला ।—**तिन्दुक**–(पुं०) आबनूस-विशेष, कुपीलु ।—**पोत**–(पुं०) बंदर का बच्चा ।—**वास**–(पुं०) मकड़ी का जाला ।—**शीर्ष**–(पुं०) हिंगुल ।

मर्कटक—(पुं०) [मर्कट + कन्] लंगूर । मकड़ा । एक जाति की मछली । अनाज विशेष ।

मर्करा—(स्त्री०) [√मर्क् +अर–टाप्] बरतन, पात्र । सुरंग । बांझ स्त्री ।

√मर्च्—चु० पर० सक० लेना । साफ करना । शब्द करना । मर्चयति, मर्चयिष्यति, अममर्चत् ।

मर्जू—(पुं०) [√मृज्+ऊ] धोबी । दे० भी - मर्द' । (स्त्री०) सफाई, पवित्रता ।

मर्त—(पुं०) [√मृ+तन्] मानव । मर्त्यलोक ।

मर्त्य—(वि०) [मर्त+यत्] मरणशील । (न०) शरीर । (पुं०) मनुष्य । मर्त्यलोक, भूलोक ।—**धर्म**–(पुं०) विनश्वरता ।—**धर्मन्**–(वि०) मरणशील ।—**निवासिन्**–(पुं०) मानव, मनुष्य ।—**भाव**–(पुं०) मनुष्य- स्वभाव ।—**भुवन**–(न०) मनुष्य-लोक ।—**महित** –(पुं०) ईश्वर ।—**मुख** –(पुं०) किन्नर ।—**लोक**–(पुं०) भूलोक, मनुष्यलोक । ; 'क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति' भग० ९.२१ ।

मर्द—(वि०) [√मृद् +घञ्] कुचलने वाला । कूटने वाला । पीसने वाला । नाश करने वाला । (पुं०) [√मृद्+घञ्] पीसना । कूटना । प्रचण्ड आघात ।

मर्दन—(वि०) [स्त्री०—**मर्दनी**] [√मृद् +ल्यु] कुचलने वाला । नाश करने वाला । (न०) [√मृद्+ल्युट्] कुचलना । पीसना । मालिश । लेप करना । दबाव डालना । पीड़ा देना । नाश करना, उजाड़ना ।

मर्दल—(पुं०) [मर्द √ ला+क] मृदङ्ग की तरह का एक प्राचीन बाजा ।

√मर्व्—भ्वा० पर० सक० जाना । मर्वति, मर्विष्यति, अमर्वीत् ।

मर्मन्—(न०) [√मृ+मनिन् (समास में न का लोप हो जाता है)] जीवनस्थान, शरीर का मर्मस्थल । शरीर का सन्धिस्थान । रहस्य, तत्त्व । तात्पर्य । गूढ़ार्थ ।—**कील**–(पुं०) भर्ता, पति ।—**ग**–(वि०) मर्मभेदी, तीव्र ।—**घ्न**–(वि०)मर्म पर आघात करने वाला, अत्यंत कष्टदायी ।—**चर**–(न०) हृदय ।—**च्छिद्**, —**भिद्**–(वि०) मर्म भेदने वाला, अत्यन्त पीड़ाकारक ।—**ज्ञ**–(वि०) वह जो किसी बात का मर्म या गूढ़ रहस्य जानता हो, तत्त्वज्ञ । भेद की बात जानने वाला, रहस्य का जानकार । (पुं०) प्रकाण्ड विद्वान् ।—**त्र**–(न०) कवच ।—**पारग**–(वि०) भली भांति जानने वाला, अभिज्ञ ।—**प्रहार** –(पुं०) मर्मस्थान पर किया गया आघात ।—**भेद**–(पुं०) मर्मस्थलों को छेदना । किसी की गुप्त बातों या कमजोरियों को प्रकट करना ।—**भेदन**–(पुं०), —**भेदिन्**–(पुं०) बाण, तीर ।—**स्थल**, —**स्थान**–(न०)शरीर के सन्धि-स्थान । कमजोरियाँ, निर्बलताएँ ।

मर्मर—(पुं०) [√मृ+अरन्, मुट्] मरमर, पत्तों या कलफदार कपड़े की खड़खड़ाहट ; 'तीरेषु तालीवनमर्मरेषु' र० ६.५७ ।

मर्मरी—(स्त्री०) [मर्मर+ङीष्] हल्दी । एक तरह का देवदारु ।

मर्मरीक—(पुं०) [√ मृ + ईकन्, नि० साधु:] निर्धन व्यक्ति, गरीब आदमी। दुष्ट मनुष्य।

मर्या—(स्त्री०) [√मृ+यत्—टाप्] सीमा, हद।

मर्यादा—(स्त्री०) [मर्या√दा+अङ—टाप्] सीमा, हद। अन्त, छोर। तट, किनारा। सीमा का चिह्न। नैतिक विधि। शिष्टता की मर्यादा। ठहराव।—**अचल (मर्यादाचल)**, —**गिरि**, —**पर्वत** –(पुं०) सीमा पर स्थित पहाड़, कुलाचल।—**भेदक**–(पुं०) क्षेत्र-सीमा-चिह्न को मिटाने वाला।

मर्यादिन्—(पुं०) [मर्यादा+इनि] पड़ोसी। सीमा पर रहने वाला।

√मर्व्—भ्वा० पर० सक० भरना, परिपूर्ण करना। मर्वति, मर्विष्यति, अमर्वीत्।

मर्श—(पुं०) [√मृश्+घञ्] विचार। परामर्श, सलाह। छींक लाने वाली वस्तु।

मर्शन—(न०) [√मृश्+ल्युट्] रगड़ना। मालिश। अनुसन्धान। विचार। परामर्श। स्थानान्तर-करण।

मर्ष—(पुं०), **मर्षण**–(न०) [√मृष्+घञ्] [√मृष्+ल्यु॒ट्] सहनशीलता। धैर्य।

मर्षित—(वि०) [√मृष्+क्त] सहा हुआ। क्षमा किया हुआ। (न०) सहनशीलता। धैर्य।

मर्षिन्—(वि०) [√मृष् + णिनि] सहन करने वाला। सहिष्णु।

√मल्—भ्वा० आत्म० सक० ग्रहण करना। अधिकार में करना। मलते, मलिष्यते, अमलिष्ट।

मल—(न०, पुं०) [मृज्यते शोध्यते, √मृज् +अलच्, टिलोप वा मलते धारयति व्याध्यादिदौर्गन्ध्यम्, √मल्+अच्] मैल, गंदगी। तलछट। धातुओं का मैल। पाप। शरीर से निकलने वाला मैल या विकार। (मनुस्मृति के अनुसार शरीर के बारह मल हैं—१ वसा। २ शुक्र। ३ रक्त। ४ मज्जा। ५ मूत्र। ६ विष्ठा। ७ कान का मैल। ८ नख। ९ श्लेष्मा या कफ। १० आँसू। ११ शरीर के ऊपर जमा हुआ मैल। १२ पसीना।) कपूर। समुद्रफेन। कमाया हुआ चमड़ा। चमड़े के बने वस्त्र। (न०) मिलावटी धातु विशेष।—**अपकर्षण (मलापकर्षण)**–(न०) मैल या पाप दूर करना।—**अरि (मलारि)**–(पुं०) क्षार विशेष।—**अवरोध (मलावरोध)** –(पुं०) कोष्ठ बद्धता, कब्जियत। —**आकर्षिन् (मलाकर्षिन्)**–(पुं०) मेहतर, कूड़ा साफ करने वाला।—**आशय (मलाशय)**–(पुं०) मेदा, पेट।—**उत्सर्ग (मलोत्सर्ग)**–(पुं०) टट्टी जाना, पेट से मल निकालना।—**घ्न**–(वि०) मलनाशक। (पुं०) शाल्मली-कंद, सेमल का मुसला।—**ज**– (न०) पीप, मवाद।—**दूषित**–(वि०) मैला, गंदा।—**द्रव**–(पुं०) दस्तों की बीमारी।—**धात्री**–(स्त्री०) दाई जो बच्चे की आवश्यकताओं को दूर करे।—**पृष्ठ**–(न०) किसी पुस्तक का पहला पन्ना, आवरणपृष्ठ।—**भुज्**–(पुं०) काक, कौआ।—**मल्लक**–(पुं०) कौपीन, लँगोटी।—**मास**–(पुं०) अधिक मास, लौंद का महीना।—**वासस्**–(स्त्री०) स्त्री जो कपड़ों से हो, रजस्वला स्त्री।—**विसर्ग**–(पुं०) **विसर्जन**–(न०), —**शुद्धि**–(स्त्री०) मलत्याग, कोष्ठशुद्धि।—**हारक**–(वि०) मैल या पाप दूर करने वाला।

मलन–(पुं०) [√मल्+ल्यु] तंबू। (न०) [√मल्+ल्युट्] मसलना। लेप करना।

मलय—(पुं०) [मलते धरति चन्दनादिकम्, √मल्+कयन्] दक्षिण भारत की एक पर्वतमाला जिसके ऊपर चन्दन के वृक्ष अधिकता से पाये जाते हैं। मलय पर्वत के पूर्व का देश, मालाबार प्रान्त। बाग। इन्द्र का नन्दन कानन।—**अचल (मलयाचल)**,

—**अद्रि** (**मलयाद्रि**), —**गिरि**, —**पर्वत** –(पुं०) मलय पर्वत, मलयाचल ।—**अनिल** (**मलयानिल**), —**वात**,—**समीर**–(पुं०) मलय पर्वत से आयी हुई हवा; 'ललितलवङ्गलतापरिशीलनकोमलमलयसमीरे' गीत० १ ।—**उद्भव** (**मलयोद्भव**–(न०) चन्दन काष्ठ ।—**ज**–(पुं०) चन्दन वृक्ष । राहु का नामान्तर । (न०) चन्दन काष्ठ ।—**द्रुम**–(पुं०) चन्दन का वृक्ष ।—**वासिनी**(स्त्री०)दुर्गा देवी ।

मलाका—(स्त्री०) [मलेन मनोमालिन्येन अकति कुटिलं गच्छति, मल√अक्+अच्–टाप्] कामातुरा स्त्री । स्त्री हरकारा, दूती । हथिनी ।

मलिन—(वि०) [√मल् +इनन्] मैला, गंदा, अपवित्र । काला । पापमय, दुष्ट । नीच, कमीना । मेघाच्छन्न, अन्धकारमय । (न०) पाप । अपराध । माठा । सोहागा । काला अगर । सद्यःप्रसूता गौ का दूध । —**अम्बु** (**मलिनाम्बु**)–(न०) मसी, स्याही, रोशनाई ।—**आस्य** (**मलिनास्य**), **मुख**—(वि०) मलिन मुख वाला । नीच, कमीना । बर्बर, निष्ठुर । (पुं०) अग्नि । भूत । प्रेत । गोलाङ्गूल जाति का बानर, लंगूर ।

मलिना, मलिनी—(स्त्री०) [मलिन+टाप्] [मल+इनि–ङीप्] रजस्वला स्त्री । लाल खाँड़ या शक्कर । छोटी भटकटैया ।

मलिनयति—(क्रि०) [मलिन+णिच् (ना० धा०) +लट्–तिप्] मैला करना, गंदा करना । बिगाड़ना । बुरा काम करने के लिये उत्साहित करना ।

मलिनिमन्—(पुं०) [मलिन +इमनिच्] गंदगी, अशुद्धता, मैलापन । कृष्णता, कालापन; 'मलिनिमाऽलिनि माधवयोषिताम्' शि०६.४। पाप, नैतिक अपवित्रता ।

मलिम्लुच—(पुं०) [मली सन् म्लोचति, मलिन् √म्लुच्+क] डाकू । चोर । दैत्य । डाँस । मच्छर । अधिकमास, लौंद का महीना । पवन । अग्नि । वह ब्राह्मण जो पंचमहायज्ञों को नित्य नहीं करता ।

मलीमस—(वि०) [मलम् अस्ति अस्य, मल +ईमसच्] मैला, गंदा; 'मलीमसामादतेन पद्धति' र० ३.४६ । काला-कलूटा, काले रंग का । पापी, दुष्ट । (पुं०) लोहा । पीले रंग का कसीस । हरे रंग का कसीस ।

√मल्ल्—भ्वा० आत्म० सक० धारण करना । ग्रहण करना । अधिकार करना । मल्लते, मल्लिष्यते, अमल्लिष्ट ।

मल्ल—(वि०) [√मल्ल्+अच्] मजबूत, बलवान् । अच्छा, उत्तम । (पुं०) पहलवान, कसरती आदमी । मजबूत या ताकतवर आदमी । प्याला, कटोरा । कपोल, गण्डस्थल । देवता को चढ़ायी हुई वस्तु, प्रसाद । —**अरि** (**मल्लारि**)–(पुं०) श्रीकृष्ण । शिव ।—**क्रीडा**–(स्त्री०) पहलवानों का दंगल ।—**ज**–(न०) कालीमिर्च ।—**तूर्य**–(न०) ढोल विशेष ।—**भू**, —**भूमि**–(स्त्री०) अखाड़ा । देश विशेष ।—**युद्ध**–(न०)बाहुयुद्ध, कुश्ती ।—**विद्या**–(स्त्री०) कुश्ती लड़ने की विद्या ।—**शाला**–(न०) अखाड़ा ।

मल्लक—(पुं०) [मल्ल+कन् वा √ मल्ल् +ण्वुल्] दीवट । तैलपात्र । दीपक । नारियल के छिलके का बना प्याला । दाँत । कुन्दपुष्प ।

मल्लि, मल्ली—(स्त्री०) [√मल्ल्+इन्] [मल्लि+ङीष्] दे० 'मल्लिका' ।—**नाथ**–(पुं०) १४वीं या १५वीं शताब्दी में यह एक प्रसिद्ध टीकाकार हो गये हैं । इनकी बनायी रघुवंश, कुमारसम्भव, मेघदूत, किरातार्जुनीय, नैषधचरित और शिशुपालवध की टीकाओं का विद्वानों में बड़ा आदर है ।

मल्लिक—(पुं०) [मल्लि+कन्] हंस विशेष जिसकी टाँगें और चोंच धुमैले रंग

की होती है। माघ मास। जुलाहे की ढरकी।

मल्लिका—(स्त्री०) [मल्लिक+टाप्] बेले की जाति का एक सफेद और सुगंधित फूल, मोतिया। दीवट।—**अक्ष (मल्लिकाक्ष)**,—**आख्य (मल्लिकाख्य)**-(पुं०) एक प्रकार का हंस जिसके पैर और चोंच काली होती है। (धूसर तथा लाल पैर और चोंच वाले हंस का भी यह नाम है)। एक प्रकार का घोड़ा जिसकी आँख पर सफेद धब्बे होते हैं।—**अर्जुन (मल्लिकार्जुन)**-(पुं०) श्रीशैल पर स्थित शिव जी के एक लिङ्ग का नाम।—**आख्या (मल्लिकाख्या)**-(स्त्री०) एक प्रकार की मल्लिका।

मल्लीकर—(पुं०) [अमल्लमपि आत्मानं मल्लमिव करोति, मल्ल + च्वि, ईत्व √कृ+अच्] चोर।

मल्लु—(पुं०) [√मल्ल्+उ] रीछ, भालू।

√मव्—भ्वा० पर० सक० बाँधना। मवति, मविष्यति, अमवीत्—अमावीत्।

√मव्य्—भ्वा० पर० सक० बाँधना। मव्यति, मव्यिष्यति, अमव्यीत्।

√मश्—भ्वा० पर० अक० भिन्न-भिन्न करना, गुनगुनाना। नाराज होना। मशति, मशिष्यति, अमशीत्—अमाशीत्।

मश—(पुं०) [√मश् + अच्] मच्छर। गुञ्जार। क्रोध।—**हरी**-(स्त्री०) मसहरी, मच्छरदानी।

मशक—(पुं०) [मश+कन् वा √मश् +वुन्] मच्छर। मसा नामक चर्म रोग। मशक जो भिश्तियों के पास रहती है।

मशकिन्—(पुं०) [मशक+इनि] गूलर का पेड़।

मशुन—(पुं०) कुत्ता।

√मष्—भ्वा० पर० सक० मारना, वध करना। मषति, मषिष्यति, अमषीत्—अमाषीत्।

मषि, मषी—(स्त्री०) [√मष् +इन्] [मषि+ङीष्] दे० 'मसि', 'मसी'।

√मस्—दि० पर० सक० तौलना। रूप बदलना। मस्यति, मसिष्यति, अमसत्।

मस—(पुं०) [√मस्+अच्] माशा, आठ रत्ती का वजन।

मसन—(न०) [√मस् + ल्युट्] नापना, तौल। बूटी।

मसरा—(स्त्री०) [√मस् + अरच्—टाप्] मसूर, मसूरी।

मसार, मसारक—(पुं०) [√मस् +क्विप्, मसं परिमाणम् ऋच्छति, मस्√ऋ+अण्] [मसार+कन्] पन्ना रत्न।

मसि—(पुं०, स्त्री०) [√मस्+इन्] रोशनाई, स्याही। कालिख। काजल।—**आधार (मस्याधार)**-(पुं०),—**कूपी**-(स्त्री०),—**धान**-(न०),—**धानी**-(स्त्री०),—**मणि**-(पुं०) दावात, स्याही की बोतल।—**जल**-(न०) स्याही।—**पण्य**-(पुं०) लेखक।—**पथ**-(पुं०) कलम, लेखनी।—**प्रसू**-(स्त्री०) कलम। दावात।—**वर्द्धन**-(न०) गन्धरस, लोबान।—**बिन्दु**-(पुं०) डिठौना।

मसिक—(पुं०) साँप का बिल।

मसी—(स्त्री०) [मसि+ङीष्] दे० 'मसि'।—**जल**-(न०) स्याही, रोशनाई।—**पटल**-(न०) कालिख, काजल; 'शिरसि मसीपटलं दधाति दीपः' भा० १.७४।

मसुर, मसूर—(पुं०) [√मस् + उरच्, पक्षे ऊरच्] मसूर की दाल। तकिया।

मसुरा, मसूरा—(स्त्री०) [मसु (सू) र—टाप्] मसूर की दाल। वेश्या, रंडी।

मसूरिका—(स्त्री०) [मसूर + कन्—टाप्, इत्व] छोटी चेचक। कुटनी।

मसूरी—(स्त्री०) [मसूर+ङीष्] छोटी चेचक।

मसृण—(वि०) [√ऋष् (दीप्ति) + क, पृषो० साधुः] स्निग्ध, चिकना। कोमल,

मुलायम । मीठा । मनोज्ञ, मनोहर; 'विनयमसृणो वाचि नियमः' उत्त० २.२ । चमकीला ।

मसृणा—(स्त्री०) [मसृण+टाप्] अलसी ।

√मस्क्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । मस्कते, मस्किष्यते, अमस्किष्ट ।

मस्कर—(पुं०) [√मस्क्+अरन्] बाँस । पोला बाँस । गति । ज्ञान ।

मस्करिन्—(पुं०) [मस्कर+इनि वा मा कर्तुं कर्म निषेद्धुम् शीलमस्य, नि० साधुः] संन्यासी । चन्द्रमा ।

√मस्ज्—तु० पर० अक० जल में शरीर डुबो कर स्नान करना, अवगाहन । स्नान करना । डूबना । डूब मरना । संकट में डूबना । हताश होना । मज्जति, मङ्क्ष्यति, अमाङ्क्षीत् ।

मस्त—(न०) [√मस्+क्त] मस्तक, सिर । **—दारु**-(न०) देवदारु का पेड़ । **—मूलक**-(न०) गर्दन ।

मस्तक—(न०,पुं०) [√मस्+तकन् वा मस्त+कन्] सिर, माथा । शिखर या चोटी । **—आख्य** (**मस्तकाख्य**)-(पुं०) पेड़ का सिरा, फुनगी । **—ज्वर** -(पुं०),**—शूल**-(न०) सिर की पीड़ा । **—मूलक**-(न०) गर्दन । **—स्नेह**-(पुं०) मस्तिष्क, दिमाग ।

मस्तिक, मस्तिष्क-(न०) [मस्तं मस्तकम् इष्यति स्वाधारत्वेन प्राप्नोति, मस्त√इष्+क, पृषो० साधुः] दिमाग, मस्तक के अंदर का गूदा, भेजा, मगज ।

मस्तु—(न०) [मस्यति परिणमति, √मस्+तुन्] दही का पानी । छाछ । **—लुङ्ग**, **—लुङ्गक**-(पुं०, न०) [मस्तु इव लिङ्ग-सादृश्यम् अस्य, पृषो० इकारस्य उकारः] [मस्तुलुङ्ग+कन्] मस्तिष्क, भेजा, दिमाग ।

√मह्—भ्वा० पर० सक० सम्मान करना, पूजन करना । महति, महिष्यति, अमहीत् । चु० महयति ।

मह—(पुं०) [√मह्+घ वा अच्] उत्सव । नैवेद्य । यज्ञ । दीप्ति । भैंसा । वसन्तोत्सव; 'स खलु दूरगतोऽप्यतिवर्तते महमसाविति वन्धुतयोदितैः' शि० ६.१६ ।

महक—(पुं०) प्रसिद्ध पुरुष । कछुवा । विष्णु का नामान्तर ।

महत्—(वि०) [√मह्+अति] बड़ा । विपुल । विस्तृत । दीर्घ । मजबूत, बलवान् । उग्र, प्रचण्ड । गाढ़ा । घना । आवश्यक, बड़े महत्त्व का । ऊँचा । प्रख्यात । (पुं०) ऊँट । शिव । बड़ा सिद्धान्त । (न०) बड़प्पन । अनन्तता । असंख्यता । राज्य । पवित्र ज्ञान । (अव्य०) अतिशयता से, अत्यधिक । **—आवास** (**महदावास**)-(पुं०) विस्तृत भवन । **—आशा** (**महदाशा**)-(वि०) बड़ी उम्मेद । **—कथ**-(वि०) चापलूस । **—तत्त्व**-(न०) प्रकृति का प्रथम विकार, बुद्धितत्त्व (सांख्य) । **—बिल** (**महद्बिल**)-(न०) अन्तरिक्ष । **—स्थान**-(न०) उच्च-स्थान, उच्चपद ।

महती—(स्त्री०) [महत्+ङीष्] वीणा । नारद की वीणा का नाम; 'अवेक्षमाणम्महतीम्मुहुर्मुहुः' शि० १.१० । बड़प्पन, महत्त्व । भटा या वृन्ताक का पौधा, वनभंटा ।

महत्तम—(वि०) [महत्+तमप्] सबसे अधिक बड़ा या श्रेष्ठ ।

महत्तर—(वि०) [अयम् अनयोः अतिशयेन महान्, महत्+तरप्] अपेक्षाकृत बड़ा, दो पदार्थों में से बड़ा या श्रेष्ठ । (पुं०) मुख्य, प्रधान या सब से अधिक बूढ़ा आदमी, सर्वाधिक प्रतिष्ठित व्यक्ति । राजा या किसी रईस के घर का प्रबन्धकर्त्ता । दरबारी । गाँव का मुखिया या बड़ा बूढ़ा । शूद्र ।

महत्तरक—(पुं०) [महत्तर+कन्] दरबारी, मुसाहब, राजा या रईस के घर का प्रबन्धकर्त्ता ।

महता—(स्त्री०) [महत् + तल्—टाप्] दे० 'महत्त्व' ।

महत्त्व—(न०) [महत्+त्व] बड़प्पन । विशालता । गुरुता । श्रेष्ठता ।

महनीय—(वि०) [√मह् +अनीयर्] माननीय, पूज्य । गौरवपूर्ण ।

महन्त—(पुं०) [√मह्+अच्] मठ का मुख्य पुरुष, साधुमण्डली या मठ का मुख्याधिष्ठाता, साधुओं का मुखिया ।

महर्—(अव्य०) [√मह्+अरु] सात ऊर्ध्व लोकों में से चौथा लोक, महर्लोक ।

महल्ल, महल्लिक—(पुं०) [महतः स्त्रीरत्नादिकलात् विपुलान् भारान् लाति गृह्णाति, महत् √ला+क] [महान्तं चरित्रगुणं लिखति इव, महत्√लिख्+क, पृषो० साधुः] रनवास का रक्षक, खोजा या हिजड़ा ।

महल्लक—(वि०) [महल्ल+कन्] निर्बल, कमजोर । वृद्ध । (पुं०) रनवास का खोजा । विशाल भवन, महल । राजप्रासाद ।

महस्—(न०) [√मह्+असुन्] उत्सव । भेंट, नैवेद्य, बलि । दीप्ति, आभा । महर्लोक । महत्ता । शक्ति । आनंद । प्रचुरता । जल ।

महस्वत्, महस्विन्—(वि०) [महस्+मतुप्, वत्व] [महस्+विनि] चमकीला, प्रकाशमान ।

महा—(स्त्री०) [√मह्+अ—टाप्] गौ ।

महा—(वि०) [महत् शब्द का समास में प्रारम्भ हो जाने से महा रूप हो जाता है] अत्यन्त, बहुत अधिक [ब्राह्मण, पात्र, प्रस्थान, तैल और मांस इन शब्दों में महा लगाने पर इनके अर्थ कुत्सित हो जाते हैं ।]—**अक्ष** (महाक्ष)—(पुं०) शिव जी ।—**अङ्ग** (महाङ्ग)—(पुं०) ऊँट । चूहा । शिव ।—**अञ्जन** (महाञ्जन)—(पुं०) एक पर्वत का नाम ।—**अत्यय** (महात्यय)—(पुं०) बड़ा भारी सङ्कट ।—**अध्वनिक** (महाध्वनिक)—(वि०) मृत, मरा हुआ ।—**अध्वर** (महाध्वर)—(पुं०) बड़ा यज्ञ ।—**अनस्** (महानस्)—(न०) भारी गाड़ी ।—**अनस** (महानस)—(पुं०, न०) रसोईघर ।—**अनुभाव** (महानुभाव)—(वि०) कुलीन, गौरव-युक्त । महात्मा । (पुं०) मान्य पुरुष; 'महानुभावाः हि नितान्तमर्थिनः' शि० १.१७ ।—**अन्तक** (महान्तक)—(पुं०) मृत्यु । शिव ।—**अन्ध्र** (महान्ध्र)—(पुं०) आन्ध्र देशवासी ।—**अन्वय** (महान्वय), —**अभिजन** (महाभिजन)—(वि०) कुलीन घराने में उत्पन्न ।—**अभिषव** (महाभिषव)—(पुं०) सोम का बहुत-सा खींचा हुआ रस ।—**अमात्य** (महामात्य)—(पुं०) प्रधान सचिव ।—**अम्बुक** (महाम्बुक)—(पुं०) शिव ।—**अम्बुज** (महाम्बुज)—(न०) दस खरब संख्या ।—**अम्ल** (महाम्ल)—(न०) इमली का फल ।—**अर्घ्य** (महार्घ्य)—(वि०) मूल्यवान्, बेशकीमती ।—**अर्णव** (महार्णव)—(पुं०) महासागर । शिव ।—**अर्ह** (महार्ह)—(वि०) बहुमूल्य । अमूल्य । (न०) सफेद चन्दन काष्ठ ।—**अवरोह** (महावरोह)—(पुं०) वट वृक्ष ।—**अशन** (महाशन)—(वि०) पेटू, भोजनभट्ट ।—**अश्मन्** (महाश्मन्)—(पुं०) लाल, माणिक ।—**अष्टमी** (महाष्टमी)—(न०) आश्विन शुक्लाष्टमी ।—**असुरी** (महासुरी)—(स्त्री०) दुर्गा का नाम ।—**अह्न** (महाह्न)—(पुं०) मध्याह्नोत्तर, दोपहर के बाद का समय ।—**आचार्य** (महाचार्य)—(पुं०) शिव जी का नामान्तर ।—**आढ्य** (महाढ्य)—(वि०) अतिधनी । परम संपन्न । (पुं०) कदम्ब का पेड़ ।—**आत्मन्** (महात्मन्)—(वि०) महात्मा, महापुरुष । (पुं०) परब्रह्म । शिव ।—**आनक** (महानक)—(पुं०) बड़ा नगाड़ा ।—**आनन्द** (महानन्द), (पुं०) मोक्ष ।—

—नन्दा (महानन्दा)—(स्त्री०) मद्य। माघ-शुक्ला नवमी। —आयुध (महायुध)—(पुं०) शिव। —आलय (महालय)—(पुं०) देवालय, मंदिर। आश्रम। तीर्थस्थान। ब्रह्मलोक। परमात्मा।—
—आलया (महालया)—(स्त्री०) आश्विन-कृष्ण अमावास्या।—आशय (महाशय)—(पुं०) महानुभाव। समुद्र।—आस्पद (महास्पद)—(वि०) उच्च पदवर्ती। बलवान्। —आहव (महाहव) —(पुं०) प्रचण्ड युद्ध।—इच्छ (महेच्छः)—(वि०) उदाराशय, कुलीन। वह जिसके उद्देश्य बहुत ऊँचे हों। —इन्द्र (महेन्द्र)—(पुं०) बड़ा इन्द्र, इन्द्र का नाम। नेता, मुखिया। एक कुल-पर्वत।— इष्वास (महेष्वास)—(पुं०) बड़ा धनुर्धर, महाभट, बड़ा योद्धा। 'अत्र शूरा महेष्वासाः' भग० १.४।—ईश (महेश),— ईशान (महेशान)—(पुं०) शिव।—ईशानी (महेशानी)—(स्त्री०) पार्वती।—ईश्वर (महेश्वर)—(पुं०) विष्णु। शिव।—ईश्वरी (महेश्वरी)—(स्त्री०) दुर्गा।—उक्ष (महोक्ष)—(पुं०) बड़े भारी डीलडौल का बैल।—उत्पल (महोत्पल)—(न०) बड़ा नील कमल। —उत्सव (महोत्सव)—(पुं०) कोई बड़ा उत्सव। कामदेव।—उत्साह (महोत्साह)—(वि०) बड़ा उत्साही, बड़ा स्फूर्तिमान्।—
—उदधि (महोदधि)—(पुं०) महासागर। इन्द्र।—उदय (महोदय)—(पुं०) धनसंपत्ति। मोक्ष। स्वामी, प्रभु। कान्यकुब्ज देश। कान्यकुब्ज नगरी। (वि०) अतिसमृद्ध। गौरवशाली। महानुभाव।—उदर (महोदर)—(न०) जलोदर या जलोदर रोग। बड़ा पेट।— उपाध्याय (महोपाध्याय)—(पुं०) बड़ा शिक्षक।—उरस्क (महोरस्क)—(पुं०) शिव। —ओष्ठ (महो (हौ)ष्ठ)—(पुं०) शिव जी।—ओजस् (महौजस्)—(वि०) परम तेजस्वी। (वि०) बड़ा बलवान्। (पुं०) बड़ा योद्धा; 'महौजसो मानधना धनार्चिताः' कि० १.१९। (न०) विष्णु भगवान् का सुदर्शन चक्र।—ओषधि (महौषधि)—(स्त्री०) बड़ी गुणकारी दवा। दूब घास।—औषध (महौषध)—(न०) सर्वरोगहरण दवा। सोंठ। लहसुन। वत्सनाभ।—कच्छ—(पुं०) समुद्र। वरुण। पर्वत।—कन्द—(पुं०) प्याज। लहसुन।—कपित्थ—(पुं०) त्ववृक्ष। विलाल लहसुन।—कम्बु—(वि०) मादरजात नंगा। (पुं०) शिव जी।—कर—(वि०) बड़े हाथों वाला। जिसकी बड़ी मालगुजारी हो।— कर्ण—(पुं०) शिव जी।—कर्मन्—(वि०) बड़ा काम करने वाला। (पुं०) शिव जी।— कवि —(पुं०) बड़ा कवि। शुक्र का नामान्तर। —कान्त—(पुं०) शिव।—कान्ता—(स्त्री०) पृथिवी।—काय —(पुं०) हाथी। शिव। विष्णु। शिव जी का एक गण।—कार्त्तिकी —(स्त्री०) कार्त्तिकमास की पूर्णिमा।—काल —(पुं०) शिव जी। उज्जैन में महाकाल नाम की शिव जी की प्रतिमा। विष्णु। कद्दू, कुम्हड़ा।—०पुर—(न०) उज्जैन।—कालो—(स्त्री०) महाकाल स्वरूप शिव की पत्नी, जिसके पाँच मुख और आठ भुजाएँ मानी जाती हैं।—काव्य—(न०) महाकाव्य सर्गबद्ध होता है और उसका नायक कोई देवता, राजा, अथवा धीरोदात्त गुणसम्पन्न क्षत्रिय होता है। इसमें शृंगार, वीर व शान्त रसों में से कोई रस प्रधान होता है। बीच-बीच में अन्य रसों का भी समावेश होना आवश्यक है। महाकाव्य में कम से कम आठ सर्ग अवश्य हों। इसमें संध्या, सूर्य, चन्द्र, रात्रि, प्रभात, मृगया, पर्वत, वन, ऋतु, सागर, संयोग, विप्रलंभ, मुनि, पुर, यज्ञ, रणप्रयाण, विवाहादि का यथा-

स्थान वर्णन होना चाहिये। (संस्कृत साहित्य में साधारणतः पाँच महाकाव्य माने जाते हैं—रघुवंश, कुमारसम्भव, किरातार्जुनीय, शिशुपालवध और नैषधचरित। यह लोगों की साधारणतः धारणा है, किन्तु संस्कृत साहित्य में इन पाँच के अतिरिक्त भट्टिकाव्य, विक्रमाङ्कदेवचरित, हरिविजय, यादवाभ्युदय आदि और भी कई एक महाकाव्य हैं।) **—कुमार**–(पुं०) राजा का सब से बड़ा पुत्र, युवराज। **—कुल**–(वि०) वह जो बहुत उत्तम कुल में उत्पन्न हुआ हो, कुलीन। (न०) उत्तम कुल। वह श्रोत्रियकुल जिसमें दस पीढ़ी से वेदाध्ययन होता आ रहा हो। **—कृच्छ्र**–(न०) एक बड़ा प्रायश्चित्त। (पुं०) विष्णु। **—केतु**–(पुं०) शिव। **—कोश**–(पुं०) शिव जी। **—क्रतु**–(पुं०) बड़ा यज्ञ, जैसे—अश्वमेध। **—क्रम**–(पुं०) विष्णु। **—क्रोध**–(पुं०) शिव। **—क्षीर**–(पुं०) ईख। **—खर्व**–(पुं०,न०) एक बड़ी संख्या जो सौ खर्व की होती है। **—गज**–(पुं०) दिग्गज। **—गणपति**–(पुं०) गणेश का एक रूप। शिव का एक अनुचर। **—गन्ध**–(पुं०) जलबेंत। कुटज। (न०) चन्दन। **—गन्धा**–(स्त्री०) नागबला। केवड़ा। चामुण्डा। **—गर्भ**–(पुं०) शिव। विष्णु। **—गुरु**–(पुं०) श्रेष्ठ गुरुजन, माता-पिता आदि। **—ग्रह**–(पुं०) राहु। **—ग्रीव**–(पुं०) ऊँट। शिव। **—ग्रीविन्**–(पुं०) ऊँट। **—घूर्णा**–(स्त्री०) शराब। **—घोष**–(न०) बाजार। हाट। मेला। (पुं०) हो-हल्ला, शोरगुल, कोलाहल। **—चक्रवर्तिन्**–(पुं०) सम्राट्, बहुत बड़ा चक्रवर्ती राजा। **—चमू**–(स्त्री०) बड़ी फौज, विशाल सेना। **—च्छाय**–(पुं०) वटवृक्ष। **—जट**–(पुं०) शिव जी। **—जत्रु**–(वि०) वह जिसकी हँसली की हड्डी बहुत बड़ी हो। (पुं०) शिव जी। **—जन**–(पुं०) बड़ा या श्रेष्ठ पुरुष। साधु। जनता, जनसमुदाय; 'महाजनो स्मेरमुखो भविष्यति' कु० ६.७०। व्यापारी मण्डल का मुखिया। व्यापारी, सौदागर। **—ज्योतिस्**–(पुं०) शिव। **—तपस्**–(पुं०) बड़ा तपस्वी। विष्णु। **—तल**–(न०) नीचे के लोकों में से पाँचवाँ लोक। **—तिक्त**–(पुं०) नीम का वृक्ष। **—तेजस्**–(पुं०) शूरवीर, बहादुर। अग्नि। कार्त्तिकेय। (न०) पारा, पारद। **—दन्त**–(पुं०) बड़े दाँतों वाला हाथी। शिव जी। **—दण्ड**–(पुं०) बड़ी बाँह। कठोर दण्ड या सजा। **—दशा**–(स्त्री०) मनुष्य के जीवन में ग्रह विशेष का निर्धारित भोग्य काल। **—दान**–(न०) उन सोलह दानों में से कोई जिनका फल स्वर्ग माना गया है (तुलापुरुष, सोने की गौ का दान, गजदान, कन्यादान आदि)। **—दारु**–(न०) देवदारु वृक्ष। **—दुन्दु**–(पुं०) बड़ा भारी जंगी ढोल। **—देव**–(पुं०) शिवजी। **—देवी**–(स्त्री०) पार्वती जी। **—द्रुम**–(पुं०) अश्वत्थ। वट। **—द्वीप**–(पुं०) महादेश। पुराणानुसार पृथ्वी के वे सात मुख्य विभाग—जम्बु, प्लक्ष, शाल्मलि, कुश, क्रौंच, शाक और पुष्कर। **—धन**–(वि०) बड़ा धनवान्। बड़ा खर्चीला, बहुमूल्य। (न०) सोना। गन्ध द्रव्य विशेष। मूल्यवान् पोशाक। **—धनुस्**–(पुं०) शिवजी। **—धातु**–(पुं०) सुवर्ण। शिवजी। मेरुपर्वत। **—नट**–(पुं०) शिवजी। **—नदी**–(स्त्री०) गंगा, यमुना, कृष्णा आदि बड़ी नदियाँ। एक नदी का नाम जो बंगाल की खाड़ी में गिरती है। **—नन्दा**–(स्त्री०) शराब, मदिरा। एक नदी का नाम। **—नरक**–(पुं०) २१ बड़े नरकों में से एक। **—नल**–(पुं०) एक प्रकार का नरकुल या नरसल। **—नवमी**–(स्त्री०) आश्विन शुक्ला ९मी। **—नाटक**–(न०) नाटक के लक्षणों से युक्त

दस अंकों वाला नाटक। यथा—हनुमन्नाटक।—**नाद**–(पुं०) कोलाहल। बड़ा ढोल या नगाड़ा। बादल की गरज। शंख। हाथी। सिंह। कान। ऊँट। शिव जी। (न०) वाद्ययंत्र या बाजा विशेष।—**नाम**–(पुं०) शिवजी।—**निद्रा**–(स्त्री०) मृत्यु।—**नियम**–(पुं०) विष्णु।—**निर्वाण**–(न०) परिनिर्वाण जिसके अधिकारी केवल अर्हत् या बुद्धगण हैं।—**निशा**–(स्त्री०) रात का मध्यभाग, आधी रात। कल्पान्त या प्रलय की रात। रात का दूसरा और तीसरा प्रहर। "महानिशा तु विज्ञेया मध्यमं प्रहरद्वयम्।"—**नीच**–(पुं०) धोबी।—**नील**–(पुं०) एक प्रकार का नीलम नामक रत्न जो सिंहलद्वीप में होता है; 'महामहानीलशिलारुचः पुरो' शि० १.१६।—**नृत्य**–(पुं०) शिव जी।—**नेमि**–(पुं०) काक, कौआ।—**पक्ष**–(पुं०) गरुड़ जी। एक प्रकार की बत्तख।—**पक्षी**–(स्त्री०) उल्लू, पेचक।—**पञ्चमूल**–(न०) बेल, अरनी, सोनापाठा, काश्मरी और पाटला इन पाँचों वृक्षों का समूह।—**पञ्चविष**–(न०) शृङ्गी (सिंधिया), कालकूट, मोथा, बच्छनाग और शंखकर्णी।—**पथ**–(पुं०) बहुत लंबा और चौड़ा रास्ता, राजपथ। परलोक का मार्ग, मृत्यु। कई एक ऊँचे पर्वत-शिखरों के नाम जिन पर लोग चढ़ कर कूदते थे, जिससे वे सीधे स्वर्ग चले जायँ। शिवजी।—**पद्म**–(पुं०) सौ पद्म की संख्या। नारद जी का नामान्तर। कुबेर की नौ निधियों में से एक। (न०) सफेद कमल। एक नगर का नाम।—०**नन्द**–(पुं०) नंदवंश का अंतिम राजा।—०**पति**–(पुं०) नारद जी।—**पातक**–(न०) बड़ा पाप, ब्रह्महत्या, मद्यपान, चोरी, गुरु की पत्नी के साथ सम्भोग तथा इनमें से कोई महापातक करने वाले का संसर्ग—ये महापातक कहलाते हैं। कहा जाता है कि, जो ये महापातक करते हैं वे नरकयातना भोगने के अनन्तर भी सात जन्म तक घोर कष्ट भोगते हैं।—**पात्र**–(पुं०) प्रेतकर्म का दान लेने वाला ब्राह्मण, महाब्राह्मण। महामंत्री।—**पाद**–(पुं०) शिव जी का नाम।—**पुरुष**–(पुं०) बड़ा आदमी, प्रसिद्ध पुरुष; 'शब्दम्महापुरुषसंविहितं निशम्य' उत्त० ६.७। परमात्मा। विष्णु भगवान् का नामान्तर।—**पुष्प**–(पुं०) कुंद वृक्ष। लाल कनेर। काली मूँग, कृष्ण मुद्ग। एक प्रकार का कीड़ा।—**पृष्ठ**–(पुं०) ऊँट।—**प्रपञ्च**–(पुं०) विश्व, दुनिया।—**प्रभ**–(वि०) जिसमें बहुत चमक-दमक हो।—**प्रभा**–(स्त्री०) बहुत चमक-दमक। दीपक का प्रकाश। (पुं०) बड़ा स्वामी। राजा। मुखिया, प्रधान। इन्द्र। शिवजी। विष्णु भगवान्। कृष्ण भगवान्।—**प्रलय**–(पुं०) कल्पान्त, सृष्टि का सर्वनाश, पुराणानुसार कल्प या ब्रह्मा के दिन के अन्त में सम्पूर्ण सृष्टि का नाश; उस समय अनन्त जलराशि को छोड़ और कुछ भी शेष नहीं रहता।—**प्रसाद**–बड़ा अनुग्रह। भगवन्मूर्ति को निवेदित वस्तु विशेष।—**प्रस्थान**–(न०) प्राण त्यागने की इच्छा से हिमालय की ओर जाना। मरण, देहान्त।—**प्राण**–(पुं०) व्याकरण के अनुसार वह वर्ण जिसके उच्चारण करने में प्राणवायु का विशेष प्रयोग करना पड़ता है। वर्णमाला में प्रत्येक वर्ग का दूसरा और चौथा वर्ण महाप्राण है। यथा—कवर्ग का ख और घ। चवर्ग का छ और झ। टवर्ग का ठ और ढ। पवर्ग का फ और भ। श, ष, स ह भी इस श्रेणी में हैं। पहाड़ी कौआ।—**प्लव**–(पुं०) जलप्रलय।—**फल**–(न०) बड़ा फल या पुरस्कार। (पुं०) बेल का पेड़। (त्रि०) बहुत फलने या देने वाला।

—फला–(स्त्री०) तितलौकी । इंद्रवारुणी । एक तरह की बरछी ।—बल–(पुं०) पवन । बुद्ध । (न०) सीसा । राँगा ।—बला–(स्त्री०) सहदेवी लता । पीपल । नील का पौधा ।—बाहु–(पुं०) विष्णु ।—बिल, —विल–(न०) अन्तरिक्ष । हृदयस्थान । जलघट, घड़ा । गुफा ।—बीज, —बीज्य–(पुं०) शिव जी ।—बोधि–(पुं०) बुद्धदेव ।—ब्रह्म, —ब्रह्मन्–(न०) परमात्मा ।—ब्राह्मण–(पुं०) कढ़िहा ब्राह्मण । वह ब्राह्मण जो मृतक का दान लेता है, निकृष्ट ब्राह्मण ।—भाग–(वि०) बड़ा भाग्यवान् । धर्मात्मा; 'महाभागः कामं नरपतिरभिन्नस्थितिरसौ' श० ५.१० ।—भागिन्–(वि०) बड़ा भाग्यवान् ।—भारत–(न०) एक परम प्रसिद्ध संस्कृत भाषा का प्राचीन ऐतिहासिक महाकाव्य । इसमें कौरवों और पाण्डवों का वृत्तान्त मुख्यतया है । इसमें १८ पर्व हैं और वेदव्यास जी का रचा हुआ है ।—भाष्य–(न०) पाणिनि के सूत्रों पर पतञ्जलि का लिखा हुआ प्रसिद्ध भाष्य ।—भीता–(स्त्री०) लाजवंती लता ।—भीम–(वि०) अतिभयंकर । (पुं०) शिव का अनुचर भृंगी । राजा शान्तनु ।—भीरु–(पुं०) ग्वालिन नाम का बरसाती कीड़ा ।—भुज–(वि०) बलवान् या लंबी भुजाओं वाला ।—भूत–(न०) पाँच मुख्य तत्त्व; 'तं वेधाः विदधे । नूनम्महाभूतसमाधिना' १.२९ ।—भैरव–(पुं०) शिव ।—भोग–(पुं०) भारी आनन्द । साँप ।—भोगा–(स्त्री०) दुर्गा देवी ।—मति–(पुं०) बृहस्पति ।—मद–(पुं०) मदमस्त हाथी ।—मनस्, —मनस्क–(वि०) ऊँचे मन का । उदार । अभिमानी । (पुं०) शरभ ।—मन्त्रिन्–(पुं०) प्रधान सचिव ।—महोपाध्याय–(पुं०) बहुत बड़ा उपाध्याय, गुरुओं का गुरु । बड़े भारी पण्डितों की एक उपाधि ।—मांस–(न०) गौ का मांस । नर-मांस ।—मात्र–(पुं०) प्रधान सचिव । महावत । गजशाला का अध्यक्ष ।—मात्री–(स्त्री०) प्रधान सचिव की पत्नी । दीक्षागुरु की पत्नी ।—माय–(पुं०) विष्णु ।—माया–(स्त्री०) प्रकृति ।—मारी–(स्त्री०) हैजा, प्लेग आदि संक्रामक रोग ।—मुख–(पुं०) मगर, घड़ियाल । महादेव ।—मुनि–(पुं०) बड़े मुनि । वेदव्यास । अगस्त्य ।—बुद्ध । कृपाचार्य । काल । (न०) दवा । धनिया ।—मूर्ति–(पुं०) विष्णु ।—मूर्धन्–(पुं०) शिव जी ।—मूल–(पुं०) प्याज ।—मूल्य–(पुं०) माणिक, लाल, चुन्नी ।—मृग– कोई भी बड़ा जन्तु । हाथी ।—मेद–(पुं०) मूँगे का पेड़ ।—मोह–(पुं०) सांसारिक सुखों के भोग की इच्छा जो अविद्या का रूपान्तर है ।—मोहा–(स्त्री०) दुर्गा देवी ।—यज्ञ–(पुं०) पञ्च महायज्ञ । वेदाध्यन, अग्निहोत्र, तर्पण, अतिथि-पूजन और भूतबलि ।—यात्रा–(स्त्री०) मौत ।—याम्य–(पुं०) विष्णु ।—युग–(न०) मनुष्य के चार युगों को मिलाकर, देवताओं का एक युग होता है । वही देवताओं का युग । इसमें मनुष्यों के ४,३२,००० वर्ष होते हैं ।—योगिन्–(पुं०) शिव जी । भगवान् विष्णु । मुर्गा ।—योगेश्वर–(पुं०) पितामह, पुलस्त्य, वशिष्ठ, पुलह, अंगिरा, क्रतु और कश्यप ।—रक्त–(न०) मूँगा ।—रजत–(न०) सोना । धतूरा ।—रत्न–(न०) बहुमूल्य रत्न—हीरा, मोती, वैदूर्य, पद्मराग, गोमेद, पुखराज, पन्ना, नीलम, और मूँगा ।—रथ ।(पुं०) बड़ा रथ । बड़ा भट या योद्धा ।—रस–(पुं०) ऊख । पारा । मूल्यवान् खनिजद्रव्य । (न०) काँजी ।—राज–(पुं०) राजाओं में श्रेष्ठ, बहुत बड़ा राजा ।—चूत–(पुं०) आम विशेष ।—राजिक

—(पुं०, बहु०) देवता विशेष जिनकी संख्या २२० या २३६ बतलायी जाती है।—
—राज्ञी–(स्त्री०) पटरानी, प्रधान महिषी। —रात्रि, —रात्री–(स्त्री०) महाप्रलय वाली रात। आधी रात के बाद दो मुहूर्त का रात्रि-काल। —राष्ट्र–(पुं०) बड़ा राष्ट्र। दक्षिण-पश्चिम भारत का एक प्रदेश, महाराष्ट्र देश। वहाँ के अधिवासी। —राष्ट्री–(स्त्री०) एक प्रकार की प्राकृतिक भाषा जो महाराष्ट्र देश में बोली जाती थी। —रूप–(पुं०) शिव जी। राल, धूना। —रेतस्–(पुं०) शिव जी। —रोग–(पुं०) भारी रोग। (आयुर्वेद के मत से ये आठ रोग—उन्माद, क्षय, दमा, कोढ़, मधुमेह, पथरी, उदररोग और भगन्दर)। —रौद्र–(वि०) बड़ा भयानक। —रौद्री–(स्त्री०) दुर्गा देवी। —रौरव–(पुं०) २१ प्रधान नरकों में से एक। —लक्ष्मी–(स्त्री०) श्रीमन्नारायण की महालक्ष्मी या शक्ति। —लिङ्ग–(पुं०) महादेव। —लोल–(पुं०) काक, कौआ। —लोह–(न०) चुम्बक पत्थर। —वन–(न०) बड़ा वन। मथुरा जिले का एक स्थान। —वराह–(पुं०) विष्णु भगवान्। —वस–(पुं०) शिशुमार, सूंस। —वाक्य–(न०) महदर्थ-प्रकाशक वाक्य, 'अहं ब्रह्मास्मि' 'तत्त्वमसि' आदि उपनिषद्वाक्य। —वात–(पुं०) तूफान, आँधी। —वारुणी–(स्त्री०) गंगास्नान का एक विशेष योग जो चैत्र-कृष्णा त्रयोदशी को शतभिषा नक्षत्र और शनिवार होने से पड़ता है। —वार्तिक–(न०) पाणिनि के सूत्रों पर कात्यायन का प्रसिद्ध वार्तिक। —विदेहा–(स्त्री०) योगशास्त्रानुसार मन की एक बहिर्वृत्ति। —विद्या–(स्त्री०) तंत्रोक्त दस देवियाँ—काली, तारा, षोडशी, भुवनेश्वरी, भैरवी, छिन्नमस्ता, धूमावती, बगलामुखी, मातंगी और कमलात्मिका। दुर्गा। गंगा। —विषुव–(न०) वह समय जब सूर्य मीन से मेष राशि में आते हैं और दिन रात दोनों बराबर होते हैं, मेषसंक्रान्ति। —वीर–(पुं०) बड़ा बहादुर। सिंह। इन्द्र का वज्र। विष्णु भगवान्। गरुड़। हनुमान्। कोयल। सफेद रंग का घोड़ा। यज्ञीय अग्नि। यज्ञीय पात्र विशेष। बाज पक्षी। जैनों के चौबीसवें और अंतिम तीर्थंकर, महावीर स्वामी। —वीर्या–(स्त्री०) सूर्य-पत्नी संज्ञा। वनकपास। बड़ी सतावर। —वेग–(पुं०) बड़ी तेज रफ्तार। वानर। गरुड़ पक्षी। —व्याधि–(पुं०) कुष्ठ या कोढ़ रोग। —व्याहृति (स्त्री०) भूर्, भुवन् और स्वर्। —व्रत–(न०) बहुत बड़ा कर्म या व्रत; 'आत्मनीव प्रियामान-मेतन्मैत्रीमहाव्रतं' माल० ५.५६। बारह बरस तक चलने वाला प्रायश्चित्तरूप व्रत। —व्रतिन्–(पुं०) भक्त। संन्यासी। शिव जी। —शक्ति–(पुं०) शिव जी। कार्तिकेय। —शङ्ख–(पुं०) ललाट। कनपटी की हड्डी। मनुष्य की ठठरी। एक बहुत बड़ी संख्या। सौ शंख की संख्या। —शठ–(पुं०) पीला धतूरा। —शल्क–(पुं०) झिंगा मछली। —शाल–(पुं०) बड़ा गृहस्थ। —शिरस्–(पुं०) सर्प विशेष। —शुक्ति–(स्त्री०) सीप जिसमें मोती होता है। —शुक्ला–(स्त्री०) सरस्वती देवी। —शुभ्र–(न०) चाँदी। —शूद्र–(पुं०) अहीर, ग्वाला। —श्मशान–(न०) काशी का नामान्तर। —श्रमण–(पुं०) बुद्धदेव का नामान्तर। —श्वास–(पुं०) दमा का रोग विशेष। —श्वेता–(स्त्री०) सरस्वती का नामान्तर। दुर्गा देवी। सफेद खाँड़। कादम्बरी की एक सहचरी। —संस्कार–(पुं०) अन्त्येष्टि, श्राद्ध। —सती–(स्त्री०) बड़ी पतिव्रता स्त्री। —सत्त्व–(पुं०) कुबेर। —सत्य–(पुं०) यमराज। —सन्धिविग्रह–(पुं०)

युद्धसचिव जिसे युद्ध और सन्धि करने का अधिकार हो।—सख (पुं०) कुबेर।—सर्ज—(पुं०) कटहल के वृक्ष या कटहल फल।—सान्तपन—(न०) एक व्रत जिसमें पाँच दिन तक क्रम से पञ्चगव्य, छठवें दिन कुशजल पीकर सातवें दिन उपवास किया जाता है।—सान्धिविग्रहिक—(पुं०) युद्ध-सचिव जो शत्रु के साथ सुलह अथवा युद्ध करने का अधिकार रखता हो।—सार—(पुं०) खदिर वृक्ष विशेष।—सारथि—(पुं०) अरुण देव।—साहसिक—(पुं०) डाकू। चोर।—सिंह—(पुं०) शरभ पक्षी।—सुख—(न०) बड़ा आनन्द। स्त्री-सम्भोग।—सूक्ष्मा—(स्त्री०) बालू, रेत।—सुत—(पुं०) मारू-बाजा, जो युद्ध में बजाया जाता है।—सेन—(पुं०) कार्त्तिकेय। बड़ी सेना का नायक।—सेना—(स्त्री०) बड़ी फौज।—स्कन्ध—(पुं०) ऊँट।—स्थली—(स्त्री०) पृथिवी।—स्वन—(पुं०) ढोल विशेष।—हंस—(पुं०) विष्णु भगवान्।—हविस्—(न०) गाय का घी।—हिमवत्—(न०) हिमालय पर्वत का नाम।

महिका—(स्त्री०) [√मह्+क्वुन्—टाप्, इत्व] कोहरा, पाला।

महित—(वि०) [√मह्+क्त] सम्मानित, प्रतिष्ठाप्राप्त। (न०) शिव जी का त्रिशूल।

महिमन्—(पुं०) [महतो भावः, महत्+इमनिच्] महत्त्व। माहात्म्य। बड़प्पन। प्रभाव, प्रताप। अणिमा आदि आठ सिद्धियों में से पाँचवीं सिद्धि।

महिर—(पुं०) [√मह्+इलच्, लस्य रत्वम्] सूर्य।

महिला—(स्त्री०) [√मह्+इलच्—टाप्] रमणी। नशे में मस्त स्त्री, मस्तानी हुई औरत। प्रियङ्गु लता। रेणुका नाम का पौधा।—आह्वया (महिलाह्वया)—(स्त्री०) प्रियंगु लता।

महिलारोप्य—(न०) दक्षिण भारत के एक नगर का नाम।

महिष—(पुं०) [√मह्+टिषच्] भैंसा। महिषासुर जिसे दुर्गा ने मारा था।—अर्दन (महिषार्दन)—(पुं०) कार्त्तिकेय।—घ्नी—(स्त्री०) दुर्गा देवी।—ध्वज—(पुं०) यमराज।—वाहन—(पुं०) यमराज। 'कृतान्तः किं साक्षान्महिषवहनोऽसाविति-पुनः' का० १०।

महिषी—(स्त्री०) [महिष+ङीष्] भैंस। पटरानी। पक्षी की मादा। सैरन्ध्री। निलज्ज औरत। पत्नी के छिनाले की कमाई।—स्तम्भ—(पुं०) खंभा जिसके ऊपर भैंस का सिर सजाया गया हो।

महिष्मत्—(वि०) बहुत से भैंसों वाला। जहाँ बहुतायत से भैंसे हों।

मही—(स्त्री०) [√मह्+अच्—ङीष्] पृथिवी। जमीन। भूसम्पत्ति। गाय। सेना। झुंड। एक की संख्या। रियासत। राज्य। देश। माही नदी जो खंभात की खाड़ी में गिरती है।—ईश (महीश),—ईश्वर (महीश्वर)—(पुं०) राजा।—कम्प—(पुं०) भूचाल, भूकंप।—क्षित्—(पुं०) राजा।—ज—(पुं०) मंगल ग्रह। वृक्ष। (न०) अदरक, आदी।—तल—(न०) जमीन की सतह।—दुर्ग—(न०) कच्चा किला, भूदुर्ग।—धर—(पुं०) पहाड़। विष्णु।—ध्र—(पुं०) पर्वत। विष्णु भगवान्।—नाथ,—पति,—भुज्,—मघवन्,—महेन्द्र—(पुं०) राजा।—पुत्र,—सुत,—सूनु—(पुं०) मंगल ग्रह। नरकासुर।—पुत्री,—सुता—(स्त्री०) सीता जी।—प्रकम्प—भूचाल।—प्ररोह,—रुह्,—रुह—(पुं०) वृक्ष।—प्राचीर—(न०),—प्रावर—(पुं०) समुद्र।—भर्तृ—(पुं०) राजा।—भृत्—(पुं०) पहाड़। राजा।—

लता–(स्त्री०) केचुवा ।—सुर–(पुं०) ब्राह्मण ।

महीयस्—(वि०) [महत्+ईयसुन्] अधिक महान्, बहुत बड़ा; 'प्रकृतिः खलु सा महीयसः सहते नान्यसमुन्नतिं यया' कि० २.२१ (पुं०) बड़ा या उदारमना मनुष्य ।

महोला, महेला—(स्त्री०) [=महिला,पृषो० साधुः] महिला, रमणी, नारी ।

√मा—जु० आत्म० अक० शब्द करना । सक० मापना । मिमीते, मास्यते, अमित । अ० पर० सक० मापना । माति, मास्यति, अमासीत् । दि० आत्म० सक० मापना । मायते, मास्यते, अमास्त ।

मा—(अव्य०) [√मा+क्विप्]नहीं, मत, वर्जनात्मक अव्यय जिसके योग में 'अट्' और 'आट्' आगम रहित केवल 'लुङ्' लकार होता है । (स्त्री०) [√मा+क–टाप्] धन की अधिष्ठात्री देवी लक्ष्मी जी । माता । [√मा+क्विप्] माप या मान विशेष । —प,—पति–(पुं०) विष्णु भगवान् ।

मांस—(न०) [√मन्+स, दीर्घ] शरीर में हड्डियों और चमड़े के बीच का मुलायम और लचीला पदार्थ, गोश्त । मछली । फल का गूदा ।(पुं०)कीड़ा । एक वर्णसंकर जाति जिसका पेशा मांस बेचना है । काल ।—अद् (मांसाद्),—अद (मांसाद),—आदिन् (मांसादिन्),—भक्षक–(पुं०) (वि०) मांस खाने वाला, गोश्तखोर ।—अर्गल (मांसार्गल)–(न०, पुं०) मांस-पिण्ड जो मुख से नीचे लटकता है ।—अशन (मांसाशन)–(न०) मांस-भक्षण ।—आहारिन् (मांसाहारिन्) –(वि०) मांस भोजन करने वाला ।—उपजीविन् (मांसोपजीविन्)–(पुं०) मांस बेचकर जीवन-निर्वाह करने वाला, कसाई ।—ओदन (मांसौदन)–(पुं०) भोजन जिसमें मांस हो । चावल और मांस एक साथ पकाया हुआ । भक्ष्य पदार्थ विशेष ।—कारिन्–(न०) रक्त, खून ।—ग्रन्थि– (पुं०) मांस की गाँठ जो शरीर के भिन्न-भिन्न अंगों में निकल आती है ।—ज–(न०),— तेजस् —(न०) चर्बी, वसा ।—द्राविन् –(पुं०) अम्लवेत ।—निर्यास–(पुं०) शरीर के रोंगटे ।—पिटक –(पुं०, न०)मांस भरी डलिया । बहुत-सा मांस ।—पित्त–(न०) हड्डी ।—पेशी–(स्त्री०)शरीर के भीतर एक दूसरे से जुड़े हुए मांस-पिण्ड । भावप्रकाश के अनुसार गर्भ की वह अवस्था जो गर्भधारण के सात दिनों के बाद और १४ दिनों के भीतर होती है और प्रायः एक सप्ताह तक रहती है ।—फल –(पुं०) तरबूज ।—योनि–(पुं०) रक्त-मांस से उत्पन्न जीव ।—सार, —स्नेह –(पुं०) चर्बी, वसा ।—हासा–(स्त्री०) चमड़ा, चर्म ।

मांसल—(वि०) [मांस+लच्] मांस से भरा हुआ, मांस-पूर्ण । मोटा-ताजा, पुष्ट । बलवान्, मजबूत । गम्भीर, जैसे स्वर ।

मांसिक—(पुं०) [मांस+ठञ्] मांस-विक्रेता, कसाई ।

माकन्द—(पुं०) [√मा+क्विप् माः परिमितः सुघटितः कन्द इव फलम् यस्य] आम का पेड़ ।

माकन्दी–(स्त्री०)[माकन्द–ङीष्]आँवला । पीला चन्दन । महाभारत के समय के, गंगातट पर बसे हुए, एक नगर का नाम ।

माकर—(वि०) [स्त्री०—माकरी][मकर +अण्] मकर से संबद्ध या उत्पन्न ।

माकरन्द—(वि०) [स्त्री०—माकरन्दी] [मकरन्द+अण्] पुष्प के रस से सम्बन्धयुक्त । शहद से पूर्ण या जिसमें शहद मिला हो ।

माकलि—(पुं०) मातलि का नाम । मातलि इन्द्र का सारथी है । चन्द्रमा ।

माक्षिक, माक्षीक—(वि०) [स्त्री०—**माक्षिकी या माक्षीकी**] [मक्षिकाभिः कृतम्, मक्षिका+अण्, पक्षे नि० दीर्घः] मधुमक्षिका से उत्पन्न या निकला हुआ। (न०) शहद, मधु। शहद जैसा खनिज पदार्थ विशेष।—**आश्रय (मक्षिकाश्रय)**,—**ज**-(न०) मोम।

मागध—(पुं०) [मगध+अण्] मगध देश का राजा। मगध-निवासी। वर्णसंकर जाति विशेष, जिसकी उत्पत्ति वैश्य पिता और क्षत्रिय माता से हुई है। इस जाति का काम वंशक्रम से किसी राजा या अपने-अपने यजमानों की विरुदावली पढ़ना है। बंदीजन, भाट।

मागधा, मागधिका—(स्त्री०) [मागध+टाप्] [मगध+ठक्+इक—टाप] बड़ी पीपल।

मागधिक—(पुं०) [मगध+ठक्] मगध देश का राजा। मगध-निवासी।

मागधी—(स्त्री०) [मागध + ङीष्] मगध देश की राजकुमारी। मगध देश की प्राचीन प्राकृत भाषा। बड़ी पीपल। सफेद खाँड़। जुही, यूथिका। छोटी इलायची। जीरा।

माघ—(पुं०) [मघानक्षत्रयुक्ता पौर्णमासी माघी, मघा+अण्—ङीप्, सा अत्र मासे, माघी+अण्] पूस के बाद और फागुन से पहले का महीना। संस्कृत भाषा के शिशुपाल-वध काव्य का तथा उसके रचयिता एक कवि का नाम।

माघमा—(स्त्री०) केकड़े की मादा।

माघवत—(वि०) [स्त्री०—**माघवती**] [मघवत्+अण्] इन्द्र का।—**चाप**-(न०) इन्द्रधनुष।

माघवती—(स्त्री०) [माघवत + ङीप्] पूर्व दिशा।

माघवन—(वि०) [स्त्री०—**माघवनी**] [मघवन्+अण्]इन्द्र का या इन्द्र द्वारा शासित।

माघ्य—(न०) [माघे जातम्, माघ+यत्] कुन्द पुष्प।

√**माङ्क्ष्**—भ्वा० पर० सक० अभिलाषा करना, इच्छा करना। माङ्क्षति, माङ्क्षिष्यति, अमाङ्क्षीत्।

माङ्गलिक—(वि०) [स्त्री०—**माङ्गलिका**] [मङ्गल+ ठक्]मङ्गल-जनक, शुभ। भाग्यवान्।

माङ्गल्य—(वि०) [मङ्गल+ष्यञ्] शुभ। सौभाग्य-सूचक। (न०) मंगल का भाव, माङ्गलिकता। आशीर्वाद। उत्सव।—**मृदङ्ग**–(पुं०) वह मृदङ्ग जो किसी शुभावसर पर बजाया जाय।

माच—(पुं०) [मा√अञ्च्+क]मार्ग,रास्ता।

माचल—(पुं०) [मा चलति भोगमदत्वात् अचिरेणैव स्थानं न मुञ्चति, मा√चल्+अच्] ग्रह। रोग। चोर। मगर।

माचिका—(स्त्री०) [मा अञ्चति क्षतादिकं त्यक्त्वा न गच्छति, मा√ अञ्च्+क+कन्—टाप्,इत्व] मक्खी। अम्बष्ठा। पाठा। आमड़े का पेड़।

माञ्जिष्ठ—(न०) [मञ्जिष्ठया रक्तम्, मञ्जिष्ठा+अण्] लाल रंग। एक प्रकार का मूत्र-रोग। (वि०) [स्त्री०—**माञ्जिष्ठी**] मजीठ की तरह लाल।

माञ्जिष्ठिक—(वि०) [स्त्री०—**माञ्जिष्ठिकी**] [मञ्जिष्ठा+ठक्] मजीठ के रंग में रँगा हुआ।

माठर—(पुं०) [√मन्+अरन्, ठान्तादेश वा√मठ्+अरन् ततः अण्] व्यास जी का नाम। ब्राह्मण। कलवार, शौण्डिक। सूर्य का एक गण।

माठी—(स्त्री०) कवच, जिरहबख्तर।

माड—(पुं०) ताड़ की जाति का वृक्ष विशेष। तौल। नाप।

माढि—(स्त्री०) [√माह्+क्तिन्] अंकुर, अँखुआ। सम्मान, प्रतिष्ठा। उदासी। धन-

हानता। क्रोध, रोष। संजाफ, गोट, किनारी। एक के ऊपर एक जमे हुए दूहरे दाँत।

माणव—(पुं०) [मनोः अपत्यम् पुमान्, मनु+अण्, णत्व] मनुष्य। छोकरा, लड़का जो १६ वर्ष की अवस्था तक का हो। बौना। सोलह या बीस लरों का मोतीहार।

माणवक—(पुं०) [माणव+कन्] लड़का, छोकरा। खर्वाकार। बौना। मूर्ख आदमी। छात्र, धर्मशास्त्र पढ़ने वाला विद्यार्थी। सोलह या बीस लर का मोतियों का हार।

माणवीन—(वि०) [माणव+खञ्—ईन] माणव संबन्धी।

माणव्य—(न०) [माणव + यत्] बालकों या छोकरों की टोली।

माणिका—(स्त्री०) [√मान् +घञ्, नि० णत्व+कन्—टाप्, इत्व] आठ पल के बराबर की एक तौल।

माणिक्य—(न०) [मणि+कन् (प्रशंसायाम्) +ष्यञ् (स्वार्थे)] गुलाबी या लाल रंग का एक रत्न।

माणिक्या—(स्त्री०) [माणिक्य+टाप्] छिपकली।

माणिबन्ध, माणिमन्थ—(न०) [मणिबन्धगिरौ भवम्, मणिबन्ध+अण्] मणिमन्थगिरौ भवम्, मणिमन्थ+अण्] सेंधा नमक।

माण्डलिक—(वि०) [स्त्री०—**माण्डलिकी**] [मण्डल+ठक्] किसी प्रान्त या मण्डल की रक्षा या शासन करने वाला। (पुं०) सूबेदार, किसी सूबे का हाकिम या शासक।

मातङ्ग—(पुं०) [मतङ्ग+अण्] हाथी। चाण्डाल। किरात। समासान्त शब्द के अन्त में कोई भी अपनी जाति की सर्वश्रेष्ठ वस्तु। —**दिवाकर**-(पुं०) एक संस्कृत कवि का नाम। —**नक्र**-(पुं०) मगर जो डील-डौल में हाथी के समान हो; 'मातङ्गनक्रैः सहसोत्पतद्भिः' र० १३.११।

मातरिपुरुष—(पुं०) [अलुक् समास] वह जो केवल घर ही में अपनी माता आदि के सामने अपनी वीरता प्रकट करता हो किन्तु घर के बाहर कुछ भी न कर सकता हो।

मातरिश्वन्—(पुं०) [मातरि अन्तरिक्षे श्वयते वर्धते, मातरि √श्वि + कनिन्, सप्तम्या अलुक्] पवन, जो अन्तरिक्ष में बहता है; 'पुनरुषसि विविक्तैर्मातरिश्वावचूर्ण्य ज्वलयति मदनाग्निं मालतीनां रजोभिः' शि० ११.१७।

मातलि—(पुं०) [मतलस्यापत्यम् पुमान्, मतल+इञ्] इन्द्र के सारथि का नाम। —**सारथि**-(पुं०) इन्द्र।

माता—दे० 'मातृ'।

मातामह—(पुं०) [मातृ+डामहच्] नाना, माता का पिता।

मातामही—(स्त्री०) [मातामह +ङीष्] नानी।

माति—(स्त्री०) [√मा + क्तिन्] माप। विचार। धारणा।

मातुल—(पुं०) [मातृ+डुलच्] मामा, माता का भाई। धतूरे का पौधा। सर्प विशेष। —**पुत्रक**-(पुं०) मामा का पुत्र। धतूरे का फल।

मातुलङ्ग—दे० 'मातुलिङ्ग'।

मातुला, मातुलानी, मातुली—(स्त्री०) [मातुल—टाप्] [मातुल—ङीष्, आनुक्] [मातुल—ङीष्] मामा की पत्नी, मामी। पटसन, सन। प्रियंगुलता।

मातुलिङ्ग, मातुलुङ्ग—(पुं०) [मातुल√गम् +खच्, मुम्, पृषो० साधुः] बिजौरा नींबू।

मातुलेय—(पुं०) [स्त्री०—**मातुलेयी**] [मातुल+ढक्] मामा का लड़का।

मातृ—(स्त्री०) [मान्यते पूज्यते या सा, √मान् +तृच्, नलोपनि०] माँ, जननी। पूज्य या आदरणीय स्त्री का संबोधन। गौ। लक्ष्मी देवी। दुर्गा देवी। पृथिवी।

आकाश। देवमातृका जो संख्या में सोलह हैं। विभूति। खेती। जटामांसी। मूसाकानी। इन्द्रवारुणी। महाश्रावणी।—गण-(पुं०) षोडश मातृकाएं। —गोत्र-(न०) माता का गोत्र, कुल।—घात, —घातक, —घातिन्, —घ्न-(पुं०) माता की हत्या करने वाला व्यक्ति, मातृहन्ता। —घातुक-(पुं०) मातृहन्ता। इन्द्र।—चक्र-(न०) मातृकाओं का समूह।—देव-(वि०) वह जो अपनी माता को अपना इष्टदेव मानता हो।—नन्दन-(पुं०) कार्तिकेय।—पक्ष- (वि०) माता के कुल का।—पूजन-(न०) मातृकाओं का पूजन।—बन्धु, —बान्धव- (पुं०) माता के सम्बन्ध का कोई आत्मीय।—मण्डल-(न०) मातृकाओं का समुदाय। दोनों नेत्रों के बीच का स्थान।—मातृ-(स्त्री०) नानी। पार्वती देवी।—मुख-(पुं०) मूर्ख या मूढ़ जन।—यज्ञ-(पुं०) एक यज्ञ जो मातृकाओं के उद्देश्य से किया जाता है। —वत्सल-(पुं०) कार्तिकेय। —शासित-(वि०) मूर्ख।—ष्वसृ-(स्त्री०) [=मातृष्वसृ या मातुःष्वसृ] मौसी।

मातृक—(वि०) [मातृ+ठञ्] माता सम्बन्धी। माता से प्राप्त; 'राजसत्वमवधूय मातृकं' र० ११.९० । (पुं०) मामा।

मातृका—(स्त्री०) [मातृ+कन् –टाप्] माता। दादी। धात्री, दाई। उद्भवस्थान। ब्रह्माणी, माहेश्वरी, इंद्राणी आदि देवियाँ। तांत्रिक यंत्र विशेष। यन्त्र में लिखे जाने वाले अक्षर या वर्ण। वर्णमाला।

मातृकेशट—(पुं०) [मातृ के कुले अटति पुत्ररूपेण गच्छति, मातृके √अट्+अच्] मामा।

मातृष्वस्रेय—(पुं०) [मातृष्वसुः अपत्यम् पुमान्, मातृष्वसृ + ढक्] मौसेरा भाई।

मात्र—(अव्य०) [√मा+त्रन्] केवल, भर और सिर्फ अर्थवाची अव्यय विशेष।

मात्रा—(स्त्री०) [मात्र+टाप्] परिमाण, मिकदार। नाप का परिमाण, नियम। ठीकठीक नाप। एक फुट। पल, क्षण। अणु। अंश। काम का, उपयोग का [यथा:—"राजेति कियती मात्रा।" अर्थात् राजा किस प्रयोजन या काम का है]। धन, सम्पत्ति। छन्दःशास्त्र में इसे मत्त, मत्ता, कल या कला कहते हैं। जड़ात्मक संसार। बारहखड़ी लिखते समय स्वरसूचक वे संकेत जो अक्षर के ऊपर, नीचे, आगे या पीछे लगाये जाते हैं। कान की बाली। इंद्रिय। इंद्रियवृत्ति। अवयव। शक्ति।—भस्त्रा-(स्त्री०) रुपये रखने की थैली या बटुआ।—स्पर्श-(पुं०) विषय के साथ इन्द्रिय का संयोग।

मात्रिक—(वि०) [मात्रा + ठक्] मात्रा संबंधी। मात्राओं की गणना वाला (छंद)।

मात्सर, मात्सरिक—(वि०) [स्त्री०—**मात्सरी, मात्सरिकी**] [मत्सर + अण्] [मत्सर+ठक्] डाही, ईर्ष्यालु।

मात्सर्य—(न०) [मत्सर+ष्यञ्] ईर्ष्या, डाह, जलन।

मात्स्यिक—(पुं०) [मत्स्यं हन्ति, मत्स्य +ठक्] मछुआ, धीवर, माहीगीर।

माथ—(पुं०) [√मथ् + घञ्] मंथन, बिलोना। हत्या। मार्ग।

माथुर—(वि०) [स्त्री०—**माथुरी**] [मथुरा +अण्] मथुरा का। मथुरा में उत्पन्न। मथुरा में रहने वाला।

माद—(पुं०) [√मद् +घञ्] नशा, मद। हर्ष, आनन्द। अभिमान, अकड़।

मादक—(वि०) [स्त्री०—**मादिका**] [√मद् +णिच्+ण्वुल्] बेहोश करने वाला, नशा पैदा करने वाला। आनन्ददायक।

मादन—(वि०) [√मद्+णिच्+ल्यु] मादक, नशीला। (पुं०) कामदेव। धतूरा। (न०) [√मद्+णिच् + ल्युट्] नशा, मद। लौंग।

मादनीय—(वि०) [√ मद् + णिच् +अनीयर्] मादकता उत्पन्न करने योग्य। (न०) नशा लाने वाला पेय पदार्थ।

मादृश, मादृश्, मादृक्ष—(वि०) [स्त्री० —**मादृशी, मादृक्षी**] [अहमिव दृश्यते, अस्मद् √ दृश्+कञ्, मदादेश, आत्व] [अस्मद् √दृश्+क्विन्] [अस्मद् √दृश् +क्स] मेरे सदृश, मेरे जैसा; 'प्रवृत्तिसाराः खलु मादृशां गिरः' कि० १.२५।

माद्रक—(पुं०) [मद्र+वुञ्] मद्र देश का राजकुमार।

माद्रवती—(स्त्री०) [मद्र+मतुप्, वत्व+ अण्—ङीप्] माद्री, राजा पाण्डु की दूसरी रानी का नाम। राजा परीक्षित् की पत्नी।

माद्री—(स्त्री०) [मद्र+अण्—ङीप्] राजा पाण्डु की दूसरी रानी जिसके गर्भ से नकुल और सहदेव की उत्पत्ति हुई थी।—**नन्दन—सुत**,-(पुं०) । नकुल और सहदेव।—**पति**-(पुं०) पाण्डु का नामान्तर।

माद्रेय—(पुं०) [माद्री+ढक्] नकुल और सहदेव।

माधव—(वि०) [स्त्री०—**माधवी**] [मधु +अण्, विष्णुपक्षे मा लक्ष्मीः तस्याः धवः पतिः वा मात्रा विद्यया धवः] शहद की तरह मीठा। शहद से तैयार किया गया। वसन्तकालीन। मधु दैत्य के वंश का। (पुं०) विष्णु। श्रीकृष्ण। वसन्त ऋतु, कामदेव का सखा। वैशाख मास। इन्द्र। परशुराम। यादव गण; 'प्रहितः प्रधनाय माधवानहमाकारयितुं महीभृता' शि० १६.५२। एक प्रसिद्ध संस्कृत के विद्वान् का नाम। यह मायण के पुत्र और सायण के भाई थे। इनका काल १४वीं शताब्दी माना गया है। इनके बनाये कितने ही प्रसिद्ध संस्कृत ग्रन्थ हैं। कहा जाता है कि, सायण और माधव ने मिलकर, ऋग्वेद भाष्य बनाया था। महुए का पेड़। काली मूंग।—**श्री**-(स्त्री०) वसन्त ऋतु की शोभा।

माधवक—(पुं०) [माधव+वुञ्] महुए की शराब।

माधविका—(स्त्री०) [माधवी+कन्—टाप्, ह्रस्व] माधवी लता।

माधवी—(स्त्री०) [मधौ साधु पुष्पति, मधु +अण्—ङीप्] एक सुगंधित फूलों वाली लता, वासंती। अजमोदा। तुलसी। शहद से बनायी हुई मदिरा। दुर्गा। कुट्नी।—**लता**-(स्त्री०) माधवी की बेल।—**वन**-(न०) माधवी लता की कुञ्ज।

माधवीय—(वि०) [माधव+छ] माधव सम्बन्धी।

माधुकर—(वि०) [मधुकर+अण्] भ्रमर या मधुमक्षिका सम्बन्धी या उसके सदृश।

माधुकरी—(स्त्री०) [माधुकर+ङीप्] भिक्षा जो घर-घर माँगकर इकट्ठी की गयी हो। पाँच घरों से मिली हुई भिक्षा।

माधुर—(न०) [मधु अस्ति अस्मिन्। मधु +र+अण्] मल्लिका लता या चमेली का पुष्प।

माधुरी—(स्त्री०) [माधुर+ङीप्] मिठास, मधुर स्वाद। मदिरा, शराब।

माधुर्य—(न०) [मधुरस्य भावः, मधुर +ष्यञ्] मिठास, मधुर होने का भाव, मधुरता। लावण्य, सौन्दर्य। पाञ्चाली रीति के अन्तर्गत काव्य की एक विशेषता जिससे चित्त बहुत प्रसन्न होता है। सात्त्विक नायक का एक गुण।

माध्य—(वि०) [मध्य+अण्] बीच का, मध्य का।—**आकर्षण** (**माध्याकर्षण**)- (न०) पृथ्वी के मध्य भाग की वह आकर्षण-

शक्ति जिससे ऊपर उछाली हुई चीज फिर नीचे आती है, गुरुत्वाकर्षण ।

माध्यन्दिन—(न०) [मध्य + दिनण्, पृषो० मुम् वा मध्यन्दिन+अण्] दोपहर । शुक्ल यजुर्वेद की एक शाखा ।

माध्यम—(वि०) [स्त्री०—**माध्यमी**] [मध्यम+अण्] बीच का, बिचले भाग का, मध्य का ।

माध्यमक, माध्यमिक—(वि०) [स्त्री०—**माध्यमिका, माध्यमिकी**] [मध्यम+वुञ्] [मध्यम+ठक्] मध्य का, बीच का, केन्द्रवर्ती ।

माध्यस्थ, माध्यस्थ्य—(न०) [मध्यस्थ+अण्] [मध्यस्थ +ष्यञ्] निरपेक्षता; 'अभ्यर्थनाभङ्गभयेन साधुर्माध्यस्थ्यमिष्टेऽप्यवलम्बतेऽर्थे' कु० १.५२ । तटस्थता । बीच-बचाव ।

माध्याह्निक—(वि०) [मध्याह्न+ठक्] दोपहर सम्बन्धी ।

माध्व—(वि०) [मधु+अण्] मधुनिर्मित। मीठा, मधुर। (पुं०) [मध्व+अण्] मध्वाचार्य सम्प्रदाय का अनुयायी ।

माध्वी—(स्त्री०) [मधु+अण्–ङीप्] मदिरा, शराब । माधवी लता ।

माध्वीक—(न०) [माध्वी +कन्] महुए की शराब; 'चचाम मधु माध्वीकं' भट्टि० १४.९४। द्राक्षा से निकली हुई शराब । अंगूर । द्राक्षा ।—**फल** –(न०) मीठा नारियल ।

√मान्–भ्वा० आत्म० सक० विचार करना। मीमांसते । चु० पर० सक० पूजा करना । मानयति–मानति, मानयिष्यति-मानिष्यति, अमीमनत्–अमानीत् ।

मान—(पुं०) [√मान् + घञ्] सम्मान, प्रतिष्ठा । अभिमान, घमंड। आत्मसम्मान, आत्मनिर्भरता। गर्व, मद। अहंकार से उत्पन्न क्रोध । (न०) [√मा+ल्युट्] नाप, तौल । परिमाण, मिकदार। प्रमाण । समानता, सादृश्य ।—**ग्रन्थि** –(पुं०)प्रिया या नायक की परस्त्री में अनुराग दिखाने वाली चेष्टा से उत्पन्न कोप। अपरा ।—**दण्ड**–(पुं०)नापने का डंडा ।—**नालिका**–(स्त्री०) ककड़ी ।—**रन्ध्रा**–(स्त्री०) जलघड़ी का कटोरा ।—**सूत्र**–(न०) नापने का फीता । नापने की जंजीर, जिसे जरीब कहते हैं ।

मानःशिल—(वि०) [मनःशिला+अण्] मनःशिला या मैनसिल सम्बन्धी ।

मानन—(न०), **मानना**–(स्त्री०) [√मा +ल्युट्] [√मान्+णिच्+युच्–टाप्] मान, आदर करना । प्रतिष्ठा, सम्मान । हत्या करना; 'मखय: कर्तुमुपेत्य माननां' शि० १६.२ ।

माननीय—(वि०) [√मान्+अनीयर्] पूज्य, सम्मान योग्य ।

मानव—(पुं०) [स्त्री०—**मानवी**] [मनोः अपत्यम्, मनोः गोत्रापत्यम् पुमान्, मनु +अण्] मनु के वंशधर या मनु के वंशवाले । मनुष्य, नर ।—**इन्द्र (मानवेन्द्र)**,—**देव**,—**पति**–(पुं०) राजा, नरेन्द्र ।—**धर्मशास्त्र**– (न०) मनुसंहिता, मनुस्मृति ।—**राक्षस**–(पुं०) मनुष्यरूप-धारी राक्षस ।

मानवत्—(वि०) [मान +मतुप्, मस्य वः] मानी । अभिमानी, अहङ्कारी ।

मानवती—(स्त्री०) [मानवत्+ङीप्] मानिनी (नायिका) । अभिमानी स्त्री ।

मानव्य—(न०) [मानव+यत्] मानव-समूह ।

मानस—(वि०) [मनस्+अण्] मन सम्बन्धी, मानसिक । मन से उत्पन्न । मन में विचारा हुआ । मानसरोवर में रहने वाला । (न०) मन, हृदय । मानसरोवर । लवण विशेष । (पुं०) विष्णु भगवान् का एक रूप ।—**आलय (मानसालय)**–(पुं०) राजहंस ।

—उत्क (मानसोत्क)–(वि०) मानसरोवर जाने को उत्सुक।—ओकस् (मानसौकस्), —चारिन्–(पुं०) हंस। कामदेव।—तीर्थ–(न०) राग, द्वेष आदि से रहित मन।—व्रत-(न०) अहिंसा, सत्य आदि।

मानसिक—(वि०) [मनस् + ठञ्] मन सम्बन्धी। (पुं०) विष्णु भगवान् का नामान्तर।

मानिका—(स्त्री०) [मानयति गर्वीकरोति, √मन् +णिच्+ण्वुल् – टाप्, त्व] शराब, मदिरा। आठ पल या आठ तोले का एक मान।

मानित—(वि०) [मान+इतच्] सम्मानित, प्रतिष्ठित।

मानुष—(वि०) [स्त्री०—मानुषी][मनुष्य +अण्, वृद्धि, यलोप] मनुष्य संबंधी। मानवोचित। (न०) इंसानियत, मनुष्यत्व। पुरुषार्थ। (पुं०) [मनोः जातः, मनु+अञ्, षुगागम] मनुष्य, नर। मिथुन, कन्या और तुला राशियों का नामान्तर। प्रमाण के भेदों में से एक। इसके तीन उपभेद हैं—लिखित, भुक्ति और साक्षी।

मानुषक—(वि०) [मानुष+कन्] मनुष्य सम्बन्धी, मनुष्य का।

मानुष्य, मानुष्यक—(न०) [मनुष्य+ष्यञ्] [मनुष्य+वुञ्] मनुष्यता। मनुष्य-शरीर। मानव-जाति। मानव-समुदाय।

मानोज्ञक—(न०) [मनोज्ञ+वुञ्] सौन्दर्य। मनोज्ञता।

मान्त्रिक—(पुं०) [मन्त्र+ ठ्] मंत्रवेत्ता। तांत्रिक। ऐन्द्रजालिक, जादूगर।

मान्थर्य—(न०) [मन्थर+ष्यञ्] सुस्ती। श्रान्ति, थकावट। निर्बलता, कमजोरी।

मान्दार—(पुं०) [मन्दार+अण्]मंदार वृक्ष।

मान्द्य—(न०) [मन्द+ष्यञ्] सुस्ती, काहिली। मूढ़ता। निर्बलता। वैराग्य, उदासीनता। रोग।

मान्धातृ—(पुं०) [मां धास्यति, माम्√धे +तृच्] युवनाश्व राजा के पुत्र का नाम। यह एक इतिहास-प्रसिद्ध राजा हो गया है और राजा मान्धाता के नाम से प्रसिद्ध है।

मान्मथ—(वि०) [स्त्री०—मान्मथी] [मन्मथ+अण्] कन्दर्प सम्बन्धी। प्रेम सम्बन्धी।

मान्य—(वि०) [√मान् +ण्यत्] मानने योग्य, माननीय, पूज्य।

मापन—(न०) [√मा+ णिच्, पुक्+ ल्युट्] नापना। (पुं०) तराजू।

मापत्य—(पुं०) [मा विद्यते अपत्यम् अस्य] कामदेव।

माम—(वि०)[स्त्री०—मामी] [मम इदम् अस्मद्+अण्, ममादेश] मेरा। चाचा (सम्बोधन में)।

मामक—(वि०) [स्त्री०—मामिका] [अस्मद् +अण्, ममकादेश] मेरा। स्वार्थी, लालची। (पुं०) कंजूस। मामा।

मामकीन—(वि०) [अस्मद्+खञ्, ममकादेश] मेरा।

माय—(पुं०) [माया अस्ति अस्य, माया +अच्] बाजीगर, जादूगर। [मयस्यापत्यम्, मय+अण्] असुर।

माया—(स्त्री०) [मीयते अनया, √मा +य–टाप्] कपट, छल। प्रवञ्चना, गी। ऐन्द्रजाल, जादू का खेल; 'स्वप्नो नु माया नु मतिभ्रमो नु' श० ६.७। अविद्या, अज्ञान। राजनीतिक धोखाधड़ी। प्रधान या प्रकृति। दुष्टता। अनुकम्पा। बुद्धदेव की माता का नाम।—कार,—कृत्,—जीविन्–(पुं०) जादूगर, बाजीगर।—पुरी–(स्त्री०) हरिद्वार।—प्रयोग–(पुं०) छल-प्रयोग, धूर्तता। जादू का प्रयोग।—फल–(न०) माजूफल।—मृग–(पुं०) सीताजी को छलने के लिए मारीच राक्षस द्वारा धारण किया गया स्वर्ण-मृग का रूप।—

—यन्त्र–(न०) किसी को मोहने की विद्या, सम्मोहन ।—वाद–(पुं०) ईश्वर के अतिरिक्त सृष्टि की समस्त वस्तुओं को अनित्य मानने का सिद्धान्त । इस सिद्धान्त के अनुसार यह सारी सृष्टि केवल मिथ्या समझी जाती है ।—सुत–(पुं०) बुद्धदेव ।

मायावत्—(वि०) [माया+मतुप्, वत्व] छली, कपटी । मायावी । भ्रमात्मक, असत्य । (पुं०) कंस का एक नाम ।

मायावती—(स्त्री०) [मायावत्+ङीप्] कामदेव की पत्नी रति ।

मायाविन्—(वि०) [प्रशस्ता माया अस्ति अस्य, माया+विनि] धोखेबाज, छलिया, कपटी; 'व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः' कि० १.३० । बाजीगरी में निपुण । असत्य, भ्रमात्मक । (पुं०) ऐन्द्रजालिक, बाजीगर । बिल्ली । (न०) माजूफल ।

मायिक—(वि०) [माया मोहनगुणः विद्यतेऽस्मिन्, माया+ठन्] धोखेबाज, कपटी । भ्रमात्मक, असत्य । (न०) माजूफल । (पुं०) बाजीगर, जादूगर ।

मायिन्—(पुं०) [माया+इनि] बाजीगर । कपटी मनुष्य । ब्रह्मा । कामदेव । परमेश्वर । अग्नि । शिव ।

मायु—(पुं०) [√मि+उण्] सूर्य । पित्त । शब्द ।

मायूर—(वि०) [स्त्री०—**मायूरी**] [मयूर+अण्] मोर का । मोर के पंखों का बना हुआ । मोरों द्वारा खींचा जाने वाला (रथ) । मोर को प्रिय लगने वाला । (न०) मोरों का झुंड ।

मायूरक, मायूरिक—(पुं०) [मयूर+वुञ्] [मयूर+ठक्] मोर पकड़ने वाला, चिड़ीमार ।

मार—(पुं०) [√मृ+घञ्] हनन, मारण । बाधा, अड़चन । कामदेव । प्रेम । धतूरा ।

—अरि (मारारि), —रिपु–(पुं०) शिव जी ।—आत्मक (मारात्मक)–(वि०) हत्याजनक ।—जित्–(पुं०) शिवजी का नाम । बुद्धदेव का नाम ।

मारक—(पुं०) [√मृ+णिच् + ण्वुल्] प्लेग आदि कोई भी संक्रामक या फैलने वाली बीमारी । कामदेव । हत्यारा, घातक । बाजपक्षी ।

मारकत—(वि०) [स्त्री०—**मारकती**] [मरकत+अण्] पन्ना सम्बन्धी ।

मारण—(न०) [√मृ + णिच्+ल्युट्] मारना, नष्ट करना, हत्या करना । तान्त्रिक षट्कर्मों में से एक, शत्रुनाश । भस्मीकरण । विष विशेष ।

मारि—(स्त्री०) [√मृ+णिच्+इन्] महामारी, मरी । हनन, वध ।

मारिच—(वि०) [स्त्री०—**मारिची**] [मरिच+अण्] मिर्च का बना हुआ ।

मारिष—(पुं०) [मा रिष्यति हिनस्ति, मा √रिष्+क] नाटकादि में मान्य व्यक्ति के संबोधन का शब्द । नाटक का सूत्रधार ।

मारी—(स्त्री०) [मारि+ङीष्]मरी, महामारी । मरी रोग की अधिष्ठात्री देवी जैसे दुर्गा ।

मारीच—(पुं०) रामायण के अनुसार वह राक्षस जिसने सोने का हिरन बनाकर सीताजी को धोखा दिया था । बादशाही हाथी । बड़े डीलडौल का हाथी । पौधा-विशेष । कंकोल । (न०) [मरीच+अण्] मिर्च की झाड़ियों का समुदाय ।

मारुण्ड—(पुं०) सर्प का अंडा । गोमय, गोबर । मार्ग, सड़क ।

मारुत—(वि०) [स्त्री०—**मारुती**] [मरुत्+अण्] मरुत् सम्बन्धी । पवन सम्बन्धी । (न०) स्वाति नक्षत्र । (पुं०) पवन, हवा; 'स कीचकैर्मारुतपूर्णरन्ध्रैः' र० २.१२ । पवनदेव । श्वास । वायु, कफ, पित्त में से

वायु । हाथी की सूंड़ ।**—अशन** (**मारुता-शन**)–(पुं०) सर्प, साँप ।**—आत्मज** (**मारुतात्मज**), **—सुत**, **—सूनु**–(पुं०) हनुमान जी । भीम ।

मारुति–(पुं०) [मरुत्+इञ्] हनुमान। भीम।

मार्कण्ड, मार्कण्डेय—(पुं०) [मृकण्डोः अपत्यम्, मृकण्डु+अण्] [मृकण्डु+ढक्] एक प्राचीन ऋषि का नाम । इनकी गणना चिरजीवियों में है ।**—पुराण**–(न०) अष्टादश पुराणों में से एक ।

√मार्ग्—चु० पर० सक० ढूंढ़ना, खोजना । शिकार खेलना । याचना करना, माँगना । विवाह के लिए माँगना । मार्गयति— मार्गति, मार्गयिष्यति—मार्गिष्यति, अममार्गत् —अमार्गीत् ।

मार्ग—(पुं०) [√मार्ग् + घञ्] रास्ता, पथ । पगडंडी । पहुँच । चिह्न । ग्रह का मार्ग । खोज, अनुसन्धान । नहर । बंबा । नाली । उपाय, साधन । उचित मार्ग, ठीक राह । ढंग, तरीका । शैली । गुदा, मलद्वार । कस्तूरी । मृगशिरा नक्षत्र । मार्गशीर्ष मास । **—तोरण**–(न०) सड़क पर किसी विशेष अवसर के लिये बनाया हुआ मेहराबदार द्वार ।**—दर्शक**–(पुं०) पथप्रदर्शक, रहनुमा । **—धेनु**–(पुं०), **—धेनुक**–(न०) एक योजन का परिमाण ।**—बन्धन**–(न०) रास्ता रोकना । कच्ची मोर्चाबंदी ।**—रक्षक**–(पुं०) सड़क पर पहरा देने वाला ।**—शोधक**– (पुं०) वह मनुष्य जो औरों के लिये आगे-आगे राह बनाता चलता है ।**—स्थ**–(वि०) यात्री, पथिक ।**—हर्म्य**–(न०) सड़क के किनारे बना हुआ महल ।

मार्गक—(पुं०) [मार्ग+कन्] मार्गशीर्ष मास ।

मार्गण—(न०), **मार्गणा**–(स्त्री०) [√मार्ग् +ल्युट्] [√मार्ग् +णिच् + युच्] याचना, माँग । खोज, तलाश । अनुसन्धान, तहक़ीक़ात । (पुं०) [√मार्ग् + णिच् +ल्यु] भिक्षुक । तीर, बाण । पाँच की संख्या ।

मार्गशिर, मार्गशीर्ष—(पुं०) [मृगशिरा-नक्षत्रयुक्ता पौर्णमासी अत्र, मृगशिरा+अण्] [मृगशीर्ष+अण्] अगहन का महीना ।

मार्गशिरी, मार्गशीर्षी—(स्त्री०) [मार्गशिर —ङीप्] [मार्गशीर्ष+ङीप्] पूस की पूर्णमासी ।

मार्गिक—(पुं०) [मृगान् हन्ति, मृग+ठक्] यात्री, पथिक । शिकारी ।

मार्गित—(वि०) [√मार्ग् +क्त] तलाशा हुआ, खोजा हुआ । याचित ।

√मार्ज्—चु० पर० सक० पवित्र करना, साफ करना । झाड़ना-पोंछना । शब्द करना । बजाना। मार्जयति, मार्जयिष्यति, अममार्जत्।

मार्ज—(पुं०) [√मार्ज् +घञ्] माँजना, सफा करना । [मार्जयति वस्त्रमलम् विष्णुपक्षे पापमलम्, √मार्ज् +णिच्+अच्] धोबी । विष्णु का नामान्तर ।

मार्जक—(वि०) [स्त्री०—**मार्जिका**] [√मार्ज् +ण्वुल्] मार्जन करने वाला ।

मार्जन—(न०) [√मार्ज् +ल्युट्] साफ करने का भाव, स्वच्छ करना । झाड़ना-पोंछना । मिटा देना, रगड़ डालना । उबटन लगाकर किसी आदमी को नहलाना । कुश से पानी छिड़कना । (पुं०) लोध्रवृक्ष ।

मार्जना—(स्त्री०) [√मार्ज् +णिच्+युच्] मार्जन । ढोल का शब्द ।

मार्जनी-(स्त्री०)[मार्जन+ङीप्]झाड़ू,बुहारी।

मार्जार, मार्जाल—(पुं०) [√मृज् +आरन् वृद्धि, पक्षे रस्य लः] बिलाव । ऊद-बिलाव । **—कण्ठ**–(पुं०) मोर ।**—करण**–(न०) स्त्रीमैथुन का आसन-विशेष ।**—गन्धा**–(स्त्री०) मुद्गपर्णी ।

मार्जारक—(पुं०) [मार्जार+कन्] बिलाव । मयूर ।

मार्जारी—(स्त्री०) [मार्जार + ङीप्] मादा बिल्ली । गन्धमार्जार । मुश्क, कस्तूरी ।

मार्जारीय—(पुं०) [मार्जार+छ] बिल्ली । शूद्र । देह का मार्जन करने वाला ।

मार्जित—(वि०) [√मृज् + णिच्+क्त] साफ किया हुआ, शुद्ध किया हुआ । बुहारा हुआ । सजाया हुआ ।

मार्जिता—(स्त्री०) [मार्जित+टाप्] दही में घी, चीनी, शहद, मिर्च, कपूर आदि डाल कर बनाया जाने वाला एक खाद्य-पदार्थ, रसाल या श्रीखंड (?) ।

मार्तण्ड—(पुं०) [मृतस्चासौ अण्डः मृतण्डः शक० पररूप, मृतण्डे भवः, मृतण्ड+अण्] सूर्य । अर्क, मदार । शूकर । बारह की संख्या ।

मार्त्तिक—(वि०) [स्त्री०—**मार्त्तिकी**] [मृत्तिकाया विकारः, मृत्तिका+अण्] मिट्टी का बना हुआ । मिट्टी का । (पुं०) पुरवा । सकोरा । (न०) मिट्टी का ढेला ।

मार्त्य—(न०) [मर्त्य+ष्यञ्] मरणशीलता । दैहिक मल ।

मार्दङ्ग—(न०) [मृदङ्ग+अण्] नगर । कस्बा । (पुं०) मृदंगची

मार्दङ्गिक—(पुं०) [मृदङ्गवादनं शिल्पमस्य, मृदङ्ग+ठक्] मृदंगची ।

मार्दव—(न०) [मृदु+अण्] पराये का दुःख देखकर दुःखी होना, परदुःखकातरता । कोमलता, मृदुता; 'अनितप्तमयोऽपि मार्दवम्भजते' र० ८:४३ ।

मार्द्वीक—(वि०) [स्त्री०—**मार्द्वीकी**] मृद्वीका+अण्] अंगूर का बना हुआ । (न०) अंगूरी शराब ।

मार्मिक—(वि०) [मर्मन् + ठक्] मर्मज्ञ, भली भाँति किसी वस्तु या विषय से परिचित । 'मार्मिकः को मरन्दानामन्तरेण मधुव्रतं' भा० १.११७ ।

मार्ष—[√मृष्+घ+अण्] दे० 'मारिष' ।

मार्ष्टि—(स्त्री०) [√मृज्+क्तिन्, वृद्धि] मार्जन । तेल लगाना ।

माल—(न०) [√मा+रन्, पृषो० रस्य लः] खेत । ऊँची ज़मीन; 'क्षेत्रमारुह्य मालं' मे० १६ । छल । वन । हरताल । (पुं०) विष्णु । एक प्राचीन अनार्य जाति — 'माला भिल्लाः किरातास्च सर्वेऽपि म्लेच्छजातयः' ।—(भागवत ६, ६, ३६) । **—चक्रक**–(न०) पुट्ठे पर का वह जोड़ जो कमर के नीचे जाँघ की हड्डी और कूल्हे में होता है ।

मालक—(पुं०) [√मल् +ण्वुल्] नीम का पेड़ । (न०) गाँव के समीप का वन । नरेरी का बना पात्र । स्थल-पद्म ।

मालति, मालती—(स्त्री०) [मलते शोभां धारयति, मल्+अतिच्, दीर्घ ङीप् वा मां लातीति मालः विष्णुः तम् अतति, माल √अत्+इन्, शक० पररूप] लता-विशेष जिसके फूल बड़े खुशबूदार होते है । कली। जायफल । बारह अक्षरों का एक वर्णिक वृत्त । नवयुवती स्त्री । रात चाँदनी ।—**क्षारक**–(पुं०) सुहागा ।—**पत्रिका**–(स्त्री०) जायफल का छिलका ।—**फल**–(न०) जायफल ।—**माला**–(स्त्री०) मालती पुष्पों की माला ।

मालय—(वि०) [स्त्री०—**मालयी**] [मलय +अण्] मलय पर्वत का । (पुं०) चन्दन काष्ठ ।

मालव—(पुं०) [मालम् उन्नतक्षेत्रम् अस्ति अत्र, माल+व] अवन्ति देश, मालवा । [मालव+अण्] मालवा के निवासी । छह प्रकार के रागों में से प्रथम राग । सफेद लोध ।

मालवक—(पुं०) [मालव+कन्] मालवियों का देश । मालवा निवासी, मालवी ।

मालसी—(स्त्री०) [√मल्+अण्, माल √सो+क—ङीप्] केशपुष्प वृक्ष । रागिणी

विशेष । यह मालव राग की पत्नी कही जाती है ।

माला—(स्त्री०) [माति मानहेतुः भवति, √मा+रन्, रस्य लत्वम्, टाप्, अथवा मां शोभां लाति, मा √ला+क—टाप्] हार । पंक्ति । समूह । लड़ । जंजीर । रेखा; जैसे तडिन्माला, विद्युन्माला । अनेकों की उपाधियाँ ।—**उपमा (मालोपमा)**–(स्त्री०) एक प्रकार का उपमा-अलंकार जिसमें एक उपमेय के अनेक उपमान होते हैं और प्रत्येक उपमान के भिन्न-भिन्न धर्म होते हैं ।—**कर, —कार**–(पु०) माली । माली की जाति । पुराणानुसार एक जाति जो विश्वकर्मा और शूद्रा के संयोग से उत्पन्न हुई है । किन्तु पराशर पद्धति से यह तैलिन और कर्मकार से उत्पन्न है ।—**तृण**–(न०) एक सुगन्ध युक्त तृण-विशेष ।—**दीपक**–(न०) एक अलंकार का नाम । मम्मट ने इसकी परिभाषा यह लिखी है—'मालादीपकमाद्यं चेद्यथोत्तर-गुणावहम् ।'—काव्यप्रकाश ।—**फल**–(न०) —**मणि**–(पु०) द्राक्ष ।

मालिक—(पु०) [माला+ठक्] माली । रंगरेज, चितेरा ।

मालिका—(स्त्री०) [माला + कन् —टाप्, इत्व] गजरा । अवली, पंक्ति । लर । चमेली की जाति का पौधा विशेष । अलसी । पुत्री । नशीली पेय वस्तु । पक्के मकान के ऊपर का खंड ।

मालिन्—(वि०) [माला+इनि] माला पहिने हुए । (पु०) माली ।

मालिनी—(स्त्री०) [मालिन्+ङीप्] मालिन, माली की स्त्री । चम्पा नामक नगरी । सात वर्ष की कन्या जो दुर्गापूजा में दुर्गा की प्रतिनिधि मानकर पूजी जाती है । दुर्गादेवी का नामान्तर । आकाश गङ्गा । एक वर्णिक वृत्त का नाम । एक नदी जिसके तट पर शकुन्तला का जन्म हुआ था । विराट के महल में गुप्तवास करते समय द्रौपदी का एक नाम ।

मालिन्य—(न०) [मलिन+ष्यञ्] मैलापन, गंदगी, अशुद्धता । भ्रष्टता । पापमयता । कृष्णता, कालापन । कष्ट, सन्ताप ।

मालु—(स्त्री०) [√मृ+उण्, रस्य लः] लता विशेष । स्त्री ।—**धान**–(पु०) सर्प विशेष ।

मालूर—(पुं०) [मां परेषां वृक्षान्तराणाम् श्रियं प्रभावं लुनाति, मा√लू+रक्] बेल का पेड़ । कैथे का पेड़ ।

मालेया—(स्त्री०) [माला+ढक्—टाप्] बड़ी इलायची ।

माल्य—(वि०) [मालायै हितम्, माला +यत्] फूल । [माला+ष्यञ् (स्वार्थे)] माला, हार; 'माल्येन तां निर्वचनं जघान' कु० ७.१६ । पुष्पों का बना गुच्छा जो सिर के केशों में बाँधा जाता है ।—**आपण (माल्यापण)** –(पुं०) वह बाजार जहाँ फूल बिकते हों, फूल-बाजार ।—**जीवक**-(पुं०) माली ।—**पुष्प**–(पुं०) सनई, सन का पौधा ।

माल्यवत्—(वि०) [माल्य+मतुप्, वत्व] माला पहिने हुए । (पुं०) एक पर्वत-माला या पर्वत का नाम । एक दैत्य का नाम जो सुकेतु का पुत्र था ।

माल्ल—(पुं०) [मल्ल+अण्] एक वर्ण-संकर जाति जो ब्रह्मवैवर्त पुराणानुसार लेट जाति के पिता और तीवरी माता से उत्पन्न कही गयी है ।

माल्लवी—(स्त्री०) मल्लयुद्ध, पहलवानों का दंगल । मल्लों की विद्या या कला ।

माष—(पुं०) [√मष्+घञ्] उरद । मस्सा । माशा, तौल विशेष । मूर्ख ।—**आद (माषाद)**–(पुं०) कछुवा ।—**आश (माषाश)** –(पुं०) घोड़ा ।—**ऊन (माषोन)**–(वि०) एक माशा कम ।—**वर्धक**–(पुं०) सुनार ।

माषिक—(वि०) [स्त्री०—**माषिकी**] [माष + कन्] एक माशा मूल्य का।

माषीण, माष्य—(न०) [माषाणां भवनं क्षेत्रम्, माष+ख] [माष+यत्] उरद का या उरद बोने योग्य खेत।

मास—(पुं०, न०) [√मस्+घञ्] महीना; 'न मासे प्रतिपत्तासे मां चेन्मर्तासि मैथिलि' भट्टि० ८.९५। बारह की संख्या।—**अनुमासिक** (**मासानुमासिक**)—(वि०) माह-ब-माह, प्रतिमास, माहवार।—**उपवासिनी** (**मासोपवासिनी**)—(स्त्री०) वह औरत जो महीने भर उपासी रहे। कुटिनी।—**प्रमित**—(वि०) मासघटित, जो एक महीने में हो। (पुं०) अमावस्या, प्रतिपदादि।—**मान**—(पुं०) वर्ष, साल।

मासक—(पुं०) [मास+कन्] महीना।

मासर—(पुं०) [√ मस्+णिच् +अरन्] चावल का माँड़।

मासल—(पुं०) [मास+लच्] वर्ष, साल।

मासिक—(वि०) [स्त्री०—**मासिकी**] [मास +ठञ्] मास सम्बन्धी। प्रतिमास होने वाला। एक मास तक रहने वाला। प्रतिमास में अदा किया जाने वाला। एक मास के लिये (कोई वर या पदार्थ) किसी काम के लिये लिया हुआ। (न०) मासिक श्राद्ध जो किसी मृतक के उद्देश्य से उसके मरने के प्रथम वर्ष में किया जाता है।

मासीन—(वि०) [मास+खञ्] एक मास की उम्र का। मासिक।

मासुरी—(स्त्री०) [मसुर+अण्—ङीप्] दाढ़ी। मौंछी। चीर-फाड़ करने का एक यन्त्र।

मास्म—(अव्य०) [मा च स्म च, द्व० स०] निषेध, वारण, मत।

√माह्—भ्वा० उभ० सक० नापना। माहति—ते, माहिष्यति—ते, अमाहीत्—अमाहिष्ट।

माहाकुल, माहाकुलीन—(वि०) [स्त्री०—**माहाकुली, माहाकुलीनी**] [महाकुल + अञ्] [महाकुल+खञ्] उच्चकुलोद्भव, खानदानी।

माहाजनिक, माहाजनीन—(वि०) [स्त्री०—**माहाजनिकी, माहाजनीनी**] [महाजन +ठक्] [महाजन+खञ्] व्यापारी के उपयुक्त, सौदागरों के लायक। बड़े लोगों के योग्य।

माहात्मिक—(वि०) [स्त्री०—**माहात्मिकी**] [महात्मन्+ ठक्] उदाराशय, महानुभाव, गौरवास्पद।

माहात्म्य—(न०) [महात्मन्+ष्यञ्] महिमा, गौरव, महत्त्व।

माहाराजिक—(वि०) [स्त्री०—**माहाराजिकी**] [महाराज+ठञ्] महाराज सम्बन्धी। शाही, राजसी।

माहाराज्य—(न०) [महाराज+ ष्यञ्] महाराज का पद या मर्यादा। बड़ा राज्य।

माहिर—(पुं०) [√मह्+इरन्+अण्] इन्द्र का नामान्तर।

माहिष—(वि०) [महिष वा महिषी+अण्, ङीप्] भैंस सम्बन्धी; 'माहिषं दधि' सुभा०।

माहिषक—(पुं०) [महिष+वुञ्] भैंसा रखने वाला।

माहिषिक—(पुं०) [महिष्यां रीयतेऽसौ वा महिषी नारी पण्यम् अस्य, महिषी+ ठक्] जार, छिनाल औरत का चाहने वाला।—'महिषीत्युच्यते नारी या च स्याद् व्यभिचारिणी। तां दुष्टां कामयति यः स वै माहिषिकः स्मृतः ॥—कालिकापुराण।' अपनी स्त्री की छिनाले की आमदनी पर निर्वाह करने वाला।

माहिष्मती—(स्त्री०) हैहय राजवंशी राजाओं की राजधानी जो नर्मदा के तट पर बसी थी।

माहिष्य—(पुं०) [महिषी+ष्यञ्] क्षत्रिय बाप और वैश्या माता से उत्पन्न वर्णसंकर जाति विशेष ।

माहेन्द्र—(वि०) [महेन्द्र + अण्] इन्द्र सम्बन्धी ।

माहेन्द्री—(स्त्री०) [माहेन्द्र+ङीप्] पूर्व दिशा । गौ । इन्द्राणी ।

माहेय—(वि०) [मही+ढक्] मिट्टी का बना हुआ । (पुं०) मङ्गलग्रह । मूंगा । नरकासुर ।

माहेयी—(स्त्री०) [माहेय+ङीप्] गौ । माही नदी ।

माहेश्वर—(पुं०) [महेश्वर+अण्] शैव । शिव का पूजक ।

√मि—स्वा० उभ० सक० फेंकना । पटकना । छितराना । बनाना । बनाकर खड़ा करना । नापना । स्थापित करना । देखना । पहचानना । मिनोति—मिनुते, मास्यति—ते, अमासीत्—अमास्त ।

√मिच्छ्—तु० पर० सक० अड़चन डालना, बाधा डालना । चिढ़ाना । मिच्छति, मिच्छिष्यति, अमिच्छीत् ।

मित—(वि०) [√मि वा √मा+क्त] नापा हुआ । जो सीमा के अंदर हो, परिमित । जाँचा हुआ, पहचाना हुआ ।—**अक्षर** (**मिताक्षर**)–(वि०) संक्षिप्त । पद्यात्मक । —**अक्षरा** (**मिताक्षरा**)— (स्त्री०) याज्ञवल्क्य स्मृति की विज्ञानेश्वरकृत टीका ।—**अर्थ** (**मितार्थ**)—परिमित अर्थ का ।

मितङ्गम—(वि०) [मित√गम् + खच्, मुम्] धीमे चलने वाला । (पुं०) हाथी ।

मितम्पच—(वि०) [मित√पच् +खच्, मुम्] थोड़ा पकाने वाला ।

मिति—(स्त्री०) [√मा+क्तिन्] मान, परिमाण । प्रमाण । यथार्थ ज्ञान । समय की सीमा ।

मित्र—(न०) [मेद्यति स्निह्यति, √मिद् +त्र अथवा मिनोति मानं करोति, √मि +क्त्र] मित्र । मित्र राज्य । (पुं०) सूर्य । बारह आदित्यों में से पहला ।—**आचार** (**मित्राचार**) –(पुं०) मित्र के प्रति व्यवहार ।—**उदय** (**मित्रोदय**)–(पुं०) सूर्योदय । मित्र की समृद्धि ।—**कर्मन्**, —**कार्य**, —**कृत्य**– (न०) मित्रता का कार्य । मित्र का कार्य ।—**घ्न**–(वि०) विश्वासघाती ।—**द्रुह्**,—**द्रोहिन्**–(वि०) मित्र के साथ विश्वासघात करने वाला ।—**भाव**– (पुं०) मैत्री ।—**भेद**–(पुं०) मैत्री-भङ्ग । —**वत्सल**–(वि०) मित्र पर दया करने वाला ।—**सप्तमी**–(स्त्री०) मार्गशीर्ष-शुक्ला सप्तमी ।—**सेन**–(पुं०) बारहवें मनु के एक पुत्र का नाम । श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम । एक बुद्ध ।

मित्रयु—(वि०) [मित्र √या+कु] मिलनसार, मित्र बनाने वाला ।

मिथ्—भ्वा० उभ० सक० संग करना । मिलाना । वध करना । समझाना । झगड़ा करना । मेथति—ते, मेथिष्यति—ते, अमेथीत्—अमेथिष्ट ।

मिथस्—(अव्य०) [√मिथ् + असुन्] परस्पर, अन्योन्य । चुपके-चुपके, गुप्तरीत्या; 'भर्तुः प्रसाद प्रतिनन्द्य मूर्ध्ना वक्तुं मिथः प्राक्रमतैवमेनं' कु० ३.२ ।

मिथिल—(पुं०) राजर्षि जनक का एक नाम ।

मिथिला—(स्त्री०) [मथ्यन्ते रिपवो यत्र, √मथ्+इलच्, नि० इत्व] एक नगरी का नाम, जो विदेह देश की राजधानी थी (सम्प्रति बिहार प्रान्त के तिरहुत प्रदेश का नाम) ।

मिथुन—(न०) [√मिथ् +उनन्] नर-मादा, स्त्री-पुरुष का जोड़ा । जोड़ा; 'मिथुनं परिकल्पितं त्वया सहकारः फलिनी च नन्विमौ' र० ८.६१ । एक साथ पैदा

हुए दो बच्चे। सङ्गम, समागम। स्त्री-सम्भोग। मिथुन राशि।—**त्व**–(पुं०) मिथुन का भाव या धर्म। सम्भोग।—**व्रतिन्** –(वि०) जो मैथुन करता हो।

मिथुनेचर–(पुं०) [मिथुने चरति, √ चर् +ट, सप्तम्या अलुक्] चक्रवाक पक्षी।

मिथुस्—(अव्य०) परस्पर, अन्योन्य।

मिथो—दे० 'मिथस्'।

मिथ्या—(अव्य०) [√मिथ्+क्यप्—टाप्] झूठ, असत्य। विपरीत प्रकार से। व्यर्थ, निरर्थक।—**अध्यवसिति** (**मिथ्याध्यवसिति**)–(स्त्री०) एक काव्यालङ्कार जिसमें किसी एक असम्भव बात को मानकर, दूसरी बात कही जाती है।—**अपवाद** (**मिथ्यापवाद**)–(पुं०) झूठा इलजाम या कलङ्क।—**अभियोग** (**मिथ्याभियोग**)–(पुं०) झूठा आरोप, किसी पर झूठमूठ अभियोग लगाने की क्रिया।—**अभिशंसन** (**मिथ्याभिशंसन**)–(न०) झूठा इलजाम, झूठा दोष, झू। कलङ्क।—**अभिशाप** (**मिथ्याभिशाप**)-(पुं०)झूठा दावा। मिथ्या भविष्यवाणी।—**आचार** (**मिथ्याचार**) –(पुं०) कपट पूर्ण आचरण।—**आहार** (**मिथ्याहार**)–(पुं०)अनुचित या प्रकृति के विरुद्ध भोजन।—**उत्तर** (**मिथ्योत्तर**)–(न०) व्यवहार में चार प्रकार के उत्तरों में से एक प्रकार का उत्तर, अभियुक्त का अपना अपराध छिपाने के लिये मिथ्या बयान।—**उपचार** (**मिथ्योपचार**) –(पुं०) बनावटी या दिखाने के लिये परिचर्या या सेवा या दिखावटी कृपा।—**कर्मन्**–(न०) मिथ्या काम।—**कोप**, —**क्रोध**–(पुं०) बनावटी क्रोध।—**क्रय**–(पुं०) व्यर्थ का देना।—**ग्रह**–(पुं०),—**ग्रहण**–(न०) समझने की भूल या समझने में भूल।—**चर्या**–(स्त्री०) झूठा या कपट का व्यवहार।—**ज्ञान**–(न०) भ्रम, भ्रम।—**दर्शन**–(न०) वह दर्शन जिसमें झूठी बात लिखी गई है। नास्तिकता।—**दृष्टि**–(स्त्री०) नास्तिकता।—**निरसन**–(न०) शपथ खाकर अस्वीकार करना।—**पुरुष** –(पुं०) छाया-पुरुष।—**प्रतिज्ञ** –(वि०) झू। वादा करने वाला, दगाबाज।—**मति**–(स्त्री०) भ्रम, भूल।—**योग**–(पुं०) गलत इस्तेमाल। प्रकृतिविरुद्ध कार्य (आ०)।—**वचन**,— **वाक्य**–(न०) झूठी बात, असत्य कथन।—**वार्ता**–(स्त्री०) झूठी इत्तिला।—**साक्षिन्** –(पुं०) झूठा गवाह।

√**मिद्**—भ्वा० आत्म० अक०, दि० पर० अक० चिकना होना, स्निग्ध होना। पिघलना। मोटा होना। सक० प्यार करना। भ्वा० मेदते, मेदिष्यते, अमिदत् —अमेदिष्ट। दि० मेद्यति, मेदिष्यति, अमिदत्।

मिद्ध—(न०) [√मिद् + क्त] सुस्ती, काहिली। तन्द्रा। निद्रा। मन की उदासी।

√**मिन्द्**—चु० पर० अक० दे० '√मिद्'। मिन्दयति—मिन्दति।

√**मिन्व्**—भ्वा० पर० सक० पानी छिड़कना, तर करना। सम्मान करना, पूजन करना। मिन्वति, मिन्विष्यति, अमिन्वीत्।

√**मिल्**—तु० उभ० सक० मिलना। पाना। अक० एकत्र होना, जमा होना। मिश्रित हो जाना। मुठभेड़ होना। (किसी घटना का) घटना। मिलति—ते, मेलिष्यति—ते, अमेलीद्—अमेलिष्ट।

मिलन—(न०) [√मिल्+ल्युट्] मिलना, मिलाप, भेंट। इकट्ठा होना। मिश्रण, मिलावट।

मिलित—(वि०) [√मिल् + क्त] मिला हुआ। आमने-सामने आया हुआ। मिश्रित, एक साथ रखा हुआ।

मिलिन्द—(पुं०) भौंरा।

मिलिन्दक—(पुं०) जाति-विशेष का साँप।

√मिश्—भ्वा० पर० अक० कोलाहल करना। क्रोध करना। मेशति, मेशिष्यति, अमेशीत्।

√मिश्र्—चु० पर० सक० संमिश्रण करना, मिलाना। मिश्रयति, मिश्रयिष्यति, अमिमिश्रत्।

मिश्र—(वि०) [√मिश्र् + अच्] मिला हुआ जुड़ा हुआ, मिश्रित। सम्बन्ध-युक्त। बहुगुणित। गुथा हुआ। (न०) मिश्रित पदार्थ। तलजन। मूली। (पुं०) भद्र जन, प्रतिष्ठित व्यक्ति। यह एक उपाधि है जो बड़े नामी विद्वानों के नामों के साथ लगायी जाती है, जैसे 'आर्यमिश्राः प्रमाणम्'। हाथियों की एक जाति।—**ज**-(पुं०) खच्चर, अश्वतर।—**शब्द**-(पुं०) खच्चर, अश्वतर।

मिश्रक—(वि०) [मिश्र+कन्] मिला हुआ, मिलावटी। फुटकल। (न०) खारी नमक। जस्ता। नंदनवन। मूली। (पुं०) [√मिश्र् +णिच्+ण्वुल्] मिलाकर दवाइयाँ बनाने वाला। सौदागरी माल में मिलावट करने वाला।

मिश्रण—(न०) [√मिश्र्+ल्युट्] मिलावट, संमिश्रण।

मिश्रित—(वि०) [√मिश्र्+क्त] मिला हुआ। जोड़ा हुआ। सम्मानित या सम्मान किया हुआ।

मिश्रिता—(स्त्री०) [मिश्रित+टाप्] मंदा आदि सात संक्रान्तियों में से एक।

√मिष्—तु० पर० अक० आँख खोलना। आँख झपकाना। सक० वैराग्य की दृष्टि से देखना। स्पर्द्धा करना, ईर्ष्या करना। मिषति, मेषिष्यति, अमेषीत्। भ्वा० पर० सक० सींचना। मेषति, मेषिष्यति, अमेषीत्।

मिष—(पुं०) [√मिष्+क] छल, बहाना। स्पर्द्धा, प्रतियोगिता। ईर्ष्या। (न०) बहाना, मिस। छल।

मिष्ट—(वि०) [√मिष्+क्त] मधुर। स्वादिष्ठ। नम, तर। (न०) मिठाई।

√मिह्—भ्वा० पर० अक० सक० मूत्र करना। तर करना, नम करना, (जल) छिड़कना। वीर्य निकालना। मेहति, मेक्ष्यति, अमिक्षत्।

मिहिका—(स्त्री०) [√मिह्+क्वुन्—टाप्, इत्व] पाला, हिम।

मिहिर—(पुं०) [√मिह्+किरच्] सूर्य। बादल। चन्द्रमा। पवन। वृद्धजन।

मिहिराण—(पुं०) [मिहिरेणाप्यण्यते स्तूयते, मिहिर√अण्+घञ्] शिव जी का नामान्तर।

√मी—दि० आत्म० सक०, क्र्या० उभ० सक० वध करना, हत्या करना। अनिष्ट करना। कम करना, घटाना। बदलना। तोड़ना, भङ्ग करना। दि० मीयते, मेष्यते, अमेष्ट। क्र्या० मीनाति—मीनीते, मास्यति—ते, अमासीत्—अमास्त।

मीढ—(वि०) [√मिह्+क्त] पेशाब किया हुआ। वह जो पेशाब कर चुका है।

मीढुष्टम—(पुं०) [मीढ्वस्+तमप्, पृषो० साधुः] शिव जी का नामान्तर।

मीढ्वस्—(पुं०) [√मिह् + क्वसु, दीर्घ, ढत्व] शिव।

मीन—[मीयते हिंस्यते यः, √मी+नक्] मछली। मीन राशि। भगवान् विष्णु का मत्स्यावतार।—**आघातिन्** (**मीनाघातिन्**), —**घातिन्**-(पुं०) मछली पकड़ने वाला, मछुआ। बगला।—**आलय** (**मीनालय**)-(पुं०) समुद्र।—**केतन**-(पुं०) कामदेव।—**गन्धा**-(स्त्री०) व्यास की माता सत्यवती।—**गोधिका**-(स्त्री०) झील, तालाब।—**रङ्क**, —**रङ्ग**-(पुं०) जलकौवा। मछरंग नामक पक्षी जो मछली खाता है।

√मीम्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना। सक० जाना। मीमति, मीमिष्यति, अमीमीत्।

मीमांसक—(पुं०) [मीमांसाम् अधीते वेत्ति वा, मीमांसा+वुन्] वह जो मीमांसा शास्त्र का ज्ञाता हो। कुमारिल भट्ट, प्रभाकर आदि।

मीमांसन—(न०) [√मान्+सन् (स्वार्थे), द्वित्वादि+ल्युट्] मीमांसा करना।

मीमांसा—(स्त्री०) [√मान्+सन् (स्वार्थे)+अ—टाप्] गम्भीर विचार, खोज, अनुसन्धान; 'रसगङ्गाधरनाम्नीं करोति कुतुकेन काव्यमीमांसां'। षड् आस्तिक दर्शनों में से एक, जो पूर्वमीमांसा और उत्तरमीमांसा के नाम से प्रसिद्ध है। साधारणतः मीमांसा शब्द से पूर्वमीमांसा ही का बोध होता है। क्योंकि उत्तरमीमांसा तो वेदान्त के नाम से प्रसिद्ध है। जैमिनिकृत दर्शन जिसे पूर्वमीमांसा कहते हैं। इसमें वेद के यज्ञपरक वचनों की व्याख्या तथा उनका समन्वय बड़े विचारपूर्वक किया गया है।—**कार**—(पुं०) मीमांसा-सूत्र के रचयिता जैमिनि ऋषि।

मीर—(पुं०) [√मि+रन्, दीर्घ] समुद्र। सीमा। जल।

√मील्—भ्वा० पर० सक० अक० बंद करना, मूँद लेना। मुँद जाना, बंद हो जाना (जैसे आँख या फूल का)। कुम्हलाना। मिलना। मीलति, मीलिष्यति, अमीलीत्।

मीलन—(न०) [√मील्+ल्युट्] मूँदना। आँखें बंद करने या होने की क्रिया। फूल के बंद होने की क्रिया।

मीलित—(वि०) [√मील्+क्त] बंद, मुँदा हुआ। पलक झपकाये हुए। अधखुला। लुप्त। (न०) एक अलङ्कार। इसमें दो पदार्थों की समानता के कारण, उन दोनों में भेद नहीं जान पड़ता।

√मीव्—भ्वा० पर० सक० गमन करना। अक० मोटा-ताजा होना। मीवति, मीविष्यति, अमीवीत्।

मीवर—(वि०) [√मी+ष्वरच्] हिंसक। पूज्य। (पुं०) [√मा+ष्वरच् नि० इत्व] सेनानायक, चमूपति।

मीवा—(स्त्री०) [√मी+वन्] पेट में का कीड़ा। वायु। सार, तत्त्व। छींटा, सीकर।

मु—(पुं०) [√मुच्+डु] शिवजी का नाम। बन्धन, कारागार। मोक्ष। चिता।

मुकु—(पुं०) [√मुच्+कु, पृषो० साधुः] मोक्ष। छुटकारा।

मुकुट—(न०) [√मङ्क्+उटन्, पृषो० साधुः] एक प्रसिद्ध शिरोभूषण जो ताज की तरह धारण किया जाता था, किरीट। शिखर।

मुकुटी—(स्त्री०) [मुकुट+ङीप्] उँगली चटकाना।

मुकुन्द—(पुं०) [मुकु√दा+क, पृषो० मुम्] विष्णु भगवान् का नाम। श्रीकृष्ण का नाम। पारा, पारद। रत्न-विशेष। नवनिधियों में से एक। ढोल विशेष।

मुकुन्दक—(पुं०) प्याज। साठी धान।

मुकुर—(पुं०) [√मक्+उरच्, उत्व] दर्पण। कली। कुम्हार के चाक का डंडा। बकुलवृक्ष, मौलसिरी।

मुकुल—(पुं०, न०) [√मुञ्च्+उलक्] कली। कोई वस्तु जो कली के आकार की हो। शरीर। आत्मा।

मुकुलित—(वि०) [मुकुल+इतच्] वह वृक्ष जिसमें कलियाँ आ गयी हों। अधमुँदा; 'दरमुकुलितनयनसरोज' गीत० २।

मुकुष्ठ, मुकुष्ठक—(पुं०) [मुकु √स्था+क] [मुकु √स्तक्+अच्, पृषो० साधुः] वनमुद्ग, मोठ।

मुक्त—(वि०) [√मुच्+क्त] बंधन से छूटा हुआ। छोड़ा हुआ, स्वतंत्र किया हुआ। त्यागा हुआ। फेंका हुआ, क्षिप्त। गिरा हुआ। दिया हुआ। भेजा हुआ। मोक्ष प्राप्त किये हुए।—**अम्बर (मुक्ताम्बर)**—(पुं०) दिग-

पर जैन साधु ।—आत्मन् (मुक्तात्मन्)–(वि०) जिसको मोक्ष मिल गया हो । (पुं०) वह जीव जो सांसारिक एषणाओं या पापों से छूट चुका हो ।—आसन (मुक्तासन)–(वि०) वह जो अपने आसन से उठ खड़ा हो ।—कच्छ–(पुं०) बौद्ध ।—कञ्चुक–(पुं०) केंचुली छोड़े हुए साँप ।—कण्ठ–(वि०) चिल्ला कर बोलने वाला । जो बोलने में बेधड़क हो ।—–(वि०) उदार ।—बन्धन–(पुं०) सिंह ।—वसन–(पुं०) जैनी दिगम्बर साधु ।—हस्त–(वि०) जिसका हाथ खुला हो, दानी, उदार ।

मुक्तक—(न०) [मुक्त+कन्] एक प्रकार का काव्य जो एक ही पद्य में पूरा हो, फुटकर कविता, प्रबन्ध का उलटा जिसे उद्भट भी कहते हैं ।

मुक्ता—(स्त्री०) [मुक्त–टाप्] मोती । वेश्या । रास्ना ।—आगार (मुक्तागार)–(पुं०) सीपी जिसमें से मोती निकलता है ।—आवलि (मुक्तावलि),—आवली (मुक्तावली)–(स्त्री०),—कलाप–(पुं०) मोतियों का हार ।—गुण–(पुं०) मोतियों की माला या लड़ी ।—जाल–(न०) मोतियों की लड़ी ।— दामन्–(न०) मोतियों की लर ।—पुष्प— (पुं०) कुन्द का पौधा ।—प्रसू–(स्त्री०) सीप, शुक्ति ।—प्रालम्ब –(पुं०) मोतियों की लर ।—फल–(न०) मोती । हरफारेवरी, लवनीफल । एक प्रकार का छोटी जाति का लिसोड़ा । कपूर ।—मणि–(पुं०) मोती ।—मातृ—(स्त्री०) सीप ।—लता, —स्रज्–(स्त्री०),—हार–(पुं०) मोतियों का हार ।—शुक्ति, —स्फोट–(पुं०) सीप ।

मुक्ति—(स्त्री०) [√मुच्+क्तिन्] छुटकारा, रिहाई । स्वतंत्रता । मोक्ष । त्याग । फेंकने की क्रिया । छोड़ने की क्रिया । खोलने की क्रिया, बन्धन से मुक्त करने की क्रिया । अदायगी, (कर्ज का) अदा करना ।—क्षेत्र–(न०) काशी का नाम ।—मार्ग –(पुं०) मोक्ष का रास्ता ।—मुक्त–(पुं०) शिलारस, सिह्लक ।

मुक्त्वा—(अव्य०) [√मुच्+क्त्वा] सिवाय, बिना, छोड़कर ।

मुख—(न०) [खनति विदारयति अन्नादिकम् अनेन वा खन्यते विधात्रा सुखम् अनेन, √खन्+अच्, डित्, मुडागम] मुँह । चेहरा । 'ओष्ठौ च दन्तमूलानि दन्ता जिह्वा च तालु च । गलो गलादि-सकलं सप्ताङ्गमुखमुच्यते ॥'—भावप्रकाश । पशु का थूथन । अगला भाग । नोक । बाढ़, धार । कुची के ऊपर की घुंडी । पक्षी की चोंच । दिशा । द्वार । दरवाजा । घर का दरवाजा । आरम्भ । भूमिका । प्रधान, मुख्य । सतह या ऊपरी भाग । साधन । कारण । उच्चारण । वेद । धर्मशास्त्र । नाटक में एक प्रकार की सन्धि ।—अग्नि (मुखाग्नि)–(पुं०) दावानल । अगिया बेताल । यज्ञीय अग्नि । वह आग जो मुर्दा जलाते समय मुर्दे के मुख के ऊपर रखी जाती है ।—अनिल (मुखानिल),—उच्छ्वास (मुखोच्छ्वास) –(पुं०) साँस ।—अस्त्र (मुखास्त्र) –(पुं०) केकड़ा ।—आसव (मुखासव) –(पुं०) अधरामृत ।—आस्राव (मुखास्राव),—स्राव–(पुं०) लार । थूक ।—इन्दु (मुखेन्दु)–(पुं०) चन्द्रमुख, चन्द्रमा जैसा मुख, गोल सुन्दर चेहरा ।—उल्का (मुखोल्का)–(स्त्री०) दावानल ।—कमल–(न०) कमल जैसा मुख ।—खुर –(पुं०) दाँत ।—गन्धक –(पुं०) प्याज ।—चपल– (वि०) वह जो बहुत अधिक या बढ़ कर बोलता हो ।—चपेटिका–(स्त्री०) गाल पर लगाया जाने वाला तमाचा ।— चौरि– (स्त्री०)

जिह्वा ।—ज–(पुं०) ब्राह्मण ।—दूषण–(पुं०) प्याज ।—दूषिका–(स्त्री०) मुहासा ।—निरीक्षक–(पुं०) सुस्त या काहिल आदमी ।—निवासिनी –(स्त्री०) सरस्वती ।—पट –(पुं०) घूंघट । बुरका ।—पिण्ड–(पुं०) ग्रास, कौर । वह पिण्ड जो मृत व्यक्ति के उद्देश्य से उसकी अन्त्येष्टि क्रिया करने के पूर्व दिया जाता है ।—पूरण –(न०) कुल्ला ।—प्रिय–(पुं०) संतरा, नारंगी । लवंग । ककड़ी ।—बन्ध–(पुं०) प्रस्तावना, भूमिका ।—बन्धन–(न०) भूमिका । ढक्कन ।—भूषण–(न०) ताम्बूल, पान ।—मार्जन –(न०) दतवन । मुखप्रक्षालन ।—यन्त्रण–(न०) लगाम ।—लाङ्गल–(पुं०) शूकर ।—लेप–(पुं०) वह लेप जो मुख पर शोभा के लिये लगाया जाय । मुखरोग विशेष ।—वल्लभ–(पुं०) अनार का पेड़ ।—वाद्य–(न०) मुख से फूंक कर बजाया जाने वाला बाजा । मुख से निकला बम् बम् शब्द ।—विलुण्ठिका–(स्त्री०) बकरी ।—व्यादान ।–(०न जमुहाई ।—शफ–(वि०) मुखर, कटुभाषी ।—शुद्धि –(स्त्री०) दातुन आदि की सहायता से मुख साफ करना । भोजन के बाद पान, इलायची आदि खाकर मुख शुद्ध करना ।—शेष –(पुं०) राहु ।—शोधन–(वि०) मुख साफ करने वाला । तीता । चटपटा । (पुं०) चटपटी वस्तु ।—श्री–(स्त्री०) मुंह की शोभा, कांति ।—सम्भव–(पुं०) ब्राह्मण । (न०) पुष्करमूल ।

मुखम्पच—(पुं०) [मुख √पच् +खश्, मुम्] भिक्षुक, भिखारी ।

मुखर—(वि०) [मुख+र] बातूनी । झनझन शब्द करने वाला (पायजेब, नूपुर); 'मुखरमधीरं त्यज मञ्जीरं रिपुमिव केलिषु लोलं' गीत० ५ । द्योतक, प्रकाशक । मुखफट, कटुभाषी । मजाक उड़ाने वाला, उपहास करने वाला । (पुं०) काक, कौआ । नेता, प्रधान पुरुष; 'यदि कार्यविपत्तिः स्यान्मुखरस्तत्र हन्यते' हि० १.२६ । शंख ।

मुखरिका, मुखरी—(स्त्री०) [मुखर+कन्–टाप्, इत्व] [मुखर–ङीष्] लगाम ।

मुखरित—(वि०) [मुखर इव आचरति, मुखर+क्विप्+क्त] शब्दायमान ।

मुख्य—(वि०) [मुख+यत्] मुख सम्बन्धी । प्रधान, श्रेष्ठ । (पुं०) नेता, अगुआ । (न०) यज्ञ का प्रथम कल्प । वेद का अध्ययन और अध्यापन । अमान्त मास ।—अर्थ (मुख्यार्थ) –(पुं०) प्रधान अर्थ (गौण का उलटा) ।—चान्द्र–(पुं०) मुख्य चन्द्रमास ।—नृपति–(पुं०) प्रधान राजा ।—मन्त्रिन् (पुं०) प्रधान सचिव ।

मुगूह—(पुं०) पपीहा । एक प्रकार का हिरन ।

मुग्ध—(वि०) [√मुह्+क्त] मोह या भ्रम में पड़ा हुआ । मूर्ख, मूढ़ । सादा, सीधा । भूला हुआ, भूल में पड़ा हुआ । भोलेपन के कारण आकर्षक ।—अक्षी (मुग्धाक्षी)–(स्त्री०) सुन्दर आंखों वाली युवती ।—आनना (मुग्धानना)–(स्त्री०) सुन्दर शकल वाली स्त्री ।—धी,—बुद्धि,—मति –(वि०) मूर्ख, मूढ़ । सीधा, सादा ।—भाव–(पुं०) सीधापन । मूर्खता ।

√मुच्—तु० उभ० सक० छोड़ देना, मुक्त करना, रिहा करना । मुञ्चति–ते, मोचयति–ते, अमुचत्–अमुक्त । चु० पर० सक० छोड़ना । प्रसन्न करना । मोचयति, मोचयिष्यति, अमूमुचत् ।

मुचक—(पुं०) लाख, लाह ।

मुचकुन्द, मुचुकुन्द—(पुं०) स्वनामख्यात पुष्पवृक्ष जिसकी छाल और फूल दवा के काम आते हैं । भागवत पुराण के अनुसार एक राजा का नाम । यह राजा मान्धाता का पुत्र था । इसी के नेत्राग्नि से कालयवन को

श्री कृष्ण ने भस्म करवाया था।—**प्रसादक**–(पुं०) श्री कृष्ण का नाम।

मुचिर—(वि०) [मुञ्चति धनादिकम्, √मुञ्च्+किरच्] दाता। (पुं०) देवता। धर्म। पवन।

मुचिलिन्द—(पुं०) तिलक, तिलपुष्पी।

मुचुटी—(स्त्री०) उँगली चटकाने या मटकाने की क्रिया। मुट्ठी।

√मुज्—भ्वा० पर० सक० साफ करना, पवित्र करना। बजाना, शब्द करना। मोजति, मोजिष्यति, अमोजीत्।

√मुञ्च्—भ्वा० आत्म० अक० दंभ करना। दुष्टता करना। सक० कहना। मुञ्चते, मुञ्चिष्यते, अमुञ्चिष्ट।

√मुञ्ज्—भ्वा० पर० सक० साफ करना। बजाना, मुञ्जति, मुञ्जिष्यति, अमुञ्जीत्।

मुञ्ज—(पुं०) [√मुञ्ज्+अच्] मूँज घास। धारापति राजा भोज के चचा का नाम।—**केश**–(पुं०) शिव जी का नाम।—**बन्धन**–(न०) यज्ञोपवीत संस्कार।—**वासस्**–(पुं०) शिव जी का नामान्तर।

मुञ्जर—(न०) [√मुञ्ज्+अरन्] कमल की रेशेदार जड़, मुरार, भसींड़ा।

√मुट्—तु० पर० सक० कुचलना। तोड़ना। पीसना। चूर्ण करना। भर्त्सना करना। गाली देना। मुटति, मुटिष्यति, अमुटीत्।

√मुड्—भ्वा० पर सक० कुचलना। मोडति, मोडिष्यति, अमोडीत्।

√मुण्—तु० पर० सक० प्रतिज्ञा करना। मुणति, मोणिष्यति, अमोणीत्।

√मुण्ड्—भ्वा० पर० सक० मूँड़ना। कुचलना। मुण्डति, मुण्डिष्यति, अमुण्डीत्।

मुण्ड—(वि०) [√मुण्ड्+अच् + घञ्] मूँड़ा हुआ। जिसका अग्र भाग कटा हुआ हो। कमीना, नीच। (पुं०) मनुष्य जिसका सिर मुँड़ा हुआ हो या जो गंजा हो। मुँड़ा हुआ या गंजा सिर। माथा। नाई, नापित। पेड़ का तना जिसकी डालियाँ काट दी गयी हों। शुंभ दैत्य का सेनापति। राहु। (न०) सिर। मंडूर।—**अयस** (**मुण्डायस**)–(न०) लोहा।—**फल**–(पुं०) नारियल का वृक्ष।—**मण्डली**–(स्त्री०) ऐसे लोगों का दल जिसके सब मनुष्यों का सिर मुँड़ा हुआ हो।—**लौह**–(न०) लोहविशेष, मंडूर।—**शालि**–(पुं०) एक प्रकार का चावल, बोरो धान।

मुण्डक—(न०) [मुण्ड + कन्] मूँड़, सिर।—**उपनिषद्** (**मुण्डकोपनिषद्**)–(स्त्री०) अथर्ववेद के एक उपनिषद् का नाम।

मुण्डन—(न०) [√मुण्ड्+ल्युट्] मूँड़ना। बालक के सिर के बाल पहली बार मूँड़ने की रस्म, मुण्डन संस्कार।

मुण्डा—(स्त्री०) भिक्षुकी या भिखारिन विशेष।

मुण्डित—(वि०) [√मुण्ड्+क्त] मूँड़ा हुआ। फुनगी कटा हुआ, अग्रभाग कटा हुआ। (न०) लोहा।

मुण्डिन्—(पुं०) [√मुण्ड्+णिनि] नाई। शिव जी का नामान्तर। संन्यासी। (वि०) जिसका सिर मूँड़ा हुआ हो।

मुत्त—(न०) मोती।

√मुद्—भ्वा० आत्म० अक० प्रसन्न होना, हृष्ट होना। मोदते, मोदिष्यते, अमोदिष्ट। चु० पर० सक० मिलाना, मिश्रण करना। साफ करना, पवित्र करना। मोदयति, मोदयिष्यति, अमूमुदत्।

मुद्, मुदा–(स्त्री०) [√मुद्+क्विप् (भावे)] [मुद्+टाप्] हर्ष, प्रसन्नता, आह्लाद; 'पितुर्मुदं तेन ततान सोऽर्भकः' र० ३.२५।

मुदित—(वि०) [√मुद्+क्त] आनन्दित, हर्षित। (न०) आनन्द, हर्ष। एक प्रकार का मैथुनोपयोगी आलिङ्गन।

मुदिता—(स्त्री०) [√मुद् + इन्+तल्—टाप्] हर्ष, आनन्द। चित्त की वह अवस्था जिसमें दूसरे का सुख देखकर सुख होता है। परकीया नायिका का एक भेद।

मुदिर—(पुं०) [√मुद् +किरच्] बादल; 'मुञ्चसि नाद्यापि रुषं भामिनि मुदिरालिरुदियाय' भा० २.८८। लम्पट पुरुष। मेढक।

मुदी—(स्त्री०)[√मुद्+क+ङीप्,]चाँदनी, जुन्हाई। छोटी गंभारी का पेड़।

मुद्ग—(पुं०) [√मुद्+गक्] मूँग। ढकना, ढक्कन। जल-कौग्रा।—**पर्णी**-(स्त्री०) वनमूँग।—**भुज्**, —**भोजिन्**-(पुं०) घोड़ा।

मुद्गर—(पुं०) [मुद्√गृ+अच्]हथौड़ा। गदा। मोंगी, मुँगरिया जिससे मिट्टी के ढेले फोड़े जाते हैं। काठ का बना हुआ एक प्रकार का गावदुम दण्ड जो मूठ की ओर पतला और आगे की ओर बहुत भारी होता है; इसको घुमाने से कलाइयों और हाथों में बल आता है। मोंगरा, बेला।

मुद्गल—(पुं०) [मुद्ग√ला +क] रोहिष नामक तृण। एक गोत्रप्रवर्तक मुनि।

मुद्गष्ट—(पुं०) वनमूंग।

मुद्रण—(न०) किसी चीज पर अक्षर आदि अङ्कित करना, छपाई। बंद करने या मूंदने की क्रिया।

मुद्रा—(स्त्री०) [मोदते अनेन, √मुद्+रक्—टाप्] किसी के नाम की छाप, मोहर। अँगूठी। रुपया, पैसा आदि सिक्के। पदक, तमगा। चपरास आदि के ऊपर छापी जाने वाली मूर्त्ति आदि का ठप्पा। बंद करने या मोहर लगाकर बंद करने की क्रिया। रहस्य, गुप्त भेद। हाथ, पाँव, आँख, मुँह, गर्दन आदि की कोई भावसूचक स्थिति।—**अक्षर** (**मुद्राक्षर**)-(न०) मोहर पर खुदे हुए अक्षर।—**कार**-(पुं०)मोहर बनाने वाला।—**मार्ग**-(पुं०) मस्तक के भीतर का वह रन्ध्र जहाँ से योगियों का प्राणवायु बाहर निकलता है; ब्रह्मरन्ध्र।—**रक्षक**-(पुं०) वह अधिकारी जिसके पास राजकीय मुहर रहे।—**राक्षस**-(पुं०) विशाखदत्त-रचित एक नाटक।

मुद्रिका—(स्त्री०)[मुद्रा+कन्—टाप्, ह्रस्व, इत्व] नाम खुदी हुई अँगूठी। अँगूठी सिक्का। मुहर।

मुद्रित—(वि०) [मुद्रा+इतच्] मोहर किया हुआ। अङ्कित। मोहर लगाकर बंद किया हुआ। अनखिला हुआ। मुँदा हुआ, बंद।

मुधा—(अव्य०)[√मुह्+का, पृषो० ह्रस्व यः] व्यर्थ, निरर्थक। भूल से।

मुनि—(पुं०) [मनुते जानाति यः, √मन्+इन्, उत्व] ईश्वर, धर्म और सत्यासत्य प्रभृति सूक्ष्म विषयों का विचार करने वाला व्यक्ति, मननशील महात्मा। ऋषि। अगस्त्य मुनि। वेदव्यास। बुद्धदेव। आम का पेड़। सात की संख्या। सप्तर्षि।—**त्रय**-(न०) पाणिनि, कात्यायन और पतञ्जलि।—**पित्तल**-(न०) ताँबा।—**पुङ्गव**-(पुं०) मुनिश्रेष्ठ।—**पुत्रक**-(पुं०) खंजन पक्षी।—**भेषज**-(न०)अगस्त्य का फूल। हरड़। लंघन, उपवास।—**भोजन** -(न०) तिन्नी का चावल।—**व्रत**-(न०) मुनियों के योग्य व्रत।

मुमुक्षा—(स्त्री०) [मोक्तुम् इच्छा, √मुच्+सन्+अ—टाप्] मोक्ष-प्राप्ति की अभिलाषा।

मुमुक्षु—(वि०) [√मुच् +सन्+उ] मोक्ष-प्राप्ति का अभिलाषी, बंधन से छूटने का इच्छुक।(गोली या तीर)दागने या छोड़ने ही को प्रस्तुत। सांसारिक आवागमन से छूटने की इच्छा रखने वाला।

मुमुचान—(पुं०) [√मुच्+आनच्, सन्वद्-भाव, द्वित्वादि] बादल, मेघ।

मुमूर्षा—(स्त्री०) [√मृ+सन्+अ—टाप्] मरने की इच्छा ।

मुमूर्षु—(वि०) [√मृ+सन्+उ] मृत्यु का इच्छुक । मरणासन्न, जो मरने ही वाला हो ।

√मुर्—तु० पर० सक० घेरा डालना, घेरना । मुरति, मोरिष्यति, अमोरीत् ।

मुर—(पुं०) [√मुर्+क] एक दैत्य जिसका वध श्रीकृष्ण ने किया था । (न०) घेरने या घेरा डालने की क्रिया ।—**अरि**–(पुं०) श्रीकृष्ण का नाम । अनर्घराघव-रचयिता कवि का नाम ।—**जित्**,—**द्विष्**,—**भिद्**,—**मर्दन**,—**रिपु**,—**वैरिन्**,—**हन्**–(पुं०) श्रीकृष्ण ।

मुरज—(पुं०) [मुरात् संवेष्टनात् जायतेऽसौ, मुर √जन्+ड] मृदङ्ग ।—**बन्ध**–(पुं०) काव्यरचना-शैली विशेष ।—**फल**–(पुं०) कटहल का पेड़ ।

मुरजा—(स्त्री०) [मुरज+टाप्] बड़ा मृदङ्ग । कुबेरपत्नी का नाम ।

मुरन्दला—(स्त्री०) एक नदी का नाम (प्रायः नर्मदा) ।

मुरला—(स्त्री०) [मुर√ला+क—टाप्] नर्मदा नदी । केरल देश से निकलने वाली काली नाम की नदी ।

मुरली—(स्त्री०) [मुरम्‌अङ्गुलिवेष्टनं लाति, मुर √ला+क—ङीष्] बाँसुरी ।—**धर**–(पुं०) श्रीकृष्ण ।

√मुर्च्छ्—भ्वा० पर० अक० जमना, तरल पदार्थ का जमकर गाढ़ा होना । मूर्च्छित होना । वृद्धि को प्राप्त होना । शक्ति सञ्चय करना । व्याप्त होना । बोड़ का होना । सक० चिल्ला कर बुलवाना । मूर्च्छति, मूर्च्छिष्यति, अमूर्च्छीत् ।

मुर्मुर—(पुं०) [√मुर्+क, पृषो० साधुः] तुषाग्नि, बोकर या भूसी की आग; 'स्मर-हुताशनमुर्मुरचूर्णतां दधुरिवाम्रवणस्य रजः-कणाः' शि० ६.६ कामदेव । सूर्य के एक घोड़े का नाम ।

√मुर्व्—भ्वा० पर० सक० बाँधना । मूर्वति, मूर्विष्यति, अमूर्वीत् ।

मुशटी—(स्त्री०) [√मुष्+अटन्—ङीष्, पृषो० षस्य शः] अनाज विशेष ।

√मुष्—क्रया० पर० सक० चुराना । ढकना, छिपाना । पकड़ लेना । आगे निकल जाना । मुष्णाति, मोषिष्यति, अमोषीत् ।

मुषक—दे० 'मूषक' ।

मुषा, मुषी—(स्त्री०) [√मुष्+क—टाप्] [√मुष्+क—ङीष्] घरिया, कुठाली, कुल्हिया ।

मुषित—(वि०) [√मुष्+क्त] चुराया हुआ । रहित, वञ्चित । ठगा हुआ, धोखा खाया हुआ ।

मुषितक—(न०) [मुषित+कन्] चोरी का माल ।

मुष्क—(पुं०) [मुष्णाति वीर्यम्, √मुष्+कक्] अण्डकोष । हृष्ट-पुष्ट पुरुष । ढेर । मोखा नामक पेड़ । चोर ।—**देश**–(पुं०) अण्डकोश का स्थान ।—**शून्य**–(पुं०) बधिया । हिजड़ा ।—**शोथ**–(पुं०) अण्ड-कोष की सूजन ।

मुष्ट—(वि०) [√मुष्+क्त] चुराया हुआ । (न०) चोरी का माल ।

मुष्टि—(पुं०,स्त्री०) [मुष्+क्तिन् वा क्तिन्] मुट्ठी । मुट्ठी भर की मात्रा । मुँगा, मूँठ । ४ तोले (किसी के मत से ८ तोले) का परिमाण । चोरी । लिङ्ग ।—**देश**–(पुं०) धनुष का मध्य भाग जो हाथ से पकड़ा जाता है ।—**द्यूत**–(न०) एक प्रकार का जुआ जिसमें मुट्ठी के भीतर की चीज का नाम, उसकी संख्या सम है या विषम आदि पूछा जाता है ।—**पात**–(पुं०) घूँसेबाजी ।—**बन्ध**–(पुं०) मुट्ठी बाँधना । संग्रह करना ।—**मेय**–(वि०)

मुट्ठी से नापने योग्य। मुट्ठी भर। थोड़ा।—युद्ध-(न०) घूँसेबाजी।

मुष्टिक—(पुं०) [√मुष्+क्तिन्+कन्] सुनार। मुक्का, घूँसा। राजा कंस के पहलवानों में से एक का नाम जिसे बलराम जी ने पछाड़ा था।—**अन्तक (मुष्टिकान्तक)**-(पुं०) बलराम जी का नाम।

मुष्टिका—(स्त्री०) [मुष्टिक+टाप्] मुक्का, घूँसा। मुट्ठी।

मुष्टिन्धय—(पुं०) [मुष्टि√धे+खश्, मुम्] बच्चा।

मुष्टामुष्टि—(अव्य०) [मुष्टिभिः मुष्टिभिः प्रहृत्य इदं युद्धं प्रवृत्तम्, ब० स०] घूँसों के प्रहार से किया जाने वाला युद्ध, घूँसेबाजी।

मुष्ठक—(पुं०) राई।

√मुस्—दि० पर० सक० चीरना, विभाजित करना। टुकड़े-टुकड़े कर डालना। मुस्यति, मोसिष्यति, अमुसत्।

मुसल—(पुं०, न०) [√मुस्+कलच्] मूसल। एक प्रकार का डंडा, गदा का भेद।—**आयुध (मुसलायुध)**-(पुं०) बलराम जी।—**उलूखल (मुसलोलूखल)**-(न०) इमाम-दस्ता, खल-लोढ़ा।

मुसलिन्—(पुं०) [मुसल+इनि] बलराम। शिव जी।

मुसल्य—(वि०) [मुसल+यत्] डंडे से मार डालने योग्य।

√मुस्त्—चु० पर० सक० जमा करना, ढेर लगाना। मुस्तयति, मुस्तयिष्यति, अमुमुस्तत्।

मुस्त—(पुं०, न०), **मुस्ता**—(स्त्री०) [√मुस्त्+क] [मुस्त+टाप्] एक प्रकार की घास, मोथा; 'विस्रब्धं क्रियतां वराहततिभिर्मुस्ताक्षतिः पल्वले' श० २.६।—**अद (मुस्ताद)** (पुं०) शूकर।

मुस्तु—(पुं०) [√मुस्+तुन्] मुट्ठी।

मुस्र—(न०) [√मुस्+रक्] मूसल। आँसू।

√मुह्—दि० पर० अक० मूर्च्छित होना। व्याकुल होना, परेशान होना। मूर्ख बनना। सक० भूलना। मुह्यति, मोहिष्यति—मोक्ष्यति, अमुहत्।

मुहिर—(वि०) [√मुह्+किरच्] मूर्ख, मूढ़। (पुं०) कामदेव। मूर्ख व्यक्ति।

मुहुस्—(अव्य०) [√मुह्+उसिक्] बार-बार।—**भाषा (मुहुर्भाषा)**-(स्त्री०),—**वचस्**-(न०) पुनरावृत्ति।—**भुज् (मुहुर्भुज्)**-(पुं०) घोड़ा।

मुहूर्त—(न०, पुं०) [√हुर्च्छ्+क्त, मुडागम, ह्रस्व लोपः] काल का एक मान जो ४८ मिनट का होता है। दिन-रात का तीसवाँ भाग। विवाह, यात्रा आदि के लिये शुभाशुभ काल। (पुं०) ज्योतिषी।

मुहूर्तक—(पुं०) [मुहूर्त+कन्] पल, लम्हा। ४८ मिनिट का समय का मान।

√मू—भ्वा० आत्म० सक० बाँधना। मवते, मविष्यते, अमविष्ट।

मूक—(वि०) [√मू+कक्] गूँगा, वाणी-रहित। बेचारा, अभागा। (पुं०) गूँगा आदमी। अभागा या धनहीन आदमी। मछली।—**अम्बा (मूकाम्बा)**-(स्त्री०) दुर्गा का रूपान्तर।—**भाव**-(पुं०) मौन-भाव, गूँगापन।

मूकिमन्—(पुं०) [मूक+इमनिच्] गूँगापन।

मूढ—(वि०) [√मुह्+क्त] मूर्च्छित। व्याकुल, परेशान। बेवकूफ। भूला हुआ, भटका हुआ। समय से पूर्व जन्मा हुआ। चकित। (पुं०) मूर्खजन, अज्ञजन; 'मूढः परप्रत्ययनेयबुद्धिः' माल० १.२।—**आत्मन् (मूढात्मन्)**-(वि०) विकल मन वाला। मूर्ख, बेवकूफ।—**गर्भ**-(पुं०) मृत या बिगड़ा हुआ गर्भ।—**ग्राह**-(पुं०) गलत धारणा। नासमझ के मन में जमी हुई बात।—**चेतन**,—

चेतस्, —धी, —बुद्धि, —मति–(वि०) मूर्ख, नासमझ ।—सत्त्व–(वि०) पागल, विक्षिप्त ।

मूत—(वि०) [√मू+क्त] बंधा हुआ, बंधन-युक्त । कैद में पड़ा हुआ ।

√**मूत्र्**—चु० पर० अक० मूतना । मूत्रयति —मूत्रति, मूत्रयिष्यति – मूत्रिष्यति, अमु-मूत्रत्—अमूत्रीत् ।

मूत्र—(न०) [√मूत्र्+घञ्] मूत, पेशाब । —आघात (मूत्राघात)–(पुं०) पेशाब बंद हो जाने की बीमारी ।—आशय–(पुं०) तरेद, मूत्रस्थली ।—कृच्छ्र –(न०) पेशाब की एक बीमारी जिसमें पेशाब करते समय जलन होती या दर्द होता है ।—कोश–(पुं०) अण्डकोष ।—क्षय–(पुं०) पेशाब बंद हो जाने का रोग विशेष ।—जठर–(पुं०, न०)पेट की सूजन जो पेशाब रुक जाने से हो गई हो ।—दोष– (पुं०) पेशाब की बीमारी ।—निरोध–(पुं०) पेशाब का रुक जाना या बंद हो जाना ।—पतन –(पुं०) गन्धमार्जार, गन्धबिलाव ।—पथ–(पुं०) पेशाब निकलने का रास्ता ।—परीक्षा–(स्त्री०)चिकित्सा में रोगी के पेशाब की परीक्षा करने की क्रिया ।—पुट–(न०) नाभि का अधोभाग, मूत्राशय ।—मार्ग–(पुं०) मूत्रद्वार ।

मूत्रल—(वि०) [मूत्र √ला+क] मूत्र को बढ़ाने वाला ।

मूत्रित—(वि०) [मूत्र+इतच् वा √मूत्र् +क्त] मूत्र के रूप में निकला हुआ । पेशाब किया हुआ ।

मूर्ख—(वि०) [√मुह् +ख, मुर् आदेश] मूढ़, नासमझ । गायत्री-रहित । (पुं०) मूढ़ व्यक्ति, बेवकूफ आदमी । उर्द । वनमूंग । —भूय–(न०) बेवकूफी, मूर्खता ।

मूर्च्छन—(वि०) [स्त्री०—मूर्च्छनी] [√मूर्च्छ् +णिच् +ल्यु] संज्ञाहीन या बेहोश करने वाला । वृद्धिकारक । (न०) [√मूर्च्छ् +ल्युट् वा णिच् +ल्युट्] मूर्च्छित होना या करना । मूर्च्छित करने का मंत्र या प्रयोग । कामदेव का एक बाण ।

मूर्च्छना—(स्त्री०) [√मूर्च्छ् +णिच्+युच् —टाप्] संगीत में एक ग्राम से दूसरे ग्राम तक जाने में सातों स्वरों का आरोह-अवरोह । 'क्रमात्स्वराणां सप्तानामारोहश्चावरोह-णम्' (रत्नाकर) । मूर्च्छनायें २१ होती हैं ।

मूर्च्छा—(स्त्री०) [√मूर्च्छ् +अ—टाप्] बेहोशी, संज्ञाहीनता । अचेतनावस्था ।

मूर्च्छाल—(त्रि०) [मूर्च्छा+लच्] मूर्च्छित, बेहोश ।

मूर्च्छित—(वि०) [मूर्च्छा+इतच्] मूर्च्छा को प्राप्त, संज्ञाहीन । मूर्ख, मूढ़ । परेशान, विकल । परिपूर्ण । संस्कार किया हुआ (सोना, लोहा आदि धातु) ।

मूर्त—(वि०) [√मूर्च्छ् +क्त] मूर्च्छित, बेहोश । मूर्तिमान्, शरीरधारी; 'प्रसाद इव मूर्तस्ते स्पर्शः स्नेहार्द्रशीतलः' उत्त० ३.१४ । पार्थिव । ठोस, कड़ा ।

मूर्ति—(स्त्री०) [√मूर्च्छ् +क्तिन्]आकृति, स्वरूप, सूरत । शरीर, देह । शरीरधारण, अवतरण । प्रतिमा । सौन्दर्य । ठोसपन, कड़ापन ।—धर, —संचर–(वि०) शरीर धारण किये हुए ।—प–(पुं०) मूर्तिपूजक, पुजारी ।

मूर्तिमत्—(वि०) [मूर्ति+मतुप्] जो रूप धारण किये हो, सशरीर । साक्षात् गोचर । ठोस । (न०) शरीर । (पुं०) कुश-पुत्र ।

मूर्धन्—(पुं०) [√मुर्व् +कनिन्, दीर्घ, धकार आदेश (समास में न का लोप हो जाता है)] मस्तक, माथा, सिर । चोटी, शिखर । नेता, नायक । अगला भाग ।—अन्त (मूर्धान्त) –(पुं०) चोटी ।—अभिषिक्त

(मूर्धाभिषिक्त)–(वि०) जिसके सिर पर अभिषेक किया गया हो। (पुं०) राजतिलक-प्राप्त राजा। क्षत्रिय जाति का पुरुष। सचिव।—अभिषेक (मूर्धाभिषेक)–(पुं०) राजगद्दी। —अवसिक्त (मूर्धावसिक्त)–(पुं०) वर्णसङ्कर जाति विशेष, जिसकी उत्पत्ति ब्राह्मण पिता और क्षत्रिय माता से हुई हो। राज तिलक प्राप्त राजा।—कर्णी, —कर्परी–(स्त्री०) छतरी। छाता। —ज–(पुं०) केश, बाल; 'विललाप विकीर्णमूर्धजा' कु० ४.४। सिंह या घोड़े की गर्दन के बाल, अयाल।—ज्योतिस्–(न०) ब्रह्मरन्ध्र।—पुष्प–(पुं०) सिरिस का वृक्ष।—रस–(पुं०) चावल की माँड़ी। —वेष्टन–(न०) पगड़ी, साफा।

मूर्धन्य—(वि०) [मूर्धन्+यत्] सिर संबंधी। सिर या मस्तक में स्थित। मुख्य, प्रधान।—वर्ण–(पुं०) वे वर्ण जिनका उच्चारण मूर्धा से होता है। यथा—ऋ, ट, ठ, ड, , ण, र, ष।

मूर्वा, मूर्विका, मूर्वी—(स्त्री०) [√मुर्व्+अच्–टाप्] [मूर्वा+कन्–टाप्, ह्रस्व, इत्व] [√मुर्व्+अच्–ङीष्] मरोड़फली नाम की बेल जिसके रेशे निकालकर धनुष के रोदे की डोरी और क्षत्रिय का कटिसूत्र बनाया जाता है।

√मूल्—भ्वा० पर० अक० दृढ़ होना, जड़ जमना। मूलति, मूलिष्यति, अमूलीत्। चु० पर० सक० रोपना, लगाना। मूलयति, मूलयिष्यति, अमूमुलत्।

मूल—(न०) [√मूल्+क वा √मू+क्ल] जड़। किसी वस्तु के सबसे नीचे का भाग। किसी वस्तु का छोर, जिससे वह किसी अन्य वस्तु से जुड़ी हो। आरम्भ। आधार, नींव। उपादान कारण। पाददेश, तली। ग्रन्थकार का निजी वाक्य या लेख जिस पर टीका आदि की जाय। पड़ोस, सामीप्य। पूँजी। वर्गमूल। किसी राजा का अपना निजी राज्य या निवास स्थान; 'स गुप्तमूलप्रत्यन्तः' र० ४.२६। सत्ताइस नक्षत्रों में से उन्नीसवाँ नक्षत्र। निकुञ्ज। पीपरामूल। सूरन। मुद्रा विशेष।—आधार (मूलाधार)–(न०) नाभि। योगानुसार मानव-शरीर के षट् चक्रों में से एक, जो गुदा और शिश्न के बीच में है।—आभ (मूलाभ)–(न०) मूली।—आयतन (मूलायतन)–(न०) आदिम आवास, पूर्व निवास।—आशिन् (मूलाशिन्)–(वि०) जड़ को खाकर रहने वाला।—आह्व (मूलाह्व) (न०) मूली।—उच्छेद (मूलोच्छेद)–(पुं०) जड़ से नाश, सर्वनाश।—कर्मन्–(न०) उच्चाटन, स्तम्भन आदि का वह प्रयोग जो ओषधियों के मूल से किया जाता है, टोना। ४९ उपपातकों में से एक। प्रधान कर्म। इन्द्रजाल, जादू।—कारण–(न०) उपादान कारण; 'क्रियाणां खलु धर्म्याणां सत्पत्न्यो मूलकारणं' कु० ६.१३।—कारिका–(स्त्री०) चण्डी। मूलधन की एक विशेष प्रकार की वृद्धि। किसी सूत्र-ग्रन्थ की श्लोकबद्ध विवृति। भट्ठी, चूल्हा। —कृच्छ्र–(पुं०, न०) व्रत विशेष, इसमें मूली आदि जड़ों के क्वाथ को पीकर एक मास तक व्रत करना पड़ता है।—केशर–(पुं०) नीबू।—ज–(पुं०) पौधा जो जड़ बोने से उत्पन्न होता है बीज से नहीं। (न०) अदरक, आदी।—देव–(पुं०) कंस का नामान्तर।—द्रव्य,—धन–(न०) पूँजी।—धातु–(पुं०) मज्जा। —निकृन्तन–(वि०) जड़ से नष्ट करना। —पुरुष–(पुं०) किसी वंश का आदिपुरुष, सबसे पहला पुरखा जिससे वंश चला हो। —प्रकृति–(स्त्री०) संसार की वह आदिम सत्ता, जिसका कि यह संसार परिणाम या विकास है, सांख्य मतानुसार सत्त्व, रज, तम

की साम्यावस्था, प्रधान ।—**फलद**–(पुं०) कटहल ।—**भद्र**–(पुं०) कंस का नामान्तर ।—**भृत्य**–(पुं०) पुश्तैनी नौकर ।—**वचन**–(न०) मूल ग्रन्थ-वचन ।—**वित्त**–(न०) पूँजी, जमा ।—**विभुज**–(पुं०) रथ ।—**शाकट**–(पुं०), —**शाकिन**–(न०) वह खेत जिसमें मूली, गाजर आदि मोटी जड़वाले पौधे बोये जाते हैं ।—**स्थान**–(न०) आदि स्थान, बाप-दादों का वासस्थान । नींव, आधार । परमात्मा । पवन ।—**स्रोतस्**–(न०) मुख्य धारा अथवा किसी नदी का उद्गमस्थान ।

मूलक—(पुं०, न०) [मूल+कन्] मूली । खाने योग्य जड़, कंदमूल । (पुं०) ३४ प्रकार के स्थावर विषों में से एक ।—**पोतिका**–(स्त्री०) मूली ।

मूला—(स्त्री०) [मूल+अच्—टाप्] सतावर । मूल नक्षत्र ।

मूलिक—(वि०) [मूल+ठन्] मूल संबन्धी । (पुं०) कंदमूल खाकर रहने वाला साधु ।

मूलिन्—(पुं०) [मूल+इनि] वृक्ष । (वि०) मूलयुक्त ।

मूली—(स्त्री०) [मूल+ङीष्] छिपकली । एक नदी ।

मूलेर—(पुं०) [√मूल्+एरक्] राजा । जटामाँसी, बालछड़ ।

मूल्य—(वि०) [मूल+यत्] जड़ से उखाड़ने योग्य । खरीदने योग्य । (न०) कीमत, दाम । मजदूरी, वेतन । लाभ । पूँजी ।

√मूष्—भ्वा० पर० सक० चुराना । लूटना । मूषति, मूषिष्यति, अमूषीत् ।

मूष—(पुं०) [√मूष्+क] चूहा । झरोखा, रोशनदान । सोना-चाँदी गलाने की कुल्हिया ।

मूषक—(पुं०) [मूष+कन्] चूहा । चोर ।—**अराति** (**मूषकाराति**)–(पुं०) बिलार ।—**वाहन**–(पुं०) श्री गणेश जी ।

मूषण—(न०) [√मूष्+ल्युट्] चुराना ।

मूषा, मूषिका—(स्त्री०) [मूष+टाप्] [मूषिक+टाप्] चुहिया । सोना आदि गलाने की घरिया ।

मूषिक—(पुं०) [√मुष्+किकन्] चूहा । चोर । सिरिस का पेड़ । एक देश का नाम ।—**अङ्क** (**मूषिकाङ्क**), —**अञ्चन** (**मूषिकाञ्चन**), —**रथ**–(पुं०) श्री गणेश जी के नामान्तर ।—**आद** (**मूषिकाद**) –(पुं०) बिलार, बिल्ला ।—**अराति** (**मूषिकाराति**) –(पुं०) बिलार ।—**उत्कर** (**मूषिकोत्कर**) –(पुं०), —**स्थल**–(न०) चूहे का टीला ।

मूषिकार—(पुं०) चूहा ।

मूषी—(स्त्री०) [मूष+ङीप्] दे० 'मूषा' ।

मूषीक—[√मुष्+ईकन्] बड़ा चूहा ।

मूषीका—(स्त्री०) [√मुष्+ईकन्, टाप्] बड़ी चुहिया ।

मूष्यायण—(वि०) [√मुष् + क=मुष +फक्—आयन] [illegible] ।

मृकण्डु—(पुं०) मार्कण्डेय मुनि के पिता ।

√मृ—तु० आत्म० अक० मरना । म्रियते, मरिष्यति, अमृत ।

√मृग्—चु० आत्म० सक० खोजना, ढूंढ़ना । शिकार करना । खदेड़ना । लक्ष्य बाँधना । परीक्षा करना, जाँचना । माँगना । मृगयते, मृगयिष्यते, अममृगत ।

मृग—(पुं०) [√मृग्+क] चौपाया जानवर । हिरन । शिकार । चन्द्रलाञ्छन । कस्तूरी, मुश्क । खोज, तलाश, खदेड़ने की क्रिया । अनुसन्धान । याचना । एक जाति का हाथी । मानव जाति विशेष । मृगशिरस् नक्षत्र । मार्गशीर्ष मास । मकर राशि ।—**अक्षी** (**मृगाक्षी**) –(स्त्री०) हिरनी जैसी आँखों वाली स्त्री, मृगनयनी ।—**अङ्क** (**मृगाङ्क**)–(पुं०) चंद्रमा । कपूर । पवन ।—**अङ्कजा** (**मृगाङ्कजा**)–(स्त्री०) कस्तूरी, मुश्क ।—**अङ्गना** (**मृगाङ्गना**) –(स्त्री०) हिरनी ।—**अजिन** (**मृगाजिन**)–(न०) मृगचर्म ।

अदन—(मृगादन),—**अन्तक** (मृगान्तक) —(पुं०) चीता । शेर ।—**अधिप**(मृगाधिप),—**अधिराज** (मृगाधिराज)—(पुं०) सिंह, शेर; 'मृगाधिराजस्य वचो निशम्य' र० २.४१ ।—**अराति** (मृगाराति)—(पुं०) सिंह । कुत्ता ।—**अरि** (मृगारि) —(पुं०) शेर । कुत्ता । चीता । वृक्ष-विशेष ।—**अशन** (मृगाशन)—(पुं०)सिंह ।—**आविध्** (मृगाविध्) —(पुं०) शिकारी ।—**आस्य** (मृगास्य)—(पुं०) मकर राशि ।—**इन्द्र** (मृगेन्द्र)—(पुं०) शेर । चीता । सिंह राशि ।—**ईश्वर** (मृगेश्वर) —(पुं०) दे० 'मृगेन्द्र' ।—**उत्तम** (मृगोत्तम), —**उत्तमाङ्ग** (मृगोत्तमाङ्ग) —(न०) मृगशिरस् नक्षत्र ।—**कानन**—(न०) उद्यान । शिकार के जानवरों से भरा हुआ वन ।—**गामिनी**—(स्त्री०) प्रोषधि विशेष ।—**जल**—(न०) मृगतृष्णा की लहरें ।—**जीवन**—(पुं०) बहेलिया ।—**तृष्**, —**तृषा**,—**तृष्णा**, —**तृष्णिका**—(स्त्री०) जलाभ, जल की लहरों की वह मिथ्या प्रतीति जो कभी-कभी ऊसर मैदानों में कड़ी धूप पड़ने के समय होती है ।—**दंश**, —**दंशक**—(पुं०) कुत्ता ।—**दृश्**—(स्त्री०) मृगनयनी स्त्री ।—**द्यु** —(पुं०) शिकारी ।—**द्विष्**—(पुं०) सिंह ।—**धर**—(पुं०) चन्द्रमा ।—**धूर्त**, —**धूर्तक**—(पुं०) शृगाल, गीदड़ ।—**नयना**—(स्त्री०) दे 'मृगाक्षी' ।—**नाभि** —(पुं०) कस्तूरी । हिरन जिसकी नाभि में कस्तूरी होती है; 'दृषदो वासितोत्सङ्गा निषण्णमृगनाभिभिः' र० ४.७४ ।—**पति** —(पुं०) सिंह । नर हिरन । चीता ।—**पालिका**—(स्त्री०) मृगनाभि ।—**पिप्लु**—(पुं०) चन्द्रमा ।—**प्रभु**— (पुं०) सिंह ।—**बधाजीव**, —**वधाजीव**— (पुं०) शिकारी ।—**बन्धिनी**—(स्त्री०) हिरन पकड़ने का जाल ।—**मद**—(पुं०) कस्तूरी, मुश्क; 'मृगमदतिलकं लिखति सपुलकं' गीत० ७ ।—**मन्द्र** —(पुं०) हाथियों की एक जाति ।—**मातृका** —(स्त्री०) कस्तूरी मृगी या हिरनी ।—**मास**—(पुं०) अगहन का महीना ।—**मित्र**—(पुं०) चन्द्रमा ।—**मुख**—(पुं०)मकर राशि ।—**यूथ**—(न०) हिरनों की टोली ।—**राज्** —(पुं०) सिंह । चीता । सिंहराशि ।—**राज**—(पुं०) सिंह । सिंहराशि । चीता । चन्द्रमा ।—**रिपु**—(पुं०) सिंह ।—**रोमन्** —(न०) ऊन ।—**लाञ्छन** —(पुं०) चंद्रमा ।—**लेखा**—(स्त्री०) हिरन जैसे चिह्न जो चंद्रमा में दिखलाई पड़ते हैं ।—**लोचन**—(पुं०) चन्द्रमा ।—**लोचना**, —**लोचनी** —(स्त्री०) मृगनयनी स्त्री ।— **वाहन**—(पुं०) चन्द्रमा ।—**व्याध**—(पुं०) बहेलिया, शिकारी । तारागण विशेष । शिव जी का नामान्तर ।—**शाव** —(पुं०) हिरन का बच्चा, मृगछौना ।—**शिर**—(पुं०),—**शिरस**—(न०), —**शिरा**—(स्त्री०) पाँचवें नक्षत्र का नाम ।—**शीर्ष**—(न०) मृगशिरस् नक्षत्र । (पुं०) अगहन मास ।—**शीर्षन्**— (पुं०) मृगशिरस् नक्षत्र ।—**श्रेष्ठ** —(पुं०) चीता ।—**हन्**—(पुं०) शिकारी ।

मृगणा—(स्त्री०) [√मृग् +णिच्+युच्—टाप्] खोज, तलाश । अनुसन्धान ।

मृगया—(स्त्री०) [मृग्यन्ते पशवोऽस्याम्,√मृग् +णिच्+श, यक्, णिलोप—टाप्]शिकार ।

मृगयु—(पुं०) [मृग √या+कु] शिकारी, बहेलिया; 'हन्ति नोपशयस्थोऽपि शयालुर्मृगयुर्मृगान्' शि० २.८० । गीदड़ । ब्रह्मा ।

मृगव्य—(न०) [मृग √व्यध्+ड] शिकार, मृगया । लक्ष्य, निशाना । चाद ।

मृगित—(वि०) [√मृग् +क्त] तलाश किया हुआ । पीछा किया हुआ ।

मृगी—(स्त्री०) [मृग+ङीष्] हिरनी । मिरगी रोग । पुलह ऋषि की पत्नी जिससे

मृगों की उत्पत्ति मानी जाती है ।—पति –(पुं०) श्रीकृष्ण ।

मृग्य—(वि०) [√मृग् + ण्यत्] खोजने योग्य ।

√मृज्—अ० पर० सक० शुद्धि करना, पवित्र करना । मार्ष्टि, मार्जिष्यति–मार्क्ष्यति, अमार्जीत्–अमार्क्षीत् । चु० पर० सक० पवित्र करना । सजाना । मार्जयति–मार्जति, मार्जयिष्यति– मार्जिष्यति –मार्क्ष्यति, अमीमृजत्–अममार्जत् ।

मृज—(पुं०) [√मृज्+क] मुरज नामक बाजा ।

मृजा—(स्त्री०) [√मृज्+अ–टाप्] शुद्धि, सफाई, मार्जन । शरीर का रंग ।

मृजित—(वि०) [√मृज् +क्त] पोंछा हुआ, साफ किया हुआ ।

मृज्य—(वि०) [√मृज् +क्यप्] मार्जन करने योग्य ।

√मृड्—तु० पर० सक० सुख देना । मृडति, मर्डिष्यति, अमर्डीत् । क्र्या० पर० सक० चूर्ण करना । सुखी करना । मृड्णाति, मर्डिष्यति, अमर्डीत् ।

मृड—(पुं०) [√मृड् +क] शिव ।

मृडा,, मृडानी,, मृडी—(स्त्री०) [मृड –टाप्] [मृड +ङीष्, आनुक्] [मृड –ङीष्] पार्वती, दुर्गा ।

√मृण्—तु० पर० सक० वध करना, हत्या करना । मृणति, मर्णिष्यति, अमर्णीत् ।

मृणाल—(न०) [√मृण्+कालन्] कमल की जड़, मुरार, भसीडा । (न०, पुं०) कमल का डंठल जिसमें फूल लगा रहता है, कमलनाल ।

मृणालिका, मृणाली—(स्त्री०) [मृणाल +कन्–टाप्, इत्व] [मृणाल+ङीष्] कमल की डंडी, कमलनाल ।

मृणालिन्—(पुं०) [मृणाल+इनि] कमल ।

मृणालिनी—(स्त्री०) [मृणालिन्+ङीप्] कमल का पौधा । कमल का ढेर । स्थान जहाँ कमल बहुत होते हों ।

मृत—(वि०) [√मृ+क्त] मरा हुआ । व्यर्थ । भस्म किया हुआ । याचित । (न०) मृत्यु । याचित वस्तु ।—**अङ्ग** (मृताङ्ग)–(पुं०) शवदेह, लाश ।—**अण्ड** (मृताण्ड)–(पुं०) सूर्य । पिता ।—**अशौच** (मृताशौच) –(न०) किसी गोत्री या वंश वाले के मरने से लगा हुआ सूतक ।—**उद्भव** (मृतोद्भव) –(पुं०) समुद्र ।—**गृह**–(न०) समाधि, कब्र ।—**दार** –(पुं०) रँडुआ ।—**निर्यातक**–(पुं०) मुर्दा ढोने वाला ।—**प्राय**–(वि०) मरा हुआ-सा ।—**मत्त**, —**मत्तक** –(पुं०) गीदड़ ।—**संस्कार**–(पुं०) मृतक के क्रियाकर्म ।—**सञ्जीवन**–(वि०) मुर्दे को जिलाने वाला । (न०) मुर्दे को जिलाने की क्रिया ।—**सञ्जीवनी**–(स्त्री०) मुर्दे को जिलाने वाली गोरक्ष-दुग्धा नामक ओषधि । तंत्रोक्त एक विद्या ।—**स्नान**–(न०) किसी भाई-बंधु के मरने पर किया जाने वाला स्नान ।

मृतक—(न०, पुं०)[मृत + कन्] शव, मुर्दा । (न०) [मृत √कृ + क] मरणाशौच, मृतक-सूतक ।—**अन्तक** (मृतकान्तक)–(पुं०) सियार, गीदड़ ।

मृतकल्प—(पुं०) [मृत+कल्पप्] मृतप्राय, बेहोश ।

मृतालक—(न०) [मृत √अल् + णिच् +ण्वुल्] अरहर । गोपीचन्दन ।

मृति—(स्त्री०) [√मृ + क्तिन्] मृत्यु, मौत ।

मृत्तिका—(स्त्री०) [मृद् + तिकन्–टाप्] मिट्टी । अरहर ।

मृत्यु–(पुं०)–[√मृ+त्युक्]मौत । यमराज । ब्रह्मा । विष्णु । माया । काली । कामदेव ।—**तूर्य**–(न०)ढोल जो किसीके मृतक

क्रिया कर्म के समय बजाया जाय ।—**नाशक**—(पुं०) पारा ।—**पा**—(पुं०) शिवजी का नाम ।—**पाश**—(पुं०) यमराज का फंदा ।—**पुष्प**—(पुं०) गन्ना, ईख ।—**प्रतिबद्ध**—(वि०) मरणशील, मर्त्य ।—**फला**—**फली**—(स्त्री०) केला ।—**बीज**, —**बीज**—(पुं०) बाँस ।—**राज्**—(पुं०) यमराज ।—**लोक**—(पुं०) मर्त्यलोक । यमलोक ।—**वञ्चन**—(पुं०) शिवजी । जंगली कौआ, वनकाक ।—**सूति**—(स्त्री०) केकड़े की माता, यह अंडे देती है और अंडे देते ही मर जाती है ।

मृत्युञ्जय—(वि०) [मृत्युं जितवान्, मृत्यु √जि+खच्, मुम्] वह जिसने मौत को जीत लिया हो । (पुं०) शिवजी का एक नाम ।

मृत्सा, मृत्स्ना—(स्त्री०) [प्रशस्ता मृत्, मृद्+स—टाप्] [मृद् +स्न—टाप्] अच्छी मिट्टी । सुगन्ध-युक्त मिट्टी ।

√मृद्—क्र्या० पर० सक० निचोड़ना । कुचलना । चूर्ण करना । नाश कर डालना, मार डालना । रगड़ना । झाड़ डालना । मृद्नाति, मर्दिष्यति, अमर्दीत् ।

मृद्—(स्त्री०) [मृद्+क्विप्] मिट्टी, मृत्तिका । मिट्टी का ढेला । मिट्टी का टीला । एक प्रकार की गन्धदार मिट्टी ।—**कर** (**मृत्कर**)—**कार** (**मृत्कार**)—(पुं०) कुम्हार ।—**कांस्य** (**मृत्कांस्य**) —(न०) मिट्टी का बरतन ।—**ज** —(पुं०) मछली विशेष ।—**चय** (**मृच्चय**)—(पुं०) मिट्टी का ढेर; 'प्रभवति शुचिर्बिम्बोद्ग्राहे मणिर्न मृदां चयः', उत्त० २४ ।—**पच** (**मृत्पच**) —(पुं०) कुम्हार ।—**पात्र** (**मृत्पात्र**), —**भाण्ड**—(न०) मिट्टी के बने बरतन ।—**पिण्ड** (**मृत्पिण्ड**)—(पुं०) मिट्टी का ढेला, लौंदा ।—**लोष्ट** (**मृल्लोष्ट**)— (पुं०) मिट्टी का ढेला ।—**शकटिका** (**मृच्छकटिका**)—मिट्टी की बनी छोटी गाड़ी, मिट्टी का बना गाड़ी का खिलौना ।

मृदङ्ग—(पुं०) [मृद्यते आहन्यतेऽसौ, √मृद्+अङ्गच्] ढोल की तरह का एक बाजा, मुरज । बाँस ।—**फल**—(पुं०) कटहल का पेड़ ।

मृदर—(वि०) [√मृद् + अरच्] चंचल, चपल । खेलाड़ी । कच्चा । उड़ाऊ । (पुं०) व्याधि । दिन ।

मृदा—(स्त्री०) [मृद्+टाप्] दे० 'मृद्' ।

मृदित—(वि०) [√मृद् +क्त] निचोड़ा हुआ । रौंदा हुआ । कुटा हुआ । मला हुआ ।

मृदिनी—(स्त्री०) [√मृद्+क + इनि—ङीप्] कोमल या अच्छी मिट्टी ।

मृदु—(वि०) [स्त्री०—**मृदु** या **मृद्वी**] [√म्रद्+कु, सम्प्रसारण] कोमल, नरम मुलायम । निर्बल, कमजोर । मंद जो सुनने में कर्कश या अप्रिय न हो । (पुं०) शनिग्रह ।—**अङ्ग** (**मृद्वङ्ग**) —(न०) राँगा । कोमल अवयव ।—**अङ्गी** (**मृद्वङ्गी**) —(स्त्री०) कोमलाङ्गी स्त्री ।—**उत्पल** (**मृदूत्पल**)—(न०) कोमल नीला कमल ।—**कार्ष्णायस**—(न०) सीसा । जस्ता ।—**गण**—(पुं०) अनुराधा, चित्रा, मृगशिरा और रेवती—इन चार नक्षत्रों का गण ।—**गमना**—(स्त्री०) हंसी ।—**त्वच्**— (पुं०) भोज-पत्र का वृक्ष ।—**पर्वक**, —**पर्वन्**—(पुं०) बेंत । नरकुल ।—**पुष्प**—(पुं०) सिरिस का पेड़ ।—**भाषिन्**—(वि०) मधुर-भाषी, मीठा बोलने वाला ।—**रोमक**, —**रोमन्**—(पुं०) खरगोश ।

मृदुन्नक—(न०) [मृद—उद् √नी+ड +कन्] सुवर्ण, सोना ।

मृदुल—(वि०) [मृदु+लच्] नर्म, कोमल, मुलायम । (न०) पानी । अगर काष्ठ विशेष ।

मृद्वी, मृद्वीका—(स्त्री०) अंगूरों या दाखों का गुच्छा; 'चाथ त्वयीयां परिपीय मृद्वी मृद्वीकया तुल्यरसां स हंस:' नै० ३.६० ।

√मृष्—भ्वा० उभ० सक० गीला करना, तर करना । मर्षति—ते, मर्षिष्यति—ते, अमर्षीत्—अमर्षिष्ट ।

मृध—(न०) [√मृध् +क] युद्ध, लड़ाई; 'हत्वा निवृत्ताय मृधे खरादीन्' र० १२.४५ ।

मृन्मय—(वि०) [मृद् +मयट्] मृत्तिकामय, मिट्टी का बना हुआ ।

√मृश्—तु० पर० सक० स्पर्श करना, छूना । रगड़ना, मलना । विचारना । मृशति, म्रक्ष्यति, मर्क्ष्यति, अम्राक्षीत् —अमार्क्षीत् —अमृक्षत् ।

√मृष्—भ्वा० पर० सक० सींचना । सहना । मारना । कष्ट देना । मर्षति, मर्षिष्यति, अमर्षीत् । दि० उभ० सक० सहन करना । मृष्यति—ते, मर्षिष्यति — ते, अमर्षीत् —अमर्षिष्ट ।

मृषा—(स्त्री०) [√मृष्+का] झूठ, गलत, झूठ-मूठ । व्यर्थ, निरर्थक ।—**अर्थक** (मृषार्थक)—(वि०) असत्य । वाहियात । (न०) अत्यन्त असम्भवार्थक वाक्य; जैसे —वन्ध्यासुत, खपुष्प आदि ।—**उद्य** (मृषोद्य)— (न०) मिथ्या वाक्य, असत्य वचन ।—**ज्ञान**—(न०) अज्ञानता, भ्रम, भूल ।— **भाषिन्**, —**वादिन्**—(वि०) झूठा, असत्य बोलने वाला ।—**वाच्** —(स्त्री०) असत्य वचन । व्यङ्ग्य ।—**वाद**—(पुं०) असत्य भाषण । अयथार्थ भाषण, चापलूसी । व्यङ्ग्य ।

मृषालक—(पुं०) [मृषा मिथ्या अचिरस्थायित्वेन फलम् अलंकरणम् कायति प्रकाशयति, मृषा—अल —कै+क] आम का पेड़ ।

मृष्ट—(वि०) [√मृज् वा √मृश्+क्त] साफ किया हुआ, पवित्र किया हुआ । मांजित किया हुआ । मला हुआ । पकाया हुआ । स्पर्श किया हुआ । विचार किया हुआ । स्वादिष्ठ ।

मृष्टि—(स्त्री०) [√मृज् वा √मृश्+क्तिन्] सफाई, पवित्रता । पाक क्रिया । स्पर्श ।

मृष्टेरुक—(पुं०) उदार मनुष्य । मिठाई खाने वाला आदमी ।

√मॄ—क्र्या० पर० सक० मारना, वध करना । मृणाति, मरिष्यति—मरीष्यति, अमारीत् ।

√मे—भ्वा० आत्म० सक० विनिमय करना, बदलौवल करना । लौटाना । मयते, मास्यते, अमास्त ।

मेक—(पुं०) [मे इति कायति शब्द करोति, मे √कै+क] बकरा ।

मेकल—(पुं०) एक पर्वत का नाम । इसको मेखल भी कहते हैं ।—**अद्रिजा** (मेकलाद्रिजा) —**कन्यका**,—**कन्या**—(स्त्री०) नर्मदा नदी के नामान्तर ।

मेखला—(स्त्री०) [मीयते प्रक्षिप्यते कायमध्यभागे, √मी+खल, गुण, टाप्] करधनी, तागड़ी, किङ्किणी । कमरबंद, इजारबंद, कमरपेटी । कोई भी वस्तु जो दूसरी वस्तु के मध्यभाग में उसे चारों ओर से घेरे हुए पड़ी हो । कटिसूत्र जो तीन लर का होता है और जिसे द्विजाति पहिनते हैं। पहाड़ का उतार; 'आमेखलं सञ्चरतां घनानां' कु० १.५ । कूल्हा, कमर । तलवार का परतला । तलवार की मूठ में बंधी डोरी की गाँठ । घोड़े का जेरबंद । नर्मदा नदी का नाम ।—**पद**—(न०) कमर ।—**बन्ध**—(पुं०) कटिसूत्र धारण करने की क्रिया ।

मेखलाल—(पुं०) [मेखला √लल्+घञ्] शिव जी ।

मेखलिन्—(पुं०) [मेखला +इनि] शिवजी का नाम । ब्रह्मचारी ।

मेघ—(न०) [√मिह् +अच्, कुत्व] अबरक । (पुं०) बादल । समुदाय । छः मुख्य रागों में से एक । मोथा ।—**अध्वन्**

(मेघाध्वन्), —पथ,—मार्ग–(पुं०) अन्तरिक्ष ।—अन्त (मेघान्त)–(पुं०) शरत्-काल ।—अरि (मेघारि)–(पुं०) पवन ।—अस्थि (मेघास्थि)–(न०) ओला ।—आख्य (मेघाख्य)–(न०) अबरक ।—आगम (मेघागम)–(पुं०) वर्षाऋतु ।—आटोप (मेघाटोप)–(पुं०) मेघों की घटा ।—आडम्बर (मेघाडम्बर)–(पुं०) मेघों की गर्जना ।—आनन्दा (मेघानन्दा)–(स्त्री०) बगला ।—आनन्दिन् (मेघानन्दिन्)–(पुं०) मोर ।—आलोक (मेघालोक)–(पुं०) मेघों का दृष्टिगोचर होना; 'मेघालोके भवति सुखिनोऽप्यन्यथावृत्ति चेतः' मे० ३ ।—आस्पद (मेघास्पद)–(न०) आकाश, अन्तरिक्ष ।—उदक (मेघोदक)–(न०) बादल का जल, वर्षा ।—उदय (मेघोदय)–(पुं०) घटा का उठना ।—कफ –(पुं०) ओला ।—काल–(पुं०) वर्षाऋतु ।—गर्जन –(न०), —गर्जना –(स्त्री०) बादलों का गरजना ।—चिन्तक–(पुं०) चातक पक्षी ।—ज (वि०) मेघ से उत्पन्न । मेघों में बना हुआ । (पुं०) बड़ा मोती ।—जाल– (न०) मेघसमूह । अबरक ।—जीवक, —जीवन–(पुं०) चातक पक्षी ।—ज्योतिस्–(पुं०) बिजली ।—डम्बर–(पुं०) मेघ-गर्जन ।—दीप–(पुं०) बिजली ।—द्वार–(न०) आकाश ।—नाद– (पुं०) बादलों की गर्जना । वरुण का नामान्तर । रावण के पुत्र इन्द्रजित् का नाम ।— निर्घोष–(पुं०) बादलों की गर्जना ।—पङ्क्ति, —माला–(स्त्री०) बादलों की पांत । —पुष्प–(न०) जल । ओला । नदी का जल ।—प्रसव–(पुं०) जल ।—भूति– (स्त्री०) बिजली ।—मण्डल–(न०) आकाश । —माल,—मालिन्–(वि०) बादलों से घिरा, ढका हुआ ।—योनि–(पुं०) कोहरा । धूम ।—रव–(पुं०) बादल का गर्जन ।—वर्णा–(स्त्री०) नील का पौधा ।—वर्त्मन्–(न०) आकाश ।—वह्नि–(पुं०) बिजली ।—वाहन–(पुं०) इन्द्र । शिव ।—विस्फूर्जित –(न०) मेघों की गड़गड़ाहट । एक वर्णवृत्त का नाम ।—वेश्मन्–(न०) आकाश ।—सार–(पुं०) चीनिया कपूर ।—सुहृद्–(पुं०) मयूर, मोर ।—स्तनित–(न०) मेघगर्जन ।

मेचक—(पुं०) [मचति वर्णान्तरेण मिश्री-भवति, √मच्+वुन्, इत्व, गुण वा √मच +अकन्, एत्व] कालापन । श्यामल रंग । मोर की चंद्रिका । बादल । धुँआ । वन की डेंपनी, स्तन के ऊपर की काली घुंडी । रत्न विशेष । (न०) अंधकार । सुरमा । (वि०) काला, श्यामल ।—आपगा (मेचकापगा)–(स्त्री०) यमुना का नाम ।

मेठ—(पुं०) [√मेङ्+अच्, पृषो० साधुः] मेढ़ा । महावत ।

मेढ्र—(न०) [मेहति अनेन, √मिह +ष्ट्रन्] लिङ्ग, पुरुष की जननेन्द्रिय । (पुं०) मेढ़ा ।—चर्मन्–(न०) खलड़ी जो लिङ्ग के अग्रभाग को ढके रहती है, खलरी ।—ज–(पुं०) शिव ।—रोग–(पुं०) लिङ्ग सम्बन्धी रोग ।—शृङ्गी–(स्त्री०) मेढ़ासिंगी ।

मेढ्रक—(पुं०) बाँह, भुज । लिङ्ग ।

मेण्ठ, मेण्डु—(पुं०) महावत ।

मेण्ढ, मेण्ढक—(पुं०) मेढ़ा ।

√मेथ्—भ्वा० उभ० सक० मिलाना । आलिङ्गन करना । (आत्म०) गालियाँ देना । जानना । मार डालना । मेथति– ते, मेथिष्यति—ते, अमेथीत– अमेथिष्ट ।

मेथि—(पुं०) [√मेथ्+इन्] खंभा, खूंटी, चुनकिया । (स्त्री०) मेथी ।

मेथिका, मेथिनी—(स्त्री०) [√मेथ्+ण्वुल् —टाप्, इत्व] [√मेथ् + णिनि– ङीप्] मेथी ।

√मेद्—भ्वा० उभ० सक० मारना, वध करना । जानना । मेदति—ते, मेदिष्यति—ते, अमेदीत्—अमेदिष्ट ।

मेद—(पुं०) [मेदते स्निह्यति, √मिद्+अच्] चर्बी । वर्णसङ्कर जाति विशेष जिसकी उत्पत्ति मनुस्मृति के अनुसार वैदेहिक पुरुष और निषाद जाति की स्त्री से हो । एक नाग का नाम ।—**ज**-(न०) एक प्रकार का गूगल । —**भिल्ल**-(पुं०) एक अन्त्यज जाति ।

मेदक-(पुं०) [√मिद्+ण्वुल्] अर्क जो शराब खींचने के काम में आता है ।

मेदस्—(न०) [मेदते स्निह्यति, √मिद्+असुन्] चर्बी, वसा, शरीर स्थित सप्त धातुओं में इसकी गणना है और यह उदर में इकट्ठी होती है । स्थूलता, मोटाई या चरबी बढ़ने का रोग ।—**अर्बुद** (**मेदोऽर्बुद**)-(न०) मेदयुक्त गाँठ या गिल्टी जिसमें पीड़ा हो । —**कृत**-(पुं०, न०) मांस ।—**ग्रन्थि** (**मेदोग्रन्थि**)-(पुं०) मेदयुक्त गाँठ ।—**ज** (**मेदोज**), —**तेजस्**-(न०) हड्डी ।—**पिण्ड**-(पुं०) चर्बी का गोला ।—**वृद्धि** (**मेदोवृद्धि**)-(स्त्री०) चर्बी की वृद्धि, मोटाई । अण्डवृद्धि ।

मेदस्विन्—(वि०) [मेदस् +विनि] मोटा, स्थूल । बलवान्; 'मेदस्विनः सरभसोपगतानभीकान्' कि० ५.६४ । रोबीला ।

मेदिनी—(स्त्री०) [मेद + इनि—ङीप्] पृथिवी । मेदा । एक संस्कृत कोश का नाम (मेदिनीकोश) ।—**ईश** (**मेदिनीश**),—**पति**-(पुं०) राजा ।—**द्रव**-(पुं०) धूल, गर्दा ।

मेदुर—(वि०) [√मिद् + घुरच्] स्निग्ध, चिकना । मोटा । आच्छादित; 'मेघैर्मेदुरमम्बरं' गीत० १ ।

मेद्य—(वि०) [मेद+यत्] चर्बी से उत्पन्न ।

√मेध् —दे० '√मेथ्' । मेधति—ते, मेधिष्यति—ते, अमेधीत्—अमेधिष्ट ।

मेध—(पुं०) [मेध्यते हन्यते पशुः अत्र, √मेध् +घञ्] यज्ञ । यज्ञीय पशु, यज्ञ में बलि दिया जाने वाला पशु ।—**ज**-(पुं०) विष्णु का नामान्तर ।

मेधा—(स्त्री०) [मेधते संगच्छते यस्याम्, √मेध् + अङ—टाप्] बात को स्मरण रखने की मानसिक शक्ति, धारणा शक्ति । बुद्धि, धी । सरस्वती का रूप विशेष । दक्ष प्रजापति की एक कन्या । एक मातृका । संपत्ति । शक्ति ।—**अतिथि** (**मेधातिथि**)-(पुं०) काण्ववंश-उद्भूत एक ऋषि जो ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के १२-२३ सूक्तों के द्रष्टा थे । कण्व मुनि के पिता । महावीर स्वामी के पुत्र जिनकी बनायी मनुसंहिता की टीका प्रसिद्ध है । प्रियव्रत के पुत्र और शाकद्वीप के अधिपति । कर्दम प्रजापति के पुत्र । —**रुद्र**-(पुं०) कालिदास की एक उपाधि ।

मेधावत्—(वि०) [मेधा+मतुप्, वत्व] दे० 'मेधाविन्' ।

मेधाविन्—(वि०) [मेधा + विनि] तीव्र स्मरणशक्ति वाला । बुद्धिमान्, धीमान् । (पुं०) विद्वान् व्यक्ति । तोता । नशीला पेय पदार्थ ।

मेधि—[मेध्यते खले स्थाप्यते, √मेध्+इन्] वह खंभा जिसमें दँवरी के समय बैलों को बाँधते हैं ।

मेधिर—(वि०) बुद्धिमान् । मेधायुक्त ।

मेध्य—(वि०) [√मेध्+ण्यत्] यज्ञ के योग्य । यज्ञ-सम्बन्धी, यज्ञीय; 'मेध्येनाश्वेनेजे' र० १३.३ । पवित्र । (पुं०) बकरा । खदिर का वृक्ष । यव, जौ, जवा ।

मेध्या—(स्त्री०) [मेध्य+टाप्] केतकी, ज्योतिष्मती, शंखपुष्पी, ब्राह्मी, सफेद वच, शमी, मण्डूकी, अपराजिता आदि ।

मेनका—(स्त्री०) [√मन् +वुन्, अकारस्य एत्वम्] शकुन्तला की माता एक अप्सरा का नाम । हिमालय की पत्नी का नाम ।—

आत्मजा (मेनकात्मजा)–(स्त्री०) पार्वती का नाम । शकुन्तला का नाम ।

मेना—(स्त्री०) [√मान् + इनन्, नि० साधुः] हिमालय की पत्नी का नाम । एक नदी का नाम ।

मेनाद—(पुं०) [मे इति नादोऽस्य] मयूर, मोर । बिल्ली । बकरा ।

√मेप्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । मेपते, मेपिष्यते, अमेपिष्ट ।

मेय—(वि०) [√मा+यत्] नापने योग्य । वह जिसका तखमीना या अनुमान किया जा सके । ज्ञेय, जानने योग्य ।

मेरु–(पुं०)[√मि+रु] एक पुराणोक्त पर्वत जो सोने का कहा गया है और जिसके बारे में कहा जाता है कि उसके गिर्द समस्त ग्रह घूमा करते हैं; 'विभज्य मेरुर्न यदर्थिसात्कृतः' न० १.१६ । माला के बीच की गुरिया जिससे जप आरम्भ किया जाता है । मणिहार के बीच का रत्न ।**—दण्ड**–(पुं०) रीढ़ । एक से दूसरे ध्रुव को जाने वाली कल्पित सरल रेखा ।**—धामन्**–(पुं०) शिवजी ।**—पृष्ठ**–(न०) आकाश । स्वर्ग ।**—यन्त्र**–(न०) बीजगणित का चक्र विशेष जिसकी शकल तकुवे जैसी होती है ।**—शिखर**–(न०) मेरु की चोटी । 'सहस्रार' चक्र ।**—सावर्णि**–(पुं०) ग्यारहवें मनु ।

मेरुक—(पुं०) [मेरु+कन्] धूप, धूना ।

मेल—(पुं०) [√मिल्+घञ्] मिलाप । संग ।

मेलन—(न०) [√मिल् + णिच्+ल्युट्] मिलाने की क्रिया या भाव, संयोग । जमावड़ा । संमिश्रण ।

मेला—(स्त्री०) [√मिल् + णिच्+अङ् – टाप्] मेलन । सभा, समाज । सुर्मा । नील का पौधा । स्याही । (संगीत में) स्वरग्राम ।**—अन्धुक (मेलान्धुक)**,**—अम्बु (मेलाम्बु)**,**—नन्द**–(पुं०), **—नन्दा, —मन्दा**– (स्त्री०) कलमदान, मसीपात्र, दावात ।

√मेव्—भ्वा० आत्म० सक० पूजन करना । सेवा करना । मेवते, मेविष्यते, अमेविष्ट ।

मेष—(पुं०) [मिषति अन्योन्यं स्पर्धते, √मिष् +अच्] मेढ़ा, भेड़ा । मेषराशि । एक ओषधि । जीवशाक ।**—अण्ड (मेषाण्ड)**–(पुं०) इन्द्र की उपाधि ।**—कम्बल**–(पुं०) ऊनी कंबल ।**—पाल, —पालक**–(पुं०) गड़रिया ।**—मास**–(पुं०) सौर वैशाख मास ।**—यूथ**–(न०) भेड़ों का झुंड ।**—शृङ्ग**–(पुं०)एक स्थावर विष, सिंगिया ।**—सङ्क्रान्ति**–(स्त्री०) सूर्य के मेष राशि में प्रवेश और वर्ष के प्रारम्भ का दिन ।

मेषा—(स्त्री०) [मिष्यतेऽसौ, √मिष्+घञ् –टाप्] छोटी इलायची ।

मेषिका, मेषी—(स्त्री०) [मेष +कन्–टाप्, इत्व] [मेष+ङीष्] मादा भेड़ । जटामासी ।

मेह—(पुं०) [√मिह्+घञ्] पेशाब करने की क्रिया । पेशाब, मूत्र । पेशाब की बीमारी । [√मिह्+अच्] भेड़ा । बकरा ।**—घ्नी**–(स्त्री०) हल्दी ।

मेहन—(न०) [√मिह् + ल्युट्] मूत्र विसर्जन करने की क्रिया । मूत्र । लिङ्ग ।

मैत्र–(वि०) [स्त्री०—**मैत्री**] [मित्र+अण्] मित्र का, मित्र-सम्बन्धी । मित्र का दिया हुआ । सद्भावात्मक । मित्र नामक देवता सम्बन्धी । (न०) दोस्ती । मलोत्सर्ग । अनुराधा नक्षत्र । [**मैत्रम** भी इसी अर्थ में प्रयुक्त होता है ।] (पुं०) कुलीन ब्राह्मण । प्राचीन कालीन एक वर्णसङ्कर जाति । गुदा, मलद्वार ।

मैत्रक—(न०) [मैत्र+कन्] मित्रता ।

मैत्रावरुण—(पुं०) [मित्रश्च वरुणश्च, द्व० स०, मित्रस्य आनङ्, मित्रावरुण+ अण्]

वाल्मीकि का नाम। अगस्त्य का नाम। सोलह ऋत्विजों में से पाँचवाँ ऋत्विज्।

मैत्रावरुणि—(पु०) [मित्रावरुण + इञ्] अगस्त्य। वशिष्ठ। वाल्मीकि।

मैत्री—(स्त्री०) [मैत्र + ङीप्] दोस्ती, सद्भाव। घनिष्ठ सम्बन्ध। अनुराधा नक्षत्र।

मैत्रेय—(वि०) [स्त्री०—**मैत्रेयी**] [मैत्रे मित्रतायां साधुः, मैत्र + ढञ्] मित्रता के लिये उपयुक्त। (पु०) एक भावी बुद्ध। [मित्रयोः अपत्यम्, मित्रयु + ढञ्, युलोप] पराशर ऋषि के एक शिष्य का नाम। सूर्य। प्राचीन कालीन एक वर्णसंकर जाति।

मैत्रेयक—(पु०) [मैत्रेय + कन्] वर्णसङ्कर जाति विशेष।

मैत्रेयिका—(स्त्री०) मित्रों की लड़ाई, मित्र-युद्ध।

मैत्रेयी—(स्त्री०) [मैत्रेय + ङीप्] याज्ञवल्क्य की पत्नी। अहल्या। तुलना।

मैत्र्य—(न०) [मित्र + ष्यञ्] दोस्ती, मेल-मिलाप।

मैथिल—(पु०) [मिथिला निवासोऽस्य, मिथिला + अण्]मिथिलानिवासी। मिथिला-नरेश। राजर्षि जनक। (वि०) मिथिला का, मिथिला संबन्धी।

मैथिली—(स्त्री०) [मैथिलः तन्नामा राजा तस्यापत्यं स्त्री, मैथिल + अण् —ङीप्] सीता जी।

मैथुन—(न०) [मिथुने समवैति वा मिथुनस्य इदम्, मिथुन + अण्] स्त्री के साथ पुरुष का समागम, रति-क्रीड़ा; 'मुक्तं मैथुनमंग्रजम्' पं० २.६४। मैथुन के आठ अंग ये हैं—दर्शन, स्पर्श, केलि, कीर्तन, गुप्त भाषण, संकल्प, निश्चय रूप परिणाम और क्रिया-सम्पादन। विवाह।—**ज्वर**- (पु०) कामज्वर, मदनेच्छा की उद्विग्नता।—**धर्मिन्**-(वि०) सम्भोग-क्रिया-रत।—**वैराग्य**-(न०) स्त्री-प्रसङ्ग से अरुचि।

मैथुनिक—(वि०) [मैथुन + ठक्] मैथुन या सम्भोग करने वाला।

मैनाक—(न०) मेवा, धूर्तशक्ति।

मैनाक—(पु०) [मेनायाः अपत्यम् पुमान्, मेना + अण्, पृषो० साधुः] मेना के गर्भ से और हिमालय के वीर्य से उत्पन्न पर्वत विशेष। केवल इसी के पंख रह गये हैं।—**स्वसृ**-(स्त्री०) पार्वती।

मैनाल—(पु०) मछुवा, धीवर।

मैन्द—(पु०) एक दैत्य जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था।—**हन्**-(पु०) श्रीकृष्ण का नाम।

मैरेय, मैरेयक—(पु०, न०) [मिरायां देशभेदे भवः, मिरा + ढक् वा मारं कामं जनयति, मार + ढक् नि० साधुः] गुड़ और धौ के फूलों की बनी हुए एक प्रकार की शराब जो प्राचीन काल में व्यवहृत की जाती थी; 'अधिरजनि वधूभिः पीतमैरेयरिक्तं' शि० ११.५१।

मैलिन्द—(पु०) [मिलिन्द + अण्] भ्रमर, भौंरा।

मोक—(न०) किसी जानवर का निकाला हुआ चाम।

√मोक्ष्—चु० पर० सक० मुक्त करना, छोड़ देना। खोल देना, बंधन से रहित कर देना। छीन लेना। खींच लेना। फेंकना। घुमाकर मारना। बहाना। गिराना। मोक्षयति—मोक्षति।

मोक्ष—(पु०) [√मोक्ष् + घञ्] छुटकारा, स्वतंत्रता। बचाव। मुक्ति, आवागमन या जन्ममरण से छुटकारा। मृत्यु। अधःपात, गिर जाना। बंधन से मुक्ति। बहाव। बिखेरने की क्रिया। उऋण होने की क्रिया। ग्रहण के छूटने की क्रिया।—**उपाय (मोक्षोपाय)** -(पु०) मोक्ष-प्राप्ति के साधन।—**देव**-(पु०) चीनी यात्री ह्वेनसांग की उपाधि।—**द्वार**- (न०) सूर्य। काशीतीर्थ।—**पुरी**-(स्त्री०) अयोध्या, मथुरा, माया,

काशी, काञ्ची, अवन्तिका, द्वारावती— ये सात पुरी ।

मोक्षण—(न०) [√मोक्ष् +ल्युट्] खोलना, छोड़ना । बन्धन-राहित्य । त्याग । बहाव, गिराव (जैसे आँसुओं का) । बरबाद कर देने की क्रिया ।

मोघ—(त्रि०) [√मुह् +घ वा अच्, कुत्व] निष्फल, व्यर्थ, जिसका कुछ फल न हो । निष्प्रयोजन, निरुद्देश्य; 'याच्ञा मोघा वर-मधिगुणे नाधमे लब्धकामा' मे० ६ । त्यक्त, त्यागा हुआ । सुस्त, काहिल । (पुं०) बाड़ा । परकोटा ।—**कर्मन्**–(त्रि०) ऐसे कर्म में लगा हुआ जिसका फल कुछ भी न हो ।—**पुष्पा**– (स्त्री०) बाँझ स्त्री ।

मोघोलि—(पुं०) प्राचीर । हाता, बाड़ा ।

मोच—(न०) [मुञ्चति त्वगादिकम्, √मुच् +अच्] केले का फल । (पुं०) केले का वृक्ष । शोभाञ्जन वृक्ष ।

मोचक—(पुं०) [√मुच्+ण्वुल्] विरागी । सहिजन का वृक्ष । केले का पेड़ । [√मुच् +णिच्+ण्वुल्] मुक्ति, मोक्ष । (वि०) छुटकारा दिलाने वाला ।

मोचन—(वि०) [स्त्री०—**मोचनी**] [मुच् +ल्यु] छुड़ाने वाला । (न०) [√ मुच् +ल्युट्] रिहाई, छुटकारा, मोक्ष । जुआ में से खोलने की क्रिया । छोड़ने की क्रिया । उऋण होने की क्रिया ।—**पट्टक**–(पुं०) दूध, जल आदि छानने का साधन, छनना ।

मोचयितृ—(वि०) [√मुच् + णिच्+तृच्] छुड़ाने वाला, छुटकारा देने वाला ।

मोचा—(स्त्री०) [√मुच्+अच्– टाप्] केले का पेड़ । कपास का पौधा ।

मोचाट—(पुं०) [√मुच्+णिच् + अच्, मोच√अट्+अच्] केले के फल का गूदा । केले का फल । चन्दन काष्ठ ।

मोटक—(पुं०, न०) [√मुट्+घञ्+कन्] गोली । (न०) पितृ-तर्पण में व्यवहृत किया जाने वाला दुहरा किया हुआ कुशत्रय ।

मोटन—(न०) [√मुट्+ल्युट्] चूर्ण करना, पीसना । (पुं०) [√मुट् +ल्यु] वायु ।

मोटनक—(न०) [मोटन+कन्] एक ११ अक्षरों का वर्णवृत्त ।

मोट्टायित—(न०) [√मुट् +घञ्, बा० तुट् आगम,+क्यङ +क्त (भावे)] साहित्य में एक हाव जिसमें नायिका अनुपस्थित प्रेमी के प्रति अपने आन्तरिक प्रेम को इच्छा न रहते भी प्रकट कर देती है ।

मोण—(पुं०) [√मुण्+अच्] सूखा फल । मगर । मक्खी । बाँस या सींक का बना ढक्कनदार टोकरा ।

मोद—(पुं०) [√मुद् + घञ्] आनन्द; हर्ष; 'मदानन्दात्मच मोदाश्च' उत्त० २.१२ । सुगन्ध, खुशबू ।—**आख्य** (**मोदाख्य**)– (पुं०) आम का वृक्ष ।

मोदक—(वि०) [स्त्री०—**मोदका, मोदकी**], [√मुद्+णिच् + ण्वुल्] प्रसन्नकारक, हर्षप्रद । (न०, पुं०) लड्डू । औषध आदि का बना हुआ लड्डू । गुड़ ।—(पुं०) वर्ण-सङ्कर जाति विशेष जिसकी उत्पत्ति क्षत्रिय पिता और शूद्र माता से होती है ।

मोदन—(न०) [√मुद्+ल्युट्] हर्ष, आनन्द । [√मुद्+णिच् +ल्युट्] प्रसन्न करने की क्रिया । मोम ।

मोदयन्तिका, मोदयन्ती—(स्त्री०) [√मुद् +णिच्+शतृ–ङीप्; मोदयन्ती] [मोद-यन्ती+कन् –टाप्, ह्रस्व; मोदयन्तिका] वनमल्लिका, जंगली चमेली ।

मोदिन्—(वि०) [√मुद् +णिनि] प्रसन्न होने वाला । [√मुद + णिच्+णिनि] प्रसन्नकारक ।

मोदिनी—(स्त्री०) [मोदिन् +ङीप्] अज-मोदा । मल्लिका, चमेली । यूथिका, जुही । कस्तूरी । मदिरा, शराब ।

मोरट—(पुं०) [√मुर् +अटन्] एक पौधे की जड़ जो मीठी होती है । प्रसव से सातवीं रात के बाद दूध । (न०) गन्ने की जड़ ।

मोष—(पुं०) [√मुष्+अच्] चोर; 'दृष्टि-मोषे प्रदोषे' गीत० ११ । [√मुष्+घञ्] चोरी । लूट या चोरी का माल ।—**कृत्**-(पुं०) चोर ।

मोषक—(पुं०)[√मुष्+ण्वुल्] चोर । डाकू ।

मोषण—(न०) [√मुष् + ल्युट्] चुराने या लूटने की क्रिया । काटने की क्रिया । नाश करने की क्रिया ।

मोषा—(स्त्री०)[√मुष्+अ—टाप्] चोरी । लूट ।

मोष्टृ—(पुं०) [√मुष् +तृच्] चोर ।

मोह—(पुं०) [√मुह्+घञ्] भ्रम, भ्रान्ति । परेशानी, उद्विग्नता, घबड़ाहट । अज्ञान, मूर्खता । भूल, गलती । आश्चर्य, विस्मय । सन्ताप, पीड़ा । तांत्रिक क्रिया विशेष जिससे शत्रु घबड़ा जाता है ।—**कलिल**- (न०) माया का फंदा या जाल ।—**निद्रा**-(स्त्री०) अज्ञान और अंधविश्वास में डूबा रहना । आवश्यकता से अधिक आत्मविश्वास ।—**रात्रि**-(स्त्री०) वह कालरात्रि जब सारा संसार नष्ट हो जायगा । भाद्र-कृष्ण अष्टमी की रात ।—**शास्त्र**-(न०) झूठा सिद्धान्त जो भ्रम में डाले ।

मोहन—(वि०) [स्त्री०—**मोहनी**] [√मुह् +णिच्+ल्यु] मोह उत्पन्न करने वाला । परेशान करने वाला, व्याकुल करने वाला । माया में डालने वाला । मनोमोहक, मन को मोहने वाला । (पुं०) शिव जी का नामान्तर । कामदेव के पाँच बाणों में से एक का नाम । धतूरा । (न) [√मुह् +णिच्+ल्युट्] मोह लेने की क्रिया । परेशानी । व्यामोह । माया, भ्रम । लालच । स्त्रीप्रसङ्ग । तांत्रिक प्रयोग जिसके द्वारा शत्रु को घबड़ा देते हैं ।—**अस्त्र** (**मोहनास्त्र**)-(न०) प्राचीन कालीन अस्त्र विशेष, जिसके द्वारा शत्रु मूर्च्छित हो जाता था ।

मोहनक—(पुं०) [मोहन+कन्] चैत्र मास ।

मोहित—(वि०) [√मुह् + णिच्+क्त] मोहा हुआ, मोहप्राप्त किया हुआ । लुभाया हुआ ।

मोहिनी—(स्त्री०) [मुह् + णिच् +णिनि—ङीप्] एक अप्सरा का नाम । मोहने वाली स्त्री । विष्णु का एक रूप जो अमृत बांटने के समय असुरों को मोहित करने के लिये उनको धारण करना पड़ा था । चमेली विशेष ।

मौकलि, मौकुलि—(पुं०) कौआ; 'मूक-मौकुलिकुलः, उत्त० २.२९ ।

मौक्तिक—(न०) [मुक्ता+ठक् (स्वार्थे)] मोती ।—**आवली** (**मौक्तिकावली**)- (स्त्री०) मोतियों की लड़ी ।—**गुम्फिका** -(स्त्री०) स्त्री जो मोती का हार बनाकर तैयार करे ।—**दामन्**-(न०) मोतियों की लड़ ।—**शुक्ति** -(स्त्री०) मोती की सीप ।—**सर**-(पुं०) मोती का हार ।

मौक्य—(न०) [मूकस्य भावः, मूक +ष्यञ्] गूंगापन, मूकत्व ।

मौख—(वि०) [मुखस्य इदम्, मुख +अण्] मुख-संबंधी । (न०) मुख से होने वाला पाप (अभक्ष्य-भक्षण आदि) ।

मौखरि—(पुं०) [मुखर+इञ्] भारत के एक प्राचीन राजवंश का नाम ।

मौखर्य—(न०) [मुखर+ष्यञ्] मुखरता, वाचालपना, बकवादीपन । गाली ।

मौखिक—(वि०) [मुख + ठक्] मुख-संबंधी । जबानी ।

मौग्ध्य—(न०) [मुग्ध+ष्यञ्] मुग्धता । मूर्खता । सादगी । मनोहरता ।

मौच—(न०) [मोच+अण्] केले का फल, फूल ।

मौञ्ज—(वि०) [स्त्री०—**मौञ्जी**] [मुञ्ज+अण्] मूँज तृण का बना हुआ।

मौञ्जी—(स्त्री०) [मौञ्ज+ङीप्] मूँज का बना ब्राह्मण का कटि-सूत्र।—**बन्धन**-(न०) यज्ञोपवीत संस्कार।

मौढ्य—(न०) [मूढ + ष्यञ्] अज्ञान, मूर्खता। लड़कपन।

मौत्र—(न०) [मूत्र+अण्] मूत्र। (वि०) मूत्र संबंधी।

मौदकिक—(पुं०) [मोदक + ठक्] हलवाई।

मौद्गलि—(पुं०) [मुद्गल+इञ्] कौआ।

मौद्गीन—(न०) [मुद्ग+खञ्] मूंग बोने योग्य खेत। (वि०) जो मूंग के व्यवसाय द्वारा जीवन-निर्वाह करता हो।

मौन—(न०) [मुनेः भावः, मुनि+अण्] खामोशी, चुप्पी।—**मुद्रा**-(स्त्री०) चुप्पी, मौन-भाव।—**व्रत**-(न०) मौन धारण करने का व्रत।

मौनिन्—(वि०) [स्त्री०—**मौनिनी**] [मौन+इनि] मौन व्रत धारण करने वाला। (पुं०) मुनि। संन्यासी।

मौरजिक—(पुं०) [मुरज+ठक्] मृदंग बजाने वाला।

मौर्ख्य—(न०) [मूर्खस्य भावः, मूर्ख+ष्यञ्] मूर्खता, बेवकूफी।

मौर्य—(पुं०) [मुरायाः अपत्यम्, मुरा+ण्य] एक राजवंश का नाम जिसका प्रथम राजा चन्द्रगुप्त था।

मौर्वी—(स्त्री०) [मूर्वायाः विकारः, मूर्वा+अण्-ङीप्] कमान की डोरी; 'मौर्वीकिणाङ्कितोभुजः' श० १.१३। मूर्वा घास का बना क्षत्रिय के पहिनने योग्य कटि-सूत्र।

मौल—(वि०) [स्त्री०—**मौला**—**मौली**] [मूल+अण्] मौलिक, मूलोद्भूत। प्राचीन, पुराकालीन। कुलीन-वंश-सम्भूत। पुश्तैनी। (पुं०) पुश्तैनी दीवान।

मौलि—(पुं०) [मूल+इञ्] सिर, सीस; मौली वा रचयाञ्जलिं' वे ३.४०। मुकुट। किसी वस्तु का सर्वोच्च भाग। अशोक-वृक्ष। (पुं० या स्त्री०) मुकुट, ताज। चुटिया, शिखा। केश-विन्यास।

मौलि, मौली—(स्त्री०) [मौली, मौलि-ङीप्] पृथिवी।—**मणि**-(पुं०),—**रत्न**-(न०) मुकुट का रत्न या जवाहर।—**मण्डन**-(न०) सीसफूल, शिरोभूषण।—**मुकुट**-(न०) किरीट, ताज।

मौलिक—(वि०) [स्त्री०—**मौलिकी**] [मूल+ठञ्] मूलोद्भूत। मुख्य, प्रधान। अकुलीन। जो किसी की छाया, उलथा, अनुकृति आदि न हो।

मौल्य—(न०) [मूल्य+अण्] कीमत, दाम।

मौष्टा—(स्त्री०) [मुष्टिप्रहरणम् अस्यां क्रीडायाम्, मुष्टि+ण] घूँसेबाजी, मुक्का-मुक्की।

मौष्टिक—(पुं०) [मुष्टि+ठक्] गुंडा, बदमाश। कपटी, छलिया।

मौसल—(वि०) [स्त्री०—**मौसली**] [मुसल+अण्] मूसल के आकार का। मूसल से युद्ध में लड़ा हुआ। मूसल की लड़ाई से सम्बन्ध युक्त।

मौहूर्त, मौहूर्तिक—(पुं०) [मुहूर्तम् अधीते वेद वा मुहूर्त+अण्] [मुहूर्त + ठक्] ज्योतिषी।

√म्ना—भ्वा० पर० सक० मन ही मन आवृत्ति करना। समझदारी से सीखना। याद करना। मनति, म्नास्यति, अम्नासीत्।

म्नात—(वि०) [√म्ना + क्त] दुहराया हुआ। सीखा हुआ। अध्ययन किया हुआ।

√म्रक्ष्—भ्वा० पर० सक० रगड़ना। ढेर करना, जमा करना। म्रक्षति, म्रक्षिष्यति, अम्रक्षीत्।

म्रक्ष—(पुं०) [√म्रक्ष्+घञ्] कपट। दम्भ, पाखंड। म्रक्षण।

म्रक्षण—(न०) [√म्रक्ष् + ल्युट्] शरीर में उबटन या खुशबूदार कोई लेप लगाने की क्रिया। जमा करने या ढेर लगाने की क्रिया। तेल। लेप।

√म्रद्—भ्वा० आत्म० सक० चूर्ण करना। म्रदते, म्रदिष्यते, अम्रदिष्ट।

म्रदिमन्—(पुं०)[मृदोर्भावः मृदु+इमनिच्, म्रदादेश]मृदुता, कोमलता। निर्बलता; 'हिमांशुमाशु ग्रसते तन्म्रदिम्नः स्फुटम्फलम्' शि० २४६।

√म्रुच्—भ्वा० पर० सक० जाना। म्रोचति म्रोचिष्यति, अम्रोचीत्।

म्रुञ्च्—भ्वा० पर० सक० जाना। म्रुञ्चति म्रुञ्चिष्यति, अम्रुञ्चीत्।

√म्रेड्—भ्वा० पर० अक० विक्षिप्त, होना, पागल होना। म्रेडति, म्रेडिष्यति, अम्रेडीत्।

म्लान—(वि०) [√म्लै +क्त] कुम्हलाया हुआ, मुरझाया हुआ। थका हुआ, परिश्रान्त। निर्बल, कमजोर। मूर्च्छित। उदास। गंदा, मैला।—**अङ्ग** (**म्लानाङ्ग**)–(वि०) निर्बल शरीर का।—**अङ्गी**(**म्लानाङ्गी**)–(स्त्री०) रजस्वला स्त्री।—**मनस्**–(वि०) उदास मन वाला।

म्लानि—(स्त्री०) [√म्लै+क्तिन्] मुरझाना, कुम्हलाना। थकावट। उदासी। गंदगी।

म्लायत्, म्लायिन्—(वि०) [√म्लै +शतृ] [√म्लै+णिनि] कुम्हलाता, सूखता, छीजता हुआ।

म्लास्नु—(वि०) [√म्लै+स्नु] कुम्हलाया हुआ, मुरझाया हुआ। जो दुबला होता जाय। थका हुआ।

म्लिष्ट—(वि०) [√म्लेच्छ्+क्त, नि० साधुः] अस्पष्ट कहा हुआ। अस्पष्ट। बर्बर, जंगली। कुम्हलाया हुआ, मुरझाया हुआ। (न०) जंगली बोली। ऐसी बोली जो समझ में न आवे।

√म्लेच्छ्—भ्वा० पर० सक० अस्पष्ट रूप में बोलना। जंगलियों की तरह बोलना। अंड-बंड बोलना। म्लेच्छति, म्लेच्छिष्यति, अम्लेच्छीत्।

म्लेच्छ—(पुं०) [√म्लेच्छ्+अच्] जंगली जाति का मनुष्य। अनार्य जाति के लोग जो संस्कृत भाषा न बोलते हों और हिन्दू धर्मशास्त्रों को न मानते हों; 'म्लेच्छनिवहनिधने कलयसि करवालं' गीत० १। जातिबहिष्कृत या जातिच्युत व्यक्ति। बौधायन ने म्लेच्छ की परिभाषा यह बतलायी है :—'गोमांसखादको यस्तु विरुद्धं बहु भाषते। सर्वाचारविहीनश्च म्लेच्छ इत्यभिधीयते॥' पापी, दुष्ट मनुष्य। [√म्लेच्छ् + घञ्] अपशब्द। (न०) [म्लेच्छः तद्देशः उत्पत्तिस्थानत्वेन अस्ति अस्य, म्लेच्छ+अच्] हिंगुल, शिंगरफ। तांबा।—**आख्य**(**म्लेच्छाख्य**)–(न०) तांबा।—**आश** (**म्लेच्छाश**)–(पुं०) गेहूँ। —**आस्य** (**म्लेच्छास्य**), —**मुख**– (न०) तांबा।—**कन्द**–(पुं०) प्याज।—**जाति**– (स्त्री०)जंगली जाति। पहाड़ी जाति।— **देश**,—**मण्डल**–(पुं०) वह देश जिसमें म्लेच्छ रहते हों।—**भाषा**–(स्त्री०) अनार्य भाषा।—**भोजन**–(न०) गेहूँ। यावक, बोरो धान या जौ।—**वाच्**–(वि०) अनार्य भाषा बोलने वाला।

म्लेच्छित—(वि०)[√म्लेच्छ् +क्त]अस्पष्ट रूप से कहा हुआ। (न०) अपशब्द। व्याकरणविरुद्ध शब्द या बोली।

√म्लेट्—भ्वा० पर० अक० पागल होना। म्लेटति, म्लेटिष्यति, अम्लेटीत्।

√म्लेव्—भ्वा० आत्म० सक० सेवा करना। पूजा करना। म्लेवते, म्लेविष्यते, अम्लेविष्ट।

√म्लै—भ्वा० पर० अक० कुम्हलाना, मुरझाना। थक जाना। उदास होना। नष्ट

जाना, दुबला हो जाना । अन्तर्मान होना, प्रदृष्ट होना। म्लायति, म्लास्यति,अम्लासीत्।

य

य—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का २६वाँ अक्षर । इसका उच्चारणस्थान तालु है । यह स्पर्शवर्ण और ऊष्मवर्ण के बीच का वर्ण कहा जाता है । इसी से इसको अन्तःस्थ वर्ण कहते हैं । इसके उच्चारण में कुछ आभ्यन्तर प्रयत्न के अतिरिक्त बाह्य प्रयत्न, यथा संवार और घोष अपेक्षित होते हैं । य वर्ण अल्पप्राण है । (पुं०) [√या+ड] गाड़ी । हवा । सारथि । संयम । कीर्ति । यव, जौ । त्याग । योग । प्रकाश । छंदःशास्त्र में यगण का संक्षिप्त रूप । (वि०) जाने वाला । —गण–(पुं०) छंदःशास्त्र में एक लघु और दो गुरुमात्राओं वाला एक गण ।

यकृत्—(न०) [यं संयमं करोति, य√कृ+क्विप्, तुक्] जिगर, यकृत द्वारा शिराओं का रक्त परिष्कृत हुआ करता है । यह दाहिनी कोख में रहता है। इसे कालखण्ड भी कहते हैं ।—**आत्मिका** (**यकृदात्मिका**) –(स्त्री०) तैलपायिका, झींगुर ।—**उदर** (**यकृदुदर**)–(न०) पेट की एक बीमारी, जिगर की वृद्धि ।

√यक्ष्—चु० पर० सक० पूजा करना । यक्षयति, यक्षयिष्यति, अययक्षत् ।

यक्ष—(पुं०) [यक्ष्यते पूज्यते, √यक्ष् +घञ्] देवयोनि विशेष जिनके राजा कुबेर हैं । ये ही लोग कुबेर के धनागारों की रखवाली किया करते हैं । इन्द्र के राजभवन का नाम । कुबेर का नाम । पूजा । यज्ञ । प्रेत ।—**अधिप** (**यक्षाधिप**),—**अधिपति** (**यक्षाधिपति**), —**आमलक** (**यक्षामलक**)—(न०) पिंड खजूर । —**इन्द्र** (**यक्षेन्द्र**)–(पुं०) यक्षों के राजा कुबेर ।—**आवास** (**यक्षावास**) –(पुं०) वट का वृक्ष ।—**कर्दम**–(पुं०) एक प्रकार का अङ्गलेप जिसमें कपूर, अगरु, कस्तूरी और कंकोल समान भाग में पड़ते हैं । यह अङ्गलेप यक्षों को परमप्रिय है ।—**ग्रह**–(पुं०) यक्ष अथवा अन्य किसी प्रेतादि का ऊपरी फेरा, प्रेतबाधा । पुराणानुसार एक प्रकार का कल्पित ग्रह । कहते हैं कि जब इस ग्रह की दशा का आक्रमण होता है, तब वह मनुष्य विक्षिप्त हो जाता है ।—**धूनी**—(स्त्री०) द्राक्षा । किशमिश ।—**तरु**–(पुं०) वट वृक्ष ।—**धूप**–(पुं०) गूगल । लोबान ।—**रस**–(पुं०) फूलों के रस से तैयार किया हुआ एक प्रकार का मादक पेय पदार्थ ।—**राज्**–(पुं०) कुबेर का नाम ।—**रात्रि**–(स्त्री०) किसी के मतानुसार कार्त्तिकी अमावस्या और किसी के मतानुसार कार्त्तिकी पूर्णिमा यक्षरात्रि है ।—**वित्त**–(पुं०) वह जिसके पास विपुल धनराशि तो हो, पर वह उसमें से व्यय एक कौड़ी भी न करे ।

यक्षिणी—(स्त्री०) [यक्षः पूजा अस्ति अस्याः, यक्ष+इनि–ङीप्] यक्ष की स्त्री । कुबेर की पत्नी का नाम । दुर्गा की एक अनुचरी का नाम । अप्सरा विशेष जिसका सम्बन्ध मर्त्यलोक-वासियों से कहा जाता है ।

यक्षी—(स्त्री०) [यक्ष+ङीप्] यक्ष की स्त्री ।

यक्ष्म, यक्ष्मन्—(पुं०) [√यक्ष्+मन्] [√यक्ष+मनिन्] क्षय नामक रोग, तपेदिक ।—**ग्रह**–(पुं०) क्षय रोग का आक्रमण । —**ग्रस्त**–(वि०) क्षय का रोगी ।—**घ्नी**–(स्त्री०) अंगूर ।

यक्ष्मिन्—(वि०) [यक्ष्म+इनि] क्षय रोग से पीड़ित ।

√यज्—भ्वा० उभ० सक० यज्ञ करना । बलिदान करना । चढ़ाना, नैवेद्य रखना । पूजन करना । यजति—ते, यक्ष्यति—ते, अयाक्षीत्—अयष्ट ।

यजति—(स्त्री०) [√यज्+अतिच्] यज्ञ ।

यजत्र—(पुं॰) [√यज्+अत्रन्] अग्निहोत्री। यज्ञकर्ता। (न॰) अग्निहोत्र के अग्नि को सुरक्षित रखने की क्रिया।

यजन—(न॰) [√यज्+ल्युट्] यज्ञ करने की क्रिया यज्ञ; 'देवयजनसम्भवे सीते' उत्त॰ ४। यज्ञ करने का स्थान।

यजन्त—(पुं॰) [√यज् + झच्—अन्त] यज्ञकर्ता।

यजमान—(पुं॰) [√यज् + शानच्, मुक् आगम] वह व्यक्ति जो यज्ञ करता हो। दक्षिणा आदि देकर ब्राह्मणों द्वारा यज्ञादि क्रिया कराने वाला व्रती, यष्टा। संरक्षक, आश्रयदाता। अपने घर का बड़ा बूढ़ा।

यजाक—(पुं॰) दाता। उदार मनुष्य।

यजि—(पुं॰) [√यज्+इन्] यज्ञ करने वाला। यज्ञ करने की क्रिया। यज्ञ।

यजुस्—(न॰) [इज्यतेऽनेन, √यज्+उसि] यज्ञीय मंत्र, यजुर्वेद संहिता के वे मंत्र जो यज्ञ के समय पढ़े जायँ (जिन मंत्रों में चरण या अवसान-विषयक कोई नियम न हो वे यजु हैं, फलतः गद्य मंत्र)। यजुर्वेद का नाम।—**वेद (यजुर्वेद)**—(पुं॰) वेदत्रयी में दूसरा वेद। यजुर्वेद की दो मुख्य शाखायें हैं। तैत्तिरीय या कृष्णयजुर्वेद और वाजसनेयि अथवा शुक्ल यजुर्वेद।

यज्ञ—(पुं॰) [इज्यते हविर्दीयतेऽत्र, इज्यन्ते देवता अत्र वा, √यज्+नङ्] याग, मख। पूजन की क्रिया। अग्नि का नाम। विष्णु का नामान्तर।—**अङ्ग (यज्ञाङ्ग)**—(पुं॰) गूलर का पेड़। विष्णु का नामान्तर।—**अरि (यज्ञारि)**—(पुं॰) शिव जी का नाम।—**अशन (यज्ञाशन)**—(पुं॰) देवता।—**आत्मन् (यज्ञात्मन्)**,—**ईश्वर (यज्ञेश्वर)**—(पुं॰) विष्णु भगवान्।—**उपवीत (यज्ञोपवीत)**—(न॰) जनेऊ।—**कर्मन्**—(न॰) यज्ञीय कोई कर्म।—**कीलक**—(पुं॰) वह खंभा जिसमें यज्ञीय पशु बाँधा जाता है।—**कुण्ड**—(न॰) हवनकुण्ड, अग्निकुंड।—**कृत्**—(पुं॰) विष्णु। (वि॰) यज्ञ करने वाला।—**क्रतु**—(पुं॰) संपूर्ण याग। यज्ञीय मुख्य कर्म। विष्णु का नाम।—**घ्न**—(पुं॰) राक्षस जो यज्ञ कार्यों में बाधा दे।—**द्रुह्**—(पुं॰) राक्षस।—**पति**—(पुं॰) विष्णु भगवान्।—**पत्नी**—(स्त्री॰) यज्ञ की स्त्री, दक्षिणा।—**पशु**—(पुं॰) वह पशु जिसका यज्ञ में बलिदान किया जाय। घोड़ा। बकरा।—**पुरुष**,—**फलद**—(पुं॰) श्री विष्णु भगवान्।—**भाग**—(पुं॰) यज्ञ का अंश जो देवताओं को दिया जाता है। देवता।—**भुज्**—(पुं॰) देवता; 'निवोध यज्ञांशभुजाम्' कु॰ ५.१४।—**भूमि**—(स्त्री॰) वह स्थान जहाँ यज्ञ किया जाय।—**भृत्**—(पुं॰) विष्णु का नाम।—**भोक्तृ**—(पुं॰) विष्णु का नाम।—**रस**—(पुं॰), —**रेतस्**—(न॰) सोम।—**वराह**—(पुं॰) भगवान् विष्णु का वराहावतार।—**वल्लि**,—**वल्ली**—(स्त्री॰) सोमवल्ली, सोमलता।—**वाट**—(पुं॰) यज्ञमण्डप का हाता।—**वाहन**—(पुं॰) श्रीविष्णु।—**वृक्ष**—(पुं॰) वटवृक्ष।—**शरण**—(न॰) यज्ञमण्डप।—**शाला**—(स्त्री॰) यज्ञमण्डप।—**शास्त्र**—(न॰) मीमांसा।—**शेष**—(पुं॰) यज्ञ करने के बाद बचा हुआ उपस्कर।—**श्रेष्ठा**—(स्त्री॰) सोमलता।—**सदस्**—(न॰) यज्ञ-कृत्य में भाग लेने वाली जन-मंडली।—**सम्भार**—(पुं॰) यज्ञ की सामग्री।—**संस्तर**—(पुं॰) यज्ञ-भूमि। सफेद कुश।—**सार**—(पुं॰) श्री विष्णु भगवान्।—**सिद्धि**—(स्त्री॰) यज्ञ की समाप्ति।—**सूत्र**—(न॰) यज्ञोपवीत।—**सेन**—(पुं॰) राजा द्रुपद की उपाधि।—**स्थाणु**—(पुं॰) यज्ञस्तम्भ।—**हन्**—(पुं॰) शिव।

यज्ञिक—(पुं॰) [अनुकम्पितो यज्ञदत्तः यज्ञदत्त+ठच्, दत्तस्य लोपः] यज्ञ के प्रसाद स्वरूप

प्राप्त पुत्र । [यज्ञः साध्यत्वेन अस्ति यस्य, यज्ञ+ठन्] पलाश का पेड़ ।

यज्ञिय—(वि०) [यज्ञस्य इदम् यज्ञम् अर्हति वा, यज्ञ+घ] यज्ञ का, यज्ञ सम्बन्धी । यज्ञ-कर्म के योग्य । पवित्र । पूजनीय, अर्चनीय । (पुं०) देवता । द्वापर युग ।—**देश**-(पुं०) वह देश जहाँ यज्ञ करना चाहिए । मनुस्मृति में इस देश की व्याख्या इस प्रकार की गयी है:—"कृष्णसारस्तु चरति मृगो यत्र स्वभावतः । स ज्ञेयो यज्ञियो देशो म्लेच्छदेशः ततः परः ॥—**शाला**-(स्त्री०) यज्ञमण्डप ।

यज्ञीय—(पुं०) [यज्ञस्य इदम् यज्ञे भवो वा, यज्ञ+छ] यज्ञ सम्बन्धी । (पुं०) गूलर का पेड़ ।—**ब्रह्मपादप**-(पुं०) विकङ्कत नामक पेड़ ।

यज्वन्—(वि०) [स्त्री०—**यज्वरी**] [√यज् + क्वनिप्] यज्ञ करने वाला; 'नीवान्वयः पार्थिव एष यज्वा' र० ६.४६ । पूजन करने वाला । (पुं०) वैदिक विधान से यज्ञ करने वाला व्यक्ति । श्री विष्णु भगवान् ।

√यत्—भ्वा० आत्म० अक० प्रयत्न करना, उद्योग करना । उत्कण्ठित होना, लालायित होना। परिश्रम। करना। सतर्क होना । यतते, यतिष्यते, अयतिष्ट ।

यत्—(अव्य) कि । जिसलिए ।

यत—(वि०) [√यम् +क्त, मस्य लोपः] रोका हुआ, काबू में किया हुआ । संयत, मर्यादित । परिमित । (न०) हाथी को पैर की एड़ से चलाने की क्रिया । संयम ।—**आत्मन्** (**यतात्मन्**)-(वि०) जितेन्द्रिय; 'यतात्मने रोचयितुं यतस्व' कु० ३.१६ ।—**आहार** (**यताहार**)-(वि०) मिताहारी ।—**इन्द्रिय** (**यतेन्द्रिय**)-(वि०) इन्द्रियों को अपने वश में रखने वाला, जितेन्द्रिय । पवित्र, धर्मात्मा ।—**चित्त**, —**मनस्**,—**मानस**-(वि०) मन को वश में रखने वाला ।—**मैथुन**-(वि०) मैथुन से घृणा करने वाला और उसकी उपेक्षा करने वाला ।—**वाच्**-(वि०) वाणी को वश में रखने वाला, मौनी ।—**व्रत**-(वि०) व्रत रखने वाला । सङ्कल्प को पूरा करने वाला ।

यतन—(न०) [√यत् + ल्युट्] यत्न करना, कोशिश करना ।

यतम—(वि०) [यद् +डतमच्] (न० में **यतमत्** रूप होगा) बहुतों में से जो ।

यतर—(वि०) [यद्+डतरच्] (न० में **यतरत्** रूप होगा) दो में से जो ।

यतस्—(अव्य०) [यद्+तसिल्] जहाँ से । जिससे । जिस कारण, जिस लिये । क्योंकि, चूँकि । जब से ।

यति—(सर्वनाम, विशेषण) [यद्+डति] जितना, यत्परिमाण । (स्त्री०) [√यम् +क्तिन्] रोक, थाम, नियंत्रण । पथप्रदर्शन । सङ्गीत में स्थायी। पाठच्छेद। छन्द में विराम-स्थान । विधवा । (पुं०) [यतते चेष्टते मोक्षार्थम्, √यत्+इन्] संन्यासी, जिसने अपनी इंद्रियों को अपने वश में कर रखा हो और जो सांसारिक जंजाल से विरक्त हो ।—**भङ्ग**-(पुं०) छंद का वह दोष जिसमें यति निश्चित स्थान पर न हो ।—**सान्तपन**-(न०) पंचगव्य और कुश-जल पीकर पालन किया जाने वाला तीन दिनों (जाबाल के मत से सात दिनों) का एक व्रत ।

यतित—(वि०) [√यत्+क्त] यत्न किया हुआ, जिसके लिये उद्योग किया गया हो ।

यतिन्—(पुं०) [यतम् संयमोऽस्य अस्ति, यत +इनि] यती, संन्यासी ।

यतिनी—(स्त्री०) [यतिन्+ङीप्] विधवा ।

यत्न—(पुं०) [√यत् + नङ्] उद्योग, कोशिश । उपाय, तदबीर । परिश्रम । सावधानी, सतर्कता । कष्ट, कठिनाई । न्याय में रूप आदि २४ गुणों में से एक जिसके तीन प्रकार हैं-प्रवृत्ति, निवृत्ति और जीवनयोनि ।

यत्नवत्—(वि०) [यत्न+मतुप्] यत्न में लगा हुआ। यत्न करने वाला।

यत्र—(अव्य०) [यद्+त्रल्] जहाँ, जिसमें। जिधर। जब।

यत्रत्य—(वि०) [यत्र+त्यप्] जिस स्थान का। जिस स्थान का रहने वाला।

यथा—(अव्य०) [यद्+थाल्] जिस प्रकार, जैसे, ज्यों; 'यथा धावति धावते, उदाहरणार्थ।—**कामिन्**–(वि०) स्वतंत्र, स्वेच्छाचारी।—**काल**–(पुं०) ठीक समय, उचित समय। (अव्य०) ठीक समय पर।—**क्रम**–(अव्य०) तरतीबवार, क्रमशः, क्रमानुसार।—**क्षम**–(अव्य०) यथाशक्ति, अपनी सामर्थ्य भर।—**जात**–(वि०) मूर्खतापूर्ण, बेहूदा, मूढ़।—**ज्ञान**–(अव्य०) जहाँ तक मालूम हो।—**तथ**–(वि०) सत्य, सही। बिल्कुल ठीक। (न०) किसी वस्तु का विस्तृत वर्णन, ब्यौरेवार या विगत वार वर्णन। (अव्य०) ठीक तौर से, सही तौर से। उचित रीति से। ज्यों का त्यों।—**दिक्**, —**दिश**–(अव्य०) हर ओर, सब तरफ।—**निर्दिष्ट**–(वि०) जैसा पहले कहा जा चुका है।—**न्याय**–(अव्य०) न्यायानुसार, ठीक-ठीक।—**पुर**–(अव्य०) जैसा कि पहले, जैसा कि पूर्व अवसरों पर।—**पूर्व**, —**पूर्वक**–(वि०) जैसा पहले था वैसा ही, पहले का-सा।—**भाग**,—**भागशः**–(अव्य०) भाग के अनुसार, हिस्से के मुताबिक।—**योग्य**–(वि०) उपयुक्त, जैसा चाहिये वैसा, यथोचित।—**विधि**–(अव्य०) विधि के अनुसार।—**शक्ति**–(अव्य०) सामर्थ्यानुसार।—**शास्त्र**–(न०) शास्त्रानुसार, शास्त्र के मुताबिक।—**श्रुत**–(वि०) जैसा सुना या जैसा कहा गया। (अव्य०) वेद-शास्त्र के अनुसार।—**संख्य**–(न०) अलङ्कार विशेष —"यथा संख्यं क्रमेणैव क्रमिकाणां समन्वयः॥" —काव्यप्रकाश। (अव्य०) संख्या के अनुसार।—**समय**–(अव्य०) ठीक समय पर। इकरार के मुताबिक। चलन के अनुसार।—**सम्भव**–(अव्य) जहाँ तक हो सके, जितना मुमकिन हो।—**स्थान**–(न०) उपयुक्त स्थान। (अव्य०) ठीक जगह पर।

यथावत्—(अव्य०) [यथा+वति] ज्यों का त्यों, जैसा चाहिये वैसा ही, अच्छी तरह, नियमानुसार।

यद्—(सर्वनाम विशेषण) [√यज्+अदि, डित्] (कर्ता एकवचन पुंल्लिङ्ग यः। स्त्री० या। न० यत् अथवा यद्) जो।

यदा—(अव्य०) [यस्मिन् काले, यद्+दा] जिस समय, जब। जहाँ।

यदि—(अव्य०) [यद्+णिच्+इन्, णिलोप] अगर, जो। बशर्ते कि। कदाचित्।

यदु—(पुं०) [√यज्+उ, पृषो० जस्य दः] देवयानी से उत्पन्न महाराज ययाति का ज्येष्ठ पुत्र और यादवों का पूर्वपुरुष। यदु वंश।—**कुलोद्वह**, —**नन्दन**,—**श्रेष्ठ**–(पुं०) श्रीकृष्ण के नामान्तर।

यदृच्छा—(स्त्री०) [यद् √ऋच्छ्+अ—टाप्] मनमानापन, स्वेच्छाचरण। इतिफाकिया, अचानक।—**अभिज्ञ** (यदृच्छाभिज्ञ)–(पुं०) साक्षी जो घटना के समय अकस्मात् आ पहुँचा हो, अपने मन से (किसी के कहे बिना ही) गवाही देने वाला साक्षी।—**संवाद**–(पुं०) आकस्मिक वार्त्तालाप। स्वतः प्रवृत्त आलाप।

यन्तृ—(पुं०) [√यम्+तृच्] परिचालक, शासनकर्ता। सारथि; 'अथ यन्तारमादिश्य धुर्यान् विश्रामयेति सः'।—रघुवंश।

√यन्त्र्—चु० पर० सक० रोकना, निग्रह करना। यन्त्रयति, यन्त्रयिष्यति। अययन्त्रत्।

यन्त्र—(न०) [√यन्त्र्+अच् वा √यम्+त्र] टेक, थूनी, स्तम्भ। बेड़ी, बन्धन। जर्राही औजार, विशेषकर वह जो गुट्ठल या

भोंपरा हो। किसी कार्य विशेष के लिये बनाई हुई कोई कल या औज़ार। चटखनी। ताला। संयम। दमन। तावीज़। कवच।—**उपल** (**यन्त्रोपल**)–(पु॰) चक्की।—**करण्डिका**–(स्त्री॰) बाजीगरों का पिटारा, जिसके द्वारा वे तरह-तरह के कर्तव्य करके दिखलाते हैं।—**कर्मकृत्**–(पु॰) कारीगर, शिल्पी।—**गृह**–(न॰) तैलशाला। वेधशाला। रसायनगृह। यन्त्रणागृह।—**चेष्टित**–(न॰) जादूगरी का कोई कार्य।—**नाल**–(न॰) वह नल जिसके द्वारा कूपादि से जल निकाला जाय।—**पुत्रक**–(पु॰), —**पुत्रिका**–(स्त्री॰) कल से नाचने वाली पुतली या गुड़िया।—**मातृका**–(स्त्री॰) ६४ कलाओं में से एक जिसमें यन्त्र का बनाना और उसका व्यवहार करना शामिल है।—**मार्ग**–(पु॰) नहर। बंबा।

यन्त्रक—(न॰) [यन्त्र+कन्] पट्टी। खराद, चक्रयन्त्र। (पु॰) [√यन्त्+ण्वुल्] वह जो कलपुर्जों की पूरी-पूरी जानकारी रखता हो। वह शिल्पी जो यंत्रादि के द्वारा वस्तुएँ बनाता हो।

यन्त्रण—(न॰), **यन्त्रणा**–(स्त्री॰) [√यन्त्+ल्युट्] [√यन्त्र+णिच्+युच्] नियंत्रण। दमन। बंधन। बरजोरी, बलात्। कष्ट, पीड़ा; "अलमतिमुपचारयन्त्रणया" माल॰ ४। रक्षण। पट्टी।

यन्त्रणी, **यन्त्रिणी**—(स्त्री॰) [यन्त्रण+ङीप्] [√यन्त्+णिनि+ङीप्] पत्नी की छोटी बहिन, छोटी साली।

यन्त्रित—(वि॰) [√यन्त्र+णिच्+क्त] रोका या बंद किया हुआ। ताले में बंद।

यन्त्रिन्—(वि॰) [यन्त्र+इनि वा √यन्त्+णिनि] नियंत्रण करने, बाँधने वाला। यंत्र-मंत्र करने वाला, तांत्रिक। बाजा बजाने वाला।

√यभ्—भ्वा॰ पर॰ सक॰ मैथुन या भोग करना। यभति, यप्स्यति, अयाप्सीत्।

√यम्—भ्वा॰ पर॰ अक॰ उपरत होना, हटना। यच्छति, यंस्यति, अयंसीत्। चु॰ पर॰ सक॰ दमन करना। नियंत्रण करना। घेरना। यमयति।

यम—(पु॰) [√यम्+घञ् वा अप्] दमन, निग्रह। नियंत्रण। आत्मसंयम। चित्त को धर्म में स्थिर रखने वाले कर्मों का साधन। स्मृतिकारों ने यमों का निरूपण इस प्रकार किया है।—ब्रह्मचर्यं दया क्षान्तिर्दानं सत्यमकल्कता। अहिंसास्तेयमाधुर्ये दमश्चेति यमाः स्मृताः॥—याज्ञवल्क्यः।—अथवा—आनृशंस्यं दया सत्यमहिंसा क्षान्तिरार्जवम्। प्रीतिः प्रसादो माधुर्यं मार्दवं च यमा दश॥ कहीं-कहीं पाँच ही यमों का उल्लेख है।—यथा—अहिंसा सत्यवचनं ब्रह्मचर्यमकल्कता। अस्तेयमिति पञ्चैते यमाख्यानि व्रतानि च। —योग के आठ अंगों में से प्रथम। [योग के आठ अंग ये हैं—यम। नियम। आसन। प्राणायाम। प्रत्याहार। धारणा। ध्यान और समाधि।] मृत्यु के देवता, यमराज। जुड़वाँ संतान, यमज। शनि। विष्णु। वायु। कौआ। दो की संख्या।—**अनुग** (**यमानुग**),—**अनुचर** (**यमानुचर**)–(पु॰) यमकिङ्कर, यमदूत।—**अन्तक** (**यमान्तक**)–(पु॰) शिव।—**किङ्कर**–(पु॰) यमराज के दूत।—**कीट**–(पु॰) केंचुआ।—**कील**–(पु॰) श्री विष्णु भगवान्।—**ज**–(पु॰) जुड़वाँ बच्चे; "भ्रातरौ यमजावावाम्" उत्त॰ ६। दोषयुक्त घोड़ा जिसका एक ओर का अंग हीन और दुर्बल हो और दूसरी ओर का वही अंग ठीक हो। अश्विनीकुमार।—**दण्ड**–(पु॰) यमराज का दंड, कालदंड। मनुष्य के ललाट की एक रेखा।—**दंष्ट्रा**–(स्त्री॰) यम की दाढ़। वैद्यक के अनुसार क्वार, कातिक और अगहन के कुछ

दिन जिनमें रोग और मृत्यु का विशेष भय रहता है।—दूत–(पुं०) यमराज का दूत। काक।—द्वितीया–(स्त्री०) कार्त्तिक शुक्ला द्वितीया जब बहिनें अपने भाइयों को भोजन कराती हैं, भैयादूज भ्रातृद्वितीया।—धानी –(स्त्री०) यमपुरी; 'नरः संसारान्ते विशति यमधानीयवनिकां' भर्तृ० ३.११२।—धार–(पुं०) किरच। कटार।—भगिनी –(स्त्री०) यमुना नदी का नाम।—यातना –(स्त्री०) वह दण्ड जो यमराज द्वारा पापी जीवों को मृत्यु के अनन्तर दिया जाता है। [यह शब्द प्रायः घोर अत्याचार प्रदर्शन करने के लिये प्रयुक्त किया जाता है।]—राज्–(पुं०) यमों का स्वामी, यमराज।—वाहन–(पुं०) भैंसा।—व्रत–(न०) राजा का निष्पक्ष होकर दंड देने का व्रत।—सभा–(स्त्री०) यमराज की कचहरी।—सूर्य–(न०) ऐसा मकान जिसमें दो बड़े कमरे हों। इनमें से एक का मुँह उत्तर और दूसरे का पश्चिम की ओर होता है—स्वसृ–(स्त्री०) यमुना।

यमक—(न०) [यम √कै +क वा यम +कन्] एक प्रकार का शब्दालङ्कार या अनुप्रास जिसमें एक ही शब्द कई बार आता है, पर हर बार उसके अर्थ भिन्न-भिन्न होते हैं। सेना का एक व्यूह। एक वृत्त। (पुं०) संयम। यमज। यम।

यमन—(वि०) [स्त्री०—यमनी] [√यम् +णिच्+ल्यु] दमन करने वाला, निग्रह करने वाला। (पुं०) यमराज। (न०) [√यम् +ल्युट्] निग्रह अथवा दमन करने की क्रिया। समाप्ति। विश्राम। प्रतिबंध, बंधन।

यमनिका—(स्त्री०) [यमन + कन् टाप्, इत्व] यवनिका। नाटक का पर्दा।

यमल—(वि०) [यम √ला +क] यमज, जुड़वाँ। (न०) युग्म, जोड़ा।—अर्जुन (यमलार्जुन)–(पुं०) गोकुल के दो पौराणिक अर्जुनवृक्ष।—च्छद–(पुं०) कचनार।—पत्रक–(पुं०) कनेर। अश्मन्तक।—सू–(स्त्री०) वह गौ जिसके दो बच्चे एक साथ उत्पन्न हुए हों।

यमला—(स्त्री०) [यमल+टाप्] हिचकी का रोग, दुहरी हिचकी। एक प्राचीन नदी का नाम।

यमली—(स्त्री०) [यमल+ङीप्] एक में मिली हुई दो चीजें, जोड़ी। घाँघरा और चोली।

यमवत्—(वि०) [यम + मतुप्, वत्व] संयमी; 'यमवतामवतां च धुरि स्थितः' र० ९.१।

यमसात्—(अव्य०) [यम +साति] यमराज के हाथ में।

यमानी—(स्त्री०) [√यम्+ल्युट् ङीप्, पृषो० साधुः] अजवायन।

यमिन्—(वि०) [यम+इनि] संयम करने वाला, संयमी।

यमी—(स्त्री०) [यम+ङीष्] यम की बहन, यमुना नदी।

यमुना—(स्त्री०) [√यम् +उनन्–टाप्] यम की बहन, यमी। उत्तर भारत की एक प्रसिद्ध नदी। दुर्गा।—भ्रातृ–(पुं०) यमराज।

यमेरुका—(स्त्री०) [यम √ईर् + उक, टाप्] घंटा बजाने का घड़ियाल।

ययाति—(पुं०) [यस्य यायोः इव यातिः गतिः अस्य] एक चंद्रवंशी राजा का नाम जो महाराज नहुष का पुत्र था।

ययी—(पुं०) [√या + ई, द्वित्व] शिव। अश्वमेध के योग्य घोड़ा। घोड़ा। मार्ग।

यर्हि—(अव्य०) [यद्+र्हिल] जब। जब कभी।

यव—(पुं०) [√यु+अप् वा अच्] जवा, जौ। बारह सरसों या एक जवा की तौल का

एक मान। एक नाप जो १/६ या १/८ अंगुल का होता है। सामुद्रिक शास्त्रानुसार जौ के आकार की एक रेखा, जो अँगूठे में होता है। अपने स्थानानुसार यह धन, सन्तान अथवा सौभाग्यदायिनी मानी जाती है।—**क्षार**-(पु॰) जवाखार।—**चतुर्थी** -(स्त्री॰) वैशाख शुक्लपक्ष की चतुर्थी।—**ज**-(पु॰) जवाखार। अजवायन। गेहूँ का पौधा।—**फल** -(पु॰) बाँस। इन्द्रजौ। प्याज। जटामासी। कुटज। पाकड़ का पेड़।—**बिन्दु**-(पु॰) वह हीरा जिसमें बिन्दुसहित यवरेखा हो।—**मध्य** -(न॰) एक चान्द्रायण व्रत। पाँच दिन का एक यज्ञ।—**क्षास** -(पु॰) जवाखार।—**शूक**, —**शूकज**-(पु॰) जवाखार।—**सुरा**- (स्त्री॰) जौ की शराब।

यवक्य—(न॰) [यव+कन् + यत्] जौ बोने लायक खेत।

यवन—(पु॰) [√यु+युच् वा ल्यु] यूनान का निवासी, यूनानी सिकन्दर। गेहूँ। गाजर। तुर्क जाति। तेज घोड़ा। (वि॰) वेग वाला।

यवनानी—(स्त्री॰) [यवन+ङीप्, आनुक्] यवनों की लिपि।

यवनिका—(स्त्री॰) [युनाति आवृणोति अनया, √यु+ल्युट्—ङीप् + कन्—टाप्, ह्रस्व] कनात। नाटक का पर्दा।

यवनी—(स्त्री॰) [√यु+ल्युट्—ङीप्] यवन की या यवन जाति की स्त्री, यूनानी स्त्री। [प्राचीन नाटकों को देखने से जान पड़ता है कि, यवनों की छोकरियाँ राजाओं की परिचर्या किया करती थीं और धनुष तथा तरकसों की देखभाल और रखवाली का काम विशेष रूप से उनको करना पड़ता था। यथा:—(१) "बाणासनहस्ताभिर्यवनीभिः परिवृत इत एवागच्छति प्रियवयस्यः।" —शाकुन्तल।—(२) "प्रविश्य शार्ङ्गहस्ता यवनी।" —शाकुन्तल।—(३) "प्रविश्य चापहस्ता यवनी।" —विक्रमोर्वशी।

यवस—(न॰) [√यु+असच्] घास, तृण; 'यवसेन्धनम्' पं॰ १। भूसा।

यवागू—(स्त्री॰) [√यु+आगूच्] जौ या चावल का वह माँड़ जो सड़ाकर कुछ खट्टा कर दिया गया हो, माँड़ की काँजी।

यवानिका, यवानी—(स्त्री॰) [दुष्टो यवः, यव + ङीष्, आनुक्, पक्षे कन्+टाप् ह्रस्व] अजवायन।

यविष्ठ—(वि॰) [अयम् एषाम् अतिशयेन युवा युवन् + इष्ठन्, यवादेश] अतिशय युवा। सब से छोटा, बहुत छोटा। (पु॰) छोटा भाई। अग्नि। ऋग्वेद के एक मंत्रद्रष्टा ऋषि।

यशस्—(न॰) [अश्नुते व्याप्नोति, √अश् +असुन्, युट्] कीर्ति, सुख्याति। बड़ाई, प्रशंसा। अन्न (वै॰)।—**कर** (**यशस्कर**)-(वि॰) यशःप्रद, कीर्तिजनक।—**काम** (**यशस्काम**)-(वि॰) कीर्तिकामी, नामवरी चाहने का अभिलाषी।—**द** (**यशोद**)-(वि॰) यश देने वाला। (पु॰) पारा, पारद।—**दा** (**यशोदा**)-(स्त्री॰) नन्द गोप की स्त्री का नाम जिसने श्रीकृष्ण का, बाल्यावस्था में, पालन-पोषण किया था। दिलीप की माता—**पटह** (**यशःपटह**)-(पु॰) ढोल डिंडिमा।—**शेष** (**यशःशेष**)-(पु॰) मृत्यु, मौत।

यशस्य—(वि॰) [यशस्+यत्] यश को देने वाला, यशस्कर।

यशस्विन्—(वि॰) [यशस्+विनि] प्रसिद्ध।

यष्टव्य—(वि॰) [√यज् + तव्यत्] यज्ञ के योग्य, यजाह्र्।

यष्टि, यष्टी—(स्त्री॰) [√यज् + ति] [यष्टि + ङीप्] लाठी, छड़ी। डंडा। गदा। खंभा। चमकस, पहा। मुले ?।

डंठल। टहनी। पताका या ध्वजा का बाँस। लड़ी, हार; 'विगृह्य सौहारमहार्यनिश्चयं विलोलयष्टिप्रविलुप्तचन्दनम्, कु० ५.८। बेल, लता। कोई भी वस्तु जो पतली हो।—ग्रह –(पुं०) लाठी रखने वाला, असाबरदार।—निवास –(पुं०) कबूतरों की अड्डी।—प्राण–(वि०) निर्बल, कमजोर।—मधु–(न०) जेठी मधु, मुलेठी।—यन्त्र–(न०) वह धूप-घड़ी जिसमें गड़ी हुई छड़ी की छाया से समय का ज्ञान प्राप्त हो।

यष्टिक—(पुं०) [यष्टि+कन्] तिथरी पक्षी जो टिटहरी की जाति का होता है।

यष्टिका—(स्त्री०) [**यष्टिक**+टाप्] लाठी, छड़ी, डंडा। गले में पहनने का हार। बावली। मुलेठी।

यष्टृ—(पुं०) [√यज् +तृच्] यागकर्ता, यजमान।

√यस्—दि० पर० अक० प्रयत्न करना, उद्योग करना। यस्यति—यसति, यसिष्यति, अयसत्।

√या—अ० पर० सक० अक० जाना, गमन करना। आक्रमण करना, चढ़ाई करना। प्रस्थान करना, गुजर जाना। अदृष्ट हो जाना, अन्तर्धान हो जाना। बीत जाना। प्रचलित रहना। हो जाना, आ पड़ना। किसी (नीची) अवस्था को पहुँच जाना। किसी काम को करने का बीड़ा उठाना। किसी के साथ मैथुन सम्बन्धी सम्बन्ध स्थापित करना। प्रार्थना करना, याचना करना। पता लगाना, ढूँढ़ निकालना। याति, यास्यति, अयासीत्।

याग—(पुं०) [√यज्+घञ्] यज्ञ।

√याच्—भ्वा० उभ० द्विक० माँगना, भिक्षा माँगना। प्रार्थना करना, विनती करना। याचति—ते, याचिष्यति—ते, अयाचीत्—अयाचिष्ट।

याचक—(पुं०) [स्त्री०—**याचकी**] [√याच्+ण्वुल्] भिखारी, मँगता।—"तृणादपि लघुस्तूलस्तूलादपि च याचकः।।"—सुभाषित। प्रार्थी।

याचन—(न०), —**याचना**–(स्त्री०) [√याच्+ल्युट्] [√याच्+णिच्+युच्—टाप्] प्राप्त करने के लिये विनती करने की क्रिया, माँगने की क्रिया। प्रार्थना, विनती।

याचनक—(पुं०) [√याच् +ल्यु+कन्] भिखारी। निवेदक, प्रार्थी।

याचित—(वि०) [√याच्+क्त] माँगा हुआ। प्रार्थित।

याचितक—(न०) [याचित+कन्] वह वस्तु जो याचना करने से प्राप्त हुई हो, मँगनी की चीज।

याचिष्णु—(वि०) [√याच् + इष्णुच्] याचनाशील, माँगने की प्रवृत्ति वाला।

याच्ञा—(स्त्री०) [√याच् + नङ्—टाप्] याचना, माँगना। प्रार्थना, विनती।

याजक—(पुं०) [√यज् + णिच्+ण्वुल्] ऋत्विज्। यज्ञकराने वाला, याज्ञिक। राजा का हाथी। मदमाता हाथी।

याजन—(न०) [यज् + णिच्+ल्युट्] यज्ञ कराना।

याज्ञसेनी—(स्त्री०) [यज्ञसेन+अण्—ङीप्] द्रौपदी का एक नाम।

याज्ञिक—(वि०) [स्त्री०—**याज्ञिकी**] [यज्ञ+ठक्] यज्ञ सम्बन्धी। (पुं०) यज्ञ कराने वाला पुरोहित। ऋत्विज्। खैर। पलाश। पीपल।

याज्य—(वि०) [√यज् +ण्यत्] यजन करने योग्य। यज्ञीय। वह जिसके लिये यज्ञ किया जाय। वह जिसे शास्त्रानुसार यज्ञ करने का अधिकार प्राप्त है। (पुं०) देवता। (न०) याग-लब्ध धनादि, दक्षिणा।

यात—(वि०) [√या+क्त] गया हुआ। प्रस्थान किया हुआ। (न०) गमन, गति। कूच, प्रस्थान। बीता हुआ समय, भूतकाल। **—याम, —यामन्**-(वि०) बासी, रात का रखा हुआ। इस्तेमाल किया हुआ। कच्चा, अनपका; 'यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत्' भग० १७.१०। जीर्ण।

यातन—(न०) [√यत् + णिच्+ल्युट्] प्रतिशोध, बदला। पारितोषिक, इनाम।

यातना—(स्त्री०) [√यत् + णिच्+युच् —टाप्] अत्यन्त कष्ट, तीव्र वेदना। यम द्वारा दिया जाने वाला पापियों को दण्ड।

यातिक—(पुं०) [यात+ठन्—इक] यात्री, मुसाफिर।

यातु—(पुं०) [√या+तुन्] पथिक, बटोही। पवन। समय। राक्षस। (न०) अस्त्र। (स्त्री०) यातना। हिंसा। **—घ्न**—(पुं०) गुग्गल। **—धान**—(पुं०) राक्षस।

यातृ—(स्त्री०) [यतते×न्योऽन्य-भेदाय, √यत् +ऋन्] पति के भाई की पत्नी, जेठानी, या देवरानी।

यात्रा—(स्त्री०) [√या + ष्ट्रन्—टाप्] सफर, एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने की क्रिया। कूच, प्रस्थान। चढ़ाई के लिये सेना का प्रस्थान, चढ़ाई। तीर्थाटन। तीर्थयात्रियों का समुदाय। उत्सव। सड़क। जीविका; 'शरीरयात्रापि च ते न प्रसिध्येदकर्मणः' भग० ३.८। (समय) यापन। संसर्ग। उपाय, साधन। प्रथा, रस्म। वाहन, सवारी।

यात्रिक—(वि०) [स्त्री०—**यात्रिकी**] [यात्रा +ठक्] प्रस्थान करने वाला। यात्रा सम्बन्धी। वह जो जीवन धारण करने के उपयुक्त हो। मामूली। (पुं०) यात्री, पथिक। (न०) कूच, चढ़ाई। यात्रा सम्बन्धी रसद। यात्रा का उद्देश्य।

याथातथ्य—(न०) [यथातथ +ष्यञ्] वास्तविकता, असलियत।

याथार्थ्य—(न०) [यथार्थ+ष्यञ्] यथार्थ होने का भाव। उपयुक्तता। किसी उद्देश्य की सिद्धि।

यादव—(पुं०) [यदोः अपत्यम्, यदु+अण्] यदुवंशी। श्रीकृष्ण।

यादस्—(न०) [यान्ति वेगेन, √या +असुन्, दुगागम] कोई भी (विशाल-वपुधारी) जल-जन्तु। **—पति** (=याद-सांपति), **— नाथ** (**यादसांनाथ**)—(पुं०) समुद्र। वरुण देव का नाम।

यादृक्ष, यादृश, यादृश—(वि०) [स्त्री०—**यादृक्षी, यादृशी, यादृशी**] ([यद्√दृश् +क्स, आत्व] [यद् √दृश् + क्विन्, आत्व] [यद् √दृश + कञ्, आत्व]) जिस प्रकार का, जैसा।

यादृच्छिक—(वि०) [स्त्री०—**यादृच्छिकी**] [यदृच्छा+ठक्] स्वेच्छाचारी, स्वतन्त्र। आकस्मिक, इत्तिफाकिया।

यान—(न०) [√या + ल्युट्] गमन, पादचारण। (घोड़े या हाथी की) सवारी। समुद्र-यात्रा। यात्रा। आक्रमण, चढ़ाई। जलूस। वाहन, रथ। गाड़ी। राजाओं के संधि आदि छः गुणों में से एक। **—पात्र**—(न०) नाव। जहाज। **—भङ्ग**—(पुं०) जहाज के नष्ट होने की क्रिया। **—मुख**—(न०) सवारी का आगे का भाग, जिसमें घोड़े आदि जोते जाते हैं।

यापन—(न०), **—यापना**—(स्त्री०) (√या +णिच्, पुक्+ल्युट्] [√या+णिच्, पुक्+युच्] चलाना, हँका देना। हटाना। मिटाना। छोड़ना। समय व्यतीत करना। दीर्घसूत्रिता। सहायता, सहारा। अभ्यास।

याप्य—(वि०) [√या+णिच्, पुक् +ण्यत्] हटाने, निकाल देने या अस्वीकृत करने योग्य। नीच, तिरस्करणीय। गोपनीय। **—यान**—(न०) डोली, पालकी।

याभ—(पुं०) [√यभ्+घञ्] मैथुन ।

याम—(पुं०) [√या+मन्] तीन घंटे का समय, प्रहर; 'मन्द्रध्वनित्याजितयामतूर्यः' र० ६.५६ । गमन, जाना । गमन-साधन, यान आदि । एक देवगण ।—**घोष**–(पुं०) मुर्गा । घड़ियाली ।—**नाली**–(स्त्री०) समय बताने वाली घड़ी ।—**नेमि**– (पुं०) इन्द्र ।—**यम**–(पुं०) प्रत्येक घंटे के लिये निर्दिष्ट कार्य ।—**वृत्ति**–(स्त्री०) चौकीदारी, पहरेदारी ।

यामल—(न०) [यमल+अण्] जुड़वाँ बच्चे । एक प्रकार का तंत्र-ग्रंथ ।

यामवती—(स्त्री०) [याम+मतुप्–वत्व –ङीप्] रात्रि; 'ताराविताततरला इव यामवत्यः' कि० ८.५६ ।

यामि, यामी–(स्त्री०) [याति कुलात् कुलान्तरम्, √या+मि] [यामि+ङीष्] भगिनी, बहिन । कुलवधू । रात ।

यामिक—(पुं०) [यामे नियुक्तः; याम +ठक्]चौकीदार, पहरेदार जो रात को पहरा दे ।

यामिका, यामिनी—(स्त्री०) [याम+ठक् –टाप्] [याम+इनि –ङीप्] रात ।—**पति**–(पुं०) चन्द्रमा । कपूर ।

यामुन—(वि०) [स्त्री०—**यामुनी**][यमुना +अण्] यमुना नदी सम्बन्धी या यमुना से निकला हुआ या यमुना से उत्पन्न । (न०) सुर्मा विशेष ।—**इष्टक** (**यामुनेष्टक**)– (न०) सीसा । राँगा ।

याम्य—(वि०) [यम +ण्यञ्] यमराज सम्बन्धी या यम जैसा । दक्षिण का । (पुं०) [याम्यां दिक् निवासोऽस्य, याम्या+अच्] अगस्त्य मुनि । शिव । विष्णु । यमदूत । चंदन वृक्ष ।—**अयन** (**याम्यायन**)–(न०) दक्षिणायन ।—**उत्तर** (**याम्योत्तर**)– (वि०) दक्षिण से उत्तर की ओर जाने वाला ।

याम्या—(स्त्री०) [याम्य +टाप्] दक्षिण दिशा । भरणी नक्षत्र । रात ।

यायजूक—(पुं०) [पुनः पुनः यजति, √यज् +यङ् द्वित्वादि+ऊक] इज्यशील, वह पुरुष जो प्रायः यज्ञ किया करता हो ।

यायावर—(पुं०) [पुनः पुनः अतिशयेन वा याति देशात् देशान्तरं गच्छति, √या+यङ् द्वित्वादि+वरच्] खानाबदोश । वह जिसका कोई नियत स्थान न हो । एक स्थान पर न रहने वाला साधु । अश्वमेध का घोड़ा । ब्राह्मण । जरत्कारु मुनि ।

याव—(पुं०) [√यु+अच् +अण्] महावर । लाख । जौ का सत्तू । (वि०) जौ से बनाया हुआ, जौ का ।

यावक—(पुं०) [याव + कन्] बोरो धान । कुलथी । जौ की काँजी । उड़द । जौ । जौ का सत्तू । साठी धान । लाख । महावर ।

यावत्—(वि०) [स्त्री०—**यावती**] [यद् +वतुप्, आत्व] जितना । (अव्य०) [यद् +डावतु] सब, कुल । अवधि, मर्यादा । मान, प्रमाण । तावदाव । प्रशंसा । अधिकार । परिमाण । पक्षान्तर ।

यावन—(वि०) [स्त्री०—**यावनी**] [यवन +अण्] यवन सम्बन्धी । (पुं०) लोबान ।

यावस—(पुं०) [यवस + अण्] घास का ढेर । डंठल आदि का पूला ।

याष्टीक—(वि०) [स्त्री०—**याष्टीकी**] [यष्टि + क] लट्ठधर, लठैत । (पुं०) यष्टिः प्रहरणम् अस्य, यष्टि + ईकक्] योद्धा जो लाठी से लड़े ।

यास्क—(पुं०) [यस्कस्य गोत्रापत्यम्, यस्क +अण्] यस्क के वंशज । निरुक्त के रचयिता का नाम ।

√यु—अ० पर० सक० मिलाना, जोड़ना । गड्डमड्ड करना, संमिश्रण करना । अलग या जुदा करना । यौति, यविष्यति, अयावीत् ।

क्र्या० उभ० सक० बाँधना। युनाति—युनीते, यौष्यति—ते, प्रयौषीत्—प्रयोष्ट।

युक्त—(वि०) [√युज्+क्त] जुड़ा हुआ, मिला हुआ। बँधा हुआ। जुए में जुता हुआ। सुव्यवस्थित किया हुआ। सहित, संयुक्त। सम्पन्न, परिपूर्ण। लीन, एकाग्र। क्रियाशील। निपुण। अनुभवी। उपयुक्त, उचित। प्रव-सिष्ट। फैला हुआ। (पु०) वह योगी जिसने योग का अभ्यास कर लिया हो। रैवत मनु के एक पुत्र का नाम। (न०) एक मान (चार हाथ लम्बा)।—**अर्थ** (**युक्तार्थ**)—(वि०) —ज्ञानी। समझदार।—**कर्मन्**—(वि०) वह जिसने कोई कर्त्तव्य कर्म सौंपा गया हो।—**दण्ड**—(वि०) उचित दंड देने वाला।—**मनस्**—(वि०) जो किसी काम में मन लगाये हो।

युक्ति—(स्त्री०) [युज् + क्तिन्] मेल, मिलाप। प्रयोग, व्यवहार, इस्तेमाल। नायना। चलन, रस्म। उपाय, ढंग। उप-युक्तता। चातुरी। उपपत्ति, हेतु। परिणाम, नतीजा। आधार। रचना। सम्भावना। योग। अलङ्कार विशेष जिसमें अपने कर्म को छिपाने के लिये दूसरे को किसी क्रिया या युक्ति द्वारा वञ्चित करने का वर्णन किया जाता है। मीजान, जोड़। धातु की मिलावट।—**कर**—(वि०) जो तर्क के अनुसार ठीक हो। विचारपूर्ण।—**युक्त**—(वि०) युक्तिसङ्गत, ठीक।

युग-(न०) [√युज्+घञ्, कुत्वं न _णः] जुआ। जोड़ा; 'कुचयोर्युगेन तरसाकलिताम्' शि० ९.७२। पुराणानुसार काल का एक दीर्घ परिणाम—सत्य, त्रेता, द्वापर, कलियुग। पासे के खेल की वे दो गोटियाँ जो साथ ही एक घर में आ जावें। बृहस्पति का एक राशि में स्थित रहने का पंचवर्षीय काल। समय, काल। पुश्त, पुस्त, पीढ़ी। चार की संख्या का सङ्केत।—**अन्त** (**युगान्त**)—(पु०) युग का अन्त, प्रलय; 'युगान्तकाल-प्रतिसंहृतात्मनो जगन्ति यस्यां सविकाश-मासत' शि० १.२३।—**अवधि** (**युगावधि**)—(पु०) प्रलय।—**आद्या** (**युगाद्या**)—(स्त्री०) युगारम्भ की तिथि (वैशाख-शुक्ला तृतीया सत्ययुग, कार्त्तिक-शुक्ला नवमी त्रेतायुग, भाद्रकृष्णा त्रयोदशी द्वापर युग और पूस अमावस्या कलियुग के प्रारम्भ की तिथि है)।—**कीलक**—(पु०) वह खूँटी जो बम और जुए के मिले छिद्रों में डाली जाती है, सैल।—**बाहु**—(वि०) लंबी भुजा वाला।

युगन्धर—(पु०, न०) [युग√धृ + खच्, मुम्] गाड़ी के अगले भाग की वह लम्बी निकली हुई लकड़ी जिसमें जुआ अटकाया जाता है।

युगपद्—(अव्य०) [युगमिव पद्यते, युग √पद्+क्विप्] समसामयिकता से, एक साथ, एक ही समय में।

युगल—(न०) [√युज्+कलच्] जोड़ा, युग्म।

युगलक—(न०) [युगल+कन्] जोड़ा। श्लोकों या पद्यों का वह जोड़ा जिसका एक साथ अन्वय हो।

युग्म—(न०) [√युज्+मक्] जोड़ा। सङ्गम, सम्मिलन। (दो नदियों का) समागम। यमज सन्तान। जुलक या युगलक। मिथुन राशि। अन्योन्याश्रित दो वस्तुएँ या बातें, द्वन्द्व। (वि०) दो की संख्या वाले (व्यक्ति, पदार्थ आदि)।

युग्य—(वि०) [युग+यत् वा √युज्+क्यप्] जोते जाने योग्य। जुता हुआ, चारजामा या साज कसा हुआ। खींचने योग्य। (पु०) रथ या सवारी में जोतने योग्य घोड़ा या कोई जानवर।

√**युच्छ**—भ्वा० पर० अक० प्रमाद करना, गलती करना। युच्छति, युच्छिष्यति, अयुच्छीत्।

√युज्—रु० उभ० सक० जोड़ना, मिलाना। लगाना, संयुक्त करना। जुए में जोतना। सम्पन्न करना। इस्तेमाल करना, प्रयोग करना। लगाना, नियुक्त करना। रखना, स्थापित करना। सुव्यवस्था से रखना। तैयार करना, योग्य बनाना। देना, प्रदान करना। युनक्ति—युङ्क्ते, योक्ष्यति—ते, अयुजत्—अयौक्षीत्—अयुक्त। दि० आत्म० अक० लगाना (जैसे मन को किसी वस्तु पर), एकाग्र चित्त करना। युज्यते, योक्ष्यते, अयुक्त।

युज्—(वि०) [√युज्+क्विन्] जुता हुआ। सम, विषम नहीं। संयोजक, जोड़ने वाला। (पुं०) योगी। (पुं०, न०) जोड़ा।

युञ्जान—(पुं०) [√युज्+शानच्] हाँकने वाला, सारथी। योगाभ्यासी ब्राह्मण जो ब्रह्म में एकीभूत होने का अभिलाषी हो।

√युत्—भ्वा० आत्म० अक० चमकना। योतते, योतिष्यते, अयोतिष्ट।

युत—(वि०) [√यु+क्त] संयुक्त, मिला हुआ, जुड़ा हुआ। सम्पन्न, सहित। (न०) चार हाथ की एक नाप।

युतक—(न०) [युत+कन्] जोड़ा। मेल, मैत्री। विवाहोपलक्ष्य का उपहार या भेंट। स्त्रियों की एक प्रकार की पोशाक। स्त्रियों के पहिनने के कपड़े की गोट या संजाफ। सन्देह। सूप के दोनों ओर के उठे हुए किनारे।

युति—(स्त्री०) [√यु+क्तिन्] सम्मिलन, सङ्गम। अधिकार-प्राप्ति। जोड़, मीज़ान। गाड़ी में घोड़े आदि को बाँधने की रस्सी। नाधा जिससे जूआ और हरस को एक में जोड़ते हैं। ग्रहों का योग।

युद्ध—(न०) [√युध्+क्त] लड़ाई, संग्राम, रण।—**अवसान** (**युद्धावसान**)—(न०) युद्ध की समाप्ति। सुलह, सन्धि।—**आचार्य** (**युद्धाचार्य**)—(पुं०) युद्धविद्या की शिक्षा देने वाला व्यक्ति।—**उन्मत्त** (**युद्धोन्मत्त**)—(वि०) युद्ध के लिये पागल। लड़ाका। (पुं०) एक राक्षस, महोदर।—**कारिन्**—(वि०) लड़ने वाला, योद्धा।—**भू**,—**भूमि**—(स्त्री०) रणक्षेत्र।—**मार्ग**—(पुं०) युद्ध के दाँव-पेंच।—**रङ्ग**—(पुं०) रणक्षेत्र।—**वीर**—(पुं०) युद्ध करने वाला। पराक्रमी व्यक्ति। वीररस का एक भेद।—**सार**—(पुं०) घोड़ा।

√युध्—दि० आत्म० सक० लड़ना, युद्ध करना। युध्यते, योत्स्यते, अयुद्ध।

युध्—(स्त्री०) [√युध्+क्विप्] युद्ध, लड़ाई; निपातयिष्यन्युधि यातुधानान् भट्टि २.२१।

युधान—(पुं०) [√युध्+आनच्, स च कित्] सैनिक। क्षत्रिय जाति का मनुष्य। शत्रु।

युधिष्ठिर—(पुं०) [युधि स्थिरः, अलुक् स०, षत्व] पांडु के सबसे बड़े पुत्र, धर्मराज।

√युप्—दि० पर० सक० मोहित करना। मिटा देना, खरोंच डालना। कष्ट देना, पीड़ित करना। युप्यति। योपिष्यति, अयुपत्।

युयु—(पुं०)[√या+यङ्+डु] घोड़ा।

युयुत्सा—(स्त्री०) [√युध्+सन्+अ—टाप्] लड़ने की अभिलाषा, भिड़न्त करने की इच्छा।

युयुत्सु—(वि०) [युध्+सन्+उ] लड़ने का अभिलाषी; 'धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः' भग० १.१।

युवति, युवती—(स्त्री०) [युवन्+ति] [√यु+शतृ—ङीप् वा युवति+ङीप्] जवान औरत। हलदी। प्रियंगु। सोनजुही।

युवन्—(वि०) [स्त्री०—**युवति**, **युवती**, **यूनी**] [√यु+कनिन्] जवान, तरुण। स्वस्थ, तंदुरुस्त। उत्तम, उत्कृष्ट। (पुं०) [कर्ता—**युवा**, **युवानौ**, **युवानः**] जवान आदमी। छोटा भाई (जिसका बड़ा भाई जीवित हो। जीवति तु वंश्ये युवा)।—
—**खलति**—(वि०) [स्त्री०—**खलति**,

जरती] जवानी में नंगा ।—जरत्-(वि०) [स्त्री०—जरती] वह जो जवानी की अवस्था में बुड्ढा देख पड़े । —राज्, —राज-(पु०) राजा का वह राजकुमार जो राजसिंहासन के लिये मनोनीत कर लिया गया हो, राजा का उत्तराधिकारी ।

√युध्—भ्वा० पर० सक० भजना, सेवा करना । योधति, योधिष्यति, अयोधीत् ।

युष्मद्—(सर्वनाम) [√युष्+मदिक्] (इसके तीनों लिंगों में समान रूप होते हैं) तू । तुम ।

युष्मादृश्, युष्मादृश—(वि०) [युष्मद् √दृश्+क्विन्, आत्व] [युष्मद् √दृश् +कञ्, आत्व] तुम जैसा, तुम्हारे जैसा ।

यूक—(पु०) [√यु+कन्, दीर्घ] जूं, एक प्रकार का कीड़ा, लीख ।

यूका—(स्त्री०) [यूक+टाप्] जो सिर के बालों में होती है । खटमल । गूलर । वनवासन । एक परिमाण, यव का अष्टमांश, लीखा से अठगुना ।

यूति—(स्त्री०) [√यु+क्तिन्, नि० दीर्घ] मेल, संमिलन । मिलावट ।

यूथ—(न०) [√यु+थक्, नि० दीर्घ] झुंड, गिरोह, हेड़, समूह, दल, टोला ।—नाथ,—प,—पति-(पु०) किसी टोली या दल का नायक, अगुआ ।

यूथिका, यूथी—(स्त्री०) [यूथं पुष्पवृन्दम् अस्ति अस्याः, यूथ+ठन्—टाप्] [यूथ +अच्—ङीप्] जुही नाम का फूल और उसका पौधा; 'यूथिकाशबलकेशी' विक्र० ४.२४ ।

यूप—(पु०) [√यु+प, दीर्घ] यज्ञमण्डप का वह खंभा जिसमें बलि का पशु बाँधा जाता है । यह खंभा या तो बाँस का होता है अथवा खदिर की लकड़ी का । वह स्तम्भ जो किसी विजय अथवा कीर्ति के लिये बनाकर खड़ा किया गया हो ।

√यूष्—भ्वा० पर० सक० वध करना । यूषति, यूषिष्यति, अयूषीत् ।

यूष, यूषन—(न० पु०) [√यूष्+क] [√यूष् √कनिन्] रसा, शोरबा, झोर, जूस, पेंह ।

योक्त्र—(न०) [√युज् + ष्ट्रन्] रस्सा, रस्सी । हल के जूए की रस्सी । गाड़ी का जोत ।

योग—(पु०) [√युज् + घञ्] दो अथवा अधिक पदार्थों का एक में मिलना । मेल, मिलाप । संसर्ग, सम्बन्ध । प्रयोग, उपयोग, इस्तेमाल । ढंग, रीति, तरीका । परिणाम, नतीजा । जूआ । सवारी, वाहन । कवच । योग्यता, उपयुक्तता । पेशा, धंधा । चालबाजी, दगाबाजी । उपाय । उत्साह । उद्योग । इलाज, चिकित्सा । टोना, तांत्रिक कर्म । ऐन्द्रजालिक विद्या । प्राप्ति । धन, सम्पत्ति । नियम । आदेश । निर्भरता, एक शब्द की दूसरे शब्द पर निर्भरता । शब्दव्युत्पत्ति । शब्दव्युत्पत्ति के अनुसार शब्द का अर्थ । योगदर्शनानुसार चित्त की चञ्चलता का निग्रह, चित्तवृत्ति-निरोध । पतञ्जलि का योगदर्शन । (गणित में) जोड़, मीजान । ज्योतिष में काल-विशेष के सूचक योग जो २७ हैं—१ विष्कुंभ, २ प्रीति, ३ आयुष्मान्, ४ सौभाग्य, ५ शोभन । ६ अतिगंड, ७ सुकर्मा, ८ धृति, ९ शूल, १० गंड, ११ वृद्धि, १२ ध्रुव, १३ व्याघात, १४ हर्षण, १५ वज्र, १६ अष्टक, १७ व्यतीपात, १८ वरीयान्, १९ परिघ, २० शिव, २१ सिद्धि, २२ साध्य, २३ शुभ, २४ शुक्ल, २५ ब्रह्म, २६ ऐन्द्र, २७ वैधृति । जासूस, भेदिया । विश्वासघात ।—अङ्ग (योगाङ्ग)-(न०) योग के अंग, साधन (ये आठ हैं—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि) ।—आचार (योगाचार)-(पु०) योगाभ्यास । बौद्ध विशेष ।

इस सम्प्रदाय के बौद्धों का मत है कि (बाह्य) पदार्थ जो देख पड़ते हैं, शून्य हैं। वे केवल आन्तरिक ज्ञान से जनाते हैं, बाहर उनमें कुछ नहीं है।—**आचार्य** (**योगाचार्य**)–(पुं॰) शिक्षक जो इन्द्रजाल विद्या सिखाता हो। योगाभ्यास की शिक्षा देने वाला अध्यापक।—**आधमन** (**योगाधमन**) –(न॰) जाली बन्धक।—**आरूढ़** (**योगारूढ़**)– वह योगी जिसने अपनी चित्त की वृत्तियों का निरोध कर लिया हो।—**आसन** (**योगासन**)–(न॰) योग-साधन के आसन अर्थात् बैठने का ढंग विशेष।—**इन्द्र** (**योगेन्द्र**),—**ईश** (**योगेश**),—**ईश्वर** (**योगेश्वर**)–(पुं॰) बहुत बड़ा योगी। वह जिसने अलौकिक शक्ति सम्पादन कर ली हो। ऐन्द्रजालिक। देवता विशेष। शिव जी। याज्ञवल्क्य।—**इष्ट** (**योगेष्ट**)–(न॰) राँगा।—**क्षेम**–(पुं॰) नया पदार्थ प्राप्त करना और प्राप्त पदार्थ की रक्षा; 'तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्' भग॰ ९.२२। कुशल-क्षेम, राजी-खुशी। सुरक्षा। वह वस्तु जो उत्तराधिकारियों में न बँटे। लाभ, मुनाफा।—**चक्षुस्**–(पुं॰) ब्राह्मण।—**ज**–(वि॰) योग से उत्पन्न। (पुं॰) योग-साधन की एक अवस्था। अगर लकड़ी।—**तारका**,—**तारा**–(स्त्री॰) किसी नक्षत्र का प्रधान तारा।—**दान**–(न॰) योगदीक्षा। हाथ बँटाना। कपटदान।—**धारणा**–(स्त्री॰) ध्यान की एकाग्र स्थिति।—**नाथ**– (पुं॰) शिव जी का नामान्तर।—**निद्रा**–(स्त्री॰) सोने और जागने के बीच की दशा; 'योगनिद्रा गतस्य मे' पं॰ १। युगान्त में होने वाली विष्णु की निद्रा।—**पट्ट**–(न॰) प्राचीनकालीन एक पहनावा जो पीठ पर से जाकर कमर में बाँधा जाता था और जिससे घुटनों तक का अंग ढका रहता था।—**पति** –(पुं॰) विष्णु का नाम।—**पदक** –(न॰) पूजन आदि के समय पहनने का चार अंगुल चौड़ा एक प्रकार का उत्तरीय वस्त्र जो बाघ, हिरन के चमड़े या सूत का होता था।—**बल**–(न॰) वह शक्ति जो योग की साधना से प्राप्त होती है, तपोबल। ऐन्द्रजालिक शक्ति।—**माया**–(स्त्री॰) योग की अलौकिक शक्ति। भगवान् की सृजनशक्ति। दुर्गा का नाम।—**यात्रा**–(स्त्री॰) योग की यात्रा, वह यात्रा जिसमें परमात्मा से योग हो। यात्रा के अनुकूल योग।—**रङ्ग**–(पुं॰) नारंगी।—**रूढ़** –(वि॰) दो शब्दों के योग से बनने वाला (वह शब्द जो अपना सामान्य अर्थ छोड़ कर कोई विशेष अर्थ बतलावे)।—**रोचना**–(स्त्री॰) इन्द्रजाल करने वालों का एक प्रकार का लेप।—**वर्तिका**–(स्त्री॰) जादू की बत्ती या दीपक।—**वाहिन्**–(पुं॰, न॰) भिन्न गुणों की दो या कई औषधियों को एक में मिलाने योग्य करने वाला औषधि या द्रव्य।—**वाही**–(स्त्री॰) सज्जी, खार, जवाखार। शहद, मधु। पारा।—**विक्रय**–(पुं॰) जाली परोक्त या बिक्री।—**विद्**–(वि॰) योग को जानने वाला। (पुं॰) शिव जी। योगी। दर्शन का अनुयायी। बाजीगर, जादूगर। दवाइयों को बनाने वाला।—**शास्त्र** –(न॰) पतञ्जलि ऋषि का बनाया हुआ योग-साधन पर एक ग्रन्थ।—**सार**–(पुं॰) सर्वव्याधिहर औषधि।

योगिन्—(वि॰) [योग+इनि वा √युज्+घिनुण्] जुड़ा हुआ, संयुक्त। वह जिसमें ऐन्द्रजालिक शक्ति हो। (पुं॰) अलौकिक शक्ति-सम्पन्न पुरुष। सिद्ध पुरुष। शिव। बाजीगर। योगदर्शन का अनुयायी।

योगिनी—(स्त्री॰) [योगिन् + ङीप्] योगाभ्यासिनी। बाजीगरिन। रणपिशाची। दुर्गा की सहचरी जिनकी संख्या आठ है।

आषाढ़-कृष्ण एकादशी । विशेष तिथि में विशेष दिशा में अवस्थित योगिनी ।

योग्य—(वि०) [योगाय प्रभवति, योग +यत्] प्रवीण, होशियार । उपयुक्त, ठीक, वाजिब । उपयोगी, कामलायक, मुफीद । ज्ञान, गुण, शक्ति, विद्या आदि से युक्त, श्रेष्ठ । दर्शनीय । आदरणीय । (न०) सवारी, गाड़ी । चन्दन । चपाती । दूध । पुष्य नक्षत्र । ऋद्धि ओषधि ।

योग्या—(स्त्री०) [योग्य+टाप्] अभ्यास । कवायद । शस्त्रक्रिया का अभ्यास । युवती ।

योग्यता—(स्त्री०) [योग्य + तल्—टाप्] क्षमता, लायकी, लियाकत, विद्वत्ता । तात्पर्य-बोध के लिये वाक्य के तीन गुणों में से एक, शब्दों के अर्थ-सबंध की सङ्गति या सम्भवनीयता ।

योजन—(न०) [√युज्+णिच् + ल्युट्] एक में मिलाने की क्रिया । जुए में जोतने की क्रिया । प्रयोग । नियुक्ति । व्यवस्था । शब्दान्वय । दूरी नापने का प्राचीन कालीन माप विशेष जो चार कोस या आठ मील का होता है । उत्तेजित करने या भड़काने की क्रिया । मन को एकाग्र करने की क्रिया ।—**गन्धा**—(स्त्री०) व्यास-माता सत्यवती का नामान्तर । सीता । कस्तूरी ।

योजना—(स्त्री०) [√युज् + णिच्+युच् —टाप्] किसी काम में लगाने की क्रिया । जोड़, मिलान । प्रयोग, इस्तेमाल । स्थिरता । घटना । रचना । व्यवस्था, आयोजन । व्याकरणसिद्ध अन्वय ।

योध—(पुं०) [√युध् + अच्] योद्धा, सिपाही; 'महास्मदीयैरपि योधमुख्यैः' महा० । [√युध्+घञ्] लड़ाई, संग्राम ।—**आगार** (**योधागार**)–(पुं०, न०) सिपाहियों के रहने का मकान, बारक ।—**धर्म**–(पुं०) योद्धाओं के नियम या आईन । —**संराव**–(पुं०) सिपाहियों या लड़ने वालों की पारस्परिक ललकार ।

योधन—(न०) [√युध् +ल्युट्] युद्ध, लड़ाई, रण, समर ।

योधिन्—(पुं०) [√युध् + णिनि] योद्धा, लड़ाका ।

योनि—(पुं, स्त्री०) [यौति संयोजयति, √यु+नि] स्त्रियों की जननेन्द्रिय, भग । गर्भाशय । कोई भी उद्भव-स्थान, उपादान, कारण । खान । आश्रयस्थान, आधार । घर । वंश । जाति । उत्पत्ति । जल । योनि ८४ लाख है– जलचर ९ लाख, मनुष्य ४ लाख, स्थावर २७ लाख, कृमि ११ लाख, पक्षी १० लाख, चौपाये २३ लाख,=८४ लाख ।—**ज**– (वि०) गर्भाशय से उत्पन्न होने वाला, योनि से उत्पन्न —**देवता**– (स्त्री०) पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र । —**भ्रंश**–(पुं०) योनि-रोग विशेष, जिसमें गर्भाशय अपने स्थान से कुछ हट जाता है । —**मुद्रा**—(स्त्री०) एक मुद्रा जिसमें पूजा के समय उंगलियों से योनि का-सा आकार बनाया जाता है ।—**रञ्जन**– (न०) रजस्वला धर्म । —**लिङ्ग** –(न०) भगाङ्कुर, भगलिङ्ग ।– **सङ्कर**–(पुं०) वर्णसंकर, वह जिसके पिता और माता दोनों भिन्न-भिन्न जातियों के हों ।

योपन—(न०) [√युप्+ल्युट्] मिटा देने या क्षीण डालने की क्रिया । कोई वस्तु जिससे मिटाया जाय । परेशानी, घबड़ाहट, विकलता । अत्याचार, पीड़न ।

योषा, योषित्, योषिता—(स्त्री०) [यौति मिश्रीभवति, √यु+स– टाप्] [योषति पुमांसम् √युष्+इति] [योषित् + टाप्] स्त्री । युवती स्त्री; 'गच्छन्तीनां रमण-वसतिं योषितां तत्र नक्तं' मे० ३७ ।

यौक्तिक—(वि०) [स्त्री०—**यौक्तिकी**] [युक्ति+ठक्] उपयुक्त, योग्य । युक्तियुक्त ।

परिणाम निकालने योग्य। साधारण, मामूली, रीति-रस्म के अनुसार। (पुं०) राजा का विनोद या क्रीड़ा का साथी, नर्मसखा।

यौग—(पुं०) [योग+अण्] योग दर्शन को मानने वाला।

यौगन्धरायण—(पुं०) [युगन्धर + फक्] युगंधर गोत्र का व्यक्ति। उदयन का एक मंत्री।

यौगपद्य—(न०) [युगपद्+ष्यञ्] एक काल में होने का भाव, समकालीनता।

यौगिक—(वि०) [स्त्री०—**यौगिकी**] [योग+ठञ्]उपयोगी,कामलायक। मामूली, साधारण। शब्द-व्युत्पत्ति के अनुकूल। योगसम्बन्धी प्रीतिकारक, दुःखहर।

यौतक—(न०) [स्त्री०—**यौतिकी**] [युतक+अण्]वह सम्पत्ति जिस पर किसी एक ही व्यक्ति का एकमात्र अधिकार हो।—"विभागभावना ज्ञेया गृहक्षेत्रैश्च यौतकैः।"—याज्ञवल्क्य। (न०) निजी सम्पत्ति, खास अपनी सम्पत्ति। दाइजा, दहेज, वह सम्पत्ति जो स्त्री को विवाह के समय मिलती है।

यौतव—(न०) [√यु+तु, योतु +अण्] माप। नाप।

यौतुक—(न०) [यौतुः योगकालः तत्र लब्धम्, योतु+अण्] विवाहकाल का मिला हुआ धन, दहेज।

यौध—(वि०) [स्त्री०—**यौधी**] [योध+अण्] लड़ाकू, लड़ने वाला।

यौधेय—(पुं०) [योध+ढञ्] योद्धा। युधिष्ठिर का पुत्र। एक प्राचीन देश।

यौन—(वि०) [स्त्री०—**यौनी**] [योनेः इदम्, योनि+अण्] योनि सम्बन्धी। (न०) विवाह, वैवाहिक सम्बन्ध।

यौवत—(न०) [युवतीनां समूहः युवति+अण्] युवती स्त्रियों की टोली। युवती स्त्री की खूबी (सौन्दर्य आदि)। लास्य नृत्य का एक भेद जिसमें बहुत-सी युवतियाँ एक साथ मिलकर नाचती हैं।

यौवतेय—(पुं०) [युवत्याः अपत्यम् पुमान्, युवती+ढक्] युवती का पुत्र।

यौवन—(न०) [यूनो भावः, युवन्+अण्] बाल्यावस्था के बाद की अवस्था, जवानी।—**आरम्भ (यौवनारम्भ)**–(पुं०) जवानी का उभाड़।—**कण्टक**–(पुं०, न०) मुहाँसा।—**दर्प**–(पुं०) जवानी का अभिमान। अविवेक।—**लक्षण**–(न०) जवानी का चिह्न। मनोहरता, सौन्दर्य। (स्त्रियों के) कुच।

यौवनक—(न०) [यौवन+कन्] जवानी।

यौवनाश्व—(पुं०) [युवनाश्व +अण्] युवनाश्व के पुत्र का नाम, अर्थात् राजा मान्धाता का नाम।

यौवराज्य—(न०) [युवराज+ष्यञ्] युवराज होने का भाव। पिता के जीते जी बेटे को राजगद्दी मिलना।

यौष्माक, यौष्माकीन—(वि०) [स्त्री०—**यौष्माकी**] [युष्मद्+अण्, युष्माक आदेश,] [युष्मद्+खञ्, युष्माक आदेश] तुम्हारा, त्वदीय।

र

र—संस्कृत अथवा नागरी वर्णमाला का सत्ताइसवाँ व्यञ्जन, जिसका उच्चारण जीभ के अगले भाग को मूर्द्धा के साथ थोड़ा-सा स्पर्श कराने से हुआ करता है। यह ऊष्म और स्पर्श वर्णों के बीच का वर्ण है। इसका उच्चारण स्वर और व्यञ्जन का मध्यवर्ती है। अतएव यह अन्तःस्थ कहलाता है। इसके उच्चारण में संवार, नाद और घोष नाम के प्रयत्न हुआ करते हैं। (पुं०) [√रा+ड] अग्नि। गर्मी, ताप। प्रेम। वेग, रफ्तार। सोना। वर्ण। शब्द। रगण जिसमें आदि और अंत गुरु तथा मध्य में लघु होता है। (वि०) तीक्ष्ण।—**गण**–(पुं०) तीन वर्णों

का शब्द जिसमें पहला, तीसरा गुरु और दूसरा लघु हो । देवता । अग्नि ।

√रंह्—भ्वा० पर० सक० तेजी से या वेग से जाना या चलना । रंहति, रंहिष्यति, अरंहीत् ।

रंहति—(स्त्री०) [√रंह् + क्तिप्] वेग, रफ्तार । उत्सुकता । प्रचण्डता ।

रंहस्—(न०) [√रंह् +असुन्] वेग, तेजी; 'न पादपोन्मूलनशक्तिरंहः' र० २.३४ । शीघ्रता ।

रक्त—(वि०) [√रञ्ज्+क्त] रँगा हुआ, रंगीन । लाल । अनुरक्त, अनुरागवान् । प्यारा, प्रिय, माशूक । मनोहर-सुन्दर । क्रीड़ा- प्रिय, खिलाड़ी । (न०) खून, लहू, शोणित । ताँबा । कुंकुम । सिंदूर । इंगुर । पुराना आँवला । लाल कमल । लाल चंदन । (पुं०) लाल रंग । कुसुंभ । गुलदुपहरिया, बंधूक । लाल सहिंजन ।—**अक्ष** (**रक्ताक्ष**)-(वि०) लाल नेत्रों वाला । भयानक । (पुं०) भैंसा । कबूतर ।—**अङ्कु** (**रक्ताङ्कु**)-(पुं०) प्रवाल, मूँगा ।—**अङ्ग** (**रक्ताङ्ग**) -(न०) खटमल, खटकीरा । मङ्गलग्रह । सूर्य या चन्द्रमण्डल ।—**अभिमन्थ** (**रक्ताभिमन्थ**) -(पुं०) आँखों की सूजन ।—**अम्बर** (**रक्ताम्बर**) -(न०) लाल रंग का वस्त्र । (पुं०) गेरुआ-वस्त्रधारी संन्यासी या परिव्राजक ।—**अर्बुद** (**रक्तार्बुद**)-(पुं०) रोग विशेष जिसमें पकने और बहने वाली गाँठें शरीर में निकल आती हैं ।—**अशोक** (**रक्ताशोक**)- (पुं०) लाल फूलों वाला अशोक वृक्ष ।—**आधार** (**रक्ताधार**)-(पुं०) चमड़ा ।—**आभ** (**रक्ताभ**) -(वि०) लाल आभा वाला ।—**आशय** (**रक्ताशय**)-(पुं०) शरीर के सात आशयों में से चौथा जिसमें रक्त का रहना माना गया है ।—**उत्पल** (**रक्तोत्पल**) -(न०) लाल कमल ।—**उपल** (**रक्तोपल**) -(न०) गेरू ।—**कण्ठ**,—**कण्ठिन्**-(वि०) मधुर कण्ठ वाला । (पुं०) कोकिल पक्षी ।—**कन्द**-(पुं०) मूँगा । प्याज ।—**कन्दल**-(पुं०) मूँगा ।—**कमल**- (न०) लाल कमल ।—**चन्दन**-(न०) लाल चन्दन । केसर ।—**चूर्ण** -(न०) सेंदुर । (पुं०) कमीला, कम्पिल्लक ।—**छर्दि**—(स्त्री०) रक्त की वमन ।—**जिह्व** -(पुं०) शेर, सिंह ।—**तुण्ड**-(पुं०) तोता ।—**दृश्**-(पुं०) कबूतर ।—**धातु**-(पुं०) गेरू । ताँबा ।—**प**-(पुं०) राक्षस ।—**पल्लव**-(पुं०) अशोक वृक्ष ।—**पा**-(स्त्री०) जोंक । —**पाद**-(वि०) लाल पैरों वाला । (पुं०) तोता । संग्राम-रथ । हाथी ।—**पायिन्**-(पुं०) खटमल ।—**पायिनी**-(स्त्री०) जोंक ।—**पिण्ड** -(न०) अड़हुल का फूल । लाल मुहासा ।—**प्रमेह**- (पुं०) पुरुषों का एक रोग जिसमें खून का-सा दुर्गन्धपूर्ण पेशाब होता है ।—**भव** -(न०) मांस ।—**मोक्ष**-(पुं०), —**मोक्षण**-(न०) रक्त का बहना ।—**यष्टि**, —**यष्टी**-(स्त्री०) मेंचक ।—**वर्ग** -(पुं०) लाख, अनार, कुसुम, मजीठ, दुपहरिया के फूल, हल्दी, दारुहल्दी और ढाक का समाहार—इनसे रंग निकलता है ।—**वर्ण**-(वि०) लाल रंग का । (न०) सोना । (पुं०) बीरबहूटी नामक कीड़ा । गोमेदमणि, लहसुनिया । मूँगा । कमीला ।—**शासन**-(न०) सिन्दूर । —**शीर्षक** -(पुं०) गंधाबिरोजा । सारस । —**ष्ठीवि**- (न०) घातक सन्निपात रोग का भेद ।—**सङ्कोच**- (न०) कुसुम का फूल ।—**संज्ञक** -(न०) केसर, कुंकुम ।—**सन्ध्यक**- (न०) लाल कमल ।—**सार**-(न०) लाल चन्दन । पतंग । अम्लवेत । लाल खैर । वाराही कंद ।—**हर**-(पुं०) भिलावाँ ।

रक्तक—(वि०) [रक्त+कन्] लाल । अनुरक्त, आशिक । विनोदी । (पुं०) [रक्त√क+क] अम्लानवृक्ष । गुलदुपहरिया का पौधा । लाल सहिजन । लाल रेंड़ । केसर । लाल रंग का घोड़ा । लाल वस्त्र ।

रक्ता—(स्त्री०) [रक्त+टाप्] लाख । गुञ्जा, घुँघची । मजीठ । वच । ऊँटकटारा । ललपाकंद । कान के पास की एक शिरा, नस ।

रक्ति—(स्त्री०) [√रञ्ज्+क्तिन्] मनोहरता, अनुराग, प्रेम । राजभक्ति । भक्ति । एक परिमाण जो आठ सरसों के बराबर होता है, रत्ती ।

रक्तिका—(स्त्री०) [रक्ति + कन्—टाप्] रत्ती । घुँघची ।

रक्तिमन्—(पुं०) [रक्त+इमनिच्] ललाई ।

√रक्ष्—भ्वा० पर० सक० बचाना, रक्षा करना, रखवाली करना, चौकसी करना । शासन करना । गुप्त रखना । रक्षति, रक्षिष्यति, अरक्षीत् ।

रक्षक—(वि०) [स्त्री०—**रक्षिका**] [√रक्ष्+ण्वुल्] रक्षण करने वाला, चौकसी करने वाला । बचाने वाला । पालन करने वाला । (पुं०) रखवाला, चौकीदार, पहरेदार ।

रक्षण—(न०) [√**रक्ष्** + ल्युट्] रक्षा । रखवाली । चौकसी, पहरेदारी ।

रक्षणी—(स्त्री०) [√रक्ष्+ल्युट्—ङीप्] लगाम, रास ।

रक्षस्—(न०) [रक्षति अस्मात्, √रक्ष्+असुन्] राक्षस; 'चतुर्दश सहस्राणि रक्षसाम्भीमकर्मणाम्' उत्त० २.१५ ।—**ईश** (**रक्षोश**),—**नाथ** (**रक्षोनाथ**)—(पुं०) रावण ।—**जननी** (**रक्षोजननी**)—(स्त्री०) रात ।—**सभ** (**रक्षःसभ**) —(न०) राक्षसों की टोली या सभा ।

रक्षा—(स्त्री०) [√रक्ष् + अ—टाप्] बचाने की क्रिया । रखवाली । रखना । सुरक्षा । यंत्र, तावीज । अधिष्ठातृ देवता । अधिदैवत । भस्म । राखी जो कलाई में बाँधी जाती है ।—**अधिकृत** (**रक्षाधिकृत**) —(पुं०) प्राचीन काल का नगररक्षी और शासन का अधिकारी ।—**अपेक्षक** (**रक्षापेक्षक**)—(पुं०) द्वारपाल, दरबान । जनानखाने का दरबान । नट, अभिनयकर्ता ।—**करण्डक**—(पुं०, न०) तावीज । कवच ।—**गृह**—(न०) प्रसूतिकागृह, जच्चाखाना, सौरी ।—**पाल**, —**पुरुष**— (पुं०) चौकीदार, रखवाला ।—**प्रदीप**— (पुं०) तंत्र के अनुसार वह दीपक जो भूत, प्रेतादि की बाधा मिटाने को जलाया जाता है ।—**भूषण**—(न०), —**मणि** —(पुं०),—**रत्न**— (न०) वह भूषण जिसमें किसी प्रकार का कवच आदि हो ।

रक्षितृ, रक्षिन्—(वि०) [√रक्ष् +तृच्] [√रक्ष्+णिनि] रक्षा करने वाला, बचाने वाला । (पुं०) पहरेदार, चौकीदार ।

√रख्—भ्वा० पर० सक० जाना । रखति, रखिष्यति, अरखीत्—अराखीत् ।

√रग्—भ्वा० पर० सक० शंका करना । रगति, रगिष्यति, अरगीत् —अरागीत् ।

रघु—(पुं०) [लङ्घति ज्ञानसीमां प्राप्नोति, √लङ्घ्+कु, नलोप, लस्य रः] सूर्यवंशी एक प्रसिद्ध राजा । यह राजा दिलीप का पुत्र और राजा अज का पिता था । [रघोः अपत्यम्, रघु+अण्, तस्य लुक्] रघु के वंशज ।—**नन्दन**,—**नाथ**,—**पति**,—**श्रेष्ठ**,—**सिंह**—(पुं०) श्री रामचन्द्र जी का नामान्तर ।

रङ्क—(वि०) [रमते तुष्यति, √रम्+क] निर्धन, गरीब । कृपण । मंद, सुस्त । (पुं०) निर्धन व्यक्ति । कृपण मनुष्य । फकीर । मँगता ।

रङ्कु—(पुं०) [√रम्+कु] पीठ पर सफेद चित्तियों वाला हिरन, मृग; 'मुखचन्द्रेषु कलङ्करङ्कवः' नै० २.८३ ।

√रङ्ख्—भ्वा० पर० सक० जाना। रङ्खति, रङ्खिष्यति, अरङ्खीत्।

√रङ्ग्—भ्वा० पर० सक० जाना। रङ्गति, रङ्गिष्यति, अरङ्गीत्।

रङ्ग—(पुं०, न०) [√रञ्ज्+घञ् वा घञ्] रांगा धातु। (पुं०) रंग। अभिनय करने का स्थान, रंगमञ्च। सभा-स्थान। सभा के सदस्य। रणभूमि। नृत्य। अभिनय। खेल, तमाशा। सुहागा।—अङ्गण (रङ्गाङ्गण)-(न०) रंगभूमि।—अवतरण (रङ्गावतरण) (न०) रंग चढ़ाना। रङ्गभूमि में जाने का द्वार। नट का पेशा।—आजीव (रङ्गाजीव),—उपजीविन् (रङ्गोपजीविन्) (पुं०) नट। चित्रकार।—कार,—जीवक -(पुं०) चित्रकार।—चर-(पुं०) नट। पटेबाज।—ज-(न०) सिंदूर।—जननी -(स्त्री०) लाख।—दा-(स्त्री०) फिटकरी।—द्वार-(न०) रंगमञ्च का प्रवेशद्वार। किसी नाटक का मङ्गलाचरण, नान्दीमुख पाठ या प्रस्तावना।—भवन-(न०) आमोद-प्रमोद या भोग-विलास करने का स्थान, रंगमहल।—भूति-(स्त्री०) आश्विन मास की पूर्णिमा वाली रात।—भूमि-(स्त्री०) रंगमंच। अखाड़ा। रणक्षेत्र।—मण्डप-(पुं०) अभिनय-शाला, नाटक-घर।—मल्ली—(स्त्री०) वीणा।—माता-(स्त्री०) लाख। कुटनी।—वस्तु-(न०) चित्रण, रंगसाजी।—वाट-(पुं०) अखाड़ा।—शाला-(स्त्री०) नाटक-घर, नाचघर।

√रङ्घ्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। रङ्घते, रङ्घिष्यते, अरङ्घिष्ट।

√रच्—चु० पर० सक० क्रमबद्ध करना। प्रस्तुत करना, तैयार करना। बनाना, सरजना, पैदा करना। लिखना, निबन्ध रचना। स्थापित करना। सजाना, शृङ्गार करना। लगाना। रचयति, रचयिष्यति, अररचत्।

रचन—(न०)—रचना-(स्त्री०) [√रच्+ल्युट्] [√रच्+णिच्+युच्] रचने या बनाने की क्रिया या भाव, निर्माण। बनाने का ढंग। ग्रन्थ। बाल सँवारना। व्यूह रचना। मानसिक कल्पना।

रजक—(पुं०) [रजति निर्णेजनेन स्वेतिमानम् आपादयति वस्त्रादीनाम्, √रञ्ज्+ण्वुल्] धोबी।

रजका, रजकी—(स्त्री०) [रजक+टाप्] [रजक+ङीष्] धोबिन।

रजत—(वि०) [रजति प्रियं भवति √रञ्ज्+अतच्] उज्ज्वल, सफेद, चाँदी के रंग का। (न०) चाँदी। सुवर्ण। मोती का हार या आभूषण। रक्त, खून। हाथीदाँत। नक्षत्र।—अद्रि (रजताद्रि)—(पुं०) कैलाश पर्वत।

रजनि, रजनी—(स्त्री०) [रजन्ति लोका अत्र √रञ्ज्+अनि] [रजनि+ङीष्] रात।—कर-(पुं०) चन्द्रमा।—चर-(पुं०) रात को घूमने वाला, राक्षस।—जल-(न०) ओस।—पति—रमण-(पुं०) चन्द्रमा।—मुख-(न०) सन्ध्या, सायंकाल।

रजस्—(न०) [√रञ्ज्+असुन्] स्त्रियों का मासिक रक्तस्राव पुष्प, आर्तव, ऋतु। धूल, रज। पुष्परज, मकरन्द: 'भूयात्कुशेशयरजोमृदुरेणुरस्याः' श० ४.१०। सूर्य-किरण में का एक रजकण। जुता हुआ खेत। अन्धकार। मानसिक अन्धकार। तीन गुणों में से (जो समस्त पदार्थों में पाये जाते हैं) दूसरा रजोगुण।—तोक-(पुं०, न०) लोभ।—दर्शन (रजोदर्शन)-(न०) स्त्रियों का प्रथम बार रजस्वला होना।—बन्ध (रजोबन्ध)-(पुं०) रजस्वला धर्म का रुक जाना।—रस (रजोरस)-(पुं०) अन्धकार।—शुद्धि (रजःशुद्धि)-(स्त्री०) रजस्वला धर्म का साफ-साफ नियत समय पर होना।—हर (रजोहर)-(पुं०) धोबी।

रजसानु—(पुं०) [रज्यतेऽस्मिन्, √रञ्ज् +असानु] बादल । हृदय ।

रजस्वल—(वि०) [रजस्+वलच्] गर्वीला, धूलधूसरित; 'प्रजा इव रजस्वला दिशो' र० ११.६० । (पुं०) भैंसा ।

रजस्वला—(स्त्री०) [रजस्वल+टाप्] मासिक धर्मवती स्त्री । लड़की जो विवाह योग्य हो गयी हो ।

रज्जु—(पुं०) [सृज्यते रज्यते, √सृज्+उ, असुगागम, धातुसकारलोप, आगमसकारस्य जत्वं दकारः तस्यापि चुत्वं जकारः] रस्सी, डोरी । शरीरस्थ रंग विशेष । स्त्रियों के सिर की चोटी ।—**दालक**-(पुं०) एक प्रकार का जलचर पक्षी ।—**पेड़ा**-(स्त्री०) सुतली की टोकरी ।

√रञ्ज्—दि०, भ्वा० उभ० अक० लाल हो जाना । अनुरक्त होना । प्रेम में फँसना । प्रसन्न होना, सन्तुष्ट होना । दि० रज्यति—ते, भ्वा० रजति—ते, रङ्क्ष्यति—ते, अराङ्क्षीत्—अरङ्क्त ।

रञ्जक—(न०) [√रञ्ज्+णिच्+ण्वुल्] लाल चन्दन । सिंदूर । (पुं०) रँगरेज । मिलावी । मेंहदी । (वि०) रँगने का काम करने वाला । हर्षकारक ।

रञ्जन—(न०) [√रञ्ज्+णिच्+ल्युट्] रँगना, रंग चढ़ाना । चित्त को प्रसन्न करने की क्रिया । मूँज । कमीला । सोना । जायफल । लाल चंदन । ईंगुर । पित्त । रंग बनाने के साधन-भूत पदार्थ—हलदी, नील, मजीठ आदि ।

रञ्जनी—(स्त्री०) [रञ्जन+ङीप्] नील का पौधा ।

√रट्—भ्वा० पर० अक० चिल्लाना । चीख मारना । गर्जना । भूँकना । चिल्ला कर घोषणा करना । आनन्द में भर चिचियाना । रटति, रटिष्यति, अराटीत्—अरटीत् ।

रटन—(न०) [√रट्+ल्युट्] चिल्लाने की क्रिया । प्रसन्नतासूचक चिल्लाहट ।

√रण्—भ्वा० पर० अक० झनझनाना, रुनझुन का शब्द करना । सक० जाना । रणति, रणिष्यति, अराणीत्—अरणीत् ।

रण—(पुं०, न०) [रणन्ति शब्दायन्ते अत्र, √रण्+अप्] संग्राम, युद्ध । लड़ाई । रणक्षेत्र । (पुं०) शोरगुल, कोलाहल । वीणा बजाने का गज । गति, गमन । रमण । दुंबा भेड़ा ।—**अङ्ग (रणाङ्ग)**-(न०) तलवार आदि कोई भी शस्त्र; 'सस्यन्दे शोणितं व्योम रणाङ्गानि प्रजज्वलुः' भट्टि० १४.९८ ।—**अङ्गण (रणाङ्गण)**-(न०) रणक्षेत्र, समरभूमि ।—**अपेत (रणापेत)**-(वि०) (रणक्षेत्र का) भगोड़ा; 'स बभार रणापेतां चमूं पश्चादवस्थितां' कि० १५.२३ ।—**आतोद्य (रणातोद्य)**, —**तूर्य**-(न०) —**दुन्दुभि**-(पुं०) मारू बाजा ।—**उत्कट (रणोत्कट)**-(वि०) जो युद्ध के लिये उन्मत्त हो । (पुं०) कार्त्तिकेय का अनुचर । एक दैत्य ।—**क्षिति**-(स्त्री०),—**क्षेत्र**-(न०) —**भू** —**भूमि**-(स्त्री०), —**स्थान**-(न०) संग्राम क्षेत्र, लड़ाई का मैदान ।—**धुरा**-(स्त्री०) युद्ध में सामना । युद्ध की प्रचण्डता ।—**मत्त**-(पुं०) हाथी ।—**मुख**-(न०),—**मूर्धन्**-(पुं०),—**शिरस्**-(न०) युद्ध में आगे का भाग, लड़ने वाली सेना का सब से अगला भाग ।—**रङ्क**-(पुं०) हाथी के दोनों दाँतों के मध्य का भाग ।—**रङ्ग**-(पुं०) रणभूमि ।—**रण**-(पुं०) मच्छड़ । डाँस । (न०) उत्कण्ठा, लालसा । किसी वस्तु के खो जाने का खेद ।—**रणक**-(पुं०, न०) चिन्ता । व्याकुलता, घबड़ाहट । (पुं०) कामदेव ।—**वाद्य**-(न०) मारूबाजा ।—**शिक्षा**-(स्त्री०) लड़ाई का विज्ञान ।—**सङ्कुल**-(न०) घोर युद्ध, तुमुल युद्ध ।—**सज्जा**-(स्त्री०)

युद्ध की तैयारी । युद्ध के उपस्कर ।—सहाय–(पुं०) युद्ध में सहायक, मित्र । –स्तम्भ–(पुं०) युद्ध का स्मारक, युद्ध-स्मारक-स्तम्भ ।

रणत्कार—(पुं०) [√रण्+शतृ, ष० त०] शब्द । गुञ्जार ।

रणित—(न०) [√रण् + क्त] दे० 'रणत्कार' ।

रण्ड—(पुं०) [√रम्+ड] वह मनुष्य जो पुत्रहीन मरे । बाँझ वृक्ष । (वि०) जिसका अंग छिन्न-भिन्न हो गया हो । धूर्त । बेचैन । विफल ।

रण्डा—(स्त्री०) [रण्ड+टाप्] स्त्री के लिए एक गाली, मैली अथवा फूहड़ स्त्री, पतुरिया । विधवा स्त्री, राँड ।

रत—(वि०) [√ रम्+ क्त] प्रसन्न । अनुरक्त । लीन ।(न०) संभोग । हर्ष । प्रेम । लिंग । योनि ।—**अयनी (रतायनी)** –(स्त्री०) वेश्या, रंडी ।—**अर्थिन् (रतार्थिन्)** –(वि०) कामुक, ऐयाश ।—**उद्वह (रतोद्वह)**–(पुं०) कोकिल ।—**अर्द्धिक (रतार्द्धिक)** –(न०) दिवस । आनन्द के लिये स्नान । अष्टमंगल ।—**कील**–(पुं०) कुत्ता ।—**कूजित**–(न०) मैथुन के समय की सिसकारी ।—**ज्वर**–(पुं०) काक, कौआ —**तालिन्**–(पुं०) कामी, लंपट, ऐयाश । —**ताली**–(स्त्री०) कुटनी ।—**नारीच**–(पुं०) कामदेव । आवारा, लंपट । कुत्ता । मैथुन के समय की सिसकारी ।—**बन्ध**–(पुं०) मैथुन का आसन ।—**हिण्डक**–(पुं०) औरतों को फुसलाने या बहकाने अथवा बिगाड़ने वाला । आवारा, बदचलन, लंपट ।

रति—(स्त्री०) [√रम् +क्तिन्] आनन्द, हर्ष, आह्लाद । अनुराग, प्रेम । कामक्रीड़ा, सम्भोग । कामदेव की स्त्री का नाम ।—**कलह**–(पुं०) संभोग, मैथुन ।—**कान्त**–(पुं०) कामदेव ।—**कुहर** –(न०) योनि, भग ।—**गृह**, —**भवन**, —**मन्दिर** –(न०) भग, योनि । प्रेमी-प्रेमिका का रतिक्रीड़ागृह, आनन्द-भवन । डौलाना ।—**तस्कर**–(पुं०) वह पुरुष जो स्त्रियों को अपने साथ व्यभिचार करने में प्रवृत्त करता हो ।—**पति**, —**प्रिय**, —**रमण**–(पुं०) कामदेव । —**रस** –(पुं०) रतिक्रीड़ा, सम्भोग ।—**लम्पट**–(वि०) कामी, ऐयाश ।—**सुन्दर**–(पुं०) कामशास्त्र के अनुसार एक प्रकार का रतिबन्ध—'नारीपादद्वयं कामी धारयेत् हृदये यदि । धृतकण्ठो रमेत् कामी बन्धः स्यात् रतिसुन्दरः ।'

रत्न—(न०) [रमयति हर्षयति, √रम् णिच्+न, तकारादेश] जवाहर, बहुमूल्य चमकीले, छोटे और रंग-बिरंगे पत्थर; 'न रत्नमन्विष्यति मृग्यते हि तत्' कु० ५.४५ । [रत्नों की संख्या या तो ५ या ९ या १४ बतलायी जाती है ।] कोई भी बहुमूल्य प्रिय पदार्थ । कोई भी सर्वोत्तम वस्तु ।—**अनुविद्ध (रत्नानुविद्ध)**–(वि०) रत्नों से जड़ा हुआ या जिसमें रत्न जड़े हुए हों ।—**आकर (रत्नाकर)**– (पुं०) रत्नों की खान । समुद्र ।—**आलोक (रत्नालोक)**–(पुं०) रत्न की आभा या चमक । —**आवली (रत्नावली)**,—**माला**–(स्त्री०) रत्नों का हार ।—**कन्दल**–(पुं०) मूंगा, प्रवाल ।—**खचित** –(वि०) जिसमें रत्न जड़े हों ।—**गर्भ**–(पुं०) समुद्र । —**गर्भा**–(स्त्री०) पृथिवी ।—**दीप**,—**प्रदीप** –(पुं०) रत्न का दीपक । एक कल्पित रत्न का नाम । कहा जाता है, पाताल में इसी के प्रकाश से उजाला रहता है ।—**मुख्य**–(न०) हीरा ।—**राज** –(पुं०) माणिक्य, मानिक ।—**राशि**–(पुं०) रत्नों का ढेर । समुद्र ।—**सानु**–(पुं०) मेरु पर्वत का नाम ।—**सू**– (वि०) रत्न उत्पन्न करने वाला ।—**सू**,—**सूति**–(स्त्री०) पृथिवी ।

रत्नि—(पुं०, स्त्री०) [√ऋ + कत्निच्, रण्] कोहनी। कोहनी से मुट्ठी तक। (पुं०) मुट्ठी।

रथ—(पुं०) [रम्यते अनेन अत्र वा, √रम् +कथन्] युद्ध, यात्रा, विहार आदि के लिये उपयोगी प्राचीन कालीन एक सवारी जिसमें चार या दो पहिये हुआ करते थे। चरण, पैर। अंग, अवयव। शरीर, देह। नरकुल, नरसल। क्रीड़ा-स्थल। शतरंज का एक मोहरा जिसका आधुनिक नाम ऊँट है। **—अक्ष (रथाक्ष)**–(पुं०) रथ का धुरा। एक प्राचीन परिमाण जो १०४ अंगुल का होता था। **—अङ्ग (रथाङ्ग)** –(न०) रथ का कोई भाग, विशेष कर पहिया; 'रथोरथाङ्गध्वनिना विजज्ञे' र० ७.४१। विष्णु भगवान् का सुदर्शन चक्र। कुम्हार का चक्का। (पुं०) चकवा पक्षी। —० **पाणि**–(पुं०) विष्णु। **—ईश (रथेश)**–(पुं०) रथ में बैठकर युद्ध करने वाला। **—ईषा (रथेषा)** –(स्त्री०) रथ का पहिया या धुरा। **—उद्वह (रथोद्वह)**, **—उपस्थ (रथोपस्थ)**–(पुं०) रथ का वह स्थान जहाँ सारथी बैठता है। **—कल्पक**–(पुं०) राजा की रथशाला का अधिकारी। धनपतियों के घर, वाहन, वेश आदि की व्यवस्था करने वाला अधिकारी। **—कार**–(पुं०) रथ बनाने वाला। **—कुटुम्बिक**, **—कुटुम्बिन्**– (पुं०) सारथी। **—कूबर**–(पुं०, न०) रथ का वह अगला लम्बा भाग जिसमें जुआ बँधा रहता है। **—क्षोभ**–(पुं०) रथ का हिलना-डुलना। **—गर्भक**–(पुं०) डोली, पालकी। **—गुप्ति**– (स्त्री०) रथ के किनारे या चारों ओर लगा हुआ काठ या लोहे का ढाँचा जो रथ को दूसरे रथ से टकराने से बचाता था। **—चरण**, **—पाद**–(पुं०) रथ का पहिया। चक्रवाक, चकवा। **—धुर्**–(स्त्री०) रथ का बम्ब। **—नाभि** –(स्त्री०) रथ के पहियों का मध्य-भाग जिसमें धुरी रहती है। **—नीड**–(पुं०) रथ का खटोला, रथ का वह भाग जहाँ सवारी बैठती है। **—बन्ध**–(पुं०) रथ बाँधने की रस्सी। रथ का साज या सामान। **—महोत्सव** –(पुं०), **—यात्रा**–(स्त्री०) आषाढ़ शुक्ला द्वितीया को मनाया जाने वाला उत्सव विशेष। इसमें प्रायः जगन्नाथ जी, बलराम जी और सुभद्रा जी की प्रतिमाओं को रथ पर सवार कराकर उस रथ को स्वयं खींचते हैं। बौद्धों और जैनों में भी उनके देवता रथ में सवार करा कर निकाले जाते हैं। **—मुख** –(न०) रथ का अगला हिस्सा। **—युद्ध**–(न०) रथों में बैठ कर लड़ने वालों की लड़ाई। **—वर्त्मन्**– (न०) **—वीथि**–(स्त्री०) मुख्य सड़क, शाही रास्ता। **—वाह**–(पुं०) रथ का घोड़ा। सारथी। **—शक्ति**–(स्त्री०) रथ की कलसी पर का वह बाँस जिसमें लड़ाई के रथों की ध्वजाएँ लटकायी जाती थीं। **—सप्तमी**–(स्त्री०) माघ शुक्ला ७मी।

रथकट्या—(स्त्री०) [रथानां समूहः, रथ +कट्यच्—टाप्] रथों का समूह।

रथन्तर—(न०) [रथेन तरति, रथ√तृ +खच्, मुम्] एक साम का नाम।

रथिक—(वि०) [स्त्री०—रथिकी] [रथ +ठन्] जो रथ पर सवार हो, रथी। (पुं०) तिनिश वृक्ष।

रथिन्—(वि०) [रथ+इनि] रथ पर सवार होने या रथ को हाँकने वाला। रथ को रखने वाला। (पुं०) रथ का मालिक। रथ में बैठ कर लड़ने वाला पुरुष।

रथिर—(पुं०) [रथ+इरच्] दे० 'रथिन्'।

रथ्य—(पुं०) [रथ+यत्] रथ में जोता जाने वाला घोड़ा। रथ का एक भाग।

रथ्या—(स्त्री०) [रथ्य+टाप्] रथों के आने-जाने का रास्ता या सड़क; 'भूयोभूयः

सखिवनगरीरथ्यया पर्यटन्तं' माल० १.१५ । वह स्थान जहाँ कई एक सड़कें एक दूसरे को काटती हों । कई एक रथ या गाड़ियाँ ।

√रद्—भ्वा० पर० सक० फाड़ना । उखाड़ना । रदति, रदिष्यति, अरादीत्—अरदीत् ।

रद—(पुं०) [√रद् + अच्] दाँत ।—**च्छद** –(पुं०) ओठ ।

रदन—(पुं०) [√रद् + ल्यु] दाँत ।—**च्छद**–(पुं०) ओठ ।

√रध्—दि० पर० सक० चोटिल करना, घायल करना । मार डालना । पकाना (भोजन) । रध्यति, रधिष्यति – रत्स्यति, अरधत् ।

रन्ति—(स्त्री०) [√रम् + तिक्] खेल । रोकना ।

रन्तिदेव—(पुं०) [√रम्+तिक्, रन्तिश्चासौ देवश्च, कर्म० स०] विष्णु । एक चन्द्रवंशी राजा का नाम ।

रन्तु—(पुं०) [√रम्+तुन्] सड़क, मार्ग । (स्त्री०) नदी ।

रन्धन—(न०), **रन्धि**– (स्त्री०) [√रध् +ल्युट्, नुमागम] [√रध् + इन्, नुमागम] नष्ट करना । पकाने की क्रिया ।

रन्ध्र—(न०) [√रध्+रक्, नुमागम] छेद, सूराख । कमजोर स्थल; 'रन्ध्रोपनिपातिनोऽर्थाः' श० ६, वह स्थल जिस पर आक्रमण किया जा सके । भग । लग्न से आठवाँ स्थान ।—**बभ्रु**–(पुं०) चूहा ।—**वंश**–(पुं०) पोला बाँस ।

√रभ्—भ्वा० आत्म० सक० उत्सुकता प्रकट करना । आरम्भ करना । गले मिलना । रभते, रप्स्यते, आरब्ध ।

रभस्—(न०) [√रभ् +असुन्] यज्ञादि का आरम्भ । आहुति । वेग । शक्ति । बलवर्धक भोज्य पदार्थ ।

रभस—(वि०) [√रभ् + असच्] उग्र, भयानक । प्रबल, ताकतवर । उत्कण्ठित, उत्सुक । (पुं०) जबरदस्ती, बरजोरी । उतावलापन, आवेश । क्रोध । शोक । पश्चात्ताप । प्रेमोत्साह । हर्ष । मिलन ।

√रम्—भ्वा० आत्म० अक० प्रसन्न होना । खेलना, क्रीड़ा करना । मैथुन करना । बना रहना, टिकना । रमते, रंस्यते, अरंस्त ।

रम—(वि०) [√रम्+अच्] सुंदर । प्रिय । प्रसन्नकारक, आनन्ददायी । (पुं०) प्रेमी, आशिक । पति । कामदेव । लाल अशोक ।

रमठ—(न०) [√रम्+अठन्] हींग ।—**ध्वनि**–(पुं०) हींग ।

रमण—(वि०) [स्त्री०—**रमणी**] √रम् + णिच् +ल्यु] आनन्ददायी, प्रसन्नकारक । मनोहर । (न०) [√रम् + ल्युट्] क्रीड़ा, आमोद-प्रमोद । मैथुन । आनन्द । [√रम् +णिच् +ल्यु] जघन । परवल की जड़ । (पुं०) प्रेमी । पति । कामदेव । गधा । अण्डकोश ।

रमणा—(पुं०) [रमण+टाप्] एक शक्ति (देवी) जो रामतीर्थ में है । दे० 'रमणी' ।

रमणी—(स्त्री०) [रमण+ङीप्] स्त्री । सुंदर स्त्री । सुगंधबाला नामक गंधद्रव्य ।

रमणीय—(वि०) [√रम् + अनीयर्] सुंदर, मनोहर ।

रमति—(पुं०) [√रम्+अतिन्] कामुक । कौआ । समय । कामदेव ।

रमा—(स्त्री०) [रमयति √रम्+णिच् + अच्—टाप्] पत्नी । लक्ष्मीजी का नाम । सम्पत्ति । शोभा । शशिध्वजराजकन्या जिसका विवाह कल्किदेव के साथ होगा ।—**कान्त**, —**नाथ**, —**पति**–(पुं०) विष्णु ।—**वेष्ट**– (पुं०) श्रीवास चन्दन । इसीसे तारपीन का तेल निकलता है ।

√रम्भ्—भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना । रम्भते रम्भिष्यते अरम्भिष्ट ।

रम्भा—(स्त्री०) [√रम्भ् + अच्—टाप्] केले का पेड़; 'विजितरम्भमूरुद्वयम्' गीत० १०। गौरी का नाम। एक अप्सरा का नाम। यह नलकूबर की पत्नी है। इससे बढ़कर सुन्दरी अप्सरा इन्द्रलोक में दूसरी नहीं है।

रम्य—(वि०) [√रम् + यत्] मनोहर, सुन्दर। (पुं०) चम्पा का पेड़। (न०) वीर्य।

√रय्—भ्वा० आत्म० सक० जाना, गमन करना। रयते, रयिष्यते, अरयिष्ट।

रय—(पुं०) [√रय्+अ] नदी का प्रवाह, धारा। वेग, तेजी। उत्साह, धुन।

रल्लक—(पुं०) [रमणरत्=इच्छा तां लाति, रत्√ला+क, रल्ल +कन्] कंबल। ऊनी वस्त्र। पलक। 'धूर्वतिरल्लकमल्लसमाहृतो, भवति को न युवा गतचेतनः॥' हिरन। पाकर का पेड़।

रव—(पुं०) [√रु+अप्] ध्वनि, शब्द। चीख। गर्ज। गान। (चिड़िया का) चहकना। खड़बड़ी।

रवण—(वि०) [√रु +युच्] चिल्लाने वाला। गरजने वाला। शब्दायमान। तीक्ष्ण। उष्ण। चपल। (पुं०) ऊँट। कोयल। भाँड़। (न०) काँसा। [√रु+ल्युट्] ध्वनि, आवाज; 'उत्कण्ठावर्धनैः शुभ्रं रवणैरम्बरं ततम्' भट्टि० ७.१४।

रवि—(पुं०) [√रु+इ] सूर्य। **—कान्त**—(पुं०) सूर्यकान्त, आतिशी शीशा। **—ज**, **—तनय**, **—पुत्र**, **—सूनु**—(पुं०) शनिग्रह। कर्ण। बालि। वैवस्वत मनु। यमराज। सुग्रीव। **—दिन**—(न०) **—वार**, **—वासर**—(पुं०) रविवार, इतवार। **—संक्रान्ति**—(स्त्री०) सूर्य की एक राशि से दूसरी राशि में गमन, सूर्यसंक्रमण।

रशना, रसना—(स्त्री०) [√अश् +युच्—टाप्, धातोः रशादेशः] [√रस्+युच्—टाप्] रस्सी, डोरी। रास, लगाम। पटका, कमरबंद। जबान, जीभ। **—उपमा** (**रश (स) (नोपमा)**—(स्त्री०) उपमा विशेष जिसमें उपमाओं की शृंखला बँधी रहती है तथा पूर्वकथित उपमेय आगे चलकर उपमान होता जाता है। इसको रसनोपमा भी कहते हैं।

रश्मि—(पुं०) [√अश्+मि, धातोः रशादेशः] किरण। डोरी, रस्सी। रास, लगाम। अङ्कुश, चाबुक। **—कलाप**—(पुं०) ५४ लड़ियों का मोतीहार।

रश्मिमत्—(पुं०) [रश्मि+मतुप्] सूर्य।

√रस्—भ्वा० पर० अक० गरजना। चीखना। चिल्लाना। कोलाहल करना। प्रतिध्वनि करना। रसति, रसिष्यति, अरसीत्—अरासीत्। चु० पर० सक० स्वाद लेना। चिकना करना। रसयति, रसयिष्यति, अरीरसत्।

रस—(पुं०) [√रस् +अच् वा घ] (वृक्षों से निकलने वाला एक प्रकार का) सार, तत्त्व। तरल पदार्थ। जल। अर्थ। मदिरा, आसव। स्वाद, जायका। चटनी। मसाला। स्वादिष्ठ पदार्थ। रुचि। प्रीति, प्रेम। आनन्द, हर्ष। मनोज्ञता, सौन्दर्य। भाव, भावना। साहित्य में वह आनन्दात्मक चित्त-वृत्ति या अनुभव जो विभाव, अनुभाव, और सञ्चारी से युक्त किसी स्थायी भाव के अभिव्यञ्जित होने से पैदा होता है। साधारणतः साहित्य में आठ रस माने गये हैं। यथा—"शृङ्गारहास्यकरुणरौद्रवीरभयानकाः। बीभत्साद्भुतसंज्ञौ चेत्यष्टौ नाट्ये रसाः स्मृताः॥"—किन्तु कभी-कभी इसमें शान्त रस और जोड़ देने से इनकी संख्या नौ हो जाती है। इसीसे काव्य-प्रकाशकार ने लिखा है :— "निर्वेदस्थायिभावोऽस्ति शान्तोऽपि नवमो रसः"।—इसी प्रकार कोई-कोई 'वात्सल्यरस' को और बढ़ाकर रसों की

संख्या दस बतलाते हैं । [रस कविता की जान है । इसी से विश्वनाथ का मत है ।—"वाक्यं रसात्मकं काव्यम्" ।] सुरा । वीर्य । पारा । जहर, विष । कोई भी खनिज पदार्थ ।—**अञ्जन** (**रसाञ्जन**)–(न०) रसवत, रसौत ।—**अम्ल** (**रसाम्ल**)–(पुं०) अम्लवेतस, अमलवेत । चूक नाम की खटाई ।—**अयन** (**रसायन**) –(न०) वैद्यक के अनुसार वह ओषधि जो जरा और व्याधि का नाश करने वाली हो । पदार्थों के तत्त्वों का ज्ञान ।—**आभास** (**रसाभास**) –(पुं०) साहित्य में किसी रस को ऐसे स्थान में अवतारणा करना जो उचित या उपयुक्त न हो । किसी रस का अनुपयुक्त स्थान पर वर्णन ।—**आस्वादिन्** (**रसास्वादिन्**)–(वि०) रस का स्वाद लेने वाला । कविता के भावों को जानने वाला ।—**इन्द्र** (**रसेन्द्र**)–(पुं०) जीरा, धनिया, पीपल, त्रिकुट, शहद और रससिन्दूर के योग से बनने वाली एक ओषधि । राजमाष । पारा ।—**उद्भव** (**रसोद्भव**) –(न०) शिंगरफ । रसौत । मोती ।—**उपल** (**रसोपल**)– (न०) मोती ।—**कर्मन्**– (न०) पारे की सहायता से रस तैयार करने की क्रिया ।—**केसर**–(न०) कपूर ।—**गन्ध**–(पुं०, न०) रसौत, रसाञ्जन ।—**ज** –(पुं०) राब, शीरा । (न०) रक्त, खून ।—**ज्ञ**– (वि०) जो रस का ज्ञाता हो; 'सांसारिकेषु च सुखेषु वयं रसज्ञाः' उत्त० २.२७ । काव्यमर्मज्ञ । (पुं०) कवि । रसायनी, पारद के योग से दवाइयाँ बनाने वाला वैद्य ।—**ज्ञा**–(स्त्री०) जीभ ।—**तेजस्**– (न०) रक्त, खून ।—**द**—(पुं०) वैद्य, हकीम ।—**धातु**– (न०) पारा, पारद ।—**प्रबन्ध**–(पुं०) नाटक । प्रबंधकाव्य, वह कविता जिसमें एक ही विषय अनेक परस्पर संबद्ध पद्यों में कहा गया हो ।—**फल**–(पुं०) नारियल ।—**भङ्ग** –(पुं०) भाव का नष्ट होना ।—**भव**– (न०) रक्त, लोहू ।—**राज** –(पुं०) पारा, पारद । शृङ्गार रस ।—**विक्रय**–(पुं०) शराब की बिक्री ।—**शास्त्र**–(न०) रसायन- शास्त्र ।—**सिद्धि**–(स्त्री०) रसायन विद्या में कुशलता या निपुणता । रस की अभिव्यक्ति आदि में कुशलता ।

रसन—(न०) [√रस्+ल्युट्] चिल्लाना । चीखना । दहाड़ना । झुनझुनाना । गर्जन, दहाड़ । बादल की गड़गड़ाहट । स्वाद, जायका । जिह्वा, जीभ ।

रसना—(स्त्री०) दे० 'रशना' ।—**रद**–(पुं०) पक्षी ।—**लिह**–(पुं०) कुत्ता ।

रसवत्—(वि०) [रस+मतुप्, वत्व] जिसमें रस हो । स्वादिष्ठ, जायकेदार; संसारसुखवृक्षस्य द्वे एव रसवत्फले सु० । तर, भली भाँति पानी से भिगोया हुआ । मनोहर । भाव-पूर्ण । प्रीतिपरिपूर्ण, प्रेममय । (पुं०) वह काव्यालंकार जिसमें एक रस किसी दूसरे रस अथवा भाव का अंग होकर आवे ।

रसा—(स्त्री०) [√रस् +अच्–टाप् वा विविधो रसो अस्ति अस्याम्, रस+अच् –टाप्] पृथिवी । जिह्वा । नदी । अंगूर । आम । लोहबान । काकोली । कंगनी । मेदा । रसातल ।—**तल**–(न०) सात अधोलोकों में से एक ।

रसाल—(न०) [रसम् आलाति, रस–आ√ला+क] लोबान । गुग्गुल । (पुं०) आम । ईख । कटहल । गेहूँ । अमलवेंत । (वि०) मधुर । रसीला । सुन्दर । स्वादिष्ठ । मार्जित, शुद्ध ।

रसाला—(स्त्री०) [रसाल +टाप्] जिह्वा, जीभ । शक्कर तथा मसाले पड़ा हुआ दही, सिखरन । दूर्वाघास । अंगूर । विदारीकंद ।

रसिक—(वि०) [रस+ ठन्] स्वादिष्ठ मनोज्ञ, मनोहर। गुणग्राही: 'परोपकार रसिकस्य' भ० ६.१९। रसिया। (पुं०) सहृदय मनुष्य, भावुक नर। रसिया आदमी, लंपट मनुष्य। हाथी। घोड़ा।

रसिका—(स्त्री०) [रसिक+टाप्] सिखरन। गन्ने का रस। जीभ। कमरबंद। मैना।

रसित—(वि०) [√रस्+क्त] चाखा हुआ। भावपूर्ण। मुलम्मा चढ़ा हुआ। (न०) शराब, मदिरा। चीख। दहाड़, गर्जन।

रसोन—(पुं०) [रसेनैकेन ऊनः] लशुन, लहसुन।

रस्य—(वि०) [रस +यत्] रसवाला। (न०) रक्त। मांस।

√रह्—भ्वा० पर० सक० त्यागना। रहति, रहिष्यति, अरहीत्। चु० पर० सक० त्यागना। रहयति, रहयिष्यति, अरीरहत्—अररहत्।

रहण—(न०) [√रह्+ल्युट्] वियोग। त्याग।

रहस्—(न०) [√रम् +असुन् हुकार आदेश] एकान्त, निर्जनता, विजनता। रहस्य, भेद। स्त्री-मैथुन।

रहस्य—(वि०) [रहस्+यत्] वह जिसका तत्त्व सहज में सब की समझ में न आ सके। (न०) गुप्त भेद, गोपनीय विषय। एक तांत्रिक प्रयोग। किसी अस्त्र का रहस्य, 'सरहस्यानि जृम्भकास्त्राणि'। किसी के चाल-चलन का गुप्त भेद। गोप्य सिद्धान्त। —**आख्यायिन्** (रहस्याख्यायिन्)-(वि०) गुप्त बात कहने वाला।—**भेद**,—**विभेद**-(पुं०) किसी गुप्त भेद का प्राकट्य।—**व्रत**-(न०) गुप्त व्रत या प्रायश्चित्त।

रहाट—(पुं०) सलाहकार। मंत्री। भूत। झरना।

रहित—(वि०) [√रह्+क्त] बिना, हीन, शून्य। त्यागा हुआ, छोड़ा हुआ। पृथक् किया हुआ।

√रा—अ० पर० सक० देना, प्रदान करना। राति, रास्यति, अरासीत्।

राका—(स्त्री०) [√रा + क—टाप्] पूर्णमासी। पूर्णिमा की रात। वह स्त्री जिसको पहले पहल रजोदर्शन हुआ हो। खुजली, खाज। पूर्णिमा की अधिष्ठात्री देवी। खर तथा शूर्पणखा की माता।

राक्षस—(पुं०) [रक्षः एव राक्षसः, रक्षस् +अण्] दैत्य, निशाचर। आठ प्रकार के विवाहों में से एक प्रकार का राक्षस विवाह भी है; इसमें कन्या के लिये उभय पक्ष में युद्ध होता है। ज्योतिष सम्बन्धी योग विशेष। मुद्राराक्षस नाटक के राजा नन्द के एक मंत्री का नाम। साठ संवत्सरों में से उनचासवाँ संवत्सर। दुष्ट प्राणी। पारे और गंधक के योग से बना एक रस।

राक्षसी—(स्त्री०) [राक्षस+ ङीप्] राक्षस की स्त्री।

√राख्—भ्वा० पर० सक० सोखना। सजाना। राखति, राखिष्यति, अराखीत्।

राखा—(स्त्री०) [√रख्+घञ्, पृ० सिद्धि] लाख।

राग—(पुं०) [√रञ्ज् +घञ्] रंग। लाल रंग। लाखी रंग। अनुराग, प्रीति। मैथुन सम्बन्धी भावना। भाव। हर्ष आनन्द। क्रोध। सौन्दर्य। संगीत में राग छः माने गये हैं। यथा:—'भैरवः कौशिकश्चैव हिन्दोलो दीपकस्तथा। श्रीरागो मेघरागश्च रागाः षडिति कीर्तिताः॥' खेद। लालच। डाह। अंगराग। मालता, अलक्तक। राजा। चंद्रमा। सूर्य।—**चूर्ण**-(पुं०) कत्था का पेड़। सिन्दूर। लाख। अबीर। कामदेव।—**च्छन्न**-(पुं०) राम। कामदेव।—**द्रव्य**-(न०) रंग।—**पुष्प**-(पुं०) गुल-दुपहरिया।

—रज्जु–(पुं०) कामदेव।—लता–(स्त्री०) काम की पत्नी, रति।—सूत्र– (न०) [रं]गा हुआ सूत या डोरा। रेशमी डोरा। तराजू की डोरी।

रागिन्—(वि०) [√ रञ्ज् +घिनुण् वा रागोऽस्य अस्ति, राग+इनि] रंगीन। लाल [रं]ग का। भावपूर्ण। प्रेमपूरित, प्रीतिपूर्ण। अनुरागवान्। (पुं०) चित्रकार। प्रेमी। कामुक, लंपट।

रागिणी—(स्त्री०) [रागिन्+ङीप्] रागिनियाँ या राग की पत्नियाँ। इनकी संख्या किसी के मतानुसार ३० और किसी के मतानुसार ३६ है। विदग्धा स्त्री। स्वेच्छाचारिणी स्त्री, छिनाल स्त्री। जयश्री नामक लक्ष्मी।

√राघ्—भ्वा० आत्म० अक० समर्थ होना। राघते, राघिष्यते, अराघिष्ट।

राघव—(पुं०) [रघोः अपत्यम्, रघु+अण्] रघु का वंशधर। श्रीरामचन्द्र। एक बहुत बड़ी समुद्री मछली— 'अस्ति मत्स्यस्तिमिर्नाम शतयोजनविस्तृतः। तिमिङ्गिलगिलोऽप्यस्ति तद्गिलोऽप्यस्ति राघवः॥' (कलापव्याकरण)।

राङ्कव—(वि०) [स्त्री०]—राङ्कवी [रङ्कु+अण्] रङ्कु जाति के हिरन सम्बन्धी या उसके चर्म का बना हुआ। ऊनी। (न०) हिरन के बालों का बना ऊनी वस्त्र। कंबल।

√राज्—भ्वा० उभ० अक० चमकना। सुन्दर देख पड़ना। राजति-ते, राजिष्यति-ते, अराजीत्—अराजिष्ट।

राज्—(पुं०) [राज्+क्विप्] राजा, नरेन्द्र, नरपति।

राजक—(पुं०) [राजन्+कन्] छोटा राजा। (न०) [राज्ञां समूहः, राजन्+वुञ्] कितने ही राजाओं का समुदाय; 'सहते न जनोऽप्यधः क्रियां किमु लोकाधिकधाम राजकं' कि० २.४७।

राजत—(वि०) [स्त्री०—राजती] [रजत+अण्] रुपहला, चाँदी का बना हुआ। (न०) चाँदी; 'लीला धत्ते राजतगण्डशैलः' शि० ४.१३।

राजन्—(पुं०) [राजते शोभते, √ राज्+कनिन्] [समास में नकार का लोप हो जाता है। बहुधा उत्तरपद में प्रयुक्त होकर यह शब्द बड़ाई, श्रेष्ठता आदि का अर्थ प्रकट करता है] किसी देश, मंडल, जाति का शासक और नियामक, नरेश, नरेन्द्र। प्रभु, स्वामी। क्षत्रिय। युधिष्ठिर का एक नाम। इन्द्र का नाम। चन्द्रमा। यक्ष।—**अङ्गन** (**राजाङ्गन**)–(न०) राजप्रासाद का आँगन।—**अधिकारिन्** (**राजाधिकारिन्**), —**अधिकृत** (**राजाधिकृत**) –(पुं०) न्यायाधीश, विचारपति।—**अधिराज** (**राजाधिराज**),—**इन्द्र** (**राजेन्द्र**) (पुं०) महाराज, राजाओं का राजा।—**आनक** (**राजानक**)–(पुं०) छोटा राजा, सामंत। प्राचीन कालीन एक उपाधि जो प्रसिद्ध कवियों और विद्वानों को दी जाती थी।—**अपसद** (**राजापसद**)– (पुं०) अयोग्य या पतित राजा।—**अभिषेक** (**राजाभिषेक**)– (पुं०) राजा का राजतिलक।—**अर्ह** (**राजार्ह**)– (न०) कपूर। शालिधान। जामुन का पेड़। अगर। (वि०) राजा के योग्य। अगरकाष्ठ।—**अर्हण** (**राजार्हण**) –(न०) राजा की दी हुई सम्मानसूचक उपहार की वस्तु।—**आज्ञा** (**राजाज्ञा**)– (स्त्री०) राजा की आज्ञा, राजघोषणा।—**ऋषि** (**राजर्षि** या **राजऋषि**)–(पुं०) क्षत्रिय जाति का ऋषि। (राजर्षियों में पुरूरवस्, जनक और विश्वामित्र की गणना है।)—**कर** –(पुं०) कर जो राजा को दिया जाय। —**कार्य**–(न०) राजकाज।—**कुमार**– (पुं०) राजा का पुत्र।—**कुल**–(न०)

राजवंश । राजा का दरबार । न्यायालय । राजप्रासाद । **—गामिन्**–(वि०) राज-सम्बन्धी, राजा का । (वह) राजा को प्राप्त होने वाली (सम्पत्ति, जिसका कोई उत्तराधिकारी न हो) लावारिसी (जाय-दाद) ।**—गृह**– (न०) राजप्रासाद, महल । मगध के एक प्रधान नगर का नाम । **—ताल**–(पुं०), **—ताली**–(स्त्री०) सुपारी का पेड़ ।**—दण्ड**–(पुं०) राजा के हाथ का डंडा विशेष । राजशासन । वह दण्डाज्ञा या सजा जो राजा द्वारा दी गयी हो ।**—दन्त**–(पुं०) सामने का दाँत ।**—दूत** –(पुं०) किसी राज्य या राजा का संदेश (संधि, विग्रह, नैतिक कार्यादि संबंधी) लेकर किसी अन्य राज्य में जाने वाला व्यक्ति, प्रतिनिधि (प्राचीन काल में राजदूत विशेष अवसरों पर भेजे जाते थे, अब स्थायी रूप से सभी देशों में सभी देशों के राजदूत रहा करते हैं)।**—द्रोह**–(पुं०) बगावत, ऐसा काम जिससे राजा या राज्य के अनिष्ट की सम्भावना हो ।**—द्वारिक**–(पुं०) राजा का ड्योढ़ीवान, द्वारपाल ।**—धर्म**– (पुं०) राजा का कर्तव्य । महाभारत के शान्तिपर्व के एक अंश का नाम ।**—धान**– (न०), **—धानिका**,**—धानी**– (स्त्री०) वह प्रधान नगर जहाँ किसी देश का राजा या शासक रहे ।**—नय**–(पुं०), **—नीति**– (स्त्री०) वह नीति जिसका पालन करता हुआ राजा अपने राज्य की रक्षा और शासन को दृढ़ करता है ।**—नील**– (न०) पन्ना ।**—पथ**– (पुं०), **—पद्धति**–(स्त्री०) राजमार्ग ।**—पुत्र**–(पुं०) राजकुमार । राजपूत, क्षत्रिय । बुधग्रह ।**—पुत्रा**–(स्त्री०) राजमाता, जिस स्त्री का पुत्र राजा हो । **—पुत्री**–(स्त्री०) राजकुमारी । राजपूत बाला । जूही । मालती । कड़वा कद्दू । रेणुका । छछूंदर ।**—पुरुष**– (पुं०) राज-कर्मचारी । अमात्य ।**—प्रिया**– (स्त्री०) राजपत्नी, रानी । लाल रंग का एक धान, तिलवासिनी ।**—प्रेष्य**–(पुं०) राजा का नौकर । (न०) राजा की नौकरी ।**—बीजिन्**, **—वंश्य**– (वि०) राजा के वंश का ।**—भृत**– (पुं०) राजा का वेतनभोगी नौकर ।**—भृत्य**–(पुं०) राजा का मंत्री । कोई भी सरकारी नौकर ।**—भोग्य**–(न०) जातीकोष, जावित्री । (पुं०) प्रियाल, चिरौंजी । एक प्रकार का धान ।**—मण्डल**–(न०) राज्य के आस-पास के चारों ओर के राज्य (नीतिशास्त्र में १२ राजमण्डल माने गये हैं —अरि, मित्र, उदासीन, विजिगीषु, पार्ष्णिग्राह, आक्रन्द, विजिगीषु का पुरःसर और पश्चाद्वर्ती, पार्ष्णिग्रहासार, आक्रन्दसार, अरिसम, मित्रसम और मध्यम)। **—मार्ग**–(पुं०) आम सड़क । राजपथ । **—मुद्रा**– (स्त्री०) राजा की मोहर ।**—यक्ष्मन्**–(पुं०) क्षयरोग, तपेदिक ।**—यान** –(न०) पालकी । शाही सवारी । **—योग**– (पुं०) फलित ज्योतिष के अनुसार ग्रहों का एक योग जिसके जन्म-कुण्डली में पड़ने से राजा या राजा के तुल्य होता है । वह योग विशेष जिसका उपदेश पतंजलि ने योगशास्त्र में किया है ।**—रङ्ग**–(न०) चाँदी ।**—राज**– (पुं०) सम्राट्, महाराज । कुबेर का नाम । चन्द्रमा ।**—रीति**– (स्त्री०) काँसा, कसकुट ।**—लक्षण**– (न०) सामुद्रिक के अनुसार वे चिह्न या लक्षण जिनके होने से मनुष्य राजा होता है । राजचिह्न (छत्र, चँवर-आदि) ।**—लक्ष्मी**, **—श्री** –(स्त्री०) राजवैभव । राजा की शक्ति और शोभा । **—वंश**– (पुं०) राजकुल ।**—विद्या**–

(स्त्री०) राजनीति ।—**विहार**–(पु०) राजा के वास करने योग्य बौद्धाश्रम, राजमठ ।—**शासन**–(न०) राजा की आज्ञा ।—**—छत्र**– (न०) सोने की डंडी का छत्र जो राजा के ऊपर ताना जाय । मंगुरी मछली ।—**संसद्**–(स्त्री०) राजसभा, दरबार । न्यायालय, धर्माधिकरण जिसमें स्वयं राजा उपस्थित हो ।—**सदन**–(न०) राजप्रासाद ।—**सर्षप**– (पु०) राई ।—**सायुज्य**– (न०) राजत्व ।—**सारस** (पु०) मयूर ।—**सूय**– (पु०, न०) राजाओं के करने योग्य यज्ञविशेष; 'राजा वै राजसूयेनेष्ट्वा भवति, ।—**स्कन्ध**– (पु०) घोड़ा ।—**स्व**– (न०) राजा की सम्पत्ति । राजकर ।—**हंस**– (पु०) एक प्रकार का हंस जिसे सोना पक्षी भी कहते हैं; 'संपत्स्यन्ते नभसि भवतो राजहंसाः सहायाः' मे० ११ ।—**हस्तिन्**– (पु०) वह हाथी जिस पर राजा सवार हो । बड़ा और सुन्दर हाथी ।

राजन्य—(पु०) [राज्ञोऽपत्यम्, राजन्+यत्] राजपुत्र । क्षत्रिय । [राजति दीप्यते, √राज् +अन्य] राजा । अग्नि । खिरनी का पेड़ ।

राजन्यक—(न०) [राजन्य +वुञ्] क्षत्रियों या योद्धाओं की टोली या समुदाय ।

राजन्वत्—(वि०) [राजन् +मतुप्, वत्व] अच्छे राजा द्वारा शासित; 'राजन्वतीमाहुरनेन भूमिं' र० ६.२२ ।

राजस—(वि०) [स्त्री०—**राजसी**] [रजस् + अण्] रजोगुण सम्बन्धी ।

राजसात्—(अव्य०) [राजन् + साति] राजा के अधिकार में ।

राजि, राजी—(स्त्री०) [√राज् + इन्, पक्षे ङीप्] रेखा, लकीर । पंक्ति, कतार । राई ।

राजिका—(स्त्री०) [राजि+कन् —टाप् वा √राज् + ण्वुल्—टाप्, इत्व] रेखा । पंक्ति । राई । सरसों । क्यारी । मड़ुआ । कठगूलर । एक क्षुद्र रोग जिसमें सरसों के बराबर छोटी-छोटी फुंसियां निकलती हैं, अमौरी । एक परिमाण ।

राजिल—(पु०) [राजि+लच् वा राजि √ला +क] विषरहित और सीधे सर्पों की एक जाति, डोंड़हा; 'किं महोरगविसर्पिविक्रमो राजिलेषु गरुडः प्रवर्तते' र० ११.२७ ।

राजीव—(पु०) [राजी+व] रैया मछली । हिरन विशेष । सारस । हाथी । (न०) नील कमल ।—**अक्ष** (**राजीवाक्ष**)–(वि०) कमललोचन ।

राज्ञी—(स्त्री०) [राजन् +ङीप्, अकारलोप] राजा की पत्नी, रानी ।

राज्य—(न०) [राज्ञो भावः कर्म वा, राजन् +यक्] राज्याधिकार । वह देश जिसमें एक राजा का शासन हो । शासन, हुकूमत ।—**तन्त्र**– (न०) राज्य की शासन-प्रणाली ।—**व्यवहार**– (पु०) राजकाज । शासन ।—**सुख**– (न०) राज्य का सुख या आनन्द ।

राढा—(स्त्री०) आभा, दीप्ति । बंगाल की एक प्राचीन पुरी का नाम ।—'गौडं राष्ट्रमनुत्तमं निरुपमा तत्रापि राढापुरी '—प्रबोधचन्द्रोदय ।

रात्रि, रात्री—(स्त्री०) [राति ददाति कर्मभ्योऽवसरं निद्रादिसुखं वा, √रा +त्रिप्, पक्षे ङीप्] रात, रजनी, निशा । हलदी ।—**अट** (**रात्र्यट**)– (पु०) राक्षस । भूत । प्रेत । चोर ।—**अन्ध** (**रात्र्यन्ध**)– (वि०) जिसे रात में न देख पड़े ।—**कर**– (पु०) चन्द्रमा ।—**चर** [**रात्रिञ्चर** भी होता है] चोर । डाकू । चौकीदार । भूत । प्रेत । राक्षस ।—**ज**–(न०) नक्षत्र, तारा ।—**जल**– (न०) ओस ।—**जागर** –(पु०) कुत्ता ।—**दिवम्** (**रात्रिन्दिवम्**) [रात्रौ च दिवा च द्वन्द्व स०, रात्रेर्मान्तत्वं

निपात्यते] रातदिन । निरन्तर; 'रात्रिंदिवं गन्धवहः प्रयाति' श॰ ५, ४ ।—पुष्प– (न॰) रात में खिलने वाला पुष्प, कुँई ।— पुष्प–(पुं॰) रात हो जाना ।—रक्षा,— रक्षक– (पुं॰) चौकीदार ।—राग–(पुं॰) अन्धकार ।—**वासस्**—(न॰) रात में पहनने की पोशाक । अंधकार । **विगम**– (पुं॰) रात का अवसान, भोर, तड़का, सबेरा । —**वेद**, —**वेदिन्**–(पुं॰) मुर्गा, कुक्कुट । —**हास**–(पुं॰) कुमुद, कुँई ।—**हिण्डक**– (पुं॰) राजाओं के अंतःपुर का पहरेदार ।

राद्ध—(वि॰) [√राध्+क्त] पका हुआ, रोंधा हुआ । मनाया हुआ, राजी किया हुआ । सिद्ध, पूरा किया हुआ । तैयार किया हुआ । पाया हुआ, प्राप्त । सफल-मनोरथ । भाग्यवान् । ऐन्द्रजालिक विद्या में निपुण ।

√राध्—दि॰ पर॰ सक॰ राजी कर लेना, प्रसन्न कर लेना । पूरा करना, सिद्ध करना । तैयार करना । मार डालना । जड़ से नष्ट कर डालना । राध्यति, रात्स्यति, अरात्सीत् । स्वा॰ राध्नोति ।

राध—(पुं॰) [राधा विशाखा तद्वती पौर्णमासी राधी सा अस्मिन् अस्ति, राधी+अण्] वैशाख मास ।

राधा—(स्त्री॰) [राध्नोति साधयति कार्याणि, √राध्+अच्—टाप्] एक प्रसिद्ध गोपी का नाम जिस पर श्रीकृष्ण का बड़ा अनुराग था और जो वृषभानु गोप की कन्या थी; 'तदिमं राधे गृहम्प्रापय' गीत॰ १ । अधिरथ की स्त्री का नाम, जिसने कर्ण को पाला-पोसा था । विशाखा नक्षत्र । बिजली आंवला । अपराजिता । अनुराग, प्रीति । सफलता ।

राधिका—(स्त्री॰) [राधा +कन्–टाप्, इत्व] दे॰ 'राधा' ।

राधेय—(पुं॰) [राधाया अपत्यम्, राधा +ढक्] कर्ण की उपाधि ।

राम—(वि॰) [रमते इति √रम्+ण वा रम्यतेऽनेन, √रम्+घञ्] सुन्दर, मनोहर । कृष्ण-वर्ण, काले रंग का । सफेद । (पुं॰) परशुराम, बलराम, दाशरथि राम । तीन की संख्या । घोड़ा । प्रेमी । वरुण । ईश्वर । बथुआ साग । अशोक वृक्ष ।– **अनुज** (**रामानुज**) (पुं॰) दक्षिण प्रदेश में प्रादुर्भूत एक प्रसिद्ध श्रीवैष्णवाचार्य । श्रीरामचन्द्र जी के छोटे भाई-–भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न । किन्तु विशेष कर लक्ष्मण ।—**अयन** (**रामायण**)–(न॰) श्रीमद्वाल्मीकि-रचित ऐतिहासिक एक काव्य ग्रन्थ, जिसमें २४,००० श्लोक और सात काण्ड हैं ।—**गिरि**– (पुं॰) नागपुर के निकट एक पहाड़ी जिसका वर्णन कालिदास ने मेघदूत काव्य में किया है । इसका आधुनिक नाम रामटेक है । 'स्निग्धच्छायातरुषु वसति रामगिर्याश्रमेषु ।' —मेघदूत ।—**चन्द्र**, —**भद्र**–(पुं॰) दशरथनन्दन श्रीरामचन्द्र जी ।—**दूत** –(पुं॰) हनुमान जी । —**नवमी**– (स्त्री॰) चैत्र-शुक्ला नवमी ।— **सेतु**–(पुं॰) श्रीरामचन्द्र जी का बनाया पुल जो लंका और भारतवर्ष के बीच में है, जिसे आजकल 'एडम्स ब्रिज' कहते हैं ।

रामठ—(न॰, पुं॰)[√रम +अठ्, आतोः वृद्धिः] हींग ।

रामणीयक—(वि॰) [स्त्री॰—**रामणीयकी**] [रमणीय +वुञ्] मनोहर, सुन्दर । (न॰) सौंदर्य, मनोहरता; 'सवारिजे वारिणि रामणीयकम्' कि॰ ४.४ ।

रामा—(स्त्री॰) [रमते रमयति वा √रम् +ण –टाप् वा रमतेऽनया √रम्+घञ् – टाप्] सुंदरी स्त्री । गानकलाकुशल स्त्री । हींग । नदी । ईंगुर । सफेद भटकटैया ।

शीतला । अशोक । घीकुआर । गोरोचन । सुगन्धवाला । गेरू । तमाकू । कायमाण लता । लक्ष्मी । सीता । रुक्मिणी । राधा । आठ अक्षरों का एक वृत्त ।

रामिल—(पुं०) कामदेव । कामुक ।

राव—(पुं०) [√रु+घञ्] चीख, चीत्कार । नाद, गर्जन ।

रावण—(वि०) [रावयति भीषयति सर्वान्, √रु +णिच्+ल्यु] डराने वाला, हाहाकार कराने वाला । (पुं०) [रवणस्यापत्यम्, रवण +अण् वा √रु+णिच् +ल्यु] राक्षसराज दशानन का नाम जिसे लङ्का में जाकर दशरथनन्दन श्रीरामचन्द्र ने युद्ध में मारा था क्योंकि रावण श्रीरामचन्द्र जी की स्त्री सीता को वन में से अकेले में हर ले गया था ।

रावणि—(पुं०) [रावणस्यापत्यम्, रावण +इञ्] रावणपुत्र मेघनाद । रावण का (कोई भी) पुत्र ।

राशि—(पुं०) [अश्नुते व्याप्नोति, √अश् +इण्, रुडागम] ढेर, पुञ्ज । एक ही प्रकार की बहुत सी चीज़ों का समूह । क्रान्ति वृत्त में अवस्थित विशिष्ट तारा- समूह जो संख्या में बारह हैं ।—**चक्र**-(न०) मेष, वृष, मिथुन आदि राशियों का चक्र या मण्डल, भचक्र । —**त्रय**-(न०) त्रैराशिक गणित ।—**भाग**-(पुं०) भग्नांश, किसी राशि का भाग या अंश ।—**भोग**- (पुं०) किसी ग्रह का किसी राशि में रहने का काल ।

राष्ट्र—(न०, पुं०) [राजते, √ राज्+ष्ट्रन्, षत्व] राज्य, साम्राज्य । देश, मुल्क । प्रजा, जाति, 'नेशन' । (न०) किसी भी प्रकार का जातीय या देशव्यापी सङ्कट, ईति ।

राष्ट्रिक—(पुं०) [राष्ट्र+ठक्] किसी देश या राज्य का रहने वाला । किसी राज्य का राजा या शासक ।

राष्ट्रिय—(वि०) [राष्ट्र +घ] किसी राज्य सम्बन्धी । (पुं०) राजा, किसी राज्य का शासक । राजा का साला । यथा—'श्रुतं राष्ट्रियमुखाद्यावदङ्गुलीयकदर्शनम् ।'

√रास्—भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना । चिचियाना । चीखना । भूँकना । रेंकना रासते, रासिष्यते, अरासिष्ट ।

रास—(पुं०) [√रास्+घञ्] कोलाहल, शोरगुल, हल्ला । गोपों की प्राचीन काल की क्रीड़ा जिसमें वे सब मण्डल बनाकर एक साथ नाचते थे । विलास ।—**क्रीड़ा**-(स्त्री०), —**मण्डल**- (न०) श्रीकृष्ण और गोपियों का मण्डलाकार नृत्य ।

रासक—(न०) [रास+कन्] नाटक का एक भेद जो केवल एक अङ्क का होता है । इसमें केवल ५ नट या अभिनय करने वाले होते हैं । इसमें हास्यरस प्रधान होता है और सूत्रधार नहीं आता ।

रासभ—(पुं०) [रासते शब्दायते, √रास् +अभच्] गधा, गर्दभ ।

रास्ना—(स्त्री०) [√रस्+नन्] रासन ओषधि ।

राहित्य—(न०) [रहितस्य भावः, रहित +ष्यञ्] अभाव ।

राहु—(पुं०) [√रह्+उण्] पुराणा- नुसार नौ ग्रहों में से एक जो विप्रचित्ति के वीर्य और सिंहिका के गर्भ से उत्पन्न हुआ था ।—**ग्रसन** -(न०), —**ग्रास**-(पुं०), —**दर्शन** -(न०), —**संस्पर्श**-(पुं०), —**सूतक** -(न०) चन्द्र या सूर्य का ग्रहण ।

√रि—स्वा० पर० सक० मारना, वध करना । रिणोति, रेष्यति, अरैषीत् । तु० पर० सक० जाना । रियति, रेष्यति, अरैषीत् ।

रिक्त—(वि०) [√रिच् + क्त] रीता किया हुआ, खाली किया हुआ । खाली, रीता । रहित, बिना । खोखला (जैसे हाथ की अंजलि) । मोहताज, कंगाल । विभक्त,

वियुक्त। (न०) खाली स्थान। जंगल।—कुम्भ-(न०) रिक्त घट (की ध्वनि), ऐसी भाषा जो समझ में न आवे, गड़बड़ बोली। —पाणि, —हस्त-(वि०) खाली हाथ, रीते हाथ।

रिक्तक—(वि०) [रिक्त+कन्] दे० 'रिक्त'।

रिक्ता—(स्त्री०) [रिक्त+टाप्] चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी तिथियाँ रिक्ता कहलाती हैं।

रिक्थ—(न०) [√रिच्+थक्] उत्तराधिकार या विरासत में मिली हुई सम्पत्ति। धन, सम्पत्ति। सुवर्ण; 'ननु गर्भः पित्र्यं रिक्थमर्हति' श० ६।—आव (रिक्थाव), —ग्राह, —भागिन्,—हर, —हारिन्-(पुं०) उत्तराधिकारी। मामा।

√रिङ्ख्, √रिङ्ग्—भ्वा० पर० सक० रेंगना। धीरे-धीरे जाना। रिङ्खति, रिङ्गति, रिङ्खिष्यति, रिङ्गिष्यति, अरिङ्खीत्, अरिङ्गीत्।

रिङ्खण, रिङ्गण—(न०) [√रिङ्ख्+ल्युट्] [√रिङ्ग्+ल्युट्] रेंगना, घुटनों चलना। विचलित होना।

√रिच्—रु० पर० सक० खाली करना, साफ करना। वञ्चित करना, मुहताज करना। रिणक्ति—रिङ्क्ते, रेक्ष्यति—ते अरैक्षीत्—अरिक्त।

रिटि—(पुं०) [√रि+टिन्] एक प्रकार का बाजा। शिवजी के एक गण का नाम। अग्नि का शब्द। काला नमक।

रिपु—(पुं०) [अनिष्टं रपति, √रप्+कु, इत्व] शत्रु।

√रिफ्—तु० पर० सक० गाली देना। दोषी ठहराना, कलङ्क लगाना। कट-कटाने का शब्द करना। युद्ध करना। मारना। दान देना। रिफति, रेफिष्यति, अरेफीत्।

√रिवि—भ्वा० पर० सक० जाना। रिण्वति, रिण्विष्यति, अरिण्वीत्।

√रिश्—तु० पर० सक० मारना, वध करना। रिशति, रेक्ष्यति, अरेक्षीत्।

√रिष्—भ्वा०, दि०, पर० सक० नुकसान पहुँचाना, अनिष्ट करना। वध करना। नाश करना। रेषति, रेषिष्यति, अरेषीत्। दि० रिष्यति, रेषिष्यति, अरिषत्।

रिष्ट—(वि०) [√रिष्+क्त] नष्ट, बरबाद। घायल, चोटिल। अभागा, बदकिस्मत। (न०) उपद्रव। अनिष्ट, हानि। अभागापन, बदकिस्मती। नाश। पाप। सौभाग्य। समृद्धि।

रिष्टि—(पुं०)[√रिष्+क्तिच्] तलवार। (स्त्री०) [√रिष्+क्तिन्] अमंगल।

√री—दि० आत्म० अक० चूना, टपकना। उमड़ना, बहना। रीयते, रेष्यते, अरेष्ट। क्र्या० पर० सक० जाना। गुर्राना। रिणाति, रेष्यति, अरैषीत्।

रीढा—(स्त्री०) भर्त्सना, फटकार। लज्जा। घृणा।

रीढक—(पुं०) मेरुदण्ड पीठ के बीच की हड्डी, रीढ़ की हड्डी।

रीढा—(स्त्री०) [√रिह्+क्त] अपमान, तिरस्कार।

रीण—(वि०) [√री+क्त] बहा हुआ, क्षरित। चूआ हुआ, टपका हुआ।

रीति—(स्त्री०) [√री+क्तिन् वा क्तिच्] गति, बहाव। नदी, सोता। रेखा, सीमा। ढंग, प्रकार। चलन, रिवाज, रस्म। तर्ज, शैली। पीतल। काँसा। लोहे का मोर्चा, जंग। बरतनों पर कलई। काव्य की आत्मा; यह रीति ओज, माधुर्य और प्रसाद गुण के भेद से—गौड़ी, वैदर्भी और पांचाली तथा वैदर्भी और पाञ्चाली के मध्य की लाटी—चार तरह की है।

√रु—अ० पर० अक० शब्द करना। चिल्लाना। चीखना। चिचियाना। दहाड़ना। गुञ्जार करना। रवीति—रौति, रविष्यति,

अरावीत् । भ्वा० आत्म० सक० जाना । मारना । रवते, रविष्यते, अरविष्ट ।

रुक्म—(वि०) [√रुच् +मक्, कुत्व] चमकीला, चमकदार । (न०) सुवर्ण । लोहा । धतूरा । नागकेशर । रुक्मिणी का एक भाई । **—कारक**–(पुं०) सुनार । **—पृष्ठक**–(वि०) सोने का पानी चढ़ा हुआ, मुलम्मा किया हुआ । **—वाहन**–(पुं०) द्रोणाचार्य का नामान्तर ।

रुक्मिन्—(पुं०) [रुक्म + इनि] राजा भीष्मक के ज्येष्ठ राजकुमार का नाम । **—भित्**—(पुं०) बलराम ।

रुक्मिणी—(स्त्री०) [रुक्मिन्+ ङीप्] राजा भीष्मक की राजकुमारी और श्रीकृष्ण की पटरानी ।

रुग्ण—(वि०) [√रुज्+क्त, तस्य नः] टूटा हुआ, चकनाचूर । झुका हुआ, मुड़ा हुआ । चोटिल, घायल । बीमार, रोगी । बिगड़ा हुआ ।

√रुच्—भ्वा० आत्म० अक० चमकना । रुचना, पसंद आना । रोचते, रोचिष्यते, अरुचत्—अरोचिष्ट ।

रुच्, रुचा—(स्त्री०) [√ रुच् + क्विप्] [रुच् + टाप्] चमक, आभा, दीप्ति; 'रागवासु यत्र च रुचैकतां गताः' शि० १३.५३ । मनोहरता, सुन्दरता । वर्ण, सूरत । रुचि, अभिलाषा । मैना, तोता, बुलबुल आदि पक्षियों का बोलना ।

रुचक—(वि०) [√रुच्+क्वुन्] पसंद आने वाला, प्रसन्नकारक । पाकस्थली सम्बन्धी । तीक्ष्ण, चरपरा । (न०) दाँत । गले में धारण किया जाने वाला आभूषण, हार । पुष्पहार, गजरा । सज्जीखार, काला नमक । (पुं०) बिजौरा नीबू, जँभीरी । कबूतर ।

रुचि—(स्त्री०) [√रुच्+इन्] आभा, दीप्ति, चमक । किरण । वर्ण, रूपरंग । सौन्दर्य । स्वाद, जायका । भूख, बुभुक्षा । अभिलाषा, इच्छा । पसंदगी, अभिरुचि । तल्लीनता, लौ, लगन । **—कर**–(वि०) स्वादिष्ठ । अभिरुचि को उत्पन्न करने वाला । पाकस्थली सम्बन्धी । **—भर्तृ**– (पुं०) सूर्य; 'रुचिभर्तुरस्य विरहाधिगमादिति सन्ध्ययापि सपदि व्यगमि' शि० ९.१७ । पति ।

रुचिर—(वि०) [√रुच्+किरच्] चमकीला, चमकदार । स्वादिष्ठ । मधुर, मीठा । भूख बढ़ाने वाला । शक्तिप्रद, बलवर्द्धक । (न०) केसर । लौंग । मूली ।

रुचिरा—(स्त्री०) [रुचिर+टाप्] एक प्रकार का पीला रोगन । वृत्त विशेष । एक नदी । मूली । लौंग । केसर ।

रुच्य—(वि०) [√रुच् + क्यप्] चमकीला । मनोहर । (पुं०) पति । शालिधान्य, जड़हन । रीठा का पेड़ । (न०) सेंधा नमक ।

√रुज्—तु० पर० सक० टुकड़े-टुकड़े कर डालना । पीड़ित करना । अक० रोगाक्रान्त होना । रुजति, रोक्ष्यति, अरौक्षीत् । चु० पर० सक० हिंसा करना । रोजयति, रोजयिष्यति, अरूरुजत् ।

रुज्, रुजा—(स्त्री०) [√रुज्+क्विप्] [रुज्+ टाप्] भङ्ग । वेदना, कष्ट । रोग, बीमारी । थकावट, श्रान्ति । **—प्रतिक्रिया** (**रुक्प्रतिक्रिया**)–(स्त्री०) रोग की चिकित्सा । **—भेषज** (**रुग्भेषज**)– (न०) दवा । **—सद्मन्** (**रुक्सद्मन्**)–(न०) मल, विष्ठा ।

√रुट्—भ्वा० पर० सक० आघात करना । रोठति, रोठिष्यति, अरोठीत् ।

√रुण्ट्—भ्वा० पर० सक० चुराना । रुण्टति, रुण्टिष्यति, अरुण्टीत् ।

√रुण्ठ्—भ्वा० पर० सक० चुराना । रुण्ठति, रुण्ठिष्यति, अरुण्ठीत् ।

√रुण्ठ्—भ्वा० पर० सक० चुराना। रुण्ठति, रुण्ठिष्यति, अरुण्ठीत्।

रुण्ड—(पुं०, न०) [√रुण्ड् + अच्] सिर शून्य शरीर, कबन्ध, धड़ मात्र; 'वेल्लद्-भैरवरुण्डमुण्डनिकरैः' उ० ५.६।

रुत—(न०) [√रु + क्त] पक्षियों का शब्द। शब्द, ध्वनि।—**व्याज**-(पुं०) उत्तेजक उद्घोष। हास्योद्दीपक अनुकरण।

√रुद्—अ० पर० अक० रोना। चिल्लाना। विलाप करना। गुर्राना। भूँकना। दहाड़ना। चीखना। रोदिति, रोदिष्यति, अरुदत्—अरोदीत्।

रुदन—(न०) [√रुद्+ल्युट्] रोना, रोदन। चीत्कार। विलाप।

रुद्ध—(वि०) [√रुध् + क्त] रुका हुआ। वेष्टित, घिरा हुआ। मुँदा हुआ।

रुद्र—(वि०) [√रुद्+णिच् +रक्] भयानक, भयङ्कर। (पुं०) एकादश संख्यक एक प्रकार के गण देवता। ये शिव जी के अपकृष्ट रूप हैं। शंकर इनमें मुख्य है। गीता में कहा भी है:—'रुद्राणां शङ्करश्चास्मि।' शिव जी का नाम।—**अक्ष** (रुद्राक्ष)-(पुं०) एक प्रसिद्ध बड़ा पेड़। इसी वृक्ष के फल के बीजों (रुद्राक्ष) की माला बनायी जाती है।—**आवास** (रुद्रावास)-(पुं०) रुद्र का निवासस्थान, कैलास पर्वत। काशी। श्मशान।—**प्रिया**—(स्त्री०) पार्वती। हरड़।

रुद्राणी—(स्त्री०) [रुद्र+ङीप्, आनुक्] रुद्र की पत्नी अर्थात् पार्वती जी।

√रुध्—रु० उभ० सक० रोकना, थामना। बाधा डालना। रोक रखना। ताले में बंद कर रखना। बंधन में रखना, क़ैद करना। घेरा डालना, छिपाना, ढकना। पीड़ित करना, सताना। रुणद्धि—रुन्धे, रोत्स्यति—ते, अरुधत्—अरौत्सीत्—अरुद्ध। दि० आत्म० सक० चाहना। अनुरुध्यते, अनुरोत्स्यते, अन्वरुद्ध।

रुधिर—(न०) [√रुध् + किरच्] रक्त, खून, लहू। केसर। गेरू। (पुं०) मंगल ग्रह। एक प्रकार का रत्न।

√रुप्—दि० पर० सक० मोहित करना। रुप्यति, रोपिष्यति, अरुपत्।

रुमा—(स्त्री०) सुग्रीव की स्त्री।

रुरु—(पुं०) [√रु+क्रुन्] काला हिरन; 'बिभ्रतो रुरुचेष्टितमूर्मिषु' र० ९.५१। एक मुनि। विश्वेदेवों का एक गण। एक फलदार वृक्ष। एक भैरव।

√रुश्—तु० पर० सक० घायल करना। वध करना। रुशति, रोक्ष्यति, अरौक्षीत्।

रुशत्—(वि०) [√रुश् +शतृ] चोट पहुँचाने वाला, अप्रिय, बुरा लगने वाला (जैसे शब्द)।

√रुष्—दि० भ्वा० पर० अक० रूठना, अप्रसन्न होना, नाराज़ होना। (सक०) घायल करना। वध करना। चिढ़ाना, छेड़-छाड़ करना। रुष्यति, रोषिष्यति, अरुषत्। भ्वा० रोषति, रोषिष्यति, अरोषीत्।

रुष्, रुषा—(स्त्री०) [√रुष् + क्विप्] [रुष्+टाप्] क्रोध, गुस्सा, रोष; 'निर्बन्ध-सञ्जातरुषा' र० ५.२१।

√रुह्—भ्वा० पर० अक० उगना, अङ्कुरित होना। उत्पन्न होना। ऊपर को उठना, ऊपर चढ़ना। (घाव का) भरना। रोहति, रोक्ष्यति, अरुक्षत्।

रुह्, रुह—(वि०) [√रुह् + क्विप्] [√रुह्+क] उत्पन्न होने वाला, निकलने वाला।

रुहा—(स्त्री०) [रुह+टाप्] दूर्वा या दूब घास।

√रूक्ष्—चु० पर० अक० रूखा होना या करना। रूक्षयति, रूक्षयिष्यति, अरुरूक्षत्।

रूक्ष—(वि०) [√रूक्ष् + अच्] जो चिकना न हो, अस्निग्ध । रूखा । असम, ऊबड़-खाबड़ । कड़ा, कठिन । मैला-कुचैला । निष्ठुर, संगदिल । सूखा, नीरस ।

रूक्षण—(न०) [√रूक्ष् +ल्युट्] सुखाने या रूखा करने की क्रिया । मुटाई कम करने की क्रिया ।

रूढ—(वि०) [रुह्+क्त] उगा हुआ, निकला हुआ । अङ्कुरित । उत्पन्न । वृद्धि को प्राप्त । उगा हुआ (जैसे कोई ग्रह) । ऊपर को चढ़ा हुआ । अविभाज्य । व्याप्त, फैला हुआ । प्रचलित, प्रसिद्ध । सर्वजन-स्वीकृत । निश्चित किया हुआ । खोजा हुआ । (पुं०) प्रकृति और प्रत्यय की अपेक्षा न करके अर्थ का बोध कराने वाला शब्द; जैसे—घट, गौ आदि ।

रूढि—(स्त्री०) [√रुह् + क्तिन्] जन्म, उत्पत्ति । वृद्धि, बढ़ती । उभार, उठान । ख्याति, प्रसिद्धि । प्रथा, चाल । शब्द की शक्ति जो यौगिक न होने पर भी अर्थ स्पष्ट करती है ।

√रूप्—चु० पर० सक० बनाना, गढ़ना । रंगमञ्च पर रूप धरना । चिह्लानी करना, ध्यान से देखना । तलाश करना, ढूँढ़ना । ख्याल करना, विचार करना । निश्चय करना । परीक्षा करना । अन्वेषण करना । नियत करना । रूपयति, रूपयिष्यति, अरूरुपत् ।

रूप—(न०) [√रूप्+अच्] शक्ल, सूरत, आकार; 'मानुषीषु कथं वा स्यादस्य रूपस्य सम्भवः' श० १.२६ । कोई भी पदार्थ जो देख पड़े । सुन्दर पदार्थ, खुबसूरत शक्ल । स्वभाव, प्रकृति । रीति, ढंग । पहचान, लक्षण । जाति, प्रकार, किस्म । मूर्ति, प्रतिमा । सादृश्य, समानता । आदर्श, नमूना । किसी संज्ञा या क्रिया की विभक्तियाँ और उसके लकारों के रूप । एक की संख्या । पूर्ण संख्या, पूर्णाङ्क । नाटक, रूपक । किसी ग्रन्थ को कण्ठस्थ करके अथवा बार-बार पढ़ कर, उसे अवगत करने की क्रिया । मवेशी, पशु । शब्द, ध्वनि ।—**अध्यक्ष** (**रूपाध्यक्ष**)- (पुं०) टकसाल का प्रधान अधिकारी । कोषाध्यक्ष ।—**अभिग्राहित** (**रूपाभिग्राहित**)-(वि०) वह जो अपराध करते हुए गिरफ्तार किया गया हो ।—**आजीवा** (**रूपाजीवा**)-(स्त्री०) वेश्या, रंडी ।—**आश्रय** (**रूपाश्रय**)-(पुं०) अत्यन्त सुन्दर पुरुष ।—**इन्द्रिय** (**रूपेन्द्रिय**)-(न०) वह इन्द्रिय जो रूप-वर्ण का ज्ञान सम्पादन करती है अर्थात् आँख ।—**उच्चय** (**रूपोच्चय**)-(पुं०) सुन्दर रूपों का संग्रह ।—**कार**, —**कृत्**-(पुं०) शिल्पी ।—**तत्त्व**-(न०) पैतृक सम्पत्ति । परमसत्ता ।—**धर**-(वि०) (किसी की) शक्ल का बना हुआ, स्वाँग बनाया हुआ ।—**नाशन**-(पुं०) उल्लू ।—**लावण्य**- (न०) सौन्दर्य, सुन्दरता ।—**विपर्यय**- (पुं०) भद्दापन, कुरूपता, बदसूरती ।—**शालिन्**- (वि०) सुन्दर ।—**सम्पद्**, —**सम्पत्ति**- (स्त्री०) सौन्दर्य, उत्तम रूप ।

रूपक—(न०) [रूप+कन् वा √रूप्+ण्वुल्] आकृति, सूरत, शक्ल । मूर्ति, प्रतिकृति । चिह्लानी । लक्षण । किस्म, जाति । वह काव्य जो पात्रों द्वारा खेला जाता है, दृश्यकाव्य । एक अर्थालङ्कार जिसमें उपमेय में उपमान के साधर्म्य का आरोप कर, उसका वर्णन उपमान के रूप से किया जाता है । जैसे 'बाहु-लता', 'पाणि-पद्म' आदि । मान या तौल-विशेष । चाँदी । रुपया ।—**अतिशयोक्ति** (**रूपकातिशयोक्ति**)-(स्त्री०) अतिशयोक्ति का एक

भेद जिसमें उपमेय, वाचक-धर्मादि का लोप कर केवल उपमान का उल्लेख किया जाता है।—**ताल**– (पुं०) सङ्गीत में "दोताला" नामक एक ताल।

रूपण—(न०) [√रूप् + ल्युट्] आरोप करना। आलङ्कारिक वर्णन। अन्वेषण। परीक्षा। प्रमाण।

रूपवत्—(वि०) [रूप+मतुप्, वत्व] रंग या रूप वाला। शरीरधारी। सुन्दर, मनोहर।

रूपवती—(स्त्री०) [रूपवत् +ङीप्] सुन्दरी स्त्री।

रूपिन्—(वि०) [रूप+इनि] सदृश। शरीरधारी। सुन्दर।

रूप्य—(वि०) [प्रशस्तं रूपम् अस्ति अस्य, रूप+यत्] सुन्दर, मनोहर। उपमेय। (न०) [आहतं रूपम् अस्ति अस्य, रूप +यप्] आहत सुवर्ण, चाँदी। रुपया।

√रूष्—भ्वा० पर० सक० सजाना, शृङ्गार करना। मालिश करना। उबटन करना। पर० ढक जाना, आच्छादित होना। काँपना। फट जाना, तड़क जाना। रूषति, रूषिष्यति, अरूषीत्।

रूषित—(वि०) [√रूष्+क्त] सजा हुआ। लेप किया हुआ। उबटन किया हुआ। ढका हुआ। दगीला, दागी। दरदरा। कुटा हुआ।

रे—(अव्य०) [√रा+के] सम्बोधनात्मक अव्यय।

√रेक्—भ्वा० आत्म० सक० शंका करना। रेकते, रेकिष्यते, अरेकिष्ट।

रेखा—(स्त्री०) [√लिख् + अङ–टाप्, रलयोः ऐक्यात् लस्य रत्वम्] लकीर, धारी। पंक्ति, कतार। रूपरेखा, ढाँचा। धवाने की क्रिया। छल, कपट।—**अंश (रेखांश)**– (पुं०) देशान्तर, याम्योत्तर वृत्त का एक-एक अंश।—**गणित**–(न०) गणित का वह विभाग जिसमें रेखाओं से कतिपय सिद्धान्त निर्धारित किये गये हैं।

रेच—(वि०) [√रिच्+घञ्] दे० 'रेचक'।

रेचक—(वि०) [स्त्री०—**रेचिका**] [√रिच् +णिच् +ण्वुल्] दस्तावर, दस्त लाने वाला। फेफड़ों को साफ करने वाला, साँस निकालने वाला। (पुं०) पूरक प्राणायाम का उल्टा, पेट में रुकी हुई साँस को नथुने से निकालने की क्रिया। पिचकारी। जवाखार। (न०) जमालगोटा।

रेचन—(न०), **रेचना**– (स्त्री०) [√रिच् +णिच्+ल्युट्] [√रिच् +णिच्+युच् –टाप्] खाली करने की क्रिया। कम करने की क्रिया, घटाने की क्रिया। साँस बाहर निकालने की क्रिया। मलप्रणाली साफ करने की क्रिया। मल।

रेचित—(वि०) [√रिच्+णिच्+क्त] साफ किया हुआ। रीता किया हुआ। (न०) घोड़े की दुलकी की चाल। नृत्य में हस्त-चालन।

√रेट्—भ्वा० उभ० सक० रटना। रेटति–ते, रेटिष्यति–ते, अरेटीत्– अरेटिष्ट।

रेणु—(पुं०, स्त्री०) [√री +नु] रज, धूल, रेत, बालू। पुष्प-पराग। कणिका, अत्यन्त लघु परिमाण। विडंग।

रेणुका—(स्त्री०) [रेणु√कै+क–टाप्] परशुराम जी की माता का नाम।

रेतस्–(न०) [रीयते क्षरति, √री +असुन्, तुट्] वीर्य, धातु। पारा।

√रेप्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। रेपते, रेपिष्यते, अरेपिष्ट।

रेप—(वि०) [रेप्यते निन्द्यते, √रेप्+घञ्] तिरस्करणीय, नीच। निष्ठुर। कृपण।

रेफ—(वि०) [√रिफ् + अच्] नीच, कमीना। दुष्ट। (पुं०) [√रिफ् +घञ् वा र+ इफन्] रकार का वह रूप जो अन्य अक्षर के पूर्व आने पर उसके ऊपर रहता है। ध्वनि-विशेष। अनुराग, स्नेह।

√रेव्—भ्वा० आत्म० अक० उछलते चलना । रेवते, रेविष्यते, अरेविष्ट ।

रेवट–(पुं०) [√रेव् +अटन्] शूकर । बाँस की छड़ी । भँवर ।

रेवत—(पुं०) [रेव्+अतच्] बिजौरा नीबू, जँभीरी । अमलतास । एक राजा, बलरामजी का श्वशुर ।

रेवती—(स्त्री०) [रेवत+ङीष्] सत्ताइसवें नक्षत्र का नाम । २७ की संख्या । एक नदी । दुर्गा । [रेवतस्य अपत्यं स्त्री, रेवत+अण् पृषो० न वृद्धिः, ङीप्] बलराम जी की स्त्री का नाम; 'रेवतीवदनोच्छिष्ट-परिपूतपुटे दृशौ' शि० २.१६ ।

रेवा—(न०) [रेव्+अच्–टाप्] नर्मदा नदी का नाम ।

√रेष्—भ्वा० आत्म० अक० दहाड़ना । गुर्राना । चीखना । हिनहिनाना । रेषते, रेषिष्यते, अरेषिष्ट ।

रेषण–(न०),**रेषा**-(स्त्री०) [√रेष्+ल्युट्] [√रेष्+अ–टाप्]दहाड़ । हिनहिनाहट ।

√रै—भ्वा० पर० अक० शब्द करना । रायति, रास्यति, अरासीत् ।

रै—(पुं०) [√रा+डै] धन-दौलत, सम्पत्ति ।[**कर्त्ता—राः, रायौ, रायः**]

रैवत, रैवतक—(पुं०)[रेवत्या अदूरो देशः, रेवती+अञ् वा रेवती + अण्] [रैवत +कन्] रेवती नदी के पास का देश । द्वारका के समीपवर्ती एक पर्वत का नाम । स्वर्णालु वृक्ष । शिव । एक दैत्य जिसकी गणना बालग्रहों में है । रेवती के गर्भ से उत्पन्न पाँचवें मनु ।

रोक—(न०) [√रु+कन्] छिद्र । नाव । जहाज । [√रुच्+घञ्] नकद रुपया, रोकड़ । नकद दाम देकर चीज खरीदना । रुचि, कान्ति ।

रोग—(पुं०) [√रुज् +घञ्] बीमारी ।—**आयतन (रोगायतन)**– (न०) शरीर ।—**आर्त (रोगार्त)**–(वि०) रोग से दुःखी, व्याकुल ।—**शिल्पिन्**– (पुं०) सोनालू का पेड़ ।—**हर**–(वि०) रोग दूर करने वाला । (न०) दवा ।—**हारिन्**– (त्रि०) आरोग्य-कर । (पुं०) वैद्य ।

रोचक—(वि०) [√रुच्+णिच्+ण्वुल्] रुचिकारक, रुचने वाला । मनोरंजक । भूख बढ़ाने वाला । (न०) भूख । वह दवा जिससे, भूख बढ़े । केला । राजपलाण्डु । अवदंश, गजक । (पुं०) काँच की चूड़ियाँ या अन्य चीजें बनाने वाला ।

रोचन—(वि०) [स्त्री०—**रोचनी** या **रोचना**] [√रुच् +ल्यु वा णिच्+ल्यु] अच्छा लगने वाला । शोभावान् । दीप्ति-मान् । (पुं०) काला सेमर । कमीला । सफेद सहिजन । प्याज । अमलतास । करंज । अनार । रोगों का अधिष्ठातृ देवता । स्वारोचिष मन्वन्तर के इन्द्र । कामदेव का एक बाण । गोरोचन; "त्वं रोचनागौर-शरीरयष्टिः' र० ६.६५ ।

रोचनक—(पु०) [रोचन + कन्] जंबीरी नीबू । वंशलोचन । दे० 'रोचन' ।

रोचमान—(वि०) [√रुच्+शानच्] चमकीला । प्रिय । सुन्दर, मनोहर । (न०) घोड़े की गर्दन के बालों का जूड़ा ।

रोचिष्णु—(वि०) [√रुच्+इष्णुच्] चम-कीला । हर्षित, प्रफुल्लित । अच्छे-अच्छे कपड़ों, अलंकारों आदि से जगमगाता हुआ । भूख को बढ़ाने वाला ।

रोचिस्—(न०) [√रुच्+इसिन्] चमक, दमक, तेज; 'शरच्चन्द्रमरीचिरोचिषम्' शि० १.५ ।

रोटिका—(स्त्री०) [√रुट् + ण्वुल्–टाप्, इत्व] फुलकी, हलकी, छोटी रोटी ।

√रोड्—भ्वा० पर० अक० पागल होना । रोडति, रोडिष्यति, अरोडीत् ।

रोदन—(न०) [√रुद्+ल्युट्] रोना । आँसू ।

रोदस्—(न०) [स्त्री०—**रोदसी**] [√रुद् +असुन्] स्वर्ग और पृथिवी ।

रोध—(पुं०) [√रुध् +घञ्] रोक, रुकावट । अड़चन । घेरा । बाँध । [√रुध् +अच्] किनारा, तट ।

रोधन—(न०) [√रुध् + ल्युट्] रोक, प्रतिबन्ध । दमन । (पुं०) [√रुध्+ल्यु] बुध ग्रह । (वि०) रोकने वाला ।

रोधस्—(न०) [√रुध्+असुन्] नदी का तट या बाँध । नदी का कगारा । समुद्रतट । **वक्रा (रोधोवक्रा),—वती (रोधोवती)**—(स्त्री०) नदी । वेग से बहने वाली नदी ।

रोध्र—(पुं०) [√रुध्+रन्] लोध्र वृक्ष, लोध का पेड़ । (पुं०, न०) पाप । जुर्म, अपराध ।

रोप—(पुं०) [√रुह् + णिच्+अच् वा √रुप्+अच्] दे० 'रोपण' । ठहराव, रुकावट । छेद । बाण ।

रोपण—(न०) [√रुह् + णिच्+ल्युट् वा √रुप्+ल्युट्] उठाने, लगाने या खड़ा करने की क्रिया । वृक्ष लगाने की क्रिया । घाव पुरना । घाव पुरने वाली दवा लगाने की क्रिया । मोहन, बुद्धि फेरना ।

रोमक—(पुं०) [रोमन्+कन्] रोम नगर या देश । रोमनिवासी । (न०) [रोमन् √कै +क] सांभरी नमक । चुम्बक ।—**आचार्य (रोमकाचार्य)**—(पुं०) एक विख्यात ज्योतिर्विद् ।—**पत्तन**—(न०) रोम नगरी ।—**सिद्धान्त**—(पुं०) रोमकाचार्य का सिद्धान्त, ज्योतिष के मुख्य पाँच सिद्धान्तों में से एक ।

रोमन्—(न०) [√रु+मनिन्] रोआँ, रोंगटा । (पुं०) रोम देश । उस देश का निवासी ।—**अञ्च (रोमाञ्च)**—(पुं०) आनन्द या भय से शरीर के रोंगटों का खड़ा होना ।—**अञ्चित (रोमाञ्चित)**—(वि०) पुलकित, हृष्टरोम ।—**अन्त (रोमान्त)**—(पुं०) हथेली की पीठ पर के बाल ।—**आली (रोमाली), —आवलि (रोमावलि), —आवली (रोमावली)**—(स्त्री०) रोमों की पंक्ति जो पेट के बीचों बीच नाभि से ऊपर की ओर गयी हो ।—**उद्गम (रोमोद्गम), —उद्भेद (रोमोद्भेद)**—(पुं०) रोंगटों का खड़ा होना ।—**कूप**—(पुं०, न०), —**गर्त**—(पुं०) शरीर के चाम के ऊपर वे छिद्र जिनमें से रोएँ निकले हुए होते हैं, लोमछिद्र ।—**केशर, —केसर**—(पुं०) चँवर, चामर, चौरी ।—**पुलक**—(पुं०) रोंगटों का खड़ा होना ।—**भूमि**—(पुं०) चमड़ा, चर्म ।—**रन्ध्र**—(पुं०) रोमकूप ।—**राजि, —राजी, —लता**—(स्त्री०) उदर पर की रोमावली ।—**विकार**—(पुं०),—**विक्रिया**—(स्त्री०), —**विभेद**—(पुं०) रोमाञ्च, रोंगटों का खड़ा होना ।—**हर्ष**—(पुं०) रोंगटों का खड़ा होना; 'वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते' भग० १.२९ ।—**हर्षण**—(पुं०) व्यास देव के एक शिष्य का नाम, जिसने कई एक पुराणों की कथा शौनक को सुनायी थी । (न०) रोओं का खड़ा होना ।

रोमन्थ—(न०) [रोम मथ्नाति, रोम√मन्थ् +अण्, पृषो० साधुः] जुगाली, खाये हुए को चबाना; 'छायाबद्धकदम्बकं मृगकुलं रोमन्थमभ्यस्यतु' श० २.८ । (लाक्ष०) बार-बार की आवृत्ति, पुनरावृत्ति ।

रोमश—(वि०) [रोमाणि सन्ति अस्य, रोमन् +श] जिसके बहुत रोएँ हों । (पुं०) भेड़ा । शूकर । रतालू ।

रोरुदा—(स्त्री०) [√रुद् +यङ् +अ —टाप्] अत्यधिक रोदन या विलाप ।

रोलम्ब—(पुं०) [रु+विच्, रौः गुञ्जन् सन् लम्बते स्थानात् स्थानान्तरं गच्छति, रो√लम्ब् +अच्] भौंरा; 'तस्या रोलम्बावली केशजालं' दश० ।

रोष—(पुं०) [√रुष् +घञ्] क्रोध, गुस्सा। विद्वेष, विरोध । चिढ़ । लड़ाई की उमंग, जोश ।

रोषण—(वि०) [स्त्री०—**रोषणी**] [√रुष् +ल्यु] क्रुद्ध । (पुं०) कसौटी, पारा । ऊसर जमीन, नूनही जमीन ।

रोह—(पुं०) [√ रुह् +अच्] उठान, चढ़ाव । ऊपर चढ़ना । कली, अङ्कुर ।

रोहण—(न०) [√रुह् +ल्युट्] ऊपर चढ़ने, सवार होने की क्रिया । अंकुरित होना, उगना । ऊपर की ओर बढ़ना । वीर्य । (पुं०) लङ्का के एक पर्वत का नाम, विदूराद्रि ।—**द्रुम**-(पुं०) चन्दन का पेड़ ।

रोहन्त—(पुं०) [√रुह् +झच्] वृक्ष ।

रोहन्ती—(स्त्री०) [रोहन्त+ङीष्] लता, बेल ।

रोहि—(पुं०) [√रुह् +इन्] मृग विशेष। धार्मिक पुरुष । वृक्ष । बीज ।

रोहिणी—(स्त्री०) [√रुह् + इनन्-ङीप्] लाल गौ । चौथे नक्षत्र का नाम । वसुदेव की एक पत्नी का नाम जिसके गर्भ से बलराम जी की उत्पत्ति हुई थी । हाल की रजस्वला स्त्री । बिजली । करंज । रीठा । सफेद कौआ। ठोंठी । लाल गदहपुरना । गंभारी । मजीठ । ब्राह्मी बूटी । जरा सबी पीली हर्रे । नववर्षीया कन्या ।—**पति**, —**प्रिय**,—**वल्लभ**- (पुं०) चन्द्रमा ।—**रमण**- (पुं०) साँड़ । चन्द्रमा ।—**शकट**- (पुं०) रोहिणी नक्षत्र, जिसका आकार शकट जैसा है ।

रोहित—(वि०) [स्त्री०—**रोहिता** या **रोहिणी**] [√रुह् +इतन्] लाल रंग का । (न०) रक्त । केसर । (पुं०) लाल रंग । लोमड़ी । मृग विशेष । रोहू मछली ।—**अश्व** (**रोहिताश्व**)- (पुं०) अग्नि ।

रोहिष—(पुं०) [√रुह् +इषन्] रूसा घास । गधे से मिलता-जुलता एक मृग। रोहू मछली।

रौक्ष्य—(न०) [रूक्ष+ष्यञ्] कड़ाई, सख्ती । रूखापन, निष्ठुरता ।

रौद्र—(वि०) [स्त्री०—**रौद्रा**, **रौद्री**] रुद्रस्य इदम् वा रुद्रो देवता अस्य, रुद्र+अण्] रुद्र संबंधी । रुद्र की तरह उग्र, क्रोधाविष्ट । भयंकर। (न०) काव्य के नौ रसों में से एक जिसका स्थायी भाव कोप है । क्रोध । (पुं०) रुद्र का पूजक । धूप, घाम । हेमन्त ऋतु । यम । कार्तिकेय । बृहस्पति के ६० संवत्सरों में से ५४वाँ वर्ष । एक केतु । आर्द्रा नक्षत्र । एक साम ।

रौप्य—(वि०) [रूप्य +अण्] चाँदी का बना हुआ । (न०) चाँदी ।

रौम—(न०) [रुमा +अण्] साँभर नमक।

रौरव—(वि०) [स्त्री०—**रौरवी**] [रुरु +अण्] रुरु के चर्म का बना हुआ। भयङ्कर। बेईमान । (पुं०) एक प्रकार का कबाब । इक्कीस नरकों में से पाँचवाँ ।

रौहिणी—(पुं०) [रोहिण + अण्] चन्दन वृक्ष । वट का वृक्ष ।

रौहिणेय—(पुं०) [रोहिणी +ढक्] बछड़ा। बलराम जी । बुधग्रह। (न०) पन्ना, मरकत मणि ।

रौहिष—(पुं०) [√रुह् +टिषच्, धातोश्च वृद्धिः] रोहू मछली । हिरन विशेष । (न०) एक प्रकार की घास ।

ल

ल—संस्कृत या नागरी वर्णमाला का अट्ठाइसवाँ व्यञ्जन वर्ण । इसके उच्चारण में संवार, नाद और घोष प्रयत्न होने के कारण यह अल्पप्राण माना गया है । (पुं०) [√ली + ड] इन्द्र । छन्दःशास्त्र में लघु मात्रा का संकेत। व्याकरण में समय-विभाग के लिये पाणिनि ने दस लकार माने हैं, उन्हीं का यह अर्थवाची है । [दस लकार ये हैं—लट् लिट् लुट् लृट् लेट् लोट् लङ् लिङ् लुङ् और लृङ् ।]

√लक्—चु० उभ० सक० चखना। पाना, प्राप्त करना। लाकयति-ते, लाकयिष्यति-ते, अलीलकत्-त।

लक—(पुं०) [√लक् + अच्] माथा, ललाट। वन्य चावलों की बाल।

लकच, लकुच—(पुं०) [√लक् + अचन्] [√लक्+उचन्] बड़हर का पेड़।

लकुट—(पुं०) [√लक् + उटन्] लाठी। छड़ी।

लक्तक—(पुं०) [रक्त √कै+क, रस्य लत्वम् वा लक्यते हीनैः आस्वाद्यते अनुभूयते, √लक् +क्त+कन्] महावर। चिथड़ा, लत्ता, फटा कपड़ा।

लक्तिका—(स्त्री०) [लक्तक+टाप्, इत्व] छिपकली। बिस्तुइया।

√लक्ष्—चु० उभ० सक० देखना। पहचानना। चिह्न करना। परिभाषा निरूपण करना। गौण अर्थ बतलाना। निशाना लगाना। सोचना, विचारना। लक्षयति-ते, लक्षयिष्यति-ते, अललक्षत्-त।

लक्ष—(न०) [√लक्ष् +अच्] एक लाख की संख्या। चिह्न, निशाना। बहाना। पैर। मोती। अस्त्र का एक प्रकार का संहार। (वि०) एक लाख, सौ हजार: 'इच्छति शती सहस्रं सहस्री लक्षमीहते' सुभा०। **—अधीश (लक्षाधीश)**– (पुं०) लखपती आदमी।

लक्षक—(वि०) [√लक्ष् + णिच्+ण्वुल्] लक्ष्य कराने वाला, जता देने वाला। (पुं०) संबंध या प्रयोजन से अर्थ प्रकट करने वाला शब्द। (न०) [लक्ष+कन्] एक लाख की संख्या।

लक्षण—(न०) [√लक्ष्+णिच् + ल्यु वा √लक्ष्+ल्युट्] किसी वस्तु की वह विशेषता जिससे वह पहचाना जाय। रोग की पहचान। उपाधि। परिभाषा। शरीर पर का कोई शुभ या अशुभ चिह्न: 'कोसला-वहा भर्तुरलक्षणाहम्' र० १४.५। नाम। विशिष्टता, उत्तमता। लक्ष्य, उद्देश्य। निर्धारित कर (या चुंगी का महसूल)। आकार, प्रकार, किस्म। कार्य, क्रिया। कारण। विषय, प्रसङ्ग। बहाना, मिस। (पुं०) सारस। **—अन्वित (लक्षणान्वित)** –(वि०) शुभ लक्षणों से युक्त। **—भ्रष्ट**– (वि०) अभागा, बदकिस्मत। **—सन्निपात**– (पुं०) अङ्कन, दागने की क्रिया।

लक्षणा—(स्त्री०) [√लक्ष् + युच्–टाप् वा लक्षण+अच् –टाप्] लक्ष्य, उद्देश्य। शब्द की वह शक्ति जिससे उसका अर्थ लक्षित हो। शब्द की वह शक्ति जिससे उसका साधारण अर्थ से भिन्न और वास्तविक अर्थ प्रकट हो। यह शक्ति दो प्रकार की होती है। अर्थात् "निरूढ" और "प्रयोजनवती"। हंसी। सारसी। भटकटैया (छोटी)।

लक्षण्य—(वि०) [लक्षण+यत्] चिह्न का काम देने वाला। जिसके अच्छे चिह्न हों, अच्छे चिह्नों वाला। (पुं०) दैवशक्ति-सम्पन्न आदर्श पुरुष।

लक्षित—(वि०) [√लक्ष्+क्त] देखा हुआ। लक्ष्य किया हुआ। निरूपित। वर्णित। कहा हुआ। चिह्नित। पहिचाना हुआ। परिभाषा किया हुआ। निशाना बँधा हुआ। अन्य प्रकार से प्रकट किया हुआ। ढूँढ़ा हुआ, तलाश किया हुआ।

लक्ष्मण—(वि०) [लक्ष्मन् +अण्] लक्षण युक्त। भाग्यवान्, खुशकिस्मत। समृद्धिशाली, हर प्रकार से भरा-पूरा। (पुं०) महाराज दशरथ के एक पुत्र का नाम जो सुमित्रा रानी के गर्भ से उत्पन्न हुए थे। दुर्योधन का एक पुत्र। सारस। **—प्रसू**– (स्त्री०) लक्ष्मण-जननी, सुमित्रा रानी।

लक्ष्मणा—(स्त्री०) [लक्ष्मण+टाप्] कृष्ण की आठ पटरानियों में से एक। दुर्योधन

की पुत्री । हंसी । श्वेत कंटकारी । एक पुनर्वा जड़ी ।

लक्ष्मन्—(न०) [√लक्ष् + मनिन्] चिह्न, निशान; 'व्यक्तलक्ष्म परिभोगमण्डनम्' र० १९.३० । दाग । विशेषता । परिभाषा । (पुं०) सारस पक्षी । लक्ष्मण का नाम ।

लक्ष्मी—(स्त्री०) [लक्षयति पश्यति उद्योगिनम्, √ लक्ष् +ई, मुट्] धन की अधिष्ठात्री देवी, कमला, श्री । सौभाग्य । समृद्धि, सम्पत्ति । सफलता । सौन्दर्य । शोभा । राजशक्ति । वीर पत्नी । मोती । हल्दी । **—ईश (लक्ष्मीश)**- (पुं०) विष्णु का नाम । आम का पेड़ । भाग्यवान् आदमी ।**—कान्त** -(पुं०) विष्णु भगवान् । राजा ।**—गृह**- (न०) लाल कमल का फूल ।**—ताल**- (पुं०) एक प्रकार का ताड़ का पेड़ ।**—नाथ** -(पुं०) विष्णु का नाम ।**—पति**-(पुं०) विष्णु । राजा । सुपाड़ी का पेड़ । लवंग का वृक्ष ।**—पुत्र**- (पुं०) घोड़ा । कामदेव ।**—पुष्प**-(पुं०) मानिक, चुन्नी । (न०) कमल । **—पूजन**-(न०) लक्ष्मी जी का उस समय का पूजन जिस समय वर और वधू प्रथम बार (वर के) घर में प्रवेश करते हैं ।**—फल** -(पुं०) बेल वृक्ष ।**—रमण**-(पुं०) श्री विष्णु भगवान् ।**—वसति**- (स्त्री०) लाल कमल पुष्प ।**—वार**- (पुं०) गुरुवार ।**—वेष्ट** (पुं०) तारपीन ।**—सख**-(पुं०) लक्ष्मी के प्रिय पात्र या कृपापात्र । राजा या धनी व्यक्ति ।**—सहज,-सहोदर**-(पुं०) चन्द्रमा ।

लक्ष्मीवत्—(वि०) [लक्ष्मी+मतुप्, वत्व] भाग्यवान्, खुशकिस्मत । धनी, धनवान् । सुन्दर, खूबसूरत ।

लक्ष्य—(वि०) [√लक्ष्+ण्यत्] दिखलाई पड़ने वाला । पहचाना जाने वाला । जानने लायक, वह जिसका पता चल सके । चिह्नित किया जाने वाला । निरूपण किया जाने वाला । निशाना लगाने के योग्य; 'उत्कर्षः स च धन्विनां यदिषवः सिध्यन्ति लक्ष्ये चले' श० २.५ । घुम-घुमाकर बतलाने योग्य । विचारणीय । (न०) निशाना । चिह्न । वस्तु जो लक्षणवती हो । गौण अर्थ, लक्षण से उपलब्ध अर्थ । बहाना । एक लाख । **—भेद, —वेध**-(पुं०) लक्ष्य का भेदन करना, निशानाबाजी ।**—सुप्त** —(वि०) देखने में सोया हुआ, मिथ्यासुप्त ।**—हन्**-(पुं०) तीर ।

√लख्, √लङ्ख्—भ्वा० पर० सक० जाना । लखति, लखिष्यति, अलाखीत् – अलखीत् । लङ्खति, लङ्खिष्यति, अलङ्खीत् ।

√लग्—भ्वा० पर० अक० लगना, चिपकना, चिपटना । अनुरक्त होना । मिल जाना, एक हो जाना । सक० पीछे लगना या पीछा करना । रोक रखना, काम में लगा रखना । लगति, लगिष्यति, अलगीत् ।

लगड—(वि०) [√ लग् + अलच्, डलयोः ऐक्यात् डः] मनोहर, सुन्दर ।

लगित—(वि०) [√लग् + क्त] चिपटा हुआ, लगा हुआ । जुड़ा हुआ, सम्बन्धयुक्त । प्राप्त, पाया हुआ ।

लगुड, लगुर, लगुल—(पुं०) [√ लग् + उलच्, पक्षे लस्य डः तथा रः] लाठी । डंडा । एक तरह का छोटा लौह-दंड । लाल कनेर ।

लग्न—(वि०) [लग् + क्त] चिपटा हुआ, लगा हुआ । दृढ़तापूर्वक पकड़ा हुआ । छुआ हुआ, स्पर्श किया हुआ । सम्बन्धयुक्त । (पुं०) मदमस्त हाथी । भाट, बंदीजन । (न०) ज्योतिष में दिन का उतना अंश जितने में किसी एक राशि का उदय रहता है । वह समय जब सूर्य किसी राशि में जाता है । शुभ कार्य करने का शुभ

मुहूर्त ।—**मास**–(पुं०) शुभ मास जिसमें शुभकार्य विवाहादि हो सकें ।

लग्नक—(पुं०) [लग्न + कन्] प्रतिभू, ज़ामिन, वह जो ज़मानत करे ।

लघिमन्—(पुं०) [लघु + इमनिच्] हलकापन, गुरुत्वाभाव । ओछापन, नीचता । विचारहीनता । अष्टसिद्धियों में से चौथी सिद्धि, जिसके प्राप्त होने पर मनुष्य बहुत छोटा या हलका बन सकता है ।

लघिष्ठ—(वि०) [अयम् एषाम् अतिशयेन लघुः, लघु+इष्ठन्] सब में से बहुत छोटा या हलका ।

लघीयस्—(वि०) [अयम् अनयोः अतिशयेन लघुः, लघु+ईयसुन्] दो में से बहुत छोटा या हलका ।

लघु—(वि०) [स्त्री०—लघ्वी या लघु] [√लङ्घ्+कु, नलोप] हलका; 'रिक्तः सर्वो भवति हि लघुः' मे० २० । छोटा । संक्षिप्त । अकिञ्चित्कर । कमीना, नीच । निर्बल, कमज़ोर । अभागा । चंचल । तेज़ । सरल । सहज में पचने वाला । ह्रस्व (जैसे स्वर) । मंद, कोमल । प्रिय, वाञ्छनीय । विशुद्ध, साफ । (पुं०) काला अगर । समय का एक परिमाण, जिसमें १५ क्षण होते हैं । तीन प्रकार के प्राणायामों में से बारह मात्राओं वाला प्राणायाम । व्याकरण में एक मात्रिक स्वर–अ, इ, उ, ऋ । छंदःशास्त्रोक्त लघु गणभेद । रोगमुक्त, स्वस्थ । चाँदी । स्पृक्का, असबरग । खस ।—**आशिन्** (**लघ्वाशिन्**), —**आहार** (**लघ्वाहार**)–(वि०) कम खाने वाला । —**उक्ति** (**लघूक्ति**)–(स्त्री०) संक्षिप्त रूप से कहने का ढंग ।—**उत्थान** (**लघूत्थान**), —**समुत्थान**–(वि०) तेज़ी से काम करने वाला ।—**काय** –(वि०) हलके शरीर का । (पुं०) बकरा ।—**क्रम**–(वि०) तेज़ चलने वाला ।—**खट्विका**–(स्त्री०) छोटी चारपाई ।—**गोधूम**–(पुं०) छोटी जाति का गेहूं ।—**चित्त**, —**चेतस्**, —**मनस्**, —**हृदय**– (वि०) हलके मन का । चंचलचित्त ।— **जङ्गल** –(पुं०) लवा पक्षी ।—**द्राक्षा**– (स्त्री०) किशमिश मेवा । —**द्राविन्**– (वि०) सहज में पिघलने वाला ।—**पञ्चक**,—**पञ्चमूल**–(न०) गोखरू, शालिपर्णी, छोटी कटाई, पिठवन, बड़ी कटेहरी–इन पाँच वनस्पतियों की जड़ों का संघात जो उपयोगी औषध है । —**पाक**–(वि०) सहज में पकने वाला । —**पुष्प**–(पुं०) भुई कदंब वृक्ष ।—**बदर**–(पुं०), —**बदरी**–(स्त्री०) छोटा बेर । —**भव**– (पुं०) नीच योनि का ।—**भोजन**–(न०) हलका भोजन ।—**मांस**–(पुं०) तीतर ।—**मूलक**–(न०) छोटी मूली । —**लय**– (न०) खस । पीला वाला या लामज नाम की घास ।—**वृत्ति**–(वि०) बदचलन । हलका, अव्यवस्थित ।—**समुत्थ** –(पुं०) वह राजा या राज्य जो युद्ध के लिये शीघ्र तैयार किया जा सके ।—**हस्त**–(वि०) हलके हाथ का, कुशल । (पुं०) कुशल तीरंदाज़ ।

लघुता—(स्त्री०), **लघुत्व**–(न०) [लघु +तल्–टाप्] [लघु+त्व] हलकापन । छुटाई; 'इन्द्रोऽपि लघुतां याति स्वयम्प्रख्यापितैर्गुणैः' । तुच्छता । तिरस्कार, अप्रतिष्ठा । तेज़ी, फुर्ती । संक्षिप्तता । सरलता । विचारहीनता । लंपटता ।

लघ्वी—(स्त्री०) [लघु+ङीप्] नज़ाकत से भरी औरत, कोमलाङ्गी स्त्री । छोटी गाड़ी ।

लङ्का—(स्त्री०) [रमन्तेऽस्याम्, √रम्+क—टाप्; रस्य लः] राक्षसराज रावण की राजधानी का नाम । वेश्या, रंडी । शाखा । काला चना । शिम्बी धान्य ।—**अधिप** (**लङ्काधिप**),—**अधिपति** (**लङ्काधिपति**),—

ईश (लङ्केश),—ईश्वर (लङ्केश्वर),—नाथ,—पति–(पुं०) रावण या विभीषण ।
—दाहिन्–(पुं०) श्रीहनुमान जी ।

√लङ्ख्—दे० 'लख्' ।

लङ्खनी—(स्त्री०) [√लङ्ख् + ल्युट्–ङीप्] लगाम ।

√लङ्ग्—भ्वा० पर० सक० जाना । लङ्गति, लङ्गिष्यति, अलङ्गीत् ।

लङ्ग—(पुं०) [√लङ्ग्+अच्] मेल, संग । प्रेमी, आशिक ।

लङ्गक—(पुं०) [लङ्ग + कन्] प्रेमी, आशिक ।

लङ्गल—(न०) हल ।

लङ्गूल—(न०) पूँछ ।

√लङ्घ्—भ्वा० आत्म० सक० अक० उछलना, कूदना, कुलाँच मारना । सवार होना । चढ़ना । पार जाना, नाँघना । लंघन करना, उपवास करना । सुखा डालना । आक्रमण करना । अनिष्ट करना । लङ्घते, लङ्घिष्यते, अलङ्घिष्ट ।

लङ्घन—(न०) [√लङ्घ् + ल्युट्] फाँदना, लाँघना; 'अनोऽयमुच्चैःपदलङ्घनोत्सुकः' कु० ५.६४ । कुलाँच मारते जाना । चढ़ना । आक्रमण करना । सीमा के बाहर होना । तिरस्कार करना । समुहाना । अपराध । हानि, अनिष्ट । लंघन, कड़ाका । घोड़े की बहुत तेज चाल ।

लङ्घित—(वि०) [√लङ्घ् +क्त] लाँघा हुआ । आर-पार गया हुआ । भंग किया हुआ । तिरस्कृत अपमानित ।

√लच्छ्—भ्वा० पर० सक० चिह्न करना । लच्छति, लच्छिष्यति, अलच्छीत् ।

√लज्—भ्वा० पर० सक० भूनना । लजति, लजिष्यति, अलजीत् — अलाजीत् । तु० आत्म० अक० लजाना, शर्माना । लजते, लजिष्यते, अलजिष्ट ।

√लज्ज्—तु० आत्म० अक० लजाना, शर्माना । लज्जते, लज्जिष्यते, अलज्जिष्ट ।

लज्जका—(स्त्री०) जंगली कपास का वृक्ष ।

लज्जा—(स्त्री०) [√लज्ज् + अ–टाप्] लाज, शर्म । मान-मर्यादा, छुईमुई का पेड़ ।
—अन्वित (लज्जान्वित)–(वि०) लज्जालु, लजीला ।—शील–(वि०) लजीला ।— रहित, —शून्य, —हीन–(वि०) बेहया, बेशर्म ।

लज्जालु—(वि०) [√लज्ज् +आलुच्] लजीला, शर्मीला । (पुं०, स्त्री०) लजालू या लज्जावन्ती का पौधा ।

लज्जित—(वि०) [√लज्ज्+क्त] शर्मीला ।

√लञ्ज्—भ्वा०, चु० पर० सक० दोषी ठहराना, भर्त्सना करना । भूनना । अनिष्ट करना । मारना । देना । बोलना । अक० मजबूत होना । बसना । चमकना । लञ्जति, लञ्जिष्यति, अलञ्जीत् । चु० लञ्जयति । लञ्जापयति ।

लञ्ज—(पुं०) [√लञ्ज् + अच्] पाद, पैर । काँछ । पूँछ ।

लञ्जा—(स्त्री०) [लञ्ज+टाप्] प्रवाह, धार । छिनाल स्त्री । लक्ष्मी जी का नाम । निद्रा ।

लञ्जिका—(स्त्री०) [√लञ्ज् + ण्वुल्–टाप्, इत्व] रंडी, वेश्या ।

√लट्—भ्वा० पर० अक० बालक बन जाना । लड़कों की तरह काम करना । बालकों की तरह बातें करना, तुतलाना । रोना, चिल्लाना । लटति, लटिष्यति, अलाटीत्—अलटीत् ।

लट—(पुं०) [√लट्+अच्] मूर्ख । अपराध । डाकू ।

लटक—(पुं०) [√लट् + क्वुन्] दगाबाज । बदमाश, गुंडा । लौंडा । लड़का ।

लटभ—(वि०) मनोज्ञ, मनोहर; 'अतिक्रान्तः कालो लटभललनाभोगसुलभः' भर्तृ० ३.३२।

लट्ट—(पुं०) दुष्ट, बदमाश।

लट्व—(पुं०) [√लट् +क्वन्] घोड़ा। नवैया लड़का। एक जाति। एक राग।

लट्वा—(स्त्री०) [लट्व+टाप्] द्यूतक्रीड़ा। अलक, बालों की लट। व्यभिचारिणी स्त्री। तूलिका, चित्र बनाने की कूँची। गौरैया। एक प्रकार का करंज। कुसुंभ। एक प्रकार का बाजा।

√लड्—भ्वा० पर० सक० खेलना, क्रीड़ा करना। उछालना। फेंकना। दोषी ठहराना। जीभ लपलपाना। तंग करना। लडति, लडिष्यति, अलाडीत्—अलडीत्। चु० पर० सक० थपकी लगाना। चिढ़ाना। लाडयति, लाडयिष्यति, अलीलडत्।

लडह—(वि०) खूबसूरत, सुन्दर।

लड्ड—(वि०) दुर्जन।

लड्डु, लड्डुक—(पुं०) गोल बँधी हुई मिठाई, मोदक, लड्डू।

√लण्ड्—चु० पर० सक० उछालना, ऊपर फेंकना। बोलना। लण्डयति—लण्डति, लण्डयिष्यति—लण्डिष्यति, अललण्डत्—अलण्डीत्।

लण्ड—(न०) [√लण्ड्+घञ्] विष्ठा, मल।

लता—(स्त्री०) [लतति वेष्टयति, √लत्+अच्—टाप्] बेल, लतर; 'लतेव संनद्धमनोज्ञपल्लवा' र० ३.७। शाखा, डाली। प्रियङ्गु लता। माधवी लता। मुश्क लता। दूब। चाबुक, कोड़ा। मोतियों की लड़ी। नोक, रेखा। सुन्दरी स्त्री।—**अन्त** (**लतान्त**)—(न०) फूल।—**अम्बुज** (**लताम्बुज**)—(न०) ककड़ी।—**अर्क** (**लतार्क**)—(पुं०) हरा प्याज।—**अलक** (**लतालक**)—(पुं०) हाथी।—**गृह**—(पुं०, न०) कुंज, लतामण्डप।—**जिह्व**, —**रसन**—(पुं०) साँप।—**तरु**—(पुं०) साल वृक्ष। नारंगी का पेड़।—**पनस**—(पुं०) तरबूज।—**प्रतान**—(पुं०) बेल का सूत।—**भवन**—(न०) लतागृह, लतामण्डप।—**मणि**—(पुं०) मूँगा।—**मृग**—(पुं०) बंदर। वनमानुस।—**यष्टि**—(स्त्री०) मजीठ।—**यावक**—(न०) अङ्कुर, अँखुआ।—**वलय**—(न०) लतामण्डप।—**वृक्ष**—(पुं०) नारियल का वृक्ष।—**वेष्ट**—(पुं०) कामशास्त्र में वर्णित सोलह प्रकार के रतिबंधों में से तीसरा।—**वेष्टन**, —**वेष्टितक**—(न०) एक प्रकार का आलिङ्गन।—**साधन**—(न०) एक तंत्रोक्त साधना जिसका प्रधान अधिकरण लता अर्थात् स्त्री है।

लतिका—(स्त्री०) [लता+कन्—टाप्, ह्रस्व, इत्व] छोटी लता। मोती की लड़ी।

लत्तिका—(स्त्री०) [√लत् + तिकन्—टाप्] बिस्तुइया, छिपकली।

√लप्—भ्वा० पर० सक० बोलना, बातचीत करना। बिना प्रयोजन बकबक करना। काना-फूँसी करना। लपति, लपिष्यति, अलापीत्—अलपीत्।

लपन—(न०) [√लप् + ल्युट्] वार्तालाप, बातचीत। मुख।

लपित—(वि०) [√लप् +क्त] कहा हुआ। (न०) कथन, वाणी।

लब्ध—(वि०) [√लभ्+क्त] प्राप्त, पाया हुआ। लिया हुआ, वसूल किया हुआ। जाना हुआ, समझा हुआ। (भाग देकर) निकाला हुआ। (पुं०) दस प्रकार के दासों में से एक।—**अन्तर** (**लब्धान्तर**)—(न०) वह जिसे प्रवेश करने का अधिकार प्राप्त हो गया हो। वह जिसे अवसर प्राप्त हुआ हो।—**उदय** (**लब्धोदय**)—(वि०) उत्पन्न। वह जिसका भाग्योदय हुआ हो।—**काम**—(वि०) वह जिसकी कामना सिद्ध हो गयी हो, सफल-मनोरथ; 'नाथमे

लब्धकामः' मे० ।—**कीर्ति**– (वि०) जिसने यश पाया हो । प्रसिद्ध, प्रख्यात । —**चेतस्**, —**संज्ञ**–(वि०) होश में आया हुआ ।—**जन्मन्**– (वि०) उत्पन्न ।—**नामन्**, —**शब्द**–(वि०) प्रसिद्ध, प्रख्यात । —**नाश**–(पुं०) जो पास हो उसका नाश होना या खो जाना ।—**प्रशमन**–(न०) मिले हुए धन का सत्पात्र को दान । उपार्जित धन की रक्षा ।—**लक्ष**,—**लक्ष्य**–(वि०) वह जिसका निशाना ठीक बैठा हो । निशाना लगाने में निपुण ।—**वर्ण**–(वि०) विद्वान्, पण्डित । प्रसिद्ध, प्रख्यात ।—**विद्य**–(वि०) विद्वान् ।—**सिद्धि** –(वि०) वह जिसका मनोरथ पूर्ण हो गया हो । जो किसी कला में पूर्ण निपुणता प्राप्त कर चुका हो ।

लब्धि—(स्त्री०) [√लभ्+क्तिन्] प्राप्ति । लाभ, मुनाफ़ा । गणित में) लब्धाङ्क ।

लब्धिम—(वि०) [√लभ्+क्त्रि, मप्] पाया हुआ, प्राप्त किया हुआ ।

√लभ्—भ्वा० आत्म० सक० प्राप्त करना, पाना । अधिकार में करना, कब्ज़ा करना । लेना, पकड़ना, थामना । (खोई हुई वस्तु को) ढूंढ़ निकालना, पुनः प्राप्त करना । जानना । सीखना । पहचानना । लभते, लप्स्यते, अलब्ध ।

लभन—(न०) [√लभ्+ल्युट्] प्राप्त करने की क्रिया । पहचानने की क्रिया ।

लभस—(न०, पुं०) [√लभ् + असच्] घोड़ा बांधने की रस्सी । (पुं०) धन-दौलत । याचक ।

लभ्य—(वि०) [√लभ्+यत्] पाने योग्य; 'प्रांशुलभ्ये फले मोहादुद्बाहुरिव वामनः' र० १.३ । पता पाने योग्य । न्यायमुक्त, उचित । बोधगम्य ।

लमक—(पुं०) [√रम्+क्वुन्, रस्य लत्वम्] प्रेमी, आशिक । लंपट ।

लम्पट—(वि०) [√रम्+अटन्, पुक्, रस्य लः] मरभुका, लालची । कामुक, ऐयाश (पुं०) व्यभिचारी या कामी पुरुष ।

लम्फ—(पुं०) [√लम्फ् +घञ्] उछाल, कूद ।

लम्फन—(पुं०) [√लम्फ्+ल्युट्] उछलना, कूदना ।

√लम्ब्—भ्वा० आत्म० अक० लटकना । किसी के साथ लगना या लम्बी होना । नीचे उतरना । डूबना; 'लम्बमाने दिवाकरे' शि० । पीछे रह जाना । विलंब करना । ध्वनि करना । लम्बते, लम्बिष्यते, अलम्बिष्ट ।

लम्ब—(वि०) [√लम्ब् + अच्] दीर्घ, लंबा । बड़ा । प्रशस्त । (पुं०) वह खड़ी रेखा जो किसी बेंड़ी रेखा पर इस तरह गिरे कि उसके साथ वह समकोण बनावे उसे लंब रेखा कहते है । नर्तक । पति । घूस ।—**उदर** (**लम्बोदर**)–(वि०) बड़े पेट का । (पुं०) गणेश जी । मरभुका, भोजनभट्ट ।—**ओष्ठ** (**लम्बोष्ठ, लम्बौष्ठ**)– (पुं०) ऊंट ।—**कर्ण** –(पुं०) गधा । खरगोश । बकरा । हाथी । बाज पक्षी । राक्षस ।—**जठर**–(वि०) बड़े पेट वाला ।—**पयोधरा**–(स्त्री०) स्त्री जिसके कुच लंबे और नीचे लटकते हों ।—**स्फिच्**–(वि०) भारी या बड़े चूतड़ों वाला ।

लम्बक—(पुं०) [लम्ब +कन्] लंबा । लंब-रेखा । ज्योतिष में एक प्रकार का योग; इनकी संख्या १५ है । किसी पुस्तक का कोई अध्याय ।

लम्बन—(पुं०) [√लम्ब् +ल्यु] शिव जी । कफ । (न०) झालर । गले का हार जो नाभि तक लटकता हो । [√लम्ब् +ल्युट्] झूलने की क्रिया । अवलम्ब, आश्रय ।

लम्बा—(स्त्री०) [लम्ब+टाप्] दुर्गा । लक्ष्मी ।

लम्बिका—(स्त्री०) [√लम्ब् + ण्वुल् –टाप्, इत्व] गले के अन्दर की घंटी या कौआ।

लम्बित—(वि०) [√लम्ब्+क्त] लटकता हुआ, झूलता हुआ। झुका हुआ, नीचे बैठा हुआ। आश्रित, टिका हुआ।

लम्बुषा—(स्त्री०) सात लड़ी का हार, सतलड़ी।

लम्भ—(पुं०) [√लभ् + घञ्, नुम्] प्राप्ति, उपलब्धि। मिलन। पुनः प्राप्ति। लाभ।

लम्भन—(न०) [√लभ् + ल्युट्, नुम्] प्राप्ति, उपलब्धि। पुनः प्राप्ति।

लम्भित—(वि०) [√लभ् +क्त, नुम्] प्राप्त किया हुआ, हासिल किया हुआ। प्रदत्त, दिया हुआ। वर्द्धित, बढ़ाया हुआ। प्रयोग किया हुआ। लालन-पालन किया हुआ। कथित। सम्बोधित।

√लय्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। लयते, लयिष्यते, अलयिष्ट।

लय—(पुं०) [√ली+अच्] विलीन होना, लीनता। एकाग्रता। नाश, विनाश। संगीत की लय [जो तीन प्रकार की मानी गयी है, द्रुत, मध्य और विलम्बित] 'किसलयैः सलयैरिव पाणिभिः' र० ९.३५। संगीत का ताल। विश्राम। विश्रामस्थान, आलय, वासस्थान। मन की सुस्ती, मानसिक अकर्मण्यता। आलिङ्गन।—**आरम्भ** (लयारम्भ),—**आलम्भ** (लयालम्भ)-(पुं०) नट, नचैया।—**काल**-(पुं०) प्रलयकाल।—**गत**- (वि०) गला हुआ, पिघला हुआ।—**पुत्री**-(स्त्री०) नाचने वाली, नर्तकी।

लयन—(न०) [√ली+ल्युट्] चिपकना, लिपटना। आराम, विश्राम। विश्राम गृह।

√लर्ब्—भ्वा० पर० सक० जाना। लर्बति, लर्बिष्यति, अलर्बीत्।

√लल्—चु० उभ० अक० खेलना, क्रीड़ा करना, आमोद-प्रमोद करना। सक० चाहना। लालयति—ते, लालयिष्यति—ते, अलीललत् —त।

लल—(वि०) [√लल् + अच्] खिलाड़ी, क्रीड़ाप्रिय। अभिलाषी।

ललत्—(वि०) [√लल् +शतृ] खिलाड़ी। मुँह से बाहर निकाले हुए।—**जिह्व** (ललजिह्व)-(वि०) जिह्वा मुँह के बाहर निकाले हुए। भयानक। (पुं०) कुत्ता। ऊँट।

ललन—(न०) [√लल्+ल्युट्] क्रीड़ा, खेल, आमोद। जिह्वा को मुँह से बाहर निकालना।

ललना—(स्त्री०) [लल्+णिच् + ल्यु –टाप्] स्त्री, रमणी। स्वेच्छाचारिणी स्त्री। जिह्वा।—**प्रिय**- (पुं०) कदम्ब वृक्ष।

ललनिका—(स्त्री०) [ललना+कन्–टाप्, ह्रस्व, इत्व] छोटी अथवा अभागी स्त्री।

ललन्तिका—(स्त्री०) [√लल् + शतृ –ङीप् +कन्– टाप्, ह्रस्व] लंबी माला। छिपकली या गिरगिट।

ललाक—(पुं०) [√लल् +आकन्] लिङ्ग, जननेन्द्रिय।

ललाट—(न०) [ललम् ईप्साम् अटति आप्नोति, लल √अट्+अण्] माथा, भाल, मस्तक।—**अक्ष** (ललाटाक्ष) -(पुं०) शिवजी का नाम।—**पट्ट**-(पुं०),—**पट्टिका**- (स्त्री०) माथे का चपटा भाग। मुकुट, किरीट।—**लेखा**-(स्त्री०) कपाल का लेख, भाग्यलेख।

ललाटक—(न०) [ललाट+कन्] माथा। सुन्दर माथा।

ललाटन्तप—(वि०) [ललाट √ तप् +खश्, मुम्] माथे को तपाने वाला। अत्यन्त पीड़ाकारी; 'तिमिरललाटन्तपनिष्ठुराक्षरा' नै० १:१३८। (पुं०) सूर्य।

ललाटिका—(स्त्री०) [ललाटे भवः अलङ्कारः, ललाट + कन्—टाप्, इत्व] माथे का एक आभूषण, टीका । माथे पर लगा हुआ तिलक ।

ललाटूल—(वि०) वह जिसका माथा ऊँचा या सुन्दर हो ।

ललाम—(वि०) [स्त्री०—**ललामी**] [√लड् (विलासे) +क्विप्, लम् अमति प्राप्नोति, √अम्+अण्, डस्य लत्वम्] प्रधान, श्रेष्ठ । रमणीय, सुन्दर । लाल रंग का, सुर्ख । (न०) माथे पर धारण किये जाने वाले आभूषण (यथा बेनाबेंदिया, कटियाँ, झूमर) [यह शब्द पुंलिङ्ग भी होता है, जब यह भूषण के अर्थ में प्रयुक्त किया जाता है] । कोई भी सर्वोत्तम जाति की वस्तु । माथे का चिह्न या निशान । चिह्न, निशानी, झंडा, पताका । पंक्ति, रेखा । पूँछ, दुम । गरदन के बाल, अयाल । प्राधान्य । गौरव । सौन्दर्य । सींग, शृङ्ग । (पुं०) घोड़ा ।

ललामक—(न०) [ललाम+कन्] माथे पर धारण किया जाने वाला पुष्पगुच्छ अथवा पुष्पमाला ।

ललामन्—(न०) आभूषण, सजावट । कोई भी सर्वोत्तम वस्तु । ध्वज । साम्प्रदायिक तिलक । चिह्न । पूँछ, दुम ।

ललित—(वि०) [√लल् + क्त] क्रीड़ासक्त, खिलाड़ी । कामुक । भोजनभट्ट । मनोहर, सुन्दर; 'प्रियशिष्या ललिते कलाविधौ' र० ८.६७ । मनोमुग्धकारी, उत्तम । अभिलषित । कोमल । सीधा । कँपकँपा, हिलता-डोलता हुआ । (न०) खेल, क्रीड़ा । आमोद- प्रमोद । शृङ्गार रस में कायिक हाव या अङ्गचेष्टा जिसमें सुकुमारता के साथ भौं, आँख, हाथ, पैर आदि अंग हिलाये जाते हैं । सौन्दर्य, मनोहरता । कोई भी स्वाभाविक किया । भोलापन, अल्हड़पन । —**अर्थ** (**ललितार्थ**)—(वि०) जिसका सुन्दर अर्थ हो ।—**पद**—(वि०) जिसमें सुन्दर पद या शब्द हो । —**प्रहार**—(पुं०) प्यार की थपथपी ।

ललिता—(स्त्री०) [ललित+टाप्] रमणी । स्वेच्छाचारिणी स्त्री । मुश्क, कस्तूरी । दुर्गा देवी का रूप । अनेक प्रकार के वृक्ष ।—**पञ्चमी**—(स्त्री०) आश्विन-शुक्ला पंचमी जब ललिता देवी का पूजन होता है ।—**सप्तमी**— (स्त्री०) भाद्रमास के शुक्ल पक्ष की सप्तमी ।

लव—(न०) [√ लू + अप्] लौंग, लवंग । जायफल, जातीफल । (पुं०) कटाई । पके हुए अनाज की कटाई । विभाग, टुकड़ा, खण्ड । बहुत थोड़ी मात्रा । ऊन । केश । क्रीड़ा । काल का एक मान, ३६ निमेष का समय । भिन्न के ऊपर की राशि (यथा $\frac{3}{4}$ में ४ की संख्या लव है)। लग्नांश । विनाश । श्रीरामचन्द्र जी के एक पुत्र का नाम ।

लवङ्ग—(न०) [√लू+अङ्गच्] लौंग । (पुं०) लौंग का वृक्ष ।—**कलिका**—(स्त्री०) लौंग ।

लवङ्गक—(न०) [लवङ्ग+कन्] लौंग ।

लवण—(वि०) [लवणः रसः अस्ति अस्मिन्, लवण+अच्] नमकीन, खारा । [√लू+ल्यु, नि० णत्व] सलोना, सुन्दर । काटने वाला । (पुं०) नमक, लोन । मधु दैत्य का पुत्र, लवणासुर । एक नरक ।—**अन्तक** (**लवणान्तक**)—(पुं०) शत्रुघ्न । —**अब्धि** (**लवणाब्धि**)—(पुं०) खारा समुद्र ।—**अम्बुराशि** (**लवणाम्बुराशि**)—(पुं०) समुद्र ।—**अम्भस्** (**लवणाम्भस्**)—(पुं०) समुद्र । (न०) खारा जल ।—**आकर** (**लवणाकर**)—(पुं०) नमक की खान । खारे जल का कुण्ड अर्थात् समुद्र । —**आलय** (**लवणालय**)—(पुं०) समुद्र । —**उत्तम** (**लवणोत्तम**)—(न०) सेंधा

नमक। शोरा।—उद (लवणोद)—(पुं०) खारे जल का समुद्र।—उदक (लवणोदक), —उदधि ((लवणोदधि),—जल—(पुं०) लवण समुद्र।—मेह—(पुं०) प्रमेह का एक भेद।—समुद्र—(पुं०) खारे जल का समुद्र।

लवणा—(स्त्री०) [लवण+टाप्] दीप्ति, आभा। सौन्दर्य। चँगेरी। अमलोनी साग। महाज्योतिष्मती लता। चुक। नूनी नदी।

लवणिमन्—(पुं०) [लवण+इमनिच्] नमकीनी। सलोनापन, सौन्दर्य।

लवन—(न०) [√लू+ल्युट्] काटना, छेदन। खेत की कटाई, लुनाई। (अनाज का) काटना। हँसिया।

लवली—(स्त्री०) [लव√ला+क—ङीष्] पीले रंग की एक लता; 'मया लब्धः पाणिर्ललितलवलीकन्दलनिभः' उ० ३.४०।

लवित्र—(न०) [लूयते अनेन, √लू+इत्र] हँसिया।

√लष्—चु० उभ० अक० किसी कलाकौशल को सीखने का अभ्यास करना। लषयति—ते।

लशुन, लशून—(पुं०,न०) [अश्यते भुज्यते, √अश् + उनन्, लशादेश] [रसेन ऊनः; रस्य लत्वम्, पृषो० सस्य शः, अकारलोपः] लहसुन।

√लष्—दि०, भ्वा० उभ० सक० अभिलाषा करना, चाहना। दि० लष्यति—ते, भ्वा० लषति—ते, लषिष्यति—ते, अलषीत्—अलाषीत्—अलषिष्ट।

लषित—(वि०) [√लष् + क्त] अभिलषित, चाहा हुआ।

लष्व—(पुं०) [√लष्+वन्] नट। अभिनयकर्ता।

√लस्—भ्वा० पर० अक० चमकना। निकलना, उदय होना, प्रकट होना। खेलना। नाचना। भटकना। सक० आलिंगन करना। लसति, लसिष्यति, अलासीत्—अलसीत्।

लसा—(स्त्री०) [√लस् + अच्—टाप्] केसर। हल्दी।

लसिका—(स्त्री०) [√लस् +अच् +कन्—टाप्, इत्व] थूक, लार।

लसित—(वि०) [√लस् +क्त] सुशोभित। खेला हुआ। प्रकट हुआ, प्रादुर्भूत।

लस्त—(वि०) [√लस् + क्त] क्रीड़ित। सुशोभित। आलिङ्गित। निपुण, दक्ष।

लस्तक—(पुं०) [लस्त +कन्] धनुष का मध्यभाग, मूठ।

लस्तकिन्—(पुं०) [लस्तक+इनि] धनुष, कमान।

लहरि, लहरी—(स्त्री०) [लेन इन्द्रेण इव ह्रियते ऊर्ध्वगमनाय, ल√हृ + इन्, पक्षे ङीष्] लहर, तरङ्ग; 'करेणोत्क्षिप्तास्ते जननि विजयन्तां लहरयः' गं० ४०।

√ला—अ० पर० सक० लेना। पाना, प्राप्त करना। लाति, लास्यति, अलासीत्।

लाकुटिक—(वि०) [स्त्री०—**लाकुटिकी**] [लकुट+ठञ्] लठैत, लाठी धारण किये हुए। (पुं०) सन्तरी, पहरेदार।

लाक्षकी—(स्त्री०) सीताजी का नाम।

लाक्षणिक—(वि०) [स्त्री०—**लाक्षणिकी**] [लक्षण+ठक्] वह जो लक्षणों का ज्ञाता हो, लक्षण जानने वाला। जिससे लक्षण प्रकट हो। [लक्षणा+ठक्] गौणार्थवाची। गौण, अपकृष्ट। पारिभाषिक। (पुं०) पारिभाषिक शब्द।

लाक्षण्य—(वि०) [लक्षण +ष्यञ्] लक्षण सम्बन्धी। लक्षण जानने या बतलाने वाला।

लाक्षा—(स्त्री०) [√लक्ष् + अ—टाप् या √राज्+स, लत्व—टाप्] लाख, लाह; 'निष्ठ्यूतश्चरणोपभोगसुलभो लाक्षारसः केनचित्' श० ४.५। वह कीड़ा जो लाख

उत्पन्न करता है।— तरु,— वृक्ष-(पुं०) पलाश, ढाक।—रक्त- (वि०) लाख के रंग में रँगा हुआ।— प्रसादन-(पुं०) लाल लोध्र वृक्ष।

लाक्षिक—(वि०) [स्त्री०—**लाक्षिकी**] [लाक्षा +ठक्] लाख सम्बन्धी, लाख का बना हुआ। लाखी रंग का। [लक्ष+ठक्] लाख (संख्या) सम्बन्धी।

√**लाख्**—भ्वा० पर० अक० सूख जाना। काफी होना। सक० सजाना। देना। रोकना। लाखति, लाखिष्यति, अलाखीत्।

लागुडिक—(वि०) [लगुड + ठक्] दे० 'लाकुटिक'।

लाघ्—भ्वा० आत्म० अक० समर्थ होना। लाघते, लाघिष्यते, अलाघिष्ट।

लाघव—(न०) [लघोः भावः कर्म वा, लघु +अण्] लघुता, अल्पता। हलकापन। विचारहीनता। अकिञ्चित्करता। असम्मान, अप्रतिष्ठा। फुर्ती, वेग। तेजी, शीघ्रता। क्रियाशीलता, तत्परता। सब विषयों में पारदर्शिता। संक्षिप्तता। आरोग्य। नपुंसकता।

लाङ्गल—(न०) [√ लङ्ग् +कलच् पृषो० वृद्धि] हल। हल के आकार का शहतीर या लट्ठा। ताड़ का वृक्ष। शिश्न, लिङ्ग। पुष्प विशेष।—**ईषा (लाङ्गलीषा)** -(स्त्री०) हल का लट्ठा, हरिस।—**ग्रह**-(पुं०) हलवाहा।—**दण्ड**-(पुं०) हल का लट्ठा, हरिस।—**ध्वज**-(पुं०) बलरामजी का नाम।—**पद्धति**-(स्त्री०) हल जोतने से बनी हुई रेखा, सीता।—**फाल**- (पुं०) हल की फाल।

लाङ्गलिन्—(पुं०) [लाङ्गल + इनि] बलरामजी का नाम; 'बन्धुप्रीत्या समरविमुखो लाङ्गली याः सिषेवे' मे० ४९। नारियल का पेड़। सर्प।

लाङ्गली—(स्त्री०) [लाङ्गल +अच्—ङीष्] कलियारी। मजीठ। नारियल। केवाँच। पिठवन। गजपीपल। जल- पिप्पली।

लाङ्गूल—(न०) [√लङ्ग् +ऊलच् (बा०) वृद्धि] पूंछ। लिङ्ग, जननेंद्रिय।

लाङ्गूलिन्—(पुं०) [लाङ्गूल + इनि] बंदर। ऋषभ नामक ओषधि। पिठवन। केवाँच।

√**लाछ्**,√**लाञ्छ्**—भ्वा० पर० सक० कलङ्क लगाना। धिक्कारना। भूनना। तलना। लाछति—लाञ्छति, लाछिष्यति—लाञ्छिष्यति, अलाछीत्—अलाञ्छीत्।

लाज—(पुं०) [√लाज्+अच्] धान का लावा, खील। पानी में भीगा चावल। खस।

√**लाञ्छ्**—भ्वा० पर० सक० चिह्नित करना। सजाना। लाञ्छति लाञ्छिष्यति अलाञ्छीत्।

लाञ्छन—(न०) [√लाञ्छ् + ल्युट्] चिह्न, निशान। पहचान का चिह्न। नाम, संज्ञा। दाग, धब्बा। चन्द्रलाञ्छन। भूसीमा।

लाञ्छित—(वि०) [√लाञ्छ् +क्त] चिह्नित। नामक। सजा हुआ। सम्पन्न।

√**लाट**—क० पर० अक० जीना। लाटयति।

लाट—(पुं०) गुजरात के एक भाग का प्राचीन नाम और उसके निवासी। लाटदेशाधिपति। पुराना कपड़ा, जीर्णवस्त्र। वस्त्र। लड़कों जैसी बोली।— **अनुप्रास** (**लाटानुप्रास**)- (पुं०) एक शब्दालङ्कार। इसमें शब्दों की पुनरुक्ति तो होती है किन्तु अन्वय में हेरफेर करने से अर्थ बदल जाता है।

लाटक—(वि०) [स्त्री०—**लाटिका**] [लाट् +वुन्] लाट सम्बन्धी।

लाटिका, लाटी—(स्त्री०) [√लट् +ण्वुल् —टाप्, इत्व] [√लाट् + अच्—ङीष्]

साहित्य की चार प्रकार की शैलियों में से एक। इसमें वैदर्भी और पंचाली रीतियों का कुछ-कुछ अनुसरण किया जाता है। इसमें छोटे-छोटे पद तथा समास हुआ करते हैं।

√लाड्—चु० उभ० सक० थपथपाना, थपकी देना। दोषी ठहराना। धिक्कारना। फेंकना। उछालना। लाडयति-ते।

लाण्ठनी—(स्त्री०) कुलटा स्त्री।

लात—(वि०) [√ला+क्त] प्राप्त, पाया हुआ।

लाप—(पुं०) [√लप् +घञ्] वार्तालाप, बातचीत। तुतलाना।

लाभ—(पुं०) [√लभ्+घञ्] प्राप्ति, लब्धि। मुनाफा, फायदा। उपभोग। विजय। ज्ञान। —**कर**, —**कृत्**-(वि०) लाभदायक, फायदेमंद। —**लिप्सा**-(स्त्री०) मुनाफे की ख्वाहिश, लाभ की अभिलाषा। लोभ, लालच।

लाभक—(पुं०) [लाभ + कन्] मुनाफा, फायदा।

लामज्जक—(न०) [√ला + क्विप्, ला आदीयमाना मज्जा सारो यस्य, ब० स०, कप्] खस, उशीर।

लाम्पट्य—(न०) [लम्पट + ष्यञ्] लंपटता, कामुकता, ऐयाशी।

लालन—(न०) [√लल् + णिच्+ल्युट्] अत्यंत स्नेह करना, बहुत अधिक लाड़ करना। प्यार।

लालस—(वि०) [√लस् +यङ्, द्वित्वादि +अच्] उत्सुकतापूर्वक अभिलाषी, उत्कट इच्छुक; 'निजस्त्रीचटुलालसानाम्' शि०४.६। अनुरागी।

लालसा—(स्त्री०) [√लस् +यङ्+अ —टाप्] अभिलाषा। उत्सुकता। माँग, याचना। खेद, शोक। गर्भिणी स्त्री की रुचि।

लालसीक—(न०) चटनी।

लाला—(स्त्री०) [√लल् + णिच्+अच् —टाप्] लार, थूक। — **स्रव**-(पुं०) मुंह से लार बहना। मकड़ी। —**स्राव**-(पुं०) लार का टपकना। मकड़ी का जाला।

लालाटिक—(वि०) [स्त्री०—**लालाटिकी**] [ललाट+ठक्] भाल सम्बन्धी। भाग्य पर निर्भर रहने वाला। निकम्मा। (पुं०) सावधान अनुचर। निठल्ला आदमी। आलिङ्गन का एक प्रकार।

लालाटी—(न०) [ललाट + अण्—ङीप्] माथा।

लालिक—(पुं०) [लाला+ठञ्] भैंसा।

लालित—(वि०) [√लल् + णिच्+क्त] दुलारा हुआ। बहकाया हुआ। प्रिय। अभिलषित। (न०) प्रेम। प्रसन्नता।

लालितक—(पुं०) [लालित+कन्] लाड़ला बालक।

लालित्य—(न०) [ललित + ष्यञ्] मनोहरता, सौन्दर्य; 'दण्डिनः पदलालित्यम्' सुभा०। प्रीतिद्योतक हावभाव।

लालिन्—(पुं०) [√लल् + णिनि] दुलार-प्यार करने वाला। बहकाने वाला, स्त्रियों को कुपथ में प्रवृत्त करने वाला।

लालिनी—(स्त्री०) [लालिन्+ङीप्] स्वेच्छाचारिणी स्त्री।

लालुका—(स्त्री०) कण्ठहार विशेष।

लाव—(वि०) [स्त्री०—**लावी**] [√लू +ण] काटने वाला। कतरने वाला। तोड़ने वाला। नाशक। (पुं०) लवा नामक पक्षी। [√लू +घञ्] काटना। खंड-खंड करना। कतरना। नष्ट करना।

लावक—(वि०) [√ लू+ ण्वुल्] छेदन करने वाला। (पुं०) [लाव + कन्] लवा पक्षी।

लावण—(वि०) [स्त्री० — **लावणी**] [लवण +अण्] नमकीन, लवणयुक्त। लवण द्वारा संस्कृत (औषध आदि)।

लावणिक—(वि०) [स्त्री०—**लावणिकी**] [लवण+ठञ्] लवण सम्बन्धी। नमकीन।

मनोहर। (पुं०) नमक का व्यापारी। (न०) लवण-पात्र।

लावण्य—(न०) [लवण + ष्यञ्] नमकीनी। सलोनापन, मनोहरता, सौन्दर्य; 'प्रासन्नलावण्यफलोऽधरोष्ठः' कु० ७.१८। **—अर्जित** (**लावण्यार्जित**)—(न०) विवाहित स्त्री की व्यक्तिगत सम्पत्ति जो उसे विवाह के समय उसके पिता अथवा उसकी सास द्वारा मिली हो। (वि०) सौंदर्य द्वारा प्राप्त। **—कलित**—(वि०) सौन्दर्य-युक्त।

लावाणक—(पुं०) मगध के समीप का एक प्राचीन देश।

लाविक—(पुं०) [लाव+ठक्] भैंसा।

लावुक—(वि०) [स्त्री०—**लावुका**, **लावुकी**] [√लष् +उकञ्] लोभी, लालची।

लास—(पुं०) [√लस्+घञ्] स्त्रियों का कोमल भावमय नृत्य। रास। क्रीड़ा, उछल-कूद। झोल, रसा।

लासक—(वि०) [स्त्री० **—लासिका**] [√लस् +ण्वुल्] खिलाड़ी, क्रीड़ाप्रिय। इधर-उधर हिलने वाला। (पुं०) नचैया। मोर, मयूर। आलिङ्गन। शिव। (न०) अटारी, अटा।

लासकी—(स्त्री०) [लासक +ङीष्] नर्तकी, अभिनेत्री।

लास्य—(न०) [√लस्+ण्यत्] (न०) नृत्य, नाच। गान-वादन सहित नृत्य। वह नृत्य जिसमें हाव-भाव दिखला कर प्रेमभाव प्रदर्शित किया जाता है। (पुं०) [लास्य +अच्] नर्तक, अभिनेता।

लास्या—(स्त्री०) [लास्य + अच्—टाप्] नर्तकी, अभिनेत्री।

लिकुच—(पुं०) [लक्यते आस्वाद्यते, √लक् +उच, पृषो० इत्व] बड़हर का पेड़।

लिक्षा—(स्त्री०) [√लिख् +स, स च कित् —टाप्] लीख, जूँ का अंडा। चार या आठ त्रसरेणु के बराबर की एक तौल।

लिक्षिका—(स्त्री०) [लिक्षा + कन्—टाप्, ह्रस्व, इत्व] लीख।

√लिख्—तु० पर० सक० लिखना। खाका खींचना। रेखाङ्कित करना। खरोंचना, छीलना। भाला से छेदना। स्पर्श करना। चोंच मारना। चिकनाना। स्त्री के साथ संगम करना। लिखति, लेखिष्यति, अलेखीत्।

लिखन—(न०) [√लिख् +ल्युट्] लिखने की क्रिया। चित्रकारी। दस्तावेज, प्रमाण-पत्र। ललाट-लेखा, कर्म-रेखा।

लिखित—(न०) [√लिख्+क्त] लेख। कोई ग्रन्थ या निबन्ध। प्रमाण-पत्र, दस्तावेज। (वि०) लिखा हुआ। (पुं०) एक स्मृतिकार का नाम।

लिगु—(पुं०) [√लिङ्ग् +कु, नलोप] मृग, हिरन। मूर्ख। भू-प्रदेश। (न०) हृदय।

√लिङ्ग्—भ्वा० पर० सक० जाना। लिङ्गति, लिङ्गिष्यति, अलिङ्गीत्। चु० पर० सक० चित्रण करना। लिङ्गयति—लिङ्गति।

लिङ्ग—(पुं०) [√लिङ्ग् +घञ्, अभिधानात् नपुंसकत्वम् वा√लिङ्ग्+अच्] चिह्न, निशान। बनावटी निशानी, धोखा देने वाली चिह्नानी। रोग के लक्षण। प्रमाण। (न्याय में) वह जिससे किसी का अनुमान हो, साधक हेतु। नर या मादा पहचानने की चिह्नानी। शिव-लिंग। देवता की मूर्ति या प्रतिमा। एक प्रकार का सम्बन्ध या सूचक (जैसे संयोग, वियोग, साहचर्य। इससे शब्दार्थ का बोध होता है)। वह सूक्ष्म शरीर जो स्थूल शरीर के नष्ट होने पर कर्म-फल भोगने के लिये प्राप्त होता है। **—अनुशासन** (**लिङ्गानुशासन**)—(न०) व्याकरण के वे नियम जिनके द्वारा शब्द के लिङ्गों का ज्ञान प्राप्त होता है। **—अर्चन** (**लिङ्गार्चन**)—(न०) शिवलिंग की पूजा।

—देह– (पुं०), —शरीर–(न०) सूक्ष्म शरीर ।—धारिन्– (वि०) चिह्न धारण करने वाला । जो शिवलिंग धारण करे । —नाश–(पुं०) पहिचान के चिह्न का नाश । जननेन्द्रिय का नाश । नीलिका नामक नेत्ररोग । अंधकार ।—पीठ–(न०) मंदिर की वह चौकी जिस पर देवलिंग स्थापित रहता है । इसे गर्भपीठ भी कहते हैं ।अरघा । —पुराण–(न०) १८ पुराणों में से एक पुराण का नाम ।—प्रतिष्ठा–(स्त्री०) शिव जी की पिण्डी की स्थापना ।—विपर्यय– (पुं०) लिङ्गपरिवर्तन ।—वृत्ति– (वि०) आडम्बरी, ढकोसलेबाज । —वेदी– (स्त्री०) वह पीठ जिस पर शिव की पिण्डी स्थापित की जाती है ।

लिङ्गक—(पुं०) [लिङ्ग √कै+क] कपित्थ वृक्ष, कैथ का पेड़ ।

लिङ्गन—(न०) [√ लिङ्ग् +ल्युट्] आलिङ्गन, गले लगाना ।।

लिङ्गिन्—(पुं०) [लिङ्ग + इनि] चिह्न वाला । लक्षणयुक्त; 'स वर्णिलिङ्गी विदितः समाययौ' कि० १.१ । कपटामधारी । आडंबरी । लिङ्ग-सम्पन्न । सूक्ष्मशरीर-धारी । (पुं०) ब्रह्मचारी । शैव, लिङ्गायत । पाखंडी, ढोंगी । हाथी ।

√लिप्—तु० उभ० सक० लीपना । मालिश करना । उबटन करना । ढकना । बिछाना । कलङ्कित करना, भ्रष्ट करना । जलाना । लिम्पति —ते, लेप्स्यति—ते, अलिपत्—अलिपत—अलिप्त ।

लिपि, लिपी—(स्त्री०) [√लिप् +इक् सच कित्] [लिपि + ङीप्] लिखावट; 'यदं दरिद्रो भवितेति वेधसो लिपि ललाटेऽर्थिजनस्य जाग्रती' नै० १.१५ । अक्षर लिखने की प्रणाली । लेख । लेप । मालिश । उबटन । दस्तावेज । चित्रण ।—कर, कार––(पुं०) पोतने वाला, राज । लेखक । खुदैया, अक्षर खोदने वाला ।—ज्ञ–(वि०) वह जो लिख सके ।—न्यास–(पुं०) लिखने की क्रिया । लेखन-कला ।—फलक–(न०) पट्टी या दस्ती जिस पर कागज रख कर लिखा जाय ।—शाला– (स्त्री०) वह स्थान जहाँ लिखना सिखलाया जाय ।—सज्जा– (स्त्री०) लिखने की सामग्री ।

लिपिका—(स्त्री०) [लिपि + कन्—टाप्] दे० 'लिपि' ।

लिप्त—(वि०) [√लिप् + क्त] लिपा हुआ । ढका हुआ । दगीला, धब्बेदार । विष में बुझा हुआ । भक्षित । संयुक्त, जुड़ा हुआ । फँसा हुआ, व्यसनादि में डूबा हुआ ।

लिप्तक—(पुं०) [लिप्त+कन्] विष का बुझा तीर ।

लिप्सा—(स्त्री०) [लब्धुम् इच्छा, √लभ् +सन्+अ—टाप्] किसी वस्तु की प्राप्ति की अभिलाषा । कामना, इच्छा ।

लिप्सु—(वि०) [√लभ् +सन्+उ] प्राप्ति की इच्छा वाला ।

लिबि, लिबी—(स्त्री०) [√लिप् + इन् (बा०) पस्य बः] [लिबि +ङीष्] दे० 'लिपि' ।

लिबिङ्कर—(पुं०) [लिबि करोति, √कृ +ट, पृषो० द्वितीयाया अलुक्] लेखक । प्रतिलिपि करने वाला, नकलनवीस ।

लिम्प—(पुं०) [√लिप् + श, मुम्] लेप । मालिश ।

लिम्पट—(वि०) [=लम्पट, पृषो० साधुः] व्यभिचारी, लंपट । (पुं०) व्यभिचारी पुरुष ।

लिम्पाक—(पुं०) [√लिप् +आकन्, पृषो० साधुः] बिजौरा नीबू का पेड़ । गधा । (न०) बिजौरा नीबू ।

√लिश्—दि० आत्म० अक० कम होना । लिश्यते, लेक्ष्यते, अलिक्षत । तु० पर० सक० जाना । लिशति, लेक्ष्यति, अलिक्षत् ।

लिष्ट—(वि०) [√लिश् +क्त] क्षय-प्राप्त, घटा हुआ ।

लिष्व—(पुं०) [√लष्+वन्, नि० साधुः] नट, नर्तक ।

√लिह्—अ० उभ० सक० चाटना । चुसक चुसक कर पीना । लेढि—लीढे, लेक्ष्यति—ते, अलीढ—अलिक्षत् —अलिक्षत ।

√ली—दि० आत्म० अक० मिलना, जुड़ना । लीयते, लेष्यते —लास्यते, अलेष्ट —अलास्त । क्र्या० पर० अक० मिलना, जुड़ना । लिनाति, लेष्यति —लास्यति, अलासीत् —अलैषीत् । चु० पर० सक० गलाना । घोलना । लापयति —लयति ।

लीक्का=लिक्षा ।

लीढ—(वि०) [√लिह् + क्त] चाटा हुआ । चाखा हुआ । खाया हुआ ।

लीन—(वि०) [√ली + क्त] चिपटा हुआ, सटा हुआ । छिपा हुआ; 'शमीमिवाभ्यन्तरलीनपावकाम्' र० ३.९ । सहारा लिया हुआ । पिघला हुआ, घुला हुआ । बिल्कुल मिला हुआ, एकीभूत । अनुरागी, भक्त । अन्तर्हित, लुप्त ।

लीला—(स्त्री०) [√ ली +क्विप्, लियं लाति, ली √ला+क—टाप्] क्रीड़ा, केलि; 'श्रमं ययौ कन्दुकलीलयापि या' कु० ५.१९ । विलास, विहार । सौंदर्य । शृंगार- चेष्टा । नायिकाओं का एक हाव जिसमें वे अपने प्रेमी के वेश, वाणी आदि का अनुकरण करती हैं । अवतारों के चरित्र का अभिनय । रहस्यपूर्ण कार्य । बारह मात्राओं का एक छंद ।—**आगार** (लीलागार), —**गृह**,— **गेह**,—**वेश्मन्**- (न०) क्रीड़ा-भवन, आनन्द-भवन ।—**अङ्ग** (लीलाङ्ग)–(वि०) चंचल या निरंतर क्रीडेच्छ अंगों से युक्त । सुडौल अंगोंवाला । —**अब्ज**(लीलाब्ज),—**अम्बुज** (लीलाम्बुज), —**अरविन्द** (लीलारविन्द), —**कमल**,— **तामरस**,— **पद्म**-(न०) खिलवाड़ करने के लिये खिलौने की तरह हाथ में लिया हुआ कमल-पुष्प । —**अवतार** (लीलावतार)-(पुं०) ।लीला करने के लिये धारण किया हुआ विष्णु भगवान् का अवतार ।—**उद्यान** (लीलोद्यान)–(न०) आनन्दबाग । देवताओं का उद्यान । —**कलह**-(पुं०) बनावटी झगड़ा ।

लीलायित—(न०) [लीला + क्यच् +क्त] खेल, क्रीड़ा । मनोरञ्जन ।

लीलावत्—(वि०) [लीला + मतुप्, मस्य वः] खिलाड़ी, क्रीड़ायुक्त ।

लीलावती—(स्त्री०) [लीलावत् + ङीप्] सुन्दरी स्त्री । स्वेच्छाचारिणी अथवा व्यभिचारिणी स्त्री । दुर्गा का नाम । प्रसिद्ध ज्योतिविद् भास्कराचार्य की कन्या का नाम, जिसने अपने नाम पर लीलावती नाम की गणित की एक प्रसिद्ध पुस्तक बनायी थी ।

√लुञ्च्—भ्वा० पर० सक० तोड़ना । उखाड़ना । चीरना । खींचना । नोचना । लुञ्चति, लुञ्चिष्यति, अलुञ्चीत् ।

लुञ्च, **लुञ्चन**—(पुं० न०) [√लुञ्च् +घञ्] [√लुञ्च् +ल्युट्] छीलने या बकला उतारने की क्रिया । तोड़ने की क्रिया । काटने, नोचने की क्रिया ।

लुञ्चित—(वि०) [√लुञ्च्+क्त] छिलका उतारा हुआ । तोड़ा हुआ । नोचा हुआ ।

√लुट्—भ्वा० पर० सक० बिलोना । लोटति, लोटिष्यति, अलोटीत् । भ्वा० आत्म० सक० प्रतिघात करना । लोटते, लोटिष्यते, अलुटत् —अलोटिष्ट । तु० पर० सक० मिलाना । लुटति, लुटिष्यति, अलुटीत् ।

√लुठ्—भ्वा० पर० सक० उपघात करना । लोठति, लोठिष्यति, अलोठीत् । भ्वा० आत्म० सक० प्रतिघात करना । लोठते, लोठिष्यते, अलुठत्—अलोठिष्ट । तु० पर० अक० लुढ़कना या लोटना । लुठति; 'हारोऽयं हरिणा-

क्षीणा लुठति स्तनमण्डले', लुठिष्यति, अलुठीत् ।

लुठन—(न०) [√लुठ्+ल्युट्] लुढ़कने या लोटने की क्रिया ।

लुठित—(वि०) [√लुठ्+क्त] लुढ़का, गिरा या लोटा हुआ ।

लुण्ट्—भ्वा० पर० सक० जाना । चुराना । लूटना । अक० बँगड़ाना, लँगड़ा होना । सुस्त होना । लुण्टति, लुण्टिष्यति, अलुण्टीत् ।

लुण्टाक—(वि०) [स्त्री०—**लुण्टाकी**] [√लुण्ट्+षाकन्] चोर । डाकू । कौआ ।

√**लुण्ठ्**—भ्वा० पर० सक० चुराना । लूटना । सामना करना । जाना । बिलोना । अक० लोटना । सुस्त होना । लंगड़ा होना । लुण्ठति, लुण्ठिष्यति, अलुण्ठीत् । चु० पर० सक० चुराना । लुण्ठयति—लुण्ठति ।

लुण्ठक—(पुं०) [√लुण्ठ् +ण्वुल्] डाकू । चोर ।

लुण्ठन—(न०) [√लुण्ठ् + ल्युट्] लूट । चोरी । लोटना ।

लुण्ठा—(स्त्री०) [√लुण्ठ् + अ—टाप्] लूट, डाका । लुढ़क-पुढ़क ।

लुण्ठाक—(पुं०) [√लुण्ठ्+षाकन्] डाकू । कौआ ।

लुण्ठि, लुण्ठी—(स्त्री०) [√लुण्ठ् + इन्] [लुण्ठि+ङीष्] लूटपाट । लुढ़कना या लोटना ।

√**लुन्थ्**—भ्वा० पर० सक० मारना, वध करना । कष्ट देना । लुन्थति । लुन्थिष्यति, अलुन्थीत् ।

लुप्—दि० पर० सक० व्याकुल करना । लुप्यति, लोपिष्यति, अलुपत् । तु० उभ० सक० छेदन करना, काटना । लुम्पति—ते, लोप्स्यति—ते, अलुपत्—अलुप्त ।

लुप्त—(वि०) [√लुप् + क्त] छिपा हुआ गायब । टूटा हुआ, भग्न । नष्ट । खोया हुआ । लूटा हुआ । गिरा हुआ । खोया हुआ । अप्रयुक्त, जो काम में न लाया गया हो । (न०) लूटा हुआ माल ।

लुब्ध—(वि०) [√लुभ्+क्त] आकांक्षायुक्त । लोभयुक्त । (पुं०) शिकारी, बहेलिया । व्यभिचारी, लम्पट ।

लुब्धक—(पुं०) [लुब्ध + कन्] शिकारी, बहेलिया । लोभी या लालची आदमी । उत्तरी गोलार्द्ध का एक बहुत तेजस्वी तारा ।

√**लुभ्**—दि० पर० सक० लोभ करना, उत्सुकतापूर्वक अभिलाषा करना । लुभ्यति, लोभिष्यति, अलुभत् । तु० पर० सक० व्याकुल करना । लुभति, लोभिष्यति, अलोभीत् ।

√**लुम्ब्**—भ्वा० पर० सक० पीड़ित करना । लुम्बति, लुम्बिष्यति, अलुम्बीत् ।

लुम्बिका—(स्त्री०) एक प्रकार का बाजा ।

√**लुल्**—भ्वा० पर० अक० लुढ़कना । हिलना । सक० हिलाना । कुचलना । लोलति, लोलिष्यति, अलोलीत् ।

लुलाप, लुलाय—(पुं०) [√लुल्+क, तम् आप्नोति, लुल √आप् + अण्] [लुल √अय्+अण्] भैंसा; 'सुरविपुरपरिपोषित्र-कायो लुलायः' ।

लुलित—(वि०) [√लुल्+क्त] लटकता, झूलता हुआ । गड़बड़ किया हुआ । खुला हुआ । बिखरा हुआ । अशांत । कुचला हुआ । थका हुआ । ध्वस्त किया हुआ ।

लुलभ—(पुं०) [√लभ् + अभच्, धातोः लुगादेशः] मदमस्त हाथी ।

√**लू**—क्र्या० उभ० सक० छेदन करना, काटना । लुनाति—लुनीते । लविष्यति—ते, अलावीत्—अलविष्ट ।

लूता—(स्त्री०) [√लू+तक्— टाप्] मकड़ी । चींटी ।—**तन्तु**— (पुं०) मकड़ी का जाला । —**मर्कटक**— (पुं०) बनमानुस । मरुदेशीय जूही फूल ।

लूतिका—(स्त्री०) [लूता + कन्—टाप्, ह्रस्व, इत्व] मकड़ी ।

लून—(वि०) [√लू+क्त] कटा हुआ । नष्ट किया हुआ । कुतरा हुआ । घायल किया हुआ । छिदा हुआ । (न०) पूँछ, दुम ।

लूम—(न०) [√लू + मक्] पूँछ ।

√लूष्—चु० पर० सक० मारना । अनिष्ट करना । लूटना । चुराना । लूषयति, लूषयिष्यति, अलूलुषत् ।

लेख—(पुं०) [√लिख्+घञ्] लिखी हुई बात । लिखावट । लिपि । लेखा, हिसाब-किताब । दस्तावेज । देवता ।—**अधिकारिन्** (**लेखाधिकारिन्**)-(पुं०) मंत्री (राजा का) ।—**अर्ह** (**लेखार्ह**)- (पुं०) ताड़ का वृक्ष ।—**ऋषभ** (**लेखर्षभ**)- (पुं०) इन्द्र का नाम ।—**पत्र**- (न०), —**पत्रिका**- (स्त्री०) चिट्ठी, पुर्जा । टीप, दस्तावेज ।—**संदेश**- (पुं०) लिखा हुआ संदेसा ।—**हार**,—**हारिन्**- (पुं०) पत्रवाहक, चिट्ठीरसाँ, डाकिया ।

लेखक—(पुं०) [√लिख्+ण्वुल्] लिखने वाला, क्लर्क, नकलनवीस । चितेरा, चित्रकार । ग्रंथ-रचयिता । लेख लिखने वाला व्यक्ति ।

लेखन—(वि०)[स्त्री०—**लेखनी**] [√लिख्+ल्यु] खुरचने वाला । उत्तेजक । (न०) [√लिख् + ल्युट्] लिखने का कार्य । लिखने की कला या विद्या । चित्र बनाना । लेखा लगाना । औषध से रसादि सात धातुओं या वात आदि दोषों का शोषण करके पतला करना । उत्तेजन । काटना । खरोंचना । कै करना । भोजपत्र । ताड़पत्र । (पुं०) नरकुल जिसकी कलम बनाई जाती है । खाँसी ।

लेखनिक—(पुं०) [लेखन+ठन्] चिट्ठी ले जाने वाला । दूसरे से लिखा कर लेख में अपना नाम देने वाला व्यक्ति । अपने हाथ से लिखने वाला व्यक्ति ।

लेखनी—(स्त्री०) [√लिख्+ल्युट्—ङीप्] कलम । करछी ।

लेखा—(स्त्री०) [√लिख् + अ—टाप्] रेखा, लकीर । किनारी । चोटी । लिपि । चिह्न । चित्रण । रश्मि, किरण, कान्ति; 'लब्धोदया चान्द्रमसीव लेखा' कु० १.२५ ।

लेख्य—(वि०) [√लिख् + ण्यत्] लिखने योग्य । जो लिखा जाने को हो । (न०) लेखन-कला । लेख । पत्र । दस्तावेज । अक्षर । चित्रण । चित्रित आकृति ।—**आरूढ** (**लेख्यारूढ**), —**कृत**- (वि०) जो लिखा-पढ़ी करके पक्का किया गया हो ।—**गत**-(वि०) चित्रित ।—**चूर्णिका**- (स्त्री०) कलम, तूलिका आदि ।—**पत्र**, —**पत्रक**-(न०) लेख । पत्र । दस्तावेज । ताड़पत्र ।—**प्रसङ्ग**- (पुं०)दस्तावेज । इकरारनामा ।—**स्थान**- (न०) लिखने का स्थान, दफ्तर ।

लेण्ड—(न०)विष्ठा । लेंड, बँधामल ।

लेत—(पुं०, न०) आँसू ।

√लेप्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । पूजन करना । लेपते, लेपिष्यते, अलेपिष्ट ।

लेप—(पुं०) [√लिप्+घञ्] लीपने, पोतने की क्रिया । पोतने या चुपड़ने की चीज । उबटन । धब्बा, दाग । पाप । भोजन ।—**कर**- (पुं०) लेप करने वाला । लेप बनाने वाला ।—**भागिन्**, —**भुज्**-(पुं०) चौथी, पाँचवीं और छठवीं पीढ़ी के पूर्वपुरुष ।

लेपक—(वि०) [√लिप्+ण्वुल्] लेप करने वाला । (पुं०) बवई, राज, मेमार ।

लेपन—(न०) [√लिप् + ल्युट्] लेपने की क्रिया । आँवले का चूर । भोजन । तुरुष्क नामक गंधद्रव्य । शिलारस ।

लेप्य—(वि०) [√लिप् + ण्यत्] लेपन करने योग्य ।—**कृत्**- (वि०) लेप करने वाला, लेपक ।—**स्त्री**-(स्त्री०)वह स्त्री जो

उबटन या चन्दनादि का लेप लगाये हो। पत्थर या मिट्टी की बनी स्त्री की मूर्ति।

लेप्यमयी—(स्त्री०) [लेप्य+मयट्—ङीप्] गुड़िया, पुतली।

लेलायमाना—(स्त्री०) अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक।

लेलिह—(पुं०) [√लिह् + यङ —लुक्, द्वित्वादि, ततः अच्] साँप, सर्प। शिवजी।

लेलिहान—(पुं०) [√लिह् + यङ — लुक्, द्वित्वादि ततः शानच्] सर्प, साँप। जूं। शिव जी की उपाधि।

लेश—(पुं०) [√लिश् + घञ्] अणु। अत्यन्त लघु परिमाण; 'अमवारिलेशैः' कु० ३.३८। सूक्ष्मता। समय का भाग विशेष जो २ कला के समान होता है। एक अलंकार जिसमें किसी वस्तु के वर्णन के केवल एक ही भाग या अंश में रोचकता आती है।

लेश्या—(स्त्री०) प्रकाश, उजियाला। जैनियों के अनुसार जीव की वह अवस्था जिसके कारण कर्म जीव को बाँधता है।

लेष्टु—(पुं०) [√लिश्+तुन्] मिट्टी का ढेला।

लेसिक—(पुं०) हाथी पर चढ़ने वाला, गजारोही।

लेह—(पुं०) [√लिह् + घञ्] चाटना। स्वाद लेना, चखना; 'मधुनो लेहः' भट्टि० ६.८२। चाट कर खाने का पदार्थ। भोजन, भोज्य पदार्थ।

लेहन—(न०) [√लिह् + ल्युट्] चाटना।

लेहिन—(पुं०) [√लिह् + इनन्] सुहागा।

लेह्य—(वि०) [√लिह् +ण्यत्] चाटने योग्य। (न०) वह वस्तु जो चाट कर खायी जाय।

लैङ्ग—(न०) [लिङ्गम् अधिकृत्य कृतो ग्रन्थः वा लिङ्गस्य इदम्, लिङ्ग+अण्] अष्टादश पुराणों में से एक, लिङ्गपुराण।

लैङ्गिक—(वि०) [स्त्री०—लैङ्गिकी] [लिङ्ग +ठक्] लिंग या चिह्न सम्बन्धी। (पुं०) मूर्ति बनाने वाला, शिल्पी। (न०) वैशेषिक दर्शन के अनुसार अनुमान प्रमाण।

√लोक्—भ्वा० आत्म० सक० देखना। लोकते, लोकिष्यते, अलोकिष्ट।

लोक—(पुं०) [√लोक् + घञ्] संसार। भुवन। साधारणतः स्वर्ग, पृथिवी और पाताल तीन लोक माने जाते हैं। किन्तु विशेष रूप से वर्णन करने वालों ने लोकों की संख्या १४ मानी है। सात ऊर्ध्वलोक और सात अधोलोक।

१ ऊर्ध्वलोक :—

भूर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपोलोक और सत्यलोक।

२ अधोलोक :—

अतल, वितल, सुतल, रसातल, तलातल, महातल और पाताल।

मानवगण। समूह, समुदाय; 'शशास तेन क्षितिपाललोकः,' र० ७.३। प्रदेश, प्रान्त। प्राणी। समाज। साधारण चलन या प्रथा, साधारण या लौकिक व्यवहार। दृष्टि, चितवन। यश। ७ या १४ की संख्या।—**अतिग** (लोकातिग)— (वि०) असाधारण, अलौकिक। —**अतिशय** (लोकातिशय)— (वि०) लोकोत्तर, असाधारण।—**अधिक** (लोकाधिक)— (वि०) असाधारण, असामान्य। —**अधिप** (लोकाधिप)— (पुं०) लोकपाल। नरपति। बुद्ध। देवता।—**अधिपति** (लोकाधिपति)— (पुं०) संसार-पति। देवता।—**अनुराग** (लोकानुराग)— (पुं०) सार्वजनिक प्रेम, लोकहितैषिता, उदारता।—**अन्तर** (लोकान्तर)—(न०) परलोक।—**अपवाद** (लोकापवाद)—

(पुं०) लोकनिन्दा, बदनामी; 'लोकापवादो बलवान्मतो मे' र० १४.४० ।— **अयन** (**लोकायन**)–(न०) नारायण का नामान्तर ।—**अरण्य**—(न०) भीड़ ।— **अलोक** (**लोकालोक**)– (पुं०) एक पौराणिक पहाड़ जो भूमण्डल के चारों ओर मधुर जल-पूरित सागर के परे है । दृष्ट और अदृष्ट लोक ।—**आचार** (**लोकाचार**)– (पुं०) लोक-व्यवहार, संसार में बरता जाने वाला व्यवहार ।—**आयत** (**लोकायत**)– (पुं०) वह मनुष्य जो इस लोक के अतिरिक्त दूसरे लोक को न मानता हो । चार्वाक दर्शन का मानने वाला । (न०) नास्तिकवाद । चार्वाक दर्शन ।— **आयतिक** (**लोकायतिक**)–(पुं०) नास्तिक । चार्वाक ।—**ईश** (**लोकेश**)–(पुं०) राजा । ब्राह्मण । पारा, पारद ।—**उक्ति** (**लोकोक्ति**)–(स्त्री०) कहावत, मसल । एक अलंकार जिसमें लोकोक्ति के प्रयोग से रोचकता बढ़ायी जाती है ।—**उत्तर** (**लोकोत्तर**)–(वि०) अलौकिक, असाधारण, असामान्य । (पुं०) राजा ।—**एषणा** (**लोकैषणा**)– (स्त्री०) स्वर्गसुख-प्राप्ति की कामना । सांसारिक अभ्युदय या यश-प्रतिष्ठा की कामना ।—**कण्टक**– (पुं०) वह जो समाज का कण्टक (विरोधी या हानिकर) हो, दुष्ट प्राणी ।—**कथा**– (स्त्री०) प्रसिद्ध प्राचीन कहानी ।—**कर्तृ**, —**कृत्**– (पुं०) संसार का रचने या बनाने वाला । ब्रह्मा । विष्णु । महेश ।—**गाथा**–(स्त्री०) प्रचलित गीत ।—**चक्षुस्** –(न०) सूर्य । —**चारित्र**–(न०) संसार का ढंग ।— **जननी**–(स्त्री०) लक्ष्मी जी का नाम ।— **जित्**–(पुं०) बुद्धदेव । कोई भी संसार-विजयी ।—**ज्ञ**– (वि०) संसार का ज्ञाता । —**ज्येष्ठ**–(पुं०) बुद्धदेव की उपाधि ।— **तत्त्व**–(न०) मानव जाति का ज्ञान ।— **तुषार**–(पुं०) कपूर ।—**त्रय**– (न०)— **त्रयी**–(स्त्री०) स्वर्ग, मर्त्य और पाताल-तीनों लोकों की समष्टि ।—**धातृ**–(पुं०) शिव जी का नाम ।—**नाथ**–(पुं०) ब्राह्मण । विष्णु । शिव । राजा । बौद्ध ।—**नेतृ**– (पुं०) शिव जी की उपाधि ।—**प**, — **पाल** –(पुं०) दिक्पाल, इनकी संख्या आठ है ।—**पति** –(पुं०) ब्रह्मा । विष्णु । राजा ।— **पथ**– (पुं०), —**पद्धति**– (स्त्री०) सार्वजनिक व्यवहार या कार्य करने का ढंग ।—**पितामह**– (पुं०) ब्रह्मा जी ।— **प्रकाशन**– (पुं०) सूर्य ।—**प्रवाद** –(पुं०) किंवदन्ती, अफवाह ।—**प्रसिद्ध**– (वि०) विश्वविख्यात ।—**बन्धु**, — **बान्धव**– (पुं०) सूर्य ।—**बाह्य**,—**बाह्य**– (वि०) लोक बहिष्कृत, समाज से खारिज या निकाला हुआ । संसार से निराला, अकेला । (पुं०) जातिच्युत व्यक्ति ।— **भावन**– (पुं०) लोक की भलाई करने वाला । लोक-रचना करने वाला ।— **मर्यादा**– (स्त्री०) लौकिक व्यवहार, लौकिक चाल-चलन या रस्म ।—**मातृ**– (स्त्री०) लक्ष्मी जी । —**मार्ग**–(पुं०) लौकिक चलन । —**यात्रा**– (स्त्री०) व्यवहार । व्यापार । आजीविका ।— **रक्ष** –(पुं०) राजा ।—**रञ्जन**– (न०) लोक का प्रीति-सम्पादन, जनता को प्रसन्न करना ।—**लोचन**– (न०) सूर्य ।— **वचन**– (न०), —**वाद**–(पुं०), —**वार्ता**– (स्त्री०) अफवाह, किंवदन्ती ।—**विद्विष्ट**– (वि०) वह जो सब को नापसंद हो या जिसे सब नापसंद करें ।—**विधि**–(पुं०) प्रचलित पद्धति । संसार का रचयिता ।— **विश्रुत**– (वि०) जगद्विख्यात, संसार भर में प्रसिद्ध । —**वृत्त**–(न०) लोकरीति । गप्पाष्टक । —**श्रुति**– (स्त्री०) जनश्रुति, अफवाह । जगत्प्रसिद्धि या कीर्ति ।—**सङ्कर**–

(पुं०) संसार की गड़बड़ी, गोलमाल।—**संग्रह**– (पुं०) संसार का कल्याण या सब को भलाई; 'लोकसंग्रहमेवापि सम्पश्यन् कर्तुमर्हसि' गी०।—**साक्षिन्**–(पुं०) ब्रह्मा। अग्नि।—**सिद्ध**– (वि०) प्रसिद्ध। प्रचलित। जनसाधारण द्वारा गृहीत।

लोकन—(न०) [√लोक् + ल्युट्] अवलोकन, चितवन।

लोकम्पृण—(वि०) [लोक √पृण्+क, मुमागम] संसार-व्यापी; 'लोकम्पृणैः परिमलैः परिपूरितस्य काश्मीरजस्य कटुतापि नितान्तरम्या' भा० १.७० । सर्वगामी।

√लोच्— भ्वा० आत्म० सक० देखना। लोचते, लोचिष्यते, अलोचिष्ट।

लोच—(न०) [√लोच् + अच्] आँसू।

लोचक—(पुं०) [√लोच् + ण्वुल्] मूर्ख पुरुष। आँख की पुतली। दीपक की कालिख या काजल। सुर्मा, आँजन। स्त्रियों के ललाट या कान का एक गहना। काला या आसमानी वस्त्र। धनुष का रोदा। साँप की केंचुली। झुर्रियाँ पड़ा हुआ चर्म। झुर्री पड़ी हुई भौं। केले का पेड़।

लोचन—(न०) [लोच् + ल्युट्] देखने की क्रिया। आँख। तारा। खिड़की।—**गोचर**, —**पथ**,—**मार्ग**– (पुं०) दृष्टि के अंदर पड़ने वाला क्षेत्र।—**हिता**– (स्त्री०) नीलाथोथा, तूतिया।

लोट—(पुं०) [√लुट् + घञ्] भूमि पर लोटना।

√लोड्—भ्वा० पर० अक० पागल होना। मूर्ख होना। लोडति, लोडिष्यति, अलोडीत्।

लोडन—(न०) [√लोड् +ल्युट्] पागल होना। हिलाना, डुलाना।

लोणार—(पुं०) [लवण √ऋ+अण्, पृषो० साधुः] एक तरह का नमक।

लोत—(पुं०) [√लू + तन्] चोरी का धन। आँसू। चिह्न, निशान। लवण।

लोत्र—(न०) [√लू +ष्ट्रन् वा √ला +उत्र] चोरी का माल। आँसू।

लोध्र—(पुं०) [√रुध्+रन्, रस्य लः] लोध का पेड़। इसमें लाल और सफेद फूल लगते हैं।

लोप—(पुं०) [√लुप् + घञ्] अदर्शन, अभाव। नाश, क्षय। किसी रस्म या प्रथा की बंदी। अतिक्रम, लंघन। अनुपस्थिति। छूट। वर्णलोप।

लोपन—(न०) [√लुप् +णिच् +ल्युट्] भंग करना। लुप्त करना। नष्ट करना।

लोपा, लोपामुद्रा—(स्त्री०) [लोपयति योषितां रूपाभिमानम्, √लुप् + णिच् +अच्—टाप्] [आमुद्रयति स्रष्टुः सृष्टिम्, आमुद्रा +णिच् + अच्—टाप्, लोपा-आमुद्रा, कर्म० स०] विदर्भाधिपति की कन्या और महर्षि अगस्त्य की पत्नी का नाम।

लोपापक–(पुं०) [लोपम् अदर्शनम् आप्नोति, लोप √आप् + ण्वुल्] शृगाल, गीदड़, सियार।

लोपाश, लोपाशक—(पुं०) [लोपम् आकुलीभावं चकितम् अश्नाति, लोप √ अश् +अण्] [लोप√अश् + ण्वुल्] गीदड़।

लोपिन्—(वि०) [√लुप् +णिनि] लुप्त होने वाला। [√लुप् + णिच्+णिनि] हानिकारक, अनिष्टकारक।

लोभ—(पुं०) [√लुभ् + घञ्] लालच। कृपणता। अभिलाषा।—**अन्वित** (लोभान्वित)–(वि०) लालची, लोभी।—**विरह**–(पुं०) लोभ का अभाव।

लोभन—(न०) [√लुभ् +ल्युट्] लालच। सोना।

लोभनीय—(वि०) [√लुभ् + अनीयर्] जो लुभाया जा सके, जो आकर्षित किया जा सके।

लोमकिन्—(पुं०) पक्षी।

लोमन्—(न०) [लूयते छिद्यते √लू +मनिन्; समास में 'न्' का लोप हो जाता है] मनुष्य या पशु के शरीर के ऊपर के रोएँ।—**कर्ण**—(पुं०) खरगोश, शशक। —**कीट**—(पुं०) जूँ।—**कूप**, —**गर्त**—(पुं०), —**रन्ध्र**, —**विवर**—(न०) रोएँ की जड़ में का छेद।—**पाद**— (पुं०) अंग देश का राजा।—**वाहिन्**— (वि०) रोएँ वाला।— **संहर्षण**— (न०) रोमाञ्च। —**सार** —(पुं०) पन्ना।—**हृत्**— (पुं०) हरताल।

लोमश—(पुं०) [लोमानि सन्ति अस्य, लोमन् +श] भेड़ा। एक ऋषि जो अमर माने जाते हैं।—**मार्जार**—(पुं०) कोमल बालों वाला एक बिलार, गंध बिलाव।

लोमशा—(स्त्री०)[लोमश +टाप्]लोमड़ी। सियारिन, शृगाली। कसीस। काकजंघा। वच। शूकशिम्बी। महामेदा। अतिबला। केवांच। काकोली।

लोमाश—(पुं०) [लोमन् √अश् + अण्] गीदड़, शृगाल।

लोल—(वि०) [√लोड् + अच्, डस्य लः] काँपकंपा, हिलने वाला। चंचल; 'लोलापाङ्गैः लोचनैः' मे० २७। बेचैन, विकल। क्षणभङ्गुर, विनश्वर। उत्सुक। (पुं०) लिंग।—**अक्षिका** (**लोलाक्षिका**)—(स्त्री०) चंचल नेत्रों वाली स्त्री।—**अर्क** (**लोलार्क**)— (पुं०) सूर्य।—**कर्ण**—(वि०) सब की बात सुनने वाला।

लोला—(स्त्री०) [लोल+टाप्] लक्ष्मी जी। बिजली। जिह्वा।

लोलुप—(वि०) [गर्हितं लुम्पति, √लुप् +यङ+अच्] अत्यन्त उत्सुक; 'भिवस्त्वदाभाषणलोलुपं मनः' शि० १.४०।

लोलुपा—(स्त्री०) [√लुप् + यङ+अ —टाप्] उत्कण्ठा, उत्सुकता।

लोलुभ—(वि०) [√लुभ् + यङ+अच्] अत्यन्त लोलुप।

√लोष्ट्—भ्वा० आत्म० सक० जमा करना, ढेर करना। लोष्टते, लोष्टिष्यते, अलोष्टिष्ट।

लोष्ट—(पुं०, न०) [√लोष्ट् + घञ्] मिट्टी का ढेला। (न०) लोहे का मोर्चा।

लोष्टु—(पुं०) मिट्टी का ढेला।

लोह—(पुं०, न०) [लूयते अनेन, √ लू +ह] लोहा, ताँबा, सोना आदि। रक्त। हथियार। मछली फँसाने का काँटा। (न०) अगर की लकड़ी। (पुं०) लाल बकरा। (वि०) ताँबे के रंग का, लाल। लोहे का बना। —**अज** (**लोहाज**)— (पुं०) लाल बकरा। —**अभिसार** (**लोहाभिसार**) —**अभिहार** (**लोहाभिहार**) (पुं०) शस्त्रधारी राजाओं की नीराजना विधि।—**कान्त** – (पुं०) चुम्बक।—**कार**—(पुं०) लुहार।—**किट्ट**— (न०) लोहे का मोर्चा।—**घातक**—(पुं०) लुहार। —**चूर्ण**— (न०) लोहे का चूरा। लोहे का मोर्चा।—**ज**— (न०) काँसा। लोहचूर्ण, लो की चूर जो रेतने से निकले। —**जाल** –(न०) कवच।—**जित्**— (पुं०) हीरा। —**द्राविन्**— (पुं०) सोहागा।— **नाल**— (पुं०) लोहे का तीर।—**पृष्ठ**— (पुं०) कंक पक्षी।—**प्रतिमा** –(स्त्री०) निहाई। लोहे की मूर्ति।—**बद्ध**— (वि०) लोहे से मढ़ा हुआ या जिसकी नोंक पर लोहा जड़ा हो। —**मुक्तिका**–(स्त्री०) लाल मोती।—**रजस्** (न०) लोहे का मुर्चा।—**राजक**–(न०) चाँदी।—**वर**–(न०) सोना।—**शङ्कु**— (पुं०) लोहे की कील।—**श्लेषण** –(पुं०) सुहागा। —**संकर**— (न०) नीले रंग का इस्पात लोहा।

लोहल—(वि०) [लोहे √ला+क] लोहे का बना हुआ। अस्पष्ट भाषण करने वाला।

लोहिका—(स्त्री०) [लोह + ठन्—टाप्] लोहे का पात्र ।

लोहित—(वि०) [स्त्री०—**लोहिता, लोहिनी**] [√रुह् +इतन्, रस्य लत्वम्] लाल रंग का । ताँबे का बना हुआ । (पुं०) लाल रंग । मङ्गल ग्रह । सर्प । मृग विशेष । चावल विशेष । (न०) ताँबा । खून, लोहू । केसर । युद्ध । लाल चन्दन । हरिचन्दन । अधूरा इन्द्रधनुष ।—**अक्ष** (**लोहिताक्ष**)-(पुं०) लाल रंग का पासा । लाल रंग का सर्प विशेष । कोयल । विष्णु का नाम ।—**अङ्ग** (**लोहिताङ्ग**)- (पुं०) मङ्गलग्रह । —**अयस** (**लोहितायस**)-(न०) ताँबा । —**अशोक** (**लोहिताशोक**)- (पुं०) अशोक वृक्ष ।—**अश्व** (**लोहिताश्व**)-(पुं०) अग्नि ।—**आनन** (**लोहितानन**) -(पुं०) न्योला ।—**ईक्षण** (**लोहितेक्षण**)- (वि०) लाल नेत्रों वाला ।—**उद** (**लोहितोद**)-(वि०) लाल जल वाला ।—**कल्माष**- (वि०) लाल धब्बेदार । —**क्षय**-(पुं०) रक्त का नाश ।—**ग्रीव**- (पुं०) अग्निदेव ।—**चन्दन**-(न०) लाल-चंदन । केसर ।—**मृत्तिका**-(स्त्री०) गेरू । लाल मिट्टी ।—**शतपत्र**- (न०) लाल कमल ।

लोहितक—(वि०) [स्त्री०—**लोहितिका**] [लोहित +कन्] लाल । (पुं०) माणिक, चुन्नी; 'लोहितकनिर्मिता भुवः' शि० १३.५२। मङ्गलग्रह । चावल विशेष । (न०) काँसा ।

लोहिता—(स्त्री०) [लोहित —टाप्] वह स्त्री जो क्रोध से लाल हो गयी हो । लाल पुनर्नवा । अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक ।

लोहितिमन्—(पुं०) [लोहित +इमनिच्] लाली ।

लोहिनी—(स्त्री०) [लोहित + ङीप्, तकारस्य नकारादेशः] स्त्री जिसके शरीर का रंग लाल हो ।

लौकायतिक—(पुं०) [लोकायतम् अधीते वेद वा, लोकायत +ठक्] चार्वाकमतानुयायी नास्तिक ।

लौकिक—(वि०) [स्त्री०— **लौकिकी**] [लोक+ठक्] लोक सम्बन्धी । सांसारिक । व्यावहारिक । सामान्य । (न०) लोकाचार ।

लौक्य—(वि०) [लोके भवः, लोक+ष्यञ्] सांसारिक । पार्थिव । साधारण, सामान्य ।

लौल्य—(न०) [लोलस्य भावः, लोल +ष्यञ्] चंचलता, अस्थिरता । उत्सुकता । प्रलोभन । कामुकता । उत्कट कामना ।

लौह—(वि०) [स्त्री०—**लौही**] लोहे का बना । [लोह+अण्] ताँबे का । ताँबे के रंग का, लाल । (न०) लोहा ।—**आत्मन्** (**लौहात्मन्**)-(पुं०), —**भू**- (स्त्री०) पतीली, डेगची ।—**कार**- (पुं०) लुहार । —**ज**- (न०) लोहे का मुर्चा ।—**बन्ध**- (पुं०, न०) लोहे की बेड़ी, जंजीर ।—**शङ्कु**- (पुं०) लोहे की कील ।

लौहा—(स्त्री०) [लौह+टाप्] लोहे आदि की कड़ाही ।

लौहित—(पुं०) [लोहित +अण्] शिव जी का त्रिशूल ।

लौहित्य—(पुं०) [लोहित+ष्यञ्] ब्रह्मपुत्र नद का नाम; 'चकम्पे तीर्णलौहित्ये तस्मिन् प्राग्ज्योतिषेश्वरः ' र० ४.८१ । (न०) लालिमा, ललाई ।

√ल्यी—क्र्या० पर० अक० मिलना । सक० जोड़ना, मिलाना । ल्यिनाति, ल्येष्यति, अल्यैषीत् ।

ल्वी—क्र्या० पर० सक० जाना । ल्विनाति, ल्वेष्यति, अल्वैषीत् ।

व

व—संस्कृत अथवा देवनागरी वर्णमाला का उन्तीसवाँ व्यञ्जन वर्ण । यह उकार का विकार और अन्तःस्थ अर्द्धव्यञ्जन माना

गया है। यह दाँत और ओंठ की सहायता से उच्चारण किया जाता है, अतः इसे दन्त्योष्ठ कहते हैं। अयत्न ईषत्स्पृष्ट होता है अर्थात् इसका उच्चारण जब किया जाता है, तब दाँतों का ओंठ के साथ थोड़ा सा स्पर्श होता है। (न०, पुं०) [√ वा+ड] वरुण का नाम। (अव्य०) जैसा, समान। (पुं०) पवन हवा। बाहु। तुष्टिसाधन। सम्बोधन। कल्याण, मङ्गल। वास, निवास। समुद्र। चीता। वस्त्र। राहु का नाम। वृक्ष। मद्य। कलश से उत्पन्न ध्वनि। मूर्वा नामक लता। खड्गधारी पुरुष। (वि०) बलवान्।

वंश—(पुं०) [वमति उद्गिरति पुरुषान् वन्यते इति वा √वम् वा √वन्+श, अथवा √वश् +घञ् ततो मुम्] बाँस। कुल, खानदान। बेड़ा। बाँस की वंसी; 'कूजद्भिरापादितवंशकृत्यं' र० २.१२। समूह। शहतीर, बल्ली, लट्ठा। गाँठ (जो बाँस में होती है)। गन्ना, ऊख। मेरुदण्ड, रीढ़ की हड्डी। साल का पेड़। बारह हाथ का एक मान। —**अग्र** (**वंशाग्र**)-(न०),—**अङ्कुर** (**वंशाङ्कुर**)-(पुं०) बाँस का अङ्कुर। —**अनुकीर्तन** (**वंशानुकीर्तन**)-(न०) वंश का परिचय देना। **अनुक्रम** (**वंशानुक्रम**)- (पुं०) वंशावली। —**अनुचरित** (**वंशानुचरित**)-(न०) किसी वंश या खान्दान का इतिहास या तवारीख। —**आवली** (**वंशावली**)- (स्त्री०) किसी वंश में उत्पन्न पुरुषों की पूर्वोत्तर क्रम से सूची। —**आह्व** (**वंशाह्व**)-(पुं०) बंसलोचन। —**कठिन** -(पुं०) बाँस का जंगल। —**कर**- (वि०) वंशस्थापक। (पुं०) मूलपुरुष। —**कर्पूररोचना**,—**रोचना**, —**लोचना**-(स्त्री०) बंसलोचन। —**कृत्** -(पुं०) दे० 'वंशकर'। —**क्रम** -(पुं०) किसी वंश की परंपरा। —**क्षीरी**-(स्त्री०) बंसलोचन। —**चिन्तक**- (पुं०) वंशावली जानने वाला। —**च्छेत्तृ**-(वि०) किसी वंश का अंतिम पुरुष। —**ज**-(पुं०) सन्तान, औलाद। बाँस का बिया। —**जा**-(स्त्री०) बंसलोचन। —**धर**, —**धारिन्**-(पुं०) कुल का रक्षक। संतान। बाँस धारण करने वाला व्यक्ति। —**नर्तिन्**-(पुं०) मसखरा, विदूषक। —**नाडका**, —**नालिका**-(स्त्री०) बाँस की नली। —**नाथ**-(पुं०) किसी वंश का प्रधान पुरुष। —**नेत्र**-(न०) गन्ने की जड़। —**पत्र** -(न०) बाँस का पत्ता। (पुं०) नरकुल, सरपत। —**पत्रक**-(पुं०) नरकुल, सरपत। सफेद पौंडा। —**पत्रक**-(न०) हरताल। —**परम्परा**- (स्त्री०) किसी वंश में उत्पन्न पुरुषों की पूर्वोत्तर क्रमानुसार सूची। —**पूरक**- (न०) ऊख की जड़ जिसमें कँखुए होते हैं। —**भोज्य**-(वि०) बाप-दादों का। (न०) पैतृक सम्पत्ति। —**वितति**-(स्त्री०) खानदान, कुल। बाँस का वन। —**शर्करा**-(स्त्री०) बंसलोचन। —**शलाका**- (स्त्री०) वीणा के नीचे के भाग में लगायी जाने वाली बाँस की छोटी खूँटी। —**स्थिति**-(स्त्री०) किसी वंश की मर्यादा।

वंशक—(पुं०) [वंश+कन् वा √कै+क] एक प्रकार का गन्ना। बाँस की गाँठ। मछली। (न०) अगर की लकड़ी।

वंशिका—(स्त्री०) [वंश + न्—टाप्] बाँसुरी, मुरली। अगर की लकड़ी। पिप्पली।

वंशी—(स्त्री०) [वंश+अच्—ङीष्] बाँसुरी, मुरली; 'कंसरिपोर्व्यपोहतु स वोऽश्रेयांसि वंशीरवः' गी० ६। नस, रक्तप्रवाहिनी शिरा। बंसलोचन। चार कर्ष या चार तोले का एक मान। —**धर**,—**धारिन्**-(पुं०) श्रीकृष्ण। वंशी बजाने वाला व्यक्ति।

वंश्य—(वि०) [वंश+यत्] बँड़ेर, या मुख्य बल्ली सम्बन्धी। मेरुदण्ड से सम्बन्ध युक्त।

किसी वंश से सम्बन्ध युक्त । कुलीन, उत्तम कुल का । (पुं०) वंशधर । पूर्वपुरुष, पूर्वज; 'नूनं मत्तः परं वंश्याः पिण्डविच्छेददर्शिनः' र० १.६६ । किसी वंश का कोई भी पुरुष । रीढ़, पीठ की हड्डी । बँड़ेर, छाजन के बीच की लकड़ी । शिष्य ।

वक—दे० 'वक' ।

वकुल—दे० 'बकुल' ।

√वक्क्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । वक्कते, वक्किष्यते, अवक्किष्ट ।

वक्तव्य—(वि०) [√वच् + तव्यत्] कहने लायक, कहने योग्य । वह जिसके विषय में कहा जाय । धिक्कारने, फटकारने योग्य । कमीना, नीच । जिम्मेदार, उत्तरदायी । पराधीन, परतंत्र । (न०) कथन, वक्तृता । अनुशासन की आज्ञा । भर्त्सना, धिक्कार ।

वक्तृ—(वि०) [√वच्+तृच्] कहने, बोलने वाला । वाग्मी । व्याख्यानदाता । (पुं०) कथा कहने वाला पुरुष, व्यास । विद्वान् व्यक्ति । शिक्षक ।

वक्त्र—(न०) [वक्ति, अनेन, √वच् +त्र] मुख । चेहरा । थूथन । चोंच । आरम्भ । (तीर की) नोक । बर्तन की टोंटी । वस्त्रविशेष । अनुष्टुप् छंद के समान एक छंद । —**आसव** (**वक्त्रासव**)–(पुं०) थूक, लवार ।—**खुर**– (पुं०) दाँत ।—**ज**– (पुं०) ब्राह्मण ।—**ताल**–(न०) वह ताल जो मुख से निकाला जाय ।—**दल** –(न०) तालू ।— **रन्ध्र**–(न०) मुख का छेद ।—**पट्ट**—(पुं०) तोबड़ा । —**परिस्पन्द**– (पुं०) भाषण, वाणी ।—**भेदिन्**–(वि०) तीता, चरपरा ।—**वास**–(पुं०) नारंगी ।— **शोधन**–(न०) मुखप्रक्षालन । नीबू । भव्य, कमरख ।—**शोधिन्**–(पुं०) जमीरी नीबू । (वि०) मुखशोधक ।

वक्र—(वि०) [वङ्क् +रन्, पृषो० नलोप वा √ वञ्च् +रक्] टेढ़ा, बाँका; 'वक्रः पन्था यदपि भवतः प्रस्थितस्योत्तराशां' मे० २७ । तिरछा । घुँघराला । पश्चाद्गामी । बेईमान । निष्ठुर । (पुं०) शनैश्चर । मंगलग्रह । रुद्र । त्रिपुरासुर । (न०) नदी का मोड़ ।—**अङ्ग** (**वक्राङ्ग**)– (न०) टेढ़ा शरीरावयव । (पुं०) हंस । चक्रवाक, चकई- चकवा । सर्प ।—**उक्ति** (**वक्रोक्ति**)–(स्त्री०) एक प्रकार का काव्यालङ्कार । इसमें काकु या श्लेष से किसी वाक्य का और का और ही अर्थ किया जाता है । काकूक्ति । बढ़िया या चमत्कार- पूर्ण कथन । —**कण्ट**–(पुं०) बेर का पेड़ ।—**कण्टक**–(पुं०) खदिर वृक्ष ।—**खड्ग**—**खड्गक**–(पुं०) करवाल ।— **गति**, —**गामिन्**–(वि०) टेढ़ी चाल वाला । बेईमान । (पुं०) मंगल ।—**ग्रीव**– (पुं०) ऊँट । —**चञ्चु**–(पुं०) तोता ।—**तुण्ड**–(पुं०) गणेशजी । तोता ।—**दंष्ट्र**–(पुं०) शूकर ।— **दृष्टि**– (वि०) ऐंचाताना, भेंडा । वह जिसकी निगाह में दुष्टता भरी हो । डाही, ईर्ष्यालु । (स्त्री०) भेंड़ापन । —**नक**–(पुं०) तोता । नीच आदमी । —**नासिक** –(पुं०) उल्लू । —**पुच्छ**, —**पुच्छिक**– (पुं०) कुत्ता ।—**पुष्प**–(पुं०) पलाश का वृक्ष ।—**बालधि**,—**लाङ्गूल**–(पुं०) कुत्ता ।—**भाव**-(पुं०) बाँकापन, टेढ़ापन । दगाबाजी ।—**वक्त्र**–(पुं०) शूकर । (वि०) तिरछे मुँह वाला ।

वक्रय—(पुं०) [अव√क्री+अच्, उपसर्गाकारलोपः] मूल्य, कीमत ।

वक्रिन्—(वि०) [वक्र + इनि] टेढ़ा मेढ़ा । विपरीत, उल्टा । (पुं०) जैनी या बौद्ध ।

वक्रिमन्—(पुं०) [वक्र+इमनिच्] बाँकापन । ढिठाई । द्व्यर्थक-श्लेष । चालाकी ।

वक्रोष्ठिका—(स्त्री०) [वक्र ओष्ठो यस्याम्, ब० स०, कप्—टाप्, इत्व] मन्द मुसकान।

√**वक्ष्**—भ्वा० पर० अक० बढ़ना। उगना। बलिष्ठ होना। क्रुद्ध होना। सक० जमा करना। वक्षति, वक्षिष्यति, अवक्षीत्।

वक्षस्—(न०) [√वक्ष्+असुन्] छाती। (पु०) [√वह्+असुन्, सुट्] बैल।—**ज (वक्षोज)**,—**रुह् (वक्षोरुह्)**,—**रुह (वक्षोरुह)**—(पु०) (स्त्री का) कुच, स्तन।—**स्थल (वक्षःस्थल)**—(न०) छाती, सीना।

√**वख्**—भ्वा० पर० सक० जाना। वखति, वखिष्यति, अवाखीत्—अवखीत्।

वगाह—(पु०) [भागुरिमते 'अवगाह' इत्यत्र अकारलोपः] दे० 'अवगाह'।

√**वङ्क्**—भ्वा० आत्म० सक० जाना। अक० टेढ़ा होना। वङ्कते, वङ्किष्यते, अवङ्किष्ट।

वङ्क—(पु०) [√वङ्क्+अच्] नदी का मोड़।

वङ्का—(स्त्री०) [वङ्क+टाप्] घोड़े के चार-जामे की अगली मेंढ़ी।

वङ्किल—(पु०) [√वङ्क्+इलच्] काँटा।

वङ्क्रि—(पु०) [√वङ्क्+क्रिन्] पसली। छत का शहतीर। एक प्रकार का बाजा।

वङ्क्षु—(पु०) [√वह्+कु, नुम्] आक्सस नदी जो हिन्दूकुश पर्वत से निकल कर मध्य एशिया में बहती हुई अरल समुद्र में गिरती है।

√**वङ्ख्**—भ्वा० पर० सक० जाना। वङ्खति, वङ्खिष्यति, अवङ्खीत्।

√**वङ्ग्**—भ्वा० पर० सक० जाना। वङ्गति, वङ्गिष्यति, अवङ्गीत्।

वङ्ग—(न०) [√वङ्ग्+अच्] सीसा। राँगा। राँगे का भस्म। (पु०) कपास। बैंगन। एक पहाड़। एक चंद्रवंशी राजा। बंगाल प्रदेश तथा तद्देश-निवासी; 'वङ्गानुत्खाय तरसा नेता नौसाधनोद्यतान्' र० ४.३६।—**अरि (वङ्गारि)**—(पु०) हरताल।—**ज**—(पु०) पीतल। सिंदूर।—**जीवन**—(न०) चाँदी।—**शुल्वज**—(न०) काँसा।

वङ्गन—(पु०) [√वङ्ग्+ल्यु] बैंगन।

√**वङ्घ्**—भ्वा० आत्म० सक० जाना। आरम्भ करना। भर्त्सना करना। दोष लगाना। वङ्घते, वङ्घिष्यते, अवङ्घिष्ट।

√**वच्**—अ० पर० सक० कहना, बोलना। वर्णन करना। निरूपण करना। बतलाना। वक्ति, वक्ष्यति, अवोचत्।

वच—(पु०) [√वच्+अच्] तोता। सूर्य। कारण। वचन, वाक्य।

वचन—(न०) [√वच्+ल्युट्] बोलने की क्रिया। वाणी। आदेश। निर्देश। परामर्श, सलाह। शपथपूर्वक वर्णन। शब्दार्थ। (व्याकरण में) वचन; यथा—एकवचन, द्विवचन, बहुवचन। सोंठ।—**उपक्रम (वचनोपक्रम)**—(पु०) भूमिका, प्रारम्भिक वक्तव्य।—**कर**—(वि०) आज्ञाकारी, आज्ञा-पालक।—**कारिन्**—(वि०) आज्ञाकारी।—**क्रम**—(पु०) संवाद, कथोपकथन।—**ग्राहिन्**—(वि०) आज्ञाकारी।—**पटु**—(वि०) बोलने में चतुर।—**विरोध**—(पु०) कथन में परस्पर विरोध।—**स्थित**—(पु०) आज्ञाकारी।

वचनीय—(वि०) [√वच्+अनीयर्] कहने योग्य। वर्णन करने योग्य। धिक्कारने योग्य। (न०) कलङ्क। अपवाद; 'न कामवृत्तिर्वचनीयमीक्षते' कु० ५.८२। निंदा।

वचर—(पु०) मुर्गा। दुष्ट व्यक्ति।

वचस्—(न०) [√वच्+असुन्] वाक्य। आदेश। परामर्श। (व्याकरण में) वचन।—**कर**—(वि०) आज्ञाकारी। दूसरे की आज्ञा के अनुसार काम करने वाला।—**ग्रह (वचोग्रह)**—(पु०) कान।—**प्रवृत्ति (वचःप्रवृत्ति)**—(स्त्री०) बोलने का प्रयत्न।

वचसांपति—(पुं०) [वचसां वाचां पतिः षष्ठ्या अलुक्] बृहस्पति ।

वचा—(स्त्री०) [√वच् + णिच् +अच् –टाप्] एक ओषधि । मैना पक्षी ।

√वज्—भ्वा० पर० सक० जाना । सम्हालना । तैयार करना । तीर में पर लगाना । वजति, वजिष्यति, अवाजीत्— अवजीत् ।

वज्र—(न०, पुं०)[√वज्+रन्] इन्द्र का वज्र । कोई भी विनाशक हथियार । हीरा काटने का औजार । हीरा । काँजी । (पुं०) व्यूह-रचना विशेष । श्वेत कुश । कोकिलाक्ष वृक्ष । थूहर का पेड़, सेहुँड़ । प्रद्युम्न के एक पुत्र का नाम । विश्वामित्र का एक पुत्र । (न०) इस्पात । अबरक । वज्र या कठोर भाषा । बच्चा । वज्रपुष्प । **—अङ्ग** (**वज्राङ्ग**)-(पुं०) हनुमान । सर्प ।**—अशनि** (**वज्राशनि**)- (पुं०) इन्द्र का वज्र ।**—आकर** (**वज्राकर**)-(पुं०) हीरों की खान ।**—आयुध** (**वज्रायुध**)-(पुं०) इन्द्र ।**—कङ्कट**- (पुं०) हनुमान् । **—कील**-(पुं०) बिजली ।**—क्षार**-(न०) वैद्यक का एक रसायन योग ।**— गोप**- (पुं०) बीरबहूटी, इंद्रगोप ।**—चञ्चु**- (पुं०) गीध ।**—चर्मन्**-(पुं०) गैंडा ।**— जित्**-(पुं०) गरुड़ का नाम ।**—ज्वलन** - (न०), **—ज्वाला**-(स्त्री०) बिजली ।**—तुण्ड**-(पुं०) गीध । मच्छर । डाँस । गरुड़ ।—गणेश ।**—दंष्ट्र** (पुं०) इंद्रगोप कीट, बीरबहूटी ।**—दन्त**-(पुं०) शूकर । चूहा ।**— दशन**- (पुं०) चूहा ।**—देह, —देहिन्**- (वि०) दृढ़ शरीर वाला ।**—धर**- (पुं०) इन्द्र । बोधिसत्त्व । उल्लू ।**—नाभ**-(पुं०) श्री कृष्ण का चक्र ।**—निर्घोष, —निष्पेष**-(पुं०) बिजली का कड़कना ।**—पाणि**-(पुं०) इन्द्र; 'अयं चमूनामिव वज्रपाणिः' र० २.४२ ।**—पात** -(पुं०) बिजली का गिरना । **—पुष्प**- (न०) तिल्ली का फूल ।**— भृत्**- (पुं०) इन्द्र ।**—मणि**-(पुं०) हीरा । **—मुष्टि**-(पुं०)इन्द्र ।**—रद**- (पुं०) शूकर । **—लेप**-(पुं०) एक मसाला या पलस्तर जो मजबूती के लिये दीवार, मूर्ति आदि पर लगाया जाता है । **—लोहक**- (पुं०) चुंबक ।**—व्यूह**-(पुं०)दुधारी तलवार के आकार की सैन्य-रचना ।**—शल्य**- (पुं०) साहीं नामक जानवर ।**—सार**- (वि०) वज्र की तरह कड़ा ।(पुं०) हीरा ।**—सूची**-(स्त्री०) वह सुई जिसकी नोक पर हीरा लगा हो ।**—हस्त**-(पुं०) इंद्र । शिव । मरुत् । अग्नि । **—हृदय**- (न०) हीरा की तरह कड़ा दिल ।

वज्रिन्—(पुं०) [वज्र + इनि] इन्द्र का नाम । उल्लू । बौद्ध या जैन साधु ।

√वञ्च्—चु० पर० सक० ठगना । वञ्चयति —वञ्चति, वञ्चयिष्यति —वञ्चिष्यति, अववञ्चत्—अवञ्चीत् ।

वञ्चक—(वि०) [√ वञ्च् + णिच् +ण्वुल्] ठग । धोखेबाज । छलिया । (पुं०)ठग या धूर्त व्यक्ति । शृगाल । छछूंदर । पालतू न्योला ।

वञ्चति—(पुं०) [√वञ्च् + अति] अग्नि ।

वञ्चथ—(पुं०) [√वञ्च् + अथ] ठगी । धोखेबाजी । धोखेबाज । कोयल । समय ।

वञ्चन—(न०), **वञ्चना** - (स्त्री०) [√ वञ्च् +ल्युट्] [√वञ्च्+णिच् +युच् –टाप्] ठगी, प्रतारणा । भ्रम । माया । हानि ।

वञ्चित—(वि०) [√वञ्च् + णिच् +क्त] ठगा हुआ । धोखा दिया हुआ । अलग किया हुआ । वियुक्त ।

वञ्चिता—(स्त्री०) [वञ्चित + टाप्] एक प्रकार की पहेली या बुझौवल ।

वञ्चुक—(वि०) [स्त्री० —**वञ्चुकी**] [√वञ्च् + उकन्] ठग । धोखेबाज । छलिया । बेईमान । (पुं०) शृगाल ।

वञ्जुल—(पुं०) [√ वज्+उलच्, नुम्] तिनिशवृक्ष । स्थलपद्म वृक्ष । अशोक वृक्ष; "धामञ्जुवञ्जुललतानि च तान्यमूनि नीरन्ध्रनीलनिचुलानि सरित्तटानि" । नरकुल या बेंत । । पक्षी विशेष ।—**द्रुम**-(पुं०) अशोक वृक्ष ।—**प्रिय** -(पुं०) बेंत ।

√वट्—भ्वा० पर० सक० घेरना। स्पष्ट बोलना । वटति, वटिष्यति, अवाटीत्—अवटीत् । चु० पर० सक० गठियाना । बाँटना । वटयति, वटयिष्यति, अववटत् ।

वट—(पुं०) [√वट् +अच्] बरगद का पेड़ । कौड़ी । गोली । वटिका, बड़ी । छोटा गेंद । शून्य, सिफर । चपाती । डोरी । रूप की समानता या रूपसादृश्य ।—**पत्र**-(न०) सफेद वनतुलसी ।—**पत्रा** -(स्त्री०) एक प्रकार की चमेली ।—**वासिन्**-(पुं०) यक्ष ।

वटक—(पुं०) [√वट् +क्वुन् वा वट +कन्] बड़ा, पकौड़ा । गोली । एक तौल जो आठ मासे की होती है ।

वटर—(पुं०) बटेर पक्षी । चटाई । पगड़ी । चोर । रई । सुगन्धयुक्त घास ।

वटाकर, वटारक—(पुं०) डोरी, रस्सी ।

वटिक—(पुं०) [√वट् + इन्+कन्] शतरंज का मोहरा ।

वटिका—(स्त्री०) [वटी + कन्—टाप्, ह्रस्व] बड़ी । गोली । [वटिक+टाप्] शतरंज का मोहरा ।

वटिन्—(वि०) [वट + इनि] गोल । डोरीदार ।

वटी—(स्त्री०) [√ वट् +अच्—ङीष्] बड़ी । रस्सी, डोरी । गोली या टिकिया ।

वटु—(पुं०) [√वट्+उ] छोकरा, बालक । ब्रह्मचारी, माणवक; 'निवार्यतामालि किमप्ययं वटुः पुनर्विवक्षुः स्फुरितोत्तराधरः' कु० ५.८३ ।

वटुक—(पुं०) [वटु+कन्] बालक । ब्रह्मचारी, माणवक । एक भैरव ।

√वठ्—भ्वा० पर० अक० मजबूत होना । हृष्टपुष्ट होना । वठति, वठिष्यति, अवाठीत्—अवठीत् ।

वठर—(वि०) [√वठ् + अरन्] सुस्त, काहिल । दुष्ट, शठ । (पुं०) मूढ़जन, मूर्ख आदमी । शठजन, दुष्टजन । चिकित्सक । जल का घड़ा ।

वडभि, वडभी— (स्त्री०) दे० 'वलभि' 'वलभी' ।

वडवा—(स्त्री०) [वलं वाति, वल√वा +क —टाप्, डलयोरैक्यात् लस्य डत्वम्] घोड़ी । अश्विनी नाम की अप्सरा जिसने घोड़ी का रूप धर, सूर्य से दो पुत्र उत्पन्न करवाये थे । वे दोनों अश्विनीकुमार के नाम से प्रसिद्ध हैं । दासी । रंडी, वेश्या । ब्राह्मणी । —**अग्नि** (**वडवाग्नि**),—**अनल** (**वडवानल**)- (पुं०) [वडवायाः समुद्रस्थितायाः घोटक्याः मुखस्थोऽग्निः] समुद्र के भीतर रहने वाला अग्नि ।—**मुख**- (पुं०) [वडवाया घोटक्याः मुखम् आश्रयत्वेन अस्ति अस्य, वडवामुख +अच्] वडवानल । शिव का नाम ।

वडा—(स्त्री०) [√वड् + अच्—टाप्] बड़ा, वटक ।

वडिश—(न०) [वलिनो मत्स्यान् श्यति नाशयति, √ शो +क, लस्य डत्वम्)] बंसी, काँटिया । नश्तर लगाने का एक औजार ।

वड्र—(वि०) [√ वड् + रक्] बड़ा, दीर्घाकार ।

√वण्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना वणति, वणिष्यति, अवणीत्—अवाणीत् ।

वणिज्—(पुं०) [पणायते व्यवहरति, √पण्+इजि, पस्य वः] बनिया। सौदागर, व्यापारी। तुलाराशि।—**क्रिया** (**वणिक्क्रिया**)–(स्त्री०) सौदागरी, व्यापार।—**जन** (**वणिग्जन**)–(पुं०) व्यापारी, तिजारती, सौदागर। बनिया।—**पथ** (**वणिक्पथ**)–(पुं०) सौदागर, व्यापार। व्यापारी की दूकान। तुलाराशि।—**वृत्ति** (**वणिग्वृत्ति**)–(स्त्री०) व्यापार, सौदागरी।—**सार्थ** (**वणिक्सार्थ**)–(पुं०) व्यापारियों की टोली, कारवाँ।

वणिज—(पुं०) [वणिज्+अच् (स्वार्थे)] व्यापारी। तुलाराशि।

वणिजक—(पुं०) [वणिज+कन्] व्यापारी।

वणिज्य—(न०), —**वणिज्या**–(स्त्री०) [वणिज् + यत्] [वणिज्य+टाप्] व्यापार, सौदागरी, तिजारत।

√**वण्ट्**—चु० पर० सक० बटवारा करना, बाँटना। वण्टयति—वण्टति, वण्टयिष्यति—वण्टिष्यति, अववण्टत्—अवण्टीत्।

वण्ट—(पुं०) [√ वण्ट् + अच्] हिस्सा, बाँट, अंश। हँसिया का बेंट। (वि०) [√ वण्ट् + अच्] अविवाहित। पुच्छहीन।

वण्टक—(पुं०) [वण्ट+कन्] अंश, भाग, हिस्सा। (वि०) [√वण्ट् + ण्वुल्] बाँटने वाला।

वण्टन—(न०) [√वण्ट् +ल्युट्] बाँटना, हिस्सा लगाना।

वण्टाल—(पुं०) [√वण्ट्+आलच्] शूरवीरों का झगड़ा। खनित्र, खंता। नाव।

√**वण्ठ्**—भ्वा० आत्म० सक० अकेले जाना। वण्ठते, वण्ठिष्यते, अवण्ठिष्ट। चु० पर० सक० बाँटना। वण्ठयति, वण्ठयिष्यति, अववण्ठत्।

वण्ठ—(वि०) [√वण्ठ् + अच्] अविवाहित। बौना, खर्वाकार। पंगु। (पुं०) अविवाहित पुरुष। नौकर। भाला।

वण्ठर—(पुं०) [√वण्ठ् + अरन्] बाँस के कल्ले का वह मोटा पत्ता जो उसे छिपाये रहता है (वह पत्ता गाँठ-गाँठ पर होता है)। ताड़ वृक्ष का नया अङ्कुर। बकरा बाँधने की रस्सी। कुत्ता। कुत्ते की पूँछ। बादल। स्तन।

वण्ठाल—दे० 'वण्टाल'।

√**वण्ड्**—भ्वा० आत्म० सक० बाँटना। वण्डते, वण्डिष्यते, अवण्डिष्ट। चु० पर० सक० बाँटना। वण्डयति, वण्डयिष्यति, अववण्डत्।

वण्ड—(वि०) [√वन्+ड] भग्नाङ्ग। पंगु। अविवाहित। (पुं०) वह पुरुष जिसकी लिङ्गेन्द्रिय के अग्रभाग पर ढकने वाला चमड़ा न हो। बिना पूँछ का बैल।

वण्डर—(पुं०) [√वण्ड् + अरन्] कंजूस आदमी। नपुंसक पुरुष, हिजड़ा आदमी।

वण्डा—(स्त्री०) [वण्ड + टाप्] व्यभिचारिणी स्त्री, छिनाल औरत।

वत्—(अव्य०) [√वा + डति] सदृश, समानता।

वतंस—(पुं०) [अव√तंस् +घञ् वा अच्, अव इत्यस्य अकारलोपः]=अवतंस।

वत—(अव्य०) [√वन्+क्त] एक अव्यय जो शोक, खेद, दया, संबोधन, हर्ष, संतोष, आश्चर्य और भर्त्सना के अर्थ में व्यवहृत होता है।

वतोका—(स्त्री०) [अवगत तोकं यस्याः, अवस्य अकारलोपः] सन्तानरहित स्त्री या गौ। वह स्त्री या गौ जिसका गर्भ किसी घटना विशेष से गिर पड़ा हो।

वत्स—(पुं०) [√वद्+स] बछड़ा, गाय या किसी भी जानवर का बच्चा। बेटा। सन्तान, औलाद। वर्ष। एक देश का नाम जहाँ उदयन नामक राजा राज्य करता था और जिसकी राजधानी का नाम कौशाम्बी था।—**अक्षी** (**वत्साक्षी**)–(स्त्री०) एक

प्रकार का ककड़ी की जाति का फल (प्रायः तरबूज)।—**अदन** (**वत्सादन**)-(पुं०) भेड़िया।—**काम**-(वि०) बच्चों का अभिलाषी।—**नाभ**-(पुं०) एक विषैला पौधा, वत्सनाभ नामक विष जो मीठा होता है।—**पाल**-(पुं०) श्रीकृष्ण। बलराम।—**शाला**-(स्त्री०) बछड़ों के रहने का घर।

वत्सक—(पुं०) [वत्स+कन्] छोटा बछड़ा, बछड़ा। बच्चा। कुटज का पौधा। (न०) पुष्पकसीस। कुटज। इन्द्रजौ। निर्गुण्डी।

वत्सतर—(पुं०) [वत्स + तरप्] जवान बछड़ा जो जोता न गया हो; 'महोक्षतां वत्सतरः स्पृशन्निव' र० ३.३२।

वत्सतरी—(स्त्री०) [वत्सतर+ ङीप्] वह बछिया जिसकी उम्र ३ वर्ष की हो, कलोर; 'श्रोत्रियायाभ्यागताय वत्सतरीं वा महोक्षं वा निर्वपन्ति गृहमेधिनः' उ० ४।

वत्सर—(पुं०) [वसन्ति अस्मिन् मास-पक्ष-वारादयः, √वस् +सरन्] वर्ष। विष्णु का नाम।—**अन्तक** (**वत्सरान्तक**)- (पुं०) फागुन मास।—**ऋण** (**वत्सरार्ण**)-(न०) वह कर्ज जिसका चुकाना वर्ष के अन्त में आवश्यक हो।

वत्सल—(वि०) [वत्स+लच्] पुत्र या सन्तान के प्रति पूर्ण स्नेहयुक्त, बच्चे के प्रेम से भरा हुआ। (पुं०) विष्णु। (न०) पुत्र आदि के प्रति प्रेम-प्रदर्शन। अनुराग।

वत्सला—(स्त्री०) [वत्सल+ टाप्] वह गाय जिसका अपने बच्चे पर पूर्ण अनुराग हो।

वत्सा, **वत्सिका**-(स्त्री०) [वत्स+ टाप्] [वत्सा+ कन्—टाप्, ह्रस्व, इत्व] बछिया।

वत्सिमन्—(पुं०) [वत्स +इमनिच्] बचपन।

वत्सीय—(पुं०) [वत्स+छ] गोप, ग्वाला। (वि०) वत्सों का हितकारी।

√वद्—भ्वा० पर० सक० बोलना। सूचना देना। कहना। वर्णन करना। निर्दिष्ट करना। पुकारना। वदति, वदिष्यति, अवादीत्। चु० उ० सक० संदेशा कहना। वादयति—ते —वदति—ते। [दीप्ति, सान्त्वना, ज्ञान, उत्साह, विवाद और प्रार्थना के अर्थ में वद् धातु आत्मनेपदी है।]

वद—(वि०) [√ वद् + अच्] बोलने वाला। बातचीत करने वाला। भली-भाँति बोलने वाला।

वदन—(न०) [√वद् +ल्युट्] बोलना। चेहरा। मुख। सूरत, रूप। अगला भाग। प्रथम संख्या (किसी माला का)।—**आसव** (**वदनासव**)-(पुं०) लार।

वदन्ती—(स्त्री०) [√वद् + अन्—ङीप्] वाणी। वक्तृता। संवाद।

वदन्य—(वि०) [√वद्+आन्य, पृषो० ह्रस्व]=वदान्य।

वदर—(पुं०) दे० 'बदर'।

वदान्य—(वि०) [वदति सर्वेभ्यः एव दास्यामि इति मनोहरवाक्यम्, √ वद् +आन्य] अतिशय दाता; 'तस्मै वदान्य-गुरवे तरवे नमोऽस्तु' भा० १.६४। उदार। मधुरभाषी, अपनी बातचीत से दूसरे को सन्तुष्ट करने वाला।

वदाम—(न०) [√वद् + आमन्] बादाम फल।

वदाल—(पुं०) [√वद्+क, वद√ अल् +अच्] भँवर। पाठीन मत्स्य, पहिना मछली।

वदावद—(वि०) [अत्यन्तं वदति,√वद् +अच्, नि० द्वित्वादि] बहुत बोलने वाला। गप्पी।

वदि—(अव्य०) [√वद्+इन्] कृष्णपक्ष।

वध—(पुं०) [हननम् इति, √हन् + अप्, वधादेश] मारण, हत्या। आघात, प्रहार। लकवा। अन्तर्धान क्रिया। (अङ्कगणित में)

गुणा की क्रिया ।—**अङ्गुक** (**वधाङ्गुक**)-(न०) विष ।—**अर्ह** (**वधार्ह**)-(वि०) प्राणदण्ड पाने योग्य ।—**उपाय** (**वधोपाय**) -(पुं०) वध का साधन ।—**कर्माधिकारिन्**- (पुं०) जल्लाद, वधिक ।—**जीविन्**- (पुं०) व्याध, बहेलिया । कसाई, बूचड़ ।—**दण्ड** - (पुं०) प्राणदण्ड ।—**निर्णेक** -(०) हत्याजनित पाप का प्रायश्चित्त ।— **भूमि**,— **स्थली**-(स्त्री०), **स्थान**- (न०) वह स्थान जहाँ प्राणदण्ड दिया जाय । कसाईखाना ।

वधक—(पुं०) [√हन् + क्वुन्, वधादेश] जल्लाद । व्याध । मृत्यु । (वि०) हत्या करने वाला, हत्यारा ।

वधत्र—(न ०) [√वध् + अत्रन्] वध करने का हथियार ।

वधित्र—(न०) [√वध् + इत्र] कामदेव । मैथुन करने की इच्छा, कामासक्ति ।

वधु, वधुका—(स्त्री०) बहू, दुलहिन । पुत्र की पत्नी । युवती स्त्री ।

वधू—(स्त्री०) [बध्नाति प्रेम्णा, √बन्ध् +ऊ, नलोप वा ऊह्यते भर्त्रादिभिः, √वह् +ऊ, ध आदेश] दुलहिन; 'वरः स वध्वा सह राजमार्गं प्राप ध्वजच्छायनिवारितोष्णम्' र० ७.४ । पत्नी । पुत्रवधू, पतोहू । स्त्री, औरत । अपने से छोटे सम्बन्धी की स्त्री, नाते में छोटी स्त्री । पशु की मादा ।—**जन**- (पुं०) स्त्रियाँ ।—**वस्त्र**-(न०) वे कपड़े जो विवाह के समय कन्या को दिये जाते हैं ।

वधूटी—(स्त्री०) [अल्पवयस्का वधूः, वधू +टि—ङीप्] नव युवती स्त्री । पुत्रवधू ।

वध्य—(वि०) [वधम् अर्हति, वध+यत्] वध करने योग्य । प्राणदड की आज्ञा पाये हुए । (पुं०) शिकार, आपद्ग्रस्त व्यक्ति । शत्रु ।—**पटह**-(पुं०) वह ढोल जो किसी को प्राणदण्ड देते समय बजाया जाय ।—**भू**, —**भूमि**-(स्त्री०), —**स्थल**,—**स्थान**-(न०) वध करने की जगह ।—**माला** -(स्त्री०) वह माला जो प्राणदण्ड प्राप्त पुरुष के गले में उस समय पहनायी जाय, जिस समय उसका वध किया जाय ।

वध्र—(न०) [√ बन्ध् + ष्ट्रन्] चमड़े का तसमा; 'दधिरे कठिनस्तुरङ्गमेषु स्फुट-पल्याण-निबद्ध-वध्र-लीलाम्' शि० २०.५० । शीशा ।

वध्री—(स्त्री०) [वध्र+ङीष्] चमड़े का तसमा या पट्टी ।

वध्र्य—(पुं०) [वध्र+यत्] जूता ।

√वन्—भ्वा० पर० सक० प्रतिष्ठा करना, सम्मान करना, पूजन करना । सहायता करना । अक० ध्वनि करना । संलग्न होना, किसी काम में लगना । वनति, वनिष्यति, अवानीत् —अवनीत् । त० उभ० सक० याचना करना, माँगना । प्रार्थना करना । ढूंढना, तलाश करना । जीतना, अधिकार में करना । वनुते —वनोति, वनिष्यति —ते, अवनिष्ट —अवत— अवानीत्—अवनीत् । चु० उभ० सक० कृपा करना, अनुग्रह करना । चोटिल करना । अनिष्ट करना । ध्वनित करना । विश्वास करना । वानयति —ते, वानयिष्यति — ते, अवीवनत् —त ।

वन—(न०) [√वन् +अच् वा घ] जंगल; 'वनेऽपि दोषाः प्रभवन्ति रागिणाम्' । कमल के फूलों का दस्ता । आवासस्थान । जल का चश्मा या सोता । जल । काष्ठ । किरण ।—**अग्नि** (**वनाग्नि**)-(पुं०) दावानल, दावाग्नि ।—**अज** (**वनाज**)—(पुं०) जंगली बकरा ।—**अन्त** (**वनान्त**) -(पुं०) वन की सीमा, वन-प्रान्त ।—**अन्तर** (**वनान्तर**)-(न०) दूसरा वन । वन का भीतरी हिस्सा ।—**अरिष्टा** (**वनारिष्टा**) -(स्त्री०) जंगली हल्दी ।—

अलक्त (**वनालक्त**)– (न०) लाल मिट्टी। गेरू।—**अलिका** (**वनालिका**)– (स्त्री०) हस्तिशुण्डी लता। सूरजमुखी।—**आखु** (**वनाखु**)– (पुं०) खरगोश।—**आखुक** (**वनाखुक**)– वनमूंग।—**आपगा** (**वनापगा**)–(स्त्री०) वन की नदी।—**आर्द्रका** (**वनार्द्रका**)–(स्त्री०) जंगली अदरक।—**आश्रम** (**वनाश्रम**)–(पुं०) वानप्रस्थाश्रम। वन का वास।—**आश्रमिन्** (**वनाश्रमिन्**) (पुं०) वानप्रस्थी।—**आश्रय** (**वनाश्रय**)–(पुं०) वन-वासी। काला कौआ, डोम-कौआ।—**उत्साह** (**वनोत्साह**)–(पुं०) गैंडा।—**उद्भवा** (**वनोद्भवा**)–(स्त्री०) जंगली कपास का पौधा।—**ओकस्** (**वनौकस्**)–(पुं०) वनवासी, जंगल का रहने वाला। वानप्रस्थाश्रमी। वन्य पशु (यथा बंदर, शूकर आदि)।—**कणा**– (स्त्री०) वन-पिप्पली।—**कदली**– (स्त्री०) जंगली केला।—**करिन्**, —**कुञ्जर**,—**गज**– (पुं०) जंगली हाथी।—**कुक्कुट**– (पुं०) जंगली मुर्गा।—**खण्ड**– (न०) जंगल।—**गहन**–(न०) वन का अति सघन भाग।—**गुप्त**– (पुं०) जासूस, भेदिया, खुफिया।—**गुल्म**– (पुं०) जंगली झाड़ी।—**गोचर** –(वि०) वन में रहने वाला। (पुं०) बहेलिया। वनवासी। (न०) वन, जंगल।—**चन्दन** –(न०) देवदारु वृक्ष। अगर काष्ठ।—**चर** –(वि०) वन में विचरने वाला। (पुं०) वनवासी। वन्य पशु। शरभ।— **चर्या**–(स्त्री०) वन में विचरना। वन में निवास करना।—**छाग**– (पुं०) जंगली बकरा। शूकर।—**ज**– (पुं०) हाथी। सुगन्धयुक्त तृण विशेष। जंगली बिजौरा जाति का नींबू। (न०) नीलकमल का पुष्प। जंगली कपास का पौधा।—**जीविन्** –(वि०) लकड़हारा। बहेलिया।—**द**– (पुं०) बादल, मेघ।—**दाह**–(पुं०) दावानल।—**देवता**–(स्त्री०) वन का अधिष्ठाता देवता।—**पांसुल**– (पुं०) बहेलिया।—**पूरक**–(पुं०) वनैला बिजौरा नींबू।— **प्रवेश**– (पुं०) वान-प्रस्थाश्रम में प्रवेश।—**प्रिय**–(पुं०) कोयल। (न०) दालचीनी का पेड़।—**माला**–(स्त्री०) वन के पुष्पों की माला। घुटनों तक लंबी ऋतु-कुसुमों की माला।—**मालिन्**– (पुं०) [वनमाला + इनि] श्रीकृष्ण; 'धीरसमीरे यमुनातीरे वसति वने वनमाली' गीत० ५।—**मालिनी**– (स्त्री०) [वनमालिन्+ङीप्] द्वारकापुरी का नामान्तर।—**मुच्**– (पुं०) बादल, मेघ।— **मोचा**– (स्त्री०) जंगली केला।—**राज**– (पुं०) सिंह।—**रुह्**– (न०) कमल का फूल — **लक्ष्मी**–(स्त्री०) वनश्री, वन की शोभा। केला।—**वासन**– (पुं०) गंध बिलाव।—**वासिन्**–(पुं०) वन में बसने वाला व्यक्ति। वानप्रस्थी। ऋषभ नामक ओषधि। मुष्कक वृक्ष। वाराहीकन्द। शाल्मलीकन्द। द्रोणकाक, डोम कौआ।—**व्रीहि** –(पुं०) जंगली चावल।—**शोभन**– (न०) कमल।—**श्वन्**– (पुं०) शृगाल। चीता। गंध बिलाव।—**सङ्कट**– (पुं०) मसूर।—**सरोजिनी** –(स्त्री०) कपास का पौधा।—**स्थ**– (पुं०) वनवासी व्यक्ति। वान-प्रस्थ। हिरन। —**स्थली**– (स्त्री०) वनभूमि, अरण्यदेश, जंगली ज़मीन। —**स्था**– (स्त्री०) पीपल वृक्ष। वट वृक्ष। —**स्रज्**– (स्त्री०) वनमाला, जंगली फूलों की माला।—**हास**– (पुं०) काँस। कुन्दपुष्प।

वनस्पति— (पुं०) [वनस्य पतिः, ष० त०, सुट्] बड़ा जंगली वृक्ष, विशेष कर वह पेड़ जिसमें पुष्प लगे बिना ही फल लगें। वृक्ष-

मात्र । धृतराष्ट्र का एक पुत्र ।—**शास्त्र**-(न०) पौधों और वृक्षों की जाति, रूप, बनावट आदि का बोधक शास्त्र ।

वनायु—(पुं०) [√वन् + आयुच्] एक प्राचीन देश का नाम जहाँ का घोड़ा अच्छा होता था ।—**ज**-(वि०) वनायु देश में उत्पन्न (घोड़ा) ।

वनि—(पुं०) [√वन्+इ] अग्नि । ढेर । याचना । कामना, अभिलाषा ।

वनिका—(स्त्री०) [वनी+ कन्—टाप्, ह्रस्व] छोटा वन, कुञ्जवन ।

वनिता—(स्त्री०) [√वन् + क्त—टाप्] स्त्री । पत्नी । कोई भी प्रेमपात्री (माशूका) स्त्री । पशु की मादा ।—**द्विष्**- (पुं०) स्त्रियों से घृणा करने वाला व्यक्ति ।—**विलास**- (पुं०) स्त्री का आमोद-प्रमोद ।

वनिन्—(पुं०) [वन +इनि] वृक्ष । सोम-लता । वानप्रस्थ ।

वनिष्णु—(वि०) [√वन् + इष्णुच्] याचक, मँगता ।

वनी—(स्त्री०) [वन+ ङीप्] छोटा वन, कुञ्ज ।

वनीयक—(पुं०) [वनिं याचनाम् इच्छति, वनि+क्यच्+ ण्वुल्] भिक्षुक, भिखारी; 'वनीयकानां स हि कल्पभूरुहः' नैष० १५.६० ।

वनेकिंशुक—(पुं०) [वने किंशुक इव, सप्तम्या अलुक्] जंगल का किंशुक; अर्थात् वह वस्तु जो वैसे ही बिना माँगे मिले जैसे वन में किंशुक बिना माँगे या प्रयास किये मिलता है ।

वनेचर—(वि०) [वने चरति, √चर्+ट, सप्तम्या अलुक्] वन में चलने-फिरने वाला । (पुं०) मुनि । वन्य पशु । वनमानुष । राक्षस ।

वनेज्य—(पुं०) [वने इज्यः, स० त०] बढ़िया जंगली आम ।

√वन्द्—भ्वा० आत्म० सक० प्रणाम करना । अर्चन करना, पूजन करना । प्रशंसा करना । वन्दते, वन्दिष्यते, अवन्दिष्ट ।

वन्दक—(वि०) [√ वन्द् + ण्वुल्] वंदना करने वाला । प्रशंसक । (पुं०) भाट, बंदीजन ।

वन्दथ—(पुं०) [√वन्द् + अथ] भाट, बंदीजन ।

वन्दन—(न०) [√वन्द्+ल्युट्] प्रणाम । नमस्कार । सम्मान । अर्चन, पूजन । सम्मान या प्रणाम जो ब्राह्मण को किया जाय । प्रशंसा, तारीफ़ । बाँदा, वन्दा ।—**माला**, —**मालिका** -(स्त्री०) बंदनवार ।

वन्दना—(स्त्री०) [√वन्द् +युच्—टाप्] अर्चन, पूजन । प्रशंसा ।

वन्दनी—(स्त्री०) [वन्दन+ङीप्] पूजन, अर्चन । प्रशंसा । याचना । एक दवा जो मृतक को जीवित करे, जीवातु नामक ओषधि । गोरोचन । बटी । तिलक ।

वन्दनीय—(वि०) [√वन्द्+अनीयर्] प्रणाम करने योग्य । सम्माननीय ।

वन्दनीया—(स्त्री०) [वन्दनीय—टाप्] हरताल । गोरोचना ।

वन्दा—(स्त्री०) [√वन्द् + अच्+टाप्] दूसरे पेड़ों के ऊपर उसीके रस से पलने वाला एक प्रकार का पौधा, बाँदा । भिक्षुकी ।

वन्दाक—(पुं०) [√वन्द् +आकन्] बाँदा ।

वन्दारु—(त्रि०) [√वन्द्+आरु] प्रशंसा करने वाला । वन्दनशील । (न०) प्रशंसा । बाँदा ।

वन्दि—(स्त्री०) [√वन्द् +इन्] कैद । वंदना । सोपान, सीढ़ी । (पुं०) कैदी ।

वन्दिन्—(पुं०) [√वन्द्+णिनि] चारण, बंदीजन, भाट । कैदी ।

वन्दी—(स्त्री०) [वन्दि+ङीष्] दे० 'वन्दि' ।—**पाल**-(पुं०) कैदियों का रक्षक ।

वन्द्य—(वि०) [√वन्द्+ण्यत्] पूज्य । प्रणम्य; 'वन्द्यं युगं चरणयोर्जनकात्मजायाः' र० १३.७८ । प्रशंसनीय ।

वन्द्र—(वि०) [√वन्द्+रक्] पूजक, पूजा करने वाला । भक्त । (न०) समृद्धि । कल्याण ।

वन्धुर—(वि०) दे० 'बन्धुर' ।

वन्य—(वि०) [वन+यत्] वन का । वन सम्बन्धी । जंगली । (न०) वन की पैदावार । **—इतर** (**वन्येतर**)– (वि०) पालतू । शिक्षित । सभ्य ।**—गज,—द्विप**– (पु०) जंगली हाथी ।

वन्या—(स्त्री०) [वन + य —टाप्] वन-समूह । जल-प्लावन । जल-राशि । मुद्गपर्णी । गोपाल-ककड़ी । घुँघची, गुञ्जा । सौंफ । भद्रमुस्ता । असगंध । जंगली हल्दी । मेथी ।

√वप्—भ्वा० उभ० सक० बोना, बीज बोना । (पासा) फेंकना । पैदा करना । बुनना । मूँडना । वपति—ते, वप्स्यति—ते अवाप्सीत्—अवप्त ।

वप—(पु०) [√वप् +अ] बीज बोने की क्रिया । मुण्डन । बुनना ।

वपन—(न०) [√ वप् + ल्युट्] बीज बोना । मुण्डन । वीर्य ।

वपनी—(स्त्री०) [वपन+ङीप्] नाई की दूकान । बुनने का औज़ार । तन्तुशाला ।

वपा—(स्त्री०) [√वप् +अङ—टाप्] चर्बी, वसा । गुफा । मिट्टी का टीला जो चींटियों द्वारा बनाया गया हो, बाँबी ।

वपिल—(पु०)[√वप्+इलच्]पिता, जनक ।

वपुष्मत्—(वि०) [वपुस्+मतुप्] उत्तम शरीर वाला । शरीरधारी । (पु०) विश्वेदेवों में से एक ।

वपुस्—(न०) [उप्यन्ते देहान्तरभोगसाधनबीजीभूतानि कर्माणि अत्र, √वप्+उसि] शरीर, देह । सुन्दर रूप । सौन्दर्य ।**—गुण** (**वपुर्गुण**),**—प्रकर्ष** (**वपुःप्रकर्ष**)–(पु०) शारीरिक सौन्दर्य ।**—धर** (**वपुर्धर**)– (वि०) शरीरधारी । सुन्दर ।

वप्तृ—(पु०) [√वप्+तृच्] बोने वाला, किसान; 'न शालेः स्तम्बकरिता वप्तुर्गुणमपेक्षते' मु० १.३ । पिता, जनक । कवि ।

वप्र—(पु०, न०) [√वप्+रन्] मिट्टी की दीवाल, शहरपनाह । टीला । पहाड़ का उतार । चोटी, शिखर । नदीतट । किसी भवन की नींव । शहरपनाह का द्वार या फाटक । परिखा । वृत्त का व्यास । खेत । मिट्टी का धुस । (पु०) पिता । (न०) सीसा ।**—क्रीड़ा**— (स्त्री०) ऊँचे उठे मिट्टी के ढेर पर हाथी, साँड़ आदि का दाँत या सींग मारना ।

वप्रि—(पु०) [√वप् + क्रिन्] खेत । समुद्र ।

वप्री—(स्त्री०) [वप्रि+ङीप्] बाँबी, मिट्टी का डूहा ।

√वभ्र्—भ्वा० पर० सक० जाना । वभ्रति, वभ्रिष्यति, अवभ्रीत् ।

√वम्—भ्वा० पर० सक० कै करना । उड़ेलना । फेंकना । अस्वीकृत करना । वमति, वमिष्यति, अवमीत् ।

वम—(पु०) [√ वम्+अप्] वमन, छाँट, कै ।

वमथु—(पु०) [√वम्+अथुच्] कै, छाँट । जल जिसे हाथी ने अपनी सूँड़ में भर कर फेंका हो ।

वमन—(न०) [√वम्+ल्युट्] उलटी, कै करना । खींचने या बाहर निकालने की क्रिया । वमन कराने वाली दवा ।

वमि—(स्त्री०) [√वम्+इन्] वमन का रोग । वमन कराने वाली दवा । (पु०) [वमति उद्गिरति धूमादिकम्, √ वम् +इञ्] अग्नि । धूर्त ।

वमी—(स्त्री०) [वमि+ङीष्] दे० 'वमि' ।

वम्भारव—(पु०) पशु के रंभाने की आवाज ।

वम्र—(पुं०), **वम्री**— (स्त्री०) [√वम् +र] [वम्रि+ङीष्] दीमक ।—**कूट**—(न०) बाँबी, बिमौट ।

√**वय्**—भ्वा० आत्म० सक० जाना । वयते, वयिष्यते, अवयिष्ट ।

वयन—(न०) [√वे +ल्युट्] बुनना । [√वय् +ल्युट्] जाना ।

वयस्—(न०) [√अज् + असुन्, वी आदेश] अवस्था, उम्र; 'गुणाः पूजास्थानं गुणिषु न च लिङ्गं न च वयः' उ० । जवानी । पक्षी; 'मृगवयोगवयोपचितं वनं' र० ६.५३ ।—**अतिग** (**वयोऽतिग**), —**अतीत** (**वयोऽतीत**) (वि०) बूढ़ा ।—**अवस्था** (**वयोऽवस्था**)–(स्त्री०) जीवन-काल, बाल आदि अवस्था ।—**कर** (**वयस्कर**) –(वि०) उम्र बढ़ाने वाला । —**परिणति** (**वयःपरिणति**)–(स्त्री०), —**परिणाम** (**वयःपरिणाम**)–(पुं०) अवस्था की प्रौढ़ता ।—**वृद्ध** (**वयोवृद्ध**)–(वि०) बूढ़ा ।—**स्थ** (**वयःस्थ**)–(वि०) बालिग, जवान । प्रौढ़ । बलवान् ।—**स्था** (**वयःस्था**)–(स्त्री०) सखी, सहेली । काकोली । ब्राह्मी । छोटी इलायची । क्षरामलपर्णी ।

वयस्य—(वि०) [वयसा तुल्यः, वयस् +यत्]समान उम्र वाला । सहयोगी । (पुं०) मित्र, साथी ।

वयस्या—(स्त्री०) [वयस्य +टाप्] सखी, सहेली ।

वयुन—(न०) [वीयते गम्यते प्राप्यते विश्वोऽनेन, √अज् + उनन्, वी आदेश] ज्ञान, मन्दिर ।

वयोधस्—(पुं०) [वयो यौवनं दधाति, वयस् √धा+असि] जवान या अधेड़ उम्र का आदमी ।

वयोरङ्ग—(न०) [वयसा रङ्गमिव] सीसा ।

√**वर्**—चु० उभ० सक० माँगना, याचना करना । पसंद करना । वरयति–ते, वरयिष्यति–ते, अववरत्– त ।

वर—(वि०) [√वृ+अप्] उत्तम, श्रेष्ठ । (पुं०) चुनने या पसंद करने की क्रिया । चुनाव, पसंदगी । वरदान, आशीर्वाद । भेंट, पुरस्कार । अभिलाषा, इच्छा । याचना । दूल्हा, पति । दहेज । दामाद । लंपट आदमी । गोरैया पक्षी । (न०) केसर ।—**अङ्ग** (**वराङ्ग**)–(पुं०) हाथी । विष्णु । (न०) सिर । उत्तम अवयव । भग । दालचीनी ।—**अङ्गना** (**वराङ्गना**)–(स्त्री०) सुन्दरी स्त्री ।—**अर्ह** (**वरार्ह**)–(पुं०) वरदान पाने योग्य ।—**आजीविन्** (**वराजीविन्**)–(पुं०) ज्योतिषी ।—**आरोह** (**वरारोह**)–(वि०) सुंदर कटि या नितंब वाला । (पुं०) विष्णु । एक पक्षी । गजारोही । उत्तम सवार ।—**आरोहा** (**वरारोहा**)–(स्त्री०) सुंदर कटि या नितंबों वाली स्त्री । सुन्दरी स्त्री । कमर । —**आलि** (**वरालि**)–(पुं०) चन्द्रमा । —**क्रतु**– (पुं०) इन्द्र ।—**चन्दन**–(न०), काला चंदन । देवदारु ।—**तनु**–(स्त्री०) सुन्दरी स्त्री ।—**तन्तु**– (पुं०) एक प्राचीन ऋषि का नाम ।—**त्वच**– (पुं०) नीम का पेड़ ।—**द**– (वि०) वरदानदाता । शुभ ।—**दा**–(स्त्री०) एक नदी का नाम । क्वारी कन्या । अड़हुल । अश्वगन्धा । वाराही कन्द ।—**दक्षिणा**–(स्त्री०) वह धन जो वर को विवाह के समय कन्या के पिता से मिलता है, दहेज ।—**दान**–(न०) देवता या बड़ों का प्रसन्न होने पर कोई अभीष्ट वस्तु या सिद्धि प्रदान करना।—**द्रुम**–(पुं०) अगर का वृक्ष ।—**पक्ष**–(पुं०) बरात; 'प्रमुदित-वरपक्षमेकतः' र० ६.८६ ।—**यात्रा**– (स्त्री०) विवाह के लिये वर का अपने इष्टमित्रों और सम्बन्धियों के साथ

कन्या के वर गमन ।—**फल** –(पुं०) नारियल ।—**बाल्हिक** –(न०) केसर । —**युवति, —युवती**– (स्त्री०) सुन्दरी, जवान औरत ।—**रुचि**– (पुं०) एक अत्यन्त प्रसिद्ध प्राचीन पण्डित जो व्याकरण और काव्य के मर्मज्ञ थे ।—**लब्ध**–(पुं०) चंपा का पेड़ ।—**वत्सला** – (स्त्री०) सास ।—**वर्ण**–(न०) सुवर्ण, सोना ।—**वर्णिनी**– (स्त्री०) सुन्दरी स्त्री । लाख । लक्ष्मी । दुर्गा । सरस्वती । प्रियंगुलता । —**स्रज्**–(स्त्री०) वर की माला या गजरा, वह माला जो कन्या वर को पहनाती है ।

वरक—(पुं०) [वर + कन्] वनमूंग । प्रियंगु नामक तृणधान्य, काकुन । (न०) नाव का चँदोवा । साधारण वस्त्र ।

वरट—(पुं०) [√वृ+अटन्] हंस । भिड़, बर्रे । (न०) कुंद का फूल । कुसुम का बीज ।

वरटा, वरटी—(स्त्री०) [वरट + टाप्] [वरट+ङीष्] हंसी । बरैंया । गोंचिगा कीड़ा ।

वरण—(न०) [√वृ +ल्युट्] चुनाव, पसंदगी । याचना, प्रार्थना । फेरा, घिराव । पर्दा । चादर । वर का चुनाव ।(पुं०) [√ वृ +ल्यु] शहरपनाह की दीवाल । पुल । वरुण नामक पेड़ । ऊँट ।—**माला, —स्रज्** –(स्त्री०) वह माला जो दुलहिन अपने दूल्हा की गरदन में पहनाती है ।

वरणसी—(स्त्री०) = वाराणसी (शब्दरत्ना०) ।

वरण्ड—(पुं०) [√वृ + अण्डन्] समूह, समुदाय । चेहरे पर मुँहासा । बरामदा । घास का ढेर । बंसी की डोरी । दो लड़ने वाले हाथियों को अलग करने वाली दीवार ।

वरण्डक—(पुं०) [वरण्ड + कन्] मिट्टी का टीला । हौदा । दीवाल । मुँहासा या मुहाँसा ।

वरण्डा—(स्त्री०) [वरण्ड+ टाप्] खंजर, छुरी । सारिका, मैना । चिराग की बत्ती ।

वरत्रा—(स्त्री०) [√वृ+ अत्रन्—टाप्] चमड़े का तसमा । घोड़ा या हाथी का जेर-बंद ।

वरम्—(अव्य०) वाञ्छनीय; 'वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः' कि० १.८ ।

वरल—(पुं०) [√वृ + अलच्] भिड़, बर्रैया ।

वरला—(स्त्री०) [वरल+ टाप्] हंसी । बर्रैया ।

वरा—(स्त्री०) [√ वृ +अच्—टाप्] त्रिफला । रेणुका नामक गन्धद्रव्य । हल्दी । मलहुल । बैंगन । ब्राह्मी । गुडूच । शत-मूली । श्वेत अपराजिता । पाठा । सोमराजी । विडंग । मेदा । पार्वती ।

वराक—(वि०) [स्त्री०—**वराकी**] [√वृ +षाकन्] दीन । दयनीय । अभागा । (पुं०) शिव । युद्ध । पापड़ा, पर्पट ।

वराट—(पुं०) [वर √अट् + अण्] कौड़ी । रस्सी, डोरी ।

वराटक—(पुं०) [वराट +कन्] कौड़ी । कमलगट्टा । रस्सी । —**रजस्**–(पुं०) नागकेसर का पेड़ ।

वराटिका—(स्त्री०) [वराट+कन्—टाप्, इत्व] कौड़ी । तुच्छ वस्तु । नागकेसर ।

वराण—(पुं०) [√वृ+युच्, पृषो० दीर्घ] इन्द्र । वरुण का वृक्ष ।

वराणसी—(स्त्री०)=वाराणसी ।

वरारक—(न०) [वर √ऋ + ण्वुल्] हीरा ।

वराल, वरालक—(पुं०) [वर √अल् +अण्] [वराल+कन्] लौंग, लवंग ।

वराशि, वरासि—(पुं०)[वरम् आवरणम् अश्नुते व्याप्नोति, वर √अश् + इन्]

[वरैः श्रेष्ठैः वस्यते छिद्यते, वर √वस् इन्] मोटा कपड़ा ।

वराह—(पुं॰) [वराय अभीष्टाय मुस्तादिलाभाय आहन्ति खनति भूमिम्, वर—आ √हन्+ड] सुअर, शूकर । मेढ़ा । साँड़ । बादल । घड़ियाल, मगर । शूकर के रूप का सैन्य-व्यूह । विष्णु का अवतार । एक मान । मोथा । वाराहीकन्द । वाराहमिहिर । अष्टादश पुराणों में से एक का नाम ।—**अवतार** (**वराहावतार**)–(पुं॰) भगवान् विष्णु का तीसरा अवतार ।—**कन्द**–(पुं॰) वाराहीकंद । —**कल्प**–(पुं॰) वह काल जब भगवान् ने वराहावतार धारण किया था ।—**मिहिर**– (पुं॰) ज्योतिष के एक प्रधान आचार्य जिनकी बनायी बृहत्संहिता बहुत प्रसिद्ध है ।—**शृङ्ग**– (पुं॰) शिव का नाम ।

वरिमन्—(पुं॰)[वर +इमनिच्] श्रेष्ठत्व, उत्तमता, उत्कृष्टता ।

वरिवस्—(न॰) [√वृ+असुन् , नि॰ इट्] पूजा, सम्मान । धन ।

वरिवसित—(वि॰) [वरिवस्या+इतच्] पूजित, सम्मानित ।

वरिवस्या—(स्त्री॰) [वरिवसः पूजायाः करणम्, वरिवस् + क्यच् + अ—टाप्] पूजा । शुश्रूषा ।

वरिष्ठ—(वि॰) [अयम् एषाम् अतिशयेन वरः वा उरुः, उरु+इष्ठन्, वरादेश] सब से श्रेष्ठ, वरतम । सब से विस्तीर्ण, उरुतम । सब से अधिक भारी । (पुं॰) तित्तिर पक्षी, तीतर । नारंगी का पेड़ । (न॰) ताम्र, ताँबा । मिर्च ।

वरी—(स्त्री॰) [√वृ +अच्—ङीप्] सूर्य-पत्नी छाया का नाम । शतावरी का पौधा ।

वरीयस्—(वि॰) [अयम् अनयोः अतिशयेन वरः उरुर्वा, वर वा उरु+ईयसुन्, वरादेश] दो में से अपेक्षाकृत अच्छा । दो में से अपेक्षाकृत बड़ा या चौड़ा । (पुं॰) नपुंसक । पुलह ऋषि का एक पुत्र । २७ योगों में से १८ वाँ (ज्यो॰) ।

वरीवर्द, वलीवर्द—दे॰ 'बलीवर्द' ।

वरीषु—(पुं॰) कामदेव का नाम ।

वरुट—(पुं॰) म्लेच्छ विशेष ।

वरुड—(पुं॰) एक नीच जाति का नाम ।

वरुण—(पुं॰)[व्रियते सर्वैः, √ वृ+उनन्] मित्र देवता के साथ रहने वाले एक आदित्य का नाम । समुद्र के अधिष्ठातृ देवता और पश्चिम दिशा के दिक्पाल; 'अतिसक्तिमेत्य वरुणस्य दिशा भृशमन्वरज्यदतुषारकरः' शि॰ ९.७ । समुद्र । आकाश । वरुणवृक्ष ।—**अङ्कुशह** (**वरुणाङ्कुशह**)– (पुं॰) अगस्त्य जी की उपाधि ।—**आत्मजा** (**वरुणात्मजा**)–(स्त्री॰) मदिरा, शराब । —**आलय** (**वरुणालय**) —**आवास** (**वरुणावास**)–(पुं॰) समुद्र ।—**पाश**–(पुं॰) वरुण का अस्त्र, पाश । नक, नाक नामक जलजन्तु ।—**लोक**–(पुं॰) वरुण का लोक । जल ।

वरुणानी—(स्त्री॰) [वरुण + ङीष्, आनुक्] वरुण की स्त्री ।

वरुत्र—(न॰) [√वृ+ उत्र] उत्तरीय वस्त्र, उपरना ।

वरूथ—(न॰) [√वृ+ ऊथन्] लोहे की चद्दर या सीकड़ों का बना हुआ आवरण जो शत्रु के आघात से रथ को रक्षित रखने के लिये उसके ऊपर डाला जाता था । कवच, बख़्तर । ढाल । समूह । सेना । गृह ।

वरूथिन्—(वि॰) [वरूथ+इनि] कवचधारी, बख़्तर पहिने हुए । रथारूढ़ । (पुं॰) रथ । रक्षक । हाथी की काठी ।

वरूथी—(स्त्री॰) [वरूथ + ङीप्] सेना ।

वरेण्य—(वि॰) [√वृ+एण्य] वाञ्छनीय; 'अनेन चेदिच्छसि गृह्यमाणं पाणिं वरेण्येन'

र० ६.२४ । सर्वोत्तम । मुख्य । (न०) कुङ्कुम, केसर ।

वरोट—(न०) [वराणि श्रेष्ठानि उटानि दलानि यस्य, ब० स०] मरुवा के फूल । (पुं०) मरुवा, मरुवक वृक्ष ।

वरोल—(पुं०) [√वृ + ओलच्] बर्रे ।

वर्कर—(पुं०) [√वृक्+अर] मेमना, बकरी का बच्चा । बकरा । कोई भी पालतू जानवर का बच्चा । आमोद-प्रमोद, क्रीड़ा ।

वर्कराट—(पुं०) [वर्करं परिहासम् अटति गच्छति, वर्कर √अट् + अण्] कटाक्ष । स्त्री के कुच के ऊपर लगे हुए नखों का घाव या खरोंच । उगते हुए सूर्य का प्रकाश ।

वर्कुट—(पुं०) कील । अर्गल, अगड़ी ।

वर्ग—(पुं०) [√वृज् +घञ्] श्रेणी, कक्षा । दल, टोली । न्यायशास्त्र के नव या सप्त पदार्थ-विभाग । शब्दशास्त्र में एक स्थान से उच्चारित होने वाले स्पर्श व्यञ्जन वर्णों का समूह (यथा कवर्ग, चवर्ग आदि) । आकार-प्रकार में कुछ भिन्न, किन्तु कोई भी एक सामान्य धर्म रखने वालों का समूह (यथा—मनुष्यवर्ग, वनस्पतिवर्ग); 'न्यषेधि शेषोऽप्यनुयायिवर्गः' र० २.४ । ग्रन्थ-विभाग, प्रकरण, परिच्छेद, अध्याय — विशेष कर ऋग्वेद के अध्याय के अन्तर्गत उपाध्याय । दो समान अङ्कों या राशियों का घात या गुणनफल (यथा ४ का १६) । शक्ति, ताकत । **—अन्त्य** (**वर्गान्त्य**),—**उत्तम** (**वर्गोत्तम**)– (न०) पाँचों वर्गों के अन्त के अक्षर, अनुनासिक वर्ण ।—**घन**– (पुं०) वर्ग का घनफल ।—**पद**, —**मूल**– (न०) वह अङ्क जिसके घात से कोई वर्गाङ्क बनाये, वर्गमूल ।

वर्गणा—(स्त्री०) गुणन, घात ।

वर्गशस्—(अव्य०) [वर्ग+शस्] श्रेणी या समूहों के अनुसार ।

वर्गीय—(वि०) [वर्ग +छ] किसी वर्ग या श्रेणी का, वर्ग सम्बन्धी । (पुं०) सहपाठी ।

वर्ग्य—(वि०) [वर्ग + यत्] एक ही श्रेणी का । (पुं०) सहपाठी ।

√वर्च्—भ्वा० आत्म० अक० चमकना, चमकीला होना । वर्चते, वर्चिष्यते, अवर्चिष्ट ।

वर्चस्—(न०) [√ वर्च्+असुन्] शक्ति । पराक्रम, प्रभाव । तेज, कान्ति । रूप, शकल । विष्ठा ।—**ग्रह** (**वर्चोग्रह**)–(पुं०) कोष्ठ-बद्धता , कब्जियत ।

वर्चस्क—(पुं०) [वर्चस्+कन्] दीप्ति, तेज । पराक्रम । विष्ठा ।

वर्चस्विन्—(वि०) [वर्चस् + विनि] तेजस्वी । पराक्रमी, शक्तिशाली । (पुं०) चंद्रमा । शक्तिशाली मनुष्य ।

वर्ज—(पुं०) [√वृज् + घञ्] त्याग, परित्याग ।

वर्जन—(न०) [√वृज् + ल्युट्] त्याग । वैराग्य । मनाई, निषेध । हिंसा, मारण ।

वर्जित—(वि०) [√ वृज् + क्त] त्यागा हुआ, छोड़ा हुआ । निषिद्ध । बाहर किया हुआ । रहित ।

वर्ज्य—(वि०) [√ वृज्+ण्यत्] छोड़ने योग्य, त्याज्य । जिसका निषेध किया गया हो, निषिद्ध ।

√वर्ण्—चु० पर० सक० रंग चढ़ाना , रँगना । वर्णन करना, बयान करना । व्याख्या करना । प्रशंसा करना । फैलाना । प्रकाश करना । वर्णयति, वर्णयिष्यति, अववर्णत् ।

वर्ण—(पुं०)[√वर्ण् +अच्] रंग; 'अन्तःशुद्धस्त्वमपि भविता वर्णमात्रेण कृष्णः' मे० ४६ । रोगन । रूप-रंग, सौन्दर्य । मनुष्य-समुदाय के चार विभाग ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र । श्रेणी, जाति । क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र । श्रेणी, जाति । अक्षर । स्वर । कीर्ति, प्रख्याति । प्रशंसा । परिच्छद, सजा-

पट। बाह्य आकार-प्रकार, रूपरेखा। लबादा। पोशाक। ढकना, ढक्कन। गीतक्रम। हाथी की झूल। गुण। वर्णानुष्ठान। अज्ञात राशि। (न०) केसर। अंगराग-लेपन।—**अङ्का** (**वर्णाङ्का**)-(स्त्री०) लेखनी, कलम।—**अपसद** (**वर्णापसद**)-(पुं०) जातिच्युत व्यक्ति।—**अपेत** (**वर्णापेत**)-(वि०) जो किसी भी जाति में न हो, जातिबहिष्कृत, पतित।—**अर्ह** (**वर्णार्ह**)-(पुं०) मूंग।—**आत्मन्** (**वर्णात्मन्**)-(पुं०) शब्द।—**उदक** (**वर्णोदक**)-(न०) रंगीन जल।—**कूपिका**-(स्त्री०) दावात।—**क्रम**-(पुं०) वर्णव्यवस्था। अक्षरक्रम।—**धारक**-(पुं०) चितेरा। रँगैया।—**ज्येष्ठ**-(पुं०) ब्राह्मण।—**तूलि**, —**तूलिका**, —**तूली**-(स्त्री०) चितेरे की कूँची।—**द**-(वि०) रंगसाज। (न०) दारुहल्दी।—**दात्री**-(स्त्री०) हल्दी।—**दूत**-(पुं०) लिपि, पत्र आदि।—**धर्म**-(पुं०) प्रत्येक जाति के कर्म विशेष।—**पात**-(पुं०) किसी अक्षर का लोप होना।—**प्रकर्ष**-(पुं०) रंग की उत्तमता।—**प्रसादन**-(न०) अगर की लकड़ी।—**मातृ**-(स्त्री०) कलम, लेखनी।—**मातृका**-(स्त्री०) सरस्वती।—**माला**, —**राशि**-(स्त्री०) अक्षरों के रूपों की श्रेणी या लिखित सूची।—**वर्ति**,—**वर्तिका**-(स्त्री०) चितेरे की कूँची।—**विपर्यय**-(पुं०) निरुक्त के अनुसार शब्दों में वर्णों का उलट-फेर।—**विलासिनी**-(स्त्री०) हल्दी।—**विलोडक**-(पुं०) सेंध लगाने वाला। लेखचोर।—**वृत्त**-(न०) वह पद्य जिसके चरणों में वर्णों की संख्या और लघु-गुरु के क्रम में समानता हो। (मात्रावृत्त का उलटा)।—**व्यवस्थिति**-(स्त्री०) वर्णव्यवस्था।—**श्रेष्ठ**-(पुं०) ब्राह्मण।

—**संयोग**-(पुं०) एक ही जाति के लोगों में वैवाहिक सम्बन्ध।—**सङ्कर**-(पुं०) वह व्यक्ति या जाति जो दो भिन्न-भिन्न जातियों के स्त्री-पुरुष के संयोग से उत्पन्न हो। रंगों का मिश्रण; 'चित्रेषु वर्णसङ्करः' का०।—**संघात**, —**समाम्नाय**-(पुं०) वर्णमाला।—**सूची**-(स्त्री०) छंदःशास्त्र की एक प्रक्रिया जिसके द्वारा वर्णवृत्तों की शुद्ध संख्या और उनके भेदों में आदि-अंत लघु तथा आदि-अंत गुरु की संख्या ज्ञात हो जाती है।

वर्णक—(पुं०) [वर्ण+कन् या √वर्ण्+ण्वुल्] अभिनेता का परिधान या परिच्छद। रंग। रोगन। अनुलेपन, उबटन। चारण। भाट, बंदीजन। चन्दन। (न०) रंग। रोगन। हरताल। चंदन। ग्रन्थ का अध्याय।

वर्णका—(स्त्री०) [वर्णक+टाप्] मुश्क, कस्तूरी। रंग। रंगन, । लबादा।

वर्णन—(न०), **वर्णना**-(स्त्री०) [√वर्ण्+ल्युट्] [√वर्ण्+णिच्+ल्युट्] चित्रण। रँगने की क्रिया। निरूपण। लेखन। बयान। श्लाघा, सराहना।

वर्णसि—(पुं०) [√वृ+असि, धातोः नुक्] पानी, जल।

वर्णाट—(पुं०) [वर्ण √ अट्+अच्] चितेरा, रंगसाज। गवैया। स्त्री की आमदनी से निर्वाह करने वाला व्यक्ति।

वर्णि—(न०) [√वर्ण्+इन्] सोना।

वर्णिक—(पुं०) [वर्ण+ठन्-इक] लेखक। (वि०) वर्णसंबंधी।—**वृत्त**—(न०) दे० 'वर्णवृत्त'।

वर्णिका—(स्त्री०) [वर्ण+ठन्—टाप्] अभिनयकर्ता का परिच्छद। रंग। रोगन। स्याही। कलम।

वर्णित—(वि०) [√वर्ण्+क्त] रँगा हुआ। रोगन किया हुआ। निरूपित।

वर्णन किया हुआ। प्रशंसित, सराहा हुआ।

वर्णिन्—(वि०) [वर्ण + इनि] रंग या का सम्पन्न। किसी वर्ण या जाति का। (पुं०) चितेरा। रंगसाज। लेखक। ब्रह्मचारी; 'वर्णाश्रमाणां गुरवे स वर्णी विचक्षणः प्रस्तुतमाचचक्षे' र० ५.१९। मुख्य चार वर्णों में से किसी वर्ण का पुरुष।—**लिङ्गिन्**-(वि०) ब्रह्मचारी का बनावटी रूप धारण किये हुए [यथा—'स वर्णिलिङ्गी विदितः समाययौ, युधिष्ठिरं द्वैतवने वनेचरः॥' —किरातार्जुनीय]।

वर्णिनी—(स्त्री०) [वर्णिन् + ङीप्] वनिता। चार वर्णों में से किसी भी वर्ण की स्त्री। हल्दी।

वर्ण्—(पुं०) [√वृ + णु स च नित्] सूर्य।

वर्ण्य—(वि०) [√वर्ण् + ण्यत्] वर्णन करने योग्य। (न०) कुङ्कुम, केसर।

वर्त—(पुं०) [√वृत्+घञ्] आजीविका।—**अश्मन्**-(पुं०) बादल।—**लोह**-(न०) काँसा।

वर्तक—(वि०) [√वृत् + ण्वुल्] रहने वाला। जिसका अस्तित्व हो। अनुरक्त। (पुं०) बटेर। घोड़े का खुर। (न०) काँसा।

वर्तका—(स्त्री०) [वर्तक+टाप्] मादा बटेर।

वर्तन—(वि०) [√वृत्+ल्यु] रहने वाला। जीवित। वामन। (न०) [√वृत् +ल्युट्] ठहरना। जीवित रहने का ढंग। निर्वाह। आजीविका। पेशा, धंधा। चरित्र। व्यवहार। मजदूरी, वेतन। तकुआ। गेंद। चक्कर खाना। ऐंठा। फेर-फार। पीसना। बटलोई। (पुं०) [√वृत्+ल्यु] बौना। कोआ। विष्णु।

वर्तनि—(पुं०) [√वृत् + अनि] भारत का पूर्वी अंचल, पूर्वी देश। स्तव, स्तोत्र। (स्त्री०) रास्ता, मार्ग।

वर्तनी—(स्त्री०) [वर्तनि+ङीप्] रास्ता, मार्ग। [वर्तन+ङीप्] जीवन, जिन्दगी। कूटना, पीसना। तकुआ।

वर्तमान—(वि०) [√वृत् + शानच्, मुक्] विद्यमान, मौजूद। जीवधारी, जिंदा। घूमने वाला, फिरने वाला। (पुं०) व्याकरण में क्रिया के तीन कालों में से एक जिसके द्वारा सूचित किया जाता है कि, क्रिया अभी चल रही है और समाप्त नहीं हुई।

वर्तरूक—(पुं०) [वर्त √रा+ऊक] पोखर। भँवर। कौवे का घोंसला। द्वारपाल। एक नदी का नाम।

वर्ति, वर्ती—(स्त्री०) [√वृत् + इन्] [वर्ति +ङीष्] लैंप या दीपक की बत्ती। घाव में भरने की बत्ती। घाव पर बाँधने की एक तरह की पट्टी। अंजन; 'इयममृतवर्तिर्नयनयोः' उत्त० १.३८। उबटन। कपड़े के छोर पर की झालर। गले की सूजन। जादू का दीपक। बर्तन के चारों ओर बाहर निकला हुआ किनारा। जर्राही औजार। धारी, रेखा।

वर्तिक—(पुं०) [√वृत् +तिकन् वा वर्त +ठन्] बटेर।

वर्तिका—(स्त्री०) [वर्ति + कन् —टाप्] चितेरे की कूँची; 'तदुपनय चित्रफलकं चित्रवर्तिकाश्च'। दीपक की बत्ती। रंग। रोगन। [वर्तिक+टाप्, इत्व] बटेर। अजश्रृङ्गी।

वर्तिन्—(वि०) [स्त्री०—वर्तिनी] [√ वृत् + णिनि] स्थित रहने वाला। वर्तनशील। घूमने वाला।

वर्तिर, वर्तीर—(पुं०) [√वृत् + इरच्, पक्षे पृषो० दीर्घ] बटेर।

वर्तिष्णु—(वि०) [√वृत्+ इष्णुच्] रहने वाला। घूमने वाला। गोल, चक्करदार।

वर्तुल—(वि०) [√वृत्+उलच्] गोलाकार, गोल । (पुं०) मटर । गद । (न०) चक्कर, वृत्त, परिधि ।

वर्त्मन्—(न०) [√वृत्+मनिन्] मार्ग, रास्ता । लीक । (आलं०) चलन, रस्म । स्थान । आश्रय । पलक । किनारा, कोर । **—पात**-(पुं०) रास्ता भटक जाना । **—बन्ध,—बन्धक**-(पुं०) पलकों का रोग विशेष ।

वर्त्मनि, वर्त्मनी—(स्त्री०) [√वृत्+अनि, मुडागम] [वर्त्मन्+ङीप्] रास्ता, सड़क ।

√वर्ध्—चु० उभ० सक० विभाजित करना । काटना । कतरना । भरना, परिपूर्ण करना । वर्धयति—ते, वर्धयिष्यति—ते, अववर्धत्—त] ।

वर्ध—(न०) [√वर्ध्+अच्] सीसा । सिंदूर । (पुं०) [√वर्ध्+घञ्] काट, तराश । विभाजन । [√वृध्+घञ्] वृद्धि ।

वर्धक—(वि०) [√वृध्+ण्वुल्] बढ़ने वाला । [√वृध्+णिच्+ण्वुल्] बढ़ाने वाला । [√वर्ध्+णिच्+ण्वुल्] बढ़ाने, काटने, तराशने वाला । (पुं०) बढ़ई ।

वर्धकि, वर्धकिन्—(पुं०) [√वर्ध्+अच्, वर्धं √कृ+डि] [√वर्ध्+अच्+कन्+इनि] बढ़ई, तक्षक ।

वर्धन—(वि०) [√वृध्+ल्यु] बढ़ने वाला, उन्नति करने वाला । (न०) [√वृध्+ल्युट्] वृद्धि, बढ़ती । उन्नयन । [√वर्ध्+ल्युट्] काटना । कतरना । छीलना । पूर्ति । विभाजन । (पुं०) [√वृध्+णिच्+ल्यु] समृद्धिदाता । वह दाँत जो दाँत के ऊपर उगता है । शिव जी ।

वर्धनी—(स्त्री०) [वर्धन+ङीप्] झाड़ू । विशिष्ट रूप-सम्पन्न जलघट ।

वर्धमान—(वि०) [√वृध्+शानच्, मुक्] बढ़ने वाला, बढ़ता हुआ । (पुं०, न०) विशेष रूप की बनी तश्तरी या पात्र । तांत्रिक चित्र । घर जिसका दरवाजा दक्षिण दिशा की ओर न हो । (पुं०) रेंडी का पौधा । पहेली, बुझौवल । विष्णु का नाम । बंगाल के एक 'जिले का नाम (बर्दवान जिला) ।

वर्धमानक—(पुं०) [वर्धमान+कन्] छोटा पात्र या ढक्कन, कसोरा । एरण्ड वृक्ष ।

वर्धापन—(न०) [√वर्ध्+णिच्, आपुक्+ल्युट्] काटना । तराशना । विभाजन । नाड़ा काटने की क्रिया या इसका संस्कार विशेष, नालच्छेदन संस्कार । वर्षगाँठ का उत्सव । कोई भी उत्सव ।

वर्धित—(वि०) [√वृध्+णिच्+क्त] बढ़ाया हुआ । [√वर्ध्+क्त] कटा हुआ । भरा हुआ ।

वर्धिष्णु—(वि०) [√वृध्+इष्णुच्] बढ़ने वाला ।

वर्ध्र—(न०) [√वर्ध्+रन्] चमड़े का तसमा । चमड़ा । सीसा ।

वर्ध्रिका, वर्ध्री—(स्त्री०) [वर्ध्री+कन्-टाप्, ह्रस्व] [वर्ध्र+ङीष्] चमड़े की पेटी, बद्धी । बद्धी नाम का गहना ।

वर्मण—(पुं०) नारंगी का पेड़ ।

वर्मन्—(न०) [वृणोति आच्छादयति शरीरम्, √वृ+मनिन्] कवच, बख्तर; 'वर्मभिः पवनोद्धूतराजतालीवनध्वनिः' र० ४.५६ । छाल । (पुं०) क्षत्रिय की उपाधि । **—हर**-(वि०) कवचधारी । इतना तरुण कि जो कवच धारण करने या युद्ध में भाग लेने को समर्थ हो ।

वर्मि—(पुं०) मत्स्य विशेष, बामी मछली ।

वर्मित—(वि०) [वर्मन्+णिच्+क्त वा वर्मन्+इतच्] कवचधारी ।

वर्य—(वि०) [√वृ+यत्] चुनने योग्य । सर्वोत्तम । प्रधान; 'पर्वतीयः स कतिपयैः किरातवर्यैः' कि० १२.५४ । (पुं०) कामदेव ।

वर्या—(स्त्री॰) [वर्य—टाप्] वह लड़की जो स्वयं अपना पति वरण करे। लड़की।
वर्वट—(न॰) बोड़ा, लोबिया।
वर्वणा—(स्त्री॰) [वर् इति अव्यक्तशब्देन वणति शब्दायते, वर् √वण् +अच्—टाप्] नीली मक्खी।
वर्वर—(वि॰) [√वृ+ष्वरच्] छल्लेदार। अस्पष्ट। (पुं॰) एक देश। बर्बर देश का निवासी। नीच जाति। मूर्ख जन। पतित व्यक्ति। घुँघराले बाल। हथियारों की खटापटी या झंकार। नृत्य का एक ढंग। (न॰) गोपीचन्दन, पीलाचन्दन। हिंगुल, इंगुर। लोबान।
वर्वरक—(न॰) [वर्वर + कन्] चन्दन विशेष।
वर्वरा, वर्वरी— (स्त्री॰) [वर्वर + अच् —टाप्, पक्षे ङीप्] मक्खी विशेष। वन-तुलसी।
वर्वरीक—(पुं॰) [√वृ + ईकन्, द्वित्व, रुक् आगम] घुँघराले बाल। वनतुलसी। भारंगी, ब्राह्मणयष्टिका।
वर्वि—(वि॰) [√ वृ + विन्] चटोरा। पेटू।
वर्वूर, वर्वूर—(पुं॰) [√वृ + वुरन् पक्षे वूरन् (बा॰) बबूल का पेड़।
वर्ष—(पुं॰, न॰)[√वृष् +घञ् वा√वृ +स] वर्षा, पानी की झड़ी। छिड़काव। वीर्य का बहाव या ढरकाव। साल। पुराणानुसार सात द्वीपों का एक विभाग। किसी द्वीप का प्रधान भाग, जैसे—भारतवर्ष। बादल (केवल पुं॰ में)।—अंश(वर्षांश),—अंशक (वर्षांशक) —अङ्ग (वर्षाङ्ग)-(पुं॰) मास, महीना।—अम्बु (वर्षाम्बु)-(न॰) वृष्टि का जल।—अयुत (वर्षायुत) -(न॰) दस हजार।—अर्चिस् (वर्षार्चिस्) -(पुं॰) मङ्गलग्रह।—अवसान (वर्षावसान)-(न॰) शरद्ऋतु।—आघोष (वर्षाघोष)-(पुं॰) मेढक।—आमद (वर्षामद)-(पुं॰) मयूर, मोर।—उपल (वर्षोपल)-(पुं॰) ओला।—कर-(पुं॰)बादल।—करी- (स्त्री॰) झींगुर।—कोश,—कोष-(पुं॰) मास। ज्योतिषी।—गिरि, —पर्वत -(पुं॰) पृथ्वी का वर्षों में विभाग करने वाला पहाड़—हिमालय, हेमकूट, निषध, मेरु, चैत्र, कर्णी और शृङ्गी।—ज (वर्षज)-(वि॰) बरसात में उत्पन्न।—धर -(पुं॰) बादल। पहाड़। वर्ष का शासक। अंतःपुर का रक्षक, खोजा।— प्रतिबन्ध- (पुं॰) सूखा, अनावृष्टि।—प्रिय -(पुं॰) चातक पक्षी।—वर-(पुं॰) [वर्षस्य रेतो वर्षणस्य वरः वारकः] नपुंसक, हिजड़ा।—वृद्धि—(स्त्री॰) जन्मतिथि। वर्षावृद्धि।— शत—(न॰) शताब्दी, सौ वर्ष।—सहस्र -(न॰)एक हजार वर्ष।
वर्षक-(वि॰) [√वृष्+ण्वुल्]बरसनेवाला।
वर्षण—(न॰) [√वृष् +ल्युट्] बरसना। वर्षा, वृष्टि। छिड़काव।
वर्षणि—(स्त्री॰) [√वृष् +अनि] वृष्टि। यज्ञ। क्रिया। वर्तन, व्यवहार।
वर्षा—(स्त्री॰) [वर्ष + अच्—टाप्] बरसात, वर्षा ऋतु। [वृष्+अ —टाप्] वृष्टि।—काल -(पुं॰) बरसाती मौसम।—भू- (पुं॰) मेढक। बीरबहूटी, इन्द्रगोप।—भू, —भ्वी— (स्त्री॰) मेढकी। पुनर्नवा। केंचुआ।—रात्र-(पुं॰) वर्षा-ऋतु।
वार्षिक—(वि॰) [वर्ष या वर्षा+ठिञ्] वर्ष या वर्षा सम्बन्धी। (न॰) अगर की लकड़ी।
वर्षित—(न॰) [√वृष्+क्त] वृष्टि, वर्षा।
वर्षिष्ठ—(वि॰) [अतिशयेन वृद्धः वृद्ध +इष्ठन्, वर्षादेश] बहुत बूढ़ा। बहुत मजबूत। सब से बड़ा।

वर्षीयस्—(वि० [**वर्षीयसी**] [अतिशयेन वृद्धः वृद्ध+ईयसुन् वर्षादेश । बहुत बूढ़ा या पुराना । वृद्धतर ।

वर्षुक—(वि०) [स्त्री०—**वर्षुकी**] [√वृष्+उकञ्] बरसने वाला; 'वर्षुकस्य किमपः कृतोन्नतेरम्बुदस्य परिहार्यमूषर' शि० १४.४६ । पानी उड़ेलने वाला ।—**अब्द** (**वर्षुकाब्द**),—**अम्बुद** (**वर्षुकाम्बुद**) –(पुं०) जल बरसाने वला, बादल ।

वर्ष्म—(न०) [√वृष् + मन्] शरीर ।

वर्ष्मन्—(न०) √वृष् + मनिन्] शरीर, देह । परिमाण: 'गजवर्ष्म किरातेभ्यः शशंसुर्देवदारवः' र० ४.७६ । ऊँचाई । सुन्दर रूप ।

वर्ह्, वर्ह्, वर्हण, वर्हिण, वर्हिन्, वर्हिस् —दे० '**बर्ह्, बर्ह्, बर्हण, बर्हिण, बर्हिन्, बर्हिस्**' ।

√वल्—भ्वा० आत्म० सक० अक० जाना । घूमना । बढ़ाना । (किसी ओर)आकर्षित होना । ढकना । लपेटना । घिर जाना, लपेटा जाना । वलते, वलिष्यते, अवलिष्ट ।

वलक्ष—दे० 'बलक्ष' ।

वलग्न—(पुं० न०) [अवलग्न इत्य अकार-लोपः (भागुरिमते)] कमर ।

वलन—(न०) [√वल् + ल्युट्] घुमाव, फिराव । फेरा, कावा । ग्रह आदि का मार्ग से विचलित होकर चलना, वक्रगति ।

वलभि, वलभी—(स्त्री०) [वयते आच्छाद्यते, √वल्+अभि पक्षे ङीप्] घर के शिखर पर बना हुआ मंडप, चन्द्रशाला । छप्पर का ठाठ । घर का सब से ऊँचा भाग । काठियावाड़ प्रान्त की एक प्राचीन नगरी का नाम ।

वलम्ब—[अवलम्ब इत्यत्र अकारलोपः (भागुरिमते)] दे० 'अवलम्ब' ।

वलय—(पुं०, न०) [वल्+कयन्] कंकण । छल्ला । कमरपेटी, इजारबंद । घेरा । कुंज । दो-दो पंक्तियों की सैनिक स्थिति ।(पुं०) किनारा, छोर । गलगण्ड रोग विशेष ।

वलयित—(वि०) [वलय +णिच्+क्त वा वलय+इतच्] घेरा हुआ । लपेटा हुआ, वेष्टित ।

वलाक—दे० 'बलाक' ।

वलाकिन्—दे० 'बलाकिन्' ।

वलासक—(पुं०) कोयल । मेंढक ।

वलाहक—दे० 'बलाहक' ।

वलि, वली—(स्त्री०) [√ वल्+इन्, पक्षे ङीप्]सिकुड़न, झुर्री । छप्पर की बड़ेरी । —**भृत्**- (वि०) घुंघराले ।—**मुख**,—**वदन** –(पुं०) वानर, बंदर । पेट में पड़ने वाला बल । चंदन आदि से बनाई हुई लकीर । श्रेणी, कतार ।

वलिक—(पुं०,न०) [वलि +कन्] ओलती ।

वलित—(वि०)[√ वल्+क्त] गतिशील । घूमा हुआ, मुड़ा हुआ । घिरा हुआ, लपेटा हुआ । झुर्री पड़ा हुआ । ढका हुआ । युक्त, सहित । (पुं०) काली मिर्च । नृत्य में हाथ मोड़ने की एक मुद्रा ।

वलिन, वलिभ—(वि०) [वलि + न] [वलि +भ] झुर्री पड़ा हुआ, सिकुड़नदार ।

वलिमत्—(वि०) [वलि + मतुप्] झुर्री पड़ा हुआ, सिकुड़नदार ।

वलिर—(वि०) [√ वल् +किरच्] ऐंचा-ताना, भैंड़ी आँख वाला ।

वलिश—(पुं०), **वलिशी**–(स्त्री०) [वलि √शो+क] [वलिश+ङीप्] बंसी, मछली पकड़ने का काँटा ।

वलीक—(न०) [√वल् + कीकन्] सरकंडा । ओलती ।

वलूक—(पुं०) [√वल्+ऊक]पक्षी विशेष । (न०) कमल की जड़, भसीड़ ।

बलूल—(वि०) [बल+लच्, ऊङ] बलशाली। हृष्टपुष्ट।

√वल्क्—चु० पर० सक० बोलना। देखना। वल्कयति, वल्कयिष्यति, अववल्कत्।

वल्क—(पुं०; न०) [√वल्+क] पेड़ की छाल, बल्कल; 'स वल्कवासांसि तवाधुनाहरन् करोति मन्युं न कथं धनञ्जयः' कि० १.३५। मछली के शरीर का आवरण या पपड़ी। खण्ड, टुकड़ा।—**तरु**–(पुं०) सुपाड़ी का वृक्ष।—**लोध्र**–(पुं०) पठानी लोध।

वल्कल—(न०, पुं०) [√वल् + कलन्] वृक्ष की छाल। छाल के बने वस्त्र; 'इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी' कु० श० १.२०।—**संवीत**–(वि०) वल्कलवस्त्रधारी।

वल्कवत्—(वि०) [वल्क+मतुप्] वल्कयुक्त। (पुं०) मछली जिसके शरीर पर पपड़ी हो।

वल्किल—(पुं०) [वल्क + इलच्] काँटा।

वल्कुट—(न०) छाल।

√वल्ग्—भ्वा० पर० सक० अक० जाना। हिलना। उछलना। नाचना। प्रसन्न होना। खाना, भोजन करना। डींगें मारना, शेखी बघारना। वल्गति, वल्गिष्यति, अवल्गीत्।

वल्गन—(स्त्री०) [√ वल्ग् +ल्युट्] गप्प हाँकना। (घोड़े की) दुलकी चाल।

वल्गा—(स्त्री०) [√ वल्ग् + अच्–टाप्] लगाम, रास।

वल्गित—(वि०) [√वल्ग् + क्त] कूदा हुआ, उछला हुआ। नाचा हुआ। (न०) घोड़े की दुलकी या सरपट चाल। डींग, शेखी।

वल्गु—(वि०) [√ वल+उ, गुक् आगम] मनोहर, मनोज्ञ, चित्ताकर्षक। मधुर। बेशकीमती, बहुमूल्यवान्। (पुं०) बकरा।—**पत्र**–(पुं०) वनमूंग।

वल्गुक—(वि०) [वल्गु + कन्] सुन्दर, मनोहर। (न०) चन्दन। कीमत। जंगल।

वल्गुल—(पुं०) [√वल्ग् + उल] शृगाल, गीदड़।

वल्गुलिका—(स्त्री०) [वल्गुल + कन्–टाप्, इत्व] कत्थई रंग का पतंग जाति का कीट जिसका दूसरा नाम तैलपायी है। मंजूषा, पेटी, पिटारा।

√वल्भ्—भ्वा० आत्म० सक० खाना, भक्षण करना। वल्भते, वल्भिष्यते, अवल्भिष्ट।

वल्मिक, वल्मिकि—(पुं०, न०) [=वल्मीक, पृषो० साधुः] बिमौट।

वल्मी—(स्त्री०) [√वल्+मन्, मुम् नि०–ङीप्] दीमक, चींटी।—**कूट**–(न०) दीमकों को लगाया हुआ मिट्टी का ढेर।

वल्मीक—(पुं०, न०) [√वल+कीकन्, मुम्] दीमकों का बनाया हुआ मिट्टी का ढेर, बिमौट। (पुं०) शरीर के कतिपय अंगों की सूजन। आदिकवि वाल्मीकि।—**शीर्ष**– (न०) लालसुर्मा, स्रोताञ्जन।

वल्ल्—भ्वा० आत्म० सक० ढकना। गमन करना। वल्लते, वल्लिष्यते, अवल्लिष्ट।

वल्ल–(पुं०) [√वल्ल् + अच्] चादर। गिलाफ। तीन घुँघची के बराबर की तौल। दूसरी तौल जिसमें एक या डेढ़ घुँघची पड़ती है। वर्जन, निषेध।

वल्लकी—(स्त्री०) [√वल्ल्+क्वुन्–ङीप्] वीणा; 'अजस्रमास्फालितवल्लकीगुणक्षतोज्ज्वलाङ्गुष्ठनखांशुभिन्नया' शि० १.९। सलई का पेड़।

वल्लभ—(वि०) [√वल्ल्+अभच्] प्यारा। प्रधान, सर्वोपरि। (पुं०) प्रेमी। पति। अध्यक्ष। प्रधान गोप। शुभलक्षणयुक्त अश्व।—**आचार्य** (**वल्लभाचार्य**) –(पुं०) चार वैष्णव सम्प्रदायों में से एक

सम्प्रदाय के प्रवर्तक आचार्य का नाम ।—पाल-(पुं०) घोड़े का सईस ।

वल्लभायित—(न०) [वल्लभ + क्यङ +क्त] रतिक्रिया का आसन विशेष ।

वल्लरि, वल्लरी—(स्त्री०) [√वल्ल +क्विप्, वल्√ॠ+ , पक्षे ङीप्] लता, बेल 'अनपायिनि संश्रयद्रुमे गजभग्ने पतनाय वल्लरी' कु० ४.३१ । मंजरी । मेथी । वन ।

वल्लव—(पुं०) [स्त्री०—**वल्लवी**] [वल्ल√ वा+क] गोप । भीमसेन । रसोइया ।

वल्लि—(स्त्री०) [√ वल्ल्+इन्] बेल । पृथिवी ।—**दूर्वा**- (स्त्री०) प्रकार की घास ।

वल्ली—(स्त्री०) [वल्लि+ङीष्] लता । कैवर्तमुस्ता । अजमोदा । चई । सारिवा । अग्निदमनी । कृष्ण अपराजिता । गुडुच ।—ज- (न०) मिर्च ।—**वृक्ष**- (पुं०) साल का पेड़ ।

वल्लुर—(न०) [√वल्ल् + उरच्] लताकुञ्ज, लतामण्डप । पवन । मंजरी । अनजुता खेत । रेगिस्तान, वीरान । सूखी मछली । फूलों का गुच्छा ।

वल्लूर—(पुं०) [√वल्ल् +ऊरच्] सूखा मांस । जंगली शूकर का मांस । ऊसर । जंगल । उजाड़ । झाड़ी जमीन ।

वल्वया—(स्त्री०) आँवले का पेड़, धात्रीवृक्ष ।

√वल्ह्—भ्वा० आत्म० अक० प्रसिद्ध होना । सक० ढकना । मारना । बोलना । देना । वल्हते, वल्हिष्यते, अवल्हिष्ट ।

वल्हिक, वल्हीक—(पुं०) बलख देश और वहाँ का अधिवासी ।

√वश्—अ० पर० सक० चाहना । अनुकंपा करना । अक० चमकना । वष्टि, वशिष्यति, अवाशीत्—अवशीत् ।

वश—(पुं, न०) [√वश् + अप्] इच्छा, कामना, अभिलाषा । सङ्कल्प । शक्ति । प्रभाव । प्रभुत्व, स्वामित्व, अधिकार । उत्पत्ति ।(पुं०) स्त्रियों का चकला, रंडीखाना । (वि०) काबू में आया हुआ, अधीन । आज्ञानुवर्ती । नीचा दिखलाया हुआ । जादू-टोने से मुग्ध किया हुआ ।—**अनुग** (**वशानुग**,), —**वर्तिन्**-(पुं०) नौकर ।-**आढ्यक** (**वशाढ्यक**)-(पुं०) सूँस, शिशुमार ।—**गा**-(स्त्री०) आज्ञाकारिणी स्त्री ।

वशंवद—(वि०) [वश √ वद् + खच्, मुम्] वशीभूत, वशवर्ती; 'सा दयतां हृदि-हर्षवशंवदवदनमनङ्गनिवासम्' गीत० ११ । आज्ञाकारी ।

वशका—(स्त्री०) [वश √कै+क—टाप्] आज्ञाकारिणी स्त्री ।

वशा-(स्त्री०) [√वश्+अच्—टाप्] औरत । पत्नी । लड़की । ननद । पति की बहन । गौ । बाँझ स्त्री । बाँझ गौ । हथिनी ।

वशि—(पुं०) [√वश् +इन्] अधीनता । मनोमोहकता । (न०) वशित्व ।

वशिक—(वि०) [वश + ठन्] शून्यरहित । रीता, खाली ।

वशिका—(स्त्री०) [वशिक+टाप्] अगर की लकड़ी ।

वशिन्—(वि०) [स्त्री०—**वशिनी**] [वश +इनि] अपने को वश में रखने वाला । वश में किया हुआ । शक्तिशाली ।

वशिनी—(स्त्री०) [वशिन्+ङीप्] शमी या छेंकुर का पेड़ ।

वशिर—(न०) [√वश् +किरच्] समुद्री नमक । गजपिप्पली । एक प्रकार की लाल मिर्च । अपामार्ग । बच ।

वशिष्ठ—(पुं०) [वशवतां वशिनां श्रेष्ठः, वशवत् + इष्ठन्, मतोर्लुक्, वा वरिष्ठ पृषो० साधुः] दे० 'वसिष्ठ' ।

वश्य—(वि०) [वश + यत्] वश करने योग्य । वश में किया हुआ, जीता हुआ । आज्ञाकारी । अवलम्बित । (न०) लवंग । (पुं०) दास, अनुचर ।

वश्यका—(स्त्री०) [वश्य+कन् —टाप्] दे० 'वश्या' ।

वश्या—(स्त्री०) [वश्य+ टाप्] आज्ञाकारिणी स्त्री ।

√वष्—भ्वा० पर० सक० अनिष्ट करना । वध करना । वषति, वषिष्यति, अवाषीत्—अवषीत् ।

वषट्—(अव्य०) [√वह् + डषटि] एक शब्द जिसका उच्चारण अग्नि में आहुति देते समय यज्ञों में किया जाता है । [यथा —इन्द्राय वषट् । पूष्णे वषट्] ।—**कर्तृ**- (पुं०) ऋत्विज् जो वषट् उच्चारणपूर्वक आहुति दे ।

√वष्क्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । वष्कते, वष्किष्यते, अवष्किष्ट ।

वष्कय—(पुं०) [√वष्क् + अयन्] एक वर्ष का बछड़ा ।

वष्कयणी, वष्कयिणी—(स्त्री०) [वष्कय √नी +क्विप्—ङीप्, णत्व] [वष्कय +इनि —ङीप्, णत्व] चिरप्रसूता गौ, बहुत दिनों की ब्याही हुई गौ या वह गाय जिसका बछड़ा बहुत बड़ा हो गया हो, बकेना गाय ।

√वस्—भ्वा० पर० अक० बसना, निवास करना । वसति, वत्स्यति, अवात्सीत् । अ० आत्म० सक० ढकना । वस्ते, वसिष्यते, अवसिष्ट । दि० पर० सक० केना । वस्यति, वसिष्यति, अवसत् । चु० पर० सक० स्नेह करना । काटना । अपहरण करना । अक० निवास करना वासयति, वासयिष्यति, अवीवसत् ।

वसति, वसती—(स्त्री०) [√वस् +अति, पक्षे ङीप्] रहाइस, वास । घर, बासा, डेरा । आगार । शिविर । रात (जब सब लोग अपनी-अपनी यात्रा बंद कर टिक जाते हैं); 'तस्य मार्गवशादेका बभूव वसतिर्यतः' र० १५.११ । बस्ती, आबादी ।

वसन—(न०) [√वस् + ल्युट्] वास, रहना । घर, बासा । वस्त्रधारण करने की क्रिया । वस्त्र, परिधान । करधनी, स्त्रियों की कमर का एक आभूषण ।

वसन्त—(पुं०) [√वस् + झच्—अन्तादेश] वर्ष की छः ऋतुओं में से प्रथम ऋतु, जिसके अन्तर्गत चैत्र और वैशाख मास हैं, मौसम, बहार । मूर्तिमान् ऋतु जो कामदेव का सखा माना गया है । अतीसार रोग । शीतला या चेचक की बीमारी । मसूरिका रोग ।—उत्सव (वसन्तोत्सव)-(पुं०) उत्सव विशेष जो प्राचीन काल में वसन्त-पञ्चमी के अगले दिन मनाया जाता था । इसी उत्सव का दूसरा नाम "मदनोत्सव" है । आधुनिक पण्डित होली के उत्सव को ही वसन्तोत्सव कहते हैं ।—घोषिन्-(पुं०) कोयल ।—जा-(स्त्री०) वासन्ती या माधवी लता । वसन्तोत्सव ।—तिलक-(पुं०, न०) वसन्त का आभूषण । 'फुल्लं वसन्ततिलकं तिलकं वनाल्याः' ।— छन्दोमञ्जरी ।—तिलक—(पुं०, न०),—तिलका— (स्त्री०)— एक वर्णवृत्त जिसके चरण में तगण, भगण, जगण, भगण और दो गु —इस तरह सब मिलाकर चौदह वर्ण होते हैं । दूत-(पुं०) कोयल चैत्र मास । आम का वृक्ष । पंचमराग । —दूती-(स्त्री०) पाटली वृक्ष । माधवी लता । कोयल । —द्रुम-(पुं०) आम का पेड़ । ।—पञ्चमी-(स्त्री०) माघशुक्ला ५ मी ।—बन्धु,-सख-(पुं०) कामदेव का नाम ।

वसा—(स्त्री) [√वस् (आच्छादने) + अच्—टाप्] मेद, चरबी । मस्तिष्क ।—आढ्य (वसा ढ्य),—आ घक (वसाघक)

(पुं०) सूँस या शिशुमार।—यामिन्-(पुं०) कुत्ता।

वसि—(पुं०) [√वस्+इन्] वस्त्र। वासा, डेरा, रहने का स्थान।

वसित—(वि०) [√वस्+क्त] पहिना हुआ, धारण किया हुआ। बसा हुआ। जमा किया हुआ। (अनाज)।

वसिर—(न०) [√वस्+किरच्] समुद्री नमक। (पुं०) गजपिप्पली। लाल चिचड़ा। जलनीम।

वसिष्ठ—(पुं०) [इसका साधु रूप वशिष्ठ है] एक प्रसिद्ध प्राचीन ऋषि जो सूर्यवंशी राजाओं के पुरोहित थे। एक स्मृतिकार ऋषि का नाम।

वसु—(न०) [√वस्+उ] धनदौलत; 'वसु तस्यविभोर्न केवलं गुणवत्तापि परप्रयोजना' र० ८-३१ रत्न, जवाहर। सुवर्ण। जल। पदार्थ, वस्तु। लवण-विशेष। एक जड़ी। (पुं०) एक श्रेणी के देवताओं की संज्ञा। वसु आठ माने गये हैं) उनके नाम हैं—आप, ध्रुव, सोम, धर, या धव, अनिल, अनल, प्रत्यूष और प्रभास। कहीं कहीं 'आप' के बजाय "अह" भी लिखा पाया जाता है)। आठ की संख्या। कुबेर का नाम। शिवजी का नाम। अग्नि का नाम। एक वृक्ष। एक झील या सरोवर। लगाम, रास। जुवा बाँधने की रस्सी। बागडोर। किरण। सूर्य।—**ओकसारा** (**वस्वौकसारा**)—(स्त्री०) इन्द्र की अमरावती पुरी का नाम। कुबेर की अलकापुरी का नाम। अमरावती और अलकापुरी में बहने वाली एक नदी का नाम।—**कृमि**,—**कीट**—(पुं०) भिक्षुक, भिखारी।—**दा**—(स्त्री०) पृथवी।—**देव**—(पुं०) श्रीकृष्ण के पिता का नाम।—०**सुत**-(पुं०) श्रीकृष्ण —**देवता**,—**देव्या**-स्त्री०) धनिष्ठा नक्षत्र। —**धर्मिका**-(स्त्री०) बिल्लौर।—**धा**-(स्त्री०) पृथिवी।—**धारा**-(स्त्री०) कुबेर की राजधानी।—**प्रभा**—(स्त्री०) अग्नि की सात जिह्वा ओं में से एक का नाम।—**प्राण**-(पुं०) अग्नि-देव।—**रेतस्**-(पुं०) शिव। अग्नि।—**श्रेष्ठ**-(न०) चाँदी।—**षेण**—(पुं०) कर्ण का नाम।—**स्थली**-(स्त्री०) कुबेर की नगरी का नाम।—**हंस**-(पुं०) वसुदेव के एक पुत्र का नाम।—**हट्ट**,—**हट्टक**-(पुं०) वक वृक्ष, अगस्त का पेड़।

वसुक—(पुं०) [वसु√कै+क] मदार का पौधा। बड़ी मौलसिरी। पीली मूँग। (न०) साँभर नमक। पांशु लवण। क्षार लवण। बथुआ। काला अगर।

वसुन्धरा—(स्त्री०) [वसूनि धारयति, वसु√धृ+णिच्+खच्, ह्रस्व, मुम्—टाप्] पृथिवी; 'नानारत्ना वसुन्धरा' र. ४.७ स्याफल्क की पुत्री, साम्ब की पत्नी।

वसुमत्—(वि०) [वसु+मतुप्] धनी, धनवान्।

वसुमती—(स्त्री०) [वसुमत्+ङीप्] पृथिवी; 'वसुमत्या हि नृपाः कलत्रिणः' र.८.८३

वसुल—(पुं०) [वसु√ला+क] देवता।

वसूक—(न०) [=वसुक. पृषो० साधुः] साँभर नमक। अगस्त का पेड़।

वसूरा—(स्त्री०) [√वस्+ऊरच्—टाप्] वेश्या, रंडी।

वस्क—(पुं०) [√वस्क्+घञ् भावे] गमन। अध्यवसाय, मिहनत।

वस्कराटिका—(स्त्री०) बीछी।

वस्त्√—चु० उभ० सक० मार डालना। माँगना। जाना। वस्तयति-ते, वस्तयिष्यति-ते, अववस्तत्-त।

वस्त—(पुं०) [वस्त्+घञ्] बकरा। (न०) [√वस्+क्त] रहने का स्थान, वासा, डेरा।

बस्तक–(न०) [बस्त√कै+क] बनावटी नमक, कृत्रिम लवण।

बस्ति–(पुं०, स्त्री०) [√वस्+ति] निवास। कपड़े का छोर। पेट की नाभि के नीचे का भाग, पेड़ू। मूत्राशय। पिचकारी।—**कर्मन्**-(न०) लिंग, गुदा आदि में पिचकारी देना। —**मल**-(न०) मूत्र, पेशाब।—**शिरस्**-(न०) पिचकारी की नली।—**शोधन**-(न०) मूत्राशय साफ करने वाली दवा। मैनफल।

बस्तु–(न०) [√वस्+तुन्] वह जिसका अस्तित्व हो, वह जिसकी सत्ता हो। पदार्थ, चीज। धन-दौलत, वास्तविक सम्पत्ति। वे साधन या सामग्री जिससे कोई चीज बनी हो। किसी नाटक का कथानक। किसी काव्य की कथा। किसी वस्तु का सार। खाका, ढाँचा। **अभाव** (**वस्त्वभाव**)-(पुं०) वास्तविकता का अभाव या राहित्य। धन-सम्पत्ति का नाश।—**रचना**-(स्त्री०) शैली। कथा-वस्तु का विकास।—**वाद**-(पुं०) एक दार्शनिक सिद्धान्त जिसमें जगत् जैसा दृश्य है, उसी रूप में उसकी सत्ता मानी जाती है। **शून्य**-(वि०) द्रव्य से रहित। जिसमें यथार्थता न हो, नकली।

बस्तुतस्–(अव्य०) [वस्तु+तस्] दरहकीकत, वास्तव में, दरअसल में। यथार्थतः।

बस्त्य–(न०) [वस्ति+यत्] घर, बासा, डेरा।

बस्त्र–(न०) [वस्यते आच्छाद्यते अनेन, √वस्+ष्ट्रन्] कपड़ा। पोशाक, परिच्छद। **अगार**– (**वस्त्रागार**)-(पुं०, न०),—**गृह**-(न०) खेमा, तंबू, कनात। कपड़े की दूकान।—**अञ्चल** (**वस्त्राञ्चल**),—**अन्त** (**वस्त्रान्त**)-(पुं०) कपड़े का छोर।—**कुट्टिम**-(न०) तंबू। छाता।—**गोपन**-(न०) ६४ कलाओं में से एक।—**ग्रन्थि**-(पुं०) धोती की गाँठ जो नाभि के पास लगती है। नीवी, नाड़ा, इजारबन्द।—**दशा** स्त्री० कपड़े की किनारी।—**धावनी**-(स्त्री०) धलगनी।—**निर्णेजक**-(पुं०) धोबी। —**परिधान**-(न०) पोशाक पहिनना।—**पुत्रिका**-(स्त्री०) गुड़िया, पुतली।—**पूत**-(वि०) कपड़े से छना हुआ; 'वस्त्रपूतं पिबेज्जलं' मनु०।—**भेदक**,—**भेदिन्**-(पुं०) दर्जी।—**योनि**-(पुं०) रुई या जिससे कपड़ा बना हो।—**रञ्जन**-(न०) कुसुम का फूल।

बस्न–(न०) [√वस्+नन्] भाड़ा। मजदूरी (इस अर्थ में यह शब्द पुंलिंग भी है)। धाम। धन। वसन, वस्त्र। चमड़ा। मूल्य। मृत्यु।

बस्नन–(न०) [√वस्+नन] पटुका, कमरबंद, करधनी।

बस्नसा–(स्त्री०) [वस्न चर्म सीव्यति, वस्न √सिव्+ड–टाप्] स्नायु। नस।

√वह्—भ्वा० उभ० सक० ले जाना, ढोना। आगे बढ़वाना। जाकर लाना। समर्थन करना। निकाल ले जाना। विवाह करना। अधिकार में कर लेना, कब्जा कर लेना। प्रदर्शित करना, दिखलाना। रखवाली करना। खबर लेना। अनुभव करना। सहना। वहति-ते, वक्ष्यति-ते, अवाक्षीत् —अवोढ।

वह–(पुं०)–[वह्+घ वा अच्] ले जाने की क्रिया। बैल का कंधा। वाहन, सवारी। विशेष कर घोड़ा। पवन। मार्ग। नद। चार द्रोण भर का एक नाप।

वहत–(पुं०) [√वह+अतच्] यात्री। बैल।

वहति–[√वह्+अति] बैल। पवन। मित्र। परामर्शदाता, सलाहकार।

वहती, वहा–(स्त्री०) [वहति+ङीष्] [√वह्+अच्–टाप्] नदी। चश्मा, सोता।

वहतु–(पुं०) [√वह्+अतु] बैल। बटोही

वहन—(न०) [√वह्+ल्युट्] ले जाना। पहुँचाना। समर्थन। बहाव। सवारी। नाव, बेड़ा।

वहन्त—(पुं०) [वहति वाति√वह+झच (कर्त्तरि)] हवा। [उह्यते, √वह+झच् (कर्मणि)] बच्चा।

वहल—दे० 'बहल'।

वहला—दे० 'बहला'।

वहित्र, वहित्रक—(न०) **वहित्री**-(स्त्री०) [√वह्+इत्र] [वहित्र+कन्] [वह+इत्र—ङीप्] बेड़ा, नाव; । 'प्रत्यूषस्यदृश्यत किमपि वहित्रम्' दश०, जहाज, पोत।

वहिस्—(अव्य०) दे० 'बहिस्'

वहिष्क—वि०) बाहरी, बाहर का।

वहीक—(पुं) शिरा। स्नायु। पुट्ट।

वहेड़क—(पुं०) बहेड़ा या विभीतक का पेड़।

वह्नि—(पुं०) [√वह्+नि]अग्नि, आग। अन्न पचाने या जो खाया जाय उसे पचाने वाली शक्ति। भूख। सवारी। जोते जाने वाले पशु। चित्रक, चीता। भिलावाँ। रेफ (तंत्र)। तीन की संख्या। देवता। मरुत्। सोम। कृष्ण का एक पुत्र। तुर्वसु के पुत्र का नाम। पुरोहित। आठवाँ कल्प। —**कर**- (वि०) जलाने वाला। भूख बढ़ाने वाला।—**काष्ठ**-(न०) अगर की लकड़ी।—**गर्भ**-(पुं०) बाँस। शमी का पेड़। **दीपक** -(पुं०) कुसुंभ का पेड़।—**भोग्य**-(न०) घी।—**मारक**-(न०) जल। **मित्र**-(पुं०) पवन।—**रेतस्**-(पुं०) शिव जी।—**लोह,—लोहक**-(न०) ताँबा।—**वल्लभ**-(पुं०) राल।—**बीज**-(न०) सुवर्ण। नेबू :—**शिख**-(न०) केसर। कुसुंभ।—**सख**-(पुं०) पवन।—**संज्ञक**-(पुं०) चित्रक का पेड़।

वह्य—(न०) [√वह्+यत्]गाड़ी। सवारी कोई भी।

√वा—अ० पर० सक० फूंकना। जाना। आघात करना। अनिष्ट करना। वाति, वास्यति, अवासीत्।

वा—(अव्य) [√वा+क्विप्] या, अथवा; 'जातं मन्ये तुहिनमथितां पद्मिनीं वान्यरूपां' मे०८३। और, तथा। जैसा, सदृश। उपमा। वितर्क। पादपूरण। निश्चय। नानार्थ। विश्वास।

वांश—(वि०) [स्त्री०—**वांशी**] [वंश+अण्] बाँस का बना हुआ।

वांशी—(स्त्री०) [वांश+ङीप्]वंशलोचन।

वांशिक—(पुं०) [वंश+ठक्] बाँस काटने वाला। वंशी बजाने वाला।

वाक—(न०) [वक+अण्] बगलों का समूह। बगलों की उड़ान। (वि०) बक सम्बन्धी, बगलों का। (पुं०) [√वच्+घञ्] वाक्य। कहना। वेद का एक भाग।

वाकुल—'वाकुन'।

वाक्य—(न०) [√वच्+ण्यत्] व्याकरण के नियमों के अनुसार क्रम से लगा हुआ वह सार्थक शब्द-समूह जिसके द्वारा किसी पर अपना अभिप्राय प्रकट किया जाता है। कथन। आदेश। सिद्धान्त। साक्ष्य। तर्क। —**प्रदीप**-(न०) एक ग्रन्थ का नाम जो भर्तृहरि का बनाया हुआ बतलाया जाता है। —**पद्धति**-(स्त्री०) वाक्यरचना की विधि। —**भेद**-(पुं०) मीमांसा के एक ही वाक्य का एक ही काल में परस्पर विरोधी अर्थ करना।

वागर—(पुं०) [वाचा ऋच्छति गच्छति, वाच् √ऋ+अच्] ऋषि। विद्वान् ब्राह्मण। मुमुक्षु। वीर पुरुष। सान रखने का पत्थर। रोक। निर्णय। वाड़वानल। भेड़िया।

वागा—(स्त्री०) बागडोर, लगाम, रास।

वागुरा—(स्त्री०) [√वा+उरच्, गुक् आगम—टाप्]फंदा,जाल; 'कौ वा दुर्जनवागुरासु पतितः क्षेमेण यातः पुमान्' पं० १।—

वृत्ति—(स्त्री०) जंगली जीवों को पकड़ कर आजीविका चलाना। (पुं०) बहेलिया।

वागुरिक—(पुं०) [वागुरा+ठक्] बहेलिया, हिरन पकड़ने वाला, व्याधा।

वाग्मिन्—(वि०) [प्रशस्ता वाक् अस्ति यस्य, वाच्+ग्मिनि] अच्छा बोलने वाला, वाक्पटु। (पुं०) वक्ता, वाक्पटु मनुष्य। बृहस्पति का नाम। विष्णु।

वाग्य—(वि०) [वाचं परिमितं वाक्यं याति गच्छति, वाच्√या+क] कम बोलने वाला। बोलते समय सावधानी करने वाला। यथार्थ या सत्य कहने वाला। (पुं०) लज्जा-शीलता, विनम्रता।

वाङ्क्ष—(पुं०) समुद्र।

वाङ्क्ष्—भ्वा० पर० सक० अभिलाषा करना, इच्छा करना। वाङ्क्षति, वाङ्क्षिष्यति, अवा-ङ्क्षीत्।

वाङ्मय—(वि०) [स्त्री०—**वाङ्मयी**। [वाच्+मयट्] वाक्यात्मक, वचन सम्बन्धी। वाणीसम्पन्न। वाक्पटु। (न०) गद्य-पद्यात्मक वाक्य आदि जो पठन-पाठन का विषय हों, साहित्य।

वाङ्मयी—(स्त्री०) [वाङ्मय+ङीप्] सरस्वती देवी।

वाच्—(स्त्री०) [उच्यतेऽसौ अनया वा, √वच्+क्विप्, दीर्घ असम्प्रसारण] शब्द, ध्वनि; वाणी, भाषा। कहावत, कहनूत। बयान। वादा। सरस्वती का नाम।—**अर्थ** (वागर्थ)-(पुं०) शब्द और उसका अर्थ।—**आडम्बर** (वागाडम्बर)-(पुं०) वाणी का आडम्बर, बड़-वाक्यता।—**आत्मन्** (वागात्मन्)-(वि०) शब्दों से सम्पन्न।—**ईश** (वागीश)-(पुं०) वाग्मी, वक्ता। बृहस्पति का नामान्तर। ब्रह्मा; —'वागीशं वाग्भिरर्ध्याभिः प्रणिपत्यो-पतस्थिरे' कु. २.३।—**ईश्वर** (वागीश्वर)-(पुं०) वाक्पटु, वक्ता।—**ईश्वरी** (वागी-श्वरी)-(स्त्री०) सरस्वती।—**ऋष** भ (वागृ-षभ)-(पुं०) वाक्पटु या विद्वान् पुरुष।—**कलह** (वाक्कलह)-(पुं०) झगड़ा, टंटा, वाग्युद्ध।—**कीर** (वाक्कीर)-(पुं०) पत्नी का भाई, साला।—**गुद** (वाग्गुद)-(पुं०) पक्षी विशेष।—**गुलि** (वाग्गुलि,),—**गुलिक** (वाग्गुलिक)-पुं०) राजा का वह अनुचर जो उसको पान का बीड़ा खिलाया करे।—**चपल** (वाक्चपल)-(वि०) बक्की, बातूनी।—**छल** (वाक्छल)-(न०) बहाना, टालमटूल वाली बात। काकु के सहारे वितंडा खड़ा करना।—**जाल** (वाग्जाल)-(न०) कोरी बातचीत।—**दण्ड** (वाग्दण्ड)-(पुं०) धिक्कार, फटकार। वाक्संयम।—**दत्त** (वाग्दत्त)-(वि०) जिसको देने की बात कह दी गई हो।—**दत्ता** (वाग्दत्ता)-(स्त्री०) सगाई की हुई क्वारी लड़की।—**दल** (वाग्दल) -(न०) ओठ।—**दान** (वाग्दान)-(न०) सगाई, मँगनी।—**दुष्ट** (वाग्दुष्ट)-(वि०) गाली-गलौज से भरा हुआ। वह जो व्याकरण के नियमों के विरुद्ध अशुद्ध भाषा का प्रयोग करे। (पुं०) निन्दक। वह ब्राह्मण जिसका यज्ञोपवीत समय पर न हुआ हो।—**देवता** (वाग्देवता),—**देवी** (वाग्देवी) -(स्त्री०) सरस्वती देवी।—**दोष** (वाग्दोष)-(पुं०) गाली। निन्दा। व्याकरण-विरुद्ध भाषण।—**निश्चय** (वाङ्निश्चय) -(पुं०) सगाई।—**निष्ठा** (वाङ्निष्ठा)-(स्त्री०) वचनबद्धता। विश्वासपात्रता।—**पटु** (वाक्पटु)-वि०) बात करने में चतुर।—**पति** (वाक्पति)-(पुं०) बृहस्पति।—**पारुष्य** (वाक्पारुष्य)-(न०) कठोर शब्द। गाली-गलौज। निन्दा।—**प्रचोदन** (वाक्प्रचोदन)-(न०) मौखिक आज्ञा।—**प्रतोद** (वाक्प्रतोद)-(पुं०) व्यङ्ग्य। कटाक्ष। आक्षेप।—**प्रलाप** (वाक्प्रलाप)-(पुं०) वाक्पटुता।—**मनस्** (वाङ्मनस्) -(वैदिक) वाणी और मन।—**मात्र**

(वाङ्मात्र)-(न०) शब्द मात्र।—मुख (वाङ्मुख)-(न०) भूमिका —यत (वाग्यत)—(वि०) मौन या वह जिसने अपनी वाणी को वश में कर रखा हो। —यम ()वाग्यम—(पुं०) वाणी पर संयम करने वाला, ऋषि, मुनि —याम (वाग्याम)-(पुं०) गूँगा आदमी।—युद्ध (वाग्युद्ध)-(न०)जबानी लड़ाई, गरम बहस या वाद-विवाद।—वज्र (वाग्वज्र) -(पुं०) शाप। कठोर शब्द।—विदग्ध (वाग्विदग्ध)-(वि०) वाक्पटु, बोल-चाल में निपुण।—विदग्धा (वाग्विदग्धा)-(स्त्री०) बातचीत करने में चतुर या मनोमोहिनी स्त्री।—विभव (वाग्विभव)-(पुं०) वर्णन करने की शक्ति।—विलास (वाग्विलास)-(पुं०) मौज, दिल-बहलाव के लिये बातचीत करना।—वैदग्ध्य (वाग्वैदग्ध्य)—(न०) भाषण, कथोपकथन में चतुरता। अलंकार और चमत्कारमयी उक्तियों में दक्षता, प्रवीणता।—व्यवहार (वाग्व्यवहार) (पुं०) मौखिक वादविवाद, जबानी बहस।—व्यापार (वाग्व्यापार) (पुं०) बोलने की शैली या ढंग।—संयम (वाक्संयम)-(पुं०) वाणी का नियंत्रण।

वाच—(पुं०) [√वच्+णिच्+अच्] मछली। मदन नामक पौधा।

वाचंयम—(वि०) [वाचो वाक्यात् यच्छति विरमति,वाच्√यम्+खच्, नि० मुम्]जबान बन्द रखने वाला,मौनी। (पुं०) मौन रहने वाला मुनि।

वाचक—(पुं०) [वक्ति अभिधावृत्त्या बोधयति अर्थान् √वच्+ण्वुल्√ शब्द; प्रकृति और प्रत्यय द्वारा शब्द वाचक होता है। [√वच्+णिच्+ण्वुल्] पुराण आदि बाँचने वाला व्यक्ति। (वि०) सूचक, बताने वाला।

वाचन—(न०) [√वच्+णिच्+ल्युट्] बाँचना। पढ़ने में प्रवृत्त करना। बताना। प्रतिपादन।

वाचनक—(न०) [वाचन √कै+क] पहेली।

वाचनिक—(वि०) [स्त्री०—**वाचनिकी**] [वचन+ठक्] मौखिक, शब्दों द्वारा प्रकटित।

वाचस्पति—(पुं०) [वाचः पतिः, अलुक् स०] 'वाणी का प्रभु'; देवगुरु बृहस्पति की उपाधि। सोम। प्रजापति। सुवक्ता।

वाचस्पत्य—(न०) [वाचस्पति+ण्यत्] वाक्पटुता। सुंदर भाषण।; 'तदूरीकृत्य कृतिभिर्वाचस्पत्यं प्रतायते' शि. २-३०

वाचा—(स्त्री०) [वाच्+टाप्] वाणी। शब्द। सिद्धान्त, स्मृति या श्रुतिवाक्य। शपथ।

वाचाट—(वि०) [कुत्सितं बहु भाषते, वाच्+आटच्] बातूनी, बक्की। डींग मारने वाला।

वाचाल—(वि०) [कुत्सितं बहु भाषते, वाच्+आलच्] बकवादी, व्यर्थ बकने वाला।

वाचिक—(वि०) [स्त्री०—**वाचिकी**, **वाचिका**] [वाच्+ठक्] वाणी सम्बन्धी। शाब्दिक,मौखिक। (न०) जबानी संदेसा, मौखिक सूचना। समाचार, खबर।

वाचोयुक्ति—(व०) [वाचो युक्तिः यस्य, ब० स०, षष्ठ्या अलुक् ?] वाक्पटु। (स्त्री०) [वाचो युक्तिः, ष० त०, षष्ठ्या अलुक] वाणी की युक्ति या औचित्य। अच्छा भाषण।

वाच्य—(वि०) [√वच्+ण्यत्] कहने योग्य। शाब्दिक संकेत द्वारा जिसका बोध हो, अभिधेय। दोषी ठहराने लायक। (न०) कलंक। भर्त्सना। निन्दा। अभिधा द्वारा बोधगम्य अर्थ। क्रिया का वाच्य

(कर्मवाच्य, कर्तृवाच्य)।—**रूक्ष**-(न०) कठोर शब्द।

वाज—(पुं०) [√वज्+घञ्] पर, डैना। तीर में लगे हुए पर। युद्ध, संग्राम। वेग। ध्वनि। (न०) घी। चावलपिण्ड। भोज्य पदार्थ। जल। वह स्तव या मंत्र जिसको पढ़ कर कोई यज्ञ समाप्त किया जावे।—**पेय**-(पुं०, न०) एक प्रसिद्ध यज्ञ जो सात श्रौत यज्ञों में पाँचवाँ है।—**सन**-(पुं०) श्री विष्णु भगवान् का नाम। शिव।—**सनि**-(पुं०) सूर्य।

वाजसनेय—(पुं०) [वाजसनेः सूर्यस्य छात्रः, वाजसनि+ढक्] यजुर्वेद की एक शाखा। याज्ञवल्क्य ऋषि जिनके नाम से शुक्लयजुर्वेद की वाजसनेयी संहिता प्रसिद्ध है।

वाजसनेयिन्—(पुं०) [वाजसनेय + इनि] शुक्लयजुर्वेदी।

वाजिन्—(पुं०) [वाज+इनि] घोड़ा: 'हरिं विदित्वा हरिभिश्च वाजिभिः' र० ३.४३। तीर। पक्षी। शुक्ल यजुर्वेदी।—**मेध**-(पुं०) अश्वमेध यज्ञ।—**शाला**-(स्त्री०) अस्तबल।

वाजीकर—(वि०) [वाज+च्वि√कृ+अच्] मनुष्य में वीर्य और पुंस्त्व की वृद्धि करने वाला।

वाजीकरण—(न०) [वाज+च्वि√कृ+ल्युट्] आयुर्वेदिक वह प्रयोग जिससे मनुष्य में वीर्य और पुंस्त्व की वृद्धि होती है।

वाञ्छ्—भ्वा० पर० सक० चाहना, इच्छा करना। वाञ्छति, वाञ्छिष्यति, अवाञ्छीत्।

वाञ्छन—(न०) [√वाञ्छ् + ल्युट्] चाहना, कामना करना।

वाञ्छा—(स्त्री०) [√वाञ्छ्+अ-टाप्] इच्छा, अभिलाषा।

वाञ्छित—(वि०) [√वाञ्छ्+क्त] चाहा हुआ, अभिलषित: 'न वाञ्छितं सिध्यति कल्पपादपे' सु०। (न०) कामना, इच्छा, अभिलाषा।

वाञ्छिन्—(वि०) [√वाञ्छ्+णिनि] चाहने वाला, कामना करने वाला, इच्छा करने वाला। लंपट, कामुक।

वाट—(पुं०, न०) [√वट्+घञ्] घेरा, हाता। बाग, उद्यान। लतामण्डप। मार्ग, रास्ता। कमर, कटि। अन्नविशेष।—**धान**-(पुं०) ब्राह्मणी माता और कर्महीन या नाममात्र के ब्राह्मण से उत्पन्न एक पतित या संकर जाति।

वाटिका—(स्त्री०) [√वट्+ण्वुल्-टाप्, इत्व] फुलवगिया। वह भूखण्ड जिस पर कोई इमारत या भवन खड़ा हो।

वाटी—(स्त्री०) [वाट+ङीप्] वह भूखण्ड जिस पर कोई भवन खड़ा हो। घर, डेरा। आँगन। घेरा। बाग, उपवन। मार्ग। कमर, कटि। अनाज विशेष।

वाट्या—(स्त्री०), **वाट्याल**—(पुं०), **वाट्यालो**—(स्त्री०) [वाट्या वास्तुप्रदेशे हिता, वाटी+यत्-टाप्] [वाटीम् अलति भूषयति वाटी√अल्+अण्] [वा.याल +ङीप्] अतिबला नाम का पौधा।

√**वाड्**—भ्वा० आत्म० अक० स्नान करना, गोता लगाना। वाडते, वाडिष्यते, अवाडिष्ट।

वाडव—(पुं०) [वडवायां घोटक्यां जातः, वडवा+अण्] वडवानल। [वाडं समुद्रान्तःस्नानं वाति प्राप्नोति, वाड√वा+क] ब्राह्मण। (न०) वडवानां समूहः वडवा + अण्] घोड़ियों का समुदाय।—**अग्नि** (**वाडवाग्नि**),—**अनल** (**वाडवानल**)-(पुं०) समुद्र के भीतर की आग।

वाडवेय—(पुं०) [वडवा+ढक्] वडवानल। घोड़ा। अश्विनीकुमार।

वाड्व्य—(न०) [वाडव+यत्] ब्राह्मण-समुदाय।

वाढ—(वि०) [वह्+क्त, नि० साधुः] दृढ़। अतिशय। उच्चस्वरयुक्त।

वाढम्—(अव्य०) [√वह्+क्त, पृषो० मुम्] हाँ! बहुत अधिक। बस। अवश्यमेव।

वाणि—(स्त्री०) [√वण्+इण्] बुनना, नावट। करघा।

वाणिज—(पुं०) [वणिज्+अण् (स्वार्थे)] व्यापारी, सौदागर।

वाणिज्य—(न०) [वणिज्+ष्यञ्] वनिज, व्यापार।

वाणिनी—(स्त्री०) [√वण्+णिनि—ङीप्] चालाक औरत। नर्तकी, अभिनेत्री। शराब के नशे में चूर स्त्री; यस्मिन्नहीं शासति वाणिनीनां निद्रां विहारार्धपथे गतानाम् र. ६.७५। स्वेच्छाचारिणी या व्यभिचारिणी स्त्री।

वाणी—(स्त्री०) [√वण्+इण्—ङीप्] वचन, शब्द, भाषा। वाचाशक्ति; वाण्येका समलंकरोति पुरुषं भर्तृ. २.१९। नाद, ध्वनि, स्वर। साहित्यिक निबन्ध। प्रशंसा। सरस्वती देवी।

√वात्—चु० उभ० सक० फूँकना, धौंकना। हवा करना, पंखा करना। परिचर्या करना। प्रसन्न करना। जाना। वातयति-ते, वातयिष्यति-ते, अववातत्-त।

वात—(वि०) [√वा+क्त] उड़ाया हुआ, फूँका हुआ। अभिलषित। आहत। आक्रान्त। (पुं०) वायु, हवा। वायु का अधिष्ठातृ देवता, पवनदेव। शरीरस्थ कफ, वात और पित्त, में से दूसरा। गठिया रोग। [√वात्+अच्] उपपति, प्रेमी।—**अट** (**वाताट**)-(पुं०) वातमृग, बारहसिंगा। सूर्य के घोड़ों में से एक।—**अण्ड** (**वाताण्ड**)-(पुं०) अण्डकोष की सूजन।—**अप** (**वाताप**)-(न०) पत्ता।—**अयन** (**वातायन**)-(पुं०) घोड़ा। (न०) खिड़की, झरोखा। बरसाती। फर्श, गच।—**अयु** (**वातायु**)-(पुं०) बारहसिंगा।—**अश्व** (**वाताश्व**)-(पुं०) तेज घोड़ा।—**आमोदा** (**वातामोदा**)-(स्त्री०) मुश्क, कस्तूरी।—**आलि** (**वातालि**)—(स्त्री०) भँवर।—**आहत** (**वाताहत**)-(वि०) वायु से ताड़ित। गठिया से ग्रस्त।—**आमहति** (**वातामहति**)-(स्त्री०) पवन का प्रचण्ड झोंका।—**ऋद्धि** (**वातर्द्धि**)-(स्त्री०) वायुवृद्धि। गदा। का का डंडा। लोहे की मु वाली छड़ी।—**कर्मन्**—(न०) अपान वायु निकालने की क्रिया।—**कुण्डलिका**-(स्त्री०) मूत्र रोग विशेष जिसमें रोगी को पेशाब करने में पीड़ा होती है। और बूँद-बूँद करके पेशाब निकलता है।—**कुम्भ**-(पुं०) हाथी के मस्तक का भाग विशेष।—**केतु**-(पुं०) धूल।—**केलि**-(पुं०) प्रेमरसपूर्ण अलाप। उपपति के दाँतों या नखों का घाव।—**गुल्म**-(पुं०) अंधड़। गठिया।—**ज्वर**-(पुं०) वात से होने वाला ज्वर।—**ध्वज**-(पुं०) बादल।—**पुत्र**-(पुं०) हनुमान्। भीम।—**पोथ**,—**पोथक**-(पुं०) पलाश वृक्ष।—**प्रमी**-(पुं०) तेज दौड़ने वाला हिरन।—**मण्डली**-(स्त्री०) बवंडर, हवा का चक्कर।—**रक्त**,—**शोणित**-(न०) रोग विशेष।—**रङ्ग**-(पुं०) पीपल का पेड़।—**रथ**-(पुं०) आँधी, तूफान। इन्द्रधनुष। घूस, रिश्वत।—**रोग**, —**व्याधि**-(पुं०) गठिया।—**वसन**—(वि०) नंगा।—**वस्ति**-(पुं०) मूत्र का न उतरना।—**वृद्धि**-(स्त्री०) अण्डकोष की सूजन।—**शीर्ष**-(न०) पेडू, तरेट।—**सारथि**-(पुं०) अग्नि।

वातक—(पुं०) [वात+कन्] जार, आशिक, उपपति। अग्निमन्थ।

वातकिन्—(वि०) [स्त्री०—**वातकिनी**] [वातोऽतिशयितोऽस्ति अस्य, वात+इनि, कुक्] गठिया वाला।

वातमज–(पुं०) [वातम् अभिमुखीकृत्य अजति गच्छति, वात√अज्+अच्, मुम्] तेज चलने वाला मृग।

वातर–(वि०) [वात√रा+क] तूफानी। तेज।–**अयन** (**वातरायण**)-(पुं०) तीर। तीर की उड़ान। धनुष की टंकार। शृङ्ग, शिखर। आरा। [वातेन वायुजनितरोगेण रायति शब्दायते, वात√रै+ल्यु] नशे में चूर या पागल मनुष्य। निकम्मा आदमी। सरल नामक वृक्ष।

वातल–(वि०) [स्त्री०—**वातली**] [वात√ला+क] तूफानी, हवाई। वायुवर्द्धक। (पुं०) पवन। चना।

वातापि–(पुं०) अगस्त्य द्वारा पचाया हुआ। एक राक्षस।–**द्विष्**,–**सूदन**,–**हन्**–(पुं०) अगस्त्य जी की उपाधियाँ।

वाति–(पुं०) [√वा+क्तिन्] सूर्य। हवा। चन्द्रमा।–**ग**,–**गम**-(पुं०) बैंगन। (**वातिङ्गण** का भी अर्थ भाँटा है)।

वातिक–(वि०) [स्त्री०—**वातिकी**] [वात+ठञ्] तूफानी, हवाई। गठिया वाला। पागल।(पुं०) वायु के प्रकोप से उत्पन्न ज्वर।

वातीय–(वि०) [वात+छ] हवाई। (न०) काँजी।

वातुल–(वि०) [वात+उलच्] वायु से पीड़ित, गठिया का रोगी। पागल, फिरे हुए मग्ज का।(पुं०)बगूला, बवंडर, वातावर्त।

वातुलि–(पुं०) [√वा+उलि, तुट्] बड़ा चमगादड़।

वातूल–(वि०) [वात+ऊलच्] दे० 'वातुल'।

वातृ–(पुं०)[√वा+तृच्] पवन, वायु।

वात्या–(स्त्री०) [वात+य–टाप्] आँधी, बवंडर, तूफान; 'अन्वभावि भरताग्रजस्तया वात्ययेव पितकाननोत्थया' र. ११.१६। बगूला, बवंडर।

वात्सक–(न०) [वत्स+वुञ्] बछड़ों की हेड़, झुंड।

वात्सल्य–(न०) [वत्सल+ष्यञ्] स्नेह जो अपने से छोटों के प्रति होता है।

वात्सि, वात्सी–(स्त्री०) ब्राह्मण के वीर्य और शूद्रा के गर्भ से उत्पन्न लड़की।

वात्स्यायन–(पुं०) [वत्सस्य गोत्रापत्यम्, वत्स+यञ्+फक्]कामसूत्र के बनाने वाले का नाम। न्यायसूत्रों पर भाष्य रचयिता का नाम।

वाद–(पुं०) [√वद्+घञ्] बातचीत। वाणी। शब्द, वचन। कथन। वर्णन। निरूपण। वाद-विवाद, शास्त्रार्थ, खण्डन-मण्डन। 'वादे वादे जायते तत्त्वबोधः' सुभा० उत्तर। टीका, व्याख्या। भाष्य। किसी पक्ष के तत्त्वज्ञों द्वारा निश्चित सिद्धान्त, उसूल। ध्वनि। अफवाह। अर्जीदावा।–**अनुवाद** (**वादानुवाद**)-(पुं०) अर्जीदावा और उसका जवाब। विवाद, बहस।–**ग्रस्त**-(वि०) झगड़े में पड़ा हुआ।–**प्रतिवाद** (पुं०) शास्त्रार्थ।

वादक–(वि०) [√वद्+णिच्+ण्वुल्] बजाने वाला। [√वद्+ण्वुल्] बोलने वाला।

वादन–(न०) [वद्+णिच्+ल्युट्] बजाने की क्रिया, बाजा बजाना।

वादर–(वि०) [स्त्री०—**वादरी**] [बदरायाः कार्पास्याः विकारः, बदरा+अण्] रुई का बना हुआ। (न०) सूती कपड़ा।

वादरङ्ग–(पुं०) [वादर√गम्+खच्, डित्] अश्वत्थ वृक्ष, पीपल का पेड़।

वादरा–(स्त्री०) [बदरवत् फलम् अस्ति अस्याः, बदर+अण्–टाप्]कपास का पौधा।

वादरायण–दे० '**बादरायण**'।

वादाल–(पुं०) [वात√ला+क, पृषो० साधुः] सहस्रदंष्ट्र नामक मछली।

वादि–(वि०) [वादयति व्यक्तम् उच्चारयति,√वद्+णिच्+इञ्] विद्वान्। निपुण।

वादित—(वि०) [√वद्+णिच्+क्त] बजाया हुआ।

वादित्र—(न०) [√वद्+णिच्+णित्र] बाजा। वादन।

वादिन्—(न०) [√वद्+णिनि] बोलने वाला। विवाद-कर्ता। (पुं०) वक्ता। वादी, मुद्दई। भाष्यकार। शिक्षक।

वादिश—(पुं०) विद्वान्, पण्डित। ऋषि।

वाद्य—(न०)[√वद्+णिच्+ण्यत्] बाजा। बाजे का स्वर बजाना।—**कर**-(पुं०) बाजा बजाने वाला।—**निर्घोष**—(पुं०) बाजे का स्वर।—**भाण्ड**-(न०) मृदङ्गादि बाजे।

वाधुक्य, वाधूक्य—(न०) [वधु (धू)+ष्यञ्, कुक्] विवाह, परिणय।

वाध्रीणस—(पुं०) [=वार्ध्रीणस, पृषो० साधुः] गैंडा।

वान—(वि०) [वन+अण्] जंगली या जंगल का। (न०, पुं०) [√वै (शोषणे) +क्त, तस्य नत्वम्] सूखा या सुखाया हुआ फल। (न०) [√वा+ल्युट्]फूलना। रहना। घूमना। सुगन्ध द्रव्य। तरंगों का उठना, वातोर्मि। दीवार का छेद। सुरंग। [√वे+ल्युट्] बुनने की क्रिया। बाना। चटाई। [वन+अण्] वनों का समूह।

वानप्रस्थ—(पुं०) [वनप्रस्थ+अण्] आर्यों के चार आश्रमों में से तीसरा। इस आश्रम में प्रविष्ट व्यक्ति। [वाने वनसमूहे प्रतिष्ठति, वान—प्र√स्था+क] महुए का पेड़। पलाश वृक्ष।

वानर—(पुं०) [वा विकल्पितो नरः अथवा वानं वने भवं फलादिकं राति, वान√रा+क]बंदर।—**अक्ष** (**वानराक्ष**)-(पुं०) जंगली बकरा।—**आघात** (**वानराघात**)-(पुं०) लोध्रवृक्ष।—**इन्द्र** (**वानरेन्द्र**)-(पुं०) सुग्रीव या हनुमान।—**प्रिय**-(पुं०) खिरनी का पेड़।

वानल—(पुं०) [वानं वनभावं निविडतां लाति, वान√ला+क] श्यामा तुलसी।

वानस्पत्य—(पुं०) [वनस्पति+ष्यञ्] वह वृक्ष जिसमें बौर लगने पर फल लगें, यथा आम।

वाना—(स्त्री०) बटेर।

वानायु—(पुं०) [=वनायु, पृषो० साधुः] भारतवर्ष के उत्तर-पश्चिम में अवस्थित देश-विशेष।

वानीर—(पुं०) [√वन्+ईरन्+अण्] बेंत। पाकर का पेड़।

वानीरक—(पुं०) [वानीर+कन्] मूँज तृण।

वानेय—(न०) [वन+ढक्] कैवर्त मुस्तक, केवटी मोथा।

वान्त—(वि०) [√वम्+क्त] वमन किया हुआ, उगला हुआ। (न०) वमन। वमन किया हुआ पदार्थ।—**अद** (**वान्ताद**)-(पुं०) कुत्ता।

वान्ति—(स्त्री०) [√वम्+क्तिन्] वमन। उगालन।—**कृत्**,—**द**-(वि०) वमन कराने वाला। (पुं०) मैनफल का पेड़।

वान्या—(स्त्री०) [वन+यत्—टाप्] वन-समूह।

वाप—(पुं०) [√वप् + घञ्] बोना। बीनना। मुण्डन। खेत।—**दण्ड**-(पुं०) करघा।

वापन—(न०)[√वप्+णिच्+ल्युट्]बुवाई। मुण्डन।

वापित—(वि०) [√वप्+णिच्+क्त]बोया हुआ। मुंडा हुआ।

वापि, वापी—(स्त्री०) [उप्यते पद्मादिकम् यस्याम्, √ वप्+इञ्] [वापि+ङीष्] बावली, छोटा चौकोर जलाशय; 'वापी चास्मिन्मरकतशिलाबद्धसोपानमार्गा' मे.७६। —**ह**-(पुं०) चातकपक्षी।

वाम—(वि०) [√वम्+ण अथवा √वा +मन्] बायाँ; 'विलोचनं दक्षिणमञ्जनेन सम्भाव्य तद्वञ्चितवामनेत्रा' र.७.८। वाम-भाग स्थित। उल्टा। कुटिल स्वभाव का। दुष्ट। नीच। मनोज्ञ, मनोहर। कठोर, निर्दय। दुःखद। (पुं०) कामदेव। शिव। वरुण। श्वफल्क का एक पुत्र। कृष्ण का एक पुत्र। वामाचार। चंद्रमा के रथ का एक अश्व। कुच। बलुआ। बायाँ पार्श्व। बायाँ हाथ। प्राणी। सर्प। वमन। निषिद्ध कर्म। दुर्भाग्य। मकाट। (न०) धन। **आचार (वामाचार)**-(पुं०) तांत्रिकमत का एक भेद। [इसमें पञ्चमकार अर्थात् मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा, और मैथुन द्वारा उपास्य देव की आराधना की जाती है। इस मत वाले अपने को वीर साधक आदि कहते हैं और विरोधियों को कंटक बतलाते हैं]।—**आवर्त (वामावर्त)**-(पुं०) वह शङ्ख जिसमें बाईं ओर का घुमाव या भँवरी हो। **ऊरु (वामोरु)**,—**ऊरू (वामोरू)**—(स्त्री०) सुन्दर ऊरुओंवाली स्त्री। सुन्दरी स्त्री। —**देव**-(पुं०) गौतमगोत्रीय एक वैदिक ऋषि जो ऋग्वेद के चौथे मंडल के अधि-कांश सूक्तों के द्रष्टा थे। दशरथ महाराज के एक मंत्री का नाम। शिवजी का नाम।—**मार्ग**—(पुं०) वेद-विहित दक्षिण मार्ग के प्रति-कूल तांत्रिक मत विशेष।—**लोचना**-(स्त्री०) वह स्त्री जिसके नेत्र सुन्दर हों; 'विस्वाक्षस्य जयिनोस्ताः स्तुवे वामलोचनाः'।—**शील**-(पुं०) कामदेव की उपाधि।

वामक—(वि०) [वाम+कन्] बायाँ। उल्टा। (न०) एक भावभंगी।

वामन—(वि०) [√वम्+णिच्+ल्यु] बौना, छोटे, डील का, ह्रस्व, खर्व। नम्र। नीच, कमीना। (पुं०) बौना आदमी। विष्णु भगवान् के पाँचवें अवतार का नाम। दक्षिण दिग्गज का नाम। काशिका वृत्ति के रचयिता का नाम। अंकोट वृक्ष का नाम।—**आकृति (वामनाकृति)**-(वि०) खर्वाकार।—**पुराण**-(न०) १८ पुराणों में से एक।

वामनिका—(स्त्री०) [वामनी+कन्—टाप्, ह्रस्व] बौनी स्त्री।

वामनी—(स्त्री०) [वामन+ङीप्] स्त्री जो बौने डील की हो। घोड़ी। स्त्री विशेष। एक योनि-रोग।

वामलूर—(पुं०) [वाम√लू+रक्] दीमकों द्वारा बनाया हुआ मिट्टी का टीला।

वामा—(स्त्री०) [वामति सौन्दर्यम्, √वम् +अण्—टाप् अथवा वामति प्रतिकूलमेवार्थं कथयति वा वामः कामोऽस्ति अस्याः, वाम +अच्—टाप्] रमणी। सुन्दरी स्त्री। गौरी। लक्ष्मी। सरस्वती।

वामिल—(वि०) [वाम+इलच्] सुन्दर मनोहर। अभिमानी, अहंकारी। चालाक, दगाबाज।

वामी—(स्त्री०) [वाम+ङीप्] घोड़ी; 'अथोष्ट्रवामीशतवाहितार्थम्' र.५.३२। गधी। हथिनी। गीदड़।

वाय—(पुं०) [√वे+घञ्] बुनना, बुनावट। सिलाई।—**दण्ड**-(पुं०) जुलाहे का करघा।

वायक—(पुं०) [√वे+ण्वुल्] जुलाहा। ढेर, समुदाय।

वायन, वायनक—(न०) [√वे+णिच्+ल्युट्] [वायन+कन्] देवता के लिये मिष्टान्न का नैवेद्य। ब्राह्मण के लिये उद्यापन में मिष्टान्न का भोजन।

वायव—(वि०) [स्त्री०—**वायवी**] [वायु +अण्] वायु सम्बन्धी। वायु के कारण उत्पन्न। पश्चिमोत्तर।

वायवीय, वायव्य—(वि०) [वायु+छ] [वायु+यत्] पवन सम्बन्धी, हवाई। (पुं०) पश्चिमोत्तर कोण। स्वाती नक्षत्र।

वायुपुराण। एक अस्त्र।—**पुराण**-(न०) एक पुराण का नाम।

वायस—(पुं०) [√वय्+असच्, स च णित्, वृद्धि] काक, कौआ। अगरु काष्ठ। तारपीन।।—**अराति** (**वायसाराति**),—**अरि** (**वायसारि**)-(पुं०) उल्लू।—**इक्षु** (**वायसेक्षु**)-काँस नामक घास।

वायु—(पुं०) [√वा+उण्, युक् आगम] हवा, पवन। पवन देव। शरीरस्थ पाँच प्रकार का वायु [प्राण, अपान, समान, व्यान और उदान] पृथ्वी और अन्तरिक्ष में जो वायु चलता है, उसके सात भेद हैं—प्रवह, आवह, उद्वह, संवह, विवह, परिवह और परावह। फिर इनके एकज्योति, द्विज्योति, त्रिज्योति, आदि सात-सात सप्तक हैं। इस प्रकार वायु के उनचास भेद हो जाते हैं।—**आस्पद** (**वाय्वास्पद**)-(न०) आकाश, अन्तरिक्ष।—**केतु**—(पुं०) धूल, रज।—**कोण**-(पुं०) उत्तर पश्चिमी कोण।—**गण्ड**-(पुं०) पेट का फूलना जो अनपच के कारण हुआ हो।—**गुल्म**-(पुं०) आँधी, तूफान। बवंडर, बगूला।—**ग्रस्त**-(वि०) गठिया का रोगी।—**जात**, —**तनय**,—**नन्दन**, —**पुत्र**,—**सुत**,—**सूनु**-(पुं०) हनुमान् या भीम।—**दारु**-(पुं०) बादल।—**निघ्न** (वि०) पागल, सिड़ी, सनकी।—**पुराण**-(न०) अष्टादश पुराणों में से एक।—**फल**-(न०) ओला। इन्द्रधनुष।—**भक्ष**,—**भक्षण**,—**भुज्**—(पुं०) वायु पीकर रहने वाला, तपस्वी। सर्प।—**रोषा**-(स्त्री०) रात।—**वर्त्मन्**—(न०) आकाश।—**वाह**-(पुं०) धुआँ।—**वाहिनी**-(स्त्री०) शिरा, धमनी।—**सख**, —**सखि**-(पुं०) अग्नि।

वार्—(न०) [√वृ+णिच्+क्विप्] जल, पानी।—**आसन** (**वारासन**)-(न०) जल का कुण्ड।—**किटि** (**वाःकिटि**)-(पुं०) सूँस, शिशुमार।—**च**-(पुं०) [वार्√चर+ड] हंस।—**द**-(पुं०) बादल।—**दर**-(न०) पानी। रेशम। वाणी। आम की गुठली। घोड़े की गरदन की भौंरी। शङ्ख।—**धि**-(पुं०) समुद्र।—**०भव**-(न०) नमक, लवण।—**पुष्प** (**वाःपुष्प**)-(न०) लौंग।—**भट**-(पुं०) मगर, घड़ियाल।—**मुच्**-(पुं०) बादल।—**राशि** (**वाराशि**)-(पुं०) समुद्र।—**वट**-(पुं०) नाव। जहाज।—**सदन** (**वाःसदन**)-(न०) जलकुण्ड, जल का हौद।—**स्थ** (**वाःस्थ**)-(वि०) जल में स्थित।

वार—(पुं०) [√वृ+णिच्+अच् वा √वृ+घञ्] ढकना। बड़ी संख्या। समुदाय। ढेर। झुंड। दिन; यथा—बुधवार आदि। बारी, दफा; 'शवकस्य वारः समायातः' पं० १। अवसर। द्वार, फाटक। नदी का सामने का तट, पल्लीपार। शिवजी। (न०) मद्यपात्र। जलराशि।]—**अङ्गना** (**वाराङ्गना**),—**नारी**,—**युवति**,—**योषित्**,—**वनिता**,—**विलासिनी**,—**सुन्दरी**,—**स्त्री**-(स्त्री०) रंडी, वेश्या।—**कीर**-(पुं०) पत्नी का भाई, साला। बाडवानल। कंघी। जूँ। तुरंग। युद्ध का घोड़ा।—**बुषा**,—**वुषा**-(स्त्री०) केले का पेड़।—**मुख्या**-(स्त्री०) प्रधान वेश्या।—**बाण**,—**वाण**-(पुं०, न०) कवच, बखतर।—**वाणि**-(पुं०) बाँसुरी बजाने वाला। मुख्य गवैया। एक संवत्सर। न्यायकर्त्ता। (स्त्री०) रंडी, वेश्या।—**वाणी**-(स्त्री०) रंडी।—**सेवा**-(स्त्री०) वेश्यापन, वेश्यावृत्ति। रंडियों का समुदाय।

वारक—(वि०) [√वृ+णिच्+ण्वुल्] अड़चन डालने वाला। रोकने वाला, अवरोधक। (न०) वह स्थान जहाँ पीड़ा होती हो। एक गंधतृण, ह्रीवेर। (पुं०) अश्वविशेष। घोड़े की चाल।

वारकिन्—(पुं०) [वारक+इनि] विरोधी, शत्रु। समुद्र। शुभलक्षणों से युक्त

व्रतम । पत्ते खाकर रहने वाला तपस्वी।

वारट्ट—(पुं०) पर्वा।

वारङ्ग—(पुं०) [√वृ+णिच्+अङ्गच्] तलवार की मूठ। एक औज़ार जिससे विनष्ट शल्य निकाला जाता था।

वारट—(न०) [√वृ+णिच्+अटन्] खेत। खेतों का समूह।

वारटा—(स्त्री०) [वारट+टाप्] हंसी।

वारण—(वि०) [स्त्री०—**वारणी**] [√वृ + णिच् + ल्यु] रोकने वाला, मना करने वाला। सामना करने वाला। (न०) [√वृ+णिच्+ल्युट्] रोक, रुकावट। अड़चन। सामना। बचाव, रक्षा। (पुं०) [√वृ+णिच्+ल्यु] हाथी; 'न भवति बिसतन्तुर्वारणं वारणानाम्' भर्तृ. २.१७। कवच।—**बुषा,**—**बुसा,**—**वल्लभा**—(स्त्री०) केले का पेड़।—**साह्वय**-(न०) हस्तिनापुर का नाम।

वारणसी—(स्त्री०) [वरणा च असी च नदीद्वयम् तस्य अदूरे भवा इत्यर्थे अण्, ङीप् पृषो० साधुः]—वाराणसी।

वारणावत—(पुं०) गंगातटवर्ती एक प्राचीन नगर जहाँ दुर्योधन ने पांडवों के लिए लाक्षागृह का निर्माण कराया था।

वारत्र—(न०) [वरत्रा+अण्] चमड़े का तसमा।

वारंवार—(अव्य०) [√वृ+णमुल्, द्वित्व] कई बार, फिर-फिर।

वारला—(स्त्री०) [वार√ला+क—टाप्] बरैया। हंसी। केला।

वाराणसी—(स्त्री०) [वरणा च असी च तयोः नद्योः अदूरे भवा इत्यर्थे अण्—ङीप्, पृषो० साधुः] काशीपुरी।

वारांनिधि—(पुं०) [वारां जलानां निधिः, अलुक् स०] समुद्र।

वाराह—(वि०) [स्त्री०—**वाराही**] [वराह+अण्] शूकर संबन्धी। वराह-मिहिरकृत। (पुं०) शूकर। महापिण्डीतक वृक्ष। कृष्ण-मदनवृक्ष। जल-बेंत, अम्ब-वेतस। एक देश।—**कल्प**-(पुं०) वर्तमान कल्प का नाम।—**पुराण**-(न०) अष्टादश पुराणों में से एक।

वाराही—(स्त्री०) [वाराह+ङीप्] शूकरी। पृथिवी। शूकर-रूपधारी विष्णु की शक्ति। माप विशेष। कँगनी। श्यामा पक्षी।—**कन्द**-(पुं०)एक प्रकार का महाकन्द जिसे गेंठी कहते हैं।

वारि—(न०) [वारयति तृषाम्,√वृ+णिच् +इञ्] जल। तरल पदार्थ। बालछड़ या ह्रीबेर। (स्त्री०) हाथी के बाँधने की रस्सी, जंजीर आदि। हाथी पकड़ने के लिये बनाया हुआ गढ़ा। गगरा। सरस्वती का नाम।—**ईश (वारीश)**—(पुं०) समुद्र।—**उद्भव (वार्युद्भव)**—(न०) कमल।—**ओकस् (वार्योकस्)**-(पुं०) जोंक, जलौका।—**कर्पूर**-(पुं०) हिलसा मछली।—**कृमि**-(पुं०) जोंक।—**कुब्जक**-(पुं०) जलाशय। सिंघाड़ा।—**चर**—(वि०) पानी में रहने वाला जन्तु। (पुं०) मत्स्य। जलचर कोई भी जन्तु।—**ज**-(वि०) जल में उत्पन्न। (पुं०) शङ्ख। घोंघा। (न०) कमल। नमक विशेष। गौर सुवर्ण नामक पौधा। लवंग।—**तस्कर**-(पुं०) सूर्य। बादल।—**त्रा**-(स्त्री०) छतरी, छाता।—**द**-(पुं०) बादल।—**द्र**-(पुं०) चातक पक्षी।—**धर**-(पुं०) बादल।—**धि**-(पुं०) समुद्र।—**नाथ**-(पुं०) समुद्र। वरुण-देव। बादल।—**निधि**-(पुं०) समुद्र।—**पथ**-(पुं०, न०) जलमार्ग।—**प्रवाह**-(पुं०) जलधारा। जलप्रपात।—**मसि,**—**मुच्**—(पुं) बादल, मेघ।—**यन्त्र**-(न०) जल निकालने की कल। फौवारा।—**रथ**-(पुं०) नाव। जहाज।—**राशि**-(पुं०) समुद्र। जलसमूह।—**रुह**-(न०) कमल।—**वास**-

(पुं०) शराब बेचने वाला, कलाल।—**वाह,—वाहन**-(पुं०) बादल।—**श**-(पुं०) विष्णु भगवान्।—**शास्त्र**-(न०) गर्गमुनि-प्रणीत एक शास्त्र जिसमें वृष्टि के स्थान और समय का पता चल जाता है।—**सम्भव**-(पुं०) लवंग, लौंग। सुर्मा विशेष। उशीर, खस।

वारित-(वि०) √वृ+णिच्+क्त] रोका हुआ, अवरुद्ध। रक्षा किया हुआ, बचाया हुआ।—**वाम**-(वि०) निषिद्ध वस्तुओं के लिये लालायित।

वारी-(स्त्री०) [वार्यतेऽनया, √वृ+णिच्+इञ्—ङीप्] हाथी बाँधने की जंजीर; 'वारी वारैःस्मरे वारणानाम्' शि. १८.५६ कलसी, छोटा गगरा।

वारीट-(पुं०) [वारी√इट्+क] हाथी।

वारु-(पुं०) [वारयति रिपून्, √वृ+णिच्+उण्] विजय कुञ्जर, वह हाथी जिस पर सेना की विजय पताका रहती है।

वारुड-(पुं०) अन्तशय्या, मरणशय्या। वह टिकठी जिस पर मुर्दे को रखकर ले जाते हैं, अरथी।

वारुण-(वि०) [स्त्री०—**वारुणी**] [वरुण+अण्] वरुण सम्बन्धी। वरुण को समर्पित किया हुआ। (न०) जल। (पुं०) भारतवर्ष के नव खण्डों में से एक।

वारुणि-(पुं०) [वरुण+इञ्] अगस्त्य ऋषि। भृगु। वसिष्ठ। सत्यधृति। दंतैल हाथी। वरुण वृक्ष।

वारुणी-(स्त्री०) [वारुण+ङीप्] वरुण की स्त्री या पुत्री। पश्चिम दिशा। मदिरा, शराब। 'गर्गांग्रैः शौण्डिकहस्ते वारुणीत्यभिधीयते' हि. ३.११, शतभिषा नक्षत्र। दूब। उपनिषद् विद्या जिसका उपदेश वरुण ने किया था। घोड़े की एक चाल। हथिनी। इन्द्रवारुणी। शतभिषा नक्षत्र-युक्त चैत्र-कृष्णा त्रयोदशी।—**वल्लभ**-(पुं०) वरुण।

वारुण्ड-(पुं०) [१ √वृ+णिच्+उण्ड] नाग जाति का प्रधान। (पुं०, न०) आँख का मैल या कीचड़। कान का मैल या ठेंठ। नाव का पानी उलीचने का पात्र।

वारेन्द्री-(स्त्री०) बंगाल के एक अंचल का नाम जिसका आधुनिक नाम राजशाही है।

वार्क्ष-(वि०) [स्त्री०—**वार्क्षी**] [वृक्ष+अण्] वृक्षों से सम्पन्न। (न०) वन, जंगल।

वार्णिक-(पुं०) [वर्ण+ठञ्] लेखक।

वार्ताक-(पुं०) **वार्ताकी**-(स्त्री०), **वार्ताकु**-(पुं०, स्त्री०) [√वृत्+काकु, अत्व, वृद्धि] [√वृत्+काकु, ईत्व, वृद्धि] [√वृत्+काकु, वृद्धि] बैंगन या भटे का पौधा।

वार्त्त-(वि०) [वृत्ति+ण] स्वस्थ, तंदुरुस्त। हल्का। कमजोर। असार। धंधा करने वाला, पेशे वाला। (न०) तंदुरुस्ती। पटुता। कल्याण; 'सर्वत्र नो वार्त्तमवेहि राजन्—' र. ५.१।

वार्त्ता-(स्त्री०) [वार्त्त+टाप्] दुर्गा। वृत्तान्त, हाल। प्रसंग, विषय। बातचीत। जन-श्रुति, अफवाह। पेशा, आजीविका। वैश्यवृत्ति, वैश्य का धंधा (अर्थात् कृषि, वाणिज्य, गोरक्षा और कुसीद)। बैंगन का पौधा।—**वह**-(पुं०) दूत। पनसारी, वैवधिक। नीति-शास्त्र का आय-व्यय से संबद्ध भाग।—**वृत्ति**-(पुं०) जो किसानी पेशे से निर्वाह करता हो, गृहस्थ; विशेषकर वैश्य।—**हर,—हर्तृ,—हार**-(पुं०) दूत।

वार्त्तायन-(पुं०) [वार्त्तानाम् अयनम् अनेन] संवाददाता। जासूस। दूत।

वार्तिक-(वि०) [स्त्री०—**वार्तिकी**] [वार्त्ता+ठक्] वार्त्ता संबंधी। खबर लाने वाला। (पुं०) दूत। जासूस। किसान (न०) [वृत्ति+ठक्] किसी ग्रन्थ के उक्त, अनुक्त और दुरुक्त अर्थों को स्पष्ट करने वाला वाक्य या ग्रंथ। [वार्तिक और भाष्य में यह भेद है कि, भाष्य में केवल

मूल ग्रन्थ का आशय स्पष्ट किया जाता है, किन्तु वार्तिक में पूर्ण स्वतन्त्रता रहती है। वार्तिककार नयी बातें भी कह सकता है।]

वार्त्रघ्न—(पुं०) [वृत्रहन्+अण्] अर्जुन का नाम।

वार्दर—(न०) दक्षिणावर्त शंख। जल। घोड़े के गले की दाहिनी ओर की भौंरी। रेशम। काकतिक्ता ओषधि। भाषण।

वार्दल—(न०) बादलों से घिरा दिन। (स्त्री०) दवात।

वार्द्धक—(न०) [वृद्ध+वुञ्] बुढ़ापा, वृद्धावस्था; 'धृतं त्वया वार्द्धकशोभि वल्कलम्' कु. ५.४४। बुढ़ापे के कारण उत्पन्न अङ्गशैथिल्य। वृद्धजनों का समुदाय।

वार्द्धक्य—(न०) [वार्द्धक+ष्यञ्] बुढ़ापा। बुढ़ापे की निर्बलता।

वार्द्धुषि, वार्द्धुषिक, वार्द्धुषिन्—(पुं०) [=वार्द्धुषिक, पृषो० कलोप] [वृद्ध्यर्थं द्रव्यं वृद्धिः तां प्रयच्छति, वृद्धि+ठक्, वृधुषि आदेश] [वार्द्धुष्य+इनि] सूदखोर, ब्याजखोर।

वार्द्धुष्य—(न०) [वार्द्धुषि+ष्यञ्] सूदखोरी।

वार्ध्र—(न०), **वार्ध्री**—(स्त्री०) [वार्ध्र+अण्] [वार्ध्र—ङीप्] चमड़े का तसमा।

वार्ध्रीणस—(पुं०) [वार्ध्रीव नासिका अस्य, ब० स०, अच्, नासिकायाः नसादेशः णत्वम्] वह बधिया बकरा जिसका रंग सफेद हो और कान इतने लंबे हों कि पानी पीते समय पानी से छू जाय। एक पक्षी। गैंडा।

वार्मण—(न०) [वर्मन्+अण्] कवचों का समूह।

वार्मिण—(न०) [वर्मिन्+अण्] कवचधारी लोगों का जमाव।

वार्य—(वि०) [√वृ+ण्यत्] वरण करने योग्य। [√वृ+णिच्+यत्] निवारण करने योग्य, जिसे रोकना, वारण करना हो। [वारि+यत्] जल-सम्बन्धी। (न०) [√वृ+ण्यत्] वर। सम्पत्ति।

वार्वणा—(स्त्री०) [बर्वणा+अण्—टाप्] नीले रंग की मक्खी।

वार्ष—(वि०) [स्त्री०—**वार्षी**] [वर्ष+अण्] वर्षा-सम्बन्धी। सालाना, वार्षिक।

वार्षिक—(वि०) [स्त्री०—**वार्षिकी**] [वर्षा+ठञ्] वर्षाऋतु या वर्षा-सम्बन्धी; 'वार्षिकं सञ्जहारेन्द्रो धनुर्जैत्रं रघुर्दधौ' र. ४.१६। [वर्ष+ठञ्] सालाना। एक वर्ष भर का या एक वर्ष तक रहने वाला। (न०) त्रायमाणा लता।

वार्षिला—(स्त्री०) [वार्जाता शिला, मध्य० स०, पृषो० ह्रस्व षः] ओला।

वार्ष्णेय—(पुं०) [वृष्णि+ढक्] वृष्णिवंशी; विशेष कर श्रीकृष्ण। राजा नल के सारथी का नाम।

वालि—(पुं०) [वाले केशे जातः वाल+इञ्] वानरराज सुग्रीव के बड़े भाई और अंगद के पिता का नाम।

वालुका—(स्त्री०) [√वल्+उण्+कन्—टाप्] बालू, रेत। चूर्ण, बुकनी। कपूर। ककड़ी। शाखा। —**आत्मिका** (**वालुकात्मिका**) (स्त्री०) शक्कर, चीनी।

वालुकी—(स्त्री०) [वालुक+ङीप्] ककड़ी।

वालेय—दे० 'बालेय'।

वाल्क—(वि०) [स्त्री०—**वाल्की**] [वल्क+अण्] वृक्षों की छाल का बना हुआ।

वाल्कल—(वि०) [स्त्री०—**वाल्कली**] [वल्कल+अण्] वृक्ष की छाल का बना हुआ। (न०) वृक्ष की छाल का बना कपड़ा।

वाल्कली—(स्त्री०) [वाल्कल+ङीप्] शराब, मदिरा।

वाल्मीक, वाल्मीकि—(पुं०) [वल्मीके भवः, वल्मीक+अण्] [वल्मीक+इञ्] आदिकाव्य श्रीमद्रामायण के रचयिता का नाम।

वाल्लभ्य—(न०) [वल्लभ+ष्यञ्] प्रिय होने का भाव या धर्म, वल्लभता।

वावदूक—(वि०) [पुनः पुनः अतिशयेन वा वदति, √वद्+यङ्—लुक्, द्वित्वादि, √वावद्+ऊक] बातूनी, बकवादी। अच्छा बोलने वाला, वक्ता।

वावय—(पुं०) [√वय्+यङ्—लुक्+अन्] एक तरह की तुलसी।

वावुट—(पुं०) नाव, बेड़ा।

√वावृत्—चुनना, पसंद करना। प्यार करना। सेवा करना। वावृत्यते।

वावृत्त—(वि०) [√वावृत्+क्त] चुना हुआ, पसन्द किया हुआ।

√वाश्—दि० आत्म० अक० गरजना, दहाड़ना। भूँकना। चीखना। गूँजना। सक० बुलाना, पुकारना। वाश्यते, वाशिष्यते, अवाशिष्ट।

वाशक—(न०) [√वाश्+ण्वुल्] दहाड़ने वाला। ध्वनि करने वाला।

वाशन—(नि०) [√वाश्+ल्युट्] दहाड़, गर्जन। भूँकना। गुर्राहट। चीत्कार, चीख। पक्षियों की चहक। भौंरों की गुंजार।

वाशि—(पुं०) [√वाश्+इञ्] अग्निदेव।

वाशित—(न०) [√वाश्+क्त] पक्षियों का कलरव।

वाशिता—(स्त्री०) [वाशित+टाप्] हथिनी; 'अन्यगयत स वाशितासखः पुष्पिताः कमलिनीरिव द्विपः' र.१९.११ स्त्री।

वाशुरा—(स्त्री०) [√वाश्+उरच्—टाप्] रात।

वाश्र—(पुं०) [√वाश्+रक्] दिवस, दिन। (न०) रहने का घर। चौराहा। गोबर।

वाष्प—दे० 'बाष्प'।

√वास्—चु० उभ० सक० सुवासित करना, खुशबू उत्पन्न करना। सिक्त करना, भिगोना। मसाले डालना, सुस्वाद बनाना। अक० शब्द करना। वासयति—ते, वासयिष्यति—ते, अववासत्—त।

वास—(पुं०) [√वास्+घञ्] सुगंध। गंध। [√वस्+घञ्] अवस्थान, निवास। घर, मकान। स्थान, जगह। परिधान, पोशाक।—**कर्णी**-(स्त्री०) एक बड़ा कमरा या मण्डप जिसमें पहलवानों का दंगल या नृत्य आदि हुआ करे। **पर्याय**-(पुं०) रहने की जगह का परिवर्तन।—**यष्टि**-(स्त्री०) पालतू पक्षियों के बैठने की छड़ी।—**योग**-(पुं०) कई द्रव्यों का मिश्रित चूर्ण, अबीर।—**सज्जा**—दे० 'वासकसज्जा'।

वासक—(वि०) [स्त्री०—**वासका**, **वासिका**], [√वास्+णिच्+ण्वुल्] खुशबूदार, खुशबू उत्पन्न करने वाला।[√वस्+णिच् +ण्वुल्] बसाने वाला। (न०) वस्त्र।—**सज्जा**—(स्त्री०) वह नायिका जो अपने नायक से मिलने के लिये स्वयं बनठन कर और अपने घर को सजा कर उसके आने की प्रतीक्षा में बैठी हो।

वासत—(पुं०) [√वास्+अतच्] गधा।

वासतेय—(वि०) [स्त्री०—**वासतेयी**] [वसतौ साधुः, वसति+ढञ्] आबाद करने योग्य, बसने योग्य।

वासतेयी—(स्त्री०) [वासतेय+ङीप्] रात, निशा।

वासन—(न०) [√वास्+णिच्+ल्युट् वा√वस्+णिच्+ल्युट्] बसाना, सुगन्ध पैदा करना। तर करना। वास। बसाना। घर, मकान। कोई पात्र; यथा टोकरा, पेटी, बर्तन आदि। ज्ञान। वस्त्र, परिधान। आच्छादन, चादर।

वासना—(स्त्री०) [√वास्+ णिच्+युच् —टाप्] जन्मान्तर के कर्म प्रभाव से उत्पन्न मानसिक सुख-दुःख की भावना, संस्कार। स्मृतिहेतु। कल्पना, विचार, ख्याल। मिथ्या

विकार, झूठा ख्याल। अज्ञान। अभिलाषा, कामना। सम्मान।

वासन्त—(वि०) [स्त्री०—**वासन्ती**] [वसन्त+अण्] वसन्त सम्बन्धी। वसन्त ऋतु के योग्य या वसन्त ऋतु में उत्पन्न। जवान। बुद्धिमान्। (पुं०) ऊँट। जवान हाथी। किसी जानवर का बच्चा। कोयल। मलयाचल हो कर आयी हुई हवा, मलयसमीर। मूंग। लंपट या दुराचारी पुरुष।

वासन्तिक—(वि०) [वसन्त+ठक्] वसन्त सम्बन्धी। (पुं०) विदूषक। भाँड़। नट। अभिनेता।

वासन्ती—(स्त्री०) [वासन्त+ङीप्] माधवी। बड़ी पीपल। जूही। गनियारी नामक फूल। वसन्तोत्सव। दुर्गा। एक रागिनी।

वासर—(पुं०, न०) [वस्+अरण] दिवस, दिन।—**सङ्ग**—(पुं०) प्रातःकाल, सवेरा।

वासव—(वि०) [स्त्री०—**वासवी**] [वसु+अण्] वसु सम्बन्धी। [वासव+अण्] इन्द्र का, इन्द्र सम्बन्धी: 'पाण्डुता वासवी दिगासीत्' काद०। (पुं०) [वसु+अण्] इन्द्र का नाम। (न०) धनिष्ठा नक्षत्र।—**दत्ता**-(स्त्री०) कई एक कथानकों की नायिका का नाम। [वासवदत्तामधिकृत्य कृतो ग्रन्थः वासवदत्ता+अण्—लुक्—टाप्] सुबन्धु नामक कवि का बनाया नाटक।

वासवी—(स्त्री०) [वासव+ङीप्] व्यास की माता का नाम।

वासस्—(न०) [√वस्+असुन्, णित्] कपड़ा, वस्त्र; 'वासांसि जीर्णानि यथा विहाय' भग.२.२२।

वासि—(पुं०, स्त्री०) [√वस्+इञ्] बसूला। वास।

वासित—(वि०) [√वास्+णिच्+क्त] सुवासित। तर, भिगोया हुआ। सुस्वादु बनाया हुआ। [√वस्+णिच्+क्त] वस्त्रों से सुसज्जित किया हुआ। बसा हुआ, आबाद। प्रसिद्ध, मशहूर। (न०) [√वास् +णिच् क्त] पक्षियों का कलरव। ज्ञान।

वासिष्ठ, वाशिष्ठ—(वि०) [स्त्री०—**वासिष्ठी, वाशिष्ठी**] [वसि (शि) ष्ठ +अण्] वसिष्ठ सम्बन्धी। वसिष्ठ द्वारा रचित या दृष्ट। (पुं०) वसिष्ठ के वंशधर। (न०) एक योगविद्या का शास्त्र। एक उपपुराण।

वासु—(पुं०) [सर्वोऽत्र वसति,√वस्+उण्] विश्वात्मा, परमात्मा। विष्णु भगवान् का नामान्तर। जीवात्मा। पुनर्वसु नक्षत्र।

वासुकि, वासुकेय—(पुं०) [वसुक+इञ्] [वसुक+ढक्] कश्यपपुत्र सर्पराज वासुकि।

वासुदेव—(पुं०) [वसुदेवस्यापत्यम्, वसुदेव +अण्] वसुदेव का वंशज। विशेषकर श्रीकृष्ण का नाम।

वासुरा—(स्त्री०) [√वस् वा √वास्+ उरण्] पृथिवी। रात। स्त्री। हथिनी।

वासू—(स्त्री०) [√वास्+ऊ] नाटकों की उक्ति में बालाओं का संबोधन; 'वासू ! प्रसीद' मृच्छ०।

वास्त—(वि०) [वस्त+अण्] बकरे से प्राप्त या सम्बद्ध। (पुं०) बकरा।

वास्तव—(वि०) [स्त्री०—**वास्तवी**] [वस्तु+अण्] असली, सच्चा, निश्चय किया हुआ। (न०) कोई वस्तु जो निश्चित कर ली गयी हो, यथार्थ वस्तु।

वास्तविक—(वि०) [स्त्री०—**वास्तविकी**] [वस्तु+ ठञ्] परमार्थ, सत्य, प्रकृत। ठीक, यथार्थ।

वास्तवोषा—(स्त्री०) [वास्तव=संकेत-स्थान, उषा=कामुकी स्त्री] रात।

वास्तव्य—(वि०) [√वस्+तव्यत्, णित्] रहने वाला, निवासी, बाशिदा; 'पुरेऽस्य वास्तव्यकुटुम्बितां ययुः' शि. १.६६। रहने

योग्य, रहने लायक। (न०) रहने लायक स्थान। बस्ती।

वास्तिक—(न०) [वस्त+ठक्] बकरों का झुंड। (वि०) बकरे का।

वास्तु—(पुं०, न०) [वसन्ति प्राणिनो यत्र, √वस्+तुन्, णित्] वह स्थान जिस पर कोई इमारत खड़ी हो। घर बनाने लायक जगह। घर। मकान की नींव। (न०) बथुआ। पुनर्नवा।—**याग**-(पुं०) उस समय का धर्मानुष्ठान विशेष, जिस समय किसी मकान की नींव रखी जाय।

वास्तुक—(न०) [वास्तु+कन्] बथुआ साग। पुनर्नवा।

वास्तेय—(वि०) [स्त्री०—**वास्तेयी**] [वस्ति+ढञ्] रहने योग्य, रहने लायक। पेड़ू सम्बन्धी।

वास्तोष्पति—(पुं०) [वास्तोः पतिः, नि० षष्ठ्या अलुक् षत्वञ्च]] वास्तुपति। इन्द्र।

वास्त्र—(वि०) [वस्त्र+अण्] वस्त्र का बना हुआ। (पुं०) गाड़ी या सवारी जिस पर कपड़े का उचार या पर्दा पड़ा हो।

वास्नेय—(पुं०) [वास्नाय हितम्, वास्न+ढक्] नागकेसर का पेड़।

√वाह्—भ्वा० आत्म० सक० उद्योग करना, प्रयत्न करना। वाहते, वाहिष्यते, अवाहिष्ट।

वाह—(वि०) [√वह्+णिच्+अच्] ले जाने वाला। (पुं०) [√वह्+घञ्] ले जाना, ढोना। वाहन, सवारी। बोझ लादने वाला जानवर। घोड़ा। बैल। भैंसा। बाहु। हवा। प्राचीन काल की एक तौल जो ४ गोन की होती थी।—**द्विषत्**-(पुं०) भैंसा।—**श्रेष्ठ**-(पुं०) घोड़ा।

वाहक—(वि०) [√वह्+ण्वुल्] ढोने, ले जाने वाला। (पुं०) भारवाहक, कुली। [√वह्+णिच्+ण्वुल्] गाड़ीवान। घुड़सवार।

वाहन—(न०) [√वह्+णिच्+ल्युट्] घोड़ा, रथ या अन्य कोई सवारी। (पुं०) [√वह्+णिच्+ल्युट्] ढोने वाला पशु। हाथी।

वाहल—(पुं०) [√वह्+अलच्, णित्] जलप्रवाहमार्ग, जलप्रणाली। अजगर सर्प। सुसनी नामक साग, सुनिषण्णक।

वाहिक—(पुं०) [वाह+ठक्] बड़ा ढोल। बैलगाड़ी। बोझ ढोने वाला कुली।

वाहित—(वि०) [√वह्+णिच्+क्त] चलाया हुआ। पहुँचाया हुआ। बहाया हुआ। प्रतारित, धोखा दिया हुआ। (न०) भारी बोझा।

वाहित्थ—(न०) [√वह्+णिनि, वाहिन् √स्था+क] हाथी का माथा।

वाहिनी—(स्त्री०) [वाह+इनि—ङीप्] सेना; 'आशिषं प्रयुयुजे न वाहिनीं' र० ११.६। एक सैन्यदल जिसमें ८१ हाथी, ८१ रथ, २४३ घुड़सवार और ४०५ पैदल होते हैं। नदी।—**निवेश**-(पुं०) फौज की छावनी।—**पति**-(पुं०) सेनापति। समुद्र।

वाहीक—दे० 'बाहीक'।

वाहुक—दे० 'बाहुक'।

वाह्य—(वि०) [√वह्+ण्यत्] खींचा, ढोया या चढ़ा जाने योग्य। दे० 'बाह्य'। (न०) सवारी, यान। (पुं०) ढोने वाला पशु।

वाह्लि—(पुं०) आधुनिक बलख (बुखारा) का नाम।—**ज**-(पुं०) बलख देश का घोड़ा।

वाह्लिक, वाह्लीक—(पुं०) आधुनिक बलख का नाम। बलख देश का घोड़ा। (न०) केसर। हींग।

वि—(अव्य०) [√वा+इण् स च डित्] यह एक उपसर्ग है। क्रिया शब्द के पूर्व जोड़े जाने पर इसके ये अर्थ होते हैं:—

पार्थक्य, बिलगाव। किसी क्रिया का विपरीत कर्म। विभाग। विशिष्टता। जाँच। क्रम। विरोध। तर्क। विचार। आधिक्य। (पुं०, स्त्री०) पक्षी। (न०) पत्र। (पुं०) घोड़ा। आकाश। नेत्र।

विंश—(वि०) [स्त्री०—**विंशी**] [विंशति+डट्, तेः लोपः] बीसवाँ। (पुं०) बीसवाँ भाग।

विंशक—(वि०) [स्त्री०—**विंशकी**] [विंशति+ण्वुन्, तिलोप] जो बीस में खरीदा गया हो। जिसमें बीस की वृद्धि की गई हो। जिसमें बीस भाग हों। (पुं०) बीस की संख्या।

विंशति—(स्त्री०) [द्वे दश परिमाणमस्य, नि० सिद्धिः] बीस की संख्या। (वि०) बीस, बीस की संख्या का। —**ईश** (**विंशतीश**), —**ईशिन्** (**विंशतीशिन्**)-(पुं०) बीस गाँव का ठाकुर या मालिक।

विंशतितम—(वि०) [स्त्री०—**विंशतितमी**] [विंशति+तमप्] बीसवाँ।

विंशिन्—(पुं०) [विंशति+डिन्, तिलोप] बीस। बीस गाँव का शासक या जमींदार।

विक—(न०) [विरुद्धं विगतं वा कं जलं सुखं वा यत्र] हाल की ब्यायी गौ का दूध।

विकङ्कट—(पुं०) [वि√कङ्क्+अटन्] गोखरू।

विकङ्कत—(पुं०) [वि√कङ्क्+अतच्] एक वृक्ष जिसकी लकड़ी से स्रुवा बनाया जाता है। स्रुवावृक्ष।

विकच—(वि०) [वि√कच्+अच्] खिला हुआ, हँसता हुआ। बिखरा हुआ। [विगताः कचा यस्य वा विशिष्टः कचो यस्य, ब० स०] केशविहीन। (पुं०) बौद्ध भिक्षुक। केतु का नाम।

विकट—(वि०) [वि+कटच्] बदशकल, कुरूप। भयंकर, डरावना। जंगली। बड़ा, विस्तृत। अहङ्कारी, अभिमानी। सुन्दर। त्योरी चढ़ाए हुए। धुँधला। शकल बदले हुए। (न०) [वि√कट्+अच्] फोड़ा। (पुं०) मातुरुण्ड वृक्ष। सोमलता। धृतराष्ट्र का एक पुत्र।

विकत्थन—(वि०) [वि√कत्थ्+ल्यु] डींग मारने वाला, शेखी मारने वाला; 'विद्वांसोऽप्यविकत्थनाः भवन्ति' मु. ३। व्याज स्तुति करने वाला। (न०) [वि√कत्थ्+ल्युट्] शेखी, डींग। व्याजस्तुति। प्रशंसा।

विकत्था—(स्त्री०) [वि√कत्थ्+अङ्—टाप्] डींग, शेखी। प्रशंसा। झूठी प्रशंसा। व्यंग्य। उद्घोषणा।

विकम्प—(वि०) [विशेषेण कम्पो यस्य, प्रा० ब०] जो बहुत काँप रहा हो। अदृढ़, हिलता-डोलता।

विकर—(पुं०) [विकीर्यते हस्तपादादिकम् अनेन, वि√कॄ+अप्] बीमारी, रोग।

विकराल—(वि०) [विशेषेण करालः, प्रा० स०] बड़ा भयानक।

विकर्ण—(पुं०) [विशिष्टौ कर्णौ यस्य, प्रा० ब०] दुर्योधन का एक भाई। एक साम। एक प्रकार का बाण।

विकर्तन—(पुं०) [विशेषेण कर्तनं यस्य प्रा० ब०] सूर्य। आक, मदार। वह पुत्र जिसने अपने पिता का राज्य छीन लिया हो।

विकर्मन्—(वि०) [विरुद्धं कर्म यस्य, प्रा० ब०] निषिद्ध कर्म करने वाला। (न०) [विरुद्धं कर्म, प्रा० स०] निषिद्ध कर्म। —**स्थ** (पुं०) धर्मशास्त्र के मत से वह पुरुष जो वेद-विरुद्ध काम करता हो।

विकर्मिक—(वि०) अनुचित काम करने वाला। विभिन्न कार्यों में संलग्न। (पुं०) बाजार या हाट का निरीक्षक।

विकर्ष—(पुं०) [वि√कृष्+घञ्] तीर, बाण।

विकर्षण—(न०) [वि√कृष्+ल्युट्] आकर्षण, खिंचाव। (पुं०) [वि√कृष्+ल्यु] कामदेव के पाँच बाणों में से एक का नाम।

विकल—(वि०) [विगतः कलो यत्र] खण्डित, अपूर्ण। अङ्गहीन। अवयवों से रहित, हीन। विह्वल, घबड़ाया हुआ। कुम्हलाया हुआ। मुर्झाया हुआ।—**अङ्ग** (**विकलाङ्ग**)—(वि०) जिसका कोई अंग भङ्ग हो, न्यूनाङ्ग, अङ्गहीन।—**पाणिक**—(पुं०) लुञ्जा।

विकला—(स्त्री०) [विगतः कलो यस्याः] वह स्त्री जिसका रजःस्राव बंद हो गया हो। बुधग्रह की गति का नाम। एक कला का ६० वाँ अंश।

विकल्प—(पुं०) वि√कृप्+घञ्] सन्देह, अनिश्चय; 'तस्मिन्नेवे निर्भेशेन सविकल्पराद्भुतः' र. १७.४६। भ्रम। कौशल, कला। इच्छा। किस्म, जाति। भूल, चूक। अज्ञान।—**जाल**-(न०) तरह-तरह की दुविधायें।

विकल्पन—(न०) [वि√कृप्+ल्युट्] सन्देह में पड़ना। अनिश्चय।

विकल्मष—(वि०) [विगतः कल्मषो यस्य, प्रा० ब०] पापरहित। कलङ्कशून्य। निरपराध।

विकषा, विकसा—(स्त्री०) [वि√कष्+अच्—टाप्] [वि√कस्+अच—टाप्] मजीठ।

विकस—(पुं०)[वि√कस्+अच] चन्द्रमा।

विकसित—(वि०) [वि√कस्+क्त] खिला हुआ। पूरा फैला हुआ।

विकस्वर—(वि०) [वि√कस्+वरच्] खुला हुआ, विकासशाल। स्पष्ट समझ में आने वाला। (पुं०) एक काव्यालंकार जिसमें विशेष बात की पुष्टि सामान्य बात से की जाती है।

विकार—(पुं०) [वि√कृ+घञ्] विकृति; 'मूर्च्छन्त्यमी विकाराः प्रायेणैश्वर्यमत्तेषु' श.५.१६। तबदीली, परिवर्तन। बीमारी, रोग। मनःपरिवर्तन। भावना। वासना। उद्वेग, घबड़ाहट। वेदान्त और सांख्य दर्शन के अनुसार किसी के रूप आदि का बदल जाना, परिणाम।—**हेतु**-(पुं०) प्रलोभन। विकलता उत्पन्न करने वाला विषय।

विकारित—(वि०) [वि√कृ+णिच्+क] परिवर्तित या खराब किया हुआ।

विकारिन्—(वि०) [वि√कृ+णिनि] परिवर्तनशील। विकारयुक्त।

विकाल, विकालक—(पुं०) [विरुद्धः कार्यानर्हः कालः प्रा० स०] शाम, सन्ध्या काल।

विकालिका—(स्त्री०) [विगतः कालो यया, प्रा० ब०, विकाल+कन्—टाप्, इत्व] जलघड़ी।

विकाश—(पुं०) [वि√काश्+घञ्] प्रदर्शन, प्राकट्य। खिलना, फैलना। खुला हुआ या सीधा मार्ग। विषम गति। हर्ष, आनन्द। आकाश। उत्सुकता, उत्कण्ठा। निर्जन, एकान्त।

विकाशक—(वि०) [स्त्री०—**विकाशिका**] [वि√काश्+ण्वुल्] प्रकट होने या करने वाला। खिलने वाला।

विकाशन—(न०) [वि√काश्+ल्युट्] प्रदर्शन, प्राकट्य। प्रस्फुटन, खिलना, फैलाव।

विकाशिन्, विकासिन्—(वि०) [स्त्री०—**विकाशिनी, विकासिनी**] [वि√काश्+णिनि] [वि√कास्+णिनि] दृष्टिगोचर होने वाला, प्रकट होने वाला। खिलने वाला। खुलने वाला।

विकास—(पुं०), **विकासन**-(न०) [वि√कास्+घञ्] [वि√कास्+ल्युट्] प्रस्फुटन, खिलना, फैलाव।

विकिर—(पुं०) [वि √कॄ + क] वे चावल आदि जो पूजन के समय विघ्न दूर करने के लिये चारों ओर फेंके जाते हैं। पक्षी। कूप। वृक्ष।

विकिरण—(न०) [वि√कॄ + ल्युट्] बिखेरना, छितराना। बिछाना, फैलाना। फाड़ना। हिंसन। ज्ञान।

विकीर्ण—(वि०) [वि√कॄ + क्त] फैला हुआ। व्याप्त। प्रसिद्ध।—**केश—मूर्धज**—(वि०) वह जिसने अपने बाल नोंच डाले हों या जिसके बाल बिखरे हों।

विकुण्ठ—(वि०) [विगता कुण्ठा यस्य यत्र वा] कुंठारहित, जो कुंद या भोंथरा न हो। (पुं०) वैकुण्ठ जहाँ भगवान् विष्णु का निवास है।

विकुर्वाण—(वि०) [वि०√कृ + शानच्] विकार या परिवर्तन को प्राप्त। प्रसन्न, आह्लादित।

विकुस्र—(पुं०) [वि√कस् + रक्, उत्व] चन्द्रमा।

विकूजन—(न०) [वि √कूज् + ल्युट्] कलरव, चहक। गुञ्जार। गुड़गुड़ाहट।

विकूणन—(न०) [वि√कूण् + ल्युट्] कटाक्ष, तिरछी चितवन।

विकूणिका—(स्त्री०) [वि√कूण् + ण्वुल् —टाप्, इत्व] नाक।

विकृत—(वि०) [वि√कृ + क्त] परिवर्तित, बदला हुआ। बीमार। विकलाङ्ग, अङ्गहीन। अपूर्ण, खण्डित, अधूरा। आवेष्टित। ऊबा हुआ। बीभत्स, जघन्य, घृणाजनक। अद्भुत। (न०) परिवर्तन। खराबी। बीमारी। अरुचि, घृणा। (पुं०) दूसरे प्रजापति का नाम। परिवर्त राक्षस का पुत्र। प्रभव आदि साठ संवत्सरों में से २४ वाँ।

विकृति—(स्त्री०) [वि√कृ + क्तिन्] परिवर्तन। घटना। बीमारी। घबड़ाहट, उद्वेग। मद्य आदि। माया। शत्रुता।

विकृष्ट—(वि०) [वि √कृष् + क्त] इधर-उधर घसीटा हुआ। खींचा हुआ। बढ़ा हुआ, निकला हुआ। ध्वनित।

विकेश—(वि०) [स्त्री०—**विकेशी**] [विकीर्णाः विगताः वा केशाः यस्य, प्रा० ब०] खुले केशों वाला। बिना केशों वाला। गंजा।

विकेशी—(स्त्री०) [विकेश + ङीप्] स्त्री जिसके खुले केश हों। स्त्री जो गंजी हो। केशों की छोटी-छोटी लटों को मिला कर बनी हुई एक चोटी या वेणी।

विकोश, विकोष—(वि०) [विगतः कोशः (षः) यस्य, प्रा० ब०] बिना भूसी का। म्यान से निकला हुआ; 'विकोशनिर्धौतत-नोर्महासेः' कि० १७.४५। आवरणरहित।

विक्क—(पुं०) [विक् इति कायति शब्दायते, विक्√कै + क] हाथी का बच्चा।

विक्रम—(पुं०) [वि√क्रम्+घञ्, वा अच्] कदम, पग। चलना। बहादुरी, पराक्रम; 'धनुष्येकः खलु विक्रमालङ्कारः' वि० १। उज्जयनी के एक प्रसिद्ध महाराज का नाम। विष्णु भगवान् का नाम।

विक्रमण—(न०) [वि √क्रम् + ल्युट्] चलना, कदम रखना।

विक्रमिन्—(वि०) [वि √ क्रम् + णिनि] वीर, बहादुर। (पुं०) सिंह। शूरवीर। विष्णु का नाम।

विक्रय—(पुं०) [वि√क्री + अच्] बिक्री, बेचना।—**अनुशय** (**विक्रयानुशय**)—(पुं०) किसी वस्तु की खरीदारी की शर्त या आज्ञा को रद्द करना।

विक्रयिक, विक्रयिन्—(पुं०) [विक्रय+ठन् वा वि√क्री+इकन्] वि√क्री + णिनि] विक्रेता, बेचने वाला।

विक्लस—(पुं०) [वि √कस् + रक्, लत्व —रेफादेश] चन्द्रमा।

विक्रान्त—(पुं०) [वि √क्रम्+क्त] बलवान्। वीर। विजयी। (न०) पग, कदम। धैर्य, वीरता। (पुं०) योद्धा। सिंह।

विक्रान्ता—(स्त्री०) [विक्रान्त+टाप्] बलसादनी लता। गुडूच। धरणी। जयन्ती। मूसाकानी। अपराजिता। बड़हुल। लाल लजालू। हंसपदी लता।

विक्रान्ति—(स्त्री०) [वि√क्रम्+क्तिन्] गति। घोड़े की सरपट चाल। विक्रम। बल। वीरता, बहादुरी।

विक्रान्तृ—(वि०) [वि √क्रम्+तृच्] विजयी। शूरवीर। (पुं०) सिंह।

विक्रिया—(स्त्री०) [वि०√कृ+श—टाप्] विकार। उद्वेग। विकलता, घबड़ाहट। क्रोध। अप्रसन्नता। बुराई। भ्रूकुञ्चन। रोग जो अचानक उत्पन्न हो जाय। खण्डन। त्याग (जैसे कर्म का) चावल पकाना। रोमांच। नम्रता। निर्वाण (दीप का)।—**उपमा** (**विक्रियोपमा**)-(स्त्री०) काव्यालङ्कार विशेष।

विक्रुष्ट—(पुं०) [वि√क्रुश्+क्त] पुकारा हुआ, चिल्लाया हुआ। निष्ठुर, बेरहम। (न०) सहायता के लिये बुलाहट। गाली।

विक्रेय—(वि०) [वि√क्री+यत्] बिकाऊ।

विक्रोशन—(न०) [वि√क्रुश्+ल्युट्] गाली। चिल्लाहट।

विक्लव—(वि०) [वि √क्लु+अच्] डरा हुआ, भयभीत। भीरु, डरपोक। उद्विग्न, घबड़ाया हुआ। सन्तप्त, पीड़ित। विह्वल, बेचैन। ऊबा हुआ। कंपित। अस्थिर।

विक्लिन्न—(वि०) [वि √क्लिद्+क्त] बिल्कुल तराबोर या भींगा हुआ। सड़ा हुआ, गला हुआ। मुरझाया हुआ, कुम्हलाया हुआ। जीर्ण।

विक्लिष्ट—(पुं०) [वि √क्लिश्+क्त] अत्यन्त सन्तप्त। घायल। नष्ट किया हुआ। (न०) उच्चारण का दोष।

विक्षत—(वि०) [वि√क्षण्+क्त] आहत, घायल।

विक्षाव—(पुं०) [वि√क्षु+घञ्] खाँसी। छींक। शब्द, आवाज।

विक्षिप्त—(वि०) [वि√क्षिप्+क्त] बिखेरा हुआ। त्यागा हुआ। भेजा हुआ। घबड़ाया हुआ। खण्डन किया हुआ। पागल। (न०) योग की पाँच अवस्थाओं में से एक जिसमें चित्तवृत्ति प्रायः अस्थिर हो जाती है।

विक्षीणक—(पुं०) शिवगणों का मुखिया। देवसभा।

विक्षीर—(पुं०) [विशिष्टं विगतं वा क्षीरं यस्य, प्रा० ब०] मदार या अर्क या अकौआ का पेड़।

विक्षेप—(पुं०) [वि√क्षिप्+घञ्] ऊपर की ओर अथवा इधर-उधर फेंकना या डालना। झटका देना। हिलाना; 'लाङ्गूलविक्षेपविसर्पिशोभैः' कु० १.१३। प्रेषण। विकलता, बेचैनी। भय, डर। खण्डन। चिल्ला चढ़ाना। असंयम। सैना का पड़ाव, छावनी। बाधा। ध्रुवीय शरलेखा। एक अस्त्र।

विक्षेपण—(न०) [वि √क्षिप्+ल्युट्] ऊपर अथवा इधर-उधर फेंकने की क्रिया। हिलाने या झटका देने की क्रिया। प्रेषण। घबड़ाहट। धनुष की डोरी खींचना। विघ्न, बाधा।

विक्षोभ—(पुं०) [वि √क्षुभ्+घञ्] मन की उद्विग्नता या चञ्चलता, क्षोभ। झगड़ा, टंटा। गति। भय। विदीर्ण करना, फाड़ना। उरोज। हाथी की छाती का एक भाग।

विख, विखु, विख्य, विख्र, विग्र—(वि०) [=विगत नि० पलोप][विगता नासिका यस्य, ब० स०, नासिकायाः खु आदेशः] [विगता नासिका यस्य, ब० स०, नासिकायाः ख्य आदेशः][विगता नासिका यस्य, ब० स० नासिकायाः ख्र आदेशः][विगता नासिका यस्य,

ब० स० नासिकायाः ख्र आदेशः [नासिका हीन, बिना नाक का, जिसके नाक न हो।

विखण्डित—(वि०) [वि√खण्ड् + क्त] टुकड़ों में कटा हुआ। विघटित किया हुआ। विभाजित। बीच से चिरा या फटा हुआ।

विखानस—(पुं०) एक वैखानस मुनि।

विखुर—(पुं०) राक्षस। चोर।

विख्यात—(वि०) [वि√ख्या + क्त] प्रसिद्ध, मशहूर। नामधारी। माना हुआ, स्वीकृत।

विख्याति—(स्त्री०) [वि√ख्या + क्तिन्] प्रसिद्धि, शोहरत।

विगणन—(न०) [वि √गण् + ल्युट्] गिनती, गणना। विचार। ऋण की अदायगी या फारकती।

विगत—(वि०) [वि√गम् + क्त] अतीत, बीता हुआ। अंतिम या बीते हुए से पूर्व का। इधर-उधर गया हुआ। वियुक्त, जुदा। मृत। रहित, हीन। खोया हुआ। धुँधला। —**आर्तवा** (**विगतार्तवा**)-(स्त्री०) वह स्त्री जिसके बच्चा होना बंद हो चुका हो अथवा जिसका रजोधर्म बंद हो गया हो।—**कल्मष**-(वि०) पापरहित, निष्पाप।—**भी**- (वि०) निडर, निर्भीक।—**लक्षण**-(वि०) अभागा। अशुभ।

विगन्धक—(पुं०) [विरुद्धः गन्धो यस्य, ब० स०, कप्] इंगुदी या हिंगोट का पेड़।

विगम—(पुं०) [वि√गम्+अप्] प्रस्थान, रवानगी। समाप्ति, अन्त; 'वाक्तनुत्य-विगमे च तन्मुखं' र० १९.१५। त्याग। हानि। नाश। मृत्यु। मोक्ष। पार्थक्य। अनुपस्थिति।

विगर—(पुं०) परमहंस। वह साधु जो नंगा रहे। पर्वत। वह मनुष्य जिसने भोजन करना त्याग दिया हो।

विगर्हण—(न०), **विगर्हणा**-(स्त्री०) [वि√गर्ह् + ल्युट्] [वि √गर्ह्+णिच् + युच्—टाप्] भर्त्सना, फटकार, डांट-डपट। निंदा।

विगर्हित—(वि०) [वि√गर्ह् + क्त] भर्त्सित, फटकारा हुआ। नफरत किया हुआ, घृणित। वर्जित। नीच, कमीना। बुरा। दुष्ट।

विगलित—(वि०) [वि√गल् + क्त] चू कर या टपक कर निकला हुआ। जो अन्तर्धान हो गया हो। गिरा हुआ। पिघला हुआ। विसर्जित। ढीला किया हुआ। अस्त-व्यस्त, बिखरा हुआ (जैसे केश)।

विगान—(न०) [विरुद्धं गानम्, प्रा० स०] भर्त्सना। अपमान। खण्डनात्मक कथन।

विगाह—(पुं०) [वि √ गाह् + घञ्] स्नान। गोता।

विगीत—(वि०) [वि√गै+ क्त] बुरे ढंग से गाया हुआ। भर्त्सित। निंदित। असंगत।

विगीति—(स्त्री०) [वि√गै + क्तिन्] भर्त्सना। निंदा। खण्डन।

विगुण—(वि०) [विगतः विपरीतो वा गुणो यस्य] गुण-विहीन। बिना डोरी का। विकृत। अव्यवस्थित।

विगूढ—(वि०) [वि√गुह् + क्त] गुप्त, छिपा हुआ। भर्त्सित, फटकारा हुआ।

विगृहीत—(वि०) [वि √ ग्रह्+क्त] विभाजित। विश्लेषण किया हुआ। पकड़ा हुआ। जिसके साथ मुठभेड़ हुई है।

विग्रह—(पुं०) [वि√ग्रह् + अप्] फैलाव, प्रसार। आकृति, रूप। शरीर। यौगिक शब्दों अथवा समस्त पदों के किसी एक अथवा प्रत्येक शब्द को अलग करना। झगड़ा। प्रणय-कलहः 'विग्रहाच्च शयने पराङ्मुखीर्नानुनेतुमबलाः स तत्वरे' र० १९.३८। युद्ध। नीति के छः गुणों में से एक, फूट डालना। अनुग्रह का अभाव। भाग।

विघटन—(न०) [वि√घट् + ल्युट्] अलग करना। तोड़ना। छिन्न-भिन्न करना। बरबादी, नाश।

विघटिका—(स्त्री०) [विभक्ता घटिका यया] घड़ी का ६०वाँ अंश, पल ।

विघटित—(वि०) [वि√घट् + क्त] वियोजित, अलग किया हुआ । नष्ट किया हुआ ।

विघट्टन, विघट्टना—(न०) [वि √ घट्ट् +ल्युट्] [वि√घट्ट् + युच्—टाप्] रगड़ना । खोलना । वियोजित करना । व्यथित करना ।

विघन—(पुं०) [वि√ हन् + अप्, घनादेश] आघात करना, चोट पहुँचाना । हथौड़ा ।

विघस—(पुं०) [वि √ अद्+अप्, घस देश] अधचबाया हुआ कौर । भोज्य पदार्थ । (न०) मोम ।

विघात—(पुं०) [वि√हन् +घञ्] नाश । रोक, बचाव । हिंसन, वध । अड़चन, अटकाव; 'क्रियाविघाताय कथं प्रवर्तसे' र० ३.४४ । प्रहार । त्याग ।

विघूर्णित—(वि०) [वि √घूर्ण् + क्त] चारों ओर घुमाया हुआ ।

विघृष्ट—(वि०) [वि√घृष् + क्त] अत्यन्त मला हुआ । पीड़ित ।

विघोषण—(न०) [वि√घुष् + ल्युट्—अन] ऊँची आवाज में घोषित करने की क्रिया, चिल्लाना । ढिंढोरा पीटना ।

विघ्न—(पुं०) [विहन्यते अनेन, वि√हन् + क] अड़चन, रुकावट, बाधा, खलल ।—**ईश (विघ्नेश),—ईशान (विघ्नेशान), —नायक, —नाशक,—नाशन, —राज,— —विनायक,—हारिन्**—(पुं०) गणेशजी ।

विघ्नित—(वि०) [विघ्न +इतच्] विघ्न डाला हुआ ।

विघ्नु—(पुं०) घोड़े का खुर ।

√विच्—रु० उभ० सक० अलग करना । पहचानना । वञ्चित करना । वर्जित करना । विनक्ति—विङ्क्ते, वेक्ष्यति—ते, अविचत् —अवैक्षीत्—अविक्त ।

विचकिल—(पुं०) [√विच्+क, √किल् +क, कर्म० स०] एक प्रकार की मल्लिका या चमेली । दमनक वृक्ष, दौने का पेड़ ।

विचक्षण—(वि०) [वि √चक्ष्+युच्] पारदर्शी, दीर्घदर्शी । सतर्क, सावधान, चौकस । बुद्धिमान् । विद्वान् । निपुण, पटु । (पुं०) बुद्धिमान् आदमी । चतुर नर ।

विचक्षुस्—(वि०) [विगतं विनष्टं वा चक्षुः यस्य]अंधा, दृष्टिहीन । उदास । परेशान ।

विचय—(पुं०), **विचयन**—(न०) [वि√चि +अच्] [वि० चि+ ल्युट्] इकट्ठा करना । तलाश, खोज; 'तुरगविचयव्यग्रान्' उत्त० १.२३ । । अनुसंधान, तहकीकात । तरतीब से रखना ।

विचर्चिका—(स्त्री०)[विशेषेण चर्च्यते पाणिपादस्य त्वक् विदार्यतेऽनया, वि √ चर्च् +ण्वुल्—टाप्, इत्व] खुजली, रोग विशेष जिसमें दाने निकलते और उनमें खुजली होती है, पामा ।

विचर्चित—(वि०) [वि√चर्च् + क्त] मालिश किया हुआ । लेप किया हुआ ।

विचल—(वि०) [वि √चल् + अच्] जो बराबर हिलता रहता हो । अस्थिर । अभिमानी, अहंकारी । स्थान से हटा हुआ । प्रतिज्ञा या संकल्प से हटा हुआ ।

विचलन—(न०) [वि√चल् + ल्युट्] कम्पन । उत्पथगमन । अस्थिरता, चञ्चलता । अहङ्कार ।

विचार—(पुं०) [विशेषेण चरणं पदार्थादिनिर्णये ज्ञानम्, वि√चर् + घञ्] वह जो कुछ मन से सोचा अथवा सोच कर निश्चित किया जाय । मन में उठने वाली बात, भावना । खयाल । परीक्षा, जाँच । राजा या न्यायकर्त्ता का वह कार्य जिसमें वादी और प्रतिवादी के अभियोग और उत्तर आदि सुन कर न्याय किया जाय, निर्णय, फैसला । निश्चय, सङ्कल्प । चुनाव । सन्देह, शङ्का ।

सतर्कता, सावधानता ।—**ज्ञ**-(वि०) निर्णायक, न्यायकर्त्ता ।—**भू**-(स्त्री०) न्यायालय, विशेष कर यमराज का न्यायालय या न्यायासन ।—**शील**-(वि०) सोच-विचार करने की शक्ति वाला, विचारवान् ।—**स्थल**-(न०) न्यायालय, अदालत । वह स्थान जहाँ किसी विषय पर विचार होता हो ।

विचारक—(पु०) [वि√ चर् + णिच् +ण्वुल्] विचार करने वाला, मीमांसक । न्यायकर्ता, न्यायाधीश । नेता । गुप्तचर ।

विचारण—(न०) [वि √ चर् + णिच् +ल्युट्] विचार करने की क्रिया या भाव । परीक्षा । संशय ।

विचारणा—(स्त्री०) [वि √चर् + णिच् + युच्—टाप्] विचार, विवेचना; 'राजन्। किमद्यापि युक्तायुक्तविचारणया' वे० ३ । परीक्षण । सन्देह । मीमांसा दर्शन ।

विचारित—(वि०) [वि√चर् + णिच् +क्त] जिस पर विचार किया जा चुका हो । परीक्षित । निर्णय किया हुआ । विचाराधीन ।

विचि—(पु०, स्त्री०), **विची**-(स्त्री०) [√विच्+इन् स च कित्] [विचि+ङीष्] लहर, तरङ्ग ।

विचिकित्सा—(स्त्री०) [वि √कित् +सन् +अ—टाप्] सन्देह, शक । भूल, चूक ।

विचित—(वि०) [वि √चि+ क्त] तलाश किया हुआ, खोजा हुआ ।

विचिति—(स्त्री०) [वि√चि + क्तिन्] विचार, सोचना ।

विचित्र—(वि०) [विशेषेण चित्रम्, प्रा० स०]रंग-बिरंगा, चितकबरा । चित्रित । सुन्दर, मनोहर । विस्मित या चकित करने वाला; 'हृतविधिलसितानां ही विचित्रो विपाकः' शि० ११.६४ । मनोरंजक । विलक्षण । (पु०) रौच्यमनु के एक पुत्र का नाम । अशोकवृक्ष । तिलकवृक्ष । भोजपत्र का वृक्ष । (न०) विभिन्न रंगों का समवाय । आश्चर्य ।—**अङ्ग (विचित्राङ्ग)**-(वि०) चित्तीदार रंग वाला । (पु०) मयूर । चीता ।—**देह**-(वि०) सुन्दर शरीर वाला । (पु०) बादल, मेघ ।—**वीर्य**-(पु०) शान्तनु-सत्यवती के द्वितीय पुत्र ।

विचित्रक—(पु०) [विचित्राणि चित्राणि सन्ति यस्मिन् प्रा० ब०, कप्] भोजपत्र का पेड़ । तिलकवृक्ष । अशोकवृक्ष ।

विचिन्वत्क—(पु०) [वि√चि + शतृ +कन्] चिन्तन या अनुसंधान करने वाला व्यक्ति । वीर पुरुष ।

विचेतन—(त्रि०) [विगता चेतना यस्य, प्रा० ब०] संज्ञाहीन, अचेत । विवेकहीन । विस्मरणशील । जीवरहित, निर्जीव ।

विचेतस्—(वि०) [विगतं विरुद्धं वा चेतो यस्य, प्रा० ब०] विवेकहीन । दुष्ट । विकल, परेशान ।

विचेष्टा—(स्त्री०) [विशिष्टा चेष्टा, प्रा० स०] उद्योग, प्रयत्न ।

विचेष्टित—(वि०) [वि√चेष्ट् + क्त] उद्योग किया हुआ, प्रयत्न किया हुआ । परीक्षित, जाँचा हुआ । अनुसन्धान किया हुआ । बुरी तरह या मूर्खता-पूर्वक किया हुआ । (न०) क्रिया, कर्म । उद्योग । मुँह बनाना या हाथ-पैर पटकाना । चैतन्य । कौशल ।

√**विच्छ**—तु० पर० सक० जाना । चमकाना । बोलना । विच्छायति,विच्छति—विच्छिष्यति, अविच्छायीत्—अविच्छीत् ।

विच्छन्द, विच्छन्दक—(पु०) [विशिष्टः छन्दोऽभिप्रायो यस्मिन्] [विच्छन्द+कन्] विशाल भवन, जिसमें कई खण्ड हों ।

विच्छर्दक—(पु०) [वि √छृद् + ण्वुल्] राजभवन ।

विच्छर्दन—(न०) [वि √छर्द् + ल्युट्] वमन, कै।

विच्छर्दित—(वि०) [वि√छर्द् + क्त] वमन किया हुआ। भूला हुआ। तिरस्कृत। निर्बल किया हुआ। छोटा या कम किया हुआ।

विच्छाय—(वि०) [विगता छाया (कान्तिः) यस्य, प्रा० ब०] कांतिहीन, विवर्ण। छाया-रहित। (पु०) [विशिष्टा छाया कान्तिः यस्य] मणि। (न०) [पक्षिणां छाया (समासे षष्ठ्यन्तात् परा छाया क्लीबे स्यात्)] पक्षियों के झुंड की छाया।

विच्छित्ति—(स्त्री०) [वि√छिद् + क्तिन्] काटकर अलग या टुकड़े करना। विच्छेद, अलगाव, वियोग; 'विच्छित्तिर्नवचन्दनेन वपुषः' शि० १६.८४। कमी, त्रुटि। अवसान। शरीर पर रंग-बिरंगे चित्र बनाना। सीमा। कविता या वेष-भूषा आदि में होने वाली लापरवाही या ढंगापन।

विच्छिन्न—(वि०) [वि√छिद् + क्त] काटकर अलग या टुकड़ा किया हुआ। विभाजित। पृथक् किया हुआ, जुदा। बाधा डाला हुआ। समाप्त किया हुआ। रंग-बिरंगा बना हुआ। छिपा हुआ। उबटन लगाया हुआ।

विच्छुरित—(वि०) [वि √छुर् + क्त] आच्छादित। मढ़ा हुआ। जड़ा हुआ। मैला किया हुआ। चुपड़ा हुआ। तेल लगाया हुआ। राजतिलक किया हुआ। छिड़का हुआ। (न०) एक प्रकार की समाधि।

विच्छेद—(पुं०) [वि √छिद् + घञ्] काटकर अलग या टुकड़े करने की क्रिया। तोड़ने की क्रिया। क्रम का बीच से भङ्ग होना, सिलसिला टूटना। निरोध। वाक् रुद्ध। ग्रन्थ का परिच्छेद या अध्याय। बीच में पड़ने वाला खाली स्थान, अवकाश।

विच्छेदन—(न०) [वि √छिद् + ल्युट्] काट कर या छेद कर अलगाने की क्रिया।

विच्युत—(वि०) [वि √च्यु + क्त] गिरा हुआ। स्थानच्युत। अलगाया हुआ। विनष्ट।

विच्युति—(स्त्री०) [वि√च्यु + क्तिन्] नीचे गिरना। वियोग, अलगाव। अधःपात। नाश। गर्भपात।

√विज्—जु० उभ० सक० अलग करना। वेवेक्ति—वेविक्ते, वेक्ष्यति—ते, अविजत्—अवैक्षीत्—अविक्त। तु० आत्म० अक० डरना। काँपना। (प्रायेणायम् उत्पूर्वः) उद्विजते, उद्विजिष्यते, उदविजिष्ट। रु० पर० अक० डरना। काँपना। विनक्ति, विजिष्यति, अविजीत्।

विजन—(वि०) [विगतो जनो यस्मात्] अकेला, जनशून्य। (न०) एकान्त स्थान, निराला स्थान।

विजनन—(न०) [वि√जन् + ल्युट्] जनना, प्रसव करना।

विजन्मन्—(वि०) [विरुद्धं जन्म यस्य, प्रा० ब०] वर्णसङ्कर, दोगला। (पुं०) उपपति का पुत्र, जारज। जातिच्युत व्यक्ति का पुत्र। एक वर्णसंकर जाति।

विजपिल—(न०) [√विज् + क, √पिल् + क, कर्म० स०] कीचड़।

विजय—(पुं०) [वि√जि + अच्] जीत, जय। देवरथ, स्वर्गीय रथ। अर्जुन का नाम। यमराज। वृहस्पति की दशा का प्रथम वर्ष। विष्णु के एक द्वारपाल का नाम। —**अभ्युपाय** (**विजयाभ्युपाय**)—(पुं०) जीत का उपाय; 'तस्मिन् सुराणां विजयाभ्युपाये' कु० ३.१९। —**कुञ्जर**—(पुं०) लड़ाई का हाथी। —**च्छन्द**—(पुं०) पाँच सौ लड़ियों का हार। —**डिण्डिम**—(पुं०) लड़ाई का बड़ा ढोल। —**नगर**—(न०) कर्णाटक के एक नगर का नाम। —**मर्दल**—

(पुं०) एक बड़ा ढोल ।—**सिद्धि**-(स्त्री०) सफलता । जीत ।

विजयन्त—(पुं०) इन्द्र का नाम ।

विजया—(स्त्री०) [विजय+टाप्] दुर्गा । दुर्गा की एक सहचरी या परिचारिका योगिनी का नाम । एक विद्या जिसे विश्वामित्र ने श्रीरामचन्द्र जी को सिखाया था । भांग । विजयोत्सव । हर्र, हरीतकी ।—**उत्सव** (**विजयोत्सव**)- (पुं०) एक उत्सव, जो आश्विन शुक्ला १०मी को मनाया जाता है । इसीको दुर्गोत्सव भी कहते हैं ।—**दशमी** -(स्त्री०) आश्विन शुक्ला १०मी ।

विजयिन्—(पुं०) [विजेतुम् जेतुं शीलमस्य, वि√जि+इनि] विजेता, जीतने वाला, फतहयाब ।

विजर—(वि०) [विगता जरा यस्य, प्रा० ब०] जराहीन, जिसे बुढ़ापा न आया हो । नवीन । (न०) वृक्ष का तना ।

विजल्प—(पुं०) [वि० √जल्प् + घञ्] सच, झूठ और तरह-तरह का ऊट-पटांग वार्तालाप, बकवाद । द्वेषपूर्ण या निन्दात्मक वार्तालाप ।

विजल्पित—(वि०) [वि√ जल्प्+क्त] कहा हुआ । जिसके विषय में वार्तालाप हो चुका हो या किया गया हो । बकबक किया हुआ ।

विजात—(वि०) [विरुद्धं जातं जन्म यस्य, प्रा० ब०] वर्णसङ्कर, दोगला । परिवर्तित, दूसरे रूप में परिणत । [प्रा० स०] उत्पन्न, जनमा हुआ ।

विजाता—(स्त्री०) [विजात + टाप्] वह लड़की जिसके हाल में सन्तान हुई हो । माता, जननी । जारज या दोगली लड़की ।

विजाति—(वि०) [विरुद्धा जातिः यस्य, प्रा० ब०] भिन्न या दूसरी जाति का । दूसरी किस्म या प्रकार का । (स्त्री०) [विभिन्ना जातिः प्रा० स०] भिन्न जाति या वर्ग ।

विजातीय—(वि०) [विभिन्नां वा विरुद्धां जातिम् अर्हति, विजाति+छ] दूसरी जाति का, असमान । वर्णसङ्कर, दोगला ।

विजिगीषा—(स्त्री०) [विजेतुम् इच्छा, वि √जि+सन् +अ—टाप्] विजय प्राप्त करने की इच्छा । सबसे आगे बढ़ जाने की अभिलाषा ।

विजिगीषु—(वि०) [विजेतुम् इच्छुः, वि √ जि+ सन् +उ] विजयाभिलाषी ; 'यशसे विजिगीषूणाम्' र० १.७ । ईर्ष्यालु । (पुं०) योद्धा, भट । प्रतिस्पर्धी, प्रतिद्वन्द्वी ।

विजिज्ञासा—(स्त्री०) [विशिष्टा जिज्ञासा, प्रा० स०] स्पष्ट या साफ जानने की अभिलाषा ।

विजित—(वि०) [वि√जि + क्त] जीता हुआ, जिस पर विजय प्राप्त की गयी हो । (पुं०) जीता हुआ देश । वह ग्रह जो दूसरे ग्रह से युद्ध में कमजोर हो ।—**आत्मन्** (**विजितात्मन्**)-(वि०) जितेन्द्रिय । (पुं०) शिव ।—**इन्द्रिय** (**विजितेन्द्रिय**)-(वि०) अपनी इन्द्रियों को वश में कर लेने वाला ।

विजिति—(स्त्री०) [वि √ जि + क्तिन्] जीत, विजय । प्राप्ति ।

विजिन, विजिल—(पुं०, न०) [√विज् +इनच्] [√विज्+इलच्] चटनी । ऐसा भोजन जिसमें अधिक रस हो ।

विजिह्म—(वि०) [विशेषेण जिह्मः, प्रा० स०] टेढ़ा-मेढ़ा 'कृत न वा कोपविजिह्ममाननम्' कि० १.२१ । बेईमान ।

विजुल—(पुं०) [√विज् + उलच्] शाल्मलि वृक्ष ।

विजृम्भण—(न०) [वि √ जृम्भ् +ल्युट्] जँभाई । प्रस्फुटन, खिलना । खोलना, प्रकट करना । फैलाव । आमोद-प्रमोद ।

विजृम्भित—(वि०) [वि√जृम्भ् + क्त] जमुहाई लेता हुआ। खुला हुआ। खिला हुआ। फैला हुआ। प्रदर्शित। खेला हुआ। (न०) क्रीड़ा, आमोद-प्रमोद। इच्छा, अभिलाषा। प्रदर्शन। क्रिया। आचरण। जँभाई।

विजेतृ—(वि०) [वि √ जि+तृच्] जीतने वाला, जिसने विजय प्राप्त की हो।

विज्जन, विज्जल—(न०) [विष् √ जन् +घञ्] [विष्√जड् + अच्, डस्य लः] एक प्रकार की चटनी। बाण, तीर।

विज्जुल—(न०) दालचीनी।

विज्ञ—(वि०) [विशेषेण जानाति, वि √ज्ञा+क] जानकार, जानने वाला। चतुर, निपुण। (पुं०) विद्वान् आदमी।

विज्ञप्त—(वि०) [वि√ज्ञप् + क्त] जताया हुआ, सूचित। सम्मानपूर्वक निवेदन किया हुआ।

विज्ञप्ति—(स्त्री०) [वि √ ज्ञप् + क्तिन्] सूचित करने की क्रिया। विज्ञापन, इश्तहार। निवेदन, प्रार्थना।

विज्ञात—(वि०) [वि√ज्ञा+क्त] जाना हुआ, समझा हुआ। प्रसिद्ध, मशहूर।

विज्ञान—(न०) [वि√ज्ञा+ल्युट्] ज्ञान, जानकारी। बुद्धि। प्रतिभा। विवेक। निपुणता। शिल्प और शास्त्रादि का ज्ञान। माया या अविद्या नामक वृत्ति। बौद्धमत से आत्मरूप ज्ञान। विशेष रूप से आत्मा का अनुभव। काम-धन्धा, व्यवसाय। संगीत।—ईश्वर(**विज्ञानेश्वर**)-(पुं०) याज्ञवल्क्य स्मृति की मिताक्षरा टीका के बनाने वाले विज्ञानेश्वर।—**पाद**-(पुं०) व्यास जी का नाम।—**मातृक** (पुं०) बुद्धदेव का नाम।—**वाद**-(पुं०)वह वाद या सिद्धान्त जिसमें ब्रह्म और आत्मा का ऐक्य प्रतिपादित हो। बुद्धदेव द्वारा प्रचारित सिद्धान्त विशेष।

विज्ञानिक—(वि०) [विज्ञान + ठन्] विज्ञ, पण्डित, ज्ञानी।

विज्ञापक—(पुं०) [वि √ ज्ञा + णिच्, पुक्+ण्वुल्] विज्ञापन या इश्तहार करने वाला। समझाने, बतलाने वाला।

विज्ञापन—(न०), **विज्ञापना**- (स्त्री०) [वि√ज्ञा+णिच्, पुक् + ल्युट्] [वि √ज्ञा+णिच्, पुक् + युच्—टाप्] समझाना। सूचना देना। इश्तहार। निवेदन, प्रार्थना।

विज्ञापित—(वि०) [वि√ज्ञा + णिच्, पुक्+क्त] बताया हुआ। इश्तहार किया हुआ।

विज्ञाप्ति—(स्त्री०) [वि√ज्ञा+णिच्, पुक् +क्तिन्] दे० 'विज्ञप्ति'।

विज्ञाप्य—(वि०) [वि √ ज्ञा + णिच्, पुक्+यत्] बतलाने योग्य। इश्तहार करने योग्य। (न०) प्रार्थना।

विज्वर—(पुं०) [विगतः ज्वरो यस्य, प्रा० ब०] ज्वर से मुक्त। चिन्ता या कष्ट से मुक्त।

विज्झामर—(न०) नेत्र का सफेद भाग।

विञ्जोलि, विञ्जोली—(स्त्री०) [√विज् +उल, पृषो० साधुः] पंक्ति, कतार।

√विट्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना। वेटति, वेटिष्यति, अवेटीत्।

विट—(पुं०) [√विट्+क] कामुक, लंपट। वह व्यक्ति जो किसी वेश्या का यार हो या जिसने किसी वेश्या को रख लिया हो। धूर्त। विदूषक की श्रेणी का एक नाटकीय पात्र, नायक का सखा। साँचर नमक। चूहा। खदिर वृक्ष। नारंगी का पेड़। पल्लव वृक्ष शाखा या डाली।—**माक्षिक**-(न०) सोना-मक्खी नामक खनिज पदार्थ।—**लवण**-(न०) साँचर नमक।

विटङ्क, विटङ्कक—(वि०) [वि √ टङ्क् +घ] [विटङ्क+कन्] सुंदर। (पुं०,

न०) कबूतर का दरबा, काबक, कबूतर की घड़ी । सब से ऊँचा सिरा या स्थान ।

विटङ्कित—(वि०) [वि√टङ्क् + क्त] चिह्नित । मुद्रांकित । अलंकृत ।

विटप—(पुं०) [विट√ पा+क] शाखा, डाल । गुच्छा । वृक्ष या लता की नयी शाखा; 'कोमलविटपानुकारिणौ बाहू' श० १.२१ । छतनार पेड़ । झाड़ी । कोंपल । सघन वृक्षों का झुरमुट । फैलाव । अण्डकोश के मध्य या नीचे की रेखा ।

विटपिन्—(पुं०) [विटप+इनि] वृक्ष, पेड़ । वटवृक्ष ।—**मृग**-(पुं०) बंदर ।

विठङ्क—(वि०) बुरा, नीच, कमीना, अधम ।

विठर—(पुं०) बृहस्पति ।

विट्ठल—(पुं०) विष्णु अथवा कृष्ण भगवान् की उपाधि ।

√विड्—भ्वा० पर० सक० कोसना, शाप देना । ज़ोर से चिल्लाना । वेडति, वेडिष्यति, अवेडीत् ।

विड—(न०) [√विड्+क] साँभर नमक । वायविडंग ।

विडङ्ग—(न०, पुं०) [√विड्+अङ्गच्] वायविडंग ।

विडम्ब—(पुं०) [वि√डम्ब् + अच्] अनुकरण, नकल । कष्ट, पीड़ा ।

विडम्बन—(न०), **विडम्बना**-(स्त्री०) [वि √डम्ब्+ल्युट्] [वि √ डम्ब्+णिच् +युच्—टाप्] किसी के रंगढंग या चालढाल आदि की ज्यों की त्यों नकल उतारना । अनुकरण करके चिढ़ाने या अपमान करने की क्रिया । वेश बदलने की क्रिया । छल । चिढ़ाना । पीड़न, सन्तापन । हताश करना । मजाक, उपहास; 'द्वयं च तेऽस्या पुरतो विडम्बना' कु० ५.७० ।

विडम्बित—(वि०) [वि√डम्ब्+क्त] नकल उतारा हुआ । नकल किया हुआ, हँसी उड़ाया हुआ । ठगा हुआ । चिढ़ाया हुआ । हताश किया हुआ । नीचस, धनहीन ।

विडारक—(पुं०) [विडाल एव स्वार्थे कन्, लस्य रः] बिल्ली ।

विडाल, **विडालक**—दे० 'बिडाल', 'बिडालक' ।

विडीन—(न०) [वि√डी+क्त] पक्षियों की उड़ान का एक प्रकार ।

विडुल—(पुं०) [√विड्+कुलन्] सारस विशेष ।

विडोजस्, **विडौजस्**—(पुं०) [√विष्+क्विप्, विट् व्यापकम् ओजो यस्य, ब० स०] [विडम् आक्रोशि शत्रुद्वेषम् असहिष्णु ओजो यस्य, ब० स०] इन्द्र का नाम ।

वितंस—(पुं०) [वि√तंस्+घञ्] पिंजड़ा । जाल या साधन जिसके द्वारा वनपशु या पक्षी कैद किये जायँ ।

वितण्ड—(पुं०) [वि√तण्ड् + अच्] हाथी । ताला या चटखनी ।

वितण्डा—(स्त्री०) [वि√तण्ड्+अ—टाप्] दूसरे के पक्ष को दबाते हुए अपने मत का स्थापन । व्यर्थ का झगड़ा या कहा-सुनी । कलछी, दर्वी । शिलारस ।

वितत—(वि०) [वि √तन्+ क्त] फैला हुआ । विस्तृत, लंबा-चौड़ा । सम्पन्न किया हुआ, पूर्ण किया हुआ । व्याप्त । (न०) वीणा अथवा उसी प्रकार का तार वाला कोई बाजा । **धन्वन्**-(वि०) कमान को ताने हुए ।

वितति—(स्त्री०) [वि√तन्+क्तिन्] विस्तार, फैलाव । समुदाय । झुण्ड, गच्छा । पंक्ति, कतार ।

वितथ—(वि०) [वि√ तन्+क्थन्] झूठ, मिथ्या; 'आजन्मनो न भवता वितथं किलोक्तम्' वे.३·१३ । निष्फल, व्यर्थ ।

वितथ्य—(वि०) [वितथ+यत्] असत्य, झूठ ।

वितड्—(स्त्री०) [वि√तन्+ड, टुड् आगम] पंजाब की वितस्ता या झेलम नदी का नाम।

वितन्तु—(पुं०) अच्छा घोड़ा। (स्त्री०) विधवा स्त्री।

वितरण—(न०) [वि√तृ+ल्युट्] देना, अर्पण करना। बाँटना। पार करना।

वितर्क—(पुं०) [वि√तर्क्+अच्] एक तर्क के बाद होने वाला दूसरा तर्क। अनुमान। विचार। सन्देह। विवाद। एक अर्थालंकार।

वितर्कण—(न०) [वि√तर्क्+ल्युट्] वाद-विवाद, बहस। अनुमान। सन्देह।

वितर्दि, वितर्दिका, वितर्दी—(स्त्री०) [वि√तर्द्+इन्] [वितर्दि+कन्—टाप्] [वितर्दि+ङीष्] वेदी। मंच। छज्जा।

वितर्द्धि, वितर्द्धिका, वितर्द्धी—दे० 'वितर्दि'।

वितल—(न०) [विशेषेण तलम्, प्रा० स०] पुराणानुसार पातालों में से एक।

वितस्ता—(स्त्री०) पंजाब की एक नदी जिसका आधुनिक नाम झेलम है।

वितस्ति—(पुं०, स्त्री०) [वि√तस्+ति] १२ अंगुल का परिमाण या माप। एक बालिश्त। एक बित्ता।

वितान—(वि०) [प्रा० ब०] रीता, खाली निस्सार, साररहित। उदास, गमगीन। कुंद, मूढ़। शठ। पतित। (पुं०, न०) [वि√तन्+घञ्] फैलाव, विस्तार। चंदोवा; 'वृहत्तुलैरप्यतुलैर्वितानमालापिनद्धैरपि चाविताने:' शि० ३.५०। गद्दी। समूह। राशि। यज्ञ। यज्ञीय कुण्ड या वेदी। अवसर। अवकाश। घृणा। एक छंद।

वितानक—(पुं०, न०) [वितान+कन्] विस्तार। ढेर। समूह। चँदोवा। नृप आदि के लिये कमरे में बिछाया जाने वाला बड़ा कपड़ा। संपत्ति। धनिया।

वितीर्ण—(वि०) [वि√तॄ+क्त] गुजरा हुआ। दिया हुआ; प्रदत्त। नीचे गया हुआ, उतरा हुआ। ले जाया हुआ, सवारी द्वारा पहुँचाया हुआ। वशवर्ती किया हुआ।

वितुन्न—(न०) [वि√तुद्+क्त] शिरियारी या सुसना नामक साग। शैवाल, सिवार।

वितुन्नक—(न०) [वितुन्न+कन्] धनिया। तूतिया। (पुं०) तामलकी नाम का वृक्ष।

वितुष्ट—वि०) [वि√तुष्+क्त] असन्तुष्ट, नाराज।

वितृष्ण—(वि०) [विगता तृष्णा यस्य, प्रा० ब०] तृष्णा से रहित, सन्तुष्ट।

√वित्—चु० उभ० सक० दे डालना, दान कर देना। वित्तयति—ते, वित्तयिष्यति—ते, अविवित्तत्—त।

वित्त—(वि०) [√विद्+क्त] पाया हुआ, प्राप्त। परीक्षित। प्रसिद्ध। ज्ञात। विचारित। (न०) धन-संपत्ति; 'यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः' भर्तृ०। अधिकार। शक्ति। ईश (वित्तेश)-(पुं०) कुबेर। —द-(पुं०) धनदाता, दानी। —मात्रा-(स्त्री०) सम्पत्ति। —शाठ्य—(न०) देन-लेन में धोखेबाजी।

वित्तवत्—(वि०) [वित्त+मतुप्—वत्व] धनी, धनवान्।

वित्ति—(स्त्री०) [√विद्+क्तिन्] ज्ञान। विवेक, विचार। उपलब्धि। सम्भावना।

वित्रास—(पुं०) [वि√त्रस्+घञ्] भय, डर।

वित्सन—(पुं०) [√विद्+क्विप्, √सन्+घञ्] बैल, सांड़।

√विथ्—भ्वा० आत्म० सक० माँगना, याचना करना। वेथते, वेथिष्यते, अवेथिष्ट।

विथुर—(पुं०) [√व्यथ्+उरच्, संप्रसारण] दैत्य, दानव। चोर। क्षय, नाश। (वि०) अल्प, थोड़ा। व्यथित, दुःखित।

√विद्—अ० पर० सक० जानना। वेत्ति—वेद, वेदिष्यति, अवेदीत्। दि० आत्म० अक० होना। विद्यते, वेत्स्यते, अवित्त। तु० उभ० सक० पाना, प्राप्त करना। विन्दति–ते, वेदिष्यति–ते,—वेत्स्यति–ते, अविदत्, अवेदिष्ट—अवित्त। रु० आत्म० सक० विचार करना। विन्ते, वेत्स्यते, अवित्त। चु० आत्म० सक० कहना। अक० सचेत होना। निवास करना। वेदयते।

विद्—(वि०) [√विद्+क्विप्] जानने वाला। (पु०) बुधग्रह। पण्डितजन। (स्त्री०) ज्ञान। जानकारी। समझदारी।

विद—(पु०) [√विद्+क] पण्डित जन। बुधग्रह।

विदंश—(पु०) [वि√दंश्+अच्] ऐसा भोजन जो प्यास लगावे। काटना, डँसना।

विदग्ध—(वि०) [वि√दह्+क्त] जला हुआ, आग से भस्म किया हुआ। पकाया हुआ। पचाया हुआ, हजम किया हुआ। नष्ट किया हुआ। निपुण, चतुर। रसिक। अनपचा हुआ। (पु०) पण्डित, विद्वान् व्यक्ति, रसिक जन। रूसा नामक घास, रोहिष तृण।

विदग्धा—(स्त्री०)[विदग्ध+टाप्] चतुरता से पर-पुरुष को अपने में अनुरक्त करने वाली नायिका।

विदथ—(पु०) [√विद्+कथच्] विद्वान् जन, पण्डित जन। साधु-संन्यासी। ऋषि। यज्ञ। सेना। युद्ध।

विदर—(पु०) [वि√दृ+अप्] फाड़ना, विदीर्ण करना। [विशेषेण दरः, प्रा०, स०] अत्यंत भय।

विदर्भ—(पु०) [विशिष्टा दर्भाः कुशा यत्र, विगता दर्भाः कुशा यतः इति वा] कुण्डिनपुर, आधुनिक बरार; 'अस्ति विदर्भो नाम जनपदः' दश०। एक राजा। एक मुनि। दाँतों में चोट लगने से मसूड़े का फूलना या दाँतों का हिलना।—जा,—तनया, राजतनया,—सुभ्रू-(स्त्री०) दमयन्ती के नामान्तर।

विदल—(वि०) [विघट्टितानि दलानि यस्य, प्रा० ब० या वि√दल्+क] चिरा हुआ। खुला हुआ, विकसित। (न०) बाँस की खपाचियों की बनी टोकरी। अनार की छाल। डाली, टहनी। किसी वस्तु के टुकड़े। (पु०) चपाती। चीरना, फाड़ना। दलना, दरना (जैसे चना, मूंग, उर्द आदि का)। पहाड़ी आबनूस।

विदलन—(न०) [वि√दल् + ल्युट्] मलने, दबाने, दलने की क्रिया। टुकड़े-टुकड़े करना। फाड़ना।

विदा—(स्त्री०) [विद्√+अङ—टाप्] ज्ञान। बुद्धि। विद्या।

विदार—(पु०) [वि√दृ+घञ्] चीरना, विदीर्ण करना। युद्ध। जलाशय के पानी का ऊपर से बहना।

विदारक—(वि०) [वि √दृ + ण्वुल्] चीरने वाला, फाड़नेवाला। (पु०) नदी के बीच की पहाड़ या वृक्ष। पानी निकालने को नदी के गर्भ में खोदा हुआ कूप जैसा गढ़ा।

विदारण—(पुं०) [वि√दृ+णिच्+ल्यु वा ल्युट्] नदी के बीच में उगा हुआ वृक्ष अथवा चट्टान। युद्ध। कर्णिकार वृक्ष। (न०) बीच में से अलग करके दो या अधिक टुकड़े करना, फाड़ना। सताना। मार डालना, हत्या करना।

विदारणा—(स्त्री०) [वि√दृ+णिच्+युच्—टाप्] युद्ध, लड़ाई।

विदारी—(स्त्री०) [वि√दृ+णिच्+अच् —ङीप्] शालपर्णी। भूमिकूष्मांड। क्षीर-काकोली। वाराहीकंद। बगल या पट्ठे की

सूजन। कान का एक रोग। कंठ का एक रोग।

बिदार–(पुं०) [वि√दृ+णिच्+ड] छिपकली, बिछुइया।

बिदित–(वि०) [√विद्+क्त] जाना हुआ, अवगत, ज्ञात। सूचित किया हुआ। प्रसिद्ध, प्रख्यात; 'भुवनविदित वंशे' मे० ६। प्रतिज्ञात, इकरार किया हुआ। (पुं०) विद्वान् पुरुष, पण्डित। (न०) ज्ञान, जानकारी।

बिदिश्–(स्त्री०) [दिग्भ्यां विगता] दो दिशाओं के बीच का कोना।

बिदिशा–(स्त्री०) वर्तमान भेलसा नामक नगर का प्राचीन नाम। मालवा की एक नदी का नाम।

बिदीर्ण–(वि०) [वि√दृ+क्त] बीच से फाड़ा या विदारण किया हुआ। खिला हुआ। फैला हुआ।

बिदु–(पुं०) [√विद्+कु] हाथी के मस्तक के बीच का भाग।

बिदुर–(वि०) [√विद्+कुरच्] वेत्ता, जानने वाला। नागर, चालाक। धीर। कुशल। षड्यंत्रकारी। (पुं०) विद्वज्जन। चालाक या मक्कार आदमी। पाण्डु के छोटे भाई का नाम।

बिदुल–(पुं०) [वि√दुल्+क] बेंत। जलबेंत। बोल या गन्धरस नामक गन्ध-द्रव्य।

बिदून–(वि०) [वि√दू+क्त] सन्तप्त, सताया हुआ, पीड़ित किया हुआ।

बिदूर–(वि०) [विशेषेण दूरः, प्रा० स०] जो बहुत दूर हो। (पुं०) एक पर्वत का नाम जिससे वैदूर्य मणि निकलती है; 'विदूर-भूमिर्नवमेघशब्दादुद्भिन्नया रत्नशलाकयेव' कु० १.२४।

बिदूरज–(न०) [विदूर√जन्+ड] वैदूर्य मणि।

बिदूषक–(स्त्री०) [स्त्री०- विदूषकी] [विदूषयति स्वं परं वा, वि√दूष+णिच्+ण्वुल्] भ्रष्ट करने वाला, बिगाड़ने वाला। गाली देने वाला। मजाक करने वाला। परनिंदक। (पुं०) हँसोड़, मसखरा। विशेषकर राजाओं अथवा बड़े आदमियों के पास उनके मनोविनोद के लिये रहने वाला मसखरा। वह जो बहुत अधिक विषयी हो, कामुक।

बिदूषण–(न०) [वि√दूष्+णिच्+ल्युट्] गंदा, भ्रष्ट करना। निंदा करना। दोषारोपण करना, ऐब लगाना।

बिदृश–(वि०) [विगते दृशौ चक्षुषी यस्य, प्र० ब०] अंधा।

बिदेश–(पुं०) [विप्रकृष्टो देशः प्रा० स०] दूसरा देश, परदेश।

बिदेशज–(पुं०) [विदेश√जन्+ड] विदेश या अन्य देश का बना हुआ या उत्पन्न।

बिदेशीय–(वि०) [विदेश+छ] अन्य देश का, परदेशी।

बिदेह–(पुं०) [विगतो देहो देह-सम्बन्धो यस्य, प्रा० ब०] राजा जनक। राजा निमि। मिथिला का नाम; 'क्रमौ तमनु-गच्छन्ती विदेहाधिपतेः सुता' र० १२.६। मिथिला के निवासी। (वि०) शरीर-रहित। जिसकी उत्पत्ति माता-पिता से न हो (जैसे-देवता)।—**कैवल्य**–(न०) वह मोक्ष जो जीवन्मुक्त को मरने पर प्राप्त होता है, निर्वाण।—**नगर**,—**पुर**–(न०) जनक की राजधानी, जनकपुर।

बिद्ध–(वि०) [√व्यध्+क्त] बीच में से छेद किया हुआ। घायल किया हुआ। पीटा हुआ। फेंका हुआ। वह जिसमें बाधा पड़ी हो या डाली गयी हो। समान, तुल्य। टेढ़ा। (न०) घाव।—**कर्ण**–(वि०) वह जिसके कान छिदे हों।

विद्या—(स्त्री०) [विदन्ति अनया, √विद्+क्यप्—टाप्] ज्ञान। विज्ञान। [परा और अपरा विद्या के अतिरिक्त किसी-किसी शास्त्रकार के अनुसार विद्या के चार प्रकार माने गये हैं। यथा—'आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिश्च शाश्वती।' मनु ने इनमें पाँचवी आत्मविद्या और जोड़ी है।] यथार्थ या सत्यज्ञान, आत्मविद्या। जादू, टोना। दुर्गा देवी। ऐन्द्रजालिक विद्या या निपुणता। —**अनुपालिन्** (**विद्यानुपालिन्**)—**अनुसेविन्** (**विद्यानुसेविन्**)-(वि०) ज्ञानोपार्जन करने वाला। —**अभ्यास** (**विद्याभ्यास**)-(पुं०) विद्याध्ययन। —**अर्जन** (**विद्यार्जन**)-(न०) **आगम** (**विद्यागम**)-(पुं०) विद्या, ज्ञान की प्राप्ति। —**अर्थ** (**विद्यार्थ**), —**अर्थिन्** (**विद्यार्थिन्**)-(वि०) विद्या का इच्छुक। (पुं०) विद्या पढ़ने वाला, ।—**आलय** (**विद्यालय**)-(पुं०) वह स्थान जहाँ अध्ययन किया जाता है, विद्या-मन्दिर। —**कर**-(पुं०) पण्डित, विद्वान् व्यक्ति। —**चण**, —**चुञ्चु**-(वि०) [विद्या+चणप्] [विद्या+चुञ्चु] वह जो अपनी विद्वत्ता के लिये प्रसिद्ध हो। —**धन**-(न०) विद्या रूपी धन।। —**धर**-(पुं०) देवयोनि विशेष (गन्धर्व, किन्नर आदि)। १६ प्रकार के रतिबन्धों में से एक। एक अस्त्र। विद्वान्, पण्डित जन। —**धरी**-(स्त्री०) विद्याधर जाति की स्त्री। —**राशि**-(पुं०) शिव। —**व्रतस्नातक**-(पुं०) मनु के अनुसार वह स्नातक जो गुरु के निकट रह कर वेद और विद्याव्रत दोनों समाप्त कर अपने घर लौटे।

विद्युत्—(स्त्री०) [विशेषेण द्योतते, वि √द्युत्+क्विप्] बिजली। वज्र। सन्ध्या। एक प्रकार की वीणा। एक प्रकार की उल्का। प्रजापति बाहुपुत्र की चार कन्यायें। —**उन्मेष** (**विद्युदुन्मेष**)-(पुं०) बिजली की कौंध। —**जिह्व** (**विद्युज्जिह्व**)-(पुं०) श्रीमद्रामायण के अनुसार रावण के पक्ष के एक राक्षस का नाम, जो शूर्पणखा का पति था। एक यक्ष का नाम। एक जाति के राक्षस। —**ज्वाला** (**विद्युज्ज्वाला**)-(स्त्री०)—**द्योत** (**विद्युद्द्योत**)-(पुं०) बिजली की दीप्ति। —**पात**-(पुं०) बिजली का गिरना। वज्रपात। —**लता** (**विद्युल्लता**), **लेखा** (**विद्युल्लेखा**)-(स्त्री०) बिजली की धारी या रेखा।

विद्युत्वत्—(वि०) [विद्युत् + मतुप्, मस्य वत्वम्] वह जिसमें बिजली हो (पुं०) बादल 'सोऽहं तृष्णातुरैर्वृष्टिं विद्युत्वानिव चातकैः' कु. ६.२७।

विद्योतन—(वि०) [स्त्री० —**विद्योतनी**] [वि√द्युत्+णिच्+ल्यु] प्रकाश करने वाला। व्याख्याकार।

विद्र—(पुं०) [√व्यध्+रक्, दान्तादेश, सम्प्रसारण] विदारण। छिद्र, छेद।

विद्रधि—(पुं०) [विद्√रुध्+कि, पृषो० साधुः] एक प्रकार का फोड़ा जो पेट में होता है। शूकदोषभेद।

विद्रव—(पुं०) [वि√द्रु+अप्] पलायन, भगदड़। भय, डर। बहाव। पिघलन।

विद्राण—(वि०) [वि √द्रा+क्त] नींद से जागा हुआ, जागृत।

विद्रावण—(न०) [वि√द्रु+णिच्+ल्युट्] खदेड़ना, भगाना, हराना। गलाना। तरल करना।

विद्रुम—(पुं०) [विशिष्टो द्रुमः] मूँगे का वृक्ष। मुक्ताफल नामक वृक्ष। मूँगा, प्रवाल। कोंपल, वृक्ष का नया पत्ता या अङ्कुर। —**लता**, —**लतिका**-(स्त्री०) नलिका या नली नामक गन्धद्रव्य। मूँगा, 'तवाधरस्पर्धिषु विद्रुमेषु' र०, १३.१३।

विद्वस्—(वि०) [कर्ता, एकवचन, (पुं०) **विद्वान्**, (स्त्री०) **विदुषी**, (न०) **विद्वत्**] [√विद्+शतृ, वसु आदेश] ज्ञाता, जान-

कार। पंडित, विद्वान्। (पु०) पंडित, पूर्ण शिक्षित व्यक्ति।—**कल्प** (**विद्वत्कल्प**), —**देशीय** (**विद्वद्देशीय**), —**देश्य** (**विद्वद्देश्य**) -(वि०) [ईषदूनो विद्वान्, विद्वस् + कल्पप्, देशीयर्, देश्य] थोड़ा या कम विद्वान।—**जन** (**विद्वज्जन**)-(पु०) पंडित, विद्वान् आदमी।

विद्विष्, विद्विष—(पु०) [वि√द्विष्+क्विप्] [वि√द्विष्+क] शत्रु, दुश्मन; "कृतोपकारा इव विद्विषस्ते' कि. ३.१६।

विद्विष्ट—(वि०) [वि० √ द्विष्+क्त] जिसके प्रति द्वेष किया गया हो। घृणित। नापसंद।

विद्वेष—(पु०) [वि√द्विष्+घञ्] शत्रुता। घृणा। तिरस्कार।

विद्वेषण—(पु०) [वि√द्विष्+ल्यु] घृणा करने वाला व्यक्ति। शत्रु। (न०) [वि √द्विष्+ल्युट्] द्वेष करना। [वि √द्विष्+णिच्+ल्युट्] दो जनों में वैर करा देने की क्रिया।

विद्वेषणी—(स्त्री०) [विद्वेषण+ङीप्] विद्वेष करने वाली स्त्री। एक यक्ष-कन्या।

विद्वेषिन्, विद्वेष्टृ—वि०) [वि√द्विष्+णिनि] [वि√द्विष्+तृच्] विद्वेष या घृणा करने वाला। शत्रु।

√विध्—तु० पर० सक०। विधान करना। चुभोना, घुसेड़ना। बेधना। सम्मान करना, पूजन करना। शासन करना, हुकूमत करना विधति, वेधिष्यति, अवेधीत्।

विध—(पु०) [√विध्+क] वेधन, छेद करना। विधि, विधान। प्रकार, किस्म, तरीका। गुना; यथा—अष्टविध, आठ-गुना। हाथी का खाद्य पदार्थ। समृद्धि।

विधवन—(न०) [वि√धू+ल्युट्] कम्पन, काँपना।

विधवा—(स्त्री०) [विगतो धवो भर्ता यस्याः प्रा० ब०] वह स्त्री जिसका पति मर गया हो, रांड़, बेवा।

विधव्य—(न०) भय की थरथरी। हैरानी, घबराहट, बेचैनी।

विधस्—(पु०) सर्वसृष्टि-उत्पादक ब्रह्मा।

विधस—(न०) मोम।

विधा—(स्त्री०) [वि√धा+क्विप्] जल। ढंग, तरीका। किस्म, जाति। धन-दौलत। हाथी या घोड़े का चारा। प्रवेशन। वेतन। मजदूरी।

विधातृ—(वि०) [वि√धा+तृच्] बनाने वाला। अवस्था करने वाला। देने वाला। (पु०) सृष्टिकर्त्ता, ब्रह्मा। विष्णु। शिव। प्रारब्ध, भाग्य। विश्वकर्मा। कामदेव। मदिरा, शराब।—**आयुस्** (**विधात्रायुस्**)- -(पु०) धूप, सूर्य का प्रकाश। सूरजमुखी फूल।—**भू**-(पु०) नारद की उपाधि।

विधान—(न०) [वि√धा+ल्युट्] किसी कार्य का आयोजन। सम्पादन। विन्यास। अनुष्ठान। सृष्टि। कानून, धर्मशास्त्र की की आज्ञा। ढंग, तरीका। तरकीब, उपाय। हाथियों को नशे में लाने के लिये दिया गया खाद्यपदार्थ विशेष। धन, सम्पत्ति। पीड़ा, सन्ताप। विद्वेषण।—**ग**-(पु०) पंडित। शिक्षक।—**ज्ञ**—वि०) विधान जानने वाला (पु०) पंडित। शिक्षक।

विधानक—(न०) [विधान+कन्] पीड़ा, सन्ताप।

विधायक—(वि०) [स्त्री०—विधायिका] [वि √ धा + ण्वुल्] विधानकर्त्ता। निर्माता। प्रबंध करने वाला। उत्पादन करने वाला।

विधि—(पु०) [वि√धा+कि या√विध्+इन्] कार्य करने की रीति। प्रणाली, ढंग। आज्ञा। धर्मशास्त्र की आज्ञा या आदेश। धार्मिक विधान या संस्कार। आचरण, व्यवहार। सृष्टि, रचना। सृष्टि-कर्त्ता। भाग्य (प्रारब्ध); 'विधौ वामारम्भे मम समुचितैषा परिणतिः' माल० ४.४।

हाथी का चारा। समय। वैद्य, चिकित्सक। विष्णु का नामान्तर।—ज्ञ-(पुं०) विधि-विधान जानने वाला ब्राह्मण। —दृष्ट, —विहित-(वि०) नियम या शास्त्र के अनुसार आचरित।—द्वैध-(न०) नियमों की भिन्नता।—पूर्वकम्-(अव्य०) नियम या विधि के अनुसार।—प्रयोग-(पुं०) नियम का प्रयोग या विनियोग।—योग-(पुं०) भाग या किस्मत की खूबी।—वधू-(स्त्री०) सरस्वती देवी।—हीन-(वि०) विधिरहित। शास्त्र-विरुद्ध।

विधित्सा—(स्त्री०) [वि√धा+सन्+अ—टाप्] कार्य करने की अभिलाषा। युक्ति। विधि, विधान।

विधित्सित—(वि०) [वि√धा+सन्+क्त] जिसके करने की इच्छा की गयी हो। (न०) इरादा, विचार।

विधु—(पुं०) [√व्यध्+कु] चन्द्रमा। कपूर। राक्षस। प्रायश्चित्तात्मक कर्म। वायु। विष्णु का नामान्तर। ब्रह्मा।—पञ्जर,—पिञ्जर-(पुं०) खड्ग, खांडा।—प्रिया-(स्त्री०) चन्द्रमा की स्त्री रोहिणी।

विधुत—(वि०) दे० "विधूत"।

विधुति—(स्त्री०) [वि√धु+क्तिन्] कंपन, कांपना। निराकरण।

विधुनन—(न०) [वि√धू+णिच्+ल्युट्, नुक्, पृषो० ह्रस्वः] कंपन। थरथराहट।

विधुन्तुद—(पुं०) [विधु तुदति पीडयति, विधु√तुद्+खश्, मुम्] राहु का नाम।

विधुर—(वि०) [विगता धूः कार्यभारः भारो वा यस्मात्, प्रा० ब०, अच्] पीड़ित, सन्तप्त, दुःख से विह्वल। पत्नी अथवा पति के वियोगजन्य दुःख से विकल, विरह-व्यथा से विकल; 'विधुरां ज्वलनातिसर्जनान्ननु मां प्रापय पत्युरन्तिकं' कु. ४.३२। रहित, हीन। अभावग्रस्त, मोहताज। विरोधी। (पुं०) रंडुआ, वह पुरुष जिसकी पत्नी मर गयी हो। (न०) भय, डर। चिन्ता। विरह, वियोग। कैवल्य, मोक्ष।

विधुरा—(स्त्री०) [विधुर+टाप्] चीनी और मसालों से मिश्रित दही। दही की लस्सी। कान के पास की एक ग्रंथि।

विधुवन—(न०) [वि√धु+ल्युट्, कुटादित्वात् साधुः] कंपन, थरथराहट।

विधूत—(वि०) [वि√धु+क्त] कंपित, कांपता हुआ। हिलता हुआ, डोलता हुआ। हटाया हुआ, अलग किया हुआ। चञ्चल, अदृढ़। त्यक्त, त्यागा हुआ। (न०) घृणा, अरुचि, नफरत।

विधूति—(स्त्री०) [वि√धु+क्तिन्] कंपन, थरथराहट।

विधूनन—(न०) [वि√धू+णिच्+ल्युट्] हिलाना। कंपाना।

विधृत—(वि०) [वि√धृ+क्त] पकड़ा हुआ। ग्रहण किया हुआ। पृथक् किया हुआ। अधिकृत। दमन किया हुआ। समर्पित, रक्षित। (न०) आज्ञा की अवहेलना। असन्तोष।

विधेय—(वि०) [वि√धा+यत्] जिसका विधान या अनुष्ठान उचित हो, जिसका करना उचित हो, विधान के योग्य, कर्त्तव्य। जो नियम या विधि द्वारा जाना जाय। वचन या आज्ञा के वशीभूत, आज्ञा-पालक। विनम्र (व्याकरण में वह शब्द या वाक्य) जिसके द्वारा किसी के सम्बन्ध में कुछ कहा जाय। (न०) कर्तव्य कर्म। आवश्यकता। (पुं०) अनुचर, नौकर।—अविमर्श (विधेयाविमर्श)-(पुं०) साहित्य में एक वाक्यदोष जो विधेय अंश का अप्रधान अंश प्राप्त होने पर होता है। कही जाने वाली मुख्य बात का वाक्य-रचना के बीच में दब जाना।—आत्मन् (विधेयात्मन्)-(पुं०) विष्णु भगवान् का नामान्तर।—ज्ञ-(वि०) अपने कर्त्तव्य को जानने वाला।—पद-(न०) वह कर्म जो पूरा किया जाने वाला हो।

विध्वंस–(पुं०) [वि√ध्वंस्+घञ्] नाश, बरबादी। वैर। घृणा। तिरस्कार, अनादर।

विध्वंसिन्–(त्रि०) [वि√ध्वंस्+णिनि] जो नष्ट होता हो। जो टुकड़े-टुकड़े हो कर गिर रहा हो। [वि√ध्वंस्+णिच्+णिनि] नाश करने वाला। वैरी।

विध्वस्त–(वि०) [वि√ध्वंस्+क्त] नष्ट, बरबाद। बिखरा हुआ। धुंधला। ग्रस्त।

विनत–(वि०) [वि√नम्+क्त] झुका हुआ, नवा हुआ। टेढ़ा पड़ा हुआ, वक्र। नीचे धँसा हुआ। विनीत, नम्र।

विनता–(स्त्री०) [विनत+टाप्] कश्यप की एक पत्नी और अरुण तथा गरुड़ की जननी का नाम। एक प्रकार की टोकरी। पीठ या पेट का एक घातक फोड़ा जो प्रमेह के रोगियों को होता है। व्याधि लाने वाली एक राक्षसी। –**नन्दन**, –**सुत**, –**सूनु**–(पुं०) गरुड़। अरुण।

विनति–(स्त्री०) [वि√नम्+क्तिन्] झुकाव। नम्रता। विनय। प्रार्थना।

विनद–(पुं०) [वि√नद्+घञ्] ध्वनि, नाद। कोलाहल। छतिवन का पेड़।

विनमन–(न०) [वि√नम्+ल्युट्] झुकना, लचना।

विनम्र–(वि०) [वि√नम्+र] झुका हुआ, नवा हुआ। विनयी। (न०) तगर वृक्ष का फूल।

विनय–(वि०) [वि√नी+अच्] फटका हुआ, फेंका हुआ। गुप्त, गोपनीय। असदाचार। (पुं०) नम्रता; 'त्वयापि नीचैर्विनयाददृश्यत' र० ३.३४। शिष्टता। व्यवहार में अधीनता का भाव, शिष्टोचित व्यवहार। भद्रता। आचरण। स्थानान्तर-करण। जितेन्द्रिय पुरुष। व्यापारी। [विशिष्टो नयः, प्रा० स०] दंड, शासन।

विनयन–(न०) [वि√नी+ल्युट्] हटाना, ले जाना। शिक्षण। विनय।

विनशन–(न०) [वि√नश्+ल्युट्] नाश, बरबादी। (पुं०) उस स्थान का नाम जहाँ सरस्वती नदी गुप्त हो जाती है, कुरुक्षेत्र।

विनष्ट–(वि०) [वि√नश्+क्त] नष्ट, बरबाद। भ्रष्ट, बिगड़ा हुआ। लुप्त। मृत।

विनस–(वि०) [स्त्री०–**विनसा**, **विनसी**] [विगता नासिका यस्य, नासिकाशब्दस्य नसादेशः] नासिका-हीन।

विना–(अव्य०) [वि+ना] बगैर, अभाव में, न रहने की अवस्था में; 'पङ्क्तिर्विना सरो भाति' भा० १.१८। विना, अतिरिक्त, छोड़कर।

विनाडि, **विनाडिका**–(स्त्री०) [विगता नाडिः नाडिका वा यया] पल, एक घड़ी का ६०वाँ भाग।

विनायक–(पुं०) [विशिष्टो नायकः प्रा० स०] गणेश जी। बुद्ध। गरुड़। विघ्न। गुरु।

विनाश–(पुं०) [वि०√नश्+घञ्] नाश, बरबादी। स्थानान्तर-करण। –**धर्मन्**–**धर्मिन्**-(वि०) नाशवान्, नष्ट होने वाला। क्षणभंगुर।

विनाशन–(न०) [वि√नश्+णिच्+ल्युट्] नाश करना। लुप्त करना। हटाना। (वि०) [वि√नश्+णिच्+ल्यु] नाश करने वाला। (पुं०) एक असुर जो काल का पुत्र था।

विनासक, **विनासिक**–(वि०) [विगता नासा वा नासिका यस्य सः ब० स०, ह्रस्व, पक्षे कन्] नासिकाहीन, नकटा।

विनाह–(पुं०) [वि√नह+घञ्] कुएँ के मुँह का ढकना।

विनिक्षेप–(पुं०) [वि–नि√क्षिप्+घञ्] फेंकना। उछालना। भेजना। छोड़ना।

विनिगमक–(वि०) [वि–नि√गम्+णिच्+ण्वुल्] दो पक्षों में से किसी एक को सिद्ध करने वाला।

विनिगमना—(स्त्री०) [वि—नि√गम्+णिच्+युच्+टाप्] एकतरपक्षपातिनी युक्ति। दो पक्षों में से एक का प्रमाण और युक्ति से निश्चय करना। सिद्धान्त।

विनिग्रह—(पु०) [वि—नि√ग्रह्+अप्] संयम, दमन। परस्पर विरोध। नियंत्रण। बाधा। प्रतिबंध।

विनिद्र—(वि०) [विगता निद्रा यस्य, प्रा० ब०] निद्रारहित, जागा हुआ। खिला हुआ, फूला हुआ; 'विनिद्रमन्दाररजोऽरुणाङ्गुली' कु. ५.८०।

विनिपात—(पु०) [वि—नि√पत्+घञ्] पतन। संकट। नाश, बरबादी। मृत्यु। नरक। मरना। पीड़ा। अपमान।

विनिमय—(पु०) [वि—नि√मी+अप्] अदल-बदल, एक वस्तु लेकर बदले में दूसरी वस्तु देने का व्यवहार। बन्धक, गिरवी।

विनिमेष—(पु०) [वि—नि√मिष्+घञ्] पलकों का गिरना। पलक मारना। आँख के झपने की क्रिया।

विनियत—(वि०) [वि—नि√यम्+क्त] नियन्त्रित। संयत। बद्ध। शासित।

विनियुक्त—(वि०) [नि√युज्+क्त] काम में लगाया हुआ। अलग किया हुआ। विनियोग किया हुआ, व्यवहृत। संयुक्त, लगा हुआ। आज्ञा दिया हुआ।

विनियोग—(पु०) [वि—नि√युज्+घञ्] विछोह, वियोग। त्याग। उपयोग; 'बभूव विनियोगज्ञः साधनीयेषु वस्तुषु' र.१७.६७। किसी कार्य को रोकने के लिये नियुक्ति, नारा-गेण। अड़चन, रुकावट। भेजना। घुसना।

विनिर्जय—(पु०) [वि—निर्√जि+अच्] सब प्रकार से या पूर्ण रूप से विजय।

विनिर्णय—(पु०) [वि—निर्√नी+अच्] पूर्ण रूप से निबटारा या फैसला। निश्चय। निर्धारित नियम।

विनिर्बन्ध—(पु०) [वि—निर्√बन्ध्+घञ्] अटलता, दृढ़ता। आग्रह, जिद।

विनिर्मित—(वि०) [वि—निर्√मा+क्त] बनाया हुआ। रचा हुआ। उत्पन्न किया हुआ।

विनिवृत्त—(वि०) [वि—नि√वृत्+क्त] लौटा हुआ। कार्य त्याग किया हुआ। हटा हुआ। समाप्त। मुक्त।

विनिवृत्ति—(स्त्री०) [वि—नि√वृत्+क्तिन्] लौटना। अवसान, समाप्ति। मुक्ति।

विनिश्चय—(पु०) [विशेषेण निश्चयः, प्रा० स०] विशेष प्रकार से निर्णय करना।

विनिश्वास—(पु०) [विशेषेण निःश्वासः प्रा० स०] जोर की साँस। उसाँस।

विनिष्पेष—(पु०) [वि—निर्√पिष्+घञ्] कुचलना, पीस डालना।

विनिहत—(वि०) [वि—नि√हन्+क्त] आहत, चोट खाया हुआ। मार डाला हुआ। सम्पूर्णतः वशवर्ती किया हुआ। (पु०) कोई बड़ा अनिवार्य सङ्कट या आपत्ति जो भाग्यदोष से अथवा दैवप्रेरित आयी हो। अशकुन। धूमकेतु, पुच्छलतारा।

विनीत—(वि०) [वि√नी+क्त] हटाया हुआ, अलग किया हुआ। भली-भाँति शिक्षित, सुशिक्षित। सुनियंत्रित। सदाचारी। विनम्र, भद्र। शिष्टोचित, भद्रोचित। भेजा हुआ, प्रेषित। पालतू। साफ-सुथरा। आत्म-संयमी, जितेन्द्रिय। दण्डित, सजा-याफ्ता। मनोहर। (पु०) सिखाया हुआ घोड़ा। व्यापारी, सौदागर।

विनीतक—(न०) [विनीत+कन्] सवारी; गाड़ी, डोली आदि।

विनीय—(पुं०)कल्क, तलछट। मैल। पाप।

विनेतृ—(पु०) [वि√नी+तृच्] नेता, रहनुमा। शिक्षक। राजा, शासक। दण्ड-विधान-कर्त्ता। (वि०) ले जाने वाला।

विनोद—(पु०) [वि√नुद्+घञ्] हटाना, दूर करना। मनोरंजन। क्रीड़ा। आमोद-

प्रमोद। उत्सुकता, उत्कण्ठा। आह्लाद, प्रसन्नता। एक प्रकार का आलिंगन।

विनोदन—(न०) [वि√नुद्+ल्युट्] हटाने की क्रिया। मन बहलाना। क्रीड़ा करना।

विन्दु—(वि०) [√विद्+उ, नुमागम] ज्ञाता, जानकार। उदार। प्राप्त करने वाला। (पु०) [विन्द्?+उ] बूँद। हाथी के मस्तक पर बनायी हुई रंग की बिंदी। भौंहों के बीच की बिन्दी। अनुस्वार। शून्य। रत्नों का एक दोष। छोटा टुकड़ा, कण। मूँज का धुआँ।

विन्ध्य—(पु०) [√विध्+यत्, पृषो० मुम्] विन्ध्याचल नाम का पहाड़। यह मध्यदेश की दक्षिणी सीमा है। —**अटवी** (**विन्ध्याटवी**)-(स्त्री०) विन्ध्याचल का विशाल वन। —**कूट**, —**कूटन**-(पु०) अगस्त्य जी की उपाधि। —**वासिन्**-(पु०) वैयाकरण व्याडि की उपाधि। —**वासिनी**-(स्त्री०) दुर्गा देवी की उपाधि।

विन्न—(वि०) [√विद्+क्त] विचारित। जाना हुआ। प्रसिद्ध। प्राप्त, उपलब्ध। स्थापित। विवाहित।

विन्नक—(पु०) [विन्न+कन्] अगस्त्य जी का नाम।

विन्यस्त—(वि०) [वि√न्यस्+क्त] स्थापित, रखा हुआ। जड़ा हुआ, बैठाया हुआ। गाड़ा हुआ। क्रम से रखा हुआ। सौंपा हुआ। अर्पित। न्यस्त, जमा किया हुआ।

विन्यास—(पु०) [वि√न्यस्+घञ्] स्थापन, अमानत रखना। अमानत, धरोहर। ठीक जगह पर करीने से रखना, सजाना समूह, संग्रह। आधार।

विपक्तिम—(वि०) [वि√पच्+क्त्रि, मप्] अच्छी तरह पका हुआ। पूर्ण वृद्धि को प्राप्त, परिपक्वता को प्राप्त।

विपक्व—(वि०) [वि√पच्+क्त] पूर्ण रूप से पका हुआ या परिपक्व। पूर्ण वृद्धि को प्राप्त। रँधा हुआ, पकाया हुआ।

विपक्ष—(वि०) [विरुद्धः विगतो वा पक्षो यस्य, प्रा० ब०] विरुद्ध, खिलाफ, प्रतिकूल। उलटा, विपरीत। बिना पंख का। पक्षपात-रहित। जिसके पक्ष में कोई न हो। (पु०) शत्रु, दुश्मन; 'गुणास्तस्य विपक्षेऽपि गुणिनो लेभिरेऽन्तरं' र. १७.७५। वादी, मुद्दई। [विरुद्धः पक्षः, प्रा० स०] व्याकरण में किसी नियम के विरुद्ध व्यवस्था, बाधक नियम, अपवाद। न्याय या तर्क-शास्त्र में वह पक्ष जिसमें साध्य का अभाव हो।

विपञ्चिका, **विपञ्ची**—(स्त्री०) [विपञ्ची+कन्—टाप्, ह्रस्व] [वि√पञ्च्+अच्—ङीष्] वीणा। क्रीड़ा, आमोद-प्रमोद।

विपण—(पु०), **विपणन**—(न०) [वि√पण्+घञ्] [वि√पण्+ल्युट्] बिक्री। तिजारत, छोटा व्यापार।

विपणि, **विपणी**—(स्त्री०) [वि√पण्+इन्] [विपणि+ङीष्] बाजार, हाट। दूकान। व्यापार, वाणिज्य।

विपणिन्—(पु०) [विपण+इनि] व्यापारी, सौदागर। दूकानदार।

विपत्ति—(स्त्री०) [वि√पद्+क्तिन्] आपत्ति, सङ्कट। मृत्यु; 'हिमसेकविपत्तिरत्र मे नलिनी पूर्वनिदर्शनं मता' र. ८.४५। यातना। (पु०) [विशिष्टः पत्तिः, प्रा० स०] उत्तम या प्रसिद्ध पैदल सिपाही।

विपथ—(पु०) [विरुद्धः पन्था, प्रा० स०, अच्] कुपथ, बुरा मार्ग।

विपद्—(स्त्री०) [वि√पद्+क्विप्] आपत्ति, आफत, सङ्कट। मृत्यु। —**उद्धरण** (**विपदुद्धरण**)-(न०), —**उद्धार** (**विपदुद्धार**)-(पु०) विपत्ति से निस्तार। —**युक्त**-(वि०) अभागा। दुःखी।

विपदा—दे० 'विपद्'।

विपन्न—(वि०) [वि√पद्+क्त] मरा हुआ, मृत। खोया हुआ। नष्ट किया हुआ। अभागा, बदकिस्मत। पीड़ित। अशक्त, बेकाम। (पुं०) साँप।

विपरिणमन—(न०), **विपरिणाम**-(पुं०) [वि—परि√नम् + ल्युट्] [वि—परि√नम् +घञ्] परिवर्तन। रूप-परिवर्तन, रूपान्तर।

विपरिवर्तन—(न०) [वि—परि √ वृत् √ल्युट्] चक्कर खाना। लौटने की क्रिया।

विपरीत—(वि०) [वि—परि √ इ +क्त] उलटा। विरुद्ध, खिलाफ। अशुद्ध, नियम-विरुद्ध। झूठा, असत्य। प्रतिकूल। अशुभ। चिड़चिड़ा। (पुं०) रति-क्रिया का आसन-विशेष।

विपरीता—(स्त्री०) [विपरीत + टाप्] असती स्त्री। दुश्चरित्रा स्त्री।

विपर्णक—(पुं०) [विशिष्टानि पर्णानि यस्य, प्रा० ब०] पलास वृक्ष।

विपर्यय—(पुं०) [वि—परि √इ + अच्] विरुद्धता, विपरीतता, उलटापन। परिवर्तन (वेष या पोशाक का)। अभाव, अनस्तित्व। हानि। सम्पूर्णतः नाश। अदल-बदल, विनिमय। भूल, गलती। विपत्ति। द्वेष। शत्रुता।

विपर्यस्त—(वि०) [वि—परि √ अस् +क्त] परिवर्तित, बदला हुआ; 'हन्त! विपर्यस्तः सम्प्रति जीवलोकः' उत्त० १। उलटा। भ्रमात्मक।

विपर्याय—(पुं०) [वि—परि √इ+घञ्] पर्याय का अतिक्रम, क्रम-परिवर्तन, नियम-भंग।

विपर्यास—(पुं०) [वि—परि √ अस् +घञ्] परिवर्तन, उलटापन। प्रतिकूलता, विरुद्धता। अदल-बदल, बदलौवल। भूल-चूक।

विपल—(न०) [विभक्तं पलं येन] समय का एक अत्यन्त छोटा विभाग जो एक पल का साठवाँ भाग होता है।

विपलायन—(न०) [विशेषेण पलायनम्, प्रा० स०] भिन्न-भिन्न दिशाओं में अथवा चारों ओर भाग जाना।

विपश्चित्—(वि०) [विप्रकृष्टं चेतति, चिनोति चिन्तयति वा, वि—प्र √चित् +क्विप्, पृषो० साधुः] पण्डित, बुद्धिमान्, सूक्ष्मदर्शी। (पुं०) पण्डित जन, बुद्धिमान् जन; 'मथ्नन्ति ते सभ्यतमा विपश्चितो मनोगतं वाचि निवेशयन्ति ये' कि० १४.४।

विपाक—(पुं०) [वि√पच् + घञ्] परिपक्व होना, पकना। पूर्ण दशा को पहुँचना, चरम उत्कर्ष। फल, परिणाम। कर्म का फल। कठिनाई, साँसत। स्वाद, जायका।

विपाटन—(न०) [वि√पट् + णिच् +ल्युट्] उखाड़ना। चीरना, फाड़ना। अपहरण।

विपाठ—(पुं०) लंबा तीर विशेष।

विपाण्डु, विपाण्डुर—(वि०) [विशेषेण पाण्डुः, पाण्डुरः, प्रा० स०] बहुत पीला, पीत।

विपाण्डुरा—(स्त्री०) [विपाण्डुर+टाप्] महामेदा।

विपादिका—(स्त्री०) पैर का एक रोग, बेवाई। प्रहेलिका, पहेली।

विपाश्, विपाशा—(स्त्री०) [पाशं विमोचयति, वि√पश् + णिच्+क्विप्] [वि √पश्+णिच् + अच्—टाप्] पंजाब की व्यास नदी का प्राचीन नाम।

विपिन—(न०) [वेपन्ते जनाः यत्र,√वेप् इनन्, ह्रस्व] वन, जंगल। उपवन।

विपुल—(वि०) [विशेषेण पोलति, वि √पुल्+क] बड़ा। विस्तृत। अधिक, बहुत। अगाध, गहरा। रोमाञ्चित।

उलटा । झूठा, असत्य; 'नैते वाचं विप्लुतार्थां वदन्ति' उत्त० ५.१८ ।

विप्लुष्—(स्त्री०) [वि√प्लुष् + क्विप्] दे० 'विप्रुष्' ।

विफल—(वि०) [विगतं फलं यस्य, प्रा० ब०] बिना फल का । व्यर्थ, निरर्थक । असफल । हताश । अंडकोश रहित । (पुं०) बाँझ ककड़ी ।

विबन्ध—(पुं०) [वि√बन्ध् + घञ्] जोर से बाँधना । आलिंगन करना । कोष्ठ-बद्धता, मलावरोध, कब्ज़ियत । अवरोध, रुकावट ।

विबाधा—(स्त्री०) [विशिष्टा बाधा, प्रा० स०] बड़ी बाधा । पीड़ा, सन्ताप ।

विबुद्ध—(वि०) [वि√बुध् + क्त] जागृत, जागता हुआ । खिला हुआ, फूला हुआ । चतुर, पटु ।

विबुध—(पुं०) [विशेषेण बुध्यते, वि√बुध् +क] बुद्धिमान् जन, विद्वान् पुरुष । देवता । चन्द्रमा ।—**अधिपति** (**विबुधाधिपति**), —**इन्द्र** (**विबुधेन्द्र**),—**ईश्वर** (**विबुधेश्वर**)–(पुं०) इन्द्र की उपाधियाँ । –**द्विष्**,– **शत्रु**–(पुं०) दैत्य, राक्षस ।

विबुधान–(पुं०) [वि √बुध् + शानच्] पण्डित पुरुष । शिक्षक ।

विबोध—(पुं०) [वि√बुध् +घञ्] जागृति, जागरण । बुद्धि । प्रतिभा । व्यभिचारी भाव (अलङ्कार शास्त्र में) सम्यक् बोध । होश में आना ।

विभक्त—(वि०) [वि√भज् + क्त] बँटा हुआ । पृथक् किया हुआ । जो अपने पिता की सम्पत्ति से अपना भाग पा चुका हो और अलग रहता हो । विमुक्त । भिन्न । काम से अवकाश-प्राप्त । एकान्तवासी । नियमित, व्यवस्थित । शोभित, भूषित । (पुं०) कार्तिकेय का नाम ।

विभक्ति—(स्त्री०) [वि√भज् + क्तिन्] विभाग, बाँट । अलग होने की क्रिया या भाव, पार्थक्य, अलगाव । पैतृक सम्पत्ति का भाग या हिस्सा । शब्द के आगे लगा हुआ वह प्रत्यय या चिह्न जो यह बतलाता है कि उस शब्द का क्रियापद से क्या सम्बन्ध है । संस्कृत व्याकरण में विभक्ति वास्तव में शब्द का रूपान्तरित अङ्ग है ।

विभङ्ग—(पुं०) [वि√भञ्ज् + घञ्] टूटना । अवरोध । सिकुड़न । झुर्री । तह । सीढ़ी । प्राकट्य । विघ्न । छल । तरंग ।

विभव—(पुं०) [वि √भू + अप्] धन-दौलत, सम्पत्ति । महिमा, बड़प्पन । पराक्रम, बल । उच्चपद, महिमान्वित पद । औदार्य । मोक्ष, मुक्ति । भोग-विलास की वस्तु । साठ संवत्सरों में से ३६वाँ ।

विभा—(स्त्री०) [वि√भा + क्विप्] दीप्ति, आभा । किरण । सौन्दर्य ।—**कर**–(पुं०) सूर्य । अग्नि । अर्क, आक । चित्रक । चन्द्रमा —**वसु**–(पुं०) सूर्य । अग्नि, 'रचयिष्यामि तनुं विभावसौ' कु० ४.३४ । चन्द्रमा । एक प्रकार का हार । गायत्री से सोम की चोरी करने वाला एक गंधर्व । आक । चीते का पेड़ ।

विभाग—(पुं०) [वि √भज् + घञ्] बाँट, बँटवारा । पैतृक सम्पत्ति का एक भाग । अंश, भाग । अलगाव, पार्थक्य । परिच्छेद, खण्ड ।—**कल्पना**–(स्त्री०) हिस्सों का बाँटना ।—**धर्म**–(पुं०) दायभाग, बँटवारा सम्बन्धी कानून ।

विभाजन—(न०) [वि √भज् + णिच् +ल्युट्] बँटवारा, बाँटने की क्रिया ।

विभाज्य—(वि०) [वि√भज् + ण्यत्] बाँटे जाने के योग्य । खण्डनीय, विभेद्य ।

विभात—(न०) [वि √भा + क्त] प्रभात, तड़का ।

विभाव—(पुं०) [वि √भू + घञ्] (साहित्य में) रस-विधान में भाव का उद्बोधक, मन को किसी विशेष परिस्थिति में पहुँचाने वाली अवस्था विशेष । विभाव दो हैं— आलम्बन और उद्दीपन । आलम्बन वह है जिसके प्रति पात्र के हृदय में कोई भाव स्थित हो, जैसे शृंगार रस में नायक के लिए नायिका । उद्दीपन वह है जिससे आलम्बन के प्रति स्थित भाव उद्दीप्त हो, जैसे शृंगार में चन्द्रिका, पुष्प । मित्र । परिचित व्यक्ति । शिव ।

विभावन—(न०), **विभावना**— (स्त्री०) [वि √भू+णिच् + ल्युट्] [वि√भू +णिच् + युच्] कल्पना । विवेक, विचार । वाद-विवाद । परीक्षण । चिन्तन । (स्त्री०) साहित्य में एक अर्थालङ्कार । इसमें कारण के बिना कार्य की उत्पत्ति या किसी अपूर्ण कारण से कार्य की उत्पत्ति या प्रतिबन्ध होने पर भी कार्य की सिद्धि दिखलायी जाती है ।

विभावरी—(स्त्री०) [वि√भा + वनिप् —ङीप्, र आदेश] रात; 'वद प्रदोषे स्फुटचन्द्रतारका विभावरी यद्यरुणाय कल्पते' कु० ५.४४ । हल्दी । कुटनी । वेश्या । व्यभिचारिणी स्त्री । मुखरा स्त्री ।

विभावित—(वि०) [वि √भू + णिच् +क्त] प्रकट, जो स्पष्ट दिखलायी दे । जाना हुआ, समझा हुआ । चिन्तन किया हुआ । देखा हुआ । विचारा हुआ, विवेचित । सूचित, बतलाया हुआ । सिद्ध किया हुआ, स्थापित किया हुआ ।

विभाषा—(स्त्री०) [वि√भाष् + अ —टाप्] संस्कृत व्याकरण में वे स्थल जहाँ ऐसे वचन पाये जायँ कि 'ऐसा न होता' तथा 'ऐसा हो भी सकता है ।' विकल्प । नाटक में व्यवहृत प्राकृत भाषा; शाकारी, चांडाली, शाबरी, आभीरी, शाक्की आदि विभाषा हैं । बौद्ध-शास्त्र का ग्रन्थ-भेद ।

विभासा—(स्त्री०) [वि √भास् + अ —टाप्] दीप्ति, प्रभा ।

विभिन्न—(वि०) [वि√भिद् + क्त] तोड़ा हुआ । अलग किया हुआ । चीरा हुआ, फाड़ा हुआ । छिदा हुआ । छिदा हुआ, विद्ध । भगाया हुआ । परेशान, विकल । इधर-उधर फिरता हुआ । हताश । अनेक प्रकार का, कई तरह का । मिश्रित, रंग-बिरंगा । (पुं०) शिव जी ।

विभीत, विभीतक—(पुं०, न०), **विभीतकी, विभीता**—(स्त्री०) [विशेषेण भीतः; प्रा० स०] [विभीत+कन्] [विभीतक —ङीप्] [विभीत+टाप्] बहेड़े का पेड़ ।

विभीषक—(वि०) [विशेषेण भीषयते, वि √भी+णिच्, षुक् आगम + ण्वुल्] भयप्रद, डराने वाला ।

विभीषण—(पुं०) [वि√ भी + णिच्, षुक् + ल्यु] रावण का छोटा भाई जो भगवान् राम का परम भक्त था । नलतृण, नरसल का पौधा । (वि०) बहुत डरावना ।

विभीषिका—(स्त्री०) [वि√भी + णिच्, षुक्+ण्वुल् — टाप्, इत्व] डर दिखाना, भय-प्रदर्शन । आतंक । डराने का साधन ।

विभु—(वि०) [स्त्री०—विभु, विभ्वी] [वि √भू+डु] ताकतवर, बलिष्ठ । प्रसिद्ध । योग्य । स्थिर । आत्मसंयमी, जितेन्द्रिय । सर्वगत, सर्वव्यापक । (पुं०) आकाश । काल । आत्मा । प्रभु, स्वामी । ईश्वर । भृत्य, नौकर । ब्रह्मा । शिव । विष्णु ।

विभुग्न—(वि०) [वि√भुज् + क्त] टेढ़ा-मेढ़ा । कुछ टूटा हुआ ।

विभूति—(स्त्री०) [वि√भू + क्तिन्] बढ़ती । शक्ति । समृद्धि । महत्त्व । महिमान्वित पद । विभव, ऐश्वर्य । धन-सम्पत्ति । अलौकिक शक्ति । कंडे की राख ।

विभूषण—(न०) [वि√ भूष् + णिच् +ल्युट्] सजाना, अलंकृत करना। अलंकार, गहना। सौंदर्य। कांति।

विभूषा—(स्त्री०) [वि √भूष् + अ—टाप्] आभूषण; 'भवोत्सृष्टविभूषाणा तेन केरलयोषिताम्' र० ४.५४। दीप्ति, प्रभा। सौन्दर्य।

विभूषित—(वि०) [वि√भूष् + णिच् + क्त वा विभूषा+इतच्] अलंकृत, सजाया हुआ। शोभित। गुण आदि से युक्त।

विभृत—(वि०) [वि √भृ+क्त] पोषण किया हुआ। धारण किया हुआ।

विभ्रंश—(पु०) [वि√भ्रंश् + घञ्] पतन, अवनति। विनाश, ध्वंस। ऊँचा कगारा। पहाड़ की चोटी के ऊपर का चौरस मैदान। अलोसार।

विभ्रंशित—(वि०) [वि√भ्रंश् + क्त] गिराया हुआ। विनष्ट किया हुआ। बहकाया हुआ, फुसलाया हुआ। रहित किया हुआ।

विभ्रम—(पु०) [वि√भ्रम्+घञ्] भ्रमण, चक्कर, फेरा। भूल, चूक, गलती। उतावली, उद्विग्नता। स्त्रियों का एक हाव जिसमें वे भ्रम से उलटे-सीधे आभूषण और वस्त्र पहन लेती हैं तथा ठहर-ठहर कर मतवालियों की तरह कभी क्रोध, कभी हर्ष प्रकट करती हैं। किसी प्रकार की भी कामप्रणोदित क्रिया, प्रीतिद्योतक हाव-भाव। सौन्दर्य। [शोभा; 'कदचिरे रुचिरेक्षणविभ्रमाः' शि० ६.४६। शङ्का, सन्देह। भ्रान्ति, भूल।

विभ्रमा—(स्त्री०) [विभ्रम + अच्—टाप्] बुढ़ापा।

विभ्रष्ट—(वि०) [वि√भ्रंश् + क्त] गिरा हुआ। अलगाया हुआ। उजाड़ा हुआ। नष्ट किया हुआ। अन्तर्निहित। दृष्टि के बहिर्गत।

विभ्राज्—(वि०) [वि√भ्राज् + क्विप्] चमकीला, प्रकाशमान।

विभ्रान्त—(वि०) [√भ्रम् +क्त] घूमता हुआ, चक्कर खाता हुआ। उद्विग्न, व्याकुल। भ्रम में पड़ा हुआ, विभ्रम-युक्त।—शील-(वि०) वह जिसका मन व्याकुल हो। नशे में चूर। (पु०) वानर। सूर्य या चन्द्रमा का मण्डल।

विभ्रान्ति—(स्त्री०) [वि√भ्रम् + क्तिन्] चक्कर, फेरा। भ्रान्ति, भ्रम। घबड़ाहट।

विमत—(वि०) [वि√मन् + क्त] असंगत, विषम। वे जिनका मत या राय एक न हो। तिरस्कृत, तुच्छ समझा हुआ। (पु०) शत्रु।

विमति—(वि०) [विरुद्धा विगता वा मतिः यस्य, प्रा० ब०]भिन्न या विरुद्ध मत का। मूर्ख, बुद्धिहीन। (स्त्री०) [विरुद्धा वा विगता मतिः प्रा० स०] मतानैक्य, एक मत का अभाव। अरुचि, नापसंदगी। मूर्खता, मूढ़ता।

विमत्सर—(वि०) [विगतः मत्सरो यस्य, प्रा० ब०] ईर्ष्या-रहित, जो ईर्ष्यालु न हो।

विमद—(वि०) [विगतः मदो यस्य, प्रा० ब०] मद-रहित, नशे से मुक्त। हर्ष-रहित।

विमनस्, विमनस्क—(वि०) [विरुद्धं मनो यस्य, प्रा० ब०, पक्षे कप्] उदास, खिन्न। जिसका मन उचाट हो, अनमना। परेशान, विकल। अप्रसन्न। वह जिसका मन या भाव बदला हुआ हो।

विमन्यु—(वि०) [विगतः मन्युः यस्य, प्रा० ब०] क्रोध-शून्य। शोक-रहित।

विमय—(पु०) [वि√मी + अच्] अदल-बदल, विनिमय।

विमर्द—(पु०) [वि√मृद् + घञ्] खूब मर्दन करना, अच्छी तरह मलना-दलना। स्पर्श। शरीर में उबटन करना। युद्ध,

संग्राम; 'विमर्दक्षमां भूमिमवतरामः' उत्त० ५। नाश, बरबादी। सूर्य-चन्द्र का समागम। ग्रहण।

विमर्दक—(पु०) [वि√मृद् + ण्वुल्] मर्दन करने वाला। चूर-चूर कर डालने वाला, पीस डालने वाला। सुगन्ध द्रव्यों की पिसाई या कुटाई। (चन्द्र सूर्य) ग्रहण। सूर्य एवं चन्द्र का समागम।

विमर्श—(पु०) [वि √मृश्+घञ्] किसी तथ्य का अनुसन्धान। किसी विषय का विवेचन या विचार। आलोचना, समीक्षा। बहस। विरुद्ध निर्णय या फैसला। शङ्का, सन्देह। वासना।

विमर्ष—(पु०) [वि √मृष्+घञ्] विवेचन, विचार। अधैर्य, असहिष्णुता। असन्तोष। नाटक का एक अङ्ग। इसके अन्तर्गत अपवाद, संकेत, व्यवसाय, द्रव, द्युति, शक्ति, प्रसंग, खेद, प्रतिषेध, विरोध, प्ररोचना, आदान और छादन का निरूपण किया जाता है।

विमल—(वि०) [विगतो मलो यस्मात्, प्रा० ब०] मल-रहित, निर्मल। स्वच्छ, साफ। सफेद, चमकीला। (न०) चाँदी की कलई। अबरक।—**दान**-(न०) देवता का चढ़ावा।—**मणि**-(पु०) स्फटिक।

विमांस—(न०, पु०) [विरुद्धं मांसम्, प्रा० स०] अपाद, अपवित्र या वर्जित मांस; जैसे कुत्ते का मांस।

विमातृ—(स्त्री०) [विरुद्धा माता, प्रा० स०] सौतेली माँ।—**ज**-(पु०) सौतेली माता का पुत्र, सौतेला भाई।

विमान—(पु०, न०) [वि√ मन्+घञ् वा √मा + ल्युट्] अपमान, तिरस्कार। देवयान, व्योमयान। सभाभवन। राजप्रासाद या महल जो सात मंजिलों का हो। यथा—"नेत्रा नीतः सततगतिना यद्विमानाग्रभूमीः।"—मेघदूत। देवालयविशेष। सजी हुई अरथी। (न०) सवारी। मापविशेष। (पु०) घोड़ा।—**चारिन्**, —**यान**-(वि०) व्योमयान में बैठ कर घूमने वाला।—**राज**-(पु०) सर्वोत्तम व्योमयान। व्योमयान का सञ्चालक या चलाने वाला।

विमानना—(स्त्री०) [वि√मन् + णिच् +युच्–टाप्] अपमान, तिरस्कार; 'विमानना सुभ्रु! कुतः पितुर्गृहे' कु० ५.४३।

विमानित—(वि०) [वि √मन् + णिच् +क्त] अपमानित, तिरस्कृत।

विमार्ग—(पु०) [विरुद्धो मार्गः, प्रा० स०] कुपथ, बुरा रास्ता। कदाचार, बुरी चाल। [वि√मृज् + घञ्] झाड़ू, बुहारी।

विमार्गण—(न०) [वि √मार्ग् + ल्युट्] खोज, तलाश, अनुसन्धान।

विमिश्र, विमिश्रित—(वि०) [वि√मिश्र् +अच्] [वि√मिश्र्+क्त] मिला हुआ। जिसमें कई प्रकार की वस्तुओं का मेल हो।

विमुक्त—(वि०) वि√मुच् + क्त] छूटा हुआ, छुटकारा पाया हुआ। त्यागा हुआ, त्यक्त। फेंका हुआ, छोड़ा हुआ (जैसे अस्त्र)।—**कण्ठ**-(वि०) बड़े ज़ोर से चिल्लाने वाला। फूट-फूट कर रुदन करने वाला।

विमुक्ति—(स्त्री०) [वि√मुच् + क्तिन्] छुटकारा। अलगाव। मोक्ष।

विमुख—(वि०) [स्त्री०—**विमुखी**] [विरुद्धम् अननुकूलम् विगतं वा मुखम् यस्य, प्रा० ब०] जिसने अपना मुख किसी कारणवशात् फेर लिया हो; 'न क्षुद्रोऽपि प्रथमसुकृतापेक्षया संश्रयाय, प्राप्ते मित्रे भवति विमुखः किं पुनर्यस्तथोच्चैः' मे० १७। जो किसी कार्य या विषय में दत्तचित्त न हो, विमनस्क। विरुद्ध। रहित, बिना। मुखहीन।

विमुग्ध—(वि०) [वि√मुह्+क्त] मोहित। मत्त। भ्रम में पड़ा हुआ। घबड़ाया हुआ, विकल, परेशान।

विमुद्र—(वि०) [विगता मुद्रा (मुद्रणभावो) यस्य, प्रा० ब०] बिना मोहर किया हुआ। खुला हुआ, खिला हुआ, फूला हुआ।

विमूढ—(वि०) [वि + मुह्+क्त] मोह-प्राप्त, भ्रम में पड़ा हुआ। अत्यन्त मोहित। जड़बुद्धि। बेसुध, अचेत। ज्ञान-रहित।

विमृष्ट—(वि०) [वि √मृज् + क्त] मला हुआ, साफ किया हुआ। [वि√मृश्+क्त] सोचा-विचारा हुआ।

विमोक्ष—(पु०) [वि√मोक्ष् + घञ्] छुटकारा, रिहाई। प्रक्षेपण, छोड़ना (जैसे तीर का)। मोक्ष, मुक्ति, जन्म-मरण से छुटकारा।

विमोक्षण—(न०), **विमोक्षणा**—(स्त्री०) [वि √मोक्ष्+ ल्युट्] [वि√मोक्ष् +णिच् + युच्—टाप्] रिहाई, छुटकारा। मुक्ति। फेंकना, छोड़ना। त्यागना। (अंडे) देना।

विमोचन—(न०) [वि√मुच् + ल्युट्] बन्धन या गाँठ खोलना। बंधन से मुक्ति, छुटकारा। मुक्ति।

विमोहन—(वि०) [स्त्री०—**विमोहना**, **विमोहनी**] [वि√मुह् + णिच्+ल्यु] ललचाने वाला, मुग्धकारी। दूसरे के मन को वश में करने वाला। (न०, पु०) नरक विशेष। (न०) [वि√मुह् + णिच्+ल्युट्] लुभाना। दूसरे के मन को वश में करना। ऐसा प्रभाव डालना कि चित्त ठिकाने न रहे। कामदेव का एक बाण।

विम्ब—दे० 'बिम्ब'।

विम्बक—दे० 'बिम्बक'।

विम्बट—(पुं०) [विम्ब √षट् + अच्, शक० पररूप] राई का पौधा।

विम्बा, विम्बी—(स्त्री०) [विम्ब + अच्—टाप्] [विम्ब + अच्—ङीष्] एक लता या बेल का नाम।

विम्बिका—(स्त्री०) [विम्ब + कन्—टाप्, इत्व] सूर्य या चंद्रमा का मंडल। कुंदरू की लता।

विम्बित—दे० 'बिम्बित'।

विम्बु—(पुं०) सुपाड़ी का पेड़।

वियत्—(न०) [वियच्छति न विरमति, वि √यम् + क्विप्, मलोप, तुक्] आकाश, आसमान। वायु-मण्डल।—**गङ्गा** (वियद्गङ्गा)–(स्त्री०) आकाश-गंगा। छाया-पथ।—**चारिन्** (वियच्चारिन्)–(वि०) आकाश में विचरण करने वाला। (पु०) पतंग।—**भूति** (वियद्भूति)– (स्त्री०) अन्धकार।—**मणि** (वियन्मणि)–(पु०) सूर्य; 'वियन्मणेर्भा च विभाति भासुरा'।

वियति—(पुं०) एक पक्षी। नहुष के एक पुत्र का नाम।

वियम—(पुं०) [वि √यम् + अप्] रोक, नियंत्रण। कष्ट, पीड़ा। अवसान।

वियात—(वि०) [विरुद्धं निन्दां यातः प्राप्तः] धृष्ट। निर्लज्ज, बेहया।

वियाम—(पु०) [वि√यम्+घञ्] दे० 'वियम'।

वियुक्त—(वि०) [[वि√युज्+क्त]] जो युक्त न हो, अलग। जिसको जुदाई हो चुकी हो, वियोग-प्राप्त]। रहित, हीन।

वियुत—(वि०) [वि√यु+क्त] वियुक्त, वियोग-प्राप्त]। रहित, हीन।

वियोग—(पु०) [वि√युज्+घञ्] विच्छेद, संयोग का अभाव। विरह, बिछोह; 'राजापि तद्वियोगार्तः स्मृत्वा शापं स्वकर्मजम्' र० १२. १०। अभाव, हानि। व्यवकलन, घटाव।

वियोगिन्—(वि०) [वियोग+इनि] वियोगयुक्त। विरही, जो प्रियतमा से बिछुड़ा हुआ हो। (पुं०) चक्रवाक, चकवा।

वियोगिनी—(स्त्री०) [वियोगिन्+ङीप्] वह स्त्री जो अपने पति या प्रियतम से बिछुड़ी हो। वृत्तविशेष।

वियोजित—(वि०) [वि√युज्+णिच्+क्त] पृथक् किया हुआ। अलगाया हुआ। रहित किया हुआ।

वियोनि—(स्त्री०) [विविधा विरुद्धा वा योनिः, प्रा० न०] अनेक जन्म। पशुओं का गर्भाशय। हीन उत्पत्ति।

विरक्त—(वि०) [वि√रञ्ज्+क्त] अत्यन्त लाल। बदरंग। असन्तुष्ट, अप्रसन्न। सांसारिक बन्धनों से मुक्त। उत्तेजित, क्रोधाविष्ट।

विरक्ति—(स्त्री०) [वि√रञ्ज् + क्तिन्] असन्तोष। अनुराग का अभाव। उदासीनता। विवशता, अप्रसन्नता।

विरचन—(न०), **विरचना**-(स्त्री०) [वि√रच्+ल्युट्] [वि√रच्+णिच्+युच्—टाप्] प्रणयन, निर्माण, बनाना।

विरचित—(वि०) [वि√रच्+क्त] निर्मित, बनाया हुआ, तैयार किया हुआ। रचा हुआ, लिखित। सम्हाला हुआ। भूषित। धारण किया हुआ, पहिना हुआ। जड़ा हुआ, बैठाया हुआ।

विरज—(वि०) [विगतं रजः यस्मात्, प्रा० ब०] जिस पर धूल या गर्द न हो। जिसमें अनुराग न हो। (पुं०) विष्णु का नामान्तर।

विरजस्, **विरजस्क**—(वि०) [विगत रजः यस्मात् यस्य वा, ब० स० पक्षे कप्] धूल-गर्द से रहित। अनुराग-शून्य, सुख-वासना से मुक्त। जिसका रजोधर्म बंद हो गया हो।

विरजस्का—(स्त्री०) [विरजस्क+टाप्] वह स्त्री जिसका रजोधर्म बंद हो गया हो।

विरञ्च, **विरञ्चि**—(पुं०) [वि√रच्+अच्, मुम्] [वि√रच्+इन्, मुम्] ब्रह्मा का नाम।

विरट—(पुं०) कंधा। काला अगुरु। अगर का वृक्ष।

विरण—(न०) [विशिष्टो रणो मूलम् यस्य, प्रा० ब०] वारिन या वीरन नाम की घास, खस।

विरत—(वि०) [वि√रम्+क्त] निवृत्त। विमुख। जिसने सांसारिक विषयों से अपना मन हटा लिया हो। समाप्त। विशेष रूप से रत, बहुत लीन।

विरति—(स्त्री०) [वि√रम्+ क्तिन्] निवृत्ति। अवसान, समाप्ति। सांसारिक वस्तुओं से उदासीनता।

विरम—(पुं०) [वि√रम्+अप्] विराम, ठहराव। सूर्यास्त। अंत।

विरल—(वि०) [वि√रा+कलन्] जिसके बीच-बीच में अवकाश या खाली जगह हो, सघन नहीं। पतला। नाजुक। ढीला। दुर्लभ। थोड़ा, कम। दूरस्थ। (न०) दही, जमा हुआ दूध।—**जानुक**-(वि०) जिसके घुटने बहुत अलग हों या झुके हों। **द्रवा**-(स्त्री०) एक तरह की लपसी।

विरस—(वि०) [विगतः रसो यस्य, प्रा० ब०] फीका, रसहीन। अरुचिकर, अप्रिय। कष्टकर। निष्ठुर, हृदयहीन। (पुं०) [विपरीतो रसः, प्रा० स०] पीड़ा, कष्ट। काव्य में रसभंग।

विरह—(पुं०) [वि√रह्+अच्] वियोग; बिछोह। विशेष कर दो प्रेमियों का वियोग 'सा विरहे तव दीना' गीत० ४। अनुपस्थिति। अभाव। त्याग।—**अनल** (**विरहानल**)-(पुं०) विरह की अग्नि।—**अवस्था** (**विरहावस्था**)-(स्त्री०) वियोग की दशा।—**आर्त** (**विरहार्त**), —**उत्कण्ठ** (**विरहोत्कण्ठ**),—**उत्सुक** (**विरहोत्सुक**)-(वि०) वियोग-पीड़ित।—**उत्कण्ठिता** (**विरहोत्कण्ठिता**)-(स्त्री०) नायिका-भेद के अनुसार प्रिय के न आने से दुःखित नायिका।—**ज्वर**-(पुं०) ज्वर जो वियोग की पीड़ा के कारण चढ़ आया हो।

विरहिणी—(स्त्री०) [विरहिन्+ङीप्] वह स्त्री जिसका अपने प्रियतम या अपने पति से वियोग हो गया हो। मजदूरी, पारिश्रमिक।

विरहित—(वि०) [वि√रह्+क्त] त्यक्त, त्यागा हुआ। अलग किया हुआ। अकेला। रहित, विहीन।

विरहिन्—(वि०) [स्त्री०—**विरहिणी**] [विरह+इनि] विरह-युक्त। प्रिया के विरह से दुःखी। अकेला।

विराग—(पु०) [वि√रञ्ज्+घञ्] रंग का परिवर्तन। मनोवृत्ति का बदलना। अनुराग का अभाव। सन्तोष। विरोध; 'विरागकारणेषु परिहृतेषु' मु० १। अरुचि। सांसारिक बन्धनों की ओर अनुराग का अभाव।

विराज्—(पु०) [वि√राज्+क्विप्] सौन्दर्य। आभा। क्षत्रिय जाति का आदमी। ब्रह्मा की प्रथम सन्तान। शरीर, देह। (स्त्री०) एक वैदिक छन्द का नाम।

विराजित—(वि०) [वि√राज्+क्त] शोभित। प्रकाशित। प्रकटित। दर्शित।

विराट—(पु०) [विशेषो राटो यत्र] मत्स्य देश (अलवर, जयपुर आदि का भूभाग)। वहाँ का राजा।—**ज**-(पु०) कम मूल्य का हीरा, घटिया हीरा।—**पर्वन्**-(न०) महाभारत का चौथा पर्व।

विराटक—(पु०) [विराट+कन्] घटिया हीरा।

विराणिन्—(पु०) [वि√रण्+णिनि] हाथी, गज।

विराद्ध—वि०) [वि√राध्+क्त] जिसका विरोध किया गया हो। अपमानित। अपकृत।

विराध—(पु०) [वि√राध्+घञ्] विरोध। अपमान। अपकार। [वि√राध्+अच्] एक बड़ा बलवान् राक्षस जिसे श्रीरामचन्द्र जी ने दण्डकवन में मारा था।

विराधन—(न०) [वि√राध्+ल्युट्] विरोध करना। अनिष्ट करना। अपकार करना। सताना।

विराम—(पु०) [वि√रम्+घञ्] रोकना, थामना। अन्त, समाप्ति; 'रवनिरिदानीमियमपि याति विरामं' गीत० ५। ठहराव, वाक्य के अन्तर्गत वह स्थान जहाँ बोलते समय कुछ काल ठहरना पड़ता है। छंद के चरण में वह स्थान जहाँ पढ़ते समय कुछ काल के लिये ठहरना पड़े, यति। विष्णु का नामान्तर।

विराल—दे० 'बिडाल'।

विराव—(पु०) [वि√रु+घञ्] शब्द। चिल्लाहट। कोलाहल, हौहल्ला, शोरगुल।

विराविन्—(वि०) [विराव+इनि] रोने-चिल्लाने वाला। शब्द करने वाला। गुँजने वाला। (पु०) धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम।

विराविणी—(स्त्री०) [विराविन्+ङीप्] शब्द करने वाली। रोने-चिल्लाने वाली। झाड़ू।

विरिञ्च, विरिञ्चन—(पु०) [वि√रिच्+अच्, मुम्] [वि√रिच्+ल्यु, मुम्] ब्रह्मा का नाम।

विरिञ्चि—(पु०) [वि√रिच्+इन्, मुम्] ब्रह्मा का नाम। विष्णु का नाम। शिव जी का नाम।

विरुग्ण—(वि०) [वि√रुज्+क्त] टुकड़े-टुकड़े करके टूटा हुआ। नष्ट किया हुआ। मुड़ा हुआ। भोथरा। [विशेषेण रुग्णः प्रा० स०] बहुत बीमार।

विरुत—(वि०) [वि√रु+क्त] अत्यन्त-शब्द-युक्त-कूजित। गुञ्जायमान। (न०) चीत्कार। गर्जन। कोलाहल। गान। कूजन, कलरव।

विरुद—(न०, पु०) घोषणा। चिल्लाहट। प्रशस्ति, यशःकीर्तन। यश या प्रशंसा-सूचक उपाधि।—**आवली** (**विरुदावली**)-(स्त्री०) किसी के गुण, प्रताप, पराक्रम आदि का सविस्तार कथन।

विरुदित—(न०) [वि√रुद्+क्त] चीत्कार। विलाप।

विरुद्ध–(वि०) [वि√रुध्+क्त] अवरुद्ध, रोका हुआ। घेरा हुआ, (क़ैद में) बंद किया हुआ। चारों ओर से आक्रमण कर घेरा हुआ। असङ्गत, बेमेल। उलटा। विरोधी, जो खण्डन करे। विद्वेषी, वैरी। प्रतिकूल। अशुभ। वर्जित, निषिद्ध। अनुचित। (न०) विरोध। वैर। विवाद।

विरुदण–(न०) [वि√रुद्+ल्युट्] रुदन करने की क्रिया। निंदा। भर्त्सना। शाप।

विरूढ–(वि०) [वि√रुह्+क्त] उगा हुआ; 'गङ्गाप्रपातान्तविरूढशष्पं' र० २.२६। बीज से फूटा हुआ। निकला हुआ, उत्पन्न। वृद्धि को प्राप्त, बढ़ा हुआ। फूला हुआ, कुसुमित। चढ़ा हुआ, सवार।

विरूप–(वि०) [स्त्री०–**विरूपा, विरूपी**] [विकृतं रूपं यस्य, प्रा० ब०] बदशकल, कुरूप, बदसूरत। अप्राकृतिक। परिवर्तित। [विभिन्नानि रूपाणि यस्य] अनेकरूप वाला। विभिन्न प्रकार का। (न०) पिपरामूल। [विकृतं विभिन्नं वा रूपम्, प्रा० स०] कुत्सित रूप, भद्दी शकल। अनेक रूप।–**अक्ष** (**विरूपाक्ष**)-(वि०) जिसकी आँखें कुरूप हों। (पुं०) शिव; 'वपुर्विरूपाक्षम्' कु० ५.७२। रुद्र-भेद। एक राक्षस। एक नाग। एक यक्ष। एक लोकपाल।–**करण**-(न०) बदसूरत बनाना। अनिष्ट करना।–**चक्षुस्**-(पुं०) शिव जी।–**रूप**-(वि०) भद्दा, बेडौल।

विरूपिन्-(वि०) [स्त्री०–**विरूपिणी**] [विरुद्धं रूपम् अस्ति अस्य, विरूप+इनि] भद्दा, बेडौल, बदशकल, बदसूरत। (पुं०) गिरगिट।

विरेक–(पुं०) [वि√रिच्+घञ्] मल-निष्कासन। दस्तावर या कोठा साफ करने वाली दवा, जुलाब।

विरेचन-(न०) [वि√रिच्+ल्युट्] दे० 'विरेक'।

विरेचित-(वि०) [वि√रिच्+णिच्+क्त] दस्त कराया हुआ।

विरेफ-(पुं०) [वि√रिफ्+अच् वा विशिष्टो रेफो यस्य, प्रा० ब०] नदमात्र। [विशिष्टो रेफः प्रा० स०] "र"।

विरोक-(पुं०) [वि√रुच्+घञ् वा अच्] सूर्य-किरण। दीप्ति। चंद्रमा। विष्णु। (न०) छिद्र। गड्ढा।

विरोचन-(पुं०) [विशेषेण रोचते, वि√रुच्+युच्] सूर्य। चन्द्रमा। अग्नि। प्रह्लाद के पुत्र और राजा बलि के पिता का नाम।–**सुत**-(पुं०) राजा बलि।

विरोध–(पुं०) [वि√रुध्+घञ्] विपरीत भाव, उलटी स्थिति। अनैक्य, मत-भेद अवरोध, रुकावट। घेरा। नियंत्रण। असङ्गति। शत्रुता। झगड़ा। विपत्ति। एक अर्थालङ्कार जिसमें जाति, गुण, क्रिया और द्रव्य में से किसी एक के साथ विरोध होता है।–**कारिन्**-(वि०) झगड़ा करने वाला।–**कृत्**-(पुं०) शत्रु, वैरी। साठ संवत्सरों में से ४५वाँ वर्ष।

विरोधन-(न०) [वि√रुध्+ल्युट्] रुकावट, अवरोध। घेरा डालना। सामना करना। खण्डन। असङ्गति।

विरोधिन्–(वि०) [स्त्री०–**विरोधिनी**] [वि√रुध्+णिनि] सामना करने वाला। रोकने वाला। घेरा डालने वाला। असङ्गत। द्वेषी। झगड़ालू। (पुं०) शत्रु, वैरी।

विरोपण-(न०) [वि√रुह्+णिच्, ह्स्य पः+ल्युट्] पौधा लगाना, रोपना।

विरोहण-(न०) [वि√रुह्+ल्युट्] अंकुरित होना। घाव का भरना।

√**विल्**-तु० पर० सक० ढकना, छिपाना। विलति, वेलिष्यति, अवेलीत्।

विल- दे० 'बिल'।

विलक्ष– (वि०) [वि√लक्ष्+अच्] विकल, व्याकुल। विस्मित, आश्चर्यान्वित। लज्जित। विलक्षण, अनोखा।

विलक्षण– (वि०) [विगतं लक्षणं यस्य, प्रा० ब०] लक्षण-हीन। [विभिन्नं लक्षणं यस्य] भिन्न चिह्नों वाला। [विशिष्टं लक्षणं यस्य] विशेषलक्षणयुक्त, अनोखा, अनूठा। [विरुद्धं लक्षणं यस्य] अशुभ लक्षणों वाला। (न०) [वि√लक्ष्+ल्युट्] गौर से देखना।

विलक्षित– (वि०) [वि√लक्ष्+क्त] जो गौर से देखा-समझा गया हो। घबड़ाया हुआ, परेशान। चिढ़ा हुआ।

विलग्न–(वि०) [वि√लग्न्+क्त] चिपटा हुआ, लगा हुआ। अवलम्बित। बँधा हुआ, फँसा हुआ। गड़ा हुआ। बीता हुआ। पतला, नाजुक; 'मध्येन सा वेदिविलग्न-मध्या वलित्रयं चारु बभार बाला' कु० १.३९ (न०) कमर। नितंब। जन्म-लग्न। मेष आदि लग्नमात्र।

विलङ्घन– (न०) [वि√लङ्घ्+ल्युट्] लाँघना। उपवास करना। किसी वस्तु के भोग से अपने आप को रोक रखना। अपराध।

विलज्ज– (वि०) [विगता लज्जा यस्य, प्रा० ब०] लज्जा-हीन, बेशर्म, बेहया।

विलपन– (वि०) [वि√लप्+ल्युट्] वार्तालाप। विलाप। तलछट।

विलपित– (वि०) [वि √ लप्+क्त] विलाप किया हुआ। (न०) विलाप।

विलम्ब– (पुं०) [वि√ लम्ब्+घञ्] देर। सुस्ती। लटकना, झूलना। साठ संवत्सरों में से ३२वाँ वर्ष।

विलम्बन– (न०) [वि√ लम्ब्+ल्युट्] लटकना, टँगना, सहारा लेना। देरी; 'न कुरु नितम्बिनि! गमनविलम्बनं' गीत० ५। दीर्घसूत्रिता। सुस्ती।

विलम्बिका– (स्त्री०) [वि√लम्ब्+ण्वुल्–टाप्, इत्व] एक घातक रोग जो हैजे की अंतिम अवस्था है।

विलम्बित– (वि०) [वि√लम्ब्+क्त] जिसमें देर हुई हो। लटकता हुआ, झूलता हुआ। आश्रित। दीर्घसूत्री। धीमा, मन्द। (न०) विलम्ब, देरी। सुस्ती।

विलम्बिन्– (वि०) [स्त्री०– विलम्बिनी] [वि√लम्ब्+णिनि] देर करने वाला। लटकने वाला, झूलने वाला। दीर्घसूत्री। काहिल।

विलम्भ– (पुं०) [वि√लभ्+घञ्, नुम्] उदारता। भेंट। दान।

विलय– (पुं०) [वि√ली+अच्] प्रलय। नाश। मृत्यु। विलीन होने की क्रिया या भाव। पिघलना।

विलयन– (न०) [वि√ली+ल्युट्] विलीन होना। पिघलना। दूर हटना। नष्ट होना।

विलसत्– (वि०) [स्त्री०– विलसन्ती] [वि√लस्+शतृ] शोभित होता हुआ। चमकता हुआ। क्रीड़ा करता हुआ।

विलसन– (न०) [वि√लस्+ल्युट्] चमक। विनोदन, मनोरञ्जन।

विलसित–(वि०) [वि√लस्+क्त] शोभित। चमकदार, चमकीला। प्रकट। खिलाड़ी, मनमौजी। (न०) चमक। प्रकटन, प्राकट्य। क्रीड़ा, आमोद-प्रमोद। प्रेमद्योतक हाव-भाव।

विलाप–(पुं०) [वि√लप्+घञ्] बिलख-बिलख कर या विकल होकर रोने की क्रिया; 'लङ्कास्त्रीणाम् पुनश्चक्रे विलापाचार्यकं शरैः' र० १२.७८। रोकर दुःख प्रकट करने की क्रिया।

विलाल–(पुं०) [वि√लल्+घञ्] यंत्र, कल। बिलाव।

विलास–(पुं०) [वि√लस्+घञ्] क्रीड़ा, खेल। प्रेमपूर्ण आमोद-प्रमोद, आनन्दमयी

क्रीड़ा। सुखोपभोग। हाव-भाव, नाज-नखरा। सौन्दर्य। चमक, ज्योति।

विलासन-(न०) [वि√लस्+णिच्+ल्युट्] खेल, क्रीड़ा, मन-बहलाव। चञ्चलता, लम्पटता।

विलासवती-(स्त्री०) [विलास+मतुप्, मस्य वः, ङीप्] रसिक स्त्री। स्वेच्छाचारिणी स्त्री।

विलासिका-(स्त्री०) [वि√लस्+ण्वुल्-टाप्, इत्व] एक प्रकार का रूपक जो एक ही अङ्क का होता है। इसमें प्रेमलीला ही दिखलायी जाती है।

विलासिन्-(वि०) [स्त्री०-विलासिनी] [वि√लस्+घिनुण्] विलास-युक्त; 'उपमानमभूद्विलासिनां करणं यत्तव कान्तिमत्तया' कु० ४.५। क्रीड़ाशील। इधर-उधर घूमने वाला। चमकीला। कामी। (पु०) रसिकजन। अग्नि। चन्द्रमा। सर्प। श्रीकृष्ण या विष्णु। शिव। कामदेव।

विलासिनी-(स्त्री०) [विलासिन्+ङीप्] सुंदरी युवती स्त्री, कामिनी। वेश्या, रंडी।

विलिप्त-(वि०) [वि√लिप्+क्त] पुता हुआ, लिपा हुआ।

विलीन-(वि०) [वि√ली+क्त] जो मिल गया हो; जैसे पानी में नमक। लगा हुआ, सटा हुआ, चिपटा हुआ। जड़ा हुआ। बैठा हुआ। उतरा हुआ। छिपा हुआ। नष्ट। मृत।

विलुञ्चन-(न०) [वि√लुञ्च्+ल्युट्] उखाड़ना। नोंचना। चीर डालना।

विलुण्ठन-(न०) [वि√लुण्ठ्+ल्युट्] लूटना। चोरी करना। लोटना।

विलुप्त-(वि०) [वि√लुप्+क्त] जिसका लोप हो गया हो। छिन्न। विदीर्ण। पकड़ा हुआ। अपहृत। लूटा हुआ। नाश किया हुआ, बरबाद किया हुआ। कमजोर किया हुआ, निर्बल किया हुआ।

विलुम्पक-(पु०) [वि√लुप्+ण्वुल्, मुम्] चोर। डाकू, लुटेरा।

विलुलित-(वि०) [वि√लुल्+क्त] इधर-उधर हिलाने वाला, प्रद्रुत, कांपने वाला। अव्यवस्थित किया हुआ, क्रम-भङ्ग किया हुआ।

विलून-(वि०) [वि√लू+क्त] काट कर अलग किया हुआ।

विलेखन-(न०) [वि√लिख्+ल्युट्] खरोंचना। छीलना। धारी करना। चिह्न बनाना। खोदना। उखाड़ना। फाड़ना। जोतना। विनाश करना।

विलेप-(पु०) [वि√लिप्+घञ्] शरीर आदि पर चुपड़ कर लगाने की चीज, लेप। पलस्तर, गारा।

विलेपन-(न०) [वि√लिप्+ल्युट्] लेप करने या लगाने की क्रिया। लेप। चन्दन, केसर आदि कोई भी सुगन्ध द्रव्य जो शरीर में लगाई जाय।

विलेपनी-(स्त्री०) [विलेपन+ङीप्] स्त्री जिसके शरीर पर सुगन्ध द्रव्य लगाये गये हों। सुवेशा स्त्री। चावल की कांजी।

विलेपिका, विलेपी-(स्त्री०) [विलेपी+कन्-टाप्, ह्रस्व] [विलेप+ङीप्] भात की माँड़ी।

विलेप्य-(वि०) [वि√लिप्+ण्यत्] जिसका लेप या पलस्तर किया जाय।

विलोकन-(न०) [वि√लोक्+ल्युट्] देखना। विचार करना। जांच करना। चितवन, अवलोकन। नेत्र।

विलोकित-(वि०) [वि√लोक्+क्त] देखा हुआ। जांचा हुआ। तलाशा हुआ। विचारा हुआ। (न०) चितवन। जाँच।

विलोचन-(न०) [वि√लोच्+ल्युट्] आँख, नेत्र।—**अम्बु (विलोचनाम्बु)**-(न०) आंसू।

विलोडन—(न०) [वि√लोड्+ल्युट्] हिलाना-डुलना, आन्दोलित करना। बिलोना, मथना।

विलोडित- (वि०) [वि√लोड्+क्त] हिलाया हुआ। बिलोया हुआ, मथा हुआ। (न०) माठा, तक्र।

विलोप—(पु०) [वि√लुप्+घञ्] किसी वस्तु को लेकर भाग जाने की क्रिया, लूट-पाट, अपहरण। अभाव। नाश।

विलोपन—(न०) [वि√लुप्+ल्युट्] काटना। ले भागना। नष्ट करना।

विलोभ—(पु०) [वि√लुभ्+घञ्] आकर्षण। प्रलोभन। बहकावा, फुसलावा।

विलोभन—(न०) [वि√लुभ्+णिच्+ल्युट्] लोभ दिलाने या लुभाने की क्रिया। बहकाने या फुसलाने की क्रिया। प्रशंसा। चापलूसी।

विलोम—(वि०) [स्त्री०-**विलोमी**] [विगत लोम यत्र, प्रा० ब०, अच्] विपरीत, उलटा। पिछड़ा हुआ, पीछे का। विपरीत क्रम से उत्पन्न किया हुआ।—**उत्पन्न,—ज,—जात,—वर्ण**-(वि०) विपरीत क्रम से उत्पन्न अर्थात् ऐसी माता से उत्पन्न जिसकी जाति उसके पति से ऊँची हो, ऊँची जाति की माता और माता की अपेक्षा हीन जाति के पिता से उत्पन्न सन्तान। (न०) रहट, कूप से जल निकालने का यंत्र विशेष। (पु०) विपरीत क्रम। कुत्ता। साँप। वरुण का नाम। —**क्रिया**-(स्त्री०),- **विधि**-(पु०) विपरीत क्रिया, वह क्रिया जो अन्त से आदि की ओर की जाय, उलटी ओर से होने वाली क्रिया।- **जिह्व**-(पु०) हाथी।

विलोमी—(स्त्री०) [विलोम+ङीष्] आँवला।

विलोल-(वि०) [विशेषेण लोल: प्रा०स०] हिलने-डुलने वाला, काँपने वाला, चंचल, 'पृषतीषु विलोलमीक्षितं' र० ८.५९। ढीला। अस्तव्यस्त। बिखरे हुए (बाल)।

विलोहित—(वि०) [विशेषेण लोहित: प्रा० स०] अत्यंत लाल। (पु०) रुद्र का नाम।

विल्ल—दे० 'बिल्ल'।

विल्व—दे० 'बिल्व'।

विवक्षा- (स्त्री०) [√वच्+सन्+अ—टाप्] बोलने की अभिलाषा। इच्छा, अभिलाषा। अर्थ, भाव। इरादा, अभिप्राय।

विवक्षित—(वि०) [√वच्+सन्+क्त] जिसके कहने की इच्छा हो। इच्छित, अपेक्षित। प्रिय।(न०) इरादा, अभिप्राय। भाव, अर्थ।

विवक्षु—(वि०) [√वच्+सन्+उ] बोलने या कोई बात कहने की इच्छा करने वाला; 'पुनर्विवक्षुः स्फुरितोत्तराधरः' कु० ५.८३

विवत्सा—(स्त्री०) [विगत: वत्सो यस्या:, प्रा० ब०]] वह गाय जिसका बछड़ा न हो।

विवध—(पु०) [विविधो विगतो वा वध: हननं गतिर्वा यत्र, प्रा० ब०] वह लकड़ी जो बैलों के कंधों पर, बोझ खींचने के लिये रक्खी जाती है, जुआ। भार ढोने की लकड़ी, बहँगी। राजमार्ग, आम रास्ता। बोझा। अनाज की राशि। घड़ा, जलकुंभ।

विवधिक—(पु०) [विवध+ठन्] बोझ ढोने वाला, कुली। फेरी लगाकर सौदागरी माल बेचने वाला, फेरी वाला।

विवर—(न०) [वि√वृ+अप्] छिद्र, बिल। गढ़ा, गर्त। गुफा, कन्दरा। निर्जन स्थान। दोष, ऐब। घाव। नौ की संख्या। विच्छेद। सन्धिस्थल।—**नालिका**-(स्त्री०) वंशी। नफीरी।

विवरण—(न०) [वि√वृ+ल्युट्] प्रकटन, प्रकाशन। उद्घाटन, खोलकर सब के सामने रखने की क्रिया। व्याख्या, टीका। सविस्तार वर्णन।

विवर्जन—(न०) [वि√वृज्+ल्युट्] परित्याग, त्याग करने की क्रिया।

विवर्जित—(वि०) [वि√वृज्+क्त] त्यागा हुआ, छोड़ा हुआ। अनावृत, उपेक्षित। वञ्चित, रहित। बाँटा हुआ। मना किया हुआ, निषिद्ध।

विवर्ण—(वि०) [विगतो विरुद्धो वा वर्णो यस्य, प्रा० ब०] रंगहीन, जिसका रंग बिगड़ गया हो। पानी उतरा हुआ। 'नरेन्द्र-मार्गाट्ट इव प्रपेदे विवर्णभावं स स भूमिपालः' र० ६.६७। नीच, कमीना। अज्ञानी, मूर्ख। (पु०) जाति-च्युत या नीच जाति का आदमी।

विवर्त—(पु०) [वि√वृत्+घञ्] चक्कर, फेरा। प्रत्यावर्तन, लौटाव। नृत्य, नाच। परिवर्तन। संशोधन। भ्रम। समूह। ढेर। —**वाद**-(पु०) वेदान्तियों का सिद्धान्त विशेष जिसके अनुसार ब्रह्म को छोड़ और सब मिथ्या है।

विवर्तन—(न०) [वि√वृत्+ल्युट्] परि-भ्रमण, चक्कर, फेरा। प्रत्यावर्तन। उतार, नीचे आने की क्रिया। प्रणाम, आदर-सूचक नमस्कार। भिन्न-भिन्न दशाओं या योनियों में होकर गुजरना। परिवर्तित दशा, बदली हुई हालत।

विवर्धन—(न०) [वि० √वृध्+ल्युट्] वृद्धि, बढ़ती, उन्नति। महोन्नति, समृद्धि। [वि√वृध्+णिच्+ल्युट्]बढ़ाने की क्रिया।

विवर्धित—(वि०) [वि√वृध्+णिच्+क्त] बढ़ाया हुआ। संतुष्ट।

विवश—(वि०) [वि√वश्+अच्] लाचार, बेबस, मजबूर। जो अपने को काबू में न रख सके। बेहोश 'विवशा काम-वधूर्विबोधिता' कु० ४.१। मृत। मृत्युकामी। मृत्यु से शङ्कित।

विवसन—(वि०) [विगतं वसनं यस्य, प्रा० ब०] नंगा, बिना वस्त्र का। (पुं०) जैन भिक्षुक।

विवस्वत्—(पुं०) विशेषेण वस्ते आच्छा-दयति, वि√वस्+क्विप्+मतुप्] सूर्य। अरुण। वर्तमान काल के मनु। देवता। अर्क, मदार।

विवह—(पु०) [वि√वह्+अच्] सात वायुओं में से एक। अग्नि की सप्त जिह्वाओं में से एक का नाम।

विवाक—(पु०) [विशिष्टो वाको यस्य, प्रा० ब०] न्यायाधीश।

विवाद—(पु०) [विरुद्धो वादः, वि√वद्+घञ्] किसी विषय या बात को लेकर वाक्कलह, वाग्युद्ध, झगड़ा। खण्डन, प्रति-वाद, मुकदमा, अभियोग। चीत्कार। आज्ञा। —**अर्थिन** (विवादार्थिन्)-(पु०) मुकदमेबाज। वादी, मुद्दई]—**पद**-(न०) जिसपर विवाद या झगड़ा हो, विवाद-युक्त विषय। —**वस्तु**-(न०) विवाद-ग्रस्त वस्तु।

विवादिन्—(वि०) [वि√वद् + णिनि वा विवाद+इनि] झगड़ालू, झगड़ने वाला। मुकदमेबाज। (पु०) स्वर जो विशेष अनुकूल न पड़ने के कारण कम आवे।

विवार—(पु०) [वि√वृ+घञ्] प्रस्फुटन, फैलाव। बाह्यन्तर प्रयत्नों में से एक, संवार का विपरीत।

विवास—(पु०), **विवासन**-(न०) [वि √वस्+णिच्+घञ्] [वि√वस्+णिच्+ल्युट्] निर्वासन, देशनिकाला।

विवासित—(वि०) [वि√वस्+णिच्+क्त] निकाला हुआ, देश से निकाल-बाहर किया हुआ।

विवाह—(पु०) [विशिष्ट वहनम्, वि√वह्+घञ्] शादी, परिणय, एक शास्त्रीय प्रथा जिसके अनुसार स्त्री और पुरुष आपस में दाम्पत्य-सूत्र में आबद्ध होते हैं। विवाह आठ प्रकार के माने गये हैं—आर्ष, ब्राह्म, दैव, प्राजापत्य, आसुर, गान्धर्व, राक्षस और पैशाच।

विवाहित—(वि०)[वि√वह्+णिच्+क्त] वह जिसका विवाह हो चुका हो, ब्याहा हुआ।

विवाह्य—(वि०) [वि√वह्+ण्यत्] ब्याह करने योग्य। (पुं०) दामाद, जामाता। वर।

विविक्त—(वि०) [वि√विच्+क्त] पृथक् किया हुआ। विजन, निर्जन, एकान्त। अकेला। पहचाना हुआ। विवेकी। पाप-रहित, विशुद्ध। (न०) निर्जन या एकान्त स्थल; 'विविक्तदेशसेवित्वम्'' भग०।

विविक्ता—(स्त्री०)[विविक्त+टाप्]अभागी स्त्री, दुर्भगा, वह स्त्री जो अपने पति की अरुचि का कारण हो।

विविग्न—(वि०) [विशेषेण विग्नः वि√विज्+क्त] अत्यन्त उद्विग्न या भयभीत।

विविध—(वि०) [विभिन्ना विधा यस्य, प्रा० ब०) बहुत प्रकार का, भाँति-भाँति का, अनेक तरह का।

विवीत—(पुं०) [विशिष्टं वीतं गवादि-प्रचारस्थानम् अत्र, प्रा० ब०] वह स्थान जो चारों ओर से घिरा हो, बाड़ा। चारागाह।

विवृक्त—(वि०) [वि√वृज्+क्त] त्यक्त, त्यागा हुआ, छोड़ा हुआ।

विवृक्ता—(स्त्री०) [विवृक्त+टाप्] विविक्ता स्त्री, स्त्री जिसे उसके पति ने छोड़ दिया हो।

विवृत—(वि०) [वि√वृ+क्त] प्रकटित, प्रदर्शित। प्रत्यक्ष, स्पष्ट। खोलकर सामने रक्खा हुआ। घोषित। टीका किया हुआ। व्याख्या किया हुआ। पसरा हुआ, फैला हुआ। विस्तृत। (न०)ऊष्मस्वरों के उच्चा-रण करने का एक प्रयत्न।—**अक्ष** (विवृताक्ष) (वि०) बड़ी आँखों वाला। (पुं०) मुर्गा। —द्वार—(वि०)खुले हुए फाटक वाला।

विवृति—(स्त्री०)[वि√वृ+क्तिन्]प्राकट्य। फैलाव, पसार। प्राविष्क्रिया। टीका, व्याख्या।

विवृत्त—(वि०)[वि√वृत्+क्त]घूमा हुआ। घूमने वाला, भ्रमणकारी।

विवृत्ति—(स्त्री०) [वि√वृत्+क्तिन्] चक्कर, भ्रमण। सन्धि-विश्लेष, सन्धि-भङ्ग।

विवृद्ध—(वि०) [वि√वृध्+क्त] बढ़ा हुआ, वृद्धि को प्राप्त। बहुत, विपुल, अधिक।

विवृद्धि—(स्त्री०) [वि√वृध्+क्तिन्] बाढ़, वृद्धि; 'विवृद्धिमत्राश्नुवते वसूनि' र. १३.४। समृद्धि।

विवेक—(पुं०) [वि√विच्+घञ्] भली-बुरी वस्तु का ज्ञान, सत्-असत् का ज्ञान। मन की वह शक्ति जिसके द्वारा भले-बुरे का ज्ञान हुआ करता है, भला-बुरा पहचानने की की शक्ति। समझ। विचार। सत्यज्ञान। प्रकृति और पुरुष की विभिन्नता का ज्ञान। जल-द्रोणी, पानी रखने का एक प्रकार का बरतन।—**ज्ञ**-(वि०) भले-बुरे का ज्ञान रखने वाला, विचारवान्।

विवेकिन्—(वि०) [विवेक+इनि] भले-बुरे की पहचान करने वाला। विचारवान्। (पुं०) निर्णायक, विचारकर्त्ता। दर्शन-शास्त्री।

विवेक्तृ—(पुं०) [वि√विच्+तृच्] न्यायाधीश। पण्डित। दर्शनशास्त्री।

विवेचन—(न०) **विवेचना**—(स्त्री०) [वि√विच्+ल्युट्] [वि√विच्+युच्—टाप्] विवेक, भली-बुरी वस्तु का ज्ञान। मीमांसा। निर्णय, फैसला। अनुसंधान। परीक्षा।

विवोढृ—(पुं०) [वि√वह्+तृच्] वर, दुल्हा।

विव्वोक—(पुं०) [वि√वा+ड, तस्य ओकः स्थानम्] स्त्रियों की एक शृंगार-चेष्टा जिसमें वे प्रिय के प्रति अनादर प्रकट करती हैं। 'विव्वोकस्त्वतिगर्वेण वस्तु-नीष्टेऽप्यनादरः।'—(साहित्य० ३, १३०)।

√विश्—तु० पर० सक० प्रवेश करना। जाना या आना। हिस्से में आना, बाँट में

पड़ना। बैठ जाना। बस जाना। घुसना। किसी कार्य को अपने हाथ में लेना। विशति, वेक्ष्यति, अविक्षत्।

विश्—(पु०) [√विश् + क्विप्] वैश्य, बनिया। मानव, मनुष्य। लोम। (स्त्री०) प्रजा, रैयत। कन्या। जाति।—**पण्य** (विड्-पण्य)–(न०) सौदागरी माल।—**पति** (विट्पति या विशांपति)–(पु०) राजा। प्रधान व्यापारी।

विश—(न०) [√विश् + क] मसींड़े के रेशे।—**आकर** (विशाकर)–(पु०) भड़-भूड़ नामक पौधा।—**कण्ठा**–(स्त्री०) बलाका, बगला।

विशङ्कट—(वि०) [स्त्री०—**विशङ्कटा, विशङ्कटी**] [वि+शङ्कटच्] विशाल, बहुत बड़ा या विस्तृत। भयानक।

विशङ्का—(स्त्री०) [विशिष्टा वा विगता शङ्का, प्रा० स०] आशंका, भय। शंका का अभाव।

विशद—(वि०) [वि√शद् + अच्] साफ, शुद्ध, स्वच्छ। उज्ज्वल, सफेद। चमकीला। सुन्दर। स्पष्ट, व्यक्त। शान्त; 'जातो ममायं विशदः प्रकामं प्रत्यर्पितन्यास इवान्तरात्मा' श० ४.२२। निश्चिन्त।

विशय—(पु०) [वि√शी + अच्] सन्देह, शक, अनिश्चय। आश्रय, सहारा।

विशर—(पु०) [वि√शॄ+अप्] वध, मार डालना। विदारण, फाड़ना।

विशल्य—(वि०) [विगतं शल्यं यस्मात्, प्रा० ब०] कष्ट और चिन्ता से रहित, निश्चिन्त।

विशसन—(न०) [वि√शस् + ल्युट्] हत्या। बरबादी। कटार, खाँड़ा। तलवार।

विशस्त—(वि०) [वि√शस् वा √शंस् +क्त] काटा हुआ। गँवार, शिष्टाचार-विहीन। प्रशंसित। प्रसिद्ध किया हुआ।

विशस्तृ—(पु०) [वि √शस् + तृच्] हत्या करने या बलि देने वाला व्यक्ति। चाण्डाल।

विशस्त्र—(वि०) [विगतं शस्त्रं यस्य, प्रा० ब०] हथियार से हीन, जिसके पास बचाव अथवा आत्मरक्षा के लिये कोई हथियार न हो।

विशाख—(पु०) [विशाखानक्षत्रे भवः, विशाखा+अण्, तस्य लुक्] कार्त्तिकेय का नाम। धनुष चलाने के समय एक पैर आगे और दूसरा उससे कुछ पीछे रखना। याचक, भिक्षु। तकुआ। शिव जी का नाम।—**ज**–(पु०) नारंगी का पेड़।

विशाखल—(पु०) [विशाख √ला+क] दे० 'विशाख' का दूसरा अर्थ।

विशाखा—(स्त्री०) [विशिष्टा शाखा प्रकारो यस्याः प्रा० ब०] १६वें नक्षत्र का नाम जिसमें दो तारे होते हैं।

विशाय—(पु०) [वि√शी + घञ्] पहरे-दारों का पारी-पारी से सोना।

विशारण—(न०) [वि√शॄ+णिच् (स्वार्थे) +ल्युट्] चीरना, दो टुकड़े करना। हनन, मारण।

विशारद—(वि०) [विशाल √दा + क, लस्य रः] चतुर, निपुण। पण्डित। प्रसिद्ध, प्रख्यात। हिम्मती, साहसी। (पु०) बकुल वृक्ष।

विशाल—(वि०) [वि + शालच्] बड़ा, महान्। लंबा-चौड़ा। प्रशस्त, चौड़ा। सम्पन्न। प्रसिद्ध। आदरणीय। कुलीन। (पु०) मृग विशेष। पक्षी विशेष।—**अक्ष** (विशालाक्ष)–(पु०) शिव।—**अक्षी** (विशालाक्षी)–(स्त्री०) पार्वती।

विशाला—(स्त्री०) [विशाल+टाप्] उज्जयिनी नगरी; 'पूर्वोद्दिष्टामनुसर पुरीं श्रीविशालां विशालाम्' मे० ३०। एक नदी का नाम।

विशिख—(वि०) [विगता शिखा यस्य, प्रा० ब०] चोटी-रहित, शिखा-हीन। जिसके सिर पर कलँगी हो। (पु०) तीर। नरकुल। तोमर, भाले की तरह का एक हथियार।

विशिखा—(स्त्री०) [विशिख + टाप्] फावड़ा। तकुआ। सुई या आलपिन। छोटा बाण। राजमार्ग, आम रास्ता। नाऊ की स्त्री, नाइन।

विशित—(वि०) [वि√शो+क्त] पैना, तीक्ष्ण।

विशिन—(न०) [√विश् + क, नि० साधुः] मन्दिर। मकान।

विशिष्ट—(वि०) [वि√शिष् वा √शास् +क्त] प्रसिद्ध, मशहूर। यशस्वी, कीर्तिशाली। जो बहुत अधिक शिष्ट हो। विलक्षण, अद्भुत। विशेषता-युक्त, जिसमें किसी प्रकार की विशेषता हो। (पु०) विष्णु। सीसा। **—अद्वैतवाद** (**विशिष्टाद्वैतवाद**)—(पु०) श्रीरामानुजाचार्य का एक प्रसिद्ध दार्शनिक सिद्धान्त। [इसमें ब्रह्म, जीवात्मा और जगत् तीनों मूलतः एक ही माने जाते हैं तथापि तीनों कार्य रूप में एक दूसरे से भिन्न तथा कतिपय विशिष्ट गुणों से युक्त माने गये हैं।]

विशीर्ण—(वि०) [वि√शॄ + क्त] टूटा फूटा। सड़ा हुआ। मुरझाया हुआ। गिरा हुआ। झुर्रियाया हुआ, झुर्री पड़ा हुआ। **—पर्ण**—(पु०) नीम का पेड़। **—मूर्ति**—(पु०) कामदेव का नाम।

विशुद्ध—(वि०) [वि√शुध् + क्त] साफ किया हुआ, शुद्ध किया हुआ। पाप-रहित। कलङ्कशून्य। ठीक, सही। धर्मात्मा, ईमानदार। विनम्र।

विशुद्धि—(स्त्री०) [वि√शुध् + क्तिन्] शुद्धता, पवित्रता; 'तदङ्गसंस्पर्शमवाप्य कल्पते ध्रुवं चिताभस्मरजो विशुद्धये' कु० ५.७९। सहीपन। भूल-संशोधन। समानता, सादृश्य।

विशूल—(वि०) [विगतं शूलं यस्य, प्रा० ब०] शूल-रहित। भाला-रहित, जिसके पास भाला न हो।

विशृङ्खल—(वि०) [विगता शृङ्खला यस्य, प्रा० ब०] जिसमें शृङ्खला न हो या न रह गई हो, शृङ्खला-विहीन। जो किसी प्रकार काबू में न लाया जा सके या दबाया अथवा रोका न जा सके। लंपट, दुराचारी।

विशेष—(वि०) [विगतः शेषो यस्मात्, प्रा० ब०] असाधारण, विलक्षण। विपुल, अधिक। (पु०) [वि √शिष् + घञ्] विशिष्टता, पहिचान। अन्तर, भेद। विलक्षणता। तारतम्य। अवयव, अंग; 'पुपोष लावण्यमयान् विशेषान्' कु० १.२५। प्रकार, तरह। वस्तु, पदार्थ। उत्तमता, उत्कृष्टता। श्रेणी, कक्षा। माथे पर का तिलक, टीका। विशेषण। साहित्य में एक प्रकार का पद्य जिसमें तीन श्लोकों या पदों में एक ही क्रिया रहती है अतः उन तीनों का एक साथ ही अन्वय होता है। वैशेषिक दर्शन के सप्त पदार्थों में से एक। **—उक्ति** (**विशेषोक्ति**)—(स्त्री०) काव्य में एक प्रकार का अलङ्कार इसमें पूर्ण कारण के रहते भी कार्य के न होने का वर्णन किया जाता है।

विशेषक—(वि०) [वि√शिष् + ण्वुल्] भेद स्पष्ट करने वाला। (पु०, न०) [विशेष +कन्] विशेषण। टीका, तिलक। चन्दन आदि से अनेक प्रकार की रेखाएँ बनाकर शृङ्गार करने की क्रिया। (न०) ऐसे तीन श्लोकों का समुदाय जिनका एक साथ ही अन्वय हो।

विशेषण—(वि०) [वि√शिष्+ल्यु] जिसके द्वारा विशेष्य निरूपण किया जाय, गुण, रूप आदि का बताने वाला। (न०) [वि √शिष्+ल्युट्] किसी प्रकार की विशेषता उत्पन्न करने वाला या बतलाने

वाला शब्द । अन्तर, भेद । व्याकरण में वह विकारी शब्द, जिससे किसी संज्ञा-वाची शब्द की कोई विशेषता अवगत हो या उसकी व्याप्ति सीमाबद्ध हो । लक्षण । किस्म, जाति ।

विशेषतस्—(अव्य०) [विशेष + तस्] खास करके, खास तौर पर ।

विशेषित—(वि०) [वि √शिष् + णिच् +क्त] जिसमें विशेषण लगा हो । जिसकी परिभाषा की गयी हो या जिसकी पहिचान बतलायी गयी हो । विशेषण द्वारा पहिचाना हुआ । उत्कृष्ट, उत्तम ।

विशेष्य—(वि०) [वि√शिष् + ण्यत्] गुण आदि द्वारा भेद बतलाने योग्य । मुख्य, प्रधान । (न०) (व्याकरण में) वह संज्ञा जिसके साथ कोई विशेषण लगा हो । वह संज्ञावाची शब्द जिसकी विशेषता विशेषण लगाकर प्रकट की जाय ।

विशोक—(वि०) [विगतः शोको यस्य यस्मात् वा, प्रा० ब०] शोक-रहित, सुखी । (पु०) अशोक वृक्ष ।

विशोका—(स्त्री०) [विशोक+टाप्] योग-शास्त्र के अनुसार संप्रज्ञात समाधि से पहले की चित्त-वृत्ति, ज्योतिष्मती । स्कन्द की एक माता ।

विशोधन—(न०) [वि √शुध् + ल्युट्] अच्छी तरह साफ करने की क्रिया । प्राय-श्चित्त । (पु०) [वि√शुध् + ल्यु] विष्णु ।

विशोधिन्—(वि०) [वि√शुध् + णिनि] बिलकुल शुद्ध या साफ करने वाला । विशुद्धि करने वाला ।

विशोध्य—(वि०) [वि √शुध् + ण्यत्] साफ करने योग्य । सही करने योग्य । (न०) ऋण, कर्जा ।

विशोषण—(न०) [वि√ शुष् + ल्युट्] सुखाने की क्रिया ।

विश्रणन, विश्राणन—(न०) [वि √श्रण् +ल्युट्] [वि √श्रण्+णिच् (स्वार्थे) +ल्युट्] दान; 'विश्राणनाच्चान्यपयस्विनीनां' र० २.५४ । भेंट । पुरस्कार ।

विश्रब्ध—(वि०) [वि√श्रम्भ् + क्त] जो उद्धत न हो, शान्त । जिसका विश्वास किया जाय । विश्वस्त । निर्भय, निडर । दृढ़, अच-ञ्चल । दीन । अत्यधिक, बहुत अधिक ।—**नवोढा**–(स्त्री०) वह नवोढा नायिका जिसे अपने पति पर थोड़ा-थोड़ा अनुराग और विश्वास होने लगा हो ।

विश्रम—(पु०) [वि√श्रम् + अप्] दे० 'विश्राम' ।

विश्रम्भ—(पु०) [वि√श्रम्भ् + घञ्] विश्वास । घनिष्ठता । गुप्त बात, रहस्य । विश्राम । प्रेमपूर्वक (कुशल) प्रश्न । प्रेम-कलह । हत्या ।—**आलाप** (विश्रम्भालाप) –(पु०),–**भाषण** (न०) गुप्त वार्तालाप ।—**पात्र**, (न०), —**भूमि** (स्त्री०),—**स्थान** (न०) विश्वस्त मनुष्य । विश्वसनीय पदार्थ ।

विश्रय—(पु०) [वि√श्रि + अच्] आश्रय । आश्रम ।

विश्रवस्—(पु०) पुलस्त्य ऋषि के पुत्र और रावण के पिता का नाम ।

विश्राणित—(वि०) [वि√श्रण् + णिच् +क्त] दत्त, दिया हुआ; 'निःशेषविश्राणितकोषजातं' र० ५.१ ।

विश्रान्त—(वि०) [वि √श्रम् + क्त] बंद किया हुआ । विश्राम किया हुआ । शान्त ।

विश्रान्ति—(स्त्री०) [वि √श्रम् + क्तिन्] विश्राम, आराम । अवसान ।

विश्राम—(पु०) [वि√श्रम्+घञ्] आराम । शान्ति । अंत । विराम । ठहरने का स्थान ।

विश्राव—(पु०) [वि√श्रु+घञ्] चुआव । बहाव । प्रसिद्धि, शोहरत ।

विश्रुत—(वि०) [वि√श्रु + क्त] प्रसिद्ध। प्रख्यात। प्रसन्न, आह्लादित। बहा हुआ। ध्वनित।

विश्रुति—(स्त्री०) [वि√श्रु + क्तिन्] प्रसिद्धि। बहता। नाना प्रकार का स्तव।

विश्लथ—(वि०) [विशेषेण श्लथ:, प्रा० स०] ढीला। खुला हुआ। सुस्त। थका हुआ।

विश्लिष्ट—(वि०) [वि√श्लिष् + क्त] खुला हुआ। अलग किया हुआ।

विश्लेष—(पुं०) [वि√श्लिष् + घञ्] अनैक्य। पार्थक्य। प्रेमियों या पति और पत्नी का बिछोह। अभाव, हानि। दरार।

विश्लेषित—(वि०) [वि √श्लिष् + णिच् +क्त] वियोजित, अलहदा किया हुआ।

विश्व—(न०) [विशति स्वकारणम्,√विश् +क्वन्] चौदह भुवनों का समूह, समस्त ब्रह्माण्ड। संसार, जगत्, दुनिया। सोंठ। बोलनामक गन्ध द्रव्य। (पुं०) देवताओं का एक गण जिसमें वसु, सत्य, क्रतु, दक्ष, काल, काम, धृति, कुरु, पुरूरवा और माद्रवा परिगणित हैं। (वि०) समग्र, सकल। प्रत्येक। सर्वव्यापक।—**आत्मन्** (**विश्वात्मन्**)– (पुं०) परमात्मा। ब्रह्मा। विष्णु। शिव।—**ईश**(**विश्वेश**),—**ईश्वर** (**विश्वेश्वर**) (पुं०) परमात्मा। विष्णु। **शिव**। —**कद्रु** (वि०) नीच, कमीना। (पुं०) ताजी या शिकारी कुत्ता। ध्वनि, शब्द।—**कर्मन्** (पुं०) विश्वकर्मा अर्थात् देवताओं का शिल्पी। सूर्य।—**कृत्** (पुं०) सृष्टिकर्ता। विश्वकर्मा का नामान्तर।—**केतु** (पुं०) अनिरुद्ध।—**गन्ध** (पुं०) लहसुन। (न०) लोबान, गुग्गुल। बोल नामक गंधद्रव्य।—**गन्धा** (स्त्री०) पृथिवी।—**जन** (न०) मानवजाति।—**जनीन**,—**जन्य** (वि०) मनुष्य-जाति मात्र के लिये भला या हितकर।—**जित्**– (पुं०) एक यज्ञ जिसमें सर्वस्व दक्षिणा में दे देना होता है। अग्नि का एक रूप। विष्णु। एक दानव। वरुण का पाश।—**देव** (**विश्वेदेव**) –(पुं०) [कर्म० स०, विभक्तेः अलुक्] अग्नि। एक देववर्ग। तेरह की संख्या। महापुरुष। एक असुर।—**धारिणी**–(स्त्री०) पृथिवी। —**धारिन्**–(पुं०) देवता विशेष—**नाथ**– (पुं०) विश्व का स्वामी। शिव। काशी के एक प्रसिद्ध ज्योतिर्लिङ्ग का नाम।—**पा**– (पुं०) ईश्वर। सूर्य। चन्द्रमा। अग्नि।—**पावनी**, —**पूजिता**–(स्त्री०) तुलसी।—**प्सन्**–(पुं०) देवता। सूर्य। चन्द्र। अग्नि। —**भुज्** (वि०) सब का भोग करने वाला। (पुं०) ईश्वर। इन्द्र।—**भेषज**–(न०) सोंठ। —**मूर्ति** –(वि०) सर्वरूपमय, सर्वव्यापी। —**योनि**–(पुं०) ब्रह्मा। विष्णु।—**राज्**, —**राज**–(पुं०) सार्वदेशिक अधिपति।—**रूप**– (वि०) सर्वव्यापी, सर्वत्र विद्यमान। (पुं०) विष्णु। (न०) काला अगर।—**रेतस्**–(पुं०) ब्रह्मा। विष्णु। —**वाह्** (स्त्री० =**विश्वौही**)–(वि०) सबको धारण करने वाला।—**सहा**– (स्त्री०) अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक। पृथिवी।—**सृज्**–(पुं०) सृष्टिकर्ता ब्रह्मा; 'प्रायेण सामग्र्यविधौ गुणानां पराङ्मुखी विश्वसृजः प्रवृत्तिः' कु० ३.२८।

विश्वङ्कर—(पुं०) [विश्वं सर्वं करोति प्रकाशयति, √कृ+ट, द्वितीयाया अलुक्] आँख, नेत्र।

विश्वतस्—(अव्य०) [विश्व + तसिल्] हर ओर, हर तरफ। हर जगह, सर्वत्र।—**मुख** (**विश्वतोमुख**) (वि०) हर ओर मुख वाला। (पुं०) परमेश्वर।

विश्वथा—(अव्य०) [विश्व + थाल्] सब प्रकार से, सभी तरह से।

विश्वम्भर—(वि०) [विश्वं बिभर्ति, विश्व √भृ+खच्, मुम्] सारे विश्व का पालन

या भरण करने वाला। (पुं०) परमात्मा। सर्वव्यापी परमेश्वर। विष्णु। इन्द्र।

विश्वम्भरा—(स्त्री०) [विश्वम्भर+टाप्] पृथिवी, धरा, मही; 'विश्वम्भरा भगवती भवतीमसूत' उत्त० १.९।

विश्वसनीय—(वि०) [वि √श्वस्+अनीयर्] विश्वास करने योग्य। विश्वास उत्पन्न करने की शक्ति रखने वाला।

विश्वस्त—(वि०) [वि√श्वस् + क्त] विश्वासपूर्ण। जिसका विश्वास किया जाय। निर्भय।

विश्वस्ता—(स्त्री०) [विश्वस्त + टाप्] विधवा।

विश्वाधायस्—(पुं०) [विश्वं दधाति, पालयति, विश्व√ धा + णिच्+असुन्, पूर्वदीर्घः] देवता।

विश्वानर—(पुं०) सविता। इंद्र। अग्नि के पिता। सब का नेता।

विश्वामित्र—(पुं०) [विश्वमेव मित्रम् अस्य, ब०, स०, विश्वस्याकारस्य दीर्घः] एक प्रसिद्ध ब्रह्मर्षि जो गाधिज, गाधेय और कौशिक भी कहलाते हैं। आयुर्वेद-पारदर्शी सुश्रुत के पिता का नाम।

विश्वावसु—(पुं०) [विश्वं वसु यस्य, विश्वेषां वसु यस्मात् वा, ब० स०, दीर्घ] अमरावती के रहने वाले एक गन्धर्व का नाम।

विश्वास—(पुं०) [वि√ श्वस्+घञ्] किसी के गुण आदि का निश्चय होने पर उसके प्रति उत्पन्न होने वाला मन का भाव, एतबार, यकीन। केवल अनुमान के आधार पर होने वाला मन का दृढ़ निश्चय। गुप्त सूचना।—**घात**, —**भङ्ग**—(पुं०) किसी के विश्वास के विरुद्ध की हुई क्रिया।—**घातिन्**—(पुं०) विश्वास-घातक, दगाबाज।

√विष्—जु० उभ० सक० घेरना। अक० छा जाना, व्याप्त हो जाना। मुठभेड़ होना। वेवेष्टि—वेविष्टे, वेक्ष्यति—ते, अविषत्—अविक्षत्—त।

विष्—(स्त्री०) [√विष्+क्विप्] विष्ठा, मल। व्याप्ति, फैलाव। लड़की।—**कारिका** (**विट्कारिका**)-(स्त्री०) पक्षी विशेष।—**ग्रह** (**विड्ग्रह**)-कोष्ठबद्धता, कब्जियत।—**चर** (**विट्चर**),—**वराह** (**विड्वराह**)-(पुं०) विष्ठा-भक्षी गाँव-शूकर।—**लवण** (**विड्लवण**)-(न०) साँचर नमक।—**सङ्ग** (**विट्सङ्ग**)-(पुं०) कब्जियत, कोष्ठबद्धता।—**सारिका**-(स्त्री०) एक तरह की मैना।

विष—(न०, पुं०) [√विष्+क] जहर। (न०) वत्सनाभ विष। जल; 'विषं जलधरैः पीतं मूर्च्छिताः पथिकाङ्गनाः' चं० ५.८२। कमल की जड़ अथवा भसीड़े के रेशे। गुग्गुल। बोल नामक गन्धद्रव्य।—**अक्त** (**विषाक्त**),—**दिग्ध**-(वि०) जहर मिला हुआ, विष-युक्त, जहरीला।—**अङ्कुर** (**विषाङ्कुर**)-(पुं०) भाला। विष में बुझा तीर।—**अन्तक** (**विषान्तक**)-(पुं०) शिव।—**अपह** (**विषापह**),—**घ्न**-(वि०) विष-नाशक।—**आनन** (**विषानन**),—**आयुध** (**विषायुध**),—**आस्य** (**विषास्य**)-(पुं०) सर्प।—**कुम्भ**-(पुं०) विष से भरा घड़ा।—**कृमि**-(पुं०) वह कीड़ा जो विष में पले।—**ज्वर**-(पुं०) भैंसा।—**द**-(पुं०) बादल। सफेद रंग। (न०) हीराकसीस। तूतिया।—**दन्तक**-(पुं०) साँप।—**दर्शन**,—**मृत्युक**,—**मृत्यु**-(पुं०) चकोर पक्षी।—**धर**-(पुं०) साँप।—**पुष्प**-(न०) नील कमल।—**प्रयोग**-(पुं०) विष देना, विष का व्यवहार या इस्तेमाल।—**भिषज्**,—**वैद्य**-(पुं०) विष उतारने की चिकित्सा करने वाला, साँप के काटे हुए का इलाज करने वाला।—**मन्त्र**-(पुं०) विष उतारने का मंत्र। सँपेरा, काल-बेलिया।—**वृक्ष**-(पुं०) जहरीला पेड़।

मूलर।—**शालूका**-(स्त्री०) कमल की जड़। —**शूक**,—**शृङ्गिन्**,—**सृक्वन्**-(पुं०) बर्रें, बरैंया।—**हृदय**-(वि०) दुष्ट हृदय वाला, मलिन मन वाला।

विषक्त—(वि०) [वि√सञ्ज्+क्त] मजबूती से गड़ा हुआ। दृढ़ता से चिपटा या सटा हुआ।

विषण्ड—(न०) [विशेषेण षण्डम्, प्रा० स०] कमल की जड़ के रेशे।

विषण्ण—(वि०) [वि√सद्+क्त] उदास, रंजीदा, विषाद-युक्त।—**मुख**,—**वदन**-(वि०) जिसके चेहरे से उदासी झलकती हो।

विषम—(वि०) [विगतो विरुद्धो वा समः प्रा० स०]जो सम या समान न हो, असमान; 'पथिषु विषमेष्वप्यचलता' मृ० ३.३। दो से पूरा-पूरा न बँटने वाला (अंक)। अनियमित, अव्यवस्थित। बहुत कठिन, रहस्यमय। अप्रवेश्य, दुष्प्रवेश्य। मोटा। तिरछा, बाँका। कष्टदायी, पीड़ाकारक। प्रचण्ड, विकट। भयानक, भय-प्रद। प्रतिकूल, विपरीत। अजीब, अनोखा। बेईमान। सविराम, अंतर देकर होने वाला (ज्वर आदि)। भिन्न। (पुं०) विष्णु। (न०) असमानता। अनोखापन। दुष्प्रवेश्य स्थान। गढ़ा, गर्त। सङ्कट, आपत्ति। एक अर्थालङ्कार जिसमें दो विरोधी वस्तुओं का संबन्ध वर्णन किया जाय या यथायोग्य का अभाव निरूपण किया जाय।—**अक्ष** (**विषमाक्ष**),—**ईक्षण** (**विषमेक्षण**), —**नयन**,—**नेत्र**,—**लोचन**-(पुं०) शिव जी के नामान्तर।—**अन्न** (**विषमान्न**)-(न०) अनियमित भोजन।—**आयुध** (**विषमायुध**), —**इषु** (**विषमेषु**),—**शर**-(पुं०) कामदेव। —**काल**-(पुं०) प्रतिकूल मौसम या ऋतु। —**चतुरस्र**,—**चतुर्भुज**-(पुं०) वह चौकोर क्षेत्र जिसके चारों कोन समान न हों, विषम कोणवाला चतुष्कोण।—**च्छद**-(पुं०) छतिवन का पेड़।—**ज्वर**-(पुं०) ज्वर विशेष, इसके चढ़ने का कोई समय नियत नहीं रहता और न तापमान ही सदा समान रहता है।— —**लक्ष्मी**-(पुं०) दुर्भाग्य, बदकिस्मती।

विषमित—(वि०) [विषम+क्विप्+क्त] विषम बनाया हुआ। ऊबड़-खाबड़। सङ्कुचित, सिकुड़ हुआ। कठिन या दुर्गम बनाया हुआ।

विषय—(पुं०) [विषिण्वन्ति स्वात्मकतया विषयिणं संबध्नन्ति, वि√सि + अच्, षत्व] ज्ञानेन्द्रियों द्वारा गृहीत होने वाले पदार्थ (रूप, रस, गंध, स्पर्श और शब्द)। सांसारिक व्यवहार। लौकिक आनन्द या मैथुन सम्बन्धी आनन्द। भोग; 'शैशवेऽभ्यस्तविद्यानां यौवने विषयैषिणाम्' र०१.८। वस्तु, पदार्थ। उद्देश्य। सीमा। अवकाश। विभाग। प्रान्त। क्षेत्र। प्रसङ्ग, विवेच्य या आलोच्य विषय। स्थान, जगह। देश। राज्य। आश्रम। ग्रामों का समूह। पाँच की संख्या। पति। वीर्य। धार्मिक कृत्य।—**अभिरति** (**विषयाभिरति**)-(पुं०) इन्द्रिय-सम्बन्धी भोगों के प्रति अनुरक्ति।—**आसक्त** (**विषयासक्त**), — —**निरत**-(त्रि०) विषय-भोग में लीन। —**सुख**-(न०) इन्द्रिय-सुख।

विषयायिन्—(पुं०) [विषयान् अयते प्राप्नोति, विषय√अय्+णिनि] कामी पुरुष। सांसारिक या संसार में फँसा हुआ आदमी। कामदेव। राजा। इन्द्रिय। जड़वादी।

विषयिन्—(वि०) [विषय+इनि] विषयासक्त, विलासी। (पुं०)संसारी पुरुष। राजा। कामदेव। विषय-वासना में फँसा हुआ आदमी। (न०) इन्द्रिय। ज्ञान।

विषल—(पुं०) विष।

विषह्य—(त्रि०) [वि√सह्+यत्] सहने योग्य, बरदाश्त करने योग्य। निर्णय करने या फैसला करने योग्य। सम्भव।

विषा–(स्त्री०) [विषम् नास्यत्वेन अस्ति अस्याः विष+अच्–टाप्] बुद्धि। कड़वी तरोई। काकोली। कलिंयारी। अतिविषा।

विषाण–(पुं०, न०) [√विष् + कानच्] सींग। मेढ़ासिंगी। शृंगवाद्य। शूकर। हाथी या गणेश का दाँत; 'न जातुर्वनायकमेकमुद्धृतं विषाणमद्यापि पुनः प्ररोहति' शि० १.६० केकड़े का पंजा। चोटी। मथानी। शिव के सिर पर की सींग जैसी जटा। चूचुक। तलवार।

विषाणिन्–(वि०) [विषाण+इनि] सींग या नोकदार दाँतों वाला। (पुं०) सींग या नोकदार दाँतों वाला कोई भी जानवर। हाथी। साँड़।

विषाणी–(स्त्री०) [विषाण+ङीप्] क्षीरकाकोली। वृश्चिककाली। इमली। आवर्तकी लता। चमरखा। केले का पेड़। सिंघाड़ा। विष।

विषाद–(पुं०) [वि√सद्+घञ्] उदासी, रंजीदगी। दुःख, शोक। नाउम्मेदी, नैराश्य। शिथिलता, दौर्बल्य। मूढ़ता, अज्ञता।

विषादिन्–(वि०) [विषाद+इनि] विषाद-युक्त, उदास, गमगीन।

विषार–(पुं०) [विष√ ऋ+अण्] साँप।

विषालु–(वि०) [विष+आलुच्] जहरीला।

विषु–(अव्य०) [√विष्+कु] दो समान भागों में। बराबर का। भिन्न रूप में। समान, सदृश।

विषुप–(न०) [विषु दिनरात्र्योः साम्यं पाति रक्षति, विषु√पा+क] ज्योतिष के अनुसार वह समय जब कि सूर्य विषुव रेखा पर पहुँचता है और दिन रात दोनों बराबर होते हैं।

विषुव–(न०) [विषु√वा+क] दे० 'विषुप'।–रेखा-(स्त्री०) ज्योतिष के कार्य के लिये कल्पित एक रेखा जो पृथिवी-तल पर उसके ठीक मध्य भाग में पूर्व-पश्चिम पृथिवी के चारों ओर खींची हुई मानी जाती है। यह रेखा दोनों मेरुओं के ठीक मध्य में और दोनों से समान अन्तर पर है।

विषूचिका–(स्त्री०) [विशेषेण सूचयति मृत्युम्, वि √सूच्+ण्वुल्, षत्व–टाप्, इत्व] हैजा।

√विष्क्–चु० आत्म० सक० वध करना। विष्कयते, विष्कयिष्यते, अविविष्कत। पर० देखना। विष्कयति, विष्कयिष्यति, अविविष्कत्।

विष्कन्द–(पुं०) [वि√स्कन्द् + घञ्, षत्व] छितराने या तितर-बितर करने की क्रिया। गमन।

विष्कम्भ–(पुं०) [वि√स्कम्भ्+अच्] रोक, रुकावट, अड़चन। अर्गल, किवाड़ का बेंड़ा या बिल्ली। छत का वह मुख्य शहतीर जिस पर छत रक्खी हो। खंभा, स्तम्भ। वृक्ष। नाटक का एक अङ्क जो प्रायः गर्भाङ्क के निकट होता है; जो दृश्य पहले दिखलाया जा चुका है अथवा जो अभी होने वाला है, उसकी इसमें मध्यम पात्रों द्वारा सूचना दी जाती है। वृत्त का व्यास। योगियों का एक प्रकार का बन्ध। प्रसार। लंबाई।

विष्कम्भक–(न०) [विष्कम्भ+कन्] दे० 'विष्कम्भ'।

विष्कम्भित–(वि०) [वि√स्कम्भ्+ क्त] अवरुद्ध, रोका हुआ, अड़चन डाला हुआ।

विष्कम्भिन्–(पुं०) [वि√स्कम्भ्+णिनि] शिव। एक तांत्रिक देवता। अर्गल, किवाड़ों का बेंड़ा।

विष्किर–(पुं०) [वि√ कॄ+क, सुट्, षत्व] छितराने या नख से कुरेदने की क्रिया। मुर्गा तीतर, बटेर की जाति के पक्षी।

विष्टप—(न०, पु०) [√विश्+कपन्, तुट्] विश्व, भुवन, लोक; 'कार्यं त्वयाणामपि विष्टपानाम्' कु० ३.२०। **हारिन्**-(वि०) विश्व को प्रसन्न करने वाला।

विष्टब्ध—(वि०) [वि√स्तम्भ्+क्त] दृढ़ता से जमाया या बँधा हुआ। भली-भाँति मबलित। समर्थित। रोका हुआ। गतिहीन किया हुआ, लकवा का मारा हुआ।

विष्टम्भ—(पु०) [वि√स्तम्भ् + घञ्] दृढ़तापूर्वक गाड़ने की क्रिया। रुकावट, अड़चन। मूत्र अथवा मल का अवरोध। लकवा। ठहरना, टिकाव।

विष्टर—(पु०) [वि√स्तृ+अप्, षत्व] बैठक (जैसे कुर्सी आदि)। कुशा का बना हुआ आसन; 'परिचेतुमुपांशु धारणां कुशपूतं प्रवयास्तु विष्टरं' र० ८.१८। कुशा का मुट्ठा। यज्ञ में ब्रह्मा का आसन। वृक्ष।—**श्रवस्**-(पु०) विष्णु या कृष्ण का नामान्तर।

विष्टि—(स्त्री०) [√विष्+क्तिन्]व्याप्ति। धंधा, पेशा। मजदूरी। बेगार। प्रेषण। नरक-वास।

विष्ठल—(न०) [विदूरं स्थलम्, प्रा० स०, षत्व] दूर का स्थान।

विष्ठा—(स्त्री०) [विविधप्रकारेण तिष्ठति उदरे, वि√स्था+क, षत्व,—टाप्] मल, मैला, पाखाना। पेट, उदर।

विष्णु—(पु०) [√विष् (व्याप्त होना)+नुक्] परब्रह्म का नामान्तर, सर्वप्रधान देव, जो सृष्टि के सर्वेसर्वा हैं। अग्नि। तपस्वी जन। एक स्मृतिकार, जिन्होंने विष्णु-स्मृति बनायी है। —**काञ्ची**-(स्त्री०) दक्षिण की एक नगरी का नाम। —**क्रम**-(पु०) विष्णु भगवान् का पाद-न्यास।—**गुप्त**-(पु०) प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ चाणक्य का असली नाम। —**तैल**-(न०) वैद्यक में बतलाया हुआ वातरोगों को नाश करने वाला तैल विशेष। —**दैवत्या**-(स्त्री०) चान्द्रमास के प्रत्येक पक्ष की एकादशी और द्वादशी तिथियाँ।—**पद**-(न०) आकाश। क्षीरसागर। कमल।—**पदी**-(स्त्री०) भागीरथी गङ्गा। वृष, कुंभ, वृश्चिक, सिंह आदि की संक्रान्तियाँ। द्वारिका पुरी।—**पुराण**-(न०) अष्टादश पुराणों में से एक सात्विक पुराण का नाम। —**प्रीति**-(स्त्री०) वह जमीन जो विष्णु भगवान् की सेवा-पूजा करने के लिये किसी ब्राह्मण को बिना लगान दान दे दी गयी हो।—**रथ**-(पु०) गरुड़ का नाम।—**रात**-(पु०) राजा परीक्षित्।—**लिङ्गी**-(स्त्री०) बटेर।—**लोक**-(पु०) वैकुण्ठधाम। —**वल्लभा**-(स्त्री) लक्ष्मी जी। तुलसी। अग्निशिखा।—**वाहन**, —**वाह्य**-(पु०) गरुड़ जी।

विष्पन्द—(पु०) [वि√स्पन्द्+घञ्, षत्व] सिसकन। धड़कन।

विष्फार—(पु०) [वि√स्फुर्+णिच्+ अच् उकारस्य आत्वम्]धनुष की टंकार। कम्पन।

विष्यन्द—(पु०) [वि√स्यन्द्+घञ्] क्षरण, बहाव।

विष्य—(वि०) [विषेण वध्यः, विष+यत्] विष देकर मार डालने योग्य।

विष्व—(वि०) अनिष्टकर, अपकारी।

विष्वच्, विष्वञ्च्—(वि०) [कर्त्ता, एकवचन, पु०—**विष्वङ्**, स्त्री०—**विषूची**, न०—**विष्वक्**] [विषुम् अञ्चति, विषु √अञ्च्+क्विन्] सर्वगत, सर्वव्यापी। भागों में पृथक् किया हुआ या करने वाला। विभिन्न। (न०) दे० 'विषुव'।—**सेन** (**विष्वक्सेन**)-(पु०) विष्णु भगवान् का नाम; 'विष्वक्सेनः स्वतनुमविशत्सर्वलोकप्रतिष्ठां' र० १५.१०३। एक मनु का नाम जो मत्स्यपुराण के अनुसार तेरहवें और विष्णु-पुराण के अनुसार चौदहवें हैं। शिव का नाम। एक प्राचीन ऋषि का नाम। —**०प्रिया**-(स्त्री०)लक्ष्मी जी का नामान्तर।

विष्वणन—(न०), **विष्वाण**-(पु०) [वि √स्वन्+ल्युट्, षत्वणत्वे] [वि√स्वन्+घञ्, षत्वणत्वे] भोजन करने की क्रिया।

विष्वद्र्यच्, विष्वद्र्यञ्च्—(वि०) [स्त्री०—विष्वद्रीची] [विष्वच्√ अञ्च्+क्विन्, अद्रि आदेश] सर्वगत, सर्वव्यापी।

√**विस्**—दि० पर० सक० त्यागना, छोड़ना। विस्यति, वेसिष्यति, अवेसीत्।

विस—दे० 'बिस'।

विसंयुक्त—[वि—सम्√युज्+क्त] असंयुक्त, पृथक्।

विसंयोग—(पु०) [वि—सम्√युज्+घञ्] अलगाव, असंयोग।

विसंवाद—(पु०) [वि—सम्√वद्+घञ्] छल, धोखा। प्रतिज्ञा-भङ्ग। नैराश्य। असङ्गति। विरोध, खण्डन।

विसंवादिन्—(वि०) [वि—सम्√वद्+णिनि वा विसंवाद+इनि] निराश करने वाला। धोखा देने वाला। असङ्गत, विरोधात्मक। भिन्न। असम्मत। छली, धोखेबाज।

विसंष्ठुल—(वि०) चंचल, आन्दोलित। असम, विषम।

विसङ्कट—(वि०) [विशिष्टः सङ्कटो यस्मात्, प्रा० ब०] भयानक, डरावना। (पु०) सिंह। इंगुदी का पेड़।

विसङ्गत—(वि०) [वि—सम्√गम्+क्त] अयोग्य, असङ्गत, बेमेल।

विसन्धि—(पु०) [विरुद्धो वा विगतः सन्धिः, प्रा० स०] कुसन्धि, सन्धि का अभाव।

विसर—(पु०) [वि√सृ+अप्] गमन, प्रस्थान, रवानगी। वृद्धि। भीड़-भड़क्का। झुंड। अत्यधिक परिमाण, ढेर।

विसर्ग—(पु०) [वि√सृज्+घञ्] प्रेरण। बहाव। प्रक्षेपण। भेंट। दान; 'आदानं हि विसर्गाय सतां वारिमुचामिव' र. ४.८६ छोड़ देना, त्याग कर देना। उत्सर्जन (जैसे मल-मूत्र का)। प्रस्थान। विछोह। मोक्ष, मुक्ति। दीप्ति, प्रभा। व्याकरणानुसार एक वर्ण जिसका चिह्न खड़े दो बिन्दु (:) होते हैं। सूर्य का दक्षिण अयन। लिङ्ग, जननेन्द्रिय।

विसर्जन—(न०) [वि√सृज्+ल्युट्] परित्याग, त्याग। दान। भेंट। मल का त्याग करना। छोड़ देना। बरखास्तगी। किसी देवता की बिदा, आवाहन का उलटा। वृषोत्सर्ग, सांड़ दाग कर छोड़ना।

विसर्जनीय—(वि०) [वि√सृज्+अनीयर्] दान करने योग्य, त्यागने योग्य।] (पु०) एक प्रकार का संकेत, विसर्ग।

विसर्जित—(वि०) [वि√सृज् + क्त] प्रेरित। दत्त। छोड़ा हुआ, त्याग किया हुआ। प्रेषित, भेजा हुआ। बरखास्त किया हुआ।

विसर्प—(पु०) [वि√सृप् + घञ्] रेंगना। सरकना। इधर-उधर घूमना। फैलना। किसी कर्म का अनाश्रित और अनपेक्षित परिणाम। रोग-विशेष जिसमें ज्वर के साथ-साथ सारे शरीर में छोटी-छोटी फुंसियाँ हो जाती हैं, सूखी खुजली।—**घ्न**—(न०) मोम।

विसर्पण—(न०) [वि√ सृप् + ल्युट्] रेंगना। धीमी चाल से चलना। व्याप्ति, प्रसार। स्थान-त्याग। फोड़े का स्फोट।

विसर्पि—(पु०), **विसर्पिका**-(स्त्री०) [वि √सृप्+इन्] [वि √सृप् + ण्वुल्—टाप्, इत्व] विसर्प रोग, सूखी खुजली।

विसल—दे० 'बिसल'।

विसार—(पु०) [वि√सृ + घञ्] व्याप्ति, फैलाव। रेंगना। मछली। (न०) [वि √सृ + ण] काठ, लकड़ी। शहतीर, लट्ठा।

विसारिन्—(वि०) [स्त्री०—**विसारिणी**] [वि√सृ+णिनि] फैलने वाला। निकलने वाला। चलने वाला। (पु०) मछली।

विसिनी—दे० 'बिसिनी'।

विसूचिका—(स्त्री०) [विशेषेण सूचयति मृत्युम्, वि√सूच् + अच्—ङीप् + कन् —टाप्, ह्रस्व] हैजा।

विसूरण—(न०), **विसूरणा**-(स्त्री०) [वि √सूर्+ल्युट्] [वि√सूर् + णिच्—युच् —टाप्] कष्ट, शोक। चिंता। विरक्ति।

विसूरित—(न०) [वि√सूर् + क्त] पश्चात्ताप, पछतावा, परिताप।

विसूरिता—(स्त्री०) [विसूरित+टाप्] ज्वर।

विसृत—(वि०) [वि√सृ + क्त] फैला हुआ, छाया हुआ, व्याप्त। आगे बढ़ा हुआ। उच्चारित।

विसृत्वर—(वि०) [स्त्री०—**विसृत्वरी**] [वि√सृ + क्वरप्, तुक्] फैलने, व्याप्त होने वाला; 'विसृत्वरैरम्बुरुहां रजोभिः' शि० ३.११। रेंगने वाला।

विसृमर—(वि०) [वि √सृ + क्मरच्] फैलने वाला। रेंगने वाला। चलने वाला।

विसृष्ट—(वि०) [वि√सृज् + क्त] प्रेरित। त्यक्त। रचा हुआ। बहाया हुआ। फेंका हुआ। भेजा हुआ। निकाला हुआ, बरखास्त किया हुआ। दिया हुआ।

विस्त—दे० 'बिस्त'।

विस्तर—(पुं०) [वि√स्तृ + अप्] प्रसार, फैलाव। विस्तृत विवरण; 'अङ्गुलिमुद्राविगमं विस्तरेण श्रोतुमिच्छामि' मु० १। व्याप्ति। विपुलता, बहुत्व। समूह। संख्या। आधार। बैठकी, पीढ़ा। प्रणय।

विस्तार—(पुं०) [वि√स्तृ + घञ्] लंबे-चौड़े होने का भाव। फैलाव। बढ़ाव, वृद्धि। ब्योरा। वृत्त का व्यास। झाड़ी। पेड़ की डाली या शाखा जिसमें नये पत्ते लगे हों।

विस्तीर्ण—(वि०) [वि√स्तॄ+क्त] विस्तृत, दूर तक फैला हुआ। लंबा-चौड़ा, विशाल। बहुत अधिक। **—वर्ण**-(न०) मानकन्द।

विस्तृत—(वि०) [वि√स्तृ + क्त] विस्तारयुक्त। व्याप्त, फैला हुआ। विशाल, बहुत बड़ा। यथेष्ट विवरण वाला।

विस्तृति—(स्त्री०) [वि √स्तृ + क्तिन्] फैलाव, विस्तार। व्याप्ति। लंबाई-चौड़ाई। ऊँचाई या गहराई। वृत्त का व्यास।

विस्पष्ट—(वि०) [विशेषेण स्पष्टः, प्रा० स०] अत्यंत स्पष्ट या व्यक्त, सुस्पष्ट। प्रत्यक्ष, प्रकाशित, जाहिर।

विस्फार—(पुं०) [वि √स्फुर् + घञ्, उकारस्य आकारः] कंपन। स्फूर्ति, तेजी। धनुष की टंकार। विस्तार। विकाश।

विस्फारित—(वि०) [विस्फार + इतच्] कंपित, थरथराता हुआ। टंकोरा हुआ। खींचा हुआ, ताना हुआ। प्रदर्शित, दिखलाया हुआ। स्फूर्ति-युक्त।

विस्फुरित—(वि०) [वि √स्फुर् + क्त] कम्पित, चञ्चल। सूजा हुआ, फूला हुआ।

विस्फुलिङ्ग—(पुं०) [वि√स्फुर् + डु =विस्फु तादृशं लिङ्गम् अस्ति यस्य] चिनगारी, अग्निकण। एक प्रकार का विष।

विस्फूर्जथु—(पुं०) [वि √स्फूर्ज् +अथुच्] गर्जन, दहाड़। बादल की गड़गड़ाहट। लहरों का उत्थान; 'महोर्मिविस्फूर्जथुनिविशेषाः' र० १३.१२।

विस्फूर्जित—(न०) [वि √स्फूर्ज् + क्त] गर्जन। स्फुटन। सिकुड़न। परिणाम। (वि०) शब्दायमान। स्फुटित। कंपित।

विस्फोट—(पुं०) [वि√स्फुट् + घञ्] फटना, फूट पड़ना। [वि√स्फुट्+अच्] फोड़ा। गुमड़ा। चेचक, माता की बीमारी।

विस्मय—(पुं०) [वि √स्मि + अच्] आश्चर्य, ताज्जुब। अद्भुत रस का एक स्थायी भाव। (यह अनेक प्रकार के अलौकिक अथवा विलक्षण पदार्थों के वर्णन करने या सुनने से मन में उत्पन्न होता है।) अभिमान, अहङ्कार। सन्देह, शक। **—आकुल**

(विस्मयाकुल), — आविष्ट (विस्मयाविष्ट)–(वि०) विस्मित, आश्चर्य-चकित।

विस्मयङ्गम—(वि०) [विस्मयं गच्छति, विस्मय√गम्+खश्, मुम्] आश्चर्यान्वित।

विस्मरण—(न०) [वि √ स्मृ + ल्युट्] विस्मृति, याद या स्मरण का न रहना, भूल जाना।

विस्मापन—(वि०) [स्त्री०—विस्मापनी] [वि√स्मि + णिच्, आत्व, पुक्+ल्यु] आश्चर्य में डालने वाला, विस्मय-जनक। (पु०) कामदेव। बाजीगर। कुहक, माया। (न०, पु०) गन्धर्व-नगर। (न०) [वि √स्मि + णिच्, आत्व, पुक्+ल्युट्] आश्चर्य में डालना। अचंभे में डालने का साधन।

विस्मित—(वि०) [वि √स्मि + क्त] चकित, आश्चर्य में पड़ा हुआ।

विस्मृत—(वि०) [वि√स्मृ + क्त] भूला हुआ, जो स्मरण न हो।

विस्मृति—(स्त्री०) [वि√स्मृ + क्तिन्] विस्मरण, भूल जाना।

विस्मेर—(वि०) [वि√स्मि +रन्] चकित, आश्चर्यान्वित।

विस्र—(न०) [√विस् + रक्] मुर्दा जलने की गंध। कच्चे मांस की गन्ध। बड़ी मूली। —**गन्धि**-(पु०) हरताल।

विस्रंस—(पु०) [वि√स्रंस् + घञ्] पतन। क्षरण। क्षय। ढीलापन। निर्बलता, कमजोरी।

विस्रंसन—(न०) [वि√स्रंस् + ल्युट्] पतन। बहाव। ढीलापन; 'नीविविस्रंसनः करः'। रेचन।

विस्रब्ध—(वि०) [वि√स्रम्भ् + क्त] विश्वस्त। निर्भीक। शांत। धीर। दृढ़। विनम्र। अतिशय।

विस्रम्भ—(पु०) [वि √ स्रम्भ् + घञ्] विश्वास। प्रेम। केलि-कलह। हत्या।

विस्रसा—(स्त्री०) [वि√स्रंस् + क—टाप्] जीर्णता। निर्बलता। बुढ़ापा।

विस्रस्त—(वि०) [वि√स्रंस् + क्त] बिखरा हुआ। ढीला किया हुआ। कमजोर, निर्बल।

विस्रव, विस्राव—(पु०) [वि√ स्रु+अप्] [वि√स्रु+घञ्] क्षरण, बहाव। धारा।

विस्रावण—(न०) [वि√स्रु + णिच्+ल्युट्] बहाना। रक्त बहाना। अर्क चुआना। गुड़ की बनी एक तरह की शराब।

विस्रुति—(स्त्री०) [वि√स्रु + क्तिन्] क्षरण, बहाव।

विस्वर—(वि०) [विरुद्धः विगतो वा स्वरो यस्य, प्रा० ब०] बेसुरा।

विहग—(पु०) [विहायसा गच्छति, विहायस् √गम्+ड, विहादेश] पक्षी। बादल। तीर। सूर्य। चन्द्रमा। ग्रह।

विहङ्ग—(पु०) [विहायसा गच्छति, विहायस्√गम् +खच्–डित्व, मुम्, विहादेश] पक्षी। बादल। तीर। सूर्य। चन्द्रमा।—**इन्द्र** (विहङ्गेन्द्र),—**ईश्वर** (विहङ्गेश्वर), —**राज**-(पु०) गरुड़ जी।

विहङ्गम—(पु०) [विहायसा गच्छति, विहायस्√गम्+खच्, मुम्, विहादेश] पक्षी; मदकलोदकलोलविहङ्गमाः' र० ९.२७। सूर्य।

विहङ्गमा, विहङ्गिका—(स्त्री०) [विहङ्गम+टाप्] [विहङ्ग + कन् — टाप्, इत्व] मादा चिड़िया। बहँगी, वह लकड़ी जिसके दोनों सिरों पर बोझ बांध कर लटकाया जाता है।

विहत—(वि०) [वि√हन्+क्त] सम्पूर्णतया आहत, वध किया हुआ। विरोध किया हुआ, रोका हुआ, अटकाया हुआ।

विहति—(पु०) [वि√हन्+क्तिन्] सखा, सहचर। (स्त्री०) [वि√हन्+क्तिन्] वध करना। प्रहार करना। असफलता, नाकामयाबी। पराजय, हार।

विहनन—(न०) [वि√हन्+ल्युट्] ताड़न। मारण। चोट। अनिष्ट। अड़चन, रुकावट। धुनकी।

विहर—(पुं०) [वि√हृ+अप्] हटाना, ले जाना। बिछोह, वियोग।

विहरण—(न०) [वि√हृ+ल्युट्] हटाने या ले जाने की क्रिया। चहलकदमी, हवाखोरी, सैर-सपाटा। आमोद-प्रमोद, मनोरंजन।

विहर्तृ—(वि०) [वि√हृ+तृच्] विहरण करने वाला। (पुं०) लुटेरा।

विहर्ष—(पुं०) [विशिष्टो हर्षः प्रा० स०] बड़ा आनन्द, आह्लाद।

विहसन, विहसित—(न०) **विहास**-(पुं०) [वि√हस्+ल्युट्][वि√हस्+क्त] [वि √हस्+घञ्] मुसक्यान, मुसकुराहट, मन्द हास।

विहस्त—(वि०) [विगतः हस्तो यस्य, प्रा० ब०] हाथ-रहित। घबड़ाया हुआ। व्याकुल। अशक्त। अननुभवी। [विशिष्टः हस्तो यस्य] विद्वान्, पण्डित।

विहा—(अव्य०) [वि√हा+आ (नि०)] स्वर्ग, विहिश्त।

विहापित—(वि०) [वि√हा+णिच्, पुक् +क्त] छुड़ाया हुआ, वियोग कराया हुआ। देने के लिये विवश किया हुआ। (न०) दान। उपहार।

विहायस्—(पुं०), न०[वि√हय् + असुन्, नि० वृद्धि] आकाश। (पुं०) पक्षी।

विहायस—(पुं०) [विहायस् + अच्] आकाश। पक्षी।

विहार—(पुं०) [वि√हृ+घञ्] हटाने या ले जाने की क्रिया। सैर-सपाटा, हवाखोरी, भ्रमण, विचरण। क्रीड़ा, आमोद-प्रमोद, 'विहारशैलानुगतेव नागैः' र० १६.२६। कदम बढ़ाना। उपवन, आमोद-वन। कंधा। जैन या बौद्ध मठ, संघाराम। मन्दिर। इन्द्र का प्रासाद या ध्वजा।—**गृह**-(न०) आमोद-भवन—**दासी**-(स्त्री०) क्रीड़ा-दासी।

विहारिका—(स्त्री०) बौद्ध मठ।

विहारिन्—(व०) [वि√हृ +णिनि] विहार करने वाला, आमोद-प्रमोद में व्यस्त।

विहित—(वि०) [वि√धा+क्त] किया हुआ, अनुष्ठित। सुव्यवस्थित। निश्चित। विधान किया हुआ। निर्माण किया हुआ, रचा हुआ। स्थापित। सम्पन्न किया हुआ। करने योग्य। विभाजित, बांटा हुआ। (न०) विधान, विधि। आदेश, आज्ञा।

विहिति—(स्त्री०) [वि√धा+क्तिन्] कृति, कार्य। विधान।

विहीन—(वि०) [वि√हा+क्त] त्यक्त, त्यागा हुआ। रहित, बगैर। कमीना, नीच।—**जाति**,—**योनि**-(वि०) नीच जाति में उत्पन्न, अकुलीन।

विहृत—(वि०) [वि√हृ+क्त] खेला हुआ, क्रीड़ा किया हुआ। विस्तृत। हटाया हुआ। (न०) (साहित्य में) रमणियों के दस प्रकार के स्वाभाविक अलङ्कारों में से एक।

विहृति—(स्त्री०) [वि√हृ+क्तिन्] हटाने या छीन लेने की क्रिया। क्रीड़ा, आमोद-प्रमोद। विस्तार।

विहेठक—(वि०) [वि√हेठ्+ण्वुल्] अपकारक। हिंसक।

विहेठन—(न०) [वि√हेठ्+ल्युट्] अपकार करना। रगड़ना, पीसना। सन्ताप। पीड़ा, क्लेश।

विह्वल—(वि०) [वि√ह्वल्+अच्] भय अथवा वैसे ही किसी अन्य कारण से जिसका जी ठिकाने न हो, घबड़ाया हुआ, व्याकुल। भयभीत, डरा हुआ। मति-भ्रष्ट। पीड़ित। उदास। गला हुआ। पिघला हुआ।

√वी—अ० पर० सक० जाना, गमन करना, समीप गमन करना, नजदीक जाना। लाना। फेंकना। खाना। प्राप्त करना। पैदा करना। अक० उत्पन्न होना। पैदा होना। चमकना। सुन्दर होना। व्याप्त होना। वेति, वेष्यति, अवैषीत्।

वीक–(पुं०) [√अज्+कन्, वी आदेश] पवन। पक्षी। मन।

वीकाश–(पुं०) [वि√काश्+घञ्, उपसर्गस्य दीर्घः] दे० 'विकाश'।

वीक्ष–(पुं०) [वि√ईक्ष्+अच्] दृष्टि। (न०) कोई भी दृश्य पदार्थ। आश्चर्य, अचरज।

वीक्षण–(न०) [वि√ईक्ष्+ल्युट्] विशेष रूप से देखना, निरीक्षण। नेत्र।

वीक्षा–(स्त्री०) [वि√ईक्ष्+अ–टाप्] अवलोकन। जाँच-पड़ताल। ज्ञान। बेहोशी।

वीक्षित–(वि०) [वि√ईक्ष्+क्त] अच्छी तरह देखा हुआ। (न०) अवलोकन।

वीक्ष्य–(वि०) [वि√ईक्ष्+ण्यत्] देखने योग्य, जो दिखलाई पड़े। (पुं०) नर्तक। अभिनेता। घोड़ा। (न०) कोई देखने योग्य या दिखलाई पड़ने वाला पदार्थ या वस्तु। आश्चर्य, अचंभा।

वीङ्खा–(स्त्री०) [वि√इङ्ख्+अ–टाप्–] गमन, गति। घोड़े की चालों में से एक चाल। नृत्य, नाच। सङ्गम, मिलन। केवाँच।

वीचि–(पुं०, स्त्री०) [√वे+डीचि] लहर, तरंग; 'समुद्रवीचीव चलस्वभावाः' पं० १.१९४। अविवेक। आनन्द। अवकाश। किरण। अल्पता। दीप्ति। —**मालिन्**-(पुं०) समुद्र।

वीची–(स्त्री०) [वीचि+ङीष्] दे० 'वीचि'।

√वीज्–चु० उभ० सक० पंखा करना। पंखा हाँक कर ठंडा करना। वीजयति–ते, वीजयिष्यति–ते, अवीविजत्–त।

वीज, वीजक, वीजल, वीजिक, वीजिन्, वीज्य–दे० 'बीज', 'बीजक', 'बीजल', 'बीजिक', 'बीजिन्', 'बीज्य'।

वीजन–(पुं०) [वि√ईज्+ल्यु] चक्रवाक। चकोर। पीला लोध। (न०) [√वीज्+ल्युट्] पंखा। पंखा झलने की क्रिया; 'तदनु ज्वलनं मदर्पितं त्वरयेर्दक्षिणवातवीजनैः' कु० ४.३६।

वीटा–(स्त्री०) [वि√इट्+क–टाप्] प्राचीन कालीन एक प्रकार का खेल गुल्ली-डंडा के ढंग पर।

वीटि, वीटिका, वीटी–(स्त्री०) [वि√इट्+इन्, स च कित्] [वीटि+कन्–टाप्] [वीटि+ङीष्] पान की बेल। पान का बीड़ा तैयार करने की क्रिया। बंधन, गाँठ। चोली की गाँठ।

वीणा–(स्त्री०) [वेति वृद्धिभावम् अपगच्छति, √वी+न, णत्व] बीन। बिजली। एक योगिनी। —**आस्य** (**वीणास्य**)-(पुं०) नारद जी का नाम। —**दण्ड**-(पुं०) वीणा का लंबा डंडा जो मध्य में होता है। —**वाद**,—**वादक**-(पुं०) वीणा बजाने वाला।

वीत–(वि०) [√वी+क्त वा वि√इ+क्त] अन्तर्धान हुआ। प्रस्थानित। गया हुआ। छोड़ा हुआ। ढीला किया हुआ। प्रवर्जित। पसंद किया हुआ। स्वीकृत किया हुआ। युद्ध के अयोग्य। पालतू। सीधा। रहित। (पुं०) घोड़ा या हाथी जो लड़ाई के काम के अयोग्य हो। (न०) हाथी को अंकुश से गोद कर और पैरों की मार से मारने की की क्रिया। —**दम्भ**-(वि०) विनम्र। —**भय**-(वि०) निर्भय, निःशङ्क। (पुं०) विष्णु का नामान्तर। —**मल**-(वि०) विशुद्ध। —**राग**-(वि०) कामनाशून्य। बिना रंग का। (पुं०) जितेन्द्रिय साधु। —**शोक**-(पुं०) अशोक वृक्ष।

वीतंस–(पुं०) [विशेषेण वहिरेव तस्यते भूष्यते, वि√तंस्+घञ्, उपसर्गस्य दीर्घः] पिंजड़ा या जाल जिसमें पक्षी या जानवर फँसाये जाते हैं। चिड़ियाघर। वह स्थान जहाँ शिकार पाले जायँ।

वीतन—(पुं०) [विशिष्टं तनोति, वि√तन्+अच्, पृषो० दीर्घ] गले के अगल-बगल के दोनों स्थान।

वीति—(पुं०) [√वी+क्तिच्] घोड़ा। (स्त्री०) [√वी+क्तिन्] गति, गमन। पैदायश, पैदावार। उपभोग। भोजन। चमक, आभा।—**होत्र**-(पुं०) अग्नि। सूर्य।

वीथि, वीथी—(स्त्री०) [विध्यते अनया, √विध्+इन्, पृषो० साधुः] [वीथि—ङीष्] मार्ग, रास्ता। पंक्ति, कतार। हाट। दूकान। दृश्य काव्य या रूपक के २७ भेदों में से एक। यह एक ही अङ्क का होता है और इसमें नायक भी एक ही होता है। इसमें आकाशभाषित और शृंगाररस का आधिक्य रहता है।

वीथिका—(स्त्री०) [वीथि+कन्—टाप्] मार्ग। चित्रशाला। कागज का तख्ता (जिस पर चित्र चित्रित किया जाता है।) भीत या दीवाल (जिस पर चित्र खींचा जाय); 'आर्यस्य चरितमस्यां वीथिकायामालिखितं' उत्त० १।

वीध्र—(वि०) [विशेषेण, इन्धते दीप्यते, वि√इन्ध्+रक्] स्वच्छ, साफ (न०) आकाश। पवन। अग्नि।

वीनाह—(पुं०) [वि√नह्+घञ्, उपसर्गस्य दीर्घः] कूप का ढकना या जँगला।

वीपा—(स्त्री०) विद्युत्, बिजली।

वीप्सा—(स्त्री०) [वि० √आप्+सन्, ईत्व+अ—टाप्] परिव्याप्ति। शब्द-द्विरुक्ति।

√वीर्—चु० आत्म० अक० पराक्रमी होना। वीरयते, वीरयिष्यते, अविवीरत।

वीर—(वि०) [अज्+रक्, अजेः वी आदेशः वा√वीर्+अच्] बहादुर, शूर। बलवान्। ताकतवर। (न०) नरकुल। काली मिर्च। काँजी। खस की जड़। (पुं०) शूरवीर, भट, योद्धा। वीर-भाव। एक रस (जिसके ४ भेद हैं—धर्मवीर, दानवीर, दयावीर, और युद्धवीर)। नट। अग्नि। यज्ञीय अग्नि। पुत्र। पति। अर्जुन। वृक्ष। विष्णु का नामान्तर।—**आशंसन** (**वीराशंसन**)—(न०) रखवाली, चौकसी। युद्ध में जोखों का पद। किसी सिपाही का जीवन से हाथ धो युद्ध में आगे जाना।—**आसन**(**वीरासन**)-(न०) बैठने का एक प्रकार का आसन या मुद्रा जिसका व्यवहार तांत्रिकों के साधनों में हुआ करता है। घुटना मोड़ कर बैठना। रणभूमि। वह स्थान जहाँ पहरेदार पहरा देता है, पहरा देने का स्थान।—**ईश** (**वीरेश**),—**ईश्वर** (**वीरेश्वर**) -(पुं०) शिवजी। बड़ा बहादुर।—**उज्झ** (**वीरोज्झ**)-(पुं०) वह ब्राह्मण जो अग्निहोत्र नहीं करता। —**कीट**-(पुं०) तुच्छ योद्धा।—**कुक्षि**-(स्त्री०) वीरपुत्र प्रसव करने वाली स्त्री। पुत्र पैदा करने वाली स्त्री।—**जयन्तिका**-(स्त्री०) रण-नृत्य। युद्ध।—**तरु**—(पुं०) अर्जुन वृक्ष।—**धन्वन्**-(पुं०) कामदेव।—**पान**, —**पाण**-(न०) वह पेय पदार्थ जो वीर लोग युद्ध का श्रम मिटाने के लिये पान करते हैं।—**प्रजायिनी**,—**प्रजावती**, —**प्रसवा**,—**प्रसविनी**,—**प्रसू**-(स्त्री०) वीर उत्पन्न करने वाली स्त्री, वीर-माता।—**भद्र**-(पुं०) शिवजी के एक प्रसिद्ध गण का नाम, जिसकी उत्पत्ति शिवजी की जटा से हुई थी। प्रसिद्ध भट। अश्वमेध यज्ञ के योग्य घोड़ा। एक प्रसिद्ध भट। अश्वमेध यज्ञ के योग्य घोड़ा। एक सुगन्धित घास।—**मुद्रिका**-(स्त्री०) पैर की बिछली।—उँगली में पहनी जाने वाली छल्ली।—**रजस्**-(न०) सिंदूर।—**रस**-(पुं०) नाटकों में वर्णित नव रसों में से एक। सामरिक भाव। **रेणु**-(पुं०) भीमसेन का नाम।—**वृक्ष**—(पुं०) अर्जुनवृक्ष। भिलावें का पेड़।—**सू**—दे० 'वीरप्रजायिनी'।—**सैन्य**-(न०) लहसुन।

स्कन्ध—(पुं०) भैंसा।—**हन्**(पुं०) वह ब्राह्मण जिसने यज्ञ करना त्याग दिया हो। विष्णु का नाम।

वीरण—(न०) [वि√ईर्+ल्यु] उशीर, खस। (पुं०) एक प्रजापति।

वीरणी—(स्त्री०) [वि√ईर्+ल्युट्, वीरण—ङीष्] कटाक्ष, तिरछी चितवन। गहरी जगह।

वीरतर—(पुं०) [वीर+तरप्] बड़ा शूर। तीर। (न०) उशीर, खस।

वीरन्धर— (पुं०) [वीर√धृ+खच्, मुम्] मयूर, मोर। पशुओं के साथ होने वाली लड़ाई। चमड़े की नीमस्तीन या जाकेट।

वीरवत्—(वि०) [वीर+मतुप्, मस्य वः] शूरों से परिपूर्ण।

वीरवती—(स्त्री०) [वीरवत्+ङीप्] वह स्त्री जिसका पति और पुत्र जीवित हों।

वीरा—स्त्री०) [वीर+टाप्] वीरपत्नी। पत्नी। माता। मुरा, मुरामासी। शराब। एलुवा। केला।

वीरुध्, वीरुधा—(स्त्री) [विशेषेण रुणद्धि अन्यान् वृक्षान्, वि√रुध्+क्विप्, पक्षे टाप्, उपसर्गस्य दीर्घः] फैलने वाली लता या बेल; 'अभिभूय विभूतिमार्तवीं मधुगन्धातिशयेन वीरुधां' र० ३६। अङ्कुर। डाली। एक पौधा जो जितना काटो उतना ही बढ़ता है या काटने पर ही बढ़ता है। झाड़ी।

वीर्य—(न०) [वीरे साधु, वीर+यत् अथवा वीर्यते अनेन, √वीर्+यत्] वीरता, पराक्रम, विक्रम। शक्ति, सामर्थ्य; 'स्ववीर्यगुप्ता हि मनोः प्रसूतिः' र० २.४। पुंस्त्व,जननशक्ति। स्फूर्ति, साहस। (किसी दवा का लाभकारी) गुण। धातु बीज। चमक, आभा। महिमा। मर्यादा।—**ज**-(पुं०) पुत्र।—**प्रपात**-(पुं०) वीर्य का क्षरण।

वीर्यवत्—(वि०) [वीर्य+मतुप्, मस्य वः] बलवान्, शक्तिशाली। पुष्ट। गुणकारी।

वीवध—(पुं०) [वि√वध्+घञ्, वृद्धयभाव, दीर्घ] बहँगी। बोझ। अनाज का ढेर। मार्ग, सड़क।

वीवधिक—(पुं०) [वीवध+ठन्] बहँगी वाला, भार-वाहक।

वीहार—(पुं०) [वि√हृ+घञ्, दीर्घ] दे० 'विहार'।

√वुञ्ज्—भ्वा० पर० सक० त्यागना। वुञ्जति, वुञ्जिष्यति, अवुञ्जीत्।

√वुष्ट्—चु० उभ० सक० वध करना। वुष्टयति-ते।

वुवूर्षु—(वि०) [√वृ+सन्+उ] चुनने का अभिलाषी।

वूर्ण—(वि०) [√वृ+क्त] चुना हुआ, छाँटा हुआ।

√वृ—भ्वा० पर० सक० छिपाना। वरति, वरिष्यति, अवार्षीत्। स्वा० उभ० सक० चुनना, छाँटना। विवाह करने के लिये छाँट कर पसंद करना। याचना करना, माँगना। वृणोति—वृणुते, वरि(री) ष्यति-ते, अवारीत्—अवरि(री)ष्ट—अवृत। क्र्या० आत्म० सक० विभक्त करना। वृणीते, वरि (री) ष्यते, अवरि (री) ष्ट—अवृत। चु० उभ० सक० ढकना, छिपाना। लपेटना। घेरना। रोकना, बचाना। अड़चन डालना। विरोध करना। वारयति——ते—वरति—ते, वारयिष्यति—ते, अववारत्—त, पक्षे स्वादिवत्।

√वृक्—भ्वा० आत्म० सक० ग्रहण करना, लेना, पकड़ना। वर्कते, वर्किष्यते, अवर्किष्ट।

वृक—(पुं०) [√वृ+कक् वा √वृक्+क] भेड़िया। साही। गीदड़, शृगाल। काक, कौवा। उल्लू। डाकू। क्षत्रिय। तारपीन। सुगन्ध पदार्थों का संमिश्रण। एक राक्षस का नाम। बकवृक्ष। उदरस्थ अग्नि-विशेष।—**अराति** (वृकाराति), —**अरि** (वकारि)-

(पुं०) कुत्ता ।—उदर (वृकोदर)-(पुं०) ब्रह्मा का नाम । भीम का नाम; 'उपपत्तिमदूर्जिताश्रयं नृपमूचे वचनं वृकोदरः' कि० २.१ ।—दंश- (पुं०) कुत्ता ।—धूप-(पुं०) तारपीन । कई खुशबूदार द्रव्यों से बना हुआ सुगन्ध पदार्थ विशेष ।—धूर्त- (पुं०) शृगाल ।—प्रेक्षिन्-(वि०) भेड़िये की तरह किसी चीज की ओर देखने वाला ।

वृक्क—(पुं०), वृक्का -(स्त्री०) हृदय । गुरदा ।

वृक्ण—(वि०) [√व्रश्च् + क्त] कटा या । फटा हुआ । टूटा हुआ ।

वृक्त—(वि०) [√वृज्+क्त] ऐंठा हुआ । फैलाया हुआ । साफ किया हुआ, शुद्ध किया हुआ ।

√वृक्ष्—भ्वा० आत्म० सक० पसंद करना, चुन लेना । ढाँकना । वृक्षते, वृक्षिष्यते, अवृक्षीत् ।

वृक्ष—(पुं०) [√व्रश्च् + स, कित्व] पेड़, रूख, पादप, विटप ।—अदन (वृक्षादन)- (पुं०) बढ़ई की छेनी । कुल्हाड़ी । रुमूला । अश्वत्थ का पेड़ । पियाल वृक्ष ।—अम्ल (वृक्षाम्ल)-(पुं०) आमड़ा ।—आलय (वृक्षालय)-(पुं०) पक्षी ।—आवास (वृक्षावास)-(पुं०) पक्षी । साधु ।—आश्रयिन् (वृक्षाश्रयिन्)-(पुं०) छोटी जाति का उल्लू ।—कुक्कुट-(पुं०) जंगली मुर्गा ।—खण्ड -(न०) कुञ्जवन ।— चर- (पुं०) वानर ।—धूप -(पुं०) तारपीन ।— नाथ—(पुं०) वट का वृक्ष ।— निर्यास-(पुं०) गोंद ।—पाक -(पुं०) वटवृक्ष ।—भिद्-(पुं०) कुल्हाड़ी ।—मर्कटिका -(स्त्री०) गिलहरी ।— वाटिका,—वाटी -(स्त्री०) बाग, बगिया ।—श -(पुं०) छिपकली ।—शायिका-(स्त्री०) गिलहरी । —सङ्कट-(न०) घने पेड़ों के बीच की पगडंडी ।

वृक्षक—(पुं०) [वृक्ष+कन्] छोटा वृक्ष । कुटज वृक्ष ।

√वृज्—अ० आत्म०, रु० पर०, चु० पर० सक० त्याग देना । पसंद करना, चुनना । प्रायश्चित्त करना । दण्ड देना । अ० वृक्ते, रु० वृणक्ति, वर्जिष्यति, अवर्जीत् । चु० वर्जयति–वर्जति ।

वृजन—(पुं०) [√वृज्+क्यु] केश । घुंघराले बाल । (न०) पाप । विपत्ति । आकाश । बाड़ा । घिरा हुआ भूखण्ड जो काश्तकारी या चरागाह के काम के लिये हो ।

वृजिन—(पुं०) [√वृज् + इनच्, कित्व] मुड़ा हुआ, टेढ़ा, दुष्ट, पापी । (न०) पाप; 'सर्वं ज्ञानप्लवेनैव वृजिनं सन्तरिष्यसि' भग० ४.३६ । पीड़ा, कष्ट (इस अर्थ में पुं० भी)। (पुं०) केश । घुंघराले केश । दुष्ट जन ।

√वृड्—तु० पर० सक० छिपाना । वृडति, वृडिष्यति, अवृडीत् ।

√वृण्—तु० पर० सक० प्रसन्न करना । वृणति, वणिष्यति, अवर्णीत् ।

√वृत्—भ्वा० आत्म० अक० विद्यमान होना । वर्तते, वर्तिष्यते–वर्त्स्यति, अवर्तिष्ट –अवृतत् । दि० आत्म० सक० वरण करना, चुनना । वृत्यते (पक्षे वावृत्यते), वर्तिष्यते, अवर्तिष्ट ।

वृत—(वि०) [√वृ+क्त] चुना हुआ, छाँटा हुआ । पर्दा पड़ा हुआ, ढका हुआ । घिरा हुआ । रजामंद । भाड़े पर उठाया हुआ । भ्रष्ट किया हुआ । सेवित ।

वृति—(स्त्री०) [√वृ + क्तिन्] चुनाव, छाँट । छिपाव, दुराव । याचना । विनय, प्रार्थना । घेरा । नियुक्ति ।

वृतिङ्कुर—(वि०) [वृति √कृ + ट, मुम्] घेरने वाला । (पुं०) विकङ्कत नामक वृक्ष ।

वृत्त—(वि०) [√वृत् + क्त] जीवित, वर्तमान। हुआ, घटित हुआ। पूर्णता को प्राप्त। कृत, किया हुआ। बीता हुआ, गुजरा हुआ। वर्तुल, गोल। मृत, मरा हुआ। दृढ़, मजबूत। अधीत, पढ़ा हुआ। (किसी से) निकला हुआ। प्रसिद्ध। (पु०) कछुआ। (न०) घटना। इतिहास। वृत्तान्त। संवाद, खबर। पेशा, धंधा। चरित्र, चाल-चलन। सच्चरित्र, अच्छा चाल-चलन। शास्त्रानुमोदित विधान, चलन, पद्धति। वह क्षेत्र जिसका घेरा या परिधि गोल हो, मंडल। वह गोल रेखा जिसका प्रत्येक विन्दु उसके भीतर के मध्य-विन्दु से समान अन्तर पर हो। छन्द।—**अन्त** (**वृत्तान्त**)-(पु०) अवसर, मौका। संवाद, समाचार, खबर। किसी बीती हुई घटना का विवरण, इतिहास, इतिवृत्त। कथा, कहानी। विषय, प्रसङ्ग। जाति, किस्म। तरीका, ढंग। दशा, हालत। सम्पूर्णता। विश्राम। भाव।—**इर्वारु** (**वृत्तेर्वारु**)-(पु०), —**कर्कटी**-(स्त्री०) खरबूजा।—**गन्धि**-(न०) वह गद्य जिसमें अनुप्रासों और समासों की अधिकता हो, वह गद्य जिसे पढ़ने से पद्य पढ़ने जैसा आनन्द प्राप्त हो।—**चूड**, —**चौल**-(वि०) वह जिसका मुण्डन संस्कार हो चुका हो।—**पुष्प**-(पु०) जलबेंत। सिरिस का पेड़। कदंब का पेड़। भूंइकदंब। सदागुलाब, सेवती। मोतिया। मल्लिका।—**फल**-(पु०) कैथा का पेड़। अनार का पेड़।—**शस्त्र**-(वि०) शस्त्र-चालन कला में पारदर्शी या पटु।

वृत्ति—(स्त्री०) [√वृत्+क्तिन्] अस्तित्व। परिस्थिति। दशा, हालत। क्रिया कर्म। तौर, तरीका। चाल-चलन, आचरण। धंधा। पेशा। जीविका, रोजी। मजदूरी, उजरत। सम्मानपूर्ण व्यवहार; 'कुरु प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने' श० ४.१८। व्याख्या, टीका। चक्कर, घुमाव। वृत्त या पहिये का व्यास या घेरा। सूत्रार्थ-विवरण, सूत्र के अर्थ का विशद रूप से व्यक्तीकरण। शब्द की वह शक्ति जिसके द्वारा वह किसी अर्थ को बतलाता या प्रकट करता है। (यह अर्थ-तीन प्रकार के माने गये हैं। यथा—अभिधात्मक, लक्षणात्मक, और व्यञ्जनात्मक)। वाक्य-रचना की शैली (शैली चार प्रकार-की मानी गयी है। यथा—कैशिकी, भारती, सात्त्वती और आरभटी। इनमें से शृङ्गार रस वर्णन के लिये कैशिकी-वृत्ति, वीर रस के लिये सात्त्वतीवृत्ति, रौद्र और बीभत्स रसों का वर्णन करने के लिये आरभटी वृत्ति तथा अवशेष रसों का वर्णन करने के लिये भारतीवृत्ति से काम लिया जाता है।)—**अनुप्रास** (**वृत्त्यनुप्रास**)-(पु०) पाँच प्रकार के अनुप्रासों में से एक प्रकार का अनुप्रास जो काव्य में एक शब्दालङ्कार माना गया है। इसमें एक अथवा अनेक व्यञ्जन वर्ण एक ही या भिन्न-भिन्न रूपों में बराबर व्यवहृत किये जाते हैं।—**उपाय** (**वृत्त्युपाय**)-(पु०) जीविका का जरिया या साधन।—**कर्षित**-(वि०) जीविका के अभाव से दुःखी।—**चक्र**-(न०) राजचक्र।—**च्छेद**-(पु०) किसी की जीविका का अपहरण।—**भङ्ग**-(पु०), —**वैकल्य**-(न०) जीविका का अभाव।—**स्थ**-(वि०) वह जो अपनी वृत्ति पर स्थित हो। सदाचारी, अच्छे चाल-चलन का। (पु०) गिरगिट। छिपकली।

वृत्र—(पु०) [√वृत् + रक्] पुराणानुसार त्वष्टा के पुत्र एक दानव का नाम, जो इन्द्र के हाथ से मारा गया था। बादल। अन्धकार। शत्रु। शब्द, ध्वनि। पर्वत विशेष।—**अरि** (**वृत्रारि**), —**द्विष्**,—**शत्रु**,—**हन्**-(पु०) इन्द्र की उपाधियाँ; 'कृद्धेऽपि पक्षच्छिदि वृत्रशत्रौ' कु० १.२०।

वृथा—(अव्य०) [√वृ + थाल्] व्यर्थ, बेफायदा, निरर्थक । अनावश्यकता से । मूर्खता से । गलती से । अनुचित रीति से । **—मति**- (वि०) वह जिसकी बुद्धि में मूर्खता भरी हो, मूर्ख ।**—लिङ्ग**-(वि०) -(वि०) जिसका कोई वास्तविक कारण न हो ।**—वादिन्**-(वि०) मिथ्याभाषी, झूठ बोलने वाला ।

वृद्ध—(वि०) [√वृध् + क्त] वृद्धि को प्राप्त, बढ़ा हुआ । पूर्ण रूप से वृद्धि को प्राप्त । बूढ़ा, बड़ी उम्र का । बड़ा । एकत्रित, ढेर किया हुआ । बुद्धिमान्, चतुर । (न०) शैलज नामक गन्ध-द्रव्य । (पु०) बूढ़ा आदमी; 'हैयङ्गवी नमादाय घोषवृद्धानु-पस्थितान्' र० १.४५ । सम्माननीय पुरुष । ऋषि । वंशधर, सन्तान । **—अङ्गुलि** (**वृद्धाङ्गुलि**)-(स्त्री०) पैर की बड़ी उँगली ।**—अरण्य** (**वृद्धारण्य**)-(पु०) वह स्थान जहाँ पुराणों की कथा सुनाई जाती है ।**—अवस्था** (**वृद्धावस्था**)-(स्त्री०) बुढ़ापा ।**—आचार** (**वृद्धाचार**)-(पु०) पुरानी रीति-रस्म ।**—उक्ष** (**वृद्धोक्ष**)-(पु०) बूढ़ा बैल ।**—काक**-(पु०) द्रोणकाक, पहाड़ी कौआ ।**—नाभि**-(वि०) तोंदिल ।**—भाव**-(पु०) बुढ़ापा । **—मत**-(न०) प्राचीन ऋषियों की आज्ञा । **—वाहन**-(पु०) आम का पेड़ ।**—श्रवस्**- (पु०) इन्द्र की उपाधि ।**—सङ्घ**- (पु०) वृद्धजनों की सभा ।**—सूत्रक**- (न०) कपास । इंद्रतूल, बुढ़िया का सूत ।

वृद्धा—(स्त्री०) [वृद्ध+टाप्] बुढ़िया स्त्री । अँगूठा । महाश्रावणिका ।

वृद्धि—(स्त्री०) [√वृध् + क्तिन्] बढ़ती । उन्नति । चन्द्रकलाओं की वृद्धि । सफलता । सौभाग्य । धन-दौलत, समृद्धि । ढेर । समुदाय । सूद । सूदखोरी । लाभ, मुनाफा । अण्डकोष की वृद्धि । शक्ति की वृद्धि । राजस्व की वृद्धि । वह अशौच या सूतक जो घर में सन्तान उत्पन्न होने पर लगता है, जननाशौच ।**—आजीव** (**वृद्ध्याजीव**)—**आजीविन्** (**वृद्ध्याजीविन्**)-(पु०) महाजन जो सूदखोरी का रोजगार करता है । **—जीवन** -(न०), **—जीविका**-(स्त्री०) सूदखोरी का धंधा या पेशा ।**—द**-(वि०) समृद्धिकारक ।**—पत्र**-(न०) चीरने का एक औजार ।**—श्राद्ध** -(न०) नान्दीमुख श्राद्ध, आभ्युदयिक श्राद्ध ।

√वृध्—भ्वा० आत्म० अक० बढ़ना, बड़ा हो जाना । फलना-फूलना । जारी रहना, चालू रहना । निकलना, चढ़ना (जैसे सूर्य इतना चढ़ आया) । बधाई देने का हेतु होना । वर्धते, वर्धिष्यते—वर्त्स्यति, अवृधत्—अवर्धिष्ट ।

वृधसान—(वि०) [√वृध् + असानच्, कित्व] वर्धनशील । (पु०) मनुष्य, मानव ।

वृधसानु—(पु०) [√वृध् + असानुच्, कित्व] मानव, मनुष्य । पत्ता, पत्र । क्रिया, कर्म ।

वृन्त—(न०) [√वृ + क्त, नि० मुम्] फल या पत्र का डंठल; 'वृन्ताच्छ्लथं हरति पुष्पमनोकहानाम्' र० १२.१०२ । घड़ौंची, घड़ा रखने की तिपाई । कुच की ढौंड़ी या अग्रभाग ।

वृन्ताक—(पु०), **वृन्ताकी**- (स्त्री०) [वृन्त √अक् + अण्] [वृन्ताक+ङीप्] भंटा या बैंगन का पौधा ।

वृन्तिका—(स्त्री०) [वृन्त + कन्—टाप्, इत्व] छोटा डंठल ।

वृन्द—(न०) [√वृ + दन्, नुम् गुणाभाव (नि०) समुदाय, समूह । ढेर, समुच्चय । सौ करोड़ की संख्या ।

वृन्दा—(स्त्री०) [वृन्द+टाप्] तुलसी। राधा।—**अरण्य** (वृन्दारण्य),—**वन**-(न०) मथुरा के सन्निकट एक प्रसिद्ध तीर्थ का नाम।—**वनी**-(स्त्री०) तुलसी।

वृन्दार—(वि०) [वृन्द √ हृ+अण्] अधिक। उत्तम, उत्कृष्ट। मनोहर, सुन्दर।

वृन्दारक—(वि०) [स्त्री०—वृन्दारका, वृन्दारिका] [वृन्द+आरकन्] अत्यधिक, बहुत ज्यादा। उत्कृष्ट। सुन्दर। मान्य, प्रतिष्ठित। (पु०) देवता। किसी वस्तु का मुख्य अंश।

वृन्दिष्ठ—(वि०) [अयम् एषाम् अतिशयेन वृन्दारकः, वृन्दारक+इष्ठन्, वृन्दादेश] सबसे अधिक बड़ा या लंबा। सबसे अधिक सुन्दर।

वृन्दीयस्—(वि०) [अयम् अनयोः अतिशयेन वृन्दारकः, वृन्दारक+ईयसुन्, वृन्दादेश] दो में से अपेक्षाकृत बड़ा। दो में से अपेक्षाकृत सुन्दर।

√वृश्—दि० पर० सक० वरण करना, चुनना। वृश्यति, वशिष्यति, अवृशत्।

वृश—(न०) [√वृश् + क] अडूसा। अदरक। (पु०) चूहा।

वृशा—(स्त्री०) [वृश+टाप्] एक प्रकार की ओषधि।

वृश्चिक—(पु०) [√वश्च् + किकन्] बिच्छू। वृश्चिक राशि। कनखजूरा, गोजर। केंकड़ा। एक कीड़ा जिसके शरीर पर बाल होते हैं। गोबर का कीड़ा। अगहन का महीना। मदन वृक्ष।

√वृष्—भ्वा० पर० सक० बरसना। देना। नम करना। वर्षति, वर्षिष्यति, अवर्षीत्। चु० आत्म० अक० उत्पन्न करने की शक्ति का होना। सक० शक्ति को रोकना। वर्षयते, वर्षयिष्यते, अववर्षत।

वृष—(पु०) [√ वृष् + क] साँड़, बैल; 'प्रसम्पदस्तस्य वृषेण गच्छतः' कु० ५.८०। वृष राशि। सर्वश्रेष्ठ (किसी समुदाय में)। कामदेव। बलिष्ठ आदमी। कामुक। शत्रु। मूसा। शिव का नंदी। न्याय। सत्कर्म। कर्ण का नाम। विष्णु का नाम। एक ओषधि। (न०) मोर का पंख।—**अङ्क** (वृषाङ्क)-(पु०) शिव जी। पुण्यात्मा जन। भिलावें का पेड़। हिजड़ा।—**अञ्चन** (वृषाञ्चन)-(पु०) शिव।—**अन्तक** (वृषान्तक)-(पु०) विष्णु।—**आहार** (वृषाहार)-(पु०) बिल्ली।—**उत्सर्ग** (वृषोत्सर्ग)-(पु०) किसी की मृत्यु होने पर बछड़े को दाग कर और उसे साँड़ बना छोड़ने की क्रिया।—**दंश**,—**दंशक**-(पु०) बिल्ली।—**ध्वज**-(पु०) शिव। गणेश। पुण्यात्मा जन।—**पति**-(पु०) शिव।—**पर्वा**-(पु०) एक दैत्य का नाम जिसकी बेटी शर्मिष्ठा को राजा ययाति ने ब्याहा था। बर्र।—**भासा**-(स्त्री०) इन्द्र और देवताओं का आवासस्थान अर्थात् अमरावती पुरी।—**लोचन**-(पु०) बिल्ली।—**वाहन**-(पु०) शिवजी का नाम।—**सृक्की**-(स्त्री०) भिड़, बर्र।

वृषण—(पु०) [√ वृष्+क्यु] अण्डकोष।

वृषणश्व—(पु०) इन्द्र के एक घोड़े का नाम। एक गंधर्व। एक वैदिक राजा।

वृषन्—(पु०) [√ वृष् + कनिन्] साँड़। वृषभ राशि। किसी श्रेणी या जाति का मुखिया। घोड़ा। कष्ट। पीड़ा का ज्ञान न होना। इन्द्र; 'वृषेव सीतां तदवग्रहक्षताम्' कु० ५.६१। कर्ण। अग्नि। सोम।

वृषभ—(पु०) [√वृष् + अभच्] साँड़। वृषभ राशि। किसी श्रेणी या जाति का मुखिया। कोई भी नर जानवर। एक प्रकार की ओषधि। हाथी का कान। कान का छेद।—**गति**,—**ध्वज**-(पु०) शिव जी।

वृषभी—(स्त्री०) [वृषभ+ङीष्] विधवा। गौ।

वृषल—(पु०) [√वृष् + कलच्] शूद्र। घोड़ा। गाजर। वह जिसे धर्म आदि का कुछ भी ध्यान न हो, दुष्टात्मा। पतित व्यक्ति। चन्द्रगुप्त का नाम जो चाणक्य ने रख छोड़ा था।

वृषलक—(पु०) [√वृषल + कन्] तिरस्करणीय शूद्र।

वृषली—(स्त्री०) [वृषल+ङीष्] वह कन्या जो रजस्वला हो गयी हो, पर जिसका विवाह न हुआ हो।—'पितुर्गेहे च या नारी रजः पश्यत्यसंस्कृता। भ्रूणहत्या पितुस्तस्याः सा कन्या वृषली स्मृता॥' रजस्वला स्त्री या वह स्त्री जो मासिक धर्म से हो। बाँझ स्त्री। मरी हुई सन्तान उत्पन्न करने वाली स्त्री। शूद्र जाति की स्त्री। —पति-(पु०) शूद्रा स्त्री का पति। —सेवन-(न०) शूद्रा स्त्री से संसर्ग।

वृषस्यन्ती—(स्त्री०) [वृष√क्यच्, सुक्+शतृ, नुम्—ङीप्] वह स्त्री जिसे पुरुष-समागम की लालसा हो। छिनाल औरत। उठी हुई या मस्त गाय।

वृषाकपायी—(स्त्री०) [वृषाकपेः पत्नी, वृषाकपि—ङीष्, ऐ आदेश] लक्ष्मी। गौरी। शची। अग्निपत्नी स्वाहा। सूर्यपत्नी। शतावर। जीवंती।

वृषाकपि—(पु०) [वृषः कपिः यस्य, ब० स०, पूर्वपददीर्घ, वा वृषं धर्मं न कम्पयति, √कम्प् + इन्, नलोप] सूर्य। विष्णु। शिव। इन्द्र। अग्नि।

वृषायण—(पुं०) शिव। गौरैया।

वृषिन्—(पु०) मयूर, मोर।

वृषी—(स्त्री०) दे० 'वृषी'।

वृष्ट—(वि०) [√वृष्+क्त] बरसा हुआ। वर्षा के रूप में गिरा हुआ।

वृष्टि—(स्त्री०) [√ वृष् + क्तिन्] वर्षा, मेघों से जल टपकना; 'आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः, मनु० ३.७६। वर्षा की तरह किसी चीज का बड़ी संख्या या परिमाण में गिरना। बौछार।—काल-(पु०) वर्षा ऋतु।—जीवन—(पु०) चातक, पपीहा।—भू—(पु०) मेढक।—संपात—(पु०) वर्षा का मूसलधार बरसना।

वृष्टिमत्—(वि०) [वृष्टि + मतुप्] बरसने वाला, वर्षणशील। (पु०) बादल।

वृष्णि—(वि०) [√वृष् + नि] पाखण्डी। क्रोधी। (पु०) बादल। मेढा। किरण। श्रीकृष्ण के एक पूर्वज का नाम। श्रीकृष्ण। इन्द्र। अग्नि।—गर्भ-(पु०) श्रीकृष्ण की उपाधि।

वृष्य—(वि०) [√वृष् + क्यप्] बरसने वाला। वीर्य और बल को बढ़ाने वाला। कामोद्दीपक। (पु०) उड़द की दाल। ऊख। ऋषभ नामक ओषधि। आँवला।

√**वृह्, वृहत्, वृहतिका**—दे० '√बृह्,' 'बृहत्', बृहतिका'।

वृहती—(स्त्री०) [√बृह् + अति—ङीप्] नारद की वीणा। छत्तीस की संख्या। चोगा, लबादा। वाणी। भटकटैया। कुण्ड (जैसे जल का)। छन्द विशेष।—पति-(पु०) बृहस्पति की उपाधि।

वृहस्पति—दे० 'बृहस्पति'।

√**वॄ**—क्र्या० उभ० सक० चुनना, छाँटना। वृणाति—वृणीते, वरि (री) ष्यति—ते, अवारीत्—अवरि (री) ष्ट—अवृष्ट। पर० सक० चुनना। वरण करना। वृणाति, वरि (री) ष्यति, अवारीत्।

√**वे**—भ्वा० उभ० सक० बुनना। लगाना, जमाना। सीना। बनाना। जड़ना। ओत-प्रोत करना। वयति-ते, वास्यति-ते, अवासीत्।

वेकट—(पु०) मसखरा, विदूषक। जौहरी। युवा पुरुष। माकुर मछली।

वेग—(पु०) [√विज् + घञ्] उत्तेजना । गति, रफ्तार । उद्योग, उद्यम । प्रवाह, बहाव । किसी काम को करने की दृढ़ प्रतिज्ञा । बल, शक्ति । फैलाव (जैसे विष का रक्त के साथ मिल कर सारे शरीर में फैल जाना । उतावली, जल्दबाजी । धनुष-बाण की लड़ाई । प्रेम, अनुराग । किसी आन्तरिक भाव का बाहर प्रकट होना । आनन्द, आह्लाद । शरीर में से मल-मूत्रादि के निकलने की प्रवृत्ति । वीर्य-पात । **—नाशन** –(पु०) श्लेष्मा, कफ । **—वाहिन्**–(वि०) तेज, फुर्तीला ।**—सर**–(पु०) खच्चर, अश्वतर ।

वेगिन्—(वि०) [स्त्री०—**वेगिनी**] [वेगः अस्ति अस्य, वेग+इनि] वेगयुक्त, तेज । उग्र । (पु०) हरकारा । बाज पक्षी ।

वेगिनी—(स्त्री०) [वेगिन्+ङीप्] नदी ।

वेङ्कट—(पु०) दक्षिण भारत का एक पर्वत वेंकटाचल ।

वेचा—(स्त्री०) [√विच् + अच्–टाप्] मजदूरी, पारिश्रमिक ।

वेड—(न०)[√विड्+अच्]चन्दन विशेष ।

वेडा—(स्त्री०) [वेड+टाप्] नाव, नौका ।

√वेण्, √वेन्—भ्वा० उभ० सक० जाना । जानना, पहचानना । सोचना, विचारना । लेना, ग्रहण करना । बाजा बजाना । वेण (न) ति-ते, वेणि (नि) ष्यति-ते, अवेणी (नी) त्–अवेणि(नि)ष्ट ।

वेण—(पु०) [√वेण् + अच्] मनु के अनुसार एक प्राचीन वर्णसङ्कर जाति, जिसकी उत्पत्ति वैदेहक माता और अम्बष्ठ पिता से मानी गयी है, गवैया जाति । सूर्यवंशी राजा पृथु के पिता का नाम ।

वेणा—(स्त्री०) [वेण+टाप्] कृष्णा नदी में गिरने वाली एक नदी का नाम ।

वेणि, वेणी—(स्त्री०) [√वेण् + इन् वा √वी+नि, पृषो० णत्व] [वेणि+ङीप्] केशों की चोटी, गुथी हुई चोटी । जल का प्रवाह, पानी का बहाव; 'जलवेणिरम्यां रेवां यदि प्रेक्षितुमस्ति कामः' र० ६.४३ । दो या अधिक नदियों का संगम । गङ्गा, यमुना और सरस्वती नदी का संगम । एक नदी का नाम ।— **बन्ध**–(पु०) गुथी हुई चोटी ।**—वेधनी** – (स्त्री०) जोंक, जलौका ।**—वेधिनी**– (स्त्री०) कंघी । **—संहार** – (पु०) चोटी बनाकर केशों को बांधने की क्रिया । नारायण भट्ट का बनाया संस्कृत का एक नाटक ।

वेणु—(पु०) बांस । नरकुल, सरपत । बंसी, नफीरी ।**—ज**–(पु०) बांस का बीज ।**—ध्म**–(वि०)नफीरी या बंसी बजाने वाला । **—निस्रुति**– (पु०) गन्ना, ऊख ।**—यव**–(पु०) बांस का बीज या चावल ।**—यष्टि**–(स्त्री०) बांस की छड़ी ।**—वाद, —वादक**– (पु०) बांसुरी बजाने वाला व्यक्ति ।**—विदल**(न०) बांस का फट्टा ।

वेणुक—(न०) [वेणु+कन्] वह अंकुश जिसमें बांस की मूठ हो ।

वेणुन—(न०) [√वेण् + उनन्] काली मिर्च ।

वेतण्ड, वेतन्ड—(पु०) हाथी ।

वेतन—(न०) [√वी+तनन्] वह धन जो किसी को कोई काम करते रहने के बदले में दिया जाता है, तनखाह, आजीविका ।**—अदान** (वेतनादान), **—अपाकर्मन्** (वेतनापाकर्मन्)– (न०) **अपाक्रिया** (वेतनापाक्रिया)-(स्त्री०)वेतन न चुकाना । वेतन न चुकाने पर वेतन वसूल करने के लिये किया गया उद्योग विशेष ।**—जीविन्**—(वि०) वेतन पर निर्भर करने वाला ।

वेतस—(पुं०) [√ वे+असच्, तुडागम] बेंत । जंबीरी, बिजौरा नीबू । अग्नि ।

वेतसी—(स्त्री०) [वेतस+ङीप्] बेंत ।

बेतस्वत्—(वि०) [स्त्री०—**बेतस्वती**] [बेतस+ड्मतुप्, मस्य वः] वह स्थान जहाँ बेतों का बाहुल्य हो।

बेताल—(पुं०) [√अज्+विच्, वी आदेश, √तल्+घञ्, कर्म० स०] एक भूतयोनि (जिसका शव पर अधिकार कहा जाता है)। शिव के गणों में से एक प्रधान गण। द्वारपाल, दरबान।

बेतृ—(वि०) [√विद् + तृच्] ज्ञाता, जानने वाला। (पुं०) ऋषि। विवाह में प्राप्त करने वाला, पति।

बेत्र—(पुं०) [√वी+त्र] बेंत। द्वारपाल के हाथ की छड़ी; 'वामप्रकोष्ठार्पितहेमवेत्रः' कु० ३.४१। **—आसन (बेत्रासन)**—(न०) बेंत का बना हुआ आसन। **—धर, —धारक**—(पुं०) द्वारपाल। आसाबरदारी, छड़ीबरदार।

बेत्रकीय—(वि०) [बेत्र+छ, कुक् आगम] बेंत का।

बेत्रवती—(स्त्री०) [बेत्र + मतुप्, वत्व —ङीप्] स्त्री द्वारपाल। बेतवा नदी का नाम।

बेत्रिन्—(पुं०) [बेत्र+इनि] द्वारपाल, दरबान। चोबदार।

√बेथ्—भ्वा० आत्म० सक० याचना करना, माँगना। बेथते, बेथिष्यते, अबेथिष्ट।

√बेद्—क० पर० अक० स्वप्न देखना। धूर्तता करना। बेदति।

बेद—(पुं०) [√विद्+घञ् वा अच्] ज्ञान। विशेषतः आध्यात्मिक विषय का सच्चा और वास्तविक ज्ञान। ऋक्, यजु, साम और अथर्ववेद। कुशों का मूठा। विष्णु का नामान्तर। **—अङ्ग (वेदाङ्ग)**-(न०) वेदाङ्ग छः हैं यथाः— शिक्षा, छंदस्, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष, कल्प। **—अधिगम (वेदाधिगम)**-(पुं०) वेदों का अध्ययन। **—अध्यापक (वेदाध्यापक)**-(पुं०) वेदों का पढ़ाने वाला। **अन्त (वेदान्त)** (पुं०) उपनिषद् और आरण्यक आदि वेद के अन्तिम भाग जिनमें आत्मा, परमात्मा और जगत् आदि का विषय वर्णित है। छः दर्शनों में से प्रधान वेदान्त दर्शन जिसमें एक मात्र ब्रह्म की पारमार्थिक सत्ता स्वीकार की गई है। **वेदान्तिन्**-(पुं०) [वेदान्तः अस्ति अस्य, वेदान्त+इनि] वेदान्त दर्शन का अनुयायी या मानने वाला, ब्रह्मवादी। **—आदि (वेदादि)**-(न०),—०**वर्ण**-(पुं०),—०**बीज**-(न०)प्रणव, ओम्। **—उक्त (वेदोक्त)** -(वि०) वेद-विहित। **—कौलेयक**-(पुं०) (पुं०) शिव जी। **—गर्भ**-(पुं०) ब्रह्मा। वेदविद् ब्राह्मण। **—ज्ञ**-(पुं०) ब्राह्मण जिसने वेद का अध्ययन किया हो। **—त्रय**-(न०),**—त्रयी**-(स्त्री०) ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद का समुच्चय। **—निन्दक**-(पुं०) नास्तिक। **—निन्दा**-(स्त्री०) वेद की बुराई। **—पारग**-(पुं०) वेद-विद्या में निष्णात ब्राह्मण। **—बाह्य**-(वि०) जिसका उल्लेख वेद में न हो, वेद-विरुद्ध। **—मातृ**-(स्त्री०) गायत्रीमंत्र या ऋचा। **—वचन, —वाक्य**—(न०)वैदिक मंत्र या ऋचा। **—वदन**-(न०) व्याकरण। **—वास**-(पुं०) ब्राह्मण। **—विहित**-(वि०) वेदानुकूल। **—व्यास**-(पुं०) कृष्णद्वैपायन जिन्होंने वेदों के विभाग किये। **—संन्यास**-(पुं०) वैदिक कर्मकाण्ड का त्याग।

वेदन—(न०), **वेदना**-(स्त्री०) [√विद्+ल्युट्] [√विद्+युच्—टाप्] ज्ञान, अवगति। अनुभव। पीड़ा; 'अवेदनाज्ञं कुलिशक्षतानाम्' कु० १.२०। धन-दौलत, सम्पत्ति। विवाह। प्राप्ति। उपहार।

वेदार—(पुं०) [वेद√ऋ+अण्] गिरगिट।

वेदि—(पुं०) [√विद्+इन्] पण्डित, विद्वान्। ऋषि। आचार्य। (स्त्री०) दे० 'वेदी'।

वेदिका—(वि०) [वेदी+कन्—टाप्, ह्रस्व] वह स्थान या ऊँचा चबूतरा जो यज्ञ के लिये ठीक किया गया हो। बैठकी। चबूतरा जो आंगन के बीचों-बीच बना हो। लतामण्डप।

वेदित—(वि०) [√विद्+क्त] जो बतलाया गया हो, सूचित। देखा हुआ।

वेदितव्य—(वि०) [√विद्+तव्य] जानने योग्य।

वेदिन्—(वि०) [√विद्+णिनि] जानने वाला। विवाह करने वाला। (पुं०) ज्ञाता। शिक्षक विद्वान् ब्राह्मण की उपाधि।

वेदी—(स्त्री०) [वेदि+ङीष्] यज्ञकार्य के लिये साफ करके तैयार की हुई भूमि; 'मध्येन सा वेदिविलग्नमध्या' कु० १.३७। अँगूठी जिसमें नाम की मोहर हो। सरस्वती का नाम। मुलम्ब।—जा-(स्त्री०) द्रौपदी का नामान्तर।

वेद्य—(वि०) [√विद्+ण्यत्] ज्ञातव्य, जानने योग्य। कहने, बताने योग्य। प्राप्त करने योग्य। विवाह करने योग्य। स्तुत्य।

वेध—(पुं०) [√विध्+घञ्] बेधना, छेद करना। प्रवेश। घाव, छिद्र। खुदाई। गड्ढे की गहराई। समय का मान विशेष। ग्रहों का स्थान निश्चित करना। किसी ग्रह का दूसरे ग्रह के सामने पहुँचना। रसों का मिश्रण।

वेधक—(वि०) [√विध्+ण्वुल्] वेध या छेद करने वाला। (न०) धनिया। कपूर। चंदन। अमलबेंत। सेंधव नमक। बाल में लगा हुआ। धान। एक नरक।

वेधन—(न०) [√विध्+ल्युट्] छेदने की क्रिया। खुदाई। घाव करना। गहराई (खुदी हुई जगह की)।

वेधनिका—(स्त्री०) [वेधनी+कन्—टाप्, ह्रस्व] वह औजार जिससे मणि आदि में छेद किये जाते हैं।

वेन—(पुं०) पुराणवर्णित पृथु के पिता का नाम।

वेधनी—(स्त्री०) [वेधन+ङीप्] हाथी का कान छेदने का औजार। मणि आदि में छेद करने का औजार।

वेधस्—(पुं०) [वि√धा+असि, वेधादेश] सृष्टिकर्त्ता, ब्रह्मा। दक्ष आदि प्रजापति। शिव। विष्णु। सूर्य। अर्क, मदार। पण्डित।

वेधस—(न०) [वेधस्+अच्] हथेली का वह भाग जो अँगूठे की जड़ के पास होता है।

वेधित—(वि०) [वेध+इतच्] छेदा हुआ।

√वेप्—भ्वा० आत्म० सक० काँपना, थरथराना। वेपते, वेपिष्यते, अवेपिष्ट।

वेपथु—(पुं०) [√वेप्+अथुच्] कंपन, थरथरी।

वेपन—(न०) [√वेप्+ल्युट्] काँपना। वातरोग।

वेम, वेमन्—(पुं०), न०) [√वे+मन्] [√वे+मनिन्] करघा।

वेर—(न०) पं०) [√अज्+रन् वी आदेश] शरीर। केसर। भाँटा।

वेरट—(न०) बेर का फल। (पुं०) नीच जाति का आदमी।

√वेल्—भ्वा० पर० अक० हिलना। चलना। वेलति, वेलिष्यति, अवेलीत्। चु० पर० सक० समय बताना। वेलयति।

वेल—(न०) [√वेल्+घञ्] बाग, बगिया।

वेला—(स्त्री०) [√वेल्+अ—टाप्]समय। मौसम। अवसर। अवकाश। लहर। प्रवाह। समुद्रतट; 'वेलानिलाय प्रसृता भुजङ्गाः' र० १३.१२। सीमा। वाणी। रोग। सहज मृत्यु। मसूढ़ा।—कूल-(न०) ताम्रलिप्त देश का नाम।—मूल-(न०) समुद्रतट।—वन-(न०) समुद्रतटवर्ती वन।

√वेल्ल्—भ्वा० पर० अक० काँपना। चलना। वेल्लति, वेल्लिष्यति, अवेल्लीत्।

वेल्ल—(पु०), **वेल्लन**-(न०) [√वेल्ल्+घञ्] [√वेल्ल्+ल्युट्] हिलना, कंपन। लुढ़कन। लोटना।

वेल्लहल—(पु०) [वेल्ल √हल्+अच्, पृषो० साधुः] लंपट, दुराचारी।

वेल्लि—(स्त्री०) [√वेल्ल्+इन्] बेल, लता।

वेल्लित—(वि०) [√वेल्ल्+क्त] कंपित। टेढ़ा-मेढ़ा। लोटा हुआ। (न०) गमन। हिलना। लोटना।

√वेवी—अ० आत्म० सक० जाना। प्राप्त करना। फेंकना। खाना। इच्छा करना। अक० गर्भवती होना। ब्याह होना। वेवीते, वेविष्यते, अवेविष्ट।

वेश—(पु०) [√विश्+घञ्] प्रवेश-द्वार। भीतर जाने का रास्ता। खेमा। घर। वेश्यालय। बाना। पोशाक, परिच्छद।—**दान**-(न०) सूरजमुखी का फूल।—**धारिन्**-(वि०) कपटरूपधारी।—**नारी,—वनिता**-(स्त्री०) रंडी, वेश्या।—**वास**-(पु०) वेश्या का घर; 'तरुणजनसहायश्चिन्त्यतां वेशवासः' मृ० १.३१।

वेशक—(पु०) [वेश+कन्] घर, मकान।

वेशन—(न०) [√विश्+ल्युट्] प्रवेश-द्वार। घर।

वेशन्त—(पु०) [√विश्+झच्] क्षुद्र सरोवर। छोटा तालाब। अग्नि।

वेशर—(पु०) [वेश√रा+क] खच्चर, अश्वतर।

वेश्मन्—(न०) [√विश्+मनिन्] घर, भवन।—**कलिङ्ग**-(पु०) चटक पक्षी, गौरैया।—**नकुल**-(पु०) छछूंदर।—**भू**-(स्त्री०) वह स्थान जो मकान बनाने के लिये उपयुक्त हो।

वेश्य—(न०) [वेश+यत्] रंडी-खाना।

वेश्या—(स्त्री०) [वेशम् अर्हति वा वेशेन दीव्यति चाचरति वा वेशेन पण्ययोगेन जीवति, वेश+यत्—टाप्] रंडी, गणिका, पतुरिया। ब्रह्मवैवर्तपुराण के मत से पाँचछः पुरुषों से संगम करने वाली स्त्री वेश्या कहलाती है—'पतिव्रता चैकपत्नी द्वितीये कुलटा स्मृता। तृतीये वृषली ज्ञेया चतुर्थे पुंश्चली मता॥ वेश्या तु पञ्चमे षष्ठे युङ्गी च सप्तमेऽष्टमे। तत ऊर्ध्वं महावेश्या साऽस्पृश्या सर्वजातिषु'॥—**आचार्य** (**वेश्याचार्य**)-(पु०) वह पुरुष जो वेश्याओं को रखता हो और पर-पुरुषों से उन्हें मिलाता हो।—**आश्रय** (**वेश्याश्रय**)-(पु०) रंडियों के रहने की जगह, रंडियों की आबादी।—**गमन**-(न०) रंडीबाजी।—**गृह**-(न०) चकला।—**जन**-(पु०) रंडी।—**पण**-(पु०) भोग के लिये रंडी को दी जाने वाली रकम।

वेसर—(पु०) खच्चर, अश्वतर।

वेषण—(न०) [√विष्+ल्युट्] परिचर्या, सेवा। (पु०) [√विष्+ल्युट्] कासमर्द, कसौंदी नामक पौधा।

√वेष्ट्—भ्वा० आत्म० सक० घेरना। लपेटना। उमेंठना, मरोड़ना। पोशाक धारण करना। वेष्टते, वेष्टिष्यते, अवेष्टिष्ट।

वेष्ट—(पु०) [√वेष्ट्+घञ्] घिराव। लपेटन। घेरा, हाता। पगड़ी। गोंद, राल। तारपीन।—**वंश**-(पु०) एक प्रकार का बाँस।—**सार**-(पु०) तारपीन।

वेष्टक—(न०) [√वेष्ट+ण्वुल्] पगड़ी। चादर। गोंद। तारपीन। (पु०) हाता, घेरा। सफेद कुम्हड़ा। खाल। (वि०) घेरने या लपेटने वाला।

वेष्टन—(न०) [√वेष्ट्+ल्युट्] घेरना। लपेटना। उमेंठना, मरोड़ना। बंधन। पगड़ी, साफा; 'शिरसा वेष्टनशोभिना' र० ८.१२। घेरा, हाता। कमरबंद, पटका। पट्टी। गुग्गुल। कान का छेद। नृत्य का भाव-विशेष।

वेष्टनक—(पुं०) [वेष्टन√कै+क] रति-बंध की एक क्रिया।

वेष्टित—(वि०) [√वेष्ट्+क्त] चारों ओर से घिरा हुआ। लपेटा हुआ। रोका हुआ, अवरुद्ध।

वेष्प—(पुं०) [√विष्+प] जल।

वेष्य—(पुं०) जल। श्रम। कर्म। पट्टी। पगड़ी।

वेसर—(पुं०) [√वेस्+अरन्] खच्चर, अश्वतर; 'प्रणोदित वेसरयुग्मसध्वनि' शि. १२.१९।

वेसवार, वेशवार—(पुं०) [वेस√वृ+अण्] जीरा, मिर्च, लौंग, राई, काली मिर्च, सोंठ आदि मसालों का चूर्ण।

√वेह्—भ्वा० आत्म० अक० प्रयत्न करना। वेहते, वेहिष्यते, अवेहिष्ट।

वेहत्—(स्त्री०) [विशेषेण हन्ति गर्भम्, वि √हन्+अति] गर्भ नष्ट कर देने वाली या बाँझ गौ।

वेहार—(पुं०) [=विहार, पृषो० साधुः] बिहार प्रदेश का नाम।

√वै—भ्वा० पर० सक० सुखाना। अक० सूख जाना। थक जाना। वायति, वास्यति, अवासीत्।

वै—(अव्य०) [√वा+डै] अव्यय विशेष जिसका प्रयोग निश्चय या स्वीकारोक्ति के अर्थ में किया जाता है। किन्तु अधिकांश प्रयोग इसका पद पूर्ण करने के लिये ही होता है। यथा—"आपो वै नरसूनवः।" —मनुः। कभी-कभी यह सम्बोधन और अनुनय द्योतक भी होता है।

वैंशतिक—(वि०) [स्त्री०—वैंशतिकी] [विंशत्या क्रीतः, विंशति+ठक्] बीस में खरीदा हुआ।

वैकक्ष—(न०) [विशेषेण कक्षति, वि√कक्ष् +अण्] माला जो जनेऊ की तरह पहनी गयी हो। उत्तरीय वस्त्र, लबादा, चोगा।

वैकक्षक, वैकक्षिक—(न०) [वैकक्ष+कन्] [वैकक्ष+ठन्] दे० 'वैकक्ष'।

वैकटिक—(पुं०) जौहरी, रत्नपारखी।

वैकर्तन—(पुं०) [विकर्तनस्यापत्यम्, विकर्तन +अण्] सूर्य के पुत्र। कर्ण का नाम। सुग्रीव।

वैकल्प—(न०) [विकल्प+अण्] विकल्प का भाव। असमञ्जसता। अनिश्चयता।

वैकल्पिक—(वि०) [स्त्री०—वैकल्पिकी] [विकल्पेन प्राप्तः तत्र भवो वा, विकल्प+ठञ्] ऐच्छिक। सन्देहात्मक, अनिश्चित।

वैकल्य—(न०) [विकल+ष्यञ्] न्यूनता, कमी, अपूर्णता। अङ्गहीनता। लँगड़ा होने का भाव। अयोग्यता। घबड़ाहट, विकलता। अभाव, अनस्तित्व।

वैकारिक—(वि०) [स्त्री०—वैकारिकी] [विकार+ठक्] विकार सम्बन्धी। बिगड़ा हुआ। परिवर्तनशील। संशोधनात्मक।

वैकाल—(पुं०) [विकाल+अण्] दोपहर के बाद का समय, अपराह्ण। सायंकाल।

वैकालिक, वैकालीन—(वि०) [स्त्री०—वैकालिकी, वैकालीनी] [विकाल+ठक्] [विकाल+ख] सायंकाल सम्बन्धी या शाम को होने वाला।

वैकुण्ठ—(पुं०) [विकुण्ठायां मायायाम् भवः, विकुण्ठा+अण्] विष्णु का एक नाम। इन्द्र का एक नाम। तुलसी। वैकुण्ठ लोक में स्थित देवगण। गरुड़। (न०) विष्णुलोक। अभ्रक। —**चतुर्दशी**—(स्त्री०) कार्त्तिक शुक्ला १४ शी। —**लोक**-(पुं०) विष्णुलोक।

वैकृत—(पुं०) [स्त्री—वैकृती] [विकृत+अण्] विकार-ग्रस्त। परिवर्तित। संशोधित। (न०) परिवर्तन, अदल-बदल। संशोधन। घृणा। परिस्थिति अथवा सूरत-शक्ल में अदल-बदल। अशुभ-सूचक अपशकुन; 'तत्प्रतीपपवनादि वैकृतं प्रेक्ष्य' र० ११.६२। बीभत्स रस। बीभत्स रस का

आलम्बन ।—विवर्त-(पुं०) दुर्दशा । क्लेश ।

वैकृतिक—(वि०) [स्त्री०—**वैकृतिकी**] [विकृति+ठक्] परिवर्तित । संशोधित । विकृति सम्बन्धी ।

वैकृत्य—(न०) [विकृत+ष्यञ्] परिवर्तन । रद्दोबदल । दुर्दशा । घृणा, अरुचि । उद्वेग । बीभत्स रस ।

वैक्रान्त—(पुं०) [विक्रान्त्या दीव्यति, विक्रान्ति+अण्] एक प्रकार का रत्न, चुन्नी ।

वैक्लव, वैक्लव्य—(न०) [विक्लव+अण्, विक्लव+ष्यञ्] गड़बड़ी । विकलता, घबड़ाहट । हड़बड़ी । मानसिक अस्थिरता; 'वैक्लव्यं मा स्म गमः पार्थ!' भग० । संताप । पीड़ा ।

वैखरी—(स्त्री०) [विशेषेण खं राति, √रा+क+अण् (स्वार्थे)—ङीप्] वाक्-शक्ति । वाग्देवी । कण्ठ से उत्पन्न होने वाला स्वर का एक विशिष्ट प्रकार, ऐसा स्वर उच्च और गंभीर होता है और स्पष्ट सुनाई पड़ता है ।

वैखानस—(वि०) [स्त्री०—**वैखानसी**] [वैखानसस्य इदम्, वैखानस+अण्] वानप्रस्थ संबंधी । (पुं०) [वि√खन्+ड √अस्+असुन्, कर्म० स०, विखानस्+अण् अथवा विखानसं ब्रह्माणं वेत्ति तपसा, विखानस+अण्] वानप्रस्थ वनचारी ब्रह्मचारी विशेष ।

वैगुण्य—(न०) [विगुण+ष्यञ्] गुण का अभाव, विगुणता । ऐब, अवगुण, त्रुटि । वैषम्य । विरुद्धता । नीचता । क्षुद्रता । अनिपुणता ।

वैचक्षण्य—(न०) [विचक्षण+ष्यञ्] चातुरी, निपुणता, योग्यता ।

वैचित्य—(न०) [विचित+ष्यञ्] मानसिक विकलता, शोक । अन्यमनस्कता । संज्ञाहीनता ।

वैचित्र्य—(न०) [विचित्र+ष्यञ्] विचित्रता, विलक्षणता । विभिन्नता । आश्चर्य । नैराश्य । सुंदरता ।

वैजनन—(न०) [विजायतेऽस्मिन्, वि √जन्+ल्युट्, विजनन+अण् (स्वार्थे)] गर्भ का अन्तिम मास ।

वैजयन्त—(पुं०) [वैजयन्ती+अण्] इन्द्र का राजभवन । इन्द्र का झंडा । पताका, झंडा । घर । अग्निमंथवृक्ष, अरणी ।

वैजयन्तिक—(पुं०) [वैजयन्ती+ठन् वा ठक्] झंडा उठाने वाला ।

वैजयन्तिका—(स्त्री०) [वैजयन्ती+कन्—टाप्, ह्रस्व ।] झंडा, पताका । मोतियों का हार । जयन्ती वृक्ष । अरणी ।

वैजयन्ती—(स्त्री०) [वि√जि+झच्, विजयन्त+अण्—ङीप्] झंडा, पताका । चिह्न, बिल्ला । हार । घुटनों तक लटकने वाली पाँच रंगों की एक माला, भगवान् विष्णु की माला । एक शब्दकोश का नाम ।

वैजात्य—(न०) [विजाति+ष्य] विजातीयता । विजातीय होने का भाव । वर्णभेद । विलक्षणता । जाति-बहिष्कार । बदचलनी, लम्पटता ।

वैजिक—दे० 'बैजिक' ।

वैज्ञानिक—(वि०) [स्त्री०—**वैज्ञानिकी**] [विज्ञान+ठक्] विज्ञान संबन्धी । विज्ञानवेत्ता । चतुर, निपुण, योग्य ।

वैडाल—दे० 'बैडाल' ।

वैण—(पुं०) [वेणु+अण्, उकारस्य लोपः] बँसोड़, बाँस की चीजें बनाने वाला ।

वैणव—(वि०) [स्त्री०—**वैणवी**— [वेणु+अण्] बाँस में उत्पन्न या बाँस का बना हुआ । (न०) बाँस का फल या बीज । (पुं०) बाँस का काम करने वाला, बँसोड़ । बाँस का वह डंडा जो यज्ञोपवीत के समय धारण किया जाता है । बाँसुरी ।

वैणविक–(पुं०) [वैणव+ठक्] वंशी बजाने वाला।

वैणविन्–(पुं०) [वैणव+इनि] शिव जी का नाम।

वैणवी–(स्त्री०) [वैणव+ङीप्] वंश-लोचन।

वैणिक–(पुं०) [वीणा+ठक्] वीणा बजाने वाला।

वैणुक–(न०) [वेणु√कै+क, वेणुक+अण्] हाथी का अंकुश। (पुं०) वंशी बजाने वाला।

वैतंसिक–(पुं०) [वितंस+ठक्] बहे-लिया। मांसविक्रेता।

वैतण्डिक–(वि०) [वितण्डा+ठक्] वितंडावादी, व्यर्थ का झगड़ा या बहस करने वाला।

वैतथ्य–(न०) [वितथ+ष्यञ्] विफ-लता। झूठापन।

वैतनिक–(वि०) [स्त्री०—**वैतनिकी**] [वेतन+ठक्] वेतनभोगी, वेतन लेकर काम करने वाला। (पुं०) मजदूर। वेतन भोगी। कर्मचारी।

वैतरणि, वैतरणी–(स्त्री०) [वितरणेन दानेन लङ्घ्यते, वितरण+अण्–ङीप्, पक्षे पृषो० ह्रस्वः] यमद्वार या नरकद्वार पर स्थित एक नदी का नाम। कलिङ्गदेशस्थ एक नदी का नाम।

वैतस–(वि०) [स्त्री०—**वैतसी**] [वेतस अण्] बेंत सम्बन्धी। बेंत जैसा (बलवान् शत्रु के सामने नवने वाला। अतएव 'वैतसी वृत्ति')।

वैतान–(वि०) [स्त्री०—**वैतानी**] [वितान+अण्] यज्ञीय; 'वैतानास्त्वां वह्नयः पावयन्तु' श० ४.७। पवित्र। (न०) यज्ञीय विधान। यज्ञीय बलिदान।

वैतानिक–(वि०) [स्त्री०—**वैतानिकी**] [वितान+ठक्] दे० 'वैतान'।

वैतालिक–(पुं०) [विविधेन तालेन चरति, वितान+ठक्] बंदीजन, भाट। मदारी, ऐन्द्रजालिक। [वेताल+ठक्] वेताल का उपासक, वेताल को सिद्ध करने वाला।

वैत्रक–(वि०) [स्त्री०—**वैत्रकी**] [वेत्र+वुञ्] बेंतदार।

वैद–(पुं०) [वेद+अण्] विद्वज्जन, पंडित जन। [विद्+अण्] विद ऋषि के वंशज।

वैदग्ध–(न०), **वैदग्धी** (स्त्री०), **वैदग्ध्य** (न०)–[विदग्ध+अण्] [वैदग्ध+ङीप्] [विदग्ध+ष्यञ्] निपुणता, पटुता। हाथ की सफाई। सौन्दर्य; 'कालिन्दी-जलजनितश्रियः श्रयन्ते वैदग्धीमिह सरितः सुरापगायाः' शि० ४.२६। हाजिरजवाबी, प्रत्युत्पन्नमतित्व। धूर्तता। रसिकता।

वैदर्भ–(पुं०) [विदर्भ+अण्] विदर्भ देश का राजा। दमयंती के पिता, भीम। रुक्मिणी के पिता भीष्मक। दन्तमूल रोग जिसमें मसूड़े फूल जाते हैं और उनमें पीड़ा होती है। वाक्चातुर्य।

वैदर्भी–(स्त्री०) [वैदर्भ+ङीप्] दम-यंती का नाम। रुक्मिणी का नाम। काव्य की एक शैली जिसमें माधुर्य-व्यंजक वर्णों के द्वारा मधुर रचना की जाती है। साहित्य-दर्पणकार ने इसकी परिभाषा यह दी है :—
"माधुर्यव्यञ्जकैर्वर्णै रचना ललितात्मिका। अवृत्तिरल्पवृत्तिर्वा वैदर्भी रीतिरिष्यते॥"

वैदल–(वि०) [स्त्री०—**वैदली**] [विदल+अण्] बाँस के पट्टे या बेंत का बना हुआ। (पुं०) एक तरह की पीठी। दाल का अनाज, जैसे उर्द, मूंग, अरहर आदि। कोई भी शाक जिसमें छीमी हों; जैसे रोंसा, वन-छिमियां, सेम, मटर आदि। (न०) भिक्षुकों का मिट्टी आदि का पात्र। बाँस या बेंत की बनी डलिया या आसन।

वैदिक–(वि०) [स्त्री०–**वैदिकी**] [वेद+ठक्] वेद से निकला हुआ या वेदोक्त। (पुं०) वेदज्ञ ब्राह्मण।

वैदिकपाश–(पुं०) [कुत्सितो वैदिकः; वैदिक+पाशप्] वेद का अधूरा या बहुत थोड़ा ज्ञान रखने वाला व्यक्ति।

वैदुषी–(स्त्री०), **वैदुष्य**-(न०) [विद्वस्+अण्–ङीप्] [विद्वस्+ष्यञ्] पाण्डित्य, विद्वत्ता।

वैदूर्य–(वि०) [स्त्री०–**वैदूर्यी**] [विदूर+ञ्य] विदूर से लाया हुआ या उत्पन्न। (न०) लहसुनिया रत्न।

वैदेशिक–(वि०) [स्त्री०–**वैदेशिकी**] [विदेश+ठक्] अन्य देश का, विदेश का। (पुं०) दूसरे देश का व्यक्ति, विदेशी।

वैदेश्य–(न०) [विदेश+ष्यञ्] विदेशी होने का भाव, विदेशीपन। (वि०) विदेशीय।

वैदेह–(पुं०) [विदेह+अण्] विदेहराज। विदेहवासी। वणिक्, व्यापारी। वैश्य-पुत्र जो ब्राह्मणी के गर्भ से उत्पन्न हुआ हो।

वैदेहक–(पुं०) [वैदेह+कन्] व्यापारी, सौदागर।

वैदेहिक–(पुं०) [विदेह+ठक्] व्यापारी, सौदागर।

वैदेही–(स्त्री०) [विदेहस्य अपत्यम् स्त्री, विदेह+अण–ङीप्] सीता का नाम; 'वैदेहिबन्धोर्हृदयं विदद्रे' र० १४.३३।

वैद्य–(वि०) [स्त्री०–**वैद्यी**] [वेद+ष्य] वेद संबंधी। आयुर्वेद संबंधी। (पुं०) [विद्यां वेत्ति, विद्या+अण्] विद्वान् व्यक्ति। चिकित्सक; 'वैद्यानामातुरः श्रेयान्' सुभा०। वैद्य जाति का आदमी (यह वर्णसङ्कर जाति का होता है। इसकी उत्पत्ति वैश्या माता और ब्राह्मण पिता से बतलायी जाती है)।–**क्रिया**-(स्त्री०) चिकित्सा कर्म। –**नाथ**-(पुं०) धन्वन्तरि। शिव।

वैद्यक–(न०) [वैद्यम् चिकित्सकम् अधिकृत्य कृतो ग्रन्थः, वैद्य+कन्] चिकित्सा-शास्त्र। आयुर्वेद। (पुं०) [वैद्य एव इति स्वार्थे कन्] चिकित्सक।

वैद्युत–(वि०) [स्त्री०–**वैद्युती**] [विद्युत्+अण्] बिजली संबंधी। बिजली से उत्पन्न।–**अग्नि** (**वैद्युताग्नि**),–**अनल** (**वैद्युतानल**),–**वह्नि**-(पुं०) बिजली की आग।

वैध–(वि०) [स्त्री०–**वैधी**] [विधिना बोधितः, विधि+अण्] जो विधि के अनुसार हो, कायदे या कानून के मुताबिक।

वैधिक–(वि०) [स्त्री०–**वैधिकी**] [विधि+ठक्] दे० 'वैध'।

वैधर्म्य–(न०) [विरुद्धो धर्मो यस्य, तस्य भावः, विधर्म+ष्यञ्] धर्म या गुण की भिन्नता असमानता, अंतर। नास्तिकता। अवैधता।

वैधवेय–(पुं०) [विधवा+ष्यञ्] विधवा का पुत्र।

वैधव्य–(न०) [विधवा+ष्यञ्] विधवापन।

वैधुर्य–(न०) [विधुर+ष्यञ्] विधुरता। वियोग। नैराश्य। कातरता। भ्रम। कंपित होने का भाव।

वैधेय–(वि०) [स्त्री०–**वैधेयी**] [विधि+ढक्] विधि संबंधी। नियमानुकूल। विहित। [विधि पद्धतिमेव अनुसृत्य व्यवहरति युक्तायुक्तविवेकशून्यत्वात्, विधि+ढक्] मूर्ख, विमूढ़। (पुं०) मूर्ख आदमी। याज्ञवल्क्य का एक शिष्य। नियमानुकूल।

वैनतेय–(पुं०) [विनतायाः अपत्यम्, विनता+ढक्] गरुड़ का नाम। अरुण का नाम।

वैनयिक–(वि०) [स्त्री०–**वैनयिकी**] [विनय+ठक्] विनय सम्बन्धी। शिष्टाचार का व्यवहार करवाने वाला। शास्त्राभ्यास में निरत रहने वाला। (पुं०) प्राचीन काल का एक सामरिक रथ।

वैनायक—(वि० [स्त्री०—**वैनायकी**] [विनायक+अण्] गणेश का।

वैनायिक—(पुं०) [विनायं खण्डनम् अधिकृत्य कृतो ग्रन्थः, विनाय+ठक्] बौद्ध दर्शन विशेष के सिद्धान्त। उक्त दर्शन का अनुयायी।

वैनाशिक—(वि०) [विनाश+ठक्] विनाश संबंधी। नश्वर। (पुं०) गुलाम, दास। मकड़ा। ज्योतिषी। बौद्ध सिद्धान्त। बौद्ध सिद्धान्तानुयायी।

वैनीतक—(न०) [विशेषेण नीतं, तेन कायति इति विनीत√कै+क स्वार्थे, विनीतक+अण्] एक तरह की पालकी जिसे ढोने के लिए कई कहार होते हैं और बारी-बारी से बदलते रहते हैं।

वैन्य—(पुं०) [वेन+ष्यञ्] वेन-पुत्र, पृथु।

वैपरीत्य—(न०) [विपरीत+ष्यञ्] विपरीत होने का भाव। असंगति।

वैपुल्य—(न०) [विपुल+ष्यञ्] विस्तार, विशालता। बाहुल्य, अधिकता।

वैफल्य—(न०) [विफल+ष्यञ्] विफल होने का भाव। निरर्थकता।

वैबोधिक—(पुं०) [विबोधकर्मणि नियुक्तः, विबोध+ठक्] पहरेदार, चौकीदार। विशेष कर वह जो सोने वालों को बीता हुआ समय बतला कर जगावे। स्तुतिपाठ द्वारा राजा को जगाने वाला व्यक्ति: 'वैबोधिकध्वनिविभावितपश्चिमार्धा' कि० ९.७४।

वैभव—(न०) [विभोः भावः, विभु+अण्] ऐश्वर्य। महत्व, बड़प्पन। गौरवान्वित पद। सामर्थ्य, शक्ति।

वैभाषिक—(वि०) [स्त्री०—**वैभाषिकी**] [विभाषा+ठक्] ऐच्छिक, वैकल्पिक। (पुं०) बौद्धों के एक सम्प्रदाय का अनुयायी।

वैभ्र—(न०) वैकुण्ठ, विष्णुलोक।

वैभ्राज—(न०) [विभ्राज्+अण्] स्वर्गीय उपवन या बाग।

वैमत्य—(न०) [विमत+ष्यञ्] मतभेद, अनैक्य। घृणा, अरुचि।

वैमनस्य—(न०) [विमनस्+ष्यञ्] विकलता। उदासी। बीमारी। बैर।

वैमात्र, वैमात्रेय—(पुं०) [विमातृ+अण्] [विमातृ+ढक्] सौतेली माता का पुत्र।

वैमात्रा, वैमात्री, वैमात्रेयी—(स्त्री०) [वैमात्र+टाप्] [वैमात्र+ङीप्] [वैमात्रेय+ङीप्] सौतेली माता की लड़की।

वैमानिक—(वि०) [विमान+ठक्] देवयान में सवार हो अन्तरिक्ष में विहार करने वाला। (पुं०) आकाशचारी गुब्बारे या व्योमयान में बैठ कर उड़ने वाला मनुष्य।

वैमुख्य—(न०) [विमुख+ष्यञ्] विमुखता, मुँह फेरना। घृणा, अरुचि। पलायन, भागना।

वैमेय—(पुं०) [वि√मि+यत्, विमेय+अण्] अदल-बदल, एक वस्तु के बदले दूसरी वस्तु लेना, विनिमय।

वैयग्र, वैयग्र्य—(न०) [व्यग्र+अण्] [व्यग्र+ष्यञ्] विकलता, घबड़ाहट। किसी विषय में लीनता या एकाग्रता।

वैयर्थ्य—(न०) [व्यर्थ+ष्यञ्] व्यर्थता, विफलता।

वैयधिकरण्य—(न०) [व्यधिकरण+ष्यञ्] भिन्न-भिन्न सम्बन्धों या अवस्थितियों में होने की दशा।

वैयाकरण—(पुं०) [स्त्री०—**वैयाकरणी**] [व्याकरणम् अधीते वेत्ति वा, व्याकरण+अण्, यकारात् पूर्वम् ऐच्] व्याकरण का पण्डित। (वि०) [व्याकरणस्य इदम् इत्यर्थे अण्] व्याकरण संबंधी।

वैयाकरणपाश—(वि०) [वैयाकरण+पाशप्] जिसे व्याकरण अच्छी तरह न आता हो।

वैयाघ्र—(वि०) [स्त्री०—**वैयाघ्री**] [व्याघ्र +अञ्] चीते की तरह का। (पुं०) [व्याघ्रस्य विकारः, व्याघ्र+अञ्, ततः वैयाघ्रेण चर्मणा परिवृतो रथः, वैयाघ्र +अञ्] चीते के चर्म से आच्छादित गाड़ी।

वैयात्य—(न०) [वियात+ष्यञ्] धृष्टता। लज्जा या विनय का अभाव। उद्दण्डता, औद्धत्य।

वैयासकि—(पुं०) [व्यासस्य अपत्यम्, व्यास+इञ्, अकङ् आदेश, यकारात् पूर्वम् ऐच्] व्यासपुत्र।

वैर—(न०) [वीरस्य कर्म भावो वा, वीर +अण्] शत्रुता, विरोध। प्रतिहिंसा, बदला। वीरता।—**भातङ्क** (**वैरातङ्क**) (पुं०) अर्जुन का पेड़।

वैरक्त, वैरक्त्य—(न०) [विरक्त+अण्] [विरक्त+ष्यञ्] विरक्ति, वैराग्य। वासना-शून्यता। अरुचि, घृणा।

वैरङ्गिक—(पुं०) [विरङ्गम् नित्यम् अर्हति, विरङ्ग+ठञ्] जितेन्द्रिय जन। संन्यासी।

वैरल्य—(न०) [विरल+ष्यञ्] विरलता। ढीलापन। सूक्ष्मता।

वैरस्य—(न०) [विरस+ष्यञ्] विरसता। अनिच्छा।

वैराग—(न०) [विराग+अण्] दे० 'वैराग्य'।

वैराग्य—(न०) [विराग+ष्यञ्] सांसारिक पदार्थों में अनासक्ति अथवा उनसे विरक्ति। अप्रसन्नता। घृणा, अरुचि। रंज, शोक।

वैराज—(वि०) [स्त्री०—**वैराजी**] [विराज्+अण्] ब्रह्मा संबंधी। (पुं०) परमात्मा। एक मनु। २७वें कल्प का नाम। एक पितृगण।

वैराट—(वि०) [स्त्री०—**वैराटी**] [विराट +अण्] विराट (मत्स्य-नरेश) संबंधी। (पुं०) इन्द्रगोप नामक कीट, बीरबहूटी।

वैरिन्—(वि०) [वैर+इनि] विरोधात्मक। (पुं०) शत्रु; 'शौर्यं वैरिणि वज्रमाशु निपततु' भर्तृ० २.३९। योद्धा।

वैरूप्य—(न०) [विरूप+ष्यञ्] कुरूपता। रूपों की विभिन्नता।

वैरोचन, वैरोचनि—(पुं०) [विरोचनस्यापत्यम्, विरोचन+अण्] [विरोचन+इञ्] राजा बलि। एक ध्यानी बुद्ध। एक सिद्ध गण। सूर्य के पुत्र। अग्नि के पुत्र।

वैरोचि—(पुं०) [विरोच+इञ्] बलि का पुत्र बाण।

वैलक्षण्य—(न०) [विलक्षण+ष्यञ्] विचित्रता। विरोध। विभिन्नता।

वैलक्ष्य—(न०) [विलक्ष+ष्यञ्] गड़बड़ी। अस्वाभाविकता। लज्जा। वैपरीत्य।

वैलोम्य—(न०) [विलोम+ष्यञ्] वैपरीत्य, उलटापन।

वैवधिक—(पुं०) [विवध+ठक्] फेरीवाला, घूम-घूम कर माल बेचने वाला। बहँगी उठाने वाला।

वैवर्ण्य—(न०) [विवर्ण+ष्यञ्] रंग बदलौअल, विवर्णता। भिन्नता। जातिभ्रंशत्व।

वैवस्वत—(पुं०) [विवस्वतोऽपत्यम्, विवस्वत्+अण्] सातवें मनु का नाम; 'वैवस्वतो मनुर्नाम माननीयो मनीषिणाम्' र० १.११ आजकल का मन्वन्तर इन्हीं मनु का माना जाता है। यमराज। शनिग्रह। (न०) सातवाँ मन्वन्तर।

वैवस्वती—(स्त्री०) [वैवस्वत—ङीप्] दक्षिण दिशा। यमुना नदी का नाम।

वैवाहिक—(वि०) [स्त्री—**वैवाहिकी**] [विवाह+ठञ्] विवाह सम्बन्धी। (पुं०, न०) विवाह, शादी। (पुं०) वधू या वर का श्वसुर, समधी।

वैशद्य—(न०) [विशद+ष्यञ्] स्वच्छता, निर्मलता। स्पष्टता। उज्ज्वलता। स्वस्थता। शान्ति (मन की)।

वैशस—(न०) [विशस + अण्] वध; 'विधिना कृतमर्द्धवैशसं ननु मां कामवधे विमुञ्चता' कु० ४.३१। युद्ध। उत्पीड़न। कष्ट। संकट, नरक।

वैशस्त्र—(न०) [विशस्त्र + अण्] अस्त्र-हीनता। [विशसितुः धर्मम्, विशसितृ + अत्र्, इकारस्य लोपः] अधिकार। शासन, हुकूमत।

वैशाख—(न०) [विशाख + अण्] शिकार करने के समय का एक पैंतरा। (पुं०) [वैशाखी पौर्णमासी अस्ति अस्मिन्, वैशाखी + अण्] चैत्र के बाद पड़ने वाले मास का नाम। [विशाखा प्रयोजनम् अस्य, विशाखा + अण्] मन्थन दण्ड, मथानी।

वैशाखी—(स्त्री०) [विशाखया युक्ता पौर्णमासी, विशाखा + अण्—ङीप्] वैशाख मास की पूर्णिमा।

वैशिक—(पुं०) [वेशेन जीवति, वेश+ठक्] साहित्य में तीन प्रकार के नायकों में से एक, जो वेश्याओं के साथ भोग-विलास करता हो, वेश्यागामी पुरुष।

वैशिष्ट्य—(न०) [विशिष्ट + ष्यञ्] विशेष धर्म से युक्त होना, विशेषता, अंतर। विलक्षणता, विशिष्ट-लक्षण-संपन्नता।

वैशेषिक—(न०) [विशेषं पदार्थभेदम् अधिकृत्य कृतो ग्रन्थः, विशेष + ठक्] कणाद-प्रवर्तित एक दर्शन जिसमें तत्त्वों का विवेचन किया गया है। (पु०) [वैशेषिकम् अधीते वेत्ति वा, वैशेषिक+अण्] वह जो वैशेषिक दर्शन जानता हो, औलूक्य। (वि०) [विशेष + ठक्] (स्वार्थे) विशेषतायुक्त, असाधारण।

वैशेष्य—(न०) [विशेष+ष्यञ्] विशेषता। प्रधानता, मुख्यता।

वैश्य—(पुं०) [√विश् + क्विप्+ष्यञ्] द्विजातियों में तृतीय वर्ण का मनुष्य।—**कर्मन्**–(न०),—**वृत्ति**–(स्त्री०) वैश्य वर्ण के कर्म—कृषि, वाणिज्य आदि।

वैश्रवण—(पु०) [विश्रवणस्यापत्यम्, विश्रवण+अण्] कुबेर का नाम। रावण का नाम।—**आलय** (**वैश्रवणालय**),—**आवास** (**वैश्रवणावास**)–(पु०) कुबेर के रहने का स्थान। वट-वृक्ष।—**उदय** (**वैश्रवणोदय**)–(पु०) बरगद का वृक्ष।

वैश्वदेव—(वि०) [स्त्री०—**वैश्वदेवी**] [विश्वदेव + अण्] विश्वेदेव सम्बन्धी। (न०) विश्वेदेव की बलि या नैवेद्य, भोजन करने के पूर्व सब देवताओं के उद्देश्य से अग्नि में दी हुई आहुति।

वैश्वानर—(पुं०) [विश्वानर + अण्] अग्नि की उपाधि। वह अग्नि जो अन्न पचाती है: 'अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः' भग० १५.१४। वेदान्त में चेतन-शक्ति। परमात्मा। चित्रक वृक्ष।

वैश्वासिक—(वि०) [स्त्री०—**वैश्वासिकी**] [विश्वास + ठक्] विश्वसनीय, विश्वस्त, इतमीनानी।

वैषम्य—(न०) [विषम+ष्यञ्] असमानता। औद्धत्य, उद्दण्डता। अन्याय। कठिनाई, मुसीबत। एकाकीपन।

वैषयिक—(वि०) [स्त्री०—**वैषयिकी**] [विषय+ठक्] किसी पदार्थ सम्बन्धी। (पुं०) विषयी पुरुष, लंपट आदमी।

वैष्टुत—(न०) [विष्टुत्या निर्वृत्तम्, विष्टुति+अण्] हवन का भस्म।

वैष्टु—(पुं०) [विष्+ट्युन्, वृद्धि] आकाश। पवन। लोक।

वैष्णव—(वि०) [स्त्री०—**वैष्णवी**] [विष्णु + अण्] विष्णु सम्बन्धी। विष्णु की उपासना करने वाला। (न०) हवन का भस्म। (पु०) वैदिक धर्म के अन्तर्गत मुख्य तीन

विभागों में से एक। अन्य दो हैं, शैव और शाक्त।—पुराण-(न०) अष्टादश पुराणों में से एक।

वैसारिण—(पुं०) [विशेषेण सरति विसारी मत्स्यः स एव, विसारिन्+अण्] मछली।

वैसूचन—(न०) [विशेषेण सूचयतीति विसूचनम्, तदेव स्वार्थे अण्] नाटक में पुरुष का स्त्री-वेश धारण करना।

वैहायस—(वि०) [स्त्री०—वैहायसी] [विहायस्+अण्] आकाश सम्बन्धी, आसमानी।

वैहार्य—(वि०) [विशेषेण ह्रियते, वि√हृ+ण्यत्+अण्] वह जिसके साथ मजाक किया जाय (जैसे साला या ससुराल का अन्य ऐसा ही कोई रिश्तेदार)।

वैहासिक—(पुं०) [विहासं करोति, विहास+ठक्] मसखरा, विदूषक।

वोटा—(स्त्री०) दासी। मजदूरनी। दाई।

वोड़—(पुं०) [√वा+उड़] गोनस सर्प। गोह। एक प्रकार की मछली।

वोड़ी—(स्त्री०) [वोड़+ङीष्] पण का चौथा भाग।

वोढ़—(पुं०) [√वह्+तृन्] एक मुनि। पीहर में रहने वाली स्त्री (जिसका पति अनुपस्थित हो) का लड़का।

वोढ़—(पुं०) [√वह्+तृच्] ढोने, ले जाने वाला, वाहक। नेता। पति। साँड़। रथ।

वोण्ट—(पुं०) डंठल।

वोद—(वि०) [अवसितम् उदकम् यत्र, प्रा० ब०, उदकस्य उदादेशः] नम, तर, आर्द्र।

वोदाल—(पुं०) [वोदः आर्द्रः सन् अलति, वोद√अल् + अच्] बोआरी नामक मछली।

वोरक, वोलक—(पुं०) [अवनतं लेखनकाले उरो यस्य, प्रा० ब०, कप्, अवस्य अकारलोपः, पृषो० सलोपः, पक्षे रलयोरभेदः] लेखक।

वोरट—(पुं०) [वो इति रटन्ति भृङ्गा यत्र, वो√रट्+क] कुन्द का पुष्प या पौधा।

वोल—(पुं०) [√वुल् + अच् अथवा √वा+उलच्] एक गन्धद्रव्य, रसगन्ध। गुग्गुल।

वोल्लाह—(पुं०) पीले अयालों और पीले रंग की पूँछ वाला घोड़ा।

वौषट्—(अव्य०) [उह्यते अनेन हविः, √वह् + डौषट्] देवताओं को घृतादि वस्तु अर्पण करते समय बोला जाने वाला शब्द विशेष।

व्यंशक—(पुं०) [विशिष्टः अंशो यस्य, प्रा० ब०, कप्] पहाड़।

व्यंशुक—(वि०) [विगतम् अंशुकम् यस्य, प्रा० ब०] नंगा, वस्त्र-विवर्जित।

व्यंसक—(पुं०) [वि√अंस् + ण्वुल्] धूर्त, धोखेबाज आदमी।

व्यंसन—(न०) [वि√अंस् + ल्युट्] ठगने या धोखा देने की क्रिया।

व्यक्त—(वि०) [वि√अञ्ज्+क्त] स्पष्ट, साफ। प्रकट। दृष्ट। अनुमित। ज्ञात। विद्वान्। स्थूल। (पुं०) विष्णु। मनुष्य। सांख्य के मत से प्रकृति का स्थूल परिमाण।—गणित-(न०) अङ्कगणित।—दृष्टार्थ-(पुं०) चश्मदीद गवाह, वह साक्षी जिसने कोई घटना अपनी आँखों से देखी हो।—राशि-(पुं०) अङ्कगणित में वह राशि या अङ्क जो बतला दिया गया हो या ज्ञात अङ्क।—रूप-(पुं०) विष्णु।

व्यक्ति—(स्त्री०) [वि√अञ्ज् + क्तिन्] व्यक्त होने की क्रिया या भाव, प्रकटन; 'तं सन्तः श्रोतुमर्हन्ति सदसद्व्यक्तिहेतवः' र० १.१०। [वि√अञ्ज् + क्तिन्] मनुष्य। जीव। द्रव्य, पदार्थ। मनुष्य या

किसी अन्य शरीरधारी का सारा शरीर, जिसकी पृथक् सत्ता मानी जाय और जो किसी समूह या समाज का अंग माना जाय, व्यष्टि ।

व्यग्र—(वि०) [विरुद्धम् अगति, वि√अग् +रक्] विकल, व्याकुल, परेशान । भयभीत, डरा हुआ । किसी कार्य में लीन; 'स राजककुदव्यग्रपाणिभिः पार्श्ववर्तिभिः' र० १७.२७।

व्यङ्ग—(वि०) [विगतं विकृतं वा अङ्गं अन्य यस्मात् वा, प्रा० ब०] शरीर-हीन । अवयव-हीन, विकलाङ्ग, लूला । (पुं०) लूला । व्यक्ति । मेढक । गाल पर के काले दाग ।

व्यङ्गुल—(न०) अंगुल का १⁄₆₀वाँ अंश ।

व्यङ्ग्य—(न०) [वि√अञ्ज् + ण्यत्] शब्द का वह अर्थ जो व्यञ्जना वृत्ति के द्वारा प्रकट हो, गूढ़ और छिपा हुआ अर्थ । वह लगती हुई बात जिसका कुछ गूढ़ अर्थ हो । ताना, बोली, चुटकी ।

√व्यच्—तु० पर० सक० धोखा देना, छलना । विचति, व्यचिष्यति, अव्याचीत्–अव्यचीत् ।

व्यज—(पुं०) [वि√अज् + अच्] पंखा ।

व्यजन—(न०) [वि√अज् + ल्युट्] पंखा झलना । पंखा ।

व्यञ्जक—(वि०) [स्त्री०—**व्यञ्जिका**] [वि√अञ्ज् + ण्वुल्] प्रकट करने वाला, जाहिर करने वाला । (पुं०) नाटकीय हाव-भाव, आन्तरिक भावों को प्रकट करने वाला हाव-भाव । सङ्केत । व्यंजना द्वारा अर्थ प्रकट करने वाला शब्द ।

व्यञ्जन—(न०) [वि√अञ्ज्+ल्युट्] प्रकट करना । स्पष्ट करना । चिह्न, निशान; 'अमात्यव्यञ्जनाः राज्ञां दूष्यास्ते शत्रुसंज्ञिताः' शि० २.५६ । स्मारक । छद्मवेश । वर्णमाला का वह वर्ण जो बिना स्वर की सहायता के न बोला जा सके, संस्कृत वर्णमाला में "क से ह" तक सब वर्ण व्यञ्जन कहे जाते हैं । लिङ्गवाची चिह्न, अर्थात् स्त्री या पुरुष पहचानने का चिह्न । बिल्ला, चपरास । वयस्कता-प्राप्ति का लक्षण । दाढ़ी-मूँछ । अवयव, प्रत्यङ्ग । भोजन-सामग्री— साग-भाजी, मसाला, चटनी, अचार आदि । व्यञ्जना शक्ति ।

व्यञ्जना—(स्त्री०) [वि√अञ्ज् + णिच् +युच्—टाप्] शब्द की तीन प्रकार की शक्तियों में से एक प्रकार की शक्ति, जिससे किसी शब्द या वाक्य के वाच्यार्थ अथवा लक्ष्यार्थ से भिन्न किसी अन्य ही अर्थ का बोध होता है ।

व्यञ्जित—(वि०) [वि√अञ्ज्+क्त] स्पष्ट किया हुआ । प्रकटित । चिह्नित । सङ्केत किया हुआ । प्रकारान्तर से कहा हुआ ।

व्यडम्बक, व्यडम्बन—(पुं०) [√डम्ब् +ण्वुल्, विशेषेण न डम्बकः] एरंड वृक्ष, रेंडी का पेड़ ।

व्यतिकर—(पुं०) [वि—अति √कृ+अप्] संमिश्रण, मिलावट । सम्बन्ध, संसर्ग, लगाव । आघात । प्रत्याघात । रुकावट, अड़चन; 'मार्गाचलव्यतिकराकुलितेव सिन्धुः' कु० ५.८५ । घटना । अवसर, मौका । विपत्ति । पारस्परिक सम्बन्ध । व्यसन । परिवर्तन । विनिमय । वैपरीत्य ।

व्यतिकीर्ण—(वि०) [वि—अति √कृ+क्त] मिश्रित । संयुक्त, जुड़ा हुआ ।

व्यतिक्रम—(पुं०) [वि—अति√क्रम् +घञ्] सिलसिले में होने वाला उलट-फेर, क्रम में होने वाला विपर्यय । पाप, अपकर्म । विपत्ति, सङ्कट । अतिक्रमण, उल्लंघन । अवहेला, लापरवाही । वैपरीत्य । बीतना, गुजरना ।

व्यतिक्रान्त—(वि०) [वि—अति√क्रम् +क्त] अतिक्रमण किया हुआ । भङ्ग किया हुआ (नियम) । उलट-फेर किया हुआ । बीता हुआ, गुजरा हुआ (जैसे—समय) ।

व्यतिरिक्त—(वि०) [वि–अति√रिच् +क्त] अतिशय, बहुत अधिक । अलगाया हुआ, अलहदा किया हुआ । रोका हुआ । वर्जित ।

व्यतिरेक—(पुं०) [वि–अति √ रिच् +घञ्] भेद, अन्तर, भिन्नता । अलगाव । वर्जन, बहिष्करण । असमानता, असादृश्य । विच्छेद, क्रम-भङ्ग । एक अर्थालङ्कार जिसमें उपमान की अपेक्षा उपमेय में कुछ और भी विशेषता या अधिकता का वर्णन किया जाता है ।

व्यतिरेकिन्—(वि०) [व्यतिरेक + इनि] अतिक्रमण करने वाला । अंतर या भेद दिखाने वाला । भिन्न । वर्जित, बहिष्कृत । अभाव या अनस्तित्व प्रदर्शन करने वाला ।

व्यतिषक्त—(वि०) [वि–अति √ सञ्ज् +क्त] पारस्परिक सम्बन्ध युक्त या जुड़ा हुआ । ओत-प्रोत । परस्पर परिणय या विवाह सम्बन्ध में आबद्ध ।

व्यतिषङ्ग—(पुं०) [वि–अति √ सञ्ज् +घञ्] पारस्परिक सम्बन्ध । मिलावट । संयोग । सङ्क्रम ।

व्यतिहार, व्यतीहार—(पुं०) [वि–अति √हृ+घञ्, पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] विनिमय, बदला ।

व्यतीत—(वि०) [वि–अति√इ+क्त] गया हुआ, गुजरा हुआ, बीता हुआ । मरा हुआ । त्यागा हुआ, छोड़ा हुआ । प्रस्थित । अवहेलना किया हुआ ।

व्यतीपात—(पुं०) [वि–अति √ पत् +घञ्, उपसर्गस्य दीर्घः] सम्पूर्णरीत्या प्रस्थान । सम्पूर्णतः विच्छेद । बड़ा भारी उत्पात या उपद्रव (जैसे—भूकम्प, उल्कापात आदि) । तिरस्कार, अपमान । ज्योतिष शास्त्र में सत्ताइस योगों में से सत्रहवां योग ।(इस योग में कोई शुभ कार्य या यात्रा निषिद्ध है। योग विशेष जो अमावास्या के दिन रविवार या श्रवण, धनिष्ठा, आर्द्रा, अश्लेषा, अथवा मृगशिरा नक्षत्र होने पर होता है । इस योग में गङ्गास्नान का बड़ा पुण्य फल बतलाया गया है ।)

व्यत्यय—(पुं०) [वि–अति √इ+अच्] व्यतिक्रम, उलटफेर । उल्लंघन । रोक, अड़चन ।

व्यत्यस्त—(वि०) [वि–अति√अस्+क्त] उलटा, औंधा किया हुआ । विरुद्ध, विपरीत । असंलग्न; 'व्यत्यस्तं लपति' भा० २.८४ । आड़ा, तिरछा ।

व्यत्यास—(पुं०) [वि–अति √अस्+घञ्] व्यतिक्रम । वैपरीत्य, विरुद्धता । बाधा । परिवर्तन ।

√व्यथ्—भ्वा० आत्म० अक० दुःखी होना । अशान्त होना । विकल होना । काँपना । भयभीत होना । सूख जाना । व्यथते, व्यथिष्यते, अव्यथिष्ट ।

व्यथक—(वि०) [स्त्री०—**व्यथिका**] [√व्यथ्+णिच् + ण्वुल्] पीड़ा-कारक । भयभीत करने वाला ।

व्यथन—(वि०) [√व्यथ् + णिच्+ल्यु] पीड़ा देने वाला । क्षुब्ध करने वाला । (न०) [√व्यथ्+ल्युट्] व्यथा, पीड़ा । कंपन । परिवर्तन (स्वर का) ।

व्यथा—(स्त्री०) [√व्यथ् + अङ्–टाप्] कष्ट, भय, चिन्ता । विकलता, रोग ।

व्यथित—(वि०) [√व्यथ् + क्त] पीड़ित, सन्तप्त । भयभीत । विकल ।

√व्यध्—दि० पर० सक० बेधना, ताड़न करना । मार डालना । छेद करना । कोंचना । विध्यति, व्यत्स्यति, अव्यात्सीत् ।

व्यध—(पुं०) [√व्यध् + अप्] छेदन । भेदन । ताड़न । आहतकरण । आघात ।

व्यधिकरण—(न०) [वि– अधि √ कृ +ल्युट्] भिन्न आधार पर होना । (वि०) [विभिन्नं विरुद्धं वा अधिकरणं यस्य, प्रा०

ब०] जिसका आधार भिन्न हो। दूसरे कारक से संबद्ध (यथा—'चक्रपाणिः' चक्रं पाणौ यस्य, यहां 'चक्रम्' और 'पाणौ' में भिन्न-भिन्न विभक्ति होने के कारण व्यधिकरण ब० स० होता है)।

व्यध्य—(वि०) [√व्यध् + ण्यत्] छेदन, भेदन करने योग्य। (पुं०) [व्यधाय हितः, व्यध+यत्] धनुष की डोरी, प्रत्यंचा।

व्यध्व—(पुं०) [विरुद्धः अध्वा, प्रा० स०, अच्] बुरा मार्ग, कुपथ।

व्यनुनाद—(पुं०) [विशिष्टः अनुनादः, प्रा० स०] जोर की गूँज। उच्च प्रतिध्वनि।

व्यन्तर—(वि०) [विशिष्टः अन्तरो यस्य, प्रा० ब०] व्यवहृत। (पुं०) जैनों के अनुसार एक तरह के पिशाच और यक्ष। [विगतः अन्तरः प्रा० स०] अन्तर का अभाव।

√व्यप्—चु० उभ० सक० फेंकना। कम करना। बरबाद करना। व्यपयति—ते।

व्यपकृष्ट—(वि०) [वि—अप √ कृष्+क्त] खींचा हुआ। हटाया हुआ, स्थानान्तरित किया हुआ।

व्यपगत—(वि०)[वि—अप√गम्+क्त]गया हुआ, प्रस्थित; 'मदो मे व्यपगतः' भर्तृ० २.८। गिरा हुआ। वंचित।

व्यपगम—(पुं०) [वि—अप√गम् + अप्] प्रस्थान। लोप। बीतना।

व्यपत्रप—(वि०) [विगता अपत्रपा यस्य, प्रा० ब०] निर्लज्ज, बेहया।

व्यपदिष्ट—(वि०) [वि—अप् √ दिश् +क्त] नामाङ्कित। निर्दिष्ट, बतलाया हुआ। छला हुआ।

व्यपदेश—(पुं०) [वि—अप √ दिश् +घञ्] सूचना, इत्तिला। नामकरण। नाम। उपाधि। वंश। जाति। प्रसिद्धि, प्रख्याति। चाल, बहाना। कपट, छल।

व्यपदेष्टृ—(वि०) [वि—अप √ दिश् +तृन्] निर्देश करने वाला। कपटी, छलिया।

व्यपरोपण—(न०) [वि – अप √ रुह् +णिच्+ल्युट्, हस्य पः] जड़ से उखाड़ कर फेंक देने की क्रिया। बहिष्करण, निकाल बाहर करना। कर्तन; 'चुकोप तस्मै स भृशं सुरश्रियः प्रसह्य केशव्यपरोपणादिव' र० ३.५६। तोड़ना।

व्यपाय—(पुं०) [वि—अप√ इ + घञ्] विनाश। समाप्ति।

व्यपाश्रय—(पुं०) [वि—अप – आ √श्रि +अच्] आश्रय, अवलम्ब। निर्भरता। एक के बाद एक होना, परंपराक्रम।

व्यपेक्षा—(स्त्री०) [वि—अप √ ईक्ष्+अङ् —टाप्]आकांक्षा, अभिलाषा; 'अथ काश्चिदजव्यपेक्षया गमयित्वा समदर्शनः समाः' र० ८.२४। आग्रह, अनुरोध। पारस्परिक सम्बन्ध। संलग्नता। अपेक्षा।

व्यपेत—(वि०) [वि—अप√इ+ क्त] जो अलग हो गया हो, जिसका अंत हो गया हो। विरुद्ध। गया हुआ।

व्यपोढ—(वि०) [वि√अप+वह् + क्त] निकाला हुआ, हटाया हुआ। विरुद्ध, विपरीत। प्रकटित, प्रदर्शित।

व्यपोह—(पुं०) [वि—अप √ ऊह् + घञ्] रोक रखने या भगा देने की क्रिया। नाश। अस्वीकार। बहारना।

व्यभिचार, व्यभीचार—(पुं०) [वि—अभि √चर्+घञ् पक्षे उपसर्गस्य दीर्घः] कदाचार, बदचलनी। कुपथ-गमन, अनुचित मार्गानुसरण। अनुचित यौन सम्बन्ध। पाप। अतिक्रमण। अवहेलना। अपवाद (किसी नियम का)। न्याय दर्शन में हेतु का एक दोष।

व्यभिचारिणी—(स्त्री०) [व्यभिचारिन् + ङीप्] असती स्त्री, छिनाल औरत।

व्यभिचारिन्—(वि०) [व्यभिचार+इनि] मार्ग-भ्रष्ट । बदचलन, परस्त्रीगामी । अस्थायी । उल्लंघन करने वाला । नियम-विरुद्ध । जिसके कई गौण अर्थ हों ।—**भाव**—(पुं०) साहित्य में वे भाव जो रस के उपयोगी होकर जलतरङ्गवत् उनमें सञ्चरण करते हैं और समय-समय पर मनुष्य-भाव का रूप भी धारण कर लेते हैं । अर्थात् चंचलतापूर्वक सब रसों में सञ्चारित होते रहते हैं, सञ्चारी भाव ।

√**व्यय्**—भ्वा० पर० सक० जाना । व्ययति, व्ययिष्यति, अव्ययीत् । चु० पर० सक० वित्त त्याग करना, खर्च करना । व्याययति, व्याययिष्यति, अवव्ययत् ।

व्यय—(वि०) [वि√इ +अच्] परिवर्तनशील । नाशवान् । (पुं०) [√व्यय् +अच्] धन का किसी काम में लगना, खर्च । क्षय, नाश । ह्रास । त्याग । (न०) लग्न से बारहवाँ स्थान ।—**शील**-(वि०) अपव्ययी, फजूलखर्च ।

व्ययन—(न०) [√व्यय् वा वि√इ+ल्युट्] खर्च करना । बरबाद करना, नष्ट कर डालना ।

व्ययित—(वि०) [व्यय+इतच्] व्यय किया हुआ । बरबाद किया हुआ । घटती को प्राप्त ।

व्यर्थ—(वि०) [विगतोऽर्थो यस्मात्, प्रा० ब०] निरर्थक । अर्थ-रहित, जिसका कुछ मतलब ही न हो ।

व्यलीक—(वि०) [विशेषेण अलति, वि √अल्+कीकन्] झूठा, असत्य । अप्रिय, अप्रीतिकर । अकार्य, अनुचित । कष्टदायक । अपरिचित । अद्भुत । (न०) अप्रियता । कोई कारण जिससे दुःख उत्पन्न हो । अपराध । कपट, छल । असत्यता । वैपरीत्य । कष्टकारिता । (पुं०) लंपट पुरुष । विट ।

व्यवकलन—(न०) [वि—अव √ कल् +ल्युट्] विच्छेद । अङ्कगणित में बाकी घटाने की क्रिया, बाकी निकालने की क्रिया ।

व्यवक्रोशन—(न०) [वि—अव √ क्रुश् +ल्युट्] आपस में गाली-गलौज ।

व्यवच्छिन्न—(वि०) [वि—अव √ छिद् +क्त] कटा हुआ । वियोजित, विभक्त । निर्द्धारण किया हुआ, निश्चित । चिह्नित । बाधा डाला हुआ । भिन्न ।

व्यवच्छेद—(पुं०) [वि—अव √ छिद् +घञ्] पृथक्ता, पार्थक्य, अलगाव । विभाग, खण्ड, हिस्सा । विराम । निर्द्धारण । छोड़ना, चलाना (जैसे—बाण) । किसी ग्रन्थ का अध्याय या पर्व ।

व्यवधा—(स्त्री०) [वि—अव √ धा+अङ —टाप्] वह जो बीच में हो, व्यवधान । पर्दा । छिपाव, दुराव ।

व्यवधान—(न०) [वि—अव √धा+ल्युट्] वह वस्तु जो बीच में पड़ पृथक् करती हो । दृष्टि को रोकने वाली वस्तु; 'दृष्टि विमालव्यवधानमुक्ता पुनः सहस्रार्चिषि संनिधत्ते' र० १३.४४ । दुराव, छिपाव । परदा । गिलाफ । अवकाश । विच्छेद, अलग होना । समाप्ति ।

व्यवधायक—(वि०) [स्त्री०—**व्यवधायिका**] [वि—अव √ धा+ण्वुल्] आड़ करने वाला, अंतर डालने वाला । परदा करने वाला । रुकावट डालने वाला । छिपाने वाला ।

व्यवधि—(पुं०) [वि—अव √धा + कि] व्यवधान, परदा, ओट ।

व्यवसाय—(पुं०) [वि—अव √ सो+घञ्] अमल, उद्योग; 'मन्दीचकार मरणव्यवसायबुद्धिं' कु० ४.४५ । अभिप्राय । सङ्कल्प, पक्का इरादा । कार्य, क्रिया । धंधा, व्यापार । आचरण, चाल-चलन, व्यवहार । छल । कौशल । डींग । विष्णु का नामान्तर । शिव ।

व्यवसायिन्—(वि०) [व्यवसाय + इनि] जो किसी प्रकार का व्यवसाय या रोजगार करता हो। उद्यमी, परिश्रमी। दृढ़संकल्प। अध्यवसायी।

व्यवसित—(वि०) [वि—अव √सो + क्त] जिसका अनुष्ठान किया गया हो। व्यवसाय किया हुआ। उद्यत। तत्पर। निश्चित। छला हुआ, प्रवञ्चित। (न०) सङ्कल्प, दृढ़ विचार।

व्यवस्था—(स्त्री०) [वि—अव √ स्था + अङ —टाप्] प्रबन्ध, इन्तजाम। तजवीज, युक्ति। निर्धारित नियम या विधान। शर्तनामा, इकरारनामा। परिस्थिति, हालत। दृढ़ आधार।

व्यवस्थान—(न०), **व्यवस्थिति** (स्त्री०)—[वि—अव √ स्था + ल्युट्] [वि—अव √स्था + क्तिन्] व्यवस्था, प्रबन्ध। नियम। निर्णय। दृढ़ता। सङ्गति। अध्यवसाय। विच्छेद।

व्यवस्थापक—(वि०) [स्त्री०—**व्यवस्थापिका**] [वि—अव √ स्था + णिच्, पुक् + ण्वुल्] प्रबन्धक, व्यवस्था करने वाला। वह जो कानूनी सलाह या शास्त्रीय व्यवस्था देता हो। यथास्थान क्रम से सजाने वाला।

व्यवस्थापन—(न०) [वि—अव √ स्था + णिच्, पुक् + ल्युट्] विधिपूर्वक रखना। विधान का निर्देशन। निर्धारण। निश्चय-करण।

व्यवस्थापित—(वि०) [वि—अव √स्था + णिच्, पुक् + क्त] व्यवस्था किया हुआ। निर्धारण किया हुआ।

व्यवस्थित—(वि०) [वि—अव √ स्था + क्त] क्रम से रखा हुआ। सजाया हुआ। तै किया हुआ। निर्धारित। निर्णीत। वियोजित। निकाला हुआ। निर्भरित, अवलम्बित।

व्यवहर्तृ—(पु०) [वि—अव √ हृ + तृच्] किसी व्यापार का प्रबन्धक। मुकदमाबाजी करने वाला, वादी। न्यायाधीश। साथी, संगी।

व्यवहार—(पुं०) [वि—अव √हृ + घञ्] आचरण, चाल-चलन। धंधा, व्यवसाय। बर्ताव। महाजनी। तिजारत, व्यापार। रीति, रस्म, रिवाज। सम्बन्ध, रिश्तेदारी। मुकदमे की जाँच-पड़ताल। मुकदमा, अभियोग, नालिश।—**दर्शन**-(न०) कानूनी कार्रवाई। मुकदमे की सुनवाई। मुकदमे की पेशी।—**पद**- (न०) मुकदमे का कारण। व्यवहार का विषय जिसकी वजह से मुकदमा दायर किया जाय।—**पाद**- (पुं०) व्यवहार के पूर्व-पक्ष, उत्तरपक्ष, क्रियापाद और निर्णय इन चारों का समूह।—**मातृका**- (स्त्री०) व्यवहारशास्त्रानुसार होने वाली क्रियाएँ। [जैसे मुकदमे का दायर होना, पेश होना, गवाहों की तलबी, उनका साक्ष्य, जिरह, बहस, फैसला आदि]।—**विधि**-(पुं०) वह शास्त्र जिसमें व्यवहार संबंधी बातों का उल्लेख किया गया हो, धर्मशास्त्र।—**पद**-(न०),—**मार्ग**- (पुं०),—**विषय**-(पुं०), —**स्थान**-(न०) व्यवहार का विषय या स्थान।

व्यवहारक—(पुं०) [वि—अव √हृ + ण्वुल्] व्यापारी, सौदागर।

व्यवहारिक—(वि०) [स्त्री०—**व्यवहारिका, व्यवहारिकी**] [व्यवहार + ठन्] व्यापार सम्बन्धी। व्यापार में संलग्न। आईनी या कानूनी। मुकदमेबाज। प्रचलित।—**जीव**- (पुं०) वेदान्त के अनुसार ज्ञान-मय कोष।

व्यवहारिका—(स्त्री०) [वि—अव √ हृ + ण्वुल्—टाप्, इत्व] चलन, पद्धति, रिवाज, रस्म। झाड़। इंगुदी का वृक्ष।

व्यवहारिन्—(वि०) [व्यवहार+इनि] व्यवहार करने वाला। मुकदमेबाज। जो व्यवहार में आता हो।

व्यवहित—(वि०) [वि—अव √ धा+क्त] अलग रखा हुआ। बीच में पड़ी किसी वस्तु से अलगाया हुआ। बाधा दिया हुआ। रोका हुआ। परदा डाला हुआ, आड़ में किया हुआ। जिसका लगातार सम्बन्ध न हो। पूरा किया हुआ, संपादित। छोटा हुआ। आगे बढ़ा हुआ। विरोधी। नीचा दिखाया हुआ।

व्यवहृति—(स्त्री०) [वि—अव√हृ+क्तिन्] आचरण। क्रिया, कार्य। सम्पर्क। व्यापार। मुकदमा।

व्यवाय—(न०) [वि—अव √ अय्+अच्] चमक, दीप्ति, आभा। (पु०) [वि—अव √इ+घञ्] विच्छेद। लीनता। परदा। दुराव, छिपाव। विराम। अड़चन। स्त्री-सम्भोग। शुद्धता।

व्यवायिन्—(पु०) [वि—अव √इ+णिनि] कामी पुरुष, ऐयाश आदमी। कामोद्दीपक पदार्थ। (वि०) पृथक् करने वाला। व्यापक।

व्यवेत—(वि०) [वि—अव √ इ+क्त] वियोजित। भिन्न।

व्यष्टि—(स्त्री०) [वि √ अश्+ क्तिन्] समष्टि का एक पृथक् एवं विशिष्ट अंश, समष्टि का उलटा।

व्यसन—(न०) [वि√अस् + ल्युट्] प्रक्षेप। वियोग, विच्छेद। अतिक्रमण। भङ्गीकरण। नाश। पराजय। अधःपात। निर्बलता। आपत्ति, सङ्कट। अस्त होने की क्रिया। पापाचार। बुरी आदत, बुरी लत; 'मिथ्यैव व्यसनं वदन्ति मृगयामीदृग् विनोदः कुतः' श० ४.५। लीनता। अपराध। सजा। अयोग्यता। निरर्थक। उद्योग। पवन।—**अतिभार** (व्यसनातिभार)–(पु०) बड़ी भारी विपत्ति।—**अन्वित** (व्यसनान्वित) —**आर्त** (व्यसनार्त),—**पीडित**—(वि०) आपदग्रस्त, सङ्कटापन्न, मुसीबतज़दा।

व्यसनिन्—(वि०) [व्यसन + इनि] किसी बुरी लत में फँसा हुआ, दुष्ट। अभागा, बदकिस्मत। किसी कार्य में जी-जान से लगा हुआ।

व्यसु—(वि०) विगताः असवः प्राणाः यस्य, प्रा० ब०] निर्जीव, मृत; 'गुरुनेमिनिपीडनावदीर्णव्यसुदेहस्रुतशोणितैः' शि० २०.३।

व्यस्त—(वि०) [वि√अस् + क्त] प्रक्षिप्त, फेंका हुआ। विकीर्ण, बिखरा हुआ। निकाला हुआ। वियोजित, अलहदा किया हुआ। एक-एक कर विचार किया हुआ। अमिश्रित। विभिन्न। स्थानान्तरित किया हुआ। घबड़ाया हुआ, विकल। गड़बड़, अस्तव्यस्त। उलटा-पुलटा। विपरीत।

व्यस्तार—(पुं०) हाथी की कनपटियों से मद का चूना।

व्यह्न—(वि०) [वि+ हन् ब० स०] एक ही दिन न होकर भिन्न दिवसों में होने वाला।

व्याकरण—(न०) [व्याक्रियन्ते व्युत्पाद्यन्ते शब्दाः येन, वि—आ√कृ+ल्युट्]वाक्-पृथक्करण-प्रक्रिया। वह शास्त्र जो वेद के छः अंगों में से एक है। यह साध्य, साधन, कर्ता, कर्म, क्रिया, समास आदि का निरूपण करता है। नाम और रूप से जगत् का प्रकाशन (वेदान्त)। भविष्यद् वाणी (बौद्ध)। निर्माण, रचना। धनुष की टंकार।

व्याकार—(पु०) [वि—आ √कृ + घञ्] व्याख्या। परिवर्तन, रूप का पलटना। कुरूपता।

व्याकीर्ण—(वि०) [वि—आ √कृ+क्त] बिखरा हुआ। अस्त-व्यस्त किया हुआ। व्याकुल

व्याकुल—(वि॰) [आ√कुल् + क, विशेषेण आकुलः; प्रा॰ स॰] घबड़ाया हुआ। विकल, परेशान। भयभीत, डरा हुआ। परिपूर्ण। कार्य में संलग्न या फँसा हुआ।

व्याकुलित—(वि॰) [वि—आ√कुल् + क्त] विकल, घबड़ाया हुआ। भीत।

व्याकूति—(स्त्री॰) [विशिष्टा आकूतिः; प्रा॰ स॰] छल, कपट। धोखा, फरेब।

व्याकृत—(वि॰) [वि—आ √ कृ+क्त] पृथक् किया हुआ। व्याख्या किया हुआ। बदशक्ल बनाया हुआ।

व्याकृति—(स्त्री॰)[वि॰—आ√कृ+क्तिन्] पृथक्करण। व्याख्या, टीका। रूप-परिवर्तन, शक्ल की बदलौवल। व्याकरण।

व्याकोश, व्याकोष—(वि॰) [वि—आ √कुश्+अच्] [वि—आ √ कुष्+अच्] पूर्ण विकसित, प्रफुल्ल; 'व्याकोशकोकनदतां दधते नलिन्यः' शि॰ ४.४६। वृद्धि को प्राप्त।

व्याक्षेप—(पु॰) [वि—आ √ क्षिप्+घञ्] उछल-कूद। अड़चन, रुकावट। विलम्ब। विकलता।

व्याख्या—(स्त्री॰) [वि—आ √ ख्या +अङ—टाप्] किसी कठिन पद या वाक्य आदि का अर्थ स्पष्ट करने वाला विवरण, टीका। वर्णन, निरूपण।

व्याख्यात—(वि॰) [वि—आ √ ख्या +क्त] जिसकी व्याख्या, टीका की गई हो। निरूपित, वर्णित।

व्याख्यातृ—(पु॰ वि॰)[वि—आ √ख्या +तृच्] व्याख्या करने वाला। भाषण करने वाला।

व्याख्यान—(न॰) [वि—आ √ख्या +ल्युट्] निरूपण। भाषण। व्याख्या। टीका।

व्याघट्टन—(न॰) [वि—आ √ घट्ट् +ल्युट्] मन्थन। रगड़ना, संघर्षण।

व्याघात—(पु॰) [वि—आ √ हन्+घञ्, नस्य तः] ताड़न। आघात, प्रहार। अड़चन, रुकावट। खण्डन, प्रतिवाद। अलङ्कार विशेष जिसमें एक ही उपाय के द्वारा दो विरुद्ध कार्यों के होने का वर्णन किया जाता है।

व्याघ्र—(पु॰) [व्याजिघ्रति, वि—आ √घ्रा + क] चीता, बाघ। (समासान्त-शब्दों के अन्त में आने पर इसका अर्थ होता है सर्वोत्तम, मुख्य, प्रधान। यथा "नरव्याघ्र"।) लाल रेंड़। करंज।—**आस्य (व्याघ्रास्य)**-(पु॰) बिलार।—**नख**-(न॰) चीते के नाखून। बगनहा नामक प्रसिद्ध गन्धद्रव्य। खरोंच, नखक्षत। थूहर, स्नुही वृक्ष। एक प्रकार का कंद।—**नायक**-(पु॰) गीदड़, शृगाल।

व्याघ्री—(स्त्री॰) [व्याघ्र +ङीष्] चीते की मादा, बाघिन। कंटकारी। नखी नामक गंधद्रव्य।

व्याज—(पु॰) [व्यजति यथार्थव्यवहारात् अपगच्छति अनेन, वि√अज् + घञ्] कपट, छल, फरेब। कौशल, चालाकी। बहाना, मिस; 'प्रदक्षिणार्चिर्व्याजेन हस्तेनेव जयं ददौ' र॰ ४.२५। तरकीब, युक्ति।—**उक्ति (व्याजोक्ति)**-(स्त्री॰) कपट-भरी बात। अलङ्कार विशेष। इसमें किसी स्पष्ट बात को छिपाने के लिये कोई बहाना किया जाता है।—**निन्दा**-(स्त्री॰) वह निन्दा जो छल या कपट से की जाय। एक शब्दालंकार।—**सुप्त**-(वि॰) सोने का बहाना किया हुआ।—**स्तुति**-(स्त्री॰) वह स्तुति या प्रशंसा जो किसी बहाने से की जाय और ऊपर से देखने में तो स्तुति जान पड़े किन्तु हो निन्दा।

व्याड—(पु॰) [वि—आ√अड्+अच्] मांसभक्षी जीव; जैसे शेर, चीता आदि। गुंडा, शठ। सर्प। इन्द्र का नामान्तर।

व्याडि—(पुं०) संस्कृत साहित्य का एक प्रसिद्ध ग्रन्थकार जिसके बनाये व्याकरण और शब्द-कोश प्रसिद्ध हैं।

व्यात्त—(वि०) [वि—आ√दा+क्त] खोला या फैलाया हुआ (मुख)। विस्तृत।

व्यात्युक्षी—(स्त्री०) [वि—आ—अति √उक्ष्+णच्+अच्—ङीप्] जलक्रीड़ा।

व्यादान—(नि०) [वि०—आ√दा+ल्युट्] खोलने, फैलाने की क्रिया।

व्यादिश—(पुं०) [विशेषेण आदिशति स्वे-स्वे कर्मणि नियोजयति, वि—आ√दिश्+क] विष्णु की उपाधि।

व्याध—(पुं०) [विध्यति मृगादीन्, √व्यध्+ण] शिकारी, बहेलिया। दुष्ट या नीच आदमी।

व्याधाम, व्याधाव—(पुं०) [व्याध√अम्+णिच्+अच्] इन्द्र का वज्र।

व्याधि—(पुं०) [विविधा आधयोऽस्मात्, प्रा० ब०; अथवा वि—आ√धा+कि] बीमारी, रोग। पीड़ा। कोढ़।—**ग्रस्त**-(वि०) बीमार, रोगी।

व्याधित—(वि०) [व्याधिः संजातोऽस्य, व्याधि+इतच्] रोगी, बीमार।

व्याधूत—(वि०) [वि—आ√धू+क्त] कम्पित, काँपा हुआ।

व्यान—(पुं०) [व्यानिति सर्वशरीरं व्याप्नोति वि—आ√अन्+अच्] शरीरस्थ पाँच वायुओं में से एक। यह सारे शरीर में व्याप्त रहता है।

व्यानत—(वि०) [वि—आ√नम्+क्त] विशेष रूप से झुका हुआ। (न०) एक रतिबन्ध।

व्यापक—(वि०) [स्त्री०—व्यापिका] [विशेषेण आप्नोति, वि√आप्+ण्वुल्] चारों ओर फैला हुआ। जो ऊपर या चारों ओर से घेरे हुए हो, घेरने या ढकने वाला।

व्यापत्ति—(स्त्री०) [वि—आ√पद्+क्तिन्] बरबादी, सर्वनाश। विपत्ति। एक वस्तु के बदले दूसरी वस्तु का रखना। मृत्यु। 'तयोस्तस्मिन्नवीभूतपितृव्यापत्तिशोकयोः' र० १२.२६।

व्यापद्—(स्त्री०) [वि—आ√पद्+क्विप्] विपत्ति, सङ्कट। रोग। मृत्यु। नाश।

व्यापन—(न०) [वि√आप्+ल्युट्] सर्वत्र फैलना या पसरना। चारों ओर से या ऊपर से घेरना या ढकना।

व्यापन्न—(वि०) [वि—आ√पद्+क्त] संकट-ग्रस्त। गिरा हुआ (जैसे गर्भ)। चोटिल, घायल। मृत, मरा हुआ। अस्त-व्यस्त, गड़बड़। परिवर्तित, बदला हुआ।

व्यापाद—(पुं०), **व्यापादन**-(न०) [वि—आ√पद्+णिच्+घञ्] [वि—आ√पद्+णिच्+ल्युट्] हनन, मारण। नाश, बरबादी। मन में दूसरे के अपकार की भावना करना, किसी की बुराई सोचना।

व्यापार—(पुं०) [वि—आ√पृ+घञ्] कार्य, काम। क्रिया। वाणिज्य। धंधा, पेशा। उद्योग, उद्यम; 'आर्याप्यरुन्धती तत्र व्यापारं कर्तुमर्हति' कु० ६.३२। न्याय के अनुसार विषय के साथ होने वाला इन्द्रियों का संयोग।

व्यापारित—(वि०) [वि—आ√पृ+णिच्+क्त] काम में लगाया हुआ। स्थापित। जमाया हुआ।

व्यापारिन्—(वि०) [व्यापार+इनि] रोजगारी, सौदागर। कोई भी कार्य करने वाला।

व्यापिन्—(वि०) [वि√आप्+णिनि] व्याप्त होने वाला, व्यापक। आच्छादक। (पुं०) विष्णु का नाम।

व्यापृत—(वि०) [वि—आ√पृ+क्त] किसी काम में लगा हुआ। रखा हुआ। (पुं०) मंत्री। उच्च राजकर्मचारी।

व्यापृति—(स्त्री०) [वि०—आ√पृ+क्तिन्] धंधा। कार्य। क्रिया। उद्योग। पेशा। अभ्यास।

व्याप्त—(वि०) [वि√आप्+क्त] चारों ओर फैला हुआ। भरा हुआ, परिपूर्ण। घिरा हुआ। स्थापित। अधिकृत। प्राप्त। सम्मिलित। (न्यायदर्शन के अनुसार कोई पदार्थ दूसरे पदार्थ में) पूर्ण रूप से मिला हुआ या फैला हुआ। प्रसिद्ध, प्रख्यात। फैला हुआ, पसरा हुआ।

व्याप्ति—(स्त्री०) [वि√आप्+क्तिन्] व्याप्त होने की क्रिया। न्यायदर्शनानुसार किसी एक पदार्थ में दूसरे पदार्थ का पूर्णरूपेण मिला या फैला हुआ होना। एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ के साथ सदा पाया जाना। सर्वमान्य नियम, सार्वजनिक नियम। परिपूर्णता। प्राप्ति। ।—**ज्ञान**-(न०) न्यायदर्शनानुसार वह ज्ञान जो साध्य को देख कर साध्यवान् के अस्तित्व के सम्बन्ध में अथवा साध्यवान् को देखकर साध्य के अस्तित्व के सम्बन्ध में उपलब्ध होता है।

व्याप्य—(वि०) [वि√आप्+ण्यत् वा णिच्+ण्यत्] व्यापनीय, व्याप्त होने या करने योग्य। (न०) वह जिसके द्वारा कोई कार्य हो, हेतु, साधन। कुट नामक ओषधि।

व्याप्यत्व—(न०) [व्याप्य+त्व] नित्यता, अविकारता, अपरिवर्तनीयता।

व्याभ्युक्षी—(स्त्री०) [वि—आ—अभि√उक्ष्+णच्+अञ्—ङीप्] जल-क्रीड़ा।

व्याम—(पुं०), **व्यामन्**—(न०) [विशेषेण अम्यतेऽनेन, वि√अम्+घञ्] [वि—आ√मन्+ल्युट्] लंबाई की एक नाप, दोनों भुजाओं को दोनों ओर फैलाने पर एक हाथ की उँगलियों के सिरे से दूसरे हाथ की उँगलियों के सिरे तक की लंबाई।

व्यामिश्र—(वि०) [वि—आ√मिश्र्+अच्] मिश्रित, मिला हुआ।—**व्यूह**-(पुं०) मिला-जुला व्यूह। वह व्यूह जिसमें पैदल, रथदल आदि चारों तरह के दल मिले हों। —**सिद्धि**-(स्त्री०) शत्रु और मित्र दोनों की स्थिति का अपने अनुकूल होना।

व्यामोह—(पुं०) [वि—आ√मुह्+घञ्] मोह, अज्ञान। व्याकुलता, परेशानी।

व्यामृष्ट—(वि०) [वि—आ√मृष्+क्त] धोया हुआ।

व्यायत—(वि०) [वि—आ√यम्+क्त] लंबा; 'युवा युगव्यायतबाहुरंसलः' र० ३.३४ फैला हुआ, पसरा हुआ। नियंत्रित। कार्य में व्यस्त, मशगूल। सख्त, दृढ़। अत्यधिक सघन। ताकतवर, बलवान्। गहरा, गम्भीर।

व्यायतत्व—(न०) [व्यायत+त्व] पेशियों की वृद्धि।

व्यायाम—(पुं०) [वि—आ√यम्+घञ्] फैलाव, बढ़ाव। कसरत; 'व्यायामे वृद्धि-रङ्गिनाम्' शि० २.९४। थकावट, श्रान्ति। उद्योग, उद्यम। झगड़ा, विवाद। लंबाई की माप।

व्यायामिक—(वि०) [स्त्री०—व्यायामिकी] [व्यायाम+ठक्] व्यायाम संबंधी। कसरती।

व्यायोग—(पुं०) [वि—आ√युज्+घञ्] साहित्य में दस प्रकार के रूपकों में से एक प्रकार का रूपक या दृश्य काव्य।

व्याल—(वि०) [विशेषेण आसमन्तात् अलति, वि—आ√अल्+अच्] दुष्ट, शठ। बुरा। उपद्रवी। नृशंस। भयानक। (पुं०) खूनी हाथी। शिकार करने वाला जन्तु, हिंस्र जन्तु। सर्प। सिंह। बाघ। लकड़बग्घा। राजा। ठग। आठ की संख्या। विष्णु का नाम।—**खड्ग**,—**नख**-(पुं०) नख या बघनहा नामक गन्ध द्रव्य।—**ग्राह**,—**ग्राहिन्**-(पुं०) सँपेरा, सर्प पकड़ने वाला।—

—मृग-(पु०) हिंस्र जन्तु। सिंह। चीता।—रूप-(पु०) शिव जी का नामान्तर।—सुवन-(पु०) गरुड़।

व्यालक—(पु०) [व्याल+कन्] दुष्ट या उपद्रवी हाथी। साँप। शिकारी जानवर।

व्यालम्ब—(पु०) [विशेषेण आलम्बते, वि—आ√लम्ब्+अच्] लाल रेंडी का पेड़। (वि०) लम्बमान, लटकता हुआ।

व्यालीढ—(न०) [वि—आ√लिह् + क्त] साँप के काटने का एक प्रकार जिसमें दो दाँत गड़े हों और रक्त भी निकला हो।

व्यालोल—(वि०) [वि—आ√लोड्+अच्, डस्य लः] काँपने वाला, थरथराने वाला। ध्वस्त-व्यस्त, बिखरा हुआ (जैसे सिर के केश; 'व्यालोलः केशपाशः' गीत० ११।

व्यावकलन—(न०) [वि—आ—अव√कल् +ल्युट्] बाकी निकालने की क्रिया।

व्यावक्रोशी, व्यावभाषी—(स्त्री०) [वि—आ—अव√ क्रुश् + णच् + अञ्—ङीप्] [वि—आ—अव√भाष्+णच्+अञ्—ङीप्] आपस में गाली-गलौज।

व्यावर्त—(पु०) [वि—आ√वृत्+घञ् वा अच्] घिराव, घेरना। भ्रमण, चक्कर करना। बाहर को निकली हुई नाभि, नाभि-कण्टक। चक्रमर्द, चकवड़।

व्यावर्तक—(वि०) [स्त्री०—**व्यावर्तिका**] [वि—आ√वृत्+णिच्+ण्वुल्] व्यावर्तन करने वाला, घेरने वाला। पृथक् करने वाला। पीछे की ओर लौटने वाला।

व्यावर्तन—(न०) [वि—आ√वृत्+णिच् +ल्युट्] घेरने या चारों ओर से छेंक लेने की क्रिया। घूमने की या चक्कर खाने की क्रिया। अलग करना। सर्प-कुंडली।

व्यावल्गित—(वि०) [वि—आ√वल्ग् +क्त] आन्दोलित।

व्यावहारिक—(वि०) [स्त्री०—**व्यावहारिकी**] [व्यवहार+ठक्] काम-धंधे सम्बन्धी। व्यवहार सम्बन्धी। आईनी, कानूनी। रीति-रिवाज के मुताबिक, प्रचलित। प्रातिभासिक। (पु०) राजा का वह अमात्य या मंत्री जिसके अधिकार में भीतरी और बाहरी समस्त प्रकार के कार्य हों। विचारपति, न्यायाधीश।

व्यावहारी—(स्त्री०) [वि—आ—अव√हृ +णच्+अञ्—ङीप्] आदान-प्रदान। पारस्परिक व्यवहार।

व्यावहासी—(स्त्री०) [वि—आ—अव√ हस्+णच्+अञ्—ङीप्] एक दूसरे को चिढ़ाना या पारस्परिक उपहास करना।

व्यावृत्त—(वि०) [वि—आ√वृत्+क्त] छूटा हुआ, निवृत्त; 'व्यावृत्ता यत्परस्वेभ्यः श्रुतौ तस्करता स्थिता' र० १.२७। मना किया गया, वर्जित। खण्डित, टूटा हुआ। अलहदा किया हुआ। मनोनीत। चारों ओर से घेरा हुआ। आच्छादित, ढका हुआ। प्रशंसित, सराहा हुआ। घुमाया हुआ।

व्यावृत्ति—(स्त्री०) [वि—आ√वृत् + क्तिन्] खंडन। आवृत्ति। मन से चुनने या पसंद करने का काम। चारों ओर से घेरना। प्रशंसा। निराकरण। मीमांसा। निषेध। बाधा। निवृत्ति। वियोग। आच्छादन।

व्यास—(पु०) [वि√अस्+घञ्] बाँट, वितरण, भाग-भाग करके अलगाने की क्रिया। विश्लेषण। बाहुल्य। विस्तार। अंतर, भेद। जाँच। चौड़ाई। वृत्त का व्यास या वह रेखा जो किसी बिल्कुल गोल रेखा या वृत्त के किसी एक स्थान से बिल्कुल सीधी चल कर दूसरे सिरे तक पहुँची हो। उच्चारण का दोष। संग्रह-कर्त्ता। विभाग-कर्त्ता। एक प्रसिद्ध ऋषि जो पराशर के औरस और सत्यवती के गर्भ से उत्पन्न हुए थे। कथावाचक, पुराणों की कथा सुनाने वाला।—कूट-(पु०) महाभारत में आये हुए दुरूह श्लोक।

व्यासक्त—(वि०) [वि—आ√सञ्ज्+क्त] जो बहुत अधिक आसक्त हुआ हो, जिसका मन बेतरह आ गया हो। वियुक्त। व्याकुल, विकल, घबड़ाया हुआ, परेशान।

व्यासङ्ग—(पु०) [वि—आ—सञ्ज्+घञ्] बहुत अधिक आसक्ति। बहुत अधिक भक्ति या अनुराग। ध्यान। वियुक्त, विच्छेद। परिश्रम-पूर्वक अध्ययन।

व्यासिद्ध—(वि०) [वि—आ√सिध्+क्त] वर्जित, निषिद्ध। रोका हुआ (माल)।

व्याहत—(वि०) [वि—आ√हन्+क्त] विशेष रूप से चोट पहुँचाया हुआ। निवारित। निषिद्ध। व्यर्थ। रोका हुआ, अड़चन डाला हुआ। हताश किया हुआ। घबड़ाया हुआ। भयभीत।—**अर्थता** (**व्याहतार्थता**)-(स्त्री०) निबन्ध रचना-शैली के दोषों में से एक।

व्याहरण—(न०) [वि—आ√हृ+ल्युट्] उच्चारण। कथन। वक्तृता। वर्णन।

व्याहार—(पु०) [वि—आ√हृ+घञ्] वक्तृता, भाषण; 'आविर्भूतज्योतिषां ब्राह्मणानां ये व्याहारास्तेषु मा संशयो भूत्' उत्त० ४.१८। शब्द-राशि। ध्वनि, नाद।

व्याहृत—(वि०) [वि—आ√हृ+क्त] कहा हुआ। उच्चारण किया हुआ।

व्याहृति—(स्त्री०) [वि—आ√हृ+क्तिन्] कथन। भाषण, वक्तृता। बयान। गायत्री के साथ जपे जाने वाले मंत्र विशेष; यथा—भूः, भुवः, स्वः। [व्याहृति की संख्या कोई तीन और कोई सात मानते हैं।]

व्युच्छित्ति—(स्त्री०), **व्युच्छेद**-(पुं०) [वि—उद्√छिद्+क्तिन्] [वि—उद्√छिद्+घञ्] उन्मूलन, विनाश, बरबादी।

व्युत्क्रम—(वि०) [वि—उद्√क्रम्+घञ्] व्यतिक्रम, गड़बड़ी, क्रम में उलट-फेर। मार्ग-भ्रंशता। वैपरीत्य।

व्युत्क्रान्त—(वि०) [वि—उद्√क्रम्+क्त] अतिक्रमण किया हुआ। गया हुआ। प्रस्थित। उपेक्षित।

व्युत्त—(वि०) [वि√उन्द्+क्त] भीगा हुआ, पानी से तर।

व्युत्थान—(न०), **व्युत्थिति**-(स्त्री०) [वि—उद्√स्था+ल्युट्] [वि—उद्√स्था+क्तिन्] महान् उद्योग। किसी के विरुद्ध उठ खड़ा होना। विरोध। अवरोध। स्वतंत्र होकर काम करना,स्वेच्छानुसार काम करना। नृत्य विशेष। हाथी को उठाने की क्रिया; 'यावन्त्वमो नाञ्जनं बोधनाय व्युत्थानजो हस्तिचारी मदस्य' शि० १८.२६। चित्त की क्षिप्त, मूढ़ और विक्षिप्त नामक अवस्थाएँ।

व्युत्पत्ति—(स्त्री०) [वि—उद्√पद्+क्तिन्] किसी पदार्थ आदि की विशेष उत्पत्ति या उसका निकास। शब्दसाधन-विद्या। पूर्ण अवगति, पूरी-पूरी जानकारी। पाण्डित्य, विद्वत्ता।

व्युत्पन्न—(वि०) [वि—उद्√पद्+क्त] निकाला हुआ। शब्द-साधन-विद्या द्वारा बना हुआ। संस्कृत। जो किसी शास्त्र आदि का अच्छा ज्ञाता हो।

व्युत्पादक—(वि०) [वि-उद्√पद्+णिच्+ण्वुल्—अक] व्युत्पत्ति करने वाला। उत्पन्न करने वाला।

व्युदस्त—(वि०) [वि—उद्√अस्+क्त] अस्वीकृत, खारिज किया हुआ। फेंका हुआ।

व्युदास—(पु०) [वि—उद्√अस्+घञ्] दूर करने या फेंकने की क्रिया। बहिष्करण। निरादर, तिरस्कार। मारण, हनन। नाश-करण।

व्युपदेश—(पुं०) [वि—उप√दिश्+घञ्] बहाना, मिस। प्रवञ्चना, छल।

व्युपरम—(पुं०) [वि—उप√रम्+अप्] अवसान, समाप्ति। बाधा।

व्युपशम—(पुं०) [वि—उप√शम्+अच्] विराम का न होना। अशान्ति। नितान्त अवसान। (यहाँ वि उपसर्ग का अर्थ नितान्तता है।)

√व्युष्—दि० पर० सक० जलाना। व्युष्यति, व्युषिष्यति, अव्युषीत्। विभक्त करना। अव्युषत्।

व्युष्ट—वि०) [वि√उष्+क्त] जला हुआ, झुलसा हुआ। सवेरे के प्रकाश से प्रकाशित। चमकीला। स्पष्ट। [वि√वस्+क्त] बसा हुआ। (न०) तड़का, भोर, प्रभातकाल; 'व्युष्टे प्रयाणं च वियोगवेदनाविहूलनारीकममूत्तमं तदा' शि० १२.४। दिवस, दिन। फल।

व्युष्टि—(स्त्री०) [वि√वस्+क्तिन्] तड़का, भोर। समृद्धि। प्रशंसा। फल, परिणाम।

व्यूढ—(वि०) [वि√वह्+क्त] फैला हुआ, वृद्धि को प्राप्त। चौड़ा, मोटा। दृढ़। संसक्त। क्रम में रखा हुआ, सिलसिलेवार रखा हुआ। अस्त-व्यस्त, गड़-बड़। विवाहित। —कङ्कट-(वि०) कवच-धारी, जिरह-बख्तर पहिना हुआ।

व्यूत—(वि०) [वि√वे+क्त] सिला हुआ। बुना हुआ।

व्यूति—(स्त्री०) [वि√वे+क्तिन्] सिलाई। बुनावट। बुनाई की उजरत।

व्यूह—(पुं०) [वि√ऊह्+घञ्] युद्ध करने के लिये जाने वाली अथवा युद्ध के समय की सेना की स्थापना, सेना का विन्यास। सेना। समूह। जमघट। अंश, भाग। अन्तर्गत भाग। शरीर। ठाठ। बनावट। तर्क। —पार्ष्णि-(स्त्री०) सेना का पिछला भाग। —भङ्ग,—भेद-(पुं०) सेना के व्यूह को तोड़ देना।

व्यूहन—(न०) [वि√ऊह्+ल्युट्] युद्ध के समय सेना के भिन्न-भिन्न स्थानों में नियुक्त करने की क्रिया। शरीर के अङ्ग-प्रत्यङ्गों की बनावट। स्थान-परिवर्तन। विकास (गर्भ का)।

व्यृद्धि—(स्त्री०) [विगता ऋद्धिः, प्रा० स०] असमृद्धि। दुर्भाग्य, बदकिस्मती।

√व्ये—भ्वा० उभ० सक० आच्छादन करना, ऊपर से ढाँकना।। सीना। व्ययति —ते, व्यास्यति—ते, अव्यासीत्—अव्यास्त।

व्यो—(अव्य०) [√व्ये+डो] लोहा। बीज।

व्योकार—(पुं०) [व्यो√कृ+अण्] लुहार।

व्योमन्—(न०) [√व्ये+मनिन्, नि० साधुः (समास में न का लोप हो जाता है)] आकाश, आसमान। जल। सूर्य का मन्दिर। अबरक। —उदक (व्योमोदक)-(न०) वृष्टिजल। ओस। —केश,—केशिन्-(पुं०) शिव जी। —गङ्गा-(स्त्री०) आकाश-गंगा। —चारिन्-(पुं०) देवता। पक्षी। सन्त। ब्राह्मण। नक्षत्र। —धूम-(पुं०) बादल। —नाशिका-(स्त्री०) भारती नामक पक्षी। —मञ्जर,—मण्डल-(न०) पताका, झंडा। —मुद्गर-(पुं०) पवन का झोंका। —यान-(न०) आकाशयान, देवयान। —सद्-(पुं०) देवता। गन्धर्व। आत्मा। —स्थली-(स्त्री०) पृथिवी। —स्पृश्-(वि०) बहुत ऊँचा।

व्योष—(पुं०) [वि√उष्+अच्] पीपल, काली मिर्च और सोंठ का समाहार, त्रिकुट।

√व्रज्—भ्वा० पर० सक० जाना, गमन करना। पास जाना। प्रस्थान करना। गुजर जाना। व्रजति, व्रजिष्यति, अव्राजीत्।

व्रज—(पुं०) [√व्रज्+क] समूह; 'नेत्रव्रजाः पौरजनस्य तस्मिन् विहाय सर्वान्नृपतीन्निपेतुः' र० ६.७। गोष्ठ। मथुरा और वृन्दावन के आसपास का क्षेत्र। मार्ग, सड़क। —किशोर, —नाथ, —मोहन, —राज, —वल्लभ-(पुं०) श्री कृष्ण। —युवती,—

रामा, —वधू, —वनिता, — सुन्दरी, —स्त्री-(स्त्री०) गोपिका।

व्रजन—(न०) [√व्रज्+ल्युट्] गमन। भ्रमण। यात्रा। देशत्याग।

व्रज्या—(स्त्री०) [√व्रज्+क्यप्] घूमना-फिरना, पर्यटन। आक्रमण, चढ़ाई। वर्ग। समूह। रंग-भूमि, नाट्य-शाला।

√व्रण्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना। व्रणति, व्रणिष्यति, अव्रणीत्—अव्राणीत्। चु० पर० सक० घायल करना, चोटिल करना, व्रणयति, व्रणयिष्यति, अवव्रणत्।

व्रण—(न०, पुं०) [√व्रण्+अच्] घाव, क्षत; 'आत्मनः सुमहत्कर्म व्रणैरावेद्य संस्थितः' र० १२.५५। फोड़ा। —**अरि**-(पुं०) बोल नामक गन्धद्रव्य। अगस्त्य वृक्ष। —**कृत्**-(वि०) घाव करने वाला। (पुं०) भिलावें का पेड़। —**विरोपण**-(वि०) घाव पूरने वाला। —**शोधन**-(न०) घाव की सफाई, मलहम पट्टी। —**ह**-(पुं०) एरंड वृक्ष, रेंडी का पेड़।

व्रणित—(वि०) [व्रण+इतच्] जिसे व्रण हुआ हो। जिसे घाव लगा हो, आहत।

व्रत—(न०, पुं०) [√वृ+अतच्, स च कित्] किसी बात का पक्का सङ्कल्प। प्रतिज्ञा। आराधना, भक्ति। पुण्य के साधन उपवासादि नियम विशेष। व्यवस्था, विधि, निर्दिष्ट अनुष्ठान-पद्धति। यज्ञ। अनुष्ठान, कर्म। —**चर्या**-(स्त्री०) किसी प्रकार का व्रत रखने या करने का काम। —**पारण**-(न०) 'पारणा-(स्त्री०) किसी व्रत की समाप्ति। वह पारण जो व्रत के अंत में किया जाता है। —**भङ्ग**-(पुं०) व्रत, प्रतिज्ञा का खंडित हो जाना। —**लोपन**-(न०) किसी व्रत को भंग करना। —**वैकल्य**-(न०) किसी धार्मिक व्रत की अपूर्णता। —**स्नातक**-(पुं०) तीन प्रकार के ब्रह्मचारियों में से एक, वह ब्रह्मचारी जिसने गुरुके निकट रह कर व्रत तो समाप्त कर लिया हो, किन्तु वेदाध्ययन पूरा किये बिना ही घर चला आया है।

व्रतति, व्रतती—(स्त्री०) [प्र√तन्+क्तिच्, पृषो० पस्य वः] [व्रतति+ङीष्] बेल, लता। फैलाव, वृद्धि।

व्रतिन्—(वि०) [व्रत+इनि] व्रत का अनुष्ठान करने वाला। धर्मचारी। (पुं०) ब्रह्मचारी। साधु, महात्मा। यजमान, यज्ञ करने वाला।

√व्रश्च्—तु० पर० सक० काटना। घायल करना। वृश्चति, व्रश्चिष्यति— व्रक्ष्यति, अव्रश्चीत्—अव्राक्षीत्।

व्रश्चन—(न०) [√व्रश्च्+ल्युट्] छेदने या काटने की क्रिया। (पुं०) [√व्रश्च्+ल्यु] सोना, चाँदी आदि काटने की छेनी। कुल्हाड़ी। वह बुरादा जो लकड़ी आदि चीरने पर गिरता है।

व्राजि—(स्त्री०) [√व्रज्+इञ्] तूफान, आँधी।

व्रात—(न०) [√वृ+अतच्, पृषो० साधुः] शारीरिक श्रम, मजदूरी। वह परिश्रम या मजदूरी जो जीविका के लिये की जाय। नैमित्तिक धंधा। (पुं०) समूह; 'परस्पर-शरव्राताः पुष्पवृष्टिं न सेहिरे' र० १२.९४। मनुष्य। व्याध आदि नीच जातियाँ। —**जीविन्**-(वि०) मजदूरी से जीविका चलाने वाला।

व्रातीन—(वि०) [व्रातेन जीवति, व्रात+ख] श्रमजीवी, मजदूरी से जीविका चलाने वाला।

व्रात्य—(पुं०) [व्राते व्याधादिः स इव, व्रात+यत्] वह द्विज जो समय पर संस्कार, विशेषकर, यज्ञोपवीत संस्कार के न होने से पतित हो गया हो, जिसे वैदिक कृत्यादि करने का अधिकार न रह गया हो। नीच आदमी, कमीना पुरुष। वर्णसङ्कर विशेष, जिसकी उत्पत्ति शूद्र पिता और क्षत्रियाणी माता से

हुई हो।—ब्रुव-(पुं०) अपने को व्रात्य बतलाने वाला व्यक्ति।—स्तोम-(पुं०) प्राचीन-कालीन एक यज्ञ जिसे व्रात्य लोग अपना व्रात्य-पन दूर करने के लिये किया करते थे।

√व्री—दि० आत्म० सक० छाँटना, चुनना, पसंद करना। व्रीयते, व्रेष्यते, अव्रेष्ट। क्र्या० पर० सक० वरण करना। व्रिणाति, व्रेष्यति, अव्रैषीत्।

√व्रीड्—दि० पर० अक० लज्जित होना। सक० फेंकना। पटकना। व्रीड्यति, व्रीडि-ष्यति, अव्रीडीत्।

व्रीड—(पुं०), व्रीडा-(स्त्री०) [√व्रीड्+घञ्]]√व्रीड्+अ—टाप्] लज्जा; 'व्रीडादिवाभ्यासगतैर्विलिल्ये' शि० ३.४० विनम्रता। संकोच।

व्रीडित—(वि०) [√व्रीड्+क्त] लज्जित। विनीत।

व्रीहि—(पुं०)[√वृह्+इन्, पृषो० साधुः] धान्यमात्र, कोई अन्न। चावल। चावल का कण।—आगार (व्रीह्यागार)-(न०) अनाज रखने का गोदाम, अन्नागार।—काञ्चन-(न०) मसूर की दाल।—राजिक (न०) चेना धान।

व्रीहिल—(वि०) [व्रीहि+इलच्] धान वाला।

√व्रुड्—भ्वा० पर० सक० आच्छादन करना। ढेर करना, जमा करना। अक० डूबना। व्रुडति, व्रुडिष्यति, अव्रुडीत्।

व्रैहेय—(वि०) [स्त्री०—व्रैहेयी] [व्रीहि+ढक्] धान के योग्य। धान के साथ बोया हुआ। (न०) धान का खेत, वह खेत जिसमें धान उग सके।

√व्ली—क्र्या० पर० सक० गमन करना, जाना। समर्थन करना। सहारा देना। चुनना, छाँटना। व्लिनाति, व्लेष्यति, अव्लैषीत्।

√व्लेक्ष्—चु० उभ० सक० देखना। व्लेक्षयति—ते।

श

श—संस्कृत अथवा नागरी वर्णमाला में तीसवां व्यञ्जन वर्ण। इसका उच्चारण-स्थान प्रधान-तया तालु है। अतः इसे तालव्य "श" कहते हैं। यह महाप्राण है और इसके उच्चारण में एक प्रकार का घर्षण होने के कारण इसे ऊष्म भी कहते हैं। यह आभ्यन्तर प्रयत्न के विचार से ईषत् स्पृष्ट है और इसमें बाह्य प्रयत्न श्वास और घोष होता है।—(न०) [√शो+ड] आनन्द, हर्ष।—(पुं०) हथियार। शिवजी का नाम।

शंयु—(वि०) [शं शुभम् अस्ति अस्य, शम्+युस्] शुभ-युक्त। समृद्धिमान् (पुं०) बृहस्पति के अपत्य एक ऋषि का नाम। एक प्रकार का साँप।

शंव—(वि०) [शम्+व] शुभान्वित। (पुं०) हल-चालन। इन्द्र का वज्र। मसल के दस्ते का लोहे वाला अग्रभाग।

शंवर—(न०) [शम्√वृ+अच्] जल।

√शंस्—(आ उपसर्गपूर्वक) भ्वा० आत्म० सक० इच्छा करना। आशंसते, आशंसिष्यते, आशंसिष्ट। भ्वा० पर० सक० प्रशंसा करना। कहना। वर्णन करना। प्रकट करना। पाठ करना। दुहराना। अनिष्ट करना। गाली देना। शंसति, शंसिष्यति, अशंसीत्।

शंसन—(न०) [√शंस्+ल्युट्] प्रशंसा-करण। कथन करना। वर्णन करना। पाठ करना।

शंसा—(स्त्री०) [√शंस्+अ—टाप्] प्रशंसा। अभिलाष, इच्छा। पुनरावृत्ति। वर्णन।

शंसित—(वि०)[√शंस्+क्त] प्रशंसित। कथित। घोषित। अभिलषित। निश्चित, निर्धारित। मिथ्या दोष लगाया हुआ, झूठा इलजाम लगाया हुआ।

शंसिन्—(वि०) [√शंस्+णिनि] प्रशंसा करने वाला। कहने वाला; 'प्रार्थनासिद्धिशंसिनः' र० १.४२। प्रकट करने वाला। भविष्य बताने वाला।

√शक्—दि० उभ० अक० योग्य होना, सकना। सक० सहन करना। शक्यति—ते, शक्ष्यति—ते, अशाकत्—अशक्त। स्वा० पर० अक० शक्तिमान् होना। सकना। शक्नोति, शक्ष्यति, अशकत्।

शक—(पुं०) [√शक्+अच्] एक प्राचीन राजा का नाम, विशेष कर शालिवाहन का। शालिवाहन का चलाया शक (=वत्सर गणना (ईसा के सन् के ७८ वर्ष पीछे शक संवत्सर का प्रारम्भ होता है)। एक देश का नाम। एक जाति का नाम। —**अन्तक** (**शकान्तक**),—**अरि** (**शकारि**) (पुं०) विक्रमादित्य की उपाधि, जिसने शक जाति का उन्मूलन किया था।—**अब्द** (**शकाब्द**)-(पुं०) शालिवाहन का चलाया हुआ संवत्सर।—**कर्त्**,—**कृत्**-(पुं०) संवत्सर विशेष का चलाने वाला।

शकट—(न०, पुं०) [√शक्+अटन्] गाड़ी, छकड़ा। सैन्य-व्यूह विशेष। तौल विशेष जो छकड़ा भर या २००० पलों भर की होती थी। एक दैत्य का नाम जिसका वध श्री कृष्ण ने किया था। तिनिश वृक्ष। —**अरि**(**शकटारि**),— **हन्**-(पुं०) श्री कृष्ण की उपाधि।—**आह्वा** (**शकटाह्वा**)—(स्त्री०) रोहिणी नक्षत्र।—**बिल**-(पुं०) जल-कुक्कुट जातीय पक्षी विशेष।

शकटिका—(स्त्री०) [शकट+ङीष्+कन्—टाप्, ह्रस्व] छोटी गाड़ी। गाड़ी का खिलौना।

शकट्या—(स्त्री०) [शकटानां समूहः, शकट+यत्—टाप्] शकटों का समूह।

शकन्—(न०) विष्ठा, मल विशेष कर पशुओं का।

शकल—(पुं०) [√शक्+कल] भाग, अंश, हिस्सा, टुकड़ा; 'उपलशकलमेतद्भेदकं गोमयानाम्' मृ० २.१५। चमड़ा। छाल। मछली का काँटा।

शकलित—(वि०) [√शकल+इतच्] टुकड़े-टुकड़े किया हुआ, खण्ड-खण्ड किया हुआ।

शकलिन्—(पुं०) [शकल+इनि] मछली मछली।

शकार—(पुं०) राजा की रखैल या बिन-ब्याही स्त्री का भाई। साहित्यदर्पणकार ने "अनूढाभ्राता" की परिभाषा इस प्रकार दी है:—मदमूर्खताभिमानी दुष्कुलतैश्वर्यसंयुक्तः। सोऽयमनूढाभ्राता राज्ञः श्यालः शकार इत्युक्तः॥ नाटक की भाषा में शकार मूर्ख, चंचल, अभिमानी, नीच तथा कठोर हृदय का दिखलाया जाता है।

शकुन—(न०) [शक्नोति शुभाशुभं विज्ञातुम् अनेन, √शक्+उनन्] सगुन, शुभ-सूचक चिह्न या लक्षण, किसी कार्य के समय दिखाई देने वाले लक्षण जो उस काम के सम्बन्ध में शुभ या अशुभ की सूचना देते हैं। (पुं०) पक्षी; 'अन्तः कूजन्मुखरशकुनो यत्र रम्यो वनान्तः' उत्त० २.२५। चील। गिद्ध।—**ज्ञ**-(वि०) शकुनों को जानने वाला।—**शास्त्र**-(न०) वह शास्त्र जिसमें शकुनों पर विचार किया गया है।

शकुनि—(पुं०) [शक्नोति उन्नेतुम् आत्मानम्, √शक्+उनि] पक्षी। गीध। चील। मुर्गा। गान्धारराज सुबल के एक पुत्र का नाम जो धृतराष्ट्र की पत्नी गान्धारी का भाई और दुर्योधन का मामा था।—**ईश्वर**-(**शकुनीश्वर**)-(पुं०) गरुड़ का नाम।—**प्रपा**-(स्त्री०) कूंडा जिसमें पक्षियों के पीने के लिये जल भरा जाय।—**वाद**-(पुं०) चिड़ियों की बोली। मुर्गे की बांग।

शकुनी—(न०) [शकुन+ङीष्] श्यामा पक्षी। गौरैया पक्षी। पुराणानुसार एक पूतना

का नाम जो बड़ी क्रूर और भयंकर कही गयी है। सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का बाल-ग्रह।

शकुन्त—(पुं०) [शक्नोति उत्पतितुम्, √शक्+उन्त] पक्षी, चिड़िया। नीलकण्ठ पक्षी। भास पक्षी।

शकुन्तक—(पुं०) [शकुन्त+कन्] पक्षी।

शकुन्तला—(स्त्री०) [शकुन्तैः पक्षिभिः लाल्यते पाल्यते, शकुन्त√ला+क—टाप्] राजा दुष्यन्त की स्त्री जिसके गर्भ से राजा भरत का जन्म हुआ था (इन्हीं राजा भरत के नाम पर इस देश का नाम भारतवर्ष पड़ा है) शकुन्तला, मेनका अप्सरा की बेटी थी।

शकुन्ति—(स्त्री०) [शक्नोति उत्पतितुम्, √शक्+उन्ति] पक्षी।

शकुन्तिका—[शकुन्ति+कन्—टाप्] छोटी चिड़िया। टिड्डी।

शकुल—(पुं०), **शकुली**-(स्त्री०) [शक्नोति गन्तुम् वेगेन, √शक्+उरच्, रस्य लः] [शकुल+ङीष्] सौरा मछली।—**अदनी** (**शकुलादनी**)—(स्त्री०)कुटकी या कटुकी। जटामांसी। गजपीपल। कायफल। गांडर दूब। केंचुआ।—**अर्भक**(**शकुलार्भक**)—(पुं०) गडुई मछली।

शकृत्—(न०)[√शक्+ऋतिन्] विष्ठा। गोबर। —**करि**-(पुं०) [शकृत्√कृ+इन्] बछवा, वत्स।—**करी**-(स्त्री०) [शकृत्करि+ङीष्] बछिया।—**द्वार** [**शकृद्द्वार**)- (न०) मल-द्वार, गुदा।

शक्कर, शक्करि—(पुं०) [√शक्+क्विप्, √कृ+अच्, कर्म० स०] बैल, वृष।

शक्करी—स्त्री०) [शक्कर+ङीष्] नदी। मेखला। नीच जाति की औरत।

शक्त—(वि०) [√शक्+क्त] शक्ति-सम्पन्न, समर्थ, ताकतवर। योग्य, लायक। धनी, धनवान्। द्योतक, व्यञ्जक। चतुर। मिष्ट-भाषी, प्रियवादी।

शक्ति-(स्त्री०) [√शक्+क्तिन्]बल, सामर्थ्य। क्षमता, योग्यता। कवित्वशक्ति। किसी देवता का पराक्रम या बल जो किसी विशिष्ट कार्य का साधन माना जाता है। राज-शक्ति (प्रभु, मंत्र, उत्साह)। दुर्गा, लक्ष्मी, गौरी आदि देवियाँ। भाला। शून्य। तीर। न्यायदर्शनानुसार वह सम्बन्ध जो किसी पदार्थ और उसका बोध कराने वाले शब्द में होता है। शब्द की **अर्थ-द्योतक** शक्ति जो तीन मानी गयी है —**अभिधा**, **लक्षणा** और **व्यञ्जना**। शब्द की लक्षणा और व्यञ्जना शक्ति की उल्टी शक्ति। भग (तंत्र)। ईश्वर की वह कल्पित माया, जो उसकी आज्ञा से सब काम करने वाली और सृष्टि की रचना करने वाली मानी जाती है, प्रकृति।—**अर्ध**(**शक्त्यर्ध**)-(पुं०) शक्ति का अर्ध परिमाण (जब श्रम करने पर शरीर से पसीना निकले और दम फूले तब समझना चाहिये कि शक्ति का आधा प्रयोग हुआ है)।—**ग्रह**-(वि०) शक्ति ग्रहण करने वाला। भाला-धारी। (पुं०) शिव। कार्त्तिकेय। शब्द-शक्ति-ज्ञान, शब्द की **अर्थबोधक** वृत्ति की जानकारी।—**ग्राहक**-(पुं०) कार्त्तिकेय।—**धर**-(वि०) ताकतवर, बलवान्। (पुं०) भालाधारी व्यक्ति। कार्त्तिकेय।—**पाणि**,—**भृत्**-(पुं०) भालाधारी पुरुष। कार्त्तिकेय।—**पूजा**-(स्त्री०) शक्ति का शाक्त द्वारा होने वाला पूजन।—**वैकल्य**-(न०) शक्ति का नाश, कमजोरी; 'शक्तिवैकल्य-नम्रस्य'। निर्बलता।—**शाला**—(स्त्री०) यज्ञ के लिए तैयार की गई भूमि।—**हीन**—(वि०) निर्बल, कमजोर। नपुंसक।—**हेतिक**-(पुं०) भालाधारी पुरुष।

शक्तितस्—(अव्य०) [शक्ति+तस्] शक्ति भर, ताकत भर। यथाशक्ति।

शक्न, शक्ल—(वि०) [√शक्+न] [√शक्+क्ल] मिष्ठ-भाषी, मधुर-भाषी, प्रिय-वादी।

शक्य—(वि०) [√शक्+यत्] सम्भव, होने योग्य। करने योग्य। सहज में करने लायक; 'शक्यो वारयितुं जलेन हुतभुक्' भर्तृ० २.११। शब्द का वाच्य।

शक्र—(पु०) [शक्नोति दैत्यान् नाशयितुम्, √शक्+रक्] इन्द्र का नाम। अर्जुन वृक्ष। कुटज वृक्ष। उल्लू। ज्येष्ठा। नक्षत्र। चौदह की संख्या।—**अशन** (**शक्राशन**)-(पु०) कुटज वृक्ष।—**आह्व** (**शक्राह्व**)-(पु०) उल्लू।—**आत्मज** (**शक्रात्मज**)-(पु०) इन्द्रपुत्र जयन्त। अर्जुन।—**उत्थान** (**शक्रोत्थान**)-(न०),—**उत्सव** (**शक्रोत्सव**)-(पु०) भाद्रशुक्ला १२ को किया जाने वाला इन्द्रोत्सव विशेष।—**गोप**-(पु०) बीरबहूटी नामक कीड़ा।—**ज**, —**जात**-(पु०) काक, कौवा।—**जित्**,—**भिद्**-(पु०) रावणपुत्र मेघनाद की उपाधि।—**द्रुम**-(पु०) देवदारु वृक्ष।—**धनुस्**,—**शरासन**-(न०) इन्द्र-धनुष।—**ध्वज**-(पु०) वह पताका जो इन्द्र के उपलक्ष में खड़ी की जाय।—**पर्याय**-(पु०) कुटज वृक्ष।—**पादप**-(पु०) कुटज वृक्ष। देवदारु वृक्ष।—**भवन**,—**भुवन**-(न०),—**वास**-(पु०) स्वर्ग।—**मूर्धन्**-(पु०),—**शिरस्**-(न०) वल्मीक, बांबी।—**लोक**-(पु०) इन्द्र-लोक, स्वर्ग।—**वाहन** (न०) बादल।—**शाखिन्**-(पु०) कुटज वृक्ष।—**सारथि**- (पु०) इन्द्र का रथवान, मातलि का नामान्तर।—**सुत**-(पु०) जयन्त। अर्जुन। बालि।

शक्राणी—(स्त्री०) [शक्र + ङीप्, आनुक्] इन्द्र-पत्नी शची देवी।

शक्रि—(पु०) [√शक्+क्रिन्] बादल। इन्द्र का वज्र। पहाड़। हाथी, गज।

शक्वर—(पु०) [√शक्+वन्, र] वृष, बैल।

√**शङ्क्**—भ्वा० आत्म० सक० सन्देह करना। डरना, भय मानना। अविश्वास करना। समझना। सोचना। कल्पना करना। आपत्ति या आशङ्का करना। शङ्कते, शङ्किष्यते, अशङ्किष्ट।

शङ्क—(पु०) [√शङ्क् + घञ्] भय। आशंका। [√शङ्क्+घञ्] वह बैल जो जोता जाय या छकड़ा खींचे।

शङ्कर—(वि०) [स्त्री०—**शङ्करी** या **शङ्करा**] [शम् √कृ+अच्] सुखदायी, मङ्गलकारी। (पु०) महादेव जी। हिन्दू-धर्म के एक आचार्य, शङ्कराचार्य।

शङ्करी—(स्त्री०) [शङ्कर+ङीप्] पार्वती का नाम। मजीठ, मञ्जिष्ठा। शमी का पेड़।

शङ्का—(स्त्री०) [√शङ्क् + अ—टाप्] सन्देह, शक, अनिश्चयता। हिचकिचाहट, पसोपेश। अविश्वास। भय; 'जातशङ्कैर्देवैर्मेनका नामाप्सरा प्रेषिता' श० १। डर। एक संचारी भाव।

शङ्कित—[शङ्का+इतच्] सन्देहयुक्त, संशयग्रस्त। भयभीत। अविश्वासपूर्ण।—**चित्त**,—**मनस्**-(वि०) डरपोक, भीरु। संशयग्रस्त। अविश्वासपूर्ण।

शङ्किन्—(वि०) [शङ्का+इनि] सन्देह करने वाला, संशयात्मा।

शङ्कु—(पु०) [शङ्कतेऽस्मात्, √शङ्क्+उ] तीर, बाण। भाला, बरछा। कोई नुकीली वस्तु। मेख, कील; 'अग्रशङ्कुचितो रक्षः शतघ्नीमिव शत्रवे' र० १२.९५। खूंटी। खंभा, खूंटा। बाण की पैनी नोक। कटे हुए वृक्ष का तना। घड़ी की सुई। बारह अंगुल का माप। नापने का गज। दस लक्ष कोटि की संख्या, खर्व। पत्तों की नसें। बांबी। लिङ्ग, जननेन्द्रिय। एक प्रकार की मछली। दैत्य। विष, जहर। पाप। हंस। शिव। नखी नामक गंधद्रव्य। दांव। साल वृक्ष।—**कर्ण**-(वि०) वह जिसके कान शङ्कु के समान लंबे और नुकीले हों।—**कर्ण**-(पु०) गधा।—**तरु**, —**वृक्ष** —(पु०) साल के पेड़।

शङ्कुर—(वि०) [√शङ्क् + उरच् बा०] भयानक।

शङ्कुला—(स्त्री०) [शङ्कु √ला + क—टाप्] सुपारी काटने का सरौता। एक प्रकार का नश्तर या छुरी।—**खण्ड**—(पु०) सरौता से काटा हुआ टुकड़ा।

शङ्ख—(न०, पु०) [√शम् + ख] एक प्रकार का बड़ा घोंघा, जिससे उसमें रहने वाले जन्तु को निकाल कर लोग बजाने के काम में लाते हैं। माथे की हड्डी। कनपटी की हड्डी। हाथी का गण्ड-स्थल। दस खर्व की संख्या, एक लाख करोड़। मारूबाजा या ढोल। नखी नामक सुगन्ध द्रव्य। कुबेर की नवनिधियों में से एक। एक दैत्य का नाम जिसे भगवान् विष्णु ने मारा था। लिखित के भाई शङ्ख जिनकी लिखी स्मृति प्रसिद्ध है। चरण-चिह्न। राजा विराट का पुत्र।—**उदक** (**शङ्खोदक**)—(न०) शङ्ख में डाला हुआ जल।—**कार**,—**कारक** (पु०) पुराणानुसार एक वर्ण-सङ्कर जाति, जिसकी उत्पत्ति शूद्र माता और विश्वकर्मा पिता से मानी जाती है। इस जाति के लोगों का काम शंख की चीजें बनाना है।—**चरी**,—**चर्ची**—(स्त्री०) चंदन का टीका।—**द्राव**,—**द्रावक**—(पु०) एक प्रकार का अर्क जिसमें शङ्ख भी गल जाता है।—**ध्म**,—**ध्मा**—(पु०) शङ्ख बजाने वाला।—**ध्वनि**—(पु०) शङ्ख की आवाज।—**नख**—(पु०),—**नखा**—(स्त्री०) छोटा शंख। नखी नामक गंध-द्रव्य।—**प्रस्थ**—(पु०) चन्द्र-कलङ्क।—**भृत्**—(पु०) विष्णु।—**मुख**—(पु०) मगर, घड़ियाल।—**स्वन**—(पु०) शङ्ख की आवाज।

शङ्खक—(न०, पु०) [शङ्ख + कन्] शंख। कनपटी की हड्डियाँ। (पु०) शंख का बना कड़ा; 'प्रचलत्कलापिकलशङ्खकस्वना' शि० १३.४२।

शङ्खिन्—(पु०) [शंख + इनि] समुद्र। विष्णु। शंख बजाने या बनाने वाला, शाङ्खिक।

शङ्खिनी—(स्त्री०) [शङ्खिन् + ङीप्] स्त्रियों के पद्मिनी आदि चार भेदों में से एक [चार भेद—शङ्खिनी, पद्मिनी, चित्रिणी, हस्तिनी]। एक प्रकार की अप्सरा। गुदा द्वार की नस। मुँह की नाड़ी। एक देवी का नाम। बौद्धों की पूजने की शक्ति। एक तीर्थ-स्थान। एक वनौषधि।

√शच्—भ्वा० आत्म० सक० बोलना, कहना। शचते, शचिष्यते, अशचिष्ट।

शचि, शची—(स्त्री०) [शच्+इन्] [शचि+ङीष्] इन्द्र की स्त्री का नाम।—**पति**,—**भर्तृ**—(पु०) इन्द्र।

√शट्—भ्वा० पर० अक० बीमार होना। दुःखी होना। सक० जाना। पृथक् करना। शटति, शटिष्यति, अशटीत्—अशाटीत्।

शट—(वि०) [√शट् + अच्] खट्टा।

शटा—(स्त्री०) [शट + टाप्] जटा। सिंह का अयाल, बाल, सटा।

शटि—(स्त्री०) [√शट् + इन्] कचूर। गन्धपलाशी, कपूरकचरी। अमिया हल्दी, आम्रहरिद्रा। नेत्रबाला, सुगन्धबाला।

√शठ्—भ्वा० पर० सक० छलना, ठगना। मार डालना। पीड़ित करना। शठति, शठिष्यति, अशठीत्—अशाठीत्। चु० पर० अक० आलस्य करना। सक० भर्त्सना करना। समाप्त करना। असम्पूर्ण या अधूरा छोड़ देना। जाना। धोखा देना। शाठयति—शठयति।

शठ—(वि०) [√शठ् + अच्] छलिया, कपटी, दगाबाज, धूर्त। लम्पट। मूढ़। आलसी। जड़। दुष्ट। (न०) लोहा। केसर। कुङ्कुम। (पु०) साहित्य में चार प्रकार के नायकों में से एक। वह नायक किसी दूसरी स्त्री के साथ प्रेम करते हुए भी अपनी स्त्री से प्रेम प्रदर्शित करने का

कपट रखता है; 'ध्रुवमस्मि शठः शुचिस्मिते ! विदितः कैतववत्सलस्तव' र० ८.४९। वह जो झगड़ने वाले दो आदमियों के बीच में पड़ कर उनका झगड़ा निपटाता है, पंच, मध्यस्थ। धतूरे का पौधा।

√**शण्**—भ्वा० पर० सक० दान करना। जाना। शणति, शणिष्यति, अशणीत्—अशाणीत्।

शण—(न०) [√शण् + अच्] सन, पटसन।—**सूत्र**—(न०) सन की डोरी, सुतली। सन का बटा हुआ जाल। पाल की रस्सी।

√**शण्ड्**—भ्वा० आत्म० सक० बीमार होना। एकत्रित होना। शण्डते, शण्डिष्यते, अशण्डिष्ट।

शण्ड—(न०) [शण्ड् + अच्] समूह। (पु०) नपुंसक, हिजड़ा। वृष, बैल। सांड जो छोड़ दिया जाता है।

शण्ढ—(पुं०) [शाम्यति ग्राम्यधर्मात् √शम् + ढ] नपुंसक, हिजड़ा। खोजा जो रनवास में काम करते हैं। पागल आदमी।

शत—(न०) [दश दशतः परिमाणम् अस्य, दशन्+त, श आदेश नि० साधुः] सौ की संख्या। (वि०) सौ। असंख्य। (शतवाचक शब्द—धार्तराष्ट्र, शतभिषा-तारा, पुरुषायुष, रावणांगुलि, पद्म-दल, इन्द्र-यज्ञ, अब्धि-योजन।—**अक्षी** (**शताक्षी**)—(स्त्री०) रात, दुर्गा देवी।—**अङ्ग** (**शताङ्ग**)—(पुं०) युद्ध का रथ।—**अनीक** (**शतानीक**)—(पुं०) बूढ़ा मनुष्य। श्वशुर। जनमेजय के पुत्र और सहस्रानीक के पिता। राजा सुदास के पुत्र। नकुल के पुत्र। व्यास के एक शिष्य।—**अर**, —**आर** (**शतार**)—(न०) इंद्र का वज्र।—**आनक** (**शतानक**)—(न०) श्मशान, कबरगाह।—**आनन** (**शतानन**)—(पुं०) बिल्व, बेल।—**आनन्द** (**शतानन्द**)—(पुं०) ब्राह्मण का नाम। विष्णु या कृष्ण। विष्णु के रथ का नाम। गौतम के पुत्र का नाम जो राजा जनक के पुरोहित थे।—**आयुस्** (**शतायुस्**)—(वि०) सौ वर्ष तक रहने वाला या जीने वाला।—**आवर्त** (**शतावर्त**)—**आवर्तिन्** (**शतावर्तिन्**)—(पुं०) विष्णु।—**ईश** (**शतेश**)—(पु०) सौ पर शासन करने वाला। सौ गांव का ठाकुर।—**कुम्भ**—(पु०) पर्वत विशेष जहां सुवर्ण पाया जाता है। (न०) सुवर्ण, सोना।—**कोटि**—(वि०) सौ धार का। (पु०) इन्द्र का वज्र। (स्त्री०) सौ करोड़।—**क्रतु**—(पु०) इन्द्र।—**खण्ड**—(न०) सुवर्ण।—**गु**—(वि०) सौ गौ रखने वाला।—**गुण**, —**गुणित**—(वि०) सौगुना। सौगुना अधिक।—**ग्रन्थि**—(स्त्री०) दूर्वा, दूब।—**घ्नी**—(स्त्री०) प्राचीन काल का एक प्रकार का शस्त्र जो किसी बड़े पत्थर या लकड़ी के कुंदे में बहुत से कील कांटे ठोंक कर बनाया जाता था और युद्ध में शत्रुओं पर वार करने के काम में आता था। बिच्छू की मादा। कण्ठरोग।—**जिह्व**—(पु०) शिव जी।—**तारका**—**भिषज्**, —**भिषा**—(स्त्री०) २४वें नक्षत्र का नाम।—**दला**—(स्त्री०) सफेद गुलाब।—**द्रु**—(स्त्री०) सतलज नदी का नाम।—**धामन्**—(पु०) विष्णु।—**धार**—(वि०) सौ धारों वाला। (न०) वज्र।—**धृति**—(पु०) इन्द्र। ब्राह्मण। स्वर्ग।—**पत्र**—(पु०) मोर। सारस। कठफोड़वा नामक पक्षी। तोता। मैना। (न०) कमल।—**योनि**—(पुं०) ब्रह्मा।—**पत्रक**—(पु०) कठफोड़वा पक्षी।—**पर्वा**—(स्त्री०) स्त्री। दूब।—**पथिक**—(वि०) कई रास्तों पर चलने वाला। कई मतों का मानने वाला।—**पाद**—(वि०) सौ पैरों वाला।—**पादी**—(स्त्री०) कनखजूरा, गोजर।—**पद्म**—

(न०) सफेद कमल ।—पर्वन्–(पु०) बांस ।—पर्वा– (स्त्री०) आश्विन मास की पूर्णिमा । सफेद दूब । कटुकी का पौधा । भीरु– (स्त्री०) मल्लिका, चमेली ।—मख, —मन्यु–(पु०) इन्द्र; 'प्रसहेत रणे तवानुजान्द्विषतां कः शतमन्युतेजसः' कि० २.२३ । उल्लू ।— मुख–(वि०) सौ द्वार या निकास वाला ।—मुखी–(स्त्री०) दुर्गा । झाड़ ।—मूला –(स्त्री०) दुर्वा, दूब । बच । बड़ी शतावरी । —यज्वन्–(पु०) इन्द्र का नाम ।—यष्टिक–(पु०) सौ लड़ियों का हार ।—रूपा– (स्त्री०) ब्रह्मा की पुत्री का नाम ।—वर्ष–(न०) शताब्दी, सदी ।—वेधिन्–(पु०) चूक या चुक्रिका नामक साग ।—सहस्र–(न०) सौ हजार । हजारों ।—साहस्र–(वि०) जिसमें कितने ही हजार हों । एक लक्ष मूल्य देकर खरीदा हुआ ।—ह्रदा–(स्त्री०) बिजली; 'बलाकिनी नीलपयोदराजिर्दूरं पुरः क्षिप्तशतह्रदेव' कु० ७.३९ । इन्द्र का वज्र ।

शतक—(वि०) [शत+कन्] सौ । सौ वाला । (न०) शताब्दी । सौ का समूह । एक ही तरह की सौ चीजों का संग्रह ।

शतकृत्वः—(अव्य०) [शत+कृत्वसुच्] सौ बार ।

शततम—(वि०) [स्त्री०—शततमी] [शत+तमप्] सौवां ।

शतधा—(अव्य०) [शत + धाच्] सौ प्रकार से । सौ हिस्सों या टुकड़ों में ।

शतशस्—(अव्य०) [शत+शस्]सौ बार । सैकड़ों प्रकार से ।

शतिक—(वि०) [शत+ठन्] जो सौ से खरीदा गया हो । सौ का ।

शत्य—(वि०) [शत + यत्] सौ देकर खरीदा हुआ । सौ वाला या सौ से बना हुआ । सौ सम्बन्धी । सौ के हिसाब से कर या ब्याज देने वाला । सौ बतलाने वाला, सौ का व्यञ्जक ।

शत्रि—(पु०) [√शद्+त्रिप्] हाथी । एक राजर्षि । बल ।

शत्रु—(पु०) [√शद्+त्रुन्] वह जिसके साथ भारी विरोध या वैमनस्य हो, दुश्मन । एक असुर । नागदमन नामक वनस्पति ।—उपजाप (शत्रूपजाप)–(पु०) शत्रु की गुप-चुप कानाफूसी । शत्रु का विश्वासघात ।— कर्षण, —दमन,—निबर्हण–(न०) शत्रु का दबाना या नाश करना ।—घ्न–(पु०) [शत्रु√हन् + क] शत्रु का नाश करने वाला व्यक्ति । दशरथ महाराज के चतुर्थ पुत्र का नाम ।—पक्ष–(पु०) शत्रु का पक्ष, विरोधी दल । —विनाशन–(पु०) शिव जी का नाम ।—हन्–(वि०) शत्रु । शत्रु को मारने वाला ।

शत्रुञ्जय—(वि०) [शत्रु√ जि+ खच्, मुम्] शत्रु को जीतने वाला ।(पु०) हाथी । एक पर्वत का नाम ।

शत्रुन्तप—(वि०) [शत्रु√तप् + खच्, मुम्] शत्रु का नाश करने वाला या शत्रु को जीतने वाला ।

शत्वरी—(स्त्री०) रात ।

√शद्—भ्वा० पर० अक० पतन होना । नाश होना । सड़ना । कुम्हलाना । सक० जाना । काटना । नाश करना । गिराना । शीयते, शत्स्यति, अशदत् ।

शद—(पु०) [√शद्+अच्] शाक, मूल आदि खाद्य-वस्तु ।

शद्रि—(पु०) [√शद् + क्रिन्] हाथी । बादल । अर्जुन का नाम ।(स्त्री०) बिजली । टुकड़ा ।

शद्रु—(वि०) [शद्+रु] गिरने वाला । नष्ट होने वाला । चलने वाला ।

शनकैस्—(अव्य०) [शनैः+अकच्] धीरे-धीरे ।

शनि—(पु०)[√शो+अनि] शनि नामक ग्रह । शनिवार । शिव जी का नाम ।—ज–

(न०) काली मिर्च ।—**प्रदोष**–(पुं०) जब शुक्ला १३ शनिवार को पड़े, तब प्रदोष कहलाता है और उस दिन शिव जी के पूजन का विशेष माहात्म्य है ।—**प्रिय**–(न०) नीलम मणि ।—**वार**, —**वासर**—(पुं०) शनिवार ।

शनैस्—(अव्य०) [√शद्+डैस्, पृषो० नुक्] धीमे । चुपचाप । क्रमशः । थोड़ा-थोड़ा । सिलसिलेवार । कोमलता से ।—**चर** (**शनैश्चर**)–(पुं०) शनिवार, ग्रह । (वि०) धीरे-धीरे चलने वाला; 'शनैश्चराभ्यां पादाभ्यां रेजे ग्रहमयीव सा' कु० १.१७ ।

शन्तनु—(वि०) [शं मङ्गलात्मिका तनुः यस्य, ब० स०] शुभ या सुंदर शरीर वाला । (पुं०) एक चन्द्रवंशीय राजा, भीष्म के पिता ।

√शप्—भ्वा०, दि० उभ० सक० शाप देना । शपथ खाना । डाँटना, धिक्कारना । शपति—ते, (दि०) शप्यते—ते, शप्स्यति—ते, अशाप्सीत्—अशप्त ।

शप—(पुं०) [√शप्+अच्] शाप, अकोसा । शपथ, कसम ।

शपथ—(पुं०) [√शप्+अथ] अकोसा, बददुआ । अभिशप्त वस्तु, अभिशाप का पात्र । कसम, किरिया । किरिया में बांधने की क्रिया ।

शपन—(न०) [√शप् + ल्युट्] शाप देना । शपथ करना । गाली ।

शप्त—(वि०) [√शप्+क्त] शाप दिया हुआ । शपथ खाया हुआ । गरियाया हुआ ।

शफ—(न०, पुं०)[√शम् + अच्, पृषो० मस्य फः] खुर । पेड़ की जड़ । नखी नामक गंध-द्रव्य ।

शफर—(पुं०) [स्त्री०—**शफरी**] [शफ √रा+क] एक छोटी मछली जिसके शरीर में चमक होती है, पोठी मछली; 'मोघीकर्तुं चटुलशफरोद्वर्तनप्रेक्षितानि' मे० ४० ।—**अधिप** (**शफराधिप**)–(पुं०) इल्लिशा या हिल्सा मछली ।

शबर, शवर—(पुं०) [√शव् + अरन्] भारतवासी एक पहाड़ी और असभ्य जाति । जंगली मनुष्य । शिव जी । हाथ । जल । मीमांसा शास्त्र के एक प्रसिद्ध भाष्यकार ।—**लोध्र**–(पुं०) जंगली लोध्रवृक्ष ।

शबरी, शवरी—(स्त्री०) [शब (व) र+ङीष्] शबर जातीय स्त्री । शबर जाति की एक स्त्री, जिसका श्रीरामचन्द्र जी ने उद्धार किया था ।

शबल, शवल—(वि०) [√शप् + कल, पस्य बः] [√शव् + कलन्] चितकबरा, रंग-बिरंगा । कई भागों में विभक्त । (न०) जल । (पुं०) चितकबरा रंग ।

शबला, शवला, शबली, शवली—(स्त्री०) [शब (व) ल+टाप्] [शब (व) ल+ङीष्] चितकबरी या रंगबिरंगी गौ । काम धेनु ।

√शब्द्—चु० उभ० अक० सक० शब्द करना, शोर करना, बोलना । बुलाना । पुकारना । नाम लेना, नाम लेकर पुकारना । शब्दयति—ते, शब्दयिष्यति—ते, अशशब्दत्—त ।

शब्द—(पुं०) [√शब्द् + घञ्] आवाज, ध्वनि । शब्द के चार विषय-विभाग हैं—जाति-शब्द=जातिवाचक संज्ञायें; जैसे गौ । गुण-शब्द=गुणवाचक, जैसे शुक्ल, पीत; क्रिया-शब्द = क्रियावाचक, जैसे पाचक; यदृच्छा-शब्द=अर्थशून्य, संकेत मात्र, व्यक्तिवाचक, जैसे डित्थ, कपित्थ । सब शब्द इन चार विभागों में आ जाते हैं । संज्ञा । उपाधि, पदवी । नाम । मौखिक प्रमाण ।—**अधिष्ठान** (**शब्दाधिष्ठान**)–(न०) कान । —**अनुशासन** (**शब्दानुशासन**)–(न०) व्याकरण ।—**अलङ्कार** (**शब्दालङ्कार**)–

(पु०) वह अलङ्कार जिसमें केवल शब्दों या वर्णों के विन्यास से भाषा में लालित्य उत्पन्न होता है ।—**आख्येय** (**शब्दाख्येय**)-(वि०) ज़ोर से या चिल्ला कर कहा जाने वाला ।—(न०) ज़बानी संदेशा या पैग़ाम ।—**आडम्बर** (**शब्दाडम्बर**)-(पु०) बड़े-बड़े शब्दों का ऐसा प्रयोग जिसमें भाव की न्यूनता हो ।—**कोश**-(पु०) वह ग्रन्थ जिसमें अक्षर-क्रम से या समूह-क्रम से शब्दों के अर्थ या पर्यायवाची शब्दों का संग्रह किया गया हो, अभिधान, लुग़त ।—**ग्रह**- (पु०) कान ।—**चातुर्य**-(न०) शब्द-प्रयोग सम्बन्धी चतुरता, वाग्मिता । —**चित्र**-(न०) अनुप्रास नामक अलङ्कार । साहित्य-रचना का एक नवीन प्रकार जिसमें शब्दों द्वारा किसी वस्तु, व्यक्ति आदि का रूप खड़ा कर दिया जाता है (स्केच) ।—**पति**- (पु०) नाममात्र का स्वामी या मालिक; 'ननु शब्दपतिः क्षितेरहं त्वयि मे भाव-निबन्धना रतिः' र० ८.५२ ।— **पातिन्**-(वि०) शब्द-वेधी (निशाना) लगाने वाला ।—**प्रमाण**-(न०) वह प्रमाण या साक्षी जो किसी के कथन पर निर्भर हो ।—**ब्रह्मन्**-(न०) वेद । ब्रह्म-जीव का ज्ञान, आध्यात्मिक ज्ञान ।—**भेदिन्**-(वि०) शब्द को सुन कर निशाना बेधने वाला ।—(पु०) अर्जुन । दशरथ । बाण विशेष ।—**योनि**- (स्त्री०) शब्द का उत्पत्ति-स्थान । धातु ।— **विद्या**-(स्त्री०), —**शासन**, —**शास्त्र** - (न०) व्याकरण शास्त्र; 'अनन्तपारं किल शब्दशास्त्रम्' पं० १ ।—**विरोध**-(पु०) वाचिक विरोध ।—**वेधिन्** -(वि०) दे० 'शब्दभेदिन्' । —**शक्ति**-(स्त्री०) शब्द की वह शक्ति जिसके द्वारा उस शब्द से कोई विशेष भाव प्रदर्शित होता है ।—**शुद्धि**-(स्त्री०) शब्द का शुद्ध प्रयोग ।—**श्लेष**-(पु०) वह शब्द जो दो या अधिक अर्थों में व्यवहृत किया जाय ।—**संग्रह**-(पु०) शब्द-कोष ।—**सौकर्य**-(न०) शब्द-व्यवहार की सरलता ।—**सौष्ठव**-(न०) किसी लेख या शैली आदि में प्रयुक्त किये हुए शब्दों की सुन्दरता या कोमलता ।

शब्दन—(वि०) [शब्दं कर्तुं शीलम् अस्य, √शब्द्+युच्] शब्द करने वाला, बजने वाला । (न०) [√शब्द्+ल्युट्] शब्द-मात्र । ध्वनि । कोलाहल । पुकारना, बुलाहट । नाम लेकर पुकारने की क्रिया ।

शब्दित—(वि०) [√शब्द्+क्त] शब्द किया हुआ । कथित । उच्चारित । पुकारा हुआ । नामाङ्कित किया हुआ ।

√शम्—दि० पर० अक० चुप होना, शान्त होना । सक० बंद करना । समाप्त करना । बुझाना । नाश करना । मार डालना । शाम्यति, शमिष्यति, अशमत् । चु० आत्म० सक० देखना । शामयते ।

शम्—(अव्य०) [√शम्+क्विप्] कुशलता, प्रसन्नता, समृद्धि, स्वस्थता आदि का सूचक अव्यय ।

शम—(पु०) [√शम् + घञ्] शान्ति; 'शमरतेऽमरतेजसि पार्थिवे' र० ९.४ । मोक्ष । हाथ । उपचार । इन्द्रिय - निग्रह । सर्वकर्म-निवृत्ति । निवृत्ति । क्षमा । तिरस्कार । शान्त रस का स्थायी भाव ।

शमथ—(पुं०) [√शम् + अथ] शान्ति, निस्तब्धता । मन की शान्ति । मन्त्री ।

शमन—(वि०) [स्त्री०—**शमनी**] [√शम्+ल्यु] शान्तकारी, शमनकारी । यम । एक मृग । (न०) [√शम्+ल्युट्] शान्त करना । शान्ति, निस्तब्धता । अवसान, समाप्ति । नाश । अनिष्ट । बलि के लिये पशु-हनन । चबाना ।—**स्वसृ**-(स्त्री०) यम की बहिन, यमुना नदी का नामान्तर ।

शमनी—(स्त्री०) [शमन+ङीप्] रात। —षद्—(पुं०) निशाचर, राक्षस।

शमल—(न०) [√शम्+कल] विष्ठा, मल। छलन, तलछट। पाप, नैतिक अपवित्रता।

शमि—(स्त्री०) [√शम् + इन्] शिम्बि-धान्य —मूँग, मटर, उड़द, चना, अरहर आदि। शमी वृक्ष, सफेद कीकर। (पुं०) यज्ञ या यज्ञ रूप कर्म।

शमित—(वि०) [√शम् + णिच्+क्त] शान्त किया हुआ, खामोश किया हुआ। स्वस्थ किया हुआ, निरोग किया हुआ। ढीला किया हुआ। नरम किया हुआ।

शमिन्—(वि०) [शम + इनि] शान्त, निस्तब्ध। संयमी, जितेन्द्रिय।

शमी—(स्त्री०) [शमि+ङीष्] छोंकुर का पेड़, सफेद कीकर; 'शमीमिवाभ्यन्तर-लीनपावकां' र० ३.९। शिम्बि धान्य—मूँग, मसूर, मोठ, उड़द, चना, अरहर, मटर, कुलथी, लोबिया आदि।—गर्भ-(पुं०) अग्नि। अग्निहोत्री ब्राह्मण। —धान्य- (न०) वह अनाज जो छीमियों से निकले।

शम्पा—(स्त्री०) [शम्√पा+क—टाप्] बिजली।

√शम्ब्—चु० पर० सक० जमा करना, संग्रह करना। शम्बयति, शम्बयिष्यति, अशशम्बत्।

शम्ब—(वि०) [√शम् + वन्, वा शम् +व] प्रसन्न। भाग्यवान्। निर्धन। अभागा। (पुं०) इन्द्र का वज्र। मूसल के सिरे पर लगी लोहे की मढ़ारी के ढंग की वस्तु जिससे अन्न आदि कूटने में सुविधा होती है। लोहे की जंजीर जो कमर के चारों ओर पहनी जाय। नियमित रूप से हल चलाने की क्रिया। जुते हुए खेत को पुनः जोतने की क्रिया।

शम्बर—(न०) [शम्√ वृ+अच्] जल। मेघ। धन-दौलत। धर्मानुष्ठान, धर्मकृत्य। (पुं०) एक दैत्य का नाम जिसे प्रद्युम्न ने मारा था। एक पर्वत। साबर मृग। चित्रक वृक्ष। लोध्र वृक्ष। अर्जुन वृक्ष। एक राक्षस। मत्स्य विशेष। संग्राम, युद्ध।—अरि (शम्बरारि), —सूदन -(पुं०) प्रद्युम्न की उपाधियाँ।

शम्बरी—(स्त्री०) [शम्बर+ङीष्] इन्द्र-जाल, जादूगरी। स्त्री ऐन्द्रजालिक, जादूगरनी। आखुपर्णी लता।

शम्बल—(पुं०, न०) [√शम्ब् + कलच्] समुद्रतट। पाथेय। रास्ते में खाने का भोजन। डाह, ईर्ष्या।

शम्बली—(स्त्री०) [शम्बल + ङीष्] कुटनी।

शम्बु, शम्बुक, शम्बूक—(पुं०) [√शम्ब् +उन् वा कु] [शम्बु+कन् वा√शम् +उक, बुगागम] घोंघा।

शम्बूक—(पुं०) [√शम्ब् + ऊन् +कन्] घोंघा। शङ्ख। हाथी की सूँड़ का अगला भाग। एक शूद्र तपस्वी का नाम जिसके अनधिकार कर्म करने पर श्रीरामचन्द्र जी ने उसे जान से मार डाला था।

शम्भ- (पुं०) [शम् अस्ति] अस्य, शम् +भ] प्रसन्न पुरुष। इन्द्र का वज्र।

शम्भली—(स्त्री०) [शम्भल +ङीष्] कुटनी।

शम्भु—(वि०) [शम् मङ्गलं भवति अस्मात्, शम्√भू + डु] आह्लादकारी, आनन्द-दायी। (पुं०) शिव। ब्रह्मा। ऋषि। सिद्ध-पुरुष।—तनय, —नन्दन, —सुत-(पुं०) कार्त्तिकेय। गणेश।—प्रिया -(स्त्री०) पार्वती। आमलकी।—वल्लभ- (न०) सफेद कमल।

शम्या—(स्त्री०) [√शम्+यत्—टाप्] काठ की छड़ी या खंभा। डंडा। जुआ की खूँटी। करताल। यज्ञीय पात्र विशेष।

शय—(वि०) [स्त्री०—शया, शयी] [√शी+अच् वा श] सोने वाला; 'रात्रिजागरपरो दिवाशयः' र० १९.३४ । (पुं०) निद्रा, नींद । सेज, शय्या । हाथ । अजगर । शाप । दाँव ।

शयण्ड—(वि०) [√शी + अण्डन्] निद्रालु, जिसे नींद आई हो ।

शयथ—(वि०) [√शी + अथ] निद्रालु । (पुं०) मृत्यु । अजगर सर्प । शूकर । मछली । गाढ़ निद्रा । यम ।

शयन—(न०) [√शी + ल्युट्] निद्रा, शय्या । स्त्री-प्रसंग, मैथुन ।—**आगार** (**शयनागार**)–(पुं०, न०),—**गृह**–(न०) सोने का घर, शयनगृह ।—**एकादशी** (**शयनैकादशी**)– (स्त्री०) आषाढ़-शुक्ला एकादशी, जब भगवान् विष्णु शयन करना आरम्भ करते हैं ।—**सखी**–(स्त्री०) एक सेज पर साथ सोने वाली सहेली ।—**स्थान**– (न०) शयन-गृह ।

शयनीय—(न०) [√शी + अनीयर्] सेज, शय्या; 'परिशून्यं शयनीयमद्य मे' र० ८.६६ । (वि०) शयन करने योग्य ।

शयानक—(पुं०) [√शी + शानच्+कन्] गिरगिट । अजगर सर्प ।

शयालु—(वि०) [√ शी + आलुच्] निद्रालु । आलसी । (पुं०) अजगर सर्प । कुत्ता । गीदड़, शृगाल ।

शयित—(वि०) [√ शी+क्त] सोया हुआ, सुप्त । लेटा हुआ ।

शयु—(पुं०) [√शी + उ] बड़ा सर्प, अजगर ।

शय्या—(स्त्री०) [√शी + क्यप्—टाप्] सेज । बिछौना, बिस्तर । खाट, पलँग आदि । —**अध्यक्ष** (**शय्याध्यक्ष**),—**पाल**–(पुं०) राजा के शयनागार का प्रबन्धक ।—**उत्सङ्ग** (**शय्योत्सङ्ग**)–(पुं०) सेज की बगल या मध्य-स्थान ।—**गत**–(वि०) सेज पर लेटा हुआ । बीमार ।—**गृह**–(न०) शयनागार ।

शर—(न०) [शृ + अच्] जल । (पुं०) बाण, तीर । एक प्रकार का नरकुल या सरपत । ब्रण । हिंसा । चिता । मलाई । पाँच की संख्या ।—**अग्र्य** (**शराग्र्य**)–(पुं०) उत्तम बाण ।—**अभ्यास** (**शराभ्यास**)–(पुं०) तीरंदाजी ।—**असन** (**शरासन**),—**आस्य** (**शरास्य**)– (न०) धनुष, कमान । —**आक्षेप** (**शराक्षेप**)–(पुं०) बाण चलाना । तीर की वर्षा ।—**आरोप** (**शरारोप**),—**आवाप** (**शरावाप**)-(पुं०) धनुष, कमान । —**आश्रय** (**शराश्रय**)–(पुं०) तूणीर, तरकस । —**ईषिका** (**शरेषिका**)–(स्त्री०) तीर, बाण ।—**इष्ट** (**शरेष्ट**)-(पुं०) आम का पेड़ । **ओघ** (**शरौघ**)-(पुं०) बाणों का समूह । बाण-वर्षा ।—**काण्ड**-(पुं०) नरकुल । बाण की लकड़ी ।—**घात**-(पुं०) तीरंदाजी ।—**ज**-(न०) ताजा या टटका मक्खन ।—**जन्मन्**-(पुं०) कार्त्तिकेय ।—**धि**-(पुं०) तूणीर, तरकस ।—**पुङ्ख**–(पुं०),–**पुङ्खा** (स्त्री०) तीर का वह भाग जहाँ पर लगे होते हैं । **फल**-(न०) तीर की पैनी नोक जहाँ नुकीला लोहा लगा होता है ।—**भङ्ग** (पुं०) एक ऋषि, जो दण्डक वन में श्री रामचन्द्र जी से मिले थे । —**भू**-(पुं०) कार्त्तिकेय ।—**मल्ल**-(पुं०) धनुर्धर ।—**वन** (**बण**)-(न०) सरपत का वन ।—**वाणि**-(पुं०) तीर का सिरा । धनुर्धर, तीरंदाज । तीर बनाने वाला । पैदल सिपाही ।—**वृष्टि**-(स्त्री०) तीरों की वर्षा । —**व्रात**- (पुं०) बाण-समूह ।—**सन्धान**-(न०) तीर का निशाना बाँधना ।—**सम्बाध** -(वि०) तीरों से ढका हुआ ।—**स्तम्ब**-(पुं०) सरपत का गट्ठर ।

शरट—(पुं०) [√शॄ+अटन्] गिरगिट । कुसुंभ नामक साग ।

शरण—(न०) [शृणाति दुःखम् अनेन, √शृ+ल्युट्] रक्षा, आड़, आश्रय, पनाह। आश्रय-स्थल, बचाव की जगह; 'सन्तप्तानां त्वमसि शरणं' मे० ७। घर। रक्षक। विश्राम-स्थल, आराम करने की जगह। हिंसन, वध।—**अर्थिन्** (शरणार्थिन्),—**एषिन्** (शरणैषिन्)-(वि०) रक्षा चाहने वाला, आसरा ताकने वाला।—**आगत** (शरणागत),—**आपन्न** (शरणापन्न)-(वि०) रक्षा करवाने को आया हुआ, शरण में आया हुआ।—**उन्मुख** (शरणोन्मुख)-(वि०) रक्षा करवाने को इच्छुक।

शरण्ड—(पुं०) पक्षी। गिरगिट। ठग। लंपट। आभूषण विशेष।

शरण्य—(वि०) [शरण+य] शरण देने योग्य। दीन, असहाय। शरण में आये हुए की रक्षाकरने वाला। (न०) आश्रय-स्थल। रक्षा, बचाव। (पुं०) शिवजी की उपाधि।

शरण्यु—(पुं०) [√शृ+अन्यु] रक्षक। बादल। पवन।

शरद्—(स्त्री०) [√शृ+अदि] एक ऋतु जो आश्विन और कार्तिक मास में मानी जाती है। वर्ष, साल।—**अन्त** (शरदन्त) (पुं०) जाड़े का मौसम।—**अम्बुधर** (शरदम्बुधर)-(पुं०) शरत्कालीन बादल।—**उदाशय** (शरदुदाशय)-(पुं०) शरत्कालीन झील।—**कामिन्** (शरत्कामिन्)-(पुं०) कुत्ता।—**काल** (शरत्काल)-(पुं०) शरत् ऋतु।—**घन,**—**मेघ** (शरन्मेघ)-(पुं०) शरत्कालीन मेघ।—**चन्द्र** (शरच्चन्द्र)-(पुं०) शरत् ऋतु का चन्द्रमा।—**पद्म** (शरत्पद्म)-(पुं०, न०) सफेद कमल।—**पर्वन्** (शरत्पर्वन्)-(न०) क्वार महीने की पूर्णिमा। कोजागर-उत्सव।—**मुख** (शरन्मुख)-(न०) शरत्ऋतु का आरम्भ।

शरदा—(स्त्री०) [शरद्+टाप्] शरत् ऋतु। वर्ष।

शरदिज—(वि०) [शरदि जायते,√जन्+ड, सप्तम्या अलुक्] जो शरत् ऋतु में उत्पन्न हो, शरत्कालीन।

शरभ—(पुं०) [√शृ+अभच्] हाथी का बच्चा। आठ पैरों वाला एक जन्तु जिसका वर्णन पुराणों में पाया जाता है, किन्तु वह देखने में नहीं आता है। शरभ को शेर से कहीं बढ़कर बलवान् और मजबूत बतलाया गया है। ऊँट। टिड्डी। कीट विशेष।

शरयु, शरयू—(स्त्री०) [शृ+अयु, पक्षे ऊङ्] सरजू नदी।

शरल—(वि०) [√शृ+अलच्] सरल।

शरलक—(न०) [शरल+कन्] जल।

शरव्य—(न०) [शरु+यत् वा शर√व्ये+ड] वह जिस पर तीर का सन्धान किया जाय, तीर का लक्ष्य; 'तौ शरव्यमकरोत्स नेतरान्' र० ११.२७।

शराटि, शराति—(पुं०) [शर√अट्+इन्] [शर√अत्+इन्] टिटिहरी, टिट्टिभ पक्षी।

शरारु—(वि०) [√शृ+आरु] हिंसक। अनिष्टकर।

शराव—(न०, पुं०) [शर√अव्+अण्] मिट्टी का एक प्रकार का बरतन, ढकना, सरवा। वैद्यों की एक तौल जो ६४ तोले की होती है।

शरावती—(स्त्री०) [शर+मतुप्, दीर्घ] एक नगरी जो श्रीरामचन्द्र के पुत्र लव की राजधानी थी।

शरिमन्—(पुं०) [शृणाति यौवनम्, √शृ+इमन्] प्रसव। उत्पादन।

शरीर—(न०) [√शृ+ईरन्] प्राणियों के सब अंगों का समूह, देह, तन, काया। (स्थूल और सूक्ष्म भेद से शरीर दो प्रकार का है। स्थूल शरीर मातापितृज

है और सूक्ष्म शरीर बुद्धि, अहङ्कार, मन, पञ्च ज्ञानेन्द्रिय, पञ्च कर्मेन्द्रिय और पञ्च तन्मात्र—इन १८ अवयवों का समूह है)।—**अन्तर** (**शरीरान्तर**)-(न०) शरीर के भीतर का भाग। —**आवरण** (**शरीरावरण**)-(न०) चमड़ा, चाम, खाल, चर्म।—**कर्तृ**-(पुं०) पिता। —**कर्षण**-(न०) शरीर का दुबलापन।—**ज**-(पुं०) बीमारी। कामुकता, विषय-वासना। कामदेव। पुत्र।—**तुल्य**-(वि०) शरीर के समान प्रिय।—**दण्ड**-(पुं०) देह सम्बन्धी दण्ड। शारीरिक तप।—**धृक्**-(वि०) शरीरधारी, शरीर वाला।—**पतन**—(न०),—**पात**-(पुं०) मृत्यु, मौत।—**पाक**-(पुं०) शरीर का दुबलापन।—**बद्ध**-(वि०) शरीरान्वित, शरीर-सम्पन्न।—**बन्धक**-(पुं०) प्रतिभू, जामिन।—**भाज्**-(वि०) शरीरधारी, मूर्तिमान्। (पुं०) शरीरधारी जीव।—**भेद**-(पुं०) मृत्यु।—**यष्टि**-(स्त्री०) लटा-दुबला शरीर।—**यात्रा**-(स्त्री०) आजीविका, रोजी।—**विमोक्षण**-(न०) मुक्ति, आवागमन से छुटकारा।—**वृत्ति**-(स्त्री०) शरीर का पालन-पोषण, जीविका। —**वैकल्य**-(न०) रोग, बीमारी।—**संस्कार**-(पुं०) शरीर की शोभा तथा मार्जन। गर्भाधान से लेकर अन्त्येष्टि तक के वेद-विहित सोलह संस्कार।—**सम्पत्ति**-(स्त्री०) शारीरिक स्वस्थता।—**साद**-(पुं०) शरीर का दुबलापन; 'शरीरसादादसमग्रभूषणामुखेन सालक्ष्यत लोध्रपाण्डुना' र० ३.२।—**स्थिति**-(स्त्री०) शरीर का पालन-पोषण। भोजन।

शरीरक—(न०) [शरीर+कन्] देह, शरीर। छोटा शरीर। (पुं०) जीवात्मा।

शरीरिन्—(वि०) [स्त्री०—शरीरिणी] [शरीर+इनि] शरीर-धारी, मूर्तिमान्। जीवित। (पुं०) शरीर-धारी कोई भी वस्तु चाहे वह स्थावर हो चाहे जंगम। सचेतन शरीर, संवित्-सम्पन्न शरीर। आत्मा, जीव।

शरु—(पुं०) [√शृ+उ] कामुकता। क्रोध। वज्र। बाण। अस्त्र।

शर्कर—(पुं०) [√शृ+करन्] शक्कर। कंकड़। बालुका-कण। पुराणानुसार एक देश।—**जा**-(स्त्री०) चीनी। मिसरी।

शर्करा—(स्त्री०) [शर्कर+टाप्] शक्कर, रवादार चीनी। कंकड़। बालू का कण। रेतीली या कंकड़ही जमीन। खण्ड, टुकड़ा। कमण्डलु। ओला। पथरी का रोग।—**उदक** (**शर्करोदक**)—(न०) शरबत।—**सप्तमी**—(स्त्री०) वैशाख-शुक्ला सप्तमी।

शर्करिक—(वि०) [स्त्री०—शर्करिकी] [शर्करा+ठञ्] दे० 'शर्करिल'।

शर्करिल—(वि०) [शर्करा+इलच् शर्करायुक्त]। पथरीला, कंकरीला।

शर्करी—(स्त्री०) नदी। मेखला। लेखनी।

शर्ध—(पुं०) [√शृध्+घञ्]। अपान-वायु का त्याग]। दल, समूह। बल, ताकत।

शर्धञ्जह—(वि०) [शर्ध√हा+खश्, मुम्] अफरा उत्पन्न करने वाला, पेट को फुलाने वाला। (पुं०) उर्द, माष।

शर्धन—(न०) [√शृध्+ल्युट्] अपान वायु त्यागने की क्रिया।

√शर्ब्—भ्वा० पर० सक० जाना। शर्बति, शर्बिष्यति, अशर्बीत्।

शर्मन्—(पुं०) [√शृ+मनिन्] उपाधि विशेष जो ब्राह्मणों के नाम के पीछे लगायी जाती है। (न०) हर्ष, आनन्द; 'त्यजन्त्यसून् शर्म च मानिनो वरं त्यजन्ति न त्वेकमयाचितं व्रतं' नै० १.५०। आशीर्वाद। घर। आधार।—**द**-(वि०) हर्षदायी। (पुं०) (पुं०) विष्णु।

शर्मर—(पुं०) [शर्मन्√रा+क] वस्त्र-विशेष। (वि०) आनन्द-दायक।

शर्वा–(स्त्री०) [√शृ+वत्–टाप्] रात। उँगली।

√शर्व्–भ्वा० पर० सक० अनिष्ट करना। वध करना। शर्वति, शर्विष्यति, अशर्वीत्।

शर्व–(पुं०) [√शृ+व] शिव जी का नाम। विष्णु भगवान् का नाम।

शर्वर–(न०) [√शर्व्+अरन्] अन्धकार, अँधियारी। (पुं०) कामदेव।

शर्वरी–(स्त्री०) [√शृ+वनिप्–ङीप्, र आदेश] रात; 'शशिनं पुनरेति शर्वरी' र० ८.५६। हल्दी। स्त्री। संध्या। एक संवत्सर।–**ईश (शर्वरीश)**-(पुं०) चन्द्रमा।

शर्वाणी–(स्त्री०) [शर्व+ङीष्, आनुक्] पार्वती या दुर्गा का नाम।

शर्शरीक–(वि०) [√शृ+ईकन्, द्वित्वादि] हिंस्र। दुष्ट। (पुं०) अग्नि। घोड़ा। मंगलाभरण।

√शल्–भ्वा० आत्म० सक० छिपाना। अक० चलना। हिलाना। शलते, शलिष्यते अशलिष्ट। पर० सक० जाना। शलति, शलिष्यति, अशालीत्–अशलीत्।

शल–(न०, पुं०) [√शल्+अच्] साही का काँटा। (पुं०) बर्छी, भाला। शिव के भृङ्गी नामक गण का नाम। ब्रह्मा।

शलक–(पुं०) [शल+कन्] मकड़ी।

शलङ्ग–(पुं०) [√शल्+अङ्गच्] महाराज। लवण विशेष।

शलभ–(पुं०) [√शल्+अभच्] टिड्डी। पतंगा, फतिंगा; 'कौरव्यवंशदावेऽस्मिन् क एष शलभायते' वे० १.१९।

शलल–(न०) [√शल्+कल] साही का काँटा।

शलली–(स्त्री०) [शलल+ङीष्] साही का काँटा। छोटी साही।

शलाका–(स्त्री०) [√शल्+आक–टाप्] लोहे या लकड़ी की सलाई, सींकचा। सुर्मा लगाने की सीसे की सलाई। तीर, बाण। बर्छी। वह सलाई जिससे घाव की गहराई नापी जाती है। छाते की तीली। नली की हड्डी। अँखुआ। चितेरे की कूँची। दाँत साफ करने की कूँची। साही। जुआ खेलने का पासा।–**धूर्त**-(पुं०) जुए का धूर्त, बेईमान खेलाड़ी। बहेलिया।–**परि**-(अव्य०) [शलाकया विपरीतं वृत्तम्, अव्य० स०] द्यूत-क्रीड़ा में पराजय।

शलाटु–(वि०) [√शल्+आटु] अनपका। (पुं०) कंद-विशेष। बेल।

शलातुर–(पुं०) पाणिनि मुनि की निवासभूमि।

शलाभोलि–(पुं०) ऊँट।

शल्क, शल्कल–(न०) [√शल्+कन्] [√शल्+कलच्] मछली का छिलका। छाल। हिस्सा, टुकड़ा।

शल्कलिन्, शल्किन्–(पुं०) [शल्कल+इनि] [शल्क+इनि] मछली।

√शल्भ्–भ्वा० आत्म० सक० प्रशंसा करना। शल्भते, शल्भिष्यते, अशल्भिष्ट।

शल्मलि, शल्मली–(स्त्री०) [√शल्+मलच्+इन्, पक्षे ङीष्] शाल्मली वृक्ष, सेमल का पेड़।

शल्य–(न०) [√शल्+यत्] भाला, बर्छी, साँग। तीर, बाण। काँटा। कील, खूँटी। शरीर में चुभा हुआ काँटा जो बड़ा पीड़ा-कारक होता है। (आलं०) कोई भी कारण जो हृदय दहलाने वाला, दुःख-प्रद हो। हड्डी। सङ्कट, विपत्ति। पाप। अपराध। विष। (पुं०) साही। कँटीली झाड़ी। शस्त्र-चिकित्सा का औजार जिसके द्वारा शरीर में गड़ा काँटा या अन्य कोई वस्तु निकाली जाय। सीमा। चिल्लिद मछली। मद्रदेश के राजा का नाम जो माद्री का भाई और नकुल तथा सहदेव का मामा था। मदन वृक्ष। बिल्व वृक्ष। लोध्र वृक्ष। खैर।–**अरि (शल्यारि)** -(पुं०) युधिष्ठिर।–**आहरण (शल्या-**

हरण),—उद्धरण (शल्योद्धरण)-(न०) —उद्धार (शल्योद्धार)-(पुं०),—क्रिया -(स्त्री०),—शास्त्र-(न०) अस्त्र-चिकित्सा द्वारा काँटा या अन्य कोई नुकीली चीज जो शरीर में घुस गयी हो, निकालने की क्रिया।—कण्ठ-(पुं०) साही।—लोमन्-(न०) साही का काँटा।—हर्तृ-(पुं०) काँटे बीनने वाला या बीन-बीन कर निकालने वाला।

√शल्ल्—भ्वा० पर० सक० जाना। शल्लति। शल्लिष्यति, अशल्लीत्।

शल्ल—(न०) [√शल्ल्+अच्] वृक्ष की छाल। त्वचा। (पुं०) मेढक।

शल्लक—(न०) [शल्ल+कन्] दे० 'सल्ल'। (पुं०) शोण वृक्ष, सलई।

शल्लकी—(स्त्री०) [शल्लक+ङीष्] साही। सलई नामक वृक्ष जो हाथियों को बड़ा प्रिय है।—द्रव-(पुं०) शिला-रस, सिह्लक।

शल्व—(पुं०)[√शल्+वन्]शाल्व नामक देश।

√शव्—भ्वा० पर० सक० जाना। परिवर्तन करना। रूप बदल डालना। शवति, शविष्यति, अशवीत्—अशावीत्।

शव—(न०) [शवति गच्छति, √शव्+अच्] जल। (पुं०,न०) [शवति दर्शनेन चित्तं विकरोति, √शव्+अच्] मृत शरीर, मुर्दा, लाश।—आच्छादन (शवाच्छादन) -(न०) कफन।—आश (शवाश)-(वि०) मुर्दा खाने वाला।—काम्य-(पुं०) कुत्ता।—यान-(न०) —रथ-(पुं०) श्मशान तक शव ले जाने की अरथी, टिकठी।

शवर, शवल—दे० 'शबर, शबल'।

शवसान—(पुं०) [√शव्+सानच्] यात्री, पथिक। मार्ग, रास्ता। (न०) श्मशान, कबरगाह।

√शश्—भ्वा० पर० सक० उछल कर जाना। शशति, शशिष्यति, अशशीत्—अशाशीत्।

शश—(पुं०) [√शश्+अच्] खरगोश। चन्द्र-कलङ्क। काम-शास्त्र के अनुसार मनुष्य के चार भेदों में से एक भेद। ऐसे मनुष्य के लक्षण ये हैं:—'मृदुवचनसुशीलः कोमलाङ्गः सुकेशः, सकलगुणनिधानं सत्यवादी शशोऽयम्।' लोध्र वृक्ष। गन्धरस।—अङ्क (शशाङ्क) (पुं०) चन्द्रमा। कपूर।—अद (शशाद)-(पुं०) बाज, श्येन पक्षी। इक्ष्वाकु के एक पुत्र का नाम।—अदन (शशादन)-(पुं०) बाज, श्येन पक्षी।—धर-(पुं०) चन्द्रमा। कपूर।—प्लुतक—(न०) नख का घाव।—भृत्—(पुं०) चन्द्रमा।—लक्षण-(पुं०) चन्द्रमा।—लाञ्छन-(पुं०) चन्द्रमा। कपूर।—बिन्दु,—विन्दु-(पुं०) चन्द्रमा। विष्णु भगवान्।—विषाण,—शृङ्ग-(न०)खरहे के सींग, कोई अलीक या असंभव बात; 'कदाचिदपि पर्यटन् शश-विषाणमासादयेत्' भर्तृ० २.५।—स्थली-(स्त्री०) गङ्गा और यमुना के मध्य का क्षेत्र, दोआब।

शशक—(पुं०)[शश+कन्]खरगोश, खरहा।

शशिन्—(पुं०) [शश+इनि (समास में न का लोप हो जाता है।)]चन्द्रमा। कपूर।—ईश (शशीश)-(पुं०) शिवजी।—कला-(स्त्री०) चन्द्रमा की कला।—कान्त -(पुं०) चन्द्रकान्त मणि। (न०) कुमुद।—कोटि-(पुं०) चन्द्रशृङ्ग।—ग्रह-(पुं०) चन्द्र-ग्रहण।—ज—(पुं०) बुधग्रह।—प्रभ-(वि०) चन्द्रमा जैसी प्रभावाला; 'अदेयमासीत् त्रयमेव भूपतेः शशिप्रभं छत्रमुभे च चामरे' र० ३.१६।(न०)कुमुद। मुक्ता, मोती।—प्रभा-(स्त्री०) चाँदनी। ज्योत्स्ना।—भूषण,—भृत्—मौलि,—शेखर-(पुं०) शिवजी।—लेखा-(स्त्री०) चन्द्रकला। गुडूची।

शश्वत्—(अव्य०) [√शश्+वत् (बा०)] सदैव। लगातार, बारंबार।

√शप्—भ्वा० पर० सक० वध करना। शषति, शषिष्यति, अशषीत्—अशाषीत्।

शष्कुली, शस्कुली—(स्त्री०) [√शष् (स्) +कुलच्, ङीष्] कान का छेद। पूरी, पक्वान्न आदि। काँजी। कान का रोग विशेष।

शष्प, शस्प—(न०) [√शष् (स्)+पक्] नई घास, बाल तृण ; 'गङ्गाप्रपातान्तविरूढशष्पं गौरीगुरोर्गह्वरमाविवेश' र० २.२६। (पु०) प्रतिभा-क्षय।

√शस्—भ्वा० पर० सक० मार डालना। शसति, शसिष्यति, अशसीत्—अशासीत्।

शसन—(न०) [√शस्+ल्युट्] वध करना। बलि के लिये पशु का हनन।

शस्त—(वि०) √शंस् वा √शस्+क्त] प्रशंसित, सराहा हुआ। शुभकारी, मंगलकारी। सही, समीचीन। घायल, चोटिल। हनन किया हुआ। (न०) प्रसन्नता। कुशलमङ्गल। उत्तमता। शरीर। अङ्गुलित्राण, दस्ताना।

शस्ति—(स्त्री०) [√शंस्+क्तिन्] प्रशंसा। स्तव।

शस्त्र—(न०) [√शस्+ष्ट्रन्] हथियार, औज़ार। लोहा। इस्पात लोहा।—**अभ्यास** (**शस्त्राभ्यास**)—(पु०) हथियार चलाने का अभ्यास, सैनिक कसरत।—**अस्त्र** (शस्त्रास्त्र) -(न०) हथियार जो फेंक कर चलाये जायँ और यंत्रविशेष द्वारा छोड़े जायँ।—**आजीव** (**शस्त्राजीव**),—**उपजीविन्** (**शस्त्रोपजीविन्**)-(पु०) पेशेवर सिपाही।—**आयस** (**शस्त्रायस**)—(न०) इस्पात लोहा। लोहा।—**उद्यम** (**शस्त्रोद्यम**)-(पु०) प्रहार करने को हथियार उठाना।—**उपकरण** (**शस्त्रोपकरण**)-(न०) लड़ाई का हथियार आदि सामान।—**कार**-(पु०) शस्त्र-निर्माता।—**कोष**-(पु०) म्यान, परतला।—**ग्राहिन्**-(वि०) हथियार धारण करने वाला।—**जीविन्**,—**वृत्ति**-(पु०) शस्त्र द्वारा जीविका चलाने वाला सैनिक।—**देवता**-(स्त्री०) युद्ध का अधिष्ठाता देवता।—**धर**-(पु०) सैनिक। (वि०) शस्त्र धारण करने वाला।—**पाणि**-(वि०) जिसके हाथ में शस्त्र हो, शस्त्रधर।—**पूत**-(वि०) शस्त्र से पवित्र किया हुआ। अर्थात् युद्धक्षेत्र में शस्त्र से मारे जाने के कारण पापों से छूटा हुआ।—**प्रहार**-(पु०) हथियार का आघात।—**भृत्**-(पु०) दे० 'शस्त्रधर'।—**मार्ज**-(पु०) हथियार साफ करने वाला, सिकलीगर।—**विद्या**-(स्त्री०),—**शास्त्र**-(न०) वह विद्या या शास्त्र जो हथियार चलाने आदि की बातें बतलावें।—**संहति**-(स्त्री०) हथियारों का संग्रह। हथियारों का भण्डार-गृह।—**हत**-(वि०) हथियार से मारा हुआ।—**हस्त**-दे० 'शस्त्रपाणि'।

शस्त्रक—(न०) [शस्त्र+कन्] इस्पात लोहा। लोहा।

शस्त्रिका—(स्त्री०) [शस्त्रक—टाप्, इत्व] चाकू।

शस्त्रिन्—(वि०) [शस्त्र+इनि] शस्त्र से सुसज्जित, हथियारबंद।

शस्त्री—(स्त्री०) [शस्त्र+ङीष्] छुरी।

शस्य—(न०) [√शस्+यत्] धान्य, अनाज 'दुदोह गां स यज्ञाय शस्याय मघवा दिवं' र० १.२६। नई घास। किसी वृक्ष का फल या उसकी पैदावार। (वि०) [√शंस्+क्यप्] प्रशंसनीय। (न०) सद्गुण।—**क्षेत्र**-(न०) अनाज का खेत।—**भक्षक**-(वि०) अन्नभक्षी, अनाज खाने वाला।—**मञ्जरी**-(स्त्री०) अनाज की बाल।—**शालिन्**,—**सम्पन्न**-(वि०) जिसमें बहुत अनाज हो।—**सम्पद्**-(स्त्री०) अनाज का बाहुल्य।—**संवर**-(पु०) साखू का पेड़, साल वृक्ष।

शाक—(न०, पु०) [शक्यते भोक्तुम्, √शक्+घञ्] साग, तरकारी; पत्ती, फूल,

फल आदि जो पका कर खायें-जायें। (पुं०) बल, पराक्रम। सागौन का पेड़। सिरिस का पेड़। [शक+अण्] मानव जाति विशेष। शालिवाहन द्वारा प्रवर्तित संवत्। एक राजा। एक द्वीप।—**अङ्ग** (शाकाङ्ग)-(न०) काली-मिर्च।—**अम्ल** (शाकाम्ल)-(न०) महादा, वृक्षाम्ल। इमली।—**आख्य** (शाकाख्य)-(पुं०) सागौन का पेड़। (न०) शाक, भाजी।—**चुक्रिका**-(स्त्री०) इमली।—**तरु**-(पुं०) सागौन का पेड़।—**पण**-(पुं०) मान-विशेष जो एक हाथभर का होता है। मुट्ठी भर साग।—**पार्थिव**-(पुं०) वह राजा जो अपना शाका या सन् चलाने का शौकीन हो।—**योग्य**-(पुं०) धनिया, धन्याक।—**वृक्ष**-(पुं०) सागौन का पेड़। **श्रेष्ठा**-(स्त्री०) लघु जीवन्ती। बैंगन। कूष्माण्ड। तरबूज। पेठा।

शाकट—(वि०) [स्त्री०—**शाकटी**] [शकट+अण्] छकड़ा सम्बन्धी। छकड़े में जाने वाला। (पुं०) बैल जो गाड़ी या हल में चला हुआ हो, गाड़ी का बैल। धौ का पेड़। लिसोढ़ा, श्लेष्मान्तक। (न०) खेत, क्षेत्र।

शाकटायन—(पुं०) [शकटस्यापत्यम्, शकट+फक्] एक बहुत प्राचीन वैयाकरण, जिसका उल्लेख पाणिनि और यास्क ने किया है।

शाकटिक—(वि०) [स्त्री०—**शाकटिकी**] [शकट+ठक्] छकड़ा सम्बन्धी। छकड़े में बैठ कर जाने वाला।

शाकटीन—(पुं०) [शकट+खञ्] गाड़ी का बोझ। प्राचीन-कालीन एक तौल जो बीस तुला या २ हजार पल की होती थी।

शाकल—(वि०) [स्त्री०—**शाकली**] [शकल+अण्] शकल नामक द्रव्य सम्बन्धी। एक खण्ड या टुकड़ा सम्बन्धी। (पुं०) ऋग्वेद की एक शाखा। उस शाखा के अनुयायी। हवन-सामग्री। मद्रदेश का एक नगर। वाह्लीक देश (पंजाब) का एक ग्राम।—**प्रातिशाख्य**-(न०) ऋग्वेद-प्रातिशाख्य का नाम।—**शाखा**-(स्त्री०) ऋग्वेद का वह पाठ या संशोधित संस्करण जो शाकलों में परम्परागत चला आता है।

शाकल्य—(पुं०) [शकलस्यापत्यम्, शकल+यञ्] एक प्राचीन-कालीन वैयाकरण जिसका उल्लेख पाणिनि ने किया है।

शाकशाकट, शाकशाकिन—(न०) [शाकानां भवनं क्षेत्रम्, शाक+शाकट] [शाक+शाकिन] साग-भाजी का खेत।

शाकारी—(स्त्री०) शकों अथवा शकारों की भाषा जो प्राकृत का एक भेद है।

शाकिन—(न०) [शाक+इनच्] खेत, क्षेत्र।

शाकिनी—(स्त्री०) [शाक+इनि—ङीप्] शाक या भाजी का खेत। दुर्गा देवी की एक सहचरी।

शाकुन—(वि०) [स्त्री०—**शाकुनी**] [शकुन+अण्] पक्षी सम्बन्धी। शकुन सम्बन्धी। शुभ।

शाकुनिक—(न०) [शकुन+ठक्] शकुनों का फल। (पुं०) चिड़ीमार, बहेलिया।

शाकुनेय—(पुं०) [शकुनि+ढक्] एक प्रकार का छोटा उल्लू। बकासुर। एक मुनि।

शाकुन्तल—(न०) [शकुन्तलाम् अधिकृत्य कृतो ग्रन्थः, शकुन्तला+अण्] कालिदास-रचित अभिज्ञानशाकुन्तल नाटक। (पुं०) [शकुन्तलायाः अपत्यम् इत्यर्थे अण्] शकुन्तला का पुत्र राजा भरत।

शाकुलिक—(पुं०) [शकुलान् हन्ति, शकुल+ठक्] मछुआ, मछली मारने वाला।

शाक्कर—(पुं०) [शक्कर+अण्] बैल ।

शाक्त—(पुं०) [शक्तिः देवता अस्य, शक्ति+अण्] शक्ति-पूजक, शक्ति-उपासक, तंत्र-पद्धति से शक्ति की पूजा करने वाला । [तंत्र-पद्धति दो प्रकार की है—एक दक्षिणाचार, दूसरी वामाचार । वामाचार या वाममार्गियों की पद्धति में मद्य, मांस, मैथुन आदि का व्यवहार किया जाता है, किन्तु दक्षिणाचार में इन सब अपवित्र वस्तुओं का व्यवहार नहीं किया जाता ।] (वि०) [स्त्री०—**शाक्ती**] बल या शक्ति सम्बन्धी । शक्तिरूपिणी मूर्तिमती देवी सम्बन्धी ।

शाक्तिक—(पुं०) [शक्ति+ठक्] शक्ति का उपासक । भालाधारी योद्धा ।

शाक्तीक—(पुं०) [शक्ति+ईकक्] भालाधारी सैनिक, भालाबरदार ।

शाक्तेय—(पुं०) [शक्ति+ढक्] शक्ति-पूजक ।

शाक्य—(पुं०) [शकोऽभिधानम् अस्य, शक+ञ्य] एक प्राचीन क्षत्रिय जाति, जो नेपाल की तराई में रहती थी और जिस में गौतम बुद्ध का जन्म हुआ था ।—**भिक्षुक**-(पुं०) बौद्ध भिक्षुक ।—**मुनि**, —**सिंह**-(पुं०) बुद्ध देव के नामान्तर ।

शाकी—(स्त्री०) [शक+अण्—ङीप्] शची । दुर्गा ।

शाक्वर—(पुं०) [शक्वर+अण्] बैल । आकाशोद्भूत वायु । इन्द्र । इन्द्र का वज्र । प्राचीन काल की एक रीति या संस्कार ।

√शाख्—भ्वा० पर० सक० व्याप्त करना । शाखति, शाखिष्यति, अशाखीत् ।

शाखा—(स्त्री०) [शाखति गगनं व्याप्नोति √शाख्+अच्—टाप्] डाली, शाख; 'प्रावर्ज्य शाखाः सदयं च यासां पुष्पाण्युपात्तानि विलासिनीभिः' र० १६.१९ । बाँह । अवयव । विभाग । किसी शास्त्र या विद्या के अन्तर्गत उसका कोई भेद । संप्रदाय, पंथ । वेद की संहिताओं के पाठ तथा क्रम-भेद जो कई ऋषियों ने अपने गोत्र या शिष्य-परंपरा में चलाये ।—**पित्त**-(पुं०) एक रोग जिसमें हाथ और पैर में जलन और सूजन हो जाती है ।—**मृग**- (पुं०) वानर, बंदर । गिलहरी ।—**रण्ड**-(पुं०) वेद-विहित कर्मों को अपनी शाखा के अनुसार न करने वाला; अपनी शाखा को छोड़ अन्य शाखा के अनुसार कार्य करने वाला व्यक्ति ।—**रथ्या**- (स्त्री०) पगडंडी ।—**शिफा**-(स्त्री०) वृक्ष की डाल से निकल कर ज़मीन की ओर बढ़ने वाली जटा ।

शाखाल—(पुं०) [शाखा √ ला+क] वानीर, जलबेंत ।

शाखिन्—(वि०) [शाखा+इनि] डालियों वाला, शाखाओं से युक्त । (पुं०) वृक्ष । वेद । किसी वैदिक शाखा का अनुयायी ।

शाखोट शाखोटक—(पुं०) [√शाख्+ओटन्] [शाखोट+कन्] सिहोर का पेड़, पीतवृक्ष ।

शाङ्कर—(पुं०) [शङ्कर+अण्] बैल । शंकराचार्य का अनुयायी । (न०) आर्द्रा नक्षत्र जिसके देवता शंकर हैं । (वि०) शंकर-संबन्धी । शंकराचार्य का ।

शाङ्करि—(पुं०) [शङ्कर+इञ्] कार्त्तिकेय का नाम । गणेश जी का नाम । अग्नि । शमी वृक्ष ।

शाङ्खिक—(पुं०) [शङ्ख+ठक्] शङ्ख को काट कर शङ्ख की चीजें बनाने वाला । एक वर्णसङ्कर जाति । शङ्ख बजाने वाला ।

शाट—(पुं०) [√शट्+घञ्] वह वस्त्र जो कमर में लपेट कर पहना जाय । कपड़े का टुकड़ा । एक प्रकार की कुर्ती । ढीला पहनावा ।

शाटक—(न०, पुं०) [शाट+कन्] वस्त्र । नाटक का एक भेद ।

शाठ्य—(न०) [शठ + ष्यञ्] शठता, दुष्टता; 'शठे शाठ्यं समाचरेत्'। कपट, छल।

√शाड्—भ्वा० आत्म० सक० प्रशंसा करना। शाडते, शाडिष्यते, अशाडिष्ट।

शाण—(वि०) [स्त्री०—शाणी] [√शण् +अण्] सन का, पटसन का। (न०) सन का वस्त्र, सनिया। (पुं०) [√शण् + अञ्] कसौटी का पत्थर। सान रखने वाला पत्थर। आरा। चार माशे की तौल। **—आजीव (शाणाजीव)**–(पुं०) हथियारों में सान देने का काम करने वाला व्यक्ति।

शाणि—(पुं०) [√शण्+इण्] सन जिसके रेशों से वस्त्र बनाया जाता है, पटुआ।

शाणित—(वि०) [शाण+इतच्] सान रखा हुआ, पैनाया हुआ, तीक्ष्ण किया हुआ।

शाणी—(स्त्री०) [शाण+ङीप्] कसौटी। सान का पत्थर। आरा। पटसन का बना वस्त्र। यज्ञोपवीत के समय ब्रह्मचारी को पहनने के लिये दिया जाने वाला सन का बना वस्त्र। फटा कपड़ा। छोटी कनात या तंबू। हाथ और आँख का इशारा।

शाणीर—(न०) [√शण् + ईरच्] सोन नदी का तट। सोन नदी के बीच में स्थित भू-भाग।

शाण्डिल्य—(पुं०) [शण्डिल + यञ्] भक्ति-शास्त्र को बनाने वाले एक मुनि। गोत्र-प्रवर्तक एक ऋषि। बिल्व-वृक्ष। अग्नि का रूप विशेष।

शात—(वि०) [√शो+क्त] शान पर चढ़ा हुआ, पैना। पतला, दुबला। निर्बल, कमज़ोर। सुन्दर, मनोहर। प्रसन्न। (न०) धतूरा। (पुं०) आनन्द, हर्ष, आह्लाद।—**उदरी (शातोदरी)**–(स्त्री०) पतली कमर वाली; 'शातोदरी युवदृशां क्षणमुत्सवोऽभूत्' शि० ५.२३।—**शिख**–(वि०) पैनी नोक वाला।

शातकुम्भ—(न०) [शतकुम्भे पर्वते भवम्, शतकुम्भ+अण्] सोना। (पुं०) धतूरा। करवीर। कचनार।

शातकौम्भ—(न०) [शतकुम्भ + अण्] सुवर्ण, सोना। (वि०) सोने का बना।

शातन—(न०) [√ शो + णिच्, तक् +ल्युट्] छोटा करना। तेज़ करना। विनाशन।

शातपत्रक—(पुं०), **शातपत्रकी**–(स्त्री०) [शतपत्र+अण्, शातपत्र + कन्] [शातपत्रक+ङीष्] चन्द्रिका, चाँदनी।

शातभीरु—(पुं०) [शाताः दुर्बलाः पान्थाः भीरवो यस्याः, ब० स०] मल्लिका विशेष।

शातमान—(वि०) [स्त्री०—**शातमानी**] [शतमानेन क्रीतम्, शतमान+अण्] एक सौ के मूल्य का।

शात्रव—(वि०) [स्त्री०—**शात्रवी**] [शत्रु+अण्] शत्रु सम्बन्धी। वैरी, विरोधी। (न०) शत्रुओं का समुदाय। शत्रुता। (पुं०) शत्रु।

शाद—(पुं०) [√शो+द] दूब, छोटी घास। कीचड़।—**हरित**–(पुं०, न०) दूब का मैदान।

शाद्वल—(वि०) [शाद + ड्वलच्] वह स्थान जहाँ घास हो। वह स्थान जहाँ छोटी और हरी घास बहुतायत से हो; 'यथौ मृगाध्यासितशाद्वलानि श्यामायमानानि वनानि पश्यन्' र० २.१७। सब्ज, हरा-भरा (पुं०, न०) चरागाह, गोचर-भूमि।

√शान्—भ्वा० उभ० सक० तीक्ष्ण करना, पैनाना, तेज़ करना। शीशांसति–ते, शीशांसिष्यति–ते, अशीशांसीत् – अशीशांसिष्ट।

शान—(पुं०) [√शान्+अच्] कसौटी। शान रखने का पत्थर।—**पाद**–(पुं०) वह पत्थर जिस पर चन्दन रगड़ा जाय। पारियात्र पर्वत।

शान्त—(वि०) [√शम्+क्त] शमयुक्त, शान्ति वाला । सन्तुष्ट, अघाया हुआ । बन्द । मिटा हुआ । घटा हुआ । दबा हुआ । बुझा हुआ। मरा हुआ । सौम्य । गम्भीर । पालतू, मौन, चुप, खामोश । शिथिल, ढीला । श्रान्त, थका हुआ । रागादि-शून्य, जितेन्द्रिय । विघ्न-बाधा-रहित । स्थिर । स्वस्थ-चित्त । अप्रभावित । शुभ, मङ्गल-कारी । [**शान्तं पापम्** संस्कृत का यह एक मुहावरा है जिसका अर्थ है, "ईश्वर न करे ऐसा हो" अथवा "नहीं नहीं", "ऐसा नहीं, ऐसा कैसे हो सकता है?"]— **आत्मन्**, —**चेतस्**—(वि०) शान्त स्वभाव वाला । स्वस्थचित्त । —**रस**— (पु०) काव्य के नौ रसों में से एक । इसका स्थायी भाव "निर्वेद" (अर्थात् काम-क्रोधादि वेगों का शमन) है ।

शान्तनव—(पु०) [शन्तनु + अण्] शान्तनु-पुत्र भीष्म का नाम ।

शान्ता—(स्त्री०) [शान्त+टाप्] महा-राज दशरथ की पुत्री का नाम जो ऋष्य-शृङ्ग को ब्याही गयी थी ।

शान्ति—(स्त्री०) [√शम्+क्तिन्] वेग, क्षोभ या क्रिया का अभाव, स्थिरता । सन्नाटा, नीरवता । स्वस्थता, चैन, सन्तोष । युद्ध की बंदी । अवसान, समाप्ति । रागादि का अभाव, विरक्ति । पारस्परिक मतभेद दूर होकर मेल-मिलाप होना । भोजन करके भूख को शान्त करना । प्रायश्चित्त अथवा वह कर्म जिससे किसी ग्रह का बुरा फल दूर हो जाय, अमङ्गल दूर करने का उपचार । सौभाग्य । मङ्गल। कलङ्क का दूर होना । बचाव ।

शान्तिक—(न०) [शान्ति+कन्] पालन, रक्षण । उपद्रवों को शान्त करने वाली होम आदि क्रिया ।

शाप—(पु०) [√शप् + घञ्] अहित-कामनासूचक वचन, बददुआ, अकोसा; 'शापे-नास्तङ्गमितमहिमा वर्षभोग्येन भर्तुः' मे० १ । शपथ । गाली, भर्त्सना ।—**अस्त्र** (**शापास्त्र**)–(पु०)वह व्यक्ति जिसके पास अस्त्रों की जगह शाप देने की शक्ति हो, मुनि, ऋषि ।—**उत्सर्ग** (**शापोत्सर्ग**)–(पु०) शापोच्चारण, शाप देना ।—**उद्धार** (**शापोद्धार**)–(पु०),— **मुक्ति**–(स्त्री०), —**मोक्ष**–(पु०) शाप या उसके प्रभाव से छुटकारा, शाप-मुक्ति ।—**ग्रस्त**–(वि०) शापित ।—**मुक्त**– (वि०) शाप से छूटा हुआ ।—**यन्त्रित**– (वि०) शाप द्वारा नियन्त्रित किया हुआ ।

शापटिक—(पु०) मोर ।

शापित—(वि०) [शाप+इतच्] जिसे शाप दिया गया हो, शापग्रस्त । शपथ खाया हुआ ।

शाफरिक—(पु०) [शफरान् हन्ति, शफर +ठक्] मछुआ, धीवर ।

शाबर, शावर—(वि०) [स्त्री०—**शाबरी, शावरी**] [शब (व) र+अण्] शबर संबन्धी । जङ्गली, बर्बर । नीच, कमीना । (पु०) लोध्रवृक्ष । पाप । अपराध । दुष्टता । ताँबा । एक प्रकार का चंदन । दुःख ।—**भेदाख्य**–(न०) ताँबा ।

शाबरी, शावरी—(स्त्री०) [शब (व) र+ ङीप्] शबरों की भाषा, एक प्रकार की प्राकृत भाषा ।

शाब्द—(वि०) [स्त्री०—**शाब्दी**] [शब्द +अण्] शब्द सम्बन्धी । शब्द से उत्पन्न । ध्वनि पर निर्भर । ध्वनि सम्बन्धी । मौखिक, जबानी । ध्वनि-कारक ।—**बोध**–(पु०) वाक्य में प्रयुक्त शब्दों के अर्थ का ज्ञान ।—**व्यञ्जना** –(स्त्री०) वह व्यञ्जना जो शब्द-विशेष के प्रयोग पर ही निर्भर होती है, अर्थात् यदि उसका पर्यायवाची शब्द

व्यवहृत किया जाय तो वह न रह जाय ।

शाब्दिक—(वि०) [स्त्री०—**शाब्दिकी**] [शब्द+ठक्] मौखिक, जबानी । ध्वनि-कारक । (पु०) वैयाकरण ।

शामन –(पु०) [शमन + अण्] यमराज का नाम । (न०) वध, हत्या । शान्ति, नीरवता ।

शामनी—(स्त्री०) [शामन + ङीप्] दक्षिण दिशा ।

शामित्र—(न०) [√शम् + णिच्+इत्रच्] यज्ञ । यज्ञ के लिये पशु-वध । बलिदान के लिये पशु को बांधने की क्रिया । यज्ञीय पात्र-विशेष ।

शामील—(न०) [शमी + ष्लञ्] भस्म, राख ।

शामीली—(स्त्री०) [शामील+ङीप्] स्रुवा। माला ।

शाम्बरी—(स्त्री०) [शम्बर+अण्–ङीप्] माया । इन्द्रजाल, जादूगरी । जादूगरनी ।

शाम्बविक—(पु०) [शम्ब + ठक्]शंख का व्यवसायी ।

शाम्भव—(वि०) [स्त्री०—**शाम्भवी**] [शम्भु + अण्] शिव सम्बन्धी; 'प्रत्तु वाञ्छति शाम्भवो गणपतेराखुं क्षुधार्तः फणी' पं० १.१५९ । (न०) देवदारु का पेड़। (पु०) शिव का भक्त या पूजक। शिव-पुत्र । कपूर । विष विशेष ।

शाम्भवी—(स्त्री०) [शाम्भव+ङीप्] पार्वती । नील दूर्वा ।

शायक, सायक—(पुं०) [√शो + ण्वुल्] [√ सो+ण्वुल्] तीर । खड्ग, तलवार ।

शार्—चु० उभ० सक० निर्बल करना । अक० निर्बल होना । शारयति–ते, शारयिष्यति –ते, अशशारत्—त ।

शार—(वि०) [√ शार् + अच् वा √शॄ +घञ्] रंग-बिरंगा, चितकबरा, चित्तियों से युक्त । (पुं०)—रंग-बिरंगा रंग । हरा रंग । पवन । शतरंज का मोहरा। अनिष्ट ।

शारङ्ग—(पुं०) [शारम् अङ्गं यस्य, ब० स०, शक० पररूप] चातक पक्षी । मयूर । मधुमक्षिका । हिरन, मृग । हाथी ।

शारङ्गी—(स्त्री०) [शारङ्ग+ङीष्] एक बाजा जो गज से बजाया जाता है, सारंगी ।

शारद—(वि०) [शरद् + अण्] शरद् ऋतु का; 'दिवसं शारदमिव प्रारम्भ-सुखदर्शनम्' र० १०.९ । वार्षिक । नया, हाल का । ताजा, टटका । शर्मीला, लज्जालु । जो साहसी न हो । (न०) अनाज । सफेद कमल । (पुं०) वर्ष । शारदी रोग, शरद् ऋतु में उत्पन्न होने वाला रोग । हरी मूँग । शरद् ऋतु की धूप । बकुल वृक्ष, मौलसिरी ।

शारदा—(स्त्री०) [शारद+टाप्] वीणा विशेष । दुर्गा का नाम । सरस्वती का नाम ।

शारदिक—(न०) [शरद् + ठञ्] वार्षिक श्राद्ध या शरद् ऋतु में किया जाने वाला श्राद्ध कर्म । (पुं०) शरद् ऋतु में उत्पन्न होने वाला रोग । शरद् ऋतु का सूर्यातप या धूप ।

शारदी—(स्त्री०) [शारद+ङीप्] कार्तिक मास की पूर्णमासी ।

शारदीय—(वि०) [शरद् + छण्] शर-त्कालीन ।

शारि—(पुं०) [√ शॄ + इञ्] शतरंज का मोहरा या गोटी । छोटी गेंद । एक प्रकार का पासा। (स्त्री०) सारिका , मैना पक्षी । कपट, छल । हाथी का पलान या झूल ।—**फल,–फलक**-(न०, पुं०)शतरंज या चौसर की बिसात ।

शारिका—(स्त्री०) [शारि + कन्–टाप्] मैना पक्षी । सारंगी, बेहला आदि बाजों के बजाने का गज। शतरंज खेलने की क्रिया । शतरंज का मोहरा या उसकी गोटी ।

शारी—(स्त्री०) [शारि + ङीष्] कुशा। मैना।

शारीर—(वि०) [स्त्री०—**शारीरी**] [शरीर + अण्] शरीर सम्बन्धी, दैहिक, कायिक। शरीर-धारी, मूर्तिमान्। (पु०) जीवात्मा। साँड़। एक प्रकार का अर्थ।

शारीरक—(वि०) [स्त्री०—**शारीरकी**] [शरीर+कन्+अण्] शरीर सम्बन्धी। (पु०) शरीरधारी जीवात्मा। (न०) जीव के स्वरूप ज्ञान की खोज या जिज्ञासा।—**सूत्र**-(न०) वेदव्यासजी के बनाये हुए वेदान्त सूत्र।

शारीरिक—(वि०) [स्त्री०—**शारीरिकी**] [शरीर+ठक्] शरीर सम्बन्धी, दैहिक।

शारुक—(वि०) [स्त्री०—**शारुकी**] [√शृ+उकञ्] हिंस्र। अनिष्टकर, हानिकारक।

शार्क—(पु०) खाँड़ चीनी। मिसरी।

शार्कक—(पु०) [शर्क+अण्+कन्] शर्करा-पिण्ड, मिसरी। दूध का फेन।

शार्कर—(वि०) [स्त्री०—**शार्करी**] [शर्करा+अण्] खाँड, शक्कर या चीनी का बना हुआ। पथरीला, कँकरीला।—(पु०) कँकरीली जगह। दूध का फेन। मलाई।

शार्ङ्ग—(वि०) [शृङ्ग + अण्] सींग का बना हुआ, सींगदार। धनुषधारी, धनुर्धर। (पु०, न०) धनुष। विष्णु भगवान् के धनुष का नाम।—**धन्वन्**, —**धर**,—**पाणि**,—**भृत्**- (पु०) विष्णु भगवान् के नामान्तर।

शार्ङ्गिन्—(पु०) [शार्ङ्ग+इनि] धनुर्धारी व्यक्ति। विष्णु; 'धर्मसंरक्षणार्थैव प्रवृत्तिर्भुवि शार्ङ्गिणः' र० १५.४।

शार्दूल—(पु०) [√शृ + ऊलच्, दुक् आगम] व्याघ्र, चीता। लकड़बग्घा। राक्षस। पक्षी विशेष। समासान्त शब्दों में पीछे आने पर इनका अर्थ होता है:—सर्वश्रेष्ठ। उत्तम। प्रसिद्ध पुरुष।—**चर्मन्**-(न०) चीते की खाल।—**विक्रीडित**-(न०) चीते की क्रीड़ा; 'कन्दर्पोऽपि यमायते विरचयन् शार्दूलविक्रीडितम्' गीत० ४। उन्नीस अक्षरों के पादवाला एक छन्द।

शार्वर—(वि०) [स्त्री०—**शार्वरी**] [शर्वरी +अण्] नैश, रात्रिकालीन। उत्पाती, उपद्रवी। (न०) अँधियारा, अन्धकार।

शार्वरी—(स्त्री०) [शार्वर+ङीप्] रात्रि, रात।

√शाल्—भ्वा० आत्म० सक० प्रशंसा करना। चापलूसी करना। अक० चमकना। सम्पन्न होना। शालते, शालिष्यते, अशालिष्ट।

शाल—(पु०) [√शल् + घञ्] साल, साखू या सखुआ का पेड़। कोई भी वृक्ष। हाता, घेरा। मछली विशेष। शालिवाहन राजा का नाम।—**ग्राम**-(पु०) विष्णु भगवान् की एक प्रकार की मूर्त्ति जो गंडकी नदी में पायी जाती है।—**निर्यास**- (पु०) शालवृक्ष का गोंद।—**भञ्जिका**- (स्त्री०) गुड़िया, पुतली। रंडी, वेश्या।—**भञ्जी**-(स्त्री०) गुड़िया, पुतली।—**वेष्ट**- (पु०) सालवृक्ष का गोंद।—**सार**-(पु०) उत्कृष्टतर वृक्ष। हींग।

शालङ्कायन—(पु०) [शलङ्कु + फक्—आयन] विश्वामित्र के एक पुत्र। नन्दी।

शालव—(पु०) [शालः तन्निर्यास इव वलति बहिर्गच्छति, शाल √वल् + ड] लोध्र वृक्ष।

शाला—(स्त्री०) [√शो + कालन्—टाप् वा √शाल् + अच्—टाप्] कमरा। घर। वृक्ष की ऊपर की डाली। वृक्ष का तना या धड़।—**मृग**-(पु०) सियार, शृगाल।—**वृक**- (पु०) भेड़िया। कुत्ता। हिरन। बिल्ली। शृगाल, गीदड़। बंदर।

शालाक—(पुं०) पाणिनि का नाम ।

शालाकिन्—(पुं०) भालाधारी । नापित, नाई । शल्य-चिकित्सक ।

शालातुरीय—(पुं०) [शलातुर + अण्] पाणिनि का नाम । ["शलातुर" या "शालोत्तर" पाणिनि के जन्मस्थान का नाम है] ।

शालार—(न०) [शाला √ऋ + अण्] हाथी का नाखून । सोपान, जीना, सीढ़ी । पक्षी का पिंजड़ा ।

शालि—(पुं०) [√शृ + इञ्, रस्य लत्वम्] चावल । अगहन चावल; 'यवाः प्रकीर्णाः न भवन्ति शालयः' मृ० ४.१६ । गंधबिलाव । **—ओदन** (**शाल्योदन**)-(पुं०, न०) भात । **—गोप**- (पुं०) वह जो धान के खेत की रखवाली के लिये नियुक्त किया गया हो । **— पिष्ट**—(न०) बिल्लौर पत्थर, स्फटिक । **— वाहन**-(पुं०) शक जाति का एक प्रसिद्ध राजा । इसका संवत्सर भी चलता है और ईसा के जन्म के ७८ वर्ष पीछे से इसके वर्ष की गणना आरम्भ होती है । **—होत्र**- (पुं०) एक प्रसिद्ध ग्रन्थकार का नाम जिसने अश्वचिकित्सा पर एक प्रसिद्ध ग्रन्थ लिखा । घोड़ा । (न०) अश्व-शास्त्र । **—होत्रिन्**-(पुं०) घोड़ा ।

शालिक—(पुं०) [शालि√कै+क] जुलाहा। धान्य रूप में दिया जाने वाला कर ।

शालिन्—(वि०) [स्त्री०—**शालिनी**] [√शाल्+इनि वा शाला + इनि] सम्पन्न । चमकदार । घरेलू ।

शालिनी—(स्त्री०) [शालिन् + ङीप्] गृहिणी, गृह-स्वामिनी । ग्यारह अक्षरों का एक वृत्त । बिस, भसींड़, पद्मकन्द । मेथी ।

शालीन—(वि०) [शालाप्रवेशनम् अर्हति, शाला+खञ्] विनीत, नम्र । लज्जा । धनी । सदृश, समान । (पुं०) गृहस्थ

शालु—(न०) [√शृ+उण्, रस्य लत्वम्] भसींड़, पद्मकन्द । जातीफल । (पुं०) मेंढक । चोरक ओषधि । कषाय द्रव्य ।

शालूक, शालूक—(न०) [शालु + कन्] [शल्+ऊकञ्] पद्मकंद, भसींड़ । जायफल, जातीफल । (पुं०) मेंढक ।

शालूर—(पुं०) [√शाल् + ऊर] मेंढक ।

शालेय—(न०) [शालि+ढक्] धान का खेत । सौंफ । मूली ।

शालोत्तरीय—(पुं०) [शालोत्तरे ग्रामे भवः, शालोत्तर+छ] पाणिनि का नामान्तर ।

शाल्मल—(पुं०) [√शाल् + मलच्] सेमल का पेड़ । भूमण्डल के पुराणोक्त सप्त विभागों में से एक द्वीप विशेष का नाम ।

शाल्मलि—(पुं०) [√शाल् + मलिन्] नरक विशेष । सेमल वृक्ष । **—स्थ**-(पुं०) गरुड़ जी ।

शाल्मली—(स्त्री०) [शाल्मलि + ङीष्] सेमल का वृक्ष । पाताल की एक नदी का नाम । नरक विशेष । **—वेष्ट, —वेष्टक**-(पुं०) सेमल की गोंद ।

शाल्व—(पुं०) [√शाल् + व] एक देश का नाम । शाल्व देश का राजा ।

शाव—(वि०) [स्त्री०—**शावी**] [शव +अण्] शव सम्बन्धी; 'दशाहं शावमाशौचं सपिण्डेषु विधीयते' मनु० ५.५९ । (पुं०) [√शव् + घञ्] बच्चा, विशेष कर पशु-पक्षियों का । भूरा रंग ।

शावक—(पुं०) [शाव + कन्] पशु-पक्षी का बच्चा, छौना ।

शाश्वत—(वि०) [स्त्री०—**शाश्वती**] [शश्वत् + अण्] जो सदा स्थायी रहे, नित्य । (पुं०) वेदव्यास । शिव । स्वर्ग । सूर्य ।

शाश्वती—(वि०) [शाश्वत+ङीप्] पृथिवी ।

शाष्कुल—(वि०) [स्त्री०—**शाष्कुली**] शष्कुलमिव मांसं भक्ष्यम् अस्य, शष्कुल +अण्] मांस-भक्षी, मांसाहारी ।

शाष्कुलिक—(न०) [शष्कुली + ठक्] रोटियों या पूरियों का ढेर ।

√शास्—श्र० प० सक० शिक्षा देना । शासन करना । श्राज्ञा देना । निर्देश करना । सूचना देना । सलाह देना । दण्ड देना । वशवर्ती करना । पालतू बनाना । शास्ति, शासिष्यति, अशिषत् ।

शासन—(न०) [√शास् + ल्युट्] आज्ञा, आदेश । वशवर्ती करना । लिखित प्रतिज्ञा, पट्टा । राज्य के कार्यों का प्रबन्ध और संचालन, हुकूमत । दंड, शास्ति । शास्त्र । राजा की दान की हुई भूमि । वह परवाना या रमान जिसके द्वारा किसी व्यक्ति को कोई अधिकार दिया गया हो । इन्द्रिय-निग्रह । —**पत्र**–(न०) वह ताम्रपत्र या शिला, जिस पर कोई राजाज्ञा खोदी गयी हो । —**हर**,— **हारिन्**– (पु०) राजदूत । सन्देश-वाहक; 'तमभ्यनन्दत्प्रथमं प्रबोधितः प्रजेश्वरः शासनहारिणा हरेः' र० ३.६८ ।

शासित—(वि०) [√शास् + क्त] शासन किया हुआ । दण्डित ।

शासितृ—(पु०) [√शास् + तृच्] शासनकर्त्ता । दण्ड-दाता ।

शास्ति—(स्त्री०) [√शास्+क्तिन् वा ति] शासन । आज्ञा । दंड । दंड के रूप में लिया जाने वाला धन या कार्य ।

शास्तृ—(पु०) [√शास् +तृन्, सच अनिट्] शिक्षक । शासन-कर्ता । राजा । पिता । बुद्ध या जिन । बौद्धों या जैनों का गुरु ।

शास्त्र—(न०) [शिष्यतेऽनेन, √ शास् + ष्ट्रन्] जन-साधारण के हित के लिये विधान बतलाने वाले धार्मिक ग्रन्थ । आज्ञा, आदेश । धर्माज्ञा, धर्मशास्त्र की आज्ञा । किसी विशिष्ट विषय का वह समस्त ज्ञान जो ठीक क्रम से संग्रह करके रखा गया हो । —**अतिक्रम** (**शास्त्रातिक्रम**)–(पु०) शास्त्र की आज्ञा का उल्लंघन ।—**अनुष्ठान** (**शास्त्रानुष्ठान**)–(न०) शास्त्रीय आज्ञा का पालन ।—**अभिज्ञ** (शास्त्राभिज्ञ) –(वि०) शास्त्र जानने वाला ।—**अर्थ** (**शास्त्रार्थ**)–(पु०) शास्त्र का अर्थ । धर्मशास्त्र की आज्ञा ।—**आचरण** (**शास्त्राचरण**)–(न०) शास्त्रीय आज्ञाओं का पालन ।—**उक्त** (**शास्त्रोक्त**)– (वि०) शास्त्रकथित, शास्त्रीय, शास्त्रानुमोदित ।—**कार**, —**कृत्**– (पु०) शास्त्र बनाने वाला ।—**कोविद** –(वि०) शास्त्रनिष्णात, शास्त्रों को भली-भाँति जानने वाला ।—**गण्ड**–(पु०) शास्त्रों का अधूरा ज्ञान रखने वाला, पल्लवग्राही पण्डित ।—**चक्षुस्**– (न०) शास्त्र का नेत्र अर्थात् व्याकरण । —**दर्शिन्**– (वि०) जिसे शास्त्रों का अच्छा ज्ञान हो, शास्त्रज्ञ ।—**दृष्टि**–(स्त्री०) शास्त्र का मत, विचार । —**योनि**–(पु०) शास्त्रों का उद्गम-स्थल ।—**विधान**– (न०), —**विधि**–(पु०) आचार, व्यवहार सम्बन्धी शास्त्रोक्त आदेश, अनुशासन । —**विप्रतिषेध**, —**विरोध**–(पु०) धर्मशास्त्र की आज्ञाओं में परस्पर विरोध । कोई कार्य जो धर्मशास्त्र के विरुद्ध हो ।—**विमुख**–(वि०) धर्मशास्त्र के अध्ययन से पराङ्मुख ।—**विरुद्ध**–(वि०) धर्मशास्त्र की आज्ञाओं के विरुद्ध या खिलाफ़ ।—**व्युत्पत्ति**–(स्त्री०) शास्त्रों का पूर्ण ज्ञान, शास्त्र-निपुणता ।—**शिल्पिन्**– (पु०) काश्मीर देश ।—**सिद्ध**–(वि०) धर्मशास्त्र के मतानुसार, धर्मशास्त्रमें प्रतिपादित ।

शास्त्रिन्—(वि०) [स्त्री०—**शास्त्रिणी**] [शास्त्र+इनि] शास्त्र जानने वाला, शास्त्रज्ञ ।

शास्त्रीय—(वि०) [शास्त्र + छ] शास्त्र संबंधी । शास्त्रानुमोदित । वैज्ञानिक, विज्ञान सम्बन्धी ।

शास्य—(वि०) [√शास् + ण्यत्] शासन करने के योग्य । सिखलाने या समझाने योग्य । दण्डनीय ।

√शि—स्वा० उभ० सक० पैना करना, धार रखना । पतला करना । भड़काना, उत्तेजित करना । ध्यान देना । शिनोति—शिनुते, शेष्यति—ते, अशैषीत्— अशेष्ट ।

शि—(पुं०) [√शि + क्विप्] मंगल । समृद्धि । स्वस्थता । शान्ति । शिव ।

शिंशपा—(स्त्री०) [शिवं पाति, शिव√पा +क, पृषो० साधुः] शीशम का पेड़ । अशोक वृक्ष ।

शिक्कु—(वि०) [√सिच्+कु, पृषो० शत्व] सुस्त, काहिल, अकर्मण्य ।

शिक्थ—(न०) [√ सिच् + थक्, पृषो० शत्व] मोम ।

शिक्य—(न०), **शिक्या**— (स्त्री०) [शंस् +यत्, कुगागम, शि आदेश] [शिक्य +टाप्] छींका, सिकहर । बहँगी के दोनों ओर बँधा हुआ रस्सों का जाल, जिस पर बोझ रखते हैं । तराजू की डोरी ।

शिक्यित—(वि०) [शिक्य + णिच्+क्त] छींके या सींके में लटकाया हुआ । बहँगी में रखा हुआ ।

√ शिक्ष्—भ्वा० आत्म० सक० सीखना । पढ़ना । शिक्षते, शिक्षिष्यते, अशिक्षिष्ट ।

शिक्षक—(पुं०) [स्त्री०—**शिक्षका**, **शिक्षिका**] [√शिक्ष् + णिच्+ण्वुल्] सिखलाने वाला । गुरु ।

शिक्षण—(न०) [√शिक्ष्+ल्युट् वा णिच् +ल्युट्] शिक्षा, तालीम, पढ़ाने का काम ।

शिक्षा—(स्त्री०) [√शिक्ष् + अ—टाप्] किसी विद्या को सीखने या सिखाने की क्रिया, तालीम । गुरु के निकट विद्याभ्यास, विद्या का ग्रहण । दक्षता । उपदेश; 'प्रमुख्य नयः प्रणिपातशिक्षया' र० ३.२५। सलाह । छह वेदाङ्गों में से एक जिसमें वेदों के वर्ण, स्वर, मात्रा आदि का निरूपण है । विनय, विनम्रता ।—**कर**- (पुं०) अध्यापक, शिक्षक । वेदव्यास ।—**नर**- (पुं०) इन्द्र । —**परिषद्**- (स्त्री०) वैदिक काल की शिक्षा-संस्था या विद्यालय जो एक ऋषि या आचार्य के अधीन रहता था और उसी के नाम से प्रसिद्ध होता था । शिक्षा या पढ़ाई का प्रबन्ध करने वाली सेभा या समिति ।—**शक्ति**-(स्त्री०) ज्ञान प्राप्त करने की शक्ति ।

शिक्षित—(वि०) [√शिक्ष्+क्त वा णिच् +क्त] पढ़ा-लिखा, अधीत । सिखाया-पढ़ाया हुआ । नियंत्रित । पालतू । निपुण, चतुर । विनम्र, लज्जालु ।—**अक्षर** (**शिक्षिताक्षर**)-(पुं०) छात्र । (वि०) शिक्षित ।—**आयुध** (**शिक्षितायुध**)-(वि०) हथियार चलाने में निपुण ।

शिखण्ड—(पुं०) [शिखा√अम् + ड, शक० पररूप] चोटी, शिखा । काकपक्ष, काकुल, जुल्फ । मयूर-पुच्छ ।

शिखण्डक—(पुं०) [शिखण्ड + कन्] चूड़ाकरण संस्कार के समय सिर पर रखी गयी चोटी या चुटिया । काकपक्ष, काकुल; 'तौ पितुर्नयनजेन वारिणा किञ्चिदुक्षितशिखण्डकावुभौ र० ११.५ । मयूर-पुच्छ । कलँगी ।

शिखण्डिक—(पुं०) [शिखण्डिन् √ कै +क] मुर्गा, कुक्कुट ।

शिखण्डिका—(स्त्री०) [शिखण्ड + कन् —टाप्, इत्व] शिखा, चोटी । काकपक्ष, काकुल । मयूर-पुच्छ ।

शिखण्डिन्—(वि० [शिखण्ड + इनि] शिखावाला, कलँगीदार । (पुं०) मयूर; 'आसेव्यते भिन्नशिखण्डिबर्हः (वायुः)' कु० १.१५ । मुर्गा । तीर । मयूर-पुच्छ । पीली जुही । घुँघची । विष्णु का नामान्तर । शिव । कृष्ण । द्रुपदराज के एक पुत्र का नाम ।

शिखण्डिनी—(स्त्री०) [शिखण्डिन् + ङीप्] मयूरी। मुर्गी। घुंघची। पीली जूही। राजा द्रुपद की एक कन्या का नाम।

शिखर—(न०, पुं०) [शिखा अस्ति अस्य, शिखा+र] चोटी या सबसे ऊँचा भाग, (पर्वत का) शृङ्ग। वृक्ष की फुनगी। चुटिया। शिखा। तलवार की धार या बाढ़। बगल। रोमाञ्च। कुन्द की कली। चुन्नी की तरह का एक रत्न। सिरा, अग्रभाग।—**वासिनी**–(स्त्री०) दुर्गा देवी का नाम।

शिखरिणी—(स्त्री०) [शिखर + इनि –ङीप्] उत्तम स्त्री। रसाला, सिखरन। रोमावली। सत्रह अक्षरों का एक वर्ण वृत्त जिसके छठे और ग्यारहवें वर्ण पर यति होती है।

शिखरिन्—(वि०) [शिखर + इनि] चोटी-वाला। शिखावाला। नुकीली। शृङ्गवाला। (पुं०) पहाड़, पर्वत। दुर्ग। वृक्ष। शिखरी नामक पक्षी। अपामार्ग, चिचड़ा।

शिखा—(स्त्री०) [√शी + ख, ह्रस्व –टाप्] (सिर पर) चोटी, चुटिया कलँगी। वेणी। केशों या परों का गुच्छा। धार, बाढ़। वस्त्र की किनारी, दामन या गोट या अंचल। अँगारा। शिखर। शृङ्ग। लौ। किरण। मोर की कलँगी। कलियारी मूर्वा, मरोड़फली। जटामासी, बालछड़। बच। शिफा। तुलसी। डाली, टहनी। मुख्य, प्रधान। कामज्वर।—**तरु**–(पुं०) दीपवृक्ष, दीवट, चौमुखा सोत।—**धर**–(पुं०) मयूर।—**मणि**–(पुं०) वह मणि जो सिर पर पहना जाय।—**मूल**–(न०) वह कंद जिसके ऊपर पत्तियों का गुच्छा हो। गाजर। शलजम।—**वृक्ष**–(पुं०) दीवट।— **वृद्धि**–(स्त्री०) सूद-दर-सूद, वह ब्याज जो प्रति दिन बढ़े।

शिखालु—(पुं०) [शिखा + आलुच्] मयूर की कलँगी।

शिखावत्—(त्रि०) [शिखा + मतुप्, मस्य वः] चोटीदार। लौदार। (पुं०) दीपक। अग्नि। चित्रकवृक्ष। केतुग्रह।

शिखावल—(पुं०) [शिखा+वलच्] मयूर। कटहल का पेड़।

शिखिन्—(वि०) [शिखा + इनि] नोक-दार। चोटीदार। शिखावाला। अभिमानी। (पुं०) मयूर, मोर। अग्नि। मुर्गा। तीर। वृक्ष। दीपक। साँड़। घोड़ा। पहाड़। ब्राह्मण। संन्यासी। साधु। केतु उपग्रह। तीन की संख्या। चित्रक वृक्ष।—**कण्ठ**, —**ग्रीव**–(न०) तूतिया।—**ध्वज**–(पुं०) कार्त्तिकेय। धूम, धुआँ।—**पिच्छ**,—**पुच्छ**–(न०) मयूर की पूँछ।—**यूप**–(पुं०) बारहसिंगा।—**वर्धक**–(पुं०) कुम्हड़ा। तरबूज।—**वाहन**– (पुं०) कार्त्तिकेय।—**शिखा** –(स्त्री०) अँगारा, शोला। मयूर की कलँगी या शिखा।

शिग्रु—(पुं०) [√शी + रु, ह्रस्व, गुगागम] सहिजन का पेड़, शोभाञ्जन। शाक, साग।

√**शिङ्ख्**—भ्वा० पर० सक० जाना। शिङ्खति, शिङ्खिष्यति, अशिङ्खीत्।

√**शिङ्घ्**—भ्वा० पर० सक० सूंघना। शिङ्घति, शिङ्घिष्यति, अशिङ्घीत्।

शिङ्घाण—(न०) [√शिङ्घ् + आणक, पृषो० कलोप] नाक से निकलने वाला मैल। (पुं०) फेन। कफ। लोहे का मैल। काँच का बरतन।

शिङ्घाणक—(न०, पुं०) [√शिङ्घ्+आणक] नाक का मैल। (पुं०) कफ, श्लेष्मा।

शिच्—(स्त्री०) बहँगी।

√**शिञ्ज्**—अ० आत्म० अक० बजना, खड़-खड़ाना, झनझुनाना (विशेषतः आभूषणों का)। शिङ्क्ते, शिञ्जिष्यते, अशिञ्जिष्ट।

शिञ्ज—(पुं०) [√शिञ्ज् + घञ्] गुंजन का शब्द।

शिञ्जञ्जिका—(स्त्री०) कमर में बाँधने की जंजीर ।

शिञ्जा—(स्त्री०) [√शिञ्ज् + अ—टाप्] झनझुन । धनुष की डोरी, चिल्ला, प्रत्यंचा ।

शिञ्जित—(वि०) [√शिञ्ज् + क्त] झनझुन का शब्द करते हुए, खनखनाते हुए । (न०) आभूषण, विशेष कर पायजेब या बिछियों का शब्द ।

शिञ्जिनी—(स्त्री०) [√शिञ्ज् + णिनि —ङीप्] धनुष का रोदा, डोरी या चिल्ला । नूपुर, पायजेब, पैर का आभूषण विशेष ।

√शिट्—भ्वा० पर० सक० तुच्छ समझना, तिरस्कार करना । शेटति, शेटिष्यति, अशेटीत् ।

शित—(वि०) [√शो+क्त] पैनाया हुआ, सान रखा हुआ । पतला, लटा हुआ । जीर्ण । निर्बल, कमजोर ।—**अग्र** (शिताग्र)—(पु०) काँटा ।—**धार**—(वि०) पैनी धार वाला ।—**शूक**—(पु०) जौ । गेहूँ ।

शितद्रु—(स्त्री०) सतलज नदी ।

शिति—(वि०) [√ शत् (सौत्र)+इन्, इत्व वा √शि+क्तिन्] नीला । काला । (पु०) भोजपत्र का वृक्ष ।—**कण्ठ**—(पु०) शिव जी का नामान्तर; 'तस्यात्मा शितिकण्ठस्य सैनापत्यमुपेत्य वः' २·६१ । मयूर । बटेर जाति का एक पक्षी ।—**च्छद**, —**पक्ष**—(पु०) हंस । —**रत्न**—(न०) नीलमणि, नीलम ।—**वासस्**— (पु०) बलराम ।—**सार**,—**सारक**—(पु०) तेंदू का पेड़ ।

शिथिल—(वि०) [√ श्लथ् + किलच्, पृषो० साधुः] ढीला । जो बँधा न हो । (वृक्ष से) गिरा हुआ, वृक्ष के तने से पृथक् हुआ । निर्बल, कमजोर । नरम, कोमल । घुला हुआ । सड़ा हुआ । व्यर्थ, विफल । असावधान । भली-भाँति न किया हुआ । त्यक्त, त्यागा हुआ । (न०) ढीलापन । सुस्ती ।

शिथिलित—(वि०) [शिथिल+णिच्+क्त] ढीला । ढीला किया हुआ । घुला हुआ ।

शिनि—(पु०) [√शि+निक्] यादवों के पक्ष का एक योधा । सात्यकि का नाम ।

शिपि—(पु०) [√शी + क्विप्, शी√पा+क, पृषो० ह्रस्व, इत्व] किरण । (स्त्री०) चर्म, चमड़ा । (न०) जल ।—**विष्ट** (वि०) किरण से व्याप्त । गंजा । कोढ़ी । (पु०) विष्णु । शिव । साहसी आदमी । वह मनुष्य जिसका लिङ्गाग्रभाग आवरक चर्म से विहीन हो । कोढ़ी ।

शिप्र—(पु०) [√शि+रक्, पुक्] हिमालय पर्वत की एक झील का नाम ।

शिप्रा—(स्त्री०) [शिप्र+टाप्] शिप्र झील से निकलने वाली एक नदी जिसके तट पर उज्जयिनी नगरी है; 'शिप्रावातः प्रियतम इव प्रार्थनाचाटुकारः' मे० ३१ ।

शिफा—(स्त्री०) मसीँड़, पद्मकंद । जड़ । एक वृक्ष की रेशेदार जड़ जिससे प्राचीन काल में कोड़े बनाये जाते थे । कशाघात, कोड़े की मार । माता । नदी ।—**धर**—(पु०) डाली, शाखा ।—**रुह्**— (पु०) वट वृक्ष, बरगद का पेड़ ।

शिफाक—(पु०) [शिफा+कन्] मसीँड़ ।

शिबि, शिवि—(पु०) [√शि+वि] शिकारी जानवर । भोजपत्र का पेड़ । एक देश का नाम । राजा उशीनर के पुत्र तथा ययाति के दौहित्र एक प्रसिद्ध धर्मात्मा राजा का नाम ।

शिबिका, शिविका—(स्त्री०) [शिवं करोति, शिव+णिच्+ण्वुल्] पालकी, डोली । खाद्य पदार्थ विशेष ।

शिबिर, शिविर—[शेरते राजबलानि अत्र, √शी+किरच्, बुक् आगम, ह्रस्व] डेरा, खेमा, निवेश । शाही खेमा, राजकीय

निवेश। पड़ाव, छावनी। किला। धान्य विशेष।

शिविरथ, शिबिरथ—(स्त्री०) [शिवेः भूर्ज-वृक्षस्य ईः शोभा यत्र तादृशो रथः] पालकी, पीनस, म्याना।

शिम्बा—(स्त्री०) [√शम् + डम्बच्, पृषो० साधुः] छीमी। सेम।

शिम्बिका—(स्त्री०) [शिम्बा + कन्—टाप्, ह्रस्व, इत्व] छीमी। सेम। पौधा विशेष।

शिर—(न०) [√शृ+क] सीस। पिपरा-मूल। (पुं०) शय्या। अजगर।—**ज**-(न०) केश, बाल।

शिरस्—(न०) [√श्रि+असुन्, स च कित्, धातोः शिरादेशः] सिर, सीस। खोपड़ी। चोटी; 'हिमगौरैरचलाधिपः शिरोभिः' कि० ५.१७। वृक्ष की फुनगी। किसी भी वस्तु का अग्रभाग। सर्वोच्च-स्थान। मुख्य, प्रधान।—**अर्ति** (**शिरोऽर्ति**) -(स्त्री०) सिर का दर्द।—**अस्थि** (**शिरोऽस्थि**)-(न०) खोपड़ी।—**कपालिन्** (**शिरःकपालिन्**) -(पुं०) कापालिक संन्यासी, अघोरपंथी। —**ग्रह** (**शिरोग्रह**)-(पुं०) सिर का दर्द। —**ताविन्**- (पुं०) हाथी। —**त्र**, —**त्राण**- (न०) युद्ध के समय सिर के बचाव के लिए पहनी जाने वाली लोहे की टोपी, कूंड़, खोद। पगड़ी, साफा। टोपी।—**धरा** (**शिरोधरा**)-(स्त्री०), —**धि** (**शिरोधि**) -(पुं०) गरदन।—**पीड़ा** (**शिरःपीड़ा**)-(स्त्री०) सिर का दर्द।—**फल** (**शिरःफल**) -(पुं०) नारियल का वृक्ष।—**भूषण** (**शिरोभूषण**)- (न०) गहना जो सिर पर पहना जाय।—**मणि** (**शिरोमणि**)-(पुं०) रत्न जो सीस पर धारण किया जाय। प्रतिष्ठा-सूचक उपाधि जो श्रेष्ठ व्यक्ति को दी जाती है।—**मर्मन्** (**शिरोमर्मन्**)-(पुं०) शूकर, सूअर।—**मालिन्** (**शिरोमालिन्**)- (पुं०) शिव जी का नाम।—**रत्न** (**शिरोरत्न**)-(न०) शिरोमणि। —**रुजा** (**शिरोरुजा**)-(स्त्री०) सिर की पीड़ा।—**रुह्** (**शिरोरुह्**),—**रुह** (**शिरोरुह**)- (पुं०) सिर के केश।—**वर्तिन्** (**शिरोवर्तिन्**)-(पुं०) प्रधान। अध्यक्ष।—**वृत्त** (**शिरोवृत्त**)- (न०) काली मिर्च।—**वेष्ट** (**शिरोवेष्ट**)-(पुं०), —**वेष्टन** (**शिरोवेष्टन**)-(न०) पगड़ी, साफा।—**हारिन्** (**शिरोहारिन्**) (पुं०) शिव जी।

शिरसिज, शिरसिरुह—(पुं०) [शिरसि √जन्+ड, सप्तम्या अलुक्] [शिरसि √रुह् + क, सप्तम्या अलुक्] सिर के बाल।

शिरस्क—(न०) [शिरस् + कन्] दे० 'शिरस्त्राण'।

शिरस्का—(स्त्री [शिरस्क + टाप्] पालकी।

शिरस्तस्—(अव्य०) [शिरस् + तस्] सिर से।

शिरस्य—(वि०) [शिरस् + यत्] सिर सम्बन्धी। (पुं०) सुलझे हुए साफ केश।

शिरा—(स्त्री०) [√शृ + क—टाप्] रक्त की छोटी नाड़ी, खून की छोटी नली, नस, रग।—**पत्र**-(पुं०) कैथ। हिंताल वृक्ष।—**वृत्त**-(न०) सीसा।

शिराल—(वि०) [शिरा+लच्] नसों या नाड़ियों वाला।

शिरि—(पुं०) [√शृ+इ, स च कित्] तलवार। हत्यारा। तीर। टिड्डी।

शिरीष—(पुं०) [शृणाति झटिति म्लायति, √शृ+ईषन्, स च कित्] अति कोमल फूलों वाला एक वृक्ष, सिरिस; 'शिरीष-पुष्पाधिकसौकुमार्यौ बाहू तदीयाविति मे वितर्कः' कु० १.४१।

√शिल्—तु० पर० सक० लुनने के पीछे जो दाने खेत में पड़े रहते हैं, उन्हें बीनना। शिलति, शेलिष्यति, अशेलीत्।

शिल—(पुं०, न०) [√शिल् + क] खेत कट जाने के पश्चात् उसमें बिखरे हुए शेष दाने या अनाज की बालें ऐसे अनाज को बीनने की क्रिया।—**उञ्छ** (**शिलोञ्छ**)–(पुं०) फसल कट जाने पर खेत में गिरे दाने चुनने की क्रिया। अनियमित वृत्ति, आकाश-वृत्ति।

शिला—(स्त्री०) [शिल+टाप्] पत्थर। चट्टान। चक्की। चौखट की नीचे की लकड़ी। खंभे का अग्रभाग। शिरा, नाड़ी। मैनसिल। कपूर।—**आटक** (**शिलाटक**)–(पुं०) सूराख, रन्ध्र। अहाता, घेरा। अटारी।—**आत्मज** (**शिलात्मज**)–(न०) लोहा। —**आत्मिका** (**शिलात्मिका**)–(स्त्री०) सोना या चांदी गलाने की घरिया।—**आसन** (**शिलासन**)–(न०) बैठने के लिये पत्थर की सिल्ली। शैलेय नामक गन्धद्रव्य। शिलाजीत।—**आह्व** (**शिलाह्व**)–(न०) शिलाजीत। —**उच्चय** (**शिलोच्चय**)–(पुं०) पहाड़; 'न पादपोन्मूलनशक्तिरंहः शिलोच्चये मूर्च्छति मारुतस्य' र० २.३४। बड़ी चट्टान।—**उत्थ** (**शिलोत्थ**)–(न०) छरीला या शैलेय नामक गन्ध द्रव्य। शिलाजीत।—**उद्भव** (**शिलोद्भव**)–(न०) शैलेय, छरीला। पीला चन्दन।—**ओकस्** (**शिलौकस्**)–(पुं०) गरुड़ जी।—**कुट्टक**–(पुं०) संगतराश की छेनी।—**कुसुम**,—**पुष्प**–(न०) शिलाजीत।—**ज**–(वि०) खनिज। (न०) शैलेय, छरीला। लोहा। शिलाजीत।—**जतु**–(न०) शिलाजीत। गेरू।—**जित्**, —**दद्रु**–(पुं०) शिलाजीत। —**धातु**–(पुं०) खरिया मिट्टी। गेरू। खनिज पदार्थ।—**पट्ट**–(पुं०) पत्थर की शिला की बैठकी।—**पुत्र**, —**पुत्रक**–(पुं०) मसाले पीसने की सिल।—**प्रतिकृति**–(स्त्री०) पत्थर की मूर्ति।—**फलक**–(न०) पत्थर की पटिया। पत्थर का चौड़ा टुकड़ा।—**भव**–(न०) शिलाजीत। छरीला।—**रम्भा**–(स्त्री०) कठकेला, काष्ठकदली।—**वल्कल**–(न०),—**वल्का**–(स्त्री०) एक प्रकार की ओषधि जिसे शिलजा और श्वेता भी कहते हैं।—**वृष्टि**–(स्त्री०) ओलों की वर्षा, पत्थरों की वर्षा।—**वेश्मन्**–(न०) कंदरा, गुफा।—**व्याधि**–(पुं०) शिलाजीत।—**सार**–(न०) लोहा।—**स्वेद**–(पुं०) शिलाजीत।

शिलि—(पुं०) [√शिल् + कि] भोजपत्र का पेड़। (स्त्री०) चौखट के नीचे की लकड़ी।

शिलिन्द—(पुं०) [शिलि√दा + क, पृषो० मुम्] मछली विशेष।

शिली—(स्त्री०) [शिलि + ङीप्] दरवाजे के नीचे की लकड़ी। केंचुआ। भाला। बाण। मेढ़की।—**मुख**–(पुं०) भ्रमर; 'कटेषु करिणां पेतुः पुंनागेभ्यः शिलीमुखाः' र० ४.५७। तीर। मूर्ख। युद्ध।

शिलीन्ध्र—(न०) [शिली√धृ + क, पृषो० मुम्] कुकुरमुत्ता। केले का फूल। ओला। (पुं०) शिलिंद नामक मछली। कठकेला।

शिलीन्ध्रक—(न०) [शिलीन्ध्र + कन्] कुकुरमुत्ता।

शिलीन्ध्री—(स्त्री०) [शिलीन्ध्र + ङीप्] मिट्टी। केंचुआ। एक मादा पक्षी।

शिल्प—(न०) [√शील् + प, ह्रस्व] मूर्ति-कला आदि कर्म (वात्स्यायन के मत से नृत्य, गीत आदि ६४ बाह्य क्रियाएँ और आलिंगन, चुंबन आदि ६४ आभ्यंतर क्रियाएँ शिल्प कहलाती हैं), कारीगरी, हुनर। स्रुवा।—**कर्मन्**–(न०),—**क्रिया**–(स्त्री०) कारीगरी।—**कार**, —**कारक**, —**कारिन्**–(पुं०) शिल्पी, कारीगर।—**शाल**–

(न०), शाला– (स्त्री०) शिल्प संबंधी काम करने का स्थान या घर, कारखाना। —शास्त्र– (न०) वह शास्त्र जिसमें शिल्प संबंधी निर्माण का ज्ञान, विवेचन हो, शिल्प-विद्या।

शिल्पिन्—(पुं०) [शिल्प + इनि] शिल्पकार, कारीगर। राज, थवई। चित्रकार, चितेरा। कलाकार। नखी नामक गंधद्रव्य।

शिव—(वि०) [√ शी + वन्, पृषो० ह्रस्व] शुभ, कल्याणकारी; 'शिवानि वस्तीर्थजलानि कच्चित्' र० ५.८। अच्छे स्वास्थ्य वाला। (न०) समृद्धि। कुशल। कल्याण। आनन्द। मोक्ष। जल। समुद्री नमक। सेंधा नमक। शुद्ध सोहागा। (पुं०) महादेव। लिङ्ग, जननेन्द्रिय। शुभ योग विशेष। वेद। मोक्ष। खूंटा। देवता। पारा। शिलाजीत। काला धतूरा। —आत्मक (शिवात्मक)–(न०) सेंधा नमक। —आदेशक (शिवादेशक)– (पुं०) शुभ संवाद देने वाला व्यक्ति। ज्योतिषी। —आलय (शिवालय)–(पुं०) शिव जी का मन्दिर। लाल तुलसी। (न०) श्मशान। —इतर (शिवेतर)–(वि०) अशुभ, अमङ्गलकारी। —कर (शिवङ्कर)–(वि०) शुभकारी। आनन्ददायी। —कीर्तन–(पुं०) विष्णु। भृङ्गी का नाम। —गति–(वि०) समृद्ध। हर्षित। —घर्मज–(पुं) मङ्गलग्रह। —चक्र (न०) विष्णु भगवान् का चक्र। —दारु–(न०) देवदारु का पेड़। —द्रुम–(पुं०) बिल्व वृक्ष। —द्विष्टा–(स्त्री०) केतकी वृक्ष। —धातु–(पुं०) पारा। —पुर– (न०)— पुरी– (स्त्री०) काशी, वाराणसी। —पुराण– (न०) अष्टादश पुराणों में से एक। —प्रिय–(पुं०) स्फटिक। बक-वृक्ष। धतूरा। रुद्राक्ष। — मल्लक–(पुं०) अर्जुन वृक्ष। —रस– (पुं०) उबले चावल का पानी। —राजधानी– (स्त्री०) काशी। —रात्रि–(स्त्री०) फाल्गुन-कृष्णा १४शी। —लिङ्ग– (न०) महादेव की पिंडी। —लोक– (पुं०) शिव का लोक, कैलास। —वल्लभ– (पुं०) आम का पेड़। —वल्लभा– (स्त्री०) पार्वती। शतपत्री, सेवती। सफेद गुलाब। —वाहन– (पुं०) बैल। —वीर्य– (न०) पारा। —शेखर–(पुं०) चन्द्रमा। धतूरा। —सुन्दरी–(स्त्री०) दुर्गा।

शिवक—(पुं०) [शिव + कन्] गौ आदि बाँधने का खूँटा। पशुओं के खुजलाने के लिये बनाया हुआ खंभा।

शिवताति—(वि०) [शिव + तातिल्] कल्याण करने वाला। (स्त्री०) शिवत्व, मंगल।

शिवा—(स्त्री०) [शिव+टाप्] पार्वती। गीदड़ी, शृगाली, सियारिन; 'जहासि निद्रामशिवैः शिवारुतैः' कि० १.३८। मोक्ष। शमी वृक्ष। हल्दी। दूर्वा। गोरोचन। —अराति (शिवाराति)–(पुं०) कुत्ता। —प्रिय– (पुं०) बकरा। —फला–(स्त्री०) शमी वृक्ष। — रुत–(न०) गीदड़ का हुहा शब्द।

शिवानी—(स्त्री०) [शिवम् आनयति, शिव –आ √नी+ड–ङीष्] पार्वती। जयन्ती वृक्ष।

शिवालु—(पुं०) [शिव √ अल्+उन्] गीदड़, सियार।

शिशयिषा—(स्त्री०) [√शी + सन्, द्वित्वादि, +अ–टाप्] सोने की इच्छा।

शिशिर—(वि०) [√शिश् + किरच्] ठंडा, शीतल। (पुं०, न०) छः ऋतुओं में से एक जो माघ और फागुन में पड़ती है। ओस। (पुं०) विष्णु। सूर्य। लाल चंदन। एक अस्त्र। —अंशु (शिशिरांशु)— किरण, —दीधिति, —रश्मि– (पुं०)

चन्द्रमा ।—अत्यय (शिशिरात्यय),—अपगम (शिशिरापगम)–(पुं०) जाड़े का अन्त ।—काल, —समय–(पुं०) जाड़े का मौसम ।—घ्न–(पुं०) अग्नि ।

शिशु—(पुं०) [√शो + कु, सन्वद्भाव, द्वित्वादि] बच्चा, बालक । किसी जानवर का बच्चा । बालक जो ८ वर्ष की अवस्था के बीच हो ।—क्रन्द–(पुं०), —क्रन्दन–(न०) बच्चे का रोना ।—गन्धा–(स्त्री०) मल्लिका का भेद ।—पाल–(पुं०) चेदि देश का एक राजा, जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था ।–०वध(न०, पुं०)महाकवि माघ कृत एक प्राचीन काव्य जिसमें श्रीकृष्ण द्वारा शिशुपाल के मारे जाने की कथा वर्णित है ।—मार– (पुं०) सूँस नामक जलजन्तु ।—०चक्र– (पुं०) सौर मंडल ।—वाहक, —वाह्यक– (पुं०) जंगली बकरा ।

शिशुक—(पुं०) [शिशु+कन्] बच्चा । किसी जानवर का बच्चा । सूँस । एक वृक्ष । जलसर्प जो विषहीन होता है ।

शिश्न—(न०) [√शश्+नक्, इत्व] लिङ्ग, जननेन्द्रिय ।

शिश्विदान—(वि०) [√श्विद् + सन् +शानच्, सनो लुक्, तकारस्य दकारः] सदाचारी, पुण्यात्मा । दुष्टात्मा, पापी ।

√**शिष्**—भ्वा० पर० सक० घायल करना । मार डालना । शेषति, शेक्ष्यति, अशिक्षत् । रु० पर० सक० विशेष करना । शिनष्टि, शेक्ष्यति, अशिषत् । चु० पर० सक० अवशेष करना । शेषयति—शेषति ।

शिष्ट—(त्रि०) [√शिष् वा √शास्+क्त] बचा हुआ, बचा-खुचा । आदेश किया हुआ । सिखाया हुआ । नियमाधीन किया हुआ । शालीन । आज्ञाकारी । बुद्धिमान् । पुण्यात्मा । प्रतिष्ठित । शान्त । धीर । मुख्य, प्रधान । उत्तम । प्रसिद्ध, प्रख्यात । वेद के वचनों पर विश्वास रखने वाला । अच्छी समझ वाला । अच्छे स्वभाव और आचरण वाला । आचार-व्यवहार में निपुण । सुशील । सभ्य । सज्जन । (पुं०) प्रसिद्ध या प्रख्यात पुरुष । बुद्धिमान् जन; 'सभी हि शिष्टैराम्नातौ वर्त्स्यन्तावामयः स च' शि० २.१० । मंत्री । सलाहकार ।—आचार (शिष्टाचार)– (पुं०) बुद्धिमानों का आचरण । अच्छा आचरण ।—सभा–(स्त्री०) शिष्टों की सभा, राज्य-परिषद् ।

शिष्टता—(स्त्री०) [शिष्ट + तल्–टाप्] विनय । नम्रता । अधीनता ।

शिष्टि—(स्त्री०) [√शास् + क्तिन्] अनुशासन, शासन । आदेश, आज्ञा । दण्ड, सजा ।

शिष्य—(पुं०) [शिष्यतेऽसौ, √ शास् +क्यप्] अन्तेवासी, विद्यार्थी । शागिर्द, चेला । —परम्परा–(स्त्री०) किसी गुरु-संप्रदाय की शिष्य-परंपरा, शिष्यानुक्रम । —शिष्टि– (स्त्री०) शिष्य का सुधार ।

शिह्ल, शिह्लक—(पुं०)[√सिह् +लक्, नि० सस्य शः] [सिह्ल+कन्] शिलारस नामक गन्ध द्रव्य ।

√**शी**—अ० आत्म० अक० लेटना, पड़ना । सोना । शेते, शयिष्यते, अशयिष्ट ।

शी—(स्त्री०) [√शी + क्विप्] निद्रा । आराम । शान्ति ।

√**शीक्**—भ्वा० आत्म० सक० जल से तर करना, (पानी) छिड़कना । धीरे-धीरे गमन करना । शीकते, शीकिष्यते, अशीकिष्ट ।

शीकर—(पुं०) [√शीक् + अर (बा०)] जलकण, पानी की बूँद; 'भागीरथी निर्झरशीकराणां वोढा मुहुः कम्पितदेवदारुः' कु० १.१५ । वायु द्वारा उत्क्षिप्त जल-बिन्दु, वर्षा की फुहार । तुषार, ओस, शबनम । (न०) सरल वृक्ष । गंधाबिरोजा ।

शीघ्र—(न०) [√शिङ्घ् + रक्, नि० साधुः] अविलम्ब, चटपट, तुरन्त । (पुं०) वह अन्तर जो पृथिवी के दो भिन्न-भिन्न

स्थानों से ग्रहों के देखने में होता है। वायु। (वि०) शीघ्रता वाला, त्वरान्वित, जल्द। —कारिन्– (वि०) शीघ्र काम करने वाला। शीघ्र प्रभाव उत्पन्न करने वाला। तीव्र। (पुं०) सन्निपात ज्वर का भेद। —कोपिन्– (वि०) जल्दी क्रुद्ध होने वाला, चिड़चिड़ा। —चेतन– (पुं०) कुत्ता। —बुद्धि– (वि०) तीक्ष्णबुद्धि वाला। —लङ्घन– (वि०) तेज जाने वाला, तेज चलने वाला। —वेधिन्– (पुं०) निशाने पर तुरन्त तीर चलाने वाला, कुशल बाणवेधी।

शीघ्रिन्—(वि०) [शीघ्र+ इनि] शीघ्रकारी। फुर्तीला, तेज।

शीघ्रिय—(वि०) [शीघ्र + घ] शीघ्रता संबन्धी। तेज। (पुं०) विष्णु। शिव। बिल्लियों की लड़ाई।

शीघ्र्य—(न०) [शीघ्र+यत्] जल्दी, तेजी। (वि०) शीघ्र उत्पन्न होने वाला।

शीत्—(अव्य०) सहसा आनन्दोद्रेक या मनोद्रेकव्यञ्जक अव्यय विशेष। मैथुन के समय की सिसकारी। —कार–(पुं०) सिसकारी।

शीत—(वि०) [√श्यै + क्त] ठंडा, सर्द, शीतल, सुस्त, काहिल। मन्दबुद्धि। (न०) सर्दी, जाड़ा। जल। त्वचा। ओस। दालचीनी। (पुं०) शीतकाल, सर्दी का मौसम। नीम का पेड़। कपूर। बेंत। अशनपर्णी। बहुवारक वृक्ष। पित्तपापड़ा। —अंशु (शीतांशु)–(पुं०) चन्द्रमा; 'उदयमहिमरश्मिर्याति शीतांशुरस्तं' शि० ११.६४। कपूर। —अद्रि (शीताद्रि)– (पुं०) हिमालय पहाड़। —अश्मन् (शीताश्मन्) –(पुं०) चन्द्रकान्त मणि। —आद (शीताद)–(पुं०) दांतों के मसूड़ों का एक रोग। —आर्त (शीतार्त) –(वि०) शीत से पीड़ित। जाड़े से थरथराता हुआ। —उत्तम (शीतोत्तम)–(न०) जल। —कटिबन्ध–(पुं०) भूमंडल के उत्तरी तथा दक्षिणी अंशों के दो कल्पित विभाग जो भूमध्य रेखा के ६६½ अंश उत्तर तथा इतने ही अंश दक्षिण से शुरू होकर ध्रुव प्रदेशों तक फैले हैं। —काल–(पुं०) शीत ऋतु, जाड़े का मौसम। —कृच्छ्र–(पुं०, न०) मिताक्षरा के अनुसार एक प्रकार का व्रत जिसमें तीन दिन ठंडा जल, तीन दिन ठंडा दूध, और ३ दिन ठंडा घी पीकर तथा ३ दिन बिना कुछ खाये रहना पड़ता है। —गन्ध– (न०) सफेद चन्दन। —गु–(पुं०) चन्द्रमा। कपूर। —चम्पक–(पुं०) दीपक। आईना, दर्पण। —दीधिति–(पुं०) चन्द्रमा। —पुष्प–(पुं०) सिरिस वृक्ष। —पुष्पक–(न०) शैलेय, छरीला। —प्रभ– (पुं०) कपूर। —भानु– (पुं०) चन्द्रमा। —भीरु– (स्त्री०) मल्लिका, मोतिया। —मयूख, —मरीचि, —रश्मि– (पुं०) चन्द्रमा। कपूर। —रम्य –(पुं०) दीपक। —रुच्– (पुं०) चन्द्रमा। —वल्क–(पुं०) उदुम्बर या गूलर का पेड़। —वीर्यक– (पुं०) पाकर का पेड़। —शिव–(पुं०) शमी वृक्ष। (न०) सेंधा नमक। सोहागा। —शूक– (पुं०) जौ, यव। —स्पर्श– (वि०) ठंडा, शीतल।

शीतक—(वि०) [शीत + कन्] शीतल, ठंडा। (पुं०) कोई भी शीतल वस्तु। जाड़ा, जाड़े का मौसम। सुस्त या आलसी जन। प्रसन्न, वह मनुष्य जिसे किसी प्रकार की चिन्ता न हो। बिच्छू, बीछी।

शीतल—(वि०) [शीत+लच्] ठंडा, सर्द। (न०) ठंडक, शीतलता। जाड़े का मौसम। शैलेय, शिलारस। सफेद चन्दन। मोती। तूतिया। कमल। वीरण। (पुं०) चन्द्रमा। कपूर। तारपीन। चम्पा का पेड़। जैनियों का व्रत विशेष। —च्छद (पुं०) चम्पा का पेड़। —जल–(न०) ठंडा पानी। कमल। —प्रद–(पुं०, न०)

चन्दन ।—**षष्ठी**– (स्त्री०) माघ-शुक्ला छठ ।

शीतलक—(न०) [शीतल + कन्] सफेद कमल । (पु०) मरुवक, मरुवा ।

शीतला—(स्त्री०) [शीतल+टाप्] विस्फोटक रोग, चेचक । इस नाम की देवी जिनका वाहन खर है । कुट्टम्बिनी वृक्ष । आराम-शीतला । नीली दूब। शीतली वृक्ष।

शीतली—(स्त्री०) [शीतल + ङीष्] चेचक, माता, वसन्त रोग । जल में होने वाला एक पौधा, शीतली जटा ।

शीता—दे०, 'सीता' ।

शीतालु—(वि०) [शीतं न सहते, शीत +आलुच्] शीतार्त, जाड़े का मारा हुआ । जाड़े से काँपता हुआ ।

शीधु—(पु०, न०)[√ शी+धुक्] ईख के पके रस से बनी हुई मदिरा, शराब । अंगूरी शराब, द्राक्षासव ।—**गन्ध**– (पु०) बकुल वृक्ष।—**प**– (पु०) शराबी, मदिरा-पान करने वाला ।

शीन—(वि०) [√श्यै+क्त, सम्प्रसारण, न आदेश] गाढ़ा, जमा हुआ । (पु०) मूर्ख, जड़बुद्धि वाला । अजगर सर्प ।

√शीभ्—भ्वा० आत्म० सक० डींग मारना । कहना । शीभते, शीभिष्यते, अशीभिष्ट ।

शीभ्य—(पु०) [√शीभ्+ण्यत्]बैल। शिव।

शीर—(पु०) [√शी+रक्] बड़ा सर्प ।

शीर्ण—(वि०) [√शॄ + क्त] कुम्हलाया हुआ, मुर्झाया हुआ । सड़ा हुआ, गला हुआ । शुष्क, सूखा । टूटा-फूटा । लटा, दुबला । (न०) एक गन्ध द्रव्य ।—**अङ्घ्रि** (शीर्णाङ्घ्रि),—**पाद**–(पु०) यमराज । शनिग्रह ।—**पर्ण**– (न०) कुम्हलाया हुआ पत्ता । (पु०) नीम का पेड़ ।—**वृन्त**– (न०) तरबूज, कलींदा ।

शीर्वि—(वि०) [√शॄ + क्विन्] नाशक । अनिष्टकारी, हानिकारी । जंगली ।

शीर्ष—(न०) [शिरस् शब्दस्य पृषो० शीर्षादेशः]सिर, ललाट । सिर, चोटी । एक पर्वत । काला अगर ।—**आमय** (शीर्षामय) –(पु०)सिर का भी कोई रोग ।—(च्छेद) (पु०) सिर काट डालना ।—(च्छेद्य)- (वि०) सिर काट डालने योग्य; 'शीर्षच्छेद्यः सतं राम तं हत्वा जीवय द्विजम्' उत्त० २.८ ।—**रक्षक**–(न०) शिरस्त्राण ।

शीर्षक—(न०) [शीर्ष+कन् वा शीर्ष √कै +क] सिर । खोपड़ी । शिरस्त्राण । टोपी । साफा, पगड़ी । सिरा । व्यवहार या अभियोग का निर्णय, फैसला । वह शब्द या वाक्य जो विषय का परिचय कराने के लिये किसी लेख या प्रबन्ध के ऊपर लिखा जाय । (पु०) राहु ।

शीर्षण्य—(पु०) [शिरस् + यत्, शीर्षन् आदेश] साफ और सुलझे केश ।(न०)शिरस्त्राण । टोपी । टोप । पगड़ी ।(वि०)श्रेष्ठ।

शीर्षन्—(न०) [शिरस् शब्दस्य पृषो० शीर्षन् आदेशः] सिर ।

√शील्—भ्वा० पर० सक० ध्यान करना । पूजन करना, अर्चन करना । शीलति, शीलिष्यति, अशीलीत् । चु० पर० सक० अभ्यास करना । धर्चन करना । शीलयति, शीलयिष्यति, अशीशिलत् ।

शील—(न०) [√शील् + अच् वा√शी +लक्] स्वभाव । आचरण, चाल-चलन । अच्छा स्वभाव । सदाचरण, सदाचार; 'तथा हि ते शीलमुदारदर्शने, तपस्विनामप्युपदेशतां गतम्' कु० ५.३६ । सौन्दर्य । (पु०) अजगर ।—**खण्डन**– (न०) सदाचार का नाश करना ।—**धारिन्**– (पु०) शिव जी ।—**वञ्चना** –(स्त्री०) सदाचार का नाश करना।—**वृत्त**—(वि०) धार्मिक नीति का मानने वाला ।

शीलन—(न०) [√शील् + ल्युट्] अभ्यास धारण करना । विवेचना ।

शीलित—(वि०) [√शील्+क्त] अभ्यास किया हुआ। धारण किया हुआ। निपुण। पटु। सम्पन्न, युक्त।

शीवन्—(पुं०) [√शी+क्वनिप्] अजगर सर्प।

√शुक्—भ्वा० पर० सक० जाना। शोकति, शोकिष्यति, अशोकीत्।

शुक—(न०) [शुक्+क] वस्त्र। शिरस्त्राण। पगड़ी, साफा। कपड़े का दामन, अंचल। (पुं०) तोता। सिरिस का पेड़। गठिवन, ग्रंथिपर्ण। सोनापाठा। व्यासपुत्र शुकदेव का नाम। **—अदन** (**शुकादन**)—(पुं०) अनार। **—तरु, —द्रुम**—(पुं०) सिरिस का पेड़। **—नासिका**—(वि०) तोते की चोंच जैसी नाक। **—पुच्छ**—(पुं०) गन्धक। **—पुष्प, —प्रिय**—(पुं०) सिरिस का पेड़। **—पुष्पा**—(स्त्री०) बुलेर। अगस्त का पेड़। **—वल्लभ**—(पुं०) अनार। **—वाह**—(पुं०) कामदेव।

शुक्त—(वि०) [√शुच्+क्त] चमकीला। पवित्र, स्वच्छ। खट्टा, अम्ल। कड़ा, कठोर। संयुक्त, मिला हुआ। निर्जन, सुनसान। (न०) मांस। काँजी। वह (मधुर) वस्तु जो कुछ दिन रखी रहने के कारण खट्टी हो गई हो। सिरका। खटाई।

शुक्ति—(स्त्री०) [√शुच्+क्तिन्] सीप। शंख। घोंघा। खोपड़ी का भाग विशेष। घोड़े की गरदन या छाती की भौंरी। गन्ध द्रव्य विशेष। दो कर्ष या चार तोले की एक तौल। **—उद्भव** (**शुक्त्युद्भव**), **—ज**—(न०) मोती, मुक्ता। **—पुट**—(न०), **—पेशी**—(स्त्री०) सीप का खोल, सुतुही। **—वधू**—(स्त्री०) सीपी। **—बीज**—(न०) मोती।

शुक्तिका—(स्त्री०) [शुक्ति+कन्—टाप्] सीप। चूक का साग।

शुक्र—(पुं०) [√शुच्+रन्] शुक्र ग्रह। दैत्यों के गुरु शुक्राचार्य। ज्येष्ठ मास का नाम। अग्नि देव का नाम। (न०) पुरुष का वीर्य या धातु। किसी भी वस्तु का सार या निष्कर्ष। **—अङ्ग** (**शुक्राङ्ग**)—(पुं०) मोर। **—कर**—(वि०) वीर्य-कारक। (पुं०) मज्जा। **—वार, —वासर**—(पुं०) भृगुवार, शुक्रवार। **—शिष्य**—(पुं०) दैत्य, दानव।

शुक्रल, शुक्रिय—(वि०) [शुक्र√ला+क] [शुक्र+घ] वीर्य सम्बन्धी। शुक्र या वीर्य को बढ़ाने वाला।

शुक्ल—(वि०) [√शुच्+रन्, रस्य लः] सफेद, स्वच्छ, चमकीला। (पुं०) सफेद रंग। शुक्ल पक्ष। शिव का नाम। (न०) चाँदी। एक नेत्र रोग जो आँखों के सफेद तल या ढेले पर होता है। ताजा मक्खन। खट्टी काँजी या माँड़ी। **—अङ्ग** (**शुक्लाङ्ग**), **—अपाङ्ग** (**शुक्लापाङ्ग**)—(पुं०) मोर; 'शुक्लापाङ्गैः सजलनयनैः स्वागतीकृत्य केकाः' मे० ३२। **—उपला**, (**शुक्लोपला**)—(स्त्री०) रवादार चीनी। **—कण्टक**—(पुं०) दात्यूह पक्षी। पनडुब्बी, जलकाक। **—कर्मन्**—(वि०) पुण्यात्मा, धर्मात्मा। **—कुष्ठ**—(न०) सफेद कोढ़। **—धातु**—(पुं०) चाक, खड़िया मिट्टी। **—पक्ष**—(पुं०) उजियाला पाख। **—वायस**—(पुं०) सारस।

शुक्लक—(वि०) [शुक्ल+कन्] सफेद। (पुं०) सफेद रङ्ग। शुक्लपक्ष, उजियाला पाख।

शुक्लल—(वि०) [शुक्ल√ला+क] सफेदी लाने वाला।

शुक्ला—(स्त्री०) [शुक्ल+अच्—टाप्] सरस्वती। शर्करा। गोरे वर्ण की स्त्री। काकोली पौधा।

शुक्लिमन्—(पुं०) [शुक्ल+इमनिच्] सफेदी।

शुक्ष—(पुं०) [√शुच्+क्स] पवन। चमक, दीप्ति। आग।

शुङ्ग—(पुं०) [√शुन्+ग नि० साधुः] वटवृक्ष, बरगद का पेड़ । आँवला । अनाज की बाल, भुट्टा, पाकड़ का पेड़ । एक ऐतिहासिक राजवंश ।

शुङ्गा—(स्त्री०) [शुङ्ग + टाप्] कली का कोष । अनाज की बाल ।

शुङ्गिन्—(पुं०) [शुङ्गा+इनि] वटवृक्ष ।

√शुच्—भ्वा० पर० अक० शोक करना, दुःखी होना । पछताना, खेद करना । शोचति, शोचिष्यति, अशोचीत् ।

शुच्, शुचा—(स्त्री०) [√शुच् + क्विप्, पक्षे टाप्] खेद, दुःख । सन्ताप, पीड़ा ।

शुचि—(वि०) [√शुच् + इन्] साफ, विशुद्ध, स्वच्छ; 'प्रभवति शुचिर्बिम्बग्राहे मणिर्न मृदादयः' उत्त० २.४। सफेद। चमकीला । पुण्यात्मा, धर्मात्मा । पवित्र । ईमानदार। निष्कपट। ठीक, सही। (पुं०) सफेद रङ्ग । विशुद्धता, सफाई । निर्दोषता । पुण्य । ईमानदारी । सहीपन । ब्रह्मचर्य । पवित्र जन । ब्राह्मण । ग्रीष्मऋतु, ज्येष्ठ और आषाढ़ का महीना । ईमानदार और सच्चा मित्र। सूर्य। चन्द्रमा। अग्नि। शृङ्गार रस । शुक्र ग्रह । चित्रक वृक्ष ।—**द्रुम**—(पुं०) वट-वृक्ष ।—**मणि**—(पुं०) स्फटिक, बिल्लौर पत्थर।—**मल्लिका**—(स्त्री०) नेवारी, नवमल्लिका ।—**रोचिस्**—(पुं०) चन्द्रमा ।—**व्रत**— (वि०) पवित्र संकल्प करने वाला ।—**स्मित**— (वि०) मधुर मुसकान वाला ।

शुचिस्—(न०) [√शुच् + इसुन्] चमक, प्रकाश, दीप्ति, आभा ।

√शुच्य—भ्वा० पर० अक० स्नान करना । मार्जन करना । सक० निचोड़ना । (अर्क-का) खींचना । मथना । शुच्यति, शुच्यिष्यति, अशुच्यीत् ।

शुटीर—(पुं०) [=शौटीर, पृषो० साधुः] वीर । नायक ।

√शुठ्—भ्वा० पर० सक० रोकना । बचाव करना । शोठति, शोठिष्यति, अशोठीत् । चु० पर० अक० आलस्य करना । शोठयति, शोठयिष्यति, अशूशुठत् ।

√शुण्ठ्—भ्वा० पर० सक० साफ करना । सोखना । शुण्ठति, शुण्ठिष्यति, अशुण्ठीत् । चु० शुण्ठयति— शुण्ठति, शुण्ठयिष्यति —शुण्ठिष्यति, अशुशुण्ठत् — अशुण्ठीत् ।

शुण्ठि, शुण्ठी—(स्त्री०), **शुण्ठ्य**—(न०) [√शुण्ठ् + इन्] [शुण्ठि + ङीप्] [√शुण्ठ्+यत्] सोंठ ।

शुण्ड—(पुं०) [√शुन्+ड] मदमाते हाथी का मद जो उसकी कनपटी से चूता है । हाथी की सूँड़ ।

शुण्डक—(पुं०) [शुण्ड + कन्] कलाल, शराब खींचने वाला ।

शुण्डिन्—(पुं०) [शुण्ड + इनि] कलाल, शराब बनाने वाला । हाथी ।—**मूषिका**—(स्त्री०) छछूँदर ।

शुतुद्रि, शुतुद्रू—(स्त्री०) सतलज नदी ।

शुद्ध—(वि०) [√शुध्+क्त] पवित्र, स्वच्छ, विशुद्ध । निर्दोष । सफेद । चमकीला । भोलाभाला, आडम्बररहित । ईमानदार, सच्चा । सही, ठीक । निर्दोष समझ कर बरी किया हुआ । केवल । अमिश्रित, बिना मिलावट का । असमान । अधिकार-प्राप्त । पैनाया हुआ । (न०) कोई भी वस्तु जो विशुद्ध हो । सेंधा नमक । काली मिर्च । (पुं०) शिव जी ।—**अन्त** (**शुद्धान्त**)—(पुं०) रनिवास, अन्तःपुर ।—**चैतन्य**—(न०) विशुद्ध बुद्धि ।—**जङ्घ**— (पुं०) गधा ।—**धी**, —**भाव**, —**मति**— (वि०) विशुद्ध विचारों का, ईमानदार ।

शुद्धि—(स्त्री०) [√शुध् + क्तिन्] विशुद्धता, सफाई । चमक, आभा । पवित्रता । प्रायश्चित्त । भुगतान । बदला । रिहाई, छुटकारा । संशोधन । संस्कार । बाकी

निकालने की क्रिया। दुर्गादेवी का नाम। —पत्र–(न०) ग्रन्थ के अंत का वह पत्र जिसमें यह बताया जाता है कि इसमें क्या-क्या अशुद्धियां हैं और उनका शुद्ध रूप क्या-क्या है। प्रायश्चित्त द्वारा पापनिर्मुक्त होने का प्रमाणपत्र।

शुद्धोदन—(पु०) बुद्धदेव के पिता का नाम।

√शुध्—दि० पर० अक० शुद्ध हो जाना, पवित्र होना। अनुकूल होना। सक० संशयों को निवृत्त करना। शुध्यति, शोत्स्यति, अशुधत्।

√शुन्—तु पर० सक० जाना। शुनति, शोनिष्यति, अशोनीत्।

शुनःशेप, शुनःशेफ—(पु०) [शुन इव शेपः (फः) अस्य, अलुक् स०] अजीगर्तपुत्र एक ब्राह्मण का नाम, इसका नाम ऐतरेय ब्राह्मण में आया है।

शुनक—(पु०) [√शुन् + क, शुन+कन्] भृगुवंशीय एक ऋषि का नाम। कुत्ता।

शुनाशीर, शुनासीर—(पु०) [शुन्ध् नाशी (सी) रं यस्य, पृषो० साधुः वा शुनासीरौ वायुसूर्यं अस्य स्तः इति अच्] दो वैदिक देवता—वायु और आदित्य या इंद्र और वायु या इंद्र और सूर्य (इनसे अन्न की उत्पत्ति और रक्षा होती है)। इन्द्र। उल्लू।

शुनि—(पु०) [√शुन् + इन्] कुत्ता।

शुनी—(स्त्री०) [श्वन् + ङीप्] कुतिया।

शुनीर—(पु०) [शुनी + र] कुतियों का झुंड।

शुन्ध√—भ्वा० उभ० अक० पवित्र होना, स्वच्छ होना। सक० साफ करना, पवित्र करना। शुन्धति–ते, शुन्धिष्यति – ते, अशुन्धीत्–अशुन्धिष्ट।

शुन्ध्यु—(पु०) [√शुन्ध् + युच्, तस्य न अनादेशः] पवन।

√शुभ्—भ्वा० पर० सक० बोलना। मारना। अक० चमकना। शोभति, शोभिष्यति, अशोभीत्। आत्म० अक० चमकना। सुंदर लगना। शोभते, शोभिष्यते, अशुभत्—अशोभिष्ट। तु० पर० अक० सुंदर लगना। लाभदायक प्रतीत होना। उपयुक्त होना। शुभति, शोभिष्यति, अशोभीत्।

शुभ—(वि०) [√शुभ् + क] चमकीला। सुन्दर। कल्याणप्रद। अच्छा। धर्मात्मा। (न०) कल्याण, मङ्गल। सौभाग्य। समृद्धि। आभूषण। जल। गन्धकाष्ठ विशेष।—**अक्ष** (शुभाक्ष)– (पु०) महादेव।—**अङ्ग** (शुभाङ्ग)– (वि०) सुन्दर।—**अङ्गी** (शुभाङ्गी)–(स्त्री०) सुन्दरी स्त्री। कामदेवपत्नी रति।—**अपाङ्गा** (शुभापाङ्गा)–(स्त्री०) सुन्दरी स्त्री।—**अशुभ** (शुभाशुभ)–(न०) सुख-दुःख। भला-बुरा।—**आचार** (शुभाचार)–(वि०) पवित्र आचरण वाला। पुण्यात्मा।—**आनना** (शुभानना)–(स्त्री०) सुन्दर मुखवाली फलतः सुन्दरी स्त्री।—**इतर** (शुभेतर)–(वि०) बुरा, खराब। अशुभ।—**उदर्क** (शुभोदर्क)–(वि०) वह जिसका अन्त शुभ या आनन्दमय हो।—**कर**–(वि०) मङ्गलकारी।—**कर्मन्**–(न०) पुण्यकार्य। बोल नामक गन्धद्रव्य।—**ग्रह**–(पु०) अच्छा फल देने वाला ग्रह।—**द**–(पु०) पीपल का वृक्ष।—**दन्ती**–(स्त्री०) वह स्त्री जिसके सुन्दर दांत हों।—**लग्न**–(पु०, न०) अच्छा मुहूर्त।—**वार्ता**–(स्त्री०) शुभ संवाद, खुशखबरी।—**वासन**–(पु०) मुंह को खुशबूदार करने वाला गन्धद्रव्य।—**शंसिन्**–(वि०) शुभ या मङ्गलद्योतक।—**स्थली**–(स्त्री०) वह मण्डप जहां यज्ञ होता हो, यज्ञ-भूमि। मङ्गल भूमि, पवित्र स्थान।

शुभंयु—(वि०) [शुभम् + युस्] शुभ । आनन्दवर्द्धक ।

शुभङ्कर—(वि०) [शुभ √कृ+खच्, मुम्] कल्याणकारी । आनन्दवर्द्धक ।

शुभम्—(अव्य०) [√शुभ् + कम्] मंगल ।

शुभम्भावुक—(वि०) [शुभम् √भू +णिच्+उकञ्] शुभ-चिंतक ।

शुभा—(स्त्री०) [शुभ + टाप्] कान्ति । सौन्दर्य । कामना । गोरोचन । शमी वृक्ष । देवताओं की सभा । दूर्वा, दूब । प्रियंगुलता ।

शुभ्र–(वि०) [√शुभ +रक्] कान्तिमान्, सुन्दर । सफेद, उज्ज्वल । (न०) चाँदी । अबरक । सेंधा नमक । तूतिया । (पुं०) सफेद रंग । चन्दन ।—**अंशु** (**शुभ्रांशु**), —**कर** –(पुं०) चन्द्रमा । कपूर ।—**रश्मि**– (पुं०) चन्द्रमा ।

शुभ्रा—(स्त्री०) [शुभ्र+टाप्] गंगा । स्फटिक । वंशलोचन ।

शुभ्रि—(पुं०) [√शुभ+क्रि] ब्रह्मा ।

√शुम्भ्—भ्वा० पर० अक० चमकना । सक० बोलना । अनिष्ट करना । मारना । शुम्भति, शुम्भिष्यति, अशुम्भीत् ।

शुम्भ—(पुं०) [√शुम्भ् + अच्] एक दैत्य जिसका वध दुर्गा देवी ने किया था ।—**घातिनी**, —**मर्दिनी**– (स्त्री०) दुर्गा का नाम ।

√शुल्क्—चु० उभ० सक० पाना । देना, अदा करना । उत्पन्न करना । कहना । वर्णन करना । त्यागना, छोड़ देना । शुल्कयति – ते, शुल्कयिष्यति—ते, अशुशुल्कत् —त ।

शुल्क—(न, पुं०) [√शुल्क् + अच्] वह कर या महसूल जो घाट आदि पर लिया जाता है । राज्य द्वारा लिया जाने वाला कर । वह मूल्य जो कन्या को खरीदने के लिये उसके पिता को दिया जाय । विवाह में कन्या को दिया जाने वाला दहेज । कोई काम करने के बदले में लिया जाने वाला धन । किराया, भाड़ा ।—**ग्राहक**, —**ग्राहिन्**–(वि०) कर उगाहने वाला ।—**द**–(पुं०) विवाह के लिये शुल्क देने वाला व्यक्ति ।—**स्थान**–(न०) वह स्थान जिसका किराया देना पड़े । शुल्कगृह ।

शुल्ल—(न०) [√शुल्व् + अच्, पृषो० साधुः] रस्सी । ताँबा ।

√शुल्व्—चु० उभ० सक० देना, दान करना । भेजना, पठाना । बिदा करना । नापना । शुल्वयति, शुल्वयिष्यति, अशुशुल्वत् ।

शुल्व—(न०) [√शुल्व् + अच्] डोरी । ताँबा । यज्ञीय कर्म । जल का सामीप्य या वह स्थान जो जल के समीप हो । नियम । आचार ।

शुश्रू—(स्त्री०) [√श्रु + सन्—लुक्, द्वित्वादि+क्विप्] (बच्चे की सेवा करने वाली) माता ।

शुश्रूषक—(वि०) [√श्रु+सन्, द्वित्वादि, +ण्वुल्] सेवा करने वाला । आज्ञा-पालक । (पुं०) नौकर, सेवक ।

शुश्रूषण—(न०),—**शुश्रूषणा**–(स्त्री०) [√श्रु+सन्, द्वित्वादि + ल्युट्] [√श्रु +सन्, द्वित्वादि, + युच्–टाप्] सुनने की इच्छा । सेवा, परिचर्या । कर्तव्य-परायणता । आज्ञापालन करने की क्रिया ।

शुश्रूषा—(स्त्री०) [√श्रु+ सन्, द्वित्वादि, +अ–टाप्] श्रवण करने की अभिलाषा । सेवा, चाकरी । आज्ञापालन । कर्त्तव्यपरायणता । सम्मान, प्रतिष्ठा । कथन ।

शुश्रूषु—(वि०) [√श्रु + सन्, द्वित्वादि, +उ] सुनने का अभिलाषी । सेवा करने की कामना रखने वाला । आज्ञाकारी ।

√शुष्—दि० पर० अक० सूख जाना । कुम्हला जाना, मुरझा जाना । शुष्यति, शोक्ष्यति, अशुषत् ।

शुष—(पु०) [√शुष् + क] सूखने की क्रिया। भूमि-रन्ध्र, बिल।

शुषि—(स्त्री०) [√शुष्+कि] सूखने की क्रिया। छेद। सर्प के विषदन्त का खोखला भाग।

शुषिर—(वि०) [√शुष्+किरच्] सूराखों से पूर्ण, छिद्रदार। (न०) सूराख। अन्तरिक्ष। वह बाजा जो फूंक से या हवा देकर बजाया जाय। (पु०) अग्नि। चूहा।

शुषिरा—(स्त्री०) [शुषिर+ टाप्] नदी। नली नामक गन्धद्रव्य। लौंग।

शुषिल—(पु०) [√शुष् + इलच्, स च कित्] पवन।

शुष्क—(वि०) [√शुष्+क्त, तस्य कः] सूखा। भुना हुआ। कृश, दुबला। बनावटी, झूठा। व्यर्थ, निकम्मा। अकारण, कारण-रहित। आधार-शून्य। कटु, बुरा लगने वाला।—**अङ्गी** (**शुष्काङ्गी**)-(स्त्री०) छिपकली, बिस्तुइया।—**कलह**-(पु०) निरर्थक झगड़ा।—**वैर**-(न०) अकारण शत्रुता।—**व्रण**-(न०) वह घाव जो सूख गया हो। फोड़े का निशान। स्त्रियों का योनिकंद नामक रोग।

शुष्कल—(न०,पु०) [शुष्क√ला + क] सूखा मांस। [√शुष् + कलच्] मांस।

शुष्म—(न०) [√शुष् + मन्] पराक्रम। दीप्ति। (पु०) सूर्य। आग। पवन। पक्षी।

शुष्मन्—(पु०) [√शुष्+ऊमनिप्] अग्नि। चित्रक वृक्ष। (न०) पराक्रम। दीप्ति।

शूक—(न०, पु०) [√श्वि + कक्, सम्प्रसारण] जौ आदि की बाल का नुकीला हिस्सा, टूँड़। तीक्ष्ण अग्रभाग। दाढ़ी। शिखा। दया। सूअर का बाल। जलमल में उत्पन्न होने वाला एक प्रकार का विषैला कीड़ा।—**कीट**, —**कीटक**-(पु०) एक जाति का रोएँदार कीड़ा।—**धान्य**-(न०) वह अन्न जिसके दाने बालों या सींकों में लगते हैं, जैसे गेहूँ, जवा आदि।—**पिण्डि**, —**पिण्डी**-(स्त्री०), —**शिम्बा**, —**शिम्बिका**, —**शिम्बी**- (स्त्री०) केवांच, कपिकच्छु।

शूकक—(पु०) [शूक√कै + क] वर्षाकाल। रस। अनाज विशेष। [शूक +कन्] दया।

शूकर—(पु०) [शू इत्यव्यक्त शब्द करोति, शू√कृ+अच् वा शूक+र] सूअर।—**इष्ट** (**शूकरेष्ट**)-(पु०) मोथा, मुस्ता। कसेरू।

शूकल—(पु०) [शूकवत् क्लेशं लाति ददाति, शूक√ला+क] चमकने या भड़कने वाला घोड़ा।

शूद्र—(पु०) [√शुच्+रक्, पृषो० चस्य दः, दीर्घः] स्मृत्यनुसार अथवा हिन्दू धर्मशास्त्रानुसार चार वर्णों में से चौथा और अन्तिम वर्ण।—**कृत्य**-(न०) शूद्र का शास्त्रविहित कर्त्तव्य (द्विजसेवा आदि)।—**प्रिय**-(पु०) पलाण्डु, प्याज।—**प्रेष्य**-(पु०) वह ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य जो किसी शूद्र की नौकरी या सेवा करता हो।—**याजक**- (पु०) वह ब्राह्मण जो शूद्र को यज्ञ कराता हो या उसके लिये यज्ञ करता हो।—**वर्ग**- (पु०) शूद्र जाति।—**सेवन**-(न०) शूद्र की सेवा।

शूद्रक—(पु०) विदिशा नगरी का एक राजा और मृच्छकटिक का रचयिता महाकवि।

शूद्रा—(स्त्री०) [शूद्र+टाप्] शूद्र जाति की स्त्री।—**भार्य**-(पु०) वह पुरुष जिसकी स्त्री शूद्र जाति की हो।—**वेदन**-(न०) शूद्रा स्त्री के साथ विवाह करना।—**सुत**-(पु०) शूद्र स्त्री का वह पुत्र जिसका पिता किसी भी जाति का हो।

शूद्राणी, शूद्री—(स्त्री०) [शूद्र + ङीप्, आनुक्] [शूद्र+ ङीष्] शूद्र की पत्नी।

शून—(वि०) [√श्वि+क्त, सम्प्रसारण, तस्य नः, दीर्घः] सूजा हुआ । बढ़ा हुआ ।

शूना—(स्त्री०) [शून+टाप्] तालू के ऊपर की छोटी जीभ । बूचड़खाना, कसाईखाना । गृहस्थ के घर के वे स्थान जहाँ नित्य अनजाने अनेक जीवों की हत्या होती हो; जैसे चूल्हा, चक्की, पानी का पात्र आदि या गृहस्थी के वे उपस्कर जिनसे जीवहिंसा होती हो । वे ये पाँच बतलाये गये हैं—यथा चूल्हा, चक्की, झाड़ू, उखली और जलपात्र ।

शून्य—(वि०) [शूनायै प्राणिवधाय हितम् रहस्यस्थानत्वात्, शूना+यत्] रीता, खाली । निर्जन, एकान्त । उदास, रंजीदा । रहित, अनावयुक्त । अनासक्त, विरक्त । सरल, सीधा सादा । ऊटपटाँग, अर्थशून्य । नंगा, परिच्छद-रहित । (न०) खाली स्थान । आकाश । बिंदी । अभाव, अनस्तित्व । ब्रह्म । **—मध्य**-(पु०) पोला नरकुल । **—वाद**-(पु०) बौद्धों का एक सिद्धान्त जिसमें ईश्वर या जीव किसी को कुछ भी नहीं मानते । **—वादिन्**-(पुं०) नास्तिक । बौद्ध ।

शून्या-(स्त्री०) [शून्य + अच्—टाप्] पोला नरकुल । बाँझ स्त्री । सेहुँड़ ।

√शूर्—दि० आत्म० सक० मारना । रोकना । शूर्यते, शूरिष्यते, अशूरिष्ट । चु० उभ० सक० बहादुरी दिखाना, वीरता प्रदर्शित करना । जी खोलकर उद्योग करना । शूरयति-ते, शूरयिष्यति-ते, अशूशूरत्—त ।

शूर-(वि०) [√शूर्+अच्] बहादुर, वीर । (पु०) वीर व्यक्ति । शेर । शूकर । सूर्य । साल वृक्ष । मदार का पेड़ । बड़हर । चीते का पेड़ । श्रीकृष्ण के पितामह का नाम । **—कीट**-(पु०) तुच्छ योद्धा । **—लोक**-(पु०) वीरगाथा, वीरों के वीरतापूर्ण कृत्यों की कहानी । **—सेन**-(पु०) (बहुवचन) मथुरा-मण्डल या उसके अधिवासी । कृष्ण के पितामह का नाम ।

शूरण—(पु०) [√शूर्+ल्यु] ओल, सूरन । स्योनाकवृक्ष ।

शूरम्मन्य—(वि०) [आत्मानं शूरं मन्यते, शूर√मन्+खश्, मुम्] वह पुरुष जो अपने को शूर लगाता हो ।

√शूर्प्—चु० उभ० सक० मापना, तौलना । शूर्पयति-ते, शूर्पयिष्यति-ते, अशुशूर्पत्—त ।

शूर्प-(न०, पु०) [√शूर्प्+घञ्] सूप । (पु०) दो द्रोण की एक तौल । **—कर्ण**-(पु०) हाथी । **—नखा (णखा)**, **—नखी (णखी)**-(स्त्री०) वह जिसके नाखून सूप जैसे हों, रावण की बहिन का नाम । **—वात**- (पु०) सूप से निकली हुई हवा । **—श्रुति**-(पु०) हाथी ।

शूर्पी—(स्त्री०) [शूर्प+ङीष्] छोटा सूप । शूर्पणखा का नामान्तर ।

शूर्म, शूर्मि—(पु०) [स्त्री०—**शूर्मिका, शूर्मी**] [सुष्ठु ऊर्मिः अस्ति अस्याः, पक्षे अच्] लोहे की बनी मूर्ति । निहाई ।

√शूल्—भ्वा० पर० अक० बीमार होना । बहुत शोर करना । गड़बड़ी करना । शूलति, शूलिष्यति, अशूलीत् ।

शूल—(न०, पुं०) [√शूल्+क] प्राचीन कालीन एक अस्त्र, जो प्रायः बरछे के आकार का होता था । त्रिशूल । सूली जिससे प्राचीन काल में लोगों को प्राणदण्ड दिया जाता था । लोहे की सींक जिस पर लपेट कर कबाब भूना जाता है । कोई भी उग्र पीड़ा या दर्द । वायु गोले का दर्द । गठिया, बतास । मृत्यु । झंडा, पताका । विष्कंभ आदि २७ योगों में से ९वाँ योग । विक्रय । **—धन्वन्**, **—धर**, **—धारिन्**, **—भृत्**, **—पाणि**, **—भृत्**- (पुं०) शिव जी का नामान्तर । **—शत्रु**- (पु०) रेंड़ का पेड़ । **—स्थ**-(वि०) सूली दिया हुआ । **—हन्त्री**-(स्त्री०)

मजवाइन ।—हस्त–(वि०) शूल धारण करने वाला ।

शूलक—(पुं०) [शूल + कन्] भड़कने वाला घोड़ा ।

शूलाकृत—(न०) [शूल+डाच् √कृ+क्त] लोहे की सलाख पर भूना गया मांस ।

शूलिक—(वि०) [शूल+ठन्] शूलधारी । वायुगोले से पीड़ित । (पुं०) खरगोश । शिव जी का नामान्तर ।

शूलिन—(पुं०) [शूल + इनन्] भाण्डीर वृक्ष । गूलर का पेड़, उदुम्बर ।

शूल्य—(वि०) [शूल+यत्] सींक पर भुना हुआ मांस । सूली पाने का अधिकारी । (न०) दे० 'शूलाकृत' ।

√शूष्—भ्वा० पर० सक० उत्पन्न करना । शूषति, शूषिष्यति, अशूषीत् ।

शृकाल—दे० 'शृगाल' ।

शृगाल—(पुं०) [असृजं लाति, √ला+क, पृषो० साधुः] गीदड़, सियार । छलिया, कपटी । भीरु । कटुभाषी । कृष्ण का नामान्तर ।—कोलि–(पुं०) एक प्रकार का बेर । —घण्टी–(स्त्री०) तालमखाना ।—रूप–(पुं०) शिव जी का रूपान्तर ।

शृगालिका, शृगाली—(स्त्री०) [शृगाल +ङीष्, पक्षे कन्–टाप्, इत्व] गीदड़ी, सियारिन । लोमड़ी । भगदड़, पलायन ।

शृङ्खल—(पुं०), **शृङ्खला**—(स्त्री०) [शृङ्गात् प्राधान्यात् स्खल्यतेऽनेन पृषो० साधुः] लोहे की जंजीर, बेड़ी । हाथी के पैर में बाँधने की जंजीर । कमरपेटी । जरीब नापने की जंजीर । परम्परा, क्रम, सिलसिला ।—यमक– (न०) एक प्रकार का अलंकार, जिसमें कथित पदार्थों का वर्णन शृङ्खला के रूप में सिलसिलेवार किया जाता है ।

शृङ्खलक—(पुं०) [शृङ्खल √कै+क] ऊँट । [शृङ्खल+कन्] जंजीर ।

शृङ्खलित—(वि०) [शृङ्खला+ इतच्] जंजीर में बँधा हुआ ।

शृङ्ग—(न०) [√शृ+गन्, पृषो० मुम्, ह्रस्व] सींग । पहाड़ की चोटी । भवन का सब से ऊँचा भाग । ऊँचाई । प्रभुत्व, अधिकार । बालचन्द्र का शृङ्गाकार अग्रभाग । चोटी या आगे निकला हुआ भाग । सींग (भैंस आदि का) जो बजाया जाता है । पिचकारी । अनुराग का उद्रेक । स्तन । चिह्न । कमल । (पुं०) कूर्चशीर्षक वृक्ष । शृंगी ऋषि ।—उच्चय (शृङ्गोच्चय)–(पुं०) बड़ी ऊँची चोटी । —ज–(पुं०) तीर । (न०) अगर ।—प्रहारिन्–(वि०) सींग मारने वाला ।—प्रिय –(पुं०) शिव का नामान्तर ।—मोहिन्–(पुं०) चंपा का वृक्ष ।—वेर–(न०) गंगातट पर के एक प्राचीन नगर का नाम जो निषादराज गुह की राजधानी था । अदरक ।

शृङ्गक—(न०) [शृङ्ग+कन्] सींग । बालचन्द्र का शृङ्गाकार अग्रभाग । कोई नोकदार चीज । पिचकारी । (पुं०) [शृङ्ग √कै+क] जीवक वृक्ष ।

शृङ्गवत्—(वि०) [शृङ्ग + मतुप्, मस्य वः] चोटीदार, शिखरदार । (पुं०) पहाड़ ।

शृङ्गाट, शृङ्गाटक—(पुं०) [शृङ्ग प्राधान्यम् अटति, शृङ्ग√अट्+अण्] [शृङ्गाट + कन्] वह जगह जहाँ चार सड़कें मिलती हैं, चौराहा, चतुष्पथ । सिंघाड़े का पौधा । कामाख्या में स्थित एक पर्वत । (न०) सिंघाड़ा ।

शृङ्गार—(पुं०) [शृङ्गं कामोद्रेकम् ऋच्छति अनेन, शृङ्ग√ऋ + अण्] साहित्य के अनुसार नौ रसों में से एक रस जो सबसे अधिक प्रसिद्ध है । (इसमें नायक-नायिका के मिलन या संयोग से उत्पन्न सुख और उनके वियोग के कारण होने वाले कष्टों का वर्णन होता

है। इसीलिए इसे क्रमशः संयोग-शृंगार और वियोग-शृङ्गार कहते हैं। नायक और नायिका इसके आलम्बन तथा उनकी वेशभूषा, चेष्टाएँ, चाँदनी रात, वर्षा ऋतु आदि इसके उद्दीपन हैं)। प्रेम, रसिकता। सजावट। मैथुन। चिह्न। हाथी के शरीर पर बनाये गये सिंदूर के निशान। (न०) लौंग। सिंदूर। अदरक। सुगन्धपूर्ण द्रव्य जो शरीर में मला जाय या खुशबू के लिए वस्त्र पर लगाया जाय। काला अगर। —भूषण-(न०) सिंदूर।—योनि-(पुं०) कामदेव।—सहाय -(पुं०) नर्मसचिव, प्रेमक्रीड़ा में सहायक व्यक्ति।

शृङ्गारक—(न०) [शृङ्गार+कन्] सिंदूर। (पुं०) प्रेम, प्रीति।

शृङ्गारित—(वि०) [शृङ्गार + इतच्] सजाया हुआ, सँवारा हुआ। प्रेमासक्त।

शृङ्गारिन्—(वि०) [शृङ्गार + इनि] शृङ्गार की वृत्ति से युक्त। (पुं०) उत्तेजित प्रेमी। चुन्नी, लाल। हाथी। परिच्छद, पोशाक। सुपारी का वृक्ष। पान का बीड़ा।

शृङ्गि—(पुं०) [=शृङ्गी, पृषो० ह्रस्व] आभूषण बनाने का सोना। सिंगी मछली।

शृङ्गिक—(न०) [शृङ्ग+ठन्] एक प्रकार का विष, सिंघिया।

शृङ्गिका—(स्त्री०) [शृङ्गिक + टाप्] अतीस, अतिविषा।

शृङ्गिण—(पुं०)[शृङ्ग+इनन्] मेढ़ा, मेष।

शृङ्गिणी—(स्त्री०) [शृङ्गिन्+ङीप्] गौ। मल्लिका, मोतिया। ज्योतिष्मती लता।

शृङ्गिन्—(वि०) [स्त्री०—**शृङ्गिणी**] [शृङ्ग + इनि] सींगवाला। चोटीदार, शिखर वाला। (पुं०) पर्वत। हाथी। वृक्ष। शिव का नामान्तर। शिव जी के एक गण का नाम।

शृङ्गी—(स्त्री०) [शृङ्ग+अच् — ङीष्] सिंगी मछली। वह सुवर्ण जो आभूषणों के बनाने के काम में आता है। अतिविषा, अतीस। ऋषभ नामक ओषधि। काकड़ा-सींगी। पाकर। बरगद। विष।—**कनक**-(न०) सुवर्ण जिसके आभूषण बनाये जायँ।

शृणि—(स्त्री०) [√ शॄ+क्तिन्, पृषो० तस्य नः] अंकुश।

शृत—(वि०) [√शृ+क्त] पकाया हुआ। राँधा हुआ। उबाला हुआ।

√शृध्—भ्वा० आत्म० अक० पादना, अपान वायु छोड़ना। शर्धते, शर्धिष्यते—शर्त्स्यति, अशृधत्—अशर्धिष्ट। उभ० सक० काटना। शर्धति—ते, शर्धिष्यति—ते, अशर्धीत् —अशर्धिष्ट। चु० पर० सक० ग्रहण करना। शर्धयति, शर्धयिष्यति, अशशर्धत्।

शृधु—(पुं०) [शृध् √ कु] बुद्धि। गुदा, मलद्वार।

√शॄ—क्र्या० पर० सक० टुकड़े-टुकड़े करना। चोटिल करना। वध करना। नाश करना। शृणाति, शरि (री) ष्यति, अशारीत्।

शेखर—(पुं०) [√ शिखि +अरन्, पृषो० साधुः] सिर का आभूषण। मुकुट। सिर पर धारण की जाने वाली पुष्पमाला। चोटी, शृङ्ग। श्रेष्ठतावाचक शब्द। संगीत में ध्रुव या स्थायी पद का एक भेद। (न०) लौंग।

शेप—(पुं०), **शेपस्**-(न०), **शेफ**—(पुं०, न०), **शेफस्**-(न०) [√शी +पन्] [√शी +असुन्, पुट् आगम] [√शी +फन्] [√शी + असुन्, फुक् आगम] लिंग, जननेन्द्रिय। अण्डकोश। पूँछ, दुम। (वि०) सोने वाला।

शेफालि, शेफालिका, शेफाली—(स्त्री०) [शेफाः शयनशालिनः अलयो यत्र, ब० स०] [शेफा अलयो यत्र, ब० स० कप्—टाप्] [शेफालि+ङीष्] नील सिन्धुवार का पौधा। निर्गुण्डी, नीलिका।

शेमुषी—(स्त्री०) [√शी+विच्, शेः मोहः तं मुष्णाति, शे √मुष्+क—ङीप्] समझदारी, बुद्धि।

√शेल्—भ्वा० पर० सक० जाना। कुचलना। शेलति, शेलिष्यति, अशेलीत्।

शेव—(न०) [√शी + वन्] लिङ्ग, जननेन्द्रिय। हर्ष, प्रसन्नता। (पु०) सर्प। जननेन्द्रिय। ऊँचाई। अग्नि। सम्पत्ति।—धि-(पु०) मूल्यवान् खजाना। कुबेर की नवनिधियों में से एक।

शेवल—(न०) [√शी + विच्, तथाभूतः सन् वलते, शे√वल्+अच्] सेवार घास जो पानी में उगती है, शैवाल।

शेवलिनी—(स्त्री०)[शेवल + इनि–ङीप्] नदी।

शेवाल—(पुं०) [√शी + विच्, शे√वल् +घञ्] सेवार।

शेष—(वि०) [√शिष्+अच्] बचा हुआ, अवशिष्ट। छोड़ा हुआ। उच्छिष्ट। समाप्त। (पुं०) अंश। नाश। बलदेव। अनंत नामक सर्पराज। हाथी। नाग। वह वस्तु जो स्वीकृत न हुई हो। बड़ी संख्या में से छोटी संख्या घटाने के पश्चात् बची संख्या, बाकी। समाप्ति। परिणाम। स्मारक वस्तु। लक्ष्मण। एक प्रजापति। एक दिग्गज। भगवान् की द्वितीय मूर्ति।—अन्न (शेषान्न)-(न०) उच्छिष्ट अन्न।—अवस्था (शेषावस्था) -(स्त्री०) बुढ़ापा।—भाग-(पुं०) बचा हुआ अंश।—रात्रि-(पुं०) रात का अंतिम प्रहर।—शयन, —शायिन्-(पु०) विष्णु के नामान्तर।

शैक्ष—(पु०) [शिक्षा+अण्] वह विद्यार्थी जिसने वेद के एक अंग शिक्षा का अध्ययन किया हो या जिसने वेद पढ़ना आरम्भ ही किया हो, नौसिखिया।

शैक्षिक—(वि०) [शिक्षा + ठक्] शिक्षा शास्त्र का जानकार। शिक्षा में पटु।

शैघ्र्य—(न०) [शीघ्र + ष्यञ्] शीघ्रता, तेजी।

शैत्य—(न०) [शीत + ष्यञ्] ठंडक, शीतलता। इतनी ठंडक जिससे (जल आदि तरल पदार्थ) जम जायें।

शैथिल्य—(न०) [शिथिल +ष्यञ्] शिथिल होने का भाव, शिथिलता, ढिलाई। तत्परता का अभाव, सुस्ती। दीर्घसूत्रिता। निर्बलता। भीरुता।

शैनेय—(पुं०) [शिनि+ढक्] सात्यकि का नाम।

शैन्य—(पुं०) [शिनि+यञ्] शिनि के वंश वाले जो क्षत्रिय से ब्राह्मण हो गये थे।

शैल—(न०) [शिला + अण्] शिलारस, शैलेय। सोहागा। रसौत। शिलाजीत। (पुं०) पहाड़। बड़ा भारी पत्थर।—अग्र (शैलाग्र) -(न०) पर्वत-शिखर।—अट (शैलाट)- (पुं०) पहाड़ी, पर्वतनिवासी। पुजारी। शेर। स्फटिक पत्थर।—अधिप (शैलाधिप), —अधिराज (शैलाधिराज),—इन्द्र (शैलेन्द्र),—पति, —राज- (पुं०) हिमालय पर्वत के नामान्तर।—आख्य (शैलाख्य)- (न०) शैलरस। शिलाजीत।—गन्ध-(न०) चन्दन।—ज-(न०) शिलाजीत। राल।—जा, —तनया, —पुत्री, —सुता-(स्त्री०) पार्वती का नामान्तर।—धन्वन्-(पुं०) शिव जी का नाम।—धर-(पुं०) कृष्ण जी का नामान्तर।—निर्यास-(पुं०) शिलाजीत।—पत्र-(पुं०) बिल्व या बेल का वृक्ष।—भित्ति-(स्त्री०) पत्थर काटने की छेनी।—रन्ध्र- (न०) गुफा, पहाड़ी कंदरा।—शिबिर-(न०) समुद्र।

शैलक-(न०)[शैल+कन्]शिलाजीत। राल।

शैलादि—(पुं०) [शिलादस्यापत्यम्, शिलाद +इञ्] शिवजी का गण नन्दी।

शैलालिन्—(पुं०) [शिलालिना मुनिना प्रोक्तम् नटसूत्रम् अधीते, शिलालि+णिनि] नट, नर्तक।

शैलिक्य—(पुं०) [गर्हितं शीलम् अस्ति अस्य, शील+ठन्, शैलिक+ष्यञ्] दंभी, पाखंडी । दगाबाज़, कपटी ।

शैली—(स्त्री०) [शील+ष्यञ् — ङीष्, यलोप] लिखने का ढंग, वाक्य रचना का प्रकार । चाल, ढब, ढंग । परिपाटी, तर्ज़, तरीका । रीति, रस्म, प्रथा । आचरण, चाल-चलन ।

शैलूष—(पुं०) [शिलूषस्य अपत्यम्, शिलूष+अण्] नट, नर्तक, नचैया । अभिनय करने वाला, नाटक खेलने वाला । गंधर्वों का स्वामी । बेल का पेड़ । धूर्त ।

शैलूषिक—(पुं०) [शैलूषं तद्वृत्तिम् अन्वेष्टा, शैलूष+ठक्] वह जो अभिनय करने का पेशा करता हो ।

शैलेय—(वि०) [स्त्री०—**शैलेयी**] [शिला+ढक्] पहाड़ी चट्टान से उत्पन्न या निकला हुआ । सख्त, कड़ा । पथरीला । (न०) शिलाजीत । गूगुल । सेंधा नमक । (पुं०) सिंह । भ्रमर ।

शैल्य—(वि०) [शिला + ष्यञ्] शिला सम्बन्धी । पथरीला । कड़ा, कठोर ।

शैव—(वि०) [स्त्री०—**शैवी**] [शिव+अण्] शिव सम्बन्धी । (न०) अष्टादश पुराणों में से एक । (पुं०) शैव सम्प्रदाय । शैव सम्प्रदाय का अनुयायी । धतूरा । बसुक पौधा ।

शैवल—(न०) [√शी + वलच्] पद्म-काष्ठ, पदुमाख । (पुं०) सेवार ।

शैवलिनी—(स्त्री०) [शैवल + इनि—ङीप्] नदी ।

शैवाल—(न०) [√शी +वालञ्] सेवार ।

शैव्य—(पुं०) [शिवि+ष्यञ्] कृष्ण के चार घोड़ों में से एक का नाम । पाण्डव दल के एक योद्धा राजा का नाम । घोड़ा ।

शैशव—(न०) [शिशोर्भावः, शिशु+अण्] बचपन (सोलह वर्ष से नीचे) ।

शैशिर—(वि०) [स्त्री०—**शैशिरी**] [शिशिर+अण्] जाड़े की ऋतु सम्बन्धी । (पुं०) काले रङ्ग का चातक पक्षी । काली गौरैया ।

शैष्योपाध्यायिका—(स्त्री०) [शिष्योपाध्याय+वुञ्] शिष्य को पढ़ाना ।

√शो—दि० पर० सक० पैनाना, पैना करना । पतला करना । श्यति, शास्यति, अशात्—अशासीत् ।

शोक—(पुं०) [√ शुच् + घञ्] प्रिय व्यक्ति या वस्तु के वियोग या नाश के कारण मन में होने वाला परम कष्ट, सोग ।—अग्नि (शोकाग्नि), —अनल (शोकानल)- (पुं०) दुःख की आग ।—अपनोद (शोकापनोद)-(पुं०)दुःख का दूर होना । —अभिभूत (शोकाभिभूत),—आकुल (शोकाकुल),- आविष्ट (शोकाविष्ट), —उपहत (शोकोपहत), —विह्वल-(वि०) शोक से पीड़ित ।—नाश-(पुं०) अशोकवृक्ष ।

शोचन—(न०) [√शुच्+ल्युट्] शोक, रंज, अफसोस । चिंता ।

शोचनीय—(वि०) [√शुच्+अनीयर्] शोक करने योग्य । जिसकी दशा देख कर दुःख हो, दुष्ट ।

शोचिस्—(न०) [√शुच् + इसि] प्रकाश, दीप्ति, आभा, चमक । शोला ।—केश (शोचिष्केश)- (पुं०) अग्नि । सूर्य । चित्रक वृक्ष ।

शोटीर्य—(न०) [शुटीर+यत् (शौटीर्य इति पाठः साधुः)] विक्रम, पराक्रम ।

शोठ—(वि०) [√ शुठ् + अच्] मूर्ख । नीच, ओछा । दुष्ट । सुस्त, काहिल । (पुं०) मूर्ख व्यक्ति । दीर्घसूत्री व्यक्ति । नीच या कमीना आदमी । धूर्त जन ।

√शोण्—भ्वा० पर० सक० जाना । अक० लाल हो जाना । शोणति, शोणिष्यति, अशोणीत् ।

शोण—(वि०) [स्त्री०—शोणा, शोणी] [√शोण् + अच्] लाल, लाल रंगा हुआ। (न०) रक्त, ख़ून। सिन्दूर। (पु०) लाल रंग। आग। लाल गन्ना। लाल घोड़ा। एक नद का नाम जो अमरकण्टक से निकल कर पटना के पास गंगा में गिरता है। मंगल-ग्रह।—**अम्बु** (शोणाम्बु)-(पु०) प्रलय-कालीन मेघों में से एक।—**अश्मन्** (शोणाश्मन्), —**उपल** (शोणोपल)-(पु०) लाल पत्थर। माणिक्य।— **पद्म**-(पु०) लाल कमल।—**रत्न**- (न०) लाल, मानिक।

शोणित—(वि०) [शोण+इतच् या √शोण् +क्त] रक्त वर्ण वाला, लाल। (न०) लहू, ख़ून। केसर।—**आह्वय** (शोणिताह्वय)-(न०) केसर।—**उक्षित** (शोणितोक्षित)-(वि०) रक्तरञ्जित।—**उपल** (शोणितोपल)-(पुं०) मानिक, चुन्नी।—**चन्दन**- (न०) लालचन्दन।—**प**-(वि०) ख़ून पीने या चूसने वाला।—**पुर**-(न०) बाणासुर की नगरी का नाम।

शोणिमन्—(पु०) [शोण + इमनिच्] लाली, लालिमा।

शोथ—(पु०) [√शु+थन्] सूजन। वात-पित्तादि के प्रकोप से शरीर के किसी अंग के सूजने का रोग।—**घ्नी**- (स्त्री०) गदहपूरना, पुनर्नवा। शालपर्णी।—**जित्** -(पु०) भिलावाँ।—**जिह्व**-(पु०) पुनर्नवा।—**रोग** -(पु०) जलंधर का रोग। —**हृत्**- (वि०) सूजन दूर करने वाला। (पु०) भिलावाँ।

शोध—(पु०) [√ शुध् + घञ्] शुद्धि-संस्कार। ठीक किया जाना, दुरुस्ती। अदायगी, ऋणशोध। बदला। अनुसंधान।

शोधक—(वि०) [स्त्री०—शोधका, शोधिका] [√शुध् + णिच्+ण्वुल्] शुद्धिसंस्कारकर्ता। रेचन। शुद्ध करने वाला। (न०) एक प्रकार की मिट्टी।

शोधन—(वि०) [स्त्री०—शोधनी] [√शुध्+णिच्+ल्यु] साफ़ करने वाला। शुद्ध करने वाला। (न०) [√शुध्+णिच् +ल्युट्] साफ़ करना। दुरुस्त करना, ठीक करना, सुधारना। छान-बीन, जाँच। अनुसन्धान। ऋणशोध। प्रायश्चित्त। धातुओं को साफ़ करने की क्रिया। चाल सुधारने के लिये दण्ड। घटाना, निकालना। तूतिया। मल, विष्ठा।

शोधनक—(पु०) [शोधन + कन्] दंड-न्यायालय का अधिकारी, फौजदारी अदालत का हाकिम।

शोधनी—(स्त्री०) [शोधन—ङीप्] झाड़ू। नीली। ताम्रवल्ली।

शोधित—(वि०) [√शुध् + णिच्+क्त] साफ़ किया हुआ। संशोधित, सही किया हुआ। अदा किया हुआ। बदला लिया हुआ।

शोध्य—(वि०) [√शुध् + णिच्+यत्] शोधन के योग्य। (पुं०) वह अपराधी जिसे अपने अपराध की सफ़ाई देनी हो।

शोफ—(पुं०) [√ शु+फन्] दे० 'शोथ'। —**जित्**, —**हृत्**-(पुं०) भिलावाँ।

शोभन—(वि०)[स्त्री०—शोभनी][√शुभ् +ल्यु] चमकीला। सुन्दर। शुभ, कल्याण-कारी। अच्छी तरह सुसज्जित। पुण्यात्मा। (न०) [√शुभ् + ल्युट्] सौन्दर्य। आभा, चमक। कमल। (पुं०) [√शुभ्+ल्यु] शिव। ग्रह। विष्कम्भ आदि २७ योगों में से पाँचवाँ।

शोभना—(स्त्री०) [√शुभ् + णिच्+ल्यु] हल्दी। गोरोचन। सुन्दरी या पतिव्रता स्त्री।

शोभा—(स्त्री०) [√शुभ् + अ—टाप्] आभा, दीप्ति, चमक। सौन्दर्य, मनोहरता। छवि, छटा। हल्दी। गोरोचन।

शोभाञ्जन—(पु०) [शोभायै अज्यते, शोभा √अञ्ज्+ल्यु] सहिजन का पेड़।

शोभित—(वि०) [शोभा + इतच्] शोभा-युक्त। सुन्दर।

शोष—(पु०) [√शुष् + घञ्] सूखने का भाव, खुश्क होना, रस या गीलापन दूर होने का भाव।—**सम्भव**-(न०) पिपरा-मूल।

शोषण—(वि०) [स्त्री०—**शोषणी**] [√शुष् + णिच् + ल्यु] सोखने वाला। कुम्हला देने वाला। (न०) [√शुष् + णिच् +ल्युट्] सोखना। चूसना। निघटाना। कुम्हलाना, मुरझाना। सोंठ।

शोषित—(वि०) [√शुष् + णिच्+क्त] सोखा हुआ। सुखाया हुआ। क्षीण किया हुआ।

शोषिन्—(वि०) [स्त्री०—**शोषिणी**] [√शुष् + णिच्+णिनि] सुखाने वाला। शोषण करने वाला।

शौक—(न०)[शुक+अण्]तोतों का झुंड।

शौक्त—(वि०) [स्त्री०—**शौक्ती**] [शुक्त +अण्] खट्टा, अम्ल।

शौक्तिक—(वि०) [स्त्री०—**शौक्तिकी**] [शुक्ति+ठक्] मोती सम्बन्धी। [शुक्त + ठक्] खट्टा। तेज, तीक्ष्ण।

शौक्तिकेय, शौक्तेय—(न०) [शुक्तिका +ढक्] [शुक्ति+ढक्] मोती, मुक्ता।

शौक्लिकेय—(पु०) [शुक्लिका + ढक्] एक प्रकार का जहर।

शौक्ल्य—(न०)[शुक्ल + ष्यञ्] सफेदी। स्वच्छता।

शौच—(न०) [शुचि + अण्] शुद्धता। मृतक सूतक से शुद्धि। सफाई, संस्कार। मलत्याग। धर्म के १० लक्षणों में से पाँचवाँ।—**आचार** (**शौचाचार**)- (पु०),—**कर्मन्**-(न०),—**कल्प**-(पु०) शुद्धि की क्रिया। प्रायश्चित्तात्मक कर्म।—**कूप**-(पु०), —**गृह**-(न०) पाखाना, टट्टी, संडास।

शौचेय—(पु०) [शौचेन वस्त्रादिशुचित्वेन व्यवहरति, शौच+ढक्] धोबी।

√शौट्—भ्वा० पर० अक० अभिमान करना, अकड़ना। शौटति, शौटिष्यति, अशौटीत्।

शौटीर—(वि०) [√शौट्+ईरन्] अभि-मानी, घमंडी। (पु०) शूरवीर। अभिमानी पुरुष। साधु।

शौटीर्य, शौण्डीर्य—(न०) [शौटीर +ष्यञ्] [शौण्डीर + ष्यञ्] अभिमान, घमंड।

√शौड्—भ्वा० पर० अक० गर्व करना। शौडति, शौडिष्यति, अशौडीत्।

शौण्ड—(वि०)[(स्त्री०) **शौण्डी**] [शुण्डायां सुरायाम् अभिरतः, शुण्डा+अण्] शराबी, मद्यप। नशे में चूर। निपुण, पटु।

शौण्डिक, शौण्डिन्—(पु०) [शुण्डा सुरा पण्यम् अस्य, शुण्डा+ठक्] [शुण्डा अण् (स्वार्थे), शौण्ड+इनि] मद्य-विक्रेता, शराब बेचने वाला।

शौण्डिकेय—(पु०) [शुण्डिका + ढक्] शुण्डिका नामक राक्षसी का पुत्र।

शौण्डी—(स्त्री०) [शुण्डा करिकरः तदा-कारः अस्ति यस्याः, शुण्डा + अण्—ङीप्] बड़ी पीपल।

शौण्डीर—(वि०) [शुण्डा गर्वोऽस्ति यस्य, शुण्डा+ईरन् +अण् (स्वार्थे)] अभिमानी। उद्दंड।

शौद्धोदनि—(पु०) [शुद्धोदन+ इञ्] बुद्ध अर्थात् शुद्धोदन का पुत्र।

शौद्र—(वि०) [स्त्री०—**शौद्री**] [शूद्र +अण्] शूद्र सम्बन्धी। (पु०) [शूद्रा +अण्] शूद्रा का पुत्र जो शूद्र-भिन्न किसी जाति के पुरुष से पैदा हुआ हो।

शौन—(न०) [शूना+अण्] कसाईखाने में रखा हुआ मांस।

शौनक—(पु०) [शुनक + अण्] एक प्राचीन वैदिक आचार्य और ऋषि जो शुनक

ऋषि के पुत्र थे। इनके नाम से कई ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं।

शौनिक—(पुं०) [शूना प्राणिवधस्थानं प्रयोजनम् अस्य, शूना+ठक्] कसाई। बहेलिया। शिकार, आखेट।

शौभ—(न०) [शोभायै हितम्, शोभा अण्] हरिश्चन्द्रपुर, व्योमचारी नगर। (पुं०) [शुभाय हितः, शुभ + अण्] देवता। सुपारी।

शौभाञ्जन—(पुं०) [शोभाञ्जन + अण्] सहिजन का पेड़।

शौभिक—(पुं०) [शौभं व्योमपुरं शिल्पम् यस्य, शौभ+ठक्] मदारी, ऐन्द्रजालिक, जादूगर।

शौरसेनी—(स्त्री०) [शूरसेन + अण् –ङीप्] प्राचीन काल की एक प्रसिद्ध प्राकृत भाषा जो शौरसेन प्रदेश में बोली जाती थी।

शौरि—(पुं०) [शूर + इञ्] श्रीकृष्ण या विष्णु। बलराम। शनिग्रह।

शौर्य—(न०) [शूर+ष्यञ्]शूरता, वीरता। पराक्रम। बल, ताकत। आरभटी नामक नाट्यवृत्ति।

शौल्क, शौल्किक—(पुं०) [शुल्क+अण्] [शुल्क+ठक्] शुल्काध्यक्ष, शुल्क या चुंगी विभाग का दरोगा।

शौल्विक—(पुं०) [शुल्व+ठक्] ताँबे के बरतन आदि बनाने वाला, कसेरा।

शौव—(वि०) [स्त्री०—**शौवी**] [श्वन् +अण्, टिलोप (सम्बन्धिनि अर्थे शौवन इतीव साधुः]) कुत्ता सम्बन्धी। (न०) कुत्तों का दल। कुत्ते जैसी प्रकृति।

शौवन—(वि०) [स्त्री०—**शौवनी**] [श्वन्+ अण्] कुत्ता सम्बन्धी। कुत्तों जैसे गुणों वाला। (न०) कुत्ते की प्रकृति। कुत्ते की औलाद।

शौवस्तिक—(वि०) [स्त्री०—**शौवस्तिकी**] [श्वस्+ठञ्, तुट् आगम] आने वाले कल का या कल तक रहने वाला।

शौष्कल—(न०) [शुष्कल + अण्] सूखे मांस का मूल्य। (पुं०) मांस बेचने वाला। मांसभक्षी।

√श्चुत्—भ्वा० पर० अक० टपकना, बहना। श्चोतति, श्चोतिष्यति, अश्चुतत्–अश्चोतीत्।

श्चोत, श्च्योत—(पुं०), —**श्चोतन, श्च्योतन**–(न०) [√श्चुत्, √श्च्युत् + घञ्] [√श्चुत्, √श्च्युत् + ल्युट्] टपकना, चूना, बहाव।

√श्च्युत्—भ्वा० पर० अक० टपकना, बहना। गिरना। श्च्योतति, श्च्योतिष्यति, अश्च्युतत्–अश्च्योतीत्।

श्मशान—(न०) [श्मानः शवाः शेरतेऽत्र, श्मन् √शी+आनच्, डित् वा श्मन् शब्देन शवः प्रोक्तः (तस्य) शानं शयनमुच्यते] शवदाह-स्थान, मसान, मरघट।—**अग्नि** (श्मशानाग्नि)–(पुं०) मसान की आग।—**आलय** (श्मशानालय)–(पुं०) मरघट, श्मशान घाट।—**गोचर**– (वि०) श्मशान पर रहने वाला।—**निवासिन्**,—**वर्तिन्**– (पुं०) भूत। प्रेत। –**भाज्**, —**वासिन्**– (पुं०) शिव।—**वेश्मन्**–(पुं०)। भूत। प्रेत। —**वैराग्य**– (न०) क्षणिक वैराग्य (जो श्मशान देखने से उत्पन्न होता है)।—**शूल**–(न०, पुं०) श्मशान घाट पर लगी हुई सूली।—**साधन**–(न०) भूत-प्रेत को वश में करने के लिये श्मशान जगाना।

श्मश्रु—(न०) [श्म पुमुखं श्रूयते लक्ष्यते, ऽनेन, श्मन् √श्रु+डु] दाढ़ी-मूँछ।—**प्रवृद्धि**– (पुं०) दाढ़ी-मूँछ की बाढ़।—**मुखी**– (स्त्री०) वह स्त्री जिसके दाढ़ी-मूँछ हों।—**वर्धक**– (पुं०) नाई।

श्मश्रुल— (वि०) [श्मश्रु + लच्] दाढ़ी-मूंछ वाला।

√श्मील्—भ्वा० पर० अक० आंख मटकाना, आंख मारना। श्मीलति, श्मीलिष्यति, अश्मीलीत्।

श्मीलन—(न०) [√श्मील् + ल्युट्] आंख झपकाना।

श्यान—(वि०) [√श्यै + क्त] गया हुआ। जमा हुआ। सिकुड़ा हुआ। सूखा। (न०) धूम।

श्याम—(वि०) [√श्यै + मक्] कृष्ण, काला। काला और नीला मिश्रित। गाढ़ा हरा। (न०) समुद्री नमक। काली मिर्च। (पुं०) काला रंग। बादल। कोयल। प्रयाग का अक्षयवट। **—अङ्ग (श्यामाङ्ग)**-(वि०) काले शरीर वाला। (पुं०) बुधग्रह (इनका वर्ण दूर्वाश्याम माना गया है)। **—कण्ठ**-(पुं०) महादेव जी। मयूर। **—पत्र**-(पुं०) तमाल वृक्ष। **—सुन्दर**-(पुं०) श्रीकृष्ण का नामान्तर।

श्यामल—(वि०) [श्याम+लच् वा श्याम √ला+क] सांवला, कलौंहां। (पुं०) काला रंग। काली मिर्च। भौंरा। पीपल, अश्वत्थ वृक्ष।

श्यामलिका—(स्त्री०) [श्यामल + ठन्] नीली ओषधि।

श्यामलिमन्—(पुं०) [श्यामल + इमनिच्] कालापन, कृष्णत्व।

श्यामा—(स्त्री०) [श्याम+टाप्] रात, (विशेषतः) कृष्ण पक्ष की रात। छाई। काले रंग की स्त्री। सोलह वर्ष की तरुणी स्त्री। वह स्त्री जिसके सन्तान न हुई हो। गौ। हल्दी। मादा कोयल। प्रियंगु लता। नील का पौधा। श्यामा तुलसी। पद्मबीज। कस्तूरी। गुग्गुल। सोमलता। भद्रमोथा। गुड़ूच। पिप्पली। शीशम। हरीतकी। मेढासिंगी। हरी दूब। कस्तूरी। गोरोचन। यमुना नदी। राधा। काली।

श्यामाक—(पुं०) [श्याम√अक्+अण् वा श्यामा √कै+क] सावाँ नाम का अनाज।

श्यामिका—(स्त्री०) [श्याम+ठन् (भावे)] कालापन, कृष्णत्व। अपवित्रता। मलिनता। मैल।

श्यामित—(वि०) [श्याम + इतच्] काला, कलूटा।

श्याल—(पुं०) [√ श्यै + कालन्] साला, पत्नी का भाई।

श्यालक—(पुं०) [श्याल+कन्] साला।

श्यालकी, श्यालिका, श्याली —(स्त्री०) [श्यालक + ङीष्] [श्यालक + टाप्, इत्व] [श्याल+ङीष्] पत्नी की बहिन, साली।

श्याव—(वि०) [स्त्री०—**श्यावा**, वा **श्यावी**] [√श्यै+वन्] धुमैला, धूम्र। भूरा। (पुं०) भूरा रंग। **—तैल**-(पुं०) आम का पेड़।

श्येत—(वि०) [स्त्री०—**श्येता**, **श्येनी**] [√श्यै+इतच्] सफेद, उज्ज्वल। (पुं०) सफेद रंग।

श्येन—(पुं०) [√श्यै + इनन्] सफेद रंग। सफेदी। बाज पक्षी। प्रचण्डता, उग्रता। **—करण**- (न०), **—करणिका**-(स्त्री०) दूसरी चिता पर भस्म करने की क्रिया। किसी काम को उतनी ही तेजी या फुर्ती से करना जितनी तेजी या फुर्ती से बाज पक्षी अपने शिकार पर झपटता है।

√श्यै—भ्वा० आत्म० सक० जाना। अक० सूखना। कुम्हलाना। श्यायते, श्यास्यते, अश्यास्त।

श्यैनम्पाता—(स्त्री०) [श्येनस्य पातो यत्र, अ, मुम्] शिकार।

श्योणाक, श्योनाक—(पुं०) [√श्यै+ओणा (ना) क] एक वृक्ष का नाम, सोना पाढ़ा।

√श्रङ्क्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। श्रङ्कते, श्रङ्किष्यते, अश्रङ्किष्ट।

√श्रङ्ग्—भ्वा० पर० सक० जाना। श्रङ्गति, श्रङ्गिष्यति, अश्रङ्गिष्ट।

√श्रण्—भ्वा० पर० सक० देना। श्रणति, श्रणिष्यति, अश्रणीत् — अश्राणीत्। (घटादौ श्रणयति)। चु० उभ० सक० देना। श्राणयति —ते, श्राणयिष्यति—ते, अशिश्रणत्—त।

श्रत्—(अव्य०) [√श्री+डति] सत्य। श्रद्धा। विश्वास। एक उपसर्ग जो "धा" धातु के साथ व्यवहृत किया जाता है।

√श्रथ्—चु० उभ० सक० आनन्दित करना। अक० यत्न करना। श्राथयति—ते, अशिश्रथत्—त। दुर्बल होना। श्रथयति—ते, अशश्रथत्—त। भ्वा० पर० सक० वध करना। श्रथति, श्रथिष्यति, अश्रथीत्—अश्राथीत्। चु० उभ० पक्षे भ्वा० पर० सक० बाँधना। खोलना। मारना। श्राथयति —ते — श्रथति, अशिश्रथत्—त—अश्रथीत् —अश्राथीत्।

श्रथन—(न०) [√श्रथ्+ल्युट्] हिंसन, हत्या। खोलना, मुक्त करना। उद्योग, प्रयत्न। बाँधना।

श्रद्धा—(स्त्री०) [श्रत् √धा+अङ—टाप्] एक प्रकार की मनोवृत्ति, जिसमें किसी बड़े या पूज्य व्यक्ति के प्रति भक्तिपूर्वक विश्वास के साथ उच्च और पूज्य भाव उत्पन्न होता है। विश्वास। वेदादि शास्त्रों और आप्त-वाक्यों में विश्वास। शुद्धि। चित्त की प्रसन्नता। घनिष्ठता, घनिष्ठ परिचय। सम्मान, प्रतिष्ठा। उग्र कामना। गर्भवती स्त्री की अभिलाषाएँ। प्रजापति की पुत्री का नाम। सूर्य की कन्या का नाम। धर्म की पत्नी का नाम। काम की माता का नाम। वैवस्वत मनु की पत्नी का नाम।

श्रद्धालु—(वि०) [श्रद्धा+आलुच्] श्रद्धा रखने वाला, श्रद्धावान्। अभिलाषी, इच्छा-वान्। (स्त्री०) दोहदवती, वह स्त्री जिसके मन में गर्भावस्था के कारण, तरह-तरह की अभिलाषाएँ उत्पन्न हों।

√श्रन्थ्—चु० उभ० पक्षे भ्वा० पर० सक० गाँठ देना। वध करना। श्रन्थयति—ते —श्रन्थति, अशश्रन्थत्—त — अश्रन्थीत्। क्र्या० पर० सक० खोलना। ढीला करना। अक० प्रसन्न होना। श्रथ्नाति, श्रन्थिष्यति, अश्रन्थीत्।

श्रन्थ—(पुं०) [√श्रन्थ्+घञ्] छुट-कारा, मुक्ति। ढीलापन। [√श्रन्थ्+अच्] विष्णु का नाम।

श्रन्थन—(न०) [√श्रन्थ्+ल्युट्] छुट-कारा, मुक्ति। वध। नाश। बंधन।

श्रपित—(वि०) [√श्रा+णिच्, पुक्, ह्रस्व+क्त] उबाला हुआ या उबलाया हुआ।

श्रपिता—(स्त्री०) [श्रपित+टाप्] माँड़। काँजी।

√श्रम्—दि० पर० अक० स्वयं प्रयत्न करना, कष्ट उठाना, परिश्रम करना। तप करना। शरीर को तप द्वारा तपाना। थकना। पीड़ित होना। श्राम्यति, श्रमिष्यति, अश्रमत्।

श्रम—(पुं०) [√श्रम्+घञ्] मेहनत, परि-श्रम। प्रयत्न। थकावट, श्रान्ति। सन्ताप, कष्ट। तपस्या, तप। कसरत, व्यायाम। शस्त्राभ्यास।—**अम्बु** (श्रमाम्बु), —**जल** -(न०) पसीना।—**कर्षित**-(वि०) थका हुआ, थकामाँदा।—**साध्य**-(वि०) कष्टसाध्य, परिश्रम द्वारा पूर्ण होने वाला।

श्रमण—(वि०) [स्त्री०—**श्रमणा, श्रमणी**] [√श्रम्+युच्] परिश्रम करने वाला, मेह-नती। नीच, कमीना। (पुं०) बौद्ध भिक्षु। साधारण यति।

श्रमणा, श्रमणी—(स्त्री०) [श्रमण+टाप्] [श्रमण+ङीप्] संन्यासिनी। सुन्दरी स्त्री। नीच जाति की स्त्री। बालछड़, जटामासी। मुंडी। सुदर्शन नामक ओषधि।

√**श्रम्भ्**—भ्वा० आत्म० अक० असावधान होना। गलती करना। श्रम्भते, श्रम्भिष्यते, अश्रम्भिष्ट।

श्रय—(पु०), **श्रयण**–(न०) [√श्रि+अच्] [√श्रि+ल्युट्] आश्रय, पनाह, रक्षा।

श्रव—(पु०) [√श्रु+अप्] सुनना, श्रवण। कान। ख्याति। शब्द।

श्रवण—(न०) [√श्रु + ल्युट्] सुनना। कान। सुनने से उत्पन्न ज्ञान। श्रवणा नक्षत्र (इस अर्थ में पु० भी है)।—**इन्द्रिय** (**श्रवणेन्द्रिय**)– (न०) सुनने की शक्ति। कान। —**उदर** (**श्रवणोदर**)–(न०) कान का बाहरी भाग।—**गोचर**–(वि०) जो सुनाई पड़ने की सीमा में हो, श्रवणप्रत्यक्ष।—**द्वादशी**–(स्त्री०) भाद्रपद-शुक्ल-द्वादशी, वामनद्वादशी।—**पथ**–(पु०) कान।—**पालि**,—**पाली**–(स्त्री०) कान की नोक। —**विषय**– (पु०) श्रवणेन्द्रिय की सीमा में आने वाला विषय।—**सुभग**–(वि०) कर्णसुखद।

श्रवणा—(स्त्री०) [√श्रु + युच्–टाप्] बाईसवाँ नक्षत्र।

श्रवस्—(न०) [√श्रु + असि] कान। कीर्ति। यश। धन। शब्द।

श्रवाय्य—(पु०) [√श्रु+आय्य] वह पशु जो बलिदान के योग्य हो।

श्रविष्ठा—(स्त्री०) [श्रव: ख्याति: अस्ति अस्या:, श्रव+मतुप्, श्रववती + इष्ठन्, मतुपो लुक्] धनिष्ठा नक्षत्र। श्रवण नक्षत्र। —**ज**–(पु०) बुधग्रह।

√**श्रा**—अ० पर० सक० रींधना, पकाना। तर करना, नम करना। श्राति, श्रास्यति, अश्रासीत्।

श्राणा—(स्त्री०) [√श्रा+क्त–टाप्] यवागू। काँजी।

श्राद्ध—(न०) [श्रद्धा हेतुत्वेन अस्ति अस्य, श्रद्धा+अण्] शास्त्र तथा लोक विधि के अनुसार पितरों के निमित्त किया जाने वाला कर्म। पितरों के उद्देश्य से श्रद्धापूर्वक, अन्न आदि का दान] (वि०) श्रद्धायुक्त। श्राद्ध के सिलसिले में होने वाले काम।—**कर्मन्**–(न०),—**क्रिया**–(स्त्री०) अन्त्येष्टि क्रिया। —**कृत्**–(पु०) अन्त्येष्टि क्रिया करने वाला। —**द**–(पु०) श्राद्ध करने वाला।—**दिन**– (न०) वह दिन जिस दिन किसी मरे हुए के उद्देश्य से श्राद्ध कर्म किया जाय।—**देव**—(पु०),—**देवता**– (स्त्री०) श्राद्ध का अधिष्ठाता देवता। यमराज। वैवस्वत मनु।—**भुज्**, —**भोक्तृ**–(पु०) श्राद्ध में भोजन करने वाला ब्राह्मण। पितृपुरुष।

श्राद्धिक—(वि०) [स्त्री०—**श्राद्धिकी**] [श्राद्ध+ठन्] श्राद्ध सम्बन्धी। (न०) श्राद्ध में दी हुई भेंट। (पु०) वह जो श्राद्ध के अवसर पर पितरों के उद्देश्य से भोजन करता हो।

श्राद्धीय—(वि०) [श्राद्ध+छ] श्राद्ध संबन्धी।

श्रान्त—(वि०) [√श्रम्+क्त] थका हुआ। शान्त। जितेन्द्रिय। (पु०) साधु। संन्यासी।

श्रान्ति—(स्त्री०) [√श्रम्–क्तिन्] थकावट। श्रम। खेद।

√**श्राम्**—चु० पर० सक० सलाह देना। श्रामयति, श्रामयिष्यति, अशश्रामत्।

श्राम—(पु०) [√श्राम् + अच्] मास। समय। मण्डप।

श्राय—(पु०) [√श्रि+घञ्] संरक्षण, आश्रय।

श्राव—(पु०) [√श्रु+घञ्] सुनना, श्रवण।

श्रावक—(वि०) [√श्रु + ण्वुल्] सुनने वाला। (पु०) शिष्य। बौद्ध भिक्षुक। बौद्ध भक्त। कौआ।

श्रावण—(वि०) [स्त्री०—**श्रावणी**] [श्रवण + अण्] कान सम्बन्धी । श्रवण नक्षत्र में उत्पन्न । (पु०) [श्रवणेन युक्ता पौर्णमासी श्रावणी सा अस्मिन् मासे, श्रावणी + अण्] आषाढ़ के बाद और भादों के पहले का महीना, सावन । पाषंड । एक वैश्य तपस्वी, जो महाराज दशरथ के राज्य-काल में था ।

श्रावणिक—(वि०) [श्रावण + ठक्] श्रावण मास सम्बन्धी । (पु०) [श्रावणी पूर्णिमा अस्ति अस्मिन् मासे, श्रावणी + ठक्] श्रावण मास ।

श्रावणी—(स्त्री०) [श्रवणेन नक्षत्रेण युक्ता पौर्णमासी, श्रवण + अण्—ङीप्] श्रावण मास की पूर्णिमा, जिस दिन ब्राह्मणों का प्रसिद्ध त्योहार रक्षाबंधन होता है । इस दिन लोग यज्ञोपवीत का पूजन करते और नवीन यज्ञोपवीत भी धारण करते हैं ।

श्रावस्ति, श्रावस्ती—(स्त्री०) उत्तर कोशल में गंगा के तट पर बसी हुई एक बहुत प्राचीन नगरी ।

श्रावित—(वि०) [√श्रु + णिच् + क्त] सुनाया हुआ । कथित ।

श्राव्य—(वि०) [√श्रु + णिच् + यत्] सुनाने योग्य ।

√श्रि—भ्वा० उभ० सक० जाना । प्राप्त करना । आश्रय लेना । परिचर्या करना । व्यवहार करना । अक० अनुरक्त होना । बसना । श्रयति—ते, श्रयिष्यति—ते, अशिश्रियत्—त ।

श्रित—(वि०) [√श्रि + क्त] गया हुआ । रक्षा के लिये समीप आया हुआ । संयुक्त । रक्षित । परिचर्या किया हुआ । छाया हुआ । समाप्त । एकत्रित । अधिकृत ।

श्रिति—(स्त्री०) [√श्रि + क्तिन्] आश्रय, सहारा ।

√श्रिष्—भ्वा० पर० सक० जलाना । श्रेषति, श्रेषिष्यति, अश्रेषीत् ।

√श्री—क्र्या० उभ० सक० राँधना, पकाना । श्रीणाति—श्रीणीते, श्रेष्यति—ते, अश्रैषीत्—अश्रेष्ट ।

श्री—(स्त्री०) [√श्री + क्विप्] धन, सम्पत्ति । राजसी सम्पत्ति । गौरव, उच्चपद । सौन्दर्य । प्रभा । रंग । धन की अधिष्ठात्री देवी, लक्ष्मी । कोई गुण या सत्कर्म । सजावट, शृंगार । बुद्धि । वृद्धि । सिद्धि । अलौकिक शक्ति । धर्म, अर्थ और काम । सरल वृक्ष । बेल का पेड़ । लवङ्ग, लौंग । कमल । —**आह्व** (**श्र्याह्व**)—(न०) कमल ।—**ईश** (**श्रीश**)—(पु०) विष्णु का नामान्तर ।— **कण्ठ**—(पु०) शिव । भवभूति कवि ।— **कर**—(पु०) विष्णु । (न०) लाल कमल ।— **करण**—(न०) कमल । —**कान्त**— (पु०) विष्णु ।—**कारिन्**—(पु०) एक प्रकार का मृग ।—**गदित**—(न०) उपरूपक के अठारह भेदों में से एक । इसका दूसरा नाम श्रीरासिका भी है ।—**गर्भ**— (पु०) विष्णु का नामान्तर । तलवार ।—**ग्रह**— (पु०) कुण्ड या कठौता, जिसमें पक्षियों के लिये जल भरा जाय ।—**घन**—(न०) खट्टा दही । (पु०) बौद्ध भिक्षुक ।—**चक्र**—(न०) भूगोल । इन्द्र के रथ का एक पहिया ।—**ज**—(पु०) कामदेव का नामान्तर ।—**द**—(पु०) कुबेर का नामान्तर ।—**दयित**,—**धर**—(पु०) विष्णु का नामान्तर । —**नन्दन**—(पु०) कामदेव । लक्ष्मी का पुत्र ।—**निकेतन**,—**निवास**—(पु०) विष्णु का नामान्तर ।—**पति**—(पु०) विष्णु का नामान्तर । राजा ।—**पथ**—(पु०) राजमार्ग ।—**पर्ण**—(न०) कमल । अग्निमंथ वृक्ष ।—**पर्णी**— (स्त्री०) गंभारी वृक्ष । कट्फल वृक्ष । शाल्मली वृक्ष । अग्निमंथ वृक्ष ।—**पर्वत**—(पु०) एक पहाड़ का नाम ।—**पिष्ट**—(पु०) तारपीन ।—**पुत्र**— (पु०)

कामदेव । इन्द्र का घोड़ा, उच्चैःश्रवा । चन्द्रमा ।—पुष्प- (न०) लवंग ।—फल-(पुं०) बेल का पेड़ । (न०) बेल का फल ।—फला, —फली-(स्त्री०) नील का पौधा । आँवला ।—भ्रातृ- (पुं०) चन्द्रमा । घोड़ा ।—मस्तक-(पुं०) लहसुन । लाल आलू ।—मुद्रा- (स्त्री०) मस्तक पर लगाया जाने वाला वैष्णवों का तिलक विशेष ।—मूर्ति- (स्त्री०) श्रीलक्ष्मी जी की मूर्ति । किसी की भी मूर्ति ।—युक्त, —युत- (वि०) भाग्यवान् । आह्लादित । धनवान् । सौन्दर्यपूर्ण ।—रङ्ग-(पुं०) विष्णु भगवान् का नामान्तर ।—रस- (पुं०) तारपीन । राल ।—वत्स-(पुं०) विष्णु का नामान्तर । विष्णु के वक्षःस्थल का चिह्न विशेष । यह अंगुष्ठ प्रमाण श्वेत बालों का दक्षिणावर्त भौंरी का सा चिह्न है । इसे भृगु के चरण-प्रहार का चिह्न बतलाते हैं ।—वत्सकिन्-(पुं०) वह घोड़ा जिसकी छाती पर भौंरी हो ।—वर-(पुं०) विष्णु का नामान्तर ।—वल्लभ- (पुं०) विष्णु । सौभाग्यशाली पुरुष ।—वास- (पुं०) विष्णु का नामान्तर । शिव । कमल । तारपीन ।—वासस्-(पुं०) तारपीन ।—वृक्ष - (पुं०) बेल का वृक्ष । अश्वत्थ वृक्ष । घोड़े के माथे और छाती की भौंरी ।—वेष्ट- (पुं०) तारपीन । राल ।—संज्ञ- (न०) लवंग ।—सहोदर-(पुं०) चन्द्रमा ।—सूक्त-(न०) एक वैदिक सूक्त ।—हरि-(पुं०) विष्णु का नामान्तर ।—हस्तिनी- (स्त्री०) सूर्यमुखी का फूल ।

श्रीमत्—(वि०) [श्री + मतुप्] शोभायुक्त । धनवान्, धनी । सुन्दर । प्रसिद्ध । (पुं०) विष्णु का नामान्तर । कुबेर । शिव । तिलक वृक्ष । अश्वत्थ वृक्ष ।

श्रील—(वि०) [श्रीः अस्ति अस्य, श्री +लच्] धनी । भाग्यवान् । सुन्दर । विख्यात ।

√श्रु—भ्वा० पर० सक० जाना । श्रवति, श्रोष्यति, अश्रौषीत् । सुनना । सीखना । ध्यान देना । शृणोति, श्रोष्यति, अश्रौषीत् ।

श्रुत—(वि०) [√श्रु +क्त] सुना हुआ । जाना हुआ । सीखा हुआ । प्रसिद्ध, प्रख्यात । नामक । (न०) सुनने की वस्तु । वेद । विद्या ।—अध्ययन (श्रुताध्ययन)-(न०) वेदों का अध्ययन ।—अन्वित (श्रुतान्वित) -(वि०) वेदों का जानकार । —अर्थ (श्रुतार्थ)-(पुं०) कोई बात जिसकी सूचना मौखिक दी गयी है ।—कीर्ति-(वि०) प्रसिद्ध । (पुं०) उदार पुरुष । ब्रह्मर्षि । (स्त्री०) शत्रुघ्न की स्त्री का नाम ।—देवी- (स्त्री०) सरस्वती का नाम ।—धर-(वि०) जो पढ़ा हो उसे याद रखने वाला ।

श्रुतवत्—(वि०) [श्रुत + मतुप्] वेदज्ञ ।

श्रुति—(स्त्री०) [√श्रु+क्तिन्] सुनने की क्रिया । कान । किंवदंती, अफवाह । ध्वनि, आवाज । वेद । वेद-संहिता । श्रवण नक्षत्र । संगीत में किसी सप्तक के बाईस भागों में से एक अथवा किसी स्वर का एक अंश । स्वर का आरम्भ और अन्त इसी से होता है ।—उक्त(श्रुत्युक्त),—उदित (श्रुत्युदित)-(वि०) वेद-विहित, वेदों द्वारा आज्ञप्त ।—कट-(पुं०) सर्प । तप । प्रायश्चित्त।—कटु -(वि०)सुनने में कठोर । (पुं०) काव्य-रचना का एक दोष, कठोर एवं कर्कश वर्णों का व्यवहार, दुःश्रवणत्व ।—चोदन-(न०),—चोदना-(स्त्री०)वेद की आज्ञा ।—जीविका -(स्त्री०)स्मृतिशास्त्र ।—द्वैध-(न०) वेद वाक्यों का परस्पर विरोध या अनैक्य ।—निदर्शन- (न०) वेद का प्रमाण ।—

प्रसादन—(वि०) कर्ण-मधुर।—**प्रामाण्य**—(न०) वेद का प्रमाण।—**मण्डल** (न०) कान का बाहरी घेरा।—**मूल**—(न०) कान के नीचे का भाग। वेदसंहिता।—**मूलक**—(वि०) वेद से प्रमाणित।—**विषय**— (पुं०) शब्द। वेद सम्बन्धी विषय। कोई भी वैदिक आज्ञा।—**स्मृति**—(स्त्री०) वेद और धर्मशास्त्र।

श्रुव—(पुं०) [√श्रु+क] यज्ञ। स्रुवा।

श्रुवा—(स्त्री०) [श्रुव+टाप्] स्रुवा, चम्मच-नुमा लकड़ी का पात्र जिसमें भर कर शाकल्य की आहुति अग्नि में छोड़ी जाती है।—**वृक्ष**— (पुं०) विकंकत वृक्ष।

श्रेढी—(स्त्री०) [श्रेण्यं राशीकरणाय ढौकते, श्रेणी √ढौक् + ड, पृषो० साधुः] भिन्न जातीय द्रव्यों को मिलाने के लिये अंकशास्त्रोक्त गणना का एक भेद। एक प्रकार का पहाड़ा।

श्रेणि—(स्त्री०, पुं०), **श्रेणी**—(स्त्री०) [√श्रि+णि] [श्रेणि+ङीष्] रेखा, पंक्ति, अवली। समूह, समुदाय; 'न षट्पदश्रेणिभिरेव पङ्कजं सशैवलासङ्गमपि प्रकाशते' कु० ५.९। व्यवसायियों का संघ। कारीगरों का संघ। बालटी, डोल।—**धर्म**—(पुं०) व्यवसायियों की मंडली या पंचायत की रीति या नियम।

श्रेणिका—(स्त्री०) [श्रेणी + कन्—टाप्, ह्रस्व] खेमा, तंबू।

श्रेयस्—(वि०) [अयमनयोः अतिशयेन प्रशस्यः प्रशस्य + ईयसुन्, श्र आदेश] बेहतर, उत्कृष्टतर। उत्कृष्टतम, सर्वोत्तम। उपयुक्त। मंगलमय। (न०) धर्म। मोक्ष। शुभ, मंगल। सुख। पुण्य। यश।—**अर्थिन्** (**श्रेयोऽर्थिन्**)—(वि०) सुख-प्राप्ति का अभिलाषी। मङ्गलाभिलाषी।—**कर**—(वि०) कल्याणकारी, शुभदायक।—**परिश्रम** (**श्रेयःपरिश्रम**)—(पुं०) मोक्ष के लिये प्रयत्न।

श्रेयसी—(स्त्री०) [श्रेयस्+ङीप्] हर्रे। पाठा। गजपिप्पली। रास्ना।

श्रेष्ठ—(वि०) [अयमेषाम् अतिशयेन प्रशस्यः, प्रशस्य +इष्ठन्, श्र आदेश] सर्वोत्तम, सर्वोत्कृष्ट। अत्यन्त प्रसन्न। अत्यन्त समृद्धिशाली। सब से अधिक बड़ा। (न०) गौ का दूध। (पुं०) ब्राह्मण। राजा। कुबेर। विष्णु।—**आश्रम** (**श्रेष्ठाश्रम**)—(पुं०) गृहस्थ-आश्रम। गृहस्थ।—**वाच्**—(वि०) वाग्मी, अच्छा वक्ता।

श्रेष्ठिन्—(पुं०) [श्रेष्ठं धनादिकम् अस्ति अस्य, श्रेष्ठ+इनि] व्यापारियों की पंचायत का मुखिया। सेठ। अत्यंत धनी व्यक्ति।

√श्रै—भ्वा० पर० अक० पसीना निकलना। पसीजना। सक० रांधना, पकाना। श्रायति, श्रास्यति, अश्रासीत्।

√श्रोण्—भ्वा० पर० अक० जमा होना। सक० जमा करना, ढेर लगाना। श्रोणति, श्रोणिष्यति, अश्रोणीत्।

श्रोण—(वि०) [√श्रोण् + अच्] लँगड़ा। (पुं०) रोग विशेष।

श्रोणा—(स्त्री०) [श्रोण+टाप्] कांजी। भात का मांड। श्रवणनक्षत्र।

श्रोणि, श्रोणी—(स्त्री०) [√श्रोण् +इन्, पक्षे—ङीष्] कटि, कमर। चूतड़, नितंब; 'श्रोणीभारादलसगमना' मे० ८२। मार्ग, सड़क।—**फलक**—(न०) चौड़ा कटिप्रदेश या नितंब।—**बिम्ब**— (न०) गोल नितंब। कमरबंद, पटुका।—**सूत्र**—(न०) करधनी, मेखला।

श्रोतस्—(न०) [√श्रु + असुन्, तुट् आगम] कर्ण, कान। हाथी की सूँड़। इन्द्रिय। नदी का वेग, स्रोत।

श्रोतृ—(पुं०) [√श्रु+तृच्] सुनने वाला। शिष्य।

श्रोत्र—(न०) [√श्रु+ष्ट्रन्] कान । वेद-ज्ञान । वेद ।

श्रोत्रिय—(वि०) [छन्दो वेदम् अधीते वेत्ति वा, छन्दस्+घ, श्रोत्रादेश] वेद-वेदाङ्ग में पारङ्गत । (पुं०) विद्वान् ब्राह्मण, वेद या धर्मशास्त्रों में निष्णात विप्र ।—**स्व**-(न०) विद्वान् ब्राह्मण की सम्पत्ति ।

श्रौत—(वि०) [स्त्री०—**श्रौती**] [श्रुति+अण्] कान सम्बन्धी । वेदसम्बन्धी । वेदोक्त । (न०) वेदोक्त कर्म या क्रिया-कलाप । वैदिक विधान । तीनों प्रकार की विधान । तीनों प्रकार की (अर्थात् गार्हपत्य, आहवनीय और दक्षिण] अग्नि ।—**सूत्र**-(न०) यज्ञादि के विधान वाले सूत्र, कल्पग्रन्थ का वह अंश जिसमें पौर्णमास्येष्टि से लेकर अश्वमेध पर्यन्त यज्ञों के विधान का निरूपण किया गया है ।

श्रौत्र—(न०) [श्रोत्र+अण् (स्वार्थे)] कान । [श्रोत्रिय+अण्, यलोप] श्रोत्रिय का कर्म या भाव, श्रोत्रियत्व ।

श्रौषट्—(अव्य०) [√श्रु+डौषट्]वषट् या वौषट् का पर्यायवाची शब्द । यज्ञ में हविर्दान के समय इसका उच्चारण किया जाता है ।

श्लक्ष्ण—(वि०) [श्लिष् + क्स्न, उपधाया अकारः] कोमल, मुलायम, सुकुमार । चमकदार । चिकना । सूक्ष्म । पतला । मनोहर । ईमानदार ।

श्लक्ष्णक—(न०) [श्लक्ष्ण + कन्] सुपारी, पूगीफल ।

√श्लङ्क्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । श्लङ्कते, श्लङ्किष्यते, अश्लङ्किष्ट ।

√श्लङ्ग्—भ्वा० पर० सक० जाना । श्लङ्गति, श्लङ्गिष्यति, अश्लङ्गीत् ।

√श्लथ्—चु० उभ० अक० ढीला होना, शिथिल होना । कमजोर होना, निर्बल होना । सक० ढीला करना, शिथिल करना । चोटिल करना । वध करना । श्लथयति—ते, श्लथयिष्यति—ते, अशश्लथत्—त ।

श्लथ—(वि०) [√श्लथ् + अच्] बंधन-रहित । ढीला, खसका हुआ; 'वृन्ताच्छ्लथं पुष्पमनोकहानाम्' र० ५.३७ । बिखरे हुए (जैसे बाल) ।

√श्लाख्—भ्वा० पर० सक० व्याप्त करना । श्लाखति, श्लाखिष्यति, अश्लाखीत् ।

√श्लाघ्—भ्वा० आत्म० सक० अपने गुणों को प्रकट करना, अपनी प्रशंसा करना । सराहना, प्रशंसा करना । चापलूसी करना । श्लाघते, श्लाघिष्यते, अश्लाघिष्ट ।

श्लाघन—(न०) [√श्लाघ् + ल्युट्] अपनी प्रशंसा करना । चापलूसी करना ।

श्लाघा—(स्त्री०) [√श्लाघ् + अ—टाप्] प्रशंसा, तारीफ । आत्म-प्रशंसा, अभिमान । चापलूसी । सेवा, परिचर्या । कामना ।—**विपर्यय**-(पुं०) अभिमान का अभाव; 'त्यागे श्लाघाविपर्ययः' र० १.२२ ।

श्लाघित—(वि०) [√श्लाघ् + क्त] प्रशंसित, तारीफ किया हुआ ।

श्लाघ्य—(वि०) [√श्लाघ् + ण्यत्] प्रशंसनीय । सम्माननीय ।

श्लिकु—(पुं०) [√श्लिष्+कु, पृषो० साधुः] लंपट, कामुक । गुलाम, चाकर । (न०) ज्योतिर्विद्या के अन्तर्गत गणित ज्योतिष और फलित ज्योतिष ।

श्लिक्यु—(पुं०) [√श्लिष् + क्यु, पृषो० साधुः] लंपट, कामुक । चाकर ।

√श्लिष्—भ्वा० पर० सक० जलाना । श्लेषति, श्लेषिष्यति, अश्लेषीत् । दि० पर० सक० आलिंगन करना । मिलाना, जोड़ना । पकड़ना, ग्रहण करना । समझना । श्लिष्यति, श्लेक्ष्यति, अश्लिषत् (आलिंगने तु) अश्लिक्षत् ।

श्लिषा—(स्त्री०) [√श्लिष् + अ—टाप्] आलिंगन ।

श्लिष्ट—(वि०) [√श्लिष् + क्त] आलिङ्गन किया हुआ। मिला हुआ, सटा हुआ। (साहित्य में) श्लेषयुक्त अर्थात् जिसके दुहरे अर्थ हों।

श्लिष्टि—(स्त्री०) [√श्लिष् + क्तिन्] आलिङ्गन। लगाव, सटाव।

श्लीपद—(न०) [श्रीयुक्तं वृत्तियुक्तं पदम् अस्मात्, पृषो० साधुः] टाँग फूलने का रोग, फील पाँव।—**प्रभव**-(पुं०) आम का वृक्ष।

श्लील—(वि०) [श्रीः अस्ति अस्य, श्री+लच्, पृषो० रस्य लः] शोभायुक्त। मङ्गलकारी, शुभ। उत्तम।

श्लेष—(पुं०) [√श्लिष् + घञ्] आलिंगन, परिरम्भण; 'निरन्तरश्लेषघनाः' का०। जोड़, मिलान। एक में सटने या लगने का भाव। साहित्य में एक अलङ्कार जिसमें एक शब्द के दो या अधिक अर्थ लिये जाते हैं, दो अर्थ वाले शब्दों का प्रयोग।

श्लेष्मक—(पुं०) [श्लेष्मन् + कन्] कफ, बलगम।

श्लेष्मण—(वि०) [श्लेष्मन् + न] बलगमी, कफ वाला या कफ की प्रकृति वाला।

श्लेष्मन्—(पुं०) [√श्लिष्+मनिन्] कफ, बलगम।—**अतीसार** (**श्लेष्मातीसार**)-(पुं०) कफ के प्रकोप से उत्पन्न हुआ अतीसार अर्थात् दस्तों का रोग।—**ओजस्** (**श्लेष्मौजस्**)- (न०) कफ की प्रकृति।—**घ्ना**, —**घ्नी**- (स्त्री०) मल्लिका, मोतिया का एक भेद। केतकी, केवड़ा। महाज्योतिष्मती लता। त्रिकुट। पुनर्नवा।

श्लेष्मल—(वि०) [श्लेष्मन् + लच्] कफ वाला, बलगमी।

श्लेष्मात, श्लेष्मातक—(पुं०) [श्लेष्मन् √अत्+अच्] [श्लेष्मण अन्तक इव, ष० त०] लिसोढ़ा, बहुवार वृक्ष।

√श्लोक्—भ्वा० आत्म० सक० श्लोक बनाना, पद्य रचना। प्राप्त करना। त्याग देना, छोड़ देना। प्रशंसा करना। अक० इकट्ठा होना। श्लोकते, श्लोकिष्यते, अश्लोकिष्ट।

श्लोक—(पुं०) [√श्लोक् + अच्] स्तुति, प्रशंसा। कीर्ति, यश; 'पुण्यश्लोको नलो-राजा पुण्यश्लोको युधिष्ठिरः' सुभा०। पद्य। ऐसा छन्द या गीत जो प्रशंसा करने के लिए बनाया गया हो। प्रशंसा करने की वस्तु। लोकोक्ति, कहावत। संस्कृत का कोई पद्य जो अनुष्टुप् छन्द में हो।

√श्लोण्—भ्वा० पर० सक० ढेर करना, एकत्र करना। श्लोणति, श्लोणिष्यति, अश्लोणीत्।

श्लोण—(पुं०) [√श्लोण् + अच्] लँगड़ा।

√श्वङ्क्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। श्वङ्कते, श्वङ्किष्यते, अश्वङ्किष्ट।

√श्वच्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। अक० फटना। श्वचते, श्वचिष्यति, अश्वचिष्ट।

√श्वञ्च्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। श्वञ्चते, श्वञ्चिष्यते, अश्वञ्चिष्ट।

√श्वठ्—भ्वा० उभ० सक० जाना। सजाना। समाप्त करना। श्वठयति—ते, श्वठयिष्यति—ते, अशिश्वठत्—त।

√श्वण्ठ्—दे० '√श्वठ्'। श्वण्ठयति—ते।

श्वन्—(पुं०) [√श्वि+कनिन् (समास में न का लोप हो जाता है)]। कुत्ता।—**क्रीडिन्** -(वि०) कुत्ते के साथ क्रीड़ा करने वाला। कुत्तों को पालने वाला।—**गण**-(पुं०) कुत्तों का झुण्ड।—**गणिक**- (पुं०) शिकारी। कुत्तों को खिलाने वाला।—**धूर्त**- (पुं०) शृगाल।—**नर**-(पुं०) कठोर बातें कहने वाला मनुष्य।—**निश**-(न०), —**निशा**- (स्त्री०) वह रात जब कुत्ते भूँकें।—**पच्**, — **पच**-(पुं०) चाण्डाल, पतित जाति का आदमी। कुत्ते

का मांस खाने वाला व्यक्ति । —**पाक**– (पुं०) चाण्डाल ।—**फल**– (न०) नीबू या जंभीरी ।—**फल्क**–(पुं०) अक्रूर के पिता का नाम ।—**भीरु**–(पुं०) स्यार, शृगाल ।—**यूथ**–(न०) कुत्तों का झुण्ड ।—**वृत्ति**– (स्त्री०) पराधीन वृत्ति, सेवा, नोकरी ।—**व्याघ्र**–(पुं०) शिकारी जानवर । चीता ।—**हन्**–(पुं०) शिकारी ।

√**श्वभ्र्**—चु० उभ० सक० जाना । छेद करना । अक० दरिद्रता में रहना । श्वभ्रयति —ते, श्वभ्रयिष्यति — ते, अशश्वभ्रत्—त ।

श्वभ्र–(न०) [√श्वभ्र+अच्]छिद्र, सूराख ।

श्वय—(पुं०) [√श्वि + अच्] सूजन, शोथ । वृद्धि, स्फीति ।

श्वयथु—(पुं०) [√श्वि+अथुच्] सूजन ।

श्वयीची—(स्त्री०) [√श्वि+ईचि+ङीप्] पीड़ा । बीमारी, रोग ।

√**श्वल्**—भ्वा० पर० अक० दौड़ना । श्वलति, श्वलिष्यति, अश्वालीत् ।

√**श्वल्क्**—चु० उभ० सक० कहना । वर्णन करना । श्वल्कयति—ते, श्वल्कयिष्यति —ते, अशश्वल्कत्—त ।

√**श्वल्ल्**—भ्वा० पर० अक० दौड़ना । श्वल्लति, श्वल्लिष्यति, अश्वल्लीत् ।

श्वशुर—(पुं०) [शु आशु अश्नुते, शु√अश् +उरच्] ससुर, पत्नी या पति का पिता ।

श्वशुरक—(पुं०) [श्वशुर+कन्] ससुर ।

श्वशुर्य—(पुं०) [श्वशुरस्यापत्यम्, श्वशुर +यत्] साला, पत्नी का भाई । देवर, पति का छोटा भाई ।

श्वश्रू—(स्त्री०) [श्वशुर+ऊङ्, उकार-अकारलोप] पति या पत्नी की माता, सास ।

√**श्वस्**–अ० पर० अक० जीना । साँस लेना । श्वसिति, श्वसिष्यति, अश्वसीत् । सोना (वैदिक) । श्वस्ति, श्वसिष्यति, अश्वसीत् ।

श्वस्—(अव्य०) [आगामि अहः पृषो० साधुः] कल (जो आने वाला है) ।—**श्रेयस**(**श्वःश्रेयस**) –(न०) [श्वः परदिने भाविकाले श्रेयो यस्मात्, अच् समा०] मंगल । सुख । ब्रह्म । (वि०) कल्याण-युक्त ।

श्वसन—(न०) [√श्वस् + ल्युट्] जीना । साँस लेना । हाँफना । आह भरना । निःश्वास । (पुं०)[श्वस्+ल्यु] पवन; 'श्वसनचलितपल्लवाधरोष्ठे' कि० १०.३४ । एक दैत्य जिसका वध इन्द्र ने किया था । मदन वृक्ष । —**अशन** (**श्वसनाशन**)– (पुं०) साँप ।—**ईश्वर** (**श्वसनेश्वर**)– (पुं०) अर्जुन वृक्ष । —**उत्सुक** (**श्वसनोत्सुक**)– (पुं०) साँप । —**ऊर्मि** (**श्वसनोर्मि**)–(स्त्री०) हवा का झोंका ।

श्वसित—(वि०) [√श्वस् + क्त] श्वास-युक्त, जीवित । आह भरने वाला । श्वास निकालने, ग्रहण करने वाला । (न०) श्वास । आह ।

श्वस्तन, श्वस्त्य—(वि०) [स्त्री०–श्वस्तनी] [श्वस्+ट्युल्, तुट्] [श्वस्+त्यप्] आने वाले कल से सम्बन्ध युक्त ।

श्वाकर्ण—(पुं०) [शुनः कर्णः, ष० त०, अन्येषामपीति दीर्घः] कुत्ते के कान ।

श्वागणिक—(पुं०) [श्वगणेन चरति, श्वगण +ठञ्] वह जो कुत्ते पालकर जीविका निर्वाह करे ।

श्वादन्त—(वि०) [शुनो दन्त इव दन्तो यस्य, ब०, स०, नि० दीर्घ] कुत्ते के समान दाँत वाला ।

श्वान—(पुं०) [श्वन्+अण् (स्वार्थे)] कुत्ता । —**निद्रा**–(स्त्री०) ऐसी नींद जो जरा सा खटका होते ही उचट जाय, झपकी ।

श्वापद—(वि०) [स्त्री०—श्वापदी] [शुन इव आपद् यस्मात्, अच् समा०] हिंसक । बर्बर । भयंकर । (पुं०) हिंसक पशु, व्याघ्रादि । चीता ।

श्वापुच्छ—(न०) [शुनः पुच्छम्, ष० त०, नि० दीर्घ] कुत्ते की पूंछ ।

श्वाविध्—(पु०) [शुना आविध्यते, श्वन्–आ √ व्यध्+क्विप्] साही, शल्य ।

श्वास—(पु०) [√श्वस् + घञ्] सांस । आह; 'अद्यापि स्तनवेपथुं जनयति श्वासः प्रमाणाधिकः' श० १.२९ । पवन । दमा की बीमारी ।—**कास**- (पु०) दमे का रोग । —**रोध**- (पु०) सांस की रुकावट ।—**हिक्का**-(स्त्री०)एक प्रकार की हिचकी । —**हेति**-(स्त्री०) निद्रा, नींद ।

श्वासिन्—(वि०) [श्वास+इनि] सांस लेने वाला । (पु०) [√श्वस् + णिच्+णिनि] पवन ।

√**श्वि**—भ्वा० पर० अक० उगना । बढ़ना । सूजना । फलना-फूलना । सक० समीप जाना । श्वयति, श्वयिष्यति, अशिश्वियत्–अश्वत्–अश्वयीत् ।

√**श्वित्**—भ्वा० आत्म० अक० सफेद होना । श्वेतते, श्वेतिष्यते, अश्वितत्–अश्वेतिष्ट ।

श्वित्र—(न०) [√श्वित् + रक्] सफेद कोढ़ । कोढ़ का दाग; 'स्याद् वपुः सुन्दरमपि श्वित्रेणैकेन दुर्भगं' काव्य० १.७ ।—**घ्नी**-(स्त्री०) पीतपर्णी, बिडाली का पौधा ।

श्वित्रिन्—(वि०) [स्त्री०—**श्वित्रिणी**] [श्वित्र+इनि] कोढ़ी, कोढ़-वाला । (पु०) कोढ़ का रोगी ।

√**श्विन्द्**—भ्वा० आत्म० अक० सफेद हो जाना । श्विन्दते, श्विन्दिष्यते, अश्विन्दिष्ट ।

श्वेत—(वि०) [स्त्री०—**श्वेता** या **श्वेती**] [√श्वित्+अच् वा घञ्] सफेद, उजला; 'ततः श्वेतैर्हयैर्युक्ते महति स्यन्दने स्थितौ' भग० १.१४ । (न०) चाँदी । (पु०) सफेद रङ्ग । शंख । कौड़ी । शुक्रग्रह का अधिष्ठातृ देवता । सफेद बादल । सफेद जीरा । एक पर्वत-माला का नाम । ब्रह्माण्ड का एक भाग ।—**अम्बर** (**श्वेताम्बर**-) (पु०) जैन साधुओं का एक भेद, जैनियों के दो प्रधान सम्प्रदायों में से एक ।—**इक्षु** (**श्वेतेक्षु**)- (पु०) एक प्रकार का गन्ना । —**उदर** (**श्वेतोदर**)-(पु०) कुबेर का नामान्तर ।—**कमल**, —**पद्म**- (न०) सफेद कमल ।—**कुञ्जर**- (पु०) ऐरावत हाथी ।—**कुष्ठ**- (न०) सफेद कोढ़ ।—**केतु**-(पु०) महर्षि उद्दालक के पुत्र का नाम । बोधिसत्त्व की अवस्था में गौतम बुद्ध का नाम ।—**कोल**-(पु०) शफरी मछली ।—**गज**, —**द्विप**-(पु०) सफेद हाथी । इन्द्र का हाथी ।—**गरुत्**- (पु०) हंस ।—**च्छद**- (पु०) हंस । तुलसी ।—**द्वीप**-(पु०) महाद्वीप के अष्टादश विभागों में से एक ।— **धातु**-(पु०) सफेद खनिज पदार्थ । खड़िया मिट्टी ।—**धामन्**- (पु०) चन्द्रमा । कपूर । समुद्रफेन ।—**नील**-(पु०) बादल ।— **पत्र**-(पु०) हंस ।—**पाटला**- (स्त्री०) श्वेतपुष्प पाटल वृक्ष । —**पिङ्ग**-(पु०) सिंह । शिव का नामान्तर ।—**पुष्प**- (पु०) सिंधुवार वृक्ष । (न०) सफेद फूल ।—**पुष्पा** -(स्त्री०) घोषातकी । मृगेर्वारु । नागदंती ।—**मरिच**-(न०) सफेद मिर्च ।—**माल**-(पु०)बादल । धुआँ ।— **रक्त**-(पु०) गुलाबी रङ्ग ।—**रञ्जन**-(न०) सीसा ।— **रथ**-(पु०) शुक्रग्रह ।—**रोचिस्**- (पु०) चन्द्रमा ।—**रोहित** -(पु०) गरुड़ का नामान्तर ।—**वल्कल**- (पु०) गूलर का पेड़ ।—**वाजिन्**-(पु०)चन्द्रमा । अर्जुन ।—**वाह्**-(पु०) इन्द्र का नाम । अर्जुन का नाम । चन्द्र का नाम ।— **वाहन**-(पु०) अर्जुन । इन्द्र । चन्द्रमा । मकर, घड़ियाल ।—**वाहिन्**- (पु०) अर्जुन । —**शुङ्ग**,—**शृङ्ग**-(पु०) जौ, यव ।—**हय**- (पु०) इन्द्र का घोड़ा । अर्जुन ।—**हस्तिन्** -(पु०) इन्द्र का हाथी, ऐरावत ।

श्वेतक—(पुं०) [श्वेत + कन्] कौड़ी । (न०) चाँदी ।

श्वेता—(स्त्री०) [√श्वित् + अच्—टाप्] कौड़ी । पुनर्नवा । सफेद दूर्वा । स्फटिक । मिस्री । वंशलोचन । अतिविषा, अतीस । श्वेत अपराजिता । श्वेत कंटकारी । श्वेत वृहती । काष्ठपाटला । शंखिनी । स्फटी, फिटकिरी । अग्नि की एक जिह्वा ।

श्वेतौही—(स्त्री०) [श्वेतवाह् + ङीप्] इन्द्र-पत्नी शची का नाम ।

श्वेत्र—(न०) सफेद कोढ़ ।

श्वैत्य—(न०) [श्वेत + ष्यञ्] सफेदी । सफेद कोढ़ ।

श्वैत्र, श्वैत्र्य—(न०) [श्वित्र+अण्] [श्वित्र+ष्यञ्] सफेद कोढ़ ।

श्वोवसीयस—(न०) [अतिशयेन वसुः, वसु+ईयसुन्, श्वः वसीयस्, मयू० स०, अच्] कल्याण, मंगल । मोक्ष । (वि०) कल्याण-युक्त । भावीशुभ-सम्पन्न ।

ष

ष—संस्कृत या हिन्दी वर्णमाला के व्यञ्जन वर्णों में ३१वाँ वर्ण या अक्षर । इसका उच्चारण-स्थान मूर्द्धा है। इसीलिए यह मूर्द्धन्य ष कहलाता है । इसका उच्चारण कुछ लोग "श" के समान और कुछ लोग "ख" के समान करते हैं ।[विशेष—अनेक धातुएँ जो "स" अक्षर से प्रारम्भ होती हैं धातु-पाठ में "ष" से लिखी गयी हैं, क्योंकि स्थान-विशेषों में स के स्थान पर ष हो जाता है । ऐसी धातुएँ "स" अक्षर-शब्दावली में यथास्थान पायी जायँगी] (वि०) [√सो+क,पृषो०षत्व]सर्वोत्तम, सर्वोत्कृष्ट। (पुं०) नाश । अवसान । शेष, बाकी । मुक्ति, मोक्ष ।

षट्क—(वि०) [षड्भिः क्रीतम्, षष्+कन्] छः गुने से खरीदा हुआ । (न०) [स्वार्थ कन्] छः वस्तुओं का समुदाय ।

षड्धा—(पुं०) [षष् + धाच्] छः प्रकार से ।

षण्ड—(पुं०) [√सन् + ड, पृषो० षत्व] बैल । नपुंसक । समूह । ढेर । पद्मसमूह । चिह्न । शिव । धृतराष्ट्र का एक पुत्र ।

षण्डक—(पुं०) [षण्ड + कन्] हिजड़ा, खोजा, नपुंसक ।

षण्डाली—(स्त्री०) [षण्ड√ अल् + अच् —ङीष्] ताल, तलैया । व्यभिचारिणी, दुश्चरित्रा स्त्री । एक छटांक तेल नापने का पात्र ।

षण्ढ—(पुं०) [√ सन्+ढ, पृषो० षत्व] हिजड़ा, नपुंसक । नपुंसकलिङ्ग । शिव । धृतराष्ट्र का एक पुत्र ।

षष्—(वि०) [√सो+क्विप्, पृषो० साधुः] छः, पांच और एक (इसका प्रयोग बहुवचन में होता है । प्रथमा एवं समास में इसका रूप षट् होता है) ।—**अक्षीण** (**षडक्षीण**) –(पुं०) मछली ।—**अग्नि** (**षडग्नि**)–(पुं०) कर्मकाण्ड संबंधी छः प्रकार की अग्नि—गार्हपत्य, आहवनीय, दक्षिणाग्नि, सभ्याग्नि, आवसथ्य और औपसनाग्नि ।—**अङ्ग** (**षडङ्ग**)– (न०) शरीर के ६ अवयवों का समुदाय [वे छः अवयव ये हैं ।— 'जंघे बाहू शिरो मध्यं षडङ्ग-मिदमुच्यते ।'—अर्थात् दो जाँघें, दो बाहें, सिर और धड़ । वेद के छः अङ्ग [यथा —शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष] । गौ से प्राप्त छः शुभ पदार्थ [यथा—गोमूत्र, गोबर, दूध, घी, दही और गोरोचन] ।—०**धूप** (**षडङ्ग-धूप**)– (पुं० चीनी, गोघृत, मधु, गुग्गुल, अगरु काष्ठ और श्वेत चंदन के मिश्रण से बत्ती के समान बना कर सुलगाया हुआ धूप ।—**अङ्घ्रि** (**षडङ्घ्रि**)–(पुं०) भ्रमर, भौंरा ।— **अधिक** (**षडधिक**)–(वि०) जिसमें छः अधिक हों ।—**अभिज्ञ** (**षड-**

मिज्ञ)–(पुं०) बुद्ध । नीचे की ६ बातों का धारण करने वाला —१–दिव्य चक्षु और श्रोत्र । २– दूसरे के चित्त का ज्ञान । ३–पूर्व जन्म का स्मरण । ४–आत्म-ज्ञान । ५–आकाश में गति । ६– दूसरे के शरीर में प्रवेश ।— **अशीत** (**षडशीत**)– (वि०) छियासीवाँ ।—**अशीति** (**षडशीति**)– (स्त्री०) छियासी । —**अह** (**षडह**)–(पुं०) छः दिन की अवधि या समय ।—**आनन** (**षडानन**), —**वक्त्र** (**षड्वक्त्र**),— **वदन** (**षड्वदन**)– (पुं०) कार्त्तिकेय; 'षडाननापीतपयोधरासु नेता चमूनामिव कृत्तिकासु' र० १४.२२ ।— **आम्नाय** (**षडाम्नाय**)– (पुं०) छः प्रकार के तन्त्र ।—**कर्ण** (**षट्कर्ण**)– (वि०) छः कानों वाला । छः कानों द्वारा सुना गया (यथा—कोई बात जिसे कहने-सुनने वाले के अतिरिक्त तीसरे ने भी सुना हो ।). (न०) एक प्रकार की वीणा ।—**कर्मन्** (**षट्कर्मन्**)–(न०) ब्राह्मण के छः कर्म [यथा—पढ़ना, पढ़ाना, यज्ञ कराना, यज्ञ करना, दान लेना और दान देना]। वे छः कार्य जो ब्राह्मण की जीविका के लिए विहित बतलाये गये हैं (यथा—उञ्छं प्रतिग्रहो भिक्षा वाणिज्यं पशुपालनम् । कृषिकर्म तथा चेति षट् कर्माण्यग्रजन्मनः ॥) । तन्त्र द्वारा किये जाने वाले छः कर्म [यथा—शान्ति, वशीकरण, स्तम्भन, विद्वेष, उच्चाटन और मारण] । छः कर्म जो योगियों को करने पड़ते हैं (यथा—धौतिर्वस्तिस्तथा नेतिर्नालिकी त्राटकस्तथा । कपालभातिश्चैतानि षट् कर्माणि समाचरेत् ॥) । (पुं०) ब्राह्मण ।—**कोण** (**षट्कोण**)– (न०) छः कोने की शकल । इन्द्र का वज्र ।—**गव** (**षड्गव**)– (न०) ऐसा जुआ जिसमें छः बैल जोते जायें या छः बैलों का समुदाय ।—**गुण** (**षड्गुण**)–(वि०) छः गुना । छः गुणों वाला । छः गुणों का समुदाय । राजनीति के छः अङ्ग [यथा—सन्धि, विग्रह, यान (चढ़ाई), आसन (विश्राम), द्वैधीभाव और संश्रय] । —**ग्रन्थि** (**षड्ग्रन्थि**)–(पुं०) पिपरामूल । —**ग्रन्थिका** (**षड्ग्रन्थिका**) –(स्त्री०) शटी ।—**चक्र** (**षट्चक्र**)– (न०) हठ योग में माने हुए कुण्डलिनी के ऊपर पड़ने वाले छः चक्र (मूलाधार, अधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्ध और आज्ञा) । षड्यंत्र । —(**चत्वारिंश**)–**षट्चत्वारिंश** (वि०) छियालिसवाँ । —**चत्वारिंशत्** (**षट्चत्वारिंशत्**)– छियालीस ।—**चरण** (**षट्चरण**) –(पुं०) भौंरा, भ्रमर । टिड्डी । जूँ ।—**ज** (**षड्ज**) –(पुं०) सरगम का प्रथम स्वर । (यह मयूर के शब्द से मिलता है और इसका संकेत 'सा' है); 'षड्जसंवादिनीः केका द्विधा भिन्नाः शिखण्डिभिः' र० १.३९ । ब्रह्मा का १६वाँ कल्प । —**त्रिंश** (**षट्त्रिंश**)–(वि०) छत्तीसवाँ । —**त्रिंशत्** (**षट्त्रिंशत्**)– (स्त्री०) छत्तीस । —**दर्शन** (**षड्दर्शन**)– (न०) हिन्दूशास्त्र के छः दर्शन या छः दार्शनिक सिद्धान्त [यथा—सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा और वेदान्त] । —**दुर्ग** (**षड्दुर्ग**)– (न०) छः प्रकार के दुर्गों का समुदाय [यथा—धन्वदुर्गं, महीदुर्गं, गिरिदुर्गं तथैव च । मनुष्यदुर्गं, मृद्दुर्गं, वनदुर्गमिति क्रमात् ॥] । —**नवति** (**षण्णवति**) –(स्त्री०) छियानवे ।—**पञ्चाशत्** (**षट्पञ्चाशत्**) – (स्त्री०) छप्पन ।—**पद** (**षट्पद**)– (पुं०) भौंरा, भ्रमर । जूँ ।—**०ज्य**– (पुं०) कामदेव ।— **०प्रिय**–(पुं०) नागकेसर । कमल ।—**पदी** (**षट्पदी**)– (स्त्री०) एक छंद जिसमें छः पद या चरण

होते हैं। भौंरी, भ्रमरी। किलनी।—**प्रज्ञ** (**षट्प्रज्ञ**)–(पुं०) धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, लोकार्थ और तत्त्वार्थ का ज्ञाता। कामुक। —**बिन्दु** (**षड्बिन्दु**)– (पुं०) विष्णु। —**भुजा** (**षड्भुजा**)–(स्त्री०) दुर्गा देवी। खरबूजा।—**मुख** (**षण्मुख**)– (पुं०) कार्तिकेय।— **मुखा** (**षण्मुखा**) –(स्त्री०) खरबूजा।—**रस** (**षड्रस**)– (न०) छः प्रकार के रसों का समुदाय (यथा—मधुरो लवणस्तिक्तः कषायोऽम्लः कटुस्तथा)।— **वर्ग** (**षड्वर्ग**) –(पुं०) छः वस्तुओं का समुदाय। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर का समूह; 'कृतारिषड्वर्गजयेन' कि० १.९।—**विंशति** (**षड्विंशति**)–(स्त्री०) छब्बीस।— **विंश** (**षड्विंश**)–(वि०) छब्बीसवाँ। —**विध** (**षड्विध**)–(त्रि०) छः प्रकार का।—**षष्टि** (**षट्षष्टि**)– (स्त्री०) छियासठ।—**सप्तति** (**षट्सप्तति**)– (स्त्री०) छिहत्तर।

षष्टि—(स्त्री०) [षड्गुणिता दशतिः नि० साधुः] साठ की संख्या (वि०) साठ।— **भाग**– (पुं०) शिव जी।—**मत्त**–(पुं०) वह हाथी जो ६० वर्ष का होने पर भी मदमत्त हो।—**योजनी**–(स्त्री०) साठ योजन की दूरी या यात्रा।—**लता**– (स्त्री०) भ्रमरमारी नामक लता।— **संवत्सर**– (पुं०) ज्योतिष में प्रसिद्ध प्रभव आदि साठ वर्ष का काल।—**हायन**–(पुं०) ६० वर्ष की उम्र का हाथी। साठी धान।

षष्टिक—(वि०) [षष्ट्या क्रीतः, षष्टि +कन्] साठ (रुपये आदि) में खरीदा हुआ। (पुं०) [षष्ट्या अहोभिः पच्यते, षष्टि+कन्] साठी धान।

षष्टिक्य—(न०) [षष्टिकधान्यस्य भवनं क्षेत्रम्, षष्टिक+यत्] साठी धान बोने योग्य खेत।

षष्ठ—(वि०) [स्त्री०—**षष्ठी**] [षण्णां पूरणः, षष्+डट्, थुक्] छठा।—**अंश** (**षष्ठांश**) –(पुं०) छठा भाग, विशेष-कर पैदावार का छठा भाग जो राजा अपनी प्रजा से ले।

षष्ठी—(स्त्री०) [षष्ठ + ङीप्] तिथि छठ। सम्बन्ध कारक। कात्यायनी देवी।– **तत्पुरुष**–(पुं०) तत्पुरुष समास का एक भेद जिसमें पूर्वपद सम्बन्धकारक का रहता है (जैसे—राज्ञः पुरुषः राजपुरुषः)। —**पूजन**–(न०), —**पूजा**– (स्त्री०) बालक उत्पन्न होने से छठे दिन होने वाली षष्ठी देवी की पूजा।

षहसानु—(पुं०) [√सह्+आनु, असुक्, पृषो० षत्व] मयूर। यज्ञ।

षाट्—(अव्य०) [√सह्+ण्वि, पृषो० षत्व, टत्व] सम्बोधनात्मक अव्यय।

षाट्कौशिक—(त्रि०) [स्त्री०—**षाट्कौशिकी**] [षट्कोश+ठक्] छः पर्तों में लपेटा हुआ या छः म्यानों वाला।

षाडव—(पुं०) [षष् √अव्+अच्, ततः स्वार्थे अण्] मनोविकार, मनोराग। संगीत। राग की एक जाति जिसमें केवल छः स्वर (स, रे, ग, म, और ध) लगते हैं और निषाद वर्जित है।

षाड्गुण्य—(न०) [षड्गुण + ष्यञ्] छः उत्तम गुणों का समूह। राजनीति के छः अङ्ग; 'षाड्गुण्यमुपयुञ्जीत शक्त्यपेक्षो रसायनम्' शि० २.९३। किसी वस्तु को छः से गुणा करने से प्राप्त गुणनफल।—**प्रयोग**– (पुं०) राजनीति के छः अङ्गों का प्रयोग।

षाण्मातुर—(पुं०) [षण्णां मातॄणाम् अपत्यम्, षण्मातृ + अण्, उत्व, रपर] वह जिसकी छः माताएँ हैं, कार्तिकेय।

षाण्मासिक—(वि०) [**षाण्मासिकी**] [षण्मास+ठञ्] छमाही। छः मास का या छः मास का पुराना।

षाष्ठ—(वि०) [स्त्री०—**षाष्ठी**] [षष्ठ+अण् (स्वार्थे)] छठा।

षिड्ग—(पुं०) [√सिद्+गन्, पृषो० षत्व] कामुक पुरुष, व्यभिचारी पुरुष; 'षिड्गैरगवत ससंभ्रममेव काचित्' शि० ५.३४। विट। वेश्या रखने वाला व्यक्ति।

षु—(पुं०) [√सु+डु, पृषो० षत्व] प्रसव, जनन।

षोडत्—(पुं०) [षट् दन्ता यस्य, दन्तस्य दतृ, षष उत्वम्, दस्य डुत्वम्] छः दाँतों वाला बैल (आदि)।

षोडश—(वि०) [स्त्री०—**षोडशी**] [षोडशानां पूरणः, षोडशन्+डट्] सोलहवाँ।

षोडशन्—(वि०) [षट् अधिका दश, षष उत्वम्, दस्य डुत्वम् (समास में न का लोप हो जाता है)] सोलह। —**अंशु** (षोडशांशु)— (पुं०) शुक्रग्रह। —**अङ्ग** (षोडशाङ्ग)—(पुं०) १६ प्रकार के गंधद्रव्यों से तैयार किया हुआ धूप। —**अङ्गुलक** (**षोडशाङ्गुलक**)— (वि०) सोलह अंगुल चौड़ा। —**अङ्घ्रि** (**षोडशाङ्घ्रि**)— (पुं०) केकड़ा। —**अर्चिस्** (षोडशार्चिस्)— (पुं०) शुक्रग्रह। —**आवर्त** (षोडशावर्त)—(पुं०) शङ्ख। —**उपचार** (**षोडशोपचार**)—(पुं०) पूजन के पूर्ण अंग जो सोलह माने गये हैं [आवाहन, आसन, अर्घ्यपाद्य, आचमन, मधुपर्क, स्नान, वस्त्राभरण, यज्ञोपवीत, गन्ध (चन्दन), पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल, परिक्रमा और वंदना। —'आसनं स्वागतं पाद्यमर्घ्यमाचमनीयकम्। मधुपर्काचमस्नानं वसनाभरणानि च। गन्धपुष्पे धूपदीपौ नैवेद्यं वन्दनं तथा॥']। —**कला**—(स्त्री०) चन्द्रमा की सोलह कलाएँ। [चन्द्रमा की सोलह कलाएँ ये हैं —अमृता मानदा पूषा तुष्टिः पुष्टी रतिर्धृतिः। शशिनी चन्द्रिका कान्तिर्ज्योत्स्ना श्रीः प्रीतिरेव च। अङ्गदा च तथा पूर्णामृता षोडश वै कलाः]। —**भुजा**—(स्त्री०) दुर्गा का एक रूप। —**मातृका**—(स्त्री०) एक प्रकार की देवियाँ जो सोलह हैं। [उनके नाम ये हैं —गौरी, पद्मा, शची, मेधा, सावित्री, विजया, जया, देवसेना, स्वधा, स्वाहा, शान्ति, पुष्टि, धृति, तुष्टि, माता और आत्मदेवता]। —**शृङ्गार**—(पुं०) साज-सज्जा के १६ अंग, संपूर्ण शृंगार (जैसे—उबटन लगाना, मंजन करना, मिस्सी लगाना, नहाना, अच्छे कपड़े पहनना, बाल सँवारना, काजल लगाना, मांग में सिंदूर डालना, पैर में महावर लगाना, बिंदी लगाना, ठोढ़ी पर तिल बनाना, हाथ में मेंहदी लगाना, शरीर में गंधद्रव्य लगाना, गहने पहनना, फूलों की माला पहनना और पान खाना)।

षोडशधा—(अव्य०) [षोडशन् + धाच्] १६ प्रकार से।

षोडशिक—(वि०) [स्त्री०—**षोडशिकी**] [षोडशन्+ठक्] १६ भागों का।

षोडशिन्—(पुं०) [षोडश कला विद्यन्ते अस्य, षोडशन् +इनि] चंद्रमा। सोमरसपूर्ण यज्ञपात्र-विशेष।

षोढा—(अव्य०) [षष्+धाच्, षष उत्वम्, धस्य ढुत्वम्] छः प्रकार से। —**मुख**—(पुं०) कार्त्तिकेय।

√**ष्ठिव्**—भ्वा० पर० अक० थूकना। ष्ठीवति, ष्ठेविष्यति, अष्ठेवीत्।

√**ष्ठीव्**—भ्वा० पर० अक० थूकना। ष्ठीवति, ष्ठीविष्यति, अष्ठीवीत्।

ष्ठीवन, ष्ठेवन—(न०) [√ष्ठीव्+ल्युट्] [√ष्ठिव्+ल्युट्] थूकने की क्रिया। थूक, खखार।

ष्ठ्यूत—(वि०) [√ष्ठिव् + क्त, ऊठ्] थूका हुआ।

√**ष्वक्क**, √**ष्वष्क**—भ्वा० आत्म० सक० जाना। ष्वक्कते-ष्वष्कते, ष्वक्किष्यते—ष्वष्किष्यते, अष्वक्किष्ट — अष्वष्किष्ट।

स

स—संस्कृत अथवा नागरी वर्णमाला का बत्तीसवाँ व्यञ्जन । इसका उच्चारण-स्थान दन्त है । अतएव यह दन्त्य स कहा जाता है । (अव्य०) यह संज्ञात्मक शब्दों के पहले सम्, सम, तुल्य, सदृश, सह के अर्थ में लगाया जाता है (जैसे—सपुत्र, समार्या, सगुण्ण) । (पुं०) [√सो+ड] सर्प । पवन । पक्षी । शिव । विष्णु । षड्ज स्वर का सूचक अक्षर । चंद्रमा । जीवात्मा । चिंतन । ज्ञान । दीप्ति । घेरा, हाता । सगण का संक्षिप्त रूप ।

संय—(पुं०) [सम् √ यम् + ड] कंकाल, पंजर ।

संयत्—(स्त्री०) [सम् √यम्+क्विप्] युद्ध, संग्राम; 'यः संयति प्राप्तपिनाकिलीलः' र० ६.७२ ।—**वर(संयद्वर)**–(पुं०) राजा ।

संयत—(वि०) [सम् √यम् + क्त] बद्ध, बँधा हुआ, जकड़ा हुआ । पकड़ में रखा हुआ, दबाव में रखा हुआ । काबू में लाया हुआ, वशीभूत । बंद किया हुआ, क़ैद किया हुआ । व्यवस्थित, नियम-बद्ध । उद्यत, तैयार । इन्द्रियजित्, निग्रही । उचित सीमा के भीतर रोका हुआ ।—**अञ्जलि (संयताञ्जलि)**– (वि०) हाथ जोड़े हुए ।—**आत्मन् (संयतात्मन्)**–(वि०) जिसकी चित्त-वृत्ति नियंत्रित हो, आत्म-निग्रही ।—**आहार (संयताहार)**–(वि०) जो आहार करने में संयम रखे ।—**उपस्कर (संयतोपस्कर)**–(वि०) वह जिसका घर सुव्यवस्थित हो ।—**चेतस्**, —**मनस्**–(वि०) मन को संयम में रखने वाला ।—**प्राण**–(वि०) वह जिसकी साँस नियंत्रित हो, प्राणायाम करने वाला ।—**वाच्** – (वि०) जिसने अपनी वाणी को वश में कर रखा हो ।

संयत्त—(वि०) [सम्√यत् + क्त] तैयार, सन्नद्ध । सावधान, सतर्क ।

संयम—(पुं०) [सम्√यम् + अप्] निग्रह, रोक; 'श्रोत्रादीनीन्द्रियाण्यन्ये संयमाग्निषु जुह्वति' भग० ४.२६ । मन की एकाग्रता । धार्मिक व्रत । तपोनिष्ठा । दयालुता ।

संयमन—(न०) [सम् √यम्+ल्युट्] रोक, निग्रह । खिचाव, तनाव । बंधन । बंदी करने की क्रिया । आत्मसंयम । धार्मिक व्रत । चार घरों का चौकोर चौगान । (पुं०) [सम् √यम्+ल्यु] शासक ।

संयमनी—(स्त्री०) [संयमन+ङीप्] यम-राज की नगरी का नाम ।

संयमित—(वि०) [संयम + इतच्] निग्रह किया हुआ । बाँधा हुआ । बेड़ी डाला हुआ । रोका हुआ ।

संयमिन्—(वि०) [सम् √यम् + णिनि] निग्रह, निरोध करने वाला । जितेन्द्रिय । बँधा हुआ । (पुं०) तपस्वी । ऋषि । यति । शासक ।

संयात्रा—(स्त्री०) साथ-साथ यात्रा करना । समुद्र-यात्रा ।

संयान—(न०) [सम्√या + ल्युट्] सह-गमन, साथ जाना । यात्रा । मुर्दे को ले चलना । साँचा । गाड़ी ।

संयाम–(पुं०) [सम्√यम्+घञ्] दे० 'संयम' ।

संयाव—(पुं०) [सम्√यु + घञ्] दूध, घी और आटे का बना हुआ पकवान विशेष, गोझिया । हलवा ।

संयुक्त—(वि०) [सम् √ युज्+क्त] जुड़ा हुआ, लगा हुआ, मिला हुआ । मिश्रित । साथ आया हुआ । सम्पन्न, समन्वित, लिये हुए ।

संयुग—(पुं०) [सम्√युज् + क, जस्य गः] संयोग, समागम । युद्ध, भिड़न्त;

'संयुगे सांयुगीनं तमुद्यतं प्रसहेत कः' कु० २.५७ ।—गोष्पद –(न०) तुच्छ झगड़ा ।

संयुज्—(वि०) [सम्√युज् + क्विन्] संयुक्त । गुणी ।

संयुत—(वि०) [सम्√यु + क्त] जुड़ा हुआ, संयुक्त । समाप्त, समन्वित ।

संयोग—(पु०) [सम् √ युज्+घञ्] मेल, मिलान । वैशेषिक दर्शन के २४ गुणों में से एक । जोड़ लेना, मिला लेना, अन्तर्भुक्त कर लेना । जोड़ । दो राजाओं के बीच किसी समान उद्देश्य की सिद्धि के लिये होने वाली सन्धि । व्याकरण में दो या अधिक व्यञ्जनों का मेल । दो ग्रहों या नक्षत्रों का समागम । शिव जी का नामान्तर । —पृथक्त्व–(न०) (न्याय में) ऐसा अलगाव जो नित्य न हो ।—विरुद्ध–(न०) वे खाद्य पदार्थ जो मिला कर खाये जाने पर अवगुण करें, अर्थात् रोगों की उत्पत्ति करें ।

संयोगिन्—(वि०) [संयोग + इनि] संयोग विशिष्ट, मेल का । संयोग करने वाला, मिलाने वाला । विवाहित । जो अपनी प्रिया के साथ हो ।

संयोजन—(न०) [सम्√युज्+ल्युट्] मैथुन । जोड़ने या मिलाने की क्रिया । आयोजन, प्रबन्ध । भव-बन्धन का कारण ।

संरक्त—(वि०) [सम् √रञ्ज्+क्त] रंगीन, लाल । अनुरागवान्, आसक्त । क्रोधान्वित, कुपित । मुग्ध । सुन्दर ।

संरक्ष—(पु०) [सम् √ रक्ष्+घञ्] रक्षण, हिफ़ाज़त, देख-रेख, निगरानी ।

संरक्षण—(न०) [सम्√रक्ष्+ल्युट्] हिफ़ाज़त, निगरानी, रक्षा, देख-रेख । अधिकार, क़ब्ज़ा ।

संरब्ध—(वि०) [सम्√रम्भ् + क्त] उत्तेजित, जोश में भरा हुआ । क्षुब्ध, उद्विग्न । क्रोध में भरा हुआ, क्रुद्ध । फूला हुआ, सूजा हुआ । बढ़ा हुआ, वृद्धि को प्राप्त । अभिभूत । आकुलित ।

संरम्भ—(पु०) [सम् √ रभ्+घञ्, मुम्] आरम्भ । उत्पात, उपद्रव । आन्दोलन । उत्तेजना, क्षोभ । उत्सुकता, उत्कण्ठा । उत्साह । क्रोध; 'प्रणिपातप्रतीकारः संरम्भो हि महात्मनाम्' र० ४.६४ । अभिमान, घमंड । गर्मी और सूजन से फूल उठना । —परुष– (वि०) क्रोध के कारण रूक्ष या रूखा ।—रस– (वि०) अत्यन्त क्रुद्ध । —वेग– (पु०) क्रोध की प्रचण्डता ।

संरम्भिन्—(वि०) [स्त्री०—**संरम्भिणी**] [संरम्भ+इनि] उत्तेजित, उद्विग्न । क्रोधयुक्त, क्रोधाविष्ट । अभिमानी, अहंकारी ।

संराग—(पु०) [सम्√रञ्ज् + घञ्] रंगत । अनुराग । स्नेह । क्रोध ।

संराधन—(न०) [सम्√ राध्+ल्युट्] आराधना करके प्रसन्न करने की क्रिया । सम्पादन । गम्भीर-ध्यान-मग्नता । गम्भीर विचार ।

संराव—(पु०) [सम्√रु + घञ्] कोलाहल, शोर, होहल्ला ।

संरुग्ण—(वि०) [सम्√रुज् + क्त] खंडित, चूर-चूर ।

संरुद्ध—(वि०) [सम्√रुध् + क्त] अवरुद्ध, रोका हुआ । भरा हुआ, परिपूर्ण । घेरा हुआ । ढका हुआ । अस्वीकृत । वर्जित, मना किया हुआ ।

संरूढ—(वि०) [सम् √रुह् + क्त] साथ-साथ उगा हुआ । पुरा हुआ, भरा हुआ । अंकुरित, कलियाया हुआ । अच्छी तरह जमा या जड़ पकड़ा हुआ; 'हर्म्याग्रसंरूढतृणाङ्कुरेषु' र० १६.४७ । धृष्ट, प्रगल्भ । प्रौढ़ ।

संरोध—(पु०) [सम्√रुध् + घञ्] रुकावट, अड़चन । घेरा । बन्धन । प्रक्षेप । क्षति । दमन । नाश ।

संरोधन—(न०) [सम् √रुध् + ल्युट्] रोकना। बाधा डालना। दमन करना। कैद करना।

संलक्षण—(न०) [सम्√लक्ष् + ल्युट्] निशान लगाने की क्रिया। लखना, पहचानना, ताड़ना।

संलग्न—(वि०) [सम्√लग् + क्त] सटा हुआ, संयुक्त, मिला हुआ। भिड़ा हुआ, लड़ाई में गुथा हुआ। लीन।

संलय—(पु०) [सम्√ली + अच्] लेटना। निद्रा। घुलना, घुलाव। लीनता। प्रलय। पक्षियों का नीचे उतरना या बैठना।

संलयन—(न०) [सम्√ली + ल्युट्] चिपकना, सटना। लीन होना। चिड़ियों का नीचे उतरना। लेटना। सोना।

संलालित—(वि०) [सम्√लल् + णिच् + क्त] दुलारा हुआ, प्यार किया हुआ।

संलाप—(पु०) [सम्√लप् + घञ्] परस्पर वार्तालाप, आपस की बातचीत। विशेष कर गुप्त या गोपनीय वार्तालाप, रहस्य वार्ता। नाटक में एक प्रकार का संवाद जिसमें क्षोभ या आवेग तो नहीं होता, बल्कि धैर्य होता है।

संलापक—(पु०) [संलाप + कन्] नाटक में एक प्रकार का संवाद, संलाप। एक प्रकार का उपरूपक।

संलीढ—(वि०) [सम्√लिह् + क्त] चाटा हुआ। उपभोग किया हुआ।

संलीन—(वि०) [सम् √ ली + क्त] अच्छी तरह लगा हुआ। सटा हुआ। छिपा हुआ। ढका हुआ। सिकुड़ा हुआ, सङ्कुचित।—**मानस**-(वि०) उदास मन।

संलोडन—(न०) [सम्√लोड् + ल्युट्] खूब हिलाना-डुलाना, झकझोरना। मथना।

संवत्—(अव्य०) [सम् √ वन् + क्विप्, मलोप, तुक्] साल, वर्ष। वर्ष-विशेष जो किसी संख्या द्वारा सूचित किया जाता है, चली आती हुई वर्ष-गणना का कोई वर्ष, सन्। विक्रम-संवत्सर। वर्ष।

संवत्सर—(पु०) [संवसन्ति ऋतवोऽत्र, सम् √वस् + सरन्] वर्ष, साल। विक्रमादित्य के काल से प्रचलित वर्ष-गणना। पाँच-पाँच वर्ष के युगों का प्रथम वर्ष।—**कर**-(पु०) शिव।—**मुखी**-(स्त्री०) ज्येष्ठ-शुक्ला-दशमी।—**रथ**-(पु०) एक वर्ष का मार्ग या वह मार्ग जो एक वर्ष में पूरा हो।

संवदन—(न०) [सम्√वद् + ल्युट्] परस्पर वार्तालाप। खबर देना। परीक्षा। मंत्र द्वारा वशवर्ती करना। यंत्र, तावीज।

संवर—(न०) [सम्√वृ + अप् वा अच्] जल। (पु०) दुराव, छिपाव। सहनशीलता। आत्म-संयम। बौद्धों का एक प्रकार का व्रत। ढक्कन। बाँध। चुनना। सिकुड़ना, सङ्कोच। बाँध। पुल। मृग-विशेष। एक दैत्य का नाम। मत्स्य विशेष।

संवरण—(न०) [सम्√वृ + ल्युट्] रोकना। चुनना। आच्छादन, ढकना। छिपाव, दुराव। बहाना, मिस।

संवर्जन—(न०) [सम् √वृज् + ल्युट्] छीनना, आत्मसात् करना। भक्षण कर जाना, खा जाना।

संवर्त—(पु०) [सम् √वृत् + घञ् वा सम् √वृत् + णिच् + अच्] फेरा, घुमाव। लीनता। नाश। कल्पान्त, प्रलय। बहुत जल वाला बादल। प्रलयकालीन सप्त मेघों में से एक का नाम। वर्ष विशेष। राशि। समूह।

संवर्तक—(पु०) [सम् √ वृत् + णिच् + ण्वुल्] प्रलयकारी बादलों का एक वर्ग; 'इतोऽपि वडवानलः सह समस्तसंवर्तकैः' भर्तृ० २.७६। प्रलयाग्नि। वड़वानल। बलराम का नाम। बलराम का हल। बहेड़ा। एक पर्वत। एक मुनि।

संवर्तकिन्—(पु०) [संवर्तक +इनि] बलराम का नाम ।

संवर्तिका—(स्त्री०) [सम्√ वृत् + ण्वुल्—टाप्, इत्व] कमल का बँधा पत्ता । कोई बँधा हुआ पत्ता । दीपक की बत्ती ।

संवर्धक—(वि०) [स्त्री०—**संवर्धिका**] [सम् √वृध् + णिच्+ण्वुल्] बढ़ाने वाला । (अतिथि की) आव-भगत करने वाला ।

संवर्धित—(वि०) [सम्√वृध् + णिच् +क्त] बढ़ाया हुआ । पाला-पोसा हुआ ।

संवलित—(वि०) [सम् √वल् + क्त] मिला हुआ, मिश्रित । छिड़का हुआ । सम्बन्ध-युक्त । टूटा हुआ ।

संवल्गित—(वि०) [सम् √वल्ग् + क्त] आक्रमण किया हुआ । उच्छिन्न किया हुआ । पददलित किया हुआ । (न०) स्वर, आवाज ।

संवसथ—(पु०) [सम् √वस् + अथच्] आबादी, गाँव या वह स्थान जहाँ लोग आस-पास रहते हों ।

संवह—(पु०) [सम् √वह् + अच्] वायु के सात पथों में से एक का नाम ।

संवाटिका—(स्त्री०) सिंघाड़ा ।

संवाद—(पु०) [सम्√वद् + घञ्] वार्तालाप, बातचीत । बहस, वादविवाद । स्वीकृति । सहमति । संदेश, खबर ।

संवादिन्—(वि०) [सम्√वद् + णिनि] बात करने वाला । सहमत होने वाला ।

संवार—(पु०) [सम् √वृ+घञ्] आच्छादन । छिपाना । उच्चारण में कंठ का आकुञ्चन या दबाव । उच्चारण के बाह्य प्रयत्नों में से एक, जिसमें कण्ठ का आकुञ्चन होता है, विवार का उलटा । रक्षण, हिफाजत । सुव्यवस्था । ह्रास ।

संवास—(पु०) [सम् √ वस् + घञ्] साथ-साथ बसना । सहवास, मैथुन । घरेलू व्यवहार । घर, आवास-स्थान । सभा के लिये या आमोद-प्रमोद के लिये खुला हुआ मैदान ।

संवाह—(पु०) [सम्√वह् + घञ्] ले जाना, ढोना । मिला कर दबाना । पगचपी, पैर दबाना । [सम्√वह् + णिच् +अच्] वह नौकर, जो पैर दबाने और बदन में मालिश करने को रखा गया हो ।

संवाहक—(वि०) [सम् √वह् + ण्वुल्] ले जाने वाला । (पु०) [सम् √ वह् +णिच्+ण्वुल्] पैर दबाने वाला ।

संवाहन—(न०), **संवाहना**—(स्त्री०) [सम् √वह्+णिच् + ल्युट्] [सम्√वह् + णिच्+युच्] बोझ ले जाना या ढोना । पैर दबाना । मालिश करना ।

संविक्त—(न०) [सम् √विच् + क्त] छाँट कर अलग किया हुआ ।

संविग्न—(वि०) [सम् √विज्+ क्त] क्षुब्ध, उद्विग्न, घबराया हुआ । भीत, डरा हुआ ।

संविज्ञात—(वि०) [सम्– वि√ज्ञा + क्त] सब का जाना हुआ ।

संवित्ति—(स्त्री०) [सम् √विद् +क्तिन्] प्रतिपत्ति, चेतना, संज्ञा । ऐकमत्य । अनुभव; 'श्वस्त्वया सुखसंवित्तिः स्मरणीयाधुनातनी' कि० ११.३४ । बुद्धि ।

संविद्—(स्त्री०) [सम् √विद् + क्विप्] चेतना, ज्ञान, बोध । प्रतीति । इकरार, प्रतिज्ञा । रजामंदी, स्वीकृति । प्रचलन, पद्धति, रीति-रस्म । युद्ध, लड़ाई । युद्ध की ललकार । वह शब्द या वाक्य जिससे रात को संतरी मित्र या शत्रु को पहचान सके । नाम, संज्ञा । सङ्केत, इशारा । तोषण, तुष्टि । सहानुभूति । ध्यान । वार्तालाप । भाँग, विजया । **—व्यतिक्रम** –(पु०) वादे को तोड़ना, प्रतिज्ञा-भङ्ग करना ।

संविदा—(स्त्री०) [संविद्+ टाप्] इकरार, प्रतिज्ञा । कुछ निश्चित शर्तों पर दी या

दो से अधिक पक्षों के बीच होने वाला समझौता (कंट्रैक्ट) ।

संविदित—(वि०) [सम् √ विद् + क्त] जाना हुआ, समझा हुआ । पहचाना हुआ । माना हुआ । प्रसिद्ध, प्रख्यात । खोजा हुआ, ढूँढ़ा हुआ । सब की राय से निश्चित किया हुआ । उपदिष्ट । समझाया-बुझाया हुआ । (न०) इकरारनामा, प्रतिज्ञापत्र ।

संविधा—(स्त्री०) [सम्—वि √ धा+अङ—टाप्] व्यवस्था, आयोजन, प्रबन्ध; 'उद्भासितमङ्गलसंविधाभिः सम्बन्धिनः सद्म समाससाद' र० ७.१६ । जीवन-यापन का ढंग । विधान । अभिनय । किसी नाटक की घटनाओं को क्रमबद्ध करना ।

संविधान—(न०) [सम्—वि √ धा +ल्युट्] व्यवस्था, प्रबंध । संपादन, रचना । योजना । तरीका । कथा-वस्तु में घटनाओं की व्यवस्था करना ।

संविधानक—(न०) [संविधान + कन्] जीवन-यापन का विशेष ढंग । नाटक की कथा-वस्तु । कथा-वस्तु की घटनाओं का विधान । कोई विचित्र कार्य । असाधारण घटना ।

संविभागिन्—(पुं०) [सम्—वि √ भज् + णिनि] साझीदार । पट्टीदार, भागीदार ।

संविष्ट—(वि०) [सम् √विश् + क्त] सोया हुआ; 'संविष्टः कुशशयने निशां निनाय' र० १.९५ । बैठा हुआ । साथ-साथ घुसा हुआ । साथ-साथ बैठा हुआ । पोशाक पहना हुआ ।

संवीक्षण—(न०) [सम्—वि √ईक्ष् +ल्युट्] चारों ओर ताकना । खोजना ।

संवीत—(वि०) [सम् √व्ये+क्त] पोशाक पहिना हुआ, कपड़े पहिना हुआ । ढका हुआ, आच्छादित । सजा हुआ । घिरा हुआ । अभिभूत । मग्न ।

संवृक्त—(वि०) [सम् √ वृज् + क्त] खाया हुआ । नष्ट किया हुआ । छीना हुआ ।

संवृत—(वि०) [सम्√वृ + क्त] ढका हुआ । छिपा हुआ । गुप्त । बंद । सुरक्षित । अवकाश-प्राप्त, जो अलग हो गया हो । दबाया हुआ । सङ्कुचित । अपहृत । परिपूर्ण, भरा हुआ । समन्वित, सहित ।—**आकार** (संवृताकार)-(वि०) वह जो अपने मन का भेद किसी प्रकार प्रकट न होने दे ।—**मन्त्र**- (वि०) वह जो अपने विचार गुप्त रखे । (न०) गुप्त स्थान । उच्चारण का ढंग विशेष ।

संवृति—(स्त्री०) [सम् √ वृ + क्तिन्] ढकने या छिपाने की क्रिया । छिपाव, दुराव । गुप्त अभिप्राय, अभिसंधि ।

संवृत्त—(वि०) [सम्√वृत् + क्त] जो हुआ हो, घटित । परिपूर्ण, निष्पन्न । एकत्रित । व्यतीत । आच्छादित । अन्वित । (पु०) वरुण का नाम ।

संवृत्ति—(स्त्री०) [सम् √ वृत् +क्तिन्] होना, घटित होना । सिद्धि, निष्पत्ति । आच्छादन ।

संवृद्ध—(वि०) [सम्√वृध् + क्त] पूरा बढ़ा हुआ । जो बढ़ कर लंबा, ऊँचा हो गया हो । फला-फूला हुआ । उन्नत ।

संवेग—(पु०) [सम्√विज् + घञ्] उत्तेजना, क्षोभ । पूर्ण वेग या तेजी, प्रचण्डता । उतावली, आवेग । थरथराहट । कष्टआपन्न ।

संवेद—(पु०) [सम् √विद् + घञ्] अनुभव । बोध ।

संवेदन—(न०), **संवेदना**- (स्त्री०) [सम् √विद्+ल्युट्] [सम् √ विद् + युच्] प्रतीति, बोध । अनुभव करना; 'दुःखसंवेदनायैव रामे चैतन्यमर्पितम्' उत्त० १.४७ । जताना । प्रकट करना ।

संवेश—(पुं०) [सम् √ विश् + घञ्] निकट आना । प्रवेश । निद्रा । विश्राम । स्वप्न । बैठकी । मैथुन, सम्भोग । एक रतिबन्ध । अग्निदेवता जो रति के अधिष्ठाता माने गये हैं ।

संवेशन—(न०) [सम्√विश् + ल्युट्] बैठना । लेटना । सोना । आसन । प्रवेश करना । रतिक्रिया, रमण ।

संव्यान—(न०) [सम् √व्ये + ल्युट्] उत्तरीय वस्त्र, चादर, दुपट्टा । वस्त्र । आच्छादन ।

संव्यूढ—(वि०) मिला हुआ ।

संशप्तक—(पुं०) [सम्यक् शप्तम् अङ्गीकारो यस्य, ब० स०, कप्] वह योद्धा जिसने शत्रु को मारे बिना रणक्षेत्र से न हटने की शपथ खायी हो । चुना हुआ योद्धा । सहयोगी योद्धा । षड्यन्त्रकारी जिसने किसी की हत्या करने का बीड़ा उठाया हो ।

संशय—(पुं०) [सम्√शी + अच्] सोने या आराम करने के लिये लेटना । शक, सन्देह, दुबिधा । अनिश्चयात्मक ज्ञान । खतरा, जोखों, संकट । सम्भावना ।—**आत्मन्** (**संशयात्मन्**)—(वि०) सन्देहपूर्ण, सन्दिग्ध ।—**आपन्न** (**संशयापन्न**),—**उपेत** (**संशयोपेत**),—**स्थ**—(वि०) सन्देहयुक्त, सन्दिग्ध, अनिश्चयात्मक ।—**गत**—(वि०) खतरे में पड़ा हुआ ।—**च्छेद**—(पुं०) संशय का निरसन या निवारण ।

संशयान, संशयालु—(वि०) [सम्√शी + शानच्] [संशय + आलुच्] सन्देहशील ।

संशरण—(न०) [सम् √ शृ + ल्युट्] युद्ध का उपक्रम । आक्रमण । भंग करना । चूर करना ।

संशित—(वि०) [सम् √ शो + क्त] सान पर चढ़ाया हुआ, तेज किया हुआ । पूर्णरीत्या पूरा किया हुआ । निश्चय किया हुआ, निर्णीत किया हुआ ।—**व्रत**—(पुं०) वह जिसने अपना व्रत पूरा कर डाला हो ।

संशुद्ध—(वि०) [सम्√शुध् + क्त] विशुद्ध, यथेष्ट शुद्ध । पालिश किया हुआ, साफ किया हुआ । प्रायश्चित्त से निष्पाप किया हुआ ।

संशुद्धि—(स्त्री०) [सम् √शुध् + क्तिन्] पूर्ण रूप से शुद्धि । सफाई, शुद्धि । सही करने की क्रिया, भूल को सुधारने की क्रिया । ऋण शोध । निकासी ।

संशोधन—(न०) [सम् √शुध् + ल्युट्] शुद्ध करना । शुद्ध करने का साधन । सदायगी । सुधारना । संस्कार करना ।

संश्चत्—(न०) [सम्√श्चु + अति] हाथ की सफाई, जादूगरी, इन्द्रजाल । (पुं०) जादूगर ।

संश्यान—(वि०) [सम् √ श्यै + क्त] सङ्कुचित, सिकुड़ा हुआ । ठिठुरा हुआ । जमा हुआ । लपटा हुआ । सहसा विनष्ट हुआ ।

संश्रय—(पुं०) [सम्√श्रि + अच्] संयोग, मेल । सम्पर्क, सम्बन्ध । आश्रय, शरण, पनाह; 'अनपायिनि संश्रयद्रुमे गजभग्ने पतनाय वल्लरी' कु० ४.३१ । विश्रामस्थान । निवासस्थान, डेरा । परस्पर सहायता के लिये की जाने वाली संधि । आसक्ति । अवयव । उद्देश्य ।

संश्रव—(पुं०) [सम्√श्रु+अप्] सुनना । प्रतिज्ञा, इकरार ।

संश्रवण—(न०) [सम् √श्रु + ल्युट्] श्रवण, सुनना । कान । प्रतिज्ञा करना ।

संश्रित—(वि०) [सम्√श्रि + क्त] आश्रय ग्रहण या रक्षा कराने के लिये गया हुआ । आश्रय दिया हुआ । संयुक्त । चिपका हुआ ।

संश्रुत—(वि०) [सम्√श्रु + क्त] अंगीकृत । प्रतिज्ञात । भली-भाँति सुना हुआ ।

संश्लिष्ट—(वि०) [सम्√श्लिष् + क्त] खूब मिला हुआ। आलिङ्गित। सम्बन्ध-युक्त। पड़ोस का, समीप का। अन्वित। अस्पष्ट।

संश्लेष—(पु०) [सम् √श्लिष् + घञ्] आलिङ्गन। मिलन। संबन्ध। संयोग। संधि।

संश्लेषण—(न०), **संश्लेषणा**—(स्त्री०) [सम्√श्लिष् + णिच्+ल्युट्] [सम् √श्लिष् + णिच्+युच्] मिलाना। लगाना। संबद्ध करना। दो को एक साथ मिलाने का साधन।

संसक्त—(वि०) [सम् √सञ्ज् + क्त] लगा हुआ, सटा हुआ। जड़ा हुआ। समीप-वर्ती। संमिश्रित। लवलीन। सम्पन्न। बँधा हुआ। —**मनस्**–(वि०) जिसका मन किसी विषय पर जमा हुआ हो।—**युग**– (वि०) जुए में लगा हुआ।

संसक्ति—(स्त्री०) [सम् √सञ्ज् + क्तिन्] घनिष्ठ सम्बन्ध; 'संसक्तौ किमसुलभम्महोदयानाम्' कि० ७.२७। सामीप्य। अत्यन्त परिचय। बन्धन। भक्ति।

संसद्—(स्त्री०) [सम्√सद् + क्विप्] सभा; 'संसत्सु जाते पुरुषाधिकारे न पूरणी तं समुपैति संख्या' कि० ३.५१। न्यायालय।

संसरण—(न०) [सम्√सृ+ल्युट्] गमन। संसार। सांसारिक जीवन। जन्म और पुनर्जन्म। सेना का बाधारहित प्रस्थान। राज-मार्ग, प्राम सड़क। युद्धारम्भ। नगरद्वार के समीप की धर्मशाला।

संसर्ग—(पु०) [सम्√सृज् + घञ्] संगम, मेल-मिलाप। वह बिन्दु जहाँ एक रेखा दूसरी को काटती हो। वात, पित्त आदि में से दो का एक साथ प्रकोप। सामीप्य। अवधि। संस्पर्श। मैथुन, सम्भोग। घनिष्ठ सम्बन्ध।—**अभाव** (**संसर्गाभाव**); (पु०) संसर्ग का अभाव, सम्बन्ध का न होना। न्याय में अभाव का एक भेद, किसी वस्तु के सम्बन्ध में दूसरी वस्तु का अभाव।—**दोष**–(पु०) वह बुराई जो बुरी संगत के कारण उत्पन्न हो, संगत का दोष।

संसर्गिन्—(वि०) [संसर्ग+इनि वा सम् √सृज्+घिनुण्] संसर्ग या लगाव रखने वाला। (पु०) साथी, संगी।

संसर्जन—(न०) [सम् √सृज् + ल्युट्] संयोग, मिलाप। त्याग। वैराग्य। वर्जन, राहित्य। राजी या अपनी ओर करना।

संसर्प—(पु०) [सम्√सृप्+घञ्] रेंगना, सरकना। वह अधिक मास जो क्षय मास वाले वर्ष में होता है।

संसर्पण—(न०) [सम्√सृप्+ल्युट्] रेंगना, सरकना। सहसा आक्रमण, अचानक हमला।

संसर्पिन्—(वि०) [सम्√सृप् + णिनि] रेंगने वाला, सरकने वाला।

संसाद—(पु०) [सम्√सद् + घञ्] जमा-वड़ा, गोष्ठी, सभा, समाज।

संसार—(पु०) [सम्√ सृ+घञ्] दुनिया, जगत्। मार्ग, रास्ता। सांसारिक जीवन। पुनर्जन्म, बार-बार जन्म लेने की परंपरा, भवचक्र। माया-जाल।—**गमन**–(न०) जन्म-मरण, आवागमन।—**गुरु**– (पु०) कामदेव। —**मार्ग**–(पु०) सांसारिक जीवन का मार्ग। स्त्री की जननेन्द्रिय, भग। —**मोक्ष**– (पु०), —**मोक्षण**–(न०) मुक्ति, मोक्ष, आवागमन से छुटकारा।

संसारिन्—(वि०) [स्त्री०—**संसारिणी**] [सम्√सृ+णिनि] आवागमन करने वाला। लौकिक। दुनियादार। (पु०) जीवधारी। जीवात्मा।

संसिद्ध—(वि०) [सम्√सिध् + क्त] पूर्ण-तया सम्पन्न। जिसका योग सिद्ध हो गया हो, मुक्त।

संसिद्धि—(स्त्री०) [सम् √सिध् + क्तिन्] सम्यक् पूर्ति, किसी कार्य का अच्छी तरह

पूरा होना। मोक्ष, मुक्ति। प्रकृति, स्वभाव। मदमस्त स्त्री, मदोन्मा।

संसूचन—(न०) [सम् √ सूच् + णिच् +ल्युट्] जाहिर करना, जताना, प्रकट करना। सङ्केत करना, इशारा देना। भर्त्सना करना। भेद खोलना।

संसृति—(स्त्री०) [सम् √सृ+क्तिन्] धारा, प्रवाह। नैसर्गिक जीवन। आवागमन, भवचक्र।

संसृष्ट—(वि०) [सम्√सृज्+क्त] मिश्रित, मिला हुआ। साझीदार की तरह शामिल। रचित। संयोजित। पुनर्मिलित। शुद्ध किया हुआ।

संसृष्टता—(स्त्री०), **संसृष्टत्व**—(न०) [संसृष्ट+तल्—टाप्] [संसृष्ट + त्व] संसृष्ट होने का भाव। जायदाद का बँटवारा हो जाने के पीछे फिर एक में होना या रहना।

संसृष्टि—(स्त्री०) [सम् √सृज + क्तिन्] एक में मेल या मिलावट, मिश्रण। परस्पर सम्बन्ध, लगाव। हेल-मेल, घनिष्ठता। एक ही परिवार में रहने की क्रिया, शिरकत खान्दान। संग्रह। समुदाय। दो या अधिक काव्यालंकारों का एक ऐसा मेल जिसमें सब परस्पर निरपेक्ष हों, अर्थात् एक दूसरे के आश्रित, अन्तर्भूत आदि न हों।

संसेक—(पु०) [सम्यक् सेकः, प्रा० स०] अच्छी तरह पानी आदि का छिड़काव।

संस्कर्तृ—(पु०) [सम् √कृ + तृच्, सुट्] वह जो राँधता है, तैयार करता है, रसोइया। संस्कार करने वाला, संस्कार-कारक।

संस्कार—(पु०) [सम् √कृ + घञ्, सुट्] ठीक करना, सुधारना। शुद्धि। सजावट। परिष्कार। शरीर की सफाई, शौच। मनोवृत्ति या स्वभाव का शोधन। मानसिक शिक्षा। शिक्षा, उपदेश। पूर्वजन्म की वासना। पवित्र करना। वे कृत्य जो जन्म से लेकर मरणकाल तक द्विजातियों के संबन्ध में आवश्यक हैं। यथा—गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्न-प्राशन, चूडाकर्म, जनेऊ, केशान्त, समावर्तन, विवाह।

संस्कृत—(वि०) [सम्√कृ +क्त, सुट्] साफ किया हुआ, शुद्ध किया हुआ। परिमार्जित, परिष्कृत। पकाया हुआ। सुधारा हुआ, ठीक किया हुआ। अच्छे रूप में लाया हुआ, सजाया हुआ। विवाहित। (न०) संस्कृत भाषा। (पु०) वह शब्द जो संस्कृत भाषा के व्याकरणानुसार बना हो। वह पुरुष जिसके उपनयनादि संस्कार हुए हों। विद्वज्जन।

संस्क्रिया—(स्त्री०) [सम् √ कृ + श, इयङ्—टाप्] प्रायश्चित्त कर्म। संस्कार। अन्त्येष्टि क्रिया।

संस्तम्भ—(पु०) [सम् √स्तम्भ् + घञ्] सहारा। दृढ़ता। धीरता। रोक। मान। लकवा। स्तम्भन।

संस्तर—(पु०) [सम् √ स्तृ + अप्] बिखेरना, फैलाना। आच्छादन। खाट, चारपाई। शय्या, बिस्तर; 'नवपल्लवसंस्तरे यथा रचयिष्यामि तनुं विभावसौ' कु० ४.३४। तह, पहल। यज्ञ।

संस्तव—(पु०) [सम्√स्तु + घञ्] प्रशंसा, स्तुति। परिचय, जान-पहचान; 'गुणाः प्रियत्वेऽधिकृता न संस्तवः' कि० ४.२५।

संस्तार—(पु०) [सम् √स्तृ + घञ्] फैलाना। पलँग। बिस्तर। तह। यज्ञ।—**पङ्क्ति**- (स्त्री०) एक वैदिक छंद।

संस्ताव—(पु०) [सम्√स्तु + घञ्] प्रशंसा, स्तुति। एक स्वर से मिल कर गाना, सामवेत गान। यज्ञ में स्तुति करने वाले ब्राह्मणों की अवस्थानभूमि।

संस्तुत—(वि०) [सम्√स्तु +क्त] जिसकी खूब स्तुति या प्रशंसा की गयी हो। घनिष्ठ।

परिचित । सदृश । सामंजस्ययुक्त । परि-गणित । अभीष्ट ।

संस्त्याय—(पुं०) [सम्√स्त्यै + घञ्] ढेर । समुदाय । सामीप्य । विस्तार, फैलाव । घर, आवास-स्थल । परिचय । घनिष्ठ व्यक्तियों की बात-चीत ।

संस्थ—(वि०) [सम्√स्था + क] ठह-राऊ । पालतू । अचल, स्थिर । समाप्त । मरा हुआ । (पुं०) अधिवासी । पड़ोसी । स्वदेशवासी । भेदिया, जासूस ।

संस्था—(स्त्री०) [सम्√स्था+अङ्—टाप्] सभा, मजलिस । किसी धार्मिक, सामाजिक या लोकोपकारी विशेष कार्य या उद्देश्य के लिये संगठित समाज या मण्डल (इन्स्टिट्यूशन) । समूह । स्थिति, दशा, हालत । रूप, आकार । पेशा, धंधा । ठीक-ठीक आचरण । समाप्ति, पूर्णता । रोक-थाम । सहारा । हानि, नाश । संसार का नाश, प्रलय । समानता, सादृश्य । राजाज्ञा, राज-शासन । सोमयज्ञ का विधान विशेष ।

संस्थान—(न०) [सम्√स्था + ल्युट्] ठहरना, रहना, स्थिति । सत्ता, अस्तित्व । समूह । ढेर । रूप, आकृति । निर्माण, रचना । सामीप्य । परिस्थिति, हालत । ठहरने का स्थान । चौराहा । चिह्न, निशान । मृत्यु । ढाँचा । साहित्य, विज्ञान, कला आदि की उन्नति के लिये स्थापित शाला (इन्स्टि-ट्यूट) ।

संस्थापन—(न०) [सम् √स्था + णिच्, पुक्+ल्युट्] अच्छी तरह जमा कर बैठाना, लगाना या खड़ा करना । मंडली, संस्था आदि बनाना । कोई नई बात चलाना । एकत्र करना । निश्चित करना । नियंत्रित करना । नियम, विधान । निश्चय, निर्णय । स्थिर करना । रोकना । थामना ।

संस्थापना—(स्त्री०) [सम् √स्था +णिच्, पुक्+युच्—टाप्] रोकना, नियंत्रित करना । शान्त करने का साधन ।

संस्थित—(वि०) [सम्√स्था + क्त] खड़ा । ठहरा हुआ, टिका हुआ । बैठा हुआ, जमा हुआ, दृढ़ता से पड़ा हुआ । पड़ोस का, पास का । मिलता-जुलता हुआ, समान । एकत्रित किया हुआ, ढेर लगाया हुआ । स्थिर, अचल । मृत, मरा हुआ ।

संस्थिति—(स्त्री०) [सम् √स्था + क्तिन्] साथ-साथ होना, साथ ठहरना । सामीप्य, नैकट्य । आवास-स्थान, रहने का स्थान । विश्राम-स्थान । ढेर । सातत्य । परिस्थिति, हालत । रोक-थाम । मृत्यु ।

संस्पर्श—(पुं०) [सम्√स्पृश् + घञ्] छूना या छू जाना । संसर्ग । संयोग । इन्द्रियों का विषय-ग्रहण ।

संस्पर्शी—(स्त्री०) [सम् √ स्पृश् + घञ् —ङीष्] एक प्रकार का सुगन्ध युक्त पौधा, जनी ।

संस्फाल—(पुं०) [सम्यक् स्फालः स्फुरणं यस्य, प्रा० ब] भेड़ा, मेष । बादल, मेघ ।

संस्फेट, संस्फोट—(पुं०) [सम् √ स्फिट् +घञ्] [सम्√स्फुट् + घञ्] लड़ाई, युद्ध ।

संस्मरण—(न०) [सम्यक् स्मरणम्, प्रा० स०] पूर्ण स्मरण, खूब याद । संस्कार से उत्पन्न ज्ञान । स्मृति के आधार पर किसी विषय या व्यक्ति के संबंध में लिखित लेख या ग्रन्थ ।

संस्मृति—(स्त्री०) [सम्यक् स्मृतिः, प्रा० स०] पूर्ण या सम्यक् स्मरण ; 'रागिणापि विहिता तव भक्त्या संस्मृतिर्भव भवत्य-भवाय' कि० १८.२७ ।

संस्रव, संस्राव—(पुं०) [सम्√स्रु + अप्] [सम्√स्रु +घञ्] बहाव । प्रवाह, धारा । देवता या पितर के उद्देश्य से दिये हुए जल आदि का अवशिष्ट भाग । एक प्रकार का नैवेद्य या भेंट ।

संहत—(वि०) [सम्√हन्+क्त] मिला हुआ, आपस में टकराया हुआ। घायल। बंद, मुँदा हुआ। भली-भाँति बुना हुआ। दृढ़तापूर्वक मिला हुआ। दृढ़। ठोस। युक्त, संयुक्त। एकमत; 'जालमादाय गच्छन्ति संहताः पक्षिणोऽप्यमी' पं० २.९। एकत्रित।—**जानु**,–**ज्ञु**–(वि०) जिसके घुटने आपस में टकराते हों, लग्नजानुक।—**भ्रू**–(वि०) जिसकी भौंहें सिकुड़ी हों।—**स्तनी**–(स्त्री०) वह स्त्री जिसके दोनों कुच आपस में सटे हों।

संहतता—(स्त्री०), **संहतत्व**–(न०) [संहत+तल्–टाप्] [संहत+त्व] संयोग। संहति। संक्षेप। आनुकूल्य। मेल। ऐक्य, एका।

संहति—(स्त्री०) [सम् √हन् + क्तिन्] मिलाप, मेल। जुटाव, इकट्ठा होने का भाव। निविड संयोग। ठोसपन, घनत्व। सन्धि, जोड़। परमाणुओं का परस्पर मेल। राशि, ढेर। समूह, झुंड। ताकत, शक्ति। शरीर, बदन।

संहनन—(न०) [सम्√हन् +ल्युट्] संबद्ध करना, जोड़ना। ठोस करना। वध करना। दृढ़ता। शक्ति। मेल। सामंजस्य। शरीर; 'अमृताध्मातजीमूतस्निग्धसंहननस्य ते' उत्त० ६.२१। कवच। मालिश।

संहरण—(न०) [सम् √हृ + ल्युट्] बटोरना, एकत्र करना, संग्रह करना। एक साथ बाँधना। (मंत्र से बाण आदि) लौटा लेना। ग्रहण करना। पकड़ना। सङ्कोचन। निग्रह। नाश। प्रलय।

संहर्तृ—(पुं०) [सम्√हृ+तृच्] संग्रह करने वाला, संग्रही। नाश करने वाला, नाशक।

संहर्ष—(पुं०) [सम्यक् हर्षः, प्रा० स० वा सम्√हृष् + घञ्] रोमाञ्च, पुलक, उमङ्ग से रोओं का खड़ा होना। हर्ष, आनन्द। स्पर्द्धा, प्रतिद्वन्द्विता। पवन। रगड़, मसलन।

संहात—(पुं०) [सम्√हन् + घञ् बा० कुत्वाभाव] समूह। २१ नरकों में से एक। शिव का एक गण।

संहार—(पुं०) [सम्√हृ +घञ्] समेटना। इकट्ठा करना, बटोरना; 'घनुभवतु वेणीसंहारमहोत्सवम्' वे० ६। सङ्कोच, सिकुड़न। खुलासा, सार, संक्षेप कथन। छोड़े हुए बाण को वापिस लेना। रोक लेना। प्रलय। अन्त, समाप्ति। जमावड़ा, समुदाय। उच्चारण का एक दोष। निवारण, परिहार। निपुणता। अभ्यास। नरक विशेष।—**भैरव**– (पुं०) भैरव के रूपों में से एक, कालभैरव।—**मुद्रा**–(स्त्री०) तांत्रिक पूजन में अङ्गों की एक प्रकार की स्थिति। इसे विसर्जन मुद्रा भी कहते हैं।

संहित—(वि०) [सम्√धा+क्त, हि आदेश] एक साथ किया हुआ, एकत्र किया हुआ, बटोरा हुआ। सम्मिलित, मिलाया हुआ। जुड़ा हुआ, लगा हुआ, संबद्ध। सहित, अन्वित। मेल में आया हुआ, हेल-मेल वाला।

संहिता—(स्त्री०) [संहित+टाप् वा सम्यक् हितं प्रतिपाद्यं यस्याः ब० स०] संयोग, मेल। संग्रह। वह ग्रन्थ जिसमें पद-पाठ आदि का क्रम नियमानुसार चला आता हो। धर्मशास्त्र। स्मृति। वेदों का मन्त्र-भाग। जगत् को संघटित रखने वाली शक्ति।

संहूति—(स्त्री०) [सम् √ह्वे + क्तिन्] होहल्ला, कोलाहल, शोर।

संहृत—(वि०) [सम्√हृ+क्त] एकत्र किया हुआ। संक्षिप्त। हरण किया हुआ। निवारित। पकड़ा हुआ। नष्ट किया हुआ।

संहृति—(स्त्री०) [सम्√हृ + क्तिन्] सिकुड़न। नाश। ग्रहण। निवारण। संग्रह।

संहृष्ट—(वि०) [सम्√हृष्+क्त] रोमाञ्चयुक्त, पुलकित। प्रसन्न, आह्लादित।

अत्यन्त उत्साही । उमंग से खड़ा (रोम) ।

संह्लाद—(पुं०) [सम्√ह्लद् + घञ्] ऊँचा शोर, कोलाहल ।

संह्लीण—(वि०) [सम्√ह्री+क्त] लज्जित, शर्मिन्दा । नम्र ।

सकट—(पुं०) [कटेन अशुचिना शवादिना सह वर्तमानः] शाखोट वृक्ष । (वि०) बुरा, कुत्सित । पापी ।

सकण्ट—(वि०) [कण्टेन सह, ब० स० सहस्य स आदेशः] कँटीला, काँटेदार । कष्ट-दायक । भयानक ।

सकण्टक—(वि०) [कण्टेन सह, ब० स०, कप्] काँटेदार । (पुं०) करंज वृक्ष । सिवार ।

सकम्प, सकम्पन—(वि०) [कम्पेन सह, ब० स०] [कम्पनेन सह, ब० स०] कँपकँपा, थरथराने वाला ।

सकरुण—(वि०) [करुणया सह, ब० स०] दयालु ।

सकर्ण—(वि०) [स्त्री०—**सकर्णा, सकर्णी**] [कर्णेन श्रवणेन तद्व्यापारेण वा सह, ब० स०] कानों वाला । सुनने वाला ।

सकर्मक—(वि०) [कर्मणा सह, ब० स०, कप्] जो कर्म करता हो या जिसने कोई कर्म किया हो । व्याकरण में वह क्रिया जिसका कार्य उसके कर्म पर समाप्त हो ।

सकल—(वि०) [कलया वा कलेन सह, ब० स०] अवयवों या भागों सहित । सब, सर्व, समस्त, कुल । धीमे और कोमल स्वरों वाला । —**वर्ण**-(वि०) वह जिसमें क और ल अक्षर हों ।

सकल्प—(पुं०) [कल्पेन सह, ब० स०] शिव जी का नाम ।

सकाकोल—(पुं०) [काकोलेन सह, ब० स०] २१ नरकों में से एक का नाम ।

सकाम—(वि०) [कामेन सह, ब० स०] वह जिसे कोई कामना या इच्छा हो । वह जिसकी कामना पूर्ण हुई हो, लब्धकाम; 'काम इदानीं सकामो भवतु' श० ४ । कामवासना-युक्त, मैथुन की इच्छा रखने वाला । (अव्य०) सहर्ष । सन्तोष-सहित । दरहकीकत ।

सकाल—(वि०) [कालेन सह, ब० स०] समयोचित, सामयिक । (अव्य०) समय से । बड़े तड़के ।

सकाश—(वि०) [काशेन सह, ब० स०] जो दिखलाई पड़े, निकटवर्ती । (पुं०) पड़ोस । सामीप्य । उपस्थिति ।

सकुक्षि—(वि०) [सह समानः कुक्षिः यस्य, ब० स०] सहोदर, एक पेट से उत्पन्न ।

सकुल—(वि०) [कुलेन सह, ब० स०] उच्च-कुल का । वह जो परिवार वाला हो । परिवार सहित । [समानं कुलम् अस्य, ब० स०] एक ही कुल या परिवार का । (पुं०) सौरी मछली ।

सकुल्य—(वि०) [समाने कुले भवः, सकुल +यत्] सगोत्र, एक ही कुल का । (पुं०) अपने से सात पीढ़ी ऊपर तक के ज्ञाति का नाम सपिण्ड ज्ञाति और उसके ऊपर अर्थात् ८वीं पीढ़ी से १०वीं पीढ़ी तक के ज्ञाति का नाम सकुल्य है । दूर का सबन्धी ।

सकृत्—(अव्य०) [एक + सुच्, सकृत् आदेश, सुचो लोपः] एक बार । एक अव-सर पर । एकदम, फौरन्, तुरन्त । साथ-साथ । (पुं०, स्त्री०) मल, विष्ठा ।—**गर्भ** (**सकृद्गर्भ**)-(पुं०) अश्वतर, खच्चर । —**गर्भा** (**सकृद्गर्भा**)-(स्त्री०) एक ही बार गर्भवती होने वाली स्त्री ।—**प्रज**-(पुं०) सिंह, कौआ ।—**प्रसूता, —प्रसू-तिका**- (स्त्री०) वह स्त्री जिसके एक ही सन्तान हुई हो । वह गाय जो केवल एक बार ब्याई हो ।—**फला**-(स्त्री०) केले का वृक्ष ।

सकैतव—(वि०) [कैतवेन सह, ब० स०] धूर्त, दगाबाज। (पु०) ठग आदमी, धूर्त आदमी।

सकोप—(वि०) [कोपेन सह, ब० स०] क्रुद्ध, क्रोध में भरा।

सक्त—(वि०) [√ सञ्ज्+क्त] मिला हुआ, सटा हुआ, संलग्न। जड़ा हुआ, गड़ा हुआ। सम्बन्ध-युक्त। —**वैर**-(वि०) जो सदैव वैर रखता हो।

सक्ति—(स्त्री०) [√सञ्ज् + क्तिन्] संग। आसक्ति। संयोग; 'सक्तिं जवादपनयत्यनिले लतानाम्' कि० ५.४६। अभिनिवेश।

सक्तु—(पु०) [√ सञ्ज् + तुन्] भुने हुए अन्न का पिसान, सत्तू। इस नाम का विष। —**कला**, —**फली**-(स्त्री०) शमी वृक्ष।

सक्थि—(पु०) [√ सञ्ज् +क्थिन्] जाँघ, जंघा। हड्डी। गाड़ी या छकड़े का लट्ठा।

सक्रिय—(वि०) [क्रियया सह, ब० स०] क्रियायुक्त। फुर्तीला। जंगम।

सक्षण—(वि०) [क्षणेन सह, ब० स०] वह जिसको अवकाश हो।

सखि—(पु०) [**सखा, सखायौ, सखायः**] [सह समानं ख्यायते, √ ख्या + डिन्] मित्र। साथी। नायक का सहचर। (सत्याग-सहनो बन्धुः सदैवानुमतः सुहृत्। एकक्रियं भवेन्मित्रं समप्राणः सखा मतः॥)

सखी—(स्त्री०) [सखि + ङीष्] सहेली।

सख्य—(न०) [सख्युर्भावः, सखि + यत्] सखापन। मित्रता, दोस्ती। समानता।

सगण—(वि०) [गणेन सह, ब० स०] दल सहित, समुदाय सहित। (पुं०) शिव जी का नाम।

सगर—(वि०) [गरेण सह, ब० स०] विष-युक्त, जहरीला, विषैला। (पु०) एक चन्द्र-वंशी राजा का नाम।

सगर्भ, सगर्भ्य—(पु०) [सह समानो गर्भोऽस्य, ब० स०] [समाने गर्भे भवः, यत् प्रत्ययः, सहस्य स आदेशः] सहोदर भाई।

सगुण—(वि०) [गुणेन सह, ब० स०] गुण-सहित, गुणों वाला। सांसारिक। ज्यायुक्त। (पु०) सत्त्व, रज और तम से युक्त साकार ब्रह्म।

सगोत्र—(वि०) [सह समानं गोत्रम् अस्य, ब० स०] एक ही गोत्र का। (पु०) एक कुल के लोग। बापसदारी या रिश्तेदारी के लोग। उस वंश के जिसके साथ श्राद्ध और तर्पण का सम्बन्ध हो। दूर का नातेदार। कुल, खानदान।

सग्धि—(स्त्री०) [√अद्+क्तिन् नि० घिः सहस्य सः] साथ-साथ खाना।

सङ्कट—(वि०) [सम्+कटच् वा सम्√कट्+अच्] सिकुड़ा हुआ, सङ्कीर्ण। अगम्य। परिपूर्ण, सम्पन्न। घिरा हुआ। (न०) सङ्कीर्ण रास्ता। दर्रा, पर्वतों के बीच का रास्ता। आफत, विपत्ति। जोखों, खतरा।

सङ्कथा—(स्त्री०) [सम् √कथ् + अ —टाप्] वर्णन। वार्तालाप, बात-चीत।

सङ्कर—(पु०) [सम् √कॄ+अप्] मिला-वट; 'चित्रेषु वर्णसङ्करः' काद०। संयोग। दो जातियों का मिश्रण। अन्तर्जातीय संबंध से उत्पन्न संतान। एक ही वाक्य में दो या अधिक अलंकारों का मिश्रण। गोबर। कूड़ा। आग के जलने का शब्द, अग्नि-चटत्कार। न्याय में परस्पर अत्यन्ताभाव और समाना-धिकरण का ऐकाधिकरण्य।

सङ्करी—(पु०) [सम्√कॄ + अ—ङीष्] नवदूषित कन्या।

सङ्कर्षण—(न०) [सम्√कृष् + ल्युट्] खींचने की क्रिया। आकर्षण। हल से जोतने की क्रिया, जुताई। (पु०) [संकृष्यते गर्भात् गर्भान्तरं नीयतेऽसौ, सम्√कृष् + युच्] श्रीकृष्ण के भाई बलराम का नाम।

सङ्कल—(पु०) [सम्√कल्+अच् (भावे)] संग्रह । जोड़, योग ।

सङ्कलन—(न०), **सङ्कलना**— (स्त्री०) [सम् √कल्+ल्युट्] [सम् √कल् + णिच् +युच्] बहुत सी वस्तुओं को एक स्थान पर एकत्र करने की क्रिया । संभोग । टक्कर । मरोड़, ऐंठना । जोड़ ।

सङ्कलित—(वि०) [सम् √कल् + क्त] ढेर लगाया हुआ, एकत्र किया हुआ । मिश्रित । पकड़ा हुआ । योजित, जोड़ा हुआ, जोड़ लगाया हुआ ।

सङ्कल्प—(पु०) [सम्√कृप् + घञ्, गुणः, रस्य लः] कार्य करने की इच्छा जो मन में उत्पन्न हो । विचार । कल्पना । उद्देश्य । मन । कोई देवकार्य आरम्भ करने के पूर्व एक निश्चित मन्त्र का उच्चारण करते हुए अपना दृढ़ निश्चय या विचार प्रकट करना । **—ज**, **—जन्मन्**, **—योनि**–(पु०) कामदेव की उपाधि; 'सङ्कल्पयोनेरभिमानभूतमात्मानमाधाय मधुर्जजृम्भे' कु० ३.२४ । **—रूप**–(वि०) जो इच्छा के अनुरूप हो ।

सङ्कल्पा—(स्त्री०) दक्ष की एक कन्या, धर्म की पत्नी ।

सङ्कसुक—(वि०) [सम् √कस् + उकञ्] अदृढ़, चंचल । अनिश्चित, सन्दिग्ध । बुरा, दुष्ट । कमजोर, निर्बल ।

सङ्कार—(पुं०) [सम् √कॄ+घञ्] कूड़ा-करकट या धूल जो झाड़ू देने से उड़े । आग के जलने का शब्द । ।

सङ्कारी—(स्त्री०) [सङ्कार+ ङीष्] वह लड़की जिसका कौमार्य हाल ही में हरण किया गया हो ।

सङ्काश—(वि०) [सम् √काश् + अच्] समान, सदृश । समीपवर्ती । (पु०) मौजूदगी, विद्यमानता । सामीप्य, नैकट्य ।

सङ्कील—(पुं०) [सम्√किल्+क] लुआठ, अधजली लकड़ी, जलती हुई मशाल ।

संकीर्ण—(वि०) [सम्√कॄ + क्त] मिश्रित, मिला हुआ । गड़बड़ । बिखरा हुआ, फैला हुआ । अस्पष्ट । मदमस्त, नशे में चूर । दोगला, अकुलीन । अविशुद्ध, मिलावटी । तंग, सँकरा, सङ्कुचित । (पुं०) वर्णसङ्कर जाति का आदमी । वह राग या रागिनी जो अन्य दो रागों या रागिनियों को मिला कर बने । मस्त हाथी, नशे में चूर हाथी । (न०) कठिनाई । विपत्ति ।—**जाति**, —**योनि**– (वि०) दोगली नस्ल का ।—**युद्ध**– (न०) गड़बड़ लड़ाई । विभिन्न प्रकार के अस्त्रों से लड़ा जाने वाला युद्ध ।

सङ्कीर्तन—(न०), **सङ्कीर्तना**– (स्त्री०) [सम् √कृत् + णिच्, ईत्व + ल्युट्] प्रशंसा । स्तुति । किसी देवता की महिमा का वर्णन या स्तवन । किसी देवता के नाम का बार-बार उच्चारण ।

सङ्कुचित—(वि०) [सम्√कुच् + क्त] सिकुड़ा हुआ, सिमटा हुआ । सिकुड़नदार, झुर्रियां पड़ा हुआ । बंद, मुँदा हुआ । ढका हुआ ।

सङ्कुल—(वि०) [सम्√कुल् +क] घना । प्रचंड । बाधित । संकीर्ण । जटिल । परिपूर्ण; 'नक्षत्रताराग्रहसङ्कुलापि ज्योतिष्मती चन्द्रमसैव रात्रिः' र० ६.२२ । अस्तव्यस्त । असंगत । (न०) भीड़-भाड़, जनसमुदाय । (न०) भिड़न्त, युद्ध । तुमुल युद्ध । असंगत या परस्पर-विरोधी कथन । यथा —"यावज्जीवमहं मौनी ब्रह्मचारी च मे पिता । माता तु मम वन्ध्यैव पुत्रहीनः पितामहः ।"

सङ्केत—(पु०) [सम् √ कित् + घञ्] अभिप्राय-सूचक अंगचेष्टा, इशारा । स्वल्पाक्षर उल्लेख या निर्देश । चिह्न । नियमपत्र । कामशास्त्र संबन्धी इङ्गित, शृङ्गार-चेष्टा । प्रेमी और प्रेमिका के मिलने का वादा । प्रेमी और प्रेमिका के मिलने का स्थान;

'कान्ताविनी तु या याति सङ्केतं साभिसारिका'। ठहराव, शर्त। (व्याकरण का) सूत्र।—गृह, —निकेतन,—स्थान-(न०) प्रेमी और प्रेमिका के मिलने का स्थान।

सङ्केतक—(पुं०) [सङ्केत+कन्] ठहराव। प्रेमी-प्रेमिका के मिलने का स्थान। प्रेमी या प्रेयसी जो मिलने के लिये समय का सङ्केत करे।

सङ्केतित—(वि०) [सङ्केत+इतच्] संकेत किया हुआ। नियमानुसार निर्धारित। आमंत्रित, बुलाया हुआ।

सङ्कोच—(पुं०) [सम् √ कुच् + घञ्] सिकुड़ना। रोक। बंद होना, मुँदना। सूखना। संक्षेप। भय। लज्जा। कमी। केसर। हिचक। एक अलंकार। बंधन। एक प्रकार की मछली।

सङ्क्रन्दन—(पुं०) [सम्√क्रन्द् + णिच् +ल्यु] श्रीकृष्ण भगवान् का नाम।

सङ्क्रम—(पुं०) [सम् √ क्रम् + घञ्] सहगमन। परिवर्तन। विषयान्तर-प्रसङ्ग। किसी ग्रह का एक राशि से निकल कर दूसरी राशि में जाना। गमन, यात्रा। दुरधिगम्य मार्ग। सँकरा रास्ता। पुल, सेतु। किसी वस्तु की प्राप्ति का साधन।

सङ्क्रमण—(न०) [सम् √क्रम् + ल्युट्] ऐकमत्य। एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु पर गमन। सूर्य का एक राशि से दूसरी राशि पर गमन। वह विशेष दिन जिस दिन सूर्य उत्तरायण होते हैं। भ्रमण। मिलन। प्रवेश। प्रारंभ।

सङ्क्रान्त—(वि०) [सम् √क्रम् + क्त] गया हुआ। प्रविष्ट, घुसा हुआ। परिवर्तित, बदला हुआ। पकड़ा हुआ। विचारा हुआ, सोचा हुआ। वर्णित। प्रतिबिंबित।

सङ्क्रान्ति—(स्त्री०) [सम् √क्रम्+क्तिन्] सहगमन। ऐक्य, मेल। हस्तान्तरण। किसी ग्रह का एक राशि से दूसरी राशि पर गमन। परिवर्तन। प्रदान-शक्ति। प्रतिमूर्ति। वर्णन।

सङ्क्राम—दे० 'सङ्क्रम'।

सङ्क्रीडन—(न०) [सम्√क्रीड् + ल्युट्] साथ-साथ खेलना। परिहास करना।

सङ्क्लेद—(पुं०) [सम् √क्लिद् + घञ्] नमी, तरी। गर्भाधान के बाद स्रवित होने वाला एक प्रकार का पनीला पदार्थ जिससे भ्रूण का निर्माण प्रारंभ होता है। एक प्रकार का पनीला पदार्थ जो प्रथम मास में गर्भ के रूप में रहता है।

संक्षय—(पुं०) [सम् √क्षि + अच्] नाश। पूर्ण विनाश। हानि। अन्त, अवसान। प्रलय।

सङ्क्षिप्ति—(स्त्री०) [सम्√क्षिप्+क्तिन्] साथ-साथ प्रक्षेपण। संक्षेप-करण। घात। प्रेषण। भाव का एकाएक परिवर्तन (ना०)।

सङ्क्षेप—(पुं०) [सम् √क्षिप् + घञ्] फेंकना। भेजना। हरण। नष्ट करना। घटाना। सार। ले जाना। किसी अन्य के कार्य में साहाय्य-प्रदान।

सङ्क्षेपण—(न०) [सम् √क्षिप्+ल्युट्] ढेर करना। संक्षेप-करण। प्रेषण। ले जाना।

सङ्क्षोभ—(पुं०) [सम् √ क्षुभ् + घञ्] कँपकँपी, थरथराहट। घबड़ाहट। उत्तेजना। अस्त-व्यस्तता, उलट-पलट। अभिमान, अहङ्कार।

सङ्ख्य—(न०) [सम् √ख्या+क] युद्ध, लड़ाई; 'रक्ताम्भोभिस्तत्क्षणादेव तस्मिन्नसङ्ख्येऽसङ्ख्याः प्रावहन् द्वीपवत्यः' शि० १८.७०। संग्राम।

सङ्ख्या—(स्त्री०) [सम् √ख्या + अङ् —टाप्] गणना, गिनती। अङ्क। जोड़। हेतु, युक्ति। समझ, बुद्धि। विचार। तरीका। —अतिग (सङ्ख्यातिग),— अतीत (सङ्ख्यातीत)-(वि०) संख्या से परे,

वह जिसकी गिनती न हो सके ।—**वाचक**—(वि०) संख्या का सूचक ।

सङ्ख्यात—(वि०) [सम् √ख्या + क्त] समझा हुआ । गिना हुआ । (न०) संख्या, अङ्क । राशि ।

सङ्ख्याता—(स्त्री०) [सङ्ख्यात + टाप्] संख्या के सहारे बनी हुई एक प्रकार की पहेली ।

सङ्ख्यान—(न०) [सम् √ख्या + ल्युट्—अन] गणना, शुमार । राशि । संख्या । माप । देखा जाना, नजर आना ।

सङ्ख्यावत्—(वि०) [सङ्ख्या + मतुप्, मस्य वः] संख्या वाला । प्रज्ञा वाला । (पुं०) पण्डित जन ।

सङ्ग—(पुं०) [√सञ्ज् + घञ्] संयोग । मेल, ऐक्य । संसर्ग, संस्पर्श । मैत्री । अनुराग । सांसारिक वस्तुओं में आसक्ति । लड़ाई ।

सङ्गणिका—(स्त्री०) [सम्√गण् + ण्वुल्] उत्तम संवाद, अनुपम संवाद ।

सङ्गत—(वि०) [सम्√गम् + क्त] जुड़ा हुआ, मिला हुआ । गया हुआ । एकत्रित । विवाहित । मैथुन द्वारा मिला हुआ । उपयुक्त, मुनासिब । संकुचित । (न०) ऐक्य, मेल, सन्धि । साथ, संगति । मैत्री । मैथुन । संगत कथन, युक्तियुक्त भाषण ।

सङ्गति—(स्त्री०) [सम् √ गम् + क्तिन्] ऐक्य, मेल । संग, साथ; 'मनो हि जन्मान्तरसङ्गतिज्ञं' र० ७.१५ । मैथुन । उपयुक्तता । संयोग । ज्ञान । ज्ञान प्राप्त करने के लिये बार-बार प्रश्न करने की क्रिया ।

सङ्गम—(पुं०) [सम्√गम् + अप्] ऐक्य, मिलाप । साथ, सुहबत । संसर्ग, संस्पर्श । मैथुन, स्त्री-प्रसंग । (नदियों का) मिलन । मुठभेड़, लड़ाई । उपयुक्तता । ग्रहों का समागम ।

सङ्गमन—(न०) [सम्√गम् + ल्युट्] मेल, ऐक्य ।

सङ्गर—(पुं०) [सम् √गॄ + अप्] प्रतिज्ञा, वादा, इकरार । स्वीकार, अङ्गीकार । सौदा । युद्ध । ज्ञान । भक्षण । विपत्ति । विष ।

सङ्गव—(पुं०) [सङ्गता गावो दोहनाय अत्र, नि० साधुः] तड़का होने से ३ मुहूर्त्त बाद का काल, वह समय जब चरवाहा बछड़ों को दूध पिला कर और गौवों को दुह कर चराने को ले जाता है ।

सङ्गाद—(पुं०) [सम्√ गद् + घञ्] संवाद । वार्तालाप ।

सङ्गिन्—(वि०) [√सञ्ज् + घिनुण्] संयुक्त, मिला हुआ । संपर्क में आने वाला । आसक्त । कामुक । (पुं०) साथी ।

सङ्गीत—(वि०) [सम् √गै + क्त] मिल कर गाया हुआ । (न०) वह गाना जो कई लोगों द्वारा मिल कर गाया जाय; 'जगुः सुकण्ठ्यो गन्धर्व्यः सङ्गीतं सहभर्तृकाः' भाग० । वह गान जो वाद्य-यंत्रों के साथ, लय-ताल के साथ, गाया जाय । गाने-बजाने की कला ।—**शास्त्र**—(न०) वह शास्त्र जिसमें सङ्गीत कला का निरूपण हो ।

सङ्गीतक—(न०) [सङ्गीत + कन्] गाना-बजाना । एक प्रकार का सार्वजनिक संगीत या अभिनय जिसमें गाना-बजाना हो ।

सङ्गीर्ण—(वि०) [सम्√गॄ + क्त] स्वीकृत, मंजूर किया हुआ । प्रतिज्ञात ।

सङ्गुप्त—(वि०) [सम् √गुप् + क्त] भली-भाँति छिपाया हुआ । सुरक्षित । (पुं०) एक बुद्ध ।

सङ्गूढ—(वि०) [सम् √गुह् + क्त] सुरक्षित । छिपाया हुआ । संक्षिप्त । संयुक्त । राशीकृत, ढेर किया हुआ ।

सङ्गृहीत—(वि०) [सम् √ग्रह् + क्त] संग्रह किया हुआ, एकत्र किया हुआ । जकड़ा हुआ । संयत किया हुआ । शासित । प्राप्त । संक्षिप्त किया हुआ ।

सङ्ग्रह—(पुं०) [सम् √ग्रह् + अप्] ग्रहण, पकड़ना। पहुँचा पकड़ना। स्वागत। संरक्षण। अनुग्रह करना। समर्थन करना। एकत्रकरण, ढेर लगाना। शासन करना। राशि। समागम। एक प्रकार का संयोग। सम्मिलित करना। संकलन। योग, जोड़। तालिका, सूची। भाण्डार-गृह। मंत्र-बल से प्रक्षिप्त अस्त्र लौटा लेना। कोष्ठ-बद्धता। विवाह। सभा। उद्योग। उल्लेख। बड़प्पन, ऊँचापन। वेग। शिवजी का नामान्तर।

सङ्ग्रहण—(न०) [सम्√ग्रह् + ल्युट्] पकड़, ग्रहण। समर्थन। उत्साह प्रदान करना। संग्रहकरण। मेल। जड़ना। संकलन करना। नियंत्रण करना। उल्लेख। स्त्री के वर्जित अंगों का स्पर्श। नारी का अपहरण। मैथुन। व्यभिचार। आशा करना। स्वीकार करना। प्राप्त करना।

सङ्ग्रहणी—(पुं०) [सङ्ग्रहण+ङीप्] दस्तों का रोग विशेष जिसमें खाना बिना पचे ही मल के रूप में निकल जाता है।

सङ्ग्रहीतृ—(वि०) [सम्√ग्रह् + तृच्] संग्रह करने वाला। (पुं०) सारथि।

√सङ्ग्राम्—चु० उभ० सक० युद्ध करना। सङ्ग्रामयति—ते, सङ्ग्रामयिष्यति—ते, अससङ्ग्रामत्—त।

सङ्ग्राम—(पुं०) [√सङ्ग्राम+अच्] लड़ाई, युद्ध।—**पटह**-(पुं०) युद्ध में बजाया जाने वाला एक बड़ा भारी ढोल।

सङ्ग्राह—(पुं०) [सम्√ ग्रह् + घञ्] ग्रहण करना। छीन लेना, बरजोरी ले लेना। कलाई पकड़ना। ढाल का बेंट। मुक्का।

सङ्घ—(पुं०) [सम् √हन् + अप्, टिलोप, घत्व] समूह, झुंड। विशेष उद्देश्य से एक साथ रहने वाले व्यक्तियों का समूह। घनिष्ठ संपर्क। मठ।—**चारिन्**- (पुं०) मछली।—**जीविन्**- (पुं०) मजदूर।—**पुष्पी**- (स्त्री०) धातकी, धौ का पेड़।—**वृत्ति**- (स्त्री०) दल में रहने या काम करने का भाव।

सङ्घटना—(स्त्री०) [सम् √घट् + णिच् + युच्—टाप्] मिलाना। स्वरों या शब्दों का संयोग।

सङ्घट्ट—(पुं०) [सम्√घट्ट्+अच्] रगड़। टक्कर। मुठभेड़। मेल, योग। भिड़न्त या स्पर्द्धा (दो पत्नियों की)। आलिङ्गन।

सङ्घट्टन—(न०),**सङ्घट्टना**-(स्त्री०) [सम् √घट्ट्+ल्युट्] [सम् √घट्ट् + णिच् +युच्] रगड़ना। टक्कर। संसर्ग, लगाव। संयोग, मेल। पहलवानों की भिड़न्त।

सङ्घर्ष—(पुं०) [सम् √घृष् + घञ्] दो चीजों का आपस में रगड़ खाना। पसीना। टक्कर, भिड़ंत। स्पर्द्धा, होड़। द्वेष। धीरे-धीरे चलना। कामोत्तेजना।

सङ्घाटिका—(स्त्री०) [सम् √घट् + णिच् +ण्वुल्—टाप्, इत्व] जोड़ा, जोड़ी। कुटनी। गन्ध। स्त्रियों की एक पुरानी पोशाक। सिंघाड़ा।

सङ्घाणक—(पुं०, न०) [=शिङ्घाण, पृषो० साधुः] नाक का मैल।

सङ्घात—(पुं०) [सम् √हन् + घञ्] ऐक्य, संयोग। जनसमुदाय, समूह; 'उपायसङ्घात इव प्रवृद्धः' र० १४.११। हत्या, हिंसन। कफ। समासान्त शब्दों की बनावट। नरक विशेष। अस्थि। शरीर। घनता। प्रचंडता। एक ही वृत्त में रचित काव्य।

√सच्—भ्वा० पर० सक० जोड़ना। अच्छी तरह बाँधना। सचति, सचिष्यति, असचीत्—असाचीत्।

सचि—(पुं०) [√सच् + इन्] मित्र। मित्रता, दोस्ती। (स्त्री०) इन्द्र की पत्नी, इन्द्राणी।

सचिल्लक—(वि०) [सह क्लिन्नेन, सहस्य सः, कप्, नि० साधुः] क्लिन्नचक्षु। भेंड़ा, ऐंचाताना।

सचिव—(पुं०) [सचि√वा + क] मित्र, साथी। मंत्री, वजीर; 'तेन धूर्जगतो गुर्वी सचिवेषु निचिक्षिपे' र० १.३४। काला धतूरा।

सची—(स्त्री०) [सचि+ ङीष्] इन्द्राणी।

सचेतन—(वि०) [सह चेतनया, ब० स०, सहस्य सः] चेतनायुक्त, सज्ञान। जीवित, जानदार।

सचेतस्—(वि०) [सह चेतसा, ब० स०] बुद्धिमान्। वह जो समवेदनापूर्ण या दयालु हो।

सचेल—(वि०) [सह चेलेन, ब० स०] वस्त्र सहित।

सचेष्ट—(पुं०) [√सच् + अच् तथाभूतः सन् इष्टः] आम का वृक्ष। (वि०) [सह चेष्टया, ब० स०] चेष्टाशील।

सजन—(वि०) [सह जनेन, ब० स०] मनुष्यों या जीवधारियों वाला। (पुं०) जाति-बिरादरी का आदमी।

सजल—(वि०) [सह जलेन, ब० स०] जलयुक्त। पनीला, गीला, तर।

सजाति, सजातीय—(वि०) [समाना जातिः अस्य, ब० स०, समानस्य सः] [समानां जातिम् अर्हति, समानजाति+छ, समानस्य सः] एक ही जाति का। एक ही किस्म का। समान, सदृश। (पुं०) एक ही जाति के माता और पिता से उत्पन्न पुत्र।

सजुष्—(वि०) [सह जुषते, √जुष्+क्विप्, सहस्य सः] प्यारा। साथ रहने वाला। (पुं०) [कर्त्ता—सजूः, सजुषौ, सजुषः] मित्र, दोस्त। सखा। (अव्य०) सहित, साथ।

सज्ज—(वि०) [√ सस्ज्+अच्] तैयार, तैयार किया या कराया हुआ। सँवारा हुआ, ठीक किया हुआ। शस्त्र आदि से युक्त। किलाबंदी किया हुआ।

सज्जन—(न०) [√सस्ज् + णिच्+ल्युट्] बाँधना। कसना। पोशाक धारण करना। सजाना। तैयार करना। हथियार धारण करना। चौकीदार, संतरी। घाट। (पुं०) [सन् जनः, कर्म० स०] भला मनुष्य।

सज्जना—(स्त्री०) [√ सस्ज् + णिच् +युच्—टाप्] सजावट। वस्त्राभूषण से सुसज्जित करने की क्रिया।

सज्जा—(स्त्री०) [√सस्ज् + अ—टाप्] परिच्छद, सजावट। साज, सामान। सैनिक सामान, कवच आदि।

सज्जित—(वि०) [सज्जा+ इतच् वा√सस्ज् +णिच् +क्त] सजाया हुआ। शृङ्गार किया हुआ। तैयार किया हुआ। साज-सामान से लैस। शस्त्रधारण किया हुआ।

सज्य—(वि०) [सह ज्यया, ब० स०, सहस्य सः] डोरी या रोदा लगा हुआ; 'न तेन सज्यं क्वचिदुद्यतं धनुः' कि० १.२१।

सज्योत्स्ना—(स्त्री०) [सह ज्योत्स्नया, ब० स०] चाँदनी रात।

सञ्च—(न०) [सञ्चीयते अत्र, सम्√चि +ड] ऐसे पत्तों का ढेर जिन पर लिखा जाता है।

सञ्चत्—(पुं०) [सम्√चत् + क्विप्] धूर्त। ठग।

सञ्चय—(पुं०) [सम् √चि + अच्] ढेर करना, जमा करना। ढेर, राशि।

सञ्चयन—(न०) [सम् √ चि + ल्युट्] एकत्र या संग्रह करने की क्रिया। शव भस्म होने के पीछे अस्थि बीनने की क्रिया।

सञ्चर—(पुं०) [सम्√चर् +क] गमन, चलन। एक राशि से दूसरी राशि में गमन। मार्ग, पथ; 'अथौषधिप्रकाशेन नक्तं दर्शित-सञ्चराः' कु० ६.४३। सङ्कीर्ण पथ। प्रवेशद्वार। शरीर। हनन, हिंसन। वृद्धि।

सञ्चरण—(न०) [सम्√चर् + ल्युट्] गमन, चलन। भ्रमण।

सञ्चल—(वि०) [सम् √चल् + अच्] काँपता हुआ, थरथराता हुआ।

सञ्चलन—(न०) [सम्√चल् + ल्युट्] हिलना-डोलना, काँपना। थरथराना।

सञ्चाय्य—(पु०) [सम् √ चि + ण्यत् नि०] यज्ञ विशेष जिसमें सोम एकत्र किया जाता है।

सञ्चार—(पु०) [सम्√चर्+घञ् वा णिच् +घञ्] चलना-फिरना। गुजरना। मार्ग, रास्ता। कठिन मार्ग। कठिन यात्रा। कठिनाई, कष्ट। चलाने की क्रिया। भड़काने की क्रिया। मार्ग-प्रदर्शन, रास्ता दिखलाने की क्रिया। स्पर्श द्वारा संक्रमण। साँप के फन में मिली हुई मणि।

सञ्चारक—(वि०) [सम्√चर्+ण्वुल्, वा,+णिच्+ण्वुल्] संचार करने वाला। फैलाने वाला। चलाने वाला। (पु०) दलपति, नायक, नेता। साजिश करने वाला, षड्यंत्रकारी।

सञ्चारण—(न०) [सम्√चर्+णिच् +ल्युट्] प्रणोदित करने की क्रिया, उत्तेजित करने की क्रिया। पहुँचाने की क्रिया। मार्ग-प्रदर्शन की क्रिया।

सञ्चारिका—(स्त्री०) [सम्√चर् + णिच् +ण्वुल — टाप्, इत्व] दूती। कुटनी। जोड़ी। नाक।

सञ्चारिन्—(वि०) [स्त्री०—सञ्चारिणी] [सम्√चर् + णिनि] गमनशील; 'पर्याप्तपुष्पस्तबकावनम्रा सञ्चारिणी पल्लविनी लतेव' कु० ३.५४। घूमने-फिरने वाला। परिवर्तन-शील। दुर्गम। प्रवेश करने वाला। साथ आने, मिलने वाला। क्षणस्थायी। वंशपरम्परागत, पुश्तैनी। छूआछूत वाला। (पु०) पवन। धूप, गंधद्रव्य। एक प्रकार के भाव जो ३३ होते हैं और स्थायी भाव को पुष्ट कर विलीन हो जाते हैं, व्यभिचारी भाव। ३३ भाव ये हैं,—१ निर्वेद, २ आवेग, ३ दैन्य, ४ श्रम, ५ मद, ६ जड़ता, ७ उग्रता, ८ मोह, ९ विबोध, १० स्वप्न, ११ अपस्मार, १२ गर्व, १३ मरण, १४ आलस्य, १५ अमर्ष, १६ निद्रा, १७ अवहित्था, १८ औत्सुक्य, १९ उन्माद, २० शंका, २१ स्मृति, २२ मति, २३ व्याधि, २४ त्रास, २५ व्रीड़ा, २६ हर्ष, २७ असूया, २८ विषाद, २९ धृति, ३० चपलता, ३१ ग्लानि, ३२ चिन्ता, ३३ वितर्क। गीत के चार चरणों में से तीसरा।

सञ्चाली—(स्त्री०) [सम्√ चल् + ण —ङीप्] घुँघची का पौधा।

सञ्चित—(वि०) [सम्√चि + क्त] जमा किया हुआ, एकत्र किया हुआ। गणना किया हुआ, गिना हुआ। परिपूर्ण, भरा हुआ। बाधा डाला हुआ। घना, घनीभूत।

सञ्चिति—(स्त्री०) [सम् √चि + क्तिन्] एकत्र करने, जमा करने की क्रिया। तह लगाना। शतपथ ब्राह्मण का नवाँ खंड।

सञ्चिन्तन—(न०) [सम् √चिन्त् +ल्युट्] सोचना, विचारना।

सञ्चूर्णन—(न०) [सम्√चूर्ण् + ल्युट्] टुकड़े-टुकड़े कर डालने की क्रिया।

सञ्छन्न—(वि०) [सम्√छद् + क्त] पूर्णतः ढका हुआ। छिपा हुआ। अज्ञात।

सञ्छादन—(न०) [सम् √ छद् + णिच् + ल्युट्] अच्छी तरह ढकना। छिपाना।

√सञ्ज्—भ्वा० पर० सक० चिपटाना। चिपकाना। बाँधना। सजति, सजिष्यति, असाङ्क्षीत्।

सञ्ज—(पु०) [सम्√जन्+ड] ब्रह्मा का नाम। शिव का नाम।

सञ्जय—(पु०) [सम्√जि + अच्] धृतराष्ट्र के सारथि का नाम।

सञ्जल्प—(पु०) [सम्√जल्प् + घञ्] वार्तालाप। शोरगुल। गर्जन, दहाड़।

सञ्जवन—(न०)[सम्√जु+युच्] आमने-सामने स्थित चार मकान, चतुःशाल।

सज्जा—(स्त्री०) [सज्ज+टाप्] बकरी, छागी, छेरी ।

सञ्जीवन—(पु०) [सम् √जीव् + ल्युट्] साथ-साथ रहने की क्रिया । अच्छी तरह प्राण धारण करने की क्रिया । [सम् √जीव्+णिच्+ल्युट्] जीवित करने की क्रिया, पुनर्जीवितकरण । इक्कीस नरकों में से एक । दे० 'सञ्जवन' ।

संज्ञ—(वि०) [सम्√ज्ञा +क] अच्छी तरह जानने वाला । [संज्ञा अस्ति अस्य, संज्ञा +अच्] नाम वाला, नामक । (न०) एक प्रकार का पीला सुगंधित काष्ठ ।

संज्ञपन—(न०) [सम् √ज्ञा + णिच्, पुक्, ह्रस्व+ल्युट्] हिंसन, वधकरण, मार डालना ।

संज्ञा—(स्त्री०) [सम्√ज्ञा + अङ्-टाप्] चेतना, होश । बुद्धि, अक्ल । ज्ञान । संकेत, इशारा । बोधक शब्द, नाम; 'द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञैः' भग० १५.५ । व्याकरण में वह विकारी शब्द जिससे किसी यथार्थ या कल्पित वस्तु का बोध हो । गायत्री मंत्र । सूर्यपत्नी जो विश्वकर्मा की कन्या थी । (मार्कण्डेय पुराण के अनुसार यम और यमुना का जन्म इसी के गर्भ से हुआ है) ।—**विषय**- (पु०) उपाधि । विशेषण ।—**सुत**-(पु०) शनि का एक नाम ।

संज्ञान—(न०) [सम् √ज्ञा + ल्युट्] सम्यक् अनुभूति । ज्ञान ।

संज्ञापन—(न०) [सम् √ज्ञा + णिच्, पुक्, न ह्रस्वः +ल्युट्] सूचित करना । सिखलाना ।

संज्ञावत्—(वि०) [संज्ञा +मतुप्, मस्य वः] सचेत । वह जिसका कोई नाम हो ।

संज्ञित—(वि०) [संज्ञा+इतच्] नामवाला, नामक ।

संज्ञिन्—(वि०) [संज्ञा + इनि] चेतन, संज्ञान । नामक, नाम वाला ।

संज्ञु—(वि०) [संहते जानुनी यस्य, ब० स०, जानुस्थाने ज्ञुः] जिसके घुटने चलते समय टकराते हों ।

सज्वर—(पु०) [सम् √ज्वर् + अप्] तीव्र ज्वर । अग्नि का ताप । क्रोध आदि का बहुत अधिक आवेग ।

√सट्—भ्वा० पर० सक० विभाजन करना । सटति, सटिष्यति, असटीत्—असाटीत् ।

सट—(न०), **सटा**- (स्त्री०) [√सट् +अच्, पृषो० ठस्य टः] [सट+टाप्] साधु की जटा । सिंह की गरदन के बाल, अयाल । शूकर के बाल; 'विध्यन्तमुद्धत-सटाः प्रतिहन्तुमीषुः' र० ९.६० । कलँगी, चोटी ।

√सट्ट्—चु० उभ० सक० हनन करना । देना । लेना । अक० बसना, रहना । मज-बूत होना । सट्टयति—ते, सट्टयिष्यति—ते, असस‍ट्टत्—त ।

सट्टक—(न०) प्राकृत भाषा में रचा हुआ छोटा रूपक । जीरा मिला हुआ मट्ठा ।

सट्वा—(स्त्री०) [√सट् + वा, पृषो० साधुः] पक्षी विशेष । बाजा विशेष ।

√सठ्—चु० उभ० सक० समाप्त करना, पूर्ण करना । अधूरा छोड़ देना । जाना । सजाना । साठयति—ते, साठयिष्यति—ते, असीसठत्—त ।

सणसूत्र—(न०) [=शणसूत्र, पृषो० साधुः] सन की डोरी या रस्सी ।

सण्ड—दे० 'षण्ड' ।

सण्डिश—(पु०) [=सन्दश, पृषो० साधुः] चिमटा, सँड़सी ।

सण्डीन—(न०) [सम्√डी + क्त] पक्षियों की एक प्रकार की उड़ान ।

सत्—(वि०) [स्त्री०—**सती**] [√अस् +शतृ, अकारलोप] विद्यमान । असली, सत्य । नेक, धर्मात्मा । कुलीन, भद्र । ठीक, उचित । उत्तम, श्रेष्ठ । प्रतिष्ठित, सम्मान-

नीय। बुद्धिमान्। मनोहर, सुन्दर। मजबूत, दृढ़। (पुं०) नेक या धर्मात्मा आदमी। (न०) यथार्थ सत्य। ब्रह्म।—**आचार** (**सदाचार**)—(पुं०) अच्छा आचरण, सद्वृत्ति, शिष्टाचार।—**आत्मन्** (**सदात्मन्**)– (वि०) पुण्यात्मा, नेक।—**उत्तर** (**सदुत्तर**)– (न०) उचित या अच्छा उत्तर।—**कर्मन्**–(न०) पुण्यकर्म, धर्मकार्य। धर्म, पुण्य। आतिथ्य, अतिथि-सत्कार।—**काण्ड**–(पुं०) चील। बाज पक्षी।—**कार**– (पुं०) आतिथ्य-सत्कार, आवभगत। सम्मान, प्रतिष्ठा। खबरदारी, मनोयोग। भोज। पर्व। उत्सव।—**कुल**– (न०) अच्छा वंश, अच्छा खानदान।—**कृत**– (वि०) भली-भाँति किया हुआ। सत्कार किया हुआ। सम्मान किया हुआ। स्वागत किया हुआ। (न०) आदर-सत्कार। आतिथ्य। पुण्य। (पुं०) शिव जी का नाम।—**क्रिया**– (स्त्री०) सत्कर्म, पुण्य, धर्म का काम; 'शकुन्तला मूर्तिमती च सत्क्रिया' श० ५.१५। सत्कार, आदर, खातिरदारी। आयोजन, तैयारी। नमस्कार, प्रणाम। प्रायश्चित्त का कोई कर्म। अन्त्येष्टि कर्म, और्ध्वदेहिक कर्म।—**गति** (**सद्गति**)– (स्त्री०) अच्छी गति। मोक्ष, मुक्ति।—**गुण** (**सद्गुण**)–(पुं०) अच्छा गुण। विशिष्टता।—**चरित** (**सच्चरित**), —**चरित्र** (**सच्चरित्र**)– (वि०) अच्छे चाल-चलन का, सदाचारी। (न०) अच्छा चाल-चलन। अच्छे लोगों का इतिहास या जीवनी।—**चारा** (**सच्चारा**)–(स्त्री०) हल्दी।— **चिद्** (**सच्चिद्**)–(न०) परब्रह्म।—**जन** (**सज्जन**)– (पुं०) नेक या धर्मात्मा आदमी।—**पत्र**–(न०) कुमुद आदि का ताजा पत्ता।—**पथ**– (पुं०) अच्छा मार्ग। कर्त्तव्य-पालन का ठीक मार्ग। उत्तम सम्प्रदाय या सिद्धान्त।—**परिग्रह**– (पुं०) उपयुक्त पात्र से (दान) ग्रहण।—**पशु**– (पुं०) बलि योग्य अच्छा पशु।—**पात्र**–(न०) दान आदि देने योग्य उत्तम व्यक्ति।—**पुत्र**–(पुं०) सुपात्र बेटा, सपूत।—**प्रतिपक्ष**– (पुं०) (न्याय-दर्शन में) वह पक्ष जिसका उचित खण्डन हो सके अथवा जिसके विपक्ष में बहुत कुछ कहा जा सके, पाँच प्रकार के हेत्वाभासों में से एक।—**प्रमुदिता**–(स्त्री०) आठ सिद्धियों में से एक।—**फल**–(पुं०) अनार का पेड़।—**भाव** (**सद्भाव**)– (पुं०) विद्यमानता। साधुभाव, अच्छा भाव।—**मात्र** (**सन्मात्र**)– (पुं०) जीव, आत्मा।—**मान** (**सन्मान**)– (पुं०) भले लोगों की प्रतिष्ठा, इज्जत।—**वंश** (**सद्वंश**)–(वि०) उच्च कुल का।—**वचस्** (**सद्वचस्**)– (न०) प्रसन्नकारक भाषण।—**वस्तु** (**सद्वस्तु**)–(न०) अच्छा पदार्थ। अच्छी कहानी।—**विद्य** (**सद्विद्य**)– (वि०) भली-भाँति शिक्षित।—**वृत्त** (**सद्वृत्त**)–(वि०) भले आचरण का, अच्छे चाल-चलन का। बिल्कुल गोल। (न०) अच्छा चाल-चलन। अच्छा स्वभाव।—**संसर्ग**,—**सङ्ग**–(पुं०),—**सङ्गति**–(स्त्री०) —**सन्निधान**– (न०), —**समागम**–(पुं०) अच्छे लोगों की सुहबत या साथ।—**सहाय**– (वि०) अच्छे मित्रों वाला। (पुं०) अच्छा साथी या संगी।—**सार**– (पुं०) वृक्ष विशेष। कवि। चित्रकार।

सतत—(वि०) [सम्√तन् + क्त, समः अन्त्यलोपः] अविच्छिन्न, निरन्तर क्रिया-युक्त। (अव्य०) सदैव, हमेशा।—**ग**, —**गति**– (पुं०) पवन, हवा; 'वकुलयूक्तकदगुच्छसुगन्धयः सततगास्ततगानगिरोऽलिभिः' शि० ६.५०।—**यायिन्**। (वि०) सदैव चलते रहने वाला। सदैव नाशोन्मुख।

सतर्क—(वि०) [सह तर्केण, ब० स०] तर्क करने में पटु । न्यायशास्त्र निष्णात । सावधान ।

सति—(स्त्री०) [√सन् + क्तिच्, नलोप] भेंट । पुरस्कार । नाश । अवसान ।

सती—(स्त्री०) [सत्+ङीप्] पतिव्रता स्त्री । वह स्त्री जो अपने पति के शव के साथ चिता में जले । तपस्विनी । दुर्गा का का नाम । दक्षकन्या, भवानी ।

सतीत्व—(न०) [सती+त्व] सती होने का भाव, पातिव्रत्य ।

सतीन—(पुं०) [सती√नी+ड] एक प्रकार का मटर । बाँस । जल । अपराजिता ।

सतीर्थ, सतीर्थ्य—(पुं०) [समानः तीर्थः गुरुः यस्य, ब० स०, समानस्य सादेशः] [समाने तीर्थे गुरौ वसति इत्यर्थे यत् प्रत्ययः, समानस्य सः] सहपाठी, साथ पढ़ने वाला ।

सतील—(पुं०) [सती √लक्ष् + ड] बाँस । पवन । मटर ।

सतेर—(पुं०) [√सन् +एर, तान्तादेश] भूसी, चोकर ।

सत्ता—(स्त्री०) [सतो भावः, सत्+तल् — टाप्] विद्यमानता, होने का भाव, अस्तित्व, हस्ती । वास्तविक अस्तित्व । उत्तमता, श्रेष्ठता ।

सत्त्र—(न०) [√सद् +ष्ट्रन्] सोमयज्ञ का काल जो १३ से १०० दिवसों के भीतर पूरा होता है । यज्ञ । भेंट, नैवेद्य । उदारता । धर्म । घर । पर्दा । चादर । सम्पत्ति । वन । ताल, तलैया । धोखा । धूर्तता । आश्रय-स्थान, शरण पाने की जगह ।—**अयन** (**सत्त्रायण**)-(न०) यज्ञों का लगातार चलने वाला क्रम ।—**शाला**- (स्त्री०) वह स्थान जहाँ गरीबों को भोजन दिया जाता है, लंगर । यज्ञ-भवन । आश्रय-स्थान ।

सत्त्रा—(अव्य०) [√सद्+त्रा] साथ, सहित ।

सत्राजित्—(पुं०) [सत्त्रेणाजयति लोकान्, सत्र—आ √जि +क्विप्] सत्यभामा के पिता और श्रीकृष्ण के श्वसुर का नाम ।

सत्त्रि—(वि०) [√सद् + त्रि] जयशील । (पुं०) बादल, मेघ । हाथी, गज ।

सत्त्रिन्—(पुं०) [सत्त्र+इनि] वह जो सदैव यज्ञ किया करता हो; 'अत्यन्तरत परस्परं वियः सत्त्रिणा नरपतेश्च सम्पदः' शि० १४.३२ । उदार गृहस्थ ।

सत्त्व—(न०) [सतो भावः, सत् + त्व] होने का भाव, अस्तित्व । स्वाभाविक आचरण । पैदायशी गुण । प्रकृति । जिन्दगी, जीवन । जीवनी शक्ति, चैतन्य । धन । पदार्थ । गर्भ । सार । तत्त्व—जल, वायु, आकाशादि । प्राणी । भूत, प्रेत । राक्षस । अच्छाई, उत्तमता । यथार्थता । बल । साहस; 'क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे' सुभा० । स्फूर्ति । बुद्धिमानी । सद्भाव । सात्त्विक भाव । विशिष्टता । प्रकृति के तीन गुणों में से एक जो सर्वोच्च है (सांख्य) । संज्ञा । संज्ञावाची (शब्द) ।—**अनुरूप** (**सत्त्वानुरूप**)-(वि०) औत्पत्तिक विशेषता या स्वभाव आदि के अनुसार । अपने वित्त के अनुसार ।—**उद्रेक** (**सत्त्वोद्रेक**)-(पुं०) सत्त्व गुण का आधिक्य । बल या साहस की प्रधानता ।—**भारत**-(पुं०) व्यास ।—**लक्षण**-(न०) गर्भवती होने के चिह्न ।—**विप्लव**- (पुं०) चेतना या विवेक की हानि ।—**विहित**-(वि०) प्रकृति द्वारा किया हुआ । सत्त्वगुणी ।—**संप्लव**- (पुं०) प्रलय । वीर्य या पराक्रम की हानि ।—**संशुद्धि**- (स्त्री०) स्वभाव की विशुद्धता, खरापन ।—**सार**- (पुं०) बल का सार या निचोड़ । बलिष्ठ आदमी ।—**स्थ**-(वि०) अपनी प्रकृति में स्थित । अविचलित, धीर । सशक्त । प्राणयुक्त ।

सत्वमेजय—(वि०) [सत्व√एज् + णिच् +खश्, मुम्] प्राण-धारियों को कंपित करने वाला।

सत्य—(वि०) [सते हितम्, सत् +यत्] यथार्थ, ठीक, वास्तविक, असल। ईमानदार, सच्चा। पुण्यात्मा। (न०) सचाई। यथार्थता। पारमार्थिक सत्ता। नेकी, भलाई। पुण्य। शपथ। वादा। कृतयुग, चार युगों में से पहला। जल। (पुं०) ऊपर के सात लोकों में से सब से ऊंचा लोक जहाँ ब्रह्मा रहते हैं। अश्वत्थ वृक्ष। श्रीराम। विष्णु। नान्दीमुखश्राद्ध का अधिष्ठातृ देवता।—**अनृत** (**सत्यानृत**)–(वि०) सच्चा और झूठा। देखने में सत्य किन्तु वास्तव में असत्य। (न०) सत्यता और झुठाई। व्यापार, व्यवसाय।—**अभिसन्ध** (**सत्याभिसन्ध**)— (वि०) अपनी प्रतिज्ञा को सत्य करने वाला।—**उत्कर्ष** (**सत्योत्कर्ष**)–(पुं०) सत्य बोलने में प्रधानता। वास्तविक उत्कृष्टता। —**उद्य** (**सत्योद्य**) –(वि०) सत्य बोलने वाला।—**उपयाचन** (**सत्योपयाचन**)–(वि०) प्रार्थना या याचना को पूरा करने वाला। —**काम**–(पुं०) सत्य-प्रेमी।—**तपस्**– (पुं०) एक ऋषि का नाम।—**दर्शिन्**– (वि०) (पहले ही से) सत्य देखने या जान लेने वाला। —**धन**–(वि०) सत्य का धनी, अत्यन्त सत्य बोलने वाला।—**धृति**– (वि०) नितान्त सत्यवादी।—**पुर**– (न०) विष्णुलोक। —**पूत**–(वि०) सत्य से पवित्र किया हुआ। यथा :—'सत्यपूतां वदेद्वाणीम्'।–मनु।—**प्रतिज्ञ**– (वि०) प्रतिज्ञा को सत्य करने वाला, बात का धनी।—**भामा**–(स्त्री०) सत्राजित् की पुत्री और श्रीकृष्ण की एक पटरानी का नाम।—**युग**–(न०) चार युगों में से प्रथम युग, कृत युग।—**०आद्या**– (**सत्ययुगाद्या**)– (स्त्री०) वैशाख शुक्ला तृतीया का (जिस दिन कृतयुग प्रारंभ माना जाता है)।—**वचस्**–(वि०) सत्यवादी। (पुं०) ऋषि। (न०) सत्य भाषण, सच कहना।—**वद**–(वि०) सत्य बोलने वाला। (न०) सच्ची बात।—**वाच्**– (वि०) सत्य-वादी। (पुं०) ऋषि। काक। चाक्षुष मनु का एक पुत्र। मनु सावर्णि का एक पुत्र।—**वाक्य**– (न०) सत्यकथन। —**वादिन्**–(वि०) सत्य बोलने वाला। सच्चा, स्पष्टवक्ता।—**व्रत**, —**सङ्गर**, —**सन्ध**– (वि०) सत्यप्रतिज्ञ, वचन को पूरा करने वाला। ईमानदार, सच्चा।—**श्रावण**–(न०) शपथ खाना।—**सङ्काश**–(वि०) जो सत्य भासित हो। प्रथमतः अनुमोदनीय या सन्तोष-जनक।

सत्यङ्कार—(पुं०) [सत्य√कृ + घञ्, मुम्] सत्य करना। वादा करना। किसी काम को पूरा करने के लिए अमानत के रूप में पेशगी दी जाने वाली रकम।

सत्यवत्—(वि०) [सत्य + मतुप्, मस्य वः] सत्ययुक्त, सच्चा। (पुं०) सावित्री के पति का नाम।

सत्यवती—(स्त्री०) [सत्यवत् + ङीप्] एक मछुवे की लड़की जो पीछे वेदव्यास की माता हुई थी।—**सुत**—(पुं०) वेदव्यास।

सत्या—(पुं०) [सत्यम् अस्ति अस्याः, सत्य +अच्, –टाप्] सीता का नामान्तर। दुर्गा देवी। सत्यभामा। द्रौपदी। सत्यवती, जो वेदव्यास की जननी थी।

सत्यापन—(न०) [सत्य + णिच्, पुक् + ल्युट्] सत्य का पालन, सत्य भाषण। ठेके या किसी लेन-देन का इकरार।

√सत्र्—आत्म० अक० सम्बन्ध होना। सन्तान होना। सत्रयते, सत्रयिष्यते, असससत्रत।

सत्र—(न०) [√सद् + ष्ट्रन्] दे० 'सत्त्र'।

सत्रप—(वि०) [सह त्रपया, ब० स०] लज्जाशील । विनम्र ।

सत्राजित्—दे० 'सत्त्राजित्' ।

सत्वर—(वि०) [सह त्वरया, ब० स०] तेज, फुर्तीला । (अव्य०) शीघ्र, तुरन्त ।

सथूत्कार—(वि०) [सह थूत्कारेण] जिसके मुँह से बोलते समय थूक निकले। (पुं०) बात के साथ थूक निकलना । वह भाषण जिसमें शीघ्रता से कहे गये अस्पष्ट वचन हों ।

√सद्—भ्वा०, तु० पर० अक० बैठना । लेटना । डूब जाना । रहना, बसना । उदास होना । सड़ना । नष्ट होना । कष्ट में पड़ना । पीड़ित होना । रोका जाना । थक जाना । सीदति, सत्स्यति, असदत् ।

सद—(पुं०) [√सद् + अच्] वृक्ष का फल ।

सदंशक—(पुं०) [सह दंशेन, ब० स०, कप्] केकड़ा ।

सदंशवदन—(पुं०) [सह दंशेन, ब० स०, सदंशं वदनं यस्य, ब० स०] कंक पक्षी ।

सदन—(न०) [√सद् + ल्युट्] घर, भवन । शैथिल्य, थकावट । जल । यज्ञ-मंडप । विराम, स्थिरता । यमराज का आवास-स्थान ।

सदय—(वि०) [सह दयया, ब० स०] दयालु, रहमदिल ।

सदस्—(न०) [√सद्+असि] आवास-स्थान, रहने की जगह । सभा, मजलिस; 'पङ्कैर्विना सरो भाति सदः खलजनैर्विना' भा० १.११६ ।—**गत (सदोगत)**–(वि०) सभा या मजलिस में बैठा हुआ ।

सदस्य—(पुं०) [सदस्+यत्] किसी सभा में सम्मिलित व्यक्ति, सभासद । पञ्च । याजक । विधि-दर्शी ।

सदा—(अव्य०) [सर्वस्मिन् काले, सर्व +दाच्, सादेशः] नित्य, हमेशा, सर्वदा । निरन्तर, लगातार ।—**आनन्द (सदानन्द)** –(वि०) सदैव प्रसन्न । (पुं०) शिव जी का नामान्तर ।—**गति**–(पुं०) पवन । सूर्य । मोक्ष ।—**तोया, —नीरा**–(स्त्री०) करतोया नदी का नामान्तर । वह नदी या सोता जिसमें सदैव जल बहा करे ।—**दान**– (वि०) सदैव दान करने वाला । (वह हाथी)जिसके सदा मद बहता हो । (पुं०) इन्द्र का ऐरावत हाथी । मद बहाने वाला हाथी । गणेश जी ।—**नर्त**–(पुं०) खंजन पक्षी ।—**फल**– (पुं०) विल्व वृक्ष । कटहल का पेड़ । सघन वट वृक्ष । नारियल का पेड़ ।—**योगिन्**– (पुं०) कृष्ण का नामान्तर ।—**शिव**–(पुं०) शिव जी का नाम ।

सदृक्ष, सदृश्, सदृश—(वि०) [स्त्री०—**सदृक्षी, सदृशी**] [समानं दर्शनम् अस्य, समान √ दृश् + क्स, समानस्य सादेशः] [समान√दृश्+क्विन्] [समान√दृश्+कञ्] समान, अनुरूप, तुल्य, बराबर । उपयुक्त । योग्य ।

सदेश—(वि०)[सह देशेन, ब० स०, सहस्य सः] देश रखने वाला । [समानो देशो यस्य, ब० स० समानस्य सादेशः] एक ही स्थान या देश का । समीपी । पड़ोसी ।

सद्मन्—(न०) [√सद् + मनिन्] घर, मकान । स्थान, टिकने की जगह । मन्दिर । वेदी । जल ।

सद्यस्—(अव्य०) [समेऽह्नि नि० साधुः] आज ही । तुरन्त ही, अभी; 'चकितनत-नताङ्गी सद्म सद्यो विवेश' मा० २.३२ । हाल ही में, कुछ ही समय पीछे ।—**काल (सद्यःकाल)** –(पुं०) वर्तमान काल । —**कालीन (सद्यःकालीन)**–(वि०) [सद्यःकाल + ख–ईन] हाल ही का । —**जात (सद्योजात)**– (वि०) हाल का उत्पन्न । (पुं०) हाल का उत्पन्न बछड़ा । शिव जी का नामान्तर ।—**पातिन् (सद्यः-**

पातिन्)–(वि०) शीघ्र नष्ट होने वाला, नश्वर ।—प्राणकर (सद्यःप्राणकर) –(वि०)तुरन्त शक्ति बढ़ाने वाला; यथा —'सद्यो मांसं नवान्नं च बाला स्त्री क्षीरभोजनम् । घृतमुष्णोदकञ्चैव सद्यःप्राणकराणि षट् ॥' —प्राणहर (सद्यःप्राणहर) –(वि०) तुरन्त शक्ति का नाश करने वाला; यथा— 'शुष्कं मांसं स्त्रियो वृद्धा बालार्कस्तरुणं दधि । प्रभाते मैथुनं निद्रा सद्यःप्राणहराणि षट् ॥' —शुद्धि (सद्यःशुद्धि)–(स्त्री०),—शौच (सद्यःशौच)–(न०) तुरन्त की हुई शुद्धि ।

सद्यस्क—(वि०) [सद्यस् + कन्] नया, टटका । तुरन्त का ।

सद्रु—(वि०) [√सद् + रु] गमनकारी । टिकने वाला ।

सद्वन्द्व—(वि०) [सह द्वन्द्वेन, ब० स० सहस्य सः] झगड़ालू, कलह-प्रिय, लड़ाकू ।

सधर्मन्—(वि०) [समानो धर्मोऽस्य, ब० स०, अनिच् समानस्य सः] एक ही गुणों वाला, समान गुणों वाला । समान कर्त्तव्यों वाला । एक ही जाति या सम्प्रदाय वाला । सदृश, अनुरूप ।—**चारिणी**–(स्त्री०) वह स्त्री जिसके साथ शास्त्ररीत्या विवाह हुआ हो ।

सधर्मिणी—(स्त्री०) [सधर्मिन् + ङीप्] दे० 'सधर्मचारिणी' ।

सधर्मिन्—(वि०) [स्त्री०—**सधर्मिणी**] [सह धर्मोऽस्ति यस्य, ब० स०,+ इनि, सहस्य सः] दे० 'सधर्मन्' ।

सधिस्—(पुं०) [√सह्+इसिन्, हस्य धः] बैल, वृषभ ।

सध्रीची—(स्त्री०) [सध्र्यच्+ङीप्, अलोप, दीर्घ] भार्या, पत्नी । सखी, सहेली ।

सध्रीचीन—(वि०) [सध्र्यच् + ख, अलोप, दीर्घ] सहगमन-कारी, साथ चलने वाला ।

सध्र्यच्—(पुं०) [सह अञ्चति, सह √अञ्च्+क्विन्, सध्रि आदेश] पति । साथी ।

√सन्—भ्वा० पर० सक० प्यार करना । पसंद करना । पूजन करना । प्राप्त करना । सम्मान या गौरव के साथ प्राप्त करना । सनति, सनिष्यति, असनीत्—असानीत् । त० उभ० सक० देना । सनोति—सनुते, सनिष्यति—ते, असानीत् —असनीत्— असात—असनिष्ट ।

सन—(पुं०) [√सन् + अच्] घण्टापाटलि वृक्ष, मोरवा नामक पेड़ । हाथी के कानों की फड़फड़ाहट ।

सनक—(पुं०) [√सन् + वुन्] ब्रह्मा के चार मानस पुत्रों में से एक ।

सनत्—(पुं०) [√सन् + अति] ब्रह्मा का नामान्तर । (अव्य०) सदैव, निरन्तर ।—**कुमार**–(वि०) ब्रह्मा के चार मानस पुत्रों में से एक का नाम ।

सनसूत्र—दे० 'शणसूत्र' ।

सना—(अव्य०) [=सदा नि० दस्य नः] सदैव, निरन्तर ।

सनात्—(अव्य०) [सना√अत् + क्विप्] सदैव । (पुं०) विष्णु ।

सनातन—(वि०) [स्त्री०—**सनातनी**] [सदा+ट्युल्, तुट् नि० दस्य नः] नित्य, अनादि । स्थायी । प्राचीन । (पुं०) विष्णु भगवान् का नामान्तर । शिव । ब्रह्मा । पितरों का अतिथि ।

सनातनी—(स्त्री०) [सनातन+ ङीप्] लक्ष्मी । दुर्गा या पार्वती । सरस्वती ।

सनाथ—(वि०) [सह नाथेन, ब० स०, सहस्य सः] जिसकी रक्षा करने वाला कोई स्वामी हो; 'त्वया नाथेन वैदेही सनाथा ह्यद्य वर्तते' वा० । जिसका कोई रक्षक या पति हो । अधिकार में किया हुआ । अन्वित, सम्पन्न ।

सनाभि—(वि०) [समाना नाभिर्यस्य, ब० स०, समानस्य स:]एक ही गर्भ का, सहोदर। सजातीय । अनुरूप, सदृश; 'गङ्गावर्त-सनाभिर्नाभिः' दश०। स्नेहान्वित । (पु०) सहोदर भाई । सात पीढ़ी के भीतर का नातेदार ।

सनाभ्य—(पु०) [सनाभि + यत्] सात पीढ़ियों के भीतर एक ही वंश का मनुष्य, सपिण्ड ।

सनि—(पु०) [√सन्+इन्] अर्चा, पूजन । नैवेद्य, भेंट । प्रार्थना ।

सनिष्ठीव, सनिष्ठेव—(न०) [सह निष्ठी (ष्ठे) वेन, ब० स०, सहस्य स:] ऐसी बोली जिसके बोलने में थूक उड़े ।

सनी—(स्त्री०) [सनि + ङीष्] दिशा । प्रार्थना । हाथी के कान की फड़फड़ाहट । गौरी । कान्ति ।

सनीड, सनील—(वि०) [समानं नीडम् अस्ति अस्य, ब० स०, पक्षे डस्य ल:] साथ रहने वाला । एक ही घोंसले में रहने वाला । समीपी ।

सन्त—(पु०) [√सन्+त] संहततल, अंजलि ।

सन्तक्षण—(न०) [सम्√तक्ष् + ल्युट्] कटाक्ष-पूर्ण वचन, व्यङ्ग्य वचन ।

सन्तत—(वि०) [सम्√तन् + क्त] बढ़ाया हुआ, फैलाया हुआ । अविच्छिन्न, सतत, लगातार । अनादि । बहुत । अधिक । (अव्य०) सदैव, हमेशा । लगातार ।

सन्तति—(स्त्री०) [सम् √तन् + क्तिन्] फैलाव, प्रसार । पंक्ति । अविच्छिन्नता । वंश, कुल । औलाद, सन्तान । ढेर, राशि ।

सन्तपन—(न०) [सम्√ तप्+ल्युट्] बहुत तपना । उत्पीड़न ।

सन्तप्त—(वि०) [सम्√तप् + क्त] बहुत तपा हुआ । पिघला हुआ । पीड़ित । परिश्रान्त ।—**अयस्** (**सन्तप्तायस्**)-(न०) गर्म लोहा ।—**वक्षस्**- (न०) जिसके सीने में या साँस लेने में कष्ट हो ।

सन्तमस्, सन्तमस—(न०) [सन्ततं तम: प्रा० स०] [सन्तमस्+अच्] सर्वव्यापी अन्धकार, घोर अन्धकार; 'अवधार्य कार्यगुरुतामभवन्न भयाय सान्द्रतमसन्तमसम्' शि० ९.२२ । महामोह ।

सन्तरण—(न०) [सम्√तॄ + ल्युट्—अन] पार होना ।

सन्तर्जन—(न०) [सम् √तर्ज् + ल्युट्] डाँटना, डपटना, भर्त्सना करना ।

सन्तर्पण—(न०) [सम्√तृप् + ल्युट्] खूब तृप्त करना । एक प्रकार का चूर्ण जिसमें दाख, अनार, खजूर, केला, लाजा-चूर्ण, मधु और घृत पड़ता है । (वि०) [सम् √तृप् + णिच्+ल्यु] तृप्ति कारक, सन्तुष्ट करने वाला ।

सन्तान—(पु०) [सम्√तन्+घञ्] प्रसार, व्याप्ति, फैलाव । कुल, वंश । सन्तान, औलाद । स्वर्ग के पाँच वृक्षों में से एक ।

सन्तानक—(पु०) [सन्तान + कन्] स्वर्ग के पाँच वृक्षों में से एक वृक्ष और उसके फूल; 'अतिसुरभिरभाजि पुष्पश्रियामतनुतरतयेव सन्तानक:' शि० ६.६७ ।

सन्तानिका—(स्त्री०) [सम् √तन्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] फेन, झाग । मलाई, साढ़ी । मर्कटजाल नामक घास । छुरी या तलवार की धार ।

सन्ताप—(पु०) [सम्√तप् + घञ्] तेज गर्मी, जलन । व्यथा । पश्चात्ताप । तप की थकावट । क्रोध ।

सन्तापन—(वि०) [स्त्री०—**सन्तापनी**] [सम् √तप्+णिच् +ल्यु] संताप-कारक । (पु०) कामदेव के पाँच शरों में से एक । (न०) [सम् √ तप्+ णिच् +ल्युट्] तप्त करना, जलाना । पीड़ा, दुःख देना ।

सन्तापित—(वि०) [सम्√ तप् + णिच् +क्त] तपाया हुआ । दुःखीपीड़ित ।

सन्ति—(स्त्री०) [√सन् +क्तिन्] दान । अवसान, अन्त ।

सन्तुष्टि—(स्त्री०) [सम् √तुष् + क्तिन्] नितान्त सन्तोष ।

सन्तोष—(पुं०) [सम्√तुष् + घञ्] मन की वह वृत्ति या अवस्था जिसमें मनुष्य अपनी वर्तमान दशा में ही पूर्ण सुख अनुभव करता है । तृप्ति । शान्ति । प्रसन्नता, आनन्द । अंगुष्ठ या तर्जनी उँगली ।

सन्तोषण—(न०) [सम्√तुष् + णिच् √ल्युट्] संतुष्ट, प्रसन्न करने की क्रिया ।

सन्त्यजन—(न०) [सम्√त्यज् + ल्युट्] परित्याग करना ।

सन्त्रास—(पुं०) [सम् √त्रस् + घञ्] आतंक, भय ।

सन्दंश—(पुं०) [सम् √ दंश् + घञ्] चिमटा । सँड़सी । जर्राही का एक औजार, कंकमुख । एक नरक का नाम । पकड़ने के काम में आने वाले अंग (अँगूठा आदि) । पुस्तक का खंड या अध्याय ।

सन्दंशक—(पुं०) [सन्दंश +कन्] चिमटा । सँड़सी ।

सन्दर्प—(पुं०) [सम्√दृप् + घञ्] गर्व, घमंड ।

सन्दर्भ—(पुं०) [सम् √दृभ्+घञ्] गूँथना । बुनना । संमिश्रण । साहित्यिक रचना, निबंध आदि । संबंध-निर्वाह । अर्थ-प्रकाशक ग्रंथ । संग्रह । विस्तार ।

सन्दर्शन—(न०) [सम्√दृश् + ल्युट्] अवलोकन, चितवन । घूरना । भेंट, परस्पर दर्शन । दृश्य । विचार, पर्यवेक्षण ।

सन्दान—(न०) [सम् √ दो + ल्युट्] काटना । बाँधना । हाथी के मस्तक का वह भाग जहाँ से दान भरता है । रस्सी । बेड़ी । [प्रा० स०] सम्यक् दान ।

सन्दानित—(वि०) [सन्दान + इतच्] बँधा हुआ । बेड़ी पड़ा हुआ, जंजीर में जकड़ा हुआ ।

सन्दानिनी—(स्त्री०) [सन्दानं बन्धनं गवाम् अत्र, सन्दान+इनि+ङीप्]गोष्ठ, गोशाला ।

सन्द्राव—(पुं०) [सम् √द्रु+घञ्] पलायन, भगदड़ ।

सन्दाह—(पुं०) [सम्√ दह्+घञ्] मुख, ओष्ठ आदि की जलन । सम्यक् दाह ।

सन्दिग्ध—(वि०) [सम्√दिह् + क्त] लेप किया हुआ । ढका हुआ । अनिश्चित, सन्देह-युक्त । गड़बड़, अस्पष्ट । भय-युक्त । विषाक्त । संदेह । लेप । एक प्रकार का व्यंग्य जिसमें यह नहीं प्रकट होता है कि वाचक या व्यञ्जक में व्यंग्य है ।

सन्दिष्ट—(वि०) [सम् √ दिश् + क्त] बताया हुआ । निर्दिष्ट किया हुआ । कहा हुआ । स्वीकृत । (न०) इत्तिला, सूचना । समाचार । संवाद । (पुं०) वार्तावह, हल्कारा, कासिद ।

सन्दित—(वि०) [सम्√दो + क्त] बंधन-युक्त । जंजीर में जकड़ा हुआ, कसा हुआ ।

सन्दी—(स्त्री०) [सम्√दो + ड—ङीप्] छोटी खाट या खटोला ।

सन्दीपन—(वि०) [स्त्री०—सन्दीपनी] [सम्√दीप्+णिच् + ल्यु] जलाने वाला । उत्तेजित करने वाला । (पुं०) कामदेव के पाँच बाणों में से एक । (न०) [सम्√दीप् +णिच्+ल्युट्] उद्दीपन करने की क्रिया उत्तेजना देने की क्रिया ।

सन्दीप्त—(वि०) [सम् √ दीप्+क्त] उद्दीप्त । प्रज्वलित । उत्तेजित ।

सन्दुष्ट—(वि०) [सम्√दुष् +क्त] भ्रष्ट, बिगड़ा हुआ । दुष्ट, कमीना ।

सन्दूषण—(न०) [सम् √दूष् + णिच् +ल्युट्] भ्रष्टता-करण, भ्रष्ट करने की क्रिया ।

सन्देश—(पुं०) [सम्√दिश् + घञ्] संवाद, खबर; 'सन्देशं मे हर धनपतिक्रोधविश्लेषितस्य' मे० ७। आदेश।—**अर्थ** (**सन्देशार्थ**)–(पुं०) संदेश का विषय।—**वाच्**– (पुं०) संवाद।—**हर**– (पुं०) दूत, कासिद, वार्तावह।

सन्देह—(पुं०) [सम्√दिह् +घञ्] सन्देह, संशय, अनिश्चय। खतरा, भय। एक अर्थालंकार।—**दोला**– (स्त्री०) दुविधा।

सन्दोह—(पुं०) [सम्√दुह् + घञ्] दुहना, दोहन। समूह। राशि।

सन्द्राव—(पुं०) [सम्√द्रु + घञ्] पलायन, भगदड़।

सन्धा—(स्त्री०) [सम्√धा + अङ्–टाप्] संयोग। घनिष्ठ सम्बन्ध। हालत, दशा। प्रतिज्ञा, शर्त; 'ततार सन्धामिव सत्यसन्धः' र० १४.५२। सीमा। दृढ़ता। सायंकाल का धुंधला प्रकाश। भभके से खींचने की क्रिया।

सन्धान—(न०) [सम् √धा + ल्युट्] मिलाना, जोड़ना। संयोग। संमिश्रण। सन्धि। जोड़, गाँठ। मनोयोग, एकाग्रता। दिशा, ओर। समर्थन। शराब खींचने की क्रिया। मदिरा या शराब की तरह कोई मादक वस्तु कोई भी सुस्वादु जिसके खाने पर प्यास बढ़े। मुरब्बे और अचार की प्रक्रिया। औषधोपचार से चमड़े को सिकोड़ने की क्रिया। खट्टी काँजी।

सन्धानित—(वि०) [सन्धान + इतच्] जोड़ा हुआ, मिलाया हुआ। बँधा हुआ, कसा हुआ।

सन्धानिनी—(स्त्री०) [सन्धान + इनि –ङीप्] गाय बाँधने का घर, गोष्ठ।

सन्धानी—(स्त्री०) [सन्धान+ङीप्] वह स्थान जहाँ मदिरा खींची जाती है। वह स्थान जहाँ पीतल आदि की ढलाई की जाती है।

सन्धि—(पुं०) [सम्√धा +कि] दो वस्तुओं का एक में मिलना, मेल, संयोग। कौलकरार, इकरार। सुलह, मैत्री। शरीर का जोड़ या गाँठ। (कपड़े की) तह या टूटन। सुरंग, सेंध। पृथक्करण, विभाजन। व्याकरण में वह विकार जो दो अक्षरों के पास-पास आने के कारण उनके मेल से हुआ करता है। अवकाश, दो वस्तुओं के बीच की खाली जगह। अवकाश, विश्राम। सुअवसर। एक युग की समाप्ति और दूसरे युग के आरम्भ के बीच का समय, युग-सन्धि। नाटक में किसी प्रधान प्रयोजन के साधक कथांशों का किसी एक मध्यवर्ती प्रयोजन के साथ होने वाला सम्बन्ध। [ऐसी सन्धियाँ ५ प्रकार की होती हैं, यथा—मुखसन्धि, प्रतिमुख-सन्धि, गर्भ-सन्धि, अवमर्श या विमर्श सन्धि और निर्वहण-सन्धि]। स्त्री की जननेन्द्रिय, भग।—**अक्षर** (**सन्ध्यक्षर**)–(न०) दो स्वरों का योग, संयुक्त स्वरवर्णद्वय (जिनका उच्चारण सम्मिलित किया जाता है)।—**चोर**–(पुं०) सेंध लगाने वाला चोर।—**ज**–(न०) शराब।—**जीवक**–(पुं०) दलाल, कुटना।—**दूषण**–(न०)सन्धि को भङ्ग करने की क्रिया; 'अरिषु हि विजयार्थिनः क्षितीशा विदधति सोपधि सन्धिदूषणानि' कि० १.४५।—**बन्धन**– (न०) नस।—**भङ्ग**– (पुं०),—**मुक्ति**– (स्त्री०) वैद्यक के मतानुसार हाथ या पैर आदि के किसी जोड़ का टूटना या स्थानच्युत होना।—**विग्रह**– (पुं०) शान्ति और युद्ध।—**विचक्षण**– (पुं०) सन्धि करने के कार्य में निपुण।—**वेला**– (स्त्री०) सन्ध्याकाल, शाम।—**हारक**–(पुं०) घर में सेंध या नक़ब लगाने वाला व्यक्ति।

सन्धिक—(पुं०) [सन्धि+कन्] जोड़। सन्निपातज्वर का एक भेद।

सन्धिका—(स्त्री०) [सन्धिक+टाप्] शराब खींचने की क्रिया ।

सन्धित—(वि०) [सन्धा+इतच्] संयुक्त, जुड़ा हुआ । बँधा हुआ, कसा हुआ । मेल-मिलाप किया हुआ, मैत्री स्थापित किया हुआ । जड़ा हुआ, बैठाया हुआ । मिश्रित किया हुआ । अचार डाला हुआ ।(न०) अचार । मदिरा ।

सन्धिनी—(स्त्री०) [सन्धा + इनि—ङीप्] अचार । मुरब्बा । शराब, मदिरा । उठी हुई गाय, गाभिन होने के लिये विकल गाय । बेसमय, दूसरे दिन दूध देने वाली गौ ।

सन्धिला—(स्त्री०) [सन्धि √ ला +क —टाप्] नदी । [सन्धि + लच्—टाप्] दीवाल में किया हुआ छेद । शराब ।

सन्धुक्षण—(न०) [सम्√धुक्ष् + ल्युट्] जलाना, बालना । उद्दीपन करने की क्रिया ।

सन्धुक्षित—(वि०) [सम् √धुक्ष् + क्त] जलाया हुआ, दहकाया हुआ । भड़काया हुआ, उत्तेजित किया हुआ ।

सन्धेय—(वि०) [सम्√धा +यत्] मिलाने योग्य, जोड़ने योग्य । मिलाने या मना लेने के योग्य । सन्धि करने योग्य, जिसके साथ सन्धि की जा सके । निशाना लगाने योग्य ।

सन्ध्या—(स्त्री०) [सन्धि + यत्—टाप् वा सम्√ध्यै + अङ—टाप्] योग, मेल । प्रातः, मध्याह्न या सायं का वह समय जब दिन के भागों का मेल होता है । संधान । प्रातः या सन्ध्या का समय । युग-सन्धि । प्रातः, मध्याह्न और सायं सन्ध्योपासन कृत्य । कौल-करार, इकरार । सीमा । ध्यान, विचार । पुष्प विशेष । एक नदी का नाम । ब्रह्मा की पत्नी ।—**अभ्र** (**सन्ध्याभ्र**) —(न०) सन्ध्याकालीन मेघ जिनमें सुनहली आभा होती है । गेरू, लाल खड़िया । —**काल**— (पुं०) शाम ।—**नाटिन्**—(पुं०) शिवजी ।—**पुष्पी**— (स्त्री०) कुन्द की जाति का फूल । जायफल ।—**बल**—(पुं०) राक्षस ।—**राग**—(पुं०) सिंदूर ।—**राम** —(पुं०) ब्रह्मा जी ।—**वन्दन**—(न०) आर्यों की प्रातः-सायं की विशिष्ट उपासना, संध्योपासन ।

सन्न—(वि०) [√सद् + क्त] उपविष्ट, बैठा हुआ । उदास । ढीला । मन्द । विनष्ट । गतिहीन, स्थिर । घुसा हुआ । समीपस्थ । प्रस्थित । (न०) अल्प परिमाण । नाश, हानि । (पुं०) पियाल वृक्ष, चिरौंजी का पेड़ । —**कण्ठ**—(वि०) जिसका गला रुँध गया हो ।—**जिह्व**— (वि०) मौन ।

सन्नक—(वि०) [सन्न+कन्] ह्रस्व, बौना, खर्वाकार ।—**द्रु**—(पुं०) पियाल वृक्ष ।

सन्नतर—(वि०) [सन्न + तरप्] निम्न-स्तरीय । अत्यधिक उदासीन ।

सन्नत—(वि०) [सम्√नम् + क्त] प्रणत, झुका हुआ । ध्वनियुक्त । नीचे गया हुआ ।

सन्नति—(स्त्री०) [सम्√नम् + क्तिन्] सम्मानपूर्वक प्रणाम । विनम्रता । यज्ञ विशेष । शोरगुल ।

सन्नद्ध—(वि०) [सम्√नह् + क्त] एक साथ मिलाकर बाँधा हुआ । कवच धारण किया हुआ । युद्ध के लिये प्रस्तुत । तैयार । व्याप्त; 'कुसुममिव लोभनीयं यौवनमङ्गेषु सन्नद्धम्' श० १.२१ । किसी भी वस्तु से पूर्ण रीत्या सम्पन्न । हिंसक, घातक । नज-दीकी, समीप का । संलग्न । विकासोन्मुख ।

सन्नय—(पुं०) [सम्√नी + अच्] समूह । राशि । पिछाड़ी । सेना की पिछाड़ी का रक्षक दल ।

सन्नहन—(न०) [सम्√नह् +ल्युट्] तैयार होना, सन्नद्ध होना । युद्ध के लिये प्रस्तुत होना । तैयारी । सजावट । मजबूत बंधन । उद्योग ।

सन्नाह—(पुं०) [सम्√नह् +घञ्] कवच और अस्त्र-शस्त्र से सज्जित होने की

क्रिया। युद्ध करने जाने जैसी सजावट। कवच।

सन्नाह्य—(पु०) [सम्√नह् +ण्यत्] लड़ाई का हाथी।

सन्निकर्ष—(पु०) [सम्—नि √ कृष्+घञ्] समीप खींचना या लाना। सामीप्य; 'तथैव वातायनसन्निकर्षं ययौ शलाकामपरा वहन्ती' र० ७.८। उपस्थिति। सम्बन्ध, रिश्ता। न्याय में इन्द्रिय और विषय का सम्बन्ध जो कई प्रकार का माना गया है।

सन्निकर्षण—(न०) [सम्—नि √ कृष् +ल्युट्] समीप लाना। समीप आना। सामीप्य।

सन्निकृष्ट—(वि०) [सम्— नि √कृष् +क्त] पास लाया हुआ। निकटस्थ। (न०) सामीप्य।

सन्निचय—(पु०) [सम्—नि√चि +अच्] सम्यक् रूप से संचय करना। ढेर लगाना। भंडार।

सन्निधातृ—(पु०) [सम्—नि√ धा+तृच्] समीप लाने वाला। जमा करने वाला। चोरी का माल लेने वाला। (पु०) अदालत का पेशकार।

सन्निधान—(न०), **सन्निधि**-(पु०) [सम् —नि√धा + ल्युट्] [सम्—नि√धा +कि] आमने-सामने की स्थिति। निकटता, समीपता। प्रत्यक्षगोचरत्व। आधार। रखना, धरना। जोड़, औसत।

सन्निपात—(पु०) [सम्—नि √पत् +घञ्] एक साथ गिरना या पड़ना। नीचे आना, उतरना। मिलना, एकत्र होना। टक्कर, संघर्ष। संगम, संयोग। समूह, समुदाय; 'धूमज्योतिःसलिलमरुतां सन्निपातः क्व मेघः' मे० ५। आगमन। कफ, वात और पित्त तीनों का एक साथ बिगड़ना, त्रिदोष। संगीत में समय का एक प्रकार का परिमाण। —**ज्वर**- (पु०) त्रिदोषज ज्वर।

सन्निबन्ध—(पु०) [सम्—नि√बन्ध् +घञ्] मजबूती से बांधना, जकड़ना। सम्बन्ध, लगाव। प्रभाव, तासीर।

सन्निभ—(वि०) [सम्—नि √भा +क] सदृश, समान।

सन्नियोग—(पु०) [सम्—नि √युज् +घञ्] मेल, लगाव। नियुक्ति।

सन्निरोध—(पु०) [सम्—नि√रुध् + घञ्] अड़चन, रुकावट, बाधा।

सन्निवृत्ति—(स्त्री०) [सम्—नि √वृत् +क्तिन्] फिरना (मन का)। विरक्ति। निग्रह। सहिष्णुता।

सन्निवेश—(पु०) [सम्—नि √ विश्+घञ्] लवलीनता, संलग्नता। समूह, समाज। जुटाव, मेल। स्थान, जगह। सामीप्य। बनावट, शक्ल। झोपड़ी। उपास्थान बिठाना। बैठाना, जड़ना। चौगान, खेलने की जगह या मैदान।

सन्निहित—(वि०) [सम्—नि √धा +क्त] समीप रखा हुआ, एक साथ या पास रखा हुआ। निकटस्थ, समीपस्थ। स्थापित, जमा किया हुआ। उद्यत, तत्पर। ठहराया हुआ, टिकाया हुआ।

सन्न्यसन—(न०) [सम्— नि√अस्+ल्युट्] वैराग्य, विराग। सांसारिक वस्तुओं से पूर्ण रूप से विरक्ति। सौंपना, सुपुर्द करना।

सन्न्यस्त—(वि०) [सम्—नि√अस्+क्त] बैठाया हुआ, जमाया हुआ। जमा किया हुआ। सौंपा हुआ। फेंका हुआ। छोड़ा हुआ। अलग किया हुआ।

सन्न्यास—(पु०) [सम्—नि √अस् +घञ्] वैराग्य। त्याग। सांसारिक प्रपञ्चों के त्याग की वृत्ति। धरोहर, थाती। पण, दांव। शरीर-त्याग, मृत्यु। जटामांसी। चतुर्थ आश्रम। ठहराव, शर्त। एक प्रकार का मूर्च्छा-रोग।

सन्न्यासिन्—(पुं०) [सम् — नि √अस् +णिनि] धरोहर रखने वाला व्यक्ति। वह पुरुष जिसने संन्यास धारण किया हो, चतुर्थ आश्रमी; 'ज्ञेयः स नित्यसन्न्यासी यो न द्वेष्टि न काङ्क्षति' भग० ५.३। (वि०) त्याग करने वाला। भोजन-त्यागी।

√सप्—भ्वा० पर० सक० सम्मान करना, पूजन करना। मिलाना, जोड़ना। सपति, सपिष्यति, असपीत्—असापीत्।

सपक्ष—(वि०) [सह पक्षेण, ब० स०, सहस्य सः] पंखों वाला। दलबंदी वाला। [समानः पक्षेण, ब० स०, समानस्य सः] अपने पक्ष या दल का। सजातीय, सदृश। (पुं०) सजातीय व्यक्ति। [सह पक्षेण] न्याय में वह बात या दृष्टान्त जिसमें साध्य अवश्य हो।

सपत्न—(पुं०) [सह एकार्थे पतति, √पत् +न, सहस्य सः] शत्रु, वैरी, प्रतिद्वन्द्वी।

सपत्नी—(स्त्री०) [समानः पतिर्यस्याः, ब० स०, समानस्य सः, ङीप्, न आदेश] सौत।

सपत्नीक—(वि०) [सह पत्न्या, ब० स०, कप्] पत्नी सहित।

सपत्राकरण—(न०) [सह पत्रेण पक्षेण सपत्रः तथा क्रियते सपत्र+डाच् √कृ +ल्युट्] शरीर में बाण इतनी जोर से मारना कि बाण का वह भाग जिसमें पर लगे होते हैं, शरीर के भीतर घुस जाय। अत्यन्त पीड़ा उत्पन्न करना।

सपत्राकृति—(स्त्री०) [सपत्र + डाच्√कृ +क्तिन्] दे० 'सपत्राकरण'।

सपदि—(अव्य०) [सह √पद् + इन्, सहस्य सः] तत्काल, तुरन्त, फौरन।

√सपर्—कं० पर० सक० पूजा करना। सपर्यति, सपर्यिष्यति, असपर्यीत्।

सपर्या—(स्त्री०) [√सपर् + यक् +अ —टाप्] पूजन, अर्चन; 'सोऽहं सपर्याविधिभाजनेन मत्वा भवन्तम् प्रभुशब्दशेषम्' र० ५.२२। सेवा, परिचर्या।

सपाद—(त्रि०) [सह पादेन, ब० स०, सहस्य सः] पैरों वाला। सवाया।

सपिण्ड—(पुं०) [समानः पिण्डो मूलपुरुषो निवापो वा यस्य, ब० स०] एक ही कुल का पुरुष जो एक ही पितरों को पिण्ड दान करता हो, एक ही खानदान का।

सपिण्डीकरण—(न०) [सपिण्ड + च्वि (अभूततद्भावे) √कृ+ल्युट्] किसी मृत नातेदार के उद्देश्य से किया जाने वाला श्राद्ध कर्म विशेष। [असल में यह कृत्य एक वर्ष बाद करना चाहिये; किन्तु आज कल लोग बारहवें दिन ही इसे कर डाला करते हैं।]

सपीति—(स्त्री०) [√पा+क्तिन्, पीतिः पानम्, सह एकत्र पीतिः] साथ-साथ पान करना। सहभोजन।

सपीतिका—(स्त्री०) [सह पीतया ब० स०, कप्, इत्वम्] (स्त्री०) कद्दू। लौकी।

सप्तक—(वि०) [**स्त्री०—सप्तका, सप्तकी**] [सप्त प्रमाणमस्य, सप्तानाम् अवयवम्, सप्तानां पूरणः, सप्तानां समूहः, सप्तन्+कन्] जिसमें सात हों। सात। सातवाँ। (न०) सात का समुदाय।

सप्तकी—(स्त्री०) [सप्तभिः स्वरैः इव कायति शब्दायते, सप्तन् √कै+क—ङीष्] स्त्री की करधनी या कमरबंद।

सप्तति—(स्त्री०) [सप्तगुणिता दशतिः नि० साधुः] सत्तर।

सप्तधा—(अव्य०) [सप्तन् + धाच्] सात प्रकार से।

सप्तन्—(संख्यावाची विशेषण) [√सप् +तनिन् (समास में नकार का लोप हो जाता है)] सात की संख्या से युक्त (त्रि०) सात की संख्या।—**अर्चिस्** (**सप्तार्चिस्**)—(वि०) सात जिह्वा या लौ वाला। अशुभ दृष्टि वाला। (पुं०) अग्नि। शनि।—

अशीति (**सप्ताशीति**)–(स्त्री०) सतासी। —**अस्र** (**सप्तास्र**)–(न०) सतकोना। —**अश्व** (**सप्ताश्व**)–(पु०) सूर्य। सात घोड़े।—०**वाहन**–(पु०) सूर्य। —**अह** (**सप्ताह**)–(पु०) सप्तदिवस अर्थात् सप्ताह, हफ्ता।—**आत्मन्** (**सप्तात्मन्**)–(पु०) ब्रह्मा की उपाधि। —**ऋषि** (**सप्तर्षि**)– (पु०) मरीचि, अत्रि, अंगिरस्, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु और वसिष्ठ नामक सात ऋषियों का समुदाय। आकाश में उत्तर दिशा में स्थित सात तारों का समूह जो ध्रुव के चारों ओर घूमता दिखलाई पड़ता है।—**चत्वारिंशत्**–(स्त्री०) ४७, सैंतालीस।—**जिह्व**,—**ज्वाल**– (पु०) अग्नि।—**तन्तु**–(पु०) यज्ञ विशेष; 'सप्ततन्तुमधिगन्तुमिच्छतः कुर्वनुग्रहमनुज्ञया मम' शि० १४.६।—**दशन्**– (वि०) सत्रह, १७।—**दीधिति**–(पु०) अग्नि।—**द्वीपा**–(स्त्री०) पृथिवी की उपाधि।—**धातु**–(पु०) शरीरस्थ सात धातुएँ या शरीर के संयोजक द्रव्य अर्थात् रक्त, पित्त, मांस, वसा, मज्जा, अस्थि और शुक्र।—**नवति**–(स्त्री०) ९७, सत्तानबे।—**नाडीचक्र**–(न०) फलित ज्योतिष में सात टेढ़ी रेखाओं का एक चक्र जिसमें सब नक्षत्रों के नाम भरे रहते हैं और जिसके द्वारा वर्षा का आगम बतलाया जाता है।—**पर्ण**– (पु०) छतिवन का पेड़।—**पदी**–(स्त्री०) विवाह की एक रीति जिसमें वर और वधू गाँठ जोड़ कर अग्नि के चारों ओर सात परिक्रमाएँ करते हैं। —**प्रकृति**–(स्त्री०) राज्य के सात अंग [यथा: राजा, मंत्री, सामन्त, देश, कोश, गढ़ और सेना] —**भद्र**– (पु०) सिरिस का पेड़। —**भूमिक**, —**भौम**–(वि०) सतमंजिला, सातखाना ऊँचा।—**मत**– (वि०) सात स्वरों वाला।— **रक्त**–(पु०) शरीर के लाल रंग वाले सात अंग—हथेली, तलवा, नख, आँख का कोण, जीभ, ओठ और तालु।—**ला**–(स्त्री०) सातला। चमेली, नवमल्लिका। रीठा। गुंजा, घुँघची।——**विंशति**–(स्त्री०) सत्ताइस।—**शत**–(न०) सात सौ। एक सौ सात —**शती**–(स्त्री०) ७०० पद्यों का संग्रह।—**सप्ति**–(पु०) सूर्य की उपाधि।

सप्तम—(वि०) [स्त्री०—**सप्तमी**] [सप्तानां पूरणः,सप्तन्+डट्—मट्] सातवाँ।

सप्तमी—(स्त्री०) [सप्तम+ङीप्] सप्तम कारक, अधिकरण कारक। किसी पक्ष की सातवीं तिथि।

सप्ति—(पु०) [√सप्+ति] जूआ। घोड़ा; 'जवो हि सप्तेः परमं विभूषणम्' सुभा०।

सप्रणय—(वि०) [सह प्रणयेन, ब० स०, सहस्य सः] प्यारा। मित्रता-युक्त।

सप्रत्यय—(वि०) [सह प्रत्ययेन, ब० स०] विश्वस्त। निश्चित।

सफर—(पु०), **सफरी**–(स्त्री०) [√सप्+अरन्, पृषो० पस्य फः] [सफर+ङीष्] छोटी जाति की मछली जो चमकीले रंग की होती है।

सफल—(वि०) [सह फलेन, ब० स०] फल वाला। फल देने वाला। सार्थक। कृतकार्य, कामयाब।

सबन्धु—(वि०) [सह बन्धुना, ब० स०] घनिष्ठ सम्बन्ध युक्त। मित्र वाला। (पु०) नातेदार, रिश्तेदार।

सबलि—(पुं०) [सह बलिना, ब० स०] गोधूलि-वेला, सायंकाल (जब बलि चढ़ायी जाती है)।

सबाध—(वि०) [सह बाधया, ब० स०] बाधा सहित। अनिष्टकर। जालिम, उत्पीडक।

सब्रह्मचारिन्—(पु०) [समानं ब्रह्म वेदग्रहणकालीनं व्रतं चरति, √चर्+णिनि,

समानस्य सः] वे सहपाठी जो एक ही साथ पढ़ते हों और एक ही व्रत रखते हों। सहानुभूति रखने वाला व्यक्ति।

सभा—(स्त्री०) [सह भान्ति अभीष्टनिश्चयार्थम् एकत्र यत्र गृहे, सह √भा+क—टाप्, सहस्य सः] परिषद्, गोष्ठी, समिति, मजलिस। सभा-भवन, सभा-मण्डप। न्यायालय। दरबार। द्यूतगृह, जुआड़खाना।—**आस्तार** (**सभास्तार**)-(पुं०) सभासद, सदस्य।—**पति**-(पुं०) सभा का प्रधान नेता। जुआड़खाने का मालिक।—**सद्**,—**सद**-(पुं०) सदस्य। पंच।

√सभाज्—चु० उभ० सक० प्रणाम करना। सम्मान प्रदर्शित करना। प्रसन्न करना। सजाना। दिखलाना, प्रदर्शित करना। सभाजयति—ते, सभाजयिष्यति—ते, अससभाजत्—त।

सभाजन—(न०) [√सभाज् + ल्युट्] सम्मान करना। शिष्टता, नम्रता दिखलाना। परिचर्या करना।

सभावन—(पुं०) [सह भावनेन, ब० स०, सहस्य सः] शिवजी का नाम।

सभिक, सभीक—(पुं०) [सभा द्यूतसभा आश्रयत्वेन अस्ति अस्य, सभा+ठन्] [सभा प्रयोजनम् अस्य, सभा+ईक] जुए का अड्डा या जुआड़खाना चलाने वाला; 'प्रयत्नस्मात्कं पूर्वसभिको माथुर इत एवागच्छति' मृ० ३।

सभ्य—(वि०) [सभायां साधुः, सभा+यत्] सभा के योग्य। सामाजिक। सभ्यता का व्यवहार करने वाला। कुलीन। विनम्र। विश्वस्त, विश्वासपात्र। (पुं०) सभासद। पंच। कुलीन व्यक्ति। जुआड़खाना चलाने वाला। जुआड़खाने के मालिक का नौकर।

सभ्यता—(स्त्री०), **सभ्यत्व**- (न०) [सभ्य + तल्—टाप्] [सभ्य+त्व] सभ्य होने का भाव। सदस्यता। सुशिक्षित और सज्जन होने की अवस्था। भलमनसाहत, शराफत।

√सम्—चु० उभ० अक० विकल होना। समयति—ते, समयिष्यति—ते, अससमत्—त।

सम्—(अव्य०) [√सो + डमु] समान, तुल्य, बराबर। सारा। साधु, भला। युग्म, जोड़ा।

सम—(वि०) [√सम् + अच्] एकसा, समान, बराबर, तुल्य, सदृश। समतल, समभूमि, चौरस। जूस, (संख्या) जिसमें दो से भाग देने पर कुछ न बचे। पक्षपात-हीन ईमानदार, सच्चा। नेक। साधारण, मामूली। मध्य का, मध्यम। सीधा। उपयुक्त। उदासीन। सब, हर कोई। समूचा, सम्पूर्ण। (न०) चौरस मैदान। (अव्य०) साथ। बराबर-बराबर। उसी प्रकार। पूर्णतः एक ही समय; 'नवं पयो यत्र घनैर्मया च त्वद्विप्रयोगाश्रु समं विसृष्टं' र० १३.२६।—**अंश** (**समांश**)-(पुं०) बराबर का हिस्सा।—**अन्तर** (**समान्तर**)-(वि०) परस्पर समान या एक रूप।—**उदक** (**समोदक**)-(न०) दूध और जल की ऐसी मिलावट जिसमें समान भाग जल और समान भाग दूध का हो।—**उपमा** (**समोपमा**)- (स्त्री०) एक अलङ्कार।—**कन्या**- (स्त्री०) विवाह योग्य लड़की।—**काल**-(पुं०) एक ही समय या क्षण।—**कालीन**- (वि०) [समकाल + ख—ईन] एक ही समय में होने वाले।—**कोल**- (पुं०) साँप।—**गन्धक**- (पुं०) नकली धूप।—**चतुरस्र**- (वि०) जिसके चारों कोण बराबर हों।—**चतुर्भुज**- (पुं०) वह चतुर्भुज शकल जिसके चारों भुज समान हों।—**चित्त**-(वि०) वह जिसके मन की अवस्था सर्वत्र समान रहती हो, समचेता। विरक्त।—**च्छेद**, —**च्छेदन**

-(वि०) समान विभाजन वाला ।—जाति- (वि०) समान जाति वाला ।—ज्ञा-(स्त्री०) कीर्ति ।—त्रिभुज-(पुं०, न०) वह त्रिकोण जिसकी तीनों भुजाएँ समान या बराबर की हों ।— दर्शन,—दर्शिन्- (वि०) सब को एक निगाह से देखने वाला, अपक्षपाती ।—दुःख- (वि०) समवेदना रखने वाला ।—दुःख-सुख-(वि०) दुःख-सुख को समान समझने वाला । दुःख-सुख का साथी ।—दृश्,—दृष्टि-(वि०) दे० 'समदर्शिन्' ।—बुद्धि-(वि०) अपक्षपाती । विषय-विरागी ।—भाव-(पुं०)समानता, तुल्यता ।—रञ्जित-(वि०) जिसका रंग सर्वत्र एक-सा हो ।—रत-(पुं०) एक रतिबन्ध ।—रेख-(वि०) जिसमें सीधी रेखा हो ।—लम्ब-(पुं०, न०) वह चतुर्भुज शकल जिसकी दो भुजाएँ समानान्तराल हों ।—वर्तिन्-(वि०) समचित्त । अपक्षपाती । (पुं०)यमराज ।—वृत्त-(न०) वह छन्द, जिसके चारों चरण समान हों ।—वृत्ति-(वि०) स्थिर, प्रशान्त ।—वेध-(पुं०) मध्य या औसत गहराई ।—सन्धि-(पुं०) वह सुलह जो बराबर की शर्तों पर हुई हो ।—सुप्ति-(स्त्री०) वह निद्रा जिसमें समस्त चराचर निद्राभिभूत हों । ऐसा कल्प के अन्त में होता है ।—स्थ-(वि०) समान, एकसा । समतल ।—स्थल-(न०) चौरस जमीन ।—स्थली-(स्त्री०) गंगा-यमुना के बीच का भू-भाग, अंतर्वेद, दोआब ।

समक्ष—(अव्य०) [अक्ष्णः समीपम्, अव्य० स०, अच्] नेत्रों के सामने; 'तथा समक्षं दहता मनोभवं पिनाकिना भग्नमनोरथा सती' कु० ५.१ । (वि०) [समक्ष +अच्] जो आँखों के सम्मुख हो, दृष्टिगोचर ।

समग्र—(वि०) [समं सकलं यथा स्यात् तथा गृह्यते, सम √ग्रह् + ड] तमाम, समूचा, सम्पूर्ण ।

समङ्गा—(स्त्री०) [सम्√अञ्ज्+घ—टाप्] मजीठ । लाजवंती । बराहक्रान्ता । बाला ।

समज—(न०) [सम् √अज् + अप्] जंगल, वन । (पुं०) पशुओं का गिरोह । मूर्खों का समाज ।

समज्या—(स्त्री०) [सम्√ अज् + क्यप् —टाप्] सभा, मजलिस । कीर्ति, प्रसिद्धि ।

समञ्जस—(वि०) [सम्यक् अञ्जः औचित्यं, यत्र ब० स०, अच् समा०] उचित, युक्ति-युक्त, उपयुक्त, बिल्कुल ठीक । स्पष्ट, बोधगम्य । भला, न्यायवान् । अभ्यस्त । अनुभवी । तंदुरुस्त, स्वस्थ । (न०) [प्रा० स०] औचित्य, उपयुक्तता । यथार्थता । सचाई । संगति । सच्चा साक्ष्य ।

समता—(स्त्री०), **समत्व**- (न०) [सम +तल् — टाप्] [सम + त्व] एकरूपता । सादृश्य, समानता । निष्पक्षता । मनःस्थिरता । सम्पूर्णता । साधारणत्व ।

समतिक्रम—(पु०) [सम्—अति √क्रम् +घञ्] उल्लंघन । उपेक्षा ।

समतीत—(वि०) [सम्—अति √इ+क्त] गुजरा हुआ, बीता हुआ; 'पुरुषस्य पदेष्वजन्मनः समतीतं च भवच्च भावि च' र० ८.७८ ।

समद—(वि०) [सह मदेन, ब० स०, सहस्य सः] मतवाला, मदमाता ।

समधिक—(वि०) [सम्यक् अधिकः, प्रा० स०] बहुत अधिक । साधारण से बहुत ज्यादा ।

समधिगमन—(न०) [सम्—अधि √ गम् +ल्युट्] बढ़ जाना, आगे निकल जाना ।

समध्व—(वि०) [समानः अध्वा यस्य, ब० स०, समानस्य सादेशः, अच्] साथ-साथ यात्रा करने वाला ।

समनुज्ञात—(वि०) [सम्— अनु √ ज्ञा +क्त] पूर्णतः स्वीकृत । जिसे जाने की को आज्ञा दी गई हो । अधिकार-प्राप्त ।

समन्त—(वि०) [सम्यक् अन्तो यत्र, प्रा० ब०] सम्पूर्ण, समग्र । (पुं०) [सम्यक् अन्तः, प्रा० स०] सीमा, हद ।—**दुग्धा**-(स्त्री०) थूहर, स्नुही ।—**पञ्चक**- (न०) कुरुक्षेत्र अथवा कुरुक्षेत्र के निकट का स्थान विशेष । —**भद्र**-(पुं०) बुद्धदेव ।—**भुज्**- (पुं०) अग्नि ।

समन्यु—(वि०) [सह मन्युना, ब० स०, सहस्य सः] क्रोधी । शोकान्वित ।

समन्वय—(पुं०) [सम्—अनु√इ + अच्] संयोग । मिलन, मिलाप । विरोध का अभाव । कार्य-कारण का प्रवाह या निर्वाह ।

समन्वित—(वि०) [सम्—अनु √इ +क्त] संयुक्त । मिला हुआ । जिसमें कोई रुकावट न हो । सम्पन्न, अन्वित । प्रभावान्वित या प्रभाव पड़ा हुआ ।

समभिप्लुत—(वि०) [सम्—अभि √प्लु +क्त] जलप्लावित, जल के बूड़े में बूड़ा हुआ । ग्रस्त ।

समभिव्याहार—(पुं०) [सम्—अभि — वि —आ√हृ+घञ्] एक साथ वर्णन या कथन । साहचर्य । अच्छी तरह कहना ।

समभिसरण—(न०) [सम्—अभि √ सृ +ल्युट्] समीप गमन । प्राप्ति के लिए प्रयत्न करना ।

समभिहार—(पुं०) [सम्—अभि √ हृ + घञ्] एक साथ ग्रहण । दुहराव, पुनरावृत्ति । आधिक्य ।

समभ्यर्चन—(न०) [सम्—अभि √ अर्च् +ल्युट्] पूजन या सम्मान करना ।

समभ्याहार—(पुं०) [सम् — अभि—आ √हृ+घञ्] साथ लाना । साहचर्य ।

समय—(पुं०) [सम्√इ + अच्] काल, वक्त । मौक़ा, अवसर । उचित समय, ठीक वक्त । प्रथा । मामूली रीति-रस्म । कवियों का निश्चय किया हुआ सिद्धान्त । सङ्केत-स्थान या कालनिरूपण । ठहराव, शर्त । कानून, नियम । आदेश । गुरुतर विषय । शपथ । सङ्केत, इशारा । सीमा । सिद्धान्त । समाप्ति, अन्त । साफल्य । दुःख की समाप्ति । —**अध्युषित** (**समयाध्युषित**)-(न०) वह समय जब न तो सूर्य और न तारागण दिखलाई पड़ें ।—**अनुवर्तिन्** (**समयानुवर्तिन्**)-(वि०) किसी प्रतिष्ठित पद्धति पर चलने वाला ।—**आचार** (**समयाचार**) -(पुं०) प्रचलित व्यवहार ।—**काम**- प्रतिज्ञा, ठहराव का इच्छुक । **क्रिया**-(स्त्री०) समय नियत करना । आपसी व्यवहार के लिये नियम बनाना । दिव्य परीक्षा की तैयारी । —**परिरक्षण**-(न०) सन्धि या किसी इकरारनामे की शर्तों पर चलने की क्रिया । समझौते का पालन ।—**व्यभिचार**-(पुं०) किसी इकरार या कौल-करार को तोड़ना ।—**व्यभिचारिन्**-(वि०) कौलकरार को भंग करने वाला ।

समया—(अव्य०) [सम् √ इ + आ] सामीप्य; 'समया सौधभित्ति' दश० । बीच में, भीतर । कालविज्ञापन ।

समर—(न०, पुं०) [सम् √ऋ+अप्] युद्ध, लड़ाई ।—**उद्देश** (**समरोद्देश**)-(पुं०), —**भूमि**- (स्त्री०) युद्ध-क्षेत्र ।—**शिरस्**- (न०) युद्ध का अगला मोरचा ।

समर्चन—(न०) [सम् √अर्च् + ल्युट्] सम्यक् प्रकार से अर्चन, पूजन करना । सम्मानकरण ।

समर्ण—(वि०) [सम्√अर्द् +क्त] पीड़ित । घायल । याचित, माँगा हुआ ।

समर्थ—(वि०) [सम् √अर्थ् + अच्] क्षम । बलवान् । निष्णात, योग्यता-सम्पन्न । योग्य, उचित; 'तद् धनुर्ग्रहणमेव राघवः प्रत्यपद्यत समर्थमुत्तरम्' र० ११.७९ । तैयार

किया हुआ। समानार्थवाची। गूढार्थ-प्रकाशक। बहुत जोरदार। अर्थ से सम्बन्ध रखने वाला।

समर्थक—(वि०) [सम्√अर्थ्+ण्वुल्] समर्थन करने वाला। (न०) अगर की लकड़ी।

समर्थन—(न०) [सम√अर्थ् + ल्युट्] पुष्टि करना, ताईद करना। विवेचन करना। पक्ष ग्रहण करना। मत-भेद दूर करना, झगड़ा मिटाना। संभावना। उत्साह। सामर्थ्य, शक्ति।

समर्धक—(वि०) [सम्√ऋध् + ण्वुल्] अभीष्ट पूरा करने वाला, वरदाता।

समर्पण—(न०) [सम् √अर्प् + ल्युट्] प्रतिष्ठापूर्वक देना। नाटक में पात्रों की भर्त्सना।

समर्याद—(वि०) [सह मर्यादया, ब० स०, सहस्य सः] सीमाबद्ध। समीपी। चाल-चलन में सही, शिष्ट।

समल—(वि०) [सह मलेन, ब० स०] मैला, गंदा, अपवित्र। पापी। (न०) [सम्यक् मलम्, प्रा० स०] विष्ठा।

समवकार—(पुं०) [सम–अव√कृ +घञ्] एक प्रकार का नाटक। (इसकी कथावस्तु का आधार किसी देवता या असुर के जीवन की कोई घटना होती है। इसमें वीररस प्रधान होता है। इसमें अक्सर देवासुर-संग्राम का वर्णन किया जाता है। इसमें तीन अङ्क होते हैं, और विमर्श सन्धि के अतिरिक्त शेष चारों सन्धियाँ रहती हैं। इस नाटक में बिन्दु या प्रवेशक की आवश्यकता नहीं समझी जाती।)

समवतार—(पुं०) [सम्–अव√तॄ + घञ्] अवतरण, उतरने की क्रिया। उतरने की जगह, उतार। नदी आदि में उतरने की सीढ़ी, घाट।

समवस्था—(स्त्री०) [समा तुल्या अवस्था या सम्–अव√स्था+अङ–टाप्] समान अवस्था। निर्धारित अवस्था। दशा, हालत।

समवस्थित—(वि०) [सम्–अव √स्था +क्त] अचल रहा हुआ। दृढ़। उद्यत।

समवाप्ति—(स्त्री०) [सम्–अव √आप् +क्तिन्] प्राप्ति, उपलब्धि।

समवाय—(पुं०) [सम्–अव√इ + अच्] समुदाय, समूह। ढेर, राशि; 'बहूनामप्यसाराणां समवायो हि दुर्जयः' सुभा०। घनिष्ठ सम्बन्ध। (वैशेषिक दर्शन में) अटूट सम्बन्ध, नित्य सम्बन्ध, वह सम्बन्ध जो अवयवी के साथ अवयव का, गुणी के साथ गुण का अथवा जाति के साथ व्यक्ति का होता है। —**सम्बन्ध**—(पुं०) कभी न टूटने वाला संबंध।

समवायिन्—(वि०) [समवाय + इनि] जिसमें समवाय या नित्य सम्बन्ध हो। बहुगुणित। बहुल। राशिमय। —**कारण**—(न०) वह कारण जो स्वयं कार्य रूप में परिणत हो जाय। सामग्री जिससे कोई वस्तु तैयार हो, जैसे घड़े का समवायिकारण मिट्टी है।

समवेत—(वि०) [सम्–अव√ इ +क्त] एक में मिला हुआ। अटूट सम्बन्ध युक्त। संचित, जमा किया हुआ। एक श्रेणीयुक्त, किसी के साथ एक श्रेणी में आया हुआ।

समष्टि—(स्त्री०) [सम्√अश् + क्तिन्] सब का समूह; कुल एक साथ, व्यष्टि का उलटा। समवेत सत्ता।

समसन—(न०) [सम√अस् + ल्युट्] मेल, संयोग का योग, समासान्त शब्दों की बनावट। सङ्कोचन।

समस्त—(वि०) [सम्+अस् √ क्त] सब, कुल, समग्र। एक में मिलाया हुआ, संयुक्त। समास-युक्त। संक्षिप्त।

समस्या—(स्त्री०) [सम्√अस्+क्यप्–टाप्] संयोग, मेल। किसी श्लोक या छंद का

वह अन्तिम पद या टुकड़ा जो पूरा श्लोक या छंद बनाने के लिये दूसरों को दिया जाय और जिसके आधार पर पूरा श्लोक या छंद तैयार किया जाय। अपूर्ण की पूर्ति।

समा—(स्त्री०) [√सम्+अच्—टाप्] वर्ष; 'तयोश्चतुर्दशैकेन रामम्प्राव्राजयत्समाः' र० १२.६।

समांश—(वि०) [सम—अंश ब० स०] समान भाग वाला। (पु०) [कर्म० स०] समान भाग, बराबर का हिस्सा।

समांसमीना—(स्त्री०) [समां समां विजायते प्रसूते, ख प्रत्ययेन नि० साधुः] वह गौ जो प्रतिवर्ष बच्चा दे, बर्षौढ़ गाय।

समाकर्षिन्—(वि०) [स्त्री०—समाकर्षिणी] [सम् — आ√कृष्+णिनि] आकर्षक, भली-भाँति खींचने वाला। दूर तक गन्ध फैलाने वाला। (पु०) गन्ध जो दूर तक व्याप्त हो।

समाकुल—(वि०) [सम्यक् आकुलः, प्रा० स०] अत्यन्त घबड़ाया हुआ। परिपूर्ण। भीड़-भाड़ युक्त।

समाक्रान्त—(वि०) [सम्—आ √ क्रम् +क्त] जिस पर चढ़ाई की गई हो। काबू में लिया हुआ।

समाख्या—(स्त्री०) [सम्— आ √ ख्या +अङ—टाप्] कीर्ति, नामवरी, ख्याति। नाम, संज्ञा। व्याख्या।

समाख्यात—(वि०) [सम्—आ √ख्या +क्त] गिना हुआ, जोड़ा हुआ। भली भाँति वर्णित। घोषित। प्रख्यात, प्रसिद्ध।

समागत—(वि०) [सम् — आ√गम् +क्त] पहुँचा हुआ। साथ आया हुआ। संयुक्त, मिला हुआ।

समागति—(स्त्री०) [सम् — आ√ गम् +क्तिन्] सहआगमन। आगमन। एक-सी दशा या उन्नति।

समागम—(पु०) [सम् — आ √गम् +घञ्] मेल, भेंट। मुठभेड़। समीप आगमन। संगति। समूह। मैथुन। (ग्रहों का) योग।

समाघात—(पु०) [सम्—आ √हन् +घञ्] हिंसन, वध। युद्ध, लड़ाई।

समाचयन—(न०) [सम्—आ √ चि +ल्युट्] सञ्चय करण, जमा करने की क्रिया।

समाचरण—(न०) [सम्—आ √ चर् +ल्युट्] भली-भाँति आचरण करना।

समाचार—(पु०) [सम्—आ √ चर् +घञ्] गमन, जाना। आचरण, चाल-चलन। उचित चाल-चलन या व्यवहार। संवाद, खबर, सूचना।

समाज—(पु०) [सम् √ अज् + घञ्] सभा, मजलिस। गोष्ठी। संस्था। समूह। दल। हाथी।

समाज्ञा—(स्त्री०) [सम्—आ √ ज्ञा+अङ —टाप्] कीर्ति, ख्याति।

समादान—(न०) [सम् — आ√ दा +ल्युट्] पूर्ण रूप से ग्रहण करना। उपयुक्त दान पाना। जैनियों का आह्निक कृत्य विशेष।

समाधा—(स्त्री०) [सम्—आ √ धा+अङ —टाप्] दे० 'समाधान'।

समाधान—(न०) [सम्—आ √ धा +ल्युट्]मिलान करना। मन को ब्रह्म में लगाना। ध्यान। समाधि। एकाग्रता। चित्त की शान्ति। शङ्कानिरसन, पूर्वपक्ष का उत्तर। प्रतिज्ञा-करण। (नाटक में) कथा-भाग की मुख्य घटना।

समाधि—(पु०) [सम्—आ √ धा+कि] (मन की) एकाग्रता। ध्यान विशेष; 'आत्मेश्वराणां न हि जातु विघ्नाः समाधिभेदप्रभवो भवन्ति' कु० ३.४१। तप। मिलाना, जोड़ना। समाधान करना। शान्ति,

निस्तब्धता । वचनदान । स्वाग । सम्पन्न करने की क्रिया । कठिन समय में धैर्य धारण । असम्भव कार्य करने का प्रयत्न । अन्न बाँटना । दुर्भिक्ष के लिये अन्न जमा करना । शव को मिट्टी में गाड़ना, कब्र देना । गरदन का भाग या जोड़ विशेष । अलंकार विशेष जिसकी परिभाषा यह है —'समाधिः सुकरं कार्यं कारणान्तरयोगतः' —मम्मट ।

समाध्मात—(वि०) [सम्—आ √ ध्मा +क्त] फूंका हुआ । फुलाया हुआ । अत्यंत गर्वित ।

समान—(वि०) [सम्√अन् + अण्] तुल्य, सदृश, एकसा; 'समानशीलव्यसनेषु सख्यम्' सुभा० । नेक, भला । साधारण । [सह मानेन, ब० स०, सहस्य सः] सम्मानित । (पुं०) [सम्√अन् + अण्] बराबर वाला मित्र । [सम् √ अन्+णिच्+अण्] शरीरस्थ पांच पवनों में से एक । यह नाभि के पास रहता है और अन्न आदि पचाने के लिये आवश्यक माना गया है । **अधिकरण** (**समानाधिकरण**)—(न०) एक ही कारक की विभक्ति से युक्त होना । समान श्रेणी । समान आधार आदि ।(वि०)समान कारक विभक्ति से युक्त । एक ही श्रेणी का। जिनका आधार एक ही पदार्थ हो (वैशे-षिक) । जो समान स्थान पर हो ।—**अर्थ** (**समानार्थ**)–(वि०) एक अर्थ वाला । —**उदक** (**समानोदक**)– (पुं०) ऐसा सम्बन्धी जिसे तर्पण में दिया हुआ जल मिले । चौदहवीं पीढ़ी के बाद समानोदक सम्बन्ध समाप्त हो जाता है । —**उदर्य** (**समानोदर्य**)–(वि०) [समाने उदरे भवः, यत् प्रत्ययः, विकल्पेन न आदेशः] सगा भाई । —**उपमा** (**समानोपमा**)–(स्त्री०) उपमा का एक प्रकार जिसमें उच्चारण की दृष्टि से एक ही शब्द भिन्न प्रकार से खंड करने पर भिन्न अर्थों का द्योतक होता है ।

समानयन—(न०) [सम्—आ √ नी +ल्युट्] आदरपूर्वक ले आना । राशी-करण, एकत्री-करण ।

समाप—(पु०) [समा आपो यस्मिन् ब० स०, अत् समा०] देवताओं को बलि या भेंट चढ़ाने का स्थान ।

समापत्ति—(स्त्री०) [सम्—आ √ पद् +क्तिन्] मिलन, भेंट । संयोग, इत्तिफाक । मूल रूप ग्रहण करना । समाप्ति । वशीभूत होना ।

समापक—(वि०) [[स्त्री०—**समापिका**] [सम्√आप् + ण्वुल्] पूरा करने वाला, समाप्त करने वाला ।

समापन—(न०) [सम् √आप् + ल्युट्] समाप्ति करने की क्रिया, सम्पूर्णता । उपलब्धि । हिसन, नाशन । अध्याय । समाधि ।

समापन्न—(वि०) [सम्—आ √ पद् +क्त] पाया हुआ, उपलब्ध किया हुआ । घटित । आया हुआ । पहुँचा हुआ । समाप्त किया हुआ । विज्ञ । सम्पन्न । पीड़ित । हत, मारा हुआ ।

समापादन—(न०) [सम्—आ √ पद् +णिच् +ल्युट्] पूर्ण करने की क्रिया । मूल रूप देना ।

समाप्त—(वि०) [सम्√आप् + क्त] पूरा किया हुआ, पूर्ण किया हुआ । चतुर, चालाक ।—**पुनरात्तता**– (स्त्री०) एक काव्य-दोष; जहाँ वाक्य समाप्त करके पीछे फिर से उस वाक्य का ग्रहण किया जाता है वहाँ यह दोष लगता है ।

समाप्ताल—(पु०) [समाप्तान् अलति पर्याप्नोति, समाप्त √अल् + अच्] स्वामी, पति ।

समाप्ति—(स्त्री०) [सम्√आप् + क्तिन्] अन्त, अवसान । पूर्णता । झगड़ों का निपटारा ।

समाप्तिक—(वि०) [समाप्ति + ठन्] अन्तिम । ससीम, परिच्छिन्न । सम्पूर्ण कर चुकने वाला । (पु०) समापक, पूर्ण करने वाला व्यक्ति । वेदाध्ययन पूर्ण कर चुकने वाला ब्रह्मचारी ।

समाप्लुत—(वि०) [सम्—आ √ प्लु +क्त] जल की बाढ़ में डूबा हुआ । परिपूर्ण ।

समाभाषण—(न०) [सम्—आ √ भाष् +ल्युट्] वार्तालाप, संभाषण; 'कच्चिद् विमृतविकल्पितहार- सुहृत्समाभाषणतत्परो- ऽभूत्' र० ६.१६ ।

समाम्नान—(न०) [सम्—आ √ म्ना +ल्युट्] पुनरावृत्ति । गणना । परंपरागत प्राप्त पाठ ।

समाम्नाय—(पु०) [सम्—आ √ म्ना +य] परंपरागत पाठ । परम्परागत (शब्द) संग्रह । शास्त्र । योग, जोड़ । समूह (यथा अक्षरसमाम्नाय) ।

समाय—(पु०) [सम्—आ√इ + अच्] आगमन । भेंट, मुलाकात ।*

समायत—(वि०) [सम्—आ √ यम् +क्त] बाहर खींचा हुआ । बढ़ाया हुआ, लंबा किया हुआ ।

समायुक्त—(वि०) [सम्—आ √ युज् +क्त] जोड़ा हुआ, सम्बन्धयुक्त । अनुरक्त । तैयार किया हुआ । अन्वित, सम्पन्न । नियुक्त किया हुआ ।

समायुत—(वि०) [सम्—आ√यु + क्त] जोड़ा हुआ, मिलाया हुआ । जमा किया हुआ । सम्पन्न किया हुआ ।

समायोग—(पुं०) [सम्—आ√युज् + घञ्] संयोग । समागम । सम्बन्ध । तैयारी । धनुष पर बाण रखना । ढेर । राशि । कारण, हेतु । उद्देश्य ।

समारम्भ—(पु०) [सम्—आ√रभ् + घञ्, मुम्] आरम्भ, शुरूआत । उद्योग । साहसिक कार्य । अंगराग ।

समाराधन—(न०) [सम्—आ √ राध् +ल्युट्] सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना । सन्तुष्ट करने का साधन । परिचर्या, सेवा; 'सम्राट् समाराधनतत्परोऽभूत्' र० २.५ ।

समारोपण—(न०) [सम्—आ √ रुह् +णिच्, पुक् + ल्युट्] आरोप करना । स्थानान्तरण । सौंपना । रखना ।

समारोपित—(वि०) [सम्—आ √ रुह् +णिच्, पुक् +क्त] ऊपर चढ़ाया हुआ । ताना हुआ (धनुष) । धरोहर रखा हुआ । स्थापित किया हुआ । हवाले किया हुआ, सौंपा हुआ ।

समारोह—(पु०) [सम्—आ√रुह् + घञ्] ऊपर चढ़ना । ऊपर जाना । (घोड़े या किसी के ऊपर) सवार होना । राजी होना, मान लेना । धूम-धाम ।

समालम्बन—(न०) [सम्—आ √ लम्ब् +ल्युट्] टेक या सहारा लेना ।

समालम्बिन्—(वि०) [सम्—आ √ लम्ब् णिनि] सहारा लेने वाला । लटकने वाला । (न०) भू-तृण ।

समालम्भ—(पु०), **समालम्भन**—(न०) [सम्—आ√लभ् + घञ्, मुम्] [सम् —आ √लभ् +ल्युट्, मुम्] पकड़ना । बलिदान के लिये पशु को पकड़ने की क्रिया । शरीर पर लेप करना; 'मङ्गलसमालम्भनं विरचयावः' श० ४ ।

समाली—(स्त्री०) गुलदस्ता ।

समावर्तन—(न०) [सम्—आ√ वृत् +ल्युट्] लौटना, प्रत्यावर्तन । वेदाध्ययन समाप्त कर ब्रह्मचारी का गुरुकुल से घर लौट आना ।

समावाय—(पुं०) [सम्—आ — अव√इ +अच्] सम्बन्ध, लगाव । अटूट सम्बन्ध । समूह, समुदाय । राशि, ढेर ।

समावास—(पुं०) [सम्यक् आवासः, प्रा० स०] वासा, रहने का स्थान ।

समाविष्ट—(वि०) [सम्—आ √ विश् +क्त] भली-भाँति घुसा हुआ । भली तरह व्याप्त । वश में किया हुआ । घेरा हुआ । भूताविष्ट । अन्वित, युक्त । निर्धारित किया हुआ । भली-भाँति शिक्षा दिया हुआ ।

समावृत—(वि०) [सम्—आ √वृ + क्त] घिरा हुआ । पर्दा पड़ा हुआ । छिपाया हुआ । रक्षित । निकाला हुआ । रोका हुआ ।

समावृत्त, समावृत्तक—(पुं०) [सम्—आ √वृत्+क्त] [समावृत्त+कन्] वह ब्रह्मचारी जो गुरुकुल में वास कर और विद्याध्ययन पूर्ण कर घर लौट आया हो ।

समावेश—(पुं०) [सम्—आ √ विश् +घञ्] एक साथ या एक जगह रहना । एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ के अन्तर्गत होना । चित्त को किसी एक ओर लगाना । एक साथ रखना । भूत का आवेश । कोष ।

समाश्रय—(पुं०) [सम्—आ√श्रि+अच्] रक्षा, पनाह । रक्षा-स्थान, आश्रय-स्थल । निवास-स्थान ।

समाश्लेष—(पुं०) [सम्—आ √ श्लिष् + घञ्] आलिङ्गन ।

समाश्वास—(पुं०) [सम्—आ √ श्वस् +घञ्] दम में दम आना, किसी कठिनाई से पार पाकर दम लेना । भरोसा, आसरा । विश्वास ।

समाश्वासन—(न०) [सम्—आ √ श्वस् +णिच्+ल्युट्] ढाढ़स बँधाना । उत्साहित करना, आश्वासन देना । आश्वासन ।

समास—(पुं०) [सम्√अस् + घञ्] योग, मेल । संक्षेप; 'एषा धर्मस्य वो योनिः समासेन प्रकीर्तिता' मनु० २.२५ । समर्थन । समाहार, एकत्रकरण । व्याकरण में दो अथवा अधिक पदों को एक बनाने वाला विधान विशेष ।—**अर्था** (समासार्था) –(स्त्री०) समस्या । जिसका अर्थ थोड़े में कहा जाय ।—**उक्ति**—(समासोक्ति) –(पुं०) अर्थालङ्कार विशेष ।

समासक्ति—(स्त्री०), **समासङ्ग**— (पुं०) [सम्—आ√सञ्ज् + क्तिन्] [सम्—आ √सञ्ज्+घञ्] संयोग, मेल । स्थापन । सम्बन्ध ।

समासर्जन—(न०) [सम्—आ √ सृज् +ल्युट्] पूर्ण रीत्या त्यागना । दे देना ।

समासादन—(न०) [सम्—आ √ सद् +णिच्+ल्युट्] समीपागमन । पाना । मिलना । पूर्ण करना, सम्पन्न करना ।

समाहरण—(न०) [सम्—आ√हृ +ल्युट्] मिलाना । जमा करना, ढेर करना ।

समाहर्तृ—(वि०) [सम्—आ √हृ+तृच्] एकत्र करने या जमा करने का आदी । वसूल करने वाला ।

समाहार—(पुं०) [सम्—आ √ हृ+घञ्] संग्रह । समूह । शब्दों की रचना । शब्दों या वाक्यों को एक करने की क्रिया । द्वन्द्व और द्विगु समासों का भेद विशेष । संक्षिप्तकरण, सङ्कोचन ।

समाहित—(वि०) [सम्—आ √ धा+क्त] एकत्र किया हुआ । तय किया हुआ । शान्त (चित्त) । स्वस्थ । एकाग्र । लवलीन । समाप्त किया हुआ । कौल-करार किया हुआ । सुपुर्द किया हुआ । दबाया हुआ (स्वर) ।

समाहृत—(वि०) [सम्—आ√ हृ +क्त] संग्रह किया हुआ । एक जगह किया हुआ । विपुल, बहुत । प्राप्त । संक्षिप्त किया हुआ ।

समाहृति—(स्त्री०) [सम्—आ√हृ+क्तिन्] संग्रह । संक्षेप ।

समाह्वय—(पुं०) [सम्—आ√ह्वे + घञ् वा घ, बाहुलकात् नात्वम्] चुनौती, ललकार। युद्ध, संग्राम। लड़ाई जो केवल दो आदमियों में हो (समूह बाँध कर नहीं)। जानवरों की लड़ाई जो आमोद-प्रमोद के लिये हो। जानवरों की लड़ाई पर बाजी लगाना। नाम, संज्ञा।

समाह्वा—(स्त्री०) [समा आह्वा यस्याः, ब० स०] गोजिह्वा वृक्ष। [प्रा० स०] नाम, संज्ञा।

समाह्वान—(न०) [सम्—आ√ह्वे+ल्युट्] सम्यक् प्रकार से आह्वान, बुलौआ। ललकार, रणनिमंत्रण।

समिक—(न०) [सम्√इ + डि, समि +कन्] भाला, बरछा। बल्लम।

समित्—(स्त्री०) [सम्√इ+क्विप्] संग्राम, लड़ाई।

समिता—(स्त्री०) [सम्√इ + क्त—टाप्] गेहूँ का आटा।

समिति—(पुं०) [सम्√इ +क्तिन्] सभा। झुंड। लड़ाई, समर; 'समितौ रणसादुपागतं सगदः सम्प्रतिपत्तुमर्हसि' शि०१६.१३। सादृश्य, समानता। शान्ति। सन्तोष। सहनशीलता।

समितिञ्जय—(वि०) [समिति√जि +खच्, मुम्] युद्धविजयी। सभाविजयी। (पुं०) विष्णु। यम।

समिथ—(पुं०) [सम् √इ + थक्] युद्ध, लड़ाई। अग्नि। आहुति।

समिद्ध—(वि०) [सम्√इन्ध् +क्त] जलाया हुआ, प्रज्वलित। आग लगाया हुआ, फूँका हुआ। भड़काया हुआ।

समिध्—(स्त्री०) [सम्√इन्ध् + क्विप्] लकड़ी, ईंधन। हवन में जलाई जाने वाली लकड़ी; 'तत्राग्निमाधाय समित्समिद्धम्' कु० १.५७।

समिध—(पुं०) [सम्√इन्ध् +क] अग्नि। लकड़ी।

समिन्धन—(न०) [सम्√इन्ध् + ल्युट्] जलना। ईंधन, लकड़ी।

समिर—(पुं०) [=समीर,पृषो०साधुः] वायु।

समीक—(न०) [√सम् + ईकन्] युद्ध, लड़ाई।

समीकरण—(न०) [असमः समः क्रियतेऽनेन, सम+च्वि √ कृ+ल्युट्] असम को सम करना। बीजगणित में अनजानी हुई संख्याओं को जानने की एक प्रक्रिया। सांख्य दर्शन।

समीक्ष—(न०) [सम् √ ईक्ष्+घञ्] सांख्य दर्शन।

समीक्षा—(स्त्री०) [सम्√ईक्ष् + अ—टाप्] खोज, अनुसंधान। विचार। भलीभांति पर्यवेक्षण या मुआयना। समालोचना। समझ, बुद्धि। सत्यप्रकृति या नैसर्गिक सत्य। मुख्य सिद्धान्त। मीमांसा दर्शन।

समीच—(पुं०) [सम्√इ + चट्, कित्, दीर्घ] समुद्र। संयोग।

समीचक—(पुं०) [समीच + कन्] संयोग। संभोग।

समीची—(स्त्री०) [समीच +ङीप्] मृगी, हिरनी। प्रशंसा, तारीफ।

समीचीन—(वि०) [सम् √ अञ्च्+क्विन् +ख—ईन] यथार्थ, सत्य। उचित, वाजिब। न्याय-संगत।

समीद—(पुं०) मैदा, गेहूँ का अति महीन आटा।

समीन—(वि०) [समाम् अधीष्टो भृतो भूतो भावी वा, समा+ख] वार्षिक, सालाना। एक वर्ष के लिये भाड़े पर लिया हुआ। एक वर्ष का।

समीनिका—(स्त्री०) [समां प्राप्य प्रसूते, समा+ख—ईन + कन्—टाप्, इत्व] प्रतिवर्ष ब्याने वाली गाय।

समीप—(वि०) [सङ्गता आपो यत्र, अच् समा०, आत ईत्वम्] निकट, पास; (न०) निकटता, सामीप्य ।

समीर—(पु०) [सम्√ईर्+अच्] वायु । शमी वृक्ष ।

समीरण—(पु०) [सम्√ईर्+ल्यु] वायु । शरीरस्थ वायु; 'समीरणो नोदयिता भवेति व्यादिश्यते केन हुताशनस्य' कु० ३.२१ । यात्री, पथिक । मरुवा का पौधा ।

समीहा—(स्त्री०) [सम्√ईह्+अ—टाप्] अभिलाष । उद्योग । अनुसन्धान । कामना । वाञ्छा ।

समीहित—(वि०) [सम्√ईह्+क्त] अभिलषित । चेष्टित । आरब्ध । (न०) अभिलाष । चेष्टा ।

समुक्षण—(न०) [सम्√उक्ष्+ल्युट्] अच्छी तरह सींचने की क्रिया ।

समुच्चय—(पु०) [सम्—उद्√चि+अच्] राशि । समूह । समाहार । आपस में अनपेक्षित बहुत से शब्दों का एक क्रिया में अन्वय । अलङ्कार विशेष ।

समुच्चर—(पु०) [सम्—उद्√चर्+अच्] ऊपर चढ़ना, आरोहण । पार करना ।

समुच्छेद—(पु०) [सम्—उद्√छिद्+घञ्] पूर्णरीत्या नाश । जड़ से नाश, उन्मूलन ।

समुच्छ्रय—(पु०) [सम्—उद्√श्रि+अच्] ऊपर उठना, उत्थान । ऊँचाई । विरोध, शत्रुता । वृद्धि । उच्च पद । पर्वत ।

समुच्छ्राय—(पु०) [सम्—उद्√श्रि+घञ्] ऊँचाई ।

समुच्छ्वसित—(न०), **समुच्छ्वास**—(पु०) [सम्—उद्√श्वस्+क्त] [सम्—उद्√श्वस्+घञ्] गहरी, लंबी साँस ।

समुज्झित—(वि०) [सम्√उज्झ्+क्त] त्यागा हुआ, छोड़ा हुआ । मुक्त किया हुआ ।

समुत्कर्ष—(पु०) [सम्—उद्√कृष्+घञ्] उन्नति, बढ़ती । अपनी जाति से ऊँची किसी अन्य जाति में जाना ।

समुत्क्रम—(पु०) [सम्—उद्√क्रम्+घञ्] ऊपर चढ़ना, उन्नति करना । सीमोल्लङ्घन, मर्यादा लाँघना ।

समुत्क्रोश—(पु०) [सम्—उद्√क्रुश्+घञ्] चिल्लाना । विकट कोलाहल । [सम्—उद्√क्रुश्+अच्] कुररी नामक पक्षी ।

समुत्थ—(वि०) [सम्—उद्√स्था+क] उठा हुआ, उन्नत । निकला हुआ, उत्पन्न; 'अथ नयनसमुत्थं ज्योतिरत्रेरिव द्यौः' र० २.७५ ।

समुत्थान—(न०) [सम्—उद्√स्था+ल्युट्] उठान, उत्थान । (मर कर) जी उठना । पूर्णरीत्या आरोग्य । (घाव का) पुरना । रोग का लक्षण । उद्योग-धंधे में लगाना ।

समुत्पतन—(न०) [सम्—उद्√पत्+ल्युट्] खूब ऊपर उड़ना । उद्योग ।

समुत्पत्ति—(स्त्री०) [सम्—उद्√पद्+क्तिन्] पैदायश, उत्पत्ति । घटना ।

समुत्पिञ्ज, समुत्पिञ्जल—(वि०) [सम्—उद्√पिञ्ज्+अच्] [सम्—उद्√पिञ्ज्+कलच्] अत्यन्त गड़बड़ाया हुआ, अस्त-व्यस्त । (पु०) सेना जो हड़बड़ी में अस्त-व्यस्त हो गयी हो । बड़ी भारी गड़बड़ ।

समुत्सव—(पु०) [प्रा० स०] बड़ा उत्सव ।

समुत्सर्ग—(पु०) [सम्—उद्√सृज्+घञ्] त्याग । विराग । गिरना, गिराव । मल का त्याग ।

समुत्सारण—(न०) [सम्—उद्√सृ+णिच्+ल्युट्] हँका देना, भगा देना । पीछा करना । शिकार करना ।

समुत्सुक—(वि०) [प्रा० स०] अत्यन्त अधीर या इच्छुक । शोकान्वित ।

समुत्सेध—(पुं०) [सम्—उद् √सिध् +घञ्] ऊँचाई। मोटापन। गाढ़ापन।

समुदक्त—(वि०) [सम्—उद् √अञ्च् +क्त] (कुएँ से जैसे) खींचा हुआ, निकाला हुआ।

समुदय—(पुं०) [सम्—उद् √इ + अच्] उठने या उदित होने की क्रिया। विकास। संग्रह। समूह। राशि। योग, मिलावट। राजस्व। उद्योग। लड़ाई। दिवस। सेना का पिछला भाग। लग्न। पूर्णांश।

समुदागम—(पुं०) [सम्—उद्—आ √गम् +घञ्] पूर्णज्ञान।

समुदाचार—(पुं०) [सम् —उद् —आ √चर् +घञ्] उचित अभ्यास या व्यवहार। संबोधन करने का उपयुक्त विधान। अभिप्राय। मतलब।

समुदाय—(पुं०) [सम्—उद्√अय् +घञ्] समूह। झुंड। युद्ध। सेना का पिछला भाग। उदय। उन्नति। शरीर के तत्त्वों का समाहार। रक्षित सेना।

समुदाहरण—(न०) [सम्—उद् —आ √हृ+ल्युट्] कथन, उच्चारण। उदाहरण, मिसाल।

समुदित—(वि०) [सम्—उद् √इ+क्त] ऊपर गया हुआ, ऊपर चढ़ा हुआ। ऊँचा, उन्नत। उत्पन्न; 'मद्भाग्योपचयादयं समुदितः सर्वो गुणानां गणः' सुभा०। समवेत, मिला हुआ। सम्पन्न, युक्त। [सम्√वद् +क्त] अच्छी तरह कहा हुआ।

समुदीरण—(न०) [सम्—उद् √ईर् +ल्युट्] अच्छी तरह कहना। दुहराना।

समुद्ग—(वि०) [सम्—उद् √गम् +ड] ऊपर उठने वाला। ढक्कन वाला। छीमी वाला (पुं०) ढक्कनदार पिटारा या टोकरी। यमक का एक प्रकार।

समुद्गक—(पुं०) [समुद्ग+कन्] ढक्कनदार पेटी या टोकरी। श्लोक विशेष।

समुद्गम—(पुं०) [सम्—उद् √गम् +घञ्] उठना। उगना। निकलना। उत्पत्ति।

समुद्गिरण—(न०) [सम्—उद् √गॄ+ल्युट्] वमन, उगलन। उगली हुई चीज। उठाना, ऊपर करना।

समुद्गीत—[सम्—उद्√गै+क्त] उच्चस्वर का गीत या राग।

समुद्गीर्ण—(वि०) [सम्—उद्√गॄ +क्त] उगला हुआ। उठाया हुआ। कहा हुआ। पाला हुआ।

समुद्देश—(पुं०) [सम्—उद्√दिश् +घञ्] पूर्णरीत्या बतलाना। पूर्ण वर्णन। अभिप्राय।

समुद्धत—(वि०) [सम्—उद्√हन्+ क्त] ऊपर उठा या उठाया हुआ, ऊपर किया हुआ। उत्तेजित, उभाड़ा हुआ। अभिमान में चूर, अकड़ा हुआ। बुरे तौर-तरीके का, दुष्ट व्यवहार करने वाला। अशिष्ट, उजड्ड।

समुद्धरण—(न०) [सम्—उद्√हृ +ल्युट्] ऊपर करना। उठा लेना। ऊपर खींच लेना। उद्धार करना। मुक्ति, छुटकारा। मूलोच्छेदन। (समुद्र-तट से) निकाल लेना। भोजन जो वमन द्वारा निकल पड़ा हो।

समुद्धर्तृ—(वि०) [सम्—उद्√हृ +तृच्] उठाने वाला। उद्धार करने वाला। उन्मूलन करने वाला।

समुद्भव—(पुं०) [सम्—उद् √भू+अप्] उत्पत्ति। पुनरुज्जीवन। कार्य विशेष में हवन के समय अग्नि का रखा जाने वाला एक नाम।

समुद्यम—(स्त्री०) [सम्—उद् √यम् +घञ्] ऊपर उठाना। महान् उद्योग; 'कैर्मया सह योद्धव्यमस्मिन्रणसमुद्यमे' भग० १.२२। उद्योगारम्भ। आक्रमण, चढ़ाई।

समुद्योग—(पुं०) [सम्—उद्√युज्+घञ्] पूरी चेष्टा, क्रियात्मक उद्योग।

समुद्र—(वि०) [सह मुद्रया, ब० स० सहस्य सः] मोहर से बंद, मोहर वाला, मोहर लगा हुआ। (पुं०) [सम्√उन्द् + रक् वा सम्—उद्√रा+क] सागर। शिव। चार की संख्या।—**अन्त** (**समुद्रान्त**)-(न०) समुद्रतट। जायफल।—**अन्ता** (**समुद्रान्ता**)-(स्त्री०) पृथिवी। कपास। जवासा। पृक्का। दुरालभा।—**अम्बरा** (**समुद्राम्बरा**)-(स्त्री०) पृथिवी।—**आर** (**समुद्रार**)-(पुं०) मगर। बृहदाकार मत्स्य विशेष। श्रीराम जी का बाँधा हुआ समुद्र, सेतुबंध।—**कफ**, —**फेन**-(पुं०) समुद्र का फेन।—**ग**-(पुं०) समुद्री देशों में व्यापार करने वाला।—**गा**-(स्त्री०) नदी। —**गृह**-(न०) जल के भीतर बनाया हुआ ग्रीष्म-भवन।—**चुलुक**-(पुं०) अगस्त्य जी का नामान्तर। —**नवनीत**- (न०) चन्द्रमा। अमृत। —**मेखला**, —**रसना**- (स्त्री०) पृथिवी। —**यान** -(न०) समुद्रयात्रा। जहाज, पोत।—**यात्रा**-(स्त्री०) समुद्री सफर।—**योषित्**-(स्त्री०) नदी।—**वह्नि**-(पुं०) बड़वानल।—**सुभगा**- (स्त्री०) गङ्गा नदी।

समुद्वह—(पुं०) [सम्—उद्√वह्+अच्] ढोने वाला। उठाने वाला।

समुद्वाह—(पुं०) [सम्—उद्√वह्+घञ्] वहन, ढुलाई। विवाह, शादी; 'समुद्वाहे समुल्लासो जनमानसे विलसतितराम्' सुभा०।

समुद्वेग—(पुं०) [सम्—उद्√विज्+घञ्] बड़ा क्षोभ। त्रास।

समुन्दन—(न०) [सम्√उन्द् + ल्युट्] गीला होना, तर होना। गीलापन, आर्द्रता।

समुन्न—(वि०) [सम्√ उन्द् + क्त] गीला, नम, तर, आर्द्र।

समुन्नत—(वि०) [सम्—उद् √नम+क्त] ऊपर उठाया हुआ। ऊँचा। श्रेष्ठ। अभिमानी। आगे निकला हुआ। ईमानदार, न्यायी।

समुन्नति—(स्त्री०) [सम्—उद् √ नम् +क्तिन्] उठान। ऊँचाई। उच्चपद। प्रधानता। अभ्युदय, समृद्धि; 'प्रकृतिः खलु सा महीयसः सहते नान्यसमुन्नतिं यया' कि० २.२१। अभिमान।

समुन्नद्ध—(वि०) [सम्—उद्√नह्+क्त] उठा हुआ, उन्नत। सूजा हुआ। भरा हुआ। अभिमानी। पण्डितम्मन्य। बिना बेड़ियों का, मुक्त, खुला हुआ।

समुन्नय—(पुं०) [सम्—उद्√नी + अच्] प्राप्ति, उपलब्धि। घटना। निष्कर्ष। अनुमान।

समुन्मूलन—(न०) [प्रा० स०] जड़ से उखाड़ना, नाश।

समुपगम—(पुं०) [सम्—उप √गम्+अप्] समीप जाना। लगाव, संस्पर्श।

समुपजोषम्—(अव्य०) [सम्—उप √ जुष् +अमु] अत्यन्त आनन्द।

समुपभोग—(पुं०) [प्रा० स०] मैथुन।

समुपवेशन—(न०) [सम्—उप√विश् +ल्युट्] इमारत, भवन। बस्ती। बैठना।

समुपस्था—(स्त्री०), **समुपस्थान**-(न०) [सम्—उप √ स्था + अङ—टाप्] [सम्—उप √ स्था+ल्युट्] निकट जाना। पहुँच। समीपता, नैकट्य। होना, घटना।

समुपस्थिति—(स्त्री०) [सम्—उप √स्था +क्तिन्] समीपता, नैकट्य। हाजिरी, होना, उपस्थिति।

समुपार्जन—(न०) [सम्—उप √ अर्ज् +ल्युट्] एक साथ एक समय में प्राप्ति।

समुपेत—(वि०) [सम्—उप√इ + क्त] निकट आया हुआ। अन्वित, समाप्त, युक्त। एकत्रीभूत।

समुपोढ—(वि०) [सम्—उप √वह् +क्त] ऊँचा उठा हुआ। बढ़ा हुआ। समीप लाया हुआ। रोका हुआ। दिया हुआ। आरम्भ किया हुआ।

समुल्लास—(पुं०) [सम्—उद् √लस् +घञ्] अत्यधिक चमक। महान् हर्ष। क्रीड़ा। ग्रन्थ का परिच्छेद।

समुल्लेख—(पुं०) [सम्—उद् √लिख् +घञ्] पैर आदि से मिट्टी खोदना। उत्पाटन, उन्मूलन।

समूढ—(वि०) [सम्√ऊह् वा √वह् +क्त] एकत्र किया हुआ, जमा किया हुआ। वहन किया हुआ। लपेटा हुआ। सहित। युक्त। संगत। व्यवस्थित। शोधित। कुटिल। विवाहित। तुरन्त का उत्पन्न। शान्त किया हुआ, चुप किया हुआ। मोड़ा हुआ।

समूर, समूरु, समूरुक—(पुं०) [सन्नतौ सन्धिहीनत्वात् ऊरु यस्य, प्रा० ब०, पक्षे पृषो० साधुः] एक प्रकार का मृग, साबर हिरन।

समूल—(वि०) [सह मूलेन, ब० स०] जड़ समेत, मूल-युक्त।

समूह—(पुं०) [सम्√ऊह् + घञ्] संग्रह, ढेर। गिरोह, झुंड। समुदाय।

समूहन—(न०) [सम् √ऊह् + ल्युट्] बुहारना। एकत्रीकरण। राशि, ढेर।

समूहनी—(स्त्री०) [समूहन + ङीप्] झाड़ू, बुहारी।

समूह्य—(पुं०) [सम्√ऊह् + ण्यत्] यज्ञिय अग्नि। यज्ञाग्नि का संस्कार विशेष। (वि०) अच्छी तरह ऊह या तर्क करने योग्य। बुहारने योग्य।

समृद्ध—(वि०) [सम्√ऋध्+क्त] फलता-फूलता हुआ, भरापूरा। प्रसन्न, सुखी। धनी, सम्पत्तिशाली। सफल। बहुल।

समृद्धि—(स्त्री०) [सम् √ऋध् + क्तिन्] बढ़ती, उन्नति। धन-दौलत का होना। धनदौलत; 'अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः' शुना०। विपुलता, बाहुल्य। सामर्थ्य, शक्ति।

समेत—(वि०) [सम्—आ√इ + क्त] एकत्रित। मिला हुआ। पास आया हुआ। सहित, अन्वित, युक्त। संघर्षित, टकराया हुआ। कौल-करार किया हुआ।

सम्पत्ति—(स्त्री०) [सम्√पद्+क्तिन्] अभ्युदय, समृद्धि। ऐश्वर्य। धन-दौलत। सफलता, कामयाबी। पूर्णता, सम्पन्नता। बाहुल्य, विपुलता।

सम्पद्—(स्त्री०) [सम्√पद् + क्तिन्] धनदौलत। समृद्धि। सौभाग्य। सफलता। पूर्णता। धन का भाण्डार। लाभ। बाहुल्य। सद्गुणों की वृद्धि। गौरव। सौन्दर्य। सजावट। ठीक ढङ्ग या कायदा। मोती का हार। —वर—(पुं०) राजा।

सम्पन्न—(वि०) [सम्√पद् + क्त] समृद्धिमान्, भरा-पूरा। भाग्यवान्। पूर्ण किया हुआ, सम्पन्न किया हुआ। पूर्ण, निष्णात। पूरा बढ़ा हुआ। पाया हुआ, प्राप्त। सही, ठीक। युक्त, सहित। (न०) धन-दौलत। रुचिकर खाद्य, सुस्वादु पदार्थ। (पुं०) शिव।

सम्पराय—(पुं०) [सम्—परा √इ +अच्] लड़ाई, मुठभेड़। संकट, आपत्ति। भावी दशा। पुत्र। मृत्यु।

सम्परायक, सम्परायिक—(न०) [सम्पराय+कन्] [सम्पराय+ठन्] युद्ध।

सम्पर्क—(पुं०) [सम्√पृच् + घञ्] मिश्रण, मिलावट। संयोग। स्पर्श; 'पादेन नापैक्षत सुन्दरीणां सम्पर्कमाशिञ्जितनूपुरेण' कु० ३.२६। योग, जोड़। मैथुन, सम्भोग।

सम्पा—(स्त्री०) [सम्पाक् अतर्कितं पतति, सम्√पत् + ड—टाप्] विद्युत्, बिजली।

सम्पाक—(वि०)[सम्यक् पाको यस्य वा यस्मात्, ब० व्री०] अच्छी बहस करने वाला । चालाक, चतुर । कामुक, लंपट । ठोटा । थोड़ा । (पुं०) आरग्वध वृक्ष, अमलतास ।[प्रा० स०] सम्यक् पाक, अच्छी तरह पकना ।

सम्पाट—(पुं०) [सम्√पट् + णिच्+घञ्] तकुआ । किसी त्रिभुज की बढ़ी हुई भुजा पर लम्ब का गिरना ।

सम्पात—(पुं०) [सम्√पत् + घञ्] सह-पतन । एक साथ मिलन । मुठभेड़, संघर्ष । पतन । नीचे आगमन । तीर का प्रक्षेप । गमन, चलन । स्थानान्तर-करण, हटाना । पक्षियों की उड़ानविशेष। नैवेद्य का उच्छिष्ट। मिलने का स्थान । युद्ध का ढंग । घटित होना । तलछट ।

सम्पाति—(पुं०) [सम् √पत् + णिच् +इन्] गृध्र जटायु का बड़ा भाई ।

सम्पाद—(पुं०) [सम्√पद् + णिच्+घञ्] सम्यक् निष्पादन, अच्छी तरह करना । [सम्√पद्+अच्]पूर्णता। उपलब्धि, प्राप्ति ।

सम्पादक—(वि०) [सम् √पद् +णिच् +ण्वुल्] प्रस्तुत करने वाला । पूर्ण करने वाला । प्राप्त करने वाला । (पुं०) वह व्यक्ति जो किसी समाचार-पत्र या पुस्तक का क्रम आदि लगा कर उसे सब प्रकार से ठीक करके संकलित करता है (एडिटर) ।

सम्पादन—(न०) [सम्√पद् + णिच् +ल्युट्] प्रस्तुत करना । पूरा करना । उपार्जन करना । पुस्तक या सामयिक पत्र आदि का क्रम, पाठ आदि ठीक करके उसे संकलित करना (एडिटिंग) ।

सम्पिण्डित—(वि०) [सम्√पिण्ड् + क्त] पिण्ड बनाया हुआ । सङ्कुचित, सिकुड़ा हुआ ।

सम्पिण्डित—(वि०) [सम् √पिण्ड्+क्त] समेटा हुआ, संकुचित किया हुआ ।

सम्पीड—(पुं०) [सम्√पीड् + घञ्] अत्यंत पीड़ा । दबाना । निचोड़ना ।

सम्पीडन—(न०) [सम्√पीड् + ल्युट्] निचोड़ना । दबाना । प्रेषण । दण्ड, सजा । धँघोलना । कष्ट देना । एक उच्चारण-दोष ।

सम्पीति—(स्त्री०) [सम् √ पा + क्तिन्] साथ-साथ पीना ।

सम्पुट—(पुं०) [सम्√पुट् + क] कटोरे जैसी कोई वस्तु, दोना । अंजलि । रसादि फूँकने का मिट्टी का बना हुआ पात्र । ढक्कनदार पिटारी या डिबिया, डिब्बा । हिसाब में बाकी या उधार । एक जातीय पदार्थ से भिन्न जातीय पदार्थ को दोनों तरफ से व्याप्त करना । कुरबक वृक्ष । एक रतिबन्ध; इसका लक्षण— "सम्प्रसार्योभयो पादौ हस्तागतकपोलकः । मर्गालिङ्गस्य संयोगात् रमते सम्पुटो हि सः ।।"—(रतिम०) ।

सम्पुटक—(पुं०), **सम्पुटिका**—(स्त्री०)[सम् √पुट्+अच् + कन्] [सम्पुटक+टाप्, ह्रस्व] रत्नपेटी, गहना रखने का डिब्बा ।

सम्पूर्ण—(वि०) [सम्√पुर् +क्त] परि-पूर्ण, पूरे तौर से भरा हुआ । सारा, सब, समूचा । (न०) आकाश तत्त्व । (पुं०) राग की वह जाति जिसमें सातों स्वर लगते हैं ।

सम्पृक्त—(वि०) [सम् √ पृच् + क्त] मिश्रित । सम्बन्धयुक्त; 'वागर्थाविव सम्पृक्तौ' र० १.१ । संपर्क में आया हुआ । संयुक्त । पूर्ण । खचित ।

सम्प्रक्षालन—(न०) [सम्—प्र √ क्षल +णिच्+ल्युट्] जल द्वारा भली-भाँति शुद्धि । स्नान । जल का बूड़ा ।

सम्प्रणेतृ—(पुं०) [सम्—प्र√ नी+तृच्] शासक । न्यायाधीश ।

सम्प्रति—(अव्य०) [सम्—प्रति, द्व० स०] अभी। हाल में। इस समय। सामने। ठीक ढंग से। ठीक समय पर।

सम्प्रतिपत्ति—(स्त्री०) [सम्—प्रति√पद्+क्तिन्] समीप आगमन। विद्यमानता, मौजूदगी। प्राप्ति, उपलब्धि। इकरारनामा। स्वीकृति। (आईन में) विशेष प्रकार का उत्तर। आक्रमण, चढ़ाई। घटना। सहयोग। क्रम।

सम्प्रतिरोधक—(पु०) [सम्—प्रति√रुध्+घञ्+कन्] पूर्णरीत्या रोक या बाधा। जेल या बन्दीगृह।

सम्प्रतीत—(वि०) [सम्—प्रति√इ+क्त] लौटा हुआ। भली-भाँति विश्वास किया हुआ। ज्ञात। प्रसिद्ध। माननीय।

सम्प्रतीति—(स्त्री०) [सम्—प्रति√इ+क्तिन्] भली-भाँति प्रतीति या विश्वास। ख्याति, कीर्ति। पूर्ण ज्ञान।

सम्प्रत्यय—(पु०) [सम्—प्रति√इ+अच्] दृढ़ विश्वास। इकरार, कौल करार। यथार्थ बोध।

सम्प्रदान—(न०) [सम्—प्र√दा+ल्युट्] भली-भाँति दे डालना या सौंप देना अर्थात् दी हुई वस्तु में देने वाले का कुछ भी स्वत्व न रखना। दीक्षा। दान। भेंट। चंदा। विवाह। चतुर्थ कारक।

सम्प्रदानीय—(न०) [सम्—प्र√दा+अनीयर्] भेंट। दान। पुरस्कार] चंदा।

सम्प्रदाय—(पु०) [सम्—प्र√दा+घञ्] गुरुपरम्परागत उपदेश, गुरुमंत्र। गुरुपरम्परागत सदुपदिष्ट व्यक्तियों का समूह। परम्परागत प्रचलित रीति-रवाज या पद्धति।

सम्प्रधान—(न०) [सम्—प्र√धा+ल्युट्] निश्चयकरण।

सम्प्रधारण—(न०), **सम्प्रधारणा**—(स्त्री०) [सम्—प्र√धृ+णिच्+ल्युट्] [सम्—प्र√धृ+णिच्+युच्—टाप्] विचार। किसी वस्तु के औचित्य-अनौचित्य के विषय में निश्चय करने की क्रिया।

सम्प्रपद—(पु०) [सम्—प्र√पद्+क] भ्रमण, पर्यटन।

सम्प्रभिन्न—(वि०) [सम्—प्र√भिद्+क्त] चिरा हुआ, फटा हुआ। मद में मत्त।

सम्प्रमोद—(पु०) [सम—प्र√मुद्+घञ्] अतिहर्ष।

सम्प्रमोष—(पु०) [सम्—प्र√मुष्+घञ्] हानि। नाश।

सम्प्रयाण—(न०) [सम्—प्र√या√ल्युट्] प्रस्थान, रवानगी।

सम्प्रयोग—(पु०) [सम्—प्र√युज्+घञ्] जोड़ने की क्रिया। संयोग; 'उष्णत्वमग्न्यातपसम्प्रयोगाच्छैत्यं हि यत्सा प्रकृतिर्जलस्य' र० ५.५४। मेल। मिलाने वाली शृङ्खला। पारस्परिक सम्बन्ध। क्रमबद्ध व्यवस्था या सिलसिला। मैथुन। संलग्नता। इन्द्रजाल, जादू।

सम्प्रयोगिन्—(वि०) [सम्—प्र√युज्+ +घिनुण्] मिलाने वाला, जोड़ने वाला। (पु०) ऐन्द्रजालिक, मदारी। लम्पट पुरुष।

सम्प्रवृष्ट—(न०) [सम्—प्र√वृष्+क्त] अच्छी वर्षा।

सम्प्रश्न—(पु०) [प्रा० स०] भली-भाँति या शिष्टतापूर्ण प्रश्न।

सम्प्रसाद—(पु०) [सम्—प्र√सद्+घञ्] सन्तोषण, समाराधन। अनुग्रह, कृपा। मन का धैर्य, सुस्थिरता। विश्वास, भरोसा। जीव, आत्मा।

सम्प्रसारण—(न०) [सम्—प्र√सृ+णिच्+ल्युट्] क्रमशः य्, व्, र् और ल् का इ, उ, ऋ और ऌ में परिवर्तन —"इग्यणः सम्प्रसारणम्"—पा०।

सम्प्रहार—(पु०) [सम्—प्र√हृ+घञ्] हनन, मारना। युद्ध। गमन।

सम्प्राप्ति—(स्त्री०) [सम्—प्र √ आप् +क्तिन्] सम्यक् प्राप्ति । पहुँच । रोग का सन्निकृष्ट कारण ।

सम्प्रीति—(स्त्री०) [सम्√प्री+क्तिन्] सम्यक् प्रणय । पूर्ण तुष्टि । मैत्री ।

सम्प्रेक्षण—(न०) [सम्—प्र √ईक्ष्+ल्युट्] अच्छी तरह देखना । निरीक्षण । अनुसन्धान ।

सम्प्रैष—(पुं०) [सम्—प्र √इष् + घञ्] आह्वान, आमन्त्रण । यज्ञ में ऋत्विज को दिया जाने वाला आदेश । भेजना ।

सम्प्रोक्षण—(न०) [सम्—प्र √उक्ष् +ल्युट्] मार्जन, जल को मंत्र पढ़ कर छिड़कना । खूब पानी छिड़क कर मन्दिर आदि साफ करना ।

सम्प्लव—(पुं०) [सम्√प्लु +अप्] जल में डूबना या जल की बाढ़ में मग्न होना । लहर, तरंग । जल की बाढ़ । बरबादी । घनी राशि । हो-हल्ला ।

सम्फाल—(पुं०) [सम्यक् फालो गमनं यस्य, प्रा० ब०] मेढ़ा, मेष ।

सम्फेट—(पुं०) दो क्रुद्ध जनों की लड़ाई ।

√**सम्ब्**—भ्वा० पर० सक० जाना । सम्बति, सम्बिष्यति, असम्बीत् । चु० उभ० सक० एकत्र करना । सम्बयति—ते, सम्बयिष्यति —ते, अससम्बत्—त ।

सम्ब—(न०) [√सम्ब् +अच्] जल । दो बार जोतना । उलटा जोतना ।

सम्बद्ध—(वि०) [सम्√बन्ध् + क्त] बँधा हुआ । अटका हुआ । सम्बन्ध-युक्त । युक्त, अन्वित ।

सम्बन्ध—(पुं०) [सम्√बन्ध्+घञ्] योग, मेल, संगति । रिश्ता, रिश्तेदारी । षष्ठ कारक । विवाह । औचित्य, उपयुक्तता । मैत्री; 'सम्बन्धमाभाषणपूर्वमाहुः' र० २. ५८ । समृद्धि । साफल्य । एक प्रकार की ईति या उपद्रव । सिद्धान्त का हवाला ।

सम्बन्धक—(वि०) [सम् √बन्ध्+ण्वुल्] सम्बन्ध करने वाला । योग्य, उपयुक्त । (पुं०) मित्र, दोस्त । विवाह से या जन्म से सम्बन्धी या नातेदार । विवाह के द्वारा होने वाली सन्धि ।

सम्बन्धिन्—(वि०) [सम्बन्ध+इनि] सम्बन्ध रखने वाला, सम्बन्धयुक्त । जुड़ा हुआ । सद्गुणों वाला । वैवाहिक नातेदार । नतैत, नातेदार ।

सम्बर—(न०) [√सम्ब् + अरन्] रोक, निग्रह । जल । (पुं०) बाँध, पुल । मृग विशेष । एक दैत्य का नाम जिसे प्रद्युम्न ने मारा था । एक पर्वत का नाम ।—**अरि** (**सम्बरारि**),—**रिपु**—(पुं०) कामदेव ।

सम्बल—(न०, पुं०) [√सम्ब्+कलच्] पाथेय, रास्ते के लिये भोजन । (न०) जल ।

सम्बाध—(वि०) [सम्यक् बाधा यत्र, प्रा० ब०] भीड़-भाड़ से बंद, अवरुद्ध । सङ्कीर्ण । (पुं०) [सम्√बाध्+घञ्] आपस की रगड़, ठेलम-ठेला । रुकावट, अड़चन । भय । [प्रा० ब०] नरक का मार्ग । योनि, भग ।

सम्बुद्धि—(स्त्री०) [सम्√बुध् + क्तिन्] पूर्ण ज्ञान या प्रतीति । पूर्ण विवेक । सम्बोधन । सम्बोधन कारक ।

सम्बोध—(पुं०) [सम्√बुध्+घञ्] पूर्ण ज्ञान, सम्यक् बोध । प्रक्षेप । नाश । [सम् √बुध्+णिच् + घञ्] खोल कर बताना, समझाना ।

सम्बोधन—(न०) [सम् √बुध्+णिच् +ल्युट्] भली-भाँति समझाना, बताना । जगाना । पुकारना । एक कारक जिसमें किसी को पुकारने या बुलाने के लिये शब्द का प्रयोग किया जाता है ।

सम्भक्ति—(स्त्री०) [सम् √भज् + क्तिन्] हिस्सा लगाना । बाँटना । उपभोग करना । भक्ति करना ।

सम्भग्न—(वि०) [सम्√भञ्+क्त] छिन्न-भिन्न, तितर-बितर। पराभूत। असफल। (पुं०) शिव।

सम्भली—(स्त्री०) [सम् √भल् + अच् —ङीष्] कुटनी, दूती।

सम्भव—(पुं०) [सम्√भू + अप्] उत्पत्ति, पैदायश; 'मानुषीषु कथं वा स्यादस्य रूपस्य सम्भवः' श० १.२६। अस्तित्व। कारण, हेतु। संमिश्रण, मेल, मिलावट। सम्भावना। मुसङ्गति। उपयुक्तता। मैथुन। क्षमता। संकेत। उपाय। धारणा-शक्ति। प्रमाण-विशेष। परिचय। बरबादी, नाश।

सम्भार—(पुं०) [सम्√भृ + घञ्] संग्रह, इकट्ठा करना। साज-सामान, उपकरण। समूह। ढेर, राशि। पूर्णता। धन-दौलत, सम्पत्ति। पालन-पोषण। आधिक्य।

सम्भावन—(न०), **सम्भावना**—(स्त्री०) [सम्√भू + णिच्+ल्युट्] [सम् √भू +णिच् +युच्] विचार। मनन। कल्पना। सम्मान। मुमकिन होना। उपयुक्तता। योग्यता। सन्देह। प्रेम। प्रसिद्धि।

सम्भावित—(वि०) [सम्√भू + णिच् +क्त] विचारा हुआ। कल्पना किया हुआ। सम्मानित; 'सम्भावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते' भग०। उपयुक्त। मुमकिन। उत्पादित।

सम्भाष—(पुं०) [सम्√भाष्+घञ्] बात-चीत। वादा, करार। प्रहरी का संकेत-शब्द। अभिवादन। यौन-सम्बन्ध।

सम्भाषण—(न०) [सम्√भाष् + ल्युट् —अन] दे० 'सम्भाष'।

सम्भाषा—(स्त्री०) [सम्√भाष् +अ—टाप्] वार्तालाप, सम्भाषण। बधाई। आईन विरुद्ध सम्बन्ध, ऐसा सम्बन्ध जो जुर्म समझा जाय। इकरारनामा, कौल-करार। पहरेदार का सङ्केत-शब्द या वाक्य।

सम्भूति—(स्त्री०) [सम् √ भू + क्तिन्] उत्पत्ति, पैदायश। वृद्धि। मिलावट। उपयुक्तता। योग्यता। शक्ति। दक्ष की एक पुत्री।

सम्भृत—(वि०) [सम् √भृ+क्त] एकत्र किया हुआ, जमा किया हुआ। तैयार किया हुआ। सुसम्पन्न। भरा हुआ। पूर्ण, पूरा। पाया हुआ। ढोया हुआ। पालन-पोषण किया हुआ। उत्पन्न किया हुआ।

सम्भृति—(स्त्री०) [सम् √भृ +क्तिन्] संग्रह। राशि, उपस्कर, सामग्री। तैयारी। आधिक्य। पूर्णता। परवरिश, पालन-पोषण।

सम्भेद—(पुं०) [सम्√भिद्+घञ्] तोड़ना। चीरना। शत्रुओं में परस्पर विरोध उत्पन्न करना, फूट डालना। किस्म, प्रकार। एकरूपता। संसर्ग। (नजर का) मिलना। (नदियों का) संगम।

सम्भोग—(पुं०) [सम्√भुज् + घञ्] किसी वस्तु का भली-भाँति उपयोग या उपभोग। रति-क्रीड़ा, सुरत, मैथुन। शृंगार रस का एक भेद, संयोग शृंगार। केलि-नागर, लंपट।

सम्भ्रम—(पुं०) [सम्√भ्रम्+घञ्] घूमना, चक्कर खाना। हड़बड़ी, जल्दबाजी। गड़बड़ी, गोलमाल। भय, डर। गलती, भूल। उत्साह। मान, सम्मान; 'गृहमुपगते सम्भ्रमविधिः' भर्तृ० २.६३। श्री, शोभा।

सम्भ्रान्त—(वि०) [सम् √भ्रम् + क्त] घूमा हुआ। घबड़ाया हुआ, परेशान। स्फूर्ति-युक्त।

सम्मत—(वि०) [सम् √मन् +क्त] सहमत, राजी, रजामंद। प्यारा, प्रेमपात्र। सदृश, समान। सोचा हुआ, विचारा हुआ। अत्यन्त सम्मानित। (न०) सम्मति। स्वीकृति। धारणा।

सम्मति—(स्त्री०) [सम्√मन् + क्तिन्] सहमति। राय, मत। स्वीकृति। अभिलाष। आत्मज्ञान। मान। प्रेम। सद्भाव।

सम्मद—(पुं०) [सम् √मद् + अप्] बड़ी प्रसन्नता, आह्लाद; 'रणसम्मदोदयविकासिबलकलकलाकुलीकृते' शि० १५. ७७। एक प्रकार की मछली।

सम्मर्द—(पुं०) [सम्√मृद् + घञ्] रगड़, संघर्ष। भीड़भाड़। कुचलना, पैरों से रूँधना। युद्ध।

सम्मातुर—(पुं०) [समीच्याः सत्याः मातुः अपत्यम्, सम्मातृ+अण्, उत्व, रपर, बा० वृद्ध्यभाव] साध्वी माता का पुत्र।

सम्माद—(पुं०) [सम्√मद्+घञ्] उन्माद, पागलपन। मद, नशा।

सम्मान—(पुं०) [सम्√मन् + घञ्] आदर, इज्जत। (न०) [सम्√मा+ल्युट्] मापना। तुलना करना।

सम्मार्जक—(पुं०) [सम् √मृज् + ण्वुल्] मेहतर, भंगी। (वि०) झाड़ने वाला। साफ करने वाला।

सम्मार्जन—(न०) [सम् √मृज् + ल्युट्] झाड़ना, बुहारना। सफाई।

सम्मार्जनी—(स्त्री०) [सम्मार्जन+ङीप्] झाड़ू।

सम्मित—(वि०) [सम् √मा + क्त] नपा हुआ। समान माप का। समान, बराबर। युक्त।

सम्मिश्र, सम्मिश्रित—(वि०) [सम्√मिश्र् +अच्][सम्√मिश्र्+क्त] मिलाजुला।

सम्मिश्ल—(पुं०) [=सम्मिश्र, पृषो० रस्य लः] इन्द्र।

सम्मीलन—(न०) [सम् √मील् +ल्युट्] (फूल का) मुँदना। ढकना। पूर्ण ग्रहण, खग्रास।

सम्मुख, सम्मुखीन—(वि०) [स्त्री०—सम्मुखा, सम्मुखी] [सङ्गतं मुखं येन, प्रा० ब०] [सर्वस्य मुखस्य दर्शनः, सम्मुख +ख — ईन, समशब्दस्य अन्त्यलोपः नि०] जो सामने हो, सामने का। अनुकूल।

सम्मुखिन्—(पुं०) [सम्मुखम् अस्य अस्ति, सम्मुख+इनि] शीशा, दर्पण, आईना।

सम्मूर्च्छन—(न०) [सम्√मूर्च्छ्+ल्युट्] बेहोशी, मूर्च्छा। जमावट, गाढ़ा होना। वृद्धि। ऊँचाई। सर्वव्याप्ति।

सम्मृष्ट—(वि०) [सम्√मृज्+क्त] अच्छी तरह झाड़ा-बटोरा हुआ। अच्छी तरह छाना हुआ।

सम्मेलन—(न०) [सम्√मिल्+ल्युट्] आपस में मिलना, एकत्र होना। मेल। सम्मिश्रण।

सम्मोह—(पुं०) [सम् √मुह् + घञ्] घबड़ाहट, परेशानी। बेहोशी, मूर्छा। मूर्खता, अज्ञता। मोहन, वशीकरण।

सम्मोहन—(न०) [सम्√मुह् + णिच् +ल्युट्] वशीकरण, मोहन की क्रिया। (पुं०) [सम्√मुह् + णिच्+ल्यु] कामदेव के पाँच शरों में से एक।

सम्यच्, सम्यञ्च्—(वि०) [स्त्री०—समीची] [सम्√ अञ्च् + क्विन्, समि आदेश, पक्षे नलोपः] ठीक, उपयुक्त, उचित। सही, शुद्ध। अनुकूल। आनन्दप्रद। एकसा। सब, समस्त। (अव्य०) साथ, सहित। ठीक-ठीक। सही-सही, शुद्धता से। प्रतिष्ठापूर्वक। सम्पूर्ण रोत्या। स्पष्टतया।

सम्राज्—(पुं०) [सम्यक् राजते, सम्√राज् +क्विप्] शाहंशाह, राजाधिराज [वह राजाधिराज कहलाता है जिसने राजसूययज्ञ किया हो]।

√सय्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। सयते, सयिष्यते, असयिष्ट।

सयूथ्य—(वि०) [सयूथ+यत्] एक ही वर्ग या श्रेणी का।

सयोनि—(वि०) [समाना योनिः यस्य, ब० स०, समानस्य सादेशः]एक ही गर्भ का। (पुं०) सहोदर भाई। [योनिभिः सह वर्तमानः ब० स०] इन्द्र।

सर—(वि०) [√सृ + अच्] गमनशील, गतिशील। रेचक। (न०) जल। सरोवर। झील। (पुं०) गमन, गति। तीर। मलाई। नमक, लवण। हार; 'अयं तावद्वाष्पस्त्रुटित इव मुक्तामणिसरः' उत्त० १.२९। जलप्रपात।

सरक—(न०, पु०) [√सृ+वुन्] पथिकों की अविरल पंक्ति। शराब, मदिरा। पान-पात्र, शराब पीने का पात्र। शराब का वितरण। (न०) गमन। स्वर्ग। [सर +कन्] सरोवर।

सरघा—(स्त्री०) [सरं मधुविशेषं हन्ति, सर √हन्+ड, नि० साधुः] मधुमक्षिका; 'तस्तार सरघाव्याप्तैः स क्षौद्रपटलैरिव' र० ४.६।

सरङ्ग—(पु०) [√सृ+ अङ्गच्] चौपाया। पक्षी।

सरजस्, सरजस्का—(स्त्री०) [पक्षे सरजसा, सरजस्की] [सह रजसा, ब० स०, सहस्य सः, पक्षे कप्—टाप्] रज-स्वला स्त्री।

सरट्—(पु०) [√सृ +अटि] वायु। बादल। छिपकली। मधुमक्षिका।

सरट—(पु०) [स्त्री०—सरटी] [√सृ +अटन्] गिरगिट। वायु।

सरटि—(पुं०) [√ सृ + अटिन्] पवन। छिपकली, बिसतुइया। बादल।

सरडु—(पुं०) [√सृ + अडु] गिरगिट।

सरण—(वि०) [√सृ+युन्] गमनशील। गतिशील। बहनेवाला। (न०) [√सृ +ल्युट्] आगे गमन करना। बहाव। लोहे की जंग। माधवी-मद्य।

सरणि, सरणी—(स्त्री०) [√सृ + अनि] [सरणि+ ङीप्] मार्ग, रास्ता। ढंग, तौर-तरीका। सरल या सीधी रेखा। गले का रोग विशेष। प्रसारणी लता।

सरण्ड—(पुं०) [√ सृ+ अण्डच्] पक्षी। लंपट जन। छिपकली। बदमाश आदमी। आभूषण विशेष।

सरण्यु—(पुं०) [√ सृ+अन्यु] पवन। मेघ। जल। वसन्त ऋतु। अग्नि। यमराज।

सरत्नि—(पुं०, स्त्री०)[सह रत्निना, ब० स०, सहस्य सः] एक हाथ की माप।

सरथ—(वि०) [समानो रथो यस्य, ब० स०] एक ही रथ पर सवार। (पु०) [सह रथेन, ब० स०] रथ पर सवार योद्धा।

सरभस—(वि०) [सह रभसेन, ब० स०] तेज, फुर्तीला। प्रचण्ड, उग्र। क्रोधी। हर्षित।

सरमा—(स्त्री०) [सह रमया शोभया, ब० स०] देवताओं की कुतिया। दक्ष की एक कन्या का नाम। विभीषण की पत्नी का नाम।

सरयु—(पु०) [√सृ+अयु] वायु। (स्त्री०) दे० 'सरयू'।

सरयू—(स्त्री०) [सरयु+ ऊङ] एक नदी का नाम जिसके तट पर अयोध्या बसी हुई है।

सरल—(वि०) [√सृ + अलच्] सीधा, टेढ़ा नहीं। ईमानदार, सच्चा। सीधे स्वभाव का। यथार्थ, असली। आसान, सुकर। (पु०) चीड़दार वृक्ष। अग्नि।

सरव्य—(न०) दे० 'शरव्य'।

सरस्—(न०) [√सृ + असुन्] सरोवर, झील। जल।—ज (सरोज),—जन्मन् (सरोजन्मन्),—रुह(सरोरुह)-(न०) कमल।—जिनी (सरोजिनी) [सरोज +इनि—ङीप्], —रुहिणी (सरोरुहिणी)[सरोरुह+इनि—ङीप्]-(स्त्री०)

कमल का पौधा । वह सरोवर या झील जिसमें कमलों की बहुतायत हो ।—वर (सरोवर)– (पु०) झील ।

सरस—(वि०) [सह रसेन, ब० स०, सहस्य सः] रसदार, रसीला । स्वादिष्ठ । पसीने से तराबोर । तर, भींगा हुआ । रसिक । मनोहर, मनोमुग्धकारी । ताजा, टटका । (न०) झील । कीमियागरी, रसायन विद्या ।

सरसी—(स्त्री०) [सरस्+ ङीप्] सरोवर । बावली । एक वर्णवृत्त ।—रुह– (न०) कमल ।

सरस्वत्—(वि०) [सरस्+मतुप्, वत्व] पनीला । रसदार । सुन्दर । रसात्मक, भावपूर्ण । (पु०) समुद्र । झील । नद । भैंसा । वायु विशेष ।

सरस्वती—(स्त्री०) [सरस्वत् + ङीप्] विद्या की अधिष्ठात्री देवी । वाणी, गिरा । एक नदी का नाम । नदी । गाय । उत्तमा स्त्री । दुर्गा देवी का नाम । बौद्धों की एक देवी का नाम । सोमलता । ज्योतिष्मती लता ।

सराग—(वि०) [सह रागेण, ब० स०, सहस्य सः] रंगीन; 'रक्त वर्ण, लाल; 'अकारि तत्पूर्वनिबद्धया तया सरागमस्या रसनागुणास्पदम्' कु० ५.१० । लाली, लाल रंग से रँगा हुआ । रसिक। आसक्त, आशिक ।

सराव—(वि०) [सह रावेण, ब० स०] शब्द करने वाला । (पुं०) [सर √अव् +अण्] मिट्टी का एक प्रकार का बरतन, सकोरा, करई । ढक्कन ।

सरि—(स्त्री०) [√सृ +इन्] झरना । जलप्रपात ।

सरित्—(स्त्री०) [√सृ + इति] नदी । डोरी । दुर्गा ।—नाथ (सरिन्नाथ),—पति, —भर्तृ (सरिद्भर्तृ)–(पुं०) समुद्र, सागर ।—वरा (सरिद्वरा) [सरितांवरा भी]– (स्त्री०) गंगा ।—सुत– (पुं०) भीष्म पितामह ।

सरिमन्, सरीमन्—(पु०) [√सृ+इमनि] [√सृ + ईमनिच्] गति, चाल । पवन, वायु ।

सरिल—(न०)[√सृ+इलच्] जल ।

सरीसृप—(पु०) [कुटिलं सर्पति, √सृप् + यङ्—लुक्, द्वित्वादि, + अच्] सर्प या वे जानवर जो रेंग कर चलें ।

सरु—(पु०) [√ सृ + उन्] तलवार की मूँठ ।

सरूप—(वि०) [समानं रूपम् अस्य ब० स० समानस्य सः] एक ही शक्ल का एक ही रूपरंग का । समान, मिलता-जुलता ।

सरूपता—(स्त्री०), **सरूपत्व**–(न०)[सरूप +तल्—टाप्] [सरूप + त्व] समानता, सादृश्य, एकरूपता । चार प्रकार की मुक्तियों में से एक ।

सरोष—(वि०) [सह रोषेण, ब० स०, सहस्य सः] क्रोधी, क्रोध में भरा ।

सर्क—(पुं०) [√ सृ+क] पवन । मन । एक प्रजापति ।

सर्ग—(पु०) [√सृज् + घञ्] त्याग । रचना, निर्माण । सृष्टि । संसार की सृष्टि । प्रकृति, स्वभाव । जड जगत् । सङ्कल्प; 'गृहाण शस्त्रं यदि सर्ग एष ते' र० ३.५१ । स्वीकृति । परिच्छेद, अध्याय । आक्रमण । मल-त्याग । मोह । उद्गम । प्रवाह। गति। प्राणी । शिवजी का नामान्तर ।—क्रम– (पुं०) सृष्टि-क्रम ।—बन्ध– (पुं०) महाकाव्य –'सर्गबन्धो महाकाव्यम् ।'

√सर्ज्—भ्वा० पर० सक० प्राप्त करना, हासिल करना । परिश्रम से प्राप्त करना । सर्जति, सर्जिष्यति, असर्जीत् ।

सर्ज—(पुं०) [√सृज् + अच्] साल का पेड़ । राल ।—**निर्यासक**, —**मणि**,—**रस** –(पुं०) राल, धूना ।

सर्जक—(पुं०) [√सृज्+ण्वुल्] साल वृक्ष ।

सर्जन—(न०) [√सृज्+ल्युट्] त्याग । छुटकारा, मुक्ति । सिरजन, रचना । निकालना । सेना का पिछला भाग ।

सर्जि, सर्जिका, सर्जी—(स्त्री०) [√सृज् +इन्] [सर्जि + कन्—टाप्] [सर्जि—ङीप्] सज्जी, क्षार विशेष ।

सर्जू—(पुं०) [√सृज् + ऊ] व्यापारी । (स्त्री०) बिजली, विद्युत् । गले की सकरी । अभिसार ।

सर्प—(पुं०) [√सृप् + घञ्] घूम-घुमाव की चाल । बहाव । [√सृप्+अच्] साँप । नागकेसर । अश्लेषा नक्षत्र । एक रुद्र ।—**अराति (सर्पाराति)**, —**अरि (सर्पारि)**–(पुं०) न्योला, नकुल । मयूर, मोर । गरुड़ । —**अशन (सर्पाशन)**–(पुं०) मयूर ।—**आवास (सर्पावास)**, —**इष्ट (सर्पेष्ट)** (न०) चन्दन का पेड़ ।—**छत्र**–(न०) कुकुरमुत्ता, कठफूल ।—**तृण**–(पुं०) नकुल कंद ।—**दंष्ट्र**– (पुं०) साँप का विष-दन्त । जमालगोटा ।—**धारक**–(पुं०) कालबेलिया, सर्प पकड़ने वाला ।—**भुज**–(पुं०) मयूर । सारस । बड़ा साँप ।—**मणि**–(पुं०) सर्प के फन का रत्न ।—**राज**–(पुं०) वासुकि का नामान्तर ।

सर्पण—(न०) [√सृप्+ल्युट्] रेंगना । धीरे से खिसकना । वक्रगति । बाण का ऐसा प्रक्षेप जो जमीन से मिलता-जुलता जाकर अपने निशाने पर लगे ।

सर्पिणी—(स्त्री०) [√सृप् + णिनि—ङीप्] साँपिन । भुजगी नामक लता ।

सर्पिन्—(वि०) [√सृप् + णिनि] रेंगने-वाला; 'यूका मन्दविसर्पिणी' पं० १.२५२ । वक्र-गति से चलने वाला ।

सर्पिस्—(न०) [√सृप् + इसि] घी, घृत ।—**समुद्र (सर्पिःसमुद्र)**–(पुं०) सप्त समुद्रों में से एक, घी का समुद्र ।

सर्पिष्मत्—(वि०) [सर्पिस् + मतुप्] घृत-युक्त, घी वाला ।

√सर्व्—भ्वा० पर० सक० जाना । सर्वति, सर्विष्यति, असर्वीत् ।

√सर्व्—=√सर्व् ।

सर्व—(सर्वनाम वि०) [√सृ + व] सब, हरेक; 'रिक्तः सर्वो भवति हि लघुः पूर्णता गौरवाय' मे० २० । समग्र, समूचा, सम्पूर्ण । (पुं०) विष्णु । शिव ।—**अङ्ग (सर्वाङ्ग)** –(न०) समस्त शरीर ।—**अङ्गीण (सर्वाङ्गीण)**–(वि०) [सर्वाङ्ग+ख —ईन, णत्व] सर्वशरीरगत, समस्त शरीर में व्याप्त ।—**अधिकारिन् (सर्वाधिकारिन्)** –(वि०) सारे अधिकार रखने वाला । (पुं०) शासक । निरीक्षक । अध्यक्ष ।—**अध्यक्ष (सर्वाध्यक्ष)**–(पुं०) सब का अधिपति या शासक ।—**अन्नीन (सर्वान्नीन)**–(वि०) [सर्वम् अन्नं भुङ्क्ते, सर्वान्न+ख—ईन] हर प्रकार का अनाज खाने वाला, सर्वान्नभोजी ।—**आत्मन् (सर्वात्मन्)**– (पुं०) समस्त विश्व की आत्मा, ब्रह्म । शिव ।—**ईश्वर (सर्वेश्वर)** –(पुं०) सब का स्वामी, मालिक । ईश्वर । शिव । सम्राट् ।—**ग**, —**गामिन्**–(वि०) सब जगह जाने वाला, सर्वव्यापक । (पुं०) ब्रह्म । आत्मा । शिव ।—**जित्**–(वि०) सब को जीतने वाला, अजेय ।—**ज्ञ**, —**विद्**–(वि०) सब कुछ जानने वाला । (पुं०) ईश्वर । शिव । बुद्धदेव ।—**दमन** (वि०) सब का दमन करने वाला । (पुं०) शकुन्तला-पुत्र भरत ।—**देवमुख**–(पुं०) अग्नि ।—**धुरावह**–(वि०) सब तरह का भार वहन करने वाला । (पुं०) गाड़ी में जोता जाने वाला जानवर ।—**धुरीण**–

सर्वधुरावह।—नामन्–(न०) संज्ञा के स्थान में प्रयुक्त होने वाला शब्द।—पारशव–(वि०) बिल्कुल लोहे का बना हुआ।—मङ्गला–(स्त्री०) पार्वती। लक्ष्मी।—रस–(पुं०) राल।—लिङ्गिन्–(पुं०) ढोंगी, पाखण्डी।—वल्लभा–(स्त्री०) वेश्या।—विद्–(वि०) सर्वज्ञ। (पुं०) ईश्वर।—वीर–(वि०) बहुत से पुत्रों वाला।—वेदस्–(पुं०) यज्ञमें सर्वस्व दक्षिणा देने वाला यज्ञकर्त्ता।—सहा (सर्वसहा भी)–(स्त्री०) पृथिवी।—स्व–(न०) सकल धन, सारा धन। किसी वस्तु का सार।

सर्वंकष—(वि०) [सर्व√कष् + खच्, मुम्] सब का अतिक्रमण करने वाला। सर्वनाशक; 'सर्वंकषा भगवती भवितव्यतैव' माल० १.२३। (पुं०) दुष्ट व्यक्ति।

सर्वतस्—(अव्य०) [सर्व + तसिल्] सब ओर से। सब तरह से। सर्वत्र। सम्पूर्णतः।—गामिन् (**सर्वतोगामिन्**)–(वि०) सर्वत्र या सब ओर जा सकने वाला।—भद्र (**सर्वतोभद्र**)–(पुं०) विष्णु का रथ। बाँस। निम्ब वृक्ष। व्यूहविशेष। ध्वंस। एक तरह का चित्रकाव्य। वेदी ढँकने के वस्त्र पर बनाया जाने वाला चिह्न-विशेष। योग का एक आसन। एक पर्वत। एक गंध द्रव्य। (पुं०, न०) भवन या देवालय जिसमें चारों ओर चार द्वार हों।—चक्र–(न०) एक वर्गाकार चक्र जो शुभाशुभ फल जानने के लिये बनाया जाता है।—भद्रा (**सर्वतोभद्रा**)–(स्त्री०) नटी। नर्तकी। गंभारी।—मुख (**सर्वतोमुख**)–(वि०) जिसका मुँह चारों ओर हो। पूर्ण, व्यापक। (पुं०) शिव जी। ब्रह्मा जी। परब्रह्म। ब्राह्मण। आत्मा। अग्नि। स्वर्ग। (न०) जल। आकाश।

सर्वत्र—(अव्य) [सर्व + त्रल्] सब जगह। सब समय।

सर्वथा—(अव्य०) [सर्व + थाल्] हर प्रकार से, सब तरह से। बिलकुल। सम्पूर्णतः। अत्यंत। प्रतिज्ञा। हेतु।

सर्वदा—(अव्य०) [सर्व + दाच्] सदैव, हमेशा।

सर्वशस्—(अव्य०) [सर्व + शस्] पूर्ण रूप से। सर्वत्र। सब ओर से।

सर्वाणी—(स्त्री०) [सर्वेभ्य आनयति मोक्षम्, सर्व–आ √नी + ड–ङीप्, णत्व] दे० 'शर्वाणी'।

सर्षप—(पुं०) [√सृ + अप, सुक्] सरसों; 'खलः सर्षपमात्राणि परच्छिद्राणि पश्यति' सुभा०। सरसों के बराबर की एक छोटी तौल। विष विशेष।

√सल्—भ्वा० पर० सक० जाना। सलति, सलिष्यति, असालीत्—असलीत्।

सल—(न०) [√सल् + अच्] जल।

सलिल—(न०) [√सल् + इलच्] जल।—अर्थिन् (**सलिलार्थिन्**)–(वि०) प्यासा।—आशय (**सलिलाशय**)–(पुं०) तालाब। जलाशय।—इन्धन (**सलिलेन्धन**)–(पुं०) बड़वानल।—उपप्लव (**सलिलोपप्लव**)–(पुं०) जल का बूड़ा। जलप्रलय।—क्रिया–(स्त्री०) मुर्दे को जल से स्नान कराने की क्रिया। तर्पण।—ज–(न०) कमल।—निधि–(पुं०) समुद्र।

सलज्ज—(वि०) [सह लज्जया, ब० स०, सहस्य सः] लज्जालु, लजीला, हयादार।

सलील—(वि०) [सह लीलया, ब० स०] खिलाड़ी। रसिक, लंपट।

सलोकता—(स्त्री०) [समानः लोको यस्य, ब० स०, सलोक+तल् – टाप्] चार प्रकार के मोक्षों में से एक, अपने आराध्य देव के लोक में वास।

सल्लकी—(स्त्री०) [√शल्+वुन्, लुक्, पृषो० शस्य सः] सलई का पेड़ ।

सव—(न०) [√सु+अच्] जल । फूलों का शहद । (पुं०) सोमरस निकालने की क्रिया । भेंट, नैवेद्य । यज्ञ । सूर्य । चन्द्रमा । सन्तति, औलाद ।

सवन—(न०) [√सु या√सू + ल्युट्] सोमरस निकालना या पीना । यज्ञ-स्नान । प्रसव । सोनापाठा ।

सवयस्—(वि०) [समानं वयो यस्य, ब० स०, समानस्य सः] एक उम्र का, समवयस्क । साथी, सहयोगी । (स्त्री०)सहेली, सखी ।

सवर—(पुं०) शिव जी । जल ।

सवर्ण—(वि०) [समानो वर्णो यस्य, ब० स०, समानस्य सः] समान रंग का; 'दुर्वर्णभित्तिरिह सान्द्रसुधासवर्णा' शि० ४. २८। समान रूप-रंग का। एक ही जाति का। एक ही प्रकार का। एक ही उच्चारण-स्थान से उच्चारण किये जाने वाले वर्ण ।

सविकल्प, सविकल्पक— (वि०) [सह विकल्पेन, ब० स०, पक्षे कप्] ऐच्छिक, पसंद का। सन्दिग्ध। निर्विकल्प का उलटा।

सविग्रह—(वि०) [सह विग्रहेण, ब० स० सहस्य सः] शरीरधारी। अर्थवाला, जिसका कुछ अर्थ या मानी हो । झगड़ालू, झगड़ने वाला ।

सवितर्क, सविमर्श—(वि०) [सह वितर्केण] [सह विमर्शेन] विचारवान्, विवेकी ।

सवितृ—(वि०) [स्त्री०—**सवित्री**] [√सू + तृच्] उत्पादक, पैदा करने वाला । (पुं०) सूर्य । शिव । इन्द्रदेव । अर्क वृक्ष, मदार का पौधा ।

सवित्री—(स्त्री०) [सवितृ+ङीप्] माता; 'तया दुहित्रा सुतरां सवित्री स्फुरत्प्रभामण्डलया चकाशे' कु० १.२४ । गौ ।

सविध—(वि०) [सह विधया, ब० स०, सहस्य सः] एक ही तरह या प्रकार का । [सह √विध् + क, सहस्य सः] समीपवर्ती, आसन्न । (न०) सामीप्य, निकटता ।

सविनय—(वि०) [सह विनयेन, ब० स०, सहस्य सः] विनय-युक्त, विनम्र ।

सविभ्रम—(वि०) [सह विभ्रमेण, ब० स०] क्रीड़ा-युक्त । रँगीला, रसिक ।

सविशेष—(वि०) [सह विशेषेण] विशिष्ट गुणों वाला । विशेष लक्षणाक्रान्त । विलक्षण, असाधारण । मुख्य, प्रधान । प्रभेदात्मक, विभेदक ।

सविस्तर—(वि०) [सह विस्तरेण] विस्तार के साथ या सहित । विस्तारपूर्वक ।

सविस्मय—(वि०) [सह विस्मयेन] आश्चर्य-चकित, विस्मित ।

सवृद्धिक—(वि०) [सह वृद्ध्या, ब० स०, कप्] सूद के साथ, जिसका सूद मिले ।

सवेश—(वि०) [सह वेशेन] सजा हुआ, भूषित । समीप का ।

सव्य—(वि०) [√सू + यत्] बायाँ । दाहिना । प्रतिकूल । (पुं०) विष्णु । अंगिरा के एक पुत्र का नाम । (न०) यज्ञोपवीत । ग्रहण के १० प्रकार के ग्रासों में से एक ।
—इतर (सव्येतर)-(वि०) दाहिना ।
—साचिन्-(पुं०) अर्जुन की उपाधि । (कारण यह है:-'उभौ मे दक्षिणौ पाणी गाण्डीवस्य विकर्षणे । तेन देवमनुष्येषु सव्यसाचीति मां विदुः ।')

सव्यपेक्ष—(वि०) [सह व्यपेक्षया, ब० स०, सहस्य सः] सम्बन्ध-युक्त । अवलम्बित ।

सव्यभिचार—(पुं०) [सह व्यभिचारेण] न्यायदर्शन में पाँच प्रकार के हेत्वाभासों में से एक ।

सव्याज—(वि०) [सह व्याजेन] कपटी, छलिया । धूर्त ।

सव्यापार—(वि०) [सह व्यापारेण] कार्य में लगा हुआ ।

सव्येष्ठ, सव्येष्ठृ—(वि०) [सव्ये तिष्ठति, सव्ये√स्था+क, अलुक् स०, षत्व] [सव्ये √स्था+ऋन्, कित्त्व, अलुक् स०, षत्व] सारथि, रथ हाँकने वाला ।

सव्रीड—(वि०) [सह व्रीडया] लज्जालु, लजीला । लज्जित ।

सशल्य—(वि०) [सह शल्येन, ब० स०, कँटीला । बरछा या काँटों से बिंधा हुआ ।

सशस्य—(वि०) [सह शस्येन] अन्न-युक्त । अन्नोत्पादक ।

सशस्या—(स्त्री०) [सशस्य + टाप्] सूरज-मुखी का फूल विशेष ।

सश्मश्रु—(वि०)[सह श्मश्रुणा] जिसके दाढ़ी-मूँछ हो ।

सश्रीक—(वि०) [सह श्रिया, ब० स०, कप्] समृद्धिमान्, भाग्यवान् । सुन्दर, मनोहर ।

√सस्—अ० पर० अक० सोना । सस्ति, ससिष्यति, असमीत्—असासीत् ।

ससत्त्व—(वि०) [सह सत्त्वेन, ब० स०, सहस्य स:] शक्ति-पूर्ण । साहसी । सजीव ।

ससत्त्वा—(स्त्री०) [ससत्त्व+टाप्] गर्भवती स्त्री ।

ससन—(न०) [√ सस्+ल्युट्] यज्ञीय पशु का हनन, बलि-प्रदान ।

ससन्देह—(वि०) [सह सन्देहेन संशय-ग्रस्त, सन्दिग्ध । (पु०) सन्देहालंकार ।

ससन्ध्य—(वि०) [सह सन्ध्यया, ब० स०] सहस्य स:] सन्ध्या-वंदनादि किया हुआ व्यक्ति ।

ससाध्वस—(वि०) [सह साध्वसेन, ब० स०, सहस्य स:] भयभीत, डरा हुआ ।

सस्य—(न०) [√सस् + यत्] अनाज, अन्न । किसी वृक्ष का फल या उसकी पैदावार । अस्त्र, हथियार । सद्गुण ।—**इष्टि** (**सस्येष्टि**)—स्त्री०) नवान्नेष्टि, नये अन्न से यज्ञ करने की क्रिया ।—**प्रद**–(वि०) फलने वाला । उपजाऊ ।—**मारिन्**–(वि०) अनाज का नाश करने वाला । (पु०) चूहा । —**संबर**– (पु०) साल वृक्ष ।—**संवरण**–(पु०) अश्वकर्णवृक्ष ।

सस्यक—(वि०) [सस्य + कन्] सद्गुण-सम्पन्न । (पु०) तलवार । रत्न विशेष ।

सस्वेद—(वि०) [सह स्वेदेन, ब० स० सहस्य स:] पसीने से तर ।

सस्वेदा—(स्त्री०) [सस्वेद+ टाप्] वह लड़की जिसका कौमार्य हाल ही में नष्ट किया गया हो ।

√सह्—भ्वा० आत्म० सक० सहना, बरदाश्त करना । सहते, सहिष्यते—सक्ष्यते, असहिष्ट । दि० पर० अक० तृप्त होना । सह्यति, सहिष्यति, असहीत् । चु० पर० सक० सहना । साहयति—सहति, साहयिष्यति—सहिष्यति, असीषहत्—असहीत् ।

सह—(वि०) [√ सह्+अच्] सहिष्णु, सहनशील, बरदाश्त कर लेने वाला । मरीज, रोगी । योग्य । (अव्य०) साथ, सहित; 'शशिना सह याति शर्वरी सह मेघेन तडित्प्रलीयते' कु० ४.३३ । एक ही समय में, एक साथ । (न०) ताकत, शक्ति । सादृश्य । यौगपद्य । विद्यमानता । समृद्धि । सम्बन्ध । (पु०) मार्गशीर्ष मास । —**अध्यायिन्** (**सहाध्यायिन्**)–(पु०)साथ-साथ अध्ययन करने वाला, सहपाठी ।—**अर्थ** (**सहार्थ**)–(वि०)समानार्थवाची ।—**उक्ति** (**सहोक्ति**)–(स्त्री०) साथ बोलना । एक अर्थालंकार ।—**उटज** (**सहोटज**)–(पु०) पर्णकुटी ।—**उदर** (**सहोदर**)–(पु०) सगा भाई । —**उपमा** (**सहोपमा**)–(स्त्री०) उपमा का एक प्रकार ।—**ऊढ** (**सहोढ**)– (पु०) विवाह के पूर्व के गर्भ से उत्पन्न पुत्र जो १२ प्रकार के

पुत्रों में से एक माना जाता है ।—कार–(पुं०) सहयोग । एक तरह का सुगंधित आम । कलमी आम; 'क इदानीं सहकारमन्तरेण पल्लवितामतिमुक्तलतां सहते' श० ३ ।—०भञ्जिका–(स्त्री०) एक प्रकार का प्राचीन खेल ।—कारिन्, कृत्–(वि०) सहयोगी, सहयोग देने वाला । (पुं०) साथी, संगी ।—कृत–(वि०) सहायता दिया हुआ ।—गमन–(न०) साथ गमन । सती स्त्री का पति के शव के साथ भस्म हो जाना ।—चर–(वि०) साथ चलने या रहने वाला । (पुं०) साथी, मित्र । पति । जामिन, जमानत करने वाला ।—चरी–(स्त्री०) सखी, सहेली । पत्नी ।—चार–(पुं०) साहचर्य । सामंजस्य, संगति । हेतु के साथ साध्य का रहना ।—ज–(वि०) स्वाभाविक । परंपरागत, पुश्तैनी । (पुं०) सहोदर भाई, सगा भाई ।—०मित्र–(न०) स्वाभाविक मित्र (भांजा, मौसेरा और फुफेरा भाई) ।—०शत्रु–(पुं०) स्वाभाविक शत्रु (सौतेला और चचेरा भाई) ।—जात–(वि०) स्वाभाविक, प्राकृतिक । एक साथ उत्पन्न । समवयस्क ।—दार–(वि०) पत्नी-सहित । विवाहित ।—देव–(पुं०) पांच पाण्डवों में सब से छोटे पाण्डव का नाम ।—देवा–(स्त्री०) बला । शारिवा । महदेई । नील । दंडोत्पल । सर्पाक्षी । प्रियंगु । वसुदेव की पत्नी, देवकी ।—देवी–(स्त्री०) सहदेव की पत्नी । प्रियंगु । शारिबा । सर्पाक्षी । महदेई । महानीली ।—धर्मचारिन्–(पुं०) पति ।—धर्मचारिणी–(स्त्री०) पत्नी ।—पांशुकिल, पांशुक्रीडिन्–(पुं०) बचपन का दोस्त, लँगोटिया यार ।—भाविन्–(पुं०) मित्र । साझीदार अनुयायी ।—भू–(वि०) स्वाभाविक ।—भोजन–(न०) (मित्र आदि के) साथ भोजन करना ।—मरण–(न०) सती होना, सहगमन ।—वसति–(स्त्री०) साथ बसना, एकत्र वास ।—वास–(पुं०) साथ-साथ बसना या रहना । संयोग ।

सहता—(स्त्री०), **सहत्व**–(न०) [सह+तल्–टाप्] [सह+त्व] साथ होने का भाव । मेल-जोल ।

सहन—(न०) [√सह् + ल्युट्] सहने की क्रिया, बरदाश्त करना । क्षमा ।

सहस्—(पुं०) [√सह् + असि] मार्गशीर्ष; 'दलयितुं क्षणमक्षमताङ्गना न सहसा सहसा कृतवेपथुः' शि० ६.५७ मास । (न०) शक्ति । प्रचण्डता । दीप्ति ।

सहसा—(अव्य०) [सह√सो+डा] एकाएक, अचानक । बरजोरी, जबरदस्ती, बलपूर्वक । अविचारितापूर्वक ।

सहसान—(पुं०) [√सह् + असानच्] मयूर । यज्ञ । (वि०) क्षमाशील । शत्रुविजयी ।

सहस्य—(पुं०) [सहसे बलाय हितः, सहस्+यत्] पौष मास ।

सहस्र—(न०) [समानं हसति,√हस्+र, समानस्य सादेशः] दस सौ की संख्या, हजार की संख्या । बहुसंख्या । (वि०) दस सौ, हजार ।—अंशु (सहस्रांशु),—अर्चिस् (सहस्रार्चिस्),—कर,—किरण,—दीधिति,—धामन्,—पाद,—मरीचि,—रश्मि–(पुं०) सूर्य; 'दृष्टिविधानं व्यवधानमुक्ता पुनः सहस्रार्चिषि संनिधत्ते' र० १३.४४ ।—अक्ष (सहस्राक्ष)–(वि०) हजार नेत्रों वाला । (पुं०) इन्द्र । शिव । विष्णु ।—काण्डा–(स्त्री०) सफेद दूर्वा घास ।—कृत्वस्–(अव्य०) हजार बार ।—द–(वि०) उदार । (पुं०) शिवजी ।—दंष्ट्र–(पुं०) पाठीन मत्स्य, बोआरी मछली ।—दृश्,

—नयन, —नेत्र, —लोचन–(पु०) इन्द्र। विष्णु।— धार– (पं०) विष्णु भगवान् का चक्र। पति—(पु०) हजार गाँवों का शासक या स्वामी।—पत्र– (न०) कमल। —बाहु– (पु०) कार्तवीर्य, बाणासुर। शिव। विष्णु।— भुज, –मूर्धन्,—मौलि– (पु०) विष्णु।—रोमन् –(न०) कंबल। —वीर्या– (स्त्री०) हींग।—शिखर– (पु०) विन्ध्याचल।

सहस्रधा—(अव्य०) [सहस्र + धाच्] सहस्र भागों में। सहस्र गुना।

सहस्रशस्—(अव्य०)[सहस्र + शस्] हजारों से।

सहस्रिन्—(वि०) [सहस्र + इनि] हजार वाला। हजार तक का (जैसे अर्थ दण्ड)। (पु०) हजार आदमियों की टोली। हजार सैनिकों का नायक।

सहस्वत्—(वि०) [सहस्+मतुप्, वत्व] बलवान्, शक्तिशाली।

सहा—(स्त्री०) [√सह् + अच् —टाप्] पृथिवी। घृतकुमारी। वनमूँग। दण्डोत्पल। सफेद कटसरैया। ककही या कंघी नाम का वृक्ष। सौंपणी। रास्ना। सत्यानाशी। सेवती। मेंहदी। अगहन मास। हेमन्त ऋतु।

सहाय—(पु०) [सह√इ + अच्] सहचर, साथी। मित्र। अनुयायी। सन्धि की शर्तों के अनुसार बनाया गया मित्र (राजा)। संरक्षक। चक्रवाक। गन्ध पदार्थ विशेष। शिवजी।

सहायता–(स्त्री०),**सहायत्व**–(न०) [सहाय +तल्–टाप्] [सहाय + त्व] मित्र-मंडली। मैत्री। मदद।

सहायवत्—(वि०) [सहाय + मतुप्, वत्व] जिसके साथी या मित्र हों।

सहार—(पु०) [सह√ऋ +अच् वा√सह् +आरन्] आम का वृक्ष। प्रलय।

सहित—(वि०) [√सह् +क्त वा सह +इतच्] सहा हुआ। युक्त, समेत। [सह हितेन, ब० स०, सहस्य सः] हित वाला, हित-युक्त।

सहितृ—(वि०) [√सह् + तृच्] सहन करने वाला।

सहिष्णु—(वि०) [√सह् + इष्णुच्] सह लेने वाला, सहनशील; 'सुकरस्तरु-वत्सहिष्णुना रिपुरुन्मूलयितुं महानपि' कि० २.५० ।

सहिष्णुता– (स्त्री०), **सहिष्णुत्व**—(न०) [सहिष्णु+तल् – टाप्] [सहिष्णु+त्व] सहन करने की शक्ति। क्षमा।

सहुरि—(पु०) [√सह् + उरि] सूर्य। (स्त्री०) पृथिवी।

सहृदय—(वि०) [सह हृदयेन, ब० स०, सहस्य सः] अच्छे हृदय वाला। दयालु। सच्चा। (पुं०) विद्वज्जन। गुणग्राही व्यक्ति। रसिक पुरुष। सज्जन।

सहृल्लेख—(न०) [हृदयस्य लेखः कालुष्य-करणम्, सह हृल्लेखेन, ब० स०] दूषित भोज्य पदार्थ।

सहेल—(वि०) [सह हेलया] क्रीडासक्त। लापरवाह।

सहोर—(वि०) [√सह् + ओर] श्रेष्ठ, उत्तम। (पु०) ऋषि, मुनि।

सह्य—(वि०) [√सह् +यत्] सहन करने योग्य; 'कथं तूष्णीं सह्यो निरवधिरिदानीं तु विरहः' उत्त० ३.४४। सहन करने में समर्थ। मुकाबला करने में समर्थ। शक्ति-शाली। प्रिय। (न०) [सह+यत्] आरोग्य। सहायता। उपयुक्तता। (पु०) [√सह्+यत्] सह्याद्रि नामक पर्वत जो पश्चिमी घाट का एक भाग है और समुद्रतट से कुछ हट कर है।

सा—(स्त्री०) [√सो + क—टाप्] लक्ष्मी। पार्वती।

सांयात्रिक—(पु०) [सम्यक् यात्रायै द्वीपान्तर-गमनाय अलम्, संयात्रा+ठञ्] पोत-वणिक्, समुद्र मार्ग से व्यापार करने वाला व्यापारी।

सांयुगीन—(वि०) [संयुगे युद्धे साधुः, संयुग खञ्] युद्धविद्या में निपुण। (पु०) रण-कुशल योद्धा, योद्धा जो युद्धविद्या में निपुण हो।

सांराविण—(न०) [सम् √रु + णिनि +अण्] कोलाहल, शोरगुल।

सांवत्सर, सांवत्सरिक—(वि०) [स्त्री०—**सांवत्सरी, सांवत्सरिकी**] [संवत्सर+अण्] [संवत्सर+ठञ्] सालाना, वार्षिक। (पु०) ज्योतिषी, दैवज्ञ।

सांवादिक—(वि०) [स्त्री०—**सांवादिकी**] [संवाद+ठञ्] बोल-चाल का। विवादात्मक। (पु०) संवाद-दाता। नैयायिक।

सांवृत्तिक—(वि०) [स्त्री०—**सांवृत्तिकी**] [संवृत्ति + ठक्] भ्रमात्मक, मायामय, मिथ्या।

सांसिद्धिक—(वि०) [संसिद्धि + ठञ्] स्वाभाविक, प्रकृतिगत। स्वेच्छा-प्रसूत, स्वतः-प्रवृत्त, स्वयंसिद्ध। अनियंत्रित, स्वतंत्र।

सांस्थानिक—(पु०) [संस्थान +ठक्] एक ही देश के निवासी। (वि०) संस्थान-युक्त।

सांस्राविण—(न०) [सम्√स्रु+णिनि +अण्] प्रवाह।

सांहननिक—(वि०) [स्त्री०—**सांहननिकी**] [संहनन+ठक्] शारीरिक, देह सम्बन्धी।

साकम्—(अव्य०) [सह अकति, सह √अक्+अमु, सादेश] सह, सहित, संग में।

साकल्य—(न०) [सकल + ष्यञ्] सम्पूर्णता, समूचापन।

साकूत—(वि०) [सह आकूतेन, ब० स०, सहस्य सः] वह जिसका कुछ अर्थ हो, सार्थक। अभिप्राय-युक्त। रसिक।—**स्मित**—(न०) विलासपूर्ण मुसकराहट।

साकेत—(न०) [आकित्यते आकेतः, सह आकेतन, ब० स०, सहस्य सः] अयोध्या; 'साकेतनार्योऽञ्जलिभिः प्रणेमुः' र० १४·१३। (पु०) [साकेत+अण्] साकेत-निवासी।

साकेतक—(पु०) [साकेत + कन्] अयोध्यावासी।

साक्तुक—(न०) [सक्तूनां समाहारः, सक्तु +ठञ्—क] सत्तू की राशि या समूह। (पुं०) [सक्तवे हितः, सक्तु +ठञ्] जौ, यव।

साक्षात्—(अव्य०) [सह √अक्ष् + आति, सादेश] साफ-साफ आँखों के सामने, प्रत्यक्ष। स्वयं। तुल्य, सदृश।—**कार**—(पु०) प्रतीति, ज्ञान, पदार्थों का इन्द्रियों द्वारा होने वाला ज्ञान। मिलन।

साक्षिन्—(वि०) [स्त्री०—**साक्षिणी**] [सह अक्षि यस्य, सह अक्षि+इनि, सहस्य सादेशः] साक्षात् देखनेवाला, चश्मदीद। (पुं०) चश्मदीद गवाह, ऐसा गवाह जिसने घटना अपनी आँखों से देखी हो। गवाह। परमेश्वर।

साक्ष्य—(न०) [साक्षिन् + ष्यञ्] गवाही, शहादत; 'तमेव चाधाय विवाहसाक्ष्ये' र० ७.२०।

साक्षेप—(वि०) [सह आक्षेपेण, ब० स०, सहस्य सः] आक्षेप-युक्त।

साखेय—(वि०) [स्त्री०—**साखेयी**] [सखि+ढञ्] सखा या मित्र सम्बन्धी।

साख्य—(न०) [सखि + ष्यञ्] सखित्व, मैत्री, दोस्ती।

सागर—(पुं०) [सगर+अण्] समुद्र। चार की संख्या। सात की संख्या। मृग विशेष।

सगर राजा के पुत्र ।—**अनुकूल** (**सागरानुकूल**)– (वि०) समुद्रतट पर बसा हुआ ।—**अन्त** (**सागरान्त**)– (वि०) समुद्र तक का । (पुं०) समुद्र-तट ।—**अम्बरा** (**सागराम्बरा**),—**नेमि**,—**मेखला**–(स्त्री०) धरती, पृथिवी ।—**आलय** (**सागरालय**) –(पुं०) वरुण ।—**उत्थ** (**सागरोत्थ**)– (न०) समुद्री लवण ।—**गा**– (स्त्री०) गंगा ।—**गामिनी**– (स्त्री०) नदी । छोटी इलायची ।

साग्नि—(वि०) [सह अग्निना, ब० स०, सहस्य सः] अग्नि सहित । यज्ञ की अग्नि को सुरक्षित रखने वाला ।

साग्निक—(वि०) [सह अग्निना, ब० स०, कप्] अग्निहोत्र के लिये अग्नि घर में ज्वलित रखने वाला । अग्नि सहित । (पुं०) गृहस्थ, जिसके पास यज्ञ या हवन की आग रहती हो, वह जो नियमित रूप से अग्निहोत्रादि करता हो ।

साग्र—(वि०) [सह अग्रेण] अग्र सहित । समूचा, समस्त, कुल, सब । जिसके पास अधिक हो ।

साङ्कर्य—(न०) [सङ्कर + ष्यञ्] मिलावट, मिश्रण ।

साङ्कूल—(वि०) [स्त्री०—**साङ्कूली**] [सङ्कूल+अञ्] योग या जोड़ से उत्पन्न ।

साङ्काश्य–(न०), **साङ्काश्या**–(स्त्री०) जनक के भाई कुशध्वज की राजधानी का नाम । इसका वर्तमान नाम संकिश है ।

साङ्केतिक—(वि०) [स्त्री०—**साङ्केतिकी**] [सङ्केत+ठक्] सङ्केत सम्बन्धी, इशारे का । व्यवहार-सिद्ध ।

साङ्क्षेपिक—(वि०) [स्त्री०—**साङ्क्षेपिकी**] [सङ्क्षेप + ठक्] संक्षिप्त । संक्षेप-कारक ।

साङ्ख्य—(वि०) [सङ्ख्या + अण्] संख्या सम्बन्धी । गणनात्मक । प्रभेदात्मक । (न०, पुं०) [सङ्ख्या=सम्यक् ज्ञानम् अस्ति अत्र इत्यर्थे अण्] आस्तिक छः दर्शनों में से एक । (इसमें सृष्टि की उत्पत्ति का क्रम वर्णित है । इसमें प्रकृति ही जगत् का मूल मानी गयी है । इसमें कहा है सत्त्व, रज और तम इन तीनों गुणों के योग से सृष्टि का तथा उसके अन्य समस्त पदार्थों का विकास होता है । इसमें ईश्वर की सत्ता नहीं मानी गयी है और आत्मा ही पुरुष माना गया है । सांख्यमतानुसार आत्मा अकर्त्ता, साक्षी और प्रकृति से भिन्न है ।) (पुं०) सांख्यमतानुयायी ।—**प्रसाद**,—**मुख्य**–(पुं०) शिव जी ।

साङ्ग—(वि०) [सह अङ्गैः, ब० स०, सहस्य सः] अंगों या अवयवों वाला । सब प्रकार से परिपूर्ण । अंगों सहित ।

साङ्गतिक—(वि०) [स्त्री०—**साङ्गतिकी**] [सङ्गति+ठक्] संगति सम्बन्धी । समाज या सभा सम्बन्धी । संग करने वाला । (पुं०) अतिथि । सहाध्यायी । विचित्रपरिहासादिकथाजीवी ।

साङ्गम—(पुं०) [सङ्गम + अण्] मेल, संगम ।

साङ्ग्रामिक—(वि०) [स्त्री०—**साङ्ग्रामिकी**] [सङ्ग्राम√ठञ्] समर सम्बन्धी; 'एष साङ्ग्रामिको न्याय एष धर्मः सनातनः' उत्त० ५.२२ । (पुं०) सेनाध्यक्ष ।

साचि—(अव्य०) [√ सच्+इण्] टेढ़ेपन से, तिरछेपन से ।—**विलोकित**– (न०) कटाक्ष ।

साचिव्य—(न०) [सचिव+ष्यञ्] मंत्रित्व । मंत्री का पद । मैत्री । सहायता ।

साजात्य—(न०) [सजाति+ष्यञ्] जाति या वर्ग की समानता, समजातिकत्व ।

साञ्जन—(वि०) [सह अञ्जनेन, ब० स०, सहस्य सः] अंजन सहित । शरीरेन्द्रिय संबंधी । (पुं०) गिरगिट ।

√साद्—चु० उभ० सक० प्रकाशित करना। सादयति—ते, सादयिष्यति—ते, असिसादत्—त।

साटोप—(वि०) [सह आटोपेन] अभिमान में चूर। गरजता हुआ।

√सात्—चु० पर० अक० सुखी होना। सातयति—ते, सातयिष्यति—ते, असिसातत्—त।

सात—(न०) [√सात्+अच्] सुख।

सातत्य—(न०) [सतत+ष्यञ्] नैरन्तर्य, अविच्छिन्नता।

साति—(स्त्री०) [√सन् + क्तिन्] भेंट। दान। प्राप्ति। सहायता। नाश। अन्त। तीव्र वेदना।

सातीन, सातीनक—(पुं०) [सतीन+अण्] [सातीन+कन्] क्षुद्र मटर।

सात्वत—(पुं०) [सत्त्वमेव सात्त्वम् तत् तनोति, सात्त्व √ तन्+ड] विष्णु। यदुवंशी अंशु का पुत्र। बलराम। श्रीकृष्ण। यादवमात्र। विष्णु-भक्त विशेष। एक वर्णसंकर जाति।

सात्वती—[सात्वत+ङीप्] चार नाटकीय वृत्तियों में से एक। सुभद्रा। शिशुपाल की माता का नाम।

सात्त्विक—(वि०) [स्त्री०—**सात्त्विकी**] [सत्त्व+ठञ्] असली, यथार्थ। सच्चा, सत्य। ईमानदार। साहसी। सत्त्वगुण-सम्पन्न। सत्त्वगुण-सम्भूत। आन्तरिक भावोत्पन्न। (पुं०) साहित्य-शास्त्र का भाव-विशेष जिससे हृदय की बात बाहरी भाव से प्रकट होती है। इसके आठ भेद हैं—१ स्तम्भ, २ स्वेद, ३ रोमाञ्च, ४ स्वरभंग, ५ वेपथु, ६ वैवर्ण्य, ७ अश्रु, ८ प्रलय। ब्रह्मा। ब्राह्मण।

सात्यकि—(पुं०) [सत्यक + इञ्] यादव-वंशीय योद्धा जो श्रीकृष्ण का सारथि था।

सात्यवत, सात्यवतेय—(पुं०) [सत्यवती+अण्] कृष्णद्वैपायन व्यास का नामान्तर।

सात्वत्—(पुं०) [सातयति सुखयति, √सात्+क्विप्, सात् परमेश्वरः स उपास्यत्वेन अस्ति अस्य, सात्+मतुप्, मस्य वः] विष्णु का उपासक। श्रीकृष्ण का पूजक।

साद—(पुं०) [√सद्+घञ्] बैठना। थकावट, श्रान्ति। दुबलापन, पतलापन; 'शरीरसादादसमग्रभूषणा' र० ३.२। नाश। पीड़ा। सफाई, स्वच्छता।

सादन—(न०) [√सद् + णिच्+ल्युट्] थकावट, श्रान्ति। नाश। आवास-स्थान, घर।

सादि—(पुं०) [√सद् + इण्] सारथि। योद्धा। वायु। (वि०) विषाद-युक्त।

सादिन्—(वि०) [√सद्+णिनि वा णिच्+णिनि] बैठा हुआ। नाश करने वाला। (पुं०) घुड़सवार। हाथी पर या रथ पर सवार मनुष्य।

सादृश्य—(न०) [सदृश+ष्यञ्] समानता, एकरूपता। प्रतिमूर्ति। तुलना।

साद्यन्त—(वि०) [सह आद्यन्ताभ्याम्, ब० स०, सहस्य सः] आदि-अंत-सहित। समूचा, सम्पूर्ण।

साद्यस्क—(वि०) [स्त्री०—**साद्यस्की**] शीघ्र होने वाला या किया जाने वाला।

√साध्—स्वा० पर० सक० समाप्त करना, पूरा करना। जीत लेना। साध्नोति, सात्स्यति, असात्सीत्।

साधक—(वि०) [स्त्री०—**साधका, साधिका**] [√साध् + ण्वुल्] पूरा करने वाला, सम्पूर्ण करने वाला। फलोत्पादक। निपुण, पटु। ऐन्द्रजालिक। सहायक।

साधन—(वि०) [स्त्री०— **साधनी**] [√सिध् + णिच्, साधादेश, + ल्यु] साधन करने वाला, पूरा करने वाला; 'शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्' कुमा०।

(न०) [√सिध् + णिच्, साधादेश, +ल्युट्] किसी कार्य को सिद्ध करने की क्रिया। सिद्धि। सामग्री, सामान। उपाय। उपासना, साधना। सहायता। शोधन। कारण, हेतु। अनुसरण। प्रमाण। वशवर्ती-करण, दमन करना। तंत्र-मंत्र से कोई कार्य पूरा करना। आरोग्य करना। पूरना, भरना (घाव का)। वध करना, मार डालना। राजी करना। प्रस्थान, रवानगी। तपस्या। मोक्षप्राप्ति। अर्थ-दण्ड करना। आईन के बल से देना चुकवाना या किसी वस्तु को दिलवा देना। कर्मेन्द्रियां। लिंग, जननेन्द्रिय। गर्भाशय। सम्पत्ति। मैत्री। लाभ। मृतक का अग्नि संस्कार।

साधनता—(स्त्री०), **साधनत्व**— (न०) [साधन+तल् – टाप्] [साधन + त्व] किसी कार्य को पूरा करने की क्रिया या वृत्ति; 'प्रतिकूलतामुपगते हि विधौ विफल-त्वमेति बहुसाधनता' शि० ९.६। सिद्धि की अवस्था।

साधना—(स्त्री०) [√सिध् + णिच्, साधादेश, + युच्–टाप्] सिद्धि। आराधना, उपासना। तुष्टिकरण।

साधन्त—(पु०) [√साध्+झच् –अन्ता-देश] भिक्षुक, भिखारी।

साधर्म्य—(न०) [सधर्म + ष्यञ्] समान-धर्मी होने का भाव, समान-धर्मता, एक-धर्मता।

साधारण—(वि०) [स्त्री०—**साधारणा**, **साधारणी**] [सह धारणया, ब० स०, सहस्य सः, सधारण + अण् (स्वार्थे)] मामूली, सामान्य। सार्वजनिक, आम। समान, सदृश, तुल्य। मिश्रित। (पु०) न्याय में एक प्रकार का हेत्वाभास, वह हेतु जो सपक्ष और विपक्ष दोनों में एक सा रहे। (न०) सार्वजनिक नियम, मामूली नियम। **—धन**- (न०) मिली-जुली सम्पत्ति, वह सम्पत्ति जिस पर किसी परिवार के सब पातीदारों का स्वत्व हो। **—धर्म**- (पु०) सार्वजनिक धर्म या कर्तव्य, यथा —अहिंसा, सत्य, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय-निग्रह, दम, क्षमा, आर्जव (सिधाई), दान और धर्म। **—स्त्री०**-(स्त्री०) वेश्या।

साधारणता—(स्त्री०), **साधारणत्व**-(न०) [साधारण+तल् – टाप्] [साधारण +त्व] सामान्य या सार्वजनिक होने का भाव, सार्वजनिकता। समान स्वार्थ या स्वत्व।

साधारण्य—(न०) [साधारण+ष्यञ्] साधारणता।

साधिका—(स्त्री०) [√सिध्+णिच् साधा-देश+ण्वुल्–टाप्, इत्व] निपुणा स्त्री। [√साध्+ण्वुल्] गहरी निद्रा।

साधित—(वि०) [√सिध्+णिच्, साधा-देश+क्त] सिद्ध किया हुआ। साबित किया हुआ। प्राप्त। छोड़ा हुआ। दमन किया हुआ। फिर से पाया हुआ। जुर्माना किया हुआ। दिलवाया हुआ। शोधित (ऋणादि)।

साधिमन्—(पु०) [साधु+इमनिच्] नेकी, उत्तमता।

साधिष्ठ—(वि०) [अतिशयेन साधुः, साधु +इष्ठन्, साधादेश] अत्यंत दृढ़, बहुत मजबूत। अत्यंत साधु, बहुत अच्छा। अत्यंत सुंदर। अत्यंत श्रार्य। न्याय्य।

साधीयस्—(वि०) [साधु +ईयसुन्, उकार-लोप] अपेक्षाकृत अच्छा, उत्कृष्टतर। अपेक्षाकृत कड़ा या मजबूत। न्याय्य।

साधु—(वि०) [स्त्री०—**साधु**, **साध्वी**] [√साध् + उन्] नेक, उत्तम। योग्य, उचित, ठीक; 'यत्साधु न चित्रे स्यात्क्रि-यते तत्तदन्यथा' श० ६.१३। पुण्यात्मा। दयालु। विशुद्ध। मनोहर। कुलीन। (पु०) पुण्यात्मा जन। ऋषि। महात्मा। व्यापारी। जैन भिक्षुक। महाजन, सूदखोर। **—धी**-

(वि०) अच्छे स्वभाव का ।—वाद-(पुं०) शाबाशी ।— वृत्त-(वि०) अच्छे आचरण वाला । पुण्यात्मा । ईमानदार । (पुं०) साधु आचरण करने वाला पुरुष । (न०) सदाचरण । ईमानदारी ।

साधृत—(न०) [सहाघृतेन, ब० स०, सहस्य सः] दूकान । अटारी । मयूरों का झुंड ।

साध्य—(वि०) [√सिध्+णिच्, साधा-देश+यत्] साधनीय । सम्भव, होने योग्य । सिद्ध करने योग्य । स्थापित करने योग्य। प्रतीकार करने योग्य। जानने योग्य । जीतने के योग्य । दमन करने के योग्य । आराम होने योग्य । मार डालने योग्य । (न०) पूर्णता । वह वस्तु जिसे सिद्ध करना हो । न्याय में वह पदार्थ जिसका अनुमान किया जाय । (पुं०) बारह गण-देवता—मन, मन्ता, प्राण, नर, अपान, वीर्यवान्, विनिर्भय, नय, दंस, नारायण, वृष, प्रभुञ्च । देवता । एक मंत्र का नाम ।—सिद्धि- (स्त्री०) निष्पत्ति, काम का पूरा होना ।

साध्यता—(स्त्री०) [साध्य + तल्—टाप्] शक्यता, सम्भावना । आरोग्य होने की सम्भावना ।—अवच्छेदक (साध्यताव-च्छेदक) (न०) जिस रूप से जिसकी साध्यता निश्चित हो वह धर्म । जैसे 'पर्वतो वह्निमान् धूमात्' इस वाक्य में वह्नि साध्य है और वह्निमत्त्व साध्यता-वच्छेदक है ।

साध्वस—(न०) [साधु√अस् +अच्] भय, डर । गति-शक्ति-हीनता, जड़ता । घबड़ाहट, परेशानी ।

साध्वी—(स्त्री०) [साधु+ङीप्] सती स्त्री, पतिव्रता स्त्री । शुद्ध चरित्रवाली स्त्री । मेदा नामक अष्टवर्गीय ओषधि ।

सानन्द—(वि०) [सह आनन्देन, ब० स०, सहस्य सः] आनन्द-युक्त, प्रसन्न ।

सानसि—(पुं०) [√ सन्+इण्, असुक्] सुवर्ण, सोना ।

सानिका, सानेयिका, सानेयी—(स्त्री०) [√सन्+ण्वुल् — टाप्, इत्व] [सानेयी +कन्—टाप्, ह्रस्व] [सह आनयेन स्वरेण, ब० स० सहस्य सः, सानेय+ङीप्] बंसी ।

सानु—(पुं०, न०) [√सन्+ञुण्] चोटी, शिखा; 'सानूनि गन्धः सुरभीकरोति' कु० १.९ । पर्वत-शिखर की समतल भूमि । अङ्कुर, अँखुआ । वन । सड़क । छोर । बालुवा जमीन । पवन का झोंका । पण्डित-जन । सूर्य ।

सानुमत्—(पुं०) [सानु + मतुप्] पर्वत ।

सानुमती—(स्त्री०) [सानुमत्—ङीप्] एक अप्सरा का नाम ।

सानुक्रोश—(वि०) [सह अनुक्रोशेन, ब० स०, सहस्य सः] दयालु, दयार्द्र चित्त वाला ।

सानुनय—(वि०) [सह अनुनयेन, ब० स०, सहस्य सः] विनय-युक्त, शिष्ट ।

सानुबन्ध—(वि०) [सह अनुबन्धेन] जिसका संबन्ध या क्रम न टूटा हो ।

सान्तपन—(न०) [सम्√तप्+ल्युट् +अण्] दो दिन में पूरा होने वाला एक व्रत ।

सान्तर—(वि०) [सह अन्तरेण, ब० स०, सहस्य सः] बीच के अवकाश वाला । झीना ।

सान्तानिक—(वि०) [सन्तान + ठक्] फैला हुआ (वृक्ष) सन्तान सम्बन्धी । सन्तान वृक्ष सम्बन्धी । (न०) सन्तान का साधन विशेष । (पुं०) वह ब्राह्मण जो सन्तानोत्पत्ति के लिये विवाह करे ।

√सान्त्व्—चु० पर० सक० शमन करना, शान्त करना । (शोक) दूर करना । सान्त्वयति, सान्त्वयिष्यति, अससान्त्वत् ।

सान्त्व—(पुं०), **सान्त्वन**,—(न०), **सान्त्वना**-(स्त्री०) [√सान्त्व् + घञ्] [√सान्त्व्+ल्युट्] [सान्त्व् + णिच् +युच् —टाप्] ढाड़स बँधाना, किसी दुःखी आदमी को उसका दुःख हल्का करने के लिये समझा-बुझा कर शान्त करने का काम। आश्वासन, तसल्ली। तुष्ट करने वाले शब्द। अभिवादन तथा कुशल-वार्ता।

सान्दीपनि—(पुं०) [सन्दीपन+इञ्] श्रीकृष्ण के विद्या-गुरु का नाम।

सान्दृष्टिक—(वि०) [स्त्री०—**सान्दृष्टिकी**] [सन्दृष्टि+ठक्]एक ही दृष्टि में होने वाला, तात्कालिक, देखते-देखते ही होने वाला।

सान्द्र—(वि०) [√अन्द्+रक्; सह अन्द्रेण, ब० स०, सहस्य सः] घना; 'सान्द्रानन्दक्षुभितहृदयप्रस्रवेणेव सिक्तः' उत्त० ६.२२। मजबूत। विपुल, अधिक। उग्र, प्रचण्ड। स्निग्ध, चिकना। मृदु, कोमल। सुन्दर। (पुं०) गुच्छा, स्तबक। राशि, ढेर।

सान्धिक—(पुं०) [सन्धां सुराख्यानं शिल्पं वेत्ति, सन्धा+ठक्] शौंडिक, कलाल, वह जो शराब बनाता हो। [सन्धि +ठक्] वह जो सन्धि करता हो।

सान्धिविग्रहिक—(पुं०) [सन्धिविग्रह+ठक्] परराष्ट्र-सचिव, वह अमात्य जिसके अधिकार में, अन्य राज्यों से सन्धि, विग्रह (सुलह, जंग) करना हो।

सान्ध्य—(वि०) [स्त्री०—**सान्ध्यी**] [सन्ध्या+अण्] सन्ध्या सम्बन्धी।

सान्नहनिक—(वि०) [**सान्नहनिकी**] [सन्नहन+ठक्] कवचधारी।

सान्नाय्य—[सम् √नी + ण्यत् नि० साधुः] अभिमन्त्रित घी आदि हवन-सामग्री।

सान्निध्य—(न०) [सन्निधि +ष्यञ्] नैकट्य, सामीप्य। उपस्थिति, विद्यमानता।

सान्निपातिक—(वि०) [स्त्री०—**सान्निपातिकी**] [सन्निपात+ठक्] मिलने वाला। उलझन डालने वाला। (पुं०) वह रोगी जिसके कफ, वायु और पित्त गड़बड़ा गये हों।

सान्न्यासिक—(पुं०) [सन्न्यास + ठक्] वह ब्राह्मण जो चतुर्थ आश्रम अर्थात् संन्यासाश्रम में हो, यति।

सान्वय—(वि०) [सह अन्वयेन, ब० स० सहस्य सः] अन्वय-सहित। वंश-विशिष्ट।

सापत्न—(वि०) [स्त्री०—**सापत्नी**] [सपत्नी+अण्] सौत की कोख से उत्पन्न या सौत-सम्बन्धी।

सापत्न्य—(न०) [सपत्नी+ष्यञ्] सौत की दशा, सौतियाभाव। [सपत्न+ष्यञ्] शत्रुता। (पुं०) [सपत्नी + यञ्] सौत का पुत्र। [सपत्न+ष्यञ् (स्वार्थे)] शत्रु।

सापराध—(वि०) [सह अपराधेन, ब० स०, सहस्य सः] अपराधी, जुर्म करने वाला।

सापिण्ड्य—(न०) [सपिण्ड + ष्यञ्] सपिंड होने का भाव या धर्म।

सापेक्ष—(वि०) [सह अपेक्षया, ब० स०, सहस्य सः] अपेक्षा सहित, जिसमें किसी की अपेक्षा हो।

साप्तपद—(न०) [सप्तपद+अण्] सात पग चलने से अथवा सात वाक्य आपस में कहने-सुनने से उत्पन्न हुई मैत्री या सम्बन्ध।

साप्तपदीन—(न०) [सप्तपद + खञ्] दे० 'साप्तपद'; 'यतः सतां सन्नतगात्रि! संगतं मनीषिभिः साप्तपदीनमुच्यते' कु० ५.३९।

साप्तपौरुष—(वि०) [स्त्री०—**साप्तपौरुषी**] [सप्तपुरुष+अण्] सात पीढ़ियों तक या सात पीढ़ियों का।

साफल्य—(न०) [सफल+ष्यञ्] सफलता, कृतकार्यता । उपयोगिता । लाभ ।

साव्दी—(स्त्री०) द्राक्ष ।

साभ्यसूय—(वि०) [सह अभ्यसूयया, ब० स०, सहस्य सः] डाही, ईर्ष्यालु ।

√साम्—चु० पर० सक० शमन करना, शान्त करना । सामयति,सामयिष्यति, असासामत् ।

सामक—(न०) [समक+अण्] वह मूल धन जो ऋण स्वरूप लिया या दिया गया हो । (पु०) [√साम्+ण्वुल्] सान चढ़ाने का पत्थर ।

सामग्री—(स्त्री०) [समग्र+ष्यञ्—ङीष्, यलोप] सामान, वे पदार्थ जिनका किसी कार्य-विशेष में उपयोग होता है ।

सामग्र्य—(न०) [समग्र+ष्यञ्] समूचापन, पूर्णता । अनुचरवर्ग । माल-असबाब । भंडार, कोष ।

सामञ्जस्य—(न०) [समञ्जस+ष्यञ्] संगति, मेल, मिलान । विरोध न होना । औचित्य ।

सामन्—(न०) [√सो+मनिन्] शान्तिकरण, तुष्टि-साधन । राजाओं के लिये शत्रु को वश में करने का उपाय विशेष; 'सामदण्डौ प्रशंसन्ति नित्यं राष्ट्राभिवृद्धये' मनु० ७.१०९ । कोमलता, मृदुता (वाक्यसम्बन्धी) । प्रशंसात्मक छंद या गान । सामवेद का मंत्र । सामवेद ।—**उद्भव** (**सामोद्भव**)—(पु०) हाथी ।—**उपचार** (**सामोपचार**),—**उपाय** (**सामोपाय**)—(पु०) शमन करने के साधन ।—**ग**—(पु०) सामवेदी ब्राह्मण या वह ब्राह्मण जो सामवेद का गान कर सके ।—**ज**,—**जात**—(वि०) सामवेद से उत्पन्न । शान्त साधनों से पैदा हुआ । (पु०) हाथी ।—**योनि**—(पुं०) ब्राह्मण । हाथी ।—**वाद**—(पुं०) मृदुशब्द, मधुर शब्द ।—**वेद**—(पुं०) चार वेदों में तीसरा वेद ।

सामन्त—(वि०) [समन्त+अण्] सीमावर्ती । पड़ोस का । सार्वजनिक । (पु०) पड़ोसी । पड़ोसी राजा । करद राजा; 'सामन्तमौलिमणिरञ्जितपादपीठं' वे० ३.१९ । बड़ा जमींदार । योद्धा । नायक । सामीप्य ।

सामन्य—(पुं०) [सामन्+यत्] सामवेद का ज्ञाता, ब्राह्मण ।

सामयिक—(वि०) [स्त्री०—**सामयिकी**] [समय+ठक्] ठीक समय का । समयानुसार, समय की दृष्टि से उपयुक्त । समय सम्बन्धी । जो ठहराव के मुताबिक हो । थोड़े समय के लिये होने वाला, अस्थायी ।

सामर्थ्य—(न०) [समर्थ+ष्यञ्] शक्ति, ताकत । क्षमता । उद्देश्य की समानता । अर्थ या अभिप्राय की समानता या एकता । उपयुक्तता । शब्द की अर्थ-शक्ति । लाभ । सम्पत्ति ।

सामवायिक—(वि०) [स्त्री०—**सामवायिकी**] [समवाय+ठञ्] समाज या समूह से सम्बन्ध-युक्त । अभेद्य सम्बन्ध रखने वाला । (पुं०) मंत्री । दल का प्रधान ।

सामाजिक—(वि०) [स्त्री०—**सामाजिकी**] [समाज+ठक्] समाज-सम्बन्धी । (पुं०) किसी समाज का सदस्य ।

सामानाधिकरण्य—(न०) [समानाधिकरण+ष्यञ्] एक ही पद पर दोनों का होना, समान या बराबर अधिकार, समानता का सम्बन्ध ।

सामान्य—(वि०) [समान+ष्यञ्] साधारण, जिसमें कोई विशेषता न हो, मामूली । समान, बराबर का । समानांश का । तुच्छ, नाचीज । समूचा, समस्त । (न०) सार्वजनिकता । सामान्य लक्षण । समूचापन । किस्म, प्रकार । समता, एकस्वरूपत्व । निर्विकार अवस्था । सार्वजनिक प्रस्तावित विषय । साहित्य में एक अलंकार । यह तब

माना जाता है जब एक ही आकार की दो या अधिक ऐसी वस्तुओं का वर्णन होता है जिनमें देखने में कुछ भी अन्तर नहीं जान पड़ता ।—**पक्ष**–(पु०) मध्यम स्थिति । –**लक्षणा**–(स्त्री०) वह गुण जिसके अनुसार किसी एक सामान्य को देख कर उसी के अनुसार उस जाति के अन्य सब पदार्थों का ज्ञान प्राप्त होता है, किसी पदार्थ को देख उस जाति के अन्य पदार्थों का बोध करा देने वाली शक्ति ।—**वनिता**–(स्त्री०) वेश्या ।—**शास्त्र**–(न०) साधारण नियम या विधान ।

सामासिक—(वि०) [स्त्री०—**सामासिकी**] [समास+ठञ्] समास-सम्बन्धी । सामूहिक । मिश्रित । संक्षिप्त । (न०) सब प्रकार के समासों का संग्रह ।

सामि—(अव्य०) [√साम् + इन्] आधा; 'उल्लमाभिरुपसृत्य चकिरे सामिमुक्तविषया: समागमा:' र० १९.१६ । निन्दा ।

सामिधेनी—(स्त्री०) [सम् √इन्ध्+ल्युट् नि० साधु:] एक प्रकार का ऋङ्मंत्र जिसका पाठ होम की अग्नि प्रज्वलित करते समय अथवा हवन की अग्नि में समिधाएँ छोड़ते समय किया जाता है । समिधा, ईंधन ।

सामीची—(स्त्री०) प्रशंसा । स्तुति ।

सामीप्य—(न०) [समीप + ष्यञ्] समीप होने का भाव, निकटता । एक प्रकार की मुक्ति जिसमें मुक्त जीव का भगवान् के समीप पहुँच जाना माना जाता है ।

सामुद्र—(वि०) [स्त्री०—**सामुद्री**] [समुद्र+अण्] समुद्र में उत्पन्न । समुद्र-सम्बन्धी । (न०) समुद्री नमक । समुद्र-फेन । नारियल । शरीर का चिह्न । (पु०) समुद्र-वासी ।

सामुद्रक—(न०) [सामुद्र + कन्] समुद्री लवण । [समुद्रेण ऋषिणा प्रोक्तम्, समुद्र वुञ्] शरीर के चिह्नों या लक्षणों आदि के फलों का विवेचन करने वाला ग्रन्थ ।

सामुद्रिक—(वि०) [स्त्री०—**सामुद्रिकी**] [समुद्र + ठञ्] समुद्र में उत्पन्न, समुद्र-सम्भूत । शरीर के शुभाशुभ चिह्नों सम्बन्धी । (न०) हस्तरेखाओं से शुभाशुभ कहने की विद्या । (पु०) वह व्यक्ति जो मनुष्य के शरीर के चिह्नों या लक्षणों को देख कर शुभाशुभ फलों का विवेचन करे ।

साम्पराय—(वि०) [स्त्री०—**साम्परायी**] [सम्पराय+अण्] युद्ध सम्बन्धी, सामरिक । परलोक-सम्बन्धी । (न०, पु०) लड़ाई । परलोक । परलोक-प्राप्ति के साधन । परवर्ती जीवन-सम्बन्धिनी जिज्ञासा । अनिश्चय ।

साम्परायिक—(वि०) [स्त्री०—**साम्परायिकी**] [सम्पराय+ठञ्] युद्ध में काम आने वाला । विपत्ति-कारक । परलोक-सम्बन्धी । (न०) युद्ध । (पु०) लड़ाई का रथ ।—**कल्प**–(पु०) सैन्य-व्यूह विशेष ।

साम्प्रतम्—(अव्य०) [सम्–प्र √ तन् +डमु] अब । अभी । उपयुक्त रूप में ।

साम्प्रतिक—(वि०) [स्त्री०—**साम्प्रतिकी**] [सम्प्रति+ठञ्] वर्तमान समय सम्बन्धी । उचित, ठीक ।

साम्प्रदायिक—(वि०) [स्त्री०—**साम्प्रदायिकी**] [सम्प्रदाय + ठञ्] परंपरागत सिद्धान्त सम्बन्धी । किसी संप्रदाय से संबंध रखने वाला ।

साम्ब—(पु०) [सह अम्बया, ब० स०, सहस्य स:] शिव का नामान्तर ।

साम्बन्धिक—(वि०) [स्त्री०—**साम्बन्धिकी**] [सम्बन्ध+ठञ्] सम्बन्ध से उत्पन्न । (न०) नातेदारी, रिश्तेदारी । सन्धि द्वारा स्थापित मैत्री ।

साम्बरी—(स्त्री०) [सम्बर+अण्–ङीप्] माया, जादूगरी । जादूगरनी ।

साम्भवी—(स्त्री०) [सम्भव+अण्—ङीप्] लाल लोध्र वृक्ष ।

साम्य—(न०) [सम + ष्यञ्] समानता, सादृश्य । ऐकमत्य । अपक्षपातित्व ।

साम्राज्य—(न०) [सम्राज् +ष्यञ्] वह राज्य जिसके अधीन बहुत से देश हों और जिसमें किसी एक सम्राट् का शासन हो, सार्वभौमराज्य । आधिपत्य, पूर्ण अधिकार ।

साय—(पु०) [√सो +घञ्] समाप्ति, अन्त । दिन का अन्त, सन्ध्याकाल । तीर । —**अह्न्** (**सायाह्न**)– (पु०) सायंकाल ।

सायक—(पु०) [√सो + ण्वुल्] तीर; 'सक्ताङ्गुलिः सायकपुङ्ख एव' र० २.३१ । तलवार ।—**पुङ्ख**–(पु०) तीर का वह भाग जिसमें पंख लगे होते हैं ।

सायन्तन—(वि०) [स्त्री०—**सायन्तनी**] सायम्+ट्युल्, तुट्] सायंकाल सम्बन्धी ।

सायम्—(अव्य०) [√सो + अमु] संध्या, शाम ।— **काल**–(पु०) सन्ध्याकाल ।—**मण्डन**–(न०) सूर्यास्त । सूर्य ।—**सन्ध्या** –(स्त्री०) सन्ध्या काल की लाली । सन्ध्या काल की भगवदुपासना ।

सायिन्—(पु०) घुड़सवार ।

सायुज्य—(न०) [सह√युज्+क्विप्, सादेश, सयुज्+ष्यञ्] एक में इस प्रकार मिल जाना कि भेद न रहे । पाँच प्रकार की मुक्तियों में से एक प्रकार का मोक्ष, इसमें जीवात्मा का परमात्मा में लीन हो जाना माना गया है । समानता, सादृश्य ।

सार—(वि०) [√सृ+घञ्, सार + अच्] सर्वोत्तम, अत्युत्तम; 'असारे खलु संसारे सारमेतच्चतुष्टयं' सुभा० । असली, यथार्थ । मजबूत । विक्रमी । भली-भाँति सिद्ध किया हुआ ।(पु०, न०) [√सृ+घञ्] किसी पदार्थ का मूल, मुख्य या काम का अथवा असली अंश, तत्त्व । मींगी । गूदा । वृक्ष का रस । किसी ग्रन्थ का सार, निचोड़ । शक्ति, ताकत । शूरता । दृढ़ता , मजबूती । धन, सम्पत्ति । अमृत । ताजा मक्खन । पवन । मलाई । रोग । पीप, मवाद । उत्तमता । शतरंज का मोहरा । एक प्रकार का अर्थालंकार जिसमें उत्तरोत्तर वस्तुओं का उत्कर्ष या अपकर्ष वर्णित होता है । (न०) [सर + अण्] जल । उपयुक्तता । वन । इस्पात लोहा ।—**असार** (**सारासार**)– (वि०) मूल्यवान् और निकम्मा । मजबूत और कमजोर । (न०) सारता और निस्सारता । पोढ़ापन और खुखलापन । ताकत और कमजोरी ।—**गन्ध** –(पु०) चन्दन की लकड़ी ।—**ग्रीव**– (पु०) शिव ।—**ज**–(न०) ताजा नवनीत ।—**तरु**–(पु०)केले का वृक्ष ।—**दा**–(स्त्री०) सरस्वती देवी । दुर्गा देवी ।—**द्रुम**–(पु०) खदिर वृक्ष ।—**भङ्ग**– (पु०) शक्ति का नाश ।— **भाण्ड**–(पु०) व्यापार की बहुमूल्य वस्तु । सौदागरी माल की गाँठ । कस्तूरी । खजाना ।—**भुज्**– (पु०)अग्नि । —**मिति**– (पु०) वेद ।—**लोह**–(न०) इस्पात लोहा ।

सारघ—(न०) [सरघाभिः निर्वृत्तम्, सरघा +अण्] शहद ।

सारङ्ग—(वि०) [स्त्री०—**सारङ्गी**] [√सृ + अङ्गच्+अण्] चितकबरा, रंग-बिरंगा । (पु०) रंग-बिरंगा रंग । चित्तल हिरन । हिरन, मृग; 'सारङ्गास्ते जललवमुचः सूचयिष्यन्ति मार्गं' मे० २० । शेर । हाथी । भ्रमर । कोकिल । बड़ा सारस । मेढक । मयूर । छाता । बादल । वस्त्र । बाल । शंख । शिवजी । कामदेव । पुष्प । कमल । कपूर । धनुष । चन्दन । वाद्य-यंत्र-विशेष, सारंगी, चिकारा । सुवर्ण । पृथिवी । रात्रि । प्रकाश । रत्न । अंजन । सरोवर । समुद्र । कुच । हाथ । कपोल । खंजन । विद्युत् । सर्प । सूर्य । चन्द्रमा । नक्षत्र ।

हल । कौआ । खंजन । लवा पक्षी । राजहंस । चातक । महीन वस्त्र । दीपक । विष्णु का धनुष । बाण । तलवार । कबूतर । मोती । आकाश । श्रीकृष्ण का एक नाम ।

सारङ्गिक—(पु०) [सारङ्गं हन्ति, सारङ्ग +ठक्] चिड़ीमार, बहेलिया ।

सारङ्गी—(स्त्री०) [सारङ्ग + ङीप्] एक प्रसिद्ध वाद्ययंत्र । चित्तल हिरनी । एक रागिनी ।

सारण—(वि०) [स्त्री०—**सारणी**] [√सृ + णिच्+ल्यु] बहाने वाला । भेजने वाला । (न०) एक गंधद्रव्य । (पु०) दस्तों की बीमारी, अतीसार । अमड़ा, आँवला । मद्रबला । गंध-प्रसारिणी लता । मक्खन । रावण का एक मंत्री ।

सारणा—(स्त्री०) [√सृ + णिच्+युच् —टाप्] पारद आदि रसों का एक प्रकार का संस्कार ।

सारणि, सारणी—(स्त्री०) [√सृ+णिच् +अनि, पक्षे ङीप्] छोटी नदी । नहर । नाली ।

सारण्ड—(पु०) [√सृ+णिच् + अण्ड] सर्प का अंडा ।

सारतस्—(अव्य०) [सार + तस्] धन के अनुसार, वित्तानुसार । विक्रमपूर्वक ।

सारथि—(पुं०) [√सृ + अथिण्, वा सह रथेन सरथः घोटकः तत्र नियुक्तः, सरथ +इञ्] रथवान, रथ हाँकने वाला । साथी, सहायक । समुद्र ।

सारथ्य—(न०) [सारथि + ष्यञ्] रथवानी, कोचवानी ।

सारमेय—(पुं०) [सरमाया कश्यपपत्न्याः अपत्यम्, सरमा+ढक्] कुत्ता ।

सारमेयी—(स्त्री०) [सारमेय+ ङीप्] कुतिया ।

सारल्य—(न०) [सरल +ष्यञ्] सरलता, सीधापन, ईमानदारी, सच्चाई ।

सारवत्—(वि०) [सार+मतुप्, मस्य वः] सार-युक्त । ठोस । मजबूत । मूल्यवान् । रसदार । उपजाऊ ।

सारस—(वि०) [स्त्री०—**सारसी**] [सरस् +अण्] सरोवर सम्बन्धी । (न०) कमल । एक प्रकार का जल । [सह रसेन शब्देन, सरस+अण्] करधनी, कमरबंद । (पु०) [सरस्+अण्] हंस की जाति का एक लंबी टांगों वाला पक्षी । हंस । गरुड़ का एक पुत्र । [सरस+अण्] चंद्रमा ।

सारसन—(न०) [सार √सन् + अच्] करधनी, कमरपेटी, कमरबंद; 'सारसनम्महानहिः' कि० १८.३२। सामरिक कमरबंद विशेष ।

सारस्वत—(वि०) [स्त्री०—**सारस्वती**] [सरस्वती+अण्] सरस्वती देवी सम्बन्धी । सरस्वती नदी सम्बन्धी । वाक्पटु । (न०) [सारस्वत + अण्] वाक्-पटुता । वाणी । (पुं०) [सरस्वती+अण्] सरस्वती नदी के तटवर्ती एक देश का नाम । बेल की लकड़ी का दण्ड । (पुं०) [सारस्वत +अण्] सारस्वत देश वासी । पंच गौड़ ब्राह्मणों में से एक—'सारस्वताः कान्यकुब्जा उत्कला मैथिलाश्च ये । गौडाश्च पञ्चधा चैव दश विप्राः प्रकीर्तिताः ।' (सह्या० २।१।३) ।

साराल—(पु०) [सार—आ √ला+क] तिल का पौधा ।

सारि—(पु०, स्त्री०) [√सृ+इण्] जुआ खेलने का पासा । गोटी । मैना ।—**फलक** —(पु०) बिसात ।

सारिका—(स्त्री०) [√सृ + ण्वुल्—टाप्, इत्व] मैना जाति का चिड़िया ।

सारिन्—(वि०) [स्त्री०—**सारिणी**] [√सृ +णिनि] जाने वाला । पीछा करने वाला । [सार+इनि] सारवान् ।

सारी—(स्त्री०) [सारि + ङीष्] मैना। सप्तला, सातला। पासा।

सारूप्य—(न०) [सरूप + ष्यञ्] समान रूप होने का भाव, एकरूपता। पांच प्रकार की मुक्तियों में से एक प्रकार की मुक्ति। इसमें उपासक अपने उपास्य देव के रूप में रहता है और अन्त में उसी उपास्य देवता का रूप प्राप्त करता है। नाटक में शक्ल मिलती-जुलती होने के कारण धोखे में किया जाने वाला बर्ताव (कोधादि)।

सारोष्ट्रिक—(पु०) [सारः श्रेष्ठः उष्ट्रो यत्र, सारोष्ट्रः देशभेदः तत्र भवः, सारोष्ट्र +ठक्] विष विशेष।

सार्गल—(वि०) [सह अर्गलेन, ब० स०, सहस्य सः] रोक सहित, रोका हुआ। अड़चन डाला हुआ।

सार्थ—(वि०) [सह अर्थेन, ब० स०, सहस्य सः] अर्थ-सहित। वह जिसका कोई उद्देश्य हो। उपयोगी, काम लायक। धनी, धनवान्। [समानः अर्थो यस्य, ब० स०, समानस्य सः] एक ही अर्थ वाला, समानार्थक। (पु०) [सह अर्थेन] धनी आदमी। [√सृ+थन्+अण्]सौदागरों की टोली (काफिला); 'सार्थाः स्वैरं स्वकीयेषु चेरुवेंश्मस्विवाद्रिषु' र० १७.६४। टोली, दल। (एक जाति के पशुओं का) हेड़। समुदाय, समूह। तीर्थयात्रियों की टोली। —ज-(वि०) वह जो टोली या काफिले में पाला पोसा हुआ हो।—वाह- (पुं०) दल का नेता या नायक। सौदागर।

सार्थक—(वि०) [सह अर्थेन, ब० स०, कप्] अर्थवाला, अर्थ सहित। उपयोगी, काम का।

सार्थवत्—(वि०) [सार्थ+मतुप्, मस्य वः] बड़े समुदाय या समूह वाला।

सार्थिक—(पु०) [सार्थ+ठक्] व्यापारी, सौदागर।

सार्द्र—(वि०) [सह आर्द्रेण, ब० स०, सहस्य सः] भीगा, तर, सील वाला, तरी वाला, नम।

सार्ध—(वि०) [सह अर्धेन, ब० स०, सहस्य सः] आधा सहित, आधे के साथ पूर्ण।

सार्धम्—(अव्य०) [सह √ऋध्+अमु] सहित, साथ, समेत; 'वनं मया सार्धमसि प्रपन्नः' र० १४.६३।

सार्प, सार्प्य—(पु०) [सर्पो देवता अस्य, सर्प+अण्] [सर्प + ष्यञ्] अश्लेषा नक्षत्र।

सार्पिष, सार्पिष्क—(वि०) [स्त्री०—सार्पिषी, सार्पिष्की] [सर्पिषा संस्कृतम्, सर्पिस्+अण्] [सर्पिस्+ ठक्—क] घी में राँधा या तला हुआ। घी-मिश्रित।

सार्वकामिक-(वि०) [स्त्री०—सार्वकामिकी] [सर्वकाम+ठक्—इक] समस्त कामनाओं को पूरा करने वाला।

सार्वजनिक, सार्वजनीन—(वि०) [स्त्री०—सार्वजनिकी, सार्वजनीनी] [सर्वजन +ठक् – इक] [सर्वजन + खञ्—ईन] सर्वसाधारण सम्बन्धी, आम।

सार्वज्ञ—(न०) [सर्वज्ञ + अण्] सर्वज्ञता।

सार्वत्रिक—(वि०) [स्त्री०—सार्वत्रिकी] [सर्वत्र+ठक् – इक] हर स्थान का, सर्वत्र से सम्बन्ध रखने वाला।

सार्वधातुक—(वि०) [स्त्री०—सार्वधातुकी] [सर्वधातु+ठक्—क] सब धातुओं में व्यवहृत होने वाला। (न०) व्याकरण में सर्वधातु-प्राकृतिक लट्, लोट्, लङ और लिङ —इन चार लकारों की संज्ञा।

सार्वभौतिक—(वि०) [स्त्री०—सार्वभौतिकी]सर्वभूत+ठक् – इक] हरेक तत्त्व

या प्राणी से सम्बन्ध रखने वाला। जिसमें समस्त प्राणधारी सम्मिलित हों।

सार्वभौम—(वि०) [स्त्री०—**सार्वभौमी**] [सर्वभूमि+अण्] समस्त भूमि सम्बन्धी। सम्पूर्ण भूमि की। (पु०) सम्राट्, चक्रवर्ती राजा, शाहंशाह; 'नाज्ञामज्ञां सहन्ते नृवर! नृपतयस्त्वादृशाः सार्वभौमाः' मु० ३.२२। उत्तर दिशा का दिग्गज।

सार्वलौकिक—(वि०) [स्त्री०— **सार्वलौकिकी**] [सर्वलोक + ठञ्—इक] सर्वसंसार में व्याप्त।

सार्ववर्णिक—(वि०) [स्त्री०—**सार्ववर्णिकी**] [सर्ववर्ण +ठञ्—इक] हर प्रकार का। हर जाति का, हर वर्ण का।

सार्वविभक्तिक—(वि०) [स्त्री०—**सार्वविभक्तिकी**] [सर्वविभक्ति+ठञ्—इक] सब विभक्तियों में लगने वाला। सब विभक्ति सम्बन्धी।

सार्ववेदस–(पु०) [सर्ववेदस् + अण्] अपना समस्त द्रव्य यज्ञ की दक्षिणा अथवा अन्य किसी वैसे ही धर्मानुष्ठान में दे डालने वाला।

सार्ववेद्य—(पु०) [सर्ववेद + ष्यञ्] वह ब्राह्मण जो सब वेदों का जानने वाला हो।

सार्षप—(वि०) [स्त्री०—**सार्षपी**] [सर्षप +अण्] सरसों का बना हुआ। (न०) सरसों का तेल, कड़ुआ तेल।

सार्ष्टि—(वि०) समान पद या अधिकार वाला।

सार्ष्टिता—(स्त्री०) [सार्ष्टि + तल्—टाप्] पद या अधिकार में समानता या तुल्यता। पाँच प्रकार की मुक्तियों में से एक प्रकार की मुक्ति।

सार्ष्ट्य—(न०) [सार्ष्टि + ष्यञ्] चौथे दर्जे की मुक्ति।

साल—(पु०) [√सल्+घञ्] साल नाम का वृक्ष, साखू। उसकी राल। वृक्ष। किसी भवन के चारों ओर परकोटे की दीवालें या हातादीवारी। दीवाल। मछली विशेष।

सालन—(पु०) [सालः कारणत्वेन अस्ति अस्य, साल+न] साल वृक्ष की राल।

साला—(स्त्री०) [सालः प्राकारोऽस्ति अस्याः, साल+अच् — टाप्] घर।—**वृक**—(पु०) कुत्ता। सियार। दीवाल।—**करी**–(स्त्री०) वह स्त्री कारीगर जो अपने घर ही में काम करे। स्त्री कैदी (विशेषकर युद्ध-क्षेत्र में पकड़ी हुई)।

सालार—(न०) [साला√ऋ+अण्] दीवाल में जड़ी हुई और बाहर निकली हुई खूँटी।

सालूर—(पु०) [√सल् + उरच्, णित्व, वृद्धि] मेढक।

सालेय—(न०) [साला + ढक्—एय] सौंफ, मधूरिका।

सालोक्य—(न०) [समानो लोकोऽस्य, ब० स०, समानस्य सः, सलोक+ष्यञ्] दूसरे के साथ एक ही लोक या स्थान में निवास। पांच प्रकार की मुक्तियों में से एक। इसमें मुक्त जीव भगवान् के साथ अथवा अपने अन्य आराध्य देव के साथ एक ही लोक में वास करता है, सलोकता।

साल्व—(पु०) [साल्व + अण्] साल्व देश का राजा। वहां का निवासी। देश विशेष। एक दैत्य जिसे विष्णु भगवान् ने मारा था।—**हन्**–(पु०) विष्णु भगवान्।

साल्विक—(पु०) [साल्व + ठक्] सारिका (मैना) नामक पक्षी।

साव—(पु०) [√सु+घञ्] देवता या पितर के उद्देश्य से जल या सोमरस का तर्पण।

सावक—(वि०) [स्त्री०—**साविका**] [√सु+ण्वुल्]उत्पादक।(पु०)[=शावक, पृषो० साधुः] दे० 'शावक'।

सावकाश—(वि०) [सह अवकाशेन, ब० स०, सहस्य सः] वह जिसको अवकाश हो। खाली।

सावग्रह—(वि०) [सह अवग्रहेण] अवग्रह चिह्न वाला ।

सावज्ञ—(वि०) [सह अवज्ञया] घृणा या तिरस्कार-युक्त ।

सावद्य—(न०) [सह अवद्येन] तीन प्रकार की योग-शक्तियों में से एक । यह योगियों को प्राप्त होती है । अन्य दो शक्तियों के नाम "निरवद्य" और "सूक्ष्म" हैं ।

सावधान—(वि०) [सह अवधानेन] सचेत, सतर्क, होशियार, सजग, चौकस ।

सावधि—(वि०) [सह अवधिना] सीमा-सहित, सीमाबद्ध, मर्यादित; 'सावधिस्तोयराशिस्ते यशोराशेस्तु नावधिः' सुभा० ।

सावन—(वि०) [स्त्री०—**सावनी**] [सवन+अण्] तीन सवनों वाला, तीन सवनों से सम्बन्ध रखने वाला । (पु०) यजमान, यज्ञकर्त्ता, यज्ञ कराने के लिये ऋत्विक्, होता आदि नियत करने वाला । वह कर्म विशेष जिसके द्वारा यज्ञ समाप्त किया जाता है । वरुण । तीस दिवस का सौरमास । सूर्योदय से सूर्यास्त तक का मामूली दिन या दिनमान । ६० दण्ड का समय । वर्ष विशेष ।

सावयव—(वि०) [सह अवयवेन] अवयवों या अंगों या भागों से बना हुआ या युक्त ।

सावर—(पु०) [सवरेण निर्वृत्तः, सवर+अण्] अपराध, जुर्म । पाप, गुनाह । लोध्र का पेड़ ।

सावरण—(वि०) [सह आवरणेन, ब० स०, सहस्य सः] आवरण-सहित । छिपा हुआ । ढका हुआ ।

सावर्ण—(वि०) [स्त्री०—**सावर्णी**] [सवर्ण+अण्] एक ही रंग, नस्ल या जाति का, एक ही रंग, नस्ल या जाति से सम्बन्ध रखने वाला । (पु०) [सवर्णायां भवः, सवर्णा+अण्] आठवें मनु जो सूर्य के पुत्र थे ।—**लक्ष्य**- (न०) चर्म, खाल ।

सावर्णि—(पु०) [सवर्णा+इञ्] दे० 'सावर्ण' ।

सावर्ण्य—(न०) [सवर्ण + ष्यञ्] रंग की समानता । श्रेणी या जाति की एक-रूपता ।[सावर्णि+ष्यञ्] सावर्णि मनु का मन्वन्तर ।

सावलेप—(वि०) [सह अवलेपेन, ब० स०, सहस्य सः] अभिमानी, अकड़बाज, घमंडी ।

सावशेष—(वि०) [सह अवशेषेण] वह जिसमें कुछ शेष हो । अपूर्ण, अधूरा ।

सावष्टम्भ—(वि०) [सह अवष्टम्भेन] दृढ़ । साहसी । घमंडी । स्वावलंबी ।(पु०) वह मकान जिसके उत्तर-दक्षिण सड़कें हों ।

सावहेल—(वि०) [सह अवहेलया] उपेक्षा या घृणा से युक्त ।

साविका—(स्त्री०)[सू+णिच्+ण्वुल्, इत्व, टाप्] दाई, प्रसव कराने वाली ।

सावित्र—(वि०) [स्त्री०— **सावित्री**] सवितृ +अण्] सूर्य-सम्बन्धी । सूर्यवंशी; 'वंशावितैर्दीपितं भूमिपालैर्लोकश्रेष्ठैः साधुचित्रं चरित्रं' उत्त० १.४२ ।(पु०) सूर्य । गर्भ । ब्राह्मण । शिव । कर्ण ।(न०) यज्ञोपवीत ।

सावित्री—(स्त्री०) [सावित्र+ङीप्] किरण । ऋग्वेद का स्वनामख्यात मंत्र विशेष, गायत्री मंत्र । यज्ञोपवीत संस्कार । ब्राह्मणी । पार्वती । कश्यप की एक पत्नी का नाम । साल्व देशाधिपति सत्यवान् की पत्नी का नाम ।—**पतित**,—**परिभ्रष्ट**- (पु०) ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य वर्ण का वह पुरुष, जिसका उपनयन-संस्कार निर्दिष्ट समय पर न हुआ हो, व्रात्य ।—**व्रत**- (न०) व्रत विशेष । यह व्रत वे स्त्रियाँ रखती हैं, जो अपने पति की दीर्घायु की कामना रखने वाली होती हैं । यह व्रत ज्येष्ठ कृष्ण १४ को रखा जाता है ।

इस व्रत को रखने वाली स्त्रियाँ विधवा नहीं होतीं।

साविष्कार—(वि०) [सह आविष्कारेण, ब० स०, सहस्य सः] प्रकट। अपने गुण, शक्ति आदि का प्रदर्शन करने वाला, घमंडी।

साशंस—(वि०) [सह आशंसया] आशा-वान्। कामना से पूर्ण।

साशङ्क—(वि०) [सह आशङ्कया] आशंका-युक्त। भयभीत, डरा हुआ।

साशयन्दक—(पु०) छिपकली, बिसतुइया।

साश्नक—(पु०) गलकंबल, सास्ना।

साश्चर्य—(वि०) [सह आश्चर्येण, ब० स०, सहस्य सः] आश्चर्य-युक्त। अद्भुत, विलक्षण। आश्चर्य-चकित।

साश्र, सास्र—(वि०) [सह अश्रेण] [सह अस्रेण] कोण वाला, जिसमें कोण हों। रोता हुआ, आँखों से आँसू भरे हुए।

साश्रुधी—(स्त्री०) [साश्र ध्यायति, साश्रु √ध्यै + क्विप्, संप्रसारण] सास, पत्नी अथवा पति की माता।

साष्टाङ्ग—(वि०) [सह अष्टाङ्गैः, ब० स०, सहस्य सः] आठों अंग सहित। (न०) अष्टाङ्ग प्रणाम। [अष्टाङ्ग ये हैं:— मस्तक, हाथ, पैर, छाती, आँख, जाँघ, वचन और मन। इन सहित भूमि पर लेट कर प्रणाम करना]।

सास—(वि०) [सह असेन] धनुर्धारी।

सासूय—(वि०) [सह असूयया] डाही, ईर्ष्यालु।

सास्ना—(स्त्री०) [√सस् + न, णित्, वृद्धि] गौ का गलकंबल।

साहचर्य—(न०) [सहचर + ष्यञ्] सह-गमन, सहचारिता। सहवर्तित्व। सामाना-धिकरण्य।

साहन—(न०) [√सह् + णिच्+ल्युट्] सहन करने में प्रवृत्त करना।

साहस—(न०) [सहसा बलेन निर्वृत्तम्, सहस्+अण्] मन की वह दृढ़ता जो कोई असाधारण काम करने में प्रवृत्त करती है, हिम्मत; 'साहसे लक्ष्मीर्वसति' मु०। कोई बुरा काम जैसे लूटपाट, बलात्कार आदि। बेरहमी, नृशंसता। बे-समझे-बूझे काम कर बैठना। सजा, दण्ड।—अङ्क (साहसाङ्क) –(पु०) विक्रमादित्य का नामान्तर।—अध्यवसायिन् (साहसाध्यवसायिन्)–(वि०) बेसमझे बूझे सहसा हड़बड़ी में काम कर बैठने वाला।—ऐकरसिक (साहसैकरसिक)–(वि०) अत्याचारी, खूंखार।—कारिन्–(वि०) साहस करने वाला। बिना सोचे-समझे काम करने वाला, अविवेकी।

साहसिक—(वि०) [स्त्री०—साहसिकी] [साहस+ठक्] हिम्मतवर, पराक्रमी। उद्धत, अविवेकी। अत्याचारी। कठोर वचन बोलने वाला। मिथ्यावादी। निर्भीक। दंडात्मक। भयानक। (पु०) हिम्मती या पराक्रमी पुरुष। प्रचण्ड या उन्मत्त व्यक्ति। चोर। डाकू, लुटेरा। परस्त्री-गामी व्यक्ति।

साहसिन्—(वि०) [साहस +इनि] प्रचण्ड। भयानक। नृशंस। पराक्रमी।

साहस्र—(वि०) [स्त्री०—साहस्री] [सहस्र +अण्] हजार सम्बन्धी। जिसमें एक हजार हो। एक हजार में खरीदा हुआ। प्रति सहस्र के हिसाब से दिया हुआ (सूद)। सहस्र गुना। (न०) एक हजार का जोड़। (पु०) सैनिक टोली जिसमें एक सहस्र सैनिक हों।

साहायक—(न०) [सहाय + वुञ्] सहा-यता, मदद; 'स कुलोचितमिन्द्रस्य साहायक-मुपेयिवान्' र० १७.५। सहचरत्व, मैत्री।

साहाय्य—(न०) [सहाय + ष्यञ्] सहा-यता, मदद। मैत्री, दोस्ती।

साहित्य—(न०) [सहित + ष्यञ्] सहित का भाव, एक साथ होना, रहना या वाक्य में परस्पर सापेक्ष पदों का एक क्रिया में अन्वित होना। गद्य और पद्य सब प्रकार के उन ग्रन्थों का समूह, जिनमें सार्वजनीन हित सम्बन्धी स्थायी विचार रक्षित रहते हैं। वे सभी लेख, ग्रन्थ आदि जिनका सौन्दर्य, गुण, रूप या भावुकता-पूर्ण प्रभावों के कारण समाज में आदर होता है।

साह्य—(न०) [सह + ष्यञ्] संगम, मेल, मिलाप। सहायता।—**कृत्**-(पुं०) साथी, संगी।

साह्वय—(पुं०) [सह आह्वयेन, ब० स०, सहस्य सः] जानवरों की लड़ाई का जुआ या द्यूत। (वि०) नाम-युक्त।

√सि—स्वा०, क्र्या० उभ० सक० बाँधना। जाल में फँसाना। सिनोति—सिनुते, क्र्या० सिनाति—सिनीते, सेष्यति —ते, असैषीत् — असेष्ट।

सिंह—(पुं०) [√हिंस् + अच्, पृषो० साधुः] मृगराज, शेर; 'नहि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः' सुभा०। सिंह-राशि। सर्वोत्तम, सर्वोत्कृष्ट। (यथा—पुरुषसिंह)।—**अवलोकन** (**सिंहावलोकन**)-(न०) शेर की चितवन। शेर की तरह पीछे देखते हुए आगे बढ़ना। आगे वर्णन करने के पूर्व पिछली बातों का संक्षेप में वर्णन। (पुं०) पद्य-रचना का एक प्रकार जिसमें दूसरा चरण पहले चरण के अंतिम शब्दों से आरंभ होता है।—**आसन** (**सिंहासन**)-(न०) राजाओं का श्रेष्ठ आसन। चतुरंग-क्रीड़ा में जयविशेष। योगासन विशेष। एक रतिबंध। ज्योतिष का एक योग।—**आस्य** (**सिंहास्य**)-(पुं०) हाथों की एक मुद्रा। वासक, अड़ूसा। कोविदार, कचनार। एक प्रकार की बड़ी मछली। (वि०) जिसका मुँह सिंह का-सा हो।—**ग**-(पुं०) शिव जी का नाम।—**तल**-(न०) हाथों की मिली और खुली हुई दोनों हथेली।—**तुण्ड**-(पुं०) एक प्रकार की मछली। सेहुँड़, स्नुही, थूहर।—**दंष्ट्र**-(पुं०) शिव जी का नामान्तर।—**दर्प**-(वि०) सिंह जैसा अभिमानी।—**द्वार**-(न०) प्रासाद आदि का प्रधान द्वार, सदर दरवाजा।—**ध्वनि**, —**नाद**-(पुं०) सिंह की दहाड़ या गर्जन। युद्ध की ललकार।—**वाहन**-(पुं०) शिवजी की उपाधि।—**वाहना**, —**वाहिनी**-(स्त्री०) दुर्गा।—**विक्रान्त**-(पुं०) घोड़ा। (वि०) शेर के समान बली। **संहनन**-(वि०) सिंह जैसा मजबूत और सुन्दर, सर्वांग-सुन्दर। (न०) सिंह का वध।

सिंहल—(पुं०) [सिंहः अस्ति अत्र, सिंह +लच्] भारत के दक्षिण-स्थित एक द्वीप जिसे लोग प्राचीन लंका मानते हैं। (न०) टीन। पीतल। छाल।

सिंहलक—(न०) [सिंहल +कन्] पीतल। राँगा। दारचीनी। (पुं०) सिंहलद्वीप।

सिंहाण, सिंहान—(न०) [√सिङ्घ् + आनच्, पृषो० साधुः] लोहे का मुरचा। नाक का मल या रेंट।

सिंहिका—(स्त्री०) [सिंह+कन् — टाप् ह्रस्व] राहु की माता।—**तनय**, —**पुत्र**, —**सुत**, —**सूनु**-(पुं०) राहु का नामान्तर।

सिंही—(स्त्री०) [सिंह—ङीष्] शेरनी। अड़ूसा। थूहर। कंटकारी। भंटा। मुद्गपर्णी। राहु की माता का नाम।

√सिक्—सौत्र० पर० सक० सींचना। सेकति, सेकिष्यति, असेकीत्।

सिकता—(स्त्री०) [√सिक्+अतच्, कित् —टाप्] रेत, बालू। [सिकताः सन्ति अत्र, सिकता + अण्—लुप्] रेतीली भूमि। प्रमेह का एक भेद।

सिकतिल—(वि०) [सिकता+इलच्] रेतीला, बालुकामय ।

सिक्त—(वि०) [√सिच् + क्त] सींचा हुआ । गीला ।

सिक्थ—(न०) [√सिच् + थक्] मधु-मक्षिका का मोम । (पुं०) भात । भात का पिंड; 'भालोद्गलितसिक्थेन का हानिः करिणो भवेत्' सुभा० । मोतियों का गुच्छा जो तौल में एक धरण (३२ रत्ती) हो ।

सिक्व—(पुं०) स्फटिक । शीशा ।

सिङ्घाण—(न०) [√शिङ्घ्+आनच्, पृषो० साधुः] नाक का मैल । लोहे का मुरचा ।

सिङ्घिनि—(स्त्री०) नाक ।

सिङ्घाणी—(स्त्री०) [सिङ्घाण+ङीप्] नाक, घ्राणेन्द्रिय ।

√सिच्—तु० उभ० सक० सींचना । सिञ्चति—ते, सेक्ष्यति — ते, असिचत् —असिक्त ।

सिञ्चय—(पुं०) [√ सिच्+अयच्, कित्] वस्त्र । जीर्ण ।

सिञ्चिता—(स्त्री०) [√सिच् + इतच्, पृषो० साधुः] पिपरामूल ।

सिञ्जा—(स्त्री०) [=शिञ्जा, पृषो० साधुः] आभूषणों की झनकार ।

सिञ्जित—(न०) [=शिञ्जित, पृषो० साधुः] दे० 'शिञ्जा' ।

√सिट्—भ्वा० पर० सक० तिरस्कार करना । सेटति, सेटिष्यति, असेटीत् ।

सित—(वि०) [√सो वा √सि+क्त] श्वेत, सफेद । चमकीला, निर्मल । ज्ञात । समाप्त । बँधा हुआ । घिरा हुआ । (न०) चाँदी । चंदन । मूली । (पु०) सफेद रंग । शुक्ल-पक्ष । शुक्र ग्रह । तीर ।—**अग्र** (**सिताग्र**) —(पुं०) काँटा । —**अपाङ्ग** (**सितापाङ्ग**) —(पुं०) मयूर ।—**अभ्र** (**सिताभ्र**)—(पुं०, न०) कपूर ।—**अम्बर**(**सिताम्बर**)—(पुं०) श्वेताम्बरी साधु, जैन साधु ।—**अर्जक** (**सितार्जक**)—(पुं०) सफेद तुलसी । —**अश्व** (**सिताश्व**)—(पुं०) अर्जुन । —**असित**(**सितासित**)—(पुं०) बलराम । —**आलिका** (**सितालिका**)—(स्त्री०) सीपी, सितुही ।—**इतर** (**सितेतर**)—(वि०) कृष्ण, काला । —**उद्भव** (**सितो-द्भव**)—(न०) सफेद चन्दन ।—**उत्पल** (**सितोत्पल**)— (पुं०) बिल्लौर, स्फटिक ।— **उपला** (**सितोपला**)—(स्त्री०) चीनी । मिश्री ।—**कर**— (पुं०) चन्द्रमा । कपूर ।—**धातु**— (पुं०) खड़िया मिट्टी ।— **रश्मि**— (पुं०) चन्द्रमा ।—**वाजिन्**— (पुं०) अर्जुन ।— **शर्करा**—(स्त्री०) मिश्री ।—**शिम्बिक**—(पुं०) गेहूँ । **शिव**— (न०) सेंधा निमक ।—**शूक**—(पुं०) यव, जौ ।

सिता—(स्त्री०) [सित + टाप्] मिश्री । चीनी; 'पित्तेन दूने रसने सितापि तिक्ता-यते हंसकुलावतंस !' नै० ३.९४ । चंद्रिका । सुन्दरी स्त्री । मदिरा । सफेद दूब । मल्लिका, मोतिया । श्वेत कंटकारी । बकुची । विदारी । कुट्टिनी । पिंगा । त्रायमाणा । अपरा-जिता । अर्कपुष्पी । सिंहली पीपल । गोरोचन । आम्रातक । वृद्धि लता । पुनर्नवा । सुरा । चाँदी । गंगा ।

सिति—(वि०) [√सो + क्तिच्] सफेद । काला । (पुं०) सफेद या काला रङ्ग ।

सिद्ध—(वि०) [√सिध् + क्त] जिसका साधन हो चुका हो, जो पूरा हो गया हो, सम्पन्न । प्राप्त, उपलब्ध । सफल । स्थापित । दृढ़ । सत्य माना हुआ । फैसला किया हुआ, निर्णीत । अदा किया हुआ, चुकता हुआ । राँधा हुआ । पक्का । तैयार । दमन किया हुआ । वशीभूत किया हुआ । निपुण, पटु । प्रायश्चित्त द्वारा पवित्र किया हुआ । अधी-नता से मुक्त किया हुआ । अलौकिक शक्ति

से सम्पन्न। पवित्र। अविनाशी। प्रसिद्ध, प्रख्यात। चमकीला, प्रकाशमान। (न०) समुद्री नमक। (पु०) देवयोनि विशेष। मुनि या योगी जिसे सिद्धि प्राप्त हो गई हो; 'उद्वेजिताः वृष्टिभिराश्रयन्ते श्रृङ्गाणि यस्यातपवन्ति सिद्धाः' कु० १.५। ऋषि। जादूगर। मुकदमा। काला धतूरा। गुड़। सफेद सरसों। अर्हत, जिन।—**अन्त** (सिद्धान्त)–(पु०) भली भाँति सोच-विचार कर स्थिर किया हुआ मत, उसूल। वह बात जो विद्वानों द्वारा सत्य मानी जाती हो, मत। निर्णीत अर्थ या विषय, तत्त्व की बात।—**अन्न** (सिद्धान्न)–(न०) राँधा हुआ अन्न।—**अर्थ** (सिद्धार्थ)–(वि०) वह जिसका अभीष्ट सिद्ध हो चुका हो। (पु०) सफेद सरसों। शिव जी का नामान्तर। बुद्ध देव।—**आसन** (सिद्धासन)–(न०) हठयोग के ८४ आसनों में से एक; मलेन्द्रिय और मूत्रेन्द्रिय के बीच में बायें पैर का तलुवा तथा लिङ्ग के ऊपर दाहिना पैर और छाती के ऊपर ठुड्डी रख कर दोनों भौंहों के मध्य भाग को देखना सिद्धासन कहलाता है।—**गङ्गा**,—**नदी**–(स्त्री०)—**सिन्धु**–(पु०) आकाशगङ्गा।—**ग्रह**–(पु०) उन्माद उत्पन्न करने वाला एक ग्रह। उन्माद विशेष।—**जल**–(न०) औटा हुआ जल। काँजी।—**धातु**–(पु०) पारा।—**पक्ष**–(पु०) किसी प्रतिज्ञा या बात का वह अंश जो प्रमाणित हो चुका हो। साबित बात।—**प्रयोजन**–(पु०) सफेद सरसों।—**योगिन्**–(पु०) शिव।—**रस**–(पु०) पारा। सिद्ध रसायनी।—**सङ्कल्प**–(वि०) जिसका संकल्प पूरा हो चुका हो।—**साधन**–(पु०) सफेद सरसों। (न०) जादू के खेल।—**सेन**–(पु०) कार्त्तिकेय का नाम।—**स्थाली**–(स्त्री०) सिद्ध योगियों की बटलोई जिससे इच्छानुसार भोजन प्राप्त किया जा सकता है।

सिद्धता—(स्त्री०), **सिद्धत्व**–(न०) [सिद्ध +तल्—टाप्] [सिद्ध + त्व] सिद्ध होने की अवस्था। प्रामाणिकता। पूर्णता।

सिद्धि—(स्त्री०) [√सिध् + क्तिन्] काम का पूरा होना; 'क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे' सुभा०। सफलता। संस्थापन, प्रतिष्ठा। प्रमाण। विवाद-रहित परिणाम। किसी नियम या विधान का दैवत्व। निर्णय, फैसला। सत्यता। शुद्धता। परिशोध, बेबाकी, चुकता होना। पकना, सीझना। किसी प्रश्न का हल होना। तत्परता। नितान्त विमुग्धता। अलौकिक सिद्धियाँ जो गणना में आठ हैं [यथाः—अणिमा लघिमा प्राप्तिः प्राकाम्यं महिमा तथा। ईशित्वं च वशित्वं च तथा कामाव-सायिता॥] ऐन्द्रजालिक विद्या द्वारा अलौकिक शक्तियों की प्राप्ति। विलक्षण नैपुण्य। अच्छा प्रभाव या फल। मोक्ष, मुक्ति। समझदारी, बुद्धि। छिपाव, दुराव, अपने आपको अन्तर्धान करने की क्रिया। जादू की खड़ाऊँ या जूती। एक प्रकार का योग। दुर्गा का नाम।—**द**–(वि०) सिद्धि देने वाला। (पु०) शिव जी का नाम।—**धात्री**–(स्त्री०) दुर्गा का नाम।—**योग**–(पु०) ज्योतिष विद्या के अनुसार शुभ काल विशेष।

√सिध्—दि० पर० अक० सिद्ध होना। सिध्यति, सेत्स्यति, असैत्सीत्। भ्वा० पर० सक० जाना। सेधति, सेधिष्यति, असेधीत्। भ्वा० पर० सक० शासन करना। अक० मंगल या शुभ होना। सेधति, सेधिष्यति —सेत्स्यति, असेधीत्—असैत्सीत्।

सिध्म, सिध्मन्—(न०) [√सिध् +मन्] [√सिध् +मनिन्] सेंहुँआ, सिहुली, कुष्ठ के १८ भेदों में से एक, क्षुद्र कुष्ठ, किलास।

सिध्मल—(वि०) [सिध्म + लच्] सेंहुए वाला, किलासी । कोढ़ी ।

सिध्मा—(स्त्री०) [सिध्म+टाप्] दे० 'सिध्म' ।

सिध्य—(पुं०) [√सिध् + णिच् + यत् नि०] पुष्य नक्षत्र ।

सिध्र—(पुं०) [√ सिध् + रक्] साधु पुरुष । वृक्ष ।

सिध्रक—(पुं०) [सिध्र + क] एक प्रकार का वृक्ष ।

सिध्रकावण—(न०) [सिध्रकप्रधानं वनम्, णत्व, दीर्घ] स्वर्ग के बागों में से एक बाग का नाम ।

सिन—(पुं०) [√सि + क्त, तस्य नः वा √सि +नक्] ग्रास, कौर । परिधान, पहनावा । कुंभी का पेड़ । (न०) शरीर । ग्रास । (वि०) काना । श्वेत ।

सिनी—(स्त्री०) [सिन +ङीष्] गौरवर्ण की स्त्री ।

सिनीवाली—(स्त्री०) [सिनीं श्वेतां चन्द्रकलां वलति धारयति, सिनी, √वल्+अण् —ङीप्] शुक्लपक्ष की प्रतिपदा । दुर्गा । एक नदी । अंगिरा की एक कन्या ।

सिन्दुक, सिन्दुवार—(पुं०) [√स्यन्द् +उ, संप्रसारण, सिन्दु+क] [सिन्दु √वृ +अण्] सँभालू वृक्ष, निर्गुण्डी का पेड़ ।

सिन्दूर—(न०) [√ स्यन्द् + ऊरन्, संप्रसारण] एक प्रसिद्ध लाल चूर्ण जिसे हिन्दू सुहागिनें माँग में भरती है । (पुं०) बलूत की जाति का एक पहाड़ी वृक्ष ।

सिन्धु—(पुं०) [√स्यन्द् + उ, संप्रसारण, दस्य धः] समुद्र, सागर । एक प्रसिद्ध नद जो पंजाब के पश्चिमी भाग में है । सिन्धुनदी के आस-पास का देश । हाथी की सूँड़ से निकला हुआ पानी । हाथी का मद । हाथी । वरुण । साफ सोहागा । सिंदुवार वृक्ष । विष्णु । चार की संख्या । सात की संख्या । सिन्धु देशवासी । (स्त्री०) मालवा की एक नदी का नाम । नदी; 'पिबत्यसौ पाययते च सिन्धूः' र० १३.९ । —कफ- (पुं०) समुद्र फेन ।—ज (वि०) नदी से उत्पन्न । समुद्र से उत्पन्न । सिन्धु देश में उत्पन्न । (पुं०) चन्द्रमा । (न०) सेंधा नमक ।—नाथ-(पुं०) समुद्र ।

सिन्धुक, सिन्धुवार— (पुं०) [सिन्धु+क] [=सिन्दुवार, पृषो० दस्य धः] सँभालू वृक्ष, निर्गुण्डी का पेड़ ।

सिन्धुर—(पुं०) [सिन्धु + र] हाथी; 'स जयति सिन्धुरवदनो देवो यत्पादपंकजस्मरणम्……' ।

सिप्र—(पुं०) [√सृप् +रक्, पृषो० साधुः] पसीना । चन्द्रमा । एक झील ।

सिप्रा—(स्त्री०) [सिप्र +टाप्] स्त्री की करधनी, कमरपेटी । भैंस । उज्जैन के नीचे बहने वाली एक नदी ।

सिम—(वि०) [√सि+मन्] हरेक । सब । समूचा ।

सिर—(पुं०) [√सि + रक्] पिपरामूल की जड़ ।

सिरा—(स्त्री०) [सिर+टाप्] रक्त नाड़ी । डोलची, बाल्टी ।

√सिल्—तु० पर० सक० फसल काटने के बाद खेत में गिरे हुए दाने बीनना । सिलति, सेलिष्यति, असेलीत् ।

√सिव्—दि० पर० सक० सीना । जोड़ना । सीव्यति, सेविष्यति, असेवीत् ।

सिवर—(पुं०) [√सि +ष्वरप] हाथी ।

सिसाधयिषा—(स्त्री०) [साधयितुम् इच्छा √साध्+सन् + अ—टाप्] किसी काम को पूरा करने की इच्छा । किसी बात को सिद्ध करने या स्थापित करने की अभिलाषा ।

सिसृक्षा—(स्त्री०) [स्रष्टुम् इच्छा, √सृज् + सन् + अ—टाप्] सृष्टि करने की अभिलाषा ।

सिहुण्ड—(पुं०) [√सो+कि सिः छेदः तं हुण्डते, सि √हुण्ड्+अण्] सेहुँड़, थूहर ।

सिह्ल, सिह्लक—(पुं०) [√स्निह्+लच्, पृषो० साधुः] [सिह्ल+कन्] सिलारस नामक गंधद्रव्य ।

सिह्लकी, सिह्ली—(स्त्री०) [सिह्लक —ङीप्] [सिह्ल—ङीष्] वह वृक्ष जिससे सिलारस निकलता है ।

√सीक्—भ्वा० आत्म० सक० सींचना । सीकते, सीकिष्यते, असीकिष्ट । चु० पर० सक० छूना । सीकयति—सीकति । सीकयिष्यति—सीकिष्यति, असीसिकत् —असीकीत् ।

सीकर—(पुं०) [√सीक्+अरन्] पानी का छींटा, जल-कण । पसीने की बूंद ।

सीता—(स्त्री०) [√सि +त, पृषो० दीर्घ] वह रेखा जो जमीन जोतते समय हल की फाल के धँसने से जमीन पर बन जाती है, कूँड़ । जोती हुई जमीन; 'ततः कृषामभ्युपपत्स्यते सखीं वृषेव सीतां तदवग्रहक्षता' कु० ५.६१ । किसानी, खेती । जनक की पुत्री और श्रीरामचन्द्र जी की भार्या । एक देवी जो इन्द्र की पत्नी है । उमा का नाम । लक्ष्मी का नाम । आकाश-गंगा की उन चार धाराओं में से एक, जो मेरु पर्वत पर गिरने के उपरान्त हो जाती हैं । मदिरा । —पति- (पुं०) श्रीराम चन्द्र ।

सीतालक—(पुं०) मटर ।

सीत्कार—(पुं०), **सीत्कृति**- (स्त्री०) [सीत् इत्यव्यक्तस्य कारः, सीत्√कृ +घञ्] [सीत् √कृ + क्तिन्] सिसकारी, सी-सी शब्द; 'मया दष्टाधरं तस्याः ससीत्कारमिवाननं' विक्र० ४.२१ ।

सीत्य—(वि०) [सीता + यत्] हल से जोतने योग्य । (न०) धान्य ।

सीद्य—(न०) आलस्य, काहिली, सुस्ती ।

सीधु—(पुं०) [√सिध् + उ, पृषो० साधुः] मद्य । गुड़ या ईख के रस से बनायी हुई शराब ।—गन्ध- (पुं०) मौलसिरी, बकुल वृक्ष ।—पुष्प- (पुं०) कदंब का पेड़ ।—रस- (पुं०) आम का पेड़ ।—संज्ञ (पुं०) बकुल वृक्ष, मौलसिरी ।

सीध्र—(न०) गुदा, मलद्वार ।

सीप—(पुं०) नावनुमा यज्ञीय पात्र विशेष ।

सीमन्—(स्त्री०) [√सि + मनिन्, नि० दीर्घ] दे० 'सीमा' ।

सीमन्त—(पुं०) [सीम्नोऽन्तः, शक० पररूप] सीमा का चिह्न या रेखा । सिर के केशों की माँग । एक वैदिक संस्कार जो प्रथम गर्भस्थिति के चौथे, छठे या अष्टम मास में किया जाता है ।—उन्नयन (**सीमन्तोन्नयन**)–(न०) दे० 'सीमन्त' का तीसरा अर्थ ।

सीमन्तक—(पुं०) [सीमन्त + कन् या सीमन्त √कै+क] दे० 'सीमन्त' । जैनियों के मत में सात नरकों में से एक नरक का अधिपति । नरकावास । (न०) सिंदूर ।

सीमन्तित—(वि०) [सीमन्त+णिच्+क्त] माँग की तरह अलहदा किया हुआ । रेखा से पृथक् या चिह्नित किया हुआ ।

सीमन्तिनी—(स्त्री०) [सीमन्त+इनि —ङीप्] नारी, स्त्री ।

सीमा—(स्त्री०) [सीमन्+डाप्] हद, सरहद, मर्यादा । सीमा-चिह्न, सीमा-स्तूप । तट । समुद्र-तट । अन्तरिक्ष । जोड़ (जैसा कि खोपड़ी का) सदाचार या शिष्टाचार की मर्यादा । सर्वोच्च या दूरातिदूर की हद । खेत, क्षेत्र । गर्दन का पिछला भाग । अण्डकोष ।— अधिप (**सीमाधिप**)–(पुं०) सीमा से मिले हुए राज्य का राजा,

पड़ोसी राजा।—**अन्त** (**सीमान्त**)–(पु०) सीमा की समाप्ति, सिवान।—**उल्लङ्घन** (**सीमोल्लङ्घन**)–(न०) सीमा लांघना। मर्यादा तोड़ना।—**लिङ्ग**–(न०) सीमा का निशान।—**वाद**–(पु०) सीमा सम्बन्धी झगड़ा।—**विनिर्णय**–(पु०) विवाद-ग्रस्त सीमा का निर्णय।—**वृक्ष**–(पु०) सीमा पर का पेड़ जो सीमा का चिह्न मान लिया गया हो।—**सन्धि**–(पु०) दो सीमाओं का मिलान या मेल।

सीम्मिक—(पु०) [√स्यम्+किकन्, सम्प्रसारण, दीर्घ] वृक्ष विशेष। दीमक। दीमकों का लगाया हुआ मिट्टी का ढेर।

सीर—(पु०) [√सि+रक्, + पृषो० दीर्घ] हल; 'सद्यःसीरोत्कषणसुरभि क्षेत्रमारुह्य मालं' मे० १.६ सूर्य। मदार का पौधा।—**ध्वज**–(पु०) राजा जनक की उपाधि।—**पाणि**, —**भृत्**–(पु०) बलराम।—**योग**–(पु०) पशु को हल में जोतना।

सीरक—(पु०) [सीर+कन्] दे० 'सीर'।

सीरिन्—(पु०) [सीर+इनि] बलरामजी का नामान्तर।

सीलन्द, **सीलन्ध**—(पु०) एक प्रकार की मछली।

सीवन—(न०) [√सिव् + ल्युट्, नि० दीर्घ] सूची-कर्म, सीने का काम, सिलाई। जोड़ (जैसे खोपड़ी का)।

सीवनी—(स्त्री०) [सीवन+ङीप्] सुई, सूची। वह रेखा जो लिंग के नीचे से गुदा तक जाती है।

सीस, **सीसक**—(न०) [√सि+क्विप्, पृषो० दीर्घ, √सो+क, सी—स, कर्म० स०] [सीस+क] सीसा नामक धातु।—**पत्रक**–(न०) सीसा।

सीहुण्ड—(पु०) [=सिहुण्ड, पृषो० दीर्घ] सेंहुड़, थूहर, स्नुही।

√**सु**—भ्वा० उभ० सक० जाना। सवति—ते, सोष्यति—ते, असौषीत्—असोष्ट। भ्वा० पर० सक० प्रसव करना। अक० विभूतिमान् होना। सवति, सोष्यति, असावीत्— असौषीत्। स्वा० उभ० सक० दबा कर रस निकालना। अर्क खींचना। छिड़कना। यज्ञ करना, विशेष कर सोम यज्ञ। अक० स्नान करना। सुनोति—सुनुते, सोष्यति—ते, असावीत्—असोष्ट।

सु—(अव्य०) [√सु+डु] यह एक अव्यय है जो संज्ञावाची शब्दों के साथ कर्मधारय और बहुव्रीहि समासों में तथा विशेषणवाची, एवं क्रियाविशेषण-वाची शब्दों के साथ व्यवहृत किया जाता है। सु के निम्नलिखित अर्थ होते हैं:— १ अच्छा, भला, उत्तम। यथा– सुगन्धित। २ सुन्दर, सुरूप, मनोहर। यथा—सुकेशी। ३ भली-भांति, पूरे तौर पर। यथा—सुजीर्ण। ४ सहज, अनायास। यथा—सुकर या सुलभ। ५ अधिक, अतिशय। यथा—सुदारुण।— —**अक्ष** (**स्वक्ष**)–(वि०) अच्छी आंखों वाला।—**अङ्ग** (**स्वङ्ग**)–(वि०) अच्छे अङ्गों वाला।—**आकार** (**स्वाकार**), —**आकृति** (**स्वाकृति**)–(वि०) सुन्दर स्वरूप वाला।—**आभास** (**स्वाभास**)–(वि०) बड़ा चमकीला।—**इष्ट** (**स्विष्ट**)–(वि०) उपयुक्त रीत्या यज्ञ किया हुआ।—**उक्त** (**सूक्त**)– (वि०) भली-भांति कथित; 'अथवा सूक्तम् खलु केनापि' वे० ३। (न०) बुद्धिमानी की कहावत या कहावत। वेदमंत्रों या ऋचाओं का समूह, वैदिक स्तुति या प्रार्थना।—**उक्ति** (**सूक्ति**)–(स्त्री०) मैत्री के कारण कहा हुआ वचन। चातुर्यपूर्ण कथन। शुद्ध वाक्य।—**उत्तर** (**सूत्तर**)–(वि०) बहुत बढ़ा हुआ। (न०) सुन्दर उत्तर।—**उत्थान**

(सूत्थान)–(वि०) अच्छा उद्योग करने वाला । पराक्रमी । (न०) जोरदार उद्योग या प्रयत्न ।—उन्मद (सून्मद),—उन्माद (सून्माद)–(वि०) नितान्त पागल या सनकी ।—उपसदन (सूपसदन)–(वि०) सहज में पास जाने योग्य ।—उपस्कर (सूप-स्कर)–(वि०) वह जिसके पास अच्छे साधन हों ।—कच्छु–(पुं०) खुजली, खाज । —कन्द– (पुं०) कसेरू । रतालू ।—कन्दक —(पुं०) प्याज । वाराहीकंद । मिर्चोली कन्द, गेंठी ।—कर– (वि०) [स्त्री०—सुकरा, सुकरी] जो सहज में हो सके, जो आसानी से हो सके । जो सहज में सुव्य-वस्थित किया जा सके या जिसका इन्त-जाम आसानी से हो सके । (न०) दान । परोपकार ।—करा– (स्त्री०) अच्छी और सीधी गौ ।—कर्मन् (वि०) पुण्या-त्मा, धर्मात्मा । परिश्रमी । (पुं०) विश्व-कर्मा का नाम ।—कल– (वि०) ऐसा पुरुष जिसने उदारतापूर्वक अपना धन देने और उसका सद्व्यय करने के लिये प्रसिद्धि प्राप्त की हो ।—काण्डिन्– (वि०) सुन्दर डाली वाला । सुन्दर रीति से जुड़ा हुआ । (पुं०) भौंरा ।—कालुका–(स्त्री०) भटकटैया । —काष्ठ–(न०) देवदारु । अच्छी लकड़ी । —कुन्दन–(पुं०) बबुई तुलसी ।— कुमार–(वि०) अत्यन्त नाजुक या कोमल । अत्यन्त चिकना । (पुं०) सुंदर, कोमलांग बालक या किशोर । ईख का एक भेद । वनचम्पा । साँवा । कँगनी । एक दैत्य । एक नाग ।—वन–(न०) एक वन जो भागवत के अनुसार सुमेरु पर्वत के नीचे माना जाता है ।—कुमारक– (पुं०) सुंदर बालक । साँवा धान्य । (न०) तमाल-पत्र । तेजपत्ता । —कृत्–(वि०) दानशील । पर-हितैषी । पुण्यात्मा । बुद्धिमान् । विद्वान् । भाग्यवान्, खुशकिस्मत । यज्ञ करने वाला । (पुं०) निपुण कारीगर । त्वष्टा ।—कृत–(वि०) भली-भाँति किया हुआ । भली-भाँति बनाया हुआ । सद्व्यवहार किया हुआ । धर्मात्मा, धर्मशील । भाग्यवान् । (न०) पुण्य, सत्कार्य; 'नादत्ते कस्यचित्पापं न चैव सुकृतं विभुः' भग० ५.१५ । दान । सौभाग्य । दया ।—कृति–(स्त्री०) पुण्य कार्य । तपस्या ।—कृतिन्– (वि०) भली-भाँति कार्य करने वाला । पुण्यात्मा; 'सन्तः सन्तु निरापदः सुकृतिनां कीर्तिश्चिरं वर्ध-ताम्' हि० ४.१३ । बुद्धिमान् । पर-हितैषी । भाग्यवान् । —केशर, —केसर–(पुं०) नीबू का वृक्ष ।—क्रतु– (पुं०) अग्नि । शिव । इन्द्र । मित्र और वरुण । सूर्य ।—ग– (वि०) भली चाल से चलने वाला । अच्छा गाने वाला । सुगम, सुलभ । बोध-गम्य, सहज में समझने लायक ।—(न०) मल, विष्ठा । प्रसन्नता, हर्ष ।—गत– (वि०) भले प्रकार गुजरा या बीता हुआ । सुंदर गति या चाल वाला । (पुं०) बुद्ध-देव का नाम ।—गन्ध–(पुं०) अच्छी गंध । सुवास, खुशबू । गन्धक । लाल सहिजन । चना । भूतृण । भूपलाश । बास-मती चावल । कसेरू । मरुवक । शिला-रस । व्यापारी । (न०) चन्दन । जीरा । नील कमल । गन्धतृण, गंधेज घास ।— ०त्रिफला—(स्त्री०) जायफल, लौंग और इलायची ।— ०षट्क–(न०) जायफल, शीतलचीनी, लौंग, इलायची, कपूर और सुपारी—इन छः सुगंधित द्रव्यों का समूह । —गन्धक– (पुं०) गन्धक । लाल तुलसी । नारंगी । साठी धान । धरणी कन्द । कर्को-टक ।— गन्धा– (स्त्री०)। रास्ना । रुद्र-जटा, पीली जूही । तुलसी । सौंफ । स्याह जीरा । बकुची । नवमल्लिका, माधवी, सेवती । —गन्धि– (वि०) सुंदर गंध

वाला। धर्मात्मा। (पुं०) परब्रह्म। मधुर सुगन्ध-युक्त घास।— (न०) पिपरामूल। एक प्रकार की सुगन्ध-युक्त घास। धनिया। मोथा।—कुसुम – (पुं०) पीत करवीर। (न०) खुशबूदार फूल।—मूल- (न०) उशीर, खस।—गन्धिक- (पुं०) धूप। गन्धक। बासमती चावल। (न०) सफेद कमल। उशीर, खस। पुष्करमूल। एल-बालुक। गौरसुवर्ण। मोथा। —गम- (वि०) सहज में जानने योग्य। बोधगम्य। —गहना- (स्त्री०) वह हाता जो यज्ञ-मण्डप के चारों ओर भ्रष्ट एवं पतित लोगों को रोकने के लिये बनाया जाता है। —ग्रास- (पुं०) सुस्वादु कवर या निवाला। —ग्रीव (वि०) सुंदर गरदन वाला। (पुं०) बहादुर। हंस। हथियार विशेष। वानर-राज बालि के छोटे भाई का नाम। शिव। इन्द्र।—ग्ल- (वि०) बहुत थका हुआ।—घटन-(न०) सुयोग। —चक्षुस्-(वि०) अच्छे नेत्रों वाला। (पुं०) पण्डित जन। सघन वट-वृक्ष।—चरित, —चरित्र- (वि०) भली-भाँति व्यवहार करने वाला, अच्छे चाल-चलन का। (न०) अच्छा चाल-चलन। पुण्य-कार्य। —चरिता,—चरित्रा-(स्त्री०) अच्छे चाल-चलन की स्त्री, पतिव्रता स्त्री। धनिया।— चित्रक-(पुं०) मुर्गाबी, मत्स्यरंग पक्षी। चितला साँप, चित्र सर्प।—चिर-(वि०) बहुत दिनों तक रहने वाला, दीर्घकाल-स्थायी। प्राचीन। (अव्य०) अतिदीर्घ काल।— ०आयुस् (सुचिरायुस्)- (पुं०) देवता। —जन-(पुं०) पर-हितैषी जन। भद्र पुरुष। —जनता— (स्त्री०) [सुजन + तल्—टाप्] भद्रता, भलमनसी। परहितैषिता; 'ऐश्वर्यस्य विभूषणं सुजनता' भर्तृ० २.४२।—जन्मन् –(वि०) सत्कुल में उत्पन्न, कुलीन। विवा-हित स्त्री-पुरुष से उत्पन्न, विहितजन्मा।— जल्प-(पुं०) सुभाषित, स्पष्टता, गांभीर्य, उत्कंठा आदि से युक्त वाक्य।—जात- –(वि०) कुलीन, अच्छे कुल का। सुन्दर। —तनु- (वि०) अच्छे शरीर वाला। अत्यन्त सुकुमार या दुबला-पतला। (स्त्री०) दे० 'सुतनु'। —तनू-(स्त्री०) सुन्दर शरीर। सुंदर या कोमलांगी स्त्री।— तपस्- (वि०) महती तपस्या करने वाला। वह जिसमें अत्यधिक गर्मी हो। (पुं०) मुनि। सूर्य। (न०) बड़ी तपस्या।— तराम्-(अव्य०)[सु+तरप्—आम्] और अधिक। अतिशय; 'तथा दुहिता सुतरां सवित्री स्फुरत्प्रभामण्डलया चकाशे' कु० १.२४। अतः, इसलिए। किंबहुना।— तर्दन- (पुं०) कोकिल।—तल-(न०) सप्त अधोलोकों में से एक। विशाल भवन की नींव।—तिक्तक- (पुं०) चिरायता। पित्तपापड़ा। पारिभद्र।—तीक्ष्ण-(वि०) बड़ा तीव्र। बड़ा चरपरा। अत्यन्त पीड़ा-कारक। (पुं०) सहिजन का पेड़। एक ऋषि का नाम जो श्रीरामचन्द्र जी के समय में थे। —तीर्थ- (पुं०) अच्छा गुरु। शिव जी।— तुङ्ग-(वि०) बहुत ऊँचा। (पुं०) नारि-यल का पेड़।—दक्षिण-(वि०) बहुत कुशल। बहुत सच्चा, बड़ा ईमानदार। यज्ञ की दक्षिणा देने में बड़ा उदार।— दक्षिणा- (स्त्री०) दिलीप की पत्नी।— दण्ड-(पुं०) बेंत।—दन्त- (वि०) अच्छे दाँतों वाला। (पुं०) अच्छा दाँत। नट। नर्तक।—दन्ती- (स्त्री०) उत्तर-पश्चिम दिशा के दिग्गज की हथिनी।— दर्शन-(वि०) सुंदर। जो सहज में देखा जा सके। (पुं०) विष्णु भगवान् का चक्र। शिव जी का नाम। गीध। (न०) जम्बु-द्वीप।—दर्शना—(स्त्री०) सुन्दरी स्त्री। स्त्री। आज्ञा। सोमवल्ली लता। चांदनी

रात। एक तरह की मदिरा। जामुन का पेड़। अमरावती। पद्म-सरोवर।—**दामन्**–(वि०) [सु√दा+मनिन्] उदारता पूर्वक देने वाला। (पुं०) बादल। पहाड़। समुद्र। इन्द्र का हाथी। श्री कृष्ण के सखा एक धन-हीन ब्राह्मण का नाम।—**दाय**–(पुं०) शुभ दान, वह दान जो किसी पर्व विशेष पर दिया जाय। उपनयन काल में ब्रह्मचारी को दी जाने वाली भिक्षा। विवाह के अवसर पर कन्या या जामाता को दिया जाने वाला दान, दहेज। —**दिन**–(न०) अच्छा दिन, प्रशस्त दिन। सुख के दिन।—**दीर्घ**– (वि०) बहुत लंबा। —**दीर्घा**–(स्त्री०) चीना ककड़ी।—**दुर्लभ**– (वि०) जिसे प्राप्त करना बहुत कठिन हो, अति दुर्लभ।—**दुस्तर**– (वि०) जिसके पार जाना कठिन हो।—**दूर**–(वि०) बहुत दूर या फासले पर का।—**दृश्**– (वि०) अच्छे नेत्रों वाला।—**धन्वन्**– (वि०) अच्छे धनुष वाला। (पुं०)अच्छा तीरन्दाज। विश्वकर्मा का नामान्तर।—**धर्मन्**– (स्त्री०) देवताओं की सभा।—**धर्मा**, —**धर्मी**–(स्त्री०) देवसभा।—**धी**– (वि०) अच्छी बुद्धि वाला। (पुं०) पण्डित जन। (स्त्री०) सुबुद्धि।— **नन्दा**–(स्त्री०) नारी। उमा। कृष्ण की एक पत्नी। दुष्यन्त-पुत्र भरत की पत्नी। सार्वभौम की पत्नी। प्रतीप की पत्नी। एक नदी का नाम। श्वेत गौ। गोरोचना।—**नय**– (पुं०) अच्छा चाल-चलन। सुनीति, अच्छी नीति।—**नयन**–(पुं०) हिरन, मृग।—**नयना**–(स्त्री०) अच्छे नेत्रों वाली स्त्री। नारी। राजा जनक की पत्नी।—**नाभ**– (वि०) अच्छी नाभि वाला। (पुं०) पर्वत। मैनाक पर्वत। वरुण का एक मन्त्री। गरुड़ का एक पुत्र। (न०) सुदर्शन चक्र।—**निभृत**–(वि०) नितान्त निर्जन।—**निश्चल**–(पुं०) शिव। —**नीत**– (वि०) सद्व्यवहार-युक्त, शिष्ट। (न०) सद्व्यवहार। सुनीति।—**नीति**–(पुं०) अच्छा चाल-चलन। अच्छी नीति। ध्रुव की माता का नाम।—**नीथ**–(वि०) धर्मात्मा। (पुं०) ब्राह्मण। शिशुपाल का नाम। कृष्णका एक पुत्र।—**नीथा**–(स्त्री०) मृत्यु की पुत्री और अंग की पत्नी। —**नील**–(पुं०) अनार का पेड़।—**नीला**–(स्त्री०) चणिका तृण। नीले रंग की अपराजिता। तीसी, अलसी।—**पक्व**– (वि०) भली-भांति रांधा हुआ। भली-भांति पका हुआ। (पुं०) एक प्रकार का खुशबूदार आम।—**पत्नी**–(स्त्री०) वह स्त्री जिसका पति नेक हो।—**पथ**– (पुं०) अच्छा मार्ग। अच्छा चाल-चलन।—**पथिन्**– (पुं०) अच्छी सड़क। —**पर्ण**– (वि०) अच्छे पंखों वाला। अच्छे पत्तों वाला। (पुं०) सूर्य की किरण। देव-गंधर्व। अश्व। कोई भी अलौकिक पक्षी। गरुड़ का नाम। मुर्गा।—**पर्णा**, —**पर्णी**– (स्त्री०) कमलिनी। गरुड़ की माता का नाम।—**पर्वन्**– (वि०) सुंदर गांठों या पोरों वाला। (पुं०) बांस, बेंत। धुआं। देवता। (न०) सुन्दर पर्व। शुभकाल।—**पात्र**–(न०) अच्छा बरतन। (दान आदि के लिये) उपयुक्त या योग्य व्यक्ति।—**पाद**–(वि०) सुंदर पैरों वाला।—**पार्श्व**–(पुं०)पाकर का पेड़। जैनियों के सातवें तीर्थंकर।—**पीत**–(न०) गाजर। (पुं०) पांचवां मुहूर्त। —**पुष्प**– (पुं०) ब्रह्मदारु। सिरिस। हरिद्रु। मुचुकुन्द वृक्ष। बड़ी सेवती। सफेद आक। परास पीपल। पारिभद्र। देवदारु। (न०) लौंग। प्रपौण्डरीक। शहतूत। स्त्रियों का रज। (वि०) सुन्दर पुष्पों वाला।— **प्रतिमा**– (स्त्री०) अच्छी प्रतिमा। शराब।—**प्रतिष्ठ**– (वि०)

भली-भांति स्थित रहने वाला । जिनकी बड़ी प्रतिष्ठा हो । बहुत प्रसिद्ध । **—प्रतिष्ठा** –(स्त्री०) अच्छी प्रतिष्ठा । उत्तम स्थिति । मंदिर या प्रतिमा आदि की स्थापना । अभिषेक। स्कन्द की एक मातृका का नाम । **—प्रतिष्ठित** – (वि०) भली-भांति स्थापित । प्रसिद्ध । (पुं०) उदुम्बर, गूलर का पेड़ ।**—प्रतिष्णात**– (वि०) भली-भांति स्नान किया हुआ । किसी विषय में पारंगत । सुनिश्चित । सुपरिचित ।**—प्रतीक**– (वि०) सुन्दर, मनोहर । (पुं०) कामदेव का नाम । शिव । ईशान कोण का दिग्गज ।**— प्रपाण**–(न०)अच्छा तालाब । **—प्रभ**– (वि०) बहुत भड़कीला-भड़कीला ।**—प्रभा**– (स्त्री०) अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक ।**—प्रभात**– (न०) शुभ प्रभात, मङ्गलमय प्रातःकाल; 'दिष्ट्या सुप्रभातमद्य यदयं देवो दृष्टः' उत्त० ६ । प्रातःकालीन स्तोत्र ।**—प्रयोग**– (पुं०) अच्छे ढंग से काम में लाना । सुव्यवस्था, अच्छा प्रबन्ध । निपुणता ।**—प्रसाद**– (वि०) अत्यन्त शुभ । सुप्रसन्न । (पुं०) विष्णु । शिव । सुप्रसन्नता । **— प्रिय**– (वि०) अत्यन्त प्रिय । बहुत पसंद ।**—प्रिया**– (स्त्री०) मनोहारिणी स्त्री । प्रेयसी ।**—फल**– (वि०) बहुत फलने वाला । बहुत उपजाऊ । (पुं०) अनार का पेड़ । बेरी का पेड़ । मूँग ।**—फला**– (स्त्री०) कुम्हड़ा । केले का पेड़ । कपिला द्राक्षा, मुनक्का ।**—बन्ध**– (वि०) अच्छी तरह बँधा हुआ । (पुं०) तिल । **—बल**– (पुं०) शिवजी ।**— बोध**– (पुं०) अच्छा बोध । (वि०) जो सहज में समझ में आवे, आसान ।**—ब्रह्मण्य** –(पुं०) कार्त्तिकेय । शिव । विष्णु । उद्गाता पुरोहित या उसके तीन साथियों में से एक । **—भग**– (वि०) बड़ा भाग्यवान् या समृद्धिशाली । सुन्दर, मनोहर । प्रिय; 'सुमुखि ! सुभगः पश्यन् स त्वामुपैतु कृतार्थताम्' गीत० ५ । कोमल । प्रसिद्ध । (पुं०) सुहागा । अशोक वृक्ष । चम्पक वृक्ष । लाल कटसरैया । (न०) सौभाग्य, खुशकिस्मती ।**—भगा**– (स्त्री०) वह स्त्री जिसको उसका पति प्यार करता हो । पांच वर्ष की कुमारी । स्कन्द की एक मातृका का नाम। कस्तूरी । नीली दूब । प्रियंगु । चमेली । हल्दी । तुलसी ।**—भद्र**–(पुं०) नारियल का पेड़ ।**—भद्र**–(वि०) अत्यन्त प्रसन्न या भाग्यवान् । (पुं०) विष्णु का नाम । **—भद्रा**–(स्त्री०) बलराम तथा श्रीकृष्ण की बहिन ।**—भाषित**–(न०) उत्तम वाणी, अच्छी बोली ।**—भूम**– (पुं०) कार्त्तवीर्य ।**— भ्रू**–(स्त्री०) सुंदर भौं वाली स्त्री । सुन्दर स्त्री ।**—मति**– (वि०) बहुत बुद्धिमान् । (स्त्री०) अच्छी बुद्धि या स्वभाव । पर-हितैषिता । मैत्री । देवता का अनुग्रह । आशीर्वाद । प्रार्थना । अभिलाष । सगर की भार्या का नाम ।**—मदन**– (पुं०) आम का पेड़ ।**—मध्य**, **—मध्यम**– (वि०) पतली कमर वाला । **—मध्यमा**, **—मध्या**–(स्त्री०) सुंदर या पतली कमर वाली स्त्री ।**—मन**– (वि०) सुन्दर । (पुं०) गेहूँ । धतूरा ।**—सुमनस्** –(वि०) अच्छे मन का । प्रसन्न । (पुं०) देवता । पण्डित जन । वेद-पाठी ब्रह्मचारी । गेहूँ । नीम का पेड़ । (न०) पुष्प । 'रमणीय एष वः सुमनसां संनिवेशः' माल० १। **—मित्रा**– (स्त्री०) लक्ष्मण की जननी और महाराज दशरथ की एक रानी का नाम ।**— मुख**–(वि०) सुंदर मुख वाला । मनोहर, सुन्दर । आह्लादकर । उत्सुक । (पुं०) पण्डित जन । गरुड़ । गणेश । शिव । (न०) नख का खरोंटा या खरौंच ।**—मुखा**, **—मुखी**– (स्त्री०) सुंदर मुख

वाली स्त्री। सुन्दरी स्त्री। आईना।—मूलक– (न०) गाजर।—मेधस्– (वि०) उत्तम बुद्धि वाला। (पु०)पितरों का एक गण। चाक्षुष मन्वन्तर के एक ऋषि। पाँचवें मन्वन्तर का एक देववर्ग।—मेरु– (पु०)पुराणों के अनुसार इलावृत वर्ष में अवस्थित एक पर्वत जो सोने का बना हुआ है, स्वर्णगिरि। शिवजी का जन्म।—यवस–(न०) सुन्दर घास। अच्छा चरागाह।—योधन– (पु०) दुर्योधन का नामान्तर।—रक्तक–(पु०) सोन गेरू। आम्रवृक्ष की तरह का एक पेड़।—रङ्ग–(पु०) अच्छा रंग। (न०) शिगरफ। नारंगी।—रञ्जन–(पु०) सुपारी का पेड़।—रत– (वि०) बड़ा खिलाड़ी। अत्यधिक अनुरक्त। (न०) अत्यन्त हर्ष या आनन्द। काम-क्रीड़ा; 'सुरतमृदिता बालवनिता' भर्तृ० २.४४। पुष्प-गुच्छ जो सिर पर धारण किया जाय।—रति–(स्त्री०) काम-क्रीड़ा, भोग-विलास।—रस–(वि०) रसीला। मधुर। सुन्दर। (न०) दारचीनी। तेजपत्र। सुगंधतृण। तुलसी। (पु०) सिन्धुवार। शाल्मली वृक्ष का निर्यास। पीतशाल।—रसा–(स्त्री०) तुलसी। रास्ना। सौंफ। ब्राह्मी। महाशतावरी। जूही। पुनर्नवा। सर्पगंधा। भटकटैया। सिन्धुवार नामक पौधा। दुर्गा का नाम।—रूप– (वि०) सुन्दर, मनोहर, रूपवान्। विद्वान्। (पुं०) शिवजी का नामान्तर।—रेख–(वि०) सुस्वर, सुरीला। (न०) टीन।—लक्षण–(वि०) शुभ लक्षणों से युक्त, अच्छे लक्षणों वाला। भाग्यवान्। (न०) शुभ लक्षण। शुभ चिह्न।—लभ– (वि०) सहज में मिलने योग्य। योग्य, उपयुक्त।—लोचन–(वि०) अच्छे नेत्रों वाला। (पु०) मृग, हिरन।—लोचना–(स्त्री०) सुन्दर आँखों वाली स्त्री। सुन्दरी स्त्री।—लोहक– (न०) पीतल।—लोहित–(वि०) बहुत लाल।—लोहिता–(स्त्री०) अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक।—वक्त्र– (न०) अच्छा चेहरा। शुद्ध उच्चारण।—वचन,—वचस्–(न०) सुंदर वाणी। वाक्पटुता।—वर्चक–(पु०)—वर्चिका–(स्त्री०) सज्जी, सर्जिकाक्षार।—वह– (वि०) सहज में वहन करने या उठाने योग्य। धैर्यवान्, धीर।—वासिनी– (स्त्री०) विवाहिता अथवा अविवाहिता वह स्त्री जो अपने पिता के घर में रहे। विवाहित स्त्री जिसका पति जीवित हो।—विक्रान्त– (वि०) बड़ा पराक्रमी, बड़ा बहादुर। (न०) वीरता, बहादुरी।—विद्– (पु०) विद्वज्जन। (स्त्री०) चतुर स्त्री।—विद–(पु०) अंतःपुर या जनानखाने का अनुचर।—विदत्— (पु०) राजा।—विदल्ल–(पु०) अंतःपुर का रक्षक। (न०) जनानखाना, अंतःपुर।—विदल्ला– (स्त्री०) विवाहिता स्त्री।—विध–(वि०) अच्छी जाति का। शीलवान्।—विनीत–(वि०) विनम्र, सुशिक्षित।—विनीता– (स्त्री०) सीधी गौ।—विहित–(वि०) भलीभांति किया हुआ। अच्छी तरह रखा हुआ। भली-भांति व्यवस्थित।—वीज–(वि०) अच्छे बीज वाला। (पु०) शिवजी। पोस्ता का दाना। (न०) अच्छा बीज।—वीराम्ल– (न०) कांजी।—वीर्य–(वि०) बड़े पराक्रम वाला। (न०) बहादुरी। बहादुरों का बाहुल्य।—वीर्या– (स्त्री०) वन कपास। बड़ी सतावर। कलपत्ती हींग।—वृत्त– (वि०) सच्चरित्र। गुणवान्। अच्छे छन्द में रचित।—वेल–(वि०) शान्त, निस्तब्ध। विनीत। (पु०) त्रिकूट पर्वत का नाम।—व्रत–(वि०) दृढ़ता से व्रत पालन करने वाला।

धर्मनिष्ठ । नम्र । (पुं०) रौच्य मनु के एक पुत्र का नाम । प्रियव्रत के एक पुत्र का नाम। ब्रह्मचारी । ११वें अर्हत् का नाम। —व्रता- (स्त्री०) पतिव्रता स्त्री । सीधी गौ, वह गौ जो सहज में दुह ली जाय ।—शंस-(वि०) प्रसिद्ध । प्रशंसित ।—शक-(वि०) सहज होने योग्य, आसान ।—शल्य- (पुं०) खदिर का पेड़ ।—शाक-(न०) अदरक, आदी ।— शासित-(वि०) भली-भाँति काबू में किया हुआ । —शिक्षित- (वि०) उत्तम तरह शिक्षा पाया हुआ ।—शिख-(पुं०) अग्नि । (वि०) सुंदर शिखा वाला । —शिखा-(स्त्री०) मोर की कलँगी । मुर्गे की कलँगी । —शीत- (न०) सुगंधित पीला चंदन । (वि०) बड़ा ठंडा । शील- (वि०) उत्तम शील वाला । सच्चरित्र । विनीत, नम्र । सरल, सीधा ।—शीला- (स्त्री०) यमराज की पत्नी का नामान्तर । श्रीकृष्ण की आठ मुख्य रानियों में से एक का नाम । —श्रुत- (वि०) अच्छी तरह सुना हुआ । वेद-क्रिया में निपुण । (पुं०) आयुर्वेदीय चिकित्सा-शास्त्र के एक प्रसिद्ध आचार्य । इनका बनाया ग्रन्थ विशेष । श्राद्ध के अन्त में ब्राह्मण से यह प्रश्न कि आप तृप्त हो गये न ?—श्लिष्ट –(वि०) भली-भाँति मिला या जुड़ा हुआ।—(पुं०) भली-भाँति आलिङ्गन करने की क्रिया ।—सन्दृश्-(वि०) अनुग्रह-दृष्टि से सब को देखने वाला ।—सन्नत- (वि०) [सु—सम् √नम्+क्त] अतिशय नत, बहुत झुका हुआ ।—सह-(वि०) सहज में सहने योग्य । सहनशील । (पुं०) शिवजी । —सार (वि०) अतिशय सारविशिष्ट । (पुं०) नीलम । लाल फल का खदिर वृक्ष । —स्थ- (वि०) नीरोग, भला-चंगा । समृद्धिशाली; 'सुस्थे को वा न पण्डितः' हि० ३.२१ । प्रसन्न । सुखी ।—स्थता, —स्थिति- (स्त्री०) अच्छी दशा । आरोग्य । कुशल-क्षेम । प्रसन्नता ।—स्मित-(वि०) आनन्द से मुसक्याता हुआ । —स्मिता-(स्त्री०) हंस-मुख या प्रसन्न-वदना स्त्री ।—स्वर-(वि०)सुरीला, अच्छे कंठ वाला । ऊँचे स्वर का ।—हित –(वि०) अत्यन्त उपयुक्त । लाभकारी, गुणकारी । स्नेही । सन्तुष्ट ।—हिता-(स्त्री०) अग्नि की सप्त जिह्वाओं में से एक ।—हृद्- (वि०) अच्छे हृदय वाला । (पुं०) मित्र; 'मन्दायन्ते न सुहृदामभ्युपेतार्थकृत्याः' मे० ३८ । शिव । ज्योतिष के अनुसार लग्न से चौथा स्थान, जिससे यह जाना जाता है कि मित्र आदि कैसे होंगे ।—हृदय-(वि०) अच्छे हृदय वाला । स्नेही ।

√सुख्—चु० पर० सक० सुख देना । सुखयति, सुखयिष्यति, असुसुखत् ।

सुख—(न०) [√सुख्+अच्] मन की वह उत्तम तथा प्रिय अनुभूति जिसके द्वारा अनुभव-कर्त्ता का विशेष समाधान और सन्तोष होता है और जिसके बराबर बने रहने की उसे सदा अभिलाषा बनी रहती है । आनन्द, हर्ष । समृद्धि । नीरोगता, आरोग्य । सरलता, आसानी । स्वर्ग । जल । (वि०) [सुख+अच्] प्रसन्न । प्रिय । धार्मिक । सरल । उपयुक्त ।—आधार (सुखाधार)-(पुं०) स्वर्ग ।—आप्लव (सुखाप्लव)-(वि०) नहाने के लिये उपयुक्त ।—आयत (सुखायत),—आयन (सुखायन)-(पुं०) सुशिक्षित घोड़ा ।—आरोह (सुखारोह)-(पुं०) सहज में सवारी लायक ।—आलोक (सुखालोक)- (वि०) देखने में सुन्दर । —आवह (सुखावह) –(वि०) सुख देने वाला । —आशा (सुखाशा)-(वि०) वरुण का नाम । आशक (सुखाशक)-

(पुं०) तरबूज।—**आस्वाद** (**सुखास्वाद**)-(वि०) अच्छे जायके का। आनन्ददायी। (पुं०) अच्छा जायका, अच्छा स्वाद। (आनन्द का) उपभोग।—**उत्सव** (**सुखोत्सव**)-(पुं०) आनन्दावसर। पति।—**उदक** (**सुखोदक**)-(न०) गर्म पानी।—**उदय** (**सुखोदय**)-(पुं०) आनन्द की प्राप्ति या अनुभव।—**उदर्क** (**सुखोदर्क**)-(वि०) परिणाम में सुखदायी।—**उद्य** (**सुखोद्य**)- (वि०) सुख से उच्चारण करने योग्य।—**उपविष्ट** (**सुखोपविष्ट**)-(वि०) सुख से बैठा हुआ।—**एषिन्** (**सुखैषिन्**)-(वि०) सुख चाहने वाला।—**कर**,—**कार**, —**दायक**-(वि०) आनन्ददायी, हर्षप्रद।—**द**-(वि०) आनन्ददायी। (न०) विष्णु का आसन।—**दा**- (स्त्री०) इन्द्र के स्वर्ग की अप्सरा।—**प्रणाद**-(वि०) मधुर शब्द करने वाला।—**प्रत्यर्थिन्**-(वि०) सुख का विरोधी।— **बोध**-(पुं०) आनन्द का अनुभव। सरल ज्ञान।—**भञ्जन**-(पुं०) सफेद मिर्च।—**भागिन्**, **भाज्**-(पुं०) सुख भोगने वाला, सुखी।—**वासन**-(पुं०) मुँह के लिए सुगंध।—**श्रव**, —**श्रुति**-(वि०) कर्णमधुर, सुरीला।—**सङ्गिन्**—(वि०) सुख का साथी।—**साध्य**- (वि०) सहज में होने वाला।—**स्पर्श**-(वि०) छूने से सुख देने वाला।

सुत—(वि०) [√सु+क्त] उड़ेला हुआ। निचोड़ कर निकाला हुआ। पैदा किया हुआ। (पुं०) पुत्र। राजा। जन्म-लग्न से पाँचवा स्थान। दशम मनु का एक पुत्र।—**आत्मज** (**सुतात्मज**)-(पुं०) पौत्र, पुत्र का पुत्र।—**आत्मजा** (**सुतात्मजा**)-(स्त्री०) पौत्री, पुत्र की पुत्री।—**उत्पत्ति** (**सुतोत्पत्ति**)- (स्त्री०) पुत्र का जन्म।—**पादिका**, —**पादुका**-(स्त्री०) हंसपदी लता।— **पेय**- (न०) सोमपान, यज्ञ में सोम पीने की क्रिया।—**वस्करा**-(स्त्री०) वह स्त्री जिसके ७ पुत्र हों।—**स्थान**-(न०) जन्म-लग्न से पाँचवाँ स्थान।

सुतवत्—(वि०) [सुत + मतुप्, मस्य वः] वह जिसके सुत हों, पुत्रवान्। (पुं०) पिता।

सुता—(स्त्री०) [सुत + टाप्] लड़की, पुत्री; 'तमर्थमिव भारत्या सुतया योक्तुमर्हसि' कु० ६.७९। दुरालभा।

सुति—(स्त्री०) [√सु + क्तिन्] सोमरस निकालना।

सुतिन्—(वि०) [स्त्री०—**सुतिनी**] [सुत+इनि] पुत्र या पुत्रों वाला। (पुं०) पिता।

सुतिनी—(स्त्री०) [सुतिन्+ ङीप्] माता; 'तेनाम्बा यदि सुतिनी वद वन्ध्या कीदृशी भवति' सुभा०।

सुत्या—(स्त्री०) [√सु+क्यप्, तुक्—टाप्] सोमरस निकालने या तैयार करने की क्रिया। यज्ञीय नैवेद्य। सन्तानप्रसव, गर्भमोचन।

सुत्रामन्—(पुं०) [सुष्ठु त्रायते, सु√त्रै+मनिन्, पृषो० साधुः] इन्द्र का नामान्तर।

सुत्वन्—(पुं०) [√सु + क्वनिप्] सोमरस पीने या चढ़ाने वाला व्यक्ति। वह ब्रह्मचारी जिसने यज्ञीय कर्म करने के पूर्व अपना मार्जन या अभिषेक किया हो।

सुदि—(अव्य०) [सुष्ठु दीव्यति, सु√दिव्+डि] शुक्ल पक्ष।

सुधन्वाचार्य—(पुं०) पतित वैश्य का पुत्र जो वैश्या माता के गर्भ से उत्पन्न हुआ हो।

सुधा—(स्त्री०) [सुष्ठु धीयते पीयते धार्यते वा, सु√धे वा√धा + क+टाप्] अमृत। पुष्पों का रस। रस। जल। गंगा जी का नाम। सफेदी। ईंट। बिजली। सेंहुड़।

थूहर। मूर्वा। गिलोय। सरिवन। आमला। विष। पृथ्वी। चूना; 'कैलासगिरिणेव सुधासितेन प्राकारेण परिगता' का०। वधू। पुत्री।—अंशु (सुधांशु)–(पुं०) चन्द्रमा। कपूर।—०रत्न (सुधांशुरत्न)–(पुं०) मोती।—अङ्ग (सुधाङ्ग),—आकार (सुधाकार),—आधार (सुधाधार)–(पुं०) चन्द्रमा।—जीविन्–(पुं०) मेंमार, राज, थवई।—द्रव–(पुं०) अमृत जैसा तरल पदार्थ। एक प्रकार की चटनी।—धवलित–(वि०) कलई या सफेदी किया हुआ, चूना से पुता हुआ।—निधि–(पुं०) चन्द्रमा। कपूर।—भवन–(न०) अस्तरकारी किया हुआ मकान। पंचम मुहूर्त।—भित्ति–(स्त्री०) अस्तरकारी की हुई दीवाल। ईंट की दीवाल। दोपहर के बाद पाँचवां मुहूर्त या घंटा।—भुज्–(पुं०) देवता।—भृति–(पुं०) चन्द्रमा। यज्ञ।—मय–(न०) चूना या पत्थर का भवन या घर।—राजमहल।—वर्ष–(पुं०) अमृत-वृष्टि।—वर्षिन्–(पुं०) ब्रह्मा की उपाधि।—वास–(पुं०) चन्द्रमा। कपूर।—वासा–(स्त्री०) खीरा, त्रपुषी।—सित–(वि०) चूने की तरह सफेद। अमृत की तरह चमकीला। चूना किया हुआ, सफेदी से पुता हुआ।—सूति–(पुं०) चन्द्रमा। यज्ञ। कमल।—स्यन्दिन्–(वि०) अमृत बहाने वाला।—हर–(पुं०) गरुड़ की उपाधि।

सुधिति—(पुं०, स्त्री०) [सु√धा +क्तिच्] कुल्हाड़ी।

सुनार—(पुं०) [सुष्ठु नालमस्य, प्रा० ब०, लस्य रः] कुतिया का दूध। साँप का अंडा। चटक पक्षी, गौरैया।

सुनासीर, सुनाशीर—(पुं०) [सुष्ठु नासी (शी) रः अग्रसैन्यं यस्य, प्रा० ब०] इन्द्र का नामान्तर।

सुन्द—(पुं०) निशुंभ का पुत्र और उपसुंद का भाई एक दैत्य।

सुन्दर—(वि०) [स्त्री०—सुन्दरी] [सु √उन्द् +अरन्, शक० पररूप] जो आँखों को अच्छा लगे, खूबसूरत, मनोहर। ठीक, सही। (पुं०) कामदेव का नाम।

सुन्दरी—(स्त्री०) [सुन्दर+ङीष्] खूबसूरत औरत, सुरूपा नारी; 'एका भार्या सुन्दरी वा दरी वा' भर्तृ० ३.११५। त्रिपुरसुंदरी देवी। श्वफल्क की एक कन्या। वैश्वानर की एक कन्या। माल्यवान् की पत्नी। हल्दी।

सुप्त—(वि०) [√स्वप् + क्त, सम्प्रसारण] सोया हुआ। लकवा मारा हुआ। बेहोश, बदहवास। मुँदा हुआ। बेकार। अविकसित। सुस्त। (न०) अगाढ़ निद्रा, गाढ़ी नींद।—जन–(पुं०) सोया हुआ व्यक्ति। अर्ध रात्रि।—ज्ञान–(न०) स्वप्न।—त्वच्–(वि०) सुन्न।

सुप्ति—(स्त्री०) [√स्वप् + क्तिन्, सम्प्रसारण] निद्रा। सुस्ती। ऊँघाई। सुन्न हो जाना, चैतन्य-राहित्य। विश्वास। सपना।

सुम—(न०) [सुष्ठु मीयतेऽदः, सु√मा +क] पुष्प, फूल। (पुं०) [√सु+मक्] चन्द्रमा। कपूर। आकाश।

सुर—(पुं०) [सुष्ठु राति ददाति अभीष्टम् सु√रा+क] देवता। तैंतीस की संख्या। सूर्य। महात्मा। ऋषि। विद्वज्जन।—अङ्गना (सुराङ्गना)–(स्त्री०) देववधू। अप्सरा।—अधिप (सुराधिप)—(पुं०) इन्द्र।—अरि (सुरारि)–(पुं०) देव-शत्रु, दैत्य।—अर्ह (सुरार्ह)–(न०) सुवर्ण। केसर।—आचार्य (सुराचार्य)—(पुं०) बृहस्पति।—आपगा (सुरापगा)–(स्त्री०) आकाशगंगा।—आलय (सुरालय)–(पुं०) मेरुपर्वत।

स्वर्ग।—इज्य (सुरेज्य)-(पुं०) बृहस्पति का नाम।—इज्या (सुरेज्या)-(स्त्री०) तुलसी।—इन्द्र (सुरेन्द्र),—ईश (सुरेश), —ईश्वर (सुरेश्वर)-(पुं०) इन्द्र का नाम।—उत्तम (सुरोत्तम)- (पुं०) सूर्य। इन्द्र।—उत्तर (सुरोत्तर)-(पुं०) चन्दन का वृक्ष।—ऋषि (सुरर्षि)-(पुं०) देवर्षि।—काष्ठ-(पुं०) विश्वकर्मा की उपाधि।— कार्मुक-(न०) इन्द्रधनुष।—गुरु-(पुं०) बृहस्पति का नामान्तर।—ग्रामणी- (पुं०) इन्द्र का नामान्तर।—ज्येष्ठ- (पुं०) ब्रह्मा। —तरु-(पुं०) कल्पवृक्ष।—तोषक-(पुं०) कौस्तुभमणि।—दारु- (न०) देवदारु वृक्ष। —दीर्घिका- (स्त्री०) श्रीगंगा जी।— दुन्दुभी- (स्त्री०) तुलसी।—द्विप- (पुं०) देवताओं का हाथी। ऐरावत हाथी का नामान्तर।—द्विष्-(पुं०) दैत्य। —धनुस्- (न०) इन्द्रधनुष।—धुनी (स्त्री०) गंगा।—धूप-(पुं०) तारपीन, राल।—निम्नगा-(स्त्री०) श्रीगङ्गा जी। —पति- (पुं०) इन्द्र।—पथ- (न०) आकाश। —पर्वत- (पुं०) मेरुपर्वत। —पादप- (पुं०) स्वर्ग का एक वृक्ष, कल्पतरु।—प्रिय- (पुं०) इन्द्र का नाम। बृहस्पति। अगस्त्य वृक्ष। एक पर्वत। —प्रिया- (स्त्री०) जाती। चमेली। स्वर्णकदली। अप्सरा।—भिषज् -(पुं०) अश्विनीकुमार।—भूय-(न०) पुरस्कार में देवत्वग्रहण।—भूरुह- (पुं०) देवदारु वृक्ष। —युवति- (स्त्री०) अप्सरा।—लासिका- (स्त्री०) बाँसुरी।—लोक- (पुं०) स्वर्ग।— वर्त्मन्—(न०) आकाश।—वल्ली- (स्त्री०) तुलसी। —विद्विष्, —वैरिन्, —शत्रु- (पुं०) असुर, दानव।—सद्मन्- (न०) स्वर्ग। —सरित्, —सिन्धु- (स्त्री०) श्रीगङ्गा; 'सुरसरिदिव तेजो वह्निनिष्ठ्यूतमैशम्' र० २.७५। —सुन्दरी, —स्त्री- (स्त्री०)। अप्सरा।—स्वामिन्—(पुं०) इन्द्र। विष्णु। शिव।

सुरभि—(वि०) [सु √रभ् +इन्] सुगन्धित, सुवासित। प्रिय। मनोहर। प्रसिद्ध। बुद्धिमान्। पुण्यात्मा। (पुं०) महक, सुगन्धि। जातीफल, जायफल। चंपक वृक्ष। एक प्रकार की सुगन्धयुक्त घास। वसन्त ऋतु। (स्त्री०) एलुवा, एलुवालुक। जटामासी। मोतिया, बेला। मुरामांसी। तुलसी। शराब, मदिरा। पृथिवी। गौ; 'सुतां तदीयां सुरभेः कृत्वा प्रतिनिधिं शुचिः' र० १.८१। एक पौराणिक गाय जो गौ जाति की माता मानी जाती है। मातृकाओं में से एक। (न०) सुगन्धि। गन्धक। सुवर्ण।—घृत- (न०) खुशबूदार घी। —त्रिफला- (स्त्री०) जायफल, लवंग और सुपारी।—बाण- (पुं०) कामदेव।—मास-(पुं०) वसन्त-ऋतु।—मुख- (न०) वसन्त ऋतु का आरम्भ।

सुरभिका—(स्त्री०) [सुरभि +कन्—टाप्] एक प्रकार का केला।

सुरभिमत्—(वि०) [सुरभि+मतुप्] सुगंधियुक्त। (पुं०) अग्नि का नाम।

सुरा—(स्त्री०) [√सु + क्रन्—टाप् वा सु √रा+अक — टाप्] मद्य, शराब। जल। पान-पात्र।— आकर (सुराकर)-(पुं०) शराब की भट्ठी। नारियल का पेड़। —आजीव (सुराजीव), —आजीविन् (सुराजीविन्)- (पुं०) कलाल।—आलय (सुरालय)-(पुं०) शराब की दूकान।— उद (सुरोद)-(पुं०) शराब का समुद्र।— ग्रह-(पुं०) शराब रखने का पात्र।—ध्वज- (पुं०) वह पताका या अन्य कोई चिह्नानी जो शराब की दूकान

पर पहचान के लिये लगायी जाती है ।—**प**– (वि०) शराबी, शराब पीने वाला । चतुर । सुन्दर ।—**पाण**,—**पान**– (न०) शराब पीना । मद्य-पान के समय खायी जाने वाली चाट, गजक । (पुं०) पूर्वीय देश का निवासी ।—**पात्र**,—**भाण्ड**– (न०) मदिरा पीने या रखने का पात्र ।—**भाग**– (पुं०) शराब का फेन, खमीर ।—**मण्ड**– (पुं०) शराब का माँड़ ।—**सन्धान**– (न०) शराब चुग्राने की क्रिया ।

सुवर्ण—(वि०) [सुष्ठु वर्णोऽस्य, प्रा० ब०] सुन्दर रंग का । चमकदार रंग का । सुनहला, पीला । अच्छी जाति का । प्रसिद्ध । (न०) सोना । सोने का सिक्का । सोने की एक तौल जो १६ माशे या लगभग १७५ रत्ती की होती है (यह पुं० भी है)। धन-दौलत । पीला चंदन । एक तरह का गेरू । (पुं०) अच्छा रंग । अच्छी जाति । एक यज्ञ । शिव । धतूरा ।—**अभिषेक (सुवर्णाभिषेक)**– (पुं०) वर-वधू का उस जल से मार्जन जिसमें सोने का एक टुकड़ा पड़ा हो ।—**कदली**– (स्त्री०) केले की एक जाति, चंपा केला ।—**कर्तृ**,—**कार**,—**कृत्**–(पुं०) सुनार ।—**गणित**– (न०) गणित में विशेष प्रकार की गणनक्रिया, बीजगणित का वह अंग जिसके अनुसार सोने की तौल आदि मानी जाती है और उसका हिसाब लगाया जाता है ।—**पुष्पित**–(वि०) सोने से भरा-पूरा; 'सुवर्णपुष्पितां पृथ्वीं विचिन्वन्ति नरास्त्रयः' पं० १.४५ ।—**पृष्ठ**– (वि०) जिस पर सोने का पत्तर चढ़ाया गया हो, सुनहला मुलम्मा किया हुआ ।—**माक्षिक**–(न०) सोनामक्खी, खनिज पदार्थविशेष ।—**यूथी**– (स्त्री०) पीली जूही, पीतयूथिका ।—**रूप्यक**–(वि०) सोने और चाँदी की विपुलता से युक्त । (न०) सुवर्ण द्वीप या सुमात्रा का एक प्राचीन नाम ।—**रेतस्**– (पुं०) शिवजी ।—**वर्णा**–(स्त्री०) हल्दी ।—**सिद्ध**– (पुं०) वह जो इन्द्रजाल या जादू के बल सोना बना या प्राप्त कर सकता हो ।—**स्तेय**–(न०) सोने की चोरी ।

सुवर्णक—(न०) [सुवर्ण√कै + क] पीतल । सीसा नामक धातु । स्वर्णक्षीरी । आरग्वध ।

सुषम—(वि०) [सुष्ठु समं सर्वं यस्मात्, प्रा० ब०, षत्व] अत्यन्त मनोहर या खूबसूरत ।

सुषमा—(स्त्री०) [सुन्दरः समः, प्रा० स०, षत्व, सुषम+टाप्] परम-शोभा, अत्यन्त सुन्दरता; 'सुषमाविषये परीक्षणे निखिलं पद्ममभाजि तन्मुखात्' नै० २.२७ ।

सुषवी—(स्त्री०) [सु√सु + अच्–ङीष्] करेला, कारवेल्ल । करेली । जीरा ।

सुषाह—(पुं०) शिवजी का एक नाम ।

सुषि—(स्त्री०) [√शुष् + इन्, पृषो० शस्य सः] सूराख ।

सुषिम, सुषीम—(वि०) [सु√श्यै+मक्, सम्प्रसारण, पृषो० साधुः] ठंडा, शीतल । मनोरम, सुन्दर । (पुं०) शीतलता । सर्प-विशेष । चन्द्रकान्त मणि ।

सुषिर—(वि०) [√शुष् + किरच्, पृषो० शस्य सः] छेदों से परिपूर्ण, पोला, छेदोंदार । विलंबित (उच्चारण) । (न०) छेद, सूराख । कोई भी बाजा जो हवा के संयोग से बजाया जाय । बांस । बेंत । लकड़ी । लौंग । वायुमंडल । (पुं०) अग्नि । चूहा ।

सुषुप्ति—(स्त्री०) [सु√स्वप् + क्तिन्] गहरी नींद, प्रगाढ़ निद्रा । तत्त्वप्रधान अज्ञान । पातंजल दर्शन में सुषुप्ति, चित्त की उस वृत्ति या अनुभूति को माना है, जिसमें जीव नित्य ब्रह्म की प्राप्ति करता है । किन्तु जीव को इस बात का ज्ञान नहीं

रहता कि उसने ब्रह्म की प्राप्ति की है ।

सुषुम्न—(पुं०) [सुषु √म्ना + क] सूर्य की मुख्य किरणों में से एक का नाम ।

सुषुम्णा—(स्त्री०) [सुषुम्ण + टाप्] शरीरस्थ तीन प्रधान नाड़ियों में से एक जो इड़ा और पिंगला के बीच में है ।

सुषेण—(पुं०) [सु√सेन् + अच्] विष्णु का एक नाम । एक गन्धर्व । एक यक्ष । दूसरे मनु का एक पुत्र । श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम । एक वानर जो सुग्रीव का चिकित्सक था । करौंदा । बेंत ।

सुष्ठु—(अव्य०) [सु √स्था+कु] उत्तमता से । बहुत अधिक, अत्यधिक । सचाई से, ठीक-ठीक ।

सुष्म—(न०) [√सु +मक्, सुक् आगम] रस्सी, डोरी ।

सुह्म—(पुं०) एक प्राचीन जनपद, राढ़देश । वहाँ का निवासी । एक यवनजाति ।

√सू—अ० आत्म० सक० प्रसव करना । सूते, सविष्यते—सोष्यते, असविष्ट—असोष्ट । दि० आत्म० सक० प्रसव करना । सूयते, शेष अ० की तरह । तु० पर० सक० फेंकना । प्रेरित करना । सुवति, सविष्यति, असावीत् ।

सू—(वि०) [√सू + क्विप्] उत्पन्न करने वाला, पैदा करने वाला । (स्त्री०) प्रसव । माता ।

सूक—(पुं०) [सू + कन्] तीर । पवन । कमल ।

सूकर—(पुं०)[सू इत्यव्यक्तं शब्दं करोति, सू√कृ+अच्] शूकर, सुअर । मृग विशेष । कुम्हार ।

सूकरी—(स्त्री०)[सूकर+ङीष्] सुअरी । वाराही कंद । वाराही देवी । एक चिड़िया ।

सूक्ष्म—(वि०) [√सूच् +मन्, सुक्] बहुत छोटा । बहुत बारीक या महीन । अल्प; 'वव्या: गुणा: खल्वपि लोककान्ता: प्रारम्भसूक्ष्मा: प्रथिमानमापुः' र० १८.४९ । पतला । उत्तम । तीक्ष्ण । धूर्त । ठीक । तुच्छ । (न०) परब्रह्म । सूक्ष्मता । योग द्वारा प्राप्त की जाने वाली योगियों की तीन शक्तियों में से एक । शिल्प-कौशल । धूर्तता । महीन डोरा । एक काव्यालंकार जिसमें चित्त-वृत्ति को सूक्ष्म चेष्टा से लक्षित कराने का वर्णन किया जाता है । (पुं०) अणु, परमाणु । कतक वृक्ष । रीठा । सुपारी । शिव का नाम ।—एला (सूक्ष्मैला)–(स्त्री०)छोटी इलायची ।—तण्डुल–(पुं०)पोस्ता ।—तण्डुला–(स्त्री०) पीपल, पिप्पली । घुना । —दर्शिता–(स्त्री०) सूक्ष्मदर्शी होने का भाव, सूक्ष्म बात सोचने-समझने का गुण, बुद्धिमानी । —दर्शिन्, —दृष्टि–(वि०) वह दृष्टि जिससे बहुत ही सूक्ष्म बातें भी दिखाई दें या समझ में आ जायें ।—दारु– (न०) काठ की पतली पटरी या तख्ता ।—देह–(पुं०), —शरीर– (न०) लिंगशरीर, पांच प्राण, पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांच सूक्ष्म भूत, मन और बुद्धि इन सत्रह तत्त्वों का समूह । (हाथ, पैर, मुँह आदि अंगों से युक्त शरीर स्थूल-शरीर कहलाता है । इसके नष्ट हो जाने पर सूक्ष्म-शरीर बच रहता है । जब तक मोक्ष नहीं मिलता तब तक स्थूल-शरीर का आवागमन बराबर बना रहता है । स्वर्ग और नरक का भोग भी सूक्ष्म-शरीर को ही करना पड़ता है ।)पत्र–(पुं०) धनिया, धन्याक । वनजीरक । लाल ऊख । बबूल । देव-सर्षप ।— पर्णी– (स्त्री०) रामतुलसी, रामदूती ।—पिप्पली– (स्त्री०) जंगली पीपल, वनपिप्पली ।—बुद्धि–(वि०) तेज बुद्धि वाला ।—मक्षिक–

(न०), —**मक्षिका**– (स्त्री०) मच्छड़, मशक ।— **मान**–(न०) ठीक-ठीक नाप । —**शर्करा**– (स्त्री०) बालू, बालुका ।— **शालि**– (पुं०) मोटी जाति का चावल ।— **षट्चरण**– (पुं०) एक प्रकार का सूक्ष्म कीड़ा जो पलकों की जड़ में रहता है ।

√सूच्—चु० पर० सक० छेदना । बतलाना । (किसी छिपी बात या वस्तु को) प्रकट कर डालना । हाव-भाव प्रदर्शित करना । जासूसी करना, खोज निकालना । सूचयति, सूचयिष्यति, असुसूचत् ।

सूच—(पुं०) [√सूच्+अच्] कुशा की पैनी या नुकीली नोक ।

सूचक—(वि०) [स्त्री०—**सूचिका**] [√सूच्+ण्वुल्] सूचना देने वाला, बतलाने वाला । (पुं०) दरजी । सूई । चुगलखोर । जासूस, भेदिया । शिक्षक । किसी नाटक मण्डली का व्यवस्थापक या मुख्य नट । बुद्धदेव । सिद्ध । दुष्ट । दैत्य । पिशाच । कुत्ता । कौआ । बिल्ली । एक प्रकार का महीन चावल ।—**वाक्य**–(न०) भेदिये की बताई हुई बात ।

सूचन—(न०), **सूचना**– (स्त्री०) [√सूच् +ल्युट्] [√ सूच् +णिच् (स्वार्थे) +युच्–टाप्] बताने, जताने की क्रिया । छेदने या सूराख करने की क्रिया । भेद खोल देना, किसी गोप्य बात को प्रकट कर देना । हावभाव । संकेत । इत्तिला । निक्षण । वर्णन । जासूसी करना । दुष्टता । अभिनय । दृष्टि । हिंसा ।

सूचा—(स्त्री०) [√सूच् + अ–टाप्] भेदन । हाव-भाव । अवलोकन । भेद लेना ।

सूचि, सूची—(स्त्री०) [√सूच्+इन्, पक्षे ङीप्] छेदन, भेदन । सूई । नुकीली नोक; 'अभिनवकुशसूच्या परिक्षतं मे चरणं' श० १ । किसी वस्तु की नोक । कील की नोक । सैन्य-व्यूह विशेष जिसमें कुछ कुशल सैनिक आगे रखे जाते हैं और शेष पीछे । एक तरह का रतिबन्ध । दृष्टि । हाव-भाव द्वारा कोई बात प्रदर्शित करना, इशारेबाजी । नृत्य विशेष । नाटकीय हाव-भाव । तालिका, फेहरिस्त । विषयानुक्रमणिका, किसी ग्रन्थ के विषयों की तालिका ।— **अग्र** (**सूच्यग्र**)–(वि०) सूई की तरह पैनी नोक का । (न०) सूई की नोक ।— **आस्य** (**सूच्यास्य**)–(पुं०) चूहा । मच्छर ।—**पत्र**– (न०) वह पत्र या पुस्तक जिसमें पुस्तकों या और किसी चीज की नामावली विषय, दाम आदि बताते हुए दी गयी हों । एक प्रकार की ऊख । सितावर शाक ।— **पत्रक**–(न०) दे० 'सूचीपत्र' ।—**पुष्प**– (पुं०) केवड़े का वृक्ष ।—**मुख**– (वि०) वह जिसका मुख सूई जैसा हो । नुकीली चोंच वाला । नुकीला । (पुं०)चिड़िया । सफेद कुश । हस्तमुद्राविशेष । (न०) हीरा । एक नरक । सूई की नोक ।—**रोमन्**– (पुं०) शूकर ।— **वक्त्रा**–(स्त्री०)बहुत संकीर्ण योनि जो मैथुन के अयोग्य हो ।—**वदन** –(वि०) सूई जैसा चेहरे वाला । नुकीली चोंच वाला । (पुं०) मच्छर । नेवला ।—**शालि**– (पुं०) महीन जाति का चावल विशेष ।

सूचिक—(पुं०)[सूचि+ठन्–इक] दर्जी ।

सूचिका—(स्त्री०) [सूचि+क–टाप्] सूई । हाथी की सूँड़ ।—**धर**–(पुं०) हाथी ।—**मुख**–(न०) शंख ।

सूचित—(वि०) [√सूच्+क्त] छेदा हुआ, छेद किया हुआ । बतलाया हुआ । इशारे या संकेत से बतलाया हुआ । कथित ।

सूचिन्—(वि०) [स्त्री०—**सूचिनी**] [√ सूच्+णिनि] छेद करने वाला । बतलाने वाला । मुखबिरी करने वाला । भेद लेने वाला, जासूसी करने वाला । (पुं०) जासूस, भेदिया ।

सूचिनी—(स्त्री॰) [सूचिन् + ङीप्] सुई। रात।

सूची—दे॰ 'सूचि'।

सूच्य—(वि॰) [√सूच् + ण्यत्] सूचना देने योग्य, बतलाने लायक।

सूत्—(अव्य॰) [√सू + क्त] खर्राटे का शब्द जो सोने के समय प्रायः लोग किया करते हैं।

सूत—(वि॰) [√सू+क्त] उत्पन्न। प्रेरित। (पुं॰) सारथि, रथ हाँकने वाला। क्षत्रिय का पुत्र जो ब्राह्मणी माता के गर्भ से उत्पन्न हुआ हो। बंदीजन, भाट। बढ़ई। सूर्य। व्यास के एक शिष्य का नाम। (पुं॰, न॰)पारा, पारद।—**तनय**-(पुं॰) कर्ण का नाम।— **राज्**-(पुं॰) पारा।

सूतक—(न॰) [सूत+कन्] उत्पत्ति। जनन-अशौच। अशौच। (न॰, पुं॰) पारा।

सूतका—(स्त्री॰) [सूत+कन्—टाप्]जच्चा स्त्री, वह स्त्री जिसने हाल ही में बच्चा जना हो।

सूता—(स्त्री॰) [सूत+टाप्] जच्चा औरत, सूतका।

सूति—(स्त्री॰) [√सू + क्तिन्] उत्पत्ति, प्रसव। सन्तान, औलाद। निर्गम-स्थान 'तासां सूतिरसूतिरापदाम्' कि॰ २.५६। वह स्थान जहाँ सोमरस निकाला जाय। —**अशौच** (**सूत्यशौच**)-(न॰) जनन-अशौच।— **गृह**-(न॰) वह घर जिसमें लड़का जना गया हो, सौरी।—**मास**-(पुं॰) वह मास जिसमें बच्चा जना गया हो।

सूतिका—(स्त्री॰) [सूत+कन्—टाप्, इत्व] स्त्री जिसने हाल ही में सन्तान जनी हो।— **अगार** (**सूतिकागार**),—**गृह**, —**गेह**, —**भवन**- (न॰) जच्चाखाना, सौरी।—**रोग**-(पुं॰) प्रसूता स्त्री को होने वाला एक रोग।—**षष्ठी**-(स्त्री॰) देवी विशेष, जिसका पूजन प्रसव के दिन से छठे दिन किया जाता है।

सूत्कर—(न॰) [सु—उद्√पृ+अप्] शराब चुआने की क्रिया।

सूत्या—(स्त्री॰) [√सू+क्यप्—टाप्] दे॰ 'सुत्या'।

√**सूत्र्**—चु॰ पर॰ सक॰ बाँधना। सूत्र के रूप में लिखना या बनाना। क्रमबद्ध करना। खोलना। सूत्रयति, सूत्रयिष्यति, असुसूत्रत्।

सूत्र—(न॰) [√सूत्र्+अच्] सूत। तागा; 'पुष्पमालानुषङ्गेण सूत्रं शिरसि धार्यते' सुभा॰। सूत का ढेर। द्विजों के पहिनने का जनेऊ। कठपुतली का तार या डोरी या वह तार या डोरी जिसे थाम कर कठपुतली नचाई जाती है। संक्षिप्त रूप में बनाया हुआ नियम या सिद्धान्त। थोड़े अक्षरों में कहा हुआ ऐसा पद या वचन जो बहुत अर्थ प्रकट करता हो, संक्षिप्त, सारगर्भित पद या वचन।—**आत्मन्** (**सूत्रात्मन्**)-(पुं॰) जीवात्मा।—**आली** (**सूत्राली**)-(स्त्री॰) माला। हार।—**कण्ठ**- (पुं॰) ब्राह्मण। कबूतर। पेंडुकी। खंजन।—**कर्मन्**- (न॰) बढ़ई-गीरी। जुलाहे का काम।—**कार**,—**कृत्**-(पुं॰) सूत्र बनाने वाला। बढ़ई। जुलाहा। —**कोण**, —**कोणक**- (पुं॰) डमरू।—**गण्डिका**- (स्त्री॰) जुलाहे का एक औजार जो लकड़ी का होता है और कपड़ा बुनने में काम देता है।—**धर**, —**धार**-(पुं॰) नाट्यशाला का व्यवस्थापक या प्रधान नट जो भारतीय नाट्य-शास्त्र के अनुसार नान्दी पाठ के अनन्तर खेले जाने वाले नाटक की प्रस्तावना सुनाता है। बढ़ई। इन्द्र।—**पिटक**- (पुं॰) बौद्धों के मत के प्रसिद्ध तीन संग्रह-ग्रन्थों में से एक।—**पुष्प**-(पुं॰) कपास का वृक्ष।—**भिद्**-(पुं॰)

दर्जी ।—**भृत्**– (पु०) सूत्रधार ।—**यन्त्र**– (न०) करघा । ढरकी ।—**वीणा**–(स्त्री०) प्राचीन काल की एक वीणा जिसमें तार की जगह सूत लगाये जाते थे ।—**वेष्टन**–(न०) करघा । ढरकी । बुनने की क्रिया ।

सूत्रण—(न०) [√सूत्र् + ल्युट्] सूत्र रूप में रचना । गूँथने की क्रिया । क्रमबद्ध करना ।

सूत्रला—(स्त्री०) [सूत्र √ला + क–टाप्] तकला, टेकुवा ।

सूत्रिका—(स्त्री०) [√सूत्र् + ण्वुल्–टाप्, इत्व] सेवई । हार ।

सूत्रित—(वि०) [√सूत्र् + क्त] सूत्र में दिया हुआ । क्रम-बद्ध किया हुआ ।

सूत्रिन्—(वि०) [स्त्री०—**सूत्रिणी**] [सूत्र + इनि] सूत्र वाला । (पु०) काक । सूत्रधार ।

√**सूद्**—भ्वा० आत्म० सक० निवारण करना । सूदते, सूदिष्यते, असूदिष्ट । भ्वा० पर० सक० मार डालना । सूदति, सूदिष्यति, असूदीत् । चु० उभ० अक० बहना । सक० उत्तेजित करना । ताड़ना करना । वध करना । उड़ेलना । स्वीकार करना । प्रतिज्ञा करना । रांधना । फेंक देना । सूदयति-ते, सूदयिष्यति-ते, असुषूदत्-त ।

सूद—(पु०) [√सूद् + घञ् वा अच्] वध, मारण । कूप । सोता । रसोइया । चटनी । कढ़ी । पकवान । दली हुई मटर । कीचड़ । पाप । दोष । लोध्र वृक्ष ।—**कर्मन्**– (न०) रसोइये का काम ।—**शाला**– (स्त्री०) रसोईघर ।

सूदन—(वि०) [स्त्री०—**सूदनी**] [√सूद् +ल्यु] नाशक, वध-कारक । प्यारा । (न०) [√सूद् + ल्युट्] वध, कत्ल । प्रतिज्ञा । फेंकना ।

सून—(वि०) [√सू+क्त, तस्य नः] उत्पन्न । खिला हुआ । खाली, रीता । (न०) प्रसव । कली । फूल । फल । (पु०) पुत्र ।

सूना—(स्त्री०) [सून+टाप्] कसाईखाना; 'भवानपि सूनापरिचर इव गृध्रः आमिष-लोलुपो भीरुकश्च' माल० २ । मांस की बिक्री । चोटिल करना । वध करना । छोटी जिह्वा, कौआ । पटुआ, कमरपेटी । गर्दन की गांठों की सूजन । किरण । नदी । पुत्री । (स्त्री०, बहु०) गृहस्थ के घर में चूल्हा, चक्की, ओखली, घड़ा और झाड़ू में से कोई भी वस्तु, जिससे जीव-हिंसा होने की सम्भावना रहती है ।

सूनिन्—(पु०) [सूना+इनि] कसाई । मांस बेचने वाला । बहेलिया ।

सूनु—(पु०) [√सू+नुक्] पुत्र; 'पितुरहमेवैको सूनुरभवम्' का० । बच्चा । दौहित्र, बेटी का बेटा । छोटा भाई । सूर्य । मदार का पौधा ।

सूनू—(स्त्री०) [सूनु+ऊङ्] पुत्री ।

सूनृत—(वि०) [सु√नृत् + क (भावार्थे), उपसर्गस्य दीर्घः(वि० में सूनृत+अच्)] सच्चा और आनन्द-दायी । कृपालु और सहृदय । शिष्ट, भद्र । शुभ । प्रिय । (न०) सत्य और प्रिय वाणी । अच्छा और अनुकूल संवाद । शिष्ट भाषण । कल्याण ।

सूप—(पु०) [सु √पा + क पृषो० साधुः] पकी हुई दाल । रसा, जूस । कढ़ी । चटनी । मसाला । [सु √वप् + क, सम्प्रसारण] रसोइया । बरतन । [√सूद्+क, पृषो० साधुः] बाण । बरतन ।—**अङ्ग**(सूपाङ्ग)–(न०) हींग ।—**कार**– (पु०) रसोइया ।—**धूपक**, —**धूपन**,– (न०) हींग ।

सूम– (पु०) [√सू+मक्] आकाश । दूध । जल ।

√**सूर्**—दि० आत्म० सक० मारना, वध करना । रोकना । सूर्यते, सूरिष्यते, असूरिष्ट ।

सूर—(वि०) [√सू+क्रन्] सूर्य । मदार का पौधा । सोमवल्ली । पण्डितजन ।—

सूत- (पुं०) शनिग्रह ।—**सूत**- (पुं०) सूर्य के सारथि अरुण देव ।

सूरण—(पुं०) [√सूर् + ल्यु] जमींकंद, सूरन ।

सूरत—(वि०) [सु√रम् + क्त, पृषो० दीर्घ] सहृदय । कृपालु । शान्त ।

सूरि—(पुं०) [√सू + क्रिन्] सूर्य । विद्वज्जन, पण्डितजन; 'अथवा कृतवाग्द्वारे वंशेऽस्मिन्पूर्वसूरिभिः' र० १.४ । ऋत्विक् । पुजारी, अर्चक । जैनियों की एक सम्मान-सूचक उपाधि । श्रीकृष्ण का नामान्तर । बृहस्पति ।

सूरिन्—(वि०) [स्त्री०—**सूरिणी**] [√सूर् + णिनि] विद्वान् । (पुं०) विद्वान् व्यक्ति ।

सूरी—(स्त्री०) [सूरि + ङीष्] सूर्य की पत्नी का नाम । कुन्ती का नाम ।

√सूर्क्ष् (र्क्ष्य्)—भ्वा० पर० सक० अनादर करना । सूर्क्ष (र्क्ष्य) ति, सूर्क्षि (र्क्ष्यि) ष्यति, असूर्क्षी (र्क्ष्यी) त् ।

सूर्क्षण, सूर्क्ष्यण—(न०) [√सूर्क्ष् (र्क्ष्य्) + ल्युट्] असम्मान, बेइज्जती ।

सूर्क्ष्य—(पुं०) [√सूर्क्ष् + घञ्] माष, उड़द ।

सूर्ण—(वि०) [√सूर् + क्त] हत ।

सूर्प—[=शूर्प, पृषो० शस्य सः] दे० 'शूर्प' ।

सूर्मि, सूर्मी—(स्त्री०) [=शूर्मि, पृषो० शस्य सः, पक्षे ङीप्] लोहे या अन्य किसी धातु की बनी मूर्ति, धातु-विग्रह । घर का खंभा । चमक, आभा, दीप्ति । शोला, अंगारा ।

सूर्य—(पुं०) [√सृ + क्यप् नि० साधुः] सौर जगत् का वह सब से बड़ा और जाज्वल्यमान पिण्ड जिससे सब ग्रहों को गरमी और प्रकाश मिलता है, रवि, दिनकर । आक का पौधा । बारह की संख्या ।—**अपाय** (**सूर्यापाय**)- (पुं०) सूर्यास्त ।—**अर्घ्य** (**सूर्यार्घ्य**) - (न०) सूर्य के उद्देश्य से दिया जाने वाला अर्घ्य ।— **अश्मन्** (**सूर्याश्मन्**)- (पुं०) सूर्यकान्तमणि ।—**अश्व** (**सूर्याश्व**)- (पुं०) सूर्य का घोड़ा, वाताड, हरित् ।—**अस्त** (**सूर्यास्त**)- (न०) सूर्य का डूबना । सायंकाल ।—**आतप** (**सूर्यातप**)- (पुं०) सूर्य की गरमी, धूप ।— **आलोक** (**सूर्यालोक**)-(पुं०) सूर्य की रोशनी । धूप ।—**आवर्त** (**सूर्यावर्त**)- (पुं०) हुलहुल का पौधा । सुवर्चला । गजपिप्पली । ब्राह्मणी ।—**आह्व** (**सूर्याह्व**)- (वि०) सूर्य के नाम वाला । (न०) तांबा । (पुं०) आकवन । महेन्द्रवारुणी ।—**उत्थान** (**सूर्योत्थान**) (न०), —**उदय** (**सूर्योदय**)- (पुं०) सूर्य का उगना या निकलना ।—**ऊढ** (**सूर्योढ**)- (पुं०) वह अतिथि जो शाम को आया हो । सूर्यास्तकाल ।—**कान्त**- एक तरह का स्फटिक जिससे सूर्य के सामने करने से आग निकलती है; आतशी शीशा ।—**काल**-(पुं०) दिवस, दिन । —**ग्रह**-(पुं०) सूर्य । सूर्य का ग्रहण । राहु और केतु के नामान्तर । जलघट की तली ।—**ग्रहण**- (न०) राहु या केतु द्वारा सूर्य का ग्रास। (मतान्तर में) चन्द्रमा की छाया पड़ने से सूर्य-बिम्ब का छिप जाना । —**चन्द्र** [=**सूर्याचन्द्रमसौ**]-(पुं०) (द्विवचन) सूर्य और चन्द्रमा ।—**ज**,—**तनय**, —**पुत्र**-(पुं०) सुग्रीव का नामान्तर । कर्ण । शनिग्रह । यम ।—**जा**,—**तनया**- (स्त्री०) यमुना नदी ।—**तेजस्** -(न०) सूर्य का आतप या चमक ।—**नक्षत्र**- -(न०) २७ नक्षत्रों में से वह जिस पर सूर्य हो ।—**पर्वन्**- (न०) संक्रमण और सूर्यग्रहण आदि ।—**प्रभव**- (वि०) सूर्य से उत्पन्न या निकला हुआ; 'क्व सूर्यप्रभवो

वंश:' र० १.२ ।—**भक्त**– (वि०) सूर्योपासक । (पुं०) बन्धूक नामक वृक्ष या उसके फूल ।—**मणि**– (पुं०) सूर्यकान्त मणि ।—**मण्डल**– (न०) सूर्य की परिधि या घेरा ।—**यन्त्र**– (न०) सूर्य के मंत्र और बीज से अङ्कित ताम्रपत्र जिसका सूर्य के उद्देश्य से पूजन किया जाता है । यंत्र विशेष या दूरबीन जिससे सूर्य की गति आदि का हाल जाना जाय ।—**रश्मि**–(पुं०) सूर्य की किरण ।— **लोक**–(पुं०) सूर्य के रहने का लोक विशेष । —**वंश**–(पुं०) वैवस्वत मनु के पुत्र इक्ष्वाकु से प्रचलित वंश, इक्ष्वाकु-वंश ।—**वर्चस्**–(वि०)सूर्य की तरह चमकीला ।—**विलोकन**–(न०) चार मास का होने पर शिशु को बाहर निकाल कर सूर्य का दर्शन कराने की विधि । —**सङ्क्रम**– (पुं०),—**सङ्क्रान्ति**–(स्त्री०) सूर्य का एक राशि से दूसरी राशि पर जाना ।—**संज्ञ**–(न०) केसर ।—**सारथि**– (पुं०) अरुण का नामान्तर ।—**स्तुति**– (स्त्री०), —**स्तोत्र**–(न०) वह स्तुति जो सूर्य के प्रति हो । —**हृदय**– (न०) सूर्य का स्तव विशेष ।

सूर्या—(स्त्री०) [सूर्य –टाप्] सूर्य-पत्नी, संज्ञा । इंद्रवारुणी । नवोढ़ा । वाणी ।

√सूष्—भ्वा० पर० सक० प्रसव करना । सूषति, सूषिष्यति, असूषीत् ।

सूषणा–(स्त्री०)[√सूष्+ल्यु]जननी, माता।

√सृ—भ्वा० पर० सक० गमन करना । समीप जाना । आक्रमण करना । अक० दौड़ना, भागना । बहना, चलना (जैसे हवा का)। बहना (पानी का) । सरति, सरिष्यति, असरत् – असार्षीत् । जु० उभ० सक० जाना । अक० ठहरना । सारयति-ते । जु० पर० सक० जाना । ससर्ति ।

सृक—(पुं०) [√सृ + कक्] पवन । तीर । वज्र । कमल ।

सृकण्डु—(पुं०) [√सृ+क्विप्, पृषो० न तुक्, सृ—कण्डु, कर्म० स०] खाज, खुजली ।

सृका—(स्त्री०) [सृक+टाप्] मणि-निर्मित माला ।

सृकाल—(पुं०) [√सृ + कालन्] शृगाल, गीदड़ ।

सृक्क, सृक्कन्, सृक्वन्—(न०) [सृज् +कन्] [√सृज् + कनिन्] [√सृज् +क्वनिप्] ओष्ठ का प्रान्त भाग, मुख के दोनों ओर के कोने ।

सृग—(पुं०) [√ सृ + गक्] भिन्दिपाल, एक प्रकार की गदा या हलबाँस ।

सृगाल—(पुं०) [√सृ +गालन्] सियार, गीदड़ ।

सृगालिका—(स्त्री०) [सृगाल+ङीष् +कन्—टाप्, ह्रस्व] सियारिन, गीदड़ी । लोमड़ी । पिठवन । भूमिकूष्मांड । बिदारी कंद । भगदड़, पलायन । दंगा ।

सृगाली—(स्त्री०) [सृगाल + ङीष्]सियारिन । लोमड़ी । विदारीकंद । तालमखाना । भगदड़ । दंगा ।

√सृज्—दि० आत्म० सक० सृष्टि करना । बनाना । रचना । छोड़ देना, मुक्त करना । उड़ेलना । उच्चारण करना । फेंकना । त्यागना । सृज्यते, स्रक्ष्यते, असृष्ट । तु० पर० सक० दे० दि० के अर्थ, सृजति, स्रक्ष्यति, अस्राक्षीत् ।

सृञ्जय—(पुं०) एक जनपद । मनु के एक पुत्र का नाम ।

सृणि—(स्त्री०) [√सृ + निक्] अंकुश; 'मदान्धकरिणां दर्पोपशान्त्यै सृणिः' हि० २.१६५ । (पुं०) शत्रु । चन्द्रमा ।

सृणिका, सृणीका—(स्त्री०) [सृणि+कन् –टाप्][सृणि+ईकन्—टाप्]लाला, लार ।

सृति—(स्त्री०) [√सृ +क्तिन्] मार्ग । 'नैते सृती पार्थ जानन् योगी मुह्यति कश्चन'

भग० ८.२७। जाना अनिष्टकरण। जन्म। निर्माण।

सृत्वर—(वि०) [स्त्री०—सृत्वरी] [√सृ+क्वरप्] गमन करने वाला, जाने वाला।

सृत्वरी—(स्त्री०) [सृत्वर+ङीप्] नदी। माता।

सृदर—(पुं०) [√सृ+वरच्, दुक् आगम] साँप।

सृदाकु—(पुं०) [√सृ+काकु, दुक्] पवन। अग्नि। मृग। इन्द्र का वज्र। सूर्य का मंडल। (स्त्री०) नदी।

√सृप्—भ्वा० पर० सक० रेंगना, सरकना। जाना, चलना। सर्पति, सर्पिष्यति, असृपत्।

सृपाट—(पुं०) [√सृप्+काटन्] माप विशेष। रक्त-धारा।

सृपाटिका—(स्त्री०) [सृपाट+ङीप्+कन्-टाप्, ह्रस्व] पक्षी की चोंच।

सृपाटी—(स्त्री०) [सृपाट+ङीप्] दे० 'सृपाट'।

सृप्र—(पुं०) [√सृप्+क्रन्] चन्द्रमा।

√सृभ्, √सृम्भ्—भ्वा० पर० सक० मारना, वध करना सर्भति, सर्भिष्यति, असर्भीत्। सृम्भति, सृम्भिष्यति, असृम्भीत्।

सृमर—(वि०) [स्त्री०—सृमरी] [√सृ+क्मरच्] गमन करने वाला, जाने वाला। (पुं०) बाल मृग। एक असुर।—

सृष्ट—(वि०) [√सृज्+क्त] पैदा किया हुआ, सिरजा हुआ। उड़ेला हुआ। त्यागा हुआ, छोड़ा हुआ। विदा किया हुआ। विसर्जन किया हुआ। बरखास्त किया हुआ, निकाला हुआ। निश्चित किया हुआ। मिलाया हुआ। अधिक, विपुल। भूषित।

सृष्टि—(स्त्री०) [√सृज्+क्तिन्] रचना। संसार की रचना। प्रकृति। छुटकारा। दान। पदार्थ का भावाभाव। एक प्रकार की ईंट जो यज्ञ की वेदी बनाने के काम में आती थी। संसारी।—**कर्तृ**-(पुं०) ब्रह्मा। ईश्वर।

√सॄ—क्र्या० पर० सक० वध करना। सृणाति, सरि (री) ष्यति, असारीत्।

√सेक्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। सेकते, सेकिष्यते, असेकिष्ट।

सेक—(पुं०) [√सिच्+घञ्] सींचने की क्रिया। छिड़काव। अभिषेक। तर्पण। फुहारा। वीर्यपात। नैवेद्य।—**पात्र**-(न०) वह बरतन जिससे छिड़काव किया जाय। बाल्टी, डोल।

सेकिम—(न०) [सेक+डिम] मूली। सलगम।

सेक्तृ—(वि०) [स्त्री०—सेक्त्री] [√सिच्+तृच्] छिड़कने वाला। (पुं०) छिड़काव करने वाला व्यक्ति। पति।

सेक्त्र—(न०) [√सिच्+ष्ट्रन्] डोलची, पानी छिड़कने का पात्र।

सेचक—(वि०) [स्त्री०—सेचिका] [√सिच्+ण्वुल्] सिंचन करने वाला, जल छिड़कने वाला। (पुं०) बादल।

सेचन—(न०) [√सिच्+ल्युट्] पानी का छिड़काव, सींचना। अभिषेक। स्राव। नहाने का फुहारा। डोलची, बाल्टी।—**घट**-(पुं०) सींचने का घड़ा या पात्र।

सेचनी—(स्त्री०) [सेचन+ङीप्] बाल्टी, डोलची।

सेटु—(पुं०) [√सिट्+उन्] तरबूज। ककड़ी।

सेतिका—(स्त्री०) अयोध्या का नाम।

सेतु—(पुं०) [√सि+तुन्] मेंड़। बाँध। पुल; 'वैदेहि! पश्यामलयाद्विभक्तं मत्सेतुना फेनिलमम्बुराशिं' र० १३.२। भू-सीमा। घाटी। सङ्कीर्ण मार्ग। सीमा, हद। प्रतिबन्धक, किसी भी प्रकार की रोक या रुकावट। निर्दिष्ट या निर्द्धारित नियम या विधि। प्रणव, ओङ्कार [यथा कालिका-

पुराणे—मन्त्राणां प्रणवः सेतुस्तत्सेतुः प्रणवः स्मृतः। स्रवत्यनोङ्कृतं पूर्वं परस्ताच्च विशीर्यति।।) टीका। वरण वृक्ष। द्रुह्यु का एक पुत्र।—बन्ध- (पुं०) बाँध, पुल आदि का निर्माण। श्रीरामचन्द्र जी का बनवाया हुआ इतिहास-प्रसिद्ध पुल।—भेदिन्-(वि०) सीमा तोड़ने वाला। रुकावट दूर करने वाला। (पुं०) दन्ती नामक वृक्ष।

सेतुक—(पुं०) [सेतु + क] बाँध। पुल। वरुण वृक्ष।

सेत्र—(न०) [√सि+ष्ट्रन्] बन्धन। बेड़ी।

सेदिवस्—(वि०) [स्त्री०—**सेदुषी**] [√सद्+लिट् — क्वसु] बैठा हुआ।

सेन—(वि०) [सह इनेन, ब० स०, सहस्य सः] वह जिसका कोई प्रभु हो। (न०) देह।

सेना—(स्त्री०) [√सि+न—टाप्, वा सेन—टाप्] युद्ध-शिक्षा प्राप्त समस्त व्यक्तियों का दल, फौज, वाहिनी। शक्ति, भाला। इन्द्राणी। इन्द्र का वज्र। तीसरे अर्हत् शंभव की माता का नाम। वेश्याओं की प्राचीन उपाधि।— **अग्र** (**सेनाग्र**)-(न०) सेना का वह दल जो आगे चलता है।—**चर**-(पुं०) सिपाही। अनुचरवर्ग।—**निवेश**-(पुं०) सेना की छावनी, सैन्यशिविर। शिविर।—**नी**-(पुं०) सेनानायक; 'सेनानीनामहं स्कन्दः' भग० १०.२४। कार्त्तिकेय का नाम।—**पति**- (पुं०) सेना का नायक। कार्त्तिकेय। धृतराष्ट्र का एक पुत्र।—**परिच्छद**- (वि०) सेना से घिरा हुआ।—**पृष्ठ**- (न०) सेना का पिछला भाग।—**भङ्ग**- (पुं०) सेना का तितर-बितर हो जाना।—**मुख**- (न०) सेना का अग्रभाग। सेना का वह दल, जिसमें ३ हाथी, ३ रथ, ९ घोड़े, और पन्द्रह पैदल सिपाही होते हैं। नगर-द्वार के सामने का मिट्टी का टीला या बुर्ज।—**योग**-(पुं०) सेना की सजावट।—**रक्ष**-(पुं०) पहरेदार, पहरुआ।

सेफ—(पुं०) [√सि + फ] लिङ्ग, पुरुष की जननेन्द्रिय।

सेमन्ती—(स्त्री०) [√सिम्+झि—अन्त, ङीष्] सफेद गुलाब, सेवती।

सेर—(पुं०) १६ छटांक का एक सेर।

सेराह—(पुं०) दूध के समान सफेद रङ्ग का घोड़ा।

सेरु—(वि०) [√सि + रु] बाँधने वाला।

√सेल्—भ्वा० पर० सक० जाना। सेलति, सेलिष्यति, असेलीत्।

√सेव्—भ्वा० उभ० सक० परिचर्या करना। सेवा करना। पीछा करना, अनुगमन करना। इस्तेमाल करना, उपयोग करना। मैथुन करना। सम्पादन करना। रखवाली करना। क्षमा करना। अक० बसना। सेवति—ते, सेविष्यति—ते, असेवीत्—असेविष्ट।

सेव-(पुं०)[√सेव्+क(घञर्थे)]दे० 'सेवन'। सेब फल।

सेवक—(वि०) [√सेव्+ण्वुल्]सेवा करने वाला। अर्चा करने वाला। अनुगमन करने वाला। परतन्त्र, पराधीन। (पुं०) नौकर, चाकर। भक्त। [√सिव् + ण्वुल्] दर्जी। सीने वाला व्यक्ति।

सेवधि—(पुं०) दे० 'शेवधि'।

सेवन—(न०) [√सेव्+ल्युट्] सेवा करने की क्रिया। इस्तेमाल करने की क्रिया, काम में आने की क्रिया। मैथुन करने की क्रिया। [√सिव्+ल्युट्] सीना, सीने का काम। बोरा।

सेवा—(स्त्री०) [√सेव्+अङ—टाप्]परिचर्या, खिदमत, सेवकाई। पूजन, अर्चा। अनुराग। उपयोग। आसरा। चापलूसी, ठकुरसुहाती।—**धर्म**-(पुं०) सेवकाई करने का कर्तव्य।

सैवि—(न०) [√सेव्+इन्] बेर या बेरी का फल। सेव।

सेवित—(वि०) [√सेव्+क्त] सेवन किया हुआ, सेवकाई किया हुआ। अभ्यास किया हुआ। आसरा लिया हुआ। उपभोग किया हुआ, काम में लाया हुआ। (न०) दे० सेवि।

सेवितृ—(पुं०) [√सेव्+तृच्] सेवक, नौकर। (वि०) सेवा करने वाला।

सेविन्—(वि०) [√सेव्+णिनि] सेवा करने वाला। पूजा करने वाला। अभ्यास करने वाला। काम में लाने वाला। बसने वाला। (पुं०) नौकर, अनुचर।

सेव्य—(वि०) [√सेव्+ण्यत्] सेवा करने योग्य। आराधना करने योग्य। उपभोग करने लायक। रखवाली करने लायक। (न०) वीरणमूल, खस। लामज्जक तृण। (पुं०) अश्वत्थ वृक्ष। हिज्जल वृक्ष। गौरैया पक्षी। सुगंधवाला। समुद्री नमक। दही का खूब जमा हुआ बीच का हिस्सा। जल। लाल चंदन। एक प्रकार का मद्य। स्वामी। —**सेवक**–(पुं०) मालिक और नौकर।

√**सै**—भ्वा० पर० अक० नष्ट होना। सायति, सास्यति, असासीत्।

सैंह—(वि०) [स्त्री०—**सैंही**] [सिंह+अण्] सिंह-सम्बन्धी।

सैंहल—(वि०) [सिंहल+अण्] सिंहल द्वीप सम्बन्धी। लंका में उत्पन्न।

सैंहिक, सैंहिकेय—(पुं०) [सिंहिका+ठक्] [सिंहिका+ढक्] राहु का नामान्तर।

सैकत—(वि०) [स्त्री०—**सैकती**] [सिकता+अण्] रेतीला। रेतीली ज़मीन वाला। (न०) रेतीला तट; 'सुरगज इव गाङ्गं सैकतं सुप्रतीकः' र० ५.७५। वह द्वीप जिसके तट पर रेत या बालू हो।—**इष्ट** (**सैकतेष्ट**)–(न०) अदरक, आदी।

सैकतिक—(वि०) [स्त्री०—**सैकतिकी**] [सैकत+ठक्] सिकतामय तट सम्बन्धी। [सह एकतया सैकतम् तद् अस्य अस्ति, सैकत+ठन्] सन्देहजीवी। (पुं०) संन्यासी। (न०) मातृयात्रा। मंगलसूत्र।

सैद्धान्तिक—(वि०) [सिद्धान्त+ठक्] सिद्धान्त सम्बन्धी। (पुं०) सिद्धान्त या यथार्थ सत्य जानने वाला व्यक्ति।

सैनापत्य—(न०) [सेनापति+ष्यञ्] सेनानायकत्व, सेनापतित्व।

सैनिक—(वि०) [स्त्री०—**सैनिकी**] [सेना+ठक्] सेना सम्बन्धी, फौजी। (पुं०) सिपाही, योद्धा। सन्तरी। सेना जो युद्ध के लिये सजा कर खड़ी की गई हो।

सैन्धव—(वि०) [स्त्री०—**सैन्धवी**] [सिन्धु+अण्] सिन्धु देश में उत्पन्न। सिन्धु नदी सम्बन्धी। नदी में उत्पन्न। सामुद्रिक, समुद्र सम्बन्धी। (पुं०) घोड़ा, विशेष कर सिन्धु देश का। एक ऋषि का नाम। सिन्धु देश के निवासी। (पुं०, न०) सेंधा नमक।—**घन**–(पुं०) सेंधा नमक का डेला।—**पति**–(पुं०) सिन्धु-वासियों का राजा जयद्रथ।

सैन्धवक—(वि०) [स्त्री०—**सैन्धवकी**] [सैन्धव+वुञ्] सैन्धव सम्बन्धी। (पुं०) [सिन्धु+वुञ्] सिन्धु देश का कोई विपत्तिग्रस्त आदमी।

सैन्धी—(स्त्री०) ताड़ी।

सैन्य—(पुं०) [सेना+ञ्य] सैनिक, योद्धा। संतरी, पहरेदार। (न०) सेना, फौज; 'स प्रतस्थेऽरिनाशाय हरिसैन्यैरनुद्रुतः' र० १२.६७।

सैमन्तिक—(न०) [सीमन्त+ठक्] सिंदूर।

सैरन्ध्र, सैरिन्ध्र—(पुं०) [सीरं हलं धरति, सीर√धृ+क, मुम्, सीरन्ध्रः कृषकः तस्य इदं शिल्पकर्म, सीरन्ध्र+अण् तत् अस्य अस्ति सैरन्ध्र+अच्, पक्षे पृषो० इत्व] एक

तरह का निम्न श्रेणी का टहलू, नौकर। दस्यु और अयोगवी से उत्पन्न एक संकर जाति।

सैरन्ध्री, सैरिन्ध्री—(स्त्री०) [सैरन्ध्र+ङीष्] [सैरिन्ध्र+ङीष्] अन्तःपुर में काम करने वाली दासी जिसकी उत्पत्ति दस्यु और अयोगवी से हुई हो। दूसरे के घर में रहने वाली स्वाधीन शिल्पकारिणी स्त्री। द्रौपदी का वह नाम जो उसने अज्ञातवास के समय रखा था।

सैरिक—(वि०) [स्त्री०—**सैरिकी**] [सीर+ठक्] हल सम्बन्धी। सीर वाला। (पु०) हल का बैल। हलवाहा।

सैरिन्ध्र—(पु०) कारीगर। नौकर।

सैरिभ—(पु०) [सीरे हले तद्वहने इभ इव शूरत्वात्, शक० पररूप, ततः स्वार्थे अण्] भैंसा। स्वर्ग।

सैवाल—(पु०) [सेवार्थं मीनादीनाम् उपभोगाय अलति पर्याप्नोति, सेवा √ अल्+अच्, सेवाल+अण्] दे० 'शैवाल'।

सैसक—(वि०) [स्त्री०—**सैसकी**] [सीसक+अण्] सीसा संबंधी। सीसे का बना।

√सो—दि० पर० सक० वध करना, नष्ट करना। समाप्त करना, पूर्ण करना। स्यति, सास्यति, असात्—असासीत्।

सो—(स्त्री०) पार्वती।

सोढ—(वि०) [√सह्+क्त] सहन किया हुआ। सहनशील।

सोढृ—(वि०) [स्त्री०—**सोढ्री**] [√सह्+तृच्] सहिष्णु। शक्तिमान्।

सोत्क, सोत्कण्ठ—(वि०) [सह उत्केन, ब० स०, सहस्य सः] [सह उत्कण्ठया] अत्यन्त उत्सुक। शोकान्वित।

सोत्प्रास—(वि०) [सह उत्प्रासेन] अलधिक। बहुत बढ़ा कर कहा हुआ, अतिशयोक्त। व्यङ्ग्यपूर्ण। (पुं०) अट्टहास। (पु०, न०) व्यङ्ग्यपूर्ण अतिशयोक्ति। व्याजस्तुति।

सोत्सव—(वि०) [सह उत्सवेन] उत्सवयुक्त। आनन्दित।

सोत्साह—(वि०) [सह उत्साहेन] उत्साह सहित।

सोत्सेध—(वि०) [सह उत्सेधेन] उन्नत, ऊँचा; 'सोत्सेधैः स्कन्धदेशैः' मु० ४.७।

सोदय—(वि०) [सह उदयेन] उदय-सहित। सूद-सहित।

सोदर—(वि०) [समानम् उदरं यस्य, ब० स०, समानस्य सः] एक उदर से उत्पन्न। (पु०) सहोदर भाई।

सोदरा—(स्त्री०) [सोदर+टाप्] सगी बहिन।

सोदर्य—(पु०) [सोदर+यत्] सहोदर भ्राता।

सोद्योग—(वि०) [सह उद्योगेन] उद्योगशील, अध्यवसायी।

सोद्वेग—(वि०) [सह उद्वेगेन] घबड़ाया हुआ। शङ्कित। शोकान्वित।

सोनह—(पु०) [√सु+विच्, सो √ नह्+क] लहसुन।

सोन्माद—(वि०) [सह उन्मादेन] पागल, सिड़ी, सनकी।

सोपकरण—(वि०) [सह उपकरणेन] वह जिसके पास अपेक्षित समस्त साधन या सामान हो।

सोपद्रव—(वि०) [सह उपद्रवेण] उपद्रवयुक्त।

सोपध—(वि०) [सह उपधया] धूर्त, कपटी, धोखेबाज।

सोपधि—(वि०) [सह उपधिना] कपटी, धूर्त। (अव्य० स०) सकपट; 'अरिषु हि विजयार्थिनः क्षितीशा विदधति सोपधि सन्धिदूषणानि' कि० १.४५।

सोपप्लव—(वि०) [सह उपप्लवेन] किसी बड़े सङ्कट में पड़ा हुआ। शत्रुओं से

आक्रान्त। ग्रस्त, जैसे चन्द्र और सूर्य ग्रस्त होते हैं।

सोपरोध—(वि०) [सह उपरोधेन] अवरुद्ध। अनुगृहीत।

सोपसर्ग—(वि०) [सह उपसर्गेण] किसी बड़ी मुसीबत या सङ्कट में पड़ा हुआ। किसी भूत-प्रेत द्वारा आवेशित। व्याकरण में उपसर्ग सहित।

सोपहास—(वि०) [सह उपहासेन] उपहास युक्त। घृणा-व्यञ्जक हास्य-युक्त।

सोपाक—(पुं०) [=श्वपाक, पृषो० साधुः] चंडाल पुरुष से पुक्कसी के गर्भ में उत्पन्न संतान, श्वपाक। वन्यओषधि-विक्रेता।

सोपाधि, सोपाधिक—(वि०) [स्त्री०—**सोपाधिकी**] [सह उपाधिना, ब० स० सहस्य सः, पक्षे कप्] उपाधि सहित। विशेषता-युक्त।

सोपान—(न०) [उप√अन् + घञ्, सह विद्यमानः उपानः उपरिगतिः अनेन] सिड्ढी, सीढ़ी, जीना; 'आरोहणार्थं नवयौवनेन कामस्य सोपानमिव प्रयुक्तम्' कु० १.३९। —**पङ्क्ति**- (स्त्री०), —**पथ**- (पुं०), —**पद्धति,—परम्परा**- (स्त्री०), —**मार्ग**-(पुं०) जीना, नसैनी, सीढ़ी।

सोम—(पुं०) [√सु+मन्] एक लता जिसका रस यज्ञ के काम में आता है। सोमवल्ली का रस। अमृत। चन्द्रमा। किरण। कपूर। जल। वायु। कुबेर का नाम। मन। [किसी समासान्त शब्द के अन्त में आने पर इसका अर्थ होता है—मुख्य, प्रधान, सर्वोत्तम। यथा **नृसोम**]। (न०) काँजी। आकाश। (पुं०) [सह उमया] शिव।—**अभिषव** (**सोमाभिषव**)-(पुं०) सोम का रस निचोड़ना।—**अह** (**सोमाह**)-(पुं०) सोमवार।—**आख्य** (**सोमाख्य**) -(न०) लाल कमल।—**ईश्वर** (**सोमेश्वर**)-(पुं०) दे० 'सोमनाथ'।—**उद्भवा** (**सोमोद्भवा**)-(स्त्री०) प्रसिद्ध नदी नर्मदा का नाम; 'तस्यैत्युपस्पृश्य पयः पवित्रं सोमोद्भवायाः सरितो नृसोमः' र० ५.५९।—**कान्त**- (पुं०) चन्द्रकान्तमणि।—**क्षय**- (पुं०) चन्द्र की कला का ह्रास।—**ग्रह**- (पुं०) वह पात्र जिसमें सोमरस एकत्रित किया जाय। —**ज**-(वि०) चन्द्रमा से उत्पन्न। (पुं०) बुधग्रह। (न०) दूध।—**धारा**- (स्त्री०) स्वर्ग। आकाश।—**नाथ**- (पुं०) शिवजी के द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों में से एक। काठियावाड़ का एक प्राचीन नगर।—**प**, —**पा**- (वि०) सोमरस पीने वाला। सोमयाग करने वाला। पितृगण विशेष।—**पति**- (पुं०) इन्द्र का नामान्तर।—**पायिन्,—पीथिन्**-(वि०) सोम रस पीने वाला।—**पुत्र,—भू,—सुत**- (पुं०) बुध का नाम।—**प्रवाक**-(पुं०) श्रोत्रिय को सोम-याग के लिए नियुक्त करने का अधिकार प्राप्त मनुष्य।—**बन्धु** (पुं०) कुमुद। सूर्य। बुध।—**याग**-(पुं०) एक यज्ञ जिसमें सोम लता के रस का दान किया जाता है।—**योनि**-(पुं०) देवता। ब्राह्मण। पीत सुगन्ध वाला चन्दन।—**राजी**- (स्त्री०) बाकुची। चन्द्रशृंग। एक वृत्त।—**रोग**- (पुं०) प्रमेह जैसा स्त्रियों का रोग विशेष।—**लता, —वल्लरी**- (स्त्री०) सोम-वल्ली। गोदावरी नदी का नाम।—**वंश**- (पुं०) सोमवंशी क्षत्रिय राजाओं की वह शाखा जो बुध से चली।—**वल्ली**- (स्त्री०) गुडूची। सोमलता। सोमराजी। पातालगरुड़ी। ब्राह्मी। सुदर्शन। लताकरंज। गजपिप्पली। वन-कपास।—**वार,—वासर**- (पुं०) सोमवार।—**विक्रयिन्**-(पुं०) सोम-वल्ली का विक्रेता।—**वृक्ष,—सार**- (पुं०) सफेद खदिर का पेड़।—**शकला**- (स्त्री०) ककड़ी विशेष।

—**संज्ञ**– (न०) कपूर ।—**सद्**– (पुं०) पितृगण विशेष ।—**सिद्धान्त**– (पुं०) एक सिद्धान्त जिसकी दृष्टि में आपस में भेदयुक्त जगत् भी ईश्वर से अभिन्न है, जैसे अंगूठी और कंकण में भेद होने पर भी दोनों सुवर्ण से अभिन्न हैं ।— **सिन्धु**– (पुं०) विष्णु ।— **सुत**–(पुं०) सोमरस चुआने वाला ।—**सुता**– (स्त्री०) नर्मदा नदी । —**सूत्र**– (न०) शिवलिङ्ग के अभिषेक का जल निकालने की नाली ।

सोमन—(पुं०) [√सु+मनिन्] चन्द्रमा ।

सोमावती—(स्त्री०) [सोम+मतुप्, वत्व, ङीप्, दीर्घ] चंद्रमा की माता का नाम ।

सोमिन्—(वि०) [स्त्री०—**सोमिनी**] [सोम+इनि] सोम-युक्त । सोम की आहुति देने वाला । सोम-याग करने वाला ।

सोम्य—(वि०) [सोम + यत्] सोम के योग्य । सोम चढ़ाने वाला । सोम की शक्ल का । मुलायम, कोमल ।

सोल्लुण्ठ— (पुं०), **सोल्लुण्ठन**– (न०) [सह उल्लुण्ठेन, सादेश:] [सह उल्लुण्ठनेन, सादेश:] श्लेषवाक्य, व्याङ्ग्योक्ति, ताना, चुटकी ।

सोष्मन्—(वि०) [सह उष्मणा, सादेश:] उष्ण । ध्वनि-पूर्वक स्पष्ट उच्चारित । (पुं०) स्पष्ट उच्चारण ।

सौकर—(वि०) [स्त्री०—**सौकरी**] [सूकर+अण्]शूकर संबंधी; 'दनुजं दधानमथ सौकरं वपुः' कि० १२.५३ ।

सौकर्य—(न०) [सूकर + ष्यञ्] शूकरपन । [सुकर+ष्यञ्] सहजता, सरलत्व । साध्यता । निपुणता । किसी भोज्य पदार्थ या दवाई को सहज बनाने की तरकीब ।

सौकुमार्य—(न०) [सुकुमार + ष्यञ्] कोमलता, सुकुमारता । जवानी ।

सौक्ष्म्य—(न०) [सूक्ष्म + ष्यञ्] सूक्ष्मता, महीनपन ।

सौखशायनिक—(पुं०) [सुखशयन+ठक्] वह पुरुष जो किसी अन्य पुरुष से सुख-पूर्वक सोने का प्रश्न करे ।

सौखसुप्तिक—(पुं०) [सुखसुप्ति+ठक्] वह पुरुष जो किसी अन्य पुरुष से सुख-पूर्वक सोने का प्रश्न करे। बंदीजन जो राजा या अन्य किसी महान् पुरुष को गान गाकर और बाजे बजाकर जगावे ।

सौखिक, सौखीय—(वि०) [स्त्री०—**सौखिकी, सौखीयी**] [सुख+ठक्] [सुख+छण्] सुख चाहने वाला । सुख संबन्धी ।

सौख्य—(न०) [सुख+ष्यञ् (स्वार्थ] सुख, आनंद ।

सौगत—(पुं०) [सुगत + अण्] सुगत या बुद्ध देव का अनुयायी । (पुं०) बौद्ध ।

सौगतिक—(पुं०) [सुगत + ठक्] बौद्ध । बौद्ध भिक्षुक । नास्तिक, पाखण्डी । (न०) नास्तिकता, अनीश्वरवाद ।

सौगन्ध—(वि०) [स्त्री०—**सौगन्धिक**] [सुगन्ध+अण्] मधुर सुगन्ध-युक्त । (न०)मधुर खुशबूपन, सुगन्धि । सुगन्ध-युक्त घास विशेष, कत्तृण ।

सौगन्धिक—(वि०) [स्त्री०—**सौगन्धिका, सौगन्धिकी**] [सुगन्ध + ठन् — इक +अण् (स्वार्थे) वा सुगन्ध+ठक्] मधुर सुगन्धि वाला, खुशबूदार । (न०) सफेद कमल । नील कमल । कत्तृण नामक खुशबूदार तृण विशेष । चुन्नी, लाल । (पुं०) गन्धी, इत्रफरोश । गन्धक ।

सौगन्ध्य—(न०) [सुगन्ध + ष्यञ्] महक या सुगन्धि की मधुरता । खुशबू, सुवास ।

सौचि, सौचिक—(पुं०) [सूचि+इञ्] [सूचि+ठक्] दर्जी ।

सौजन्य—(न०) [सुजन + ष्यञ्] नेकी, भलाई, नम्रता । उदारता । कृपालुता । मैत्री ।

सौण्डी—(स्त्री०) [शुण्डा तदाकारोऽस्ति अस्याः, शुण्डा + अण्—ङीप्, पृषो० ह्रस्व नः] गजपीपल ।

सौति—(पुं०) [सूत + इञ्]कर्ण का नामान्तर ।

सौत्य—(न०) [सूत + ष्यञ्] सारथी-पन ।

सौत्र—(वि०) [स्त्री०—**सौत्री**] [सूत्र +अण्] सूत-सम्बन्धी । सूत्र संबंधी । (पुं०) ब्राह्मण । भ्वादि आदि दशगण में होने वालों से भिन्न केवल सूत्र में वर्णित धातु ।

सौत्रान्तिक—(पुं०) सौगत नाम की बौद्ध धर्म की एक शाखा ।

सौत्रामणी—(स्त्री०) [सुत्रामा इन्द्रो देवता अस्याः सुत्रामन् + अण्—ङीप्] एक इष्टि या यज्ञ जो इन्द्र को प्रसन्न करने के लिए किया जाता था । पूर्वदिशा ।

सौदर्य—(न०) [सोदर+ष्यञ्] भ्रातृत्व, भाईपना ।

सौदामनी, सौदामिनी, सौदाम्नी—(स्त्री०) [सुदामा पर्वतभेदः तेन एका दिक्, सुदामन् +अण्—ङीप्, पक्षे पृषो० साधुः] बिजली, विद्युत्; 'सौदामिनीव जलदोदरसन्निलीना' मृ० १.३५। मालाकार विद्युत्। ऐरावत गज की स्त्री । एक अप्सरा । एक रागिणी । कश्यप और विनता की एक पुत्री ।

सौदायिक—(न०) [सुदाय + ठञ्] वह सम्पत्ति जो किसी स्त्री को विवाह के समय दी जाय और जो उसी की हो जाय । (वि०) दाय या दहेज संबंधी ।

सौध—(वि०) [स्त्री०—**सौधी**] [सुधा +अण्] अमृत सम्बन्धी । अमृत रखने वाला । अस्तरकारी किया हुआ । (न०) सफेदी से पुता हुआ भवन । विशाल भवन । राजप्रासाद; 'सौधवासमुटजेन विस्मृतः संचिकाय फलनिस्पृहस्पः' र० १९.२ । चाँदी । दूधिया पत्थर ।—**कार**-(पुं०) मेमार, राज, थवई, अस्तरकारी करने वाला ।— **वास**-(पुं०) राजसी भवन । महल जैसा मकान ।

सौधार—(पुं०) नाटक का एक भाग ।

सौधाल—(न०) शिवजी का मन्दिर ।

सौन—(वि०) [स्त्री०—**सौनी**] [सूना +अण्] कसाईपन या कसाईखाने से सम्बन्ध रखने वाला । (न०) कसाई के घर का मांस ।—**धर्म्य**-(न०)घोर शत्रुता ।

सौनन्द—(न०) [सुनन्द + अण्] बलराम का मूसल ।

सौनिक—(पुं०) [सूना + ठण्] कसाई ।

सौनन्दिन्—(पुं०) [सौनन्द + इनि] बल-राम का नामान्तर ।

सौन्दर्य—(न०) [सुन्दर+ष्यञ्] सुन्दरता, मनोहरता । उदारात्मता ।

सौपर्ण—(न०) [सुपर्ण + अण्] सोंठ । पन्ना । गरुड़पुराण । गारुत्मत मंत्र । (पुं०) ऋग्वेद का एक सूक्त । (वि०) गरुड़ संबंधी ।

सौपर्णेय—(पुं०) [सुपर्ण्याः विनतायाः अपत्यम्, सुपर्णी+ढक्] गरुड़ ।

सौप्तिक—(वि०) [स्त्री०—**सौप्तिकी**] [सुप्ति+ठञ्] निद्रा सम्बन्धी । (न०) रात्रि के समय का आक्रमण, वह आक्रमण जो रात के समय सोते लोगों पर किया जाय ।— **पर्वन्**-(न०) महाभारत का दसवाँ पर्व ।—**वध**- (पुं०) पाण्डवों के शिविर में सोते हुए लोगों की अश्वत्थामा द्वारा हत्या । 'मार्गो ह्येष नरेन्द्र सौप्तिक-वधे पूर्वं कृतो द्रोणिना' मु० ३.११ ।

सौबल—(पुं०) [सुबल+अण्] शकुनि का नामान्तर ।

सौबली, सौबलेयी—(स्त्री०) [सौबल —ङीप्] [सुबला + ढक्—ङीप्] गान्धारी, दुर्योधन की माता का नाम ।

सौभ—(न०) [सुष्ठु सर्वत्र लोके भाति, सु√भा + क+अण् (स्वार्थे)] हरिश्चन्द्र की नगरी का नाम, जिसके विषय में कहा जाता है कि वह अन्तरिक्ष में लटक रही है।

सौभग—(न०) [सुभग +अण्] सौभाग्य। समृद्धि, धन-दौलत। सौन्दर्य। आनन्द।

सौभद्र, सौभद्रेय—(पुं०) [सुभद्रा+अण्] [सुभद्रा+ढक्] सुभद्रा के पुत्र अभिमन्यु का नामान्तर। विभीतक वृक्ष।

सौभागिनेय—(पुं०) [सुभगा+ढक्, इनङ्, द्विपदवृद्धि] किसी भाग्यवती का पुत्र।

सौभाग्य—(न०) [सुभगा+ष्यञ्, द्विपदवृद्धि] अच्छा भाग्य, अच्छी किस्मत। सुभगता। शुभत्व, कल्याणत्व। सौन्दर्य। गरिमा, महत्त्व। सुहाग, अहिवात। बधाई, मुबारकबाद। सिंदूर। सुहागा।—**चिह्न**-(न०) सौभाग्य या हर्ष का लक्षण जैसे रोरी का माथे पर तिलक। सौभाग्यवती होने के चिह्न यथा—हाथों की चूड़ियाँ, माँग का सिंदूर, पैरों के बिछुए।—**तन्तु**-(पुं०) वह डोरा जो वर के गले में विवाह के दिनों में डाला जाता है, मंगलसूत्र।—**तृतीया**-(स्त्री०) भाद्र-शुक्ल-तृतीया।

सौभाग्यवत्—(वि०) [सौभाग्य+मतुप्, वत्व] भाग्यशाली। कल्याण-विशिष्ट। शुभ।

सौभाग्यवती—(स्त्री०) [सौभाग्यवत् —ङीप्] विवाहित स्त्री जिसका पति जीवित है, सुहागिन।

सौभिक—(पुं०) [सौभं कामचारिपुरं तन्निर्माणे शिल्पमस्य, सौभ+ठक्] ऐन्द्रजालिक, मदारी।

सौभ्रात्र—(न०) [सुभ्रातृ + अण्] अच्छा भ्रातृभाव; 'सौभ्रात्रमेषां हि कुलानुसारि' र० १६.१।

सौमनस—(वि०) [स्त्री०—**सौमनसा** या **सौमनसी**] [सुमनस्+अण्] मनोऽनुकूल। फूल सम्बन्धी। (न०) कृपालुता। परहितैषिता। आनन्द। सन्तोष। कर्ममास या सावन की आठवीं तिथि। जायफल।

सौमनसा—(स्त्री०) [सौमनस + टाप्] जावित्री, जातीपत्री। एक नदी।

सौमनस्य—(न०) [सुमनस् + ष्यञ्] मन का सन्तोष, आनन्द, हर्ष। श्राद्ध के समय ब्राह्मण को दी गई पुष्पों की भेंट।

सौमनस्यायनी—(स्त्री०) [सौमनस्य√अय् +ल्युट्—ङीप्] मालती। उसकी कली।

सौमायन—(न०) [सोम + फक्—आयन] सोम का पुत्र बुध।

सौमिक—(वि०) [स्त्री०—**सौमिकी**] [सोम+ठक्] सोमरस से (यज्ञ) किया हुआ। सोमरस सम्बन्धी। चन्द्रमा सम्बन्धी।

सौमित्र, सौमित्रि—(पुं०) [सुमित्रा +अण्] [सुमित्रा + इञ्] लक्ष्मण का नामान्तर; 'सौमित्रेरपि पत्रिणामविषये तत्र प्रिये! क्वासि मे' उत्त० ३.४५।

सौमिल्ल—(पुं०) एक नाटक-कार जो कालिदास के पूर्व हुए थे।

सौमेधिक—(पुं०) [सुमेधा + ठक्] ऋषि, मुनि (वि०) अलौकिक बुद्धि-सम्पन्न।

सौमेरुक—(वि०) [स्त्री०—**सौमेरुकी**] [सुमेरु+कञ्] सुमेरु-सम्बन्धी। सुमेरु से निकला हुआ। (न०) सुवर्ण, सोना।

सौम्य—(वि०) [स्त्री०—**सौम्या** या **सौम्यी**] [सोम + ट्यण् वा सोम+य +अण्] चन्द्रमा सम्बन्धी। सोम सम्बन्धी। सुन्दर। कोमल। स्निग्ध। शान्त। प्रसन्न। शुभ। (पुं०) बुध ग्रह का नाम। ब्राह्मण को सम्बोधित करने के लिये उपयुक्त सम्बोधनात्मक शब्द। ब्राह्मण। गूलर का वृक्ष। रक्त की वह दशा जो लाल होने के के पूर्व रहती है। अन्नका वह रस जो उसके

जीर्ण होने पर उदर में बनता है। भूगोल के नवखंडों में से एक का नाम। पितृगण विशेष। तारागण विशेष। सोमयज्ञ। उपासक। बायां हाथ। मार्गशीर्ष मास। मृगशिरा नक्षत्र। बायीं आँख। पाँचवाँ मुहूर्त।—**उपचार** (**सौम्योपचार**)-(पुं०) शान्त उपचार।—**ग्रह**-(पुं०) ज्योतिष में चन्द्र-बुध-गुरु-शुक्ररूप शुभ ग्रह।—**धातु**- (पुं०) श्लेष्मा, कफ।— **वार**, —**वासर**-(पुं०) बुधवार।

सौर—(वि०) [स्त्री०—**सौरी**] [सूर +अण्] सूर्य सम्बन्धी, सौर्य। सूर्य को अर्पित। स्वर्गीय। शराब या मदिरा सम्बन्धी। (न०) सूर्य-सूक्त अर्थात् ऋग्वेद के उन मंत्रों का संग्रह जो सूर्य सम्बन्धी हैं। (पुं०) सूर्योपासक। शनिग्रह। सौरमास, वह मास जिसकी गणना संक्रान्ति से हो। सौर दिवस। तुम्बुरु नामक पौधा।—**नक्त**- (न०) रविवार को किया जाने वाला एक व्रत।—**लोक**- (पुं०) सूर्यलोक।

सौरथ—(पुं०) [सुरथ + अण्] योद्धा, वीर, भट।

सौरभ—(वि०) [स्त्री०—**सौरभी**] [सुरभि+अण्] खुशबूदार, सुगन्धि-युक्त। (न०) खुशबू, सुगन्धि। केसर।

सौरभेय—(पुं०) [सुरभेः अपत्यम्, सुरभि +ढक्] बैल, वृषभ।

सौरभी, **सौरभेयी**—(स्त्री०) [सुरभि + अण्—ङीप्] [सौरभेय + ङीप्] गाय। एक अप्सरा।

सौरभ्य—(न०) [सुरभि + ष्यञ्] सुवास, खुशबू। लावण्य, सौन्दर्य। अच्छा चाल-चलन। सुकीर्ति।

सौरसेय—(पुं०) [सुरसा + ढक्] कार्त्ति-केय।

सौरसैन्धव—(वि०) [स्त्री०—**सौरसैन्धवी**] [सुरसिन्धु +अण्] आकाश गंगा-सम्बन्धी। (पुं०) [सौरश्चासौ सैन्धवः कर्म० स०] सूर्य का घोड़ा।

सौराज्य—(न०) [सुराज्य + ष्यञ्] अच्छा राज्य, सुशासन; 'एको ययौ चैत्ररथप्रदे-शान् सौराज्यरम्यानपरो विदर्भान्' र० ५.६०।

सौराष्ट्र—(वि०) [स्त्री०—**सौराष्ट्री** या **सौराष्ट्र**] [सुराष्ट्र+अण्] सुराष्ट्र (अर्थात् सूरत) सम्बन्धी या वहाँ से आया हुआ। (पुं०) सुराष्ट्र देश, गुजरात तथा काठियावाड़ का प्राचीन नाम। सौराष्ट्र देश के अधिवासी। (पुं०) काँसा। कुन्दुरु नामक गंधद्रव्य।

सौराष्ट्रिक—(न०) [सुराष्ट्र + ठक्] एक प्रकार का विषैला कन्द। (पुं०) काँसा।

सौराष्ट्री—(स्त्री०) [सौराष्ट्र+ङीप्] गोपीचंदन।

सौरि—(पुं०) [सूर + इञ्] शनिग्रह। असन नामक वृक्ष।—**रत्न**- (न०) नीलम।

सौरिक—(वि०) [स्त्री०—**सौरिकी**] [सुर या सुरा या सूर+ठक्]देवता संबंधी। मदिरा संबंधी। सूर्य संबंधी। (पुं०) शनिग्रह। स्वर्ग। शराब बेंचने वाला, कलाल।

सौरी—(स्त्री०) [सौर + ङीप्] सूर्य की पत्नी।

सौरीय—(वि०) [स्त्री०—**सौरीयी**] [सूर+छण्] सूर्य के लिये उपयुक्त या सूर्य के योग्य।

सौरेय—(पुं०) [सुरायै हितः, सुरा+ढक्] श्वेत झिंटी।

सौर्य—(वि०) [स्त्री०—**सौर्यी**] [सूर्य +अण्] सूर्य सम्बन्धी।

सौलभ्य—(न०) [सुलभ + ष्यञ्] सुलभ होने का भाव, सुलभता।

सौल्विक—(पु०) [सुल्व + ठक्] ताँबे का काम करने वाला व्यक्ति, ठठेरा।

सौव—(वि०) [स्त्री०—**सौवी**] [स्व या स्वर्+अण्] अपना। सम्पत्ति सम्बन्धी। स्वर्गीय या स्वर्ग का। (न०) आदेश, अनुशासन-पत्र।

सौवग्रामिक— (वि०) [स्त्री०—**सौवग्रामिकी**] [स्वग्राम—ठक्] अपने ग्राम का।

सौवर—(वि०) [स्त्री०—**सौवरी**] [स्वर +अण्] ध्वनि या किसी राग सम्बन्धी।

सौवर्चल—(वि०) [स्त्री०—**सौवर्चली**] [सुवर्चल+अण्] सुवर्चल नामक देश का या उस देश से निकला हुआ। (न०) सज्जीखार। सोंचर नमक।

सौवर्ण—(वि०) [स्त्री०—**सौवर्णी**] [सुवर्ण + अण्] सोने का। (पुं०) एक कर्ष भर सोना। सोने की बाली। (न०) सोना।

सौवस्तिक—(वि०) [स्त्री०—**सौवस्तिकी**] [स्वस्तिक + ठक्] आशीर्वादात्मक। (पु०) कुलपुरोहित।

सौवाध्यायिक—(वि०) [स्त्री०—**सौवाध्यायिकी**] [स्वाध्याय+ठक्] स्वाध्याय का, स्वाध्याय से सम्बन्ध रखने वाला।

सौवास्तव—(वि०) [स्त्री०—**सौवास्तवी**] [सुवास्तु+अण्] अच्छी वास्तु या वासभूमि का।

सौविद, सौविदल्ल—(पुं०) [सु√ विद् +क+अण् (स्वार्थे)] [सुष्ठु विदन् नृपः तं लाति, √ला+क + अण् (स्वार्थे)] अंतःपुर की रखवाली करने वाला व्यक्ति, जनानखाने का अनुचर या नौकर; 'नरागतयनाकुलसौविदल्लाः' शि० ५.१७।

सौवीर—(न०) [सुष्ठु वीरो यत्र सुवीरो देशभेदः तत्र भवम्, सुवीर+अण्] बदरीफल। सुर्मा। खट्टी काँजी। (पुं०) सिंधु नदी के पास का एक प्रदेश और वहाँ के अधिवासी।—**अञ्जन** (**सौवीराञ्जन**)-(न०) सुर्मा या काजल।

सौवीरक—(न०) [सौवीर + कन्] जवा के आटे की खट्टी काँजी। (पु०) बदरी का फल। सुवीर का वासी। जयद्रथ का जन्म।

सौवीर्य—(न०) [सुवीर+ष्यञ्] बड़ी शूरवीरता या पराक्रम।

सौशील्य—(न०) [सुशील + ष्यञ्] सुशीलता, विनम्रता।

सौश्रवस—(न०) [सुश्रवस्+अण्] प्रसिद्धि, प्रख्याति।

सौष्ठव—(न०) [सुष्ठु + अण्] उत्तमता, नेकी, भलमनसाहत। सौन्दर्य। उत्कृष्टतर सौन्दर्य। पटुता, चातुर्य। आधिक्य। हल्कापन। शरीर की एक मुद्रा।

सौस्नातिक—(पु०) [सुस्नात + ठक्] वह जो किसी ग्रन्थ से पूछे कि उसका स्नान भली-भाँति हुआ है या नहीं; 'सौस्नातिको यस्य भवत्यगस्त्यः' र० ६.६१।

सौहार्द—(न०) [सुहृद् +अण्] सद्भाव। मैत्री। (पु०) मित्र का पुत्र।

सौहार्द्य, सौहृद, सौहृदय— (न०) [सुहृद् +ष्यञ्] [सुहृद्+अण्][सुहृदय+अण्] मैत्री, बन्धुता।

सौहित्य—(न०) [सुहित+ष्यञ्] सन्तोष, परिपूर्णता, मनोरमता।

√स्कन्द्—भ्वा० आत्म० अक० कूदना, फलाँगना। उछलना, ऊपर को उठना। गिरना। फूट जाना। नष्ट होना। चूना। बहना। स्कन्दते, स्कन्दिष्यते, अस्कन्दिष्ट। भ्वा० पर० सक० जाना। सोखना। स्कन्दति, स्कन्त्स्यति, अस्कदत् – अस्कान्त्सीत्।

स्कन्द—(पु०) [√स्कन्द् + घञ् वा अच्] उछाल, कुलाँच। पारा। कार्त्तिकेय; 'सेनानीनामहं स्कन्दः' भग० १०.२४। शिव। शरीर। राजा। नदीतट। चालाक आदमी। —**पुराण**-(न०)

अष्टादश पुराणों में से एक ।—**षष्ठी**–(स्त्री०) चैत्र मास की शुक्ला षष्ठी ।

स्कन्दक—(पुं०) [√स्कन्द् + ण्वुल्] कूदने वाला व्यक्ति । सिपाही ।

स्कन्दन—(न०) [√स्कन्द् + ल्युट्] क्षरण, बहाव । रेचन । गमन । शोषण । शीतलोपचार से खून का बहना बंद करने की क्रिया ।

स्कन्ध—(पुं०) [स्कन्द्यते आरुह्यतेऽसौ मूलेन शाखया वा, √स्कन्द्+घञ्, पृषो० साधुः] कंधा । शरीर । पेड़ का तना या धड़ । मोटी डाल । विज्ञान का कोई विभाग या शाखा । ग्रंथ का विभाग जिसमें कोई पूरा प्रसंग हो, खंड । फौज का एक दस्ता या टोली । टोली, दल, समूह । पाँचों ज्ञानेन्द्रियों के विषय । बौद्ध मत में जीवन के पाँच तत्त्व—रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार और विज्ञान । राज्याभिषेक के लिए उपयुक्त सामग्री । युद्ध । राजा । इकरार, कौल करार । मार्ग । आचार्य । मुनि । कंक पक्षी, सफेद चील । आर्या छंद का एक भेद ।—**आवार** (**स्कन्धावार**)–(पुं०) सेना या सेना का एक विभाग । राजधानी । शिविर, पड़ाव ।—**उपानेय** (**स्कन्धोपानेय**)–(वि०) वह जो कंधों पर रख कर ले जाया जाय । (पुं०) एक प्रकार की सन्धि जिसमें शत्रु का वशित्व स्वीकार करने का चिह्नस्वरूप शत्रु के सामने फल, अन्न आदि की भेंट रखनी पड़ती है ।—**चाप**– (पुं०) बहँगी का बाँस ।—**तरु**– (पुं०) नारियल का पेड़ ।—**देश**– (पुं०) कंधे का भाग । हाथी के कंधे का वह भाग जहाँ महावत बैठता है । पेड़ का तना ।—**फल**–(पुं०) नारियल का पेड़ । बिल्व का वृक्ष । गूलर का पेड़ ।—**बन्धन**–(पुं०) सौंफ ।—**मल्लक**– (पुं०) सफेद चील । —**रुह**–(पुं०) वट वृक्ष ।—**वाह**,—**वाहक**–(पुं०) बोझ ढोने वाला बैल आदि ।—**शाखा**–(स्त्री०) मुख्य डाली ।—**शृङ्ग**–(पुं०) भैंसा ।

स्कन्धस्—(न०) [√स्कन्द् + असुन्, पृषो० साधुः] कंधा । वृक्ष का तना ।

स्कन्धिक—(पुं०) [स्कन्ध+ठन्] बोझ ढोने वाला बैल आदि ।

स्कन्धिन्—(वि०) [स्त्री०—**स्कन्धिनी**] [स्कन्ध+इनि] कंधों वाला । डालियों वाला । (पुं०) वृक्ष ।

स्कन्न—(वि०) [√स्कन्द् +क्त] नीचे गिरा हुआ । चूआ हुआ, टपका हुआ । छिड़का हुआ । गया हुआ । सूखा हुआ ।

√स्कम्भ्—भ्वा० आत्म० सक० रोकना । स्कम्भते, स्कम्भिष्यते, अस्कम्भिष्ट । क्र्या० पर० सक० रोकना । स्कभ्नाति, स्कम्भिष्यति, अस्कम्भीत् ।

स्कम्भ—(पुं०) [√ स्कम्भ्+घञ्] सहारा । कील जिसके ऊपर कोई वस्तु घूमे । परब्रह्म ।

स्कम्भन—(न०) [√स्कम्भ्+ल्युट्] सहारा लगाने की क्रिया ।

स्कान्द—(वि०) [स्त्री०—**स्कान्दी**] [स्कन्द +अण्] स्कन्द सम्बन्धी । (न०) स्कन्द पुराण ।

√स्कु—क्र्या० उभ० अक० कूद-कूद कर चलना, उछलना । सक० उठाना, ऊपर करना । ढाँकना । समीप जाना । स्कुनोति —स्कुनुते — स्कुनाति—स्कुनीते, स्कोष्यति– ते, अस्कौषीत् —अस्कोष्ट ।

√स्कुन्द्—भ्वा० आत्म० अक० कूदना । सक० उठाना, ऊपर उठाना । स्कुन्दते, स्कुन्दिष्यते, अस्कुन्दिष्ट ।

स्कोटिका—(स्त्री०) पक्षी विशेष ।

√स्खद्—दि० आत्म० सक० काटना, टुकड़े-टुकड़े कर डालना । चोटिल करना । वध करना । भगा देना । थका डालना । दृढ़ करना । स्खद्यते, स्खदिष्यते, अस्खदिष्ट ।

स्वदन—(न०) [√स्वद् + ल्युट्] काट-छाँट। टुकड़े-टुकड़े करने की क्रिया। घायल करना। वध। तंग करने की क्रिया।

√स्खल्—भ्वा० पर० अक० ठोकर खाना। लड़खड़ाना। आज्ञा का भंग किया जाना। सत्पथ से भ्रष्ट होना। उत्तेजित होना। गलती करना। हकलाना। असफल होना। बूँद-बूँद कर गिरना, चूना। अदृश्य होना। सक० एकत्र करना। जाना। स्खलति, स्खलिष्यति, अस्खालीत्।

स्खलन—(न०) [√स्खल् + ल्युट्] पतन। लड़खड़ाने की क्रिया। सत्पथ से भ्रष्ट होना। भूल। असफलता। हल्कापन। टपकना। परस्पर ताड़न।

स्खलित—(वि०) [√स्खल् + क्त] ठोकर खाया हुआ। गिरा हुआ। काँपता हुआ, थरथराता हुआ। नशे में चूर। हकलाता हुआ। उत्तेजित। घबड़ाया हुआ। भूल किया हुआ। टपका हुआ। बाधा डाला हुआ, रोका हुआ। परेशान। प्रस्थित। (न०) पतन। सत्पथ से भ्रष्ट होना। भूल, गलती। अपराध। पाप। धोखा। चाल-बाजी।

√स्खुड्—भ्वा० पर० सक० ढकना। स्खुडति, स्खुडिष्यति, अस्खुडीत्।

√स्तक्—भ्वा० पर० सक० रोकना, बचाना। ढकेलना। स्तकति, स्तकिष्यति, अस्ताकीत्।

√स्तग्—भ्वा० पर० सक० ढकना, छिपाना। स्तगति, स्तगिष्यति, अस्तगीत्।

√स्तन्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना, बजाना। कराहना। जोर-जोर से साँस लेना। गरजना, दहाड़ना। स्तनति, स्तनिष्यति, अस्तानीत्। चु० पर० अक० बादल का गरजना। स्तनयति, स्तनयिष्यति, अतस्तनत्।

स्तन—(पु०) [√स्तन् + अच्] स्त्रियों या मादा पशुओं का वह अंग जिसमें दूध रहता है, कुच, चूची; 'स्तनौ मांसग्रन्थी कनककलशावित्युपमितौ' भर्तृ० ३.२०। **—अंशुक** (**स्तनांशुक**)–(न०) स्तन बाँधने, ढकने का कपड़ा। **—अग्र** (**स्तनाग्र**)–(पु०) चूची की घुंडी, ढेपनी, चूचुक। **—अन्तर** (**स्तनान्तर**)– (न०) हृदय। दोनों स्तनों के बीच का स्थान; 'मृणालसूत्रं रचितं स्तनान्तरे' श० ६.१७। स्तन पर का एक चिह्न जो भावी वैधव्य का द्योतक समझा जाता है। **—आभोग** (**स्तनाभोग**)–(न०) स्तनों की वृद्धि या बढ़ाव। चूचियों की गोलाई। वह पुरुष जिसके स्त्री जैसे स्तन हों। **—प,—पा, —पायक,—पायिन्**– (वि०) स्तन-पान करने वाला। (पु०) दुधमुँहा बच्चा। **—भर** –(पु०) स्थूल स्तन। स्त्री जैसे स्तनों वाला पुरुष। **—भव**– (पु०) रतिबन्ध विशेष। **—मुख,—वृन्त**– (न०)**—शिखा**–(स्त्री०) चूची की घुंडी, ढेपनी।

स्तनन—(न०) [√स्तन्+ल्युट्] आवाज, शोर गुल। गर्जन। कराहने का शब्द। जोर-जोर से और जल्दी-जल्दी साँस लेना।

स्तनन्धय—(वि०) [स्तन √धे + खश्, मुम्] स्तन से दूध पीने वाला। (पु०) बच्चा जो स्तन से दूध पीता हो।

स्तनयित्नु—(पु०) [√स्तन् + णिच् + इत्नुच्] बादलों की कड़क। बादल; 'स्तनयित्नोर्मयूरीव चकितोत्कण्ठितं स्थिता' उत्त० ३.७। बिजली। रोग। मृत्यु। मोथा।

स्तनित—(वि०) [√स्तन्+क्त] गर्जन किया हुआ। ध्वनित, निनादित। (न०) मेघ की गड़गड़ाहट। कोलाहल। ताली बजाने का शब्द।

स्तन्य—(न०) [स्तन +यत्] स्तन का दूध।

स्तब्ध—(वि०)[√स्तम्भ्+क्त]रोका हुआ। सुन्न, लकवा का मारा हुआ। गति-हीन,

अचल । दृढ़, सख्त । हठी, जिद्दी । मोटा । भद्दा ।—कर्ण–(वि०) बहरा ।—दृष्टि, —नयन, —लोचन– (वि०) जिसकी पलकें न गिर रही हों, टकटकी बँध गयी हो ।— रोमन्—(पुं०) शूकर ।

स्तब्धत्व–(न०),स्तब्धता–(स्त्री०)[स्तब्ध +त्व] [स्तब्ध + तल्—टाप्] कड़ाई, कठोरता । दृढ़ता, अचलता । निश्चेष्टता । हठीलापन । अहंकार ।

स्तभ—(पुं०) बकरा । मेढ़ा ।

√स्तम्—भ्वा० पर० अक० घबड़ा जाना, परेशान हो जाना । स्तमति, अस्तमीत् ।

स्तम्ब—(पुं०) [√स्था + अम्बच्, पृषो० साधुः] घास का गट्ठा । अनाज की बाल या भुट्टा । गुच्छा । झाड़ी । झुरमुट । झाड़ी या पौधा जिसका तना या धड़ न देख पड़े । हाथी बाँधने का खूँटा । खंभा । स्तब्धता, सुन्नपन । पहाड़ ।—करि– (पुं०) धान्य, अनाज ।—करिता– (स्त्री०) बाल या भुट्टा पैदा करना । अच्छी उपज ।—घन– (पुं०) घास खोदने की खुर्पी । अनाज काटने का हँसिया । अन्न रखने की टोकरी । —घ्न– (पुं०) दे० 'स्तम्बघन' ।

स्तम्बेरम—(पुं०) [स्तम्बे वृक्षादीनां काण्डे गुच्छे गुल्मे वा रमते, √रम्+अच्, अलुक्, स०] हाथी, गज; 'स्तम्बेरमा मुखरशृङ्खलकर्षिणस्ते' र० ५.७२ ।

√स्तम्भ्—भ्वा० आत्म० सक०, क्र्या० पर० सक० रोकना । पकड़ना, गिरफ्तार करना । दृढ़ करना, अचल करना । सुन्न करना, स्तब्ध करना । सहारा देना । अक० कड़ा होना । अकड़ जाना, अभिमान दिखलाना । यथा— स्तम्भते पुरुषः प्रायो यौवनेन धनेन च । न स्तम्नाति क्षितीशोऽपि न स्तम्नोति युवाप्यसौ ।। भ्वा० स्तम्भते, स्तम्भिष्यते, अस्तम्भिष्ट । क्र्या० स्तम्नाति—स्तम्नोति, स्तम्भिष्यति, अस्तम्भीत् ।

स्तम्भ—(पुं०) [√स्तम्भ् +घञ् वा अच्] दृढ़ता । कठोरता । गति-हीनता । संज्ञाहीनता । रोक-थाम, बाधा, अड़चन । दबाना । सहारा, अवलंब । खंभा । पेड़ का तना, धड़ । मूढ़ता । उत्तेजना के भावों का अभाव । अलौकिक या मंत्र-शक्ति से किसी वेग या भाव को दबाने की क्रिया ।—उत्कीर्ण (स्तम्भोत्कीर्ण)–(वि०) खंभे में खोदी हुई (मूर्ति) ।—कर–(वि०) स्तब्ध करने वाला । रोक-थाम करने वाला । बाधा डालने वाला ।—पूजा–(स्त्री०) यज्ञ-स्तम्भ का पूजन ।

स्तम्भकिन्—(पुं०) चमड़े से मढ़ा हुआ प्राचीन बाजा विशेष ।

स्तम्भन—(न०) [√स्तम्भ् +ल्युट्] रोक-थाम, पकड़-धकड़ । सुन्न करना, स्तब्ध करना । चुप या शान्त करना । सख्त या कड़ा करना । सहारा देना । रक्त, वीर्य आदि का स्राव आदि रोकना । मंत्रादि के द्वारा किसी की शक्ति कुण्ठित करना । (पुं०) [√स्तम्भ् + णिच्+ल्यु] कामदेव के पाँच बाणों में से एक ।

स्तर—(पुं०) [√स्तृ+अप् वा अच्] परत, तह । शय्या, बिस्तर, बिछौना ।

स्तरण—(न०) [√स्तृ+ल्युट्] बिछाने या बिखेरने की क्रिया । पलस्तर करना । बिस्तर, बिछौना ।

स्तरिमन्, स्तरीमन्—(पुं०) [√स्तृ+इ (ई) मनिन्] सेज, शय्या, तल्प ।

स्तरी—(स्त्री०) [√स्तृ+ई] धुम । भाप । बछिया । बाँझ गौ ।

स्तव—(पुं०) [√स्तु+अप्] प्रशंसा । स्तुति । स्तोत्र ।

स्तवक—(पुं०) [√स्तु + वुन् वा√स्था अवक, पृषो० साधुः] पुष्प-गुच्छ, गुलदस्ता । ग्रन्थ का परिच्छेद । समूह, समुदाय ।

स्तवन—(न०) [√स्तु + ल्युट्] स्तुति करना । स्तोत्र, स्तव ।

स्तवेय्य—(पुं०) [√स्तु + एय्य] इन्द्र ।

स्ताव—(पुं०) [√स्तु + घञ्] प्रशंसा । स्तुति ।

स्तावक—(वि०) [√स्तु+ण्वुल्] स्तुति या प्रशंसा करने वाला । (पुं०) भाट, बंदी जन ।

√स्तिघ्—स्वा० आत्म० सक० चढ़ाई करना, आक्रमण करना । स्तिघ्नुते, स्तेघिष्यते, अस्तेघिष्ट ।

√स्तिप्—भ्वा० आत्म० अक० चूना, टपकना, रिसना । स्तेपते, स्तेपिष्यति, अस्तेपिष्ट ।

स्तिभि—(पुं०) [√स्तम्भ् + इन्, इत्व] रोक, अड़चन । समुद्र । गुच्छा, स्तवक ।

√स्तिम्, **√स्तीम्**—दि० पर० अक० गीला होना, भींग जाना । अटल होना । स्तिम्यति स्तीम्यति, स्तेमिष्यति स्तीमिष्यति, अस्तेमीत् अस्तीमीत् ।

स्तिमित—(वि०) [√स्तिम् + क्त] गीला, नम, तर । स्तब्ध, निश्चल, शान्त; 'संयमस्तिमितं मनः' कु० २.५९ । अटल, गतिहीन । लकवा मारा हुआ, सुन्न । कोमल, मुलायम । सन्तुष्ट, प्रसन्न ।—**वायु**—(पुं०) शान्तवायु ।—**नेत्र**- (वि०) जिसे टकटकी लग गयी हो ।—**समाधि**- (न०) दृढ़ ध्यान, ध्यान-मग्नता ।

स्तिम्भि—(स्त्री०) [√स्तिम् + इन्, नुट्] समुद्र । वायु ।

स्तीवि—(पुं०) [√स्तृ+क्विन्] वह ऋत्विक् जो किसी नियत ऋत्विक् की जगह काम करे । घास । आकाश । वायु । जल । रक्त । शरीर । इन्द्र का नाम ।

√स्तु—अ० उभ० सक० प्रशंसा करना । स्तुति करना । किसी की प्रशंसा में गीत गाना । स्तवन द्वारा पूजन या सम्मान करना । स्तौति —स्तवीति—स्तुते—स्तुवीते, स्तोष्यति—ते, अस्तावीत्—अस्तोष्ट ।

स्तुक—(पुं०) केशों की चोटी । संतान ।

स्तुका—(स्त्री०) केशों की चोटी । भैंसा के सींगों के बीच के छल्लेदार बाल । जघन ।

√स्तुच्—भ्वा० आत्म० अक० चमकना । अनुकूल होना, प्रसन्न होना । स्तोचते, स्तोचिष्यते, अस्तोचिष्ट ।

स्तुत—(वि०) [√स्तु + क्त] जिसकी स्तुति की गयी हो । प्रशंसित ।

स्तुति—(स्त्री०) [√स्तु + क्तिन्] प्रशंसा । स्तव । विरुदावली । चापलूसी, ठकुरसुहाती, झूठी प्रशंसा । दुर्गा देवी का नाम ।—**गीत**-(न०) विरुदावली के गीत ।—**पद**-(न०) प्रशंसा की वस्तु ।—**पाठक**-(पुं०) बंदीजन, भाट ।—**वाद**- (पुं०) प्रशंसात्मक, वचन, गुण-कीर्तन ।—**व्रत**- (पुं०) भाट ।

स्तुत्य—(वि०) [√स्तु + क्यप्] श्लाघ्य, सराहनीय, प्रशंसनीय; 'स्तुत्यं स्तुतिभिरर्थ्याभिरुपतस्थे सरस्वती' र० ४.६ ।

स्तुनक—(पुं०) [√स्तु + नकन्] बकरा ।

√स्तुभ्—भ्वा० आत्म० अक० रुकना । सक० रोकना । स्तोभते, स्तोभिष्यते, अस्तोभिष्ट ।

स्तुभ—(पुं०) [√स्तुम्भ् + क] बकरा ।

√स्तुम्भ्—क्र्या० पर० सक० रोकना । स्तुभ्नोति- स्तुभ्नाति, स्तुम्भिष्यति, अस्तुम्भीत् ।

√स्तूप्—चु० उभ० सक० जमा करना, ढेर करना । उठाना, खड़ा करना । स्तूपयति—ते, स्तूपयिष्यति—ते, अतुस्तूपत्—त ।

स्तूप—(पुं०) [√स्तूप्+अच् वा √स्तु + पक्, दीर्घ] ढेर, राशि, टीला । बौद्धों के डूह या स्तम्भ जो विशेष आकार के होते

होते हैं और स्मरण-चिह्न स्वरूप समझे जाते हैं। चिता।

√स्तु—स्वा० उभ० सक० ढकना, ढाँप लेना। फैलाना। बिखेरना। लपेटना। स्तृणोति—स्तृणुते, स्तरिष्यति—ते, अस्तार्षीत्—अस्तरिष्ट—अस्तृत।

√स्तृक्ष्—भ्वा० पर० सक० जाना। स्तृक्षति, स्तृक्षिष्यति, अस्तृक्षीत्।

स्तृति—(स्त्री०) [√स्तृ+क्तिन्] विस्तार, फैलाव। चादर।

√स्तृह्—तु० पर० सक० वध करना। स्तृहति, स्तर्हिष्यति— स्तर्क्ष्यति, अस्तर्हीत्—अस्तृक्षत्।

√स्तॄ—क्र्या० उभ० सक० ढकना, आच्छादित करना। स्तृणाति— स्तृणीते, स्तरि (री)- ष्यति, अस्तारीत् — अस्तरि (री) ष्ट— अस्तीर्ष्ट।

√स्तेन्—चु० उभ० सक० चुराना। स्तेनयति—ते, स्तेनयिष्यति—ते, अतिस्तेनत्—त।

स्तेन—(न०) [√स्तेन्+अच्] चोरी, चुराने का कार्य। (पुं०) चोर। लुटेरा।—निग्रह-(पुं०) चोरों का दमन। चोरी की वारदातों को रोकना।

√स्तेप्—भ्वा० आत्म० अक० बहना, क्षरित होना। स्तेपते, स्तेपिष्यते, अस्तेपिष्ट। चु० पर० सक० फेंकना। स्तेपयति, स्तेपयिष्यति, अतिस्तिपद्।

स्तेम—(पुं०) [√स्तिम्+घञ्] सील, नमी, तरी।

स्तेय—(न०) [स्तेनस्य भावः, स्तेन+यत्, नलोप] चोरी। कोई वस्तु जो चुराई गई हो या जिसके चोरी जाने की सम्भावना हो। कोई निजी या गोप्य वस्तु।

स्तेयिन्—(पुं०) [स्तेय+इनि] चोर। सुनार। चूहा।

√स्त्यै—भ्वा० पर० सक० वेष्टित करना। स्त्यायति, स्त्यास्यति, अस्त्यासीत्।

स्तैन—(न०) [स्तेन+अण्] चोरी। डकैती।

स्तैन्य—(न०) [स्तेन + ष्यञ्] चोरी। डकैती। (पुं०) [स्तेन+ण्य] चोर।

स्तैमित्य—(न०) [स्तिमित +ष्यञ्] अटलता, अचलता। जड़ता।

स्तोक—(पुं०) [√स्तुच्+घञ्] अल्प परिमाण। बूँद। [स्तोक+अच्] चातक पक्षी। (वि०) छोटा, लघु। ईषत्, थोड़ा। नीच।—**काय**-(वि०) खर्वाकार, बौना। —**नम्र**- (वि०) कुछ-कुछ झुका हुआ; 'श्रोणीभारादलसगमना स्तोकनम्रा स्तनाभ्याम्' मे० ८२।

स्तोकक—(पुं०) [स्तोकाय जलबिन्दवे कायति शब्दायते, स्तोक √कै+क] चातक पक्षी।

स्तोतव्य—(वि०) [√स्तु+तव्यत्] स्तुति करने योग, प्रशंसा के योग्य; 'स्तोतव्यगुणसम्पन्नः केषां न स्यात् प्रियो जनः' सुभा०।

स्तोकशस्—(अव्य०) [स्तोक+शस्] थोड़ा-थोड़ा करके।

स्तोतृ—(वि०) [√स्तु+ तृच] स्तुति करने वाला। (पुं०) बंदीजन, भाट।

स्तोत्र—(न०) [√स्तु + ष्ट्रन्] प्रशंसा। स्तुति। विरुदावली, प्रशंसात्मक गीत या कविता। स्तुत्यात्मक श्लोक।

स्तोत्रिया—(स्त्री०) [स्तोत्र+घ — इय —टाप्] स्तोत्र-साधनीभूत ऋचा।

स्तोभ—(पुं०) [√स्तुभ् + घञ्] रुकावट, अड़चन। रोक, ठहराव। अप्रतिष्ठा, असम्मान। प्रशंसात्मक कविता। सामवेद का भाग विशेष। कोई वस्तु जो ऊपर से किसी वस्तु में घुसेड़ दी गई हो।

√स्तोम्—चु० पर० अक० अपना गुण बखानना। स्तोमयति, स्तोमयिष्यति, अतुस्तोमत्।

स्तोम—(न०) [√स्तु+मन् वा √ स्तोम्+घञ्] सिर । धन । लोहे की नोक वाला डंडा । (पु०) समूह । राशि । यज्ञ । एक विशेष प्रकार का यज्ञ । स्तुति । यज्ञकर्ता । ४० हाथ की एक माप, दस धन्वन्तर । एक प्रकार की ईंट । (वि०) टेढ़ा ।

स्तोम्य—(वि०) [स्तोम+यत्] श्लाघ्य, प्रशंसनीय ।

स्त्यान—(वि०) [√स्त्यै+क्त, तस्य नः] ढेर किया हुआ । गाढ़ा; 'स्त्यानावनद्धघनशोणितशोणपाणिरुत्तंसयिष्यति कचांस्तव देवि ! भीमः' वे० १.२१ । कोमल, मुलायम । ध्वनि-कारक । स्निग्ध । (न०) घनत्व । स्निग्धता, चिकनाई । अमृत । काहिली, सुस्ती । प्रतिध्वनि ।

स्त्यायन—(न०) [√स्त्यै+ल्युट्] एकत्र होना । भीड़-भाड़ ।

स्त्येन—(पु०) [√स्त्यै + इनच्] अमृत । चोर ।

√स्त्यै—भ्वा० पर० अक० एकत्रित होना । ध्वनि करना । स्त्यायति, स्त्यास्यति, अस्त्यासीत् ।

स्त्री—(स्त्री०) [स्त्यायतः शुक्रशोणिते यस्याम्, √स्त्यै+ड्रट्—ङीप्] नारी, औरत । जानवर की मादा [यथा—**हरिणस्त्री, गजस्त्री**] । भार्या, पत्नी । प्रियंगुलता । सफेद चींटी ।—**आगार** (**स्त्र्यागार**)–(न०) जनानखाना, अन्तःपुर ।— **अध्यक्ष** (**स्त्र्यध्यक्ष**)–(पु०) जनानखाने या रनिवास का अध्यक्ष ।—**अभिगमन** (**स्त्र्यभिगमन**)–(न०) स्त्री के साथ मैथुन ।—**आजीव** (**स्त्र्याजीव**) –(पु०) वह जो अपनी स्त्री के सहारे रहता हो । वह जो वेश्याकर्म के लिये स्त्रियाँ रखता हो ।—**काम**–(पु०) स्त्री का अभिलाषी जन । भार्याप्राप्ति की कामना ।—**कार्य**– (न०) स्त्री का काम । स्त्री की टहल । अन्तःपुर की चाकरी ।—**कुसुम**–(न०) स्त्री का रजोधर्म ।—**क्षीर**–(न०) औरत का दूध । माता का दूध ।—**ग**–(वि०) स्त्री के साथ मैथुन करने वाला । —**गवी**–(स्त्री०) दुधार गौ ।—**गुरु**–(पु०) पुरोहितानी ।—**घोष**– (पु०) प्रभात, सबेरा । —**घ्न**–(पु०) स्त्री की हत्या करने वाला ।— **चरित**,—**चरित्र**–(न०) स्त्री के कर्म ।—**चिह्न**–(न०) स्त्री जाति का कोई भी चिह्न या लक्षण । भग, योनि ।—**चौर**– (पुं०) स्त्री को चुराने वाला । स्त्री को बहकाने वाला ।—**जननी**–(स्त्री०) वह स्त्री जो लड़की ही जने । —**जाति**– (स्त्री०) स्त्रीवर्ग । स्त्रीलिङ्ग ।—**जित**–(पुं०) भार्या-निर्जित स्वामी । स्त्रैण पुरुष; 'स्त्रीजितस्पर्शमात्रेण सर्वं पुण्यं विनश्यति' सुभा०।—**धन**–(न०) स्त्री की निज सम्पत्ति । —**धर्म**–(पु०) स्त्री या भार्या का कर्तव्य । स्त्री-सम्बन्धी विधान । रजस्वला धर्म ।–**धर्मिणी**-(स्त्री०) रजस्वला स्त्री ।—**ध्वज**– (पुं०) किसी भी जानवर की मादा ।—**नाथ**– (वि०) वह जिसकी रक्षा कोई स्त्री करती हो । —**निबन्धन**– (न०) गृहिणी का कार्य । गार्हस्थ्य धर्म ।—**पर**–(पुं०) स्त्री-प्रेमी, लंपट, कामुक ।—**पिशाची**– (स्त्री०) राक्षसी जैसी पत्नी ।— **पुंस**–(पुं०) पत्नी और पति । मर्दाना और जनाना ।—०**लक्षणा**– (स्त्री०) मर्दानी औरत ।—**प्रत्यय**– (पुं०) व्याकरण में स्त्री-वाचक प्रत्यय ।—**प्रसङ्ग**–(पु०) संभोग ।—**प्रसू**–(स्त्री०) वह स्त्री जो केवल लड़कियाँ ही जने ।—**प्रिय**–(पु०) आम का वृक्ष । अशोक वृक्ष ।—**बन्ध**– (पुं०) संभोग ।—**बाध्य**– (पु०) वह पुरुष जो अपने आप को स्त्री द्वारा उत्पीड़ित करावे ।—**बुद्धि**–(स्त्री०) औरत की अक्ल या समझ ।

स्त्री की सलाह या परामर्श ।—**भोग**–(पुं०) मैथुन ।—**मन्त्र**–(पुं०) स्त्री की सलाह ।—**मुखप**–(पुं०) मौलसिरी । अशोक ।—**यन्त्र**–(न०) स्त्री के आकार की कल ।—**रञ्जन**–(न०) ताम्बूल, पान ।—**रत्न**–(न०) अत्युत्तम स्त्री ।—**राज्य**–(न०) स्त्री का राज्य । महाभारत के अनुसार स्त्रियों द्वारा शासित एक प्रदेश ।—**लिङ्ग**–(न०) व्याकरण में स्त्री-बोधक लिङ्ग । योनि, भग ।—**वश**–(वि०) स्त्री द्वारा शासित । (पुं०) स्त्री की अधीनता ।—**विधेय**-(वि०) वह जिस पर स्त्री हुकूमत करे ।—**व्यञ्जन**–(न०) स्त्री होने के चिह्न—स्तन आदि ।—**सङ्ग्रहण**–(न०) स्त्री को (अनुचित रूप से) चिपटाने की क्रिया । व्यभिचार ।—**सभ**–(न०) स्त्रियों का समाज ।—**सम्बन्ध**–(पुं०) स्त्री के साथ वैवाहिक सम्बन्ध । विवाह द्वारा सम्बन्ध स्थापन ।—**स्वभाव**–(पुं०) स्त्री की प्रकृति । हिजड़ा, मेहरा । स्त्रियों का नौकर ।—**हरण**–(न०) स्त्री भगा ले जाना ।

स्त्रीता, स्त्रीत्व—(स्त्री०) [स्त्री + तल्–टाप्] [स्त्री + त्व] स्त्री होने का भाव । पत्नीत्व, भार्यापन ।

स्त्रैण—(वि०) [स्त्री०—**स्त्रैणी**] [स्त्री + नञ्] स्त्री संबन्धी । स्त्रियों के कहने के अनुसार चलने वाला, स्त्री-वशीभूत । स्त्रियों के योग्य । (न०) स्त्रीत्व; 'तस्य तृणमिव लघुवृत्तिस्त्रैणमाकलयतः' का० । स्त्री-स्वभाव । स्त्री-जाति । स्त्रियों का समूह ।

स्थ—(वि०) [√स्था + क] (प्रायः समास में ही इसका व्यवहार होता है । जैसे—पदस्थ, मार्गस्थ आदि) । ठहरा हुआ, वर्तमान ।

स्थकर—(न०) [=स्थगर, पृषो० साधुः] सुपाड़ी ।

√स्थग्—भ्वा० पर० सक० ढकना, छिपाना । मरना, पूर्ण करना । स्थगति, स्थगिष्यति, अस्थगीत् ।

स्थग—(वि०) [√स्थग् + अच्] धूर्त, कपटी । बेईमान । लापरवाह । ढीठ । (पुं०) गुंडा या ठग आदमी ।

स्थगन—(न०) [√स्थग् + ल्युट्] छिपाव, दुराव ।

स्थगर—(न०) [√स्थग् + अरन्] सुपाड़ी ।

स्थगिका—(स्त्री०) [स्थग् + ण्वुल्–टाप्, इत्व] वेश्या । अँगूठे आदि के सिरे पर बाँधने की एक तरह की पट्टी । पनडब्बा, पानदान ।

स्थगित—(वि०) [√स्थग् + क्त] ढका हुआ । छिपा हुआ । रुद्ध ।

स्थगी—(स्त्री०) [√स्थग् + क–ङीष्] पनडब्बा ।

स्थगु—(पुं०) [√स्थग् + उन्] कूबड़, कुब्ब ।

स्थण्डिल—(न०) [√स्थल् + इलच्, नुक्, लस्य डः] यज्ञ के लिये चौरस की हुई चौकोर भूमि, चत्वर । यज्ञार्थ परिष्कृत भूमि; 'निवेदुषी स्थण्डिल एव केवले' कु० ५·१२ । ऊसर खेत । ढेलों का ढेर । सीमा । सीमा-चिह्न ।—**शायिन्**–(पुं०) व्रत के लिये चत्वर या चबूतरे पर सोने वाला व्यक्ति ।—**सितक**–(न०) वेदी, अग्नि-वेदी ।

स्थपति—(पुं०) [√स्था + क, तस्य पतिः] राजा । कारीगर । होशियार बढ़ई । सारथि । बृहस्पति देव को बलि चढ़ाने वाला व्यक्ति । जनानखाने का नौकर । बृहस्पति । कुबेर का नाम । (वि०) प्रधान, मुख्य । उत्तम, श्रेष्ठ ।

स्थपुट—(वि०) [स्था + क, स्थं पुटं यत्र] सङ्कटापन्न । ऊबड़-खाबड़, ऊँचा-नीचा । कूबड़ वाला । पीड़ा के कारण झुका हुआ ।

√स्थल्—भ्वा० पर० अक० स्थिर होना। स्थलति, स्थलिष्यति, अस्थालीत्।

स्थल—(न०) [√स्थल्+अच्] दृढ़ और सूखी भूमि। समुद्र या नदी का तट। जमीन, धरती। स्थान, जगह। खेत, भूभाग। टीला। विवाद-ग्रस्त विषय। भाग [जैसे ग्रन्थ का]। सीमा, तंबू। —अन्तर (स्थलान्तर)-(न०) दूसरी जगह। —आरूढ़ (स्थलारूढ़)-(वि०) पृथिवी पर उतरा हुआ। —अरविन्द (स्थलारविन्द), कमल, —कमलिनी-(स्त्री०) कमल की आकृति का एक पुष्प जो स्थल पर उत्पन्न होता है। —चर-(वि०) जमीन पर रहने वाला (जलचर का उल्टा)। —च्युत-(वि०) स्थान-भ्रष्ट। —विग्रह- (पुं०) यह संग्राम जो सम भूमि पर हो।

स्थला—(स्त्री०) [स्थल+टाप्] बनावटी सूखी जमीन जो ऊँची करके बनायी गयी हो। शुष्क भूभाग।

स्थली—(स्त्री०) [स्थल+ङीष्] सूखी भूमि। ऊँची सम भूमि। स्थान।

स्थलेशय—(वि०) [स्थले शेते, √ शी +अच्, अलुक् स०] जमीन पर सोने वाला। (पुं०) वराह, मृग आदि पशु।

स्थवि—(पुं०) [√स्था + विव] जुलाहा। स्वर्ग। जंगम पदार्थ। थैला। अग्नि। कोढ़ी या उसका शरीर।

स्थविर—(वि०) [√स्था +किरच्, स्थवादेश] दृढ़, मजबूत। अचल। पुराना, प्राचीन। (पुं०) बूढ़ा आदमी। भिक्षुक। ब्रह्मा का नामान्तर। (न०) शैलेय गंध-द्रव्य।

स्थविरा—(स्त्री०) [स्थविर + टाप्] बुढ़िया; 'स्थविरे! का त्वम् प्रथमनेत्रकस्य मातानन्दकरः' दश०। महाश्रावणी।

स्थविष्ठ—(वि०) [अतिशयेन स्थूलः, स्थूल +इष्ठन्, लस्य लोपः गुणश्च] बहुत स्थूल। अत्यन्त बृद्ध। अत्यन्त दृढ़ या मजबूत।

स्थवीयस्—(वि०) [स्थूल+ईयसुन्, स्थूलशब्दस्य स्थवादेशः] दे० 'स्थविष्ठ'।

√स्था—भ्वा० पर० अक० खड़ा होना। रहना। बच जाना। विलंब करना। सक० रोकना। बंद करना। तिष्ठति, स्थास्यति, अस्थात्।

स्थाणु—(त्रि०) [√स्था+नु, पृषो० णत्व] दृढ़, मजबूत। अचल, गतिहीन। (पुं०) शिव का नाम; 'स स्थाणुः स्थिरभक्तियोगसुलभो निःश्रेयसायास्तु वः' विक्र० १.१। खंभा। खूँटी, कील। धूपघड़ी का काँटा। बर्छी। दीमक का छत्ता। जीवक नामक सुगन्ध द्रव्य। (पुं०, न०) पेड़ का ठूँठ। —च्छेद- (पुं०) वृक्षों को काटने वाला व्यक्ति।

स्थाण्डिल—(पुं०) [स्थण्डिल + अण्] यज्ञमण्डप में सोने वाला तपस्वी, वह तपस्वी जो जमीन पर सोवे। भिक्षुक।

स्थान—(न०) [√स्था+ल्युट्] स्थित होने, ठहरने, रहने की क्रिया। अचलता, अटलता। दशा, हालत। जगह। सम्बन्ध, रिश्ता (यथा पितृस्थाने)। आवास-स्थान, रहने की जगह। गाँव। कस्बा। जिला। पद, ओहदा। पदार्थ, वस्तु। कारण, हेतु। उपयुक्त जगह। उपयुक्त या उचित पदार्थ। किसी अक्षर के उच्चारण की जगह। तीर्थ। वेदी। किसी नगर का कोई स्थल विशेष। वह लोक या पद जो किसी मरे हुए आदमी के जीव को उसके शुभाशुभ कर्मानुसार प्राप्त हो। युद्ध के लिये डट कर खड़ी हुई सेना। टिकाव, पड़ाव। तटस्थता, उदासीनता। राज्य के मुख्य अंग; यथा—सेना, धन, कोष, राजधानी आदि। सादृश्य, समानता। अध्याय। परिच्छेद। अभिनय।

अवकाश काल ।—अध्यक्ष (स्थानाध्यक्ष)-(पुं०) स्थानीय शासक ।—आसेध (स्थानासेध)-(पुं०) क़ैद, गिरफ़्तारी ।—चिन्तक- (पुं०) सेना के लिये छावनी की व्यवस्था करने वाला अधिकारी ।—च्युत- (वि०) जो अपने स्थान से गिर गया हो, स्थान-भ्रष्ट । जो अपने पद से हटा दिया गया हो, पद-च्युत ।—पाल- (पुं०) चौकीदार ।—भ्रष्ट- (वि०) स्थान-च्युत ।—माहात्म्य- (न०) किसी स्थान या जगह का गौरव या महिमा ।—स्थ- (वि०) अपनी जगह पर ठहरा हुआ ।

स्थानक—(न०) [स्थान+क] पद, ओहदा । अभिनय के समय का हाव-भाव विशेष । नगर । बरतन । मदिरा का झाग या फेन । पाठ करने का एक ढंग । [स्थाने कं जलम् अत्र] थाल-वाल, थाला ।

स्थानतस्—(अव्य०) [स्थान + तस्] निज स्थान या पद के अनुसार । अपने उपयुक्त स्थान से । जिह्वा या उच्चारण करने की इन्द्रिय के अनुरूप ।

स्थानिक—(वि०) [स्त्री०—**स्थानिकी**] [स्थान+ठक्] स्थानीय, किसी स्थान विशेष का । वह जो किसी के बदले प्रयुक्त हो । (पुं०) किसी स्थान का शासक । देवालय का व्यवस्थापक । राजस्व-संग्राहक ।

स्थानिन्—(वि०) [स्थान+इनि] स्थान वाला । स्थायी । वह जिसका कोई बदलीदार या एवज़दार हो ।

स्थानीय—(वि०) [स्थान+छ] किसी स्थान का । किसी स्थान के लिये उपयुक्त । (न०) [√स्था+अनीयर्] नगर, शहर । कसबा ।

स्थाने—(अव्य०) [√स्था+ने] उचित; 'स्थाने वृता भूपतिभिः परोक्षैः स्वयंवरं साधुममंस्त भोज्या' र० ७.१३ । जगह में क्योंकि, बेजगह । वैसे ही, उसी प्रकार ।

स्थापक—(वि०) [√स्था+णिच्, पुक् +ण्वुल्] स्थापित करने वाला । (पुं०) रंगमञ्च का व्यवस्थापक या प्रबन्ध-कर्त्ता । किसी मूर्ति की स्थापना करने वाला व्यक्ति ।

स्थापत्य—(न०) [स्थपति + ष्यञ्] भवन-निर्माण-कला, इमारती काम । (पुं०) जनानखाने का पहरेदार या रक्षक ।

स्थापन—(न०) [√स्था+णिच्, पुक् +ल्युट्] स्थापित करने की क्रिया । मन की एकाग्रता । आबादी, बस्ती । पुंसवन संस्कार ।

स्थापना—(स्त्री०) [√स्था + णिच्, पुक् +युच् — टाप्] रखना, जमाना, स्थापित करना । एकत्र करना । प्रतिपादन । रंगमञ्च का प्रबन्ध ।

स्थापित—(वि०) [√स्था+ णिच्, पुक् +क्त] जिसकी स्थापना की गयी हो, प्रतिष्ठित किया हुआ । जमा किया हुआ । खड़ा किया हुआ । निर्दिष्ट किया हुआ । निश्चित किया हुआ । नियुक्त किया हुआ । विवाहित । दृढ़, अटल ।

स्थाप्य—(वि०) [√स्था + णिच्, पुक् +यत्] स्थापित करने योग्य । रखे जाने योग्य । नियुक्त किये जाने योग्य । जमा करने योग्य । (न०) धरोहर, अमानत ।—अपहरण (स्थाप्यापहरण)-(न०) धरोहर का गबन, अमानत की खयानत ।

स्थामन्—(न०) [√स्था +मनिन्] शक्ति । स्तम्भन-शक्ति । अचलता । घोड़े की हिनहिनाहट । स्थान ।

स्थायिन्—(वि०) [स्था + णिनि, युक्] स्थिति-युक्त, बना रहने वाला । टिकने वाला । बहुत दिन चलने वाला, टिकाऊ; 'शरीरं क्षणविध्वंसि कल्पान्तस्थायिनो गुणाः' सुभा० । विश्वास करने योग्य । (पुं०) एक प्रकार का भाव जो मन में बना रहता है और परिपाक होने पर

रसावस्था में परिणत होता है। इसकी संख्या नौ है—रति, हास्य, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, निन्दा, विस्मय और निर्वेद।—**भाव**-(पुं०) दे० 'स्थायिन्' का पुं० वाला अर्थ।

स्थायुक—(वि०) [स्त्री०—**स्थायुका, स्थायुकी**] [√स्था+उकञ्, युक्] ठहरने वाला, स्थितिशील। (पुं०) गाँव का मुखिया।

स्थाल—(न०) [√स्थल्+घञ्] थाल, परात। दाँत का खोड़रा। बरतन। बटलोई।

स्थाली—(स्त्री०) [स्थाल+ङीष्] थाली। मिट्टी की हँड़िया। बटलोई। सोम रस तैयार करने का पात्र विशेष। पाटलावृक्ष। —**पाक**- (पुं०) होम के लिये गाय के दूध में पकाया हुआ जौ या चावल। भाजन-पक्व अन्नादि।—**पुरीष**- (न०) बटलोई का मैल।— **पुलाक**-(पुं०) स्थाली में पकाया हुआ चावल (यह एक न्याय है, जैसे स्थाली के एक चावल की परीक्षा से सारे चावल के सिद्ध या असिद्ध होने का पता चल जाता है उसी तरह अंश के आधार पर अंशी के संबंध में अनुमान किया जाता है।)

स्थावर—(वि०) [√स्था+वरच्] अटल, अचल। अक्रियाशील। (न०) कोई निर्जीव वस्तु। रोदा, कमान की डोरी। अचल सम्पत्ति। माल-असबाब जो वपौती में मिले। (पुं०) पहाड़।—**अस्थावर** (स्थावरास्थावर),—**जङ्गम**-(न०) चल-अचल सम्पत्ति। जानदार-बेजान चीजें।

स्थाविर—(वि०) [स्त्री०—**स्थाविरा, स्थाविरी**] [स्थविर+अण्] मोटा। दृढ़। (न०) बुढ़ापा (७० से ९० वर्ष तक की अवस्था)।

स्थासक—(पुं०) [√स्था+स+क] खुशबूदार उबटन लगा कर शरीर को सुवासित करना। जल या किसी तरह के पदार्थ का बबूला। बुलबुले के आकार का एक गहना जो घोड़े के साज में लगाया जाता है।

स्थास्नु—(न०) [√स्था+स्नु] शारीरिक बल।

स्थास्नु—(वि०) [√स्था+स्नु] दृढ़, अचल; 'अभिमानधनस्य गत्वरैरसुभिः स्थास्नु यशश्चिचीषतः' कि० २.१९। स्थायी, टिकाऊ। सहनशील।

स्थित—(वि०) [√स्था+क्त] खड़ा हुआ। ठहरा हुआ। घटित। वर्तमान। रोका हुआ। दृढ़, मजबूत। दृढ़ संकल्प किया हुआ। सिद्ध किया हुआ। दृढ़चित्त। धर्मात्मा। अपने वचन का धनी। इकरार किया हुआ, कौल-करार किया हुआ। तैयार।—**धी**-(वि०) शान्तचित्त, दृढ़चित्त।—**प्रज्ञ**-(वि०) स्थिर बुद्धि वाला।—**प्रेमन्**-(पुं०) पक्का या सच्चा मित्र।

स्थिति—(स्त्री०) [√स्था+क्तिन्] रहना। ठहरना। मर्यादा। अवस्थान, निवास। सीमा। कर्तव्य-परायणता। अनुशासन का पालन। पद, ओहदा। निर्वाह। अवस्था, दशा। विराम। कल्याण। सामंजस्य। निर्णय। जीवन का बना रहना। ग्रहण की अवधि। निश्चलता। अवसर। ठहरने का स्थान।

स्थिर—(वि०) [√स्था+किरच्] दृढ़। अचल, गति-हीन। स्थायी, सदैव रहने वाला। शान्त। काम, क्रोधादि से रहित या मुक्त। एकरस; 'अहो! स्थिरः कोऽपि तवेप्सितो युवा' कु० ५.४७। दृढ़-प्रतिज्ञ। निश्चित। सख्त, ठोस। मजबूत। निष्ठुर-हृदय। (पुं०) देवता। वृक्ष। पर्वत। बैल। शिव। कार्तिकेय। मोक्ष। पर्वत। बैल। शिव।। कार्तिकेय। मोक्ष। शनिग्रह।—**अनुराग** (स्थिरानुराग)-(वि०) वह जिसका प्रेम एक सा बना रहे।—**आत्मन्** (स्थिरात्मन्),—**चित्त**,—**चेतस्**,—

धी, —बुद्धि, —मति–(वि०) दृढ़ मन वाला । शान्त ।—आयुस् (स्थिरायुस्), —जीविन्– (वि०) दीर्घायु वाला, चिरजीवी ।—आरम्भ–(वि०) किसी कार्य का आरम्भ कर अन्त तक एक-सा उद्योग करने वाला, दृढ़ अध्यवसायी ।—गन्ध–(पुं०) चम्पा का फूल ।—च्छद–(पुं०) भूर्जपत्र का वृक्ष ।—च्छाय– (पुं०) वह वृक्ष जिसकी छाया में बटोही ठहरें । वृक्ष, पेड़ ।—जिह्व– (पुं०) मछली ।—जीविता–(स्त्री०)सेमर का पेड़ ।—दंष्ट्र–(पुं०) साँप ।—पुष्प– (पुं०) चम्पा का पेड़ । बकुल वृक्ष ।—प्रतिज्ञ– (वि०) बात का पक्का ।—प्रतिबन्ध– (वि०) सामना करने में दृढ़ ।—फला– (स्त्री०) कुम्हड़े की लता ।—योनि– (पुं०) बड़ा वृक्ष जिसकी छाया में लोग ठहरें ।—यौवन–(वि०) सदा युवा रहने वाला । (पुं०) विद्याधर ।—श्री–(स्त्री०) अनन्त काल तक रहने वाली समृद्धि ।—सङ्गर–(वि०) सत्यप्रतिज्ञ, अपने वचन को निबाहने वाला ।—सौहृद– (वि०) मैत्री में दृढ़ ।— स्थायिन्–(वि०) दृढ़ या अटल रहने वाला ।

स्थिरता—(स्त्री०), **स्थिरत्व**–(न०) [स्थिर +तल् — टाप्] [स्थिर+त्व] दृढ़ता । अटलता, अचलता । पराक्रम-युक्त उद्योग । मन की दृढ़ता । एकाग्रता ।

स्थिरा—(स्त्री०) [स्थिर + टाप्] पृथ्वी । सरिवन । काकोली । सेमल । अनमूंग । माषपर्णी । मूसाकानी । दृढ़ चित्त वाली स्त्री । पृथिवी ।

√**स्थुड्**—तु० पर० सक० छिपाना । स्थुडति, स्थुडिष्यति, अस्थुडीत् ।

स्थुल—(न०) [√स्थुड् + अच्, पृषो० डस्य लः] एक प्रकार का लंबा खीमा ।

स्थूणा—(स्त्री०) [√स्था + नक्, पृषो० साधुः] खंभा, थूनकिया । लोहे की प्रतिमा या पुतला । लुहार की निहाई ।

स्थूम—(पुं०) प्रकाश । चन्द्रमा ।

स्थूर—(पुं०) [√स्था + क्रन्] साँड़ । नर, मनुष्य ।

√**स्थूल्**—चु० उभ० अक० बढ़ना । स्थूलयति — ते, स्थूलयिष्यति—ते, अतुस्थूलत् —त ।

स्थूल—(वि०) [√स्थूल् + अच्] बड़ा, बड़े आकार का । मोटा । मजबूत, दृढ़ । गाढ़ा । मूर्ख, मूढ़ । सुस्त । जो ठीक न हो । (न०) ढेर, राशि । खीमा, तंबू । पर्वत की चोटी । (पुं०) कटहल का पेड़ । विष्णु । प्रियंगु । तूत का वृक्ष । ईख । अन्नमय कोश । गोचर पदार्थ ।—अन्त्र (स्थूलान्त्र)–(न०) बड़ी आंत जो गुदा के पास रहती है ।—आस्य (स्थूलास्य)–(पुं०) सर्प ।—उच्चय (स्थूलोच्चय)–(पुं०) पर्वत से टूटी हुई शिला या चट्टान जो एक टीला सा बन जाय । अधूरापन, अपूर्णता । हाथी की मध्यम चाल । मुँह पर मुहाँसों का निकलना । हाथी की सूँड़ के नीचे का गड्ढा या पोला-सा स्थान । —कन्द– (पुं०) जिमीकन्द ।— काय–(वि०) मोटे शरीर का ।—क्षेड, —क्ष्वेड– (पुं०) तीर ।—चाप– (पुं०) धुनिया की धुनकी जिससे रुई धुनी जाती है ।—ताल–(पुं०) हिन्ताल ।—धी, —मति– (वि०) मूर्ख, मन्दबुद्धि ।—नाल– (पुं०) लंबी जाति का सरकंडा ।—नास, —नासिक–(वि०) मोटी नाक वाला । (पुं०) शूकर, सुअर ।—पट–(पुं०, न०) मोटा कपड़ा ।—पट्ट–(पुं०) रुई ।—पाद– (वि०) वह जिसका पैर फूल उठा या सूज गया हो । (पुं०) हाथी । पीलपाँव के रोग से पीड़ित आदमी ।—फल– (पुं०) सेमर का पेड़ ।—

मान–(न०) मोटा अन्दाज ।—**मूल**–(न०) मूली । शलगम ।—**लक्ष**, —**लक्ष्य**–(वि०) उदार । मनस्वी । वह जिसे हानि-लाभ का स्मरण रहे ।—**शङ्का**–(स्त्री०) बड़ी भगवाली स्त्री ।—**शरीर**– (न०) पाञ्चभौतिक नाशवान् शरीर (सूक्ष्म या लिङ्ग शरीर का उल्टा) ।—**शाटक**,—**शाटि**– (पुं०) मोटा कपड़ा ।—**शीर्षिका**–(स्त्री०) एक जाति की चींटी जिसका सिर शरीर की अपेक्षा बड़ा होता है ।—**षट्पद**–(पुं०) बर्रे ।—**स्कन्ध**– (पुं०) बड़हल का पेड़ ।—**हस्त**– (न०) हाथी की सूंड़ ।

स्थूलक—(वि०) [स्थूल + कन्] बड़ा । विशाल । मोटा । (पुं०) एक प्रकार की घास या नरकुल ।

स्थूलता—(स्त्री०), **स्थूलत्व**–(न०) [स्थूल +तल्–टाप्] [स्थूल + त्व] बड़ापन । मोटापन । मुड़ता ।

स्थूलिन्— [स्थूल+इनि] ऊँट ।

स्थेमन्—(पुं०) [स्थिर+इमनिच्] दृढ़ता । स्थिरता; 'द्राघीयांसः संहता स्थेमभाजः' शि० १८.३३ ।

स्थेय—(वि०) [√स्था + यत्] स्थापित करने योग्य । तै करने योग्य, निश्चित करने योग्य । (पुं०) पंच, निर्णायक । पाधा, पुरोहित ।

स्थेयस्—(त्रि०) [स्त्री०—**स्थेयसी**] [अतिशयेन स्थिरः, स्थिर + ईयसुन्, स्थादेश] अतिशय स्थिर । शाश्वत ।

स्थेष्ठ—(वि०) [अतिशयेन स्थिरः, स्थिर +इष्ठन्, स्थादेश] दे० 'स्थेयस्' ।

स्थैर्य—(न०) [स्थिरस्य भावः, स्थिर +ष्यञ्] स्थिरता । सातत्य । मन की दृढ़ता । धैर्य । कठोरता ।

स्थौणेय, **स्थौणेयक**—(पुं०) [स्थूणा+ढक्] [स्थूणा+ढकञ्] ग्रन्थिपर्ण नामक गन्धद्रव्य ।

स्थौर—(न०) दृढ़ता । शक्ति, बल । गधे या घोड़े के ढोने योग्य बोझ ।

स्थौरिन्—(वि०) [स्थौर + इनि] लद्दू घोड़ा । मजबूत या ताकतवर घोड़ा ।

स्थौल्य—(न०) [स्थूल +ष्यञ्] स्थूलता, मुटाई, मोटापन ।

स्यूम—(पुं०) चन्द्रमा । रोशनी, प्रभा ।

स्नपन—(न०) [√ स्ना + णिच्, पुक् +ल्युट्] नहलाना; 'रेजे जनैः स्नपनसान्द्र-तरार्द्रमूर्तिः' शि० ५.५७ ।

स्नव—(पुं०) [√ स्नु + अप्] चुआव, रिसाव, टपकाव ।

√स्नस्—दि० पर० अक० आबाद होना, बसना । सक० उगलना । अस्वीकार करना । स्नस्यति, स्नसिष्यति, अस्नसत् ।

√स्ना—अ० पर० अक० स्नान करना, नहाना । वेद पढ़ने के अनन्तर गृहस्थाश्रम में लौटते समय स्नान करने की विधि को पूरा करना । स्नाति, स्नास्यति, अस्नासीत् ।

स्नातक—(पुं०) [√स्ना+क्त+क] वह ब्राह्मण जिसने ब्रह्मचर्याश्रम के कर्म को पूरा करके स्नान विशेष किया हो, वेदाध्ययन के अनन्तर गृहस्थाश्रम में लौटने के लिये अङ्ग-भूत स्नान करने वाला ब्राह्मण । वह ब्राह्मण जिसने किसी धार्मिक अनुष्ठान करने के लिये भिक्षावृत्ति ग्रहण की हो ।

स्नान—(न०) [√स्ना + ल्युट्] नहाना, अवगाहन । देवप्रतिमा को विधिपूर्वक नह-लाने की क्रिया । कोई वस्तु जो नहाने में काम आती हो ।—**आगार** (**स्नानागार**)–(न०) नहाने का कमरा, गुसलखाना ।—**द्रोणी**– (स्त्री०) नहाने का पात्र या स्नान-कुम्भ ।— **यात्रा**–(स्त्री०) ज्येष्ठ पूर्णिमा के दिन श्रीविष्णु का महास्नान का उत्सव ।— **विधि**–(पुं०) स्नान करने का विधान या नियम ।

स्नानीय—(वि०) [√स्ना + अनीयर्] नहाने योग्य । (न०) स्नान के काम में आने वाली कोई भी वस्तु यथा जल, उबटन, तैल आदि ।

स्नापक—(पु०) [√स्ना+णिच्, पुक् +ण्वुल्] स्नान कराने वाला नौकर या वह नौकर जो अपने मालिक के नहाने के लिये जल लावे ।

स्नापन—(न०) [√स्ना + णिच्, पुक् +ल्युट्] नहलाना ।

स्नायु—(पु०) [√स्ना+उण्, युक्] शिरा, नस । पेशी । धनुष का रोदा या डोरी ।—**अर्मन्** (स्नाय्वर्मन्)–(न०) एक नेत्र-रोग जिसमें सफेद भाग पर अर्बुद निकल आता है ।

स्नायुक—(पु०) [स्नायु+क] दे० 'स्नायु' ।

स्नाव, स्नावन्—(पु०) [√स्ना + वन्] [√स्ना+वनिप्] नस, रग । पेशी ।

स्निग्ध—(वि०) [√स्निह् + क्त] प्रिय, प्यारा । चिकना । चिपचिपा । चमकीला । कोमल । तर, नम, भींगा । शीतल । दयालु । मनोहर । गाढ़ा । सघन; 'स्निग्धच्छाया-तरुषु वसतिं रामगिर्याश्रमेषु' मे० १ । एकाग्र । (न०) तेल । मोम । चमक, दीप्ति । मोटापन । (पु०) मित्र । लाल रेंड़ का वृक्ष । सरल वृक्ष ।—**तण्डुल**–(पु०) एक प्रकार का चावल जो जल्द उगता है ।—**मज्जक**– (पु०) बादाम ।

स्निग्धता— (स्त्री०), **स्निग्धत्व**– (न०) [स्निग्ध+तल् – टाप्] [स्निग्ध +त्व] चिकनापन, चिकनाहट । कोमलता । प्रियता, प्रेम ।

स्निग्धा—(स्त्री०) [स्निग्ध+टाप्] मज्जा । विकंकत वृक्ष ।

√स्निह्—दि० पर० सक० प्यार करना, प्रेम करना, स्नेह करना । अक० सहज में अनुरक्त होना । प्रसन्न होना । चिपचिपा होना । चिकना होना । स्निह्यति, स्नेहि-ष्यति–स्नेक्ष्यति, अस्निहत् ।

√स्नु—अ० पर० अक० टपकना, चूना । बहना, प्रवाहित होना । स्नौति, स्नविष्यति, अस्नावीत् ।

स्नु—(पु०, न०) [√स्ना+कु] पर्वत का समतल भूभाग, सानु । (स्त्री०) स्नायु, नस, रग ।

स्नुत—(वि०) [√स्नु+क्त] रिसा हुआ, टपका हुआ । बहा हुआ ।

स्नुषा—(स्त्री०) [√स्नु+सक् – टाप्] बहू, पुत्र-वधू । थूहड़ का पेड़ ।

√स्नुह्—दि० पर० सक० उगलना । कै करना । स्नुह्यति, स्नोहिष्यति –स्नोक्ष्यति, अस्नुहत् ।

स्नेह—(वि०) [√स्निह्+घञ्] वह प्रेम जो बड़ों का छोटों के प्रति होता है । चिक-नाहट, चिकनापन । नमी, तरी । चरबी । तेल । शरीर से निकलने वाली कोई भी तरल धातु, जैसे वीर्य ।—**अक्त** (स्नेहाक्त)–(वि०) तेल दिया हुआ, तेल से चिकनाया हुआ ।— **अनुवृत्ति** (स्नेहानुवृत्ति)–(स्त्री०) मैत्री भाव ।—**आश** (स्नेहाश)–(पु०) दीपक ।—**छेद**, —**भङ्ग**–(पु०) मित्रता का टूटना ।— **प्रवृत्ति**–(स्त्री०) प्रेम-प्रवाह ।—**प्रिय**– (वि०) जिसको तेल प्रिय हो । (पु०) दीपक । —**भू**–(पु०) कफ, श्लेष्मा ।—**रङ्ग**–(पु०) तिल्ली, तिल ।—**वस्ति**– (पु०) गुदामार्ग से पिचकारी की नली से तेल डालना ।— **विमर्दित**–(वि०) तेल की मालिश किए हुए । —**व्यक्ति**–(स्त्री०) स्नेह या मित्रता प्रदर्शन ।

स्नेहन्—(पु०) [√स्निह् + कनिन्, नि० साधुः] मित्र । चन्द्रमा । रोगविशेष ।

स्नेहन—(न०) [√स्निह् + णिच्+ल्युट्] तेल की मालिश । उबटन ।

स्नेहित—(वि०) [√स्निह् + णिच् + क्त] प्यार किया हुआ । कृपालु । चिकनाया हुआ । (पुं०) मित्र । प्रेम-पात्र, माशूक ।

स्नेहिन्—(वि०) [स्त्री०—**स्नेहिनी**] [√स्निह् + णिनि] प्यारा, प्रिय । चिकना । (पुं०) मित्र । तेल मलने वाला । उबटन लगाने वाला । चितेरा ।

स्नेहु—(पुं०) [√स्निह् + उन्] चन्द्रमा । रोगविशेष ।

√स्नै—भ्वा० पर० सक० वस्त्र धारण कपड़ा लपेटना । स्नायति, स्नास्यति, अस्नासीत् ।

स्नैग्ध्य—(न०) [स्निग्ध+ष्यञ्] स्निग्धता, चिकनापन । कोमलता । अनुरक्तता ।

√स्पन्द्—भ्वा० आत्म० अक० थोड़ा-थोड़ा चलना या काँपना । स्पन्दते, स्पन्दिष्यते, अस्पन्दिष्ट ।

स्पन्द—(पुं०) [√स्पन्द्+घञ्] किसी चीज का धीरे-धीरे हिलना या काँपना । प्रस्फुरण, अंगों आदि का फड़कना ।

स्पन्दन—(न०) [√स्पन्द् + ल्युट्] दे० 'स्पन्द' । गर्भ में बच्चे का फड़कना ।

स्पन्दित—(वि०) [√स्पन्द्+क्त] काँपा हुआ । फड़का हुआ । गया हुआ (न०) धड़कन । फड़कन ।

√स्पर्ध्—भ्वा० आत्म० अक० स्पर्धा करना, बराबरी करना, प्रतिद्वन्द्विता करना । सक० चुनौती देना, ललकारना । स्पर्धते, स्पर्धिष्यते, अस्पर्धिष्ट ।

स्पर्धा—(स्त्री०) [√स्पर्ध् + अ—टाप्] एक दूसरे को दबाने की इच्छा, होड़, प्रतियोगिता । ईर्ष्या, डाह । युद्धार्थ आह्वान । समानता, बराबरी ।

स्पर्धिन्—(वि०) [स्त्री०—**स्पर्धिनी**] [स्पर्धा+इनि] स्पर्धा करने वाला, प्रतियोगिता करने वाला, प्रतिद्वन्द्वी; 'तवाधरस्पर्धिषु विद्रुमेषु' र० १३.१३ ईर्ष्यालु । अभिमानी ।

√स्पर्श्—चु० आत्म० सक० लेना, ग्रहण करना । स्पर्श करना । जोड़ना, मिलाना । छाती से लगाना, आलिंगन करना । स्पर्शयते, स्पर्शयिष्यते, अपस्पर्शत ।

स्पर्श—(पुं०) [√स्पर्श् वा √स्पृश्+घञ् वा अच्] लगाव, छुआव; 'तदिदं स्पर्शक्षमं रत्नम्' श० १.२८ । (ज्योतिष में ग्रहों का) समागम । भिड़ंत, मुठभेड़ । सम्पर्कज्ञान । त्वचा का विषय । रोग । पांच वर्गों में से ('क' से 'म' तक) कोई भी व्यञ्जन । भेंट । दान । पवन । आकाश । मैथुन ।—**अज्ञ** (**स्पर्शाज्ञ**)–(वि०) निःसंज्ञ, बेहोश, मूर्च्छित ।—**उदय** (**स्पर्शोदय**)–(वि०) जिसके पीछे व्यञ्जन वर्ण हो ।—**उपल** (**स्पर्शोपल**),—**मणि**–(पुं०) पारस पत्थर ।—**लज्जा**–(स्त्री०) छुईमुई ।—**वेद्य**–(वि०) जो छूने से जाना जाय ।—**सञ्चारिन्**–(वि०) छुआछूत का, संक्रामक ।—**स्नान**–(न०) उस समय का स्नान जिस समय चन्द्रमा या सूर्य का ग्रहण लगना आरम्भ होता है ।—**स्पन्द**, —**स्यन्द**–(पुं०) मेढक ।

स्पर्शन—(वि०) [स्त्री०—**स्पर्शनी**] [√स्पर्श् + णिच् + ल्यु] छूने वाला । प्रभाव डालने वाला । (पुं०) पवन । (न०) [√स्पर्श् वा √स्पृश्+ल्युट्] छुआव, लगाव, संसर्ग । दान । भेंट ।

स्पर्शनक—(न०) [स्पर्शन+कन्] सांख्य दर्शन में वर्ग के लिये पर्यायवाची शब्द ।

स्पर्शवत्—(वि०) [स्पर्श + मतुप्, मस्य वः] स्पर्श द्वारा अनुभव करने योग्य, स्पर्श योग्य । कोमल । छूने से आनन्द देने वाला ।

√स्पर्ष्—भ्वा० आत्म० अक० नम होना, भींगना । स्पर्षते, स्पर्षिष्यते, अस्पर्षिष्ट ।

स्पर्द् —(पुं०) [√स्पृश् + तृच्] शरीर की गड़बड़ी, रोग ।

√स्पश् —भ्वा० उभ० सक० रुकावट डालना। कोई काम करना । सीना । छूना । देखना । स्पशति–ते, स्पशिष्यति – ते, अस्पशीत् –अस्पाशीत् ।

स्पश —(पुं०) [√स्पश् + अच्] जासूस; 'स्पशो शनैर्गतवति तत्र विद्विषां' शि० १७.२० । युद्ध । जंगली जानवरों से लड़ने वाला (पुरस्कार पाने की कामना से) ।

स्पष्ट —(वि०) [√स्पश् + क्त] साफ, प्रकट । असली, सच्चा । पूरा लिखा हुआ । साफ-साफ दीखने वाला ।—**गर्भा**–(स्त्री०) स्त्री जिसके शरीर में गर्भ-धारण के लक्षण साफ-साफ दिखलाई पड़ते हों ।—**प्रतिपत्ति**–(स्त्री०) स्पष्ट ज्ञान ।—**भाषिन्**, —**वक्तृ**–(वि०) साफ-साफ कहने वाला ।

√स्पृ —स्वा० पर० सक० खींचकर निकालना । दान करना । बचाना, रक्षा करना । अक० प्रसन्न होना । रहना । स्पृणोति, स्पर्ष्यति, अस्पार्षीत् ।

स्पृक्का —(स्त्री०) [√स्पृश् + क्कन्, पृषो० शस्य कः] एक शाक, असवर्ग ।

√स्पृश् —तु० पर० सक० छूना । धीरे-धीरे थपथपाना । पानी से छिड़कना या धोना । प्राप्त करना । प्रभाव डालना । प्रमाणित करना । अक० लगाव होना, सम्पर्क होना । स्पृशति, स्प्रक्ष्यति, अस्प्राक्षीत् ।

स्पृश् —(वि०) [√स्पृश् + क्विप्] छूने वाला । असर डालने वाला । बेधने वाला (यथा मर्मस्पृश्) ।

स्पृष्ट —(वि०) [√स्पृश् + क्त] छुआ हुआ; 'दयालुमनघस्पृष्टम्पुराणमजरं विदुः' र० १०.१९ प्रभावित । पहुँचने वाला । छूकर भ्रष्ट किया हुआ । जिह्वा के स्पर्श से बना हुआ या उच्चारित ('क' से 'म' तक के वर्ण) ।

स्पृष्टि, स्पृष्टिका —(स्त्री०) [√स्पृश् +क्तिन्] [स्पृष्टि + कन्–टाप्] स्पर्श, छुआव । संसर्ग, लगाव ।

√स्पृह् —चु० उभ० सक० इच्छा करना, अभिलाष करना । स्पृहयति–ते, स्पृहयिष्यति–ते, अपस्पृहत्–त ।

स्पृहण —(न०) [√ स्पृह् +ल्युट्] इच्छा करने की क्रिया ।

स्पृहणीय —(वि०) [√ स्पृह् + अनीयर्] इच्छा करने योग्य, वाञ्छनीय । ईर्ष्या करने योग्य । रमणीय ।

स्पृहयालु — (वि०) [√ स्पृह् + णिच् +आलुच्] स्पृहा करने वाला, इच्छा करने वाला । ईर्ष्या करने वाला ।

स्पृहा —(स्त्री०) [√स्पृह् +अ –टाप्] अभिलाष । ईर्ष्या । न्याय में धर्मानुकूल पदार्थ की प्राप्ति की कामना ।

स्पृह्य —(वि०) [√स्पृह् + णिच् +यत्] वाञ्छनीय । ईर्ष्या करने योग्य । (पुं०) जंगली बिजौरे का पेड़ ।

√स्फट् —भ्वा० पर० अक० फट जाना । स्फटति, स्फटिष्यति, अस्फटीत्–अस्फाटीत् ।

स्फट —(पुं०) [√स्फट् + अच्] साँप का फैला हुआ फन ।

स्फटा —(स्त्री०) [स्फट+टाप्] साँप का फैला हुआ फन । फिटकिरी ।

स्फटि, स्फटी —(स्त्री०) [√स्फट् + इन्, पक्षे ङीष्] फिटकिरी ।

स्फटिक —(पुं०) [स्फटि √कै + क] बिल्लौर, फटिक । सूर्यकान्त मणि । कपूर । शीशा । फिटकिरी ।— **अचल** (स्फटिकाचल),— **अद्रि** (स्फटिकाद्रि)–(पुं०) कैलास पर्वत ।—**अश्मन्** (स्फटिकाश्मन्), —**आत्मन्** (स्फटिकात्मन्), —**मणि**–

(पुं०)— शिला-(स्त्री०) स्फटिक या बिल्लौर पत्थर ।

स्फटिकारि, स्फटिकारिका, स्फटिकी—(स्त्री०) फिटकिरी ।

√स्फण्ड्—चु० उभ० सक० परिहास करना । स्फण्डयति-ते, स्फण्डयिष्यति-ते, अपस्फण्डत्—त ।

√स्फर्—तु० पर० अक० फड़कना । चलना । स्फरति, स्फरिष्यति, अस्फारीत् ।

स्फरण—(न०) [√स्फर्+ल्युट्] फड़कना । काँपना । धड़कना ।

√स्फल्—तु० पर० अक० फड़कना । चलना । स्फलति, स्फलिष्यति, अस्फालीत् ।

स्फाटक—(पुं०) बिल्लौर । जल की बूंद ।

स्फाटिक—(वि०) [स्त्री०—स्फाटिकी] [स्फटिक+अण्] फटिक पत्थर का । (न०) बिल्लौर पत्थर ।

स्फाति—(स्त्री०) [√स्फाय् + क्तिन्, यलोप] वृद्धि; बढ़ती । सूजन ।

√स्फाय्—भ्वा० आत्म० अक० मोटा हो जाना । बढ़ जाना । सूज जाना । स्फायते, स्फायिष्यते, अस्फायिष्ट ।

स्फार—(वि०) [√स्फाय् +रक्] बड़ा । बढ़ा हुआ । फैला हुआ । विकट । घना । बहुत, विपुल । उच्चस्वरित । (न०) विपुलता, आधिक्य ।(पुं०) सूजन । वृद्धि । (सुवर्ण में का) बुदबुद, बुलबुला । गुमड़ा, गुमड़ी । स्पन्दन । धड़कन । मरोड़, ऐंठन ।

स्फारण—(न०) [√स्फुर् +णिच्, स्फारादेश,+ल्युट्] स्फुरण । कंपन । थरथराहट ।

स्फाल—(पुं०) [√स्फल् + घञ्] स्फुरण । धड़कन । कंपन, थरथराहट ।

स्फालन—(न०) [√स्फल् + णिच्+ल्युट्] हिलाना, कँपाना । फटफटाना । रगड़ना । सहलाना ।

स्फिच्—(स्त्री०) [√स्फाय् + डिच्] चूतड़, नितम्ब ।

√स्फिट्—चु० उभ० सक० अपमान करना । घायल करना । वध करना । स्फेटयति-ते, स्फेटयिष्यति-ते, अपिस्फिटत्—त ।

स्फिर—(वि०), [√स्फाय् + किरच्] अधिक, बहुत, विपुल । अनेक, असंख्य । विशाल ।

स्फीत—(वि०) [√स्फाय् +क्त, स्फी आदेश] सूजा हुआ । बढ़ा हुआ । मोटा-ताजा । बहुत, अधिक । सफलकाम । प्रसन्न । पैतृक या पुश्तैनी रोग से सताया हुआ । शुद्ध ।

स्फीति—(स्त्री०) [√स्फाय् + क्तिन्, स्फी आदेश] वृद्धि, बाढ़ । विपुलता, आधिक्य; 'धनधान्यस्य च स्फीतिः सदा मे वर्तताम् गृहे' सुभा० । समृद्धि ।

√स्फुट्—भ्वा० आत्म०, तु० पर० अक० खिलना । तितर-बितर होना । दृष्टिगोचर होना, प्रत्यक्ष होना । भ्वा० स्फोटते, स्फोटिष्यते, अस्फोटिष्ट । तु० स्फुटति, स्फुटिष्यति, अस्फुटीत् । भ्वा० पर० अक० फूट जाना । फट जाना । स्फोटति, स्फोटिष्यति, अस्फुटत्—अस्फोटीत् ।

स्फुट—(वि०) [√स्फुट् +क] फटा हुआ । टूटा हुआ । पूरा खिला हुआ, फला हुआ; 'स्फुटपरागपरागतपङ्कजं' शि० ६.२ । सफेद, चमकीला । विशुद्ध । प्रसिद्ध, प्रख्यात । छाया हुआ, व्याप्त । उच्चस्वरित । स्पष्ट । सत्य ।—**अर्थ** (**स्फुटार्थ**)-(वि०) जिसका अर्थ या अभिप्राय स्पष्ट हो ।—**तार**-(वि०) जिसमें तारे स्पष्ट दिखाई देते हों ।

स्फुटन—(न०) [√स्फुट् + ल्युट्] फूट जाना । फट जाना । विकसित होना ।

स्फुटि, स्फुटी—(स्त्री०) [√स्फुट् + इन्, पक्षे ङीप्] पैर की बिवाई या सूजन । फूट नामक फल ।

स्फुटिका—(स्त्री०) [स्फुटि+कन्—टाप्] छोटा टुकड़ा ।

स्फुटित—(वि०) [√स्फुट्+क्त] फटा हुआ। टूटा हुआ, फूटा हुआ। फूला हुआ, खिला हुआ। स्पष्ट किया हुआ। नष्ट किया हुआ। उपहास किया हुआ। —**चरण**-(वि०) फैले हुए पैरों वाला।

√**स्फुट्ट्**—चु० उभ० सक० तिरस्कार करना, अपमान करना। स्फुट्टयति-ते, स्फुट्टयिष्यति-ते, अपुस्फुट्टत्—त।

√**स्फुड्**—तु० पर० सक० ढकना। स्फुडति, स्फुडिष्यति, अस्फुडीत्।

√**स्फुण्ट्**—चु० उभ० सक० परिहास करना। स्फुण्टयति, स्फुण्टयिष्यति, अपुस्फुण्टत्।

√**स्फुण्ड्**—भ्वा० आत्म० अक० विकसित होना। स्फुण्डते, स्फुण्डिष्यते, अस्फुण्डिष्ट। चु० उभ० सक० परिहास करना। स्फुण्डयति-ते, स्फुण्डयिष्यति-ते, अपुस्फुण्डत्-त।

स्फुत्कर—(पुं०) [स्फुत्√कृ+घञ्] अग्नि।

√**स्फुर्**—तु० पर० अक० फड़कना। काँपना। स्फुरति, स्फुरिष्यति, अस्फुरीत्।

स्फुर—(पुं०) [√स्फुर्+क] फड़कना। धड़कना। कँपकँपी। सूजन। ढाल।

स्फुरण—(न०) [√स्फुर्+ल्युट्] कँपकँपी, थरथराहट। (अङ्ग विशेषों का) फड़कना जो होने वाले शुभाशुभ का द्योतक होता है। दृष्टि पड़ना, नजर आना। चमक। स्मरण हो आना।

स्फुरत्—(वि०) [√स्फुर्+शतृ] थरथराता हुआ। चमकीला।

स्फुरित—(वि०) [√स्फुर्+क्त] कंपित; 'निवार्यतामालि ! किमप्ययं वटुः पुनर्विवक्षुः स्फुरितोत्तराधरः' कु० ५।८३। चमकता हुआ। प्रबुद्ध, उज्ज्वल। सूजा हुआ। व्यस्त। (न०) थरथरी, कँपकँपी। मन का उद्रेक या उद्वेग।

√**स्फुर्च्छ्**—भ्वा० पर० अक० फैलना। सक० भूलना, विस्मरण होना। स्फूर्च्छति, स्फूर्च्छिष्यति, अस्फूर्च्छीत्।

√**स्फुर्ज्**—भ्वा० पर० अक० बादल की तरह गरजना। चमकना। फूट जाना। स्फूर्जति, स्फूर्जिष्यति, अस्फूर्जीत्।

√**स्फुल्**—तु० पर० अक० काँपना। धड़कना। प्रकट होना। सक० जमा करना। वध करना। स्फुलति, स्फुलिष्यति, अस्फुलीत्।

स्फुल—(न०) [√स्फुल्+क] खेमा, तंबू।

स्फुलन—(…) [√स्फुल्+ल्युट्] स्फुरण। कंपन।

स्फुलिङ्ग—(पुं०, न०), **स्फुलिङ्गा**-(स्त्री०) [√स्फुल्+इङ्गच्] [स्फुलिङ्ग+टाप्] अंगारा, शोला। चिनगारी; 'उद्भूतकोपदहनोग्रविषस्फुलिङ्गः' वे० ६.९।

स्फूर्ज—(पुं०) [√स्फुर्ज्+घञ्] बिजली गिरने की कड़कड़ाहट। इन्द्र का वज्र। सहसा होने वाला स्फोट। दो प्रेमियों का प्रथम समागम जिसमें प्रारम्भ में हर्ष और अन्त में भय की आशंका हो।

स्फूर्जथु—(पुं०) [√स्फुर्ज्+अथुच्] गड़गड़ाहट।

स्फूर्ति—(पुं०) [√स्फुर् या √स्फुर्च्छ्+क्तिन्] धड़कन। थरथराहट। खिलना। प्रकटन, प्राकट्य। स्मरण होना। काव्य सम्बन्धी स्फूर्ति।

स्फूर्तिमत्—(वि०) [स्फूर्ति+मतुप्] प्रतिभायुक्त। विकास-शील। कँपकँपा, थरथराने वाला। कोमल हृदय वाला। (पुं०) शैव भेद।

स्फेयस्—[अयम् अनयोः अतिशयेन स्फिरः, स्फिर+ईयसुन्, स्फादेश] दो में बहुत अधिक।

स्फेष्ठ—(वि०) [स्फिर+इष्ठन्, स्फादेश] अत्यंत अधिक।

स्फोट—(पुं०) [स्फुटति अर्थो अनेन, √स्फुट्+घञ्] व्याकरण में अखंड या नित्य शब्द। फूट कर निकलना। (किसी बात का) प्रकट हो जाना। गुमड़ा। सूजन। गुमड़ी।

बलतोड़। मन का वह भाव जो किसी शब्द के सुनने से मन में उदय होता है। [√स्फुट् +अच्] फोड़ा।—बीजक,—हेतुक— (पु०) भिलावाँ।—वाद— (पुं०) नित्य शब्द को संसार का कारण मानने का सिद्धान्त।

स्फोटन—(न०) [√स्फुट् +ल्युट्] सहसा तड़कना, फटना। अनाज फटकना। [√स्फुट् +णिच्+ल्युट्] फाड़ना, विदारण करना। व्यक्त करना। उँगली फोड़ना या चटकाना। (पुं०) संयुक्त व्यञ्जन वर्णों का पृथक्-पृथक् उच्चारण करना।

स्फोटनी—(स्त्री०) [स्फोटन + ङीप्] छेद करने का औज़ार, बरमा।

स्फोटा—(स्त्री०) [स्फोट + टाप्] साँप का फैला हुआ फन। सफेद अनंत मूल।

स्फोटिका—(स्त्री०) [√स्फुट् + ण्वुल् —टाप्, इत्व] हारीतिका नामक पक्षी। छोटा फोड़ा, फुंसी।

स्फोरण—(न०) दे० 'स्फुरण'।

स्फ्य—(न०) [√स्फाय् + यत्, नि० साधुः] यज्ञीय पात्र विशेष जो तलवार के आकार का होता है।

स्म—(अव्य०) [√स्मि+ड] यह जब किसी वर्तमानकालिक क्रियावाची शब्द में लगाया जाता है तब वह शब्द भूतकालिक क्रिया का अर्थ देता है; 'क्षीणन्ति स्म प्राणमूल्यैर्यशांसि' शि० १७.१५। निषेध और पादपूर्ति के लिये भी इसका प्रयोग होता है।

स्मय—(पुं०) [√स्मि + अच्] आश्चर्य, ताज्जुब। अहंकार; 'तस्मै स्मयावेश-विवर्जिताय' र० ५.१९।

स्मर—(पुं०) [√स्मृ + अप् (भावे)] स्मृति, स्मरण, याद। [स्मरति प्रियम् अनेन, करणे अप्] कामदेव।—अङ्कुश (स्मराङ्कुश)— (पुं०) उँगली के नख। प्रेमी। धार्मिक।—आगार (स्मरागार)— (न०), —कूपक— (पुं०), —गृह, —मन्दिर— (न०) योनि, स्त्री की जननेन्द्रिय।—अन्ध (स्मरान्ध)— (त्रि०) काम से अन्धा।—आतुर (स्मरातुर), —आर्त (स्मरार्त),—उत्सुक (स्मरोत्सुक)–(वि०) प्रेम-विह्वल।—आसव (स्मरासव)–(पुं०) अधर-रस।—कर्मन्— (न०) कोई भी रसिक कर्म।—गुरु— (पुं०) विष्णु।— दशा— (स्त्री०) काम के कारण उत्पन्न हुई शरीर की दशा (असौष्ठव, ताप, पाण्डुता, कृशता, अरुचि, अधैर्य, अनालम्बन, तन्मयता, उन्माद और मरण)।— ध्वज–(पुं०) पुरुषेन्द्रिय। मत्स्य विशेष। वाद्य-यंत्र विशेष। (न०) स्त्री की जननेन्द्रिय, भग।—ध्वजा– (स्त्री०) चाँदनी रात।— प्रिया–(स्त्री०) कामदेव की स्त्री रति।—भासित— (वि०) काम से उद्दीप्त या विह्वल।—मोह– (पुं०) काम से मति का मारा जाना।—लेखनी–(स्त्री०) मैना पक्षी।—वल्लभ–(पुं०) वसन्त ऋतु। अनिरुद्ध का नाम।—वीथिका– (स्त्री०) वेश्या।—शासन– (पुं०) शिव जी।—सख–(पुं०) चन्द्रमा।—स्तम्भ–(पुं०) लिङ्ग, पुरुष की जननेन्द्रिय। स्मर्य–(पुं०) गधा।—हर–(पुं०) शिवजी।

स्मरण—(न०) [√स्मृ+ल्युट्] स्मृति, याद। किसी के विषय में चिन्तन। परंपरागत अनुशासन। किसी देवता का मानसिक बारबार नाम कीर्तन करना। अखेद स्मृति। साहित्य में अलंकार विशेष; यथा —'यथानुभवमर्थस्य दृष्टे तत्सदृशे स्मृतिः स्मरणम्।' —अनुग्रह (स्मरणानुग्रह)– (पुं०) कृपापूर्वक स्मरण। स्मरण करने का अनुग्रह।— अपत्यतर्पक (स्मरणापत्यतर्पक)–(पुं०) कछुवा।— अयौगपद्य (स्मरणायौगपद्य)– (न०) स्मरणों की

असमसामयिकता ।—**पदवी**-(स्त्री०) मृत्यु ।

स्मर्य—(वि०) [√स्मृ+यत्] स्मरण करने योग्य ।

स्मार—(वि०) [स्मर+अण्] कामदेव संबन्धी; 'स्मारं पुष्पमतल्लिकाम्' सुभा० । (पु०) [√स्मृ + घञ्] स्मरण, याददाश्त ।

स्मारक—(वि०) [स्त्री०—**स्मारिका**] [√स्मृ+णिच्+ण्वुल्] स्मरण कराने वाला, याद दिलाने वाला । (न०) कोई वस्तु जो किसी को स्मरण कराने के लिए हो ।

स्मारण—(न०) [√स्मृ + णिच्+ल्युट्] स्मरण कराना, याद दिलवाना ।

स्मार्त—(वि०) [स्मृति+अण्] स्मरण शक्ति संबन्धी । स्मृति में लिखा हुआ । स्मृति के मतों का अनुसरण करने वाला । गार्हपत्य (यथा अग्नि) । (पु०) स्मृति शास्त्रों में दक्ष ब्राह्मण । स्मृतियों के अनुसार चलने वाला एक सम्प्रदाय ।

√स्मि—भ्वा० आत्म० अक० मुसकराना । स्मयते, स्मेष्यते, अस्मेष्ट । चु० आत्म० अक० आश्चर्यित होना । सक० अनादर करना । स्माययते, स्माययिष्यते, असिस्मयत ।

√स्मिट्—चु० उभ० सक० तिरस्कार करना । प्रेम करना । जाना । स्मेटयति—ते, स्मेटयिष्यति—ते, असिस्मिटत्—त ।

स्मित—(वि०) [√स्मि+क्त] मुसकाया हुआ । खिला हुआ । (न०) मुसक्यान ।—**दृश्**-(वि०) मुसक्यान के साथ देखने वाला । (स्त्री०) हँस-मुख या सुन्दरी स्त्री ।

√स्मील्—भ्वा० पर० अक० आँख मारना, आँख झपकाना । स्मीलति, स्मीलिष्यति, अस्मीलीत् ।

√स्मृ—भ्वा० पर० सक० स्मरण करना । स्मरति, स्मरिष्यति, अस्मार्षीत् ।

स्मृति—(स्त्री०) [√स्मृ + क्तिन्] स्मरण, याद । मन्वादिमुनि-प्रणीत धर्मशास्त्र जो १८ हैं—१ मनु, २ अत्रि, ३ विष्णु, ४ हारीत, ५ याज्ञवल्क्य, ६ उशना, ७ अंगिरा, ८ यम, ९ आपस्तम्ब, १० संवर्त, ११ कात्यायन, १२ बृहस्पति, १३ पाराशर, १४ शंख, १५ लिखित, १६ दक्ष, १७ गौतम, १८ शातातप । एक सञ्चारी भाव । अभिलाषा ।—**अपेत** (**स्मृत्यपेत**)-(वि०) भूला हुआ । स्मृतिशास्त्र-विरुद्ध । न्याय-वर्जित ।—**उक्त** (**स्मृत्युक्त**)-(वि०) स्मृतियों में वर्णित ।—**प्रत्यवमर्श**-(पु०) स्मरण शक्ति ।—**प्रबन्ध**-(पु०) स्मृति संबन्धी ग्रन्थ ।—**भ्रंश**-(पु०) स्मरण-शक्ति का नाश ।—**रोध**-(पु०) स्मरण-शक्ति का नाश ।—**विभ्रम**-(पु०) स्मरण-शक्ति की गड़बड़ी ।—**विरुद्ध**-(वि०) स्मृतिशास्त्र के विरुद्ध ।—**विरोध**-(पु०) दो स्मृतिवाक्यों में पारस्परिक विरोध ।—**शास्त्र**-(न०) स्मृति ग्रन्थ, धर्मशास्त्र ।—**शेष**-(वि०) मृत, मरा हुआ ।—**शैथिल्य**-(न०) स्मरण-शक्ति की शिथिलता ।—**साध्य**-(वि०) जो स्मृति से सिद्ध किया जा सके ।—**हेतु**-(पु०) स्मरण होने का कारण ।

स्मेर—(वि०) [√स्मि+रन्] मंदहासयुक्त, मुसकाने वाला; 'विलोक्य वृद्धोक्षमधिष्ठितं त्वया महाजनः स्मेरमुखो भविष्यति' कु० ५.७० । खिला हुआ, प्रफुल्लित । अभिमानी । प्रत्यक्ष, स्पष्ट ।—**विष्किर**-(पु०) मयूर ।

स्यद—(पु०) [√स्यन्द्+क] वेग ।

√स्यन्द्—भ्वा० आत्म० अक० चूना, रिसना । पकना । बहना । दौड़ना । स्यन्दते, स्यन्दिष्यते — स्यन्स्यते, अस्यदत्—अस्यन्दिष्ट—अस्यन्त ।

स्यन्द—(पु०) [√स्यन्द् + घञ्] चूना, रिसना । प्रवाहित होना । पसीना निकलना । तेजी से गमन । रथ ।

स्यन्दन—(वि०) [स्त्री०—**स्यन्दना, स्यन्दनी**] [√स्यन्द् + ल्यु] तेजी से गमन करने वाला, तेज चाल चलने वाला। बहने वाला। रिसने वाला। (न०) [√स्यन्द् + ल्युट्] बहाव। टपकाव, रिसाव, चूग्राव। [√स्यन्द् + ल्यु] तीव्र धारा या प्रवाह। जल। (पुं०) रथ। पवन। तिनिश का पेड़।—**ग्रारोह** (**स्यन्दनारोह**)-(पुं०) वह योद्धा जो रथ में बैठ कर युद्ध करे।

स्यन्दनि—(पुं०) [√स्यन्द् + ग्रनि] तिनिश वृक्ष।

स्यन्दनिका—(स्त्री०) [स्यन्दन + ङीप् + कन् – टाप्, ह्रस्व] थूक का छींटा। सोता।

स्यन्दिन् (वि०) [स्त्री०—**स्यन्दिनी**] [√स्यन्द् + णिनि] बहने वाला। चूने वाला। तेज चलने वाला।

स्यन्दिनी—(स्त्री०) [स्यन्दिन् + ङीप्] थूक। एक साथ दो बच्चे जनने वाली गाय।

स्यन्न—(वि०) [√स्यन्द्+क्त] टपका हुग्रा, रिसा हुग्रा, चूग्रा हुग्रा। गमन-शील।

√**स्यम्**—भ्वा० पर० ग्रक० शब्द करना। स्यमति, स्यमिष्यति, ग्रस्यमीत्। चु० उभ० सक० सोचना-विचारना। स्यामयति–ते, स्यामयिष्यति–ते, ग्रसिस्यमत्–त।

स्यमन्तक—(पुं०) [√स्यम् + ग्रच्+कन्] एक प्रसिद्ध मणि जो श्रीकृष्ण के समय में सत्राजित् के पास थी।

स्यमिक, स्यमीक—(पुं०) [√स्यम्+इकन्] [√स्यम्+ईकन्] बादल, मेघ। दीमक की मिट्टी का टीला, वल्मीक। वृक्ष विशेष। जल। समय।

स्यमीका—(स्त्री०) [स्यमीक+टाप्] नील का पौधा।

स्यात्—(ग्रव्य०) कदाचित्, शायद।—**वाद** (**स्याद्वाद**)-(पुं०) जैनों का संशयवाद जिसमें कहा जाता है कि स्यात् यह भी है, स्यात् वह भी है इत्यादि।

स्यू—(स्त्री०) सूत, धागा।

स्यूत—(वि०) [√सिव् + क्त] सिला हुग्रा। बुना हुग्रा। छिदा हुग्रा। (पुं०) बोरा।

स्यूति—(स्त्री०) [√सिव्+क्तिन्] सिलाई। बुनाई। बोरा। वंशावली। सन्तति, ग्रौलाद।

स्यून—(पुं०) [√सिव् + नक्] किरण। सूर्य। बोरा।

स्यूम—(पुं०) [√सिव् + मक्] जल। किरण।

स्योन—(वि०) [=स्यून, पृषो० साधु:] सुन्दर, मनोहर। शुभ, मङ्गल-कारक। (न०) प्रसन्नता, ग्रानन्द। (पुं०) किरण। सूर्य। बोरा।

√**स्रंस्**—भ्वा० ग्रात्म० ग्रक० गिरना। डूब जाना। लटकना। सक० जाना। स्रंसते, स्रंसिष्यते, ग्रस्रंसिष्ट।

स्रंस—(पुं०) [√स्रंस् + घञ्] पतन।

स्रंसन—(न०) [√स्रंस् + ल्युट्] गिरना। [√स्रंस्+णिच्+ल्युट्] गिरवाने की क्रिया।

स्रंसिन्—(वि०) [स्त्री०—**स्रंसिनी**] [√स्रंस् +णिनि] गिरने वाला। लटकने वाला। झूलने वाला।

√**स्रंह्**—भ्वा० ग्रात्म० सक० विश्वास करना, भरोसा करना। स्रंहते, स्रंहिष्यते, ग्रस्रंहिष्ट।

स्रग्विन्—(वि०) [स्त्री०—**स्रग्विणी**] [स्रज् + विनि] मालाधारी; 'ग्रामुक्ताभरण: स्रग्वी हंसचिह्नदुकूलवान्' र० १७.२५।

स्रज्—(स्त्री०) [√सृज् + क्विन्] पुष्पमाला, फूल का गजरा।—**दामन्** (**स्रग्दामन्**)- (न०) फूल के गजरे की गांठ। —**धर** (**स्रग्धर**)- (वि०) मालाधारी। —**धरा** (**स्रग्धरा**)-(स्त्री०) एक छंद।

स्रज्वा—(स्त्री०) [√सृज्+वा नि० साधुः] रस्सी, डोरी ।

√स्रम्भ्—भ्वा० आत्म० सक० विश्वास करना, भरोसा करना । स्रम्भते, स्रम्भिष्यते, अस्रम्भत्—अस्रम्भिष्ट ।

स्रव—(पुं०) [√स्रु+अप्] टपकाव, चुवाव; 'विपुली स्तनयन्तौ सा स्तनौ नेत्र-जलस्रवैः' भा० । बहाव, धार । चश्मा, सोता ।

स्रवण—(न०) [√स्रु + ल्युट्] बहना । टपकना । पसीना । मूत्र । गर्भपात ।

स्रवत्—(वि०) [स्त्री०—स्रवन्ती] [√ स्रु+शतृ] चूता हुआ । बहता हुआ । —गर्भा (स्रवद्गर्भा)–(स्त्री०) किसी दुर्घटना-वश गिरे हुए गर्भ वाली गौ या स्त्री ।

स्रष्टृ—(वि०) [√सृज् + तृच्, अमागम] सर्जन या निर्माण करने वाला । (पुं०) सृष्टिरचयिता ब्रह्मा । शिव ।

स्रस्त—(वि०) [√स्रंस् + क्त] गिरा हुआ । लटका हुआ । ढीला किया हुआ । खोला हुआ । अलग किया हुआ ।—अङ्ग (स्रस्ताङ्ग)–(वि०) ढीले अंगों वाला । मूर्च्छित ।

स्रस्तर—(पुं०) [√स्रंस् + तरन्, कित्त्वात् नलोपः] आसन; 'शिलातले स्रस्तरमास्तीर्य निषसाद' का० । कोच ।

स्राक्—(अव्य०) [√स्रु+डाकु] फुर्ती से, तेजी से ।

स्राव—(पुं०) [√स्रु + घञ्] बहाव । रिसाव, टपकाव । गर्भपात । निर्यास ।

स्रावक—(वि०) [स्त्री०—स्राविका] [√स्रु + ण्वुल्] बहने वाला । टपकने वाला । (न०) [√स्रु + णिच्+ण्वुल्] काली मिर्च ।

√स्रिभ्—भ्वा० पर० सक० मारना, वध करना । स्रेभति, स्रेभिष्यति, अस्रेभीत् ।

√स्रिम्भ्—भ्वा० पर० सक० वध करना । स्रिम्भति, स्रिम्भिष्यति, अस्रिम्भीत् ।

√स्रिव्—दि० पर० सक० जाना । अक० सूख जाना । स्रीव्यति, स्रेविष्यति, अस्रेवीत् ।

√स्रु—भ्वा० पर० अक० बहना । टपक जाना । (किसी गुप्त बात का) फैल जाना । सक० जाना । स्रवति, स्रोष्यति, असुस्रुवत् ।

स्रुघ्न—(पुं०) एक जनपद का नाम जो किसी समय पाटलिपुत्र से एक मंजिल पर था ।

स्रुघ्नी—(स्त्री०) [स्रुघ्न + अण्—ङीप्] सज्जी ।

स्रुच्—(स्त्री०) [√ स्रु + क्विप्, चिट् आगम] पलाश या खदिर के काष्ठ का बना हुआ वह पात्र जिससे घृतादि की आहुति दी जाती है ।—प्रणालिका (स्रुक्प्रणालिका) –(स्त्री०) स्रुवा की नाली जिसमें होकर घी अग्नि में डालते समय बहाया जाता है ।

स्रुत—(वि०) [√स्रु + क्त] बहा हुआ । टपका हुआ ।

स्रुति—(स्त्री०) [√स्रु + क्तिन्] बहाव । रिसाव, टपकाव; 'गंडे तुषारस्रुति-धौतरक्तम्' कु० १.५ । राल, चूना । चश्मा, सोत ।

स्रुव—(पुं०) [√स्रु+क] लकड़ी की बनी हुई एक प्रकार की छोटी करछी जिससे घी की आहुति दी जाती है ।

स्रुवा—(स्त्री०) [स्रुव+टाप्] दे० 'स्रुव' । सल्लकी, सलई । मूर्वा, मरोड़फली । निर्झर, झरना ।

√स्रेक्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । स्रेकते, स्रेकिष्यते, अस्रेकिष्ट ।

√स्रै—भ्वा० पर० अक० उबलना । पसीजना । स्रायति, स्रास्यति, अस्रासीत् ।

स्रोत—(न०) [√स्रु + तन्] चश्मा, सोता ।

स्रोतस्—(न०) [√स्रु + तसि] धार, जल-प्रवाह। तेज प्रवाह वाली नदी। नदी। लहर। जल। इन्द्रिय। हाथी की सूंड़। शरीर के रन्ध्र (जो पुरुषों में ९ और स्त्रियों में ११ माने गये हैं)। वंश-परम्परा, कुल-धारा। —**अञ्जन** (**स्रोतोऽञ्जन**)—सुर्मा। —**ईश** (**स्रोतईश**)—(पुं०) समुद्र। —**रन्ध्र** (**स्रोतोरन्ध्र**)—(पुं०) हाथी की सूंड़ का छेद। —**वहा** (**स्रोतोवहा**)—(स्त्री०) नदी।

स्रोतस्य—(पुं०) [स्रोतस् + यत्] शिव। चोर।

स्रोतस्वती, स्रोतस्विनी—(स्त्री०) [स्रोतस् +मतुप्, वत्व—ङीप्] [स्रोतस् + विनि —ङीप्] नदी।

स्व—(सर्वनाम वि०) [√स्वन्+ड] निजी, अपना। स्वाभाविक, प्रकृतिगत। अपनी जाति का, अपनी जाति सम्बन्धी। (पुं०) नातेदार, रिश्तेदार। जीवात्मा। (न०, पुं०) धन-दौलत, सम्पत्ति। —**अक्षपाद** (**स्वाक्षपाद**)—(पुं०) न्याय दर्शन का मानने वाला या अनुयायी। —**अक्षर** (**स्वाक्षर**)—(न०) अपने हाथ की लिखावट। —**अधिकार** (**स्वाधिकार**)—(पुं०) अपना कर्तव्य या शासन। —**अधिष्ठान** (**स्वाधिष्ठान**)—(न०) शरीर-स्थित षट्चक्रों में से एक। —**अधीन** (**स्वाधीन**)—(वि०) स्वतंत्र, खुदमुख्तार। आत्मनिर्भर। निजी शक्ति या सामर्थ्य के भीतर। —**अध्याय** (**स्वाध्याय**)—(पुं०) वेदाध्ययन। —**अनुभूति** (**स्वानुभूति**)—(स्त्री०) निजी अनुभव। आत्मज्ञान; 'स्वानुभूत्येकसाराय नमः शान्ताय तेजसे' भर्तृ० २.१। —**अन्त** (**स्वान्त**)—(न०) मन। गुफा, खोह। —**अर्थ** (**स्वार्थ**)—(पुं०) अपना मतलब, निजी प्रयोजन। निजी अर्थ। —**आयत्त** (**स्वायत्त**)—(वि०) आत्मनिर्भर। —**इच्छा** (**स्वेच्छा**)—(स्त्री०) अपनी इच्छा। —**उदय** (**स्वोदय**)—(वि०) किसी ग्रह का उदय जो किसी स्थल विशेष पर हो। —**उपधि** (**स्वोपधि**)—(पुं०) वह तारा जो अपने स्थान पर अचल रहे। —**कम्पन**—(पुं०) वायु। —**कामिन्**—(वि०) स्वार्थी, खुदगरज। —**छन्द**—(वि०) स्वेच्छाचारी, मनमौजी। वहशी। (पुं०) अपनी इच्छा या मर्जी। —**ज**—(वि०) जो अपने से उत्पन्न हुआ हो। (पुं०) पुत्र। पसीना। (न०) रक्त। —**जन**—(पुं०) बिरादरी, जाति वाला। —**तन्त्र**—(वि०) स्वाधीन, आजाद। स्वेच्छाचारी। वयस्क, बालिग। —**देश**—(पुं०) अपना देश। —**धर्म**—(पुं०) अपना धर्म। अपना कर्तव्य। अपनी विशेषता। —**पक्ष**—(पुं०) अपना दल। —**परमण्डल**—(न०) अपना और शत्रु का देश। —**प्रकाश**—(वि०) स्वयंसिद्ध, स्वयं प्रकाशमान। —**भट**—(पुं०) वह जो स्वयं अपनी रक्षा करता हो। —**भाव**—(पुं०) अपनी अवस्था। सहज प्रकृति। —**भू**—ब्रह्मा की उपाधि। शिव का नामान्तर। विष्णु का नामान्तर। —**योनि**—(वि०) मातृ सम्बन्धी। (पुं०, स्त्री०) अपनी उत्पत्ति का स्थान। (स्त्री०) भगिनी या अन्य कोई समीपी नातेदार स्त्री। —**रस**—(पुं०) किसी का अपना (अमिश्रित) रस। स्वाभाविक स्वाद। पत्र आदि का पीसकर निकाला हुआ रस। तैलीय पदार्थ सिल पर पीसने पर लगी हुई तरौंछ। अपना तात्पर्य या अभिप्राय। अपने लोगों के प्रति होने वाली भावना। —**रसा**—(स्त्री०) कपित्थपत्रक। लाख। —**राज्**—(पुं०) परब्रह्म। —**रूप**—(वि०) समान सदृश। मनोहर, सुन्दर। विद्वान्, पण्डित। (न०) अपनी आकृति। अपनी विशेषता।

प्रकृति । विलक्षण उद्देश्य । प्रकार, तरह, किस्म ।—**वश** – (वि०) आत्म-संयमी । स्वाधीन ।—**वासिनी**–(स्त्री०) विवाहिता अथवा अविवाहिता वह स्त्री जो युवती होने पर भी अपने पिता के घर में रहे ।—**वृत्ति**– (वि०) अपने उद्योग पर निर्भर ।—**संवृत्त**– (वि०) अपनी रक्षा आप करने वाला ।—**संस्था**–(वि०) आत्म-लीन होना । मन का प्रशान्त भाव ।—**स्थ**–(वि०) अपने में स्थित । जो अपनी स्वाभाविक अवस्था में हो । नीरोग, तंदुरुस्त । स्वाधीन । सन्तुष्ट । सुखी ।—**स्थान**–(न०) अपना निजी घर; 'नक्रः स्वस्थानमासाद्य गजेन्द्रमपि कर्षति' पं० ३.४६ । —**हस्त**–(न०) अपना हाथ या अपने हाथ का लेख ।—**हस्तिका**–(स्त्री०) कुल्हाड़ी । —**हित**–(वि०) अपने लिये हितकर । (न०) अपनी भलाई, अपना हित ।

स्वक—(वि०) [स्व + अकच्] अपना, निजी । अपने खानदान या कुटुम्ब का ।

स्वकीय—(वि०) [स्वस्य इदम्, स्व+छ, कुक् आगम]अपना, निजी । अपने कुटुम्ब-परिवार का ।

√**स्वङ्ग्**—भ्वा० पर० सक० जाना । स्वङ्गति, स्वङ्गिष्यति, अस्वङ्गीत् ।

स्वङ्ग—(पु०) [√स्वङ्ग् + घञ्] आलिङ्गन ।

स्वच्छ—(वि०) [सुष्ठु अच्छः, प्रा० स०] साफ, निर्मल । चमकीला । विशुद्ध । सफेद । सुन्दर । तंदुरुस्त, स्वस्थ । (न०) मोती । सोने और चाँदी का मिश्रण । रूपामाखी । सोनामाखी । (पु०) बिल्लौर । बेर का पेड़ । —**पत्र**– (न०) अबरक ।—**वालुक** –(न०) विशुद्ध खड़िया मिट्टी ।—**मणि**–(पु०) फटिक पत्थर, बिल्लौरी पत्थर ।

√**स्वञ्ज्**—भ्वा० आत्म० सक० आलिङ्गन करना, छाती लगाना । घेर लेना, घेरे में कर लेना । उमेठना, मरोड़ना । स्वजते, स्वङ्क्ष्यते, अस्वङ्क्त ।

√**स्वठ्**—चु० उभ० सक० जाना । संस्कार करना और न करना । स्वठयति-ते, स्वठयिष्यति-ते, असिस्वठत्-त ।

स्वतस्—(अव्य०) [स्व+तसिल्] अपने से, आपही ।

स्वता—(स्त्री०) [स्वस्य स्वकीयस्य भावः, स्व + तल्—टाप्] स्वकीयत्व, अपना होने का भाव । यथा 'कामः स्वतां पश्यति' शकुन्तला ।

स्वत्व—(न०) [स्व+त्व] आत्म-अस्तित्व। अधिकार, स्वामित्व ।— **बोधन**—(न०) स्वामित्व का प्रमाण ।

√**स्वद्**—भ्वा० आत्म० अक० स्वादिष्ठ लगना, जायकेदार मालूम होना । सक० स्वाद लेना, चखना । स्वदते, स्वदिष्यते, अस्वदिष्ट ।

स्वदन—(न०) [√स्वद् + ल्युट्] चखना ।

स्वदित—(वि०) [√स्वद्+क्त] चखा हुआ । (न०) वाक्य विशेष जिसका प्रयोग श्राद्ध कर्म में किया जाता है और जिसका अभिप्राय है कि यह पदार्थ आपको स्वादिष्ट लगे ।

स्वधा—(स्त्री०) [√स्वद्+आ, पृषो० दस्य धः वा स्व√धे+क – टाप्] स्वतः प्रवृत्ति । स्वाभाविक वात्सल्य । निजी संकल्प या दृढ़ विचार । मृत पुरुषों के उद्देश्य से हवि आदि का देना । पितरों को भोजनादि निवेदन करना । भोज्य पदार्थ या नैवेद्य । माया या सांसारिक प्रपञ्च । (अव्य०) पितरों का सम्बोधन विशेष जो नैवेद्य निवेदन करते समय उच्चारित किया जाता है । यथा—पितृभ्यः स्वधा ।—**कार**– (पु०) स्वधा शब्द का उच्चारण ।—**प्रिय**–(पु०)

धनि।—भुज् (पुं०) मरे हुए पूर्वपुरुष। दैवता।

स्वधिति—(पुं०, स्त्री०), **स्वधिती**–(स्त्री०) [स्व√धा + क्तिन्] [स्वधिति+ङीप्] कुल्हाड़ी।

√स्वन्—भ्वा० पर० अक० शब्द करना। स्वनति, स्वनिष्यति, अस्वनीत्–अस्वानीत्। चु० स्वनयति, स्वनयिष्यति, असस्वनत्।

स्वन—(पुं०) [√ स्वन् + अप्] ध्वनि, आवाज; 'शिवाघोरस्वनां पश्चात् बुबुधे विकृतेति ताम्' र० १२.३९। —**उत्साह** (**स्वनोत्साह**)–(पुं०) गैंडा।

स्वनि—(पुं०) [√स्वन्+इन्] ध्वनि, शब्द। अग्नि।

स्वनिक—(वि०) [स्वन+ठन्] शब्द करने वाला।

स्वनित—(वि०) [√स्वन् + क्त] शब्दित, ध्वनित। (न०) शब्द, आवाज। बादलों की गड़गड़ाहट। गर्जन।

√स्वप्—अ० पर० अक० सोना। लेटना, आराम करना। ध्यान-मग्न होना। स्वपिति, स्वप्स्यति, अस्वाप्सीत्।

स्वप्न—(पुं०) [√ स्वप्+नन्] निद्रा, नींद। सपना, ख्वाब; 'स्वप्नो नु माया नु मतिभ्रमो नु' श० ६.९। काहिली, सुस्ती। जँभाई। —**अवस्था** (**स्वप्नावस्था**)–(स्त्री०) सपना देखने की हालत। —**उपम** (**स्वप्नोपम**)–(वि०) सपने के सदृश। सपने की तरह मिथ्या। —**कर**, —**कृत्**–(वि०) नींद लाने वाला, निद्राजनक। —**गृह**, —**निकेतन**– (न०) सोने का कमरा, शयन-गृह। —**दोष**– (पुं०) सोते में इच्छा न रहते भी वीर्यपात होना। —**धीगम्य**– (वि०) सोने जैसी दशा मन की होने पर जानने योग्य। —**प्रपञ्च**– (पुं०) स्वप्न सदृश मिथ्या संसार। —**विचार**– (पुं०) स्वप्न के शुभाशुभ फल पर विचार। —**शील**–(वि०) निद्रालु, ऊँघासा।

स्वप्नज्—(वि०) [√स्वप् + नजिङ्] शयनशील, निद्रालु।

स्वयम्—(अव्य०) [सु√ अय् +अमु] खुद, आप। अपने आप। अपनी इच्छा से। —**अर्जित** (**स्वयमर्जित**)– (वि०) खुद पैदा किया हुआ। —**उक्ति** (**स्वयमुक्ति**)–(स्त्री०) अपने आप दिया हुआ बयान। —**ग्रह** (**स्वयङ्ग्रह**)–(पुं०) बिना अनुमति के ले लेना। —**ग्राह** (**स्वयङ्ग्राह**)–(वि०) अपने आप पसंद किया हुआ। —**जात** (**स्वयञ्जात**) –(वि०) अपने आप उत्पन्न। —**दत्त** (**स्वयन्दत्त**)–(वि०) अपने आप दिया हुआ। (पुं०) वह बालक जो दत्तक होने के लिये अपने आप दूसरे को दे दिया गया हो। — **भु**–(पुं०) ब्रह्मा का नामान्तर। —**भुव**– (पुं०) प्रथम मनु। ब्रह्मा। शिव। —**भू**– (वि०) अपने आप उत्पन्न। (पुं०) ब्रह्मा। विष्णु। शिव। काल जो मूर्तिमान् हो। कामदेव। — **वर** (**स्वयंवर**)–(पुं०) स्वेच्छानुसार चुनाव, अपने आप (अपने लिये पति को) चुनना। —**वरा** (**स्वयंवरा**)– (स्त्री०) वह कन्या जो अपने पति को अपने आप चुने। —**हारिका** (**स्वयंहारिका**)–(स्त्री०) ब्रह्मा के मानस पुत्र दुःसह की एक कन्या जो तिल का तेल, केसर का रंग आदि हरण कर लेती थी।

√स्वर्—चु० उभ० सक० दोष निकालना, ऐबजोई करना। भर्त्सना करना, फटकारना। स्वरयति-ते, स्वरयिष्यति-ते, असस्वरत्–त।

स्वर्—(अव्य०) [√स्वृ + विच्] स्वर्ग। इन्द्र-लोक जहाँ पुण्यात्मा जन अपना पुण्यफल भोगने को अस्थायी रूप से रहते हैं। आकाश। शोभा। सूर्य और ध्रुव के बीच का स्थान। तीन व्याहृतियों में से तीसरी व्याहृति। —**आपगा** (**स्वरापगा**), —**गङ्गा**–

(स्त्री०) आकाश-गंगा ।—**गति**–(स्त्री०), —**गमन**– स्वर्ग-गमन । मृत्यु ।—**तरु** (**स्वस्तरु**)–(पुं०) स्वर्ग का वृक्ष, कल्पवृक्ष । —**दृश्**– (पुं०) इन्द्र । अग्नि । सोम । —**नदी** (**स्वर्णदी**)– (स्त्री०) मन्दाकिनी । वृश्चिकाली ।—**भानव**– (पुं०) गोमेदमणि । —**भानु**– (पुं०) राहु का नामान्तर; 'तुल्येऽपराधे स्वर्भानुर्भानुमन्तं चिरेण यत्, हिमांशुमाशु ग्रसते तन्म्रदिम्नः स्फुटं फलं' शि० २.४९ ।—**मध्य**– (न०) आकाश का मध्य बिन्दु ।—**लोक**– (पुं०) स्वर्ग ।—**वधू**– (स्त्री०) अप्सरा । —**वापी**– (स्त्री०) गंगा । —**वेश्या**– (स्त्री०) अप्सरा ।—**वैद्य**– (पुं०) अश्विनीकुमार ।

स्वर—(पुं०) [√स्वर् + अच् वा √स्वृ + अप्] ध्वनि, आवाज । सरगम । सात की संख्या । उच्चारण में स्पन्दन की मात्रा । उदात्त, अनुदात्त और स्वरित । श्वास । खर्राटा ।—**ग्राम**– (पुं०) संगीत के सातों स्वरों का क्रम, स्वरसप्तक, सरगम ।—**मण्डलिका**–(स्त्री०) वीणा ।—**नालिका**–(स्त्री०) बाँसुरी ।—**शून्य**–(वि०) बेसुरा । —**संयोग**–(पुं०) स्वरवर्णों का मेल ।—**सङ्क्रम**–(पुं०) सुरों के उतार-चढ़ाव का क्रम ।—**सामन्**— (पुं०) गवामयन यज्ञ के छठे मास का एक दिन ।

स्वरवत्—(वि०) [स्वर + मतुप्, वत्व] स्वर या आवाज वाला । स्वर-युक्त ।

स्वरित—(वि०) [√स्वर् + क्त] स्वर-युक्त । ध्वनित । उच्चरित । (पुं०) [स्वर + इतच्] उदात्त और अनुदात्त के बीच का, मध्यम स्वर ।

स्वरु—(पुं०) [√स्वृ + उन्] धूप । यज्ञ-स्तम्भ का भाग विशेष । यज्ञ । वज्र । तीर । सूर्य-किरण । एक तरह का बिच्छू ।

स्वरुस्—(पुं०) [√स्वृ + उसि] वज्र ।

स्वर्ग–(पुं०) [स्वरिति गीयते, √गै + क वा सु √ऋज् + घञ्] ऊपर के सात लोकों में से तीसरा जिसमें सत्कर्म करने वालों की आत्मायें जाकर निवास करती हैं, देवलोक ।—**आपगा** (**स्वर्गापगा**)–(स्त्री०) मन्दाकिनी, स्वर्गङ्गा । —**ओकस्** (**स्वर्गौकस्**)–(पुं०) देवता । —**गिरि**–(पुं०) सुमेरु पर्वत ।—**द**, —**प्रद**–(वि०) स्वर्ग-प्राप्ति कराने वाला ।—**द्वार**– (न०) स्वर्ग का फाटक; 'स्वर्गद्वारकपाटपाटनपटुर्धर्मोऽपि नोपार्जितः' भर्तृ० ३.१० । शिव ।—**धेनु**– (स्त्री०) कामधेनु ।—**पति**, —**भर्तृ**– (पुं०) इन्द्र ।—**लोक**– (पुं०) देवलोक ।—**वधू**,—**स्त्री**– (स्त्री०) अप्सरा । —**साधन**– (न०) स्वर्ग-प्राप्ति का उपाय ।

स्वर्गिन्—(वि०) [स्वर्ग + इनि] देवलोक को जाने वाला । स्वर्ग में वास करने वाला । (पुं०) देवता ।

स्वर्गीय—(वि०) [स्वर्ग + छ] स्वर्ग का, स्वर्ग सम्बन्धी । स्वर्गगत, जिसका स्वर्गवास हो गया हो ।

स्वर्ग्य—(वि०) [स्वर्ग + यत्] स्वर्ग दिलाने वाला । स्वर्ग के योग्य ।

स्वर्ण—(न०) [सुष्ठु अर्णो वर्णो यस्य, प्रा० ब०] सोना, सुवर्ण । धतूरा । नागकेशर । गौरसुवर्ण नामक साग ।—**अरि** (**स्वर्णारि**) (पुं०) गंधक । सीसा ।—**कण**–(पुं०) सोने का कण । कणगुग्गुल ।—**काय**– (वि०) सुनहले शरीरवाला । (पुं०) गरुड़ ।—**कार** (पुं०) सुनार ।—**गैरिक**–(न०) एक तरह का पीला गेरू ।—**चूड**–(पुं०) नीलकंठ । मुर्गा ।—**ज**– (न०) राँगा ।—**दीधिति**– (पुं०) अग्नि ।—**पक्ष**– (पुं०) गरुड़ का नाम । —**पाठक**– (पुं०) सोहागा ।—**पुष्प**– (पुं०) चंपक वृक्ष । आरग्वध । कीकर । कपित्थ । पेठा ।—**बन्ध**,—**बन्धक**–

(पुं०) सोने की गिरवी ।—**भूमिका**-(स्त्री०) अदरक ।—**भूषण**- (पुं०) पीला गेरू । आरग्वध ।—**भृङ्गार**-(पुं०) पीला भँगरा । स्वर्ण-कलश ।—**माक्षिक**-(न०) सोनामक्खी ।—**रेखा**, —**लेखा**-(स्त्री०) सोने की लकीर ।—**वणिज्**-(पुं) सोने का व्यापारी । सर्राफ ।—**वर्णा**- (स्त्री०) हल्दी ।—**विद्या**- (स्त्री०) सोना बनाने की विद्या, कीमियागरी ।

√स्वर्द्—भ्वा० आत्म० सक० प्रसन्न करना । स्वाद लेना । अक० संतुष्ट होना । स्वर्दते, स्वर्दिष्यते, अस्वर्दिष्ट ।

स्वल्प—(वि०) [सुष्ठु अल्पः, प्रा० स०] बहुत कम या थोड़ा । अत्यन्त ह्रस्व, बहुत छोटा । तुच्छ ।—**आहार** (**स्वल्पाहार**)-(वि०) बहुत कम खाने वाला ।—**कङ्क**-(पुं०) चील पक्षी का एक भेद ।—**बल**-(वि०) बहुत कमजोर ।—**विषय**-(पुं०) तुच्छ विषय । छोटा भाग ।—**व्यय**-(पुं०) बहुत थोड़ा खर्च ।—**व्रीड**-(वि०) निर्लज्ज, बेहया ।—**शरीर**-(वि०) बौना, ठिगना ।

स्वल्पक—(वि०) [स्वल्प + कन्] दे० 'स्वल्प' ।

स्वल्पीयस्—(वि०) [स्वल्प + ईयसुन्] अपेक्षाकृत कम । अपेक्षाकृत छोटा ।

स्वल्पिष्ठ—(वि०) [स्वल्प+इष्ठन्] सब से छोटा । सब से कम ।

स्वसृ—(स्त्री०) [सु√अस्+ऋन्] बहिन । —'स्वसारमादाय विदर्भनाथः पुरप्रवेशाभिमुखो बभूव ।' —रघुवंश ।

√स्वस्क्—भ्वा० आत्म० सक० जाना । स्वस्कते, स्वस्किष्यते, अस्वस्किष्ट ।

स्वस्ति—(अव्य०) [सु√अस् + क्तिच् वा अस्तीति विभक्तिप्रतिरूपकम् अव्ययम्, प्रा० स०] क्षेम, कल्याण, आशीर्वाद और पुण्य आदि स्वीकार-सूचक अव्यय ।—**अयन** (**स्वस्त्ययन**)—(न०) समृद्धि प्राप्ति का साधन । मंत्र-द्वारा अनिष्ट दूर करना । भेंट पाने के बाद ब्राह्मण का दिया हुआ आशीर्वाद । "प्रास्थानिकं स्वस्त्ययनं प्रयुज्य —रघुवंश ।—**द**,— **भाव**-(पुं०) शिवजी का नामान्तर ।—**मुख**-(पुं०) पत्र आदि (जो स्वस्ति से आरंभ हो) । ब्राह्मण । बन्दीजन, भाट ।—**वाचन**, —**वाचनक**, —**वाचनिक**- (न०) यज्ञ करने के पूर्व की जाने वाली एक विधि या क्रिया । पुष्पोंद्वारा आशीर्वाद देने का कर्मविशेष ।—**वाच्य**- (न०) बधाई । आशीर्वाद ।

स्वस्तिक—(पुं०) [स्वस्ति + ठन्] एक मांगलिक चिह्न ( ); 'स्तनविनिहितहस्तस्वस्तिकाभिर्वधूभिः' माल० ४.१० । शरीर के विशिष्ट अंगों में होने वाला इसी प्रकार का चिह्न । इस चिह्न की शकल की पट्टी । नष्ट शल्य निकालने का एक प्राचीन यंत्र । कोई भी शुभ पदार्थ । चौराहा, चतुष्पथ । चावल के आटे से बना हुआ त्रिकोण के आकार का रूप विशेष । एक प्रकार का पकवान । लंपट । लहसुन । सितावर शाक । मुर्गा । सांप के फन पर की रेखा । (पुं०, न०) वह घर जिसमें पश्चिम एक ओर पूरब दो दालान हों । एक योगासन ।

स्वस्रीय, स्वस्रेय—(पुं०) [स्वसृ + छ] [स्वसृ+ढ] भांजा, बहिन का बेटा ।

स्वस्रीया, स्वस्रेयी—(स्त्री०) [स्वस्रीय +टाप्] [स्वस्रेय+ङीप्] भांजी, बहिन की बेटी ।

स्वागत—(न०) [सु—आ √ गम्+क्त] सुख-पूर्वक आना । [स्वागत + अच्] किसी के आगमन पर कुशल-प्रश्न आदि से उसका अभिनंदन करना, अगवानी ।

स्वाङ्गिक—(पुं०) [स्वाङ्ग+ठन्] मृदंग । मृदंग बजाने वाला ।

स्वाच्छन्द्य—(न०) [स्वच्छन्द + ष्यञ्] स्वतंत्रता, स्वाधीनता । स्वास्थ्य ।

स्वातन्त्र्य—(न०) [स्वतन्त्र + ष्यञ्] स्वाधीनता, आज़ादी ।

स्वाति, स्वाती—(स्त्री०) [स्व√अत्+इन्, पक्षे ङीप्] सूर्य की एक पत्नी का नाम । तलवार । २७ नक्षत्रों में से १५वां शुभ नक्षत्र; 'स्वात्यां सागरशुक्तिकुक्षिपतितं तन्मौक्तिकं जायते' भर्तृ० २.६७ ।

√**स्वाद्**—भ्वा० आत्म० सक० प्रसन्न करना । स्वाद लेना या चखना । अक० प्रसन्न होना । स्वादते, स्वादिष्यते, अस्वादिष्ट ।

स्वाद—(पुं०) [√स्वद् या √स्वाद्+घञ्] कुछ खाने-पीने से जीभ को होने वाला रसानुभव, ज़ायका । रसानुभूति, आनन्द । इच्छा, चाह । मीठा रस ।

स्वादन—(न०) [√स्वाद्+ल्युट्] स्वाद लेना, चखना । रस या आनन्द लेना ।

स्वादिमन्—(पुं०) [स्वादु + इमनिच्] मधुरिमा, मिठास ।

स्वादिष्ठ—(वि०) [स्वादु + इष्ठन्, डित्] अतिशय स्वाद वाला, बहुत ही ज़ायकेदार ।

स्वादीयस् —(वि०) [स्वादु + ईयसुन्] स्वादुतर, अपेक्षाकृत अधिक ज़ायकेदार ।

स्वादु—(वि०) [स्त्री०—**स्वादु या स्वाद्वी**] [√स्वद् +उण्] स्वाद-युक्त, ज़ायकेदार । मीठा, मधुर । मनोज्ञ, मनोहर । प्रिय । (पुं०) मधुर रस । गुड़ । जीवक ओषधि । बेर । अगर । महुआ । चिरौंजी । अनार । (न०) दूध । सेंधा नमक । (स्त्री०) द्राक्षा, दाख । —**अन्न** (**स्वाद्वन्न**)-(न०) मिठाई । पकवान । —**अम्ल** (**स्वाद्वम्ल**)-(पुं०) अनार का वृक्ष ।—**खण्ड**- (पुं०) मिठाई का टुकड़ा । गुड़ का भेला ।—**फल**- (न०) बेर का फल ।—**मूल**-(न०) गाजर ।— **रसा**- (स्त्री०) आमड़ा, अम्रातक । शतावरी । काकोली । मदिरा । अंगूर ।—**शुद्ध**- (न०) सेंधा नमक । समुद्री नमक ।

स्वाद्वी—(स्त्री०) [स्वादु + ङीष्] दाख । मुनक्का । फूट । खजूर ।

स्वान—(पुं०) [√स्वन् + घञ्] शब्द, आवाज़ । कोलाहल ।

स्वाप—(पुं०) [√स्वप् + घञ्] निद्रा, नींद । स्वप्न, सपना । औंघाई, निंदास । किसी अंग के दब जाने से कुछ देर के लिये उसका सुन्न पड़ जाना या सो जाना ।

स्वापतेय—(न०) [स्वपति + ढञ्] धन, सम्पत्ति; 'स्वापतेयकृते मर्त्याः किं किं नाम न कुर्वते' पं० २.१५६ ।

स्वाभाविक—(वि०) [स्त्री०—**स्वाभाविकी**] [स्वभाव+ठञ्] स्वभाव-सम्बन्धी । (पुं०) बौद्धों का सम्प्रदाय विशेष ।

स्वामिता—(स्त्री०), **स्वामित्व**-(न०) [स्वामिन्+तल्—टाप्] [स्वामिन्+त्व] मालकाना, स्वत्वाधिकार । प्रभुत्व, अधिराजत्व ।

स्वामिन्—(वि०) [स्त्री०—**स्वामिनी**] [स्व+मिनि (अस्त्यर्थे), दीर्घ । (समास में न का लोप हो जाता है)] स्वत्वाधिकारी, मालकाने के हक रखने वाला । (पुं०) मालिक । प्रभु । राजा । पति, भर्ता । गुरु । पण्डित ब्राह्मण । सर्वोच्च श्रेणी का तपस्वी या साधु । कार्त्तिकेय । विष्णु । शिव । वात्स्यायन ऋषि । गरुड़ ।—**उपकारक** (**स्वाम्युपकारक**)- (पुं०) घोड़ा ।—**कार्य**-(न०) राजा या मालिक का कार्य । —**पाल**- (पुं०) (पशु का) मालिक और पालने वाला ।—**भट्टारक**- (पुं०) उत्तम स्वामी ।—**सद्भाव**- (पुं०) किसी मालिक या स्वामी की विद्यमानता । स्वामी या प्रभु की नेकी ।—**सेवा**-(स्त्री०) स्वामी या मालिक की सेवा । पति का सम्मान ।

स्वाम्य—(न०) [स्वामिन् + ष्यञ्] स्वामित्व, मालिकपन । सम्पत्ति का स्वत्वाधिकार । शासन ।

स्वायम्भुव—(वि०) [स्त्री०—**स्वायम्भुवी**] [स्वयम्भू + अण्] ब्रह्मा-सम्बन्धी । ब्रह्मा से उत्पन्न । (पुं०) ब्रह्मा के पुत्र प्रथम मनु का नाम ।

स्वारसिक—(वि०) [स्त्री०—**स्वारसिकी**] [स्वरस+ठक्]स्वाभाविक मिठास वाला । प्राकृतिक ।

स्वारस्य—(न०) [स्वरस् + ष्यञ्] स्वाभाविक उत्तमता या श्रेष्ठता । सौन्दर्य । स्वाभाविकता ।

स्वाराज्—(पुं०) [स्वर्√राज्+ क्विप्] इन्द्र का नामान्तर ।

स्वाराज्य—(न०) [स्वराज् + ष्यञ्] ब्रह्मत्व । [स्वाराज्+ष्यञ्] इन्द्रत्व ।

स्वारोचिष—(पुं०) [स्वरोचिषः अपत्यम्, स्वरोचिस्+अण्] दूसरे मनु का नाम ।

स्वालक्षण्य—(न०) [स्वलक्षण + ष्यञ्] स्वाभाविक पहचान के चिह्न या लक्षण । विशेषता ।

स्वाल्प—(वि०) [स्त्री०—**स्वाल्पी**] [स्वल्प + अण्] बहुत थोड़ा । बहुत छोटा । (न०) बहुत कमी । बहुत छोटापन ।

स्वास्थ्य—(न०) [स्वस्थ+ष्यञ्] स्वाधीनता । विक्रम । तंदुरुस्ती । सुख-चैन । सन्तोष ।

स्वाहा—(अव्य०) [सु- आ √ह्वे +डा] देवता के उद्देश्य से हवि छोड़ते समय इस शब्द का उच्चारण किया जाता है । (स्त्री०) अग्नि की पत्नी का नाम । एक मातृका । दुर्गा देवी की एक शक्ति ।—**कार**– (पुं०) स्वाहा शब्द का उच्चारण; 'स्वाहास्वधाकारविवर्जितानि श्मशानतुल्यानि गृहाणि तानि' सुभा० ।—**पति**, —**प्रिय**–(पुं०) अग्नि ।—**भुज्**–(पुं०) देवता ।

√**स्विद्**—दि० पर० अक० पसीना निकलना । स्विद्यति, स्वेत्स्यति, अस्विदत् ।

स्विद्—(अव्य०) [√ स्विद् + क्विप्] प्रश्नवाची शब्द । यह सन्देह और आश्चर्यद्योतक भी है । यह कभी-कभी या, एवं, अथवा के अर्थ में भी व्यवहृत होता है ।

स्वीकरण—(न०), **स्वीकार**– (पुं०), **स्वीकृति**– (स्त्री०) [अस्वस्य स्वस्य करणम्, स्व+च्वि √ कृ+ल्युट्] [स्व+च्वि√कृ +घञ्] [स्व+च्वि√कृ + क्तिन्] ग्रहण करना, अंगीकार करना । मानना । प्रतिज्ञा, इकरार । विवाह ।

स्वीय—(वि०) [स्व+छ (अत्र अपाणिनीयैः न कुक् इति मन्यते)] निजी, अपना ।

√**स्वृ**—भ्वा० पर० अक० शब्द करना । (सक०) पीड़ित करना । प्रशंसा करना । पढ़ना । स्वरति, स्वरिष्यति, अस्वारीत् —अस्वार्षीत् ।

√**स्वृ**—क्र्या० पर० सक० वध करना । स्वृणाति, स्वरि (री) ष्यति, अस्वारीत् ।

√**स्वेक्**—भ्वा० आत्म० सक० जाना । स्वेकते, स्वेकिष्यते, अस्वेकिष्ट ।

स्वेद—(पुं०) [√ स्विद् + घञ्] पसीना । भाप । गरमी । [√स्विद् + णिच्+अच्] पसीना लाने का साधन ।—**उद** (**स्वेदोद**), —**उदक** (**स्वेदोदक**),—**जल**– (न०) पसीना ।—**ज**– (वि०) पसीने से उत्पन्न ।

स्वेदनिका—(स्त्री०) [√स्विद् + ल्युट्—अन, ङीप् +कन्—टाप्, ह्रस्व] तवा । देगची । भभका । पाकशाला ।

स्वैर—(न०) [स्वस्य ईरम्, स्व√ईर् +अच्, वृद्धि] मनमानी, स्वेच्छाचारिता । (वि०) [स्वैर+अच्] मनमाना काम करने वाला, स्वेच्छाचारी; 'अथ्याहतैः स्वैरगतैस्स तस्याः' र० २.५ । मंद, धीमा । सुस्त, काहिल । ऐच्छिक, यथेच्छ ।

स्वैरता—(स्त्री०), **स्वैरत्व**–(न०) [स्वैर +तल्—टाप्] [स्वैर+त्व] स्वेच्छाचरिता, मनमानी । स्वतन्त्रता ।

स्वैरिणी—(स्त्री०) [स्वैरिन् +ङीप्] व्य-भिचारिणी स्त्री । (चतुःपुरुषगामिनी स्त्री को स्वैरिणी कहते हैं ।)

स्वैरिन्—(वि०) [स्वेन ईरितुम् शीलम् अस्य, स्व√ईर् +णिनि] स्वेच्छाचारी, स्वतंत्र ।

स्वैरिन्ध्री—दे० 'सैरन्ध्री' ।

स्वोरस—(पु०) [?] चिकने पदार्थों का वह तलछट जो पत्थर से पिसा हुआ हो ।

स्वोवशीय—(न०) [?, दे० 'स्वोवसीयस'] आनन्द, सुख । समृद्धि (विशेष कर भविष्य जीवन सम्बन्धी) ।

ह

ह—संस्कृत वर्णमाला का अन्तिम वर्ण । इसका उच्चारण-स्थान कंठ है और यह ऊष्म वर्ण कहलाता है । (अव्य०) [√हा +ड] अपने से पूर्वगत शब्द पर जोर देने वाला अव्यय विशेष । सचमुच, निश्चय, दरहकीकत शब्दों के अर्थ को भी यह सूचित करता है । वैदिक साहित्य में यह पूरक का भी काम देता है और उस दशा में इसका अर्थ कुछ भी नहीं होता । यथा— 'तस्य ह शतं जाया बभूवुः' 'तस्य ह पर्वतनारदौ गृहम् ऊषतुः ।'—यह कभी-कभी सम्बोधन के लिये और कदाचित् घृणा और उपहास के लिये भी प्रयुक्त किया जाता है । (पु०) जल । आकाश । रक्त । शिवजी का एक रूप । शून्य । स्वर्ग । ध्यान । धारण । शूल । भय । ज्ञान । गर्व । वैद्य । कारण । चन्द्रमा । विष्णु । अश्व । युद्ध । हास । पापहरण । सकोपवारण । सूचना । निद्रा । प्रसिद्धि । नियोग । आह्वान । अस्त्र । वीणा का स्वर । आनन्द । ब्रह्म ।

हंस—(पु०) [√हस् + अच्, पृषो० वर्णा-गमात् साधुः] बत्तख की तरह का एक प्रसिद्ध जल-पक्षी । [इस पक्षी का जो वर्णन संस्कृत साहित्य में दिया हुआ है वह वास्त-विक कम काव्यमय अधिक है । कवियों ने इसे ब्रह्मा जी का वाहन और वर्षा ऋतु के आरम्भ में इसका मानसरोवर को चला जाना लिखा है । अधिकांश कवियों के मता-नुसार हंस में शक्ति है कि वह दूध में मिले हुए जल को दूध से अलग कर दे । यथा:— 'सारं ततो ग्राह्यमपास्य फल्गु, हंसो यथा क्षीरमिवाम्बुमध्यात् ।' 'नीरक्षीरविवेके हंसालस्यं त्वमेव तनुषे चेत् । विश्वस्मिन्न-धुनान्यः कुलव्रतं पालयिष्यति कः'।—परब्रह्म, परमात्मा । जीवात्मा । शरीरगत पवन विशेष । सूर्य । शिव । विष्णु । कामदेव । सन्तुष्ट राजा । संन्यासियों का एक भेद । अलौकिक गुणों से युक्त मनुष्य । अश्व । उत्तम । भार-वाहक बैल या भैंसा । चाँदी । ईर्ष्या । विशेष आकृति का मन्दिर । दीक्षा-गुरु । कल्मष-रहित पुरुष । पर्वत ।—**अङ्घ्रि** (हंसाङ्घ्रि)–(पु०) ईंगुर, सिंगरफ । हंस का चरण ।—**अधिरूढा** (हंसाधिरूढा)–(स्त्री०) सरस्वती । —**अभिख्य** (हंसाभिख्य)–(न०) चाँदी । —**कान्ता**– (स्त्री०) हंसी ।—**कीलक**– (पु०) एक रतिबन्ध; 'नारीपादद्वयं कृत्वा कान्तस्योरुयुगोपरि । कटीमान्दोलयेत् पश्चात् अस्योऽयं हंसकीलकः ।'—**गति**– –(स्त्री०) हंस जैसी चाल । ब्रह्म-प्राप्ति । —**गद्गदा**– (वि०) मधुरभाषिणी स्त्री । —**गामिनी**– (स्त्री०) हंस जैसी चाल चलने वाली स्त्री । ब्रह्माणी ।—**तूल**– (पु०, न०) हंस के कोमल पर ।—**दाहन**– (न०) अगर् । —**नाद**–(पु०) हंस की बोली ।—**नादिनी** –(स्त्री०) विशेष प्रकार की स्त्री जिसकी परिभाषा यह है: —'गजेन्द्रगमना तन्वी कोकिलालापसंयुता । नितम्बे गुर्विणी या स्यात् सा स्मृता हंस-नादिनी ।'—**माला**–(स्त्री०) हंसों की

पंक्ति । एक तरह की बत्तख ।—पुत्रन्-(पुं०) हंस का बच्चा ।—रथ, —वाहन-(पुं०) ब्रह्मा के नामान्तर ।—राज-(पुं०) हंसों का राजा, बड़ा हंस । एक बूटी ।—रुत- (न०) हंस का शब्द । एक छंद ।—लोमश- (न०) कासीस ।—लोहक-(न०) पीतल ।

हंसक—(पुं०) [हंस + कन्] हंस । [हंस √कै+क] नूपुर; 'सरित इव सविभ्रमप्रपातुप्रणदितहंसकभूषणा विरेजुः' शि० ७.२३ ।

हंसिका, हंसी—(स्त्री०) [हंस + कन् —टाप्, इत्व] [हंस+ङीष्] मादा हंस ।

हंहो—(अव्य०) [हम् इत्यव्यक्तं जहाति, हम्√हा+डो] सम्बोधनात्मक अव्यय जो हो 'हल्लो' के समान है । तिरस्कार, अहंकार-सूचक अव्यय । प्रश्नवाची अव्यय ।

हक्क—(पुं०) [हक् इत्यव्यक्तं कायति, हक् √कै+क] हाथियों का आह्वान ।

हक्कार—(पुं०) बुलाना ।

हञ्जा, हञ्जे—(अव्य०) [हम् इत्यव्यक्तं जप्यतेऽत्र, हम् √ जप् +डा] [हम्√जप् +डे] चाकरानी या दासी को बुलाने के लिए काम में लाया जाने वाला अव्यय ।

हञ्जि—(पुं०) [हम्√जि+डि] छींक ।

√हट्—भ्वा० पर० अक० चमकना, चमकीला होना । हटति, हटिष्यति, अहटीत्—अहाटीत् ।

हट्ट—(पुं०) [√हट्+ट] हाट, बाजार ।—चौरक—(पुं०) वह चोर जो हाट या बाजार से चोरी करे, गँठकटा ।—वाहिनी-(स्त्री०) बाजार में बनी हुई पानी निकलने की नाली ।—विलासिनी- (स्त्री०) वेश्या, रंडी । एक प्रकार का गन्धद्रव्य । हल्दी ।

√हठ—भ्वा० पर० सक० कील ठोंकना । बलात्कार करना । उछलना । हठति, हठिष्यति, अहाठीत्—अहठीत् ।

हठ—(पुं०) [√ हठ् + अच्] बलात्कार, जबरदस्ती । अत्याचार, जुल्म । किसी बात पर अड़े रहने की प्रवृत्ति, दुराग्रह, जिद । शत्रु के पृष्ठ भाग में पहुँच जाना ।—योग-(पुं०) योग के दो भेदों (राजयोग और हठयोग) में से एक जिसमें नेती, धोती आसन आदि क्रियाओं द्वारा परमात्मतत्त्व की प्राप्ति की जाती है ।—पर्णी-(स्त्री०) पानी में पैदा होने वाला एक पौधा, कुंभी ।

हठालु—(पुं०) [हठः प्लवमानः आलुरिव उपमित स०] पानी का एक पौधा, कुंभी ।

हडि—(पुं०) [√ हड् +इन्, पृषो० साधुः] प्राचीन काल की काठ की बेड़ी जो पैर में डाली जाती थी ।

हडिक, हड्डक, हड्डि, हड्डिक—(पुं०) [√हड् +इकक्, पृषो० साधुः] [हड्डु + कन्] [√हड्+इन्, पृषो० साधुः] [हड्डि + कन्] भंगी आदि नीच जाति ।

हड्ड—(न०) [√ हड्+ड, पृषो० इत्व नेत्वम्] हड्डी । —ज —(न०) गूदा, मज्जा ।

हण्डा—(स्त्री०) [√हन्+डा] निम्न श्रेणी की स्त्री के प्रति तथा निम्न श्रेणी की स्त्रियों का परस्पर सम्बोधन करने का अव्यय ।—'हण्डे हञ्जे हलाह्वाने नीचां चेटीं सखीं प्रति ।'

हण्डिका—(स्त्री०) [हण्डा + कन्, ह्रस्व, टाप्, इत्व] मिट्टी का बड़ा बरतन, हाँड़ी ।

हण्डी—(स्त्री०) [हण्डा + ङीष्] हाँड़ी ।

हण्डे—(अव्य०) [√ हन् + डे] दे० हण्डा ।

हत—(वि०) [√हन् + क्त] वध किया हुआ । ताड़ित । चोटिल किया हुआ । नष्ट किया हुआ । खोया हुआ । तंग किया हुआ । वंचित किया हुआ । स्पर्श किया हुआ । ग्रस्त । निकृष्ट । निराश । गुणित ।—अंहस् (हतांहस्)-(वि०) पाप से दूर ।—

अर्थ (हतार्थ)– (वि०) निराश ।—आश (हताश)–(वि०) आशा-रहित । निर्बल, शक्ति-हीन । निष्ठुर । बांझ । नष्ट । दुष्ट । —कण्टक–(वि०) शत्रु या काँटों से रहित या मुक्त ।—चित्त–(वि०) घबड़ाया हुआ, परेशान ।—त्विष्– (वि०) धुँधला; 'निशीथदीपाः सहसा हतत्विषः बभूवुरा-लेख्यसमर्पिता इव' र० ३।१५ ।—दैव— (वि०) अभागा, वह जिसके ग्रह अनु-कूल न हों ।—प्रभाव, —वीर्य–(वि०) शक्ति या विक्रम से हीन ।—बुद्धि– (वि०) बुद्धि-हीन । —भाग, —भाग्य– (वि०) बदकिस्मत, अभागा । —मूर्ख– (पुं०) बड़ा मूर्ख ।—लक्षण– (वि०) अभागा । —शेष– (वि०) जो जीवित बच गया हो ।— श्री, —सम्पद्– (वि०) श्री-भ्रष्ट, धन-हीन । —साध्वस– (वि०) भय से मुक्त ।—स्त्रीक– (वि०) जिसने किसी स्त्री का वध किया हो ।—स्मर– (पुं०) शिव ।

हतक—(वि०) [हत+कन्] नष्टप्राय । दीन-दुःखी । नीच; 'न खलु विदितास्ते तत्र निवसन्तश्चाणक्यहतकेन' मु० २ । (पुं०) नीच व्यक्ति । डरपोक या कायर आदमी ।

हति—(स्त्री०) [√ हन् + क्तिन्] नाश । वध । ताड़न । आघात । हानि । असफलता ।

हत्नु—(पुं०) [√हन् + क्त्नु] हथियार । रोग ।

हत्या—(स्त्री०) [√हन् + क्यप्–टाप्] वध, कत्ल ।

हद्म—(पुं०) [√हन् + क्म] व्याकुल मनुष्य ।

√हद्—भ्वा० आत्म० अक० हगना, पाखाना फिरना । हदते, हत्स्यते, अहत्त ।

हदन—(न०) [√ हद् + ल्युट्] मल त्यागना, टट्टी करना ।

√हन्—अ० पर० सक० वध करना । मार डालना । ताड़ना करना, पीटना । घायल करना, चोटिल करना । तंग करना, सताना । त्यागना । दबाना । स्थानान्तरित करना, हटाना । नाश करना । जीतना, हराना । बाधा देना, रोकना । भ्रष्ट करना, खराब करना । उठाना । ऊँचा करना । यथा:— 'तुरगखुरहतस्तथा हि रेणुः ।'—शकुन्तला । गुणा करना, जरब देना । जाना (इस अर्थ में बहुत ही विरल प्रयोग होता है) । हन्ति, हनिष्यति, अवधीत् ।

हन—(वि०) [√हन् +अच्] हनन करने वाला, वध करने वाला । नाश करने वाला ।

हनन—(न०) [√हन्+ल्युट्] वध करना, जान से मार डालना । पीटना । ठोंकना । चोटिल करना । गुणा ।

हनु, हनू—(पुं०, स्त्री०)[√हन् + उन्, स्त्रीत्वपक्षे ऊङ्] ठुड्डी । ऊपरी जबड़ा । (स्त्री०) जीवन के लिये अनिष्ट करने वाली चीज । हथियार । रोग । मृत्यु । ओषधि विशेष । वेश्या ।—ग्रह–(पुं०) एक वातरोग जिसमें जबड़ा बैठ जाता है । —मूल– (न०) जबड़े की जड़ ।

हनुमत्, हनूमत्—(पुं०) [हनु(नू)+मतुप्] सुग्रीव-सचिव एवं श्रीराम-दूत हनुमान् जी ।

हनुष—(पुं०) [√ हन् + उषन्] भूत । दैत्य ।

हन्त—(अव्य०) [√हन्+त] हर्ष; 'हन्त भोः ! लब्धम्मया स्वास्थ्यम्' श० ४ । आश्चर्य । व्यस्तता । दयालुता । दुःख । शोक । सौभाग्य । आशीर्वाद । वाक्या-रम्भ ।—कार– (पुं०) हन्त का चीत्कार । अतिथि को भेंट में दिया जाने वाला नैवेद्य ।

हन्तु—(पुं०) [√हन्+तुन्] मृत्यु । बैल ।

हन्तृ—(वि०) [स्त्री०—हन्त्री] [√हन् +तृच्] मारने वाला, वध करने वाला ।

हटाने वाला । नाश करने वाला । (पुं०) वध करने वाला व्यक्ति, हत्यारा । डाकू ।

हम्—(अव्य०) [√हा+डमु] सक्रोध कथन । शिष्टता या सम्मान सूचक अव्यय ।

हम्बा, हम्भा—(स्त्री०) [हम् √बा+अड–टाप्, पक्षे पृषो० साधुः] गाय, बैल आदि के बोलने का शब्द, रँभाना ।—**रव**–(पुं०) रँभाने का शब्द ।

√हम्म्—भ्वा० पर० सक० जाना । हम्मति, हम्मिष्यति, अहम्मीत् ।

√हय्—भ्वा० पर० सक० जाना । पूजा करना । अक० ध्वनि करना । थक जाना । हयति, हयिष्यति, अहयीत् ।

हय—(पुं०) [√ हय् वा √हि + अच्] घोड़ा । एक विशेष जाति का मनुष्य । सात की संख्या । इन्द्र का नामान्तर । धनु राशि । —**अध्यक्ष** (**हयाध्यक्ष**)–(पुं०) घुड़सार का निरीक्षक ।—**आयुर्वेद** (**हयायुर्वेद**)–(पुं०) अश्व-चिकित्सा सम्बन्धी शास्त्र, शालिहोत्र विद्या ।—**आरूढ** (**हयारूढ**)–(पुं०) घुड़सवार, अश्वारोही ।—**आरोह** (**हयारोह**)– (पुं०) घुड़सवार । घोड़े पर सवार होने की क्रिया ।—**इष्ट** (**हयेष्ट**)–(पुं०) जवा, यव । —**उत्तम** (**हयोत्तम**)–(पुं०) उत्तम घोड़ा । —**कोविद**–(वि०) घोड़ों को पालने, उनको सिखलाने आदि की विद्या में निपुण ।—**ग्रीव**–(पुं०) विष्णु का एक अवतार (इसने मधु-कैटभ से वेदों का उद्धार किया था)। एक असुर ।—**द्विषत्**– (पुं०) भैंसा ।—**प्रिय**–(पुं०) यव, जौ ।—**प्रिया**– (स्त्री०) खजूर । अश्वगंधा ।—**मारण**–(पुं०)कनेर । पीपल । —**मेध**– (पुं०) अश्वमेध यज्ञ । —**वाहन**–(पुं०) कुबेर का नामान्तर ।—**शाला** –(स्त्री०) घोड़े का अस्तबल ।—**शास्त्र**– (न०) घोड़ों की शिक्षा देने की विद्या ।—**शीर्ष**, —**शीर्षन्**– (पुं०) विष्णु ।

हयङ्कष—(पुं०) [हय√कष्+ खच्, मुम्] इन्द्र का सारथि, मातलि । सारथि ।

हयी—(स्त्री०) [हय+ङीष्] घोड़ी ।

हर—(वि०) [स्त्री०—**हरा, हरी**] [√हृ +अच्] हरने वाला, दूर करने वाला । लाने वाला । ले जाने वाला । ग्रहण करने वाला । आकर्षक, मोहक । (पाने-का) अधिकारी । घेरने या रोकने वाला । विभाजक । (पुं०)शिव । अग्नि का नाम । गधा । भिन्न का भाजक । [√हृ + अप्] हरण । विभाजन । —**गौरी**–(स्त्री०) अर्धनारी-नटेश्वर शिव । —**चूडामणि**–(पुं०) शिव जी की कलँगी का रत्न, चन्द्रमा ।—**तेजस्**– (न०) पारा, पारद । —**नेत्र**– (न०) शिव का नेत्र । तीन की संख्या ।—**बीज**– (न०) शिव का बीज, पारा ।—**शेखरा**– (स्त्री०) गंगा ।—**सूनु**– (पुं०) स्कन्द । —**हूरा**–(स्त्री०) अंगूर ।

हरक—(पुं०) [हर+कन्] चोर । दुष्ट, गुंडा । भाजक ।

हरण—(न०) [√हृ+ल्युट्] पकड़ना । ले जाना । चुराना । हटाना । वंचित करना । नाश करना । विभाजन । विद्यार्थी के लिये दान । बाहु । वीर्य । सुवर्ण ।

हरि—(वि०) [√हृ+इन्] हरा । भूरा या बादामी । पीला । (पुं०) विष्णु । इन्द्र; 'तमभ्यनन्दत् प्रथमं प्रबोधितः प्रजेश्वरः शासनहारिणा हरेः' र० ३.६८ । ब्रह्मा । यम । सूर्य । चन्द्रमा । कृष्ण । मानव । किरण । शिव । अग्नि । वायु । सिंह । घोड़ा । इन्द्र का घोड़ा । वानर; 'मुमूर्च्छ सख्यं रामस्य समानव्यसने हरौ' र० १२.५७ । कोयल । मेंढक । तोता । हंस । सर्प । भूरा या पीला रंग । मयूर । भर्तृहरि का नामान्तर । साठ संवत्सरों में से एक ।

सिंहराशि । शृगाल, गीदड़ । गरुड़ का एक पुत्र । बांस । मूंग । —अक्ष (हर्यक्ष)–(पुं०) सिंह । बंदर । कुबेर । शिव ।—अश्व (हर्यश्व)–(पु०) इन्द्र । शिव ।—कान्त– (वि०) इन्द्र का प्यारा । सिंह की तरह मनोहर ।—केलीय– (पुं०) बंग देश, बंगाल ।—केश–(पुं०) विष्णु ।—चन्दन– (न०) पीत चंदन । चंदन विशेष । स्वर्ग के पांच वृक्षों में से एक ।—'पञ्चैते देवतरवो मन्दारः पारिजातकः । सन्तानः कल्पवृक्षश्च पुंसि वा हरिचन्दनम् ।।' चांदनी । केसर । कमल का पराग ।—ताल–(पु०) पीले रंग का कबूतर । (न०) हरताल ।—तालिका– (स्त्री०) भाद्रशुक्ला तृतीया (यद्यपि 'वाचस्पत्य' आदि कोशों में भाद्र-शुक्ला चतुर्थी का उल्लेख है किन्तु हमारे यहां भाद्र-शुक्ला तृतीया को ही हरितालिकाव्रत या तीज पर्व मानने की परम्परा है) ।—ताली– (स्त्री०) दूर्वा घास । आकाश-रेखा । तलवार का फल । मालकँगनी । वायु-मण्डल ।—तुरङ्गम—(पुं०) इन्द्र का नाम । —दास–(पु०) विष्णु-भक्त ।—दिन– (न०) विष्णु उपासना का दिवस विशेष । एकादशी । —दैव–(पुं०) श्रवण नक्षत्र ।—द्रव– (पुं०) नागकेसर-चूर्ण । हरा रस ।—द्वार–(न०) उत्तर भारत का एक प्रसिद्ध तीर्थ ।—नेत्र– (न०) विष्णु की आंख । सफेद कमल । (पुं०) उल्लू ।—पद–(न०) वैकुण्ठ । वसन्त कालीन वह दिन जब दिन और रात बराबर होती है (२१ मार्च) ।–प्रिय–(पु०) शिव । (न०) रक्त या कृष्ण चंदन । — प्रिया– (स्त्री०) लक्ष्मी । तुलसी । पृथिवी । द्वादशी तिथि ।—भुज्– (पुं०) सांप ।— मन्थ–(पु०) गनियारी का पेड़, अग्निमन्थ । चणक, चना । मटर ।—मन्थक– (पुं०) चना । गनियारी ।—लोचन– (पु०) केकड़ा । उल्लू ।—वंश–(पु०) हरि या कृष्ण का वंश । एक प्रसिद्ध ग्रंथ जो महाभारत का परिशिष्ट है ।—वल्लभा– (स्त्री०) लक्ष्मी । तुलसी । जया । अधिक मास की एकादशी ।—वास–(पु०) अश्वत्थ, पीपल ।—वासर–(पुं०) एकादशी ।—वाहन– (पुं०) गरुड़ । इन्द्र । सूर्य ।—शर– (पु०) शिव जी का नामान्तर ।—सख–(पुं०) गन्धर्व ।—सङ्कीर्तन– (न०) विष्णु का नाम कीर्तन । —सुत, —सूनु– (पुं०) अर्जुन का नाम । —हय–(पु०) इन्द्र । सूर्य । कार्त्तिकेय । गणेश ।— हर –(पु०) विष्णु और शिवात्मक देव ।— हेति–(स्त्री०) इन्द्रधनुष । विष्णु का चक्र ।

हरिक—(पु०) [हरि+कन्] पीले या भूरे रंग का घोड़ा ।

हरिण—(वि०) [स्त्री०—**हरिणी**] [√हृ+इनन्] भूरे या बादामी रंग का । हरा । (पु०) हिरन । [ये पांच तरह के कहे गये हैं । यथाः– 'हरिणश्चापि विज्ञेयः पञ्चभेदोऽत्र भैरव । ऋष्यः खड्गो रुरुश्चैव पृषतश्च मृगस्तथा ।] पीलापन लिये सफेद रंग । हंस । सूर्य । विष्णु । शिव ।—अक्ष (हरिणाक्ष)– (वि०) हिरन जैसी आंखों वाला ।—अक्षी (हरिणाक्षी)–(स्त्री०) हरिण जैसी आंखों वाली स्त्री । —अङ्क (हरिणाङ्क)–(पु०) चन्द्रमा । कपूर ।—कलङ्क, —धामन्– (पुं०) चन्द्रमा ।—नयन, —नेत्र, —लोचन–(वि०) हिरन जैसे नेत्रों वाला ।—हृदय–(वि०) डरपोक, भीरु ।

हरिणक—(पुं०) [हरिण + कन्] छोटा हिरन; 'क्व बत हरिणकानां जीवितं चातिलोलं' श० १.१० ।

हरिणी—(स्त्री०) [हरिण+ङीष्] हिरनी, मृगी । स्त्रियों के चार भेदों में से एक जिसे

चित्रिणी कहते है। सुंदरी स्त्री। तरुणी। स्वर्ण-प्रतिमा। दूब। मजीठ। सोनजुही। विजया।

हरित्—(वि०) [√हृ + इति] हरा मिश्रित पीला। हरा; 'सत्यमतीत्य हरितो हरींश्च वर्तंते वाजिनः' श० १। पीला। भूरा। (पुं०) हरा रंग। पीला रंग। भूरा रंग। सूर्य का एक घोड़ा। तेज घोड़ा। सिंह। सूर्य। विष्णु। मूंग। मरकत, पन्ना। (न०) घास। (स्त्री०) दिशा। हल्दी। **—अश्व** (**हरिदश्व**)–(पुं०) सूर्य। अर्क या मदार का पौधा। **—गर्भ** (**हरिद्गर्भ**)–(पुं०) हरे रंग का कुश जिसकी पत्ती चौड़ी होती है। **—पर्ण**– (न०) मूली। **—मणि** (**हरिन्मणि**)–(पुं०) पन्ना, हरे रंग की मणि।

हरित—(वि०) [स्त्री०—**हरिता** या **हरिणी**] [√हृ+इतच्] हरा, हरे रंग का, सब्ज; 'रम्यान्तरः कमलिनीहरितैः सरोभिः' श० ४.१०। भूरे रंग का। (पुं०) हरा रंग। भूरा रंग। सिंह। कश्यप का एक पुत्र। मनु का एक पुत्र। द्वादश मन्वन्तर का एक देवगण। सब्जी, हरियाली। सब्जी, शाक, भाजी। स्थौणेयक नामक एक सुगंधित पौधा। **— अश्मन्** (**हरिताश्मन्**)–(पुं०) पन्ना। तूतिया।

हरितक—(न०) [हरित√कै + क] शाक। हरी घास।

हरिता—(स्त्री०) [हरित+टाप्] दूब। जयन्ती। हलदी। कपिलद्राक्षा। पार्वती। ब्राह्मी शाक।

हरिद्रा—(स्त्री०) [हरि √द्रु+ड–टाप्] हलदी। हलदी का चूर्ण। **—आभ** (**हरिद्राभ**) (वि०) पीले रंग का। **—गणपति**, **—गणेश**– (पुं०) गणेश का एक भेद जिसका वर्ण पीत कहा गया है। **—राग**, **—रागक**– (वि०) हल्दी के रंग का। प्रेम में अदृढ़। हलायुध के मतानुसार—'क्षणमात्रानुरागश्च हरिद्रारागः उच्यते।'

हरिप—(पुं०) [हरि√पा +क] पीले रंग का घोड़ा।

हरिश्चन्द्र—(पुं०) [हरिः चन्द्र इव, सुट् आगम(ऋषौ एव)] सूर्यवंश के एक प्रसिद्ध राजा जो त्रिशंकु के पुत्र थे।

हरिष—(पुं०) हर्ष, प्रसन्नता।

हरीतकी—(स्त्री०) [हरि पीतवर्णं फलद्वारा इता प्राप्ता, हरि√इ +क्त+कन् –ङीप्] हर्रे का पेड़। हर्रा; 'कदाचित् कुपिता माता नोदरस्था हरीतकी।'

हरेणु—(स्त्री०) [√हृ + एनु] दवा। सुगंध। संभ्रान्त महिला। मटर। ग्राम की हद बांधने वाली लता। तांबे के रंग की हरिणी। लंका द्वीप का एक नाम।

हर्तृ—(वि०) [स्त्री०—**हर्त्री**] [√हृ +तृच्] हरने वाला। जबरदस्ती छीनने वाला। (पुं०) चोर। डाकू। सूर्य।

हर्मन्—(न०) [√हृ + मनिन्] जँभाई। अँगड़ाई।

हर्मित—(वि०) [हर्मन् + इतच्] जँभाई लिये हुए, जृम्भित। फेंका हुआ। जला हुआ।

हर्मुट—(पुं०) सूर्य। कछुआ।

हर्म्य—(न०) [√हृ +यत्, मुट्] राजभवन, राजप्रासाद; 'बाह्योद्यानस्थितहरशिरश्चन्द्रिकाधौतहर्म्याः' मे० ७। कोई भी विशाल भवन। अग्नि-कुण्ड। नरक।

√हर्य्—भ्वा० पर० अक० थकना। सक० जाना। हर्यति, हर्यिष्यति, अहर्यीत्।

हर्ष—(पुं०) [√हृष्+घञ्] प्रसन्नता, आह्लाद, खुशी। रोमाञ्च होना। **—अन्वित** (**हर्षान्वित**)–(वि०) हर्ष-पूरित, हर्षाविष्ट। **—उत्कर्ष** (**हर्षोत्कर्ष**)–(पुं०) हर्ष का आधिक्य। **—कर**– (वि०) प्रसन्न-कारक। **—जड**–(वि०) हर्ष से

विह्वल ।— **विवर्धन**–(वि०) हर्ष बढ़ाने वाला ।— **स्वन**–(पुं०) आनंदातिरेक से की जाने वाली आवाज़ ।

हर्षक—(वि०) [स्त्री०—**हर्षका**,—**हर्षिका**] [√हृष्+णिच्+ण्वुल्] प्रसन्न-कारक ।

हर्षण—(वि०) [**हर्षणा** या **हर्षणी**] [√हृष् +णिच्+ल्यु] आनंद-दायक, हर्षोत्पादक । (पुं०) कामदेव के पाँच बाणों में से एक । नेत्ररोग विशेष । श्राद्ध कर्म का अधिष्ठाता देवता । श्राद्धविशेष । [√हृष् +ल्युट्] प्रसन्न होना । रोमांच होना । आनंद ।

हर्षयित्नु—(वि०) [√हृष्+णिच्+इत्नु] प्रसन्न-कारक । (न०) सुवर्ण । (पुं०) पुत्र ।

हर्षुल—(वि०) [√हृष् + णिच्+उलच्] प्रसन्न करने वाला । (पुं०) हिरन । प्रेमी ।

√**हल्**—भ्वा० पर० सक० जोतना, हल चलाना । हलति, हलिष्यति, अहालीत् ।

हल—(न०) [√हल्+क] खेत जोतने का एक प्रसिद्ध उपकरण, सीर । लांगल । एक अस्त्र । ज़मीन नापने का लट्ठा । पैर की एक रेखा या चिह्न ।—**आयुध** (**हला-युध**)– (पुं०) बलराम की उपाधि ।—**धर**,—**भृत्**–(पुं०)हलवाहा । बलराम का नामान्तर; 'अंसन्यस्ते सति हलभृतो मेचके वाससीव' मे० ५९ ।—**भूति**,—**भृति**–(स्त्री०)किसानी, कृषि ।—**हति**–(स्त्री०) हल चलाना, जुताई ।

हला—(स्त्री०) [ह इति लीयते, ह√ली +क—टाप्] सखी । पृथिवी । जल । शराब । (अव्य०) सखियों को सम्बोधन करने का अव्यय; 'हला शकुन्तले अत्रैव तावन्मुहूर्तं तिष्ठ' ।

हलाहल—(पुं०) [हलेनेव आहलति विलि-खति, हल—आ √हल् +अच्] एक प्रचंड विष जो समुद्र-मंथन के समय निकला था । महाविष । एक जहरीला पौधा । ब्रह्मसर्प । एक तरह की छिपकली, अंजना ।

हलि—(पुं०) [√हल्+इन्] बड़ा हल । कूँड़, हलाई । कृषि ।

हलिन्—(पुं०) [हल+इनि] हलवाहा । किसान । बलराम का नाम ।—**प्रिय**–(पुं०) कदंब वृक्ष ।—**प्रिया**–(स्त्री०) शराब ।

हलिनी—(स्त्री०) [हलिन् + ङीप्] हलों का समूह । लाँगली वृक्ष ।

हलीन—(पुं०) [हलाय हित:, हल+ख —ईन] सागौन ।

हलीषा—(स्त्री०) [हलस्य ईषा, ष० त०, शक० पररूप] हरिस, लांगल-दण्ड ।

हल्य—(वि०) [हल+यत्] जोतने योग्य, हल चलाने लायक । बदशकल, कुरूप ।

हल्या—(स्त्री०) [हल्य+टाप्] हलों का समुदाय ।

√**हल्ल्**—भ्वा० पर० अक० विकसित होना । हल्लति, हल्लिष्यति, अहल्लीत् ।

हल्लक—(न०) [√हल्ल् + ण्वुल्] लाल कमल ।

हल्लन—(न०)[√हल्ल्+ ल्युट्] विकसित होना । करवटें बदलना ।

हल्लीश, **हल्लीष**—(न०) [√हल् +क्विप्, √लश् (ष्) +अच्, पृषो० ईत्व, कर्म० स०] अठारह उपरूपकों में से एक । एक प्रकार का गोलाकार नृत्य ।

हल्लीषक—(पुं०) [हल्लीष+कन्] गोला-कार नृत्य ।

हव—(पुं०) [√हु + अप्] यज्ञ । होम । [√ह्वे +अप्, पृषो० सम्प्रसारण] आह्वान, ललकार । आज्ञा ।

हवन—(न०) [√हु +ल्युट्] किसी देवता के उद्देश से अग्नि में आहुति देना, होम । होम करना । स्रुवा । होम-कुण्ड ।—**आयुस्** (**हवनायुस्**)–(पुं०) अग्नि ।

हवनीय—(वि०) [√हु+अनीयर्] आहुति के रूप में दिये जाने या हवन करने योग्य। (न०) होमीय वस्तु। घी।

हवा—(अव्य०) [ह च वा च द्व० स०] निश्चयपूर्वक।

हवित्री—(स्त्री०) [√हु+इत्रन्—ङीप्] हवन-कुण्ड।

हविष्मत्—(वि०) [हविस्+मतुप्] हवि वाला। (पु०) छठे मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक। पितरों का एक गण। अंगिरा का एक पुत्र।

हविष्य—(न०) [हविषे हितम्, हविस्+यत्] हवन करने योग्य पदार्थ। घी। —**अन्न** (**हविष्यान्न**)—(न०) वे भोज्य पदार्थ जो व्रत आदि में खाये जा सकें।—**आशिन्** (**हविष्याशिन्**),—**भुज्**—(पु०) अग्नि।

हविस्—(न०) [√हु+इसुन्] होम की वस्तु, हवनीय द्रव्य। घी। जल। होम। —**अशन** (**हविरशन**)—(न०) घी का भोजन। (पु०) अग्नि। चित्रक वृक्ष।—**गन्धा** (**हविर्गन्धा**)—(स्त्री०) शमी का पेड़।—**गेह** (**हविर्गेह**)—(न०) वह स्थान या घर जिसमें होम किया जाय।—**भुज्** (**हविर्भुज्**)—(पु०) अग्नि; 'धन्वासितमरुन्धत्या स्वाहयेव हविर्भुजम्' र० १.५६। —**यज्ञ** (**हविर्यज्ञ**)—(पु०) एक साधारण यज्ञ जिसमें केवल घी की आहुति दी जाती है।—**याजिन्** (**हविर्याजिन्**)—(पु०) ऋत्विक्।

हव्य—(वि०) [√हु+यत्] होम करने योग्य। (न०) घी। देवताओं के योग्य अन्न। होम। किसी देवता के लिये दी जाने वाली आहुति।—**आश** (**हव्याश**)—(पु०) अग्नि।—**कव्य**—(न०) क्रमशः देवताओं और पितरों का चढ़ावा।—**पाक**—(पु०) देवताओं के लिए बनाया गया हव्य। हव्य बनाने का पात्र।—**वाह्**—**वाहन**—(पु०) अग्नि।

√हस्—भ्वा० पर० अक० हँसना। खिलना। चमकना। सक० हँसी उड़ाना, उपहास करना। हसति, हसिष्यति, अहसीत्।

हस—(पु०) [√हस्+अप्] हँसी, हास्य। ठठोली। प्रसन्नता। हर्ष।

हसन—(न०) [√हस्+ल्युट्] हँसने की क्रिया।

हसन्ती—(स्त्री०) [√हस्+झ—ङीप्] अँगीठी। मल्लिका विशेष।

हसिका—(स्त्री०) [√हस्+ण्वुल्—टाप्, इत्व] हँसी, ठट्ठा।

हसित—(वि०) [√हस्+क्त] हँसा हुआ। खिला हुआ। (न०) हँसी। ठठोली। कामदेव का धनुष।

हस्त—(पु०) [√हस्+तन्] हाथ। सूँड़; 'नागेन्द्रहस्तास्त्वचि कर्कशत्वात्' कु० १.३६। तेरहवां नक्षत्र। एक हाथ—२४ अंगुल— की एक माप। हस्ताक्षर। गुच्छ, समूह। (न०) धौंकनी।—**अक्षर** (**हस्ताक्षर**)—(न०) लेख आदि के नीचे अपने हाथ से लिखा हुआ अपना नाम जो उस लेख या उसके उत्तरदायित्व की स्वीकृति का सूचक होता है, दस्तखत, सही।—**अङ्गुलि** (**हस्ताङ्गुलि**)—(स्त्री०) हाथ की उँगली।—**अवलम्ब** (**हस्तावलम्ब**)—(पु०), —**आलम्बन** (**हस्तावलम्बन**)—(न०) हाथ का सहारा।—**आमलक** (**हस्तामलक**)—(न०) हाथ में का आंवला [यह एक मुहावरा है जिसका प्रयोग उस समय किया जाता है, जिस समय किसी ऐसी वस्तु का निर्देश करना आवश्यक होता है जो बिलकुल स्पष्ट या प्रत्यक्ष हो।] —**आवाप** (**हस्तावाप**)—(पु०) हस्तत्राण।—**कमल**—(न०) कमल जो हाथ

में हो। कमल जैसा हाथ।—**कौशल**–(न०) हाथ की सफाई] —**क्रिया**–(स्त्री०) दस्तकारी।—**गत**–(वि०) हाथ में आया हुआ, प्राप्त। —**गामिन्**–(वि०) जो किसी के हाथ या अधिकार में आने वाला हो।—**ग्राह**–(पुं०) हाथ से पकड़ना। विवाह।—**चापल्य**–(न०) हस्त-कौशल।—**तल**–(न०) हथेली। हाथी की सूँड़ की नोंक।—**ताल**–(पुं०) ताली बजाना।—**दोष**–(पुं०) हाथ से होने वाली भूल या अपराध।—**धारण**–(न०) हाथ से प्रहार रोकना। —**पाद**–(न०) हाथ और पैर।—**पुच्छ** (न०) कलाई के नीचे का हाथ।—**पृष्ठ**–(न०) हाथ की पीठ, हथेली का पृष्ठ-भाग। —**प्राप्त**–(वि०) दे० 'हस्तगत'। —**प्राप्य** (वि०) सरलता से हाथ में आने वाला।—**बिम्ब**–(न०) शरीर में सुगन्ध द्रव्य लगाना।—**मणि**–(पुं०) कलाई में पहनी जाने वाली मणि।—**लाघव**–(न०) हाथ की सफाई।—**वारण**–(न०) हमला रोकना।—**संवाहन**–(न०) हाथ से मलना या सहलाना।—**सिद्धि**–(स्त्री०) हाथ से किया जाने वाला काम। हाथ का श्रम। पारिश्रमिक, मजदूरी। —**सूत्र**–(न०) कलाई पर बाँधा जाने वाला डोरा।

हस्तक—(पुं०) [हस्त + कन्] हाथ।

हस्तवत्—(वि०) [हस्त + मतुप्, वत्व] निपुण, दक्ष।

हस्ताहस्ति—(अव्य०) [हस्तैश्च हस्तैश्च प्रहृत्य इदं युद्धं प्रवृत्तम्, ब० स०, दीर्घ, इत्व, अव्ययत्व] हाथापाई; 'हस्ताहस्ति अन्यमजनि' दश०।

हस्तिक—(न०) [हस्तिनां समूहः, हस्तिन् + कन्] हाथियों का समुदाय।

हस्तिन्—(वि०) [स्त्री०—**हस्तिनी**] [हस्तः अस्ति अस्य, हस्त + इनि (समास में 'न्' का लोप हो जाता है)] हाथ वाला, वह जिसके हाथ हो। सूँड़वाला। (पुं०) हाथी [भद्र, मन्द्र, मृग और मिश्र नामक चार जातियों के हाथी होते हैं]।—**अध्यक्ष** (**हस्त्यध्यक्ष**)–(पुं०) हाथियों का निरीक्षक। —**आयुर्वेद** (**हस्त्यायुर्वेद**)–(पुं०) एक शास्त्र जिसमें हाथियों के रोगों की चिकित्सा का वर्णन किया गया है।—**आरोह** (**हस्त्यारोह**)–(पुं०) हाथी का सवार या महावत। —**कक्ष्य**–(पुं०) सिंह। चीता।—**कर्ण**–(पुं०) रेंड़ी का पेड़।—**घ्न**–(पुं०) हाथी का हत्यारा। मनुष्य।—**चारिन्**–(पुं०) हाथी हाँकने वाला, महावत।—**दन्त**–(पुं०) हाथी का दाँत। दीवार में गड़ी हुई खूँटी। (न०) मूली।—**दन्तक**–(न०) मूली।—**नख**–(न०) नगरद्वार के पास की अथवा दुर्ग की छोटी बुर्जी।—**प**, —**पक**–(पुं०) महावत।—**मद**–(पुं०) हाथी का मद। —**मल्ल**–(पुं०) ऐरावत हाथी का नाम। गणेश जी। राख या भस्म का ढेर। धूल की वर्षा। कुहरा।—**यूथ**–(न०) हाथियों का गिरोह या झुंड।—**वाह**–(पुं०) महावत। अङ्कुश।—**षड्गव**–(न०) हाथियों का समुदाय।—**स्नान**–(न०) हाथी का स्नान [यह एक मुहावरा है, कोई कार्य करने पर जब उसकी निष्फलता निश्चित होती है, तब इसका प्रयोग किया जाता है]; 'अवशेन्द्रियचित्तानां हस्तिस्नानमिव क्रिया' हि० १.१८।

हस्तिनापुर—(न०) [हस्तिना तदाख्यनृपेण चिह्नितं तत्कृतत्वात् पुरम्, अलुक् स०] दिल्ली से लगभग ५० मील उत्तर-पूर्व के कोने में अवस्थित प्राचीन कालीन एक नगर, जिसे राजा हस्तिन् ने बसाया था।

हस्तिनापुर के ही नाम गजाह्वय, नागसाह्वय, नागाह्व और हास्तिन भी हैं।

हस्तिनी—(स्त्री०) [हस्तिन्+ङीप्] हथिनी। हट्टविलासिनी नामक गंधद्रव्य। चार प्रकार की स्त्रियों में से एक। [इसका लक्षण इस प्रकार है :—'स्थूलाधरा स्थूलनितम्बबिम्बा, स्थूलाङ्गुलिः स्थूलकुचा सुशीला। कामोत्सुका गाढरतिप्रिया च, नितान्तभोक्त्री खलु हस्तिनी स्यात्।']

हस्त्य—(वि०) [हस्त+यत्] हाथ सम्बन्धी। हाथ से किया हुआ। हाथ से दिया हुआ।

हस्र—(वि०) [√हस् + र] मूर्ख। अज्ञानी।

हहल—(न०) [ह √ हल् + अच्] दे० 'हालाहल'।

हहा—(पुं०) [ह √ हा + क्विप्] गन्धर्व विशेष।

√हा—जु० पर० सक० त्यागना। जहाति, हास्यति, अहासीत्। जु० आत्म० सक० जाना। जिहीते, हास्यते, अहास्त।

हा—(अव्य०) [√हा +का] दुःख, उदासी, पीड़ा-द्योतक अव्यय विशेष। आश्चर्य। क्रोध। भर्त्सना।

हाङ्गर—(पु०) [हा विषादाय पीडायै वा अङ्गं राति, हा—अङ्ग√रा+क] मत्स्य विशेष।

हाटक—(वि०) [स्त्री०—**हाटकी**] [हाटक +अण्] सोने का बना हुआ। (न०) [√हट् +ण्वुल्] देश। (वहां उत्पन्न होने से) सोना। धतूरा।—**गिरि**–(पु०) सुमेरु-पर्वत।

हात्र—(न०) [√ हा + त्रन्] वेतन, मजदूरी।

हान—(न०) [√ हा +क्त] त्याग। हानि। असफलता। बचाव। शक्ति। प्रभाव।

हानि—(स्त्री०) [√ हा + क्तिन्] त्याग। असफलता। अविद्यमानता, अनस्तित्व। नुकसान। ह्रास, कमी। नङ्गकरण।

हानुक—(वि०) कुचेष्टाप्रिय। हिंसक। अपकारशील।

हापुत्रिका, हापुत्री— (स्त्री०) [हा इति रवः पुत्राय यस्याः, ब० स०, ङीप्, पक्षे कन्– टाप्, ह्रस्व] खंजन पक्षी का एक भेद।

हाफिका—(स्त्री०) जमुहाई, जूंभा।

हायन—(पु०, न०) [√हा+ल्यु] वर्ष। (पुं०) चावल विशेष। शोला, अंगारा।

हार—(पु०) [√हृ +घञ्] हर ले जाना। हटाना, अलग करना। ढोना। संग्राम। युद्ध। क्षय। हानि। माला; 'पाण्डयोऽयमंसार्पितलम्बहारः' र० ६.६०। मुक्तामाला। [√ हृ+ण] (गणित में) भिन्न का भाजक।—**आवलि** (**हारावलि**), —**आवली** (**हारावली**)–(स्त्री०) मोतियों की लड़।—**गुटिका**,—**गलिका**–(स्त्री०) हार का गुरिया या दाना।—**यष्टि**– (स्त्री०) हार या माला की लड़ी।—**हारा**– (स्त्री०) अंगूर विशेष, कपिल द्राक्षा।

हारक—(पु०) [√हृ+ण्वुल्] हरण करने वाला। आकृष्ट करने वाला। (पु०) चोर। लुटेरा। धूर्त। कपटी। मोती का हार। भाजक। गद्यनिबन्ध विशेष।

हारि, हारी—(स्त्री०) [√हृ + णिच् +इन्] [हारि+ङीष्] हार, पराजय। जुए की हार। पथिकों का दल। मुक्ता।

हारिणिक—(पु०) [हरिण+ठक्] हरिण को मारने वाला, बहेलिया।

हारित—(वि०) [√हृ+णिच्+क्त] हरण कराया हुआ। पकड़ाया हुआ। भेंट किया हुआ, नजर किया हुआ। आकर्षण किया हुआ। (पु०) [हरित्+अण्] हरा रंग। एक प्रकार का कबूतर।

हारिन्—(वि०) [स्त्री०—**हारिणी**] [√ हृ +णिनि] ले जाने वाला। ढोने

वाला। लूटने वाला। पकड़ने वाला। प्राप्त करने वाला। आकर्षक, मोहक; 'तवास्मि गीतरागेण हारिणा प्रसभं हृतः' श० १.५। आगे निकल जाने वाला। अस्त-व्यस्त करने वाला, गड़बड़ करने वाला। [हार+इनि] हार धारण करने वाला।—**कण्ठ**- (पुं०) कोयल।

हारिद्र—(पुं०) [हरिद्रा + अण्] पीला रंग। कदंब वृक्ष।

हारीत—(पुं०) [√हृ + णिच्+ईतच्] कबूतर विशेष। धूर्त। चोर। कपटी। एक स्मृतिकार का नाम।

हार्द—(न०) [हृदय+अण्, हृदादेश] प्रेम। स्नेह; 'समर्पशून्येन जनस्य जन्तुना न जातहार्देन न विद्विषादरः' कि० १.३३। कृपालुता। कोमलता। दृढ़ सङ्कल्प। इरादा, अभिप्राय।

हार्य—(वि०) [√हृ+ण्यत्] ले जाने या ढोने लायक। छीन लेने योग्य। हटा देने योग्य। हिल जाने योग्य। आकर्षण करने योग्य। जीत लेने योग्य। लूट लेने योग्य। (पुं०) साँप। बहेड़े का पेड़। विभाज्य राशि।

हाल—(पुं०) [हल + अण्] हल। बलराम का नाम। शालिवाहन का नाम।—**भृत्**-(पुं०) बलराम का नामान्तर।

हालक—(पुं०) [हाल +कन्] बादामी या भूरे रंग का घोड़ा।

हालहल, हालाहल—(न०) [=हलाहल, पृषो० साधुः] एक भयङ्कर विष। यह विष समुद्र-मंथन के समय निकला था। इसकी झरण से जब समस्त लोक भस्म होने लगे तब देवताओं द्वारा प्रार्थना किये जाने पर भगवान् रुद्र ने इसे अपने कण्ठ में रख लिया।

हाला—(स्त्री०) [√हल् +घञ्—टाप् ?] शराब, मदिरा, मद्य; 'हित्वा हालामभिमतरसां रेवतीलोचनाङ्काम्' मे० ४९।

हालिक—(पुं०) [हल + ठक् वा ठञ्] हलवाहा। खेतिहर। हल खींचने वाला (बैल)। वह जो हल से लड़े।

हालिनी—(स्त्री०) [√हल्+णिनि—ङीप्] बड़ी छिपकली।

हाली—(स्त्री०) [√हल् + इण्—ङीष्] छोटी साली।

हालु—(स्त्री०) [√हल् + उण्] दाँत।

हाव—(पुं०) [√ह्वे + घञ्, नि० सम्प्रसारण] बुलावा, पुकार। [√हु+घञ्] स्त्रियों की शृंगार-भाव जन्य स्वाभाविक चेष्टायें जो पुरुषों को आकृष्ट करती हैं। (हाव ११ माने गए हैं— १ लीला, २ विलास, ३ विच्छित्ति, ४ भ्रम, ५ किलकिञ्चित, ६ मोहायित, ७ विब्बोक, ८ विहृत, ९ कुट्टमित, १० ललित, ११ हेला।) —**भाव**- (पुं०) नाज-नखरा।

हास—(पुं०) [√हस् +घञ्] हँसी। हर्ष, आनन्द। हास्य रस। ठठोली, मजाक। खिलना, प्रस्फुटन। घमंड। श्वेतता, सफेदी।

हासिका—(स्त्री०)[√हस्+ ण्वुल्(भावे)] हास, हँसी। उल्लास, हर्ष।

हास्तिक—(पुं०) [हस्तिन् +ठक्] महावत। हाथीसवार। (न०) [हस्तिन्+वुञ्] हाथियों का झुंड।

हास्तिन—(न०) [हस्तिना नृपेण निर्वृत्तम् नगरम्, हस्तिन्+अण्] हस्तिनापुर।

हास्य—(वि०) [√हस् + ण्यत्] हँसने योग्य। (न०) हँसी। हर्ष, उल्लास। मजाक, दिल्लगी। (पुं०) एक रस।—**आस्पद** (**हास्यास्पद**)-(न०) हास्य का स्थान या विषय, वह जिसे देख कर हँसी उत्पन्न हो। उपहास का विषय।—**पदवी**, —**मार्ग**- (पुं०) ठठोली, मजाक।—**रस**- (पुं०) एक काव्यरस जो कौतुक द्वारा उद्भूत होता है।

हाहा—(पुं०) [हा इति शब्दं जहाति, हा √हा + क्विप्] एक गन्धर्व का नाम । (अव्य०) पीड़ा, दुःख अथवा आश्चर्यसूचक अव्यय ।—**कार**– (पुं०) शोक-ध्वनि, विलाप । युद्ध का चीत्कार ।—**रव**– (पुं०) हाहाकार ।

√हि—स्वा० पर० सक० रेलना, ठेलना, ढकेलना । फेंकना । उत्तेजित करना, भड़काना । आगे बढ़ाना । चढ़ाना । प्रसन्न करना । अक० आगे बढ़ना । हिनोति, हेष्यति, अहैषीत् ।

हि—(अव्य०) [√हा वा √हि + डि] हेतु, कारण । अवधारण, निश्चय । विशेष । प्रश्न । संभ्रम । कारणनिर्देश । असूया । शोक । पादपूरण (श्लोक के पाद-पूरणस्थल में च वै तु हि इन चार शब्दों का प्रयोग होता है) ।

√हिंस्—रु०, चु० पर० सक० ताड़ना करना, आघात करना । चोटिल करना, घायल करना । हानि करना । पीड़ित करना । वध करना । रु० हिनस्ति, हिंसिष्यति, अहिंसीत् । चु० हिंसयति–हिंसति, हिंसयिष्यति –हिंसिष्यति, अजिहिंसत् – अहिंसीत् ।

हिंसक—(वि०) [√हिंस् + ण्वुल्] हिंसा करने वाला । घातक । हानिकारी, अनिष्टकर । (पुं०) जंगली या वहशी जानवर । शत्रु । अथर्ववेदज्ञ ब्राह्मण ।

हिंसन—(न०), **हिंसना**– (स्त्री०) [√हिंस् +ल्युट्] [√हिंस् +णिच् +युच्] वध करना । पीड़ा पहुँचाना । अनिष्ट करना ।

हिंसा—(स्त्री०) [√हिंस् + अ–टाप्] हत्या, वध; 'गान्धर्वमादत्स्व यतः प्रयोक्तुर्न चारिहिंसा विजयश्च हस्ते' र० ५.५७ । हानि पहुँचाना, अनिष्ट करना । चोरी आदि करना । द्वेष । ईर्ष्या ।—**आत्मक** (**हिंसात्मक**)–(वि०) हिंसा से युक्त । अनिष्टकारी । विनाशक ।—**कर्मन्**–(न०) कोई भी अनिष्टकारी कार्य । अभिचार, तांत्रिक मारण आदि प्रयोग ।—**प्राणिन्**–(पुं०) अनिष्टकर पशु ।—**रत**–(वि०) सदा बुराई करने में लगा रहने वाला ।—**रुचि**– (वि०) उपद्रव करने में प्रसन्न रहने वाला या उपद्रव करने को तुला हुआ ।— **समुद्भव**– (वि०) अनिष्ट से उत्पन्न ।

हिंसारु—(पुं०) [हिंसा + आरु] चीता । कोई भी अनिष्टकारी जानवर ।

हिंसालु—(वि०) [√ हिंस् + आलु] अनिष्टकारी । उपद्रवी । चोट करने वाला । वध करने वाला । (पुं०) उपद्रवी या वहशी कुत्ता ।

हिंसीर—(पुं०) [√हिंस् + ईरन्] चीता । पक्षी । उपद्रवी जन ।

हिंस्य—(वि०) [√हिंस् + यत्] हिंसा के योग्य । घायल किये जाने या वध किये जाने की सम्भावना से युक्त ।

हिंस्र—(वि०) [√हिंस् + र] अनिष्टकर । उपद्रवी । भयानक । निष्ठुर, वहशी । (पुं०) हिंसालु पशु, हिंसक जानवर; 'सा दुष्प्रधर्षा मनसापि हिंस्रैः' र० २.२७ । नाशक व्यक्ति । शिव । भीम का नाम ।—**पशु**– (पुं०) हिंसालु पशु, खूँखार जानवर ।—**यन्त्र**– (न०) जाल, जानवर फँसाने का फंदा । विद्वेषकारी कार्यों की सिद्धि के लिये बनाया हुआ तांत्रिक यंत्र विशेष ।

√हिक्क्—भ्वा० उभ० अक० ऐसा शब्द करना जो बोधगम्य न हो । हिचकी लेना । हिक्कति– ते, हिक्किष्यति –ते, अहिक्कीत्– अहिक्किष्ट । चु० आत्म० सक० हिंसा करना । हिक्कयते, हिक्कयिष्यते, अजिहिक्कत ।

हिक्का—(स्त्री०) [√हिक्क्+अ–टाप्] अव्यक्त शब्द । हिचकी ।

हिङ्कार—(पु॰) [हिम् इत्यस्य कारः, यस्य वा] 'हिम्' ध्वनि करने की क्रिया । बाघ का शब्द । बाघ ।

हिङ्गु—(पु॰, न॰) [हिमं गच्छति, हिम √गम् +डु नि॰ साधुः] हींग । हींग का पौधा । वंशपत्र ।—**निर्यास**– (पु॰) हींग के पौधे का गोंद । नीम का पेड़ ।—**पत्र**–(पु॰), इंगुदी का पेड़ ।

हिङ्गुल—(पु॰, न॰), **हिङ्गुलि**–(पु॰), **हिङ्गुलु**–(पु॰, न॰) [हिङ्गु√ला + क] [हिङ्गु√ला+कि] [हिङ्गु√ला+डु] ईंगुर ।

हिञ्जीर—(पु॰) हाथी के पैर की बेड़ी या रस्सी ।

हिडिम्ब—(पु॰) एक राक्षस जिसे भीम ने मारा था ।

हिडिम्बा—(स्त्री॰) हिडिम्ब की भगिनी । इसने भीम के साथ अपना विवाह किया था । —**जित्**, —**निषूदन**, —**भिद्**, —**रिपु**– (पु॰) भीमसेन के नामान्तर ।

√हिण्ड्—भ्वा॰ आत्म॰ सक॰ जाना । अक॰ चक्कर लगाना । हिण्डते, हिण्डिष्यते, अहिण्डिष्ट ।

हिण्डन—(न॰) [√हिण्ड् +ल्युट्] भ्रमण, घूमना-फिरना । संभोग । लेखन ।

हिण्डिक—(पु॰) [√हिण्ड्+इन्, हिण्डि √कै+क] ज्योतिषी, दैवज्ञ ।

हिण्डिर, हिण्डीर—(पु॰) [√हिण्ड् +इ (ई) रन्] समुद्रफेन । पुरुष । बैंगन । रुचक ।

हिण्डी—(स्त्री॰) [√हिण्ड्+इन्—ङीप्] दुर्गा का नाम । —**प्रियतम**– (पु॰) शिव ।

हित—(वि॰) [√धा+क्त वा √ हि+क्त] रखा हुआ, स्थापित । जड़ा हुआ । लिया हुआ, ग्रहण किया हुआ । उपयुक्त, उचित, ठीक । उपयोगी, लाभकारी; 'हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः' कि॰ १.४ । कृपालु । स्नेही । (न॰) लाभ, फायदा । कोई भी उचित या उपयुक्त वस्तु । क्षेम, कुशल । (पु॰) मित्र । संबंधी । भलाई चाहने वाला व्यक्ति ।—**अनुबन्धिन्** (**हितानुबन्धिन्**)–(वि॰) कल्याणकारी ।—**अन्वेषिन्** (**हितान्वेषिन्**), —**अर्थिन्** (**हितार्थिन्**)– (वि॰) कल्याण चाहने वाला ।—**इच्छा** (**हितेच्छा**)– (स्त्री॰) भलाई की इच्छा, हित-कामना ।—**उक्ति** (**हितोक्ति**)– (स्त्री॰) हितकर सलाह । —**उपदेश** (**हितोपदेश**)–(पु॰) कल्याणप्रद परामर्श । विष्णुशर्मा का बनाया हुआ एक प्रसिद्ध नीति-ग्रन्थ ।—**एषिन्**– (**हितैषिन्**)– (वि॰) दूसरों का हित चाहने वाला, उपकारी ।—**कर**– (वि॰) अनुकूल, हित करने वाला ।—**काम**– (वि॰) उपकार करने की इच्छा रखने वाला ।—**काम्या**– (स्त्री॰) परहित साधन की कामना ।— **कारिन्**, —**कृत्** –(पु॰) उपकारी, हितैषी ।—**प्रणी**–(पु॰) जासूस, भेदिया ।—**बुद्धि**– (पु॰) मित्र । हितैषी व्यक्ति ।—**वाक्य**– (न॰) हित-पूर्ण सलाह । —**वादिन्**– (पु॰) हित की सलाह देने वाला ।

हितक—(पु॰) [हित+क] बच्चा । जानवर का बच्चा ।

हिन्ताल—(पु॰) [हीनस्तालो यस्मात् पृषो॰ साधुः] एक प्रकार का जंगली खजूर ।

हिन्दु—(पु॰) [हीनं दूषयति, √दुष्+डु, पृषो॰ साधुः] भारतीय आर्यजाति । 'हिन्दुधर्म-प्रलोप्तारो जायन्ते चक्रवर्तिनः । हीनञ्च दूषयत्येव हिन्दुरित्युच्यते प्रिये ॥' मेरुतन्त्र ।

हिन्दोल—(पु॰) [√ हिन्दोल् + घञ्, पृषो॰ साधुः] हिंडोला, झूला । श्रावण-

शुक्ल-एकादशी से पूर्णिमा तक होने वाला भगवान् का दोलोत्सव । एक राग ।

हिन्दोलक— (पु०), **हिन्दोला**– (स्त्री०) [हिन्दोल+कन्] [हिन्दोल–टाप्] झूला। पालना ।

हिम—(वि०) [√ हि + मक्] ठंडा, शीतल । (न०) कोहरा । बर्फ । ठंड, ठंडक । कमल । ताजा या टटका मक्खन । मोती । रात । चन्दन का काष्ठ । (पु०) शीतकाल, जाड़ा । चन्द्रमा । हिमालय पर्वत । चन्दन का वृक्ष । कपूर ।—**अंशु** (**हिमांशु**) –(पु०) चन्द्रमा । कपूर ।—**अचल** (**हिमाचल**), —**अद्रि** (**हिमाद्रि**)–(पु०) हिमालय पर्वत ।—**०जा** (**हिमाद्रिजा**),—**०तनया** (**हिमाद्रितनया**)–(स्त्री०) पार्वती । गंगा । —**अम्बु** (**हिमाम्बु**),—**अम्भस्** (**हिमाम्भस्**)–(न०) शीतल जल । ओस; 'निर्धौतहारगुलिकाविशदं हिमाम्भः' र० ५.७० । —**अनिल** (**हिमानिल**)–(पु०) शीतल पवन ।—**अब्ज** (**हिमाब्ज**)– (न०) कमल ।—**अराति** (**हिमाराति**)–(पु०) अग्नि । सूर्य ।—**आगम** (**हिमागम**)–(पु०) शीतकाल, जड़काला ।—**आर्त** (**हिमार्त**)– (वि०) जड़ाया हुआ ।—**आलय** (**हिमालय**)–(पु०) भारत की उत्तरी सीमा पर स्थित एक संसार-प्रसिद्ध पर्वत । श्वेत खदिर वृक्ष ।—**०सुता** (**हिमालयसुता**)–(स्त्री०) पार्वती का नामान्तर। श्रीगङ्गा जी का नामान्तर ।—**आह्व** (**हिमाह्व**),—**आह्वय** (**हिमाह्वय**)– (पु०) कपूर ।—**उस्र** (**हिमोस्र**)–(पु०) चन्द्रमा ।—**कर**–(पु०) चन्द्रमा । कपूर ।—**कूट**–(पु०) शीतकाल । हिमालय पर्वत ।—**गिरि**–(पु०) हिमालय ।—**गु**– (पु०) चन्द्रमा। —**ज**– (पु०) मैनाक पर्वत ।—**जा**–(स्त्री०) पार्वती । खाखी हल्दी का पौधा । खिरनी का पेड़ ।—**झटि**, **झण्टि**–(स्त्री०) ओस । कुहरा ।— **तैल**–(न०) कपूर के योग से बना हुआ तेल ।—**दीधिति**–(पु०) चन्द्रमा ।—**दुर्दिन**– (न०) ऐसा दिन जिसमें ठंड हो, बादल आदि के कारण बुरा मौसिम हो ।—**द्युति**–(पु०) चन्द्रमा ।—**द्रुह्** –(पु०) सूर्य ।—**ध्वस्त**–(वि०) पाले का मारा हुआ, कुतरा हुआ । —**प्रस्थ**– (पु०) हिमालय पर्वत । —**वालुका**– (स्त्री०) कपूर । —**भास्**–(पु०) हिमालय पहाड़ । चन्द्रमा । —**रश्मि**– (पु०) चन्द्रमा ।—**शीतल**–(वि०) बर्फ की तरह शीतल ।—**शैल**–(पु०) हिमालय पर्वत ।—**संहति**–(स्त्री०) बर्फ का ढेर । —**सरस्**– (न०) बर्फीली झील । शीतल जल ।—**हानकृत्**– (पु०) अग्नि ।—**हासक**– (पु०) हिन्तालवृक्ष ।

हिमवत्—(वि०) [हिम + मतुप्, वत्व] बर्फीला । (पु०) हिमालय पर्वत ।—**कुक्षि**–(पु०) हिमालय पर्वत की घाटी ।—**पुर**–(न०) हिमालय की राजधानी ओषधि-प्रस्थ ।—**सुत**–(पु०) मैनाक पर्वत । —**सुता** – (स्त्री०) पार्वती । गंगा ।

हिमानी—(स्त्री०) [हिम + ङीप्, आनुक्] बर्फ का ढेर, वायु-चालित बर्फ का स्तूप; 'नगमुपरि हिमानीगौरमासाद्य जिष्णुः' कि० ४.३८ ।

हिमिका—(स्त्री०) घास पर पड़ी हुई ओस ।

हिमेलु—(वि०) जमा हुआ । जाड़े से जमा हुआ ।

हिम्य—(वि०) [हिम+ यत्] बरफ का ।

हिरण—(न०) [√हृ +ल्युट्, नि० साधुः] सुवर्ण । वीर्य । कौड़ी ।

हिरण्मय—(वि०) [स्त्री०—**हिरण्मयी**] [हिरण+मयट्, नि० साधुः] सुवर्ण का बना । सुनहला । (पु०) ब्रह्मा जी का

नामान्तर। (न०) जम्बुद्वीप के नौ वर्षों में से एक।

हिरण्य—(न०) [हिरण + यत्] सोना। सुवर्ण-पात्र। चाँदी। कोई भी मूल्यवान् धातु। सम्पत्ति, जायदाद। वीर्य, धातु। कौड़ी। माप विशेष। वस्तु, द्रव्य। धतूरा। —**कक्ष**- (वि०) सोने की करधनी पहिनने वाला। —**कशिपु**- (पु०) एक दैत्य जो प्रह्लाद का पिता था। —**कोश,**—**गर्भ**- (पु०) ब्रह्मा जिनका जन्म सुवर्ण-अण्ड से हुआ था। विष्णु। सूक्ष्म शरीर।—**द**- (वि०) सुवर्ण देने वाला। (पु०) समुद्र। —**दा**-(स्त्री०) पृथिवी।—**नाभ**-(पु०) मैनाक पर्वत। एक सिद्ध मुनि। वह मकान जिसमें पूर्व, पश्चिम और उत्तर बड़े-बड़े कमरे हों।— **बाहु**- (पु०) शिव का नाम। सोन नद।—**रेतस्**- (पु०) अग्नि; 'द्विषामसह्यः सुतरां तरूणां हिरण्यरेता इव सानिलोऽभूत्' र० १८.२५ सूर्य। शिव का नाम। चित्रक या अर्क का पौधा।—**वर्णा**- (स्त्री०) नदी।—**वाह**- (पु०) सोन नद।

हिरण्मय—(वि०) [स्त्री०—**हिरण्मयी**] [हिरण्य +मयट्, नि० मलोप] सोने का। सुनहला।

हिरुक्—(अव्य०) [√हि + उकिक्, रुट्] बिना, छोड़कर। बीच में। समीप। अधम।

√**हिल्**—तु० पर० अक० स्वेच्छानुसार क्रीड़ा करना। हिलति, हेलिष्यति, अहेलीत्।

हिलल—(पु०) [√ हिल् + लक्] चरारि पक्षी।

√**हिल्लोल्**—चु० पर० सक० हिलाना। झुलाना। हिल्लोलयति, हिल्लोलयिष्यति, अजिहिल्लोलत्।

हिल्लोल—(पु०) [√हिल्लोल् + अच्] तरंग, लहर। हिंडोल राग। वहम। रतिबन्ध विशेष ('हृदि कृत्वा स्त्रियः पादौ कराभ्यां धारयेत् करौ। यथेष्टं ताडयेद् योनिं बन्धो हिल्लोल-संज्ञकः ॥')

हिल्वला-(स्त्री०) [=इल्वला, पृषो० साधुः] मृगशिरा नक्षत्र के शिरोभाग में अवस्थित पाँच छोटे तारे।

हिहि—(अव्य०) विस्मय। दुःख। विषाद। शोक का हेतु।

ही—(अव्य०) [√हि + डी] आश्चर्य। थकावट। शोक। तर्कसूचक अव्यय विशेष।

हीन—(वि०) [√हा + क्त, तस्य नः, ईत्वम्] त्यक्त, त्यागा हुआ। वर्जित, रहित; 'गुणहीना न शोभन्ते निर्गन्धा इव किंशुकाः' सुभा०। नष्ट। त्रुटि-पूर्ण। घटाया हुआ। अल्पतर, निम्नतर। नीच, कमीना। (पु०) दोष-युक्त गवाह। दोष-युक्त प्रतिवादी। [नारद ने ऐसे पाँच प्रकार के प्रतिवादियों का उल्लेख किया है। यथा:— 'अन्यवादी क्रियाद्वेषी नोपस्थायी निरुत्तरः। आहूतप्रपलायी च हीनः पञ्चविधः स्मृतः ॥'] —**अङ्ग** (**हीनाङ्ग**)- (वि०) अंग-हीन। —**कुल**, —**ज**- (वि०) कमीना, अकुलीन। —**क्रतु**-(वि०) यज्ञ-हीन।—**जाति** -(वि०)नीच जाति का। जाति-बहिष्कृत, पतित।—**योनि**-(पु०) नीच जाति का।—**वादिन्**-(वि०) दोष-युक्त बयान देने वाला। बयान बदलने वाला। गूँगा। —**सख्य**- (न०) नीच लोगों के साथ रहने वाला।— **सेवा**-(स्त्री०) नीच की सेवा या चाकरी।

हीन्ताल—(पु०) [हीनस्तालो यस्मात्, पृषो० साधुः] दलदल में उत्पन्न छुहारे या खजूर का पेड़।

हीर—(पुं०) [√हृ+क, नि० साधुः] सर्प। हार। शेर। नैषधचरितकार श्रीहर्ष के पिता का नाम।(पु०, न०)वज्र। हीरा। —**अङ्ग** (**हीराङ्ग**)-(पुं०) इन्द्र का वज्र।

हीरक—(पु०) [हीर + कन्] हीरा।
हीरा—(स्त्री०) [हीर+टाप्] लक्ष्मी जी की उपाधि। चींटी।
हील—(न०) [ही विस्मयं लाति, ही√ला +क] वीर्य।
हीही—(अव्य०) [ही – द्वित्व] आश्चर्य या हास्य-सूचक अव्यय विशेष।
√हु—जु० पर० सक० होम करना। खाना। प्रसन्न करना। जुहोति, होष्यति, अहौषीत्।
√हुड्—तु० पर० सक० जमा करना, ढेर करना। अक० नहाना या डूबना। एकत्रित होना। हुडति, हुडिष्यति, अहुडीत्। भ्वा० आत्म० सक० जाना। होडते, होडिष्यते, अहोडिष्ट।
हुड—(पु०) [√हुड्+क] मेढ़ा, मेष। लोहे का खंभा या मेख जो चोरों से बचने के काम में आता है। एक प्रकार का ताला। लोहे का डंडा या गदा। मूर्ख। ग्राम-शूकर। दैत्य। रथ पर बना हुआ मल-मूत्र-त्याग का स्थान।
हुडु—(पु०) [√हुड्+उ] मेढ़ा।
हुडुक्क—(पु०) [√हुड्+उक्क] ढोल जो विशेष आकार का होता है। दात्यूह पक्षी। किवाड़ों में लगी चटखनी। नशे में चूर आदमी।
हुडुत्—(न०) [√हुड्+उति] बैल का रौंभना। धमकी का शब्द।
हुत—(वि०) [√हु + क्त] हवन किया हुआ, होम किया हुआ। वह जिसको नैवेद्य अर्पण किया गया हो। (न०) नैवेद्य, चढ़ावा। हवन-सामग्री। (पु०) शिव जी का नामान्तर।—**अग्नि** (**हुताग्नि**)–(वि०) हवन करने वाला, होम करने वाला।—**अशन** (**हुताशन**)–(पु०) अग्नि। शिव।—**०सहाय** (**हुताशनसहाय**)–(पु०) पवन। शिव जी की उपाधि।—**अशनी** (**हुताशनी**)–(स्त्री०) होली, फाल्गुनी पूर्णिमा।—**आश** (**हुताश**)–(पु०) अग्नि; 'प्रदक्षिणीकृत्य हुतं हुताशं' र० २.७१।—**जातवेदस्**—(वि०) हवनकर्ता, होमकर्ता।—**भुज्**—(पु०) अग्नि।—**०प्रिया** (**हुतभुक्प्रिया**)–(स्त्री०) स्वाहा, जो अग्नि की पत्नी है।—**वह्**–(पु०) अग्नि।—**होम**–(पु०) हवन करने वाला ब्राह्मण। (न०) जला हुआ शाकल्य।
हुम्—(अव्य०) [√हु+डुमि] स्मृति। सन्देह। स्वीकृति। क्रोध। अरुचि, घृणा। भर्त्सना। प्रश्नद्योतक अव्यय विशेष। तांत्रिक साहित्य में "हुं" का प्रयोग प्रायः किया जाता है [यथा ओं कवचाय हुं]।—**कार** (**हुङ्कार**)–(पु०)।—**कृति** (**हुङ्कृति**)–(स्त्री०) हुं का उच्चारण करना; 'पृष्टा पुनः पुनः कान्ता हुङ्कारैरेव भाषते' सुभा०। तिरस्कार-सूचक आवाज। गर्जन। सुअर की घुर-घुर आवाज। टंकार।
√हुर्च्छ्—भ्वा० पर० अक० टेढ़ा होना। हूर्च्छति, हूर्च्छिष्यति, अहूर्च्छीत्।
√हुल्—भ्वा० पर० सक० जाना। ढकना, छिपाना। होलति, होलिष्यति, अहोलीत्।
हुलहुली—(स्त्री०) [√हुल् + क, द्वित्व, ङीष्] यह एक अव्यक्त शब्द है जो आनन्दावसर पर स्त्रियों द्वारा बोला जाता था।
हुहु, हूहू—(पु०) [√ह्वे+डु, नि० साधुः] गन्धर्व विशेष।
√हूड्—भ्वा० आत्म० सक० जाना। हूडते, हूडिष्यते, अहूडिष्ट।
हूण, हून—(पु०) [√ह्वे + नक्, सम्प्रसारण, पक्षे पृषो० णत्व] एक म्लेच्छ जाति; 'तत्र हूणावरोधानां भर्तृषु व्यक्तविक्रमम्' र० ४.६८। उसका देश जो बृहत्संहिता के अनुसार उत्तर २४, २५ और २६ नक्षत्र में अवस्थित है। सोने का सिक्का विशेष (सम्भवतः यह हूणों के देश में प्रचलित था)।

हूत—(वि०) [√ह्वे+ क्त, सम्प्रसारण] आमंत्रित, बुलाया हुआ ।

हूति—(स्त्री०) [√ह्वे + क्तिन्] आमंत्रण । बुलावा । ललकार । नाम ।

हूम्—(पुं०)[√हु+डूमि] प्रश्न । वितर्क । क्रोध । भय । निन्दा । सम्मति ।

हूरव—(पुं०) [हूइति रवो यस्य] गीदड़, शृगाल ।

हूर्च्छन—(न०) [√हूर्च्छ् + ल्युट्—अन] कुटिलता । चालाकी । फरेब ।

हूहू—(स्त्री०) [=हुहु, पृषो० साधु:] गन्धर्व विशेष ।

√हृ—भ्वा० उभ० सक० ले जाना, ढोना । हर ले जाना, दूर ले जाना । लूट लेना । वञ्चित कर देना, छीन लेना । नष्ट कर डालना । आकर्षण करना, मोह लेना । प्राप्त करना । अधिकार में करना । ग्रसना । विवाह करना । विभाजन करना । हरति-ते, हरिष्यति-ते, अहार्षीत्—अहृत ।

√हृणी—क० आत्म० अक० लजाना । हृणीयते, हृणीयिष्यते, अहृणीयिष्ट ।

हृणीया—(पुं०) [√हृणी + यक् + अ —टाप्] लज्जा । दया । निन्दा ।

हृत्—(वि०) [√हृ+क्विप्, तुक्] हरण करने वाला । ग्रहण करने वाला । ले जाने वाला । आकर्षक, मोहक ।

हृत—(वि०) [√हृ+क्त] छीना हुआ । पकड़ा हुआ । मोहित । स्वीकृत । विभाजित । **—अधिकार** (**हृताधिकार**)–(वि०) बरखास्त, निकाला हुआ । न्यायानुमोदित अधिकारों से वञ्चित किया हुआ ।**—उत्तरीय** (**हृतोत्तरीय**)–(वि०) वह जिसका उत्तरीय वस्त्र (दुपट्टा) छीन लिया गया हो ।**— द्रव्य, —धन**–(वि०) वह जिसका धन नष्ट हो गया हो ।**—सर्वस्व**– (वि०) सम्पूर्णतः बरबाद किया हुआ ।

हृति—(स्त्री०) [√हृ+क्तिन्] हरण करने की क्रिया । पकड़ । लूट-पाट । विनाश ।

हृद्—(न०) [हृत्, पृषो० तस्य द:, वा हृदयस्य हृदादेश:] दे० 'हृदय' ।**—आवर्त** (**हृदावर्त**)–(पुं०) घोड़े की छाती की भौंरी । **—कम्प** (**हृत्कम्प**)– (पुं०) हृदय की धड़कन ।**—गत**– (वि०) मनोगत । प्यार की आँखों से देखा हुआ । (न०) उद्देश्य, अभिप्राय ।**—देश**– (पुं०) हृदय का स्थान ।**—पिण्ड** (**हृत्पिण्ड**)–(पुं०, न०) हृदय । **—रोग**–(पुं०) हृदय का रोग, हृदय की जलन । शोक । प्रेम । कुम्भ-राशि ।**—लास** (**हृल्लास**)–(पुं०) हिचकी । शोक ।**—लेख** (**हृल्लेख**)–(पुं०) ज्ञान । हृदय की पीड़ा । **—वण्टक**–(पुं०) पेट, मेदा ।**—शोक** (**हृच्छोक**) –(पुं०) हृदय की जलन ।

हृदय—(न०) [√हृ+कयन्, दुक् आगम] दिल । मन, अन्तःकरण । छाती, वक्षःस्थल । किसी वस्तु का सार या मर्म । गुप्त विज्ञान । [हृद्√ इ+अन्] परब्रह्म । आत्मा । बहुत ही प्रिय व्यक्ति ।**—आत्मन्** (**हृदयात्मन्**)–(पुं०) कंक पक्षी ।**—आविध्** (**हृदयाविध्** –(वि०) हृदय को बेधने वाला । **—ईश** (**हृदयेश**), **—ईश्वर** (**हृदयेश्वर**)– (पुं०) पति । परम प्रिय व्यक्ति । **—ईशा** (**हृदयेशा**), **—ईश्वरी** (**हृदयेश्वरी**)–(स्त्री०) पत्नी । प्रेयसी ।**—कम्प**– (पुं०) हृदय की धड़कन ।**—ग्राहिन्**– (वि०) हृदय को वश में करने वाला ।**—चौर**– (पुं०) हृदय को चुराने वाला ।**—वेधिन्**– (वि०) हृदय को छेदने वाला ।**—स्थान**–(न०)छाती, वक्षःस्थल ।

हृदयङ्गम—(वि०) [हृदय √गम्+खच्, मुम्] हृदयगत होने वाला या मन में बैठने वाला । हृदय को दहलाने वाला । प्रिय । मनोहर । आकर्षक; 'वल्लकी च हृदयङ्गमस्वना' र० १९.१३ । उपयुक्त । (न०) युक्ति-युक्त वाक्य ।

हृदयालु, हृदयिक, हृदयिन्—(वि०)[हृदय+आलुच्] [हृदय+ठन्] [हृदय+इनि] सहृदय, भावुक। सुशील।

हृदिक, हृदीक—(पुं०) एक यादव राजकुमार का नाम।

हृदिस्पृश्—(वि०) [हृदि √स्पृश्+क्विन्, अलुक् स०] हृदय को छूने वाला। परम प्रिय।

हृद्य—(वि०) [√हृद्+यत्] हृदय का, भीतरी। हृदय को रुचने वाला। सुन्दर। (न०) दालचीनी। जीरा। वशकारी वेदमंत्र। कपित्थ। दही। महुए की शराब। वृद्धि नामक ओषधि। **—गन्ध**-(स्त्री०) बेल का पेड़। **—गन्धा**-(स्त्री०) बेला या मोतिया का पौधा।

√हृष्—भ्वा०, दि० पर० अक० प्रसन्न होना, खुश होना। (बालों या रोंगटों का) खड़ा होना। (लिङ्ग का) तनना या खड़ा होना। भ्वा० हर्षति, हर्षिष्यति, अहर्षीत्। दि० हृष्यति, हर्षिष्यति, अहृषत्—अहर्षीत्।

हृषित—(वि०) [√हृष्+क्त] प्रसन्न, आनन्दित। रोमाञ्चित; 'हृषितास्तनूरुहाः' दश०। आश्चर्यान्वित। झुका हुआ, नवा हुआ। हताश। ताजा, टटका।

हृषीक—(न०) [√हृष्+ईकक्] ज्ञानेन्द्रिय। **—ईश** (**हृषीकेश**)-(पुं०) विष्णु या कृष्ण का नाम।

हृष्ट—(वि०) [√हृष्+क्त] हृषित, आनन्दित। रोमाञ्चित। विस्मित। प्रतिहत। **—चित्त**, **—मानस**-(वि०) मन में प्रसन्न। **—रोमन्**-(वि०) रोमाञ्चित। **—वदन**-(वि०) प्रसन्न-मुख। **—संकुल्प**-(वि०) सन्तुष्ट। **—हृदय**-(वि०) प्रसन्न-चित्त।

हृष्टि—(स्त्री०) [√हृष्+क्तिन्] प्रसन्नता, हर्ष, खुशी, आनन्द। रोमाञ्च। घमण्ड, दर्प।

हे—(अव्य०) [√हा+डे] सम्बोधनात्मक अव्यय, हो, अरे। दर्प, ईर्ष्या, द्वेष या शत्रुता-द्योतक अव्यय।

हेक्का—(स्त्री०) [=हिक्का, पृषो० साधुः] हिचकी।

√हेठ्—भ्वा० पर० सक० विघात या नुकसान करना। हेठति, हेठिष्यति, अहेठीत्। क्र्या० पर० अक० होना। उत्पन्न होना। सक० पवित्र करना। हेठति, हेठिष्यति, अहेठीत्। भ्वा० आत्म० सक० बाधित करना। हेठते, हेठिष्यते, अहेठिष्ट।

हेठ—(पुं०) [√हेठ्+घञ्] बाधा, रुकावट, अड़चन। विरोध। अनिष्ट।

√हेड्—भ्वा० आत्म० सक० तिरस्कार करना। हेडते, हेडिष्यते, अहेडिष्ट। पर० सक० घेरना। पोशाक धारण करना। हेडति, हेडिष्यति, अहेडीत्।

हेड—(पुं०) [√हेड्+घञ्] अपमान। उपेक्षा। **—ज**-(पुं०) कोप। अप्रसन्नता, नाखुशी।

हेडावुक्क—(पुं०) घोड़े का व्यापारी।

हेति—(स्त्री०) [√हन्+क्तिन्, नि० साधुः] हथियार, अस्त्र; 'पुरोपसारोपितहेतिसंहतिः' कि० ३.५६। आघात, चोट। किरण। प्रकाश, चमक। शोला, अंगारा। साधन। माला। धनुष की टंकार। अंग। अंकुर।

हेतु—(पुं०) [√हि+तुन्] कारण, सबब। उद्देश्य। उद्भव-स्थल। जरिया, साधन। तर्क। तर्कशास्त्र। व्यापक ज्ञापक कारण जो अव्याप्ति आदि दोषों से दूषित न हो। अलङ्कार विशेष जिसकी परिभाषा यह है: —"हेतोर्हेतुमता सार्धमभेदो हेतुरुच्यते।" **—आभास** (**हेत्वाभास**)-(पुं०) हेतु-दोष, वह हेतु जो यथार्थतः हेतु न हो किन्तु हेतु की तरह प्रतीत हो।

हेतुक—(पुं०) [हेतु+क] कारण।

हेतुता—(स्त्री०), **हेतुत्व**–(न०) [हेतु +तल् –टाप्] [हेतु +त्व] हेतु की विद्यमानता, कारण का होना ।

हेतुमत्—(वि०) [हेतु +मतुप्] सकारण । तर्क-युक्त । (पु०) कार्य ।

हेतौ—(अव्य०) कारण से ।

हेम—(न०) [√हि +मन्] सोना, सुवर्ण । धतूरा । नागकेशर । (पु०)काले या भूरे रंग का घोड़ा । माषकपरिमाण, एक मासे की तौल । बुध ग्रह ।

हेमन्—(न०) [√हि+मनिन्] (समास में 'न्' का लोप हो जाता है)] सुवर्ण, सोना । जल । बर्फ, हिम । धतूरा । नागकेशर ।—**अङ्ग** (**हेमाङ्ग**)–(वि०) सुनहला ।(पु०) गरुड़ । सिंह । सुमेरु पर्वत । ब्रह्मा । विष्णु । चंपक वृक्ष ।—**अङ्गद** (**हेमाङ्गद**)—(न०) सोने का बाजूबंद ।—**अद्रि** (**हेमाद्रि**)–(पु०)सुमेरु पर्वत ।—**अम्भोज** (**हेमाम्भोज**) –(न०) सोने का कमल । [यथा—"हेमाम्भोजप्रसविसलिलं मानसस्याददानः । —मेघदूत ।] —**आह्व** (**हेमाह्व**)–(पु०) जंगली चंपा का पेड़ । धतूरा ।—**कन्दल**– (पु०) मूँगा । —**कर**, —**कर्तृ**, —**कार**, —**कारक**– (पु०) सुनार; 'हे हेमकार ! परदुःखविचारमूढ़ !' सुभा० —**किञ्जल्क**– (न०) नागकेशर का फूल ।—**कुम्भ**– (पु०) सोने का घड़ा ।—**कूट**–(पु०) हिमालय के उत्तर स्थित एक पर्वत का नाम ।—**केतकी**–(स्त्री०) स्वर्णकेतकी नामक पौधा ।—**केलि**– (पु०) अग्नि ।—**केश**– (पु०) शिव ।—**गन्धिनी**– (स्त्री०) रेणुका नामक गंधद्रव्य ।—**गिरि**– (पु०) सुमेरु पर्वत ।—**गौर**– (पु०) अशोक वृक्ष ।—**च्छन्न**–(वि०) सुवर्ण से आच्छादित, सोने से मढ़ा हुआ । (न०) सोने का ढकना ।—**ज्वाल**–(पु०) अग्नि ।—**तार**–(न०) तूतिया ।—**दुग्ध**, —**दुग्धक**– (पु०) सफेद गूलर का पेड़ । —**पर्वत**– (पु०) सुमेरु पर्वत ।—**पुष्प**, —**पुष्पक**– (पु०) अशोक वृक्ष । लोध्रवृक्ष । चंपकवृक्ष । (न०) अशोक का फूल । गुलाब विशेष का फूल ।—**बल**, —**मल**– (न०) मोती ।—**भ**– (वि०) सुवर्ण की तरह ।—**माला** (स्त्री०) यम की भार्या । सुवर्ण की माला ।— **मालिन्**– (पु०)सूर्य ।—**यूथिका**–(स्त्री०)सोनजुही । —**रागिणी**–(स्त्री०) हल्दी ।—**शङ्ख**– (पु०) विष्णु का नामान्तर । —**शृङ्ग**– (न०) सुनहला सींग । सुनहली चोटी या शिखर ।—**सार**– (न०) तूतिया ।—**सूत्र**, —**सूत्रक**–(न०) गोप नामक कण्ठाभरण विशेष ।—**हस्तिरथ**– (पु०) एक महादान जिसमें सोने का हाथी और रथ बना कर दान करना होता है ।

हेमन्त—(पु०, न०) [√हि + झ, मुट् आगम] छह ऋतुओं में से एक, मार्गशीर्ष और पौष अर्थात् अगहन और पूस मास । 'नवप्रवालोद्गमसस्यरम्यः प्रफुल्ललोध्रः परिपक्वशालिः । विलीनपद्मः प्रपतत्तुषारो हेमन्तकालः समुपागतः प्रिये ॥'—ऋतुसंहार ।

हेमल—(पु०) [हेम √ला +क] सुनार । कसौटी । गिरगिट ।

हेय—(वि०) [√हा +यत्] त्यागने योग्य, छोड़ देने योग्य । जाने योग्य ।

हेर—(न०) [√हि +रन्] मुकुट विशेष । हल्दी ।

हेरम्ब—(पु०) [हे √रम्ब् + अच्, अलुक् स०] गणेश । भैंसा । शेखीबाज वीर ।—**जननी**–(स्त्री०) श्री पार्वतीजी ।

हेरिक—(पु०) [√हि+ इक, रुट् आगम] गुप्तचर, जासूस, भेदिया ।

हेरुक—(पु०) [√हि+उक, रुट्] शिव का गण । बुद्ध विशेष ।

हेलन—(न०), **हेलना**– (स्त्री०) [√हिल् +ल्युट्] [√ हिल् + णिच्+ल्युट्—टाप्] अवमानना, उपेक्षा। केलि करना। अवलम्बन।

हेला—(स्त्री०) [√हेड् + अ—टाप्, डस्य लः] तिरस्कार, अपमान। आमोद-प्रमोद-मयी क्रीड़ा। उत्कट मैथुनेच्छा। प्रासानी, सौलभ्य। चाँदनी, जुन्हाई।

हेलावुक्क—दे० 'हेडावुक्क'।

हेलि—(पुं०) [√हिल् +इन्] सूर्य। अर्क-वृक्ष। (स्त्री०) अवज्ञा। आलिंगन। केलि।

हेवाक—(पु०) उत्सुकता।

हेवाकस—(वि०) अत्यन्त। प्रचण्ड।

हेवाकिन्—(वि०) अतिशय उत्सुक या इच्छुक। 'आयन्ते महतामहोतिकलमप्रस्थान-हेवाकिनाम्। निःसामान्यमहत्त्वयोगपिशुना वार्ता विपत्तावपि॥' —कल्हण।

√हेष्—भ्वा० आत्म० अक० हिनहिनाना। हेषते, हेषिष्यते, अहेषिष्ट।

हेष—(पु०), **हेषा** –(स्त्री०), **हेषित**–(न०) [√ हेष् + घञ्] [√हेष्+अ —टाप्][√हेष्+क्त] हिनहिनाहट।

हेषिन्—(पु०) [√हेष् + णिनि] घोड़ा।

हेहे—(अव्य०) [हे च हे च, द्व० स०] किसी को पुकारने के काम में आने वाला अव्यय विशेष।

है—(अव्य०) [√हा + कै] सम्बोध-नात्मक अव्यय।

हैतुक—(वि०) [स्त्री०—**हैतुकी**] [हेतु +ठण्] जो युक्तियुक्त वाक्य का प्रयोग करता हो। कारणात्मक। कारण-सम्बन्धी। तर्कात्मक। तर्क-संबंधी। (पु०) तार्किक। मीमांसा दर्शन का अनुयायी। हेतु द्वारा सत्कर्म में सन्देह करने वाला, नास्तिक।

हैम—[स्त्री०—**हैमी**] [हिम + अण्] शीतल। ठंडा। कोहरे के कारण हुआ। [हेम + अण्] सुनहला। सोने का बना हुआ; 'पादेन हैमं विलिलेख पीठं' र० ६.१५। (न०) ओस। पाला। (पु०) शिव जी का नामान्तर। चिरायता।—**मुद्रा**, —**मुद्रिका**– (स्त्री०) सोने का सिक्का।

हैमन—(वि०) [स्त्री०—**हैमनी**] [हेमन्त +अण्, तलोप] शीतल, ठंडा। जड़काला सम्बन्धी। शीतकाल में या ठंड में उत्पन्न होने वाला। [हेमन् + अण्] सुनहला। सोने का। (पु०) [हेमन्त + अण्] मार्ग-शीर्षमास, अगहन का महीना। हेमन्तऋतु, जड़काला।

हैमन्तिक—(वि०) [हेमन्त+ठञ्] शीतल, ठंडा। जड़काले में उत्पन्न होने वाला। (न०) हेमन्त ऋतु में होने वाला धान्य।

हैमल—(पु०) [हिमल+ अण्]हेमन्त ऋतु।

हैमवत—(वि०) [स्त्री०—**हैमवती**] [हिमवत् +अण्] बर्फीला। हिमालय पर्वत में उत्पन्न या पालापोसा हुआ। हिमा-लय पर्वत सम्बन्धी। हिमालय पर्वत में स्थित। (न०) भारतवर्ष।

हैमवती—(स्त्री०) [हैमवत+ङीप्] श्री पार्वती देवी। श्री गङ्गा। हर्रे। स्वर्णक्षीरी। सफेद फूल की बच। रेणुका नामक गंध-द्रव्य। कपिलद्राक्षा। अलसी। हल्दी। सेहुंड। खिरनी।

हैयङ्गवीन—(न०) [ह्योगोदोहाद् भवम्, ह्य–स्गो+ख,नि०साधुः]ताजा घी। टटका मक्खन 'हैयङ्गवीनमादाय घोषवृद्धानुप-स्थितान्' र० १.४५।

हैरिक—(पु०) [√ हि+र, हिर + ठक्] चोर।

हैहय—(पु०) एक पश्चिमी देश। [हैहय +अण्] वहाँ का अधिवासी। एक पर्वत। सहस्रार्जुन का नाम।'धेनुवत्सहरणाच्च हैहयः त्वं च कीर्तिमपहर्तुमुद्यतः॥'

हो—(अव्य०) [√ ह्वे +डो नि०] हो। अरे। है।

√**होड्**—भ्वा० आत्म० सक० तिरस्कार करना। जाना। होडते, होडिष्यते, अहोडिष्ट।

होड—(पु०) [√होड् + अच्] बेड़ा, नाव।

होतृ—(वि०) [स्त्री०—**होत्री**] [√हु +तृच्] हवन करने वाला, होम करने वाला। (पु०) ऋत्विक्। यज्ञकर्ता। शिव। अग्नि।

होत्र—(न०) [√हु+ष्ट्रन्] होम। हवन-सामग्री, घृतादि।

होत्रा—(स्त्री०) [होत्र+टाप्] यज्ञ। स्तुति।

होत्रीय—(न०) [होतृ + छ] यज्ञ-मण्डप, यज्ञ-शाला। (वि०) होतृ सम्बन्धी।

होम—(पु०) [√हु + मन्] देवताओं के उद्देश से अग्नि में घृत आदि डालना, हवन। पंच महायज्ञों में से एक, देवयज्ञ। एक प्रकार का दान जो श्राद्ध के समय मन्त्र-पूर्वक किया जाता है।—**अग्नि** (**होमाग्नि**)-(पु०) होम की आग।—**कुण्ड**-(न०) हवन-कुण्ड।—**तुरङ्ग**- (पु०) यज्ञ में बलि दिया जाने वाला घोड़ा; 'निकुम्भ तं होम-तुरङ्गरक्षणे' र० ३.३८।—**धान्य**- (न०) तिल।— **धूम**-(पु०) यज्ञीय अग्नि या होम की आग से निकला हुआ धूम।—**भस्मन्**- (न०) हवन की राख।—**वेला**-(स्त्री०) हवन करने का समय।—**शाला** -(स्त्री०) वह घर जिसमें हवन करने के लिए होम-कुण्डादि हो।

होमि—(पु०) [√ हु +इन्, मुट् आगम] घी। जल। अग्नि। चित्रक वृक्ष।

होमिन्—(पु०) [होम+इनि] होम करने वाला।

होमीय, होम्य—(वि०) [होम + छ] [होम+यत्] हवन सम्बन्धी। (न०) घी।

होरा—(स्त्री०) [√हु + रन्—टाप्] राशि का उदय। राशि का आधा भाग। एक घंटा। चिह्न। रेखा। जन्मपत्री।

होलक—(पुं०) [√हु + विच्, √ लक् +अच्, कर्म० स०] मटर, चने आदि की आग पर भुनी हुई अधपकी फलियाँ, होरहा।

होलिका—(स्त्री०) [√हु+विच्, तं लाति, √ला+क+कन्—टाप्, इत्व] होली का त्योहार। फाल्गुनी पूर्णिमा।

हौ—(अव्य०) [√ह्वे+डौ नि०] सम्बोधनात्मक अव्यय—अरे। ए। हो।

हौत्र—(न०) [होतृ+अण्] होता का कर्म। (वि०) होतृ सम्बन्धी।

√**ह्नु**—अ० आत्म० सक० छीन लेना, लूट लेना। किसी से कोई चीज छिपाना। ह्नुते, ह्नोष्यते, अह्नोष्ट।

√**ह्मल्**—भ्वा० पर० अक० चलना। ह्मलति, ह्मलिष्यति, अह्मालीत्।

ह्यस्—(अव्य०) [गतेऽह्नि नि० साधुः] बीता हुआ कल।—**भव** (**ह्योभव**)-(वि०) वह जो कल (बीता हुआ) हुआ हो।

ह्यस्तन—(वि०) [स्त्री०—**ह्यस्तनी**] [ह्यस् +ट्युल्, तुट् आगम] बीते हुए कल सम्बन्धी। —**दिन**-(न०) बीता हुआ कल।

ह्यस्त्य—(वि०) [ह्यस्+त्यप्] दे० 'ह्यस्तन'।

√**ह्लग्**—भ्वा० पर० सक० छिपाना। ह्लगति, ह्लगिष्यति, अह्लगीत्।

ह्लद—(पुं०) [√ह्लाद् +अच् नि० साधुः] गहरी झील। बड़ा और गहरा सरोवर। गहरी गुफा। किरण। ध्वनि।—**ग्रह**-(पुं०) घड़ियाल।

ह्लदिनी—(स्त्री०) [ह्लद + इनि—ङीप्] नदी। विद्युत्, बिजली।

√**ह्लप्**—चु० उभ० सक० बोलना, कहना। ह्लापयति—ते, ह्लापयिष्यति—ते, अजिह्लपत्—त।

√**ह्लस्**—भ्वा० पर० अक० शब्द करना। छोटा हो जाना। ह्लसति, ह्लसिष्यति, अह्लसीत्—अह्लासीत्।

ह्रसिमन्—(पुं०) [ह्रस्व+इमनिच्, ह्रसादेश] छोटापन, ह्रस्वता।

ह्रस्व—(वि०) [√ह्रस्+वन्] छोटा। थोड़ा, कम। खर्वाकार, ठिगना। तुच्छ। (पुं०) बौना। लघु वर्ण। मेष, वृष, कुम्भ और मीन राशियाँ। (न०) गौरसुवर्ण शाक। हीराकसीस।—**अङ्ग** (**ह्रस्वाङ्ग**)–(वि०) ठिगने कद का। (पुं०) बौना, वामन। जीवक ओषधि।—**गर्भ**–(पुं०) कुश।—**दर्भ**–(पुं०) छोटा सफेद कुश।—**बाहुक**–(वि०) छोटी बाँह वाला।—**मूर्ति**–(वि०) ठिगने कद का।

√**ह्राद्**—भ्वा० आत्म० अक० शब्द करना। गरजना। ह्रादते, ह्रादिष्यते, अह्रादिष्ट।

ह्राद—(पुं०) [√ह्राद्+घञ्] शब्द; 'ह्रादं निगृह्णन्ति न दुन्दुभीनाम्' कि० –१६.८। मेघ-गर्जन। (वि०) [√ह्राद्+अच्] शब्द करने वाला। (पुं०) हिरण्यकशिपु का एक पुत्र।

ह्रादिन्—(वि०) [√ह्राद्+णिनि] शब्द करने वाला। गरजने वाला।

ह्रादिनी—(स्त्री०) [ह्रादिन्+ङीप्] वज्र। बिजली। नदी। शल्लकी नामक वृक्ष।

ह्रास—(पुं०) [√ह्रस्+घञ्] शब्द। क्षय। कमी। छोटी संख्या।

√**ह्रिणी**—कं० आत्म० अक० लज्जित होना। ह्रिणीयते, ह्रिणीयिष्यते, अह्रिणीयिष्ट।

ह्रिणीया—(स्त्री०) [√ह्रिणी+यक्+अ–टाप्] दे० 'हृणीया'।

√**ह्री**—जु० पर० अक० लजाना, शर्माना। जिह्रेति, ह्रेष्यति, अह्रैषीत्।

ह्री—(स्त्री०) [√ह्री+क्विप्] लाज, शर्म; 'लोलेऽपि ह्रीपदमादधाना' कु० ३.५७। दक्ष प्रजापति की कन्या जो धर्म की पत्नी मानी जाती है।—**जित**–(वि०) लज्जा के वशीभूत, फलतः लज्जाशील।—**निरास**–(पुं०) लज्जा का परित्याग। निर्लज्जता।—**नियंत्र**–(वि०) विनयी, नम्र।—**पद**–(न०) लज्जा का कारण।—**वत** (वि०) अतिनम्र, संकोची।—**मूढ**–(वि०) लाज से घबड़ाया हुआ।—**यन्त्रणा** (स्त्री०) लज्जा के कारण उत्पन्न पीड़ा।

ह्रीका—(स्त्री०) [√ह्री+कन्–टाप्] लज्जा। त्रास।

ह्रीकु—(वि०) [√ह्री+उन्, कुक् आगम] लजीला, हयादार। भीरु, डरपोक। (पुं०) रांगा। लाख, लाह।

ह्रीण, ह्रीत—[√ह्री+क्त, पक्षे तस्य नः] लज्जित, शर्माया हुआ।

ह्रीबेर, ह्रीवेल—(न०) [ह्रियै लज्जायै वेरम् अङ्गम् अस्य क्षुद्रत्वात्, पृषो० वा रस्य लः] एक प्रकार का सुगन्ध द्रव्य।

√**ह्रूड्**—भ्वा० आत्म० सक० जाना। ह्रोडते, ह्रोडिष्यते, अह्रोडिष्ट।

√**ह्रेप्**—भ्वा० आत्म० सक० जाना। ह्रेपते, ह्रेपिष्यते, अह्रेपिष्ट।

√**ह्रेष्**—भ्वा० आत्म० अक० हिनहिनाना। रेंगना। ह्रेषते, ह्रेषिष्यते, अह्रेषिष्ट।

ह्रेषा—(स्त्री०) [√ह्रेष्+अ–टाप्] हिनहिनाहट।

√**ह्लग्**—भ्वा० पर० सक० छिपाना। ह्लगति, ह्लगिष्यति, अह्लगीत्।

ह्लन्न—(वि०) [√ह्लाद्+क्त, ह्रस्वता, तस्य नः] प्रसन्न, आनन्दित।

√**ह्लाद्**—भ्वा० आत्म० अक० प्रसन्न होना। सक० प्रसन्न करना। ह्लादते, ह्लादिष्यते, अह्लादिष्ट।

ह्लाद—(पुं०) [√ह्लाद्+घञ्] हर्ष, आनन्द।

ह्लादक—(वि०) [√ह्लाद्+ण्वुल्] प्रसन्न करने वाला। प्रसन्न होने वाला।

ह्लादन—(न०) [√ह्लाद्+ल्युट्] प्रसन्न होने की क्रिया । प्रसन्न करने की क्रिया ।

ह्लादिन्—(वि०) [√ ह्लाद् + णिनि] प्रसन्न होने वाला । प्रसन्नकारक, हर्षप्रद ।

ह्लादिनी—(स्त्री०) [ह्लादिन् + ङीप्] ईश्वर की एक शक्ति । दे० 'ह्लादिनी' ।

√**ह्वल्**—भ्वा० पर० अक० चलना । ह्वलति, ह्वलिष्यति, अह्वालीत् ।

ह्वान—(न०) [√ह्वे + ल्युट्] बुलाना, आमंत्रण । आवाज ।

√**ह्वृ**—भ्वा० पर० अक० टेढ़ा होना । आचरण में कुटिलता या टेढ़ापन करना । सक० टेढ़ा करना । ह्वरति, ह्वरिष्यति, अह्वार्षीत् ।

√**ह्वे**—भ्वा० उभ० सक० बुलाना, आह्वान करना । नाम लेना, नाम लेकर पुकारना । चुनौती देना, ललकारना । स्पर्द्धा करना । प्रार्थना करना, याचना करना । ह्वयति—ते, ह्वास्यति—ते, अह्वत् —अह्वत —अह्वास्त । [रत्नान्यर्थमयानि यानि निहितान्यब्धौ हि वाचां पुरा, धातुप्रत्ययदुर्गमे पथि 'सरस्वत्याः'—सुतस्तान्यहो । धन्विभ्यसुदधाटयं कृततपोऽहं 'तारिणीश' स्तथा, मोदाय प्रभवेद्धि कौस्तुभसमः कोशो गिरामधुषाम्]।।शिवम्।।

समाप्त

परिशिष्ट १

शास्त्रीय न्याय-उक्तियाँ

अजाकृपाणीयन्यायः—किसी स्थान पर एक तलवार लटक रही थी। दैवयोग से उसके नीचे एक बकरा जा पहुँचा और तलवार उसकी गर्दन पर गिर पड़ी और उसकी गर्दन कट गयी। जहाँ दैवयोग से कोई आपत्ति आ जाती है वहाँ इसका प्रयोग किया जाता है।

अजातपुत्रनामोत्कीर्तनन्यायः—अर्थात् पुत्र तो है नहीं, पर उसका नाम रख देना। जहाँ कोई बात न हो और कोरी आशा के भरोसे कोई आयोजन करने लगे, वहाँ इसका प्रयोग किया जाता है।

अध्यारोपन्यायः—जो वस्तु जैसी हो उसके विपरीत उसका निरूपण होने पर लोग इसका प्रयोग करते हैं। जैसे 'रस्सी को साँप' बतलाना। वेदान्त-दर्शन में इस न्याय का उल्लेख प्रायः पाया जाता है।

अन्धकूपपतनन्यायः—जब किसी अपात्र को कोई उपदेश दिया जाय और वह तदनुसार चल अपनी भूल-चूक के कारण, अपनी हानि कर बैठता है तब इसका व्यवहार किया जाता है।

अन्धगजन्यायः—कहा जाता है, कई अन्धों ने यह जानने के लिये कि हाथी कैसा होता है, हाथी के शरीर को हाथों से टटोला। जिसने हाथी का जो अंग टटोला, उसने हाथी का वह रूप समझ लिया। हाथी की पूँछ टटोलने वाले ने उसे रस्से के आकार का, पैर टटोलने वाले ने उसे खंभे के आकार का समझा। किसी विषय का साङ्गोपाङ्ग ज्ञान न होने पर, जब कोई उस विषय को अपनी समझ के अनुसार ऊट-पटांग वर्णन करता है, तब यह उक्ति प्रयुक्त की जाती है।

अन्धगोलाङ्गूलन्यायः—कोई अंधा अपने घर का मार्ग भूल गया था। किसी मसखरे ने उसे एक गाय की पूँछ थमा कर कहा कि यह तुम्हारे घर पहुँचा देगी। इसका परिणाम यह हुआ कि, अंधा घर न पहुँच कर इधर-उधर मारा-मारा फिरा। तब से जब कभी कोई मनुष्य किसी दुष्ट के उपदेशानुसार चल कर कष्ट उठाता है, तब इसका प्रयोग किया जाता है।

अन्धचटकन्यायः—अंधे के हाथ बटेर लगना। अर्थात् बिना प्रयास किये कोई वस्तु हाथ लग जाना।

अन्धपरम्परान्यायः—हिन्दी में "भेड़ चाल" इसी का पर्याय है। जब कोई आदमी किसी को कोई काम करते देख, वही काम स्वयं भी करने लगता है, तब वहाँ इसका प्रयोग किया जाता है।

अन्धपङ्गुन्यायः—एक ही ठिकाने पर जाने वाले जब एक अंधा और एक लँगड़ा मिल जाते हैं, तब पारस्परिक साहाय्य से दोनों अपने गन्तव्य स्थान पर पहुँच जाते हैं। सांख्यदर्शन में जड़ प्रकृति और चेतन पुरुष के संयोग से सृष्टि-रचना के उदाहरणस्वरूप इस उक्ति का उल्लेख किया गया है।

अपवादन्यायः—जब किसी वस्तु का यथार्थ ज्ञान होने पर उसके सम्बन्ध में फिर किसी प्रकार का भ्रम नहीं रह जाता तब ऐसे स्थान पर इसका प्रयोग किया जाता है।

अपराह्णच्छायान्यायः—जिस प्रकार दोपहर की छाया बढ़ती है, उसी प्रकार जब किसी

सज्जन की प्रीति की वृद्धि को व्यक्त करना होता है तब इसका प्रयोग किया जाता है।

अपसारिताग्निभूतलन्यायः—जिस प्रकार भूमि पर से आग हटा लेने पर भी, कुछ देर तक वहां की जमीन में गरमाहट बनी रहती है, उसी प्रकार किसी धनी के पास धन न रहने पर भी कुछ दिनों तक उसमें धनाभिमान बना रहता है।

अरण्यरोदनन्यायः—अर्थात् जंगल में रोना, जहां कोई सुनने वाला या समवेदना प्रदर्शित करने वाला न हो। जहां कहने पर भी कोई ध्यान देने वाला न हो, वहां इसका प्रयोग किया जाता है।

अरुन्धतीदर्शनन्यायः—जिस प्रकार अरुन्धती के अतिसूक्ष्म तारे को दिखलाने के लिये उसके समीपस्थ बड़े तारे को दिखला कर अरुन्धती का तारा बतलाया जाता है, उसी प्रकार किसी सूक्ष्म वस्तु को बतलाने के लिये जब किसी महान् वस्तु का निर्देश कर उस सूक्ष्म वस्तु का निर्देश करते हैं, तब इस उक्ति को व्यवहार में लाते हैं।

अर्कमधुन्यायः—अगर मदार के वृक्ष से काम चलता हो तो शहद-प्राप्ति के लिये विशेष प्रयास करना अनावश्यक है। जो कार्य सहज में हो उसके लिये इधर-उधर बड़ा परिश्रम करने की आवश्यकता नहीं है। यह प्रदर्शित करने के लिये, इसका प्रयोग किया जाता है। इसी न्याय का रूपान्तर है—'अर्के चेन्मधु विन्देत किमर्थं पर्वतं व्रजेत्।'

अर्द्धजरतीयन्यायः—एक पुस्तक के धन पण्डित थे। धनाभाव से दुःखी हुए, तब वह अपना एक-मात्र धन गौ को बेचने के लिये निकले।। उन्होंने समझा कि जिस प्रकार मनुष्य के बूढ़ा होने से उसका गौरव बढ़ जाता है, उसी प्रकार गौ की उम्र अधिक होने से उसका भी मूल्य अधिक होगा; अतः वे पूछने पर अपनी गौ की उम्र खूब बढ़ाकर कहते थे। बूढ़ी गौ को भला कौन लेता। बेचारे को इसके लिये हताश होते देख एक ने कहा, तुम अपनी गौ को बूढ़ी मत कहा करो। वे विद्वान् तो थे अतः उन्होंने मन ही मन कहा आत्मा तो कभी बूढ़ा होता नहीं, अतएव मैं अब अपनी गौ आधी बूढ़ी और आधी जवान बतलाऊंगा। तब से जब कोई बात उभय पक्ष के लिये लागू होती है, तब यह उक्ति प्रयुक्त की जाती है।

अशोकवनिकान्यायः—छाया, सौरभ, आदि से युक्त अशोक वन में जाने के समान जब किसी एक ही स्थान पर सब कुछ (अर्थात् छाया, सौरभ आदि) प्राप्त हो जाय और अन्यत्र जाने की आवश्यकता न रहे, तब इसका प्रयोग होता है।

अश्मलोष्टुन्यायः—इसका प्रयोग विषमता बतलाने के लिये किया जाता है। अश्म और लोष्टु, अश्म से लोष्टु की विषमता ही इस न्याय का उद्देश्य है। जहां दो वस्तुओं में सापेक्षिकत्व प्रदर्शित करना होता है वहां पाषाणलोष्टिक न्याय कहा जाता है।

अस्नेहदीपन्यायः—बिना तेल के दीपक जैसी बात। थोड़ी देर प्रज्वलित रहने वाली किसी चर्चा के सम्बन्ध में इसका प्रयोग किया जाता है।

अहिकुण्डलन्यायः—सर्प के कुण्डली मार कर बैठने के समान, जब कोई स्वाभाविक बात कहनी होती है, तब इसका प्रयोग होता है।

अहिनकुलन्यायः—सांप-नेवले के समान। यह स्वाभाविक विरोध सूचित करने के लिये व्यवहृत किया जाता है।

आकाशापरिच्छिन्नत्वन्यायः—आकाश के समान अपरिच्छिन्नत्व या असीमता प्रदर्शित करने के लिये इसका प्रयोग किया जाता है।

आभाणकन्यायः—लोक-प्रवाद के समान जब किसी की उपमा देनी होती है, तब इससे

काम लिया जाता है। लोक-प्रसिद्ध कथन को ग्रामाणक कहते हैं। यथा—इस ग्राम के अमुक वट वृक्ष पर भूत रहता है, ऐसा लोक-प्रवाद है।

ग्राम्रवणन्यायः—किसी वन में ग्राम के वृक्षों की अधिक संख्या होने पर जैसे उस वन को ग्राम्रवन ही कहते हैं—हालांकि उस वन में अन्य वृक्ष भी होते हैं, वैसे ही जहां औरों को छोड़, प्रधान वस्तु ही का उल्लेख किया जाता है, वहां लोग इसका प्रयोग करते हैं।

उत्पाटितदन्तनागन्यायः—अर्थात् विष का दांत तोड़े हुए सांप के समान। जब कोई दुष्टप्रकृति मनुष्य कुछ करने-धरने या हानि पहुँचाने में असमर्थ कर दिया जाता है, तब उसके लिये इस न्याय का प्रयोग किया जाता है।

उदकनिमज्जनन्यायः—किसी व्यक्ति के दोषी अथवा निर्दोषी होने की एक दिव्य परीक्षा, जो प्राचीन काल में हुआ करती थी। वह इस प्रकार कि परीक्षार्थी व्यक्ति को पानी में खड़ा करके किसी भी ओर बाण छोड़ा जाता था। साथ ही परीक्षार्थी अभियुक्त को तब तक जल में डूबे रहने के लिये कहते थे, जब तक वह छोड़ा हुआ बाण, वहां से छोड़ा जा कर प्रथम छोड़े हुए स्थान पर लौट न आवे। यदि इतने काल के भीतर अभियुक्त का कोई अंग बाहर न दिखाई पड़ा, तो वह निर्दोष समझा जाता था। अतः जब कभी सत्यासत्य के निर्णय का प्रसङ्ग आता है, तब इस न्याय का उल्लेख किया जाता है।

उभयतःपाशारज्जुन्यायः—जब दोनों ओर विपत्ति हो अर्थात् दो कर्त्तव्य पक्षों में से प्रत्येक में दुःख देख पड़े, तब इसका उल्लेख करना उचित समझा जाता है।

उष्ट्रकण्टकभक्षणन्यायः—थोड़ी सी देर के जिह्वा-सुख के लिये जैसे ऊँट कांटे चुभने का कष्ट उठाता है, वैसे ही जब थोड़े से सुख के लिये विशेष कष्ट उठाना पड़ता है तब वहां यह कहावत कही जाती है।

ऊषरवृष्टिन्यायः—कही हुई किसी बात का जहां प्रभाव नहीं पड़ता, वहां इसका प्रयोग किया जाता है।

कण्ठचामीकरन्यायः—गले में पड़े सुवर्ण-हार को ढूंढना। सच्चिदानंद ब्रह्म अपने में विद्यमान रहते भी, जब कोई अज्ञानी जन, सुख-प्राप्ति के लिये अनेक प्रकार के दुःख भोगता है; तब वेदान्ती इसका प्रयोग करते हैं।

कदम्बगोलकन्यायः—जैसे कदंब के गोले में सब फूल एक साथ रहते हैं, वैसे ही जिस जगह कई बातें एक साथ हो जाती हैं, उस जगह इसका प्रयोग किया जाता है। कभी-कभी नैयायिक लोग शब्दोत्पत्ति के प्रसङ्ग में कई वर्णों के उच्चारण को एक साथ मान कर उसके दृष्टान्त में भी इसका प्रयोग करते हैं।

कदलीफलन्यायः—जैसे केला काटने ही पर फलता है, वैसे ही नीच भी नीचे प्रकार फल-दायी अर्थात् काम का नहीं होता।

कफोणिगुडन्यायः—केहुनी में गुड़ नहीं रहने पर भी गुड़ है ऐसा समझ कर उसे चाटने के तुल्य न्याय। जहां पर वस्तु नहीं है अथवा उस वस्तु की प्रत्याशा में काम ठान दिया जाता है वहां पर यह न्याय लगता है। इसका समानार्थवाची है—'सूत न कपास कोरी से ल्ठालठी' अथवा 'सूत न कपास जुलाहे से मटकौवल।'

करकङ्कणन्यायः—कङ्कण कहने ही से हाथ के गहने का बोध हो जाता है। 'कर' कहने की आवश्यकता नहीं रहती। जहां इस प्रकार का अभिप्राय व्यक्त करना होता है, वहां इस न्याय का प्रयोग किया जाता है।

काकतालीयन्यायः—एक वृक्ष के नीचे एक बटोही पड़ा था। उसी वृक्ष के ऊपर एक काक भी बैठा था। काक वृक्ष छोड़ ज्यों ही

उड़ा त्यों ही ताड़ का एक पका हुआ फल नीचे गिरा। यद्यपि फल पक कर आपसे आप गिरा था, पर पथिक दोनों बातों को साथ होते देख, यही समझ गया कि कौवे के उड़ने ही से तालफल गिरा। अत: जहां दो बातें संयोग से इस प्रकार एक साथ हो जाती हैं वहां, उनमें, परस्पर कोई संबंध न होते हुए भी, लोग जब, सम्बन्ध लगा बैठते हैं, तब यह कहावत कही जाती है।

काकदध्युपघातकन्याय:—अर्थात् 'कौवे से दही बचाना'। इसके कहने से, जिस प्रकार कुत्ते बिल्ली आदि सब जन्तुओं से बचाना समझ लिया जाता है उसी प्रकार का जहां किसी वाक्य का अभिप्राय होता है वहां यह कहावत कही जाती है।

काकदन्तगवेषणान्याय:—जिस प्रकार काक का दांत ढूंढ़ना निष्फल है, उसी प्रकार किसी निष्फल प्रयत्न के सम्बन्ध में यह उक्ति व्यवहृत की जाती है।

काकाक्षिगोलकन्याय:—कहावत है कि कौवे के एक ही पुतली होती है जो प्रयोजन के अनुसार कभी इस आंख में कभी उस आंख में जाती है। अतएव जहां एक ही वस्तु दो स्थानों में कार्य करे वहां के लिये यह न्याय प्रयुक्त किया जाता है।

कारणगुणप्रक्रमन्याय:—कारण का गुण कार्य में भी पाया जाता है। जिस प्रकार सूत का रूप आदि उसके बने कपड़े में।

कुशकाशावलम्बनन्याय:—जिस प्रकार डूबता हुआ आदमी कुश या कास जो कुछ हाथ में पड़ता है, उसीको सहारे के लिये पकड़ता है उसी प्रकार जहां कोई दृढ़ आधार न मिलने पर लोग इधर-उधर की बातों का सहारा लेते हैं; वहां के लिये यह कहावत है। हिन्दी में भी 'डूबते को तिनके का सहारा' प्रसिद्ध है।

कूपखानकन्याय:—जिस प्रकार कुआं खोदने वाले के शरीर में लगा हुआ कीचड़ उस कुएँ के ही जल से साफ हो जाता है, उसी प्रकार श्रीराम श्रीकृष्ण आदि को भिन्न-भिन्न रूपों में समझने से जो दोष लगता है वह उन्हीं की उपासना करने से मिट भी जाता है।

कूपमण्डूकन्याय:—एक आख्यायिका है कि एक बार, समुद्र में रहने वाला एक मण्डूक (मेंढक) किसी कूप में आ पड़ा। उस कुएँ के मेंढक ने समुद्र के मेंढक से पूछा—'तुम्हारा समुद्र कितना बड़ा है।' उत्तर मिला—बहुत बड़ा। इस पर कुएँ के मेंढक ने पूछा—'इस कुएँ जितना बड़ा'। समुद्र के मेंढक ने उत्तर दिया—'कहां कुआं, कहां समुद्र—समुद्र से बड़ी कोई वस्तु इस धरा-धाम पर है ही नहीं।' समुद्री मण्डूक की उक्ति पर कूप-मण्डूक, जिसने कूप को छोड़ अपने जीवन में कोई वस्तु कभी देखी ही न थी, बहुत ही नाराज हुआ और बोला—'तुम झूठे हो, कुएँ से बड़ी कोई वस्तु हो नहीं सकती।' अतएव जहां परिमित ज्ञान के कारण, कोई अपनी जानकारी के ऊपर कोई दूसरी बात मानता ही नहीं, वहां यह न्याय काम में लाया जाता है।

कूर्माङ्गन्याय:—कछुआ अपनी इच्छा के अनुसार अपना समस्त अंग समेट और फैला सकता है। ईश्वर की जब इच्छा होती है; तब वह अपनी रची सृष्टि को अपने में लय कर लेता है और जब उसकी इच्छा होती है तब फिर रच डालता है। अत: जब ईश्वर की इस शक्ति का उदाहरण देना आवश्यक होता है, तब इस न्याय से काम लिया जाता है।

कैमुतिकन्याय:—जब यह बात दृष्टान्त द्वारा समझाने की जरूरत होती है कि, जिसने बड़े-बड़े काम कर डाले उसके लिये छोटा काम कोई चीज ही क्या है तब इस उक्ति का प्रयोग किया जाता है।

कौण्डिन्यन्याय:—'यह ठीक है, किन्तु यदि ऐसा होता तो और भी अच्छा था' यह बतलाने

को इस उक्ति का प्रयोग किया जाता है ।

गजभुक्तकपित्थन्यायः—हाथी के खाए हुए कैथ के समान ऊपर से देखने में ज्यों का त्यों किन्तु भीतर खोखला । किसी अन्तःसार-शून्य वस्तु के लिये इस न्याय का प्रयोग किया जाता है ।

गड्डलिका-प्रवाहन्यायः—'भेड़िया धसान' से इसका अभिप्राय स्पष्ट होता है ।

गणपतिन्यायः—एक बार देवताओं में सर्वश्रेष्ठत्व होने का परस्पर झगड़ा हुआ । ब्रह्मा जी के सुझाने पर निश्चित हुआ कि जो देवता पृथिवी की प्रदक्षिणा कर सब के आगे लौट आवे वही देवता सर्वश्रेष्ठ और पूज्य माना जाय । समस्त देवताओं ने पृथिवी की प्रदक्षिणा करने के लिए अपने-अपने वाहनों पर सवार हो प्रस्थान किया । गणेश जी अपने वाहन चूहे पर सवार होने के कारण सब के पीछे रहे । इतने में नारद जी से उनकी भेंट हो गयी । उन्होंने गणेश जी को यह युक्ति बतलाई कि सर्वमय श्रीराम जी का नाम लिख और उसकी प्रदक्षिणा कर के ब्रह्मा जी के निकट लौट जाओ । गणेश जी ने तदनुसार ही किया । फल यह हुआ कि गणेश जी देवताओं में सर्वप्रथम पूज्य हो गये । अतएव जहाँ जरा सी युक्ति से बड़ा काम हो जाय, वहाँ इसका प्रयोग किया जाता है ।

गतानुगतिकन्यायः—एक घाट पर कुछ ब्राह्मण तर्पण किया करते थे । वे अपने-अपने कुश एक ही जगह पर रख दिया करते थे । इसका फल यह होता था कि, एक का कुश दूसरे के हाथ प्रायः लग जाया करता था । एक दिन पहचान के लिये उनमें से एक ब्राह्मण ने अपना कुश एक ईंट के नीचे दबा दिया । उसकी देखा-देखी दूसरे दिन सब ने अपने-अपने कुश ईंटों के नीचे दबा दिये । अतः जहाँ देखा-देखी लोग कोई काम करने लगते हैं, वहाँ इस न्याय का प्रयोग किया जाता है ।

गुडजिह्विकान्यायः—जैसे कड़वी दवा पिलाने के पूर्व बालक को गुड़ देकर फुसला किया जाता है वैसे ही किसी अरुचिकर या कठिन काम को कराने के लिये प्रथम कुछ प्रलोभन देना आवश्यक होता है, वहाँ इस न्याय का प्रयोग किया जाता है ।

गोबलीवर्दन्यायः—बलीवर्द का अर्थ है—बैल । अथच गोशब्दपूर्वक बलीवर्द शब्द के प्रयोग से और भी शीघ्र बैल का बोध हो जाता है । ऐसे शब्द जहाँ एक साथ होते हैं, वहाँ इस उक्ति से काम लिया जाता है ।

घटप्रदीपन्यायः—घड़े के भीतर रखे हुए दीपक के प्रकाश को घड़ा अपने बाहर नहीं निकलने देता । जहाँ कोई केवल अपनी भलाई चाहता है और दूसरे की भलाई करना नहीं चाहता, वहाँ इसका प्रयोग किया जाता है ।

घट्टकुटीप्रभातन्यायः—एक लोभी बनिया घाट की उतराई का महसूल न देने के अभिप्राय से ऊबड़-खाबड़ जगहों में सारी रात भटक कर, प्रातःकाल होते ही फिर उसी घाट पर पहुँचा, जहाँ उतराई का महसूल देना पड़ता था । अतएव जहाँ एक कठिनता को बचाने के लिये अनेक उपाय निष्फल हों और अन्त में उसी कठिनता का सामना करना पड़े, वहाँ इस न्याय का प्रयोग किया जाता है ।

घुणाक्षरन्यायः—घुनों के काटने से लकड़ी में अक्षरों के आकार जैसे रूप बन जाते हैं, हालाँ कि घुन इस उद्देश्य से लकड़ी को नहीं घुनते । अतः जहाँ किसी एक काम के होने पर दूसरा काम अनायास ही जाता है, वहाँ घुणाक्षरन्याय का प्रयोग किया जाता है ।

चम्पकपटवासन्यायः—जिस वस्त्र में चंपे के फूल लपेट कर रख दिये गये हों उसमें से फूल निकाल लेने पर भी, बहुत देर तक चंपे

से फूलों की खुशबू बनी रहती है। इसी प्रकार विषय-भोग-जन्य संस्कार भी बहुत काल पर्यन्त बना रहता है। इसको चम्प-कपटवासन्याय कहते हैं।

जलतरङ्गन्यायः—नाम पृथक् होने पर भी जल की तरंग अथवा लहर जल से भिन्न गुण की नहीं होती। अतः जब इस प्रकार का अभेद सूचित करने की आवश्यकता होती है, तब इस न्याय का प्रयोग किया जाता है।

जलतुम्बिकान्यायः—(क) पानी में तूंबी कभी नहीं डूबती; बल्कि डुबाने पर भी ऊपर आ जाती है। अतः जब कोई बात छिपाने पर भी नहीं छिपती या छिपाने से छिपने वाली नहीं होती, वहाँ इसका प्रयोग किया जाता है।

(ख) तूंबी में यदि कीचड़-मिट्टी थोप कर उसे डुबो दें तो वह डूब जाती है किन्तु यदि बिना मिट्टी-कीचड़ के उसे डुबोना चाहें तो वह नहीं डूबती। इसी तरह यह जीव शरी-रादि रूपी मलों के रहते संसार-सागर में डूब जाता है, और मल छूटने पर संसार-सागर के पार हो जाता है।

जलानयनन्यायः—"पानी ले आओ" कहने से पानी जिस बरतन में लाया जाता है, उस बरतन का भी बोध हो जाता है, क्योंकि बरतन के बिना पानी आवेगा किसमें। अतः जब एक वस्तु कह कर उसके साथ की अनिवार्य किसी अन्य वस्तु का ज्ञान कराना होता है, तब वहाँ इसका प्रयोग किया जाता है।

तिलतण्डुलन्यायः—इसका प्रयोग उन वस्तुओं के सम्बन्ध में किया जाता है, जो चावलों और तिलों की तरह मिली रहने पर भी अलग-अलग दिखाई पड़ती हैं।

तृणजलौकान्यायः—इस न्याय का प्रयोग नैयायिक लोग तब करते हैं, जब उन्हें आत्मा के एक शरीर छोड़ कर दूसरे शरीर में जाने का दृष्टान्त देने की आवश्यकता होती है। जैसे जलौका (जोंक) जब तक एक तृण का आश्रय नहीं ले लेती है तब तक पूर्वाश्रित तृण का त्याग नहीं करती है, उसी प्रकार आत्मा सूक्ष्म शरीर के साथ एक देह का अवलम्बन किये बिना पूर्व शरीर को नहीं छोड़ता है।

दण्डचक्रन्यायः—जिस तरह घड़ा बनने में दण्ड, चक्र आदि कई कारण हैं, उसी तरह जहाँ कोई बात अनेक कारणों से होती है, वहाँ यह उक्ति व्यवहृत की जाती है।

दण्डापूपन्यायः—एक बार एक मनुष्य डंडे में बँधे हुए मालपुए छोड़ कर कहीं गया। आने पर उसने देखा कि मालपुओं के साथ चूहों ने डंडे को भी खा डाला है। यह देख उसने विचारा कि, जब चूहों ने डंडा तक खा डाला तब उन्होंने मालपुए क्योंकर छोड़े होंगे। अतः जब कोई दुष्कर और कष्टसाध्य कार्य हो जाता है तब उसके साथ ही लगा हुआ सुखद और सुकर कार्य अवश्य ही हुआ होगा—यह बतलाने के लिये यह कहावत कही जाती है।

दशमन्यायः—एक बार दस आदमी एक साथ तैरकर नदी पार गए। पार पहुँच कर वे यह देखने के लिये सबको गिनने लगे कि कोई बीच में डूब तो नहीं गया। किन्तु जो गिनता वह अपने को छोड़ जाता था। इस-लिये दस की जगह नौ ही निकलते। अन्त में वे अपने साथियों में से एक के डूब जाने के लिये रोने लगे। उनको रोते देख एक पथिक ने उनसे अपने सामने गिनने को कहा। जब उनमें से एक ने उठकर फिर गिनना शुरू किया और नौ पर आकर रुक गया तब पथिक ने कहा—"दसवें तुम"। इस पर वे सब प्रसन्न हो गये। वेदान्ती इस न्याय का व्यवहार उस समय करते हैं, जिस समय उनको यह दिखलाना होता है कि गुरु के 'तत्त्वमसि'

(तुम सच्चिदानन्द रूप ब्रह्म हो) आदि उपदेश सुनने पर ही अज्ञान और तज्जनित दुःख दूर होता है।

देहलीदीपकन्यायः—जिस जगह एक ही आयोजन से दो काम सधें या एक शब्द या बात दोनों ओर लगे, वहाँ इस न्याय का प्रयोग किया जाता है। इसका अर्थ है देहरी का दीपक, जो भीतर और बाहर दोनों जगहों पर उजेला करता है।

नष्टाश्वदग्धरथन्यायः—एक बार एक आदमी रथ पर सवार हो वन में होकर जा रहा था कि, वन में आग लगी और उसका घोड़ा जल कर मर गया। इतने में वह आदमी विकल हो वन में घूम रहा था कि, उसे एक दूसरा आदमी मिला जिसका रथ तो नष्ट हो गया था, किन्तु घोड़ा जीवित था। अतः दोनों ने समझौता कर उस अश्वहीन रथ और रथहीन घोड़े से काम चलाया था। इससे जब दो आदमी मिल कर एक दूसरे की त्रुटियों की पूर्ति कर अपना काम चला लेते हैं तब इस न्याय का व्यवहार किया जाता है।

नारिकेलफलाम्बुन्यायः—जिस प्रकार नारियल के फल में जल का आना नहीं जान पड़ता, उसी प्रकार लक्ष्मी का आना नहीं जान पड़ता। जब कभी ऐसा प्रयोजन व्यक्त करना पड़ता है तब इस न्याय का प्रयोग किया जाता है।

निम्नगाप्रवाहन्यायः—नदी के प्रवाह का यह स्वभाव होता है कि जिधर वह जाता है उधर रुकता नहीं। इसी प्रकार के अनिवार्य क्रम का दृष्टान्त देने में इस न्याय से काम लिया जाता है।

नृपनापितपुत्रन्यायः—किसी राजा के एक नाई नौकर था। राजा ने एक दिन उससे कहा कि कहीं से सबसे सुन्दर एक बालक लाकर मुझको दिखलाओ। नाई को अपने पुत्र से बढ़ कर और कोई सुन्दर बालक ही न देख पड़ा। अतः वह अपने ही पुत्र को लेकर राजा के पास पहुँचा। राजा उस काले कलूटे बालक को देख प्रथम तो बहुत क्रुद्ध हुआ, किन्तु पीछे उसने सोचा कि स्नेह के वश इसे अपने लड़के-सा सुन्दर बालक कोई दिखाई ही न पड़ा। अतः रागवश जहाँ मनुष्य अन्धा हो जाता है और उसको भले-बुरे का विवेक नहीं रहता वहाँ इस न्याय का व्यवहार किया जाता है।

पङ्कप्रक्षालनन्यायः—कीचड़ लगने पर उसे धो डालने की अपेक्षा कीचड़ न लगने देना ही उत्तम है।

पञ्जरचालनन्यायः—यदि दस पक्षी किसी पिंजड़े में बन्द कर दिये जायँ और वे सब एक साथ यत्न करें, तो उस पिंजड़े को चलायमान कर सकते हैं। ५ ज्ञानेन्द्रियाँ और ५ कर्मेन्द्रियाँ प्राणरूपी क्रिया को उत्पन्न कर देह को चलाती हैं। सांख्यवाले इस बात को दर्शाने के लिए उक्त न्याय का दृष्टान्त दिया करते हैं।

पाषाणेष्टकन्यायः—ईंट भारी अवश्य होती है; पर ईंट से भी कहीं अधिक पत्थर भारी होता है। इस प्रकार जहाँ एक से बढ़ कर एक है वहाँ इस न्याय का प्रयोग होता है।

पिष्टपेषणन्यायः—पिसे को पीसना जिस प्रकार व्यर्थ है, उसी प्रकार किये हुए काम को जब कोई दुबारा करता है तब यह उक्ति कही जाती है।

प्रदीपन्यायः—जिस तरह तेल, बत्ती और अग्नि इन भिन्न वस्तुओं के मेल से दीपक जलता है उसी तरह सत्त्व, रज और तम इन परस्पर भिन्न गुणों के सहयोग से देह-धारण का व्यापार होता है।

प्रपाणकन्यायः—जिस तरह घी, चीनी आदि कई वस्तुओं को एकत्र करने से बढ़िया मिठाई प्रस्तुत होती है, उसी तरह अनेक उपादानों के योग से सुन्दर वस्तु तैयार होने के दृष्टान्त

में यह युक्ति प्रयुक्त की जाती है। साहित्य वाले विभाव, अनुभाव आदि द्वारा रस का परिपाक सूचित करने के लिए भी इसका प्रयोग किया करते हैं।

प्रासादवासिन्यायः—जिस तरह महल में रहनेवाला यद्यपि काम-काज के लिये नीचे उतर कर बाहर भी जाता है तथापि वह प्रासाद-वासी ही कहलाता है उसी तरह जहाँ जिस विषय का प्राधान्य होता है वहाँ उसी का उल्लेख किया जाता है।

फलवत्सहकारन्यायः—जिस प्रकार आम के वृक्ष के तले बटोही छाया के लिये जाता है पर उसे आम के फल भी मिलते हैं, उसी प्रकार जहाँ एक लाभ होने से दूसरा लाभ भी हो वहाँ इस उक्ति का प्रयोग किया जाता है।

बहुवृकाकृष्टन्यायः—जिस प्रकार एक हिरन के पीछे अनेक भेड़ियों के लगने से, उसके अङ्ग एक स्थान पर नहीं रह सकते, उसी प्रकार जिस वस्तु के लिये अनेक जन खींचा-तानी करते हैं, वह वस्तु यथास्थान पर समूची नहीं रह सकती।

बिलवर्तिगोधान्यायः—जिस प्रकार बिल-स्थित गोह का विभाग आदि नहीं हो सकता उसी प्रकार जो वस्तु अज्ञात है उसके विषय में भी अच्छा-बुरा कहना सम्भव नहीं।

ब्राह्मणग्रामन्यायः—जिस गाँव में ब्राह्मणों की बस्ती अधिक होती है, वह ब्राह्मणों का गाँव कहलाता है, हालांकि उसमें अन्य जाति के लोग भी बसते हैं। इसी प्रकार औरों को छोड़ प्रधान वस्तु ही का नाम लिया जाता है। यही सूचित करने के लिये यह उक्ति व्यवहृत की जाती है।

मज्जनोन्मज्जनन्यायः—तैरना न जाने वाला जिस प्रकार जल में गिरने से डूबता-उतराता है उसी प्रकार मूर्ख या दुष्ट वादी प्रमाण आदि ठीक न दे सकने के कारण क्षुब्ध और व्याकुल होता है।

रज्जुसर्पन्यायः—जिस प्रकार जब तक दृष्टि ठीक नहीं पड़ती तब तक मनुष्य रस्सी को साँप समझता है, उसी प्रकार जब तक ब्रह्म-ज्ञान नहीं होता तब तक मनुष्य दृश्य जगत् को सत्य समझता है, पीछे ब्रह्म-ज्ञान होने पर उसका भ्रम दूर होता है और वह समझता है कि ब्रह्म के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। यह वेदान्त की एक शाखा का सिद्धान्त है।

राजपुत्रव्याधन्यायः—एक राजपुत्र बचपन में एक व्याध के हाथ पड़ा और उसी के घर पाला-पोसा गया। अतः वह अपने को व्याध-पुत्र ही समझने लगा। पीछे जब लोगों से उसे अपना कुल अवगत हुआ तब उसे अपना वास्तविक-स्वरूप ज्ञात हुआ। इसी प्रकार अद्वैत वेदान्तियों का मत है कि जीव को जब तक ब्रह्म-ज्ञान नहीं होता, तब तक वह अपने को न जाने क्या समझा करता है। जब जीव को ब्रह्म-ज्ञान होता है तब वह समझता है कि "मैं ब्रह्म हूँ।"

राजपुरप्रवेशन्यायः—राज-द्वार पर जिस प्रकार बहुत से लोगों की भीड़-भाड़ होने पर भी वहाँ किसी प्रकार का हो-हल्ला नहीं होता, प्रत्युत सब लोग चुप-चाप यथानियम खड़े रहते हैं। इसी प्रकार जहाँ सुव्यवस्था होती है वहाँ इस न्याय का प्रयोग किया जाता है।

रात्रिदिवसन्यायः—अर्थात् रात-दिन का अन्तर। कौड़ी-मोहर का अन्तर। जमीन आसमान का अन्तर।

लूतातन्तुन्यायः—जैसे मकड़ी अपने शरीर ही से सूत निकाल कर जाला बनाती है और फिर स्वयं उसका संहार करती है वैसे ही ब्रह्म अपने ही से सृष्टि करता और अपने में उसे लय करता है।

लोष्टलगुडन्यायः—जैसे ढेला तोड़ने के लिए डंडा होता है वैसे ही जहाँ एक का दमन करने वाला दूसरा होता है वहाँ इस कहावत से काम लिया जाता है।

लोहचुम्बकन्याय:—लोहा गतिहीन और निष्क्रिय होने पर भी चुम्बक के आकर्षण से उसके पास जाता है, उसी प्रकार पुरुष निष्क्रिय होने पर भी प्रकृति के साहचर्य से क्रिया में तत्पर होता है। (यह सांख्य के मतानुसार है।)

वरगोष्ठीन्याय:—जिस प्रकार वर-पक्ष और कन्या-पक्ष के लोग मिलकर विवाह रूप एक ऐसे कार्य का साधन करते हैं जिससे दोनों का अभीष्ट सिद्ध होता है, उसी प्रकार जहाँ-जहाँ लोग मिलकर कोई ऐसा काम करते हैं जो सर्वहितकर होता है वहाँ इस न्याय का प्रयोग किया जाता है।

वह्निधूमन्याय:—धूमरूपी कार्य देखकर, जिस प्रकार कारण रूप अग्नि का ज्ञान होता है, उसी प्रकार कार्य द्वारा कारण के अनुमान के सम्बन्ध में यह उक्ति है। (यह नैयायिकों का मत है)

बिल्वखल्वाटन्याय:—सूर्यातप से विकल एक गंजा छाया के लिए एक बेल के नीचे गया। वहाँ उसके सिर पर एक बेल टूट कर गिरा। जहाँ इष्ट-साधन के प्रयत्न में अनिष्ट होता है वहाँ इस उक्ति से काम लिया जाता है।

विषवृक्षन्याय:—यदि कोई विष का पेड़ भी लगाता है, तो उसे अपने ही हाथ से नहीं काटता है। अपनी पाली-पोसी वस्तु का कोई अपने हाथ से नाश नहीं करता।

वीचितरङ्गन्याय:—एक के उपरान्त दूसरी, इस क्रम से बराबर आनेवाली तरङ्गों के समान ही ककारादिवर्णों की उत्पत्ति नैयायिक लोग वीचितरङ्ग न्याय से मानते हैं।

बीजाङ्कुरन्याय—अंकुर से बीज है या बीज से अंकुर—यह ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता। क्योंकि न बीज के बिना अंकुर हो सकता है, न अंकुर के बिना बीज। बीज और अंकुर का प्रवाह अनादि काल से चला आता है। दो सम्बन्ध-युक्त वस्तुओं के नित्य प्रवाह के दृष्टान्त में वेदान्ती लोग इस न्याय का प्रयोग किया करते हैं।

वृक्षप्रकम्पनन्याय:—एक मनुष्य वृक्ष पर चढ़ा। वृक्ष के नीचे खड़े लोगों में से एक ने उससे कहा—यह डाल हिलाओ, दूसरे ने कहा वह डाल हिलाओ। इसका परिणाम यह हुआ कि वृक्ष पर चढ़ा हुआ आदमी यह स्थिर न कर सका कि किस डाल को हिलाऊँ। इतने में एक आदमी ने पेड़ का तना ही पकड़ कर हिला डाला जिससे सब डालें हिल गयीं। जहाँ कोई एक बात सबके अनुकूल हो जाती है वहाँ इसका प्रयोग होता है।

वृद्धकुमारिकान्याय: या **वृद्धकुमारीवाक्यन्याय:**—एक कुमारी तप करते-करते बूढ़ी हो गयी। इन्द्र ने उससे कोई एक वर माँगने को कहा। उसने वर माँगा कि मेरे बहुत से पुत्र सोने के बरतनों में खूब घी, दूध और अन्न खायें। इस प्रकार उसने एक ही वाक्य में पति, पुत्र, गो, धन-धान्य सब कुछ माँग लिया है। जहाँ एक की प्राप्ति से सब कुछ प्राप्त हो वहाँ यह कहावत कही जाती है।

शालिसम्पत्तौ कोद्रवाशनन्याय:—शालि उत्तम धान्य है और कोद्रव (कोदो) अधम धान्य। उत्तम धान्य के रहते अधम धान्य खाने के सदृश न्याय। जहाँ उत्तम वस्तु के रहते अधम वस्तु का सेवन किया जाता है वहाँ इस न्याय का प्रयोग होता है।

शतपत्रभेदन्याय:—सौ पत्ते एक साथ रख कर छेदने से जान पड़ता है कि सब एक साथ एक काल ही में छिद गये, पर वास्तव में एक पत्ता भिन्न-भिन्न समय में छिदा। कालान्तर की सूक्ष्मता के कारण इसका ज्ञान नहीं हुआ। इस प्रकार जहाँ बहुत से कार्य भिन्न-भिन्न समयों में होते हुए भी एक ही समय में हुए जान पड़ते हैं, वहाँ यह दृष्टान्त वाक्य कहा जाता है। (सांख्य के मतानुसार)

शुकनलिकान्याय:—तोता के फँसने की रीति। पक्षी फँसाने को आसा लगी नलिनी, नलिका

लगा कर उसके पास चारा रख देते हैं। तोता (या पक्षी) चारे के लोभ से नलिनी पर बैठता है और उसके पंजे लासे में फँस जाते हैं। लोभ-वश फँसने की इसी क्रिया के आधार पर यह न्याय बना।

शृङ्गग्राहितान्याय:—मरकहे साँड का एक सींग पकड़ लेने पर दूसरा सींग भी आसानी से पकड़ा जा सकता है, इसी तथ्य के आधार पर यह न्याय बना है। इसका तात्पर्य यह है कि किसी दुष्कर कार्य का कुछ हिस्सा हो जाने पर उसका शेष भाग भी सम्पन्न हो जाता है।

श्यामरक्तन्याय:—जैसे कच्चा काला घड़ा पकने पर अपना श्यामगुण छोड़ कर रक्तगुण धारण करता है उसी प्रकार पूर्व गुण का नाश और अपरगुण का धारण सूचित करने के लिये इस उक्ति का प्रयोग किया जाता है।

श्यालकशुनकन्याय:—एक ने कुत्ता पाला था और उसका वही नाम रखा जो उसके साले का नाम था। जब वह कुत्ते का नाम लेकर गालियाँ देता, तब उसकी पत्नी अपने भाई का अपमान समझ कर नाक-भौं सिकोड़ती थी। उस समय से जिस उद्देश्य से कोई बात नहीं कही जाती और वह यदि उससे हो जाती है, तो इस न्याय का प्रयोग किया जाता है।

संदंशपतितन्याय:—सँड़सी अपने बीच में आई हुई वस्तु को जैसे पकड़ती है वैसे ही जहाँ पूर्व और उत्तर पदार्थ द्वारा मध्यस्थित पदार्थ का ग्रहण होता है वहाँ इस न्याय का व्यवहार किया जाता है।

समुद्रवृष्टिन्याय:—जैसे समुद्र में पानी बरसने से कोई लाभ नहीं, वैसे ही जहाँ जिस वस्तु की कोई आवश्यकता नहीं होती वहाँ यदि वह की जाती है, तो इस न्याय का प्रयोग किया जाता है।

सर्वापेक्षान्याय:—जिस स्थान पर बहुत से लोगों को न्योता होता है, वहाँ यदि कोई सब के पूर्व पहुँच जाय तो उसे सब की प्रतीक्षा करनी पड़ती है। इसी तरह जहाँ किसी काम के लिए सब का आसरा देखना पड़े वहाँ यह न्याय चरितार्थ समझा जाता है।

सिंहावलोकनन्याय:—सिंह शिकार मार कर जब आगे बढ़ता है तब पीछे फिर-फिर कर देखा करता है। इसी प्रकार जहाँ अगली और पिछली सब बातों की एक साथ आलोचना की जाती है, वहाँ इस उक्ति का व्यवहार किया जाता है।

सुन्दोपसुन्दन्याय:—सुन्द और उपसुन्द नाम के दो दैत्य भाई बड़े बली थे। वे दोनों एक ही स्त्री पर मोहित हुए। उस स्त्री ने दोनों से कहा "तुममें से जो अधिक बलवान् होगा—मैं उसी के साथ विवाह करूँगी।" इसका फल यह हुआ कि दोनों आपस में लड़ मरे। आपस की अनबन से बलवान् से बलवान् मनुष्य नष्ट हो जाते हैं। यह प्रकट करने के लिए ही यह कहावत कही जाती है।

सूचीकटाहन्याय:—किसी लुहार से एक आदमी ने आकर कड़ाह (बड़ी कड़ाही) बनाने को कहा। थोड़ी देर बाद एक दूसरा मनुष्य आया और उसने उसी लुहार से सुई बनाने को कहा। लुहार ने पहले सुई बनाई, पीछे कड़ाह। जब सहज काम पहले और कठिन काम पीछे किया जाता है तब यह उक्ति चरितार्थ की जाती है।

सोपानारोहणन्याय:—जिस प्रकार महल पर जाने के लिये एक-एक सीढ़ी क्रम से चढ़ना होता है, उसी प्रकार किसी बड़े काम के करने में क्रम-क्रम से आगे बढ़ना पड़ता है।

सोपानावरोहणन्याय:—जिस क्रम से सीढ़ियों पर चढ़ा जाता है, उसी के उलटे क्रम से उतरते हैं। इसी प्रकार जहाँ किसी क्रम से चल कर फिर उसी के विपरीत क्रम से चलना होता है वहाँ यह न्याय व्यवहृत किया जाता है।

स्थविरलगुडन्याय:—बुड्ढे के हाथ से फेंकी हुई लाठी जिस प्रकार ठीक निशाने पर नहीं

पहुँचती उसी प्रकार किसी बात के लक्ष्य तक न पहुँचने पर यह उक्ति व्यवहार में लाई जाती है ।

स्थालीपुलाकन्याय:—बटलोई भर चावल का पकना न पकना एक दाना देखकर जान लिया जाता है । इसी प्रकार थोड़े से बहुत को जानने के लिए इस न्याय का प्रयोग किया जाता है ।

स्थूणानिखननन्याय:—जिस प्रकार घर की थूनी को दृढ़ करने के लिये उसे मिट्टी ग्रादि डालकर दृढ़ करना होता है, उसी प्रकार उदाहरण एवं युक्ति द्वारा अपना पक्ष दृढ़ करना पड़ता है ।

स्थूलारुन्धतीन्याय:—विवाह में वर ग्रौर वधू को ग्ररुन्धती का तारा दिखलाने की चाल है । यह ग्ररुन्धती तारा पृथ्वी से बहुत दूर होने के कारण बहुत सूक्ष्म रूप का देख पड़ता है, ग्रौर इसी से वह जल्दी देख भी नहीं पड़ता । ग्रतएव ग्ररुन्धती तारे को दिखलाने के लिये जैसे पहले सप्तर्षि दिखाते हैं ग्रौर उनके पास ही ग्ररुन्धती को बतलाते हैं, इसी प्रकार किसी सूक्ष्मतत्त्व का परिज्ञान कराने के लिये पहले स्थूल दृष्टांत देकर क्रमशः उस सूक्ष्मतत्त्व तक ले जाते हैं । जब ऐसा कोई ग्रभिप्राय समझाना होता है, तब यह न्याय व्यवहार में लाया जाता है ।

स्वामिभृत्यन्याय:—दूसरे का काम हो जाने से ग्रपना भी काम या प्रसन्नता हो जाय, वहाँ इस उक्ति का प्रयोग किया जाता है । यह स्वामिभृत्यन्याय—इसलिये कहलाता है कि मालिक का काम करने से नौकर स्वामी की प्रसन्नता प्राप्त करता है ग्रौर उस प्रसन्नता से ग्रपने को कृतकार्य समझता है ।

परिशिष्ट २

संस्कृत वाङ्मय के प्रमुख ग्रन्थकार

अनन्त भट्ट—ये 'भारतचम्पू' के रचयिता हैं, जिसमें इन्होंने महाभारत की सम्पूर्ण कथा को १२ स्तबकों में ललित गद्य-पद्यों में समाप्त किया है। इनका यह ग्रन्थ चम्पू-काव्यों में उच्चस्तर का माना जाता है। इसकी सात टीकाएँ हुई हैं। अनन्तभट्ट का समय ११वीं से १५वीं शताब्दी के बीच अनुमान किया जाता है।

अप्पय दीक्षित—ये द्रविड जातीय काशीवासी ब्राह्मण थे। इनका समय सत्रहवीं सदी ई० है। ये कई विषयों के प्रकाण्ड विद्वान् थे। इनके द्वारा १०४ ग्रन्थ लिखे जाने की ख्याति है, जिनमें ४४ प्राप्त होते हैं। इनमें 'कुवलयानन्द' तथा 'चित्रमीमांसा' दो अलङ्कार-शास्त्र के ग्रन्थ हैं, जिनका विद्वानों में बड़ा आदर है।

अभिनवगुप्त—ये अलङ्कारशास्त्र के उद्भट विद्वान् थे। आनन्दवर्धन के 'ध्वन्यालोक' पर लिखी हुई इनकी 'लोचन' टीका इतनी मौलिक है कि उसे स्वतन्त्र ग्रन्थ माना जाता है। भरत के 'नाट्यशास्त्र' पर भी इन्होंने 'अभिनव भारती' नाम की टीका लिखी है। यह कश्मीर के रहने वाले और शैवदर्शन के मतावलम्बी थे। इनका समय ग्यारहवीं शताब्दी होना चाहिए। क्योंकि इन्होंने अपनी 'लोचन' टीका में 'काव्यकौतुक' के रचयिता तौत नाम के अपने जिन गुरु का उल्लेख किया है उनका समय ९९३ से १०१५ ई० के बीच माना गया है। इनके पिता का नाम नरसिंह गुप्त था। इनके बनाये प्रमुख ग्रन्थ ये हैं— (१) भैरव-स्तोत्र, (२) प्रत्यभिज्ञा-विमर्शिनी, (३) बृहती वृत्ति, (४) तंत्रालोक, (५) बोधपंचाशिका, (६) लोचन, (७) अभिनवभारती।

अमरसिंह—ये 'नामलिङ्गानुशासन' नामक कोश के रचयिता हैं। इसी कोश का दूसरा नाम 'अमरकोश' है। एक श्लोक में इनका नाम अमरु कवि भी पाया जाता है। कदाचित् सम्राट् विक्रमादित्य के नवरत्न वाले अमरसिंह भी यही रहे हों।

अमरुककवि—इनका बनाया 'अमरुकशतक' शृङ्गाररस का प्रसिद्ध मुक्तक काव्य है। इनके श्लोकों के विषय में ध्वन्यालोककार ने मुक्तक-काव्यों का प्रसंग आने पर लिखा है—'यथा ह्यमरुकस्य कवेर्मुक्तकाः शृङ्गाररसस्यन्दिनः प्रबन्धायमानाः प्रसिद्धा एव।' अर्थात् 'जैसे अमरुक कवि के शृङ्गार रस-प्रवाहित करने वाले प्रबन्ध काव्य के समान भाव-विभाव से पूर्ण मुक्तक प्रसिद्ध ही हैं।' ध्वन्यालोककार का समय नवीं शताब्दी है। अतः इनका समय इससे पहले समझना चाहिए। अलंकार शास्त्र के ग्रन्थों में उदाहरण-स्वरूप इनके श्लोक बहुत मिलते हैं। काव्यप्रकाश और कुवलयानन्द में अमरुकशतक के श्लोक स्थान-स्थान पर उद्धृत किये गये हैं।

अमरुकशतक का एक श्लोक उदाहरण रूप में यहाँ दिया जा रहा है—

एकस्मिन् शयने पराङ्मुखतया
वीतोत्तरं ताम्यतो—
रन्योन्यस्य हृदि स्थितेऽप्यनुनये
संरक्षतोर्गौरवम्।
दंपत्योः शनकैरपाङ्गवलनामिश्रीभवच्चक्षुषो—
र्भग्नो मानकलिः सहासरभसो
व्यावृत्तकण्ठग्रहम्॥

अम्बिकादत्त व्यास—विक्रम की बीसवीं शताब्दी में होकर भी व्यास जी संस्कृत के उच्च-कोटि के कवि और साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान् थे। इन्होंने बाणभट्ट के 'हर्षचरित' की परम्परा में छत्रपति शिवाजी का इतिहास लेकर 'शिवराजविजय' नाम से बहुत ही रोचक, वीररसपूर्ण कथा प्रबन्ध (गद्य काव्य) लिखा है जिसका विद्वज्जनों और साहित्य-रसिकों में बहुत प्रचार तथा समादर है।

अश्वघोष—ये बौद्ध धर्म के अन्यतम आचार्य थे। जन्म से साकेत के ब्राह्मण थे, बाद में पूर्णयश से दीक्षा लेकर बौद्ध हो गये। इनका समय पहली शती ई० का उत्तरार्ध है, कुषाण राजा कनिष्क के समय आयोजित बौद्ध-संगति (सभा) के ये अध्यक्ष बने थे। ये उच्चकोटि के कवि और दार्शनिक थे। इनके दो महाकाव्य प्राप्त हैं—बुद्धचरित, सौन्दरनन्द। बुद्धचरित का अनुवाद चीन और तिब्बत की भाषाओं में भी हुआ है। अश्वघोष का वस्तुवर्णन और करुणरस का चित्रण बहुत उत्कृष्ट है। बुद्धचरित में कुल २८ सर्ग हैं परन्तु उसका संस्कृत पाठ केवल १४ सर्गों का ही प्राप्त है। मध्य एशिया की खुदाई में उनका एक नाटक 'शारिपुत्र-प्रकरण' भी मिला है, जो अधूरा है।

आनन्दवर्द्धन—ये अलङ्कार शास्त्र के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'ध्वन्यालोक' के रचयिता हैं। व्याकरण शास्त्र के प्रणेताओं में जो स्थान पतञ्जलि और उनके महाभाष्य का है वही स्थान अलङ्कार शास्त्र में आनन्दवर्द्धन और उनके ध्वन्यालोक का है। ध्वन्यालोक को ही काव्यालोक और सहृदयालोक भी कहते हैं। इसके अतिरिक्त इन्होंने इन ग्रन्थों की भी रचना की थी—

(१) देवीशतक, (२) अर्जुनचरित महाकाव्य, (३) विषमबाणलीला, (४) तत्त्वालोक, (५) विनिश्चयटीका विवृति।

कल्हण ने अपनी राजतरङ्गिणी में जहां मुक्ताकण और शिवस्वामी को अवन्तिवर्मा के राज्य में विद्यमान बतलाया है, वहीं पर आनन्दवर्द्धन का भी नामोल्लेख किया है—मुक्ताकणः शिवस्वामी कविरानन्दवर्द्धनः। प्रथां रत्नाकरश्चागात्साम्राज्येऽवन्तिवर्मणः॥ अवन्तिवर्मा का राज्यकाल सन् ८५५ से ८८४ ई० तक रहा। अतएव वही समय आनन्दवर्द्धन का भी मानना पड़ता है। इन्हीं के समकालीन कल्लट और रुद्रट भी थे।

आर्यक्षेमीश्वर—चण्डकौशिक नाम का नाटक इन्हीं प्रसिद्ध कवि का बतलाया जाता है; इस नाटक का उल्लेख साहित्यदर्पण को छोड़ अन्य किसी ग्रन्थ में नहीं मिलता। अतएव इनका समय चौदहवीं शताब्दी का पूर्व भाग मानना पड़ता है। इन्होंने अपने नाटक में लिखा है कि राजा महीपाल देव के आज्ञानुसार इस नाटक का अभिनय किया गया। साथ ही इसी नाटक के अन्त में अपने को कार्तिकेय राजा का सभासद् होना लिखा है। बंगाल के पालवंशीय राजाओं में से एक राजा का नाम महीपाल भी था। इसके पिता का नाम (द्वितीय) विग्रहपाल और इसके पुत्र का नाम नयपाल था। महीपाल देव का समय सन् १०२६ से १०४० ई० तक माना गया है। अतएव आर्यक्षेमीश्वर का समय इसी के कुछ आगे-पीछे होना चाहिये।

आर्यभट्ट—ये एक प्रसिद्ध ज्योतिर्विद् थे। आर्यसिद्धान्त नाम का ज्योतिष ग्रन्थ इन्हीं का बनाया हुआ है। ये सन् ४७६ ई० में कुसुमपुर नामक स्थान में उत्पन्न हुए थे। इनका बनाया बीजगणित का भी एक ग्रन्थ है। इन्होंने सौर केन्द्रिक मत को पुष्ट किया है।

ईशदत्त पाण्डेय 'श्रीश'—'श्रीशजी' बीसवीं शती में संस्कृत के प्रतिभासम्पन्न कवि और वेत्ता थे। इनका 'प्रतापविजय' काव्य संस्कृत

भाषा में आधुनिक शैली की सुन्दर रचना है। शोक है कि वे अल्पायु में ही दिवंगत हो गये।

उदयनाचार्य—ये एक प्रसिद्ध नैयायिक पण्डित थे। इनका निवासस्थान मिथिला था। एक बार इनका शास्त्रार्थ नैषध-चरित के रचयिता श्रीहर्ष के पिता के साथ हुआ था। श्रीहर्ष का समय सन् ११६३ से ११७७ ई० के लगभग माना गया है। अतएव उदयन का समय इससे कुछ पहले मानना अनुचित न होगा। उदयनाचार्य के रचित ग्रन्थों के नाम ये हैं:—

(१) किरणावली, (२) न्यायकुसुमाञ्जलि, (३) आत्मतत्त्वविवेक, (४) न्यायपरिशिष्ट, (५) न्यायवार्तिकतात्पर्यपरिशुद्धि।

उद्भट—काव्य में अलङ्कार को प्रधानता देने वाले ये अलङ्कारवादी आचार्य हैं। इन्होंने अपने ग्रन्थ 'काव्यालङ्कारसारसंग्रह' में अलङ्कार तथा तत्सम्बन्धी सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है। कश्मीर-नरेश जयापीड के दरबार में ये सभा-पण्डित थे, जहां इनका खूब सम्मान था। जयापीड का समय ७७९-८१३ ई० माना जाता है। अतः आठवीं शताब्दी का उत्तरार्ध और नवीं शताब्दी का पूर्वार्ध इनका भी समय होना चाहिए।

उमापतिधर—इनका कोई स्वतंत्र ग्रन्थ न तो देखने में आया और न कहीं उल्लिखित ही मिला। केवल इनके रचित और शिला पर खुदे ३६ श्लोक एशियाटिक सोसाइटी में रखे हुए हैं। ये प्रमाणतः बंगाल के राजा लक्ष्मण सेन के समकालीन सिद्ध होते हैं। लक्ष्मण सेन १११६ ई० में विद्यमान थे।

उवट या उव्वट—ये कश्मीर-निवासी थे। इन्होंने चारों वेदों पर भाष्य लिखा है। पातञ्जल महाभाष्य के टीकाकार कैयट और श्रोपट या उव्वट काव्यप्रकाशकार मम्मट के कनिष्ठ भ्राता थे। उव्वट ने वाजसनेयी संहिता के भाष्य में लिखा है:—

ऋष्यादींश्च पुरस्कृत्य
अवन्त्यामुव्वटो वसन्।
मन्त्रभाष्यमिदं चक्रे
भोजे राष्ट्रे प्रशासति॥

इस श्लोक को देख कर अनुमान करना पड़ता है कि उव्वट अवन्ती में राजा भोज के राज्य-काल में मौजूद थे। किन्तु ये अपने पिता का नाम वज्रट बतलाते हैं और मम्मट के पिता का नाम जैयट था। यह भी सन्देह होता है कि जब मम्मट ने भोजरचित सरस्वती-कण्ठाभरण के श्लोकों को काव्यप्रकाश में उद्धृत किया है, तब मम्मट का भोज के पीछे होना सिद्ध होता है। अतएव उनके छोटे भाई उव्वट, भोज के समकालीन क्योंकर हो सकते हैं? हो सकता है, मम्मट और भोज दोनों समकालीन रहे हों और यह मम्मट, उव्वट के सगे भाई न रहे हों और वज्रट के योग्य पुत्र हों। राजा भोज का समय सन् ९९९ से ११५३ ई० तक माना जाता है। अतएव उव्वट सन् ईस्वी की बारहवीं शताब्दी में रहे होंगे।

कल्हण—ये कश्मीरी थे और राजा जयसिंह के समय में मौजूद थे। इन्होंने 'राजतरङ्गिणी' नाम से कश्मीर राज्य का इतिहास लिखा है। इस दृष्टि से इनका यह ग्रन्थ बहुत महत्त्व का है। इसमें कल्हण ने एक स्थान पर लिखा है—

लौकिकेऽब्दे चतुर्विंशे
शककालस्य साम्प्रतम्।
सप्तत्यभ्यधिकं यातं
सहस्रं परिवत्सराः॥

इससे स्पष्ट विदित होता है कि, ये सन् ११४८ ई० में विद्यमान थे। अनेक लोगों का मत है कि भारतवर्ष में शृंखला-बद्ध प्राचीन इतिहास यदि कोई विश्वास योग्य है, तो वह कल्हण-रचित 'राज-तरङ्गिणी' है।

कय्यट, कैयट—(१) ये महाभाष्य-प्रदीप के रचयिता थे। सुना जाता है कि ये काव्य-प्रकाशकार मम्मट के छोटे भाई हैं और उव्वट भी इनके छोटे भाई थे। महाभाष्यप्रदीप में लिखा है— "कैयटो जैयटात्मजः" अर्थात् कैयट, जैयट के पुत्र थे। ये ही जैयट, मम्मट के पिता थे। जैयट, उव्वट, कय्यट, रुद्रट, मम्मट, मम्मट, कल्लट, मल्लट, बिल्हण, कल्हण आदि नाम उस समय कश्मीरियों के ही रखे जाते थे। इससे इनका कश्मीरी होना सिद्ध होता है। इनके विषय में कश्मीर में कथानक प्रचलित है कि कय्यट ने बड़े परिश्रम से महाभाष्य पढ़ा था, उनका अभ्यास महाभाष्य में इतना बढ़ा चढ़ा था कि वे विद्यार्थियों को समग्र महाभाष्य कण्ठाग्र ही पढ़ाते थे। वररुचि ने महाभाष्य के जिन कठिन स्थलों को न समझने के कारण छोड़ दिया था, वे स्थल भी कैयट को स्पष्ट हो गये थे। कहा जाता है कि जब दक्षिणदेश से कृष्ण-भट्ट इनका दर्शन करने गये, तब कय्यट कुल्हाड़ी से लकड़ियाँ चीर रहे थे और विद्यार्थियों को पढ़ाते भी जाते थे। यह देख कृष्ण-भट्ट को बड़ा विस्मय हुआ। तदनन्तर इन कृष्णभट्ट ने तत्कालीन कश्मीर-नरेश से कैयट को दक्षिणा में धन-धान्य दिलाना चाहा, किन्तु इन त्यागी पण्डित ने राज-धन लेना अस्वीकार किया। पीछे कैयट कश्मीर छोड़ काशी चले आये; कैयट ने महाभाष्य-प्रदीप की रचना काशी ही में की थी। कैयट पामपुर के रहने वाले थे। यदि यह जनश्रुति सत्य है तो कैयट, अजितापीड़ से पीछे हुए। क्योंकि पामपुर को अजितापीड़ ही ने बसाया था। अजितापीड़ ने कश्मीर में सन् ८०४ से ८४९ ई० तक राज्य किया था।

कय्यट, कैयट—(२) यह भी संस्कृत के एक प्रसिद्ध विद्वान् हो गये हैं और नाम से कश्मीरी माने जाते हैं। इन्होंने आनन्दवर्द्धन-रचित देवीशतक की टीका सन् ९७७ ई० में लिखी है। इनके पिता का नाम चन्द्रादित्य और पितामह का नाम वल्लभदेव था। ये कवि भीमगुप्त के राजत्व-काल में जीवित थे। इनके रचे हुए ग्रन्थ किसी भी ग्रन्थ का पता नहीं चलता।

कल्याणवर्मा—ये एक प्रसिद्ध ज्योतिषी थे। इनका रचित 'सारावली' नामक एक ज्योतिष ग्रन्थ है, जिससे विदित होता है कि ये वराहमिहिर से पीछे उत्पन्न हुए होंगे। ये जाति के बघेल क्षत्रिय थे और देवग्राम में रहा करते थे। ब्रह्मगुप्त के ग्रन्थ में इनका नाम आया है। अतएव ये ब्रह्मगुप्त के समकालीन या उनसे कुछ पूर्व विद्यमान रहे होंगे। पण्डित सुधाकर द्विवेदी के मतानुसार इनका समय सन् ५७८ ई० के लगभग है।

कविराज—ये 'राघवपाण्डवीय' नामक श्लेषात्मक महाकाव्य के रचयिता हैं। इनकी गणना सुबन्धु और बाणभट्ट के साथ बहुधा की जाती है। इस ग्रन्थ में ये अपने को आसाम के अन्तर्गत जयन्तीपुर के राजा कामदेव का सभासद बतलाते हैं। राजा कामदेव सन् ११८१ ई० में वर्तमान था। राघवपाण्डवीय में मुञ्ज नाम के राजा का उल्लेख मिलता है। इससे विदित होता है कि मालवा के राजा भोज के पितृव्य मुञ्ज की अपेक्षा ये कवि अर्वाचीन हैं। एक ऐसा भी श्लोक सुना जाता है जिसके अनुसार कविराज, उमापतिधर, जयदेव आदि कविगण एक ही समय के जान पड़ते हैं। वह श्लोक इस प्रकार है:—

गोवर्द्धनश्च शरणो जयदेव उमापतिः।
कविराजश्च रत्नानि समितौ लक्ष्मणस्य च॥

यह लक्ष्मण सेन बंगाल के सेनवंशी राजा थे और सन् १११६ ई० में विद्यमान थे। अतः कविराज का समय ख्रीष्टीय १२वीं सदी अनुमान किया जाता है। कुछ लोगों का यह

भी अनुमान है कि कविराज केवल उपाधि है, नाम कुछ और रहा होगा। जो हो, इनका जहाँ-कहीं उल्लेख किया गया है, वहाँ इनका नाम कविराज ही पाया जाता है।

एक श्लेषात्मक श्लोक बनाना कठिन काम है। इन्होंने तो १२ सर्ग का समूचा राघवपाण्डवीय काव्य ही श्लेषात्मक रचना से परिपूर्ण कर दिया है। इनके पाण्डित्य का क्या कहना है। इनके पाण्डित्य का नमूना वहाँ मिलता है, जहाँ इन्होंने एक ही श्लोक में रामायण और महाभारत दोनों की कथाएँ एक साथ निभायी है। कवि ने अपने ग्रन्थ में स्वयं लिखा है:—

पदमेकमपि श्लिष्टं
वक्तु भूयान् परिश्रमः।
कथाद्वयैक्यनिर्वोढुः
किं वरापतितोऽधिकम् ॥

कात्यायन—कुछ लोग इन्हें वररुचि भी कहते हैं। किन्तु ये वररुचि उन वररुचि से सर्वथा भिन्न हैं, जो महाराज विक्रमादित्य की सभा के नवरत्नों में से थे। ये कात्यायन पाणिनि-व्याकरण शास्त्र के त्रिमुनियों में से दूसरे हैं, वस्तुतः वैदिक मुनि हैं और पाणिनि के लगभग समकालीन थे इनके रचित (१) वाजीसूत्र, (२) क्रमप्रदीप, (३) पाणिनीय व्याकरण पर वार्तिक, (४) प्राकृत व्याकरण आदि कई ग्रन्थ हैं। कथासरित्सागर में लिखा है कि कात्यायन बचपन ही से विलक्षण बुद्धिमान् थे। वे नाट्यशाला में जब कभी कोई अभिनय देखते तो घर लौटकर सारे अभिनय को ज्यों का त्यों अपनी माता के सामने दुहरा दिया करते थे। यज्ञोपवीत होने के पूर्व वे व्याडि आदि मुनियों से सुने हुए प्रातिशाख्य को कण्ठाग्र दुहरा दिया करते थे। ये वर्षमुनि के शिष्य थे और वेद-वेदाङ्ग में ऐसे निपुण थे कि पाणिनि भी इनकी समानता न कर सकते थे। कात्यायन का जन्म कौशाम्बी में हुआ था। इनके पिता का नाम सोमदत्त था। वेद की सर्वानुक्रमणी भी इन्हीं कात्यायन मुनि की बनायी हुई है। इन्हें पाटलिपुत्र के महाराज नन्द का मंत्री भी कहा जाता है।

कामन्दक—इनका बनाया 'कामन्दकीय नीतिसार' प्रसिद्ध ग्रन्थ है, जिसमें इन्होंने चाणक्य का नामोल्लेख किया है। इससे निश्चय होता है कि ये चाणक्य की अपेक्षा अर्वाचीन हैं। चाणक्य वही है, जिसने मगध के राजा नन्द का विनाश कर, चन्द्रगुप्त को पाटलिपुत्र के राजसिंहासन पर बैठाया था। अतः इनका समय ई० पू० तीसरी शताब्दी हो सकता है। क्योंकि चाणक्य का समय ई० पू० चौथी शताब्दी का पूर्वार्ध है।

कालिदास—संस्कृत कवियों में वाल्मीकि और व्यास के बाद कालिदास की जैसी प्रतिष्ठा किसी को नहीं मिली। यही नहीं, भारतीय तथा पाश्चात्य दोनों साहित्यिक मापदण्डों की कसौटी पर कालिदास संस्कृत भाषा के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं, जो देश और समय की सीमा में नहीं बाँधे जा सकते।

कालिदास किसी सम्राट् विक्रमादित्य के दरबार के सभारत्न रूप में अब तक प्रसिद्ध चले आये हैं। कोई इन्हें कश्मीर का कहता है, कोई मिथिला का। परन्तु इन्होंने मेघदूत में अवन्ती और उसकी राजधानी उज्जयिनी के प्रति जो असीम प्रीति दिखायी है उससे सिद्ध है कि इनका जीवन मालवा की भूमि में बीता था। रही बात विक्रमादित्य के सभारत्न होने की, उसका समाधान भी अब मिल गया है। इधर ऐतिहासिक खोजों के आधार पर ई० पू० के सम्राट् विक्रमादित्य के अस्तित्वों का पता चलता है, जो उज्जयिनी के शासक थे और जिन्होंने शकों को निकाल कर देश से बाहर किया था। अतः विक्रम की प्रथम शताब्दी में कालिदास उज्जयिनी के उस राजदरबार

में रहे होंगे। उस समय देश शकों के आक्रमणों के साथ ही बौद्ध और जैन धर्म से भी अभिभूत हो रहा था, कालिदास की कृतियों में इसके प्रतिक्रियास्वरूप वैदिक परम्परा और शैवधर्म के आदर्शों की बड़ी ऊँची घोषणा मिलती है, जिससे कवि का विक्रम की प्रथम शताब्दी में होना और भी पुष्ट होता है।

कालिदास ने चार काव्य और तीन नाटक लिखे हैं। उनकी कृतियों के नाम इस प्रकार है—(१) कुमारसम्भव, (२) रघुवंश, (३) मेघदूत, (४) ऋतुसंहार काव्य और (१) अभिज्ञान- शाकुन्तल, (२) विक्रमोर्वशीय, (३) मालविकाग्निमित्र नाटक। कालिदास की भाषा प्रसाद-गुणयुक्त है। उसमें व्यर्थ के आडम्बर नहीं हैं। इनकी सभी कृतियाँ राष्ट्रीयता, मानवता, त्याग, तपस्या, अध्यात्म तथा जीवन के सच्चे आनन्द एवं उमंगों से ओतप्रोत हैं।

संस्कृत साहित्य में इनके अतिरिक्त कालिदास नाम के और भी कवि हुए हैं, जिनमें से दो सम्भवतः भवभूति और भोज के समय रहे होंगे, जैसी कि किंवदन्ती है और 'भोज-प्रबन्ध' में उल्लेख पाया जाता है।

कुन्तक—काव्यशास्त्र के अन्यतम आचार्यों में कुन्तक की गणना है। इन्होंने वक्रोक्ति से काव्य की प्रतिष्ठा स्वीकार कर उसकी प्रतिष्ठापना के लिए 'वक्रोक्तिजीवित' अलङ्कार ग्रन्थ लिखा। ११वीं शती ई० का पूर्वार्ध इनका समय है। अलङ्कार शास्त्र के ग्रन्थों में 'वक्रोक्तिजीवित' अत्यन्त मौलिक एवं तर्क-सम्मत उद्भावनाओं से संवलित ग्रन्थ है।

कुमारिलभट्ट—यह एक प्रसिद्ध मीमांसक थे। इनका जन्म दक्षिण प्रान्त में हुआ था। इन्होंने शास्त्रार्थ में बौद्धों को परास्त कर देश में वैदिक मत की प्रतिष्ठा की थी। ये भगवान् शङ्कराचार्य के समकालीन थे और इनका समय आठवीं शताब्दी में पड़ता है। इन्होंने बौद्धधर्म का रहस्य समझने के लिए किसी बौद्ध विद्वान् को ही गुरु मान कर शिक्षा ली थी। उसके बाद उन्हीं युक्तियों से बौद्धों को परास्त किया था, इसलिए अपना कार्य पूरा कर लेने पर इन्होंने इस गुरु-द्रोह के फलस्वरूप प्रयाग में आकर तुष (भूसी) के ढेर में आग लगा कर और उसमें बैठ धीरे-धीरे जल-कर अपना प्राण त्यागा था। जिस समय ये उस प्रायश्चित्त में बैठे थे, भगवान् शङ्कराचार्य दिग्विजय करते हुए इनके पास आये थे और कुमारिल ने इनकी विजय स्वीकार की थी। इनका रचा 'तंत्रवार्तिक' एक प्रसिद्ध ग्रन्थ है।

कुल्लूकभट्ट—यह एक विख्यात स्मृतिशास्त्र-वेत्ता थे। मनुस्मृति की टीका के प्रारम्भ में इन्होंने अपना परिचय इस प्रकार दिया है:—

गौड़े नन्दनवासिनाम्नि सुजनैर्वन्द्ये वरेन्द्र्यां कुले
श्रीमद्भट्टदिवाकरस्य तनयः कुल्लूकभट्टोऽभवत् ॥
काश्यामुत्तरवाहिजह्नुतनयातीरे समं पण्डितैः
तेनेयं क्रियते हिताय विदुषामन्वर्थमुक्तावली॥ १।

अर्थात् गौड़ देश में सज्जनों द्वारा मान्य नन्दनवासी नामक जो वारेन्द्र श्रेणी के ब्राह्मणों का कुल है, उसमें श्रीमान् भट्ट दिवाकर उत्पन्न हुए। इन भट्ट दिवाकर के पुत्र का नाम कुल्लूक भट्ट है, जिसने पण्डितों के साथ काशी में, जहाँ कि गंगा नदी उत्तरवाहिनी है, निवास कर विद्वज्जनों के उपयोग के लिये यह 'अन्वर्थमुक्तावली' बनायी।

इनका समय १४वीं शताब्दी माना जाता है।

कृष्णमिश्र—ये 'प्रबोधचन्द्रोदय' नामक नाटक के रचयिता हैं। इस नाटक से विदित होता है कि चन्देल राजा कीर्तिवर्मा ने चेदि के कर्णदेव को युद्ध में हराया था। वाराणसी में इस राजा कर्ण के नाम के लेख ताम्रपत्र पर खुदे मिलते हैं। राजा कर्ण का समय सन्

१०४२ ई० है। इनको पराजित करने वाले राजा कीर्तिवर्मदेव सन् १०५० ई० से ११२६ ई० तक विद्यमान थे और उन्हीं के समकालीन होने के कारण कृष्णमिश्र का भी समय ११वीं सदी का अन्तिम भाग माना जा सकता है। विद्वानों के कथनानुसार ये मैथिलब्राह्मण थे।

क्षपणक—महाराज विक्रमादित्य की सभा में जो नवरत्न थे उनमें यह द्वितीय थे। नाम से विदित होता है कि यह भी अमरसिंह की तरह बौद्ध या जैन रहे होंगे। इनके नाम से 'नानार्थध्वनिमञ्जरी' नाम की एक छोटी सी कोष-पुस्तिका उपलब्ध होती है और संस्कृत साहित्य में 'क्षपणक' के नाम से एक मात्र निम्नलिखित सूक्ति मिलती है—

नीतिर्भूमिभुजां नतिर्गुणवतां
ह्रीरङ्गनानां रतिः
दम्पत्योः शिशवो गृहस्य कविता
बुद्धेः प्रसादो गिराम्।
लावण्यं वपुषः श्रुतिः सुमनसां
शान्तिर्द्विजस्य क्षमा
शक्तस्य द्रविणं गृहाश्रमवतां
शीलं सतां मण्डनम्॥

श्रीईश्वरचन्द्र विद्यासागर की सम्मति में जैन आगम के ख्यातनामा ग्रन्थकार आचार्य सिद्धसेन दिवाकर का ही नाम क्षपणक है जिन्होंने कई पुस्तकें जैनमत संबन्धी लिखी हैं।

क्षीरस्वामी—यह कश्मीर-नरेश महाराज जयापीड़ के शासनकाल में विद्यमान थे। जयापीड़ का शासनकाल ७०० शाके, सन् ७७९ ई० से ८१३ ई० तक है। यह भी लिखा है कि क्षीरस्वामी राजा जयापीड़ के गुरु थे। क्षीरस्वामी ने अमरकोश पर टीका लिखी है और धातुपाठ तथा पाणिनि-व्याकरण से संबन्ध रखने वाले कई एक ग्रन्थ भी रचे हैं। 'कुट्टिनीमतम्' के रचयिता दामोदर गुप्त और अलङ्कारशास्त्र के बनाने वाले भट्टोद्भट इनके समकालीन थे।

क्षेमेन्द्र—यह एक प्रसिद्ध कश्मीरी कवि हैं। इनका समय ११वीं सदी है। काशी में भी रह कर इन्होंने विद्याध्ययन किया था। इन्होंने प्रायः शत ग्रन्थों की रचना संस्कृत में की है। जिनमें—(१) औचित्य- विचार-चर्चा, (२) कला-विलास, (३) दर्पदलन, (४) कविकण्ठाभरण, (५) चतुर्वर्गसंग्रह, (६) चारुचर्या, (७) बृहत्कथामंजरी, (८) भारतमञ्जरी, (९) रामायण-मञ्जरी, (१०) समयमातृका, (११) सुवृत्त-तिलक, (१२) कविकर्णिका बहुत प्रसिद्ध हैं।

इनके ग्रन्थों के पढ़ने से मालूम होता है कि ये विलक्षण कवि और व्यवहार में बड़े कुशल थे। इनके ग्रन्थों में कायस्थों और मुसलमानों की खूब निन्दा है। 'समयमातृका' ग्रन्थ का विषय दामोदर गुप्त के 'कुट्टिनीमतम्' सरीखा है। कदाचित् उसीके परतों पर लिखा गया है। इनका एक ग्रन्थ 'अवदानकल्पलता' है। इसमें बौद्ध महापुरुषों का विषय वर्णित है। इस ग्रन्थ की भाषा बड़ी स्वच्छ, प्रसादगुणविशिष्ट एवं उपदेशात्मक है। यह ग्रन्थ पाली अक्षरों में तिब्बत में था। कलकत्ते की एशियाटिक सोसाइटी ने इसे पाली और संस्कृत दोनों अक्षरों में छपवाया है। क्षेमेन्द्र का विशेष महत्त्व उनके 'औचित्य-विचारचर्चा' के कारण है। इस ग्रन्थ में प्रतिपादित काव्य को 'औचित्य-सिद्धान्त' रस का जीवन कहा गया है। यद्यपि औचित्य के विषय में इनके पूर्ववर्ती आचार्यों ने भी संकेत किया है किन्तु इस विषय का विस्तार से विवेचन करने के कारण 'औचित्य-सिद्धान्त' का व्याख्याता इन्हीं को माना जाता है और इस प्रकार क्षेमेन्द्र अलङ्कार सम्प्रदाय में एक सिद्धान्त-प्रवर्तक आचार्य के रूप में प्रतिष्ठित हैं।

गङ्गादास—ये 'छन्दोमञ्जरी' के रचयिता हैं। इस ग्रन्थ में इन्होंने अपना जो परिचय दिया है, उसके अनुसार इनके पिता का नाम गोपालदास था। इन्होंने सोलह सर्ग के अच्युतचरित काव्य, कृष्णशतक और सूर्यशतक की रचना भी की थी। यद्यपि इन्हें महाकवि कहलाने का सौभाग्य न मिला तथापि इनका 'छन्दोमञ्जरी' ग्रन्थ सम्पूर्ण भारत में प्रचलित है।

'छन्दोमञ्जरी' का एक श्लोक मुरारिमिश्र कृत 'अनर्घराघव' नाटक में मिला है। अतएव गंगादास मुरारि से पहिले के जान पड़ते हैं। यदि मुरारि कवि का समय १२वीं शताब्दी है तो गंगादास उसके पूर्व के होंगे।

गङ्गाधर—इस कवि के रचित श्लोक गोविन्दपुर के एक शिला-लेख में मिले हैं। उस शिला-लेख में मिति शाके १०५९ अर्थात् सन् ११३७ ई० दी है। अतएव अनुमान होता है कि उसी समय में यह कवि विद्यमान था। लेख में इन्होंने जो अपनी वंशावली दी है उसके अनुसार इनके प्रपितामह का नाम दामोदर, पितामह का नाम चक्रपाणि, पिता का नाम मनोरथ, चाचा का नाम दशरथ और भाइयों का नाम महीधर तथा पुरुषोत्तम है।

बिल्हण के विक्रमाङ्कदेव-चरित में भी एक गङ्गाधर कवि का उल्लेख है। काव्यसंग्रह में गंगाधर कवि का लिखा हुआ एक 'मणिकर्णिकाष्टक' भी छपा है।

गुणाढ्य—पैशाची भाषा में एक हजार श्लोकों की 'बृहत्कथा' लिखने वाले गुणाढ्य का नाम भारतीय साहित्य में वाल्मीकि और व्यास के बाद लिया जाता है। रामायण और महाभारत की भाँति ही इनकी बृहत्कथा भी संस्कृत-साहित्य के अनेक रूपक, काव्य तथा कथाप्रबन्धों की उपजीव्य रही है। पैशाची भाषा में लिखा हुआ इनका मूलग्रन्थ आज नहीं मिलता। दशम शतक के बाद पैशाची भाषा का प्रचार समाप्त होने पर संस्कृत में इसके दो अनुवाद हुए। एक तो आचार्य क्षेमेन्द्र ने 'बृहत्कथामञ्जरी' नाम से १०३७ ई० में किया। यह अनुवाद सरल और ललित पद्यों में है, जिसमें कुल ७५०० श्लोक हैं। किन्तु यह अनुवाद संक्षिप्त था अतः कश्मीर-निवासी सोमदेव भट्ट ने इस कमी को दूर करने के लिए 'कथासरित्सागर' नाम से बृहत्कथा का बहुत ही प्रामाणिक तथा रुचिर अनुवाद संस्कृत श्लोकों में प्रस्तुत किया। इसमें २० सहस्र श्लोक हैं। तामिल भाषा में भी इसके दो अनुवाद मिलते हैं। इधर अंग्रेजी में भी इसका अनुवाद टानी नाम की विदुषी ने किया है।

गुणाढ्य की जन्म-भूमि विदर्भ देश में थी, जहाँ ये प्रतिष्ठानपुर (आजकल 'पैठन' नाम से प्रसिद्ध) नगर के राजा सातवाहन के यहाँ कुछ समय सभा-पण्डित रहे। पर प्रतिज्ञावश इन्हें राजसभा और संस्कृत भाषा दोनों का त्याग करना पड़ा और जंगल में चले गये। वहाँ पैशाची भाषा सीखी और उसी भाषा में अपना यह विशालकाय कथाकाव्य लिखा। सातवाहन नरेश का समय ई० प्रथम शतक है। अतः वही समय महाकवि गुणाढ्य का होना चाहिये। उनकी बृहत्कथा में ईसवीपूर्व पाँच शतकों के भारतीय समाज के विविध रूपों, व्यवहारों और प्रथाओं का वर्णन हमें होता है। इन्होंने अपना यह ग्रन्थ सातवाहन नरेश को समर्पित किया था और इनके दो शिष्य गुणदेव तथा नन्दिदेव ने उस ग्रन्थ का प्रचार किया था।

गोवर्द्धनाचार्य—ये कवि गीतगोविन्दकार जयदेव तथा उमापतिधर आदि के समकालीन हैं। गीतगोविन्द में जयदेव ने इनका उल्लेख किया है। इनका बनाया 'आर्यासप्तशती' नामक एक ग्रन्थ है। यद्यपि इस ग्रन्थ के

नाम से तो यही जान पड़ता है कि इसमें ७००आर्या छन्द के श्लोक होंगे, किन्तु काव्यसंग्रह में जो ग्रन्थ छपा है उसमें ७३१ श्लोक हैं। इन्होंने अपने ग्रन्थ में पिता का नाम नीलाम्बर लिखा है। उमापतिधर के समसामयिक होने से इनका समय १२वीं शताब्दी का प्रारम्भ और मध्यभाग सिद्ध होता है। गोवर्द्धनाचार्य ने अपने शिष्यों में से एक का नाम उदयन लिखा है। ये प्रसिद्ध नैयायिक उदयनाचार्य ही हैं अथवा अन्य कोई, यह स्पष्ट नहीं कहा जा सकता।

गोविन्द ठक्कुर—चन्द्रदत्त मैथिल कृत संस्कृत-भाषान्तर वाली 'भक्तमाला' में गोविन्द ठक्कुर को 'काव्य-प्रदीप' का रचयिता बतलाया गया है। काव्यप्रकाश के टीकाकार कमलाकर भट्ट (जिन्होंने सन् १६१२ ई० में शूद्रकमलाकर नामक ग्रन्थ रचा था) अपने ग्रन्थ में काव्यप्रदीप का नाम लिखते हैं। इसलिये गोविन्द ठक्कुर उनके पूर्व ही किसी समय में रहे होंगे, ऐसा निश्चय होता है। गोविन्द ठक्कुर की लिखी हुई 'काव्य-प्रकाश' की 'काव्यप्रदीप' टीका साहित्य जगत् में मौलिक ग्रन्थ के समान आदृत है। इसमें इन्होंने स्थान-स्थान पर काव्यप्रकाश-कार आचार्य मम्मट के सिद्धान्तों की बड़ी पाण्डित्यपूर्ण आलोचना की है।

गोविन्दराज—इनकी बनायी श्रीमद्वाल्मीकि रामायण की भूषण टीका प्रसिद्ध है। यह दक्षिण भारत के रहने वाले और श्रीरामानुज सम्प्रदायी थे।

गौड़पादाचार्य—ये भगवान् शङ्कराचार्य के गुरु हैं। इन्होंने अद्वैतसिद्धान्त-प्रतिपादक एक ग्रन्थ लिखा है। माण्डूक्योपनिषत्कारिका उस ग्रन्थ का नाम है। इनकी कारिकायें आर्या वृत्त में हैं और वे बड़ी मनोहर हैं।

घटखर्पर—महाराज विक्रमादित्य की सभा के नवरत्नों में से एक घटखर्पर भी थे। इनका बनाया २२ श्लोकात्मक एक काव्य है, जो घटखर्पर काव्य नाम से प्रसिद्ध है। इसमें अनुप्रास और यमक का चमत्कार तथा संयोग-शृङ्गार-रस का परिपाक है। 'नीति-सार' नाम का एक ग्रन्थ भी, जिसमें २१ नीति के श्लोक हैं, इनके नाम से प्रसिद्ध है। वस्तुतः इनका नाम तो कुछ और था किन्तु इनकी प्रतिज्ञा थी कि जो इनको यमक अलंकार की रचना में परास्त कर देगा उसके यहाँ मैं घटखर्पर (फूटे घड़े) से पानी भरा करेंगे। इनकी उस शपथ ने इन्हें घटखर्पर नाम से प्रसिद्ध कर दिया।

चटक—कल्हण की राजतरङ्गिणी के अनुसार ये कश्मीर नरेश जयापीड की राजसभा के कवि थे। इनका कोई ग्रन्थ देखने में नहीं आया।

चाणक्य—अर्थशास्त्र के प्रणेता तथा महानन्द वंश का विनाश कर चन्द्रगुप्तमौर्य को सम्राट् बनाने वाले आचार्य चाणक्य से संस्कृत वाङ्मय और भारतीय राजनीति दोनों समान रूप से परिचित हैं। अर्थशास्त्र का मूल ग्रन्थ पूर्ण रूप से नहीं प्राप्त होता किन्तु जो कुछ है उससे इनके आचार्यत्व का भली-भाँति पता चलता है।

चौर कवि—कश्मीरी कवि बिल्हण का ही दूसरा नाम चौर कवि है। 'विक्रमाङ्कदेव-चरित' इनका प्रसिद्ध काव्य है। उसके अतिरिक्त (१) चौरपञ्चाशिका और (२) कर्णसुन्दरी नाटिका ग्रन्थ भी इनके मिलते हैं।

'राजतरंगिणी' से ज्ञात होता है कि कश्मीर के राजा कलश ने सन् १०६४ ई० से लेकर सन् १०८८ ई० तक राज्य किया था। इसी राजा के समय बिल्हण कश्मीर छोड़कर देशाटन के लिये बाहर निकले थे। 'विक्रमाङ्कदेव-चरित' से यह भी जान पड़ता है कि, बिल्हण ने मथुरा, कन्नौज, वाराणसी, प्रयाग, अयोध्या,

धार, गुजरात प्रान्त आदि अनेक नगरों और प्रान्तों में घूमते-फिरते सेतुबन्ध रामेश्वर तक भ्रमण किया था। (विक्रमाङ्कदेव-चरित' में बिल्हण ने अपनी जन्म-भूमि और वंश का भी परिचय दिया है। उसके अनुसार कश्मीर में खोनमुख गाँव इनके पूर्वजों का निवास-स्थान था। इनके पिता कौशिक गोत्रीय ज्येष्ठकलश और माता नागादेवी थीं।

बिल्हण का चोर नाम एक राज-कन्या के साथ, जिसे ये पढ़ाते थे, गुप्त रूप से प्रेमवश गान्धर्व विवाह कर उसे अपहरण करने के कारण पड़ गया। ये बाद में पकड़े भी गये, किन्तु इनका अनन्य प्रेम देखकर राजा ने इन्हें मुक्त कर दिया।

जगदीश तर्कालङ्कार—नवद्वीपनिवासी एक प्रसिद्ध नैयायिक थे। इनका जन्म १७वीं सदी के प्रारम्भ में हुआ था। इनके पिता का नाम यादवचन्द्र तर्कवागीश था और वे भी एक प्रसिद्ध नैयायिक थे। जगदीश तर्कालंकार ने 'न्यायदीधिति' की टीका लिखी है। इसके अतिरिक्त इनके ये ग्रन्थ पाये जाते हैं—(१) गंगेशोपाध्याय-प्रणीत अनुमानमयूख का भाष्य, (२) पक्षता, (३) केवलान्वयी, (४) केवलव्यतिरेकी, (५) अन्वयव्यतिरेकी, (६) अवयव, (७) चतुष्टयतर्क, (८) सिद्धान्त-लक्षण, (९) व्याप्तिपञ्चक, (१०) उपाधिवाद, (११) पूर्वपक्ष, (१२) अनुमानदीधिति का तर्क, (१३) सिंहव्याघ्री, (१४) अवच्छेदकनिरुक्ति।

जगद्धर—इन्होंने भवभूतिकृत 'मालतीमाधव' नाटक की टीका लिखी है। नाटक के प्रत्येक अङ्क की टीका के अन्त में टीकाकार ने अपने माता-पिता का नाम दिया है और ग्रन्थ की समाप्ति में भी अपने वंश का संक्षिप्त परिचय दिया है। उसके अनुसार इनके पिता का नाम रत्नधर और माता का नाम दमयन्तिका था। इनके रचित 'मालतीमाधव' नाटक की टीका संस्कृतज्ञों में बहुत समादृत है। इन्होंने 'वेणीसंहार' और 'वासवदत्ता' पर भी टीकाएँ लिखी हैं। इनका समय पण्डितवर रामकृष्ण भाण्डारकर के निर्णयानुसार ई० चौदहवीं शताब्दी से पूर्व नहीं हो सकता।

जगन्नाथ पण्डितराज—ये तैलङ्ग ब्राह्मण थे पर इनके पिता काशी में आकर रहने लगे थे। पिता का नाम पेरुभट्ट और माता का नाम लक्ष्मी था। इनके पिता सर्वविद्या-विशारद अद्वितीय विद्वान् थे। अपने पिता से ही इन्होंने सभी विषयों का अध्ययन किया था। पुनः ये दिल्ली सम्राट् शाहजहाँ (१६२८ ई० से १६५८ ई०) के दरबार में रहे, जहाँ इनका बहुत आदर रहा। इन्होंने स्वयं लिखा है— 'दिल्लीवल्लभ-पाणि-पल्लवतले नीतं नवीनं वयः'। वहीं इन्होंने एक यवनी से विवाह कर लिया, जिसके कारण ब्राह्मण-समाज इन्हें उपेक्षित किये रहा।

पण्डितराज संस्कृत साहित्य के पिछले खेवे के अन्तिम उद्भट विद्वान्, कवि तथा आचार्य थे। इनकी प्रतिभा बहुत मौलिक थी। कविता के क्षेत्र में ये अपने समान मधुर और रस पेशल वाणी का आचार्य किसी को नहीं मानते थे। अलङ्कार शास्त्र के अपने ग्रन्थ 'रसगङ्गाधर' में इन्होंने उदाहरण में अपने ही श्लोक दिये हैं और दोषों के प्रसंगों में दूसरों के श्लोक। 'रसगङ्गाधर' में पण्डितराज की मौलिक प्रतिभा का पूर्ण दर्शन होता है, जहाँ ये दूसरे आचार्यों के सिद्धान्त का बड़ा ही तर्कपूर्ण खण्डन करते हैं। पर शोक है कि इनका यह ग्रन्थ अधूरा ही रह गया है। जैसे ये अगाध विद्वान् थे वैसे ही इनमें स्वाभिमान भी कूट-कूट कर भरा था। साहित्य के अतिरिक्त न्याय और व्या-

करण पर भी इनका पूर्ण अधिकार रहा। 'कुवलयानन्द' के रचयिता अप्पयदीक्षित के सिद्धान्तों का (जो इनके समकालिक प्रतीत होते हैं) इन्होंने बड़े आमोद के साथ खण्डन किया है। इनकी कविताएँ इनके स्वाभिमान के अनुसार ही बहुत मधुर हैं इनकी यह गर्वोक्ति विद्वानों को खटकती नहीं—

आमूलाद्रत्नसानोर्मलयवलयितादा च कूलात् पयोधे:
यावन्त: सन्ति काव्यप्रणयनपटवस्ते विशङ्कं वदन्तु।
मृद्वीकामध्यनिर्यन्मसृणरसझरीमाधुरी-भाग्यभाजां
वाचामाचार्यतायाः पदमनुभवितुं कोऽस्ति धन्यो मदन्यः॥

पण्डितराज के रचित ग्रन्थों के नाम ये हैं—(१) अमृतलहरी, (२) आसफविलास, (३) करुणालहरी, (४) चित्रमीमांसा-खण्डन, (५) जगदाभरण, (६) पीयूष-लहरी या गङ्गालहरी, (७) प्राणाभरण, (८) भामिनीविलास, (९) मनोरमा की कुचमर्दिनी टीका, (१०) यमुना-वर्णन (११) लक्ष्मीलहरी, (१२) रस-गङ्गाधर।

जनार्दन भट्ट—बंबई से प्रकाशित 'काव्य-माला' के एकादश गुच्छक में इनका बनाया शृङ्गारशतक नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है; किन्तु उसमें इनके निवास-स्थान या समय का पता नहीं है। काव्य की रचना देखने से यह बहुत ही अर्वाचीन कवि जान पड़ते हैं।

जयदेव—(१) ये गीतगोविन्द काव्य के रचयिता हैं जो काव्यभाषा और छन्द के लालित्य तथा माधुर्य में अब तक बेजोड़ है। इनकी माता का नाम वामादेवी और पिता का नाम भोजदेव था। बंगाल में वीरभूमि नाम के स्थान से कुछ हटकर बानोरवी में गिरनेवाला अजय नाम का एक नद है। इस नद के तीर पर केंदुली नाम का एक गाँव है। इसीको लोग जयदेव की जन्मभूमि बतलाते हैं। ये बंगाल के राजा लक्ष्मण सेन की सभा में रहे हैं जो ११११ ई० में वर्तमान थे। अत: जयदेव का समय भी बारहवीं शताब्दी के प्रथम चरण के पहले ही होगा।

जयदेवरचित 'गीतगोविन्द' की कई एक टीकाएँ देखने में आती हैं। इनमें सबसे प्राचीन टीका भगवती-भवेश के पुत्र मैथिल कृष्णदत्त की बनायी जान पड़ती है। संस्कृत भाषा के कृष्णभक्त ग्रन्थकारों में जयदेव की अच्छी ख्याति है। लोगों का कथन तो यहाँ तक है कि स्वयं भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र भी गीत-गोविन्द के गान से रीझ जाते हैं। गीत-गोविन्द के श्लोकों की भाषा-माधुरी भी ऐसी ही है। एक उदाहरण यहाँ दिया जाता है।—

चन्दनचर्चितनीलकलेवर...

मञ्जुतरकुञ्जतलकेलिसदने...

सञ्चरदधरसुधामधुरध्वनिमुखरितमोहनवंशम्।
चलितदृगञ्चलचञ्चल-मौलिकपोलविलोलवतंसम्।
रासे हरिमिह विहितविलासं
स्मरति मनो मम कृतपरिहासम्॥ध्रु०॥

जयदेव—(२) यह प्रसिद्ध नैयायिक तथा "प्रसन्नराघव" नाटक के रचयिता हैं। प्रसन्न-राघव की प्रस्तावना में इस बात की शङ्का उठायी है कि जो कवि है वह उत्तमनैयायिक कैसे हो सकता है? उसका समाधान इन्होंने उक्तिवैचित्र्य से किया है—

येषां कोमलकाव्यकौशलकलालीलावती भारती,
तेषां कर्कशतर्कवक्रवचनोद्गारेऽपि किं हीयते।
यैः कान्ताकुचमण्डले कररुहाः सानन्द-मारोपिता-
स्तैः किं मत्तकरीन्द्रकुम्भशिखरे नारोपणीयाः शराः॥

अर्थात् जिन मनुष्यों की वाणी कोमल काव्य-रचना की निपुणता व चातुर्य की कला से भरी चमत्कार उपजाने वाली है क्या उनकी वाणी न्यायशास्त्र के रूखे और कुटिल वचनों के उच्चारण नहीं कर सकते ? भला देखो तो, जिन विलासियों ने आनन्दपूर्वक अपनी ललनाओं के गोल स्तनों पर नखों के चिह्न किये हों वे क्या मतवाले हाथी के ऊँचे गण्डस्थलों पर अपने बाणों का घाव नहीं करते ?

इन्होंने अपने को कुण्डिनपुर का निवासी बताया है। कुण्डिनपुर मध्य और दक्षिण भारत के बीच में एक प्राचीन नगर था। इनका समय सातवीं शताब्दी के इधर जान पड़ता है।

जयदेव पीयूषवर्ष—ये अलङ्कार सम्प्रदाय के आचार्य 'चन्द्रालोक' नामक ग्रन्थ के रचयिता हैं। इनका 'चन्द्रालोक' इस क्षेत्र में बहुत समादृत है। पीछे से इसी ग्रन्थ के व्याख्यान रूप में अप्पय दीक्षित ने 'कुवलयानन्द' लिखा। इनका समय बारहवीं-तेरहवीं शती के बीच का है।

जोनराज—कवि कल्हण ने सन् ११४८ ई० में जो 'राजतरङ्गिणी' लिखी थी, उसे वे समाप्त नहीं कर पाये; वह अधूरी हो रही। इस अधूरी पुस्तक को जोनराज ने पूरा किया। राजतरङ्गिणी के पिछले भाग में इनके समय का परिचय इस प्रकार दिया गया है :—

श्रीजोनराजविबुधः कुर्वन् राजतरङ्गिणीम्।
सायकाग्निमिते वर्षे शिवसायुज्यमासदत्॥

अर्थात् पण्डित जोनराज संवत् ३५ में राजतरङ्गिणी रचकर शिवसायुज्य को प्राप्त हुए। यह संवत् स्थानीय अथवा कश्मीरी समझना चाहिये। अतएव यह निर्धारित होता है कि इन्होंने सन् १४१२ ई० में प्राण-त्याग किया, अतः इनका समय अनुमान से १४वीं शताब्दी का पिछला भाग और पन्द्रहवीं सदी के प्रारम्भ के १२ वर्ष है। जोनराज की बनायी राजतरङ्गिणी का नाम लोगों ने दूसरी राजतरङ्गिणी रखा है। इन्होंने भारवि-रचित किरातार्जुनीय की टीका भी बनायी है। इनके शिष्य का नाम श्रीवर पण्डित था, जिसने शाके १४७७, सन् १५५५ ई० में तीसरी तरङ्गिणी रची थी।

त्रिविक्रम भट्ट—यह कवि, प्रसिद्ध विद्वान् देवादित्य शर्मा के पुत्र थे। लड़कपन में इनकी विशेष अभिरुचि पढ़ने-लिखने में न थी, पर प्रयोजनवश सरस्वती देवी की आराधना कर सात दिन में 'नलचम्पू' नाम का उत्कृष्ट चम्पूकाव्य लिखा। इनका समय अनुमानतः दसवीं शताब्दी है, जो चम्पूकाव्यों का अभ्युदय-काल है।

दण्डी—अलङ्कारशास्त्र में रीति सम्प्रदाय के आचार्य और गद्यकाव्य के प्रणेता हो कर महाकवि दण्डी संस्कृत-साहित्य में अपना एक ही महत्त्व रखते हैं। सूक्तियों में वाल्मीकि और व्यास के बाद कविरूप में इनकी गणना की गयी है। इनकी जन्म-भूमि मध्यभारत में प्रतीत होती है और समय सातवीं से आठवीं शताब्दी के बीच। 'काव्यादर्श' इनका अलंकार शास्त्र का ग्रन्थ है और 'दशकुमारचरित' गद्यकाव्य। पर इनके तीन प्रबन्धों की ख्याति चली आ रही है और वह तीसरा प्रबन्ध 'छन्दोविचिति' अथवा 'अवन्तिसुन्दरीकथा' कहा जाता है। 'दशकुमारचरित' सामाजिक प्रबन्ध है तथा उसकी शैली बहुत सरल एवं सुबोध है। 'काव्यादर्श' अलङ्कार शास्त्र की दृष्टि से बहुत लोकप्रिय ग्रन्थ है तथा उसका अनुवाद कन्नड़, सिंहली और तिब्बती भाषाओं में भी मिलता है।

दामोदर गुप्त—यह कश्मीरी कवि है। इनका बनाया ग्रन्थ "कुट्टनीमतम्" है। राजतरङ्गिणी में लिखा है कि—

स दामोदरगुप्ताख्यं कुट्टनीमतकारिणम्।
कविं कविं बलिरिव धुर्यं धीसचिवं व्यधात्॥

इससे ज्ञात होता है कि ये महाराज जयापीड़ के मन्त्री थे। अतः इनका समय आठवीं शती होना चाहिए। "कुट्टनीमत" ग्रन्थ क्षेमेन्द्र कवि के "समयमातृका" ही सा है। इनके ग्रन्थ लिखने का मुख्य उद्देश्य युवा पुरुषों को वेश्याओं के फंदे से बचाना है। इस ग्रन्थ के पढ़ने वाले यदि चतुर हों तो संसार में बहुत सँभल के अपना जीवन बिता सकते हैं। ग्रन्थ का विषय अश्लील होने के कारण लोग दामोदर गुप्त के कवित्व की कुछ विशेष प्रशंसा नहीं करते, किन्तु कवि यह अपने ढंग का एक ही था। आचार्य मम्मट ने इनके दो श्लोक उदाहरण स्वरूप अपने 'काव्यप्रकाश' में दिये हैं।

दामोदर मिश्र—हनुमान् जी द्वारा रामचरित को लेकर नाटक लिखने, उसे शिलाओं पर उत्कीर्ण करने तथा पुनः वाल्मीकि की प्रसन्नता के लिये समुद्र में फेंक देने की किंवदन्ती प्रसिद्ध है। बाद में यह कहा जाता है कि महाराज भोज ने समुद्र से उन शिलाओं का उद्धार कर हनुमान् जी के लिखे नाटक को व्यवस्थित करवाया। उस 'हनुमन्नाटक' के दो संस्करण उपलब्ध होते हैं। एक ९ अंकों का, दूसरा १४ अंकों का। जो हनुमन्नाटक १४ अंकों में है उसके संग्रहकर्ता यही दामोदर मिश्र हैं। आचार्य मम्मट के 'काव्यप्रकाश' सप्तम उल्लास में हनुमन्नाटक का एक श्लोक उदाहरण में उद्धृत है। मम्मट का समय एकादश शतक है। अतः इनका समय दशम शतक के आसपास होना चाहिए। 'हनुमन्नाटक' वस्तुतः नाटक न होकर गद्य-पद्यमय उत्कृष्ट काव्य ही है। उसमें नाटक-तत्त्वों का सर्वथा अभाव है किन्तु काव्यत्व उच्चकोटि का है। इसमें दूसरे ग्रन्थों के पद्य भी मिलते हैं।

दिङ्नाग—ये बौद्धमत के आचार्य और काञ्ची-पुरी के रहने वाले थे। मल्लिनाथ ने मेघदूत के पूर्वार्द्ध के १४वें श्लोक (दिङ्नागानां पथि परिहरन् स्थूलहस्तावलेपान्॥) की टीका में दिङ्नाग को कालिदास का समकालीन बतलाया है। मल्लिनाथ के अनुसार मेघदूत के इस श्लोक से कालिदास की दिङ्नाग पर अश्रद्धा प्रकट होती है, जैसा कि होना भी चाहिए; क्योंकि कालिदास श्रुति-स्मृति-धर्म को मानने वाले थे।

दिवाकर—(१) राजशेखर ने जो अपने पूर्व कवियों की सूची दी है, उसमें इनका नाम दण्डी, बाण, मयूर आदि के साथ आया है। इस आशय का एक और श्लोक भी मिलता है—

अहो प्रभावो वाग्देव्या यन्मातङ्गदिवाकरः।
श्रीहर्षस्याभवत्सभ्यः समं बाणमयूरयोः॥

यह श्रीहर्ष कन्नौज के महाराज हर्षवर्द्धन हैं, जिनके दरबार में बाण भट्ट ने रह कर 'हर्ष-चरित' और 'कादम्बरीकथा' काव्य लिखे थे। अतः इनका समय सातवीं शताब्दी का पूर्वार्ध होना चाहिए।

दिवाकर—(२) यह प्रसिद्ध ज्योतिषी भरद्वाज गोत्री एक ब्राह्मण थे। इनके पिता नृसिंह और विद्यागुरु इनके चाचा शिवदैवज्ञ हैं। पं० सुधाकर द्विवेदी के मतानुसार इनका जन्म शाके १५२८, सन् १६०६ ई० में हुआ। जन्मभूमि गोदावरी नदी के तट पर गोल नामक ग्राम था। इन्होंने १६२५ ई० में 'जातक-पद्धति' नामक ग्रन्थ लिखा।

दिनकर मिश्र—ये रघुवंश के टीकाकार एक प्रसिद्ध पण्डित थे। इन्होंने सन् १३८५ ई० में यह टीका बनायी थी। ये बौद्ध थे अतः इनकी बनायी रघुवंश की टीका मल्लिनाथ को नहीं रुची और उन्होंने अपनी टीका के प्रारम्भ में इनकी टीका के सम्बन्ध में लिखा है—"दुर्व्याख्याविषमूर्छिता।" शङ्कराचार्य तथा उदयनाचार्य द्वारा परास्त किये जाने पर यद्यपि बौद्धधर्म का प्राधान्य हिन्दुस्तान में न

रहा, तथापि बौद्धसिद्धान्तवादी दिनकर मिश्र सरीखे दो चार जन शेष रह ही गये थे। सम्भव है, ऐसे ही लोगों के पास बचे-खुचे बौद्धग्रन्थ देखकर माधवाचार्य जी ने सर्वदर्शन संग्रह में बौद्धदर्शन को भी स्थान दिया। माधव का समय १४वीं शताब्दी है।

धनञ्जय—भोजराज के पितृव्य धारानरेश मुञ्ज के सभा-रत्नों में से यह भी एक थे। इन्होंने 'दशरूपक' नाम से नाटयशास्त्र का ग्रन्थ लिखा है। ग्रन्थ की समाप्ति में धनञ्जय लिखते हैं:—

विष्णोः सुतेनापि धनञ्जयेन,
विद्वन्मनोरागनिबद्धहेतुः ।
आविष्कृतं मुञ्जमहीशगोष्ठी-
वैदग्ध्यभाजा दशरूपमेतत् ॥

इससे विदित होता है कि इनके पिता का नाम विष्णु था और यह मुञ्ज के सभासद थे। मुञ्ज का एक शिलालेख ९७४ ई० का प्राप्त हुआ है। अतः उनका समय १०वीं शताब्दी का अन्तिम भाग होगा तथा वही समय धनंजय कवि का भी होगा। धनञ्जय के समकालीन अन्य कवियों के नाम पद्मगुप्त, धनिक, हलायुध आदि हैं। इनमें से पद्मगुप्त 'नवसाहसाङ्कचरित' महाकाव्य के रचयिता हैं। धनिक धनञ्जय के भाई हैं। इन्होंने भी अपने पिता का नाम विष्णु लिखा है। हलायुध एक प्रसिद्ध कोषकार हैं, जिनका उद्धरण टीकाकारों ने दिया है। परन्तु यह हलायुध वे ही हैं या नहीं, इसमें सन्देह है।

धनिक—यह विष्णु के पुत्र और धनञ्जय के भाई हैं। धनञ्जय रचित 'दशरूपक' पर दशरूपकावलोक नाम की टीका इन्होंने ही लिखी है। इन्होंने निजरचित ग्रन्थ में विद्धशालभञ्जिका के श्लोक उदाहरण में दिये हैं, जिससे सिद्ध होता है कि राजशेखर इनसे पहले हुए थे। धनिक धारानरेश मुञ्ज के भाई सिन्धुराज की सभा में रहते थे, जिनका राज्यकाल ९९४ ई० से प्रारम्भ होता है।

धन्वन्तरि—उज्जैन-सम्राट् विक्रम की सभा के नवरत्नों में इनका नाम प्रथम ही प्राप्त होता है। यह प्रसिद्धि है कि समुद्र-मन्थन के समय धन्वन्तरि का अवतरण हुआ था और वे आयुर्वेदशास्त्र के विधायक तथा भगवान् के अवतार माने जाते हैं। किन्तु वे धन्वन्तरि पौराणिक काल के ही हो सकते हैं, विक्रम की सभा के नहीं। वस्तुतः आयुर्वेदशास्त्र के मर्मज्ञों को राजसभाओं में 'धन्वन्तरि' नाम से ही अभिहित किया जाता था और यह नाम उपाधि रूप में था। विक्रम की सभा के 'धन्वन्तरि' भी ऐसे ही रहे होंगे। साथ ही वह कवि भी थे। इनके नाम से एक 'धन्वन्तरिनिघण्टु' ग्रन्थ मिलता है।

एक धन्वन्तरि पुराणों तथा हरिवंश में काशिराज नाम से प्रसिद्ध है। आज तक काशी में एक कूप उनका स्मारक बना हुआ है। यह कूप मुहल्ला दारानगर में मृत्युञ्जय महादेव के मन्दिर के निकट है। लोगों का यह भी कथन है कि धन्वन्तरि वैद्य परलोक सिधारते समय अपनी गुणकारी ओषधियों को वृद्धकाल के कुएँ में छोड़ गये, जिसके प्रभाव से उस कूप का पानी आरोग्यवर्द्धक है। अतएव धन्वन्तरि वैद्य काशी के निवासी और एक अति प्राचीन व्यक्ति सिद्ध होते हैं।

धर्मदास—इनका लिखा हुआ विदग्धमुखमण्डन नामक ग्रन्थ मिलता है। इसके मङ्गलाचरण में ग्रन्थकार ने बुद्धदेव की स्तुति की है:—

सिद्धौषधानि भवदुःखमहागदानां,
पुण्यात्मनां परमकर्णरसायनानि ।
प्रक्षालनैकसलिलानि मनोमलानां,
शौद्धोदनेः प्रवचनानि चिरञ्जयन्ति ॥

इससे अनुमान होता है कि, ये बौद्ध रहे होंगे। 'विदग्धमुखमण्डन' एक प्राचीन ग्रन्थ जान

पड़ता है। सम्भव है कि, वह कवि उस समय के होंगे, जिस समय भारत में बौद्धधर्म का प्राबल्य रहा होगा। अतः भगवान् शङ्कराचार्य के पहले सातवीं-आठवीं शती में इनको होना चाहिए।

धावक—किंवदन्ती है कि धावक नामक किसी कवि ने रत्नावली और नागानन्द नामक नाटक बनाये। सम्राट् श्रीहर्ष ने धन देकर धावक को सन्तुष्ट किया तथा इन नाटकों को अपने नाम से प्रचलित करवाया। आचार्य मम्मट ने अपने 'काव्यप्रकाश' में कविता की सफलताओं का उल्लेख करते हुए "श्रीहर्षादेर्धावकादीनामिव धनम्" की बात लिखी है। अतः इनका समय सातवीं से ग्यारहवीं शती के बीच का हो सकता है।

धोयी—जयदेव ने गीतगोविन्द में "धोयी कविक्ष्मापतिः" लिख कर धोयी की प्रशंसा की है। इसमें सन्देह नहीं कि धोयी एक अच्छे कवि थे। इनका बनाया पवनदूत नामक एक ग्रन्थ है। इसकी रचना-शैली कालिदास के मेघदूत से बिल्कुल मिलती-जुलती है। इसमें कुवलयवती नामक नायिका ने पवन द्वारा अपने प्राणप्रिय राजा लक्ष्मण के पास अपने विरह का संदेशा भेजा है। निस्सन्देह यह राजा लक्ष्मण बंगाल के सेनवंशीय राजा लक्ष्मणसेन हैं; जिनके सभासद जयदेव, धोयी, गोवर्द्धन, शरण, उमापतिधर आदि प्रसिद्ध कविवर थे। अतः उन समस्त कवियों की तरह धोयी बंगालनिवासी ही होंगे। लक्ष्मण सेन १११६ ई० में वर्तमान थे। अतः १२वीं शती का पूर्वभाग धोयी का समय होगा। इस कवि का यह श्लोक बहुत प्रसिद्ध है:—

इक्षुदण्डं कलानाथं, भारतं चापि वर्णय।
इति धोयी कविर्ब्रूते, प्रतिपर्व रसायनम्॥

नागेशभट्ट या नागोजी भट्ट—महावैयाकरण नागेशभट्ट कई विषयों के मर्मज्ञ विद्वान् थे। इन्होंने अनेक ग्रन्थों की रचना की है। शायद पतञ्जलि के बाद पाणिनि-व्याकरण का इतना मर्मज्ञ विद्वान् दूसरा नहीं हुआ। इनका समय सत्रहवीं शताब्दी है।

नागेशभट्ट के पिता का नाम शिवभट्ट और माता का नाम सती देवी था। ये महाराष्ट्र ब्राह्मण थे। प्रसिद्ध वैयाकरण 'सिद्धान्त-कौमुदी' के प्रणेता श्रीभट्टोजीदीक्षित के पौत्र हरिदीक्षित इनके व्याकरण विषयक विद्या-गुरु थे। न्याय-शास्त्र इन्हें "राम" नामक तात्कालिक विद्वान् ने पढ़ाया था। इसी प्रकार विभिन्न शास्त्रों के विद्वान् आचार्यों से इन्होंने विद्याभ्यास किया था। अधिकतर ये काशी में रहते थे। शृंगवेरपुर के गुणज्ञ महाराजा "राम" ने इन्हें सम्मान-पूर्वक जीविका दी थी। शृंगवेरपुर के राजा "राम" जैसे दानवीर थे, वैसे ही युद्धवीर भी थे। इनका पूरा नाम "रामदत्त" था, परन्तु नागेशभट्ट प्रायः "राम" ही लिखते थे।

नागेशभट्ट सब शास्त्रों में निष्णात थे, पर व्याकरण और साहित्य के विषयों पर इन्होंने अधिक रचनायें की हैं। इनके स्वतन्त्र ग्रन्थ ये हैं—(१) बृहन्मञ्जूषा, (२) लघुमञ्जूषा, (३) लघुशब्देन्दुशेखर, (४) परिभाषेन्दुशेखर, (५) लघुशब्दरत्न, (६) प्रायश्चित्तेन्दुशेखर, (७) आचारेन्दुशेखर, (८) तीर्थेन्दुशेखर, (९) श्राद्धेन्दुशेखर आदि।

साहित्य विषय में इन्होंने जो कुछ लिखा है वह टीका रूप में, पर ये टीकायें स्वतन्त्र ग्रन्थ का-सा अस्तित्व रखती हैं। 'काव्य-प्रकाश' की 'काव्यप्रदीप' नामक टीका जो प्रसिद्ध नैयायिक श्रीगोविन्द ठक्कुर ने की है, उस पर इन्होंने 'प्रदीपोद्योत' विवरण लिखा है। इस 'प्रदीपोद्योत' में न केवल 'प्रदीप' का ही, किन्तु 'काव्यप्रकाश' का भी वह मर्म प्रकाशित किया गया है, जो 'ठक्कुर' महो-

दब मे रह गया था। पंडितराज जगन्नाथ के 'रसगङ्गाधर' की भी इन्होंने 'मर्म-प्रकाश' नामक टीका लिखी है। वास्तव में पंडितराज के अनुपम ग्रन्थ 'रस-गंगाधर' के भट्ट जी योग्य टीकाकार हैं। नागेशभट्ट ने व्याकरण और साहित्य के अतिरिक्त, वेदान्त, न्याय, वैशेषिक, योग, सांख्य, धर्मशास्त्र और पुराण आदि सभी विषयों पर बीसों ग्रन्थ बनाये हैं, परन्तु टीकायें या विवृति ही। 'दुर्गासप्तशती' पर भी इन्होंने टीका लिखी है। पर इन टीका ग्रन्थों में भी इन्होंने मौलिक सिद्धान्तों की चर्चा की है।

कहा जाता है कि '**प्रौढ मनोरमा**' की टीका '**शब्दरत्न**', जिसके प्रणेता हरिदीक्षित प्रसिद्ध हैं, नागेशभट्ट ही की कृति है। हरिदीक्षित भट्टजी के गुरु थे और इन्होंने यह रचना अपने गुरु के नाम से की थी। इसी प्रकार अध्यात्म-रामायण और वाल्मीकीय रामायण की रामाभिरामी टीकाएँ इन्होंने अपने आश्रयदाता शृंगवेरपुर के महाराज रामदत्त के नाम से की हैं।

नारायण—ये 'मुहूर्तमार्तण्ड' नामक ज्योतिष ग्रन्थ के रचयिता हैं। इन्होंने अपने ग्रन्थ पर 'मार्तण्डवल्लभा' नामक टीका भी की है। पं० सुधाकर द्विवेदी के मत से इन ग्रन्थों का निर्माणकाल शाके १४९३ (सन् १५७१ ई०) से शाके १४९४ (सन् १५७२ ई०) है। यही समय नारायण ने भी अपने ग्रन्थ में लिखा है। इनके पिता का नाम अनन्त और निवास-स्थान दक्षिण में देवगिरि से कुछ हट कर टापर नामक एक गाँव था।

निम्बादित्य—चार वैष्णव सम्प्रदायों में निम्बादित्य जी विष्णुस्वामी सम्प्रदाय के प्रवर्तकों में से हैं। निम्बादित्य के रचित ग्रन्थ का नाम 'धर्माब्धिबोध' है। मथुरा के निकट 'ध्रुवतीर्थ' नाम का एक स्थान है। वहीं पर निम्बादित्य की गद्दी है। लोगों का कहना है कि उनकी गद्दी पर उनके शिष्य हरिव्यास की सन्तान आज तक विराजमान है। इनका समय १६ वीं सदी का पिछला या १७वीं सदी का प्रारम्भ का भाग होना चाहिये। इनके प्रसिद्ध शिष्यों के नाम केशव और हरिव्यास हैं।

नीलकण्ठ—ये 'ताजिक नीलकण्ठी' के रचयिता प्रसिद्ध ज्योतिषी हैं। इनकी पुस्तक का भारतवर्ष के ज्योतिषियों में बड़ा आदर है। इनके पिता का नाम अनन्त और पितामह का चिन्तामणि था। प्रसिद्ध रामदैवज्ञ, जिन्होंने 'मुहूर्तचिन्तामणि' ग्रन्थ बनाया, इन्हीं के छोटे भाई थे। नीलकण्ठ के पुत्र एक प्रसिद्ध ज्योतिषी थे। इन्होंने मुहूर्तचिन्तामणि की 'पीयूषधारा' नाम की टीका लिखी है। ग्रन्थारम्भ में इन्होंने अपने पिता का वर्णन किया है :—

सीमा मीमांसकानां कृतनुकृतचयः कर्कशस्तर्कशास्त्रे,
ज्योतिःशास्त्रे च गर्गः फणिपति-भणित-व्याकृतौ शेषनागः।
पृथ्वीशाकब्बरस्य स्फुरदतुलसभामण्डनं पण्डितेन्द्रः,
साक्षात् श्रीनीलकण्ठः समजनि जगतीमण्डले नीलकण्ठः॥

इससे स्पष्ट है कि ये मीमांसक, नैयायिक, ज्योतिषी और वैयाकरण थे तथा अकबर बादशाह के सभासद भी थे। इनका निवास-स्थान विदर्भ देश था। अकबर बादशाह के समकालीन होने के कारण इनका समय ख्रीष्टीय १६वीं शताब्दी का पिछला भाग अनुमित होता है।

नीलकण्ठ चतुर्धर—महाभारत पर इनकी नीलकण्ठी टीका सर्वप्रसिद्ध है। यह कट्टर शैव थे, और अपनी टीका में अपना साम्प्रदायिक आग्रह प्रदर्शित करने में इन्होंने

मह्लोप नहीं किया है। इनके विद्वान् होने में सन्देह नहीं किया जा सकता। यह कब हुए और इनके माता-पिता का क्या नाम था तथा कहाँ के रहने वाले थे, इन बातों का ठीक पता नहीं।

पक्षधर मिश्र—यह एक उद्भट नैयायिक तथा असामान्य बुद्धिमान् थे। इनके विषय में अनेक किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं। बहुत लोगों का कहना है कि पक्षधर मिश्र और प्रसन्नराघव के बनाने वाले जयदेव एक ही हैं। यह मिथिला के रहने वाले थे।

पक्षिल स्वामी—एक अति प्राचीन नैयायिक विद्वान् हैं। गौतमविरचित न्यायसूत्रों पर भाष्य करने वालों में यह सब से प्राचीन हैं। इनका बनाया भाष्य ग्रन्थ भाष्यों की अपेक्षा उत्तम समझा जाता है। ईसा के पूर्व चौथी सदी में इनके विद्यमान होने का पता पाया गया है। हेमचन्द्र ने अपने अभिधान में पक्षिल स्वामी और चाणक्य को एक व्यक्ति माना है। इनका नामान्तर वात्स्यायन था। यह चन्द्रगुप्त की सभा में विद्यमान थे।

पञ्चशिख—यह सांख्यदर्शन के सम्प्रदाय में एक प्रसिद्ध दार्शनिक हो गये हैं। इनके गुरु विख्यात दार्शनिक महात्मा आसुरि थे। आसुरि के गुरु सांख्यदर्शनप्रणेता महर्षि कपिल थे। पञ्चशिख ही ने सांख्य दर्शन के सिद्धान्तों का प्रचार किया था। आसुरि की स्त्री का नाम कपिला था। पञ्चशिख पुत्ररूप से अपनी गुरु-पत्नी कपिला का स्तन्य-पान करते थे। इसीसे वे कपिलापुत्र के नाम से भी प्रसिद्ध हुए।

पतञ्जलि—इनको शेषनाग का अवतार कहा जाता है। इन्होंने पाणिनि की 'अष्टाध्यायी' पर महाभाष्य लिखकर उसे सर्वसुलभ और सरल कर दिया है। इनकी गणना पाणिनि व्याकरण के त्रिमुनियों (पाणिनि, कात्यायन, पतञ्जलि) में की जाती है। महाभाष्य की भाषा बहुत ही सुबोध है और शैली ऐसी है, जैसे कोई आचार्य अपने शिष्य को पढ़ा रहा हो। व्याकरण विषय पर इतना व्यापक और सुबोध विवेचन किसी दूसरे ने नहीं किया है। इनकी प्रतिष्ठा भगवान् पतञ्जलि के रूप में की जाती है।

इनका समय मौर्यों के बाद शुंग काल में आता है, जैसा कि महाभाष्य में दिये हुए उद्धरणों से प्रतीत होता है—

"मौर्यैर्हिरण्यार्थिभिरर्चाः प्रकल्पिताः।"

अर्थात् मौर्यवंशीय राजाओं ने सुवर्ण की कामना से पूजा का व्यवहार चलाया—

"अरुणद्यवनः साकेतम्"

अर्थात् यवन राजा ने अयोध्यापुरी को घेरा, और—

"अरुणद्यवनो माध्यमिकान्"

अर्थात् यवन राजा ने माध्यमिकों को घेरा। माध्यमिक नागार्जुन के शिष्यों का एक सम्प्रदाय है जो कि शून्यवादी बौद्धों के नाम से विशेष परिचित है। पुष्यमित्र के समय ही मध्य एशिया की जातियों ने भारत के उत्तरी भाग में आक्रमण किया था। मौर्य साम्राज्य उस समय पतन की ओर था। पुष्यमित्र शुंग ने, जो उनका सेनापति था, उस आक्रमण का सामना किया और वीरता के साथ उनका दमन किया। महाभाष्य में अयोध्या तथा माध्यमिकों के घेरों का वर्णन उसी आक्रमण की ओर संकेत करता है। कदाचित् तब सम्राट् पुष्यमित्र ने अपनी विजय के बाद जो यज्ञ किया, पतञ्जलि उस यज्ञ के आचार्य भी रहे। अतः इनका समय ई० पू० द्वितीय-तृतीय शतक के बीच होना चाहिये।

पतंजलि वैयाकरण होने के अतिरिक्त एक अति प्रसिद्ध दार्शनिक एवं वैद्य भी थे। इनका रचित पातंजल योगसूत्र योगदर्शन का ग्रन्थ है।

पद्मगुप्त—ये राजा मुञ्ज के भाई सिन्धुराज के सभाकवि थे। 'दशरूपकावलोक' में इनका और रुद्र कवि का भी नाम देखने में आता है। सिन्धुराज का दूसरा नाम नवसाहसाङ्क भी था। उन्हीं के चरित को लेकर इन्होंने "नवसाहसाङ्कचरित" महाकाव्य की रचना की है। सिन्धुराज ने सन् ९९४ ई० से १०१० ई० तक राज्य किया। इस कवि का नामान्तर परिमल भी था।

पाणिनि—संस्कृत भाषा जानने वालों में ऐसा कोई भी न होगा जो पाणिनि का नाम न जानता हो। संस्कृत भाषा के आधुनिक यावत् व्याकरणों के मूल यही पाणिनि हैं। पाणिनि ने संस्कृत-व्याकरण का जो संस्कार किया वह बहुत ही अभूतपूर्व था। उनकी 'अष्टाध्यायी' की सफलता के सामने पहले के सभी व्याकरण-सम्प्रदाय लुप्त हो गये। पाणिनि महर्षि कोटि के व्यक्ति थे। इन्होंने बड़ी छान-बीन के साथ 'अष्टाध्यायी' के सूत्रों का निर्माण किया था। अष्टाध्यायी जैसा संक्षिप्त व्याकरण और किसी भाषा का नहीं किन्तु इतने पर भी संस्कृत भाषा का कोई शब्द पाणिनि के नियमों से अछूता नहीं रह गया है। पीछे से कात्यायन ने वार्तिक लिखकर और पतञ्जलि ने महाभाष्य लिख कर पाणिनि-व्याकरण की परम्परा को प्रतिष्ठित किया। फिर तो महर्षि के इन सूत्रों को लेकर कितने ही ग्रन्थ रचे गये। केवल रामायण, महाभारत एवं पुराणों को छोड़ अन्य संस्कृत ग्रन्थों में आर्षप्रयोग अर्थात् पाणिनिरचित व्याकरण द्वारा असिद्ध प्रयोग नहीं मिलता।

पाणिनि के समय के विषय में कोई निश्चित मत नहीं कहा जा सकता। किन्तु इतना तो पूर्ण निश्चय है कि ये ई० पू० ५०० वर्ष से इधर के नहीं हो सकते। कुछ लोगों के अनुसार इनका समय ई० पू० ८०० वर्ष है। पाणिनि का निवासस्थान शलातुर नामक ग्राम था और उनकी माता का नाम दाक्षी था। पतञ्जलि लिखते हैं :—

"सर्वे सर्वपदादेशा दाक्षीपुत्रस्य पाणिनेः"।

यह शलातुर ग्राम सीमाप्रान्त में तक्षशिला के आस-पास कहीं रहा होगा। इनकी शिक्षा तक्षशिला में हुई थी।

पाणिनि की अष्टाध्यायी में तात्कालिक सामाजिक, राजनीतिक तथा व्यावहारिक ज्ञान के बहुत से संकेत सूत्रों में प्राप्त होते हैं। पाणिनि द्वारा 'पाताल-विजय' महाकाव्य लिखे जाने की भी प्रसिद्धि है। उसके छन्द काव्य की दृष्टि से बहुत सुन्दर हैं। 'पाताल-विजय' लिखने वाले पाणिनि वैयाकरण ही हैं अथवा दूसरे, कहा नहीं जा सकता।

प्रवरसेन—'सेतुबन्ध' प्राकृत-महाकाव्य के रचयिता प्रवरसेन एक विवादास्पद ग्रन्थकार हैं। वाकाटक-सम्राट् प्रवरसेन द्वितीय (चौथी शती ई० उत्तरार्ध) को प्रायः 'सेतुबन्ध' का रचयिता कहा जाता है, पर यह एक संभावित पक्ष है। 'सेतुबन्ध' की पुष्पिका के अनुसार इस महाकाव्य को कदाचित् कालिदास ने प्रवरसेन के निमित्त लिखा था। 'सेतुबन्ध' की कविता उच्चकोटि की है जो अपने समय में बहुत ही लोकप्रिय रही होगी। इसकी कथा का प्रारम्भ राम द्वारा समुद्र में सेतु-निर्माण से होता है और अन्त रावण-वध से। इसमें कुल १५ आश्वास हैं।

बाण—बाणभट्ट थानेश्वर सम्राट हर्ष के समकालिक और उनके सभासद थे। हर्ष ने ६०६ ई० से ६४६ ई० तक राज्य किया। अतः सातवीं शती का पूर्वार्ध बाण भट्ट का भी समय है। इनकी जन्मभूमि सोन नदी नामक के किनारे प्रीतिकूट ग्राम में हुई थी। ये वात्स्यायन ब्राह्मण कुल में पैदा हुए थे। इनके पिता का नाम चित्र-

भानु था। इन्होंने लिखा है कि इनके पूर्वज कुबेर एक कुलपति थे और उनके यहाँ शुक-सारिका भी वेद-पाठ किया करती थीं।

बाणभट्ट की दो प्रसिद्ध रचनायें हैं—'कादम्बरी' और 'हर्ष-चरित'। इनके अतिरिक्त तीन और रचनायें बाणभट्ट के नाम से प्रसिद्ध हैं—(१) 'चण्डीशतक', (२) 'पार्वती-परिणय' तथा (३) 'मुकुट-ताडितक'। 'कादम्बरी' बाणभट्ट की सर्वश्रेष्ठ रचना है। एक तरह से वह गद्य साहित्य का सर्वस्व है। 'हर्षचरित' आख्यायिका है और उसका ऐतिहासिक मूल्य है। इसमें सम्राट् हर्ष का जीवन भी वर्णित है।

बाण भट्ट की जैसी विषयानुकूल भाषा तथा शैली का सामञ्जस्य रखने वाला दूसरा कवि नहीं हुआ। इनकी भाषा कोमल कान्त पदावली तथा भाव एवं वर्णन के अनुरूप संघटित भाषा है। कहीं लम्बे-लम्बे समास हैं तो कहीं वाक्य केवल दो पदों में समाप्त हो जाता है। विषय के अनुकूल पदों का चयन करने में बाण बहुत पटु हैं। इन्हें तात्कालिक सामाजिक, व्यावहारिक, राजनीतिक, ग्रामीण वातावरण तथा विद्वद्गोष्ठियों आदि का बहुत सूक्ष्म ज्ञान था।

कादम्बरी का पूर्वार्ध ही ये लिख पाये थे तभी दिवंगत हो गये। तब इनके पुत्र पुलिन्द-भट्ट ने कादम्बरी का उत्तरार्ध पूरा किया था।

बालकृष्ण मिश्र—इनका जन्म संवत् १९४४ में दरभंगा जिले के नवटोल ग्राम में हुआ। ये न्याय, वेदान्त, साहित्य तथा मीमांसा के प्रकाण्ड विद्वान् थे। काशी हिन्दूविश्वविद्यालय के संस्कृत महाविद्यालय के प्रधानाध्यापक पद पर रह कर ये जीवन के अन्तिम दिनों तक देववाणी की सेवा करते रहे। इनके लिखे ग्रन्थ कई एक हैं जिनमें से मुख्य ये हैं—

(१) लक्ष्मीश्वरीचरितम् (काव्य), (२) उभयाभावादिवारक परिष्कारप्रकाश, (३) न्यायसूत्रवृत्तिः, (४) अनुमानखण्डस्य क्रोडपत्रम्।

भट्ट कल्लट—यह कश्मीरी थे। इनके गुरु का नाम वसुगुप्त था। वसुगुप्त के रचित ग्रन्थ का नाम 'स्पन्दकारिका' है और स्पन्दकारिका पर स्पंदसर्वस्व नामक टीका भट्ट कल्लट की ही लिखी हुई है। यह कश्मीर के राजा अवन्तिवर्मा के समकालीन हैं। अवन्तिवर्मा का समय राजतरंगिणी के निर्देशानुसार सन् ८५५–८८४ ई० है। निदान भट्ट कल्लट नवीं सदी के पिछले भाग में वर्तमान माने जा सकते हैं।

भट्ट नारायण—भट्ट नारायण उन पाँच ब्राह्मणों में से हैं, जिन्हें बङ्गाल के राजा आदिशूर ने कान्यकुब्जदेश से बुला कर बङ्गाल में बसाया। भट्ट नारायण ने आदिशूर को अपना परिचय इस प्रकार दिया था—

वेणीसंहारनामा परमरससुतो
ग्रन्थ एकः प्रसिद्धो—
भो राजन्मत्कृतोऽसौ रसिकगुणवता
मन्यतो गृह्यते सः।
नाम्नाहं भट्टनारायण इति विदित-
श्चारुशाण्डिल्यगोत्री,
वेदे शास्त्रे पुराणे धनुषि च निपुणः
स्वस्ति ते स्यात्किमन्यत्॥

इससे सिद्ध है कि बङ्गाल में आने के पूर्व भट्ट नारायण 'वेणीसंहार' नाटक की रचना कर चुके थे और वह ग्रन्थ प्रसिद्ध भी हो चुका था। आदिशूर ७१५ ई० में गौडदेश के राजा बने थे। दूसरी ओर 'काव्यालङ्कार-सूत्र' के रचयिता वामन ने अपने ग्रन्थ में 'वेणीसंहार' के 'पतितं वेत्स्यति क्षितौ' पद को विवेचन के लिए उद्धृत किया है जिसके कारण भी भट्टनारायण ८०० ई० के पूर्व

सिद्ध होते हैं। अतः इनका समय आठवीं शती का पूर्वार्ध होना चाहिए।

'वेणीसंहार' का विद्वत्समाज में बहुत आदर है और इसी एक कृति के कारण कवि का यश अचल है। आचार्य मम्मट, धनिक, विश्वनाथ आदि ने अपने लक्षण-ग्रन्थों में 'वेणीसंहार' के पद्य आदर के साथ उद्धृत किये हैं।

भट्ट लोल्लट—काव्य-प्रकाश के रसनिरूपण प्रकरण में इनका उल्लेख आचार्य मम्मट ने किया है। ये नाम से कश्मीरनिवासी जान पड़ते हैं। रस-निष्पत्ति के विषय में ये 'आरोपवाद' सिद्धान्त को मानने वाले हैं, जिसका उल्लेख मम्मट और उनके सभी परवर्ती आचार्यों ने किया है। अतः इनका समय मम्मट के पूर्व दसवीं शती होना चाहिए। इनका कोई ग्रन्थ नहीं उपलब्ध होता।

भट्टोजी दीक्षित—दीक्षित जी प्रकाण्ड वैयाकरण थे। इनकी वंश-परम्परा तथा शिष्य-परम्परा में कौण्डभट्ट एवं नागोजीभट्ट जैसे भाषा शास्त्र और व्याकरण के धुरन्धर आचार्य हुए हैं। दीक्षित जी का समय सत्रहवीं शती ई० है। इनकी इस परम्परा ने अमूल्य ग्रन्थों की रचना की है।

दीक्षित जी ने सम्भवतः १६३० ई० में पाणिनि की अष्टाध्यायी को लेकर 'सिद्धान्तकौमुदी' नामक परम प्रसिद्ध ग्रन्थ की रचना की। सम्पूर्ण भारत में इनका इतना प्रचार हुआ कि व्याकरण का अध्ययन-अध्यापन करने वाले अष्टाध्यायी को लेकर लिखे हुए दूसरे ग्रन्थों को भूल गये। 'सिद्धान्तकौमुदी' में संस्कृत व्याकरण का पूर्ण विवेचन उपलब्ध है। दीक्षित जी ने इस ग्रन्थ की टीका के रूप में 'प्रौढ मनोरमा' नाम का स्वतंत्र ग्रन्थ भी लिखा है। इनके अतिरिक्त (१) शब्द-कौस्तुभ (अष्टाध्यायी की टीका), (२) लिंगानुशासन वृत्ति तथा (३) व्याकरण-मतोन्मज्जन दीक्षित जी के दूसरे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ हैं।

भट्टोत्पल—यह एक प्रसिद्ध ज्योतिषी थे। इन्होंने वराहमिहिर के लगभग समस्त ग्रन्थों की टीकाएँ लिखी हैं किन्तु वराहकृत पञ्च-सिद्धान्तिका की टीका इनकी रचित नहीं मिलती। सम्भव है, उसकी टीका बनायी ही न हो। प्राचीन ज्योतिषियों ने इन्हें भट्टोत्पल लिखा है; किन्तु यह अपने ग्रन्थों में अपने को केवल उत्पल लिखते हैं। बृहज्जातक की टीका में, इन्होंने अपना समय शाके ८८८ अर्थात् ९६६ ई० लिखा है।

भर्तृमेण्ठ—ये 'हयग्रीववध' महाकाव्य के रचयिता एक प्रतिभाशाली कवि थे। क्योंकि राजशेखर ने अपने को भर्तृमेण्ठ का अवतार होने में बड़े गर्व का अनुभव किया है—

तत: प्रपेदे भुवि भर्तृमेण्ठताम्।
स वर्तते सम्प्रति राजशेखरः।

ये कश्मीर-नरेश मातृगुप्त की सभा में रहे हैं और इनका समय ९०० ई० के पहले होना चाहिए।

भर्तृहरि (१)—भर्तृहरि के जीवन के सम्बन्ध में कुछ ठीक-ठीक पता नहीं चलता। कुछ लोग इन्हें उज्जयिनी-सम्राट् विक्रमादित्य का बड़ा भाई कहते हैं। जो कुछ हो, इन्होंने नीतिशतक, शृंगार-शतक तथा वैराग्य-शतक नाम से ३०० छन्द लिखे हैं। ये संस्कृत साहित्य की अमर निधि हैं। अपनी कविताओं से ये अद्वैतवादी तथा निःस्पृह महान् आत्मा प्रतीत होते हैं। इन्होंने संसार और जीवन के सूक्ष्म निरीक्षण की मार्मिक व्यञ्जना अपने शतकों में की है।

भर्तृहरि (२)—ये महावैयाकरण भर्तृहरि हैं। इन्होंने 'वाक्यपदीय' ग्रन्थ की रचना की है। व्याकरण-विज्ञान का यह अद्वितीय ग्रन्थ है। 'वाक्यपदीय' पर हेलाराज और पुञ्जराज ने टीकाएँ लिखी हैं। हेलाराज

कल्हण से प्राचीन हैं और भर्तृहरि का समय और पीछे अनुमित होता है।

भवभूति—'राजतरङ्गिणी' के अनुसार भवभूति कान्यकुब्ज नरेश यशोवर्मा के सभापण्डित थे—

'कविर्वाक्पतिराजश्रीभवभूत्यादिसेवितः ।
जितो ययौ यशोवर्मा तद्गुणस्तुतिवन्दिताम् ।।'

यशोवर्मा को कश्मीर-नरेश मुक्तापीड़ ललितादित्य ने ७३६ ई० में परास्त किया था, बाद में संधि हो गई। संधि के समय ललितादित्य भवभूति से बहुत प्रभावित हुए थे। अतः इनका समय आठवीं शती का पूर्वार्ध अनुमित होता है।

भवभूति बरार प्रान्त में पद्मपुर के निवासी थे। ये कश्यप गोत्र के और कृष्णयजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखा को मानने वाले ब्राह्मण थे। इनके पिता का नाम नीलकण्ठ और माता का नाम जतुकर्णी था। स्वयं इनका नाम श्रीकण्ठ था तथा उपाधि उदुम्बर थी। भवभूति नाम इनका पीछे पड़ा होगा।

कालिदास के बाद नाटककारों में भवभूति का ही नाम लिया जाता है और 'उत्तररामचरित' में तो भवभूति को कालिदास से भी श्रेष्ठ कहा गया है—

'उत्तरे रामचरिते भवभूतिर्विशिष्यते ।'

इनके लिखे तीन नाटक हैं—(१) मालतीमाधव, (२) महावीरचरित और (३) उत्तररामचरित। नाट्यदृष्टि से इनके नाटक बड़े कमनीय हैं और उनमें बहुत ऊँचा कवित्व पाया जाता है। करुणरस लिखने में भवभूति की बराबरी अन्य कवि नहीं कर सकता। इनके उत्तररामचरित में करुणरस मूर्तिमान् हो उठा है, जिसे देखकर पत्थर भी रो रहे हैं तथा वज्र द्रवीभूत हो उठा है—

अपि ग्रावा रोदित्यपि दलति वज्रस्य हृदयम् ।

मालूम पड़ता है कि भवभूति का सम्मान अपने जीवन के प्रारम्भ में नहीं हुआ, तभी इन्होंने 'मालतीमाधव' में क्षोभ, सतोष और साहस भरी अपनी यह उक्ति प्रकट की थी—

ये नाम केचिदिह नः प्रथयन्त्यवज्ञां,
जानन्ति ते किमपि तान्प्रति नैष यत्नः ।
उत्पत्स्यते हि मम कोऽपि समानधर्मा,
कालो ह्ययं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी ।।

भवभूति की साहित्य मर्मज्ञों ने बड़ी प्रतिष्ठा की है और लाक्षणिक ग्रन्थों में इनके छन्द प्रायः उदाहरण-रूप में आये हैं।

भामह—ये कश्मीर के निवासी थे, इनका 'काव्यालंकार' काव्यशास्त्र का विवेचन ग्रन्थ है। इसमें कुल ६ परिच्छेद हैं। इस ग्रन्थ से भामह की मौलिकता और विद्वत्ता प्रकट होती है। कुछ विद्वान् इनको संस्कृत काव्यशास्त्र का पहला लक्षण- ग्रन्थकार मानते हैं, अन्य इनको दण्डी के समकाल का और दूसरे दण्डी के परवर्ती ग्रन्थकार की मान्यता देते हैं। प्रोफेसर देवेन्द्रनाथ शर्मा ने इनका समय छठी शती ई० का पूर्वार्ध माना है।

भारवि—महाकवि भारवि दक्षिण भारत के रहने वाले थे। आचार्य दण्डी के पूर्वज दामोदरभट्ट के साथ इनकी घनिष्ठता थी अथवा यह नाम स्वयं इन्हीं का था। ये चालुक्य नरेश विष्णुवर्धन की सभा में रहते थे। चालुक्य नरेश पुलकेशिन् द्वितीय का एक शिलालेख शकसंवत् ५५६ का 'ऐहोड़' ग्राम के जैनमन्दिर में मिला है जिसमें कालिदास के साथ भारवि का नाम अंकित है—

येनायोजि नवेश्म स्थिरमर्थविधौ
विवेकिना जिनवेश्म ।
स विजयतां रविकीर्तिः कविताश्रित-
भारवि-कालिदास-कीर्तिः ।।

इसका अर्थ है कि सप्तम शती के प्रारम्भ में कालिदास-भारवि की समान ख्याति हो गई थी और इनका 'किरातार्जुनीय' काव्य लोक-

प्रिय हो चुका था। विष्णुवर्धन अपने भाई चालुक्य नरेश पुलकेशिन् द्वितीय की आज्ञा से ही महाराष्ट्र प्रान्त में ६१५ ई० के आस-पास राज्य करता था, अतः विष्णुवर्धन का सभासद होने के नाते इनका समय ६०० ई० के आसपास है।

भारवि की एक मात्र कृति 'किरातार्जुनीय' महाकाव्य है, जिसकी गणना संस्कृत महाकाव्यों की बृहत्त्रयी में की जाती है। भारवि की कविता अर्थ-गौरव के लिए प्रसिद्ध है। 'कि तार्जुनीय' के सर्गों में छन्दसंख्या अधिक नहीं है, अर्थ की गम्भीरता और सौष्ठव है।

भास—कालिदास के पूर्ववर्ती नाटककारों में भास अन्यतम हैं। कालिदास ने इनका नामोल्लेख किया है अतः इनका समय कालिदास से पहले का है। सबसे प्रथम सन् १९१२ ई० में महामहोपाध्याय गणपति शास्त्री ने भास के तेरह नाटकों के प्राप्त होने की सूचना दी थी। इन नाटकों के रचयिता भास हैं, विद्वान् इस विषय पर एक मत नहीं है। १३ नाटकों के नाम ये हैं—१ प्रतिमा नाटक २. अभिषेक नाटक ३. पञ्चरात्र, ४. मध्यम व्यायोग ५. दूतघटोत्कच ६. कर्णभार ७. दूतवाक्य ८. ऊरुभङ्ग ९. बालचरित १०. चारुदत्त ११. अविमारक १२. प्रतिज्ञा-यौगन्धरायण १३. स्वप्नवासवदत्त।

भास्कराचार्य—ये भारत के विख्यात ज्योतिर्वेत्ता पण्डित और गणितज्ञ हो चुके हैं। इनके पिता का नाम महेश आचार्य था। इनका वास-स्थान सह्य पर्वत के समीप विज्जलविड नामक गाँव में था। १११४ ई० में इनका जन्म हुआ। इन्होंने ३६ वर्ष की अवस्था में सन् ११५० ई० में अपने प्रसिद्ध सिद्धान्तशिरोमणि नामक ग्रन्थ की रचना की। यह ग्रन्थ चार खंडों में विभक्त है। १ पाटीगणित, २ बीजगणित, ३ ग्रहगणित, ४ गोलाध्याय। इनके लक्ष्मीधर नामक पुत्र और लीलावती नाम की कन्या थी। इन्होंने 'लीलावती' नाम से अपनी पुत्री की शिक्षा के लिये गणित की पुस्तक लिखी है।

भोजराज—ये इतिहास-प्रसिद्ध धारानगरी के राजा तथा साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान् थे। ये सिन्धुराज के पुत्र तथा मुञ्ज के भतीजे थे। राजा भोज का नाम संस्कृत साहित्य में बहुत प्रसिद्ध है। वे स्वयं विद्वान्, कवि होकर विद्वानों और कवियों के परम आश्रयदाता थे। इनके समय में कवियों को बड़े बड़े पुरस्कार दिये जाते थे। कहा जाता है राजा भोज के समय लकड़िहारों तक में कविता बनाने का चाव पैदा हो गया था। राजा भोज का समय ग्यारहवीं शताब्दी है। भोजराज-रचित ग्रन्थों में पातंजलदर्शन की वृत्ति, जो भोज-वृत्ति के नाम से प्रसिद्ध है, विशेष महत्त्वपूर्ण रचना है। इनके अतिरिक्त, भोज के लिखे ग्रन्थ ये हैं—(१) अमरटीका, (२) चम्पू-रामायण, (३) चारुचर्या, (४) सरस्वती-कण्ठाभरण, (५) राजवार्तिक।

इधर राजा भोज का 'समरांगण-सूत्रधार' नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है। यह बहुत महत्त्वपूर्ण और उत्कृष्ट ग्रन्थ है। इसमें बहुत से वैज्ञानिक विषयों का वर्णन है। आधुनिक 'लिफ्ट' जैसे यंत्र तथा आकाश में चलने वाले विमान का भी वर्णन इसमें पाया जाता है।

मङ्खक—ये काश्मीर-नरेश जयसिंह (११२९-५० ई०) के सभा-पण्डित थे। प्रसिद्ध आलंकारिक रुय्यक इनके गुरु थे। इन्होंने भगवान् शङ्कर और त्रिपुर के युद्ध को लेकर 'श्रीकण्ठचरित' नाम का २५ सर्गों का महाकाव्य लिखा है।

मण्डन मिश्र—ये भारत के एक प्राचीन विद्वान् हैं। ये मिथिला की प्रसिद्ध नगरी

माहिष्मती पुरी (आधुनिक महिसी ग्राम) के निवासी थे। प्रसिद्ध कुमारिलभट्ट के यह प्रिय शिष्य थे। इनका नाम तो विश्वरूप था, परन्तु शास्त्रार्थ में अजेय होने के कारण लोग इन्हें मण्डनमिश्र कहने लगे थे।

शङ्करदिग्विजय में लिखा है कि इनका और शङ्कराचार्य का शास्त्रार्थ हुआ था। शङ्कराचार्य से परास्त होने पर यह संन्यासी हो गये थे और शङ्कराचार्य ही से मण्डन ने संन्यास ग्रहण किया था। मण्डनमिश्र का संन्यासाश्रम का नाम सुरेश्वराचार्य हुआ। शङ्कराचार्य के साथ ये भी उनकी शिक्षा का प्रचार करने लगे। इन्होंने व्याससूत्र पर भाष्य भी बनाया था, परन्तु इनके जीवनकाल ही में दुष्टों ने उसे नष्ट कर डाला था। बृहदारण्यक उपनिषद् पर इनका लिखा वार्तिक है जो तात्पर्य वार्तिक के नाम से प्रसिद्ध है। पीछे से यह शृङ्गेरीमठ के अधिपति बनाये गये थे।

मधुसूदन ओझा—ये २०वीं शती के अद्वितीय विद्वान् एवं व्याख्याता थे। इन्होंने जितने ग्रन्थ लिखे हैं, आज तक उतने ग्रन्थ संस्कृत में किसी ने भी नहीं लिखे। ये मैथिल ब्राह्मण थे।

मम्मट—आचार्य मम्मट काश्मीर के रहने वाले थे। अलङ्कारशास्त्र में ध्वनि के समर्थक आचार्यों में इनका प्रमुख स्थान है। ये महाभाष्य के व्याख्याता कैयट तथा वेद के भाष्यकार उव्वट के भाई कहे जाते हैं। इनका समय ११वीं शती का उत्तरार्ध है।

इनका 'काव्य-प्रकाश' साहित्यशास्त्र का अति गम्भीर पाण्डित्यपूर्ण ग्रन्थ है। अपने ग्रन्थ से ये महावैयाकरण प्रतीत होते हैं। इन्होंने अपना ग्रन्थ सूत्रात्मक शैली में लिखा है अतः उसको अच्छी तरह समझ लेना सुगम नहीं है। लगभग ६० टीकाएँ इस ग्रन्थ पर हो चुकी हैं और टीकाकारों ने आचार्य मम्मट को 'वाग्देवतावतार' लिखकर उनके प्रति सम्मान प्रदर्शित किया है।

काव्यप्रकाश में दस उल्लास हैं। दशम उल्लास के परिकरालङ्कार तक ही मम्मट लिख पाये थे, शेष अंश अल्लटसूरि द्वारा लिखा गया था। काव्यप्रकाश के 'निदर्शन'-टीकाकार ने लिखा है—

कृतः श्रीमम्मटाचार्यवर्यैः परिकरावधिः।
प्रबन्धः पूरितः शेषो विधायाल्लटसूरिणा॥

महादेव शास्त्री—बीसवीं शती में साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान् और भाषा पर अधिकार रखने वाले सिद्धहस्त कवि हैं। इनका 'भारतशतकम्' नाम का मुक्तक काव्य प्रकाशित हुआ है, जिसमें आधुनिक दृष्टिकोणसे भारत के ग्रामीण जीवन के हृदयग्राही संश्लिष्ट वर्णन शब्द-चित्र के रूप में अंकित हुए हैं।

महिमभट्ट—ये मम्मट के पूर्ववर्ती और ध्वन्यालोककार के परवर्ती आचार्य हैं। ये भी कश्मीरी ही हैं। इन्होंने 'व्यक्तिविवेक' लिख कर आनन्दवर्धन के ध्वनिसिद्धान्त का खण्डन किया है और व्यक्ति (ध्वनि) को अनुमान का व्यापार बतलाया है। बाद में आचार्य मम्मट ने इनके सिद्धान्तों का भली भाँति खण्डन करके अनौचित्य विषयक इनकी समस्त मान्यताओं को अपने दोष-प्रकरण में सम्मिलित कर दिया।

माघ—संस्कृत साहित्य के मूर्धन्य महाकवियों में माघ की गणना की जाती है। ये एक धनाढ्य और प्रतिष्ठित ब्राह्मण कुल में पैदा हुए थे। इनकी जन्मभूमि सौराष्ट्र (गुजरात) प्रान्त में थी। इनके पिता का नाम दत्तक था। इनके पितामह सुप्रभदेव गुजरात के शासक वर्मलात के यहाँ मन्त्री पद पर नियुक्त थे। इनका समय सातवीं शती का उत्तरार्ध है।

माघ बहुत उदार और दानी थे। अपने जीवन के अन्तिम भाग में इन्हें इसी उदारता-वश बहुत कष्ट उठाना पड़ा।

इनका 'शिशुपाल-वध' ग्रन्थ बीस सर्गों का महाकाव्य है। इसकी रचना युधिष्ठिर के राजसूययज्ञ और कृष्ण द्वारा शिशुपाल के वध

की कथा को लेकर की गयी है। माघ ने भारवि के अर्थ-गौरव को छोड़कर शेष बहुत कुछ अनुकरण उनकी शैली का किया है। 'शिशुपाल-वध' उच्चकोटि का महाकाव्य है। उसमें कवि-प्रतिभा का अच्छा निदर्शन हुआ है। इसकी गणना भी बृहत्त्रयी में की जाती है। माघ ने कवि-प्रतिभा के साथ-साथ अपनी अगाध विद्वत्ता का भी परिचय इस महाकाव्य में दिया है।

माधव विद्यारण्य—ये वेद के विख्यात भाष्यकार सायणाचार्य के बड़े भाई थे। ई० १४वीं सदी में दक्षिण की तुङ्गभद्रा नदी के तीर-स्थित पम्पा नगरी में इनका जन्म हुआ था। इनके पिता का नाम मायण और माता का नाम श्रीमती था। विजयानगरम् के राजा बुक्कराय के ये कुलगुरु तथा प्रधान मन्त्री थे। भारती तीर्थ के पास इन्होंने संन्यास की दीक्षा ली थी। सन् १३३१ ई० में ये शृङ्गेरीमठ के शङ्कराचार्य के पद पर अभिषिक्त हुए। ९० वर्ष की अवस्था में इनका परलोकवास हुआ। इन्होंने पराशरसंहिता का एक भाष्य बनाया है जो पराशरमाधव के नाम से प्रसिद्ध है।

मुरारि—ये 'अनर्घराघव' नाटक के रचयिता हैं। इनका नामोल्लेख कविरत्न रत्नाकर ने, जो नवम शतक में हुए हैं, अपने 'हरविजय' महाकाव्य में किया है। अतएव इनका समय नवें शतक के पूर्व समझना चाहिये।

मेधातिथि—मनुसंहिता के विख्यात टीकाकार थे। इनके पिता का नाम वीरस्वामिभट्ट था।

यवनाचार्य—यह एक ज्योतिष के प्रसिद्ध विद्वान् थे। इनके बनाये हुए ग्रन्थ का नाम 'यवनसिद्धांत' है। बलभद्र नामक एक ज्योतिर्वेत्ता ने 'सिद्धान्तरत्न' नामक एक ग्रन्थ बनाया है। उस ग्रन्थ में ग्रन्थकार ने यवनाचार्य का परिचय दिया है कि यवनाचार्य ने जातकस्कन्ध विषयक 'ताजिक' नामक एक ग्रन्थ बनाया है। यह ग्रन्थ फारसी भाषा में था। मेवाड़ के महाराणा संग्रामसिंह ने इस ग्रन्थ का अनुवाद संस्कृत भाषा में करवाया था।

रघुनन्दन भट्टाचार्य—प्रसिद्ध बङ्गीय स्मार्त्त पण्डित। १५वीं शताब्दी में नवद्वीप में उत्पन्न हुए थे। इस समय का बङ्गीय हिन्दू समाज इन्हीं के बनाये धर्मशास्त्र के अनुसार परिचालित होता है। जिस समय ये उत्पन्न हुए थे उस समय हिन्दू समाज की बड़ी शोचनीय दशा थी। मुसलमानों के हाथ से हिन्दुओं का आचार-व्यवहार नष्ट हो रहा था। इन्हीं बातों को देखकर, रघुनन्दन भट्टाचार्य ने हिन्दू समाज का संस्कार करने की इच्छा से अष्टविंशतितत्त्व नामक एक स्मृतिग्रंथ प्रणयन किया। उस समय प्रचलित हिन्दू धर्म के साथ रघुनन्दन की स्मृति का विरोध होने के कारण अनेक स्थानों से पण्डितगण रघुनन्दन से शास्त्रार्थ करने आये। शास्त्रार्थ में रघुनन्दन ने जय पायी। तभी से दूर-दूर के विद्यार्थी उनके यहाँ आने लगे और वहाँ शिक्षा पा कर इनके स्मृतिशास्त्र का प्रचार करने लगे। थोड़े ही दिनों में समूचे बङ्गाल में रघुनन्दन की स्मृति का आदर होने लगा और उसी के अनुसार हिन्दू समाज परिचालित होने लगा।

रघुनाथ शिरोमणि—ये नवद्वीप के विख्यात नैयायिक थे। ई० १५वीं शताब्दी के शेषभाग में नवद्वीप में इनका जन्म हुआ था और सोलहवीं शती के मध्यभाग में देहावसान। ये न्यायशास्त्र के अगाढ़ विद्वान् थे। इन्होंने सब मिलाकर ३२ ग्रन्थ लिखे हैं, जिनमें ये प्रसिद्ध हैं:— (१) व्युत्पत्तिवाद, (२) लीलावती की टीका, (३) क्षणभंगुरवाद, (४) तत्त्वचिन्तामणिदीधिति, (५) पदार्थमण्डल, (६) प्रामाण्यवाद, (७) ब्रह्मसूत्रवृत्ति, (८) अद्वैतेश्वरवाद, (९)

अवयवग्रन्थ, (१०) आकाङ्क्षावाद, (११) केवलव्यतिरेकी, (१२) पक्षता, (१३) आख्यातवाद, (१४) न्यायकुसुमाञ्जलि की टीका ।

रत्नाकर—कश्मीरी महाकवियों में रत्नाकर मूर्धन्य है । इनका 'हरविजय' महाकाव्य विस्तार और गुण की दृष्टि से श्रेष्ठ माना जाता है । उसमें कविता का लालित्य है । राजतरङ्गिणी के अनुसार ये कश्मीर नरेश अवन्तिवर्मा (८५५-८८४ ई०) के राज्यकाल में हुए —

मुक्ताकणः शिवस्वामी
कविरानन्दवर्धनः ।
प्रथां रत्नाकरश्चागात्
साम्राज्येऽवन्तिवर्मणः ।।

राजशेखर—ये मध्यभारत के निवासी थे और कान्यकुब्ज नरेश महेन्द्रपाल के यहाँ आचार्य रूप में रहते थे । बाद में ये महेन्द्रपाल के पुत्र महीपाल के भी सभासद रहे । इस प्रकार इनका समय ९वीं शताब्दी के बीच ठहरता है । ये यायावरवंश के थे, जो वंश प्रायः कवियों के लिए प्रसिद्ध है । इन्होंने अवन्तिसुन्दरी नाम की चौहानवंशी विदुषी क्षत्रियललना से विवाह किया था । इन्होंने अपने को वाल्मीकि, भर्तृमेण्ठ और भवभूति के समकक्ष माना है—

बभूव वल्मीकभवः कविः पुरा
ततः प्रपेदे भुवि भर्तृमेण्ठताम् ।
स्थितः पुनर्यो भवभूतिरेखया
स वर्तते सम्प्रति राजशेखरः ।

इनके बनाये ग्रन्थों के नाम हैं—(१) काव्यमीमांसा, (२) भुवनकोष, (३) बालरामायण, (४) बालभारत या प्रचण्डपाण्डव, (५) विद्धशालभञ्जिका और (६) कर्पूरमञ्जरी । राजशेखर अपने को कविराज कहते थे । इन्हें भूगोल का अच्छा ज्ञान था । 'काव्यमीमांसा' तथा 'बालरामायण' का दशम अंक भौगोलिक वर्णनों से ओत-प्रोत है । 'भुवनकोष' कदाचित् भूगोल विषय का ही ग्रन्थ था जो अब अप्राप्य है । 'काव्यमीमांसा' प्रायः कवियों की शिक्षा का ग्रन्थ है । अन्तिम चार ग्रन्थ नाटक हैं । उनमें कर्पूरमञ्जरी प्राकृत भाषा में लिखा गया है । राजशेखर शब्द के प्रयोग में बहुत कुशल हैं और लोकोक्तियों तथा मुहावरों का व्यवहार इनके काव्यों में पाया जाता है ।

रुद्रट—ये अलङ्कारशास्त्र के आचार्य हैं । इनका समय ९वीं शती ई० है । इनकी रचना 'काव्यालङ्कार' है जिसमें अलङ्कारों के साथ नाट्यशास्त्र के रस का भी विवेचन पहली बार काव्यलक्षण की व्याख्या में किया गया ।

श्रीरामानुजाचार्य—विशिष्टाद्वैतसिद्धान्त के यह आदि आचार्य हैं । इन्होंने भारतवर्ष में जैनियों और माया-वादियों का प्रभाव हटाने में प्राण-पण से प्रयत्न किया था और अपने प्रयत्न में सफल भी हुए थे । इनका प्राकट्य शकाब्द ९३८ अर्थात् सन् १०१७ ई० में हुआ था । इनके बनाये मुख्य ग्रन्थ ये हैं:— (१) वेदान्तसूत्र पर श्रीभाष्य, (२) वेदान्तप्रदीप, (३) वेदान्तसार, (४) वेदान्तसंग्रह, (५) गीताभाष्य, (६) गद्यत्रय ।

लल्लाचार्य—एक प्राचीन ज्योतिषी । इनका सिद्धान्त आर्यज्योतिष में बड़े आदर से देखा जाता है ।

लोष्टक भट्ट—इनकी जन्मभूमि कश्मीर है । अन्तिम अवस्था में ये संन्यस्त होकर काशीवासी हो गये थे । इनका काल १०८० ई० के आस-पास सिद्ध होता है । लोष्टक छह भाषाओं के अधिकारी विद्वान् और संस्कृत के सिद्धहस्त कवि थे । इस समय इनकी एक मात्र रचना 'दीनाक्रन्दनस्तोत्र' प्राप्त होती है, जिसमें

कवि ने शिवस्तुति के व्याज से अपनी दुःख-भरी कहानी गायी है ।

वराहमिहिर—यह एक प्रसिद्ध ज्योतिषी थे । इनकी बनायी 'बृहत्संहिता' एक उपादेय ग्रन्थ है । इनका शरीरान्त सन् ५८७ ई० में हुआ था ।

वल्लभाचार्य—पुष्टिमार्ग के प्रवर्तक आचार्य । इस मार्ग का नामान्तर रुद्रसम्प्रदाय या वल्लभ सम्प्रदाय भी है । इनके पिता का नाम लक्ष्मणभट्ट था । यह तैलङ्ग ब्राह्मण थे । ई० सोलहवीं सदी में इनका जन्म हुआ । दक्षिण भारत को छोड़ इनके सम्प्रदाय के अनुयायी समस्त भारतवर्ष में पाये जाते हैं । श्रीवल्लभाचार्य ने श्रीमद्भागवत पर सुबोधिनी टीका, व्याससूत्र पर भाष्य, सिद्धान्तरहस्य, भागवत लीलारहस्य, एकान्तरहस्य आदि ग्रन्थ रचे थे । यह जीव और ब्रह्म का अभेद मानने वाले हैं ।

वाक्पतिराज—ये कान्यकुब्ज नरेश यशोधर्मा के सभा-कवि थे और भवभूति के समकालीन थे । इनका 'गउड़वहो' प्राकृत भाषा का महाकाव्य है जिसमें १०२८ गाथाएँ हैं । यशोधर्मा ने गौड़ देश के किसी राजा पर चढ़ाई की थी । उसीका वर्णन इस काव्य में है । इनकी दूसरी रचना 'मधुमथ विजय' थी जो अप्राप्य है । इनका समय ८वीं शती ई० का पूर्वार्ध है ।

वामन—ये कश्मीर-निवासी तथा कश्मीर-नरेश जयापीड के मंत्री थे । अतः इनका समय आठवीं शती का उत्तरार्ध है । ये आलङ्कारिकों के सम्प्रदाय में रीति को काव्य की आत्मा मानने वाले आचार्य हैं । इन्होंने इस सिद्धान्त का विवेचन अपने ग्रन्थ 'काव्यालंकारसूत्र' में किया है ।

विज्जका—'कौमुदी महोत्सव' नाटक की रचयित्री विज्जका को कहा जाता है । डॉ० काशीप्रसाद जायसवाल के अनुसार 'कौमुदी महोत्सव' में पाटलिपुत्र के सत्ता-च्युत राजकुमार कल्याणवर्मा के पुनः राज्याभिषिक्त होने की कथा को नाटक का विषय बनाया गया है, कुछ वर्षों के अनन्तर ही गुप्त-सम्राट् समुद्रगुप्त ने कल्याणवर्मा को जीतकर अपने साम्राज्य की स्थापना की । विज्जका की रचना 'सूक्ति संग्रहों' में भी पाई जाती है । इस प्रकार इसका समय ४थी शती ई० का मध्य होगा ।

विशाखदत्त—इनका बनाया 'मुद्राराक्षस' नाटक संस्कृत साहित्य में एक उत्कृष्ट ग्रन्थ है । इसमें राजनीतिक दाव-पेंच का अच्छा गूढ़ निदर्शन हुआ है । नाटक की प्रस्तावना के अनुसार विशाखदत्त के पूर्वज सामन्त और महाराज थे । विशाखदत्त ज्योतिष, न्याय और राजनीति के पूर्ण पण्डित थे । इनका समय छठी शताब्दी का उत्तरार्ध माना जाता है । 'देवीचन्द्रगुप्त' नाम का इनका दूसरा नाटक भी है किन्तु वह पूर्णतः प्राप्त नहीं है ।

विश्वनाथ—ये उत्कल नरेश के यहाँ सान्धिविग्रहिक पद पर थे । इनका समय १४वीं शती ई० है । ये आलङ्कारिक और कवि दोनों थे । इनके पिता और पितृव्य दोनों अच्छे कवि थे । विश्वनाथ का लिखा हुआ 'साहित्यदर्पण' अलङ्कारशास्त्र का बहुत लोकप्रिय ग्रन्थ है । इसमें सुबोध शैली में काव्य तथा नाटक दोनों विषयों का अच्छा विवेचन दश परिच्छेदों में किया गया है ।

विश्वेश्वर पाण्डेय—इनके पूर्वज अल्मोड़ा जिले के पाटिया गाँव के रहने वाले थे । बाद में इनके पिता काशी के नागरिक हो गये और वहीं इनका जन्म हुआ । यह समय अठारहवीं शती का प्रारम्भ था । ये केवल ३४ वर्ष की अल्पायु में ही दिवंगत हो गये और इस अवस्था में ही इन्होंने विभिन्न विषयों पर २० पुस्तकें लिखी, जो अपने-अपने विषय की प्रौढ़ रचनायें हैं । खेद है कि इनकी

कृतियों का समुचित प्रचार न हो सका। इन ग्रन्थों के देखने से एक ओर ये साहित्यशास्त्र के आचार्य रूप में और दूसरी ओर महाकवि के रूप में दिखायी पड़ते हैं। 'अलङ्कार-कौस्तुभ' इनकी सबसे प्रौढ़ रचना है जिसमें सभी अलङ्कारों का गम्भीर विवेचन किया गया है। इनकी रचनाओं के नाम ये हैं—(१) अलङ्कारकौस्तुभ (२) अलङ्कार-मुक्तावली (३) अलङ्कारप्रदीप (४) कवीन्द्रकर्णाभरणम् (५) रसचन्द्रिका (६) वैयाकरणसिद्धान्तसुधानिधि (७) मन्दारमञ्जरी (८) आर्यासप्तशती (९) काव्यतिलकम् (१०) काव्यरत्नम् (११) तर्ककुतूहलम् (१२) दीधितिप्रवेश (१३) शृङ्गार-नवमालिका नाटिका (१४) शृङ्गार-मञ्जरी शतकम् (१५) रोमावलीशतकम् (१६) वक्षोजशतकम् (१७) होलिका-शतकम् (१८) लक्ष्मीविलास (१९) रसमञ्जरीटीका (२०) नैषधचरित-टीका (२१) षड्ऋतुवर्णनम्।

वेङ्कटाध्वरि—यह एक दाक्षिणात्य कवि हैं। ये कांची के पास अर्सनफल नामक अग्रहार में रहते थे। इन्होंने विश्वगुणादर्श, हस्तिगिरि चम्पू और लक्ष्मीसहस्र नामक काव्यों की रचना की है। यह भी दाक्षिणात्य कवियों की तरह शब्दालंकार की ओर अधिक झुके हुए हैं। प्रलयकावेरी नामक किसी राजा की सभा के ये प्रधान पण्डित थे।

वेदान्तदेशिक—इनका जन्म कांजीवरम् के निकट एक ग्राम में सन् १२६८ ई० के सितंबर मास अथवा तमिल संवत् विभव में हुआ था। ये एक साहित्य-मर्मज्ञ और दार्शनिक विद्वान् हो गये हैं। इन्होंने दर्शन विशेषतः न्याय पर कई एक ग्रन्थ लिखे हैं और श्री श्रीहर्ष के 'खण्डनखण्डखाद्य' के उत्तर में 'शतदूषणी' ग्रन्थ की रचना की थी। कालिदास के 'मेघदूत' के ढंग पर इन्होंने 'हंससन्देश' लिखा है। 'यादवाभ्युदय' इनका महाकाव्य है। अप्पय दीक्षित ने इसकी टीका की है। तत्त्वमुक्ताकलाप, सर्वार्थसिद्धि, अधिकरणसारावली, न्याय-परिशुद्धि, न्यायसिद्धाञ्जन आदि इनके दूसरे ग्रन्थ हैं।

शङ्कराचार्य—आचार्य शंकर भारत के सामाजिक और धार्मिक जीवन के जन-मन में, भगवान् शङ्कराचार्य के रूप में, आज एक सहस्र वर्ष से अधिक हुए प्रतिष्ठित चले आ रहे हैं। यद्यपि सामान्य जनता उनके नाम से अब परिचित नहीं रह गई है तथापि उनके अद्वैतवाद और सब में भगवान् की भावना की विचारधारा जनता के मानस में उनका प्रतिनिधित्व करती है। इनका जन्म आठवीं शती ई० में दक्षिण भारत में हुआ और इन्होंने केवल ३२ वर्ष की अवस्था में समाधि ले ली थी।

ये परम योगी और अगाध विद्वान् महान् आत्मा थे। थोड़ी अवस्था में ही इन्होंने सम्पूर्ण भारत का भ्रमण किया और विरुद्ध मतवालों को पराजित कर अपनी सनातन परम्परा की देश भर में पुनः प्रतिष्ठा की। परमार्थ रूप में ये अद्वैत तत्त्व या ब्रह्म मात्र को मानने वाले थे किन्तु व्यवहारजगत् में अन्य देवी-देवताओं की उपासना भी इन्हें अभीष्ट थी। इन्हीं देवी-देवताओं को लेकर इन्होंने बहुत बड़ा स्तोत्र-साहित्य लिखा है, जिसमें काव्य-कला और अन्तःकरण की दृढ़ प्रेरणा का समन्वय मिलता है। इन्होंने प्रायः सभी उपनिषदों पर भाष्य लिखे हैं। पर इनका सबसे महत्त्वपूर्ण भाष्य 'वेदान्त सूत्र' पर लिखा हुआ शांकर भाष्य है जिसमें इन्होंने अपने सिद्धान्त की प्रतिष्ठा की है।

श्रीहर्ष—श्रीहर्ष मूर्धन्य महाकवि तथा उच्च-कोटि के प्रकाण्ड पण्डित थे। गहरवारवंशी कान्यकुब्ज नरेश विजयचन्द्र की सभा के

ये समारत्न थे। विजयचन्द्र का समय १२वीं शती ई० का उत्तरार्ध है। वही समय श्रीहर्ष का भी समझना चाहिए। श्रीहर्ष की यह विशेषता है कि जहां उन्होंने एक ओर शृंगार रस का अद्वितीय महाकाव्य 'हर्ष-चरित' लिखा, वहाँ दूसरी ओर अद्वैत दर्शन के पाण्डित्यपूर्ण ग्रन्थ 'खण्डनखण्डखाद्य' की रचना की। वस्तुतः ये विद्वान् होने के साथ योगी भी थे। इन्होंने स्वयं लिखा है कि वे समाधि में ब्रह्मानन्द का साक्षात्कार किया करते हैं—

ताम्बूलद्वयमासनं च लभते यः कान्यकुब्जेश्वरात्, यः साक्षात्कुरुते समाधिषु परं ब्रह्म प्रमोदार्णवम्। यत्काव्यं मधुवर्षि धर्षितपरास्तर्केषु यस्योक्तयः, श्री श्रीहर्षकवेः कृतिः कृतिमुदे तस्याभ्युदीयादियम्॥

इनकी यह उक्ति इनके ग्रन्थों को पढ़ने से अत्युक्ति नहीं मालूम पड़ती।

श्रीहर्ष ने लिखा है कि उन्होंने अपना यह महाकाव्य चिन्तामणि मन्त्र के जप के प्रभाव से सरस्वती की सिद्धि प्राप्त करके लिखा है। 'नैषधीयचरित' के प्रत्येक सर्ग के अन्त में नाम अथवा कोई न कोई दूसरा परिचय इन्होंने अवश्य दिया है। इनके पिता का नाम हीर तथा माता का नाम मामल्ल देवी था। इनके लिखे ग्रन्थों की उल्लेखक्रम से सूची इस प्रकार है—(१) स्थैर्यविचारणप्रकरण (२) विजयप्रशस्ति (३) खण्डनखण्डखाद्य (४) गौडोर्वीशकुलप्रशस्ति (५) अर्णववर्णन (६) छिन्दप्रशस्ति (७) शिवशक्तिसिद्धि (८) नवसाहसाङ्कचरित चम्पू तथा (९) नैषधीयचरित।

नैषधीयचरित २२ लम्बे-लम्बे सर्गों का महाकाव्य है जिसमें २८३० श्लोक हैं। श्रीहर्ष का संस्कृत भाषा पर पूर्ण अधिकार है। शब्दों का विन्यास बहुत ललित तथा कल्पना की उड़ान बहुत ऊँची एवं हृदयाकर्षक है। कवि ने जो स्वयं अपने महाकाव्य को 'शृंगारामृतशीतगुः'—शृंगाररूपी अमृत के लिए चन्द्रमा कहा है, वह बहुत समीचीन है। इस महाकाव्य का विद्वज्जगत् में बहुत समादर है।

सुबन्धु—इनको बाण ने 'वासवदत्ता' का रचयिता बताया है और इनकी कृति की बहुत प्रशंसा की है। गद्यकाव्य लेखकों में सुबन्धु का ही नाम सर्वप्रथम आता है। 'वासवदत्ता' एक कथा काव्य है और वासवदत्ता की प्रेम कहानी ही है। परन्तु कवि ने उसमें अपनी मौलिक बुद्धि से बहुत उलट-फेर किया है। गद्यकाव्य श्लेष से भरा हुआ है अतः दुर्बोध है। इनका समय बाणभट्ट के पहले होना चाहिए।

हलायुध—ब्राह्मणसर्वस्व, कविरहस्य आदि ग्रन्थों के प्रणेता एक विद्वान् जो गीतगोविन्द-प्रणेता जयदेव कवि के समकालीन और गौड़ेश्वर लक्ष्मण सेन के सभापण्डित थे।

हेमचन्द्र—इन्होंने 'शब्दानुशासन' नामक प्रसिद्ध व्याकरण-ग्रन्थ लिखा है जिसके अन्त के आठ अध्यायों में प्राकृत व्याकरण है। 'काव्यानुशासन' इनका अलङ्कार ग्रन्थ है जो बहुत मौलिक नहीं है। इनका समय १२वीं शताब्दी ई० है।

परिशिष्ट २

संस्कृत-साहित्य में प्रचलित भौगोलिक नामों का संक्षिप्त परिचय

अङ्ग—श्री गंगा के दाहिने तट पर प्रवस्थित प्राचीन एक प्रसिद्ध राज्य। इस राज्य की राजधानी का नाम चंपा नगरी था। चंपा का दूसरा नाम प्रनंगपुरी भी था। यह चंपा नगरी आधुनिक भागलपुर नगर के समीप विहार प्रान्त में थी।

अगस्त्याश्रम—नासिक के आगे बंबई के समीप रेलवे का एक स्टेशन। नासिक से यह २४ मील दक्षिण-पूर्व की ओर था।

अधिराज—आधुनिक ग्वालियर का समीपवर्ती दतिया नामक नगर।

अन्ध्र—आधुनिक तिलंगाना देश का प्राचीन नाम अन्ध्र देश है।

अपरान्ता—कोंकण और मालाबार देश।

अवन्ती—नर्मदा नदी के उत्तर का प्रदेश। इसकी राजधानी का प्राचीन और आधुनिक नाम उज्जैन या अवन्तीपुरी है। महाभारत काल में यह प्रदेश दक्षिण में नर्मदा के तट तक और पश्चिम में माही नदी तक फैला हुआ था। उत्तर में एक और राज्य था जिसकी राजधानी दशपुर थी जो चंबल नदी के तट पर थी। इस राजधानी का आधुनिक नाम धौलपुर है और यह महाराज रन्तिदेव की राजधानी थी।

अश्मक—ट्रावनकोर का नाम।

अश्वतीर्थ—कान्यकुब्ज देश के समीप का एक तीर्थ। यहाँ पर ऋचीक नामक ऋषि ने वरुण देव से एक सहस्र श्यामकर्ण घोड़े पाये थे। यह तीर्थ गंगा और काली नदी के संगम पर आधुनिक कन्नौज में है।

असिक्नी नदी—इस नदी का वर्तमान नाम चन्द्रभागा है। यह पंजाब में चनाब के नाम से प्रसिद्ध है।

अहिच्छत्र—उत्तर पाञ्चाल देश को अहिच्छत्र भी कहते थे। इसे द्रोणाचार्य ने पाण्डवों की सहायता से राजा द्रुपद से छीना था। इस राज्य की राजधानी रुहेलखण्ड के रामनगर में थी। यह राज्य रुहेलखण्ड में था।

आनर्त—दे० **सौराष्ट्र**।

इ

इक्षुमती—उत्तरप्रदेश के उत्तरीय भाग में बहने वाली नदी का नाम।

इन्द्रप्रस्थ—इसके नाम हरिप्रस्थ और शक्रप्रस्थ भी पाये जाते हैं। इसका आधुनिक नाम दिल्ली है। किन्तु इन्द्रप्रस्थ नगर यमुना के वामतट पर था और दिल्ली दक्षिण तट पर बसी हुई है।

उ

उज्जयन्त—सौराष्ट्र काठियावाड़ के जूनागढ़ के समीप वाले गिरनार पर्वत का अन्यतम नाम।

उज्जानक—कश्मीर से पश्चिम सिन्धु नदी के तटवर्ती एक पवित्र क्षेत्र।

उत्कल—इसका नामान्तर ओड्र भी है और ओड्र ही का अपभ्रंश उड़ीसा जान पड़ता है। यह प्रदेश ताम्रलिप्त के दक्षिण कपिश नदी के तट तक फैला हुआ था। इस प्रदेश के मुख्य नगर कटक, भुवनेश्वर और पुरी हैं। पुरी चारों धामों में से एक है। यहीं पर जगन्नाथ भगवान् विराजमान हैं।

उरगापुरी—दक्षिणी भारत के समुद्र-तटवर्ती एक बंदरगाह का नाम। आज कल यह तंजौर जिले में नेगापट्टम के नाम से प्रख्यात है। प्राचीन काल में किसी समय यह पाण्ड्य देश की राजधानी था।

ऋ

ऋक्षवान्—विन्ध्य पर्वतमाला का दक्षिणी भाग।

ऋषभ—(अथवा वृषभ) पाण्ड्य देशस्थ एक पर्वत का नाम। यहाँ पर महाराज युधिष्ठिर तीर्थयात्रा के लिये गये थे। दक्षिण भारत में यह पर्वत मदुरा नगर में अलगिरी नाम से प्रसिद्ध है।

ऋषिका—भारत के उत्तर में काम्बोज देश के समीपवर्ती देश। आधुनिक रूस देश।

ऋषिकुल्या—कलिङ्गदेश की एक नदी का नाम। यह नदी गंजाम जिले में होकर बहती है और इसका उद्‌गम स्थान महेन्द्राचल पर्वत है।

ऋष्यमूक—मदरास हाते के अनागुंडी स्थान से आठ मील के अन्तर पर और तुंगभद्रा नदी के तट पर जो पर्वत है, उसीका नाम ऋष्यमूक पर्वत है।

ऋष्यश्रृङ्गाश्रम—आधुनिक सहर्सा जिले के सिंहेश्वर स्थान में कौशिकी नदी के तट पर शृङ्गीऋषि का आश्रम था।

औ

औदुम्बर—कच्छ देश का नाम। इसकी राजधानी का प्राचीन नाम कच्छेश्वर या कोटेश्वर था।

क

कच्छ—गुजरात प्रान्त का खेड़ा, जो अहमदाबाद और खंभात के बीच में है।

कटदेश—बंगाल के अन्तर्गत बर्दवान के समीपवर्ती कटवा का नामान्तर। यहाँ के महाभारतकालीन राजा का नाम सुनाम था और अर्जुन ने दिग्विजय-यात्रा के समय सुनाम को परास्त किया था।

कण्वाश्रम—रुहेलखण्ड के अन्तर्गत वह स्थान विशेष, जहाँ आजकल बिजनौर नामक नगर है। प्राचीन काल में यहाँ वन था।

कनखल—हरिद्वार से दो मील पूर्वस्थित एक ग्राम का नाम।

कन्यातीर्थ—आधुनिक नाम कन्याकुमारी है। यह ट्रावनकोर राज्य के अन्तर्गत दक्षिण-भारत का एक प्रसिद्ध तीर्थस्थान है।

कपिशा—अफगानिस्तान का उत्तरी भाग।

करतोया—यह एक नदी का नाम है जो बंगाल हाते के रंगपुर, दीनाजपुर आदि नगरों में होकर बहती है। यह नदी किसी समय बंगाल और कामरूप देश की सीमा समझी जाती थी।

करूषक—(या कारुष) आधुनिक बिहार प्रान्त के अन्तर्गत शाहाबाद जिले का पूर्वीय भाग। यहीं का राजा दन्तवक्त्र था।

कर्णाटक—दक्षिण भारत का एक प्रदेश जो बंबई और मदरास दोनों हातों में है। समूचा मैसूर राज्य और मदरास हाते का दक्षिणी कनारा तथा बंबई हाते का उत्तरी कनारा, बेलगाँव और धारवाड़ नामक जिले कर्णाटक प्रदेश कहलाते हैं।

कलिङ्ग—उड़ीसा के दक्षिण की ओर का प्रदेश। यह प्रदेश गोदावरी नदी के उद्‌गम स्थान तक फैला हुआ था। इस राज्य की प्राचीन राजधानी कलिङ्गनगर समुद्र तट से कुछ फासले पर थी और सम्भवतः उस स्थान पर थी जहाँ आधुनिक राजमहेन्द्री नामक नगर है।

काञ्ची—द्रविड़ देश की प्राचीन राजधानी। आधुनिक नाम कांजीवरम् है।

कान्यकुब्ज—इक्षुमती या काली नदी तथा गंगा के संगम पर अवस्थित प्राचीनकालीन

एक राज्य। इसकी राजधानी आधुनिक कन्नौज कसबा है, जो फर्रुखाबाद जिले के अन्तर्गत है। यह राजा गाधि की राजधानी थी।

काम्पिल्य—यह दक्षिण पाञ्चाल की राजधानी का नगर है। अब भी कम्पिला के नाम से प्रसिद्ध है और फर्रुखाबाद जिले का एक कसबा है। द्रौपदी का जन्म यहीं हुआ था।

काम्बोज—यह निषध पर्वत के दक्षिण में बतलाया जाता है। यहाँ अर्जुन राजसूययज्ञ के अवसर पर दिग्विजय करने गये थे। वर्तमान में इस देश की स्थिति, अफगानिस्तान जो अश्वस्थान का अपभ्रंश है, बतलायी जाती है। वहाँ घोड़े अधिक होते हैं।

कामरूप—आसाम के अन्तर्गत प्राचीन कालीन राज्य विशेष। इसकी राजधानी प्राग्ज्योतिष था। यह राज्य उत्तर में हिमालय तक और पूर्व में चीन की सीमा तक था। यहाँ का राजा एक बड़ी सेना लेकर दुर्योधन की सहायता करने आया था। इसी की सेना में किरात और चीनी सैनिक थे।

कारुष—दे० करीषक।

किम्पुरुष—हिमालय पर्वत के उत्तर भाग का नाम।

किरात—टिपरा हिल और कोमिल्ला जो बंगाल में हैं।

किष्किन्धा—वालि और सुग्रीव की राजधानी। यह स्थान मदरास हाते के बिलारी जिले के हिम्पी ग्राम के समीप, तुङ्गभद्रा नदी के उत्तरी तट पर, बतलाया जाता है।

कुण्डिन—विदर्भ देश की राजधानी। यहाँ का प्रसिद्ध राजा भीष्मक था। यह स्थान बरार प्रान्त में आधुनिक अमरावती नगर से चालीस मील पूर्व की ओर है।

कुन्तय—कुन्ती के जन्मस्थान का नाम। यह मालवा में अश्व नदी के तट पर बसा हुआ था।

कुन्तल—मदरास हाते के बिलारी जिले के कुछ भाग जिसमें कुलगोड़ है।

कुरुक्षेत्र—पंजाब के कर्नाल जिले का एक कसबा यह दिल्ली से १०१ मील के फासले पर उत्तर की ओर है।

कुरुजाङ्गल—कुरुदेश के पश्चिम में जो बड़ा भारी जङ्गल था, उसीका नाम कुरुजाङ्गल था। यह कौरवों की राजधानी हस्तिनापुर से उत्तर तथा आधुनिक दिल्ली नगरी से उत्तरपूर्व की ओर था। अब इसका नाम-निशान तक नहीं है। गङ्गा इसे बहा ले गई।

कुलिन्द—कुरुक्षेत्र का उत्तर वाला प्रदेश जिसका आधुनिक नाम सहारनपुर है।

कुलूत—इसका आधुनिक नाम कुलू है। यह जालन्धर दो-आब के उत्तर-पूर्व और सतलज के दाहिने तट पर स्थित है।

कुशस्थली—इसका आधुनिक नाम द्वारका है।

कुशावती—दक्षिण कोशल की राजधानी का नाम। यह कहीं विन्ध्यगिरिमाला में थी। यह नर्मदा के उत्तर किन्तु विन्ध्य के दक्षिण में स्थित थी। सम्भवतः यह बुन्देलखण्ड में कहीं पर थी।

कृष्णवेणा, कृष्णवेणी, कृष्णा—दक्षिण भारत की कृष्णा नदी के नामान्तर हैं।

केकय—पञ्जाब के उस भूखण्ड का नाम जो व्यास और सतलज नदियों के बीच में है। भरतमाता कैकेयी इसी देश के तत्कालीन राजा की पुत्री थी।

केरल—कावेरी नदी के उत्तर भाग में पश्चिमी घाट और समुद्र के बीच का भूखण्ड। इसका आधुनिक नाम कनारा है। इसमें मालाबार प्रान्त भी शामिल है। इस भूभाग की प्रसिद्ध नदियाँ वेत्रवती, सरस्वती और काली नदी हैं।

कोटतीर्थ—इस नाम के तीर्थ कालिंजर, गोकर्ण और मथुरा में हैं।

कोलहल—मालवा को बुन्देलखण्ड से पृथक् करने वाली एक पर्वतमाला, जो चँदेरी के पास है।

कोशल—सरयू नदी के किनारे बसा हुआ एक प्राचीन राज्य। यह उत्तर कोशल और दक्षिणकोशल नामक दो भागों में विभक्त था। उत्तर कोशल ही में आधुनिक गोंडा और बहराइच जिले हैं।

कौशाम्बी—वत्स देश की राजधानी का प्राचीन नाम। प्रयाग नगर से तीस मील दक्षिण पश्चिम की ओर यह कोसम नामक स्थान पर थी।

कौशिकी—गङ्गा की बड़ी सहायक नदियों में से एक। यह नदी उत्तर बिहार में बहती है। रामायण के अनुसार यह विश्वामित्र की भगिनी है, जो नदी के रूप में बहती है।

क्रथकैशिका—यह नगरी बरार प्रान्त में है और एक समय यह विदर्भ देश की राजधानी थी।

ग

गन्धमादन—यह हिमालय का अंश विशेष, जो बदरिकाश्रम से उत्तर पूर्व की ओर थोड़ा हट कर आरम्भ होता है।

गन्धार—यह देश काबुल के किनारे-किनारे कुनार और सिन्धु नदी के बीच में है। इसकी राजधानी का नाम पुरुषपुर (जो अब पेशावर कहलाता है) था।

गिरिव्रज—मगध राज्य की राजधानी। बिहार प्रान्त में इसका आधुनिक नाम राजगिरि है।

गोकर्ण—एक क्षेत्र का नाम जो गोआ से ३० मील उत्तरी कनारा में है।

गोप्रतार—अयोध्या में गुप्तारघाट के नाम से प्रसिद्ध है। यह वहाँ सरयूनदी के ऊपर बना हुआ एक घाट है और एक प्रसिद्ध तीर्थ-स्थल है।

गोमन्त—काठियावाड़ प्रान्त में द्वारका के समीप का एक पर्वत।

गौड़ या पुण्ड्र—उत्तरी बङ्गाल का नामान्तर।

च

चेदि—यह शिशुपाल के राज्य का नाम था। इस राज्य में आधुनिक बुँदेलखण्ड का दक्षिणी भाग और जबलपुर का उत्तरी भाग सम्मिलित था। चँदेरी इसकी राजधानी थी।

चोल—यह महाराज्य कावेरी नदी के तट पर बसा हुआ था और वर्तमान मैसूर राज्य का दक्षिणी भाग इसमें शामिल था। पीछे से इसको लोग कर्नाटक के नाम से पुकारने लगे।

ज

जनस्थान—दक्षिण में जहाँ अब औरङ्गाबाद है वहाँ किसी समय विकट वन था और वहीं राक्षसों की चौकी थी। नासिक की पञ्चवटी भी उस समय जनस्थान की सीमा के भीतर थी।

जालन्धर—शतद्रु और विपाशा (व्यास) नदियों के बीच का भूखण्ड।

त

तक्षशिला—झेलम नदी के तट का एक नगर जो अटक और रावलपिंडी के बीच में बसा हुआ था।

तमसा—मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश में बहने वाली गङ्गा की एक सहायक नदी जो अमर-कंटक पहाड़ से निकल कर इलाहाबाद जिले में सिरसा के पास गंगा से मिलती है। इसी के किनारे आदिकवि वाल्मीकि ने अपना काव्य रचा था। इसका आधुनिक नाम टोंस है।

ताम्रपर्णी—मलय पर्वत से निकलने वाली एक नदी। मदरास हाते का टिनेवेली नामक नगर इसी नदी के तट पर बसा हुआ एक प्रख्यात

नगर है। यह नदी मनार की खाड़ी में गिरती है।

ताम्रलिप्त—दे० सुह्म।

त्रिगर्त—प्राचीन कालीन एक निर्जल देश, शतद्रु नदी के पूर्व एक रेगिस्तान और सतलज तथा सरस्वती के बीच का भूखण्ड, जिसमें उत्तर की ओर लुधियाना और पटियाला भी शामिल है और दक्षिण का कुछ भाग रेगिस्तान का भी शामिल है।

त्रिपुर, त्रिपुरी—इसका आधुनिक नाम तिवुर है। यह जबलपुर से ६ मील के फासले पर है। यह चेदि राज्य की राजधानी थी।

द

दरद—दरदस्थान जो कश्मीर के उत्तर सिन्धुदेश के चढ़ाव की ओर है।

दर्दुर—पूर्वघाट की पर्वतमाला के दक्षिणी भाग का नाम।

दृषद्वती—घग्गर नदी का नाम जो अम्बाला सरहिन्द होकर बहती है और राजपूताने के रेगिस्तान में जाकर लुप्त हो जाती है।

दशार्ण—एक देश का नाम जिसमें होकर दशार्ण नदी बहती है। मालवा प्रान्त के पूर्वी भाग का नाम दशार्ण है। बेतवा नदी का तटवर्ती भिलसा इसकी राजधानी थी। इस भिलसा का प्राचीन नाम विदिशा था।

द्रविड़—दक्षिण भारत का वह भूभाग जो मदरास से श्रीरङ्गपट्टम और कन्याकुमारी तक है। प्राचीन काल में इस देश की राजधानी कांची थी। कांची का आधुनिक नाम कांजीवरम् है।

द्वारका—इसका दूसरा नाम आनर्त नगरी या अब्धि नगरी है। प्राचीन द्वारका मधुपुर के समीप वर्तमान द्वारका से ८५ मील दक्षिण पूर्व के कोने में थी। यह रैवतक पर्वत के समीप थी। रैवतक पर्वत जूनागढ़ के गिरिनाथ पर्वत का नामान्तर है। काठियावाड़ प्रायद्वीप की राजधानी द्वारका के बाद, वल्लभी नगरी में थी। यह वल्लभी नगरी भावनगर से १० मील उत्तर-पश्चिम के कोने में थी।

न

निषध—यह उस देश का नाम है जिसके अधिपति किसी समय राजा नल थे। इसकी राजधानी का नाम अलका नगरी था, जो अलका नदी के तट पर बसी हुई थी। निषध नामक एक पर्वत भी है।

नैमिषारण्य—गोमती नदी के वामतट पर सीतापुर से लगभग बीस मील के अन्तर पर है। इसका आधुनिक नाम नीमसार मिसरिक है।

प

पञ्चवटी—नासिक के समीप एक स्थान। यह जनस्थान के अन्तर्गत है।

पञ्चाल—एक प्रसिद्ध भूखण्ड का नाम जो राजेश्वर के मतानुसार यमुना और गंगा के मध्य में है। राजा द्रुपद के समय में यह दक्षिण में चर्मण्वती (चम्बल) के तट से उत्तर में हरिद्वार तक फैला हुआ था। इसका उत्तरी भाग—जो भागीरथी से प्रारम्भ होता था—उत्तर पंचाल कहलाता था और इसकी राजधानी का नाम था अहिच्छत्र। इस प्रकार इसका दक्षिणी भाग दक्षिण पंचाल के नाम से प्रसिद्ध था। द्रुपद की मृत्यु के बाद यह भाग हस्तिनापुर के राज्य में शामिल कर लिया गया था। (मतान्तर) जो अब रुहेलखण्ड है, वही पञ्चाल देश था। इसके दो विभाग थे। एक उत्तर पञ्चाल और दूसरा दक्षिण पञ्चाल। उत्तर पञ्चाल की राजधानी रामनगर थी। दूसरे अर्थात् दक्षिण पंचाल की राजधानी कंपिला थी।

पद्मपुर—भवभूति कवि का आवासस्थान। यह स्थान चन्द्पुर या चांदा (जो नागपुर के समीप है), के आस-पास कहीं था।

पद्मावती—मालवा प्रान्त के नरवर नगर का प्राचीन नाम। यह सिन्द नामक नदी के तट पर बसा हुआ है। भवभूति के मालती-माधव की रंगस्थली यही नगरी है।

पम्पा—एक प्रसिद्ध झील का नाम। यह तुङ्गभद्रा की एक शाखा का नाम है। इसी के तट पर ऋष्यमूक पर्वत है।

पयोष्णी—तापती नदी की एक शाखा, जो बरार प्रान्त में है। इसको वहाँ वाले पूर्णा कहते हैं।

पर्णाशा—यह राजपूताने में है और इसका आधुनिक नाम बनास है। यह नदी चम्बल में गिरती है।

पाटलावती—काली सिन्ध नदी का नाम। यह चम्बल की एक शाखा है।

पाटलिपुत्र—मगध या दक्षिण बिहार के एक प्रसिद्ध नगर का नाम। यह गंगा और सोन नदी के संगम पर बसाया गया था। इसी प्रकार इसका दूसरा नाम कुसुमपुर है। विदेशियों के लिखे हुए प्राचीन ग्रन्थों में इसका नाम पालीबोथरा लिखा हुआ है। कहा जाता है कि आठवीं शताब्दी में एक नदी की बाढ़ से यह नष्ट हो गया था।

पाण्ड्य—भारत के अत्यन्त दक्षिण भूभाग का नाम। यह भूभाग चोल देश के दक्षिण-पश्चिम भाग में है। मलय पर्वत और ताम्रपर्णी नदी से इसका स्थान निर्विवाद प्रकट हो जाता है। दक्षिणके तिनिवेली और मदुरा के जिले जहाँ हैं वही स्थान पांड्य राष्ट्र के नाम से प्रसिद्ध था। रामेश्वरम् का द्वीप इसी राज्य में किसी समय था। इसकी राजधानी उरगपुर में थी। उरगपुर का आधुनिक नाम नेगापटम है, जो मदरास से १६० मील दक्षिण की ओर है।

पारसीक—फारस या परशिया देशवासी। कदाचित् भारत की उत्तर-पश्चिम सीमा पर रहने वाली जातियों को भी पारसी कहा करते थे। यहाँ के घोड़ों को वनायुदेश्य कहते थे।

पारियात्र—विन्ध्यगिरि की पश्चिमी पर्वतमाला, जिसमें अरावली शामिल है और जो नर्मदा के मुहाने से खंबात की खाड़ी तक चली गयी है। सम्भवतः इसी का दूसरा नाम सिवालिक पर्वत है।

पावनी—बर्मा की इरावती नदी का नाम।

पुलिन्द—प्राचीन काल में इस राज्य के अन्तर्गत आधुनिक बुन्देलखण्ड का पश्चिमी भाग और समूचा सागर जिला शामिल था।

पृथूदक—पीहो जहाँ पर ब्रह्मयोनि नामक प्रसिद्ध तीर्थ है। यह स्थान, थानेश्वर से चौदह मील पश्चिम की ओर है।

प्रतिष्ठान—महाराज पुरूरवा की राजधानी का नाम। इसका आधुनिक नाम झूसी है, जो प्रयाग के दारागंज मुहल्ले के सामने गंगा के दूसरे उस तट पर बसी हुई है। हरिवंश में यह गंगा के उत्तर तट पर और कालिदास के मतानुसार यह गंगा-यमुना के संगम पर बसी हुई थी।

प्रभास—काठियावाड़ का सोमनाथपट्टन स्थान।

प्राग्ज्योतिष—आसाम का कामरूप देश।

ब

बाहुदा—धवला नदी जिसे अब बूढ़ी राप्ती नदी कहते हैं। यह अवध की राप्ती नदी की एक सहायक नदी है। शङ्ख के भाई लिखित ऋषि के इसी नदी में स्नान करने से नयी बाहें निकली थीं। उसी समय से इसका नाम बाहुदा पड़ा है।

बिन्दुसर—गंगोत्री से दो मील हटकर रुद्र-हिमालय में एक पवित्र कुण्ड है। यहीं भगीरथ ने गङ्गा को पृथिवी पर बुलाने के लिए तप किया था।

भ

भृगुकच्छ—इसका आधुनिक नाम (गुजरात का) भड़ौच नगर है। यहीं पर नर्मदा का

समुद्र के साथ संगम होता है। यहीं पर महर्षि भृगु का आश्रम था।

भोजकट—पूर्णा नदी पर बना हुआ इलिचपुर नामक नगर जो बरार में है। इसी नगर में रुक्मिणी का भाई रुक्मी रहता था।

म

मगध—बिहार प्रान्त में प्राचीन काल में मगध राज्य की पश्चिमी सीमा सोन नद था। इसकी प्राचीन राजधानी का नाम गिरिव्रज या राजगृह था। इस नगरी में पाँच पहाड़ियाँ थीं। जिनके नाम ये हैं:—१ विपुला गिरि, २ रत्नगिरि, ३ उदयगिरि, ४ सोनगिरि और ५ वैभार या व्यवहार गिरि। इसकी दूसरी राजधानी पाटलिपुत्र में थी। पिछले प्राचीन साहित्य में इसी का दूसरा नाम कीकट देश लिखा मिलता है।

मत्स्य—अथवा विराट देश। जयपुर के आस-पास का भूभाग। इसमें अलवर भी शामिल था। इसकी राजधानी का नाम बेराट था जो अब बारट के नाम प्रसिद्ध है। यह जयपुर से ४० मील उत्तर की ओर है।

मद्र—रावी और चनाब के बीच का देश जो पंजाब में है।

मलज या **मलर**—करूष देश के समीप का देश, जिसे मालदा कहते हैं और जो शाहाबाद—आरा—का पश्चिमी भाग है।

मलय—भारत की मुख्य सप्त पर्वत-मालाओं में से एक। यह मैसूर के पश्चिम भाग से शुरू होती है और ट्रावनकोर राज्य की पूर्वी सीमा बनाती हुई चली आती है। भवभूति ने इस पर्वतमाला को कावेरी नदी से घिरा हुआ लिखा है। इस पर्वत पर इलायची, कालीमिर्च, चन्दन और सुपारियाँ बहुतायत से उत्पन्न होती हैं।

मल्ल—इस नाम के दो देश हैं। पश्चिम में मुलतान, औरपूर्व में हजारीबाग का वह भाग जिसमें पारसनाथ पर्वत है और मानभूमि जिले का भी कुछ भाग शामिल है।

महेन्द्र—भारतवर्ष की प्रसिद्ध सप्त पर्वत-मालाओं में से एक। यह महेन्द्रमाली के नाम से गंजाम जिले में प्रसिद्ध है। यह महानदी और गोदावरी के बीच में फैली हुई है।

महोदय—अथवा कान्यकुब्ज या गाधिनगर। इसका आधुनिक नाम कन्नौज है। सातवीं शताब्दी में यह भारतवर्ष का एक प्रसिद्ध स्थान था।

मार्कण्डेयाश्रम—गोमती और सरयू नदियों के संगम पर यह आश्रम बना हुआ है।

मानस—हाटक या लद्दाक की प्रसिद्ध झील का नाम। हाटक के उत्तर में उत्तरी कुरुओं का हरिवर्ष है। प्राचीन काल में यह स्थान किन्नरों का आवास-स्थान माना जाता था और कवियों ने वर्षा काल के आरम्भ में इसे हंसों का आवासस्थल बतला कर अपने काव्य-ग्रन्थों में इसका वर्णन किया है।

मालिनी—वह नदी जो अयोध्या से ५० मील की दूरी पर पड़ाव की ओर सरयू नदी से मिलती है। यहीं पर कण्व ऋषि का आश्रम था।

माहिष्मती—प्रसिद्ध नाम माहेश्वर जो नर्मदा नदी के तट पर इन्दौर से चालीस मील दक्षिण की ओर है।

मिथिला—दे० विदेह के अन्तर्गत।

मुरल—दे० केरल।

मेकल—मेकल अथवा अमरकंटक पर्वत की तलैटी का देश।

मैनाक—शिवालक पर्वत का नामान्तर

मोदागिरि—मुंगेर के पास का एक पर्वत जिसे मुद्गल गिरि कहते हैं और जो भागलपुर जिले में है।

र

रैवतक—गिरिनार पर्वत का नाम जो जूनागढ़ में है।

रोही—अफ़ग़ानिस्तान की रोहा नदी ।

रोहीतक—पंजाब का रोहतक जिला ।

ल

लम्बक या लम्पक—लामघम नामक देश जो काबुल नदी के उत्तरी तट पर है ।

व

वङ्ग—इसे समतट भी कहते हैं । पूर्वी बंगाल का नाम । किसी समय इसमें टिपरा और गारो भी शामिल थे ।

वसोर्धारा—यह तीर्थ अलकनन्दा नदी के मुहाने पर बदरीनारायण से चार मील उत्तर की ओर है ।

वंशगुल्मतीर्थ—यह एक पवित्र कुण्ड का नाम है जो अमरकण्टक की उपत्यका में नर्मदा के मुहाने से साढ़े चार मील पर है ।

वलभी—दे० सौराष्ट्र ।

वाहीक, वाह्लीक—पंजाब में रहने वाली जातियों का साधारण नाम । इनका देश वास्तव में बटाविया या बलख था । महाभारत में लिखा है कि इनका देश वह था जो सिन्धनद तथा पंजाब की प्रसिद्ध पाँच नदियों से सींचा जाता है; किन्तु यह प्रदेश पवित्र भारतवर्ष के भीतर नहीं, बाहर था । यह देश उत्तम घोड़ों की उत्पत्ति और हींग की पैदावार के लिये प्रसिद्ध था ।

वात्स्य—गंगा-यमुना के बीच का दोआब प्रदेश जो प्रयाग से पश्चिम की ओर है और जहाँ एक समय राजा उदयन राज्य करते थे । इसकी राजधानी का नाम कौशाम्बी (प्रयाग का कोसम) था ।

वारणावत—मेरठ जिले में वारणाव के नाम से प्रसिद्ध है । यह मेरठ से उत्तर पश्चिम की ओर उन्नीस मील की दूरी पर है ।

वितस्ता—पंजाब की झेलम नदी का नाम ।

विदर्भ—विन्ध्य गिरि से दक्षिण, दशार्ण से पश्चिम, गोदावरी से उत्तर और सुराष्ट्र से पूर्व का देश, जो बरार के नाम से आजकल प्रसिद्ध है । प्राचीन काल में यह एक विशाल राज्य माना जाता था । इसकी विशालता के कारण ही इसको महाराष्ट्र कहते थे । कुण्डिन इसकी राजधानी का नाम था । वर्धा नाम की नदी इसको उत्तर और दक्षिण दो भागों में विभक्त करती थी । उत्तर भाग की राजधानी का नाम अमरावती और दक्षिण भाग की राजधानी का नाम प्रतिष्ठान था ।

विदिशा—दे० दशार्ण के अन्तर्गत (भिलसा) ।

विदेह—मगध के उत्तर-पूर्व स्थित देश का नाम । इसकी राजधानी मिथिलापुरी थी, जिसे जनकपुर भी कहते हैं । यह जनकपुर नेपालराज्य में मधुबनी से उत्तर की ओर है । प्राचीन कालीन विदेह राज्य के अन्तर्गत नेपालराज्य का कुछ हिस्सा तथा सीतामढ़ी सीताकुण्ड या तिरहुत का उत्तरी और चंपारन का उत्तर-पश्चिमी भाग आदि स्थान अवश्य सम्मिलित रहे होंगे ।

विनशनतीर्थ—सरहिन्द के रेतीले मैदान का वह स्थान जहाँ सरस्वती नदी विलीन होती है ।

विपाशा—पंजाब की व्यास नदी ।

विराट—दे० मत्स्य ।

वृन्दावन—मथुरा से उत्तर-पश्चिम की ओर एक प्रसिद्ध तीर्थस्थान जो यमुना के वामतट पर बसा हुआ है ।

वेत्रवती—वेतवा नदी जो बुंदेलखण्ड में है ।

वैतरणी—उड़ीसा में कटक नगर के समीप बहने वाली एक नदी का नाम ।

श

शक—भारत की उत्तर-पश्चिमी सीमा पर रहने वाली एक ऐतिहासिक जाति का

नाम। सीदियन नाम से इस जाति का परिचय परवर्ती इतिहासकारों ने दिया है।

शतद्रू—पंजाब की सतलज नदी का नाम।

शरावती—गुजरात की साबरमती नदी का नाम।

शालग्राम क्षेत्र—नेपाल में गण्डकी नदी के मुहाने के समीप। मैसूरराज्य में भी इस नाम का एक स्थान है।

शुक्तिमत्—भारत की मुख्य सप्त पर्वतमालाओं में से एक का नाम। यह कहाँ पर है, इस बात का ठीक-ठीक पता नहीं बतलाया जा सकता; किन्तु कुछ लोगों का मत है कि नेपाल से दक्षिण हिमालय की जो एक सहायक पर्वत-श्रेणी है, वही शुक्तिमत् नाम की पर्वतमाला है।

शुक्तिमती—उड़ीसा की सुवर्णरेखा या बुंदेलखंड की बेतवा नदी का नाम।

शुक्तिमान्—उज्जैन-निकटस्थ पश्चिमीय विन्ध्यपर्वत-माला।

शूरसेन—मथुरा नगरी जिस राज्य की राजधानी थी, उस राज्य का नाम।

शूर्पारक—बंबई हाते के बीजापुर जिले में जमखंडी के समीप का स्थान। यहाँ पर जामदग्न्य परशुराम जी रहते थे। इस स्थान का नामान्तर शरपत्य है।

शृङ्गवेरपुर—सिंगरौर जो गुह की राजधानी थी। यह स्थान प्रयाग से उत्तर-पश्चिम की ओर १८ मील की दूरी पर गंगा के तट पर अवस्थित है।

श्रावस्ती—उत्तर कोसल राज्य की राजधानी जहाँ लव राज्य करते थे। रघुवंशकार ने इसी का नाम शरावती लिखा है। अयोध्या से उत्तर साहत माहत नाम का स्थान ही प्राचीनकालीन श्रावस्ती है। इसके नामान्तर धर्मपत्तन और धर्मपुरी भी है।

शोण—सोन नद का नाम।

स

सदानीरा—करतोया नाम की नदी जो रंगपुर एवं दीनाजपुर के समीप होकर बहती है।

सह्य—भारत की प्रधान सप्त पर्वत-मालाओं में से एक। इसका नाम सह्याद्रि है।

सिन्धुदेश—वह देश जो सिन्ध नदी और झेलम नदी के बीच में बसा हुआ है।

सुह्म—बंग देश के पश्चिम का देश। इसकी राजधानी ताम्रलिप्त थी जिसके नामान्तर दामलिप्त, ताम्रलिप्ती और तमालिनी भी है। इसका आधुनिक नाम तमलूक है जो कोसी नदी के दक्षिण तट पर बसा हुआ है।

सेक—उस देश का नाम जो चंबल से दक्षिण और उज्जैन से उत्तर की ओर है।

सौराष्ट्र—इसका नामान्तर आनर्त है। आधुनिक काठियावाड़ प्रायद्वीप ही प्राचीन कालीन सौराष्ट्र या आनर्त देश है। प्राचीन द्वारकापुरी आधुनिक द्वारकापुरी से ९५ मील के फासले पर मधुपुर से दक्षिण-पूर्व की ओर थी। उसी के समीप रैवतक पर्वत है, जो अब जूनागढ़ में गिरिनार के नाम से प्रख्यात है। द्वारका के बाद इसकी दूसरी राजधानी बलभी थी। इसके खंड़हर भावनगर से दस मील के फासले पर उत्तर-पश्चिम की ओर बिलवी में मिले हैं। प्रभास नामक प्रसिद्ध झील इसी देश में थी और समुद्र तट के निकट थी।

सौवीर—सिन्धु देश के समीप का प्रदेश।

स्रौघ्न—एक नगर का नाम जो पाटलिपुत्र से कुछ हटकर था।

ह

हस्तिनापुर—राजा हस्तिन् द्वारा स्थापित एक प्रसिद्ध नगर। यह कौरवों की राजधानी थी। दिल्ली से उत्तर-पूर्व और मेरठ से २२ मील के अन्तर पर गंगा के किनारे यह नगरी बसी हुई थी।

हेमकूट—अनुमानत: यह हिमालय के उत्तर और मेरु पर्वत के बीच में है। यह किम्पुरुष वर्ष की एक सीमा भी है।

—:o:—

CENTRAL ARCHAEOLOGICAL LIBRARY New Delhi

1106
6c

cat
5/11/27

Central Archaeological Library,
NEW DELHI. 48203

Call No. R 491.2343 Sha/Jha

Author— Sharma, D.P.

Title— Sanskrit Shabdarth Kaustubh.

Borrower No.	Date of Issue	Date of Return

"A book that is shut is but a block"

CENTRAL ARCHAEOLOGICAL LIBRARY
GOVT. OF INDIA
Department of Archaeology
NEW DELHI

Please help us to keep the book clean and moving.